हमारे महत्वपूर्ण आगामी प्रकाशन

भारतवर्षीय मध्ययुगीन चरित्रकोश

(मौर्य चंद्रगुप्त से अंग्रेजी साम्राज्य के प्रारंभ तक, ३२१ ई. पू.— १८१८ ई.स.)

इस ग्रंथ में भारतीय इतिहास के मध्ययुगीन कालखंड में उत्पन्न राजकारण, धर्मकारण, समाजकारण, वाङ्मय, कला, सांप्रदाय आदि से संबंधित छः हजार से अधिक व्यक्तियों के जीवनचरित्र एवं तद्विषयक संदर्भसहित सामग्री अकारादि क्रम से एवं सप्रमाण प्रस्तुत की गयी है।

भारतीय इतिहास के एक अत्यंत महत्वपूर्ण कालखंड से संबंधित व्यक्तियों की विस्तृत एवं सप्रमाण जानकारी प्रस्तुत करनेवाला यह ग्रंथ भारतीय इतिहास के प्रत्येक विद्यार्थी, अध्येता, संशोधक एवं सर्वसामान्य पाठक के लिए अत्यंत उपादेय होगा।

'मध्ययुगीन चरित्रकोश' का मराठी संस्करण लगभग पचास साल पहले प्रकाशित हो चुका था, जिसके संबंध में अपना अभिमत व्यक्त करते समय 'टाईम्स ऑफ इंडिया', बंबई, ने लिखा था :

'It embodies long and painstaking research and, as a work of reference, it should prove indispensable to those interested in India's Past.'

— *Times of India,*
28th Jan, 1938

मराठी में प्रसिद्ध हुए 'मध्ययुगीन चरित्रकोश, का परिवर्धित हिंदी संस्करण अब प्रकाशित हो रहा है, जिसमें मूल मराठी ग्रंथ से अधिक ६०० पृष्ठों की नयी जानकारी समाविष्ट की गयी है।

* * *

भारतवर्षीय

प्राचीन चरित्रकोश

(श्रुति, स्मृति, पुराण, सूत्र, वेदांग, उपनिषद्,
बौद्ध एवं जैन साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों
की साधार जानकारी प्रस्तुत करनेवाला ग्रंथ)

महामहोपाध्याय विद्यानिधि
सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव



पुरस्कार :
श्री. भक्तदर्शन
उपशिक्षामंत्री, भारत सरकार, नयी दिल्ली.



२०२१ विक्रम संवत्] [१९६४ ई. स.

भारतीय चरित्रकोश मण्डळ, पुना ४

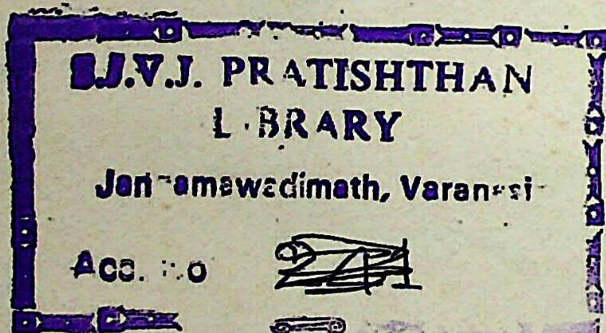
BHARATAVARSHIYA PRACHIN CHARITRAKOSHA

(Dictionary of Ancient Indian Biography, in Hindi)

by M. M. Sidheshwar Shastri Chitrao

Published by Bharatiya Charitrakosha Mandal, Poona 4.

Price : Rs. ४००



मूल्य : रु. ४००

प्रकाशक :
विनायक सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव,
कार्यवाह, भारतीय चरित्रकोश मंडल,
१२०६ अ/४५ जंगली महाराज पथ, पूना ४.

मुद्रक :
विद्याधर नीलकंठ पटवर्धन,
साधना प्रेस,
४३०–४३१ शनिवार पेठ, पूना २.



उपशिक्षामंत्री
भारत
DEPUTY EDUCATION MINISTER
INDIA
नयी दिल्ली-२

पुरस्कार

मुझे यह जान कर हर्ष हुआ कि भारतीय चरित्रकोश मण्डल, पूना, ने मराठी के 'प्राचीन चरित्रकोश' का हिन्दी संस्करण तैयार कर लिया है, और वह शीघ्र ही प्रकाशित हो रहा है।

मुझे ज्ञात हुआ है कि वह कोश तीस चालिस वर्ष पहले मराठी में प्रकाशित हो चुका है, और ख्याति प्राप्त कर चुका है। इसका हिन्दी संस्करण निकाल कर मण्डल ने बहुत ही सराहनीय कार्य किया है।

कोश के कुछ छपे हुए पृष्ठ मैंने देखे, और मुझे लगा कि यह कोश कई दृष्टियों से बहुत उपयोगी है। इस कोश के द्वारा पहली बार हमको एक स्थान पर अनेक पौराणिक चरित्र-नायकों की संक्षिप्त जीवनियां उपलब्ध हो जायेंगी।

इसी प्रकार के कोशों और संदर्भग्रंथों द्वारा हमको ज्ञान-विज्ञान की सामग्री सामान्य पाठकों के लिए सुलभ बनानी है। पिछले कुछ वर्षों में हिन्दी का संदर्भ-साहित्य समृद्ध हुआ है। कोशों और संदर्भ-ग्रंथों के निर्माण की इस परम्परा में मैं 'प्राचीन चरित्रकोश' का विशेष रूप से स्वागत करता हूं, और आशा करता हूं कि, मण्डल भविष्य में भी इस प्रकार के विशिष्ट कोशों और संदर्भ ग्रंथों से हिन्दी साहित्य को समृद्ध बनाने में योगदान देगा।

भक्तदर्शन

(भक्तदर्शन)

१०-११-६४

प्राक्कथन

आधुनिक युग वैज्ञानिक एवं व्यवस्थित अनुसंधान और अनुशीलन का युग है; अतः ज्ञान का एक निश्चित युक्तिसंगत रूप ही आज हमें ग्राह्य है। ज्ञान की एक पूर्वज्ञात शृंखला से हम आज नवोपलब्ध ज्ञान की नवीन शृंखला को जोड़ते जाते हैं, और इस प्रकार सभ्यता के विकास के पथ पर हम आगे बढ़ते जाते हैं।

प्राचीन ज्ञान का कितना अंश हमारे लिए ग्राह्य है, यह भी एक विचारणीय विषय है। फिर भी ज्ञान और विद्या की अनेक शाखायें हैं, जिनकी सामग्री प्राचीन भारतीय साहित्य में भरी पड़ी है। परन्तु यह बात सर्वज्ञात नहीं है। अधिकांशतः तो लोग प्राचीन भारतीय ज्ञान की विविध शाखाओं से भी परिचित नहीं हैं। अतः अनेक प्रकार से उन्हें निश्चित, संक्षिप्त एवं व्यवस्थित रूप में उपलब्ध कराना प्रत्येक भारतीय विद्वान् का कार्य है।

इस दिशा में अनेक संस्थाएँ एवं व्यक्तिगत रूप में अनेक विद्वान् कार्य कर रहे हैं। पूना नगर का 'भारतीय चरित्रकोश मण्डल' ऐसी ही संस्थाओं में से एक संस्था है, जो महामहोपाध्याय श्री. सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव की अध्यक्षता में कार्य कर रही है। इस संस्था को अन्य अनेक उत्कृष्ट विद्वानों का सहयोग एवं परामर्श भी प्राप्त है।

'भारतीय चरित्रकोश मण्डल' के द्वारा अभी तक मराठी में 'प्राचीन चरित्रकोश,' 'मध्ययुगीन चरित्रकोश' तथा 'अर्वाचीन चरित्रकोश' प्रकाशित हुए हैं। परन्तु ऐसे कार्य की अखिल भारतीय उपयोगिता को ध्यान में रख कर इस प्रकार के कोशों एवं और ग्रंथों को हिन्दी में भी प्रकाशित किया जाये, यह निर्णय किया गया, जिसके परिणामस्वरूप 'प्राचीन चरित्रकोश' अपने संशोधित एवं परिवर्द्धित रूप में हिन्दी में प्रस्तुत है।

हिन्दी के कोश-साहित्य के क्षेत्र में भी इधर कुछ वर्षों से महत्त्वपूर्ण कार्य हुआ है। इसके अन्तर्गत 'विश्वकोश' का संपादन-प्रकाशन कार्य चल रहा है। इसके अतिरिक्त 'साहित्यकोश,' 'साहित्यकारकोश,' 'पात्रकोश,' 'मानक शब्दकोश,' 'पारिभाषिक शब्दकोश' आदि प्रणीत एवं प्रकाशित हुए हैं। अन्य अनेक शब्दकोशों का भी निर्माण हुआ है; फिर भी सांस्कृतिक एवं दार्शनिक ज्ञानकोश, एवं चरित्रकोश-निर्माण के कार्य हिन्दीभाषी क्षेत्र में अभी नहीं हुए। इस प्रकार के कार्य यहाँ पूना नगर में मराठी में चल रहे हैं, और वे हिन्दी में रूपान्तरित होकर भी प्रकाशित होंगे। महामहोपाध्याय श्री. सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव-द्वारा संपादित, प्रस्तुत 'प्राचीन चरित्रकोश' द्वारा एक प्रकार से इस कार्य का श्रीगणेश हो रहा है।

जहाँ तक मुझे ज्ञात है, इस विषय को लेकर अब तक हिंदी में एक ही ग्रन्थ प्रकाशित हुआ है, वह है चतुर्वेदी पंडित द्वारिकाप्रसाद शर्मा-कृत 'भारतीय चरिताम्बुधि'। यह बहुत पहले लखनऊ के नवलकिशोर प्रेस से प्रकाशित हुआ था, तथा अब वह अनुपलब्ध है। उस ग्रन्थ में विवरण थे, पर संदर्भ नहीं। परंतु प्रस्तुत 'प्राचीन भारतीय चरित्रकोश' तो १२०४ पृष्ठों का एक विशालकाय परिपूर्ण चरित्रकोश है। इस कोश की विशेषता इस बात में है कि, इसके अंतर्गत प्रत्येक चरित्र एवं चरित्रगत प्रसंगों के समस्त संदर्भ भी दिये गये हैं। इसके कारण यह कोश सामान्य सूचनात्मक कोश न रह कर एक विशिष्ट प्रामाणिक ज्ञानकोश बन गया है, जिसकी संदर्भ-सामग्री अनुसंधित्सु विद्वानों के लिए उनके शोधकार्य के हेतु उपयोगी संदर्भ-संकेत प्रस्तुत करती है। मेरा अपना विचार है कि, इस दृष्टि से यह कार्य अद्वितीय उपादेयता से युक्त है। इसके लिए हिंदी संसार शास्त्रीजी का बड़ा ऋणी रहेगा।

इस मंडल के अंतर्गत दूसरे अन्य कोश ग्रंथ भी हिंदी में शीघ्र ही प्रणीत एवं प्रकाशित होनेवाले हैं, जिनमें प्रमुख हैं:— 'प्राचीन स्थलकोश' तथा 'प्राचीन ग्रंथकोश'। इन ग्रन्थों के प्रकाशित होने पर हमें प्राचीन भारतीय संस्कृति एवं इतिहास-संबंधी ज्ञान सरलता से उपलब्ध हो सकेगा। अभी तक हम अपने प्राचीन इतिहास तथा संस्कृति को विदेशी आँखों या चश्मे से देखते रहे हैं; परंतु इस प्रकार के प्रामाणिक एवं निश्चित सूचना देनेवाले ग्रन्थों से हम स्वयं उसके संबंध में अनेक उपयोगी सूचनायें प्राप्त कर सकेंगे।

इन सूचनाओं तथा प्राचीन भारत की संस्कृति, साहित्य एवं इतिहास-संबंधी ज्ञान को व्यापक प्रसार देने के उद्देश्य से ही इन ग्रन्थों का प्रणयन तथा प्रकाशन किया जा रहा है। यदि विद्वानों तथा जिज्ञासुओं के द्वारा इन ग्रन्थों का स्वागत तथा उपयोग हो सका, तो हमें विशेष प्रसन्नता तथा प्रोत्साहन प्राप्त होगा, तथा 'मण्डल' अपना कार्य अधिक उत्साह से कर सकेगा। हम अपनी ओर से विद्वानों के सुझाओं तथा सम्मतियों का सहर्ष स्वागत करेंगे।

पूना विश्वविद्यालय
पूना
४-११-६४

भगीरथ मिश्र
प्रधान परामर्शकार, हिंदी विभाग,
भारतीय चरित्रकोश मण्डल, पूना

प्रस्तावना

इतिहासोत्तमादस्मात् जायन्ते कविबुद्धयः।
नवीनराष्ट्रनिर्माणं संस्कृतेः प्रसरस्तथा ॥

(इतिहास के अध्ययन से मनुष्य बुद्धि प्रगल्भ हो जाती है। संस्कृति के प्रचार एवं नवीन राष्ट्र के निर्माण की प्रेरणा भी इतिहास के अध्ययन से प्राप्त होती है)।

भूमिका--मानवीय बुद्धि को प्रगल्भ, क्रियाशील एवं उदयशील बनाने के लिए इतिहासाध्ययन जैसा अन्य कोई भी साधन नहीं है। यह तत्त्व महाभारत-रामायण-काल से ही समस्त भारतीय वाङ्मयों में दुहराया गया है। इतिहास का बाह्यावरण यद्यपि राजवंशों के नामावलियों अथवा रक्त की नदी बहा देनेवाली दुर्भाग्यपूर्ण लड़ाइयों के वृत्तान्त से बना है, फिर भी उसकी आत्मा संस्कृति की स्थापना एवं प्रसार से संबंध रखती है। इसी श्रद्धा से भारत के प्राचीन इतिहास के अध्ययन एवं संशोधन का कार्य स्वातंत्र्योत्तर काल में प्रारंभ हुआ है। उसी परंपरा में 'प्राचीन चरित्रकोश' को एक इतिहास ग्रंथ के रूप में हिन्दी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करने में आज मुझे अपार हर्ष हो रहा है।

'महाभारत में ज्ञान को चर्मचक्षु से बढ़ कर अधिक श्रेष्ठ 'चक्षु' कहा गया है (नास्ति विद्यासमो चक्षुः म. शां. ३१६.६)। प्राचीन भारतीय इतिहास के संबंध में ऐसे ही 'चक्षु' का कार्य करने में इतिहास ग्रंथों से सहायता मिलती है। यदि इस ग्रंथ से इस कार्य की थोड़ी सी भी पूर्ति संभव हो सकी, तो मैं अपने प्रयास को कृतकृत्य समझूँगा।

प्राचीन भारतीय इतिहास--भारतीय इतिहास के पृष्ठ अत्यंत उज्वल हैं। जब इजिप्त, रोम आदि पश्चिमी सभ्यताओं का जन्म भी नहीं हुआ था, उस समय यहाँ की सभ्यता एवं संस्कृति चर्मोत्कर्ष पर थी। ईसा से हजारों वर्ष पूर्व का भारतीय इतिहास वैदिक, पौराणिक, बौद्ध एवं जैन साहित्य में उपलब्ध है। भारत का परंपरागत इतिहास चंद्रगुप्त मौर्य से प्रारंभ माना जाता है, तथा भारत का पहला सम्राट वही माना जाता है। उसके उत्तरकालीन अनेकानेक शिलालेख, ताम्रपत्र तथा अन्य साहित्य विविध रूपों में उपलब्ध हैं, जो इतिहास लेखन को सुलभ बनाते हैं। किंतु चंद्रगुप्त मौर्य के पूर्वकालीन इतिहास की सामग्री वैदिक, पौराणिक, बौद्ध एवं जैन साहित्य मात्र में ही उपलब्ध है।

इस लिए हमारे परंपरागत वेद, पुराण एवं बौद्ध-जैन आदि के धार्मिक ग्रंथ केवल धार्मिक साहित्य ही नहीं हैं, बल्कि उनमें इतिहास की भी प्रचुर उपयोगी सामग्रियाँ संचित हैं। यह तथ्य अब सभी विद्वानों द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। उपरोक्त साहित्य में राजनैतिक, भौगोलिक एवं ऐतिहासिक ही नहीं, वरन् सांस्कृतिक, सामाजिक एवं आध्यात्मिक सभी प्रकार की शोध सामग्रियाँ उपलब्ध हैं।

मैक्स मूलर, रॉथ, ओल्डेनबर्ग आदि ने वैदिक साहित्य के, पार्गिटर, हाज़रा आदि ने पौराणिक साहित्य के, डॉ. रामकृष्ण भाण्डारकर, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल आदि ने पाणीनीय व्याकरण के, एवं डॉ. राईस डेविडज् ने बौद्ध साहित्य के संबन्ध में युगप्रवर्तक संशोधन पिछली शताब्दी में किये हैं, एवं इन्हीं संशोधक विद्वानों के अथक परिश्रम के कारण इन ग्रन्थों का अद्वितीय महत्त्व भारतीय इतिहास की सामग्री के लिए सिद्ध हो चुका है।

आधुनिक दृष्टिकोण की आवश्यकता--यद्यपि प्राचीन भारतीय साहित्य में संचित सामग्री अत्यंत महत्त्वपूर्ण है, फिर भी उनका विश्लेषण एवं समीक्षा आधुनिक इतिहास संशोधन की तर्कपूर्ण दृष्टि से यदि नहीं किया जाय तो उनका वर्तमान युग में कोई महत्त्व नहीं रह जाता है। इस महत्त्वपूर्ण सिद्धान्त का प्रतिपादन भी उपर्युक्त विद्वानों के द्वारा ही किया गया है। इस प्रकार इन ग्रन्थों के अध्ययन का एक नया युग उपर्युक्त संशोधकों के संशोधन के कारण प्रारंभ हुआ है।

किसी भी देश का इतिहास प्रायः व्यक्ति चरित्रात्मक रहता है। इसी कारण इतिहास में निर्दिष्ट व्यक्तियों का सर्वांगीण अध्ययन करना इतिहास के अध्ययन का एक सब से अधिक लाभप्रद मार्ग हैं, यह तथ्य इतिहास के अध्येताओं एवं संशोधकों के बीच प्रस्थापित हो

चुका है। इसी ऐतिहासिक सामग्री को आधुनिक इतिहाससंशोधन की दृष्टि से जाँच कर, एवं इनसे संबंधित आज तक हुए महत्त्वपूर्ण शोध का यथायोग्य उपयोग कर 'प्राचीन चरित्रकोश' आज पाठकों के समक्ष प्रस्तुत किया जा रहा है। प्राचीन भारतीय व्यक्तिविषयक सामग्री को इतने व्यापक, परिपूर्ण एवं प्रामाणिक संदर्भों सहित संकलित करनेवाला भारतीय भाषाओं में यह सर्व प्रथम कोश कहा जा सकता है।

प्राचीन चरित्रकोश—इस ग्रन्थ में वेद, स्मृति, पुराण आदि प्राचीन भारतीय साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों के जीवनचरित्र, एवं तद्विषयक संदर्भसहित सामग्री अकारादि क्रम से एवं सप्रमाण प्रस्तुत की गयी हैं। इस ग्रन्थ में संग्रहित चरित्रों की संख्या लगभग बारह हजार से भी अधिक है, एवं उनमें राजा, ऋषि, रानी, ऋषि-पत्नी, देवता, पितर, नाग, सर्प, यक्ष, राक्षस, गंधर्व, किन्नर, भूत, अप्सरा, राजनीतिज्ञ, सूत्रकार, धर्मशास्त्रकार, गोत्रकार, मंत्रकार आदि विभिन्न प्रकार के चरित्रों का समावेश है। व्यक्तिचरित्रों के अतिरिक्त लोक-समूह, जाति-समूह, गणराज्य एवं देशों की जानकारी भी व्यक्तिचरित्रों का ही अंगभूत भाग मान कर दी गयी है।

कालमर्यादा—ऐतिहासिक दृष्टि से इस ग्रंथ की कालमर्यादा यद्यपि चंद्रगुप्त मौर्य तक ही सीमित है, फिर भी वेद, वेदांग एवं पुराणआदि ग्रंथ, जिनके आधार पर इस ग्रन्थ की रचना की गयी है, उनकी कालमर्यादा को ही यहाँ स्वीकार किया गया है। उदाहरणस्वरूप—मत्स्य, वायु आदि पुराणों में चंद्रगुप्त मौर्य के उत्तरालीन 'भविष्यवंशों' की दी गयी जानकारी को इस कोश में समाविष्ट किया गया है।

बौद्ध एवं जैन साहित्य—यद्यपि वेद, पुराण, महाभारत आदि को आधार मान कर इस ग्रन्थ की रचना की गयी हैं, फिर भी इन ग्रन्थों में अनुपलब्ध गौतम बुद्ध, वर्धमान महावीर, सिकंदर आदि व्यक्तियों, एवं उनके समकालीन अन्य लोगों की जानकारी समकालीनत्व के कारण इस ग्रन्थ के परिशिष्ट में सम्मिलित की गयी हैं। पौराणिक राजाओं एवं ऋषियों की जानकारी उनके वंशों के जानकारी के विना अर्थहीन प्रतीत होती हैं। इसी कारण इन वंशों की सविस्तृत जानकारी भी परिशिष्ट में दी गयी है। व्यक्तियों एवं ग्रन्थों के कालनिर्णय से संबंधित एक स्वतंत्र परिशिष्ट भी अंत में जोड़ दिया गया है।

हम आशा करते हैं कि, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति के प्रत्येक विद्यार्थी, जिज्ञासु, संशोधक एवं सर्वसाधारण पाठक के लिए यह ग्रन्थ अत्यधिक उपादेय सिद्ध होगा।

आभारप्रदर्शन—इस ग्रन्थ का मराठी संस्करण आज से बत्तीस वर्ष पूर्व प्रकाशित हुआ था, और मराठीभाषियों के बीच अत्यंत लोकप्रिय हुआ था। मराठी में प्रकाशित 'प्राचीन चरित्रकोश' के इस परिवर्धित और परिमार्जित हिन्दी संस्करण में मूल मराठी ग्रन्थ से अधिक ५५० पृष्ठों की जानकारी दी गयी है।

भारत सरकार एवं महाराष्ट्र सरकार के शिक्षा-मंत्रालयों के आर्थिक सहयोग से ही इतने परिवर्धित रूप में यह ग्रंथ आज प्रकाशित हो सका है। इसलिए मैं उनका एवं विशेष कर केंद्रीय सरकार के हिन्दी-निदेशालय का आभारी हूँ।

भारत सरकार के उपशिक्षामंत्री माननीय श्री. भक्तदर्शन ने 'पुरस्कार' लिख कर इस ग्रंथ का गौरव बढाया है, इस लिए मैं उनका अत्यंत आभारी हूँ।

इस ग्रंथ के सृजन के हर स्तरों पर भारतीय चरित्रकोश मण्डल के कार्यकारिणी के अध्यक्ष श्री. पाण्डुरङ्ग जयराव चिन्मलगुन्द, आइ. सी. एस्. एवं मण्डल के हिन्दी विभाग के प्रमुखपरामर्शकार डॉ. भगीरथ मिश्र एम. ए., पी. एच. डी. से महत्त्वपूर्ण सहायता मिली है, जिनकी कृतज्ञता ज्ञापन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।

मण्डल के अन्य सदस्य श्री. के. पां. जोशी, वकील, डॉ. ग. रं. धडफले एवं श्री. वसंत अ. गाडगील का इस ग्रंथ के निर्माण में महत्त्वपूर्ण सहयोग रहा है।

इस ग्रंथ के निर्माण में प्रा. गोवर्धन परीख, रेक्टर, बम्बई विश्वविद्यालय, तर्कतीर्थ श्री. लक्ष्मणशास्त्री जोशी, अध्यक्ष, महाराष्ट्रराज्य साहित्य संस्कृति मंडळ, श्री. चिं. रा. बोंद्रे, डॉ. वा. वि. मिराशी, श्री. बा. ना. तडवलकर, एवं डॉ. ना. कृ. भिडे, नयी दिल्ली के रचनात्मक सुझाव उपयोगी रहे।

इस ग्रंथ के अनुवादकार्य में प्रा. सुधारक रामचंद्र गोलवलकर, एम. ए., राजकुमार कॉलेज, रायपुर का सहयोग उल्लेखनीय है। प्रा. चारुचन्द्र द्विवेदी, एम. ए. एवं श्री. बलिराम सिंह के योगदान भी उपयोगी रहे।

इस ग्रन्थ के पुनर्लेखन, संपादन एवं मुद्रण के कार्य में चरित्रकोश मण्डल के श्री. विनायक चित्राव, श्री. अरविंद जामखेडकर एम्. ए., श्रीमती विद्या चित्राव, बी. ए., एवं कुमारी कुंदा जामखेडकर के अथक परिश्रम के फल-

स्वरूप ही यह ग्रन्थ इस रूप में आ पाया है। मैं इन सभी सहयोगियों का हृदय से आभारी हूँ।

ग्रन्थ की रूपसज्जा के लिए साधना प्रेस पूना के श्री. ह. म. गद्रे, श्री. वि. नी. पटवर्धन एवं श्री. दत्तोबा टिळे मेरे धन्यवाद के पात्र हैं।

अंत में, सन १९६१ ई. के मूठा नदी के पानशेत बाढ़ का उल्लेख कर देना अनावश्यक नहीं होगा, जिसमें भारतीय चरित्रकोश मण्डल को डेढ लाख से भी अधिक मूल्य की क्षति उठानी पड़ी। इस बाढ़ में मण्डल की दुर्लभ ग्रंथ सामग्रियों के अतिरिक्त 'प्राचीन स्थलकोश' की पाण्डुलिपि भी नष्ट हो गयी। महाराष्ट्र सरकार एवं अनेकानेक हितैषियों के सहयोग से मण्डल के पुनरुत्थान का प्रयत्न जो पिछले तीन वर्षों में हुआ है, इस ग्रंथ का प्रकाशन उसकी एक कड़ी मात्र है। निकट भविष्य में ही 'प्राचीन स्थलकोश' भी प्रकाशित होगा, ऐसी मैं आशा रखता हूँ। इस पुनरुत्थानकार्य में सहायता पहुँचानेवाले हर व्यक्ति का मैं सदैव ऋणी रहूँगा।

भारतीय चरित्रकोश मण्डल
पूना ४.
५-११-१९६४ } सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव

कोश कैसे देखें ?

(१) इस कोश में वेद, उपवेद, पुराण, उपनिषद् आदि प्राचीन साहित्य में निर्दिष्ट व्यक्तियों के जीवन-चरित्र वर्णमाला के क्रम से दिये गये हैं। इन साहित्यों में निर्दिष्ट प्राचीन भारतीय इतिहास चंद्रगुप्त मौर्य के राज्यकाल तक निर्दिष्ट है। इसी कारण, प्रागैतिहासिक काल से चंद्रगुप्त मौर्य तक के व्यक्तियों के जीवनचरित्र इस कोश में दिये गये हैं। फिर भी इस कोश की काल-मर्यादा अधिकतर प्राचीन भारतीय साहित्य से संबद्ध है। इसी कारण उस साहित्य में निर्दिष्ट चंद्रगुप्त मौर्य के उत्तरकालीन कई व्यक्तियों के जीवनचरित्र भी पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट होने के कारण समाविष्ट किये गये हैं।

इसी काल में समाविष्ट होनेवाले गौतम बुद्ध, वर्धमान महावीर एवं सिकंदर के एवं उनके समकालीन व्यक्तियों के जीवनचरित्र क्रमशः परिशिष्ट १, २, ३ में दिये गये हैं (पृष्ठ १११७-११३८)।

(२) इस कोश में व्यक्तियों के जीवनचरित्र के साथ प्राचीन साहित्य में निर्दिष्ट जातिसमूह, मानवसमूह, देवता-समूह, यक्ष, राक्षस, वानर आदि के चरित्र भी सम्मिलित किये गये हैं।

(३) उपर्युक्त सभी समूहों की जानकारी उनके परि-वार एवं वंशों की जानकारी के बिना अपूर्ण सी प्रतीत होती है। इसी कारण, इन सारे समूहों के वंशों की सविस्तृत जानकारी परिशिष्ट ४,५,६ में दी गयी है (पृष्ठ ११३९-११६९)।

(४) हर एक व्यक्ति की जानकारी देते समय उसके निवासस्थान, कालनिर्णय एवं कर्तृत्व की समीक्षा पर विशेष जोर दिया गया है। इनके कालनिर्णय की जानकारी के लिए कालनिर्णयकोश का स्वतंत्र परिशिष्ट (परिशिष्ट ७) दिया गया है, जिसमें व्यक्ति एवं काल-निर्णय के ग्रंथों के संबंध में उपलब्ध जानकारी संक्षिप्त रूप में दी गयी है (पृष्ठ ११६९-११८०)।

व्यक्तियों के कर्तृत्व का यथायोग्य मूल्यमापन करने के लिए उनका ग्रंथकर्तृत्व, तत्त्वज्ञान, संवाद, पूर्वाचार्य, शिष्यपरंपरा, युद्धकर्तृत्व आदि की सविस्तृत जानकारी दी गयी हैं। जहाँ आवश्यक समझा गया वहाँ रामायण, महाभारत एवं पौराणिक साहित्य आदि मूल ग्रंथों के उद्धरण भी अर्थ के सहित दिये गये है। विशेष स्पष्टीकरण के लिए २४ तालिकाएँ भी ग्रंथ में समाविष्ट की गयी हैं, जिनकी अनुक्रमणिका ग्रंथ के आरंभ में ही प्राप्य है।

(५) जैसे पहले ही कहा जा चुका है, इस ग्रंथ में दिये गये व्यक्तिचरित्र, वर्णमाला के क्रम से दिये गये हैं। कोश के प्रायः सभी आधारभूत ग्रंथ संस्कृत भाषा के होने के कारण, इस ग्रंथ का सारा वर्णानुक्रम संस्कृता-नुसार रखा गया है। लिपि एवं अंकक्रम देवनागरी पद्धति से दिये गये हैं।

वर्णमाला के हर एक वर्गों के अक्षरों के पूर्व के अनुस्वार उसी वर्ग के अनुनासिक ही होंगे, यह मान कर व्यक्ति चरित्रों का क्रम रखा गया है। किन्तु छपाई की

सुविधा के लिए सर्वत्र अनुस्वार का प्रयोग किया गया है (उदा. 'अंग', 'विभांडक')।

य, र, ल, व, श, ष, स— इनके पहले आनेवाले अनुस्वार, तथा श, ष, स, ह इन अक्षरों के पूर्व में आनेवाले विसर्गयुक्त शब्द, हर एक वर्ण के पहले अनुस्वार एवं विसर्ग, इस क्रम से दिये गये हैं। 'क्ष' का अंतर्भाव 'क' वर्ण में, एवं ज्ञ का अंतर्भाव 'ज' वर्ण में किया गया है।

(६) व्यक्तिनामों के मूलशब्द चरित्र के प्रारंभ में मोटे अक्षरों में दिये हैं, एवं उनके पाठभेद भी वहाँ कोष्ठक में दिये गये हैं। पाटभेद जब एक से अधिक संख्या में प्राप्त है, वहाँ उनका स्वतंत्र निर्देश भी चरित्र के सर्वप्रथम परिच्छेद में दिया गया है।

(७) व्यक्तिनामों के बाद कोष्ठक में दिये गये 'सो. कुरु,' 'सो. पूरु' जैसे 'संकेत' वंश से संबंधित है, जिनका सविस्तृत स्पष्टीकरण एवं संदर्भ अंत में दिये गये परिशिष्ट ४ एवं ५ (पृष्ठ ११३९-११६५) में प्राप्त हैं।

(८) इस कोश में चरित्रों की जानकारी प्रायः मातापिता, जन्म, शिक्षा, विवाह, कार्य, वैशिष्ट्य, परिवार, ग्रंथपरिचय, वंशावलि, गोत्रकार आदि के क्रम से दी गयी है। संबंधित प्राचीन साहित्य में प्राप्त संदर्भ वहीं के वहीं निर्दिष्ट किये गये हैं।

(९) इस ग्रंथ के चरित्र, सर्वप्रथम वैदिक सामग्री, एवं बाद में पौराणिक साहित्य में प्राप्त सामग्री पर आधारित प्रस्तुत किये गये हैं। इस प्रकार चरित्रों में प्राप्त विवरण ऋग्वेदसंहिता, अन्य वैदिकसंहिता, उपनिषद, सूत्र, वेदांग, वायु, ब्रह्मांड आदि प्राचीनतर पुराण, एवं पद्म, स्कंद आदि उत्तरकालीन पुराण इस क्रम से दिये गये हैं।

(१०) एक ही नाम के अनेक व्यक्तियों को उनके कालक्रम के अनुसार २,३,४ अंकों के साथ प्रस्तुत किया गया है।

(११) जानकारी एवं विवरण की पुनरावृत्ति से बचने के लिए अथवा परस्परसंबंध एवं साम्यता दिखाने के लिए 'विशिष्ट शब्द देखिये' ऐसा निर्देश कोष्ठकों में किया गया है।

(१२) 'पुत्र' इस शब्द का प्रयोग 'उत्तराधिकारी' के रूप में किया गया है। मातृक एवं पैतृक ये विशेषण नाम की व्युत्पत्ति के अनुसार प्रयुक्त किये गये हैं। किंतु इस संबंध में सारी जानकारी केवल तर्काधिष्ठित ही हो सकती है।

(१३) जातिसमूह एवं व्यक्ति के नाम जहाँ एकसरीखे हों, वहाँ दोनों की जानकारी स्वतंत्र रूप से प्रस्तुत की गयी है।

(१४) प्रायः सभी व्यक्तिचरित्र उनके मूल संस्कृत नाम से प्रस्तुत किये गये हैं, किंतु व्यक्तियों के मूल संस्कृत नाम जहाँ अनुपलब्ध हैं, वहाँ उनके उपलब्ध नाम से ही जानकारी प्रस्तुत की गयी है। उदाहरण में निम्नलिखित नामों का निर्देश किया जा सकता है:—अहीना आश्वत्थ्य, तोंडमान, बम्बाविश्वावयस् आदि।

(१५) इस ग्रंथ के लिए प्रयुक्त आधारग्रंथ, उनके संस्करण, एवं उनके लिए कोश में प्रयुक्त किये गये संकेत ग्रंथ के आरंभ में दिये गये हैं।

(१६) ग्रंथ के अंत में व्यक्तिसूचि एवं विषयसूचि दी गयी है, जिस में प्रमुख व्यक्तियों एवं विषयों की जानकारी संकलित की गयी है।

आधार ग्रंथ, उनके लिए प्रयुक्त संकेत एवं संस्करण

संकेत	संपूर्ण नांव	संस्करण
अग्नि.	अग्निपुराण	आनंदाश्रम, पूना
अध्या. रा.	अध्यात्मरामायण	गोरखपुर
अ. प्रा.	अथर्वप्रतिशाख्य	ह्विटनेप्रत
अ. रा.	अद्‌भुतरामायण (उत्तर कांड)	मोदवृत्त प्रेस, आवृत्ति तीसरी
अ. वे.	अथर्ववेद	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
आदि.	आदिपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
आप. ध.	आपस्तंबधर्मसूत्र	विद्यामुद्राक्षरशाला
आ. ध.		कुंभकोणम्
आप. श्रौ.	आपस्तंबश्रौतसूत्र	क्रिष्टल संस्करण
—आ. रा.	आनंदरामायण	
—सार.	१—सारकांड	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
--यात्रा.	२--यात्राकांड	
याग.	३--यागकाड	
--विलास.	४--विलासकांड	
--जन्म.	५--जन्मकांड	
--विवाह.	६--विवाहकांड	
--राज्य.	७--राज्यकांड	
— १	— --(पूर्वा)	
— २	-- --(उत्तरार्ध)	
--मनोहर.	८—मनोहरकांड	
—पूर्ण.	९—पूर्णकांड	
आश्व. गृ.	आश्वलायन गृह्यसूत्र	निर्णयसागर प्रेस
आश्व. श्रौ.	आश्वलायन श्रौतसूत्र	आनंदाश्रम पूना
आ. ब्रा.	आर्षेणब्राह्मण	बर्नेलप्रत
ई. उ.	ईशावास्य उपनिषद्	अष्टेकर मंडली
ऋ.	ऋग्वेद	मॅक्स मुल्लर २री आवृत्ति
ऋ. प्रा.	ऋग्वेदप्रातिशाख्य (सूत्रांक, क्वचित् पटल एवं श्लोक)	मॅक्स मुल्लर संस्करण
ऐ. आ.	ऐतरेय आरण्यक	आनंदाश्रम
ऐ. उ.	ऐतरेय उपनिषद्	आनंदाश्रम
ऐ. ब्रा.	ऐतरेयब्राह्मण	आनंदाश्रम
क. उ.	कठ उपनिषद्	अष्टेकर मंडली
क. सं.	कठसंहिता	लिपझिक, १९१२
कापि: सं.	कापिष्ठलसंहिता	
कालि.	कालिकापुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
कूर्म.	कूर्मपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
के. उ.	केन उपनिषद्	
कै. उ.	कैवल्य उपनिषद्	
कौ.	कौशिकसूत्र	अमेरिकन ओरि.सो.सी.
कौ. अ.	कौटिल्यकृत अर्थशास्त्र	
कौ. उ.	कौषीतकि उपनिषद्	
खा. गृ.	खादिर गृह्यसूत्र	
खा. श्रौ.	खादिर श्रौतसूत्र	म्हैसूर सीरीज
गणेश.	गणेशपुराण	मोदवृत्त मुद्रणालय, शक १८२८
गरुड.	गरुडपुराण	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
ग. सं.	गर्गसंहिता	श्रीवेंकटेश्वर प्रेस
गो. गृ.	गोभिल गृह्यसूत्र	
गो. ब्रा.	गोपथ ब्राह्मण	बिब्लिओथिका इंडिका

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
गौ. गृ.	गौतम गृह्यसूत्र	आनंदाश्रम
गौ. ध.	गौतम धर्मसूत्र	,,
छां. उ.	छांदोग्य उपनिषद्	,,
जै. अ.	जैमिनि अश्वमेध	पुराण-प्रकाशक मंडल, वाई
जै. उ. ब्रा.	जैमिनीय उपनिषद्-ब्राह्मण	लाहोर, १९२१
जै. गृ.	जैमिनिगृह्यसूत्र	पंजाब संस्कृत सीरीज
—१	—पूर्वार्ध	
—२	—उत्तरार्ध	
जै. ब्रा.	जैमिनीय ब्राह्मण	
तां. ब्रा.	तांड्य ब्राह्मण (इसे पंच-विंश, एवं प्रौढ ब्राह्मण भी कहते है)	चौखम्बा
तै. आ.	तैत्तिरीय आरण्यक	आनंदाश्रम
तै. उ.	तैत्तिरीय उपनिषद्	आनंदाश्रम
तै. प्रा.	तैत्तिरीय प्रतिशाख्य	म्हैसूर सीरीज
तै. ब्रा.	तैत्तिरीय ब्राह्मण	आनंदाश्रम
तै. सं.	तैत्तिरीयसंहिता	आनंदाश्रम
दे. भा.	देवी भागवत	
द्रा. श्रौ.	द्राह्यायण श्रौतसूत्र	
ना. उ.	नारायण उपनिषद्	आनंदाश्रम, पूना।
नारद.	नारद पुराण	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई।
–१	–पूर्व भाग	
–२	–उत्तर भाग	
नि.	निरुक्त	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई।
नृसिंह.	नृसिंहपुराण	गोपाळ नारायण प्रेस।
पद्म.	पद्मपुराण	वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई;
–सृ.	१–सृष्टिखंड	आनंदाश्रम (क्वचित)
–भू.	२–भूमिखंड	
–स्व.	३–स्वर्गखंड	
–ब्र.	४–ब्रह्मखंड	
–पा.	५–पातालखंड	
–उ.	६–उत्तरखंड	
–क्रि.	७–क्रियायोग	
पं. ब्रा.	पंचविंश ब्रह्मण	
परा. मा.	पराशर माधव	निर्णयसागर प्रेस, बंबई

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
पा. गृ.	पारस्कर गृह्यसूत्र	गुजराथ प्रेस, बंबई. १९१७
पा. सू.	पाणिनिसूत्र–अध्याय, पाद, सूत्र	
प्र. उ.	प्रश्न उपनिषद्	आनंदाश्रम, पूना
बृ. उ.	बृहदारण्यक उपनिषद् (काण्व)	
बृहद्दे.	बृहद्देवता	राजेंद्रलाल मित्र
ब्रह्म. सू.	ब्रह्मसूत्र	
बौ. ध.	बौधायन श्रौतसूत्र	
ब्रह्म.	ब्रह्मपुराण	आनंदाश्रम, पूना
ब्रह्मवै.	ब्रह्मवैवर्तपुराण	आनंदाश्रम, पूना
–१	ब्रह्मखंड	
–२	प्रकृति खंड	
–३	गणपति खंड	
–५	कृष्णजन्म खंड	
ब्रह्मांड.	ब्रह्मांड पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई
–१	—प्रक्रियापाद	
–२	––अनुषंगपाद	
–३	––उपोद्घात पाद	
–४	––उपसंहार पाद	
भवि.	भविष्यपुराण	वेंकटेश्वर प्रेस बंबई
–ब्रह्म	१––ब्राह्मपर्व	
–मध्यम	२––मध्यमपर्व	
–प्रति	३—प्रतिसर्गपर्व	
–उत्तर	४––उत्तरपर्व	
भवि उ.	भविष्योत्तर पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई
भा.	भागवत	निर्णयसागर प्रेस श्रीधरी एवं विजयध्वजी टीकाओं का उपयोग भी किया गया है; गोरखपुर संस्करण
भा. श्रौ.	भारद्वाजश्रौतसूत्र	
भा. सा.	भारतसावित्री	चित्रशाला प्रेस, पूना
म.	महाभारत	भांडारकर संहिता। (*चिन्ह से भांडारकर संहिता के पाठभेद में दिये गये श्लोकों का निर्देश अभिप्रेत है। महाभारत के कुंभकोणम्, कलकत्ता, मुंबई एवं चित्रशाला प्रेस पूना के द्वारा प्रकाशित संस्करणों का उपयोग भी किया गया है। इनमें से चित्रशाळा संस्करण में नीलकंठ चतुर्धर टीका प्राप्त है। अनुशासनपर्व के सारे संदर्भ चित्रशाला संस्करण के लिये गये है।
–आ.	१–आदिपर्व	
–स.	२–सभापर्व	
–व.	३–वनपर्व	
–वि.	४–विराटपर्व	
–उ.	५–उद्योगपर्व	
–भी.	६–भीष्मपर्व	
–द्रो.	७–द्रोणपर्व	
–क.	८–कर्णपर्व	
–श.	९–शल्यपर्व	
–सौ.	१०–सौतिकपर्व	
–स्त्री.	११–स्त्रीपर्व	
–शां.	१२–शान्तिपर्व	
–अनु.	१३–अनुशासनपर्व	
–आश्व.	१४–आश्वमेधिकपर्व	
–आश्र.	१५–आश्रमवासिक पर्व	
–मौ.	१६–मौसलपर्व	
–महा.	१७–महाप्रस्थानिकपर्व	
–स्व.	१८–स्वर्गारोहणपर्व	
मत्स्य.	मत्स्यपुराण	आनंदाश्रम, पूना
महा.	महाभाष्य १-३ खंड,	कीलहार्न संस्करण
मां. उ.	मांडूक्य उपनिषद्	
मा. गृ.	मानव गृह्यसूत्र	
मार्क.	मार्कंडेय पुराण	मोदवृत्त प्रेस, एवं पार्गिटर का इंग्रजी अनुवाद
मा. श्रौ.	मानवश्रौतसूत्र	
मिता.	मिताक्षरा	याज्ञवल्क्य स्मृति पर आधारित
मुं. उ.	मुंडक उपनिषद्	आनंदश्रम, पूना
मुद्गल.	मुद्गल पुराण	हस्तलिखित
मै. उ	मैत्री उपनिषद्	
मै. सं.	मैत्रायणी संहिता	
याज्ञ.	याज्ञवल्क्य स्मृति	निर्णयसागर
यो. वा.	योगवासिष्ठ	
र. वं.	रघुवंश	निर्णयसागर
रेणु.	रेणुकामाहात्म्य	हस्तलिखित
ला. श्रौ.	लाट्यायन श्रौतसूत्र	वाल्मीकि प्रेस कलकत्ता
लिंग.	लिंगपुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
व. ध.	वसिष्ठ धर्मसूत्र	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
वं ब्रा.	वंश ब्राह्मण	कलकत्ता
वराह.	वराहपुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
वामन.	वामनपुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
–१	–पूर्वार्ध	
–२	–उत्तरार्ध	
वायु.	वायुपुराण	आनंदाश्रम, पूना.
वा. रा.	वाल्मीकि रामायण	
–बा.	१–बालकांड	
–अयो.	२–अयोध्याकांड	
–अर.	३–अरण्यकांड	
–कि.	४–किष्किंधाकांड	
–सुं.	५–सुंदरकांड	
–यु.	६–युद्धकांड	
–उ.	७–उत्तरकांड	
वारा. श्रौ.	वाराह श्रौतसूत्र	
वा. सं.	वाजसनेय संहिता	महीधर उवट भाष्य, निर्णयसागर प्रेस.
विष्णुधर्म.	विष्णुधर्मोत्तर पुराण	श्री वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.
वै. श्रौ.	वैखानस श्रौतसूत्र	
श. ब्रा.	शतपथ ब्राह्मण (माध्यंदिन)	वेबर संस्करण, अनुवाद जे. एगलिंग (सेक्रेड बुक्स ऑफ दि ईस्ट)
शा.	(अभिज्ञान) शाकुंतल	निर्णयसागर प्रेस, बंबई
शिव.	शिवपुराण	श्यामकाशी प्रेस, मथुरा
–विद्या	१. विद्येश्वर संहिता	
–रुद्र	२. रुद्र संहिता	
—सृ.	(अ) सृष्टि खंड	
—स.	(आ) सती खंड	
—पा.	(इ) पार्वती खंड	
—कु.	(ई) कुमार खंड	
—यु.	(उ) युद्ध खंड	
–शत.	(३) शतरुद्रसंहिता	
–कोटि.	(४) कोटिरुद्रसंहिता	
–उमा	(५) उमासंहिता	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
–पू.	(अ) पूर्वार्ध	
–उ.	(आ) उत्तरार्ध	
–कैलास	(६) कैलाससंहिता	
–वायवीय	(७) वायवीयसंहिता	
शु. प्रा.	शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य	चौखंबा संस्कृत सीरीज वाराणसी
श्वे. उ.	श्वेताश्वतर उपनिषद	आनंदाश्रम, पूना
ष. ब्रा.	षड्विंश ब्राह्मण	
स. गृ.	सत्याषाढ गृह्यसूत्र	
स. श्रौ.	सत्याषाढ श्रौतसूत्र	आनंदाश्रम, पूना
सां. आ.	सांख्यायन आरण्यक	आनंदाश्रम, पूना.
सां. गृ.	सांख्यायन गृह्यसूत्र	ओल्डेनबर्ग (सेक्रेड बुक्स ऑफ दी ईस्ट)
सां. ब्रा.	सांख्यायन ब्राह्मण	
सां. श्रौ.	सांख्यायन श्रौतसूत्र	
साम.	सामवेद	
सांब.	सांबपुराण	श्री. वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई
सू. सं.	सूतसंहिता	आनंदाश्रम, पूना.
स्कंद.	स्कंदपुराण	
–माहेश्वर	(१) माहेश्वर खंड	
–१	(अ) केदारखंड	
–२	(आ) कौमारिका खंड	
–३	(इ) अरुणाचल महात्म्य	
	–१. पूर्वार्ध	
	–२. उत्तरार्ध	
–वैष्णव	(२) वैष्णव खंड	
–१	(अ) वेंकटाचल माहात्म्य	
–२	(आ) जगन्नाथक्षेत्र माहात्म्य	
–३	(इ) बदरिकाश्रम माहात्म्य	
–४	(ई) कार्तिकमासमाहात्म्य	
–५	(उ) मार्गशीर्षमसमाहात्स्य	
–६	(ऊ) श्रीमद्भागवतमाहात्म्य	
–७	(ओ) वैशाखमासमाहात्म्य	
–८	(औ) अयोध्यामाहात्म्य	
–९	(अं) वासुदेवमाहात्म्य	
–ब्रह्म	(३) ब्रह्म खंड	
–१	(अ) सेतुमाहात्म्य	
–२	(आ) धर्मारण्यखंड	

संकेत	संपूर्ण नाम	संस्करण
-३	(इ) ब्रह्मोत्तरखंड	
-काशी	(४) काशी खंड	
-१	(अ) पूर्वार्ध	
-२	(आ) उत्तरार्ध	
-अवंती	(५) अवंती खंड	
-१	(अ) अवंतीक्षेत्रमाहात्म्य	
-२	(आ) चतुरशीतिलिंगमाहात्म्य	
-३	(इ) रेवाखंड	
-नागर	(६) नागर खंड	
-प्रभास	(७) प्रभास खंड	
-१	(अ) प्रभासक्षेत्रमाहात्म्य	
-२	(आ) वस्त्रापथक्षेत्रमाहात्म्य	
-३	(इ) अर्बुदाचलमाहात्म्य	
-४	(ई) द्वारकामाहात्म्य	
स्मृतिचं.	स्मृतिचंद्रिका	
ह. वं.	हरिवंश	चित्रशाळा प्रेस, पूना
-१	(अ) हरिवंशपर्व	
-२	(आ) विष्णुपर्व	
-३	(इ) भविष्यपर्व	

अंग्रेजी आधारग्रंथ

(1) **Altindische Leben**—H. Zimmer, 1879, Berlin.

(2) **Ancient Indian Historical Tradition**—F. E. Pargiter. Delhi.

(3) **Cambridge History of India, Vol. I**—E. G. Rapson. 1922, Cambridge

(4) **Catalogous Catalogorum**—Theodore Aufrecht.

(5) **Chronology of Ancient India**—Dr. Sitanath Pradhan.

(6) **Concordance of Principle Upanishadas**—Col. A. A. Jacob.

(7) **Constructive Survey of Upanishadic Philosophy**—Dr. R. D. Ranade.

(8) **Dharmasutras of Apastamba, Gautama, Vasista and Baudhayana**—G. Buhler, Sacred Books of the East Vols. II and XIV.

(9) **Dictionary of Pali Proper Names (2 Vols.)**–G. P. Malalasekhara. 1960, London.

(10) **Geographical and Economic Studies in the Mahabharata—Upayana Parva**—Dr. Motichandra.

(11) **Grihyasutras of Sankhyayana, Ashwalayana, Paraskara, Khadir, Gobhila, Hiranyakeshin and Apastamba**—H. Oldenberg, Sacred Books of the East, Vols. XXIX and XXX.

(12) **History and Culture of Indian People, Vol. I—Vedic Age**—Dr. R. C. Majumdar, 1948, Bombay.

(13) **History of Ancient Sanskrit Literature**—Max Muller. 1912, Allahabad.

(14) **History of Dharmashastra, Vols. I-V**—Dr. P. V. Kane. Poona.

(15) **History of Indian Literature**—Dr. Albrecht Weber.

(16) **History of Indian Literature, Vol. I—Vedic Age**—M. Winternitz, 1927, Calcutta.

(17) **History of Sanskrit Literature**—A. A. Macdonell.

(18) **History of Sanskrit Literature**—C. V. Vaidya. 1930, Poona.

(19) **Index to the Names in Mahabharata**—S. Sorenson. 1960, Delhi.

(20) **India as described by Early Greek Writers**—B. N. Puri.

(21) **Kautilya's Arthashastra**—R. Shamashastri. 1961, Mysore

(22) **Markandeya Purana (English Translation with Notes)**—F. E. Pargiter.

(23) **Political History of Ancient India**—H. C. Raychaudhari. Calcutta.

(24) **Purana Index**—H. V. R. Dikshitar. Madras.

(25) **Puranic Dyanasties of Kali Age**—F. E. Pargiter. Benaras.

(26) **Studies in Epics and Puranas**—Dr. A. D. Pusalkar. Bombay.

(27) **Studies in Indian Antiquities**—H. C. Raychaudhari. 1958, Calcutta.

(28) **Studies in the Puranic Records on Hindu Rites and Customs**—Dr. R. C. Hazra. Calcutta.

(29) **Studies in the Upapuranas**—Dr. R. C. Hazra.

(30) **Twenty-five Hundred Years of Buddhism**—Ed. Dr. P. V. Bapat.

(31) **Vaishnavism and Shaivism**—Dr. R. G. Bhandarkar. Poona.

(32) **Vedic Index (2 Vols.)**—Dr. A. A. Macdonell & Dr. A. B. Keith. Benaras.

(33) **Vedic Mythology**—Dr. A. A. Macdonell. Benaras.

(34) **Vedische Studien**—R. Pischel and K. F. Geldner.

(35) **Vishnu Purana**—A System of Hindu Mythology and Tradition—H. H. Wilson. 1961, Calcutta.

अंग्रेजी संशोधन–पत्रिका

A.B.O.R.I.—**Annals of Bhandarkar Oriental Research Institute,**

I.A.—**Indian Autiquary.**

J.A.S.B.—**Journal of Asiatic Society of Bombay.**

J.R.A.S.–**Journal of Royal Asiatic Society of Great Britain.**

हिंदी आधारग्रंथ

(१) इतिहास प्रवेश–जयचंद्र विद्यालंकार, १९५७

(२) पाणिनिकालीन भारतवर्ष —डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल

(३) प्राकृत साहित्य का इतिहास–डॉ. जगदीशचंद्र जैन, १९६० वाराणसी

(४) भारतीय इतिहास–एक दृष्टि—डॉ. ज्योतिप्रसाद जैन, १९६१ वाराणसी

(५) भारतीय इतिहास की रूपरेखा—जयचंद्र विद्यालंकार

(६) महाभारत की नामानुक्रमणिका— गीता प्रेस, गोरखपूर

(७) मार्कंडेय पुराण–एक सांस्कृतिक अध्ययन —डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, १९६१, इलाहाबाद

(८) रामकथा—रे. फादर कामिल बुल्के, १९६२, प्रयाग

(९) वैदिक वाङ्मय का इतिहास—पं. भगवद्दत्त

(१०) शैवमत—डॉ. यदुवंशी, १९५५, पटना

(११) संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास—युधिष्ठिर मीमांसक

(१२) संस्कृत साहित्य का इतिहास—वाचस्पति गेरौला, १९६०, वाराणसी

मराठी आधारग्रंथ

(१) आर्या रामायण-के. वि. गोडबोले पूना
(२) ओरायन ऊर्फ आर्यांचे मूलस्थान-लो. बा. गं. टिळक पूना
(३) उपनिषद्रहस्य-डॉ. रा. द. रानडे पूना
(४) गीतारहस्य-लो. बा. गं. टिळक पूना
(५) दत्त सांप्रदायाचा इतिहास-रा. चिं. ढेरे पूना
(६) धर्मरहस्य--के. ल. दप्तरी नागपूर
(७) पुराण निरीक्षण-त्र्यं. गु. काळे पूना
(८) भारतीय ज्योतिषशास्त्राचा इतिहास-शं. बा दिक्षित पूना
(९) भारतीय युद्धकाल निर्णय-के. ल. दप्तरी नागपूर
(१०) महाभारताचा उपसंहार-चिं. वि. वैद्य पूना
(११) रामचंद्र कालनिर्णय-के. ल. दप्तरी नागपूर
(१२) रामायण समालोचना-महाराष्ट्रिय पूना
(१३) संशोधनमुक्तावलि-डॉ. वा. वि. मिराशी, नागपूर

अनुक्रमणिका

	पृष्ठ
प्राक्कथन	१
प्रस्तावना	२-४
कोश कैसे देखे ?	४-५
आधारभूत ग्रंथों की नामावलि	५-११
अनुक्रमणिका एवं तालिका अनुक्रमणिका	११-१२
अधिक जानकारी	१२
प्राचीन चरित्रकोश	१-१११५
परिशिष्ट १--श्रीवर्धमान महावीर के समकालीन प्रमुख व्यक्ति	१११७-११२३
परिशिष्ट २--गौतमबुद्ध के समकालीन प्रमुख व्यक्ति	११२३-११३२
परिशिष्ट ३--सिकंदर के आक्रमण कालीन उत्तर पश्चिम भारतीय लोकसमूह एवं गणराज्य	११३२-११३८
परिशिष्ट ४—पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजवंश	११३९-११५६
१. सूर्यवंश ११३९-११४२	
२. सोमवंश ११४२-११५१	
३. स्वायंभुव मनु ११५१-११५२	
४. भविष्य वंश ११५२-११५५	
५. मानवेतर वंश ११५५-११५६	
परिशिष्ट ५—पुराणों में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका	११५७-११६५
परिशिष्ट ६—पुराणों में निर्दिष्ट ऋषियों के वंश ...	११६५-११६९
परिशिष्ट ७—कालनिर्णयकोश...	११६९-११८०
१. प्राचीन कालगणनापद्धति ११६९-११७२	
२. ग्रन्थों का कालनिर्णय ११७२-११७७	
३. व्यक्तियों का कालनिर्णय ११७७-११८०	
व्यक्तिसूचि	११८१-११९०
विषयसूचि	११९१-१२०२
शुद्धिपत्र	१२०३-१२०४

तालिका अनुक्रमणिका

१. नागपुत्र (पुराणों में) ...३५६
२. दोहक गण ...४५०
३. मन्वन्तर पाठभेद ...६०७
४. मरुत्गणों के स्थान ...६२४
५. यक्षप्रश्न (एवं युधिष्ठिर के उत्तर) ...७००
६. भारतीय युद्धकालीन सेनागणनापद्धति ...७०३
७. अष्ट रुद्र ...७५९
८. एकादश रुद्र ...७५९
९. अष्टवसुओं का परिवार (भागवत में) ...८११
१०. अष्टवसुओं का परिवार (महाभारत एवं पुराणों में) ...८१२
११. विश्वामित्र की पत्नियाँ ...८७४
१२. विष्णु की उपासना ...८८४
१३. चतुर्व्यूह (विष्णु का एक अवतारसमूह) ...८८५
१४. व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा ...९२१
१५. उपलब्ध वैदिक धर्मग्रंथ ...९२२
१६. महापुराणों की तालिका ...९२६
१७. सप्तद्वीपात्मक पृथ्वी ...१०९६
१८. जंबूद्वीप विभाग ...१०९६
१९. सूर्यवंश के उपविभाग ...११३९
२०. सूर्य एवं सोम वंशों का विस्तार ...११४४
२१. कश्यप ऋषि की मानवेतर संतति ...११५६
२२. पुराणों में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका ...११५७-११६५
२३. पौराणिक ऋषिवंशों की तालिका...११६७-११६९
२४. पौराणिक युगों की तालिका ...११७०

अधिक जानकारी

पृष्ठ

१९ **अद्रि**—(सू. इ.) विश्वगश्व का पुत्र।

३२ **अरिष्टनेमि यादव**—इसकी कन्या सगरपत्नी प्रभा (सुमति) (मत्स्य. १२.४२)।

५१ **असित**—बाहु २०. देखिये

५२ **असितक्षणा**—(मत्स्य २. देखिये)।

८४ **उद्दालकि २.**—इसका पुत्र नचिकेतस् (म. अनु. ७१)।

८५ **उपचिति**—(केतुमाल देखिये)।

१०४ **औपमन्यव**—ऊर्जयत् का पैतृक नाम।

११३ **कपिंजलि घृताची**—(वसिष्ठ परिवार देखिये)।

१३३ **कांपिजलय**—इंद्रप्रमति वसिष्ठ का नामांतर।

१३३ **कापिल्य**—(भृम्यश्व देखिये)।

१३९ **कालमार्ग**—(कालभीति देखिये)

१५८ **कृमिलाश्व**—(भृम्यश्व देखिये)।

१६० **कृष्ण**—अर्जुनद्वारा प्रणीत कृष्णचरित्रकथन महाभारत में प्राप्त है (म. व. १३; १०–३६)

१७० **कौसल्य**—सुमनस् का पैतृक नाम।

१७२ **कौहल**—श्रवणदत्त का पैतृक नाम।

१८१ **गंदिनी**—इसकी कन्या वसुदेवा।

१८६ **गवेषण २.**—वसुदेव एवं श्रद्धादेवी का पुत्र (मत्स्य ४६.१९)।

पृष्ठ

१९४ **गोवासन** (शैव्य)—युधिष्ठिर का श्वसुर।

१९९ **घर्घरस्वन**—(मार्जारास्या देखिये)।

२०० **घृताची**—(कपिंजली)।

२१२ **चित्रशिखंडिन् २.**—यह स्वायंभुव नामक आँठवें मन्वंतर का अधिपति था। इससे ही आगे चल कर समस्त सृष्टि एवं शास्त्रों का निर्माण हुआ।

२३९ **झषाक्ष**—रथाक्ष देखिये।

२४२ **तरसाहर**—रथंतर देखिये।

२७६ **दीर्घिका**—(मार्कंडेय २. देखिये) २. कौशिक १४. देखिये

२७९ **दुर्दम ४.**—(पद्म. उ. १७२)

२९३ **देवपन्न**—(मांडव्य देखिये)।

२९९ **देवहोत्र**—योगेश्वर २. देखिये।

३०६ **द्रुपद के पुत्र**—श्रुतंजय, बलानीक, जयानीक, जयाश्व, श्रुत, प्रभ्रध, चंद्रदेव (म. द्रो. १३१)।

३३७ **ध्यजवती**—यह पश्चिम में रहती थी।

३५९ **नाडायनी**—इसे इंद्रसेना, नालायनी, एवं मुद्गलानी नामांतर भी प्राप्त थे।

३७१ **निर्ऋति घर्घरस्वन**—मार्जारास्या का पुत्र (आ. रा. सार. १३)।

卐 卐 卐

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

मेरी स्वर्गीया पत्नी

सौ. यमुताई चित्राव

के पवित्र स्मृति में

卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐卐

प्राचीन चरित्रकोश



भारतवर्षीय

प्राचीन चरित्र कोश

अ

अंश—अंशुमान आदित्य का नामांतर है।

२. (सो. यदु.) विष्णु के मत में यह पुरुहोत्र का पुत्र है।

३. तृषित नामक देवगणो में से एक है।

अंशपायन—ब्रह्मदेव के पुष्करक्षेत्र के यज्ञ में यह अध्वर्युगणों का उन्नायक था (पद्म. सृ. ३४)।

अंशु—अश्विनों ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. ८. ५. २६)।

२. कृष्ण तथा बलराम का गोकुल का सखा (भा. १०. २२. ३१)।

३. मार्गशीर्ष (अगहन) माह के सूर्य का नाम (भा. १२. ११. ४१)।

अंशु धानंजय्य—अमावास्य शांडिल्यायन का शिष्य (वं. ब्रा. १)।

अंशुमत्—एक आदित्य। इसे क्रिया नाम की स्त्री थी। यह आषाढ में प्रकाशित होता है। इसकी १५०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. १६८)। अंशु (३.) तथा यह एक ही हैं।

२. पंचजन का पुत्र (पद्म. उ. २२. ७)।

३. (सू. इ.) असमंजस का पुत्र। पितरों की मानस-कन्या यशोदा इसकी स्त्री है। सगर का अश्वमेधीय अश्व ढूंढ लाने के लिये असमंजस नें इसे भेजा। मार्ग में इसे इसके पितृव्य कपिलाश्रम के पास मृत पडे हुए दिखे। वहीं वह अश्व भी दिखा। तब इसने कपिल की स्तुति की। परंतु कपिल ध्यानस्थ था। अतएव उसने इसकी स्तुति न सुनी। इतने में उसका मामा गरुड वहां आया। भागीरथी के जल के स्पर्श से काम होगा, ऐसा बता कर वह चला गया। कपिल जाग्रत होने के बाद उसने अंशुमान को स्तुति करते हुए देखा। उसकी स्तुति से संतुष्ट हो कर उसने इसे भागीरथी की स्तुति करने को कहा। बाद में यह अश्व ले गया तथा पहले अश्वमेध यज्ञ पूरा करवाया। सगर ने तुरंत ही इसे राज्य दिया तथा वह वन में गया। इसने भी अपने पुत्र दिलीप को राजसिंहासन पर बिठाया तथा उसे प्रधान के हाथ में सौंप कर भागीरथी के प्राप्त्यर्थ संपूर्ण जीवन तप में बिताने के लिये यह वन में गया। परंतु सिद्धि के पूर्व ही इसकी मृत्यु हो गई (म. व. १०६; वा. रा. बा. ४१-४२)। यह शिवभक्त था। इसने ३०८०० साल राज किया (भवि. प्रति. १.३१)।

४. द्रौपदी के स्वयंवर के लिये गया हुआ राजा (म. आ. १७७. १०)। इसे भारतीय युद्ध में द्रोणाचार्य ने मारा (म. क. ४.६७)।

अंहोमुच् वामदेव्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२६)।

अकपि—तामसमन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अकपिवत्—तामसमन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अकंपन—कृतयुग का एक राजर्षि। इसको हरि नामक एक ही पराक्रमी पुत्र था। युद्ध में उसकी मृत्यु हो गई। अतीव दुख के कारण यह शोक कर रहा था। इतने में नारद ऋषि वहाँ आये तथा, मृत्यु अनिवार्य है ऐसा

समझा कर उसका समाधान किया (म. द्रो. परि. १. ८. पंक्ति. ३५. ३५९)।

२. एक राक्षस। यह रावण का दूत था। जनस्थान में खरादिक राक्षसों के राम द्वारा वध की प्रथम सूचना रावण को इसने ही दी थी (वा. रा. अर. ३१)। इसने सीता को चुरा कर लाने की सलाह रावण को दी। रावण ने युद्ध के संबंध में इसकी स्वतंत्र सिफारिश की थी (वा. रा. युद्ध. ५५. २; ९; २८)। रामरावणयुद्ध में हनुमान के द्वारा इसकी मृत्यु हुई (वा. रा. युद्ध. ५६. ३०)।

३. कश्यप तथा खशा का पुत्र।

अकर्कर—एक सर्प (म. आ. ३१. १५)।

अकर्ण—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

अकल्मष—तामस मनु के पुत्रों में से एक।

अकृतव्रण—हिमालयस्थ शान्त ऋषि का पुत्र। एक बार व्याघ्र के आक्रमण से भयभीत हो कर यह चिल्लाता हुआ भागने लगा। इसी समय परशुराम, शंकर को प्रसन्न कर के वापस आ रहे थे। इसे भागते हुए देख कर परशुराम ने इसे अभय दिया तथा व्याघ्र को मार डाला। व्याघ्र के द्वारा इस बालक के शरीर पर व्रण न किये जाने के कारण इसका नाम अकृतव्रण प्रचलित हुआ। बाद में परशुराम ने इसको अपना शिष्य बनाया। यह निरंतर परशुराम के साथ रहता था (ब्रह्माण्ड ३. २५. ६६)।

२. युधिष्ठिरद्वारा किये गये राजसूय यज्ञ में यह उपद्रष्टा था। (भा. १०. ७४.९)। इसने रोमहर्षण से सब पुराणों का अध्ययन किया (भा. १२. ७. ५-७; अंबा देखिये)।

३. कृतयुग का एक ब्राह्मण। यह एक बार, जब सरोवर में स्नान कर रहा था, तब एक नक्र ने इसका पैर पकड़ा तथा उसे जल में खींचने लगा। इस लिये इसने उस सरोवर के जल को एवं जलदेवता को शाप दिया कि, जो कोई इस पानी को स्पर्श करेगा वह तत्काल व्याघ्री हो जायेगा। आगे पांडवों का अश्वमेधीय अश्व इस सरोवर में जलपान के लिये उतरने के कारण व्याघ्री बन गया (जै. अ. २१)।

अकृताश्व वा **अकृशाश्व**—(सू. इ.) मत्स्य के मत में यह संहताश्व का पुत्र है।

अकृष्टमाष—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ८६. १-१०; ३१-४०)।

अकोप—दशरथ के अष्टप्रधानों में से एक (वा. रा. बा. ७)। इसका अशोक नामान्तर भी प्राप्त है।

अक्रिय—(सो. रंभ.) गंभीर का पुत्र। इसकी संतति तप से ब्राह्मण बन गई थी (भा. ९. १७. १०)

अक्रूर—(सो. वृष्णि.) श्वफल्क को गांदिनी से उत्पन्न पुत्र। इसको आसंग आदि ग्यारह बंधु तथा सुचिरा नामक भगिनी थी (भा. ९. २४; १५. १८)। आहुक की कन्या सुतनु इसकी पत्नी थी (म. स. १३. ३२)। इस पर कंस तथा राम-कृष्ण का समान ही विश्वास था। राम-कृष्ण का कांटा दूर करने के उद्देश्य से कंस नें उन्हे मथुरा लाने के लिये अक्रूर को भेजा। यह कार्य स्वीकार कर राम-कृष्ण को लेकर अक्रूर मथुरा आया। मार्ग में यमुना में स्नान करते समय डुबकी लगाने पर अक्रूर को राम-कृष्णका साक्षात्कार हुआ (भा. १०. ३९. ४१; ह. वं. २.२६)।

उसी प्रकार, धृतराष्ट्र पांडवों से अच्छा व्यवहार करता है या नहीं इसे बारीकी से देखने के लिये कृष्ण ने अक्रूर को ही हस्तिनापूर भेजा था (भा. १०. ४९)। कुन्ती ने भी अपनी स्थिति मुक्तहृदय से इसको बताई थी। उसी प्रकार, धृतराष्ट्र को भी कुछ उपदेश इसने दिया था, परंतु उसका कुछ लाभ न होगा, यह इसे धृतराष्ट्र के भाषण से मालूम हो गया (भा. १०.४८)।

कृष्ण ने स्यमन्तक मणि के लिये शतधन्वा की हत्या की, इसकी सूचना मिलते ही भय से अक्रूर ने मथुरा का त्याग कर दिया। अक्रूर मथुरा से कहाँ गया, इसका उल्लेख यद्यपि भागवत में नहीं है, तथापि वह काशी गया था ऐसी आख्यायिका है। काशीस्थित वर्तमान अक्रूरघाट से इस आख्यायिका की पुष्टि होती है। उस समय कृष्ण नें सौम्यता से अक्रूर कों बताया कि, मेरे पास स्यमन्तक मणि है ऐसा संशय लोगों को है, इस लिये मणि दिखा कर तुम सब का संशयनिवारण कर दो। तब अक्रूर ने मणि दिखा कर सब का संशयनिवारण किया (भा. १०. ५६-५७)।

द्रौपदी के स्वयंवरार्थ आये हुए राजाओं में अक्रूर था (म. आ. १७७-१७)। युधिष्ठिर के दरबार में बैठनेवाले राजाओं में भी इसका उल्लेख है (म. स. ४. २७; १३.३२)। एक बार सूर्यग्रहण के पर्वकाल में यह स्यमन्तपंचकक्षेत्र में गया था (भा. १०. ८२. ५)। यादवी के समय अक्रूर एवं भोज में युद्ध हो कर दोनों मृत हो गये (भा. ११. ३०. १६)। बभ्रु यह अक्रूर का नामान्तर है, ऐसा कहने के लिये आधार है (बभ्रु (१०.) देखिये)। कई स्थानों पर इसको दानपति कहा गया है

(भा. १०. ३६. २८; ४९. २६)। इसको देववत् एवं उपदेव नामक दो पुत्र थे (भा. ९. २४. १८)।

२. कद्रूपुत्र।

अक्रोधन—(सो. पूरु.) अयुतानायिपुत्र। इसकी माता भासा। इसकी पत्नी का नाम कण्डू। इसका पुत्र देवातिथि (म. आ. ९०. २०)। भविष्य कें मत में यह अयुतायू का पुत्र है। इसनें १०५०० वर्षों तक राज्य किया।

अक्ष—रावण कों मन्दोदरी से उत्पन्न पुत्र। अशोकवन के ध्वंस समय रावण ने हनुमान को पकडने के लिये पांच सेनापति भेजे थे। हनुमान द्वारा वे मारे जाने पर इसको भेजा गया। आठ अश्वों से युक्त रथ में बैठ कर यह अशोकवन में गया तथा हनुमान से युद्ध करते अन्त में उसी के हाथों मारा गया (वा. रा. सुं. ४७)।

अक्ष मौजवत— सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ३४)।

अक्षपाद—शिवावतार सोम का शिष्य। (गौतम देखिये)।

अक्षमाला—वसिष्ठ की पत्नी (म. उ. ११५. ११)। अरुंधती का नामान्तर।

अक्षीण—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ४. ५०)।

अगस्ति—(स्वा.) पुलस्त्य को हविर्भू से उत्पन्न पुत्र।

२. अगस्त्य, दृढद्युम्न और इंद्रबाहु को अगस्ति संज्ञा है (मत्स्य १४५. ११४–११५)।

अगस्त्य—वसिष्ठ के समान यह भी मित्रावरुणों का पुत्र है (ऋ. ७. ३३. १३)। उर्वशी को देख कर मित्रा-वरुणों का रेत कमल पर स्खलित हुआ तथा उससे वसिष्ठ एवं अगस्त्य उत्पन्न हुए (बृहद्दे. ५. १३४)। ऋग्वेद में अगस्त्य के काफी सूक्त तथा मंत्र हैं (ऋ. १. १६५. १३–१५; १६६–१६९; १७०.२, ५, १७१–१७८; १७९.३–४; १८०–१९१)। अगस्त्य कुलनाम होने के कारण अगस्त्य कुल के लोगों द्वारा रचित सूक्त अगस्त्य के नाम से प्रसिद्ध हैं। एक स्थान पर अगस्त्य का सुमेधस् नाम आया है (ऋ. १.१८५.१०)। मान्य तथा मान्दार्य ये पैतृक नाम भी अगस्त्य के लिये दिये हुए मिलते हैं (ऋ. १.१६५.१४–१५; १६६.१५)। मरुतों के लिये लाये गये पशु का इन्द्र ने हरण किया, तब वे वज्र लेकर इन्द्र को मारने के लिये उद्युक्त हुए। उस समय, अगस्त्य नें मरुतों का सांत्वन किया तथा इन्द्र–मरुतों में मैत्रीभाव निर्माण किया। जिस सूक्त के द्वारा यह मैत्रीभाव सिद्ध किया वह अगस्त्य का कयाशुभीय सूक्त है (ऐ. ब्रा. ५. १६)। कयाशुभीय सूक्त में इन्द्र-मरुतों का विवाद है (ऋ. १. १६५) तथा अन्त में मरुतों का सांत्वन है। यह विवाद वैदिक ग्रंथों में काफी प्रसिद्ध प्रतीत होता है (तै. सं. ७. ५. ५. २; तै. ब्रा. २. ७. ११. १; मै. सं. २. १. ८; क. सं. १० . ११; पं. ब्रा. २१. १४. ५)। इन्द्र पर भी इसका काफी प्रभाव था (ऋ. १. १७०)।

इसकी पत्नी का नाम लोपामुद्रा (ऋ. १. १७९.४)। ऋग्वेद के इस सूक्त में अगस्त्य–लोपामुद्रा संवाद है। वहाँ यह वृद्ध है तथा लोपामुद्रा इसे संभोग के लिये प्रवृत्त कर रही है।

यह खेल नृप का पुरोहित होगा (ऋ. १.१८२.१)। अगस्त्यशिष्य (ऋ. १.१७९.५–६) तथा अगस्त्यस्वसृ (ऋ. १०.८०.८) के नाम पर कुछ ऋचाएँ हैं। ऋषियों में वृद्धतम जान कर इन्द्र ने इसे गायत्र्युपनिषद का उपदेश दिया तथा इसने वह उपदेश इषा को बता कर परंपरा प्रारंभ की (जै. उ. ब्रा. ४. १५. १; १६. १)। जैमिनीय उपनिषद्-ब्राह्मण ही गायत्र्युपनिषद् है।

पौराणिक वाङ्मय मे उपरोक्त वर्णन के विरुद्ध कुछ विशेष जानकारी प्राप्त नहीं होती है। समुद्र में छिपे हुए असुरों नें इन्द्रादिकों को जब सताना प्रारंभ किया तब देवताओं ने अग्नि तथा वायु को समुद्र का शोषण करने को कहा। परन्तु समुद्र के प्राणियों का नाश होने की संभावना से उन्होंने इसे अस्वीकार कर दिया। तब इन्द्र के द्वारा दिये गये शाप से मित्रावरुणों के वीर्य से यह कुंभ में उत्पन्न हुआ। उनमें से अगस्त्य, अग्नि है। इसी कारण इसको मैत्रावरुणि तथा कुंभयोनि नाम मिले (मत्स्य ६१.२०१; पद्म. सृ. २२. २२; म. व. ९६; द्रो. १३२; १८५; शां. ३४४; ब्रह्माण्ड. ३.३५)।

अगस्त्य विरक्त था तथापि पितरों की आज्ञानुसार विदर्भाधिपति की कन्या लोपामुद्रा के साथ इसका विवाह हुआ (लोपामुद्रा देखिये)। वह राजकन्या होने के कारण उसे अगस्त्य की अपेक्षा ऐश्वर्य में विशेष रुचि थी। अपने तपःसामर्थ्य से जो चाहे वह प्राप्त करने की शक्ति होते हुए भी तप का व्यय करने की अगस्त्य की इच्छा न थी। परन्तु लोपामुद्रा की तीव्र इच्छा देख कर श्रुतर्वन्, ब्रध्न्यश्व तथा त्रसदस्यु इन तीन राजाओं के पास से संपत्ति प्राप्त करने का इसने प्रयत्न किया; परन्तु इसे यश प्राप्त नहीं हुआ। तथापि त्रसदस्यू ने अगस्त्य को इल्वल की अपरंपार संपत्ति का वर्णन बताया। तब तीनों राजाओं को साथ ले कर यह इल्वल के पास गया तथा अपने अतुल सामर्थ्य से इल्वल की संपत्ति प्राप्त कर इसने लोपामुद्रा को संतुष्ट किया।

समुद्र में रहनेवाले कालकेयों ने लोगों को काफी त्रस्त करना प्रारंभ किया तब इसने समुद्र का प्राशन कर लिया। तदनंतर देवताओं ने कालकेयों की हत्या कर के सब को यातनामुक्त किया। परन्तु इसको समुद्र को बाहर निकालने की सूचना देने पर इसने बताया कि, वह उदर में हजम हो गया। (पद्म. सृ. १९.१८६; म. व. १०३)।

अग का अर्थ है पर्वत। पर्वत का स्तंभन करनेवाला ऐसी अगस्त्य शब्द की व्युत्पत्ति है (वा. रा. अ. ११)। यह विंध्य का गुरु था। अगस्त्य के दक्षिण जाने के समय विंध्य ने इसे नमस्कार किया। तब इसने विंध्य को कहा कि, मेरे लौटते तक तुम इसी प्रकार पडे रहो। इस कथनानुसार विंध्य नम्र बन कर पडा रहा तथा उत्तर का दक्षिण से आवागमन प्रारंभ हुआ (म. व. १०२; दे. भा. १०. ३. ७)। यह प्रथम काशी में रहता था परंतु विंध्याचल से मार्ग निकाल कर आवागमन को प्रारंभ करने के लिये, इसने काशीवास का त्याग किया। इस प्रसंग में अगस्त्य को दिये हुए अभिवचन के अनुसार काशी–विश्वेश्वर, रामेश्वर में आ कर रहने लगे (आ. रा. सार. १०)। काशी क्षेत्र में रहने की इच्छा अपूर्ण रह जाने के कारण, उन्तीसवें द्वापर युग में यह व्यास बन कर काशी में वास करेगा, ऐसा वरदान इसे गोदावरी तट पर लक्ष्मी ने दिया (स्कंद ४. १. ५)। दक्षिण में आने के बाद, इसने एक द्वादशवर्षीय सत्र मनाया। इस सत्र के ब्राह्मणों को पिप्पल तथा अश्वत्थ नामक असुर खा डाला करते थे। उनका नाश शनी ने किया (ब्रह्म. ११८)।

नहुष ने वाहन बना कर इसका अपमान करने के कारण अगस्त्य की जटा में स्थित भृगु ने, नहुष को दस हजार वर्षो तक साँप बन कर जीवन यापन करने का शाप दिया (म. अनु. १००.२५; स्कन्द. १. १. १५)।

वनवास के समय दाशरथी राम इसके दर्शन के लिये आया था। अगस्त्य ने राम को सोने तथा हीरों से सुशोभित सुन्दर धनुष, अमोघ बाण, अक्षय तूणीर तथा स्वर्ण के खडगकोष सहित स्वर्ण का खडग् दिया (वा. रा. अर. १२. ३१–३५)। अगस्त्य के आश्रम में ब्रह्मा, अग्नि, विष्णु, इन्द्र, सूर्य, सोम, भग, कुबेर, धाता, विधाता, वायु, नागराज, अनन्त, गायत्री, अष्टवसु, पाशहस्त, वरुण, कार्तिकेय तथा धर्म के लिये योजित विभिन्न स्थान, राम को दृष्टिगोचर हुए (वा. रा. अर. १२. १७. २१)। इसने भद्राश्व को गीता सुनाई (वराह. ३५) इसने अपने लिये निकाला हुआ कमलकन्द एक भूखे चांडाल को दिया (पद्म. सृ. १९)। प्रजाहित के हेतु से अगस्त्य ने समस्त मृग देवताओं के लिये प्रोक्षण किये। इसीसे देवकार्य एवं पितृकार्य में मृग मांस अर्पण करने के लिये कुछ आपत्ति नहीं है (म. अनु. ११५)। परन्तु आगे अगस्त्य ने द्वादशवर्षीय सत्र का प्रारंभ किया तथा पशुहिंसा टाल कर इन्द्र को वर्षा करने के लिये विवश किया (म. आश्व. ९५)।

लोपामुद्रा को इध्मवाह नाम से प्रसिद्ध दृढस्यु नामक पुत्र था (म. व. ९७. २३–२४)। दृढस्यू को, दृढद्युम्न, इन्द्रबाहु इ. नामान्तर होने चाहिये (मत्स्य. १४५. ११४)।

पुलस्त्य, पुलह तथा क्रतु अगस्त्य गोत्रीय न होते हुए भी, इनकी संतति अगस्त्य गोत्रीय मानी जाती है। क्यों कि वैवस्वत मन्वन्तर का क्रतु निपुत्रिक होने के कारण उसने अगस्त्यपुत्र इध्मवाह को दत्तक लिया था। पुलह की संतति राक्षस थी अतएव उसने अगस्त्यपुत्र दृढस्यु को दत्तक लिया। पौलस्त्य ने भी इसी प्रकार अगस्त्य-पुत्रों में से दत्तक लिया (मत्स्य. २०२. ८. १२)।

परन्तु ब्रह्मांडपुराण में अय, दृढायु तथा विध्मवाह नामक पुत्रों का वर्णन है (२. ३२. ११९)। अगस्त्य की गोत्र परंपरा आगे दी गई है। उसे ही अगस्त्यवंश कहा गया है (मत्स्य. २०२. ६)। यह मंत्रकार तथा ऋषिक था (वायु. १. ५९. ९२–९४)।

अगस्त्य का संबंध नित्य दक्षिण से ही आता है (वा. रा. अर. ११; ब्रह्म. ८४. ११८. २)। लंका के साथ भी अगस्त्य का संबंध आया है। इसे लंकावासी कहा गया है (मत्स्य. ६१. ५१)। अगस्त्य को दक्षिण का स्वामी तथा विजेता कहा गया है (ब्रह्म. ११८. १५९)। अगस्त्य का आश्रम दक्षिण में मलय पर्वत पर था (मत्स्य. ६१. ३७; पद्म. सृ. २२; वा. रा. कि. ४१. १५-१६)। पाण्डय तथा महानदी के पास महेंद्र के साथ भी अगस्त्य का संबंध है (वा. रा. कि. ४१)। आजकल अगस्त्य के मंदिर, जावा इ. द्वीपों में प्राप्य है। वहाँ प्राप्य महाभारत भी दाक्षिणात्य पाठसे मिलता जुलता है। अगस्त्याश्रम नाशिक के पास है (म. व. ९४. १)। दुर्जया तथा मणिमती वातापी के नगर थे (म. आर. ९४. १-४)। वातापी का स्थान दक्षिण में है, ऐसा अभी तक समझा जाता है। वातापी ही बदामी है। परन्तु नन्दलाल डे ने वेरूल के पास का स्थान दिया है। विंध्य की कथा से दक्षिण का संबंध स्पष्ट है। विदर्भ (महाराष्ट्र) दक्षिण का देश है तथा वहाँ

के राजा की कन्या लोपामुद्रा इसकी पत्नी है। यह सब प्रसंग इसका दक्षिण के साथ अधिक संबंध दर्शाते है। यह दक्षिण का ही वासी था ऐसा भी कहा जा सकता था, परन्तु उत्तर की ओर यमुना, प्रयाग, गंगा इ. के साथ इसका संबंध आया है (मत्स्य. १०३; म. आ. २३५. २; व. ९५.११)। इससे यह विंध्याचल को नम्र बना कर दक्षिण में आया, इस कथा की पुष्टि होती है। अगस्त्य नामक तारा भाद्रपद माह में दक्षिण की ओर उदित होता है तथा इसके उदय के बाद पानी निर्दोष हो जाता है, इस कथा का संबंध अगस्त्य व्यक्ति से जोड़ा गया है (मत्स्य. ६१)।

अगस्त्यद्वारा रचित ग्रंथ— १. वराहपुराण में पशुपालोख्यान में प्राप्त अगस्त्यगीता, २. पंचरात्र की अगस्त्य संहिता, ३. स्कन्दपुराण की अगस्त्य संहिता, ४. शिवसंहिता (८.८), ५. भास्कर संहिता का द्वैधनिर्णयतंत्र (ब्रह्मवै. २.१६)।

अगस्त्य वंश के गोत्रकार–

करंभ (करंभय), कौशल्य (ग), ऋतुवंशोद्भव, गांधारकायन, पौलस्त्य, पौल्ह, मयोभुव, शकट (करट), सुमेधस ये गोत्रकार अगस्त्य, मयोभुव, तथा महेन्द्र इन तीन प्रवरों के हैं।

अगस्त्य (ग), पौर्णिमास (ग) ये गोत्रकार अगस्त्य, पारण, पौर्णिमास इन तीन प्रवरों के हैं (मत्स्य. २०२)।

अगस्त्यगोत्रीय मंत्रकार

मत्स्य. १४५.११४-११५;	ब्रह्मांड. २.३२,११८-१२०
अगस्त्य	अगस्त्य
	अय
इन्द्रबाहु	दृढायु
दृढद्युम्न	विध्मवाह

इन में से अगस्त्य, इन्द्रबाहु तथा दृढद्युम्न को अगस्ति संज्ञा है (मत्स्य. १४५. ११४-११५)।

अगस्त्य की पत्नी लोपामुद्रा विदर्भराज निमि की कन्या थी। निमि ने उस को लोपामुद्रा के साथ राज्य भी दिया था (म. अनु. १३. ११)। काशी का नृप प्रतर्दन का पोता तथा वत्स का पुत्र अलर्क ने लोपामुद्रा की कृपा से दीर्घायु प्राप्त की थी (वायु. ९२. ६७; ब्रह्माण्ड. ११. ५३)।

इस से ज्ञात होता है की अगस्त्य, निमि तथा अलर्क का समकालीन था।

अगस्त्यशिष्य—ऋग्वेद की कुछ ऋचाएँ इसके नाम पर हैं (ऋ. १. १७९. ५-६)।

अगस्त्यस्वसृ—मंत्रद्रष्टी (ऋ. १०. ९०. ९)।

अग्नि—इन्द्र का शिष्य। इसका शिष्य काश्यप (वं. ब्रा. २)।

२. एक आचार्य। इसने सोम की विशेष परंपरा सनश्रुत को कथन की (ऐ. ब्रा. ७. ३४)।

३. धर्म तथा वसु का पुत्र। इसको वसोर्धारा नामक पत्नी से द्रविणक इ. पुत्र हुए तथा कृत्तिका नामक पत्नी से स्कन्द नामक पुत्र हुआ (भा. ६. ६. ११)।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मनु देखिये)।

५. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मनु देखिये)।

६. ब्रह्मदेव का मानसपुत्र। उसके कोपसे इसकी उत्पत्ति हुई (म. शां. ४८. १६)। दक्ष प्रजापती की कन्या स्वाहा इसकी पत्नी (म. व. २२०; भा. ४. १. ६०)। दूसरी पत्नी इक्ष्वाकुवंश के दुर्योधन राजा की कन्या सुदर्शना (म. अनु. २.२१)। प्रथम पत्नी स्वाहा माहिष्मती नगरी के राजा नीलध्वज की कन्या। नीलध्वज ने अपनी कन्या अग्नी को देते समय ऐसा करार किया था कि, वह निरन्तर नीलध्वज की नगरी में ही रहे, और जो भी शत्रु माहिष्मती नगरी पर आक्रमण करे, उसका सैन्य जला डाले। इस करार के कारण अग्नि अपने श्वसुरगृह में घर-जमाई बन कर रहने लगा। आगे चल कर जब अर्जुन की सेना से नीलध्वज को लड़ना पड़ा, तब अग्नि ने अर्जुन की सेना को जला दिया (जै. अ. १५)। इसने सहदेव की सेना भी जलाई परंतु अन्त में सहदेव द्वारा स्तुति की जाने पर यह वापस लौटा (म. स. २८)। सप्तर्षियों का हविर्द्रव्य देवताओं को अर्पण कर के लौटते समय, सप्तर्षि की पत्नियाँ इसे दृग्गोचर हुई। तब इसके मन में कामवासना उत्पन्न हुई तथा उनकी प्राप्ति की इच्छासे गार्हपत्य में प्रविष्ट हो कर यह चिरकाल तक उनके पास रहा। परन्तु वे इसके वश में न आने के कारण, अत्यंत निराश हो कर देहत्याग का निश्चय कर के यह अरण्य में गया। परंतु उन स्त्रियों में से दक्षकन्या स्वाहा की प्रीती अग्नि से होने के कारण, वह इसके पीछे वन में गई तथा उसने अन्य सप्तर्षि-पत्नियों का स्वरूप धारण कर के इसकी इच्छापूर्ति की (म. व. २१३-२१४)। परन्तु वह अरुंधती का रूप न ले सकी।

प्राचीन काल में श्वेतकी ने अपरिमित यज्ञ किये। उसके द्वारा किये गये यज्ञसत्र में, बारह वर्षों तक, अग्नि लगातार हविर्द्रव्य भक्षण कर रहा था। इस कारण इसमें स्थूलता उत्पन्न हो कर, उसपर उपाय पूछने के लिये यह ब्रह्मदेव के पास गया। तब ब्रह्मदेव ने इसे खांडववन का भक्षण करने के लिये कहा। इसलिये इसने उसे जलाना प्रारंभ किया परन्तु इन्द्र ने लगातार पर्जन्यवृष्टि कर के सात बार इसका पराभव किया। अन्त में निराश हो कर यह पुनः ब्रह्मदेव के पास गया तथा सारा वृत्तान्त उन्हे निवेदित किया। तब भूलोक में जा कर कृष्णार्जुन से खांडववन मांगने की सलाह ब्रह्मदेव ने इसको दी। यह ब्राह्मणरूप से कृष्णार्जुन के पास आया तथा इसने भक्षण करने के लिये वह वन मांगा। तब अर्जुन ने कहा कि, हमारे पास युद्धसामग्री की न्यूनता है, वह अगर तुमने हमें दी तो हम इंद्र से तुम्हारी रक्षा करेंगे। अग्नि ने वरुण के पास से, श्वेतवर्णीय अश्वों से जुता हुआ तथा कपिध्वजयुक्त एक दिव्य रथ, गांडीव नामक धनुष तथा दो अक्षय तूणीर मांग कर, अर्जुन को दिये तथा श्रीकृष्ण को सुदर्शन चक्र तथा कौमोदकी नामक गदा दी। इससे वे दोनों संतुष्ट हुए तथा उन्होंने अग्नि के संरक्षण का वचन दे कर, उसे खांडववन का भक्षण करने के लिये कहा। तब अग्नि उस वन का भक्षण करने लगा। यह समाचार इन्द्र को मिलते ही, वह अग्नि का निवारण करने के लिये, वहाँ आ कर पर्जन्यवृष्टि करने लगा। परंतु कृष्णार्जुन ने उसका पराभव किया। पंद्रह दिनों तक खांडववन का आवृत्त भक्षण करने के बाद, अग्नि की स्थूलता नष्ट हुई। इस वन से तक्षकपुत्र अश्वसेन, मयासुर तथा महर्षि मन्दपाल के चार पुत्र शार्ङ्गक पक्षी केवल बचे (म. आ. २१७. १८)। इक्कीस दिन तक, अग्नि लगातार वह वन दग्ध कर रहा था (म. आ. २२५. १५)।

वृत्र को मारने के बाद, ब्रह्महत्या के भय से भागे हुए इन्द्र की खोज, बृहस्पति के कहने से इसने की (म. उ. १५.१६)। आगे चल कर उस ब्रह्महत्या से इन्द्र का छुटकारा करने के लिये ब्रह्मदेव ने उसके चार भाग किये। उसका चौथा भाग अग्नि ने ग्रहण किया (म. शा. २७३)।

एक बार जब भृगु समिधा लाने के लिये वन में गया था, तब दमन नामक राक्षस उसके तथा उसकी पत्नी के बारे में पूछताछ करने लगा। तब भयभीत हो कर अग्नि ने चुगली की तथा भृगुपत्नी का पता बता दिया। भृगु ने लौटने पर चुगली करने के कारण अग्नि को शाप दिया कि 'तुम सर्वभक्षक बनोगे'। इसपर अग्नि ने उःशाप मांगा। तब भृगु ने 'सर्वभक्षक होते हुए भी तुम पवित्र ही रहोगे' ऐसा उःशाप दिया (पद्म. पा. १४)। भृगु स्नान करने बाहर गया, यह देख कर उसके आश्रम में, पुलोमा नामक राक्षस प्रविष्ट हुआ तथा उसने अग्नि से पूछा कि, भृगुपत्नी पुलोमा को मैंने पहले मन से वरण किया यह सत्य है या असत्य। अग्नि ने बताया कि, यह सत्य है, इसलिये भृगु ने उसे उपरोक्त शाप दिया (म. आ. ५-७)। भृगु के इस शाप के कारण अग्नि जल में गुप्त हो गया। इससे देव-देवताओं के यज्ञयागकर्म बंद हो गये। देवताओं द्वारा इसका शोध होने पर मत्स्यों ने अग्नि दर्शाया। तब देवताओं ने इसकी स्तुति की जाने पर, यह बाहर आया तथा पूर्ववत् अपना कार्य करने लगा (म. आ. ७; श. २७; ब. २२४)।

ऋग्वेद में अग्नि के गुप्त होने का यह कारण बताया है। वषट्काररूप वज्र से बांधवों की मृत्यु होने के कारण, सौचीक नामक अग्नि, वषट्कार तथा हवि उठा ले जाने में डर गया तथा देवताओ से निकल कर जल में भाग गया (ऋ. १०. ५१)। यहाँ अग्नि-देव संवाद है।

ब्राह्मणों के श्रेष्ठत्व के संबंध में, अग्नी का इन्द्र से संवाद हुआ था (म. अनु. १४)। उसी प्रकार गाय, ब्राह्मण तथा अग्नि को पादस्पर्श करने वाले पर भयंकर आपत्ति आती है इस अर्थ का धर्मकथन इसने किया है (म. अनु. १२६)।

सीता को लंका से लाने के बाद, जब राम उसका स्वीकार नहीं कर रहा था, तब अग्नी ने बताया कि, सीता निरपराध है (म. व. २७५. २७)।

इसे स्वाहा नामक पत्नी से स्कन्द नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २१४)। इसके अलावा, इसी पत्नी से पावक, पवमान व शुचिं नामक तीन पुत्रों ने जन्म लिया (भा.४. १. ६०-६१)। सुदर्शना नामक पत्नी से इसे सुदर्शन नामक पुत्र हुआ (म. अनु. २. ३७)। इसके सिवा, स्वारोचिष नामक इसके पुत्र का उल्लेख पाया जाता है (भा. ८. १. १९; आपू देखिये)।

अंगिरा की मांग के अनुसार, अग्नी ने उसे बृहस्पति नामक पुत्र दिया। अंगिरा की पत्नी तारा। इसी से अग्नि-वंश की वृद्धि हुई (म. व. २०७-२१२)। पावक, पवमान तथा शुचि इन अग्निपुत्रों से कुल ४९ अग्नि उत्पन्न हुए (भा. ४. १. ६०-६१; वायु. २९; ब्रह्मांड २-५३)।

अग्निपुत्रो के संख्या के बारे में और भी प्रकार दिये है (मत्स्य. ५१)। परंतु वस्तुतः यह अग्नि का वंश न हो कर स्वयं अग्नि के विभिन्न स्वरूप है (वैश्वानर देखिये)।

ऋग्वेदके एक सूक्त का द्दष्टा अग्नि बताया गया है (ऋ. १०.१२४) (मांधातृ और नीलध्वज देखिये)।

७. आगे होने वाले इन्द्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अग्नि–और्व–यह भार्गव था (ऋचीक तथा और्व देखिये)।

अग्नि गृहपति सहस्पुत्र–सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि चाक्षुष्––सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. १०६. १–३; १०–१४)।

अग्नि तापस––सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४१)।

अग्नि धिष्ण्य ऐश्वर–सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. १०९)।

अग्नि पावक–सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४०)।

अग्नि पावक बार्हस्पत्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि यविष्ठ सहःपुत्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२)।

अग्नि वैश्वानर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७९–८०)। इसने सरस्वती नदी से पुरु और उत्तर पांचाल देश जला दिया (श. ब्रा. १. ४.१०–१९)। यह, वैदिक धर्म का प्रसार कैसा हुआ, इसका प्रतीकात्मक वर्णन होगा।

अग्नि शर्मायण—कश्यप गोत्री ऋषिगण।

अग्नि सौचिक—सूक्तद्रष्टा (ऋ.१०.५१.२,४,६,८, ५२;५३.४–९–७–१०)।

अग्निकेतु—रावणपक्षीय राक्षस। राम के द्वारा युद्ध में यह मारा गया (वा. रा. यु. ४३.२९)।

अग्निजिव्ह—अंगिरागोत्री ऋषि।

अग्नितेज—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अग्निप—वेदनिधि नामक ब्राह्मण का पुत्र। एक बार प्रमोदिनी, सुशीला, सुस्वरा, सुतारा तथा चन्द्रिका नामक गंधर्वकन्या इसपर मोहित हो कर, उन्होंने इसे अपने साथ विवाह करने के लिये कहा। परंतु ब्रह्मचारी होने के कारण इसने यह अमान्य किया। अन्त में क्रोधित हो कर इन्होंने परस्पर को पिशाच होने का शाप दिया। बाद में, इसके पिता ने इसकी मुक्ति के लिये लोमश मुनि की प्रार्थना की। तब लोमश के कथनानुसार, सब पिशाचों ने (छैः) प्रयागतीर्थ में स्नान करने से पूर्वयोनि प्राप्त की। अन्त में लोमश की आज्ञानुसार, इसने उन पांचों गन्धर्वकन्याओं से विवाह किया तथा पितासमवेत अलकापुरी में रहने लगा (पद्म. उ. १२८–१२९)।

अग्निबाहु––भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. भौत्य मनु का पुत्र।

३. स्वायंभुव मनु का पुत्र।

अग्निभाव—अमिताभ देवगणों में से एक।

अग्निभू काश्यप—इन्द्रभू काश्यप का शिष्य (वं. ब्रा. २)।

अग्निमाठर—बाष्कल का शिष्य। बाष्कल ने इसको ऋग्वेद की एक संहिता सिखाई। भागवत के अनुसार अग्निमित्र तथा ब्रह्माण्ड के अनुसार अग्निमातर पाठभेद है। (व्यास देखिये)

अग्निमातर—(अग्निमाठर देखिये)।

अग्निमित्र—स्वायंभुव मनु का पुत्र।

२. अग्निमाठर देखिये

३. शुंगराजाओं का प्रथम राजा। यह मौर्यराजाओं का अन्तिम राजा बृहद्रथ के बाद, सिंहासन पर बैठा (शुंग देखिये)।

अग्नियुत स्थौर – (अग्नियूप देखिये)।

अग्नियूप स्थौर—यह एक सूक्त का द्रष्टा है। अग्नियुत पाठभेद भी है (ऋ. १०.११६)।

अग्निवर्चस—व्यास के पुराणशिष्यपरंपरा का शिष्य। विष्णु, ब्रह्मांड तथा वायु के मत से रोमहर्षण का शिष्य।

अग्निवर्ण—(सू. इ.) सुदर्शन राजा का पुत्र।

अग्निवेश—शिवावतार शूलिन् का शिष्य।

अग्निवेश्य—अंगिरागोत्री ऋषि।

२. (सू. नरिष्यन्त.) देवदत्त का पुत्र। इसे जातुकर्ण्य तथा कानीन ऐसे नामान्तर है। यह तपद्वारा ब्राह्मण बना था। इस कारण, इसके द्वारा उत्पन्न संतति को, अग्निवेश्यायन नाम प्राप्त हुआ (भा. ९. २. २३)।

३. अगस्त्य ऋषी का एक शिष्य (म. आ. १२२.२४)। द्रुपद तथा द्रोणाचार्य ने इसके पास से धनुर्वेद की शिक्षा तथा ब्रह्मशिर अस्त्र प्राप्त किया। यह पांडवों के समागम में कुछ काल तक द्वैतवन में था। यह द्रोणाचार्य का पितृव्य तथा भारद्वाज का छोटा भाई (म. आ. १२२. २४)।

अग्निष्टुत् अथवा **अग्निष्टोम**––चक्षुर्मनु का नड्वला से प्राप्त पुत्र।

अग्निष्वात्त––एक पितृगण। ब्रह्मदेव अपनी मानसकन्या सन्ध्या को देख कर काममोहित हुए। उस समय

उनके घर्म से यह उत्पन्न हुआ। इनकी संख्या चौसठ हज़ार है। ये नित्य मनोविग्रह कर के वैराग्य से रहते हैं (कालि. २)। ये काश्यपपुत्र हैं तथा देवों को पूज्य हैं (म. १४--१५; ह. वं. १)। इनकी पत्नी स्वधा (भा. ४·१)।

अग्निहोत्र— सविता तथा पृथ्वी का पुत्र (भा.- ६·१८१)।

अग्नीध्र— स्वायंभुव मनु का पुत्र (आग्नीध्र देखिये)।

२. मौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. मौत्य मनु का पुत्र। (आग्नीध्र देखिये)।

अग्नीध्रक— रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अग्रयायिन्— (सो.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

अघ— कंस का अनुचर। यह बकासुर तथा पूतना राक्षसी का भ्राता था। कंस ने इसे गोकुल में कृष्ण तथा बलराम के नाश के लिये भेजा। वहाँ इसने चार योजन लंबा सर्पदेह धारण किया। एवं कृष्ण तथा अन्य गोपों के गोचारण के मार्ग में, अपना शरीर फैला दिया। इसने अपना मुख इतना विस्तीर्ण बना दिया था कि, उसे गुफा समझ कर, गायें चराने के लिये योग्य स्थल समझ कर, गोप समस्त गायों के साथ उसमें प्रविष्ट हो गये। कृष्ण को यह वर्तमान ज्ञात होते ही, वह वहाँ आया तथा इसके मुख में प्रविष्ट हो कर, बडा स्वरूप धारण करके इसका मुँह फाड दिया। इस कारण इसकी तत्काल मृत्यु हो गई (भा. १०·१२)।

अघमर्ण—(अघमर्षण देखिये)।

अघमर्षण माधुच्छन्दस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १९०)। विश्वामित्र वंश के गोत्रकार मधुच्छंद का पुत्र। इसे अघमर्ण भी कहा गया है।

अघोर—हिरण्याक्ष की सेना का एक असुर। इसका वध कार्तिकेय ने किया (पद्म. सृ. ७५)।

अंग—(स्वा. उत्ता.) उल्मुल्क की पुष्करणी से उत्पन्न पुत्र। यह अत्रि का वंशज है। इस अर्थ से इसे अत्रि का पुत्र कहा है (पद्म सृ. ८)। ब्रह्माण्ड में इसके माता-पिता के नाम ऊरु तथा पडाग्नेयी दिये गये हैं (ब्रह्माण्ड २·३६·१०८–११०)। यह कृतयुगान्त में प्रजापति था। एक बार स्वर्ग जानेपर, इन्द्र का वैभव देख कर, यह प्रसन्न हो गया तथा इन्द्र के समान वैभवशाली पुत्र की प्राप्ति के हेतु से, इसने विष्णु की उपासना की। तब भाग्यवान् पुत्र प्राप्ति के लिये कुलीन कन्या से विवाह करने की सूचना विष्णु ने इसको दी। इसने यमकन्या सुनीथा से गांधर्वविधि से विवाह किया। इसे सुनीथा से वेन नामक पुत्र हुआ (पद्म. भू. ३०–३६)। वह अत्यंत दुष्ट होने के कारण, अंग राजा त्रस्त हो कर गृहत्याग कर के वन में गया। इसको सुमनस्, ख्याति, क्रतु, अंगिरस् तथा गय नामक पांच भ्राता थे (भा. ४·१३·१७–१८)।

२. (सो. अनु.) बलि का ज्येष्ठ पुत्र। यह बलि की भार्या सुदेष्णा को दीर्घतम से हुआ। इसे वंग, कलिंग, पुण्ड्र तथा सुह्म नामक चार भ्राता थे (म. आ. ९८·३२· १०·४२; विष्णु ४·१८·१; मत्स्य. ४८·२४-२५; ब्रह्म. १३·२९–३१)। इनके सिवा, इसे आंध्र नामक पांचवा भाई था। अंग आदि पांच पुत्रों को बली ने राज्याभिषेक किया था। इनके देशों को भी इन्ही के नाम प्राप्त हुए (ह. वं. १·३१·३४)। इसका एक पुत्र था। उसका नाम विभिन्न स्थलों में दधिवाहन (मत्स्य.४८.९१; ब्रह्म. १३. ३७; ह. वं. १·३१·४३), खनपान (भा. ९.२३. ५) अथवा पार (विष्णु. ४. १८. ३) दिया गया है। अंग राजा के बाद के राजा, अंगवंशीय राजाओं के नाम से प्रसिद्ध हुए (अनुवंश देखिये)। इसने काफी यज्ञ किये। इसका चरित्र नारद ने संजय को बताया (म. द्रो. ५७)। इसका मांधाता ने पराभव किया था (म. शां. २९·८१)।

३. (सो. अनु.) दधिवाहन का पौत्र तथा दिविरथ का पुत्र। जब परशुराम क्षत्रियों का संहार कर रहा था तब इस का गौतम ने गंगा नदी के तट पर संरक्षण किया (म. शां. ४९·७२)।

४. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय म्लेच्छ राजा। इस का वध भीम ने किया (म. द्रो. २५·१४–१७)।

५. भारतीय युद्ध में नकुल द्वारा मारा गया हुआ म्लेच्छ राजा (म. क. १७·१५–१७)।

६. (सो. भविष्य.) मत्स्य के मत में जनमेजय का पुत्र।

अंग औरव—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०·१३८)।

अंग वैरोचन—अभिषिक्त राजाओं की सूचि में इस उदार राजा का उल्लेख है। इसके पास उदमय आत्रेय नामक पुरोहीत था (ऐ. ब्रा. ८·२२)।

अंगचूड—कुवेर सभा का एक यक्ष (म. स. १०·१६) हंसचूड पाठ है।

अंगजा—ब्रह्मदेव की कन्या (मत्स्य. ३·१२)।

अंगद—वालि को तारा से उत्पन्न पुत्र। यह रामचन्द्र की सहायतार्थ, बृहस्पति के अंश से निर्माण हुआ था अतएव भाषण कला में अत्यंत चतुर था। युद्ध में, राम के बाण से आहत हो कर धराशायी होने पर, अपने पुत्र अंगद की रक्षा करने की प्रार्थना वालि ने राम से की (वा. रा. कि. १८.४९-५३)। रामचन्द्र ने सुग्रीव को किष्किंधा की राजगद्दी पर अभिषिक्त कर तत्काल अंगद को यौवराज्याभिषेक किया (वा. रा. कि. २६)।

वानराधिपति सुग्रीव ने, दक्षिण दिशा की ओर जिन वानरों को सीता की खोज की हेतु से भेजा, उनका अंगद नायक था (वा. रा. कि. ४१. ५-६)। सीता की खोज करते समय, पर्वत पर एक बडे असुर से इस की मुलाकात हुई, तथा उसने अंगद पर आक्रमण किया। उस समय उसे ही रावण समझकर, अंगद ने एक मुक्का उसके मुँह पर मारते ही वह रक्त की उलटी करने लगा तथा भूमी पर निश्चेष्ट गिर गया (वा. रा. कि. ४८. १६-२१)। सीता की खोज में असफल होने के कारण, सब वानरों ने प्रायोपवेशन करने का निश्चय किया। इतने में संपाति ने सीता का पता बताया (वा. रा. कि. ५५-५८)। उसी समय समुद्रोल्लंघन कर, कौन कितने समय में पार जा सकता है, इसकी पूछताछ अंगद ने की। अंगद ने कहा कि, एक उडान में वह १०० योजन का अंतर पार कर सकता है (वा. रा. कि. ६५)। अन्त में यह काम हनुमान ने किया। रावण के साथ युद्ध करने के पूर्व, साम की भाषा करने के लिये राम ने अंगद को वकील के नाते भेजा था परंतु उससे कुछ लाभ नहीं हुआ (म. व. २६८; वा. रा. यु. ४१)।

इसने इन्द्रजित के साथ यूद्ध कर के उसे जर्जर किया (वा. रा. यु. ४३)। कंपन के साथ युद्ध कर के उसका वध किया (७६)। नरांतक का (६९-७०), महापार्श्व का (९८) तथा वज्रद्रंष्ट का वध किया (५४)। कुंभकर्ण के साथ युद्ध करते समय, सब वानर उसका शरीर देख कर भयभीत हो गये। उस समय, वीररसयुक्त भाषण करके, सब वीरों को इसने युद्ध में प्रवृत्त किया (६६)। यह सारा कर्तृत्व ध्यान में रख कर, राज्याभिषेक के समय राम ने इसको बाहुभूषण अर्पण किये (१२८)। सुग्रीव के बाद इसने किष्किंधा पर राज्य किया।

२. दशरथपुत्र लक्ष्मण को उर्मिला से दो पुत्र प्राप्त हुए। उनमें से यह ज्येष्ठ पुत्र है। इसके द्वारा स्थापित नगरी को अंगदीया कहते हैं। वहीं यह राज्य करता था (वा. रा. उ. १०२)।

३. भारतीय युद्ध में पांडवों के विरुद्ध कौरवों को इसने सहायता की थी (म. द्रो. २४.३६)।

अंगराज—इसे पालकाप्य ने हाथियों का वैद्यकशास्त्र सिखाया था (अग्नि. २९२)।

अंगार—(सो. द्रुह्यु.) मांधाता राजा के साथ इसका बडा युद्ध हुआ था (म. शां. २९.८१)। यह युद्ध दस माह तक चलता रहा। इसका अंगारसेतु नाम भी प्राप्त है। (ब्रह्म. १३.१४९)। इसे आरब्ध, आरद्वत्, शरद्वत् तथा अरुद्ध नाम प्राप्त हैं (वंशावलि देखिये)।

अंगारक—मंगल नामक ग्रह। यह पूर्वजन्म का शिवपार्षद वीरभद्र है (मत्स्य. ७१; म. स. ११.२०; मंगल देखिये)।

२. सौवीर देश का एक राजपुत्र (जयद्रथ ३. देखिये)।

३. जयद्रथ का भ्राता (म. व. २४९. १०-१२)।

४. सुरभि तथा कश्यप का पुत्र

अंगारपर्ण—एक गंधर्व। पांडव लाक्षागृह से मुक्त हो कर जब गुप्तरूप से रात्रि के समय यात्रा कर रहे थे तब यह कुंभीनसी आदि स्त्रियों के साथ मार्ग की एक नदी में क्रीडा कर रहा था। अर्जुन के साथ इसकी बोलचाल हो कर, अर्जुन का तथा इसका युद्ध हुआ। युद्ध में अर्जुन ने उसको जीत लिया। यह देख कर इसने अर्जुन को सूक्ष्मपदार्थदर्शक चाक्षुषीविद्या प्रदान की, तथा अर्जुन के पास से अग्निशिरास्त्रविद्या स्वयं ली। तदनंतर अर्जुन को इसने कहा कि, वे पुरोहित के विना न घूमें तथा धौम्य ऋषि को पुरोहित बनायें। इतना कह कर यह चला गया। आगे चल कर, इसने अपना पहला नाम छोड कर चित्ररथ नाम का स्वीकार किया (म. आ. १५८.४२; १७४.२)।

अंगिरस्—एक ऋषि। यह वज्रकुलोत्पन्न था (ऋ. १. ५१.४. सायण.)। इसका मनु, ययाति (ऋ. १.३१.१७) तथा भृगु के साथ उल्लेख है (ऋ. ८.४३.१३)। यहाँ यह, इन लोगों के समान मैं भी अग्नि को बुला रहा हूँ ऐसा कहता है तथा इतरों के समान अंगिरसों को भी प्राचीन समझता है। दध्यच्, प्रियमेध, कण्व तथा अत्रि के साथ भी इसका उल्लेख मिलता है (ऋ. १.१३९.९)। अंगिरस के सत्र में इन्द्र ने सरमा को भेजा (ऋ. १.६२.३)। उसी प्रकार अंगिरस के द्वारा सत्र करते समय, वहाँ नाभानेदिष्ठ मानव, सत्र में लेने के लिये प्रार्थना कर रहे हैं (ऋ. १०.६२.१-६)। अन्य वैदिक ग्रन्थों में भी नाभानेदिष्ठ का अंगिरस के साथ संबंध है (ऐ. ब्रा. ५.१४;

तै. सं. ३.१.९.४)। अग्नि को अंगिरस नाम दिया गया है (ऋ. १.१.६)।

अग्नि को प्रथम अंगिरा ने उत्पन्न किया। अंगिरस सुधन्वा का निर्देश है (ऋ. १.२०.१)। बृहस्पति अंगिरा का पुत्र था (ऋ. १०.६७)। अंगिरसों ने देवताओं को प्रसन्न कर के एक गाय मांगी। देवताओं ने कामधेनु दी परन्तु इन्हें दोहन नहीं आता था। अतएव इन्हों ने अर्यमन् की प्रार्थना की तथा उसकी सहायता से दोहन किया (ऋ. १.१३९.७)। अंगिरस तथा आदित्यों में स्वर्ग में सर्वप्रथम कौन पहुँचता है, इसके बारे में शर्यत हुई। वह शर्यत आदित्यों ने जीती तथा अंगिरस साठ वर्षों के बाद पहुँचा ऐसा उल्लेख अंगिरसामयन बताते समय आया है (ऐ. ब्रा. ४.१७)। बहुवचन में प्रयुक्त अंगिरा शब्द, हमारे पितरों का वाचक है तथा ये हमारे पितर हैं ऐसा भी निर्देश है (ऋ. १. ६२. २; १०.१४.६)। यहाँ इसे नवग्व, भृगु तथा अथर्वन् भी कहा गया है। अंगिरसों ने इन्द्र की स्तुति कर के संसार का अंधकार दूर किया (ऋ. १.६२.५)। (अथर्वांगिरस देखिये)।

यह अग्नि से उत्पन्न हुआ अतएव इसे अंगिरस कहते हैं (नि. ३.१७)।

अंगिरस के पुत्र अग्नि से उत्पन्न हुए (ऋ.१०.६२.५)। अंगिरस प्रथम मनुष्य थे। बाद में देवता बने तथा उन्हें ज्ञान प्राप्त हुआ (ऋ. ४.४.१३)। अंगिरस दिवस्पुत्र बनने की इच्छा कर रहे थे (ऋ. ४.२.१५)। अंगिरसों को प्रथम वाणी का ज्ञान प्राप्त हुआ तदनंतर छंद का ज्ञान हुआ (ऋ. ४.२.१६)। ऋग्वेद के नवम मंडल के सूक्त, अंगिरस कुल के द्रष्टाओं के हैं। ब्रह्मविद्या किसने किसे सिखाई, यह बताते समय, ब्रह्मन्–अथर्वन्–अंगिरस – सत्यवह – भारद्वाज – आंगिरस–शौनक ऐसा क्रम दिया है (मुं. उ. १.१.२–३; ३.२.११)। अंगिरस का पुराने तत्त्वज्ञानियों में उल्लेख है (शि. उ. १)। कुछ उपासनामंत्रों को अंगिरस नाम प्राप्त हुआ है (छां. उ. १.२.१०; नृसिं. ५.९.)। यह शब्द पिप्पलाद को कुलनाम के समान लगाया गया है (ब्रह्मोप. १)। अथर्ववेद के पांच कल्पों में से एक कल्प का नाम अंगिरसकल्प है। कौशिकसूत्र के मुख्य आचार्यों में इसका नाम है। आत्मोपनिषद् में अंगिरस ने शरीर, आत्मा तथा सर्वात्मा के संबंध में, जानकारी बताई है (१)। अंगिरस कुल के लोग सिरपर पांच शिखायें रखते थे (कर्मप्रदीप)। अंगिरस मंत्रकार था। परंतु अंगिरस के नामपर मंत्र न हो कर, अंगिरस कुल के लोगों के मंत्र हैं।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर में, ब्रह्मा के सिर से उत्पन्न हुआ। यह ब्रह्मिष्ठ, तपस्वी, योगी तथा धार्मिक था (ब्रह्माण्ड. २. ९. २३)। तथापि स्वायंभुव की संतति की वृद्धि न हुई। इस लिये ब्रह्मा ने स्त्रीसंतति उत्पन्न की। दक्ष की कन्या स्मृति इसकी पत्नी बनी। इसको स्मृति से सिनीवाली, कुहू, राका तथा अनुमति नामक चार कन्यायें तथा भारताग्नि एवं कीर्तिमत् नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्माण्ड. १.११.१७)। वैवस्वत मन्वन्तर में, शंकर के वर से यह पुनः उत्पन्न हुआ। यह ब्रह्मदेव का मानस पुत्र था। यह ब्रह्मदेव के मुख से निर्माण हुआ। इसे पैतामहर्षि कहते हैं। यह प्रजापति था। अग्नि ने पुत्र के समान इसका स्वीकार किया था, इसलिये इसे आग्नेय नाम भी प्राप्त है। अग्नि जब क्रुद्ध हो कर तप करने गया तब यह स्वयं अग्नि बना। तप से अग्नि का तेज कम हो गया। तब वह इसके पास आया। इसने उसे पूर्ववत अग्नि बन कर, अंधकार का नाश करने को कहा। इसने अग्नि से पुत्र मांगा। वही बृहस्पति है (मत्स्य २१७–२१८)। इसके नाम की उपपत्ति अनेक प्रकारों से लगायी जाती है (मत्स्य १९५.९; बृहद्दे. ५.९८; ब्रह्माण्ड. ३. १.४१)। ब्रह्मदेव ने संतति के लिये, अग्नि में रेत का हवन किया, ऐसी भी कथा है (वायु. ६५.४०)।

दक्षकन्या स्मृति इसकी पत्नी (विष्णु. १. ७)। चाक्षुष मन्वन्तर के दक्षप्रजापति ने, अपनी कन्या स्वधा तथा सती इसे दी थी। प्रथम पत्नी स्वधा को पितर हुए तथा द्वितीय पत्नी सती ने, अथर्वांगिरस का पुत्रभाव से स्वीकार किया (भा. ६.६)। इसे श्रध्दा नामक एक पत्नी भी थी (भा. ३.१२.२४;३.२४.२२)। शिवा (सुभा) नामक एक पत्नी भी इसे थी (म. व. २१४.३)। सुरूपा मारीची, स्वराट् कार्दमी तथा पथ्या मानवी यह तीन स्त्रियाँ अथर्वन् की बताई गई है (ब्रह्माण्ड. ३.१.१०२–१०३; वायु. ६५.९८)। तथापि मत्स्य में सुरूपा मारीची, अंगिरस की ही पत्नी मानी जाती है (मत्स्य. १९६.१)। ये दोनों एक ही माने जाते होंगे। सुरूपा से इसे दस पुत्र हुए। इसने गौतम को तीर्थमाहात्म्य बताया (म. अनु. २५.६९)। इसने पृथ्वीपर्यटन तथा तीर्थयात्राएं की थीं (म. अनु. ९४)। इसने सुदर्शन नामक विद्याधर को शाप दिया था (भा. ४.१३)। इसका तथा कृष्ण का स्यमंतपंचक क्षेत्र में मिलन हुआ था (भा. १०.८४)। इसको शिवा से

बृहत्कीर्ति, बृहज्ज्योति, बृहद्ब्रह्मन्, बृहन्मनस्, बृहन्मन्त्र, बृहद्भास तथा बृहस्पति नामक पुत्र तथा भानुमती, रागा (राका), सिनीवाली, अर्चिष्मती (हविष्मती), महिष्मती, महामती तथा एकानेका (कुहू) नामक सात कन्याएं थीं (म. व. २०८)। बृहत्कीर्त्यादि सब बृहस्पति के विशेषण हैं, ऐसा नीलकण्ठ का मत है। इसके अलावा भागवत में सिनीवाली, कुहू, राका तथा अनुमति नामक इसके कन्याओं का उल्लेख है (भा. ४.१.३४)। इसके पुत्र बृहस्पति, उतथ्य तथा संवर्त हैं (म. आ. ६०.५; भा. ९.२.३६)। इसके अतिरिक्त वयस्य (पयस्य), शांति, घोर, विरूप तथा सुधन्वन् भी इसके पुत्र थे (म. अनु. १३२.४३)।

इसने चित्रकेतु के पुत्र को सजीव करके उस का सांत्वन किया (भा. ६.१५; चित्रकेतु १. देखिये)।

अंगिरस का धर्मशास्त्र—व्यवहार के अतिरिक्त अन्य सब विषयों में इसका उल्लेख पाया जाता है। याज्ञवल्क्य ने इसका उल्लेख किया हैं। अंगिरस के मतानुसार, परिषद् में १२१ ब्राह्मणों का समावेश होता है। (याज्ञ. १.९ विश्व.)। धर्मशास्त्र का अवलंब न करते हुए स्वेच्छा से किसीने अगर कृत्य किया तो वह निष्फल हो जाता है (याज्ञ. १.५०)। घोर पातक से अपराधी माने गये ब्राह्मणों के लिये, वज्र नामक व्रत अंगिरस ने बताया, ऐसा उल्लेख विश्वरूप में पाया जाता है (याज्ञ.३.२४८)। प्रायश्चित्त के संबंध में, विश्वरूप ने (याज्ञ. ३.२६५) इसके दो श्लोक दिये हैं। इनमें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, स्त्रीवध के संबंध में विचार किया गया है। कुछ पशुपक्षियों के वध के संबंध में भी प्रायश्चित्त बताया है (याज्ञ. ३. २६६)। इसी में भगवान् अंगिरस कहकर बडे गौरव से इसका उल्लेख किया गया है। परिषद् की घटना से संबंधित इसके तेरह श्लोक अपरार्क ने (२२-२३) दिये हैं। मिताक्षरा में शंख तथा अंगिरस के सहगमन-संबंध में काफी श्लोक दिये गये हैं (याज्ञ. १.८६)। अपरार्क ने (१०९.११२) सहगमन संबंध में, चार श्लोक दिये हैं जिसमें कहा है कि, ब्राह्मण स्त्री को सती नहीं जाना चाहिये। मेधातिथि ने (मनु. ५, १५७) अंगिरस का सती संबंध में यह मत दे कर, उसके प्रति अपनी अमान्यता व्यक्त की है। इसके अशौच संबंध के श्लोक, मिताक्षरादि ग्रंथों में तथा इतरत्र आये हैं। सप्त अंत्यजों के संबंध में, इसका एक श्लोक हरदत्त ने (गौतम २०.१) दिया है। विश्वरूप ने लिखा है कि, सुमन्तु ने अंगिरस का मत ग्राह्य माना है (याज्ञ. ३.२३७) शुद्धिमयूख में अंगिरस ने शातातप का मत ग्राह्य माना है। स्मृतिचन्द्रिका में उपस्मृतियों का उल्लेख करते समय अंगिरस का निर्देश है। वहाँ इसके गद्य अवतरण भी दिये हैं। अंगिरस ने मनु का धर्मशास्त्र श्रेष्ठ माना है (स्मृतिचं. आह्निक)। आनन्दाश्रम में १६८ श्लोकों की, प्रायश्चित्त बताने वाली अंगिरसस्मृति है। उसमें प्रायश्चित्त तथा स्त्री के संबंध में विचार किया गया है। मिताक्षरा में तथा वेदाचार्यों की स्मृतिरत्नावली में बृहद्अंगिरस दिया है। मिताक्षरा में मध्यम अंगिरस का कई बार उल्लेख आया है।

अंगिरस के देवपुत्र—आत्मा, आयु, ऋत, गविष्ठ, दक्ष, दमन, प्राण, सत्य, सद तथा हविष्मान्।

मुख्य गोत्रकार—अजस (अयस्य), उतथ्य, ऋषिज (उषिज), गौतम, बृहस्पति, वामदेव तथा संवर्त।

उपगोत्रकार—अत्रायनि, अभिजित्, अरि, अरुणायनि, उतथ्य, उपबिंदु, ऐरिडव, कारोटक, कासोरु, केराति, कौशल्य (ग), कौष्टिकि, क्रोष्टा, क्षपाविश्वकर, क्षीर, गोतम, तौलेय, पाण्डु, पारिकारारिरेव (पारःकारिरेव), पार्थिव (ग), पौषाजिति (पौष्यजिति), भार्गवत, मूलप, राहुकर्णि (रागकर्णि), रेवाग्नी, रौहिण्यायनि, वाहिनीपति, वैशालि सजीविन्, सलौगाक्षि, सामलोमकि, सार्धनेमि, सुरैषिण, सोम तथा सौपुरि, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, उशिज, सुवचोतथ्य इन तीन प्रवरों के हैं।

अग्निवेश्य, आत्रेयायणि, आपस्तंबि, आश्वलायनि, उडुपति, एकेपि, कारकि (काचापि), कौचकि, कौरुक्षेत्रि, कौरुपति, गांगोदधि, गोमेदगंधिक, जैत्यद्रौणि, जैह्वलायनि, तृणकर्णि, देवरारि, देवस्थानि, द्याख्येय, धमति, (भूनित), नायकि, पुष्पान्वेषि, पैल, प्रभु, प्रावहि, प्रावेपि, फलाहार, बर्हिसादिन्, बाष्कलि, बालडि, बालिशायनि, ब्रह्मतन्वि (ब्रह्म तथा तवि), मत्स्याच्छाद्य, महाकपि, महातेज (ग), मारुत, मार्ष्टिपिंगलि, मूलहर, मौंजवृद्धि, वाराहि, शालंकायनि, शिखाग्रीविन्, शिलस्थलिसरिद्‌भवि साद्यसुग्रीवि, सालडि (भालुठिवालुठि), सोमतन्वि (सोम तथा तवि), सौटि, सौवेष्टय तथा हरिकर्णि ये सब उपगोत्रकार अंगिरा बृहस्पति तथा भरद्वाज इन तीन प्रवरों के हैं।

काण्वायन (ग), कोपचय (ग), क्रोष्टाक्षिन्, गाधिन्, गार्ग्य, चक्रिन्, ताल्कृत, नालविद, पौल्कायनि, बलाकिन् (वालाकिन्), बहुग्रीविन्, भाष्ट्कृत, मधुरावह, मार्कटि, राष्ट्रपिण्डिन, लावकृत, लेन्द्राणि, वात्स्यतरायण, श्यामायनि, सायकायनि, साहरि तथा स्कंदस, ये सब उपगोत्रकार

अंगिरा, गर्ग, बृहस्पति, भरद्वाज तथा सैत्य इन पांच प्रवरों के हैं।

उरुक्षय, उर्व, कपीतर, कलशीकंठ, काव्य, कारीरथ, कुसीदकि, जलसंधि, दाक्षि, देवमति, धान्यायनि, पतंजलि, बिंदु, भरद्वाजि, मावास्थायनि, भूयसि, मदि, राजकेशिन्, लध्विन्वौषडि, शंसपि, शक्ति, शालि, सोबुधि, व स्वस्तितर, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, उरुक्षय तथा दमवाह्य इन तीन प्रवरों के हैं।

अनेह (अनेहि), आर्षिणि (आर्पिणि), गार्ग्यहरि (गर्गिहर), गाल्व (गालवि), गौरवीति, चेनातकि, तंडि, तैल्क, त्रिमार्ष्टिदक्ष, नारायणि (परस्परायणि), मनु, संकृति तथा संबंधि, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा, गौरवीति तथा संकृति इन तीन प्रवरों के हैं।

कात्यायनि, कुणेराणि, कौत्स, पिंग, भीमवेग, माद्रि, मौलि, वात्स्यायनि, शाश्वदर्भि, हंडिदास तथा हरितक, ये सब उपगोत्रकार अंगिरा. जीवनाश्व (युवनाश्व) तथा बृहदश्व इन तीन प्रवरों के हैं।

बृहदुक्थ तथा वामदेव, ये उपगोत्रकार अंगिरा, बृहदुक्थ तथा वामदेव इन तीन प्रवरों के हैं।

अंगिरा, पुरुकुत्स तथा सदस्यु ये तीन प्रवर कुत्सों के है।

अंगिरा, विरूप, रथीतर ये तीन प्रवर रथीतरों के है।

कर्त्तण (कर्मिण), जतृण, पुत्र तथा विष्णुसिद्धि, वैरपरायण तथा शिवमति ये उपगोत्रकार अंगिरा, विरूप तथा वृषपर्व इन तीन प्रवरों के हैं।

तंबि, मुद्गल, सात्यमुग्रि तथा हिरण्य इन उपगोत्रकारों कें प्रवर अंगिरा, मत्स्यदग्ध तथा मुद्गल।

अग्निजिह्व, अपाग्नेय, अश्वयु, देवजिह्व, परण्यस्त (ग), विमौद्गल, विराड़प (बिड़ालज) तथा हंसजिह्व इनके प्रवर अंगिरा, तांडि तथा मौद्गल्य।

अपांडु, कटु (कंकट), गुरु, नाडायन, नारिन्, प्रागावस (प्रागाथम), मरण (मरणाशन), मर्कटप (कटक), मार्कंड (मार्कट), शाकटायन, शिव तथा श्यामायन ये उपगोत्रकार अंगिरा, अजमीढ तथा काव्य इन तीन प्रवरों के हैं।

कपिभू, गार्ग्य तथा तित्तिरि ये अंगिरा, कपिभू तथा तित्तिरि इन प्रवरों के हैं।

ऋक्ष, ऋषिर्मित्रवर, ऋषिवान्मानव, भरद्वाज ये सब अंगिरा, ऋषिर्मैत्रवर, ऋषिवान्मानव, भरद्वाज तथा बृहस्पति इन पांच प्रवरों के हैं।

भारद्वाज, शैशिरेय, शौग तथा हुत, ये उपगोत्रकार अंगिरा, बृहस्पति, भारद्वाज, मौद्गल्य तथा शैशिर इन पांच प्रवरों के हैं (मत्स्य. १९६)।

अंगिरस वंश—(इसे अथर्वन् वंश भी कहा जाता है)।

पथ्या—धृष्णि-सुधन्वन्-ऋषभ।

सुरूपा— १ आधासि, २ आयु, ३ मृत, ४ दनु, ५ दक्ष, ६ प्राण, ७ बृहस्पति-भारद्वाज, ८ सत्य, ९ हविष्य १० हविष्णु।

स्वराट्—१ अयास्य का कितव, २ उतथ्य का शरद्वान, ३ उशिज का दीर्घतमस्, ४ गौतम, वामदेव तथा वामदेव का बृहदुक्थ।

इनके अन्य भेद

अयास्य, आर्षभ, उतथ्य, उशिज, कण्व, कपि, कितव, गर्ग, भारद्वाज, भरद्वाज, मुद्गल, रथीतर, रुक्ष, विष्णुवृद्ध, सांकृति, हरित (ब्रह्माण्ड. ३. १. १०४-११२)।

अंगिरस गोत्रीय मंत्रकार

वायु. ५९.९८-१०२;-अंगिरस्, अजमीढ़, अंबरीष, अमृत, आयाप्य, आहार्य्य, उतथ्य, ऋषभ, औगज, कक्षीवान्, कण्व, गार्ग्य, त्रसदस्यु, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पृषदश्व, पौरुकुत्स, बलि, बाष्कलि, बृहदुक्थ, भरद्वाज, भारद्वाज, मांधाता, मुद्गल, युवनाश्व, वाजश्रवस्, वामदेव, विरूप, वेधस, शेनी, संहृति, सदस्युमान्, सुवित्ति।

मत्स्य. १४५.१०१-१०५; - अंगिरस्, अजमीढ़, अपस्यौष, अंबरीष, अस्वहार्य, उकूल, उतथ्य, ऋषिज, कक्षीवान्, कवि, काव्य, कृतवाच्, गर्ग, गुरुवीत, त्रित, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पृषदश्व, बृहत्, भरद्वाज, मांधाता, मुद्गल, युवनाश्व, लक्ष्मण, वाजिश्रव, वामदेव, विरूप, वैग्रग, शरद्वान्, शुक्ल, स्मृति संस्कृति, सदस्यवान्, सुचित्ति, स्वश्रव।

ब्रह्माण्ड. २.३२-१०७-१११; - अंगिरस्, अजमीढ़, अंबरीष, अयास्य, आहार्य, उतथ्य, असिज, कक्षीवान्, कण्व, कपि, ऋतवाच्, गर्ग, चक्रवती, तुक्षय, त्रसदस्यु, दीर्घतमस्, पुरुकुत्स, पौरुकुत्स, बाष्कलि, बृहदुक्थ, भरद्वाज, मांधाता, मुद्गल, युवनाश्व, वाजश्रवस्, वामदेव, विरूपाक्ष, वृषादर्भ, शिनि, संकृति, दस्युमान्, सनद्वाज।

(आंगिरस तथा वसुरोचिष् देखिये)।

२. उत्तानपादवंशीय उल्मुक को पुष्करिणी से उत्पन्न पुत्र।

३. श्रावण माह के इन्द्र नामक सूर्य के साथ घूमनेवाला ऋषि (भा. ४. १३; ह. वं. १. १८)।

४. एक पितृगण।

अचल—शकुनि का भाई। यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में था (म. स. ३१. ७)। यह महाभारत के युद्ध में अर्जुन के हाथ से मारा गया (म. द्रो. २९. ११-१२)। यह एकरथ था (म. उ. १६५. १; शकुनि देखिये)।

२. (सो. वसुदेव.) वायु के मतानुसार वसुदेव का मदिरा से उत्पन्न पुत्र।

३. (मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार महीनेत्र का पुत्र।

अच्छावाक् क्रतु—ब्रह्मदेव के पुष्कर तीर्थ के यज्ञ का होतृगणों का एक ऋत्विज (पद्म. सृ. ३४)।

अच्छोदा—बर्हिषद पितरों की मानसकन्या। अग्निष्वात्त पितरों की कन्या (ह. वं. १.१८. २६–२७)। इससे अच्छोद सरोवर बना। इसने अनजाने पितरों में से अमावसु को वरण किया; इसलिये यह योगभ्रष्ट हुई तथा द्वापारयुग में अमावसु की कन्या हुई (ब्रह्माण्ड. ३. १०. ५४–६४, म. आ. ७; परि. १. ३४. पंक्ति १४, २५; मत्स्य. १४.३–७)। आगे चल कर यही सत्यवती हुई।

अच्युत—विभिंदुकीयों ने किये सत्र में यह प्रतिहर्ता का काम करता था (जै. ब्रा. ३. २२३)।

अज—(सू. इ.) राजा रघु का पुत्र तथा दशरथ का पिता। पद्मपुराण में रघु का पौत्र तथा दिलीप द्वितीय का पुत्र (पद्म. ८)। अजा अर्थात् बकरी पालने के कारण, इसे अज नामांतर प्राप्त हुआ। इसने भैरवी का पूजन कर के सुख और ऐश्वर्य प्राप्त किया। उस भैरवी को अजातपालेश्वरी कहने लगे (स्कंद. ७. १. ५८)। इसका पुत्र दीर्घबाहु तथा उसका पुत्र दशरथ (पद्म. सृ. ८)।

२. प्रतिहर्ता को स्तुती से उत्पन्न दो पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र। इसका भाई भूमन् (भा. ५. १५. ५)।

३. (सू. निमि.) ऊर्ध्वकेतु जनक का पुत्र तथा पुरुजित् जनक का पिता।

४. (सो. पुरूरवस्.) विजयकुल में बलाकाश्व राजा का पुत्र। इसका पुत्र कुश अथवा कुशिक।

५. पांडव पक्षीय एक महारथी (म. उ. १६८. १२)।

६. दाशराज्ञ युद्ध में सुदास का शत्रु (ऋ.७.१८.१९)।

७. सुरभि तथा कश्यप का पुत्र।

८. उत्तम मनु का पुत्र।

९. एक ऋषि। इसके कुल में धनंजय, कपर्देय, परिकूट तथा पाणिनि ऋषि हुए (विश्वामित्र देखिये)।

१०. तुषित देवगणों में से एक।

११. इसकी लड़की पृश्नि (जंतुधना तथा शंड देखिये)।

१२. धर्म तथा मुहूर्ता का पुत्र।

अज एकपाद्—यह अग्नि है। दुर्गाचार्य इसका अर्थ 'सूर्य' ऐसा लेते हैं (नि. १२.२९)। इसका निवासस्थान स्वर्ग है (नि. ५.६)। इसे पेयनिषेक दिया जाता है (पा. गृ. २. १५.२)। यह एकादश रूद्रों में से एक है।

अजक—दनुपुत्र दानव (स्कंद. ३.२.८)।

२. (सो. अमा.) बलाकाश्व का पुत्र। इसका पुत्र कुश अथवा कुशिक। भागवत तथा वायुमत में सुहोत्रपुत्र तथा विष्णुमत मे यह सुजंतु का पुत्र है।

३. (सू. इ.) मत्स्य मत में दिलीप का पुत्र। यह नाम अज के लिये आया है।

४. (प्रद्योत. भविष्य.) विशाखयूपा का पुत्र।

अजकर्ण—मय और रंभा का पुत्र।

अजगंधा—कश्यप तथा मुनि की कन्या। यह अप्सरा थी।

अजन—तेरह सैंहिकेयों में से एक असुर (सैंहिकेय देखिये)।

अजब—वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास के सामशिष्य परंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

अजबिंदु—सौवीर देश का राजा। लोभ के कारण इसका नाश हुआ (कौ. अ. ६)।

अजमीढ—(सो. पुरु.) विकुंठन तथा दाशार्ही सुदेवा का पुत्र। उस को कैकेय्यी, नागा, गांधारी, विमला तथा ऋक्षा आदि पत्नीयाँ थी। इसको २४०० पुत्र हुए। उन मे वंश चलाने वाला संवरण था। संवरण-वैवस्वती तपती का पुत्र कुरु। (म. आ. ९०.३८-४०)।

२. (सो. पूरु) सुहोत्र और ऐक्ष्वाकी का ज्येष्ठ पुत्र। इसकी पत्नी के नाम धूमिनी, नीली और केशिनी। धूमिनी का ऋक्ष, नीली के दुःषन्त तथा परमेष्ठिन्, केशिनी के जह्नु, जन तथा रूपिन् ऐसे पुत्र थे। ये सब पांचाल थे (म. आ. ८९. २६–२९)।

वायुमें हस्ति के तीन पुत्रो में इसे ज्येष्ठ कहा है। इसकी नीलिनी, धूमिनी और केशिनी तीन पत्नियाँ थीं। इसका वंश चलाने वाले तीन पुत्र थे। उनके नाम ऋक्ष, बृहदिषु (बृहद्वसु) और नील। बृहदिषु से अजमीढ वंश प्रारंभ होता है। (वायु. ९९. १७०)

अजमीढ से, पांचाल देश में, पांचालवंशीय पुरुवंश का स्वतंत्र राज आरंभ हुआ। इस कारण इस वंश का नाम अजमीढवंश हो गया। पांचाल के दो भाग हुए। दक्षिण पांचाल तथा उत्तर पांचाल। दक्षिण पांचाल में अजमीढ-पुत्र बृहदिषु तथा उत्तर पांचाल में अजमीढपुत्र नील राज करनें लगे।

बृहदिषु से भल्लाटपुत्र जनमेजय तक के वंश का उल्लेख, अनेक पुराणों में मिलता है। इस में प्रायः वीस पुरुष हैं।

जनमेजय के पश्चात्, उत्तर पांचाल का नीलवंशीय पृषत्पुत्र राजा द्रुपद, दक्षिण पांचाल का शासक बन गया। द्रुपद की कन्या द्रौपदी, पांडवों की पत्नी थी तथा पुत्र धृष्टद्युम्न, भारतीय युद्ध में पांडवों का सेनापति था।

भारतीय युद्ध के लिये, द्रुपद ही पांडव पक्ष का प्रधान तथा कुशल नियोजक माना जाता है।

दक्षिण पांचाल की राजधानी कांपिल्य थी तथा उत्तर पांचाल की राजधानी अहिच्छत्र। नीलवंशीय पृषत्पुत्र द्रुपद के समय दोनो पांचाल राज एकत्रित हुए।

द्रोण तथा द्रुपद के युद्ध के पश्चात्, उत्तरपांचाल का अधिपति द्रोण हो गया।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, पांचाल राज का नाम कही नही मिलता।

मूलतः क्षत्रिय होते हुए भी आगे चल कर, इस वंश के लोग ब्राह्मण हुए (वायु. ९१. ११६)

अजमीढ, अंगिरा गोत्र में प्रवर और मंत्रकार है (ऋ. ४. ४३-४४)।

अजमीळ्ह सौहोत्र—सूक्तद्रष्टा। ऋग्वेद में इसके दो सूक्त है (ऋ. ४. ४३-४४)। आजमीळ्हासः ऐसा मंत्र में निर्देश है (ऋ. ४. ४४. ६)। पौराणिक उच्चार अजमीढ है।

अजमीळ्ह— अजमीढ का नामान्तर।

अजय—(शिशु. भविष्य.) भागवतमतानुसार दर्भक का पुत्र।

अजस्य—अंगिराकुल का गोत्रकार। अयस्य पाठ भी प्रचलित है।

अजात—(सो. विदूरथ.) मत्स्यमतानुसार हृदीक का पुत्र।

अजातशत्रु—युधिष्ठिर का नामांतर (भा. १. ८. ५; म. भी. ८१. १७)।

२. (शिशु. भविष्य.) ब्रह्मांडमतानुसार बिंबिसार राजा का पुत्र। विष्णुमतानुसार बिंदुसार का, मत्स्यमतानुसार भूमिमित्र का तथा वायुमतानुसार क्षेमवर्मन् का पुत्र।

अजातशत्रु काश्य अथवा **अजातरिपु**—काशी का राजा। गार्ग्य बालाकी नामक अभिमानी ब्राह्मण को इसने वादविवाद में हराया (बृ. उ. २. १. १; कौ. उ. ४. १)।

अजामिल—कान्यकुब्ज देश का एक ब्राह्मण। यह प्रथम सदाचारी था। परन्तु बाद में किसी वेश्या के मोह में फँसकर, इसने वृद्ध मातापिता तथा विवाहिता पत्नी का भी त्याग कर दिया। राहगीरों को लूटना, द्यूत खेलना, धोखा देना तथा चोरी करना इ. साधनों से यह चरितार्थ चलाता था। इस प्रकार इसने अठ्यासी वर्ष बिताये। इस वेश्या से इसे दस पुत्र हुए। उनमें से सबसे छोटे नारायण पर इसकी अधिक प्रीति थी। मरणसमय आने पर यह उसी को पुकारता रहा। केवल नामस्मरण के माहात्म्य से यमदूतों के हाथों से विष्णुदूतों ने इसे मुक्त किया। तब विष्णुदूत तथा यमदूतों का वार्तालाप इसने सुना। यमदूतों द्वारा कथित, वेदप्रतिपादित गुणाश्रित धर्म तथा विष्णुदूतो द्वारा प्रतिपादित शुद्ध भागवतधर्म सुन कर इसे कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ तथा हरि के प्रति भक्ति इसके मन में उत्पन्न हुई। अन्त में विरक्त हो कर, यह हरिद्वार को गया तथा गंगा में देहत्याग कर के मुक्त हो गया (भा. ६. १-२)।

अजामुखी—लंका के अशोकवन में, सीता के संरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (वा. रा. सुं. २४. ४४)।

अजित्—स्वायंभुव मन्वन्तर के याम देवताओं में से एक।

२. चाक्षुष मन्वन्तर के वैराग्य तथा संभूति से उत्पन्न विष्णु का अवतार (मनु देखिये)।

३. भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अजित—पृथुक देवों में से एक।

अजिन—ऊरु को षडाग्नेयी से प्राप्त पुत्र।

अजिर—सर्प संत्र में यह सुब्रह्मण्य नामक ऋत्विज का कार्य करता था (पं. बा. २५.१५)।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित् देवों में से एक।

अजिह्न—पारावत देवों में से एक।

अजिह्विका—अशोकवन की एक राक्षसी (म. व. २६४. ४४)।

अजीगर्त सौयवसि—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण। इसे शुनःपुच्छ, शुनःशेप तथा शुनोलांगूल नामक तीन पुत्र थे। शुनःशेप को इसने वरुण को बलि देने के लिये, हरिश्चन्द्र को बेच दिया था (ऐ. ब्रा. ७. १५-५७)। (अम्बरीष तथा ऋचीक देखिये)

अजेय—पारावत तथा विकुंठ देवताओं में से एक।

अजैकपात्—भूत ऋषिको घोरा से उत्पन्न एक रुद्र। २. एक अग्नि, यह रुद्रभी था। (अज एकपाद् देखिये)।

अजैकपाल—शंकर के प्रसाद से प्राप्त पुत्र। इसका एक पैर मनुष्य का तथा दूसरा बकरे का था। बचपन में मृत्यु, रोगों के साथ इसे मारने के लिये आया। परंतु इसने मृत्यु को जीत लिया। इस कारण इसे मृत्युंजय नाम प्राप्त हुआ। यह अत्यंत सात्त्विक था (भवि. प्रति. ४. ११)।

अंजक—कश्यप को दनु से उत्पन्न एक दानव।

अंजन—(सू. निमि.) विष्णु के मत से कुणिपुत्र।

२. ऐरावण का पुत्र। यह यम का वाहन है (ब्रह्मांड. ३. ७. ३३०)।

अंजनपर्वन्--घटोत्कच का पुत्र (म. उ. १९५. १९०. ५९३)। यह रात्रियुद्ध में अश्वत्थामा के हाथों से मारा गया (म. द्रो. १३१. ५३)।

अंजना--यह पूर्वजन्म में पुंजकस्थली नामक अप्सरा थी। शाप के कारण यह पृथ्वी पर कुंजर नामक वानर की कन्या हुई। परंतु अन्य स्थानों पर, इसे गौतम ऋषि की कन्या माना गया है (शिव. शत. २०)। यह केसरी वानर की पत्नी थी (भवि. प्रति. ४. १३)। मतंग ऋषि के कहने से अंजनी ने पति के साथ वेंकटाचल पर जा कर, पुष्करिणीतीर्थ पर स्नान कर के, वराह तथा वेंकटेश को नमस्कार किया। तदनंतर आकाशगंगातीर्थ पर वायु की आराधना की। १००० वर्षों तक तप होने के बाद वायु प्रगट हुआ, तथा उसने कहा 'चैत्र माह की पौर्णिमा के दिन मैं तुम्हारी कामना पूर्ण करूंगा। तुम वरदान मांगो।' इसने पुत्र मांगा। बाद में वायुप्रसाद से इसे मारुती (हनूमान) उत्पन्न हुआ (स्कन्द. २. ४०)। इसे मार्जरा नामक सौत थी (आ. रा. सार. १३)। इसका अंजनी तथा अंजना दोनों नामों से उल्लेख आता हैं। यह कामरूपधरा थी (वा. रा. किं. ६६)।

अटमान--(आंध्र. भविष्य.) मेघस्वाती का पुत्र।

अट्टहास--वर्तमान मन्वन्तर के वीसवें चौखाने में हिमालय के अट्टहास शिखर पर यह शिव का अवतार हुआ। वहाँ इसे निम्नांकित शिष्य थे-१. सुमन्तु, २. वर्वरी, ३. कबंध, ४. कुशिकंधर (शिव. शत. ५)।

अणि मांडव्य—मांडव्य ऋषी का नामान्तर।

अणीचिन् मौन—धार्मिक विधि के संबंध में एक तत्त्वज्ञ तथा जाबाल तथा चित्र गौश्रायणि का समकालीन (सां. ब्रा. २३. ५)।

अणुह--(सो. पूरु.) विभ्राज अथवा पार राजा का पुत्र। इसे नीप नामक दूसरा नाम है। इसकी पत्नी शुकाचार्य की कन्या कृत्वी अथवा कीर्तिमती। इसे ब्रह्मदत्त तथा अन्य भी सौ पुत्र थे।

अतिकाय--धान्यमालिनी से रावण को प्राप्त पुत्र। इसका शरीर अत्यंत स्थूल होने के कारण, इसे यह नाम मिला। इसने ब्रह्मदेव की आराधना कर के अस्त्र, कवच, दिव्य रथ तथा सुरासुरों से अवध्यत्व प्राप्त किया। इसी कारण, इसने इन्द्र का पराभव किया तथा वरुण को जीत कर उससे उसका पाश प्राप्त किया। कुंभकर्ण की मृत्यु के बाद यह युद्धार्थ आया तब लक्ष्मण ने इसका वध किया। (वा. रा. यु. ७१)।

अतिथि—(सू. इ.) कुश का पुत्र। इसका पुत्र निषध। भविष्य के मतानुसार इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

२. आद्य देवगणों में से एक।

अतिथिग्व— दिवोदास को इस नाम से संबोधित किया है। इसका संबंध इंद्रोत, पर्णय, करंज और तुर्वयाण से माना जाता है।

अतिधन्वन्— मशक का शिष्य। इसका शिष्य उदर शांडिल्य (वं. ब्रा. २)। इसने उदरशांडिल्य को उद्गीथ की उपासना के बारे में जानकारी बताई (छां. उ. १.९.३)।

अतिनामन्— चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अतिबाहु— स्वायंभुव मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

२. कश्यप को प्राधा से उत्पन्न एक गंधर्व।

अतिभानु— सत्यभामा तथा कृष्ण का पुत्र।

अतिभूति— (सू. दिष्ट.) विष्णु के मत में यह खनिनेत्र का पुत्र है।

अतिरथ— (सो. पुरु.) मतिनार का पुत्र (म. आ. ८९. ११)।

अतिरात्र— चक्षुर्मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

अतिसाम एतुरेत— प्राणविद्या की रक्षा करने वाले तत्त्वज्ञानियों में से एक मान कर इसे नमन किया गया है (जै. उ. ब्रा. २६.१५)।

अतुलविक्रम— (सू. इ.) भविष्य के मतानुसार क्रोधदान का पुत्र।

अत्यंहस् आरुणि—प्लक्ष दय्यांपति के पास सावित्राग्नि के बारे में प्रश्न करने के लिये इसने अपना शिष्य भेजा था। परंतु उस शिष्य की उसने काफी निर्भर्त्सना की (तै. ब्रा. ३.१०.९.३-५)।

अत्यराति जानंतपि— एक पृथ्वीजेता। राजा न होते हुए भी, वासिष्ठ सात्यहव्य ने इसे ऐन्द्र महाभिषेक किया। इस कारण, इसने सारी पृथ्वी जीती। वासिष्ठ सात्यहव्य ने जब पौरोहित्य का स्मरण दिला कर उसके लिये पुरस्कार मांगा, तब इसने कहा कि, "उत्तर कुरुओं को जीतने के बाद संपूर्ण पृथ्वी का राज्य आपको दे कर मैं आपका सेनापति बनूंगा"। इस पर सात्यहव्य ने कहा, "तुमने मुझको धोखा दिया। क्यों कि मानव उत्तर कुरुओं को नहीं जीत सकते।" तदनंतर सात्यहव्य ने इसे हतबल किया तथा शिबिराजा का पुत्र अमित्रतपन शुष्मिण शैब्य के द्वारा इसका वध करवाया (ऐ. ब्रा. ८.२३)। क्षत्रिय ने ब्राह्मण के साथ द्रोह नहीं करना चाहिये, इस लिये यह कथा बताई गई है।

अत्रायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अत्रि—एक सूक्तद्रष्टा। ऋग्वेद में अत्रि की एक कथा का बार बार उल्लेख आता है। इसे अत्यधिक ताप हो रहा था तब अश्विनों ने इसे शांत किया (ऋ. १. ११२.७)। इसे कुछ कारणवश कारागृहवास करना पड़ा था। इसके कारागृहवास का कारण था, जनता का पक्ष लेकर राजा से लड़ाई। यह लोकशासित राज्य के लिये प्रयत्न करता था (ऋ. ५.६६)। इसे पांचजन्य कहा है (ऋ. १.११७.३)। यह अग्निकुंड में गिरा या अग्नी में झुलसा। उस अग्नी के दाह से अश्विनों ने इसे मुक्त किया (ऋ. १. ११८. ७; ११९. ६)। बहुधा कारागृह की यातनाओं की कल्पना व्यक्त करने के लिये ऐसा वर्णन किया होगा (ऋ. ५. ७. ८. ४; १०. ३९. ९)। पांचवें मंडल में अत्रिगोत्र के काफी सूक्तकारों का उल्लेख है (यजत तथा रातहव्य देखिये)। अत्रि ने चतूराज याग शुरू किया (तै. सं. ७. १. ८)। इसे ग्रहण के संबंध में प्रथम ज्ञान हुआ। इसी लिये ग्रहण लगने पर अत्रि सूर्य को वापस लाता है, ऐसा माना जाता था (ऋ. ५. ४०. ५-९. ब्रह्माण्ड. ३.८.७७; ह. वं. १.३१. १३-१४; प्रभाकर आत्रेय देखिये)।

स्वायंभुव मन्वन्तर में प्रजोत्पादनार्थ ब्रह्मदेव द्वारा निर्मित दस मानस पुत्रों में से यह एक था (वायु. १.९)। यह ब्रह्मदेव के नेत्र से या मस्तक से उत्पन्न हुआ था (भा. ३.१२. २४; मत्स्य. ३.६-८)। यह स्वायंभुव मन्वन्तर में ब्रह्मा के कान से उत्पन्न हुआ (वायु. ९.१०१; ब्रह्माण्ड. २.९.२३; ब्रह्मन् देखिये)। स्वायंभुव मनु का यह जामात। दक्ष ने सती एवं शंकर को न बुलाने के कारण, सती ने स्वयं को दग्ध कर लिया। इस क्रोध के कारण शंकर ने सब को दग्ध कर दिया। उसमें इसकी मृत्यु हो गई। दक्ष की कन्या अनसूया इसकी पत्नी। अत्रि को अनसूया से पांच पुत्र हुए। १. श्रुति (शंखपद की माता तथा कर्दम पौल्ह प्रजापती की पत्नी), २. सत्यनेत्र, ३. हव्य, ४. आपोमूर्ति शनैश्वर, ५. सोम। इस मन्वन्तर में हजारो आत्रेय उत्पन्न हुए (ब्रह्माण्ड. २. ११. २५)। शंकर के वर से ही यह पुनः वैवस्वत मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ। यह एक प्रजापति था (म. स. ११. १५; शां. २०१; मत्स्य. १७१. २६-२७)। कर्दम प्रजापति के कन्याओं में से, अनसूया इसकी पत्नी थी (भा. ३. २४. २२)।

इसे अनसूया से दत्त, दुर्वास तथा सोम नामक तीन पुत्र हुए (ब्रह्मांड. ३.८.८२;६५; मार्क. १६; अग्नि २०.१२; भा. ४.१.१५;३३)। वायु पुराण में अग्नि को दत्त, दुर्वास ये दो पुत्र तथा ब्रह्मवादिनी कन्या उत्पन्न हुइ ऐसा उल्लेख है (७०.७५-७६)। अत्रि को सोम तथा अर्यमा नामक दो पुत्र थे ऐसा उल्लेख महाभारत में दिया है (शां. २०१)। पुष्कल महर्षि इसका पुत्र था ऐसा भी उल्लेख प्राप्य है (म. आ. ६०.६)। इनके नेत्र से चन्द्रमा उत्पन्न हुआ (भा. ९.१४.२-३)।

स्वायंभुव मन्वन्तर में इसने उत्तानपाद को दत्तक लिया था (ब्रह्मांड. २.३६.८४-९०; ह. वं. १.२)। इसका गौतम ऋषि के साथ ब्राह्मणमहात्म्य पर संवाद हुआ था (म. व. १८३)। वायु का हैहय अर्जुन के साथ जब युद्ध चल रहा था तब राहू ने चन्द्र तथा सूर्य का पराभव कर के सर्वत्र अंधकार कर दिया। उस समय देवताओं की प्रार्थना मान्य कर के अत्रि स्वयं चन्द्र बना तथा अंधकार का नाश किया (स. अनु. २६१८)।

यह एक सूक्तकार था (वायु. ५९.१०४; ब्रह्म. २. ३२; मत्स्य. १४५; बृ. उ. २.१.१.)। अत्रि को पैतामहर्षि कहा

जाता है (मत्स्य. १७१. २८)। यह शिवावतार गौतम का शिष्य है। यह स्वायंभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था। उन्नीसवें द्वापर में यह व्यास था।

अत्रि का धर्मशास्त्र—आनंदाश्रम के स्मृति समुच्चय में अत्रिसंहिता तथा अत्रिस्मृति नामक दो ग्रंथ हैं। अत्रिसंहिता में नौ अध्याय तथा चारसौ श्लोक हैं तथा अनेक प्रायश्चित्त बताये हैं। वहाँ योग, जप, कर्मविपाक, द्रव्यशुद्धि तथा प्रायश्चित्त का विचार किया गया है।

अत्रिस्मृति में नौ अध्याय हो कर प्राणायाम, जपप्रशंसा तथा प्रायश्चित्त बताये हैं। मनु ने गौरव के साथ इसका मत लिया है (३.१६)। दत्तकमीमांसा में इसके मत का उल्लेख है। इसके लघ्वत्रिस्मृति तथा बृहदात्रेयस्मृति नामक दो ग्रंथ भी उपलब्ध हैं। इसने वास्तुशास्त्र पर भी एक ग्रंथ रचा था (मत्स्य. २५२.१–४)।

अत्रिवंश के गोत्रकार—अर्धपण्य, उद्दालकि, करजिव्ह, कर्णजिव्ह, कर्णिरथ, कर्दमायन शाखेय (ग), गोणीपति, गोणायनि, गोपन (ग), गौरग्रीव, गौरजिन, चैत्रायण, छंदोगेय, जलद, तर्कीबिंदु, तैलप, भद्रपाद, लैद्राणि, वामरथ्य, शाकलायनि, शारायण, शौण, शौक्रतव (शाक्रतव, शीक्रतव), सवैलेय (सचैलेय), सौनकर्णि (शौणव-कर्णिरथ), सौपुष्पि तथा हरप्रीति (रसद्वीचि) ये गोत्रकार अत्रि, आर्चनानश (त्रिवराताम्) तथा श्यावाश्व इन तीन प्रवरों के हैं।

ऊर्णनाभि, गविष्ठिर, दाक्षि, पर्णवि, वलि, बीजवापि, भलंदन, मौंजकेश, शिरीष तथा शिलर्दनि, ये गोत्रकार अत्रि, गविष्ठिर तथा पूर्वातिथि इन तीन प्रवरो के हैं।

कालेय (ग), धात्रेय (ग), मैत्रेय (ग) वामरथ्य (ग) तथा सवालेय (ग) ये गोत्रकार अत्रि, पौत्रि तथा वामरथ्य, इन तीन प्रवरों के है (मत्स्य. १९७.१–५)। अत्रिपुत्र सोम के वंश में विश्वामित्र हुआ (मत्स्य. १९८)। अत्रि का वंश अनेक स्थानों पर आया है (ब्रह्माण्ड. ३.८.७४–८७; वायु. ७०. ६७–७८; लिङ्ग. १. ६३)। अन्यत्र भी विभागशः आया है (ब्रह्म. ९. १; ह. वं. १. ३१. १२–१७; प्रभाकर तथा स्वस्त्यात्रेय देखिये)।

अत्रिकुल के मंत्रकार—अत्रि, अर्चिसन, निष्ठुर, पूर्वातिथि, बल्गूतक, श्यामावान् (वायु. ५९. १०४); अत्रि, अर्धस्वन, कर्णक, गविष्ठिर, पूर्वातिथि, शावस्य (मत्स्य. १४५. १०७–८); अत्रि, अर्वसन, आविहोत्र, गविष्ठिर, पूर्वातिथि, शावाश्व (ब्रह्माण्ड. २. ३२. ११३–११४)।

२. वसिष्ठगोत्र का एक प्रवर।

३. व्यासपुराण की शिष्यपरंपरा के वायु के अनुसार, यह रोमहर्षण का शिष्य है (व्यास देखिये)।

ऋग्वेद के एक सूक्त की दस ऋचाएं अनेक अत्रियों ने देखी है (ऋ. ९. ८६. ३१–४०)। इससे ज्ञात होता है कि, अत्रिकुल के लोग भी अत्रि नाम से व्यवहृत होते थे।

अत्रि भौम—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २७, ३७–४३; ७६; ७७; ८३–८६; ९. ६७. १०–१२; ८६. ४१–४५; १०. १३७. ४)।

अत्रि सांख्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४३)।

अथर्वन्—अश्वत्थ के दानस्तुति का दान ग्रहण करनेवाला (ऋ. ५. ४७.२४)। यह एक प्राचीन उपाध्याय था (ऋ. १०.१२०.९)। इसीने अग्निमंथन का प्रचार किया (ऋ. ६. १६.१३; तै. ब्रा. ३. ५. ११; वा. सं. ३०. १५)। इसके द्वारा उत्पन्न अग्नि, विवस्वत् का दूत बना (ऋ. १०. २१. ५)। इसीके नाम पर से अग्नि को अथर्वन् नाम प्राप्त हुआ (ऋ. ६. १६. १३)। अग्नि को इसकी उपमा दी गई मिलती है (ऋ. १०. ८७. १२; ८. ९. ७)। अथर्वन् का अर्थ अग्निहोत्री भी है (ऋ. ७. १. १) इसका तथा इन्द्र का स्नेह था। इन्द्र इसे सहायता करता था (ऋ. १. ४८. २) इसकी देवताओं में गणना की गई है (बृ. उ. २. ६. ३; ४. ६. ३)। इसने इन्द्र को उद्देशित कर के एक स्तोत्र की रचना की है (ऋ. १. ८०. १६)। इसने यज्ञ कर के, स्थैर्य प्राप्त कर लिया (ऋ. १०. ९२. १०)। इसने यज्ञसामर्थ्य से मार्ग चौडा कर लेने पर, सूर्य उत्पन्न हुआ (ऋ. १. ८३. ५)। मनु तथा दध्यच् के साथ इसने तप किया था (ऋ. १. १०. १६)। अथर्वांगिरस् शब्द प्राप्य है (अ. वे. १०.७.२०. श. ब्रा. ११. ५. ६७)। इसने इन्द्र को सोमरस दिया (अ. वे. १८. ३. ५४)। वरुण ने इसे एक कामधेनु दी थी (अ. वे. ५. ११; ७. १०४)। इसका देवताओं के साथ स्नेहसंबंध होने के कारण यह स्वर्ग में रहता था (अ. वे. ४. १. ७)।

यह आचार्य था (श. ब्रा. १४. ५. ५. २२; ७. ३. २८)। अथर्वांगिरस् ऋषि का प्रादुर्भाव वैशाली राज्य में हुआ। इस शब्द का अनेकवचन पितर अर्थ से आया है (ऋ. १०.१४.४–६; १०. १५. ८)। वे स्वर्ग में रहनेवाले देवता थे (अ. वे. ११. ६. १३)। एक अद्भुत मूली से ये दैत्यनाश करते थे (अ. वे. ४. ३७. ७)।

यह ब्रह्मदेव का ज्येष्ठ पुत्र। यज्ञ नामक इन्द्र इसका सहाध्यायी था। इन दोनों को ब्रह्मदेव से ब्रह्मविद्या प्राप्त हुई (मुं. उ. १. १. १-२)।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर का ऋषि था। यह ब्रह्मदेव का मानसपुत्र था। इसे कर्दमकन्या शांति तथा चित्ति नामक दो पत्नियाँ थीं (भा. ४.१; १०. ७४. ९.)। इसे सुरूपा मारीची, स्वराट् कार्दमी तथा पथ्या मानवी ये तीन पत्नियाँ थीं (ब्रह्माण्ड. ३.१. १०२-१०३; वायु. ६५. ९८)। परंतु सुरूपा मारीची, अंगिरस् की पत्नी मानी गई है (मत्स्य. १९६.१)। धृतव्रत, दध्यच् तथा अथर्वशिरस् इसके पुत्र हैं। इन्हें आथर्वण कहते हैं।

यह युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा. १०.७४. ९)। अंगिरस कुल का प्रथम कह कर, इसका उल्लेख किया गया है तथा अथर्ववेद से इसका संबंध है, ऐसा उल्लेख अथर्ववेद में पाया जाता है (म. उ. १८. ७-८; मुं. उ. १.१.१-२; वायु. ७४; ब्रह्माण्ड. ३.६५.१२; ह. वं. १.२५)। इसकी माँ का नाम सती था (भा. ६. ६. १९)। इसने समुद्र से अग्नि बाहर निकाला (म. व. २१२.१८)। नहुष, इन्द्रपद से भ्रष्ट होने के पश्चात् पहला इन्द्र सिंहासन पर बैठा। तब अंगिरा ने आ कर अथर्ववेदमंत्रों से इन्द्र का सत्कार किया। तब इन्द्र ने इसे वरदान दिया कि, 'तुम्हारे वेद का नाम अथर्वांगिरस होगा, तुम्हें भी लोग अथर्वांगिरस कहेंगे तथा तुम्हें यज्ञभाग भी मिलेगा'(म. उ. १८.५-८; पणि देखिये)।

अथर्वशिरस्—यह अथर्वन् का पुत्र था (अथर्वन् देखिये)।

अथर्वांगिरस्—अंगिरस को इन्द्र द्वारा दी गई संज्ञा। अथर्वन् तथा अथर्ववेद की संज्ञा (तै. ब्रा. ३.१२.८.२; श. ब्रा. ११.५.६.७ मैत्र्यु. ६.३३; छां. उ. ३.४. १-२; प्र. उ. २.८)। अथर्ववेद शब्द सूत्र में आया है (कौ. सू. ३.१९)।

अथौजस्—वैशाखमास के सूर्य के साथ रहनेवाला यक्ष (भा. १२. ११. ३४)।

अदारि—सुरारि देखिये।

अदिति—मित्रावरुणों की (ऋ. ८.२५. ३; १०३. ८३) तथा अर्यमा की (ऋ. ८.४.७९) माता। इसीसे स्वाभाविकतः इसे राजमाता कहा जाता है (ऋ. २.२७. ७)। इसके आठ पुत्र हैं तथा वे अत्यंत बलवान् हैं (ऋ. १०. ७२. ८; ३.४.११; ८.५६. ११)। पौराणिक कथाओं में अदिति, दक्षकन्या तथा कश्यप पत्नी है। परंतु वेदों में उसे विष्णु की पत्नी कहा गया है (वा. स. २९. ६०; तै. सं. ७.५.१४)। अदिति, अप तथा पृथ्वी से देवता उत्पन्न हुए (ऋ. १०.६३.२)। अदिति की द्यौ तथा पृथ्वी से एकरूप कल्पना की गई है (ऋ. १.७२,९; अ. वे.१३. १. ३८)। तथापि कई स्थानों पर द्यावापृथिवी की अपेक्षा इसका पृथक् उल्लेख किया गया हैं (ऋ. १०. ६३.१०)। एक स्थान पर अदिति विश्वसृष्टि की मूर्ति दिखाई देती है (ऋ. १. ८९.१०)। अदिति, आदित्य की माता, अतएव तेज प्राप्त करने के लिये उसकी प्रार्थना की गयी है (ऋ. ४.२५.३; १०.३६.३)। उसके तेज का गौरव किया गया है। ऋग्वेद तथा अगले ग्रंथों में अदिति को गो कहा गया है (ऋ. ७.८२.१०)। उषा को अदितिमुख कहा है (ऋ. १.११५.३; ८.९०.१५; १०.११.१; वा. सं. १३.४३;४९)। संस्कार की गाय को सामान्यतः अदिति कहा जाता है। भूलोक के सोम की तुलना अदिति के दूध से की गई हैं (ऋ. १.९६.१५)। अदिति की नप्ती (कन्या) दूध को ही माना गया होगा। वह पात्र में गिरते हुए सोम के साथ एकजीव होती है (ऋ. ९.६९. ३)।

यह प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा आसिक्नी की कन्या तथा कश्यप प्रजापति की पत्नी थी। इससे पता चलता है कि, ऋग्वेद के एक सूक्त की द्रष्टी अदिति दाक्षायणी यही होगी (ऋ. १०. ७२)। मैनाक पर्वत के मध्य में स्थित विनशन नामक तीर्थ पर अदिति ने चरु पकाया था (म व. १३५.३)। देवयुग में तीनों लोकों पर देवताओं का स्वामित्व था। उस समय इसने पुत्रप्राप्त्यर्थ सतत एक पैर पर खडे हो कर अति कठिन तपश्चर्या की। उससे विष्णु उत्पन्न हुआ (म. अनु. ९३)। विष्णु के पहले इसे ग्यारह पुत्र हुए थे। विष्णु को मिला कर कुल बारह पुत्र हुए (कश्यप देखिये)। तैत्तिरीय संहिता में कहा गया है कि, इसे आठ ही पुत्र हुए। इसे सात की कामना थी अतएव आठवा गर्भ इसने फोड़ दिया। केवल सात पुत्र ले कर यह देवताओं के पास गई। आठवाँ मार्तंड अथवा विवस्वान् का इसने त्याग किया। ये आठ पुत्र ही अष्ट वसु हैं। भूमिपुत्र नरकासुर ने अदिति के कुंडलों का हरण किया तथा वह प्राग्ज्योतिष नगर में जा कर रहने लगा। आगे चल कर कृष्ण उन्हें जीत लाया तथा अदिति को उसने वे कुंडल दिये (म. उ. ४७)।

अदीन—(सो. क्षत्र.) सहदेव का पुत्र। इसका पुत्र जयत्सेन।

अदूर—रुद्रसावर्णि मनु का पुत्र।

अदृश्यंती—मैत्रावरुणी वसिष्ठपुत्र शक्ति की पत्नी तथा पराशर ऋषि की माता।

२. चित्रमुख ब्राह्मण की कन्या। इसका पिता पहले वैश्य था, परंतु तप से ब्राह्मण हो गया (म. अनु. ५३. १७)।

अद्ध—ब्रह्मांड के मत में, व्यास के यजुःशिष्यपरंपरा का, याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

अद्भुत—अग्निविशेष। इसकी पत्नी प्रिया। पुत्र का नाम विडुरथ (म. व. २१३.२५)।

२. दक्षसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला इन्द्र।

अद्र—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अद्रिका—कश्यप तथा मुनि की कन्या अप्सरा। यह शाप से जल में मत्स्यी बनी। इसने मत्स्य नामक राजा तथा मत्स्यगंधा नामक कन्या को जन्म दिया (उपरिचर वसु देखिये; म. आ. ६४)। यह विमान में अमावसु नामक पितरों के साथ क्रीडा करते समय, अच्छोदा के मन में, अमावसु के प्रति कामेच्छा उत्पन्न हुई (ब्रह्माण्ड. ३.१०.५४–६४)।

अधच्छायामय—कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण।

अधर्म—ब्रह्मदेव के पृष्ठभाग से उत्पन्न धर्मविरोधी पुरुष। इसकी पत्नी मृषा। मृषा से दंभ तथा माया यह मिथुन निर्माण हुआ (भा. ३.१२)। इसने वह अपने लिये लिया। आगे चल कर, उस मिथुन से लोभ तथा निकृति यह मिथुन उत्पन्न हो कर, आगे क्रमशः क्रोध तथा हिंसा, कलि तथा दुरुक्ति, मृत्यु तथा भय एवं निरय तथा यातना इस प्रकार संतति उत्पन्न हुई (भा. ४. ८. १–४)। हिंसा से इसे अमृत तथा निकृति उत्पन्न हुए। उनसे भय, नरक, माया तथा वेदना उत्पन्न हुए। माया से मृत्यु, वेदना से दुःख तथा मृत्यु से व्याधि, जरा, शोक, तृष्णा तथा क्रोध उत्पन्न हुए (पद्म. सृ. ३)।

२. वरुण को ज्येष्ठा से उत्पन्न पुत्र। इसे निर्ऋति नामक पत्नी थी। इसके पुत्र १. भय, २. महाभय तथा ३. मृत्यु (म. आ. ६७)।

अधितंस—(सो.) भविष्यमत में अनुतंस का पुत्र।

अधिपति—एक देव। यह भृगु का पुत्र है।

अधिरथ—(सो. अनु.) सत्कर्मा का पुत्र। यह सारथ्यकर्म करता था। एक बार गंगातट पर क्रीडा करते समय, कुंती ने कर्ण को रख कर नदी में छोडी हुई पेटी इसको मिली। तदनंतर कर्ण को बाहर निकाल कर, इसने उसका नालच्छेदन किया तथा उसे अपनी राधा नामक पत्नी को सौंप कर, पुत्र के समान उसका पालन किया (भा. ९.२३.१३; म. आ. ६७; १३७; व. २९३)।

अधिसामकृष्ण—(सो. पूरु. भविष्य.) वायु, विष्णु तथा मत्स्य पुराण में, इसके आगे भविष्यकालीन राजाओं का उल्लेख प्रारंभ हुआ है। इसके राज्य काल में वायुपुराण लिखा गया (वायु. ९९.२५८)। हस्तिनापुर बह जाने पर, यह अपनी राजधानी कौशांबी में ले गया (वायु. ९९.२७१)। मत्स्य के मत में यह शतानीक—पुत्र है। विष्णु तथा मत्स्य पुराणों में अधिसोमकृष्ण ऐसा पाठ है। भागवत में असीमकृष्ण पाठ है। शतानीक-अश्वमेधदत्त-अधिसामकृष्ण ऐसा वंशक्रम पाया जाता है (वायु. ९९.२५७-२५८)।

अधिसोमकृष्ण—अधिसामकृष्ण देखिये।

अधीर—एक राजा। यह शंकर का परमभक्त था। एक बार गलती से इसने एक निरपराध स्त्री को देहान्त शासन दिया। उसी प्रकार, एक शिवमंदिर भी इसके हाथों जलाया गया। इन दो दुष्टकृत्यों के कारण मृत्यु के अनन्तर, यह पिशाच बना तथा इसके मुख से निरंतर अग्निज्वाला निकलने लगी। परंतु शंकर के प्रसाद से इसका यह कष्ट दूर हुआ तथा यह शिव गणों में से एक हुआ (पद्म. पा. १११)।

अधृति— अभूतरजस् देवों में से एक।

अधृष्ट वा **अधृष्णु**— सावर्णि मनु का पुत्र।

अध्रिगु— अश्वि तथा इन्द्र ने इसकी रक्षा की (ऋ. १.११२.२०; ८.१२.३)।

अध्वरीवत्— सावर्णि मनु का पुत्र।

अनग्नि— पितरों में से एक। इसकी पत्नी दक्षकन्या स्वधा। स्वधा से इसे वयुना तथा धारिणी नामक दो कन्याएँ हुई (भा. ४.१.६२–६४; पद्म. सृ. ९)।

अनघ— उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षि यों में से एक।

३. एक गंधर्व (म. आ. ११४.४४)।

अनंग— कर्दम प्रजापति का पुत्र (म. शां. ५९. ९७)।

अनंत— कद्रूपुत्र (काश्यप देखिये)।

२. (सो. यदु.) वीतिहोत्र का पुत्र। इसका पुत्र दुर्जयामित्रकर्षण (ब्रह्म. १३)।

अनंतभागिन्— भृगु कुल का एक गोत्रकार।

अनंतसेन— देवों में से स्कंद अथवा रुद्र। इसने भीष्म के वध के लिये अंबा को माला दी। (अम्बा देखिये)।

अनंती— शतरूपा का नामान्तर।

अनपान— (सो. अनु.) वायु के मत में दधिवाहन का पुत्र (खनपान देखिये)। इस को अपान द्वार नही था। इस लिये यह नाम है।

अनपाया— कश्यप तथा मुनि की कन्या। यह एक अप्सरा थी।

अनमित्र— (सू. इ.) निघ्नराजा का पुत्र।

२. (सो. यदु.) वृष्णि को इस एक ही नाम के दो पुत्र थे। (सुमित्र देखिये)।

३. (सो. यदु.) शिनि राजा का पुत्र। यह बड़ा पराक्रमी था। भागवत में, इसे युधाजित् का पुत्र भी कहा है।

४. ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

अनरण्य— (सू. इ.) त्रसदस्यु का पुत्र (भा. ९. ७.४)। मत्स्य, ब्रह्माण्ड, वायु तथा लिंग पुराणों के मत में यह संभूत का पुत्र है। यह जब अयोध्या में राज्य कर रहा था, तब रावण ने इस पर आक्रमण किया। उस समय इसने रावण से घमासान युद्ध किया। परंतु रावण अधिक बलवान होने से, इसकी संपूर्ण सेना नष्ट हुई। इसने रावण के अमात्य, मारीच, शुक, सारण तथा प्रहस्त का पराभव किया। परंतु जल्द ही यह धरती पर गिरा तथा मरते-मरते इसने रावण को शाप दिया कि, यदि मेरा तप, दान, हवन सत्य होंगे, तो मेरे वंश का दशरथपुत्र राम समस्त कुल समवेत तुम्हारा नाश करेगा (वा. रा. यु. ६०; उ. १९)। युद्ध त्याग कर तप करते समय रावण ने इसका वध किया इसलिये इसने शाप दिया। इसका पुत्र त्रसदश्व। भविष्य के मत में यह त्रिंशदश्व का पुत्र है तथा इसने अठाईस हजार वर्षों तक राज्य किया।

२. (सू. इ.) सर्वकर्मा का पुत्र। इसका पुत्र निघ्न (पद्म. सृ. ८)।

अनर्वन्— वृत्रासुरानुयायी असुर (भा. ६.१०.१८-१९)।

अनर्शनि—इन्द्र का शत्रु (ऋ. ८. ३२.२.)।

अनल—धर्म को वसु से उत्पन्न पुत्र। इसके पुत्र, कुमार (कार्तिकस्वामी), शाख, विशाख तथा नैगमेय। यह एक वसु है। यह प्रस्तुत मन्वन्तर में आग्नेयी दिशा का स्वामी है। यह कुमार अनल एवं स्वाहा का पुत्र है (ब्रह्माण्ड. ३. ३. २१-२६; म. आ. ६७; विष्णु. १. १५)।

२. बिभीषण के अमात्यों में से एक (मालेय देखिये)।

३. गरुड़ का पुत्र (म. उ. ९९. ९)।

अनला—रोहिणी की दो कन्याओं में से दूसरी। इसकी कन्या शुकी।

२. माल्यवान् राक्षस को सुंदरी नामक स्त्री से उत्पन्न कन्या तथा विश्वावसु राक्षस की पत्नी। इसकी कन्या कुम्भीनसी (वा. रा. उ. ६१.१६)।

अनवद्या—कश्यप को प्राधा से उत्पन्न अप्सरा।

अनश्वन्—(सो. पूरु.) विदूरथ का पुत्र। इसकी माँ मगध वंश की संप्रिया। इसकी पत्नी का नाम अमृता। इसके पुत्र का नाम परीक्षित् (म. आ. ९०. ४२)। अरुग्वत् ऐसा पाठभेद हैं।

अनसूय—कश्यप गोत्र का एक गोत्रकार।

अनसूया—स्वायंभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के ब्रह्म मानसपुत्र अत्रि ऋषि की पत्नी। यह कर्दम को देवहूती से हुई। यह दक्षकन्या भी थी (गरुड. २६)। ऋग्वेद के बाईसवें परिशिष्ट में केवल अत्रि की प्रियपत्नी ऐसा इसका उल्लेख है। पौराणिक वाङ्मय में पतिव्रता कह कर इसका उल्लेख है। इसने निराहार तीन सौ वर्षों तक तप कर के शंकर की कृपा संपादित की। इससे इसे दत्तात्रेय, दुर्वासस् तथा चन्द्र नामक तीन पुत्र हुए। चित्रकूट की गंगा इसने प्रवृत्त की (शिव. कै. २. १९)।

राम वनवास को जाते समय अत्रि के आश्रम में आये थे। तब अत्रि ने निम्नोल्लिखित अनसूया का वर्णन कर के, सीता को, उसके दर्शनार्थ भेजने के लिये राम से कहा। दस वर्षोंतक पर्जन्यवृष्टि न होने पर लोग दग्ध होने लगे तब अनसूया ने फलमूल उत्पन्न कर के आश्रम में गंगा लाई। यह उग्र तपश्चर्या करनेवाली एवं कड़क नियमोंवाली है। दस हजार वर्षों तक इसने बड़ी तपस्या की है। इसके व्रतों से ही ऋषियों की तपस्या के मार्ग में आनेवाले विघ्न दूर हुए। देवकार्यों के लिये परिश्रम करते समय दस रातों की एक रात्रि इसने बनाई। सीता ने जब इसका दर्शन लिया तब इसके गात्र शिथिल हो गये थे। शरीर पर झुर्रियाँ पड़ गई थी। बाल सफेद थे। हवा से हिलनेवाली कदली के समान इसकी स्थिति हो गई थी। पतिसमवेत वनवास स्वीकारने के लिये, सीता की इसने प्रशंसा की तथा निरंतर ताजी रहनेवाली माला, वस्त्र, भूषण, उबटन, अनुलेपन इ. वस्तुएं दी। तदनंतर स्वयंवर के बारे में, प्रेम

से सीता के साथ बातें की। उसे अलंकार पहना कर बड़े प्यार से विदा किया (वा. रा. अयो. ११७–११९)।

मांडव्य ऋषि को जब शूली पर चढाया गया था, तब उस शूल को अंधकार में एक ऋषिपत्नी का धोखे से धक्का लगा, तब मांडव्य ने उसे शाप दिया कि, सूर्योदय होते ही तुम विधवा हो जाओगी। तब उसने सूर्योदय ही नहीं होने दिया। इससे सारे व्यवहार बंद हो गये। उसकी अनसूया सखी होने के कारण, जब प्रार्थना की गई तब उसे वैधव्य प्राप्ति न होने देते हुए, इसने सूर्योदय करवा कर समस्त संसार को सुखी किया (मांडव्य देखिये)।

अनाधृष्टि—(सो. पुरु.) रौद्राश्व का पुत्र (म. आ. ८९.१०)। इसकी पत्नी एक अप्सरा थी।

२. (सो. यदु.) शूर राजाका पुत्र।

३. श्रीकृष्ण अनुयायी एक यादव (म. आ. २१३,२६; स. ३.५७; वि ६७.२१; उ. १४९.६२)।

अनाधृष्य—धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक (म. आ. ६१. १०४)।

अनानत पारुच्छेप—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.१११)।

अनायुष—इसके मान के कारण इसके पुत्र की मृत्यु हुई (मार्कं. २४.१६)।

अनायुषा—एक राक्षसी। इसे अररु, बल, विज्वर, वृत्र व वृष नामक पुत्र थें (ब्रह्माण्ड. ३.६.३१–३७)।

अनिकेत—यक्ष (म. स. १०.१७)।

अनिमिष—गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.१०)।

अनिरुद्ध—(सो. यदु.)–प्रद्युम्न को रुक्मकन्या से उत्पन्न पुत्र। यह दस हजार हाथियों के बल से युक्त था (भा. १०. ९०. ३५–३६, विष्णु. ५. ३२.५)। पर्वत उखाड कर यह उससे शत्रु को मारा करता था। इसकी अनेक पत्नीयाँ थी तथा सुरा पी कर यह उनसे रममाण होता था (ह. वं. २.११८.७३; ११९. २६–२७)। इसे रुक्मिपौत्री रोचना से वज्र उत्पन्न हुआ (भा. १०, ६१)। इसेही प्राद्युम्नि ऐसा दूसरा नाम है। इसने अन्य यदु कुमारों के साथ अर्जुन के पास धनुर्वेद सीखी (म. स. ४.२९.५३)। इसने बाणासुर की कन्या उषा के साथ गांधर्व विधि से विवाह किया। यह राजसूय यज्ञ में था (म. स. ३१.१५)।

२. अठारह वास्तुशास्त्रकारों में से एक (मत्स्य. २५२. ३–४)।

अनिल—अष्टवसूओं में से एक। इसकी पत्नी का नाम शिवा। इसे मनोजव एवं अविज्ञानगति नामक दो पुत्र थे (म. आ. ६०. २४; ब्रह्माण्ड. ३. ३. २१; २६; विष्णु. १. १५. ११०–११५)।

२. एक क्षत्रिय। शैव्य अथवा वृषादर्भी का पुत्र। वृषादर्भी ने अपने एक यज्ञ में, इसे दक्षिणा कह कर, सप्तर्षियोंको अर्पण किया। परंतु अल्पायु होने के कारण, शीघ्र ही इसकी मृत्यु हो गई। उस समय भयंकर अवर्षण होने के कारण, अत्यंत क्षुधातुर सप्तर्षियों ने इसे स्थाली में पका कर खाने का विचार किया। परंतु यह पका नही अतएव वह कार्यरूप में न आ सका (म. अनु. ९३)।

३. मित्रविंदा से कृष्ण को प्राप्त पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१. १६.)।

४. (सो. पूरु.) विष्णु के मत में तंसु का पुत्र।

५. गरुड़ का पुत्र (म. उ. ९९. ९)।

अनिल वातायन—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६८)।

अनिष्टकर्मन्—(आंध्र. भविष्य.) ब्रह्मांड के मतानुसार पटुमानपुत्र तथा भागवत मतानुसार अटमानपुत्र। विष्णु के मतानुसार अरिष्टकर्मन् पाठ है।

अनीकविदारण—जयद्रथ का बंधु (म. व. २४९. १२)।

अनील—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

अनीह—(सू. इ.) भागवतमत में देवानीकपुत्र। इसे अहीनरादि नामांतर हैं।

अनु—दाशराज्ञयुद्ध में सुदास के शत्रुओं में से एक (ऋ. ७. १८. १४)। इन्द्र का रथ अनु ने बनाया (ऋ. ५. ३१. ४)। यह कारिगर तथा इन्द्र का उपासक था (ऋ. ८.४.१)।

२. (सो.) ययाति को शर्मिष्ठा से उत्पन्न तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ (म. आ. ७०. ३२)। इसने यदु के ही समान, पिता का वृद्धत्व स्वीकार नही किया अतएव इसे मुख्य राज्याधिकार नही था। यह उत्तर में म्लेच्छों का राजा बना (मत्स्य. ३३. २२–२३)।

अनु से ले कर कर्णपुत्र वृषसेन तक का वंश भागवत में उद्धृत किया हैं (भा. ९. २३. १–१४)। अनु से आठवाँ पुरुष महामनस् को, उशीनर तथा तितिक्षु नामक दो पुत्र हुए। उशीनर शाखा से केकय तथा मद्रक निकले। ये भारत की वायव्य सीमा की और फैले तथा बलि के पुत्र, अंग, वंग, कलिंग, सुह्म, पुंड्र तथा आन्ध्र ये पूर्व भारत में सागर तक फैल गये। इनमें दशरथ का स्नेही रोमपाद पैदा हुआ। उसकी पुत्री शान्ता, ऋष्यशृंग की पत्नी। इसी ऋष्यशृंग के कारण दशरथ को रामादि पुत्र-

प्राप्ती हुई। इसी वंशस्थित अधिरथ ने कुन्तीपुत्र कर्ण का पालन कर के बडा किया। कर्णपुत्र वृषसेनादि तथा स्वयं कर्ण भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में थे। इस प्रकार यह अनुवंश, वायव्य सीमान्तर्गत केकय मद्रक से ले कर, पूर्व में आन्ध्र तक फैला हुआ था। अयोध्या, हस्तिनापुर आदि स्थान के राजाओं से इस वंश के निकट सम्बंध थे।

३. (सो. अंध.) ऋथकुल के कुरुवश का पुत्र (भा. ९.२४.३-६)।

४. (सो. कुकुर.) कपोतरोम का पुत्र। तुंबुरु इसका मित्र था (भा. ९.२४.२०)।

अनुकृष्ण— यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अनुग्रह—मौत्य मनु का पुत्र।

अनुतंस—(सो.) भविष्य मत में समातंस का पुत्र।

अनुतापन—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अनुभूति—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अनुमत्—चाक्षुष के आद्य नामक देवगणों में से एक।

२. तुषित देवों में से एक।

अनुमति—अंगिरा ऋषि से श्रद्धा को उत्पन्न चार कन्याओं में से कनिष्ठ (भा. ४.१.३४;)। द्वादशादित्य के धातृ आदित्य की पत्नी (भा. ६.१८.३)।

२. भृगु गोत्र का एक गोत्रकार।

अनुम्लोचा—एक अप्सरा। यह भाद्रपद मास में आदित्य के साथ रहती है (भा. १२.११)।

अनुयायिन्—धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक (म. आ. ६८)। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १५८)।

अनुरथ—(सो. यदु.) विष्णु के मत में कुरुवश का पुत्र।

अनुराधा—दक्ष तथा असिक्नी की कन्याओं में से एक तथा सोमपत्नी।

अनुवक्तृ सत्य सात्यकीर्त—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.५.४)।

अनुविंद--आवंत्य राजा जयसेन को वसुदेवभगिनी राजाधिदेवी से प्राप्त कनिष्ठ पुत्र (भा. ९.२४.३९)। इसका पराजय कर, उसकी भगिनी मित्रविंदा से कृष्ण ने विवाह किया (भा. १०.५८.३०-३१)। इसको विंद नामक ज्येष्ठ भ्राता था।

ये दोनों भाई, मित्रविंदा-कृष्ण के विवाह के विरोध में थे। दिग्विजय में सहदेव ने इनको पराजित भी किया था। इसलिये वे दोनो दुर्योधन के पक्ष में चले गये (म. स. २८. १०; उ. १६३.६)। इसने पहले कुंतिभोज राजा के साथ युद्ध किया (म. भी. ४३. ७१)। अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ७४.२९)।

२. कैकय राजा के दो पुत्रों मे से कनिष्ठ। यह दुर्योधन के पक्ष में था। सात्यकि ने इसका वध किया (म. क. ९.६)।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। यह घोषयात्रा में था (म. आर. २३१.८) भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.९८)।

अनुव्रत—(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मत में क्षेम का पुत्र।

अनुशाल्व—(सो. क्रोष्टु.) सौभपति शाल्वराजा का भाई। शाल्व को कृष्ण ने मारा इसलिये यह कृष्ण से वैर रखता था। यह कृष्ण का वध करने की संधि देख रहा था। पांडवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, कृष्ण सहपरिवार हस्तिनापुर में आया हुआ था। यह संधि देख कर, अपने सुतार नामक सेनापति के द्वारा, इसने सेना एकत्रित करवाई तथा गुप्त रूप से हस्तिनापुर के पास आ कर रहने लगा। कृष्ण अश्वमेध के लिये लाया गया अश्व देख रहा है, ऐसी सूचना मिलते ही इसने बडी चपलता से घोड़े को भगा लिया। तब भीमसेन सेना ले कर इसका पीछा करने लगा। प्रद्युम्न तथा वृषकेतु ने इसे पकड़ लाने का बीड़ा उठाया। आगे चल कर बडा युद्ध हो कर, प्रद्युम्न का पराभव हुआ, परंतु वृषकेतु इसे पकड़ लाया। आगे मृत्युभय से इसने कृष्ण के साथ मित्रता की, तथा अश्वमेध की सहायता करने का वचन दे कर यह स्वनगर लौट आया (जै. अ. १२-१४)।

अनुशिख--सर्पसत्र का पोता (पं. ब्रा. २५.१५)

अनुह्लाद--हिरण्यकश्यपु को कयाधू से उत्पन्न चार पुत्रों में से एक। इसकी पत्नी सूर्मि। इससे इसे बाष्कल तथा महिष नामक दो पुत्र हुए (भा. ६.१८.१२-१३; १६)। यह क्रोध के कारण निपुत्रिक हुआ, ऐसा उल्लेख मदालसा द्वारा अलर्क को दिये गये उपदेश में आया है (मार्के २४.१५)

अनूचाना--कश्यप तथा प्राधा से उत्पन्न अप्सराओं में से एक (म. आ. ११४.५०)।

अनूदर—धृतराष्ट्र पुत्रों में से एक।

अनूहवत्—यह क्षत्रिय था परंतु तप से ब्राह्मण एवं ऋषि बन गया (वायु ९१. ११६-११७)।

अनेनस्--(सो. पुरूरवस्.) आयु राजा के पांच पुत्रों में से कनिष्ठ (भा. ९.१७. १-२) इसकी माता का नाम स्वर्भानवी (म. आ. ७०.२३) । इसका पुत्र प्रतिक्षत्र। इसका वंश दिया गया है (ह. वं. १.२९.१–५; ब्रह्म. ११.२७–३१) ।

२. (सू. इ.) कुकुत्स्थ राजा का पुत्र। भागवत मत में पुरंजय का पुत्र। इसे पृथु नामक पुत्र था (म. व. १९३.२) ।

३. (सू. निमि.) विष्णुमत में क्षेमारिपुत्र । इसका पुत्र मीनरथ ।

अनेहहि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अनोवैन—ब्रह्मांड के मत में व्यास के साम शिष्य-परंपरा का लौगाक्षी का शिष्य (व्यास देखिये) ।

अनौपम्या—बाणासुर की पत्नी ।

अन्तक—(शुंग. भविष्य.) सुज्येष्ठ का पुत्र ।

अंतरिक्ष—(स्वा. प्रिय.) ऋषभदेव के सो पुत्रों में से नौ तत्वज्ञानियों में से एक। यह बड़ा भगवद्भक्त था। इसने जनक को उपदेश दिया था (भा. ५. ४. ९–१२; ११.३.३–१६) ।

२. (सू. इ. भविष्य.) । मत्स्य के मत में किन्नराश्व का पुत्र; विष्णु तथा वायु के मत में किन्नरका पुत्र; तथा भागवत मत में पुष्कर का पुत्र ।

३. मुरा के सात पुत्रों में से दूसरा। इसका वध कृष्ण ने किया (भा. १०. ५९) ।

४. एक व्यास (व्यास देखिये) ।

५. आद्य नामक देवताओं में से एक।

६. (सू. इ.) भविष्य के मत में केशीनर का पुत्र ।

अंतर्धान—(स्वा. उत्तान.) पृथु के पुत्रों में से एक। विजिताश्व को, अंतर्हित होने की शक्ति के कारण, यह नाम दिया गया था।

अंतिक—(सो. यदु.) मत्स्य के मत में यदु पुत्र ।

अंतिदेव—(सो. पूरु.) मत्स्य के मत में गुरुधिपुत्र।

अंतिनार—(सो. पूरु.) भद्राश्व का पुत्र। इसे तंसुरोध, प्रतिरथ तथा पुरस्ता नामक तीन पुत्र थे (अग्नि. २७८. ३–५)। ऋचेयू का पुत्र। इसे वसुरोध, प्रतिरोध तथा सुबाहु नामक पुत्र थे (ब्रह्म. १३.५१–५३) । तक्षककन्या ज्वलना से ऋचेयु को उत्पन्न पुत्र । इसे तंसु, प्रतिरथ तथा सुबाहु नामक पुत्र तथा गौरी नामक कन्या थी। यही मांधाता की माता थी (ह. वं. १.३२.१–३) । सन्नतेयु अथवा अनाधृष्टि इसका पुत्र। इसे तंसु, महान्, अतिरथ व द्रुह्यु नामक चार पुत्र थे (म. आ. ८९.११) । ऋतेयू का पुत्र। इसका पुत्र प्रतिरथ (गरुड. १४०. १–२) । ऋक्ष को तक्षककन्या ज्वलन्ती से उत्पन्न पुत्र। इसने सरस्वती नदी के किनारे द्वादशवार्षिक सत्र किया। सत्र समाप्त होने पर सरस्वती नदी स्त्री रूप में प्रगट हुई तथा अपने से विवाह करने के लिये उसने इसे अनुरोध किया। तब इसने उससे विवाह किया। उससे इसे तंसु नामक पुत्र हुआ (म. आ. ९०.१२; रंतिभार तथा मतिनार देखिये) ।

२. (सो. यदु.) कंवलबर्हिष का पुत्र। इसका पुत्र तमोजा।

अंत्य--भृगुपुत्र। यह देवो में से एक है।

अंत्यायन--एक भृगुपुत्र।

अंधक--यह पार्वती के धर्मबिंदुओं से उत्पन्न हुआ। हिराण्याक्ष पुत्रप्राप्ति के लिये तपश्चर्या कर रहा था, उस समय शंकर ने उसे यह पुत्र दिया (लिङ्ग. १. ९४) । हिरण्याक्ष तथा हिरण्यकश्यपु की मृत्यु के पश्चात् यह गद्दी पर आया। परंतु अनन्तर पार्वती को हरण कर ले जाने की योजना इसने की, तब अवंती देश के महाकाल वन में, शंकर का इससे घनघोर युद्ध हुआ। इस युद्ध में, इसके प्रत्येक रक्तबिंदु से इसी के समान व्यक्ति उत्पन्न हो कर, अंधको से संपूर्ण संसार व्याप्त हो गया। तब शंकर ने अंधकों के रक्त को प्राशन करने के लिये, मातृका उत्पन्न कीया तथा उन्हें अंधक का रक्त प्राशन करने के लिये कहा। वे रक्त पी कर तृप्त हो जाने के बाद, पुनः रक्तबिंदुओं से अगणित अंधक उत्पन्न होने लगे। उन्होंने शंकर का अजगव धनुष्य भी हरण कर लिया (पद्म. सृ. ४६) ।

अंत में शंकर त्रस्त हो कर विष्णु के पास गया। विष्णु ने शुष्करेवती उत्पन्न की, तथा उन्होंने सब अंधकों का नाश कर दिया। शंकर ने मुख्य अंधक को सूली पर चढाया, उस समय अंधक ने उसकी स्तुति की। तब शंकर ने प्रसन्न हो कर इसे गणाधिपत्य दिया (मत्स्य. १७९) । इसने पार्वती के लिये स्पष्ट मांग की, इसलिये शंकर का तथा इसका युद्ध हुआ। परंतु शुक्राचार्य संजीवनीविद्या से मृत असुरों को जीवित कर देते थे, इससे इसकी शक्ति कम न होती थी। तब शंकर ने शुक्राचार्य को निगल लिया तथा अंधक को गणाधिपत्य दे कर संतुष्ट किया (शिव. रुद्र. यु. ४८; पद्म. सृ. ४६. ८१) । गणों का मुख्य स्थान इसे देने के पश्चात् इसका नाम भृंगीरीटी रखा गया। इसके पुत्र का नाम आडि है।

कश्यप को दिति से उत्पन्न पुत्र। यह अत्यंत पराक्रमी था। अपनी उग्र तपश्चर्या के बल पर सब देवताओं को जीतने के लिये, इसने शंकर से वरदान मांगा। परंतु विष्णु तथा शंकर के सिवा सबको जीतने का वरदान उन्होंने दिया। तदनन्तर यह ससैन्य अमरावती में प्रविष्ट हुआ तथा इन्द्र इसकी शरण में आया। इसके बाद इन्द्रकी उच्चैःश्रवस, उर्वशी आदि अप्सरायें तथा इन्द्राणी को ले कर जब यह लौट रहा था तब देवताओं ने इसके साथ युद्ध किया। परंतु उसमें उनका पराभव हुआ। तदनंतर अंधक पाताल में रहने लगा। अन्त में देवताओं के कहने से, विष्णु ने इसके साथ युद्ध किया। उसमें इसका पराभव होने के पश्चात् इसने विष्णु की स्तुति की, तथा शंकर से युद्ध करने की संधि प्राप्त होने के लिये वरदान मांगा। तब विष्णु ने इसे कैलाशपर्वत हिलाने को कहां। ऐसा उसने करते ही शंकर का तथा इसका युद्ध प्रारंभ हुआ। उसमें शंकर को उसने मूर्च्छित कर दिया परंतु शंकर जागृत होते ही पुनः युद्ध प्रारंभ हुआ। अंधक के प्रत्येक रक्तबिंदु से पुनः दैत्य उत्पन्न होने लगे। उस समय शंकर ने चामुंडा का स्मरण करने पर, उसने इसका समस्त रक्त प्राशन कर लिया। तब इसने शंकर की प्रार्थना की। शंकर ने शिवगणों में इसकी स्थापना कर, इसका भृंगीश नाम रखा (स्कंद ५.३.४५)।

यह उज्जयिनी में राज्य करता था। इन्द्र के कथनानुसार शंकर ने इसके साथ युद्ध किया। उस में अपना पराभव हो रहा है, यह देखते ही इसने माया निर्माण कर, अंधकार उत्पन्न किया तथा देवताओं का हरण कर लिया। अंत में नरादित्य उत्पन्न हो कर, उसके द्वारा निर्मित प्रकाश की सहायता से, शंकर ने इसका वध किया। इसका पुत्र कनकदान (स्कंद. ५. २. ३६)।

महिषासुर की सेना का एक प्रमुख असुर। देवों के साथ हुए महिषासुर संग्राम में, विष्णु के साथ इसका अविरत पचास वर्षों तक संग्राम चल रहा था। अन्त में विष्णु ने अपने गदा प्रहार से इसे मूर्च्छित कर दिया (दे. भा. ५. ६)। यह आठवाँ सुप्रसिद्ध संग्राम है (मत्स्य. ४७. ४१-४४)। इस में शंकर ने असुरों को मारा (वायु. ९७. ८१-८४)।

२. (सो. यदु.) सात्वत तथा कौसल्या का पुत्र (ह. वं. १. ३७. २)। अंधक तथा काश्यदुहिता को कुकुर, भजमान, शमि तथा कम्बलबर्हिष ऐसे चार पुत्र हुए (ह. वं. १. ३७. १७)।

सात्वतपुत्र अंधक से अंधक वंश का प्रारंभ होता है। अंधकपुत्र महाभोज को दो पुत्र थे। प्रथम कुकुर तथा द्वितीय भजमान। यादवों में कुकुर वंश स्वतंत्र है। उस में उग्रसेन कंसादि हुए। अंधक वंश भजमान शाखा की उपाधि है। इसी अंधकवंश में भारतीय युद्ध का प्रसिद्ध वीर कृतवर्मा उत्पन्न हुआ (भा. ९. २४. ७-२४; विष्णु. ४.१४.३-७)। सात्वतपुत्र भजमान का वंश उपलब्ध नही है। भजमान के पुत्र, अंधकपुत्र भजमान के वंश में सामील हुए ऐसा ह. वं. में लिखा है (१.३८.७-९)

अंधिगु श्यावाश्व—कुछ ऋचाओं का द्रष्टा। (ऋ. ९.१०१. १-३)।

अंध्र--(सो. अनु.) बलि के छः पुत्रों में से कनिष्ठ। दुष्यन्तपुत्र भरत ने दिग्विजय के समय इसे जीता (भा. ९. २०.३०)।

२. (सू. इ.) यह वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार वृषदश्व का पुत्र (इंदु देखिये)।

अन्नाद—कृष्णपत्नी मित्रविंदा का पुत्र (भा. १०. ६१.१६.)।

अन्यतरेय--स्वरों के विषय में मत देनेवाला एक आचार्य (ऋ. प्रा. २०९)।

अन्यादृश्--पांचवे मरुद्गणों में से एक।

अन्वग्भानु—(सो. पूरु.) मनस्यु को मिश्रकेशी नामक अप्सरा से उत्पन्न पुत्र (म. आ. ८८)।

अपनाप-- ब्रह्मांड के मतानुसार ऋक्शिष्य परंपरा में भरद्वाज का शिष्य (व्यास देखिये)।

अपरदारका— दूसरे ब्रह्मांड के द्वार पर स्थित एक देवता। नारद ने तपश्चर्या कर के इसे पश्चिम द्वार पर स्थापित किया। चैत्र कृष्ण नवमी को बलि दे कर जो इसकी पूजा करेंगे, वे पातकों में से मुक्त होंगे तथा उनकी समस्त इच्छाएं पूर्ण होगीं (स्कंद. १.२.५३)।

अपराजित— कृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र (भा. १०. ६१)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. भी. ८४.२१)।

३. एकादश रुद्रों में से एक।

४. कश्यप तथा कद्रू के पुत्रों में से एक।

५. कालेयांश एक क्षत्रिय (म. आ. ६८)।

अपर्णा— महादेव की पत्नी। सती की दक्षयज्ञ में मृत्यु होने के बाद, हिमालय को मैना से जो कन्या हुई, वह अपर्णा। वहाँ इसने पूर्वपति की प्राप्ति के लिये, पत्ते भक्षण

कर, तपस्या प्रारंभ की। फिर भी उनकी प्राप्ति न होने के कारण उसने पर्णों का भी त्याग कर दिया तथा महादेव को पतिरूप में प्राप्त किया। इस लिये इसे उपरोक्त नाम प्राप्त हुआ। इसेही तप के पश्चात् उमा नाम प्राप्त हुआ। इसका दत्तक पुत्र उशनस् (ब्रह्माण्ड. ३.१०. १-२१; ह. वं. १. १८.१५-२०)।

अपवर्मन्--(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार ध्रुवसंधि का पुत्र। इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

अपष्ठोम--औपलोम देखिये।

अपस्यौष--अंगिरस गोत्र का एक मंत्रकार।

अपहारिणी--ब्रह्मधान की कन्या।

अपाग्न्येय--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अपांडु--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

अपान--तुषितदेवों में से एक।

अपांतरतम--एक ब्रह्मर्षि (सारस्वत देखिये)।

अपांनपात्--एक देवता (ऋ. २.३५)। यह निधुद्रुप अग्नि होगा। यह पानी में प्रकाशित होता हैं। इसे अग्नि कहा गया है। उसी प्रकार अग्नि को अपांनपात् कहा गया है।

अपाला--अत्रि की कन्या। यह ब्रह्मज्ञानी थी। इसके शरीर पर कोढ होने के कारण, पति ने इसका त्याग कर दिया था। पितृगृह में रह कर, इन्द्र को प्रसन्न करने के लिये, इसने तपस्या प्रारंभ की। इन्द्र को सोम अत्यंत प्रिय है, ऐसा ज्ञात होते ही, यह सोम लाने के लिये नदी पर गई। वहाँ प्राप्त सोम इसने मार्ग में ही चबा कर देखा। चबाते समय जो आवाज हुआ उसे सुन कर इन्द्र वहाँ आया। अपाला ने सोम इन्द्र को दिया। इन्द्र ने प्रसन्न हो कर इसकी इच्छायें पूर्ण की। इसके पिता का गंजापन दूर किया, इसकी खेती उर्वरा बनाई (इसके गुह्यभाग पर केश उगाये), तथा इसका कुष्टरोग आख पर घिस कर नष्ट कर दिया। यह कथा सायणाचार्य ने शाट्यायन ब्राह्मण से ली हैं। इसे मूलभूत मान कर ही ऋग्वेद का एक सूक्त बना होगा (ऋ ८.९१)। इस सूक्त में एकबार अपाला का निर्देश आया हैं।

अपास्य--अपोज्य देखिये।

अपि--सावर्णि मनु का पुत्र।

अपिकायति--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

अपीतक--(आंध्र. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार लंबोदर का पुत्र।

अप्नवान--भृगु के वंश में से एक ऋषि (ऋ. ४.७. १; ८.१०२.४)।

अप्रतिपिन्--(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र। (अयुतायु देखिये)।

अप्रतिम--ब्रह्मासावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अप्रतिमौजस्--ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अप्रतिरथ--(सू. इ.) कुवलाश्व का नामांतर (म. व. १९५.३०)।

२. (सो. पूरु.) भागवत के मतानुसार, रंतिभार के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र। इसका पुत्र कण्व।

अप्रतिरथ ऐन्द्र--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०३; ऐ. ब्रा. ८.१०; श. ब्रा. ९.२.३.१-५)।

अप्रीत--यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अभय--स्वायंभुव मन्वन्तर में धर्म को दया से उत्पन्न पुत्र।

२. (स्वा. प्रिय.) इध्मजिह्व के सात पुत्रों में से कनिष्ठ। यह प्लक्षद्वीप के सातवें वर्ष का अधिपति था।

३. विश्वामित्र गोत्र का एक गोत्रकार।

४. धृतराष्ट्रपुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. द्रो. १०२.९६)।

५. (सो. पूरु.) विष्णु के मतानुसार मनस्युपुत्र। अभयद ऐसा अन्यत्र पाठ है।

अभिजित्--(सो. यदु.) नलराजा का पुत्र। इसका पुत्र पुनर्वसु।

२. अंगिरस गोत्र का एक गोत्रकार।

अभितंस--भविष्य मत में अधितंस का पुत्र।

अभितपस् सौर्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ.१०.३७)।

अभिप्रतारिन् काक्षसेनि--कुरुवंश का एक राजपुत्र। यह तत्त्वज्ञानविवाद में निमग्न रहता था (पं. ब्रा. १०.५. ७; १४.१.१२.१५; जै. उ. ब्रा. १.५९.१; २.१.२२; २. २.१३; छां. उ. ४.३.५)। इसके जीवनकाल में ही इसके पुत्रों ने इसकी संपत्ति का बँटवारा कर लिया। इसका पुरोहित शौनक था (जै. उ. ब्रा. १.५९.२)।

अभिभू--(सो. क्षत्र.) काश्यपुत्र। यह द्रौपदीस्वयंवर में होगा (म. आ. १७७.९)। भारतीय युद्ध में यह पांडव पक्ष में था (म. द्रो. २२.१९)। इसको वसुदानपुत्र ने मारा (म. क. ४.७४)।

अभिभूत--(सो. वृष्णि.) वायु के मतानुसार वसुदेव तथा रोहिणी का पुत्र।

अभिमति--अष्टवसु में द्रोणवसु की पत्नी (भा. ६. ११)।

अभिमन्यु--(सो. कुरु.) अर्जुन का पुत्र। यह सोमपुत्र वर्चा के अंश से सुभद्रा के उदर में आया। जन्मतः यह निर्भय, भय उत्पन्न करनेवाला तथा महाक्रोधी प्रतीत होने के कारण, इसका नाम अभिमन्यु रखा गया (म. आ. २१३)।

दैत्यों के त्रास से भयभीत पृथ्वी को निर्भय करने के लिये, ब्रह्मदेव ने सब देवताओं को, अंशरूप से पृथ्वी पर जन्म लेने के लिये कहा। उस समय सोम ने देवकार्य के लिये अपने पुत्र को पृथ्वी पर भेजा। परंतु वर्चा इसका अत्यंत प्रिय होने के कारण, यह अधिक दिनों तक पृथ्वी पर नही रहेगा, केवल सोलह वर्ष ही रहेगा, ऐसा सोम ने सब देवताओं से वचन लिया था। इसीसे इसे सोलह वर्ष की आयु में मृत्यु प्राप्त हुई (म. आ. ६१. ८६. परि. १. ४२)।

शिक्षण—अभिमन्यु की अस्त्रशिक्षा तथा अन्य युद्धकलाशिक्षा, अर्जुन की खास देखरेख में हुई थी। यह अस्त्रविद्या में इतना प्रवीण था कि, इसके हस्तचापल्य से तथा अस्त्रयोजना नैपुण्य से संतुष्ट हो कर, बलराम ने इसे रौद्र नामक धनुष दिया। यह अत्यंत पराक्रमी था तथा अपने पराक्रम के बल पर, अल्पवयीन होते हुए भी यह महारथी बना।

युद्धप्रस्थान—भारतीय युद्ध में, द्रोण ने बडी कुशलता से अर्जुन को अन्य पांडवों से विलग किया तथा उसे सेना के बाहर, संशप्तक की ओर संलग्न कर दिया। तदनंतर द्रोण ने भीमादि तीनों को युद्ध में व्यस्त किया। इस प्रकार, पांडव तथा अभिमन्यु को अपनीं सेना समवेत युद्ध में मग्न देख कर, युधिष्ठिर चिन्ताग्रस्त हो गया। युधिष्ठिर को चिन्ताग्रस्त देख कर, अभिमन्यु ने उसे चिन्ता का कारण पूछा। उसपर युधिष्ठिर ने कहा कि, चक्रव्यूह का भेद करने वाला अपनी सेना में कोई न होने के कारण, मै चिन्ता कर रहा हूँ। यह सुनते ही, अभिमन्यू ने भीम की सहायता से, चक्रव्यूह का भेद करने का काम स्वीकार किया। चक्रव्यूह में प्रवेश करने की विधि ही केवल अभिमन्यु को ज्ञात थी। फिर भी वह नही घबराया। तदनंतर युधिष्ठिर का आशिर्वाद ले कर, अभिमन्यु भीम के साथ व्यूहद्वार के पास आया।

पराक्रम--उस स्थान पर, द्रोणाचार्य ससैन्य व्यूह की रक्षा कर रहे थे। परंतु अभिमन्यु सेना की पंक्तियाँ तोड कर, व्यूह में प्रविष्ट हो गया। व्यूह में घुसने के पश्चात् अभिमन्यू ने, बडे बडे सेनापतियों को अपने शौर्य से भगाया। अपनी सेना को, पीछे हटते देख कर, द्रोणाचार्य सेना सहित अभिमन्यु पर धावा करने आया परंतु आक्रमक को चकमा दे कर, इसने अश्मक राजा का तथा शल्य के बंधु का वध किया। तब कर्ण उस पर आक्रमण करने दौडा। परंतु उसे भी इसने जर्जर कर दिया।

इस प्रकार युद्ध करते करते, अभिमन्यू भीमादिकों से काफी दूर चला गया। अभिमन्यु को अकेला देख कर, दुःशासन उसकी ओर दौडा। परंतु उसे भी रण से भगा कर, अभिमन्यु इतनी दूर तक चला गया कि, भीमादिकों को वह दिखता ही न था। भीमादिक सरलता से अपने पास आ सकें, इसके लिये इसने मार्ग खुला रखा था परंतु जयद्रथ ने रुद्रवर के प्रभाव से, भीमादिक को रोक रखा तथा अभिमन्यु तक जाने नही दिया।

मृत्यु--इधर अभिमन्यु, भीमादिकों की राह देखता रहा, इतने में, कर्णपुत्र ने इस पर आक्रमण किया। अभिमन्यु ने उसका पराभव कर के, दुर्योधनपुत्र लक्ष्मण तथा अन्य योद्धाओंको मार डाला। तब द्रोण, कृप, कर्ण, अश्वत्थामा, कृतवर्मा तथा बृहद्बल ये छः लोग, अकेले अभिमन्यु से युद्ध करने लगे। उन सबका इसने अकेले निवारण किया। तब द्रोणादिकों ने बडे प्रयास से इसे विरथ किया। अभिमन्यु ढाल तथा तलवार ले कर लडने लगा। परंतु द्रोण ने उन्हें भी तोड दिया। तब अभिमन्यु ने केवल गदा ली तथा दुःशासन के पुत्र के साथ गदायुद्ध आरंभ किया। उस समय अभिमन्यु अत्यधिक श्रान्त हो गया, परंतु भीमादि काफी दूर होने के कारण, इसे उनकी सहायता न मिल सकी। उस समय, दुःशासनपुत्र की गदा का प्रहार इस पर होते ही, इसे मूर्च्छा आ गई। उस मूर्च्छा सें पूर्ण सावधान होने के पहले ही, दुःशासनपुत्र ने और एक गदाप्रहार कर, इसका वध कर दिया (म. द्रो. ४८.१३)।

व्यक्तिमत्व--अभिमन्यु सिंह के समान अभिमानीं तथा वृषभ के समान प्रशस्त स्कंधोंवाला था। यह शौर्य, वीर्य तथा रुप में कृष्णतुल्य था। जन्मतः यह दीर्घबाहु था। यह कृष्ण के समान बलराम को भी अत्यंत प्रिय था (म. आ. २१३.५८-७०)।

वंश--विराट राज की कन्या उत्तरा, अभिमन्यु की पत्नी थी। इसकी मृत्यु के समय उत्तरा गर्भवती थी। उसका पुत्र परीक्षिन् नाम से प्रख्यात है। इस परीक्षित् के कारण ही, भारतीय युद्ध में अस्तंगत होते हुए पुरु कुल को नवजीन प्राप्त हुआ।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित देवों में से एक।

३. ब्रह्मसावर्णि मन्वतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. चाक्षुप मनु तथा नड्वला का पुत्र।

अभिमान--स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म का पुत्र।

अभिमनिन्--भौत्य मन्वन्तर का मनुपुत्र।

अभियुक्ताक्षिक--चौथे मरुद्गणों में से एक।

अभिरथ--(सो. क्षत्र.) विष्णु के मतानुसार केतुमान् का पुत्र।

अभिष्वत्--(सो.) कुरु तथा वाहिनी का पुत्र (म. आ. ८९.४४; अविक्षित् (२.) देखिये)।

अभूतरजस्--रैवत मन्वन्तर का देवगण। इसमें दस व्यक्तियों का समावेश होता है। इसे अभूतरयस् नामांतर है।

अभ्याग्नि ऐतशायन--ऐतश का पुत्र। एकबार, जब ऐतश अपने पुत्र के सामने कुछ मंत्रपठन कर रहा था, तब उन्हे अश्लील समझ कर, इसने उसके मुख पर हाथ रखकर, उनका मंत्रपठन बंद कर दिया। इससे क्रोधित हो कर, तुम्हारा कुल पापी होगा, ऐसा शाप उसने इसे दिया, जिससे सब लोग इसे तथा इसकी संतति को पापी समझने लगे (ऐ. ब्रा. ६.३३)। ऐतशायन को और्वकुलोत्पन्न कहा है (सां. ब्रा. ३०.५)। और्व तथा भृगु कुल का बिलकुल निकट-संबंध होना चाहिए, वा एक ही कुल की ये दो शाखाएं होंगी। ऋग्वेद काल से इनका एकत्र उल्लेख पाया जाता है (एतश देखिये)।

अभ्यावर्तिन् चायमान--एक राजा। इसने वरशिख के नेतृत्व में वृचिवत् को जीत लिया तथा वरशिख के पुत्रों का वध किया। इसीके लिये इन्द्र ने तुर्वश तथा वृचीवत् को जीता। किन्तु वहाँ यह तथा संजय देववात एक ही होने की संभावना है (ऋ. ६.२७.७)। इसका पार्थव नाम से भी उल्लेख है (ऋ. ६.२७; ८.५)।

अमरेश--इसका गोत्र भारद्वाज। इसने 'वर्णरत्नप्रदीपिका' नामक २२७ श्लोकों कीं शिक्षा रची, जिसके आरंभ में कृष्ण नमन हो कर, आगे शौनक तथा शाकटायन का उल्लेख है। यह प्रातिशाख्यानुसारिणी है (श्लो. १२२)।

अमर्ष--(सू. इ.) विष्णु के मतानुसार सुगविपुत्र।

अमर्षण--(सू. इ.) संधिराज का पुत्र (म. ९. १२)।

अमल--धृष्टबुद्धि प्रधान का पुत्र (चन्द्रहास देखिये)।

अमला--वैवस्वत मन्वन्तर के अत्रि ऋषी की कन्या। यह ब्रह्मनिष्ठ थी।

अमहीयु आंगिरस-- सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.६१)।

अमावसु--(सो. पुरुरवस्) पुरुरवस् वंश में ही दो अमावसु हुए। पहला, पुरुरवस् के पुत्रों में से एक तथा दूसरा, अमावसू के वंश के कुश का पुत्र। इनमें से, पुरुरवसपुत्र अमावसु, कान्यकुब्ज घराने का मूल पुरुष है। इसकी वंशावली अनेक स्थानों पर दी गई है (ब्रह्म. १०. ११-१४; ब्रह्माण्ड. ३.६६. २०-३५; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७.२-५; वसु तथा जन्हु देखिये)।

२. एक अत्यंत स्वरूपवान पितर। इसको देख कर अच्छोदा नामक पितरों की मानसकन्या मोहित हो गई। परंतु इसने उसकी प्रार्थना अमान्य की। इस कारण, वह योगभ्रष्ट हो कर, अगले जन्म में वसू की कन्या मत्स्यी (काली, सत्यवती) हुई (पद्म. सृ. ९.१२.२४; अच्छोदा देखिये)।

इसका अगला जन्म इसी नाम से पुरुरवा के पुत्र के रूप में हुआ।

अमवासु वंश--यह वंश, ऐल पुरुरवस् के अमावसु नामक पुत्र ने प्रचलित किया। इसकी राजधानी कान्यकुब्ज नगर थी।

इस वंश में, प्रायः पंद्रह पुरुष मिलते है। इनमें कुशिक (कुशाश्व), गाधि, विश्वामित्र, मधुच्छंदस, आदि प्रमुख है। नय के पश्चात् इस वंश का उल्लेख नही मिलता। विश्वामित्र ब्राह्मण बन गया, इस कारण यह क्षत्रियवंश समाप्त हो गया।

इस वंश में एक अजमीढ राजा का नामोल्लेख मिलता है।

अमावास्य शांडिल्यायन--अंशु धानंजय्य का गुरु (वं. ब्रा. १)

अमावास्या--अमावसु तथा अच्छोदा की कन्या (मत्स्य. १४)।

अमाहठ--एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

अमित--(सो. पूरु.) जय का पुत्र (भा. ९. १५.२)।

२. सावर्णि मन्वन्तर का देव।

३. रैवत मन्वन्तर का देव।

अमिताभ—सावर्णि मन्वन्तर का देवगण।

अमितौजस्--पांडव पक्ष का महारथी (म. उ. १६८.१०)।

अमित्र—द्वितीय मरुद्गणों में से एक। दिती का पुत्र।

अमित्रजित्--(सू. इ. भविष्य.) भागवत के मतानुसार सुतप्त राजा का पुत्र। वायु के मतानुसार सुवर्णपुत्र तथा भविष्य के मतानुसार सुवर्णांग का पुत्र।

२. एक राजा। इसके राज्य में सर्वत्र शिवमंदिर थे। यह देख कर नारद ऋषि आनंदित हो कर इसके पास आया तथा इससे बोला, 'चंपकावती नगर में मलयगंधिनी नामक एक गंधर्वकन्या है। कंकालकेतु नामक राक्षस उसका हरण कर रहा है। उससे जो मेरी रक्षा करेगा उसीसे मैं विवाह करुंगी, ऐसी उसकी शर्त है। इस लिये तुम यह काम करो'। नारद के इस कथनानुसार, इसने कंकालकेतु से युद्ध कर के उसका नाश किया तथा उस गंधर्वकन्या के साथ यह अपने नगर लौट आया। तदनंतर विवाह हो कर इसे वीर नामक पुत्र हुआ (स्कन्द. ४.२. ८२-८३)।

अमित्रतपन शुष्मिण शैब्य--शिबि का पुत्र। इसने अत्यराति जानंतपि का वध किया (ऐ. ब्रा. ८.२३)।

अमूर्तरजस्--अमूर्तरजस् तथा अमूर्तरयस् देखिये।

अमूर्तरयस्-- (सो. पूरु.) मत्स्य के मतानुसार अंतिनारपुत्र।

२. (सो. अमा.) विष्णु के मतानुसार कुशपुत्र। भागवत के मतानुसार इसका मूर्तरय नाम है। अमूर्तार तथा यह एक ही होगा। विष्णु के मतानुसार अमूर्तरय नाम है।

३. एक क्षत्रिय। यह गय राजा का पिता था (म. व. ९३.१७)। इसे ही अमूर्तरजस् नामांतर था।

अमूर्तरय--अमूर्तरयस् (२) देखिये।

अमृत-- (स्वा. प्रिय.) इध्मजिव्ह के सात पुत्रों में से एक। इसका वर्ष इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५. २०. २-३)।

२. अंगिरस गोत्र का मंत्रकार।

३. अमिताभ नामक देवों में से एक।

अमृतप्रभ--सावर्णि मन्वन्तर का देव।

अमृतवत्--स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित् देवों में से एक।

अमृता--अरुग्वत् की पत्नी।

अमोघ-- बृहस्पति तथा तारा की कन्या स्वाहादेवी का पुत्र। अग्निविशेष (म. व. २०९)।

२. एक कार्तिकेय का नाम (म. व. परि. १. २२.९)।

अमोघा—शंतनु ऋषि की भार्या। एक समय, ब्रह्मदेव शंतनु महर्षि के आश्रम में गया। वह ऋषि बाहर गया हुआ था, अतएव इसने ब्रह्मदेव की पूजा की। इसका सुंदर स्वरूप देख कर, उसका वीर्यपतन हो कर लज्जित हो कर वह चला गया। कुछ समय के पश्चात्, शंतनु वापस आया। उस वीर्य को देख कर,—कौन आया था—ऐसा उसने पूछा। ब्रह्मदेव का अमोघ वीर्य व्यर्थ नष्ट न हो, इस लिये उसका स्वीकार करने की आज्ञा शंतनु ने इसे दी। उस वीर्य से उत्पन्न गर्भ का तेज यह सहन न कर सकी। तब इसने वह गर्भ युगंधर पर्वत की खाई के जल में डाल दिया। उससे लोहित नामक तेजस्वी तीर्थाधिपति निर्माण हुआ। आगे चल कर, विष्णु को लगा हुआ क्षत्रियवध का पाप, इस तीर्थ में स्नान करते ही नष्ट हो गया। (पद्म. सृ. ५५)

अंबर—वृत्रासुरानुयायी असुर (भा. ६.१०.१८-१९)।

अंबरीष--ऋज्राश्व, सहदेव, सुराधस् एवं भयमान, इनके साथ वार्षागिर नाम से इसका उल्लेख है (ऋ. १. १००.१७)।

यह सूक्तकर्ता है (ऋ. १.१००; ९.९८)। यह अंगिरस गोत्र का मंत्रकार है।

२. (सू. नभग.) नाभाग का पुत्र (म. स. ८.१२ कुं.)। यह बडा शूर तथा धार्मिक था। यह हजारों राजाओं से अकेला लड़ता था। इसने लाखों राजा तथा राजपुत्र, यज्ञ में दान दिये थे। अभिमन्यु की मृत्यु से दुःखित धर्मराज की सांत्वना करने के लिये, अंबरीष की भी मृत्यु हो गयी, ऐसे नारद ने बताया (म. द्रो. ६४; शां. २९.९३. परि १. ८. पंक्ति. ५८८) इसने दीर्घकाल राज्य किया (कौटिल्य. २२)।

एक बार कार्तिक माह की एकादशी का त्रिदिनात्मक उपोषण इसे था। द्वादशी के दिन, इसके घर पर दुर्वास अतिथि बनकर आया तथा आह्निक करने नदी पर गया। इधर द्वादशी काल समाप्त हो रहा था, अतः इसने नैवेद्य

समर्पण किया, तथा तीर्थ ले कर उपवास छोड़ा। यह जान कर दुर्वास ने अपनी जटा के केशों द्वारा निर्मित एक कृत्या अंबरीष पर छोड़ी। इतने में, विष्णु के सुदर्शन ने कृत्या का नाश किया तथा वह चक्र दुर्वास के पीछे लगा। इस स्थिति में, विष्णु ने भी उसका संरक्षण करना अस्वीकार कर, पुनः अंबरीष के यहाँ जाने को कहा। दुर्वास को अंबरीष के यहाँ लौटने में एक वर्ष लगा। तब तक अंबरीष भूखा ही था। इसने दुर्वास को देखते ही उसका स्वागत किया। चक्र की स्तुति कर उसे वापस भेजा तथा दुर्वास को उत्तम भोजन दिया। (भा. ९. ४-५)। इसने पक्षवर्धिनी एकादशी का व्रत किया था। योग्य समय पर उपवास छोड़ने के कारण, यह विष्णु को प्रिय हुआ। अतः इसे मोक्ष प्राप्त हुआ (पद्म. उ. ३८.२६-२७)।

इसने भीष्मपंचक व्रत किया था (पद्म. उ. १२५. २९-३५)। जब यह स्वर्ग में गया, तब इसे स्वर्ग में सुदेव नामका इसका सेनापति दिखाई दिया। तब इसे आश्चर्य हुआ। 'स्वर्ग में कौन आता हैं', इस विषय पर इन्द्र से इसका संवाद हुआ। इन्द्र ने इसे बताया कि, सुदेव की रणांगण में मृत्यु होने के कारण, उसे स्वर्गप्राप्ति हुई (म. शां. ९९ कुं.)। इसके पुत्र का नाम सिंधुद्वीप। इसे विरूप, केतुमान तथा शंभु नामक तीन पुत्र भी थे (भा. ९. ६. १)। इसने सकल राष्ट्र का दान किया था (म. अनु. १. ३७. ८)।

३. (सू. इ.) मांधाता को बिंदुमती से प्राप्त तीन पुत्रों में से मँझला (भा. ९.७.१)।

४. (सू. इ.) त्रिशंकु के दो पुत्रों में से दूसरा। इसे श्रीमती नामक कन्या थी। वह नारद तथा पर्वत के बाद में विष्णु ने प्राप्त की (अ. रा. ३-४)। यह एक बार यज्ञ कर रहा था, तब इसके दुर्वर्तन के कारण, इंद्र ने इसका यज्ञपशु उडा लिया। तब इसने ऋचीक ऋषि को द्रव्य दे कर, उसका शुनःशेप नामक पुत्र खरीद लिया तथा यज्ञ पूरा किया। धर्मसेन इसका नामांतर है, एवं यौवनाश्व इसका पुत्र है। यही हरिश्चंद्र है (लिङ्ग.२.५.६; वा. रा. बा. ६१; शुनःशेप देखिये)।

५. एक सर्प। यह कद्रु का पुत्र था।

अम्बर्य--यह दक्षिण में गौतमी के किनारें, दंडक देश का नृप था। इसका नृसिंह ने वध किया (नृसिंह देखिये)।

अंबष्ट वा **अम्बष्ठक**--दुर्योधनपक्षीय क्षत्रिय। इसका अभिमन्यु के साथ युद्ध हुआ था (म. भी. ९२.१७)। इसको अर्जुन ने युद्ध में मारा (म. द्रो. ६८.५६)।

२. पांडवपक्षीय क्षत्रिय। इसके पुत्र को लक्ष्मण ने मार डाला (म. क. ४.२६*)।

अम्बष्ठ--कंस के कुवलयापीड हाथी का महावत (भा. १०.४३.२-५)।

अंबा--काशीराज की तीन कन्याओं में से ज्येष्ठ। अपनी कन्याँएं उपवर होने के कारण, काशीराज ने उनके स्वयंवर का निश्चय किया। तदनुसार देशदेशांतर के राजाओं को स्वयंवरार्थ निमंत्रण भेजे। इस स्वयंवर में कोई भी शर्त नहीं रखी गयी थी। काशीराज ने निश्चय किया था कि, जो सब से अधिक बलवान हो वह इनका हरण करे।

चित्रांगद के निधनोपरांत, भीष्म अपनी सौतेली मां की संमति से, विचित्रवीर्य के नाम पर हस्तिनापुर का राज्य चला रहा था। विचित्रवीर्य का विवाह नहीं हुआ था। स्वयंवर का समाचार मिलते ही, विचित्रवीर्य के लिये उन कन्याओं का हरण करने के लिये, भीष्म स्वयंवर को गया तथा वहां के समस्त राजाओं को हरा कर, तीनों कन्याओं को हरण कर ले आया (म. आ. ९६)।

भीष्म ने हस्तिनापुर आकर, उन तीनों का विचित्रवीर्य से विवाह करने का निश्चित किया। इस बात का पता लगते ही, अंबा ने भीष्म से कहा कि, वह पहले से ही शाल्व से प्रेम करती है, इस लिये उसका विवाह विचित्रवीर्य से करना योग्य नहीं होगा। यह सुन कर भीष्म ने अंबा को दलबल सहित सम्मान के साथ शाल्व के पास भिजवा दिया। शाल्व ने उसका अंगिकार नहीं किया। भीष्म ने सबके सामने उसे हराया था, इस लिये अंबा के साथ विवाह करना शाल्व को योग्य नहीं लगा। अंबा फिरसे भीष्म के पास आयी और उससे कहा कि, आपने मुझे जीत कर लाया है, इस लिये शाल्व मुझे स्वीकार नहीं कर रहा है, अतएव आप ही मेरा वरण करें, यही योग्य होगा। परंतु भीष्म ने आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करने का प्रण किया था, इस लिये उन्हे अंबा की इच्छा अस्वीकृत करनी पड़ी।

चारो ओर निराधार होने के कारण, अंबा अत्यंत दुःखित हुई। अपनी इस दुर्दशा का कारण भीष्म है, इस लिये किसी प्रकार से भीष्म से प्रतिशोध लिया जाय, इस पर यह विचार करने लगी, तथा तप करने के लिये हिमालय की ओर चल पड़ी।

हिमालय की ओर जाते समय, इसे राह में शैखावत्य ऋषि का आश्रम मिला। ऋषि को इसने अपना निश्चय बताया।

तब उन्होंने इसे इसके निश्चय से परावृत्त करने का प्रयत्न किया। परंतु वह निष्फल हुआ और अंबा वहीं तप करने लगी। कुछ समय बाद होत्रवाहन नामक एक राजर्षि उस आश्रम में आये। वे अंबा के मातामह थे। अंबा की यह स्थिति देख वे अत्यंत दुखित हुए। अपनी नतिनी का दुःख दूर होने के लिये, उन्होंने भीष्म के गुरु परशुराम के द्वारा भीष्म का परिपत्य कर, उसे अंबा को स्वीकार करने के लिये बाध्य करने का निश्चय किया। तदनुसार अपनी नतिनी को लेकर, वे परशुराम के पास जाने ही वाले थे कि, परशुराम का शिष्य अकृतव्रण वहाँ आ पहुंचा तथा उसने बताया कि, परशुराम इसी आश्रम की ओर आ रहे हैं। इस लिये होत्रवाहन परशुराम से मिलने के लिये वहीं रुक गये (म. उ. १७३–१७६)।

कुछ दिनों बाद, परशुराम उस आश्रम में आ पहुंचे। अंबा का वृत्तांत जान कर उसे दुःखमुक्त करने का उन्होने वचन दिया तथा भीष्म के पास संदेश भिजवाया कि, अंबा का स्वीकार करो अथवा युद्ध करने के लिये तयार हो जाओ। भीष्म ने आजन्म ब्रह्मचर्य का अपना निश्चय परशुराम के पास भिजवाया तथा स्वयं युद्ध के लिये तैयार हो गये। आगे चलकर कुरुक्षेत्र में दोनों का भीषण युद्ध हुआ, जिस में कोई भी पराजित न हुआ तथा युद्ध रोक दिया गया।

अंबा को यहाँ भी निराशा ही मिली परंतु भीष्म से बदला लेने का निश्चय इसने बिल्कुल नहीं छोड़ा। भीष्म का वध करने के लिये इसने शंकर की उपासना (कठोर तपस्या) प्रारंभ की। गंगा को इसका निश्चय मालूम होते ही, उसने अंबा को तप से परावृत्त करने का बहुत प्रयत्न किया। परंतु अंबा ने गंगा की एक न सुनी। तब गंगा ने उसे शाप दिया कि, 'तू अर्धांग से बरसाती नदी होगी।' अंबा फिर भी अपने निश्चय पर अटल रही (म. उ. १८७)।

कुछ कालोपरांत, महादेवजी उसकी तपश्चर्या से संतुष्ट हो, वरदान देने को तयार हुए। अंबा ने भीष्म को मार डालने की अपनी इच्छा बतायी। तब महादेवजी ने वरदान दिया कि, इस जन्म में यह संभव नहीं है परंतु अगले जन्म में द्रुपद के घर पहले कन्या रूप में जन्म लेने के पश्चात् तुझे पुरुषत्त्व प्राप्त होगा। तू शिखंडी नाम से प्रसिद्ध होकर भीष्म का वध करेगी। इतना वरदान दे कर, शंकरजी अंतर्धान हो गये। अपना मनोरथ पूर्ण हुआ देख, अंबा ने अग्नि में प्रवेश कर, देहयाग किया (म. उ. १८८)।

महाभारत के कुम्भकोणम् प्रति में, उपरोक्त कथा दूसरे प्रकार दी गयी है, जो इस प्रकार है --अंबा की उत्कृष्ट तपश्चर्या देख कर कार्तिकस्वामी ने प्रसन्न हो कर उसे एक प्रासादिक तथा दिव्य माला दे कर बताया कि, जो इस माला को धारण करेगा वह निःसंशय भीष्म का वध करेगा। अंबा ने वह माला ली। वह देशदेशांतर में यह पूछते हुए विचरण करने लगी 'कोई क्षत्रिय, इस माला को धारण कर, भीष्म को मारने में समर्थ है?' परंतु भीष्म का वध करने की इच्छा रखनेवाला एक भी क्षत्रिय उसे नहीं मिला। अंत में पांचालराज द्रुपद के अस्वीकार करने पर भी, अंबा राजमहल के दरवाजे पर माला फेंक कर चली गयी। तब द्रुपदने वह माला उठाकर अपने प्रासाद में रख ली। आगे चल कर शिखंडी ने उसी माला के योग से भीष्म का वध किया (म. आ. परि. १.५५)।

अंबायवीया--सत्यलोक की एक अप्सरा।

अंबालिका--काशीराज की तीन कन्याओं में से कनिष्ठ तथा विचित्रवीर्य की स्त्री (अंबा देखिये)। पति से इसे संतति नहीं हुई। पति की मृत्यु होने पर सास सत्यवती तथा देवर भीष्म के अनुमोदन पर, इसने व्यास से पुत्रप्राप्ति करा ली परंतु गर्भधारणा के समय भयभीत हो कर, यह फीकी पड़ गई। अतएव इसका पुत्र भी फीके सफेद रंग का हुआ। इस लिये उसका नाम पांडु रखा गया (म. आ. १००.१७–१८; सत्यवती देखिये)।

अंबिका--काशीराज की तीन कन्याओं में से मँझली तथा विचित्रवीर्य की स्त्री (अंबा देखिये)। पति से संतति न होने के कारण इसने व्यास से पुत्र प्राप्ति करा ली। रति के समय आँखे बंद रखने के कारण अंधे धृतराष्ट्र का जन्म हुआ। इसे कौसल्या भी नाम दिया गया था। फिर से अच्छा पुत्र हो, इस लिये सास ने इसे फिर से व्यास के पास जाने को कहा। व्यास का स्वरूप मन में आते ही यह मन में घबरायी, तथा इसने सास को यों ही, हां कह दिया। परंतु ऐन समय पर, एक दासी को व्यास के पास भेज दिया, उससे विदूर का जन्म हुआ (म. आ. १०५–१०६)।

२. रुद्रपत्नी (श. ब्रा. २.५.३.९)।

अंबुक--ब्रह्मधान का पुत्र।

अंबुधारा--दक्षसावर्णि मन्वन्तर में के ऋषभ अवतार की माता (भा. ८.१३)।

अंबुवीच--मगधदेश के राजगृह नगर का राजा। यह सब प्रकार से पंगु रहने के कारण, प्रधान महाकर्णि अत्यंत प्रबल हो गया। परंतु दैवयोग से वह राज्य हडप न सका (म. आ. १९६.१७-२२)।

अंभृण--इसकी कन्या वाच् (वाच् देखिये)।

अंशोद--विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५९)।

अय--स्वारोचिष मन्वन्तर का प्रजापति। यह वसिष्ठ का पुत्र था।

२. अगस्त्य गोत्र का मंत्रकार।

३. तुषित नामक देवगणों में से एक।

४. यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

अयःशिरस्--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अयतंस--(सो.) भविष्यमतानुसार परातंस का पुत्र।

अयतायन--विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार।

अयाति--(सो.) नहुष का पुत्र (म. आ. ७०.२८)।

अयस्थूण--शौल्बायन जिनका अध्वर्यु था, उन्हीं का यह गृहपति था। इसीने शौल्बायन को विशिष्ट यज्ञसाधन का उपयोग सिखाया (श. ब्रा. ११.४.२.१७)।

अयस्मय--स्वारोचिष मनु का पुत्र।

अयस्य--अजस्य देखिये।

अयाप्य--वायुमतानुसार अयास्य का नाम।

अयास्य आंगिरस--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.४४-४६; १०. ६७-६८)। अंगिरस को स्वराज् से उत्पन्न लड़का। इसका पुत्र कितव (ब्रह्माण्ड. ३.१)। राजसूय यज्ञ में यह उद्गाता था। उस यज्ञ में शुनःशेप को बलि देने का था (पं. ब्रा. ११.८.१०; १४.३.२२; १६.१२.४; सां. ब्रा. ३०.६)। धर्मकृत्य में, प्रमाण के लिये इसका बहुत से स्थानों पर उल्लेख आता है। यह आभूति त्वाष्ट्र का शिष्य है (बृ. उ. १.३.८;१९; २.६.३; ४.६.३)। शार्यात मानव के यज्ञ में यह उद्गाता था (जै. उ. ब्रा. २.७.२; १०; ८.३)।

अयुत--(सो. जह्नु.) राधिका का पुत्र।

अयुताजित्--(सो. भज.) भागवतमतानुसार सात्वतपुत्र। भजमानस की दूसरी स्त्री से उत्पन्न तीन पुत्रों में कनिष्ठ।

अयुतानायिन्--(सो. पूरु.) महाभौम तथा सुयज्ञा का पुत्र। इसकी स्त्री भासा। इसका पुत्र अक्रोधन (म. आ. ९०.१९)।

अयुतायु--(सू. इ.) सिंधुद्वीप का पुत्र (भा. ९.९)।

२. (सो. कुरु.) विष्णु के मतानुसार आरावी का पुत्र।

३. (मगध. भविष्य.) भविष्य के मतानुसार अर्णव का पुत्र। इसने १००० वर्षों तक राज्य किया। भागवत, वायु, मत्स्य तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र परंतु विष्णु के मतानुसार श्रुतवान् का पुत्र। अयुतायुत पाठभेद है।

अयुताश्व--(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार सिंधुद्वीप का पुत्र। यह वैष्णव था।

अयोज्य--एक ऋषि (वायु. ५९ ९०-९१)। इसका अपास्य नामांतर था (ब्रह्माण्ड. २.३२.९८-१००)।

अयोबाहु--धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक।

अयोभुज--धृतराष्ट्रपुत्र। इसका वध भीम ने किया (म. द्रो. १३२.१,३५*; पंक्ति,)।

अयोमुख--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अयोमुखी--एक राक्षसी। सीता को ढूंढते हुए राम लक्ष्मण जब मातंगाश्रम की ओर गये, तब वहाँ लक्ष्मण के समीप जाकर इसने लक्ष्मण का वरण करने की इच्छा प्रदर्शित की। तब लक्ष्मण ने शूर्पणखा के समान इसकी अवस्था की। तब इसने वहाँ से पलायन किया (वा. रा. अर. ६९)।

अरजा--उशनस् शुक्र की कन्या। इसका कौमार्य दंड राजा ने नष्ट किया था। इस लिये, इसके पिता ने इसे दंडकारण्य में ही भार्गवाश्रम के पास के सरोवर पर रहने के लिये कहा। तदनंतर यह निष्पाप हुई (वा. रा. उ. ९१; पद्म. सृ. ३४)।

अरण्य--रैवत मनु का पुत्र।

२. हिरण्याक्षानुयायी असुर। इसका वध कार्तिकेय ने किया (पद्म. सृ. ७५)।

अरप--भृगु गोत्रीय मंत्रकार।

अररु--एक दैत्य (तै. सं. १.१.१९)।

अरावींद--(सो.) भविष्य के मतानुसार चित्ररथ का पुत्र।

अराचीन--(सो. पूरु.) जयत्सेन तथा सुषुवा का पुत्र। इसकी पत्नी का नाम मर्यादा तथा पुत्र का नाम अरिह था (म. आ. ९०.१७-१८)।

अराल दात्रेय शौनक--दृति ऐंद्रोत शौनक का शिष्य। इसका शिष्य शुष (वं. ब्रा. २)।

अरालि--विश्वामित्र पुत्र।

अरि--अंगिरस कुल का एक गोत्रकार।

अरिक्तवर्ण--(आंध्र. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार स्वातिवर्ण का पुत्र।

अरिजित--(सो. यदु.) भद्रा से उत्पन्न कृष्ण का पुत्र।

अरिंजय--(मगध. भविष्य.) वायु के मतानुसार वरिजित का पुत्र तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार विश्वजित का पुत्र।

अरितायु--(सो. कुरु.) मत्स्य के मतानुसार यह भीमपुत्र है।

अरिद्योत्--(सो. अंधक.) दुंदुभि का पुत्र।

अरिंदम--विश्वंतर के सोमयज्ञ में, श्यापर्ण का प्रवेश होने पर, उनके द्वारा बताई गई सोम परंपरा में, सनश्रुत ने अरिंदम को यह परंपरा बताई, ऐसा उल्लेख है (ऐ. ब्रा. ७.३४)।

अरिमर्दन--(सो. वृष्णि) श्वफल्क का पुत्र।

अरिमेजय--सर्पसत्र में इसने आध्वर्यव किया था (पं. ब्रा. २५. १५)।

२. (सो. वृष्णि.) श्वफल्क का पुत्र (विष्णु. ४.१४. २)। सारमेय तथा शरिमेजय पाठ प्राप्त है। इसकी पांडवों की ओर जाने की संभावना है, ऐसा धृतराष्ट्र कहता हैं (म. द्रो. १०.२८)।

अरिष्ट--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. कंस ने कृष्णपर भेजा हुआ दैत्य। इसने बैल का रूप ले कर कृष्ण पर हमला किया। इसने कुल दो आक्रमण किये। दूसरे आक्रमण के समय, कृष्णने इसकी गर्दन मरोडी तथा एक सींग उखाड कर, उसी सींग से उसे पीटा। तत्काल रक्त की उल्टी कर के, यह मर गया (भा. १०.३६.१६; ह. वं. २.२१)।

३. विनतापुत्र। इसे अरिष्टनेमि तथा तार्क्ष्य नामांतर हैं (म. व. १८४; कुं. १८२.८; बंबई प्रत तुलना करके देखिये)।

४. बलि के पुत्रों में से एक।

५. यमसभा का क्षत्रिय (म. स. ८.१४)।

६. वैवस्वत मनु का पुत्र।

७. सावर्णि मनु का पुत्र।

अरिष्टनेमि--कश्यप का नामान्तर (म. शां. २०८. ८)। प्रजापतियों में से यह एक था (वायु. ६६.५३-५४)।

२. विनता के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९. ९३)।

३. पौष माह के सूर्य के साथ घूमनेवाला गंधर्व।

४. (सू. निमि.) पुरुजित् जनक का पुत्र।

५. अज्ञातवासकाल में, तंतिपाल के साथ यह नाम भी सहदेव ने धारण किया था (म. वि. १०)।

६. बलि की सेना का एक दैत्य (भा. ८.६)।

७. यमसभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८.२०)।

८. एक ब्राह्मण। इसका सगर के साथ मोक्षसाधन के विषय में संवाद हुआ था (म. शां. ७७.२)।

९. एक राजा। यह राज्य का त्याग कर के, गंधमादन पर्वत पर तपश्चर्या कर रहा था। यह देख कर, इन्द्र ने अपना दूत इसके पास भेजा तथा इसे हवाई जहाज़ में स्वर्ग ले आने के लिये कहा। परंतु स्वर्ग में भी उच्चनीच भेद है तथा पुण्यक्षय होने पर अधःपतन होता है, ऐसा दूत से सुन कर, क्रोध से इसने उसे वापस भेज, दिया। परंतु इन्द्र ने दूत को पुनः इसकी ओर भेजा, तथा इसको आत्मज्ञान का बोध होने के लिये, वाल्मीकि के आश्रम में ले जाने के लिये कहा। वाल्मीकि से मुलाकात होते ही, जीवमुक्त होने के लिये, उसने इसे समग्र रामायण कथन किया तथा उसके श्रवण, मनन, निदिध्यास से तुम जीवन्मुक्त हो जाओगे, ऐसा आश्वासन दिया (यो. वा. १.१)।

अरिष्टनेमि तार्क्ष्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७८)। हैहय पुत्र कुमार ने इसके पुत्र की मृगया में हत्या की थी। फिर भी यह सदाचार से जीवित रहा (म. आर. १८२)।

अरिष्टसेन--भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. श. ६)।

अरिष्टा--प्राचेतस दक्षप्रजापति तथा असिक्नी की कन्या। कश्यप की पत्नी। इसे गंधर्व तथा अप्सराएं हुई। कश्यप की पत्नीयों के उल्लेख के समय, अरिष्टा बता कर प्राधा नहीं बताई गई है, परंतु संतति के उल्लेख के समय, अरिष्टा के बदले प्राधा नाम प्रयुक्त किया है। अतएव अरिष्टा तथा प्राधा एक ही है।

अरिह--(सो. पूरु.) अराचीन तथा विदर्भकन्या मर्यादा का पुत्र। इसकी स्त्री का नाम आङ्गी (म. आ. ९०.८९९*)।

२. अमिताभ देवों में से एक।

अरुग्वत्—(सो. कुरु.) विदूरथ तथा संप्रिया का पुत्र (म. आ. ९०.४२)। इसका पुत्र परिक्षित्। इसकी पत्नी अमृता।

अरुज—रावणपक्षीय राक्षस। यह बिभीषण द्वारा मारा गया (म. व. २६९.२)।

अरुण—सृष्ट्युत्पत्ती के समय ब्रह्मदेव के मांस से उत्पन्न ऋषि। यह ब्रह्मदेव का पुत्र था (तै. आ. १.२३. २६)।

२. पंचम मनु के पुत्रों में से एक।

३. दनु तथा कश्यप का पुत्र (भा. ६.६)।

४. विनता तथा कश्यप का पुत्र। अनूरू तथा विपाद इसके नामांतर है, क्यों कि, जन्म से ही इसे पैर नही थे। विनता की सौत कद्रू को उनके साथ ही गर्भ रहा था, परंतु उसके पुत्रों को चलते फिरते देख, विनता अपने दो अंडों में से एक को फोडा। उसमें से कमर तक शरीरवाला पुत्र निकला। बाहर आते ही, यह जान कर कि, सौत-मत्सर के कारण इसकी यह दशा हुई है, इसने मां को शाप दिया कि, तुम्हे ५०० वर्ष तक सौत की दासी बन कर रहना पडेगा। परंतु, दूसरे अंडे को परिपक्क होने दिया तो दूसरा पुत्र दासता से तुम्हे मुक्त करेगा, ऐसा उःशाप कहा (म. आ. १४; अनु. २०)। आगे चल कर, इसके छोटे भाई गरुड ने इसे पूर्व भाग में जा कर रखा। इसने अपने योगबल से, संतप्त सूर्य का तेज निगल लिया। उसी समय से देवताओं के कहने से, सूर्य का सारथी होना इसने स्वीकार किया (म. आ. परि. १.१४)। कश्यप तथा ताम्रा की कन्या श्येनी इसकी भार्या थी। उससे इसे संपाति, जटायु तथा श्येन आदि पुत्र हुए (म. आ. ६०-६१)। निर्णयसिंधु तथा संस्कार कौस्तुभ में इसके अरुण-स्मृति का उल्लेख है (C. C.)।

५. विप्रचित्ती के वंश का एक दानव। इसने हजारों वर्षों तक गायत्रीमंत्र का जाप कर तप किया, तथा 'युद्ध में मृत्यु न हो' ऐसा वरदान ब्रह्मदेव से मांग लिया। आगे चल, मदोन्मत्त हो कर अपना निवासस्थान पाताल छोड कर, यह भूमि पर आया तथा इंद्रादि देवताओंको युद्ध का आव्हान देने दूत भेजा। उसी समय आकाशवाणी हुई कि, जब तक यह गायत्री का त्याग नहीं करेगा, तब तक इसे मृत्यु नहिं आयेगी। तब देवताओं ने बृहसपति को गायत्री का त्याग करवाने भेजा। बृहसपति को आया देख, 'मैं आपके पक्ष का न होते हुए भी आप यहां कहाँ निकल पडे' ऐसा इसने पूछा। तब बृहसपति ने कहा कि, हमारे तरह ही तुम भी गायत्री के उपासक हो, इसलिये भला तुम हमारे पक्ष के कैसे नहीं ? यह सुन, इसने देवताओं की उपास्य देवी गायत्री का जाप छोड दिया। इससे देवी ने संतप्त हो कर लाखों भौंरे उत्पन्न कर उन्हें इस पर छोडा, तथा विना युद्ध किये ही सेनासहित इसे मार डाला (दे. भा. १०.१३)।

६. (सू. इ.) हर्यश्व को दृषद्वती से उत्पन्न पुत्र। निबंधन तथा त्रिबंधन इसके नामांतर है।

७. नरकासूर का पुत्र। नरकासूर को मारने पर, यह अपने छः भाइयों समेत कृष्ण पर टूट पडा। उस समय कृष्ण ने इसके सहित इसके छः भाईयों को मार डाला।

८. धर्मसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक।

अरुण आट—सर्पयज्ञ में का अच्छावाक् नामक ऋत्विज (पं. ब्रा. २५. १५)।

अरुण औपवेशि—एक आचार्य। यह उपवेशी का शिष्य था तथा इसका शिष्य उद्दालक था (बृ. उ. ६. ५. ३)। अग्न्याधान के समय वाग्यत होना चाहिये, यह बताने के लिये, इस वृद्ध आचार्य की आख्यायिका दी गयी है। सत्यपालन के लिये मौन रहना श्रेयस्कर है, ऐसा इसका तात्पर्य है (श. ब्रा. २. १. ६. २०; तै. सं. ६. १. ९. २; ४. ५. १; तै. ब्रा. २. १. ५. ११)। विख्यात उद्दालक आरुणि इसका पुत्र है। यह उपवेशि गौतम का शिष्य तथा राजपुत्र अश्वपति का समकालीन था (श. ब्रा. १०. ६. १. २)।

अरुण वैतहव्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ९)।

अरुणा—कश्यप तथा प्राधा की कन्या (म. आ. ६०)।

अरुणि—ब्रह्ममानसपुत्र। यह विरक्त था (भा. ४. ८)।

अरुद्ध—(सो. द्रुह्यु.) वायुमतानुसार सेतुपुत्र (अंगार देखिये)।

अरुंधती—स्वायंभुव मन्वन्तर में, कर्दम प्रजापति को देवहूति से उत्पन्न कन्या। यह वसिष्ठ को ब्याही गयी थी (३. २३; २४; मत्स्य. २०१. ३०)।

२. कश्यप की कन्या। इसे नारद तथा पर्वत नामक दो भाई थे। नारद द्वारा यह वसिष्ठ को ब्याही गयी थी (वायु. ७१. ७९. ८३; ब्रह्माण्ड. ३. ८. ८६; लिङ्ग. १. ६३. ७८-८०; कूर्म. १. १९. २९; विष्णुधर्म. १. ११७)। इसने वसिष्ठ की प्राप्ति के लिये, गौरी-व्रत किया

था। इस कारण, इसे विवाहसुख प्राप्त हुआ (भ. वि. ब्राह्म. २१)।

३. मेधातिथि मुनि की कन्या। मेधातिथि ने ज्योतिष्टोम नामक यज्ञ किया। उस समय यह यज्ञकुंड से उत्पन्न हुई। पूर्वजन्म में यह ब्रह्मदेव की संध्या नामक मानस कन्या थी। चंद्रभागा नदी के तट पर तपोरण्य में, मेधातिथि के घर यह बडी होने लगी। पाँच साल के उपरान्त, जब यह एक बार चंद्रभागा नदी पर गयी थी, तब ब्रह्मदेव ने विमान में से इसे देखा तथा तत्काल मेधातिथि से मिल कर, इसे साध्वी स्त्रियों के संपर्क में रखने के लिये कहा। ब्रह्मदेव के कथनानुसार, मेधातिथि ने सावित्री के पास जा कर कहा, 'माँ! मेरी इस कन्या को उत्तम शिक्षा दो।' सावित्री ने उसकी यह प्रार्थना मान्य की। इस प्रकार सात वर्ष बीत गये। बारह वर्ष की आयु पूर्ण होने के पश्चात्, एक बार यह, सावित्री तथा बहुला के साथ मानसपर्वत के उद्यान में गई। वहाँ तपस्या करते हुए वसिष्ठ ऋषि दृष्टिगोचर हुए। वसिष्ठ एवं अरुंधती का परस्पर दृष्टिमिलन होते ही दोनो को कामवासना उत्पन्न हुई। तथापि मनोनिग्रह से दोनो अपनें अपने आश्रम में गये। सावित्री को यह ज्ञान होते ही, उसने इन दोनों का विवाह करा दिया (कालि. २३)।

वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के मैत्रावरुणी वसिष्ठ की पत्नी (म. स. ११.१३२*; व. १३०.१४)। इसका दूसरा नाम अक्षमाला भी था (म. उ. ११५.११)। अरुंधती ने स्वयं, 'अरुंधती' शब्द की व्युत्पत्ति, निम्न प्रकार बताई है। यह वसिष्ठ को छोड, अन्य कहीं भी नहीं रहती तथा उसका विरोध नहीं करती (म. अनु. १४२.३९ कुं.)।

कमल चुराने के लिये शपथ लेने के प्रसंग में, कमल न चोरने के लिये इसने प्रतिज्ञा की है (म. अनु. १४३. ३८ कुं.)। ऋषियों द्वारा धर्मरहस्य पूछे जाने पर, श्रद्धा, आतिथ्य तथा गोशृंगस्नान का माहात्म्य, इसके द्वारा वर्णन किये जाने की पुरानी कथा, भीष्म ने धर्म को कथन की है (म. अनु. १९३.१-११ कुं.)

यह अत्यंत तपस्वी तथा पतिसेवापरायण थी। इसी कारण, अग्निपत्नी स्वाहा अन्य छः ऋषिपत्नीओं का रूप धारण कर सकी, पर इसका रूप धारण न कर सकी (म. व. २७७.१६ कुं.)।

एकबार, इसे बदरपाचनतीर्थ पर रख कर, सप्तर्षि हिमालय में फलमूल लाने गये। तब बारह वर्षों तक अवर्षण हुआ। तब सब ऋषि वहीं बस गये। इधर अरुंधती के कठिन तप की परीक्षा लेने, शंकर ब्राह्मण का वेश ले कर भिक्षा मागने पधारे। पास में कुछ न होने के कारण, इसने कुछ (लोहे के) बेर उसे दिये। ब्राह्मण ने उसे पकाने के लिये कहा, तब इसने उन्हें पकने के लिये अग्नि पर रखा तथा अनेक विषयों पर उस ब्राह्मण के साथ चर्चा प्रारंभ की। चर्चा होते होते बारह वर्ष कब व्यतीत हो गये, इसका पता तक नहीं चला। हिमालय गये सप्तर्षि फलमूल ले कर वापस लौट आये, तब शंकर ने प्रगट हो कर, अरुंधती की कडी तपश्चर्या का वर्णन उनके पास किया, तथा उसकी इच्छानुसार, वह तीर्थ पवित्र स्थान हो कर प्रसिद्ध होने का वरदान दिया (म. श. ४८)। आकाश में सप्तर्षिओं में वसिष्ठ के पास इसका उदय होता है। इसका पुत्र शक्ति (ब्रह्माण्ड ३.८.८६.८७)।

३. दक्ष एवं असिक्नी की कन्या तथा धर्म की दस पत्नीओं में से एक (दक्ष तथा धर्म देखिये)।

अरुपोषण--(सो.) भविष्य के मतानुसार मिहिरार्थ का पुत्र। इसने ३८,००० वर्षों तक राज्य किया।

अरुरु--अनायुषा का पुत्र। इसका पुत्र धुंधु।

अर्क--(सो. नील.) पूरुज का पुत्र।

२. रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ४)।

३. आठ वसुओं में से एक (भा. ६.६.११)।

अर्कज--बलीह देखिये।

अर्कपर्ण--कश्यप तथा मुनि के पुत्रों में से एक। इसका नामांतर तृष्णप है।

अर्कसावर्णि--नवम मनु (मनु देखिये)।

अर्कद्युमित्--(सो.) भविष्य के मतानुसार वैकर्तन का पुत्र। इसने ४१०० वर्षों तक राज्य किया।

अर्गल काहोडि--एक आचार्य (क. सं. २५.७)।

अर्चत् हैरण्यस्तूप--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४९)। मंत्र में भी इसका निर्देश है (ऋ. १०.१४९.५)।

अर्चनानस आत्रेय--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ६३; ६४; ८.४२)। इसे मित्रावरुणों ने सहायता की (ऋ. ५.६४. ७)। श्यावाश्व के साथ अथर्ववेद में इसका उल्लेख है (अ. वे. १८.३.१५)। परंतु यह श्यावाश्व का पिता था (पं. ब्रा. ८.५.९; श्यावाश्व देखिये)।

अर्चि--(स्वा. उत्तान.) वेन राजा के देहमंथन से मिथुन उत्पन्न हुआ। उस मिथुन में की यह स्त्री। यह उस मिथुन का पुरुष पृथुराजा की पत्नी बनी। यह लक्ष्मी का अवतार थी। (भा. ४.१५.५; पृथु देखिये)।

२. कृशाश्व ऋषी की दो पत्नियों में से एक, एवं धूमकेश ऋषि की माता (भा. ६.६.२०)।

३. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के देव।

अर्चिमालि—सीताशुद्धी के लिये पश्चिम की ओर गये वानरों मे से एक (वा. रा. कि. ४२)।

अर्चिष्मत्—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

अर्चिष्मती—बृहस्पति की कन्या। बृहस्पति की दूसरी पत्नी शुभा की सप्त कन्याओं में से एक।

अर्चिसन—अत्रिगोत्री मंत्रकार। इसे अर्धस्वन तथा अर्वसन नामांतर है।

अर्जव—ब्रह्मांड के मतानुसार व्यास की ऋक शिष्यपरंपरा का बाष्कलि भरद्वाज का शिष्य। वायु के मतानुसार अर्यव पाठ है (व्यास देखिये)।

अर्जुन—(सो. पूरु.) कुन्ती को दुर्वास द्वारा दिये गये इन्द्रमंत्रप्रभाव से उत्पन्न पुत्र। यह कुन्ती का तृतीय पुत्र था। इसका जन्म होते ही इसका पराक्रम कथन करनेवाली आकाशवाणी हुई (म. आ. ११४.२८)। यह इंद्र के अर्ध सामर्थ्य से हुआ (मार्कं. ५.२२)। इसके जन्म के समय, उत्तराफाल्गुनी समवेत पूर्वाफाल्गुनी नक्षत्र, फाल्गुन माह में था, अतएव इसका नाम फाल्गुन प्रचलित हुआ (म. वि. ३९.१४)। इसका जन्म हिमालय के शतशृंग नामक भाग पर हुआ। पांडु की मृत्यु के पश्चात्, इसके उपनयनादि संस्कार, वसुदेव ने काश्यप नामक ब्राह्मण भेज कर, शतशृंग पर ही करवाए (म. आ. ११५ परि. १.६७)।

विद्यार्जन—यद्यपि सब कौरव पांडवों ने शस्त्रविद्या द्रोण से ही ग्रहण की, तथापि विशेष नैपुण्य के कारण, द्रोण की इसपर विशेष प्रीति थी। इस की अध्ययन में भी प्रशंसनीय दक्षता थी। द्रोण सब शिष्यों को पानी भरने के लिये छोटें पात्र देता था, परंतु अपने पुत्र का समय व्यर्थ न जावे, इसलिये अश्वत्थामा को बडा पात्र देता था। यह बात, सर्वप्रथम अर्जुन के ही ध्यान में आयी तथा बडी कुशलता से इसने अश्वत्थामा के साथ आने का क्रम जारी रखा। इसीसे यह सब से आगे रहा परंतु अश्वत्थामा से पीछे न रहा। एकबार भोजनसमय, हवा के कारण बत्ती बुझ गयी परंतु अंधकार होते हुए भी इसका भोजन ठीक तरहं से पूर्ण हुआ। तब इस ने तर्क किया कि, अंधकार में भी गलती न करते हुए मुँह में ग्रास जाने का कारण दृढाभ्यास है। तुरंत, अंधकार में भी लक्ष्यवेध करने का इसने प्रारंभ किया, तथा यह धनुर्विद्या में अत्यंत निष्णात हो गया। द्रोण को भी इसके लिये काफी अभिमान था, अतएव अर्जुन का पराभव कोई भी न कर सके, इसलिये उसने कपट से अपने शिष्य एकलव्य का अंगूठा मांग लिया। इतनी अधिक गुरुकृपा का स्वाभाविक परिणाम यह हुआ कि, 'रथी तथा महारथियों में अग्रेसरत्व ले कर लडनेवाला,' ऐसी इसकी ख्याति हो गई।

परीक्षा—एकबार परीक्षा लेने के लिये, द्रोण ने वृक्ष पर रखे एक चिन्ह पर लक्ष्य वेध करने के इसे कहा, तथा सबको पूछा कि, तुम्हें क्या दिख रहा है। केवल अर्जुन ने ही कहा कि, लक्ष्य के मस्तिष्क के अतिरिक्त मुझे और कुछ भी नही दिखता। तब से द्रोण इसपर अत्यधिक प्रसन्न रहने लगा। एकबार, जब द्रोण गंगास्नान के लिये गये थे तब मगर ने उसे पकड़ लिया। सभी शिष्य दिङ्मूढ हो गये परंतु अर्जुन ने पांच बाण मार कर द्रोण की मगर से रक्षा की। द्रोणाचार्यद्वारा ली गई शिष्यपरीक्षा में अर्जुन के प्रथम आनेके उपलक्ष में, ब्रह्मशिर नामक उत्कृष्ट अस्त्र उसने इसे दिया (म. आ. १२३), तथा कहा कि, इस अस्त्र का प्रयोग मानव पर न करना (म. आ. १५१. १२-१३ कुं.)। एकबार द्रोण ने अपने सब शिष्यों का शस्त्रास्त्रनैपुण्य दर्शाने के लिये एक बड़ा समारंभ किया। उस समय अर्जुन ने लगातार पांच बाण ऐसे छोडे कि, पांचों मिल कर एक ही तीर नजर आवे। एक लटकते तथा हिलते सींग में इक्कीस बाण भरना इ. प्रयोग कर इसने दिखाये, तथा सबसे प्रशंसा प्राप्त की। परंतु कर्ण इसे सहन न कर सका। अर्जुन द्वारा किये गये समस्त प्रयोग उसने कर दिखाये, तथा अर्जुन के साथ द्वंद्वयुद्ध करने की इच्छा प्रदर्शित की। तब अर्जुन ने आगंतुक कह कर उस का उपहास किया। तथापि द्रोण की इच्छानुसार यह युद्ध के लिये सुसज्ज हुआ, परंतु 'तुम कुलीन नही हो, अतएव राजपुत्र अर्जुन तुमसे युद्ध नही करेगा,' ऐसा कृपाचार्य ने कहा। तब दुर्योधन ने कर्ण को अभिषेक कर के, अंगदेश का राजा बनाया। युद्ध की भाषा प्रारंभ हुई, परंतु गडबडी में यह प्रसंग यहीं समाप्त हुआ (म. आ. १२६. १२७)। आगे चल कर, गुरुदक्षिणा के रूप में द्रुपद को जीवित पकड़ कर लाने का कार्य जब द्रोण ने शिष्यों को दिया, तब केवल अर्जुन ही यह काम कर सका (म. आ. १२८)।

पराक्रम—अर्जुन ने आगे चल कर, सौवीराधिपति दत्तामित्र नाम से प्रसिद्ध सुमित्र को जीता। उसी प्रकार,

विपुल को, जो पांडु द्वारा नही जीता गया, जीता। पूर्व तथा पश्चिम दिशायें जीतीं। कुछ प्रतियों में तो कहा है कि, अर्जुन ने पंद्रहवें वर्ष की उम्र में दिग्विजय किया (म. आ. १५१.४४-५० कुं.)। पांडवों की चारों तरफ प्रसिद्धी होने के लिये, अर्जुन के पराक्रम का बहुत ही उपयोग हुआ। आगे चल कर, जतुगृह से छुटकारा होने के बाद, सब पांडव ब्राह्मणवेष में द्रौपदीस्वयंवर के लिये गये। राह में रात्रि के समय, अंगारपर्ण गंधर्व ने इन्हें रोका। तब उसका तथा अर्जुन का युद्ध हो कर अंगारपर्ण का इस ने पराभव किया। अंगारपर्ण ने इसे चाक्षुषीविद्या दी, तथा अर्जुन ने उसे अग्न्यस्त्र दे कर उसमे मैत्री की (अंगारपर्ण देखिये)। पांचालनगरी में अर्जुन ने, द्रौपदी के स्वयंवरार्थ लगाये गये मत्स्ययंत्रभेदन की शर्यत जीती, तथा द्रौपदी ने अर्जुन का वरण किया (म. आ. १७९)। आगे चल कर, धृतराष्ट्र ने विदुर को भेज कर पांडवों को हस्तिनापुर से वापस लाया। एक बार, आयुधागार में युधिष्ठिर तथा द्रौपदी जब एकांत में थे, तब अर्जुन को विवश हो कर वहाँ जाना पडा। कोई ब्राह्मणों की यज्ञीय गौअें चोरी हो गई थीं, इस लिये वे राजा को सूचना देने आये थे। अर्जुन ने निर्भय होने का आश्वासन उन्हें दिया तथा अयुधागार से शस्त्र ले कर गायें वापस लौटा कर लाई। युधिष्ठिर तथा द्रौपदी को एकांत में देखा, इस लिये नियत शर्त के अनुसार यह बारह महीनों तक तीर्थाटन करने गया (म. आ. २०५)।

तीर्थयात्रा—अर्जुन ने इस तीर्थाटन काल में, कौरव्य नाग की उलूपी नामक कन्या से, पाताल में विवाह किया (म. आ. २०६)। तदनंतर यह हिमालय पर गया। वहाँ से बिंदुतीर्थ पर गया। वहाँ से, पूर्व की ओर मुड कर उत्पलिनी नदी, नंदा, अपरनंदा, कौशिकी, महानदी, गया तथा गंगा नामक तीर्थस्थान इसने देखे। वहाँ से अंग, वंग तथा कलिंग देश देख कर, यह समुद्र की ओर मुड़ा। महेंद्र पर्वत पर से मणिपूर के राज्य में प्रविष्ट हुआ। मणिपूर के राजा चित्रवाहन की चित्रांगदा नामक एक सुन्दरी कन्या थी। अर्जुन ने उसे अपने लिये मांग लिया। राजा ने इस शर्त पर कन्या दी कि, कन्या का पुत्र उसे मिले। अर्जुन मणिपूर में तीन वर्ष रहा। उस अवधी में चित्रांगदा को एक पुत्र हुआ। उसका नाम बभ्रुवाहन। आगे मगरो के कारण, सब के द्वारा त्यक्त पंचतीर्थ में से सौभद्रतीर्थ पर अर्जुन प्रथम गया, तथा वहाँ शाप से मगर बनी हुई अप्सराओं का उद्धार कर के, पुनश्च मणिपूर वापस आया। वहाँ चित्रांगदा तथा बभ्रुवाहन से मिल कर गोकर्ण गया। वहाँ से प्रभासक्षेत्र में जाने पर कृष्णार्जुन मीलन हुआ। वहाँ से रैवतकपर्वत तथा द्वारका जा कर, कृष्ण की सहायता से सुभद्राहरण करने का इसने सोचा, तथा उसके लिये धर्मराज की संमति प्राप्त की। मृगया के निमित्त्य से बाहर गये अर्जुन ने, रैवतक पर्वत के देवताओं का दर्शन तथा प्रदक्षिणा किया। पश्चात् द्वारका वापिस जानेवाली सुभद्रा को अपने रथ में बिठाया तथा वहाँ से पलायन किया। पश्चात् अर्जुन का पक्ष ले कर, कृष्ण ने बलराम की ओर से अर्जुन को निमंत्रण दिया, तथा बडे धूमधाम से विवाह करवाया। वहाँ एक वर्ष रह कर, अर्जुन ने बाकी दिन पुष्करतीर्थ में बिताये। परंतु निम्नलिखित लोकप्रसिद्ध कथा भी कुछ स्थानों पर वर्णित है। सुभद्रा के दुर्योधन से होनेवाले विवाह की वार्ता, अर्जुन को प्रभासक्षेत्र में मालूम हुई। उसे प्राप्त करने के लिये, त्रिदण्डी सन्यास ले कर द्वारका में चातुर्मास बिताने का निश्चय इसने किया। वहाँ सब पौरजनों में यह अत्यंत प्रसिद्ध हुआ। तब बलराम ने भी इसे अपने घर में भोजन का निमंत्रण दिया। सीधे साधे भोले बलराम इसे पहचान न सके। वहाँ सुभद्रा तथा अर्जुन की दृष्टिभेट हुई। यात्रा के लिये, शहर से बाहर गई हुई सुभद्रा को रथ में डाल कर अर्जुन ने हरण कर लिया, तथा विरोधकों को मार भगाया। अर्जुन के त्रिदण्डी संन्यास कीं कथा भागवत तथा महाभारत की कुंभकोणम् प्रति में ही केवल है (भा. १०.८६; म. आ. २३८.४ कुं.)। स्कन्दपुराण में भी अर्जुन की तीर्थयात्रा का उल्लेख है तथा नारद ने अर्जुन को अनेक क्षेत्रों का महात्म्य कथन किया है (स्कन्द. १.२.१.५)।

वस्तुप्राप्ति—अर्जुन को अनेक व्यक्तियों से भिन्न वस्तु प्राप्त होने का उल्लेख है। मय ने बिंदुसर पर से उत्तम आवाज करनेवाला देवदत्त नामक वारुण महाशंख अर्जुन कों दिया (म. स. ३.७.१८)। उसी प्रकार, अग्नि ने अर्जुन को, खांडववन भक्षणार्थ देने के उपलक्ष में, गांडीव धनुष्य, दो अक्षय तूणीर, कपिध्वजयुक्त सफेद अश्वों का रथ, आदि चीजें दीं (म. आ. ५५.३७; २५१ कुं.)। ये सारी चीजें अग्नि ने वरुण से तथा वरुण ने सोम से प्राप्त की थी। अर्जुन यद्यपि इन्द्रांश से उत्पन्न हुआ था, तथापि खांडवदाह के समय वर्षा कर के विरोध करने के कारण, इन्द्र का अर्जुन से युद्ध हुआ, तथा उसमें इन्द्र को पीछे हटना पडा (म. आ. २१८)। आगे चल कर, इन्द्र ने इसे कवच तथा कुंडल दिये (म. व. १७१.४)।

दिग्विजय—वनवास के पहले, राजसूययज्ञ के समय इसने किये दिग्विजय की कल्पना निम्नांकित वर्णन से आएगी। प्रथम कुलिंद देश के राजा को जीता। आनर्त तथा कालकूट देशों पर सत्ता स्थापित कर, सुमंडल राजा का पराजय किया। आगे चल कर, उसे साथ लेकर, शाकलद्वीप तथा प्रतिविंध्य पर आक्रमण किया। उस समय शाकलद्वीप के तथा सप्तद्वीप के सब राजाओं को अर्जुन ने जीता तथा उनके साथ प्राग्ज्योतिष देश पर आक्रमण किया। वहाँ भगदत्त के साथ अर्जुन का आठ दिनों तक भयंकर युद्ध हुआ। अन्त में जब भगदत्त ने कर देना स्वीकर किया, तब अर्जुन ने कुबेर के प्रदेश पर आक्रमण किया। वहाँ के सब राजाओं से कर वसूल कर, उलूक देश पर आक्रमण किया। उलूक देश के राजा का नाम बृहन्त था। उसे युद्ध में पराभूत कर तथा कर ले कर, उसके सहित सेनाबिंदु पर आक्रमण किया, तथा गद्दी से उसे पदच्युत किया। तदनंतर मोदापूर का वामदेव, सुदामन तथा उत्तर उलूक के राजाओं को इकठा कर के उनसे कर वसूल किया। तदनंतर पंचगण देश को जीत कर सेनाबिंदू के देवप्रस्थ नगर को यह गया। वहाँ से इसने राजा पौरव विश्वगश्व पर आक्रमण किया। उसे जीत कर, पर्वत में रहनेवाले सात उत्सवसंकेत गणों को जीता, तदनंतर काश्मीर के वीरों को जीता तथा दस मांडलिकों के साथ लोहित को जीता। त्रिगर्त, दार्व तथा कोकनद से कर ले कर अभिसारी नगरी जीती। उरगा नगरी के रोचमान को जीता। चित्रायुध का सिंहपूर नगरी ध्वस्त किया। तदनंतर सुह्म तथा चौल देश उध्वस्त कर के, बाल्हीक देश में प्रविष्ट हुआ। वह देश जीत कर, कांबोज तथा दरद देश हस्तगत किये। उत्तर की ओर के दस्युओं को हस्तगत कर के, आगे लोह, परम कांबोज तथा उत्तर ऋषि को अर्जुन ने जीता। ऋषिक देश में भयंकर युद्ध करना पडा, परंतु अन्त में विजय प्राप्त हो कर, मयूरवर्ण तथा शुकोदरवर्ण अश्व करभार के रूप में प्राप्त हुए। इस प्रकार, निष्कुटसहित हिमालय जीत कर, अर्जुन श्वेत पर्वत पर आ कर रहने लगा (म. स. २४)। वहाँ से, किंपुरुषावास देश पर आक्रमण करके, राजा द्रुमपुत्र से कर वसूल किया। हाटक देश में जाकर, सामनीती से, गुह्यक के पास से कर लिया। मान सरोवर पर ऋषियों द्वारा निकाली गई नहरें देखीं। गंधर्वों के देशों पर आक्रमण कर के, त्तित्तिरिकल्माष तथा मंडूक नामक उत्तम अश्व करभार के रूप में प्राप्त किये। तदनंतर जब यह हरिवर्ष पर आक्रमण करने जा रहा था, तब द्वारपाल ने इसे रोका, तथा यहीं दिग्विजय रोकने के लिये कहा। क्यों कि, उत्तर कुरु देश में सब चीजें अदृश्य है। तब अर्जुन धर्मराज की सत्ता को मान्यता ले कर वापस आ गया, तथा इन्द्रप्रस्थ में प्रविष्ट हुवा (म. स. २३-२५)।

वनवास—वनवास में पाशुपतास्त्र-प्राप्ति के लिये, इन्द्रकील पर्वत पर अर्जुन ने तपश्चर्या की तथा शंकर को प्रसन्न कर लिया। किरातवेष में आये शंकर से इसने मूकवध पर से युद्ध किया तथा अंत में उससे पाशुपतास्त्र प्राप्त किया। पाशुपतास्त्र का रहस्यपूर्ण ज्ञान इसने शंकर से प्राप्त किया (म. व. ३८.४१)। अन्य देवों ने भी अर्जुन को अनेको अस्त्र दिये (म. व. ४२)। तदनंतर इन्द्र के निमंत्रण के कारण, उससे भेजे गये रथ में बैठ कर, यह स्वर्ग गया। वहाँ इन्द्र ने अर्जुन का काफी सम्मान कर अपने अर्धासन पर इसे जगह दी। वहाँ अर्जुन ने अनेक अस्त्रों की शिक्षा प्राप्त की। इस प्रकार इसने अपने पांच वर्ष स्वर्ग में बिताये। इन्द्र के कथनानुसार, वाद्य बजाना, नृत्यकला तथा गानकला की भी शिक्षा इसने ली। इस काम में चित्रसेन नामक गंधर्व का अत्याधिक उपयोग हुआ (म. व. ४५. ६)। एकबार अर्जुन के पास उर्वशी ने संभोगयाचना की। परंतु इसने उसे नाही कर दी। इससे क्रोधित हो कर, 'तुम नपुंसक बनोगे,' ऐसा शाप उसने अर्जुन को दिया। परंतु इन्द्र ने उसे बताया कि, अज्ञातवास के समय एक वर्ष तक तुम नपुंसक रहोगे, तथा इस शाप का तुम्हें उपयोग ही होगा (म. व. परि. ६)। इंद्र ने लोमश के द्वारा अर्जुन का समाचार भी अन्य पांडवों को भेजा। अर्जुन कुछ कालोपरांत अपने बांधवों के बीच आते ही, अज्ञातवास का समय आया। अज्ञातवास के लिये द्रौपदी को विराटनगर तक कंधों पर ले जाने का कार्य अर्जुन ने किया (म. वि. ५)।

अज्ञातवास—अज्ञातवास में अर्जुन ने बृहन्नला नाम तथा नपुंसकत्व का स्वीकार किया, तथा स्वयं ही को द्रौपदी की परिचारिका बता कर, उत्तरा को नृत्यगायनादि सिखाने का काम पाया। आगे जब विराटादि सब लोग, दक्षिण-गोग्रहण में मग्न थे, तब दुर्योधनादि ने उत्तरगोग्रहण किया। रजवाड़े में अकेला भूमिंजय (उत्तर) ही था। उसके पास सारथि न था। बृहन्नला सारथ्य कर सकती है यह ज्ञात होने के पश्चात् वह युद्ध के लिये निकला। परंतु ऐन समय पर घबरा कर, रथ से कूद कर भागने

लगा। बृहन्नला ने उसे समझा कर, स्वयं युद्ध करने का निश्चय किया, तथा शमीवृक्ष पर के आयुध ले कर उत्तर को अपना परिचय दिया। घमासान युद्ध करते गौओं को पुनः प्राप्त करते समय, इसने कर्ण को भगा कर उस के भाई को जान से मारा। इसके उपलक्ष्य में, अर्जुन को उपहार रूप में उत्तरा को देने का विचार विराट ने प्रकट किया, परंतु अर्जुन ने उसका स्वीकार अभिमन्यु के लिये किया (म. वि. ६७)।

कृष्णसहाय्य—भारतीय युद्ध की तैय्यारी जब चालू थी, तब दुर्योधन कृष्ण की सहायता प्राप्त करने के लिये द्वारका गया। अर्जुन भी वहीं उपस्थित हुआ। दुर्योधन सराने की ओर बैठा, तथा अर्जुन नम्रता से पैरों की ओर बैठा। उठते ही प्रथम अर्जुन दिखा। उसी प्रकार यह दुर्योधन से छोटा भी था, अतएव कृष्ण ने प्रथम अर्जुन को माँग प्रस्तुत करने को कहा। दश कोटि गोपालों की नारायण नामक सेना, तथा निःशस्त्र स्वयं ऐसा विभाजन कर, जो चाहिये उसे मांगने की सूचना कृष्ण ने की। तब अर्जुन ने कृष्ण को मांग लिया। अपनी ओर हजारों सैनिक आये, इस बात पर दुर्योधन संतुष्ट हुआ (म. उ. ७) कृष्ण जब पांडवो के मध्यस्थ कार्य के लिये गया, तब अर्जुन ने कहा कि, उसे जो योग्य प्रतीत हो वही वह तय करे (म. उ. ७६)।

भारतीययुद्ध—युद्ध के आरंभ में ही, अर्जुन को युद्ध का परिणाम दिखाई देने लगा था। यह सोचने लगा कि, वह स्वयं किसी अविचारी कृत्य में प्रवृत्त हो गया है। इस विचार के कारण, यह युद्ध से निवृत्त होने लगा। परंतु कृष्ण नें इसे कर्तव्यच्युत होने से परावृत्त किया। यही भगवद्गीता है (म. भी. २३. ४०)। युद्ध के प्रारंभ में ही भीष्मार्जुन युद्ध प्रारंभ हुआ। तीसरे दिन ऐसा प्रतीत होने लगा कि, भीष्म पांडवों को बिल्कुल नही बचने देंगे। परंतु कृष्ण ने प्रतिज्ञा तोड़ कर हाथ में चक्र लिया, तथा अर्जुन ने भी जोर लगाया। तीसरे दिन के अंत में, कौरवों का इसने काफी नुकसान किया।

नववे दिन, अर्जुन का द्रोणाचार्य के साथ युद्ध हुआ। भीष्म के साथ भी जोरदार युद्ध हुआ। संध्या होने के कारण युद्ध रोका गया, परंतु भीष्म के सामने किसी की शक्ति काम नही आती थी, इससे सब निराश हो गये। धर्मराज एवं कृष्ण ने विचार किया कि, वे भीष्म को ही पूछें, कि उसका वध किस प्रकार किया जा सकता है। भीष्म ने भी सरल स्वभाव से कहा कि, शिखंड़ी को आगे रख कर, अर्जुन अगर मुझ से लड़े तो मेरा वध हो सकता है। क्यों कि, अभद्र ध्वजयुक्त तथा एकबार स्त्री रहनेवाले शिखंड़ी के समान लोगों पर अपने नियमानुसार भीष्म शस्त्र नही चलाते थे।

भीष्मवध—दसवे दिन, शिखंड़ी को भीष्म के सामने छोड़ कर, अर्जुन ने कौरव सेना को बिल्कुल त्रस्त कर ड़ाला। कौरवों ने पांडवों को रोकने का अंतिम प्रयत्न किया, परंतु सफलता हाथ न लगी। अर्जुन ने शिखंड़ी के आड़ में रह कर, हजारों बाण भीष्म पर बरसाये तथा भीष्म को नीचे गिरा दिया। हजारों बाण जिसके शरीर में भिदे हैं, ऐसा भीष्म जब वीरोचित शय्या पर विश्रांति कर रहा था, तब उसकी गर्दन नीचे लटकने लगी अतएव उसने तकिया मांगा। कईयो ने उसे नरम तकिये ला दिये, परंतु अर्जुन ने वीरशय्या के लिये उचित तीन बाणोंका तकिया तैय्यार कर के उसे प्रसन्न किया। उसी प्रकार भीष्म के पानी मांगने पर, सबने पानी ला दिया। परंतु उसका स्वीकार न कर, अर्जुन ने भूमि में बाण मार कर उत्पन्न किये जल का स्वीकार भीष्म ने किया (म. भी. ११६)।

इसके सिवा, युद्ध में शत्रुओं को मारेंगे अथवा मरेंगे, ऐसी प्रतिज्ञा कर के बाहर आये हुए त्रिगर्त देश का राजा सत्यरथ, सत्यवर्मा, सत्यव्रत, सत्येषु तथा सत्यकर्मा तथा प्रस्थलाधिपति सुशर्मा, तथा मावेल्लक, लालित्थ तथा मद्रक आदि अन्य राजाओ को अर्जुन ने परलोक दर्शाया (म. द्रो. १६; क. १३; ३२; ३९)। तदनंतर अर्जुन ने हाथी की सहायता से लड़नेवाले भगदत्त को मार ड़ाला। भगदत्त ने एक बार अर्जुन पर प्राणघातक अंकुश फेका, परंतु कृष्ण ने बीच में आ कर उसे अपनी छाती पर लिया तथा अर्जुन को बचाया (म. द्रो. २८)।

जयद्रथवध—जयद्रथ ने अभिमन्यु को मृत्यु के बाद लाथ मारने के कारण, अर्जुन ने प्रतिज्ञा की कि, दूसरे दिन सूर्यास्त के पहले मैं उसकी हत्या करूंगा। रात्रि में शंकर ने इसके स्वप्न में आ कर, इसको धीरज बंधा कर पुनः पाशुपतास्त्र दिया (म. द्रो. ५७)। अर्जुन में वीरश्री का संचार हुआ तथा इसने दुःशासन दुर्योधनादि का कई बार पराभव किया। कर्ण को भगाया। अंबष्ट, श्रुतायुस् तथा अश्रुतायुस् का वध किया (म. द्रो. ६८)। इस प्रकार तुमुल युद्धप्रसंग में, सूर्यास्त होने के पहले ही, अर्जुन ने जयद्रथ का शिरच्छेद किया (म. द्रो. १२१)।

कर्णवध—तदुपरांत, कर्ण के द्वारा धर्मराज का पराभव होने के कारण, धर्म के मन में कर्ण के प्रति अत्यंत द्वेष

उत्पन्न हो गया। परंतु कर्ण के सामने किसी का वस नही चलता था। तब धर्म ने अर्जुन की निर्भत्सना की, तथा कहा कि, कर्णवध करने की शक्ति अगर नही है, तो गांडीव किसी और को दे दो। उसने कर्णवध किये विना रण से वापस लौट आने के लिये, अर्जुन को दोष दिया। यह सुनते ही, पूर्व प्रतिज्ञा के अनुसार, गांडीव कीसी दूसरे को दे दो, ऐसे कहनेवाले धर्मराज का वध करने के लिये खड्ग लेकर दौड़ा। तब कृष्ण ने धर्माधर्म का भेद बना कर कहा कि, धर्मराज के लिये 'आप' शब्द का प्रयोग करने के बदले अगर 'तुम' या 'तू' कहा तो यह अपमान वधतुल्य है। अर्जुन ने यह मानकर, धर्मराज के प्रति कुत्सित शब्दों का उपयोग कर, उसका अत्यंत अपमान किया। अंत में, ऐसा करने का कारण बता कर, यह कर्णवध के काम में लग गया। कृष्ण इसे लगातर उत्तेजन दे ही रहा था। कर्णार्जुन का तुमुल युद्ध शुरू हुआ। अर्जुन ने कर्ण को घायल कर के एक बार बेहोश कर दिया, तथा बाण पर बैठ कर आये हुए तक्षक का वध किया। परंतु युद्ध के ऐन रंग में ही, कर्ण के रथ का पहिया पृथ्वी ने निगल लिया। कर्ण नें रथ से कूद कर पहिया उठाने का प्रयत्न किया, परंतु कुछ लाभ नही हुआ। उसने धर्मयुद्ध के अनुसार अर्जुनको रुकने का उपदेश किया, परंतु उसका भी कुछ लाभ न हो कर, अर्जुन ने कर्ण का मस्तक उड़ा दिया (म. क. ६७)।

युद्धसमाप्ति—दुर्योधन की मृत्यु के बाद सब उसके शिविर में आये। तब अनेक अस्त्रप्रयोगों से दग्ध, परंतु कृष्ण के, सामर्थ्य से सुरक्षित अर्जुन का रथ, कृष्णार्जुन के नीचे उतरते ही, अपने आप जल कर खाक हो गया (म. श. ६१)। आगे चल कर, अश्वत्थामा ने चिढ कर रात्रि के समय ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया, तथा सबको जलाना प्रारंभ किया। तब उसके परिहार के लिये अर्जुन ने भी ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया। परंतु वह सब लोगों को अधिक कष्ट देनेवाला सोच कर इसने वापस ले लिया (म. सौ. १५)। यद्यपि भारतीय युद्ध में, अर्जुन का सारथी कृष्ण था (म. उ. ७. ३४), तो भी पूरु नामक एक सारथि अर्जुन के पास निरंतर रहता था (म. स. ३०)।

अश्वमेध—जब युधिष्ठिर ने अश्वमेध का अश्व छोडा, तब उसके संरक्षणार्थ अर्जुन की योजना की गई थी। अर्जुन प्रथम अश्व के पीछे पीछे उत्तर दिशा की ओर गया। राह में कई छोटे बड़े युद्ध हुए। उनमें से केवल महत्त्वपूर्ण युद्धों का वर्णन महाभारत में दिया है। त्रिगर्त का राजा सूर्यवर्मा, उसी प्रकार उसका भाई केतुवर्मा तथा धृतवर्मा का पराजय अर्जुन ने किया। प्राग्ज्योतिषपुर का राजा भगदत्तपुत्र यज्ञदत्त को इसने अच्छा पाठ सिखाया। तदनंतर यह सिंधु देश में गया। सिंधुराजा जयद्रथ का वध अर्जुन के द्वारा होने के कारण, वहाँ के निवासियों में अर्जुन के प्रति त्वेष जाग्रत था। उनके द्वारा जोरदार आक्रमण होने के कारण, अर्जुन के हाथों से गाण्डीव छूट गया। परंतु उसके बाद भी इसने ज़ोरदार युद्ध शुरू किया। अर्जुन के आगमन की सूचना मात्र से जयद्रथपुत्र सुरथ मृत हो गया। परंतु जयद्रथ की पत्नी तथा दुर्योधन की भगिनी दुःशला, अपने नाती सहित अर्जुन के पास आई, तथा इसे शरण आ कर युद्धसे परावृत्त किया।

पुत्रभेट—तदनंतर अर्जुन मणलूर देश में गया। तब इसका पुत्र बभ्रुवाहन अनेक लोगो के साथ, इसके स्वागत के लिये आया। परंतु क्षत्रियोचित वर्तन न करने के कारण अर्जुन ने उसकी निर्भत्सना की। पाताल से उलूपी वहाँ आई तथा उसने भी अपने सापत्न पुत्र को युद्ध के लिये प्रोत्साहन दिया। बभ्रुवाहन ने घनघोर युद्ध प्रारंभ कर के अर्जुन को मूर्च्छित किया, तथा स्वयं भी मूर्च्छित हो गया। उसकी माता चित्रांगदा रणक्षेत्र में आई तथा पुत्र एव पति के लिये उसने अत्यंत विलाप किया। बभ्रुवाहन ने प्रायोपवेशन किया। तब, इस पिता पुत्र युद्ध के लिये, उलूपी को सबके द्वारा दोष दिये के जाने कारण, केवल स्मरण से प्राप्त होने वाले संजीवनीमणि से उसने अर्जुन को जाग्रत किया। शिखण्डी को सामने रख कर भीष्मवध करने के कारण अजिंक्य अर्जुन का पराभव बभ्रुवाहन कर सका।

तदुपरांत, अर्जुन मगध देश में गया तथा जरासंधपौत्र मेघसंधी का इसने पराभव किया। उसके बाद वंग, पुण्ड्र तथा केरल देश जीत कर, दक्षिण की ओर मुड़ाकर इसने चेदि देश पर आक्रमण किया। वहाँ शिशुपालपुत्र शरभ से सत्कार प्राप्त कर, काशी, अंग, कोसल, किरात तथा तङ्गण देश पार कर, यह दशार्ण देश में गया। वहाँ चित्रांगद से युद्ध कर के उसे अपने काबू में लाया। निषादराज एकलव्य के राज्य में जा कर, उसके पुत्र से युद्ध कर के उसे जीता। पुनः दक्षिण की ओर आ कर, द्रविड, आन्ध्र, रौद्र, माहिषक तथा कोल्लगिरेय, इनको सुगमता से जीत कर सुराष्ट्र के आसपास गया। वहाँ से, गोकर्ण, प्रभास, द्वारका इ. भाग से, समुद्रकिनारे से पंचनद देश में गया तथा वहाँ से गांधार गया। गांधार में, शकुनिपुत्र से इसका भयानक युद्ध हुआ तथा शकुनिपुत्र की सेना का इसने संहार किया। अपने पुत्र की भी यही स्थिति होगी यह जानकर, शकुनि

की पत्नी ने, अर्जुन को युद्ध से परावृत्त किया। इस प्रकार, बडे गौरव के साथ अश्व के पीछे पीछे दिग्विजय कर के, अर्जुन हस्तिनापुर लौट आया। उस समय माघ पौर्णिमा थी, तथा यज्ञ चैत्र पौर्णिमा के समय होनेवाला था। इस के लिये अर्जुन ने सब को आमंत्रण दिया था (म. आश्व. ७१ ८५-कुं.) युधिष्ठिर को अर्जुन के आगमन की वार्ता प्रथम जासूसों द्वारा मालूम हुई। तदनंतर अर्जुन के शरीर-स्वास्थ्य के बारे में उसने कृष्ण के पास विशेष पूछताछ की (म. आश्व. ८९ कुं.)। अर्जुन ने आनेवाले राजाओं का सन्मान करने के बारेमें बताते समय, बभ्रुवाहन का विशेष सन्मान करने के लिये कहा (म. आश्व. ८८. १८-२१ कुं.)

हतबलता—सब यादवों का संहार हुआ, ऐसी वार्ता दारुक ने हस्तिनापूर में आ कर बताई। तब अर्जुन को ऐसा लगा कि, यह वार्ता गलत है। परंतु स्वयं द्वारका में आ कर देखने के बाद, उसे विश्वास हुआ। कृष्णपत्नियों का हृदयभेदी विलाप बडे कष्ट से सुन कर इसने सबको धीरज बँधाया, तथा यह वसुदेव से मिलने आया। आँखों में पानी ला कर इसने वसुदेव का चरण-स्पर्श किया। वृद्ध वसुदेव ने अर्जुन का आलिंगन कर के शोक किया, तथा शूर राम-कृष्ण की मृत्यु हो गई, केवल मैं जीवित बचा, ऐसे खेदजनक शब्द कहे। द्वारका जल्द ही समुद्र में डूबने वाली है, ऐसा बता कर, स्त्रियाँ, रत्न तथा राज्य सम्हालने के लिये वसुदेव ने अर्जुन से कहा तथा देहत्याग किया (म. मौ.६-७)। अर्जुन ने सब को द्वारका छोड कर इन्द्रप्रस्थ जाने की तैय्यारी करने के लिये कहा, तथा वसुदेव, राम तथा कृष्ण को अग्नि दी। तदनंतर, इसके नेतृत्व में अवशिष्ट यादवस्त्रियाँ तथा पौर इन्द्रप्रस्थ निकले ही, कि इधर द्वारका समुद्र ने निगल ली। इन्द्रप्रस्थ की ओर आते समय, पंचनद देश में अर्जुन ने डेरा डाला। अर्जुन अकेला ही अनेक स्त्रियों को ले कर जा रहा है यह देख, वहाँ के आभीर लोगों ने अर्जुन पर आक्रमण किया। अर्जुन उस समय वृद्ध हो चला था, भाग्य भी बदल गया था। इससे पहले के समान, धनुष सज्ज कर बाण नही छोड सकता था। अस्त्रमंत्र याद नही आ रहे थे, बाण भी समाप्त हो गये थे। अंत में, धनुष्य का लाठी के समान उपयोग कर अर्जुन सब को मारने लगा। इससे कई स्त्रियाँ भगाई गई, कई स्वयं भाग गईं, तथा बचे हुए परिवार के साथ बडी कठिनाई से अर्जुन इन्द्रप्रस्थ लौट सका (अष्टावक्र देखिये)। जो कुछ अंकुर यादव वंश के बचे थे, उनकी इसने व्यवस्था की। हार्दिक्यतनय को मृत्तिकावत का राज्य दिया, अश्वपति को खाण्डववन का राज्य दिया तथा बाकी सब को इन्द्रप्रस्थ में रख कर, वज्र को इन्द्रप्रस्थ का राजा बनाया (म. मौ. ८; पद्म. ३. २७९. ५६; ब्रह्म. २१०-२१२; विष्णु. ५. ३७. ३८; अग्नि. १५)। इस प्रकार व्यवस्था कर के, अर्जुन उद्विग्न अवस्था में व्यास आश्रम में गया, तथा व्यास का दर्शन ले कर, हस्तिनापूर आ कर, सब निवेदन युधिष्ठिर को किया (म. मौ. ९ कुं)

मृत्यु—तदपुरांत जब सब पांडव हिमालय पर जा रहे थे, तब १०६ वर्ष की उम्र में इसका पतन हुआ। भीम ने पूछा कि, बीच में ही इसका पतन क्यों हुआ? तब धर्म ने कहा कि, यह हमेशा कहता था कि, मैं अकेले ही शत्रुओं को नष्ट करूंगा, परंतु उसने ऐसा किया नही। उसी प्रकार, अन्य धनुर्धारियों का यह अवमान भी करता था, इस लिये इसका पतन हुआ (म. महा. ३.२१-२२)।

कौटुंबिक—अर्जुन को द्रौपदी से उत्पन्न पुत्र श्रुतकीर्ति भारतीय युद्ध में मृत हो गया। सुभद्रा से उत्पन्न पुत्र अभिमन्यु चक्रव्यूह में मृत हुआ, तथा चित्रांगदापुत्र बभ्रुवाहन मणिपूर का राजा बना। उलूपीपुत्र इरावत की मृत्यु भी युद्ध में हुई। आगे चल कर, अर्जुन का पौत्र परीक्षित राजा बना।

अर्जुन ने हिरण्यपुर के पौलोम, कालकेय तथा दानव का वध किया (ब्रह्माण्ड. ३.६.२८)।

यह नर का अवतार है।

अस्त्र—परशुराम द्वारा की गई नरस्तुति में अर्जुन के निम्नांकित अस्त्रों का वर्णन है।

१. काकुदिक (काम), २. शुक (क्रोध), ३. नाक (लोभ), ४. अक्षिसंतर्जन (मोह), ५. संतान (मद), ६. नर्तक (मान), ७. घोर (मत्सर), ८. आस्यमोदक (अहंकार), (म. उ. ९६)। अर्जुन की उपासना पाणिनी के समय लोक करते थे, ऐसा पाणिनीसूत्रों से ज्ञात होता है (पा. सू. ४.३.९८)।

इसके रथ का नाम नंदिघोष (गरुड. ३.१४५.१६)। इसने ६५ वर्षों तक गांडीव का उपयोग किया (म. वि. ४७.७)।

२. रैवत मनूका पुत्र (मनु देखिये)।

३. कार्तवीर्य देखिये।

अर्जुनक—एक लुब्धक। गौतमी नामक ब्राह्मणी का पुत्र सर्पदंश से मृत होने के कारण, वह शोक कर रही थी। तब

इसने उस सर्प को पकड कर लाया, तथा पूछा कि, उसका वध किस प्रकार किया जावे। तब, प्राणी कर्म परतंत्र हैं, कह कर उसने साँप को छोड़ देने को कहा (म. अनु. १)।

अर्जुनपाल—(सो. यदु.) वसुदेव का अनुज शमीक सुदामिनी के दो पुत्र में से एक (भा. ९.२४.४४)

अर्ण—यदु-तुर्वशो के लिये इंद्र ने चित्ररथ के साथ सरयु के तट पर इसका वध किया (ऋ. ४. ३०. १८)।

अर्थ—स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म तथा बुद्धि का पुत्र (भा. ४. १. ५१)।

अर्थसिद्धि—धर्म तथा साध्या का एक पुत्र (भा. ६. ६. ७)।

अर्धनारीनटेश्वर—ब्रह्मदेव ने प्रजा उत्पन्न करने के लिये तप प्रारंभ किया। तब शंकर प्रसन्न हुआ, तथा उसके शरीर से अर्धनारीनटेश्वर उत्पन्न हुआ (शिव. शत. ३) पार्वती की आज्ञानुसार दुर्गाद्वारा महिषासुर का वध होने के पश्चात्, शंकर संतुष्ट हो कर अरुणाचल पर तप कर रही पार्वती के पास आया, तथा उसे अपने वामांक पर लिया। तब इस प्रेम के कारण, पार्वती शंकर के वामांग में ही लीन हो गई। उससे शिव-पार्वती का वह शरीर आधा शुभ्र, आधा ताम्रछटायुक्त, अर्धभाग में चोली, अर्ध में हार, इस प्रकार अर्धनारीनटेश्वर दिखने लगा (स्कंद १.२.३-२१; स्वयंभुव देखिये)।

अर्धपण्य—अत्रिकुल के गोत्रकार ऋषिगण।

अर्पिणी—आर्पिणी देखिये।

अर्बुद—इन्द्र के शत्रु दो असुर। इन्द्र ने इनसे युद्ध कर के, इन पर बर्फ की वर्षा करने से, यह पराभूत हो गये। इन्द्र ने अपने वज्र से इसकी हत्या की (ऋ. ८.३२.२६; १०.६७.१२)।

अर्बुद काद्रवेय—यह नागर्षि था। इसने यज्ञ के न्यून कैसे सुधारे जायें, तथा सोमरस कैसा निकाला जावे, इसका ज्ञान बताया (ऐ. ब्रा. ६.१; सां. ब्रा. २९.१)। सर्पसत्र में यह ग्रावस्तुत था (पं. ब्रा. २५.१५.)। इन सब स्थानों में उल्लेखित अर्बुद एक ही होगा।

अर्यमभूति—भद्रशर्मन् का शिष्य (वं. ब्रा. ३)।

अर्यमन्—ऋग्वेद में उल्लखित एक देव। मित्रावरुणों के साथ इसका उल्लेख पाया जाता है। आदित्य तथा मित्र के समान यह अन्य देवों का स्नेही है। संस्कारों में इसका उल्लेख प्राप्य है। अन्य देवों के समान यह भी कश्यप तथा अदिति का पुत्र है। यह द्वादशादित्यों में से एक है। यह पितृगणों में से एक है। यह वैशाख में प्रकाशित होता है। इसकी ३०० किरणें है (भवि. ब्राह्म. १. ७८; भा. १२.११.३४.)। यह अत्रिपुत्र है, इस कथन के लिये, महाभारत छोड़ कर अन्यत्र आधार नही मिलता (म. शां. २०१.९-१०)।

२. धर्म तथा मुहूर्ता के पुत्रों में से एक।

अर्यल—यह सर्पसत्र में ग्रहपति था (पं. ब्रा. २३. १-५)।

अर्यव—अर्जव देखिये।

अर्ववीर—सावर्णि मनु का पुत्र।

२. स्वारोचिष मनु का पुत्र। इसका नान्मातर और्व।

३. पुल्ह के तीन पुत्रों में से एक (मार्क. ५२)।

अर्वावसु—रैभ्यऋषि के दो पुत्रों में से दूसरा। यहा गुणों में उत्तम था (यवक्रीत तथा परावसु देखिये)। इसे ही सूर्यमंत्रप्रकाशक, रहस्यवेदसंज्ञक, काठक ब्राह्मण का दर्शन हुआ (म. व. १३९)। इसने पुत्र प्राप्ति के लिये सूर्य की उपासना की। आकाशमार्ग से आ कर, सूर्य ने अरुण के द्वारा, इसे सप्तमीकल्प विधि बताया। इससे इसे पुत्र तथा ऐश्वर्य प्राप्त हुआ (भवि. ब्राह्म. ८०)।

अर्षि—श्रवाऋषि के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ (वीतहव्य देखिये)।

अर्ष्टिषेण—भृगुकुलोत्पन्न ऋषि (म. श.३९)। इसका युधिष्ठिर से संवाद हुआ था (म. व. १५६)। इसका वंशज आर्ष्टिषेण (म. व. १४; देवापि देखिये)।

अर्हत्—एक राजा। ऋषभ नामक विरक्त पुरुष दक्षिण कर्नाटक के कोकवेंक कुटक देशके कुटकाचल समीप, अरण्य के दावानल में जल कर मृत हुआ। तब यह वहाँ का राजा था। इसने ऋषभदेव से जैनधर्म का स्वीकार किया (भा. ५. ६. ८.)।

अलक्ष्मी—यह कालकूट के बाद समुद्र से निकली। इसका मुख काला, एवं आँखे लाल थीं। इसके केश पीले थे, एवं यह वृद्ध थी। देवताओं ने इसे वरदान दिया कि, 'जिस घर में कलह होगा वहाँ तुम रहो। कठोर, असत्य बोलनेवाले तथा संध्यासमय भोजन करनेवालों को तुम ताप दो। बिना हाथ मुँह धोये जो भोजन करे, उसे तुम कष्ट दो। तुम हड्डिया, कोयला, केश तथा भूसी में रहो, तथा अभक्ष्य-भक्षक, गुरु, देव, अतिथि इ. का पूजन न करनेवाले, यज्ञ तथा वेदपाठ न करनेवाले, आपस में कलह करनेवाले पतिपत्नि तथा द्यूत खेलनेवालों को तुम दरिद्री बना दो।' आगे चल कर, लक्ष्मी का विवाह विष्णु से होने के पहले ही, इसका विवाह उद्दालक नामक ऋषि से कर दिया (पद्म,

ब्र. ९-१९)। समुद्र में से विषके बाद तथा लक्ष्मी के पहले यह उत्पन्न हुई। अतएव इसे ज्येष्ठा कहते हैं।

महाभारत के अनुसार, प्रथम विष, तदनंतर यह कृष्ण-रूपधरा ज्येष्ठा, तथा तदनंतर चन्द्र उत्पन्न हुआ (म. अ. १६. ३४ कुं.)। इसका विवाह दुःसह से हुआ। आगे, दुःसह पाताल में जाने के बाद, यह अकेली ही पृथ्वी पर रही (लिंग २.६)। बड़ी का विवाह होने के पहले छोटी का विवाह नहीं हो सकता। इसका विवाह नही हो रहा था, इसलिये इसकी कनिष्ठ भगिनी लक्ष्मी का विवाह रुक गया। अतः इसका विवाह एक ब्राह्मण के साथ करा दिया। उस ब्राह्मण ने इसका त्याग किया। तब यह एक पीपल के वृक्ष के नीचे जा कर बैठ गई। हर शनिवार को वहाँ लक्ष्मी अपनी बहन से मिलने आती है। इस लिये, शनिवार को पीपल लक्ष्मीप्रद, तथा अन्य दिनों में स्पर्श करने से दारिद्र्य देनेवाला माना जाता है (सनत्सुजात-संहितान्तर्गत कार्तिकमा.)। उद्दालक के साथ इसका विवाह हुआ था। इसे वैदिक कार्य प्रिय नही था। मद्य, द्यूत इ. ही अधिक प्रिय था। यह देख कर उद्दालक ने इसे पीपल के वृक्ष के नीचे बैठाया, तथा स्वयं कहीं चला गया। तब यह ज्येष्ठा रुदन करने लगी। तब लक्ष्मी, विष्णु के साथ इसका समाचार पूछने आई। विष्णु ने इसे पीपल के तने के पास रहने के लिये कहा, तथा बताया कि, जो भी वहाँ तुम्हारी पूजा करेंगे, उन्हें लक्ष्मी प्राप्त होगी (पद्म. उ. ११६)।

अलंबल—जटासुर का पुत्र। यह एक नरभक्षक राक्षस था (म. द्रो. १४९.५;७; १९)। इसके पिता का भीम ने नाश किया, इसलिये, यह भारतीय युद्ध में दुर्योधन पक्ष को मिल गया। यह महारथी था तथा मायावी युद्ध में कुशल था। इसी युद्ध में, घटोत्कच ने इसका सिर काट कर, उस सिर को दुर्योधन के रथ में फेक दिया (म. द्रो. १४९.३२-३५)।

अलंबुषा—कश्यप तथा प्राधा की अप्सरा कन्याओं में से एक। इन्द्र, दधीचि के तप से काफी डरता था। अतः, इन्द्र ने इसे उसके यहां तप भंग करने के लिये भेजा। इससे दधिची से सारस्वत नामक पुत्र हुआ। इसने दिष्टवंश के बंधुपुत्र तृणबिंदु का वरण किया था, तथा उससे इसे इड़विड़ा नामक कन्या हुई (भा. ९. २. ३१; ब्रह्माण्ड. ३. ७. ३५-४०)।

अलंबुस—दुर्योधन पक्षीय एक राजा। यह युद्ध से कभी भी न भागनेवाला, तथा शरासन एवं सुवर्णकवच धारण करनेवाला था। इसका तथा सात्यकी का बड़ा भारी युद्ध हुआ था। अत्यंत संतप्त हो कर इसने सात्यकी पर आक्रमण किया। परंतु सात्यकी ने इसका वध किया (म. द्रो. ११५)।

२. एक नरभक्षक राक्षस। यह बकासुर का भाई था। (म. स्त्री. २६.३७)। इसके भाई का वध भीम ने किया था। इस बैर का स्मरण कर, भारतीय युद्ध में पांडवों का नाश करने के लिये, इसने दुर्योधन का पक्ष लिया था। यह काजल के समान काला था (म. द्रो. ८४)। इसका तथा भीम का भयंकर युद्ध हुआ। यह इन्द्र के लिये भी अजेय था। परन्तु शूर सात्यकी ने ऐन्द्रास्त्र की योजना कर, इसे युद्ध से भगा दिया (म. भी. ७७-७८; द्रो. ८४)। इसका तथा अभिमन्यु का एक बड़ा युद्ध हुआ। परंतु उसमें इसका ही पराभव हो कर यह भाग गया (म. भी. ९६-९७)। अर्जुन के साथ भी इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. १४२.३४-४१)। अंत में, घटोत्कच के साथ इसका बड़ा ही मायावी द्वंद्वयुद्ध हुआ, तथा इसकी मृत्यु हो गई (म. भी. ४३; द्रो. ८४; क. २)। किर्मीर बकासुर का भाई था (म. व. १२.२२), तथा अलंबुस भी बकासुर का भाई ही था (म. द्रो. ८३.२१-२३; म. स्त्री. २६.३७)। इसकी अन्त्येष्टि धर्मराज ने की।

अलंबुसा वा **अवलंबुसा**—एक देवस्त्री। एक बार ब्रह्मदेव की सभा मे नृत्य करते समय हवा से इसके वस्त्र उडे। तब वहाँ उपस्थित अष्टवसुओं में से विधूमा नामक वसु, इसे देख कर कामपीडित हुआ। तब इन दोनो को ब्रह्मदेव का शाप मिल कर, विधूमा को मनुष्ययोनी के राजकुल में सहस्रानीक नाम से, तथा अलंबुसा को कृतवर्मा राजा के कुल में मृगवती नाम से जन्म लेना पड़ा। आगे चल कर, इन दोनों का विवाह हो कर अलंबुसा गर्भवती हुई। तब रक्त के समान लाल कुएँ में इसके स्नान करने के कारण, एक पक्षी ने पका फल समझ कर इसे ऊपर उठाया, तथा उँचाई पर से उदयाचल पर्वत की गुफा में डाल दिया। उससे इसे मूर्च्छा आ गई। परंतु शीघ्र ही होश में आ कर, यह पतिविरह के कारण शोक करने लगी। इतने में जमदग्नि मुनि ने इसका विलाप सुन कर इसकी सांत्वना की, तथा इसें अपने आश्रम में लाया। कुछ काल बाद यह प्रसूत होकर, इसे उदयन नामक पुत्र हुआ। आगे चल कर, सहस्रानीक को यह वार्ता मालूम होते ही, उदयाचल पर जा कर पुत्र समवेत, उसने इसे राज्य में वापस लाया। तदनंतर उदयन को गद्दी पर बिठा कर, उसने अलंबुसा

के साथ चक्रतीर्थ पर स्नान किया। उससे सहस्रानीक तथा अलंबुसा ब्रह्मशाप से मुक्त हो कर पूर्वस्थिति के प्रत गये (स्कन्द. ३.१.५.)।

अलम्म पारिजानत—एक आचार्य (माल्य देखिये)।

अलर्क—(सो. क्षत्र.) काशी के दिवोदास राजा का प्रपौत्र। इसके पिता का नाम वत्स, प्रतर्दन तथा ऋतध्वज प्राप्त है। दिवोदास प्रेम से प्रतर्दन को ही 'वत्स—वत्स' कहता था। प्रतर्दन सत्यनिष्ठ होने के कारण उसे ऋतध्वज ऐसा दूसरा नाम भी था (ह. वं. १.२९, विष्णु. ४.९; भा. ९.१७)। गरुड पुराण के मत मे, दिवोदास का पुत्र प्रतर्दन तथा उसका पुत्र ऋतध्वज है (१३९)। हरीवंश में प्रतर्दन का पुत्र वत्स तथा उसका पुत्र अलर्क है। इसने काशी में ६६ हजार वर्षों तक राज्य किया (ह. वं. १.२९; भा. ९.१७; ब्रह्म. ११)। यह ब्राह्मणों का बडा सत्कर्ता था तथा अत्यंत सत्यप्रतिज्ञ था। इसने एक बार अंध ब्राह्मण को वर मांगने के लिये कहा, तब उसने वर मांगा कि, तुम अपनी आँखे मुझे दे दो। वचनपूर्ति के लिये इसने अपनी आँखे निकाल कर उसे दे दी (वा. रा. अयो. १२.४३)। लोपामुद्रा की कृपा से यह सदैव तरुण रहा, तथा इसका स्वरूप कभी भी नहीं विगडा। उसी की कृपा से इसे दीर्घायुष्य प्राप्त हुआ। निकुंम्भ के शाप से निर्मानुष बनी हुई वाराणशी, क्षेमक को मार कर इसने पुनः बसाई (वायु. ९२.६८, ब्रह्माण्ड ३.६७)। इसने वाराणशी नगरी की पुनः स्थापना की (ह. वं. १.२९; ३२)।

इसने प्रथम धनुर्बल से सब पृथ्वी जीती, तथा बाद में इसका अंन्तःकरण सूक्ष्म ब्रह्म की ओर झुका। नाक, कान, मन, जिव्हा इ. इन्द्रिय काबू में रखने के लिये, इसने नाक कानादिकों से संभाषण किया (म. आश्व. ३०.)। इसे संतति नामक एक पुत्र था (भा. ९.१४; विष्णु. ४.९; वायु. ९२.६६)।

२. शत्रुजित्पुत्र ऋतुध्वज से मदालसा को उत्पन्न चौथा पुत्र। इसे मदालसा तथा दत्तात्रेय ने निवृत्तिमार्ग का उपदेश कर ज्ञानी बनाया (मार्क. २३–४०)। इसके ज्येष्ठ बंधु सुबाहु ने काशिराज की सहायता से इस पर आक्रमण किया। अत्यंत संकट में रहने पर, माता की इच्छानुसार त्यागी बन कर इसने अपना राज्य सुबाहु को दिया (मार्क. ३४)।

अलायुध—एक मनुष्यभक्षक राक्षस (म. द्रो. ७१.२७; श. २.३४)। द्रोणयुद्धकाल में रात्रि के समय, घटोत्कच तथा कर्ण का युद्ध चालू था। कर्ण घटोत्कच के हाथ से आज बच नही सकता, ऐसा प्रतीत होने लगा। इतने में इसने दुर्योधन से कहा कि, घटोत्कचसहित पांडवों का नाश मै करुंगा। दुर्योधन ने हाँ भरते ही यह भीम से युद्ध करने लगा। इसका रथ घटोत्कच के समान ही शतअश्वों का था। इसने भीम को इतना अधिक जर्जर किया कि, कृष्ण ने घटोत्कच को पुकार कर, इसके साथ युद्ध करने के लिये कहा। तब घटोत्कच ने कर्ण से युद्ध करना छोड़ कर, इसके साथ युद्ध प्रारंभ किया। उसमें घटोत्कच के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १५१–१५३)। इसको बकज्ञाति (म. द्रो. १५१.३.३३) तथा बक का भाई भी कहा है (म. द्रो. १५३.४)।

अलाय्य—इसका परशु नष्ट हुवा (ऋ. ९.६७.२०)।

अलि—स्वारेचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अलिन—ऋग्वेद में यह शब्द एक बार बहुवचन में आया है। वहाँ तृत्सुओं की गायें भगाई गईं, इसलिये इन्हें आनंद हुआ है। यह लोग सुदास के विरोधी होने चाहिये (ऋ. ७.१८.७)।

अलिपिंडक—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

अलीकयु वाचस्पत्य—एक यज्ञशास्त्रज्ञ (सां. ब्रा. २६. ५;२८.४)।

अलोलुप- धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

अल्पमेधस्—सुमेधस् नामक देवगणों में से एक।

अवगाह—(सो. यदु.) मत्स्य के मतानुसार वसुदेव तथा वृकदेवी का पुत्र।

अवतंस—(सो.) भविष्य के मत में सोमवर्धन का पुत्र

अवत्सार काश्यप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ५३–६०; ऐ. ब्रा. २. २४)। इसे अवत्सार प्राश्रवण कहते हैं (सां. ब्रा. १३. ३)। एवावद्, यजत तथा सध्रि के साथ इसका उल्लेख हैं (ऋ. ५. ४४. १०)।

अवधूतेश्वर—शंकर का एक अवतार। एक बार, शंकर के दर्शन के लिये इन्द्र तथा बृहस्पति कैलाश पर्वत पर जा रहे थे। उनकी परीक्षा लेने के लिये, शंकर मार्ग में दिगंबर एवं भयंकर रूप लेकर बैठा था। बार बार बता कर भी, न तो वह मार्ग छोडता था, न ही कुछ बोलता था। अन्त में इन्द्र ने वज्र बाहर निकाला। उस वज्र का स्तम्भन शंकर ने किया, तथा उसके तृतीय नेत्र से क्रोधाग्नि निकाला। बृहस्पति की प्रार्थना से, वह अग्नि अन्त में लवणोदधि में

डाला गया। उससे जालंधर उपन्न हुआ। उसका वध शंकर ने किया (शिव. शत. ३०)।

अवध्य—प्रतर्दन नामक देवगणों में से एक।

अवरात—प्रतर्दन नामक देवगणों में से एक।

अवरीयस्—सावर्णि मनु का पुत्र

अवरोधन—(स्वा.) गय राजा को गयंती से उत्पन्न पुत्र।

अवस्यु आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ३१; ७५)।

अविकंपन—एक ब्राह्मण। यह ज्येष्ठ ऋषी का शिष्य था।

अविक्षित्—(सू. दिष्ट.) करंधमपुत्र (आविक्षित)। इसने सौ अश्वमेध किये तथा स्वयं बृहस्पती ने इसका याजन किया। इसको स्वयंवर से प्राप्त हेमधर्मकन्या वरा, सुदेवकन्या गौरी, बलिकन्या सुभद्रा, वीरकन्या लीलावती, वीरभद्रकन्या विभा, भीमकन्या मान्यवती तथा दंभकन्या कुमुद्वती नामक पत्नियाँ थी (मार्के. ११९. १६-१७)।

विशाल की कन्या वैशालिनी भी इसकी पत्नी थी। इसने वैशालिनी के स्वयंवर में अन्य राजाओं का पराभव किया, तथा वैशालिनी को ले कर यह चला गया। पश्चात् अन्य राजाओं ने मिल कर इसका पराजय कर के, इसको बंदीवान कर दिया। अन्त में इसका पिता करंधम ने सबका पराजय कर के, इसको मुक्त किया, तथा इसका वैशालिनी के साथ विवाह हुआ।

इसका पुत्र मरुत्त (म. आश्व. ४)। सर्पो ने कई ऋषिपुत्रों को मार डाला तब मरुत्त सर्प-संहार के लिये उद्युक्त हुआ। इस समय इसने अपने पत्नी के साथ वहाँ जा कर, पुत्र को इस कार्य से निवृत्त किया। सर्पों को बचा कर अभय दिया। सर्पों ने भी उन मृत ऋषिपुत्रों को पुनः जीवित किया (मार्के. ११९. १६-१७;१२८)।

२. (सो.) कुरुपुत्र। इसकी माता का नाम वाहिनी। इसे आठ पुत्र थे। वे इस प्रकार है—१. परीक्षित् (अश्ववत्), २. शबलाश्व, ३. अभिराज, ४. विराज, ५. शल्मल, ६. उच्चैःश्रवस, ७. भद्रकार, ८. जितारि (म. आ. ८९. ४५-४६)। इसके अश्ववान् तथा अभिष्वत नाम भी प्रसिद्ध हैं (कुरु देखिये)।

३. लीलावती (४.) देखिये।

अविज्ञात—(स्वा. प्रिय.) यज्ञबाहु के सात पुत्रों में से कनिष्ठ। इसका वर्ष इसीके नाम से प्रसिद्ध है। पुरंजन का यह मित्र था। (भा. ४.२५; ४.२९)।

अविज्ञानगति—अनिल देखिये।

अविद्ध—(सो. पूरु.) प्राचीन्वत् का नामान्तर।

अविंध्य—लंका का एक वृद्ध राक्षस। सीता रामचंद्र को वापस देने को इसने रावण से कहा (वा. रा. सुं. ३७)। यह राम का कुशल वृत्त लिवा कर, त्रिजटा के द्वारा सीता को सूचित करता था। (म. व. २८०)

अविन्द्र—(सो. पूरु.) वायु के मत में जनमेजय-पुत्र।

अविहोत्र—अत्रिकुल का एक मंत्रकर्ता।

अव्यय—रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. रौच्य मनु का पुत्र।

३. बारह भार्गव देवों में से एक (भृगु देखिये)।

अशना—बली की पत्नी (भा. ६.१८)।

अशनिप्रभ—रावणपक्ष का एक राक्षस। इसे युद्ध में द्विविद वानर ने मारा (वा. रा. यु. ४३.३४)

अशोक—अकोप प्रधान का नाम (वा. रा. यु. १२९ म. आ. ६१.१४)।

२. दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। यह पहले अश्व नामक राक्षस था (म. आ. ६१.१४)। यह कलिंग में चित्रांगदकन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४. ७)।

३. (विशोक) भीमसेन का सारथि (म. भी. ६०. ८)।

४. (मौर्य. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, भद्रसार का पुत्र। परंतु भागवत तथा विष्णु पुराण में, अशोकवर्धन नाम दिया है, तथा पहले में इसे वारिसार का, एवं दूसरे में बिंदुसार का पुत्र कहा है। पट्टन के कश्यपकुल के बिंदुसार राजा का पुत्र। यह बौद्धधर्मीय था। बौद्ध धर्म के प्रसार के लिये इसने पर्याप्त प्रयत्न किये। यह अत्यंत पराक्रमी था (भवि. प्रति. २.७)।

अशोकवर्धन—अशोक (४.) देखिये।

अशोकसुन्दरी—पार्वती की कन्या (पार्वती देखिये)। इसने हुंड दैत्य को शाप दिया था (हुंड देखिये)। इसका विवाह नहुष के साथ हुआ (पद्म. भू. १०२-११७)।

अश्मक—(सू. इ.) अश्मा का अर्थ है पत्थर। उसने इसे उत्पन्न किया, अतएव इसका यह नाम प्रचलित हुआ। यह कल्माषपाद नाम से प्रसिद्ध, मित्रसह राजा का पुत्र है (वायु. ८८.१७५-१७७; ब्रह्माण्ड. ३. ६३. १७५-१७७; विष्णु. ४.४.३८)। कल्माषपाद राजा

एक ब्राह्मण के शाप के कारण, स्त्रीसमागम नही कर सकता था। परंतु इक्ष्वाकु कुल की वृद्धि आवश्यक समझ कर, कल्माषपाद ने वशिष्ठ ऋषि से कह कर, उससे अपने मदयंती नामक पत्नी कें उदर में गर्भस्थापना करवाई (म. आ. ११३)। बारह वर्ष होने पर भी, यह गर्भ बाहर नही आया। तब मदयंती ने अश्मप्रहार से उदरविदारण कर के इसे बाहर निकाला (म. आ. १६७. ६८)। सात वर्षों के बाद, अश्मप्रहार कर वशिष्ठ ने इसे बाहर निकाला (भा. ९.९.३९)। इसने पौदन्य नामक नगर बसाया (म. आ. १६८.२५)। इसे मूलक नामक पुत्र था, जिसे आगे चल कर, नारीकवच नाम प्राप्त हुआ (भा. ९.९)।

२. एक राजा। कर्ण ने इसे जीत कर इससे कर वसूल किया था (म. क. ८.२०)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. ६१)।

३. भीष्म शरपंजर पर पड़ा था, तब उसके पास रहनेवाला एक ब्राह्मण।

४. अश्मक देश का राजा (म. स. २८.३०७*) यह कौरवों के पक्ष में था। व्यूहभेद करने के पश्चात्, अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. द्रो. ३६.२३)।

अश्मकी—तीसरे शूर की पत्नी।

२. प्राचिन्वत् की पत्नी (म. आ. ९०. ३३)। आश्माकी भी पाठ है।

अश्मन्—एक ब्राह्मण। इसका जनक के साथ सुखदुःखनिवृत्ति पर संभाषण हुआ था (म. शां. २८)।

अश्मरथ्य—विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार।

अश्व—कश्यप तथा दनु के पुत्रों में से एक।

२. सत्य नामक देवगणों में से एक।

३. कश्यप तथा खशा का पुत्र।

अश्वकेतु—दुर्योधन पक्षीय मगध देशोत्पन्न राजा। अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. द्रो. ४७.७)।

अश्वक्रंद—अमृत-रक्षक एक देव (म. आ. २८. १८)।

अश्वग्रीव—(सो. वृष्णि.) चित्रक राजा का पुत्र।

अश्वचक्र—कृष्णपुत्र सांब द्वारा मारा गया एक राजा (म. व. १२०.१३)।

अश्वजित—(सो. पूरु.) जयद्रथ का पुत्र।

अश्वतर—कद्रूपुत्र (उर्ज देखिये)। मदालसा की मृत्यु के पश्चात्, दुसरी मदालसा प्राप्त कर, इसने ऋतध्वज को दी।

२. बुलिल का पितृनाम। सायण के मतानुसार, बुलिल अश्व का लडका तथा अश्वतर का वंशज है। सत्र के कुछ शंसनों के संबंध में गौश्ल के साथ इसका संवाद हुआ (ऐ. ब्रा. ६.३०.)।

अश्वत्थामन्—सप्तचिरंजीवों में से एक। द्रोणाचार्य तथा गौतमी कृपी का यह एकमेव पुत्रा था। जन्म लेंते ही उच्चैःश्रवा अश्व के समान जोर से चिल्ला कर, इसने तीनों लोक कंपित किये। अतः आकाशवाणी ने इसका नाम अश्वत्थामा रखा (म. आ. १६७. २९; द्रो. १६७. २९–३०)। द्रोणाचार्य का पुत्र होने से, इसे द्रोणि वा द्रोणायन कहते हैं। रुद्र के अंश से उत्पत्ति होने के कारण, इसमें क्रोध तथा तेज था।

एक बार, एक धनिक के घरमें उसके पुत्र को गाय का दूध पीते इसने देखा। मुझे भी दूध चाहिए, ऐसा हठ यह करने लगा। उसे संतोष दिलाने के लिये, इसकी माता ने यवपिष्ठ में पानी घोल कर इसे पीने को दिया। उससे, 'मैंने दूध पिया,' कह कर यह आनंद से नाचने लगा (म. आ. परि. १.७५; द्रोण देखिये)।

अश्वत्थामा को शस्त्रास्त्रविद्या की शिक्षा, कौरव-पांडवों के साथ ही द्रोणाचार्य के द्वारा मिली। जाति से ब्राह्मण होते हुए भी, क्षत्रिय की विद्या सीखने के कारण इसमें क्षत्रियधर्म अधिक था। यह द्रौपदीस्वयंवर में (म. आ. १७७. ६.), तथा राजसूय में उपस्थित था (म. स. ३१.८)।

भारतीय युद्ध में सब सेनापतियों का पतन होने के पश्चात्, भीम तथा दुर्योधन में गदायुद्ध हो कर, दुर्योधन उस में घायल हुआ। तब उसने अश्वत्थामा को सेनापत्य का अभिषेक किया। उस समय इसने पांडवों का वध करने की प्रतिज्ञा की (म. श. ६४.३५)। इसने अकेले ही पांडवों की एक अक्षौहिणी सेना का संहार किया। अर्जुन तथा भीम के साथ यह काफी देर तक लड़ा। अंतमें इसका पराभव हुआ (म. वि. ५३–५४; क. ११; १२)।

अश्वत्थामा पांडवों को प्रिय था, एवं पांडव भी उसे प्रिय थे। तथापि, 'तुम पांडवों के पक्षपाती हो,' ऐसा दुर्योधन द्वारा वाक्ताडन होने पर, उसे उत्तर दे कर, इसने द्रोणपुत्र को शोभा दे ऐसा पराक्रम किया, तथा पांडवसेना का संहार किया (म. द्रो. १३५)।

द्रोण का वध धृष्टद्युम्न द्वारा होने के पश्चात्, जब कौरव सेना हाहाःकार मचाती हुई चारों ओर भागने लगी,

तब अश्वत्थामा ने कौरवेश्वर से, 'किसका वध होने से यह सेना अस्तव्यस्त हो कर दौड रही है,' ऐसे पूछा (म. द्रो. १६५)। धृष्टद्युम्न ने अधर्म से अपने पिता का वध किया, यह ज्ञात होते ही अश्वत्थामा ने, धृष्टद्युम्न को मारने की प्रतिज्ञा की (म. क. ४२)। पितृवध से संतप्त अश्वत्थामा ने सात्यकी, धृष्टद्युम्न, भीमसेन इ. रथीवीरों का पराभव कर के उन्हें भगा दिया। द्रोणाचार्य के वध से पश्चात्, नीलवीर ने कौरवसेना का विध्वंस प्रारंभ किया, तब अश्वत्थामा ने उसका सिर काट दिया (म. द्रो. ३०.२७)। पांडवसेना पर इसके द्वारा छोडे गये नारायणास्त्र ने अतिसंहार प्रारंभ करने पर, भगवान कृष्ण ने सब को निःशस्त्र होने के लिये कहा। तब वह अस्त्र शांत हुआ (म. द्रो. १७०-१७१)। इसने पांडवपक्ष के अंजनपर्वादि राक्षस, द्रुपद राजा के सुरथ, शत्रुंजय ये पुत्र तथा कुंतिभोज राजा के दस पुत्रों का तथा घटोत्कच का वध किया (म. द्रो. १३१.१२६-१३१)।

सब कौरवों की मृत्यु के पश्चात्, एक बार रात्रि के समय, अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा कृतवर्मा यह तीनों विश्रांति के लिये वृक्ष के नीचे लेटे थे। क्या किया जावे, यह अश्वत्थामा सोच रहा था। इतने में एक उल्लू ने छापा मार कर, उस वृक्ष के असंख्य कौएं मार डाले। उस घटना से, एक नयी चाल इसने सोंची, तथा पांडवों की सेना पर रात्रि के समय छापा मारने का निश्चय इसने किया। इस विचार से इसे परावृत्त करने का काफी उपदेश कृतवर्मा तथा कृपाचार्य किया, परंतु उनका न सुनते हुए, अश्वत्थामा अकेला ही छापा डालने के लिये निकल पड़ा (म. सौ. ५)। पांडवों के शिबिरद्वार के पास आते ही, इसने शिविर की रक्षा करनेवाला एक भयंकर प्राणी देखा। उससे इसने युद्ध आरंभ किया। अश्वत्थामा के किसी भी शस्त्रास्त्र का प्रयोग इस प्राणी पर नही हुआ। इसके सब शस्त्र समाप्त हो गए। तब निरुपाय हो कर, अश्वत्थामा उस शूलपाणि शंकर की शरण में गया (म. सौ. ६)। शंकर की स्तुति करने के पश्चात्, इसने अग्नि में स्वयं अपनी आहुती दी। इससे शंकर प्रसन्न हो कर, उन्होने इसे दर्शन दिये, तथा इसे दिव्य खड्ग् दे कर इसके शरीर में प्रवेश किया (म. सौ. ७)। रात्रि में ही, इसने पांडवों के हजारों सैनिक, द्रौपदी के सब पुत्र, तथा पांचाल, सूत, सोम, धृष्टद्युम्न, शिखंडी आदि अनेक वीरों का नाश किया (म. सौ. ८)।

इतना कर के, इस घटना कथन करने के लिये, यह कृतवर्मा तथा कृपाचार्य के साथ उस स्थान पर गया, जहाँ दुर्योधन घायल हो कर तड़प रहा था। भारतीय युद्ध के संपूर्ण सेना में, केवल पांच पांडव, श्रीकृष्ण तथा हम तीनों ही जीवित हैं, बाकी संपूर्ण सेना का संहार हो गया, यह सुनकर राजा दुर्योधन ने सुख से प्राण छोडे (म. सौ. ९)।

द्रौपदी के सब पुत्रों का वध अश्वत्थामा द्वारा किये जाने के कारण, उसने अत्यंत शोक किया। अश्वत्थामा के मस्तक का मणि निकाल कर युधिष्ठिर के मस्तकपर देखूंगी, तो ही मै जीवित रहूंगी, ऐसी प्रतिज्ञा उसने की। उसकी पूर्ति के लिये भीमसेन ने अश्वत्थामा पर आक्रमण किया (म. सौ. ११)। व्यासादि ऋषिसमुदाय में, अश्वत्थामा धूल से भरा हुआ उसने देखा। अश्वत्थामा के अस्त्रप्रभाव के सामने भीम का कुछ नही चलेगा, ऐसा सोच कर, कृष्ण अर्जुनसमवेत भीम का सहायता के लिये निकला। पांडवों के नाश के लिये, अश्वत्थामा ने ब्रह्मशीर नामक अस्त्र छोडा। उससे पृथ्वी जलने लगी। उस अस्त्र का प्रतिकार करने के लिये, अर्जुन ने भी वही अस्त्र छोड़ा। इन दोनों के युद्ध में पृथ्वी का कहीं नाश न हो जाये, यह सोच कर, व्यासादि मुनियों ने इस अविचार के लिये अश्वत्थामा को डाँट लगाई, तथा मस्तक का दिव्यमणि पांडवों को दे कर शरण जाने के लिये कहा। इसने मणि दिया, परंतु उत्तरा के उदर में स्थित पांडव वंश का नाश करके ही अपना अस्त्र शांत होगा, ऐसा जबाब दिया। तब कृष्ण ने उसे शाप दिया कि, पीप तथा रक्त से भरा दूषित शरीर ले कर, तीन हजार वर्षों तक मूकभाव से यह अरण्यों में घूमेगा। उत्तरा के गर्भ को कृष्ण ने जीवित किया (म. सौ. १३-१६; भा. १.७.१६)।

यह शंकर का अवतार हो कर चिरंजीव है, तथा गंगा के तट पर रहता है (शिव. शत. ३७)।

यह सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में एक होगा (मनु देखिये)। यही व्यास भी होगा (व्यास देखिये)।

२. अक्रूर के पुत्रों में से एक।

अश्वथ—ऋग्वेद के दानस्तुती में, पायु को दान देनेवाला ऐसा इसका उल्लेख है (ऋ. ६.४७.२२-२४)। अश्वथ, दिवोदास तथा अतिथिग्व, ये प्रस्तोक के ही अन्य नाम है, ऐसा सायणाचार्य कहते है।

अश्वपति—कश्यप तथा दनु के पुत्रों में से एक।

२. मद्र देश का राजा। इसे मालवी नामक पत्नी थी। इसकी अनेक पत्नीयों में से वह ज्येष्ठा थी। इसने सावित्री देवी की पराशरोक्त गायत्री मंत्र से आराधना की, तथा आराधना के पश्चात् का हवन करते समय, सावित्री अग्नि में से प्रगट हुई। उसने इसे वरदान दिया कि, दोनों (ससुराल तथा मायका) कुलों का उद्धार करनेवाली कन्या तुम्हें होगी। उस वर के अनुसार इसे सावित्री नामक एक कन्या हुई। इसी सावित्री द्वारा यम से मांगे गये वर के अनुसार इसे सौ पुत्र हुए (ब्रह्मवैवर्त. २.२३; म. आर. २७७; सावित्री देखिये)।

अश्वपति कैकय—एक आत्मज्ञानी पुरुष। प्राचीन-शालादि कोई विद्वान पुरुष आत्मा के संबंध में जब विचार कर रहे थे, तब उन्हें कुछ निश्चय नहीं बन रहा था। इसे आत्मज्ञ मान कर वे इसके पास आये। उसने इनका यथायोग्य सत्कार किया तथा दूसरे दिन यह उन्हें दक्षिणा देने लगा। वह उन्होंनें अमान्य कर दी। तब इसे ऐसा लगा कि, इस में कुछ दोष होगा, तभी उन्होंनें दक्षिणा अमान्य कर दी। तब इसने अपने राज्य की स्थिति का 'न मे स्तेनो जनपदे, न कदर्यो—न मद्यपो, नानाहिताग्निर्ना—विद्वान्, न स्वैरी, स्वैरिणी कुतः', इस प्रकार कथन किया। आये हुए लोगों नें कहा कि, हम दक्षिण के लिये नही, वैश्वानर आत्मा का ज्ञान पाने के लिये आये है। तब इसने उन्हें ज्ञान दिया (श. ब्रा. १०.६.१.२; छा. उ. ५.११; ४; मै. उ. १.४)।

२. केकय देश का राजा। इसकी पत्नी बडी साहसी थी। वह किसी भी चीज की चिंता नही करती थी। एक ऋषि के द्वारा दिये गये वर के अनुसार इसे पक्षियो की भाषा समझती थी। एक बार, जृंभ पक्षियो के जोडे की बातें सुन कर इसे हँसी आ गई। इसकी पत्नी ने हँसने का कारण पूछा। इसने कहा कि, कारण इतना भयंकर है कि उसे बताते ही मेरी मृत्यु हो जायेगी। कारण इतना भयंकर होते हुए भी, उसकी पत्नी ने उसे बताने की जिद की। तब इसने वरदान देने वाले ऋषि को यह बात बताई। ऋषि ने उससे कहा कि, तुम अपनी पत्नी को भगा दो। इसने तत्काल वैसा ही किया।

इसे युधाजित् तथा कैकेयी नामक दो पुत्र थे। इसमें से, युधाजित् भरत का मातुल था। अश्वपति नाम, उपनाम के समान भी लगाया जाता था (वा. रा. अयो. १.२)।

अश्वपेज—वेद की शाखा प्रारंभ करनेवाला (पाणिनी देखिये)।

अश्वपेय—वेद की शाखा प्रारंभ करनेवाला (पाणिनी देखिये)।

अश्वमित्र गोभिल—वरुणमित्र गोभिल का शिष्य (वं. ब्रा. ३)।

अश्वमेध—त्र्यरुणकृत दानस्तुती में का एक राजा (ऋ. ५.२७.४–६)।

अश्वमेध भारत—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२७)।

अश्वमेधज—(सो. पुरु.) सहस्रानीक राजा का पुत्र। इसका पुत्र असीमकृष्ण (भा. ९.२२.३९)।

अश्वमेधदत्त—(सो. कुरु.) शतानीक का पुत्र तथा जनमेजय का पौत्र। इसकी माता वैदेही (म. आ. ९०. ९५)। यह अधिसोमकृष्ण हो सकता है।

अश्वयु—अंगिरकुल का एक गोत्रकार।

अश्वरथ—विश्वामित्र गोत्र का एक प्रवर।

अश्वल—वैदेह जनक का होता। वैदेह जनक ने बड़ा यज्ञ किया, तथा काफी दक्षिणा भी रखी। उपस्थित ऋषियों में, याज्ञवल्क्य सर्वश्रेष्ठ इसलिये जब आगे बढे, तब इसने उसे कुछ प्रश्न पूछ कर रोकने का प्रयत्न किया। परंतु याज्ञ-वल्क्य ने इसे चुप कर दिया (बृ. उ. ३.१.२; १०)।

अश्ववत्—(सो. कुरु.) अविक्षित् (२.) देखिये।

अश्वशंकु—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अश्वसूक्ति काण्वायन—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१४–१५) तथा सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १८.४.१०)।

अश्वसेन—तक्षक का पुत्र। अर्जुन ने जब खांडववनं जलाया, तब तक्षक वहाँ नही था। इसकी माता ने इसे मुँह में पकड़ कर, कूद कर बाहर निकलने का प्रयत्न किया। तब अर्जुन ने इसकी माँ का सिर काट डाला। परंतु वेगवान् वायु के कारण यह दूर जा कर गिरा तथा बच गया (म. आ. २१८.९; २२०.४०; ६०.३५)।

अर्जुन से बदला लेने के लिये, इसने कर्ण के बाण पर आरोहण किया। यह जान कर, कृष्ण ने रथ ऐसा दबाया कि, अश्व घुटनों पर बैठ गये। अतः बाण ग्रीवा पर न लग कर मुकुट पर लगा, तथा मुकुट के टुकडे हो गये। पश्चात् अर्जुन ने इसे मार डाला (म. क. ६६)।

अश्वायु—(सो.) मत्स्य के मतानुसार यह पुरुरवा पुत्र है।

अश्वि—धर्म तथा मुहूर्ता का पुत्र।

अश्विन्—वैवस्वत मन्वन्तर का एक देव (अश्विनीकुमार देखिये)।

अश्विनि— सोम की सत्ताइस पत्नीयों में से एक। २. अक्रूर की पत्नीयों में से एक।

अश्विनीकुमार— एक ही नाम से पहचानी जाने वाली, द्युस्थानीय दो देवता। ऋग्वेद में इनके वर्णन पर लगभग पचास सूक्त हैं। ये जुडवाँ भाई हैं तथा कभी एक दूसरे से विलग नही होते (ऋ. ३.३९.३)। ये सरण्यू से प्रभातसमय में उत्पन्न हुए (ऋ. १०.१७.२)। परंतु इन दोनोंका जन्म अलग हुआ ऐसा भी उल्लेख है। एक निशा का, तथा दूसरा उषा का पुत्र था (नि. १२.२)। इनके उदय का समय, उषा तथा सूर्योदय के बीचमें है (ऋ. ८.५.२)। द्विवचन में आनेवाला नासत्य शब्द एकवचन में आया है (ऋ. ४.३.६)। ये तरुण हैं तथा देवों से छोटे हैं (ऋ. ७.६७.१०; तै. सं. ७.२.७)। इनका रथ सुनहला है, तथा उसे पहिये, बैठक तथा धुरियाँ प्रत्येक तीन तीन हैं (ऋ. १.११८.१; २.१८०.१)। सूर्या के विवाह समारोह में जब ये आये थे, तब इनके रथ का एक चक्र टूट गया (ऋ. १०.८५.१५)। इनके रथ को श्येन (ऋ. १.११८.१), गरुड (४), हंस (ऋ. ४.४५.४), तथा कुछ स्थानों पर केवल पक्षी जोडे जाने का निर्देश है (ऋ. ६.६३.६)। सोम तथा सूर्या के विवाह प्रसंग में, इनके रथ को रासभ जोडे थे (ऐ. ब्रा. ४.४-९) इनका रथ एक दिन में पृथ्वी तथा स्वर्ग आक्रमता है (ऋ. ३.५८.८)। इनका वासस्थान द्यु तथा पृथ्वी (ऋ. १.४४.५), द्यौ तथा अंतरिक्ष (ऋ. ८.८.४), वृक्ष तथा गिरिगव्हर, दिया है (ऋ. ७.७०.३)। इनका स्थान अज्ञात है (ऋ. ६.६३.१; ८.६२.४)। सूर्यकन्या सूर्या के ये पति हैं (ऋ. १.११७.१६; ४.४३.६)। ये लोगों को संकटमुक्त करते हैं (अत्रि, घोषा, भुज्यु तथा वंदन देखिये)। परंतु स्त्रियों को पुत्र देना (ऋ. १.११२.३; १०.१८४.२), वृद्धों को तरुण बनाना (ऋ. १.११९.७) आदि कथाएँ भी प्रचलित है। अथर्ववेद में, प्रेमी युगुलों को मिलाना इ. विषय में भी, इनकी प्रख्याति है (अ. वे. २.३०.२)। इसके अतिरिक्त, ये अंध, पंगु तथा रोगग्रस्तों को ठीक करनेवाले (ऋ. १०.३९.३), देवताओं के धन्वन्तरि तथा मृत्यु को टालनेवाले हैं (ऋ.८.१८.८; तै. ब्रा. ३.१.२.११)। इन्होंने विश्पला को लोहे का पैर लगाया इ. आख्यायिकाये हैं (दधीच, भृज्यु, कवि तथा विमद देखिये)। अश्वीदेवों की कल्पना गुरुशुक्र के सानिध्य से उत्पन्न हुई, यह दीक्षितजी का कथन सब को मान्य होने लायक है (भारतीय ज्यो. पा. ६५)।

हमारे वैदिक पूर्वज उत्तर ध्रुव प्रदेश में जब रहते थे, तब उनके द्वारा अवलोकन किये गये दो दृश्य–जिन्हें अंग्रेजी में Astronomical and meterological light या Aurora Borealis कहते है,–उन्हीका रूपकात्मक दर्शन अश्विनीकुमारों के प्रतीको में किया गया है, ऐसा श्री. वडेर का कहना है।

संज्ञा जब अश्वरूप में संचार कर रही थी, तब उसे विवस्वान से अश्विनीकुमार हुए। अपनी पत्नी अश्विनी है, यह देख विवस्वान ने अश्वरूप में उससे सहवास किया। परंतु संज्ञा ने उसे परपुरुष समझ कर, उस वीर्य को नासापुटों द्वारा त्याग दिया।

अश्विनीकुमारों को नासत्य ऐसा भी नामांतर हैं (म. आ. ६०.३४; भा. ६.६.४०)। इनमें से बडे का नाम नासत्य, तथा छोटे का नाम दस्र हैं (म. अनु. १५०)। ये देवों के वैद्य, तथा वैवस्वत मन्वन्तर के देव हैं (भा. ८.१३.४; मनु देखिये)। देवों में यह शूद्र हैं (म. शां. २०७.२६ कुं)।

उपमन्यु ने अपना गुरु आपोद धौम्य की आज्ञा से, दृष्टिप्रात्यर्थ इनकी स्तुति की। इस स्तुति से तथा गुरु के प्रति उसकी निष्ठा से संतुष्ट हो कर, इन्होंने उसे दृष्टि दी (म. आ. ३.७५)। एक बार, जब ये च्यवनाश्रम में आये थे, तब इन्हें यज्ञ में हविर्भाग प्राप्त कर देने का मान्य कर, च्यवन ने इससे तारुण्य प्राप्त करा लिया (म. व. १२३. भा. ९. ३. २३-२६)। माद्री ने पांडु की आज्ञा से, इनसे आवाहन कर दो पुत्र प्राप्त कर लिये। वे ही नकुल तथा सहदेव हैं (म. आ. ९०.७२; ११५.१६-१७)। ये शिशुमारचक्र के स्तन पर हैं (भा. ५.२३.७; अश्विनीसुत देखिये)।

२. भास्करसंहिता के चिकित्सासारतंत्र नामक प्रकरण का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

अश्विनीसुत—सुतपस् भारद्वाज का पुत्र। सुतपस् की पत्नी जब तीर्थयात्रा कर रही थी, तब बलात्कार द्वारा सूर्य से उसे अश्विनीसुत नामक सुन्दर पुत्र हुआ। घर आ कर, यह बात उसने पति को बताई। तब उसने इन दोनों का त्याग किया। वह स्त्री गोदावरी नदी बनी। सूर्य ने इसे मंत्रतंत्र तथा ज्योतिष पढाया, अतः यह ज्योतिषी बना। परंतु आगे सुतपस् ने इन दोनों को शाप दिया की, तुम रोगी तथा यज्ञभागरहित बनोगे। आगे चलकर,

सूर्य की स्तुति करने पर यह रोगरहित तथा यज्ञ में भाग प्राप्त करनेवाला हुआ (ब्रह्मवै. १.१०-११)। अश्विनीकुमारों से यह कथा मिलती जुलती है।

अश्व्य—वश देखिये।

अषाढ उत्तर पाराशर्य—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

अषाढ कैशिन—कुंति देश ने पांचालदेश का पराभव किया, उस संबंध में इसका उल्लेख है (क. सं. २६.९)।

अषाढ सावयस—एक ऋषि। यज्ञ करते समय, यजमान ने यज्ञ के पूर्वदिन अनशन व्रत करना चाहिये, ऐसा इसका मत है। क्यों कि, आनेवाले देवताओं को हवि देने के पहले खाना अयोग्य है (श. ब्रा. १.१.१.७)।

अषाढि सौश्रोमतेय—यज्ञकुंड में ईंटें लगाने के लिये अयोग्य पद्धति का स्वीकार किये जाने के कारण, इसकी मृत्यु हो गई (श. ब्रा. ६.२.१.३७)।

अष्टक वैश्वामित्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०४)। विश्वामित्र का पुत्र (ऐ. ब्रा. ७.१७. सां. श्रौ. सू. १५. २६)। विश्वामित्र ऋषि को माधवी से उत्पन्न पुत्र (म. उ. ११७.१७-१९)। यह बड़ा विद्वान् था। एक बार, अपने प्रतर्दन, वसुमनस् तथा शिबि इन तीन बंधुओं के साथ, जब यह रथ में बैठ कर जा रहा था, तब मार्ग में नारद इसे मिले। इसने उन्हें रथ में बिठाया तथा पूछा कि, हम चारों में से सबसे पहले किसका पतन होगा, यह बताओ। तब नारद ने कहा कि, यद्यपि तुमने बहुत गोप्रदान किये हैं, तथापि उसका तुम्हें अभिमान होने के कारण, तुम्हारा ही पतन पहले होगा (म. व. १९८)।

इसका पितामह तथा माधवी का पिता ययाति आत्मश्लाघा के कारण, स्वर्ग से पतित हुआ। तब इसने उससे इसलोक तथा परलोक के संबंध में, अनेक प्रश्न पूछ कर ज्ञान प्राप्त किया, तथा अपना पुण्य दे कर उसे पुनः स्वर्ग में भेजा (म. आ. ८३-८५; मत्स्य. ३८-४१)।

यह विश्वामित्र गोत्र के प्रवर में है। इसके पुत्र का नाम लौहि।

अष्टम—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

अष्टादंष्ट्र वैरूप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१११) तथा सामद्रष्टा (पं. ब्रा. ८.९.२१)।

अष्टारथ—दिवोदास (२.) देखिये।

अष्टावक्र—कहोल का पुत्र। उद्दालक के सुजाता नामक कन्या का पुत्र, तथा श्वेतकेतु का मामा (म. व. १३८)। कहोल के द्वारा निरंतर किये जानेवाले अध्ययन का इसने गर्भवास में ही मज़ाक उड़ाया। तब, शिष्य के समक्ष तुमने मेरा अपमान किया, इसलिये आठ स्थानों पर तुम टेढे रहोगे, ऐसा शाप कहोल ने इसे दिया। कुछ दिनों के पश्चात्, दशम मास लगने के कारण सुजाता का प्रसवकाल निकट आ गया। आवश्यक धन न होने के कारण, कहोल जनक के पास धनप्राप्ति के लिये गया। परंतु वहाँ, वरुणपुत्र बंदी ने कहोल को वादविवाद में जीत कर, वहाँ के नियमानुसार पानी में डुबो दिया। उद्दालक की इच्छानुसार, यह बात गुप्त रखने का सब ने निश्चय किया। जन्म के बाद, अष्टावक्र उद्दालक को ही अपना पिता तथा श्वेतकेतु को भाई समझता था।

बारह वर्ष का होने के पश्चात्, एक दिन सहजभाव से यह उद्दालक की गोदमें बैठा था। तब, यह तुम्हारे बाप की गोदी नही है,-कह कर श्वेतकेतु ने इसका अपमान किया। तब पूछने पर सुजाता ने इसे पूरी जानकारी दी। तदनंतर, श्वेतकेतु के साथ यह जनक के यज्ञ की ओर गया। वहाँ प्रवेश के लिये बाधा आई। द्वारपाल से सयुक्तिक भाषण कर के इसने सभा में प्रवेश प्राप्त किया, तथा वहाँ बंदी को वाद का आव्हान कर के उसे पराजित किया। बंदी ने जिस जिस व्यक्ति को वाद में जीत कर पानी में डुबोया था, वे सब वरुण के घर के द्वादश वार्षिक सत्र में गये थे। वे सब वापस आ रहे है, ऐसा कह कर इसने सब को वापस लाया। कहोल तथा अष्टावक्र का मिलन हुआ। तथापि अन्त में, बंदी को जनक ने सागर में डुबो ही दिया (म. व. १३४)। उपरोक्त अष्टावक्र की कथा, लोमश ने युधिष्ठिर को श्वेतकेतु के आश्रम में बताई है। कहोल ने समंगा नदी में स्नान करने को बता कर, इसका टेढा शरीर सीधा किया (म. व. १३२)।

आगे चल कर, वदान्य ऋषि की सुप्रभा नामक कन्या से इसका विवाह तय हुआ। परंतु उसने इसे कहा कि, उत्तर दिशा में हिमालय के ऊपरी भाग में, एक वृद्ध स्त्री तपश्चर्या कर रही है। वहाँ तक जा कर आने के बाद ही यह विवाह होगा। अष्टावक्र ने यह शर्त मंजूर की। प्रवास करते करते, उस दिव्य प्रदेश से कुबेर का सत्कार स्वीकार कर

यह वृद्ध स्त्री के स्थल पर आया। वहाँ इसे ऐश्वर्य की परमावधि तथा अनेक सुन्दर स्त्रियाँ दिखीं। उन्हें जाने के लिये कह कर, उस वृद्ध स्त्री के पास रहने का इसने निश्चय किया। रात्रि के समय शय्या पर जब यह विश्राम कर रहा था, तब वह वृद्ध स्त्री ठंड से कँपकँपाती हुई, इसके पास आई तथा इसको आलिंगन कर प्रेमयाचना करने लगी। परंतु परस्त्री मान कर अष्टावक्र ने उसकी प्रार्थना अमान्य कर दी। उसकी हर चीज की ओर देख कर, अष्टावक्र के मन में घृणा उत्पन्न होती थी। दूसरा दिन उसी ऐश्वर्य में बिताने के बाद, रात्रि के समय पुनः वही प्रकार हुआ। उस समय, वृद्धा ने यौवनरूप धारण किया था। उसने यह भी कहा कि, वह कुमारिका है। परंतु, मेरा विवाह तय हो गया है, ऐसा बता कर इसने उसे निवृत्त किया। तब इसके निग्रही स्वभाव के प्रति संतोष प्रगट कर, वृद्धा ने कहा कि, मैं उत्तरदिग्देवता हूँ। तुम्हारे भावी श्वशुर की इच्छानुसार मैंने तुम्हारी परीक्षा ली (म. अनु. ५०–५२)। तदनंतर सुप्रभा के साथ इसका विवाह हुआ। यह बड़ा तत्वज्ञानी था। इसके नाम पर 'अष्टावक्रगीता' नामक एक ग्रंथ प्रसिद्ध है। वह गीता इसने जनक को बताई।

एक बार लोकेश्वर नामक ब्रह्मदेव के समय, व्याध के बाण से हरिहर नामक ब्राह्मण का पैर टूट गया। चक्रतीर्थ में स्नान करने पर, वह पैर उसे पुनः प्राप्त हुआ। चक्रतीर्थ की महत्ता की यह कथा, इसने बताई है (स्कन्द ३.१. २४)।

'अष्टावक्रसंहिता' नामक ग्रंथ इसके नाम पर है (C. C.)। इसने अप्सराओं को विष्णु को पतिरूप में प्राप्त करने का वरदान दिया, परंतु पानी से बाहर आने पर अप्सरायें इसका वक्रत्व देख कर हँस पड़ी। तब इसने उन्हें शाप दिया कि, आभीर तुम्हारा हरण करेंगे (ब्रह्म. २१२. ८६)। उसी के अनुसार, कृष्णनिर्याण के पश्चात् अर्जुन जब कृष्णपत्नियों को द्वारका से ले जा रहा था, तब मार्ग में आभीरों ने उनका हरण किया।

असकृत—भृगु तथा पुलोमा का पुत्र।

असंग—(सो. वृष्णि.) मत्स्य तथा विष्णु के मतानुसार युयुधानपुत्र।

असमंजस्—(सू. इ.) सगर को केशिनी नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.८.१५; ह. वं. १.१५; विष्णु. ४.४.३; ब्रह्म. ८.७३; वायु. ८८.१५९; नारद ८.६८; वा. रा. बा. ३८)। यह शैब्या का पुत्र था (म. व. १०६. १०)। यह भानुमती का पुत्र था (मत्स्य. १३.९४; पद्म. सृ. ८)।

पूर्वजन्म में यह योगी था, तथापि कुसंगति से योगभ्रष्ट हो गया। पूर्वजन्म का स्मरण होने के कारण, इसे कुसंगति के प्रति घृणा उत्पन्न हो गई। पुनः कुसंगति प्राप्त न हो, इस भय से इसने अपना व्यवहार असमंजसता का रखा। इस के शरीर में पिशाच का संचार होने से यह ऐसा व्यवहार करता था (ब्रह्माण्ड. ३.५१)। ऐसे वर्तन के कारण, लोक त्रस्त हो कर दूर ही रहें, ऐसा इसका उद्देश्य रहता था। इस लिये यह लोगों के बच्चों को सरयू नदी में डुबो देता था। तब लोगों ने सगर के पास इसकी शिकायत की। इसलिये राजा ने इसे घर से बाहर निकाला। तब यह वन में चला गया, किन्तु जाते समय डुबोये हुए सब बच्चों को इसनें योगसामर्थ्य से जीवित कर, लोगों को वापस कर दिया। तब नागरिकों को आश्चर्य लगा, तथा राजा को अत्यंत पश्चात्ताप हुआ (भा. ९.८.१४–१९; म. व. १०७; ब्रह्म.७८.४०–४३)। दशरथ, कैकेयी तथा सिद्धार्थ नामक प्रधान के संवाद में इसका उल्लेख है (वा. रा. बा. ३६)।

इसका पुत्र अंशुमत्। असमंजस् को पंचजन नामांतर था (ह. वं. १.१५; ब्रह्म. ८.७३)।

असमाति राथप्रौष्ठ—रथप्रोष्ठ कुल का ऐक्ष्वाक राजा अपने गौपायन नामक दो उपाध्यायों से इसका झगडा हुआ (जै. ब्रा. ३.१६७; पं. ब्रा. १३.१२.५; ऋ. १०.५७.१; ६०. ७; सायण-शाट्या. ब्रा.)। तदनंतर, किरात तथा आकुलि इन दो असुरों ने गौपायन बंधुओं को छोड देने के लिये राजा को समझाया, तथा उनमें से गौपायन सुबंधु का वध करवाया। परंतु उस के अन्य बंधुओं ने एक सूक्त के जाप से उसे पुनः जीवित कर लिया (ऋ. १०.५७–६०; बृहद्दे. ७.९१.९६)।

असमौजस्—(सो. यदु.) वायु के मतानुसार कंबलबर्हिष का पुत्र।

असिक्नी—प्राचेतस दक्ष की पत्नी। पंचजन प्रजापति की कन्या होने के कारण, इसे पांचजनी कहा है (भा. ६.४)।

असिज—वायु के मतानुसार उतथ्य का नामान्तर।

असित—मांधाता राजा के द्वारा पराभूत एक राजा (म. शां. २९.८१)।

२. (सू. इ.) भरतराजा का पुत्र। इसके शत्रु हैहय तालजंघ तथा शशबिंदु ने इसका पराभव कर के, इसे राज्य

से बाहर भगा दिया। तब अपनी दोनों पत्नीयों के साथ, यह हिमालय पर्वत पर जा कर रहा। वहीं इसकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के समय, इसकी दोनों पत्नीयाँ गर्भवती थीं। उन में से, एक ने सौत के गर्भ का नाश हो इस उद्देश से, अपनी सौत कालिंदी को सविष भोजन दिया। तब वह शोक करने लगी। परंतु च्यवन भार्गव मुनि के आशिर्वाद से, उसे सगर नामक सविष पुत्र हुआ (वा. रा. बा. ७०; अयो. ११०)।

असित काश्यप वा देवल—सूक्तद्रष्टा। इसे देवल काश्यप कहते हैं (ऋ. ९. ५–२४)। यह कश्यप का पुत्र था। इसका गय (अ. सं. १.१४.४) तथा जमदग्नि के साथ उल्लेख है (अ. सं. ६.१३७.१)। इसे असित देवल (पं. ब्रा. १४ ११.१८–१९; क.सं. २२.२), तथा असितो देवल कहते है (म. स. ४.८; शां. २२२;२६७)। इसकी स्त्री हिमालय की कन्या एकपर्णा।

यह युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा.१०.७४.७)। जब युधिष्ठिर ने मयसभा में प्रवेश किया, तब अन्य ऋषिगणों के साथ यह उनके साथ था (म. स. ४.८)। नारद जब युधिष्ठिर को ब्रह्मदेव की सभा का वर्णन बता रहे थे, तब यह वहाँ व्रतादिकों का अनुष्ठान कर उपस्थित था (म. स. ११.२२५)। श्रीकृष्ण तथा बलराम से मिलने के लिये, अनेक ऋषियों के साथ यह स्यमंतक क्षेत्र में गया था (भा. १०.८४.३) यह तथा श्रुतदेव ब्राह्मण कृष्ण के साथ, बहुलाश्व से मिलने के लिये, विदेह देश को गये थे (भा. १०.८६.१८)। नारदादिकों के साथ यह पिंडारक क्षेत्र में भी गया था (भा. ११.१.११)।

मुमुक्षु व्यक्ति ब्रह्मपद की प्राप्ति कैसी करे, इस विषय में जैगीषव्य (म. शां. २२२), तथा नारद के साथ (म. शां. २६७) इसका संवाद हुआ था। आदित्यतीर्थपर यह गृहस्थाश्रम में रहता था, तथा अचल भक्तिभाव से इसने योगसंपादन किया था। एकबार जैगीषव्य ऋषि भिक्षुकवेष में इसके आश्रम में आये। तब इसने उत्तम प्रकार से उसका गौरव कर के, काफी वर्षो तक उसका पूजन किया। बहुत काल व्यतीत हो जाने पर भी जैगीषव्य एक शब्द भी नही बोलता, यह देख कर मन ही मन यह उसकी अवहेलना करने लगा। पश्चात् यह गगरी ले कर समुद्र गया। जैगीषव्य वहाँ पहले से ही आ कर बैठा हुआ था। उसे देख कर, इसे बडा ही आश्चर्य लगा। तदनंतर स्नान कर के यह आश्रम में लौट आया। आते ही जैगीषव्य पुनः आश्रम में बैठा हुआ इसे दिखा। तब जैगीषव्य के तप तथा योगाभ्यास का प्रभाव देख कर इसे बड़ा आश्चर्य हुआ। उस विषय में जिज्ञासा पूर्ण करने के लिये, यह आश्रम से अंतरिक्ष में उड़ा। वहाँ उसने देखा कि, कोई सिद्धपुरुष जैगीषव्य की पूजा कर रहे है। तब यह काफी घबराया गया। तदनंतर जैगीषव्य भिन्न भिन्न लोको में आगे आगे जाने लगा। पुरे समय, इसने उनका पीछा किया। अन्त मे, पतिव्रताओ के लोक में आ कर जैगीषव्य गुप्त हो गया। वहाँ एक सिद्ध के यहाँ पूछने पर पता चला कि, वह ब्रह्मपद पर गया है। इसलिये ब्रह्मलोक जाने के लिये इसने उँची उडान ली। किन्तु सामर्थ्य कम होने के कारण, यह नीचे गिर गया। अन्त में उस सिद्ध ने इसे वापस जाने के लिये कहा। तब जिस क्रम से यह ऊपर गया था, उसी क्रम से सब लोक उतर कर नीचे आया। जैगीषव्य को पहले ही आ कर आश्रम में बैठा हुआ इसने देखा। तब उसके योगसामर्थ्य से यह आश्चर्यचकित हो गया। नम्र हो कर, जैगीषव्य के पास मोक्षधर्म जानने की इच्छा इसने दर्शाई। उसके बाद, जैगीषव्य ने इसे योग का उपदेश दे कर संन्यासदीक्षा दी। उससे इसको परमसिद्धि तथा श्रेष्ठयोग प्राप्त हुआ (म. श. ४९; देवल देखिये)। असित देवल तथा यह ये दोनों एक ही है।

यह कश्यप तथा शांडिल्य का एक प्रवर भी है। इसने सत्यवती को विवाह के लिये मांगा था (म. आ. ९४. ७३)। इसका पुत्र देवल (ब्रह्माण्ड. ३.८.२९–३३)। यह कश्यपकुल का गोत्रकार (मत्स्य. १९९.१९; लिंग. १.६३.५१.१), तथा मंत्रकार था (वायु. ५९.१०३; मत्स्य. १४५.१०६–१०७; ब्रह्माण्ड. २.३२.११२–११३)।

२. जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ५३)।

असित देवल—असित काश्यप देखिये।

असित धान्वन—वेदकालीन राजा। असुरविद्या वेद इसका है। दस दिनों तक चलनेवाले परिप्लवाख्यान में इसका उल्लेख है (सां. श्रौ. १६.२.२०)। इसको असित धान्व भी कहा है (श. ब्रा. १३.४.३.११; आ. श्रौ. १०.७; पं. ब्रा. १४.११.१८.३९)।

असित वार्षगण—हरित काश्यप का शिष्य। इसका शिष्य जिव्हावत् बाध्योग (बृ. उ. ६.५.३ काण्व; ६.४.३३ माध्यं.)।

असितमृग—काश्यप एक पुरोहित। इसको जनमेजय ने एक यज्ञ में निमंत्रित नही किया। तथापि इसने

राजाद्वारा नियुक्त भूतवीर नामक ब्राह्मण से यज्ञ का नेतृत्व छीन कर, स्वयं ले लिया (ऐ. ब्रा. ७.२७)। इसके अनेक पुत्र थे, उसमें से एक का नाम कुसुरुबिन्दु औद्दालकि था (जै. ब्रा. १.७५; ष. ब्रा. १.४)।

असिता—एक अप्सरा। कश्यप तथा मुनि की कन्या।

असितांग—अष्टभैरवों में से एक।

असिपर्णिनी—कश्यप तथा मुनि की एक कन्या।

असिलोमन्—एक असुर। कश्यप तथा दनु का पुत्र।

असीमकृष्ण—(सो. कुरु.) अश्वमेधक राजा का पुत्र। इसका पुत्र निमिचक्र (अधिसामकृष्ण देखिये)।

असुरा—एक अप्सरा। कश्यप तथा प्राधा की कन्या।

असुरायण—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

२. व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से एक। वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, यह कौथुम पाराशर्य का शिष्य है (व्यास देखिये)।

असूर्तरजस्—मूर्तरय राजा का नामांतर।

असोम—मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

अस्ति—जरासंध की दो कन्याओं में से ज्येष्ठ। इसकी कनिष्ठ भगिनी प्राप्ति। यह दोनों कंस की पत्नीयाँ थीं। कृष्ण के द्वारा कंस का वध होने पर, यह दोनों पितृगृह में आ कर रहने लगीं (भा. १०.५०; म. स. १३.३०)।

अस्तिक—हरिमेध देखिये।

अस्वहार्य—अंगिरस गोत्रीय मंत्रकार।

अहंयाति—(सो. पूरु.) शर्याति तथा वरांगी का पुत्र। इसकी पत्नी कृतवीर्यपुत्री भानुमती। इसका पुत्र सार्वभौम (म. आ. ९०.१४-१५)। भागवत तथा विष्णु के मतानुसार, यह संयातिपुत्र है। मत्स्य में अहंवर्चस् पाठभेद है। अहंपाति पाठ भी मिलता है।

अहंवर्चस्—अहंयाति देखिये।

अहनू—अष्टवसुओं में से एक।

अहर—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

अहल्या—इसका निर्देश शतपथ ब्राह्मण मे अहल्या मैत्रेयी नाम से मिलता है (श. ब्रा. ३.३.४.१८; जै. ब्रा. २.७९; ष. ब्रा. १.१)।

जन्म—इसका पिता मुद्गल (भा. ९.२१) वध्र्यश्व को मेनका से यह कन्या हुई (ह. वं. १.३२)। यह ब्रह्ममानसपुत्री है। ब्रह्मदेव ने इसे अत्यंत सुन्दर निर्माण किया। हल का अर्थ है विरुपता, तथा हल्य का अर्थ है विरुपता के कारण प्राप्त निंद्यत्व। इसे हल्य न होने के कारण, ब्रह्मदेव ने इसका नाम अहल्या रखा (वा. रा. उ. ३०.२५)। आगे चल कर, ब्रह्मदेव ने इसे शरद्वत गौतम के पास अमानत के रूप में रखा। उपवर होने पर उसने इसे ब्रह्मदेव के पास वापस दे दिया।

विवाह—शरद्वत गौतम मुनि का जितेंद्रियत्व तथा तपःसिद्धि देख कर, ब्रह्मदेव ने यह कन्या उसे भार्या कह कर दी (वा. रा. उ. ३०.२९; विष्णु. ४.१९; मत्स्य. ५०)। परंतु इन्द्र, वरुण, अग्नि इ. देव, दानव, तथा अन्य राक्षसों के मन में भी इसके प्रति अभिलाषा थी। तब प्रत्येक के सामर्थ्य की परीक्षा देखी जावे, इस हेतु से ब्रह्मदेव ने निश्चय किया कि, जो व्यक्ति सर्व प्रथम पृथ्वी प्रदक्षिणा करेगा, उसे ही यह कन्या दी जावेगी। अहल्या के अभिलाषी प्रदक्षिणा करने लगे। परंतु अर्धप्रसूत धेनु पृथ्वी ही होने के कारण, गौतम ने उसकी प्रदक्षिणा की, तथा एक लिंग की प्रदक्षिणा कर के, वह ब्रह्मदेव के पास गया। गौतम प्रथम आया ऐसा जान कर, ब्रह्मदेव ने उसे अपनी कन्या दी। देवता, एक के पश्चात् एक, आने लगे। परंतु उन्हें मालूम हुआ कि, अहल्या तथा गौतम का विवाह हो गया। यह वार्ता सुन कर, इन्द्र को बहुत दुःख हुआ, क्यों कि, इन्द्र इससे प्रेम करता था। विवाहोपरान्त गौतम तथा अहल्या ब्रह्मगिरी पर रहने के लिये गये।

भ्रष्टता—कुछ दिन बाद, गौतम को आश्रम से बाहर गया देख कर, इन्द्र गौतम के रूप में इसका उपभोग करने के लिये आया। गणेशपुराण में दिया है कि, नारदद्वारा अहल्या के रूप की स्तुति की जाते ही, कामुक बन कर इन्द्र आया।

तब पतिव्रताधर्मानुसार उसका तथा इसका समागम हुआ (ब्रह्म. ८७; १२२; म. उ. १२; वा. रा. उ. ३०. ३२; स्कन्द. १.२.५२)। इंद्र काफी दिनों तक लगातार इसके यहाँ आता था, ऐसा उल्लेख ब्रह्मपुराण में है। परंतु यह इन्द्र है ऐसा जान कर भी, इसने उससे समागम किया। उसके शरीर के दिव्य सुगंध से अहल्या ने यह जान लिया कि, यह मेरा पति नही है। (वा. रा. बा. ४८.१९)। इतने में गौतम ऋषि आया। तब इन्द्र तथा अहल्या को बहुत डर लगा। दो घटिकाओं के बाद यह सामने आई, तथा पति का पदस्पर्श कर के इसने संपूर्ण वार्ता बताई (गणेश. १.३०)। गौतम रोज नदी पर स्नान के लिये जाने पर भी, दूसरा गौतम विद्यार्थियों को

दिखता था। एक बार जब इन्द्र भीतर था, तब गौतम के आते ही, विद्यार्थियों ने उसे भीतर का गौतम दिखाया। तब क्रोधित हो कर गौतम ने इन्द्र तथा अहल्या को शाप दिया।

शाप-उःशाप—गौतम इन्द्र को शाप देनेवाला ही था कि, वह मार्जार के रूप में जल्दी जल्दी भागने लगा। गौतम को शंका आई, तथा डाँट कर 'कौन है? ऐसा उसने पूछा। तब इन्द्र मूर्तिमन्त उसके सामने खड़ा हो गया (ब्रह्म. ८७; पद्म. सृ. ५०; गणेश. १.३१)। तब गौतम ने उसे शाप दिया कि, तुम शत्रुओं के द्वारा पराभूत होगे। मनुष्यलोक में जारकर्म प्रारंभ करनेवालों के तुम उत्पादक हो, अतएव प्रत्येक जारकर्म का आधा पाप तुम्हारे माथे लगेगा। देवराजों को अक्षयस्थान कभी प्राप्त न होगा (वा. रा. उ. ३०; ब्रह्म. १२२)। तुम्हारे शरीर को सौ छेद हो जावेंगे (म. अनु. ४१; १५३; ब्रह्म. ८७; पद्म. सृ. ५०)। तुम वृषणरहित हो जाओगे (वा. रा. बा. ४८; लिंग. १.२९)।

तदनंतर अहल्या की ओर मुड़कर गौतम ने कहा, किसी को भी नही दिखोगी ऐसे रूप में तुम्हारा विध्वंस हो जावेगा, तथा तुम्हारे रूप का सर्वत्र विभाजन हो जावेगा। राम जब यहाँ आवेंगे तब तुम्हारा उद्धार होगा (वा. रा. बा. ४८; उ. ३०)। तुम शिला बन जाओगी (आ. रा. सार. १.३; स्कन्द. १.२.५२; गणेश. १.३१)। जनस्थान में तुम एक शुष्क नदी बनोगी (आ. रा. सार. १.३; ब्रह्म. ८७)। तुम्हारे देह पर केवल अस्थिचर्म रहेगा। सजीव प्राणियों के समान तुम्हारे शरीर पर मांस तथा नख उत्पन्न नही होंगे, तथा तुम्हारे इस रूप के कारण स्त्रियों के मन में पापकर्म के प्रति दहशत उत्पन्न हो जावेगी (पद्म. सृ. ५४)। इसपर अहल्या ने प्रार्थना की कि, इन्द्र आपका रूप धारण कर के आया था, इसलिये मैं पहचान न सकी। शरद्वत गौतम ने ध्यानस्थ हो कर यह जान लिया कि, यह अपराधी नही है, तथा उःशाप दिया कि, राम जब यहाँ आवेगा तब अपने पादस्पर्श से तुम्हारा उद्धार करेगा (वा. रा. बा. ४८.४९; उ. ३०; गणेश १.३१)। इसकी मुक्ति के लिये गौतम ने कोटितीर्थ पर तप किया। तब यह मुक्त हुई। उससे अहल्यासरोवर निर्माण हुआ। उस आनंद के कारण ही, गौतम ने गौतमेश्वर लिंग की स्थापना की (स्कन्द. १.२.५२)। गोदावरी के साथ तुम्हारा संगम होने पर तुम पूर्ववत् बनोगी, ऐसा भी इसे उःशाप था (ब्रह्म. ८७)। शाप से मुक्त होने के पश्चात्, यह पुनः पति के सहवास में गई।

शाप के पूर्व इसे शतानन्द नामक पुत्र था। वह निमिवंशीय राजाओं का उपाध्याय था (वा. रा. बा. ५१, आ. रा. सार. १०३)। इसे दिवोदास नामक भाई था (भा. ९.२१; ह. वं. १.३२)। वह उत्तर पंचाल का राजा था। 'अहल्यायै जार' ऐसा इन्द्र का गौरवपूर्ण वर्णन वेदों में है। इससे प्रतीत होता है कि, इंद्र-अहल्या की कथा रूपकात्मक होनी चाहिये।

समर्थन—इसने उत्तंक नामक अपने पति के शिष्य को सौदास की पत्नी के कुंडल गुरुदक्षिणा में लाने के लिये कहा था (म. आश्व. ५५)। इन्द्र के द्वारा इसके साथ किया गया व्यभिचार देवों के कार्य के लिये ही किया गया। क्योंकि, गौतम का तप अधिक हो गया था, अतएव उसका क्षय आवश्यक था (वा. रा. बा. ४९)। इसे गौतमी भी कहा गया है (ब्रह्म. ८७)। महर्षि गौतम के वन में अहल्याद्वारतीर्थ प्रसिद्ध है (म. व. ८२.९३)।

नया दृष्टिकोन—अहल्या तथा इन्द्र के संबंध की कथा रूपकात्मक है, ऐसा ब्राह्मणग्रंथ जैमिनीसूत्रों से प्रतीत होता है।

(१) अहल्या रात्रि है, गौतम चन्द्र है तथा इन्द्र को सूर्य मान कर, यह रूपककथा निर्मित की गई है। उसका स्पष्टीकरण करते हुए बताया जाता है कि, इन्द्ररूपी सूर्य ने अहल्या रूपी रात्रि का घर्षण किया। यह एक निसर्गरहस्य है (श. ब्रा. ३.३.४.१८)।

डॉ. रवीन्द्रनाथ टागोरजी ने अहल्या का रामद्वारा उद्धार का जो विवरण किया है वह सुन्दर है।

(२) हल का अर्थ है नांगर, हल्या का अर्थ जोती हुई जमीन, तथा अहल्या का अर्थ है बंजर जमीन। अगस्त्य ऋषि ने दक्षिण में प्रथम वास किया, अर्थात् दक्षिण की अहल्या जमीन हल्या कर के उसका उद्धार किया, तथा उस अहल्या भुमि की शाप से मुक्तता की। इस प्रकार राम ने अहल्या का उद्धार किया, इसका अर्थ है, उसने दक्षिण की बंजर भुमि उर्वरा बनाई।

२. इन्द्रद्युम्नपत्नी। यह इन्दु ब्राह्मण से रत हुई। इसके स्थूल शरीर को सजा दे कर कुछ लाभ नही हुआ, क्यों कि, यह मनोमय शरीर से तादात्म्य हुई थी (यो. वा. ३.८९.८१)।

अहि—इन्द्र का शत्रु (ऋ. १.५१.४)। यह जब निद्रित था, तब इन्द्र ने इसे मारकर सप्तसिंधू को मुक्त किया (ऋ. २.१२.३)।

अहित—मणिवर को देवजनी से उत्पन्न पुत्र। इसे गुह्यक ऐसा साधारण नाम है।

अहिरावण-महिरावण—पाताल में, अहिरावण तथा महिरावण नामक रावण के दो मित्र थे। इन्हें रावण ने राम का नाश करने के लिये कहा। परंतु सुवेल पर्वत पर राम की संपूर्ण सेना अभेद्य दीवाल के भीतर होने के कारण, इन्होंने आकाश से शिविर में छलाँग लगाई। पश्चात्, शिला पर सुप्त रामलक्ष्मण को यह शिलासहित पाताल में ले गये। परंतु हनुमान इनका पीछा करते निकुंभिला नगर आया। कपोत कपोती के संवाद से हनुमान को पता चला कि, दैत्य रामलक्ष्मण को देवी के सामने बलि देने के लिये रसातल में ले गये हैं। उधर जाते समय, हनुमान को द्वार पर मकरध्वज मिला। प्रश्नोत्तर में, दोनों का पितापुत्र का नाता निकला (मकरध्वज देखिये)। मकरध्वज ने हनुमान को सुझाया कि, कामाक्षी के मंदिर में जा कर बैठा जावे तथा कार्य किया जावे। सुबह वाद्यों की ध्वनि में राक्षस रामलक्ष्मण को वहाँ ले कर आये। तब देवी का स्वर निकाल कर हनुमान ने उन्हें कहा कि, पूजा झरोखे से की जावे। उसके अनुसार, राक्षसों ने देवी को बहुत से उपचार अर्पण किये, तथा रामलक्ष्मण को भी झरोखे से भीतर छोड़ा। तदनंतर तीनों ने मिल कर, राक्षसों का संहार शुरू किया। परंतु अहिरावण-महिरावण के लहू से, पुनः वैसे ही राक्षस निर्माण होने लगे। तब हनुमान ने अहिरावण की पत्नी को इसे मारने का उपाय पूछा। वह बोली कि, मैं नागकन्या हूँ। इस दुष्ट ने बलात्कार से मुझे यहाँ लाया। महिरावण भी मुझ पर लुब्ध है। परंतु मैं उसके अनुकूल नही होती। इतना कह कर उसने कहा कि, यदि राम मुझसे विवाह करेगा, तो मैं उपाय बताती हूँ। हनुमान ने कहा कि, राम के भार से अगर तुम्हारा मंचक नहीं टूटा, तो राम तुम से विवाह कर लेंगे। तब उसने बताया कि, पहले जब कुछ लड़के भ्रमरों को काँटे चुभा रहे थे, तब उन्हें इन दोनों भाईयों ने मुक्त किया। इस लिये प्रत्युपकार करने के हेतु, वे भ्रमर अमृत-बिंदुओंसे इन दोनों को जीवित करते रहते हैं। इस लिये तुम भ्रमरों को मार डालो। अभी वे सब राक्षसों के निद्रास्थान में हैं। यह मालूम होते ही, हनुमान ने असंख्य भ्रमर मार डाले। एक भ्रमर उसे शरण आया। उसे प्राणदान दे कर, हनुमान ने उसे अहिरावण की पत्नि का मंचक भीतर से खोखला करने के लिये कहा, तथा स्वयं राम के पास गया। इतने में राम के बाण से सब राक्षसों की मृत्यु हो गई। तदनंतर हनुमान के आग्रह पर, राम नागकन्या के मंदिर में गया, तथा पर्यंक को हाँथ लगाते ही वह टूट जाने के कारण, उसे तीसरे जन्म में पत्नी बनाने का आश्वासन दे कर दोनों सुवेल पर लौट आये। रामवचन पर विश्वास रख कर, अहिरावण की पत्नी ने अग्नी में देहत्याग किया (आ. रा. सार. ११)।

अहिर्बुध्न्य—एक अन्तरिक्षस्थ देवता (नि. ५.४) यह एक वृत्र का स्वरूप है। ऋग्वेद में इसके लिये स्वतंत्र सूक्त न हो कर, कुछ ऋचाओं में इसका स्तवन है। यह एक गार्हपत्य अग्नी का नाम है (वा. सं. ५. ३३; ऐ. ब्रा. ३. ३६; तै. ब्रा. ११.१०.३)।

यह रुद्र का नाम है (भा. ६.६.१८)।

२. यह दुष्ट राक्षसों के संहारार्थ सुदर्शनचक्र की आराधना कर रहा था। राक्षस इसके संहारार्थ आते ही, चक्र प्रगट हो कर राक्षसों का नाश हुआ (स्कन्द. ३.१. २३)।

३. कश्यप तथा सुरभि का पुत्र (शिव. शत. १८)।

अहिशुव—इन्द्र का शत्रु (ऋ. ३२.२)।

अहीन—(सो. क्षत्र.) सहदेव का पुत्र। अदीन पाठभेद है।

२. (सो. कुरु. भविष्य.)। विष्णु के मतानुसार उदयन-पुत्र।

अहीनगु—अनोह का नामांतर।

अहीनज—(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार द्वारका का पुत्र। इसने १०,००० वर्षों तक राज्य किया।

अहीनर—अनी राजा का नामांतर।

२. (सो.) भविष्य के मतानुसार उद्यान का पुत्र।

अहीना आश्वत्थ्य—इसने सावित्राग्नी के ज्ञान से अमरत्व संपादन किया (तै. ब्रा. ३.१०; ९.१०)।

आ

आकथ--मंकण का पुत्र। यह बड़ा ही शिवभक्त था। इसके घर में आग लग कर आधा शिवलिंग जल गया। अतः यह अपना आधा शरीर जला रहा था, तब शंकर प्रसन्न हुए (पद्म. पा. ११७)।

आकाशज विप्र--ब्रह्मदेव का नाम। इसे मारा नहीं जा सकता, ऐसा मृत्यु ने यम को बताया। पार्थिव देह तथा कर्म न होने के कारण इसे मृ यु नही है। यह केवल अज तथा विज्ञानरूप है (यो. वा. ३.२; ब्रह्मन् देखिये)।

आकुलि—एक असुर (असमाति राथप्रौष्ठ देखिये)।

आकूति--रुचि ऋषि की पत्नी। यह स्वायंभुव मनु तथा शतरूपा की तीन कन्याओं में से प्रथम है। इसे यज्ञ तथा दक्षिणा नामक कन्यारूप मिथुन हुआ (मनु देखिये)।

२. (स्वा. प्रिय) पृथुषेण राजा की पत्नी।

३. (स्वा. उत्तान.) व्युष्टपुत्र सर्वतेजस् की पत्नी, तथा चक्षुर्मनू की माता (भा. ४.१३.१५)।

आकृति—एक गारुड–विद्या का आचार्य। जब युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया, तब सहदेव दक्षिण दिशा जीतने गया। तब इसे जीत कर उसने इससे करभार लिया था (म. स. २८.३९)।

आक्ताक्ष्य--अग्निपूजा के बारे में विचार प्रगट करनेवाला एक गृहस्थ (श. ब्रा. ६.१.२.२४)।

आक्षील--भरद्वाजांगिरस वंशमालिका का एक द्विगोत्री ऋषि।

आगस्त्य--एक आचार्य (ऋ. प्रा.१-२; सां. आ. ७.२)। यह अगस्त्य नामक महर्षि का पुत्र, है। संहिता शब्द का अर्थ मांडूकेय तथा माक्षव्य के मतानुसार क्रमशः वायु संहिता तथा आकाश संहिता ऐसा है। आगस्त्य का कहना है कि, दोनों सिद्धान्त तुल्यबल हैं (ऐ. आ. ३. १.१)। दृहळच्युत देखिये।

आग्ना प्रासेव्य—कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण।

आग्निवेशि शत्रि--यह दानस्तुति में दान देनेवाले राजा का नाम है (ऋ. ५.३४.९)

आग्निवेश्य--शांडिल्य, आनभिम्लात तथा गार्ग्य का शिष्य। इसका शिष्य गौतम (बृ.२.६.२; ४.६.२.)। विसर्गसंधि के विषय में मतप्रतिपादन करनेवाला आचार्य (तै. प्रा. ९.४)।

आग्निवेश्यायन—क्षत्रिय नरिष्यन्त कुल मे पैदा हुवा एक ब्राह्मणकुल (भा ९.२.२१--२२)।

स्वरित कहाँ होता है, यह विशेषरूप से बतानेवाला एक आचार्य (तै. प्रा. १४.४२.२)। अग्निवेश्य (२.) देखिये।

आग्नीध्र--प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती के दस पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र। विष्णु पुराण में अग्नीध्र है। कर्दम की कन्या नामक कन्या का पुत्र। इसे उर्जस्वती नामक बहन थी। दो बहनें और भी थीं, जिनके नाम सम्राज् तथा कुक्षि थे। यह जंबुद्वीप का अधिपति था। पुत्रप्राप्ति की इच्छा से, यह मंदराचल के पहाड़ में जब ब्रह्मदेव की आराधना कर रहा था, तब ब्रह्मदेव ने देवसभा में गायन करनेवाली पूर्वचित्ति नामक अप्सरा इसके पास भेजी। उसने शृंगारचेष्टा इत्यादि से आग्नीध्र का मन कामवश किया। उसके सौंदर्य, बुद्धिमत्ता इ. अलौकिक गुणों पर लुब्ध हो कर, इसने दस कोटि वर्षों तक उसका विषयोपभोग किया। उससे आग्नीध्र को नौ पुत्र हुए। उनके नामः—१. नाभि, २. किंपुरुष ३. हरिवर्ष, ४. इलावृत्त, ५. रम्यक (रम्य), ६. हिरण्मय (हिरण्वान), ७. कुरू, ८. भद्राश्व, तथा ९. केतुमाल। कुछ काल के अनन्तर, वह अप्सरा ब्रह्मलोक चली गई। उसके विरह से यह राजा अत्यंत उदास हो गया। तदनंतर जंबुद्वीप के नौ विभाग कर के, प्रत्येक विभाग को अपने पुत्रों का नाम दे कर, वे विभाग उन्हें सौंप कर, यह शालिग्राम नामक अरण्य में तप करने चला गया। कौन सा विभाग किसे दिया इसका वर्णन विष्णु पुराण में हैं, वह इस प्रकार हैः-१. नाभी को हिमवर्ष (हिन्दुस्थान), २. किंपुरुष को हेमकूटवर्ष, ३. हरिवर्ष को नैषधवर्ष, ४. इलावृत्त को मेरुपर्वतयुक्त इलावृत्तवर्ष, ५. रम्यक को नील पर्वतयुक्त रम्यकवर्ष, ६. हिरण्वान को श्वेतदीपवर्ष, ७. कुरू को शृंगवद्वर्ष, ८. भद्राश्व को मेरू के पूर्व में स्थित भद्राश्ववर्ष, तथा ९. केतुमाल को गंधमानवर्ष, (विष्णु. २.१; भा. ५.१.३३; १. २२)।

आग्नीध्रक--रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

आग्रायण—इन्द्र शब्द की व्युपत्ती के विषय में, मत दर्शानेवाला आचार्य (नि. १०.९)।

आंगरिष्ट--एक राजर्षि। इसने कामंद ऋषी को शुद्ध धर्मादिकों के संबंध में प्रश्न पूछा था। जिससे चित्तशुद्धि होती है वह धर्म, पुरुषार्थ साधन होता है वह अर्थ, तथा देहनिर्वाह के लिये इच्छा होती है वह काम, ऐसा उत्तर कामंद ऋषी ने इसे दिया (म. शां. १२३)।

आंगि--हविर्धान आंगि देखिये।

आंगिरस--अंगिरसवंश के लोगों को यह शब्द कुलनाम के तौर पर लगाया जाता है। वंशावलि भी प्राप्त है (छां. उ. १.२.१०; पं. ब्रा. २०.२.१; तै. सं. ७.१.४.१)। (अंगिरस देखिये)।

अथर्ववेद का प्रवर्तक अंगिरस है। इसके कुल के ऋषियों ने सत्र किया। यज्ञानुष्ठान के लिये दूध निकालने के लिये, इन्होंने एक गाय रखी थी। उस गाय का रंग सफेद था। अवर्षण के कारण, उस गाय को हरी घास मिलना बंद हो गया। यज्ञ में प्राप्त कूटे हुए सोम के अवशिष्टांश को खा कर, वह दिन बिता रही थी। भूख के कारण, उसकी होने वाली दुर्दशा अंगिरस देख नही सकता था। गाय के लिये काफी चारा यदि हम निर्माण नहीं कर सकते, तो सत्र प्रारंभ कर के क्या लाभ? इस प्रकार के विचार उन्हें कष्ट देने लगे। आगे चल कर इन्होने, कारीरि' इष्टि की। उससे भरपेट चारा प्राप्त होने लगा। परंतु पितरो ने नये चारे में विष उत्पन्न करने के कारण, गाय खराब होने लगी। परंतु पितरो को हविर्भाग देने पर, अंगिरसों को उत्कृष्ट चारा मिलने लगा तथा वह खूब दूध देने लगी। (तै. ब्रा. २.१.१)। इन्होंने ही द्विरात्र याग शुरू किया (तै. सं. ७.१.४)। अंगिरस के द्वारा रथीतर की पत्नी में उत्पन्न ब्रह्मक्षत्र संतति को आंगिरस कहते थे (भा. ९.६.३)।

(अभीवर्त, अभहीयु, अयास्य, आजीगर्ति, उचथ्य, उत्तान, उरु, उर्ध्वसध्मन, कुत्स, कृतयशस्, कृष्ण, गृत्समद घोर, च्यवन, तिरश्चि, दिव्य, धरुण, ध्रुव, नृबैध, पवित्र, पुरुमिहळ, पुरुमेध, पुरुहन्मन, पूतदक्ष, प्रचेतस, प्रभूवसु प्रियमेध, बृहन्मत्ति,, बृहस्पति, त्रैद भिक्षु, मूर्धन्वन्, हहूगण, वसुरोचिष, बिंदु, विरूप, विहव्य, वीतहव्य, शक्ति व्यश्व, शिशु, शौनहोत्र, श्रुतकक्ष, संवनन, संवर्त, सहयुग, सव्य, सुकक्ष्य, सुदिति, सुधन्वन्, हरिमंत, हरिवर्ण हविष्मत्, हिरण्यदत् तथा हिरण्यस्तूप देखिये)।

२. भौत्य मनु का पुत्र।

३. भीष्म के यहाँ आया हुआ ऋषि (भा. १.९.८)।

४. शुनक का नामांतर। इसने बभ्रु तथा सैन्धवायन कों अथर्ववेद सिखाया (भा. १२.७.३)।

आंगिरसी--वसू की पत्नी (भा. ६.६.१५)।

२. (शश्वती देखिये)।

आंगी--अपराचीन पुत्र अरिह की पत्नी। इसका पुत्र महाभौम (म. आ. ९०-८९९*)।

आंगुलय वा **आंगुलीय**--वायु तथा ब्रह्माण्ड के मतानुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य। (व्यास देखिये)।

आंग्रिक--विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७)।

आचार--कश्यप तथा अरिष्टा का पुत्र।

आजकेशिन--इसका प्रतिकार बक ने किया (जै. उ. ब्रा. १.९.३)।

आजगर--अयाचित वृत्ति से रहने वाला एक ब्राह्मण। प्रल्हाद से इसका संवाद हुआ था (म. शां. १७२)।

आजद्विष--बभ्र का पैतृक नाम।

आजव--कथाजव के लिये पाठभेद।

आजातशत्रव--भद्रसेन देखिये।

आर्जिहायन--काश्यप गोत्री ऋषिगण।

आजीगर्ति--शुनःशेप का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१७)। आंगिरस नाम से इसका उल्लेख किया गया है। (क. सं. १६.११.२)

आज्य--सावर्णि मनु का पुत्र।

आज्यप--एक पितृगण। ब्रह्ममानसपुत्र पुलह के वंशज। इन्हें यज्ञ में आज्य (बकरी के दूध से बना घी) का पान करने के कारण, यह नाम पड़ा। इन्हें कहीं कहीं सुस्वध भी कहा गया है (मत्स्य. १५)। कर्दम प्रजापती के लोकों में यह रहते हैं। इन्हें विराजा नामक एक कन्या है। यही नहुष की पत्नी है (पद्म. सृ. ९)। वैश्य इन्हें पूज्य मानते हैं।

आंजन--एक दास। यह नेत्रों में अंजन लगाता था। यह त्रिककुद पर्वत पर से आया था। त्रिककुद् को यामुन बताया हैं। यह हिमालय का भाग था (अ. सं. ४.९.१-१०)।

आटविन्--ब्रह्मांड तथा वायु के मत में व्यास की यजुःशिष्य परंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)। आटविन् तथा आवटिन् एक ही है।

आटिकी-- उषस्ति चाक्रायण की पत्नी (छां. उ. १.१०.१)। इस शब्द का अर्थ, स्तनादि स्त्री-चिह्न जिसके अव्यक्त है ऐसी स्त्री, ऐसा शंकराचार्य करते है।

आट्णार—पर का पैतृक नाम।

आडि—अंधकासुर का पुत्र तथा बक का भाई। अपने पिता का वध करनेवाले शंकर से बदला लेने के हेतु, ब्रह्मदेव को प्रसन्न कर, इसने अमरत्व माँगा। रूपांतरित अवस्था में ही मृत्यु होगी अन्यथा नही, ऐसा वर इसने प्राप्त किया।

वरप्राप्ति के पश्चात् तत्काल, यह कैलास पहुँचा। वहाँ के वीरभद्र वा वीरक द्वारपाल से रुकावट न हो इस हेतु से, इसने सर्परूप धारण कर, भीतर प्रवेश किया। तदनंतर सर्परूप छोड, पार्वती का रूप धारण कर, यह शंकर के सामने गया। शंकर ने उसका कपट जान कर तथा रूपांतरित अवस्था की संधि साध कर, तत्काल इसका वध किया (मत्स्य. १५६; पद्म. सृ. ४१.४५-७२; वीरभद्र देखिये)।

हरिश्चंद्र का, विश्वामित्र द्वारा दिया गया दुःख देख कर, वसिष्ठ ने विश्वामित्र को, पक्षी योनि में परिणत होने का शाप दिया। इसके उत्तर में विश्वामित्र ने भी वसिष्ठ को यही शाप दिया। पक्षी योनि में भी दोनों युद्ध करते रहे। अन्त में ब्रह्माजी को इनका झगडा मिटाना पडा। ये ही दो पक्षी आडि तथा बक नाम से ख्यात हैं।

झगडा मिटाते समय ब्रह्माजी ने वसिष्ठ से कथन किया कि, यद्यपि, विश्वामित्र ने हरिश्चंद्र को घोर क्लेश दिये, तथापि उसके अन्त में स्वर्ग का मार्ग मुक्त कर दिया (मार्क. ९)।

आडि-बक युद्ध देवासुरों के बारह युद्ध में छठवाँ है (मत्स्य. ४७.४१-५४)। यहाँ आडि तथा बक ये व्यक्ति के नाम न हो कर समुदाय के नाम दिखते है।

शशादपुत्र ककुत्स्थ का स्मरण इंद्र ने आडि-बक-युद्ध में किया था (वायु. ८८.२५)।

आडीर— जनापीड देखिये।

आतिथिग्व— इन्द्रोत का पैतृक नाम (दिवोदास देखिये)।

आत्मदेव—एक ब्राह्मण। यह तुंगभद्रा के किनारे कोहल ग्राम में रहता था। इसकी स्त्री गृहकार्य में निपुण परंतु झगडालू थी। निपुत्रिक होने के कारण, यह विरक्त होकर भ्रमण करने लगा। उस समय एक वापिका तट पर उसकी एक सिद्ध से भेंट हुई। सिद्ध ने पुत्र प्राप्ति के हेतु एक फल दिया, जिसे स्त्री को खिलाने को कहा। उसने अपनी स्त्री को फल दिया। स्त्री ने अपनी बहन के कहने पर वह फल गाय को खिला दिया तथा पति से झूठा ही कह दिया कि, उसने फल खा लिया है। बहन ने उसे बताया कि, तू गर्भवती होने का ढोंग कर। मुझे जो पुत्र होगा वह मैं तुझे दे दूंगी। क्योंकि वह स्वयं गर्भवती थी। पुत्र होने पर आत्मदेव ने उसका नाम धुंधुकारी रखा। गाय को भी यथा समय पुत्र हुआ। कान, गाय की तरह के होने के कारण, उसका नाम गोकर्ण रखा गया। धुंधुकारी दुर्वृत्त होने के कारण यह तंग आ गया। तब गोकर्ण ने, उसे संसार से निवृत्त होने को कहा। इसने ईश्वरभक्ति के द्वारा परमार्थ तथा मोक्ष प्राप्त किया (पद्म. ३.१९६)।

आत्मन्—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ३.२६.७)।

२. अंगिरादेवों में से एक। अंगिरा तथा सुरूपा का पुत्र (मत्स्य. १९६)।

आत्मवत्—भृगुगोत्र का मंत्रकार। आत्मावत् भी पाठांतर है।

आत्रेय—मांटी का शिष्य (बृ. उ. २.६.३) तथा अंगराज का पुरोहित (ऐ. ब्रा. ८.२२)। संधि तथा उच्चार के लिये इसके मत का गौरव के साथ उल्लेख है (तै. प्रा. ५.३१; १७.८)। यही तैत्तिरीय संहिता का पदपाठकार रहा होगा। तैत्तिरीयों के आचार्यतर्पण में इसका समावेश इसी कारण हुआ है (स. गृ. २०. ८. २०)। जैमिनिसूत्रों में भी (५.२. १८; ६.१.२६) एक आत्रेय का उल्लेख है। आत्रेयी शिक्षा तथा संहिता ये ग्रंथ भी आत्रेय के हैं (C. C.)। गर्भाधान संस्कार के मंत्र कहने के विषय में इसके मत का निर्देश किया गया है (स. गृ. १९.७.२५)। वैद्यक में भी धन्वंतरि के पूर्व, एक आत्रेय हो गया है। धन्वंतरि ने आत्रेय प्रणीत मृतसंजीवनीकर रसायन (काढ़ा) दिये हैं (अग्नि. २८५; गरुड १.१.१४६)। ये सब एक हैं या भिन्न, यह कहना कठिन है।

(अर्चनानस्, अवस्यु, उरुचक्रि, एवयामरुत्, कुमार, कृष्ण, गय, गविष्ठिर, गातु, गृत्समद, गोपवन, दक्ष कात्यायनि, द्युम्न, द्वित, पुरु, पौर, प्रतिक्षत्र, प्रतिप्रभ, प्रतिभानु, प्रतिरथ, बभ्रु, बाहुवृक्ति, बुद्धि, मुक्तवाह, यजत, रातहव्य, वव्रि, वसुश्रुति, विश्वसामन्, शंग, शाख्यायनि, श्यावाश्व, श्रुतिवित्, सत्यश्रवस्, सदापृण, सप्तवध्रि, सस तथा सुतंभर देखिये)।

२. एक राजा। इसे एकत, द्वित तथा त्रित पुत्र थे (त्रित देखिये)।

३. वामदेव का शिष्य (परीक्षित् देखिये)।

४. जनमेजय सत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.८)।

५. हंसरूप से संचार करनेवाला ऋषि। इसने साध्यों को नीति बताई (म. उ. ३६)।

आत्रेयायणि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आत्रेयी—अत्रि ऋषि की कन्या। यह अग्नि पुत्र अंगिरा को व्याही गयी थी। दत्त, दुर्वास तथा सोम इसके बंधु हैं। इसके पुत्रों को आंगिरस कहते हैं। आत्रेयी को उसका पति, नित्य निष्कारण कठोर शब्द कहता था। एक दिन, उसने ससुरसे इसकी शिकायत (तकरार) की। उसने बताया कि, तेरा पति अग्निपुत्र है, अतः बहुत तेजस्वी है। उसे तू जलरूप से स्नान करा कर शांत कर। इस पर आत्रेयी परुष्णी नदी बन गयी तथा अपने जल से पति को शांत करने लगी। इसका गंगा से संगम हुआ (ब्रह्म. १४४)।

२. अपाला तथा विश्ववारा देखिये।

आत्रेयीपुत्र—गौतमीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५.२)।

आथर्वण—अथर्वन् का पुत्र, शिष्य तथा अनुयायी अर्थ का शब्द।

कबंध, दध्यच्, बृहद्दिव, भिषज्, विचारिन् देखिये।

आदर्श—धर्मसावर्णि मनु का पुत्र।

आदित्य—वैवस्वत मन्वंतर में देवताओं के समूह का नाम। ऋग्वेद में इसके लिये छः सूक्त हैं। एक स्थान में केवल अदित्यसंघ में छः देवता हैं (ऋ. २.२७.१)। वे इस प्रकार हैं–१. मित्र, २. अर्यमन्, ३. भग, ४. वरुण, ५. दक्ष, तथा ६. अंश। अदिति को आठ पुत्र थे (अ. वे. ८.९.२१)। १. अंश, २. भग, ३. धातृ, ४ इन्द्र, ५ विवस्वत्, ६. मित्र, ७. वरुण तथा ८. अर्यमन् (तै. ब्रा. १.१.९१)। परंतु अदिति का आठवां पुत्र मार्ताण्ड दिया गया है (ऋ. १०.७२. ८–९; श. ब्रा. ६.१.२.८)। आदित्य बारह है जो बारह माहों के निदर्शक हैं (श. ब्रा. ११.६.३.८)। वेदोत्तर वाङ्मय में बारह माहों के बारह आदित्य या सूर्य प्रसिद्ध हैं (कश्यप देखिये)। उन में विष्णु सर्वश्रेष्ठ माना गया है। ऋग्वेद में सूर्य को आदित्य कहा गया है। इसलिये सूर्य सातवां और मार्ताण्ड आठवां आदित्य होगा। गाय आदित्य की वहन हैं (ऋ. ८.१०१. १५)।

इन्द्र यह अदिति का पुत्र अर्थात् आदित्यों में से एक है (ऋ. ७.८५.४; मै. सं. २.१.१२)। परंतु बारह आदित्यों से इन्द्र अलग है (श. ब्रा. ११.६.३.५)। आदित्य का उल्लेख वसु, रुद्र, मरुत्, अंगिरस्, ऋभु तथा विश्वेदेव इन देवताओं के साथ कई स्थानों पर आया है फिर भी वह सब देवताओं का सामान्य नाम है। आदित्यों का वर्णन सब देवताओं के सामान्य वर्णनों से मिलताजुलता होते हुए भी आदित्यों में प्रमुख मित्रा-वरुणा से नही मिलता। सर्वाधार, सर्वपालक, मन के विचार जाननेवाले, पापी जनों को सजा देनेवाले तथा रोग दूर कर दीर्घायु देनेवाले ऐसा इनका वर्णन है।

ब्रह्मदेव को उद्देशित कर, अदिति ने चांवल पकाया, ताकि, उसके कोख से साध्य देव उत्पन्न हों। आहुति दे कर बचा हुआ चांवल उसने खाया जिससे धाता एवं अर्यमा दो जुडवें पुत्र हुए। दूसरी बार मित्र तथा वरुण तीसरी बार अंश एवं भग तथा चौथे बार इन्द्र एवं विवस्वान हुए। अदिति के बारह पुत्र ही द्वादशादित्य या साध्य नामक देव हैं (तै. ब्रा. १.१.९.१)। आदित्य से सामवेद हुआ (ऐ. ब्रा. २५.७; सां. ब्रा. ६.१०; श. ब्रा. ११.५. ८; छां. उ. ४.१७.२; जै. उ. ब्रा. ३.१५.७; प. ब्रा. ४. १; गो. ब्रा. १.६)। पुराणों में आदित्य, कश्यप तथा अदिति के पुत्र हैं (कश्यप देखिये)

१. अंशुमान् (आषाढ माह, किरण १५००), २. अर्यमन् (वैशाख, १३००), ३. इंद्र (आश्विन, १२००), ४. त्वष्टृ (फाल्गुन, ११००), ५. धातृ (कार्तिक, ११००), ६. पर्जन्य (श्रावण, १४००), ७. पूषन् (पौष), ८. भग (माघ, ११००), ९. मित्र (मार्गशीर्ष, ११००), १०. वरुण (भाद्रपद, १३००), ११. विवस्वत् (जेष्ठ, १४००), १२. विष्णु (चैत्र, १२००)। इनके कार्य भी बताये हैं (भवि. ब्राह्म. ६५; ७४; ७८; विष्णु. १.१५.३२)। अंशुमान् के लिये अंश या अंशु ऐसा पाठ है। विष्णु के लिये उरुक्रम पाठ है। परंतु स्कंदपुराण में बिलकुल भिन्न सूची दी गयी है। १. लोलार्क, २. उत्तरार्क, ३. सांबादित्य, ४. द्रुपदादित्य, ५. मयूखादित्य, ६. अरुणादित्य, ७. वृद्धादित्य, ८. केशवादित्य, ९. विमलादित्य, १०. गंगादित्य, ११. यमादित्य, १२. सकोल्कादित्य (स्कंद. २.४.४६.)।

आदित्यकेतु—धृतराष्ट्रपुत्र। इसे भीम ने मारा (म. भी. ८४.२७)।

आदिराज—(सो. कुरु.) अभिष्वत् का पुत्र (म. आ. ८९.४५)।

आदिवराह--हिरण्याक्ष को मारने के लिये वर्तमान कल्पारंभ में हुआ अवतार। इसे श्वेतवराह भी कहते हैं।

आद्य--रैवतमनु का देवगण (मनु देखिये)।

२. चाक्षुष मन्वंतर का देव।

३. विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार। यह उपरिचर वसु के सोलह ऋत्विजों में एक था।

आधूर्तरजस्--गय राजा का पिता। अमूर्तरय भी पाठ है। (म. व. ९३.१७; अमूर्तरयस् (३.) देखिये)।

आनक--(सो. यदु.) शूर को मारिषा से उत्पन्न चौथा पुत्र।

इसे कंका नामक स्त्री से पुरुजित् एवं सत्यजित्, ऐसे दो पुत्र हुए।

आनकदुंदुभि--(सो. यदु.) कृष्ण के पिता वसुदेव का नाम। इनके जन्म के समय देवताओं ने दुंदुभि बजाई, इसलिये यह नाम पडा।

आनंद--गाल्व्यकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण। इसने ब्रह्माजी का अधिकार धारण कर नवीन यज्ञपद्धति, विवाहपद्धति तथा वर्णाश्रमपद्धति स्थापित की (वायु. २१.२६; २३.४६)। इसके मानस पुत्र विराट ने इसके पश्चात् राज्य किया। यह राज्य १३२ वर्ष रहा। इसके पश्चात् ३०० वर्षों तक प्रजासत्तात्मक राज्य चालू था (दप्तरीकृत धर्मरहस्य, पृष्ठ १५४)।

२. मेधातिथि के सात पुत्रों में से एक। इसी नाम से इसका संवत्सर है (विष्णु. २.४.४)।

३. सत्य नामक देवगण में से एक।

आनंदज चांधनायन-- शांब का शिष्य। इसका शिष्य भानुमत् (वं. ब्रा. १)।

आनभिम्लात-- यह दूसरे एक आनभिम्लात का शिष्य (बृ. उ. २.६.२)।

आनर्त-- (सू. शर्याति.) शर्यातिपुत्र। आनर्त देश (गुजरात) इसी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसका पुत्र रेवत (दे. भा. २.५)। इसने कुशस्थली नगरी स्थापित की (ब्रह्म. ७; ह. वं. १.१०.३२-३३)।

२. (सो. सह.) मत्स्यमतानुसार वीतिहोत्रपुत्र।

आंतरिक्ष-- एक व्यास (व्यास देखिये)।

आंध्रभृत्य-- (आंध्र. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार पुलोमा का पुत्र।

आप्--स्वारोचिष मनु का पुत्र।

२. वरुण की पत्नी। परंतु इसे अग्नि से पृथ्वी तथा आकाश ये दो संतानें हुईं (तै. सं. ५.५.४)।

आप--अहवसु का नाम।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर में वसिष्ठपुत्र प्रजापति।

३. धर्म तथा वसु का पुत्र। इसके पुत्र वैतंड्य, शांत तथा ध्वनि (विष्णु. १.१५)।

आपगव--औपगव देखिये।

आपमूर्ति--स्वारोचिष मनु का पुत्र।

आपव वसिष्ठ-- वसिष्ठकुल में से एक। इसे वरुणपुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३. ६९. ४२; वायु. ९४. ४३;९५.१-१३)। हिमालय के पास यह रहता था। कार्तवीर्य के हाथ से इसकी पर्णकुटी जली, इसलिये इसने उसे शाप दिया था (कार्तवीर्य देखिये)। इसकी कुटी मेरु पर्वत के पास थी ऐसा कहीं कहीं उल्लेख मिलता है। अष्टवसु इसकी कामधेनु सुरभि को चुराकर ले गये, इस लिये तुम मर्त्यलोक में जन्म लो, ऐसा इसने उन्हें शाप दिया। इसीके उश्शाप के कारन, भीष्म को छोड, अन्य सबको गंगा ने पानी में डुबाया (म. आ. ९३)।

आपस्तंब--भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि। यह तैत्तिरीय शाखा का था। कश्यप ने दिति के द्वारा पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाया, उसमें यह आचार्य था। उसी इष्टि से मरुद्गण उत्पन्न हुए (मत्स्य.७)।

उसकी स्त्री का नाम अक्षसूत्रा तथा पुत्र का नाम कर्कि (ब्रह्म. १३०.२-३)। इसके रचित ग्रंथ १. आपस्तंबश्रौतसूत्र, २. आपस्तंबगृह्यसूत्र, ३. आपस्तंबब्राह्मण, ४. आपस्तंबमंत्रसंहिता, ५. आपस्तंबसंहिता, ६. आपस्तंबसूत्र, ७. आपस्तंबस्मृति, ८. आपस्तंबोपनिषद्, ९. आपस्तंबाध्यात्मपटल, १०. आपस्तंबान्त्येष्टिप्रयोग, ११. आपस्तंबापरसूत्र, १२. आपस्तंबप्रयोग १३. आपस्तंबशुल्वसूत्र, १४. आपस्तंबधर्मसूत्र (C. C.)। इसके श्रौतसूत्रों में श्रौत, गृह्य, धर्म, शूल्व, मंत्रसंहिता आदि भाग हैं।

इसका नाम याज्ञवल्क्य स्मृति में दिये गये स्मृतिकारों में है। तर्पण में इसका नाम बौधायन के पीछे तथा सत्याषाढ हिरण्यकेशी के पहले आता है। इससे पता चलता है कि इसकी शाखा हिरण्यकेशी शाखा के काफी पहले की होगी। आपस्तंब ने अपने धर्मसूत्र में (२.७.१७.१७) उदीच्य लोगों के एक श्राद्ध का उल्लेख किया है। उदीच्य शब्द का अर्थ हरदत्त ने शरावती नदी के उत्तर की ओर रहनेवाले लोग, ऐसा दिया है। आपस्तंब

शरावती नदी के उत्तर की ओर, आंध्र देश में रहता होगा। उसी प्रकार, ऐसा उल्लेख है कि, पल्लव राजाओं ने आपस्तंबी लोगों को काफी भेंट (देन) दी (I. A. v. 155)। इससे प्रतीत होता है कि, आपस्तंबी शाखा आंध्र देश के आसपास निकली होगी।

आपस्तंब कल्पसूत्र के (२८.२९) दो प्रश्न ही आपस्तंब धर्मसूत्र हैं। उसी प्रकार २५ तथा २६ इन दो प्रश्नों का एकत्रीकरण कर, उसे आपस्तंबीयमंत्रपाठ नाम दिया गया है। कल्पसूत्र के २७ वें प्रश्न को आपस्तंबगृह्यसूत्र यह नाम है। आपस्तंब के गृह्यसूत्र तथा धर्मसूत्र में काफी साम्य है।

आपस्तंबधर्मसूत्र में आचार, प्रायश्चित, ब्रह्मचारी के कर्तव्य तथा उनके व्यवहार के नियम, यज्ञोपवीतधारण के संबंध में नियम, श्राद्ध इ. के संबंध में जानकारी दी गई है। उसी प्रकार वेदोंके छः अंगों का भी विचार किया है। इसने सिद्ध किया है कि, कल्पसूत्र वेद न हो कर वेदांग ही है (आप. धर्म. २.४.८।१२)। ब्राह्मणग्रंथ नष्ट हो गये हैं। प्रयोग से, वैसे ब्राह्मणग्रंथ होने चाहिये ऐसा इसका कथन है (आप. धर्म. १.४.१२-१०))

आपस्तंब ने संहिता, ब्राह्मण तथा निरुक्त के कुछ उद्धरण लिये हैं। अपने धर्मसूत्र में कण्वपुष्करसादि दस धर्मशास्त्रकार, बौधायन एवं हारीत इनके भी मत इसने अनेक बार दिये हैं। संसार की उत्पत्ति तथा प्रलय के संबंध में भविष्यपुराण में दिये मत का आपस्तंब धर्मसूत्र में उल्लेख है तथा अनुशासन पर्व (९०.४६) का एक श्लोक इसने लिया है। आपस्तंब ने अपने धर्मसूत्रों में जैमिनि की पूर्वमीमांसा में से बहुत से मत एवं पारिभाषिक शब्दों का उपयोग किया है। आपस्तंब धर्मसूत्र का उल्लेख, शबर, ब्रह्मसूत्र के शांकरभाष्य, विश्वरूप का व्यवहार, मिताक्षरा एवं अपरार्क, इन ग्रंथों में किया गया है। आपस्तंबधर्मसूत्र के कितने ही मत पूर्ववर्ती धर्मशास्त्रकारों के विरुद्ध हैं। आपस्तंब के मतानुसार नियोग त्याज्य है उसी प्रकार पैशाच तथा प्राजापत्य इन दो विवाह विधियों को, इसकी पूर्ण सम्मति है। इसके मतानुसार किसी भी प्रकार के मांस का भक्षण करने में कोई आपत्ति नहीं है। आपस्तंब धर्मसूत्र पर हरदत्त ने उज्ज्वलावृत्ति नामक टीका की है। आपस्तंब धर्मसूत्र में अध्यात्म विषयक दो पटलों पर शंकराचार्य का भाष्य हैं (१.८. २२-२३)।

आपस्तंबधर्मसूत्र से भिन्न आपस्तंबस्मृति नामक २०७ श्लोकों का एक ग्रंथ, जीवानंद ने प्रकाशित किया है। आनंदाश्रम में प्रकाशित स्मृति में, दस अध्याय हैं। इस ग्रंथ में, प्रायश्चित्त पर विचार किया गया है। स्मृतिचंद्रिका तथा अपरार्क ग्रंथों में इसके उद्धरण कई बार आये हैं। स्मृतिचंद्रिका में स्तोत्रापस्तंब नामक एक ग्रंथ का उल्लेख है।

बुल्हर ने इसका समय ख्रि. पू. ३०० के पूर्व नहीं रहा होगा, ऐसा निश्चित किया है, परंतु तिलकजी ने इसका समय इससे भी पहले का माना है। (गी. र. पृ. ५६१)। वैद्य ने आपस्तंबश्रौतसूत्र का समय ख्रि. पू. १४२० निश्चित किया है, परंतु काणे ख्रि. पू. ६००–३०० मानते हैं।

आपस्तंबि––अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

२. भृगुकुल का एक गोत्रकार। यह ब्रह्मर्षि॰ था (म. व. २९९. १८ कुं; मत्स्य. ७)।

आपस्थूण––वसिष्ठ गोत्र का एक ऋषि गण।

आपिशलि––एक व्याकरणकार। संधि के विषय में लिखते समय पाणिनि ने इसका गौरव के साथ उल्लेख किया है (६. १. ९२)। इसने आपिशलि नामक एक ग्रंथ लिखा (C. C.)

उसमें प्राप्त वर्णन का उल्लेख काशिका (७.३.९५) एवं कैयट (५.१.२१) में भी प्राप्त है। काशिकाकार तथा तथा कैयट ने यह ग्रंथ देखा होगा।

२. भृगुकुल का एक ब्रह्मर्षि।

आपिशी––भृगुकुल का एक गोत्रकार। अपिशली ऐसा पाठ है।

आपूरण––कद्रूपुत्र।

आपोद––धौम्य का पैतृक नाम (धौम्य देखिये)।

आपोमूर्ति––(अपांमूर्ति) ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

आपोलव––(आंध्र. भविष्य) ब्रह्मांडमत में शातकर्णीपुत्र।

आप्त––कद्रूपुत्र।

आप्त्य––त्रित, द्वित, एकत तथा भुवन देखिये।

आप्य––चाक्षुष मन्वंतर का देव।

आप्यायन––(स्वा. प्रिय.) यज्ञबाहु के सात पुत्रों में से छठवां। इसका संवत्सर इसी के नाम से चालू है।

आप्सव––मनु देखिये।

आभिप्रतारिण––वृद्धद्युम्न देखिये।

आभूतरजस्--रैवत मन्वंतर का एक देव (मनु देखिये)।

आभूति त्वाष्ट्र--विश्वरूप त्वाष्ट्र का शिष्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

आम--(स्वा. प्रिय.) घृतपृष्ठ के सात पुत्रों में ज्येष्ठ। इसका संवत्सर आमवर्ष इस नाम से प्रसिद्ध है।

२. कृष्ण का सत्यभामा से उत्पन्न पुत्र। यह महारथी था।

३. कान्यकुब्ज देश के इस राजा ने बुद्धधर्म स्वीकार कर, बुद्धधर्म का प्रचार चालू किया। राम ने मारुती के द्वारा इसका प्रतिकार कर, इसे पुनः वैदिक धर्म में समाया। इसकी राजधानी धर्मारण्य थी (स्कंद. ३.२.३८)।

आमहासुर--कश्यप एवं दनु का पुत्र।

आमहीयव--उरुक्षय देखिये।

आमुष्यायण--एक व्यास। व्यास देखिये।

आमूर्तरजस--गय का पैतृक नाम।

आंबरीष--सिंधुद्वीप देखिये।

आंबष्ठ्य--पर्वत तथा नारद ने इसको राज्याभिषेक किया। इसके बाद इसने सारी पृथ्वी जीत कर अश्वमेध यज्ञ किया (ऐ. ब्रा. ८.२१)।

आंवाज--आवेद के लिये पाठभेद।

आंभृणी--वाच् देखिये।

आयति--मेरु की कन्या, नियति की भगिनी तथा धातृ ऋषि की स्त्री।

२. (सो.) नहुष का पुत्र। ययाति का बंधु।

आयवस--संभवतः यह नहुषों का शासक होगा। इस पराक्रमी राजा के तीन पुत्रों ने कक्षीवन् को तंग किया था (ऋ. १.१२२.१५)।

आयाप्य वा आयास्य--अंगिरस् गोत्र का मंत्रकार।

आयु--इंद्र ने वेश के लिये इसका पराभव किया था (ऋ. १०.४९.५)। इंद्र ने इसका पराभव किया, ऐसा बहुत स्थानों पर उल्लेख मिलता है (ऋ. २.१४. ७;८.५३.२) तथापि आयु ने इंद्रकी प्रशंसा के लिये एक सूक्त रचा है (ऋ. ८.५२)। यह शब्द सामान्य तथा विशेष अर्थ में उपयोग में लाया गया है। कुत्स तथा अतिथिग्व के साथ इसका उल्लेख है।

(सो.) पुरूरवस् को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में ज्येष्ठ (भा. ९. १५. १; म. आ. ७०. २२; ९०.७; द्रो. ११९. ५; अनु. १४७; वा. रा. उ. ५६; गरुड. १. १३९. ३; पद्म. सृ. १२. ८७; भू. १०३)। दत्तात्रेय के आश्रम में सौ वर्ष सेवा करने पर, दत्त ने इसे एक फल दिया। उसने अपनी स्त्री इंदुमती को वह फल खिलाया जिसके कारण वह गरोदर हुई तथा उसे नहुष नामक पुत्र हुआ। उसे हुंड नामक दैत्य चुरा कर ले गया इसलिये, वह अपनी पत्नीसहित शोक करने लगा। नारद ने बताया कि, नहुष के द्वारा हुंड दैत्य मारा जायेगा तब वह स्वस्थ हुआ (पद्म. भू. १०३-१०८)। इसे स्वर्भानु की कन्या प्रभा नामक दूसरी स्त्री थी, जिससे नहुषादि पुत्र हुए (भा. ९.१७.१; गरुड. १३९. ८; ब्रह्माण्ड. ३. ६७. १-२; ब्रह्म. ११; पद्म. पा. १२ ८७; ह. वं. १. २८)।

आयु का वंशक्रम--इस के पांच पुत्र--

१. नहुष, २. वृद्धशर्मन् (क्षत्रवृद्ध), ३. रम्भ, ४. रजि, ५. अनेनस्. नहुष का ययाति पूरु आदि वंश प्रसिद्ध है। वृद्धशर्मन् का ही क्षत्रवृद्ध नाम है। उस का वंश काशि और काश्य नाम से प्रसिद्ध है। तीसरा रम्भ अनपत्य था। तथापि कई जगे उसका वंश मिलता है (भा. ९.१७.१०)। चौथा रजि। उस को सौ पुत्र थे। वे इंद्र द्वारा नष्ट हो गये। अनेनस् का वंश स्वतंत्र रूप से उपलब्ध है (ह. वं. १.२९)।

आयुपुत्र रजि वंश को राजेय कहा गया है (वायु. ९२.७४-९९)।

इसका वंश ऊपर दिये गये स्थानों में है। इसने छत्तीस हजार वर्ष राज्य किया (भवि. प्रति. १.१)।

२. पौष माह में भग नामक आदित्य के साथ भ्रमण करने वाला ऋषि (भा. १२.११.४२)।

३. कृष्ण को रोहिणी से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१. १७)।

४. अंगिरा तथा सुरूपा का पुत्र। एक देव (मत्स्य. १९६)।

५. मंडूकों का एक प्रसिद्ध राजा (म. व. १९०. ३७)।

६. प्राण नामक वसु एवं ऊर्जस्वती का पुत्र (भा. ६. ६.१२)।

७. (सो. क्रोष्टु.) पुरुहोत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र सात्वत (भा. ९.२४.६)।

८. धर्म तथा वसु का पुत्र। इन्हें वैतंड्य, शम, शांत सनत्कुमार एवं स्कंद ये पुत्र थे (ब्रह्माण्ड. ३.३.२१-२९)।

आयु काण्व--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५२)।

आयुतायु--(मगध. भविष्य.) भागवत, वायु एवं ब्रह्माण्ड के मतानुसार श्रुतश्रवस् का पुत्र।

आयुर्दान--पारावत नामक देवगणों में से एक।

आयुष्मत्—संह्राद दैत्य के तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ।

२. दक्षसावर्णि मन्वंतर में होनेवाले ऋषभ अवतार का पिता।

३. उत्तानपाद का पुत्र।

आयोगव मरुत्त आविक्षित—मरुत्त देखिये।

आरणेय—अरणी से उत्पन्न होने के कारण, शुक को दिया गया नाम (दे. भा. १. १७)।

आरण्य—एक मध्यमाध्वर्यु।

आरण्यक—लोमश ने इसे रामायण सुनाई (पद्म. पा. ३५. ३७)।

आरद्वत्—अंगार देखिये।

आरब्ध—अंगार देखिये।

आराधिन् वा **आराविन्**—(सो. कुरु.) वायुमतानुसार जयत्सेन का पुत्र तथा विष्णुमतानुसार आराविन्।

आराह्ळि—सौजात देखिये।

आरुणायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आरुणि—उद्दालक का पैतृक नाम (बृ. उ. ३.६.१; छां. उ. ३.११.४)। सुब्रह्मण्य का गुरु आरुणि यशस्विन् यही है (जै. ब्रा. २.८०)। आरुणि ने हृदय के अष्टदलयुक्त कमल के स्थान ब्रह्मदृष्टि रख कर ब्रह्मा की आराधना की (ऐ. आ. २. १. ४)। वायुमतानुसार यजुःशिष्यपरंपराके व्यास का मध्यदेश का शिष्य (व्यास देखिये)। यह वासिष्ठ चैकितायन के पास ज्ञानार्जन के लिये गया था (जै. उ. ब्रा. १.४२.१)। अन्य स्थान में, अग्नि उध्वर्यु का नाश न कर शत्रु का नाश करता है, यह बताने के लिये इसके नाम का उल्लेख आता है (श. ब्रा. १.१.२. ११)। अग्निहोत्र की प्रशंसा करते समय भी एक आरुणि का उल्लेख है (श. ब्रा २. ३. ३१)। आरुणि पांचाल्य का उद्दालक भी नाम है (उद्दालक देखिये)।

२. धर्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में एक।

३. विनता का पुत्र।

४. सर्प (म. आ. ५२.१७)।

५. एक व्यास (व्यास देखिये)।

आरुणि पांचाल्य— उद्दालक देखिये।

आरुणेय— औपवेशि के कुल में उद्दालक आरुणि तथा पुत्र श्वेतकेतु का यह पैतृक नाम है (श. ब्रा. १०. ३.४.१; छां. उ. ५.३.१)। प्राणविद्या बताते समय इसका उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. २. ५. १)।

आरुषी—मनुकन्या। च्यवन ऋषि की दो स्त्रियों में से ज्येष्ठ। उर्व ऋषि की माता।

आरैहण्य— सुमंतु का शिष्य। इसका शिष्य चैकितायन (वं. ब्रा. २)।

आर्क्ष—प्रियमेध का आश्रयदाता (ऋ. ८.६८.१५-१६)। अतिथिग्व इंद्रोत तथा आर्क्ष से दान मिलने का उल्लेख प्रियमेध ने किया है। एक अन्य स्थान पर आर्क्ष श्रुतर्वन् का निर्देश है (ऋ. ८. ७४. ४)।

आर्क्षाकायण—गल्नस देखिये।

आर्चत्क—शरका पैतृक नाम (ऋ. १.११६.२२)। ऋचत्क का पुत्र।

आर्चनानस—अत्रिगोत्र का प्रवर।

आर्चिष्मत्—सुतपदेवों में से एक।

आर्जव (आर्जय)—गांधार देशाधिपति शकुनि के छः बंधुओं में से एक। इसे भारतीय युद्ध में इरावान् ने मारा (म. भी. ८६. २४; ४२)।

आर्जुनेय—कुत्सका पैतृकनाम (ऋ. १. ११२. २३; ४. २६. १; ७. १९. २; ८. १. ११)।

आर्तपर्णि—(सू. इ.) ऋतुपर्ण का पुत्र (ह. वं. १. १५. २०)।

आर्तभाग जारत्कारव—जरत्कारु का पुत्र। यह आस्तीक ऋषि का ही नाम होगा। दैवराति जनक की सभा में, याज्ञवल्क से वाद करनेवाला संभवतः यही होगा (बृ. उ. ३. २. १; १३)। 'कति ग्रहाः' प्रश्न का उत्तर दे कर, याज्ञवल्क्य ने इसे चुप बिठाया।

आर्तभागीपुत्र—शौंगीपुत्र का शिष्य, तथा वार्कारुणीपुत्र का गुरु (बृ. उ. ६. ५. २)।

आर्तव--बर्हिषद पितरों का नामांतर।

आर्तायनि--ऋतायनपुत्र शल्य का पैतृक नाम (म. भी. ५८. १४)।

आर्तिमत्—एक ऋषि। इसके स्मरण से सर्पबाधा नष्ट होती है (म. आ. ५३. २३)।

आर्द्र--(सू. इ.) आर्द्रक ऐसा पाठभेद है (म. व. १९३. ३; इंदु देखिये)।

आर्द्रक—आर्द्र देखिये।

आर्द्रा—सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

आर्बुदि--ऊर्ध्वग्रावन् देखिये।

आर्भव—सूनु देखिये।

आर्य--माल्य देखिये।

आर्यक--कद्रूपुत्र। इसकी कन्या मारीषा वा भोजा। मारीषा यदुकुलोत्पन्न शूर राजा की स्त्री थी, जिससे शूरको पृथा नामक कन्या उत्पन्न हुई। आगे चल कर, इसी का नाम कुंती हुआ। भीम की माता पृथा आर्यक की दौहित्री थी। भीम को दुर्योधनादि कौरवों ने विषयुक्त अन्न खिलाकर, प्रमाणकोटितीर्थ में डुबाया। नदी के सर्पोंने उसे दंश किया जिस कारण विष उतर गया। भीम सावधान हुआ ही था कि, नाग फिर दंश करने आये। तब भीम ने उनसे युद्ध शुरू किया। यह समाचार मिलते ही आर्यक वहां पहुंचा। भीम को उसने पहचान लिया, तथा उसे पाताल में ले जा कर अमृतपान कराया। तुझमें दस सहस्त्र नागों का बल रहे ऐसा आशीर्वाद दे, इसने उसे हस्तिनापुर तक पहुंचाया (म. आ. ११९; परि. १. क्र. ७३)।

२. धर्मसावर्णि मन्वंतर में होनेवाले विष्णु का पिता।

आर्श्यशृंगि--दुर्योधन पक्षीय एक राक्षस। इसने अर्जुनपुत्र इरावत् का वध किया (म. भी. ८६.६४)।

आर्ष्टिणि--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आर्ष्टिषेण--कृतयुग में हुआ एक राजर्षि। तप के बल पर यह ब्राह्मण हुआ (म. स. ८.१३; श. ३९.१; वायु. ९१.११४)। इसका आश्रम हिमालय पर नर-नारायणाश्रम के पास था (म. व. १५३, परि १.१७, पंक्ति ३१)। इसके पास पांडव गये थे। (म. व. १५६. १६८)। यह भृगुकुल का मंत्रकार था। इसका अद्रिषेण नाम भी मिलता है (वायु. ५९.९५-९७)। निर्णयसिंधु में इसका आधार लिया गया है। देवापि देखिये।

२. (सो. क्षत्र.) शल का पुत्र (वायु. ९२.५)।

३. वृद्धा देखिये।

आलंब--एक ऋषि। यह धर्मराज की सभा में था (म. स. ४.२० कुं.)।

आलंबायन--इंद्र का मित्र। इसने रुद्रका माहात्म्य बताया (म. अनु ४९)।

२. वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार तथा ऋषिगण।

आलंबायनीपुत्र--आलंवीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६. ५.२. काण्व)।

आलंबि--ब्रह्मांड तथा वायुमतानुसार व्यास के यजुः-शिष्यपरंपरा के प्राच्यों में से एक।

आलंवी--कश्यप तथा खशा की कन्या।

आलंवीपुत्र--जयंतीपुत्र का शिष्य तथा कौशिकीपुत्र का गुरु (बृ. उ. ६.५.१.२ काण्व)।

आलुकि--भृगुकुल का गोत्रकार। जलामिद् पाठभेद है।

आलेखन--एक आचार्य (आश्व. श्रौ. ६.१०)।

आल्लकेय--ह्रस्वाशय देखिये।

आवटिन्--ब्रह्मांडमतानुसार व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)। यही आटविन् है।

आवंत्य--भागवत मतानुसार व्यास की सामशिष्य परंपरा में से ब्रह्मवेत्ता का शिष्य (व्यास देखिये)।

आवरण--(स्वा.) भरत तथा पंचजनी का पुत्र।

आवाह--(सो. यदु.) विष्णुमतानुसार श्वफल्क का पुत्र।

आविक्षित--मरुत्त का पैतृक नाम। इस मरुत्त का कामप्रि ऐसा दूसरा नाम भी होगा (ऐ. ब्रा. ८. २१; श. ब्रा. १३.५.४.६; म. शां. २९.१५)। वायुमतानुसार यह करंधम का पुत्र है।

आविर्होत्र--ऋषभदेव तथा जयंती का भगवद्भक्त पुत्र।

आवेद--भृगुकुल का एक गोत्रकार (आंबाज देखिये)।

आशावह--विवस्वान् का पुत्र।

२. द्रौपदी के स्वयंवर को आया हुआ यादव (म. आ. १७७.१८१८*)

आश्मरथ्य--आश्मरथ का वंशज। सूत्र ग्रंथों में मतभेद दर्शाने के लिये इसका नाम आता है (आश्व. श्रौ. ६.१०; ब्र. सू. १.२.२९; ४.२०)।

आश्मकी--प्रचिन्वत् की पत्नी। अश्मकी भी पाठ है। यादवकन्या। इसका पुत्र शर्याति (म. आ. ९०.१३) संयाति ऐसा भांडारकर पाठ है।

आश्रया--स्थावरनगर में रहने वाले कौंडिन्य की पत्नी (गणेश. १.६३)।

आश्रायणि--कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

आश्राव्य--इन्द्र सभा का एक ऋषि (म. स. ७.१६)।

आश्लेषा--सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

आश्वघ्न--यह कोई स्वतंत्र व्यक्ति होगा, वा मनु के लिये एक विशेषण होगा (ऋ. १०.६१.२१)।

आश्वतर आश्वि--बुडिल का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ६.३०; श. ब्रा. ४.६.१.९)।

आश्वत्थ्य--अहीन का पैतृक नाम (तै. ब्रा. ३.१०. ९.१०)।

आश्वमेध--एक राजा का पैतृक नाम। इसका उल्लेख दानस्तुति में आया है (ऋ. ८. ६८. १५-१६)।

आश्वल--विश्वामित्र का पुत्र तथा ब्रह्मर्षि।

आश्वलायन--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य। आश्वलायन शाखा महाराष्ट्र में प्रसिद्ध है, परंतु इस शाखा के संहिता ब्राह्मणादि वैदिक ग्रंथ उपलब्ध नहीं हैं। इसके प्रसिद्ध ग्रंथ निम्न लिखित है १. आश्वलायनगृह्यसूत्र, २. अश्वलायनश्रौतसूत्र, ३. आश्वलायन स्मृति।

यह शौनक का शिष्य था। इसके सूत्र के अंत में 'नमः शौनकाय' कहकर शौनक को प्रणाम किया है। शौनक ने स्वतः १०००' भागों का एक सूत्र रचा था। किन्तु आश्वलायन का सूत्र, संक्षेप में एवं अच्छा होने के कारण उसने अपना सूत्र फाड डाला। इसका श्रौतसूत्र बारह अध्यायों का तथा गृह्यसूत्र चार अध्यायों का है। श्रौतसूत्रों में हौत्रकर्म में मंत्र का विनियोग बताया है। दर्शपूर्णमास, अग्न्याधान, पुनराधान, आग्रयण, अनेक काम्येष्टि, चातुर्मास्य, पशु, सौत्रामणी, अग्निष्टोमादि सप्त सोम संस्था, सत्रों के हौत्र तथा अंत में गोत्रप्रवरों का संक्षिप्त संग्रह है। अग्निहोमसमान कर्म का भी कहीं कहीं उल्लेख किया है। गृह्यसूत्रों में निम्नलिखित विषय प्रमुख वर्णित है--संस्कार, नित्यकर्म, वास्तु, उत्सर्जन, उपाकर्म, युद्धार्थसज्जता तथा शूलगव।

गृह्यसूत्र में दिये गये तर्पण में ऋग्वेद के ऋषि मंडलानुसार लिये हैं, एवं जहां ऋषि लेना असंभव लगा वहां प्रगाथ क्षुद्रसूक्त, महासूक्त तथा मध्यम ऐसा उल्लेख किया है। उसी तरह व्यास के शिष्य सुमंतु वगैरह बता कर सूत्र, भाष्य, भारत एवं महाभारत का भी उल्लेख किया है। आचार्य तथा पितर इस प्रकार है--शतर्चिन्, माध्यम, गृत्समद, विश्वामित्र, वामदेव, अत्रि, भरद्वाज, वसिष्ठ, सुमंतु, जैमिनि, वैशंपायन, पैल, जानंति, बाहवि, गार्ग्य, गौतम, शाकल्य, बाभ्रव्य, मांडव्य, मांडूकेय, गार्गी वाचक्नवी, वडवा प्रातिथेयी, सुलभा मैत्रेयी, कहोल, कौषीतक, महाकौषीतक, पैंग्य, महापैंग्य, सुयज्ञ, सांख्यायन ऐतरेय, महैतरेय, शाकल, बाष्कल, सुजातवक्त्र, औदवाहि, महौदवाहि, सौजामि, शौनक एवं आश्वलायन। ऐतरेय ब्राह्मण से ये सूत्र मिलते जुलते हैं तथा उसमें से कुछ अवतरण भी इसमें पाये जाते हैं। आश्वलायन के श्रौतसूत्र में निम्नलिखित आचार्यों का उल्लेख आता है। आलेखन (६. १०), आश्मरथ्य (६. १०), कौत्स १. २; ७. १), गाणगारि (२. ६; १२. ९-१०), गौतम (२. ६; ५. ६), तौल्वलि (२. ६; ५. ६), शौनक (१२. १०)।

इनमें से तौल्वलि पौर्वात्य हैं (पा. सू. २.४.६०-६१)। विदेहाधिपति जनक का यह होता था। अश्वल से संभवतः इसका संबंध है। वेबर के मतानुसार यह पाणिनि का समकालीन रहा होगा। चिं. वि. वैद्य ने इसका काल ख्रि. पूर्व १०० वर्ष माना है। श्रौतसूत्र तथा गृह्यसूत्र एक ही आश्वलायन के नहीं रहे होंगे। आश्वलायनगृह्यसूत्र में यद्यपि श्रौतसूत्र का विवरण मिलता है तथापि भाषाभिन्नता स्पष्ट दिखाई देती है। इसे आश्वलायन की शिष्यपरंपरा के किसी शिष्य ने लिख कर आश्वलायन के नाम पर जोड दिया होगा।

२. अथर्ववेदीय कैवल्योपनिषद् परमेष्ठी ने आश्वलायन का बताया है। ऊपर उल्लेखित तथा यह संभवतः एक ही हो सकते हैं।

३. कौसल्य का पैतृक नाम।

४. शिवावतार में सहिष्णु का शिष्य।

आश्वलायनिन--कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

आश्ववातायन--कश्यपगोत्र का एक गोत्रकार।

आश्वसूक्ति--सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १९.४.२)।

आश्वायनि--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

२. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

आश्विनेय--अश्विनीकुमार देखिये।

आसंग--(सो. यदु. वृष्णि.) श्वफल्क का पुत्र।

आसंग प्लायोगि--एक दानशूर राजा तथा सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. १. ३२-३३)। इसका पुरुषत्व नष्ट होने के कारण, यह स्त्री बन गया था। परंतु मेध्यातिथि की कृपा से इसे पुरुषत्व प्राप्त हुआ, इसलिये इसकी स्त्री शश्वती बहुत आनंदित हुई, ऐसी एक आख्यायिका सायण ने दी है। अन्य लोगों को इसमें सत्यता प्रतीत नहीं होती। अंतिम ऋचा को संदर्भ भी नहीं है। इसी सूक्त में आसंग को याद्व कहा गया है। इससे यह पता चलता है कि वह यदुवंशी रहा होगा (ऋ. ८.१.३१; ३४)।

आसंदिव--नारायण माहात्म्य के लिये इसकी कथा है (ब्रह्म. १६७)।

आसमंजस--(सू. इ.) असमंजसपुत्र अंशुमान् का नाम।

आसारण—भाद्रपद माह में सूर्य के साथ साथ घूमनेवाला यक्ष।

आसुरायण—दो स्थानों पर त्रैवणी का तथा तीसरे स्थान पर आसुरी का शिष्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३; बृ. उ. ६.५.२)। ब्रह्मांडमतानुसार व्यास के अथर्वशिष्य परंपरा के पाराशर्य कौथुम का शिष्य (व्यास देखिये)।

२. कश्यप गोत्र का एक ऋषिगण।

३. विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७)।

आसुरि—यह सायंहोम पक्ष का है। इसने उदित होम पक्ष की बहुत निंदा की है (श. ब्रा. २.२.३.९)। इसने अग्नि के उपस्थान का छोटा मंत्र सुझाया है (श. ब्रा. २.३.३.२)। भारद्वाज का शिष्य तथा औपजंधनी का गुरु (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। दूसरे स्थान पर याज्ञवल्क्य का शिष्य तथा आसुरायण का गुरु है (बृ. उ. ६.५.२) यज्ञविधि में इसे प्रमाण माना गया है (श. ब्रा. १.५.२.२६; २.१.४.२७)। अनिर्बंध मत तथा सत्य के लिये आग्रह के संबंध में इसे मान्यता प्राप्त थी (श. ब्रा. १४.१.१.३३)। शुक्लयजू के ब्रह्मयज्ञांग पितृतर्पण में यह था (पा. गृ. परिशिष्ट)। ब्रह्माण्डमतानुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में मध्यदेशवासी शिष्य (व्यास देखिये)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ का एक ऋषि। सांख्यशास्त्रज्ञ कपिल का शिष्य तथा पंचशिख का गुरु (म. शां. २११)। इसका कपिल से व्यक्ताव्यक्त पर संवाद हुआ (म. शां. परि. १.२९ अ-२९ब)। शिवावतार दधिवाहन का शिष्य।

आसुरिवासिन्—प्राश्नीपुत्र का नाम (बृ. उ. ४.५.२)।

आसुरी—(स्वा. प्रिय.) देवताजित् राजा की स्त्री तथा देवद्युम्न की माता।

आस्तीक—भृगुकुलोत्पन्न जरत्कारू ऋषि तथा तक्षक भगिनी जरत्कारू का पुत्र। गरोदर अवस्था में इसके पति वन को चले गये इसलिये जरत्कारू कैलास पर्वत पर चली गयी। यहां शंकर ने उसे ज्ञानोपदेश किया। यहाँ उसने एक पुत्र को जन्म दिया। पुत्र ने गर्भ में शंकर का उपदेश ग्रहण किया इसलिये इसका नाम आस्तीक रखा गया। माँ ने पति से गर्भ के विषय में पूछा जिसका उत्तर उसे 'अस्ति' मिला इसलिये पुत्र का नाम 'आस्तीक' रखा गया (म. आ. ४४.१९-२० दे. भा. २.१२)।

शिक्षा—आगे चल कर इसकी माता अपने भाई वासुकि के घर पर रही। वहीं इसका संगोपन हुआ। इसने उपनयन के पश्चात् च्यवनात्मज भार्गव ऋषि से सांगवेद का अध्ययन किया (म. आ. ४४.१८)। शंकर ने इसका व्रतबंध कराया। इसे वेदवेदांगों में निष्णात करने के पश्चात् मृत्युंजय मंत्र का अनुग्रह दिया। शंकर की आज्ञानुसार फिर जरत्कारू पुत्रसहित पिता के आश्रम में जा कर रही।

सर्पसत्र—जनमेजय राजा ने अपने मंत्री से सुना कि, पिताजी की मृत्यु सर्पदंश के कारण हुई। इसलिये क्रोधित हो कर जनमेजय ने सर्पसत्र कर, सारे सर्पों को मार डालने का निश्चय किया तथा यज्ञदीक्षा ली। यज्ञ प्रारंभ होनेवाला ही था कि, जनमेजय ने वास्तुशास्त्र में निष्णात कारीगर लोहिताक्ष से पूछा कि, यज्ञ मंडप में याज्ञिक किस तरह संपन्न होगा, इसपर यज्ञमंडप का स्थान तथा जिस समय भूमापन प्रारंभ हुआ इसे ध्यान में रख उसने कहा कि, यज्ञ में बडा विघ्न आवेगा तथा यह यज्ञ एक ब्राह्मण के द्वारा बंद होगा। तथापि राजा ने यज्ञ की सारी सामग्री जमा कर पूरी व्यवस्था के साथ यज्ञ प्रारंभ कर, सर्पों का संहार शुरू किया। सर्पसत्र में अंत में तक्षक की बारी आयी। सर्पों ने यह बात जरत्कारू को बतायी और भाई की रक्षा करने की प्रार्थना की।

सर्परक्षण—जरत्कारू ने आस्तीक को मातुलकुल का रक्षण करने की आज्ञा दी। मातृभक्त आस्तीक आज्ञा शिरोधार्य कर जनमेजय के यज्ञमंडप में पहुंचा। वहां उसने अपनी चतुराई तथा मधुर वाणी से राजा के मन को आकर्षित कर लिया। सर्पसत्र से घबराया हुआ तक्षक प्राणरक्षणार्थ इंद्र की शरण में गया। इंद्र ने उसे अभय दान दिया। ब्राह्मणों ने यज्ञ में तक्षक का आवाहन किया पर उसे आते न देख, ब्राह्मणों ने कहा कि, इंद्र ने उसका रक्षण किया है, इसलिये वह नहीं आ रहा है। तब राजा ने इंद्रसहित तक्षक का आवाहन करने को कहा। ब्राह्मणों ने 'इंद्राय तक्षकाय स्वाहा' कहा तथा इतना कहते ही इंद्र ने तक्षक का त्याग कर दिया। इस कारण तक्षक अकेला ही कुंड के ऊर्ध्व प्रदेश में खिन्नवदन खडा हो गया (म. आ. ४७-४९)। ब्राह्मणों के इंद्रसहित तक्षक का आवाहन करते ही, देवतागण इंद्र के सहित मनसा के पास गये। तब उसने आस्तीक पुत्र को सर्पों के संकट निवारणार्थ आज्ञा दी। आस्तीक के भाषण के कारण राजा ने उसे कहा कि, तुम्हें जो चाहिये मांगो। इसी समय सारे ब्राह्मण कह पडे कि, 'तक्षक आवाहन करने के पश्चात् भी अभी तक नहीं

आ रहा है। वह जब तक कुंड में आकर नहीं गिरता तब तक इसे वरदान न दीजिये।' इसी बीच ब्राह्मणों के मंत्रसामर्थ्य के कारण, तक्षक को कुंड के ऊर्ध्वभाग में आया हुआ इसने देखा। उसे 'तिष्ठ तिष्ठ' कह कर रोका तथा यही वर मांगने की योग्य घडी है ऐसा जान कर उसने राजा से 'सर्पसत्र रोक दीजिये' ऐसा वरदान मांगा। राजा अत्यंत खिन्न हो कर और कोई दूसरी चीज मांगने के लिये कहने लगा परंतु वचनबद्ध होने के कारण 'तथास्तु' कह कर राजा ने सर्पसत्र रोक दिया। आस्तीक का सम्मान कर उसे बिदा किया।

आस्तीक के इस यशप्राप्ति के कारण, सब सर्पों ने उसका बडा स्वागत किया और प्रसन्न होकर वे इसे वरदान देने लगे। इसपर आस्तीक ने वर मांगा कि, जो मेरा आख्यान, त्रिकाल पठन करेंगे उन्हें तुम बिलकुल कष्ट न देना (म. आ. ५३. २०)। आस्तीक ने जनमेजय से इंद्र तथा तक्षक के प्राणों की याचना की। तब ब्राह्मणों की आज्ञा ले, राजा ने इसका कथन मान्य कर, सर्पसत्र बंद किया। स्वयं मनसा के पास जा कर, इन्द्र ने उस की पूजा की तथा उसे बलि चढाई (दे. भा. ९. ४८)। नंदिवर्धिनी पंचमी के दिन सर्पसत्र बंद हुआ था इसलिये यह दिन नागों को अत्यंत प्रिय है (भवि. ब्राह्म. ३२; तक्षक आर्तभाग जारत्कारव देखिये)।

आस्त्रबुध्न--इंद्र ने इसके कारण, वेन्य पृथु का वध किया (ऋ. १०.१७१.३)।

आहार्य--अंगिरसगोत्रीय मंत्रकार।

आहुक--(सो. यदु. कुकुर.) पुनर्वसु का पुत्र। इसके सौ पुत्र थे (म. स. १४.५५)। तथापि उनमें से देवक तथा उग्रसेन बहुत प्रसिद्ध थे। शाल्व के साथ कृष्ण के युद्ध के समय इसने द्वारका का रक्षण किया (म. व. १६. २३)। यह अभिजित् पुत्र था। इसे आहुक नामक भाई था। अत्यंत ऐश्वर्यवान् तथा पराक्रमी ऐसी इनकी प्रसिद्धि थी (ब्रह्म. १५.४६-५१)।

आहुकी--पुनर्वसु राजा की कन्या तथा आहुक की भगिनी।

आहृत--हैतनामन् देखिये।

आहृति--(सो. यदु. क्रोष्टु.) कूर्ममतानुसार रोमपाद वंश में से एक।

आह्नेय--इसके पिता का नाम शुचि तथा माता का नाम अह्नि था। स्वाध्याय गांव के बाहर करना चाहिये, ऐसा नियम होते हुए भी यदि यह संभव न हो, तो गांव के अंदर ही अध्ययन करना चाहिये ऐसा इसका मत है (तै. आ. २.१२)।

इ

इक्षालव--ब्रह्माण्ड मतानुसार व्यास के ऋक्शिष्य-परंपरा का शाकवैण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

इक्ष्वाकु--(सू.) वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से ज्येष्ठ (म. आ. ७०.१३; भवि. ब्राह्म. ७९)। इसकी उत्पत्ति के संबंध में जानकारी इस प्रकार मिलती है। एक बार मनु को छींक आयी। उस छींक के साथ ही यह लडका सम्मुख खड़ा हुआ। इस पर से इसका नाम इक्ष्वाकु पडा (ह. वं. १.११; दे. भा. ७.८; भा. ९.६; ब्रह्म. ७.४४; विष्णु. ४.२.३)। मनु ने कहा कि, तुम एक राजवंश के उत्पादक बनो, दंड की सहायता से राज्य करो, तथा व्यर्थ ही किसी को दंड मत दो। अपराधियों को दंड देने से स्वर्गप्राप्ति होती है। इस तरह का उपदेश दे कर, जो कार्य करना होगा उसकी रूपरेखा मनु ने इसे बतायी। मनु ने पृथ्वी के दस भाग बनाये। वसिष्ठ की आज्ञानुसार वे सुद्युम्न को न दे कर, इक्ष्वाकु को दिये (वायु. ८५.२०)। मनु ने मित्र तथा वरुण देवताओं के लिये याग किया। इस कारण इक्ष्वाकु तथा अन्य पुत्र प्राप्त हुए, ऐसी कथा है (विष्णु. ४.१)। वसिष्ठ इक्ष्वाकु राजा का कुलगुरु था (म. आ. ६६.९-१०; ब्रह्माण्ड. ३. ४८.२९; पद्म. सृ. ८.२१९; ४४.२३७. विष्णु. ४.३.१८, वा. रा. उ. ५७)। सूर्यवंश में प्रत्येक राजा के समय, वसिष्ठ के कुलगुरु होने का निर्देश है।

इक्ष्वाकु, अयोध्या का पहला राजा था (वा. रा. अयो. ११०)। इसे मध्यदेश मिला था (ह. वं. १.१०. लिङ्ग १.६५.२८; ब्रह्माण्ड. ३.६०.२०; मत्स्य. १२.१५)। यह क्षुप का पुत्र है ऐसा भी कहीं कहीं उल्लेख हैं। क्षुप ने प्रजापालनार्थ इसे एक खड्ग दी थी (म. शां. १६०. ७२; आश्व. ४.३)। वंशावली में प्रत्यक्ष क्षुप का उल्लेख नही है।

एक समय इक्ष्वाकु यात्रा करते हिमालय की तलहटी के पास आया। वहाँ जप करनेवाला कौशिक नाम का ब्राह्मण था। उसका यम, ब्राह्मण, काल तथा मृत्यु के साथ, निष्काम जप के संबंध में संवाद हुआ। उस समय इक्ष्वाकु वहीं था (म. शां. १९२)।

इक्ष्वाकु कुल में पैदा हुए व्यक्तियों के लिये भी, इक्ष्वाकु कुलनाम दिया गया है। अलंबुषा के पति का नाम तृणबिंदु न हो कर इक्ष्वाकु था, ऐसा निर्देश है (वायु. ८६.१५; वा. रा. बा. ४७.११)।

इक्ष्वाकु के सौ पुत्र थे (ह. वं. १.११; दे. भा. ७.९; भा. ९, ६; म. अनु. ५; म. आ. ७५)। इसके ज्येष्ठ पुत्र का नाम विकुक्षि था। इक्ष्वाकु के पश्चात् यही अयोध्या का राजा हुआ। विकुक्षि से निमिवंश निर्माण हुआ। इक्ष्वाकु को दंडक नामक एक विद्याविहीन पुत्र भी था। इसी के नाम से दंडकारण्य बना (वा. रा. उ. ७९; भा. ९.६; विष्णु. ४.२)। इसके दसवें पुत्र का नाम दशाश्व था। वह माहिष्मती का राजा था (म. अनु. २. ६)। विष्णु पुराण में इक्ष्वाकु के एक सौ एक पुत्र होने का निर्देश हैं (४.२)। इक्ष्वाकु ने अपना राज्य सौ पुत्रों को बाँट दिया (म. आश्व. ४)। इसने शकुनि प्रभृति ५० पुत्रों को उत्तरभारत तथा शांति प्रभृति ४८ पुत्रों को, दक्षिणभारत का राज्य दिया। अयोध्या में इक्ष्वाकु का राज्य तथा वंश बहुत समय तक रहा।

ईक्ष्वाकु वंश में बहुत से महान पुरुष हुए, इस कारण बहुत सारे पुराणों में इनकी वंशावलि मिलती है। पुराणों में दी गयी वंशावलियों में, बहुत साम्य होते हुए भी, रामायण में दी गई वंशावलि से वे भिन्न हैं। पुराणों में. इक्ष्वाकु से ले कर, भारतीय युद्ध के बृहद्बल तक भागवतानुसार ८८, विष्णुमतानुसार ९३, तथा वायुमतानुसार ९१, पीढ़ियाँ होती हैं। रामायणानुसार इनमें संख्या की अपेक्षा व्यक्तियों में अधिक भिन्नता है। संशोधकों के मतानुसार वंशावलि की दृष्टि से पुराणों का वर्णन ही अधिक न्यायसंगत होने की संभावना है।

यद्यपि अधिक विस्तार से इसकी वंशावलि उपलब्ध है तथापि वह प्रमुख पुरुषों की है, सब पुरुषों की नही ऐसा वहाँ निर्देश है।

(सुमित्र, राम तथा ऐक्ष्वाक देखिये)। इसकी पत्नी सुदेवा (पद्म. भू. ४२)।

इट भार्गव—सूक्तद्रष्टा। इंद्र ने इस के रथ की रक्षा की (ऋ. १०.१७१.१)।

इटत् काव्य—केशिन् दार्भ्य का समकालिक (सां. ब्रा. ७.४)। इतरत्र भी यह नाम आया है (पं. ब्रा. १४.९.१६)।

इडविड—(सू. इ.) शतरथ का दूसरा नाम।

इडविडा—इलविला देखिये।

इडस्पति—(स्वा.) भागवतमतानुसार यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र।

२. स्वारोचिष मन्वंतर का देव विशेष।

इडा--मनु की कन्या। मनोरवसर्पण के पश्चात्, मनु ने संतति प्राप्ति के लिये यज्ञ किया, जिससे उसे पुत्री हुई। उसका नाम इडा था (श. ब्रा. १.६.३.६–११)।

मनु की संबंधी तथा यज्ञतत्त्वों का प्रकाशन करने वाली, इडा नामक एक स्त्री थी। देव तथा असुरों ने अग्न्याधान किया यह सुन कर, उसे देखने के लिये इडा गयी। उसे दोनो स्थानों पर अग्निस्थापना का क्रम विपरीत दिखाई दिया। वह मनु के पास आयी, तथा बोली, 'देव तथा असुरों की तरह तेरा यज्ञ निष्फल न होवें, इसलिये मैं अग्नि की योग्य क्रम से स्थापना करती हूँ।' मनु ने इडा के द्वारा अग्न्याधान करवाया। इडा ने, १. गार्हपत्य, २. दक्षिणाग्नि तथा ३. आहवनीय इस क्रम से अग्नि की स्थापना की इस कारण, मनु का यज्ञ सफल हुआ। वह प्रजा तथा पशुओं से समृद्ध हुआ (तै. ब्रा. १.१.४)। मनु यज्ञ कर रहा था तब उस यज्ञ के कारण देवताओं ने बहुत ऐश्वर्य प्राप्त किया।

एक समय, इडा मनु के पास गयी, तब देवताओं ने प्रत्यक्ष रूप से तथा असुरों ने अप्रत्यक्ष रूप से इडा को निमंत्रण दिया। वह देवताओं के पास गयी। इस कारण सारे प्राणी देवताओं की ओर गये, तथा उन्होंने असुरों का त्याग किया (तै. सं. १. ७.१)।

इतरा--ऐतरेय देखिये।

इदृश्--पांचवे और छठवें मरुद्गण में से एक।

इध्म--(स्वा.) भागवतमतानुसार यज्ञपुत्र।

२. स्वारोचिष मन्वंतर का देव।

इध्मजिह्व—(स्वा. प्रिय) प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती के दस पुत्रों में से दूसरा। यह प्लक्षद्वीप का स्वामी था। इसने अपने द्वीप के वर्षसंज्ञक सात भाग किये। ये भाग शिव, यवस, सुभद्र, शांत, क्षेम, अमृत एवं अभय इन सात पुत्रों को क्रमशः उन्हीं के नाम दे कर, दे दिये (भा. ५.२०)।

इध्मवाह--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.२६)। अगस्त्यपुत्र दृढस्यु का दूसरा नाम। इसे ऋतु ने दत्तक लिया था। यह अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार था (मत्स्य. २०२)।

इन--अमिताभ देवताओं में से एक।

इंदीवराक्ष वा **इंदीवरविद्याधर**--एक गंधर्व। यह विद्याधराधिप नलनाभ का पुत्र था। यद्यपि ब्रह्ममित्र मुनि ने इसे आयुर्वेद विद्या नहीं दी, तथापि अन्य शिष्यों को पढाते समय इसने वह छुपके से सीखी। इस सीखने में आठ माह ही लगे, इस कारण प्रसन्न हो कर यह हँस पड़ा। आवाज से इसे पहचान कर ब्रह्ममित्र ने, 'तू सात दिनों में राक्षस होगा,' ऐसा शाप दिया। पर इसने बिनति करने पर 'तू रागांध हो कर, अपनी ही संतानों को खाने दौडेगा, तब उनके अस्त्रतेज से तुझे ताप होगा। एवं पुनः यह शरीर प्राप्त कर तू स्वस्थानापन्न भी होगा।' ऐसा इसे उश्शाप मिला।

यह अपनी कन्या को खाने दौडा, तब कन्या के पास से सीखी अस्त्रविद्या के सहारे, स्वरोचि ने उसे पराभूत किया। इससे उसका उद्धार हुआ तथा यह फिर से पूर्ववत् हो गया। उसने अपनी कन्या मनोरमा तथा ब्रह्ममित्र के पास से सीखी विद्या स्वरोचि को दी (मार्क. ६०)। स्वरोचि देखिये।

इंदु--(सू. इ.) विश्वगश्व राजा का पुत्र। इसके तीन नाम क्रमशः आंध्र, चंद्र तथा आर्द्र थे। इसका पुत्र युवनाश्व था।

२. जग मनोमात्र है यह बताने के लिये, सुवर्णजट प्रांत में रहनेवाले काश्यपगोत्रीय इंदु की कथा, भानु ने ब्रह्मदेव को बतायी (यो. वा. ३. ८५-८७)। उस में इसने केवल मनःसंकल्प से, ब्रह्मदेव का श्रेष्ठ पद प्राप्त कर, स्थूल शरीर नष्ट होने पर भी, सृष्ट्युत्पत्ति का क्रम चालू रखा था।

इंदुमती—सिंहलद्वीप के चंद्रसेन राजा की कन्या (मंदोदरी देखिये)।

२. सोमवंशीय आयु राजा की पत्नी। इसका पुत्र नहुष (पद्म. भू. १०४)।

३. बृहद्रथ राजा की पत्नी। पूर्वजन्म में इसका कंकण समुद्र – सरस्वती के संगम में गिरने के कारण, इस जन्म में वह ऐश्वर्य उपभोग कर रही थी। प्रतिवर्ष यह प्रभासक्षेत्र में सुवर्णकंकण डालती थी (स्कंद. ७.१.३७)।

४. कल्याण वैश्य की पत्नी (गणेश. १. ३२)।

५. चंद्रांगद राजा की स्त्री (चंद्रांगद देखिये)।

इंदुल—आह्लाद एवं स्वर्णवती का पुत्र। सात माह के आयु में ही इसे इंद्र स्वर्ग ले गया। इंद्रपत्नी शचि ने वहाँ इसका संगोपन किया इसलिये यह अत्यंत बलवान हुआ। बलीककन्या चित्रलेखा से इसका विवाह हुआ (भवि. प्रति. ३.२२–२३)।

इंद्र--इसने मेघों को फोड़ा। इसके लिये त्वष्टा ने वज्र तैयार किया। इसने सूर्य द्यू तथा उषस् को उत्पन्न किया। वृत्रासुर के हाथ तोड कर उसका वध किया तथा जल बहाया। नदियां प्रवाहित की। गायें तथा सोम को जीता। भक्तों को पशु दिये (ऋ. १.३३)। दशद्यु का संरक्षण किया (ऋ. १.३३.१४) श्वित्रों की गायों का रक्षण किया (ऋ. १.३३.१५)।

सामगान से इसे स्फूर्ति मिलती है। यह दासों का शत्रु है। इसके रथ में घोडे लगे रहते हैं जिसके चलने से मेघों की गडगडाहट होती है। पृथ्वी सपाट तथा स्थिर होती है। त्रित से इसकी मित्रता थी। अंगिरस तथा इंद्र साथ साथ रहते हैं (ऋ. १.११)। इसने जन्मते ही देवताओं का रक्षण किया। हिलनेवाली पृथ्वी स्थिर की। अंतरिक्ष की व्यवस्था की तथा द्यू को आधार दिया। अहि को मार कर सप्तसिंधुओं को मुक्त किया। वल से गायें छुडाईं। बिजली उत्पन्न की। शंबर को चालीस वर्षों के पश्चात् ढूंढ निकाला (ऋ. २.१२)। इसे सोम बहुत अच्छा लगता है (ऋ. २. १४)। अंगिरा ने स्फूर्ति दी इसलिये इंद्र, वल को मार सका (ऋ. २.१५.८)। इसने सूर्य का चक्र फेंक कर एतश को बचाया (ऋ. ४.१८. १४)।

सोम पीने के लिये इंद्र को निमंत्रित किया जाता था (अपाला तथा तुर्वश देखिये)। इंद्र की उपासना न करनेवालों को, अनिंद्र कह कर निंदा करते थे (ऋ. ७. १८.१६)। नेम नामक ऋषि ने इंद्र प्रत्यक्ष न दिखने के कारण, इंद्र नहीं है ऐसा प्रतिपादित किया तब इंद्र स्वय को प्रमाणित करने, प्रत्यक्ष प्रकट हुआ (ऋ. ८.१००)।

शत्रु--वेदों में इसके अनेक शत्रु हैं। उनका मुख्य दुर्गुण है पानी को रोकना। वे हैं अनर्शनि, अर्णव, अर्बुद, अहि, अहिशुव, और्णवाभ, अश्न, इलीबिश, करंज, कुयव,

क्रिवि, चुमुरि, दभीक, धुनि, नमुचि, नार्मर, पर्णय, पिप्रु वर्चिन्, वल, शंबर आदि ।

शस्त्रसंभार—इसके शस्त्र वज्र, अद्रि, दधीचि की अस्थि (ऋ. १. ८४. १३), धनुष्बाण, माला, फेन, बर्फ आदि हैं ।

यह जगदुत्पादक तथा सृष्टिक्रम निश्चल करनेवाला है । इसकी पत्नी इंद्राणी (ऋ. १०. ८६)। सीता नामक स्त्री का भी उल्लेख है (पा. गृ. सू. १७. ९; शची देखिये)। ये अनेकों का पुत्र हुआ था (शृंगवृष देखिये)।

पदमाहात्म्य—प्रत्येक मन्वंतर में इंद्र रहता है। वह भूः, भुवः, स्वः इन तीन लोकों का अधिपति है। सौ यज्ञ कर इंद्रपद प्राप्त होता है (नहुष तथा ययाति देखिये)। यह वज्रपाणि, सहस्राक्ष, पुरंदर तथा मघवान् होता है। प्रजासंरक्षण उसका मुख्य कार्य होता है। प्रत्येक मन्वंतर में इंद्र भिन्न भिन्न होकर भी उनके गुण तथा कार्य एक से रहते हैं। सप्तर्षि इनके सलाहगार रहते हैं एवं गंधर्व अप्सरायें इनका ऐश्वर्य होता है (वायु. १००.११३-११४)। जब ये जगत की व्यवस्था नहीं कर पाते तब सारे अवतार इनकी मदद को आते हैं (मनु देखिये)। सौ यज्ञ करने पर इंद्रपद मिलता है, इसलिये जब किसी के यज्ञ पूरे होने लगते है, तब यह अश्वमेध का घोडा चुरा कर, विघ्न उपस्थित करता है (सगर, पृथु, रघु)। उसी तरह कोई कठिन तपस्या करता है, तो डर के कारण यह अप्सरायें भेज कर, तपभंग करता है। हिरण्यकशिपु, बलि, एवं प्रह्लाद ये तीनों असुरों में से भी इंद्र हुए थे (मत्स्य. ४७. ५५-८९; तारक देखिये)। इस से इसका राजकीय स्वरूप अच्छी तरह से व्यक्त होता है। विशेषतः त्रिशंकु, वसिष्ठ, विश्वामित्र, वामदेव, रोहित, गौतम, गृत्समद, रजि, भरद्वाज, उदारधी, सोम, इंदुल तथा अर्जुन इत्यादि प्राचीन तथा अर्वाचीन व्यक्तियों के चरित्र से इन्द्र की पूर्ण कल्पना कर सकते हैं ।

पौराणिक कल्पनाए—इंद्रविषयक पौराणिक कल्पना निम्नलिखित विवरण से व्यक्त हो जायेगी। अदिति पुत्र (कश्यप देखिये)। इस का शक्र नामांतर है (भा. ६.६)। श्रावण माह का सूर्य (भा. १२.११.१७)। देवताओं का राजा (भा. १.१०.३)। यही आज का पुरंदर इंद्र है। वर्षा का देव। एक बार गरुड की पीठ पर बैठ कर नाग जा रहे थे। गरूड उड कर इतना ऊंचा गया कि, सारे नाग सूर्यताप से मूर्च्छित हो कर पृथ्वी पर आ गिरे। माता कद्रू ने इंद्र की स्तुति कर, ताप शमनार्थ वर्षा करायी (म. आ. २१.)। भीमद्वादशी व्रत करने के कारण इसे इंद्रत्व मिला (पद्म. सृ. २३)। यह दक्ष के यज्ञ में गया था एवं इसने वीरभद्र से पूछा था कि वह कौन है (ब्रह्म. १२९)। मंदार पर्वत के पंख इसने नष्ट किये थे (स्कंद. १.१९.९)। विश्वधर वणिक् के पुत्र के मरने पर वह शोक करने लगा। इसे देख कर यम ऊब कर अपना कार्य छोड़, तप करने लगा। इस कारण पृथ्वी पर पापी लोक अत्यधिक पापकर्म करने लगे। उन्हें मृत्यु नहीं आती थी। इससे पृथ्वी त्रस्त हो कर इंद्र के पास गयी। इंद्र ने यम की तपस्या भंग करने, गणिका नामक अप्सरा भेजी, पर उससे कोई लाभ न हुआ। तब पिता ने उसे समझाया (ब्रह्म. ८६)। एक बार कश्यप पुत्रकामेष्टि यज्ञ कर रहा था। देवतादि उसकी सहायता कर रहे थे। वालखिल्य तथा इन्द्र भी मदद कर रहे थे। इंद्र जल्दी जल्दी जा रहा था सारे वालखिल्य मिल कर एक समिध ले जा रहे थे। मार्ग में एक गाय के खुर जितने गढ्ढे में संचित पानी में गिर कर, ये डुबने उतराने लगे। यह देख कर इंद्र तिरस्कारपूर्वक हँसा। यह देख कर वालखिल्य क्रोधित हो, दूसरे इंद्र को उत्पन्न करने के हेतु तप करने लगे। तब इंद्र कश्यप की शरण में आया। उसके माध्यम से वालखिल्यों का क्रोध शांत कराया (मध्यम तथा वालखिल्य देखिये; म. आ. २६)।

गरुड से संबंध—गरुड ने अपनी माँ को दास्यबंधनों से मुक्त करने के लिये माता के दास्य के बदले नागो को अमृत ला देने का वचन दिया, तथा वह अमृत लाने के लिये स्वर्ग लोक गया। गरुड अमृत लिये जा रहा है यह देख कर, इंद्र ने वज्र फेंका पर उसका कोई असर न हुआ। गरुड की शक्ति देख कर इंद्र ने उससे मित्रता करने की सोची। तब गरुड ने उसे बताया, कि यदि अमृत वापस चाहते हो, तो उसे बडी युक्ति से चुराना। इंद्र ने युक्ति से काम लिया तथा अमृत फिर वापस ले गया और गरुड को वर दिया कि सर्प तेरे भक्ष्य होंगे (म. आ. ३०)।

महाशनिवध—हिरण्यपुत्र महाशनि इंद्र को जीत कर इंद्राणी सह उसे बांध कर लाया। महाशनि वरुण का दामाद था, इसलिये देवताओं ने वरुण से कह कर इंद्र को छुडाया। इंद्राणी के कहने पर इंद्र ने शिव की स्तुति की। शिव ने विष्णु की स्तुति करने को कहा। इंद्र ने विष्णु की स्तुति की। फलतः विष्णु तथा शिव के अंश से एक पुरुष गंगा के जल से उत्पन्न हुआ, जिसने महाशनि का

वध किया। इंद्र हमेशा उसके पीछे पीछे रहने लगा। इस कारण एक बार इंद्राणी से इसका प्रेम कलह हुआ था (ब्रह्म. १२९)।

त्रिपुर उत्पत्ति--वाचक्नवि मुनि की स्त्री मुकुंदा रुक्मांगद राजा पर मोहित थी। इंद्र ने रुक्मांगद का रूप धारण कर उससे संभोग किया। आगे इसी वीर्य से मुकुंदा को गृत्समद उत्पन्न हुआ। गृत्समद का पुत्र त्रिपुरासुर। त्रिपुरासुरादिकों से गणेश ने इंद्र को बचाया (गणेश १. ३६-४०)।

सुकर्माख्यान--सुकर्मा के हजार शिष्य अनध्याय के दिन अध्ययन करते थे, इसलिये इन्द्र ने उनका वध किया। सुकर्मा ने प्रायोपवेशन प्रारंभ किया तब इंद्र ने उसे वर दिया, कि इन हजारों के साथ दो शिष्य और भी उत्पन्न होंगें जो सुर होंगें। ये ही पौष्यंजिन् एवं हिरण्यनाभ (कौशिल्य) है (वायु. ६१.२९-३३; ब्रह्माण्ड. ३५.३३-३७)।

यज्ञहविर्भाग--च्यवन को अश्विनीकुमारों ने दृष्टि दी तथा जरारहित किया, इसलिये शर्याति ने उन्हें हवि दिलवाने का प्रयत्न किया। उस समय इंद्र ने बहुत बाधायें डाली, परंतु इंद्र की एक न चली, क्यों कि, जब वह वज्र मारने लगा, तब च्यवन ने उसके हाथ की हलचल बंद करा दी, तथा उसे मारने के लिये मद नामक असुर उत्पन्न किया। तब इंद्र उसकी शरण में गया, तथा अश्विनीकुमारों को यज्ञीय हवि प्राप्त करने का अधिकार दिया (म. व. १२५-१२६)।

मरुत्ताख्यान--मरुत्त ने एक बार यज्ञ किया। उसने प्रथम बृहस्पति को बुलाया परंतु इंद्र के यहां जाना है, ऐसा कह कर उसने कहा बाद में आऊंगा। तब मरुत्त ने उसके भाई संवर्त को निमंत्रित कर यज्ञ प्रारंभ किया। बृहस्पति को जब यह पता चला तब उसने इंद्रसे कहा कि, यह यज्ञ ही नहीं होने देना चाहिये। इंद्रने तुरंत धावा बोल दिया, परंतु संवर्त ने अपने प्रभाव से उसे विकलांग कर दिया। इंद्र ने वहां आने के पश्चात् स्वतः सदस्य का काम किया (म. आश्व. १०)। इसने भंगास्वन को स्त्री बना दिया (भंगास्वन देखिये)।

सागरमंथन--दुर्वासा ऋषि ने इसे एक माला दी थी। इंद्र के द्वारा उसका अनादर हुआ। 'तू ऐश्वर्य भ्रष्ट होगा,' ऐसा उसे शाप मिला। इसी समय अपने घर आये गुरु बृहस्पति का इसने उत्थापन द्वारा मान नहीं किया, इसलिये बृहस्पति वापस चले गये। बृहस्पति के आने के कोई चिन्ह न देख, नारद ने उसे बताया कि, तू शीघ्र ही ऐश्वर्यभ्रष्ट होगा। बलि इस समय इस पर आक्रमण करने निकला। इंद्र का सारा वैभव जीत कर वह ले जा रहा था। जाते जाते राह में वैभव समुद्र में गिर पडा। इंद्रादि देवताओं ने यह बात विष्णुजी से कही। विष्णु भगवान ने कहा कि, बलि को साम तथा मधुर वचनों में भुला कर उसे समुद्रमंथन करने के लिये उद्युक्त करो। इंद्र बलि के पास पाताल में गया। वहां शरणागत की तरह कुछ समय रह कर अवसर पा, बडी युक्ति से उसने बलि से समुद्रमंथन की बात कही। बलि को समुद्रमंथन असंभव लगता था। तब समुद्रमंथन किस तरह हो सकता है इस के बारेमें आकाशवाणी हुई। बलि समुद्रमंथन के लिये तयार हो गया। मंदराचल को मथनी बनने के लिये बुलवाया, तथा वह तैयार भी हो गया। तब विष्णु जी ने उसे गरुड पर रख कर लाया। ऐरावत, उच्चैःश्रवा, पारिजातक तथा रंभादि समुद्र से निकाले। चौदह रत्नों में से चार रत्न इसने लिये (भा. ६. ९; स्कंद १. १. ९)।

वृत्र उत्पत्ति--बृहस्पति लौट नहीं आ रहे थे, इसलिये इंद्र ने विश्वरूपाचार्य को उसके स्थान पर नियुक्त किया। उसकी मां दैत्यकन्या थी, इसलिये विश्वरूप का स्वाभाविक झुकाव दैत्यों की ओर था। देवताओं के साथ साथ दैत्यों को भी वह हविर्भाग देता था। इंद्र को यह पता लगते ही उसने विश्वरूप के तीनों सिर काट डाले (विश्वरूप देखिये)। अपना पुत्र मार डाला गया यह देख त्वष्टा ने इंद्रका वध करने के लिये वृत्र नामक असुर उत्पन्न किया तथा हविर्भाग उसे न मिले ऐसा प्रयत्न किया। उसने इंद्र पर कई बार चढ़ाई की तथा कई बार उसे परास्त किया। एक बार तो उसने इंद्र को निगल भी लिया। इसका कारण यह था कि, इंद्र एक बार प्रदोषव्रत में महादेव जी की पिंडी लांघ गया था (स्कन्द. १. १. १७)।

वृत्रवध--वृत्रासुर ने इंद्र को हराया इस लिये गुरु के उपदेशानुसार इंद्र ने साभ्रमती के तट पर दुर्धर्षेश्वर की प्रार्थना की। तब शंकर ने इसे पाशुपतास्त्र दिया, जिससे उसने वृत्रासुर का वध किया (पद्म. उ. १५३)। पराभव हुआ तब इंद्र शंकर की शरण गया। शंकर ने उसे वज्र दिया जिससे उसने वृत्रासुर का वध किया (पद्म. उ. १६८)। इंद्र ने वृत्रासुर के वध के लिये दधीचि से अस्थियाँ मांगी। विश्वकर्मा ने उससे वज्र तैयार किया।

षण्डामर्क, वरत्री तथा त्वष्टा इन दैत्ययाजकों को इंद्र ने जला कर मारा (ब्रह्माण्ड ३.१.८५; दधीचि देखिये)।

ब्रह्महत्या मुक्ति—विश्वरूप, वृत्रासुर तथा नमुचि इनके वध के कारण, इंद्र को ब्रह्महत्या लगी। इसलिये डर कर वह कहीं तो भी कमल के अंदर छुप गया। इस समय दो इंद्र हुए। नहुष तथा ययाति किन्तु उनका शीघ्र ही पतन हुआ (स्कंद १.१.१५)। यह ब्रह्महत्या किस तरह दूर हुई, इसका वर्णन पुराणों में भिन्न प्रकार से दिया गया है। ब्रह्महत्या के चार भाग किये गये। वे भूमि, वृक्ष जल एवं स्त्री को एक एक वरदान दे कर दिये। पृथ्वी पर आप ही आप गड्ढों का भरना तथा उस पर क्षार कर्कट के रूप में जमना, वृक्ष जहां से टूटे वहां अंकुरों का फूटना तथा गोंद का निकलना, जिसमें पानी मिलाया जाये उसका बढ़ना एवं उसमें फेन आना, स्त्रियों को गरोदर रहते हुए भी प्रसूति काल तक संभोग करने की क्षमता परंतु रजोदर्शन होना, ये वरदान तथा ब्रह्महत्या के परिणाम है (भा ६.९.; स्कंद १.१.१५; लिङ्ग. २.५१)। 'रक्षाँसि ह वा' इस मंत्र में इस संबंध में निर्देश किया गया है। ये पातक विश्वरूप की हत्या का है। परंतु पद्मपुराण में यह विवरण वृत्रासुरहत्या के पातक पर दिया गया है (३.१६८)। इसी पुराण में इन पातकों के निवारणार्थ इसने तप किया तथा पुष्कर, प्रयाग, वाराणसी आदि तीर्थों पर स्नान किया ऐसा दिया गया है (पद्म. भू. ९१)। यह पातक नष्ट हो, इसलिये इसने अश्वमेध यज्ञ किया। नमुचि के वध से लगी ब्रह्महत्या के शमनार्थ अरुणा पर स्नान किया (म. शै. ४२.३५)। इंद्रागम तीर्थ (इसके आने के कारण यह नामकरण हुआ) में स्नान करने से इसके पाप दूर हुए (पद्म. उ. १५१)। त्रिस्पृशा एकादशी के व्रत के कारण, इसके पाप दूर हुए (पद्म. उ. ३४; अहल्या देखिये)।

पुरंजयवाहन—एक बार देवासुरसंग्राम हुआ जिसमें देवताओं को असुरों पर कब्जा पाना कठिन लगा तब सूर्यवंशी पुरंजय को, मदद के लिये उन्हों ने निमंत्रित किया। पुरंजय ने कहकर भेजा कि, यदि इंद्र मेरा वाहन बने तो मैं आउंगा। इंद्र ने पहले तो आनाकानी की, पर अंत में मान गया। तथा महावृषभ का रूप धारण किया (भा. ९. ६)। हिरण्यकशिपु ने स्वर्ग जित लिया तथा देवताओं को कष्ट दिये, इसलिये विष्णु ने नृसिंह का रूप धारण कर उसका वध कर के, इंद्र को स्वर्ग वापस दिया। शत्रुओं से कष्ट न होवे, इसलिये इंद्र ने यमुना के तट पर हजारों यज्ञ किये, जिससे ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश प्रसन्न हुए (पद्म. उ. १९९)। प्रह्लाद आदि दैत्यों ने एक बार इन्द्र का स्वर्ग जीत लिया, तब रजि ने उसे वापस दिलवाया।

जयापजय—इस उपकार के लिये, तथा प्रह्लादादि दैत्यों से रक्षा होती रहे, इसलिये इसने उसे ही इंद्रपद दे दिया परंतु आगे चल कर, उसके पुत्र इंद्रपद वापस नहीं दिये, बृहस्पति ने अभिचारविधान से उनकी बुद्धि भ्रष्ट की। भ्रष्टबुद्धि के कारण वे भ्रष्टबल हो गये हैं ऐसा देख कर इंद्र ने उनका वध किया (भा. ९. १७; मत्स्य. ४४; ब्रह्म. ११)। पुराणों में नहुष कब इंद्र हुआ इस संबंध में मतभेद होने के कारण, उसका निश्चित समय ठीक समझ में नहीं आता। इंद्र एक बार बलि को जीत कर उतथ्य के आश्रम में गया। वहां उसकी सुंदर स्त्री को शैय्या पर सोये देख, उसने उससे जबरदस्ती संभोग किया। स्त्री गरोदर थी। अंतर्गत गर्भ ने अपना पतन न हो इसलिये योनिद्वार अपने पैरों द्वारा अंदर से बंद कर लिया, इस कारण इंद्र का वीर्य धरती पर गिरा। यह अपने वीर्य का अपमान हुआ देख, इंद्र ने गर्भ को जन्मांध होने का शाप दिया (दीर्घतमस् देखिये)। परंतु इसके कारण हतवीर्य होकर, इंद्र मेरु की गुफा में जा छिपा। इस समय दैत्यों ने बलि को इंद्रासन पर बैठाया। सारे देवताओं ने गुफा के पास जा कर उसे वापस लाया तथा बृहस्पतिद्वारा अक्षय्यतृतीया व्रत उससे करवा कर, उसे पूर्ववत् ऐश्वर्यसंपन्न बनाया (स्कंद. २. ७. २३; बृहस्पति देखिये)।

चित्रलेखा तथा उर्वशी को केशी दैत्य भगा ले गया। पुरूरवस् ने उन्हें छुड़ाया तथा उर्वशी इंद्र को दी (मत्स्य. २४. २५)। कितव नामक एक दुराचारी मनुष्य मृत हुआ। मरते समय उसे अपने दुराचार पर पश्चात्ताप हुआ, इसलिये यम ने उसे तीन घंटे के लिये इंद्रपद दिया। उतने समय में इसने सारी चीजें ऋषि आदि लोगों को दान में दीं। इंद्र जब फिर से इंद्रपद पर आया, तब उसने यम से सारी चीजें वापस मँगवा लीं। कितव आगे चल कर बलि हुआ (स्कंद. १. १. १९)। हिरण्यकशिपु तथा हिरण्याक्ष का वध इंद्र ने करवाया, इसलिये दिति ने इंद्रघ्न पुत्र निर्माण करने की तयारी चालू की। इंद्र ब्राह्मणवेश में उसकी सेवा करने लगा। योग्य अवसर पा कर उसने दिति के गर्भ के उनपचास टुकडे किये। तदनंतर गर्भ के बाहर आ कर सारी बात उसे

बतायी। तब उसने इनकी नियुक्ति विभिन्न वायुओं पर करवा ली, तथा बंधुभाव से उनसे व्यवहार करने का वचन ले कर इसे छोड दिया (मरुत् देखिये; मत्स्य. ७-८)। दिति ने वज्रांग नामक पुत्र उत्पन्न कर, उसे इंद्र को मारने भेजा। उसने इंद्र को बांध कर लाया तथा उसे मारने वालाही था कि, ब्रह्माजी ने बीच में पड़ कर मधुर शब्दों द्वारा उसे रोका (वज्रांग देखिये)। मेघनाद ने इंद्र को पराजित किया (इंद्रजित् देखिये)।

इंद्रने वज्रांग स्त्री वज्रांगी को कष्ट दिये। इसलिये वज्रांग ने उससे तारक नामक पुत्र उत्पन्न कर, उसे इंद्र पर आक्रमण करने भेजा। उसने इंद्र से बहुत समय तक युद्ध किया। इंद्र ने जंभासुर को पाशुपतास्त्र से मारा। तारक ने सब देवताओं को बांध कर लाया बाकी लोगों ने बंदरों का रूप धारण किया। उनके हावभावों से संतुष्ट हो कर, तारक ने सब देवताओं को छोड़ दिया। इसी समय तारक ने इंद्रपद का उपभोग लिया था (स्कंद १.१. १५-२१)। गौतम की स्त्री अहल्या ने उत्तंक को सौदास राजा के पास से कवचकुंडल लाने को कहा। राह में इंद्र ने वृषभारुढ पुरुष के रूप में उसे दर्शन दिया। उत्तंक को वृषभ का पुरीषपान करने को कहा। उत्तंक को नागलोक में अश्वारोही बन कर फिर से दर्शन दिये। अश्व का अपानद्वार उससे फुंकवाकर वासुकि आदि नागों को शरण ला कुंडल फिरसे प्राप्त करा दिये। गुरु के घर जल्दी पहुंच जावे इसलिये इंद्र ने उत्तंक को वही घोडा दिया जिसके कारण क्षणार्ध में वह गुरुगृह पहुंच गया। इस कथा में वृषभ माने अमृतकुंभ तथा उसका पुरीष, अमृत है। वह पुरुष इंद्र एवं अश्व अग्नि है (म. आ. ३)। सुमुख को इसने पूर्णायु किया इसलिये गरुड उस पर नाराज हुआ। विष्णुजी की मध्यस्थता ने इस का पक्ष सम्हाला गया (गरुड देखिये)। एक बार इंद्र तथा सूर्य भ्रमण कर रहे थे। तब एक सरोवर में स्नान करने के कारण, स्त्री बने ऋक्षरज पर यह मोहित हुआ तथा उसके केशों पर इन्द्र का वीर्य जा गिरा। इस कारण तत्काल एक पुत्र उत्पन्न हुआ। वही वाली है (वालिन् देखिये)। रामरावण युद्ध के समय जब रावण रथारूढ हो कर आया तब इन्द्र ने सारथीसहित अपना रथ भेजा था (म. व. २७४)।

यह दमयंती के स्वयंवर में गया था (म. व. ५१; नल देखिये)। इन्द्र के प्रसाद से कुंती को अर्जुन उत्पन्न हुआ (म. आ. ९०.६९)। नंदादि गोप लोगों द्वारा कृष्ण ने गोवर्धनयाग करा कर इंद्र का अपमान किया (भा. १.३-२८; १०. २५. १९; ब्रह्म. १८८)। अर्जुन से मिल कर दिव्यास्त्र प्राप्त कर लेने को कहा (म. व. ३९.४३)। कर्ण के शरीर पर कवच कुंडल होने के कारण वह अजिंक्य तथा अवध्य है ऐसा जान कर ब्राह्मणरूप से उसके पास जा, उसकी दानशूरता से संतुष्ट हो कर, उसे इसने एक अमोघ शक्ति दी (कर्ण देखिये)। सारे देवता इंद्र को छोड कर दूसरे को इंद्रपद दे रहे हैं यह देख इंद्राणी ने बृहस्पति को शाप दिया कि, तेरे जीते जी इंद्र तेरी स्त्री से एक पुत्र उत्पन्न करेगा। इस कृत्य के कारण गुरुपत्नी समागम का इसे दोष लगा (स्कंद. १.१. १९)।

इस पातक का क्षालन मृत्यु के सिवा होना संभव नहीं इस लिये, मृत्यु होने तक पानी में डूब कर रहने के लिये बृहस्पति ने कहा (स्कंद. १.१.५१)।

पुराणों में स्थान—पुराणों में इंद्र को प्रथम स्थान नहीं है परंतु त्रिमूर्ति के पश्चात् है। यह अंतरिक्ष तथा पूर्व दिशा का राजा है। यह बिजली चलाता तथा फेंकता है, इंद्रधनुष सज्जित करता है। सोम रस के लिये इसे तीव्र आसक्ति है। असुरों से युद्ध करता है। असुरों का इसे भय लगा रहता है।

अधिकार--यह रूपवान है। श्वेत अश्व या हाथी पर वज्र धारण कर सवारी करता है। प्रत्यक्ष रूप से इसकी पूजा नहीं होती है। शक्रध्वजोत्थान त्यौहार में इसकी पूजाविधि हैं। इसका निवासस्थान स्वर्ग, राजधानी अमरावती, राजवाडा वैजयंत, बाग नंदन, गज ऐरावत, घोडा उच्चैःश्रवा, रथ विमान, सारथि मातली, धनुष्य शक्रधनु एवं तलवार परंज है।

परस्पर संवाद—बृहस्पति ने बताया कि, सब गुणों का अंतर्भाव साम में होता है (म. शां. ८५.३ कुं.) उसका उपयोग शत्रु के साथ करना चाहिये (म. शां. १०४)। प्रह्लाद ने अपने शीलबल से इंद्रपद फिर प्राप्त किया। उस समय इंद्र ने मोक्षप्राप्ति का श्रेष्ठ उपाय बताया। इससे भी श्रेष्ठ ज्ञान है ऐसा शुक्र ने बताया तथा उससे भी अधिक श्रेष्ठ शील है ऐसा प्रह्लाद ने बताया (म. शां. १२४-१२९ कुं.)। इसका एक बार महालक्ष्मी से संवाद हुआ (म. शां. २१८ कुं.)। नमुचिमुनि ने भगवान के चिंतन से मिलनेवाला श्रेय इसे बताया (म. शां. २१६)। इसका महाबलि से भी संवाद हुआ था (म. शां. २१८ कुं.)। मांधाताने इसे राजधर्म बताया (म. शां. ६४ कुं.)।

युद्ध में मृत्यु अर्थात स्वर्गप्राप्ति ऐसा अंबरीष ने बताया (म. शां. ९९ कुं.)। अग्नि ने इसे ब्राह्मण तथा पतिव्रता का महत्त्व बताया (म. अनु. १४ कुं.)। शंबर राजर्षि ने इसे ब्राह्मणमाहात्म्य बताया (म. अनु. ७१ कुं.)। प्रशंसनीय क्या है यह एक शुक पक्षी ने बताया (म. अनु. ११ कुं.)। किसी भी प्रकार की नौकरी के लिये आवश्यक गुण मातलि ने इसे बताये (म. अनु. ११ कुं.)। धृतराष्ट्र गंधर्व के रूप में, गौतम ने इस से संवाद किया (म. अनु. १५९ कुं.)। ब्राह्मण्यप्राप्त्यर्थ इंद्र को उद्देशित कर, मतंग ने तप किया, जिससे उसे ब्राह्मण्य प्राप्त हुआ (म. अनु. ४.१–१६ कुं.)।

कृष्णसंबंध—कृष्ण, नरकासुर को मार कर सत्यभामासहित नंदनवन पर से जा रहा था, तब पारिजातक वृक्ष उसे दिखाई पडा, जिसे वह उखाड कर ले गया (ह. वं. २.६४)। उसने इंद्र से वह वृक्ष पहले मांगा तब इंद्र आनाकानी करने लगा। इन्द्र ने जयंतसहित कृष्ण से युद्ध किया परंतु कृष्ण ने इसे पराजित कर दिया तथा पारिजात वृक्ष ले गया (ह. वं. २.७५)। ऐसी परस्पर विरोधी घटना एक ही ग्रंथ में दी है। इसे जयंत को छोड़, ऋषभ एवं मीढुष ऐसे दो पुत्र थे (भा. ६.१८.७)।

ग्रंथनिर्मिति—इंद्र ने ब्रह्मकृत राजनीतिशास्त्र संबंधी 'वैशालाक्ष' ग्रंथ को संक्षिप्त कर, 'बाहुदंतक' नामक पांच हजार अध्यायों का संक्षिप्त ग्रंथ बनाया (म. शां. ५९.८५–८९)।

वैद्यक शास्त्र में भी इंद्र के नाम पर, अनेक औषधियों के पाठ हैं।

२. वायु का शिष्य। इसका शिष्य अग्नि (वं. ब्रा. २)।

इंद्र मुष्कवत्—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.३)।

इंद्र वैकुंठ—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.४८–५०)।

इंद्रजानु—रामचंद्रजी की सेना का एक वानर। यह ११ करोड वानरों का स्वामी था।

इंद्रजित्—लंका के राजा रावण तथा मंदोदरी का ज्येष्ठ पुत्र। नाम मेघनाद, तथापि इन्द्र को जीतने के कारन, इसका इंद्रजित् नाम पडा। इसी नाम से इसका उल्लेख सर्वत्र किया जाता है (म. व. २७०.१२; आ. रा. सा. ५३; वा. रा. उ. २९–३०)। जन्मते ही इस ने मेघ सी गर्जना की थी, इसलिये मेघनाद नाम रखा गया था (अध्या. रा. उ. १२)।

यज्ञ—मेघनाद स्वभावतः भयंकर था। युवक होते ही इसने शुक्राचार्य की सहायता से निकुंभिला में अश्वमेध तथा अग्निष्टोम, बहुसुवर्णक, राजसूय, गोमेध, वैष्णव, माहेश्वर ये सात यज्ञ किये जिससे उसे शिवप्रसाद से दिव्यरथ, धनुष्यबाण, शस्त्र, तामसी माया इत्यादि प्राप्त हुई। इसने और भी यज्ञ करने का मन में विचार किया था, परंतु रावण देवताओं से द्वेष करता था, इसलिये देवताओं को हविर्भाग देना इष्ट न था। इस कारण इंद्रजित् को और यज्ञ करते न बने (वा. रा. उ. २५)।

इंद्र पर जय—देवताओं को जीतने के लिये रावण स्वर्गलोक गया था। वहां रावण के मातामह का वध हुआ तथा पराजय के चिन्ह दिखाई देने लगे। मेघनाद ने आगे बढ कर युद्ध किया। पहले तो उसने इंद्रपुत्र जयंत को पराजित किया तथा इंद्र को शस्त्रास्त्रों से जर्जर कर, उसे बांध लिया तथा लंका ले आया। सारे देवता ब्रह्मदेव को साथ ले कर लंका गये तथा मेघनाद को, इंद्र को छोड़ देने के लिये कहने लगे। तब इसने अमरत्व मांगा। आकारवाले सारे पदार्थ नाशवान हैं इसलिये अमरत्व दुर्लभ है ऐसा ब्रह्मदेव ने कह कर दूसरा वर मांगने को कहा, इस पर उसने वर मांगा—"जब भी मैं अग्नि में हवन करुं तब अग्नि में से अश्वसहित दिव्य रथ निकला करे तथा जब तक उस रथ पर आरूढ रहूं तब तक मैं विजयी एवं अमर रहूं"। यह वर दे कर ब्रह्मदेव इंद्र को मुक्त करा कर इंद्रपद पर स्थापित किया। उस दिन से मेघनाद का इन्द्रजित् नाम पड़ा (वा. रा. उ. २९–३०)।

हनुमान से युद्ध—रावण ने सीता को लंका में लाया। तब उसका पता लगाने के लिये राम की आज्ञा से मारुति लंका में आया। उसने अशोकवन विध्वंस कर, रावण पुत्र अक्ष तथा अनेक राक्षसों को मारा। रावण के दुःख के निवारणार्थ इंद्रजित् ने वहाँ जा कर, मारुति को ब्रह्मास्त्र से बद्ध कर रावण की सभा में लाया। वास्तव में ब्रह्मास्त्र का मारुति पर कुछ भी परिणाम नहीं हुआ था यह बात इंद्रजित् को भी समझ गयी थी। मारुति ने रावण की सभा देखने, तथा उसका भाषण सुनने के उद्देश्य से मैं बद्ध हुआ हूं ऐसा दर्शाया। धर्मबल की सहायता से इंद्रजित् ने यह भी जान लिया था कि, मारुति को अमरत्व प्राप्त है। रावण की सभा में हनुमान को जला देने की सलाह उसके मंत्रियों ने दी परंतु बिभीषण ने सलाह दी कि, वानरों को पूंछ प्रिय होती है, अतः हनुमानजी की पूंछ जलाई जाये (वा. रा. सुं. ४८.५२)।

बिभीषण की भर्त्सना—बिभीषण ने रावण को सलाह दी कि, सीता को राम के पास पहुंचा कर राम से मित्रता कर लें। यह बात किसी को नहीं रुची। उस समय इंद्रजित् ने बिभीषण की बहुत भर्त्सना की। इस पर बिभीषण ने इंद्रजित् को युद्ध से परावृत्त होने का उपदेश दिया।

नागपाश—सीता की खोज लगाने पर मारुति किष्किंधा गया। रामचंद्रजी सुग्रीव की वानरसेनासहित लंका आये तब इंद्रजित् ही प्रथम युद्ध करने आगे आया। अंगद से उसका युद्ध हुआ, जिसमें यह अदृश्य हो कर लड़ता रहा तथा रामलक्ष्मण को नागपाश में बांध कर, सारी वानर सेना को मूर्च्छित कर लंका चला गया (वा. रा. यु. ४५)।

युद्ध—देवांतक, नरांतक आदि रावणपुत्र, कुंभकर्ण, महापार्श्व, महोदर इ. जब मारे गये, तब रावण बहुत दुखित हुआ। उस समय इंद्रजित् उसे सांत्वना दे कर युद्ध करने चल पड़ा। पहले यह शस्त्रास्त्रों को अभिमंत्रित करने निकुंभिला गया। युद्धभूमि पर आ कर राम की सेना को गुप्त रूप से कष्ट देने लगा तथा इस युद्ध में उसने सडसठ करोड़ वानरों को एक प्रहर में मार डाला राम एवं लक्ष्मण को मूर्च्छित कर, लंका वापस चला गया (वा. रा. यु. ७३)।

मायावी युद्ध—मकराक्ष की मृत्यु के बाद, रावण ने इसे फिर से, युद्ध करने के लिये भेजा। राम की सेना को बहुत कष्ट दिये। मायावी सीता को निर्माण कर उसे रथ पर बैठाया, जो दीनवाणी में राम राम कह रही थी। फिर उसका उसने वध किया, जिससे राम तथा अन्य लोग दुखित हुए (वा. रा. यु. ८१)।

दिव्यरथ—बिभीषण ने सबको सांत्वना दी कि, यह सारी घटना मायावी है। तत्पश्चात् इंद्रजित् निकुंभिला जा कर हवन करने लगा। इस कार्य में कोई विघ्न उपस्थित न हो इसलिये उसने बहुत से राक्षसों को रक्षा करने को रखा। बिभीषण की सूचनानुसार रामचंद्रजी ने लक्ष्मण तथा हनुमान को, वानर सेना दे कर, निकुंभिला भेजा। उन लोगों ने राक्षसोंका संहार कर यज्ञभंग किया। इंद्रजित् का यज्ञ पूर्ण होनेवाला ही था अतः उसने ध्यान नहीं दिया, परंतु जब वानरों ने उसके शरीर को छिन्नविच्छिन्न करना प्रारंभ किया, तब विवश हो कर वह क्रोधित हो कर उठा, तथा वानरों को उसने मार भगाया। अदृश्य होने के लिये यहाँ उसका वटवृक्ष था। उस बाजू वह जाने लगा, तब बिभीषण ने हनुमानादि वानरों को उसे रोकने के लिये कहा। बिभीषण के कारण यह सारा हो रहा है यह जान कर, इंद्रजित् उसका वध करने के लिये प्रवृत्त हुआ। स्वकीयों से युद्ध करने प्रवृत्त हुए बिभीषण की उसने निर्भर्त्सना की।

वध—यह संवाद चल ही रहा था कि, लक्ष्मण ने बीच में पड़ कर इंद्रजित् से युद्ध चालू कर दिया। पहले सारथी को मार गिराया। तब इंद्रजित् स्वतः सारथ्य तथा युद्ध दोनों करने लगा। उसी समय प्रमाथी, रभस, शरभ तथा गंधमादन इन चार वानरों ने इसके चार घोडे मार डाले। तब इंद्रजित् दूसरे रथ पर बैठ कर आया देख बिभीषण ने लक्ष्मण को सावधानी से युद्ध करने को कहा। इंद्रजित् तथा लक्ष्मण का घमासान युद्ध तीन दिनों तक हुआ। इंद्रजित् मरता नहीं है इसलिये लक्ष्मण ने ऐंद्रास्त्र हाथ में ले, प्रतिज्ञा की कि यदि श्रीराम धर्मात्मा तथा सत्य प्रतिज्ञ होंगे, तो इस बाण से इंद्रजित् मरेगा। यह कह कर लक्ष्मण ने अस्त्र छोड़ा जिससे इंद्रजित् का किरीट-कुंडलयुत सिर जमीन पर आ गिरा (म. व. २७२-२७३)। राक्षस सेना पीछे हट गयी तथा भाग कर लंका में जा इंद्रजित् की मृत्यु का समाचार रावण को दिया। वानरों ने उसका सिर उठा लिया और राम को दिखाने के लिये सुवल पर्वत की ओर ले गये (वा. रा. यु. ८६–९२)। सासससुर की आज्ञा से इंद्रजित् की स्त्री सुलोचना ने सहगमन किया (आ. सार. ११)।

२. दनुपुत्र दानवों में से एक।

इंद्रजिह्व—रावणपक्ष का राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

इंद्रतापन—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. वरुण की सभा का एक असुर (म. स. ९)।

इंद्रदत्त—एक स्मृतिकार। इसने इंद्रदत्त स्मृति की रचना की हैं (C. C.)।

इंद्रद्युम्न—एक राजर्षि (म. स. ८.१९)। पुण्य समाप्त हो जाने के कारण मृत्युलोक में आया, तथा अपनी कीर्ति नष्ट हुई या नहीं, यह जानने के लिये मार्कंडेय, हिमालय पर रहनेवाले प्रावारकर्ण उलूक, इंद्रद्युम्न सरोवर के नाडीजंघ बक तथा उसी सरोवर में रहनेवाले अकूपार कछवे की तरह के एक से एक वृद्ध लोगों के पास जा कर उसकी कीर्ति उन्हें मालूम है या नहीं यह पूछा। अंत में अकूपार कछुवे ने बताया कि, इंद्रद्युम्न की कीर्ति एक बडे यज्ञकर्ता के नाते प्रसिद्ध है। कीर्ति के रहते, एक मनुष्य का अस्तित्व रहता है यह बताने के लिये मार्कंडेय ने यह कथा पांडवों को सुनाई (म. व. १९१)।

२. कृतयुग का विष्णुभक्त राजा। इसकी राजधानी उज्जयिनी थी। यह ओढ्र देश के पुरुषोत्तम क्षेत्र में जगन्नाथ जी के दर्शन के लिये गया, तब जगन्नाथ रेत में गुप्त हो गये। तब यह नीलाद्रि पर जा कर प्रायोपवेशन करनेवाला था कि, दर्शन होगा, ऐसी आकाशवाणी हुई। इसने अश्वमेध कर नृसिंह का उत्कृष्ट मंदिर बनवाया। इसने नारद ने लायी हुई नृसिंह की मूर्ति की स्थापना ज्येष्ठ शुक्ल द्वादशी के दिन स्वाति नक्षत्र के समय की। राजा को स्वप्न में नीलमाधव के दर्शन हुए। आकाशवाणी हुई कि, समुद्र में जड वाली एक सुगंधित वृक्ष की चार मूर्तियां बनाओ १. विष्णु, २. बलराम, ३. सुदर्शन (रक्तवर्ण), ४. सुभद्रा (केशरिया), तदनुसार वै. शु. अष्टमी को पुण्यनक्षत्र के समय उसने मूर्तियों की स्थापना की (स्कंद. २.२.७-२९)। समुद्र पर से बह कर आने वाली लकड़ियों में से विशेष महत्वपूर्ण लकड़ियों से मूर्ति बनाने के लिये इसे दृष्टांत हुआ। एक लकड़ी से कृष्ण की काले रंग की, बलराम की सफेद रंग की तथा सुभद्रा की पीले रंग की मूर्ति बना कर, इसने जगन्नाथपुरी में उनकी स्थापना की (नारद. २.५४; ब्रह्म. ४४-५१)।

३. मगध देश का राजा। इसकी स्त्री का नाम अहल्या। वह इंद्र नामक ब्राह्मण के साथ व्यभिचार करती थी। उसे अनेक दंड दिये। अंत में उसका स्थूल शरीर जला देने पर भी, उसकी मानसिक तन्मयता नष्ट नहीं हुई (यो. वा. ३. ८९-९०)।

४. पांड्य देश का राजा। यह एक बार तप कर रहा था तब वहां अगस्त्य ऋषि आये परंतु ध्यानस्थ राजा उन्हें देख न सका इस कारण, मुनि को क्रोध हुआ। उसने, 'तू मत्त हो गया है इसलिये मदोन्मत्त हाथी हो' ऐसा उसे शाप दिया जिसे सुन कर राजा ने उनकी प्रार्थना की। तब उसने उश्शाप दिया कि, मगर जब तुझे पानी में पकडेगा तब विष्णु के द्वारा तेरी मुक्ति होगी। देवल मुनि के शाप से हुहु नामक गंधर्व त्रिकूट पर्वत के सरोवर में मगर बनकर रहता था। उसने इस हाथी को पानी में पकड़ा। विष्णु ने तब उस मगर को मार कर हाथी को मुक्त किया (पद्म. उ. १३२; भा. ८-४; आ. रा. सार. ९)।

५. (सो. निमि.) इसे ऐंद्रद्युम्न नामक एक पुत्र था।

६. रुक्मी के पक्ष का एक क्षत्रिय। रुक्मिणीस्वयंवर के समय कृष्ण ने इसे सुदर्शन चक्र से मारा (म. स. ६१. ६ कुं.)।

७. धर्मराज जब बकदाल्भ्य के यहां गया था तब उसने अन्य ब्राह्मणों सहित इसका सम्मान किया। पांडव इस समय द्वैत वन में थे (म. व. २७.२२)।

८. विष्णु पुराण के अनुसार नाभि वंश के सुमति का पुत्र।

इंद्रद्युम्न भाल्लवेय वैयाघ्रपद्य—अग्निवैश्वानर का क्या धर्म है, इसके बारे में अन्य पुरोहितों के साथ यह सहमत नहीं होता था। अश्वपति कैकेय ने इसे विद्या दी थी (छां. उ. ५.११.१; १४.१)। भाल्लवेय को धर्मविधि में मान है।

इंद्रद्रुमि—एक ऋषि (म. शां. २४०.१८ कुं.)।

इंद्रधन्वन्—बाणासुर एवं लोहिनी का पुत्र।

इंद्रपाल—ब्रह्महोमवंशी हविर्होत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र माल्यवान्। इसने इंद्रवती नगर बसाया (भवि. प्रति. ४.१)।

इंद्रपालित—(मौर्य. भविष्य.) ब्रह्मांडमतानुसार बंधुपालित का पुत्र।

इंद्रप्रमति—पैल ऋषि का शिष्य। पैल ने, उसे ज्ञात ऋग्वेद के दो भाग कर एक भाग इंद्रप्रमति को सिखाया। इसे मांडुक्य नामक एक शिष्य था (व्यास देखिये)।

इंद्रप्रमति वासिष्ठ—वसिष्ठकुल का एक ऋषि। ऋग्वेद में इसकी दो ऋचायें तथा एक सूक्त है (ऋ. ९. ९७.४-६; १०.१५३)। चंद्रसंपति इसका पाठभेद है। कुणीति इसका नामांतर था। वसिष्ठ तथा घृताची का पुत्र। पृथु की कन्या इसकी स्त्री थी (ब्रह्माण्ड ३. ९, ८-१०)। यह श्रुतर्षि था। मंत्रकार भी था (वायु. ५९. १०५-१०६; ब्रह्माण्ड, २.३२. ११५-११६)। इसे इंद्रप्रतिम भी कहते है। कापिंजल्य, त्रिमूर्ति इसके नामांतर है। इसका पुत्र भद्र।

इंद्रबाहु—दृढदस्यु का नामांतर (मत्स्य. १४५. ११४)। यह अगस्त्य गोत्र का मंत्रकार था। विध्मवाह इसे नामांतर है।

इंद्रभू काश्यप—मित्रभू का शिष्य। इसका शिष्य अग्निभू (वं. ब्रा. २)।

इंद्रमातृ देवजामि—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५३)।

इंद्रमालिन्—उपरिचर वसु का नामांतर।

इंद्रवर्मन्—भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा। इसके पास अश्वत्थामा नामक नामांकित हाथी था। यह मालवा का राजा था (म. द्रो. १९१; द्रोण देखिये)।

इंद्रवाह--(सू. इ.) विकुक्षि का पुत्र। ककुत्स्थ इसका नामांतर है।

इंद्रसख--(सो. अज.) वायु के मतानुसार कृत-राजा का पुत्र। इसे चैद्योपरिचर ऐसा दूसरा नाम भी है (उपरिचर वसु देखिये)।

इंद्रसावर्णि—एक मनु (मनु देखिये)।

इंद्रसेन--(स्वा. प्रिय.) ऋषभदेव तथा जयंती का पुत्र।

२. (सू. नरिष्यंत.) कूर्च राजा का पुत्र। इसका पुत्र वीतिहोत्र।

३. (सो. नील.) ब्रह्मिष्ठ का पुत्र। इसका पुत्र विंध्याश्व।

४. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९.४८)।

५. सुतल का दैत्य (भा. १०.८५.५२)।

६. युधिष्ठिर का सारथि।

७. पांडव का दूत (म. स. १२.३०.३०.३०; व २५३. १०; स्त्री. २६.२५)। इसे पांडवों ने द्वारका भेजा था (म. वि. ४.३)।

८. नल राजा का पुत्र (म. व. ५७.२१)।

९. कौरवपक्षीय एक क्षत्रिय (म. द्रो. १३१.८५)।

१०. माहिष्मती का राजा। नारद के कथनानुसार आश्विन कृष्ण की इंदिरा एकादशी का व्रत कर इसने अपने यमलोक में रहनेवाले पिता को स्वर्ग पहुँचाया (पद्म. उ. ५८)।

इंद्रसेना—नल राजा को दमयंती से उत्पन्न कन्या (म. व. ५३-१०)।

२. पांचालवंशीय ब्रह्मिष्ठ राजा की पत्नी तथा वध्र्यश्व की माता। ब्रह्मिष्ठ मुद्गल का नाम होगा। ऋग्वेद में मुद्गलानी इन्द्रसेना का उल्लेख है। उसका पिता भर्म्यश्वपुत्र मुद्गल ही है (ऋ. १०.१०२.२; मुद्गल देखिये)।

३. बाभ्रवी इसका पैतृक नाम है। यह नरिष्यन्त की पत्नी तथा दम की माता (३ वपुष्मत् तथा ३ मौद्गल्य देखिये)। नरिष्यन्त के वध के पश्चात् यह सती गयी।

इंद्रस्नुषा—यह एक ऋचा की द्रष्ट्री है (ऋ. १०. २८.१)।

इंद्रस्पृश—(स्वा.) ऋषभ को जयंती से उत्पन्न पुत्र।

इंद्राणी—ऋग्वेद में इसकी अनेक ऋचायें है (ऋ. १०.८६.२; ६)। पुत्रेच्छा से गौरीव्रत करते ही, इसे जयंत पुत्र हुआ (भवि. ब्राह्म. २२; शची देखिये)।

इंद्राभ—(सू. दिष्ट.)। धृतराष्ट्र का पुत्र। वैचित्रवीर्य धृतराष्ट्र का पुत्र नहीं है।

इंद्रोत--यह सुदास का पुत्र होगा (ऋ. ८. ६८. १७)। यहाँ प्रियमेध अंगिरस ने दाता रूप में इसकी स्तुति की है। अतिथिग्व के साथ भी इसका संबंध प्रतीत होता है।

२. वृषशुष्ण का शिष्य। इसका शिष्य दृति (वं. ब्रा. २)।

३. (सो.) पांचाल वंशीय दिवोदास का पुत्र।

इंद्रोत दैवाप शौनक--इसने जनमेजय के अश्वमेध यज्ञ में पौरोहित्य किया था (श. ब्रा. १३.५.३.५; ४.१; सां. श्रौ. १६.७.७; ८.२७)। जनमेजय का पुरोहित तुर कावषेय था (ऐ. ब्रा. ८.२१) यह श्रुतय का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४०.१)। यह भृगुकुल का था। इसने जनमेजय को गार्ग्य मुनि के शाप से अश्वमेध करवा के मुक्त किया (म. शां. ४६.२; ब्रह्म. १२; ह. वं. २.१३)।

इरा—४ इला देखिये।

२. एक अप्सरा (म. स. १०.११)।

३. दक्ष तथा असिक्नी की कन्या। यह कश्यप की पत्नी। लता, अलता, वीरुधा इसकी कन्यायें हैं।

इरावत्—पंडुपुत्र अर्जुन को ऐरावत नाग की स्नुषा उलूपी से उत्पन्न पुत्र। इसका बाल्यकाल नागलोक में ही बीता। आगे चल कर इसका अपने चाचा (ऐरावत नाग का दूसरा पुत्र अश्वसेन) के साथ हमेशा झगड़ा होने लगा तथा अश्वसेन ने इसे भगा दिया। अर्जुन उस समय देवलोक में इन्द्र के पास गया हुआ था। तब इरावान् स्वर्ग में अर्जुन के पास गया। वहाँ दोनों पितापुत्र का मिलन हुआ। भारतीययुद्ध में इरावान् ने काफी पराक्रम कर के कौरवसेना को थका दिया। इसने शकुनि के छः भाइयों का वध किया। परंतु आगे चल कर वह आर्श्यशृंगि नामक राक्षस के हाथों मारा गया (म. भी. ८६. ७०; वृषक देखिये)।

इरावती—अर्जुनपौत्र परीक्षित् राजा की पत्नी। यह विराटपुत्र उत्तर की कन्या।

२. ब्रह्मदेव ने मार्तंड का गर्भ द्विधा किया। उसका बल इसने नाभि के पास रखा। इससे उसे चार पुत्र हुए। वे अंजन, ऐरावत, कुमुद तथा वामन दिग्गज हैं (ब्रह्मांड. ३. ७.२९२)। इरावती का विस्तृत वंश ब्रह्मांड में है तथा

वहाँ उनकी अन्य जानकारी भी हैं। परंतु वह सब हाथी की है। अतएव यहाँ दी नहीं जाती।

इल--वैवस्वत मनु (श्राद्धदेव) तथा श्रद्धा को पुत्र न होने के कारण उन्होंने वसिष्ठ के द्वारा मित्रावरुणों को उद्देशित कर पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। अनुष्ठानकाल में श्रद्धा केवल दूध पी कर रहती थी। होता से उसने कहा कि, मुझे कन्या चाहिये। हवन होने के बाद इसे इला नामक कन्या हुई। परंतु मनु की इच्छानुसार वसिष्ठ ने इसे पुरुष बनाया। तब इसका नाम इल अथवा सुद्युम्न रखा गया। आगे चल कर यह परिवारसहित मृगया के हेतु अरण्य में गया। शंकरशाप जिसे था ऐसे शरवन में जाने के कारण यह परिवारसहित स्त्री बन गया। इस अवस्था में उसे बुध से पुरूरवस् नामक पुत्र हुआ। आगे चल कर वसिष्ठ की कृपा से यह एक महिना पुरुष तथा एक महिना स्त्री रहने लगा (मत्स्य. ११-१२; पद्म. पा. ८. ७५-१२५)। इसका कारोबार विशेष प्रिय न था। इसके बाद पुरूरवस् गद्दी पर बैठा। इसके प्रदेश को इलावृत्त कहते है (भा. ९. १ दे. भा. १.१.१२; ब्रह्माण्ड. ३.२९)। यह कर्दम प्रजापति का पुत्र तथा बाल्हिक का राजा। बुध की प्रेरणा से संवर्त की देखरेख में मरुत्तने अश्वमेध कर के, इसे पुनः पुरुष बनाया (वा. रा. उ. ८. ७-९०)। अरुणाचलेश्वर की उपासना से यह पुरुष हुआ (स्कन्द. १. ३. १-६)। एक यक्ष की गुफा इलद्वारा ले ली जाने के कारण, अपनी पत्नी के द्वारा इसे उमावन में ले जा कर उसने इसे स्त्री बना दिया। वहाँ इसे बुध से पुरूरवस् नामक पुत्र हुआ। गौतमी नदी में स्नान करने पर यह पुनः पुरुष बना (ब्रह्म. १०८)। इसकी राजधानी प्रतिष्ठान थी। इसे पुरूरवस् छोड़ कर उत्कल, गय तथा विमल नामक तीन पुत्र थे। विमल के लिये हरिताश्व, विनताश्व तथा विनत नाम प्राप्त हैं। इल मनु के दस पुत्रों में से ज्येष्ठ। नौ पुत्र थे, दशम की प्राप्दि के लिये यज्ञ किया परंतु पत्नी की इच्छानुसार इला नामक कन्या हुई तथा उसे बुध से पुरूरवस् हुआ। आगे चल कर पुरुष, स्त्री, पुनः पुरुष हुआ (वायु. ८५. २७; ब्रह्माण्ड. ३. ६०. २७)। इला को पुरुषत्व प्राप्त हो कर पुनः स्त्रीत्व प्राप्त हुआ। यह बुध से संबंध आने के पहले ही हुआ (इला तथा सुद्युम्न देखिये)।

इलक--मध्यमाध्वर्यु देखिये।

इलविल--(सू. इ.) शतरथ राजा का नामांतर।

इलविला--तृणबिंदु तथा अलंबुषा की कन्या, पुलस्त्य की पत्नी तथा विश्रवस् की माता (ब्रह्माण्ड. ३. ८. ३८)।

इला--वैवस्वत मनु की कन्या (म. आ. ९०.७; ह. वं. १.१०; ब्रह्म. ७; मत्स्य. ११; भा. ९.१)। मित्रा-वरुणों के अंश से उत्पन्न होने के कारण यह उनके पास गई। तब तुम हमारी ही कन्या हो, आगे चल कर तुम सुद्युम्न बनोगी ऐसा उन्होने कहा। तब यह वापस लौट आई। राहमें बुध से यह मिली। बुध से इसे पुरूरवस् नामक पुत्र हुआ। देवी भागवत में उल्लेख है कि सुद्युम्न की इला हुई तथा श्रीमद्भागवत में उल्लेख है कि इला से सुद्युम्न हुआ (इल देखिये)।

२. वायु की कन्या। उत्तानपाद ध्रुव की दूसरी स्त्री। इसे उत्कल नामक पुत्र था।

३. वसुदेव की स्त्रियों में से एक।

४. प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या है। यह कश्यप को भार्यार्थ दी थी। इससे वृक्षादिक हुए (भाग. ६.६)। भागवत छोड़ कर इतरत्र इरा नाम प्राप्त है।

इलावर्त--(स्वा.)। ऋषभ को जयंती से उत्पन्न पुत्र। यह नब्वे पुत्रों में ज्येष्ठ था।

इलावृत--प्रियव्रत राजा का पौत्र तथा आग्नीध्र को उपचिति अप्सरा से उत्पन्न पुत्र। इसका वर्ष इसी के नाम से प्रसिद्ध है। यह वहाँ का अधिपति था।

इलिन--(सो. पूरु.) एक क्षत्रिय। त्रस्नु अथवा तंसु इसका पुत्र। मत्स्य के मतानुसार यह अमूर्तरय का पुत्र है। माता का नाम कालिंदी तथा पत्नी का नाम रथंतरी था (म. आ. ९०.२८)। पुत्रों के नाम १. दुष्यंत, २. शूर, ३. भीम, ४. प्रवसु, ५. वसु (म. आ. ८९. १५; इलिल देखिये)।

इलिना--इसका नाती दुष्यंत (ब्रह्माण्ड. ३.६)। महाभारत में इलिन नामक पुरुष है।

इलिल--इलिन, ईलिन, मलिन, अनिल तथा यह एक ही हैं।

इलूष--कवष देखिये।

इल्वल--हिरण्यकश्यपु का पौत्र। ह्राद को धमनी से उत्पन्न पुत्रों में से एक (भा. ६.१८. १५)।

२ तेरह सैंहिकेयों में से पंचम तथा वातापी का बड़ा भाई। यह मणिमती नगरी में रहता था। एकबार इल्वल ने इन्द्रतुल्य पुत्र की प्राप्ति के लिये एक ऋषी से प्रार्थना

की। वह उसके द्वारा अमान्य की जाने पर आदरातिथ्य के मिस ब्राह्मणों को बुला कर मार डालने का क्रम इसने प्रारंभ किया। ब्राह्मण का आगमन होते ही यह उसका आदर करता था। तदनंतर मेष बने हुए अपने वातापी बंधु का पाक बना कर उसे भोजन देता था। ब्राह्मण जब जाने लगते थे तब उसका शरीर विदीर्ण करके वातापी बाहर आता था तथा ब्राह्मण की मृत्यु हो जाती थी। इस प्रकार से इसने सहस्रावधि ब्राह्मणों को मार डाला। एकबार जब अगस्त्य को द्रव्य की अपेक्षा थी, वह क्रम से श्रुतार्वा, ब्रध्न्यश्व तथा त्रसदस्यु नामक तीन राजाओं के पास गया। परंतु वहाँ द्रव्य प्राप्ति न होने के कारण, उनके सहित यह इल्वल के पास आया। उसे देख कर नित्यानुसार इसने अगस्त्य की कपट पूर्वक पूजा कर, उसे भोजन के लिये रख लिया। अगस्त्य की कपट पूर्वक जान कर संपूर्ण पाक का भक्षण स्वयं ही कर लिया, तथा वातापि को उदर में जीर्ण किया। यह जान कर इल्वल अगस्त्य के पास प्राण दान के लिये प्रार्थना करने लगा। तब अगस्त्य ने अभय दे कर उसे कहा कि हम चारों द्रव्यार्थी है। अतएव द्रव्य दे कर हमें मार्गस्थ करो। तब इसने त्रिवर्ग राजाओं को विपुल संपत्ति दे कर अगस्त्य को उनसे द्विगुणित दी तथा सबको मार्गस्थ कर ब्राह्मणों का द्वेष छोड़ दिया। इसे वल्वल नामक पुत्र था (म. व. ९४)।

रामायण में अगस्त्य के सामर्थ्य का वर्णन करते समय इल्वल तथा वातापि की कथा राम ने लक्ष्मण तथा सीता को बताई। नित्य श्राद्ध में अगस्त्य ने जा कर वातापी को पेटमें पचा लिया तथा इल्वल के क्रोध से आक्रमण करते ही, उसे भी दृष्टि से भस्म कर दिया (वा. रा. अर. ११.६८; म. व. ९७.४९. म. ३ *)। परंतु इल्वल को परशुराम ने मार ड़ाला (ब्रह्माण्ड ३.६.१८-२२)।

इष--(स्वा. उत्तान.) वत्सर को स्वर्वीथी नामक भार्या से उत्पन्न छः पुत्रों में से एक।

२. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

३. सुधामान नामक देवगणों में से एक।

इष आत्रेय—सूक्तों का द्रष्टा (ऋ. ५.७-८)।

इष श्यावाश्वि—यह अगस्त्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ४१.६.१)।

इषिकहस्त--पराशर कुल का गोत्रकार.

इषीक--इसने तुंबरु नामक गंधर्व की उपासना करने के लिये बता कर शिखंडी को पुरुषत्व प्राप्त करा दिया (म. आ. ११०.२३ कुं.)।

इषरिथ—विश्वामित्र का मूल पुरुष (विश्वामित्र देखिये)।

इषुपात्—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

इषुफलि—अष्टकाकर्म में तंत्र किया जावे ऐसा इसका मत है (कौ. सू. १३८.१६)।

इषुमत्—(सो. यदु. वृष्णि) देवश्रवस् को कंसावती से उत्पन्न पुत्र।

ई

ईडच--सावर्णि मनु के उत्पन्न होनेवाले पुत्रों में से एक।

ईदृश्—दितिपुत्र मरुतों के पांचवे गणों में से एक (ब्रह्माण्ड ३.५.९६)।

ईलिन—(सो.) तंसु का पुत्र (म. आ. ८८; इलिल देखिये)।

ईशान—इस नाम के एक संन्यासी ने विश्वेश्वर की आराधना की। शंकर ने प्रसन्न हो कर कहा कि जिस स्थान पर तुमने तप किया, उस स्थान को ज्ञानवापी कहेंगे (स्कंद २.४.१.३३)।

२. देवों के हिरण्याक्ष के साथ हुए युद्धमें इसका वध वायु ने किया (पद्म. सृ. ७५)

ईश्वर—सुरभि तथा कश्यप के पुत्रों में से एक।

२. (सो. पूरु.) पूरु तथा पौष्टी का पुत्र (म. आ. ८८)

३. भारतीय युद्ध में दुर्योधन पक्षीय राजा। यह क्रोध वश असुरांश से जन्मा था (म. आ. ६१.६०)।

उ

उकूल—अंगिरस गोत्रीय एक मंत्रकार।

उक्त—(सो. कुरु. भविष्य)। भागवत के मतानुसार यह निमिचक्रपुत्र है।

उक्थ—स्वाहा का पुत्र।

२. (सू. इ.) विष्णु के मतानुसार यह शलपुत्र है। परंतु भविष्य के मतानुसार यह छझकारीपुत्र। इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

उक्षण्यायन--हरयाण तथा सुषामन् के साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ८.२५.२२) व्यश्वपुत्र विश्वमनस् कृत दानस्तुति में यह सुषामन् का पैतृक नाम है।

उक्षणोरंध्र काव्य—एक द्रष्टा (पं. ब्रा. १३. ९. १९)।

उख--तैत्तिरीयों के पितृतर्पण में आने वाला एक आचार्य। पितृतर्पण में इसका समावेश होने का कारण यह होगा कि, यह हिरण्यकेशियों के से मिलतीजुलती शाखा प्रवृत्त करनेवाला था (स. गृ. २०.८-२०; चरणव्यूह)। पाणिनी ने शाखा प्रवर्तक कह कर इसका उल्लेख किया है।

उख्य--उच्चार तथा संधि के संबंध में कुछ अलग ही मतों का प्रतिपादन करनेवाला एक आचार्य (तै. प्रा. ८. २२; १०. २०; १६. २३)।

उग्र--यातुधान पुत्र। इसका पुत्र वज्रहा।

२. वारुणि कवि के आठ पुत्रों में कनिष्ठ।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसे मारा (म. द्रो. १३२. ११३५*)। भां. सं. में उग्रयायिन् पाठ है।

४. दिति का पुत्र तथा तीसरे मरुद्गणों में से एक (ब्रह्माण्ड. ३. ५. ९४)।

५. अमिताभ देवों में से एक।

६. भौत्य मनु का पुत्र।

उग्रक—कद्रूपुत्र।

उग्रतप—एक ऋषि। एकबार इसने गोपियों के साथ शृंगारमग्न कृष्ण का ध्यान किया। इस कारण इसने गोकुल में सुनंद नामक गोप की कन्या के रूप में जन्म लिया तथा उस स्थान में इसने श्रीकृष्ण की उत्कृष्ट सेवा की (पद्म. पा. ७२)।

उग्रतीर्थ--भारतीय-युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. आ. ६१. ६०)।

उग्रदंष्ट्री--(स्वा. प्रिय.) मेरु की कन्या तथा आग्नीध्रपुत्र हरिवर्ष की पत्नी।

उग्रदृष्टि--स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित् देवों में से एक।

उग्रदेव--तुर्वश तथा यदु के साथ इसका उल्लेख है (ऋ. १. ३६. १८; पं. ब्रा. १४. ३. १७; २३. १६. ११)। इसका पैतृक नाम राजनि (तै. आ. ५. ४. १२)।

उग्रधन्वन्--साल्वराजा। भीम ने इसका वध किया (म. क. ४. ४०)।

२. यह कैकय का सेनापति था। इसका कर्णपुत्र सुषेण से युद्ध हुआ था। उसमें सुषेण मारा गया (म. क. ६०. ४)।

उग्रपुत्र वैदेह--गार्गी ने याज्ञवल्क्य को प्रश्न पूछते समय, इसका उत्तम धनुर्धारी कह कर उल्लेख किया है। यह व्यक्ति का नाम न हो कर सामान्य निर्देश है। (बृ. उ. ३. ८. २)।

उग्रंपश्या—एक अप्सरा (तै. आ २. ४)।

उग्रवीर्य—महिषासुरानुयायी असुर।

उग्रश्रवस्—लोमहर्षण सूत का पुत्र। इसे सौति लोमहर्षणि भी कहते हैं (म. आ. १. १)।

२. धृतराष्ट्रपुत्र (म. आ. परि. १.४१. पंक्ति. १९)।

उग्रसेन--भीमसेन तथा श्रुतसेन के साथ एक पारिक्षितीय तथा जनमेजय का भाई ऐसा इसका निर्देश है। यह अश्वमेध कर के पापमुक्त हो गया (श. ब्रा. १३.५. ४.३; जनमेजय देखिये)। यह तथा छठा एक नही है।

२. कश्यप को मुनी से उत्पन्न देवगंधर्वों में से एक। यह सूर्य का सहचर है।

३. (सो. यदु. अंधक) आहुक राजा के दो पुत्रों में दूसरा। इसकी पत्नी का नाम पद्मावती (पद्म. भू. ४८. ५१)। इसे कंस, सुनामा, न्यग्रोध, कंक, शंकु, सुहू, राष्ट्रपाल, सृष्टि तथा तुष्टिमान् नामक नौ पुत्र, उसी प्रकार कंस, कंसावती, कंका, शूरभू तथा राष्ट्रपालिका नामक पांच कन्यायें थीं। यह पांच वसुदेव के देवभागादि नौ भ्राताओं में से पांच भ्राताओं की स्त्रियाँ थीं। उसका

ज्येष्ठ पुत्र कंस अत्यंत दुष्ट होने के कारण उसने इसे बंदीगृहमें रखा था। कंस का कृष्णद्वारा वध होने के बाद कृष्ण ने इसे पुनः मथुरा की गद्दी पर बैठाया (भा. १०. ४५)।

४. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक (म. आ. परि. १.४१, पंक्ति. १९)।

५. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा।

६. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९.४८)।

७. पांडवो में से अर्जुन का पौत्र परीक्षित् उसके चार पुत्रों में से एक। जनमेजय का बंधु।

८. स्वर्भानु का अंशभूत क्षत्रिय (म. आ. ३. १; ६१. १३)।

९. पुष्करमालिन् देखिये।

उग्रसेना--अक्रूर के स्त्रियों में से एक।

उग्रहय--राम के अश्वमेधीय घोड़े का रक्षण करने के लिये यह लक्ष्मण के साथ गया था (पद्म. पा. १२)।

उग्रा—सिंधु दैत्य की माता का नाम (गणेश. २. १२४)।

उग्राय—महिषासुर की ओर का एक असुर।

उग्रायुध—(सो. द्विमीढ.) भागवत के मतानुसार नीप का पुत्र। परंतु अन्यों के मतानुसार कृत का पुत्र। इसे क्षेम्य नामक पुत्र था। इसने १०१ नीपों का नाश किया। इसने आठ हजार वर्षों तक तपस्या की थी। इसे यम ने तत्त्वज्ञान सिखाया (मत्स्य. ४९. ५८. ६९)। इसने भल्लाटपुत्र जनमेजय का वध किया था। शंतनु की मृत्यु के बाद इसने सत्यवती की मांग की। इससे क्रोधित हो कर भीष्म ने इसका वध किया (ह. वं. १. २०)।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक (म. आदि. परि. १.४१; पंक्ति. १६)।

३. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय एक राजा.

४. कर्ण के द्वारा मारा गया पांडवपक्षीय एक राजा (म. क. ४०.४६)। यह द्रौपदी स्वयंवर में था (म. आ. ७७.३)।

उग्रास्य—महिषासुर के पक्ष का एक दैत्य। इसका वध अंबिका ने किया (मार्क. ८०)।

उचथ्य—उतथ्य देखिये।

उच्चैःश्रवस्—एक मछुवा राजा। मत्स्यगंधा का पोषण करनेवाला पिता (म. आ. ९४. ६७)।

२. (सो. कुरु.) अविक्षित् तथा वाहिनी का पुत्र (म. आ. ८९. ४६)।

उच्चैःश्रवस् कौपयेय--यह कुरुओं का राजा तथा केशिन् का मामा (जै. उ. ब्रा. ३. २९. १-३)।

उज्जयन—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५८ कुं.)।

उंच्छवृत्ति—एक ब्राह्मण। दारिद्र के कारण इसे पेट भर खाने के लिये भी नहीं मिलता था। एक दिन जब यह भिक्षा के लिये घूम रहा था, तब इसे एक सेर सत्तू मिला। उसमें से अग्नि तथा ब्राह्मण को दे कर बाकी अपने पुत्रों को समान भाग में बाँट दिया। यह स्वयं खाना शुरु करे इतने में प्रत्यक्ष यमधर्म ब्राह्मणरूप में उसके पास आया तथा खाने के लिये मांगने लगा। ब्राह्मण ने अपने हिस्से का सत्तू इसे दिया परंतु उसे संतोष न हुआ। तब इसने अपने पुत्रादिकों के हिस्से का सत्तू भी इसे दिया। यह देख कर धर्म प्रसन्न हुआ तथा वह इस ब्राह्मण को सहकुटुंब तथा सदेह स्वर्ग में ले गया। आगे चल कर इस पुण्यात्मा के सत्तू के जो कण भूमिपर गिरे थे उसमें एक नेवला आ कर लोट लगाने लगा। शरीर का जो भाग उस सत्तू को लगा, वह एकदम सुवर्णमय हो गया। आगे चल कर वह नेवला धर्म के यज्ञ में अपने शरीर का दूसरा भाग भी सुवर्णमय हो, इस इच्छा से गया परंतु उसकी इच्छा पूरी नही हुई (जै. अ. ६६)। मोक्षधर्म कथन के पश्चात्, गृहस्थाश्रमी मानव भी उंच्छवृत्ति का पालन करने से मोक्ष प्राप्त कर सकता है, यह पुरातन कथा भीष्म ने युधिष्ठिर को कथन की (म.शां. ३४१-३५३)। कुरुक्षेत्रस्थ उंच्छवृत्तिधारी सक्तुप्रस्थ ब्राह्मण के यहाँ त्यक्त पिष्ट में वदन को घोलने से नकुल का अर्धांग सुवर्णमय हुआ, किन्तु बाकी आधा शरीर धर्मराज के यज्ञ में उर्वरित अन्न में घोलने से भी सुवर्णमय न हो सका। इस प्रकार उंच्छवृत्ति की प्रशंसा उल्लेखित है (म. आश्व. ९२-९३)।

उंच्छवृत्ति के माने, कपोत के जैसे विनायास मिले हुए दाने चून कर जीवन यापन करना। (म.आश्व.९३.२;५)।

इसे सत्य ऐसा नामान्तर था। इस की पत्नी का नाम पुष्करमालिनी (म. शां. २६४.६-७).

उडुपति—अंगिरस कुल का एक गोत्रकार।

उतथ्य—अंगिरस का पुत्र। इसकी माता का नाम स्वराज्। इसका श्रद्धा नाम भी मिलता है। परशुराम द्वारा पृथ्वी निःक्षत्रिय करने के पश्चात्, इसने क्षत्रियों का पुनरुत्थान किया। इसकी भार्या ममता। इसका कनिष्ठ भ्राता

बृहस्पति, देवताओं का पुरोहित था। बृहस्पति के ममता से बलात् संभोग समय पर, ममता ने अपने देवर बृहस्पति से कहा "मैं गर्भवती हूँ।" तब कामातुर बृहस्पति आपेसे बाहर हो गया। संभोग के लिये गर्भ का भी विरोध देख कर उसने गर्भ को अन्धा होने का शाप दिया। वह दीर्घतमा औतथ्य हो गया (म. आ. ९८.५-१६; शां. ३२८)।

इसकी एक और पत्नी सोमकन्या भद्रा थी। वरुण ने उसका अपहरण किया, तब इसने समुद्रशोषण किया तथा समुद्र को मरुस्थल में परिणत कर दिया। सरस्वती नदी को जलरहित तथा अदृश्य कर दिया। अन्त में समुद्र ने उचथ्य को भद्रा लौटा दी (म. अनु. २५९.९-३२ कुं.)।

उतथ्य तथा उचथ्य इसके पाठभेद है। मांधाता के साथ इसका क्षात्रधर्म विषय पर संवाद हुआ था (म. शां. ९१) जो उतथ्यगीता नामसे प्रसिद्ध है। इसका पुत्र शरद्वत्। (सत्यतपस् देखिये)।

२. शिवावतार गुहावासिन् का शिष्य।

उत्कचा, उत्कचोत्कृष्टा वा उत्कटा—कश्यप तथा खशा की कन्या।

उत्कल—(स्वा. उत्तान.) ध्रुव तथा इला का पुत्र। ध्रुव वन में जाने के बाद राज्य इसके पास आया। परंतु विरक्त होने के कारण इसने उसका स्वीकार नहीं किया (भा. ४.१३. ६-१०)।

२. वृत्रासुरानुयायी असुर। समुद्रमंथन के बाद हुए देवदैत्यप्रसंग में इसने मातृगणों से युद्ध किया (भा. ८.१०)।

३. सुद्युम्न के तीन पुत्रों में से एक। इसने उत्कल नगरी की स्थापना की (पद्म. सृ. ८; ब्रह्म.७)।

उत्कल कात्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ३.१५-१६)।

उत्कला—(स्वा. प्रिय.) सम्राज् राजा की पत्नी। मरीचि राजा की माता।

उत्तंक--यह बैद का शिष्य। यह अत्यंत मनोनिग्रही था। एकबार जब बैद ऋषि यजमानकृत्य के लिये बाहर गये हुए थे, तब आश्रम पर देखरेख रखने का काम उन्होंने उत्तंक पर सौंपा। बैद के पीछे उसकी पत्नी ऋतुमती हुई। तब उत्तंक की परीक्षा देखने के हेतु उसने आश्रम की स्त्रियों के द्वारा संदेशा भिजवाया, कि गुरुपत्नी का ऋतु व्यर्थ न हो ऐसा काम तुम करो। परंतु उनका निषेध कर उत्तंक ने उस प्रसंग का निवारण किया। बैद ऋषि के घर लौटने के बाद उसे यह सब मालूम हुआ। तब किसी भी प्रकार के मोह से उत्तंक वश नही होता यह देख कर संतुष्ट हो कर उसे वरदान दिया।

उत्तंक को अच्छी तरह पढा कर बैदने उसे घर जाने के लिये कहा। उस समय "आपको मैं क्या गुरुदक्षिणा दूँ?" ऐसा प्रश्न उत्तंक ने उनसे पूछा। बैदने दक्षिणा लेना अमान्य कर दिया। परंतु उत्तंक का अत्यधिक आग्रह देख कर कहा कि, तुम्हारी गुरुपत्नी को जो चीज चाहिये हो, वह ला कर दो। गुरुपत्नी के पास जा कर उत्तंक ने पूछा कि तुम्हें क्या चाहिये? तब उसने कहा कि मुझे पौष्य राजा की पत्नी के कुंडल चाहिये। उसने पौष्य राजा की पत्नी के पास से वे कुंडल मांग लाये। उन कुंडलों पर तक्षक की नजर है यह पौष्य की पत्नी को मालूम था, अतएव कुंडलों को ठीक से सम्हालने की सूचना उसने उत्तंक को दी। उत्तंक जब कुंडल ले कर जा रहा था तब तक्षक उसके पीछे बौद्ध भिक्षु के रुप में जाने लगा। जब उत्तंक ने वे कुंडल नीचे रखे तब तक्षक उन्हें पाताल में ले गया। तब उत्तंक पाताल जाने का मार्ग ढूंढने लगा। उस समय इसकी गुरुभक्ति से संतुष्ट हो कर इन्द्र ब्राह्मणरूप में इसे सहायता करने आया। उसने वज्र की सहायता से इसे मार्ग बना दिया। उत्तंक ने पाताल से कुंडल लाये तथा वे बैद भार्या को दिये। कुंडलों के वापस मिलने पर भी उत्तंक का तक्षक के प्रति क्रोध कम नही हुआ। उसका बदला लेने के लिये इसने जनमेजय को सर्प सत्र के लिये प्रेरित किया (म. आ. ३; इन्द्र देखिये)। यही कथा केवल नामों के भेद से अन्य स्थानों पर भी आई है। यह एक भार्गव था। यह मुनिश्रेष्ठ गौतम का शिष्य। विद्याभ्यास समाप्त होने पर गुरु को गुरुदक्षिणा के रूप में क्या दूँ, ऐसा पूछने पर इसकी गुरुपत्नी ने सौदास राजाकी पत्नी के स्वर्णकुंडल लाने के लिये कहा। सौदास अत्यंत भयंकर तथा मनुष्यभक्षक था। परंतु बिना ड़रे उत्तंक उसके पास गया तथा कुंडल मांगने लगा। कुंडल उसके पास न हो कर उसकी पत्नी के पास थे। इससे उत्तंक सौदास की पत्नी के पास गया तथा उससे कुंडल माँग कर अपनी गुरुपत्नी को दिये।

बाद में उत्तंक निर्जल मारवाड़ देश में तपश्चर्या करने चला गया। एक बार श्रीकृष्ण से इसका मिलन हुआ। कौरवपांडवो का भारतीय युद्ध में नाश हो गया, यह सुनते ही यह कृष्ण को शाप देने लगा। तब तत्त्वकथन करते हुए कृष्ण ने इसे विश्वरूप दर्शाया। मरुभूमी में जहाँ इच्छा हो वहाँ पानी प्राप्त करने का वरदान इसने माँगा।

कृष्ण ने कहा कि, मेरा स्मरण करते ही तुम्हें जल प्राप्त हो जावेगा। एक बार जब इसने स्मरण किया, तब इन्द्र चांडाल के रूपमें इसे पानी देने आया। परंतु अपवित्र मान कर इसने उसका स्वीकार नहीं किया। वास्तव में इन्द्र अमृत देने के लिये आया था। जिस जिस समय तुम्हें पानी की आवश्यकता होगी उसी समय इस मरुभूमि में सजल मेघ आवेंगे ऐसा कृष्ण ने इसे पुनः वर दिया (म. आश्व. ५२.५४)। इसने धुंधु दैत्य का वध करने के लिये, कुवलाश्व नामक राजा को सहायता दी (म. व. १९२.८) (२ जनमेजय परिक्षित देखिये)।

उत्तम—चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक मनु।

३. (स्वा.) उत्तानपाद तथा सुरुचि का पुत्र। यह अविवाहित था। इसका वध मृगया में बलाढ्य यक्ष ने किया (भा. ४.८.९; १०.३)।

उत्तमा--वर्तमान मन्वन्तर का इक्कीसवा व्यास।

२. मगध देश के देवदास राजा की पत्नी। यमुना में स्नान कर के यह मुक्त हो गई (पद्म. ३.२१६)।

उत्तमोत्तरीय--विसर्गसंधि के संबंध में मत प्रतिपादन करनेवाला एक आचार्य (तै. प्रा. ८.२०)।

उत्तमौजस्—एक पांचालदेशीय राजपुत्र (म. उ. १९७.३)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. २०.१५३;* २४.३६; १०५.८१९*)। यह जब पांडवों के शिबिर में सो रहा था, तब अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. सौ. ८.३२-३३)।

उत्तर—विराट तथा सुदेष्णा का पुत्र। इसका दूसरा नाम भूमिंजय था (म. वि. ३३. ९)। यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था (म. आ. १७७.८)। गायों का समूह जब दुर्योधन हरण कर ले गया, तब गोपों ने यह वार्ता उत्तर को बताई। विराट अन्य स्थान पर युद्ध में मग्न होने के कारण गायों को मुक्त करने की जिम्मेदारी उत्तर पर थी। अन्तःपुर में उत्तर ने अपने पराक्रम की स्वयं प्रशंसा की तथा खेद प्रगट किया कि, सारथि न होने के कारण वह युद्ध करने नहीं जा सकता। परंतु इसकी परीक्षा लेने के लिये द्रौपदी (सैरंध्री) ने कहा कि, अर्जुन (बृहन्नला) तुम्हारा सारथ्य करेगा। इससे उत्तर को मजबूर हो कर युद्ध में जाना पड़ा। परंतु रथ में बैठ कर कौरवों की अफाट सेना के पास गया नहीं, इतने में ही भयभीत हो कर यह बृहन्नला को वापस लौटने के लिये कहने लगा। उस समय स्त्रियों में की हुई अपनी प्रशंसा की याद दिलाई। परंतु उत्तर भयभीत हो कर अकेला ही भागने लगा। तब मैं अर्जुन हूँ यह बता कर बृहन्नला ने उसे धीरज बँधाया तथा इसे सारथी होने के लिये कह कर स्वयं युद्ध करने लगा। थोडी ही देर में अर्जुन ने गायों के सब समूहों को मुक्त कर लिया। तदनंतर उत्तर जयघोष करता हुआ नगर में गया (म. वि. ६२-११)। यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था। इसने काफी पराक्रम दिखाया। परंतु शल्य के हाथों यह मारा गया (म. भी. ४५.४१)। उत्तर की मृत्यु के समय उसकी पत्नी गर्भवती थी। उसे इरावती नामक कन्या हुई। इसीका विवाह आगे चल कर अभिमन्युपुत्र परीक्षित् के साथ हुआ।

२. अषाढ उत्तर पाराशर्य देखिये।

३. कश्यपकुल का गोत्रकार।

उत्तरा—सोम की सत्ताईस पत्नियों में से एक।

२. विराट की कन्या। अर्जुन ने बृहन्नला के रूप में इसे नृत्यगायनादिकों की शिक्षा दी। गोग्रहणसमय पर जो पराक्रम अर्जुन ने दर्शाया, उसके लिये विराट ने इसे अर्जुन को देने की इच्छा दर्शाई थी। परंतु अर्जुन ने अभिमन्यु के लिये इसका स्वीकार किया। जब भारतीय युद्ध में अभिमन्यु की मृत्यू हुई, तब यह गर्भवती थी। अश्वत्थामा ने पृथ्वी को निष्पांडव करने की प्रतिज्ञा कर ऐषिकास्त्र छोडा (म. सौ. १५.३१)। कृष्ण ने उस समय इसके गर्भ का रक्षण किया। इसका पुत्र परीक्षित् (म. वि. ११.१८; भा; १.८.१५)।

उत्तान आंगिरस--संभवतः एक आचार्य (पं. ब्रा. १.८.११; तै. ब्रा. २.३.२.५)

उत्तानपाद—स्वायंभुव मनु के शतरूपा से उत्पन्न पुत्रों में कनिष्ठ (मत्स्य. ४)। इसे सुनृता या सुनीति और सुरुचि ये दो स्त्रियां थीं। सुनीति से कीर्तिवान् एवं ध्रुव तथा सुरुचि से उत्तम इस तरह इसके तीन पुत्र थे (भा. ४.८)। सुरुचि इसे बहुत प्रिय थी (ध्रुव देखिये)। स्वायंभुव मन्वंतर में प्रजापति अत्रि ने इसे दत्तक लिया था। इसे सुनृता से चार पुत्र और दो पुत्रियां हुई। उनके नाम १. ध्रुव, २. कीर्तिमान्, ३. आयुष्मान्, ४. वसु तथा १. स्वरा, २. मनस्विनी (ब्रह्माण्ड. २.३६.८४-९०; ह. वं. १.२; ध्रुव देखिये)।

उत्तानबर्हि—(सू.) शर्याति राजा के तीन पुत्रों में ज्येष्ठ।

उत्पल—विदल देखिये।

उत्साह—भृगुवंश में श्री का पुत्र (भृगु देखिये)।

उदक्सेन वा **उदक्स्वन**—(सो. अज.) विष्वक्सेन का पुत्र। इसका पुत्र भल्लाट।

उदग्र—महिषासुरानुयायी एक असुर।

उदग्रज—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

उदंक—उत्तंक का पाठभेद।

उदंक शौल्वायन—प्राण तथा ब्रह्म एक ही हैं ऐसा इसका मत था (बृ. उ. ४.१.३)। सत्रमें दशरात्र ऋतु ही मुख्य भाग है ऐसा इसका मत है (तै. सं. ७.५.४.२)। यह विदेह देश के दैवरांति बृहद्रथ जनक का समकालीन रहा होगा।

उदमय आत्रेय—अंग वैरोचन का पुरोहित (ऐ. ब्रा. ८.२२)।

उदयन—(सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्य तथा विष्णुमतानुसार शतानीकपुत्र।

२. (शिशु. भविष्य.) विष्णुमतानुसार दर्भक का पुत्र। वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार इसे उदायिन् कहा गया है। भविष्य में उदयाश्व ऐसा पाठ है। इसने गंगा के किनारे पुष्पपुर स्थापित किया। पुष्पपुर को पाटलिपुत्र ऐसा नामांतर युगपुराण में दिया है।

उदयसिंह—देशराज को देवकी से उत्पन्न पुत्र।

उदयाश्व वा **उदयिन्**—(.२ उदयन देखिये)।

उदर शांडिल्य—अतिधन्वन् शौनक का शिष्य (छां. उ. १.९.३; वं. ब्रा. २)।

२. इंद्रसभा का एक महर्षि (म. स. ७.११)।

उदरेणु—विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

उदर्क—१० विदूरथ देखिये।

उदल—विश्वामित्र कुल का सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १४.११.३३)।

उदवहि—कश्यपकुलोत्पन्न शंडिल शाखा का एक ऋषि।

२. विश्वामित्र गोत्र का ऋषि।

उदान—तुषितदेवों में से एक।

उदापेक्षिन्—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

उदारधी—प्राचीनगर्भ और सुवर्चा का पुत्र। इसकी स्त्री भद्रा। इसे दिवंजय और रिपुंजय नामक दो पुत्र थे। पूर्वजन्म में यह इंद्र था (ब्रह्माण्ड. २.३६. १००-११०)।

उदारवसु वा **उदावसु**--(सू. मिमि.) मिथि जनक का पुत्र। इसका पुत्र नंदिवर्धन।

उदासीन--(सो. वृष्णि.) मत्स्यमतानुसार वसुदेव तथा देवकी का पुत्र।

२. (शिशु. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार वंशक का पुत्र।

उदुंबर—विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार।

उद्गात--(स्वा. प्रिय.) प्रतीह और सुवर्चला के तीन पुत्रों में से एक। यह यज्ञ कर्म निपुण था। यह नाम मूल भागवत में नहीं है; परंतु प्रतिहर्त्रादि कहे जाने के कारण आदिपद के द्वारा इसका स्वीकार टीकाकार करते है (भा. ५.१५.५)।

उद्गाह--वसिष्ठगोत्र का एक ऋषिगण। उद्गाट ऐसा पाठभेद है।

उद्गीथ--स्वायंभुव मन्वंतर में मरीचि ऋषि को उर्णा से उत्पन्न छः पुत्रों में दूसरा। आगे चल कर दूसरे जन्म में कृष्ण के बंधुओं में से एक हुआ।

२. (स्वा. प्रिय.) भूमन् को ऋषिकुल्या से उत्पन्न पुत्र।

३. (स्वा. नाभि.) विष्णुमतानुसार भुव का पुत्र।

उद्गाट—उद्गाह देखिये।

उद्दल—व्यास की यजुः शिष्यपरंपरा में वायुमतानुसार याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

उद्दाल--विश्वामित्रकुल का गोत्रकार एवं प्रवर।

उद्दालक—एक आचार्य। आपोद धौम्य का शिष्य। एक समय इसे गुरु ने पानी (खेत का) रोकने के लिये कहा; पर इसे पानी को रोकते नहीं बन रहा था। तब इसने खुद ही नीचे सो कर पानी रोका। गुरु को खोज करते समय यह पता लगा। तब उन्होंने आरुणि पांचाल्य का नाम उद्दालक रखा (म. आ. ३.२०-२९)। इसे कुशिक की कन्या से श्वेतकेतु और नचिकेतस् दो पुत्र तथा सुजाता नामक पुत्री उत्पन्न हुई। सुजाता कहोल को ब्याही गयी थी। इसका पुत्र अष्टावक्र था (म. व. १३२)। एक निपुत्रिक ब्राह्मण ने इसकी स्त्री पुत्रोत्पादनार्थ मांगी। श्वेतकेतु को यह सहन न होने के कारण उसने नियम बनाया कि, स्त्री को केवल एक ही पति होना चाहिये (म. आ. ११३)। इस में सत्तासामान्य नामक दिव्यदृष्टि निर्माण हुई थी; इस कारण यह हमेशा समाधिसुख में रहता था। इसका शरीर सूर्य किरणों से शुष्क हो कर यह ब्रह्मरूप हुआ। इसका शव चामुंडा देवी ने खड्ग तथा खट्वांग में भूषण के समान धारण किया (यो. वा. ५.५१-५६; चंडी देखिये)।

उद्दालक आरुणि--अध्यात्मविद्या का प्रसिद्ध आचार्य। यह अरुण औपवेशि गौतम का पुत्र तथा शिष्य

था (बृ. उ. ६. ५. ३)। इसका पुत्र श्वेतकेतु (बृ. उ. ६.२.१; छां. उ. ६.१.१)। पतंचल काप्य इसका गुरु था। इसने याज्ञवल्क्य को अध्यात्म संबंधी कुछ प्रश्न पूछे थे। याज्ञवल्क्य ने जिनके उत्तर विस्तृत रूप से दे उसे चुप कर दिया (बृ. उ. ३.७)। एक याज्ञवल्क्य इसका शिष्य भी था (बृ. उ. ६.५.३)।

इसकी ब्रह्मविद्या की परंपरा ब्रह्मा से है। इसे इसके पिता से ही ब्रह्मविद्या मिली थी (छां. उ. ३.११. ४)। बडे बडे ज्ञानी लोग भी अध्यात्मविद्या संपादनार्थ इसके पास आते थे। इंद्रद्युम्न, सत्ययज्ञ, जन तथा बुडिल इसके पास अध्यात्मविद्या सीखने के लिये आये थे (छां. उ. ५.११.१–२)। इसके कुल के मनुष्य विद्वान् थे ऐसी उस समय ख्याति थी। इसने श्वेतकेतु को सिखाया हुआ तत्त्वज्ञान प्रसिद्ध है (छां. उ. ६. १; श्वेतकेतु देखिये)।

इसका उल्लेख अन्यत्र भी आता है। राज्याभिषेक के समय कहे जाने वाले मंत्रों के संबंध में इसका मत सर्वमान्य है (ऐ. ब्रा. ८.७)।

उद्दालकायन—जाबालायन का शिष्य (बृ. उ. ४. ६. २)।

उद्दालकि—अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

उद्दिष्ट—वैवस्वत मनु का पुत्र।

उद्धत—एक राक्षस का नाम। यह शुकरूप में आया था। तब विनायक ने इसका वध किया।

उद्धव—(सो. यदु.) देवभाग का पुत्र। इसकी माता का नाम कंसा। चित्रकेतु तथा बृहद्बल इसके दो ज्येष्ठ बंधु थे (भा. ९.२४.४०)। इसने बृहस्पति से नीतिशास्त्र का अध्ययन किया। यह कृष्ण का प्रिय मित्र था। इसे यादव मंडली में मान प्राप्त था। श्रीकृष्ण ने एक बार अपना संदेश इसे दे कर नंद, यशोदा और गोपियों का समाधान करने के लिये भेजा था।

यादवों के नाश के बाद श्रीकृष्ण भी निजधाम जायेंगे यह जान कर इसे बहुत दुःख हुआ। कृष्ण ने इसे बदरिकाश्रम जाने कहा किंतु अत्यंत प्रेम के कारण कृष्ण के पीछे पीछे यह सरस्वती नदी के तट पर गया। कृष्ण एक वृक्ष को टेक कर अकेले बैठे थे। उद्धव को देख कर कृष्ण ने कहा–"तुम्हे क्या चाहिये वह मैं जानता हूं"। तू वसु नामक देव का अवतार है। पहले पहल सृष्टि उत्पन्न करने वाले वसु के यज्ञ में मुझे प्राप्त करने के लिये तुमने मेरा पूजन किया था। यह तेरा अंतिम जन्म है। तुम ने मेरी कृपा संपादन की, इसलिये मैं तुम्हें सर्वश्रेष्ठ आत्मज्ञान बताता हूँ। ऐसा कह कर उद्धव को कृष्ण ने आत्मानात्मविवेक बताया। यही उद्धवगीता तथा अवधूतगीता नाम से प्रसिद्ध है (भा. ११. ७–२९)। तब उद्धव ने आनंदमिश्रित दुःख से उसकी प्रदक्षिणा कर बदरिकाश्रम के लिये गमन किया तथा वहां नरनारायणआश्रम में रह कर लोकहितार्थ बहुत तप किया। फिर विशाला को (बदरिकाश्रम) जा कर मोक्ष प्राप्त किया (भा. ११. २९. ४७)। श्रीकृष्ण उद्धव को अपने से अणुमात्र भी कम नहीं समझते थे तथा आत्मज्ञानोपदेश करने के लिये ही उद्धव को उन्होंने अपने पीछे रख छोड़ा था ऐसा शुकाचार्य ने बताया है (भा. ३. ४. ३०–३१) उद्धव द्रौपदीस्वयंवर के समय वहां उपस्थित था। (म. आ. १७७. १७)

२. (सो. पुरूरवस्) मत्स्यमतानुसार नहुष का पुत्र।

उद्यान—(सो.) भविष्यमतानुसार शतानीक का पुत्र।

उद्बलायन—कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

उन्नत—चाक्षुष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

उन्नति—दक्ष और प्रसुति की कन्या। धर्म की स्त्री।

उन्माद—कृष्ण एवं मित्रविंदा का पुत्र। एक महारथी।

उन्मत्त—अष्टभैरवों में से एक।

२. अंगराज मायावर्मन् तथा प्रमदा का पुत्र (भवि. प्रति. ३.३१)

३. रावण का भ्राता। गवाक्ष कपि ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ७०.६५–७४)।

उपकीचक—सूताधिप केकय एवं मालवी के पुत्र तथा कीचक के कनिष्ठ भाई (म. वि. १५, परि. १.१९.२५–२७) भीम ने कीचक के बाद इनका वध किया (म. वि. २२. २५)।

उपकेतु—एक व्यक्ति का नाम (क. सं. १३.१)।

उपकोसल कामलायन—कमलपुत्र उपकोसल। सत्यकाम जाबाल के घर ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए अध्ययन करने के लिये रहा। बारह वर्षों के बाद सत्यकाम ने अन्य शिष्यों का समावर्तन कर स्वगृह जाने की अनुमति दी परंतु उपकोसल का समावर्तन नहीं किया। तब सत्यकाम की स्त्रीने उससे कहा कि इस ब्रह्मचारी ने अग्नि की सेवा उत्तम प्रकार से की है। अग्नि हमें दोष न दे इसलिये आप इसे ब्रह्मज्ञान बताइये। परंतु इस

ओर ध्यान न दे, सत्यकाम यात्रा करने चला गया। तब मानसिक दुःख के कारण, उपकोसल ने अन्न वर्ज्य किया। इस ब्रह्मचारी का तप और उसकी सेवा को ध्यान में रख कर तीन अग्नि, इसे ज्ञान देने के लिये प्रगट हुए। तीनों अग्नियों ने इसे बताया कि प्राण, सुख तथा आकाश ये प्रत्येक ब्रह्म है। उपकोसल ने कहा 'प्राण ब्रह्म कैसे है यह मुझे समझ गया; परंतु सुख और आकाश के संबंध मे मुझे समझ में नहीं आया। इस पर अग्नि ने योग्य उत्तर दे कर उसका समाधान कर अपना स्वरूप भी उसे समझा दिया। उन्होंने अंत में कहा 'उपकोसल! यह हमारी विद्या तथा आत्मविद्या हम ने तुम्हें बताई। ब्रह्मवेत्ता का अगला मार्ग तुम्हारे आचार्य बतायेंगे'। कुछ दिनों के बाद आचार्य आये और शिष्य का मुखावलोकन कर कहा—"मेरे बच्चे! ब्रह्मज्ञानी के मुख की तरह तेरा मुख दिखाई देता है; तुझे किसने ज्ञान दिया?" उपकोसल ने बताया कि, अग्नि ने मुझे ज्ञान दिया। तब गुरु ने उपदेश दिया (छां. उ. ४.१०.१; १४.१)।

उपक्षत्र—(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्क का पुत्र।

उपगहन—विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

उपगु—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. (सू. निमि.) विष्णु मतानुसार सात्यरथिपुत्र।

उपगुप्त—(सू. निमि.) भागवतमतानुसार उपगुरु जनक का पुत्र।

उपगुरु—(सू. निमि.) सत्यरथ का पुत्र। इसका पुत्र उपगुप्त।

उपगु सौश्रवस—कुत्स और्व का पुरोहित। इसने इंद्र को हवि दिया इसलिये यजमान ने इसका वध किया (पं. ब्रा. १४.६.८)।

उपचित्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११. १८)।

उपचित्रा—(सो. वृष्णि.) वसुदेव की मदिरा से उत्पन्न कन्या।

उपजंघनि—सनारु देखिये।

उपदानवी—मयासुर की तीन कन्याओं में से ज्येष्ठ। हिरण्याक्ष की स्त्री।

२. सद की कन्या। इसका पुत्र दुष्यंत (ब्रह्माण्ड. ३. ६.२५)।

३. विदर्भपत्नी। नामान्तर भोजा।

उपदेव—(सो.) देवक का पुत्र।

२. (सो. वृष्णि.) अक्रूर का पुत्र।

३. रुद्रसावर्णि मनु का पुत्र।

उपदेवा—देवक की कन्या। कृष्ण के पिता वसुदेव की स्त्री। इसे कल्प, वर्ष आदि दस पुत्र थे।

उपनंद—नंद का मित्र तथा हस्तक।

२. वसुदेव तथा मदिरा का पुत्र।

उपनंदक—(सो. कुरु) धृतराष्ट्र का पुत्र।

उपनिधि—विष्णुमतानुसार वसुदेव की, भद्रा से उत्पन्न कन्या।

उपबर्हण—नारद देखिये।

उपबिंदु—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

उपबिंबा—(सो. वृष्णि.) वायुमतानुसार वसुदेव की, भद्रा से उत्पन्न कन्या।

उपभंग—(सो. यदु.) श्वफल्क का पुत्र।

उपमन्यु वासिष्ठ—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.९७.१३-१५)। वसिष्ठकुलोत्पन्न व्याघ्रपाद का पुत्र। इसका कनिष्ठ बंधु धौम्य। इसका आश्रम हिमालय पर्वत पर था। इसकी माता का नाम अंबा था। उपमन्यु आपोद (आयोद) धौम्य ऋषि का शिष्य। धौम्य ने उपमन्यु के उदरनिर्वाह के साधन भिक्षा, दूध, फेन आदि बंद किये। अंत में प्राण के अत्यंत व्याकुल होने पर इसने अरकवृक्ष के पत्तों का भक्षण किया। जिसके कारण वह अंधा हुआ तथा कुएँ में गिर पड़ा। गुरुजी शिष्य को ढूंढ़ने के लिये निकले, तथा वन में आ कर उपमन्यु को कई बार पुकारा। गुरुजी के शब्द पहचान कर उपमन्यु ने अपना सारा वृत्तांत कहा। तब गुरुजी ने इसे अश्विनीकुमारों की स्तुति करने को कहा। स्तुति करते ही अश्विनीकुमारों ने प्रसन्न हो कर इसे एक अपूप भक्षण करने दिया। परंतु इसने गुरु को प्रथम अर्पण किये विना उसे भक्षण करना अस्वीकार कर दिया। उपमन्यु को किसी भी प्रकार के मोह के वश न होते देख, वे उस पर बहुत संतुष्ट हुए। अश्विनीकुमारों ने उसे उत्तम दृष्टि दी। गुरु भी उस पर प्रसन्न हुए (म. आ. ३.३२-८४)।

बचपन में एक बार उपमन्यु दूसरे मुनि के आश्रम में खेलने गया। वहा इसने गाय का दूध निकालते हुए देखा। बचपन में एक बार इसके पिता एक यज्ञ में उसे ले गये, जहाँ इसे दुग्धप्राशन करने मिला था। इस कारण इसे दूध का गुण तथा उसकी मिठास मालूम थी (म. अनु. १४. ११७-१२०)। लिंग एवं शिव पुराण में ऐसा दिया है कि, जब वह मामा के घर गय

था, तब इसे दुग्धप्राशन करने मिला था (लिङ्ग. १.१०७; शिव. वाय. १.३४.३५)। घर आ कर उपमन्यु माता से दूध मांगने लगा। मां ने आटा पानी में घोल कर दिया जिस कारण उसे बहुत खराब लगा। मां ने स्नेहपूर्वक उपमन्यु पर हाथ फेरते हुए कहा कि, पूर्वजन्म में शंकर की आराधना न करने के कारण, दूध मिलने इतना दैव अपने अनुकूल नहीं है। शंकर कैसा है, उसका ध्यान किस तरह करना चाहिये, इत्यादि जानकारी उसने माता से पूछी। माता को प्रणाम कर वह तपस्या करने चला गया। वहां दुस्तर तपस्या कर शंकर को उसने प्रसन्न किया। प्रथम शंकर ने इंद्र के स्वरूप में आ कर कहा कि, मेरी आराधना करो; परंतु उसे शंकर के अभाव में देहत्याग की तयारी करते देख शंकर ने प्रगट हो उसे अनेक वर दिये। क्षीरसागर दिया तथा गणों का अधिपति नियुक्त किया। उसने शंकर पर अनेक स्तोत्र रचे। उसने आठ ईटों का मंदिर बना कर मिट्टी के शिवलिंग की आराधना की, तथा पिशाचों द्वारा लाये गये विघ्नों पर भी उसने तप को भंग नहीं होने दिया (शिव. वाय. १.३४)। यह शैव था। इसने कृष्ण को शिवसहस्रनाम बताया (म. अनु. १७)। तथा पुत्रप्राप्ति के लिये तप करने जब कृष्ण आया, तब उसे शैवी दीक्षा दी। हिमवान् पर्वत के आश्रम में अंत में यह अत्यंत जीर्णवस्त्र ओढ कर रहता था। इसने जटा भी धारण की थी। यह कृतयुग में हुआ था (म. अनु. १४-१७; शिव. उमा. १)। शंकर के बताये अत्यंत विस्तृत शैवसिद्धांत को इसने ऊरु, दधीच तथा अगस्त्य इनके साथ संक्षेप में कर समाज में प्रसिद्ध किया (शिव. वाय. ३२)।

२. नंदिकेश्वरकृत काशिका ग्रंथ पर व्याघ्रपद के पुत्र उपमन्यु की टीका है। इस टीकाकार ने अपनी अपनी टीका में इस काशिका के बारे में यह विवरण दिया है कि, शिव ने अपने डमरू के मिष (बहाने) सनक, सनंदन, सनातन, सनत्कुमार इत्यादि ऋषियों के तथा नंदिकेश्वर, पतंजलि, व्याघ्रपाद आदि भक्तों के लिये चौदह सूत्रों के द्वारा ज्ञान प्रगट किया। परंतु उन में से केवल एक नंदिकेश्वर को इन सूत्रों का तत्त्वार्थ समझा, तथा उसने इन छब्बीस श्लोकों की काशिका रची (शिवदत्त-महाभाष्य पृष्ठ ९२ देखिये)। व्याकरण संबंधी माहेश्वर के चौदह वर्णसूत्र प्रसिद्ध है, जो महेश्वर ने डमरू बजा कर पाणिनि को दिये ऐसी प्रसिद्धि है। इन सूत्रों का कुछ गूढार्थ है, ऐसा नंदिकेश्वरकाशिका से पता चलता है। शेखर के रचयिता नागेशभट्ट ने नंदिकेश्वर काशिका को प्रमाण माना है। इस बात से पता चल जायेगा कि उपमन्यु, पाणिनि तथा पतंजलि के पश्चात् का रहा होगा। व्याघ्रपाद (उपमन्यु का पिता), नंदिकेश्वर तथा पतंजलि समकालीन थे, ऐसा प्रतीत होता है। परंतु काल की दृष्टि से सारे उपमन्यु एक है यह कहना असंभव लगता है। इसके द्वारा लिखे ग्रन्थ, १. अर्धनारीश्वराष्टक, २. तत्त्वविमर्षिणी, ३. शिवाष्टक, ४. शिवस्तोत्र (बृहत्स्तोत्र रत्नाकर में छपा है), ५. उपमन्युनिरुक्त (C. C.) हैं। इसने एक स्मृति की भी रचना की थी, ऐसा स्थान स्थान पर आये वचनों से पता चलता है।

३. वेद ऋषि का शिष्य।

४. कृष्णद्वैपायन व्यास का पुत्र, शुकाचार्य का बंधु।

५. इंद्रप्रमतिपुत्र वसु का पुत्र (ब्रह्माण्ड. ३.९.१०)। यह ऋग्वेदी श्रुतर्षि मध्यमाध्वर्यु भी था।

उपमश्रवस्—मित्रातिथि का पुत्र (ऋ. १०.३३.७)। मित्रातिथि की मृत्यु के बाद कवष ऐलूष इसका सांत्वन करने आया (ऋ. १०.३३)। इसी सूक्त में कुरुश्रवण त्रासदस्यव की दानस्तुति है। कुरुश्रवण त्रासदस्यव तथा मित्रातिथिपुत्र उपमश्रवस् का कोई संबंध रहा होगा ऐसा नहीं लगता (सायणभाष्य व बृहद्दे.)।

उपयाज—कश्यपगोत्रोत्पन्न ऋषि (द्रुपद देखिये)।

उपयु—पराशरकुल का गोत्रकार।

उपरिचर वसु—(सो. ऋक्ष.) यह कुरुवंश के सुधन्वा की शाखा के कृतयज्ञ या कृति का पुत्र है (सुधन्वन् देखिये)। इसने यादवों से चेदि देश जीत लिया तथा चैद्योपरिचर अर्थात् चैद्यों का जेता यह नाम स्वयं लिया (वायु. ९४; ब्रह्माण्ड. ३. ६. ८; ह. वं. १. ३०; ब्रह्म. १२; म. आ. ५७)। उपरिचर इसकी पदवी है तथा वसु इसका नाम है। उपरिचर शब्द की भांति ही अंतरिक्षग, आकाशस्थ, ऊर्ध्वचारी आदि शब्द इसके लिये प्रयुक्त हैं। यह सदा विमान में बैठ कर आकाश में विचरण करता था, ऐसा इसके बारे में वर्णित है। इसके गले में इंद्रमाला के कारण इसे इंद्रमाली कहते थे। इसकी स्त्री गिरिका। इसने तप कर इंद्र को संतुष्ट किया। इंद्र ने इसे स्फटिकमय दिव्य विमान दिया तथा जिसके कमल कभी नहीं मुरझायेंगे ऐसी इंद्रमाला नामक वैजयंती अर्पण की और कहा कि, तुम्हे पृथ्वी पर धर्माचरण करने के बाद पुण्यलोक प्राप्त होंगे; इस लिये तू

चेदि देश में वास्तव्य कर। वैजयंती के प्रभाव से युद्धभूमि में शस्त्रों के व्रण होने का डर नहीं था।

इंद्र ने तत्पश्चात् साधुओं के प्रतिपालनार्थ बाँस की छडी दी। संवत्सर की समाप्ति के दिन राजा ने उसका थोडा हिस्सा जमीन में गाड़ दिया, तभी से यह रीति राजाओं में अभी भी रूढ है। वर्षप्रतिपदा के दिन इसे छड़ी को वस्त्रभूषणों से सुशोभित कर, तथा गंधपुष्पों से अलंकृत कर उच्चस्थान पर आरोहित करते है राजा वसु के प्रीत्यर्थ हंस रूप धारण किये ईश्वर की इस यष्टि द्वारा राजा लोग बडे आदर से विधिपूर्वक पूजा करते है। इस उत्सव की प्रभा राजा ने फैलाई, यह देख इंद्र ने ऐसा वर दिया कि जो राजा चेदिराजा की तरह मेरा उत्सव करेगा, उसके राज्य में अखंड लक्ष्मी का वास होगा तथा जन संतुष्ट रहेंगे।

नगर के पास से बहनेवाली शुक्तिमती नदी को कोलाहल नामक पर्वत रोक रहा है, यह देख राजा ने पर्वतपर एक पदप्रहार किया तथा उसमें एक विवर निर्माण कर, नदी के लिये मार्ग बना दिया। पर्वत की उतनी संगति के कारण नदी को एक जुडवा (एक पुत्र एवं एक पुत्री) हुआ। नदी ने कृतज्ञ हो, पुत्र तथा पुत्री राजा को अर्पण की। राजा ने पुत्र को अपना सेनापति बनाया तथा उस पुत्री के साथ पाणिग्रहण किया। यही गिरिका थी। वह शीघ्र ही नवयुवती हुई परंतु ऋतुदान के दिन राजा को पितरों ने मृगया हेतु वन में जाने की आज्ञा दी। आज्ञानुसार राजा मृगया हेतु गया। परंतु अत्यंत कामोत्सुकता के कारण उसका रेत स्खलित हुआ, जिसे उसने एक दोने में रखा तथा एक श्येन पक्षी को अपनी भार्या के पास ले जाने को कहा। वह पक्षी ले कर जा रहा था कि, राह में एक दूसरे बुभुक्षु श्येन पक्षी ने उस पर हमला कर दिया। इस संघर्ष में वह दोन यमुना नदी में गिर पड़ा तथा अद्रिका नामक मत्स्यी को मिला। यह मत्स्यी एक शापभ्रष्ट अप्सरा थी। दस महीने के बाद एक धीवर के द्वारा पकडी गयी। उसे काटते ही पेट से एक लडका एवं एक लडकी निकली। तब धीवर उन्हें राजा के पास ले गया तथा सारी कथा कह सुनाई। राजा ने लड़के का नाम मत्स्य रख, उसे अपने आप रखा तथा लड़की एक धीवर को दे कर उसका लालनपालन करने की आज्ञा दी। यही सत्यवती (मत्स्यगंधा) है।

उपरिचर वसु के पांच पुत्र थे। बृहद्रथ, प्रत्यग्रह, कुशांब, मणिवाहन (मावेल्ल) तथा यदु। इसने अपने पुत्रों को अलग अलग राज्य दिये (म. आ. ५७, २८-२९)। इसके पुत्रों में मत्स्य तथा काली नाम हैं। बृहद्रथ ने मगध में बार्हद्रथ कुल की स्थापना की। कुशांब को (मणिवाहन) कौशांबी, प्रत्यग्रह को चेदि, यदु को करूष तथा पांचवे मावेल्ल को मत्स्य देश मिला (म. द्रो. ९१)। यह पूर्व जन्म में अमावसु पितर था।

एक समय इंद्र तथा महर्षियों का यज्ञ में, पशुहिंसा विहित या अविहित है इस पर विवाद हुआ। इतने में वहां उपरिचर वसु का आगमन हुआ। सत्यवक्ता होने के कारण इस से विवाद का निर्णय पूछा गया। इसने इंद्र का पक्ष ले कर पशुवध के अनुकूल मत दिया। तब ऋषियों ने शाप दिया कि, तुम्हारा अधोलोक में पतन होगा। शाप मिलते ही यह रसातल में पतित हुआ (मत्स्य. १४२)। महाभारत में यह वाद, अजवध करना चाहिये या बीज उपयोग में लाना चाहिये, ऐसा था। उस समय उपरिचर वसु अंतरिक्ष में मार्गक्रमण कर रहा था। तब ऋषियों ने निर्णयार्थ इसे बुलाया। दोनों पक्षों की बात समझ लेने पर, वसु ने देवताओं का पक्ष लिया तब ऋषियों ने शाप दिया कि, चूँकि देवताओं का पक्ष ले कर तुमने अनृत भाषण किया है, इसलिये तुम्हें पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करना पड़ेगा। तदनुसार यह राजा अधोमुख हो पृथ्वी के विवर में घुसा। परंतु नरनारायण की कृपा से नारायण का मंत्र जप कर, तथा पंचमहायज्ञ कर इसने नारायण को संतुष्ट किया। अंत में विष्णु की आज्ञानुसार गरुड ने आ कर इसे शापमुक्त किया तथा पहले की तरह इसे अंतरिक्ष में मार्गक्रमण करने के लिये समर्थ बनाया। यह बृहस्पति का पट्टशिष्य हुआ। उसके पास से इसने चित्राशिखंडी संज्ञक सप्तर्षियों द्वारा रचित शास्त्र का अध्ययन किया। इसने अश्वमेध यज्ञ किया, जिसमें बृहस्पति ने होतृत्व स्वीकार किया था। इसमें पशु वध नहीं हुआ। इसे यज्ञ में इसे नारायण ने प्रत्यक्ष दर्शन दिया। इस निष्ठावान राजा को महीतल छोड़ने पर तत्काल परमपद प्राप्त हुआ (म. शां. ३२२-३२४)। अद्रिका नामक अप्सरा के साथ एक बार यह विमान पर से जा रहा था। सोमपट्ट में रहनेवाले पितरों की मानसकन्या अच्छोदा ने, इसे देख कर इसे अपना पिता माना, तथा इसने भी उसे कन्या रूप में स्वीकार किया। यह देख कर उसके पिता ने इसे शाप दिया कि तुम इस अप्सरा सहित पृथ्वी पर जाओगे तथा तुमसे यह कन्या होगी। यह सुनते ही वसु ने उसके

चरण पकड लिये। तब उन्होंने कहा कि, तुम पृथ्वी पर कृतयज का पुत्र हो कर भगवदाराधना कर वैकुंठ पद प्राप्त करोगे तथा अच्छोदा, अद्रिका के उदर से काली नाम से जन्म लेगी। यही सत्यवती है (स्कंद २.९.४–७; मत्स्य. ५०)।

उपरिबभ्रव--शान्त्युदक करते समय कौनसा मंत्र प्रयुक्त करना चाहिये, इस विषय में इसका मत भिन्न है (कौ. सू. ९.१०)। उसी तरह, प्रेत किस तरह रखना चाहिये, इस विषय पर इसका मत पितृविधि में लिखा हुआ है (कौ. सू. ८०.५४)।

उपरिमंडल--भृगुकुल का एक गोत्रकार। परिमंडल ऐसा पाठ है।

उपलप--वसिष्ठ गोत्र का ऋषिगण।

उपलंभ--(सो. वृष्णि.) अक्रूर का रत्ना उर्फ शैब्या से उत्पन्न पुत्र (मत्स्य. ४५.२९)।

उपलोम--वसिष्ठकुलोत्पन्न ऋषि।

उपवर्ष--पाटलीपुत्र के शंकरस्वामी का पुत्र तथा पाणिनि का गुरुबंधु। इसने पूर्वोत्तरमीमांसासूत्र पर वृत्ति रची है। शबर और शंकराचार्य ने इसका बारंबार निर्देश किया है (कथासरित्सागर)। यह बौधायन का दूसरा नाम रहा होगा। परंतु श्रीभाष्यकार इन दोनों को एक नहीं मानते क्यों कि ऐकात्म्याधिकरण में (ब्र. सू. ३.३.५३) शंकराचार्य ने उपवर्ष का विवरण दिया है। श्रीभाष्यकार उसी अधिकरण को प्रत्यगात्म पर लगाते हैं। उपवर्ष का शबर स्वामी ने भी उल्लेख किया है। ऐसी एक आख्यायिका है कि काश्मीर में रामानुजाचार्य को केवल एक बार बौधायनवृत्ति देखने मिली। यह संधि पा कर उन्होंने उसे पुरा पढ लिया तथा इससे श्रीभाष्य लिखा।

उपवाह्यका--संजय की पुत्री और भजमान की स्त्री (ह. वं. १.३७.३)।

उपवेशि--कुश्रि का शिष्य (बृ. उ. ६.५.३.)।

उपश्लोक--ब्रह्मसावर्णि मनु का पिता।

उपसुंद--सुंदोपसुंद देखिये।

उपस्तुत वार्ष्टिहव्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११५)। कण्व मेध्यातिथि के साथ इसका निर्देश है (ऋ. १. ३६. १०; १७)। इसका बहुवचनी स्तोता मानकर उल्लेख हैं (ऋ. ८. १०३. ८)। उपस्तुत का ऋग्वेद में कई बार उल्लेख है।

उपहूत--स्वर्ग में रहने वाले पितर। इनकी कन्या यशोदा। यशोदा का पुत्र खट्वांग (ब्रह्माण्ड. ३. १०. ९०)।

उपाध्याय--कश्यप को आर्यावती से उत्पन्न पुत्र (भवि. प्रति. ४.२१)।

उपान--साध्यदेवों में से एक।

उपावि जानश्रुतेय--उपसदकर्म के विषय में प्रमाण की तरह मान्य एक प्राचीन आचार्य का यह नाम है (ऐ. ब्रा. १.२५)।

उपावृद्धि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि।

उपासंगधर--(सो. वृष्णि.) मत्स्यमतानुसार वसुदेव का देवरक्षिता से उत्पन्न पुत्र।

उपोदिति गौपालेय--सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १२. १३. ११)।

उभक्षय--(सो. पूरु.) वायुमतानुसार भीम का पुत्र।

उभयजात--भृगुकुलोत्पन्न ब्रह्मर्षि।

उमा--हिमालय की मेना से उत्पन्न पुत्री। इसका पति रुद्र (पद्म. सृ. ९)। उपनिषद् में विद्या का उमा हैमवती ऐसा निर्देश है (जै. उ. ब्रा. ४. २०. १२)।

उम्लोचा--एक अप्सरा (म. आ. ११४.५४)।

उर वार्णिवृद्ध--एक आचार्य (सां. ब्रा. ७. ४)।

उरुक्रम--आदित्यों में से एक। यह ऊर्ज (कार्तिक) माह में प्रकाशित होता है (भा. १२.११)। परंतु भविष्यपुराण में ऐसा दिया है कि यह चैत (चैत्र) में प्रकाशित होता है और इसकी १२०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. १७८; विवस्वान् देखिये)। विष्णु तथा त्रिविक्रम इसे नामांतर हैं। कीर्ति इसकी भार्या थी, जिससे बृहच्छ्लोक नामक पुत्र हुआ (भा. ६.१८.८)।

उरुक्रिय--(सू. इ. भविष्य.) बृहद्वल का पौत्र व बृहद्रण का पुत्र जिसे अभिमन्यु ने मारा। उरुक्षय इसका नामांतर है। वत्सवृद्ध या वत्सद्रोह इसका पुत्र था।

उरुक्षय--(सो. पुरु.) विष्णुमतानुसार महावीर्य का पुत्र। यह क्षत्रिय से ब्राह्मण हुआ था। इसे विशाला से उत्पन्न त्रय्यारुण, पुष्करिन् तथा कपि भी ब्राह्मण थे।

२. अंगिरा गोत्र का प्रवर।

उरुक्षय आमहीयव--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११८)। उरुक्षय का बहुवचन में निर्देश इस सूक्त में है (ऋ. १०. ११८.८-९)

उरुक्षेप--(सू. इ.) भविष्यमतानुसार बृहद्दैशान का पुत्र।

उरुचक्रि आत्रेय--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.६९-७०)।

उरुधिष्ण्य--धर्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

उरुनेत्र--जालंधर की सेना का एक राक्षस। इस पर गणपति ने खड्गप्रहार किया, जिससे उसके मुख में से नौ सिर तथा अठारह भुजाओं वाला दैत्य निकला (पद्म. पा. १७.)।

उरुवल्क--वसुदेव तथा इला का पुत्र।

उरुश्रवस्--(सो. नरिष्यंत.) सत्यश्रवस् का पुत्र। इसका पुत्र देवदत्त।

उर्मि--सोम का पुत्र।

उर्मिला--एक गंधर्वी, सोमदा की माता।

२. सीरध्वज जनक की कन्या। दशरथपुत्र लक्ष्मण की स्त्री।

उर्व--एक ऋषि। च्यवन ने अपने कुल का वृत्तान्त कहा है। उस में ऊर्व नामक एक तेजस्वी कुलवर्धक का निर्देश है। उससे अग्नि उत्पन्न हुआ। वह समुद्र में वडवा-रूप से है। उसका पुत्र ऋचीक। वह बडा योद्धा था। उसने जमदग्नि को अपना पुत्र माना। ऋचीक की पत्नी गाधि की कन्या थी। गाधि का पुत्र विश्वामित्र। ऋचीक को गाधिकन्या सत्यवती से क्षत्रियान्त परशुराम पैदा हुआ। इस प्रकार भृगु तथा कुशिककुल का संबंध है (म. अनु. ५६)।

बाहु का पुत्र सगर। वह अयोध्या का नृप था। हैहय तालजंघ ने उसे राजपद से च्युत किया। तब ऊर्व भार्गव ने उसका रक्षण किया (वायु. ८८.१२३)।

इससे और्ववंश पैदा हुआ (वायु. ८८.१५७; मत्स्य. १२. ४०)। इसने अपनी जंघा से और्व अग्नि नामक पुत्र उत्पन्न किया। यहाँ ऊर्व को शुक्र कहा है। देव, मुनि तथा दानव इसके अनुयायी थे (पद्म. सृष्टि. ३८.७४-१०७)। पद्म में उर्व शब्द ऊर्व है।

२. (सो. पूरु. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार पुरंजय का पुत्र।

उर्वरा--एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४७ कुं.)।

उर्वरीयान--सावर्णिमनु का पुत्र।

उर्वरीवत्--और्व का नामांतर।

उर्वशी--एक अप्सरा की तरह ऋग्वेद के काल से प्रसिद्ध है। ऋग्वेद में उर्वशी के एक संवादात्मक सूक्त में बहुत सी ऋचायें हैं (ऋ. १०.९५) उर्वशी शब्द ऋग्वेद में कई बार आया है (ऋ ४.२. १८; ५.४१. १९; ७. ३३.११; १०.१५. १०, १७)। तथापि अंतिम तीन स्थानों पर तो निश्चित रूप से व्यक्तिवाचक शब्द है। सातवें मंडल में इससे वसिष्ठ उत्पन्न हुआ ऐसा बताया गया है तथा दसवें मंडल में उर्वशी-पुरुरवा संवाद है। शर्त के अनुसार, राजा नग्न अवस्था में दिखाई देने के कारण उर्वशी उसे छोडकर जाती है। वह छोड़कर न जावें इसलिये राजा पागल की तरह भटकते भटकते एक सरोवर के पास आया। वहां वह सखियों के साथ क्रीडा कर रही थी। उस स्थान पर राजा तथा उर्वशी का संवाद हुआ जो ऋग्वेद में वर्णित है (श. ब्रा. ११,५.१. मा. ९.१४)। उर्वशी गर्भवती थी इसलिये उसने राजा के पास आना अस्वीकार कर दिया। संक्षेप में संवाद का यही सार है। अपने लिये प्राणत्याग करने को प्रवृत्त हुए राजा को प्राणत्याग से निवृत्त होने को बता कर उर्वशी ने नारी स्वभाव की अच्छी कल्पना राजा को दी। उर्वशी देवों में से भी है ऐसा वहां वर्णित है। इसीलिये उसने राजा को सुझाया है कि मृत्यु के बाद स्वर्ग में आने पर उसे उसका सहवास प्राप्त होगा।

उर्वशी को देखकर वासतीवरसत्र में मित्रावरुणां का रेत स्खलित हुआ तथा उनसे कालोपरांत अगस्त्य तथा वसिष्ठ उत्पन्न हुए (कात्यायनकृत सर्वानुक्रमणी. १.१६६; बृहद्दे. २.३७;४४.१५६; ३.५६)। उर्वशी पुरूरवस का आख्यान बहुत प्राचीन काल से प्रसिद्ध है। अप्सराओं का निर्देश ऋग्वेद में है।

नर नारायण ऋषि बदरिकाश्रम में तप कर रहे थे। वे इंद्रपद न ले लें, इस भय से इंद्र ने वसंत, काम एवं मेनका, रंभा, तिलोत्तमा, घृताची आदि सोलह हजार पचास अप्सराओं को उन्हें तप से परावृत करने के लिये भेजा (दे. भा. ४.६)। विष्णुपुराण में ऐसा वर्णन है कि पुराण-पुरुष विष्णु गंधमादन पर तप कर रहे थे तब यह मदन-सेना भेजी गयी थी (पद्म. सृ. २२)। गायनादि प्रकारों से उन्हें मोहित करने के कई प्रयत्न किये गये; परंतु सब निष्फल हुआ देख वे सब खिन्न हो गये। नरनारायणों ने उन सबका अत्यंत मधुर शब्दों से आदरातिथ्य कर के, पूछा कि आपका यहा आगमन किस हेतुसे हुआ है? जिससे कामादि लज्जित हो अधोमुख कर स्तब्ध खडे हो गये। इतने में उन्होंने देखा कि नारायण की जंघा से सोलह हजार इक्कावन अप्सरायें प्रगट हुई जिनमें उर्वशी अत्यंत सुंदर थी। यह उरु अर्थात् जंघा से उत्पन्न हुई इसलिये इसका नाम उर्वशी हुआ। नरनारायणों ने इंद्र को भेंट करने के लिये नयनाभिरामा उर्वशी कामादि के सुपुर्द की। तदुपरांत सब अप्सराओं ने नरनारायणों की सेवा में रहने के लिये

प्रार्थना की, परंतु नरनारायणों ने उनकी सेवा स्वीकार नहीं की (दे. भा. ४.६; भा. ११.४; मत्स्य. ६०)।

यह एक बार सूर्याराधना को जा रही थी। तब इसने मित्र आदित्य को वरण करने का आश्वासन दिया। आगे वरुण मिला उसने भी इसे वरण करने का अभिवचन मांगा। तब इसने मित्र को वचन देने की बात बताई। वरुण ने बाद में इससे प्रेमयाचना की तथा वह इसने दिया। तदुपरांत वरुण ने इसे उद्देश कर एक कुंभ में अपना वीर्य डाला। मित्र को यह समझते ही उसने इसे शाप दिया "मृत्युलोक में पुरूरवा की स्त्री हो"। तथा अपना वीर्य एक कुंभ में डाला। इन दोनों कुंभों के वीर्य से अगस्त्य तथा वसिष्ठ का जन्म हुआ (पद्म. सृ. २२; भा. ९.१४; मत्स्य. ६०; वा. रा. उ. ५६.५७) मित्रावरुण बदरिकाश्रम में तप कर रहे थे। उस समय सौंदर्यवती उर्वशी फूल तोडते हुए इन्हें दिखाई पड़ी। तब इनका रेत स्खलित हुआ जिससे अगस्त्य तथा वसिष्ठ का जन्म हुआ। उर्वशी को देखते ही मित्र का रेत स्खलित हुआ, जिसे उसने शाप के भय के कारण पैरों तले रौंद डाला। तब वसिष्ठ का जन्म हुआ (विष्णु. ४.५)।

एक बार नारद ने पुरूरवस् राजा की बहुत स्तुति की। इस कारण यह उस पर मोहित हुई (भा. ९.१४)। पुरूरवस् पर मोहित होने के कारण लक्ष्मीस्वयंवर नामक प्रबंधनाट्य करते समय कुछ हावभावों में भूल हो गयी। तब भरत ऋषि ने शाप दिया, कि तूम पचपन वर्ष लता बन कर रहोगी। शाप की अवधि समाप्त होने पर जब यह पुरूरवस् के पास जा रही थी, तब राह में केशी नामक दैत्य इसे उठा कर ले गया; परंतु सौभाग्यवश पुरूरवस् ने ही इसे मुक्त किया (पद्म. सृ. १२. ७६-८५; मत्स्य. २४. २३-३२)।

तत्पश्चात् उर्वशी पुरूरवस् के नगर में आयी तथा उसने अपनी तीन शर्तें बतायी। (१) इन दो भेडों को मैं पुत्रवत् पाल रही हूं उनका संरक्षण करना होगा, (२) मैं सदा घृताहार करूंगी, (३) मैथुन अतिरिक्त कभी तुम्हें नग्न न देखूंगी। इन शर्तों का पालन करते हुए पुरूरवस् ने उर्वशी का चित्ररथ व नंदन आदि वनों तथा अलका आदि नगरों में ६१००० वर्ष तक उपभोग किया। परंतु बाद में तीसरी शर्त भंग हो जाने के कारण वह देवलोक गई। पुरूरवस् को इससे आयु आदि छः पुत्र हुए थे (भा. ९.१४-१५; विष्णु. ४.६-७; दे. भा. १.१३; म. आ. ७०.२२)।

अर्जुन के जन्म के समय गायन करने वाली ग्यारह अप्सराओं में यह भी एक थी (म. आ. ११४.५४)। कुबेर की सभा में उसकी सदा सेवा करने में यह निमग्न रहती है (म. स. १०.११)। अर्जुन इंद्र लोक में शिक्षा ग्रहण करने गया था। वहां एक बार इसकी ओर कुलकी जननी इस पूज्यभाव से अर्जुन ने देखा। यह बात इन्द्र के ध्यान में न आयी तथा उसने सोचा कि, शायद काम इच्छा से अर्जुन इसकी ओर देख रहा है इसलिये इंद्र ने चित्ररथ गंधर्व के द्वारा उर्वशी को समाचार भिजवाया तब यह सायंकाल में सुंदर वस्त्रों से सजधज कर अर्जुन के पास गयी परंतु अर्जुन ने खुद की भावना बता कर इसका निषेध किया। इच्छाभंग होने के कारण इसने अर्जुन को, 'तू एक वर्ष तक नपुंसक बन कर रहेगा,' ऐसा शाप दिया। तब इंद्र ने अर्जुन को सांत्वना दी कि तेरहवें वर्ष (अज्ञातवास में) यह शाप तेरे काम आयेगा (म. व परि. १.६; पं. १३२-१५०)। अष्टावक्र के सन्मान के लिये वरुण ने जिन अप्सराओं का नृत्य कराया था उनमें यह भी थी (म. अनु. १९.४४)। 'अनेक पवित्र पदार्थ मेरा रक्षण करें; भीष्म के मुख से निकलने वाले इस उल्लेख में पवित्र अप्सराओं में उर्वशी का नाम है। (म. अनु. १६५.१५). उर्वशी के नाम पर उर्वशीतीर्थ नामक एक पवित्र तीर्थस्थान प्रसिद्ध है (म. व. ८२.१३६; देवव्रत देखिये)। यह ब्रह्म-वादिनी थी (ब्रह्मांड २.३३)।

उर्वीभाव्य--(सो. कुरु भविष्य.) मत्स्यमतानुसार पुरंजय का पुत्र।

उर्वीशू--यह पापी था, परंतु व्रत तथा दान के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. १९)।

उल वातायन--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८६)।

उल वार्ष्णिवृद्ध--एक आचार्य (सां. ब्रा. ७.४)।

उलुक्य जानश्रुतेय--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.६.३)

उलूक--एक ऋषि। (म. शां. ४७.६६*) विश्वामित्र का पुत्र म. अनु. ७. ५१ कुं.)

२. एक क्षत्रिय। यह द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७.२०)। दुर्योधन ने इसे युद्धारंभ के पूर्व उपप्लव्य नगर में धर्मराज के पास दूत बनाकर भेजा था (म. उ. १५७. १६०)। इसे कैतव भी कहते हैं। इसने धर्म को दुर्योधन का संदेश सुनाया (म. उ. १६०)। युयुत्सु के साथ

इसका युद्ध हुआ था (म. क. १८.१)। सहदेव ने इसका वध किया (म. श. २७-२९)।

३ हिरण्याक्ष दैत्य के चार पुत्रों में से एक।

४ शिवावतार सोम का शिष्य।

५ शिवावतार सहिष्णु का शिष्य।

उलूकी—कश्यप तथा ताम्रा की कन्या। इसे उल्लूक हुए (म. आ. ६०. ५४)। काकी भी इसका नाम रहा होगा।

उलूखल—व्यास की सामशिष्यपरंपरा के ब्रह्मांड मतानुसार हिरण्यनाभ के शिष्यों में से एक (व्यास देखिये)। वायु में उलूखलक ऐसा पाठ है।

उलूप—विश्वामित्रकुल का ऋषि गण।

उलूपी—ऐरावत नाम नागकुल के कौरव्य नाग की कन्या। यह ऐरावत नाग के पुत्र से ब्याही गयी थी। विवाहोपरांत कुछ ही दिनों में गरुड ने इसके पति का वध किया। इस कारण यह बालविधवा हुई। कालोपरांत पंडुपुत्र अर्जुन तीर्थयात्रा करने निकला वह गंगा में स्नान करने उतरा। उसे देख इसके मन में अर्जुन के प्रति प्रेम उत्पन्न हुआ तथा वह उसे पानी में खींच ले गयी। अर्जुन ने उलूपी की प्रार्थना स्वीकार कर इससे गांधर्व विधि से विवाह किया। इस विवाह में ऐरावत की भी सम्मति थी कारण इससे अपने वंश का विस्तार होगा यह बात उसने ध्यान में रखी थी। बाद में उलूपी को अर्जुनसे इरावान् नामक पुत्र हुआ (म. आ. २०६; भी. ८६. ६)। पांडवों के अश्वमेध के समय अर्जुन बभ्रुवाहन के हाथ से मारा गया। वस्तुतः वह मरा नहीं था; भीष्म को शिखंडी की आड से मारने के कारण लगे पाप का निरसन हो इसलिये उलूपी ने माया के योग से इसे मूर्च्छित किया था। फिर उलूपी ने संजीवनी मंत्र का चिंतन किया तथा तुरंत ही नागों ने वह ला दिया जिसके द्वारा अर्जुन की मूर्च्छा दूर कर उसे उलूपी ने सावधान किया (म. आश्व ७८-८०; बभ्रुवाहन देखिये)। पांडव जब महाप्रस्थान के लिये निकले तब उलूपी उनके साथ थी। बाद में इसने गंगा में देहत्याग किया (म. महा. १. २५)।

उल्कामुख--राम की सेना का एक वानर। यह अंगद के साथ दक्षिण दिशा में सीता की खोज में गया था (वा. रा. कि. ४१)।

उल्बण—(स्वा.) वसिष्ठ तथा अरुंधती के सात पुत्रों में से एक।

उल्मुक—(स्वा.) चक्षुर्मनु तथा नड्वला के ग्यारह पुत्रों में कनिष्ठ। इसकी स्त्री पुष्करिणी। अंग, सुमनस्, ख्याति, क्रतु, अंगिरा तथा गय ये इसके छः पुत्र थे (भा. ४.१३.१७)।

२. (सो. वृष्णि.) बलराम का पुत्र। यह राजसूय में था (म. स. ३१.१६)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था (म. द्रो. १०.१८)।

उल्लुप—उलूप का पाठभेद।

उशंगु—(रुशंगु) एक ऋषि। इसने अपने को वार्धक्य आया देख पृथूदकतीर्थ में देह त्याग कर विष्णुलोक में गमन किया (म. श. ३८.२४-२६)। इसके आश्रम में आर्ष्टिषेण, विश्वामित्र, सिंधुद्वीप, देवापि आदि ने तप कर ब्राह्मण्य प्राप्त किया था (म. श. ३८. ३१-३२)। उस स्थान पर बलराम तीर्थयात्रा के निमित्त गया था।

उशद्रथ—(सो. अनु.) भागवतमतानुसार तितिक्षुपुत्र।

उशनस्—अग्नि देवताओं का दूत है तथा उशना काव्य असुरों का कुलगुरु व अध्वर्यु है। अग्नि तथा उशना काव्य दोनों प्रजापति के पास गये, तब प्रजापति ने उशना काव्य की ओर पीठ कर अग्नि को नियुक्त किया, जिस कारण देवताओं की जय तथा असुरों की पराजय हुई (तै. सं. २.५.८)। यह असुरों का पुरस्कर्ता था (जै. उ. ब्रा. २.७.२-६.) वारुणि भृगु का पुलोमा से उत्पन्न पुत्र (मत्स्य २४९.७; ब्रह्म. ७३.३१-३४)। भृगु का उषा से उत्पन्न पुत्र (विष्णुधर्मोत्तर. १.१०६). उमा ने इसे दत्तक लिया था (म. शां. २७८.३४)। इसको काव्य (मत्स्य. २५.९; वायु. ६५: ७४-७५) कवि (म. आ. ६०. ४०). शुक्र (अंधक देखिये; म. शां. २७८.३२). कवींद्र (म. क. ९८) कविसुत, ग्रह, आदि नाम थे। ब्रह्मदेव ने पुत्र माना इसलिये ब्राह्म, शिव ने वरुण माना इसलिये वारुण आदि नामों से इसे संबोधित करते हैं। उशना, शुक्र तथा काव्य ये सब एक हैं (वायु. ६५.७५)। इसकी माता का नाम ख्याति तथा पिता का नाम कवि मिलता है (भा. ४.१)। भृगु का दिव्या से उत्पन्न शुक्र तथा यह एक ही है। (ब्रह्मांड. ३.१.७४)। इसकी स्त्री शतपर्वा (म. उ. ११५. १३)। इसकी पितृसुता आंगी नामक एक स्त्री थी। इसके अतिरिक्त निम्नलिखित स्त्रियां भी थीं। प्रियव्रतपुत्री ऊर्जस्वती (भा. ५.१); पुरंदर कन्या जयंती (मत्स्य. ४७)। पितृकन्या

गौ (ब्रह्मांड ३.१.७४)। यह पर्जन्याधिपति, योगाचार्य, देव तथा दैत्यों का गुरु है (वायु. ६५.७४-८५)।

उशनस् काव्य, कुछ सूक्तों का द्रष्टा है (ऋ. ८.८४;९. ८७-८९)। यह दानवों का पुरोहित था (तै. सं. २.५ ८.५; तां. ब्रा. ७.५.२०; सां. श्रौ. सू. १४.२७.१)। इस की योग्यता बडी थी (ऋ. १.२६.१)। इसके कुल में भृगु से ही संजीवनी विद्या अवगत है (भृगु देखिये)। इसने यह विद्या शंकर से प्राप्त की थी (दे. भा. ४. ११)। उशनस् ने कुबेर का धन लूट लिया था इसलिये शंकर ने इसे निगल लिया। तब यह शंकर के शिश्न से बाहर आया तथा शंकर का पुत्र हुआ। तब से इसका नाम शुक्र पडा (म. शां. २७८.३२, विष्णुधर्म. १.१०६)। असुर लगातार हारने लगे तब उन्हें स्वस्थ शांत रहने का आदेश देकर शुक्र, बृहस्पति को जो मालूम नहीं हैं ऐसे मंत्र जानने के लिये शंकर के पास गया। यह संधि जानकर देवोंने पुनः असुरों को कष्ट देना प्रारंभ किया। तब शुक्र की माता सामने आयी तथा उसने देवताओं को जलाना प्रारंभ किया। परंतु इंद्र ने पलायन किया तथा विष्णुने इसकी माता का वध कर के देवताओं की रक्षा की परंतु स्त्री पर हथियार चलाने के कारण, भृगु ने विष्णु को पृथ्वी पर जन्म लेने का शाप दिया तथा शुक्र की माता का सिर पुनः चिपका कर उसे सजीव किया। तब इंद्र अत्यंत भयभीत हुआ तथा उसने अपनी जयंती नामक कन्या शुक्र को दी। शुक्र ने भी हजार वर्षोंतक तप करके शंकर से प्रजेशत्व, धनेशत्व तथा अवध्यत्व प्राप्त किया (मत्स्य. ४७.१२६; विष्णुधर्म. १.१०६)। शुक्र ने प्रभास क्षेत्र में शुक्रेश्वर के पास (स्कन्द. ७.१.४८) दुर्धर्ष नामक लिंग की स्थापना करके संजीवनी विद्या प्राप्त की (पद्म. उ. १५३)। जयंती दस वर्षों तक इसके साथ अदृश्य स्वरूप में थी। यह तप वामन अवतार के बाद किया। परंतु वायुपुराण में कहा है कि वे दोनों अदृश्य थे, इसीलिये बृहस्पति का निम्नलिखित षड्यंत्र सफल हुआ।

ऐन समय पर युक्ति से बृहस्पति ने शुक्र का रूप ले लिया तथा मैं ही तुम्हारा गुरु हूँ, शुक्र का रूप ले कर आनेवाला यह व्यक्ति झूठा है ऐसा बतला कर उसे वापिस भेज दिया तथा स्वयं ने असुरों को दुर्वृत्त बनाकर हीन बना डाला (मत्स्य. ४७; वायु. २.३६; दे. भा. ४. ११-१२)।

इसे ऊर्जस्वती तथा जयंती से देवयानी उत्पन्न हुई। देवी नामक कन्या इसने वरुण को ब्याही थी (म. आ. ६०.५२)। इसे षण्ड तथा मर्क नामक दो पुत्र थे (भा. ७. ५.१)। इसे आंगी से त्वष्ट्र, वरुत्रिन् तथा षण्डामर्क हुए (कच, वामन तथा बृहस्पति देखिये)। इसे अरजा नामक एक पुत्री थी (पद्म. सृ. ३७)। छठवें मन्वंतर में यह व्यास था। (व्यास देखिये)। शिवावतार गोकर्ण का शिष्य। सारा जग मनोमय है, यह बताने के लिये इसकी कथा प्रयुक्त की गयी है (यो. वा. ४.५-१६)। इसने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ रचा है (मत्स्य. २५२)।

यह धर्मशास्त्रकार था। उशनसधर्मशास्त्र नामक सात अध्यायोंवाली एक छोटी पुस्तक उपलब्ध है जिसमें श्राद्ध, प्रायश्चित्त, महापातकों के लिये प्रायश्चित्त तथा अन्य व्यावहारिक निबंधों के संबंध में जानकारी दी गयी है। उसके धर्मसूत्र में बहुत से सूत्र मनुस्मृति तथा बौधायन धर्मसूत्र के सूत्रों से मिलते जुलते हैं। याज्ञवल्क्य ने इसका निर्देश किया है (१.५); मिताक्षरा (३.२६०); तथा अपरार्क ग्रंथ में औशनस धर्मशास्त्र के कुछ उद्धरण लिये गये हैं। उसी तरह औशनसस्मृति नामक दो ग्रंथ पहला ५१ श्लोकों का व दूसरा ६०० श्लोकों का जिवानंद-संग्रह में उपलब्ध है।

राजनीति विषय पर इसका शुक्रनीति नामक ग्रंथ उपलब्ध है। इसमें से कौटिल्य ने बहुत से उद्धरण लिये हैं। उशनस् उपपुराण का निर्देश औशनस उपपुराण के लिये किया गया है। अनेक स्थानों पर औशनस उपपुराण का निर्देश मिलता है (कूर्म. १.३; गरुड. १.२२३. १९)।

२. उत्तम मनु का पुत्र।

३. सावर्णि मनु का पुत्र।

४. स्वायंभुव मनु का एक जिदाजित् देव।

५. भौत्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक। इसके लिये 'शुद्ध' नाम भी प्रयुक्त है।

६. सुतप देवों में से एक।

७. उरु तथा षडाग्नेयी का पुत्र।

८. (सो. यदु.) भागवतमतानुसार धर्म का पुत्र। भविष्यमतानुसार तामस का पुत्र।

उशिक—(सो. क्रोष्टु.) कृति का पुत्र। इसका पुत्र चेदि।

२. शिव के श्वेत नामक दूसरे अवतार का शिष्य। (भा. ९.२४.२)

उशिज्—कक्षीवत् देखिये।

उशिज—अंगिराकुलोत्पन्न ऋषि। इसे ऋषिज नामांतर प्राप्त है। इसे ममता से उत्पन्न दीर्घतमा नामक पुत्र था। उषिज इसका पाठभेद है।

उशिति—अंगिरस तथा स्वराज् का पुत्र। उशिति का पुत्र दीर्घतमस् (ब्रह्माण्ड. ३.१)।

उशीनर—(सो. अनु.) चक्रवर्ती महामनस् का पुत्र। इसे तितिक्षु नामक भाई था। इसकी मृगा, कृमी, नवा, दर्वा, तथा दृशद्वती नामक पांच स्त्रियाँ थीं। जिन्हें क्रमशः मृग, नव, कृमि, सुव्रत तथा शिबि औशीनर पुत्र थे। उशीनर तथा तितिक्षु ये दो स्वतंत्र वंशशाखायें शुरु हुई। इसके राज्य का प्रसार केकय तथा मद्रक देशों में शिवपुर यौधेय, नवराष्ट्र, कृमिला तथा वृष्ठा इन स्थानों पर हुआ (वायु. २.३७.१७–२४; विष्णु ४.१८; मत्स्य. ४८)। ययातिकन्या माधवी से इसे शिबि उत्पन्न हुआ (शिबि देखिये)।

उषस्त वा उषस्ति चाक्रायण—एक सामवेत्ता ब्राह्मण। जब कुरु देश में अकाल पड़ा था तब बडी ही बुरी हालत में यह एक ग्राम में पत्नी समवेत रहा। एक बार भूख लगने के कारण, एक महावत को, जब वह कुलथी खा रहा था, तब उसने होले मांगे। तब होले देकर वह पानी भी देने लगा। तब पानी जूठा होने के कारण इसने अस्वीकार कर दिया। जब होले भी जूठे हैं ऐसा उससे कहा गया तब इसने कहा कि उनको बिना खाये मेरा जीना असंभव था, परंतु मैं अपनी इच्छानुसार पानी कहीं भी पी सकता हूँ। थोडी कुलथी पत्नी के लिये भी लाये। तदनंतर पास में ही होने वाले यज्ञ में यह गया। फिर भी विद्वान् होने के कारण अन्य ऋत्विजों के समान इसे भी राजा ने दक्षिणा दी तथा इसने भी प्रस्तोता की सहायता की। अन्य स्थान पर उषस्ति पाठ है (छां. उ. १.१०.१; ११.१)। इसने आत्मा के प्रत्यक्षत्व के संबंध में, याज्ञवल्क्य को प्रश्न किया तथा याज्ञवल्क्य ने इससे कहा कि, आत्मा प्रत्यक्ष दिखाना असंभव है (बृ. उ. ३.४.२)। यहाँ उषस्त पाठ है।

उषस्य—काश्यप तथा खशा का पुत्र।

उषा—बलिदैत्य का पुत्र बाणासुर की कन्या। यौवनावस्था में आने के बाद, एक बार जब सखियों सहित रात्रि के समय अपने मंदिर में सोई थी तब स्वप्न में एक सुंदर तथा तरुण पुरुष से इसका समागम हुआ। जाग्रत होने के पश्चात् इसकी विरहयुक्त चर्या देख कर चित्रलेखा ने कारण पूछा। इसने उसे स्वप्न की संपूर्ण हकीकत बताई तथा स्वप्न के उस पुरुष को लाने के लिये कहा। तब चित्रलेखा ने त्रैलोक्य में प्रसिद्ध पुरुषों के चित्र क्रमशः उतार कर उसे दिखाये। यादव वंश दिखाते समय प्रद्युम्न का चित्र देख कर यह लज्जित हुई तथा अनिरुद्ध का चित्र देख कर लज्जा से अधोमुख हो गई। इससे चित्रलेखा ने स्वप्न का पुरुष जान लिया। चित्रलेखा में योगसामर्थ्य था अतएव तीसरे दिन वह शोणितपुर से द्वारका योगसामर्थ्य से एक क्षण में गई वहाँ उसे अपने काबू में ले कर तथा कृत्रिम अंधकार में ढाँक कर ले आई (शिव. रुद्र. यु. ५३)। रात्रि में निद्रिस्त अनिरुद्ध को वह पर्यंकसहित लायी तब उषा को अत्यंत आनंद हुआ तथा उसने चित्रलेखा के योगसामर्थ्य के प्रति आश्चर्य प्रगट किया। बाद में इसने अनिरुद्ध से गंधर्वविवाह किया तथा गुप्त रूप से इसके साथ चार माह तक सुख से रही। बाणासुर द्वारा इसकी रक्षा के लिये नियुक्त सेवकों ने एक बार यह देखा तथा सब बाणासुर को बताया। यह जानते ही उषा के महल में आया। उसने देखा कि, उषा तथा अनिरुद्ध द्यूत खेल रहे हैं। तब बाणासुर अत्यंत क्रोधित हुआ तथा उसका अनिरुद्ध से युद्ध हुआ। युद्ध में नागपाश डाल कर बाण ने अनिरुद्ध को कैद किया। इधर यादवों ने अनिरुद्ध को खूब ढूंढा परंतु वह मिल न सका। तब नारद ने, अनिरुद्ध का स्थान तथा बाणासुर ने उसकी की हुअी दशा बताअी। बाणासुर तथा कृष्ण का तुमुल युद्ध हुआ। बाण की करीब करीब सारी सेना नष्ट हो गई तथा बाण के चार हाथ छोड कर बाकी सारे हाथ कृष्ण ने तोड़ डाले। तब बाणमाता कोटरा तथा रुद्र की प्रार्थनानुसार कृष्ण ने बाणासुर को जीवनदान दिया। आगे चल कर बडे समारोह से बाण ने उषा को अनिरुद्ध को दिया। तब सब यादव द्वारका लौट आये (पद्म. उ. २५०; भा. १०. ६२–६३; शिव. रुद्र. यु. ५१–५९)।

२. त्वाष्ट्री संज्ञा का नामान्तर (ब्रह्म. १६५. २)।

उष्ण—(सो. कुरु. भविष्य.) वायु के मतानुसार निर्वक्र पुत्र तथा विष्णु के मतानुसार में निचंकु पुत्र।

उद्दाक—वसिष्ठ कुल का गोत्रकार ऋषिगण।

ऊ

ऊरु आंगिरस-- मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.४;५)।

ऊर्ज--स्वारोचिष मनु का पुत्र। सप्तर्षियों में से एक।

२. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. उत्तम मनु का पुत्र।

४. सुधामन देवों में एक।

५. (स्वा. उत्तान.) वत्सर तथा स्वर्वीथि का पुत्र।

६. (सो. अज.) वायुमतानुसार सुधन्वन् का पुत्र।

ऊर्जयत् औपमन्यव--भानुमत् का शिष्य। इसका शिष्य सुशारद (वं. ब्रा. १)।

ऊर्जयोनि--विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ५९.७ कुं)।

ऊर्जवह--(सू. निमि.) विष्णुमतानुसार शुचिपुत्र।

ऊर्जव्य--यज्ञ करनेवाले एक यजमान का नाम (ऋ. ५.४१.२०)।

ऊर्जस्वती--(स्वा.) प्रियव्रत तथा बर्हिष्मती की कन्या। शुक्र की स्त्री (भा. ५.१.२४)।

२. अष्ट वसुओं में प्राण वसु की स्त्री।

ऊर्जस्विन्--वैवस्वत मन्वंतर का इंद्र।

ऊर्जा--दक्ष की पुत्री तथा वसिष्ठ की स्वायंभुव मन्वंतर की पत्नी। उस समय इसे चित्रकेतु, सुरोचि, विरजामित्र, उल्बण, वसुभृत्, यान तथा द्युमान् नामक सात पुत्र हुए (भा. ४.१.३८)। इससे भिन्न संतति का भी उल्लेख है।--१. पुंडरिका २. रक्षस् (रत्न), ३. गर्त, ४. ऊर्ध्वबाहु, ५. सवन, ६. पवन, ७. सुतपस्, ८. शंकु (ब्रह्माण्ड २.१२.३९-४३)।

ऊर्जित--(सो. यदु) कार्तवीर्य के प्रमुख पांच पुत्रों में से एक।

ऊर्ण--पूस में सूर्य के साथ घूमने वाला यक्ष।

ऊर्णनाभ--(सो. कुरु) धृतराष्ट्रपुत्र।

२. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

ऊर्णनाभि-- अत्रिकुलोत्पन्न ऋषि।

ऊर्णा--स्वायंभुव मन्वंतर में मारीचि प्रजापति की स्त्री। २ (स्वा. प्रिय.) चित्ररथ राजा की स्त्री। इसका पुत्र सम्राज् (भा. ५. १५. १४)।

ऊर्णायु--इसकी स्त्री मेनका (म. उ. ११५.४००.* पंक्ति ४)। प्राधा से उत्पन्न देवगंधर्वों में से एक।

ऊर्ध्वकृशन यामायन--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४४)।

ऊर्ध्वकेतु--(सू. निमि.) सनद्वाज जनक का पुत्र। इसका पुत्र अज।

२. कश्यप तथा सुरभि के पुत्रों में से एक।

ऊर्ध्वग--कृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र। एक महारथी।

ऊर्ध्वग्रावन् आर्बुदि-- सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७५)।

ऊर्ध्वदृष्टि--पुलह तथा श्वेता का पुत्र। इसे पांच पुत्र तथा पांच कन्याएं थीं (ब्रह्माण्ड. ३.७.२०५)।

ऊर्ध्वनाभा ब्राह्म-- सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०९)।

ऊर्ध्वबाहु--रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

ऊर्ध्वसद्मन् आंगिरस--मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.९)।

ऊर्व--उर्व देखिये।

ऋ

ऋक्ष--आर्क्ष तथा श्रुतर्वन् देखिये।

२. (सो. पूरु.) ऋचा का पुत्र। इसकी पत्नी तक्षक की कन्या ज्वलन्ती थी। इसका पुत्र अंत्यनार (म. आ. ९०.२४; अंतिनार देखिये)।

३. (सो, पुरूरवस्.) अजमीढ तथा धूमिनी का पुत्र। इसकी स्त्री रथंतरी। इसका पुत्र संवरण (म. आ. ८९. २७-२८; चक्षु देखिये)।

४. (सो. कुरु.) वायुमतानुसार देवातिथिपुत्र।

५. शुक्र का पुत्र। इसकी स्त्री विरजा (ब्रह्माण्ड. ३.७.२११)।

ऋक्षदेव—(सो. नील) शिखंडी के दो पुत्रों में से एक। यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था। युद्ध में अपने रथ को वह सुनहले रंग के अश्व जोड़ता था (म. द्रो. २३)।

ऋक्षपुत्र—(सो.) भविष्यमतानुसार अक्रोधन का पुत्र।

ऋक्षरजस्—एक समय मेरु पर्वत पर ब्रह्मा ध्यानमग्न थे। तब उनकी आखों से आंसू गिरे, जिन्हें उन्होंने अपने हाथों में घिस दिया तब उन अश्रु कणों में से यह ऋक्षरजस् वानर उत्पन्न हुआ। एकबार प्यास लगने के कारण यह सरोवर के पास गया। उसमें अपने प्रतिबिंब को शत्रु समझ युद्ध करने के लिये इसने सरोवर में छलांग लगायी। वस्तुस्थिति ध्यान में आते ही यह बाहर आया। बाहर आते ही वह वानर न रह कर स्त्री हो गया है ऐसा उसे लगा। अंतरिक्ष से इंद्र तथा सूर्य की दृष्टि इस पर पडी तथा दोनों ही काम विव्हल हुए। उत्कट काम विकार के कारण इंद्र का वीर्य इसके सिर पर तथा सूर्य का वीर्य इसके गले पर गिरा। (वाल) केशों पर वीर्य गिरने के कारण वाली तथा (ग्रीवा) गले पर गिरने के कारण सुग्रीव उत्पन्न हुआ। रात्रि समाप्त होते ही इस स्त्री को पुनरपि पहले का वानर स्वरूप प्राप्त हुआ। तब यह अपने दोनों पुत्रों लेकोकर ब्रह्मा के पास आया तथा सारी हकीकत उसे बताई। ब्रह्मदेव ने ऋक्षरजस् की अनेक प्रकार से सांत्वना की तथा एक दूत के द्वारा ऋक्षरजस् को किष्किंधा नगरी में राज्याभिषेक किया। वहाँ अनेक प्रकार के वानर थे। उनमें चातुर्वर्ण्य व्यवस्था प्रचलित थी। कालांतर में ऋक्षरजस् की मृत्यु हुई। इसके पश्चात् राज्य वाली को मिला (वा. रा. उ. प्रक्षिप्तसर्ग)।

ऋक्षशृंग—काशी के उत्तर में मंदारवन में तप करने वाले दीर्घतपस् का कनिष्ठ पुत्र। चित्रसेन के बाण से इसकी मृत्यु होने के कारण सब परिवार ने देहत्याग किया। परंतु बचे हुए दीर्घतपस् ने सबकी अस्थियाँ शूलभेद तीर्थ में डालने के कारण सब स्वर्ग में गये (स्कन्द. ३.५३–५५)।

ऋक्षा—अजमीढ की पत्नी। इसका पुत्र संवरण (म. आ. ९०. ३९; ३ ऋक्ष देखिये)।

ऋच—(सो. कुरु. भविष्य.) विष्णु के मतानुसार सुनीथपुत्र (रुच देखिये)।

२. (सो. कुरु.) देवतातिथि तथा मर्यादा का पुत्र। इसकी पत्नी अंगराजकन्या सुदेवा। पुत्र ऋक्ष (म. आ. ९०.२२–२३)।

ऋची—आप्नवान की पत्नी (ब्रह्माण्ड. ३.१.७४)।

ऋचीक—भार्गवकुल का च्यवनवंशज एक प्रख्यात ऋषि (मनु. ४)। और्व का पुत्र (म. आ. ६०.४६; २.४; ह. वं. १.२७)। यह और्व की जंघा फोड़ कर बाहर आया (ब्रह्माण्ड. ३.१.७४–१००)। यह ऊर्व का पुत्र है (म. अनु. ५६)। इसे काव्यपुत्र भी कहा है (ब्रह्म. १०)। इसका और्व ऋचीक कह कर भी उल्लेख है (विष्णुधर्म. १.३२)। उसी प्रकार अनेक स्थानों पर अनेक बार इसे भृगुपुत्र, भार्गव, भृगुनन्दन, भृगु आदि भी कहा है (म. व. ११५.१०; ह. वं. १.२७; ब्रह्म. ३.१०; वा. रा. बा. ७५.२२; पद्म. उ. २६८)। कार्तवीर्य के वंशजों द्वारा अत्यधिक त्रास दिये जाने के कारण सब भार्गव ऋषि मध्य देश में पलायन कर गये। उस समय अथवा उसके कुछ ही पहले ऋचीक का जन्म हुआ तथा जल्द ही उनका मुखिया बन गया। बाल्यावस्था से इसने अपना समय वेदानुष्ठान तथा तप में बिताया। एक बार तीर्थयात्रा करते समय विश्वमित्री नदी के किनारे इसने कान्यकुब्जराज गाधि की कन्या, स्नानहेतु आई हुई देखी। उसके रूप से मोहित हों कर इसने उसके पिता के पास इसकी माँग करने का निश्चय किया। हैहय के विरुद्ध गाधिराज की मित्रता संपादन करने के लिये यह विवाह तय किया गया। यह जब माँग करने आया तब राजा ना नहीं कह सका। तब उसने कहा कि यदि तुम मुझे सहस्र श्यामकर्ण अश्व लाकर शुल्क के तौरपर दोगे तो मैं अपनी यह कन्या तुम्हें दूंगा (म. अनु. ४.७–१० विष्णु. ४.७; भा. ९.१५.५–११)। सातसौ अश्व मांगे (स्कंद. ६. १६६)। परंतु वनपर्व में राजा कन्या देने के लिये तैय्यार हो गया तथापि रूढि के तौरपर एक कानसे श्याम हज़ार अश्व मांगे (११५.१२)। राजा का यह भाषण सुनते ही यह तत्काल उस कान्यकुब्जदेशीय गंगा के किनारे गया तथा वरुण की स्तुति कर के उससे आवश्यक अश्व प्राप्त किये (म. व.११५; अनु.४)। अश्वो वोढा नामक (ऋ. ९.११२) चार ऋचाओं के सूक्त का पठन कर इसने अश्व प्राप्त किये (स्कंद. ६.१६६)। जहाँ ये अश्व निर्माण हुए, वह स्थान कान्यकुब्ज देश में गंगा नदी के किनारे स्थित अश्वतीर्थ नाम से प्रसिद्ध है। अश्व ले कर गाधि राजाने अपनी कन्या सत्यवती इसे दी। इसके विवाह में देव इसके पक्ष के

बाराती थे (म. व. ११५)। ऋचीक ऋषि, सत्यवती भार्या को ले गया तथा आश्रम स्थापित कर गृहस्थधर्म चलाने लगा। तदनंतर जब यह तपश्चर्या करने जाने लगा तब इसने पत्नी से वरदान मांगने के लिये कहा। उसने अपने लिये तथा माता के लिये उत्तम लक्षणों से युक्त पुत्र मांगा। उसके इस मांग से संतुष्ट हो कर इसने ब्राह्मणोत्पत्ती के लिये एक तथा क्षत्रियोत्पत्ती के लिये एक ऐसे दो चरु सिद्ध कर के उसे दिये (म. शां. ४९.१० अनु. ५६; ह. वं. १.२७; ब्रह्म. १०; विष्णु. ४.७; भा. ९.१५) इसने चरु तो दिये ही साथ ही यह भी बताया कि ऋतुस्नात होने पर तुम्हारी माता अश्वत्थ (पीपल) तथा तुम गूलर को आलिंगन करो (म. व. ११५.५७०*; अनु. ४; विष्णुधर्म. १.३२-३३)। दो घटों को अभिमंत्रित कर बताया कि सत्यबती की माता वह वृक्ष की तथा सत्यवती पीपल की सहस्र प्रदक्षिणायें करे (स्कन्द. ६. १६६-६७)। बाद में गाधि ऋचीक के आश्रम में आया। तब सत्यवती को पति द्वारा दिये गये चरु का स्मरण हुआ परंतु माता के कथनानुसार दोनों नें चरु बदल कर भक्षण किये। अल्पकाल में ही जब ऋचीक ने सत्यवती की ओर देखा तब उसे पता चला कि, चरुओं का विपर्यास हो गया है। परंतु सत्यवती की इच्छानुसार क्षत्रिय स्वभाव का पुत्र न हो कर पौत्र होगा ऐसा ऋचीक ने इसे आश्वासन दिया। तदनंतर सत्यवती को जमदग्नि प्रभृति सौ पुत्र हुए। वे सब शांति आदि अनेक गुणों से युक्त थे। परंतु जमदग्नि को रेणुका से उत्पन्न परशुराम उग्र स्वभाव का हुआ। गाधि को विश्वामित्र हुआ तथा उसने अपने तपःसामर्थ्य से पुनः ब्राह्मणत्व प्राप्त किया (म. आ. ६१; व. ११५; शां. ४९; अनु. ४.४८; वायु. ९१.६६-८७ भा. ९.१५; स्कन्द. ६.१६६-१६७)। तदनंतर सत्यवती कौशिकी नदी बनी (ह. वं. १.२७; ब्रह्म. १०; विष्णु. ४.७; १६. वा. रा. बा. ३४)। इस ऋषि ने वड़वाग्नि ढूँढ निकाला (विष्णुधर्म. १. ३२)। शाल्वदेशाधिपति द्युतिमान् राजा ने इसे अपना राज्य अर्पण किया था (म. शां. २२६. ३३; अनु. १३७.२२)। यह परशुराम का पितामह है (पद्म. भू. २६८)। ऋचीक पुत्र तथा कलत्र सहित भृगुतुंग पर्वत पर रहता था (वा. रा. बा. ६१. १०-१३)। विष्णु ने अमानत के रूप में वैष्णव धनुष्य इसे दिया था। वह इसने जमदग्नि को दिया (वा. रा. बा. ७५. २२)। यह धनुर्विद्या में काफी प्रवीण था (म. अनु. ५६.७) इसके वंशजों को आर्चिक कहते हैं (ब्रह्म. १०)। जमदग्नि के अलावा वत्स (विष्णुधर्म. १.३२), शुनःशेप तथा शुनःपुच्छ (ह. वं. १.१७; ब्रह्म. १०) इतने नाम प्राप्त हैं।

२. प्रथम मेरु सावर्णि मनु का पुत्र।

ऋचेयु--(सो. पूरु.) रौद्राश्व को घृताची से उत्पन्न हुआ। इसे तक्षककन्या ज्वलना से अंतिनार हुआ (२ ऋक्ष देखिये)।

ऋजिश्वन्--इसे दो बार वैदथिन (ऋ. ४.१६. १३; ५.२९.११) तथा एक बार औशिज कहा गया है (ऋ. १०. ९९.११)। ये निर्देश मातापिता के नाम से आये होंगे। पिप्रू के साथ हुए युद्ध में इन्द्र ने इससे सहायता की (ऋ. १.५१.५)।

ऋजिश्वन् भारद्वाज—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.४९.५२; ९.९८; १०८)।

ऋजु--(सो. वृष्णि.) भागवतमतानुसार वसुदेव देवकी का कंस द्वारा मारा गया पुत्र। विष्णु के मतानुसार ऋभुदास, मत्स्य के मतानुसार ऋपिवास तथा वायु के मतानुसार ऋजुदाय नाम हैं।

ऋजुदाय--ऋजु देखिये।

ऋजुनस्--सोमयज्ञ करनेवाले लोगों के साथ इसका नाम है (ऋ. ८.५२.२)।

ऋज्राश्व--अंबरीष, सुराधस, सहदेव तथा भयमान के साथ इसका एक वार्षागिर के रूप में उल्लेख है (ऋ. १. १००. १३-१७)। इन्हीं पांच भ्राताओं के नाम पर उपरोक्त संपूर्ण सूक्त है। एक बार अश्वियों का वाहन गर्दभ लोमड़ी के रूप में इसके पास आया। तब इसने उसे एक सौ एक भेडें खाने के लिये दीं। तब नगरवासी लोगों की हानि की। इसलिये वृषागिर राजा ने इसकी आँखें फोड़ दीं। तब ऋज्राश्व ने अश्विदेवों की स्तुति करने पर उन्होंने इसे दृष्टि दी। उस लोमड़ी का भाषण भी ऋग्वेद में निम्नप्रकार दिया है। 'हे पराक्रमी तथा शूर अश्वियों, इस ऋज्राश्व ने तरुण तथा कामी पुरुष के अनुसार एक सौ एक भेडें काट कर मुझे खाने के लिये दी हैं' (ऋ. १. ११६. १६; ११७. १७-१८)।

ऋजूनस्—इनके यहाँ सोम पी कर इंद्र प्रसन्न हुआ (ऋ. ८. ५२. २)।

ऋणज्य—एक व्यास (व्यास देखिये)।

ऋणंचय—यह रुशमाओं का राजा था। इसने बभ्रुनामक सूक्तकार को काफी दान दिया। बभ्रु कहता है, रुशमाओं ने मुझे चार हजार गायें दीं। एक हजार अच्छी

गायों के साथ रख दिया (ऋ. ५. ३०. १२; १४)। रुशम किस देश को अथवा किन लोगों को कहा गया है यह कह नहीं सकते। यह मंत्रद्रष्टा था (ऋ. ९. १०८. १२)।

ऋत--अंगिरसपुत्र देवों में से एक।

२. (सू. निमि.) विजय जनक का पुत्र। इसका पुत्र शुनक।

३. रुद्र सावर्णि मनु का नामांतर (मत्स्य. ९)।

४. चक्षुर्मनु तथा नड्वला का पुत्र।

५. आभूतरजस नामक देवों में से एक।

६. तुषित नामक देवों में से एक।

७. सुख नामक देवों में से एक।

८. यह युधिष्ठिर के राजसूय में उपस्थित था (म. स. ३१.७)।

ऋतजित्--दूसरे मरुद्गणों में से एक।

ऋतंजय--एक व्यास (व्यास देखिये)।

ऋतधामन्--(सो. वृष्णि.) कंक को कर्णिका से उत्पन्न पुत्र। कृष्ण का चचेरा भाई।

२. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला इन्द्र।

३. तेरहवें मनु का नामान्तर (मत्स्य. ९)।

ऋतध्वज--(सो. काश्य.) यह शत्रुजित् का पुत्र। गालव ने कुवलय नामक अश्व दे कर इसे अपने आश्रम का कष्ट दूर करने के लिये कहा। एकबार सूकर रूप से आये हुए पातालकेतु के पीछे लग कर एक गड्ढे में गिर कर पाताल में गया। वहाँ पातालकेतु द्वारा भगा कर लाई गई विश्वावसु गंधर्व की कन्या मदालसा थी। उसके साथ इसका विवाह होकर उसे लेकर यह घर आया। तदनंतर यमुना के तट पर रहनेवाले पातालकेतु के भाई तालकेतु ने इसे धोखा दे कर यज्ञ की दक्षिणा के रूप में इसके गले का कंठा माँग लिया। तथा इसे अपने आश्रम में रख कर मदालसा को सूचित किया कि ऋतध्वज मर चुका है तथा चिन्ह के तौर पर मृत्यु के समय उसने यह कंठा दिया ऐसा बताया। मदालसा सती हो गई। ऋतध्वज ने अविवाहित रहने का निश्चय किया। परंतु पुत्र की इच्छानुसार अश्वतर नाग ने सरस्वती से गानविद्या प्राप्त कर शंकर को प्रसन्न किया तथा उससे पहले के ही समान परंतु योगी मदालसा कन्या के तौर पर मांग कर ऋतध्वज को दी। ऋतुध्वज को उससे विक्रान्त, सुबाहु, शत्रुमर्दन तथा अलर्क नामक चार पुत्र हुए तथा मदालसा ने उन्हें योगमार्ग का उपदेश दिया (मार्कं. १८.३४; १९.८८ प्रतर्दन देखिये)

२. वृद्धा देखिये।

ऋतंभर--एक राजर्षि। जाबाली ऋषि के कथनानुसार मन से इसने गाय की सेवा की अतएव इसे सत्यवान् नामक पुत्र हुआ (पद्म. पा. २८)।

ऋतसेन--मार्गशीर्ष माह में सूर्य के साथ साथ घूमनेवाला एक गंधर्व।

ऋतस्तुभ--अश्वियों ने इस ऋषि की रक्षा की (ऋ. १.११२.२०)।

ऋतायन--शल्य के पिता का नाम।

ऋतु--फाल्गुन माह में सूर्य के साथ घूमनेवाला एक यक्ष।

२. प्रतर्दन नामक देवताओं में से एक।

ऋतुजित्--(सू. निमि.) विष्णु के मतानुसार यह अंजनपुत्र है तथा भागवत मतानुसार पुरुजित्।

ऋतुधामन्--चौथे मेरु सावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

ऋतुध्वज--ऋतध्वज देखिये।

ऋतुपर्ण--यह भंगाश्विन का पुत्र तथा शफाल का राजा होगा (बौ. श्रौ. २०.१२)। 'ऋतुपर्णकयोवधिभंग्याश्विनौ' उल्लेख है (आप. श्रौ. २१.२०.३)।

२. (सू. इ.) अयुतायुपुत्र (वायु. ८९; ब्रह्म. ८.८०; ह. वं. १.१५)।

यह अक्षविद्या में अत्यंत निपुण था। नल का सारथि वार्ष्णेय इसके पास सारथि बन कर रहा था (म. व. ५७. २३)। अज्ञातवासकाल में नल बाहुक नाम धारण कर के इसी के पास सारथि रूप में रहा। इसका सच्चा सारथी जीवल (म. व. ६४.८)। इस ने नल को अपनी अक्षविद्या दी तथा नल ने भी अपनी अश्वविद्या इसे दी (म. व. ७०)। यह वीरसेनपुत्र नल राजा का मित्र था। इसे आर्तपर्णि नामक पुत्र था (ब्रह्म. ८.८०; ह. वं. १.१५.२०)। इसका पुत्र सुदास (मा. ९.९)। इसे सर्वकाम या सर्वकर्मा नाम से नल पुत्र था (वायु. ८८. १७४)।

ऋतुमंत--मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

ऋतेयु--(सो. पूरु.) रौद्राश्व तथा घृताची के दश पुत्रों में ज्येष्ठ। इसे औचेयु नामांतर प्राप्त है। इसे तक्षककन्या ज्वलना से अंतिभार हुआ (ऋचेयु देखिये)।

ऋथु--क्षत्रिय होते हुये भी यह ब्राह्मण तथा ऋषि हो गया था (वायु. २. २९.११४)।

ऋद्धि--वैश्रवण की पत्नी।

ऋभु--यह मानव थे। परंतु तप, यज्ञ इ. करके इन्होंने देवत्व प्राप्त किया। परंतु देव इन्हें अपने में शामिल नहीं करते थे। अन्त में प्रजापति के कथनानुसार ऋभुओं को सूर्य के साथ सोमपान करने का मान मिला। फिर भी इनमें मनुष्यत्व का गंध आता है कह कर देव ऋभुओं का अत्यंत तिरस्कार करने लगे (ऐ. ब्रा. ३. ३०)। एक ब्रह्ममानस–पुत्र। (भा. ४.८)। इसका शिष्य निदाघ। ऋभु ने निदाघ को तत्वज्ञान का उपदेश किया है (विष्णु. २.१६; नारद. १.४९)। चाक्षुष तथा वैवस्वत मन्वन्तर के देवों में ऋभु हैं। ऋभुगीता नामक सत्ताईस अध्यायों का एक वेदान्तविषयक ग्रंथ है (C. C.)।

ऋभुदास--ऋभु देखिये।

ऋश्यशृंग--काश्यप विभांडक का पुत्र। एकबार जब विभांडक गंगास्नान के लिये गया था तब उर्वशी उसे दृष्टिगोचर हुई। तत्काल कामविकार उत्पन्न हो कर उसका रेत पानी में गिरा। इतने में पानी पीने के लिये शाप से हिरनी बनी हुई एक देवकन्या वहाँ आई तथा पानी के साथ वह रेत उसके पेट में गया। उससे यह उत्पन्न हुआ (म. व. ११०)। संपूर्ण आकार मानव के समान परंतु सिरपर ऋश्य नामक मृग के समान सींग था, इसलिये इसे ऋश्यशृंग नाम प्राप्त हुआ (म. व. ११०.१७)। इसका जन्म होते ही इसकी माता शापमुक्त हो कर स्वर्ग गई तब अनाथ ऋश्यशृंग का पालन-पोषण विभांडक ने किया तथा इसे वेदवेदांगों में पारंगत किया। मृगयोनि का होने के कारण यह डरपोंक था तथा आश्रम के बाहर कहीं भी न जाता था। विभांडक ने भी उसे ऐसी ही आज्ञा दे रखी थी। इससे इसने पिता को छोड़ अन्य पुरुष न देखा था (म. व. ११०.१८)। इसी समय अंगदेश के चित्ररथ नामक राजा की गलती से वहाँ अवर्षण हुआ। चित्ररथ दशरथ का मित्र था। वह ब्राह्मणों से असत्य व्यवहार करता था अतः ब्राह्मणों ने इसका त्याग किया। तब उसके देश में अवर्षण हुआ तथा लोगों को अत्यधिक कष्ट होने लगे। तब इन्द्र को वर्षा के लिये मजबूर करनेवाले बडे बडे तपस्वियों से इसने पूछा। उनमें से एक ने कहा कि, ब्राह्मण तुमसे कुपित हैं, उनके क्रोध का निराकरण करो। तब उसे पता चला कि, ऋश्यशृंग यदि अपने देश में आयेगा तो चारों ओर सुख का साम्राज्य छा जायेगा। ऋश्यशृंग को लाने के लिये जब उसने मंत्रियों से चर्चा की तब वेश्याओं की सहायता छोड अन्य मार्ग ही उन्हें न सूझता था। वेश्याओं से पूछने पर एक वृद्ध वेश्या ने वह कार्य स्वीकार किया तथा कुछ तरुण वेश्याओं को लेकर विभांडक के अनुपस्थिति में उसके आश्रम में जाने का निश्चय किया। इस के लिये एक नौका पर आश्रम तैय्यार कर वह नौका आश्रम के पास खड़ी कर उसने बड़ी युक्ति से अपनी लड़कियों द्वारा अपने पाश में बांध लिया। ऋश्यशृंग ने उन वेश्याओं को मुनिकुमार समझ कर उनसे व्यवहार किया। दूसरी बार ऋश्यशृंग को लेकर वे वेश्यायें अंग देश में आयी। तब अंग देश में बहुत वर्षा हुई। रोमपाद ने अपनी शान्ता नामक कन्या इसे दी तथा काफी उपहार दिया। विभांडक पुत्र को ढूंढते हुये वहाँ आया तब रोमपाद द्वारा दिये गये उपहार देखकर इसका क्रोध शांत हो गया। इसने एक पुत्र का जन्म होने तक ऋश्यशृंग को वहाँ रहने की अनुमति दी तथा स्वयं वापस गया। ऋश्यशृंग भी एक पुत्र के जन्म के बाद शान्ता के साथ अपने आश्रम वापस गया (म. व. ११०.११३; वा. रा. बा. ९.१०)। दशरथ के पुत्रकामेष्टि यज्ञ में रोमपाद की मध्यस्थिता से दशरथ ने इसे यज्ञ का अध्वर्यु बनाया। उससे दशरथ को रामलक्ष्मणादि पुत्र हुए (वा. रा. बा. ११)। यह ऋश्यशृंग सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक होगा (भा. ८.१३; विष्णु. ३.२)। कौशिकी नदी के किनारे ऋश्यशृंग का आश्रम था। वहाँ वनवास के समय धर्मराज आये। तब लोमश ने ऋश्यशृंग की उपरोक्त जानकारी धर्मराज को बताई है। वहाँ दशरथ का उल्लेख नहीं है (ऋष्यशृंग देखिये)। इसके द्वारा रचित ग्रंथ १ ऋश्यशृंगसंहिता, २ ऋश्यशृंगस्मृति। ऋश्यशृंगस्मृति का उल्लेख विज्ञानेश्वर, हेमाद्रि, हलायुध आदि ने किया है (C. C.)। आचार, अशौच, श्राद्ध तथा प्रायश्चित्त आदि के बारे में इसके विचार मिताक्षरा, अपरार्क, स्मृतिचंद्रिकादि ग्रंथों में प्राप्य हैं। मिताक्षरा में (याज्ञ. २.११९) शंख का मानकर दिया गया श्लोक अपरार्क ने (७२४) ऋश्यशृंग का मानकर दिया है। इस श्लोक में दिया गया है कि नष्ट हुई सम्मिलित संपत्ति अगर किसी हिस्सेदार ने पुनः प्राप्त की तो उसका एक चतुर्थांश उसे प्राप्त होता है तथा बाकी बचे हुए में अन्य लोगों का हिस्सा होता है। स्मृतिचन्द्रिका में (१.३२) इसका एक गद्य परिच्छेद दिया गया है।

ऋषभ--(स्वा. प्रिय.) नाभि तथा मेरुदेवी का पुत्र। माता का नाम सुदेवी भी था (भा. २.७.१०)। यज नामक इंद्र ने इसे अपनी कन्या जयंती दी थी तथा उससे इस राजा को सौ पुत्र हुये। उन में श्रेष्ठ भरत है। उन में से ८१ पुत्र कर्ममार्गाचरण करनेवाले ऋषि बने तथा कवि,

हरि, अंतरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, आविर्होत्र, द्रुमिल, चमस तथा करभाजन नामक नौ पुत्र ब्रह्मनिष्ठ थे। ऋषभदेव ने भरत, कुशावर्त, इलावर्त, ब्रह्मावर्त, मलय, केतु, भद्रसेन, इंद्रस्पृश्, विदर्भ तथा कीकट नाम से अपने अजनाभवर्ष के नौ खंड करके उन्हें अधिपति बनाया तथा अवशेष भाग का सार्वभौमत्व भरत को दिया। इसने प्रजा को धर्मानुकूल बनाकर पुत्रों को ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया (भा. ५. ३-६)।

बाल्यावस्था से ही ऋषभदेव के हस्तपादादि अवयवों पर वज्र, अंकुश, ध्वज इ. चिह्न दीखने लगे थे। इसका ऐश्वर्य देखकर इंद्र के मन में असूया उत्पन्न होने लगी तथा उसने उसके खंड में वर्षा करना बंद कर दिया। तब उसका कपट ऋषभ देव ने पहचाना तथा अपनी माया के प्रभाव से अपने अजनाभखंड में वर्षा कर दी। तदनंतर यह कर्मभूमि है ऐसा ख्याल कर ऋषभदेव ने प्रथम गुरुगृह में वास्तव्य किया। तदनंतर गृहस्थाश्रम का स्वीकार किया तथा शास्त्रोक्तविधि से यथासांग आचरण किया। यह आत्मविवेक से बर्ताव करता था। यह ब्राह्मणों की अनुज्ञा से राज्य करता था। कालांतर से ब्रह्मावर्त में अपने पुत्रों को उद्देशित करके संसार को इसने ज्ञानोपदेश दिया। उस समय यह घर में ही विक्षिप्त के समान दिगंबर तथा अस्ताव्यस्त रहता था। तदनंतर इसने संन्यास लिया तथा ब्रह्मावर्त से बाहर निकला। लोग उसे कैसा भी उपसर्ग देते थे तब वह उनकी ओर ध्यान न देकर वह स्वस्वरूपमें स्थिर रहता था। ऐसी आनन्दमय स्थिति में यह पृथ्वी पर घूमता था। देहत्याग की इच्छा से इसने मुँह में पत्थर पकड़ा तथा दक्षिण में कटक पर्वत के अरण्य में घूमते समय दावानल से ऋषभदेव का शरीर दग्ध हो गया (भा. ५. ३-६)। स्वयं विरक्त हो कर वन में गया (मार्क ५०.४०) तथा अपना श्वासोच्छ्वास मिट्टी की ईंट से बंद कर देहत्याग किया (विष्णु. २.१.३२)। यह भगवंत का आठवाँ अवतार था इसने परमहंस दीक्षा ली थी (भा. २.७.१०. अर्हत् देखिये)।

इसका अनुयायी तथा नाती सुमति। इसका अनुयायी होने के कारण लोग सुमति को देव मानने लगे।

२. ऋषभकूटशृंग पर रहनेवाला एक क्रोधी ऋषि। इसके पास अनेक लोग आने लगे तथा उसे कष्ट होने लगे। तब इसने पर्वत तथा वायु को आज्ञा दी कि, इधर अगर कोई आने लगे तो उनपर पाषाणवृष्टि कर के वापस कर दो (म. व. १०९)। आशा कितनी सूक्ष्म तथा विशाल रहती है इसे कृश तनुवीरद्युम्नसंवादरूपी दृष्टांत देकर इसने सुमित्र राजा को समझाया है। इस ऋषि के इस संवाद को ऋषभगीता नाम है (म. शां. १२५-१२८)।

३. वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के नवम चौखाने में व्यास के निवृत्ति मार्ग का प्रसार करने के लिये ऋषभ नामक शिव का अवतार होनेवाला है। उसके अनुक्रम से १. पराशर, २. गर्ग, ३. भार्गव, ४ गिरीश शिष्य होंगे। यह योगमार्ग का उद्धार करनेवाला है (शिव. शत- ५. ३६-४८; भद्रायु देखिये)। भद्रायु के कथनानुसार यह प्रवृत्तिमार्गीय होगा।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

५. इन्द्र आदित्य का पुत्र (भा. ६.१८.७)।

६. एक असुर। इसका वध करने के बाद उसके चमड़े की दुंदुभि बृहद्रथ राजा ने बनाई थी (म. स.१९.१५)।

७. अंगिरावंश के धृष्णि का पुत्र। इसका पुत्र सुधन्वा (ब्रह्मांड. ३.१.१०७)। यह मंत्रकार था (वायु. ५९. ९८-१०२)।

८. (सो. अज.) भागवत के मतानुसार कुशाग्र राजाका पुत्र। इसका सत्यहित नामक पुत्र था।

९. एक वानर। राम के राज्याभिषेक के समय वह समुद्र का उदक लाया था तथा मत्त राक्षस का वध किया था (वा. रा. यु. ७०.५८.६३.)।

१०. (सू. इ.) राम तथा अयोध्यापुरनिवासी सब जनों की मृत्यु के बाद पुनरपि शून्य हुये प्रदेश में निवास करनेवाला राजा (वा. रा. उ. १११)।

११. (सो. वृष्णि.) वृष्णि का पुत्र (पद्म. सृ. १३)।

१२. कृष्ण के पुत्रों में से एक (भा. १.१४.३१)।

१३. एक गोप का नाम। यह रामकृष्ण का मित्र था (भा. १०.२२)।

१४. एक ऋषि। यह युधिष्ठिर की सभा में था (म. स. ११.१२५* पंक्ति ६)।

१५. आयुष्मान् तथा अंबुधारा का पुत्र। दक्षसावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला विष्णु का अवतार (मनु देखिये)।

१६. विश्वामित्र का पुत्र (ऐ. ब्रा. ७. १७.)।

ऋषभ याज्ञतुर—यह श्विक्न का राजा तथा अश्वमेध करनेवालों में एक था (श. ब्रा. १२.८.३.७;१३.५.४. १५; सां. श्रौ. १६.९.८.१०; गौरवीति शाक्त्य देखिये)।

ऋषभ वैराज शाक्कर--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६६)।

ऋषभस्कंद--रामसेनाका एक वानर (वा. रा. यु. ४६)।

ऋषिकुल्या--ऋषभदेववंशीय भूमनू की दो पत्निओं में से एक। उसका पुत्र उद्गीथ।

ऋषिज--उशिज का नामान्तर।

ऋषिर्मित्रवर—अंगिरा गोत्र का एक प्रवर।

ऋषिर्मैत्रवर—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

ऋषिवान्मानव—अंगिराकुल का एक गोत्रकार तथा प्रवर।

ऋषिवास—ऋजु देखिये।

ऋष्टिषेण—एक आचार्य (नि. २. ११)।

ऋष्य--(सो. कुरु.) अजमीढवंशीय जह्नुकुल के देवातिथि का पुत्र।

ऋष्यशृंग काश्यप--यह कश्यप का शिष्य है तथा इसे काश्यप पैतृक नाम भी प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३. ४०. १; वं. ब्रा. २; ऋष्यशृंग देखिये)।

ऋष्यशृंग वातरशन--मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १३६. ७)।

ए

एक—(सो. पुरूरवस्.) रय का पुत्र।

एकजटा—सीतासंरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (वा. रा. सुं. २३)।

एकत--गौतम का ज्येष्ठ पुत्र (त्रित देखिये)।

एकद्यू नौधस--सूक्तद्रष्टा। इसे अनुक्रमणी में नौधस नोधःपुत्र कहा गया है (ऋ. ८. ८०)। एकद्यू का मंत्र में निर्देश है (ऋ. ८. ८०. १०)। एकदिव् मूल शब्द होगा।

एकपर्णा--हिमवान् की मेना से उत्पन्न तीन कन्या ओं में दूसरी। अपर्णा तथा पर्णा की भगिनी। यह असित ऋषि की पत्नी। इसे देवल नामक एक पुत्र था (ब्रह्मांड. ३. ८. २९-३३; १०.१-२१; ह. वं. १. १८)।

एकपाटला—हिमवान् को मेना से उत्पन्न तीन कन्याओं में से एक। यह जैगीषव्य की पत्नी थी। इसके पुत्र शंख तथा लिखित। परंतु इन्हें अयोनिज विशेषण लगाया गया है (ब्रह्माण्ड. ३. १०. २०-२१; ह. वं. १. १८. २४)।

एकपाद—कश्यप को कद्रू से उत्पन्न पुत्र।

एकपादा—सीता के संरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (म. व. २६४. ४४)।

एकयावन् गांदम—एक आचार्य (पं. ब्रा. २१. १४. २०; तै. ब्रा. २. ७. ११)। तै. ब्रा. में कांदम पाठ है।

एकलव्य—व्याधों का राजा। हिरण्यधनु का पुत्र। द्रुपद से सहायता की अपेक्षा नष्ट होने पर चरितार्थ के लिये द्रोणाचार्य ने भीष्म के नातियों को धनुर्विद्या सिखाने का काम स्वीकार किया। धृतराष्ट्र तथा पंडु के पुत्र उसके पास विद्याध्ययन करने लगे। कुछ दिनों में द्रोणाचार्य के अध्यापन कौशल्य की कीर्ति चारों ओर फैल गई। इससे दूर दूर के देशों के राजपुत्र द्रोणाचार्य के पास विद्याध्ययन के लिये आने लगे। एकलव्य भी विद्यार्जन के लिये द्रोणाचार्य के पास आया। परंतु व्याधपुत्र होने के कारण द्रोणाचार्य ने उसे पढ़ाना अमान्य कर दिया। तब किसी भी प्रकार का विषाद मन में न रखते हुए, द्रोणाचार्य पर दृढ विश्वास रखकर, नमस्कार कर के यह चला गया (म. आ. १२३.११) द्रोण के द्वारा विद्यादान अमान्य किये जाने पर भी अपना निश्चय न छोडते हुए इसने द्रोण की एक छोटी प्रतिम मिट्टी की बनाई तथा उसे अपना गुरु मान कर, उस प्रतिमा के प्रति दृढ विश्वास रखते हुए, प्रतिमा के सामने अपना विद्याव्यासंग चालू रखा तथा विद्या में प्रवीण हो गया। द्रोणाचार्य ने उत्तम ढँग से अपने शिष्यों को सिखाया था। सब शिष्यों से अधिक द्रोण की प्रीति अर्जुन पर थी। उसने अर्जुन को आश्वासन दिया था कि किसी भी शिष्य को मैं तुमसे अधिक पराक्रमी नहीं बनाऊंगा। कुछ दिनों के बाद द्रोणाचार्य सब शिष्यों के सहित कुत्ता आदि मृगयासामग्री ले कर मृगया के लिये गये। शिकार करते समय कुत्ता उनसे काफी दूर एकलव्य के पास गया तथा बलाढ्य, कृष्णवर्णीय व्याध को देखकर भौंकने लगा। तब उसे बिल्कुल जख्म न हो किन्तु उसका भौंकना बंद हो जावे, इस हेतु से, बड़ी कुशलता से,

एकलव्य ने उसके मुख में सात बाण मारे। तब वह कुत्ता उसी प्रकार अपने मालिक के पास आया। उस कुत्ते को देखकर द्रोण को आश्चर्य लगा कि इतनी कुशलता से लक्ष्यवेध करनेवाला यह कौन हो सकता है। इधर उधर देखते समय द्रोण को एकलव्य दृष्टिगत हुआ। द्रोण को देख कर एकलव्य ने अभिवादन किया तथा कहा कि, मैं आपका शिष्य हूँ। द्रोण को उसकी कुशलता से बडा आनंद तथा कौतुक लगा। यह अर्जुन की अपेक्षा धनुर्विद्या में श्रेष्ठ है जानकर अर्जुन को दिया गया अपना वचनभंग हो जाने का डर लगा। परंतु बडी युक्ति से गुरुदक्षिणा के तौर पर इसने उसके दाहिने हाथ का अंगूठा मांग लिया। एकवचनी एकलव्य ने वह दे दिया (म. आ. १२३.३७)। परंतु इससे इसकी पहले की चपलता नष्ट हो गई। एकलव्य भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्षमें था। दाहिना हाथ पूर्ण रूपसे निरुपयोगी होते हुए भी इसने अत्यंत पराक्रम दर्शाया। यह श्रीकृष्ण के हाथों मारा गया (म. द्रो. १५५.२९)। इसे केतुमान् नामक एक पुत्र था। वह भीम के द्वारा मारा गया (म. भी. ५०. ७०)।

एकलोचना--सीतासंरक्षण के लिये नियुक्त राक्षसियों में से एक (म. व. २६४.४४)।

एकवीर--(सो. तुर्वसु.) हरिवर्मा राजा को विष्णुप्रसाद से प्राप्त पुत्र। यह वाजीरूपधर विष्णु से वडवारूप धारण की हुई लक्ष्मी के उदरसे उत्पन्न हुआ था। इसलिये इसे हैहय नाम था। यह यदुकुलोत्पन्न हैहय राजा से बिल्कुल भिन्न है। इसे एकावली तथा यशोवती नामक दो स्त्रियाँ थीं तथा इसकी उपास्यदेवता एकवीरा देवी थी (दे. भा. ७.१७.२३)।

एकशय—तक्षक का पुत्र अश्वसेन (म. क. ६६)।

एकाक्ष—दनु तथा कश्यप का पुत्र (म. आ. ६६. २८)।

एकांगी—एक ग्वालन। इसे गोत्रत के कारण ऐश्वर्य प्राप्त हुआ (स्कन्द. २.४.९)।

एकादशरथ—(सो. यदु.) वायु के मतानुसार दशरथपुत्र।

एकादशी--मुर देखिये।

एकानंगा—यशोदा की कन्या। कृष्ण की भगिनी।

एकानेका—अंगिरस की कन्या। इसे ही कुहू दूसरा नाम है (म. व. २०८.८)। एकानंशा ऐसा पाठ है।

एकायन—भृगुकुल का एक गोत्रकार। शाकायन पाठभेद है।

एकावली—एक वीर राजा की पत्नी। रम्य राजा को रुक्मरेखा से उत्पन्न कन्या।

एकेपि--अंगिरा कुल का एक गोत्रकार। यह एक ऋषि का नाम है (सां. ब्रा. ३.८)

एतश--ऋग्वेद की एक ऋचा का सर्वानुक्रमणी के अनुसार यह द्रष्टा है (ऋ. १०.१३६.६)। वहाँ इसे वातरशन कहा गया है। एतश को अग्नि के आयुष्य नामक कुछ मंत्रों की रचना की स्फूर्ति हुई। तब इसने पुत्र से कहा कि मेरे मंत्रपठन में बाधा मत लाओ क्योंकि इन मंत्रों के पठनसे यज्ञ के व्यत्यय तथा व्यंग नष्ट हो जाते है। परंतु ये मंत्र कह ही रहे थे तब उसके अभ्यग्नि नामक पुत्र ने विघ्न उपस्थित किया। इन असंबद्ध मंत्रों के कारण उसे लगा कि पिताजी पागल हो गये हैं तथा उसने उनके मुंह पर हाथ रखा। तब क्रोधित होकर इसने उसे शाप दिया कि तुम्हे कुष्ठ हो जायेगा (ऐ. ब्रा. ६.३३)। ऐ. ब्रा. में ऐतश शब्द है। इसलिये यह कथा संभवतः एतश की होगी। ऐतशायन औवों में अत्यंत बुरे मान कर वर्णित हैं। ऐतशप्रलाप आजकल अथर्ववेद का भाग कह कर प्रसिद्ध है तथा अभी वह वैसा ही असंबद्ध है (अ. वे. २०.१२९-१३२; बृहद्दे. ८.१०१)। स्वश्वपुत्र सूर्य से हुए युद्ध में इंद्र ने एतश को बचाया (ऋ. १. ५४. ६; ६१.१५; ४.१७.१४)। इसे सूर्य ने घायल किया (ऋ. ८.१.१८)।

एतश वातरशन--मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.६)।

एनक--ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र में हुऐ यज्ञ का एक ऋषि (पद्म. सृ. २४)।

एरक—एक सर्प (म. आ. ५२.१२)।

एलपत्र—एक सर्प।

एलापुत्र--कद्रूपुत्र (नभ देखिये)।

एवयामरुत् आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.८७)।

एवावद--यह नाम क्षत्र, मनस तथा यजत के साथ आया है (ऋ. ५.४४.१०)।

ऐ

ऐकादशाक्ष मानुतंतव्य--सूर्योदय के साथ साथ होम करनेवाले (उदितहोमी) एक राजा का नाम (ऐ. ब्रा. ५.३०)। यह नगरिन् जानश्रुतेय का समकालीन था।

ऐकेपि--अंगिरस् देखिये।

ऐक्ष्वाक--यह शब्द ब्राह्मण ग्रंथों में बहुतसे व्यक्तियों के लिये प्रयुक्त हुआ है। राजा हरिश्चंद्र वैधस ऐक्ष्वाक था (ऐ. ब्रा. ७.१३.१६.)। पुरुकुत्स का यह अनुवांशिक नाम है (श. ब्रा. १३.५.४.५)। ऐक्ष्वाक वार्ष्ण नामक आचार्य का उल्लेख मिलता है (जै. उ. ब्रा. १.५.४)। त्र्यरुण भी ऐक्ष्वाक था (पं. ब्रा. १३.३.१२)। यह नाम बृहद्रथ के लिये भी प्रयुक्त हुआ है (मैत्र्यु. १. २; असमाति देखिये)। ऋग्वेद में इक्ष्वाकु का उल्लेख है (ऋ. १०.६०.४; भगेरथ देखिये)। यह शब्द इक्ष्वाकु वंशजों के लिये सामान्यतः प्रयुक्त होता है।

ऐक्ष्वाकी--(सो.) भूमन्युपुत्र सुहोत्र की स्त्री। इसे सुहोत्र से अजमीढ़, सुमीढ, तथा पुरुमीढ़ नामक तीन पुत्र हुए थे (म. आ. ८९.२६)।

ऐडविड--इडविडा का पुत्र कुवेर।

२. (सू. इ.) दशरथ या शतरथ का पुत्र।

ऐतरेय--सायण के मतानुसार इतरा नामक स्त्री से उत्पन्न होने के कारण यह मातृमूलक नाम पडा।

इसका महिदास ऐतरेय ऐसा निर्देश है। (ऐ. आ. २. १. ८; ३. ७; छां. उ. ३. १६.७) तथा ऐतरेय ऐसा ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में उल्लेख है (आश्व. गृ. ३.४.४)। ऐतरेयिन् स्वरूप में (अनुपद सूत्र ८. १; आश्व. श्रौ. सूत्र १.३) उल्लेख है।

हारीत ऋषि के वंश में मांडूकि ऋषि को इतरा नामक स्त्री से उत्पन्न होने के कारण इसका नाम ऐतरेय पड़ा। बचपन से ही यह 'नमो भगवते वासुदेवाय' मंत्र जपने लगा। यह किसी से नहीं बोलता था इसलिये मांडूकि ने पिंगा नाम दूसरी स्त्री से विवाह किया। जिससे उसे चार पुत्र हुए। वे बहुत विद्वान थे इसलिये उनका उत्तम सन्मान हुआ। इतरा ने अपने पुत्र से कहा कि, तेरे गुणवान न होने के कारण तेरे पिता मेरा अपमान करते हैं। मैं अब देहत्याग करूंगी। तब ऐतरेय ने इसे धर्मज्ञान दे कर देहत्याग के विचारों से परावृत्त किया। कालोपरांत विष्णु ने उन दोनों को साक्षात् दर्शन दिया तथा आशीर्वाद दिया। बाद में श्रीविष्णु के वचनानुसार कोटितीर्थ पर होने वाले हरिमेध्य के यज्ञ में जाकर वेदार्थ पर इसने प्रवचन दिया। तब हरिमेध्य ने इसका पूजन कर अपनी कन्या से उसका ब्याह कर दिया (स्कंद. १.२.४२; महिदास ऐतरेय देखिये)।

ऐतश--एतश देखिये।

ऐतशायन--अभ्यग्नि का पैतृक नाम।

ऐभून--आभूतरजस् नामक देवगणों में से एक।

ऐंद्र--अप्रतिरथ, जय, लव, वसुक्र, विमद, वृषाकपि सर्वहरि देखिये।

ऐंद्रद्युम्न--पुष्करमालिन् देखिये।

ऐंद्राश्व--(सो.) भविष्यपुराण के अनुसार धनयाति का पुत्र।

ऐंद्रोति--दृति ऐंद्रोति शौनक देखिये।

ऐभावत--प्रतीदर्श का पैतृक नाम है (श. ब्रा. १२ ८.२.३)।

ऐरंमद--देवमुनि देखिये।

ऐरावत--धृतराष्ट्र नामक नाग का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५.१५.३)। यहां वर्णित सर्पसत्र में यह ब्रह्मा नामक ऋत्विज् था (अ. वे. ८.१०.२९)। नाग शब्द के सर्प तथा हाथी ये दो अर्थ होते हैं इस कारण परावर्त्ती वाङ्मय में इंद्र के हाथी से संभवतः संबंध जोडा गया होगा (जरत्कारू देखिये)। कद्रूपुत्र नागों को ऐरावत कहते हैं। जनमेजय के सर्पसत्र में इनके दस कुल दग्ध हुए जिनके नाम ये हैं पारावत, पारियात, पांडुर, हरिण, कृश, विहंग, शरभ, मोद, प्रमोद तथा संहतापन (म. आ. ३१.५; स. ९.८. उ. १०१.११)।

२ फाल्गुन माह में सूर्योदय के साथ साथ घूमने वाला पर्जन्य नामक नाग (मा. १२.११.४०)।

ऐरीडव--अंगिरा गोत्र का एक महर्षि

ऐल--पुरूरवस् का नामांतर।

ऐलविल--कुवेर देखिये।

ऐलाकि--जीवल का पैतृक नाम।

ऐलिक--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

ऐलूष--कवष का यह पैतृक नाम है।

ऐशिज--एक ऋषि (वायु. ५९. ९०-९१)। ब्रह्मांड में उशिज पाठ मिलता है।

ऐश्वर—अग्नि धिष्ण्य देखिये।

ऐषकृत--शितिबाहु देखिये।

ऐषरथ--कुशिक देखिये।

ऐषावीर--यद्यपि एक यज्ञ में ये याज्ञिक का कार्य करते थे, तथापि बुरी पद्धति से करते थे (श. ब्रा. ११. २.७.३२)। सायण के मतानुसार एषवीर के वंशज अर्थ का कोई विशेषनाम भी प्रचलित है तथा इन्हें ब्राह्मणों की एक निंद्य जाति मानी जाती है (श. ब्रा.९.५.१.१६; सां. ब्रा. १.१)।

ऐषुमत—त्रात का पैतृक नाम।

ओ

ओघरथ--(सू. नृग.)। ओघ राजा का पुत्र। इसका पुत्र नृग (म. अनु. २)।

ओघवत्—(सू. नृग.)प्रतीक का पुत्र (भा. ९.२)। इसका पुत्र ओघरथ तथा कन्या ओघवती (म. अनु. २)।

२. ओघवत् का पुत्र (भा. ९.२)।

ओघवती—प्रतीक की कन्या तथा सुदर्शन की पत्नी (भा. ९. २)।

२ (सू. नृग.) ओघवत् राजा की कन्या। ओघरथ की भगिनी (म. अनु. २)।

ओंकार--शंकर का एक अवतार था। विंध्य के लिये यह पृथ्वी पर आया। ओंकार मांधाता में यह लिंग रूप में तथा पृथ्वी पर प्रणव रूप में है (शिव. शत. ४२)। इसका उपलिंग कर्दमेश है (शिव. कोटि. १)।

ओज--श्रीकृष्ण तथा लक्ष्मणा का पुत्र (भा. १०. ६१)। यह महारथी था।

ओजस्—वैशाख माह में अर्यमा नामक सूर्य के साथ साथ घूमनेवाला यक्ष (भा. १२. ११.३४)।

ओजस्विन्—भौत्य मन्वंतर में मनु पुत्र।

ओजिष्ठ—पृथुक नामक देवगण में से एक।

औ

औक—(सू. इ.) वायुमतानुसार बल का पुत्र।

औगज—अंगिरस गोत्र का एक मंत्रकार। ऋषिज तथा असिज इसके नाम हैं।

औग्रसैन्य—युधांश्रौष्टि का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८. २१.७)।

औघरथ--सूर्यवंशी दूसरा नृगराजा। ओघरथ का पुत्र।

औचथ्य—दीर्घतमस् देखिये।

औचेयु—ऋतेयु देखिये।

औडुलोमि--एक तत्त्वज्ञानी। ब्रह्मसूत्र में इसके मत का अनेक बार मतभेदप्रदर्शनार्थ निर्देश मिलता है (ब्र. सू.१.४.२१;३.४.४५;४.४.६)।

औत्तम वा औत्तमी मनु—उत्तानपाद के पुत्र उत्तम तथा बभ्रुकन्या बाभ्रव्या का पुत्र। उत्तम का पुत्र होने के कारण इसे औत्तम या औत्तमी मनु कहते हैं (मार्कं. ६९)। यह प्रियव्रत का वंशज था (विष्णु.३.१.२४.)। भागवत में इसे प्रियव्रत की दूसरी स्त्री का पुत्र कहा गया है तथा नाम उत्तम ही दिया है। (भा. ८.१.२३; मनु देखिये)। इसने वाग्भव मंत्र से तीन वर्ष उपवास करके देवी की उपासना की (दे. भा १०.८)। यह तृतीय मन्वन्तराधिप मनु है।

औदन्य--मुंडभ का पैतृक नाम। भ्रूणहत्या का प्रायश्चित्त बताने के लिये इसका उल्लेख किया गया है

(तै. ब्रा. ३.९. १५.३)। यहां इसका नाम औदन्यव दिया गया है।

औदभारि—खंडिक का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११. ८.४.६)।

औदमय—अंग वैरोचन का पुरोहित (ऐ. ब्रा. ८. २२)। वेबर के पाठानुसार आत्रेय का यह नाम है। कुछ प्रतियों में उदमय पाठ भी दिखायी देता है।

औदवाहि—भारद्वाज का गुरु (बृ. उ. २.५.२०;४. ५.२६)।

औदुंबरायण—निरुक्त में शब्द के नित्यत्व के संबंध में बोलते समय, शब्द अनित्य हैं ऐसा कहने के कारण, इसका उल्लेख किया गया है (१.२.१)।

औद्दालकि—असुरविंद (जै. ब्रा. १.७५) वा कुसुरुविंद (ष.ब्रा. १.१६; पं. ब्रा. २२.१५.१०), इस नाम से पहचाने जाने वाले आचार्य तथा श्वेतकेतु (श. ब्रा. ३. ४.३.१३; ४.२.५.१५) का पैतृक नाम है। कठोपनिषद् में नचिकेतस् के लिये औद्दालकि नाम प्रयुक्त है (१. ११)।

औपगव—वसिष्ठकुल के गोत्रकार ऋषिगण। आपगव पाठभेद है।

औपगवि—उद्धव का नाम (भा. ३.४)।

औपजंघनि—आसुरि का शिष्य। इसका शिष्य त्रैवणि (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

औपतस्विनि—राम का पैतृक नाम (श. ब्रा. ४.६. १.७)।

औपमन्यव—बहुत से अध्यापकों के लिये यह नाम प्रयुक्त दिखाई पड़ता है। एक मंत्र के पठन के बारे में इसने जानकारी बताई है (बौ. श्रौ. २.२.१)। एक वैयाकरण है (नि. १.१.५; २,२.११; ३.१८) पक्षियों का नामकरण उनके द्वारा निकाली ध्वनि के कारण होता है इस मत का औपमन्यव ने निषेध किया है (कांबोज, प्राचीनशाल, महाशाल देखिये)।

२. वसिष्ठगोत्र का ऋषि।

औपर—दंड का पैतृक नाम (तै. सं. ६.२.९.४)।

औपलोम—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार ऋषिगण। अपष्ठोम ऐसा पाठभेद है।

औपवेशि—उद्दालक के पिता अरुण का पैतृक नाम (क. सं. २६.१०; अरुण औपवेशि देखिये)।

औपशवि—एक वैयाकरण (शु. प्रा. ३.१३२)।

औपस्थल—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

औपस्थव— विश्वामित्रगोत्र का ऋषिगण।

औपस्वती—पाराशरीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ३.५.१)।

औपावि जानश्रुतेय—एक राजर्षि (श. ब्रा. ५.१.१. ५-७)। इसने वाजपेय किया था (मै. सं. १.४.५)।

औपोदिति—कुरु का स्थपति (सेनानी) व्याघ्रपाद का पुत्र। गौपालायन इसका पैतृक नाम है (बौ. श्रौ. २०. २५)। उपोदिता नामक स्त्री का पुत्र (श. ब्रा. १.७.४. १६)। श. ब्रा. की कण्वप्रति इसका नाम तुमिंज औपोदितेय वैयाघ्रपद्य देती है (श. ब्रा. १.९.३.१६)।

औपोदितेय—औपोदिति का नामान्तर।

औरस—व्यास की सामशिष्यपरंपरा में वायु तथा ब्रह्मांडमतानुसार कुथुमी का शिष्य (व्यास देखिये)।

और्णवाभ—कौण्डिण्य का शिष्य (बृ. उ. ४.५.२६ माध्यं.)। निरुक्त में दो स्थानों पर यह नैरुक्त नामक व्याकरणकारों के मतों का अनुसरण करता है (७.१५;१२. १९)। दूसरे दो स्थानों पर ऐतिहासिकों के मतों का अनुसरण करता है (६.१२; १२.१)।

और्व—एक कुल। भृगुवंश में होने के कारण भृगु से इसका निकट संबंध था (ऋ. ८.१०२.४)। एतश औवों में से एक था। इस कुल का अभ्यग्नि ऐतशायन पापिष्ठ है। (ऐ. ब्रा. ६.३३; सां. ब्रा. ३०.५)। और्वों ने स्वतः अत्रि से पुत्र प्राप्त किये थे (तै. सं. ७.१.८.१) दो और्वों का उल्लेख सम्मान के साथ आया है (पं. ब्रा. २१.१०.६)। और्व यह भृगु के बडे कुल की शाखा रही होगी। और्व, गौतम, भारद्वाज इन तीन गोत्रों का उल्लेख भी है (स. श्रौ. १.४)।

परीक्षित् के प्रायोपवेशन के समय आया हुआ एक आचार्य (जै. ब्रा. १. १८)। एक ब्रह्मर्षि (भा. १.१९.१०)। च्यवन ऋषि की भार्या मनुपुत्री आरुषी का पुत्र (म. आ. ६०.४५)। इसका नाम ऊर्व है (म. अनु. ५६)। आत्मवान् तथा नाहुषी का पुत्र (विष्णुधर्म. १.३२)।

कृतवीर्य नामक एक हैहयवंशीय राजा के उपाध्याय भृगुकुलोत्पन्न थे। कृतवीर्य ने बहुत से यज्ञ कर भृगुओं को बहुत सी संपत्ति दी थी। भविष्य में कृतवीर्य के वंशजों को द्रव्य का अभाव महसूस होने लगा। तब उन्होंने अपने उपाध्याय के पास द्रव्य की माँग की। कुछ लोगों ने भय से द्रव्य दिया। कुछ लोगों ने जमीन में गाड़ कर रख दिया। एक भार्गव ऋषि का घर खोद कर देखने पर कुछ द्रव्य प्राप्त हुआ। इससे कृतवीर्य के वंशज अत्यंत

क्रोधित हुए तथा भार्गव ऋषियों के शरण आने पर भी उनका संहार करना प्रारंभ कर दिया। इतना ही नहीं वे गर्भ का भी नाश करने लगे। तब भृगुवंश की स्त्रियाँ भयभीत हो कर, हिमालय की ओर चली गई। जाते जाते एक स्त्री ने अपना गर्भ गर्भाशय से निकाल कर जंघा में रख लिया। यह बात एक स्त्री ने राजा को बताई। हैहय गर्भ का वध करने वाला ही था, इतने में सौ वर्षों तक जंघा में रहा वह गर्भ बाहर आया। उसके तेज से वे क्षत्रिय नेत्रहीन हो गये। बाद में उन अंधे क्षत्रियों द्वारा और्व को, 'प्रसन्न हो' कहते ही उन्हें दृष्टि प्राप्त हो गई। माता के ऊरु से निर्माण होने के कारण इसे और्व नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६०.४५; १६९-१७०; अनु. ५६)।

हैहयवंशीय राजाओं ने अपने ज्ञातिबांधवों को कष्ट दिया, इसलिये बड़े होने पर भी इसने उनके संहार के लिये तप किया। परंतु हमें मृत्यु प्राप्त हो, इस हेतु से ही हमने यह अन्यायपूर्ण कृत्य किया। हमारी मृत्यु के लिये तुम क्रोधाविष्ट मत बनो, ऐसा पितरों ने उसे बताया। तब पितरों के संतोष के लिये इसने अपना क्रोधाग्नि समुद्र में छोड़ दिया। पराशर को राक्षसों के नाश से निवृत्त करने के लिये वसिष्ठ ने यह कथा बताई (म. आ. १६९-१७०)। इसका उग्र तप देख कर ब्रह्मदेव ने सरस्वती के द्वारा इसे समुद्र में डाल दिया। वहाँ अग्नितीर्थ उत्पन्न हुआ (स्कन्द. पु. ७. १. ३५)।

अयोध्याधिपति वृकपुत्र बाहु को उसके शत्रु हैहय तथा तालजंघ ने राजच्युत किया। बाद में इसके आश्रम के पास आ कर बाहु की मृत्यु हो गई। तब उसकी पत्नी सती जाने लगी। परंतु यह गर्भवती है, यह देखकर और्व ने उसे सती जाने से निवृत्त किया। बाद में उसे सगर नामक पुत्र हुआ। और्व ने सगर को अनेक अस्त्र तथा शस्त्रों की शिक्षा दी। राम का प्रख्यात आग्नेयास्त्र भी सिखाया। तदनंतर सगर ने हैहय, तालजंघ, यवन इन सबको जीत लिया। तब वसिष्ठ ने इसे राज्याभिषेक किया। राज्याभिषेक के समय, यह आया तथा इसने केशिनी एवं सुमति (नारद. १.८), प्रभा तथा भानुमती (लिङ्ग. १.६६) इन सगर की पत्नियों को संतानवृद्धिदायक वर दिये (मत्स्य. १२; पद्म. सृ. ८; लिङ्ग. १. ६६; नारद. १. ७. ८; भा. ९. ८; ९. २३) इसने सगर का अश्वमेध किया (भा. ९. ८)।

इसका पुत्र ऋचीक (म. आ. ६०.४६; अनु. ५६)। परीक्षित् शापित होने पर जो ऋषि उससे मिलने आये उनमें यह था (भा. १.१९)। और्व तथा ऋचीक एक हैं (विष्णुधर्म. २.३२)। इसका नाम अग्नि होगा तथा ऊर्व का वंशज होने के कारण, इसे और्व नाम प्राप्त हुआ होगा। इसका काल जमदग्नि के पश्चात् का होगा (कूर्म. १. २१)। इसके नाम का अर्थ उर्वी पर रहनेवाला अर्थात् पृथ्वी पर रहनेवाला होगा। जमदग्नि गंगा किनारे रहते थे। इस जानकारी में यह भी पाया जाता है कि, और्व मध्यदेश में रहते थे, तथा वहीं इनके विवाह हुए थे (पद्म. उ. २६८.३)। परंतु ब्रह्मांड में उल्लेख है कि, यह नर्मदा पर था (ब्रह्माण्ड. ३.२६; ४५)। इसने सगर की सहायता की। परंतु रामायण में भृगु द्वारा सहायता का उल्लेख है। यह अंतिम और्व है। हैहयादिकों का नाश सगर द्वारा होने पर भी कहा जाता है कि, वह सारा पराक्रम परशुराम ने किया। इसका कारण यह है कि, और्व ने उसे आग्नेयास्त्र सिखाया था। परंतु आगे चल कर इन दो और्वों में गडबड हो गई ऐसा प्रतीत होता है। यह भृगुगोत्रीय हो कर मंत्रकार भी था।

२. इसका पिता भृगुवंशीय ऊर्व, जब तप कर रहा था, तब सब देव एवं ऋषि इससे मिलने आये। अनंतर विवाह कर के प्रजोत्पादन करने की प्रार्थना ऋषियों ने इससे की। तब इसे ऐसा लगा, 'इन ऋषियों के मत में मेरे जैसा तपस्वी, बिना विवाह के प्रजोत्पादन करने में असमर्थ रहेगा।' इसलिये इसने कहा, 'यह देखो, मैं पुत्र उत्पन्न करता हूँ किन्तु वह भयंकर होगा।' ऋषियों को ऐसा बताकर इसने अपनी जंघा अग्नि में डाली। तदनंतर एक दर्भ से उसका मंथन करके उस जंघा से एक पुत्र निर्माण किया। उसीका नाम और्व है (मत्स्य. १७५)। पुत्र के साथ उत्पन्न माया, ऊर्व ने हिरण्यकश्यपु को दी (पद्म. सृ. ३८; ब्रह्माण्ड. ३. १.७४-१००)। जन्मतः यह खाने के लिये मांगने लगा। तथा इसने संसार का दाह करना आरंभ कर दिया। इस प्रकार तीन दिन दाह करने के बाद ब्रह्मदेव ने स्वयं आकर इससे प्रार्थना की। जहाँ मैं स्वयं रहता हूँ उसी समुद्र में इस बालक को स्थान देना मान्य किया तथा कहा कि, मैं स्वयं एवं यह बालक युग के अंत में संसार का नाश करेंगे। ऐसा कहने पर अपना तेज पितरों में डाल कर यह और्वाग्नि समुद्र में रहने के लिये गया (मत्स्य. १७५, पद्म. सृ. ३८-४१)। यह विष्णु

ही था (म. व. १८९, ब्रह्माण्ड. ३.७२)। इसी युग के अंत में प्रलयकारक, पाताल का विषाग्नि, विष्णु के मुख से निकला हुआ तथा शंकर के तृतीय नेत्र में रहने वाला है (मत्स्य. २)। इसके वडवामुल वड़वानल, संवर्तक तथा समुद्रप नाम हैं (वायु. ४७) इसका पुत्र संवर्तक अग्नि है (मत्स्य. ५२)। यही औंर्वाग्नि कहलाता है।

३. मालव देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसकी पत्नी का नाम सुमेधा तथा पुत्री का नाम शमीका। इसने अपनी कन्या का विवाह शौनक का शिष्य, धौम्यसुत मंदार के साथ किया। विवाहोत्तर कुछ दिनों के पश्चात्, अपनी पत्नी बडी हो गई यह जान कर उसे ले जाने के लिये यह औंर्व के घर आया। औंर्व ने बडे आनन्द से उन्हें बिदा किया। मार्गक्रमण करते समय राह में भृशुंडी को देख कर दोनों हँस पडे। इसलिये उसने इन्हें 'वृक्ष बनो' ऐसा शाप देने पर वे वृक्ष बने। औंर्व तथा शौनक जब ढूँढते ढूँढते आये, तब उन्हें पता चला कि वे वृक्ष बन गये हैं। तब इन्हें अत्यंत दुख हुआ। इन्होंने ईश्वर की आराधना की। औंर्व अग्निरूप से शमीवृक्ष में रहा तथा मंदार की मूली से गणेशमूर्ति बना कर उसका पूजन करता हुआ शौनक आश्रम में गया। दोनों के अनुष्ठान से शमीमंदार गणेश को प्रिय हुआ (गणेश. २.३६)।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

५. सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

औंर्वेय--भृगु गोत्र का एक ऋषिगण।

औलान--सायणाचार्य ने इसका अर्थ निकाला है उल का वंशज। यह शंतनु का नाम होना संभव है (ऋ. १०. ९८.११)।

औलुंड्य--यह सुप्रतीक का पैतृक नाम है (वं. ब्रा. १)।

औशनस--उशनस् तथा षण्डामर्क देखिये।

औशिज--यह शब्द कक्षीवत्, ऋजिश्वन् तथा दीर्घश्रवस् के लिये प्रयुक्त किया गया है।

औशीनर अथवा औशीनरि--उशीनर से माधवी को उत्पन्न शिवि (म. द्रोण, परि. ७, पंक्ति. ४०९)। इसे औशीनरि भी कहा गया है (म. स. ८.१४; शां. २९. ३५)। एक शिबि औशीनर द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७.१५)।

औषदश्वि--वसुमत् देखिये।

औष्ट्राक्षि--साति का पैतृक नाम। (वं. ब्रा. १)।

क

कंस--(सो. यदु. कुकुर.) उग्रसेन का पुत्र। उग्रसेन की पत्नी को यह द्रुमिल नामक दानब से हुआ (ह. बं. २. २८)। यह बड़ा शूर, मल्लविद्याविशारद तथा सर्व शास्त्र पारंगत था। इसे राज्य मिलेगा इस शर्तपर जरासंध ने अपनी कन्या इसे दी थी। इसलिये सब मंत्रिमंडल ने इसे राज्याभिषेक किया। वसुदेव इसका प्रधान था। परंतु आगे चलकर इसने पिता को कारागृह में डाल दिया। यह वसुदेव का भी कुछ न मानता था (म. स. १३. २९-३१)। पिता को कारावास देकर इसने राज्य स्वयं ले लिया (भा. १०. १. ६९)। कंस तथा वसुदेव ये दोनों यद्यपि यदुवंशांतर्गत हैं तथापि वंशावली से उनका संबंध काफी दूर का है। बाद में कंस के चाचा उर्फ देवक की कन्या देवकी का विवाह वसुदेव से निश्चित हुआ। इस विवाह के बाद देवकी को वसुदेव के पास पहुँचाते समय लगाम हाथ में लेकर रथ हाँकने का कार्य कंस ने खुद स्वीकार किया। बड़े ठाठ से बारात जा रही थी कि आकाशवाणी हुई, "जिसका रथ तुम हाँक रहे हो, उसीका आठवाँ गर्भ तुम्हारा बध करेगा"। यह सुनते ही उसने सोचा कि अगर बहन ही न रही तो उसका आठवाँ गर्भ कहाँ से आवेगा। उसकी हत्या का निश्चय कर देवकी के केश पकड़ कर उसे मारने के लिये यह सज्ज हुआ। तब इसके सब पुत्र तुम्हें सौंप दूँगा यह आश्वासन देकर बड़ी कठिनाई से वसुदेव ने इससे देवकी की रक्षा की। इस आश्वासन के अनुसार वसुदेव ने प्रथम पुत्र इसे दिया, परंतु आठवें से भय है, प्रथम से नहीं यह सोच कर इसने उस पुत्र को वापस ले जाने के लिये वसुदेव से कहा। परंतु नारद ने यादवों के बारे में इसका मत कलुषित किया। इससे इसने

वसुदेव देवकी के पैरों में बेड़ियाँ डालकर बंदिवास में डाला तथा प्रत्येक पुत्र का वध करने का क्रम प्रारंभ किया। जरासंध के समान प्रलंब, बक आदि अनेक लोग सकी सहायता करते थे। यादवों में से प्रमुख लोग इसके द्वारा दिये जानेवाले कष्टों के कारण कुरु, पांचाल, केकय, शाल्व, विदर्भ, निषध, विदेह, कोसल आदि देशों में चले गये। कुछ कंस का प्रेम संपादित करके उसी के पास रहे (भा. १०. २. ३-४)। चाणूरादिक जो लोग इसने अपनाये थे वे युद्ध के द्वारा ही अपनाये थे।

यह पूर्वजन्म में कालनेमि असुर था (म. आ. ६१. ५५९*; भा. १०.१.६९)। विष्णु के साथ युद्ध करते करते यह मृत हुआ। परंतु शुक्र ने संजीवनीविद्या द्वारा इसे जीवित किया। तब इसने विष्णु को जीतने के लिये मंदार पर्वत पर तपस्या प्रारंभ की। दूर्वांकुरों का रस पीकर सौ वर्षों तक दिव्य तप करने के बाद ब्रह्मदेव प्रसन्न हुआ। तब इसने वरदान मांगा कि, मुझे देवों के हाथों मृत्यु प्राप्त न हो। ब्रह्मदेव ने कहा कि, यह अगले जन्म में संभव होगा। तदनंतर इसने उग्रसेन की पत्नी के उदर में जन्म लिया। आगे चलकर जब जरासंध विजयप्राप्ति के हेतु बाहर निकला तब यमुना के किनारे उसका पड़ाव था। तब कुवलयापीड़ नामक हाथी संकल तोड़ कर छावनी में से भाग कर, जहाँ मल्लयुद्ध प्रारंभ था वहाँ आया। तब सब मल्ल भयभीत होकर भाग गये। परंतु कंस ने इसकी सूँड पकड कर उसे जमीनपर पटक दिया, पुनः उठाकर हवामें गोल घुमाया तथा सौ योजन दूर जरासंध की छावनी पर फेंक दिया। यह अद्भुत सामर्थ्य देखकर जरासंध ने इसे अपनी अस्ति तथा प्राप्ति नामक दो कन्यायें दीं। माहिष्मती के राजा के चाणूर, मुष्टिक, कूट, शल, तोशलक नामक पुत्र कंस, मल्लयुद्ध के द्वारा अपने नियंत्रण में लाया (गर्ग संहिता १.६.७):

कृष्ण से वैर—यह राज्यक्रांति का इतिहास है। वसुदेव उग्रसेन का सुप्रसिद्ध मंत्री था। अपने को वह कुछ अपाय करेगा एवं उग्रसेन को गद्दी पर बैठायेगा इस भय से कंस ने उसे कारागृह में डाला, तथा उसके पुत्रों के वध का क्रम प्रारंभ कर दिया (वायु. ९६.१७३;१७९; २२८)। आठवीं बार योगमाया से उसे मालूम हुआ कि उसका शत्रु सुरक्षा से बढ रहा है। तब पश्चात्ताप हो कर इसने वसुदेवदेवकी को बंधमुक्त किया। परंतु मंत्रियों से सलाह करके शत्रु को ढूँढकर उसका नाश करने का प्रयत्न उसने जोर से चालू किया। वसुदेव की शेष स्त्रियाँ गोकुल में थीं, अतएव गोकुल की ओर इसकी वक्रदृष्टि घूमी, तथा उन्हीं दिनों जन्मे पुत्रों पर उसने विशेष दृष्टि रखना प्रारंभ किया। पूतना के द्वारा गोकुल पर अरिष्ट आना प्रारंभ हो गया। परंतु इन सब संकटों से कृष्ण की रक्षा हो गई। अंत में कुश्तियों का मैदान बांध कर उसमें अपने मल्लों के द्वारा कृष्ण को मारने का षड्यंत्र इसने रचा। कृष्ण तथा बलराम ख्यातनाम पहलवान थे। उसी के अनुसार धनुर्याग कर के मल्लयुद्धों का बडा मैदान इसने रखा। दिग्विजय के समय परशुराम का जो धनुष्य कंस ने प्राप्त किया था, वह भी रखा तथा जो कोई उसे चढायेगा उसके लिये इनाम भी घोषित किया गया। उस धनुष्य को कृष्ण ने आसानी से चढा दिया (गर्गसंहिता १.६) तथा अनेक बार घुमा कर तोड भी दिया (ह. वं. २.२७.५७)।

मृत्यु—द्वार पर महावत को सूचना दे कर कंस ने एक मत्त हाथी कृष्ण को मारने के लिये रखा था। कृष्ण ने हाथी के दाँत पकड़ कर मार दिया तथा हाथी-महावत को भी मार दिया। तदनंतर कृष्ण ने चाणूर एवं तोसलक तथा बलराम ने आंध्रमल्ल मुष्टिक के साथ मल्लयुद्ध कर के उन्हें मृत प्राय किया। तदनंतर वेग से कंस पर हमला करके उसके केश पकड़ कर सिंहासन से उसे नीचे घसीट कर उसका वध किया। कंस के शरीर पर कृष्ण के नखों के बहुत चिन्ह हुए थे। यह कार्य कृष्ण ने इतनी चपलता से किया कि कृष्ण के जयजयकार में क्या हुआ इसका भी पता किसी को न चला (ह. वं. २.२८-३०)। उसी प्रकार कंस के कंक, न्यग्रोध आदि आठ बंधुओं का भी बलराम ने तत्काल वध किया (भा. १०.४४.४०)।

कंस वारकि—यह दक्ष कात्ययनि आत्रेय का शिष्य है (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

कंस वारक्य—यह प्रोष्ठपाद वारक्य का शिष्य है (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

कंसवती—उग्रसेन की कन्या तथा कंस की भगिनी। यह वसुदेव का कनिष्ठ भ्राता देवश्रवा की पत्नी। इसे उससे सुवीर तथा इषुमत् नामक दो पुत्र हुए (भा. ९. २४)।

कंसा—उग्रसेन की कन्या तथा वासुदेवभ्राता देवभाग की स्त्री। इसे उससे चित्रकेतु, बृहद्बल तथा उद्धव नामक तीन पुत्र हुए (भा. ९.२४)।

कंसारी—याज्ञवल्क्य की भगिनी। इसे बृहस्पति के शाप से याज्ञवल्क्य के वीर्य से पिप्पलाद हुआ (याज्ञवल्क्य देखिये)।

ककुत्स्थ--(सू. इ.) शशादविकुक्षि का पुत्र। आडिबक के साथ इंद्र युद्ध कर रहा था, तब इसने इंद्र को वृषभ बनाया तथा उस पर आरोहण कर के युद्ध में जय प्राप्त की। इसलिये ककुत्स्थ उपाधि प्राप्त की (वायु. ८८.२५)। इसे क्वचित् इंद्रवाह, पुरंजय आदि नाम भी प्राप्त हैं (भा. ९.१२)। कहीं चन्द्रवाह भी कहा है (दे. मा. ७.९)। इसने पापनाशिनी एकादशी का व्रत किया (पद्म. स्व ३८)। इसके पुत्र का नाम अनेनस् (म. व. १९३.२).

ककुदि—मरीचिगर्भ देवों में से एक।

ककुद्मिन् रैवत—(सू. शर्यात.) रेवत राजा का पुत्र। इसे रेवती नामक कन्या थी। उसे ले कर यह ब्रह्मदेव के पास उसके लिये वर पूछने गया। वहाँ गायन चालू होने के कारण, क्षणभर रुका। तदनंतर इसने ब्रह्मदेव से पूछा, तब ब्रह्मदेव हँस कर बोला, "तुम्हारे पृथ्वी से यहाँ आने तक पृथ्वी पर चार युगों के सत्ताईस चक्कर हो चुके हैं। सांप्रत द्वापारयुग में परमेश्वर अंश से बलराम का जन्म हुआ है, उसे यह कन्या दो" (भा. ९.३)। इसे रैवत कहते थे (विष्णु. ४.१.२१; २.१-२)। यह सौ भ्राताओं में ज्येष्ठ था इसकी राजधानी कुशस्थली थी। इसके वापस आने तक कुशस्थली की द्वारका बन गई थी (ब्रह्माण्ड. ३.६१. २२; वायु. ८६.२७)।

ककुभ्--धर्म ऋषि के अरुंधती नामक स्त्री का नामांतर। यह दक्षकन्या है (भा. ३.६)।

कक्षसेन--असित पर्वत पर रहनेवाला एक राजर्षि (म. अनु. १३७.१५)। इसने वसिष्ठ का धन रक्षण किया।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.१९)।

३. (सो. कुरु.) दूसरे जनमेजय का पुत्र (म. आ. ८९. ४८)।

४. यम सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८.१७)।

कक्षीवत्--यह दीर्घतमस् का पुत्र। इसकी माता का नाम उशिज्। इसे औशिज कहा गया है (ऋ. १.१८.१; दीर्घतमस् देखिये)। इसकी पत्नी का नाम वृचया (ऋ. १.५१.१३)। स्वनय भावयव्य ने इसे देन दी थी (ऋ. १.१२५;१२६; सां. श्रौ. १६.४.५)। आयवस तथा मशर्शार के तीन पुत्रों ने कक्षीवत् को कष्ट दिये थे। यह पज्रकुल का था इसलिये अपने को पज्रिय कहलाता है (ऋ. १.११६.७; ११७.६)। इसे पज्र भी कहा है (ऋ. १. १२६.४; पं. ब्रा. १४.११.१६)। विवाह के समय इसकी उम्र काफी होगी (ऋ. १.५१.१३)। यह काफी वृद्ध रहा होगा (ऋ. ९.७४.८)। ऋग्वेद में भी यह पुरातन माना जाता था (ऋ. १.१८.१; ४.२६.१)। दीर्घतमस् तथा कक्षीवत् का ऋग्वेद की एक ऋचा में एकसाथ उल्लेख है (ऋ. ८.९.१०)। यह क्षत्रिय था परंतु तप से ब्राह्मण तथा ऋषि हुआ था (वायु. ९१.१००; ११४)। इसे घोषा नामक एक कन्या थी। एक सूक्त से अश्वियों को प्रसन्न कर के इसने उत्तम लोक प्राप्त किया था (ऋ. १.१२०; ऐ. ब्रा. १.२१; जै. ब्रा. १.६.११)। यह सूक्तद्रष्टा है (ऋ. १.११६-१२५; १२६.१-५; ९.७४)। विद्याध्ययन करने के बाद यह वापस जा रहा था, राह में स्वनय भावयव्य से इसकी मुलाकात हुई। अंगिरस कुल का औचथ्य दीर्घतमस् का यह पुत्र है, ऐसा मालूम होते ही, उसने इसे अपनी दस कन्यायें तथा बहुत संपत्ति दी। तब इसने उसकी प्रशंसा की (बृहद्दे. ३. १४१-१५०)। काक्षीवत औशिज या कक्षीवत् नाम आगे दिये गये ग्रंथों में भी हैं (म. स. ४.१५; ७.१६; अनु. २७१.३७ कुं.)। अंगिरसकुल के मंत्रकारों में इसका नाम है (दीर्घतमस् देखिये)।

२. भीष्म से मिलने आया हुआ ऋषि (भा. १.९)।

कक्षेयु—(सो. पुरूरवस्.) विष्णु के मतानुसार रौद्राश्व तथा मत्स्य के मतानुसार भद्राश्व पुत्र है।

कंक--वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में यह शंकर का अवतार है। इसे निम्नलिखित चार पुत्र हैं--सनक, सनातन, सनंदन, सनत्कुमार। यह निवृत्तिमार्गीय था। इसने तत्कालीन सवितृ व्यास की सहायता की (शिव. शत. ४)।

२. वृष्णिवंश का एक क्षत्रिय (म. आ. १७७.१८)।

३. म्लेच्छ राजाओं का वंश। इनका पराभव दुष्यंतपुत्र भरत ने किया (भा. ९.२०)।

४. (सो. यदु.) शूर राजा को मारीषा अथवा भोजा से उत्पन्न दस पुत्रों में सातवाँ। वसुदेव का भ्राता। इसे कर्णिका स्त्री से ऋतधामन् तथा जय नामक पुत्र हुए थे (भा. ९.२४)।

५. (सो. वृष्णि.) उग्रसेन के नौ पुत्रों में से चौथा। यह कंस का कनिष्ठ भ्राता, जिसका वध बलराम ने किया (भा. ९.२४)।

६. अज्ञातवासकाल में विराटगृह में प्रवेश करते समय युधिष्ठिर ने धारण किया हुआ नाम (म. वि. १.२०;७.१०)। यह विराट का सभासद था। विराट इससे अक्षक्रीड़ा करता था। दक्षिण गोग्रहण के समय विराट ने सुशर्मा पर आक्रमण किया तब उसने इसे साथ लिया था तथा वहाँ सुशर्मा उसे बांध कर ले जा रहा था। इसने अपने भाई के द्वारा विराट को मुक्त कराया (विराट देखिये)।

७. कलियुग के सोलह राजाओं का एक वंश (भा. १२.१)

कंकट—कटु के लिये पाठभेद।

कंकतीय—एक कुल का नाम है। इस कुल ने शांडिल्य ऋषि से अग्निचयन करना सीखा (श. ब्रा. ९.४.४.१७)। एक कंकटी ब्राह्मण का उल्लेख आपस्तंबश्रौतसूत्र (१४.२०.४) में आया है। शायद बौधायन श्रौतसूत्र के (२५.६) तथा छागलेय ब्राह्मण में उल्लेखित ब्राह्मण यही होगा।

कंकमुद्र—ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

कंका—उग्रसेन की कन्या तथा कंस की भगिनी। वसुदेव के भाई आनक की स्त्री।

कंकी—(सो. कुकुर.) विष्णुमत में उग्रसेन की कन्या।

कच—एक महर्षि (म. अनु. २६.८)।

२. वर्तमान मन्वन्तर में अंगिरापुत्र बृहस्पति का पुत्र। परंतु इसकी माता कौन थी इसका पता नहीं चलता है क्यों कि, बृहस्पति की शुभा तथा तारा नामक दोनों स्त्रियों की संतति में इसका नाम नहीं है।

देवकार्यार्थ गमन—एक बार देव एवं दैत्यों में त्रैलोक्य का आधिपत्य तथा ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिये तुमुल युद्ध हुआ। उसमें दैत्यों के गुरु शुक्राचार्य संजीवनी विद्या के कारण मृत राक्षसों को तत्काल जीवित कर देते थे। इस कारण दैत्यों की शक्ति कम नहीं होती थी। देवगुरु बृहस्पति को यह विद्या प्राप्त न होने के कारण, देवताओं का बहुत नुकसान होता था। तब इन्द्र तथा अन्य देवताओं ने कच से प्रार्थना कर कहा, कि तुम शुक्राचार्य तथा उसकी तरुण कन्या देवयानी को प्रसन्न कर, संजीवनी विद्या सीख कर आवो। तुम्हारा शील, सौंदर्य, माधुर्य, मनोनिग्रह तथा आचरण देवयानी को प्रसन्न करने के साधन हैं। देवयानी को वश करने का कारण यही है कि, यदि वह प्रसन्न हो गयी तो विद्याप्राप्ति में विलंब न होगा क्यों कि, देवयानी शुक्राचार्य का दूसरा प्राण है। यह बता कर देवताओं ने उसे आशीर्वाद दिया।

गुरुसेवा—कच विद्यासंपादन के लिये देवताओं को छोड़ कर शुक्राचार्य के पास आया। शुक्राचार्य ने पूछा, 'तुम कौन हो? कहाँ से आये हो?' तब कच ने बड़ी नम्रता से कहा, 'मैं बृहस्पतिपुत्र कच हूँ तथा विद्यासंपादन के हेतु आया हूँ।' शुक्राचार्य ने उसे अतिथि समझ कर तथा गुरुपुत्र होने के कारण, वंदनीय मान कर अपने पास रख लिया। तत्पश्चात् वह गुरुभक्ति से तथा ब्रह्मचर्य से सेवा करने लगा। शुक्राचार्य की तरुण कन्या देवयानी के मनोरंजन के लिये कच, गाना, वाद्य बजाना, नाचना, पुष्प तथा फल लाना एवं बताये हुए काम तथा गायें चराना आदि काम करने लगा। इस प्रकार शुक्राचार्य तथा उसकी प्रिय कन्या देवयानी के कार्य में कहीं भी न्यूनता न रखते हुए, कड़े ब्रह्मचर्यव्रत से कच ने उन की ५०० वर्षों तक उत्तम सेवा की। इससे आचार्य उस पर प्रसन्न हो गये, तथा देवयानी तो उसे अपना बहिश्चर प्राण समझने लगी।

संकटपरंपरा—१. देवगुरु बृहस्पति का पुत्र कच अपने आचार्य के पास विद्या संपादनार्थ आया है। अवश्य ही यह संजीवनी विद्या संपादन करने के लिये आया होगा, यह सोच कर दैत्यों ने उसका वध करने का का निश्चय किया। एक दिन उन्हों ने उसे गौओं को चराते हुए देखा। क्रोधावशात् उन्हों ने इसे पकड़ा तथा इसके शरीर के खंडशः टुकडे कर सियारों को खिला दिये तथा वे वापस अपने स्थान पर लौट आये। इधर सूर्यास्त होने पर भी कच घर लौट नहीं आया, यह देख कर देवयानी ने यह खबर पिता तक पहुँचाई। इस पर शुक्राचार्य ने संजीवनी विद्या का प्रयोग किया। तत्काल सियारों के शरीर फाड़ कर कच सजीव हो कर आचार्य तथा देवयानी के समक्ष आ कर खड़ा हो गया। कच को आया जान कर देवयानी ने विलंब का कारण पूछा। तब उसने दैत्यों का सारा कृत्य उसे बताया।

२. एक बार पुनः देवयानी के कथनानुसार जब कच अरण्य में गया था, तब राक्षसों ने उसे देखा। पुनः उसके टुकड़े कर के, उन्होंने समुद्र में फेंक दिये। इस समय भी पिता को बता कर देवयानी ने इसे पूर्ववत् सजीव कराया।

३. इस समय इसे मार कर, इसका चूर्ण बना कर राक्षसों ने जलाया सुरा के पात्र में वह रक्षा मिलाई। वही पात्र शुक्राचार्य को पीने के लिये दिया तथा अपने अपने घर चले गये।

देवयानीप्रणय—दिन का अवसान हो गया। रात हुई, किन्तु कच नहीं आया। यह देख, देवयानी ने पिता से कहा कि, अभी तक कच नहीं आया। हो न हो, उसे अवश्य राक्षसों ने मार डाला होगा। उसे तत्काल जीवित कर के आश्रम में लाने के लिये, देवयानी हठ करने लगी। तब शुक्राचार्य ने देवयानी से कहा कि, बार बार जीवित करने पर भी कच की मृत्यु हो जाती है, इस लिये भला मैं क्या कर सकता हूँ? अब तुम रुदन मत करो। कच की मृत्यु के लिये दुःख मनाने का अब कुछ प्रयोजन नहीं है। तब देवयानी ने उसके रूपगुणों का रसभरा वर्णन किया एवं शोकावेग से वह प्राणत्याग करने के लिये प्रवृत्त हो गई। देवयानी का यह अविचारी कृत्य देख कर शुक्राचार्य असुरों को बुला लाये। तथा उनसे बोले, "मेरे पास विद्याप्राप्ति के हेतु आये हुए मेरे शिष्य को मार कर तुम लोग क्या मुझे अब्राह्मण बनाना चाहते हो? तुम्हारे पापों का घड़ा भर गया। प्रत्यक्ष इन्द्र आदि का भी घात ब्रह्महत्या के कारण होता है फिर तुम्हारी क्या हस्ती?" क्रोध से ऐसा कह कर, शुक्राचार्य ने कच को पुकारा। तब संजीवनी विद्या के प्रभाव से शुक्राचार्य के उदर में जीवित कच ने वह उदर में किस प्रकार आया, तथा दैत्यों ने किस प्रकार उसे मारा वह बताया। तदनंतर उसने कहा, 'गुरुहत्या के पाप का भागीदार मैं न बनूँ तथा देवयानी का मेरा एवं संपूर्ण विश्व का अकल्याण न हो, इस हेतु से मैं गर्भवास ही स्वीकार करता हूँ'।

तब शुक्राचार्य ने देवयानी से कहा, 'अगर तुम्हें कच चाहिये तो मेरा वध होना आवश्यक है। अगर मैं तुम्हें प्रिय हूँ तो उदरगत कच का बाहर आना असंभव है'। तब देवयानी ने कहा कि, 'तुम दोनों मुझे प्रिय हो। दोनों में से किसी का भी विरह मेरे लिये दुखदायी ही होगा'।

प्रथमतः शुक्राचार्य ने कच को उदर में, संजीवनी विद्या का उपदेश किया तथा बाहर आने के बाद अपने को जीवित करने के लिये कहा। तदनंतर संजीवनीविद्याप्राप्त कच शुक्राचार्य का उदरविदारण कर बाहर आया तथा उसी विद्या से तत्काल उसने शुक्राचार्य को जीवित किया। अपना पिता शुक्राचार्य तथा कच दोनों को जीवित देख कर, देवयानी को अत्यंत आनंद हुआ।

सुरापान के कारण यह भी समझ में न आया कि, मैं कच की राख पी रहा हूँ। इसके लिये शुक्राचार्य को अत्यंत खेद हुआ। सुरादेवी पर क्रोधित हो कर शुक्राचार्य ने मद्यपान पर निम्नलिखित निर्बंध लगा दिया। "जो ब्राह्मण आज से भविष्य में व्यसनी लोगों के चंगुल में फँस कर मुर्वत से अथवा मूर्खता से सुरापान करेगा, वह धर्मभ्रष्ट हो कर ब्रह्महत्या के पातक का भागीदार बनेगा। उसे इहपरलोक में अप्रतिष्ठा तथा अनंत कष्ट भोगने पडेंगे।" इस प्रकार धर्ममर्यादा स्थापित कर के उसने दैत्यों से कहा, 'तुम्हारी मूर्खता के कारण मेरे प्रिय शिष्य कच को यह संजीवनी विद्या प्राप्त हो गई। इस प्रकार हजार वर्षों तक गुरु के पास रहने के बाद कच ने देवलोक में जाने के लिये गुरु की आज्ञा मांगी।

शुक्राचार्य ने कच को जाने की आज्ञा दी। कच देवलोक जा रहा है यह देख कर, देवयानी ने उससे प्रार्थना की। 'हम दोनों समान कुलशीलवाले हैं। मेरी तुम पर अत्यंत प्रीति है। इस प्रीति के कारण ही तीन बार राक्षसों द्वारा मारे जाने पर भी मैंने तुम्हें जीवित किया, इसलिये मेरा पाणिग्रहण किये बिना तुम्हारा देवलोक जाना ठीक नहीं है'। कच ने उसे बहुत ही समझाया, कि हम दोनों का जन्म एक ही उदर से होने के कारण धर्मदृष्टि से तुम मेरी गुरुभगिनी हो। तस्मात् तुम मुझे गुरु के समान पूज्य हो। इतना कहने पर भी देवयानी ने अपना हठ नहीं छोड़ा। तब कच ने कहा, 'अपने पुत्र के भाँति तुमने मुझे प्यार किया। तुम्हारा तथा मेरा जन्म एक ही पिता से हुआ है, अतएव तुम मेरे द्वारा पाणिग्रहन की कामना मत करो' इतना कह कर कच ने देवयानी को दृढ मनोभाव से शुक्राचार्य की सेवा करने के लिये कहा तथा उससे आशीर्वाद मांगा।

शापप्रतिशाप—भग्नमनोरथा देवयानी ने अत्यंत संतप्त हो कर उसे शाप दिया कि, मेरी प्रार्थना अमान्य कर बड़े अहंकार से, जो विद्या प्राप्त कर तुम जा रहे हो वह तुम्हें कभी फलद्रूप न होगी। तब कच ने शांति से कहा, 'चूँकि तुम गुरुभगिनी हो एवं मैं सात्त्विक ब्राह्मण हूँ, मैं तुम्हें प्रतिशाप नहीं देता। यह शाप कामविकारजन्य है। अर्थात् तुम्हारा वरण ब्राह्मण पुत्र करे, यह तुम्हारी इच्छा कभी सफल नहीं हो सकती। मेरी विद्या मुझे फलद्रूप

नहीं होगी, ऐसा शाप तुमने दिया। ठीक है। जिसे वह विद्या मैं सिखाऊँगा, उसे वह फलद्रूप होगी'।

गौरव--इतना कह कर कच देवयानी से विदा ले कर देवलोक गया। इस प्रकार विद्या संपादन कर के जब वह देवलोक वापस आया तब देवों ने तथा इन्द्र ने इसका स्वागत किया तथा यज्ञ का भाग इसे दिया (म. आ. ७१.७२, मत्स्य. २५-२६)।

कच्छनीर—वैशाख माह में अर्यमा नामक सूर्य के साथ भ्रमण करनेवाला नाग (मा. १२.११)।

कच्छप—कुबेर के मूर्तिमान नौ निधियों में से पाँचवाँ।

कंजाजना--दाशरथि राम-पुत्र लव की कनिष्ठ स्त्री।

कटक—मर्कटप के लिये पाठभेद।

कटायनि—भृगुकुल का गोत्रकार।

कटु—एक अंगिराकुल का गोत्रकार। इसके लिये कटय तथा कंकट पाठभेद हैं।

कठ—वसिष्ठकुल के गोत्रकार ऋषिगण (म. आ. ८.२३०; स. ४.१५)। इसके नाम पर कठ परिशिष्ट, कठब्राह्मण, कठ संहिता, कठवल्ल्युपनिषद् तथा कठसूत्र ग्रंथ आये हैं। कठसूत्र का निर्देश कात्यायन श्रौतसूत्र में है (१.३.२३; ४.८.१३)। यही कठशाखा का प्रवर्तक होगा (पाणिनी देखिये)। कठ तथा कपिष्ठल कठ का ही भेद है।

कठ कृष्णयजुर्वेद की शाखा है। कठ लोग विस्तृत प्रदेश में आबाद थे। सिकंदर को कठों ने कड़ा विरोध किया। कठो का स्थान पंजाब के अन्तिम भाग में सिंधु के तट पर दीखता है।

२. रेवती देखिये।

कठशाठ--एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कणिक-- धृतराष्ट्र का नीतिशास्त्रविशारद ब्राह्मण-मंत्री। इसने पांडवों के संबंध में धृतराष्ट्र को विपरीत सलाह दी थी (म. आ. परि. १.८१)। इतनी शत्रुता बढ जाने पर युद्ध के अतिरिक्त कोई दूसरा मार्ग नहीं है, ऐसा इसने बताया। कणिंक पाठ भी मिलता है।

इसका कथन कणिकनीति नाम से प्रसिद्ध है तथा भांडारकर महाभारत में परिशिष्ट में दिया है।

कणीशा—कश्यप तथा क्रोधा के कन्या तथा पुलह की स्त्री।

कंठ—(सो. पुरूरवस्.) वायुमत में अजमीढ़पुत्र।

कंठायन—(सो. पुरूरवस्.) वायुमत में मेघातिथि-पुत्र।

कंठेविद्धि--ब्रह्मविद्धि का शिष्य। इसका शिष्य गिरिशर्मन् (वं. ब्रा. १)।

कंडरीक—ब्रह्मदत्त का मंत्री तथा योगी (ह. वं. १. २०.१३)। पितृवर्तिन् तथा ब्रह्मदत्त देखिये। यह सर्वशास्त्र प्रवर्तक था (मत्स्य. २१.२५)। इसको द्विवेद, छंदोग तथा अध्वर्यु कहा है (ह. वं. १.२३.२१-२२)

कंडु--एक ब्रह्मर्षि। इसके एक वर्ष के पुत्र की जिस वन में मृत्यु हुई, उस वन को इसने उदकरहित किया (वा. रा. कि. ४८)। इसका तप नष्ट करने के लिये इंद्र ने प्रम्लोचा नाम की अप्सरा भेजी थी। इस की कन्या मारीषा (विष्णु. १.१५. भा. ४.३०)।

२. व्यास की सामशिष्यपरंपरा के वायु तथा ब्रह्माण्ड मतानुसार लांगलि का शिष्य।

कंडू—कलिंग कन्या तथा अक्रोधन की स्त्री। इसके पुत्र का नाम देवातिथि। भांडारकर प्रति में करंडु पाठ है (म. आ. ९०.२१)।

कण्व--एक गोत्रप्रवर्तक तथा सूक्तद्रष्टा। घोर के कण्व तथा प्रगाथ नाम के दो पुत्र थे। वन में एक बार प्रगाथ ने कण्व की स्त्री को छेडा। इसलिये कण्व शाप देने लगा। तब प्रगाथ ने इन्हें माता एवं पिता माना। कालांतर में इसके वंशजों ने ऋग्वेद का आठवाँ मंडल तयार किया (बृहद्दे. ६.३५-३९)। कण्व शब्द का अर्थ सुखमय होता है (नीलकंठ टीका)। यह यदुतुर्वश का पुरोहित रहा होगा क्यों कि, कण्वकुलोत्पन्न देवातिथि इंद्र से प्रार्थना करता है कि यदु तथा तुर्वश तुम्हारी कृपा से मुझे सदैव सुखी दिखाई दें (ऋ. ८.४.७)।

इस पुरातन ऋषि कण्व का ऋग्वेद तथा इतरत्र बार बार उल्लेख आता है (ऋ. १.३६.८;१०.११ आदि; अ. वे; ७. १५. १: १८. ३. १५; वा. सं १७. ७४; पं. ब्रा. ८.१.१; ९.२.६; सां. ब्रा. २८.८)। इसके पुत्र तथा वंशजों का नाम बारबार आता है। यह सूक्तद्रष्टा था (ऋ. १.३६-४३;८; ९.९४)। अंगिरसकुल में कण्व मंत्रकार थे। कण्व का वंशज उसके अकेले के कण्व नाम से (ऋ. १.४४.८; ४६.९; ४७.१०; ४८.४; ८.४३.१) तथा पैतृकनामसहित, जैसे कण्व नार्षद (ऋ. १.११७. ८; अ. वे. ४.१९.२), तथा कण्व श्रायस (तै सं. ५. ४.७.५; क. सं. २१.८; मै. सं ३.३.९.) ऐसा संबोधित है। इसके अतिरिक्त इसका अनेकवचनी (बहुवचन)

उल्लेख कण्वाः. सौश्रवसाः नाम से होता है (क. सं. १३. १२; सां. श्रौ. १६.११.२०)। अथर्ववेद के (२.२५) एक उद्धरण से प्रतीत होता है कि, उनसे शत्रुतापूर्ण व्यवहार किया जाता था।

क्षत्रियों के गायत्रीमंत्र में कण्व ने, सूर्य से प्राप्त की विश्वकल्याणकारक सद्बुद्धि हमें मिले, ऐसा उल्लेख मिलता है (वा. सं. १७.७४)। ऋग्वेद में (१.११९.८) निम्नलिखित कथा एक कण्व के संबंध में आयी है। ब्राह्मणत्व की परीक्षा लेने के लिये असुरों ने कण्व को, अंधकारमय स्थान पर रख कर कहा कि, तुम यदि ब्राह्मण होगे तो, उषःकाल कब होगा, पहचानोगे। इसे अश्वियों ने आकर बताया कि, जिस समय उषःकाल होगा उस समय हम लोग वीणावादन करते हुए आयेंगे। उस शब्द को सुन कर तुम कह देना कि उषःकाल हो गया है।

विष्णु मतानुसार यह ब्रह्मरात तथा भागवत मतानुसार देवराज के पुत्र याज्ञवल्क्य के पंद्रह शिष्यों में से एक था (व्यास देखिये)। आगे चल कर इसने यजुर्वेद में कण्व शाखा स्थापित कर उसके ग्रंथ निर्माण किये (भा. १२.६)। वे ग्रंथ बहुत सी बातों में याज्ञवल्क्य के विरुद्ध हैं।

कण्व अंगिरस गोत्रोत्पन्न है तथा इनका कुल पूरुओं से उत्पन्न हुआ। कुछ स्थानों पर मतिनार पुत्र अप्रतिरथ से यह उत्पन्न हुआ (ह. वं. १.३२, विष्णु. ४.१९) ऐसा मिलता है, परंतु कुछ अन्य स्थानों पर कण्व को अजमीढ-पुत्र कहा गया है (वायु. ९९.१६९-१७० कण्ठ; मत्स्य. ४९)। पीढियों की दृष्टि से इन दोनों में काफी भेद है। विष्णु पुराण में दोनों वंश दिये गये हैं।

प्रगाथ काण्व दुर्गह के नातियों का समकालीन था (ऋ. ८.६५.१२; दुर्गह देखिये)। कण्व वंश की वंशावलि बहुत से स्थानों पर मिलती है (मत्स्य. ५०; ह. वं. १.३२; भा. ९.२१; प्रस्कण्व तथा मेधातिथि देखिये)। कण्व गोत्र गोत्रियों को दक्षिणा नहीं देनी चाहिये, ऐसा सत्याषाढश्रौतसूत्र (१०.४) में दिया गया है। क्यों कि गोपीनाथ भट्ट ने भाष्य में "कण्वं तु बधिरं विद्यात्" ऐसा कहा है, परंतु उसे भी यह जँचा नहीं। ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ में यह था (पद्म. सृ. ३४)।

धर्मशास्त्रकार—एक धर्मशास्त्रकार। आपस्तंब ने प्रथम "किसका अन्न ग्राह्य है?" ऐसी शंका उद्धृत कर, उसके समाधान के लिये कण्व के ग्रंथ का उद्धरण दिया है 'किसी ने भी आदर से दिया हुआ अन्न ग्राह्य है' (आप. ध. १.६.१९.२-३)। कण्व के ग्रंथ के बहुत से उद्धरण स्मृतिचंद्रिका में (आन्हिक तथा श्राद्ध के संबंध से) लिये गये हैं। उसी तरह मिताक्षरा नामक ग्रंथ में कण्व के ग्रंथ के बहुत से उद्धरण लिये गये हैं। (मिता. ३.५८; १३.६०)।

इनके ग्रंथ निम्नलिखित हैं—

(१) कण्वनीति. (२) कण्वसंहिता (३) कण्वोपनिषद् (४) कण्वस्मृति। कण्वस्मृति का उल्लेख हेमाद्रि, मध्वाचार्य आदि ने किया है (C. C.)।

२. कश्यपगोत्रोत्पन्न एक ऋषि। इसके पिता मेधातिथि (म. अनु. २५५. ३१ कुं.)। इसका आश्रम मालिनी नदी के तट पर था। इसने शकुंतला का पालन पोषण बड़े प्रेम से किया था। एक बार यह बाहर गया था, तब दुष्यंत ने शकुंतला से गंधर्वविवाह किया। इसने वापस आकर उसे योग्य कह कर उस विवाह की पुष्टि की (म. आ. ६४.६८; भा. ९.२०)। इसने दुर्योधन को मातलि की कथा बतायी। यह बोधप्रद कथा सुन कर भी जब उसने एक न सुनी, तब इसने शाप दिया कि, तेरी जंघा फोडने से तेरी मृत्यु होगी (म. उ. ९५.१०३. कुं)। काल की दृष्टि से यह कथा किसी अन्य कण्व की होगी।

यह गौतम के आश्रम में गया था। वहाँ की समृद्धि देख कर वैसी ही समृद्धि प्राप्त होवे, इसलिये इसने तपस्या की। गंगा तथा क्षुधा को प्रसन्न किया। उसने आयुष्य, द्रव्य, भुक्तिमुक्ति की मांग की। वह तथा उसके वंशज कभी क्षुधापीड़ित न हों, ऐसा वर मांगा। वह उसे मिला भी। जहाँ उसने तप किया था उस तीर्थ का नाम आगे चल कर कण्वतीर्थ पड़ा (ब्रह्म. ८५)। भरत के यज्ञ में यह मुख्य उपाध्याय था (म. आ. ६९.४८)। इसे भरत ने एक हजार पद्मभार शुद्ध जम्बूनद स्वर्ण (म. द्रो. परि. १.८. पंक्ति. ७५०-७५१) तथा एक हजार पद्म घोड़े (म. शां. २९.४०) दक्षिणा में दिये। भरत के यज्ञ के समय यह अथवा इसका पुत्र रहने की संभावना है। इसका पुत्र बाह्लीक (काण्व) था (ब्रह्म. १४८)।

३. कश्यप का पुत्र। कलियुग शुरू हो कर एक हजार वर्षों के बाद इसने भरतभूमि में जन्म लिया। उसकी पत्नी देवकन्या आर्यावती थी। उपाध्याय, दीक्षित, पाठक, शुक्ल, मिश्र अग्निहोत्री, द्विवेदी, त्रिवेदी, पांडव, चतुर्वेदी इसके पुत्रों के नाम हैं। कण्व ने अपनी संस्कृत वाणी से मिश्र देश के दस हजार म्लेच्छों को वश में किया। इन

बनें हुए म्लेच्छों के दो हजार वैश्यों में से कश्यप सेवक पृथु को कण्व ने क्षत्रिय बना कर राजपुत्रनगर दिया (भवि वि. प्रति. ४.२१)।

कण्वायन--इसके दातृत्व के संबंध में कृश ने प्रशंसा की है (ऋ. ८.५५,४)।

कत वैश्वामित्र--सूक्तद्रष्टा (ऋ ३. १७; १८)। कुशिक कुल का गोत्रकार तथा मंत्रकार था।

कति--विश्वामित्र का पुत्र।

कत्तृण--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कथक--विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

कद्रु--एक पुरोहित। इंद्र ने इसका सोम पिया (ऋ. ८.४५.२६)।

कद्रू--दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या (म. आ. ६६; भा. ६.६)। यह बहुत सुंदर तथा गुणवती थी परंतु इसकी एक ही आंख थी (भवि. प्रति. १. ३२)। दक्ष ने कश्यप के साथ इसका ब्याह कर दिया था। आगे चलकर इसने कश्यप से वर प्राप्त किया कि मेरे समान बल वाले सहस्र सर्प हों। उच्चैःश्रवा के रंग के संबंध से इसने अपनी सौत विनता से शर्त लगायी जिसमें कद्रु कहा था, कि उच्चैःश्रवा का रंग सफेद है पर पूंछ काली है। अपनी बात सत्य सिद्ध करने के लिए इसने अपने पुत्रों की सहायता मांगी, पर वे सहायता करने तैयार न हुए, तब इसने इन्हें शाप दिया कि तुम सब सर्पसत्र में भस्म होगे। दुष्ट सर्पों का नाश करने का यह अच्छा सुअवसर जानकर ब्रह्मदेव ने आकर इसके शाप की पुष्टि की (म. आ. १८)। तथा कहा कि उनका सापत्न बंधु उनका भक्षण करेगा। आगे चलकर उन्हों नें उश्शाप मांगा तथा सहायता करने का वचन दिया। तदनुसार वे उच्चैःश्रवा की पूंछ में जा लगे (म. आ. १८)। इस तरह उच्चैःश्रवा की पूंछ काली है, ऐसा कद्रु ने विनता को दिखलाया। विनता शर्त में हार गयी। अतः कद्रु की वह १,००० वर्षों तक दासी रहे यह निश्चित हुआ। पांच सौ वर्षों के बाद गरुड ने अपनी माता विनता को दास्य से मुक्त किया (म. आ. १८;३०; कश्यप देखिये)।

कद्रुशंकु--(सो. कुकुर.) वायुमत में उग्रसेनपुत्र।

कनक--(सो. सहस्र.) मत्स्यमतानुसार दुर्दमपुत्र तथा वायुमतानुसार दुदर्मपुत्र।

२. विप्रचिति तथा सिंहिका का पुत्र। इसे परशुराम ने मारा (ब्रह्माण्ड. ३.६.१९-२२)।

कनकध्वज--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.३)। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६)।

कनकांगद वा **कनकायु**--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

कनकोद्भव--(सो. विदूरथ.) वायुमतानुसार हृदीक का पुत्र।

कनिष्ठ--भौत्य मन्वन्तर का देवगण।

कनीयक--(सो. विदूरथ.) मत्स्यमत में हृदीकपुत्र।

कंदली--दुर्वास की पत्नी।

कंधर--मदनिका देखिये।

कन्यक--कश्यपकुल का गोत्रकार।

कप-देवविशेष। पहले इसने स्वर्ग का अपहार किया था। तब ब्राह्मणों ने इंद्र का पक्ष ले कर इसका नाश किया (म. अनु. २६२.४ कुं.)।

कपट--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपर--कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपर्देय--विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

कपालभरण-- विंध्य पर्वत पर त्रिवक्रकन्या सुशीला को शुचि नामक ब्राह्मण से उत्पन्न पुत्र। इंद्र ने इसका वध किया। इसका वध करने के पश्चात् इंद्र ने सीतासरसतीर्थ में स्नान किया। इसके बाद इसका पुत्र दुर्मेधस गद्दी पर बैठा (स्कंद. ३.१.११)।

कपालिन्--कश्यप तथा सुरभि का पुत्र। एक रुद्र।

कपि--तामस मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. भृगु गोत्र का एक ऋषि तथा प्रवर (भृगु देखिये)।

३. (सो. पुरूरवस्.) विष्णुमतानुसार उरुक्षय का पुत्र तथा वायुमतानुसार उभक्षयपुत्र। यह क्षत्रिय होते हुए भी तप कर ब्राह्मण हुआ (वायु. ९१. ११६)

४. रैवत मन्वंतर के मनु का एक पुत्र।

५. अंगिरस गोत्र का मंत्रकार।

कपिंजल--वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

कपित्थक--कद्रुपुत्र एक सर्प।

कपिभू--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कपिमुख--पराशरकुल का गोत्रकार। कपिश्रवस् पाठभेद है।

कपिल--सांख्यशास्त्रज्ञ कपिल का निर्देश श्वेताश्वतर उपनिषद् में है (५.२)।

वास्तव में यहाँ कपिल का अर्थ हिरण्यगर्भ है।

एक अग्निविशेष। कर्म ऊर्फ विश्वपति अग्नि तथा रोहिणी (हिरण्यकशिपुकन्या) का पुत्र। इसे सांख्यशास्त्र

प्रवर्तक कपिल कहा गया है। इसे अग्न्यधिकार अर्थात् आहुति पहुँचाने का अधिकार है (म. व. २११.२१)।

२. कर्दम को देवहूति से उत्पन्न पुत्र। यह स्वायंभुव मन्वंतर का अवतार है। कर्दम ऋषि ने संन्यस्त होने का निश्चय किया। तब देवहूति ने पूछा, 'संसारचक्र से मेरी रक्षा कौन करेगा?' श्री हरि के वचन--'मैं तेरे घर जन्म लूंगा' स्मरण होने के कारण, कर्दम ने कहा, 'श्रीहरि तुम्हारी कोख से जन्म लेंगे तथा वे तुम्हें ब्रह्मज्ञान दे कर संसारचक्र से मुक्त करेंगे। श्रीहरि की आराधना करो जिससे वे तुम्हारे उदर में आवेंगे।' तदनुसार उसने श्रीहरि की आराधना की, जिससे कपिल उत्पन्न हुआ। कपिल का जन्म सिद्धपुर में हुआ (दे. भा. ९.२१)। यह हमेशा बिंदुसर पर रहता था (भा. ३.२५.५)। ये दोनों स्थान समीप रहे होंगे।

कालांतर में देवहूति को इसने ब्रह्मज्ञान बताया तथा उसे संसारचक्र से मुक्त कर खुद पाताल में जा कर रहने लगा। वहाँ यह ध्यानस्थ था। उस समय अश्वमेध के अश्व को खोजते खोजते सगर-पुत्र वहाँ आये। यह सो रहा था ऐसा हरिवंश में दिया गया है। (ह. वं. १.१४-१५.)। यही चोर है, इसी ने हमारा अश्व चुराया है यों समझ कर उन्होंने कपिल पर शस्त्रास्त्रों से प्रहार किया। तब कपिल ने क्रोधयुक्त दृष्टि से देख कर उन्हें भस्म कर दिया। इनमें से चार लोग जीवित रहे (सगर देखिये)। भागवत में दिया है कि, सब लोग भस्म हो गये (भा. ९.८.१०)।

व्यक्ताव्यक्त तत्त्व पर आसुरि से इसका संभाषण हुआ था। जिसमें आसुरि पृच्छक था तथा कपिल निवेदिता था।

इसका शिष्य आसुरि। आसुरि का शिष्य पंचशिख (नारद. १.४५) था। पंचशिख कपिल का अवतार है यों उसक सांख्यज्ञान के प्रभाव से लोगों को प्रतीत होता था (म. शां. २११)। नारदपुराण में दो कपिल दिये गये हैं। उनमें से एक ब्रह्मा का (नारद. १.४५) तथा दूसरा विष्णु का अवतार था (नारद. १.४९)। आचार्यतर्पण में पंचशिखादि के साथ इसका उल्लेख है (मत्स्य. १२. ९८; कात्या. परि.)।

इनमें से कौन सा सांख्यशास्त्रज्ञ तथा कौन सा वेदांती था, यह समझ में नहीं आता। कपिल नामक किसी ऋषि ने स्यूमरश्मि से संवाद किया था। उनका संवाद कपिल के वेदविषयक कथन से शुरू हुआ। इसने यज्ञ में भी गाय अवध्य है, इसी विषय पर वादविवाद किया (म. शां. २६०)। भागवत में "सांख्यशास्त्र की रचना के लिये पंचम जन्म लोगे ऐसा कहा तथा मेरे घर में जन्म लिया," इस वचन के कारण भागवत का कपिल सांख्यशास्त्रज्ञ रहा होगा तथा यह विष्णु का अवतार ही है (भा. १. ३. १०; ३. २४. ६९; विष्णु. २. १४)। सांख्यशास्त्रज्ञ कपिल की स्मृति ने निंदा की है, तथा श्रुति में एक कपिलमाहात्म्य वर्णित है (श्वे. उ. ५. २; ब्र. सू. २. १-१ शांकरभाष्य)। अर्थात् यह वेदांती कपिल रहा होगा। इसके वासुदेव (म. व. १०६. २) तथा चक्रधनु (म. उ. १०७. १७) नामांतर हैं। वासुदेव तथा चक्रधनु दोनों कपिल सगरपुत्रघ्न अर्थात् एक ही हैं। कामरूप देश में इसने कपिलेश्वर की स्थापना की (स्कंद. १. २. ४५)।

ब्रह्मदेव से वरदान प्राप्त कर रावण पश्चिम तट पर गया। वहाँ उसने एक तेजस्वी पुरुष देखा। रावण ने उसे युद्ध के लिये चुनौती दी। तब उस पुरुष ने रावण को एक तमाचा लगाया, जिसके कारण वह चक्कर खा कर धरती पर गिर पड़ा। तदनंतर वहाँ उसने एक सुंदर स्त्री देखी तथा उसकी अभिलाषा की। तब इस पुरुष ने यह जान कर उसकी ओर केवल देखा, जिससे रावण फिर धरती पर गिर पड़ा। रावण ने उठ कर उससे फिर पूछा, "आप कौन हैं?" तब इसने बताया कि, मेरे हाथ से शीघ्र ही तेरी मृत्यु होगी। इससे यह पता चलता है कि, यह विष्णु का अवतार रहा होगा। राम के प्रश्न का उत्तर देते समय, वसिष्ठ ने बताया कि, यह पुरुष कपिल महर्षि है (वा. रा. उ. ५ प्रक्षिप्त)।

वेनवध के पश्चात् इसी के कहने पर पृथु को उत्पन्न किया गया। पृथु ने कपिल को वत्स बना कर पृथ्वी को स्थिरस्थावर बनाया (भा. ४.१८-१९)। गौतमी-कपिलसंगम का माहात्म्य बताते समय, यह जानकारी दी गयी है (ब्रह्म. १४१)। आगे चल कर सांख्य का तत्त्वज्ञान बताया गया है, परंतु वहा कपिल का नामोल्लेख भी नहीं है (ब्रह्म. २३९; पंचशिख देखिये)।

इसके रचित ग्रंथः-- १. सांख्यसूत्र, २. तत्त्वसमास, ३. व्यासप्रभाकर, ४. कपिलगीता (वेदांतविषयक), ५. कपिलपंचरात्र, ६. कपिलसंहिता (उत्कलतीर्थमाहात्म्य ७. कपिलस्तोत्र, ८. कपिलस्मृति। वाग्भट ने वैद्यविषयक ग्रंथरचयिता कह कर इसका उल्लेख किया है (C. C.)।

३. रुद्रगणों में से एक।

४. विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

५. दनु एवं कश्यप का पुत्र, एक दानव।

६. कद्रु तथा कश्यप का पुत्र, एक नाग।

७. ब्रह्मांडमतानुसार वसुदेव का सुगंधी से तथा वायुमतानुसार वनराजी से उत्पन्न पुत्र। यह राज्य न कर विरक्त हो कर वन में चला गया।

८. विंध्य पर रहनेवाला एक वानर।

९. वेन का वध करनेवाले ऋषियों में से एक।

१०. (सो. नील.) भद्राश्व का पुत्र। अन्य पुराणों में कापिल्य ऐसा पाठभेद है।

११. शिवावतार दधिवाहन का शिष्य।

१२. एक यक्ष। इसने खशाकन्या केशिनी से यक्षराक्षस उत्पन्न किये। इल की नीला नामक कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.१)।

१३. एक ब्राह्मण। एकादशी उपवास करने के कारण यह संपन्न हुआ (पद्म. उ. ३०)।

कपिला—दक्ष एवं असिक्नी की कन्या तथा कश्यप की स्त्री।

२. पंचशिख ऋषि की माता (नारद. १.४५; कबंधी देखिये)।

३. कश्यप तथा खशा की कन्या।

कपिलाश्व--(सू. इ.) भागवत तथा विष्णुमत में कुवलयाश्वपुत्र। मत्स्य तथा वायु मत में कुवलाश्वपुत्र।

कपिलोम--कश्यप तथा खशा का पुत्र।

कपिवन भौवायन—एक आचार्य। (मै. सं. १. ४.५; क. सं. ३.२.२)।

इसके नाम पर दो दिन चलनेवाला एक यज्ञ है (तां. ब्रा. २०.१३.४ का. श्रौ. २५, २–३; आश्व. श्रौ. १०.२)।

कपिश—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कपिश्रवस्--कपिमुख देखिये।

कपिष्ठल—वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण। यह कठ का एक भाग है। कपिष्ठलसंहिता उपलब्ध है। पाणिनि कपिष्ठलगोत्र निर्देश करता है (पा. सू. ८.३.९१) (कठ देखिये)। यह कृष्ण यजुर्वेद की शाखा है।

कपीतर--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कपोत--गरुड का पुत्र।

२. एक राजा। यह आत्मज्ञानी था।

कपोत नैर्ऋत--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१६५)।

कपोतक--पातालस्थित नागराज का नाम (मार्क. ६८)।

कपोतरोमन्—(सो. कुकुर.) भागवतमतानुसार विलोमा पुत्र, विष्णुमतानुसार धृष्टपुत्र, वायुमतानुसार धृतिपुत्र तथा मत्स्यमतानुसार वृष्टिपुत्र।

कबंध--दंडकारण्य का एक राक्षस। इसका सिर इसकी छाती में था। इस लिये इसे कबंध (शिरविरहित) नाम दिया गया। जटायुवध के बाद राम तथा लक्ष्मण, सीता की खोज में वन में घूम रहे थे। खोजते खोजते वे क्रौंचवन के पूर्व में तीन कोस दूर स्थित मातंग मुनि के आश्रम समीप पहुँचे। वहाँ उन्हें बहुत जोर की ध्वनि सुनाई पड़ी। यह ध्वनि कबंध राक्षस की थी। एक कोस की दूरी पर रह कर भी यह राम लक्ष्मणों को दिखा। जब यह भक्ष्य के लिये हाथ फैला रहा था, तब उस में राम-लक्ष्मण पकड़े गये। राम लक्ष्मणों के पास तरवारें थीं। राम को छूट जाने के लिये कह कर, लक्ष्मण स्वयं मरने के लिये तैय्यार हो गया। परंतु उसे धीरज दे कर राम ने रोका। अपने आप ही भक्ष्य उसके पास आया, इससे राक्षस को अत्यंत आनंद हुआ। उसने ऐसा कहा भी। परंतु लक्ष्मण, ने कहा कि, क्षत्रिय के लिये ऐसी मृत्यु अयोग्य है। तब राक्षस को क्रोध आया तथा वह इन्हें खाने के लिये प्रवृत्त हुआ। तब राम ने इसका बायाँ हाथ तोड़ दिया तथा लक्ष्मण ने इसका दाहिना हाथ तोड़ दिया। तब गतप्राण हो कर यह नीचे गिर पड़ा। तदनंतर इसके शरीर से एक दैदीप्यमान पुरुष निकल कर आकाश में गया। तब राम ने पूछा कि तुम कौन हो। तब इसने कहा कि, "मैं विश्वावसु नामक गंधर्व हूँ। ब्राह्मण के शाप से यह राक्षसयोनि मुझे प्राप्त हुई थी। सीता का हरण, रावण ने किया है। तुम सुग्रीव के पास जाओ। वह तुम्हें सहायता करेगा, क्यों कि, सुग्रीव को रावण के मंदिर की जानकारी है।" इतना कह कर यह गुप्त हो गया (म. व. २६३; वा. रा. अर. ६९–७३)।

२. अट्टहास नामक शिवावतार का शिष्य।

३. व्यास के अथर्वन् शिष्यपरंपरा के वायु, विष्णु, ब्रह्मांड तथा भागवत मतानुसार सुमंतु का शिष्य।

कबंध आथर्वण--यह पतंचल काप्य की पत्नी के देह में संचार करता था। इसने पतंचल को कुछ अध्यात्मज्ञान बताया है (बृ. उ. ३.७)।

कबंधिन् कात्यायन—पिप्पलाद का ब्रह्मविद्या का शिष्य (प्र. उ. ११.३)।

कबंधी—पंचशिख ऋषि की माता (कपिला २. देखिये)।

कमठ--युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.१९)।

२. महीनगर के हारित नामक ब्राह्मण का पुत्र। वृद्ध ब्राह्मण का रूप ले कर सूर्य इसके पास आया तथा उसने कुछ प्रश्न पूछे। उसके इसने समर्पक उत्तर दिये। तब सूर्य ने इसे बताया कि, तेरा पिता स्मृतिकार होगा, इस स्थान का त्याग नहीं करेगा तथा यह स्थान जयादित्य नाम से प्रसिद्ध होगा (स्कन्द. १.२.५१)।

कमद्यू—विमद की पत्नी (ऋ. १०.६५.१२)।

कमला--वल्लभ भीम की पत्नी (गणेश. १.१९. ४०; दक्ष देखिये)।

कमलाक्ष--त्रिपुर का सुवर्णपुराधिपति असुर (लिंग. २.७१)। तारकासुर का पुत्र (म. क. २४.४)। रुद्र ने इसका वध किया।

कंपन—अंगद ने युद्ध में मारा हुआ लंका का राक्षस (वा. रा. यु. ७५)।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४. १९)।

कंबल—कद्रूपुत्र। पाताल के नागों का अधिपति (भा. ५.२४)। यह अश्विन माह में त्वष्टृ नामक सूर्य के साथ रहता है (भा. १२.११)। यह अश्वतर का भाई है (मार्के. २१.५०)।

कंबलबर्हिष--(सो. क्रोष्टु.) अंधक का कनिष्ठ पुत्र।

२. (सो. विदूरथ.) मत्स्य तथा वायु के मत में देवार्हपुत्र।

३. (सो. यदु.) मत्स्य तथा वायु के मत में मरुत्तपुत्र। इसका पुत्र असमौजस्।

कयाधू--तारक के जम्भासुर नामक सेनापति की कन्या। इसका पति हिरण्यकशिपु। पहिली बार जब यह गर्भवती थी, तब हिरण्यकशिपु मंदार पर्वत पर तपश्चर्या करने के लिये गया था। यह मौका देख कर इन्द्र ने सब दैत्यों का पराभव किया। इसके गर्भ का जन्म होते ही उसे मार सकें, इस विचार से इंद्र कयाधू को ले कर जाने लगा। इतने में मार्ग में नारद मिला। उसने बताया कि इसके उदर में स्थित गर्भ भगवद्भक्त है। तब इंद्र ने इसे छोड़ दिया। बाद में नारद ने इसे आत्मबोध किया। वह इसके गर्भ ने उसे सुना तथा ध्यान में रखा। परंतु यह स्वयं स्त्रीस्वभाव के अनुसार वह उपदेश भूल गई (भा. ६.१८; ७.७; हिरण्यकशिपु देखिये)।

कयोवधि--ऋतुपर्ण देखिये।

करकर्ष—(सो. क्रोष्टु.)। शिशुपाल के चार पुत्रों में से एक। इसका चेकितान यादव से अत्यंत स्नेह था। भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा (म. द्रो. १९.२०)। इस के लिये करकाक्ष पाठ है।

करकायु— (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

कराजिह्व—कर्णजिह्व देखिये।

करंज—इंद्र का एक शत्रु (ऋ. १.५३.८; १०.४८. ८)।

करट—शकट देखिये।

करंड--कंड्डु देखिये।

करथ—भास्करसंहिता के सर्वधरतंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

करंधम—(सो. तुर्वसु.) भागवतमत में त्रिभानुपुत्र, विष्णुमत में त्रिशांबपुत्र, वायुमत में त्रिसारिपुत्र तथा मत्स्यमत में त्रिसानुपुत्र।

२. (सू. दिष्ट.) भागवत तथा वायु के मतानुसार खनिनेत्र का पुत्र तथा विष्णु के मतानुसार अतिभूतिपुत्र। अवीक्षित राजा का पिता तथा मरुत्त राजा का पितामह (म. अनु. १३७.१६)। इसका मूल नाम सुवर्चस् था। करंधम नाम प्रचलित होने का कारण यह है। एक बार अनेक राजाओं ने मिल कर इसे अत्यंत त्रस्त किया। तब इसने अपने हस्त कंपित कर के सेना उत्पन्न की तथा सब का पराभव किया (म. आश्व. ४.९–१६)। इसे कालभीति ने उपदेश किया था (स्कन्द १.२.४०–४२)। महाभारत में तथा मार्कंडेय में बलाश्व पाठभेद मिलता है (मार्के. ११८.८; २१)।

करभाजन--ऋषभदेव के नौ सिद्धपुत्रों में से एक। यह योगी तथा ब्रह्मज्ञानी था। इसने विदेह के यज्ञ में ज्ञानोपदेश किया (भा. ५.४; ११.२)। इसकी माता जयंती।

करंभ—अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार।

२. एक दनुपुत्र।

३. (सो. क्रोष्टु.) मत्स्य तथा वायु के मत में शकुनिपुत्र (करंभि देखिये)।

करंभक--(सो. विदूरथ.) मत्स्य के मत में हृदीकपुत्र।

करंभि—(सो. क्रोष्टु.) भागवत तथा विष्णु के मतानुसार शकुनिपुत्र (करंभ देखिये)।

कररोमन् वा करवीर—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कराल जनक—ब्राह्मण स्त्री की अभिलाषा के कारण इसका नाश हुआ (कौ. अ. पृ. २२)। वसिष्ठ के साथ इसका क्षराक्षरलक्षण के संबंध में संवाद हुआ था (म. शां. २९१–२९६; ब्रह्म. २४०–२४४)। वंशावली में इसका नाम अप्राप्य है।

करिक्रत वातरशन—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.५)।

करीराशिन्—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

करीश—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

करूष—वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक। इसकी संतति कारूषक नाम से प्रसिद्ध है। इसका आधिपत्य उत्तर की ओर था (मनु देखिये)।

२. यह दक्ष सावर्णि मन्वन्तराधिप था। इसने अपने भाइयो के साथ कालिंदीतीर पर, वायुभक्षण कर के देवी की कडी तपश्चर्या की। इससे प्रसन्न हो कर देवी ने इसे वरदान दिया, कि तुम मन्वन्तराधिप बनोगे (दे. भा. १०.१३)।

करेणुमती—पंडुपुत्र नकुल की पत्नी। यह शिशुपाल की कन्या थी।

कर्कट—मर्यादा पर्वत पर रहनेवाला एक भील। इसे विष देने के लिये तत्पर पत्नी को इसने गोकर्णक्षेत्र में मार डाला। इससे वह मुक्त हो गई (पद्म. उ. २२२)।

कर्कटी—हिमालय की उत्तर दिशा में रहनेवाली एक राक्षसी। इसे विषूचिका तथा अन्यायबाधिका नाम है। इसने लोगों को मारने का वर प्राप्त किया। परंतु बाद में इसने वह काम छोड दिया। यह हिमालय में रहती है। वहाँ इसका नाम कंदरा देवी है। केंकडे के आकार के राक्षस की कन्या होने के कारण, इसे कर्कटी कहते है (यो. वा. ३.६८–८४)।

कर्कंधु—इसका संरक्षण अश्वीदेवों ने किया (ऋ. १. ११२.६)।

कर्कोटक—कद्रूपुत्र एक नाग। यह वरुण की सभा में रहता है (म. स. ९.९)। यह नागों के भोगवती नामक राजधानी में रहता है (म. उ. १०१.९)। नारद के शाप से जब यह दावाग्नि में फँस गया, तब नलराजा ने इसे बाहर निकाला था। इस उपकार के कारण इसने नल को दंश कर के ऐसा बनाया कि, उसे कलि से पीड़ा न हो। उसी प्रकार वनवास समाप्त होने तक उसे कोई न पहचाने, इस उद्देश्य से विरूप भी बना दिया। 'सुरुप होने की इच्छा होते ही मेरे द्वारा दिये गये दो वस्त्रपरिधान कर लेना, यों इसने नल को बताया (म. व. ६३)। कर्कोट नामक भारतवर्ष के विभाग के कर्कोटक लोगों को महाभारत में विधर्मी कहा गया है (म. क. ३. ४५)।

कर्ण—कुंती का सूर्य से उत्पन्न पुत्र (म. आ. १०४. ११)।

जन्मते ही कुंती ने इसे अश्व नदी में छोड़ दिया (म. व. २९२. २२)। संदूक में यह बालक बहते बहते चर्मण्वती नदी में आया। वहाँ से यमुना तथा भागीरथी नदी में बहते समय, उसे धृतराष्ट्रसारथि अधिरथ ने देखा। इसे ले कर उसने अपनी पत्नी राधा को दिया। यह बालक देखते ही उसकी आँखों में आनन्दाश्रु आ गये। जन्मतः कर्ण पर कवच तथा कुंडल होने के कारण यह अब तक जीवित था। देवदत्त पुत्र मान कर राधा ने इसका भरणपोषण किया। यह तेजस्वी था, इसलिये राधा ने इसका नाम वसुषेण रखा (म. आ. ६४; ६८; १०४. १५. क. २१. १४)।

शिक्षा—इसका बाल्य काल अंगदेश में गया। द्रोणाचार्य ने इसे शस्त्रास्त्रविद्या सिखाई (म. शां. २. ५)। यह शस्त्रास्त्रविद्योद्यत था (म. आ. ६८; १०४. १६)। परीक्षा के मैदान में प्रविष्ट होने पर इसने द्रोण तथा कृप को नमस्कार किया, जिस में आदर के भाव नहीं थे (म. आ. १२६. ६)। इसने द्रोण से ब्रह्मास्त्र सिखाने के लिये केवल प्रार्थना की थी (म. शां. २. १०)। कृष्ण ने कहा है कि, यह सब वेद तथा शास्त्र जानता था (म. उ. १३८.६–७)। कर्ण अर्जुन पर भी श्रेष्ठत्व प्राप्त कर सकता था, इसका दुर्योधन ने अनुभव किया था। जिस समय कौरवपांडवों में विरोध प्रारंभ हुआ था, तबसे इसे उत्तेजना दे कर, उसने अपने पक्ष में कर लिया था।

यद्यपि कर्ण ने द्रोण से धनुर्विद्या प्राप्त कर ली थी, तथापि उसे ब्रह्मास्त्रप्राप्ति नहीं हुई थी। इस एक ही कारण से अर्जुन इससे श्रेष्ठ हो गया था। तब इसने द्रोण से कहा, 'निष्पत्ति प्रकार तथा उपसंहार के साथ मुझे ब्रह्मास्त्र सिखाओ।' परंतु कुछ कारणवश द्रोण ने यह अमान्य कर दिया। परंतु अर्जुन से श्रेष्ठत्व प्राप्त करने की इसकी महत्त्वाकांक्षा होने के कारण, यह महेन्द्र पर्वत

निवासी परशुराम के पास गया। परशुराम क्षत्रियद्वेष्टा होने के कारण, वह क्षत्रियों को विद्या नहीं सिखाता था। स्वकार्य यशस्वी करने के लिये, कर्ण ने असत्य कथन किया एवं परशुराम को उसने बताया कि, वह भृगुकुलोत्पन्न ब्राह्मण है, इसलिये शिष्य बन कर रहने की अनुमति परशुराम ने दी। उसने कर्ण को सप्रयोग एवं यथाविधि ब्रह्मास्त्र सिखाया।

एक दिन उपवास से श्रांत परशुराम कर्ण की गोद में सिर रख कर सोया था, तब एक कृमि ने आ कर उसकी जांघ काट खायी। रक्त स्पर्श से परशुराम जाग्रत हुआ। इतनी वेदनाएं कोई ब्राह्मण शांति से सहन नहीं कर सकता, यह सोच कर कर्ण के बारे में परशुराम के मन में शंका उत्पन्न हुई। चाहे जो हो, यह अवश्य क्षत्रिय है। कर्ण ने सत्यकथन कर उसे संतुष्ट किया, तथापि इसे शाप मिला कि, बराबरी के योद्धा से युद्ध करते समय, तथा अंतिम समय इसे अस्त्र की स्फूर्ति न होगी, अन्य समय पर होगी। असत्यकथन के कारण, परशुराम ने कर्ण से जाने के लिये कहा, परंतु यह आर्शीवाद भी दिया कि, तुम्हारे समान दूसरा कोई भी क्षत्रिययोद्धा न होगा (म. शां. ३.३२)।

गोवत्सहत्या—एक बार धनुष्य बाण समवेत यह आश्रम के बाहर गया हुआ था, तब असावधानी से एक ब्राह्मणधेनु का बछड़ा इसके द्वारा मारा गया। तब उस ब्राह्मण ने इसे शाप दिया, 'युद्ध में भूमि तुम्हारे रथ का पहिया निगल लेगी तथा असावध अवस्था में तुम्हारा शिरच्छेद होगा,'। इससे कर्ण को अत्यंत दुख हुआ। इसने धन दे कर उःशाप मांगने का प्रयत्न किया, परंतु उसने इसका धिक्कार किया (म. क. २९; शां. २.२३-२९)।

अवहेलना—धृतराष्ट्र की अनुज्ञा से द्रोण ने कौरव पांडवों का शस्त्रास्त्रकौशल्य देखने के लिये रंगमंच तैय्यार किया। परंतु कर्ण ने कहा कि, अर्जुन के द्वारा दिखाये गये कौशल की अपेक्षा अधिक कौशल मैं दिखा सकता हूँ। तब कौरव पांडवों का झगड़ा हो कर, कर्ण ने अर्जुन को द्वंद्व युद्ध का आव्हान दिया। उस समय सब लोग आश्चर्यमूढ हो कर, कर्ण की ओर देख रहे थे। परंतु दुर्दैव से कर्ण का जन्मवृत्त किसी को मालूम न होने के कारण इसे यहाँ नीचा दिखना पड़ा। इसके अतिरिक्त कर्ण का पालनकर्ता पिता अधिरथ वहाँ आया तथा कर्ण ने उसे नमस्कार किया। तब सब लोक सूत, सूतपुत्र राधेय आदि कह कर इसकी अवहेलना करने लगे। इस समय कुंती की परिस्थिति भय, आनंद एवं दुखमिश्रित हो गई थी। पुत्रप्रेम से उसका हृदय भर आया। परंतु उसकी अवहेलना तथा पांडववैर देख कर उसे अत्यंत दुख हुआ (म. आ. १२६)।

कृतज्ञता—कर्ण के राजपुत्र एवं क्षत्रिय न होने के कारण, यह अपमान उसे सहना पड़ता था। उस समय दुर्योधन ने कहा कि, शौर्य कुल पर निर्भर नहीं रहता। उसने कर्ण को अंगदेश का राज्य दे कर गौरवान्वित किया। इस उपकार के विनिमय की पृच्छा करने पर दुर्योधन ने कर्ण से मित्रत्व भाव कायम रखने की इच्छा प्रदर्शित की। इस प्रकार बाल्यावस्था से इनमें अकृत्रिम मित्रत्व स्थापित हो कर इसने उसके लिये मृत्यु तक का स्वीकार किया (म. आ. १२६)।

जरासंधस्नेह—इसने मल्लयुद्ध कर के जरासंध का जोड़ ढीला कर दिया, इसलिये जरासंध ने इसे मालिनीनगर दे कर इससे स्नेहसंपादन किया (म. शां. ५.६)।

विवाह—कर्ण ने काफी सूतकन्याओं से विवाह किये (म. उ. १३९.१०)। द्रौपदीस्वयंवर में यह मत्स्यभेद के लिये आगे बढा, तब द्रौपदी ने कहा, "मैं सूतपुत्र को नहीं वरूँगी।" यह सुन कर इसे पीछे हटना पडा (म. आ. १७८. १८२७*)।

बुद्धिभेदयत्न—कौरव पांडवों के वैर के कारण निष्कारण कर्ण तथा पांडवों में वैर आया। यह देख कर कुंती को अत्यंत दुख हुआ। उसने इसका समाधान कर के पांडवों की सहायता के लिये, इसे प्रवृत्त करने के लिये शिष्टाई के हेतु से कृष्ण को इसके पास भेजा। शिष्टाई के बाद कृष्ण कर्ण के पास गया तथा उसने कर्ण से उसका जन्म वृत्त बता कर कहा, कि तुम्हें सार्वभौम पद का लाभ होगा। पांडवों के समान शूर नररत्न तुम्हारी सेवा करेंगे। द्रौपदी तुम्हारी अर्धांगी बनेगी। कौरवों द्वारा तुम्हारी हार नहीं होगी, तथा भविष्य में होनेवाला क्षय भी टल जायेगा। सब कार्य ठीक से होगा। ऐसे कई प्रलोभन इसे दिखाये।

कर्ण ने उत्तर में कृष्ण से कहा कि, यद्यपि कुन्ती मेरी माता है एवं पांडव मेरे बंधु हैं यह कथन मुझे मान्य है, तथापि मुझे नदी में छोड कर, कुन्ती ने बडी भारी भूल की है। उसी के कारण मुझे अधिरथ के पास रहना पड़ा। मैं ने सूतकन्याओं से विवाह किये तथा उनसे मुझे पुत्रपौत्रादि भी हुए। इन कारणों से, एवं राधा के अनुपम एवं अकृत्रिम प्रेमपाश से मैं बद्ध हो गया हूँ। अब यह संबंध तोड़ना मेरे लिये असंभव है। इसके अतिरिक्त मैं

ने दुर्योधन को वचन दिया है कि, मैं उससे आमरण मित्रत्व रखूँगा। इस परिस्थिति के कारण पांडवों के पक्ष में आना मेरे लिये अनुचित है। यह सुन कर कृष्ण निरुत्तर हो गया (म. उ. १३९)।

भेंट—कुंती स्वयं कर्ण से मिलने गई, तथा पुत्र कह कर अपना परिचय उसे दिया। तब प्रथम बताये अनुसार सारा वृत्त कथन कर के, पांडवों का पक्ष लेना उसने साफ अमान्य कर दिया। परंतु कुंती के कथनानुसार वचन दिया कि, मैं केवल अर्जुन से युद्ध कर के उसका वध करूँगा, अन्य पांडवों को मैं हानि नहीं पहुँचाऊँगा। यह सुन कर कुंती वापस चली गई (म. उ. १४४)।

द्रोणवध के बाद कर्ण सेनापति हुआ। तब महासमर की आज्ञा मांगने के लिये कर्ण भीष्म के पास गया। उस समय भीष्म ने इसे इसका जन्मवृत्त कथन कर, युद्ध से परावृत्त करने का प्रयत्न किया। परंतु कर्ण ने उसकी बात न सुनी। इसी समय कर्ण ने भूतकाल में किये गये अपने कृत्यों के लिये, भीष्म से क्षमायाचना की (म. भी. ११७)।

गंधर्वयुद्ध—कौरव घोषयात्रा के लिये गये थे, तब कर्ण भी उनके साथ गया था। वहाँ चित्रसेन गंधर्व के साथ दुर्योधन का युद्ध हो कर उसमें प्रथम कर्ण ने गंधर्वों का पराभव किया। परंतु बाद में संपूर्ण सेना ने उसीपर आक्रमण किया एवं उसे भग्नरथ कर के विकर्ण के रथ में बैठ कर भागने के लिये मजबूर किया (म. व. २३१)।

बिराटनगरी में—पांडव अज्ञातवासकाल में जब विराट के पास रहते थे, तब दुर्योधन ने विराट नगरी पर आक्रमण किया। कीचक की मृत्यु के कारण, उस समय विराट अत्यंत निर्बल हो गया था। दुर्योधन को कर्ण, संशप्तक, वीर सुशर्मा आदि की सहायता प्राप्त थी, फिर भी इस युद्ध में दुर्योधन का पूर्ण पराभव हुआ। इस युद्ध में कर्णार्जुन का तुमुल युद्ध हुआ, जिस में कर्ण का पूर्ण पराभव हो कर उसके भाई शत्रुंतप का वध अर्जुन ने किया (म. वि. ५६)। यह लड़ाई उत्तरगोग्रहण के नाम से प्रसिद्ध है। इसी युद्ध में विराट की एक लक्ष गौएं सुशर्मा ने ले ली थीं (म. वि. ४९-५५)

कृपाचार्य से सामना—कर्ण ने अर्जुन का पराभव करने की प्रतिज्ञा की, परंतु कृपाचार्य ने उसका निषेध किया। कर्ण ने बदले में उसका उपहास किया तथा कृपाचार्य तथा अश्वत्थामा को मर्मभेद्य भाषण से दुखाया। झगड़ा बहुत बुरी तरह हुआ था, परंतु ले दे कर दुर्योधन ने सब को समझाया (म. वि. ४३-४६)। इसने द्रुपदपुत्र प्रियदर्शन का वध किया था (म. आ. १९२, परि. १०३ पंक्ति. १३३)।

दिग्विजय—चित्रसेन गंधर्व से दुर्योधन की रक्षा पांडवों ने की इसका स्मरण दिला कर, भीष्म ने पांडवों के साथ मेल करने के लिये दुर्योधन से कहा। तब दुर्योधन केवल हँसा। अपना अजिंक्यत्व सिद्ध कर के भीष्मादिकों का मुँह हमेशा बंद करने के लिए, योग्य मुहूर्त देख कर, कर्ण दिग्विजय के लिये निकला। प्रथम द्रुपदनगर को घेरा डाल कर द्रुपद तथा उसके अनुयायियों को जीत कर, इसने उनसे कर लिया। तदनंतर यह उत्तर की ओर गया। प्रथम भगदत्त को जीत कर, हिमवान् पर्वतीय राजाओं को भी इसने जीता तथा करभार लिया। तदनंतर पूर्व की ओर नेपाल, अंग, वंग, कलिंग, शुंडिक, मिथिल, मागध, कर्कखंड, आवशीर, योध्य, अहिक्षत्र, वत्सभूमि, मृत्तिकावती, मोहननगर, त्रिपुरी तथा कोसला नगरी जीत कर करभार लिया। अनंतर दक्षिण की ओर कुंडिनपूर के रुक्मी के साथ युद्ध किया। युद्ध में कर्णप्रभाव से संतुष्ट हो कर वह शरण में आया तथा कर्ण के साथ उसकी सहायता करने के लिये गया। पांड्य, शैल, केरल तथा नील प्रदेश जीत कर, कर प्राप्त किया। तदनंतर शैशुपालि को जीत कर, पार्श्व तथा अवंती प्रदेश के सब राजाओं को जीता। बाद में कर्ण पश्चिम की ओर गया। वहाँ यवन तथा बर्बरों को जीत कर उसने कर लिया। इस प्रकार सब दिशाओं को जीतने के बाद, कर्ण ने म्लेच्छ, अरण्यवासी तथा पर्वतवासी राजा, भद्र, रोहितक, आग्रेय, मालव आदि का पराभव किया। तदनंतर शशक तथा यवनों का पराभव कर के, नग्नजित् प्रभृति महारथी नृपसमुदाय को जीता।

इस प्रकार संपूर्ण पृथ्वी पादाक्रान्त कर के, कर्ण हस्तिनापुर आया। वहाँ उसका उत्तम स्वागत हुआ। इस अपूर्व विजय के कारण दुर्योधनादि को लगा कि, युद्ध में कर्ण अवश्य ही पांडवों को पराजित कर देगा (म. व. २४१. परि. १. २४)। जब दुर्योधन ने स्वयंवर में कलिंग के चित्रांगद की कन्या का राजपुर से हरण किया तब कर्ण ने उस की रक्षा की (म. शां. ४)।

राज्यविस्तार—दुर्योधन की कृपा से कर्ण अंगदेश का राजा बन सका। उस देश की सीमाएँ निम्नलिखित हैं।

भागलपूर तथा उसके आसपास का मोंगीर प्रदेश मिला कर अंगदेश बना था। भारत के अठारह राजकीय भागों में यह एक था। चंपा अथवा चंपापुरी उसकी राजधानी थी। इस राज्य की उत्तर मर्यादा का पश्चिम छोर गंगा तथा शरयू का संगम था। यह रामायण के रोमपाद का तथा भारत के कर्ण का राज्य था। रामायण में उल्लेख है कि, यहीं महादेव ने मदन को मारा। इसलिये इस देश को अंग तथा मदन को अनंग नाम मिला (वा. रा. बा. २३.१३-१४)। अंगदेश में वीरभूम तथा मुर्शिदाबाद ज़िले आते हैं। कुछ तज्ञों के मतानुसार संताल परगना भी आता है। महाभारत में लिखा है कि, यह देश इन्द्रप्रस्थ के पूर्व की ओर दूरस्थित मगध देश के इस ओर है। राजसूय के दिग्विजय में भीम ने कर्ण का यहाँ पराजय किया (म. स. २७. १६-१७)। अंगदेश का नाम सर्वप्रथम अथर्ववेद में आया है (अ. वे. ५. १४)।

औदार्य—अंगराज कर्ण उस समय अत्यंत प्रसिद्ध धनुर्धर था। यह मानी हुई बात थी, कि भविष्य में यह कौरव पांडव युद्ध में अर्जुन के विरुद्ध लड़ेगा। इसलिये इन्द्र अत्यंत चिंतित हुआ। कुन्ती को अर्जुन इन्द्र से हुआ था। पुत्र का कल्याण करना उसका कर्तव्य था, अतएव कर्ण को हतबल करने के लिये उसके कवचकुंडल मांगने का विचार उसने किया। इन कवचकुंडलों के कारण कर्ण अजिंक्य एवं अमर था तथा कर्ण के द्वारा अर्जुनवध होना संभव था। परंतु कर्ण अत्यंत उदार होने के कारण, इन्द्र की इच्छा पूरी होना संभव था। जैसे अर्जुन की चिन्ता इन्द्र को थी, उसी प्रकार कर्ण की चिन्ता सूर्य को थी। इन्द्र का हेतु सूर्य को विदित था। इसलिये कर्ण के स्वप्न में आ कर सूर्य ने दर्शन दिया। सूर्य ने इसे कहा कि, इन्द्र ब्राह्मण वेष से आ कर तुम्हें कवचकुंडल माँगेगा परंतु तुम मत देना। कवचकुंडल अमृत से बने हुए हैं, इसलिये तुम अमर बन गये हो। कवचकुंडल दे कर तुम अपनी आयु का क्षय मत करो, तब कर्ण ने सूर्य को पहचान लिया। कर्ण ने कहा कि, आयु की अपेक्षा कीर्ति श्रेयस्कर है, तथा कीर्ति से ही उत्तम गति प्राप्त हो सकती है। मैं अमरत्व की आशा से कवचकुंडल की अभिलाषा नहीं रखूँगा। इस पर सूर्य ने कहा कि, अर्जुन का वध कर के जीवितावस्था में तुम कीर्ति प्राप्त कर सकते हो, अतएव कवचकुंडल देना अमान्य कर दो। परंतु कर्ण ने उसकी मंत्रणा अमान्य कर दी। यह सुन कर सूर्य को अत्यंत दुख हुआ। उसने कहा, "तुम्हारे हित की सलाह देता हूँ, फिर भी तुम नहीं मानते, तो कम से कम इन्द्र से एक शक्ति मांग लो।" कर्ण ने यह मान्य कर लिया तथा वह इन्द्र की प्रतीक्षा करने लगा (म. व. २८४-२९४)।

शक्तिप्राप्ति—एक दिन इन्द्र ब्राह्मणरूप में कर्ण के पास आया। उस समय कर्ण जप कर रहा था। उस समय इन्द्र ने उसके कवचकुंडल माँगे। कर्ण उदार था। किसी भी ब्राह्मण ने कुछ भी माँगा हो, उसे वह वस्तु अवश्य देता था। कर्ण ने तत्काल इन्द्र से हाँ कहा। यह कवच त्वचा से संलग्न होने के कारण, उसको निकालते समय त्वचा का छिल जाना अवश्यंभावी था। फिर भी कर्ण विचलित नहीं हुआ। उसने तत्काल उन्हें निकाल कर इन्द्र को दे दिया। तब इन्द्र अत्यंत आश्चर्यचकित हुआ तथा प्रसन्न हो कर उसने एक अमोघ शक्ति कर्ण को दी तथा कहा कि, जिस पर तुम यह शक्ति फेंकोगे, उसकी तत्काल मृत्यु हो जावेगी। इतना कह कर इन्द्र गुप्त हो गया। कवचकुंडलों का कर्तन कर देने के कारण, कर्ण को वैकर्तन नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६७)। कवचकुंडल छील कर निकालने के कारण कुरूपता प्राप्त न हो, इसके लिये कर्ण ने शर्त रखी थी (म. व. २९४.३०)।

घटोत्कचवध—भारतीय युद्ध का प्रारंभ होने के बाद भीष्म के पश्चात् द्रोण कौरवों का सेनापति बना। उस समय घटोत्कच ने कौरवसेना को अत्यंत त्रस्त किया। कृष्ण के मन से, यद्यपि कर्ण के कवचकुंडलों का भय नष्ट हो चुका था, तथापि कर्ण की वासवी शक्ति से कृष्ण काफी साशंक था। उस शक्ति का नाश करने की इच्छा से ही, उसने उस दिन घटोत्कच की योजना की थी। घटोत्कच ने कौरवसेना के असंख्य सैनिकों का नाश कर उनको बिल्कुल त्रस्त कर छोड़ा। तब दुर्योधन कर्ण के पास गया, तथा उस अमोघ शक्ति का प्रयोग घटोत्कच पर करने की प्रार्थना की। कर्ण ने वह अमोघ शक्ति खास अर्जुन के लिये रखी थी। यह बात उसने दुर्योधन को बताई। परंतु उससे कुछ लाभ न हुआ। अन्त में नाखुशी से वह शक्ति घटोत्कच पर छोड़ कर उसने उसका वध किया (म. द्रो. १५४)।

सैनापत्य—द्रोणाचार्य के बाद कर्ण को सैनापत्याभिषेक हुआ (म. क. ६. ४४-४५)। कर्ण के समान अद्वितीय योद्धा को, उतने ही अद्वितीय सारथि की आवश्यकता थी। इस समय केवल दो उत्तम सारथि थे। एक श्रीकृष्ण तथा दूसरा भद्र देशाधिपति शल्य। उनमें से कृष्ण अर्जुन

का सारथि था। तब दुर्योधन ने शल्य को कर्ण का सारथ्य करने के लिये कहा। इससे क्रोधित हो कर शल्य ने कहा कि, मैं युद्ध छोड़ कर चला जाऊँगा। वह कौरवों का ज्येष्ठ आप्त तथा राजा था। कर्ण का जन्मवृत्त किसी को मालूम न होने के कारण, उसे सब सूतपुत्र कह कर ही जानते थे। इस लिये हीन कुलोत्पन्न का सारथ्यकर्म करना इसे अपमानास्पद प्रतीत हुआ। परंतु कर्ण के समान शल्य भी दुर्योधन के लिये तन-मन-धन खर्च करने वाला था। इसलिये यह कार्य भी उसने मान्य कर लिया। परंतु 'सारथ्य के समय उचित प्रतीत हो, सो मैं बोलूँगा तथा उसे कर्ण को सहना ही पड़ेगा, यों शर्त इसने रखी (म. क. २३. ५३; २५. ६)।

कर्ण के सैनापत्य में घनघोर युद्ध शुरू हुआ। भीष्म, द्रोणादि के प्रहारों से पांडवों की जो आधी सेना बची थी, उन में से आधी इसने नष्ट कर दी। द्रौपदी की अप्रतिष्ठा के कारण, इसे मन ही मन काफी पश्चात्ताप हो रहा था। परंतु जिसका नमक खाया है, उसकी ईमानदारी से नौकरी करने के लिये, भीष्म द्रोणादिकों के समान इसे भी युद्ध के लिये सज्ज होना पड़ा। युद्ध के प्रारंभ में शल्य ने अपनी शर्त का काफी उपयोग कर लिया। हर प्रकार से अर्जुन का शौर्य तथा बल इनका वर्णन कर, उसने कहा कि, अर्जुन के समक्ष तुम टिक नहीं सकते। परंतु भयंकर युद्ध में मग्न होते हुए भी, इस प्रकार धैर्य गलित करने वाला भाषण सुन कर, कर्ण नहीं घबराया। इसने खरे खरे उत्तर दे कर उसे चुप कर दिया (म. क. २६-२७)। किंतु इसके पश्चात् शल्य ने इसे प्रोत्साहन दिया (म. क. ५७.६२)।

मृत्यु--युद्ध चालू रहते समय, कर्ण का पुत्र वृषसेन मारा गया (म. क. ६२.६०)। इससे इसे अपरिमित दुख हुआ, तथा यह त्वेष से लड़ने लगा। इस प्रकार कर्णार्जुन का घनघोर युद्ध प्रारंभ हो गया। उस समय पीछेवर्णित शाप के समान इसकी स्थिति होने लगी। ब्रह्मास्त्र का स्मरण यह न कर सका। इसके रथ का पहिया भूमि में फँस गया। तब लाचार हो कर यह रथ के नीचे उतरा, तथा पहिया उठाने का प्रयत्न करने लगा। इस प्रसंग में युद्ध असंभव था, अतः इसने अर्जुन को कुछ देर रुकने के लिये कहा। परंतु कृष्ण ने अर्जुन से कहा कि, केवल इसी स्थिति में कर्ण का वध होना संभव है, अन्यथा असंभव है। तदनंतर कर्ण के दुष्कृत्यों का स्मरण दिला कर कृष्ण ने कहा कि, तुम्हारा वध करना ही श्रेयस्कर है। इस प्रकार कर्ण बडे ही संकट में फँस गया। इसने एक हाथ से पहिया उठाते ही, भूमि चार अंगुल ऊपर उठाई गई परंतु पहिया नहीं निकला। दूसरे हाथ से यह अर्जुन से लड़ रहा था। इस प्रकार व्यस्त अवस्था में अर्जुन ने इस का वध किया। इस युद्ध में धर्म, भीम तथा नकुल का पराभव कर के, कर्ण ने उन्हें छोड़ दिया था (म. क. ६३.६६-६७)।

परिवार--कर्ण की मृत्यु से गांधारी को अत्यंत दुःख हुआ (म. स्त्री. २१)। इसके छः पुत्र इस युद्ध में मारे गये। उनमें से सुबाहु तथा वृषसेन का वध अर्जुन ने, एवं सत्यसेन, चित्रसेन तथा सुषेण का वध नकुल ने किया (म. क. ६२-६३; श. ९)।

कर्ण के छः भाइयों का वध इस युद्ध में हुआ। उनमें से शत्रुंजय, शत्रुंतप तथा विपाट का वध अर्जुन ने किया (म. वि. ४९; क. ३२)। एक का वध अभिमन्यु ने किया (म. द्रो. ४०. ४)। द्रुम तथा वृकरथ का वध भीम ने किया (म. द्रो. १३०. २३. १३२. १८)।

अर्जुन ने कर्ण का वध किया, इस लिये धर्मराज ने अर्जुन को बधाई दी (म. क. ६९)। परंतु आगे चलकर कुंती ने बताया कि, कर्ण उसका पुत्र था (म. स्त्री. २७. ७-१२)। इससे पांड़वों को अत्यंत दुख हुआ। इसी समय धर्मराज ने शाप दिया कि, स्त्रियों के मन में कुछ भी गुप्त नहीं रहेगा (म. शां. ६. १०)। भविष्य-पुराण में लिखा है कि, कर्ण आगे चल कर तारक नाम से जन्म लेगा (भवि. प्रति. ३. १)।

२. कश्यपगोत्रीय ऋषि।

कर्णक--अत्रिकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि (अत्रि देखिये)। यह मंत्रकार था (मत्स्य. १४५. १०७-१०८)।

कर्णजिह्व--अत्रिगोत्रीय ऋषिगण।

कर्णवेष्ट--पांडवपक्षीय एक राजा (म. उ. ४. २०)।

कर्णश्रवस् आंगिरस--सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३. ११. १४-१५).

कर्णश्रुत् वासिष्ठ--मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९. ९७. २२-२४)।

कर्णिका--एक अप्सरा।

२. (सो. वृष्णि.) वसुदेवबंधु कंक की पत्नी। इसे ऋतुधामन् तथा जय नामक पुत्र थे।

कर्णिकार--जटायु के पुत्रों में से एक।

कर्णिरथ--अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

कर्दम—एक ऋषि (ब्रह्माण्ड. २. ३२. ९८–१००)। इसे कर्दम भी कहते हैं (वायु. ५९. ९०–९१)। यह ब्रह्मदेव की छाया से उत्पन्न हुआ (भा. ३. १२; म. स. ११)। यह एक प्रजापति था (वायु. ६५. ५३–५४)। इसका जन्म स्वायंभुव मन्वन्तर में हुआ (भा. ३. १२. २७)। यह पूर्वजन्म में क्षत्रिय था। सौभरि ने इसे गणेशव्रत बताया था (गणेश. १. १५१)।

अवतारकथन--ब्रह्मदेव ने कर्दम ऋषि से प्रजा उत्पन्न करने के लिये कहा। यह सरस्वती नदी के किनारे गया, तथा वहाँ दस हजार वर्षों तक इसने तपश्चर्या की। तब इसे विष्णु का दर्शन हुआ, तथा तुम्हारी इच्छा पूरी होगी, ऐसा उसने इसे बताया। विष्णु ने कहा "ब्रह्मदेव का पुत्र मनु सार्वभौम राजा है, तथा ब्रह्मावर्त में रह कर, सप्तसमुद्रांकित पृथ्वी का पालन करता है। वह धर्मज्ञ राजर्षि अपनी शतरूपा नामक पटरानी के साथ परसों तक यहाँ आवेगा। उसकी उपवर कन्या देवहूति, योग्य पति के प्राप्ति की बाट जोह रही है। वह तेरे अनुरूप है, इसलिये तू उससे विवाह कर। वह तेरी सेवा उत्तम रीति से करेगी। उसके गर्भ में तेरे वीर्य के साथ मैं प्रवेश कर अवतार लूँगा, तथा सांख्यशास्त्र निर्माण करूँगा"। इतना कह कर विष्णु चले गये।

प्रपंच—कालोपरांत मनु राजा अपनी रानी के साथ कर्दम के यहां आया। उसने अपनी कन्या देवहूति बडे ठाठ बाट के साथ कर्दम को अर्पण की। कर्दम ने विष्णु के कहने के अनुसार, देवहूति को स्वीकार किया। परंतु उससे एक बार ही समागम करूंगा यह शर्त रखी, तथा समागम के बाद संन्यास लूंगा यों चेतावनी दी। तदनुसार दोनों लोग कालक्रमण करने लगे। पतिव्रता देवहूति की सेवा से संतुष्ट हो कर कर्दम ने उसे इच्छित वस्तु को मांगने को कहा। उसने संभोग की इच्छा प्रकट की। देवहूति की इच्छा मान कर इसने एक विमान तयार किया। उस विमान में समागम के ऐश्वर्ययुक्त साधन निर्माण किये; तथा लगातार सौ वर्षों तक देवहूति से समागम किया। तब देवहूति को कला, अनसूया, श्रद्धा, हविर्भू, गति, क्रिया, ख्याति, अरुंधती, शांति आदि नौ कन्याएं हुई। ब्रह्माजी के कहने पर उन्हें क्रमशः मरीचि, अत्रि, अंगिरा, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, भृगु, वसिष्ठ, अथर्वा आदि को प्रजोत्पादन हेतु से दिया। देवहूति के उदर से विष्णु ने कपिल नाम से जन्म लिया।

बाद में एकांत में कपिल को मिल कर, कर्दम ने उसे नमस्कार किया। उसके बाद, संन्यास ले कर तथा वन में जा कर विष्णुध्यान से यह वैकुंठलोक गया (भा. ३. २१–२४)।

२. लक्ष्मीपुत्र।

कर्दमायन शाखेय--अत्रिकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

कर्मजित्—(मगध. भविष्य.) बृहत्सेन राजा का पुत्र। इसका पुत्र सृतंजय।

कर्मश्रेष्ठ--स्वायंभुव मन्वन्तर में पुलह के तीन पुत्रों में ज्येष्ठ। इसकी माता का नाम गति (भा. ४.१)।

कर्मिन्--शुक्राचार्य के चार पुत्रों में से कनिष्ठ।

कल—सिंधुदैत्य का बहनोई (गणेश. २.११८)।

कलशपोतक—कद्रूपुत्र। एक सर्प (म. उ. १०१. ११)।

कलशीकंठ--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कलहा--सौराष्ट्रनगरवासी भिक्षु नामक ब्राह्मण की पत्नी। इसकी आदत थी, पति के कहने के ठीक विपरीत कार्य करना। इसलिये, जो कार्य करना हो उसके ठीक विपरीत बोलने का नियम, उसके पति ने कर लिया था। उससे पति के सब कार्य उसकी इच्छानुसार पूर्ण हो जाते थे। एकबार गलती से श्राद्धपिंड गंगा में डालने के लिये उसने कहा। तब पति की आज्ञा के ठीक विपरीत करने के हेतु से इसने वह पिंड शौच्यकूप में फेंका। यों इसका दुष्ट स्वभाव था। इस कारण इसे पिशाच्ययोनि प्राप्त हुई। उससे धर्मदत्त ने इसका उद्धार किया (आ. रा. सार. ४)। करवीरस्थ धर्मदत्त ने द्वादशाक्षरी मंत्र, तथा कार्तिकमास का आधा पुण्य दे कर इसे मुक्त किया। इस पुण्य से धर्मदत्त तथा कलहा अगले जन्म में दशरथ–कौसल्या बन कर, उनके उदर से राम का जन्म हुआ (पद्म. उ. १०६–१०७; चंडी देखिये)।

कला—कर्दम प्रजापति तथा देवहूति की नौ कन्याओं में से प्रथम। मरीचि ऋषि की पत्नी। इसे कश्यप तथा पूर्णिमा नामक दो पुत्र थे (भा. ३.२४.२२)।

२. बिभीषण की ज्येष्ठ कन्या। अशोकवन में बारबार जा कर, राम के कुशल वृत्त का निवेदन, यह सीता के पास करती थी (वा. रा. सुं. ३७)।

कलाधर—यह विद्याधर था। दुर्वास द्वारा दिये गये शाप से मुक्त होने के लिये, इसने अरुणाचलेश्वर की प्रदक्षिणायें कीं (स्कंद. १.३.२.२३)। इसने एक बाण

पर त्रिपुर को नगर बांध दिया, तथा उससे शंकर के पास की चिन्तामणि की मूर्ति मँगाई (गणेश १.४१)।

कलापिन्--कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। वैशंपायन का एक प्रमुख शिष्य। इसके चार शिष्य हरिद्रु, छगलिन्, तुम्बुरु तथा उलप। कलापि का चरण (शाखा) उदीच्य कहा जाता है। पाणिनि ने इस चरण का निर्देश किया है (पा. सू. ४.३.१०८) महाभाष्य में हर ग्राम में कठकालाप है, ऐसा लिखा है।

कलावती--नारद देखिये।

२. सत्यनारायण के प्रसाद का अपमान करने से क्या होता है, यह बताने के लिये सत्यनारायणमाहात्म्य में इसकी कथा दी गयी है।

कलि--एक वृद्ध ब्राह्मण। अश्विनों ने इसे तरुण बनाया (ऋ. १०.३९.८), तथा पत्नी दी (ऋ. १.११२.१५)।

२. अधर्म के वंश में क्रोध तथा हिंसा का पुत्र। इसे दुरुक्ति नामक बहन थी। इसे कली से भय नामक पुत्र तथा मृत्यु नामक कन्या ऐसे दो अपत्य हुए (भा. ४.८. ३-४)। यह दमयंती स्वयंवर के लिये जा रहा था, तब मार्ग में इन्द्र ने बताया कि, स्वयंवर हो चुका है। इससे अत्यंत क्रोधित हो कर, इसने नल के शरीर में प्रवेश किया, तथा उससे द्यूतक्रीड़ा करवा कर अत्यंत पीड़ित किया। आगे चल कर, दमयंती के शाप से यह बाहर आया, तथा इसने कहा कि, मैंने तक्षक से त्रस्त हो कर तुम्हारे शरीर का आश्रय लिया था। तदनंतर इसने एक वृक्ष में प्रवेश किया। इसके अवतार से होनेवाले कलियुग का वर्णन मार्कंडेय ने युधिष्ठिर को बताया (म. व. ५५.५६; ७०. १८८)। इसे चतुर्भुजमिश्र टीका में तिष्य नामांतर दिया है (म. भी. १०.३)। भांडारकर की पुस्तक में पुष्य पाठ है (म. भी. १०.३)।

इसने वृषभरूप धर्म, तथा गोरूप पृथ्वी को त्रस्त करना प्रारंभ किया। यह देख कर, परीक्षित ने इसे निवास के लिये, द्यूत, मद्यपान स्त्रीसंग, हिंसा, सुवर्ण आदि पांच स्थान दिये। (भा. १.१७)। यह पूर्ण रूपक है। यह जाति से म्लेच्छ है। प्रद्योत ने म्लेच्छों का संहार किया, तब यह नारायण के पास गया, तथा इसने नारायण की स्तुति की। इसने भगवान को बताया कि, प्रद्योत तथा उसके भाई वेदवान् ने, मेरा स्थान नष्ट कर दिया है।

३. कश्यप तथा मुनि के पुत्रों में से एक। इसका वरुथिनी नामक अप्सरा पर प्रेम था, परंतु उसने इसे धिक्कार दिया। उसके द्वारा धिक्कारे जाने के कारण, यह अत्यंत दुखी रहता था। फिर भी यह उसका पीछा न छोड़ता था। एक बार एक मुनि पर वह मोहित हुई। परंतु उस मुनि ने उसका धिक्कार किया। यह संधि देख कर, यह मुनिरूप से उसके पास आया, तथा यह शर्त रखी कि, क्रीडा के समय वह इसे न देखे। तदनंतर यह उससे रममाण हुआ। उससे इसे स्वरोचि नामक पुत्र हुआ (मार्कं. ४९)। इसे अपनी भार्या से निर्मार्ष्टि नामक कन्या हुई (मार्कं. ४८)।

कलि प्रागाथ--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.६६)।

कलिंग--(सो. अनु.)। बलि के छः पुत्रों में से एक। बलि की भार्या को यह दीर्घतमस् से हुआ (अंग देखिये)।

२. यह द्रौपदीस्वयंवर में था (म. आ. १७७.१२)।

३. कृतयुग का एक दैत्य। इसने स्वर्ग जीत कर दिग्पालों के स्थान पर दैत्यों की स्थापना की। परंतु श्रीमातादेवी ने इसके हृदय पर पर्वत रखा, तथा उस पर वह स्वयं बैठी (स्कन्द. ७.३.२२)।

कलिल--सोम का पुत्र।

कल्कि--कलियुग में बौद्धावतार के बाद होनेवाला अवतार। शंभल ग्रामनिवासी विष्णुयशस् नामक ब्राह्मण के घर में, दसवाँ अथवा ग्यारहवाँ अवतार इसका होगा। कलियुग में फैले हुए अधर्म का यह नाश करेगा। सब दैत्यरूप म्लेच्छों का यह पूर्णनाश करेगा। संपूर्ण पृथ्वी म्लेच्छमय होने के बाद, हाथ में लंबी तलवार ले कर, देवदत्त अश्व पर बैठ कर, तीन रात में यह दैत्यों का संहार करेगा। इस समय कई कोटि राजाओं का वध होगा। कलि की सजा तथा उसके नाश के लिये ही इसका अवतार होगा (म. व. १८८.८९; पद्म. उ. २५२; ब्रह्म. २१३.१६४; ह. वं. १.४१.६४; भा. १.३; २.७;१२.२)। इस अवतार के समय कृतयुग का प्रारंभ होगा (विष्णुधर्म. १.७४)। इस प्रकार अवतारकार्य समाप्त कर के, यह समाधिस्थ होगा (ब्रह्मवै. २.७)। उस समाधि से योगाग्नि का उद्भव होगा तथा प्रलय होगा। कलि बली के पास जायेगा। पुनः कर्मभूमि निर्माण हो कर, वर्णोत्पत्ति भी होगी। वैवस्वत मनु इसकी आज्ञा से अयोध्या में राज्य करेगा (भवि. प्रति. ४.२६)। यह अदृश्य, पराशर गोत्री, ब्राह्मणसेनायुक्त, तथा याज्ञवल्क्य की सहायता से युक्त होगा (ब्रह्माण्ड. ३.७३.१०४; विष्णुयशस् देखिये)।

कल्प--(स्वा. उत्तान) ध्रुव को भ्रमी से उत्पन्न पुत्र।

२. सैंहिकेयों में से एक (विप्रचित्ति देखिये)।

३. (सो. यदु. वसु.) वसुदेव को उपदेवा से उत्पन्न पुत्र।

कलमष—वायु के द्वारा सूर्य की सेवा में नियुक्त एक पारिपार्श्वक (भवि. ब्राह्म. ५३)।

कल्मषपावन—(सू.) भविष्य के मत में सर्वकामपुत्र।

कल्माष—कश्यप तथा कद्रु का पुत्र।

२. सूर्य के द्वारपालों में से एक (भवि. ब्राह्म. ७६)।

कल्माषपाद—(सू. इ.) सुदास राजा का पुत्र। इसे कोसलाधिपति मित्रसह अथवा सौदास ये नामांतर है (म. आ. १६८; वायु. ८८.१७६; लिङ्ग. १.६६; ब्रह्म. ८; ह. वं. १.१५)। परंतु इसे ऋतुपर्ण का पुत्र भी कहा है (मत्स्य. १२; अग्नि. २७३)। कल्माषपाद नाम से यह विशेष प्रख्यात था।

नामप्राप्ति—यह नाम इसे प्राप्त होने का कारण यह था। एक बार जब यह मृगयाहेतु से अरण्य में गया था, तब इसने दो बाघ देखे। वे एक दूसरों के मित्र (वा. रा. उ. ६५), तथा भाई भाई थे (भा.९.९)। रेवा तथा नर्मदा के किनारे शिकार करते समय, नर्मदा तट पर, इसने बाघ का एक मैथुनासक्त जोडा देखा। उन में से मादा को इसने मार डाला। परंतु मरते मरते वह बहुत बडी हो गई (नारद. १.९)। तब दूसरे बाघ ने राक्षसरूप धारण करके कहा कि, कभी न कभी मैं तुमसे बदला अवश्य चुकाऊंगा। यों कह कर वह गुप्त हो गया।

वसिष्ठकोप—एक बार इसने अश्वमेध यज्ञ प्रारंभ किया। तब यज्ञ के निमित्य से, वसिष्ठ ऋषि लंबी अवधि तक इसके पास रहा। यज्ञसमाप्ति के दिन, एक बार वसिष्ठ स्नानसंध्या के लिये गया था। यह संधि देख कर उस राक्षस ने वसिष्ठ का रूप धारण कर लिया, तथा राजा से कहा कि, आज यज्ञ समाप्त हो गया है, इसलिये तुम मुझे जल्द मांसयुक्त भोजन दो। राजा ने आचारी लोगों को बुला कर, वैसा करने की आज्ञा दी। राजाज्ञा से आचारी घबरा गये। परंतु पुनः उसी राक्षस ने-आचारी का रूप धारण कर, मानुष मांस तैय्यार कर के राजा को दिया। तदनंतर वह अन्न राजा ने पत्नी मदयंती सह गुरु वसिष्ठ को अर्पण किया। भोजनार्थ आया हुआ मांस मानुष है यह जान कर, वसिष्ठ अत्यंत क्रुद्ध हुआ तथा उसने राजा को नरमांसभक्षक राक्षस होने का शाप दिया। तब इसने कहा कि, आपने ही मुझे ऐसी आज्ञा दी। यह सुनते ही वसिष्ठ ने अन्तर्दृष्टी से देखा। तब उसे पता चला कि, यह उस राक्षस का दुष्कृत्य है। तदनंतर उसने कहा कि, मेरा कथन असत्य नही हो सकता। तुम केवल बारह वर्षों तक नरमांसभक्षक रहोगे।

संयम—यह सुन कर क्रुद्ध हो कर, इसने मुनी को शाप देने के लिये हाथ में पानी लिया। परंतु गुरु को शाप देना अयोग्य है, यों कह कर भार्या ने इसका निषेध किया। तब इसने सोचा कि, यह पानी यदि पृथ्वी पर पडेगा, तो अनाज आदि जल कर खाक हो जायेंगे, तथा आकाश की ओर डाला तो मेघ सूख जायेंगे। ऐसा न हो, इसलिये इसने वह पानी अपने पैरों पर डाला। इसके क्रोध से वह पानी इतना अधिक तप्त हो गया था कि, वह पानी पडते ही इसके पैर काले हो गये। तबसे इसे कल्माषपाद कहने लगे (वा. रा. उ. ६५; भा. ९. ९.१८-३५; नारद. १.८-९; पद्म. उ. १३२)

अन्यमत—महाभारतादि ग्रंथों में, इस के राक्षस होने के कारण भिन्न भिन्न दिये गये हैं। एक बार जब यह शिकार से वापस आ रहा था, तब एक अत्यंत सँकरे मार्ग पर वसिष्ठपुत्र शक्ति तथा इसकी मुलाकात हुई। मार्ग इतना सँकरा था कि, केवल एक ही व्यक्ति वहाँ से जा सकता था। इसने शक्ति को हटने के लिये कहा, परंतु उसने अमान्य कर दिया। बल्कि वह राजा को बताने लगा कि, मार्ग ब्राह्मणों का है। धर्म यही है कि, राजा ब्राह्मण को मार्ग दे। अन्त में अत्यंत क्रोधित हो कर, इसने राक्षस के समान उस ब्राह्मण को चाबुक से खूब मारा। तब शक्ती ने कल्माषपाद को शाप दिया कि, तुम आज से नरभक्षक राक्षस बनोगे। यही राजा जब यज्ञ करने के लिए तैय्यार हुआ तब, विश्वामित्र ने इसका अंगिकार किया। इसी लिये वसिष्ठ तथा विश्वामित्र में वैरभाव निर्माण हुआ। विश्वामित्र ने इसे कहा कि, जिसे तुमने मारा वह वसिष्ठ-पुत्र शक्ति है। तब इसे अत्यंत दुख हुआ। बाद में जब यह शक्ती के पास उश्शाप मांगने गया, तब विश्वामित्र ने इसके शरीर में रुधिर नामक राक्षस को प्रवेश करने की आज्ञा दी (लिंग. १.६४)। राक्षस के द्वारा त्रस्त, यह राजा एक दिन वन में घूम रहा था, तब क्षुधाक्रान्त ब्राह्मण ने इसे देखा। उस ब्राह्मण ने इसके पास मांसयुक्त भोजन की याचना की। उसे कुछ काल तक स्वस्थ रहने की आज्ञा दे कर यह घर आया, तथा अन्तःपुर में स्वस्थता से सो गया। मध्यरात्रि के समय जब यह जागृत हुआ, तो इसे ब्राह्मण को दिये हुए वचन का स्मरण हुआ। तब इसने आचारी को मांसयुक्त भोजन बनाने की आज्ञा दी। वहाँ मांस बिल्कुल न था। तब राजा ने कहा कि, अगर दूसरा

मांस नही है तो मनुष्यमांस ही बना दो। उसको भोजन दे बस। आचारी ने आज्ञानुसार कार्य कर, वह अन्न उस तपस्वी ब्राह्मण को दिया। तब वह अन्न अभोज्य है, ऐसा जान कर उसने भी इसे नरमांसभक्षक राक्षस होने का शाप दिया। तीसरे दिन इन दोनों शापों से इसके शरीर में राक्षस का संचार हुआ। यह शापदान नौमिषारण्य में हुआ (वायु. १.२)।

असुरजीवन—आगे चल कर थोडे ही दिनों में, इसकी शक्ति से मुलाकात हुई। वंशावली की दृष्टि से यह गलत है (शतयातु देखिये)। तब इसने कहा, "चूंकि तुमने मुझे अयोग्य शाप दिया है, मैं तुमसे ही मनुष्यभक्षण प्रारंभ करता हूँ।" यों कह कर इसने उसे खा डाला। आगे चल कर, इस राजा के शरीर में प्रविष्ट राक्षस को विश्वामित्र के बारबार उपदेश करने के कारण, इसने वसिष्ठ के सौ पुत्र भी खा डाले। वसिष्ठ ने पुत्रशोक से प्राण देने का काफी प्रयत्न किया, परंतु वह असफल रहा (म. आ. १६६-१६७; अनु. ३; ब्रह्माण्ड. १. १२)। एक बार यह नर्मदा के किनारे (नारद. १. ९), वन में घूम रहा था, तब इसने एक ब्राह्मण दंपती को क्रीड़ा में निमग्न देखा। उन्हें देखते ही, कल्माषपाद ने दौड़ कर उनमें से ब्राह्मण का भक्षण कर लिया। तब क्रुद्ध हो कर ब्राह्मणी ने उसे शाप दिया कि, स्त्री समागम करते ही तुम मृत हो जाओगे। यों कह कर वह सती हो गई (म. आ. १८२; भा. ९. ९. १८-३५; स्कंद. ३. ३. २)।

मुक्ति—वसिष्ठ ने इसे उश्शाप दिया कि, तुम राक्षस बनोगे तथा आगे चल कर तुम्हारे शरीर पर गंगाबिंदु पडेंगे, तब तुम मुक्त होगे। परंतु ब्राह्मणी ने उपरोक्त वर्णित शाप दे कर, तुम सदा राक्षस ही रहोगे ऐसा शाप दिया। इसको दूसरे शाप से क्रोध आया तथा इसने ब्राह्मणी को उलटा शाप दिया कि, पुत्रसमवेत तुम पिशाची बनो। आगे चलकर पिशाची तथा यह राक्षस एक स्थान पर आये, जहाँ पीपल था। वहाँ कल्माषपाद तथा सोमदत्त नामक एक ब्रह्मराक्षस का गुरुविषयक संवाद हो कर उन दोनों के पाप नष्ट हो गये। उधर से एक गर्ग नामक कलिंगदेशीय मुनि गंगा ले कर जा रहा था। इनकी प्रार्थना से उसने इनके शरीर पर गंगोदक छिड़कते ही, वह पिशाची तथा ब्रह्मराक्षस दोनों मुक्त हो गये। यह शोक कर रहा था, तब आकाशवाणी हुई, "शोक मत करो। तुम भी मुक्त हो जावोगे।" वहाँ से यह काशी गया, तथा छः महीनों तक इसने गंगास्नान किया। इससे सब पातकों से मुक्त हो कर, वसिष्ठ ने बडे सन्मान से इसे राज्याभिषेक किया। गौतम ऋषी की अनुज्ञा से गोकर्ण क्षेत्र में जा कर यह मुक्त हुआ। अन्त में यह शिवलोक गया (स्कंद. ३. ३. २; नारद. १. ८-९)। साभ्रमती में स्नान करके यह मुक्त हो गया (पद्म. उ. ६. १३२)।

राज्याभिषेक—इसकी पत्नी मदयंती अरण्य में निरंतर इसके साथ रहती थी (म. आ. १७३.५-६)। यह दिन के छठवें प्रहर में आहार करता था। उस समय केवल वह सामने नही आती थी। एक बार अहिल्या के कथनानुसार गौतमशिष्य उत्तंक मदयंती के कुंडल मांगने आया। यह उसको खाने के लिये दौड़ा। परंतु उसने कहा, कि मेरा कार्य हो जाने दो, मैं वापस आ रहा हूँ। तब इसनें पूछा कि तुम्हें क्या कार्य है, तथा कार्यपूर्ति के लिये इसने उत्तंक को मदयंती के पास जाने के लिये कहा। मदयंती ने पति से एक चिन्ह लाने के लिये कहा। वह चिन्ह इससे लाते ही मदयंती ने कुंडल उत्तंक को दिये, तथा सम्हाल कर ले जाने के लिये कहा। जाते जाते कल्माषपाद ने उत्तंक को प्रतिज्ञा से मुक्त कर दिया (म. आश्व. ५५-५६)। पतिव्रता के उपरोक्त शाप के कारण यह प्रजोत्पादन नहीं कर सकता था। तब इसने वसिष्ठ के द्वारा अपनी पत्नी मदयंती में गर्भधारणा करवाई। वही अश्मक है (म. आ. ११३. २१-२२; १६८. २१-२५; शां. २२६.३०; अनु. १३७.१८; वा. रा. सुं. २४; वायु. ८८. १७७)। इसे सर्वकर्मा नामक पुत्र था (मत्स्य. १२)। इसका वसिष्ठ के साथ गाय के माहात्म्य के बारे में संवाद हुआ था। इसने काफी गायें दान में दी। मृत्यु के बाद इसे सद्गति मिली (म. अनु. ७८.८०)।

कल्याण—एक वैश्य। यह सिंधुदेश में पालीग्राम में रहता था। इसकी पत्नी इंदुमति। पुत्र बल्लाल। अगले जन्म में यह दक्ष बना (गणेश १.२२)।

कल्याण आंगिरस—एक ऋषि। स्वर्गप्राप्ति के लिये सत्रानुष्ठान करने वाले अंगिरसों को, देवों की ओर जाने का देवयानमार्ग प्राप्त नहीं होता था। सत्रानुष्ठान करनेवाले उन ऋषियों में से कल्याण नामक यह ऋषि, इस देवयान के बारे में विचार करता हुआ उर्ध्वमार्ग से जा रहा था। राह में इसे अप्सराओं सह झूले पर बैठ कर क्रीड़ा कर रहा उर्णायु नामक एक गंधर्व मिला। इस गंधर्व को जब इसने देवयान के बारे में पूछा, तब उसने देवयानमार्ग प्राप्त कर

देनेवाले एक साम का उपदेश इसे किया। तब कल्याण ने अंगिरसों को आ कर बताया कि, देवयानमार्ग प्राप्त कर देनेवाला साम मुझे प्राप्त हो गया है। वह मार्ग किस से प्राप्त हुआ यह बताना इसने अमान्य कर दिया। उस और्णायुव नामक साम से अंगिरसों को स्वर्गप्राप्ति हुई। परंतु असत्यकथन के कारण कल्याण को स्वर्गप्राप्ति नहीं हुई, बल्कि कोढ़ हो गया। और्णायव साम नाम के बदले कही कही और्णायुव साम नाम दिया है। यह भी एक अंगिरस ही था (पं. ब्रा. १२.११.१०-११)।

कल्याणिनी--धर नामक वसु की स्त्री। इसे द्रविण अथवा रमण नामक पुत्र था।

२. एक अप्सरा। भीमद्वादशीव्रत करने के कारण यह इन्द्रपत्नी शची बनी, तथा इसकी दासी ने जब यह व्रत किया तब वह कृष्णपत्नी सत्यभामा बनी (पद्म. सृ. २३)।

कवचिन्—धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. क. ६२.५)।

कवष--एक स्मृतिकार। कवषस्मृति का निर्देश पराशरस्मृतिव्याख्या में है (C. C.)

२. एक आचार्य। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में यह होता नामक ऋत्विज था (भा. १०.७४.७)।

कवष ऐलूष--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.३१-३३)। यह कुरुश्रवण का उपाध्याय था (ऋ. १०.३२.९)।

इलूषपुत्र कवष सरस्वती के किनारे अंगिरसों के सत्र में आया, तब शूद्रापुत्र, अब्राह्मण एवं जुआड़ी कह कर इसे यज्ञ के लिये अयोग्य घोषित किया। तथा जंगल में इसे छोड़ कर ऐसी व्यवस्था की गई कि, इसे पानी भी प्राप्त न हो। परंतु अपोनप्त्रीय सूक्त कहने के कारण, सरस्वती स्वयं इसकी ओर मुड़ गई। अभी भी उस स्थान को परिसारक नाम हैं। ऋषियों ने बाद में इसका महत्त्व जान कर इसे वापस बुलाया (ऐ. ब्रा. २.१९; सां. ब्रा. १२.१-३)। सांख्यायन ब्राह्मणों में यह अब्राह्मण था, इसीलिये इसे यज्ञ से निकाल दिया, ऐसा स्पष्ट लिखा है। तृत्सुओं के लिये इन्द्र ने कवषादिकों का पराभव किया तथा उनके मजबूत किले उध्वस्त कर दिये (ऋ. ७.१८.१२)। इसके सूक्त में कुरुश्रवण, उपमश्रवस् तथा मित्रातिथि का निर्देश है (ऋ. १०.३२-३३)। मित्रातिथि की मृत्यु से दुखी उपमश्रवस् का समाचार पूछने के लिये यह आया था।

कवषा—एक ऋषिपत्नी। तुर ऋषि की माता (तुर देखिये)।

कवि—स्वायंभुव मन्वंतर के ब्रह्मपुत्र भृगु ऋषि के तीन पुत्रों में कनिष्ठ। इसका पुत्र उशनाऋषि। यह सूक्तद्रष्टा था (ऋ. ९.४७-४९; ७५-७९ म. आ. ६०.४०)।

२. प्रियव्रत राजर्षि के बर्हिष्मति से उत्पन्न दस पुत्रों में कनिष्ठ। यह बाल्यावस्था से विरक्त था (भा. ५.१)।

३. तामस मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. रैवत मनु के दस पुत्रों में से पाँचवा।

५. (स्वा. प्रिय.) भागवत मत में ऋषभदेव तथा जयंती के नौ सिद्धपुत्रों में ज्येष्ठ।

६. वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में कनिष्ठ। यह विरक्त हो कर अरण्य में गया (भा. ९.२)।

७. भागवत मत में मनुवंशी यज्ञ तथा दक्षिणा का पुत्र।

८. वैवस्वत मन्वंतर के ब्रह्मा का पुत्र। इसे वारुणि कवि ऐसी संज्ञा थी। इसके कवि, काव्य, धृष्णु, उशनस्, भृगु, विरजस्, काशि तथा उग्र नामक आठ पुत्र थे (म. अनु. ८५.३३)।

९. ब्रह्मपुत्र वारुणि कवि के आठ पुत्रों में ज्येष्ठ (म. अनु. ८५.३३)।

१०. (सो. पूरु.) दुरितक्षय का मँझला पुत्र। यह तप से ब्राह्मण हुआ (भा. ९.२१.१९)।

११. कौशिक ऋषि के सात पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

१२. कृष्ण का कालिंदी से उत्पन्न पुत्र।

१३. कृष्ण का एक प्रपौत्र। यह महारथी था।

१४. स्वारोचिष मन्वंतर का एक देव।

१५. शिव के श्वेत नामक दो अवतार हुए। उन में से दूसरे का शिष्य।

कविरथ—(सो. पूरु. भविष्य.) भागवत मतानुसार चित्ररथ का पुत्र। मत्स्य में शुचिद्रव, वायु में शुचिद्रथ, तथा विष्णु में शुचिरथ, यों पाठभेद है।

कव्यवाह—पितरविशेष। ब्रह्मदेव की मानसकन्या संध्या को देख कर, दक्षादि मोहित हुए। उनके अंगों से निकले स्वेदबिंदुओं से इनकी उत्पत्ति हुई। इन में सोमप, आज्यप, स्वकालीन आदि भेद हैं। ऋतु के पुत्र सोमप, वसिष्ठ के पुत्र स्वधावत् तथा पुलस्त्य के पुत्र आज्यप ये सब हविर्भागी हैं। नरक को इसने नारद की जानकारी बताई (दे. भा. ११.१५)। कव्य के माने पितरों को दिया गया अन्न। उसे पितरों तक पहुंचाने वाले को कव्यवाह कहते हैं (पितर देखिये)।

कशाय—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कशु चैद्य—ब्रह्मातिथि काण्व ने इसके औदार्य की प्रशंसा की है। इसने ब्रह्मातिथि को सौ ऊंट, दस हजार गायें तथा दस राजा सेवा करने के लिये दिये। यह इतना उदार था, कि, इससे दान प्राप्त कर फिर किसी के पास जाने की आवश्यकता नहीं रह जाती थी। इसका राज्य विस्तृत था (ऋ. ८.५.३७-३९)।

कशेरुमत्—एक यवन। इसका कृष्ण ने वध किया (म.व. १२.२९; म.स.परि. १ क्र. २१. पंक्ति.१५४६)। कशेरुक पाठ भी मिलता है।

कशोजू—संभवतः दिवोदास का नाम (ऋ. १.११२. १४)।

कश्यप—अग्नि का शिष्य। इसका शिष्य विभांडक (वं. ब्रा. २)। 'त्र्यायुषप्' मंत्र में आयुवृद्धि की प्रार्थना करते समय इसका निर्देश है (जै. उ. ब्रा. ४.३.१)।

गोत्रकार—इसके कुल के मंत्रकार आगे दिये गये हैं (हरित, शिल्प, नैध्रुव देखिये)। इसका एवं वसिष्ठ का निकट संबंध है (बृ. उ. २.२.४)।

कुल—इन्द्रियों का अधिष्ठान जो शरीर उसका पालन करनेवाला जीव ही कश्यप है (म. अनु. १४२)। यह ब्रह्मा का मानसपुत्र है। मरीचिपत्नी तथा कर्दम की कन्या कला को कश्यप तथा पूर्णिमा नामक दो पुत्र हुए। उनमें से कश्यप ज्येष्ठ है (भा. ४.१)। इसे तार्क्ष्य तथा अरिष्टनेमि नामान्तर थे। यह सप्तर्षियों में से एक, उसी प्रकार प्रजापतियों में से भी एक था (म. अनु. १४१)। परंतु सप्तर्षियों की सूचि में कश्यप के बदले भृगु तथा मरीचि नाम भी प्राप्त हैं। स्वायंभुव तथा वैवस्वत मन्वन्तर के ब्रह्मपुत्र मरीचि वास्तवतः एक ही हैं। इसलिये दोनों समय के कश्यप भी एक ही हैं। इसे पूर्णिमा नामक सगा भाई था तथा छः सापत्न बंधु थे। इसकी सापत्न माता का नाम ऊर्णा था। अग्निष्वात्त नामक पितर भी इसके ही भाई थे। इसे सुरुपा नामक एक बहन भी थी, जो वैवस्वत मन्वन्तर के अंगिरा नामक ब्रह्मा के मानसपुत्र को दी थी (वायु. ६५.९८)।

क्षत्रियरक्षा—इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करने के पश्चात् परशुराम नें सरस्वती के किनारे अश्वमेध यज्ञ किया। उस समय कश्यप अध्वर्यु था। दक्षिणा के रूप में पृथ्वी कश्यप को दानरूप में प्राप्त हुई। अवशिष्ट क्षत्रियों का नाश न हो इस हेतु से, कश्यप ने परशुराम को अपनी सीमा के बाहर जा कर रहने के लिये कहा। इस कथनानुसार परशुराम समुद्रद्वारा उत्पन्न शूर्पारक देश में जा कर रहा। महाभारत में इसे कोंकण कहा गया है। बम्बई के पास सोपारा नामक एक ग्राम है, वही यह होगा (म. शां. ४९.५६-५९)। बाद में कश्यप ने पृथ्वी ब्राह्मणों को सौंप कर, स्वयं वन में रहने के लिये गया।

पुत्रप्राप्ति—कश्यप जब पुत्रेच्छा से यज्ञ कर रहा था, तब देव ऋषि तथा गंधर्व सब ने उसे सहायता की। वालखिल्य इसी प्रकार सहायता कर रहे थे, तब इंद्र ने वालखिल्यों का अपमान किया। इससे वे अत्यंत क्रोधित हो गये। इस क्रोध से अपनी रक्षा करने के लिये इन्द्र कश्यप के पास गया। तब बडी चतुराई से कश्यप ने वालखिल्यों को खुष किया। अनेक कृपाप्रसाद से इसे गरुड तथा अरुण नामक दो पुत्र हुए। नये इन्द्र के लिये किया गया तप वालखिल्यों ने इसे दिया तथा इन्द्र निर्भय हो गया।

सर्पों को शाप—तदनंतर विनता तथा कद्रू में उच्चैःश्रवा के रंग के बारे में शर्त लगाई गई। यह शर्त जीतने के लिये कद्रू ने अपने पुत्र नागों की सहायता माँगी। परंतु नाग सहायता न करते थे, इसलिये उसने उन्हें शाप दिया कि, तुम जनमेजय के सत्र में मरोगे। इस शाप को पुष्टि दे कर दुष्ट सर्पों का नाश करने के हेतु से ब्रह्मदेव वहाँ आया, तथा उसने सर्पों का नाश होगा (म. आ. १८. ८-१०), इतना ही नही, उनका सापत्न बंधु गरुड भी उनका भक्षण करेगा, यों शाप दिया (पद्म. सृ. ३१)। इस शाप से कश्यप को दुख होगा, यह सोच कर ब्रह्म नें इसे विषहारि-विद्या दी तथा इसकी सांत्वना की (म. आ. १८. ११)। उस विद्या का इसने उपयोग भी किया था (काश्यप देखिये)।

दैत्यसंहार—इन्द्रादि देवों का दैत्यों ने पराभव किया, इसलिये वे कश्यप के पास शरण आये, तथा उन्होंने इसे सब कुछ बताया। तब यह काशी में शंकर के पास गया, तथा उसे दैत्यों का ताप नष्ट करने के लिये कहा। तब शंकर ने इसकी पत्नी सुरभि के उदर में ग्यारह अवतार लिये तथा दैत्यों का नाश किया। यह अवतार अद्यापि आकाश में ईशान्य की ओर रहते है (शिव. शत. १८)।

तीर्थोत्पत्ति—कश्यप ने अर्बुद पर्वत पर बडी तपश्चर्या की। उस समय दूसरे ऋषियों ने गंगा लाने के लिये इसकी प्रार्थना की। तब शंकर से प्रार्थना कर के कश्यप ने शंकर से गंगा प्राप्त की। उस स्थान पर कश्यपतीर्थ बना (पद्म. उ. १६४)। बाद में गंगा ले कर यह स्वस्थान में गया।

उस स्थान पर केशरंध्रतीर्थ बना। कश्यपद्वारा गंगा लाई गई इस लिये उसे काश्यपी कहते हैं। उसे ही चारों युगों में अनुक्रम से कृतवती, गिरिकर्णिका, चंदना तथा साभ्रमती नाम हैं (पद्म. उ. १३५)।

विष्णुवाहन गरुड—यह तपश्चर्या चालू थी, तब गरुड अपने पिता के पास आया तथा उसने कहा कि, एक अदृष्य शक्ती ने मुझे वाहन बनने के लिये कहा है तथा मैं ने वह मान्य भी किया है। कश्यप ने अन्तर्ज्ञान से जान कर कहा कि, तुम विष्णु के वाहन बने हो तथा अब तुम्हें उसकी ही आराधना करनी चाहिये। यों बता कर काश्यप ने उसे नारायणमहात्म्य का कथन किया।

पृथ्वीरक्षा—इतने में अंग राजा ने पृथ्वी का दान करने का निश्चय किया। इस लिये अपना शरीर त्याग कर पृथ्वी ब्रह्मदेव के पास गई। इससे उसका शरीर निर्जीव बन गया। तब योगशक्ति के द्वारा कश्यप अपने शरीर से बाहर निकला तथा पृथ्वी के शरीर में प्रविष्ट हो कर उसे सजीव बनाया। कुछ दिनों के बाद पृथ्वी वापस आई, तथा कश्यप को नमस्कार कर, अपने शरीर में प्रविष्ट हुई। इस प्रकार कश्यप की कन्या होने के कारण पृथ्वी को काश्यपी कहते हैं।

क्षत्रियाधिपति—आगे चल कर, दुष्टों की पीड़ा के कारन पृथ्वी डूबने लगी। तब कश्यप ने अपने ऊरु का आधार उसे दिया तथा उसे तारा। इस लिये उसे काश्यपी तथा ऊर्वी नाम प्राप्त हुए (म. शां. ४९.६३-६४)। उसने अपने लिये राजा मांग कर बहुत से क्षत्रियों का नाम सुझाया। तब कश्यप ने उन सब को अभिषेक किया।

पृथ्वीपर्यटन—एक बार कश्यपादि सप्तर्षि पृथ्वी पर घूम रहे थे। तब शिबिपुत्र शैब्य उर्फ वृषादर्भि ने सप्तर्षियों को एक यज्ञ में अपना पुत्र दक्षिणास्वरूप में दिया। इतने में उस पुत्र की मृत्यु हो गई। तब उन क्षुधार्त ऋषियों ने उसके मांस को पकाने के लिये रखा। यह वृषादर्भि ने देखा, तथा उस अघोरी कृत्य से ऋषियो को परावृत्त करने के लिये, उनकी इच्छानुसार दान देने का निश्चय किया। किन्तु न तो वे दान लेने के लिये तैय्यार हुए, न मांस ही पका। इसलिये उसे छोड़ कर वे चले गये। आगे एक सरोवर में कमल थे। उन्हें खाने की इच्छा से, उन्होंने वहाँ की कृत्या यातुधानी की अनुमति से कमल तोड़ कर किनारे पर रखे। कुछ कारण से इन्द्र उन्हें चुरा कर ले गया। तदनंतर कश्यप तथा ऐल का संवाद हुआ। उसमें ब्राह्मण का महत्व, पापपुण्यसूक्ष्मभेद तथा रुद्र ये विषय कश्यप ने समझाये।

परिसंवाद—तार्क्ष्य मुनि का सरस्वती से संवाद हुआ था। उन दोनों में से श्रेष्ठ कौन, किस कृत्य से व्यक्ति धर्मभ्रष्ट नहीं होता, अग्निहोत्र के नियम, सरस्वती कौन है, मोक्ष आदि विषय चर्चा के लिये थे। परंतु यह तार्क्ष्य कश्यप ही था, यह नही कह सकते (म. व. १८४)। तदनंतर कश्यप ने एक सिद्ध देखा। तथा उससे ज्ञानप्राप्ति के हेतु से बडी ही एकाग्रता से उसकी पूजा की। सिद्ध की आज्ञा से कश्यप ने प्रश्न पूछे। सिद्ध ने उसके उत्तर दिये तथा इसे संतुष्ट किया (म. आश्व. १७)। यह एक ऋषि था (वायु. ५९.९०; ब्रह्माण्ड. २.३२.९८-१००)। इसके शरीर से तिल उत्पन्न हुए (भवि. ब्रह्म.७)। यह स्वारोचिष तथा वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था। व्यास की पुराणशिष्य परंपरा के भागवतमतानुसार यह रोमहर्षण का शिष्य था (व्यास तथा आपस्तंब देखिये)।

ग्रंथ—कश्यप के नाम पर चरकसंहिता के काफी पाठ है। भूतप्रेतादि पर भी इसके कुछ मंत्र है। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ है— १. कश्यपसंहिता (वैद्यकीय) २. कश्यपोत्तरसंहिता, ३. कश्यपस्मृति, जिसका उल्लेख हेमाद्रि, विज्ञानेश्वर तथा माधवाचार्य ने किया हैं (C. C.) ४. कश्यपसिद्धांत (नारदसंहिता में इसका उल्लेख आया है)।

परिवार—कश्यप को वत्सार तथा असित नामक दो पुत्र थे। वत्सार को निध्रुव तथा रेभ नामक दो पुत्र हुए। निध्रुव को सुमेधा से अनेक कुंडपायिन् हुए। रेभ से रैभ्य उत्पन्न हुए। इसी प्रकार की वंशावली अन्यत्र भी प्राप्त है (ब्रह्माण्ड. ३.८.२९-३३; वायु ७०.२४-२५; लिंग. १.६३; कूर्म. १.१९)।

कश्यप की स्त्रिया—अदिति, अरिष्टा, इरा, कद्रू, कपिला; कालका, काला, काष्ठा, क्रोधवशा, क्रोधा, खशा, ग्रावा, ताम्रा, तिमि, दनु, दनायु, दया, दिति, धनु, नायु, पतंगी, पुलोमा, प्राधा, प्रोवा, मुनि, यामिनी, वसिष्ठा, विनता, विश्वा, सरमा, सिंही, सिंहिका, सुनेत्रा, सुपर्णा, सुरभि, सुरसा, सूर्य। यथार्थ में कश्यप को तेरह स्त्रियाँ थीं। बाकी नाम तो पाठान्तर से आये है, तथा संततिसादृश्य के कारण, बाकी सब एक ही मालूम होती है। भागवत तथा विष्णु मतानुसार इसे किसी समय अरिष्टनेमि नामक चार स्त्रिया बतायी गयी हैं। ये सब दक्ष कन्यायें थी। पुलोमा तथा कालका वैश्वानर की कन्यायें है।

अदितिपुत्र—आदित्य बारह हैं। अंश (अंशु, अंशुमत्, विधातृ), अर्यमन् (यम), इंद्र (शक्र), उरुक्रम (विष्णु), त्वष्टा, धातृ, पूषन्, भग, मित्र, वरुण (पर्जन्य), विवस्वत् (मार्तंड), सवितृ (तै. आ. १. १३)।

अरिष्टापुत्र—अतिबाहु, आचार, ज्योतिष्टम, तुंबुरु, दारुण; पूर्ण*, पूर्णाश (पूर्णायु*), बर्हीच (ब्रर्हीच)*, ब्रह्मचारिन्*, भानु, मध्य, रतिगुण (शतगुण), वरूथ*, वरेण्य, वसुरुचि, विश्वावसु*, सिद्ध, सुचंद्र*, सुपर्ण*, सुरुचि*, हंस, हाहा, हूहू, आदि गंधर्व अरिष्टा के पुत्र थे। इनमें से तारांकित लोग क्रोधा के पुत्र हैं, ऐसा उल्लेख ब्रह्माण्ड में आता है।

अरिष्टाकन्या—अनवद्या, अरुणा*, अरूपा, अलंबुषा*, असुरा, केशिनी*, तिलोत्तमा, भासी, मनु, मनोरमा, मार्गणप्रिया*, मिश्रकेशी, रक्षिता*, रंभा, वंशा, विद्युत्पर्णा*, सुप्रिया, सुबाहु, सुभगा, सुरजा*, सुरता। इनमें से तारांकित स्त्रीया मुनि की कन्याएं हैं, ऐसा उल्लेख ब्रह्माण्ड में दिया गया है।

इरा को वृक्षादि पुत्र हुए।

कद्रूपुत्र—अकर्कर, अकर्ण, अक्रूर, अनंत, अनील, अपराजित, अंबरीष, अलिपिंडक, अश्वतर, आपूरण, आप्त, आर्यक, उग्रक, एलापत्र, ऐरावत, कपित्थक, कपिल, कंबल, कररोमन्, करवीर, कर्कर, कर्कोटक, कर्दम, कल्पपोतक, कल्माष, कालिय, कालीयक, कुंजर, कुठर, कुंडोदर, कुमुद, कुमुदाक्ष, कुलिक, कुहर, कूर्म, कूष्मांडक, कोरग्य, कौणपाशन, क्षेमक, गंधर्व, ज्योतिक, तक्षक, तित्तिरि, दधिमुख, दुर्मुख, धनंजय, धृतराष्ट्र, नहुष, नाग, निष्ठानक, नील, पतंजलि, पद्म (संवर्तक), पाणिन, पिंगल, पिंजर (पिंजरक), पिठरक, पिंडक, पिंडारक, पुष्पदंष्ट्र, पूर्णभद्र, प्रभाकर, प्रह्लाद, बलाहक, बहुमूलक, बहुल, बाह्यकर्ण, विल्वक, विल्वपांडुर, ब्राह्मण, भुजंगम, मणि, मणिस्थक, महाकर्ण, महानील, महापद्म, महापद्म, महाशंख, महोदर, मुद्गर, मूषकाद, वामन, वालिशिख, वासुकि, विमलपिंडक, विरजस्, वृत्त, शंकुरोमन्, शंख, शंखपाद, शंखपाल, शंखपिंड, शंखमुख, शंखरोमन्, शंखशिरस्, शबल, शालिपिंड, शुभानन, शेष, श्रीवह, श्वेत, सुबाहु, सुमन, सुमुख, सूनामुख, हरिद्रक, हलक, हस्तिकर्ण, हस्तिपद, हस्तिपिंड, हेमगुह।

कपिला को अमृत, ब्राह्मण, गंधर्व, अप्सरा, नंदिन्यादि गायें तथा दो खुरवाले प्राणी हुए।

कालका को कालकेय ऊर्फ कालकंज ये पुत्र हुए।

कालापुत्र—क्रोध, क्रोधशत्रु, क्रोधहंतृ, विनाशन।

काष्ठा को अश्वादि एक खुरवाले प्राणी हुए।

क्रोधवशा की कन्याएं—इरावती*, कपीशा*, तिर्या*, दंष्ट्रा, मद्रमना*, भूता, मातंगी*, मृगमंदा*, मृगी*, रिषा, शार्दूली*, श्वेता*, सरमा*, सुरसा, हरि*, हरिभद्रा*। क्रोधवशा की ये कन्याएं पुलह की भार्या थीं। इनके सिवा, क्रोधवशा को क्रूर जलचर पक्षी, दंदशूकादि सर्प तथा क्रोधवश नाम के राक्षस हुए। इन में से क्रोधवश मुख्य है (अरिष्टा देखिये)।

खशा को अकंपन, अश्व, उपस्य, कपिलोमन्, कथन, चंद्रार्कभीकर, तुंडकोश, त्रिनाभ, त्रिशिरस्, दुर्मुख, धूम्रित, निशाचर, पीडापर, प्रहासक, बुध्न, बृहज्जिह्न, भीम, मधु, मातंग, लालवि, वक्राक्ष, विस्फूर्जन, विलोहित, शतदंष्ट्र, सुमालि आदि पुत्र तथा आलंबा, उत्कचोत्कृष्टा, कपिला, केशिनी, निर्ऋता, महाभागा, शिवा आदि कन्याएं हुईं। ये सब यक्ष, राक्षस, मुनि तथा अप्सराएँ हैं।

प्राधा को श्वापद हुए।

ताम्रा को अरुणा, उलकी, काकी, क्रौंची, गृध्रिका (गृध्री), धृतराष्ट्रिका (धृतराष्ट्री), भासी, शुकी, शुची, श्येनी, सुग्रीवी, तथा गायें, भैंसें कन्यारूप में हुईं।

तिमि को जलचरगण हुए।

दनुपुत्र—अजक, अप्र, अनुपायन, अशिरस्, अयोमुख, अरिष्ट, अरुण, अश्व, अश्वग्रीव, अश्वपति, अश्वशंकु, अश्वशिरस्, असिलोमन्, अहर, आमहासुर, इंद्रजित्, इंद्रतापन, इरागर्भशिरस्, इषुपात, ऊर्णनाभ, एकचक्र, एकाक्ष, कपट, कपिल, कपिश, कालनाभ, कुपथ, कुंभनाभ, कुंभमान, केतु, केतुवीर्य, केशिन्, गनमूर्धन्, गविष्ठ, गवेष्टिन, चंद्रमस्, चूर्णनाभ, जम, तारक, तुहुंड, दीर्घजिह्व, दुदुंभि, दुर्जय, देवजित्, द्विमूर्धन्, धूम्रकेश, धृतराष्ट्र, नमुचि, नरक, निचंद्र, पुरुंड, पुलोमन्, प्रमद, प्रलंब, बलक, बलाढ्य, बाण, बिंदु, भद्र, भृशिन्, मघ, मघवत, मद, मय, मरीचि, महागिरि, महानाभ, महाबल, महाबाहु, महामाय, महाशिरस्, महासुर, महोदक, महोदर, मारीचि, मूलकोदर, मेघवत्, रसिप, वज्रनाथ, वज्राक्ष, वनायु, वातापि, वामन, विकुम, विक्रांत, विक्षोभ, विक्षोभण, विद्रावण, विपाद, विप्रचित्ति, विभावसु, विसु, विराध, विरूपाक्ष, वीर, वीर्यवत्, वृक, वृषपर्वन्, वैमृग, वैश्वानर, वैसृप, शकुनि, शंकर, शंकुकर्ण, शंकुशिरस्, शंकुशिरोधर, शठ, शतग्रीव, शतमाय, शतन्हद, शंकुरय,

शतन्हाद, शतव्हय, शंबर, शरभ, शलभ, सत्यजित्, सप्तजित्, सुकेतु, सुकेश, सुपथ, सूक्ष्म, सूर्य, हयग्रीव, हर, हिरण्मय, हिरण्यकशिपु।

दनायु को बल, विक्षर, वीर, वृत्रादि उत्पन्न पुत्र हुए।

दया को पर्वत हुए।

दिति को मरुत् (उनपचास), वज्रांग, सिंहिका, हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष आदि पुत्र हुए। पद्मपुराण में दैत्यों सा कृत्य करने वाला प्रत्येक व्यक्ति दितिपुत्र माना गया है (बल तथा वृत्र देखिये)।

धनु—विष्णुधर्मोत्तर में दनु का नामांतर है। इसका पुत्र रजि (१.१०६)।

पतंगी को पक्षी हुए।

पुलोमा को पौलोम हुए। पौलोम तथा कालकेय मिल कर साठ हजार वा चव्हत्तर हजार थे, जिन्हें निवातकवच कहते थे।

प्राधा—अरिष्टा की संतति देखिये।

प्रोवा—इसे संतति नहीं थी।

मुनिपुत्र—मुनि को अर्कपर्ण, उग्रसेन, कलि, गोपति (गोमत्), चित्ररथ, धृतराष्ट्र, नारद, पर्जन्य, प्रयुत, भीम, भीमसेन, वरुण, शालिशिरस्, सत्यवाच् (सर्वजित्), सुपर्ण, सूर्यवर्चस् नामक सोलह गंधर्व, तथा अजगंधा, अनपाया, आसिता, असिपर्णिनी, अद्रिका, क्षेमा, पुंडरीका, मनोभवा मारीचि, लक्ष्मणा, बरंवरा, विमनुष्या, शुचिका, सुदती, सुप्रिया, सुबाहु, सुभुजा, सुरसा तथा अन्य छै (अरिष्टा देखिये), इस तरह कुल चोबीस अप्सरायें हुईं। वसिष्ठा यह नाम मुनि का नामांतर होगा।

यामिनी को टिड्डिया हुए।

विनता को अरिष्टनेमि, अरुण, आरुणि, गरुड, तार्क्ष्य, वारुणि नामक पुत्र, एवं सौदामिनी नामक कन्या हुई। अरिष्टनेमि तथा तार्क्ष्य गरुड के नामांतर होने का उल्लेख मिलता है।

विश्वा को करोड़ों यक्ष तथा राक्षस हुए।

सरमा को वनचर हुए।

सिंहि उर्फ सिंहिका को चंद्रप्रमर्दन, चंद्रहर्तृ, राहु तथा सुचंद्र पुत्र हुए।

सुरभि को अंगारक, अज (अजपाद), अहिर्बुध्न्य (हिर्बुध्न्य), ईश्वर, ऊर्ध्वकेतु, एकपाद, कपाला (कपालि) चंड, ज्वर, निर्ऋति, पिंगल, भल, भीम, भुवन, मृत्यु, विरूपाक्ष, विलोहित, वृषभ (महादेव का नंदी), शंभु, शास्तृ, सदसस्पति, सर्प नामक पुत्र हुए तथा गांधारी (गांधर्वी) एवं रोहिणी ये कन्याए हुईं (शिव. शत. १८)।

सुरसा को यातुधानादि राक्षस तथा १००० सर्प हुए।

सूर्या को यमधर्म हुआ।

कश्यप को अरुंधती, नारद, पर्वत (वायु. ७०.७९; लिंग १.६३.७२-८०.) तथा मनसा ये मानसपुत्र तथा कन्याएं थी (विष्णु. १.१५ मत्स्य. ६; स्कन्द. १.२.१४; ३.२.८; वायु. ६७. ४३; ह. वं. १.३; ब्रह्मांड. ३.३)। अरिष्टापुत्र केवल ब्रह्माण्ड तथा महाभारत में दिये हैं। सुरभिपुत्र वायु तथा शिवपुराण में दिये हैं। मुनिपुत्र तथा क्रोधापुत्र ब्रह्मांड, महाभारत में दिये हैं। कद्रूपुत्र वायु, स्कन्द तथा भागवत में नहीं हैं। दनुपुत्र स्कन्द तथा वायु में नहीं हैं। उपरोक्त आदित्य स्कंद में नहीं हैं (आदित्य देखिये)।

गोत्रकार—अग्निशर्मायण (ग), अधच्छायामय (ग), आग्ना प्रासेव्य (ग), आजिहायन (ग), आश्रायणि, आश्वलायनिन (ग), आश्ववातायन, आसुरायण (ग), उदग्रज (ग), उद्वलायन (ग), कन्यक (ग), कात्यायन (ग), कार्तिकेय, काश्यपेय (ग), काष्ठाहारिण, कौबेरक (ग), कौरिष्ट (ग), गोमयान (ग), ज्ञानसंज्ञेय (ग), दाक्षायण, देवयान (ग), निकृतज (ग), पैलमौलि, प्रागायण (ग), प्राचेय, बर्हि, भवनंदिन्, भृगु (ग), भोज (ग), भौतपायन (भीमपायन, ग), महाचक्रि, माठार (ग), मातंगिन (ग), मारीच (ग), मृगय (ग), मेष किरीटकायन (ग), मेपर (ग) (ग), योगगदायन (ग), योधयान (ग), वात्स्यायन (ग), वैकर्णेय (वैकर्णिक, ग), वैवशप, शक्रय (शाक्रायण ग), शालहलेय (ग) श्याकार (ग), श्यामोदर, श्रोतन (श्रुतय), सासिसाहारितायन (ग), हस्तिदान (ग), हास्तिक (ग), ये सब कश्यप, निध्रुव, तथा वत्सर इन त्रिप्रवरों के हैं।

अनसूय, काद्रुपिंगाक्षि (काद्रपिंगाक्षि), दिवावष्ट (दिवावस, दिवावसिष्ठ ग), नाकुरय, यामुनि (सामुकि), राजवर्तप (राजवल्लभ), रौपसेवकि (शेपसेवकि), शैशिरोदवहि, सजातंबि, सैरंधी (सैरंध्रि), स्नातप ये भी द्विगोत्री हो कर कश्यप, वत्सर तथा वसिष्ठ इन तीन प्रवरों के है।

उत्तर, कर्दम, काश्यप, कुलह, केरल, कैरात, गर्दभीमुख, गोमिल, जलंधर, दानव, देवजाति, नभ, निदाघ, पिप्पल्य, पूर्य, पैप्पलादि, मत्स्य, सुजातपूर, मसृण, मृगकेतु,

वृषकंड, शांडिल्य, संयाति, हिरण्यबाहु ये असित, कश्यप तथा देवल इन त्रिप्रवरों के हैं (मत्स्य. १९९)।

कश्यपगोत्री मंत्रकार—असित, कश्यप, देवल, निध्रुव (नैध्रुव), रैभ्य, तथा वत्सार। वायु में 'विक्षम' तथा मत्स्य में 'नित्य' अधिक है (ब्रह्माण्ड. २.३२. ११२-११३; मत्स्य. १४५.१०६-१०७; वायु. ५९.१०२-१०३)। ये ब्रह्मवेत्ता थे।

ऋग्वेद में वत्सार के लिये अवत्सार, नैध्रुव के लिये निध्रुवि, इसके अतिरिक्त भूतांश, रेभ तथा वित्रि ये कश्यप माने गये है।

कश्यप नैध्रुवि--एक आचार्य (बृ. उ. ६.५.३)।

कश्यप मारीच--ऋग्वेदमंत्रद्रष्टा (ऋ. १. ९९; ८. २९; ९.६४;६७.४-६; ९१-९२; ११३-११४)।

कषाय—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

कहोड वा **कहोल कौषीतकेय**—एक ऋषि। व्रीहि, यवादि नये अनाज वृष्टि से उत्पन्न होने के कारण, पहले देवताओं के लिये आग्रयण (अर्थात अन्न का याग) कर भक्षण करना चाहिये, यह रीति इसने आरंभ की। आश्वलायनगृह्यसूत्र में ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका नाम है। इसका कौषीतकेय नामान्तर भी मिलता है (बृ. उ. ३.५.१)। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था (श. ब्रा. २.३.५१; सां. आ. १५; काहाडी देखिये)।

यह उद्दालक ऋषि का शिष्य था। इसने गुरुगृह में रह कर गुरु की उत्तम प्रकार से सेवा की, इसलिये गुरु ने प्रसन्न हो कर इसे अपनी कन्या सुजाता ब्याह दी। उसे ले कर इसने गृहस्थाश्रम में प्रवेश किया। सुजाता गर्भवती हुई। एक बार यह अध्ययन कर रहा था, तब सुजाता के गर्भ ने इसे अध्ययन न करने के लिये कहा। तब क्रोधित होकर इसने उस गर्भ को शाप दिया कि, तुम आठ स्थानों पर वक्र बनोगे। कुछ काल के बाद इसे अष्टावक्र नामक पुत्र हुआ। आगे चल कर, एकबार जब यह द्रव्ययाचना के लिये जनक राजा के पास गया, तब वरुणपुत्र बंदी ने अनेक ऋषियों को वाद में जीत कर पानी में डुबा दिया (म. व. १३४)। उस में यह भी डूब गया। वहाँ से इसके पुत्र ने, बंदी को वाद में के जीत कर वापस लाया (म. व. १३४-३१)। यह एक मध्यमाध्वर्यु है।

काकवर्ण—(शिशु. भविष्य.) इसका पुत्र क्षेत्रधर्मन्।

काकी—कश्यप तथा ताम्रा के कन्याओं में से एक।

२. स्कन्द के शरीर से उत्पन्न मातृकाओं में से एक।

काकुत्स्थ—अनेनस् का पैतृक नाम।

काकेयस्थ—कृष्णपराशर कुल का एक गोत्रकार। इसके लिये काकेय पाठभेद है।

काक्षसेनि— अभिप्रतारिन् का पैतृक नाम (इति ऐन्द्रोत देखिये)।

काक्षीवत--दीर्घतमस् देखिये।

कांकायन--एक ऋषि। शांत्युदक करते समय कौनसा मंत्र लिया जावे, इसके संबंध में इसका मत है (कौ. सू. ९.१०)।

काचापि—कारकि देखिये।

कांचन--च्यवन भार्गव का नामांतर (वा. रा. उ. ६६.१७)।

२. (सो. पुरूरवस्.) भागवत तथा विष्णु पुराण के मतानुसार यह भीमपुत्र है। वायु के मतानुसार भी भीमपुत्र ही है, परंतु वहाँ इसे कांचनप्रभ कहा गया है।

कांचनमालिनी--एक अप्सरा। प्रयाग में माघस्नान करने से यह मुक्त हुई (पद्म. उ. १२७)।

काठ्य—अंगिरस कुल का गोत्रकार तथा प्रवर।

कांठेविद्धि—एक आचार्य (वं. ब्रा. २)

कांडमायन--विसर्गसंधि आवश्यक है, यों मत रखनेवाला आचार्य (तै. प्रा. ९.१)।

कांडशय--पराशरकुल का एक गोत्रकार।

कांडायन—एक व्याकरणकार। पदपाठ में प्लुत अनुनासिक होता है, यह बतानेवाला, ऐसा इसका उल्लेख शांखायन के साथ आया है (तै. प्रा. १५.७)।

कांड्विय-- एक उद्गाता (जै. उ. ब्रा. ३.१०.२; जनश्रुत, नगरिन् तथा सायक देखिये)।

काण्व--स्वरविषयक मत बतानेवाला आचार्य (शु. प्रा. १.१२३; १४.९)।

२. वसिष्ठगोत्री ऋषिगण।

३. वायु के मत में, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा का याज्ञवल्क्य की शाखा में से एक (व्यास देखिये)।

(आयु, इरिंबिठ, कण्व, कुरुसुति, कुसीदिन्, कृषि, त्रिशोक, दवातिथि, नाभाक, नारद, नीपातिथि, पर्वत, पुनर्वत्स, पुष्टिगु, पृषध्र, प्रगाथ, प्रस्कण्व, ब्रह्मातिथि, मातरिश्वन्, मेधातिथि, मेध्य, मेध्यातिथि, वत्स, शशकर्ण, श्रुष्टिगु, सध्वंस, सुपर्ण, सोभरि, तथा सौश्रवस काण्व देखिये)।

काण्वायन—अंगिराकुल का एक गोत्रकार। कृश ने काण्वायन के लिये प्रार्थना की है (ऋ. ८. ५५. ४)।

पुरुकुल से निकला हुआ एक ब्राह्मणकुल (अश्वसूक्तिन् तथा गोसूक्तिन् देखिये)।

काण्वीपुत्र--कापीपुत्र का शिष्य (बृ. ६.५.१)।

काण्व्यायन--एक आचार्य।

कात्थक्य--अर्थविषयक विचार करनेवाला एक आचार्य (नि. ८. ५; ६; ९. ४१)।

कात्य--उत्कल कात्य देखिये।

कात्यायन--एक आचार्य। इसके १. कात्य, २. कात्यायन, ३. पुनर्वसु, ४. मेधाजित् तथा ५. वररुचि, ऐसे नामान्तर त्रिकांडकोश में दिये गये है।

याज्ञवल्क्य का पौत्र तथा कात्यायनपुत्र वररुचि, अष्टाध्यायी का वार्तिककार होने की संभावना है।

आंगिरस, कश्यप, कौशिक, द्यामुष्यायण तथा भार्गव गोत्र में भी कात्यायन है।

महाभाष्य इसके वार्तिकों पर ही लिखा हुआ ग्रंथ है।

इसके ग्रंथ-१. श्रौतसूत्र, २. इष्टिपद्धति, ३. कर्मप्रदीप, ४. गृह्यपरिशिष्ट, ५. त्रिकाण्डिकसूत्र, ६. श्राद्धकल्पसूत्र, ७. पशुबंधसूत्र, ८. प्रतिहारसूत्र, ९. भ्राजश्लोक, १०. रुद्रविधान, ११. वार्तिकपाठ, १२. कात्यायनी शांति, १३. कात्यायनीशिक्षा, १४. स्नानविधिसूत्र, १५. कात्यायनकारिका, १६. कात्यायनप्रयोग, १७. कात्यायनवेद प्राप्ति, १८. कात्यायनशाखाभाष्य, १९. कात्यायन स्मृति (इसका उल्लेख याज्ञवल्क्य, हेमाद्रि, विज्ञानेश्वर आदि ने किया है), २०. कात्यायनोपनिषद् (C. C.), २१. कात्यायनगृह्यकारिका, २२. वृषोत्सर्गादिपद्धति, २३. आतुरसंन्यासविधि, २४. मूल्याध्याय, २५. गृह्यसूत्र, २६. शुक्लयजुःप्रातिशाख्य। इसके साधारणतः छः हजार वार्तिक हैं। वार्तिक की व्याख्याः-- इस प्रकार है 'सूत्रेऽनुक्तदुरुक्तचिंताकरत्वं वार्तिकत्वम् (नागेशः),' वा उक्तानुक्तदुरुक्तानां चिंता यत्र प्रवर्तते, तं ग्रंथ वार्तिकं प्राहुर्वार्तिकज्ञा मनीषिणः (छाया)'।

वार्तिक--कात्यायन एक व्याकरणकार था। इसने ऐन्द्रशाखा का पुरस्कार किया था। इसके मतानुसार उणादिसूत्र पाणिनिकृत हैं। इन सूत्रों का इसने विशदीकरण किया तथा बाद में इसे ही उणादिसूत्रों का कर्ता कहने लगे (विमल सरस्वती कृत 'रूपमाला', दुर्गसिंहकृत कातंत्र का 'कृत्' प्रकरण)। कात्यायन ने मुख्यतः पाणिनि के करीब करीब १५०० सूत्रों पर वार्तिक लिखे। वार्तिक के लिये इसे पाणिनि की परिभाषा का उपयोग करना पड़ा, तथापि इसने अच्, हल्, अक्, आदि पाणिनीय पारिभाषिक शब्दों के लिये स्वर, व्यंजन आदि शब्दों का उपयोग किया है। इससे, तथा कथासरित्सागर के यह ऐन्द्रशाखा का पुरस्कर्ता होने के उल्लेख से प्रतीत होता है कि, कात्यायन पाणिनि की अपेक्षा भिन्न शाखा का पुरस्कर्ता था। वार्तिकों का मुख्य उद्देश्य पाणिनि के सूत्रों का विशदीकरण कर, उन्हें समझने के लिये सरल बनाना है। इसने वाजसनेयी प्रातिशाख्य नामक दूसरा ग्रंथ लिखा है। कात्यायन के पहले भी काफी वार्तिककार हो गये हैं। उनमें से शाकटायन, शाकल्य, वाजप्यायन, व्याडि, पौष्करसादि का इसने उल्लेख किया है।

कथासरित्सागर की कथा से प्रतीत होता है कि, कात्यायन पाणिनि का समकालीन होगा। परंतु उपरोक्त जानकारी से पता चलता है कि, पाणिनि तथा इसमें काफी अंतर होना चाहिये। कथासरित्सागर में इसका संबंध नन्द से आया है। इससे कात्यायन का काल अनुमानतः खि. पूर्व. ५००-३५० तय किया जा सकता है। पतंजलि ने इसे दाक्षिणात्य कहा है (प्रियतद्धिता दाक्षिणात्याः, ८)। इसकी एक स्मृति व्यंकटेश्वर प्रेस द्वारा दिये हुए स्मृतिसमुचय में है। वह २९ अध्यायों की है, तथा उसमें यज्ञोपवीतविधि, संध्योपासना, अंत्यविधि, आदि विषयों का विवेचन है।

इसकी जानकारी निबंधग्रंथ मे दिये गये इसके उद्धरण से प्राप्त होती है। इसके अतिरिक्त शंखलिखित, याज्ञवल्क्य (१.४-५) तथा पराशर ने धर्मशास्त्रकार कह कर इसका निर्देश किया है। बौधायनधर्मसूत्र में कात्यायन का उल्लेख है (१.२.४७)। व्यवहार के बारे में लिखते समय, इसने नारद तथा बृहस्पति के मतों को मान्य समझा है। परिभाषा आदि भी यों ही स्वीकार लिया है। इसने स्त्रीधन के अनेक प्रकार सोचे हैं, तथा स्त्रियों के अधिकार भी लिखे है। व्यवहार के बारे में इसके ६०० श्लोक स्मृतिचन्द्रिका में आये हैं। इसने मनु के नामपर दिये उल्लेख मनुस्मृति मे नही मिलते। भृगु के मतों के संबंध में भी ऐसा ही है। इसके श्रौतसूत्र पाणिनि के पहले रचे गये होंगे, परंतु इसकी स्मृति इ. ४००-६०० तक बनी होगी।

कात्यायन ने त्रयोदश श्लोकों से युक्त कात्यायनशिक्षा रची। उसपर जयंतस्वामी ने टीका लिखी। इसके नामपर स्वरभक्तिलक्षणपरिशिष्टशिक्षा नामक एक और शिक्षा है। यह शुक्लयजुर्वेद की ही शिक्षा है। परंतु प्रारंभ में काफी संज्ञायें आदि ऋक्प्रातिशाख्य के अनुसार हैं।

उसमें बयालीस श्लोक हैं। उसमें विशेष कर के स्वरभक्ति का ही विचार किया गया है (पारस्कर तथा वररुचि देखिये)।

२. राम के अष्ट धर्मशास्त्रियों में एक।

३. कबंधिन् देखिये।

४. विश्वामित्र पुत्र कति का पुत्र।

कात्यायनि--दक्ष कात्यायनि आत्रेय देखिये।

कात्यायनी--याज्ञवल्क्य की दो स्त्रियों में से एक। याज्ञवल्क्य का संसारत्याग का विचार पक्का होने के बाद, प्रपंचविषयक वस्तुओं का, मैत्रेयी तथा कात्यायनी में समान विभाजक करने को उसने कहा। परंतु मैत्रेयी अध्यात्म-ज्ञान में पारंगत होने के कारण प्रापंचिक वस्तुएं कात्यायनी के पास रही (बृ. उ.२.४.१; ४.५.१)।

कात्यायनीपुत्र--गौतमीपुत्र तथा कौशिकीपुत्र का शिष्य। इसके शिष्य पाराशरीपुत्र तथा पौतिमाषीपुत्र थे (बृ. उ. ६.५.१)। जातूकर्ण्य नामक एक कात्यायनी-पुत्र का आचार्य कह कर निर्देश है (सां. आ. ८.१०)।

काद्रवेय--कद्रुपुत्र का मातृक नाम।

२. अर्बुद देखिये।

काद्रुपिंगाक्षि--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके लिये कार्द्रापिंगाक्षि पाठभेद है।

कानांध--वध्र्यश्व का पुत्र (बौ. श्रौ. २१.१०)।

कानिनी--ब्रह्मांड मत में व्यास के साम शिष्यपरंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

कानीत--पृथुश्रवस् का पैतृक नाम (ऋ. ८.४६. २१; २४)

कानीन--(सू. दिष्ट.) भागवतमत में देवदत्तपुत्र।

२. अग्निवेश्य, व्यास, कर्ण देखिये।

कान्तिमती--भरतपुत्र पुष्कल की स्त्री (पद्म. पा. १२)।

२. वीरबाहु देखिये।

३. व्याधस्त्री (शंख देखिये)।

कान्तिशालिन्--एक विद्याधर। पापनाशन लिंग के दर्शन से यह मुक्त हुआ (स्कन्द. १.३.२.४)।

कांदम--एक यावन् का पैतृक नाम (तै. ब्रा. २. ७.२१.२)। गांदम देखिये।

कान्वायन--(शिशु. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार विंध्यासेना का पुत्र।

कापच्य--कायव्य देखिये।

कापटव सुनीथ--सुतेमनस शांडिल्यायन का शिष्य (वं. ब्रा. १)। इसका पैतृक नाम कापटव था।

कापिलेय--विश्वामित्रपुत्र। शुनःशेप को विश्वामित्र ने मृत्यु से मुक्त करने के बाद अपनी गोद में लिया। शुनःशेप को उसका पिता अजीगर्त बापस मांगने लगा, तब विश्वामित्र.ने कहा कि, शुनःशेप मेरा पुत्र है तथा कापिलेय तथा बाभ्रव इसके बंधु हैं। इससे प्रतीत होता है कि, यह तथा बाभ्रव, विश्वामित्र के पुत्रों में से होंगे (ऐ. ब्रा. ७.१७)।

२. कुंभ को कपिला से उत्पन्न संतती का मातृक नाम (ब्रह्मांड ३.७.१४५)।

कापीपुत्र--आत्रेयीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य वैयाघ्रपदीपुत्र (बृ. उ. ६.५.१२)।

कापीय--व्यास के सामशिष्यपरंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य।

कापेय--एक ऋषि। चित्ररथ द्वारा द्वि-रात्र यज्ञ करके, इसने उसे धनसंपन्न किया (क. स. १३.१२; पं. ब्रा. २०.१२.५) कापेय का अर्थ है, कापेयी शाखा का अध्ययन करनेवाले लोग (सां. श्रौ. ९.८;ज्योत्स्नाटीका)। शौनक ऋषि कपि गोत्र का होने के कारण, उसे यह गोत्रनाम कह कर लगाया है (छां. उ. ४.३.५-७)।

कापोत--एक मुनि। उर्वशी तथा ककुत्स्थ की कन्या चित्रांगदा इसकी पत्नी थी। इसके तुंबुरु तथा सुवर्चस् नामक दो पुत्र थे। बाद में इसने कुबेर से द्रव्य ला कर इन पुत्रों को दिया। चन्द्रशेखर राजा की पत्नी तारावती को दो वानरमुखी पुत्र होंगे, यों शाप इसने दिया (कालि. ५३)।

काप्य--कैशोर्य काप्य का शांडिल्य शिष्य। यह कुमारहारित का शिष्य था (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। पैल, पतंचल तथा पुरुकुत्स का काप्य यह पैतृक नाम है। उसी प्रकार विभिंदुर्कीयों के सत्र में आर्त्विज्य करनेवाले सेनक तथा नवक का भी यह पैतृक नाम है।

कावंधि--यह अथर्वन् है। यह मांधाता के यज्ञ में गया तथा वहाँ यजमान तथा ऋत्विज को इसने कुछ प्रश्न पूछे (गो. ब्रा. १.२.९)। जलोद्भव अश्व से वेद डर गये। उस अश्व का शमन इसने किया (गो. ब्रा. ९.१८)। विचारिन् का यह पैतृक नाम है। कबंध का वंशज ऐसा अर्थ हो सकता है (कबंध आथर्वण देखिये)।

काम--ब्रह्मदेव के हृदय से उत्पन्न पुत्र। इसकी पत्नी रति। यह शंकर के तृतीय नेत्र से दग्ध हुआ परंतु रुक्मिणी

के उदर में पुनः प्रद्युम्न नाम से इसने जन्म लिया (भा. ३.१२.२६; १०.५५.१)। जहाँ इसे दग्ध किया, वह स्थल अंगदेश है। इसने बंधुभगिनी में कामविकार उत्पन्न किया, इस लिये शंकरद्वारा दग्ध होने का शाप इसे मिला। शंकर को पुत्रेच्छा होगी तब उत्पत्ति होने का उश्शाप भी इसने प्राप्त किया (शिव. रुद्र. सती. ३)।

२. संकल्प का पुत्र (भा. ६.६.१०)।

३. वैवस्वत मन्वन्तर के बृहस्पती का दौहित्र।

४. धर्मऋषी का एक पुत्र हर्ष इसका (पद्म. सृ. ३)।

५. परशुराम का बंधु (कालकाम देखिये)।

कामकंटका--घटोत्कच देखिये।

कामकायन--विश्वामित्र कुलोत्पन्न गोत्रकार तथा ब्रह्मर्षि।

कामगम तथा **कामज**--धर्मसावर्णि मन्वन्तर के देवगण विशेष।

कामठक--एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

कामंद--सोमकान्त देखिये।

२. एक ब्रह्मर्षि। आंगरिष्ट राजा ने इससे पूछा था कि शुद्ध धर्म, अर्थ तथा काम कौन हैं? इसने उत्तर दिया कि, जिस से चित्तशुद्धि हो वह धर्म, पुरुषार्थ साध्य हो वह अर्थ, तथा केवल देहनिर्वाह की इच्छा हो वह काम है (म. शां. १२३)।

कामप्रमोदिनी--माण्डव्य की पत्नी (माण्डव्य देखिये)।

कामप्रि--मरुत्तका नामान्तर। यह मरुत्त के लिये उपाधि की तरह प्रयुक्त किया है (ऐ. ब्रा. ८.२१)। सायण इसका अर्थ कामपूरक ऐसा लगाते हैं।

कामलायन--उपकोसल का पैतृक नाम (छां. उ. ४. १०.१)।

कामली--रेणुका देखिये। रेणुका का नामांतर।

२. विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

कामहानि--व्यास की सामशिष्य परंपरा के वायु-मतानुसार लांगली का शिष्य।

कामा--देवी (घटोत्कच देखिये)।

कामान्ध--वध्न्यश्व का पुत्र (बौ. श्रौ. २१.१०)।

कामायनी--श्रद्धा देखिये।

कामुकायन--कारुकायण का पाठभेद।

कामोदा--क्षीरसागर से कामोदा, रमा, वरा, तथा वारुणी नामक चार कन्याएं उत्पन्न हुईं। पहली तीन विष्णु की स्त्रियां बनीं तथा वारुणी दैत्यों के हिस्से में पड़ी। यह आनंद से हँसती थी, तब गंगा में गिरे हुए इसके अश्रु कमल बनते थे (नारद. २.६८.१४)। क्षीरसागर में से कमोदा, लक्ष्मी, ज्येष्ठा, तथा वारुणी उत्पन्न हुई थीं। यहा अमृत के फेन में से उत्पन्न हुई। यही तुलसी है। यह कामोदनगर में रहती है। इसके हंसने से पीले फूल उत्पन्न होते थे (विहुंड देखिये; पद्म. भू. ११८-१२१)।

काम्पिल्य--(सो. नील.) भागवतमतानुसार भर्म्याश्वपुत्र, विष्णुमतानुसार हर्यश्वपुत्र तथा वायुमतानुसार रिक्षपुत्र है (कपिल १०. देखिये)।

काम्बोज औपमन्यव--एक आचार्य (वं. ब्रा. २)। निरुक्त में इन दोनों शब्दों का दूसरे अर्थ में परंतु एकत्र उल्लेख आया है (नि. २.२)।

कायनि--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

कायव्य--एक निषाद। अरण्य के सब दस्युओं का यह अधिपति था। यह शूर तथा परमधार्मिक था। इसने अपने अनुयायीयों को बताया कि, वे ब्राह्मणों का कभी भी द्वेष न करें। उन्हें सर्वभाव से भजें, तथा छोटे बालक, स्त्रियां, भयभीत, भागनेवाले तथा निरायुध का वध न करें। जो ब्राह्मणों के शत्रु हैं, उनसे युद्ध करो तथा उन्हें मार डालो। इस तरह का व्यवहार करोगे तो उत्तम गति प्राप्त होगी। सदाचार का अवलंबन करने से दस्युओं का भी उद्धार होता है, यह बताने के लिये यह पुरातन कथा दी गयी है (म. शां. १३५)। इसे कापच्य भी कहते हैं।

कारकि--अंगिराकुल का एक गोत्रकार। काचापि इसका पाठभेद है।

कारडि--भगवत् औपमन्यव कारडि देखिये।

कारंधम--अविक्षित् का नामांतर।

कारीर--उद्गीथ के संबंध में विशेष ज्ञान रखने वाला आचार्य (जै. उ. ब्रा. २.४.४)।

कारीरथ--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कारीरादि--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. २.४.४)

कारीरय--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

कारीषि--विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ४.५५ कुं.)

कारुकायण--विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार। इसका पाठभेद कामुकायन है।

कारुष--करूषक देश का राजा। वृद्धशर्मा का नामांतर। इसका पुत्र दंतवक्र। भारतीय युद्ध में यह राजा दुर्योधन के पक्ष में था (भा. ९.२४.३७)।

कारोटक--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

कार्कैय--'काकेयस्थ' का पाठभेद।

कार्तवीर्य—(सो. सह.) इसकी माता का नाम राकावती (रेणु. १४)। शिवपूजाभंग होने के कारण यह करविहीन जन्मा। मधु अगले जन्म में शिवशाप के कारण कार्तवीर्य हुआ (रेणु. २८.)।

इसके लिये अर्जुन, सहस्रार्जुन तथा हैहयाधिपति नामांतर प्राप्त है। यह सुदर्शन चक्र का अवतार है (नारद. १.७६)। कृतवीर्य के सौ पुत्र च्यवन के शाप से मृत हुए। केवल यह सप्तमीव्रतस्नान के कारण उस शाप से मुक्त हुआ (मत्स्य. ६८)। कृतवीर्य ने संकष्टीव्रत करते समय जम्हाई दे कर उसके प्रायश्चित्तार्थ आचमन नहीं किया। गणेश के प्रसाद से चतुर्थीव्रत करने से उसे पुत्र हुआ, परंतु उपरोक्त पापाचरण के कारण इसे केवल दो कंधे, मुंह, नाक तथा आखें इतनी ही इंद्रियाँ थीं। यह देख कर इसके माता-पिता ने बहुत शोक किया। एक बार दत्त उनके पास आये, तब उन्होंने उसे पुत्र दिखाया। उस समय यह बारह वर्ष का था। दत्त ने इसे एकाक्षरी मंत्र बता कर, बारह वर्ष गणेश की आराधना करने के लिये कहा। इसने तदनुसार आराधना की, तब गणेश ने इसे सुंदर शरीरयष्टि तथा सहस्र हाथ दिये। इसी कारण इसका नाम सहस्रार्जुन हुआ (गणेश. १.७२-७३)।

दत्तउपासना, वरप्राप्ति—कृतवीर्य के पश्चात् जब अमात्य इसको राज्याभिषेक करने लगे, तब कार्तवीर्य ने गद्दी पर बैठना अस्वीकार कर दिया। इसे ऐसा लगता था कि, राजा के नाते कर का योग्य मोबदला अपने द्वारा प्रजा को नहीं मिलेगा। इसे गर्गमुनि ने सह्याद्रि की गुहाओं में दत्त की सेवा करने की सलाह दी (मार्कं. १६)। निष्ठापूर्वक एक हजार वर्ष तक दत्तात्रेय की सेवा करने पर, इसे चार वर मिलेः—१. सहस्रबाहु, २. अधर्मनिवृत्ति, ३. पृथ्वीपालन, ४. युद्धमृत्यु। इसने कर्कोटक नाग से अनूप देश की माहिष्मती अथवा भोगावती नगरी जीती। यही वर्तमान ओंकार मांधाता हैं। वहाँ मनुष्यों को बसा कर, इसने अपनी राजधानी बनायी। तदुपरांत कार्तवीर्य को दत्त तथा नारायण ने राज्याभिषेक किया। उस समय समस्त देव, गंधर्व तथा अप्सरायें उपस्थित थीं (मार्कं. १७)।

पराक्रम— थोडे ही समय में, इसने समस्त पृथ्वी जीत ली, तथा यह उसका पालन करने लगा। इसने मारी नामक राक्षस का वध किया (नारद.१.७६)। इससे युद्ध करने के लिये रावण अपने मित्र शुक, सारण, महोदर, महापार्श्व तथा धूम्राक्ष सहित आया था। उस समय ऐसा पता चला कि, कार्तवीर्य राजमहल में नहीं है। यह इस समय नर्मदा पर स्त्रियों सहित क्रीडा करने गया था। आगे चल कर, रावण विंध्यपर्वत पार कर नर्मदा तट पर गया। वहां स्नान कर शंकर की पूजा करने बैठा। इधर कार्तवीर्य ने सहज लीलावश नदी का प्रवाह अपने सहस्र हाथों से रोक दिया। वह रुका हुआ पानी विविध दिशाओं में बहने लगा। इस प्रकार का एक वेगवान प्रवाह रावण तक पहुँचा। उससे उसका पूजाभंग हो गया। इस प्रकार पूजाभंग करनेवाला कार्तवीर्य है, यह समझते ही रावण ने इस पर आक्रमण किया। परंतु इसने उसके मंत्रियों को हतवीर्य कर दिया तथा रावण को पकड लिया। अपना पौत्र पकड़ा गया, ऐसा वर्तमान सुन कर पुलस्त्य ऋषि कार्तवीर्य के पास आया। इसने उसका सम्मान किया तथा इच्छा पूछी। तब इसने रावण को छोड़ देने की प्रार्थना की। इसने आनंद से रावण को छोड़ दिया, तथा अग्नि के समक्ष एक दूसरे से स्नेहपूर्वक व्यवहार करने की तथा पीडा न देने की प्रतिज्ञा की (वा.रा. उ. ३१-३३; विष्णु. ४.११; आ. रा. सार. १३; भा. ९.१५)। कार्तवीर्य ने नर्मदा के किनारे खडे रह कर पांच बाण छोडे, जिससे लंकाधिपति रावण मूर्च्छित हुआ। उसे धनुष्य से बांध कर यह माहिष्मती के पास लाया। बाद में पुलस्त्य की प्रार्थनानुसार उसे छोड़ दिया (मत्स्य. ४३; ह. वं. १.३३; पद्म. सृ. १२; ब्रह्म. १३)। वंशावली के अनुसार रावण इसका समकालीन होना असंभव है। रावण व्यक्तिनाम न हो कर तामिल भाषा का Irivan या Iraivan शब्द का संस्कृत रूप होना चाहिये। इस शब्द का अर्थ हैं देव, राजा, सार्वभौम अथवा श्रेष्ठ (J R A S. 1914, P 285)। रावण विशेषनाम समझा गया, इसलिये यह घोटाला हुआ। विष्णुपुराण की इस कथा में पुलस्त्य का नाम नहीं है (४.११)।

पृथ्वी जीत कर इसने बहुत यज्ञ किये (भा. ९.२३) १०००० यज्ञ किये, सात सौ यज्ञ किये (ह.वं. १.३३) यों भी कहा गया है। उस समय इसे यज्ञ से एक दिव्य रथ तथा ध्वज प्राप्त हुआ (मत्स्य. ४३; ह. वं. १.३३; मार्कं. १७; पद्म. सृ. १२; अग्नि. २७५; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म. १.२३)। बाद में प्रजा को यह इतना दुख देने लगा, कि पृथ्वी त्रस्त हो गई। तब देवताएं विष्णु के पास गये तथा उन्होंने सब कथा बताई। विष्णु ने उन्हे अभय दिया तथा कार्तवीर्य के नाशार्थ परशुरामावतार लेने का निश्चय किया। शंकर ने परशुराम को कार्तवीर्य संहार के लिये आवश्यक बल दिया (म. क. २४.

१४७-१५६; विष्णुधर्म २.२३)। हैहयाधिपति मत्त होने के कारण, कुमार्ग की ओर प्रवृत्त हुआ। यह अत्रिमुनि का अपमान कर रहा है, यह देखते ही कार्तवीर्य को दग्ध करने के लिये दुर्वास सात दिनों में ही माता के उदर से च्युत हो गया (मार्क. १६.१०१)। दुर्वास दत्त का बडा भाई था। दत्त की कृपा भी कार्तवीर्य ने संपादन की थी।

तदनंतर आदित्य ने विप्ररूप से इसके पास आ कर खाने के लिये कुछ भक्ष्य मांगा। इसने कौनसा भक्ष्य दूँ, ऐसा उसे पूछा। तब उसने सप्त द्वीप मांगे। परंतु उन्हें देने के लिये यह असमर्थ दिखने के कारण आदित्य ने कहा, 'तुम पांच बाणों को छोडो। उनके अग्रभाग पर मैं बैठूँगा तथा अपनी इच्छानुसार प्रदेश खाऊंगा'। यह मान्य कर के इस ने पांच बाण छोड़े। आदित्य ने जो पूर्व तथा दक्षिण के प्रदेश जलाये, उसमें आपव वसिष्ठ ऋषि का आश्रम भी जला दिया। यह ऋषि वरुण का पुत्र था। वह कार्यवश आश्रम के बाहर, १०००० वर्षों तक जल में रहने के लिये गया था। वापस आते ही उसने देखा कि, आश्रम दग्ध हो गया है। उसने कार्तवीर्य को शाप दिया, 'तुम्हारा वध परशुराम रण में करेगा' (वायु. ९४.४३-४७; ९५.१-१३. मत्स्य. ४३-४४; ह. वं. १.३३; पद्म. सृ. १२; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म १. ३१)। कई ग्रंथों में आदित्य के बदले अग्नि भी दिया गया है (म. शां. ४९.३५)।

काफी दिन बीत जाने के बाद, यह एक बार मृगया के हेतु बाहर गया, तथा घूमते-घूमते जमदग्नि के आश्रम में गया। वहाँ जमदग्नि की पत्नी तथा जमदग्नि ने इन्द्र द्वारा दी गई कामधेनु से इसका सत्कार किया। तब यह जमदग्नि से वह गाय मांगने लगा। जमदग्नि ने इसे ना कर दिया। तब यह जबरदस्ती उस गाय को ले जाने लगा। परंतु उस गाय के आक्रोश से तथा शृंगों से इसकी संपूर्ण सेना एक पल में मृत हो गई। कामधेनु स्वर्ग में चली गई (पद्म. उ. २४१)। परंतु आखिर कार्तवीर्य यह गाय तथा साथ में उसका बछड़ा ले ही गया। इसके पुत्रों ने इसको न मालूम होते ही बछड़ा चुरा लाया (म. शां. ४९.४०)।

परशुराम तपश्चर्या के लिये गया था। केशव को संतुष्ट कर के अनेक दिव्यास्त्र ले कर वह अपने आश्रम में आया। कामधेनु ले जाने का वर्तमान उसे ज्ञात हुआ। तब क्रोध से कार्तवीर्य पर आक्रमण कर, नर्मदा के किनारे उसने इसे युद्ध के लिये आमंत्रित किया। कार्तवीर्य की पत्नी मनोरमा ने इसे युद्ध पर न जाने के लिये प्रार्थना की, परंतु यह नहीं मानता यों देख कर उसने प्राणत्याग कर दिया। दत्त के वर से प्राप्त इनकी बुद्धि नष्ट हो गई। तदनंतर इसका परशुराम से युद्ध हुआ। अंत में बाहुच्छेद हो कर यह मृत हो गया।

यह युद्ध गुणावती के उत्तर में तथा खांडवारण्य के दक्षिण में स्थित टीलों पर हुआ (म. द्रो. परि. १.क्र. ८. पंक्ति. ८३९ टिप्पणी)। बाद में परशुराम द्वारा किये गये कार्तवीर्य के वध की वार्ता जमदग्नि ने सुनी। उसने राम से कहा, 'यह कार्य तुमने अत्यंत अनुचित किया। क्षमा ब्राह्मण का भूषण है। अब प्रायश्चित के लिये एक वर्ष तक तीर्थयात्रा करने के लिये जाओ'। इस कथनानुसार परशुराम तीर्थयात्रा करने के लिये गया। तब पहले बैर का स्मरण कर कार्तवीर्य के पुत्रों ने ध्यानस्थ जमदग्नि का बाणों से वध किया तथा उसका मस्तक ले कर वे भाग गये। परशुराम के लौटने पर, यह वृत्त उसे मालूम हुआ। माता की सांत्वना के लिये, उसने इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की प्रतिज्ञा की, तथा उन पुत्रों पर आक्रमण किया। पांच को छोड़ बाकी सब पुत्रों का वध कर के, परशुराम पिता का मस्तक वापस ले आया (म. व. ११७; भा. ९.१५; अग्नि. ४.)। कई स्थानों पर लिखा है कि कार्तवीर्य ने जमदग्नि का वध किया (वा. रा. बा. ७५; पद्म. उ. २४१)। पद्मपुराण में तमाचा लगाने का भी उल्लेख है।

ऊपर दिया गया है कि, इसे हजार हाथ थे, परंतु इसे घरेलू तथा अन्य कार्यो के लिये दो हाथ थे (ह. वं. १. ३३; ब्रह्म. १३)। परंतु इसे सहस्रबाहु नाम था (ह. वं. १.३३; मत्स्य. ६८; अग्नि. ४; गणेश १.७३)। महाभारत में लिखा है कि, आपव का आश्रम हिमालय के पास था। यह आश्रम अग्नि को दे सका, इससे यह स्पष्ट है कि, इसका राज्य मध्यदेश पर होगा। अयोध्या का राजा हरिश्चन्द्र तथा त्रिशंकु इसके समकालीन थे। यद्यपि मथुरा के शूरसेन देश की स्थापना स्वयं शत्रुघ्नपुत्र शूरसेन ने की, तथापि लिंगपुराण में वर्णन है कि इसकी स्थापना इसके पुत्र ने की (१.६८)। इसके सब पुत्रों के लिये स्वतंत्र देश थे (ब्रह्माण्ड. ३.४९)। यह संपूर्ण कथा, जमदग्नि की कामधेनु को मुख्य मान कर बताई गई है। पद्मपुराण में उसी गाय को सुरभि माना गया है (उ. २४१)। वहाँ इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की प्रतिज्ञा का उल्लेख नही है। वहाँ (ब्रह्मांड. ३.

२१.५-४७.६१) उल्लेख है कि, परशुराम ने कान्यकुब्ज तथा अयोध्या के सब राजाओं की सहायता से अर्जुन को मारा तथा भार्गवों का पराभव किया।

चक्रवर्तिपद—इसका शासन ८५ हजार वर्षों तक रहा। इस प्रदीर्घ शासनकाल में इसने हैहयसत्ता तथा वैभव को अत्यंत वृद्धिंगत किया। प्रतीत होता है कि, इसने नर्मदा के मुख से हिमालय तक का प्रदेश जीत लिया था। इसकी सत्ता चारों ओर सुदूर तक फैली थी, इसका प्रमाण यह है कि, इसे कई स्थानों पर सम्राट तथा चक्रवर्ति कहा गया है (ह. वं. १.३३; पद्म. सृ. १२; ब्रह्म. १३; विष्णुधर्म १.२३; नारद. १.७६)।

नर्मदा तथा समुद्र का अपने हाथों से यह इस प्रकार मंथन करता था कि, सब जलचर इसके शरण आ जाते थे। यमसभा में यह यम के पास अधिष्ठित रहता है (म. स. ८.८)। इसका ब्राह्मणों के श्रेष्ठत्व के संबंध में पवन से संवाद हुआ था (म. अनु. १५२-१५७)। उसी प्रकार, मुझसे लड़ने लायक शक्तिशाली कौन है, इस विषय पर समुद्र से भी इसका संवाद हुआ है (म. आश्व. २९)। इसने प्रवालक्षेत्र में प्रवालगणप का बड़ा मंदिर बनाया (गणेश. १.७३)। माघस्नानमाहात्म्य के संबंध में इसका दत्त से संवाद हुआ था (पद्म. उ. २४२-२४७)। नारदपुराण में इसकी पूजाविधि बतायी है। इसके शरीरवर्णन में दिया है कि यह काना था (नारद. १.७६)।

संतति—इसे सौ पुत्र थे। उनके नाम शूर, शूरसेन, वृष्ण्याद्य, वृष, जयध्वज (वायु. ९४ ४९-५०) धृष्ट, कोष्टं (मत्स्य. ४३), कृष्ण (ह. वं. १.३३; पद्म. सृ. १२), सूर, सूरसेन (अग्नि. २७५), वृषण, मधुपध्वज (ब्रह्म. १३), धृष्ट, कृष्ण (लिंग. १. ६८), वृषभ, मधु, ऊर्जित (भा. ९.२३)। भागवत में कहा है कि, इसे दस हजार पुत्र थे।

२. (सो. सह.) मत्स्य तथा वायु के मत में कनक के चार पुत्रों में से एक।

कार्ति—(सो. द्विमीढ.) उग्रायुध का पैतृक नाम।

कार्तिकस्वामिन्—स्कंद तथा गजानन देखिये।

कार्तिमती—शुककन्या तथा अणुह की पत्नी।

कार्तिवय—कश्यपगोत्र का एक ब्रह्मर्षि।

कार्दमायनि—भृगुगोत्र का एक ब्रह्मर्षि।

कार्द्रपिंगाक्षि—काद्रुपिंगाक्षी का पाठभेद।

कार्पणि—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

कार्मायन—मांकायन का पाठभेद।

कार्शकेयीपुत्र—प्राचीनयोगीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य वैदभृतीपुत्र था (बृ. उ. ६. ५. २ काण्व)। माध्यंदिन में गुरु प्राश्नीपुत्र आसुरवासिन् है (बृ. उ. ६. ४. ३३)।

कार्षणि—भृगुकुल का गोत्रकार। पार्वणि पाठभेद है।

कार्ष्णाजिनि—एक प्राचीन आचार्य (जै. सू. ४. ३. १७; ६. ७. ३५; ब्रह्मसूत्र. ३. १. ९; का. श्रौ. १. ६. २३)। इसने कार्ष्णाजिनिस्मृति नामक ग्रंथ रचा। पैठीनसि, हेमाद्रि, माधवाचार्य आदि ग्रंथकार इस स्मृति का उल्लेख करते हैं (C. C.)। मिताक्षरा (याज्ञ. ३. २६५), अपरार्क, स्मृतिचंद्रिका तथा श्राद्धविषयक अन्य ग्रंथों में इसका उल्लेख है। अपरार्क में (पृ. १३८) इसका एक श्लोक दिया है। उसमें ब्रह्मदेव के सनक, सनंदन, सनातन, कपिल, आसुरि, वोढ तथा पंचशिख इन सात पुत्रों का उल्लेख है। राशियों के चिह्नों के संबंध मे इसका एक श्लोक अपरार्क में दिया है (४२०)।

कार्ष्णायन—कृष्णपराशरकुल का गोत्रकार।

कार्ष्णि—कृष्ण के पुत्रों का, विशेषतः प्रद्युम्न का नाम (भा. १०. ५५)।

२. अभिमन्यु (म. भी. ४५. २०)।

३. विश्वक देखिये।

काल—ध्रुव वसु का पुत्र।

२. जालंदर की सेना का एक असुर (पद्म. उ. १२)।

३. परशुराम का बंधु (कालकाम देखिये)।

४. ग्यारह रुद्रों में से एक (भा. ३. १२)।

कालक—विजर का पुत्र।

कालकंज—ये असुर थे। ये आकाश में रहते थे (अ. वे. ६. ८०. २)। इनका पराभव इंद्र ने किया। ये इंद्र के पराक्रम का एक स्थान हैं (क. सं. ८. १; मै. सं. १. ६. ९; तै. ब्रा. १. १. २. ४-६; कौ. उ. ३. १)। इन्होंने स्वर्गप्राप्ति के लिये अग्निचयन अनुष्ठान आरंभ किया। तब इसका पराभव करने के लिये, इंद्र वेषांतर कर इनके पास आया तथा इससे उसने कहा, 'हे असुरों! मैं ब्राह्मण हूँ। तुम्हारे अनुष्ठान में मुझे लेलो। मुझे भी स्वर्ग जाना है'। असुर मान गये। चयन के लिये असुर इष्टक (ईंट) जमा रहे थे। उनके साथ साथ इंद्र ने अपनी एक ईंट जमायी तथा अपनी

चित्रा नामक ईंट का मन में स्मरण रखा। अनुष्ठान समाप्त होने के पश्चात् चयन पर आरोहण कर असुर स्वर्ग जाने लगे।

इतने में चयन में से इंद्र ने अपनी ईंट धीरे से निकाल ली। जिससे चयनरूपी श्येनपक्षी ध्वस्त हो कर नीचे गिरा, तथा असुरों का स्वर्ग जाना रुक गया। कुछ लोग स्वर्ग की आधी राह में थे। चयनध्वंस की घटना के कारण वे मकोड़ा नामक छैः पैरों के कीडे बने। दो असुर श्रद्धातिशय के कारण स्वर्ग जा पहुँचे, परंतु चयनभ्रष्टता के पाप से दोनों देवलोक में श्वान बने (तै. ब्रा. १.१.२; कालकेय देखिये)।

कालकवृक्षीय—एक ऋषि। इसके पास भूत, भविष्य तथा वर्तमान जाननेवाला एक पक्षी था। एक बार यह कोसल देशाधिपति क्षेमदर्शी राजा के यहाँ गया। राजाने पक्षी का गुण जान कर प्रश्न पूछा, 'मेरे मंत्री मेरे संबंध में कैसे हैं?' इस पर पक्षी ने एक मंत्री के जो दुर्गुण थे, वें बताये। दूसरे दिन अन्यों के दुर्गुण बताना तय किया। तब रात्रि में अन्य मंत्रियों ने, उस पक्षी की हत्या की। इससे राजा समझ गया कि, ये सारे मंत्री अनिष्टचिंतन करनेवाले हैं। इस ऋषि की सहायता से राजा ने सबको सजा दी (म. शां. १०१; स. ७.१६)। एक बार क्षेमदर्शी निर्बल हो कर इस मुनि के पास आया। उसने मुनि से पूछा "अब क्या करें?" मुनि ने उसकी सब तरह से परीक्षा लेकर क्षेमदर्शी राजा को अपना प्रधान नियुक्त करने का विदेहपति को आदेश दिया। विदेहपति ने यह मान्य किया। दोनों ने मुनि का आदरपूर्वक पूजन किया (म. शां. १०५-१०७; क्षेमदर्शिन् देखिये)।

कालका—वैश्वानर दानव की कन्या तथा कश्यप प्रजापति की स्त्री (भा. ६.६)। कुछ लोगों का दावा है कि, यह मारीच राक्षस की स्त्री है। उपरोक्त विधान ठीक नहीं है। कश्यप को मारीच भी कहते हैं, अतः वह कश्यप ही की पत्नी है। इसके कालकेय ऊर्फ कालकंज नामक असंख्य पुत्र हुए (कश्यप तथा कालकंज देखिये; म. व. १७०)।

कालकाम—विश्वेदेवों में से एक। संप्रति परशुराम-क्षेत्र में परशुराम के पास रहते है। वहाँ के लोग संकल्प में भी इसका उच्चार करते हैं, परंतु इस विषय में प्रमाण अप्राप्य है।

कालकामुक कार्मुक—खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक (खर देखिये)।

कालकाक्ष--गरुड़ के द्वारा मारा गया एक राक्षस।

कालकीर्ति--एक क्षत्रिय (म. आ. ६१.३४)।

कालकूट--त्रिपुरासुर का आश्रित दैत्य (गणेश. १. ४३)।

कालकेतु--एक असुर। एकवीर नामक हैहय राजा ने इसका वध किया।

कालकेय (कालेय)--हिरण्यपुर में रहनेवाले असुर। इन्हें अर्जुन ने मारा (म. व. ९८.१७०)। मारीच की कालका नामक स्त्री थी। उसके पुत्र कालकेय। इनके लिये कालखंज भी नामांतर है (म. स. ९.१२)।

इनके साथ रावण का युद्ध हुआ था। तब रावण की भगिनी शूर्पणखा का पति विद्युज्जिह्व अनजाने रावण द्वारा मारा गया। कालकेय १४ सहस्र थे (वा. रा. उ. २४.२८)।

कालखंज--कालकंज, कालका, कालकेय देखिये।

कालघट--जनमेजय राजा के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.८)।

कालजित्--लक्ष्मण का सेनापति (कुशीलव देखिये)।

कालजिह्व--एक रुद्रगण।

कालनर--(सो. अनु.) भागवतमतानुसार सभानर का पुत्र। इसके पुत्र सृंजय। इसे कालानल भी कहते हैं।

कालनाभ--हिरण्यकशिपु की सभा का एक दैत्य तथा रुषाभानु का पुत्र (भा. ७.२)।

२. कश्यप तथा दनु का पुत्र (ह. वं. १.३.१००)।

३. विप्रचित्ति तथा सिंहिका का पुत्र। इसे परशुराम ने मारा (ब्रह्माण्ड. ३.६.१८-२२)।

४. कृष्णपुत्र सांब के द्वारा मारा गया दैत्य।

कालनेमि—लंका का एक राक्षस। लक्ष्मण युद्ध में मूर्च्छित हुआ। उसे औषधि लाने के लिये हनूमान् द्रोणाचल कि ओर जा रहा था। रावण को यह समाचार मिला। मार्ग में रोड़ा अटकाने के लिए उसने कालनेमि की योजना की। यह ऋषि के वेष में हनुमान् के, मार्ग में जा बैठा। पानी के लिये हनूमान् वहाँ रुका। इसका कपट जल्दी ही समझ गया, इसलिये इसे मार कर वह अविलंब आगे बढ़ा (अध्या. रा. यु. ७)।

सौ मुखोंवाला एक दैत्य (मत्स्य. १७७)।

पातालवासी एक दैत्य (पद्म. उ. ६; म. स. ५१)। विरोचन बद्ध होने पर इसने सारी सेना का पराभव किया। विष्णु पर आक्रमण करने के कारण चक्र ने इसके सौ हाथों को तथा मस्तकों को तोड़ डाला, एवं इसके प्राण ले लिये (पद्म. सृ. ४)। विष्णु ने वध किया, इस लिये प्रतिशोध लेने के लिये यह कंस हुआ (भा. १०.१; कंस देखिये)।

संह्राद का पुत्र। इसके चार पुत्रः—ब्रह्मजित्, ऋतुजित्, देवांतक तथा नरांतक।

कालपथ--विश्वामित्र ऋषि का पुत्र (म. अनु. ४. ५०)।

कालपृष्ठ--कश्यप को दिति से उत्पन्न दैत्य। इसने तपस्या कर वर मांगा, 'जिसके सिर पर मैं हाथ रखूँ, वह भस्म होवे।' बाद में इसका प्रयोग यह शंकर पर करने लगा। विष्णु ने मोहिनीरूप धारण कर, इसे आपने ही सिर पर हात रखने को उद्युक्त किया। अतः यह स्वयं भस्म हो गया (स्कन्द. ५.३.६७; भस्मासुर देखिये)।

कालभीति--एक शिवभक्त। गर्भ में ही यह कालमार्ग नामक असुर से डर रहा था, इस लिये इसका नाम कालभीति रखा गया। इसके पिता मांटी ने पुत्रप्राप्ति के हेतु से १०० वर्षों तक रुद्र का अनुष्ठान किया। तब मांटी की पत्नी गर्भवती हुई। चार वर्ष होने पर भी गर्भ बाहर नहीं आता था। तब मांटी ने गर्भ से इसका कारण पूछा। गर्भ ने उत्तर दिया, मुझे कालमार्ग का डर लग रहा है। अनंतर मांटी ने शिवजी को इस वृत्तान्त का कथन किया। शिवजी ने इसे धर्म, ज्ञान, वैराग्य आदि का बोध कराने को कहा। बोध प्राप्त होने पर गर्भ बाहर आया। आगे चल कर, इसका संस्कार होने पर कालभीतिक्षेत्र में इसने अनुष्ठान किया। यह स्वर्गसुख का उपभोग करने लगा। शिवजीने इसकी भक्ति देख प्रसन्न हो कर वर दिया, 'तुम ने कालमार्ग पर विजय प्राप्त की, अतः तुम 'महाकाल' नाम से प्रख्यात हो जाओगे।' साथ ही उन्होंने आशीर्वाद दिया कि, तुम यहाँ करंधम को उपदेश दोगे। अनंतर मेरे प्रतिहारी नंदी बनोगे। (स्कंद. १.२.४०)।

कालभैरव--भैरव तथा रुद्र देखिये।

कालयवन--गार्ग्य (गर्ग) तथा गोपाली का पुत्र। इसका पिता गार्ग्य वृष्णि तथा अंधक का पुरोहित था। कहीं उसे गर्ग नाम से भी उल्लेखित किया गया है। गार्ग्य कडे ब्रह्मचर्य से रहता था। एक बार उसके साले ने उसे षंढ (नपुंसक) कहा। यह सुन कर गार्ग्य अत्यंत क्रुद्ध हुआ। इसलिये उसने दक्षिण में जाकर लोहपिष्ट भक्षण किया। बारह वर्ष तपस्या की। शंकर को प्रसन्न कर लिया। शंकर से यादवों को पराजित करनेवाला पुत्र उसने मांग लिया। यह घटना दक्षिण में अजितंजय नामक नगर में हुई। उस समय यवनाधिपति राजा निपुत्रिक था। वह पुत्र की कामना कर रहा था। उसे गार्ग्य के वर का पता चला। तब उसने गार्ग्य को गोपस्त्रियों में से गोपाली नामक ग्वालन से पुत्र होने का प्रबन्ध किया। इस तरह उत्पन्न पुत्र कालयवन है।

यवनराज के घर छोटे से बडा हुआ कालयवन सौभाग्य से उसके राज्य का अधिपति बन गया। इसका कृष्ण के साथ संजोग से युद्ध हुआ वा सहेतुक रचाया गया, इस विषय में पुराणों की एकवाक्यता नहीं है। कालयवन दिग्विजय के लिये निकला। मथुरा के बलशाली यादवों पर इसने आक्रमण किया। इसी प्रकार का निर्देश कुछ ग्रंथों में है। जरासंध कृष्ण को जीतने में असमर्थ था, अतः हेतुपुरस्सर सौभपति शाल्वद्वारा कालयवन को निमंत्रित करने का उल्लेख हरिवंश में है।

जाते समय, कृष्ण शायद विघ्न डालेगा इस लिये सौभपति शाल्व जरासंध का संदेश लेकर इसके पास आकाशमार्ग से आया। कालयवन इसी संधि की ताक में था। इसने उसी दिन विपुल सेना ले कूच करने की तैयारी की। यह यवन था, तथापि कूच करने के पहले इस के द्वारा अग्निहवन देने का उल्लेख मिलता है (ह. वं. २.५४)।

इधर जरासंध के बारबार के आक्रमणों से कृष्ण त्रस्त हो गया था। इसलिये उसने मथुरा के समान समतल मैदान में स्थित राजधानी छोड़ कर दूरस्थ समुद्रवेष्ठित द्वारका को राजधानी बनाने की यादवों से मंत्रणा की। एक ओर से जरासंध तथा दूसरी ओर से कालयवन के आगमन को देख कर, चतुर कृष्ण ने एक रात में ही राजधानी बदलने का निश्चय किया।

इसके पूर्व उसने कालयवन को डराने का प्रयत्न किया। एक काले सर्प को घडे में रख कर, उस पर मुद्रा लगाई गई। अपने दूत के द्वारा वह घडा कृष्ण ने कालयवन के पास भिजवाया। इसका विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। कालयवन ने सर्प देख कर स्वाभाविक रूप से उद्गार निकाले, 'कृष्ण इस काले सर्प की तरह है।' उस घडे में

काटने वाली बहुत सी चीटियाँ भर कर, वह घड़ा कृष्ण को लौटा दिया। इस संदेश का तात्पर्य यह था कि, तुम यद्यपि कालसर्प की तरह प्रबल हो, तो मैं संख्या में अधिक हूँ। अतः चींटियों की तरह तुम्हें नष्ट करूँगा।

यह देख कर कृष्ण ने एक रात्रि में राजधानी बदल ली। सबको धैर्य बँधा कर, वह स्वयं पुनः मथुरा में पैदल आया। निःशस्त्र स्थिति में मथुरा से बाहर आये हुए कृष्ण को कालयवन ने देखा। कालयवन ने कृष्ण का पीछा किया। ऐसे काफी दूर जाने के बाद, कृष्ण एक गुफा में प्रविष्ट हुआ। वहाँ मुचकुंद सोया था। कृष्ण ने अपना वस्त्र धीरे से मुचकुंद के शरीर पर ड़ाला। तथा स्वयं ओट में छिप गया (भा. १०. ५१-५२)। अन्यत्र शरीर पर वस्त्र ड़ालने का उल्लेख नहीं है। कालयवन ने सुप्त मुचकुंद को ही कृष्ण समझा तथा उसपर लत्ता-प्रहर किया। इस से मुचकुंद एकदम जाग्रत हो गया। क्रोधित हो कर केवल दृष्टिक्षेप से कालयवन को उसने जला दिया (ह. वं. २. ५२-५७; पद्म. उ. २७३. ४८-५७; विष्णु. ५. २३; ब्रह्म. १४. ४८-५२; १९६; म. शां. ३२६. ८८)।

कालवीर्य—एक असुर (सैंहिकेय देखिये)।

कालशिख—वसिष्ठगोत्रीय ऋषि।

काला—काष्ठा देखिये।

२. देवों की स्तुति से प्रसन्न हो कर, शुंभनिशुंभ का वध करने के लिये देवी पार्वती द्वारा उत्पन्न शक्ति। इसने धूम्रलोचन, चंड़मुंड़, रक्तबीज, शुंभनिशुंभ आदि का वध किया (दे. भा. ५. २२-३१; शुंभनिशुंभ तथा रक्तबीज देखिये)। इसे काली, कालिका तथा कौशिकी नामांतर हैं। उपरोक्त युद्ध में सब देवताओं की शक्तियाँ, अपने अपने लक्षणों से युक्त हो कर, इसकी सहायता करने के लिये आईं। उनके नाम १. ब्रह्माणी, २. वैष्णवी, ३. शांकरी, ४. इन्द्राणी, ५. वाराही, ६. नारसिंही, ७, याम्या, ८. वारुणी, ९. कौवेरी (दे. भा. ५. २८)।

कालाक्ष—घटोत्कच देखिये।

कालानल—(सो. अनु.) कालनर तथा यह एक ही है।

२. एक दैत्य। गजानन ने विजयपुर में इसका वध किया। वहाँ गजानन का नाम विघ्नहर है (गणेश. १. ६३)।

कालायनि—व्यास की ऋक्‌शिष्य परंपरा का बाष्कलि का शिष्य (व्यास देखिये)।

कालिक—व्यास की सामशिष्य परंपरा का वायु तथा ब्रह्मांडमत में हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

२. मय तथा रंभा के पुत्र (ब्रह्माण्ड. ३६.२८-३०)।

कालिंग—एक अंत्यज। यह चोरी करने गया था, तब तीर्थ में इसकी मृत्यु हुई, इसलिये इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. २१७)।

कालिंदी—कृष्ण की पत्नी। पूर्वजन्म में यह सूर्यकन्या थी। उस जन्म में, कृष्णप्राप्ति के लिये यह यमुना के तट पर तपस्या कर रही थी। इसका मनोदय जान कर कृष्ण ने इसका पाणिग्रहण किया। इसे श्रुत, कवि, वृष, वीर, सुबाहु, भद्र, शांति, दर्श, पूर्णमास तथा सोमक ये दस पुत्र हुए (भा. १०.६१)।

कालिय—यह काद्रवेयकुल के पन्नग जाति का नाग था (भा. १०.१७.४; म. आ. ३१.६; स. ५३.१५-१६)। यह पहले रमणकद्वीप में था। गरुड़ त्रस्त न करें, इसलिये हर माह में पौर्णिमा को, यह उसको भक्ष्य पहुँचा देता था। एक बार इसने गरुड़ का भाग भक्षण कर लिया। गरुड़ ने क्रुद्ध हो कर इसे मारा। किंतु एक प्रहार लगते ही, यह यमुना में जा कर छिप गया। सौभरि के शाप के कारण, गरुड वहाँ न आ सकता था। कालिय के कारण वहाँ का पानी विषमय बन गया। उसे प्राशन करने के कारण, गोप तथा गौओं की मृत्यु हो गई। तब एक वृक्ष पर चढ़ कर, कृष्ण ने यमुना के जलाशय में छलांग लगाई। कालिय को वहाँ से रमणकद्वीप की ओर भगा दिया, तथा गरुड़ द्वारा संत्रस्त न होने का प्रबंध किया। इसे पांच मुखे थे, तथा यह बड़े ही ऐश्वर्य से रहता था (भा. १०.१६; ह. वं. २.१२; विष्णु. ५.७)।

२. दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

काली—दुर्गा देखिये।

२. मत्स्यी के उदर से जन्म ली हुई उपरिचर वसु राजा की कन्या। इसे मत्स्यगंधिनी, योजनगंधा आदि नाम थे। बाद में सत्यवती नाम भी प्राप्त हुआ। यही आगे चल कर शंतनु की पत्नी बनी। इसे कौमार्यावस्था में पराशर नामक पुत्र हुआ।

३. पंडुपुत्र भीमसेन की दूसरी स्त्री। इसे उससे सर्वगत नामक पुत्र हुआ (भा. ९.२२.३१)। इसके लिये काशी, काशेयी तथा काश्य पाठभेद क्वचित् प्राप्त हैं। यह शिशुपाल की भगिनी थी (म. आश्र. ३२.११)

कालीयक—कद्रू तथा कश्यप का पुत्र।

कालेय—अत्रिकुल का गोत्रकार (अत्रि देखिये)।

२. रसातल में रहनेवाले दैत्यों में से एक (भा. ५. २४)। यह कालकेय का भाई था। भाई की मृत्यु के कारण, चित्ररथ पर इसने आक्रमण किया। परंतु इन्द्रपुत्र जयंत ने बीच ही में इसका वध किया (पद्म. सृ. ६६)।

कावषेय—यह तुर का मातृक नाम है। यह तत्त्वज्ञान का आचार्य था (ऐ. आ. ३.२.६; सां. आ. ८.२)। यह तुर ऋषि को कवषा से उत्पन्न हुआ था (भा. ९.२२)

काव्य--बर्हिषद् पितरों में से एक, तथा स्वतंत्र पितृगण (वायु. ५६.१३)। यह कविपुत्र है।

२. वारुणि कवि का पुत्र। भार्गव तथा अंगिरस गोत्र के मंत्रकार तथा ऋषि। सामवेदी श्रुतर्षि (उशनस् देखिये)

३. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक.

४. उशनस् का पैतृक नाम (ऋ. १.५१.११; ८३.५; १२१.१२; ६. २०.११; ८.२३.१७; अ. वे. ४.२९.६; तै. सं. २.५.८.५)। इटत्, तथा उक्ष्णोरंध्र का भी यह पैतृक नाम है।

काश—काश्य देखिये।

काशकृत्स्न--एक व्याकरणकार। इसका तीन अध्यायों का व्याकरण है (काशिका. ५.१.५८)। एक तत्त्वज्ञानी (ब्र. सू. १.४.२२)।

काशि वा काश्य—इन लोगों का वैदिक वाङ्मय में पर्याप्त उल्लेख आता है। काशी राजा के लिये इस शब्द का उपयोग किया गया होगा। शतानीक सात्राजित के द्वारा काशी राजा धृतराष्ट्र का पराभव हुआ। तब पुनः ब्राह्मणों के हाथों में सत्ता आने की अवधि तक के लिये, काश्य लोगों ने यज्ञ करना बंद कर दिया (श. ब्रा. १३.५. ४.१९)। दूसरा अजातरिपु भी काशी का राजा था। भद्रसेन भी काशी का राजा था। काशीविदेह सामासिक नाम भी प्राप्य है। काशी, कोसल एवं विदेह का एक ही पुरोहित था (सां. श्रौ. १६.२९.५)। काशी तथा विदेह एक दूसरे के बिल्कुल समीप थे (बौ. श्रौ. २१.१३)। काशी-कौशल्य निर्देश भी पाया जाता है (गो. ब्रा. १.९)।

२. वारुणि कवि के आठ पुत्रों में से सातवाँ (कवि देखिये)।

३. (सो. क्षत्र.) भागवत मत में काश्यपुत्र। वायु तथा विष्णु के मत में काश पुत्र। वायु में इसे काश्य कहा है। विष्णु में इसे काशिराज कहा है। (काश्य देखिये)।

काशिक—भारतीय युद्ध में पांडवपक्षीय राजा (म. उ. १६८.१४)।

काशिराज--अंबा, अंबिका तथा अंबालिका का पिता। परंतु यह नाम काशी के किसी भी राजा को लगाया जाता है (भा. ९.२२; प्रतर्दन देखिये)।

२. भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा (म. आ. ६१-६७)।

३. भास्करसंहिता के 'चिकित्साकौमुदी' तंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

काश्य--(सो. क्षत्र.) भागवत मत में सुहोत्र का, एवं वायु तथा विष्णु के मत में सुनहोत्र का पुत्र। ब्रह्मांड, भागवत तथा वायु के मत में, काश्यवंश अमावसुपुत्र क्षत्रवृद्ध से प्रारंभ हुआ। ब्रह्म तथा अग्नि पुराण के मत में वह पौरव सुहोत्र से निकला। परंतु, ब्रह्म तथा अग्नि में सुहोत्र तथा सुनहोत्र नामसाम्य से गड़बड़ हो गई होगी। इस वंश को क्षत्रवृद्धवंश अथवा काश्यवंश कहते हैं (काशि देखिये)।

२. सांदीपनी का नामांतर।

३. (सो. अज.) सेनजित् राजा के चार पुत्रों में से तीसरा। मत्स्य में काव्य नामांतर प्राप्त है।

४. भारतीय युद्ध में पांडवपक्षीय राजा। एकरथ होते हुए भी, युद्ध के समय किसी वरप्रभाव से यह अष्टरथी हो जाता था (म. उ. १६८.१२१)।

५. काशिराज अर्थ से यह नाम अजातशत्रु के लिये प्रयुक्त है। (अजातरिपु २. देखिये)।

काश्यप--किसी विस्तृत कुल का नाम। प्रजापति के द्वारा उत्पन्न सभी प्रजायें काश्यप माने कश्यपकुलोत्पन्न है (श. ब्रा. ७.५.१.५; कश्यप देखिये)।

यह सर्वसाधारण पैतृक नाम है (तै. आ. २.१८; १०.१.८)। अगस्त्य तथा परशुराम के समान, यह भी दक्षिण का निवासी माना जाता है। अपने वंश अथवा उपनिवेश का काश्यप से संबंध जोड़नेवाले तथा काश्यप गोत्रीय माननेवाले लोग सभी जातियों में पाये जाते हैं। शाकटायन के साथ व्याकरणज्ञ कह कर, इसका उल्लेख है (शु. प्रा; ४.५)।

कश्यप गोत्र का मंत्रकार। यह ऋषि भी है (भृगु, कश्यप अवत्सार, ऋश्यशृंग, देवतरस्, श्यावसायन, शूष वाह्नेय, गौतम असित देवल, निध्रुवि, भूतांश, रेभ, रेभसूक्ति, विव्रि तथा हरित देखिये)।

२. एक मांत्रिक ब्राह्मण। सर्पदंश हुए परीक्षित को अपने मंत्रसामर्थ्य से जीवित कर के, धनप्राप्ति करने के लिये यह जा रहा था। यह समाचार पाते ही, वृद्ध ब्राह्मण का रूप ले कर, मार्ग में तक्षक ने काश्यप से भेंट की, तथा इससे

कहा, 'तुम्हारे सामने इस वृक्ष को मैं काटता हूँ। अपने मंत्रसामर्थ्य से तुम इसे जीवित करो, तभी तुम्हारा मंत्र-सामर्थ्य मैं सत्या मानूँगा'। तक्षक के दंश से भस्मसात् वृक्ष, इसने मंत्रसामर्थ्य से अंकुरित कर के दिखाया। इसके मंत्रसामर्थ्य के प्रति तक्षक को पूर्ण विश्वास हो गया। राजा से प्राप्त होनेवाली संपदा से अधिक धन दे कर, तक्षक ने इसे विदा किया। ब्राह्मणशाप के सामने अपना मंत्र सिद्ध न होगा, इस आशंका से काश्यप घर लौटा (म. आ. ३९)। परंतु राजा के पास न जाने के कारण, लोगों ने इसे जातिच्युत कर दिया। तब यह व्यंकटाचल पर गया। वहाँ के तीर्थस्नान से यह पापमुक्त हो गया (स्कंद. २. १. ११)।

३. एक ब्राह्मण। काश्यप की एक पुरानी कथा, भीष्म ने ज्ञान के महत्त्व का वर्णन करने के लिये, युधिष्ठिर को बताई है, वह निम्न प्रकार से है।

काश्यप नामक एक तपस्वी तथा सदाचारसंपन्न ब्राह्मण था। इसे एक वैश्य ने रथ का धक्का दे कर गिरा दिया। तब विकल हो कर, क्रोध से यह प्राण देने के लिये प्रवृत्त हो गया। यह जान कर, इन्द्र शृगाल रूप से वहाँ आया। उसने इसे मानवदेह तथा उसमें भी ब्राह्मण्यप्राप्ति की प्रशंसा कर के मृत्यु से निवृत्त किया, तथा ज्ञान की ओर इसका ध्यान प्रेरित किया। तब काश्यप को भी आश्चर्य हुआ। इसे पता चला, कि शृगाल न हो कर यह इन्द्र है। तब इन्द्र की पूजा कर यह घर लौट आया (म. शां. १७३; नारद देखिये)।

४. एक धर्मशास्त्रकार। अठारह उपस्मृतिकारों में से यह एक है (स्मृतिचन्द्रिका १; सरस्वतीविलास पृष्ठ १३)। उसी प्रकार, पाराशरधर्मसूत्र में भी धर्मशास्त्र-कर्ता कह कर इसका उल्लेख है। परंतु याज्ञवल्क्य-स्मृति में इसका नामनिर्देश नहीं है। इसके ग्रंथो में आह्निककर्म, श्राद्ध, अशौच, प्रायश्चित्तादि के बारे में काफी जानकारी दी गई है। मिताक्षरा, स्मृतिचन्द्रिकादि ग्रंथों में इसके धर्मशास्त्र से उद्धहरण लिये गये है। काश्यप-स्मृति नामक एक स्वतंत्र ग्रंथ हैं। उसमें गृहस्थ के कर्तव्य, भिन्नभिन्न प्रकार के प्रायश्चित्तादि की जानकारी है। कश्यप नामक एक धर्मशास्त्रकार का उल्लेख बौधायनधर्मसूत्र में है (१.२.२०)। परंतु यह तथा कश्यप दोनों भिन्नभिन्न हैं, वा एक ही हैं, इसके विषय में निश्चित जानकारी प्राप्त नहीं होती है। एक व्याकरणकार के रूप में पाणिनि ने इसका उल्लेख किया है (८.४.६७)। यह शिल्पकार तथा शिक्षाकार भी था। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं:—१. काश्यपपंचरात्र, २. काश्यपसंहिता, ३. काश्यपस्मृति, ४. काश्यपसूत्र। कश्यपस्मृति एवं कश्यप संहिता, तथा काश्यपस्मृति एवं काश्यपसंहिता इन ग्रंथों का रचयिता एक ही होगा (C. C.)।

अठारह ज्योतिषसंहिताकारों में से एक। इसकी काश्यपसंहिता प्रसिद्ध है। इस संहिता के कुल पचास अध्याय हैं। कुल श्लोकसंख्या करीब-करीब १५०० है। कहते हैं कि, इस ग्रंथ में सूर्य पर प्राप्त धब्बों का उल्लेख है, तथा दूरवीक्षणादि यंत्रों का भी वर्णन है (कवि चरित्र)।

५. मौत्य मन्वन्तर का एक मनुपुत्र।

६. सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

७. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

८. वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

९. अत्रि का मानसपुत्र (ब्रह्माण्ड ३.८.७४-८७)।

१०. एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

११. गोकर्ण नामक शिवावतार का शिष्य।

१२. दाशरथि राम की राजसभा का एक धर्मशास्त्री।

१३. दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

१४. पांडवों के साथ यह द्वैतवन में था।

१५. वसुदेव का पुरोहित। पांडवों के जातकर्मादि संस्कार इसने किये (म. आ. परि. १; क्र. ६७. पंक्ति. २०)।

काश्यपि—कश्यप के वंशज का नाम। अरुण के लिये भी यही नाम प्रयुक्त है।

२. भृगुगोत्रीय ऋषि।

काश्यपी—शिखंड़िनी देखिये।

काश्यपीबालाक्या माठरीपुत्र—एक आचार्य। यह कौत्सीपुत्र का शिष्य था। इसका शिष्य शौनकीपुत्र (श. ब्रा. १४.९.४.३१-३२)।

काश्यपेय—कश्यपगोत्रीय एक गोत्रकार गण। यह नाम सूर्य को भी दिया जाता है।

२. कृष्ण के दारुक नामक सारथि का नाम (म. द्रो. १२२.५२)।

काश्या—भीम की पत्नी (देखिये काली ३.)।

२. जनमेजयपत्नी।

काषायण—एक आचार्य। यह सायकायन का शिष्य हैं (बृ. उ. ४.६.२ काण्व)। यह सौकरायण का भी शिष्य है (बृ. उ. ४.५.२७ माध्यं.)।

काष्ठा--प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या। यह कश्यप की पत्नी थी (कश्यप देखिये)।

काष्ठाहारिण--कश्यपगोत्रीय एक गोत्रकार।

कासार--व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा के बाष्कलि का शिष्य (व्यास देखिये)।

कासोरु--अंगिरागोत्रीय एक गोत्रकार।

काहोडि--अर्गल का पैतृक नाम।

किंकर--एक राक्षस। विश्वामित्र की आज्ञानुसार यह कल्माषपाद राजा के शरीर में प्रविष्ट हुआ था।

किंकिण--(सो. क्रोष्टु.) सात्वतपुत्र भजमान की दूसरी स्त्री के तीन पुत्रो में दूसरा। विष्णुमत में इसे कृकण तथा मत्स्यमत में कृमिल नाम है।

किंदम--मृगरूप ले कर मृगी के साथ क्रीडा करनेवाला एक ऋषि। इसका वध पांडुराजा ने किया, अतः इसने पांडुराजा को शाप दिया (म. आ. १०९)।

किन्नर--(सू. इ. भविष्य.) विष्णु तथा वायु के मत में सुनक्षत्र का पुत्र। मत्स्यपुराण में किन्नराश्व पाठभेद है। इसका मुख्य नाम पुष्कर था।

किन्नराश्व--किन्नर देखिये।

किम्पुरुष--आग्नीध्र के नौ पुत्रों में दूसरा। इसकी पत्नी का नाम प्रतिरूपा। यह किंपुरुषवर्ष का ही अधिपति था (भा. ५. २; आग्नीध्र देखिये)।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर का एक मनुपुत्र।

किरात--एक शिवावतार। मूक नामक दानव का इसने सूकर रूप में वध किया (असमाति देखिये)।

किर्मीर--एक नरभक्षक राक्षस। बकासुर का भ्राता (म. आर. १२.२२)। यह काले रंग का था तथा वैत्रकीय नामक वन में (वेत के वन में) रहता था। हस्तिनापुर से निकल कर पांडव जब काम्यकवन में आये। तब भीमसेनद्वारा अपने भाई के वध का प्रतिशोध लेने के लिये, यह उस वन में आया। इसने पांडवों का मार्ग चारों ओर से रोक दिया। भीमसेन के साथ इसका घनघोर युद्ध हुआ। उसमें इस की मृत्यु हो गई (म. व. १२.६७)। बाद में पांडव द्वैतवन गये।

किलकिल--ब्रह्मांडमतानुसार किलकिला नगरी में राज्य करनेवाला एक राजवंश।

किशोर--बलि दैत्य के पुत्रों में से एक (मत्स्य. १७२)।

कीकट--(स्वा. प्रिय.) भागवतमतानुसार ऋषभ तथा जयंती का पुत्र।

२. धर्मपुत्र संकट का पुत्र। इससे भूमि पर के दुर्गाभिमानी देव उत्पन्न हुए (भा. ६.६)।

कीचक--केकय तथा मालवी के एक सौ छः पुत्रों में ज्येष्ठ। इसके छोटे भ्राताओं को उपकीचक कहते थे। विराट की पत्नी सुदेष्णा इसकी सौतेली मौसेरी बहन थी। यह बाण का अंशावतार था (म. वि. परि. १.१९. २५-२७)। विराट ने इसे अपना सेनापति बनाया था।

एक बार सुदेष्णा के महल में, सैरंध्री का वेश धारण की हुई द्रौपदी इसे दिखाई दी। पूछताछ करने के बाद यह उससे अनुनय करने लगा। द्रौपदी ने इसका धिक्कार किया। उसने इसे धमकी दी कि, उसके गंधर्वपति इसका वध कर डालेंगे। बहन से सलाह कर, यह सैरंध्री को अपने घर ले आया, तथा उससे अतिप्रसंग करने लगा। परंतु वहाँ से भाग कर वह राजदरबार में गई। वहाँ भरी सभा में, उस पर लत्ताप्रहार कर, इसने उसकी चोटी पकड कर नीचे गिरा दिया। कीचक के घर जाते समय द्रौपदी ने सूर्य की प्रार्थना की। सूर्य से निजरक्षा के लिये प्राप्त राक्षस ने इसे दूर फेंक दिया। सैरंध्री नें यह समाचार भीम से कहा। उसने बडी ही कुशलता से इस को काबू में ला कर, इसका वध किया (म. वि. २१. ६२; भीमसेन देखिये)।

२. भारतीय युद्ध का दुर्योधनपक्षीय राजा।

कीर्ति--कुन्ति २. देखिये।

२. दक्ष प्रजापति की कन्या, तथा धर्म की पत्नी (म. आ. ६०.१३)।

३. प्रियव्रत राजा की ज्येष्ठ पत्नी (गणेश. २.३२.१३; प्रियव्रत देखिये)।

४. सुतपदेवों में से एक।

कीर्तिधर्मन्--भारतीययुद्ध में पांडवपक्ष का एक राजा (म द्रो. १३३.३७)।

कीर्तिमत्--(सू. इ.) नृगपुत्र। इसने वैशाख माहात्म्य के बल से यमलोक निर्जन बनाया (स्कन्द. २. ७.१२-१३)।

२. उत्तानपाद तथा सुनृता के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। ध्रुव का भ्राता।

३. भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मतानुसार देवकी से जनित वसुदेवपुत्र। कंस ने इसका वध किया। यह कृष्ण का बडा भाई था। वादे के अनुसार न मारते हुए कंस ने इसे छोड दिया था, परंतु नारद के उपदेश के

कारण बाद में उसने इसे मारा (भा. ९.२४; १०,१)। वायु के मत में यह रोहिणी से उत्पन्न वसुदेवपुत्र है।

कीर्तिमती—शुक्राचार्य तथा पीवरी की कृत्वी नामक कन्या का नामांतर। यह नीप अथवा अणुह राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम ब्रह्मदत्त था।

कीर्तिमालिनी—(पिंगला १. देखिये)।

कीर्तिसुख—शंकर की जटा से निकला हुआ एक शिवगण। इसके तीन मुख, तीन पैर, तीन पुच्छ तथा सात हाथ थे। शंकर ने इसे प्रेत खाने के लिये कहा। बाद में इसका साहस देख कर, शंकर ने वर दिया कि, तुम्हारा स्मरण करने के सिवा मेरा दर्शन लेनेवाला का अधःपात होगा (पद्म. उ. ५०)।

कीर्तिरथ—(सू. निमि.) वायु के मत में प्रतित्वक-पुत्र। यह कृतिरथ का दूसरा नाम है।

कीर्तिरात-(सू. निमि.) कृतिरात का नामांतर।

कुकण—एक सर्प (म. उ. १०१.१०)।

कुकर्दम—पिंड़ारक क्षेत्र का राजा। यह अत्यंत दुष्ट था। अनेक पापकृत्यों के कारण, इसे प्रेतयोनि प्राप्त हुई। वहाँ इसे अनेक अनुयायी प्राप्त हुए। एकबार घूमते-घूमते यह कहोड़ ऋषि के आश्रम में आया। अपने इस शिष्य के उद्धार के लिये कहोड ने गोखुरा के संगम पर श्राद्ध किया। औरों का भी श्राद्ध किया। तब इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. १३९)।

कुकुर—(सो. क्रोष्टु.) अंधक का नाती। इससे कुकुरवंश उत्पन्न हुआ, जिसमें में उग्रसेन, कंसादि हुएं।

कुक्षि—रौच्य मनु का पुत्र। इसे रौच्य ने सात्वत धर्म बताया। (म. शां. ३३६.३८-३९)।

२. पौष्यंजि ऋषि का शिष्य। इसने सामवेद की सौ संहिताओं का अध्ययन किया (व्यास देखिये)।

कुक्षेयु—(सो. पूरु.) रौद्र के दस पुत्रों में से एक। कक्षेयु पाठभेद प्राप्त है।

कुचैल—(हीन वस्त्रोंवाला) कृष्ण का एक भक्त तथा सांदीपनिआश्रम में बना हुआ उसका पुराना ब्राह्मण मित्र। यह बड़ा ही विरक्त, जितेन्द्रिय एवं ज्ञानी था। सरलता से जितना मिलता था, उसी पर निर्वाह करने की वृत्ति के कारण, यह अत्यंत दरिद्री था। दरिद्रता से त्रस्त हो कर इसकी पत्नी ने इसे कृष्ण के पास जाने के लिये कहा। क्यों कि, कृष्ण इसका पुराना मित्र तथा बड़ा ही उदार था। पत्नी के बार बार आग्रह करने पर, 'अयं हि परमो लाभ उत्तमश्लोकदर्शनम्', इस विचार से यह कृष्ण के यहाँ गया। जाते समय कुछ साथ ले जाना चाहिये, इस विचार से पत्नीद्वारा उधार माँग कर लाया गया चार मुठियाँ चिउड़ा, एक जीर्ण कपड़े में बांधकर साथ लिया।

द्वारका आ कर कृष्ण से मुलाकात होने पर, अपने पुराने मित्रत्व के नाते, कृष्ण ने इसका पर्याप्त सत्कार किया। गुरुकुल की अनेक घटनाओं का स्मरण किया। हाथ में हाथ डाल कर बहुत गप्पें लड़ाई। कृष्ण ने स्वयं इससे पूछा, 'तुम मेरे लिये क्या लाये हो'। इसके द्वारा दिये गये चिउड़े में से, एक मुष्टि चिउड़ा बडे आनंद से कृष्ण ने भक्षण किया। एक रात्रि बडे आनंद से वहाँ बिताई। दूसरे दिन यह वहाँ से निकला। इसकी अयाचित वृत्ति के कारण, न तो कृष्ण ने इसे कुछ दिया, न कि इसने कृष्ण से कुछ माँगा। कृष्ण ने अपने को क्यों धन नहीं दिया इस विषय में, धनप्राप्ति के बाद शायद मैं ईश्वर को भूल जाऊंगा, इस तरह का उलटा तर्क इसने लड़ाया। परंतु घर आने के बाद इसने देखा, इसे उत्तम ऐश्वर्य प्राप्त हो गया है (भा. १०.८०.७)।

भागवत में कहीं भी इसे सुदामन् अथवा श्रीदामन् नहीं कहा गया है। किन्तु जनसाधारण में वैसी ही प्रसिद्धि है। सत्यविनायक की कथा में, यही कथा सुदामन् नाम पर आई है।

कुज—मंगल तथा नरकासुर का नाम।

कुजंभ—एक दैत्य। इसने तारकासुर को राज्याभिषेक किया (मत्स्य. १४७.२८)।

कुजृंभ—एक दानव। इसके पास सुनंद नामक मूसल था। जिसके कारण यह अजेय था। केवल स्त्रीस्पर्श से ही मूसल निर्बल बनता था। कुजृंभ का निवासस्थान निर्विंध्या नदी के किनारे, अरण्य में भूमि के अंदर था। एक समय, वैशालीनरेश विदूरथ की कन्या मुदावती का, कुजृंभ ने अपहरण किया। आगे भलंदनपुत्र वत्सप्रि ने, मुदावतीद्वारा मूसल को स्त्रीस्पर्श करवा कर निर्बल कर दिया, तथा कुजृंभ का वध किया। पश्चात्, मुदावती के साथ वत्सप्रि का विवाह हुआ (मार्क. ११३)।

कुंजर—तारकासुर का एक सेनापति।

२. एक वानर। अंजनी का पिता।

३. सौवीरदेशीय एक राजपुत्र।

४. कश्यप तथा कद्रू के पुत्रों में से एक।

कुटीचर—रुद्रगणविशेष।

कुटुंबिनी—कामंद वैश्य की पत्नी (गणेश. १. ७. १२)।

कुठर--कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुणरवाडव--एक व्याकरणकार। इसने शंकर के लिये शंगरा, तथा वहीनर के लिये विहीनर शब्द सुझाया है (महाभाष्य. ३.२.१४; ७.३.१)।

कुणारु--एक असुर (ऋ. ३.३०.८)।

कुणि--एक व्याकरणकार तथा स्मृतिकार। कैयट ने इसका निर्देश किया है (पा. सू. १.१.७५)।

२. (सो. वृष्णि.) सात्यकि के दस पुत्रो में से एक। यह भारतीय युद्ध में मृत हुआ।

३. (सो. यदु.) जयराज का पुत्र, इसका पुत्र युगंधर।

४. (सू. निमि.) विष्णु के मत में सत्यध्वजपुत्र।

५. वेदशिरस् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुणि गर्ग वा गार्ग्य—इस की कन्या वृद्धकन्या। वृद्धावस्था में इस का विवाह गांधर्वपुत्र शृंगवत् के साथ एक रात्रि के लिये हुआ (वृद्धकन्या देखिये)।

कुणिक—एक आचार्य (आप. ध. १.१९.७)।

कुणिबाहु–शिवावतार वेदशिरस् का शिष्य।

कुणीति—वसिष्ठ तथा घृताची का पुत्र। इसकी पत्नी पृथुकन्या।

कुंड--गजरूपी असुर। इसकी मृत्यु विनायक के द्वारा हुई (गणेश. २.१४)।

कुंडक--(सू. इ. भविष्य.) विष्णु के मत में क्षुद्रक का पुत्र।

कुंडकर्ण--दंडीमुंडीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

कुंडज--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

कुंडजठर--जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य।

कुंडधार--एक सर्प (म. स. ९.९)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ८४.२२)।

कुंडपायिन्--एक आचार्य (पं. ब्रा. २५.४.४; आश्व. श्रौ. १२.४.६; कात्या. श्रौ. २४.४.२१)। सूत्र-ग्रंथ में इसके नाम से एक सत्र प्रसिद्ध है।

कुंडपाय्य--शृंगवृष का पैतृक नाम (ऋ. ८.१७. १३)।

कुंडभेदिन्—धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.६८; भी. ९२.२६)। भीष्मपर्व में इसका नाम 'कुंडभेद' दिया है।

कुंडला—मदालसा की सखी। यह विंध्यवान की कन्या तथा पुष्करमालीन् की पत्नी थी। इसके पति का वध शुंभ ने किया (मार्कं. १९)।

कुंडिन—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार, मंत्रकार तथा प्रवर।

कुंडिनेय—मित्रावरुण का पुत्र।

कुंडोदर—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुत्स--रुरु नामक राजर्षि का पुत्र। कमजोर होने के कारण सहायता के लिये इसने इन्द्र की आराधना की। इन्द्र ने आकर इस के शत्रुओं का वध किया। तदनंतर उसकी तथा कुत्स की मित्रता हो गयी। एक बार जब इन्द्र कुत्स के पास बैठा था, तब शची वहाँ आई। इनमें-से इन्द्र कौनसा है, यह शची पहचान न सकी (ऋ. ४.१६.१० सायणभाष्य)। इसे आर्जुनेय कहा है। इससे पता चलता है कि, यह अर्जुनी नामक स्त्री का पुत्र होगा (ऋ. १.११२.२३; ४.२६.१; ७.१९.२; ८.१.११)। यह एक योद्धा था। इसको अपने काबू में लेकर इन्द्र ने वेतसू का कल्याण किया (ऋ. १०.४९.४)। इन्द्र ने इस के लिये शुष्ण का लोहे के चक्र से वध किया (ऋ. १.६३.३; १२१.९; १७५.४) इन्द्र ने इसके लिये सूर्यरथ के पहिया की चोरी की अथवा उसे तोड़ दिया। इस तरह की अस्पष्ट कथा ऋग्वेद में दी गयी है (ऋ. १.१७४.५; ४.१६.१२; ३०.४)। अतिथिग्व तथा आयु के साथ इन्द्रस्तुति में इसका उल्लेख है। सूर्य के रथ का एक पहिया इन्द्र ने अलग किया। दूसरा पहिया कुत्स को दिया (ऋ. ५. २९. १०)। इंद्र कुत्स के घर गया था (ऋ. ५.२९.९–१०)। कुत्स तथा लुश दोनों इन्द्र को एकदम बुलाते थे। इन्द्र कुत्स के पास आया। परंतु कुत्स को शंका आने के कारण, इन्द्र को इसने सौ चर्मरज्जुओं से अंड के स्थान पर बाँध दिया। परंतु लुश के द्वारा बुलाये जाते ही इन्द्र इन रज्जुओं को तोड़ कर निकल आया। तब कुत्स ने एक साम कहकर पुनः इन्द्र को वापस बुलाया (ऋ. १०.३८.५; पं. ब्रा. ९.२.२२; जै. ब्रा. २२८)। यह कथा निश्चित रूप से नहीं समझती। इन्द्र का तथा इसका बैर होगा (कुत्स औरव देखिये)। यह इन्द्र का हमेशा का शत्रु न था (ऋ. १.५१.६; ६.२६.३)। पराक्रम दिखाने के लिये इन्द्र को कुत्स तथा रथ के पहिये की जरूरत रहती थी (ऋ. १.१७४.५)।

२. (स्वा. उत्तान.) चक्षुर्मनु तथा नड्वला के ग्यारह पुत्रों में से दूसरा (भा. ४.१३)।

३. भृगुकुल का गोत्रकार।

४. दाशरथि राम की सभा का एक ऋषि (वा. रा. उ. २ प्रक्षित)।

५. अंगिराकुल का गोत्रकार तथा मंत्रद्रष्टा (ऋ. १. ९४-९८; १०१.११५; ९.९७.४५-५८)।

कुत्स औरव—एक राजा। उपगु सौश्रवस इसका पुरोहित था। इस ने जाहिर किया था कि, जो भी कोई इन्द्र को हवि देगा, उसका मस्तक मैं काट दूँगा। इंद्र ने गर्व के साथ इससे कहा, 'सुश्रवा ने मुझे हवि दिया है'। इस ने तत्काल क्रोधित हो कर, सामगान करतें हुए उपगु सौश्रवस का शिर काट दिया। सुश्रवा ने इन्द्र से शिकायत की। इन्द्र ने उसका शिर फिर से जोड दिया (पं. ब्रा. १४.६.८; कुत्स १. देखिये)'।

कुत्सन्य—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

कुथुमि—विष्णु तथा वायु के मत में व्यास की साम-शिष्य परंपरा के पौष्यंजि का शिष्य। ब्रह्मांड में कुशुमि पाठ है (व्यास देखिये)।

कुनाल—(मौर्य. भविष्य.) वायु के मत में अशोक का पुत्र।

कुनेत्रक--वेदशिरस् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुंतल---कौंतलपुराधिपति एक राजा (चन्द्रहास १. देखिये)।

कुंतलस्वातिकर्ण--(आंध्र. भविष्य.) मत्स्य के मत में मृगेन्द्रस्वातिकर्णपुत्र।

कुंति--एक राजा। इसने पांचालों का पराभव किया (क. सं. २६.९; मै. सं. ४.२.६)।

२. (सो. सह.) भागवत के मत में नेत्रपुत्र। विष्णु तथा मत्स्य के मत में धर्मनेत्रपुत्र। वायु में यह नाम कीर्ति है।

३. (सो. यदु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में क्रथपुत्र।

कुंतिभोज—एक राजा। कुंतिभोज वा भोज नाम से इसका उल्लेख आता है। वसुदेवपिता शूर की कन्या पृथा उर्फ कुन्ती इसे दत्तक दी गई थी। यह उसकी बुआ का लड़का था तथा अनपत्य था। शूर ने कुछ समयपूर्व अपना प्रथम पुत्र इसे देने का वचन भी दिया था (म. आ. ६१. परि. १ क्र. ४३)। एक बार दुर्वास कुंतिभोज के घर आये थे। कुंतिभोज ने कुन्ती को उनकी सारी व्यवस्था करने के लिये कहा। कुन्ती को दुर्वास से सब देवताओं को प्रसन्न करने के मंत्र मिले थे। इसीसे आगे चल कर पांडवों की उत्पत्ति हुई (म. व. २८७-२८९)। इसका पुरुजित् नामक एक अतिरथि पुत्र था। द्रोण ने उसका वध किया (म. उ. १६९.२; भी. २३. ५; क. ४.७३)। इसे दस पुत्र और थे। उन सबका वध अश्वत्थामा ने किया (म. द्रो. १३१. १२९)। यह स्यमंतपंचक क्षेत्रमें गया था (भा. १०.८२.२५)। इसका वध द्रोण ने किया (म. क. ४.७३.)। क्रथपुत्र कुंति तथा यह एक नहीं है। वह इससे भी प्राचीन है।

कुंती--यदुकुलोत्पन्न शूर राजा की कन्या तथा वसुदेव की भगिनी।

महाभारत में उल्लेख है कि, कुंतिभोज राजा ने इसे दत्तक लिया था (म. आ. ६१.१२९ परि. १ क्र. ४३)। चंबल नदी को मिलनेवाली अश्वरथ अथवा अश्व नदी के किनारे, कुंतिभोजक नामक नगर में इसका जन्म हुआ। इस नगर को कुंति देश कहा गया है (म. भी. १०. ४१; वि. १.१३; बृहत्संहिता. १०.१५)।

कुंतिभोज राजा ने अतिथिसत्कार के लिये कुंती की योजना की। यह कार्य इसने उचित ढंग से किया। दुर्वास की कडी सेवा कर के इसने उन्हें प्रसन्न कर लिया। भविष्य में कुछ बाधाएँ खड़ी होगी, यह जान कर दुर्वास ने इसे एक वशीकरणमंत्र सिखाया। दुर्वास ने कहा, 'इस मंत्र से जिस देवता का तुम आवाहन करोगी, उस देवता के प्रभाव से तुम्हें पुत्र होगा।' अनंतर कुन्ती के मन में मन्त्रप्रतीति की जिज्ञासा खडी हुई। उस मंत्र का जप कर के इसने सूर्य कों बुलाया। सूर्य को आते देख कर इसें विस्मय लगा। सूर्य से कुंती को कवचकुंडलयुक्त कर्ण नामक पुत्र हुआ। लोकभय से कुंती ने कर्ण को अश्वनदी में छोड़ दिया। उसका पालन राधा के पति अधिरथ ने किया (म. आ. १०४; अधिरथ देखिये)।

सयानी होने पर अनेक राजाओं से कुन्ती की मँगनियाँ होने लगी। इनराजाओं को बुला कर, कुंतिभोज ने इसका स्वयंवर किया। तब कुंती ने पांडु का वरण किया। तदुपरांत पांडु कुंती को ले कर हस्तिनापुर गया। (म. आ. १०५. ११३१)। मृगया के लिये गये पांडु ने, मृगरूप धारण कर के मैथुन करनेवाले किंदम ऋषि का वध किया। इस समय ऋषि की शापवाणी हुई: "इसी प्रकार रतिक्रीड़ा के ही साथ मौत तुम्हें उठा लेगी"। इससे पांडु का पुत्रोत्पादन का मार्ग बंद हो गया। स्वर्गप्राप्त्यर्थ अपत्य की जरूरी होने के कारण, पांडु ने श्रेष्ठजाति के पुरुषों से पुत्रोत्पादन करने की कुंती

को आज्ञा दी। तब इसने उसका निषेध किया। इस बारे में भद्रा का अनुकरण करने का इसने निश्चय किया। परंतु श्वेतकेतु का नियम बता कर, पांडु ने पुनः वही आज्ञा की। तब दुर्वास के द्वारा दिये गये मंत्रप्रभाव से यमधर्म, वायु तथा इन्द्र को बुला कर इसने युधिष्ठिर, भीम तथा अर्जुन को जन्म दिया। पुनश्च पांडु ने पुत्रोत्पादन करने कहा, जिसे इसने अमान्य कर दिया। बाद में, पांडु की प्रार्थनानुसार कुंती ने माद्री को अपना मंत्र दिया। तब माद्री से नकुल तथा सहदेव ये जुडवाँ पुत्र उत्पन्न हुए। यही पाँच पुत्र पांडव हैं (म. आ. १०९.१११-११५)।

बचपन की साधारण लीलाओं में भी, पांडवों ने कौरवों पर विजय प्राप्त की। पांच पांडव सौ कौरवों को बिल्कुल ही त्रस्त कर डालते थे। भीम तो कौरवों की नाक में दम करता था। इससे कौरवपांडवों में विरोध उत्पन्न हुआ (म. आ. ११९)।

इसलिये दुर्योधन ने धृतराष्ट्र के द्वारा, पांडव तथा कुंती को वारणावत में यात्रा के लिये भेजा। वहाँ पुरोचन-द्वारा जतुगृह बनवा कर दुर्योधन ने पांडवों के नाश की सिद्धता थी। परंतु विदुर की सूचनानुसार सुरंग खुदवा कर, पांडवों ने अग्नि से अपनी रक्षा की। एक भीलनी उस गृह में अपने पांच बच्चों के साथ सो रही थी। वह अपने बच्चों के साथ जल कर मर गई। जतुगृह की रचना करनेवाला पुरोचन भी जल कर मर गया। भीलनी तथा उसके पांच पुत्रों के शव देख कर, कौरवों ने मान लिया कि, पांडवों का नाश हो गया। उसकी उत्तर-क्रिया भी की। परंतु पांडव वन में सुरक्षित घूम रहे थे (म. आ. १३०-१३७)।

कुंती का स्वभाव परोपकारी था। व्यास की अनुमति से, पांड्व कुंती के साथ एकचक्रा नगरी में आ कर रहने लगे। वहाँ वे भिक्षा मांग कर अपना उदरभरण करते थे। एक ब्राह्मण के घर ये लोग रहाते थे। एक दिन कुंती तथा भीम ने उस ब्राह्मण पर आई हुई विपत्ति सुनी। बकासुर को तीस मन भात, दो भैंसे तथा एक आदमी देने की नौबत उस ब्राह्मण पर आई थी। तब धर्म के विरोध को न मानते हुए, कुंती ने भीम को भेज कर बकासुर का वध करवाया। उस ब्राह्मणकुटुंब को संकट से मुक्त किया। इसलिये सब लोगों ने एक ब्रह्मोत्सव भी किया (म. आ. १४५-१५२)।

द्रोणाचार्य के नेतृत्व में, कौरवपांडवों ने शस्त्रास्त्रविद्या संपादन की। एक दिन उनकी परीक्षा लेने के लिये नियत हुवाँ, तथा उसके लिये एक विस्तीर्ण मंडप भी बनाया गया। सब पांडवकौरव वहाँ अपना कौशल्य दिखा रहे थे। तब कर्ण वहाँ आया। उसने कहा की, मैं अर्जुन से भी जादा कौशल्य दिखा सकूँगा। कर्ण ने अर्जुन को युद्ध का आवाहन किया। कुंती सत्यस्थिति जानती थी। इस लिये, यह देख कर वह मूर्च्छित हो गई। इसी समय इसने कर्ण को प्रथम पहचाना होगा (म. आ. १२३-१२६)। कर्ण दुर्योधन के पक्ष के मिल गया, यह देख कर कुंती ने उसका जन्मवृत्त उसे बता कर पांडवों का पक्ष लेने के लिये कहा; परंतु कर्ण ने यह मान्य नहीं किया। कुंती ने विदुर को भी बताया कि, कर्ण उसका पुत्र है (म. उ. १४२-१४४)।

भारतीय युद्ध के बाद, सब स्त्रियाँ गंगा के किनारे अपने प्रियजनों के लिये शोक कर रही थी। तब कुंती ने धर्म से कहा कि, कर्ण तुम लोगों का भाई था। तब धर्म को अत्यंत दुःख हुआ। उसने कहा, 'इसके बाद स्त्रियों के मन में कुछ भी गुप्त न रहेगा' (म. स्त्री. २७.८०)। कुंती धृतराष्ट्र के साथ वन में गई। युधिष्ठिर ने काफी मनाया, परंतु यह वापस न आई (म. आश्व. २२.३-१७)। अरण्य में दावानल लगा। तब गांधारी, कुंती तथा धृतराष्ट्र ने अग्नि-प्रवेश किया (म. आश्व. ३५.३१)।

कुंतीभोज—(सो. यदु.) भविष्य के मत में क्राथ-पुत्र। वृषपर्वा की कन्या का पुत्र पूरु, तथा पूरु के पुत्री का पुत्र कुंतीभोज। यह कुंतीभोज नगर में रहता था। अन्य पुराणों में यही कुन्ति है (कुंति ३. देखिये)।

कुंददंत—एक ब्राह्मण। इसके दांत कुंदकलिकाओं के समान थे, इसलिये इसे यह नाम प्राप्त हुआ। यह विदेहदेश में रहता था। इसे आत्मज्ञान प्राप्ति की इच्छा हुई। तब गृह छोड कर यह अरण्य में घूमने लगा। इसने कदंब को अपनी ज्ञानप्राप्ति की इच्छा दिखाई। परंतु अभी तक इसने अपने इंद्रियों को पूर्ण रूप से नहीं जीता, यह देख कर कदंब ने इसे अयोध्या जाने के लिये कहा। उस कथनानुसार सब उपाधियों को छोड कर, यह अयोध्या में राम के पास रहने लगा। वसिष्ठ के मुख से मोक्षोपाय नामक संहिता श्रवण कर के इसे आत्मज्ञान प्राप्त हो गया (यो. वा. ६.१८०-१८६)।

कुपट—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुपति—अष्टभैरवों में से एक। इसे ही कपालिन् नाम है।

कुबेर--वैवस्वत मन्वन्तर के विश्रवा ऋषि का पुत्र। इसकी माता का नाम इड़विड़ा अथवा मंदाकिनी दिये गये है (विश्रवस् देखिये)। यह पुलस्त्य तथा गो का पुत्र था (म. व. २५८.१२)। इस लिये इसे वैश्रनण तथा ऐड़विड़ कहा गया है (म. उ. १३६; श. ४६.२२)। ब्रह्मा ने इसे राक्षसगणोंसहित लंका, पुष्पक विमान, यक्षों का आधिपत्य, राजराजत्व, धनेशत्व, अमरत्व, लोकपालत्व, रुद्र से मित्रता तथा नलकूबर नामक पुत्र आदि दिये। उनमें से रावण ने लंका तथा पुष्पक ले लिये (म. व. २५८-२५९)। लंका इसने रावण को स्वयं दे दी। पुष्पक विमान, रावणद्वारा युद्ध में इसे पराजित कर के लिया गया (वा. रा. अर. १५.२२)। धनपतित्व के लिये तपस्या कर के, यह कुबेर हो गया। जिस स्थान पर इसने तपस्या की, 'उस स्थान पर कौवेरतीर्थ बना (म. श. ४६.२२)। इस स्थान पर इसकी मूल नगरी अल्कावती है। इसी तप के कारण उपरोक्त वस्तुयें इसे प्राप्त हो गई (शिव. रुद्र. १.१९)। पार्वती की ओर आँखे मिचमिचा कर देखने से इसकी बाँई आँख नष्ट हो गई, तथा दाहिनी पीली पड गई। इस लिये इसे एकाक्षपिंगलिन् नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. १३)। इसे मणिग्रीव तथा नलकूबर नामक दो पुत्र थे (भा. १०.९.२२-२३)। यह उत्तराधिपति है तथा उत्तर की ओर स्थित यक्षलोक में रहता है। वृद्धि तथा ऋद्धि इसकी शक्तियाँ हैं। मणिभद्र (वा. रा. उ. १५), पूर्णभद्र, मणिमत्, मणिकंधर, मणिभूष, मणिस्त्रग्विन्, माणिकार्मुकधारक नामक यक्ष इसके सेनापति हैं (दे. भा. १२.१०)। इसकी कुबेरसभा नामक एक सभा है। इस सभा में, यह ऋद्धि तथा अन्य सौ स्त्रियों के साथ बैठता है। इसे नलकूबर नामक एक पुत्र था (म. स. १०.१९)। कुबेर की एक पत्नी का नाम भद्रा दिया गया है (म. आ. १९१.६)। यक्षों के अधिपतित्व के लिये इसने कावेरीनर्मदासंगम पर तप किया, तब शिवकृपा से इसकी इच्छा पूरी हुई (पद्म. स्व. १६)। गंधमादन पर्वत में स्थित संपत्ति का चतुर्थांश भाग इसके काबू में है। इसी संपत्ति का षोडशांश मानवों को दिया है। यह अपने राक्षसों सहवर्तमान गंधमादन पर्वत के शिखर पर रहता है (पद्म. स्व. ३.)। मेरूपर्वत के उत्तर में स्थित विभावरी इसका एक वासस्थान है (भा. ५. २१. ७)। कैलास पर्वत पर यह राक्षस अप्सराओं के साथ रहता है। सौगंधिक नामक वन इसका है (भा. ४.६.२३)। यह अल्काधिप हैं। कैलास के दक्षिण भाग में वैद्युत नामक पर्वत है। उसकी तराई में मानससरोवर है। वहाँ सरयू नदी का उद्गम होता है। उसके किनारे वैभ्राज नामक एक दिव्य वन है। वहाँ प्रहेतृपुत्र ब्रह्मधान नामक एक राक्षस रहता है। वह कुबेर का सेवक है (वायु. ४७.१८)। यह उस प्रदेश में रहनेवाले यक्ष, राक्षस, पौलस्त्य तथा अगस्ति लोगों का राजा तथा अल्काधिप है (वायु. ६९.१९६)। यह सूर्य के उत्तर की ओर रहता है (भवि. ब्राह्म. १२४)। अर्जुन को शिवदर्शन होने के बाद, वरुण के समान इसने भी अर्जुन को दर्शन दिया तथा एक अस्त्र दिया (म. व. ४२.७.)। द्रौपदी की प्रार्थनानुसार, भीम ने कुबेर के उपवन के सरोवर में खिले कमल, वहाँ के राक्षसों का कथन न मानकर ले लिये। कुबेर ने इसे नहीं रोका (म. व. १५२)। जब इसे पता चला कि, भीम ने मणिमान का वध किया तब यह क्रोधित हो गया, तथा सेनासहित पांडवों के पास गया। एक दूसरे को देख कर पांडव तथा यह आनंदित हुए। कुबेर ने पांडवों को योग्य उपदेश किया तथा कहा कि, इन्द्र अर्जुन की प्रतीक्षा कर रहा है (म. व. १५९)। पूर्वजन्म में यह कांपिल्य नगरी में अग्निहोत्री यज्ञदत्त का गुणनिधि नामक पुत्र था (शिव. रुद्र. स. १९)। ब्राह्मण क्षत्रिय एकता से राज्यसुख की वृद्धि होती है, इस विषय पर मुचकुंद से कुबेर का संवाद हुआ था (म. शां. ७५)। ध्रुव का यक्षों से युद्ध होने के बाद, इसने उसे उपदेश किया (भा. ४.१२.२)। इसे सोम नाम भी है। इसी लिये उत्तर दिशा को सौम्या नाम प्राप्त हुआ है।

कुबेर वारक्य--जयंत वारक्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

कुबेराणि--अंगिरासकुल का गोत्रकार।

कुब्जा--एक विरूप स्त्री। दुर्दैव से इसे बाल्यावस्था में ही वैधव्य प्राप्त हुआ। इसने साठ वर्षों तक अपना जीवन पुण्यकर्म में व्यतीत किया। प्रत्येक वर्ष माघस्नान भी किया। तदनंतर यह वैकुंठलोक में गई। सुंदोपसुंदों का नाश करने के लिये, इसने तिलोत्तमा के नाम से अवतार लिया। इसके हावभावों से मोहित हो कर, सुंदोपसुंद एक दूसरे से लड़ मरे। तब इसका अभिनंदन कर, ब्रह्मदेव ने इसे सूर्यलोक में स्थान दिया (पद्म. उ. १२६)।

२. कंस की दासी। यह शरीर के तीन स्थानों में वक्र थी। कंस ने धनुर्याग के लिये कृष्ण तथा बलराम को

मथुरा में लाया। तब कृष्णप्रसाद से इसका शरीर सरल हुआ (भा. १०.४२; ब्रह्म. १९६)।

३. कैकयी की मंथरा नामक दासी का अन्य नाम (मंथरा देखिये)।

कुमार—ब्रह्मदेव का मानसपुत्र तथा प्रजापति (वायु ६६.५३)। वायुपुराण में, ब्रह्मदेव के सनक, सनंद, सनातन तथा सनत्कुमार इन पुत्रों के लिये कुमार नाम की योजना की गई हैं। ये ब्रह्ममानसपुत्र सर्वदा पांच छः वर्ष के बालकों के समान दीखते हैं। इसी लिये इन्हें कुमार कहा गया है।

यह अपने भ्राताओं सहवर्तमान जब वैकुंठ गया था, तब द्वारपालों ने इसे प्रतिबंध किया। इसलिये इसने उन्हें शाप दिया (भा. ७.१.३७)। इसने सांख्यायन को भागवत कथन किया (भा. ३.८.७)।

२. स्कंद देखिये।

३. अनल नामक वसु को स्वाहा से उत्पन्न पुत्र।

४. सोम नामक शिवावतार का शिष्य।

५. शिल्पशास्त्र पर लिखनेवाले अठारह वास्तुशास्त्रकारों में से एक (मत्स्य. २५२.२)।

कुमार आग्नेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ७.१०१; १०२)। वत्स देखिये।

कुमार आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२.१; ३–८; १०–१२)।

कुमार यामायन—(ऋ. १०.१३५)।

कुमार हारित—गालव का शिष्य। इसका शिष्य कैशोर्य काप्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। रेत का महत्त्व वर्णन करते समय बताई गई आचार्यपरंपरा में, इसका नाम है (बृ. उ. ६.४.४)।

कुमार हैहय—एक राजा। एक बार मृग समझ कर इसने एक ऋषिपुत्र का वध किया। तब इसे अत्यंत पश्चात्ताप हुआ। वह ऋषिपुत्र कौन होगा, उसकी इसने खोज की। खोजतेखोजते यह अरिष्टनेमि तार्क्ष्य के आश्रम में गया, तथा उन्हें वंदन कर नीचे बैठा। इतने में मारा गया हुआ ऋषिपुत्र वहाँ आया। उसे देख कर राजा को आश्चर्य हुआ। यह ऋषि से कुछ पूछने ही वाला था कि, ऋषि ने कहा, हे राजा, तुम आश्चर्य मत करो। हमलोग तपोबल से इच्छामरणी बन चुके हैं। इसलिये, तुम्हारे हाथों ब्रह्महत्या हुई, ऐसी शंका मन में मत लाओ। इतना सुन कर यह अपने नगर में गया (म. व. १८२)। यह हैहय नाम से प्रसिद्ध है, लेकिन वंशावलि में अप्राप्य है।

कुमारी—चित्रलेखा देखिये।

२. धनंजय की पत्नी।

कुमुद—विष्णु के पार्षदगणों में से एक (भा. ८. २१)।

२. गोमती नदी के किनारे, रम्यक पर्वत पर रहनेवाला रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. २६)। अकंपन के साथ हुए युद्ध में इसने काफी पराक्रम दिखाया (वा. रा. यु. ५५)।

३. कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

४. वायु, विष्णु, ब्रह्मांड तथा भागवत मतानुसार व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा के पथ्य का शिष्य।

कुमुदाक्ष—एक नाग। कश्यप एवं कद्रू का पुत्र (म. आ. ३१.१५)।

२. मणिवर तथा देवजनी का पुत्र। इनके पुत्रों का साधारण नाम गुह्यक है।

कुमुदेक्षण—विष्णु का पार्षद।

कुमुद्वती—दाशरथि राम की स्नुषा तथा कुश की दूसरी स्त्री। अतिथि राजा इसी का पुत्र था। चंद्रिका इसकी सौत थी। उसे पुत्र न था, इसलिये इसका पुत्र अतिथि सूर्यवंश का विस्तार करनेवाला हुआ। एक बार जलक्रीडा करते समय, कुश के हस्तभूषण सरयू में गिर पड़े, जिन्हें कुमुद नाग की बहन कुमुद्वती नागलोक ले गयी। कुश ने क्रोधित हो कर सरयू को सोखने के लिये हाथ में धनुषबाण लिया। तब कुमुद नाग ने हस्तभूषणसहित कुमुद्वती कुश को अर्पित कर दी (आ. रा. विवाह. ४)।

२. मयूरध्वज राजा की स्त्री तथा ताम्रध्वज राजा की माता।

कुंपत—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभ—प्रल्हाद दैत्य के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९. १९)।

२. कुंभकर्ण का ज्येष्ठ पुत्र (कुंभनिकुंभ देखिये)।

३. लंका का एक सामान्य राक्षस (भा. ९. १०. १८)।

४. हिरण्याक्ष की सेना का एक असुर। कुबेर से यह युद्ध कर रहा था, तब कुबेर ने इसके सब दांत गिरा दिये। यह कुबेर की मदद को आनेवाले इंद्र पर झपटा। इंद्र ने वज्रप्रहार कर इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

कुंभकर्ण—रावण का छोटा भाई। वैवस्वत मन्वंतर में, पुलस्त्यपुत्र विश्रवा ऋषि को कैकसी से उत्पन्न चार पुत्रों में दूसरा। भागवत के मत में, केशिनी इसकी माता

थी। इसने जन्मते ही हजारों लोगों को खा डाला। तब इसकी शिकायत ले कर लोग इंद्र के पास गये। इंद्र ने क्रोधित हो कर इस पर वज्र फेंका। कुंभकर्ण हाथ पैर पटक कर और भी गर्जना करने लगा। इस कारण लोगों को अधिक कष्ट होने लगे। इसने ऐरावत का एक दांत उखाडकर इंद्र पर फेंका, तथा इंद्र को रक्तरंजित कर दिया। ब्रह्मदेव को इस बात का पता चला। तब उन्होंने लोकसंरक्षणार्थ इसे सदा निद्रित रहने का शाप दिया। रावण की प्रार्थना पर, इसे छः माहों में एक दिन जागने का ब्रह्मा ने उःशाप दिया (वा. रा. यु. ६१)। कुबेर की बराबरी करने के लिये, रावणादि के साथ इसने भी गोकर्णक्षेत्र में दस हजार वर्षों तक तपस्या की। जब ब्रह्मदेव इसे वरदान देने लगे, तो देवों ने विरोध किया। देवों ने कहा, इसने नंदनवन के सात अप्सरायें, इन्द्र के दस सेवक, उसी प्रकार अन्य कई लोग तथा ऋषियों का भक्षण किया है। इसलिये इसे वर मत दो। देवों की इच्छा सफल हों, इसलिये ब्रह्मदेव ने सरस्वती को बुलाया तथा उसकेद्वारा कुंभकर्ण को उपदेश करवाया। तब इसने दीर्घकालीन निद्रा मांगी। ब्रह्मदेव 'तथास्तु' कह कर चला गया। पीछे यह पछताने लगा, परंतु उसका कुछ लाभ नही हुंवा (वा. रा. उ. १०)।

कुबेर की लंका रावण ने छीन ली। तब रावण के साथ यह भी लंका में गया। वहाँ जाने पर विरोचनपुत्र बलि की पौत्री वज्रज्वाला से इसका विवाह हुआ (वा. रा. उ. १२)। रावण ने अपने निद्राप्रिय बंधु के सोने की उत्कृष्ट व्यवस्था कर रखी थी। उसने विश्वकर्मा से चार कोस चौड़ा तथा आठ कोस लंबा एक सुंदर घर बनवाया। वहाँ यह सदैव निद्रिस्त पडा रहता था (वा. रा. उ. १३)। जाग्रत रहनें पर, यह सभा में भी आता था। युद्ध होने के पहले बुलाई गई एक सभा में यह उपस्थित था। वहाँ सीताहरण के लिये इसने रावण को दोष दिया। फिर भी रावण से इसने कहा, "मैं भविष्य में सब प्रकार से तुम्हारी सहायता करूंगा (वा. रा. यु. १२)। तदनंतर अनेक योद्धाओं की मृत्यु के बाद, रावण अकेला ही राम से युद्ध कर रहा था। तब रावण का पराभव हुआ। रणांगण से वापस आने के बाद उसे अपने बंधु का स्मरण हुआ। उसने यूपाक्ष को कुंभकर्ण को जाग्रत करने के लिये भेजा। युद्ध के संबंध में प्राथमिक चर्चायें जिस सभा में हुई, वहाँ कुंभकर्ण उपस्थित था। तब से जो कुंभकर्ण सोया था, वह नौ महीने हो जाने पर भी सोया ही रहा। इसे जाग्रत करने के लिये आये हुए लोगों ने, यह जाग्रत होते ही खाने के लिये मृग, महिष तथा वराह के बडे बडे ढेर इसके द्वार के पास रच दिये। अन्न की ढेरियाँ तैय्यार की। रक्त, मांस तैय्यार किया। चन्दन का लेप इसके शरीर को लगाया। सुगंधित द्रव्य सुंघाये। भयंकर आवाज की। फिर भी कुछ परिणाम नहीं हुआ। तब इसके वक्षस्थल पर प्रहार करना प्रारंभ किया। इसके कान में पानी ड़ालना, काट खाना आदि प्रयत्न हुए। जब इसके शरीर पर हजार हाथी घुमाये, तब कहीं यह जाग्रत हुआ। जम्हाई लेते हुए सामने रखी हुई सब सामग्री इसने भक्षण की। धीरे से लोगों ने सारा वृत्त इसे कथन किया। तब यह तुरंत युद्ध करने के लिये ही निकला। परंतु महोदर ने सुझाया कि, पहिले रावण की सलाह ले कर, फिर युद्ध के लिये जाना अधिक योग्य रहेगा। तब यह बंधु के पास गया। वहाँ इसने प्रथम रावण को ही उपदेश की चार बाते सुनायीं। परंतु रावण को यह उपदेश पसंद नहीं आया। तब रावण खुष हों, ऐसी बातें कहने का प्रारंभ इसने किया। महोदर ने सुझाया कि, यदि रावण की मृत्यु हो गई है, यों अफवाएं चारों ओर फैला दी, तो सीता स्वयं ही शरण आ जावेगी। तब कुंभकर्ण ने इस मार्ग का तिरस्कार किया तथा युद्ध का पुरस्कार किया।

यह रणांगण में दाखल हुआ। इसका प्रचंड शरीर देख कर बंदरसेना भयभीत हो कर भागने लगी। परंतु सब को धीरज दे कर, अंगद ने एकत्रित किया। प्रथम इसने शूल से हनूमान को आहत किया। तब अपनी सेना को नील ने धीरज बँधाया। ऋषभ, शरभ, नील तथा गवाक्ष को कुंभकर्ण ने खून की उलटी करवाई। बंदरों से भरे वृक्ष के समान कुंभकर्ण का शरीर दिखने लगा। कुंभकर्ण के द्वारा फेंका गया शूल अंगद ने बडी युक्ति से बचा लिया, तथा इसकी छाती पर प्रहार कर, इसे मूर्च्छित किया। होश में आते ही, अंगद को कुंभकर्ण ने बेहोश किया।

सुग्रीव को लेकर यह लंका की ओर चला गया। तब सुग्रीव ने इसके नाक, कान तोड दिये तथा वह राम के पास लौट आया। उस विद्रूप स्थिति में भी, यह लौट आया तथा इसने भयंकर युद्ध किया। अन्त में राम तथा लक्ष्मण के साथ युद्ध करते समय अर्धचन्द्र बाण से राम ने इसके पैर तोड़ दिये। तब इसका भयंकर शरीर भूमि पर गिर पडा। फिर भी मुँह फैला कर राम की ओर सरकते हुए आने का यह प्रयत्न कर ने लगा। तब ऐन्द्रबाण से राम

ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ६०-६७)। रामायण के अनुसार इसका वध राम ने किया। परंतु महाभारत के अनुसार लक्ष्मण ने किया (म. व. २७१-१७)। इसका शरीर गिरने से लंका के अनेक गोपुर भग्न हो गये (म. व. २८६-८७)। इसे कुंभनिकुंभ नामक दो बलाढ्य पुत्र थे।

कुंभनाभ—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभनिकुंभ—कुंभकर्ण को वृत्रज्वाला से उत्पन्न दो पुत्र। ये अत्यंत पराक्रमी तथा बलवान् थे। रावण ने जब इन्हें रामसेना से लड़ने के लिये भेजा, तब इन्होंने भयंकर युद्ध किया। अन्त में सुग्रीव ने कुंभ का तथा हनुमान ने निकुंभ का वध किया (वा. रा. यु. ७५-७७)।

कुंभमान—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

कुंभयोनि—अगस्त्य ऋषिका नामांतर।

२. द्रोणाचार्य को भी यह नाम दिया जाता है (म. द्रो. १५९.४)

कुंभरेतस्—भारद्वाज अग्नि तथा वीरा का पुत्र। इसे शरयू नामक स्त्री तथा सिद्धि नामक पुत्र था। वीर, रथप्रभु तथा रथाध्वान ये नाम इसीके ही है। यह एक प्रकार का अग्नि है (म. व. २०९)।

कुंभहनु—प्रहस्त का सचिव। इसका वध तार नामक बंदर ने किया (वा. रा. यु. ५८)।

कुंभांड—बाणासुर का मंत्रि। बलि के मंत्रियों में श्रेष्ठ (नारद. १.१०)। चित्ररेखा का पिता (भा. १०.६२)। बलराम के साथ इसका युद्ध हो कर उसीमें इसकी मृत्यु हुई (भा. १०.६३)।

२. दंडीमुंडीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

कुंभीनसी—बलि दैत्य की कन्या तथा बाणासुर की भगिनी (मत्स्य. १८७.४१)।

२. सुमाली राक्षस को केतुमती से उत्पन्न चार कन्याओं में कनिष्ठ। रावणमाता कैकसी की यह भगिनी थी।

३. माल्यवान् राक्षस की कन्या अनला को विश्वावसु राक्षस से उत्पन्न कन्या। मधु नामक राक्षस ने इसका हरण किया तथा इससे विवाह किया। उससे इसे उत्पन्न पुत्र लवणासुर नाम से प्रख्यात है।

४. पुष्पोत्कटा को विश्रवा ऋषि से उत्पन्न कन्या (लिंग. १.६३)।

५. अंगारपर्ण गंधर्व की स्त्री।

६. चित्ररथ गंधर्व की स्त्री (म. आ. १५८.३१)।

कुंभोदर—राम को तीर्थयात्रा करवानेवाला एक ऋषि (आ. रा. याग. ५-६)।

कुयव—कुत्स के लिये इसका वध इन्द्र ने किया (ऋ. २.१९.६)।

कुयवाच्—इन्द्र ने दुर्योण के लिये इसका वध किया (ऋ. १.१७४.७)।

कुरु—(स्वा. प्रिय) आग्नीध्र को पूर्वचित्ती से उत्पन्न सातवाँ पुत्र। इसकी पत्नी मेरुकन्या नारी है। इसका वर्ष इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.२.१९-२१)।

२. (सो. अज.) संवरण को तपती से उत्पन्न पुत्र। इसकी पत्नियों के नाम शुभांगी तथा वाहिनी। शुभांगी के पुत्र का नाम विदूरथ (म. आ. ९०-४१)।

वाहिनी के पुत्र के नामः—अश्ववत् (अविक्षत्), अभिष्वत्, चित्ररथ, मुनि तथा जनमेजय (म. आ. ८९.४४)। भागवत के मत में परीक्षित्, सुधनु, जह्नु तथा निषधाश्व। परंतु मत्स्य में निषधाश्व के बदले प्रजन है (मत्स्य. ५० २३)। भविष्य मत में यही अहीनजपुत्र है। वैदिक वाङ्मय में कुरु का उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. १.३.८.१)। इससे सुप्रसिद्ध कुरुवंश प्रारंभ हुआ। इसके वंशजों को कौरव कहते हैं। इसीकी तपश्चर्या से कुरुजांगल प्रदेश कुरुक्षेत्र नाम से प्रसिद्ध हुआ (म. आ. ८९.४३)। कुरुक्षेत्र की पवित्रता तथा वहाँ का सदाचार वेदकाल से प्रसिद्ध है। उपनिषदों में कुरुपांचाल देश के तत्त्वज्ञ का निर्देश आया है (कौ. उ. ४.१. बृ. उ. ३.१.१,६.१.९) कुरुक्षेत्र का माहात्म्य अनेक पुराणों में हैं। वश, उशीनरसहित कुरुपांचाल मध्यप्रदेश है (ऐ. ब्रा. ८,१४)।

३. यह एक विशिष्ट लोगों का नाम है (देवभाग श्रौतर्ष देखिये)।

कुरुंग—देवातिथि काण्व ने इसके दान की प्रशंसा की है। यह तुर्वसों का राजा था (ऋ. ८.४.१९)। कदाचित् यह कुरुवंश का होगा (नि. ६.२२)।

कुरुवत्स—(सो.) भविष्य के मत में नवरथपुत्र।

कुरुवश—(सो. क्रोष्टु.) मधुराजा का पुत्र। इसका पुत्र अनु (भा. ९.२४.५)।

कुरुश्रवण त्रासदस्यव—त्रसदस्यू का पुत्र। इसके दान की कवष ऐलूश ने प्रशंसा की है (ऋ. १०.३३.४-५)। इसी सूक्त में, मित्रातिथि की मृत्यु के बाद उसके पुत्र उपमश्रवस् का समाचार लेने के लिये कवष ऐलूश के आने का निर्देश है। वास्तविक रूप से, इस सूक्त में आये

हुए दो घटनाओं का कुछ संबंध नहीं है, यह सायणमत योग्य है। कवष केवल सूक्तकार है (बृहद्दे. ७.३५-३६)।

कुरुसुति काण्व—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७६-७८)।

कुल—दाशरथि राम की सभा का एक हास्यकार।

२. दाशरथि राम की सेना का एक वानर।

कुलक—(सू. इ.) रणक राजा का नामांतर।

२. (सू. इ. भविष्य.) मत्स्य के मत में क्षुद्रकपुत्र। इसे भागवत में रणक, विष्णु में कुंड़क तथा वायु में क्षुमिक कहा है।

कुलह—कश्यप कुल का एक गोत्रकार।

कुलिक—कद्रूपुत्र एक नाग (म. आ. ५९.४०)।

कुल्मलबर्हिस्—सामद्रष्टा (तां. ब्रा. १५.३.२१)।

कुल्मलबर्हिस् शैलूष—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२६)।

कुवल—वीरवर्मन का पुत्र (वीरवर्मन् देखिये)।

कुवलयाश्व—(सो. काश्य.) एक चक्रवर्ति राजा (मै. उ. १.४)। दिवोदासपुत्र प्रतर्दन का नामांतर। इसेही कुवलाश्व, द्युमत्, शत्रुजित् तथा ऋतुध्वज नामांतर हैं। भविष्य के मत में यह बृहदश्व का पुत्र था।

कुवला—हंसध्वज की कन्या तथा सुधन्वा की भगिनी।

कुवलाश्व—(सू. इ.) बृहदश्व राजा का पुत्र। वन में जाते समय, बृहदश्व ने इसे उत्तंकाश्रम को पीड़ा देने वाले, धुंधु नामक दैत्य का पारिपत्य करने के लिये कहा। तब उत्तंक को साथ ले कर यह धुंधु के निवासस्थान पर गया। धुंधु दैत्य उज्जालक नामक वालुकामय समुद्र के तल में, अपने अनुयायियोंसहित सोया था। तब कुवलाश्व ने अपने दृढाश्वादि सौ पुत्रों को—भागवत में पुत्रसंख्या २१००० दी गई है (९.६)—उस वालुकामय सागर की वालुका हटाने के लिये कहा। संपूर्ण वालुका हटाने के बाद धुंधु बाहर आया। उस समय, उसके मुख से अग्नि की ज्वालायें निकल रही थी। उन ज्वालाओं से कुवलाश्व के दृढाश्व, कपिलाश्व तथा भद्राश्व को छोड़कर अन्य सब पुत्र जल गये। अतः कुवलाश्व स्वयं धुंधु से लड़ने के लिये गया। तब विष्णु ने उत्तंक ऋषि को दिये वर के कारण अपना तेज कुवलाश्व के शरीर में ड़ाला। तात्काल कुवलाश्व ने धुंधु का पराभव किया, तथा धुंधुमार नाम प्राप्त किया। कुवलाश्व के बाद दृढाश्व गद्दी पर बैठा (म. व. १९३; ह. वं. १.११; वायु. ८८; ब्रह्माण्ड. ३.६३.२९, ब्रह्म. ७; भा. ९.६; विष्णुधर्म. १.१६; कुवलयाश्व देखिये)। मार्कंड मतानुसार कुवलाश्व शत्रुजित का पुत्र था (मदालसा देखिये)।

२. प्रतर्दन देखिये।

कुश—(सो. आयु.) भागवत मत में सुहोत्र राजा के तीन पुत्रों में दूसरा। इसका पुत्र प्रति। कुश राजा से कुशवंश प्रारंभ हुआ।

२. (सो. क्रोष्टु.) विदर्भ राजा के तीन पुत्रों में प्रथम।

३. (सो. पुरूरवस्.) अजक राजा का पुत्र। इसे कुशिक भी कहते थे। इसे कुशांबु, असूर्तरजस्, वसु तथा कुशनाभ नामक चार पुत्र थे। उन्हें कौशिक संज्ञा थी (ब्रह्मवै. २.१३)।

४. (सू. इ.) भविष्य के मत में दाशरथि राम का पुत्र। इसने १००० वर्षों तक राज्य किया (कुशलव देखिये)।

५. एक दैत्य। इसने शंकर से अमरत्व प्राप्त किया। इस कारण, विष्णु इसे मार नहीं सकता था। अन्त में इसका सिर जमीन में गाड़ कर उस पर शिवलिंग स्थापित किया। तब यह शरण आया (स्कंद. ७. ४. २०)।

कुशकेतु—हेमकान्त देखिये।

कुशध्वज—रथध्वज राजा का पुत्र तथा वेदवती का पिता (वेदवती देखिये)।

२. (सू. निमि) ह्रस्वरोमा नामक जनक के, दो पुत्रों में दूसरा। सीरध्वज जनक का कनिष्ठ बंधु। यह मिथिला में सांकाश्य नामक राजधानी में राज्य करता था (वा. रा. बा. ७१. १६-१९)। मांड़वी तथा श्रुतकीर्ति इसकी दो कन्यायें थीं। वे दशरथपुत्र भरत तथा शत्रुघ्न को क्रमशः दी गई थीं। सीरध्वज को पुत्र न था। इसलिये उसके पश्चात् यह मिथिला का राजा बना था। इसके पुत्र का नाम धर्मध्वज जनक। कुछ स्थानों पर इसे सीरध्वज का पुत्र भी कहा गया है (भा. ९. १३; वायु ८९)।

३. बृहस्पति का पुत्र (बृहस्पति देखिये)।

४. एक राजा। पूर्वजन्म में यह वानर था। उस समय यह झूले पर स्थित शंकर को रात भर झुलाता था। उस पुण्यसंचय से इसे यह जन्म प्राप्त हुआ। इस जन्म में इसने दमनकव्रत किया। बाद में, अग्निवेश ऋषि की कन्या जब नग्नस्थिति में स्नान कर रही थी, तब इसने उसका हरण किया। इसलिये उस ऋषि ने इसे 'तुम गृध्र बनोगे' ऐसा शाप दिया। परंतु इसने क्षमा मांगने पर उश्शाप दिया, 'इन्द्रद्युम्न को सहायता करने से, तुम मुक्त हो जाओगे' (स्कन्द. १. २. १२)।

कुशनाभ--(सो. अमा.) कुश अथवा कुशिक राजा के चार पुत्रों में चौथा। इसने महोदय नामक नगरी की स्थापना की थी। इसकी सौ कन्यायें वायु के कोप से वक्र हो गईं। उन्हें कांपिलीपुरी के चुलिसूनु ब्रह्मदत्त राजा को दिया गया। तब उनका शरीर सीधा हुआ। परंतु काम्पिल्य देश को कान्यकुब्ज नाम जो मिला, वह वैसा ही रहा (वा. रा. बा. ३२. ३३; भा. ९. १५)।

२. वैवस्वत मन्वन्तर का एक मनुपुत्र।

कुशरीर--वेदशिरस् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशल--यह तथा इसकी पत्नी दुराचारी थे। परंतु पुत्रद्वारा गया में पिंडदान किये जाने के कारण, इनका उद्धार हुआ (पद्म. उ. २१३)।

२. प्रियव्रत का प्रधान (गणेश. २.३२-१४)।

कुशलव--दाशरथि राम से सीता को उत्पन्न जुड़वाँ पुत्र। लोकापवाद के भय से, राम ने सीता का त्याग करने का निश्चय किया। लक्ष्मण के द्वारा, उसे तमसा के किनारे वाल्मीकिआश्रम के समीप छोड़ दिया। यह वार्ता शिष्यों के द्वारा वाल्मीकि को ज्ञात हुई। तब आश्रम में मुनि पत्नियों के पास सीता की रहने की व्यवस्था उसने कर दी (वा. रा. उ. ४८-४९)।

बाद में श्रावण माह में, आधी रात के समय सीता प्रसूत हुई तथा उसे दो पुत्र हुए। जैसे ही वाल्मीकि को यह मालूम हुआ, वैसे ही बालकों की सुरक्षा के लिये वह दौड़ा। निचले हिस्से में तोड़ी हुई दर्भमुष्टि, अभिमंत्रित कर के उसने वृद्ध स्त्रियों को दी, तथा प्रथम जन्मे हुवें पुत्र के शरीर पर से घुमाने के लिये कहा। बाद में जन्मे पुत्र के शरीर से, दर्भ का उपरीला हिस्सा घुमाने के लिये कहा। इन दोनो पुत्रों का नाम क्रमशः कुश तथा लव रखने के लिये कहा (वा. रा.उ. ६६)। दर्भ तथा दूर्वांकुरों से इनके शरीर पर पानी सींचा गया, इस लिये इनके नाम कुश तथा लव रखे गये (जै. अ. २८)। जिस दिन लव तथा कुश का जन्म हुआ, उस दिन लवणासुर का पारिपत्य करने के लिये जाता हुआ शत्रुघ्न वाल्मीकि के आश्रम में ही था। यह वार्ता ज्ञात होते ही उसे अत्यंत आनंद हुआ। पद्मपुराण में लिखा गया है, लवणासुर का पारिपत्य कर के शत्रुघ्न जब वह वापस जा रहा था, तब वह आश्रम में आया था, परंतु सीता आश्रम में प्रसूत हो गई है, यह वार्ता वाल्मीकि ने उसे नहीं बताई (पद्म. पा. ५९)। यह कथन उपरोक्त कथन के ठीक विपरीत है।

इसके बाद वाल्मीकि ने इनके जातकर्मादि संस्कार किये। वेद एवं वेदों के दृढीकरण के लिये उन्हें रामायण सिखाया। धनुर्विद्या के समान क्षात्रविद्या में इन्हें निष्णात किया। बाद में अश्वमेध करने के लिये राम ने अश्वमेधीय अश्व छोड़ा। इन्हों ने उसे पकड लिया। उस अश्व के मस्तक पर लिखे हुए लेख ने इनका क्षत्रियत्व जाग्रत किया। उस लेख में लिखा थाः—

"एकवीराच्य कौसल्या तस्याः पुत्रो रघूद्वहः। तेन रामेण मुक्तोऽसौ वाजी गृह्णात्विमं बली"। यह देख कर लव ने कहा, "क्या हमारी माँ वंध्या है, क्या वह एकवीरा नहीं है?" मुनिकुमारों द्वारा निवारण किये जाने पर भी लव ने उनकी एक न सुनी। बल्कि कहा 'सीता का पुत्र हो कर भी, यदि मैंने तुम्हारे जैसा ही व्यवहार किया, तो मैं एक क्रमी ही सिद्ध हो जाऊंगा। अश्व रक्षा के लिये शत्रुघ्न नियुक्त था। उसने जब लव को मूर्च्छित किया, तब कुश ने आ कर शत्रुघ्न को मूर्च्छित किया। बाद में लक्ष्मण अपनी सेनासहित आया। लव ने जाग्रत हो कर, सूर्य से नया धनुष्य प्राप्त किया। लक्ष्मण, भरत तथा हनुमान का भी लव ने पराभव किया। तब राम को मजबूरी से रणांगण पर आना पड़ा। बिभीषण तथा सुग्रीव को ले कर राम रणांगण पर आया। दोनों कुमारों को देखते ही उसने "तुम ने धनुर्वेद किससे सीखा?, तुम्हारे माँ बाप कौन है?, आदि प्रश्न पूछे। अंत में राम नें कहा कि, जब तक तुम अपना कुल नहीं बताते, तब तक मैं युद्ध नहीं करुंगा। तब इन्होंने कहा, 'हम सीता के पुत्र हैं'। यह सुनते ही राम के हाथ से धनुष गिर पड़ा। सुग्रीव आदि ने बहुत प्रयत्न किये। फिर भी सब का वध कर, तथा राम को भी मूर्च्छित कर, दोनों बालक घर गये। ये हनुमान को सीता के मनोरंजन के लिये साथ लाये। परंतु सीता ने उसे वापस भेजने के लिये कहा। अब तक वाल्मीकि आश्रम में नहीं था। वापस आते ही, उसने पुत्र तथा पत्नी का स्वीकार करने के लिये राम से कहा। पश्चात् बालक अश्वों के संरक्षक बने तथा यज्ञ पूर्ण हुआ (जै. अ. २८-३६)।

वाल्मीकि रामायण में इस प्रसंग का उल्लेख नहीं है। इस ग्रंथ में लिखा है कि, कुशलव तथा राम की भेंट रामायणगान के कारण हुई। जिस समय राम ने अश्वमेध किया, तब अनेक कलाकार एकत्रित हुए थे। वाल्मीकि को भी बड़े सम्मान से निमंत्रण मिला था। उसके साथ ये दोनों भी अयोध्या गये। वहाँ वाल्मीकिद्वारा सिखाया

गया रामायण महाकाव्य तालसुरों के साथ गाना इन्हों ने प्रारंभ किया। ऋषियों के पवित्र स्थान, ब्राह्मणों के निवासस्थान, उपमार्ग, राजमार्ग, राजाओं के निवासस्थान, राम का निवासस्थान, तथा जहाँ ऋत्विजों के अनुष्ठान हो रहे थे, ऐसे स्थानों पर रामायण गाने का क्रम इन्होने जारी रखा। यह कभी इस मेल को बिगाड़ते नहीं थे। रोज ये वीस सर्गों का गायन करते थे। इन्हें वाल्मिकी की आज्ञा हुई थी कि, धन की अपेक्षा न की जाये। यदि कोई धन देने ही लगे, तो कहा जाये कि, हम मुनिकुमारों को धन की क्या आवश्यकता है? अगर किसी ने पूछा कि, तुम किसके पुत्र हो, तो ये कहते थे कि, हम वाल्मीकि के शिष्य है। परंतु रामायण-श्रवण से राम को पता चला कि, कुशलव उसीके पुत्र है (वा. रा. उ. ९३-९४)।

राम ने कोसल देश का राज्याभिषेक लव को किया। उत्तर कोसल का राज्यभिषेक कुश को किया (वा. रा. उ. १०७)। लव की सुमति तथा कंजानना नामक दो पत्नियाँ थीं, तथा कुश की चंपका नामक पत्नी थी (आ. रा. विवाह. ६–७)।

कुशाग्र—(सो. अज.) भागवत मत में उपरिचर वसु का पुत्र बृहद्रथ के दो पुत्रों में से दूसरा। जरासंध का कनिष्ठ बंधु। इसका पुत्र ऋषभ। परंतु वायु तथा मत्स्य पुराणों में जरासंध का उल्लेख कुशाग्रवंश में दिया है। अन्य पुराणों में यह स्वतंत्र वंश है।

कुशांब—(सो. अमा.) कुश अथवा कुशिक राजा के चार पुत्रों में प्रथम। इसे कुशांबु भी कहते थे। इसके द्वारा स्थापित नगरी का नाम कौशांबी। इसके पुत्र का नाम गाधि था (कुशिक देखिये)।

२. (सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु राजा के पुत्रों में एक। यह चेदि देश का अधिपति था (भा. ९.२२)। इसे मणिवाहन नामांतर था (म. आ. ५७.१०)।

कुशांबु—कौशांबी नगरी में रहनेवाला एक राजा (कुशांब देखिये)।

कुशाल—(मौर्य. भविष्य.) ब्रह्मांड के मत में अशोक-पुत्र।

कुशावर्त—(स्वा. प्रिय.) एक राजा। ऋषभदेव तथा जयंती का पुत्र। इसका खंड इसीके नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.४)।

कुशिक—(सो. अमा.) विश्वामित्र का पूर्वज (ऋ. ३.३३.५)। वैदिक ग्रंथों में इसके अनेक उल्लेख प्राप्य हैं (ऋ. ३.२६. १;२९.१५;३०.२०;४२.९; ऐ. ब्रा. ७. १८; सां. श्रौ. १५.२७)। शुनःशेप की कथा में इसका नाम है। यह भरतकुल का पौरोहित्य करता था। यह विशेषतः इन्द्राराधना करता था। इसीलिये इन्द्र को कौशिक कहते हैं (ऋ. १.१०.११; मै. सं. ४.५.७; श. ब्रा. ३.३.४.१९; तै. आ. १.१.४)

यह कुश का पुत्र था। भागवत मत में इसे कुशांबु, विष्णु मत में कुशांब तथा वायु मत में कुशास्य नाम हैं। इसका पुत्र गाधि तथा पौत्र विश्वामित्र। यह विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार है। इसे इषीरथपुत्र कहा गया है (वेदार्थदीपिका ३)।

कुशिक महोदयपुर में रहता था। एक बार इसका श्वशुर, च्यवन इसके पास रहने के लिये आया। उसका हेतु था, कि इनके कुल का नाश कर दिया जावे। क्यों कि, आगे चल कर इसके वंश में संकर होनेवाला था। कुशिक ने स्त्री के साथ च्यवन की उत्कृष्ट सेवा की, तथा अपने वंश को ब्राह्मणत्व प्राप्त करने का वरदान प्राप्त किया। उस प्रकार हुआ भी (म. अनु. ८७–९० कुं; विष्णुधर्म. १.१४)। इन्द्र के समान पुत्र हो, इस हेतु से कुशिक ने तपस्या की। इसलिये इन्द्र ने इसके उदर से गाधि के रूप में जन्म लिया (ह. वं. १.२०; म. शां. ४८)।

कुशिककुल के मंत्रकार-अघमर्षण, अष्टक, देवरात, देवश्रवस्, धनंजय, पुराण, बल, भूतकील, मधुच्छंदस्, माम्बुधि, लोहित, विश्वामित्र, शालंकायन, शिशिर (मत्स्य. १४५.११२–११३)।

अघमर्ण, कत, कोल, पूरण, उद्गल, रेणु, ये ब्रह्मांड में अधिक है (२.३२.११७–११८)।

२. लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशिक ऐषारथि—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ३.३१; कुशिक देखिये)।

कुशिक सौभर—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२७)।

कुशिकंधर—अट्टहास नामक शिवावतार का शिष्य।

कुशीबल—भावशर्मा नामक एक ब्राह्मण। अत्यधिक ताड़ीसेवन से इसकी मृत्यु हुई। इसे ताड़ का जन्म प्राप्त हुआ। कुछ भी दान न करने के कारण, उस ताड़ पर कुशीबल नामक ब्राह्मण, ब्रह्मराक्षस बन कर सहकुटुंब रहता था। गीता के आठवें अध्याय का पाठ करने से,

भावशर्मा और कुशीवल दांपत्य का उद्धार हुआ (पद्म. उ. १७८)।

कुशीलव—(सू. इ.) राम के पुत्र कुश तथा लव थे। इनके लिये वाल्मीकि रामायण में, सर्वत्र कुशीलव शब्द का प्रयोग आया है। आलोचक लिखते है कि, यह आर्ष प्रयोग है (वा. रा. बा. ४.५)। इनका कुश तथा लव नामकरण कर के (वा.रा.उ. ६६.९), वाल्मिकी जान-बूझ कर कुशीलव प्रयोग करता है यों ज्ञात होता है। कुशीलव शब्द का अर्थ, गुणगान का व्यवसाय करनेवाला वन्दीजन। वाल्मीकि ने अपना नाम न वताने की उनको आज्ञा दी थी, यह भी ध्यान में रखने की वात है। लोगों में कुशलव के लिये कुशीलव शब्द प्रयुक्त होने का यही कारण होगा (कुशलव देखिये)।

कुशुमिन्—ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के पौष्यंजि का शिष्य।

कुशुंभ--(सो.) भविष्य के मत में शकुनिपुत्र।

कुश्रि वाजश्रवस--वाजश्रवस् तथा राजस्तंबायन यज्ञवचस् का शिष्य। इसे अग्निचयन का ज्ञान था (श. ब्रा. १०.५.५.१)। इसके शिष्य उपवेशि तथा वात्स्य (बृ. उ. ६.५.३-४)।

कुषंड—सर्पसत्र में षंड नामक ऋत्विज के साथ इसका नाम आया है। इस सत्र में इसके पास अभिगिर (स्तुति) तथा अपगर (निंदा) नामक कर्म थे (पं. ब्रा. २५.१५.३; ला. श्रौ. १०.२०.१०)।

कुषीतक सामश्रवस—शमनीमेढ्र नामक व्रात्यों का यज्ञप्रमुख। यह व्रात्यों का मुख्य हुआ, इसलिये इसे लुशाकपि खार्गलि ने 'भ्रष्ट होगे' ऐसा शाप दिया। इसीलिये कौषीतकी शाखा के लोग (सांख्यायन), कहीं भी महत्त्वपूर्ण स्थान को प्राप्त नहीं हुए (पं. ब्रा.१७. ४.३)।

कुसीदकि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कुसीहि—विष्णु मत में व्यास की सामशिष्यपरंपरा के पौष्यंजि का शिष्य।

कुसु—मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

कुसुदिन् काव्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८१-८३)।

कुसुमामोदिनी—पार्वती की माता की सहेली। पार्वती तपस्या करने मंदराचल पर गयी। तब उसने इसे प्रार्थना की कि, वह उधर किसी को भी न आने दे (पद्म. सृ. ४४)।

कुसुमायुध—यह ब्रह्मदेव के हृदय से उत्पन्न हुआ (मत्स्य. ३.१०; काम देखिये)।

कुसुमि—सामवेदी श्रुतर्षि।

कुसुरुबिंद औद्दालकि— एक ऋषि पशुसंपत्ति प्राप्त करने के लिये, इसने सप्तरात्र याग किया तथा चतुष्पाद संपत्ति से समृद्ध हुआ (तै. सं. ७.२.२.१)। इसने दशरात्र याग शुरू किया। अन्यत्र कुसुरबिंद (पं. ब्रा. २२. १५.१-१०), कुसुरुबिंदु (सां. श्रौ. १६.२२.१४) निर्देश हैं। यह संस्कारशास्त्र का ज्ञाता था (ष. ब्रा. १.१६) इसे औद्दालकि कहा गया है। इससे पता चलता है कि, श्वेतकेतु इसका बंधु होगा।

कुस्तुक शार्कराक्ष्य--श्रवणदत्त का शिष्य। इसका शिष्य भवत्रात (वं. ब्रा. १)।

कुस्तुंबुरु—एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

कुहन—सौवीरदेशी राजपुत्र। यह जयद्रथ का बंधु था (म. व. २४९. १०)।

कुहर—भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष का राजा।

२. कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कुहू—स्वायंभुव मन्वंतर में अंगिरा ऋषि को श्रद्धा से उत्पन्न चार कन्याओं में द्वितीय।

२. हविष्मंत नामक पितरों की स्त्री।

३. द्वादश आदित्यों में धाता नामक आदित्य की स्त्री।

४. मयासुर की तीन कन्याओं में कनिष्ठ।

कूट—कंस की सभा का एक मल्ल। धनुर्याग के समय बलराम ने इसका वध किया (भा. १०. ४४)।

२. पाषाणरूपी इस असुर का गणेश ने नाश किया (गणेश. २. १३)।

कूपकर्ण—एक रुद्रगण। बाणासुर के युद्धप्रसंग में इसका बलराम से युद्ध हुआ था (भा. १०. ६३)।

२. बलि के प्रधानों में अग्रेसर (नारद. १.१०)।

कूर्च—(सू. नरि.) भागवत मत में मीढ्वस् राजा का पुत्र। इसका पुत्र इंद्रसेन।

कूर्चामुख--विश्वामित्र ऋषि का पुत्र (म. अनु. ७. ५३ कुं.)।

कूर्म—एक अवतार। प्रजापति संतति निर्माण करने के लिये, कूर्मरूप से पानी में संचार करता है (श. ब्रा. ७.५.१. ५-१०; म. आ. १६; पद्म. उ. २५९)। प्रजापति ने कूर्मरूप धारण कर प्रजोत्पादन किया। यह ग्यारहवाँ अवतार है (भा. १. ३. १६)। पृथ्वी रसातल को जा रही थी, तब विष्णु ने यह अवतार

लिया (लिंग, ९४) इस कूर्म की पीठ का घेरा एक लाख योजन था। दुर्वास द्वारा दी गयी पारिजातक की माला का इंद्र ने अपमान किया, इसलिये ऋषि ने उसे, 'वैभव नष्ट होगा' यों शाप दिया। इस कारण लक्ष्मी समुद्र में गुप्त हो गयी। उसे प्राप्त करने के लिये विष्णु ने बताया, 'लक्ष्मी को निकालने के लिये, मंदराचल की मथनी, वासुकी का डोर एवं एक ओर देव तथा दूसरी ओर दैत्य, समुद्रमंथन करें। उस समय मैं स्वयं कूर्म रूप ले कर, पीठ पर मंदराचल पर्वत धारण करूंगा, तब लक्ष्मी प्राप्त होगी' (पद्म. ब्र. ८.)। समुद्रमंथन के समय मंदराचल नीचे जाने लगा, तब विष्णु ने कूर्मावतार धारण किया। अमृतप्राप्ति के लिये यह अमृतमंथन चल रहा था (पद्म.उ.२३१–२३३; भा.२.७.१३; ८.७.८)। देवदानवों ने इस तरह क्षीरसागर का मंथन कर चौदह रत्न निकाले तथा पूर्ववत् वैभव संपादित किया। लोहाघाट के पास विष्णु ने मंदर पर्वत धारण करने के लिये कूर्मावतार लिया। कूर्मावतार के पश्चात्, लोग एकादशी का उपवास करने लगे (पद्म. उ. २६०)।

२. कश्यप तथा कद्रू का पुत्र (म. आ. ३५)।

कूर्म गार्त्समद—सूक्तद्रष्टा (ऋ. २.२७.२९)।

कूशांब स्वायव लातव्य—साम का एक प्राचीन आचार्य। इसने यज्ञायज्ञीय साम में, गिरा के स्थान पर इरा कहने के लिये बताया (पं. ब्रा. ८.६.८)। यह लातव्य कुल के स्वायु का पुत्र होगा।

कूष्मांड—एक दैत्य। कार्तिक शुक्ल नवमी के दिन इसे विष्णु ने मारा (स्कंद. २.४.३१)।

कूष्मांडराज—रुद्रगणविशेष।

कृकण—किंकिण देखिये।

कृणु—एक ऋषि। वाल्मीकि देखिये।

कृत (सो. कुश.) राजा जय का पुत्र। इसका पुत्र हर्यवन।

२. वसुदेव को रोहिणी से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.२४)।

३. मणिवर तथा देवजनी का गुह्यक पुत्र।

४. व्यास की सामशिष्य परंपरा के भागवत, वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार हिरण्यनाभ का शिष्य। भागवत के अनुसार यह चतुर्विंशशाखाध्यायी है। यह सन्नतिपुत्र तथा हिरण्यनाभ कौसल्य का शिष्य था। इसने सामसंहिता का चतुर्विंशतिधा विभाग किया। उनको प्राच्यसाम कहते है। (ह. वं. १.२०.४२-४३)

५. कृति ५. देखिये।

कृतक—वसुदेव को मदिरा से उत्पन्न पुत्रों में से तीसरा (भा. ९.२४)।

कृतंजय—(सू. इ. भविष्य.) भागवत मत में बर्हिराज का, विष्णु मत में धर्म का, वायुमत में धर्मिन् का, तथा मत्स्य मत में बृहद्राज का पुत्र।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)।

कृतद्युति—चित्रकेतु राजा की करोड स्त्रियों में से ज्येष्ठ। इसे अंगिराऋषि की कृपा से पुत्र हुआ। यह इसकी सौतों को सहन नहीं हुआ। इसलिये उन्होंने इसके पुत्र को विष दिया। परंतु अंगिरा ने उसे पुनः जीवित किया (भा. ६.१४; चित्रकेतु देखिये)।

कृतध्वज—प्रतर्दन राजा का नामांतर।

२. (सू. निमि.) धर्मध्वज जनक के दो पुत्रों में से एक।

कृतप्रज्ञ—भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष के राजा भगदत्त का पुत्र। नकुल ने इसका वध किया (म. क. ४. २९)।

कृतयशस् आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०८.१०–११)।

कृतवर्मन्—(सो. यदु. अंधक.)। हृदीकपुत्र (मत्स्य ४४.८०–८१)। यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था (म. आदि. १७७.१७)। दुर्योधन के पक्ष में यह एक अक्षौहिणी सेना ले कर आया था (म. उ. १९.१७)। बलराम द्वारा रैवतक पर्वत पर किये गये उत्सव में यह आया था (म. आ. २११.११)। इसने पांडवों से भीषण युद्ध किया था; किन्तु भीम ने इसे तीन बाणों से विद्ध किया (म. द्रो. ९०.१०)। दुर्योधन के पक्ष के बचे तीन वीरों में से यह एक था (म. सौ. ९.४७–४८)। बाद में यह द्वारका गया। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ में अश्व के संरक्षणार्थ यह अर्जुन के साथ गया था। यादवी युद्ध में इसे सात्यकि ने मारा (भा. ९.२४.२७; म. मौ. ३)।

२. (सो. सह.) भागवत मत में धनकपुत्र (कृतवीर्य देखिये)।

कृतवाच्—अंगिरसकुल का मंत्रकार। ऋतवाच् पाठभेद है।

कृतवीर्य—(सो. यदु. सह.) भागवत तथा विष्णु मत में राजा धनक के चार पुत्रों में ज्येष्ठ। इसका पुत्र कार्तवीर्यार्जुन। उसे सहस्रार्जुन भी कहते हैं (म. आ. १६९; स. ८.८)। मत्स्य तथा वायु में धनक के स्थान

पर कनक पाठ है। संकष्टीचतुर्थी व्रत के प्रभाव के कारण, इसे कार्तवीर्यार्जुन जैसा पराक्रमी पुत्र हुआ (गणेश १.५८)।

कृताग्नि—(सो. सह.) राजा धनक के चार पुत्रों में से दूसरा।

कृताश्व—(सू. इ.) संहताश्व राजा के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ। कृशाश्व नामांतर है। इसका पुत्र श्येनजित् वा प्रसन्न था।

कृताहार—पुलह तथा श्वेता का पुत्र।

कृति—(सो. आयु.) नहुष के छः पुत्रों में से कनिष्ठ।

२. (सू. निमि.) बहुलाश्व जनक का पुत्र। इसका पुत्र महावशिन्। विष्णु एवं वायु मत में, इसके समय निमि वा विदेह वंश समाप्त हुआ। कृतरात-देखिये।

३. (सो. क्रोष्टु.) रोमपादपुत्र बभ्रु का पुत्र। इसका पुत्र राजा उशिक (भा. ९.२४.)।

४. (सो. द्विमीढ.) सन्नतिमान् राजा का पुत्र। इसने हिरण्यनाभ से प्राच्यसामों की छः संहिताएँ संपादित की थी। इसका पुत्र नीप।

५. (सो. कुरु.) भागवत मत में च्यवनपुत्र। इसे उपरिचर वसु नामक पुत्र था। कृत पाठभेद है।

६. भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा। इसका पुत्र रुचिपर्वन् (म. द्रो. २५.४८)।

७. संह्राद की पत्नी। इसका पुत्र पंचजन (भा. ६. १८)।

८. वसुपुत्र विश्वकर्मन् की पत्नी। इसे चाक्षुष नामक छठवाँ मनु हुआ। (भा. ६.६)।

९. सावर्णि मन्वंतर में एक मनुपुत्र।

१०. रुद्रसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

११. रैवतमनुपुत्र।

१२. विष्णुमत में व्यास की सामशिष्यपरंपरा के पौष्यंजि का शिष्य।

कृतिमत्—(सो. द्विमीढ.) भागवत मत में यवीनरपुत्र। इसे सत्यधृति भी कहते थे।

कृतिरथ—(सू. निमि.) प्रदीपकपुत्र। वायु मत में कीर्तिरथ।

कृतिरात—(सू. निमि.) विष्णु तथा भागवत मत में महाधृतिपुत्र। इसका नाम वायु मत में कीर्तिराज तथा भागवत मत में कृति है।

कृतेयु—(सो. पूरु.) भागवत तथा वायु मत में रौद्राश्व को घृताची से उत्पन्न पुत्र।

कृतौजस्—(सो. सह.) मत्स्य मत में कनकपुत्र। भागवत तथा विष्णु मत में धनकपुत्र।

कृत्तिका—प्राचेतस दक्ष ने सोम को दी सत्ताइस कन्याओं में से एक।

२. अग्नि नामक वसु की पत्नी। इसका पुत्र स्कंद (भा. ६. ६; मत्स्य. ५. २७)।

कृत्नु भार्गव—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ७९)।

कृत्वी—कृष्णद्वैपायनपुत्र शुक की कन्या। इसका दूसरा नाम कीर्तिमती है। अजमीढ़ कुल में उत्पन्न नीप वा अणुह राजा की यह पत्नी थी। इसका पुत्र ब्रह्मदत्त।

कृप—रुशम एवं श्यावक के साथ इंद्र के सहायक के रूप में आया है (ऋ. ८. ३. १२; ४. २)।

२. (सो. अज.) उत्तर पांचाल देश के राजकुल में गौतम नामक मुनि का पौत्र। पांचाल देश, आज का रुहेलखंड है। गौतम का शरद्वत् नामक महान् तपस्वी पुत्र था। सत्यधृति का पुत्र शरद्वत, ऐसा भी कहीं कहीं उल्लेख मिलता है। इसकी तपस्या भंग करने के लिये इंद्र ने जालपदी नामक अप्सरा भेजी थी (म. आ. १२०. ६)। कुछ स्थानों पर इस अप्सरा को उर्वशी कहा गया है (भा. ९. २१. ३५; मत्स्य. ५०. १-१४)। कुछ स्थानों पर तो, सत्यधृति का तपोभंग करने के हेतु उर्वशी को भेजा गया, यों उल्लेख है। उस अप्सरा को देखते ही इसका वीर्यस्खलन हुआ। यह वीर्य, शर नामक घास के द्वीप पर गिरा, जिससे एक पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुई। कालोपरांत उसी वन में राजा शंतनु शिकार खेलने आया। वह इन्हें उठा कर ले गया, तथा उसने इनका पालन कृपापूर्वक किया। इसलिये कृप तथा कृपी उनका नामकरण हुआ (म. आ. १२०)। इनमें से कृपी अश्वत्थामा की माता तथा गुरु द्रोणाचार्य की पत्नी थी (म. आ. १२१. ११; विष्णु. ४. २०; अग्नि. २७७; गरुड. १४०)। शंतनु पुत्र तथा पुत्री को वन से उठा कर ले गये, यह बात तपःसामर्थ्य से गौतम ने जान ली। राजा के पास जा कर उसने अपने पुत्र को गोत्र आदि की जानकारी दी। उसे चारों प्रकार के धनुर्वेद तथा सब प्रकार की अस्त्रविद्या सिखायी (म.आ. १२०.१९-२०)। इसके बाद राजा धृतराष्ट्र ने, वेदशास्त्रों में निपुण कृपाचार्य के पास, अपने सब पुत्रों को अध्ययन के लिये भेजा। कौरवों ने द्रोणाचार्य के पहले कृपाचार्य के पास धनुर्वेद सीखा था (म. आ. परि. १. क्र. ७३; पंक्ति १३४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था, फिर भी इसका मन पांडवों की ओर था। यह हमेशा कर्ण की निंदा करता था, तथा अर्जुन की प्रशंसा करता था। (म. वि. ४४.१; द्रो. १३३.१२-२३)। एक बार कृपाचार्य पांडवों की स्तुति तथा कर्ण की निंदा कर रहा था। कर्ण ने कहा, 'हे दुर्मति, यदि पुनः तुम इस तरह अप्रिय शब्द बोलोगे, तो इस तलवार से तुम्हारी जिव्हा काट दूँगा (म. द्रो. १३३.५२)'। इसी तरह हमेशा कर्ण तथा कृपाचार्य में ठन जाया करती थी। इसने भारतीय युद्ध में अतुल पराक्रम दिखा कर, अनेकों वीरों को स्वर्ग भेजा। जयद्रथवध के बाद कृप तथा अश्वत्थामा ने अर्जुन पर आक्रमण किया, तब अर्जुन के बाणों से कृपाचार्य वेहोश हुआ (म. द्रो. १२२.८)। इसने युद्ध में धृष्टद्युम्न पर अमोघ बाण छोड़ कर, उसे जर्जर कर दिया था (म. क. १८.५०)। दुर्योधन के वध के बाद, अश्वत्थामा अत्यंत क्रोधित हुआ। उसने कृपाचार्य से कहा कि, मैं पांडवों के पुत्रों को निद्रित अवस्था में ही मार डालना चाहता हूँ। तब कृपाचार्य ने उसे उपदेश किया, जिससे इसकी सही योग्यता का पता चलता है। कृपाचार्य ने कहा, 'उद्योग की स्थिति कमजोर होने पर केवल भाग्य कुछ नहीं कर सकता। इसलिये कभी भी कार्य के प्रारंभ में बडों से विचारविमर्श करना चाहिये। अतः हम धृतराष्ट्र, गांधारी, तथा विदुर की सलाह लें' (म. सौ. ३.३०-३३)। इसने विवाह नहीं किया। यह चिरंजीव है। कौरवों की मृत्यु के बाद इसने दुर्योधन का सांत्वन किया। पश्चात् स्वयं पांडवों के भय के कारण, घोडे पर सवार हो कर हस्तिनापुर की ओर रवाना हुआ (म. सौ. ९)। यह भविष्य में सावर्णिमन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक होनेवाला है (भा. ८.१३-१५)। कृपाचार्य रुद्रगण का अवतार था (म. आ. ६१.७१)

३. उत्तानपादपुत्र ध्रुव का पौत्र। शिष्ट के चार पुत्रों में से ज्येष्ठ।

कृपी—(सो. अज.) द्रोणाचार्य की स्त्री तथा विष्णु, वायु एवं मत्स्य के मत में सत्यधृतिकन्या। जालपदी नामक अप्सरा को देख कर, शरद्वत् का रेत शरस्तंभ पर स्खलित हुआ। उससे यह उत्पन्न हुई। शंतनु ने इसका लालनपालन किया। इसका पुत्र अश्वत्थामा (कृप देखिये)।

कृमि—(सो. अनु.) विष्णु तथा वायु के मत में उशीनरपुत्र।

२. (सो. ऋक्ष.) मत्स्य के मत में च्यवनपुत्र। कृत, कृतक, कृति आदि इसी के नाम रहे होंगे।

कृमिल—(सो. क्रोष्टु.) किंकिण देखिये।

कृश—इसने यज्ञद्वारा इन्द्र को प्रसन्न किया (ऋ. ८.५.४२)। यह सत्यवक्ता था (ऋ. ८.५९.३)। आश्विनों ने शयु के साथ इस पर भी कृपा की थी (ऋ. १०.४०.८)। सूक्तद्रष्टा कृश काण्व यही रहा होगा (ऋ. ८.५५)।

कृश वा कृशतनु—एक ऋषि तथा शृंग ऋषि का मित्र (म. आ. ३६)। इसने प्रतिग्रह न ले कर अपना सारा समय, तपस्या में ही व्यतीत किया। यह अत्यंत कृश था। इसी कारण इसका यह नामकरण हुआ। वीरद्युम्नपुत्र भूरिद्युम्न नष्ट हो गया था। तब तपोबल से उसे वापस ला कर उसने इसे उपदेशपर कई बाते भी बतायी थीं (म. शां. १२६)।

२. विकुंठदेवों में से एक।

कृशानु—सोमसंरक्षक गंधर्वों में से एक (तै. सं. १. २.७)। अश्विनों ने युद्ध में इसकी रक्षा की (ऋ. १. ११२.२१)।

कृशाश्व—एक ऋषि तथा प्रजापति। प्राचेतस दक्ष ने अपनी साठ कन्याओं में से दो कन्याएं इसे दी थीं। उनका नाम अर्चि एवं धिषणा था। अर्चि को धूम्रकेश, तथा धिषणा को वेदशिरस्, देवल, वयुन तथा मनु ये पुत्र हुवे। इसके अतिरिक्त इसे जया एवं प्रभा नामक दो कन्याएं भी थीं। किंतु ये किस स्त्री से उत्पन्न हुईं, इसका उल्लेख नहीं मिलता (वा. रा. बा. २१)। यह यजुर्वेदी ब्रह्मचारी था।

२. (सू. दिष्ट.) राजा सहदेव का पुत्र। इसका पुत्र सोमदत्त।

३. (सू. इ.) कृताश्व राजा का नामांतर।

४. नाट्यकला का आचार्य एक ऋषि (पा. सू. ४.३. १११)।

कृष्ण—(सो. यदु. वृष्णि.) वसुदेव को देवकी से उत्पन्न आठ पुत्रों में कनिष्ठ। इस का जन्म मथुरा में कंस के कारागृह में हुआ (भा.९.२४.५५; १०.३; विष्णु. ४. १५; ५.३; ह. वं. १.३५; कूर्म.१.२४; गरुड.१.१३९)।

विवाह के पश्चात्, श्वशुरगृह में बहन को पहुँचाते समय, देवकीपुत्र द्वारा अपनी हत्या होगी यह जान कर, कंस ने

वसुदेवदेवकी को कारागार में रखा। देवकी के सात पुत्रों को क्रम से उसने पटक मारा। कृष्ण आठवाँ पुत्र है, जिसका जन्म विक्रम संवत् के अनुसार, भाद्रपद वद्य अष्टमी की मध्यरात्रि में रोहिणी नक्षत्र पर हुआ। वह दिन बुधवार था (निर्णयसिंधु)।

वसुदेव उग्रसेन का मंत्री था। उग्रसेन को बंदिस्त कर के कंस राजगद्दी पर बैठा था। अतः कंस पहले से वसुदेव को प्रतिकूल था। वसुदेव के देवकी से उत्पन्न पुत्रों को ही नहीं, बल्कि अन्य स्त्रियों से प्राप्त पुत्रों को भी कंस द्वारा मारे जाने का उल्लेख, भागवत को छोड़ कर, अन्य पुराणों में मिलता है (वायु. ९६.१७३-१७८)।

वसुदेव ने कृष्ण की रक्षा के लिये, गोकुल में नंद के घर पहुँचाया। गोकुल से यशोदा की कन्या ले कर वसुदेव पुनः कारागार में उपस्थित हुआ। कंस ने उस कन्या को भी मारने का यत्न किया, किन्तु वह हाथ से छूट गयी। यहीं कंस को पता लगा कि, वसुदेवसुत पैदा हो कर सुरक्षित स्थान पर पहुँच गया है।

नन्दकुलोपाध्याय गर्गमुनि ने गुप्तरूप से कृष्ण का जातक तथा नामकरण संस्कार किया। इसी समय कृष्ण के जीवनकृत्यों का भविष्यकथन भी किया।

बाललीला—प्रथम कंस ने कृष्णवधार्थ पूतना भेजी, जो उसकी बहन .वा दाई थी। गोकुल के बालकों को विषयुक्त स्तनपान करा कर मारने का क्रम पूतना ने जारी रखा। कृष्ण को स्तनपान कराने पर, कृष्ण ने उसका पूरा लहू चूस लिया तथा उसके प्राण लिये।

तृणावर्त असुर का भी, पत्थर पर पटक कर कृष्ण ने वध किया। उसी समय यशोदा को कृष्ण के मुँह में विश्वरूप-दर्शन हुआ। बकासुर, वत्सासुर, अघासुरादि का भी इसने वध किया। कालिया के फूत्कार के कारण, यमुनाजल विषयुक्त हुआ था। उसेभी मर्दन कर कृष्णने भगाया। धेनुकासुर, प्रलंबासुर, अरिष्ट, व्योम तथा केशि का भी कृष्ण ने वध किया। एक समय नन्द को यमुना से डूबते डूबते बचाया।

गोकुल का प्रतिवार्षिक 'इन्द्रोत्सव' बंद कर के कृष्ण ने वहाँ गोवर्धनउत्सव का आरंभ किया। इससे इन्द्र ने कुपित हो कर गोकुल पर अतिवृष्टि की। कृष्ण ने गोवर्धन पर्वत का आश्रय ले कर गोकुलवासियों को इस संकट से बचाया।

कई पुराणों में कृष्ण के बालचरित्र का ही केवल वर्णन है। यह बाललीला पूतनावध से प्रारंभ हो कर केशिवध के पास समाप्त होती है। पूतना, धेनुक, प्रलंब, अघ इन का वध, इन्द्रगर्वहरण, कालियामर्दन, दावाग्निभक्षण, गोवर्धनो-द्धार, रासक्रीड़ा तथा कंसवध ये घटनाएं सब स्थानों में वर्णित हैं, केवल क्रम में भिन्नता है। कहीं संक्षेप में तथा कहीं विस्तार से वर्णन है। विष्णुपुराण में संक्षेप में बाललीला का वर्णन आया है।

विशेषतः भागवत, ब्रह्मवैवर्त, हरिवंश एवं गर्गसंहिता में कृष्ण की केवल बाललीलाओं का वर्णन है। कृष्ण का पांड्वों से संबंध केवल गर्गसंहिता में ही है। महाभारत-वर्णित कृष्णचरित्र पुराणों में नहीं मिलता। उसका पांड्वों को अप्रतिम सहाय, राजकाजकौशल्य और गीता केवल महाभारत में ही अंकित है।

बाललीला में राधाकृष्ण-संबंध वर्णन करने की ब्रह्म-वैवर्त पुराण की प्रवृत्ति है। यह संबंध आध्यात्मिक माना जाता है। राधाकृष्ण-विवाह ब्रह्मदेवद्वारा संपन्न हुआ था (ब्रह्मवै. ४. १५)।

कंसवध—कृष्ण की मल्लविद्या की कीर्ति सुन कर, कंस उसे अक्रूरद्वारा मथुरा ले आया। मथुरा में वसुदेव-देवकी से मिलना कंस को अप्रिय होगा यह अक्रूर द्वारा बताने पर भी, आत्मविश्वास के साथ कृष्ण अपने मातापिता से मिले। शहर में घूमते समय, एक धोबी से कृष्ण ने कपडे लिये, एक माली ने पुष्पहार गले में डाला तथा कुब्जा ने चंदन लेप चढ़ाया। शस्त्रागार में जा कर इसने भव्य धनुप का भंग किया। यह सब देख कर कंस ने चाणूर, मुष्टिक नामक मल्लों को, कृष्ण के साथ मल्लयुद्ध करने के लिये भेजा। मैदान के द्वार पर ही, कंस द्वारा छोडे गये कुवलया-पीड हाथी को कृष्ण ने सहजता से मारा। मल्लयुद्ध में चाणूर तथा तोषलक को मारा। कृष्ण के ये सब पराक्रम देख कर, कंस का मस्तक चकराने लगा। कृष्ण ने उसे सिंहासन से खींच कर उसका वध किया। समुदाय ने कृष्ण की जयध्वनि की। वसुदेवदेवकी से मिल कर तथा उग्रसेन को गद्दी पर बिठा कर, कृष्ण ने मथुरा में शांति प्रस्थापित की। बलराम ने पूरे समय तक कृष्ण की साथ की।

शिक्षा—नंदादि गोपालों को मथुरा ला कर, तथा सत्कार कर कृष्ण ने उन्हें वापस गोकुल भेजा। यशोदा के सांत्वनार्थ उद्धव को गोकुल भेजा। गर्ग-मुनि द्वारा उपनयनसंस्कारबद्ध हो कर, रामकृष्ण, काश्य सांदीपनि के यहाँ अध्ययनार्थ अवंति गये। एकपाठी होने से ६४ दिनों में ही इन्हों ने वेदों का तथा धनुर्वेद

का अध्ययन किया (ब्रह्म. १९४. २१; ह. वं. २. ३३; भा. १०. ४५. ३६; विष्णु. ५. २१)। सांदीपनि ने इन्हें गायत्री मंत्रोपदेश देने का भी उल्लेख है (दे. भा. ४. २. १)। इसके उपनयन प्रसंग में देव, नंद, यशोदा तथा विधवा कुन्ती उपस्थित थीं (ब्रह्मवै. ४. १०१)। इस समय कृष्ण की आयु १२ वर्षों की थी (दे. भा. ४. २४)। गुरुदक्षिणा के रूप में सांदीपनि का, मृत पुत्र दत्त कृष्ण ने सजीव कर दिया (पद्म. ३. २४६; ब्रह्म. १९४. ३१)। यहीं पंचजनों का वध कर के, विख्यात पांचजन्य शंख कृष्ण ने प्राप्त किया (भा. १०. ४५. ४२; म. भी. २३. १६)।

विवाह—इसने शिशुपाल का पराभव कर के, भीष्मक राजा की कन्या रुक्मिणी का हरण किया। स्यमन्तकमणि-प्रसंग में, जांबवती तथा सत्यभामा से इसका विवाह हुआ। इसी समय सत्राजित का वध करनेवाले शतधन्वन् का इसने वध किया। कुछ काल के बाद, कृष्ण कुछ यादवों सह पांडवों से मिलने के लिये इन्द्रप्रस्थ गया। तब चातुर्माससमाप्ति तक पांडवों ने इसे वहीं रख लिया। उस काल में इसका कालिंदी से विवाह हुआ। बाद में द्वारका जाने पर, मित्रविंदा, सत्या (नाग्नजिती), भद्रा, कैकेयी तथा लक्ष्मणा (सुलक्षणा) का स्वपराक्रम से हरण कर के इसने विवाह किया (भा. १०.५८; ९०.२९–३०)। इसके अष्टनायिकाओं में सुलक्षणा, नाग्नजिती तथा सुशीला थी। सुमित्रा, शैव्या, सुभीमा, माद्री, कौसल्या, विरजा (पद्म. सृ. १३. १५५–१५६) अनुविंदा तथा सुनंदा यों भिन्न नाम भी प्राप्त हैं (पद्म. पा. ७०-३३)। इन में कई नाम गुणदर्शक दीखते हैं।

कृष्ण ने नरकासुर का वध किया। उसके कारागृह में सोलह हजार स्त्रियाँ थीं। उन्हें मुक्त कर कृष्ण ने उनसे विवाह किये (भा.१०.५९.३३; विष्णु.५.२९.३१)। इस प्रकार उनके उद्धार का श्रेय भी संपादन किया। एक ही समय अनेक रूप धारण करने का कृष्ण में सामर्थ्य था।

नरकासुर का वध कर के लौटते समय, कृष्ण ने इंद्र का पारिजातक वृक्ष तोड़ दिया। तब क्रोधित हो कर इंद्र ने कृष्ण से युद्ध किया परंतु इन्द्र का बस नहीं चला। तब कृष्ण ने उससे कहा कि, जबतक मैं पृथ्वी पर हूँ, तब तक यह वृक्ष यहीं रहने दो। बाद में उसे ले जाना (पद्म. ३. २४८–२४९)।

कृष्ण के कुल अस्सी हजार पुत्र थे (पद्म. सृ. १३)। पुत्रों के नाम उनकी माताओं के चरित्र में देखिये।

जांबवती को पुत्र प्राप्ति हो इस हेतु से, कृष्ण ने महादेव की तपस्या कर के, उससे वर प्राप्त किया (म. अनु. ४६)।

एक बार यह अपनी स्त्रियों से क्रीड़ा कर रहा था। तब नारद के आदेशानुसार जांबवतीपुत्र सांब वहाँ गया। उस समय कृष्ण की पत्नियों ने मद्यपान किया था। अतएव वे उस पर मोहित हो गईं। तब कृष्ण ने उन्हें शाप दिया कि, 'तुम लोग चुरा ली जाओगी। किन्तु दाल्भ्यद्वारा बताये गये व्रत द्वारा तुम्हारा उद्धार होगा'। इसने सांब को शाप दिया कि, तुम कुष्ठरोगी बनोगे (पद्म. सृ. २३; स्कंद. ७.१.१०१)।

मथुरा में यशोदा की कन्या एकानंगा के साथ रामकृष्ण की भेंट हुई। इसके लिये ही कृष्ण ने कंस का वध किया (म. स. १.२१.१४२८–१४३०)। बाणासुर के हजार हाथ भी इसने तोड़े (ब्रह्मांड. ३.७३.९९–१०२; वायु. ८८.९८–१०१)।

इसके अश्वों के नाम शैव्य, सुग्रीव, मेघपुष्प तथा बलाहक थे (म. आश्व.१.४.३४२४)। पांडवों के राजसूय तथा अश्वमेध में यह उपस्थित था (म. आश्व. ८. ९)।

जरासंधवध—कंसवध के कारण जरासंध क्रुद्ध हुआ। कंस जरासंध का दामाद था। उस समय जरासंध सम्राट था। जरासंध के कारागार में हजारों नृप बंदिवान थे। उन्होंने भी कृष्ण के पास अपनी मुक्तता के लिये संदेश भिजवाया था। कृष्ण ने यादवसभा में इस प्रश्न को उठाया। जरासंध ने मथुरा पर आक्रमण किया। कई राजा उसके सहायक थे। कृष्ण ने उसका सत्रह बार पराजय किया। कालयवन का भी जरासंध ने सहाय्य लिया। कालयवन ने मथुरा को चारों ओर घेरा डाला। कृष्ण, इस समय अगतिक हो कर भागते भागते, मुचकुंद सोया था वहाँ आया। पीछे कालयवन भी आ पहुँचा। कृष्ण चपलता से आँखों से ओझल हो गया। मुचकुंद कालयवन द्वारा मारा गया।

जरासंध के आक्रमण के भय से कृष्ण मथुरा छोड़ कर सुदूर द्वारका में आ बसा। वहाँ इसने अपनी नयी राजधानी बसायी। जरासंध भी द्वारका पहुँचा। तब कृष्ण प्रवर्षणगिरि में जा छिपा। जरासंध ने वहाँ भी आग लगा दी तथा वह लौटा। कृष्ण बच गया। कुछ स्थानों पर प्रवर्षणगिरि की जगह गोमंतक का उल्लेख हैं।

इसी समय इंद्रप्रस्थ से युधिष्ठिर ने दूतद्वारा अपना राजसूय यज्ञ का विचार कृष्ण को कथन कर, उसको पाचारण किया। कृष्ण के सामने प्रश्न निर्माण हुआ कि, किस को अग्रस्थान दे। उद्धव ने, प्रथम इंद्रप्रस्थ जा कर पश्चात् जरासंध के यहाँ जाने की मंत्रणा, कृष्ण को दी। कृष्ण ने स्वयं इंद्रप्रस्थ जा कर, जरासंध के बंदिस्त राजाओं को तुरन्त ही मुक्त करने का आश्वासन दूतद्वारा भेजा।

राजसूय यज्ञ के लिये भी, जरासंध जैसे प्रतापी प्रतिस्पर्धी का विनाश आवश्यक था। इसलिये ब्राह्मण वेष में कृष्ण, अर्जुन तथा भीम जरासंध के पास उपस्थित हुए। वहाँ गदायुद्ध में भीमद्वारा जरासंध का वध हुआ। उसके पुत्र को गद्दी पर बिठा कर, ये सब लौट आये (म. स. १२.२२)।

शिशुपालवध--करुषाधिप पौंड्रक वासुदेव, तथा करवीराधिप शृगाल यादव का कृष्ण ने वध किया। भीष्म ने राजसूय यज्ञ में कृष्ण को अग्रपूजा का मान दिया। इस कारण शिशुपाल ईर्ष्या से भड़क उठा। तब सुदर्शन चक्र से कृष्ण ने शिशुपाल का वध किया। यज्ञसमाप्ति के बाद यह द्वारका गया। बाद में शाल्व, दंतवक्र तथा विदूरथ का भी वध कृष्ण ने किया।

भारतीययुद्ध—पांडव वनवास में थे। उस समय उनके यहाँ कृष्ण गया था। कृष्ण ने कहा, 'मेरे होते हुए द्यूतक्रीडा असंभव हो जाती थी।' कुछ दिन वहीं रह कर, सुभद्रा तथा अभिमन्यु को लेकर यह द्वारका गया (म. व. १४.२४)। पांडव काम्यकवन में थे। कृष्ण सत्यभामा के साथ वहाँ गया था। कुछ दिन वहाँ रह कर द्वारका लौटा (म. व. १८०.२२४)। दुर्योधन के कथनानुसार दुर्वास पांडवों के यहाँ गया था। तब द्रौपदी की सहायता कर कृष्ण ने दुर्वास ऋषि को तुष्ट किया (म. व. परि. १.२५)। अभिमन्यु के विवाहार्थ कृष्ण उपप्लव्य गया था। तब सम्मिलित राजाओं की उपस्थिति में इसने पांडवों के हिस्से का प्रश्न उठाया। दुर्योधन को अमान्य है यह जान कर, इसने उधर जाने का निश्चय किया (म. वि. ६७)। अर्जुन तथा दुर्योधन कृष्ण के समीप युद्धार्थ सहायता माँगने गये। दुर्योधन की माँग के अनुसार उसे यादव सेना दी। स्वयं अर्जुन के पक्ष में गया। युद्ध में प्रत्यक्ष भाग न लेने की कृष्ण की प्रतिज्ञा थी। फिर भी अर्जुन ने उसे ही माँग लिया (म. उ.७)।

इस प्रकार युद्ध की तैयारियाँ कौरव-पांडव कर रहे थे। तब युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र के यहाँ कृष्ण को मध्यस्थ के नाते भेजा। किन्तु कुछ लाभ न हुआ। कृष्ण आयेगा, इस लिये धृतराष्ट्र ने हस्तिनापुर से वृकस्थल तक मार्ग सुशोभित किया था (म. उ. ७१.९३)। दुर्योधन ने कृष्ण को भोजन का निमंत्रण दिया। कृष्ण ने उसे अमान्य किया (म. उ. ८९.११)। वहाँ दिये गये भाषण से कौरवों के सब दुष्कृत्य स्पष्ट हुए। सब सदस्यों को पांडवों का पक्ष न्यायसंगत प्रतीत हुआ। भीष्म द्रोणादिक भी कृष्ण के समर्थक बने। भीष्म, द्रोणाचार्य, गांधारी, धृतराष्ट्र, कण्व, नारदादि ने अनेक प्रकार से दुर्योधन को समझाया। किन्तु वह नहीं माना।

सभा की शांति नष्ट होते देख, दुःशासन ने दुर्योधन को इशारे से बाहर जाने को कहा। भीष्म ने इस समय, 'क्षत्रियों का विनाश काल समीप है,' यों प्रकट किया। दुर्योधन का कृष्ण को बंदिस्त करने का विचार था, जो सात्यकि ने सभा में प्रकट किया। उल्टे दुर्योधन को ही पांडवों के यहाँ बाँध कर ले जाने का सामर्थ्य कृष्ण ने विदित किया। तब धृतराष्ट्र, विदुरादि ने दुर्योधन की पर्याप्त निर्भर्त्सना की। कृष्ण ने इस समय अपना उग्र विश्वरूप प्रकट किया। सब भयभीत हुये। कृष्ण शांति से सभागृह के बाहर आया। दुर्योधन के न मानने की बात धृतराष्ट्रद्वारा विदित होते ही कृष्ण ने हस्तिनापुर छोडा (म. उ. १२९)। बाहर आकर कर्ण को उसका पांडवों से भ्रातृसंबंध कथित कर, उसे पांडवपक्ष में आने का आग्रह किया। उसके न मानने पर, कृष्ण उपप्लव्य चला आया। युद्धार्थ तैयारियाँ प्रारंभ हुई (म. उ. १३८–१४१)।

कृष्ण ने धृष्टद्युम्न तथा सात्यकि की सहायता से पांडव सेना की बलिष्ठ सिद्धता की (म. उ. १४९.७२)। अर्जुन की प्रार्थना पर कृष्ण ने उसका रथ दोनों सेनाओं के बीच ला कर खडा किया। आप्तजन तथा बाँधवों के संहार का चित्र सामने देखकर अर्जुन युद्धनिवृत्ति की बातें करने लगा। कृष्ण ने उसे 'गीता' सुनाकर, पुनः युद्धार्थ सिद्ध किया (म. भी. २३–४०)। यह दिन मार्गशीर्ष शुद्ध त्रयोदशी था।

कृष्ण ने पांडवों को महान् संकटों से बचाया। रथ के अश्वों की सेवा की। उन्हें पानी तक पिलाया (म. द्रो. १७५.१५)। भगदत्त के वैष्णवास्त्र से अर्जुन की रक्षा की (म. द्रो. २८.१७)। अभिमन्युवध के बाद, सुभद्रा का सांत्वन किया (म. द्रो. ५४.९)। भूरिश्रवा को अन्तिमसमय में स्वर्ग की जानकारी दी (म. द्रो. ११८.

९६८*)। अंधकार उत्पन्न कर के, जयद्रथवध की प्रतिज्ञापूर्ति अर्जुन द्वारा करवाई (म. द्रो. १२१)। घटोत्कच को युद्ध में भेज कर, कर्ण की वासवी शक्ति से अर्जुन की रक्षा की (म. द्रो. १५४)। द्रोणवध के लिये, असत्य भाषण की सलाह युधिष्ठिर को दी (म. द्रो. १६४)। गांडीव धनुष्य दूसरे को देने की सलाह युधिष्ठिर से सुनते ही, अर्जुन उस पर तरवार खींच कर दौडा। इस समय उसे कृष्ण ने कौशिक-कथा बताकर इस कृत्य से परावृत्त किया (म. क. ४९; अर्जुन देखिये)। रथ को पाँच अंगुल धरती में गाड़ कर, कर्ण के सर्पयुक्त बाण से अर्जुन की रक्षा की (म. क. ६६.१०८८*)। धर्म को शल्यवध करने के लिये कहा (म. श. ६.२४-३८)। भीमद्वारा दुर्योधन की जाँघ पर गदाप्रहार करा के उसका वध करवाया (म. श. ५७.३-१०)। इन सब कृत्यों के लिये दुर्योधन ने इसे दोष दिया (म. श. ६०)।

गांधारी की सांत्वना के लिये धर्म ने कृष्ण को हस्तिनापुर भेजा (म. श. ६१.३९)। कृष्ण ने कौरवों के अन्यायपूर्ण व्यवहार उसे बताये। फिर भी गांधारी ने कृष्ण को दुर्मरण का शाप दिया (म. स्त्री. २५)।

धृतराष्ट्र भीम से मिलने आया। लोहप्रतिमा उसकी गोद में सरका कर कृष्ण ने भीम की रक्षा की (म. स्त्री. ११.१५)। अश्वत्थामा के अस्त्र से उत्तरा के गर्भ की रक्षा की (म. सौ. १६.८; उत्तरा देखिये)। इसने वसुदेव को भारतीययुद्ध कथा बतायी (म. आश्व. ५९)।

यादवी--कण्व ऋषि का उपहास करने के कारण, इसने सांब को शाप दिया (पद्म. उ. २५२)। इसी सांब को मूसल पैदा हुआ। उसी मूसल से सब यादवों का संहार हुआ। सांब, चारुदेष्ण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध मृत हो गये। पुत्रों की मृत्यु देख कर कृष्ण क्रोधित हुआ। गद का पतन देख कर इसका क्रोध अनिवार्य हुआ। तब बचे हुए सब यादवों का इसने वध किया। इस समय दारुक तथा बभ्रु ने कहा, 'भगवान्, बचे हुए अधिकांश लोगों की हत्या तो तुम ने कर ही दी। अब हमें बलराम की खोज करनी चाहिये।' कृष्ण ने यादवों में किसी का खास प्रतिकार नहीं किया, क्यों कि, कालचक्र अब उलटा चल रहा है, यह उसने देख लिया (म. मौ. ४)।

निर्याण—कृष्ण का निर्याणसमय समीप आ गया। इसका उद्धव को पता चलते ही उसने कृष्ण की प्रार्थना की, "मुझे भी अपने साथ ले चलिये।" कृष्ण ने उसे अध्यात्म का बोध किया (भा. ११.७-२९)। यह बोध अवधूतगीता वा उद्धवगीता नाम से विख्यात है।

अनन्तर द्वारका में दुश्चिह्न प्रकट होने लगे। बलराम ने सागर तट पर देह विसर्जन किया। कृष्ण अश्वत्थ वृक्ष के नीचे, दाहिनी जाँघ पर बाँया पैर रख कर, चिन्तनावस्था में वृक्ष को चिपक कर बैठा था। इसी समय जरा नामक व्याध ने तलुवे पर मृग समझ कर तीर मारा, जो इसके बायें तलुवे में लगा। यह देखकर व्याध अत्यंत दुःखित हुआ। उसने कृष्ण से क्षमायाचना की। कृष्ण ने उसकी सांत्वना की, तथा उसे आशीर्वाद दिया।

कृष्ण का सारथि दारुक वहाँ आया। उसने कृष्ण की वन्दना की। इसी समय कृष्ण का रथ भी गुप्त हो गया। कृष्ण ने दारुक से कहा, "मेरा प्रयाणसमय समीप आ गया है। द्वारका जा कर यह अनिष्ट प्रकार उग्रसेन से कथन करो। द्वारका शीघ्र ही समुद्र में डूबेगी। अतः सब लोगों को द्वारका से सुदूर जाने को बताओ"।

दारुक से यह वृत्त सुन कर द्वारका में हाहाकार मच गया। देवकी तथा रोहिणी ने देह विसर्जित किये। अष्टनायिकाओं ने कृष्ण के साथ अग्निप्रवेश किया (ब्रह्म. २११-१२)। प्रद्युम्नादिकों की पत्नियों ने भी यही किया।

इसी समय अर्जुन भी इन्द्रप्रस्थ से आया। स्त्रियाँ तथा बालकों को लेकर वह इन्द्रप्रस्थ जा रहा था कि, द्वारका समुद्र में डूबी (म. मौ. ८.४०; देवकी तथा बहुलाश्व देखिये)।

मृत्युकाल में कृष्ण की आयु १२५ से भी अधिक थी (भा. ११.६.२५; ब्रह्मवै. ४.१२९.१८)। १३५ की आयु में कृष्ण का निर्याण हुआ (भवि. प्रति. १.३.८१)। कृष्ण अर्जुन से ३ महीने ज्येष्ठ था।

तत्वज्ञ कृष्ण—कृष्णचरित्र अपूर्व है। जन्म से निर्वाण तक प्रत्येक अवस्था में, इसने असामान्यता प्रकट की। कारागृह में जन्म ले कर, सुरक्षा के लिये गोकुल जाना पडा। नन्द के घर बालकृष्ण ने बाललीला की। गोपगोपिकाओं के साथ ग्वालों का कार्य कर के मुरलीधर तथा राधाकृष्ण नाम प्राप्त किये। मल्लविद्या से ख्याति तथा लोकप्रियता संपादित कर के कुश्ती के मैदान में कंस का वध किया। सम्राट जरासंध के साथ मुकाबला करने से हस्तिनापुर के राजकारण में इसका प्रवेश हुआ। जरासंधवध तथा स्वयंवरों में शिशुपालादि बलिष्ठ नृपों को पराजित करने से युद्धकुशलता प्रकट हुई। आध्यात्मिक अधिकार के कारण भीष्म ने इसे राजसूययज्ञ में अग्रपूजा

का मान दे कर सम्मानित किया। भारतीययुद्ध में अर्जुन का सारथ्य तथा कुशल संयोजक की इसकी भूमिका थी।

युद्ध के प्रारंभ में अर्जुन युद्धपरावृत्त होने लगा। गीता सुना कर उसे पुनः युद्धप्रवृत्त किया। अन्तसमय उद्धव को ज्ञान दिया। भगवद्गीता तथा उद्धव का उपदेश ये अध्यात्मशास्त्र के अपूर्व ग्रंथ हैं। कर्म कर के कर्मबंधन से मुक्ति पाने के लिये दोनों ग्रंथों में संकेत हैं। ज्ञान, भक्ति तथा लोकाचार का अटूट संबंध प्रतिपादन करने से, कृष्ण का यह बोध अमर हुआ है। विशेषतः इन ग्रंथों ने कृष्ण को पूर्णावतार बना दिया है।

द्वैत, विशिष्टाद्वैत, अद्वैत आदि मतप्रतिपादक प्राचीन आचार्यों के भाष्यस्वरूप ग्रंथ भगवद्गीता पर उपलब्ध हैं। आधुनिक साहित्य में तिलकजी का 'गीतारहस्य' ज्ञान-मूलक, भक्तिप्रधान, निष्काम कर्मयोग का प्रतिपादक है। महात्मा गांधी का 'अनासक्तियोग' ग्रंथ गीताप्रतिपादन के स्पष्टीकरणार्थ ही है।

युद्धारंभ में कृष्ण ने अर्जुन से गीता कह कर युद्धप्रवृत्त किया। पश्चात् अर्जुन गीतोपदेश भूल गया, तथा पुनः एक बार उसे सुनने की उसने कृष्ण से प्रार्थना की। कृष्ण ने कहा, "मैं भी उस समय विशेष योगावस्था में था। उस समय जो प्रतिपादन किया, वह मैं अब दुहरा नहीं सकता। तथापि उसका कुछ अंश मैं तुम्हें कथन करता हूँ।" उसी का नाम 'अनुगीता' है (म. आश्व. १६-५०)। भगवद्गीता का महत्व अनुगीता को प्राप्त नहीं हुआ।

विश्वरूपदर्शन––कृष्णचरित्र में विश्वरूपदर्शन एक महत्वपूर्ण भाग है। १. बाललीला में कृष्ण ने, मृत्तिका भक्षण की। कृष्ण ने यशोदाद्वारा किये गये मृत्तिका-भक्षण के आरोप को अस्वीकृत किया। मुँह खोलने को बताने पर, यशोदा को मुँह में विश्वरूपदर्शन हुआ।

२. अक्रूर को विश्वरूपदर्शन दिया।

३. हस्तिनापुर में कृष्ण दौत्यकर्म करने गया था। दुर्योधन कृष्ण को बंदिस्त करने को उद्युक्त हुआ। इस समय कृष्ण ने अपना उग्र स्वरूप प्रकट किया, जिसका वर्णन विश्वरूप के समान ही है।

४. भारतीय युद्ध के प्रारंभ में, गीता के ग्यारहवें अध्याय में अर्जुन को अपना विश्वरूप बताया। वहाँ उसका विस्तृत वर्णन है। उसकी भयानकता से अर्जुन भी घबराया। उसने सौम्यरूप धारण करने की कृष्ण से प्रार्थना की।

५. भारतीययुद्ध में कृष्ण की हाथ में शस्त्र धारण न करने की प्रतिज्ञा थी। भीष्म की ठीक इसके विपरीत, कृष्ण को शस्त्र उठाने को विवश करने की प्रतिज्ञा थी। घमासान लड़ाई में अर्जुन को भीष्म के सामने हारते देख, कृष्ण ने चतुर्भुज रूप धारण कर भीष्म पर धावा बोल दिया। प्रतिज्ञापूर्ति के आनंद में भीष्म ने हाथ जोड़ कर शस्त्र नीचे रखा।

६. इन्द्रप्रस्थ में अर्जुन को अनुगीता सुना कर द्वारका लौटते समय, मरुभूमि में कृष्ण की उत्तंक ऋषि से भेंट हुई। उत्तंक ने कृष्ण के होते हुए, भारतीय युद्ध के भयानक संहार का उत्तरदायित्व इसपर डाल कर, इसकी निर्भर्त्सना की। उत्तंक की सांत्वना के लिये कृष्ण ने वहाँ भी उसे विश्वरूपदर्शन कराया तथा इच्छित वर दिये (म. आश्व. ५४. ४)।

युद्ध में सब बांधवों का वध होने के कारण युधिष्ठिर अत्यंत अस्वस्थ हुआ। वक्तृत्वपूर्ण भाषण द्वारा युधिष्ठिर का मन कृष्ण ने शांत किया। भीष्म के द्वारा भी कृष्ण ने अनेक प्रकार का ज्ञान धर्म को दिलाया, जो महाभारत के शान्ति एवं अनुशासन पर्व में उपलब्ध है।

इस कारण से ही बालकृष्ण, मुरलीधर, गोपालकृष्ण, राधाकृष्ण, भगवान् कृष्ण आदि अनेक अवस्थाओं में इसकी उपासना प्राचीन काल से आजतक प्रचलित है। प्रत्येक अवस्था पर कई रचित ग्रंथ हैं। अतः यह पूर्णावतार है।

ऐतिहासिक चर्चा––पाणिनि के समय, कृष्ण सन्मान-नीय माना जाता था। तथापि क्षत्रिय नहीं समझा जाता था। सामान्य क्षत्रियवाचक शब्द से 'गोत्रक्षत्रियाख्येभ्यो बहुलं वुञ्' (पा. सू. ४.३.९९) इस सूत्र से प्रत्यय बताया है। वासुदेव क्षत्रिय न होने के कारण, 'वासुदेवार्जुनाभ्यां वुन्' (पा. सू. ४.३.९८) इसने पुनः वुन् बताया है। यह स्पष्टीकरण पतंजलि ने किया है। इससे स्पष्ट है कि, सोमवंश के क्षत्रिय यादवकुल से कृष्ण का संबंध बाद में जोड़ा गया।

वासुदेव तथा अर्जुन को नरनारायण अवतार मान कर, उपास्य देवताओं में भी सम्मीलित कर लिया गया था। इससे इनका क्षत्रियत्व लुप्त हो कर उससे भी श्रेष्ठ उपाधि इन्हें प्राप्त हो गयी थी। इसलिये पाणिनि को स्वतंत्र सूत्र बनाना पड़ा।

महाभारत में प्राप्त नर-नारायण उपासना का संप्रदाय पाणिनि तथा पतंजलि काल में भी प्रचलित था। नर-नारायण का स्थान कृष्णार्जुन को ही दिया जाता था।

ययाति की जरा का स्वीकार न करने के कारण, यदुकुल आक्षिप्त माना जाता था। यह आक्षेप कृष्णावतार से दूर हुआ तथा यदुकुल उज्ज्वल हो गया।

खिस्त के पूर्व दो सदी के करीब लिखे गये 'घोसुंदी शिलालेख' में वासुदेवपूजा का निर्देश है।

२. (स्वा. उत्तान.) हविर्धान राजा को हविर्धानी नामक भार्या से उत्पन्न छः पुत्रों में चौथा।

३. विश्वक का कार्ष्णि तथा कृष्णीय पैतृक नाम। इस विश्वक का कृष्ण नाम का कोई पूर्वज होगा (विश्वक कार्ष्णि तथा कृष्णीय देखिये)।

४. कद्रूपुत्र नागों में से एक।

५. शुक्राचार्य को पीवरी से उत्पन्न चार पुत्रों में से एक।

६. (आंध्र. भविष्य.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा ब्रह्मांड के मतानुसार सिंधुक का भ्राता।

कृष्ण आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ८.८५.३–४)।

कृष्ण आत्रेय—यह आयुर्वेद पृथ्वी पर प्रथम लाया (म. शां. २०३.१९)। अग्निवेश, भेड, हारित आदि इसके ही शिष्य थे (चरकसंहिता)।

कृष्ण देवकीपुत्र—घोर आंगिरस का शिष्य (छां. उ. ३.१७१.६)। वसुदेव-देवकीपुत्र कृष्ण, तथा यह एक होने का प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

नामसादृश्य तथा तप, दान, आर्जव, अहिंसा, सत्य आदि कथित गुण, गीताप्रतिपादित दैवी संपत्ति के साथ मिलते हैं। तत्रापि मरणकाल में अक्षय (अक्षित), अव्यय (अच्युत) तथा प्राणसंशित वृत्ति रखने का घोर आंगिरस का उपदेश गीता में नहीं है। गीता में केवल ईश्वरध्यान तथा प्रणवोच्चार बताया है।

इसलिये घोर आंगिरस का शिष्य कृष्ण देवकीपुत्र तथा गीताप्रतिपादक भगवान् कृष्ण एक नहीं हैं। पुराणों में घोर आंगिरस का कृष्णचरित्र में निर्देश भी नहीं है।

कृष्ण द्वैपायन—बादरायण तथा यह एक ही हैं (मत्स्य. १४. १४–१६)।

कृष्ण पराशर—पराशर कुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि। इसके कुल में कार्ष्णायन, कपिमुख, काकेयस्थ, अंजःपाति तथा पुष्कर मुख्य ऋषि थे (पराशर देखिये)।

कृष्ण हारित—एक आचार्य (ऐ. आ. ३. २. ६)। इसने अपने शिष्य को वाग्देवता संबंधीं उपासना का एक प्रकार बताया। पाठभेद—कृत्स्न हारित (सां. आ. ८. १०) कृष्ण हारित नामक महर्षि ने कालात्मक प्रजा उत्पन्न की। इस कारण इसके अवयव विकल हुए, परंतु इसने छंदों से अपना शरीरबल संपन्न किया। इस कारण छंदःसंहिता का अस्तित्व है, यह तात्त्विक अर्थ इसने बताया (ऐ. आ. ३. २. १४)।

कृष्णदत्त लौहित्य—श्यामसुजयंत लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४२. १; त्रिवेद देखिये)।

कृष्णधृति सात्यकि—सत्यश्रवस का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४२. १; त्रिवेद देखिये)।

कृष्णीय—विश्वक कार्ष्णि देखिये।

केकय—एक राजा। इसे एक बार अरण्य में एक राक्षस ने पकड़ लिया। इसने अपने राज्य में लोग कैसे धार्मिक हैं, यह बताया तथा कहा कि, इसी कारण मुझे राक्षसों का भय नहीं लगता। इसे राक्षस ने छोड़ कर घर जाने को कहा (म. शां. ७.८; अश्वपति कैकय देखिये)।

२. (सो. अनु.) शिविराजा के पाँच पुत्रों में चौथा।

३. भारतीययुद्ध में पांडव पक्ष का राजा (म. उ. १६८.१३)।

४. एक सूताधिप। इसे मालवी नामक स्त्री से कीचकादि पुत्र हुए। इसकी दूसरी पत्नी मालवी की बहन थी। उसकी कन्या सुदेष्णा, जो विराट की भार्या थी (म. वि. परि. १. क्र. १९; पंक्ति. २५–३२)।

५. इसकी कन्या सैरंध्री। वह मरुत्त की पत्नी थी (मार्के. १०८)।

६. भारतीययुद्ध में दुर्योधन पक्ष का राजा (म. उ. १९६.५)।

केतव—वायु मत में व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

केतु—(स्वा.) ऋषभदेव तथा जयंती के सौ पुत्रों में से एक। इसके पिता ने जंबुद्वीप के नौ वर्षों में से अजनाभवर्ष के नौ खंड किये। तथा उन में से एक इसे दिया।

२. तामसमनु के पुत्रों में से एक (भा. ८.१)। तपोधन इसका नामांतर रहा होगा।

३. दनु तथा कश्यप का पुत्र। यही केतु नामक ग्रह होगा।

४. ऋषियों के एक संघ का नाम (म. शां. १९.१२)।

५. धूमकेतु का नामांतर। प्रजा की अत्यंत वृद्धि हो रही है, यह देख कर ब्रह्मदेव ने मृत्यु नामक एक कन्या निर्माण की। उसे प्रजा का संहार करने के लिये कहा, तब वह रोने लगी। उसके अश्रुओं से अनेक रोग उत्पन्न हुए, इसलिये उसने तप किया। इस तप के कारण, उसे वर मिला कि, तुम्हारे निमित्त किसी को भी मृत्यु नहीं आयेगी। तब उसने एक दीर्घ श्वास छोड़ा, जिससे केतु उत्पन्न हुआ। उस केतु को एक शिखा थी। इसे केतु वा धूमकेतु कहते हैं (विष्णुधर्म. १.१०६)।

६. (सो.) मत्स्य के मत में द्रुह्युपुत्र।

केतु आग्नेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१५६)।

केतु वाज्य--वाज्यऋषि का शिष्य। इसका शिष्य कौहल (वं. ब्रा. १)।

केतुजाति--पराशरकुल के ऋषिगण।

केतुमत्—दनुपुत्र दानवों में से एक।

२. (सो. क्षत्र.) धन्वन्तरि का पुत्र। इसे भीमरथ वा भीमसेन नामक एक पुत्र था।

३. एकलव्य का पुत्र तथा निषध देश का राजा। यह दुर्योधन के पक्ष में था। कलिंग के वध के बाद भीम ने इसका वध किया (म. भी. ५०.७०)। मयसभा में उपस्थित क्षत्रियों के बीच का केतुमान् यही होगा।

४. (सू. इ.) पृथुराजा द्वारा नियुक्त दिक्पालों में से तीसरा। अर्थात् यह पश्चिम का दिक्पाल होगा (पृथु देखिये)।

५. (सू. नाभाग) भागवत मत में अंबरीषपुत्र।

६. प्रतर्दनदेवों में से एक।

७. सुतार नामक शिवावतार का शिष्य।

८. दारुक नामक शिवावतार का शिष्य।

केतुमती--सुमालि राक्षस की स्त्री। रावण की नानी।

केतुमाल--(स्वा.) आग्नीध्र राजा के नौ पुत्रों में कनिष्ठ। इसकी स्त्री मेरुकन्या देववीति थी। इसका वर्ष इसी के नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.२)। इसकी माता का नाम उपचिति था।

केतुवर्मन्--त्रिगर्ताधिपति सूर्यवर्मा का भ्राता। अर्जुन ने इसका वध किया (म. आश्व. ७३.१५)।

केतुवीर्य--कश्यप एवं दनु का पुत्र।

२. मगधराज। इसकी कन्या सुकेशी, जो मरुत्त से ब्याही गयी थी।

केतुशृंग--त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

केदार--एक राजर्षि (दे. भा. ९.४२)।

केदारेश्वर--एक शिवावतार। नरनारायण इसे पृथ्वी पर लाये। यह उस भाग का अधिपति है (शिव. शत. ४२)। भूतेश इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. १)।

केरल--कश्यपगोत्र का गोत्रकार गण।

केलि--ब्रह्मधान का पुत्र।

केवल—(सू. दिष्ट.) नर राजा का पुत्र। इसका पुत्र बंधुमत्।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित् देवों में से एक।

३. ब्रह्मांड मतानुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

केवलबर्हि—(सो. यदु.) भागवत मत में अंधकपुत्र।

केश--ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ का एक ऋषि (पद्म. सृ. ३४)।

केशलंब—तप नामक शिवावतार का शिष्य।

केशिध्वज--(सू. निमि.) कृतध्वज जनक का पुत्र। यह आत्मविद्याविशारद था (भा. ९.१३.२०) इसका पुत्र भानुमत् जनक (खांडिक्य देखिये)।

केशिन्—कश्यप एवं दनु का पुत्र (ह. वं. १.३. ८६)। इसने प्रजापति की देवसेना एवं दैत्यसेना नामक दो प्रसिद्ध कन्याओं का हरण किया। दैत्यसेना इसके वश में हुई। परंतु देवसेना आक्रोश करने लगी तथा 'कोई तो भी छुड़ावो' कह कर चिल्लाने लगी। इसी समय देवसेना का आधिपत्य जो स्वीकार कर लेगा, ऐसा सेनापति ढूँढने के लिये इन्द्र मानसपर्वत पर आया। उसने केशी से युद्ध कर के देवसेना को बचाया (म. आर. ११३.८–१५)। कुछ दिनों के बाद, इसने चित्रलेखा तथा उर्वशी आदि अप्सराओं को भगा लिया। यह पुरूरवा (बुधपुत्र) ने देखा। उसने इस दानव से युद्ध कर, इन दोनों को छुडाया (मत्स्य. २४.२३. पद्म. सृष्टि. १२.७६)।

२. वसुदेव को कौशल्या से उत्पन्न पुत्र।

३. कंस ने कृष्ण वध के लिये केशी नामक दैत्य भेजा था। इसने अश्वरूप धारण कर कृष्ण पर आक्रमण किया। परंतु अश्व ने खाने के लिये फैलाये मुख में हाथ डाल कर, कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.३७.२६; म. स. परि. ४, क्र.२१; पंक्ति. ८४३–८४४)। यह ऋष्यमूक पर्वत पर रहता था (गर्ग. सं. १.६)।

केशिन् दार्भ्य वा दाल्भ्य—एक राजा तथा सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३.१०.८)। उच्चैःश्रवस् कौपयेय की बहन का पुत्र (जै. उ. ब्रा. ३.२९.१)। पांचाल इसके प्रजाजन थे, इसलिये केशिन् इसकी एक शाखा रही होगी (क. सं. ३०.२; बौ. श्रौ. २०.२५)। धार्मिक विधि के बारे में, इसका खंडिक से एकमत नहीं होता था (मै. सं. १.४.१२; श. ब्रा. ११.८.४.१)। दीक्षा का महत्व इसे सुवर्ण पक्षी ने सिखाया (सां. ब्रा. ७.४; केशिन् सात्यकामि देखिये)। उच्चैःश्रवस् कौपयेय मरने पर केशिन् दार्भ्य दुःख के कारण, वन में भटकने लगा। उस समय उच्चैःश्रवस् इसे धूम्ररूप में मिला। इसके पूछने पर, मृत्यु के बाद धूम्रशरीर उसे कैसे प्राप्त हुआ यह बताया। यह उससे प्रेम से गले मिलने लगा किन्तु वह हाथ में नहीं आया (जै. उ. ब्रा. ३. २९–३०)।

केशिन् सत्यकामि—एक आचार्य। इसने केशिन् दार्भ्य को सप्तपदी शाक्करी मंत्र की विशेष जानकारी दी (तै. सं. २.६.२.३; मै. सं.१.६.५)।

केशिनर—(सू. इ.) भविष्य मत में सुनक्षत्रपुत्र।

केशिनी—कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक अप्सरा।

२. सगर की दो स्त्रियों में से ज्येष्ठ (म. व. १०४. ८)। इसके शैब्या, भानुमती एवं सुमति नामांतर भिन्न भिन्न स्थानों पर मिलते हैं। इसकी सौत का नाम सुमति था (भा. ९.८.१५)। सगर ने इन दोनों स्त्रियोंसहित पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या कर, शंकर से पुत्रप्राप्ति का वरदान प्राप्त किया। इससे सगर को असमंजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (सगर देखिये)। यह विदर्भकन्या थी (वायु. ८८.१५५)।

३. (सो. पूरु.) सुहोत्र के पुत्र अजमीढ़ की तीन स्त्रियों में से एक। इसे जह्नु, जन, रुषिन् आदि तीन पुत्र हुए (म. आ. ८९.२८)।

४. विश्रवस् ऋषि की पत्नी। इससे रावण, कुंभकर्ण, बिभीषण आदि तीन पुत्र हुए (भा. ४.१.३७; ७.१. ४३)।

५. दमयंती के मायके की चेटी। दमयंती का नल ने त्याग किया। इसे दमयंती ने चार बार बाहुक के पास भेजा। पहली बार उसकी जानकारी, दूसरी बार उसकी विस्तृत जानकारी, तीसरी बार नलद्वारा पकाये माँस का कुछ हिस्सा मँगाना तथा चौथी बार इसी के साथ अपने दोनों अपत्यों को भेज कर, क्या होता है यह सविस्तर रूप से पुछवाया।

६. एक अप्रतिम लावण्यवती राजकन्या। इसने अपना स्वयंवर रचा था। इसमें अंगिरा ऋषि का पुत्र सुधन्वा एवं प्रह्लादपुत्र विरोचन आया था। इनमें जो श्रेष्ठ होगा उसे वरण करूँगी ऐसा केशिनी ने कहा। तब इनका आपस में विवाद हुआ। प्राणों की बाजी लगा कर वे प्रह्लाद के पास गये। प्रह्लाद ने बताया कि, सुधन्वा का पक्ष सही है। प्रह्लाद के कहने पर उदार अंतःकरणवाले सुधन्वा ने विरोचन को छोड़ दिया। केशिनी ने विरोचन का वरण किया (म. स. ६१; उ. ३५*)। यह कथा 'भूमि के लिये असत्य नहीं बोलना चाहिये,' यह समझाने के लिये उद्योगपर्व में विदुर ने धृतराष्ट्र को बताई। द्रौपदीवस्त्रहरण के समय, यही कथा यह स्पष्ट करने के लिये बताई गई कि, असद्धर्म से व्यवहार न करते हुए अगर कोई प्रश्न पूछे, तो योग्य तथा सत्य निर्णय देना चाहिये। सत्यकथन के लिये कभी डर अथवा लज्जा, संकोच नहीं मानना चाहिये।

यह कथा दो स्वरूपों में प्राप्य है। उद्योगपर्व में कहा गया है कि, सख्य होने पर ही यह वादविवाद हुआ; परंतु सभापर्व में कहा गया है कि, आपस में झगडा होते समय यह वादविवाद हुआ, तथा प्रल्हाद ने कश्यप से पूछ कर निर्णय दिया।

७. कश्यप तथा खशा की कन्या।

८. वृहध्वज देखिये।

केसरप्राबंधा—वैतहव्यों ने इसकी एक बकरी मार कर पकायी। पश्चात् उस पातक में से वे मुक्त हुए। इस संबंध में इसका निर्देश है (अ. वे. ५.१८.११)। भृगु का वध करने के कारण, उत्कर्ष के शिखर पर पहुँचे हुए वैतहव्य संजय नष्ट हुए (अ. वे. ५.१९.१)।

केसरिन्—अंजनी का पति तथा एक वानर। (वा. रा. उ. ६६)। यह गोकर्ण नामक पर्वत पर रहता था। अंजनी तथा मार्जारास्या नामक इसकी दो स्त्रियाँ थीं। एक बार शंबसादन नामक असुर ने, अनावर बन कर ऋषियों को कष्ट दिये। तब इसने ऋषियों की आज्ञा से उससे युद्ध किया तथा उसका वध किया। ऋषियों ने संतुष्ट हो कर इसे आशीर्वाद दिया, 'तुझे अच्छे स्वभाववाला, भगवद्भक्त तथा बलवान् पुत्र होगा।' तदनुसार हनुमान् उत्पन्न हुआ (वा. रा. सुं. ३५)।

२. गद्गद वानर का पुत्र। जांबवत् का कनिष्ठ भ्राता।

कैकरसप--कश्यपकुलीन गोत्रकार (मत्स्य. १९९.७)।

कैकसी--सुमाली राक्षस की कन्या तथा विश्रवा ऋषि की पत्नी। इसके विवाह की मँगनियाँ होने पर सुमाली कुछ भी कारण बता कर, उनकी माँग को अस्वीकार करता था। इसका परिणाम यह हुआ कि, सबों ने मँगनी करना बंद कर दिया। कन्या का यौवन ढल रहा है, यह देख कर इसके पिता ने विश्रवा को, इसका वरण करने की सलाह दी। समय का ख्याल न रख, ऐन संध्या के समय यह विश्रवा के सामने जा खडी हुई। ऋषि ने इसका मनोगत ताड़ लिया। क्रूर घटिका होने के कारण इसे तीन अपत्य बुरे तथा इसकी इच्छानुसार चौथा पुत्र अच्छा हुआ। उनके नाम क्रमशः रावण, कुंभकर्ण, शूर्पणखा (शूर्पनखा), एवं बिभीषण थे (वा. रा. उ.९; स्कंद. ३.१.४७)।

कैकेय--अश्वपति कैकेय एवं सुमित्रा देखिये।

२. (सो. अनु.) भागवत तथा विष्णु मत में शिबि का पुत्र।

कैकेयी--केकय देश के राजा अश्वपति की कन्या, एवं राजा दशरथ की कनिष्ठ किंतु अत्यंत प्रियपत्नी। इसका पुत्र भरत। भरत के लिये ही इसने राम को वनवास दिलाया, जिससे दशरथ की मृत्यु हुई।

राजा दशरथ देवदानवों के युद्ध में, देवताओं की सहायता करने गये। उस समय रथ के पहिये की कील टूट गयी। कैकेयी ने अपना हाथ वहाँ लगा कर राजा को बचाया। राजा ने इसे दो वर माँगने को कहा (ब्रह्म. १२३)। इससे पता चलता है, कि यह युद्ध में रही होगी (कल्हा देखिये)। राम के यौवराज्यभिषेक के दिन समीप आये। गांव सजाने लगे तब अभिषेक की बात मंथरा ने इसे बतायी। दशरथ ने कैकेयी के महल में सतत रहते हुए भी, इसे अभिषेक की बात का पता लगने नहीं दिया था। मंथरा के बता देने के बाद, राजा ने इसे, अभिषेक का समाचार भिजवाया। राम-यौवराज्याभिषेक का समाचार मंथरा से सुन कर, इसने आनंद प्रदर्शित किया। भरत तथा राम मेरे लिये समान हैं यों कह कर, समाचार लानेवाले मंथरा को पुरस्कार देना चाहा। मंथरा ने इसके मन में जहर भर दिया। उसने कहा, 'रोने के समय में क्यों हँसती हो?' (वा. रा. अयो. ७.३)। राम के ऐश्वर्य तथा भरत की हीनदशा का चित्र, मंथरा नें कैकेयी के सामने प्रस्तुत किया। इस कारण सामान्य स्त्रीस्वभावसुलभ इसका मन मत्सर से भड़क उठा। देवासुरसंग्राम के समय से बचे हुए वरदानों की याद उसीने दिलायी। मंथरा की सलाह के अनुसार, कैकेयी ने दशरथ को दो वरदानों का स्मरण दिला कर, राम के लिये वनवास तथा भरत के लिये राज्य माँगा। राजा ने ये दोनों वरदान दिये। यथार्थ बात तो यह थी कि, कैकेयी के पिता ने पहले से ही यह व्यवस्था कर रखी थी। बूढ़े राजा को लड़की व्याहते समय, कैकेयी के पिता ने यह शर्त रखी थी कि, इसके पुत्र को राजगद्दी मिले। दशरथ ने यह शर्त स्वीकार भी की थी, परंतु इस बात का कैकेयी को पता न था।

भरत ने कैकेयी की बहुत निर्भर्त्सना की, जिसके कारण इसका सारा षड्यंत्र नष्ट हो गया। भरत ने इसका वर्णन निम्नलिखित विशेषणों से किया है—क्रोधी, अविचारी, घमंडी, अपने को भाग्यवान समझने वाली, ऐश्वर्यलुब्ध, दुर्जन होते हुए सज्जन की तरह दिखने वाली, दुष्ट, तथा पापबुद्धि (वा. रा. अयो. ९२.१६)।

भरत ने राम को लाने के लिये सपरिवार वन जाना निश्चित किया। तब सुमित्रा एवं कौसल्या के साथ कैकेयी भी वन जाने के तयार हुई (वा. रा. अयो. ८३.६; सुवेषा २. देखिये)।

कैटभ—मधुदैत्य का अनुज। इसका वध विष्णु ने किया (मधुकैटभ देखिये)।

२. एक राक्षस। इसके अश्वत्थ, पिप्पलादि दो ब्रह्मभक्षक पुत्र थे। उन का अगस्ति ने सौरि शनैश्चर की मदद से नाश किया (ब्रह्म. ११८)।

कैतव--शकुनिपुत्र उलूक का नामांतर (म. उ. १६०. ९)।

कैतवक—शकुनि का नामांतर (म. स. ५४.१)।

कैरात--कश्यपकुल का गोत्रकार।

कैराति—अंगिराकुल का गोत्रकार।

कैरिशिय—सुत्वन् का पैतृक नाम।

कैलासक—एक सर्प (म. उ. १११.११)।

कैशोर्य—काप्य का पैतृक नाम (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८)।

कोक—सत्रासह नामक पांचाल के राजा का पुत्र (श. ब्रा. १३.५.४.१७)।

कोकिल—एक राजपुत्र का नाम (काठक-अनुक्रमणी, वेबर)।

कोचरश--एक राजा। इसकी भार्या सुप्रज्ञा। वह एकादशी के दिन विष्णु के सामने जागरण कर रही थी। उस समय वहाँ शौरी नामक ब्राह्मण आया। राजारानी को आनंद से देवता के सामने नाचते देख, ब्राह्मण बहुत खुश हुआ। रानी ने उसे अपना पूर्वजन्मवृत्त कथन किया। उसने कहा, 'पूर्वजन्म में मैं एक वेश्या थी। यह राजा एक शूद्र था। एकादशी के दिन बीमारी के कारण, सहजरूप से जागरण तथा उपवास हो गया। देवताओं के नाम भी मुँह से निकल पडे। इस कारण अब राजकुल में जन्म हुआ'। यह वृत्तांत सुन कर ब्राह्मण ने भी एकादशीव्रत प्रारंभ किया। कालांतर में तीनों को वैकुंठ प्राप्त हुआ (पद्म. उ. ८१)।

कोटरक--एक सर्प (म. आ. ३१.८)।

कोटरा--बाणासुर की माता। यह पुत्र के प्राणों की रक्षार्थ, कृष्ण के सामने मुक्तकुंतला एवं वस्त्ररहित खडी हुई थी (भा. १०.६३.२०; बाण देखिये)।

कोटिक वा **कोटिकाश्य**--(सो. अनु.) सूरथपुत्र। इसने जयद्रथ के लिये द्रौपदी की पूँछताँछ की थी। पश्चात् जयद्रथ द्रौपदी को हरण कर ले जा रहा था। तब पांडवों से हुए युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. व. २४८, २४९; २५५.२४)।

कोटिश--एक सर्प (म. आ. ५२.५)।

कोपचय--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कोपवेग--युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.१४)।

कोमरुक--जनमेजय के सर्पसत्र का एक सर्प (म. आ. ५२.१५)।

कोरकृष्ण--वसिष्ठकुल का ऋषिगण। पाठभेद-कौरकृष्ण।

कोरव्य--कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

कोल--कुशिकगोत्र का मंत्रकार।

कोलद--वायु तथा ब्रह्मांडमत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के लांगलि का शिष्य। पाठभेद-कोहल।

कोलासुर--एक दैत्य। कहोड का पिता पिप्पलाद दुग्धेश्वर के पास तपस्या कर रहा था। एक बार वह ध्यानस्थ था। उस समय कोलासुर उसे यातना देने पहुँचा। तब कहोड ने एक कृत्या निर्माण कर उसका वध किया (पद्म. उ. १५७)।

कोलाहल--(सो. अनु.) मत्स्य मत में सभानरपुत्र। कालनर, कालानर, कालानल तथा यह एक ही है।

कोष--एक आचार्यकुल (श. ब्रा. १०.५.५.८; सुश्रवस् देखिये)।

कोहल--वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा में लांगलि का शिष्य। पाठभेद कोलद (व्यास देखिये)। जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.९)।

२. भगीरथ देखिये।

कौकुर--कुकुरवंशोत्पन्न कारस्कर राजा।

कौकुरुंडि--उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

कौक्रुस्त--इसके द्वारा यज्ञ में विपुल दक्षिणा दी जाने का निर्देश है (श. ब्रा. ४.६.१.१३)।

२. तामस मन्वन्तर के योगवर्धनों में से एक (मनु देखिये)।

कौचकि--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौचहस्तिक--भृगुकुल का गोत्रकार।

कौंच--हिरण्याक्ष एवं देवताओं के बीच हुए युद्ध में वायु ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

कौटिल--भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार।

कौटिल्य--चाणक्य देखिये।

कौणकुत्स--एक ऋषि (म. आ. ८.२१)।

कौणप--एक सर्प (म. आ. ५२.५)।

कौणपाशन--कद्रूपुत्र सर्प।

कौठरव्य--एक आचार्य (सां. आ. ७.१४; ८.२)। इसने अक्षरोपासना वा अक्षरों के संबंध की जानकारी प्रचार में लायी (ऐ. आ. ३.२)।

कौंडिनी--पाराशरीकौंडिनीपुत्र देखिये।

कौंडिन्य--हिरण्यकेशि शाखा के पितृतपर्ण में इसका उल्लेख है। यह वृत्तिकार था। परंतु इसने किसपर वृत्ति रची यह नहीं कह सकते (स. श्रौ. २०.८.२०)।

२. एक आचार्य। 'ह' कार को क वर्ग होता है,' इस कथन के लिये, सम्मानार्थ लिये गये कई आचार्यों के नामों में इसका भी नाम समाविष्ट है (तै. प्रा. ५.३८)।

३. शांडिल्य का शिष्य। इसका शिष्य कौशिक (बृ. उ. २.६.१.४; ६.१, विदर्भिन् देखिये)।

४. एक ब्रह्मर्षि। यह कुंडिनकुलोत्पन्न था (म. स. ४.१४)। यह युधिष्ठिर के अश्वमेध का एक सदस्य था (जै. अश्व. ६३)। यह स्थावर (थेउर) में रहता था। इसकी

स्त्री आश्रमा। दुर्वांकुरमाहात्म्य बताने के लिये इसकी कथा दी गयी है (गणेश. १.६३)।

५. एक ऋषि। इसका आश्रम हस्तिमती एवं साभ्रमती नदियों के संगम पर था। एक बार अतिवृष्टि के कारण, आश्रम में पानी आया। इसलिये इसने नदी को सूख जाने का शाप दिया तथा स्वयं विष्णुलोक चला गया (पद्म. उ. १४५)।

कौतस्त--अरिमेजय प्रथम एवं जनमेजय का पैतृक नाम।

कौत्स--महित्थि का शिष्य। इसका शिष्य मांडव्य (श. ब्रा. १०.६.५.९; बृ. उ. ६.५.४)। वेद अनर्थक हैं, इस कौत्स के मत का निरुक्त में निषेध दर्शाया गया है (नि. १.१५)।

एक आचार्य (आ. श्रौ. १०.२०.१२; आश्व. श्रौ. १.२.५; ७.१,१९; आ. ध. १.१९.४.२८.१)।

२. भृगुकुल का गोत्रकार।

३. अंगिराकुल का गोत्रकार।

४. विश्वामित्र का शिष्य। विश्वामित्र के मना करने पर भी, इसने रघुराजा के पास से चौदह कोटि मुहरें दक्षिणा में ला कर उसे दी (स्कन्द. २.८.५)। रघुवंश में वरतंतुशिष्य कौत्स की, ठीक ऐसी ही कथा दी गयी है (र. वं. ५)।

५. एक ब्रह्मर्षि। भृगुवंशीय राजा भगीरथ ने इसे अपनी कन्या हंसी दी थी (म. अनु. २०० कुं; दुर्मित्र कौत्स एवं सुमित्र कौत्स देखिये)।

कौत्सायन--मंत्रद्रष्टा (मैत्र्यु. ५.१)।

कौथुम पाराशर्य--वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा में एक।

कौथुमि--हिरण्यनाभ नामक ब्राह्मण का पुत्र। एक बार यह जनक के आश्रम में गया। वहाँ उसने ब्राह्मणों से विवाद किया तथा कोपविष्ट हो कर एक ब्राह्मण का वध किया। इस कारण इसे महारोग तथा कुष्ठ हुआ। ब्रह्महत्या इसके पीछे लगी। सारे तीर्थ करने पर भी उसने पीछा न छोड़ा। आगे चल कर, पिता की सलाह के अनुसार इसने श्राव्यसंज्ञक सूक्त का सूर्य के सामने निरंतर जप किया एवं पुराणश्रवण किया। इससे इसका उद्धार हुआ (भवि. ब्राह्म. २११)।

कौपयेय--उच्चैःश्रवस् का पैतृक नाम।

कौबेरक--कश्यपकुल के गोत्रकारगण।

कौब्जायनि--मौञ्जायनि का पाठभेद।

कौमानरायण--कौलायन का पाठभेद।

कौभ्य--बभ्रु का पैतृक नाम।

कौरकृष्ण--कोरकृष्ण का पाठभेद।

कौरयाण--पाकस्थामन् का पैतृक नाम (ऋ. ८.३.२१)।

कौरव्य--कुरु वंश का एक राजा। परीक्षित के शासन में, यह अपने स्त्रीसहित सुख से रहता था (अ. वे. २०.१२७.८; खिल. ५.१०.२; सां. श्रौ. १२.१७.२; वैतानस्. ३४.९)। बाल्हिक प्रातिपीय राजा को कौरव्य कहा गया है (श. ब्रा. १२.९.३.३)। एक आख्यायिका में, आर्ष्टिषेण एवं देवापि भी कौरव्य नाम से संबोधित किये गये हैं (नि. २.१०)। यह वसिष्ठकुल का गोत्रकार था।

२. ऐरावत कुलोत्पन्न एक नाग तथा उलूपी का पिता। जनमेजय के सर्पसत्र में इसके कुल के ऐंडिल, कुंडल, मुंड, वेणिस्कन्ध, कुमारक, बाहुक, शृंगवेग, धूर्तक, पात, तथा पातर ये कुल दग्ध हुए (म. आ. ५२.१२)।

कौरव्यायणीपुत्र--एक आचार्य। 'खं' शब्द का आकाश अर्थ लेने के लिये इसका मत माना गया है (बृ. उ. ३.५.१.१)।

कौरिष्ठ--कश्यपकुल का ऋषिगण।

कौरुक्षेत्रिन्--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौरुपति--अंगिराकुल का गोत्रकार।

कौरुपथि--शांत्युदक करते समय किस मंत्र का उपयोग करना चाहिये, इस संबंध में इसके मत का निर्देश किया गया है (कौ. ९.१०)।

कौरुपांचाल--आरुणि के लिये यह शब्द प्रयुक्त होता था क्यों कि, वह इसी प्रांत का था (श. ब्रा. ११.४.१.२)। इसका व्यवसाय भी इसी नाम से दर्शाया जाता है (श. ब्रा. १.७.२.८)।

कौलकावती--इस नाम के दो ऋषियों ने रथप्रोत दार्भ्य से एक विशिष्ट यज्ञ कराया था (मै. सं. २.१.३)।

कौलायन--वसिष्ठकुल का ऋषि। पाठभेद-कौमानरायण।

कौलितर--एक दास (ऋ. ४.३०.१४)। यह शंबर का नाम रहा होगा। यहाँ इसका अर्थ कुलितर का पुत्र है।

कौशल--एक राजवंश। इस वंश के सात राजाओं का निर्देश प्राप्त है।

कौशल्य--अगस्त्यकुल के गोत्रकारगण।

२. अंगिराकुल के गोत्रकारगण।

३. पिप्पलाद का आश्वलायनकुल का एक शिष्य।

४. सुकर्म ब्राह्मण का शिष्य। इसने सामवेद का अध्ययन किया (भा. १२.६)।

५. जटीमालिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

६. कोसल देश का इस अर्थ में प्रयुक्त। कौसल्य पाठभेद भी मिलता है (कौसल्य देखिये)।

कौशापि--भृगुकुल के गोत्रकारगण।

कौशांबेय--प्रोती का पैतृक नाम।

कौशिक--कौंडिण्य का शिष्य। इसके शिष्य गौपवन तथा शांडिल्य थे (बृ. उ. २.६.१; ४.६.१)। वायु तथा ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)। एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। एक ऋषि (मत्स्य. १४५.९२-९३)। अथर्ववेद के गृह्यसूत्र का रचयिता कौशिक नामक एक आचार्य था। शांत्युदक देते समय कौन सा मंत्र कहा जावे, इस संबंध में इसके मत का उल्लेख है (कौ. ९.१०; युवा कौशिक देखिये)। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं। १. कौशिकगृह्यसूत्र, २. कौशिकस्मृति, इस स्मृति का उल्लेख हेमाद्रि ने परिशेषखंड में किया है (१.६.३१; ६.३.७)। उसी तरह नीलकंठ ने भी इस स्मृति का उल्लेख श्राद्धमयूख में किया है। इसके नाम पर एक शिक्षा भी है। कौशिकपुराण भी इसीने रचा (C. C.)

कौशिक कुल के मंत्रकार--कौशिक कुल में १३ मंत्रकार दिये हैं। उन के नाम-१ विश्वामित्र, २ देवरात, ३ बल, ४ शरद्वत्, ५ मधुछंदस्, ६. अघमर्षण, ७ अष्टक, ८ लोहित, ९ भूतकाल, १० अम्बुधि, ११ धनंजय, १२ शिशिर, १३ शावंकायन (मत्स्य. १४५. ११२-११४)।

२. (सो. अमा.) कुशांक, गाधिन्, विश्वामित्र आदि लोगों का सामान्य नाम। विश्वामित्र के ब्राह्मण होने पर उसके कुल में उत्पन्न हुआ एक ऋषि। इसकी हैमवती नामक स्त्री थी। (म. उ. ११५.१३)।

३. सत्यवचनी ब्राह्मण। गांव के पास संगम पर यह तपस्या करता था। सत्य कहते समय, योग्य तारतम्य इस में न था। एक बार कुछ पथिक, चोरों के आक्रमण के कारण, इसके आश्रम में जा छिपे। लुटेरे (चोर) पूछने आये। इसने सत्य बात कह दी तब चोरों ने पथिकों को मार डाला। इस कारण, यह ब्राह्मण अधोगति को प्राप्त हुआ। सत्य बोलते समय तारतम्य रखना चाहिये यह समझाने के लिये कृष्ण ने अर्जुन को यह कथा बतायी है (म. क. ४९)।

४. एक गायक। यह विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगान नहीं करता था। इसके अनेक शिष्य थे। इसकी कीर्ति सुन कर, कलिंग देश का राजा इसके पास आया तथा 'मेरी कीर्ति गाओ' कहने लगा। तब कौशिक ने कहा "वह विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगान नहीं करता।" तब शिष्यों ने गुरु का समर्थन किया। राजा ने अपने नौकर को अपना गुणगान करने को कहा। तब कौशिक ने, मैं विष्णु के अतिरिक्त किसी का गुणगायन नहीं सुनता, यह कह कर अपने कान बंद कर लिये। इनके शिष्यों ने भी अपने कान बंद कर लिये। अंत में इसने नुकीली लकडी से अपने कान एवं जबान छेद डाली। ऐसे एकनिष्ठ गायन से ईश्वर की सेवा कर, यह वैकुण्ठ सिधारा (आ. रा. ५)।

५. सावर्णि मन्वंतर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक। यह गालव का नामांतर है।

६. शरपंजरावस्था में भीष्म के पास आया हुआ एक ऋषि (भा. १.९.७)।

७. एक ऋषि। वृक्ष के नीचे तप करते समय, वृक्ष पर से एक बगली ने इस पर विष्ठा कर दी। इसने क्रोधित होकर ऊपर देखा। ऊपर देखते ही तप के प्रभाव से वह पक्षिणी निर्जीव हो कर नीचे गिरी। अपने कारण यह बुरी घटना हुई देख इसे बहुत दुःख हुआ। गांव में यह भिक्षा मांगने एक पतिव्रता के घर गया। पतिकार्य में व्यस्त होने के कारण, भिक्षा देने में उसे देर हो गयी। इस कारण पतिव्रता ने इससे क्षमायाचना की। फिर भी यह उस पर नाराज हुआ। तब उस स्त्री ने कहा कि मैं बगली नहीं हूँ। तुम्हें अभी भी धर्म समझ में नहीं आया है। उसे समझने के लिये तुम मिथिला के धर्मव्याध के पास जाओ। इसे यह बात ठीक जँची तथा इसका क्रोध शांत हुआ। पश्चात् यह धर्मव्याध के पास गया। धर्मव्याध ने इसे धर्म अनेक प्रकार से समझाया। तदनुसार यह अपने मातापिता की शुश्रूषा करने लगा। युधिष्ठिर ने वनवास में मार्कंडेय से पतिव्रतामाहात्म्य के बारे में पूछा, तब उसने यह कथा बताई (म. व. १९६-२०६)।

८. कुरुक्षेत्र में रहनेवाला ब्राह्मण। पितृवर्ती आदि सात पुत्रों का पिता (पितृवर्तिन् देखिये)।

९. जरासंध के हंस नामक सेनापति का उपनाम वा नामांतर (म. स. २०. ३०)।

१०. एक राजा। यह रात्रि में मुर्गा बन जाता था। विशाला इसकी स्त्री थी। सर्वत्र अनुकूलता होने पर भी, अपना पति रात को कुक्कुट हो जाता है, यह देख उसे बहुत दुःख होता था। वह गालव ऋषि के पास गयी। ऋषि ने राजा का पूर्ववृत्तांत उसे निवेदन किया। पिछले जन्म में, यह शक्ति प्राप्त करने के लिये बहुत कुक्कुट खाने लगा। इस बात का कुक्कुट राजा ताम्रचूड को पता लगा। उसने इसे शाप दिया कि, रात्रि में तू कुक्कुट होगा। ज्वालेश्वर लिंगके पूर्व में स्थित लिंग की पूजा करने से राजा मुक्त होगा। गालव ऋषि ने यह कथा विशाला को बताई। तदनुसार इसने काम किया तथा शापमुक्त हुआ। उस दिन से उस लिंग को कुक्कुटेश्वर कहने लगे (स्कंद. ५. २. २१)।

११. (सो. यदु.) मत्स्य, विष्णु एवं वायु मत में विदर्भपुत्र।

१२. (सो. वृष्णि) विष्णु तथा मत्स्य मत में वैशाली से उत्पन्न वसुदेवपुत्र। वायु मत में वैशाखी से उत्पन्न वसुदेवपुत्र।

१३. गाधिन् देखिये।

१४. प्रतिष्ठान नगर का एक ब्राह्मण। यह कुष्ठरोगी था, परंतु इसकी स्त्री पति की अत्यंत सेवा करती थी। यह व्यसनी ब्राह्मण अपनी स्त्री के कंधे पर बैठ कर वेश्या के घर जा रहा था। राह में सूली पर चढ़े हुए मांडव्य ऋषि को इसका धक्का लगा। तब ऋषि ने धक्का लगानेवाले की सूर्योदय के पूर्व मृत्यु होगी, यों शाप दिया। परंतु इसके पत्नी के पातिव्रत्य के कारण, सूर्योदय ही नहीं हुआ। तब देवताओं ने इसकी स्त्री को संतुष्ट किया तथा अनुसूया के द्वारा इसके पति को जीवित किया (मार्क. १६.१४-८८; गरुड. १ १४२)।

कौशिकायति—एक आचार्य। घृतकौशिक का शिष्य। वैजपायन तथा सायकायन इसके शिष्य थे (बृ. उ. २.६.२; ४.६.२)।

कौशिकी—जमदग्नि की माता सत्यवती। नदी में इसका रूपांतर हुआ, तब उसे यह नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. बा. ३४; म. आ. २०७.७; व. ८२; ११३; भी १०.१७)।

कौशिकीपुत्र—आलंबीपुत्र तथा वैयाघ्रपदीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य कात्यायनीपुत्र (बृ. उ. ६.५.१)।

कौशिल्य—सामवेदी श्रुतर्षि।

कौशीतक—इस ऋषि ने बकुलासंगम पर परमेश्वर की सेवा की (पद्म. उ. १६८)।

कौशीती—ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

कौश्रेय—सोमदक्ष का पैतृक नाम (का. सं. २०.८; २१.९)।

कौषारव वा **कौषारवि**—मैत्रेय का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२८)।

कौषीतकि—एक ऋषि। इसके नाम पर कौषीतकि ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद, सांख्यायन, श्रौत तथा गृह्यसूत्र आदि ग्रंथ हैं। उसमें इसके नाम से संबंधित कुछ मत आये हैं। कौषीतकि या कौषीतकेय यह कहोड़ का पैतृक नाम है (श. ब्रा. २.४.३.१; छां. उ. ३.५.१)। लुशाकपि ने इसे तथा इसके शिष्यों को शाप दिया था (पं. ब्रा. १७.४.७. ३)। इन शिष्यों में दो अध्यापक थे। पहला कहोड एवं दूसरा सर्वजित् (सां. ब्रा. १४.२४.७१)।

इसे ही सांख्यायन कहते हैं। इंद्रप्रतर्दनसंवाद में प्राणतत्व को संसार का मूलाधार कहा है (कौषी. उ. २.१)। इसका शिष्य सर्वजित् (कौषी. २.७)। इसने पुत्र को उपदेश दिया (छां. उ. १.५.२; कुषीतक सामश्रवस देखिये)। यह प्राण को ब्रह्म मानता था।

कौषीतकेय—कहोड का पैतृक नाम।

२. इसने सोमतीर्थ पर तपस्या की। शंकर के प्रसन्न होने पर, वहां सोमेश्वर नामक शिवलिंग की इसने स्थापना की (पद्म. उ. १६१)।

कौषेय—एक ब्रह्मर्षि (वा. रा. उ. १.४)।

कौष्ठिकि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार ऋषि।

कौष्य—सुश्रवस का पैतृक नाम।

२. शंख का पैतृक नाम।

कौसला—कृष्णपत्नी सत्या का दूसरा नाम।

कौसल्य—पर आट्णार तथा हिरण्यनाभ देखिये।

कौसल्य आश्वलायन—एक तत्त्वज्ञ। प्राणी की उत्पत्ति किससे हुई, यह इसकी पृच्छा थी (प्रश्नोपनिषद. १.१)।

कौसल्या—कोसल देश के भानुमान् राजा की कन्या तथा राजा दशरथ की पटरानी। इसे हजार गाँव स्त्रीधन के स्वरूप में नैहर से मिले थे (वा. रा. अयो. ३१. २२-२३)। इसका पुत्र रामचंद्र। यह दशरथ की पहली स्त्री थी। राम को युवराज्याभिषेक करने की बात निश्चित हुई। यह समाचार कौसल्या को राम के द्वारा ही मिला। कैकेयी को बताने के लिये राजा स्वयं गया था। भरत के कहने से पता चलता है कि, कौसल्या कैकयी के साथ बहन सा व्यवहार करती थी (वा. रा. अयो. ७३.

१०)। परंतु कैकेयी एवं उसके परिवार के लोग बार बार इसका अपमान करते थे (वा. रा. अयो. २०. ३९)। कैकेयी व्यंगवचनों से इसका मर्मभेद करती थी (वा. रा. अयो. २०. ४४)।

राम इसके पास वन जाने के लिये अनुमति माँगने गया। तब लक्ष्मण ने, पिता का निग्रह कर राज्य पर अधिकार करने का उपाय सुझाया। उस समय कौसल्या ने प्रच्छन्न रूप से संमति दी (वा. रा. अयो. २१. २१)। संभवतः निरुपाय हो कर इसने संमति दी होगी। राम को इस बात की स्पष्ट कल्पना थी कि, वन जाने के बाद माता की कुछ भी कदर नहीं होगी (वा. रा. अयो. ३१.११)। पंद्रहवें वर्ष राम के लौटने पर भरत राज्य एवं कोश लैटा देगा, इसकी संभावना न थी (वा. रा. अयो. ६१.११)।

राम के वन चले जाने के बाद, यह दशरथ से मर्मस्पर्शी बातें करने लगी। उस समय दयनीय अवस्था में दशरथ ने कौसल्या को हाथ जोडे। तब कौसल्या को अपनी भूल ध्यान में आयी। पुत्रशोक से व्याकुल होने के कारण, कटुवचन कहे, यह बात उसने मान्य की (वा. रा. अयो. ६२.१४)।

यह मृदु स्वभाव की थी। पतिसुख से वंचित तथा सौतद्वारा सताये जाने के कारण, यह उदासीन वृत्ति से रहती थी। इस वृत्ति का राम के चरित्र पर बहुत परिणाम हुआ। राम के चरित्र में अंतर्भूत धार्मिकता का अंश इसी की देन थी।

२. काशीराज की कन्या अम्बिका (म. आ. १००.४.१०७५*)।

३. कृष्णपिता वसुदेव की एक पत्नी।

कौसवी—द्रुपदपत्नी सौत्रामणी का नामांतर।

कौसि—भृगुकुल का गोत्रकार।

कौसुरबिंदु--प्रोति का पैतृक नाम।

कौसुरुबिंदि--प्रोति कौशंवेय का पैतृक नाम।

कौहल--मित्रविंद एवं प्रातरह का पैतृक नाम।

क्रतु--एक ऋषि। यह स्वायंभुव मन्वंतर में ब्रह्मा के अपान से उत्पन्न हुआ। यह स्वायंभुव दक्ष का दामाद था। दक्षकन्या संतति इसकी पत्नी। इसे वालखिल्य नामक साठ हजार पुत्र हुए। वे सब ऊर्ध्वरेत होने के कारण, उनका वंश नहीं है। ये सब अरुण के आगे सूर्य के साथ रहते है।

क्रतु की दो बहनें पुण्य तथा सत्यवति थी। ये दोनों पूर्णमाससुत पर्वश की स्नुषायें थी (ब्रह्माण्ड २.१२. ३६-३९)।

यह शिववर से वैवस्वत मन्वन्तर के प्रारंभ में उत्पन्न हुआ। ब्रह्माजी ने प्रजा निर्माण करने के लिये, जो मानस पुत्र निर्माण किये थे, उनमें यह था (मत्स्य. ३.६-८)। यह प्रमुख प्रजापतियों में से एक था (मै. उ. २.३; मत्स्य. १७१.२७-२८; ३.६-८; वायु. ६५.२२; विष्णु. १.७. ४-५;१०; म. स. ११.१२; आ. ५९.१०; ६०.४; शां. २०४)। यह ब्रह्मदेव के हाथ से उत्पन्न हुआ (भा. ३. १२)। कर्दम प्रजापति की नौ कन्याओं में से क्रिया इसकी स्त्री थी। उससे इसे साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए। ये वालखिल्य ऋषि अंगूठे जितने बडे तथा ब्रह्मर्षि थे। उनके चित्रकेतु, सुरोचि, विरजा, मित्र, उल्बण, वसुभृद्यान एवं द्युमान आदि नाम थे। उसी तरह, इसकी दूसरी स्त्री से शक्ति आदि पुत्र हुए (भा. ४.१)। सन्नति नामक स्त्री से वालखिल्य हुए (विष्णु. १.१०.१०-१५)।

२. एक ऋषि। वैवस्वत मन्वन्तर में इसे परिवार नही था (वायु. ७०.६६; ब्रह्माण्ड. ३.८; लिंग. १. ६३.६८; कूर्म. १.१९.)। इसने अगस्त्य के पुत्र इध्मवाह को गोद में लिया था। इस नाम से ही क्रतु के वंशजों को आगस्त्य नाम पड़ा (मत्स्य. २०२.८)। कुछ पुराणों में बताया है कि, इससे ब्राह्मणों की उत्पत्ति नहीं हुई (वायु. ६५.४९-५०; ब्रह्माण्ड. ३.१. ४९-५१)।

३. पांचाल देश का एक क्षत्रिय। इसका कर्ण ने वध किया (म. क. ५१.४६)।

४. एक राक्षस। वैश्वानरकन्या हयशिरा इसकी स्त्री थी (भा. ६.६.३४)।

५. भृगुऋषि द्वारा उत्पन्न बारह भार्गव देवों में से एक (वायु. ६५.८७)। इसकी माता पौलोमी (मत्स्य. १९५.१३-१४)।

६. दस विश्वेदेवों में से एक।

७. श्रीकृष्ण का जांबवती से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१. १२)।

८. फाल्गुन माह में पर्जन्य नामक सूर्य के साथ घूमनेवाला यक्ष (भा. १२.११.४०)।

९. उल्मूक एवं पुष्करिणी के छः पुत्रों में चौथा (भा. ४.१३.१७)।

१०. वैवस्वत मन्वन्तर में हुआ। यह आयु नाम से पौष माह में सूर्य के साथ साथ घूमता है।

११. स्वायंभुव मन्वन्तर में जितदेवों में से एक।

१२. स्वायंभुव मन्वन्तर में सप्तर्षियों में से एक।

१३. अगस्त्य कुल का गोत्रकार।

१४. अमिताभ देवों में से एक।

क्रतुजित् जानकि—एक ऋषि। दृष्टि साफ होने के लिये, कमज़ोर आखोंवाले रजनकोणेय द्वारा इसने त्रिहविष्का नामक इष्टि करायी (तै. सं. २.३.८.१)। यह रजनकोणेय का उपाध्याय था (क. सं. ११.१; क्रतुविद् देखिये)।

क्रतुविद्—एक ऋषि। विश्वंतर के सोमयज्ञ में श्यापर्णो का प्रवेश हुआ। उनके द्वारा बताये गये सोम की विशिष्ट परंपरा में अरिंदम ने क्रतुविद को उपदेश दिया। इसने जानकी को उपदेश दिया (ऐ. ब्रा. ७.३४)।

क्रतुस्थला--यक्ष २. देखिये।

क्रथ--शुक्तिमान पर्वत के पूर्व में स्थित एक राजा। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था।

२. (सो. क्रोष्टु.) विदर्भराज के चार पुत्रों में से एक। इसका पुत्र कुंति या कृति। भविष्य में क्राथ पाठभेद है।

क्रथक—विश्वामित्र कुल का एक गोत्रकार।

क्रथन--अमृत का रक्षणकर्ता एक देव (म. आ. २८.१८)।

२. एक असुर (म. स. ९.१३)।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

४. वरुणलोक का असुरविशेष।

५. रामसेना में इस नाम के दो वानराधिपति थे (वा. रा. यु. २६.४२)।

६. कश्यप एवं खशा का पुत्र।

क्रथल—एक ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

क्रातुजातेय—राम का पैतृक नाम।

क्राथ--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। इसे भीमसेन ने युद्ध में मारा (म. स. ३५.१५)।

२. एक क्षत्रिय (म. आ. ६१.३८)।

३. एक राजा। इसके पुत्र का भारतीय युद्ध में अभिमन्यु ने वध किया।

क्रिया--स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्षप्रजापति की कन्या। धर्म ऋषि की स्त्री (म. आ. ६०.१३)। इसका पुत्र योग। इसके साठ हजार वालखिल्य हुए।

२. कर्दम ऋषि की नौ कन्याओं में एक। क्रतु ऋषि की पत्नी।

३. द्वादशादित्य में से अंशुमान् आदित्य की स्त्री।

क्रिवि--व्यक्ति के लिये प्रत्युक्त देशवाचक शब्द। सायण इसका अर्थ कुँआँ लेते हैं (ऋ. ८.२०.२४; २२.१२; क्रैव्य पांचाल देखिये)। पांचाल देश का यह प्राचीन नाम है।

क्रीत वैतहोत्र--इसका कुरु देश से संबंध था (मै. सं. ४.२.६)।

क्रुंच आंगिरस—सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १३.९.११; ११.२०)। इसके दो साम हैं। उसके कारण, इसे आवश्यक छठवाँ दिन प्राप्त होता था।

क्रैव्य पांचाल—क्रिवि देश का राजा। इसने परिवक्रा (एकचक्रा) नगरी के निकट अश्वमेध किया (श. ब्रा. १३.५.४.७; क्रिवि देखिये)।

क्रोडोदय—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

क्रोडोदरायण—वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

क्रोध—यह ब्रह्मदेव की भृकुटि से उत्पन्न हुआ (भा. ३.९.२२)। एक बार जमदग्नि श्राद्ध कर रहे थे। यह वहाँ गया। जमदग्नि ने होमधेनु के दूध से खीर तयार की थी। इसने सर्प रूप धारण कर खीर पर गरल डाला, परंतु जमदग्नि क्रोधित न हुआ क्योंकि, उसने क्रोध को जान लिया था। तब क्रोध भयभीत हो कर शरण में आया। कहने लगा, "प्राप्तज्ञान से मैं सारे भार्गवों को शीघ्रकोपी समझाता था। अब अनुभव से ज्ञात हुआ कि, भार्गव क्षमाशील है।" उसने अभययाचना की। जमदग्नि ने उसे अभयदान दिया, तथा कहा "पितरों के क्रोध को तुम ही सम्हालो"। पितरों ने इसे नाराज हो कर शाप दिया। क्रोध को इसलिये नकुलयोनि प्राप्त हुई। आगे चल कर पितरों को संतुष्ट कर, इसने उःशाप की याचना की। पितरों ने उःशाप दिया, 'धर्म की सभा में कृष्ण की उपस्थिति में उंच्छवृत्ति ब्राह्मण की कथा कहने पर तुम मुक्त हो जावोगे।' (जै. अ. ६७; उंच्छवृत्ति देखिये)।

२. ब्रह्मदेवपुत्र अधर्म के वंशज लोभ तथा निकृति का पुत्र। इसकी हिंसा नामक बहन थी, जिससे क्रोध को कलि एवं दुरुक्ति नामक दो संतान हुई (भा. ४.८.३)।

३. अष्टभैरवों में से एक।

४. काला एवं कश्यप का पुत्र (म. आ. ५९.३४)।

क्रोधदान--(सू. इ.) भविष्य मत में शाक्यवर्धन का पुत्र।

क्रोधन--कौशिक ऋषि के सात पुत्रों में से एक।

२. (सो. कुरु.) अयुत राजा का पुत्र। इसका पुत्र देवातिथि।

३. पितृवर्तिन् देखिये।

क्रोधनायन--पराशरकुल का गोत्रकार।

क्रोधवश--कश्यप एवं क्रोधा वा क्रोधवशा के पुत्रों में ज्येष्ठ (म. आ. ५९.३१)। क्रोधा के सब पुत्रों का क्रोधवश सामान्य नाम है। इनके वंशजों का भी यही नाम था। इनके वंशजों में से कुछ लोगों को, कुबेर ने सौगंधिक नामक सरोवर के रक्षणार्थ नियुक्त किया था। इस सरोवर के कुछ सौगंधिक नामक कमल लेने के लिये भीम आया। इन्होंने उसे कुबेर की अनुमति लिये बिना हाथ नहीं लगाने दिया। इस कारण भीम का इनसे युद्ध हुआ। भीम ने इनमें से बहुतों का वध किया (म. व. १५१-१५२)।

२. इंद्रजित का राक्षस अनुयायी। यह तथा इसके साथ कुछ राक्षस, वानरों से अदृश्य हो कर युद्ध कर रहे थे। तब अंतर्धानविद्यापटु बिभीषण ने इसे प्रकट किया। वानरों ने इसे मार डाला। (म. व. २६९.४)।

३. महातल का सर्पविशेष। ये सब कद्रू के वंशज थे। ये गरुड़ से बहुत डरते थे। इसलिये क्वचित् तापद बनते थे (भा. ५.२४)।

क्रोधवशा--क्रोधा देखिये।

क्रोधशत्रु--काला एवं कश्यप का पुत्र।

क्रोधहंतृ--काला एवं कश्यप का पुत्र।

२. पांडवपक्षीय एक रथी (म. उ. १७१.१९)। सेनाबिंदु यही होगा।

क्रोधा--दक्षप्रजापति की कन्या तथा कश्यप की स्त्री। क्रोधवशा इसका नामांतर है। इसके पुत्रों को भी क्रोधवश कहते हैं (म. आ. ५९.१२)।

क्रोधिन्--वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

क्रोष्टकि--क्रोष्टुकि देखिये।

क्रोष्टाक्षिन्--अंगिराकुल का गोत्रकार।

क्रोष्टु--अंगिराकुल का गोत्रकार।

२. (सो. यदु.) यदु का पुत्र। इसका पुत्र वृजिन (नि)वान्। ब्रह्म, हरिवंश एवं पद्मपुराण में इसेही वृष्णि कहा गया है। क्रोष्टुकुल में से ज्यामघ, भजमान, वृष्णि एवं अंधक इन स्वतंत्र वंशों का प्रारंभ होता है।

क्रौंच--हिमवान् पर्वत का मेना से उत्पन्न पुत्र। जिस द्वीप में यह रहता था, उसका नाम इसी के कारण क्रौंचद्वीप पड़ा। यह मैनाक का पुत्र है (ह. वं. १.१८)।

२. विष्णु मत में व्यास की ऋक् शिष्यपरंपरा के शाकपूणी का शिष्य (व्यास देखिये)।

क्रौंचिकीपुत्र--वैदभृतीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य भालुकीपुत्र। ये दो रहे होंगे (बृ. उ. ६.५.२)।

क्रौंची--कश्यप एवं ताम्रा की कन्या।

क्रौष्टुकि--एक आचार्य। इसने द्रविणोदस् शब्द का अर्थ इंद्र माना है (नि. ८. २.)। यह एक वैयाकरण था (बृहद्दे. ४. १३७; छंदस्. ५.)। इसे क्रोष्टकि भी कहा है (अथर्वपरि.)।

क्षत्तृ--विदुर का नाम। दासीपुत्र के अर्थ में यह नाम विदुर को दिया गया है (म. आ. २ कुं.)।

क्षत्र--मनस, यजत एवं अवत्सार के साथ इसका उल्लेख ऋग्वेद में आता है (ऋ. ५. ४४. १०)।

क्षत्रंजय--(सो. नील.) धृष्टद्युम्न का पुत्र (म. द्रो. ९. ४९)। द्रोण के हाथ से यह मारा गया (म. द्रो. १३०. १२)।

क्षत्रदेव--(सो. नील.) शिखंडी का पुत्र। यह उत्तम रथी था (म. उ. १७१. १०; भी. ९३. १३; द्रो. २२.१६०)। दुर्योधनपुत्र लक्ष्मण ने इसका वध किया (म. क. ४. ७७)।

क्षत्रधर्मन् (क्षत्रवर्मन्)--धृष्टद्युम्न का पुत्र (म. उ. १७१. ७)। द्रोणाचार्य द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १०१. ६२)।

क्षत्रबंधु--एक राजा। यह दिखने में बडा क्रूर एवं हिंसक था। परंतु ज्ञानी होने के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. ८०)।

क्षत्रवर्मन्--क्षत्रधर्मन् देखिये।

क्षत्रवृद्ध--(सो. पुरूरवस्.) आयुराजा का द्वितीय पुत्र। ये कुल पाँच भाई थे। यह नहुष का छोटा भाई था। इसका पुत्र सुहोत्र। इससे काश्यवंश प्रारंभ हुआ।

२. रौच्य मन्वंतर का एक मनुपुत्र।

क्षत्रश्री प्रातर्दनि--यह भरद्वाजों का आश्रयदाता है (ऋ. ६.२६.८)।

क्षत्रोपेक्ष--(सो. यदु.) श्वफल्क यादव के तेरह पुत्रों में से एक।

क्षत्रौजस्--(शिशु. भविष्य.) वायुमत में अजातशत्रु का पुत्र। विष्णु तथा ब्रह्मांड मत में क्षेमधर्मपुत्र।

क्षपाविश्वकर--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

क्षम--सुधामन् देवों में से एक।

क्षमा--दक्षकन्या तथा पुलह की स्त्री।

२. ब्रह्मधान की कन्या।

क्षमावत्--देवल ऋषि का पुत्र।

२. प्रत्यूष नामक वसु का नाती।

क्षय--(सू. इ. भविष्य.) वायुमत में बृहत्क्षय का पुत्र।

क्षान्ति--तामस मनु का पुत्र।

क्षाम--सुधामन् देवों में से एक।

क्षितिमुखाविद्ध--विदा देखिये।

क्षिप्रप्रसादन--(स्वा. प्रिय.) प्रियव्रत के पुत्र का नाम (गणेश २.३३.२८)।

क्षीर--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

क्षुद्रक--(सू. इ. भविष्य.) प्रसेनजित् का पुत्र।

क्षुद्रभृत--मरीचि ऋषि के छः पुत्रों में एक। यह स्वायंभुव मन्वंतर में था।

२. कृष्णजन्म के पहले देवकी से उत्पन्न पुत्रों में से एक। यह कंस के हाथ से मारा गया (भा. १०.८५)।

क्षुधि--कृष्ण का पुत्र। यह मित्रविंदा से उत्पन्न हुआ। यह कृष्ण का अंतिम अर्थात दसवाँ पुत्र था (भा. १०.६१)।

क्षुप--एक प्रजापति का नाम। इसकी जन्मकथा इस प्रकार है। एक बार ब्रह्मदेव को यज्ञ करने की इच्छा हुई। योग्य ऋत्विज कोई नहीं मिल रहा था। तब उसने बहुत वर्षों तक मस्तक में एक गर्भ धारण किया। इस बात को हजार वर्ष हो गये। एक छींक के साथ वह गर्भ बाहर आया। यही क्षुप प्रजापति था। यह ब्रह्मदेव के यज्ञ में ऋत्विज् था (म. शां. १२२.१५-१७)।

२. (सू. दिष्ट.) खनित्रपुत्र। नारद ने युधिष्ठिर को यमसभा का वृत्तांत सुनाया, जिसमें राजाओं की मालिका में इसका नाम था (म. स. ८.१२; अनु. १७७.७३ कुं.)।

३. एक क्षत्रिय राजा। ब्राह्मण श्रेष्ठ हैं या क्षत्रिय इस संबंध में, इसका दधीचि से वाद हुआ था। इसके पश्चात दधीचि ऋषि पर इसने चढाई की, परंतु शिवभक्ति के प्रभाव से दधीचि ने इसे हरा दिया (लिंग. १.३४-३५)।

क्षुभ्य--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

क्षुलिक--कुलक देखिये।

क्षुव--इसने विष्णु को पराजित किया था (शिव. रुद्र. स. ३८)।

क्षेत्रज्ञ--(शिशु. भविष्य.) भागवत मत में क्षेमधर्मन् का पुत्र।

क्षेम--(स्वा. प्रिय.) इध्मजिव्ह का पुत्र। इसके वर्ष को यही नाम है (भा. ५.१)।

२. स्वायंभुव मन्वंतर के धर्मऋषि का तितिक्षा से उत्पन्न पुत्र।

३. (सो. मगध. भविष्य.) भविष्य, भागवत, मत्स्य, वायु तथा ब्रह्मांड मत में शुचि का पुत्र। विष्णु मत में इसे क्षेम्य कहा गया है। इसने अठ्ठाईस वर्ष राज्य किया।

४. सत्य देवों में से एक।

५. ब्रह्मधान का पुत्र।

क्षेमक--पांडवपक्षीय राजा (म. स. ४.१९)।

२. (सो. पूरु. भविष्य.) भविष्य एवं मत्स्य मत में निरमित्र पुत्र। वायु मत में निरामित्रपुत्र, भागवत मत में निमिपुत्र तथा विष्णु मत में खंडपाणिपुत्र। पांडववंश का यह अंतिम राजा था (शुनक ३. देखिये)।

३. कद्रूपुत्र तथा सर्पविशेष।

४. एक राक्षस, जो निर्जन वाराणसी में रहता था (ब्रह्माण्ड. ३.६७.२७; वायु. २३०.२४)। अलर्क ने इसका वध कर, वाराणसी नगरी को फिर से बसाया (ब्रह्माण्ड. ३.६७.७२; वायु. २.३०.६९)।

क्षेमंकर--सोमकांत राजा का मंत्री (गणेश. १.२९)।

२. पश्चिम त्रिगर्तदेशीय राजा (जयद्रथ देखिये)। जयद्रथ के द्रौपदीहरणोपरांत हुए संग्राम में, क्षेमंकर का नकुल से युद्ध हुआ, जिसमें यह मारा गया (म. व. २५५.१७)।

क्षेमजित्--(शिशु. भविष्य.) मत्स्य मत में क्षेमधर्म का पुत्र। इसे भागवत में क्षेत्रज्ञ, एवं विष्णु, वायु, तथा ब्रह्मांड में क्षत्रौजस् कहा गया है।

२. एक क्षत्रिय (म. स. ४.२५)।

क्षेमदर्शिन्--उत्तर कोसल देश का राजा। राज्यभ्रष्ट तथा दुर्बल हो कर, यह कालकवृक्षीय नामक ऋषि के पास आया। ऋषि ने इसे कपटनीति एवं सुनीति बतायी। अंत में इसकी सद्धर्म की ओर वृत्ति देख, ऋषि ने विदेहवंशीय जनक राजा से इसकी मित्रता करा दी। विदेहाधिपति ने इसकी योग्यता देख, जेता की तरह इसे अपने घर रखा तथा सत्कार किया। संकटकाल में राजा किस तरह व्यवहार करे, यों बात धर्म को भीष्म ने इस कथा द्वारा बतायी (म. शां. १०५-१०७)।

क्षेमधन्वन्--क्षेमधृत्वन् पौण्डरिक देखिये।

२. धर्मसावर्णि मनु का पुत्र। क्षेमधर्मन् नाम भी प्राप्त है।

क्षेमधर्मन्--(शिशु. भविष्य.) भागवत, मत्स्य, ब्रह्मांड तथा विष्णु मत में काकवर्ण का पुत्र। वायु में इसे क्षेमवर्मन् कहा गया है (क्षेमधन्वन् २. देखिये)।

क्षेमधी--(सू. निमि.) चित्ररथ जनक का पुत्र। विष्णु में इसे क्षेमारि कहा गया है।

क्षेमधूर्ति--साल्व का सचिव तथा सेनापति। सांब ने इसे पराजित किया (म. व. १७.११)। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था। बृहत्क्षत्र ने इसका वध किया (म. द्रो. ८२.६)। क्रोधवंश के एक राक्षस का यह अंशावतार था (म. आ. ६१.५९)।

२. करुष देश का अधिपति एवं एक क्षत्रिय। भीम ने इसका वध किया (म. क. ८.३२-४५)।

३. (सो. कुरु) धृतराष्ट्रपुत्र (क्षेममूर्ति देखिये)।

४. एक क्षत्रिय। बृहन्त का बंधु। सत्यकि के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २०.२५-४८)।

क्षेकधृत्वन् पौंडरिक--(सू. इ.) सुदामन् नदी के तट पर पौंडरीकयज्ञ कर के इसने समृद्धि प्राप्त की। पुराणों में इसे पुंडरीकपुत्र क्षेमधन्वन् कहा है (पं. ब्रा. २२.१८.७)।

क्षेमभूमि--(शुंग. भविष्य) वायुमत में भागवतपुत्र।

क्षेममूर्ति--धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया। दाक्षिणात्य प्रति में क्षेमधूर्ति, एवं उत्तरीय प्रति में क्षेमवृद्धि पाठभेद प्राप्त है (म. आ. परि. १ क्र. ४१. पंक्ति १९)।

२. पुल्ह तथा श्वेता का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७.१८०-१८१)।

क्षेमवर्मन्--क्षेमधर्मन् देखिये।

क्षेमवृद्धि--साल्व राजा का सेनापति (म. व. १७. ११)।

क्षेमशर्मन्--दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। भारतीय युद्ध में दोणाचार्य सेनापति थे। उन्होंने सेना की रचना सुपर्णाकार की थी। उस में गरुड की गर्दन की जगह कलिंग, सिंहल आदि राजाओं के साथ यह राजा भी पूर्ण तयारी से खड़ा था (म. द्रो. २०.६)।

क्षेमा--एक अप्सरा। कश्यप एवं मुनि की कन्या।

क्षेम्य--(सो. पूरु.) उग्रायुध राजा का पुत्र। इसे सुवीर नामक पुत्र था।

२. क्षेम ४. देखिये।

क्षैमि--सुदक्षिण का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.६. ३; ७.१)।

२. श्याम पराशरकुलोत्पन्न एक ऋषि।

ख

खगण--(सू. इ.) भागवत मत में वज्रनाभ का पुत्र। इसका पुत्र विधृति। विष्णु मत में शंखनाभ तथा वायु मत में शंखण यही होगा।

खगम--एक तपस्वी ब्राह्मण। यह एक बार अग्निहोत्र कार्य में निमग्न था। उस समय सहस्रपाद नामक एक मित्र ने विनोद से तृण का सर्प इसके ऊपर फेंका। इस कारण यह मूर्च्छित हो गया। सावधान होने के बाद इसने शाप दिया, 'जिस प्रकार के साँप से तूने मुझे डराया है, उसी प्रकार का तृणतुल्य सर्प तू होगा'। यह शाप सुन कर दुःख से विव्हल हो कर, मित्र ने दया की याचना की। तब खगम ने उःशाप दिया, "भृगुकुल में प्रमति को रुरु नामक पुत्र होगा। उससे भेंट होगी, तब तू शापमुक्त हो कर पूर्वस्वरूप को प्राप्त होगा" (म. आ. ११)।

खंज--दनुवंशी राजा। ब्रह्मदेव के वरदान के कारण, यह महापराक्रमी हुआ। अर्जुन ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ६)।

खट्वांग--(सू. इ) विश्वसह राजा का पुत्र। देव-दैत्यों के युद्ध में, यह देवताओं की मदद करने स्वर्ग गया था। युद्ध समाप्त होने पर, देवताओं ने इसे वर माँगने को कहा। इसने पूछा कि, उसकी आयु कितनी अवशेष

है। उन्हों ने कहा कि, केवल मुहूर्त्तमात्र शेष है। तब और कुछ न माँग कर, यह द्रुतगामी विमान पर बैठ कर शीघ्र ही अयोध्या आया। अपने पुत्र दीर्घबाहु को गद्दी पर बैठ कर, आत्मस्वरूप में लीन हो गया (भा.९.९)। दिलीप प्रथम को खट्वांग मानते है (ब्रह्म. ८. ७४; हं.वं. १.१५.१३)। वस्तुतः दिलीप द्वितीय को खट्वाँग कहना चाहिये (दिलीप देखिये)।

खड्गधर--सौराष्ट्र देश का एक राजा। इसके मदमत्त हाथी का मद, एक ब्राह्मण ने गीता के सोलहवें अध्याय के पटनसामर्थ्य से उतारा (पद्म. उ. १९०)।

खड्गबाहु--एक राजा। इसके पुत्र का दुःशासन नामक सेनापति था। वह मदमत्त हाथी से गिर कर मर गया। अगले जन्म में वह हाथी हुआ। सिंहल देश के राजा ने वह हाथी खड्गबाहु को दिया। खड्गबाहु ने उसे एक कवि को तथा कवि ने मालव देश के राजा को दिया (पद्म. उ. १९१)।

खड्गहस्त - दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

खड्गिन्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. क. ६.२)।

खंडपाणि--(सो. कुरु. भविष्य) भविष्य एवं विष्णु के मत में अहीन का पुत्र। अन्य पुराणों में दंडपाणि पाठभेद हैं।

खंडिक औद्भारि--केशिन् का गुरु तथा एक शाखा-प्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। केशिन् के यज्ञ में शेर ने गाय को मारा। प्रायश्चित् क्या है, यह पूछने पर सब लोगों ने उसे इसके पास भेजा। इसने सभा बुला कर विचार किया तथा प्रायश्चित बताया (श. ब्रा. ११. ८. ४. १)। यह केशिन् का प्रतिस्पर्धी था। खंडिक एवं खांडिक्य एक ही होंगे (मै. सं. १. ४. १२)।

खनक--विदुर का मित्र। यह पच्चीकारी के काम में अत्यंत कुशल था। पांडवों को मारने के लिये दुर्योधन ने पुरोचन के द्वारा लाक्षागृह तैयार कराया। पांडव लाक्षागृह में रहने लगे। एक दिन खनक, विदुर की आज्ञा से विदुर की चिह्नस्वरूप अंगूठी ले कर युधिष्ठिर के पास आया। विदुर के द्वारा बताया गया समाचार उसने निवेदन किया। युधिष्ठिर ने संतुष्ट हो कर, पुरोचन को पता न लगते हुए पांडवों की लाक्षागृह से मुक्ति करने के लिये, इससे कहा। इसने लाक्षागृह के मध्य से खंदक तक एक सुरंग बनायी (म. आ. १३५.१)।

खनपान--(सो. अनु.) भागवतमत में अंगराज-पुत्र, विष्णुमत में पारपुत्र, मत्स्य एवं वायु मत में दधिवाहनपुत्र। अपानद्वार न होने के कारण, इसे अनपान कहते थे। इसका पुत्र दिविरथ।

खनित्र--(सू. दिष्ट.) भागवतमत में प्रमति राजा का पुत्र। इसका पुत्र चाक्षुष। विष्णु तथा वायु के मत में प्रजनिपुत्र। इसका पुत्र क्षुप। सदाचारी होने के कारण इसके उपर अभिचार का परिणाम नहीं हुआ (मार्क. ११४-११५)।

खनिनेत्र--(सू. दिष्ट.) भागवतमत में रंभपुत्र। वायु एवं विष्णु मत में विविंशपुत्र। वायुमत में इसका पुत्र करंधम तथा विष्णुमत में अतिभूति।

इसके कुल चौदह भाई थे। यह अत्यंत दुष्ट था। इसलिये इसने सब भाईयों का हक छीन कर स्वयं अकेले ने राज्य किया। यह प्रजा को अप्रिय था, इसलिये शीघ्र ही पदच्युत हुआ। पश्चात् इसका पुत्र सुवर्चा गद्दी पर बैठा (म. आश्व. ४)। यह हिंसा से उद्विग्न हो कर तपस्या करने लगा (मार्क. ११७)। इसका पुत्र बलाश्व।

खर--विश्रवा ऋषि का राका से उत्पन्न पुत्र। शूर्पणखा इसकी बहन तथा रावण सौतेला भाई था (म. व. २५९. ८)। शूर्पणखा के कथन से पता चलता है कि, दूषण इसका भाई था (वा. रा. अर. १७)। यह बचपन में वेदवेत्ता, शूर तथा उत्कृष्ट सदाचारी था। यह पितासहित गंधमादन पर्वत पर रहता था। दक्षिण दिशा में यह रावण का सीमारक्षक अधिकारी था (वा. रा. अर. ३१)। इसके अधिकार में चौदह सेनापति तथा चौदह हजार सैनिक थे (वा. रा. अर. १९; २२)।

शूर्पणखा ने रामलक्ष्मण से प्रेमयाचना की। राम के संकेतानुसार लक्ष्मण ने उसके नाक, कान काट डाले। वह आक्रोश करते हुए जनस्थान में खर के पास गयी। खर ने अपने चौदह सेनानायक एवं, चौदह हजार सैनिक राम पर आक्रमण करने भेजे। राम ने सब का वध किया। अपने सेनापति दूषण के नेतृत्व में सेना तयार कर, इसने स्वयं राम पर आक्रमण किया। राम ने लक्ष्मण को सीता की सुरक्षा के लिये, एक पर्वत की गुहा में जाने को कहा। उन के जाने के बाद, राम कवच धारण कर, युद्ध के लिये तत्पर हुआ। युद्ध प्रारंभ होने के बाद, राम ने केवल धनुष बाण से दूषण

त्रिशिरस् तथा खर को ससैन्य मार डाला। यह सारी घटना डेढ़ मुहूर्त्तों में हुई।

प्रेक्षक के नाते उपस्थित अकंपन राक्षस भाग कर लंका गया। उसने रावण को सारा वृत्तांत निवेदित किया (वा. रा. अर. १८-३१)। इस युद्ध में, यह बात स्पष्ट दिखाई देती है कि, राम धनुष से युद्ध करते थे। राक्षसों के पास धनुष न थे। इसे मकराक्ष नामक पुत्र था। इसने जनस्थान के ऋषियों को अत्यंत कष्ट दिया था। इस कारण, इसकी मृत्यु से उन्हें बहुत आनंद हुआ, तथा उन्होंने राम की अत्यंत प्रशंसा की (वा.रा. अर. ३०)।

२. लंबासुर का भाई, एक असुर (मत्स्य. १७.६.७)।

३. विजर का पुत्र।

खरवाच्—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

खलीयस—व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा के शालीय का पाठभेद।

खल्यायन—धूम्रपराशर के कुल में से एक एवं गण।

खशा—प्राचेतस दक्षप्रजापति तथा असिक्नी की कन्या। यह कश्यप प्रजापति से व्याही गयी थी। इससे यक्ष राक्षस आदि उत्पन्न हुए।

खस्तृप—पितृवर्तिन् देखिये।

खाडायन—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

खांडव—भृगुकुल के मित्रयुकुल में उत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

२. पौडव का पाठभेद।

खांडवायन—एक ब्रह्मणवंश। परशुराम ने एक बडा भारी यज्ञ किया। उसमें पृथ्वी के साथ दस वाव (अंदाजन् दो गज) लंबी तथा नौ वाव ऊँची सुवर्णमय वेदिका कश्यप को अर्पण की। कश्यप की अनुमति से अन्य ब्राह्मणों ने उसके टुकडे कर, आपस में बाँट लिये। इस कारण, वे ब्राह्मण खांडवायन नाम से प्रसिद्ध हुए (म. व. ११७. ११-१३)।

खांडिक्य—(सू. निमि.) भागवतमत में मितध्वज-पुत्र। यह क्षत्रिय था। इसे खांडिक्यजनक कहा गया है केशिध्वज इसका चचेरा भाई था। खांडिक्य कर्ममार्ग में अत्यंत प्रवीण था। केशिध्वज आत्मविद्याविशारद था। एक दूसरे को जीतने की इनकी इच्छा हुई। केशिध्वज ने खांडिक्य को राज्य के बाहर भगा दिया। यह मंत्री तथा पुरोहित के साथ अरण्य में चला गया (भा. ९.१३.२१)।

इधर ज्ञाननिष्ठ केशिध्वज ने कर्मबंधन से मुक्त होने के लिये, बहुत से यज्ञ किये। एक बार वह यज्ञ कर रहा था, तब निर्जन वन में एक व्याघ्र ने उसकी गाय को मारा। उसने ऋत्विजों से इसका प्रायश्चित्त पूछा, जिन्होंने उसे कशेरू के पास भेजा। कशेरू ने भृगु के पास तथा भृगु ने शुनक के पास प्रायश्चित्त पूछने को कहा। अंत में शुनक के कहने पर वह अरण्य में खांडिक्य के पास गया। खांडिक्य ने उसे देखते ही उसकी निर्भर्त्सना की एवं उसके वध के लिये तत्पर हुआ। परंतु केशिध्वज ने सारी स्थिति निवेदन की। तब खांडिक्य ने यथाशास्त्र धेनुवध का प्रायश्चित्त बताया।

केशिध्वज ने तदनुसार यज्ञभूमि के स्थान पर जा कर, यज्ञ सफल बनाया। खांडिक्य को गुरुदक्षिणा देना शेष रह गया। अतः केशिध्वज खांडिक्य के पास आया। खांडिक्य पुनः उसका वध करने को उद्यत हुआ। केशिध्वज ने बताया कि, 'वह वध करने नहीं आया है। अपितु गुरुदक्षिणा देने आया है। आप गुरुदक्षिणा माँगे'। खांडिक्य ने सब दुःखों से मुक्ति पाने का मार्ग उससे पूछा। केशिध्वज ने इसे देह की नश्वरता तथा आत्मा के चिरंतनत्व का महत्त्व समझाया, तथा कहा कि, 'सारे दुखों का नाश योग के सिवा किसी अन्य मार्ग से नहीं हो सकता'। तदनंतर खांडिक्य ने योगमार्ग का कथन करने के लिये कहा। केशिध्वज ने उसे परब्रह्म का उपदेश कर, मोक्षपद के पास ले जानेवाला योग बताया (विष्णु. ६.६-७; नारद. १.४६-४७; केशिन् दार्भ्य देखिये)।

खाति—तामस मनु का पुत्र।

खादिर—द्राह्यायण का दूसरा नाम (द्राह्यायण देखिये)।

खार्गलि—लुशाकपि का पैतृक नाम तथा मातृनामोद्गत नाम।

खालीय—व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा के शालीय का पाठभेद।

खिलि तथा **खिलिखिलि**—विश्वामित्रकुल का गोत्रकार एवं प्रवर।

खेल—एक राजा। इसकी स्त्री विश्पला। इसका पैर युद्ध में टूट गया। तब अश्वियों ने एक रात में इसे लोहे का पैर लगा कर, दूसरे दिन युद्ध के लिये तैयार कर दिया (ऋ. १.११६.१५)। अगस्त्य इसके पुरोहित थे।

ख्याति—(स्वा. उत्तान.) भागवत मत में उल्मुक तथा पुष्करिणी का पुत्र।

२. (स्वा.) भृगुपत्नी। कर्दम तथा देवहूती की कन्या।

३. तामस मनु का पुत्र।

४. उरू एवं षडाग्नेयी का पुत्र।

ख्यातेय—नीलपराशर कुल का एक ऋषि।

ग

गगनमूर्धन्—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

गंगा—एक स्वर्गीय देवी। एक समय सब देवियाँ ब्रह्मदेव के पास गयीं। उनके साथ गंगा तथा इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न महाभिष भी गया। यकायक इनके वस्त्र वायु के कारण उड गये। सब लोगों ने सिर नीचे कर लिया। परंतु महाभिष निःशंक इनकी ओर देखता रहा। यह देख कर ब्रह्माजी ने शाप दिया "तुम मृत्युलोक में जन्म लोगे एवं गंगा तुम्हारी स्त्री होगी। वह तुम्हें अप्रियसे कृत्य करेगी। तुम्हें इसके कृत्यों के प्रति क्रोध उत्पन्न होगा। तब मुक्त हो कर तुम इस लोक में आओगे"। शाप सुन कर महाभिष ने प्रतीप के पेट में जन्म लेने का निश्चय किया।

वसिष्ठ के शाप के कारण मृत्युलोक में आने वाले अष्टवसु इसे राह में मिले। उन्होंने इसके पेट में जन्म लेने का निश्चय किया। परंतु उन्होंने यह शर्त रखी कि, जो भी पुत्र जन्म लेगा, इसे यह जल में छोड़ देगी। परंतु इसने भी यह शर्त रखी कि, जिससे मैं विवाह करूँगी उसे पुत्रेच्छा अवश्य रहेगी, इसलिये कम से कम एक पुत्र जीवित रहना ही चाहिये। तब अष्टवसुओं ने मान्य किया कि, अपने वीर्य से एक पुत्र वे इसे देंगे। वह वीर्यवान् परंतु निपुत्रिक रहेगा।

भगीरथ स्वर्ग से अपने पितरों के उद्धार के लिये गंगा नीचे लाया। जब यह समुद्र की ओर जा रही थी, तब राह में जह्नु ने इसे प्राशन कर लिया, तथा पुनः छोड़ दिया (भगीरथ एवं जह्नु देखिये)। एकबार प्रतीप ध्यानस्थ बैठा था। तब गंगा पानी से बाहर आई तथा उसकी दाँई गोद में आ कर बैठ गई। यह देख कर उसने इसकी इच्छा पूँछी। इसने अपना स्वीकार करने के लिये कहा। तब दाँई गोद में बैठने के कारण, स्नुषारूप में इसका स्वीकार करना उसने कबूल किया। गंगा ने अपनी शर्त रखी कि, आपकी स्नुषा होने के बाद, मैं जो कुछ भी करूँगी, उसके बारेमें अपका पुत्र कुछ भी हस्तक्षेप न करें। जब तक यह शर्त मान्य की जायेगी, तब तक आपके पुत्र का सहवास मैं मान्य करूँगी, तथा उसे सुख दूँगी। उसे पुण्यवान् पुत्र होंगे तथा उन्हीं के साथ उसे स्वर्गप्राप्ति होगी। इस प्रकार तय कर के गंगा अन्तर्धान हो गई।

कुछ दिनों के बाद महाभिष ने प्रतीप के घर शांतनु नाम से जन्म लिया। बड़ा होने पर, उसे अपने पिता से सारा समाचार मालूम हुआ। बाद में गंगा शांतनु पास गई, तब उसने इससे विवाह किया। इसके कुल आठ पुत्र हुए। उनमें से सात को इसने पानी में डुबा दिया। आठवें पुत्र को शंतनु ने डुबाने नहीं दिया। गंगा का आठवाँ पुत्र ही भीष्म है। बाद में उसे ले कर यह स्वर्लोक गई। वहाँ इसने सब प्रकार की शिक्षा उसे दी। शांतनु जब मृगया के हेतु आया, तब इसने भीष्म को उसे सौंप दिया (म. आ. ९१-९३)। गंगा जान्हवी (म. उ. १७९.३; भी. ११९.५२) तथा भागीरथी (म. अनु. १३९.७; आश्व. २.७) नामों से प्रसिद्ध है। भीष्म शांतनु को गंगाद्वार में पिंड दे रहा था। गंगा ने उसकी सहायता की (म. अनु. ८४)।

परशुराम से युद्ध करते समय, भीष्म के सारथी की मृत्यु हो गई। तब स्वयं घोडों को सम्हाल कर इसने भीष्म की रक्षा की (म. उ. १८३.१५-१६)। भीष्म ने अंबा का स्वीकार न करने के कारण, उसने तप कर के भीष्मवध के लिये पुरुषजन्म माँग लिया। एक बार नित्यक्रमानुसार, अंबा गंगास्नान करने गई थी, तब गंगा वहाँ आई। उसने इसे शाप दिया, 'तुम टेढी मेढी नदी बन कर केवल बरसात में ही बहोगी। अन्य दिनों में सूख जाओगी। बरसात में तुम्हारे पात्र में उतार भी नहीं मिलेगा' (म. उ. १८७.३४-३५)। भीष्मवध के बाद इसके दुख का निरसन श्रीकृष्ण ने किया (म. अनु. २७४.२७ कुं.)।

गंगा ने एकबार प्राचीमाधव नामक विष्णु से पूछा कि, 'मुझमें पापी स्नान करते हैं। इन पापों से मेरी मुक्ति कैसी होगी?' विष्णु ने इसे रोज पूर्ववाहिनी सरस्वती में स्नान करने के लिये कहा। परंतु गंगा को यह तापदायक प्रतीत हुआ। तब उसने इसे त्रिस्पृशा का व्रत करने के लिये कहा। उससे यह पापमुक्त हुई। एकादशी, द्वादशी तथा त्रयोदशी जिस एक तिथि को स्पर्श करते हैं, उस तिथि को त्रिस्पृशा कहते हैं। इस दिन सुवर्ण की विष्णुमूर्ति की पूजा की जाती है (पद्म. उ. ३४)।

गज—यह राम सेना में वानरों का अधिपति था (पद्म. सृ. ३८; म. व. २६७. ३)।

२. दुर्योधन का मामा। शकुनि के कुल छः कनिष्ठ भाई थे। यह सबसे बड़ा था। भारतीययुद्ध में अर्जुनपुत्र इरावत् ने इसका वध किया (म. भी. ८६.२४; ४२)।

गजकर्ण—एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

२. महिषासुर का पुत्र। तपश्चर्या कर के इसने शंकर को प्रसन्न किया तथा यह अमर हो गया। अंत में शंकर के त्रिशूल से इसकी मृत्यु हुई। इसकी इच्छानुसार शंकर ने इसकी कृत्ति (चर्म) धारण की, तथा कृत्तिवासस् नाम धारण किया। गजासुर का वध काशी में हुवा। इसलिये काशी के लिंग को कृत्तिवासेश्वर कहते हैं (शिव. रुद्र. यु. ५७)। यह तारकासुर का सैनिक था।

गजेन्द्र—इंद्रद्युम्न, जयविजय तथा हूहू देखिये। गजेन्द्रमोक्ष का आख्यान महाभारत में नहीं है।

गणपति—एक देवता। 'गणानां त्वा गणपतिं' (ऋ. २.२३.१), यह गणपति का सूक्त माना जाता है। यह ब्रह्मणस्पतिका सूक्त है। इसे ब्रह्मणस्पति भी कहते हैं। ऐसे अन्य गमक इतरत्र भी हैं (मै. सं. २. ६. १)। शंकर-पार्वती का पुत्र हो कर भी यह अयोनिज था (ब्रह्मवै. ३. ८; लिंग. १०५)। पार्वती ने अपने शरीर के उबटन की मूर्ति बना कर वह सजीव की (पद्म. सृ. ४३; स्कन्द. ७. १. ३८; मत्स्य. १५३)।

इसके अवतार—कृतयुग में कश्यपपुत्र विनायकः—यह सिंह पर आरूढ होता था। इसने देवांतक नरांतक का नाश किया।

त्रेतायुग में मयूरारूढ रहनेवाला शिवपुत्र मयूरेश्वरः—इसने सिंधू का वध किया।

द्वापारयुग में शिवपुत्र गजाननः—इसने सिंदूर का वध किया तथा वरेण्य राजा को गणेशगीता बताई।

कलियुग में अश्व पर आरूढ होनेवाला धूम्रकेतुः—यह म्लेच्छों का नाश करेगा (गणेश. २.१४९) अदिति के गर्भ से महोत्कट रूप में इसने अवतार लिया (गणेश २.५-६)।

पार्वती स्नान कर रही थी, तब द्वाररक्षक का कार्य करनेवाले गणपति ने शंकर को भी भीतर जाने से रोका। तब इनका युद्ध हो कर शंकर ने इसका मस्तक तोड़ दिया। परंतु पार्वती के लिये, शंकर ने इन्द्र के हाथी का मस्तक ला कर, इसके धड़ पर जमा दिया (शिव. कु. १६)। शनि के दृष्टिपात से गणपति का मस्तक जल गया, परंतु देवों ने वहाँ हाथी का मस्तक लगा दिया (ब्रह्मवै. ३. १८; भवि. प्रति. ४.१२)। परशुराम ने शंकरद्वारा दिया गया परशु इस पर फेंका। परंतु परशु शंकर का होने के कारण, प्रतिकार न करते हुए, इसने वह आक्रमण दाँतों पर सह लिया। इसी से इसका एक दाँत टूट गया। उसे इसने हथियार के समान हाथ में ले लिया (ब्रह्मवै. ३. ४१-४४)।

एकदंत नाम प्राप्त होने के अन्य कारण भी प्राप्त हैं (बाण २. देखिये)। गणपति मेरा वध करेगा, ऐसा ज्ञात होते ही सिंदूरासुर ने, इसको नर्मदा में फेंक दिया। वहाँ गणपति के रक्त से नर्मदा लाल हो गई। इसीलिये अभी भी नर्मदा में नर्मदागणपति प्राप्त होते हैं। इसने सिंदूरासुर का वध कर के उसके सुवासिक रक्त से अपने शरीर का लेपन किया। पश्चात् घृष्णेश्वर के पास सिंदुरवाड़ को अवतार समाप्त किया (गणेश. २.१३७)। इसीलिये गणपति को सिंदूर प्रिय है। कृष्ण के बालचरित्र के अनुसार गणपति का भी बालचरित्र है। अपनी बाललीलाओं में इसने अनेक असुरों का वध भी किया है (गणेश. १.८१-१०६)।

गृत्समद, राजा वरेण्य तथा मुद्गल आदि इसके बडे भक्त हैं। इसने शंकर को गणेशसहस्रनाम (गणेश १. ४४-४५) तथा वरेण्य को गणेशगीता बताई (गणेश. २. १३८-१४८)। शंकर ने एक फल इसे न दे कर कुमार को दिया, तब चंद्र ने हँस दिया। इसलिये इसने चंद्र को अदर्शनीय होने का शाप दिया। परंतु बाद में उश्शाप दे कर, केवल गणेशचतुर्थी के दिन अदर्शनीय माना (गणेश. १.६१)। उसी प्रकार गणेशचतुर्थी छोड़ कर अन्य दिनों में, गणेश को तुलसी भी वर्ज्य है (ब्रह्मवै. ३.४६)।

इसके जन्मदिन वैशाख पौर्णिमा, ज्येष्ठ शुद्ध चतुर्थी, भाद्रपद शुद्ध चतुर्थी तथा माघ शुद्ध चतुर्थी हैं। शुक्लपक्षीय तथा कृष्णपक्षीय चतुर्थी तिथि इसे प्रिय है। सिद्धि तथा बुद्धि इसकी दो पत्नियाँ हैं (गणेश. १.१५)। इसकी उपासना से कार्तवीर्य अव्यंग हुआ था (गणेश. २.७३-८३)। इसके चार हाथ हैं तथा इसका वाहन मूषक है।

इस पर लिखे गये प्रसिद्ध ग्रंथः—गणेशपुराण, मुद्गलपुराण, ब्रह्मवैवर्त का गणेश खंड, भविष्यपुराण का ब्राह्मखंड, गणेशतापिनी, गणेशाथर्वशीर्ष, गणेश तथा हेरंब उपनिषद्। याज्ञवल्क्य स्मृति में विनायक-शांति दी है (याज्ञ. १.२७०)।

अष्ट विनायक के स्थान— १. मोरगांव (मोरेश्वर), २. रांजनगांव (गणपति), ३. थेऊर (चिंतामणि), ४. जुन्नरलेण्याद्रि (गिरिजात्मज), ५. मुरुड़, पाली (बल्लालेश्वर), ६. सिद्धटेक (गजमुख), ७. ओझर (विघ्नेश्वर) ८. मढ (विनायक)। ये सब स्थान पूना के आसपास हैं। इनके अतिरिक्त अड़तालीस तथा एकसौबीस स्थान भी हैं। काशी में छप्पन विनायकों की सूचि प्राप्त है (गणेश. २.१५४)।

महाभारत जैसा विस्तृत ग्रंथ लिखने में व्यास ने गणपति की सहायता प्राप्त की थी। मैं बीच में नहीं रुकूँगा, ऐसी शर्त गणपति ने रखी थी। उसी प्रकार व्यास ने भी शर्त रखी थी कि, विना अर्थ समझे आगे नहीं लिखोगे। गणपति को लिखने के लिये अधिक समय लगे तथा स्वयं को समय मिले, इस हेतु से व्यास ने महाभारत में अनेक कूट सम्मिलित किये हैं (म. आ. १. परि. १ क्र. १; गांगेय और बाण देखिये)।

गणपति का और एक रूप निकुंभ है। वाराणसीस्थित निकुंभ की आराधना करने पर भी दिवोदास की पत्नी सुयशा को पुत्र न हुआ। इसलिये निकुंभमंदिर दिवोदास ने उध्वस्त किया। निकुंभ ने भी वाराणसी नष्ट होने का शाप दिया। तालजंघादि हैहयों ने वाराणसी नगरी उध्वस्त की, तथा दिवोदास को भगा दिया। अन्त में निकुंभ की फिर से स्थापना हुई। वाराणसी समृद्ध हो गई। इस कथा में वर्णित निकुंभ ही गणपति नाम से प्रसिद्ध हुआ। गणेश, गणपति, गणेश्वर, बहुभोजन और कामपूरक नाम से भी निकुंभ का वर्णन प्राप्त है (वायु. ९२.३६-५१)।

यह ओंकाररूप है। गणपति उपासना का मतलब परब्रह्म की उपासना है (गणेशाथर्वशीर्ष; गणेश. १.१३-१५)। इसलिये इसे सर्व विद्या तथा कलाओं का अधिपति मानते हैं। किसी भी देवता के उपासक सर्वप्रथम गणपति की पूजा करते हैं (पद्म. सृ. ६३)।

प्रणव का अर्थ ॐकार है। अ, उ तथा म का ॐकार बनता है। तुरीय नामक एक चतुर्थ भाग भी ॐकार में समाविष्ट हैं। जाग्रति, स्वप्न, सुषुप्ति तथा तुरीय इन चार अवस्थाओं का ॐकार द्योतक है। ॐकार का जप तथा ध्यान का उपनिषदों में विशेष माहात्म्य है। साध्य तथा साधन दोनों रूपों में ॐकार वर्णित है। इसलिये वेदों का प्रारंभ ॐकार से करने की प्रथा शुरू हो गई। आगे चल कर, ॐकार से ही गजमुख गणेशजी का स्वरूप विकसित हुआ। ॐकार का लेखन तथा गणेशजी की मूर्ति में साम्य भी है। गजमुख गणेश सामान्यतः खिस्त के पंचम सदी के पूर्व उपलब्ध नहीं है। कालिदास ने निकुंभ का गौण रूप से निर्देश किया है। भवभूति ने स्पष्ट रूप से गजमुख का निर्देश किया है। ज्ञानेश्वरी में गजमुख तथा ॐकार की एकता स्पष्ट की है। इस एकता से ही, उपनिषदप्रतिपादित ॐकार, वेद में तथा सार्वत्रिक सर्वकार्यारंभ में आद्य स्थान में आ गया है।

गंडकंडू—एक यक्ष।

गंडष—(सो. यदु.) शूर का पुत्र।

गंडा—पशुसख की स्त्री (म. अनु. १४१. ५. कुं.)। इसे चंडा भी कहते थे।

गतायु—(सो. पुरूरवस्.) वायुमतानुसार पुरूरवीपुत्र।

गति—(स्वा.) देवहूति तथा कर्दम की कन्या। पुलह की पत्नी।

गतिन—विश्वामित्रगोत्र का प्रवर।

गद—(सो. यदु. वसु.) कृष्ण का सौतेला भाई। यह भारतीय युद्ध में पांडव पक्ष का था। यह यादवी में मारा गया (म. मौ. ४. ४४.)।

२. एक असुर। इसे मार कर इसकी अस्थियों से गदा बनवायी। इसे हाथ में धारण करने के कारण विष्णु को गदाधर कहते है (अग्नि. ११४; वायु. १०९.३-१२)।

गदवर्मन्—(सो. यदु.) शूर का पुत्र।

गद्गद—जांबवत् तथा केसरी इन वानरों का पिता (वा. रा. यु. ३०.)।

गंधमाद—रामसेना का एक सेनापति, जो वानरों की सेना लेकर राम की सहायता करने आया था (भा. ९. १०. १९; म. व. २६७.५)।

२. (सो. यदु.) श्वफल्क के तेरह पुत्रों में से एक।

गंधमोक्ष—(सो. यदु.) श्वफल्क का पुत्र।

गंधर्व—एक मानववंश। कश्यप तथा अरिष्टा की संतति को गंधर्व कहते हैं। हाहा, हूहू, तुंबुरु, किन्नर आदि इनके भेद हैं। गंधर्वों का देश हिमालय का मध्यभाग है। गंधर्व तथा किन्नर देश भी पुराणों में निर्दिष्ट हैं।

गंधर्व की स्त्रियाँ अप्सराएँ हैं। कश्यप-खशा के संतान अप्सराएँ कही जाती हैं।

चित्ररथ, विश्वावसु, चित्रसेन आदि गंधर्वनृपों का निर्देश सर्वत्र आता है। चित्ररथ गंधर्व तथा पांडवों का संघर्ष प्रसिद्ध है।

उर्वशी, घृताची, मेनका, रंभा आदि अप्सराओं का निर्देश भी सर्वत्र आता है।

ऋषि, मुनि राजाओं के साथ पत्नी आदि रूप में भी अप्सराएँ दिखती हैं।

इस वंश के लोक सुरूप, शूर तथा विशेष शक्तिशाली थे (यक्ष देखिये)।

गंधर्वसेना—कैलास पर स्वयंप्रभा नगरी में रहनेवाले धनवाहन नामक गंधर्व की कन्या। यह सोमवार का व्रत करने के कारण कुष्ठरहित हुई (स्कंद. ७.१.२४–२५)।

गंधर्वायण बालेय आग्निवेश्य—एक पांचाल (बौ. श्रौ. २०.२५)।

गंधवती—सत्यवती का नामांतर (म. आ. ५७-६७)।

गभस्तिनी प्रातिथेयी—लोपामुद्रा की बहन तथा दध्यच् ऋषि की स्त्री (ब्रह्म. ११०.७.६१)।

गंभीर—(सो. आयु.) रभसपुत्र (भा. ९.१७.१०)।

२. भौत्य मनु का पुत्र।

गंभीरबुद्धि—इंद्रसावर्णि मनुपुत्र (मनु देखिये)।

गय—एक दैत्य। विष्णु ने इसका कीकट देश में नाश किया। इसकी देह पांच कोस तथा सिर एक कोस लंबी थी (स्कंद. ५.१.५९)।

उसका शरीर अत्यंत विशाल था। यह विष्णुभक्त था, इसलिये ब्राह्मणों ने इसकी पवित्र देह, यज्ञ के लिये माँगा। इस ने लोकोपकारार्थ अपनी देह विष्णुजी को दे दी। तत्पश्चात् ब्रह्मा ने इसे कोलाहल पर्वत के पास उत्तर की ओर सिर कर के दक्षिणोत्तर सुलाया। यह न हिले, इसलिये इसपर आदिगदाधर की स्थापना की। इसे सबका उद्धार करने का वरदान दिया। यह स्थान कीटक देश में है। इसके पैर प्रभासक्षेत्र में हैं। गया-क्षेत्रमाहात्म्य उपलब्ध है (वायु. १०५–११२.)।

२. (स्वा. उत्तान.) भागवत मतानुसार उल्मुक तथा पुष्करिणी का पुत्र।

३. (स्वा. उत्तान.) भागवत मतानुसार हविर्धान का पुत्र।

४. (स्वा. प्रिय.) विष्णु तथा भागवत मतानुसार नक्त तथा द्रुति का पुत्र। इसकी स्त्री गयंती। इसके चित्ररथ, सुगति तथा अवरोधन नामक तीन पुत्र थे (भा. ५.१५.६)।

५. (सो. आयु.) आयु का पुत्र (म. आ. ७०.२३)।

६. (सो पुरूरवस्.) अधूर्तरजस् का पुत्र (म. स. ८.१७; श. ३७.१-९)। यह बड़ा धर्मात्मा एवं यज्ञ करनेवाला था। लगातार सौ वर्षों तक यह यज्ञ करता रहा। गयादेश में यज्ञयाग करते समय, इसने सरस्वती नदी को आमंत्रित किया। सरस्वती वहाँ प्रादुर्भूत हुई। इसी नदी को विशाला कहने लगे (म. व. ९३.१२१)।

७. (सू.) इला अथवा सुद्युम्न राजा का पुत्र। यह गयापुरी में राज्य करता था (भा. ९.१.४१; पद्म.सृ.८)।

८. दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

९. उरु तथा षडाग्नेयी का पुत्र।

गय आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.९–१०)।

गय प्लात—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.६३–६४)। यह प्लति का पुत्र था (ऐ. ब्रा. ५.२)। इसने अपने सूक्त में एक स्थान पर उल्लेख किया है कि, नहुषपुत्र ययाति के यज्ञ में जानेवाले देव इसे धन दें (ऋ. १०.६३.१७)। असित तथा कश्यप के साथ इसका उल्लेख आया है (अ. वे. १.१४)।

गयंती—नक्तपुत्र गय की स्त्री।

गर—सुबाहु का पुत्र। यह विशेष धार्मिक न था। हैहय, तालजंघ, शक, यवन, पारद, कांबोज तथा पल्लव राजाओं ने मिलकर इसका राज्य हरण किया। इसलिये यह अपने कुटुंबसहित भार्गव ऋषि के आश्रम में रहने गया। वहाँ जाकर यह अल्पकाल में ही मर गया। इसकी स्त्री कल्याणी तथा पुत्र सगर (पद्म. उ. २०)।

२. सामद्रष्टा एवं इंद्र का मित्र (पं. ब्रा. ९.२.१६)।

३. वीरभद्र देखिये।

गरिष्ठ—एक ऋषि। यह इंद्र की सभा में उपस्थित था (म. स. ७.११)।

गरुड—विष्णु का वाहन, एक पक्षी।

श्येन एक शक्तिशाली पक्षी के रूप में वेदों में आता है। यह संभवतः गरुड़ का वेदकालीन नाम है। बाद के संस्कृत साहित्य में श्येन का अर्थ 'बाज' दिया है।

सुपर्ण श्येन का पुत्र है (ऋ. १०. १४४. ४)। श्येन तथा सुपर्ण भिन्न थे (ऋ. २.४२.२)।

श्येन ने स्वर्ग से सोम पृथ्वी पर लाया (ऋ. ३. ४३. ७; ४. २६. ६; ८. ९५. ३; ९. १००. ८)। सोम को श्येनाभृत कहा है (ऋ. १.८०.२; ८.९५.३)।

गरुड स्वर्ग से अमृत लाया। यह निवेदन पुराणों ने किया है। अन्त में यह विष्णु का सेवक तथा वाहक हो गया।

यह कश्यप तथा विनता का पुत्र तथा अरुण का कनिष्ठ बंधु था। अरुण ने अपनी माता को शाप दिया था (अरुण ३. तथा विनता १. देखिये)। उसके अनुसार, वह कद्रू नामक सौत का दास्यत्व कर रही थी। इधर अंडे से बाहर निकलते ही, गरुड़ तीव्र गति से आगे बढा तथा उड़ गया (म. आ. २०. ४–५; स. ५९. ३९; उ. ११०)। वालखिल्यों ने इंद्र उत्पन्न करने के लिये किये तप का फल कश्यप को दिया। वही फल कश्यप ने विनता को दिया। तब उसने एक अंड़ा डाला। उसीसे गरुड़ उत्पन्न हुआ (म. आ. २७. अनु. २१ कुं.)।

यह उड़ कर जाने लगा, उस समय गरुड को पक्षियों का इंद्र मान कर वालखिल्यों ने अभिषेक किया। उड़ते समय यह इतना प्रखर तथा तीव्र प्रतीत होने लगा कि इसके तेज से लोगों के प्राण घबराने लगे। तभी इसे अग्नि समझ कर लोग इसकी स्तुति करने लगे। यह जानकर इसने अपना तेज संकुचित किया। बादमें इसने अपने बड़े भाई अरुण को पीठ पर बैठा कर, पूर्वदिग्भाग में ले जाकर रखा (म. आ. परि. १ क्र. १४; अरुण देखिये)।

तदनंतर यह कद्रू के दास्यत्त्व मे बद्ध हुई अपनी माँ विनता के पास गया। वहाँ इसने देखा कि, विनता अत्यंत दुःखी तथा कष्ट में है। इतने में कद्रू ने नागों के उपवन में जाने का निश्चय किया। स्वयं विनता के कंधे पर बैठ कर, उसने अपने अनुचर नागों को कंधे पर ले जाने की आज्ञा गरुड़ को दी। उड़ते उडते यह इतनी उँचाई पर गया कि, सूर्य की उष्णता के कारण सब नाग नीचे गिर गये। तब इन्द्र की स्तुति कर कद्रू ने वर्षा करवाई। बाद में नाग इससे मन चाहे जैसीं आज्ञा करने लगे। तब गरुड़ ने माता के पास शिकायत की। विनता ने इसे दासीभवन की समस्त कथा बताई तथा नागों का कपट भी बताया। तब गरुड़ ने माता की दास्यत्वमुक्ति के लिये कद्रू से उपाय पूछा। उसने दास्यत्व के बदले में अमृत माँगा (म. आ. २१. २–३)।

गरुड़ ने अमृत लाने के लिये माता से अनुमति माँगी। क्षुधानिरसन के लिये क्या है, सो पूछा। तब माँ ने इसे निषादों को खाने के लिये कहा। खाते खाते, निषाद समझ कर इसने एक ब्राह्मण तथा उसकी केवट पत्नी को भी खा लिया। इससे गरुड़ का गला इतना जला कि, इसे उन्हें छोड़ देना पड़ा (म. आ. २४)। उगलते समय कुछ निषाद भी बाहर आये। वे म्लेच्छ बने (पद्म. सृ. ४७)। इतने में यह उस स्थान पर आया, जहाँ इसका पिता कश्यप तपस्या कर रहा था। इसने क्षुधानिवारणार्थ कुछ माँगा। तब पिता ने एक सरोवर में लड़ रहे हाथी तथा कछुवा– जो पूर्वजन्म में सगे भाई हो कर भी एक दूसरे के दुश्मन थे–दोनों को खाने के लिये कह कर, इसे शुभाशीर्वाद दिया। कश्यपद्वारा दर्शाये गये सरोवर में लड रहे हाथी तथा कछुवा को इसने पंजे से उठा लिया। उड़ कर यह एक सौ योजन लंबी तथा उसी परिमाण में मोटी वटवृक्षशाखा पर बैठा। इतने में वह शाखा टूट गई। इसी शाखा से उलटे लटक कर, वालखिल्य तपस्या कर रहे थे। यह देख कर इसने वह शाखा चोंच में पकड़ी। हाथी, कछुवा तथा वालखिल्यों के साथ उड़ कर, यह पुनः कश्यप के पास आया। कश्यप ने कुशल प्रश्न पूछ कर वालखिल्यों का क्रोध ढाल दिया। बाद में उस शाखा से छूट कर वालखिल्य हिमालय पर गये। कश्यप के कथनानुसार गरुड ने वह शाखा एक पर्वतशिखर पर रख दी। वहीं उस हाथी तथा कछुए को खा कर, यह अमृतार्थ आगे बढ़ा।

अमृतप्राप्ति के लिये गरुड़ आ रहा है, यह जान कर देवों ने इससे लड़ने की तैय्यारी चालू की। बाद में इसका यक्ष, गंधर्व तथा देवों से युद्ध हुआ, परंतु उसमें उनका पराभव हो गया। इस समय इन्द्र ने इस पर अपना वज्र फेंका; किंतु इसपर कुछ भी असर नहीं हुआ। इसने इंद्र के तथा जिस दधीचि की हड्डियों से वह वज्र बना था, उस दधीचि के सम्मान के लिये, अपने एक पर का त्याग किया। बाद में यह अमृतगुफा की ओर घूमा। वहाँ सुदर्शनचक्र के समान एक चक्र उस गुफा की रक्षा कर रहा था। चारों ओर अग्नि का परकोटा था (यो. वा. १.९)।

अतिसूक्ष्म रूप धारण कर के, इस चक्र के बीच में स्थित तूंबी के छेद से इसने भीतर प्रवेश किया। परंतु अमृत के दोनों ओर दो नाग थे। जो भी कोई उनके दृष्टिपथ में आता, एकदम भस्म हो जाता था। उनके दृष्टिपथ में आ कर भस्म न होवे, इसलिये इसने उनकी आँखों में धूल झोंक दी। उन्हें आँखे बंद करने के लिये मजबूर कर के स्वयं अमृत कुंभ ले कर बाहर निकला। इतने में इसकी विष्णु से भेंट हुई। तब संपूर्ण कुंभ पास में होते हुए भी, इसने एक बूंद अमृत को भी स्पर्श नहीं किया, यह देख कर विष्णु अत्यंत प्रसन्न हुए। तथा उसने इसे दो वर माँगने के लिये कहा। इन दो वरों से, 'मैं तुम्हारे साथ लेकिन ऊँचा रहूँ, तथा बिना अमृत प्राशन किये भी मैं अमर रहूँ' ऐसे दो वर इसने विष्णु से माँगे, तथा पूछा कि 'मैं तुम्हारी सेवा किस प्रकार कर सकता हूँ'? तब विष्णु ने कहा, 'तुम मेरे वाहन बनो। तुम्हारे प्रथम वर की पूर्ति के लिये, मैं रथ में बैठूँगा, तब तुम मेरे ध्वज पर बैठो' (म. आ. २८-२९)।

बाद में पुनः यह बदरिकाश्रम में कश्यप के पास आया तथा आपबीती उसे बताई। कश्यप तथा तत्रस्थ ऋषिओं ने इसे नारायणमाहात्म्य का निवेदन किया। तदनंतर इसकी तथा इंद्र की मित्रता हो कर, इंद्र ने इसे अमृत ले जाने का कारण पूछा। गरुड द्वारा बताये जाने पर इंद्र ने कहा, 'तुम्हारी माता को कपट से दासी बनाया गया है। हम कपटाचरण से ही उसकी मुक्ति करायेंगे'। सख्यत्व दर्शाने के लिये इंद्र ने इसे वर दिया, 'सर्प तुम्हारा भक्ष्य बनेंगे'। बाद में इसने अमृतकुंभ दर्भ पर रखा तथा सर्पों से कहा, कि तुम स्नानादि कर के इसका भक्षण करो। इस प्रकार सब साँप जब स्नान के लिये गये थे, तब इंद्र ने आ कर अमृतकुंभ का हरण कर लिया। इस प्रकार साँपों को धोखा दे कर, इसने अपनी माता की मुक्ति की।

इसकी पत्नियों के नाम भासी, क्रौंची, शुकी धृतराष्ट्री एवं श्येनी थे (ब्रह्माण्ड. ३.७.४४८-४४९)।

एक बार इंद्र ने सुमुख नामक नाग को अमरत्व दिया। क्रुद्ध हो कर गरुड इंद्र के पास गया। 'तुम मेरे मुख से मेरा भक्ष्य क्यों छीन रहे हो? मैं सरलता से विष्णु का वहन कर सकता हूँ, इसलिये मैं सबसे, अर्थात् विष्णु से भी बलवान् हूँ।' ऐसी वल्गनायें यह करने लगा। इसका गर्व हरण करने के लिये विष्णु ने लीला से अपना एक हाथ इसके शरीर पर रखा। इससे इसके प्राण घबराने लगे। तब यह विष्णु की शरण में गया। उस सुमुख नामक नाग को अपने अंगूठे से उड़ा कर, विष्णू ने गरुड की छाती पर रखा। तब से वह सुमुख गरुड की छाती पर है (म. उ. १०३)।

गालव नामक ऋषि इसका मित्र था। गालव जब गुरु-दक्षिणा की विवंचना में था, तब गरुड उसके पास आया। उसकी सहायता के हेतु से गरुड ने उसे पीठ पर बैठाया। चारों ओर घूम कर, दोनों ऋषभ पर्वत पर शांडिली नामक एक ब्राह्मणी के आश्रम में आ उतरे। यह तथा गालव उसी आश्रम में विश्राम कर रहे थे। तब गरुड ने सोचा कि, यह ब्राह्मणी अत्यंत तपोनिष्ठ है। इसे वैकुंठ ले जाना चाहिये। तभी अंशतः उपकार इसपर हो सकेगा। परंतु ब्राह्मणी को यह पापविचार प्रतीत हुआ। उसने योगबल से इसके पर तोड़ डाले। गरुड ने उससे क्षमायाचना की। तब इसे पहले से भी शक्तिपूर्ण पर प्राप्त हुए। फिर दोनों मित्र मार्गक्रमण करने लगे। मार्ग में गालव का गुरु विश्वामित्र मिला। वह दक्षिणा के लिये उतावली करने लगा। तब त्वरित द्रव्यप्राप्ति की इच्छा से गरुड उसे ययाति राजा के पास ले गया। परंतु ययाति के पास द्रव्य नही था। इस कारण, उसने अपनी कन्या माधवी इसे इस शर्तपर दी कि, इससे उत्पन्न पुत्रों पर ययाति का अधिकार होगा। गालव से उसने कहा, 'कोई भी राजा तुम्हारी इच्छित कीमत दे कर इसे ले लेगा।' बाद में गुरु-दक्षिणार्थ अश्वप्राप्ति का साधन प्राप्त होते ही इसने गालव को विदा किया। पश्चात् यह अपने स्थान पर वापस लौट आया (म. उ. १०५.१११)।

इसे सुमुख, सुनामन्, सुनेत्र, सुवर्चस्, सुरुच् तथा सुबल नामक छः पुत्र थे (म. उ. ९९.२-३)। महाभारत के इसी अध्याय में एक और नामावलि दी गयी है। इस नामावलि के प्रारंभ में कहा गया है, 'गरुड के कुल के अन्य नाम बता रहा हूँ'। अन्त में कहा गया है, 'ये सब गरुडपुत्रों में से है'।

इंद्र ने सुमुख को अमरत्व दिया। इस कारण इंद्र से लड़ने गरुड गया था। तब इसने स्वयं ही बताया था, 'मैं ने श्रुतश्री, श्रुतसेन, विवस्वान्, रोचनामुख, प्रस्तुत, तथा कालकाक्ष राक्षसों का वध कर के अचाट कर्म किये हैं' (म. उ. १०३)।

इसके विभिन्न कार्यों से इसे विभिन्न नाम प्राप्त हुएं। उनमें से, काश्यपि इसका पैतृक नाम तथा वैनतेय इसका मातृक नाम है। सुपर्ण, तार्क्ष्य, सितानन, रक्तपक्ष, सुवर्णकाय, गगनेश्वर, खगेश्वर, नागांतक, पन्नगाशान, सर्पाराति, विष्णुरथ, अमृताहरण, सुधाहर, सुरेंद्रजित्, वज्रजित्, गरुत्मत्, तरस्विन्, रसायन, कामचारिन्, कामायुष, चिराद आदि इसके अनेक नाम हैं। इसका रूप अति विचित्र था। इसके मस्तक, पर, चोंच तथा नख गरूड़पक्षी के समान थे। शरीर तथा इंद्रियाँ मनुष्य जैसी थीं।

इसीके वंश के पिंगाक्ष, निबोध, सुपुत्र तथा सुमुख ने व्यासपुत्र जैमिनि की महाभारत पर की शंकाओं का निरसन किया (मार्क. ४)। ये चारों श्वास रोक कर वेदपठन करते थे (मार्क. ४.४)। इसने ही गरुड़पुराण कश्यप को बताया (गरुड़. १.२)। इसकी उपासना काफ़ी प्राचीन है। इसकी गायत्री प्रसिद्ध है (महाना. ३.१५; गरुड़ोपनिषद् देखिये)।

गरुड केवल व्यक्ति का नाम न हो कर, समुदाय एवं मनुष्यजाति का नाम होगा।

गर्ग—(सो. काश्य.) दिवोदासपुत्र प्रतर्दन के दो पुत्रों में से एक (ह. वं. १.३०)।

२. (सो. पूरु.) मन्यु नृप का पुत्र। इसका पुत्र शिनि।

३. यादवों का पुरोहित। इसने कृष्ण का नामकरण तथा उपनयन संस्कार किया (भा. १०.८)। देवकी को पुत्र होते ही तत्काल उनका वध करने का क्रम कंस ने जारी किया। इन पुत्रों को दीर्घायु बनाने का उपाय वसुदेव ने इससे पूछा। तब इसने देवीभागवत श्रवण करने का उपाय उसे बताया। कारागृह में वह असंभव था, इसलिये गर्गमुनि ने स्वयं देवीभागवत का पाठ किया। देवी ने वरदान दिया कि, शीघ्र ही कृष्णावतार होगा (दे. भा. १.२)। गर्ग ने चौसष्ट कलाओं पर एक ग्रंथ लिखा होगा (म. अनु. ४९.३८ कुं.)। गर्गस्मृति से हेमाद्रि तथा माधवाचार्य ने उद्धरण लिये हैं।

यह प्रसिद्ध ज्योतिषी था। इसने कृष्णजन्म का जातक ठीक ठीक कथन किया था। गर्गसंहिता नामक बारह हजार श्लोकों का कृष्णचरित पर एक ग्रंथ उपलब्ध है। वह इसी गर्ग का है, ऐसा कहा जाता है। इतिहास पर लिखे गये इस ग्रंथ के अनुसार, ज्योतिष पर भी एक गर्गसंहिता पहले होनी चाहिये। बृहद्गार्गीय संहिता नामक एक ग्रंथ हाल ही में पाया जाता है। गर्ग के वारिशास्त्र तथा मयूरचित्रक नामक दो ग्रंथ उपलब्ध हैं। इन दोनों ग्रंथों में वर्षा के भविष्य के संबंध में विस्तीर्ण जानकारी अर्थात् वायुविद्या है। मयूरचित्रक, गर्ग तथा भागुरि का संवादरूप ग्रंथ है (कविचरित्र)। गर्ग ने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा था (मत्स्य. २५२)।

४. कलिंग देश का निवासी। मुख से विश्वनाथ का नाम लेते, यह कंधे पर गंगा की डोली लेकर जा रहा था। राह में ब्रह्मराक्षस बने सोमदत्त तथा कल्माषपाद से इसकी भेंट हुई। उनपर तुलसीमिश्रित गंगाजल डालने से सोमदत्त तर गया तथा कल्माषपाद पश्चात्तापदग्ध हुआ। सरस्वती के द्वारा आश्वासन दिये जानेपर, छः मास काशी में रहकर कल्माषपाद अपने राज्य लौटा (नारद. १.१४१)।

५. एक ऋषि (पितृवर्तिन् देखिये)। इसने भीष्मपंचकव्रत किया था (पद्म. उ. २४)।

६. अंगिराकुल का गोत्रकार।

७. ऋषभ नामक शिवावतार का शिष्य।

८. लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

गर्ग भारद्वाज—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.४७)।

गर्गभूमि—(सो. क्षत्र.) वायुमतानुसार गार्ग्यपुत्र।

गर्दभीमुख—कश्यपकुल का गोत्रकार।

गर्दभीमुख शांडिल्यायन—एक आचार्य। इसका गुरु उदरशांडिल्य (वं. ब्रा. २)।

गर्दभीविपीत—गौतमकुल का एक ऋषि।

२. भारद्वाजकुल का एक ऋषि।

३. एक तत्त्वज्ञ। जनक ने याज्ञवल्क्य को बताया कि, इसने श्रोत्र ब्रह्म है, ऐसा कहा है (बृ. उ. ४.१.५)। इसे विभीत भी कहते हैं।

गर्भ—(सो. तुर्वसु.) मत्स्य के मतानुसार यह तुर्वसुपुत्र है।

गर्व—धर्म ऋषि का पुत्र। इसकी माता पुष्टि।

गलूनस आर्क्षाकायण—एक आचार्य। इसका तथा जैवलि का साम के बारे में संवाद हुआ है (जै. उ. ब्रा. १. ३८. ४)।

गवय—यह रामसेना का वानर था। राम ने जब यज्ञ किया, तब अश्व के रक्षणार्थ शत्रुघ्न के साथ इसे भेजा गया था (म. व. २६७.३; पद्म. सृ. ३९; पा. ११)।

गवल्गन—यह सूत था तथा संजय का पिता था।

गवाक्ष—शकुनि का भ्राता। भारतीययुद्ध में यह इरावत् के द्वारा मारा गया (म. भी. ८६.२४-३४)।

२. रामसेना का एक वानराधिपति (म. व. २६७.४)।

३. भारतीययुद्ध में भीम के द्वारा मारा गया राजा (म. द्रो. १३२.२०)।

गविजात—एक ब्रह्मर्षि (च्यवन तथा शृंगिन् देखिये)।

गविष्ठ—कश्यप तथा दनु का पुत्र। एक दानव (म. आ. ५९.२९)

२. अंगिरसपुत्र देवों में से एक।

गविष्ठिर आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१.१२; १०. १५०.५; अ. सं. ४.२२.५; आश्व. श्रौ. १२.१४.१; ब्रह्मांड. २.३२)। यह अत्रिगोत्र का प्रवर है।

गवेषण—(सो. यदु. वृष्णि.) अक्रूर के पुत्रों में से एक।

गवेष्टिन्—दनुपुत्र।

गाग्र—(सो. पुरूरवस्.) वायु के मतानुसार भुवन्मन्यु-पुत्र। इसके पुत्रों को गाग्र यह सामान्यनाम दिया गया है। अन्य पुराणों से प्रतीत होता है कि, ये गर्ग होंगे।

गांगेय—भीष्म का मातृक नाम (म.आ. ९४.७७)।

२. गणपति देखिये।

गांगोदधि—अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार।

गांग्यायनि—चित्र का पैतृक नाम। गार्गायणि नामांतर है (कौ. उ. १.१)।

गाणगारि—आश्वलायन देखिये।

गातु आत्रेय—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.३२)।

गातु गौतम—संवर्गजित् लामकायन का शिष्य (वं. ब्रा. २)।

गात्र—उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

गात्रवत्—कृष्ण का लक्ष्मणा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१.१५)।

गाथिन्—विश्वामित्र का पिता तथा कुशिक का पुत्र। सर्वानुक्रमणी में इसका निर्देश है। गाथिन् कौशिक कुछ ऋचाओं का द्रष्टा है (ऋ. ३.१९–२२)। विश्वामित्र ने शुनःशेप को दत्तक लिया। इसलिये वह, मूलवंश के तथा गाथिन् के वंश के, यज्ञयागादि दैवी कर्मों में तथा मंत्रसाध्य कर्मों में, प्रामुख्य प्राप्त करनेयोग्य हुआ (ऐ. ब्रा. ७. १८)। विश्वामित्र के वंश के लिये, गाथिन् शब्द बहुवचन प्रयुक्त होता है (आश्व. श्रौ. ७.१८)। यह अंगिराकुल का गोत्रकार तथा इंद्र का अवतार था (वेदार्थदीपिका ३)। पुराणों में इसे गाधि कहा गया है (विश्वामित्र देखिये)।

गाथिन—विश्वामित्र तथा विश्वामित्रवंशजों का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१८)।

गाधि—(सो. अमा.) वायुमतानुसार कुशाश्वपुत्र, भागवत तथा विष्णु मतानुसार कुशांबुपुत्र। इसेही कौशिक कहते हैं। यह कान्यकुब्ज देश का अधिपति था। इसकी माता पुरुकुत्स की कन्या थी। इसे सत्यवती नामक कन्या थी। उसे ऋचीक ऋषि ने इससे माँगा। तब इसने उससे एक हजार श्यामकर्ण घोडे ले कर, सत्यवती उसे दी। ऋचीक ऋषि ने दिये चरु के प्रभाव से, इसे विश्वामित्र नामक पुत्र हुआ (ऋचीक देखिये; म. आ. १६५; व. ११५; शां ४९; अनु. ७ कुं; भा. ९.१५.४; १६.२८; ह. वं. १.२७)।

२. कोसल देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। यह श्रोत्रिय एवं बुद्धिमान् था। यह बचपन से ही विरक्त था। कुछ इष्टकार्य की सिद्धि के लिये, यह भाईयों को छोड़ कर तपस्या करने के लिये अरण्य में एक सरोवर के किनारे गया। विष्णुदर्शन होने तक पानी में तप करने का इसने निश्चय किया। दर्शन दे कर विष्णु ने इसे वर माँगने का कहा। इसने विष्णु से भ्रामक संसारमाया दिखलाने की प्रार्थना की।

एक दिन स्नान करते समय, दर्भ हाथ में ले कर पानी मथना इसने प्रारंभ किया। तब इसे ऐसा दृश्य दिखा कि, जोरों का तूफान आने के कारण, एकादे वृक्ष के समान उसका शरीर नीचे गिर गया है। स्वजन रो रहे हैं, तथा शुष्क शरीर चिता में ड़ाल कर जला ड़ाला गया है। बाद में भूतमंडल देश की सीमा पर, एक ग्राम में, एक चांड़ाल स्त्री के उदर में गर्भवास की नरकयातना भोगते हुए इसने अपने को देखा। बाद में क्रमशः बढते बढते, यह विषयलोलुप बन गया। इसने चांड़ालकन्या से विवाह किया। वहाँ इसे संतति प्राप्त हो कर, यह वृद्ध हुआ। तदनंतर यह अरण्य में वास करने लगा। कुछ कालोपरांत, घर के लोगों की मृत्यु होना प्रारंभ हुआ। यह भ्रमिष्ट के समान वन में घूमने लगा। घूमते-घूमते यह कीर लोगों की राजधानी में आया। वहाँ के राजा की मृत्यु हो गई थी। हाथी ने इस चांड़ाल को सूँड से पकड़ कर गंडस्थल पर बैठाया। इसलिये लोगों ने इसे राजा बनाया। इस प्रकार गवल नाम से इसने आठ वर्षों तक कीर देश का राज्य चलाया। बाद में, नागरिकों को ज्ञान हुआ कि, अपना राजा चांड़ाल है। उन्हों ने अग्निप्रवेश किया। उनके

दुख से, यह स्वयं भी अग्निप्रवेश करने को सिद्ध हो गया, तथा अग्निराशि पर गिर गया। इसके अवयव जलने लगे।

इसी समय, सरोवर के जल में अघमर्षण करनेंवाला गाधि ब्राह्मण, इस दीर्घस्वप्न से जाग्रत हुआ।

चार घटिकाओं के बाद, इसका भवभ्रम नष्ट हुआ। स्वप्न की सब घटनाओं का स्मरण कर, यह विचार करने लगा। तदनंतर गाधि ने डेढ साल तक तपस्या की। तब इसे दर्शन दे कर विष्णु ने बताया कि, तुमने देखी हुई सब घटनायें माया है। विष्णुवचन की सत्यासत्यता अजमाने के लिये, यह पुनः कीर देश में गया। विष्णुद्वारा इसका मोह निरसन होने के पश्चात्, यह जीवन्मुक्त हुआ (यो. वा. ५.४४.४९)।

गानबंधु—वाराहकल्प के घोरकल्प में से प्रसिद्ध गायनाचार्य। तत्कालीन नारद ने इससे गायन सीखा। आगे चल कर कुछ कारणवश, इसे उलूकयोनि प्राप्त हुई (अ. रा. ७)।

गांदम—एकयावन का पैतृक नाम (तां. ब्रा. २१. १४, २०; तै. ब्रा. २. ७. ११. २)। तैत्तिरीय ब्राह्मण में कांदम पाठ है।

गांदिनी—काशिराज की कन्या, तथा यदुवंश के श्वफल्क की पत्नी। अक्रूर आदि इसके पुत्र थे (भा. १०. ४१)। यह अनेक वर्षों तक गर्भ में थी। इसका कारण इसके पिता ने पूछा। इसने कहा कि, 'अगर तुम मुझसे हमेशा गोदान कराओगे, तो ही मैं जन्म लूँगी'। इसके पिता ने यह कबूल किया (वायु. ९६. १०५-१०९; ह. वं. १. ३४. ६-१०)।

गांधार—(सो. द्रुह्यु.) भागवत मतानुसार आरब्ध का, विष्णु मतानुसार सेतुपुत्र वा आरद्वत् का, मत्स्य मतानुसार शरद्वत् का तथा वायुमतानुसार अरुद्ध का पुत्र। गांधार देश के राजाओं को, विशेषतः शकुनि को यह नामप्रयुक्त होता था (गांधार नग्नजित् देखिये)।

गांधार नग्नजित्—एक गांधार राजा। इसे सोमविषयक ज्ञान प्राप्त था (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। शतपथ ब्राह्मण में इसका अथवा स्वर्जिन्नाग्नजित् का, नग्नजित् ऐसा उल्लेख मिलता है। एक बार, प्राण शब्द के अर्थ के संबंध में दिया हुआ इसका मत, राजन्यबंधु होने के कारण अस्वीकृत हुआ (८.१.४.१०)। सायणाचार्य गांधार तथा नग्नजित् को दो पृथक् व्यक्ति मानते हैं (ऐ. ब्रा. भाष्य.)।

गांधारकायन—अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार।

गांधारी—गांधार देशाधिपति सुबल की कन्या (म. आ. ९०. ६१)। इसने बाल्यावस्था में रुद्र की आराधना की थी, जिस कारण इसे सौ पुत्र होंगे ऐसा वरदान मिला। कुरुवंश में संतति का अभाव था। इसी कारण भीष्म आदि लोगों ने धृतराष्ट्र के लिये, गांधारी की माँग की (म. आ. १०३. ९-१०)। तदनुसार सुबल ने धृतराष्ट्र को गांधारी दी। यह महापतिव्रता थी। धृतराष्ट्र अंधा था। इसलिये इसने भी अपनी आँखों पर पट्टी बाँध कर अंधत्व अंगिकार किया। यह परपुरुष का दर्शन भी न करती थी (म. आ. १०३.१३)।

वर के अनुसार इसके उदर में गर्भ रहा। इसे समाचार मिला कि, कुंती को युधिष्ठिर उत्पन्न हुआ है। जल्दी पुत्र हो, इसलिये इसने बलपूर्वक अपना गर्भ बाहर निकाला (म. आ. १०७.१०-११)। उससे मृतप्राय सा मांस का पिंड बाहर आया। इतने में वहाँ व्यास आये। यह सारा हाल देख कर उन्हें इस पर बडी दया आई। उन्होंने गर्भ के सौ टुकडे बनवा दिये। पश्चात् घृतकुंभ मँगवा कर, उसमें गर्भ रखने का आदेश दिया। कहा कि, 'यथा-अवसर योग्य काल पा कर गर्भ व्यवस्थित हो जावेगा'। तदनुसार योग्य समयपर गर्भ सजीव हुआ (म. आ. १०७.१२-१४)। इसी समय कुंती को भीम उत्पन्न हुआ (म. आ. ११४.१४)। गांधारी को दुर्योधन आदि सौ कौरव तथा दुःशला नामक कन्या यों एक सौ एक संताने हुई (धृतराष्ट्र देखिये)।

दुर्योधन ने पांडवों से शत्रुता प्रारंभ की, तब गांधारी ने हितोपदेश दिया। उसका कुछ भी परिणाम नही हुआ (म. उ. १२७)। दुर्योधन की मृत्यु के समय, कृष्ण ने इसे सांत्वना दी (म. श. ६२)। गांधारी ने रणक्षेत्र में आ कर, पुत्रशोक से संतप्त हो, सब के शव (प्रेत) दिखाये। कृष्ण को शाप दिया कि, छत्तीस वर्षों में तेरे कुल का क्षय होगा। तब कृष्ण ने हँस कर कहा कि, यह मुझे मालूम ही था (म. स्त्री. २६.४१-४३)। इसके बाद व्यास आदि लोगों ने इसका सांत्वन किया। दुर्योधनवध तथा दुःशासन का रक्त-प्राशन, इस विषय पर भीम से इसका संवाद हुआ। तब भीमसेन ने कहा, 'दुःशासन का लहू दांत तथा ओठों के अंदर बिल्कुल ही नहीं गया' (म. स्त्री. १४.१४)। एक बार इसकी संतापपूर्ण दृष्टि धर्म के पैरों की अंगुलियों पर पड़ी। इससे उसकी अंगुलियों के अत्यंत सुंदर नख विद्रूप हो गये (म. स्त्री. १५.७)। द्रौपदी तथा कुन्ती अपने

अपने पुत्रों के लिये शोक कर रहीं थीं। इसने उनकी सांत्वना की (म. स्त्री. १५-१७)।

इसके बाद, गांधारी धृतराष्ट्र के साथ पांड़वों के पास ही रहने लगी। युधिष्ठिर अत्यंत सुस्वभावी था। इन्हें किसी भी चीज की कमी नहीं होने देता था। किंतु भीम हमेशा कठोर भाषण करता था। इससे वैराग्य उत्पन्न हो कर, गांधारी धृतराष्ट्र, कुन्ती तथा विदुर के साथ वन में गई। वहाँ इसने पति के साथ देहत्याग किया (भा. १.१३.२७; ९.२२-२६; म. आश्र. ४५)।

२. क्रोष्टु की पत्नी। इसे सुमित्र अथवा अनमित्र नामक एक पुत्र था (ब्रह्म. १४.२; ३४; ह. वं. २.३४.१)।

३. अजमीढ की तीसरी पत्नी।

४. कश्यप तथा सुरभि की कन्या।

५. कृष्णपत्नी। इसने अंत में अग्निप्रवेश किया (म. मौ. ७)।

गायत्री--एक देवपत्नी। पुराने काल में चाक्षुष मन्वन्तर में ब्रह्मदेव ने यज्ञ प्रारंभ किया। शंकर, विष्णु आदि देव तथा भृगु आदि ऋषि आये थे। यज्ञदीक्षा के लिये, ब्रह्माजी नें अपने स्वरा नामक पत्नी को पुकारा। वह किसी कार्य में मग्न थी। इधर मुहूर्त टल रहा था। इसलिये इन्हों ने गायत्री को पुकारा। तब यह आई तथा स्वरा के स्थान पर बैठी।

बाद में स्वरा मंड़प में आई। अपने स्थान पर गायत्री को बैठी देख कर, क्रोध से उसने सब को जड़ हो जाने का शाप दिया। तब गायत्री ने भी उसे वही शाप दिया। बाद में, देव जड़ अर्थात् जलरूप रहें, तथा प्रत्येक नदी देवता हो, ऐसा तय हुआ। सावित्री तथा गायत्री पश्चिमवाहिनी नदीयाँ बनीं। विष्णु कृष्णा का तथा शंकर वेण्या का स्वामी बना (पद्म. उ. ११३)। सावित्री ने देवों को शाप दिया। तब गायत्री ने यह बताया कि, शाप का उपयोग कैसे किया जावे (पद्म. सृ. १७)।

पश्चात् ब्रह्मदेव ने एक स्त्री, यज्ञकार्य के लिये लाने की आज्ञा, इन्द्र को दी। इन्द्र ने एक अभिराज की (ग्वाले की) कन्या उठा लाई। उसकी स्थापना ब्रह्मदेव के पास की। ब्रह्मदेव ने इसका गांधर्वविधि से स्वीकार किया (पद्म. सृ. १६-१७; सावित्री, बुड़िल तथा अश्वपति २ देखिये)।

गायत्री मंत्र तथा गायत्री छंद की प्रशंसा ब्राह्मण, उपनिषद तथा महाभारतादि पुराणों में प्राप्त है (छां.उ. ३. १२.१; म. आश्व. ९९.३२-३७; ११५.२७.२९)।

गायत्री को वेदमाता कहा है (म. आश्व. ९९.२४)। गायत्री को सूर्यमंत्र मान कर उसे सावित्री कहते हैं (बृ. उ. ५.१४.५)। जै. उ. ब्रा. को गायत्रोपनिषद कहते हैं (जै. उ. ब्रा. ४.१७)। इस ग्रंथ में गायत्र साम की अत्यंत प्रशंसा की है।

गायन--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

गार्ग--विश्वामित्र का पुत्र।

गार्गिहर--गार्ग्यहरि का पाठभेद।

गार्गी वाचक्नवी--वचक्नु ऋषि की कन्या होने के कारण, इसे गार्गी वाचक्नवी कहते है। यह अत्यंत ब्रह्मनिष्ठ थी तथा परमहंस की तरह रहती थी। देवराति जनक की सभा में याज्ञवल्क्य से इसका वाद हुआ (बृ. उ. ३.६.१; ८.१; आश्व. गृ. ३.४.४; सां. गृ. ४.१०; अथर्वपरि. ४३.४.२३)। ऋग्वेदियों के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका नामोल्लेख आता है।

गार्गीय--भृगुकुल का गोत्रकार।

गार्ग्य--एक ऋषिपरंपरा। गर्ग परंपरा के लोग गार्ग्य नाम से प्रथित हुवे। वेद, प्रतिशाख्य, यज्ञ, व्याकरण, ज्योतिष, धर्मशास्त्र आदि विषय में उनके ग्रंथ तथा विचार उपलब्ध हैं। यह कार्य एक का नही। परंपरा में आये अनेक शिष्यप्रशिष्य द्वारा यह संपन्न हुआ, इस में संदेह नही। यहाँ केवल निर्देश किये हैं। काल तथा भिन्नता प्रकट करना अशक्य है।

एक व्याकरणकार। पाणिनि ने तीन बार इसका उल्लेख किया है (पा. सू. ७. ३. ९९; ८. ३. २०; ४. ६७)।

ऋक्प्रातिशाख्य तथा वाजसनेय प्रातिशाख्य में भी गार्ग्यमत उध्दृत किया है (ऋ. प्रा. १३. ३०)।

निरुक्त में भी गार्ग्यमत है (नि. १.३.१२; ३.१३)। यास्क तथा रथीतर के साथ इसका निर्देश है (बृहद्देवता १. २६)। सामवेद का पदपाठ गार्ग्यविरचित है।

सामवेद परंपरा में शर्वदत्त का गार्ग्य पैतृक नाम है। सामवेदियों के उपाकर्मांग तर्पण में इसका नाम है (जैमिनि देखिये)।

एक गृह्यकर्मविशारद। शांत्युदक तथा मधुपर्क विषयक इसके मत उपलब्ध है (कौ. सू. ९. १०; १३. ७; १७. २७)।

एक तत्त्वज्ञ। यह गौतम का शिष्य था। इसका शिष्य अग्निवेश्य (बृ. उ. ४. ६. २)।

एक ज्योतिषी के नाते हेमाद्रि ने इसका निर्देश किया है (C. C)। मेरु की कर्णिका ऊर्ध्ववेणीकृत आकार की है (वायु. ३४. ६३), यह ज्योतिषशास्त्रीय सिद्धान्त इसने प्रस्थापित किया।

यह अंगिराकुल का एक गोत्रकार तथा मंत्रकार है। परंतु ऋग्वेद में गार्ग्य का मंत्र नही है।

धर्मशास्त्रकार—वृद्धयाज्ञवल्क्य का एक श्लोक विश्वरूपरचित विवरण नामक ग्रंथ में है। उसमें उल्लेख है कि यह धर्मशास्त्रकार है (१. ४–५)। गार्ग्य के ग्रंथ का एक वचन लिया गया है, उससे पता चलता है कि, गार्ग्य का धर्मशास्त्र पर कोई ग्रंथ अवश्य उपलब्ध होगा। अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका, मिताक्षरा आदि ग्रंथों में श्राद्ध, प्रायश्चित्त तथा आह्निक आदि विषयों पर इसके उद्धरण लिये गये हैं। पाराशरधर्मसूत्र में भी यह धर्मशास्त्रकार है, यों उल्लेख है। अपरार्क में इसके ग्रंथ से ज्योतिषविषयक श्लोक भी लिये गये हैं। गर्गसंहिता के ज्योतिषविषयक श्लोक भी प्राप्त हुए हैं। स्मृतिचन्द्रिका में ज्योतिर्गार्ग्य एवं बृहद्गार्ग्य इन दो ग्रंथों का उल्लेख हुआ है। नित्याचारप्रदीप में गर्ग तथा गार्ग्य नामक दो भिन्न स्मृतिकारों का उल्लेख हैं।

पूरुवंश के गर्ग तथा शिनि की संतति को गार्ग्य यह सामान्यनाम दिया जाता था। यह क्षत्रिय थे, परंतु तप से वे गार्ग्य तथा शैन्य नाम के ब्राह्मण हो गये थे (भा. ९.२१.१९; विष्णु. ४. १९.९)। केकयदेशाधिपति युधाजित् राजा का गार्ग्य नामक पुरोहित था। यह युधाजित् राजा की ओर से गंधर्वदेश जीतने के लिये राम के पास आया था। उसने तक्ष तथा पुष्कलों की सहायता से यह कार्य पूर्ण किया (वा. रा. यु. १००)।

२. एक ऋषि। रुद्र ने ययाति को एक सोने का रथ दिया। वह रथ उसके कुल में प्रथम जनमेजय पारिक्षित तक था। परंतु गार्ग्य के एक अल्पवयीन पुत्र ने उसे कुछ कहा, तब जनमेजय ने उसका वध कर दिया। तब गार्ग्य ने उसे शाप दिया तथा वह रथ जनमेजय के पास से चेदिपति वसु के पास गया। उसके बाद, वह रथ जरासंध, भीम तथा अंत में कृष्ण के पास गया (वायु. ९३.२१–२७; ह. वं. १.३०)।

३. विश्वामित्र के पुत्रों में से एक का नाम (म. अनु. ७.५५. कुं.)।

४. एक ऋषि। वृकदेवी नामक त्रिगर्त राजा की कन्या शिशिरायण गार्ग्य को दी थी। गार्ग्य पुरुष है अथवा नहीं, यह देखने का उसने प्रयत्न किया। परंतु बारह वर्ष की कड़ी तपश्चर्या के कारण, इसका वीर्य स्खलित नहीं हुआ। इससे सबकी कल्पना ऐसी हुई कि, यह नपुंसक है। बाद में दक्षिण में जा कर इसने शंकर की आराधना की तथा यादवों का पराभव करनेवाला पुत्र माँग लिया। तब ग्वालकन्या गोपाली से इसे कालयवन नामक महापराक्रमी पुत्र हुआ (विष्णु. ५.२३; ह. वं. १.३५.१२)। अन्य कई स्थानों में इस कथा का उल्लेख है (कालयवन देखिये)। इसे क्वचित् गर्ग भी कहा गया है। इसे यादवों का उपाध्याय कहा है। यादवों के उपाध्याय को गर्ग तथा कुलनाम गार्ग्य दोनों लगाते थे (वृद्धगर्ग तथा वृद्धकन्या देखिये)। इसने धर्म को धर्मरहस्य बताया (म. अनु. १९०.९ कुं.)।

४. (सो. काश्य.)। यह वायु के मतानुसार वेणुहोत्रपुत्र। भर्ग तथा भार्ग इसके नामांतर है।

शर्वदत्त गार्ग्य, शिशिरायण गार्ग्य, तथा सौर्यायणि गार्ग्य देखिये।

गार्ग्य बालाकि—गर्गगोत्रीय बलाक नामक ऋषि का पुत्र। अपने ब्रह्मज्ञान के प्रति अभिमानी बन कर, काफी स्थानो पर इसने अपने ज्ञान की प्रशंसा की। एकबार काशिराज अजातशत्रु के पास जा कर इसने उससे कहा, 'मैं तुम्हें बताता हूँ कि ब्रह्म क्या है'। अजातशत्रु ने उस ज्ञान के बदले इसे हजार गायें देने का निश्चय किया। तब बालाकि ने प्रतिपादन प्रारंभ किया, परंतु अजातशत्रु ने इसके सब तत्त्वों का खंडन किया। तब अपने गर्व के प्रति लज्जित हो कर इसने अजातशत्रु को ब्रह्मज्ञानकथन की प्रार्थना की। तब अजातशत्रु ने कहा, 'अध्यापन क्षात्रधर्म के विरुद्ध है। इसलिये मैं इस राजसिंहासन का त्याग करता हूँ। तुम इसका स्वीकार करो, तब मैं अध्यापन योग्य बनूंगा'। ऐसा करने के बाद, अजातशत्रु ने बालाकि को ब्रह्मविद्या प्रदान की (कौ. उ. ४.१)। इसे दृप्तबलाकि भी कहते थे (श. ब्रा. १४.५.१)।

गार्ग्यहरि—अंगिराकुल का गोत्रकार। गार्गिहर पाठभेद है।

गार्ग्यायण—उद्दालकायन का शिष्य। इसका शिष्य पाराशर्यायण (बृ. उ. ४.६.२)।

२. भृगुकुल का एक गोत्रकार

गार्ग्यायणि—गांग्यायनि देखिये।

गार्दभि—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक। पाठभेद-गर्दभि (म. अनु. ७.५९ कुं.)।

२. भृगुकुल का गोत्रकार।

गार्हायण—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि।

गाल—एक राजा। इसने नीलपर्वत पर एक मंदिर बनवाया था। इन्द्रद्युम्न ने जगन्नाथक्षेत्र इसके क़ाबू में दिया (स्कन्द. २.२.२६)।

गालव--विदर्भीकौंडिन्य का शिष्य। इसका शिष्य कुमारहारित (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

२. विश्वामित्र का एक शिष्य (म. उ. १०४-११६)। गुरु की अत्युत्कृष्ट सेवा कर के, इसने पूर्ण कृपा संपादन की। इसके द्वारा विशेष आग्रह किये जाने के कारण, विश्वामित्र ने किंचित् रोष से आठसौ श्यामकर्ण अश्व गुरुदक्षिणा के रूप में माँगे (म. उ. १०४.२६)। यह सुन कर, यह अत्यंत भयभीत हुआ। इसने विष्णु की आराधना की। इसकी निस्सीम भक्ति से तुष्ट हो कर, विष्णु ने गरुड़ को इसके पास भेजा, तथा इसको मदद करने के लिये कहा। गरुड़ गालव के पास गया। इसकी इच्छा जान कर, अश्व ढूँढने के लिये ये दोनों बाहर निकले। जाते जाते गरुड़ इसे ययाति के पास ले गया। उस समय ययाति की सांपत्तिक स्थिति अच्छी नहीं थी। वह स्वयं अरण्य में रहता था। गालव की इच्छापूर्ति के लिये आवश्यक द्रव्य भी उसके पास नहीं था, फिर आठसौ अश्वप्राप्ति तो असंभव ही थी। फिर भी अपनी कन्या माधवी, उसके होनेवाले पुत्रों पर अधिकार रख कर, ययाति ने इसे दी, तथा उसके सहाय्य से इसने गुरुदक्षिणा की पूर्ति की (म. उ. १०४-११७; माधवी देखिये)।

इसका आश्रम जयपुर से तीन मील की दूरी पर था। इसका दूसरा आश्रम चित्रकूट पर्वत पर था।

३. विश्वामित्र का पुत्र। सत्यव्रत राजा के निंद्य आचरण से सर्वत्र अकाल पड गया। उस समय अपने तीन पुत्र तथा पत्नी के उदरनिर्वाह का कुछ भी विचार न करते हुए, विश्वामित्र तपश्चर्या करने के लिये चला गया। काफी अर्से तक इसकी पत्नी ने कुछ उपाययोजना कर के मुश्किल से बच्चो को जिलाया। एक बार उदरनिर्वाह के लिये कुछ भी प्राप्त न हुआ। बच्चे भूख से तिलमिला कर रोने लगे। मजबूर हो कर, इस पुत्र के गले को दर्भरज्जू से बाँध कर वह इसे बेंचने के लिये जाने लगी। इतने में राह में सूर्यवंशीय इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न सत्यव्रत राजा उससे मिला। उसके द्वारा पूछे जाने पर उसने संपूर्ण हकीकत बताई। तब सत्यव्रत ने कहा, "विश्वामित्र के आने तक रोज थोड़ा माँस मैं तुम्हें दूँगा। उस पर अपना निर्वाह करो"। तब पुत्र को बेचने का विचार रहित कर के, वह स्वगृह लौट आई। तबसे उसके इस पुत्र का नाम गालव प्रचलित हुआ (ह. वं. १.१२; वायु. ८९.८३-९२; ब्रह्म. ७.१०२-१०९; म. अनु. ७.५२ कुं. ब्रह्मांड. ३.६३.८६-८९; ६६.७२)।

४. कुंतल राजा का पुरोहित। अरिष्टाध्याय सुना कर इसने राजा को बताया, 'जल्द ही तुम्हारी मृत्यु का योग है'। अतः राजकन्या चंपकमालिनी का चन्द्रहास से विवाह करने की संमति राजा ने दी (जै. अ. ५१)।

५. सावर्णि मन्वन्तर में होनेवाला सप्तर्षियों में से एक (भा. ८.१३.१५)।

६. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

७. एक व्याकरणकार (नि. ४.३; पा. सू. ६.३.६१; ७.१.७४; ३.९९; ८.४.६७)। यह, राजा ब्रह्मदत्त का मित्र था। यह बडा योगाचार्य था। इसने क्रमशिक्षा का ग्रथन किया। लोगों में क्रमपाठ का प्रचार किया (ह. वं. १.२०.१३; २४.३२)। बाभ्रव्य पांचाल (ल्य) ने क्रमपाठ निर्माण किया। नंतर गालव ने शिक्षाग्रंथ का निर्माण किया, एवं क्रम का प्रचार किया (म. शां. ३३०. ३७-३८)।

बाभ्रव्य पांचाल तथा गालव भिन्न व्यक्ति है। ऋक्प्रातिशाख्य तथा पाणिनि इन्हें अलग व्यक्ति मानते हैं। ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में गालव का नाम नहीं हैं किंतु बाभ्रव्य का नाम मिलता है (आश्वलायनगृह्यसूत्र)। मत्स्य में सुवालक पाठ है। यह मंत्रिपुत्र कहा गया है (मत्स्य. २०.२४; बाभ्रव्य पांचाल देखिये)।

८. वायु के मतानुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा का याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

इसकी स्मृति का हेमाद्रि ने उल्लेख किया है।

गालवि--अंगिराकुल का गोत्रकार। इसे गालविन् नामांतर है।

गावल्याणि—संजय का पैतृक नाम (संजय ८, देखिये)।

गिरिका—एक पर्वतकन्या। कोलाहल पर्वत को शुक्तिमती नदी से जुडवाँ अपत्य हुए। उनमें से यह गिरिका नामक कन्या शुक्तिमती नदी ने उपरिचर वसु को दी। बाद में राजा ने इस के साथ विवाह किया। उससे इसे बृहद्रथ आदि छः पुत्र, तथा काली अथवा मत्स्यगंधिनी नामक कन्या हुई (म. आ. ५७)।

गिरिक्षत्र--(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्कपुत्र।

गिरिक्षित्—दुर्गहपुत्र। इसका पुत्र पुरुकुत्स (ऋ. ४. ४२.८)। इसी कुल में त्रसदस्यु हुआ (ऋ. ५.३३.८)

गिरिक्षित् औच्चामन्यव—एक ऋषि। इसका अभिप्रतारिन् काक्षसेनि के साथ गायत्रसाम के बारे में संवाद हुआ था (पं. ब्रा. १०.५.७)।

गिरिज बाभ्रव्य—एक ऋषि। सत्र के यज्ञीय पशु के अवयव सब ऋत्विजों में किस प्रकार बाँट दिये जावें, इसकी जानकारी इसे एक गंधर्व से मिली। वह इसने सब को बताई (ऐ. ब्रा. ७.१)।

इसके पहले यह जानकारी देवभाग को थी, परंतु मृत्यु तक वह उसने किसी को न बताई।

गिरिश—ऋषभ नामक शिवावतार का शिष्य।

गिरिशर्मन्—शेषावतार देवदत्त का पुत्र। इसने बड़े बड़े विद्वानों को जीता था। अंत में यह शंकर का परमभक्त हुआ (भवि. प्रति. ४.११)।

गिरिशर्मन् कांठेविद्धि—ब्रह्मवृद्धि का शिष्य (वं. ब्रा. १)।

गीतविद्याधर--एक प्रसिद्ध गंधर्व। पुलस्त्य को इसके गायन से तकलीफ होने लगी। सूअर का स्वाँग ले कर इसने उसे और भी तंग किया। इसलिये शाप से उसने इसे सूअर बना दिया। उःशाप माँगने पर, इक्ष्वाकु के द्वारा मारे जाने पर पूर्ववत् बनोगे, ऐसा उःशाप दिया। अनंतर यह पूर्ववत् हुआ (पद्म. सृ. ४६)।

गुंगु--एक देश और लोग। ऋग्वेद में ये अतिथिग्व के मित्र बन कर आये हैं (ऋ. १०.४८.८)।

गुणकेशी--इंद्रसारथि मातलि तथा उसकी पत्नी सुधर्मा की कन्या। ढूँढने पर भी इसके लिये योग्य वर नहीं मिला। अंत में नागलोक के चिकुरनाग के सुमुख नामक पुत्र को इसने पसंद किया। उसका गरुड से वैर था। मातलि सुमुख को इंद्र के पास ले गया। वहाँ उसे अमृत पिला कर अमरत्व प्रदान किया। विष्णु ने गरुड को समझा कर उनका वैरभाव नष्ट किया, तथा सुमुख से गुणकेशी का विवाह करवाया (म. उ. ९५.१०३)।

गुणनिधि—श्रोत्रिय यज्ञदत्त का पुत्र। यह अत्यंत दुर्गुणी तथा व्यसनी था। शिवपूजा देखने के कारण, तथा शिवदीप की बाती प्रज्वलित करने के कारण, यह मुक्त हुआ (शिव. रुद्र. सृ. १८)। तदनंतर कुबेर ने इसे उत्तर दिशा का अधिपति नियुक्त किया (स्कंद. ४. १. १३)।

गुणवती--सत्राजित् देखिये।

गुणाकर—प्लक्षद्वीप का राजा। इसकी पत्नी सुशीला। इसकी कन्या सुलोचना (पद्म. क्रि. ५)।

२. पुलह तथा श्वेता का पुत्र।

गुप्त--वैपश्चित दार्ढजयंति गुप्त लौहित्य यह इसका पूरा नाम है (जै. उ. ब्रा. ३.४२)। गुप्त इसका सही नाम है। बाकी तीनों पैतृक नाम हैं।

गुप्तक--पांडवों के समकालीन सिंधु देश का राजा।

गुरु—बृहस्पति का नामांतर। मरीचि प्रजापति की सुरूपा नामक पुत्री तथा अंगिरस की स्त्री। देवाचार्य बृहस्पति उसका पुत्र था। इसे ही गुरु कहते थे। यह महाबुद्धिमान् तथा वेदवेदाङ्गपारंगत था (विष्णुधर्म. १. १०६; बृहस्पति देखिये)।

२. (सो. पुरूरवस्.) भागवत मतानुसार संकृतिपुत्र। मत्स्य में इसे गुरुधि, विष्णु में रुचिरधि तथा वायु में गुरुवीर्य कहा गया है। गुरुवीत तथा गौरवीति यही रहा होगा। अंगिराकुल का गोत्रकार भी यही होगा (सांकृति देखिये)।

३. भौत्य मनु का पुत्र।

गुरुक्षेप--(सू. इ. भविष्य.) विष्णुमत में बृहत्क्षणपुत्र।

गुरुधि—(सो. पुरूरवस्.) मत्स्य मतानुसार संकृतिपौत्र तथा महायशस् का पुत्र (गुरु २. देखिये)।

गुरुभार--गरुडपुत्र।

गुरुवीत--अंगिराकुल का मंत्रकार (गुरु २. देखिये)।

गुरुवीर्य—(सो. पुरूरवस्.) वायु के मत में सांकृतिपुत्र (गुरु २. देखिये)।

गुर्वक्ष—बलि दैत्यों के सौ पुत्रों में से एक।

गुह—कार्तिकेय का नाम (भा. ३.१.२२)।

२. शृंगवेर नामक नगरी का किराताधिपति। यह दशरथ का परममित्र था। राम अयोध्या से निकल कर दंडकारण्य जा रहा था, तब एक रात गुह के घर रहा था। उस समय गुह ने उसका अच्छा आदरातिथ्य किया। राम के वनवास के बारह वर्ष वहीं व्यतीत हो, ऐसी प्रार्थना गुह ने राम से की। गुह द्वारा लाये गये फलादिकों को स्पर्श कर, राम ने दर्शाया कि, वह परान्नग्रहण नहीं करता। राम ने वहाँ रहना भी अमान्य कर दिया। उस दिन, राम तथा सीता दर्भ बिछा कर सोये, तथा गुह राम की रक्षा के लिये खड़ा रहा। उस समय राम के विचित्र प्रारब्ध के बारे में इसके मन में विचार आ रहे थे। इस विषय पर इसका लक्ष्मण से संभाषण भी हुआ (वा. रा. अयो. ५०.५१)। दूसरे दिन गुह ने राम की आज्ञानुसार गंगा के दक्षिण तीर पर उन्हें पहुँचा दिया (वा. रा. अयो. ५२)।

राम चित्रकूटपर्वत पर था। भरत बड़ी सेना के साथ उसे वापस लाने के लिये गया। उस समय भरत रामनाशार्थ जा रहा है, इस संदेहवश इसने अपनी सेना सज्ज की। भरत का सत्य हेतु ज्ञात होते ही, इसने उसे ससैन्य गंगापार पहुँचाया। भरत के साथ यह स्वयं चित्रकूट तक गया था (वा. रा. अयो. ८४-८७)।

गुहवासिन्—वाराहकल्प के वैवस्वत् मन्वन्तर के सत्रहवें चौकडी का यह शंकरावतार है। इसका स्थल हिमाल्य का महोत्तुंगक्षेत्र है। इसके निम्नलिखित चार पुत्र थेः-उतथ्य, वामदेव, महायोग तथा महाबल (शिव. शत. ५)।

गृत्स—एक महासुर। इसने अपने मित्र भृगु के पत्नी का अपहरण किया। उसने इसे शाप दिया। शाप के कारण यह अलर्क नाम का कृमि बन गया। यह कृमि अष्टपद, तीक्ष्णदंष्ट्र तथा सूचिसमान तीक्ष्णकेशयुक्त था। कर्ण के अंक पर परशुराम निद्रित था। उस समय, इस कृमि ने कर्ण की जाँघ में छेद किया। जाँघ से निकले रक्त के स्पर्श से, परशुराम की नींद खुल गयी। परशुराम के दर्शन से अलर्क शापमुक्त हो गया। (म. शां. ३.१२-२३)।

गृत्समद—यह एक व्यक्ति का तथा कुल का भी नाम है। यह अंगिरस् कुल के शुनहोत्र का पुत्र हैं (सर्वानुक्रमणी देखिये)। यह बाद में भार्गव हो गया।

गृत्समद शब्द की व्युत्पत्ति, ऐतरेय आरण्यक में आयी है। गृत्स का अर्थ है प्राण, तथा मद का अर्थ है अपान। इसमें प्राणापानों का समुच्चय था, इसलिये इसे गृत्समद कहते है (ऐ. आ. २.२.१)।

यह तथा इसके कुल के व्यक्ति, ऋग्वेद के दूसरे मंड़ल के द्रष्टाएँ हैं (ऐ. ब्रा. ५.२.४; ऐ. आ. २.२.१; सर्वानुक्रमणी देखिये)।

एक बार तपप्रभाव से इसे इंद्र का स्वरूप प्राप्त हुआ। इस बारे में तीन आख्यायिकाएँ प्रसिद्ध है। (१) धुनि तथा चुमुरि ने इसे इंद्र समझ कर घेर लिया। 'मैं इंद्र नहीं हूँ,' यह बताने के लिये इसने इंद्र का उत्कृष्ट वर्णन करनेवाला 'स जनास इंद्रः' (ऋ. २.१२), यह टेकयुक्त सूक्त कहना प्रारंभ किया। (२) इंद्रादिक देवता वैन्य के यज्ञ में गये। वहाँ गृत्समद भी था। दैत्य इंद्र का वध करने के हेतु से वहाँ आये। इंद्र गृत्समद का रूप ले कर भाग गया। असुरों ने गृत्समद को घेरा। उस समय एक सूक्त से इसने इंद्र का उत्कृष्ट वर्णन किया (ऋ. २.१२)। (३) गृत्समद के घर में अकेले आये इंद्र को देख कर शत्रुओं ने घेरा। तब इंद्र गृत्समद का रूप ले कर भाग गया। घर के गृत्समद को उन्हों ने इंद्र समझ कर पकड़ लिया। तब इसने यह सूक्त कह कर इंद्र का वर्णन किया (ऋ. २.१२)।

ऋग्वेद के दूसरे मंड़ल में गृत्समद का बार बार उल्लेख आता है (ऋ. २.४.९; १९.८ इ.)। इसे शुनहोत्र भी कहा है (ऋ. २.१८.६; ४१.१४; १७)। ऋग्वेद के दूसरे मंडल की ऋचाओं का उल्लेख गार्त्समद ऋचा के नाम से प्राप्य है (सां. आ. २२.४; २८.२)।

यह भृगुकुल का गोत्रकार, प्रवर तथा मंत्रकार है। गृत्समद भार्गव शौनक ऋग्वेद का सूक्तद्रष्टा है (ऋ. २.१-३; ८-४३; ९.८६; ४६-४८)। एक बार चाक्षुष मनु का पुत्र वरिष्ठ इंद्र के सहस्त्रवार्षिक सत्र में आया। साम अशुद्ध गाने के लिये इसे दोष दे कर, रुक्ष अरण्य में क्रूर पशु बनने का शाप वरिष्ठ नें इसे दिया। परंतु शंकर की कृपा से यह मुक्त हुआ (म. अनु. १८.२०-२८)।

गृत्समद का भृगुवंश में उल्लेख है (मत्स्य. १९५.४४-४५)। गृत्समद का पैतृक नाम शौनक है। यह शुनहोत्र का औरस पुत्र तथा शुनक का दत्तक पुत्र था। अतः प्रथम यह आंगिरस कुल में था, एवं बाद में भृगुकुल में गया (ऋष्यनुक्रमणी २)

२. एक ऋषि। भृगु के कहने पर ब्राह्मण बने वीतहव्य का पुत्र। इसका पुत्र सुचेतस्।

३. दंडकारण्य में रहनेवाला एक ऋषि। इसके सौ पुत्र थे (अ. रा. ८)।

४. (सौ. क्षत्र.) वायु तथा विष्णु मतांनुसार सुनहोत्रपुत्र। आयुकुल के सुहोत्र वा सुतहोत्र राजा के तीन पुत्रों में कनिष्ठ। इसे शुनक नामक पुत्र था (ब्रह्माण्ड. ११.३२.३४; ह. वं. १.२९.६७)।

५. भीष्म शरपंजर में पडे थे, तब उनके पास आया हुआ एक ऋषि (भा. १.९.७)।

६. इंद्र का मुकुंदा से उत्पन्न पुत्र। एक बार रुक्मांगद बाहर गया था, तब उसकी पत्नी मुकुंदा काममोहित हुई। इंद्र ने रुक्मांगद का रूप ले उससे संभोग किया। उसे गर्भ रहा तथा पुत्र उत्पन्न हुआ। यही गृत्समद था। आगे चल कर, यह बड़ा विद्वान हुआ। यह वादविवाद में किसी से पराजित नहीं होता था। एक बार मगध देश के राजा के घर, वसिष्ठादि मुनि श्राद्ध के लिये एकत्रित हुए। तब अत्रि ने तुम पंक्तिपावन नहीं हो, कह कर इसका उपहास किया।

माता के पास आ कर, इसने पूछताछ की। तब मुकुंदा ने इसका जन्मवृत्त का इसे कथन किया। इसने मुकुंदा को शाप दिया 'तुम कंटकवृक्ष बनोगी'। उसने भी उलटा शाप दिया 'तुम्हें दैत्य पुत्र होगा' बाद में 'गणानां त्वा' मंत्र का अनुष्ठान कर के, इसने गणपति को प्रसन्न कर ब्राह्मण्य भी प्राप्त किया (गणेश. १.३७)।

गृध्र—कृष्ण को मित्रविंदा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१.१६)।

गृध्रिका—कश्यप तथा ताम्रा की कन्या।

२. अरुण की पत्नी। उसके पुत्र संपाति तथा जटायु ब्रह्माण्ड. ३. ७. ४४६)।

गृहपति—एक ऋषि। नर्मदा के किनारे नर्मपुर में विश्वानर नामक एक मुनि ब्रह्मचर्य से वेदाध्ययन कर के रहता था। गोत्र शांडिल्य। पत्नी का नाम शुचिष्मती। यह अत्यंत आचारशील था। इसे पुत्र न था। स्त्री की इच्छानुसार इसने काशी जा कर वीरेश्वर के पास कड़ी तपश्चर्या की। एक दिन इसे ईश्वर का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ। अभिलाषाष्टक कहने पर, 'जल्द ही पुत्र होगा', ऐसा वर इसे प्राप्त हुआ। बाद में इसे गृहपति नामक पुत्र हुआ। गृहपति से नवम वर्ष चालू था, नारद ने आ कर बताया कि इसे बारहवे मास में विद्युत् अथवा अग्नि से भय है। इसने तप कर के शंकर को प्रसन्न किया। शंकर ने इसे अग्नि यह उपाधि दी। इसके द्वारा काशी में स्थापित लिंग को अग्नीश्वर नाम है (शिव. शत. १५)।

२. अग्नि गृहपति सहस्पुत्र देखिये।

गृहेषु—धर्मसावर्णि मनु का पुत्र।

गैरिक्षित—त्रसदस्यु तथा यास्क का पैतृक नाम।

गो—मानस नामक पितरों की कन्या।

२. (सो. पूरु.) ब्रह्मदत्त राजा की भार्या तथा देवल ऋषि की कन्या। इसे सरस्वती अथवा सन्नति भी कहते हैं।

३. शमीक ऋषि की भार्या। इसका पुत्र शृंगिन् ऋषि।

४. वरुण का सेनापति (वा. रा. उ. २३)।

५. इसे गौ नामांतर प्राप्त है। विधिमानसपुत्र पुलस्त्य ऋषि से इसे वैश्रवण नामक सामर्थ्यसंपन्न पुत्र हुआ (म. व. २५८.१२)।

६. शुक्र की पत्नी।

७. यति देखिये।

गो आंगिरस—एक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १६.७.७; ला. श्रौ. ६.११.३)।

गोकर्ण—एक शिवावतार। सातवें वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर के सोलहवें चौखट में गोकर्ण नामक शिवावतार हुआ। जिस वन में यह निवास करता था, इसका नाम भी गोकर्ण हो गया। इसके चार पुत्र थे:-कश्यप, उशनस्, च्यवन एवं बृहस्पति (शिव. शत. ५)।

२. आत्मदेव देखिये।

गोखल—विष्णुमतानुसार व्यास की ऋक् शिष्य परंपरा के वेदमित्र का, एवं भागवत, वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार देवमित्र का शिष्य। भागवत में गोखल्य पाठ है।

गोखल्य—शाकल्य ऋषि का शिष्य। उसने इससे ऋग्वेद की एक शाखा का अध्ययन करवाया (भा. १२. ६.५७; गोखल देखिये)।

गोणायनि—गोणीपति का पाठभेद।

गोणीपति—अंगिराकुल का गोत्रकार।

२. अत्रिकुल का गोत्रकार।

गोतम—कश्यपकुलोत्पन्न एक ऋषि (भवि. प्रति. ४.२१)।

२. व्यास देखिये।

गोतम राहूगण—एक ऋषि। ऋग्वेद में इसके बहुत सूक्त हैं (ऋ. १.७४-९३; ९.३१; ६७.७-९, १०. १३७.३)। इसका अनेक स्थानों पर उल्लेख है (ऋ. १.६२.१३; ७८.२; २; ५)। अंगिरस् से इसका बार बार संबंध आता है (ऋ. १.६२.१; ७१.२)। इसका राहूगण यह पैतृक नाम ऋग्वेद एवं अन्यत्र भी मिलता है (ऋ. १.७८.५; श. ब्रा. १.४.१.१०; ११.४.३.२०)। यह माथव विदेह का पुरोहित था (श. ब्रा. १.४.१.१०)। वैदेह जनक तथा याज्ञवल्क्य का यह समकालीन था। एक स्तोम का यह कर्ता है (श. ब्रा. १३.५.१.१; आश्व. श्रौ. ९.५.६)। अन्यत्र भी इसका उल्लेख है (अ. वे. ४. २९.६; १८.३.१६; बृ. उ. २.२.६)। इसे वामदेव तथा नोधस् नामक दो पुत्र थे (आश्व. श्रौ. १२.१०)।

इसका भद्र नामक एक साम है। इस साम के फलस्वरूप गौतम को श्रेष्ठपद प्राप्त हुआ। इसी कारण, इसके पहले के तथा बाद के लोग गोतम नाम से प्रसिद्ध हुएँ (पं. ब्रा. १३.१२.६-८)। इसका गौतम नामक भी एक साम है (पं. ब्रा. १२.३.१४)।

गोतमीपुत्र—भारद्वाजीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५.१)।

गोत्रवत्—कृष्ण एवं लक्ष्मणा का पुत्र।

गोधा—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३४.६-७)।

गोनर्द--काश्मीर का नृप। यह जरासंध का सहायक था (ह. वं. २.३५.३९)।

गोपति--कश्यप एवं प्राधा का पुत्र।

२. पांडवपक्षीय पांचाल राजा (म. द्रो. २२.४३)।

३. शिबिपुत्र। गायों ने इसकी रक्षा की थी। पृथ्वी ने कश्यप से याचना की, 'यह मेरे संरक्षकों में से एक होवे'। तदनुसार कश्यप ने इसका अभिषेक किया (म. शां. ४९.७०)।

४. एक राक्षस। कृष्ण ने इरावती के तट पर इसका वध किया (म. व. १३.३०)।

५. विश्वभुज् नामक अग्नि का नामांतर। इसकी स्त्री नदी (म. व. २०९.१९-२७)।

गोपद--तुषित देवों में से एक।

गोपन--अत्रिकुल का गोत्रकार।

गोपवन आत्रेय--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७३-७४)। ऋग्वेद में इसका उल्लेख है। अंगिरस् से इसका प्रत्यक्ष संबंध दिखता है (ऋ. ८.७४.११)। पौतिमाष्य देखिये।

गोपायन--गौपायन का पाठभेद।

गोपालि--गौरपराशरकुल में से एक।

गोपाली--एक ग्वालन। इसको गार्ग्य से हुआ पुत्र कालयवन नाम से प्रसिद्ध है (कालयवन देखिये)।

गोबल वार्ष्ण--एक आचार्य। (तै. सं. ३.११.९.३; जै. उ. ब्रा. १.६.१)। इसने नचिकेताग्नि के लिये पाँच दिशाओं में पाँच पाँच ईंटें रखीं, जिनसे इसे पशु प्राप्त हुए (तै. ब्रा. ३.११.९३)।

गोभानु--(सो. तुर्वसु.) विष्णु तथा वायु मतानुसार वह्निपुत्र। मत्स्य मतानुसार गर्भपुत्र।

गोभिल--वत्समित्र का शिष्य (वं. ब्रा. ३)। यह कुलनाम अनेक लोगों के लिये प्रयुक्त होता है (पूषमित्र, अश्वमित्र, वरुणमित्र, मूलमित्र, वत्समित्र, गौल्गुलवीपुत्र तथा बृहद्वसु देखिये)। यह कश्यप कुल का एक गोत्रकार था। गोभिलगृह्यसूत्र, गोभिलगृह्यकारिका, गोभिलपरिशिष्ट आदि इसके द्वारा रचित ग्रंथ हैं (C. C.)। इनमें से गोभिलगृह्यसूत्र प्रकाशित हुआ है। यह सामवेद का है। गोभिलस्मृति आनंदाश्रम में छपवायीं गई है। उसमें तीन प्रपाठक हैं। इस ग्रंथ का आरंभ एवं अंत पढ़ने से लगता है कि, उसका नाम कर्मप्रदीप रहा होगा। उसमें श्राद्धकर्मादि लक्षणों, नित्यकर्म, संस्कार आदि का निरूपण है। यह स्मृति गोभिलगृह्यसूत्र के स्पष्टीकरणार्थ रची गयी। हेमाद्रि ने गोभिल को राणायनीय तथा कौथुमशाखा का सूत्रकार माना है (द्राह्यायण देखिये)। गोभिलसूत्र तथा खादिरसूत्र में पर्याप्त साम्य है।

२. कुबेर का दूत। विदर्भ देश के राजा सत्यकेतु की कन्या तथा उग्रसेन की स्त्री पद्मावती, एक दिन जलक्रीडा कर रही थी। कुबेर का गोभिल नामक दूत आकाशमार्ग से जा रहा था। यह पद्मावती का सौंदर्य देख कर मोहित हुआ। उसे अंतर्ज्ञान से पहचान कर, उसकी प्राप्ति के लिये इसने उग्रसेन का रूप धारण किया। पास ही एक वृक्ष के नीचे गाते हुए यह जा बैठा। इससे मोहित हो कर वह फँस गयी (पद्म. भू. ४९)।

गोम--शंभु का पुत्र।

गोमत्--कश्यप तथा मुनि का गंधर्वपुत्र।

गोमतीपुत्र--(आंध्र. भविष्य.) भागवत तथा विष्णु मतानुसार शिवस्वाति का पुत्र।

गोमयान--कश्यप कुल का गोत्रकार। निध्रुव वंशमालिका में से यह एक था।

गोमुख--मातलि का पुत्र। इंद्रपुत्र जयंत का यह सारथी था (म. उ. ९८.१८)।

गोमेदगंधिक--अंगिराकुल का गोत्रकार।

गोरथ--वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

गोलभ--एक गंधर्व। वालि से इसका लगातार पंद्रह वर्षों तक युद्ध चलता रहा। अन्त में, वालि ने इसका वध किया (वा. रा. कि. २२.२७-३७)।

गोवासन--एक क्षत्रिय। यह शैब्य नाम से प्रसिद्ध है। भारतीययुद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था (म. द्रो. ७०.३८)। इसने एक हजार सैनिकों के समवेत, विजयी काशिराजपुत्रों का विरोध किया।

गोवृषध्वज--कृपाचार्य का नामान्तर (म. द्रो. ८०.१४)।

गोशर्य--एक ऋषि। यह अश्वियों का कृपापात्र है (ऋ. ८.८.२०)। यहाँ इसे सायण ने गोशर्य शयु कहा है। पक्थ, कण्व तथा त्रसदस्यु के साथ साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ८.४९.१०; ५०.१०)।

गोश्रु जाबाल--एक यज्ञकर्ता। सुदक्षिण क्षैमि, प्राचीनशालि तथा शुक्र जाबाल, ये सब इसके समकालीन थे (जै. उ. ब्रा. ३.७.७)।

गोश्रुति वैयाघ्रपद्य--एक ऋषि। सत्यकाम जाबाल ने इसे वाणी, श्रोत्र, मन तथा प्राण का महत्व तरतमभाव से बताया। प्राणों का महत्व कथन किया। आगे चल

कर, महत्वप्राप्ति के हेतु से एक व्रत भी निवेदित किया (छां. उ. ५.२.३)।

गोषूक्तिन् काण्वायन--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१४-१५)। इसके नाम से एक गोषूक्त-साम प्रसिद्ध है (पं. ब्रा. १९.४.९)। प्रतिग्रह के कारण इसे लगा हुआ दोष, इस साम से नष्ट हुआ (गौषूक्ति देखिये)।

गोष्ठायन--भृगुकुल का गोत्रकार।

गौडिनि--वसिष्ठकुल का गोत्रकार (जौडिलि देखिये)।

गौतम--एक ऋषि। अरुण, आग्निवेश्य, उद्दालक आरुणि, कुश्रि, मेधातिथि, साति तथा हारिद्रुमत, का यह पैतृक नाम है।

प्राचीनयोग्य, शांडिल्य, आनभिम्लात, गार्ग्य, भारद्वाज, वात्स्य, मांटि, सैतव आदि गौतम के शिष्य थे।

यह दीर्घतमस् का पुत्र था। इसकी माता का नाम प्रद्वेषी (म. आ. ९८.१७; १०३७* स. ४.१५; ११.१५)। इसके पिता आंगिरसकुल के थे (म. अनु. १५४.९)। वह बृहस्पति के शाप के कारण जन्मांध हुआ था (ऋ. १.१४७; म. आ. ९८.१५)।

कुछ स्थानों पर, दीर्घतमस् ने ही गौतम नाम धारण किया, ऐसा प्रतीत होता है (बृहद्दे. ३.१२३; म. शां. ३४३; मत्स्य. ४८.५३-८४)। गौतम नाम से गौतम के पशुतुल्य वर्तन का बोध होता है (वायु. ९९.४७-६१; ८८-९२; ब्रह्मांड. ३.७४. ४७-६१; ९०-९४; मत्स्य. ४८. ४३-५६; ७९-८४)। गौतम को औशीनरी नामक शूद्र स्त्री से कक्षीवत् आदि पुत्र हुए (दीर्घतमस् देखिये)।

गौतम वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियो में से एक था। ब्रह्मदेव की मानसकन्या अहल्या इसकी स्त्री थी (अहल्या देखिये)। जनक का पुरोहित शतानंद इसका पुत्र था (म. व. १८५)। इसका अंगिरस् से नदीमाहात्म्य के संबंध में संभाषण हुआ था (म. अनु. २५)। इसके नाम से गोदावरी का नाम गौतमी हुआ (दे. भा. ११.९)।

अन्न का अकाल पड़ने के कारण, वृषादर्मि राजा दान कर रहा था। जिन सप्तर्षियों ने उसे दान लेना अमान्य कर दिया, उनमें से एक गौतम था (म. अनु. ९३)। गौतम को उत्तंक नामक एक शिष्य था। उसे गौतम ने अपनी कन्या दी थी। उत्तंक ने सौदास राजा के पास से कुंडल ला कर, गुरुपत्नी को गुरुदक्षिणा में दी (म. आश्व. ५५-५६)।

गौतम का आश्रम पारियात्र पर्वत के पास था। इसने वहाँ साठ हजार वर्षों तक तप किया। तब स्वयं यम वहाँ आया। उस समय गौतम ने उससे पूछा, 'पितरों का ऋण किस प्रकार चुकाया जावे'। यम ने कहा, 'सत्य, धर्म, तप तथा शुचिर्भूतता का अवलंब कर के मातापितरों का पूजन करना चाहिये। इससे स्वर्गादि की प्राप्ति होती है' (म. शां. १२७)। बारह वर्षों तक अकाल पड़ा। इसने भोजन दे कर ऋषियों को बचाया (नारद. २.७३)। यही वर्णन दे कर, शक्तिउपासना का महत्व बताया गया है (दे. भा. १२.९; शिव. कोटि. २५-२७)।

गौतम तथा भगीरथ ने तप कर के शंकर को प्रसन्न किया तथा गंगा माँगी। शंकर ने गौतम को गंगा दी। वही गौतमी के नाम से प्रसिद्ध हुई (पद्म. उ. २६८. ५२-५४)। गौतमी-(गोदावरी) माहात्म्य विस्तृत रूप में उपलब्ध है (ब्रह्म. ७०-१७५)।

न्यायशास्त्र लिखने वाले गौतम का निर्देश प्राप्त है (शिव. उमा. २.४३-४७)। यह अंगिराकुल का एक ऋषि तथा प्रवर है। त्र्यंबकेश्वर का अवतार इसी के लिये हुआ था (शिव. शत. ४३)। वही ज्योतिर्लिंग नासिक के पास त्र्यंबकेश्वर नाम से प्रसिद्ध है।

शाखाप्रवर्तक--यह व्यास की सामशिष्य परंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य है (व्यास देखिये)। वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार यह सामवेद की राणायनि शाखा के नौ उपशाखाओं में से एक शाखा का आचार्य है (द्रा. श्रौ. १.४.१७)। गौतम का आचार्य रूप में उल्लेख है (ला. श्रौ. १.३.३; ४.१७)। उसी प्रकार सामवेद के गोभिलगृह्यसूत्र में भी गौतम का उल्लेख अनेक बार आया है।

धर्मशास्त्रकार--गौतमस्मृति यह ग्रंथ गद्यमय है। उसमें ग्रंथकर्ता द्वारा किया हुआ अथवा बाहर से लिया गया एक भी पद्य श्लोक नहीं है। इस ग्रंथ के कुल अठ्ठाईस विभाग किये गये हैं। कलकत्ता प्रत में, एक विभाग अधिक है। परंतु हरदत्तद्वारा रचित मिताक्षरा में इस विभाग का बिल्कुल उल्लेख नही है। इससे प्रतीत होता है कि, यह भाग प्रक्षिप्त होगा। वेंकटेश्वरआवृत्ति कलकत्ताआवृत्ति से ली गई है।

धर्मसूत्रकार--गौतमधर्मसूत्र में चातुर्वर्णियों के व्यवहार के नियम, उपनयनादि संस्कार, विवाह तथा उसके प्रकार, प्रायश्चित, राजधर्म, स्त्रियों के कर्तव्य, नियोग, महापातक तथा उपपातकों के लिये प्रायश्चित, कृच्छ्र, अतिकृच्छ्र, आदि प्रकारों का विचार किया गया है। गौतमधर्मसूत्र में संहिता, ब्राह्मण, पुराण, वेदांग आदि के काफी उल्लेख आये है। गौतम ने तैत्तिरीय आरण्यक

के पच्चीस उद्धरण तथा कई मत अपने ग्रंथ में लिये हैं।

गौतमधर्मसूत्र का उल्लेख सर्वप्रथम बौधायनधर्मसूत्र में प्राप्त है। उसी प्रकार वसिष्ठधर्मशास्त्र, अपरार्क, तंत्रवार्तिक, वेदांतों पर लिखा गया शांकरभाष्य आदि ग्रंथो में भी गौतमधर्मसूत्र के काफी उद्धरण लिये गये हैं। मनुस्मृति में गौतम का उतथ्यपुत्र के नाम से उल्लेख है (मनु. ३. १६)। भविष्यपुराण में भी, गौतम का सुरापाननिषेध के बारे में उल्लेख है। गौतमधर्मसूत्र का उल्लेख बौधायन, वसिष्ठ आदि धर्मशास्त्रकारों ने किया है। इससे प्रतीत होता है कि, यह वसिष्ठ तथा बौधायन के पूर्व का होगा। यवनों का उल्लेख भी आया है। यवन शब्द का अर्थ स्वयं गौतम ने दिया है, 'ब्राह्मण को शूद्रा सेउत्पन्न संतति'। इसी अर्थ से यह शब्द गौतमधर्मसूत्र में आया है (४.१७)। इससे प्रतीत होता है कि, ब्राह्मण तथा शूद्र के मिश्रण से बनी यवनजाति भारत में ग्रीकों के आने के पहले भी थी। उसपर से गौतम का काल निश्चित करना असंभव है। गौतमधर्मसूत्र पर हरदत्त ने मिताक्षरा नामक टीका तथा मस्करी तथा असाहाय ने भाष्य भी लिखे है। मिताक्षरा, स्मृतिचन्द्रिका आदि ग्रंथों में, श्लोकगौतम, अपरार्क एवं दत्तकमीमांसा में वृद्धगौतम तथा बृहद्गौतम इन ग्रंथों का उल्लेख है। उसी प्रकार जीवानंद ने १७०० श्लोको की गौतमस्मृति छपवायीं है। यह स्मृति कृष्ण ने युधिष्ठिर को, चातुर्वर्ण्य के धर्मकथन करने के लिये बताई, ऐसा उस स्मृति में उल्लेख है। परंतु वह स्मृति महाभारत के आश्वमेधिकपर्व से ली गई होगी। क्योंकि, पराशरमाधवीय में तथा अन्य कई ग्रंथों में, इस स्मृति के श्लोक आश्वमेधिकपर्व से लिये गये हैं। आह्निकसूत्र, पितृमेधसूत्र तथा दानचंद्रिका के अतिरिक्त न्यायसूत्र, गौतमीशिक्षा आदि गौतम के ग्रंथ हैं।

२. एकत, द्वित तथा त्रित का पिता (म. श. ३५.९; त्रित देखिये)।

३. इसे चिरकारिन् नामक पुत्र था। इसने उसे पापकर्मी माता का वध करने के लिये कहा। परंतु चिरकारिन् के दीर्घसूत्री आचरण के कारण, वह काम नही हो सका (म. शां. २५८. ७-८)।

४. पूषन् नामक सूर्य के साथ घूमनेवाला एक ऋषि (भा. १२. ११. ३९)।

५. मध्यदेश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसे बिल्कुल वेदज्ञान नहीं था। एक गांव में, एक अमीर शूद्र के पास यह गया। उसने इसे एक विधवा स्त्री दी। उसके साथ यह कालक्रमणा कर रहा था। इसका एक मित्र इसके पास आया तथा उसने इसे दुराचरण से परावृत्त किया।

गौतम वहाँ से निकला। राह में यह नाड़िजंघ नामक कश्यपपुत्र के पास आया। वह राजधर्मन् के नाम से प्रसिद्ध था। गौतम का यथोचित सत्कार कर के, अपने राजा विरूपाक्ष के पास, वह इसे ले गया। राजा के द्वारा पूछे जाने पर इसने सब हकीकत बताई। राजा के घर इसे ब्राह्मणोंसह उत्तम भोजन तथा अच्छी दक्षिणा मिली। संपत्ति का भार सिर पर ले कर यह एक वटवृक्ष के नीचे बैठा। वहाँ बैठे बैठे, राजधर्मन् का वध करने का विचार इसके मन में आया। इस विचार के अनुसार, वध कर के, उसे जला कर उसकी संपत्ति ले कर यह रवाना हुआ। परंतु जल्द ही विरुपाक्ष ने इसे राक्षसोंद्वारा पकड़ लाया तथा इसके टुकड़े टुकड़े करके शबरों को खाने के लिये दिये। यह कृतघ्न होने के कारण, किसी शबर नें इसे नहीं खाया। बाद में राजधर्मन् जीवित होने के बाद, उसने गौतम को जीवित किया, तथा द्रव्य दे कर घर पहुँचाया। गौतम ने शूद्र स्त्री के द्वारा, पापकर्म करनेवाले अनेक पुत्र निर्माण किये। तब देवताओं ने इसे शाप दिया, 'यह दुष्ट विधवा स्त्री के द्वारा प्रजोत्पादन कर के नरक में जावेगा' (म. शां. १६२-१६७)।

६. अत्रिकुल का एक ब्रह्मर्षि। वैन्य ऋषि को विधाता कहने पर इसने अत्रि से स्पष्टीकरण माँगा था (म. व. १८३)। सत्यवत् जीवित है, ऐसा बता कर इसने द्युमत्सेन को धीरज बँधाया था (म. व. २८२-१३)।

७. ब्रह्मदेव ने यज्ञ के लिये, इस नामका ऋत्विज निर्माण कर के, गया में यज्ञ किया (वायु. १०६.३८)।

८. दारुक नामक शिवावतार का शिष्य (नोधस् वामदेव देखिये)।

गौतम आंध्र—(आंध्र. भविष्य.) वायुमतानुसार शिवस्वामिन् का पुत्र।

गौतम आरुणि—एक ऋषि। इससे चैकितानेय वसिष्ठ का ब्रह्मज्ञान के संबंध में संवाद हुआ था (जै. उ. ब्रा. १.४२.१)।

गौतम कूष्मांड—कक्षीवत् की संतान के लिये सामान्य नाम (ब्रह्मांड. ३.७४.९९)। कूष्मांड के लिये वायु में कृष्णांग पाठभेद है (वायु. ९९.९७)। गृहस्थों के नित्यतर्पण में, देवता की तरह कूष्मांड का समावेश है (विष्णु. ३.११.३२; ५.३०.११)।

गौतम व्यास--यह वैवस्वत मन्वन्तर में हुआ (व्यास देखिये)।

गौतमी--अश्वत्थामन् की माता (भा. १.७.४७)।

२. एक वृद्ध ब्राह्मण स्त्री (अर्जुनक देखिये)। इसने अपने पुत्र को मारनेवाले सर्प को 'भूतदया' के कारण छोड़ दिया।

गौतमीपुत्र--भारद्वाजीपुत्र का शिष्य। कात्यायनीपुत्र तथा आत्रेयीपुत्र इसके शिष्य थे (बृ. उ. ६.५.१-२ काण्व.)।

२. वात्सीपुत्र का शिष्य। इसका शिष्य आत्रेयीपुत्र (बृ. उ. ६.४.३१. माध्यं.)।

गौतमीपुत्र आंध्र--(आंध्र. भविष्य.) मत्स्यमतानुसार शिवस्वाति का पुत्र।

गौपवन--गोपवन का वंशज। यह पौतिमाष्य एवं कौशिक का शिष्य था (बृ. उ. २.६.१; ४.६.१)।

गौपायन--वसिष्ठकुल का गोत्रकार। पाठभेद-गोपायन

२. सुबंधु आदि भाई गौपायन के वंश के थे। असमाति ऐक्ष्वाक के ये पुरोहित थे। इन्हें छोड़ कर राजा ने दूसरे पुरोहित बुलाये, तब ये राजा पर मंत्रतंत्र छोड़ने लगे। इसीसे क्रुद्ध हो कर आये हुए पुरोहितों ने इनका वध किया (ऋ. सायणभाष्य. १०.५७; बृहद्दे. ७.८३; पं. ब्रा. १३.१२.५; जै. ब्रा. ३.१६७)।

गौपालायन--शुचिवृक्ष का पैतृक नाम (औपोदिति देखिये)।

गौपालेय--उपोदिति का पैतृक नाम।

गौर--शुक एवं पीवरी का पुत्र।

२. विकुंठ देवों में से एक।

गौरग्रीव--अत्रिकुल का गोत्रकार।

गौरजिन--अत्रिकुल का गोत्रकार।

गौरपराशर--एक ऋषि। इसके कुल में कांडूषप, वाहनप, जैह्मप, भौमतापन तथा गोपालि ये प्रसिद्ध ऋषि हुए।

गौरपृष्ठ--एक क्षत्रिय। यम की सभा में इसकी उपस्थिति का उल्लेख मिलता है (म. स. ८.१९)।

गौरप्रभ--शुक एवं पीवरी का पुत्र।

गौरमुख--उग्रसेन का उपाध्याय। सांब से, इसका सूर्यविषयक संवाद हुआ था (भवि. ब्राह्म. १३९)।

२. शमीक ऋषि का शिष्य। इसने गुरु की आज्ञा पा कर परीक्षित् राजा को उसकी मृत्यु निवेदित की (म. आ. ३८.१४-१९)।

३. एक राजा। इसने चिंतामणि मणि की सहायता से सुप्रतीकपुत्र दुर्जय को ससैन्य भोज दिया। इसका वैभव देख कर मोहित हुए दुर्जय ने, उस मणि की इससे याचना की। गौरमुख के न देनेपर उसने इससे युद्ध किया। इसी कारण दुर्जय का संपूर्ण नाश हुआ (वराह. ११-१५)।

गौरवाहन--पांडवों का समकालीन एक राजा (म. स. ३१.१५)।

गौरवीति--अंगिराकुल का गोत्रकार तथा प्रवर।

गौरवीति शाक्त्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२९; ९.१०८. १; २; १०. ७३; ७४; ऐ. ब्रा. ३.१९;८.२)।

विभिंदुकी के किये गये सत्र में यह प्रस्तोतृ था (जै. ब्रा. २.२३३)। यह शक्ति का पुत्र था, ऐसा कहा गया है। इससे पता चलता है कि, यह तथा पराशर एक ही व्यक्ति रहे होंगे। गौरिवीति शाक्त्य का एक साम गौरिवित नाम से प्रसिद्ध है (तां. ब्रा. ११.५.१३-१५)। ऋषभ याज्ञतुर का यह पुरोहित था (श. ब्रा. १२.८.३.७)। ऋषभ याज्ञतुर की गाथा गौरीवीति शाक्त्य ने की होगी (श. ब्रा. १३. ५.४-१५)। इसका गौरीविति ऐसा भी पाठ है (तां. ब्रा. ११.५; १२.१३; २५.७; श. ब्रा. १२.८.३.७)।

गौरशिरस्--एक ऋषि (म. स. ७.९)।

गौराश्व--एक क्षत्रिय। यमसभा में उपस्थित (म. स. ८.१७)।

गौरिक--(सू. इ.) वायुमतानुसार युवनाश्वपुत्र। मांधातृ का मूल नाम।

गौरी--मत्स्यमतानुसार अंतिनार की कन्या। मांधातृ की माता (युवनाश्व तथा प्रसेनजित् देखिये)।

२. (सुदेव ९. देखिये)।

गौरीविति शाक्त्य--गौरवीति देखिये।

गौरुंडि--एक ऋषि। उपाकर्मांगतर्पण में इसका संग्रह है (जैमिनि देखिये)।

गौर्गुलवि--एक ऋषि। उपाकर्मांगतर्पण में इसका संग्रह है (जैमिनि देखिये)।

गौल्गुलवीपुत्र गौभिल--एक ऋषि। इसका पिता बृहद्वसु। पिता के पास इसने सामवेद का अध्ययन किया (वं. ब्रा. ३)।

गौश्र--गुश्री का वंशज। इसे मधुक नामक एक ऋषि ने 'सोमवल्ली की देवता कौन है?' ऐसा प्रश्न पूछा था (सां. ब्रा. १६.९;२३.५)।

गौश्रायणि--एक आचार्य। चित्र का पैतृक नाम। जाबालसत्र में यह पुरोहित था (सां. ब्रा. २३.५)।

गौश्ल--यज्ञ में शस्त्रकथन का बुलिल आश्वतर का सांप्रदाय इसने अनुचित सिद्ध किया। वहाँ अपनी पद्धति से शस्त्रकथन करवाया (ऐ. ब्रा. ६. ३०; गो. ब्रा, २. ६. ९)।

गौषूक्ति--इष श्यावाश्वि के शिष्य का नाम (जै. उ. ब्रा. ४.१६.१; पं. ब्रा. १९. ४. ९; गोषूक्तिन् काण्वायन देखिये)।

ग्रंथिक--पांडव द्रौपदी सहित अज्ञातवास में थे, तब नकुल ने (विराट के घर) यह नाम धारण किया था (म. वि. १२.१०)।

ग्रसन--तारकासुर का सेनापति। तारकासुर ने इंद्र से युद्ध किया। वहाँ यह उसके साथ था (पद्म. सृ. ४२)। आगे चल कर यम के साथ तारकासुर का युद्ध हुआ। इस में यह विष्णु के द्वारा मारा गया (मत्स्य. १५०-१५१)।

ग्रामणी--देववती का पिता।

ग्रामद--भृगुकुल का गोत्रकार।

ग्रास्यायणि--भृगुकुल का गोत्रकार।

ग्रावा--कश्यपप्रजापति की स्त्री। दक्ष प्रजापति की कन्याओं में से एक।

ग्रावाच्यवन--ब्रह्मदेव के पुष्करक्षेत्र के यज्ञ के होतृगणों में से एक ऋत्विज् (पद्म. सृ. ३४)।

ग्रावाजिन--स्वायंभुव मन्वंतर का अजित् देव।

ग्लाव मैत्रेय--एक आचार्य। बक दाल्भ्य तथा यह एक ही है (छां. उ. १.१२.१.३; गो. ब्रा. १.१.३१)। पंचविंश ब्राह्मण के सर्पसत्र में यह प्रस्तोतृ था। षड्विंश ब्राह्मण में भी इसका उल्लेख है (१.४)।

घ

घटजानुक--एक ऋषि (म. स. ४.११)।

घटोत्कच--(सो. कुरु.) भीम तथा हिडिंबा का पुत्र। जन्मतः इस का सिर घट के समान तथा केशरहित था, अतः इसका घटोत्कच (घट + उत्कच) नामकरण हुआ। इस नाम के अतिरिक्त, इसे भैम्य, भैमसेनी, हैडिंब वा हैडिंबेय कहते थे (म. आ. १४३)। स्मरण करते ही उपस्थित रहने का, इसने अपनी दादी कुन्ती से वादा किया था (म. आ. १४३.३७)। इसकी शिक्षा माता के पास हुई। हिडिंबा ने इसे राक्षसीविद्याओं में प्रवीण बनाया।

एक बार पांडव गंधमादन पर्वत पर चढ रहे थे। आरोहण में, भीम के अतिरिक्त अन्य सब थक गये। इस वेला में, कुन्ती ने घटोत्कच का स्मरण किया। तुरन्त प्रकट हो कर, इसने ऋषियों के साथ सब को नरनारायण आश्रम तक पहुँचा दिया (म. व. १४५.१-९)।

पितृसेवा के उद्देश्य से हिडिंबा ने इसे पांडवों की ओर भेज दिया। धर्मराज ने इसका यथोचित गौरव किया, एवं इसके विवाह का निश्चय किया। कृष्ण ने कहा, 'मुरु दैत्य की कन्या मौर्वी (कामकटंकटा) घटोत्कच के लिए योग्य हैं।' वह भगदत्त राजा के प्रागज्योतिषपुर में थी। बल तथा बुद्धि द्वारा अपने को जीतनेवाले पुरुष के साथ विवाह करने का, उसने प्रण किया था। सब की प्रेरणा से, बुद्धि, राक्षसीविद्या तथा शरीरबल के क्षेत्र में, घटोत्कच ने उसे जीत लिया। इंद्रप्रस्थ में इसका विवाह मौर्वी के साथ सम्पन्न हुआ। इनका पुत्र बर्बरीक था (स्कंद. १.२.५९-६०)।

राजसूययज्ञ के समय, यह करभार लाने के लिए, दक्षिण दिग्विजय में लंका गया था (म. स. २८.३०९; परि. १.१५)। कुंभकोणआवृत्ति ही में इसके लंका-प्रयाण का उल्लेख उपलब्ध है। बंबई की आवृत्ति में सहदेव द्वारा दूत भेजने का विवरण प्राप्त है। वह दूत घटोत्कच ही होगा।

महाभारत के अनुसार, यह बड़ा होने के बाद हिडिंबा इसे ले कर कुन्ती के पास आई। इस समय घटोत्कच का व्याह हो चुका था। महाभारत में इसकी पत्नी का नाम नहीं है। घटोत्कच की पत्नी देवी कामा की कृपा से अजेय थी। उसे एक विचित्र प्रश्न पूछ कर, घटोत्कच काबू में लाया, तथा नख से सेनानिर्मिति कर उसे जीत लिया। इसके अंजनपर्वन् एवं मेघवर्ण नामक दो पुत्र थे।

भारतीययुद्ध में यह पांड़वों के पक्ष में था। इसका रथ आठ पहियों का तथा सौ अश्वों का था। इसके रथ पर गृध्रपक्षी का ध्वज था। विरूपाक्ष नामक राक्षस इसका सारथ्यकर्म करता था। यह हाथ में पौलस्त्य धनुष्य रखता था (म. द्रो. १५०.१२-१४)।

द्रोण सेनापति थे। एक दिन रात्रि में युद्ध हुआ। कर्ण की वासवी शक्ति के कारण, अर्जुन की उससे युद्ध करने की हिम्मत नहीं हो रही थी। इस समय कृष्ण ने घटोत्कच का गौरव किया, तथा कहा, 'रात्रि की वेला में युद्ध करने से तुम्हारी शक्ति प्रज्वलित हो उठती है, अतः तुम महासमर करो।' इस प्रसंग में, इसके साथ युद्ध करने के लिए दुर्योधन ने बकबंधु अलायुध तथा अलंबुप नामक दो दैत्यों को भेज दिया। इसने दोनों का वध किया। अलंबुष का सिर काट लिया। उसे हाथ में ले कर यह दुर्योधन के सामने प्रस्तुत हुआ। घटोत्कच ने उससे कहा, 'रिक्तपाणिर्न पश्येत् राजानम्।' अर्थात्, 'राजा लोगों का दर्शन, खाली हाथों नही लेना चाहिये।' यों कह कर इसने अलंबुष का सिर दुर्योधन के सामने फेंक दिया। उपहासयुक्त शब्दों में, चिढ़ाते हुए इसने कहा, 'राजन् चन्द पलों ही में मैं कर्ण के मस्तक का उपहार पेश करने के लिए आता हूँ।'

यह समाचार सुन कर कर्ण भी एक बार थर्रा उठा। बाध्य एवं अगतिक बन कर कर्ण ने इस पर वासवी शक्ति का प्रयोग किया। उस प्राणहारक शक्ति को देख कर मरने के पहले घटोत्कच ने पर्वतप्राय देह धारण की। शक्ति लगते ही, यह कौरवसेना पर जा गिरा। मृत्यु के उपरान्त भी, इसकी देह ने शत्रुदल का एक भाग कुचल कर पीस डाला। परिणामस्वरूप अर्जुन वासवी शक्ति से निर्भीक हुआ (म. द्रो. १४८-१५४)। मार्गशीर्ष कृष्ण एकादशी की मध्यरात्रि को इस की मृत्यु हुई (भारतसावित्री)।

घटोत्कच का रूप भयानक था। उसकी देह विशाल थी। बाप से बेटा सवाई था। गंधमादन पर्वत का प्रसंग इसका सबूत है। इसके अतिरिक्त, बुद्धि, प्रत्युत्पन्नमतित्व, मातृपितृभक्ति तथा आनंदीवृत्ति आदि गुणों से इसका चरित्र विभूषित हुआ है। इसके नेत्र विद्रूप थे। कान शंकु के आकार के थे। मुख बड़ा था। ओष्ठ आरक्तवर्ण के थे। दाढें तीक्ष्ण थीं। नासिका लंबी एवं सीना चौड़ा था। पिंडुलियाँ टेढीमेढी तथा मोटी थी। कुल मिला कर आकृति तथा आवाज़ खौफ़नाक थीं। इस का जनक मनुष्य होने पर भी, यह अमानुष था। बलशाली राक्षस-पिशाच, बचपन में भी इसे थाम नहीं सकते थे। बाल्यकाल ही से इसका रूप उग्र था। जन्मतः यह अस्त्रविद्यापारंगत एवं कामरूपधर था। पैदा होते ही, इसने मातापितरों के पैर पकड़ लिए थे।

घटोदर—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. उ. २७; म. स. ९. १४)।

२. पूतना देखिये।

घंट—वसिष्ठकुल का एक ब्राह्मण। इसने बिल्वदल (बेलपत्र) से शंकर की १०० वर्षों तक सेवा की। आगे-चलकर इसने देवल ऋषि की नातन की माँग की। यह कुरूप है, ऐसा पता लगने के कारण, उसने इसे अस्वीकार किया। तब इस ने उसका हरण कर उससे गांधर्वविवाह किया। उसके पिता ने इसे शाप दिया; परंतु नये रिश्ते को याद कर, निशाचर याने राक्षस न हो कर उलूक होगे तथा इंद्रद्युम्न की सहायता करने पर मुक्त होगे,' ऐसा उःशाप दिया (स्कंद. १. २. ७)।

घंटाकर्ण--शिव का एक गण। शंकर के नाम वा गुणों के अतिरिक्त कुछ भी कानों को सुनने न मिले, इसलिये यह कान को घंटा बांधता था। इसलिये इसका नाम घंटाकर्ण हुआ। यह स्कंद का पार्षद था (म. श. ४४. २२)।

घंटामुख--विभावसु देखिये।

घन—लंका का एक राक्षस (वा. रा. सु. ६)।

घर्म तापस--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११४)।

घर्म सौर्य—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १८१. ३)।

घुश्मेश्वर—शंकर का बारहवाँ अवतार। देवगिरि के पास वेरूल में है। घुश्म के संरक्षणार्थ यह वहाँ आया (शिव. शत. ४२)। व्याघ्रेश्वर इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. १)।

घूर्णिका—देवयानी की दायी का नाम (म. आ. ७३. २४)।

घृणि—मरीचिपुत्र (मरीचि देखिये)।

२. (सू. इ.) धुंधुमार का पुत्र (पद्म. स. ८)।

घृतकौशिक--पराशर्यायण का शिष्य। इसका शिष्य कौशिकायनि (बृ. उ. २. ६. ३; ४. ६. ३; २. ५. २१; ४. ५. २७. माध्यं.)

२. विश्वामित्र देखिये।

घृतपृष्ठ—(स्वा. प्रिय.) भागवतमतानुसार प्रियव्रत को बर्हिष्मती से उत्पन्न पुत्र। क्षीरोद से वेष्टित क्रौंचद्वीप

का यह अधिपति था। इसने अपने द्वीप के वर्षसंज्ञक सात भाग किये थे। भ्राम, मधुरुह, मेघपृष्ठ, सुधामन्, भ्राजिष्ठ, लोहितार्ण तथा वनस्पति नामक सात पुत्रों को उन्हीं के नाम दे कर, ये वर्ष विभाजित कर दिये थे (भा. ५.१. २५; २०.२०)।

घृताची—एक अप्सरा। कश्यप तथा प्राधा की कन्या (म. आ. १५४.२)। इसी के कारण रेतस्खलन हो कर, भरद्वाज से द्रोण, व्यास से शुक, प्रमति से रुरु तथा रौद्राश्व से ऋतेयु आदि पुत्र हुये। प्रमति तथा रौद्राश्व के पास यह दीर्घकाल तक रहती थी।

२. माघ मास में आदित्य के साथ घुमनेवाली अप्सरा (भा. १२,११.३९)।

घृताशिन्—एक ऋषि। इसने गोपीमोहन कृष्ण का ध्यान किया। इसलिये इसे गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

घृतेयु—(सो. पुरूरवस्.) विष्णु वायु तथा मत्स्य मतानुसार रौद्राश्वपुत्र।

घृतोद—महावीर १ देखिये।

घोर—हिरण्याक्ष की सेना का एक असुर। कार्तिकेय ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

२. कण्वपुत्र।

घोर आंगिरस—मंत्रद्रष्टा (ऋ. ३.३६.१०)। अन्य वैदिक ग्रंथों में इसका उल्लेख है (सां. ब्रा. ३०.६; छां. उ. ३.१७.६; आश्व. श्रौ. १२.१०)। इसने देवकीपुत्र कृष्ण को ब्रह्मज्ञान का उपदेश दिया, (छां. उ. ३.१७.६)। कठ संहिता में अश्वमेधखंड में इसका उल्लेख है (२६.७)। अथर्ववेद का भिषज से, तथा आंगिरस वेद का घोर से संबंध है (आश्व. श्रौ. १०-७; सां श्रौ. १६.२)

२. वैवस्वत मन्वंतर के अंगिरस् ऋषि के आठ पुत्रों में से एक (म. अनु. १३२.४३ कुं; अंगिरस् देखिये)।

३. लंकास्थित एक राक्षस। लंकादहन के अवसर पर हनूमत् ने इसका घर जलाया था (वा. रा. सुं. ५४)।

घोष—कक्षीवत् पुत्री घोषा का पुत्र। पज्रिय कक्षीवत् के साथ इसका भी उल्लेख आता है (ऋ. १.१२०.५; घोषा देखिये)।

२. धर्म ऋषि तथा लंबा का पुत्र।

३. (शुंग. भविष्य.) पुलिंद का पुत्र। इसका पुत्र वज्रमित्र। विष्णु मतानुसार इसका नाम घोषवसु है।

घोषा—कक्षीवत् की सूक्तद्रष्टी पुत्री (ऋ. १०.३९-४०)। कुष्ठरोग होने के कारण, इसे पिता के घर अविवाहित रहना पड़ा। अश्वियों की कृपा से इसका कुष्ठ दूर हुआ (ऋ. १०.३९; ३-६), तथा इसे पति भी मिला (ऋ. १.११७)।

रोगग्रस्त रहने के कारण, यह साठ वर्षों तक पिता के गृह में अविवाहित स्थिति में रही। पिता की तरह अश्वियों को प्रसन्न कर, यह निरोगी हुई तथा इसे पति मिला (बृहद्दे. ७.४३; ४८)। इसके पति का नाम नहीं मिलता। इसे घोष तथा सुहस्त्य नामक पुत्र थे (बृहद्दे. ७.४८; सुहस्त्य देखिये)। मातापिता पुत्र को शिक्षा देते है, उसी तरह शिक्षा देने के लिये इसने अश्वियों से प्रार्थना की थी (ऋ. १०.३९.६)। शत्रुओं से युद्ध करने में समर्थ बनाने के संबंध से इसकी प्रार्थना का उल्लेख है (ऋ. १०.४०.५)।

घौषेय—घोष तथा सुहस्त्य देखिये।

घ्राण—तुषित देवों में से एक।

च

चकोर—(आंध्र. भविष्य.) सुनंदन का पुत्र। वायु में इसे सातकर्णि, विष्णु में चकोरशातकर्णि, एवं ब्रह्मांड में शातकर्णि कहा गया है।

चक्र—एक ऋत्विज। जनमेजय के सर्पसत्र में, यह उन्नेतृ नामक ऋत्विज का काम करता था। इसके साथ पिशंग का उल्लेख प्राप्त है (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

चक्र—रावण की सेना का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६.२४)।

चक्रक—विश्वामित्र का पुत्र।

चक्रदेव—एक यादव (म. स. १४.५६)।

चक्रधनु—कपिल ऋषि का नामांतर।

चक्रधर्मन्--विद्याधर का नामांतर (म. स. परि. १. क्र. ३. पंक्ति. ६)।

चक्रपाणि--सिंधु दैत्य के पिता का नाम (गणेश २. ७३.५)।

चक्रमालिन्--रावण के सचिवों में से एक।

चक्रवर्तिन्--सर्वश्रेष्ठ नृपों की उपाधि। कार्तवीर्यार्जुन हैहय, भरत दौष्यन्ति पौरव, मरुत्त आविक्षित वैशाल, महामन महाशाल आनव, मांधातृ यौवनाश्व ऐक्ष्वाक, शशबिंदु चैत्ररथि यादव, आदि राजाओ को चक्रवर्तिन् कहा, गया है।

अंतरिक्ष, पाताल, समुद्र तथा पर्वतों पर अप्रतिहत गमन करनेवाले, सप्तद्वीपाधिपति तथा सर्वाधिक सामर्थ्ययुक्त नृपों को चक्रवर्तिन् कहते है (वायु. ५७.६८-८०; ब्रह्माण्ड २.२९.७४-८८; मत्स्य. १४२.६३-७३)।

हिमालय से महासागर तक, तथा पूर्वपश्चिम १००० योजन भूमि का अधिपति चक्रवर्तिन् है (कौटिल्य. पृ. ७२५)।

कुमारी से बिंदुसरोवर तक भूमि के अधिपति को चक्रवर्तिन् संज्ञा दी जाती थी (काव्यमीमांसा १७)।

समुद्रपर्यंत भूमि का अधिपति सर्वश्रेष्ठ नृप समजते थे (ऐ. ब्रा. ८. १५; र. वं. १)।

वेदों में चक्रवर्तिन् शब्द नही है। सम्राज् आदि शब्द उपलब्ध है।

अंबरीष नाभाग, गय आमूर्तरयस, दिलीप ऐलविल खट्वांग, बृहद्रथ अंग, भगीरथ ऐक्ष्वाक, ययाति नाहुष, रंतिदेव सांकृति, राम दाशरथि, शिबि औशीनर, सगर ऐक्ष्वाक, सुहोत्र ये सर्वश्रेष्ठ नृप थे (म. द्रो. ५५-७०; शां. २८)।

२. अंगिरसकुल का गोत्रकार।

चक्रवर्मन्--बल का पुत्र। कर्ण के पूर्वजन्म का नाम।

चक्रवात--तृणावर्त राक्षस का नामांतर।

चक्रायण--उषस्त मुनि का पिता।

चक्रिक--एक व्याध। यह मातृपितृभक्त एवं विष्णुभक्त था। विष्णु को फलोपहार अर्पण करने के पहले, यह स्वयं एक एक फल चख रहा था। उससे से एक फल इसके गले में अटक गया। वह फल विष्णु को अर्पण करने के लिये, इसने अपनी गर्दन स्वयं काट ली। विष्णु ने इसे जीवित कर, दर्शन दिया। बाद में, द्वारकाक्षेत्र में मृत्यु होने के कारण, इसको मुक्ति मिल गयीं (पद्म. क्रि. १६)।

चक्रिन्--अंगिरा कुल का गोत्रकार।

चक्षु--(स्वा. उत्तान.) सर्वतेजस् एवं आकूति का पुत्र। इसकी स्त्री नड्वला। यह छठवाँ मनु माना जाता है।

२. (सो. नील.) विष्णु मत में पुरुजानुपुत्र। इसे ही भागवत में अर्क, मत्स्य में पृथु, एवं वायु में रिक्ष कहा गया है।

३. तुषित देवों में से एक।

४. (सो. अनु.) भागवत मत में अनुपुत्र। इसे ही विष्णु एवं मत्स्य में चाक्षुष, ब्रह्मांड में कालचक्षु, तथा वायु में पक्ष कहा गया है।

चक्षुस् मानव--मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०६.४-६)।

चक्षुस् सौर्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१५८)।

चंचला--एक वेश्या। इसने विष्णु के मंदिर की दीवार को सहज भाव से एक उँगली चूना लगाया। इस पुण्य के प्रभाव से इसे वैकुंठ प्राप्त हुआ (पद्म. ब्र. ६)।

चंचु--(सू. इ.) विष्णु, वायु एवं भविष्य मत में हरितपुत्र। भागवत में इसे चंप कहा गया है।

चंचुलि--विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

चंड--एक व्याध। शिवरात्रि के दिन, सहज ही शिव पर बिल्वपत्र डालने के कारण, यह जीवन्मुक्त हुआ (पद्म. उ. १५४; स्कन्द. १.१.३३)।

२. त्रिपुरासुर का अनुयायी। त्रिपुर तथा शंकर के युद्ध के समय, इसका एवं नंदी का युद्ध हुआ था (गणेश. १.४३; चंड़मुंड देखिये)।

३. विष्णु के पार्षदों में से एक।

४. अष्टभैरवों में से एक।

५. बाष्कल का पुत्र।

६. काश्यप तथा सुरभि का पुत्र (शिव. शत. १८)।

चंडकौशिक--कक्षीवत् ऋषि का पुत्र। इसके प्रसाद से बृहद्रथ को जरासंध हुआ (म. स. १६.१७९*)।

चंडतुंडक--गरुड़पुत्र।

चंडबल--राम की सेना का सुप्रसिद्ध वानर। कुंभकर्ण ने इसका वध किया।

चंडभार्गव च्यावन--च्यवनवंश का एक ऋषि। जनमेजय के सर्पसत्र में यह होता का काम करता था (म. आ. ४८.५)।

चंडमुंड--शुंभनिशुंभ के सेनापति। चंड तथा मुंड ये दो असुर शुंभनिशुंभ के अनुयायी थे।

शुंभ की ओर से, यह दोनों देवताओं की सेना से लड रहे थे (पद्म. उ. १७)। शुंभ एवं शंकर के युद्ध में भी, शुंभ ने इन्हे जालंधर के शोधार्थ भेजा था।

एक बार इन्हे एक सुंदर स्त्री दिखाई दी। उसे वश करने के लिये, शुंभनिशुंभ ने इन्ही की योजना की। वह सुंदर स्त्री कालिका देवी का मायावी रूप था। पश्चात्, कालिका देवी ने इन्हे मार डाला।

कई ग्रंथों में, उस सुंदर स्त्री को देवी चंडी कहा है। यही कथा, कुछ भिन्नता से अन्य ग्रंथों में भी आयी है (वायु. ५५; मार्क. ८४)।

चंडश्री—(आंध्र. भविष्य.) मत्स्यमत में विजय का पुत्र। इसके लिये चंद्रविज्ञ, चंद्रश्री एवं दंसश्री नाम प्रयुक्त हैं।

चंडा—गंडा देखिये।

चंडाश्व—(सू. इ.) कुवलाश्व का पुत्र। इसका भद्राश्व नामांतर भी प्राप्त है।

चंड़िक—बर्बरिक का नामांतर।

चंडी—उद्दालक की पत्नी। इसकी कथा कलहा की तरह ही है (जै. अ. १६)।

चंडीश—रुद्रगणों में से एक। इसके चंडी, चंड़, चंडेश्वर, चंड़घंट आदि नाम प्राप्त हैं। दक्षयज्ञविध्वंस के समय, इसने पूषन् नामक ऋत्विज को बाँधा था (भा. ४.५.१७; पद्म. उ. १३.५९)।

चंडोदरी—अशोकवन की एक राक्षसी (वा. रा. सुं. ४)।

चतुरंग—(सो. अनु.) भागवत एवं विष्णु मत में चित्ररथ अथवा रोमप का पुत्र। ऋश्यशृंग के पुत्रकामेष्टि यज्ञ के कारण, इसका जन्म हुआ। इसका पुत्र पृथुलाक्ष (भा. ९.२३.१०)।

चतुर्मुख—ब्रह्मदेव का नामांतर। कमल में से ब्रह्मदेव का जन्म होते ही, उसने चारों दिशाओं की ओर देखा। चारों ओर देखते ही उसे चार मुख प्राप्त हुए। इसी कारण उसे यह नाम पड़ा (भा. ३.८.१६; ब्रह्मन् देखिये)।

चन्द्र—अत्रि तथा अनसूया का पुत्र। यह सोम नाम से भी प्रसिद्ध था (भा. ४.१३; म. शां. २००.२४)। इसे सूर्य तथा भद्रा का पुत्र भी कहा गया है।

यह स्वायंभुव मन्वन्तर में पैदा हुवा था (म. आ. ६०. १४)। इसके जन्म की अनेक आख्यायिकाएं प्राप्त है। अत्रि ने दसों दिशाओं से इसे उत्पन्न किया (विष्णुधर्म. १.१०६; स्कन्द. ४.१.१४)। यह अत्रि की आँखों से उत्पन्न हुवा (ह. वं. १.२५; ६-९; वायु. ९०.५)।

चन्द्र तथा आकाश में स्थित चन्द्रमा दोनों एक ही है। दक्ष प्रजापति की सत्ताईस कन्यायें इसे पत्नीरूप दी गयी थीं। चन्द्र की इन सत्ताईस पत्नियों के नाम बाद में सत्ताईस नक्षत्रों को प्राप्त हुए (म. आ. ६०.१२; १५; ह. वं. १.२५.२२; स्कन्द. ७.१.२०)।

पृथ्वी की औषधि वनस्पति, चन्द्र से प्रभावित होने के अनेक निर्देश प्राप्त है। इसने तपस्या करने पर, इसकी आँखों से सोमरस टपकने लगा। इसीसे सब ओषधियाँ उत्पन्न हुई (स्कन्द. ७.१.२०)। इसका क्षय होने पर पृथ्वी की ओषधि वनस्पतियाँ सूख गयी (म. श. ३४)। इसने अमृत दे कर अनाथ मारिषा की रक्षा की। इन सब कथाओं से चन्द्र-चन्द्रमा रूपक को पुष्टि मिलती है।

चन्द्र के सत्ताईस पत्नियों में, रोहिणी पर इसकी विशेष प्रीति थी। यह न सह कर, इसकी अन्य स्त्रियों ने अपने पिता दक्ष के पास शिकायत की। दक्ष ने चन्द्र को समझाया। परंतु कुछ लाभ नहीं हुआ।

दक्ष ने चन्द्र को शाप दिया कि, तुम्हें क्षयरोग हो जावेगा। क्षय से चन्द्र क्षीण होने लगा। उसका दुष्परिणाम पृथ्वी की ओषधिवनस्पतियों पर हुआ। देवों को मजबूरी से दक्ष के पास प्रार्थना करनी पडी। दक्ष ने कहा, 'चन्द्र का पंद्रह दिन क्षय तथा पंद्रह दिन वृद्धि होगी, परंतु उसके लिये चन्द्र को सब पत्नियों की ओर समान ध्यान देना पडेगा। पश्चिम सागर के पास सागरमुख में स्नान करना होगा'। वहाँ स्नान करने के बाद चन्द्र को पूर्ववत् कान्ति प्राप्त हुई। इसीलिये इस क्षेत्र को प्रभास नाम प्राप्त हुआ (म. श. ३४)।

शशपानतीर्थ पर देव तथा दैत्यों ने अमृतपान किया। वहाँ कुछ देरी से जाने के कारण, इसे अमृत प्राप्त नहीं हुआ। वहाँ का तीर्थ लेने के लिये देवों ने इसे कहा। एक खरगोश उस तीर्थ का प्राशन कर रहा था। उसे भी इसने खा लिया। वह अभी भी इसके उदर में है। (स्कन्द. ७. १. २५८)।

अत्रिपुत्र सोम यह चन्द्र का ही नामांतर है। एकबार सोम अत्यंत बलिष्ठ हुआ। राजसूययज्ञ कर के इसने त्रैलोक्य को जीत लिया। बृहस्पति की पत्नी तारा का जबरदस्ती हरण कर लिया। उसके लिये तारकामय नामक बहुत बड़ा युद्ध हुआ। ब्रह्मदेव ने मध्यस्थता की। इसने तारा को वापस किया।

परंतु वह गर्भवती थी। बृहस्पति ने तारा को गर्भ का त्याग करने के लिये कहा। तब तारा ने एक वृक्ष पर उसे छोड़ दिया। वह गर्भ अत्यंत तेजस्वी था। यह देख कर पुनः बृहस्पति तथा चन्द्र लड़ने लगे। तब तारा ने कहा कि, 'गर्भ चन्द्र का है'। वह गर्भ चन्द्र को दिया गया। यही बुध हैं। यहीं से चन्द्रवंश प्रारंभ हुआ (भा. ९.१४; ह. वं. १.२५; पद्म. पा. १२; ब्रह्म ९; मत्स्य. २३; दे. भा. १.११; वायु. ९०.२-९)।

सोमवंश का प्रथम राजा सोम ही था। इसकी पत्नी रोहिणी। इसकी राजधाधी प्रयाग थी। (पद्म. उ. १५६; सोम तथा पुरूरवस् देखिये)। बदरिकाश्रम में तप कर के इसने ग्रहाधिपत्य प्राप्त किया (स्कन्द. २.३.७)। इसने उमासहित सोम की आराधना की, इसलिये इसे सोम नाम प्राप्त हुआ (स्कन्द. ४.१.१४)।

धर्म प्रजापति को वसु नामक स्त्री से उत्पन्न अष्टवसुओं में से एक का नाम सोम है (म. आ. ६०.१७; लिंग. ६१)। यह वैवस्त मन्वन्तर का था। पीछे वर्णित सभी कथा इसीकी होनी चाहिये।

सोमवंश--भारत का प्राचीन इतिहास सोम एवं सूर्य-वंश का ही इतिहास है। सोम चंद्र का ही नामांतर है। सोम तथा सूर्य इन दोनों वंशों का मूलपुरुष वैवस्वत मनु है। सूर्यवंश वैवस्वत मनु के पुत्र से शुरू होता है। सोमवंश उसकी कन्या इला से प्रारंभ होता है।

वैवस्वत मनु की कन्या इला सोमपुत्र बुध से ब्याहीं थी। उसीसे पुरूरवस्-आयु-नहुष-ययाति तक का वंशविस्तार हुआ। इसे ही पुरूरवस् वा ऐल वंश कहते है।

पुरूरवस्पुत्र अमावसु से कान्यकुब्ज में अमावसुवंश शुरू हुआ।

आयुपुत्र वृद्धशर्मन् वा क्षत्रवृद्ध से काश्य वा काशिवंश का प्रारंभ हुआ। रजिवंश, अनेनस्वंश तथा रंभवंश ये भी आयुवंश की उपशाखाएं हैं। क्षत्रवृद्ध का द्वितीय पुत्र प्रतिक्षत्र था। उसीसे पुरूरवस् (ऐल) वंश की एक अलग उपशाखा निर्माण हुई।

नहुषपुत्र ययाति के अनु, पूरु, द्रुह्यु, तुर्वसु एवं यदु नामक पाँच पुत्र थे। इन पाँच पुत्रों से पुरूरवस् वंश की पाँच उपशाखाएं निकली। ये उपशाखाएं इस प्रकार है-

(१) **तुर्वसुवंश**--यह दुष्यन्त के समय पुरुवंश मे सम्मीलित हुवा।

(२) **पूरुवंश**--अजमीढ, कुरु, चेदि, जह्नु, द्विमीढ, नील।

(३) **अनुवंश**--उशीनर (केकय, मद्रक), तितिक्षु (अंग, वंग, कलिंग, सुह्म, पुंड्र)।

(४) **यदुवंश**--अनमित्र, अंधक, कुकुर, क्रोष्टु, ज्यामध, भजमान, रोमपाद, वसुदेव, विदर्भ, विदूरथ, विष्णु वृष्णि, सहस्रजित्, सात्वत, हैहय।

(५) **द्रुह्युवंश**--द्रुह्यु का वंश पुराणों में मिलता है। उसकी शाखाएँ नहीं हैं।

सूर्यवंश की विस्तृत समीक्षा के लिये विवस्वत् देखिये।

२. (सू. इ.) भागवत मत में विश्वरंध्री का पुत्र (इन्दु देखिये)।

३. (सू. इ.) भानु राजा का पुत्र। इसे श्रुतायु नामक पुत्र था।

४. दाशरथि राम के सुज्ञ नामक मंत्री के पुत्रों में से एक। अश्वमेध का अश्व वापस लाने के लिये हुए युद्ध में, कुश ने इसका वध किया (वा. रा. उ. १)।

५. कृष्ण तथा नाग्नजिती के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१३)।

६. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

चंद्रकला--माधव ५. देखिये।

चंद्रकांत--एक गंधर्व। इसकी कन्या सुतारा।

चंद्रकेतु--हंसध्वज राजा का भ्राता।

२. (सू. इ.) वायुमत में लक्ष्मण पुत्र।

३. भारतीय युद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा। यह कृपाचार्य का चक्ररक्षक था। अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. वि. ५२. ९२८* पंक्ति ६; द्रो. ४७. १५)।

चंद्रगिरि--(सू. उ.) मत्स्य तथा पद्म मत में तारापीड का पुत्र (पद्म. स. ८)।

चंद्रगुप्त--(मौर्य. भविष्य.) एक राजा। नंदवंश नष्ट होने पर यह गद्दी पर बैठा। यह महापद्म नंद की मुरा नामक शूद्रा से उत्पन्न पुत्र था। इस कारण इसके वंश का नाम मौर्यवंश हुआ, ऐसा प्रवाद है। आचार्य चाणक्य ने सब नंदों का नाश कर के इसे सिंहासन पर बैठाया। इसने कुल चौबीस वर्ष राज्य किया। इसे वारिसार नामक पुत्र था (भा. १२.१.१३)। इसने पौरसाधिपति सुलून राजा की यवन कन्या के साथ विवाह किया। इसका पुत्र बिंदुसार (भवि. प्रति. १. ७)।

२. कार्तवीर्यार्जुन का मंत्री। इसने जमदग्नि ऋषि का शिरच्छेद किया (ब्रह्मांड. ३. ३०. ८)।

चंद्रदेव—पांचाल देश का नृप। यह युधिष्ठिर का चक्ररक्षक था। भारतीययुद्ध में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४४. १५)।

२. दुर्योधन के पक्ष का नृप। भारतीययुद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ४४. २९.)।

चंद्रप्रदर्शन—कश्यप तथा सिंहिका के पुत्रों में कनिष्ठ। चंद्रप्रमर्दन इसका नामान्तर है।

चंद्रप्रभ—एक राजा। यह मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र था।

चंद्रभानु--(सो. यदु. वृष्णि.) कृष्ण तथा सत्यभामा का पुत्र (भा. १०. ६१. १०)।

चंद्रमस्--अत्रि तथा अनुसूया का पुत्र।

२. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

३. समुद्र के दक्षिण तट पर निवास करनेवाला ऋषि। इसने जटायु के भाई संपाति को अध्यात्मज्ञान दिया। सीता की खोज के लिये आये वानरों को, मार्ग दिखाने का आदेश इसने जटायु को दिया। पश्चात् यह स्वर्ग सिधारा।

चंद्ररूपा—राथंतरकल्प के प्रजापति की पत्नी। इसने त्रिरात्र तुलसीव्रत किया था (पद्म. उ. २६)।

चंद्रवती--प्रचेतस् एवं मारिषा की कन्या। यह प्राचेतस् दक्ष की बहन थी।

चंद्रवर्मन्—कांबोज देश का नृप (म. आ. ६१. ५५६*)।

चंद्रवाह—काकुत्स्थ शशाद राजा का नामांतर।

चंद्रविज्ञ--(आंध्र. भविष्य.) भागवत मत में विजय का पुत्र (चंडश्री देखिये)।

चंद्रशर्मन्--मायापुरी का अग्निगोत्रज ब्राह्मण। यह देवशर्मन् का शिष्य था। देवशर्मन् की कन्या गुणवती इसकी पत्नी थी। एक बार देवशर्मन् तथा यह अरण्य में दर्भ समिधा लाने के लिये गये। एक राक्षस ने इन दोनों के प्राण लिये। अत्यंत धार्मिक होने के कारण यह वैकुंठ गया। यह कृष्ण के समय अक्रूर नाम से प्रसिद्ध हुआ (पद्म. कु. ८८-८९)।

२. सूर्यवंश का एक राजा। यह कुरुक्षेत्र में रहता था। एक बार सूर्यग्रहण के समय, तुलापुरुषदान देने की इच्छा से, इसने एक ब्राह्मण को बुलाया। परंतु वह निंद्य दान होने के कारण, तुलापुरुषदान करते ही उस में से एक चंड़ाल्युग्म उत्पन्न हुआ। इसीमें ब्राह्मण ने गीता के नवम अध्याय का पाठ प्रारंभ किया था। अतः उसके प्रत्येक अक्षर से एकेक विष्णुदूत उत्पन्न हो कर, उन्होनें इस चांडाल्युग्म को भगा दिया। वह चंड़ाल्युग्म मनुष्यवेषधारी पाप एवं निंदा थे (पद्म. उ. १८३)।

३. मागध देश का ब्राह्मण। इसने गुरुहत्या की थी। विदुर के साथ कलिंजर पर्वत जाने पर उसे एक सिद्ध मिला। उसके उपदेश से इसने सोमवती अमावास्या के दिन, पुष्करतीर्थ में स्नान किया तथा यह शुद्ध हुआ (पद्म. भू. ९१-९२)।

चन्द्रशेखर--एक राजा। यह पुषन् का नाती तथा पौष्य का पुत्र था। इसका राज्य दृषद्वती नदी के किनारे करवीर में था।

इसके पिता पौष्य ने पुत्र के लिये, शंकर की आराधना की। शंकर ने उसे प्रसादरूप में एक फल दिया। उस फल के तीन भाग कर के पौष्य ने अपनी तीन स्त्रियों को दिये। बाद में पौष्यस्त्रियों को तीन भग्नपुत्र ऐसे हुए की, उन तीनों को जोड कर एक पुत्र बन सके। तीन भागों में बनने के कारण, इसे त्र्यंबक नाम मिला।

सूर्यवंशीय राजा ककुत्स्थ एवं भोगवती की कन्या तारावती से इसका विवाह हुआ। तारावती को कपोत मुनि के शाप से, भृंगी तथा महाकाल ये भैरव एवं वेतालयोनि के पुत्र हुए (कालि. ५०-५२)। इसे दमन, उपरिचर तथा अलर्क नामक तीन औरस पुत्र थे।

चन्द्रश्री—(आंध्र. भविष्य.) विष्णु के मत में विजय का पुत्र (चंड़श्री देखिये)।

चन्द्र सावर्णि—चौदहवाँ मनु (मनु देखिये)।

चन्द्रसेन—सिंहलद्वीप का राजा तथा मंदोदरी का पिता।

३. दुर्योधनपक्षीय एक राजा। भारतीययुद्ध में यह शल्य का चक्ररक्षक था। यह युधिष्ठिर के द्वारा मारा गया (म. श. ११.५३)।

३. पांडवपक्षीय क्षत्रिय राजा (म. स. २७.२२)। यह समुद्रसेन राजा का पुत्र था (म. आ. १७७.११)। भारतीययुद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. द्रो. १३१.१२९)। यह एक उत्तम रथी था (म. उ. १६८.१८)। इसके रथ को सामुद्र अश्व जोडे गये थे। पाठभेद-चन्द्रदेव।

४. हंसध्वज राजा का बंधु।

चन्द्रहर्तृ--कश्यप तथा सिंहिका का पुत्र।

चन्द्रहास—केरलाधिपति सुधार्मिक राजा का पुत्र। इसका जन्म मूल नक्षत्र पर हुआ था। इसके अतिरिक्त, दारिद्र्यदर्शक छठवीं अंगुलि इसके बायें पैर को थी।

इस अशुभ-चिन्ह के कारण, इसका जन्म होते ही, शत्रुओं ने इसके पिता का वध किया। इसकी माता ने सहगमन किया। इस प्रकार यह अनाथ हो गया। एक दाई ने इसको सम्हाला। वह इसे कौंतलकापुरी ले गई। वहाँ तीन वर्षों तक मजदूरी कर के उसने इसका भरण पोषण किया। कुछ दिनों के बाद वह मृत हुई। भिक्षान्न सेवन कर के इसने दिन बिताये। बाद में कुछ स्त्रियों ने इसका पालन किया। यह पाँच साल का हुआ, तब अन्य लड़कों में खेलने लगा। इसे बहुत स्त्रियों ने नहला धुला कर खाना खिलाया।

एक दिन सहजवश यह धृष्टबुद्धि प्रधान के घर गया। वहाँ ब्राह्मणभोजन चालू था। वहाँ निमंत्रित योगीश्वर तथा मुनियों को चन्द्रहास को देख कर, अत्यंत विस्मय हुआ। उन्होने इसे आशीर्वाद दिया कि, यह राजा बनेगा। उसी प्रकार उन्होने धृष्टबुद्धि से कहा, 'तुम्हारी संपत्ति की रक्षा भी यही करेगा।' इससे क्रुद्ध हो कर तथा मन में शंका आ कर, उसने इस बालक को जल्लादों के हाथों में सौंप दिया। जल्लाद वध करने के लिये, इसे अरण्य में लाये। फिर भी यह पूरे समय हास्यवदन ही था। मार्ग में मिला हुआ शालिग्राम, इसने बडी भक्ति से अपने मुख में रखा था। जल्लादों ने तीक्ष्ण शस्त्र उठाये। इसने उनकी स्तुति की। इससे जल्लादों के मन में इसके प्रति पूज्य बुद्धि उत्पन्न हुई। उन्होंने इसका वध न कर के, केवल छठवी अंगुलि काट ली। वही अंगुलि धृष्टबुद्धि प्रधान को दे कर इनाम प्राप्त किया।

जल्लादों द्वारा वन में छोड़े जाने के बाद, यह अरण्य में इधर उधर घूमने लगा। इस समय कुलिंद देश का राजा, मृगया के हेतु से इसी अरण्य में आया था। इस बालक को देख कर, राजा का मन द्रवित हुआ। उसने इसकी पूछताछ की। पश्चात् चंदनावती नगरी में इसे अपने साथ ले जा कर, उसे रानी मेधावती को सौंप दिया। राजा ने इसका नाम चन्द्रहास रखा। सब विद्याएँ भी इसे सिखायी। चन्द्रहास के कारण कुलिंद में सर्वत्र आनंद फैल गया। शिक्षाप्राप्ति के समय, चन्द्रहास केवल 'हरि' शब्द का ही उच्चारण करता था। इससे कुपित हो कर गुरु ने इसकी शिकायत राजा के पास की। परंतु, राजा ने कहा, 'इसकी इच्छा के अनुसार इसे व्यवहार करने दो।' आठ वर्ष की आयु में इसका व्रतबंध हुआ। तदनंतर इसने वेदाध्ययन किया। बाद में यह धनुर्विद्या में भी प्रवीण हो गया। पंद्रह वर्ष की आयु होते ही इसने दिग्विजय करने की इच्छा दर्शाई। परंतु कुलिंद ने कहा, 'अपनेसे बलवान राजाओं को भला तुम किस प्रकार जीत सकोगे? जाने की इच्छा हो, तो जाओ। कौंतल राजा के दुश्मन मुझे हमेशा त्रस्त करते है। क्योंकि मैं उसका अंकित हूँ'।

यह सुन कर चन्द्रहास दिग्विजय करने गया। इसने सब राजाओं को जीत लिया। इस प्रकार विजयी हो कर तथा अपरंपार संपत्ति ले कर यह चंदनावती लौटा। यह सुन कर कुलिंद इसका स्वागत करने आया।

बाद में कुलिंद के कथनानुसार, चन्द्रहास ने अपने सेवकों द्वारा कौंतल राजा को करभार भेजा। सेवकों ने उसे बताया, 'कुलिंद राजा सुखी है। उसके पुत्र चन्द्रहास ने दिग्विजय कर के यह संपत्ति भेजी है'। इससे विस्मयाभिभूत हो कर कौंतल चन्द्रहास को देखने चंदनावती आया। कुलिंद से मिल कर उसने कहा, 'पुत्रजन्म का वृत्त तुमने हमें क्यों नहीं सूचित किया'। चंद्रहास का सारा जन्मवृत्तांत कुलिंद ने उसे बताया। इससे कौंतल ने चन्द्रहास को पहचान लिया, तथा मन ही मन कुछ शंकित हुआ। पुनः चन्द्रहास का वध करने के विचार उसके मन में आये। इस संबंध में एक पत्र अपने पुत्र मदन को लिख कर, वह ले जाने के लिये चन्द्रहास से कहा।

चन्द्रहास कुंतल नगरी के लिये रवाना हुआ। राह में एक रम्य स्थान पर यह सोया था। उस स्थान पर राजकन्या चंपकमालिनी अपनी सखियों के साथ आई। उसके साथ धृष्टबुद्धि प्रधान की कन्या विषया भी थी। उसने चन्द्रहास को सरोवर के किनारे निद्रामग्न अवस्था में देखा। अपने पैरों से नूपुर निकाल कर धीरे-धीरे वह उसके पास गई। वहाँ उसने एक पत्र देखा। उसने वह पत्र पढा। उस पत्र में चन्द्रहास के लिये विषप्रयोग की सूचना थी। इससे उसका प्रेमी हृदय भग्न हो गया। उसने पत्र के 'विषमस्मै' शब्द के बदले आम के गोंद से 'विषयास्मै' लिखा। पश्चात् पत्र बंद कर वहीं रख दिया। इस प्रकार धृष्टबुद्धि से इसकी रक्षा हुई। बाद में यह पत्र ले कर चन्द्रहास, मदन के पास गया। यह पत्र पढ कर मदन को अत्यंत आनंद हुआ। इधर विषया ने भी देवी की, 'यही पति मुझे प्राप्त हो' इस इच्छा से

उत्कट आराधना की। तदनंतर योग्य मुहूर्त पर मदन ने चन्द्रहास तथा विषया को विवाहबद्ध कर दिया।

इसी समय, धृष्टबुद्धि ने चंदनावती में कुलिंद को बद्ध कर के, प्रजा पर अनन्वित अत्याचार किये। इस प्रकार अत्याचार से प्राप्त धन ले कर वह कुंतलपुर आया। वहाँ वाद्यों का वादन हो रहा था। मदन ने चन्द्रहास को विषया दी, यह वृत्त उसे मालूम हुआ। वह अत्यंत संतप्त हुआ तथा मदन पर क्रोधित हुआ। परंतु बाद में मदन ने उसे समझाया। फिर भी चन्द्रहासवध की कल्पना उसके मन से नहीं हटी।

देवी के दर्शन के लिये जाने की आज्ञा, धृष्टबुद्धि ने चन्द्रहास को दी। वहाँ उसने इसके वध के लिये दो अंत्यज रखे। परंतु इस समय भी धृष्टबुद्धि के दुर्दैव से चन्द्रहास के बदले मदन का वध हुआ। इसके पूर्व ही कौंतल ने अपनी कन्या चंपकमालिनी तथा सब राज्य चन्द्रहास को दिया। पश्चात् वह स्वयं अरण्य में चला गया।

चन्द्रहास राजा बन गया, ऐसा सुन कर धृष्टबुद्धि क्रोध से पागल सा हो गया। चंडिकादर्शन के लिये न जा कर, चन्द्रहास ने कुलप्रथा तोड़ दी, यह सुन कर भी इसे अत्यंत क्रोध आया। वह तुरंत चंड़िकामंदिर में गया। वहाँ मदन मृत पड़ा हुआ था। इस समय कृतकर्म का उसे अत्यंत पश्चात्ताप हुआ। उसका मन कहने लगा, 'वैष्णवों से द्रोह करने का यह दुष्परिणाम है'। अंत में पुत्रशोक अनावर हो कर स्तंभ पर सिर पटक कर उसने प्राण दिये।

यह वृत्त सुन कर चन्द्रहास को अत्यंत दुःख हुआ। अपने मांस का होम कर के इसने देवी को प्रसन्न किया। देवी ने इसे दो वरदान दिये। इन वरों से मदन तथा धृष्टबुद्धि जीवित हो गये।

कुलिंद राजा कौंतल के अत्याचारों से त्रस्त हो कर पत्नी समेत अग्निप्रवेश कर रहा था। इतने में धृष्टबुद्धि ने चन्द्रहास का वृत्त उसे कथन किया। बाद में चन्द्रहास अपने पिता के आज्ञानुसार राज्य करने लगा।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने उसका अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिया था। परंतु श्रीकृष्ण की आज्ञानुसार अर्जुन ने इसके साथ संधि कर ली। इस कारण, चन्द्रहास ने अश्वमेध में काफी सहायता की। चन्द्रहास को विषया से मकराक्ष तथा चंपकमालिनी से पद्माक्षनामक दो पुत्र हुए (जै. अ. ५०-५९)।

चन्द्रहास की राजधानी चंदनावती कौंतलपुर से छः योजन दूर थी (जै. अ. ५२)। चंदनावती बड़ोदा का प्राचीन नाम है। परंतु कुंतलपूर वर्तमान खेड़ा जिला का सरनाल ग्राम है। इसलिये बड़ोदा को चंदनावती नहीं कह सकते। कनिंगहॅम ने लिखा है कि, कुंतलपुर ग्वालियर प्रांत में है।

चन्द्रा—वृषपर्वा दानव की कन्या तथा शर्मिष्ठा की भगिनी।

२. कृष्ण के समय की एक गोपी (पद्म. पा. ७७)।

चन्द्रार्कभीकर—कश्यप तथा खशा का पुत्र।

चन्द्रावली—कृष्ण की प्रियपत्नी (पद्म. पा. ७०)।

चन्द्रावलोक—(सू. इ.) मत्स्य के मत में सहस्राश्व पुत्र। इसका पुत्र तारापीड़।

चन्द्राश्व—(सू. इ.) विष्णु के मत में कुवलयाश्वपुत्र। भागवत, वायु तथा मत्स्य मत में दंड़पुत्र।

चन्द्रोदय—विराट का भाई (म. द्रो. १३३.४०)।

चमस—(स्वा. प्रिय.) ऋषभ को जयंती से उत्पन्न पुत्र। यह महायोगी था। इसने विदेह के यज्ञ में जा कर, उसे ज्ञानोपदेश दिया (भा. ५.४.११; ११. ५.२)।

चंप--चंचु देखिये।

२. (सो. अनु.) मत्स्य तथा विष्णु के मत में पृथुलाक्ष का पुत्र। इसने मालिनीनगर को चंपा नाम दे दिया।

चंपक--कुंड़लनगरी के सुरथ का पुत्र (पद्म. पा. ४९)।

चंपकमालिनी—कौंतल देश के राजा की कन्या तथा चन्द्रहास की पत्नी। इसे पद्माक्ष नामक पुत्र था।

२. रामपुत्र कुश की चंपिका नामक ज्येष्ठपत्नी से हुयीं नौ कन्याओं से एक।

चंपा--चन्द्रसेना नामक राक्षस स्त्री का नामांतर।

चांपिका--रामपुत्र कुश की दो पत्नियों में से ज्येष्ठ। इसे चंपकमलिनी आदि नौ कन्यायें हुई।

चयत्सेन—बृहत्कल्प का इंद्र। गौतमपत्नी अहल्या से इसने अनैतिक संबंध रखा था (स्कन्द. ६.२.५)।

चर—मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

चरक--आयुर्वेदीय 'चरकसंहिता' नामक महान् ग्रंथ का कर्ता। यह विशुद्ध नामक ऋषि का पुत्र तथा अनन्त संज्ञक नाग का अवतार था। संभवतः यह नागवंश का होगा। भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश का वर्णन इसके ग्रंथ में अधिक आता है। इससे यह उसी प्रदेश का रहनेवाला होगा (भावप्रकाश)।

शतपथब्राह्मण में चरक का निर्देश है। शतपथब्राह्मण, चरकसंहिता एवं याज्ञवल्क्यस्मृति में शारीरविषयक

विवेचन प्रायः समान है। चरक तथा याज्ञवल्क्य दोनों ने मानवी अस्थिसंख्या ३६० बताई हैं। याज्ञवल्क्य तथा चरक दोनों एक ही वैशंपायन के शिष्य थे।

चरकसंहिता--उपलब्ध आयुर्वेदीय संहिताओं में 'चरकसंहिता' सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ है। सुश्रुतसंहिता शल्यतंत्र-प्रधान तथा चरकसंहिता कायाचिकित्साप्रधान ग्रंथ है। इस ग्रंथ में चिकित्सा-विज्ञान के मौलिक तत्त्वों का जितना उत्तम विवेचन किया गया है, उतना अन्यत्र नही हैं। इसके अतिरिक्त, इस ग्रंथ में सूत्ररूप में सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, वेदान्त, मीमांसा इन आस्तिक दर्शनों का, चार्वाक आदि नास्तिक दर्शनों का, तथा परोक्ष रूप से व्याकरण आदि वेदांगों का भी संकलन सुन्दरता से किया गया है। इस लिये, इस ग्रंथ को यथार्थता से 'अखिल-शास्त्रविद्याकल्पद्रुम' कहा जा सकता है।

'चरक संहिता' में दी गयीं आयुर्वेदीय विद्यापरंपरा इस प्रकार है। आयुर्वेद सर्वप्रथम ब्रह्मा ने निर्माण किया। ब्रह्मा से प्रजापति ने, प्रजापति से अश्विनीकुमारों ने, उनसे इंद्र ने, तथा इंद्र से भरद्वाज ने आयुर्वेद का अध्ययन किया। फिर भरद्वाज के प्रभाव से दीर्घ, सुखी तथा आरोग्यजीवन प्राप्त कर अन्य ऋषियों में उसका प्रचार किया। तदनन्तर पुनर्वसु आत्रेय ने अग्निवेश, भेड, जतूकर्ण, पराशर, हारीत तथा क्षीरपाणि नामक छः शिष्यों को आयुर्वेद का उपदेश किया। इन छः शिष्यों में सब से अधिक बुद्धिमान् अग्निवेश ने सर्वप्रथम 'अग्निवेशतंत्र' नामक एक संहिता का निर्माण किया (च.सू.अ. १)। इसी ग्रंथ का प्रतिसंस्कार बाद में चरक ने किया, तथा उसका नाम 'चरकसंहिता' पड़ा। उपलब्ध चरकसंहिता के चिकित्सास्थान, के १७ अध्याय तथा १२-१२ अध्याय के कल्पस्थान तथा सिद्धिस्थान चरक ने लिखे मूल संहिता में नहीं थे। उनकी पूर्ति दृढबल ने की (च. चि. ३०)।

बौद्ध त्रिपिटक ग्रंथ में, कुषाणवंशीय राजा कनिष्क का राजवैद्य यों कह कर चरक का निर्देश प्राप्त है। योगसूत्र, कार तथा महाभाष्यकार पतंजलि तथा चरक एक ही थे ऐसी जनश्रुति है। कनिष्क तथा पतंजलि का काल इसापूर्व दूसरी सदी निश्चित है। वह चरक काल होगा।

वैशंपायनशिष्यत्व, एवं पाणिनि तथा शतपथ मे निर्देश के कारण चरककाल भारतीययुद्ध से नजदीक होने का संभव है। पाश्चात्य चिकित्सापद्धति के आचार्य हिपो-क्रिटीस (इ. पू. ६००) ने भी इसके सिद्धान्तों का भाव लिया है, ऐसा कई विद्वानों का मत है। ऐसा हो तो, याज्ञवल्क्यकालीन चरक तथा कनिष्ककालीन चरक ये दो अलग व्यक्तियाँ मानना होगा।

२. कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। इसका सही नाम कपिष्ठल-चरक था। प्रवरमाला में इसका नामोल्लेख है।

३. कृष्णयजुर्वेद की एक उपशाखा। कृष्णयजुर्वेद में 'चरक' नाम धारण करनेवाली बारह शाखाएँ (भेद) हैं। उनके नाम :—चरक, आह्वरक, कठ, प्राच्यकठ, कपिष्ठलकठ, आरायणीय, वारायणीय, वार्तान्तवेय, श्वेताश्वतर, औपमन्यव, पातण्डनीय, तथा मैत्रायणीय। इनमेसे मैत्रायणीय शाखा में मानवादि छः भेद हैं। चरक वाराहसूत्रानुयायी तथा मैत्रायणीय मानवसूत्रानुयायी है (चरणव्यूह)।

कृष्णयजुर्वेद की एक शाखा, कृष्णयजुर्वेद की सामान्य संज्ञा, तथा कृष्णयजुर्वेद पढनेवाले लोग, ये तीन ही अर्थ से 'चरक' नाम का निर्देश उपलब्ध है (श. ब्रा. ३.८.२.२४; ४.१.२.१९; २.३.१५; ४.१.१०; ६.२.२.१-१०; ८.१.३.७; ७.१.१४.२४)।

कृष्ण यजुर्वेद की सर्व शाखाओं के लिये चरक यह नाम प्रयुक्त होता है। तथापि महाराष्ट्र में कृष्णयजुर्वेद की चरक नामक ब्राह्मणज्ञाति उपलब्ध है। वह ज्ञाति मैत्रायणी शाखा की है। उनका सूत्र मानव एवं वाराह है। चरक ब्राह्मणग्रंथ का निर्देश ऋग्वेद के सायणभाष्य में भी आया है (ऋ. ८.६६.१०)।

'चरक' नाम का शब्दशः अर्थ, 'प्रायश्चित्त करने-वाले' ऐसा है। वैशंपायन के लिये जिन्होंने प्रायश्चित्त किया, वे सब वैशंपायनशिष्य चरक नाम से प्रसिद्ध हुए। वैशंपायन को 'चरकाध्वर्यु' कहा गया है (वैशंपायन देखिये)।

पुरुषमेध में, चरक (आचार्य) को बलिप्राणियों में समाविष्ट किया गया है (वा. सं. ३०.१८)। शुक्ल तथा कृष्णयजुर्वेद का परस्परविद्वेष इससे प्रकट होता है।

याज्ञवल्क्य के अनुयायियों के लिये यह नाम प्रयुक्त नहीं होता था। क्यों कि, उन्होंने वैशंपायन के लिये प्रायश्चित नहीं किया (वैशंपायन तथा व्यास देखिये)। श्यामा-यनि (उदीच्य), आसुरि (मध्य) तथा आलंबि (प्राच्य) ये चरकाध्वर्यु तथा तैत्तिरीयों के मुख्य है। वपा तथा पृषदाज्य में प्रथम अभिघार किसे किया जावे, इस विषय में चरकाध्वर्यु का याज्ञवल्क्य से मतभेद है (श. ब्रा. ३.६.३.२४)।

चरंत--(सो. क्षत्र.) वायु के मत में आर्ष्टिषेण-पुत्र।

चरिष्णु--होनेवाले सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (मनु देखिये)।

चर्मवत्--शकुनि का कनिष्ठ भ्राता। भारतीययुद्ध में इरावत् ने इसका वध किया (म. भी. ८६.२४)।

चर्मशिरस्--व्युत्पत्ति बतानेवाला एक आचार्य (नि. ३.१५)।

चर्षणी--वरुण नामक नवम आदित्य की पत्नी। इसे भृगु नामक पुत्र था (भा. ६.१८.४)।

२. अर्यमा आदित्य के मातृका से उत्पन्न पुत्रों का नाम (भा. ६.६.४२)।

चलकुंडल--भृगुकुल का गोत्रकार।

चलि--भृगुकुल का गोत्रकार।

चालिक--भृगुकुल का गोत्रकार।

चलुभि--यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

चाक्र--एक आचार्य। रेवोत्तरस् स्थपति पाटव चाक्र (श. ब्रा. १२.८.१.१७), तथा रेवोत्तरस् पाटव चाक्र स्थपति (श. ब्रा. १२.९.३.१), इन भिन्नभिन्न नामों से इसका उल्लेख प्राप्त है। इसने कौरव्य राजा बाह्लिक प्रातिपीय के विरोध की पर्वाह न करते हुए, दुष्ट-रीतु को, दस पीढियों के बाद, पुनः राजगद्दी पर स्थापित किया।

चाक्रायण--उषस्त का पैतृक नाम।

चाक्षुष--क्षुप देखिये।

२. चक्षु ४. देखिये।

३. विश्वकर्मा का पुत्र। इसे विश्वेदेव तथा साध्वगण नामक दो पुत्र थे।

४. भौत्य मन्वन्तर का देवगण।

५. अग्नि देखिये।

६. चक्षु का पुत्र (भा. ८. ५. ७)। यह षष्ठ मन्वंतर का अधिपति एवं मनु था। चक्षु सर्वतेजस् तथा आकृति का यह पुत्र था। इसे नड्वला नामक पत्नी थी (भा. ४. १३. १५)। भागवत में अन्यत्र, इसके पिता चक्षु को ही मनु माना है।

यह अंग राजा का पुत्र था। यह पुल्ह ऋषि की शरण में गया। पुल्ह ने इसे उपदेश किया। इस उपदेश के अनुसार, इसने विरजा नदी के किनारे बारा साल तक घोर तपस्या की। तपस्या का प्रथम वर्ष वृक्ष के सूखे पत्ते खा कर यह रहा। पश्चात् केवल पानी पी कर तथा आखिर केवल वायुभक्षण कर के इसने तप किया। इस प्रकार बारह वर्ष तक इसने वाग्भव मंत्र का त्रिकाल जप किया। इससे देवी प्रसन्न हो गई। उसने इसे मन्वन्तरा-धिपत्व तथा दस उत्तम पुत्र दिये (दे. भा. १०. ९)।

मार्कंडेय पुराण में इसकी जीवनकथा अलग ढंग से दी गयी है (मार्क. ७३)। पहले जन्म में यह ब्रह्मदेव के चक्षुओं से उत्पन्न हुआ था। अतः इस जन्म में इसे चाक्षुप नाम प्राप्त हो गया। जन्मतः इसे पूर्वजन्म का ज्ञान था। अनमित्र राजा को यह भद्रा से उत्पन्न हुआ। जन्मते ही सात दिन के अंदर इसने हँस दिया। तब भद्रा ने इसे पूछा, 'तुम्हें हँसी कैसे आई?' तब इसने कहा, 'स्वार्थबुद्धि से एक मार्जारी तथा एक जातहारिणी मुझे खाने के लिये घात लगाये बैठी हैं। तुम भी उन्हीं के अनुसार, 'बादमें यह मुझे सुख देगा,' इस स्वार्थबुद्धि से मेरा भरणपोषण कर रही हो।' तब 'मैं स्वार्थी नहीं हूँ,' यह दर्शाने के लिये, भद्रा इसे वहीं छोड कर चली गई। उस समय जातहारिणी इसे उठा कर ले गई।

उसी समय विक्रान्त की पत्नी हैमिनी प्रसूत हुई थी। उसकी शय्या पर जातहारिणी ने इसे रखा। विक्रान्त का पुत्र बोध नामक ब्राह्मण के घर ले जा रखा। बोध ब्राह्मण का पुत्र उसने खा लिया। यह जातहारिणी रोज इसी प्रकार पुत्रों की अदल-बदल कर के, क्रम से आनेवाला तीसरा पुत्र खा लेती थी।

विक्रान्त ने इसका नाम आनंद रखा। व्रतबंध होने के बाद इसे गुरु को सौंपा। गुरु ने इसे माँ को नमस्कार कर के आने के लिये कहा। तब संपूर्ण हकीकत बता कर इसने पूछा, 'मैं किस माता को प्रणाम करूं?'

बाद में स्वयं ही इसने विक्रान्त को कहा, तुम्हारा पुत्र विशाल ग्राम में बोध नामक ब्राह्मण के घर में है। उसे ले आओ। मैं वन में तपश्चर्या करने जा रहा हूँ' (विक्रान्त देखिये)। बाद में यह वन में जा कर तपश्चर्या करने लगा। ब्रह्मदेव ने आ कर इसे तपश्चर्या से परावृत्त किया, तथा कहा, 'तुम छठवें मनु बननेवाले हो, अतएव अपनी कर्तव्यपूर्ति के लिये सिद्ध रहो'। ब्रह्मदेव के कथना-नुसार यह कार्यप्रवण हुआ। उग्र राजा की कन्या विदर्भा से इसने विवाह किया। उससे इसे दस पुत्र हुए (मनु देखिये)।

कूर्मावतार तथा समुद्रमंथन इसीके मन्वन्तर में हुए (भा. ८.५.७-१०)।

चाणक्य—एक विद्वान् ब्राह्मण। शिशुनागवंश का अंतिम राजा महानंदिन् था। इसके बाद शूद्रापुत्र नंद गद्दी पर आया। उसका तथा सुमाल्य आदि अन्य आठ नंदों का संहार इसने किया। मौर्य चंद्रगुप्त को गद्दी पर बैठाया। नंदो का राज्यकाल सौ वर्षों का था। उनमें से अंतिम बारह वर्षों में आठ नंदों का इसने संहार किया (भा. १२.१; विष्णु ४.२२-२४; वायु. ९९. मत्स्य. २७२; ब्रह्मांड. ३.७४)। इसे ही विष्णुगुप्त, कौटिल्य तथा कौटिलेय कहते हैं। इसका 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' एक सुप्रसिद्ध ग्रंथ है। (विष्णुगुप्त देखिये)।

चाणिक्य—एक राजर्षि। शुक्लतीर्थ पर तप करने के कारण, इसे सिद्धि प्राप्त हुई (पद्म. स्. १९.१४)।

चाणूर--युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४.२२)।

२. कंस की सभा का एक मल्ल। कृष्ण धनुर्याग के लिये मथुरा आया, तब उसने इसका वध किया (म. स. परि. १. क्र. २१ पंक्ति. ८४६; भा. १०.४४)।

चातकि--भृगुकुल का गोत्रकार।

चातुर्मास्य--सवितृ नामक पाँचवें आदित्य एवं पृश्नी की संतानों में से एक (भा. ६.१८.१)।

चांद्रमसि—भृगुकुल का गोत्रकार।

चांधनायन--आनंदज का पैतृक नाम (वं. ब्रा. १.१)।

चामुंडा—दुर्गा देखिये।

चांपेय--विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५८. कुं.)।

चायमान--अभ्यावर्तिन् का पैतृक नाम (ऋ. ६.२७. ५;८)।

चारु--कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चारुगुप्त—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

चारुचंद्र—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र।

चारुचित्र--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१९)।

चारुचित्रांगद--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चारुदेष्ण—विष्णु, भागवत, तथा महाभारत के मत में कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र। इसकी बहन चारुमती। यह भोज के हाथों मारा गया। (म. मौ. ४.४३)।

२. मद्रदेशीय राजपुत्र। इसकी पत्नी मंदोदरी।

चारुदेह—कृष्ण तथा रुक्मिणी का पुत्र (भा. १०. ६१.८)।

चारुनेत्रा--एक अप्सरा (म. स. १०.११)।

चारुपद--(सो. पूरु.) भागवत मत में मनस्यु का पुत्र। इसका नाम विष्णु में अभय, मत्स्य में पीतायुध तथा वायु में जयद दिया गया है।

चारुमती--कृष्ण तथा रुक्मिणी की कन्या। यह कृतवर्मन् के पुत्र बलि की भार्या थी।

चारुमत्स्य--विश्वामित्र का एक पुत्र (म. अनु. ७.५९ कुं.)।

चारुवर्मन्—दशार्णाधिपति। इसकी कन्या सुमना। वह दम की पत्नी थी (मार्क. १३०)।

चारुशीर्ष—इन्द्र का प्रियमित्र तथा एक राजर्षि। यह आलंब गोत्रज था। इसलिये इसका आलंबायन नाम प्रचलित हुआ। इसने गोकर्णक्षेत्र में सौ वर्षों तक उग्र तपस्या की। इसे सौ पुत्र हुए (म. अनु. १८.५)।

चारुहासिनी--कौंडिन्यपुर के भीम राजा की पत्नी (गणेश. १.१९.७)। रुक्मांगद इसका पुत्र था।

चार्वाक--नास्तिक जड़वाद का प्रातिनिधिक आचार्य। यह बृहस्पति का शिष्य था। बृहस्पतिसूत्र जडवाद का ग्रंथ है। इस ग्रंथ में केवल प्रत्यक्ष प्रमाण तथा ऐहिक सुख को ही परमश्रेय माना है।

तत्त्वज्ञान—चार्वाकप्रणीत 'नास्तिक जड़वाद' के अनुसार, केवल भौतिक जगत् ही सत्य है। पंचमहाभूतों में से पृथ्वी, जल, वायु तथा अग्नि चार भूत प्रत्यक्ष एवं सत्य है, आकाश अप्रत्यक्ष है। इन चार भूतों के योग से ही विश्व के समस्त पदार्थों की उत्पत्ति है। आत्मा पृथक नहीं है। चार भूतों के योग से ही चैतन्य उत्पन्न हो जाता है। मरने के बाद जीव नाम की कोई वस्तु शेष नहीं रह जाती। चतुर्भूतों का विलय हो जाता है। उनके योग से उत्पन्न चैतन्य नष्ट हो जाता है। अतः परलोक, स्वर्ग, नरक, ये सब कविकल्पनाएँ है। संसार का नियंत्रण करनेवाला राजा ही परमेश्वर है। धर्मकर्म धूर्त पुरोहितों का जीविकासाधन है। भस्मीभूत देह का पुनरागमन नही होता। अतः जबतक जिये सुखपूर्वक जिये। ऋण कर के भी घृतपान करे।

इस मत के प्रतिपादको में पुराण कश्यप, अजितकेशकंबलिन्, पकुध, काच्छायन आदि आचार्य प्रमुख थे।

इस विचारधारा के प्रतिपादन के लिये, चार्वाक के नाम का प्रातिनिधिक रूप से निर्देश किया जाता है। इस मत का प्रतिपादन करनेवाले चार्वाकदर्शनादि कई ग्रंथ भी उपलब्ध है।

एक सामान्य लोकमान्य मत चार्वाक प्रतिपादन करता है। अतः चार्वाकदर्शन को लोकायतदर्शन भी कहते है।

२. दुर्योधन का मित्र। ब्राह्मणों का अवमान करने से इसका नाश हुआ (म. शां. ३९-४०)। इसका पूर्वजन्म भी यहाँ दिया है।

चिकित्वत्--तुषित देवों में से एक।

चिकुर—एक सर्प। यह आर्यक का पुत्र तथा सुमुख का पिता था (म. उ. १०१.२४)।

चिक्लित—लक्ष्मीपुत्र।

चिक्षुर—महिषासुर का सेनापति। चिक्षुराक्ष इसका नामांतर है (महिषासुर देखिये)।

चित्ति—स्वायंभुव मन्वन्तर के अथर्वण ऋषि की भार्या। इसे दध्यच् नामक अश्वमुखी पुत्र था (भा. ४. १.४२)।

चित्र—एक सर्प (म. स. ९.८)।

२. दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। भारतीययुद्ध में प्रतिविंध्य ने इसका वध किया (म. क. १०.३१)।

३. पांडवपक्षीय चैद्य राजा। भारतीय युद्ध में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२.३०)।

५. (सो. वृष्णि.) वृष्णि राजा का पुत्र। इसका नाम भागवत मे चित्ररथ तथा वायु में चित्रक दिया है। वायु में इसे पृश्निपुत्र कहा है।

६. एक राजा। सोभरि के सूक्त में इसका उल्लेख है (ऋ. ८.२१.१७-१८)। यह सोभरि का आश्रयदाता था (ऋ. ८.२१.१८)।

७. द्रविड़ देश का एक राजा। यह त्रिवेणीसंगम पर स्नान करने से मुक्त हुआ (पद्म. उ. १२९; चित्रगुप्त देखिये)।

चित्र गार्ग्यायणि—एक क्षत्रिय नृप। आरुणि ने इससे ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया (कौ. उ. १.१)। चित्र गांग्यायणि इसीका नामान्तर है।

चित्र गौश्रायणि—एक आचार्य (सां. ब्रा. २३. ५)।

चित्रक--(सो. वृष्णि.) वृष्णिपुत्र (चित्र ५. देखिये)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

३. एक राजा। राजसूय यज्ञ में इसने पांडवों की सहायता की थी।

चित्रकुंडल—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रकेतु--स्वायंभुव मन्वन्तर में वसिष्ठ ऋषि तथा ऊर्जा का पुत्र (भा. ४.१.४१)।

२. शूरसेन देश का राजा। इसकी एक करोड़ स्त्रिया थीं पर वे सारी अनपत्य थीं।

एक बार अंगिरस ऋषि इसके पास आये। तब इसकी प्रार्थनानुसार उन्होंने यज्ञ किया। उसमें आदित्य को हविर्भाग देने के बाद, इसकी पटरानी कृतद्युति ने हुतशेष भक्षण किया। इससे उसे पुत्र हुआ। परंतु यह उसकी सौतों को सहन न हो कर, उन्होंने बालक को विष दे दिया। इससे सब शोकाकुल हो गये। इतने में अंगिरस् ऋषि तथा नारद वहाँ प्रकट हुए। 'अनित्य के लिये शोक करना उचित नही है,' ऐसा उपदेश उन्होंने इसे किया। अपने दुख को सम्हाल कर, इसने पुत्र की उत्तरक्रिया की। पश्चात् नारद का उपदेश ले कर, यह तपस्या करने यमुना के किनारे गया।

दूसरे जन्म में यह विद्याधरों का राजा बना। एक बार यह विमान में घूम रहा था। तब इसने देखा कि, शंकर पार्वती को गोद में ले कर, सभा में बैठे हैं। यह देख कर इसने हँस दिया। तब पार्वती ने इसे, 'तुम राक्षस बनोंगे' ऐसा शाप दिया। यह परम विष्णुभक्त था। इस कारण, शाप देने की शक्ति होते हुए भी, इसने पार्वती को उलटा शाप नही दिया। इसने उससे क्षमा माँगी, तथा यह वापस गया। पार्वती के शाप से यह वृत्रासुर बना (भा. ६. १४-१७)।

३. दशरथपुत्र लक्ष्मण के चन्द्रकेतु नामक पुत्र का नामांतर। यह चंद्रकांतनगर में रहता था (भा. ९.११. १२)।

४. (सो. नील.) पांचालदेश का राजा। यह द्रुपद का पुत्र था। द्रोणाचार्य ने इसके भाई वीरकेतु का वध किया। इसलिये क्रोधित हो कर इसने द्रोणाचार्य पर आक्रमण किया। परंतु द्रोणाचार्य ने इसका भी वध किया (म. द्रो. १२२)। इसे सुकेतु नामक पुत्र था (म. आ. १८६; क. ३८.२१)।

५. (सो. वृष्णि.) भागवत मतानुसार देवभाग एवं कंसा का ज्येष्ठ पुत्र।

६. (सो. वृष्णि.) श्रीकृष्ण तथा जांबवती का पुत्र।

७. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९. १२)।

चित्रगंधा—गोकुल की एक गोपी। जाबालि ऋषि ने श्रीकृष्ण की उपासना की थी। इसलिये गोकुल के प्रचंड

नामक ग्वाले के घर उसे चित्रगंधा नामक गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

चित्रगु—श्रीकृष्ण का सत्या से उत्पन्न पुत्र।

चित्रगुप्त—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

२. पूर्वकाल में कायस्थ जाति में मित्र नामक गृहस्थ था। उसकी दो संतानें थीं। चित्र नामक पुत्र, तथा चित्रा नामक पुत्री। मित्र की मृत्यु के बाद, उसकी स्त्री सती हुई। कालांतर में चित्र एवं चित्रा प्रभासक्षेत्र में सूर्य की आराधना करने लगे। इसका ज्ञान देख कर, यमधर्म ने इसको अपने कार्यालय में लेखक नियुक्त किया। यही चित्रगुप्त नाम से प्रसिद्ध हुआ (स्कंद. ७.१.१३९)। इसने धर्म का रहस्य यम को बताया (म. अनु. १९३. १३ कुं.)। चित्रलेखा ने चित्रगुप्त को ऐश्वर्यसंपन्न बनाया। इस ऐश्वर्य को देख, वैवस्वत मन्वन्तर में विचित्रवस्तु निर्माण करनेवाला विश्वकर्मा इसका प्रतिस्पर्धी बन गया (भवि. प्रति. ४.१८)।

चित्रचाप--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भीम ने इसका वध किया।

चित्रज्योति—प्रथम मरुद्गणों में से एक।

चित्रदर्शन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रधर्मन्—क्षत्रिय राजा। भारतीययुद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था।

चित्रध्वज--चंद्रप्रभ नामक राजा का पुत्र। इसने कृष्ण को प्रिय लगनेवाली सुंदरी की उपासना की। इसलिये इसे सुंदर गोपकन्या का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

चित्रबर्ह--गरुडपुत्र।

चित्रबाण—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

चित्रबाहु--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

२. कृष्ण का एक पुत्र। यह महारथी था (भा. १०. ९०.३३)।

चित्रभानु—(सो. वृष्णि.) कृष्ण का नाती। यह महारथी था (भा. १०.९०.३३)।

चित्रमहस् वासिष्ठ--सूक्तद्रष्टा (ऋ.१०.१२२)।

चित्रमुख--एक ऋषि। यह प्रथम वैश्य था। बाद में यह ब्राह्मण बना तथा ब्रह्मर्षि हुआ। इसने अपनी कन्या वसिष्ठपुत्र को दी थी (म. अनु. ५३. १७. कुं.)।

चित्ररथ—एक राजा। यह तुर्वशों का शत्रु था। इन्द्र ने सुदास के लिये सरयू नदी के तट पर अर्ण तथा चित्ररथ का वध किया (ऋ. ४.३०.१८)।

इसके लिये कापेय ने द्विरात्रयज्ञ किया। इस कारण इसके कुल को क्षत्रपतित्व प्राप्त हुआ, एवं अन्य लोग इसके आश्रित हुए। इससे इस कुल के श्रेष्ठत्व का पता चलता है (पं. ब्रा. २०.१२.५)। इसके कुल में ज्येष्ठ राजपुत्र सिंहासन पर बैठता था, एवं उसके भाई उसके अनुचर होते थे (शौनक देखिये)।

२. (सो. पुरु.) कुरु का पुत्र (म. आ. ८९.४४)।

३. मुनि तथा कश्यप के देवगंधर्व पुत्रों में से एक (अंगारपर्ण देखिये)। युधिष्ठिर ने यज्ञ किया, तब इसने उसे सौ अश्व दिये (म. स. ४८.२२)। चतुर्विध आश्रमों से किसी एक आश्रम का मनुष्य, तथा चातुर्वर्ण्यों में से किसी एक वर्ण का मनुष्य, जिन लक्षणों पर से पहचाना जा सकता है, वे लक्षण इसने युधिष्ठिर को बताये। उसी प्रकार उसे तापत्यसंवरणाख्यान बता कर, पांडव तापत्य किस प्रकार हैं, यह समझाया (म. आ. १५९-१६०)।

४. (स्वा. प्रिय.) गय को गयंती से उत्पन्न पुत्रों में से ज्येष्ठपुत्र। इसे ऊर्णा नामक स्त्री से सम्राट नामक पुत्र हुआ (भा. ५.१५.१४)।

५. वीरबाहु का पुत्र। कुश की कन्या हेमा के स्वयंवर के समय, इसने अन्य लोगों पर मोहनास्त्र डाल कर, हेमा का हरण किया। परंतु कन्या को चोरी से ले जाना ठीक नहीं, इसलिये इसने मोहनास्त्र वापस लिया। यह स्वयं नगर के बाहर खडा हुआ। तत्पश्चात् युद्ध हुआ, जिसमें इसने सब को पराजित किया। लव को यह पराजित न कर सका। तब पास ही खडे हो कर, युद्ध का अवलोकन करनेवाला वीरबाहु आगे बढा। उसने लव को मूर्च्छित किया। कुश वीरबाहू को बाँध लाया। राम ने उन्हें बताया कि, यह मेरा मित्र है, तथा उसे छुडाया। बाद में लव की मूर्च्छा उतरने पर, हेमा का चित्ररथ से विवाह करवाया। पश्चात् वीरबाहु को राम ने बडे सम्मान से बिदा किया (आ. रा. राज्य. २.३)।

६. (सू. निमि.) सुपार्श्व जनक का पुत्र। विष्णु मतानुसार इसे संजय कहा गया है। इसका क्षेमधी नामक पुत्र था।

७. (सो. अनु.) राजा रोमपाद का नामांतर। दशरथ इसका मित्र था। यह निपुत्रिकं था, इसलिये दशरथ ने अपनी पुत्री शांता इसे दत्तक दी। इसने शांता ऋष्यशृंग ऋषि को दी। बडी युक्ति से उसे अपनी नगरी में निमंत्रित कर, स्वयं पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाया तथा दशरथ

से भी करने को कहा। इसी कारण दोनों राजाओं को पुत्र हुए। इसे चतुरंग नाम एक पुत्र हुआ (भा. ९.२३. ७–२०)।

८. दशरथ का सारथि।

९. (सो. क्रोष्टु.) भागवत मतानुसार रुशेकु तथा मत्स्य मतानुसार सौम्य का पुत्र (रुशेकु देखिये)।

१०. वृष्णिपुत्र (चित्र ५. देखिये)।

११. मार्तिकावतक देशीय राजा। यह जमदग्नि का समकालीन था। इसकी क्रीड़ा देखते रहने के कारण, रेणुका को नदी से घर वापस आने में देर हुई (म. व. ११६.६; जमदग्नि देखिये;)।

१२. भारतीययुद्ध में पांडवों के पक्ष का एक शैब्य राजा (म. द्रो. २२.५१)।

१३. (सो. नील.) द्रुपदपुत्र। द्रोणाचार्य ने इसका वध किया। इसे वीरकेतु, चित्रवर्मा तथा सुधन्वा नामक तीन भाई थे (म. द्रो. ९८.३७)।

१४. अंग देश का राजा। इसकी स्त्री प्रभावती, ऋषि देवशर्मा की रुचि नामक स्त्री की बहन थी। प्रभावती के घर होनेवाले विवाह समारंभ में अप्सराओं द्वारा नीचे डाले गये पुष्पों में से कुछ पुष्प, रुचि ने अपने बालों में लगाये। यह देख कर प्रभावती ने कहा, 'मुझे भी ऐसे पुष्प दो'। तब रुचि ने यह बात अपने पति को बताई। उसके पति देवशर्मा ने अपने शिष्य विपुल द्वारा ऐसे पुष्प मँगवाये (म. अनु. ७७. कुं.)।

१५. (सो. कुरु. भविष्य.) भविष्य मतानुसार निश्चक्र का पुत्र। मत्स्य मतानुसार भूरिपुत्र, भागवत मतानुसार उक्तपुत्र, वायु तथा विष्णु मतानुसार उष्णपुत्र। इसने एक हजार वर्ष राज्य किया।

चित्ररूप—रुद्रगणों में से एक।

चित्ररेखा—कृष्ण की प्रिय गोपी (पद्म. पा. ७७)।

२. बाणासुर के कुंभांड नामक प्रधान की कन्या। यह उषा की सखी थी। यह चित्रकला में कुशल थी। इसने कृष्ण के नाती अनिरुद्ध को योगसामर्थ्य से उठा लाया था। चित्रलेखा भी इसका नाम है; (भा. १०.६२.१४)।

चित्ररेफ—(स्वा. प्रिय.) मेधातिथि के सात पुत्रों में से एक। इसका खंड इसी के नाम से प्रसिद्ध है (भा. १०.६२.१४)।

चित्रलेखा—एक अप्सरा। पुरूरवस् ने केशिन् नामक दैत्य को मार कर इसे मुक्त किया था।

२. पार्वती की सखी। पूर्वजन्म में यह शतशृंग की कन्या थी। जन्म से ही इसे बकरी का मुख था।

इसके पूर्वजन्म में यह बकरी थी। महीसागर संगम में केवल इसका धड़ गिरा। इसके धड़ ने राजकुल में जन्म लिया। सिर अलग जा गिरने के कारण, वह उसी रूप में जन्मा। बाद में स्तंभतीर्थ पर इसने व्रत, उद्यापन आदि किया। सिर ढूँढ कर उसका भस्म कर संगम में डाला। स्कन्द के द्वारा बाँधा गया मंदिर जीर्ण हो गया था। उसे सोने का बना कर इसने उसका जीर्णोद्धार किया। तब शंकर ने इससे कहा, तुम्हारे 'कुमारी' नाम के कारण, मैं यहाँ "कुमारीश" के नाम से प्रसिद्ध होऊंगा। शंकर ने इसे महाकाल नामक सिद्ध से विवाह करने के लिये कहा। तदनंतर उससे विवाह कर के यह रुद्रलोग में गई। वहाँ पार्वती ने इसे चित्रलेखा नामक अपनी सखी बनायी (स्कन्द. १.२.३.९)।

३. चित्रगुप्त देखिये।

चित्रवती—वसु की पत्नी।

चित्रवर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८–१९)।

२. (सो. नील.) द्रुपदपुत्र पांचाल। भारतीय युद्ध में द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. ९८. ३७–४१)। इसका बंधु वीरकेतु।

३. पांचाल सुचित्र का पुत्र। भारतीययुद्ध में द्रोण ने इसका वध किया (म. क. ४.७८)।

४. सीमंतिनी देखिये।

चित्रवाहन—मणलूर नगर का पांड्य राजा। प्रभंजन इसका मूल (आदि) पुरुष था। मलयध्वज तथा प्रवीर इसके अन्य नाम हैं। अर्जुन तीर्थयात्रा करने जाने लगा। उस समय इसने अपनी कन्या चित्रांगदा, अर्जुन की इच्छानुसार, विवाहविधि से इसे दी। बाद में अर्जुन से उसे बभ्रुवाहन नामक पुत्र हुआ। उसी के हाथ में इसने राज्यसूत्र दिये (म. आ. २०७.१४; स. परि. १. क्र. १५)। भारतीययुद्ध में अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. क. ५६.)।

चित्रवेगिक—एक सर्प (म. आ. ५२.१७)।

चित्रशिखंडिन्—मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, तथा वसिष्ठ इन सप्तर्षियों के समुदाय के लिये यह संज्ञा दी गयी है (भवि. ब्राह्म. २२; म. शां. ३२२.२७)।

चित्रसेन--(सू. दिष्ट.) भागवत मतानुसार निरष्यंत-पुत्र। इसका पुत्र दक्ष।

२. देवसावर्णि मनु का पुत्र।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. क. ४.२२.)।

४. अभिसारपुरी का क्षत्रिय राजा। अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. स. २४.१८)। यह दुर्योधन के पक्ष में था। श्रुतकर्मन् ने भारतीय युद्ध में इसका वध किया (म. क. १०.१४)।

५. पांडवों के पक्ष का राजा। भारतीययुद्ध में समुद्रसेन ने इसका वध किया (म. क. ४.२७)।

६. कर्णपुत्र। भारतीययुद्ध में नकुल के द्वारा यह मारा गया (म. श. ९.१९)।

७. द्रुपद का पुत्र। भारतीय युद्ध में कर्ण ने इसे मारा (म. क. ३२–३७)।

८. जरासंध का सेनापति (म. स. २०.३०)।

९. एक गंधर्व (म. स. ४.३१.)। विश्वावसु नामक गंधर्व का पुत्र। इसकी गणना देवर्षियों में होती है। इसने देवलोक में अर्जुन को गंधर्वविद्या सिखायी (म. व. ४५.६)। इन्द्र के कहने पर, इसने उर्वशी को अर्जुन के पास भेजा था (म. व. परि. १. क्र. ६.)। इंद्र के कहने पर, घोषयात्रा हेतु निकले दुर्योधन का अपमान करने के लिये, यह वहाँ गया (म. व. २२९.२८)। इसके साथ कर्ण का युद्ध हुआ। अंत में कर्ण पराजित हो कर भाग गया। इसने दुर्योधन को बाँध लिया, एवं उसे यह इंद्रलोक ले गया (म. व. २३१)। अंत में अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. व. २३१–२३३)।

१०. एक राजा। इसने अनेक पाप किये थे। एक बार, एक बाघ का पीछा करते हुए, यह एक अरण्य में गया। तब कई अंत्यज स्त्रियों को इसने जन्माष्टमी का व्रत करते हुए देखा। राजा को भूख लगी थी। इसलिये उन स्त्रियों ने, नैवेद्य के लिये जो अन्न लाया था, उसमें से थोड़ा अन्न माँगा। उन्होंने इसे यह व्रत बताया तथा अन्न नहीं दिया। इससे इसकी पापबुद्धि नष्ट हो गई। इसने यह व्रत करने के, बाद इसका उद्धार हुआ (पद्म. ब्र. १३)।

चित्रसेना--एक अप्सरा। कश्यप की प्राधा से उत्पन्न कन्या।

चित्रा--(सो. वसु.) वायुमतानुसार वसुदेव की मदिरा से उत्पन्न पुत्री।

२. सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

३. चित्रगुप्त की स्त्री।

४. वाराणशी के सुवीर नामक वैश्य की स्त्री। इसने एक संन्यासी की सेवा की एवं उसे आदरपूर्वक भोजन कराया था (पद्म. भू. ८६; दिव्यादेवी देखिये)। इस कारण अगले जन्म में यह राजकन्या बन गयी।

५. एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४७ कुं.)।

चित्राकुमारी--(सो. वसु.) वायुमतानुसार वसुदेव की पौरवी से उत्पन्न पुत्री।

चित्राक्ष--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८)।

चित्रांग--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

२. एक योद्धा। राम ने अश्वमेध यज्ञ किया, तथा अश्व की रक्षा के लिये शत्रुघ्न को ससैन्य भेजा। चित्रांग ने उसकी सेना पर बाणवृष्टि की। पुष्कल तथा चित्रांग का घमासान युद्ध हुआ, जिसमें पुष्कल ने चित्रांग का वध किया (पद्म. पा. २७)।

चित्रांगद--एक गंधर्व। इसने शंतनु के पुत्र चित्रांगद का माया के द्वारा वध किया (म. आ. ९५.१०)।

२. सीमंतिनी नामक राजकन्या का पिता (शिव. उमा. २)।

३. (सो. कुरु.) शंतनु का सत्यवती से उत्पन्न पुत्र। शंतनु की मृत्यु के बाद यह गद्दी पर बैठा। परंतु बाद में चित्रांगद गंधर्व ने हिरण्वती नदी के किनारे तीन वर्ष युद्ध कर के इसका वध किया (म. आ. ९५)। इसे संतति न होने के कारण, इसके बाद विचित्रवीर्य राजगद्दी पर बैठा।

४. कलिंगदेशीय राजपूर नगरी का राजा (म. आ. १७७.१९)। दुर्योधन ने इसकी कन्या का हरण किया था (म. शां ४.२)।

५. द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित एक राजा। यह दशार्ण देश का राजा था। अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. आश्व. ८६.६)।

चित्रांगदा--चित्रवाहन राजा की कन्या। अर्जुन की भार्या। इसका पुत्र बभ्रुवाहन (चित्रवाहन देखिये)। इसने पांडवों के राजसूय यज्ञ के लिये करभार दिया था (म. स. परि. १. क्र. १५)। यह बभ्रुवाहनसहित याग के लिये हस्तिनापुर गयी थी (म. आश्व. ८९.२५)। पांडवों के महाप्रस्थान के समय, यह अपने पिता के घर वापस आ गयी।

२. कापोत देखिये।

चित्रायुध—पांचाल राजा। द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित राजाओं में से यह एक था (म. आ. १७७.१०.)। भारतीय युद्ध में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०. ५०)। यह महारथी था (म. उ. १६८.१६)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११.१८)।

चित्राश्व—शाल्व देशाधिपति द्युमत्सेन का पुत्र। सावित्री के पति सत्यवान् का यह नामांतर था। बचपन में इसे अश्व बहुत प्रिय थे। यह मिट्टी के अश्व बनाता था, उनके चित्र खींचता था। अतः इसका नाम चित्राश्व पड़ा (म. व. २७८.१३)।

२. एक राजर्षि (म. अनु. १६५.४९)।

चित्रोपचित्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १११. १८)।

चिदि—(सो. क्रोष्टु.) मत्स्य एवं वायु मत में कौशिक का पुत्र। विष्णु एवं पद्म में इसे चेदि कहा गया है। भागवत में इसे उशिक का पुत्र कहा गया है। इसके देश का नाम चेदि था। इसके वंशज चैद्य या चेदि कहलाते थे (भा. ९.२४.२)।

चिबिलक—(आंध्र. भविष्य.) लंबोदर राजा का पुत्र। विष्णु में इसका नाम दिविलक, तथा मत्स्य में अपीतक दिया है। इसका पुत्र मेधस्वाति।

चिरकारिन् वा **चिरकारिक**—मेधातिथि गौतम के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। इसकी माता अहल्या। गौतम ऋषि को अहल्या के व्यभिचार का पता चला। तब उसने इसे मातृवध करने के लिये कहा। परंतु चिरकारी अपने नाम के अनुसार दीर्घसूत्री था। यह विचार करते बैठा रहा। बाद में, पत्नी का वध करने के लिये कहने पर, गौतम ऋषि को पश्चाताप हुआ। वह पत्नी के पास आया। चिरकारी शस्त्र ले कर मातृवध के लिये खड़ा था। पिता को देखते ही शस्त्र नीचे रख कर, इसने पिता को नमन किया। विचारी होने के कारण, इसके हाथों हत्या नहीं हुई (म. शां. २५.८; स्कंद. १.२.६)।

चिरांतक—गरुडपुत्र (म. उ. ९९.१३)।

चीरवासस्—एक यक्ष (म. स. १०.१७)।

२. दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. आ. ६१. ५६)। चीरवास इसीका पाठभेद है।

चुमुरि—एक अनार्य राजा। यह तथा इसका मित्र धुनि, दभीति ऋषि को सताते थे। दभीति के कहने पर, इंद्र ने इन दोनों का वध किया (ऋ. १.११२.२३)। अन्यत्र, शम्बर, पिप्रु तथा शुष्ण के साथ इन दोनों का इंद्रद्वारा पराभूत होने का, तथा इनके दुर्गो को नष्ट करने का उल्लेख है (ऋ. ६.१८.८)।

चूडाला—शिखिध्वज राजा की भार्या। यह आत्मज्ञानी थी। इसका पति राज्य छोड कर अरण्य में चला गया। उसको आत्मज्ञान का मार्ग दर्शा कर, इसने पुनः राज्य करने के लिये प्रेरित किया (यो. वा.७७-१११)।

चूर्णनाभ—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

चूल भागवित्ति—मधुप पैंग्य का शिष्य (बृ. उ. ६.३.९-१०)। माध्यंदिन आवृत्ति में निर्दिष्ट चूड़ इसीका पाठभेद है।

चूलि—एक ऋषि। यह तपस्या कर रहा था। सोमदा नामक गंधर्वी इसकी सेवा कर रही थी। तपश्चर्या पूर्ण होने के बाद, गंधर्वी ने पुत्रप्राप्ति की इच्छा दर्शाई। इसने एक मानसपुत्र निर्माण कर के उसे दिया। उसका नाम ब्रह्मदत्त (वा. रा. बा. ३३)।

चेकितान—वृष्णिवंशीय क्षत्रिय राजा। यह पांडवों के पक्ष में था (म. स. ४९.९; उ. २५.२; ५६.२;१९६. २३; भी. १९.१४)। यह द्रौपदीस्वयंवर में गया था। भारतीययुद्ध में भी यह था। इसके रथ के अश्व कुछ पीलाहट लिये थे। सुशर्मा के साथ, काफी देर तक, इसका युद्ध हुआ। द्रोण ने इसके सारथी पार्ष्णि को मार डाला (म. द्रो. १२५)। भारतीययुद्ध में यह दुर्योधन के द्वारा मारा गया (म. श. ११.३१)।

२. एक ब्राह्मण। यह कृषि करता था। एक दिन यह खेती का काम कर, पसीने से लथपथ हो घर आया। पसीना न पोंछ कर ही जल्दी में इसने शंकर की पूजा कर, नैवेद्य अर्पण किया। मरणोपरांत यह शिवलोक गया। वीरभद्र ने इसे शाप दिया, 'पसीना न पोंछने के पहले ही शिव पूजन किया, इसलिये तुम्हारे शरीर से हमेशा पसीने की धाराएँ बहती रहेंगी। तुम्हें स्वेदगण नाम मिलेगा' (पद्म. पा. ११७)।

चेदि—(सो. यदु. रोमपाद.) उशिक का पुत्र। यह विदर्भपुत्र रोमपाद के वंश में से एक था। इससे चैद्यनृप पैदा हुएँ। (भा. ९. २४. १-२; चिदि, शिशुपाल तथा कशु चैद्य देखिये)। चेदि देश विंध्य के पश्चिम भाग में था। इस देश के नृप महाभारतादि ग्रंथों में प्रसिद्ध है।

चेदिप—(सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु का पुत्र एवं चेदि देश का राजा (भा. ९. २२. ६)।

चेनातकि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

चेलक शांडिल्यायन—एक ऋषि। एक विशेष उपासना के प्रकार का यह ज्ञाता था (श. ब्रा. १०. ४. ५. ३)।

चैकितानेय—सामविद्या का एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १. ३७. ७; ४२. १; २. ५२)। इसका सही नाम वसिष्ठ चैकितानेय था। साम के बारे में लिखते समय, इसका नामनिर्देश प्राप्त है (बृ. उ. १. ३. २४)। षड्विंश ब्राह्मण (४१), तथा वंशब्राह्मण में भी इसका उल्लेख आया है (२)। बहुत सारे ग्रंथों में इसका निर्देश चैकितानेय नाम से प्राप्त है। शंकराचार्य ने चैकितानेय का अर्थ, चैकितान का पुत्र लगाया है। परन्तु वंशब्राह्मण के भाष्य में, चैकितानेय एक विशेष नाम माना गया है। यह वासिष्ठ आरैहण्य का शिष्य था। ब्रह्मदत्त का यह पैतृक नाम था।

चैकितायन—दाल्भ्य का पैतृक नाम (छां. उ. १. ८. १)

चैत्य--मरुद्गणों के प्रथम गणों में से एक।

चैत्र--यज्ञसेन का पैतृक नाम (का. सं. २१. ४)।

२. स्वारोचिष मन्वंतर के मनु का पुत्र।

चैत्ररथ—चित्ररथ राजा का पुत्र। भारतीययुद्ध में यह पांडवों के पक्ष में था।

चैत्रसेनि--चित्रसेन पांचाल का पुत्र। यह पांडववंशीय था तथा भारतीययुद्ध में पांडवों के पक्ष में था।

चैत्रा—ज्यामघ राजा की भार्या तथा शिबि राजा की कन्या। शैव्या इसीका नामान्तर है।

चैत्रायण—अत्रिकुल का गोत्रकार।

चैत्रियायण—यज्ञसेन का वंशज। इसने छंदोमिद् नामक इष्टकों की चिति से, पशुओं की प्राप्ति कर ली (तै. सं. ५.३.८.१)।

चैद्य—(सो. अज.) मत्स्य मत में मैत्रेयपुत्र।

चैद्योपरिचर वसु--(सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु देखिये।

२. शिशुपाल को चैद्य कहते थे (कशु तथा चिदि देखिये।

चैल—व्यास की सामशिष्यपरंपरा के वायु मतानुसार शृंगीपुत्र का शिष्य।

चैलकि—जीवल का पैतृक नाम (श. ब्रा. २.३.१. ३४)।

चोल--द्रमिड देश का क्षत्रिय राजा (म. स. परि. १. क्र. १५, पंक्ति ५६)।

२. कांतिपुर का राजा। अनंतशयन में बड़े ठाटबाट से इसने श्रीरंग की पूजा की। तदनंतर विष्णुदास नामक ब्राह्मण ने तुलसीपत्र से श्रीरंग की बड़ी भक्ति से पूजा की। एक गरीब ब्राह्मण की यह मजाल देख कर, राजा बड़ा ही क्रोधित हुआ।

पश्चात् इन दोनों ने तय किया कि, जो श्रेष्ठ विष्णुभक्त होगा, वह पहले वैकुंठ जावेगा। तदनंतर इसने दानदक्षिणा, यज्ञयाग आदि प्रारंभ किया। विष्णुदास ने माघ तथा कार्तिक व्रत, तुलसीवन का पोषण, एकादशी, द्वादशाक्षर मंत्र, उसी प्रकार विष्णुस्मरण, पूजन, नृत्य, गायन, तथा जागरण यह क्रम प्रारंभ किया। अन्त में इस भक्ति प्रभाव से विष्णुदास इसके पहले वैकुंठ गया। तब इसे उपरति हो कर, भक्ति छोड़ बाकी सब तुच्छ हैं, यह इसने जान लिया। इसने यज्ञ में छलांग लगाई। परंतु विष्णु ने इसे झेल लिया। विष्णु इसे स्वर्ग ले गया। चोल तथा विष्णुदास को स्वर्ग में सुशील तथा पुण्यशील ये नये नाम प्राप्त हो गये। वे ईश्वर के द्वारपाल बने। राज्यत्याग के बाद इसने अपने भतीजे को गद्दी पर बैठाया। (पद्म. उ. १०८.१०९; स्कंद. २.४.२६-२७)।

चौक्षि--भृगुकुल का गोत्रकार।

चौलि--वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

च्यवतान मारुताश्व—एक राजा। यह मरुताश्व का वंशज था। ध्वन्य, पुरुकुत्स तथा यह संवरण के आश्रयदाता थे (ऋ. ५. ३३. ९)।

च्यवन--(सो. नील) एक राजा। दिवोदास को मित्रेयु नामक एक पुत्र था। च्यवन उसका पुत्र है। इस को बाद में सुदास नामक एक पुत्र हुआ (भा. ९. २२. १)।

२. (सो. ऋक्ष.) भागवत, विष्णु तथा वायु के मत में सुहोत्र का पुत्र, तथा मत्स्य के मत में सुधन्वन् का पुत्र।

३. गोकर्ण नामक शिवावतार का शिष्य।

४. एक धर्मशास्त्रकार। अपरार्क तथा मिताक्षरा ग्रंथों में इसके धर्मशास्त्र का उल्लेख प्राप्त है (अप. १. २०७. ३; २६४-२६५; मिता. ३. ३०; ३. २९२)। निम्नलिखित विषयों पर इसने रचे काफी सूत्र तथा

श्लोकों का उद्धरण, इन दो ग्रंथो में दिया हैं:--(१) गोदान के समय कहे जानेवाले मंत्र, (२) कुत्ता, चण्डाल, प्रेत, चिताधूम, मद्य, मद्यपात्र आदि अस्पर्श वस्तुओं का स्पर्श होने पर किये जानेवाला प्रायश्चित्तविधी, (३) गोवध का प्रायश्चित्तविधी।

भास्करसंहिता के अन्तर्गत जीवदानतंत्र का यह रचयिता है (ब्रह्मवै. २. १६)। हेमाद्रि, माधवाचार्य, एवं मदनपारिजात इन तीन ग्रंथों में इसके आधार लिये गये हैं।

च्यवन भार्गव--एक प्राचीन ऋषि। ऋग्वेद में इसे एक वृद्ध तथा जराक्रान्त व्यक्ति के रूप में दिखाया गया है। इसे अश्वियों ने पुनः युवावस्था तथा शक्ति प्रदान की, तथा इसे अपनी पत्नी के लिये स्वीकार्य तथा कन्याओं का पति बना दिया (ऋ. १.११२.६; १०; ११७.१३; ११८.६; ५.७४.५; ७.६८.६; १०.३९.४)।

ऋग्वेद में सर्वत्र इसे च्यवान कहा गया है। च्यवन नाम से इसका निर्देश, ऋग्वेद के अतिरिक्त अन्य सभी वैदिक ग्रंथों में, निरुक्त में तथा महाकाव्य में मिलता है। (नि. ४.१९)। सर्वानुक्रमणी में इसे भार्गव कहा है (ऋ. १०.१९)। यह भृगु का पुत्र था।

ब्राह्मणों में इसे दाधीच कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.५; पं. ब्रा. १४.६.१०)। ग्राम के बाहर बैठे हुए, भयानक आकृतिवाले, तथा अत्यंत वृद्ध च्यवन को, बालकों ने पत्थर मारे, आदि कथाएँ पुराणों के समान ब्राह्मणों में भी प्राप्य है। यह सामों का द्रष्टा भी था (पं. ब्रा. १३.५.१२; १९.३.६)।

ऋग्वेद में, इसे अश्विनों का मित्र, तथा इंद्र एवं उसका एक उपासक पक्थ तुर्वयाण का विरोधक दर्शाया है (ऋ. १०.६१.१-३)। भृगु का अन्य पुत्र विदन्वत् ने इसे इंद्र के विरुद्ध सहायता की थी (जै. ब्रा. ४.१.५.१३)। आगे चल कर, इंद्र से इसकी संधि हो गई (ऋ. ८.२१.४)।

यह भृगु ऋषि तथा पुलोमा का पुत्र था। पुलोमा के उदर में भृगुवीर्य से गर्भसंभव हुआ। एक बार, भृगु नदी पर स्नान करने गया। तब पुलोम नामक राक्षस ने पुलोमा का हरण किया। कई ग्रंथों में, इस राक्षस का नाम दमन भी दिया गया है (पद्म. पा. १४)।

भय के कारण, मार्ग में ही पुलोमा प्रसूत हो गई। अतः इस पुत्र को च्यवन नाम प्राप्त हो गया। च्यवन के दिव्यतेज से पुलोम जल कर भस्म हो गया। बालक को ले कर पुलोमा भृगुआश्रम में वापस आई (म. आ. ४-६; ६०.४४)।

बडा होने पर, च्यवन वेदवेदांगों में निष्णात बना। पश्चात् यह कठोर तपस्या करने लगा। तपश्चर्या करते समय, इसके शरीर पर एक बड़ा वल्मीक तैय्यार हो गया। इसी वन में, राजा शर्याति अपने परिवार के साथ क्रीड़ा करने आया। उसकी रूपवती कन्या सुकन्या अपनी सखियों के साथ घूमते घूमते, उस वल्मीक के पास आई। उसने देखा कि, वल्मीक के अंदर कुछ चमक रहा है। चमकनेवाला पदार्थ क्या है, यह देखने के लिये उसने कांटों से उसे टोका। इससे च्यवन ऋषि की आँखें फूट गई। अत्यंत संतप्त हो कर, इसने संपूर्णसेना समेत राजा का मलमूत्रावरोध कर दिया। राजा हाथ जोड़ कर इसकी शरण में आया। च्यवन ने कहा, 'तुम्हारी कन्या मुझे दो'। राजा ने यह मान्य किया। सुकन्या का वृद्ध च्यवन से विवाह हो गया (म. आ. ९८)।

बाद में उसी वन में, सुकन्या अपने पतिसमवेत वास करने लगी। एक दिन अश्विनीकुमारों ने उसे देखा। उसने सुकन्या से कहा, 'तुम हमारे साथ चलो'। तब इसने अपने पातिव्रत्य से अश्वियों को आश्चर्यचकित कर दिया। सुकन्या ने कहा, 'मेरे पति को यौवन प्रदान करो'। अश्विनीकुमारों के प्रसाद से च्यवन तरुण हुआ। एक तालाब में डुबकी लगाने के कारण, च्यवन पुनः युवा हो गया, ऐसी कथा ब्राह्मणों में दी गयी है (श. ब्रा. ४.१.५.१)।

अश्वियों का इस उपकार का बदला चुकाने के लिये, च्यवन अपने श्वसुर के गृह में गया। शर्याति राजा के हाथ से एक विशाल यज्ञ करवा कर, अश्विनीकुमारों को यह हविर्भाग देने लगा। परंतु अश्वियों को हविर्भाग मिलना, इंद्र को अच्छा न लगा। उसने इसे मारने के लिये वज्र उठाया। च्यवन ने इन्द्र के नाशार्थ मद नामक राक्षस उत्पन्न किया। उसे देखते ही भयभीत हो कर, इन्द्र इसे शरण आया। इसी समय से, अश्विनीकुमारों को यज्ञ में हविर्भाग मिलने लगा (म. व. १२१-१२५; अनु. २६१ कुं; भा. ९.३; दे. भा. ७.३-७)।

एक बार प्रयागक्षेत्र में च्यवन ने उदवासव्रत का प्रारंभ किया। रातदिन यह जल में जा कर बैठता था। सब मछलियाँ इसके आसपास एकत्रित हो जाती थीं। एक बार कुछ मछुओं ने मछलियाँ पकड़ने के लिये जाल लगाया। तब उसमें मछलियों के साथ, च्यवन ऋषि भी

पकडा गया। मछुएँ घबरा कर नहुष राजा के पास गये। राजा ने ऋषि की पूजा की। कहा, 'आपको जो चाहिये आप मुझे से माँग लें'। तब च्यवन ने कहा, 'मेरी योग्य कीमत आँक कर इन मछुओं को दे दे'। अपना संपूर्ण राज्य देने के लिये राजा तैय्यार हो गया। फिर भी च्यवन की योग्य कीमत आँकी नहीं गई। तब गविजात नामक ऋषि ने राजा को इसे गोधन देने के लिये कहा। राजा द्वारा गायें दी जाने पर, यह अत्यंत संतुष्ट हुआ। पश्चात् इसने नहुष को गोधन का महत्व समझाया (म. अनु. ८५-८७)।

कुशिकवंश के कारण, अपने वंश में भिन्नजातित्व का दोष उत्पन्न होगा, यह इसने तपःसामर्थ्य से जान लिया। उस वंश का नाश करने के उद्देश्य से, यह कुशिक राजा के पास गया। उससे कहा, 'हे राजा! मैं तपश्चर्या करना चाहता हूँ। इसलिये तुम अपनी भार्यासमवेत अहर्निश मेरी सेवा करो'। राजा ने ऋषि का यह कहना मान्य किया। तदनंतर राजा को इसने भोजन लाने को कहा। भोजन लाते ही, च्यवन ने उस भोजन को जला कर भस्म कर दिया। तदनंतर यह राजपर्यंक पर निद्राधीन हो गया। राजा अपनी भार्या सहवर्तमान इसके पैर दबाने लगा। इसप्रकार एक ही करवट पर, यह २१ दिन तक सोया रहा। तब तक बिना कुछ खाये पीये, राजा इसके पैर दबाते बैठ गया।

२१ दिन के बाद नींद से जाग्रत हो कर, यह यकायक भागने लगा। क्षण में यह दिखता था, क्षण में अदृश्य हो जाता था। ऐसी स्थिति में भी, राजा इसके पीछे भागता रहा। यह अदृश्य होते ही, राजा राजमहल में आया। उसने देखा, च्यवन सो रहा है।

कुछ समय के बाद, यह जाग्रत हुआ। किंतु दूसरी करवट ले कर पुनः २१ दिन तक सोया। बाद में जाग्रत होते ही, च्यवन ने रथ को घोड़ों के बदले एक ओर कुशिक को तथा दूसरी ओर उसकी पत्नी को जोत लिया। स्वयं हाथ में चाबुक ले कर, उन्हें मारते हुए यह अरण्य से रथ हाँकने लगा। यह सब च्यवन ने इसी उद्देश्य से किया कि, त्रस्त हो कर कुशिक उसका तिरस्कार करें। तब इस निमित्त को ले कर, यह उसे जला कर भस्म कर सके। इसी उद्देश्य से इसने कई प्रकारों से कुशिक को अत्यधिक कष्ट दिये। पर कुछ फायदा नहीं हुआ। अन्त में प्रसन्न हो कर इसने उस राजा को वर दिया, 'तुम्हारे कुल में ब्राह्मण उत्पन्न होगा' (म. अनु. ८७-९०)।

इसे मनुपुत्री आरुषी से और्व नामक एक पुत्र हुआ (म. आ. ४-६)। इसका आश्रम गया में था (वायु. १०८.७६)। च्यवन एक उत्कृष्ट वक्ता था, तथा सप्तर्षियों में से एक था (म. अनु. ८५)। इसे प्रमति नामक एक पुत्र था (म. आ. ८.२। यह भृगुगोत्र का एक प्रवर भी था। यह ऋषि तथा मंत्रकार था (भार्गव देखिये)। इसे कांचन ऐसा नामांतर था (वा. रा. उ. ६६.१७)।

च्यवान--च्यवन भार्गव ऋषि का नामांतर। ऋग्वेद में सर्वत्र यही रूप निर्दिष्ट है (च्यवन भार्गव देखिये)।

छ

छगल--दंडीमुंडीश्वर नामक शिवावतार का शिष्य।

छगलिन्--कृष्णयजुर्वेद का एक शाखाप्रवर्तक। वैशंपायनशिष्य कलापिन् का यह शिष्य था। पाणिनि ने इसका निर्देश किया है (पा. सू. ४.३.१०९)। चार अप्रसिद्ध उपनिषदों में छागलेयोपनिषद् प्रसिद्ध हुआ हैं (डॉ. श्री. कृ. बेलवलकर स. १९२५)। 'छगलिन् प्रोक्त' ब्राह्मण ग्रंथ अध्ययन करनेवाले को छागलेयिन कहते थे।

छंदोगमाहकि--ब्रह्मवृद्धि का पैतृक नाम।

छंदोगेय--अत्रिकुल का गोत्रकार।

छंदोदेव--मतंग को इंद्र की कृपा से मिला हुआ नाम (मतंग देखिये)।

छाया--संज्ञा को सूर्य का तेज सहन नहीं होता था, इसलिये उसने अपनी ही प्रतिकृतिस्वरूप यह स्त्री निर्माण कीं। अपने पति की सेवा तथा बच्चों के लालन-पालन करने के लिये इसे रखा। तदनंतर इसे तीन पुत्र हुए। इससे इसमें सापत्नभाव बढ़ गया। यह श्राद्धदेव,

यम तथा यमुना इन संज्ञापुत्रों को सापत्नभाव से देखने लगी। यम को यह सहन नहीं हुआ। उसने छाया पर लत्ताप्रहार किया। तब इसने उसे शाप दिया। इस शाप से, सूर्य ने पहचान लिया कि, यह कौन है। तब वह संज्ञा के पास चला गया (विवस्वत्, संज्ञा, तथा यम देखिये)।

ज

जघन--धूम्राक्ष का पुत्र (गणेश. २.३१.१२)।

जंगारि--विश्वामित्रकुल का गोत्रकार।

जंघ--रावण के पक्ष का एक राक्षस।

जंघाबंधु--युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१४)।

जंघारि--विश्वामित्र का पुत्र।

जटायु--गरुड जाति का एक मानव। विनता-पुत्र अरुण को श्येनी से उत्पन्न दो पुत्रों में से यह एक था (म. आ. ६०.६७; वा. रा. अर. १४.३; ३३)। यह एक राजा था, जो योग्य रीति से अपनी प्रजा का पालन करता था (वा. रा. अर. ५०. २०)। राम ने जब इसे सर्वप्रथम देखा, तब उसे लगा, यह कोई राक्षस होगा। आगे चल कर, राम एवं सीता को यह गृध्रस्वरूप में दिखाई दिया। राम ने पूछा, 'तुम कौन हो?' अपना परिचय दे कर इसने कहा, 'रामलक्ष्मण जब बाहर जायेंगे तब मैं सीता की रक्षा करूँगा' (वा. रा. अर. १४.३; ३३-३४; ५०)। यह हितचिंतक है, यों बाद में प्रतीत होने लगा।

यह दशरथ का मित्र था (म.व.२६३.१;वा. रा. अर. १४.३)। अपनी स्नुषा के समान सीता को, रावण की गोद में देख कर इसे अत्यंत क्रोध आया। यह रावण से युद्ध करने के लिये तैय्यार हो गया। रावण सीता को ले जा रहा था, तब इसने उसे उपदेश किया। उपदेश में रावण को वेदतत्त्व बता कर, परस्त्रीअपहार के लिये इसने उसका निषेध किया (वा. रा. अर. ५०)। इसने रावण से कहा, 'तुम चुपचाप सीता को छोड दो, अन्यथा परिणाम अच्छा नहीं होगा'। परंतु रावण ने यह नहीं माना। तब दोनों में युद्ध छिड़का। इसने अपने तीक्ष्ण नखों से, तथा चोंच से रावण को घायल किया। रक्त से लथपथ कर दिया। रावण के द्वारा छोड़े गये सब बाण इसने पंखों से उड़ा दिये। अंत में रावण ने इसके पंख तोड़ कर, इसे मृतप्राय कर दिया।

इस प्रकार, जटायु को हतबल कर, सीता को रावण ले गया। सीता को खोजते हुए रामलक्ष्मण वहाँ आये। सीता का हरण रावण ने किया, यह वृत्त जटायु ने राम को बताया। इसने कहा, 'चूँकि सीता का हरण विन्द मुहूर्त पर किया गया है, अतएव वह तुम्हें पुनः अवश्य प्राप्त होगी (वा. रा. आर. ६८.१२)'। राम ने इसे पूज्य मान कर आलिंगन किया (वा. रा. अर. ६७. २३; ६८.२६-३६)। तदनंतर इसने प्राणत्याग किया। रामलक्ष्मण ने इसे पूज्य मान कर इसकी उत्तरक्रिया की। इस समय इसकी आयु साठ हजार वर्षों की थी (म. व. २७९; आ. रा. सार. ७; वा. रा. अर. ५०-५२; ६८.२६-३६)।

जटायु की मृत्युवार्ता ज्ञात होते ही, अंगदादि वानरों की सहायता से, संपाति वहाँ आया। उसने जटायु का तर्पण किया (वा. रा. कि. ५८.३३-४५)। संपाति इसका बड़ा भाई था (वा.रा. कि.५३.२३;म. आ. ६५)। इसे काक, गृध्र तथा कर्णिक नामक तीन पुत्र थे (ब्रह्मांड ३.७-४४८)। स्वयं जटायु तथा संपाति में, वे मनुष्यों से भिन्न है, ऐसी भावना नहीं थी (वा. रा. कि. ५६.४)।

जटासुर—एक राक्षस। वनवास के समय पांडव एक बार बदरिकाश्रम आये। तब ब्राह्मण के वेश में यह राक्षस उनके पास रह कर, अपने तप की प्रशंसा करता रहा। पांडवों के शस्त्रास्त्र तथा द्रौपदी का हरण करने का यह सोचता था। परंतु शक्तिशाली भीम के सामने इसकी डाल नही गलती थी। भीम पहचान गया था कि, यह अवश्य कोई राक्षस है।

एक दिन भीम अरण्य में गया था। अर्जुन इंद्रलोक गया था। यह अवसर देख, द्रौपदी, धर्म, नकुल

तथा सहदेव को ले कर, यह भागने लगा। सहदेव ने अपने आप को मुक्त कर लिया। धर्मराज ने इसे बहुत उपदेश दिया परंतु इसने एक न सुनी। इतने में गदाधारी भीम वहाँ आ पहुँचा। उसने इससे मल्लयुद्ध कर के इसका वध किया (म. व. १५४)। इसे अलंबुस नामक पुत्र था (म. द्रो. १४९.५-९)।

२. मद्राधिपति। धर्मराज की मयसभा में यह एक सदस्य था (म. स. ४.२१.)।

जटिन्—पातालस्थित एक नाग। रावण ने इसपर विजय प्राप्त की थी (वा. रा. यु. ७)।

जटिल—एक ब्रह्मचारी। शंकर ने जटिल नामक ब्रह्मचारी का रूप धारण किया था।

दक्षयज्ञ में सती के देहत्याग के बाद, हिमालय को मैना से पार्वती उत्पन्न हुई। वह शंकर के लिये तपस्या कर रही थी। 'जटिल ब्रह्मचारी' का वेष धारण कर शंकर वहाँ आया। इसने शंकर की बहुत निंदा की। यह और भी निंदा करेगा, यह सोच कर पार्वती ने अपनी सखी विजया के द्वारा, इसको भगाने की सोची। इतनेमें शंकर अपने असली रूप सें प्रकट हुआ। कुमारसंभव के पंचम सर्ग से इस कथा का काफी साम्य है। इसे ब्रह्मचारिन् भी कहा गया है (शिव. शत. ८४)।

जटिला—गौतम के वंश की एक स्त्री। सप्तर्षि इसके पति थे (म. अ. १८८. १४)।

जटीमालिन्—एक शिवावतार। वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वंतर में उन्नीसवीं चौखट में हिमालय पर यह शिवावतार हुआ। वहाँ, इसके क्रमानुसार हिरण्यनामन्, कौशल्य, लोकाक्षिन्, प्रधिमि ये चार पुत्र हुएँ (शिव. शत. ५)।

जड—जनस्थान का कौशिकगोत्री दुराचारी ब्राह्मण। यह एक बार व्यापार करने गया, तब चोरों ने इसके प्राण ले लिये। पूर्वजन्म के पापों के कारण, यह पिशाच हुआ। इसका पुत्र अत्यंत सदाचारी था। पिता का उत्तरकार्य करने के लिये वह काशी जाने निकला। वह उसी स्थान पर आया, जहाँ उसका पिता झाड पर पिशाचअवस्था में रहता था। उसने गीता के तीसरे अध्याय का पाठ किया। उसे श्रवण कर, यह मुक्त हुआ (पद्म. उ. १७७)। मार्कंडेय पुराण में भी एक जड़ का उल्लेख है।

जतृण—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

जन—(सो. पूरु.) अजमीढ एवं केशिनी का पुत्र (म. आ. ८९. २८)।

जन शार्कराक्ष्य—एक ऋषि। अश्वपति कैकेय, अरुण औपवेशि तथा उसके पुत्र उद्दालक आरुणि का यह समकालीन रहा होगा। उद्दालक आरुणि के पास, यह तत्वज्ञान सीखने के लिये गया था (श. ब्रा. १०. ६. १. १; छां. उ. ५. ११. १; १५. १)।

जनक—निमि या विदेहवंश का कुलनाम। इनकी वंशावलि भी पुराणों में कई स्थानों पर मिलती है। (ब्रह्मांड. ३. ६४; वायु. ८९; भा. ९. १३; विष्णु. ४. ४; गरुड. १. १३८)। सूर्यवंशीय इक्ष्वाकुपुत्र निमि से निकली हुई यह एक वंशशाखा है। यह वंशावलि अनेक स्थानों पर मिलती है, फिर भी उनमें साम्य नहीं है। विशेषतः भागवत आदि पुराणों में कुछ व्यक्ति अधिक जोड़ दिये गये हैं। विदेहवंश का द्वितीय पुरुष मिथिजनक था। इसीने मिथिलानगरी स्थापित की। इसीसे 'जनक' यह सामान्यनाम चल पड़ा। जनक नाम से इस वंश के लोगों का उल्लेख करने की रीति है (श. ब्रा. ११. ३. १. २; ४. ३. २०; ६. २. १; बृ. उ. ३. १. १; ४.१.१; २.१; जै. ब्रा. १.१९.२; कौ. उ. ४.१)। याज्ञवल्क्य वाजसनेय तथा श्वेतकेतु आरुणेय से इसकी अनेक विषयों पर चर्चा हुई थी। वैदिक वाङ्मय में भी ब्रह्मवेत्ता के रूप में, महापुरुष का स्थान इसे प्राप्त है (तै. ब्रा. ३. १०. ९. ९)। इसने सप्तरात्र नामक याग किया (सां. श्रौ. १६. २. ७. ७)। वैदेह जनक को सावित्राग्निविद्या का उपदेश अहोरात्र के अभिमानी देवों ने दिया (तै. ब्रा. ३. १०. ९. २१; भरद्वाज देखिये)। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था। उस समय इसका नाम दैवराति था। वंशावलि के अनुसार, राम का श्वशुर सीरध्वज जनक से, यह जनक कई पीढियों बाद का है।

२. एक राजा। भागवत तथा विष्णु मत में यह निमिपुत्र तथा वायु मतानुसार नेमिपुत्र था। वसिष्ठ के शाप के कारण, निमि का देहपात हुआ। देवताओं के कहने पर ब्राह्मणों ने उसके देह का मंथन किया। उसमें से यह उत्पन्न हुआ। इसे जनक, विदेह मिथिल आदि अन्य नाम थे। इसने मिथिला नगरी की स्थापना की। इसका पुत्र उदावसु। इसके वंशजों को जनक नाम से ही संबोधित किया जाता है (भा. ९. १३. १३; ६. ३. २०)। पंचशिख के साथ इसका अध्यात्मविषय पर संवाद, प्रजापालन करने के

लिये क्षत्रिय के आवश्यक कार्य, इस विषय पर पत्नी से हुआ संभाषण, तथा अश्मन् नामक ब्राह्मण से संवाद आदि प्रसिद्ध हैं (म. शां. १८; २८; ३०७)। इसने अपने योद्धाओं को स्वर्ग तथा नरक दिखाये थे (म. शां. १००)।

आगे चल कर इच्छामरणी जनक प्राणत्याग कर, स्वर्ग जा रहा था। मार्ग में इसे यमलोक मिला। वहाँ अनेक जीव नाना यातनाएँ पाते हुए इसने देखे। पुण्यवान् जनक को स्पर्श करती हुई हवा, उन पापी जीवों को जा लगी। इस कारण उनके सब दुःखों का नाश हुआ। उन्होंने जनक को वहीं रहने का आग्रह किया। तदुपरांत यम ने इसे नरकलोक की सारी जानकारी दी, एवं इसे स्वर्ग जाने को कहा। जनक ने उसकी एक न सुनी। यम के कहने पर, अपना सारा पुण्य दुखियों को बाँट कर, सारे पापियों का इसने उद्धार किया (पद्म. पा. ३०)।

३. विदेह देश का राजा। इसकी चार स्त्रियाँ थीं। उनमें सुमति पटरानी थी। बहुत वर्षों तक पुत्रसंतान न होने के कारण, इसने, पुत्रकामेष्टि यज्ञ किया। तब दो पुत्र तथा सीता, नामक कन्या इसे पृथ्वी से प्राप्त हुए। पृथ्वी के कथनानुसार इसने, १६ वर्षों तक नरकासुर का पालन किया। त्रेतायुग के पूर्वार्ध की यह घटना है (कालि. ३८)।

नारद ने अमंगल ब्राह्मण का रूप धारण कर इसका गर्वपरिहार किया (गणेश. १. ६५)। जनक के संबंध में बहुत सी कथाएँ हैं। वे किसी एक जनक की न हो कर निमिवंश म उत्पन्न अन्यान्य लोगों की हैं। उदाहरणार्थ—याज्ञवल्क्य के समय दैवराति जनक था। उसके बाद काफी वर्षों के पश्चात्, राम का श्वसुर सीरध्वज जनक हुआ। नरकासुर का पालन करनेवाला जनक, कृष्णसमकालीन बहुलाश्व होगा (दैवराति, बहुलाश्व तथा सीरध्वज देखिये)।

४. भास्कर संहिता के 'वैद्यसंदेहभजनं' तंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २. १६.१५)।

५. (प्रद्योत. भविष्य.) विशाखयूप का पुत्र।

जनदेव--जनकवंशीय ज्ञानी राजा। इसके पास सौ आचार्य थे, जिनसे इसने आत्मप्राप्ति का उपाय पूछा। इसका समाधान कोई भी न कर सका। एक बार पंचशिख इसके पास आया। इसने वही प्रश्न उससे पूछा। उसने इसे मोक्ष का मार्ग बताया (म. शां. २११)। वंशावलि में इसका नाम नहीं मिलता (२. धर्मध्वज देखिये)।

जनपादप--विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

जनमेजय—(सू. दिष्ट.) भागवत मत में सुमतिपुत्र। विष्णु एवं वायु मत में सोमदत्तपुत्र।

२. (सो. पूरु.) पूरु का पुत्र। इसे प्राचीन्वत् नामक पुत्र था। इसकी पत्नी मागधी सुनंदा।

३. (सो. पूरु.) दुष्यन्तपुत्र (म. आ. ७८.१८)।

४. (सो. अनु.) विष्णु, वायु तथा मत्स्य मत में पुरंजयपुत्र। भागवत मत में संजयपुत्र।

५. (सो. अनु.) मत्स्य मत में बृहद्रथपुत्र तथा वायु मत में दृढरथपुत्र।

६. (सो. अज.) मल्लाट का पुत्र (वायु. ९९.१८२; मत्स्य, ४९. ५९)। इसके लिये उग्रायुध कार्ति ने, नीपों का संहार किया। अंत में उग्रायुध ने जनमेजय का भी वध किया। अतएव इसे 'कुलपांसन' कहते है (म. उ. ७२.१२)। कुलपांसन का शब्दशः अर्थ, दुर्वर्तन से अपने कुल का नाश करनेवाले लोग, यों होता है।

अठारह कुलघातक लोगों के नाम उपलब्ध है (म. उ. ७२.१२)।

जनमेजय कौतस्त—कुतस्त का पुत्र। अरिमेजय-प्रथम इसका भाई था। ये दोनों भाई पंचविंश ब्राह्मण के सर्पसत्र में अध्वर्यु तथा प्रतिप्रस्थातृ थे।

दूसरे जनमेजय परिक्षित के द्वारा किया गया सर्पसत्र, तक्षशिला समीप के सर्पलोगों का संहार था। पंचविंश ब्राह्मण का सर्पसत्र सर्पलोगों ने अपने स्थैर्य के लिये किया था (२५. १५.३)।

पंचविंश ब्राह्मण के सर्पसत्र में, कौनसा कार्य किसने किया इसका इस प्रकार निर्देश है:—१. जर्वर (गृहपति), २. धृतराष्ट्र ऐरावत (ब्रह्मा), ३. पृथुश्रवस् दौरेश्रवस (उद्गाता), ४. ग्लाव (प्रस्तोतृ), ५. अजग (प्रतिहर्तृ), ६. दत्त तापस (होतृ), ७. शितिपृष्ठ (मैत्रावरुण), ८. तक्षक वैशालेय (ब्राह्मणाच्छंसी), ९. शिख (नेष्ट्र), १०. अनुशिख (पोतृ), ११. अरुण आट (अच्छावाक), १२. तिमिर्घ दौरेश्रुत (अग्नीध्), १३. कौतस्त अरिमेजय (अध्वर्यु), १४. जनमेजय (प्रतिप्रस्थातृ), १५. अर्बुद (ग्रावस्तुत्), १६. अजिर (सुब्रह्मण्य), १७. चक्र (उन्नेतृ), १८. पिंशग, १९. षंड (अभिगर), २०. कुषंड (अपगर)।

इन दोनों सर्प सत्रों का नाम एक है, तथापि इनका परस्पर संबंध नहीं है। एक सर्पों के नाश के लिये है, तथा दूसरा उनकी सुस्थिति के लिये है (पं. ब्रा. २५.१५)। दूसरा सत्र किसने किया, बता नहीं सकते।

जनमेजय पारीक्षित—सो. (पूरु.) कुरुपुत्र परीक्षित् का पुत्र। इसको जनमेजय पारीक्षित-प्रथम कहते है।

वेदों में इसे पारीक्षित जनमेजय कहा है (श. ब्रा. १३. ५.४.१; ऐ. ब्रा. ७.३४; ८. ११; २१; सां. श्रौ. १६. ८. २७)। इसकी राजधानी का नाम आसन्दीवत् (ऐ. ब्रा. ८.२१; श. ब्रा. १३.५.४.२)। इसके बंधुओं के नाम उग्रसेन, भीमसेन तथा श्रुतसेन थे। इसने ब्रह्महत्या की थी। पापक्षालनार्थ अश्वमेधयज्ञ भी किया था। उसमें पुरोहित इन्द्रोत दैवाप शौनक था (श. ब्रा. १३.५.३.५) तुरक्कावषेय का भी नाम प्राप्य है (ऐ. ब्रा. ८.२१)।

इसका अग्नियों के साथ, तत्त्वज्ञानविषय में संवाद हुआ था (गो. ब्रा. १.२.५)।

मणिमती से इसे सुरथ तथा मतिमन् ये दो और पुत्र थे (ह. वं. १. ३२. १०२)। इसके भाइयों का नाम भी कई जगह आया है (श. ब्रा. १३.५.४.२; अग्नि. २७८. ३२; गरुड. १. १४०)।

कठोर वचन से संबोधन करने के कारण, गार्ग्यपुत्र का, इसने वध किया। ब्रह्महत्या के कारण, इसे राज्य-त्याग करना पडा। शरीर में दुर्गंधि भी उत्पन्न हुई। इसी कारण लोहगंध जनमेजय तथा दुर्बुद्धि नाम से यह ख्यात हुआ। इन्द्रोत दैवाप शौनक ने अश्वमेध करा के इसे ब्रह्महत्यापातक से मुक्त किया। फिर यह राज्य नहीं पा सका।

सुरथ को वह राज्यपद मिला। ययाति को रुद्र से दिव्य रथ प्राप्त हुआ था। इस ब्रह्महत्या के कारण, पूरुकुल मे वंशपरंपरा से आया हुआ, वह रथ वसुचैद्य को दिया गया। वहाँसे बृहद्रथ, जरासंध, भीम तथा अंत में कृष्ण के पास आया। कृष्ण निर्याण के बाद वह रथ अदृश्य हुआ (वायु. ९३.२१-२७; ब्रह्मांड. ३. ६८.१७-२८; ह. वं. १.३०.७-१६; ब्रह्म. १२.७-१७)।

'अबुद्धिपूर्वक किया गया पाप प्रायश्चित्त से नष्ट हो जाता है,' इस संदर्भ में भीष्म ने युधिष्ठिर को जनमेजय की यह पुरानी कथा बतायी है (म. शां. १४६-१४८)।

२. (सो. कुरु.) यह द्वितीय जनमेजय पारीक्षित है। 'जनमेजय' का अर्थ है, 'लोगों पर धाक जमानेवाला'। अर्जुन-अभिमन्यु-परीक्षित्-जनमेजय इस क्रम से यह वंश है। परीक्षित् ने मातुलकन्या (उत्तर की कन्या) से विवाह किया था। उससे, जनमेजय, भीमसेन, श्रुतसेन तथा उग्रसेन नामक चार पुत्र हुएँ। तक्षक ने परीक्षित् की हत्या की। उस समय उम्र में जनमेजय अत्यंत छोटा था। फिर भी हस्तिनापुर के सिंहासन पर इसे ही अभिषेक हुआ। इसने प्रजा का पुत्रवत् पालन किया। इसका पुत्र प्राचीन्वत् (म. आ. ४०)।

इसकी पत्नी, काशी के सुवर्णराजा की कन्या वपुष्टमा (काश्या) थी।

एक बार यह कुरुक्षेत्र में दीर्घसत्र कर रहा था। सार-मेय नामक श्वान वहाँ आया। इसने श्वान को मार भगाया। उसकी माँ देवशुनी सरमा पुत्र को ले कर वहाँ आयी। उसने अपने निरपराध पुत्रों की ताडना का कारण पूछा। इसे उसने पश्चात् शाप दिया, 'तुम्हें दैवी विघ्न आवेगा'।

तक्षक से प्रतिशोध लेने के लिये, इसने तक्षशिला पर आक्रमण किया। उसे जीत कर ही यह हस्तिनापुर लौटा। उस समय उत्तंक ने इसे सर्पसत्र की मंत्रणा दी। सब सर्पों का नाश करने का निश्चित हुआ। यज्ञमंडप सजा कर सर्पसत्र प्रारंभ हुआ। इतने में स्थपति (शिल्पी) नामक व्यक्ति वहाँ आया। उसने कहा, 'एक ब्राह्मण तुम्हारे यज्ञ में विघ्न उपस्थित करेगा'। अगणित सर्प वेग के साथ उस कुंड में गिरने लगे। तक्षक भयभीत हो कर इंद्र की शरण में गया। इंद्र ने उसकी रक्षा का आश्वासन दिया। पश्चात् वासुकि की बारी आयी। वह जरत्कारु नामक अपने बहन के पास गया। जरत्कारु का पुत्र आस्तीक था। आस्तीक ने वासुकि को अभय दिया। बाद में राजा ने अपने प्रमुख शत्रु तक्षक को आवाहन करने की ऋत्विजों से विनंति की। तक्षक इंद्र के यहाँ आश्रयार्थ गया था। 'इंद्राय तक्षकाय स्वाहा', कह कर ऋत्विजों ने आवाहन किया। इंद्रसहित तक्षक वहाँ उप-स्थित हुआ। अग्नि को देखते ही इंद्र ने तक्षक का त्याग किया। इतने में आस्तीक वहाँ पहुँचा। उसने राजा की स्तुति की। वर माँगने के लिये राजा से आदेश मिलते ही, आस्तीक ने सर्पसत्र रोकने को कहा। विवश हो कर राजा को सर्पसत्र रोकना पडा। इस तरह स्थपति तथा सरमा की शापवाणी सच्ची साबित हुई।

श्रुतश्रवस् को सर्पजाति के स्त्री से उत्पन्न हुआ पुत्र सोमश्रवस् इस यज्ञ में, था। श्रुतश्रवस् को राजा ने आश्वासन दिया था, 'तुम्हें जो चाहिये सो माँग लो, मैं उसकी पूर्ति करूँगा' (म. आ. ३.१३-१४)।

सर्पसत्र के ऋत्विज--१. चंडभार्गव च्यावन (होतृ), २. कौत्स जैमिनि (उद्गातृ); ३. शार्ङ्गरव (ब्रह्मन्), ४. पिंगल (अध्वर्यु), ५. व्यास (सदस्य), ६. उद्दालक,

७. प्रमदक, ८. श्वेतकेतु, ९. पिंगल, १०. असित, ११. देवल, १२. नारद, १३. पर्वत, १४. आत्रेय, १५. कुंड, १६. जठर, १७. घालघट, १८. वात्स्य, १९. श्रुतश्रवस्, २०. कोहल, २१. देवशर्मन्, २२. मौद्गल्य, २३. समसौरभ (म. आ. ५३.४-९)।

व्यास के शिष्य वैशंपायन ने जनमेजय को भारत कथन किया (म. आ. १.८-९; क. ३)। इसे काश्या नामक पत्नी से दो पुत्र हुए; एक चंद्रापीड तथा दूसरा सूर्यापीड (ब्रह्म. १३.१२४)। इसने सर्पसत्र किया, जिसमें तुर कावषेय पुरोहित था (भा. ९.२२.३५)।

यह बडा दानी था। इसने कुंडल तथा दिव्य यान ब्राह्मणों को दान दिये (म. अनु. १३७.९)।

सर्पसत्र के बाद राजा जनमेजय ने पुरोहित, ऋत्विज आदि को एकत्रित कर के, अश्वमेध का प्रारंभ किया। वहाँ व्यास प्रगट हुआ। उस समय इसने व्यास की यथाविधि पूजा की। कौरव-पांडवों के युद्ध के संबंध में अनेक प्रश्न पूछे। उससे कहा, 'अगर आपको यह ज्ञात था कि, इस युद्ध का अन्त क्या होगा, तो आपने उन्हें परावृत्त क्यों नहीं किया?' व्यास ने कहा, 'हे राजन्! उन्होंने मुझसे पूछा न था। विना पूछे मैं किसी को कुछ भी नहीं बताता। तुम्हारे इस अश्वमेध में इन्द्र बाधा डालेगा तथा इतःपर पृथ्वी पर कहीं भी अश्वमेध न होगा'।

दूसरा जनमेजय पारीक्षित अत्यंत धार्मिक था। इसने अपने यज्ञ में वाजसनेय को ब्रह्मा बनाया। तब वैशंपायन ने इसे शाप दिया। ब्राह्मणों ने क्षत्रियों का उपाध्यायकर्म बंद कर दिया। परंतु वाजसनेय लोगों की सहायता से इसने दो अश्वमेध किये। यह पराक्रमी होने के कारण, अन्य क्षत्रियो ने इसका समर्थन किया। वाजसनेयों का समर्थन करने के कारण, ब्राह्मणों ने इसे पदच्युत कर अरण्य में भेज दिया। ब्राह्मणों के साथ कलह करने से इसका नाश हुआ (कौटिल्य पृ. २२)। इसके बाद शतानीक राजा बना।

इस समय तक, याज्ञवल्क्य द्वारा उत्पन्न वेद को प्रतिस्पर्धी वैशंपायनादि ने मान्यता नहीं दी थी। वाजसनेयों को राज्याश्रय प्राप्त होने के बाद भी, वैशंपायनों ने काफी गडबड की। वादविवाद कर के, वाजसनेयों को हराने के काफी प्रयत्न किये। परंतु जनमेजय ने उनकी एक नहीं चलने दी। लोगों का तथा ब्राह्मणों का विरोध, इतना ही नहीं, राज्यत्याग भी स्वीकार किया। परंतु वाजसनेयों को इसने समाज में मान्यता प्राप्त कर ही दी। इसलिये इसे महावाजसनेय कहते हैं (मत्स्य. ५०.५७-६४; वायु. ९९. २४५-२५४)।

जनश्रुत कांड्विय—जनश्रुत याने लोकप्रसिद्ध। यह हृस्वाशय का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

जनश्रुत वारक्य—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३. ४१.१)।

जनापीड--(सो. तुर्वसु.) वायुमत में शरूथपुत्र। ब्रह्मांड में इसे आडीर कहा है।

जनार्दन—मित्रसह ब्राह्मण का पुत्र। यह हंसडिंभक का मित्र था (ह. वं. ३. १०४.४)।

जंतु—(सो. पूरु. ऋक्ष.) विष्णुमत में सुधन्वन् का पुत्र। भागवत में इसे जह्नु कहा है।

२. (सो. यदु. क्रोष्टु.) पुरुद्वतपुत्र।

३. (सो. नील.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में सोम का ज्येष्ठ पुत्र।

जंतुधना—यातुधान की माता।

जन्यु—तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक। इसके लिए जन्य नाम भी प्रयुक्त है (पद्म. सृ. ७)।

जपातय—पराशरकुल का गोत्रकार। पाठभेद-स्यातपायन।

जबाला—सत्यकाम जाबाल की माता का नाम।

जमदग्नि—एक ऋषि तथा परशुराम का पिता। ऋग्वेद में इसका अनेक बार उल्लेख आया है (ऋ. ३.६२. १८;८.१०१.८;९.६२.२४;६५.२५; अ. वे. ४.२९.३)। इन निर्देशों से मित्रावरुण, अश्वियों एवं सोम से जमदग्नि का संबंध प्रतीत होता है। सौदास के यज्ञ में, वसिष्ठपुत्र शक्ति ने विश्वामित्र को वाद में पराजित किया। उसे यज्ञ में से भगा दिया। तब सूर्य से ससर्परी नामक वाणी का सामर्थ्य बढानेवाली विद्या ला कर, जमदग्नि ने उसे विश्वामित्र को दी तथा उसके कुल की वृद्धि की। ससर्परी का अर्थ है भाषणकौशल्य। इस स्थान पर, जमदग्नि को वयोवृद्ध कहा है (ऋ. ३. ५३.१५-१६)। यहाँ बहुवचन का निर्देश होने के कारण, यह कुल का निर्देश प्रतीत होता है।

संहिता ग्रंथों में भी, यह विश्वामित्र के पक्ष का, तथा वसिष्ठ के प्रतिपक्ष का बताया गया है (तै. सं. ३.१.७.३)। परंतु हरिश्चंद्र के राजसूय में विश्वामित्र होता, वसिष्ठ ब्रह्मा तथा जमदग्नि अध्वर्यु थे (ऐ. ब्रा. ७.१६)। चतूरात्र नामक यज्ञ करने के कारण, इसके वंश में कोई भी दरिद्री नहीं हुआ (तै. सं. ७.१.९.१; पं. ब्रा. २१.१०)।

असित, अत्रि, कण्व तथा वीतहव्य के साथ इसका निर्देश है (अ. वे. २.३२.३०; ६.१३०.१)।

अन्य कई स्थानों में इसका उल्लेख है (अ. वे. ४. २९.३; ५.२८.७; ६.१३७.१; १८.३.१५-१६)। यह बड़ा तपस्वी था (तै. सं. ३.३.५.२)। जमदग्नि भार्गव के ऋग्वेद में काफी सूक्त है (ऋ. ३.६२.१६-१८; ८. १०१; ९.६२; ६५; ६७.१६-१८; १०.११०; १३७. ६; १६७)।। जमदग्नि शब्द का अर्थ नेत्र लिया है (वा. सं. १३.५६, महीधर भाष्य)।

यह अक्षर ब्रह्म का उपदेश करता था। वेदप्रचार के लिये तथा अक्षर ब्रह्म के उपदेश के लिये, इंद्र ने इसकी योजना की थी (तै. आ. १.९)।

भृगुकुल के ऋचीक नामक ऋषि को, गाधिराजकन्या सत्यवती से जमदग्नि उत्पन्न हुआ (म. आ. ६०.४६; व. ११६.८; ह. वं. १.२७.३५. ब्रह्म. १०; स्कंद. ६.६६) भृगुकुल के लोगों को भृगुपुत्र कहते थे (पद्म. उ. २६८. १)। इसका पैतृक नाम आर्चिक था। रेणुका इसकी पत्नी थी। उससे इसे रुमण्वत्, सुषेण, वसुमत, विश्वावसु तथा परशुराम नामक पाँच पुत्र हुए (रेणुका देखिये)।

जमदग्नि अत्यंत क्रोधी था। एकबार लीलया यह बाण छोड़ रहा था। उन्हें लाने के लिये, इसने रेणुका से कह दिया। कड़ी धूप होने के कारण, रेणुका थक गई। विश्रांति के लिये, एक वृक्ष के नीचे थोड़ी देर के लिये, वह बैठ गई। उसे बाण वापस लाने में देर हो गई। तब क्रोधित हो कर इसने देरी का कारण पूछा। रेणुका-द्वारा देरी का कारण बताया जाते ही, यह सूर्य पर क्रोधित हुआ। बाण से सूर्य को छेदने के लिये तैय्यार हो गया। तब सूर्य इसकी शरण में आया। उसने इसे छाता, तथा पादत्राण दिये तथा कहा, 'मैं तुम्हारे उदर से जन्म लूँगा'। बाद में वह परशुराम के रूप में, जमदग्नि के घर में उत्पन्न हुआ। (म. अनु. ९५)।

एकबार रेणुका सरोवर पर स्नान करने गई थी। वहाँ उसने चित्ररथ अथवा चित्रांगद को, अपनी भार्याओं के साथ क्रीड़ा करते हुए देखा। उसका ऐश्वर्य देख कर उसके मन में राजा के प्रति अभिलाषा उत्पन्न हुई। उसकी क्रीड़ा देखते हुए, वह थोडी देर तक वहीं खडी रही। इससे उसे घर जाने में विलंब हुआ। उसीसे जमदग्नि अत्यंत क्रोधित हुआ। पुत्रों से अपने माता का शिरच्छेद करने के लिये इसने कहा। परंतु परशुराम को छोड़ अन्य किसी ने भी इसका कहना नहीं माना। इससे जमदग्नि ने उनका भी वध किया। बाद में परशुराम ने अपनी माता का शिरच्छेद किया। तब जमदग्नि ने प्रसन्न हो कर परशुराम को वर माँगने के लिये कहा। परशुराम ने वरद्वारा अपनी माता तथा भाइयों को जीवित किया (भा. ९.१५.१६; विष्णुधर्म १.३५-३६)

यह इतना क्रोधी था, तथापि कालवशात् अत्यंत शांत हो गया। यह सचमुच शांत बना है अथवा नहीं, यह देखने के लिये, एकबार क्रोध सर्परूप धारण कर, पितृतिथि के दिन इसके घर आया। जमदग्नि ने उस दिन श्राद्ध के लिये खीर बनाई थी। उस खीर में सर्परूपी क्रोध ने अपना गरल ड़ाल दिया। परंतु यह क्रोधित नहीं हुआ। तब क्रोध ने इसकी स्तुति की (जै. अ. ६८)। स्त्री-पुत्रादिकों के वध का स्मरण कर, इसे अत्यंत पश्चाताप हुआ। क्रोध के ही कारण यह अनर्थ हुआ, यह सोच कर इसने क्रोध का त्याग कर दिया (रेणु. २७)।

गंगातीर पर एक हजार वर्ष तपस्या कर के, जमदग्नि ने इन्द्र से कामधेनु माँग ली। उसी समय इन्द्र ने इसे वरदान दिया, 'तुम्हें एक ईश्वरांशभूत पुत्र होगा'। कश्यप ने इसे षड़क्षर मंत्र दिया था (पद्म. उ. २६८)।

एकबार हैहय देशाधिपति कार्तवीर्य, ससैन्य जमदग्नि के आश्रम में, आया। कामधेनु की सहायता से जमदग्नि ने उसका उत्कृष्ट आदिरातिथ्य किया। बाद में कार्तवीर्य के मन में जमदग्नि के ऐश्वर्य के बारे में असूया उत्पन्न हुई। वह कामधेनु को बलात्कार से ले जाने लगा। उस समय कामधेनु ने अपने शरीर से काफी यवन निर्माण किये। उनके द्वारा कार्तवीर्य का पराभव हुआ। तब कार्तवीर्य ने जमदग्नि के आश्रम का विध्वंस कर, कामधेनु का हरण कर लिया। यह वृत्त परशुराम को ज्ञात होते ही, उसने कार्तवीर्य का वध कर के, गाय को छुड़ा लिया। परंतु कार्तवीर्य के वध का कृत्य जमदग्नि को बूरा लगा। कार्तवीर्य-पुत्रों ने पिता के वध का बदला लेने के लिये, परशुराम की अनुपस्थिति में, जमदग्नि को इक्कीस बाणों से विद्ध किया तथा उसकी हत्या कर ड़ाली। यह वृत्त परशुराम को ज्ञात होते ही, उसने क्षत्रियों का इक्कीस बार निःपात कर, जमदग्नि के वध का बदला ले लिया (म. शां. ४९.५६; ब्रह्मवै. ३. २४; ब्रह्मांड. ३.४५; कार्तवीर्य देखिये)।

कई स्थानों पर उल्लेख है कि, जमदग्नि का वध कार्तवीर्य ने ही किया (म. द्रो. परि. १; क्र. ८. पंक्ति. ८३० के आगे; वा. रा. बा. ७५)। इसे घूँसे मार कर इसका वध किया गया (पद्म. उ. २६८.३७)। वैवस्वत मन्वन्तर के

सप्तर्षियों में से यह एक था (मत्स्य. ९; ब्रह्म. ५; मार्क. ७९)।

श्राद्धविधि का प्रारंभ जमदग्नि ने किया। यह भृगुकुल का गोत्रकार तथा प्रवर भी था।

जंबुमालिन्--रावण के मंत्री प्रहस्त का पुत्र। हनुमान् ने अशोकवन उध्वस्त किया। रावण की आज्ञा से, हनुमान् को रोकने के लिये यह वहाँ गया। हनुमान् ने इसका वध किया (वा. रा. सुं. ४२-४४)।

२. एक राक्षस। यह भी हनुमान् के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ४३)।

जंबूक—शंबूक देखिये।

जंभ—बलि का मित्र। इसे जंभासुर भी कहते थे। इंद्र तथा बलि के युद्ध में, इंद्र के वज्र के आघात से बलि मूर्च्छित हो गया। वहाँ इसने सिंह पर आरूढ हो कर, इंद्र से युद्ध किया। इंद्र ने इसका वध किया (भा. ८.११. १३)।

२. तारकासुर का एक प्रमुख हस्तक। तारकासुर के युद्ध में, विष्णु ने इसका वध किया। इसकी कन्या कयाधु (भा. ६.१८.१२)।

३. रावणपक्षीय राक्षस तथा ताटकापति सुंद का पिता।

४. रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ४)।

५. जालंधर की सेना का एक राक्षस (पद्म. उ. १२)।

६. कश्यपपत्नी दिति के पुत्रों में से एक (पद्म. उ. २३०)।

७. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

८. संह्लाद का पुत्र। इसका पुत्र शतदुंदुभि (ब्रह्मांड. ३.५.३८-३९)।

जंभक—इंद्र के द्वारा मारा गया एक दैत्य। तारकासुर की सेना का यह एक नायक था (वा. सं. ३०.१६, सां. आ. १२.६५)।

जय--(सो. पुरूरवस्.) भागवत मत में पुरूरवस्-पुत्र।

२. (सो. पुरूरवस्.) भागवत मत में मन्युपुत्र।

३. (सो. प्रति.) वायुमत में विजयपुत्र। भागवत में इसे कृत तथा विष्णु में यज्ञकृत नाम है।

४. (सो. प्रति.) भागवत एवं वायु के मत में संजयपुत्र, विष्णु मत में संजय का पुत्र।

५. (सो. प्रति.) भागवत मत में संकृतिपुत्र।

६. (सो. नील.) मत्स्यमत में भद्राश्वपुत्र। भागवत मत में संजय, एवं विष्णु तथा वायु के मत में संजय यही था।

७. (सू. निमि.) भागवत मत में श्रुतपुत्र, विष्णु एवं वायु के मत में सुश्रुतपुत्र।

८. (स्वा. उत्तान.) भागवत मत में वत्सर का स्वर्वीथी से उत्पन्न पुत्र।

९. विश्वामित्रपुत्र (भा. ९.१६.३६)।

१०. शुक्राचार्य तथा पीवरी से उत्पन्न पाँच पुत्रों में से एक।

११. विष्णु के द्वारपालों में से एक (जयविजय देखिये)।

१२. विकुंठ देवों में से एक।

१३. यमसभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८.१४)।

१४. (सो. यदु.) भागवत मत में कंक तथा कर्णिका का पुत्र।

१५. (सो. यदु.) भागवत मत में कृष्ण तथा भद्रा का पुत्र।

१६. (सो. यदु.) भागवत मत में युयुधानपुत्र। मत्स्य तथा विष्णु में यही असंग है।

१७. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीययुद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११०.२९-३५)।

१८. पांडव पक्ष का राजा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ५६.४०)।

१९. दुर्योधन पक्ष का एक राजा (म. द्रो. ५२.१६)। जयद्रथवध के समय, इसने अर्जुन के साथ युद्ध किया था (म. द्रो. ६६.३६)।

२० अज्ञातवासकाल में युधिष्ठिर का गुप्तनाम (म. वि. ५. ३०; २२.१२)।

जय ऐन्द्र—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८०)।

जयक लौहित्य—यशस्विन् जयंत लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

जयत्सेन—(सो, कुरु.) मत्स्य, वायु एवं महाभारत के मत में सार्वभौम का कैकयी से उत्पन्न पुत्र। भविष्य, भागवत तथा विष्णु मत में इसे जयसेन कहा गया है। इसे सुश्रवा नामक स्त्री तथा अराचिन नामक पुत्र था (म. आ. ९०-१७)

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भारतीय युद्ध में, भीम ने इसका वध किया (म. श. २५.९.)।

३. (सो. प्रति.) विष्णु मत में अहीनपुत्र, तथा वायु के मतानुसार अदीनपुत्र। भागवत में इसे जयसेन कहा गया हैं।

४. भारतीययुद्ध में पांडव पक्षीय राजा (म.उ.४.१६)।

५. दुर्योधन के पक्ष का मगध का राजा। कालेय के आठ पुत्रों में से प्रथम-पुत्र का, यह अंशावतार था। भारतीय-युद्ध में श्वेत ने इसे त्रस्त कर, दो बार इसका धनुष तोडा था। अंत में अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. भी. परि. १. क्र. ४. पंक्ति. ९)।

६. भारतीययुद्ध में दुर्योधनपक्षीय राजा (म. श. ६. ३)।

७. विराटनगर में नकुल का गुप्तनाम (म. वि. ५.३०; २२.१२.)।

जयद--(सो. पूरु.) वायुमत में मनस्युपुत्र (चारुपद देखिये)।

जयद्बल—अज्ञातवासकाल में सहदेव का गुप्तनाम (म. वि. ५.३०; २२.१२)।

जयद्रथ--(सो. अनु.) भागवत, विष्णु एवं वायु के मत में बृहन्मनस्‌पुत्र। मत्स्य में बृहन्मनस् की जगह इसे बृहद्भानु का पुत्र कहा गया है। बृहन्मनस् को दो पत्नियाँ थीं। एक यशोदेवी तथा दूसरी सत्या। यह दोनों चैद्य की कन्याएँ थी। इनमेंसे जयद्रथ यशोदेवी का पुत्र था (वायु. ९९.१११)। इसे संभूति नामक पत्नी तथा विजय नामक पुत्र था (भा. ९.२३.११)

२. (सो. अज.) भागवत के मत में बृहत्काय का, विष्णु तथा वायु के मत में बृहत्कर्मन् का, तथा पद्म एवं मत्स्य के मत में बृहदिषु का पुत्र।

३. सिंधुदेशाधिपति वृद्धक्षत्र का पुत्र (म. द्रो. १२१. १७)। धृतराष्ट्रकन्या दुःशला का यह पति था (म. आ. १०८. १८; द्रो. १४८)।

यह सिंधु, सौवीर तथा शिबि देशों का राजा था। यह पांडवों का द्वेष करता था। इसे बलाहक, आनीक, विदारण आदि छः भाई थे (म. व. २५०.१२)।

पांडव वनवास में थे। जयद्रथ स्वयंवर के लिये अपने देश से शाल्व देश जा रहा था। इसके साथ छः भ्राता, शिबिकुलोत्पन्न सुरथ राजा का पुत्र कोटिक अथवा कोटिकास्य, त्रिगर्तराजपुत्र क्षेमंकर, इक्ष्वाकुकुलोत्पन्न सुभवपुत्र सुपुष्पित, एवं कलिंदपुत्र थे। इसके सिवा अंगारक, कुंजर, गुप्तक, शत्रुंजय, संजय, सुप्रवृद्ध, प्रभंकर, भ्रमर, रवि, शूर, प्रताप तथा कुहन नामक सौवीर देश के द्वादश राजपुत्र तथा सेना भी थी। जाते जाते, इसने उसी काम्यकवन में पड़ाव डाला, जहाँ पांडव रहते थे। पास ही पांडवों का आश्रम था। वे मृगया के लिये बाहर गये थे। आश्रम में धौम्य ऋषि, दासी, एवं द्रौपदी ये तीन ही व्यक्ति थे। द्रौपदी को देखते ही, उसे अपने वश में लाने की इच्छा जयद्रथ को हुई। इसने पूछताछ करने के लिये, कोटिक को उसके पास भेजा। वहाँ जा कर कोटिक ने द्रौपदी से पूछा, 'तुम कौन हो ? यहाँ क्यों आई हो ?' द्रौपदी के द्वारा सब वृत्तांत कथन कर दिये जाने के बाद, कोटिक वापस आया। उसने जयद्रथ को सब बताया। यह सुनते ही, सेना से निकल कर जयद्रथ द्रौपदी के पास गया। जयद्रथ को पहचान कर द्रौपदी ने उसका उचित आदरसत्कार किया। द्रौपदी की प्राप्ति के लिये जयद्रथ ने काफी प्रयत्न किये। अन्त में द्रौपदी को इसके निर्लज्ज कृत्य के प्रति अत्यंत क्रोध आया।

द्रौपदी ने इसे तुरन्त निकल जाने को कहा। परंतु उसे बरज़ोरी से अपने रथ में डाल कर इसने भगाया। यह देख कर धौम्य ऋषि ने इसका पीछा किया (म. व. २४६-२५२)। इतने में पांडव आश्रम में लौट आये। आते ही द्रौपदी की दासी ने संपूर्ण वृत्त उन्हें बताया। काफी दूर भागे गये जयद्रथ के समीप वे पहुँच गये। काफी देर तक युद्ध हुआ। कोटिकादि कई जयद्रथपक्षीय वीर मारे गये। इसने देखा, अपना पक्ष पराजित हो रहा है। पांडवों की दृष्टि बचा कर, इसने रणांगण से पलायन किया। जयद्रथ भाग गया, यह ज्ञात होते ही, अर्जुन तथा भीम ने इसका पीछा किया। संपूर्ण सेना का नाश होने के बाद, धौम्य ऋषि तथा अन्य पांडव आश्रम लौट आये। काफी देर पीछा करने के बाद, अर्जुन तथा भीम ने जयद्रथ को पकड़ा। भीम ने इसकी अच्छी मरम्मत की। परंतु वध न करते हुए, इसके केशों का पाँच हिस्सों में मुंडन कर, भीम इसे आश्रम में लाया। युधिष्ठिर ने जयद्रथ से, द्रौपदी क्षमायाचना करने के लिये कहा। युधिष्ठिर ने भीम से कहा, 'तुम जयद्रथ का वध मत करो। उससे दुःशला दुखित होगी। धृतराष्ट्र एवं गांधारी भी शोकमग्न होंगे'। जयद्रथ का वध न कर के उसे छोड़ दिया गया।

इस प्रकार पांडवों के द्वारा इसकी दुर्दशा हुई। इसने मन में अत्यंत अपमानित स्थिति का अनुभव किया। समस्त सेना को राजधानी वापस भेज कर, यह अकेला ही गंगाद्वार चला गया। यहाँ तीव्र तपश्चर्या से इसने शंकर को प्रसन्न किया। 'मैं सब पांडवों को जीत सकूँ,' ऐसा वर इस

ने शंकर से माँगा। शंकर ने इसे बताया, 'अर्जुन की अनुपस्थिति में बाकी पांडवों का पराभव तुम कर सकोगे'। इससे संतुष्ट हो कर यह अपने नगर लौट आया। इस वर के कारण ही अभिमन्युवध के समय, यह पांडवों का पराभव कर सका (म. व. २५२.२५६)।

भारतीययुद्ध में अर्जुन संशप्तकों से युद्ध करने में व्यस्त था। मौका देख कर, इसने पांडवों का पराभव किया। अकेला अभिमन्यु चक्रव्यूह में घिरा कर मारा गया। अर्जुन ने घोर प्रतिज्ञा की, 'कल सूर्यास्त के पहले मैं जयद्रथ का वध करूंगा'। इस प्रतिज्ञा से घबरा कर, यह स्वदेश वापस लौटने का विचार करने लगा। उसी रात्रि में दुर्योधन इसे ले कर द्रोणाचार्य के पास गया। द्रोणाचार्य ने इसकी रक्षा का आश्वासन दे कर, इसे रोक लिया (म. द्रो. ५१–५२)।

जयद्रथ-वध की प्रतिज्ञापूर्ति के बारे में अर्जुन अत्यंत चिंतित था। द्रोण ने शकटव्यूह की रचना कर, उसके अंदर चक्रव्यूह तथा सूचिव्यूह की रचना की। पश्चात् इन तीन व्यूहों के अंदर उसने जयद्रथ को बैठाया। तथा वह स्वयं व्यूह के द्वार पर खडा रहा (म. द्रो. ५७–६३)।

कृष्ण ने अर्जुन को सत्वर व्यूह में प्रविष्ट होने के लिये कहा। वहाँ द्रोण तथा अर्जुन युद्ध में मिले तथा काफी देर तक उनका युद्ध हुआ। अंत में कृष्ण की सलाह के अनुसार, द्रोण को छोड़ कर अर्जुन आगे जाने लगा। तब द्रोण ने उसे कहा 'मुझे न जीत कर व्यूह में प्रविष्ट होना तुम्हारे लिये अयोग्य है'। यह सुन कर अर्जुन ने कहा, 'आप आचार्य तथा मेरे गुरु हैं। शत्रु नही। मैं आपका शिष्य हो कर पुत्र के सदृश हूँ। युद्ध में आपको जीत सके, ऐसा पुरुष इस लोक में कोई नहीं है' (म. द्रो. ६६)।

मार्ग के अनेक योद्धाओं का वध करता हुआ, अर्जुन आगे बढ़ा। मार्ग में उसके अश्व प्यासे हो गये। रथ रोक कर, तथा जयद्रथ के पास पहुँचने के लिये अभी काफी अवकाश है, यह सोच कर अर्जुन रुक गया। वहीं बाणगंगा निर्माण कर, उसने अपने अश्वों को पानी पिला दिया तथा वह आगे बढा। वह जयद्रथ के समीप पहुँचा। इतने में युधिष्ठिर ने अर्जुन की सहायता के लिये युयुधान को भेजा (म.द्रो. ७५)। बाद में युधामन्यु तथा उत्तमौजस् नामक दो चक्ररक्षक (म. द्रो. ६६.३५), एवं सात्यकि तथा भीमसेन व्यूह का भेद कर वहाँ तक पहुँचे। इन सब को एकत्रित देख कर, दुर्योधन भयभीत हो गया, एवं जयद्रथ के पास रक्षणार्थ जा बैठा (म. द्रो. ७४–७६)। इतने में जयद्रथ को बाहर निकालने के हेतु से, कृष्ण ने समस्त सेना में ऐसा आभास निर्माण किया की, मानों सूर्य का अस्त हो रहा है। उस समय जयद्रथ ने सूर्यास्त देखने के लिये गर्दन उठाई। तब कृष्ण ने 'वह रहा जयद्रथ,' ऐसा संकेत अर्जुन को किया। अर्जुन ने तत्काल इसका सिर काट दिया एवं संध्या कर रहे जयद्रथ-पिता वृद्धक्षत्र के गोद में गिराया। यह घटना मार्गशीर्ष कृष्ण नवमी को हुई (भारतसावित्री)।

जयद्रथ का सिर काट कर, उसके पिता की ही गोद में क्यों डाला गया, इसके लिये कृष्ण ने अर्जुन को निम्नांकित कथा बताई।

कृष्ण ने कहा, "वृद्धक्षत्र जयद्रथ का पिता था। काफी लंबी कालावधि के बाद उसे यह पुत्र हुआ। उसके जन्म के समय आकाशवाणी हुई, 'तुम्हारा यह पुत्र कुलशील मनोनिग्रहादि गुणों से प्रसिद्ध योद्धा बनेगा। परंतु लड़ने समय रणांगण में ऐसा योद्धा उसकी गर्दन काटेगा, जिसकी ओर इसका ध्यान नहीं है'। इसे सुन कर वृद्धक्षत्र ने कहा, 'लड़ते समय जो कोई मेरे पुत्र का मस्तक काट कर भूमि पर गिरायेगा, उसका भी मस्तक शतधा विदीर्ण होगा'। इतना कह कर, तथा जयद्रथ को राजगद्दी पर बैठा कर, वह स्यमंतपंचक के बाहर वन में गया, और उग्र तपश्चर्या करने लगा। इसलिये वृद्धक्षत्र के ध्यान में न आये, इस तरह दिव्यास्त्र से जयद्रथ का सिर काट कर उसीकी गोद में उडा दिया है। यदि जयद्रथ का मस्तक तुम भूमि पर गिराओगे, तो तुम्हारा मस्तक शतधा विदीर्ण हो जावेगा"। जयद्रथ का सिर गोद में गिरते ही, वृद्धक्षत्र का मस्तक शतधा विदीर्ण हो गया (म. द्रो. १२१)। जयद्रथ का ध्वज वराहचिह्न का था (म. द्रो. ८०.२०)।

इसके एक पुत्र का वध, अर्जुन ने द्रौपदीस्वयंवर के समय किया (म. आ. २१८.३२)। इसका दूसरा पुत्र दुःशला से उत्पन्न सुरथ। अश्वमेध के समय अश्व के साथ अर्जुन आया, यह सुनते ही उसने प्राणत्याग किया (म. आश्व. ७७.२७)।

४. धर्मसावर्णि का पुत्र।

५. ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र

जयध्वज—(सो. यदु. सह.) भागवत, विष्णु, मत्स्य एवं वायु के मत में सहस्रार्जुनपुत्र। इसका पुत्र तालजंघ। यह महारथी था (पद्म. सृ. १२)।

जयंत--(सो. यदु. वृष्णि.) मत्स्य मत में वृषभ-पुत्र तथा पद्म मत में ऋषभपुत्र (पद्म. सृ. १३)। पद्म में इसीका नामांतर श्वफल्क रहा होगा।

२. पांचालदेश का राजा। पांडवपक्षीय महारथी (म. उ. १६८.१०)।

३. इंद्र का पौलोमी से उत्पन्न पुत्र (म. आ. १०६. ४; भा. ६.१८.७)। देवासुर युद्ध में इसने कालेय राक्षस का वध किया (पद्म. सृ. ६६.)।

४. भीम का गुप्त नाम। जयेश देखिये।

५. धर्म ऋषि का मरुत्वती से उत्पन्न पुत्र। इसे उपेन्द्र कहते थे (भा. ६.६.८)।

६. दशरथ के अष्टप्रधानों में से एक (वा.रा.बा.७)।

७. एक रुद्र एवं रुद्रगण।

८. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.११.१७)।

९. त्रेतायुग में परमेश्वर का नाम (भा. ११.५.२६)।

१०. यशस्विन् लौहित्य का नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१; दक्ष जयंत लौहित्य देखिये)।

जयंत पाराशर्य--एक आचार्य। विपश्चित् का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

जयंत वारक्य--कुबेर वारक्य का शिष्य। उसका दादा कंस वारक्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

२. सुयज्ञ शांडिल्य के नाम से भी एक जयंत वारक्य का उल्लेख है (जै. उ. ब्रा. ४.१७.१)।

जयंती--स्वायंभुव मन्वंतर के यज्ञ नामक इंद्र की कन्या, तथा ऋषभदेव राजर्षि की भार्या। इसे भरतादि सौ पुत्र थे (भा. ५.४.८)।

२. वर्तमान वैवस्वत मन्वंतर के पुरंदर नामक इंद्र की कन्या, तथा वारुणि भृगु के पुत्र शुक्र की स्त्री। देवताओं के नाश के लिये, शुक्राचार्य उग्र तपश्चर्या कर रहे थे। तप में विघ्न उपस्थित करने के लिये, इंद्र ने शुक्राचार्य के पास इसे भेजा। वहाँ जाने पर जयंती ने उत्कृष्ट प्रकार से उसकी सेवा की। बाद में शंकर से शुक्राचार्य को वरप्राप्ति होते ही, उसने इसका हेतु पहचाना। इसे साथ ले कर वह घर आया और गृहस्थाश्रम का उपभोग करने लगा। इससे उसे देवयानी नामक कन्या हुई (मत्स्य. ४७; पद्म. सृ. १३; उशनस् देखिये)।

३. सुषेण राजा की कन्या। यह इसने राजपुत्र माधव को दी थी (पद्म. क्रि. ६)।

जयरात--कलिंग देश के भानुमत् राजा का भाई। भारतीय युद्ध में इसका भीम ने वध किया (म. द्रो. १३०. ३१)।

जयवर्मन्--दुर्योधन पक्ष का राजा (म. द्रो. १३१. ८६)।

जयविजय--कर्दम प्रजापति को देवहूती से उत्पन्न पुत्र। ये बडे विष्णुभक्त थे। हमेशा अष्टाक्षर मंत्र का जप तथा विष्णु का व्रत करते थे। इससे इन्हें विष्णु का साक्षात्कार होता था। ये यज्ञकर्म में भी कुशल थे।

एकबार मरुत्त राजा के निमंत्रण से, ये उसके यज्ञ के लिये गये। उसमें जय 'ब्रह्मा,' तथा 'विजय' याजक हुआ। यज्ञसमाप्ति पर राजा ने इन्हें विपुल दक्षिणा दी। वह दक्षिणा ले कर घर आने के बाद, दक्षिणा का बँटवारा करने के बारे में इनमें झगड़ा हुआ। अन्त में जय ने विजय को, 'तुम मगर बनोगे' ऐसा शाप दिया। विजय ने भी जय को, 'तुम हाथी बनोगे' ऐसा शाप दिया। परंतु शीघ्र ही कृतकर्म के प्रति पश्चात्ताप हो कर, यह दोनों विष्णु की शरण में गये। विष्णु ने आश्वासन दिया, 'शाप समाप्त होते ही मैं तुम्हारा उद्धार करूँगा'। शाप के अनुसार, एक मगर, तथा दूसरा हाथी बन कर, गंड़की के किनारे रहने लगे। बाद में एक दिन हाथी कार्तिकस्नान के हेतु से गंड़की नदी में उतरा। मगर ने उसका पैर पकड़ लिया। तब इसने विष्णु को पुकारा। विष्णु ने आ कर दोनों का उद्धार किया। उन्हें वह विष्णुलोक ले गया। पश्चात् जय तथा विजय विष्णु के द्वारपाल बने (स्कन्द. २.४.२८; पद्म. उ. १११-११२)।

बाद में सनकादि देवर्षियों को, विष्णुदर्शन के लिये इन्हों-ने जाने नहीं दिया। अतः उनके शाप से, वैकुंठ से पतित हो कर, ये असुरयोनि में गये। इनमें से जय ने हिरण्याक्ष का जन्म लिया। पृथ्वी सिर पर धारण कर के वह उसे पाताल ले गया। तब वराह अवतार धारण कर के, विष्णु ने इसका वध किया एवं पृथ्वी की रक्षा की (भा. ३.१६.३२; पद्म. उ. २३७)।

अश्वियों ने, 'तुम पृथ्वी पर तीन बार जन्म लोगे' ऐसा शाप इन्हे दिया। इन्होंने भी अश्वियों को, 'तुम भी एक बार पृथ्वी पर जन्म लोगे' ऐसा शाप दिया। शाप के अनुसार, जयविजय ने क्रमशः हिरण्याक्ष तथा हिरण्य-कश्यपु के रूप में जन्म लिया, बाद में रामावतार के समय रावण तथा कुंभकर्ण, तथा कृष्णावतार में शिशुपाल तथा वक्रदन्त नामों से ये प्रसिद्ध हुएँ।

जयशर्मन्--अवंतीनगर के शिवशर्मा ब्राह्मण का पुत्र। व्यसनी हो कर भी, इसने अधिकमास में वद्य-एकादशी का व्रत आचरण किया। लक्ष्मी ने इसे एकादशी-माहात्म्य बताया (पद्म. उ. ६२)।

जयसेन--जयत्सेन १.२. देखिये।

२. (सो. क्षत्र.) भागवत मत में अहीनपुत्र (जयत्सेन देखिये)।

३. क्षत्रिय राजा मागध (म. स. ४.२३)।

४. अवंत्य राजा। इसे राजाधिदेवी नामक स्त्री थी। इसके पुत्र विंदानुविंद एवं कन्या मित्रविंदा थी। वह कृष्ण को विवाह सें दी गयी थी।

जया--कृशाश्व प्रजापति की कन्या तथा पार्वती की दासी (स्कंद. १.३.२.१८)। यह पार्वती की सखी होने का उल्लेख भी प्राप्त है। (वामन ४; पद्म. उ. १६)।

जयानीक--द्रुपदपुत्र पांचाल। भारतीययुद्ध में यह अश्वत्थामा से मारा गया (म. द्रो. १३१.१२.७)।

२. विराट का भाई (म. द्रो. १३३.३९)।

जयावह--मणिवर तथा देवजनी का पुत्र।

जयाश्व--जयानीक का भ्राता। अश्वत्थामा ने भारतीययुद्ध में इसका वध किया (म.द्रो.१३१.१२७)।

२. विराट का भाई (म. द्रो. १३३.३९)।

जयेश--विराट नगरी में भीम द्वारा धारण किया गया गुप्त नाम (म. वि. ५.३०; २२.१२; भांडारकर प्रतिः जयंत)।

जर--जरस् देखिये।

जरत्कारु--ऐरावत सर्प तथा एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७६)।

२. एक ऋषि। कारु का अर्थ है शरीर। शरीर को तप से क्षीण करता हैं, वह जरत्कारु, यह इस शब्द की व्युत्पति है (म. आ. ३६.३)। यह यायावरों का पुत्र था (म. आ. ४१.१६)।

ब्रह्मचारी अवस्था में जरत्कारु तीर्थयात्रा कर रहा था। तब इसे घास के आश्रय से एक गड्ढे में लटकनेवाले वीरणक नामक पितर दिखे। घास का जड़ चूहों द्वारा कुतरा जा रहा था। इसी कारण उनका आधार कब टूट जावेगा कह नही सकता था। उनकी इस अवस्था का कारण इसने पूछा। उन्होंने कहा, 'जरत्कारु अविवाहित होने के कारण हमारा वंश खंडित हो गया है। इस लिये हमारी यह स्थिति हो गई है। केवल तप के भरोसे हम आज तक जीवित हैं। परंतु उस तप को कालरूपी चूहा दिनरात कुतर रहा है। अतः किस तरह क्यों न हो, हमारे पुत्र से विवाह करने को कहो'। तब इसने कहा, 'मैं तुम्हारा ही पुत्र हूँ। मैं ने ब्रह्मचर्यावस्था में रहने का निश्चय किया था। तुम्हारी यह स्थिति देख कर मैंने अपना विचार बदल दिया है। मेरे ही नाम की कन्या मुझे भिक्षा में प्राप्त हो। उसके पोषण की जिम्मेवारी मुझ पर न हो। इस शर्तपर, उससे मैं विवाह कर लूँगा'।

वृद्ध होने के कारण, कोई भी इसे कन्या नहीं देता था। पश्चात् अरण्य में वासुकि ने अपनी जरत्कारु नामक भगिनी इसे दी, तथा उसका पोषण करने की जिम्मेवारी स्वयं उठा ली। विवाह होने पर पतिपत्नी एकत्र रहने लगे। परंतु इसने शुरु मे ही इसे चेतावनी दी की, 'मेरे मन के विरुद्ध अगर तुम व्यवहार करोगी, तो मैं तुम्हें छोड़ दूँगा'।

एक दिन यह अपनी पत्नी की गोद में सिर रख कर सोया था। सायंकाल होने के बाद, संध्यालोप न हो, इसलिये उसने पति को जागृत किया। तब 'मैं सोया हूँ। सूर्य की क्या मजाल है कि, वह अस्तायमान हो!' ऐसा क्रोध में कह कर यह पुनः तप करने के लिये चला गया (म. आ. ४३.३९)। इस समय जरत्कारु गर्भवती थी। उसे आस्तीक नामक पुत्र हुआ। जरत्कारु की पत्नी कश्यपकन्या मनसा से, आस्तीक का जन्म हुआ (दे. भा. ९. ४७-४९; मनसा देखिये)।

३. जरत्कारु की पत्नी (जरत्कारु २. देखिये)।

जरद्गौरी--आस्तीक की माता जरत्कारु का नामांतर।

जरस्--वसुदेव को रथराजी नामक स्त्री से उत्पन्न द्वितीय पुत्र। इसे 'जर' नामांतर है। यह क्षत्रिय था, परंतु दुराचरण से व्याध बना। इसीके बाण से कृष्ण की मृत्यु हुई। बाद में भल्लतीर्थ में इसकी मृत्यु हो गई (भा. ११. ३०.३३; म. मौ. ५.१९-२२; स्कन्द. ७.१.२३९-२४१)।

जरा--एक राक्षसी तथा जरासंध की उपमाता (जरासंध देखिये)। जरासंध ने कृष्णादि कों का वध करने के लिये गदा फेंकी। उसका प्रतिकार करने के हेतु, बलराम ने स्थूणाकर्ण नामक अस्त्र फेंका। इन दोनों के बीच में आने के कारण, इसकी मृत्यु हो गई (म. द्रो. १५६.१४)।

जरासंध--(सो. मगध.) वायु मत में नभस्-पुत्र। भागवत, विष्णु एवं मत्स्य मत में राजा बृहद्रथ का पुत्र। इसलिये इसे बार्हद्रथि नामांतर था।

बृहद्रथ राजा ने काशिराज की जुडवाँ कन्याओं से विवाह किये थे। लंबी कालावधि तक वह अनपत्य रहा।

काक्षीवत तमपुत्र चंडकौशिक ने उसे पुत्रप्राप्ति के लिये प्रसादस्वरूप एक आम्रफल दिया। दोनों पत्नियों से समभाव से व्यवहार करूँगा, ऐसी उसकी प्रतिज्ञा थी। अतः उसकी दोनों पत्नियों ने, उस फल आधा आधा भक्षण किया। कुछ काल के बाद, उन्हें आधा आधा पुत्र हुआ। वे टुकडे उन्होंने दासियों के द्वारा चौराहे पर ले जा कर, रखवा दिये।

पश्चात् जरा अथवा गृहदेवी नामक राक्षसी ने उन तुकडों को जोड दिया। उससे एक बालक निर्माण हुआ। बाद में इस बालक को खाने के लिये, वह खींच कर ले जाने लगी। परंतु उस बलवान् बालक को वह खींच नहीं सकी। बाद में उस बालक ने रुदन प्रारंभ किया। तब राजा बाहर आया। राक्षसी ने वह बालक उसे दे डाला। राजा ने इसका नाम जरासंध रखा (म. स. १६-१७; मत्स्य. ५०)।

"बृहद्रथ की एक ही पत्नी को बालक के दो टुकड़े हुएँ। उसने उन्हें चौराहे पर फेंक दिया। जरा नामक राक्षसी उन टुकड़ों के पास बैठ कर, लीलावश बारबार 'जीवित हो,' ऐसा कहने लगी। इस मंत्र से उन जुडे टुकडों में जान आ गई," ऐसी भी कथा प्राप्त है (भा. ९.२२)।

इसका जन्म विप्रचित्ति दानव के अंश से हुआ था (म. आ. ६१.४)। यह मगध देश का अधिपति था। इसकी राजधानी का नाम गिरिव्रज था। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था। परंतु धनुष्य उठाते समय, घुटनों पर गिर कर यह फजीहत हुआ। अतः सीधा अपने देश वापस चला गया (म. आ. १७८-१८१८*)। रुक्मिणीस्वयंवर में भी यह उपस्थित था। वहाँ भीष्मक के सामने इसके द्वारा किया गया कृष्णस्तुति-युक्त भाषण, इसके कृष्णद्वेष से विसंगत प्रतीत होता है (ह. वं. २.४८)।

इसने अपनी दो कन्यायें तथा सहदेव की कनिष्ठ बहनें, अस्ति तथा प्राप्ति कंस को दी थीं। कंसवध की वार्ता उनके मुख से ज्ञात होते ही, इसने सेनासहित मथुरा पर आक्रमण किया। इसकी सेना तेईस अक्षौहिणी (विष्णु. ५.२२) अथवा बीस अक्षौहिणी थी (ह. वं. २.३६)। कृष्ण तथा बलराम नगर के बाहर आ कर, इससे युद्ध करने के लिये तैय्यार हो गये।

जरासंध जैसे शक्तिमान् शत्रु से टक्कर देनी थी। बलराम तथा कृष्ण को इस काम में प्रभावी शस्त्रों की आवश्यकता थी। अतः कृष्ण ने शार्ङ्ग धनुष, अक्षय तुणीर तथा कौमोदकी गदा प्राप्त की। बलराम ने भी संवर्तक हल तथा सौनंद मुसल प्राप्त किया (ह. वं. २. ३५.५९-६५; विष्णु. ५.२२. ६-७)।

जरासंध के द्वारा मथुरा के चारों द्वारों पर आक्रमण करने के लिये, जिन राजाओं की योजना की थी, वे निम्नलिखित हैः--

दक्षिण में—दरद, चेदिराज तथा स्वयं जरासंध;

उत्तर दिशा में—पूरुकुलोत्पन्न वेणुदारि, विदर्भाधिपति सोमकराज, भोजेश्वर रुक्मिन्, सूर्याक्ष तथा मालवेश, अवंतिदेश के विंद तथा अनुविंद, दंतवक्त्र, छागलि, पुरमित्र, विराट, कौरव्य, मालव, शतधन्वा, विदूरथ, भूरिश्रवा, त्रिगर्त, बाण एवं पंचनद;

पूर्व में—उलूक, केतव, अंशुमान् राजा का पुत्र एकलव्य, बृहत्क्षत्र, बृहद्धर्मन्, जयद्रथ, उत्तमौजस, शल्य, कौरव, कैकेय, वैदिश, वामदेव तथा सिनि देश का राजा सांकृति;

पश्चिम में—मद्रराजा, कलिंगपति, चेकितान, बाह्लिक, काश्मीराधिपति गोनर्द, करुषेश द्रुमराजा, किंपुरुष तथा पर्वतप्रदेश का अनामय (ह. वं. २.३५)।

इस प्रकार इसने व्यवस्था की। परंतु यादव सेना संख्या में कम होते हुए भी, उसने इसकी पराजय की। इस युद्ध में, एकबार बलराम इसे मारने के लिये प्रवृत्त हो गया था। परंतु आकाशवाणी ने उसे सुझाया, 'इसका वध किसके द्वारा होगा यह तुम्हें मालूम है, इसलिये तुम इसका वध मत करो' (ह. वं. २.३६)। जरासंध को बलराम ने कई बार जीता। परंतु इसका वध नहीं किया। इसके साथ के राजाओं पर, उसने अच्छा हाथ चलाया (ह. वं. २.६२.५.१२)।

इस युद्ध में भाग लेनेवाले राजाओं की तीन सूचियाँ प्राप्त हैं, परंतु वे एक दूसरे से मेल नहीं रखती। एक में चेदिराज शिशुपाल है, तो दूसरी में चेदिराज पुरुषोत्तम। एक में सिनिराज सांकृति, तो दूसरे में केशिराज सांकृति। कहीं एक ही सूचि में, दरद तथा दरदेश्वर नामक दो राजाओं का उल्लेख है। इनके अतिरिक्त राजाओं का भी मेल नहीं बैठता (ह. वं. २.३४)।

इस प्रकार इसने मथुरा पर कुल सत्रह बार आक्रमण किये। हर समय इसका पराभव ही हुआ। बिना किसी कारण, यह कृष्ण से शत्रुत्व रखता था। जयद्रथ के आक्रमण से बचने के लिये, कृष्ण ने मथुरा छोड़ी। पश्चिम समुद्र तट पर रैवतक पर्वत के पास, द्वारका में नये राज्य

की स्थापना की। इस युद्ध में कृष्ण के पक्ष में, कुल अठारह राजकुल थे (म. स. १३; विष्णु. ५.२२; ब्रह्म. १९५)। इस प्रकार, इस युद्ध में पराजित हो कर, यह वापस लौटा। पश्चात् इसने अपनी सहायता के लिये कालयवन को आमंत्रित किया (ह. वं. २.५३)।

यद्यपि कृष्ण ने इसका पराभव किया था, तथापि यह अत्यंत शूर था। इसे राज्य प्रदान कर, इसके मातापिता ने वनगमन किया। पश्चात्, इसने अतुल पराक्रम दर्शाया। भोजकुल के सब क्षत्रियों को पादाक्रांत कर, उन्हें अपने काबू में लाया। तब संभीयों ने इसे सार्वभौमपद पर स्थापित किया (म. स. १३)। गिरिव्रज राजधानी में, ९९ वार घूमा कर इसके द्वारा फेंकी गई गदा, ९९ योजन दूर मथुरा के पास आ कर गिरी। हंस तथा डिंभक नामक दो पराक्रमी भाई इसके सेनापति थे (म. स. १३)। कर्ण तथा जरासंध का युद्ध हो कर, उसमें कर्ण विजयी हुआ। इससे इसमें तथा कर्ण में मित्रत्व उत्पन्न हो कर, इसने उसे मालिनीनगरी अर्पण की (म. शां. ५.६)। जरासंध की सहायता से ही, कंस ने पिता का राज्य छीना (हं. वं. २.३४.६-७)।

धर्मराज के मन में, राजसूय यज्ञ करने की इच्छा उत्पन्न हुई। उसने कृष्ण को इन्द्रप्रस्थ बुला कर उसकी सलाह ली। कृष्ण ने उसे कहा, 'चूंकि जरासंध ने ८६ राजाओं को कैद कर रखा है, उसे बिना जीते राजसूय यज्ञ पूरा न हो सकेगा'। भागवत में २०८०० राजाओं का उल्लेख है। इसका निश्चय था कि, उन राजाओं को वह महादेव को बलि चढायेगा। प्रत्येक कृष्ण चतुर्दशी को यह एक एक राजा की बलि भैरव को चढाता था।

इसलिये जरासंध को जीतने के लिये कृष्ण तथा अर्जुन को ले कर, कृष्ण गिरिव्रज में गया। उन्होंने ब्राह्मणवेश धारण किया था। इसके महाद्वार पर रखी गई अत्यंत बड़ी तीन दुंदुभियों को फोड कर, उन्होंने इसके घर गमन किया। जरासंध ने उनसे मिल कर उनका सत्कार किया तथा इच्छा पूछी। कृष्ण ने कहा, 'इन दोनों का मौनव्रत है, इसलिये हम मध्यरात्रि के बाद वार्तालाप करेंगे'। मध्यरात्रि के बाद जरासंध अर्घ्यपाद्य दे कर उनका सत्कार करने लगा। उन्होंने उसे ग्रहण नहीं किया। तब उनकी आकृति देख कर, जरासंध ने पहचाना कि, वे क्षत्रिय है। उनसे आगमन का कारण पूछा। कृष्ण ने तीनों के नाम बता कर कहा, 'जिससे युद्ध करने की तुम्हारी इच्छा हो, उससे तुम युद्ध करो'।

जरासंध ने कृष्ण तथा अर्जुन को नालायक मान कर, भीम से युद्ध करने का निश्चय किया। सहदेव को राज्याभिषेक कर स्वयं युद्ध प्रारंभ किया। प्रथम इनका गदायुद्ध हुआ, परंतु एक दूसरे के शरीरों पर काफी बार आघात होने के कारण गदायें टूट गई। द्वंद्वयुद्ध प्रारंभ हुआ। यह युद्ध दिनरात चलता था। यह युद्ध कार्तिक शु. १ से कार्तिक शु. १४ तक १४ दिन (म. स. २१.१७-१८), २५ दिन (पद्म. उ. २७९) अथवा २७ दिन (भा. १०.७२. ४०) चल रहा था। युद्ध के अंतिम दिन दोनों अत्यंत थक गये थे। कृष्ण की उत्तेजना से भीम ने जरासंध का वध किया (म. स. २२.६; क. २०-२४)। अंतिम दिन में भीम ने जरासंध को फाड़ डाला। यह पुनः जुड़ कर युद्ध के लिये सिद्ध हो गया। यह देख कर भीम इस विचार में पड़ा, इसकी मृत्यु कैसी हो। इतने में कृष्ण ने एक तृण हाथ में ले कर उसका छेद किया। दाहिने हाथ का तृण बाँई ओर, तथा बाँयें हाथ का तृण दाहिनी ओर फेंकने का संकेत कृष्ण ने भीम को किया। भीम ने वैसा करते ही जरासंध की मृत्यु हो गई (पद्म. उ. २५२; २७८)। कृष्ण को यह युक्ति उद्धव ने सुझाई थी।

जरासंध मृत होते ही, इसका पुत्र सहदेव शरण आया। कृष्ण ने उसे अभय दिया। उसको राज्य पर स्थापित कर के सब राजाओं को कारागृह से छुड़ा दिया। बाद में उन सब राजाओं को राजसूय यज्ञ में आमंत्रित कर, वह भीमार्जुन के साथ इन्द्रप्रस्थ लौटा (म. स. २२; पद्म. उ. २५२)। परंतु महाभारत में लिखा है कि, जरासंध वध का कृत्य दिग्विजय के पहले किया गया। भागवत में लिखा है कि, सारा दिग्विजय पूरा होने के बाद, जरासंध अजित रहा, इसलिये यह आक्रमण करना पड़ा।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

जरितारि—मंदपाल ऋषि को शाङ्‌र्गी जरिता से उत्पन्न पुत्र (म. आ. २२४.६; अनु. ५३.२२ कुं.)।

जरितृ शाङ्‌र्ग—मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१४२.१; २)।

२. मंदपाल ऋषि की पत्नी। शाङ्‌र्ग एक पक्षी की जाति है। मंदपाल से इसे चार पुत्र हुएँ। उनके नाम जरितारि, सारिसृक्व, द्रोण तथा स्तम्बमित्र थे (म. आ. २२४.६)। ये ही नाम उपरोक्त सूक्तों के क्रम से दो दो ऋचाओं के द्रष्टाओं के हैं। उन पुत्रों को मंदपालद्वारा भगा दिये जाने पर, वे दावाग्नि में घिर गये। परंतु उपरोक्त दो मंत्रों से, अग्नि की प्रार्थना करने पर दावाग्नि से ये मुक्त हो गये। सायण ने इस कथा का अनुक्रमणी के

आधार से संबंध जोड़ा है। महाभारत तथा अनुक्रमणी में प्रथम पुत्र के नाम में मतभेद है। महाभारत में जरितारि नाम दिया है। अनुक्रमणी एवं बृहद्देवता ने प्रथम पुत्र का नाम जरितृ बता कर, माता का नाम नहीं दिया है।

जरूथ--पानी में रहनेवाला कोई राक्षस रहा होगा (ऋ. १०.८०.३)। वसिष्ठ ने प्रज्वलित अग्नि से इसे भस्म किया (ऋ. ७.९.६)। जरदुष्ट्र के साथ इसकी तुलना की जाती है।

जर्वर--सर्पसत्र में गृहपति (यजमान) (पं. ब्रा. २५.१३)।

जल जातूकर्ण्य--काशी विदेह तथा कोसल के लोगों का वा राजाओं का पुरोहित (सां. श्रौ. सू. १६.२९.६; जातूकर्ण्य देखिये)।

जलद—अत्रिकुल का गोत्रकार।

जलंधर--कश्यपकुल का गोत्रकार।

२. महानमंडी तथा त्रैलोक्य विजयी गृहस्थ। इसको शिव ने 'अंगुष्ठरेखोत्थ' चक्र से मारा (शिव. शत. १५.१७)।

जलसंध--अंगिरा कुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि। इसका नाम जलसंधि दिया गया है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ६०.२८; क. ६२.४)।

३. मागधराज। यह रथवर था (म. आ. १७७.११; उ. १६४.२४)। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था। यह सात्यकि द्वारा मारा गया। यह बड़ा शूर एवं शुचिर्भूत था (म. द्रो. ९१.४५)।

जलसंधि—जलसंध १. देखिये।

जलापा—ब्रह्मवादिनी। यह मानवी थी (ब्रह्मांड. २. ३३.१७)।

जलाभित—आलुकि का पाठभेद।

जलेयु—(सो. पूरु.) भागवत, विष्णु, वायु तथा महाभारत के मत में रौद्राश्व के दस पुत्रों में से एक (म. आ. ८९.९)।

जल्प--तामस मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

जव—दंडकारण्य के विरोध राक्षस का पिता।

जविन--भृगुकुल का गोत्रकार।

जवीनर—(सो. नील.) मत्स्यके मत में भद्राश्वपुत्र। इसे भागवत में यवीनर, वायु में यवीयस् तथा विष्णु में प्रवीर कहा गया है।

जह्नावी—यह शब्द ऋग्वेद में दो बार आया है (ऋ. १.११६.१९; ३.५८.६)। जन्हु की स्त्री, वा सायण के मत में जन्हु का वंश, यों इस शब्द का अर्थ होगा (जन्हु देखिये)।

जह्नु—(सो. अमा.) भागवत के मत में होत्रकपुत्र, एवं विष्णु तथा वायु के मत में सुहोत्रपुत्र।

जह्नु तथा वृचीवत् में विरोध था। विश्वामित्र जाह्नव ने वृचीवतों को परास्त किया। राष्ट्र का स्वामित्व विश्वामित्र जाह्नव ने प्राप्त किया (तां. ब्रा. २१.१२.२)।

विश्वामित्र को सौ पुत्र थे। फिर भी विश्वामित्र ने शुनःशेप को अपना पुत्र माना। शुनःशेप का देवरात नाम रख दिया। इतना ही नहीं, उसे सब पुत्रों में ज्येष्ठत्व दिया। पहले पचास पुत्रों ने देवरात को ज्येष्ठ मानना अमान्य किया। दूसरे पचास पुत्रों का मुखिया मधुच्छंदस् था। उन्होंने देवरात का ज्येष्ठत्व मान लिया। विश्वामित्र ने देवरात को जह्नु तथा गाथिन् का आधिपत्य दिया। यज्ञ, वेद, तथा धन का उसे अधिकारी बनाया (ऐ. ब्रा. ७.१८)।

इससे पता चलता है कि, शुनःशेप का कुलनाम जह्नु था, तथा विश्वामित्र का कुलनाम गाथिन् वा गाधि था। दोनो कुलों का उत्तराधिकारी शुनःशेप (देवरात) था। अत एव, उसको द्व्यामुष्यायण कहते हैं।

जह्नु शब्द से जह्नावी शब्द हुआ। जह्नावी शब्द ऋग्वेद में दो बार आया है। 'जह्नु की प्रजा,' यों उस शब्द का अर्थ है (ऋ. १.११६.१९;३.५८.६)।

अमावसुवंश के जह्नु तथा पूरुवंश के जह्नु दोनों बिलकुल भिन्न थे। नामसाम्य से, कई पुराणों में अमावसुवंश के विश्वामित्रादि लोक, पूरुवंश के जह्नु के वंश में दिये गये हैं। वस्तुतः विश्वामित्रादि लोग अमावसुवंश में उत्पन्न हुए है। जह्नुवंश से उनका कोई संबंध नहीं हैं (भरत एवं विश्वामित्र देखिये)।

२. (सो. पूरु.) अजमीढ़पुत्र। इसकी माता का नाम केशिनी था (म. आ. ८९.२८; अग्नि. २७८.१६)। अजमीढ़ का पिता हस्तिन् ने हस्तिनापुर की स्थापना की। भगीरथ ने लायी हुयी गंगा इसने रोकी थी। भगीरथ ने उसे फिर मुक्त किया (वा. रा. बा. ४३; वायु. ९१)। गंगा को जाह्नवी कहने का यही कारण है।

३. (सो. पूरु.) मिथिल का पुत्र। इसका पुत्र सिंधुद्वीप (म. अनु. ७.३.कुं.)। जह्नु आदि विश्वामित्र-कुल के लोग, महाभारत में कई जगह पूरुवंश में दिये हैं। दूसरे स्थल में भिन्न प्रतिपादन है (म. शां. ४९)।

४. (सो. पूरु. कुरु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य, तथा वायु के मत में कुरु के पाँच पुत्रों में तीसरा। इसका पुत्र सुरथ। उस से हस्तिनापुर में कुरुवंश का विस्तार हुआ।

५. तामस मन्वन्तर का एक ऋषि।

जाजलि—एक ऋषि। इसे अपने तप पर घमंड हो गया था। तुलधार नामक एक धर्मात्मा वैश्य से संवाद करने पर, इसका घमंड नष्ट हुआ। इसे पश्चिमी समुद्र के किनारे पर मुक्ति मिली (म. शां. २५३–२५७; भा. ४. ३१.२)।

२. विष्णु, वायु, ब्रह्मांड तथा भागवत के मत में व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा के पथ्य का शिष्य।

३. भास्करसंहिता के वेदांगसारतंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

४. ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

जाटासुरि—जटासुर के पुत्र अलंबुष का नामांतर।

जाटिकायन—एक ऋषि। शांत्युदक करते समय किस मंत्र का उपयोग करना चाहिये, इस विषय में इसका मत दिया गया है (कौ. गृ. ९.१०)।

जात शाकायन्य—एक ऋषि। कर्म के एक विशिष्ट संप्रदाय प्रवर्तक के नाते इसका के उल्लेख है (क. सं. २२.७)। यह शंख कौष्य का समकालीन था।

जातूकर्ण—जातूकर्ण्य ६. देखिये।

जातूकर्ण्य—आसुरायण एवं यास्क का शिष्य। इसका शिष्य पाराशर्य (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। यह कात्यायनी का पुत्र था (सां. आ. ८.१०)। अलीकयु वाचस्पत्य तथा अन्य ऋषियों का यह समकालीन था। अन्य काफी स्थानों में इसका उल्लेख है (ऐ. आ. ५.३.३; सां. श्रौ. १.२.१७; ३.१६.१४; २०.१९; १६.२९.६; का. श्रौ. ४.१.२७; २०.३.१७; २५.७.३४; सां. ब्रा. २६.५)। संधिनियम के बारे में विचार करनेवाला, यह एक आचार्य था (ऋ. प्रा. ४.१२३; १५८; ५.२२)। सांख्यायन श्रौतसूत्र में इसे जल जातूकर्ण्य कहा है।

एक पैतृक नाम के नाते, जातूकर्ण्य शब्द का उपयोग भी प्राप्त है।

धर्मशास्त्रकार—विश्वरूप ने, वृद्ध याज्ञवल्क्य से लिये गये एक उद्धरण में, जातूकर्ण्य का धर्मशास्त्रकार के नाते उल्लेख किया है। स्मृतिचन्द्रिका में दी गयी, 'आंगिरस स्मृति' के एक उद्धरण में, जातूकर्ण्य को उपस्मृतिकार कहा है। इसी प्रकार विद्यार्थियों के कर्तव्य, अन्य जाति की स्त्री से विवाह का प्रतिबंध, श्राद्धकाल आदि के संबंध में जातूकर्ण्य के सूत्र प्राप्त है। जातूकर्ण्य ने आचार तथा श्राद्ध आदि पर काफी प्राचीन सूत्र लिखे थे। बारह राशियों में से, कन्या राशि के संबंध में जातूकर्ण्य के एक श्लोक का उल्लेख, अपरार्क ने किया है। इससे प्रतीत होता है कि, जातूकर्ण्य का काल ईसवी सन २०० से ४०० के बीच का होगा। श्रौतसूत्र में एवं हलायुध तथा हेमाद्रि के ग्रंथों में भी इसके आधार लिये गये है (का. श्रौ. ४.१.२७; २०.३.१७; २५.७. ३५; सां. श्रौ. १.२.१७; ३.१४; २०.१९; १६.२९.६)।

२. (सू. दिष्ट.) भागवत के मत में देवदत्त पुत्र।

३. (सू. नरि.) एक ऋषि (म. स. ४.१२)। अग्निवेश्य का यह नामांतर था (भा. ९.२.२१)।

४. व्यास की ऋक्शिष्य परंपरा के शाकल्य मुनि का शिष्य। इसने शाकलसंहिता का अध्ययन किया था (व्यास देखिये)।

५. वसिष्ठगोत्र का प्रवर।

६. एक व्यास (व्यास देखिये)। जातूकर्ण ऐसा पाठ भी उपलब्ध है। यह जरदुष्ट्र से मिलने के लिये ईरान गया था (दसतिर. १३.१६३)।

७. ब्रह्मांड पुराण की परंपरा का एक आचार्य।

जातूष्ठिर—एक व्यक्ति। इंद्र ने इसकी सहायता की थी (ऋ. २.१३.११)।

जान—वृश का पैतृक नाम।

जानकि—ऋतुजित् (तै. सं. २.३.८.१; क. सं. ११. १), तथा अयस्थूण (बृ. उ. ६.३.१०) का पैतृक नाम।

उपनिषदों में इसे चूल भागवित्ति का शिष्य तथा सत्यकाम जाबाल का गुरु कहा गया है। उपरोक्त वर्णित सारे जानकि एक हैं या अनेक, यह कहा नहीं जाता।

२. एक ऋषि। विश्वंतर के सोमयाग में, श्यापर्ण के प्रवेश करने के बाद, एक विशिष्ट पद्धति की सोम की परंपरा बताई गयी। वह परंपरा ऋतुविद् ने जानकि को सिखायीं (ऐ. ब्रा. ७.३४)।

३. दुर्योधनपक्षीय क्षत्रिय राजा (म. आ. ६१.३६)। स्वर्ग में रहनेवाले चंद्रविनाशन दैत्य का यह अंशावतार था।

जानंतपि—अत्यराति का पैतृक नाम।

जानपदी—जालपदी या जालवती का नामांतर।

जानश्रुति—पौत्रायण का पैतृक नाम (छां. उ. ४. १.१; २.१)। इस उदार गृहस्थ ने सर्वत्र अन्नछेत्र खोल दिये थे (रैक्व देखिये)।

जानश्रुतेय—उपावि, उलूक्य, औपावि, नगरिन्, तथा सायक का पैतृक नाम।

जानुजंघ—एक क्षत्रिय (म. आ. १.१७६. अनु. २७१.५९ कुं.)।

२. तामस मन्वन्तर में से मनुपुत्र।

जांदकार—सूर्य के समीप रहनेवाले अठारह विनायकों में से एक (सांब. १६)। जांदकार का शब्दशः अर्थ है 'सहायता करनेवाला'। यह हमेशा यम का कार्य करता है।

जाबाल—महाशाल तथा सत्यकाम का मातृक नाम। एक सत्र का यह गृहपति था (सां. ब्रां. २३.५)।

२. भृगुकुल का गोत्रकार।

३. विश्वामित्र का एक पुत्र।

४. विश्वामित्रकुल का गोत्रकार तथा एक ऋषिगण।

५. ब्रह्मांड मत में व्यास की यजुःशिष्य परंपरा के, याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

६. भास्करसंहिता के तंत्रसारतंत्र का कर्ता (ब्रह्मवै. २. १६)।

जाबालायन—माध्यंदिनायन का शिष्य। इसका शिष्य उद्दालकायन (बृ. उ. ४.६.२; काण्व)।

जाबालि—विश्वामित्र का पुत्र।

२. दशरथ का एक मंत्री। यह राम के विवाह में उपस्थित था (वा. रा. बा. ६९.४)। पित्राज्ञा तोड कर अयोध्या आने के लिये, इसने राम को कहा। इसलिये राम ने इसका निषेध किया (वा. रा. अयो. १०८)।

रामसभा का धर्मशास्त्री के नाते भी इसका उल्लेख प्राप्त है। जाबालनीति नामक इसका एक ग्रंथ है। भारत के 'कणिकनीति' से वह साम्य रखता है।

३. एक ऋषि। इसके वंश में पैदा हुए लोगों को भी यही नाम प्रयुक्त है। मंदार पर्वत पर इसकी तपश्चर्या की जगह थी। इसके लाखों शिष्य थे। निपुत्रिक राजा ऋतंभर को पुत्रप्राप्ति के लिये, इसने विष्णुसेवा, गोसेवा तथा शिवसेवा करने के लिये कहा।

एक दिन यह अरण्य में गया था। वहाँ तालाब के किनारे, एक सुंदर तथा तरुण तापसी तपश्चर्या करती हुई इसे दिख पडी। उसे जानने के लिये, यह वहाँ सौ वर्ष तक रुका। उसकी समाधि समाप्त होने पर, जाबालि ने उसकी जन्मकथा पूछी। बाद में कृष्णोपासना का रहस्य उससे जान कर, यह स्वयं कृष्ण की आराधना करने लगा। उस तपश्चर्या के फलस्वरूप, गोकुल के प्रचंड नामक गोप के घर में, चित्रगंधा नामक गोपी का जन्म इसे मिला (पद्म. पा. ३०.७२;१०९)।

४. एक ऋषि। एकबार यह घोर तपश्चर्या कर रहा था। इन्द्र ने रंभा को इसके पास भेजा। रंभा ने इसको मोहित किया। उससे इसे एक कन्या हुई। बाद में उस कन्या का चित्रांगद राजा ने हरण किया। तब जाबालि ने उसे कुष्ठरोगी बनने का शाप दिया (स्कन्द. ६.१४३–१४४)।

५. भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि (भृगु देखिये)। इसकी लिखी एक स्मृति प्रसिद्ध है। हेमाद्रि तथा हलायुध ने उस में से आधार लिये हैं।

जामघ—(सो.) भविष्य के मत में पारावतसुत का पुत्र।

जामदग्निय—एक पैतृक नाम। जमदग्नि के दो वंशजों के लिये यह नाम प्रयुक्त है (तै. सं. ७.१.९.१)। और्व लोगों को जामदग्निय कहा गया है (पं. ब्रा. २१.१०.६)।

जामदग्न्य—परशुराम का पैतृक नाम।

२. सावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

जामि—यामि देखिये।

जामित्र—तुषित देवों में से एक।

जांबवत्—प्रजापति तथा रक्षा का पुत्र। इसकी पत्नी व्याघ्री। इसकी कन्या जांबवती (ब्रह्मांड. ३.७.३०१)। ब्रह्मदेव की जम्हाई से यह पैदा हुआ (वा. रा. बा. १७)। यह ऋक्षों का राजा था (वा. रा. यु. ३७)।

२. एक वानर। सीताशोध के लिये इसने राम की काफी सहायता की (वा. रा. यु. ७४)। रावणवध के बाद, राम का जय होने की वार्ता, नगाडे पीट कर इसने सब को बताई। राम के राज्याभिषेक के लिये समुद्र का पानी इसीने लाया था (वा. रा. यु. १२८)। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वरक्षण के लिये, शत्रुघ्न के साथ यह भी गया था (पद्म. पा. ११.१५)।

३. वानर जाति का एक मानव। स्यमंतकमणि के लिये, कृष्ण से इसका अठाईस दिनों तक युद्ध हुआ। अन्त में कृष्ण रामावतार है, यह जान कर इसने उसकी स्तुति की। पश्चात् स्यमंतक मणि के साथ अपनी कन्या जांबवती इसने कृष्ण को दी (भा. १०.५६.३२; पद्म. उ. २७६)।

इसने दशांग पर्वत पर शिवलिंग की स्थापना की थी। उस लिंग को इसके नाम पर 'जांबवत लिंग' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १४३)।

जांबवती--ऋक्षराज जांबवत् की कन्या, तथा कृष्ण की अष्टनायिकाओं में से एक। इसे सांब, सुमित्र, पुरुजित्, शतजित्, सहस्रजित्, विजय, चित्रकेतु, वसुमत्, द्रविड तथा क्रतु नामक पुत्र, तथा एक कन्या थी (म. स. परि. १, क्र. २१, पंक्ति. १४११; भा. १०.५६.३२; ६१.१२; विष्णु. ४.१३)। अन्त में इसने अग्निप्रवेश किया (म. मौ. ८.७२)।

जायद्रथ--जयद्रथपुत्र सुरथ का नामांतर।

जायंत--जयंती से ऋषभदेव को उत्पन्न शतपुत्रों का नामांतर।

जायंतीपुत्र--आलंबीपुत्र का गुरु तथा मांडूकायनीपुत्र का शिष्य (बृ. उ. ६.५.२)।

जायंतेय--जायंत का नामांतर।

जार--वृषजार देखिये।

जारत्कारव--आर्तभाग का पैतृक नाम (बृ. उ. ३.२.१)।

जारासंधि--जरासंधपुत्र सहदेव का नामांतर।

जार्ति--तंति का नामांतर।

जालधि--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

जालंधर--एक दैत्य। यह समुद्र में पैदा हुआ। यह शास्त्रवेत्ता था। इसका वध शंकर ही कर सकेंगे, ऐसा ब्रह्मदेव ने इसे वरदान दिया था (स्कंद.,२.४.१४; पद्म. उ. ४-१९; शिव. रुद्र. यु. १४)।

समुद्र तथा गंगा का यह पुत्र, जालंधर देश में रहता था। इसका राज्य पाताल एवं स्वर्ग पर भी था। इसकी पत्नी वृंदा। शुक्र के सहाय्य से यह पृथ्वी का शासन करता था। संजीवनीविद्या भी इसे अवगत थी। यह सर्वथा अजेय था। इंद्रपद पर इसने कब्जा किया था। लक्ष्मीनारायण भी इसके घर में रहते थे।

नारद ने एक बार पार्वती के सौंदर्य की प्रशंसा की। इसने पार्वती को लाने के लिये राहू को भेजा। शंकर ने राहु को भगा दिया। अन्त में शंकर तथा जालंधर का घमासान युद्ध हुआ। शस्त्रयुद्ध के बाद मायायुद्ध शुरू हुआ। पार्वती के पास यह शंकर का रूप ले कर गया। विष्णु जालंधर का रूप ले कर वृन्दा के पास आया। वृंदा ने विष्णु को, द्वारपालद्वारा पराजित होने का शाप दिया। फिर भी विष्णुमाया से लज्जित हो कर, वृन्दा नें अग्निप्रवेश किया (शिव. रुद्र. यु. २३; आ. रा. सार. ४)।

दूसरी जगह यह कथा भिन्न रूप में आयीं है। वृंदा ने विष्णु को शाप दिया, 'तुम्हारी स्त्रियों का भी इसी प्रकार हरण होगा'। बाद में वृंदा ने देहत्याग किया (पद्म. उ. १५)। शंकर ने इसका सिर सुदर्शन चक्र से काट दिया (स्कंद. २.४.१४-२२)।

'जालंधरायण-जालंधर-त्रिगर्त-कांग्रा' यह प्रदेश पाणिनिकाल से आज तक सतलज (शुतद्रु) नदी के पश्चिम भाग में ख्यात है।

जालपदी--देवकन्या। इसे देख कर शरद्वत् का रेतस्खलन हो कर, कृप एवं कृपी ये पैदा हुएँ (म. आ. १२०.६)।

जाहुष--एक राजा। अश्वियों की कृपा से इसका राज्य पुनः प्राप्त हुआ। च्यवन तथा यह, पक्थों का राजा तुर्वयाण के विरुद्ध के पक्ष में थे (ऋ. ७.७१.५)।

जाह्नव--विश्वामित्र का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ११.१२; जह्नु तथा विश्वामित्र देखिये)।

जिगीषु--पृथुक देवों में से एक।

जित्--एक देवप्रकार। स्वायंभुव मन्वन्तर में देवताओं को 'याम' कहते थे। उन्हीं में से एक प्रकार जित् नाम से प्रसिद्ध था।

जित--(सो. यदु.) वायुमत में यदुपुत्रों में से एक।

जितकाम--मधुवन के शाकुनि ऋषि का पुत्र। यह अत्यंत विरक्त था, तथा संन्यास वृत्ति से रहता था (पद्म. स्व. ३१)।

जितवती--उशीनर की कन्या तथा द्यू नामक वसु की भार्या।

जितव्रत--(स्वा. उत्तान.) भागवत मत में हविर्धान का पुत्र। इसकी माता हविर्धानी।

जिताजित्--स्वायंभुव मन्वन्तर में से एक देवप्रकार।

जितारि--(सो. कुरु.) अविक्षित् का पुत्र।

जित्वन् शैलिनि--शिलीन ऋषि का पुत्र। इसका भ्राता जिन। एक स्थान पर इसका नाम शैलिन् आया है (बृ. उ. ४.१.५; माध्यं.)। परंतु काण्व प्रति में शैलिनि नाम दिया है (४.१.२)। जनक एवं याज्ञवल्क्य का यह समकालीन था। यह वाग्देवता को ब्रह्म समझता था।

जिन--जित्वन् देखिये।

२. बर्बरिक, अर्हत्, ऋषभ एवं बृहस्पति देखिये।

जिष्णु—विष्णु, इंद्र, एवं अर्जुन का नामांतर।

२. भौत्य मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

जिष्णुकर्मन्--पांडवों के पक्ष का एक राजा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)।

जिह्वक—भृगुकुल का गोत्रकार।

जिह्वावत् बाध्योग—असित वार्षगण का शिष्य। इसका शिष्य वाजश्रवस् (बृ. उ. ६.५.३)।

जीमूत--(सो. यदु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा वायुमत में व्योमपुत्र।

२. एक मल्ल। विराटगृह में भीम ने इसे मारा (म. वि. १२.२३)।

३. एक विप्रर्षि। यह उशीरबीज नामक क्षेत्र में रहता था (म. उ. १०९.२१)।

४. (सो. यदु.) भीम का पुत्र।

जीव--अंगिरस् का पुत्र (शुक्र देखिये)।

जीवनाश्व--अंगिराकुल का गोत्रकार। पाठभेद—युवनाश्व।

जीवंति--भृगुकुल का गोत्रकार।

जीवंती—एक पतिता वेश्या। रामनाम कहने से इसका उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. १५)।

जीवल--अयोध्याधिपति ऋतुपर्ण का अश्वपाल। नल के अज्ञातवास में, यह उसके लिये सहानुभूति रखता था (म. व. ६४.११)।

जीवल चैलकि—एक यज्ञवेत्ता। अग्निहोत्र की जानकारी इसने दी है (श. ब्रा. २.३.१.३१-३५)।

जुहु—बृहस्पति की पत्नी (ऋ. १०.१०९)।

२. ब्रह्मदेव की पत्नी (सर्वानुक्रमणी)।

जूति--एक सूक्तकर्ता। यह वातरशन का पुत्र था। (ऋ. १०.१३६.१)।

जृंभक--एक यक्ष। धर्मारण्य के ऋषियों को यह त्रस्त करता था (स्कंद. ३.२.९)।

जेतृ—अमिताभ देवों में से एक।

जेतृ माधुच्छंदस--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.११)।

जैगीषव्य--एक ऋषि (म. स. १२५ पंक्ति ५*; अनु. ४९.३७ कुं.)। इस के पिता का नाम शतशलाक (ब्रह्माण्ड. ३.१०.२०)। इसकी तीन पत्नियाँ थीः--१. पर्णा (मत्स्य. १७९), २. हिमवान की कन्या एकपाटला (ह. वं. १.१८.२४), ३. योगवती (पद्म. सृ. ९)। इसके शिष्य का नाम असित देवल था। उसे इसने अपने तप का अद्भुत तेज तथा लीलायें दर्शाई। इसमें ब्रह्मलोक-गमन का सामर्थ्य था (म. श. ४९)। असित देवल के साथ इसका ब्रह्मप्राप्तिविषयक संवाद प्रसिद्ध है (म. शां. २२२)। अश्वशिरस् राजा के दरबार में, कपिल ने विष्णु का तथा इसने गरुड का रूप लिया था (वराह. ४)। इसे योगशास्त्र की जानकारी देने के लिये, ब्रह्मदत्त-पुत्र विष्वक्सेन ने, योगशास्त्र पर ग्रंथ लिखा (भा. ९. २१.२५-२६)।

इसने प्रभास क्षेत्र में घोर तपश्चर्या की। पूर्वकल्प में 'महोदय' नाम से प्रसिद्ध लिंग की इसने स्थापना की। शिव के प्रसन्न होने पर, 'मुझे ज्ञानयोग दीजिये,' यों वर इसने माँगा। इसके द्वारा स्थापित लिंग को आजकल सिद्धेश्वर कहते हैं (स्कंद. ७.१.१४)।

दूसरे स्थान पर विभिन्न कथा प्राप्त है। इस ऋषि ने जिद की, 'जब तक मुझे शिवदर्शन नहीं होगा, तब तक मैं पानी भी नहीं पीऊंगा'। शंकर को यह ज्ञात होते ही, वह पार्वती के साथ इसे दर्शन देने आया। शंकर ने इसकी सारी इच्छाएँ पूरी की, तथा इससे शिवलिंग की स्थापना करवायी (स्कंद. ४.२.६३।।

२. वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में से शंकर का अवतार। यह काशी के दिव्य प्रदेश में दर्भासन पर बैठनेवाला महायोगी था। इसे सारस्वत, योगीश, मेघवाह तथा सुवाहन नामक चार पुत्र थे (शिव. शत.४)।

जैत्यद्रौणि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

जैत्र—कृष्ण का एक सेवक (भा. १०. ७१. १२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. क. २५. १२-१३)।

जैत्रायण सहोजित—राजसूय यज्ञ करनेवाले एक राजा का नाम। (क. सं. १८. ५)। परंतु कापिष्ठल संहिता में इंद्र की उपाधि के रूप में यह शब्द प्रयुक्त किया है (कापि. सं. २८. ५)।

जैमिनि—एक ऋषि। यह कौत्सकुलोत्पन्न था, तथा युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋत्विज था (भा. १०.७४.८)। मय-सभा में प्रवेश करने के बाद, युधिष्ठिर ने बड़ा समारोह किया। उस समय यह उपस्थित था (म. स. ४.९)। भीष्म शरपंजर पर पड़ा था, तब अन्य मुनिगणों के साथ यह वहाँ था (म. शां. ४७.६५*)। जनमेजय के सर्प-सत्र में यह उद्गाता था (म. अ. ४८.६)।

यह कृष्ण द्वैपायन व्यास का सामवेद का शिष्य था (म. आ. ५७.७४; व्यास देखिये)। यह लांगलि का भी शिष्य था।

जैमिनि ने अपनी शिष्यपरंपरा कैसी बढायी, इसका पता कई प्राचीन ग्रंथों से मिलता है। किंतु उसमें एक-वाक्यता न होने के कारण, वह जानकारी यहाँ नहीं दी गई है (अग्नि. १५०.२८-२९; ब्रह्माण्ड. १.१३; २.३५. ३१; वायु. ६१.२७-४८; व्यास देखिये)।

जैमिनि ने लिखा हुवा, 'जैमिनि अश्वमेध' ग्रंथ प्रसिद्ध है। यह ग्रंथ इसने पूरे महाभारत के रूप में प्रथम लिखा था। परंतु उसमें पांडवों का गौरव कम था। इस कारण, अश्वमेध के सिवा इस ग्रंथ का बाकी भाग नष्ट करने की आज्ञा, व्यास ने इसे दी। उस आज्ञानुसार जैमिनि ने वह ग्रंथ नष्ट कर दिया।

'जैमिनि अश्वमेध,' महापुराण तथा उपपुराण से बिल्कुल भिन्न है। उसमें भागवत का निम्नलिखित उल्लेख है:—

'भारतं हरिवंशं च पुत्रदं धनदं भवेत्।
श्रीमद्भागवतं पुण्यं भुक्तिमुक्तिफलप्रदम्॥'

(जै. अ. ५८.९)। 'जैमिनि अश्वमेध का काल' ख्रि. पू. सौ वर्ष माना जाता है (पुराणनिरीक्षण, पृ. ८२)।

सामवेद के राणायनीय नामक शाखा का जैमिनीय नामक नवम भेद इसने लिखा है। यह संहिता कर्नाटक में विशेष ख्यातनाम है। उसी प्रकार जैमिनीय ब्राह्मण तथा जैमिनीयोपनिषद ब्राह्मण नामक सामवेद के ब्राह्मण इसने लिखे। वे दोनों ग्रंथ आज भी उपलब्ध है।

इसके अतिरिक्त निम्नलिखित ग्रंथ भी इसने लिखे है:—"जैमिनिसूत्र, जैमिनिनिघंटु, जैमिनिपुराण, ज्येष्ठ-माहात्म्य, जैमिनिभागवत, जैमिनिभारत, जैमिनिगृह्यसूत्र, जैमिनिसूत्रकारिका, जैमिनिस्तोत्र, जैमिनिस्मृति (C. C.)।

सुमन्तु, वैशंपायन, पुलस्त्य, तथा पुलह इनके समान यह भी वज्रनिवारक था (शब्दकल्पद्रुम)। इसका पुत्र सुमंतु (विष्णु. ३.६.२)।

जैमिनिगृह्यसूत्र के उपाकर्मांगतर्पण में, जैमिनि ने निम्नलिखित आचार्यों का उल्लेख किया है:—१. जैमिनि, २. तलवकार, ३. सात्यमुग्र, ४. राणायनि, ५. दुर्वासस्, ६. भागुरि, ७. गौरुण्डि, ८. गौर्गुलवि, ९. भगवान् औपमन्यव कारडि, १०. सावर्णि, ११. गार्ग्य, १२. वार्षगण्य तथा १३. दैवन्त्य (जैमिनि गृह्यसूत्र १.१४)। यह सामवेदी श्रुतर्षि था। ब्रह्मांडपुराण के प्रवर्तक ऋषियों की परंपरा में, इसका नामोल्लेख आता है।

जैमिनिसूत्र का परिचय—जैमिनि ने यज्ञप्रतिपादक ब्राह्मण ग्रंथ का वाक्यार्थ निश्चित करने के लिये सूत्ररचना की। जैमिनि रचित सूत्र 'पूर्वमीमांसा' वा 'कर्ममीमांसा' नाम से प्रसिद्ध है। यज्ञविषयक वाक्यों का अर्थविषयक मतभेद दूर कर के संगति लगाना, जैमिनिसूत्रों का मुख्य कार्य है। इन्ही सूत्रों से वाक्यार्थविचारशास्त्र पैदा हुआ। सूत्रों की संख्या २५०० है। वे ग्यारह अध्यायों में विभाजित है।

सूत्रग्रंथों में जैमिनिसूत्र प्राचीनतम माने जाते हैं। इस विषय में प्राचीन आचार्यों का भी निर्देश जैमिनि ने किया है। 'जैमिनिसूत्रों' के उपर, उपवर्ष की वृत्ति, शाबरभाष्य, प्रभाकर की बृहती (गुरुमत), कुमारिलभट्ट का वार्तिक (इ. स. ७००); पार्थसारथि मिश्र की शास्त्रदीपिका, मंडनमिश्र के विधिविवेक एवं भावनाविवेक, खंडदेव की भाट्टदीपिका, आदि ग्रंथ विख्यात है। यज्ञद्वारा प्राप्त होनेवाले स्वर्ग की अभिलाषा प्रारंभ में थी। धीरे धीरे टीकाकारों ने मोक्ष का भी अंतर्भाव पूर्वमीमांसाशास्त्र में कर दिया। 'बादरायणसूत्रों' में वेद का उत्तरभाग माने गये उपनिषदों के वाक्यों का विचार है। इसलिये बादरायणसूत्रों को उत्तर-मीमांसा नाम से ख्याति प्राप्त हुई।

जैवंतायन—एक ऋषि। रौहिणायन के शिष्य शौनक तथा रैभ्य के साथ इसका उल्लेख है (बृ. उ. ४.५.२९; पा. सू. ४.१.१०३)।

जैवंत्यायनि—भृगुकुल का गोत्रकार (भृगु देखिये)।

जैवलि—प्रवाहण का पैतृक नाम। जैवलि नामक राजा भी यही होगा। राजा जैवलि का गल्नस आर्क्षाकायण से साम के विषय में संवाद हुआ था (जै. उ. ब्रा. १. ३८.४; प्रवाहण देखिये)।

२. एक तत्त्वज्ञ। इसका शिष्य आरुणि (बृ. उ. ६. २.५.७)। यह क्षत्रिय था। ब्राह्मणों में आरुणि सब से प्रथम ब्रह्मज्ञानी हुआ (छां. उ. ५.३७; चित्र गार्ग्यायणि देखिये)।

जैह्मप—गौरपराशरकुलीन एक ऋषि। 'समय' इसीका ही पाठभेद।

जैह्वलायनि—अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

जौंडिलि—गोडिनी के लिये पाठभेद।

ज्ञाति—(सो. क्रोष्टु.) मत्स्यमत में बभ्रु का पुत्र। विष्णु मत में इसे धृति, भागवत मत में कृति, तथा वायु मत में आहुति नाम हैं।

ज्ञानगम्य—सोमकांत राजा का प्रधान (गणेश. २९.)।

ज्ञानभद्र—द्वापार युग का एक महायोगी। यह सौराष्ट्र में रहता था।

एक बार अकाल पड़ने के कारण, लगातार बीस दिनों तक इसे, तथा इसकी पत्नी को उपवास करना पड़ा। एक पर्वत पर जा कर यह एक कुम्हड़ा ले आया। इतने में भारी वर्षा के कारण, भीगा हुआ एक गोप ठंड़ से ठिठुरते हुए इसके घर आया। वह बीस दिनों से भूखा होने के कारण, वह कुम्हडा इन्होंने उस गोप को दिया। इससे वह संतुष्ट हो गया। बाद में उपवास के कारण, यह दोनों यकायक मृत हो गये। उससे दोनों को सायुज्य-मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. क्रि. २५)।

ज्ञानश्रुति--गोदावरी के किनारे स्थित प्रतिष्ठान (पैठण) शहर का पुण्यशील राजा। आकाश से उड़ने वाले हंस से इसे मालूम हुआ कि, रैक्व नामक ब्रह्मवेत्ता अपने से अधिक पुण्यवान है। तब इस पुण्यशील को ढूँढने के लिये, इसने अपने सारथि से कहा। सारथि द्वारा उसका पता लगने पर, बड़ा नजराना ले कर यह रैक्व के पास गया। परंतु उसने राजा का नजराना अस्वीकार कर दिया। राजा ने पूछा, 'यह निरिच्छ वृत्ति आपको कैसी पाप हुई'? उसने बताया, 'यह सब गीता के छठवें अध्याय पढने का फल है' (पद्म. उ. १८०; रैक्व देखिये)।

ज्ञानसंज्ञेय—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

ज्यामघ--(सो. क्रोष्टु.) विष्णु के मत में परावृत्त-पुत्र, मत्स्य तथा वायु के मत में रुक्मकवचपुत्र तथा भागवतमत में रुचकपुत्र। इसे चैत्रा अथवा शैव्या नामक पत्नी थी। इसे संतति नहीं थी। परंतु अपनी पत्नी के भय से, यह दूसरा विवाह नहीं कर सकता था।

एक बार भोज देश की राजकन्या का स्वयंवर संपन्न हुआ था। यह स्वयंवर में गया। पराक्रम से राजकन्या भोजा को जित कर, एवं रथ में बैठा कर, यह अपने नगर ले आया। परंतु चैत्रा ने पूछा, 'यह कौन है'। घबराकर इसने कहा 'यह तुम्हारी स्नुषा है'। पुत्रवती न होने के कारण, इन शब्दों से चैत्रा को अत्यंत दुःख हुआ। परंतु जल्द ही चैत्रा को विदर्भ नामक पुत्र हुआ। उसका भोजा से विवाह किया गया (भा. ९.२३. ३५; वायु. ९५)।

हरिवंश मे, यही कथा किंचित् अलग ढंग से दी गयी है। रुक्मेषु तथा पृथुरुक्म नामक बंधुओं ने मिल कर ज्यामघ राजा को राज्य से भगा दिया। तब अरण्य में आश्रम बना कर, यह शांत चित्त से रहने लगा। परंतु वहाँ के ब्राह्मणों ने इसकी राज्यतृष्णा जागृत कर, नर्मदा किनारे के दूरदूर के प्रदेशों पर आक्रमण करने को, इसे उत्साहित किया। मृत्तिकावती नामक नगरी उने प्रदेशों की राजधानी था। बाद में ऋक्षवत् पर्वत पर आक्रमण कर, इसने उसे जीता। वहाँ की शुक्तिमती नामक नगरी में उपनिवेश प्रस्थापित किया। बाद में मृत्तिकावती प्रदेश जीतने के कारण प्राप्त, उपदानवी नामक कन्या साथ ले कर, यह अपने राज्य आया। 'यह कन्या मैंने तुम्हारे पुत्र के लिये लाई है' ऐसा इसने अपने पत्नी को झूठ ही बता दिया। परंतु पुत्र न होने के कारण, यह झूठ बोलना उसे नहीं जँचा। बाद में उस कन्या के तपःप्रभाव से' वृद्ध काल में गर्भधारण कर, शैव्या ने विदर्भ नामक पुत्र को जन्म दिया। विदर्भ का उपदानवी से विवाह किया गया। उससे उपदानवी को क्रथ, कौशिक तथा लोमपाद नामक तीन पुत्र हुएँ (ह. वं. १.१.३७; १३-२०; ब्रह्म. १४. १०-२०; लिंग. १.६८.३२-४१; मत्स्य. ४४.३२; ब्रह्मांड. ३.७०.३३ पद्म. सृ. १३.११-१९)। विष्णु पुराण में रुक्मकवच को ज्यामघ का पितामह कहा है। तथापि रुक्मकवच तथा रुचक एक ही होंगे।

ज्यामहानि—ब्रह्मांड मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के लांगलि का शिष्य (व्यास देखिये)।

ज्येष्ठ--एक ब्रह्मर्षि तथा ज्येष्ठ साम का कर्ता। बर्हिषद से वेदपारग ज्येष्ठ ऋषि को सात्वतधर्म प्राप्त हुआ। इसके साम श्रीहरी को अत्यंत प्रिय थे। अविकंपन राजा को सात्वतधर्म इसी ब्रह्मर्षि से प्राप्त हुआ। (म. शां. ३३६. ४२)।

ज्येष्ठा--अलक्ष्मी देखिये।

२. सोम की सत्ताईस पत्नियों में से एक।

३. शुक्र की कन्या। द्वादशादित्यों में वरुण की स्त्री। इसे बल, अवर्त नामक पुत्र, तथा सुरा नामक कन्या थी (म. आ. ६०.५२-५३)।

ज्योति--स्वारोचिष मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

२. वसिष्ठ का पुत्र। स्वारोचिष मन्वन्तर का प्रजापति (पद्म. सृ. ७)।

३. वंशवर्तिन् देवों में से एक।

ज्योतिर्धामन्--तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (भा. ८.१.२८)।

ज्योतिर्मुख—रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ३०.७३)।

ज्योतिर्लिंग—शिव के बारह अवतारों का सामूहिक नाम।

पुराणों में निर्दिष्ट ग्यारह ज्योतिर्लिंग के नाम इन प्रकार हैः—(१) घुस्मेश, (२) त्र्यंबक, (३) मल्लिकार्जुन, (४) महाकाल, (५) रामेश्वर, (६) विश्वेश, (७) सोमनाथ, (८) ॐकार, (९) केदार, (१०) नागेश, (११) भीमाशंकर (१२) वैद्यनाथ।

इनमें से घुस्मेश, त्र्यंबक, मल्लिकार्जुन, महाकाल, रामेश्वर,, विश्वेश, एवं सोमनाथ इन ज्योतिर्लिंग के स्थान के बारे मे मतभेद नहीं है।

ॐकार, केदार, नागेश, भीमशंकर तथा वैद्यनाथ इन ज्योतिर्लिंग के स्थान के बारे में मत भेद है।

(१) ॐकार — माधाता में, ॐकारेश्वर एवं अमलेश्वर (परमेश्वर) ये दोनों मिल कर एक ज्योतिर्लिंग मानते हैं।

(२) केदार—हिमालय पर्वत में। १. केदार, २. मध्यमेश्वर, ३. तुंगनाथ, ४. रुद्रनाथ, ५. कल्पेश्वर, ६. पशुपतिनाथ यों छः लिंग हैं। उनमें से केदार एवं पशुपतिनाथ मिल कर एक ज्योतिर्लिंग माना जाता है। बाकी चार शिवलिंग ज्योतिर्लिंग के बाहर के शिवस्थान माने जाते हैं।

(३) नागेश—सौराष्ट्र में प्रभासपट्टण, महाराष्ट्र में औंढ्या नागनाथ, एवं अल्मोडा में जागेश्वर इन तीनों स्थान पर नागेश ज्योतिर्लिंग माना जाता है।

(४) भीमशंकर—१. महाराष्ट्र में पूना के पास सह्यादिशिखर पर, २. आसाम में गोहट्टी के पास ब्रह्मपुर पर्वत पर एवं ३. हिमालय में नैनिताल के पास उज्जनक में भीमाशंकर ज्योर्तिलिंग माना जाता है।

(५) वैद्यनाथ—१. बिहार में संथाळ परगणा में देवघर, २. महाराष्ट्र में परळी वैजनाथ तथा ३. काश्मीर में पठाणकोट के पास वैजनाथ पपरोला, वैद्यनाथ ज्योतिलिंग माना जाता हैं।

और भी एक तेरहवा ज्योतिर्लिंग, बंगाल में जि. चटगांव, सीताकुंड (पूर्व पाकिस्तान) में चंद्रनाथ का स्थान माना जाता है। (शिव. शत. ४२.२-४; ६-५५)।

ज्योतिष्टम--कश्यप तथा अरिष्टा का पुत्र।

ज्योतिष्मत्--स्वायंभुव मन्वन्तर के मनु का पुत्र (पद्म. सृ. ७)।

२. मधुवन में रहनेवाले शाकुनि नामक ऋषि का पुत्र। यह अग्निहोत्री था तथा गृहकृत्यों में तत्पर था (पद्म. स्व. ३१)।

३. दक्षसावर्णि मन्वंतर का एक ऋषि।

४. मरुतों के प्रथम गणों में से एक।

ज्योतिस्--कश्यप एवं कद्रू का पुत्र।

ज्योत्स्ना--सोम की कन्या तथा वरुणपुत्र पुष्कर की स्त्री। ज्योत्स्ना काली इसीका नामांतर है (म. उ. ९६. १३)।

ज्वर--कश्यप तथा सुरभि का पुत्र।

२. एक रोग एवं बाणासुर का सैनिक। यह शिवजी के स्वेद (पसीना) से पैदा हुआ। यह बडा शक्तिशाली था। संसार के कल्याण के लिये, शिवजी ने इसके टुकडे टुकडे किये एवं वे इतस्ततः विखेर दिये (म. शां. २७४)।

बाणासुर तथा कृष्ण के युद्ध में, बलराम को इसने जर्जर किया था। कृष्ण पर भी इसने हमला किया। अन्त में यह कृष्ण की शरण में आया। इसका त्रिपाद, त्रिशिरस् ऐसा स्वरूप वर्णन प्राप्त है (ह. वं. २.१२२-१२३; मा. १०.६३)।

ज्वलना--तक्षक की कन्या। सोमवंशी औचेयु अथवा ऋतेयु की स्त्री।

ज्वाला--तक्षक की कन्या एवं ऋक्ष की पत्नी। इसका पुत्र अंतिनार (म. आ. ९०.२४)।

२. नीलध्वज की स्त्री। नीलध्वज ने अर्जुन को अश्वमेध का अश्व वापस दिया, यह इसे अच्छा न लगा। इसने अर्जुन से युद्ध करने के लिये, नीलध्वज से पर्याप्त अनुरोध किया, किंतु इसकी एक न चली। पश्चात् यह उल्मुक नामक अपने भाई के पास गयी। इसने उसे अर्जुन से युद्ध करने को कहा। उसने भी इसकी बात नही मानी।

यह रुष्ट हो कर गंगा के किनारे गयी। गंगा का जल पैर को लगते ही इसने कहा, 'मुझे जो गंगास्पर्श हुआ है, यह महापाप हुआ है'। यह सुनकर गंगा विस्मित हो, सुमंगला देवी के रूप में प्रकट हुई। गंगा स्पर्श को पापी कहने का कारण गंगा ने इससे पूछा। तब ज्वाला ने कहा, 'तुम ने अपने सात पुत्रों को जल में डुबो कर मारा है। तदुपरांत तुमने शंतनु से आठवाँ पुत्र माँग लिया। उसका अर्जुन ने रणांगण में वध किया। अतः तुम निपुत्रिक एवं पापी हो'। यह सुन कर गंगा ने अर्जुन को शाप दिया, 'छः माहों में तुम्हारा शिरच्छेद होगा'। अर्जुन को शाप मिला देख, ज्वाला को आनंद हुआ। आगे चल कर, अर्जुन एवं बभ्रुवाहन के युद्ध में, यह बभ्रुवाहन के भाते (तूणीर) में बाणरूप से जा पहुँची, तथा अर्जुन का

इसने शिरच्छेद किया (जै. अ. १५)। पश्चात् अर्जुन-पत्नी उलुपी ने नागलोक में से अमृत ला कर अर्जुन को पुनः जीवित किया (अर्जुन देखिये)।

ज्वालायन--गोषुक्तिन् का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ४. १६.१)।

झ

झिल्ली--वृष्णिवंश का एक यादव। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१८; द्रो. १०.२८)।

ट

टण्ड--एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

टिट्टिभ--वरुण लोक का असुर।

ड

डंभोद्भव--दंभोद्भव देखिये।

डिभक--डिंभक देखिये।

डिंभक--जरासंध का प्रधान तथा हंस का कनिष्ठ भ्राता। इसे डिभक अथवा डिंभक भी कहते है (दुर्वासस् देखिये)। इसके भाई हंस की मृत्यु हो गयी। यह समाचार डिंभक को किसीने बताया। तब हंस के बिना इस लोक में नहीं रहूँगा, यह कह कर डिंभक ने यमुना में प्राण छोड़ दिये (म. स. १३.४१; ह. वं. ३.१०३-१२९)।

ढ

ढुण्ढा--एक राक्षसी।

ढुण्ढि--शक्ति-पुत्र। गणेश का नामान्तर। दुरासद देखिये।

त

तंसु—(सो. पूरु.) अंतिनारपुत्र। इसे इलिन नामक पुत्र था। इसे त्रस्तु नामांतर है। (म. आ. ९०.२६; अंतिनार देखिये)।

तकवान—एक मंत्रकार ऋषि (ऋ. १.१२०.६)। तकवान शब्द ऋग्वेद के एक मंत्र में मंत्रकार के रूप में आया हुवा है। संभवतः कक्षीवत् कुल का मंत्रकार होगा (ऋ. १.१२०.६)। दूसरे स्थान पर तकु शब्द का तकवे रूप आया है। तक का तकवान बना होगा। फिर भी ये सारे निर्देश अनिश्चित स्वरूप के है (ऋ. ९.९७.५२)।

तर्कबिंदु—अत्रिकुल का गोत्रकार।

तक्ष—(सू. इ.) दशरथपुत्र भरत को मांडवी से उत्पन्न पुत्र। अपने पुष्कर नामक भाई के साथ इसने गांधार देश पर आक्रमण किया। उस देश को जीत कर इसने तक्षशिला नगरी की स्थापना की (वा. रा. उ. १०१; विष्णु. ४. ४, वायु. ८८.१८९)।

तक्षक—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र एवं एक नाग (विष्णु. १. १५; मत्स्य. ६; म. आ. ५९. ४०; ह. वं. १. ३. १२)। इसे एक पत्नी तथा अश्वसेन एवं श्रुतसेन नामक दो पुत्र थे (म. आ. ३. १४५-१४६)।

अर्जुन ने खांडववन अग्नि को दिया, तब तक्षक की पत्नी तथा अश्वसेन वहाँ थे। अश्वसेन की माता ने उसे मुँह में ले लिया। वह आकाशमार्ग से भागने लगी। यह देखते ही अर्जुन ने उसका शिरच्छेद किया। परंतु तक्षक इंद्र का मित्र था। इसलिये अश्वसेन का रक्षण करना इंद्र ने अपना कर्तव्य समझा। इसलिये अर्जुन के विरुद्ध वर्तन करके इंद्र ने अश्वसेन की रक्षा की (म. आ. २१८. ९)।

इस समय तक्षक कुरुक्षेत्र में था (म. आ. २१९. १३; काश्यप २. देखिये)। पश्चात्, शमीक ऋषि का पुत्र शृंग की प्रेरणा से, अर्जुन का पौत्र परीक्षित् को गले में काट कर तक्षक ने उसका वध किया (परीक्षित् देखिये)।

जनमेजय के सर्पसत्र की कथा पुराणों में सुविख्यात है। जनमेजय तथा तक्षक का वैर वैद ऋषि का शिष्य उत्तंक के कारण हुआ। पौष्य राजा की पत्नी का उत्तंक गुरु था। पौष्यपत्नी ने उत्तंक को गुरुदक्षणा के रूप में अपने कुंडल दिये (म. आ. ३.८५)। उत्तंक से ये कुंडल छीनने के लिये, एक क्षपणक का वेष धारण कर के, तक्षक उसका पीछा करने लगा। यह क्षण में दिखता था, क्षण में अदृश्य हो जाता था। रास्ते में, कुंडल भूमि पर रख कर, उत्तंक लघुशंका करने बैठा। उसे इस प्रकार व्यस्त देख कर, क्षपणक वेषधारी तक्षक ने उसके कुंडल चुरा लिये। आचमन कर के उत्तंक वापस आया। उसने देखा कि, पीछे पीछे आनेवाला क्षपणक कुंडल ले कर भाग रहा है। उत्तंक ने इसके पीछे दौडना प्रारंभ किया। इतने में, क्षपणक ने अपना मूल तक्षक का रूप धारण किया, तथा एक बिल के मार्ग से पाताल में पलायन किया। उत्तंक ने उस बिल को खोद लिया। तक्षक का पीछा करते करते उत्तंक पाताल पहुँचा। पाताल में, नागों की स्तुति कर के उत्तंक ने अपने कुंडल वापस ले लिये (म. आ. ३.१५४-१५८; दे. भा. २.१०)।

पश्चात्, तक्षक का वध करने के लिये, सर्पसत्र का आयोजन करने की सलाह, उत्तंक ने जनमेजय को दी। अपने पिता परीक्षित् के मृत्यु का बदला लेने के लिये, जनमेजय पहले से ही उत्सुक था। उसने सर्पसत्र आयोजित किया। इस सर्पसत्र में, इसके परिवार में से अठारह सर्पकुल जल कर भस्म हुवें। उन सर्पकुलों के नाम ये थे। पिच्छांडक, मंडलक, पिंडसेक्त, रभेणक, उच्छिक, शरभ, भंग, बिल्वतेजस्, विरोहण, शिली, शलकर, मूक, सकुमार, प्रवेपन, मुद्गर, शिशुरोमन्, सुरोमान्, महाहनु।

सर्पसत्र में, तक्षक भी मरनेवाला था। परंतु यह बच गया (म. आ. ४८.१८, आस्तीक तथा इन्द्र देखिये)।

२. (सू. इ.) प्रसेनजित् का पुत्र। इसका पुत्र बृहद्बल (भा. ९.१२.८)।

तक्षक वैशालेय—विराज का पुत्र (अ. वे. ७. १०.२९)। सर्पसत्र के ब्राह्मणाच्छंसी पुरोहित (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

तक्षन्—एक ऋषि। जीवल ऐलकि से इसका कुछ विषयों में मतभेद हुआ था। ब्रह्मवर्चसकाम आरुणि को इसने अग्निसंबंध में जानकारी दी थी (श. ब्रा. २.३.१. ३१-३५)।

तंडि—कृतयुग का एक अंगिरसगोत्री ऋषि। इसने दीर्घकाल तक तपस्या की। शिवसहस्र नाम के योग से इसने शंकर को प्रसन्न किया। सूर्यकुलोत्पन्न राजा त्रिधन्वन

इसका शिष्य था। शंकर ने इसकी स्तुति से प्रसन्न हो कर वर दिया, 'तुम्हारा पुत्र सूत्रकार होगा' (म. अनु. १६, लिंग. १.६५)। शिवपुराण में तंडि की जगह दंडि दिया गया है। उपमन्यु को शिवसहस्र नाम का व्रत केवल तंडि ने ही बताया है (शिव. उ. ३)। इस कारण, तंडि तथा दंडि एक ही रहने की संभावना दिखती है।

तत्त्वदर्शिन्--रौच्य मन्वन्तर का एक ऋषि।

२. पितृवर्तिन् का भाई। पितृवर्तिन् के सात भ्राता थे। उनमें से चार कांपिल्यनगर के सुदरिद्र ब्राह्मण से उत्पन्न हुए थे। उनमें से यह एक था (पितृवर्तिन् देखिये)।

तत्पुरुष--एक शिवावतार।

तनु--कृश देखिये।

तंति--धूम्रपराशर कुलोत्पन्न ऋषि। इसके लिये जार्ति पाठभेद उपलब्ध है।

तंतिपाल--अज्ञातवास के समय, विराट के यहाँ सहदेव ने धारण किया हुआ गुप्त नाम (म. वि. ३.७)। कुंभकोण प्रति में तंत्रीपाल पाठभेद है (म. वि. ४.१५)।

तंत्रीपाल--तंतिपाल देखिये।

तप--तामसमनु के पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

२. सुख देवों में से एक।

३. सुतप देवों में से एक।

तपती--विवस्वत् सूर्य की छाया से उत्पन्न कन्या (म. आ. ९०. ४०. भा. ९. २२. ४; ६. ६. २१)। यह अत्यंत रूपवती थी। इसकी सावित्री नामक बहन थी।

एकबार ऋक्षपुत्र संवरण मृगया खेल रहा था। उसका अश्व अचानक मृत हो गया। वह पास के पर्वत पर पैदल ही घूमने लगा। वहाँ तपती इसे दिखाई पडी। इसके रूपयौवन पर वह मोहित हुआ। अपने साथ गांधर्व-विवाह करने के लिये तपती से उसने प्रार्थना की। इस पर तपती ने कहा, 'हमारे विवाह के लिये, अपने पिता की संमति चाहिये'। पश्चात् सूर्याराधना कर, संवरण ने तपती से विवाह करने की अनुमति सूर्य से प्राप्त की। तपती से संवरण को कुरुवंशसंस्थापक कुरु नामक पुत्र हुआ (म. आ. १६०-१६२)।

तपन--पांडवपक्षीय पांचाल राजा। इसका कर्ण ने वध किया (म. क. ३२. ३७)।

२. एक देव। इस पर अमृत के रक्षण का भार सौंपा गया था (म. आ. २८. १८)।

३. रावण के पक्ष का एक असुर (वा. रा. उ. ४९)। गज नामक वानर द्वारा यह मारा गया।

तपस्--एक शिवावतार। वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के ग्यारहवे चौखट के कलियुग में, गंगाद्वार पर यह शिवावतार हुआ। इसके चार पुत्र थे। उनके नाम लंबोदर, लंबाक्ष, केशलंब तथा प्रलंबक (शिव. शत. ५)।

तपस्य--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपस्विन्--मत्स्यमत में चक्षुर्मनु का नड्वला से उत्पन्न पुत्र। चक्षुर्मनु के पुत्रों के नामावली में इसका नाम उपलब्ध नहीं है।

तपुर्मूर्धन् बार्हस्पत्य--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८२)।

तपोत्सुक--सुदरिद्र ब्राह्मण के चार पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

तपोद्युति--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोधन--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोनित्य पौरुशिष्टि--एक तत्त्वज्ञ तथा पुरुशिष्ट का पुत्र। इसके मत में, उपोषण तथा द्रव्यदान ही केवल तप है (तै. उ. १.९.१)। इसका 'तपोनित्य' नाम भी तप का पुरस्कार करने से आया होगा।

तपोभागिन्--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोमूर्ति--रुद्रसावर्णि मन्वंतर में होनेवाले सप्तर्षियों में से एक।

तपोमूल--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

तपोयोगिन्--तामस मनु का पुत्र।

तपोरति--तामस मनु का पुत्र।

तपोराशि--तामस मनु का पुत्र (पद्म. सृ. ७)।

तम--गृत्समदवंशीय श्रव नामक ब्राह्मण का पुत्र। इसका पुत्र प्रकाश (म. अनु. ८.६३ कुं.)।

२. (सो. क्रोष्टु.) विष्णुमत में पृथुश्रव्य का पुत्र। धर्म एवं सुयज्ञ इसीका नामांतर था।

तमौजस्--(सो. अंधक.) असंमजस् राजा का पुत्र।

२. (सो. विदू.) मत्स्य मत में देवार्ह का पुत्र।

तंबि--अंगिराकुल का गोत्रकार।

तरंत--एक क्षत्रिय दाता। पुरुमीहळ तथा यह ये दोनो श्यावाश्व ऋषि के प्रतिपालक एवं आश्रयदाता थे (ऋ. ५.६१.१०)। पुरुमीहळ की भाँति यह भी विददश्व का पुत्र था। इसलिये, इसे 'वैददश्वि' यों पैतृक नाम था (ऋ. ५.६१.१०)। सायणद्वारा दिये गये शाट्यायन की आख्यायिकानुसार पुरुमीहळ तथा यह ये दोनों भाई थे। षड्गुरु की भी इसे संमती है।

इसकी पत्नी का नाम शशीयसी। इसको शशीयसी से एक पुत्र था। रथवीती दार्भ्य की कन्या को इन्होंने

इस पुत्र के लिये माँगा था। किंतु इस पुत्र का नाम प्राप्त नहीं है (बृहद्दे. ५.५०-८१)।

पुरुमीह्ळ तथा यह ये दोनों जन्म से क्षत्रिय थे। किंतु आपत्काल के जरियें इन्हे ऋषि बनना पडा। क्षत्रियों के लिये दानग्रहण का निषेध होने के बावजूद, ध्वस्त्र तथा पुरुषन्ति से इन्होंने दान स्वीकार कर के प्रतिग्रह-दोष मंत्रप्रभाव से हटा दिया (पं. ब्रा. १३.७१२; जै. ब्रा. ३. १३९)। अपने दान-कर्ताओं की प्रशस्ति भी इन्होंने बनायी थी (ऋ. ९.५८.३, शा. ब्रा. सायण-भाष्य; साम. २.४१०)। किंतु सर्वानुक्रमणी के अनुसार इस दानप्रशस्ति का कर्ता ये नहीं, बल्की अवत्सार काश्यप था।

तरस--राम सेना का एक वानर। यह हनुमान के साथ पश्चिम द्वार का रक्षण करता था।

तरुक्ष--एक दाता। दास बल्बुथ के साथ ऋग्वेद की दानस्तुति में इसका उल्लेख आया है। वशाश्व्य का यह आश्रयदाता था। इससे दान मिलने का प्रशस्तीपूर्वक निर्देश वशाश्व्य ने किया है (ऋ. ८.४६.३२)।

तरुणक--एक सर्प (म. आ. ५२.१७)।

तर्ज--उत्तम मनु का एक पुत्र।

तर्पय--वसिष्ठकुल का गोत्रकार।

तर्ष--अर्क नामक वसु का पुत्र।

तल--एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

तलक--(आंध्र. भविष्य.) भागवत मत में हालेय का पुत्र। पंचपत्तलक, पत्तलक, एवं मंदुलक इसीके ही नाम हैं।

तलवकार--एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)। जैमिनिगृह्यसूत्र के उपकर्मांगतर्पण में इसका उल्लेख है।

तवि--सोमतन्वि पाठभेद हैं।

ताटका--एक राक्षसी। यक्षिणी होने की वजह से, मनचाहे मायावी रूप यह ले सकती थी। हजार हाथियों का बल इसमें था।

यह सुकेतु नामक यक्ष की कन्या थी। सुकेतु को यह ब्रह्मदेव के वर से उत्पन्न हुई थी। जंभपुत्र सुंद की यह पत्नी थी। सुंद से इसे मारीच तथा सुबाहु ये पुत्र हुए।

सुंद के द्वारा कुछ अपराध होने के कारण, अगस्त्य ने शाप दे कर उसको नष्ट किया। बदला लेने के हेतु से अपने पुत्रों समेत, ताटका ने अगस्त्य पर आक्रमण किया। तब अगस्त्य ने मारीच को राक्षस होने का, तथा ताटका को मनुष्यभक्षक भद्दा राक्षसी होने का शाप दिया। तब से यह मारीच के साथ मलद तथा करुष देशों में आ कर रहने लगी। वह प्रदेश उजड़ कर 'ताटकावन' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

पास ही में विश्वामित्र का आश्रम था। उसने यज्ञ प्रारंभ किया कि, यह माँ बेटे उसका विध्वंस करते थे। त्रस्त हो कर विश्वामित्र अयोध्या गया, तथा यज्ञ के संरक्षण के लिये, दशरथ के पुत्रों को ले आया। ताटका की सारी पापी हरकतें बता कर, उसने उन पुत्रों को इसका वध करने के लिये कहा। तब राम ने इसका वध किया (वा. रा. बा. २५-२६)।

ताड़का--ताटका का नामांतर।

ताड़कायन--विश्वामित्र का पुत्र (म. अनु. ७.५६ कुं.)।

तांड--एक आचार्य। साम गायन करते समय गायत्री छंद के मंत्र का प्रस्ताव, अष्टाक्षरी होना चाहिये इस मत का यह प्रवर्तक था (ला. श्रौ. ७.१०.१७)। लाट्यायन श्रौतसूत्र में इसे पुराणताण्ड कहा गया है।

तांड़विंद वा **तांड़विंदव**--एक आचार्य (सां. आ. ८.१०)।

तांड़ि--अंगिरागोत्र का प्रवर। 'सामविधान ब्राह्मण' में दिये विद्यावंश से, यह बादरायण का शिष्य प्रतीत होता है।

तांड़िन--एक छन्दःशास्त्रज्ञ आचार्य। महाबृहती छन्द को यह सतोबृहती छन्द कहता है (छन्दःशास्त्रम् ३.३६)।

तांड्य--एक आचार्य (श. ब्रा. ६. १. २. २५)। 'अग्निचिती' से संबंधित किसी विषय पर इसका उद्धरण दिया गया है।

वैशंपायन का यह शिष्य था। वैशंपायन के शिष्यों में से ऋचाभ, आरुणि, तथा यह, मध्यदेश के थे। सामवेद का 'तांड्य महाब्राह्मण' इसने निर्माण किया है। यह ग्रंथ सामवेद की कौथुम शाखा का हैं, एवं तंडिनो की परंपरा का प्रतिनिधित्व करता है। उसे 'पंचविंश ब्राह्मण' अथवा 'प्रौढ ब्राह्मण' भी कहते है। विचक्षण का तांड्य यह पैतृक नाम है (वं. ब्रा. २)।

महाभारत में भी इसके नाम का निर्देश है (म. स. ७.१०; शां. २३६.१७)।

तान्व--पृथु का पुत्र (ऋ. १०. ९३. १५)। पृथु राजाओं में इसका उल्लेख आया है। तन्व का वंशज, इस अर्थ से भी यह नाम प्रयुक्त होगा। पैतृक धन कन्या को नही, बल्की पुत्र को मिलना चाहिये, ऐसा इसका मत था

(ऋ. ३.३१.२)। ऋग्वेद के एक सूक्त में, दुःशीम की इसने उदार दाता कह कर स्तुति की है (ऋ. १०. ९३. १४)।

तापनीय—ब्रह्मांडमत में व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

तापस—दत्त का उपनाम। यह जनमेजय कौतस्त के सर्पसत्र में होता था (पं. ब्रा. २५.१५)।

२. अग्नि, धर्म एवं मन्यु देखिये।

तामरसा—अत्रि की स्त्री (ब्रह्मांड. ३.८.७४.८७)।

तामस—धर्म एवं हिंसा का पुत्र।

२. (सो.) भविष्य मत में श्रवस् का पुत्र।

३. (स्वा. प्रिय.) प्रियव्रत का तीसरा पुत्र तथा उत्तम का भाई (भा. ८.१.२७)। कई ग्रंथों में इसे प्रियव्रत का वंशज कहा है (विष्णु. ३.१.२४)।

स्वराष्ट्र नामक राजा को विमर्द नामक राजा ने पदच्युत किया। स्वराष्ट्र राजा की पत्नी उत्पलावती, मृत्यु के बाद, हरिणी योनि में उत्पन्न हुई। स्वराष्ट्र का कामुक स्पर्श उस हरिणी को होने के कारण, यह पुत्र उत्पन्न हुआ (मार्के. ७१.४६)। माता को तामस योनि प्राप्त होने पर उत्पन्न होने के कारण, इसे तामस मनु कहते थे। पिता नें सारी बातें इसे बतायीं। तब इसने पिता के शत्रू विमर्द राजा को क़ैद कर लाया (मार्के. ७१.४७)। बाद में पिता के कहने पर इसने उसे छोड़ दिया। इस तरह राज्य प्राप्त कर यह सार्वभौम बना।

इसने नर्मदा के दक्षिण तट पर महेश्वरी की आराधना की। कामराजकूट का जय किया। वसंत एवं शरदऋतु में नवरात्र पूजा भी की। इस तपस्या से यह चतुर्थ मन्वंतराधिपति मनु बना (दे. भा. १०. ८)। यह अपनी भार्या के साथ स्वर्ग लोक गया। गजेंद्र मोक्ष की घटना इसी के ही काल में हुई थी (भा. ८. १; मनु देखिये)।

ताम्र—महिषासुर का कोशाध्यक्ष।

२. मुर दैत्य के सात पुत्रों में से एक। कृष्ण ने इसके पिता का वध किया। इस लिये अपने भाईयों सहित इसने कृष्ण पर आक्रमण किया। किंतु यह स्वयं मारा गया (नरक ३. देखिये)।

ताम्रतप्त—कृष्ण का रोहिणी से उत्पन्न पुत्र।

ताम्रध्वज—मयूरध्वज का पुत्र।

ताम्रलिप्त—वंगदेशीय क्षत्रिय (म. आ. १७७ १२; स. २७. २२)।

ताम्रलोचन—एक शिवगण।

ताम्रा—प्राचेतस दक्ष प्रजापति एवं असिक्नी की कन्या। यह कश्यप को दी गयी थी (कश्यप देखिये)।

२. वसुदेव की स्त्रियों में से एक। इसका पुत्र सहदेव।

ताम्रायण—वायुमत में व्यास की यजुःशिष्य परंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

ताम्रौष्ठ—एक यक्ष (म. स. १०. १६)।

तार—मयासुर का एक मित्र (मत्स्य. १७७)।

२. रामसेना का एक प्रमुख वानर (म. व. २८५. ९)। इसने निखर्वट राक्षस के साथ युद्ध किया। सुग्रीव की स्त्री रुमा इसकी कन्या थी। इसे तारापिता भी कहा गया है (वा. रा. उ. ३४. ४)।

३. मधुवन में रहनेवाले शाकुनि नामक ऋषि का पुत्र। यह अत्यंत तेजस्वी था (पद्म. सृ. ३१)।

तारक—कश्यप एवं दनु का पुत्र।

२. एक असुर। वज्रांग तथा वरांगी को ब्रह्मदेव के कृपाप्रसाद से यह पुत्र प्राप्त हुआ था (वज्रांग देखिये)। इसने पारियात्र पर्वत पर १०,००० वर्षोंतक तपस्या की। ब्रह्मदेव ने इससे वर माँगने को कहा। इसने अमरत्व माँगा। यह मिलना असंभव है, ऐसा मालूम होने पर इसने सात दिन के शिशु के द्वारा मृत्यु होने का वर माँगा।

इस वर के प्रभाव से उन्मत्त हो कर, इसने इंद्रादि देवों को पराजित किया। शंकर के औरस पुत्र के द्वारा ही तारकासुर की मृत्यु होगी ऐसा देवताओं का संकेत था। इसलिये शंकर ने पार्वती से विवाह किया। उन्हें स्कंद नामक पुत्र हुआ। स्कंद ने उम्र के सातवें दिन इसका वध किया (मत्स्य. १३०–१३९; १४६; पद्म. सृ. ४२; तारेय २. देखिये)।

इसके तीन पुत्र थे। उनके नामः—त्रिपुरोत्पादक-ताराक्ष (तारकाक्ष), कमलाक्ष तथा विद्युन्माली (म. क. २३.३–४; लिंग. १.७१)।

तारा—बृहस्पति की दो स्त्रियों में से दूसरी। सोम ने इसका हरण किया था। ऋग्वेद में इसका अस्पष्ट उल्लेख है (ऋ. १०.१०९)। सोम से इसे बुध नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह सोमवंश का मूलपुरुष था (चंद्र देखिये)।

२. सुषेण वानर की कन्या तथा वालिन् की स्त्री। इसके पिता का नाम तार (तार २. देखिये)। इसका पुत्र अंगद (वा. रा. किं. २२.१३)। वालिन् तथा सुग्रीव

का पूर्वापर वैर था। राम की सहायता से सुग्रीव ने वालिन् के उपर ज़ोरदार हमला किया। उस समय, सुग्रीव से सुलह करने की सलाह इसने वालिन् को दी थी।

३. सूर्यवंशीय हरिश्चंद्र राजा की पत्नी। इसे तारामती नामांतर था (तारामती देखिये)।

४. एक ब्रह्मवादिनी।

ताराक्ष—तारकासुर का पुत्र। इसे तारकाक्ष नामांतर था (म. क. २३.३-४)।

तारापीड—(सू. इ.) मत्स्य के मत में चन्द्रावलोक राजा का पुत्र। इसका पुत्र चन्द्रगिरि।

तारामती--शैब्य देश के राजा की कन्या तथा अयोध्यापति हरिश्चन्द्र की पत्नी (मार्क ७.९)। हरिश्चन्द्र की सौ पत्नियों में यह पटरानी थी। वरुणकृपा से इसे रोहित नामक पुत्र हुआ (दे. भा. ७.१४)।

विश्वामित्र की दक्षिणा पूर्ण करने के लिये, हरिश्चन्द्र ने इसको तथा राजपुत्र रोहित को, काशी के एक वृद्ध ब्राह्मण को वेच दिया (दे. भा. ७.२२)। पश्चात्, सर्पदंश से रोहित की मृत्यु हो गयी। उसे ले कर यह स्मशान गई। वहाँ लड़के खानेवाली राक्षसी समझ कर, लोग इसे राजा के पास ले गये। राजा ने चांडाल को इसका वध करने के लिये कहा। चांडाल ने यह कार्य करने की आज्ञा हरिश्चन्द्र को दी। उसने पत्नी को तथा पुत्र को पहचान लिया। यह अग्निप्रवेश करने को तैय्यार हुई। किंतु इन्द्र ने रोहित को जीवित किया। पश्चात् इन्द्र की कृपा से इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (दे. भा. ७.२५-२७; हरिश्चंद्र देखिये)।

तारावती—चंद्रशेखर देखिये।

तारुक्ष्य—१. तार्क्ष्य देखिये।

तारेय--एक वानर। तारापुत्र अंगद का यह नामांतर है।

२. एक राक्षस। यह तारकासुर का पुत्र था। हिरण्याक्ष के पक्ष में यह लड़ रहा था। उस वक्त, अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये इसने कार्तिकेय पर अग्न्यस्त्र तथा रौद्रास्त्र की वर्षा की। किन्तु ये सब अस्त्र प्रभावहीन सावित हुएँ। अन्त में कार्तिकेय ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ६९)।

तार्क्ष—तार्क्ष्य ६. देखिये।

तार्क्षी—एक पक्षिणी। पूर्वजन्म में, यह वपु नामक अप्सरा थी। दुर्वास ऋषि के शाप से, इसे पक्षियोनि प्राप्त हुई। कुंधर तथा पक्षिरूपधारी मदनिका की यह कन्या वनी। द्रोण नामक पक्षी इसका पति था।

भारतीय युद्ध के समय, यह गर्भवती थी। गर्भवती अवस्था में, कौरव पांडवो के युद्धक्षेत्र के ऊपर से यह जा रही थी। उड़ते उड़ते, उस स्थान पर यह आई, जहाँ अर्जुन तथा भगदत्त का युद्ध हो रहा था। अर्जुन के वाण से इसका उदर विदीर्ण हुआ। उसमेंसे चार अंडें नीचे गिरे।

इसी समय सुप्रतीक नामक हाथी के गले की प्रचंड घंटा नीचे गिरी। तार्क्षी के चार अंडों को, वीच के पोले भाग में ले कर, वह घंटा कीचड़ में फँस गई। वाद में शमीक ऋषि उन अंडों को ले गया (मार्क. ३.३१-४४)। इसी समय तार्क्षी की मृत्यु हो गई। उन अंडे से वाहर निकले बच्चे, पिंगाक्ष, विबोध, सुपुत्र तथा सुमुख ये नाम से प्रसिद्ध हुएँ।

तार्क्ष्य—एक आचार्य (ऐ. आ. ३.१.६; सां. आ. ७.१९)। विशिष्ट ज्ञान संपादन करने के हेतु इसने गुरुगृह में रह कर उसकी गाय की रक्षा की। इसके नाम का 'तारुक्ष्य' पाठभेद कई जगह प्राप्त है। किंतु वहुत सारी जगह, इसे तार्क्ष्य ही कहा है (ऐ. आ. १.५.२; सां. श्रौ. ११.१४.२८; १२.११.१२; आश्व. श्रौ. ९.१)। अरिष्टनेमि तार्क्ष्य तथा यह एक ही होनें की संभावना है। किंतु इस वारे में, निश्चित रूप से कहा नही जा सकता।

२. अरिष्टनेमि का पैतृक नाम।

३. कश्यप प्रजापति का नामांतर। तार्क्ष्य नाम धारण किये कश्यप को दक्ष ने अपनी कन्याएं दी थीं। सरस्वती से इसका संभाषण हुआ था (म. व. १८४. १; कश्यप देखिये)।

४. एक पराक्रमी पक्षी (खिल. २.४.१)। यह पक्षियों का राजा था (श. ब्रा. १३.४.३.१३)। संभवतः यह सूर्य का प्रतीक था। एक दिव्य अश्व के रूप में भी इसका उल्लेख प्राप्त हैं (ऋ. १.८९.६;१०.१७८.१)। सोम लाने के लिये, इसका उपयोग किया गया था (सुपर्ण ३. देखिये)।

५. कश्यप तथा विनता का पुत्र। इसका भाई गरुड।

६. एक यक्ष। मार्गशीर्ष माह में यह अंशुमान् सूर्य के साथ रहता है (भा. १२.११)। तार्क्ष इसीका नामांतर है।

७. कश्यप का नामान्तर (म. व. १८२.८)।

तार्क्ष्य वैपश्चित--एक आचार्य (आश्व. श्रौ. १०. ७)।

तार्क्ष्यपुत्र—सुपर्ण तार्क्ष्यपुत्र देखिये।

तालक--वायु एवं ब्रह्मांड मत में व्यास की साम-शिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य।

तालकृत्—अंगिरा कुल का गोत्रकार।

तालकेतु--कृष्ण के द्वारा मारा गया एक राक्षस। २. भीष्म का नामांतर (म. भी. ४५.९; उ. १४८.५)।

३. कुवलयाश्व के द्वारा मारा गया एक राक्षस (मार्क. १८.२३)।

तालजंघ— (सो. सह.) कार्तवीर्य का नाती तथा जयध्वज का पुत्र। इसके पुत्रों को भी तालजंघ कहते थे, वीतहोत्र, शार्यात, तुंडिकेर, भोज तथा अवंती इन पाँच वंशों को, 'तालजंघ' यह संयुक्त नाम दिया जाता है।

तालजंघ को १०० पुत्र थे। उनमें से पाँच गण मुख्य थे। उनके पाठभेद से नामः—वीरहोत्र, भोज, आवर्ति, तुंडिकेर, तालजंत्र। ये सारे तालजंघ नाम से ही प्रसिद्ध थे (वायु. ९४.५०-५२)।

परशुराम से डर कर, अपने सारे भाईयों सहित, यह हिमालय की गुफाओं में रहता था। परशुराम तप करने गया, तव यह निर्भय हो कर सपरिवार पुनः माहिष्मती नगर में आ कर रहने लगा।

कुछ कालोपरांत अयोध्या पर आक्रमण कर, इसने सगर के पिता फल्गुतंत्र को जीत लिया (ब्रह्मांड. ३. ४७)। इसका बदला चुकाने के लिये; सगर ने और्व ऋषि द्वारा प्राप्त आग्नेयास्त्र से, इसको तथा इसके सारे परिवार को जला दिया। इनमें से केवल वीतिहोत्र बच गया (भा. ९.२३) इन्हे जीतने पर, और्व ऋषि की आज्ञा के कारण, सगर नें इनका वध नही किया। किन्तु इन्हे विद्रुप कर, छोड दिया (भा. ९.८.५; पद्म. उ. २०, वीतहव्य तथा बाहु देखिये)। भृगुकुल के साथ कलह करने से, हैहय तथा तालजंघो का नाश हुआ (कौटिल्य. पृ. २२)।

२. (सू. शर्याति.) शर्याति राजा का पुत्र (म. अनु. ८.८. कुं.)।

३. मुर दैत्य का पिता।

तालन--कलियुग का एक राजा। इसने महावती नगरी पर आक्रमण किया। इसके आठ पुत्र थे। उनके नाम :— अलिक्र, अल्लामति, काल, पत्र, पुष्पोदरी, वरीकरी, नरी तथा सुललित। अपना वनरस नामक नगर इसने इन पुत्रों को दिया। म्लेच्छों की पूजापद्धति से इसने असुर देवताओं की पूजा की (भवि. प्रति. ३.७)।

तिग्म— (सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्यमत में उर्व-पुत्र, तथा विष्णुमत में मृदुपुत्र। तिमि, तिग्मज्योति, ये सारे एक ही है।

तिग्मकेतु—(स्वा. उत्तान.) भागवतमत में वत्सर तथा स्वर्वीथि का पुत्र।

तिग्मज्योति—(सो. कुरु. भविष्य.) भविष्यमत में मृदु का पुत्र।

तितिक्षा—स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्षप्रजापति की कन्या तथा धर्म की स्त्री। इसका पुत्र क्षेम।

तितिक्षु--(सो. अनु.) एक चक्रवर्तिन् सम्राट्। भागवत, मत्स्य, एवं वायु के मत में, चक्रवर्तिन् महामनस् का यह पुत्र था। विष्णु मत में, यह महामणि का पुत्र था। पश्चिमोत्तर भारत में राज्य स्थापन करनेवाला सम्राट् उशीनर इसका भाई था।

तितिक्षुवंश--पूर्व भारत में ख्यातिप्राप्त तितिक्षुवंश, तितिक्षु से ही प्रारंभ हुआ। यह वंश, अनुवंश की ही स्वतंत्र शाखा थी। तितिक्षुवंश में पैदा हुवे, बलि ने पूर्व भारत में बलाढ्य साम्राज्य स्थापन किया। बलि को अंग, वंग, कलिंग, सुह्म, पुंड्र नामक पाँच पुत्र थे। बलि के साम्राज्य के पाँच देश, इन पाँच पुत्रों के नाम से ही सुविख्यात हुवे।

अयोध्यापति दशरथ का समकालीन रोमपाद राजा अंगवंश का था। भारतीय युद्ध में, कर्ण तथा वृषसेन ये दोनों तितिक्षुवंशांतर्गत अंगवंश के थे।

तितिक्षु का भाई सम्राट् उशीनर का वंश, पश्चिमोत्तर भारत में केकय, मद्र आदि प्रदेशों में राज्य करता था (अनु. उशीनर, तथा बलि देखिये)।

तित्तिर वा तित्तिरि--(सो. कुकुर.) कपोतरोमन् का पुत्र। इसका पुत्र बहुपुत्र।

तित्तिरि--कश्यप तथा कद्रु का पुत्र एक नाग।

२. एक ऋषि तथा शाखाप्रवर्तक (म. स. ४.१०; पाणिनि देखिये)। अंगिरस्कुल के ऋषिओं की एक शाखा के, अंगिरस, तैत्तिरि, कापिभुव ये तीन प्रवर हैं। उनमें से तैत्तिरि का यह पिता होगा।

कृष्ण यजुर्वेद के एक शाखा का 'तैत्तिरीय' यह उपनाम है। उस शाखा का मूल आचार्य तित्तिरि रहा होगा। वैशंपायन के शिष्य याज्ञवल्क्य के नेतृत्व में वह शाखा पहले थी। किंतु कुछ कारणवश, वैशंपायन ने याज्ञवल्क्य के नेतृत्व से वह शाखा निकाल ली। वह वैशंपायन के बाकी बचे ८५ शिष्यों ने धारण की। उस समय, उन्होंने

तित्तिरि पक्षियों के रूप लिये थे। उस कारण, उन्हे 'तित्तिरि,' एवं उनके शाखानुयायिओं को 'तैत्तिरीय' नाम प्राप्त हुआ (विष्णु. ३.५; भा. १२.६.६५)।

मत्स्य के मत में, तित्तिरि ऋषि अंगिराकुल के प्रवर का एक ऋषि है। एक शाखाप्रवर्तक के जरियें भी इसका उल्लेख प्राप्त है (पाणिनि देखिये)। हिरण्यकेशिन् लोगों के पितृतर्पण में इसका निर्देश आता है (स. गृ. २०.८. २०)।

तिथि--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

२. कश्यप एवं क्रोधा की कन्या तथा पुल्ह की स्त्री।

तिमि--प्राचेतस दक्ष प्रजापति एवं असिक्री की कन्या तथा कश्यप की भार्या।

२. (सो. पूरू. भविष्य.) भागवत मत में दुर्व का पुत्र (तिग्म देखिये)।

तिमिंगल--एक राजा। यह रामक पर्वत पर रहता था। राजसूय यज्ञ के समय, सहदेव ने इसे जीतकर धन प्राप्त किया (म. स. २८.४६)।

तिमिध्वज--वैजयंन्त नगरी का राजा। यह शंबर नाम से भी प्रसिद्ध था।

इसका राज्य दक्षिण भारत में दंडकारण्य के पास था। डॉ. भांडारकरजी के मत में, आधुनिक कालीन विजयदुर्ग ही प्राचीन वैजयन्त नगरी है। डे के मत में, आधुनिक वनवासी शहर का वह प्राचीन नाम है।

देवासुर युद्ध चालू था। यह असुरों के पक्ष में मिल कर, इंद्र से युद्ध करने लगा। इन्द्र ने अयोध्या से दशरथ राजा को बुलाया। परंतु युद्ध करते समय, घायल हो कर दशरथ बेहोश हो गया। तब सारथ्य करनेवाली कैकयी ने बडे चातुर्य से रथ बाजूमें ले कर दशरथ की रक्षा की। बाद में तिमिध्वज का क्या हुआ इसके बारे में कुछ उल्लेख नहीं है (वा. रा. अयो. ९; ब्रह्म. १२३)।

तिमिर्घ दौरेश्रुत--अग्नीध ऋत्विज का नामांतर। सर्पो उत्कर्षके के लिये किये गये सर्पसत्र में यह उपस्थित था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

तिरश्री आंगिरस--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.९५-९६)। पंचविंश ब्राह्मण में भी इसके नाम का निर्देश आया है (१२.६.१२)। इसके सूक्तों में इंद्र की आराधना की गई है (ऋ. १२.६.१२)।

तिरिंदिर पारशव्य--एक राजा। सायण, के मत में, यह पर्शु का पुत्र था। इसलिये इसे पारशव्य पैतृक नाम प्राप्त हुआ।

किसी को दान देनेवाले राजा के रूप में, इसका निर्देश ऋग्वेद की एक दानस्तुति में प्राप्त है (ऋ. ८.६.४६-४८)। वत्स काण्व को इस राजा से दानस्वरूप उपहार मिला था (सां. श्रौ. १६.११.२०)। यह धन यदु राजाओं से तिरिंदिर ने प्राप्त किया था। यदु राजाओं को वेबर ईरानी मानते है, एवं भारत तथा ईरान के बीच घनिष्ठ संबंध का प्रमाण इस कथा को समझते है (इन्डि. स्टुडि. ४.३५६)।

तिर्यञ्च् आंगिरस--सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १२.६. १२)।

तिलोत्तमा--एक अप्सरा। यह काश्यप तथा अरिष्टा की कन्या थी। पूर्वजन्म में यह कुब्जा नामक स्त्री थी। दीर्घ तपस्या कर यह वैकुंठ गई। देवों के कार्य के लिये ब्रह्माजी ने इसे सुंदोपसुंद के पास भेजा था।

प्रत्येक वस्तु का तिलतिल सौंदर्य, इसके सौंदर्य निर्माण के लिये लिया गया था। इसलिये इसे तिलोत्तमा नाम प्राप्त हुआ। सुंदोपसुंद के नाशार्थ जाने के पहले, इसने सब देवों तथा ऋषियों की प्रदक्षिणा की। उस समय इसके मनमोहनी रूप यौवन से, शंकर तथा इंद्र आदि देवसभा के ज्येष्ठ देव भी स्तिमित हो गये।

इसे देखते ही, सुंदोपसुंद का आपस में झगडा हो कर, एक ने दूसरे का वध कर दिया। तब ब्रह्मदेव ने इसे वरदान दिया, 'जहाँ जहाँ सूर्य का प्रवेश होगा, वहाँ तुम भी प्रविष्ट हो सकोगी। तुम्हारे लावण्य का प्रभाव दाहक एवं गहरा होगा। इस कारण कोई भी तुम्हारी ओर आँख उठा कर देख न सकेगा' (म. आ. २०३-२०४; पद्म. उ. १२६)।

यह अश्विन में त्वष्टा सूर्य के साथ घूमती है (भा १२.११)।

तीक्ष्णवेग--रावण-पक्षीय एक असुर।

तीर्णक--एक ऋषि। ब्रह्मदेव ने पुष्करक्षेत्र में किये यज्ञ में यह उपस्थित था (पद्म. सृ. १४)।

तीव्ररथ--हंसध्वज के सुमति नामक सचिव का पुत्र।

तुक्षय--अंगिरसकुल का एक मंत्रकार।

तुग्र--अश्वियों के कृपापात्र भुज्यु का पिता। इसलिए भुज्यु को तुग्र्य अथवा तौग्र्य भुज्यु कहते हैं (भुज्यु देखिये)।

२. एक राजा। यह इंद्र का शत्रु था। (ऋ. ६.२०. ८;२६.४;१०.४९.४)।

तुग्र्य--भुज्य का पैतृक नाम। तौग्र्य इसका सही नाम रहा होगा।

तुजि--एक राजा। इसपर इंद्र की कृपा थी (ऋ.६. २६.४; १०.४९.४)। तूतुजि इसीका नाम होगा (ऋ. ६. २०.८)।

तुंड--नल वानर के द्वारा मारा गया, रावणपक्षीय एक राक्षस।

तुंडकोश--कश्यप तथा खशा का पुत्र।

तुमिंज औपोदिति--एक ऋषि। यह यज्ञसत्र में होतृ का काम करता था। संश्रवस् ऋषि के साथ, इड़ा के बारे में इसका वादविवाद हुआ था (तै. सं. १.७.२.१)।

तुंबरु--एक गंधर्व। कश्यप तथा प्राधा के पुत्रों में से एक। यह चैत्र माह के धाता नामक सूर्य के साथ रहता था (भा. १२.११.३३)। इसकी भार्या का नाम रंभा था (म. उ. ११५.४००* पंक्ति.४)।

ब्रह्माजी की सभा में, यह नारद के साथ गायन कर, भगवत् का गुण गाता था (भा. ५.२५.८)। श्रीकृष्ण के इंद्र और कामधेनु कृत अभिषेक के समय, यह कृष्ण के पास आया था (भा. १०. २७. २४)। यह अनुयादव का मित्र था (भा. ९.२४.२०)। गोग्रहण के समय अर्जुन का युद्ध देखने के लिये यह स्वयं आया था (म. वि. ५६. १२)। युधिष्ठिर के अश्वमेध में भी यह उपस्थित था (म.आश्व. ८८.३९)।

यह रंभा पर आसक्त होने के कारण, कुबेर ने शाप दे कर इसे विराध नामक राक्षस बनाया। बाद में रामलक्ष्मण से हुए युद्ध में मृत हो कर इसने अपना मूल रूप प्राप्त किया (वा.रा. अर. ५; विराध देखिये)।

२. एक गंधर्व। यह सुबाहु तथा मुनिकन्या का पुत्र था। इसे मनुवंशी एवं सुकेशी नामक दो कन्यायें थी (ब्रह्मांड. ३.७.१३)।

३. एक राक्षस। हिरण्याक्ष से हुए देवों के युद्ध में, वायु ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

तुंबुरु--तुंबरु देखिये।

तुर कावषेय--एक वैदिक ऋषि। ओल्डेनबर्ग के मत में, वैदिक काल के अंतिम चरण में यह पैदा हुआ था (त्सी. गे. ४२. २३९)।

एक तत्त्वप्रतिपादक के जरिये इसका निर्देश ब्राह्मणों में प्राप्त है (श. ब्रा. १०.६.५.९)। कारोंती नदी पर, अग्नि की वेदिका इसके द्वारा बनाई जाने का उल्लेख शांडिल्य ने किया है (श. ब्रा. ९.५.२.१५)। जनमेजय पारीक्षित (प्रथम) का यह पुरोहित था। इसीने उसे राज्याभिषेक किया (ऐ. ब्रा. ४.२७;७.३४;८.३१)। इसका शिष्य यज्ञवचस् राजस्तंबायन (बृ. उ. ६.५.४)। पंचविंश-ब्राह्मण में (२४.१४.५) उल्लिखित तुर तथा यह एक ही होगा।

इसने दूसरे जनमेजय पारीक्षित से सर्पसत्र करवाया (भा. ९. २२.३५)। दूसरे जनमेजय पारीक्षित के साथ भागवत ग्रंथ में, जोडा गया इसका संबंध केवल नामसाम्य के कारण हुआ है। वास्तव में यह प्रथम जनमेजय पारीक्षित का पुरोहित था। इसीलिये इसने उसे राज्याभिषेक किया था।

तुरश्रवस्--एक ऋषि। पारावत ने इन्द्र के लिये सोमयाग किया। वहाँ इस ऋषि ने दो साम कह कर इंद्र को प्रसन्न किया। इंद्र ने, उपस्थित ऋषियों में से केवल तुरश्रवस् ने सादर किये हवि का स्वीकार किया (पं. ब्रा. ९.४.१०)।

तुरु--एक राक्षस। हिरण्याक्ष के साथ हुए देवों के युद्ध में, वायु ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

तुरुष्क--(तुरुष्क. भविष्य.) एक राजवंश। भागवत-मत में इस वंश में, कुल चौदह राजा हुए। इतरत्र इसे तुषार कहा गया है।

तुर्व--एक राजा। यह मनु का अनुयायी था (ऋ. १०.६२.१०)।

तुर्वश--एक वैदिक राजा तथा ज्ञातिसमूह। हॉपकिन्स के मत में, 'तुर्वश' एक ज्ञातिसमूह का नाम है, जिसका एकवचन उसके राजा का द्योतक है (उ. पु. २५८)। यदु राजा एवं ज्ञाति से तुर्वशों का घनिष्ठ संबंध था (ऋ. ४. ३०.१७; १०.६२.१०)।

दाशराज्ञ-युद्ध में, तुर्वश राजा ने सुदास के विरुद्ध युद्ध किया था। किंतु इस युद्ध में यह स्वयं पराभूत हुआ (ऋ. ७.१८.६)। इस युद्ध में भागने ('तुर') के कारण, इसका नाम तुर्वश पड़ गया (हॉपकिन्स. उ. पु. २६४)।

इस राजा पर इंद्र की कृपा थी। इस कृपा के कारण, दाशराज्ञ-युद्ध के पश्चात्, इंद्र ने इसकी सहायता की। अनु तथा द्रुह्यु के समान, यह पानी में डूब कर नहीं मरा। इसकी द्वारा की गयी इंद्रस्तुति में, 'तुमने यदुतुर्वशों की रक्षा की, उसी प्रकार हमारी रक्षा करो,' ऐसी प्रार्थना आयी है (ऋ. ४.४५.१)। उसी प्रकार, 'अतिथिग्व का कल्याण करनेवाले तुम यदुतुर्वशों का वध करो,' ऐसी भी प्रार्थना की गयी है। तुर्वश तथा यदु ने, अर्ण एवं चित्ररथ

राजाओं का सरयू के किनारे वध किया था (ऋ. ४.३०. १८)।

सुदास के पिता दिवोदास पर तुर्वश एवं यदु ज्ञातियों ने आक्रमण किया था (ऋ. ६.४५.२; ९.६१ २)। वृचीवत्, वरशिख तथा पार्थव ज्ञातियों का तुर्वशों से अतिनिकट संबंध था। यव्यावती तथा हरियूपीया नदीयों के तट पर, दैवरात तुर्वश को वृचीवन्तों ने मदद की थी (ऋ. ६.२७.५-७)। यदुतुर्वशों के पुरोहित कण्व थे (ऋ. ८.४.७)। इन्हे अभ्यावर्तिन् चायमान ने जीता था (ऋ. ६.२७.२८)। शोण सात्रासह पांचाल राजा से यदुतुर्वशों का काफी सख्यत्व था। तैतीस तुर्वश अश्व एवं छह हजार सशस्त्र सैनिकों के साथ इन्होंने पांचाल राजाओं को मदद की थी। ब्राह्मणों में अनेक तौर्वशों का निर्देश है (श. ब्रा. १३.५.४.१६)। अन्त में, तुर्वश लोग पांचालों में विलीन हो गये (ओल्डेनबर्ग-बुद्ध. ४०४)।

इन लोगों के निवासस्थान के बारे में निश्चित पता नहीं लगता। इन लोगों ने परुष्णी नदी को पार किया था (ऋ. ७.१८)। ये लोक पश्चिम से पूर्व दिशा की ओर भरतो के देश में आगे बढे, ऐसा प्रतीत होता है (पिशेल, वेदि. स्टुडि. २.२१८)।

पुराणों में तुर्वशों का निर्देश 'तुर्वसु' नाम से किया गया है।

तुर्वसु—(सो. पुरूरवस्.) ययाति राजा को देवयानी से उत्पन्न पुत्र। पिता का वृद्धत्व इसने स्वीकार नहीं किया। अतः ययाति ने इसे शाप दिया। इस शाप की वजह से इसके छत्रचामर छीन लिये गये, एवं निंद्य आचरन करनेवाले पश्चिमभारत का यह राजा बना (भा. ९.२२)। इसे वह्नि नामक पुत्र था (भा. ९. २३.१६)।

तुर्वसुवंश—इसका वंश अनेक स्थानों पर प्राप्त है (मत्स्य. ४८; ब्रह्मांड. ३. ७४; वायु. ९९; ब्रह्म. १३; ह. वं. १. ३२; अग्नि. २७६; विष्णु. ४. १६; गरुड़ १. १३९; भा. ९. २३)। अग्निपुराण में, द्रुह्यु वंश के गांधार का इसी वंश में समावेश किया है। विष्णु आदि तीन पुराणों में, इस वंश का अंतिम भाग प्राप्त नहीं है। इस वंश के, मरुत्त ने पौरव दुष्यंत को गोद लिया। इस प्रकार यह वंश पौरवों में समाविष्ट हुआ। इसी वंश के अंतिम लोगों ने, दक्षिण में पांड्य तथा चोल राज्यों की स्थापना की (ययाति देखिये)।

वेदों में तुर्वसु को तुर्वश कहा है (तुर्वश देखिये,)।

तुर्वीति—तुर्वशों का राजा। वय्य के साथ (ऋ. १. ५४.६; २.१३.१२; ४.१९. ६), एवं अकेले (ऋ. १. ३६. १८; ६१. १८; ११२. २३), इसका कई बार उल्लेख प्राप्त है। तीन स्थानों पर, इन्द्र ने इसे बाढ से बचा ने का उल्लेख मिलता है (ऋ. १.६१.११; २. १३. १२; ४. १९. ६)।

तुलसी— शंखचूड नामक असुर की स्त्री। वृंदा के शरीर के पसीने से यह उत्पन्न हुई (पद्म. उ. १५)।

धर्मध्वज को यह माधवी से उत्पन्न हुई, ऐसा वैकल्पिक निर्देश भी प्राप्त है।

यह अत्यंत धर्मशील एवं पतिव्रता थी। इसके पातिव्रत्य के कारण, शंखचूड देवताओं के लिये अजेय था। विष्णु ने कपट से इसके पातिव्रत्य को भंग कर, शंकर से शंखचूड का वध करवाया (शंखचूड देखिये)। पश्चात् इसने विष्णु को शाप दिया, 'तुम शिलारूप होंगे'। तदनुसार विष्णु शालिग्राम बना (ब्रह्मवै. २.२१; शंखचूड देखिये)।

एकबार कामविद्ध हो कर यह गणपति के पास गयी। तब गणपति ने इसे शाप दिया, 'तुम वृक्षरूप होगी'। इस शाप के कारण, इसका मनुष्यदेह नष्ट हुआ। आगे चल कर समुद्रमंथन के अवसर पर, समुद्र से अमृत बाहर आया। उसकी कुछ बुँदें जमीन पर गिरी। उन में से ही तुलसी का पेड़ बाहर निकला। पश्चात् इस पेड़ को ब्रह्मा ने विष्णु को दिया (पद्म. सृ. ६१; स्कंद. २.४.८; वृंदा देखिये)।

तुलाधार—वाराणसी क्षेत्र में रहनेवाला एक वैश्य। जाजलि नामक एक द्विज को अपने तप की घमंड थी। वह इसने उतार दी। (म. शां. २५३-२५६)।

तुषार—(तुषार. भविष्य.) कलियुग के एक वंश का नाम। इस में १४ राजा हुएँ (मत्स्य. २७३, वायु. ९९; ब्रह्मांड. ३.७४)। इस वंश के राजा शकद्वीप में रहते थे (वै. का. राजवाडे. भा. इ. सं. मं. इतिवृत. १८३५. ५९)।

तुषित—स्वायंभुव तथा स्वारोचिष मन्वंतर के देवगण (मनु देखिये)।

तुषिता—स्वारोचिष मन्वंतर के वेदशिरस् ऋषि की स्त्री। इसे विभु नामक पुत्र था (भा. ८.१.२१)।

तुष्ट—हंसध्वज का प्रधान।

तुष्टि—धर्म ऋषि की पत्नी। स्वायंभुव मन्वंतर के दक्ष ने उस ऋषि को दस कन्याएँ दी। उनमें से यह एक थी।

तुष्टिमत्—कंस का भ्राता।

तुहुंड--दनुपुत्र।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

तूतुजि--इंद्र का एक आश्रित। इंद्र ने द्योतन नामक राजा के लिये तुग्र, वेतसु, दशोणि एवं इसको पराजित किया (ऋ. ६.२०.८)। तुजि एवं तूतुजि दोनों एक ही हैं।

तूर्वयाण--एक नृप। अतिथिग्व, आयु एवं कुत्स का यह शत्रु था, तथा दिवोदास का मित्र था। (ऋ. १.५३. १०; ६.१८.१३; १०.६१.१)।

तृक्षि--त्रसदस्यु का पुत्र (ऋ. ६.४६. ८; ८.२२.७; त्रासदस्यव देखिये)। द्रुह्यु तथा पुरु के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६.४६.८)

तृणक--एक क्षत्रिय (म. स. ८.१६)।

तृणकर्णि--अंगिराकुल का गोत्रकार।

तृणबिंदु--(सू. दिष्ट.) भागवत एवं वायु के मतानुसार बंधु राजा का पुत्र। इसे विशाल, शून्यबंधु, धूम्रकेतु एवं इडविडा नामक चार संताने थीं।

विष्णु एवं रामायण के मतानुसार बुध राजा का यह पुत्र था। इसकी स्त्री अलंबुषा। इसे विशाल एवं इलविला नामक दो संतानें थीं। इलविला पुलस्त्य को दी गयी थी। यह त्रेतायुग के तीसरे पाद में राज्य करता था (ब्रह्मांड. ३.८.३६-६०; वायु. ७०.३१; २४.१५)। इसके पुत्र विशाल से वैशाली राजवंश का आरंभ हुआ।

२. वैवस्वत मन्वंतर के तेईसवाँ तथा चौवीसवाँ व्यास (व्यास देखिये)।

३. एक ऋषि। यह पांडवों के साथ काम्यकवन में रहता था (म. व. २६४)। यह अत्यंत धर्मशील तथा संयमी था। प्रत्येक माह, घांस के एक तृण को पानी में डुबा कर, उसके साथ जितने जलबिंदु बाहर आते थे, उतने ही पी कर यह रहता था। इसके इस नियम के कारण, इसका नाम तृणबिंदु हुआ (स्कंद. ७.१.१३८)।

४. वेन देखिये।

तृणावर्त--कृष्ण के द्वारा मारा गया एक असुर (पद्म. ब्र. १३)। कंस ने इसे कृष्णवध के लिये गोकुल भेजा था। इसने आँधी का रूप धारण कर गोकुल में प्रवेश किया, तथा सारे गोकुल को धूलिमय कर दिया। पश्चात् कृष्ण को ले कर यह उड़ गया। किंतु कृष्ण ने इसे एक शिला पर पछाड़ कर, इसके प्राण ले लिये (भा.१०. ७.२६)।

तृत्सु--एक राजा एवं ज्ञातिसंघ। तृत्सु नामक राजा का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार आता है (ऋ. ७.१८. ३.)।

तृत्सुओं के ज्ञातिसंघ का निर्देश भी प्राप्त है (ऋ. ७. १८.६,७,१५,१९;३३.५,६;८३.४,६,८)। इस संघ के लोक, दाशराज्ञ युद्ध में सुदास के सहायक थे। वसिष्ठ ज्ञातिसंघ के लोगों के साथ तृत्सुओं का घनिष्ठ संबंध था (सुदास देखिये)।

तेज--सुतप देवों में से एक।

तेजस्विन्--एक इंद्र। आगे चल कर, यही पांडुपुत्र सहदेव हुआ।

२. गोकुल का एक गोप। कृष्ण का यह परम मित्र था (भा. १०.२२.३१)।

तेजोयु--एक क्षत्रिय। यह रौद्राश्व का पुत्र था (म. आ. ८९.१०)।

तैटिकि--एक आचार्य (नि. ४.३)।

तैत्तिरि--तित्तिरि ऋषि का पुत्र।

तैत्तिरीय--वैशंपायन एवं याज्ञवल्क्य के सिवा यजुःशिष्यपरंपरा के अन्य शिष्यों का सामान्यनाम। इन्होंने तित्तिरि पक्षियों के रूप धारण कर, याज्ञवल्क्यद्वारा त्यक्त वेद का ग्रहण किया (व्यास देखिये)।

तैलक--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

तैलप--अत्रिकुल का गोत्रकार

तैलेय--धूम्रपराशरकुलोत्पन्न एक ऋषिगण।

२. अंगिराकुल का गोत्रकार।

तोंड़मान--एक ऋषि। सोमकुल के सुवीर को यह नंदिनी नामक पत्नी से पैदा हुआ। पांड्य राजा की कन्या पद्मा इसकी पत्नी थी। पूर्वजन्म में यह रंगदास था। व्यंकटाचल की उपासना कर यह मुक्त हुआ (स्कन्द. २.१.९-१०)। (भीम २३. देखिये)।

तोशलक--कंससभा का एक मल्ल। कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.४४.२७)।

तोष--तुषित देवों में से एक।

२. (स्वा.) भागवतमत में यज्ञ तथा दक्षिणा का पुत्र।

तौग्र्य--भुज्यु का पैतृक नाम।

तौरुष्य--लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

तौल्वलि--आश्वलायन देखिये।

तौसुक--सौमुक के लिये पाठभेद।

त्याज्य--भृगु तथा पौलोमी का पुत्र। यह देवों में से एक था (मत्स्य. १९५.१३)।

त्रयी--सवितृ तथा पृश्नि की कन्या (भा. ६.१८)।

त्र्यारुण--(सू. इ.) विष्णु, मत्स्य तथा पद्म मत में त्रिधन्वन् का पुत्र। इसका पुत्र त्रिशंकु (पद्म. सृ. ८)।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)। भागवत में इसे अरुण कहा है।

३. (सो. पूरु.) उरुक्षय का पुत्र (त्र्यारुणि ३. देखिये)।

त्र्यारुणि--एक व्यास (व्यास देखिये)।

२. भागवत मतानुसार व्यास की पुराण शिष्यपरंपरा के रोमहर्षण का शिष्य।

३. (सो. पूरु.) भागवत तथा वायु के मतानुसार दुरितक्षय का पुत्र। इसने तपोबल से ब्राह्मणत्व प्राप्त किया। इसने रोमहर्षण से पुराणों का अध्ययन किया (भा. १२.७)। विष्णु मत में इसे त्र्यारुण कहा है।

त्रसद--त्रसदस्यु का नामांतर।

त्रसदश्व--पृषदश्व २. देखिये।

त्रसदस्यु पौरुकुत्स्य--(सो. पूरु.) एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ४. ४२; ५. २७; ९. ११०)। यह 'पूरुओं का राजा' था (ऋ. ५.३३.८; ७.१९.३; ८. १९. ३६)। इसका 'पौरुकुत्सि' (ऋ. ७. १९. ३), तथा 'पौरकुत्स्य' (ऋ. ५.३३.८), नामों से उल्लेख आया है। इसका पैतृक नाम गैरिक्षित था।

यह पुरुकुत्स का पुत्र था (ऋ. ४. ४२. ८; ७. १९. ३)। एक अत्यंत महान् विपत्ति के समय, पुरुकुत्स की पत्नी पुरुकुत्सानी के गर्भ से यह उत्पन्न हुआ (ऋ. ४. ३८. १)। सायण के मत में, इसके जन्म के समय पुरुकुत्स कारागार में बन्दी या उसकी मृत्यु हो गयी थी।

यह गिरिक्षित् का वंशज था (ऋ. ५. ३३. ८), एवं इसका पिता पुरुकुत्स दुर्गह का वंशज था। अतः इसका वंशक्रम इस प्रकार प्रतीत होता है:- दुर्गह, गिरिक्षित्, पुरुकुत्स, एवं त्रसदस्यु। त्रसदस्यु को हिरणिन् नामक एक पुत्र था (ऋ. ५. ३३. ७), एवं तृक्षि का यह पूर्वज था (ऋ. ८. २२. ७)। त्रसदस्यु का पिता पुरुकुत्स सुदास का समकालीन था। किंतु वह सुदास का मित्र था, या शत्रु (लुडविग. ३. १७४), यह निश्चित रूप से नही कह सकते। सुदास का पूर्वज दिवोदास के साथ पूरु लोगों का एवं तृत्सुओ का शत्रुत्व था, यह दाशराज्ञयुद्ध से ज़ाहिर होता है। तथापि यह युद्ध पुरुकुत्स के समय ही समाप्त हो गया था। त्रसदस्यु का इस युद्ध से कुछ भी संबंध नहीं था।

कालान्तर में कुरु तथा पूरु दोनों लोग एक हो गये। इसका प्रमाण त्रसदस्युपुत्र कुरुश्रवण के नाम से ज़ाहिर होता है। कुरुश्रवण तथा तृक्षि (ऋ. ८. २२. ७), दोनों को भी 'त्रासदस्यव' (त्रसद्रस्यु का पुत्र) कहा गया है। द्रुह्यु तथा पूरु लोगों के साथ, साथ एक स्थान पर (ऋ. ६.४६. ८), तृक्षि का भी उल्लेख प्राप्त है। जब तक कुछ विरोधी साक्षी नहीं मिलती, तब तक यह मानने में कुछ हर्ज नहीं है कि, कुरुश्रवण एवं तृक्षि दोनों भाई भाई थे। कुरु लोगों का निवासस्थान मध्यदेश में था। पूरु लोग सरस्वती के किनारे रहते थे। यह सरस्वती भी मध्यदेश की ही है। यह भी कुरु-पूरुओं का साधर्म्य एवं एकरूपता दर्शाता है।

इसने अपनी पचास कन्याएँ सौभरि काण्व को पत्नी के रूप में दी थीं (ऋ. ८. १९. ३६)।

ऋग्वेद में, त्रिवृपन्, त्रसदस्यु, त्र्यरुण त्रैवृष्ण तथा अश्वमेध (ऋ. ५. २७. ४-६) ये सारे समानार्थक, एवं एक ही व्यक्ति के नामांतर माने गये है। किंतु त्रिवृषन् अथवा त्र्यरुण के साथ, त्रसदस्यु का वास्तव में क्या संबंध था, यह वैदिक ग्रंथो से नही समझता।

प्राचीन काल में, प्रसिद्ध यज्ञ करने वाले के रूप में, त्रसदस्यु पर आटणार, वीतहव्य श्रायस तथा कक्षीवत् औशिज के साथ त्रसदस्यु का उल्लेख आया है (तै. सं. ५. ६.५.३; क. सं. २२.३; पं. ब्रा. १३.३)। इन सब को पुरातन थोर राजा ('पूर्वे महाराजाः') कहा गया है (जै. उ. ब्रा. २.६.११)।

एक बार त्र्यरुण राजा अपना पुरोहित वृश जान को साथ ले कर रथ में जा रहा था। पुरोहित के द्वारा रथ द्रुत गति से चलाया जाने से, एक ब्राह्मण-पुत्र की रथ के नीचे मृत्यु हो गई। तब राजा ने पुरोहित से कहा, 'तुम रथ जब हाँक रहे थे, तब लड़का मृत हुआ। इसलिये इस हत्या के लिये जिम्मेवार, तुम हो।'। परंतु पुरोहित ने कहा, 'रथ तुम्हारा होने के कारण, इस हत्या के जिम्मेवार तुम ही हो'। इस प्रकार लड़ते झगड़ते दोनों इक्ष्वाकु राजा के पास गये। इक्ष्वाकु राजा ने कहा 'चूँकि रथ पुरोहित के द्वारा हाँका जा रहा था, इसलिये हत्या करनेवाला वृश जान ही है'।

तदनंतर वार्श साम नामक स्तोत्र कह कर, वृश जान ने उस बालक को पुनः जीवित किया। फिर

भी इक्ष्वाकु राजा ने पक्षपात कर वृश जान को ही दोषी ठहराया, इसलिये इक्ष्वाकु राजा के घर से अग्नि गुप्त हो गया। यज्ञयाग बंद हो गये। पूछताछ करने पर राजा को पता चला कि, वृश जान को मैं ने दोषी कहा, इसलिये अग्नि मेरे घर से चला गया है। बाद में राजा वृश जान के पास गया। तब उसने वार्श सामसूक्त कह कर अग्नि को वापस लाया। इससे इक्ष्वाकु राजा के घर के यज्ञयाग पूर्ववत प्रारंभ हो गये (ऋ. ५.२१; सायण भाष्य में से 'शाट्यायन ब्राह्मण,' तथा तांड्य. ५. २.१)। इस कथा का ऋग्वेद से (५.२) संबंध दर्शाया गया है। यहाँ त्र्यरुण, त्रैवृष्ण तथा त्रसदस्यु को एक ही माना गया है, एवं उसे ऐक्ष्वाक कहा है। परंतु यह बात सायणाचार्य मान्य नहीं करते (ऋ. ५.२७.३; बृहद्दे. ५; १३-२२)।

इसका पुत्र कुरुश्रवण (ऋ. १०.३३.४)। इसे हिरणिन् नामक और भी एक पुत्र होगा। परंतु सायण के मतानुसार 'हिरणिन्' धनवान् के अर्थ का विशेषण है (ऋ. ५.५३.८; ६.६३.९)। यह अंगिरस् गोत्रीय मंत्रकार था।

२. (सू. इ.) पुरुकुत्स एवं नर्मदा का पुत्र (वायु. ८८.७४)। मत्स्य में इसे वसुद कहा है। भविष्य में इसके लिये त्रिंशदश्व पाठभेद है। मत्स्य में नर्मदा को त्रसदस्यु की पत्नी बताया है (मत्स्य. १२.३६; ब्रह्म. ७.९५)। यह सूर्यवंश का था।

त्रसद्दस्यु--मांधातृ का नामांतर (भा. ९.६.३३)।

त्राक्षायणि--विश्वामित्र कुल का गोत्रकार।

त्रात ऐषुमत--निगड पार्णवल्कि का शिष्य (वं. ब्रा. १.३)।

त्रासदस्यव--तृक्षि तथा कुरुश्रवण का पैतृक नाम।

त्रिंशदश्व--(सू. इ.) भविष्य के मतानुसार पुरुकुत्स का पुत्र। इसका रथ तीस घोडों का था। इसका राज्य सत्ययुग के दूसरे चरण में था।

त्रिककुद्--(सो. आयु.) भागवत मतानुसार शुचि राजा का पुत्र।

त्रिगर्त--एक क्षत्रिय (म. स. ८.१९)।

त्रिचक्षु--(सो. पूरु. भविष्य.) रुच का पुत्र। इसे नृचक्षु कहा गया है।

त्रिजट--गार्ग्य-कुल का एक वृद्ध ब्राह्मण। हल, कुदलि, तथा बेंत ले कर यह हमेशा वन में घूमता था। जमीन में हल चला कर यह अपना उदरनिर्वाह करता था।

वनवास गमन के पहले राम ने लक्ष्मण से कुछ दानधर्म करने के लिये कहा। उस समय, अपनी तरुण पत्नी के कथनानुसार, धनप्राप्ति की आशा से यह भी आया। इसे वृद्ध देख कर, राम को इसपर दया आयी। हाथ में एक लकडी ले कर, उसने इससे कहा, 'यह लकडी इन गायों के बीच में फेंको। जहाँ तक यह लकडी जावेगी, वहाँ तक की गौएँ तुम्हें दी जावेंगी।' इसने लकडी फेंकी। वह गायों को पार कर, सरयू के भी उसपार चली गई। तब राम ने उस क्षेत्र की सब गौएँ इसे दीं, तथा साथ में कुछ धन भी दिया (वा. रा. अयो. ३२.२९-४३)।

त्रिजटा--लंका की एक राक्षसी। रावण ने सीता के संरक्षण के लिये जो राक्षसियाँ रखीं थीं, उनमेंसे यह एक थी (म. व. २६४.५३)। स्वप्न में इसने देखा कि, रावण का नाश तथा राम का उत्कर्ष होनेवाला है। तब से सीता को कुछ तकलीफ न हो, यह व्यवस्था इसने जारी की (वा. रा. सुं. २७)।

त्रित--एक ऋषि तथा देवता। परंतु निरुक्त में इसे एक द्रष्टा कहा है (नि. ४.६)। इन्द्र ने त्रित के लिये अर्जुन का वध किया (ऋ. २.११.२०)। त्रित ने त्रिशीर्ष का (ऋ. १०.८.८), एवं त्वष्टृपुत्र विश्वरूप का वध किया (ऋ. १०.८.९)। मरुतों ने युद्ध में त्रित का सामर्थ्य नष्ट नहीं होने दिया (ऋ. ८.७.२४)। त्रित ने इन्द्र के लिये सोम पीसा (ऋ. ८.३२.२; ३४.४; ३८. २)। त्रित ने सोम दे कर सूर्य को तेजस्वी बनाया (ऋ. ९.३७.४.)। त्रित तथा त्रित आप्त्य, एक ही होने का संभव है। त्रित को आप्त्य विशेषण लगाया गया है। इसका अर्थ सायण ने उदकपुत्र किया है (ऋ. ८.४७. १५)। यह अनेक सूक्तों का द्रष्टा है। (ऋ. १.१०५; ८.४७; ६.३३; ३४; १०२; १०. १-७)। एक स्थान पर इसने अग्नि की प्रार्थना की है कि, मरुदेश के प्याऊ के समान पूरुओं को धन से तुष्ट करते हो (ऋ. १०.४)।

त्रित शब्द इंद्र के लिये उपयोग में लाया गया है (ऋ. १.१८७.२)। उसी प्रकार इंद्र के भक्त के रूप में भी इसका उल्लेख है (ऋ. ९.३२.२;१०.८.७-८)। त्रित तथा गृत्समद कुल का कुछ संबंध था, ऐसा प्रतीत होता है (ऋ. २.११.१९)। त्रित को विभूवस का पुत्र कहा गया है (ऋ. १०.४६.३)। त्रित अग्नि का नाम है

(ऋ. ५.४१.४)। त्रित की वरुण तथा सोम के साथ एकता दर्शाई है (ऋ. ८.४१.६;९.९५.४)।

एक बार यह कुएँ में गिर पड़ा। वहाँ से छुटकारा हो, इस हेतु से इसने ईश्वर की प्रार्थना की। यह प्रार्थना बृहस्पति ने सुनी तथा त्रित की रक्षा की (ऋ. १.१०५.१७)। भेडियों के भय से ही त्रित कुएँ में गिरा होगा (१८)। इसी ऋचा के भाष्य में, सायण ने शाट्यायन ब्राह्मण की एक कथा का उल्लेख किया है। एकत, द्वित तथा त्रित नामक तीन बंधु थे। त्रित पानी पीने के लिये कुएँ में उतरा। तब इसके भाईयों ने इसे कुएँ में धक्का दे कर गिरा दिया, तथा कुँआ बंद करवे चले गये। तब मुक्ति के लिये, त्रित ने ईश्वर की प्रार्थना की (ऋ. १.१०५)। यह तीनों बंधु अग्नि को उदक से उत्पन्न हुएँ थे (श. ब्रा. १.२.१.१–२; तै. ब्रा. ३.२.८.१०–११)।

महाभारत में, त्रित की यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। गौतम को एकत, द्वित तथा त्रित नामक पुत्र थे। यह सब ज्ञाता थे। परंतु कनिष्ठ त्रित तीनों में श्रेष्ठ होने के कारण, सर्वत्र पिता के ही समान उसका सत्कार होने लगा। एकत तथा द्वित का लोगों पर अधिक प्रभाव न पड़ता था। इन्हें विशेष द्रव्य भी प्राप्त नहीं होता था।

एक बार त्रित की सहायता से यज्ञ पूर्ण कर के, इन्होंने काफी गौऐं प्राप्त की। गौऐं ले कर जब ये सरस्वती के किनारे जा रहे थे, तब त्रित आगे था। दोनों भाई गौओं को हाँकते हुए पीछे जा रहे थे। इन दोनों को गौओं का हरण करने की सूझी। त्रित निःशंक मन से जा रहा था। इतने में सामने से एक भेड़िया आया। उससे रक्षा करने के हेतु से त्रित बाजू हटा, तो सरस्वती के किनारे के एक कुएँ में गिर पड़ा। इसने काफी चिल्लाहट मचाई। परंतु भाईयों ने सुनने पर भी, लोभ के कारण, इसकी ओर ध्यान नहीं दिया। भेड़िया का ड़र तो था ही।

जलहीन, धूलियुक्त तथा घास से भरे कुऐं में गिरने के बाद, त्रित ने सोचा कि, 'मृत्यु भय से मैं कुऐं में गिरा। इसलिये मृत्यु का भय ही नष्ट कर डालना चाहिये'। इस विचार से, कुएँ में लटकनेवाली वल्ली को सोम मान कर इसने यज्ञ किया। देवताओं ने सरस्वती के पानी के द्वारा इसे बाहर निकाला। आगे वह कूप 'त्रित–कूप' नामक तीर्थ-स्थान हो गया।

घर वापस जाने पर, शाप के द्वारा इसने भाईयों को भेड़िया बनाया। उनकी संतति को इसने बंदर, रीछ आदि बना दिया। बलराम जब त्रित के कूप के पास आया, उस समय उसे यह पूर्वयुग की कथा सुनाई गयी (म. श. ३५; भा. १०.७८)। आत्रेय राजा के पुत्र के रूप में, त्रित की यह कथा अन्यत्र भी आई है (स्कन्द. ७.१.२५७)।

२. चक्षुर्मनु को नड्वला से उत्पन्न पुत्रों में से एक।

३. अंगिरस् गोत्र का एक मंत्रकार।

४. ब्रह्मदेव के मानस पुत्रों में से एक।

त्रिधन्वन्––(सू. इ.) विष्णु, वायु तथा भविष्य के मतानुसार वसुमनस् का पुत्र; परंतु मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार संभूति का पुत्र। भागवत में अरुणपुत्र त्रिबंधन का निर्देश आया है। वह तथा यह एक ही है।

त्रिधामन्—वर्तमान मन्वन्तर का दशम व्यास (व्यास देखिये)।

२. दसवाँ शिवावतार। इसने काशी में तपस्या की। इसे भृंग, बलबंधु, नरामित्र, तथा केतुशृंग नामक चार शिष्य थे। इसके समय भृगु ऋषि व्यास था (शिव. शत. ५)।

त्रिनाभ—कश्यप तथा खशा का पुत्र।

त्रिनेत्र––(मगध. भविष्य.) मत्स्य के मतानुसार निर्वृत्ति का पुत्र। वायु में इसको सुव्रत, ब्रह्मांड तथा विष्णु में सुश्रम, तथा भागवत में शम कहा गया है। मत्स्य के मतानुसार इसने अठ्ठाईस, तथा वायु तथा ब्रह्मांड के मतानुसार अडतीस वर्षों तक राज्य किया।

त्रिपुर—एक असुरसंघ। मयासुर ने ब्रह्माजी के प्रसाद से तीन पुरों (नगरों) की रचना की। उन पुरों क्रमशः लोहमय, रौप्यमय, एवं सुवर्णमय थे। नगर पूर्ण होने के पश्चात्, उनका अधिपत्य तारकासुर के ताराक्ष, कमलाक्ष एवं विद्युन्मालि इन तीन पुत्रों को दिया गया (म. क. २४.४)। ये तीन असुर 'त्रिपुर' नाम से प्रसिद्ध हुएँ।

मयासुर ने नगर निर्माण कर असुरों को दिये। उस समय उसने त्रिपुरों को चेतावनी दी कि, 'तुम्हें देवताओं को न तो त्रस्त करना चाहिये, नहीं तो उनका अनादर करना चाहिये'।

किंतु बाद में विपरीत बुद्धि हो कर, त्रिपुर अधर्माचरण करने लगे। इसलिये शिवजी के हाथ से इनका नाश हुआ। यह अधर्माचरण विष्णु ने इनमें फैलाया (शिव. रुद्र. ४.५)। त्रिपुरों में धार्मिकता होने के कारण, उनपर विजयप्राप्ति असंभव थी। इसलिये विष्णु ने बुद्ध के रूप में इन पुरों को धर्मरहित किया। बाद में देवों ने

युद्ध प्रारंभ किया (मत्स्य. १३०-१३७; भा. ७.१०; म. अनु. २६५.३१ कुं.)।

इनसे युद्ध करते समय शंकर के शरीर से जो घर्मबिंदु निकले, वे ही रुद्राक्ष बने (पद्म. सृ.५९)। जिन अमृत-कुंडों के कारण ये अमर थे, उनका प्राशन देवताओं ने गोरूप से कर लिया। पश्चात् शिवजी ने त्रिपुर का दहन किया (पद्म. सृ. १३)। इसी समय ताराक्ष, कमलाक्ष तथा विद्युन्मालि असुरों का अंत हुआ (म. द्रो. १७३. ५२-५८; लिंग. १.७०-७२)।

त्रिपुरसुंदरी—एक देवी। अर्जुन को इसने बाला-विद्या दी (पद्म. पा. ७४)।

त्रिबंधन—(सू. इ.) भागवत के मतानुसार अरुण का पुत्र (त्रिधन्वन् देखिये)। निबंधन तथा यह एक ही हैं।

त्रिभानु—(सो. तुर्वसु.) भागवत के मतानुसार भानुमत् राजा का पुत्र। इसका पुत्र करंधम। विष्णु में इसे त्रैशांब, वायु में त्रिसानु, तथा मत्स्य में त्रिसरि कहा गया है।

त्रिमार्ष्टि—अंगिराकुल का गोत्रकार।

त्रिमूर्ति—इंद्रप्रमति का नामान्तर।

त्रिमूर्धन्—रावण का एक पुत्र।

त्रिवक्रा—कंसदासी कुब्जा का नामांतर (भा. १०. ४.२३)।

त्रिवराताम—आर्चनानस के लिये पाठभेद।

त्रिवृष—एक व्यास (व्यास देखिये)।

त्रिवेद कृष्णरात लौहित्य—श्याम जयन्त लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

त्रिशंकु—एक साक्षात्कारी तत्वज्ञ। यह ब्रह्म से एक-रुप हो गया था। अपना 'वेदानुवचन' (आत्मानुभव) वर्णन करते समय इसने लिखा है, 'मैं संसार को हिलाने-वाला हूँ। मेरे सामने सब तुच्छ है। मैं साकार हुआ पावित्र्य हुँ। मैं सूर्यस्थित अमर तत्व हूँ। मैं अमूल्य द्रव्यनिधि हूँ। मैं ज्ञानयुक्त, अमर, तथा अक्षय हूँ। (तै. उ. १.१०)।

पौराणिक त्रिशंकु, तथा यह दोनों अलग व्यक्ति प्रतीत होते है।

२. (सू. इ.) अयोध्या का राजा। यह निबंधन राजा का ज्येष्ठ पुत्र था। कई ग्रंथो में इसके पिता का नाम त्रय्यारुण या अरुण दिया है (ब्रह्म. ८.९७; ह. वं. १. १२; पद्म. सृ. ८; दे. भा. ७.१०)। इसका मूल नाम सत्यव्रत था। परंतु वसिष्ठ के शाप के कारण, इसे त्रिशंकु नाम प्राप्त हुआ।

इसका तथा इसका पिता त्र्यय्यारुण, एवं पुत्र हरिश्चंद्र का कुलोपाध्याय 'देवराज' वसिष्ठ था। वसिष्ठ से त्रिशंकु का पहले से ही शत्रुत्व था। कान्यकुब्ज का राजा विश्वरथ, जो आगे तपसाधना से विश्वामित्र ऋषि बना, त्रिशंकु का मित्र एवं हितैषी था। वसिष्ठ एवं विश्वामित्र इन दो ऋषियों के बीच, त्रिशंकु के कारण जो झगड़ा हुआ, उससे त्रिशंकु का जीवनचरित्र नाट्यपूर्ण बना दिया है।

वसिष्ठ एवं त्रिशंकु के शत्रुत्व की कारणपरंपरा, 'देवी भागवत' में दी गयीं है। यह शुरू से दुर्वर्तनी था। इस कारण इसके बारे में किसी का भी अनुकूल मत न था। एक बार, इसने एक विवाहित ब्राह्मण स्त्री का अपहार किया। 'उस स्त्री की सप्तपदी होने के पहले मैंने उसे उठा लिया हैं, अतः मैं दोषरहित हूँ,' ऐसा इसका कहना था। किंतु इसकी एक न सुन कर, इसे राज्य के बाहर निकालने की सलाह, वसिष्ठ ने इसके पिता को दी। पिता ने इसे राज्य के बाहर निकाल दिया। वह स्वयं, दूसरा अच्छा पुत्र हो, इस इच्छा से राज्य छोड कर, तपस्या करने चला गया।

अयोध्या में कोई भी राजा न रहने के कारण, वसिष्ठ राज्य का कारोबार देखने लगा। किंतु राज्य की आम-दानी दिन वे दिन विगड़ती गई। लगातार नौ वर्षों तक राज्य में अकाल पड़ गया।

इस समय त्रिशंकु अरण्य में गुजारा करता था। जिस अरण्य में यह रहता था, उसी अरण्य में विश्वामित्र का आश्रम था। परंतु तपस्या के कारण, विश्वामित्र कहीं दूर चला गया था। इसलिये आश्रम में केवल उसकी पत्नी तथा तीन पुत्र ही थे। त्रिशंकु, रोज थोड़ा मांस, आश्रम के बाहर पेड़ में बाँध देता था। उससे विश्वामित्र की पत्नी तथा एक पुत्र का गुज़ारा चलता था। एक बार अन्य पशु न मिलने के कारण, इसने वसिष्ठ की गाय कामधेनु को मार डाला। तब वसिष्ठ ने उसे शाप दिया कि, 'तुम्हारे सिर पर तीन शंकु निर्माण होंगे। गोवध, स्त्रीहरण तथा पिता के क्रोध के कारण तुम पिशाच बनोगे, तथा तुम्हें लोग त्रिशंकु के नाम से पहचानेंगे'।

वसिष्ठ के इस शाप के कारण, त्रिशंकु तथा वसिष्ठ का वैर अधिक ही बढ़ गया। प्रथम इसे दुर्वर्तनी कह कर, वसिष्ठ ने इसे राज्य के बाहर निकल दिया। पश्चात्, कामधेनु वध के निमित्त से इसे पिशाच बनने का शाप

दिया। बाद में देवी की कृपा से इसका पिशाचत्त्व नष्ट हो गया। पश्चात् पिता ने भी इसे राजगद्दी पर बिठाया (दे. भा. ७.१२)।

तपश्चर्या से वापस आने पर विश्वामित्र को पता चला कि, उसके कुटुंब का पालनपोषण त्रिशंकु ने किया। तब त्रिशंकु के प्रति उसे कृतज्ञता महसूस हुई तथा उसने इसे वर माँगने के लिये कहा। तब सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा त्रिशंकु ने विश्वामित्र के पास प्रकट की। बाद में विश्वामित्र ने इसे राज्य पर बैठाया, इससे यज्ञ करवाया, तथा सब देवता एवं वसिष्ठ के विरोध के बावजूद उसने त्रिशंकु को स्वर्ग पहुँचा दिया (ह. वं. १. १३)।

वाल्मीकि रामायण में, त्रिशंकु की सदेह स्वर्गारोहण की कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा त्रिशंकु ने वसिष्ठ के सामने रखी। वसिष्ठ ने इसे साफ उत्तर दिया कि, यह असंभव है। तब यह वसिष्ठ के पुत्रों के पास गया। उन्हों ने यह कह कर इसका निषेध किया कि, जब हमारे पिता ने तुम्हें ना कह दिया है, तब तुम हमारे पास क्यों आये? त्रिशंकु ने उन्हें जवाब दिया कि, 'दूसरी जगह जा कर, कुछ मार्ग मै अवश्य ढूंढ लाऊँगा'। तब उन पुत्रों ने इसे शाप दिया कि 'तुम चांडाल बनोगे'। बाद में यह विश्वामित्र की शरण में गया।

विश्वामित्र ने उसे सदेह स्वर्ग ले जाने का आश्वासन दिया, एवं सब को यज्ञ के लिये निमंत्रण दिया। वसिष्ठ को छोड़ कर, अन्य सारे ऋषियों ने विश्वामित्र के इस निमंत्रण का स्वीकार किया। किंतु वसिष्ठ ने स्पष्ट शब्दों में संदेश भेजा कि, 'जहाँ यज्ञ करनेवाला चांडाल हो, उपाध्याय क्षत्रिय हो, वहाँ कौन आवेगा? इस यज्ञ के द्वारा स्वर्ग में भी भला कौन जावेगा?' यह संदेश सुन कर विश्वामित्र अत्यंत क्रोधित हुआ। उसने सारा वसिष्ठकुल भस्मसात् कर दिया, एवं वसिष्ठ को शाप दिया कि, 'अगला जन्म तुम्हें डोम के घर में मिलेगा'।

विश्वामित्र का यज्ञ शुरू हुआ। विश्वामित्र अध्वर्यु के स्थान में था। निमंत्रित करने पर भी देवता यज्ञ में नहीं आयें। तब अपना तपःसामर्थ्य खर्च कर विश्वामित्र ने त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग ले जाना प्रारंभ किया। देखते देखते त्रिशंकु स्वर्ग चला गया। किंतु इन्द्रसहित सब देवताओं ने इसे नीचे ढकेल दिया। यह 'त्राहि त्राहि' करते हुए नीचे सिर, तथा ऊपर पैर कर के नीचे आने लगा।

यह देख कर विश्वामित्र अत्यंत क्रोधित हुआ। वह 'रुको, रुको' ऐसा चिल्लाने लगा। पश्चात् उसने दक्षिण की ओर नये सप्तर्षि एवं नक्षत्रमाला निर्माण किये। 'अन्यमिन्द्रं करिष्यामि, लोको वा स्यादनिन्द्रकः' ('या तो दूसरा इन्द्र निर्माण मैं करूँगा, या मेरा स्वर्ग ही इंद्ररहित होगा), ऐसा निश्चय कर विश्वामित्र ने नया स्वर्ग निर्माण करना प्रारंभ किया। उससे देव चिंताक्रान्त हुएँ। उन्होंने कहा कि जिस व्यक्ति को गुरुशाप मिला है, वह स्वर्ग के लिये योग्य नहीं हैं। विश्वामित्र ने कहा, 'मैं अपनी प्रतिज्ञा असत्य नहीं कर सकता। तब देवताओं ने उसे मान्यता दी। 'सद्यःस्थित ज्योतिष्चक्र के बाजू में दक्षिण की ओर तुम्हारे नक्षत्र रहेंगे, तथा उनमें त्रिशंकु रहेगा, ऐसा आश्वासन दे कर, विश्वामित्र की प्रतिज्ञा देवों ने पूर्ण की (वा. रा. बा. ५७-६१)। पश्चात् अपने तपःसाधना में त्रिशंकुआख्यान के कारण, बहुत भारी विघ्न आया है यह सोच कर, विश्वामित्र ने अपनी तपश्चर्या का स्थान दक्षिण की ओर पुष्करतीर्थ पर बदल दिया (६२)।

त्रिशंकुआख्यान की यही कथा स्कंदपुराण में काफी अलग तरीके से दी गई है। सदेह स्वर्ग जाने के लिये यज्ञ करने की त्रिशंकु की कल्पना, वसिष्ठ ने अमान्य कर दी, एवं इसे नया गुरु ढूँढने के लिये कहा। पश्चात् वसिष्ठ के पुत्रों से इसने यज्ञ करने की विज्ञापना की, जिससे उनसे इसे चांडाल होने का शाप मिला। तत्काल इसका शरीर काला एवं दुर्गंधयुक्त हो गया। तब अपने दुराग्रह के प्रति स्वयं इसी के मन में घृणा उत्पन्न हुई। घर लौटने के बाद, द्वार से ही इसने अपने पुत्र को राज्याभिषेक करने के लिये कहा। पश्चात् यह स्वयं सदेह स्वर्गारोहण के प्रयत्न में लगा।

जगन्मित्र विश्वामित्र के सिवा इसे अन्य कोई भी मित्र नही था। विश्वामित्र के यहाँ जाने पर, पहले तो इसे किसीने भीतर ही न जाने दिया। परन्तु बाद में विश्वामित्र से मुलाकात होने पर, उसने वसिष्ठपुत्रों के शाप की हकीकत इसे पूछ ली। वसिष्ठ से स्पर्धा होने के कारण, त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग ले जाने की प्रतिज्ञा विश्वामित्र ने की। इसका चांडालत्व दूर करने के लिये, विश्वामित्र ने इसे साथ ले कर तीर्थयात्रा प्रारंभ की। परंतु इसका चांडालत्व नष्ट न हो सका।

बाद में अर्बुदाचल पर मार्कंडेय ऋषि इनसे मिले। उन्हें विश्वामित्र ने सारा वृत्तांत, अपनी प्रतिज्ञा के सहित बताया। इसका चांडालत्व दूर होने की

तरकीब भी मार्कंडेय ऋषि से पूछी। मार्कंडेय इसेने हाटकेश्वरक्षेत्र में जा कर, पातालगंगा में स्नान, तथा हाटकेश्वर का दर्शन लेने के लिये कहा। हाटकेश्वर-दर्शन के पश्चात् इसका चांडालत्व दूर हुआ।

पश्चात् यज्ञ की सामग्री एकत्रित करने के लिये, विश्वामित्र ने इसे कहा। त्रिशंकु के यज्ञ की तैयारी पुरी होते ही, विश्वामित्र स्वयं ब्रह्मदेव के पास गया। ब्रह्माजी से विश्वामित्र ने कहा कि, 'त्रिशंकु को सदेह तुम्हारे लोक में लाने के लिये, मैं उससे यज्ञ करवा रहा हूँ। इसलिये आप सब देवों के साथ यहाँ आ कर, यज्ञभाग का स्वीकार करे'। तब ब्रह्मदेव ने कहा, 'देहान्तर के विना स्वर्गप्राप्ति असंभव है। इसलिये यज्ञ करने के बाद त्रिशंकु को देहान्तर (मृत) करना ही पडेगा। वरना उसका स्वर्गप्रवेश असंभव है'। यह सुन कर विश्वामित्र संतप्त हुआ, तथा उसने कहा, 'मैं अपनी तपश्चर्या के सामर्थ्य से, त्रिशंकु को सदेह स्वर्गप्राप्ति दे कर ही रहूँगा'।

इतना कह कर, विश्वामित्र त्रिशंकु के पास वापस आया। स्वयं अध्वर्यु बन कर, विश्वामित्र ने यज्ञ शुरू किया। शांडिल्य आदि ऋषियों को उसने होता आदि ऋत्विजों के काम दिये। बारह वर्षों तक विश्वामित्र का यज्ञ चालू रहा। पश्चात् अवभृतस्नान भी हुआ। किंतु त्रिशंकु को स्वर्गप्रवेश नही हुआ।

वसिष्ठ के सामने अपना उपहास होगा, यह सोच कर इसे अत्यंत दुख हुआ। विश्वामित्र ने इसे सांत्वना दी, एवं कहा की, 'समय पाते ही मैं प्रतिसृष्टि निर्माण करूँगा'।

प्रतिसृष्टि निर्माण करने की शक्ति प्राप्त हो, इस हेतु से विश्वामित्र ने शंकर की आराधना शुरू की। पश्चात् वैसा वर भी शंकर से उसने प्राप्त किया, एवं प्रतिसृष्टि निर्माण करने का काम शुरू किया।

ब्रह्मदेव ने विश्वामित्र के पास आ कर उससे कहा, 'इंद्रादि देवों का नाश होने के पहले, प्रतिसृष्टि निर्माण करना बंद करो'। विश्वामित्र ने जवाब में कहा, 'अगर त्रिशंकु को सदेह स्वर्ग प्राप्त हो जाये, तो मैं प्रतिसृष्टि निर्माण करना बंद कर दूँगा'। ब्रह्मदेव के द्वारा अनुमति दी जाने पर, निर्माण की गई प्रतिसृष्टि अक्षय होने के लिये, विश्वामित्र ने ब्रह्मदेव से प्रार्थना की। तब ब्रह्मदेव ने कहा, 'तुम्हारी सृष्टि अक्षय होगी, परंतु यज्ञार्ह नहीं बन सकती'। इतना कह कर, ब्रह्मदेव त्रिशंकु के साथ सत्यलोक गया (स्कन्द. ५.६.२.७)। भविष्य के मतानुसार, त्रिशंकु ने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

इसकी पत्नी का नाम सत्यरथा था। उससे इसे हरिश्चन्द्र नामक सुविख्यात पुत्र हुआ (ह. वं. १.१३. २४)।

त्रिशंकु की धार्मिकता का वर्णन, विश्वामित्र के मुख में काफी बार आया है (वा. रा. बा. ५८)। इसने सौ यज्ञ किये थे। क्षत्रियधर्म की शपथ ले कर इसने कहा है, 'मैंने कभी भी असत्य कथन नहीं किया, तथा नहीं करूँगा। गुरु को भी मैं ने शील तथा वर्तन से संतुष्ट किया है, प्रजा का धर्मपालन किया है। इतना धर्मनिष्ठ होते हुअे भी, मुझे यश नहीं मिलता, यह मेरा दुर्भाग्य है। मेरे सब उद्योग निरर्थक हैं, ऐसा प्रतीत होता है'। विश्वामित्र को भी इसके बारे में विश्वास था (५९)। वसिष्ठ को भी त्रिशंकु के वर्तन के बारे में आदर था। 'यह कुछ उच्छृंखल है, परंतु बाद में यह सुधर जाएगा' ऐसी उसकी भावना थी (ह. वं. १.१३)।

वनवास के समय इसका वर्तन आदर्श था। वहाँ इसने विश्वामित्र के बालकों का संरक्षण किया, इससे इसकी दयालुवृत्ति जाहीर होती है। ब्राह्मण की कन्या के अपहरण के संबंध में जो उल्लेख आयें है, उसका दूसरा पक्ष हरिवंश तथा देवी भागवत में दिया गया है। उस माँमले में इसकी विचारपद्धति उस काल के अनुरूप ही प्रतीत होती है। वसिष्ठ की गाय इसने जानबूझ कर मारी, यह एक आक्षेप है। किंतु वसिष्ठ के साथ इसका शत्रुत्व था। गोहत्या का यही एक समर्थनीय कारण हो सकता है।

सदेह स्वर्ग जाने की इच्छा, इसके विचित्र स्वभाव का एक भाग है। सदेह स्वर्ग जाना असंभव है, यों वसिष्ठ ने कहा था। तथापि वसिष्ठ विश्वामित्रादि ऋषि स्वर्ग में जा कर वापस आते थे, यह हरिश्चन्द्र की कथा से प्रतीत होता है। त्रिशंकु की कथा में भी वैसा उल्लेख आया है। कुछ दिन स्वर्ग में जा कर, अर्जुन ने इन्द्र के आतिथ्य का उपभोग किया था, ऐसा उल्लेख भी महाभारत में प्राप्त है। इस दृष्टि से त्रिशंकु को भी स्वर्ग जाने में कुछ हर्ज नहीं था। परंतु वसिष्ठ के द्वारा अमान्य किये जाने पर, इसे ऐसा लगा, 'अपना तथा वसिष्ठ का शत्रुत्व है, इसीलिये वह अपनी इच्छा अमान्य कर रहा है'। इन्द्रादि देवों ने भी इसे स्वर्ग में न लेने का कारण, 'गुरु का शाप' यही कहा है। स्वर्गप्राप्ति के लिये देहान्तर

अनिवार्य है, यह नहीं कहा। इससे प्रतीत होता है कि, सदेह स्वर्ग जाना उस काल में असंभव नहीं था।

स्वर्ग के मार्ग पर, त्रिशंकु को इंद्र के विरोध से रुकना पडा। अभी वहाँ त्रिशंकु नाम का एक तारा है। पृथ्वी से उस तारें का अन्तर तीन शंकु (= तीस महापद्म मील) त्रिशंकु इतना ही हैं, ऐसा खगोलज्ञ कहते हैं।

त्रिशिख—तामस मन्वंतर का इंद्र।

त्रिशिरस्—विश्ववसु एवं वाका का पुत्र। (विश्वरूप देखिये)।

२. दूषण राक्षस के चार अमात्यों में से एक। यह राम के हाथों मारा गया।

३. त्रिशीर्ष का नामांतर।

४. कश्यप एवं खशा का पुत्र।

त्रिशिरस् त्वाष्ट्र—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.८.९)।

त्रिशीर्ष—रावण के पुत्रों में से एक। हनुमान ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ७०)।

त्रिशोक काण्व—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.४५)। इसके नाम का एक साम है (पं.ब्रा. ८.१)। 'पंचविंश ब्राह्मण' में यह शब्द अनेक वार आया है, किंतु वह सर्वत्र व्यक्तिवाचक ही है, ऐसा निश्चित रूप से कहा नहीं जा सकता।

त्रिसानु एवं त्रिसारि—(सो. तुर्वसु.) गोभानु का पुत्र (त्रिभानु देखिये)।

त्रिस्तनी—अशोक-वन में सीता की संरक्षक राक्षसी।

त्रैतन—दीर्घतमस् का शत्रु एवं एक दास। त्रित का यह संबंधी रहा होगा (ऋ. १.१५८.५)।

त्रैधात्व—त्र्यरुण का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १३.३. १२)।

त्रैपुर—त्रिपुरी का राजा। राजसूययज्ञ के समय सहदेव ने इसे जीत कर, इससे बहुत करभार लिया था (म. स. २८.३८)।

त्रैपुरि—त्रिपुर का पुत्र। शंकर ने इस के पिता का वध किया। इसलिये इसने शिवपुत्र गजानन पर आक्रमण किया। परंतु गजानन ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७२)।

त्रैवणि—औपजघनि का शिष्य (बृ. उ. ४.६.३)।

त्रैवृष्ण—त्र्यरुण का पैतृक नाम (ऋ. ५. २७.१)।

त्रैशांब—(सो. तुर्वसु.) गोभानु का पुत्र (त्रिभानु देखिये)।

त्रैशृंग—त्रैशृंगायण देखिये।

त्रैशृंगायण—वसिष्ठ गोत्र का ऋषि। पाठभेद-त्रैशृंग।

त्र्यक्षी—अशोकवन की एक राक्षसी।

त्र्यम्बकेश्वर—शिव का एक अवतार। यह गोदावरी के तट पर रहता था। गौतम की प्रार्थना से, यह पृथ्वी पर आया (शिव. शत. ४२)। ज्योतिर्लिंग देखिये।

त्र्यरुण त्रैवृष्ण त्रसदस्यु—त्रसदस्यु देखिये।

त्र्यारुण—अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

त्वष्ट्ट—देवताओं का शिल्पी (अ. वे. १२.३.३३)। इसका पुत्र विश्वरूप। इंद्र ने उसका वध किया। तब सत्र कार्य इन्द्रविरहित करने का इसने निश्चय किया। फिर भी इसके सोमयाग में, इंद्र खुद आ कर सोम पी गया। परंतु उस सोम का इंद्र को वमन करना पड़ा। बचे सोम का इसने हवन किया। उस हवन से एक इंद्रशत्रु देवता निर्माण हुआ। उसे वृत्र कहते हैं (श. ब्रा. १.६.३.१)।

गर्भवृद्धि के लिये इसकी प्रार्थना की जाती हैं (बृ. उ. ६.४.२१; ऋ. १०. १८४. १)। असुर-पुरोहित वरुत्रिन् के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है (मै. सं. ४.८.१; क. सं. ३०.१)।

शुक्र तथा गो का यह पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम वैरोचिनी यशोधरा (ब्रह्मांड. ३.१.८७)। विश्वकर्मा तथा प्रजापतियों में यह एक था। विश्वकर्मा तथा प्रजापति के अधिकार इसे थे। इसलिये इसे ये नाम मिले। हस्तकौशल्य से जो भी किया जा सकता है, वह करने का इसे अधिकार था। इस अधिकार के अनुसार, हर चीज इसीके द्वारा बनवाई जाती थी। इस प्रकार संपूर्ण प्रजा इसीके द्वारा बनवाई जाती थी। इसलिये इसे प्रजापति कहते हैं। इन्हें 'विश्वकर्मन्' भी कहा है (भा. ६.९. ५४)।

इसे कुल तीन अपत्य थे। उनके नाम त्रिशिरस्, विश्वरुप तथा विश्वकर्मन् थे (ब्रह्मांड. ३.१.८६)। इसे संनिवेश नामक और एक पुत्र भी था (भा. ६.६.४४)।

यह शिल्पशास्त्रज्ञ था। सुंदोपसुंद के वध के लिये इसने तिलोत्तमा नामक अप्सरा निर्माण की (म. आ. २०३. ११-१७)। त्रिपुरवध के लिये, आकाश, तारे आदि वस्तुओं से, इसने शंकर के लिये, एक रथ निर्माण किया (म. आ. २३१.१२)। इसने दधीचि ऋषि की हड्डिओं से एक वज्र निर्माण कर, वह वृत्रवध के लिये इंद्र को दिया था (पद्म. सृ. १९; भा. ६.९.५४)।

वज्रनिर्माण का निर्देश अन्यत्र भी है (म. व. १००. २४)। इंद्र ने इसका पुत्र त्रिशिरस् का वध किया, तब

इसने इंद्र के नाश के लिये वृत्र निर्माण किया (भा. ६. ९.१८; ५४; म. उ. ९.४३; विश्वरूप देखिये)।

२. महाभारतकालीन स्थापत्यविशारद। युधिष्ठिर के अर्धराज्याभिषेक के समय, इंद्र ने इसे भेज कर, इंद्रप्रस्थ नगरी तयार करने को कहा। तदनुसार इसने उस नगरी की निर्मिति की (म. आ. १९९.१९८७*)। खांडववन के दाह के समय, इंद्र की मदद करने यह उपस्थित था।

३. कश्यप तथा अदिति का पुत्र। एक आदित्य (भा. ६.६.३९)। यह प्रत्येक इष (आश्विन) माह में प्रकाशित होता है (भा. १२.११.४३)।

४. प्रभास वसु तथा अंगिरस्कन्या ब्रह्मवादिनी का पुत्र (भवि. ब्राह्म. २.७९.१६-१७)। यह प्रत्येक फाल्गुन माह में प्रकाशित होता है। इसकी ११०० किरणें हैं (भवि. ब्राह्म. ७८)।

४. (स्वा. प्रिय.) भागवत मतानुसार राजा भौवन तथा दूषणा का पुत्र। विष्णु मतानुसार मनस्यु का पुत्र। इसे विरोचना नामक स्त्री थी, जिससे इसे विरज नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ५. १५. १५)।

६. ग्यारह रुद्रों में से एक।

७. तारासुर तथा देवताओं के संग्राम में तारासुर की ओर का एक दानव (मत्स्य. १७२)।

त्वष्टाधर—शुक्राचार्य का एक पुत्र। यह असुरों का याजक था। यह अत्यंत तेजस्वी, तथा ब्रह्मविद्या में प्रवीण था (म. आ. ५९. ३६)। भांडारकर इन्स्टिट्यूट महाभारत में 'त्वष्टावर' यों पाठ उपलब्ध है।

त्वाष्ट्र—त्वष्टृ प्रजापति का पुत्र (भा. ६.९.१८)। आभूति और विश्वरुप का यह पैतृक नाम है।

त्वाष्ट्री—त्वष्टृ की कन्या। यह आदित्य को दी गयी थी। इसे अश्विनीकुमार नामक दो पुत्र उत्पन्न हुएँ (म. आ. ६०.३४; संज्ञा देखिये)।

द

दंष्ट्र—लंकास्थित एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

दंष्ट्रा—कश्यप तथा क्रोधा की कन्या। पुलह की स्त्री।

दक्ष—अंगिराकुल का गोत्रकार।

२. अंगिरा तथा सुरुपा का देवपुत्र (मत्स्य. १९६. २)।

३. भृगु तथा पौलोमी का देवपुत्र (मत्स्य. १९५.१३)।

४. बाष्कल का पुत्र (ब्रह्माण्ड. ३. ५. ३८-३९)।

५. (सो. कुरु.) मत्स्य मतानुसार देवातिथि का पुत्र। इसे विष्णु तथा वायु के मतानुसार ऋक्ष, एवं भागवत मतानुसार ऋश्य कहा है।

६. एक धर्मशास्त्रकार। याज्ञवल्क्य ने धर्मशास्त्रकारों में इसकी गणना की है। विश्वरुप ने इसके अनेक श्लोक दिएँ है (याज्ञ. १. १७; ३. ३०; ३.६६; ३.१९१)। मिताक्षरा में इसका मत दिया है कि, ब्राह्मण क्षणभर भी आश्रमधर्म से अलिप्त न रहे (याज्ञ. १. ८९)। आचार, अशौच, श्राद्ध आदि आचारधर्म के विषय में इसके श्लोक उपलब्ध है (अपरार्क. ३६८)। सुवर्णदान के संबंध में, इस का एक गद्य उद्धरण भी 'अपरार्क' में दिया गया है (अ. ३६८)। 'नौ अदेय वस्तुओं' का विवरण भी इसने किया है (अपरार्क. ४०४)। 'जीवानंद संग्रह' में दक्षस्मृति दी गई है, जिसके सात भाग तथा २२० श्लोक है। अह्निक, संस्कार, योग, तथा व्यवहार आदि का उस स्मृति में विचार किया गया है। विश्वरूप द्वारा किये गए दक्ष का उल्लेख, मुद्रित 'दक्षस्मृति' में तथा अन्यत्र भी प्राप्त हैं। अपरार्क में दक्ष के चालीस श्लोक हैं, जिस में से कुछ दक्षस्मृति में अप्राप्य हैं। डेक्कन कॉलेज के संग्रह में १९७ श्लोकों की 'दक्षस्मृति' दी गई है (डे. कॉ. नं. १२०; इ. स. १८९५-१९०२)। बंबई विश्वविद्यालय ने भी ऐसी ही 'दक्षस्मृति' प्रकाशित की है।

७. गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. १०१. १२)।

८. एक विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३५)।

९. पश्चिमोत्तर भारत का एक मानवसंघ (पाणिनि देखिये)। इस संघ का राज्य पश्चिमोत्तर भारत वा

उदीच्य देशों में था। इनका अंक तथा लक्षण (राज्यचिह्न) का निर्देश भी प्राप्त है (काशिका. ४. ३. १२७)। दाक्षिकूल तथा दाक्षिकर्ष ये इनके प्रमुख ग्राम थे। कर्ष का अर्थ है 'गढ़ैया'। दाक्षि लोग प्राच्य देश, भरत जनपद, एवं उशीनर देश के बाहर, पश्चिमोत्तर भारत में बसे थे। शेरकोट (उशीनर) तथा गंधार के समीप 'दक्षसंघ' का स्थान होगा। पाणिनि स्वयं गांधार का रहनेवाला था। वह दक्षसंघ में से एक होना संभवनीय है। इसलिये उसको दाक्षिपुत्र कहा गया है। (वासुदेवशरण—पा. भा. १४)

दक्ष कात्यायनि आत्रेय—शंख बाभ्रव्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१; ४.१७.१)।

दक्ष जयंत लौहित्य—कृष्णरात लौहित्य का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

दक्ष पार्वति—एक प्राचीन राजा। इसने प्रजा एवं समृद्धि, प्राप्त करने के लिये यज्ञ किया। इसे कुछ लोग 'दाक्षायण—यज्ञ' अथवा 'वसिष्ठ—यज्ञ' कहते हैं। उसके वंशजों को उस यज्ञ से राज्यप्राप्ति हुई (श. ब्रा. १.४. १.६; सां. ब्रा. ४.४)।

दक्ष प्रजापति—एक सृष्टिनिर्माणकर्ता देवता एवं ऋषि। ऋग्वेद में, सृष्टि की उत्पत्ति भू, वृक्ष, आशा, अदिति, दक्ष, अदिति इस क्रम से हुई (ऋ. १०.७२. ४–५)। अदिति से दक्ष उत्पन्न हुआ, एवं दक्ष से अदिति उत्पन्न हुई, यों परस्पर विरोधी निर्देश ऋग्वेद में हैं। इस विरोध का परिहार, 'ये सारी देवों की कथा हैं (देवधर्म), यों कह कर निरुक्त में किया गया है (नि. ११.२३)।

पुराणों में दी गयी 'दक्षकथा' का उद्गम उपरिनिर्दिष्ट ऋग्वेदीय कथा से ही हुआ है। पुराणों में, दक्ष प्रजापति ब्रह्मदेव के दक्षिण अंगूठे से उत्पन्न हुआ (विष्णु १.१५; ह. वं. १.२; भा. ३.१२.२३)। स्वायंभुव मन्वंतर में यह पैदा हुआ था। स्वायंभुव मनु की कन्या प्रसूति इसकी पत्नी थी। इससे दक्ष को सोलह कन्याएँ हुई। उनमें से श्रद्धा, मैत्री, दया, शांति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, तथा मूर्ति ये तेरह कन्याएँ इसने प्रजापति को भार्यारूप में दी। स्वाहा अग्नि को, स्वधा अग्निष्वात्तों को तथा सोलहवी सती शंकर को दी गयीं (भा. ४.१)। ब्रह्मदेव के दाहिने अंगूठे से जन्मी हुई स्त्री दक्ष की पत्नी थी। उसे कुल ५०० कन्याएँ हुई (म. आ. ६०.८–१०)।

एकबार सृष्टि निर्माण करनेवाले प्रजापति यज्ञ कर रहे थे। दक्ष प्रजापति वहाँ आया। उस समय शंकर तथा ब्रह्मदेव छोड, अन्य सब देव खडे हो गएँ। इससे यह क्रोधित हुआ, एवं इसने शंकर को शाप दिया। नंदिकेश्वर ने भी इसे शाप दिया। दक्ष के शाप को अनुमति देने के कारण, ऋषियों को शाप मिला, 'जन्ममरणों का दुख अनुभव करते हुएँ तुम्हें गृहस्थी के कष्ट उठाने पडेंगे'। इसी समय भृगु ऋषि ने भी शंकर के शिष्यों को दुर्धर शाप दिये (भा. ४.२; ब्रह्मांड. १.१.६४)। इस प्रकार दक्ष तथा शंकर इन श्वसुर–दामाद में शत्रुत्व बढ़ने लगा।

ब्रह्मदेव ने दक्ष को प्रजापतियों के अध्यक्षपद का अभिषेक किया। उससे गर्वांध हो कर, इसने शंकर आदि सब ब्रह्मनिष्ठों को निमंत्रित न करते हुए, यज्ञ प्रारंभ किया। प्रथम वाजपेय यज्ञ कर, बाद में बृहस्पतिसव प्रारंभ किया। इस यज्ञ में दक्ष ने सारे ब्रह्मर्षि, देवर्षि तथा पितरों का उनकी पत्नीयों के सहित सम्मान किया, एवं उन्हें दक्षिणा दे कर संतुष्ट किया।

दक्ष के घर में हो रहे यज्ञ की वार्ता, दक्षकन्या सती ने सुनी। तब वहाँ चलने की प्रार्थना उसने शंकर से की। किंतु उसने वह प्रार्थना अमान्य की। मजबूरन सती को अकेले ही जाना पड़ा। इसके साथ नंदिकेश्वर, यक्ष, तथा शिवगण भी भेजे गये। यज्ञमंडप में माता तथा भगिनियों के सिवा, अन्य किसी ने सती का स्वागत नहीं किया। स्वयं दक्ष ने उसका अनादर किया। इस कारण सती ने पिता की खूब निर्भर्त्सना की, तथा क्रोधवश वह स्वयं आग में दग्ध हो गयी।

यह वर्तमान सुन कर, शंकर ने वीरभद्र का निर्माण किया, एवं उसे दक्षवध करने की आज्ञा दी। महाभारत के अनुसार, वीरभद्र शंकराज्ञा के अनुसार दक्षयज्ञ में गया। उसने दक्ष से कहा कि, मैं तुम्हारे यज्ञ का नाश करने आया हूँ। तत्काल दक्ष शंकर की शरण में आया (म. शां. परि. १.२८)। फिर भी उसने दक्षवध किया।

दक्षवध के बाद ब्रह्मदेव ने शंकर का स्तवन किया। तब दक्ष को बकरे का सिर लगा कर जीवित किया गया। तत्काल दक्ष ने शंकर से क्षमा माँगी (भा. ४.३–७)। वायुपुराण में दक्ष का अर्थ 'प्राण' दिया है (१०.१८) दक्ष का यज्ञ दो बार हुआ। तथा ऋषि दो बार मारे गये। प्रथम यज्ञ, स्वायंभुव मन्वंतर में हुआ। दूसरा यज्ञ चाक्षुष मन्वंतर में संपन्न हुआ (ब्रह्मांड. २.१३.४५; ६५–७२; सती देखिये)।

दक्ष प्राचेतस प्रजापति--एक ऋषि। प्राचीनवर्हि-पुत्र प्रचेतस् एवं कंडुकन्या मारिषा का यह पुत्र था।

सवर्णा नामक समुद्रकन्या को प्राचीनवर्हि से प्रचेतस् नामक दस पुत्र हुएँ। उनके तप करते समय, पृथ्वी पर अनेक जातियों के वृक्ष बढ़े। अत्यधिक वृक्षवृद्धि के कारण, पृथ्वी जंगलमय हो गई। अनाज का उत्पादन बंद हो गया। इससे क्रुद्ध हो कर वे दस प्रचेतस्, वृक्षों का नाश करने लगे। तब वृक्षों के राजा सोम ने उनसे कहा, 'संपूर्ण पृथ्वी अब वृक्षशून्य हो गई हैं। अब वृक्षों का नाश बंद कीजिये'। पश्चात् कंडु की कन्या मारिषा से प्रचेतस् का विवाह हुआ।

सोम का आधा तेज तथा प्रचेतस् का आधा तेज मिल कर, इसे दक्ष नामक तेजस्वी पुत्र हुआ। यही प्राचेतस दक्ष प्रजापति है (ह. वं. १.२; म. आ. ७०; भा. ४. ३०;६.४; ब्रह्म. २.३४; ३९-४०; विष्णु. १.१४.१५)।

दक्ष ने अपने वीर्य के द्वारा, एवं मन के द्वारा सृष्टि का निर्माण किया। मानससृष्टि से प्रजासृष्टि वृद्धिंगत नहीं हुई। इसलिये विंध्याचल के समीप के अघमर्षणतीर्थ में इसने तपस्या की। इस तपस्या से प्रसन्न हो कर, श्रीहरि ने पंचजन प्रजापति की कन्या असिक्नी (वीरिणी) भार्या रूप में इसे दी, एवं प्रजावृद्धि करने के लिये इसे कहा। उस स्त्री से इसे हर्यश्व नामक दस हजार पुत्र हुएँ। दक्ष ने उन्हें प्रजा निर्माण करने के लिये कहा। परन्तु नारद की सलाह के अनुसार, उन्होंने यह कार्य नहीं किया। बाद में नारद के कहने पर, ब्रह्मदेव ने दक्ष को समझाया। तब इसने पुनः साठ कन्याएँ निर्माण कीं (भा. ६.४-६)।

प्राचेतस दक्ष को इस के समान गुणशील संपन्न एक हजार पुत्र हुएँ। उन्हें नारद ने 'मोक्षशास्त्र' एवं 'सांख्यज्ञान' का उपदेश दे दिया। इस उपदेश से वे विरक्त हो कर, घर से निकल गएँ। तब इसने 'पुत्रिकाधर्म' के अनुसार, दौहित्रों को अपना पुत्र मानने का संकल्प किया, एवं उस कार्य के लिये पचास कन्याएँ उत्पन्न कीं (म. आदि. ७५.६-८)।

उनमें से धर्म को दस, कश्यप को तेरह, चन्द्र को सत्ताईस, भूत, अंगिरस् तथा कृशाश्व, इनको प्रत्येक को दो दो, तथा तार्क्ष्य नामक कश्यप को चार कन्याएँ इसने विवाह में दे दी (भा. ६.४-६)। अन्य स्थान पर दिया है कि, असिक्नी वीरण प्रजापति की कन्या थी, जिससे दक्ष को पाँच हजार पुत्र हुएँ (ब्रह्मांड. ३.२.५)। वीरिणी तथा असिक्नी एक ही है। हरिवंश तथा विष्णु-पुराण में, दक्षकन्याओं का विभाजन कुछ भिन्न है। उन ग्रंथों में, इसकी कन्याओं की संख्या साठ दी गई है। उनमें से धर्म को दस, कश्यप को तेरह, सोम को सत्ताईस, अरिष्टनेमि को चार, भृगुपुत्र को दो, अंगिरस को दो, इसने विवाह में देने का निर्देश है (ह. वं. १.३; विष्णु १.१५)। दक्ष को सुव्रता नामक एक कन्या और थी। उसे दक्ष, ब्रह्म, धर्म, तथा रुद्र नामक चार पुत्र हुएँ। उन चार पुत्रों में से चार मनु उत्पन्न हुएँ, जिनके वर्ण से पुत्रत्व तय होने के कारण, उन्हें सावर्णि कहते हैं (वायु. १००.४२)।

दक्ष के पहले, संकल्प, दर्शन, एवं स्पर्श से संतति निर्माण होती थी। दक्ष के पश्चात् मैथुन से संतति-निर्मिति होने लगी (मत्स्य ५.२)।

सृष्टि-निर्माण का क्रम दक्ष के चरित्र में दिया है। सृष्टि-निर्माणशास्त्र पर यह कथा प्रकाश डालती है।

दक्षपितर--दक्ष प्रजापति के पुत्रों का नामांतर (तै. सं. १.२.३)।

दक्षसावर्णि--दक्ष का पुत्र। यह दक्ष तथा उसी की कन्या सुव्रता से चाक्षुष मन्वंतर में उत्पन्न हुआ। यह नवम मन्वन्तराधिप मनु था।

यह वरुण से उत्पन्न हुआ था (भा. ८.१३.१८)। इसे दत्तपुत्र भी कहा गया है। किंतु 'दत्त' दक्ष का ही अपभ्रंश होगा (मार्कं. ९१; मनु देखिये)। इस मन्वन्तर का अधिपति एवं वैवस्वत मनु का पुत्र करुष माना गया है (दे. भा. १०.१३)। इसे रोहित नामांतर है (ह. वं. १.७.६३; वायु. १००)।

दक्षिणा--रुचि को आकूति से उत्पन्न कन्या। यह यज्ञ को दी गई थी। यज्ञ से इसे तुषित नामक बारह पुत्र हुएँ। यज्ञ इसका भाई ही था। किंतु वह विष्णु का अवतार होने के कारण, उसने लक्ष्मीरूप से अवतीर्ण अपनी दक्षिणा नामक बहन से ही विवाह किया (भा. ४.१)।

एक बार राधा के सामने, दक्षिणा कृष्ण की गोद में बैठ गई। क्रोधित हो कर, राधा ने इसे वहाँ से भगा दिया। बाद में यह लक्ष्मी के शरीर में प्रविष्ट हुई। वहाँ से ब्रह्माजी के पास गई। पश्चात् ब्रह्माजी से इसका विवाह संपन्न हुआ (ब्रह्मवै. २.४२)।

दंड--(सू. इ.) इक्ष्वाकुपुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र। यह जन्मतः मूढ, विद्याहीन तथा उन्मत्त था। यह अति शूर तथा विद्वान था, परंतु इसके घोर नामक दोष के

कारण, इक्ष्वाकु ने इसे दूर का राज्य दिया। किस स्थान का राज्य इसे दें, इसका विचार कर, इक्ष्वाकु ने इसे विंध्याद्रि तथा शैवल पर्वत के बीच का आधिपत्य दिया। इसका राज्य विंध्य, तथा नील पर्वतों के बीच था। इसने विंध्य के दो शिखरों के बीच, मधुमत्त नामक नगरी बसाई (पद्म. सृ. ३४; ३७)। नगर का नाम मधुमंत भी दिया गया है (वा. रा. उ. ७९)। इसने उशनस् शुक्र को पुरोहित बनाया था (वा. रा. उ. ७९.१८)।

यह अनेक वर्षों तक जितेन्द्रिय था। एक बार चैत्र माह में यह भार्गवाश्रम में गया था। तब वहाँ इसने गुरु की ज्येष्ठ कन्या अरजा को, कामातुर हो कर देखा। तब उसने कहा, 'मैं तुम्हारी गुरुभगिनी हूँ। इसलिये मेरे पिता के पास तुम मेरी याचना करो। उनसे संमति मिलने पर पाणिग्रहणविधि से मेरा वरण करो'। इस उन्मत्त ने उसकी एक न सुनी। उस पर बलात्कार कर के, यह स्वनगर भाग गया। इधर ऋषि आश्रम में वापस आया, तब उसने देखा कि, राजा ने बड़ा ही अन्याय किया है। उसने राजा को क्रोध से शाप दिया, 'बल कोशादि सहित तुम एक सप्ताह में नष्ट हो जावोगे। इन्द्र तुम्हारे राज के उपर धूली की वर्षा करेगा'।

इसने अरण्यवासी लोगों को, राज्य छोड़ कर जाने के लिये कहा। अरजा को देहशुद्धि के लिये, वहीं सरोवर समीप १०० वर्षों तक तपस्या करने के लिये कहा। बाद में ऋषि के जाने पर राजा नष्ट हो गया। इन्द्र की आज्ञा से वहाँ १०० योजन (वा. रा. उ. ८१), ४०० योजन (पद्म. सृ. ३७) धूली की वर्षा हो कर वह देश अरण्यप्राय हो गया। तबसे उस प्रदेश को दंडकारण्य नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ८०-८१)। इसे दंडक नामांतर था। राम के द्वारा, 'दंडकारण्य निर्मनुष्य क्यों है?' ऐसा पूछा जाने पर अगस्त्य ने दंडक की उपरिनिर्दिष्ट कथा उसे बताई।

२. सूर्य का एक पार्षद। इसे दंडिन् नामांतर है।

३. (सू. इ.) कुवलाश्व का पुत्र (चन्द्राश्व देखिये)।

४. वृत्र का छोटा भाई 'क्रोधहंता' का अंशावतार (म. आ. ६१.४३)। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था। यह मगधाधिपति विदंड राजा का पुत्र एवं दंडधार का भाई था (म. आ. १७७.११)। पांडवों के राजसूययज्ञकालीन दिग्विजय में भीम ने इसे जीता था। इसने भीम के साथ कर्ण पर गिरिव्रजपुर में आक्रमण किया था (म. स. २७.१५)। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में था। इसका वध अर्जुन ने किया (म. क. १३.१९)।

५. कर्ण के द्वारा मारा गया पांडव पक्षीय राजा (म. क. ४०.५०)।

६. उत्कल के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ। इसीने दंडकारण्य का निर्माण किया (ह. वं. १.१०.२४)।

७. (सो. आयु.) आयु के पाँच पुत्रों में से चौथा (पद्म. सृ. ४२)।

दंड औपर—एक ऋषि। इसने किये एक व्रत का निर्देश आया है (तै. सं. ६.२.९.४; मै. सं. ३.८.७)।

दंडक—एक चोर। इसने केवल पाप किये थे। एक बार यह विष्णु मंदिर में चोरी करने गया था। वहाँ सर्पदंश से इसकी मृत्यु हुई (पद्म. ब्र. २)।

२. इक्ष्वाकु के सौ पुत्रों में से तृतीय (भा. ९.६.३; पद्म. सृ. ८; दंड देखिये)।

दंडकर—एक चोर। चोर होते हुए भी इसने किये विष्णुपंचक व्रत के कारण यह मुक्त हुआ (पद्म. ब्र. २३)।

दंडकेतु—पांडवपक्षीय पांड्य राजा (म. द्रो. २२.५८)।

दंडगौरी—एक अप्सरा।

दंडधार—मगधाधिपति विदंड का पुत्र। इसका भाई दंड। यह क्रोधवर्धन राक्षस का अंशभूत था (म. आ. ६१.४४)। यह कौरवपक्षीय रथी एवं हस्तियुद्ध में अत्यंत प्रवीण था। राजसूययज्ञ के समय, भीम ने इसे जीता था (म. स. २७.१५)। भारतीययुद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. १३.१५)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में भीम ने इसे मारा (म. आ. परि. १. क्र. ४१, पंक्ति २३; क. ६२.२-५)।

३. पांडव पक्षीय एक चैद्य राजा। इसका वध कर्ण ने किया (म. क. ४०.४८-४९)।

४. एक पांचाल। इसका वध कर्ण ने किया (म. क. ४४.२९)।

दंडनायक—रवि के वामभाग में रहनेवाला इन्द्र। इसे ही दंडि नामांतर है। यह दंडनीतिकार होने के कारण, इसे दंड नामक दूसरा नाम प्राप्त हुआ (सांब. १६; पिंगल देखिये)।

दंडपाणि--(सो. कुरु. भविष्य.) मत्स्य तथा भागवत मत में वहीनर पुत्र तथा वायुमत में मेधाविपुत्र (खंडपाणि देखिये)।

२. काशिराज उर्फ पौंड्रक का पुत्र। कृष्ण ने इसके पिता का शिरच्छेद करने पर, इसने पुरोहित के कथनानुसार, महेश्वर नामक यज्ञ किया। शंकर प्रसन्न होने पर, उसके पास इसने कृष्ण के नाश के लिये एक कृत्या माँगी। वह कृत्या जोर से चिल्ला कर द्वारका गई। परंतु कृष्ण के द्वारा सुदर्शन चक्र छोड़ते ही, वह घबरा कर वाराणसी में लौट आई। वहाँ उस चक्र ने उस कृत्या का, इसका तथा सब लोगों का संहार किया एवं इसका नगर जला दिया (पद्म. उ. २७८)।

३. प्रजा देखिये।

दंडभृत्--रामायण कालीन एक वीरपुरुष। राम के अश्वमेध अश्व के रक्षणार्थ, यह शत्रुघ्न के साथ गया था (पद्म. पा. ११)।

दंडश्री--(आंध्र. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्मांडमत में विजय का पुत्र (चंडश्री देखिये)।

दंडिन्--भृगुकुल का गोत्रकार। इसके लिये दर्भि पाठभेद है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र।

दंडीमुंडीश्वर--वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर की सातवी चौखट का शिवावतार। वहाँ इसके क्रमशः निम्नलिखित शिष्य हैं:--छगल, कुंडकर्ण, कुंभांड तथा प्रवाहक (शिव. शत. ५)।

दत्त--सांदीपनि का पुत्र। कृष्ण सांदीपनि का शिष्य था। उस ने गुरुदक्षिणा के रूप में, शंखासुर से इस गुरु पुत्र को मुक्त किया। श्वेतसागर से उसे वापस ला कर सांदीपनि को अर्पण किया।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

३. पुलस्त्य एवं प्रीति का पुत्र। यह पूर्वजन्म में स्वायंभुव मन्वंतर में अगस्त्य था (मार्क. ४९.२४-२६)।

दत्त आत्रेय--एक देवता। विष्णु के अवतारों में से यह एक था। यह अत्रि ऋषि एवं अनसूया का पुत्र था। अत्रि ऋषि के दत्त, सोम, दुर्वासस् ये तीन पुत्र थे (भा. ४.१.१५-३३)। उनमें से दत्त विष्णु का, सोम ब्रह्माजी का, एवं दुर्वासस् रुद्र याने शंकर के अवतारस्वरूप थे। इसे निमि नामक एक पुत्र था (म. अनु. १३८.५ कुं.)।

आजकल के जमाने में, ब्रह्मा-विष्णु-महेशात्मक त्रिमुखी दत्त की उपासना प्रचलित है। इसे तीन मुख, छः हस्त चित्रित किये जाते हैं। दत्तमूर्ति के पीछे एक गाय, एवं इसके आगे चार कुत्ते दिखाई देते हैं। किंतु पुराणों में त्रिमुखी दत्त का निर्देश उपलब्ध नहीं है। उन ग्रंथों में, त्रिमुख में अभिप्रेत तीन देवताओं को तीन अलग व्यक्ति समझ कर, उन्हे दत्त, सोम, एवं दुर्वासस् ये तीन अत्रिपुत्र के नाम दिये गये है। दत्त के आगे-पीछे गाय एवं कुत्ते रहने का निर्देश भी पुराणों में उपलब्ध नहीं है।

महाराष्ट्र में, त्रिमुख दत्त का प्राचीनतम निर्देश सरस्वती गंगाधर विरचित, 'गुरुचरित्र' ग्रंथ में मिलता है। उस ग्रंथ में इसे परब्रह्मस्वरूप मान कर, इसे तीन सिर, छः हस्त, एवं धेनु तथा श्वान के समवेत वर्णन किया है। औदुंबर वृक्ष के समीप इसका निवासस्थान दिखा दिया है। 'गुरुचरित्र' का काल लगभग इ. स. १५५० माना जाती है। महाकवि माघ के शिशुपालवध काव्य में, दत्त को विष्णु का अवतार कहा है (इ. स. ६५०)। दत्त अवतार का यह प्रथम निर्देश है।

अवतारकार्य--दत्त अवतार का मुख्य गुण क्षमा है। वेदों का यज्ञक्रियासहित पुनरुज्जीवन, चातुर्वर्ण्य की पुनर्घटना, तथा अधर्म का नाश यही इसका अवतारकार्य है (ब्रह्म. २१३.१०६-११०; ह. वं. १.४१)।

इसने संन्यासपद्धति का प्रचार किया (शिव. शत. १९.२६) तथा कार्तवीर्य के द्वारा पृथ्वी म्लेंच्छरहित की (विष्णुधर्म. १.२५.१६)।

आत्मज्ञान एवं शिष्यपरंपरा--दत्त ने अपने पिता अत्रि से पूछा, 'मुझे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार होगी?' अत्रि ने इसे गोतमी (गोदावरी) नदी पर जा कर, महेश्वर की आराधना करने को कहा। इस प्रकार आराधना करने से, इसे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ। गोदावरी तीर के उस स्थान को 'ब्रह्मतीर्थ' कहते है (ब्रह्म. ११७)।

यह ब्रह्मनिष्ठ था। इसे धर्म का दर्शन हुआ था (पद्म. भू. १२.५०)। इसके अलर्क, प्रह्लाद, यदु तथा सहस्रार्जुन नामक शिष्य थे। उन्हें इसने ब्रह्मविद्या दी (भा. १. ३.११)। इसने अलर्क को आत्मज्ञान, योग, योगधर्म, योगचर्या, योगसिद्धि तथा निष्कामबुद्धि के संबंध में उपदेश दिया (मार्क. ३५-४०)।

आयु, परशुराम तथा सांकृति भी दत्त के शिष्य थे।

दत्त-आश्रम--गिरिनगर में दत्त का आश्रम (विष्णुपद) था। पश्चिम घाट में मल्लीकीग्राम (माहूर) में दत्त

का आश्रम था। उस स्थान पर परशुराम ने जमदग्नि को अग्नि दी, एवं रेणुका सती गई। इसलिए वहाँ मातृतीर्थ निर्माण हुआ (रेणुका. ३७)।

आयु को पुत्रदान—ऐलपुत्र आयु को पुत्र नहीं था। पुत्र प्राप्ति के लिये वह दत्त के पास आया। दत्त स्त्रियों के साथ क्रीडा कर रहा था। मदिरापान के कारण इसकी आँखे लाल थीं। इसकी जंघा पर एक स्त्री बैठी थी। गले में यज्ञोपवीत नहीं था। गाना तथा नृत्य चालू था। गले में माला थी। शरीर को चंदनादि का लेप लगा हुआ था। आयु ने वंदना करके पुत्र की माँग की। दत्त ने अपनी बेहोष अवस्था उसे बता दी। इसने कहा, 'वर देने की शक्ति मुझमें नही है'। आयु ने कहा, 'आप विष्णु के अवतार है'। अन्त में दत्तात्रेय ने कहा, 'कपाल' (मिट्टी के भिक्षापात्र) में मुझे माँस एवं मदिरा प्रदान करो। उसमेंसे माँस खुद के हाथों से तोड कर मुझे दो'। इस प्रकार उपायन देने पर इसने प्रसन्न हो कर, आयु को प्रसादरूप में एक श्रीफल दिया, एवं वर बोले, 'विष्णु का अंश धारण करनेवाला पुत्र तुम्हें प्राप्त होगा'। इस वर के अनुसार आयु को नहुष नामक पुत्र हुआ। पश्चात् नहुष ने हुंड नामक असुर का वध किया (मार्क. १६; ३७; पद्म. भू. १०३–१०४)।

सहस्रार्जुन को वरप्रदान—दत्तचरित्र से संबंधित इसी ढंग की और एक कथा महाभारत में दी गयी है। गर्गमुनि के कहने पर कार्तवीर्यार्जुन राजा दत्त आत्रेय के आश्रम में आया। एकनिष्ठ सेवा कर के उसने इसे प्रसन्न किया। तब दत्त ने अपने वर्तन के बारे में कहा, 'मद्यादि से मेरा आचरण निंद्य बन चुका है। स्त्री भी मेरे पास हमेशा रहती है। इन भोंगो के कारण मैं निंद्य हूँ। तुम पर अनुग्रह करने के लिये मैं सर्वथा असमर्थ हूँ। किसी अन्य समर्थ पुरुष की तुम आराधना करो'। परंतु अन्त में कार्तवीर्यार्जुन की निष्ठा देख कर, इसने विवश हो कर उसे वर माँगने के लिए कहा। कार्तवीर्य ने इससे चार वर माँगे, जो इस प्रकार थेः—१. सहस्रबाहुत्त्व, २. सार्वभौमपद, ३. अधर्मनिवृत्ति, ४. युद्धमृत्यु।

दत्त आत्रेय ने वरों के साथ कार्तवीर्य को सुवर्ण विमान (म. व. परि. १.१५.६) तथा ब्रह्मविद्या का उपदेश भी दिया (मा. १.३.११)। कार्तवीर्य ने भी अपनी सर्व संपत्ति दत्त को अर्पण की (म. अनु. १५२–१५३)। कार्तवीर्य की राजधानी नर्मदा नदी के किनारे स्थित माहिष्मती नगरी थी।

दत्तजन्मकाल—दत्तजन्मकाल मार्गशीर्ष सुदी चतुर्दशी को दोपहर में वा रात्रि में माना जाता है। दत्तजयन्ति का समारोह भी उसी वक्त मनाया जाता है। कई स्थानों में, मार्गशीर्ष सुदी पौर्णिमा के दिन सुबह, शाम, या मध्यरात्रि के बारह बजे दत्तजन्म मनाया जाता है।

दत्तप्रणीत ग्रंथ—अवधूतोपनिषद्, जाबालोपनिषद्, अवधूतगीता, त्रिपुरोपास्तिपद्धति, परशुरामकल्पसूत्र (दत्ततंत्रविज्ञानसार), ये ग्रंथ दत्त ने स्वयं लिखे थे।

दत्तमतप्रतिपादक ग्रंथ—अवधूतोपनिषद्, जाबालोपनिषद्, दत्तात्रेयोपनिषद्, भिक्षुकोपनिषद्, शांडिल्योपनिषद्, दत्तात्रेयतंत्र आदि ग्रंथ दत्तसांप्रदाय के प्रमुख ग्रंथ माने जाते हैं।

दत्तसंप्रदाय—तांत्रिक, नाथ, एवं महानुभाव संप्रदायों में दत्त को उपास्य दैवत माना जाता है। श्रीपाद श्रीवल्लभ (पीठापुर, आंध्र), श्रीनरसिंहसरस्वती (महाराष्ट्र), आदि दत्तोपासक स्वयं दत्तावतार थे, ऐसी उनके भक्तों की श्रद्धा है। प. प. वासुदेवानंदसरस्वती (टेंबेस्वामी) आधुनिक सत्पुरुष थे (इ. स. १८५४-१९१४)। वे दत्त के परमभक्त, एवं मराठी तथा संस्कृत भाषाओं में दत्तविषयक विपुल साहित्य के निर्माता थे। पदयात्रा कर के, एवं भारत के सारे विभागों में दत्तमंदिरादि निर्माण कर के, उन्होंने दत्तभक्ति तथा दत्तसंप्रदाय का प्रचार किया।

दत्त तापस—एक ऋषि। सर्पसत्र में इसने होतृ नामक ऋत्विज का काम किया था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

दत्तामित्र—एक यवननृप (विपुल ३. देखिये)।

दत्तोलि—पुलस्त्य को प्रीति नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र (अग्नि. २०.१३; मार्क. २२.२३)।

दधिक्रावन्—मरीचिगर्भ नामक देवों में से एक। ऋग्वेद में इस देवता पर एक सूक्त उपलब्ध है। उस सूक्त में 'दधिक्रावन्' शब्द 'अश्व' अर्थ में लिया गया है (ऋ. ४.४०)।

दधिमुख—कश्यप तथा कद्रू का पुत्र।

२. रामसेना का एक वानर। यह सोमपुत्र था, तथा स्वभाव से भी सौम्य था (वा. रा. यु. ३०)। अपनी प्रचंड सेना के साथ, यह राम से आ मिला। किंतु रामरावणयुद्ध के समय यह वृद्ध था (म. व. २६७.७)। राम के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा करने के लिये, शत्रुघ्न के साथ यह गया था (पद्म. सृ. ११)।

दधिवाहन—वाराह कल्प के वैवस्वत मन्वन्तर में से अष्टम चौकट का शिवावतार। यह वसिष्ठ एवं व्यास की

सहायतार्थ प्रपन्न हुआ था। इसे कुल चार पुत्र थे। उनके नामः–कपिल, आसुरि, पंचशिख, तथा शाल्वल। ये सारे पुत्र योगी थे (शिव. शत. ४; मोगेश्वर देखिये)।

२. (सो. अनु.) मत्स्य तथा वायु के मत में अंगपुत्र (खनपान देखिये)। यह दिविरथ का पिता था। अंगपुत्र इसीका ही नामांतर था (म. शां. ४९.७२)।

दध्यञ्च् आथर्वण—एक महान् ऋषि एवं तत्त्ववेत्ता। इसे दधीचि, एवं दधीच ये नामांतर थे। देवअसुर युद्ध में, इसने अपनी हड्डियाँ, वज्र नामक अस्त्र बनाने के लिये, देवों को प्रदान की थीं। इस अपूर्व त्याग के कारण, इसका नाम 'त्यागमूर्ति' के नाते प्राचीन भारतीय इतिहास में अमर हुआ।

यह अथर्वकुलोत्पन्न था। कई जगह, इसे अथर्वन् का पुत्र भी कहा गया है। इस कारण, इसे 'आथर्वण' पैतृक नाम प्राप्त हुआ। इसे 'आंगिरस' भी कहा गया है (तां. ब्रा. १२.८.६; गो. ब्रा. १.५.२१)। अथर्वन् एवं अंगिरस् लोग पहले अलग थे, किंतु बाद में वे एक हो गये। इस कारण इसे 'आंगिरस' नाम मिला होगा।

ब्रह्माण्ड के मत में, यह वैवस्वत मन्वंतर में पैदा हुआ था। च्यवन एवं सुकन्या का यह पुत्र था (ब्रह्माण्ड. ३.१. ७४)। किंतु भागवतमत में, यह स्वायंभुव मन्वंतर में पैदा हो कर, इसकी माता का नाम चिति वा शांति था (४.१.४२)।

इसके पत्नी का नाम सुवर्चा था (शिव. शत. २४; स्कन्द. १. १. १८)। कई जगह, इसके पत्नी का नाम गभस्तिनी वड़वा दिया गया है। वह लोपामुद्रा की बहन थी। कुलनाम के जरिये, उसे 'प्रातिथेयी' भी कहते थे (ब्रह्म. ११०)।

इसे सारस्वत एवं पिप्पलाद नामक दो पुत्र थे। उसमें से सारस्वत की जन्मकथा महाभारत में दी गयी है (म. श. ५०)। एक बार अलंबुषा नामक अप्सरा को, इंद्र ने दधीचि ऋषि के पास भेज दिया। उसे देखने से दधीचि का रेत सरस्वती नदी में पतित हुआ। उस रेत को सरस्वती नदी ने धारण किया। उसके द्वारा सरस्वती को हुए पुत्र का नाम 'सारस्वत' रखा दिया गया। इसने प्रसन्न हो कर सरस्वती नदी को वर दिया, 'तुम्हारे उदक का तर्पण करने से देव, गंधर्व, पितर आदि संतुष्ट होंगे'।

इसका दूसरा पुत्र पिप्पलाद। यह सुभद्रा नामक दासी से उत्पन्न हुआ। एक बार, इसने पहन कर छोडी हुई धोती, इसकी दासी सुभद्रा ने परिधान की। स्नान के समय वस्त्र से चिपके हुए इसके शुक्रबिंदुओं से, सुभद्रा गर्भवती हुई। इसकी मृत्यु के पश्चात्, उस गर्भ को सुभद्रा ने अपने उदर फाड कर बाहर निकाला, एवं उसे पीपल वृक्ष के नीचे रख दिया। इस कारण, उस गर्भ से उत्पन्न पुत्र का नाम 'पिप्पलाद' रख दिया गया। उसे वैसे ही छोड़ कर, सुभद्रा दधीचि ऋषि के साथ स्वर्गलोक चली गयी (ब्रह्म. ११०; स्कन्द. १.१.१७)।

दधीचि ऋषि का मुख अश्व के समान था। इसे अश्वमुख कैसा प्राप्त हुआ, वह कथा इस प्रकार है। इंद्र ने इसको 'प्रवर्ग्यविद्या' एवं 'मधुविद्या' नामक दो विद्याएँ सिखाई थीं। ये विद्याएँ प्रदान करते वक्त इंद्र ने इसे यों कहा था, 'ये विद्याएँ तुम किसी और को सिखाओंगे, तो तुम्हारा मस्तक काट दिया जायेगा'।

पश्चात् अश्वियों को ये विद्याएँ सीखने की इच्छा हुई। ये विद्याएँ प्राप्त करने के लिये, उन्होंनें दधीचि का मस्तक काट कर वहाँ अश्वमुख लगाया। इसी अश्वमुख से उन्होंने दोनों विद्याएँ प्राप्त की। इंद्र ने अपने प्रतिज्ञा के अनुसार इसका मस्तक तोड़ दिया। अश्वियों ने इसका असली मस्तक उस धड पर जोड़ दिया (ऋ. १. ११६. १३)। इन्द्र उस अश्व का सिर ढूँढता रहा। उसे वह 'शर्यणावत्' सरोवर में प्राप्त हुआ (ऋ. १. ८४. १३)।

सायणाचार्य ने शाट्यायन ब्राह्मण के अनुसार दधीचि की ब्रह्मविद्या की कथा दी है। यह जीवित था तब इसकी ब्रह्मविद्या के कारण, इसे देखते ही असुरों का पराभव होता था। मृत्यु के बाद असुरों की संख्या क्रमशः बढ़ने लगी। इंद्र ने इसे ढूँढा। उसे पता चला कि, यह मृत हुआ। इसके अवशिष्ट अंगों को ढूँढने पर, अश्वियों को मधुविद्या बतानेवाला अश्वमुख, शर्यणावत् सरोवर पर प्राप्त हुआ। इसकी सहायता से इंद्र ने असुरों का पराभव किया (ऋ. १.११६.१३; सायणभाष्य देखिये)। ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद ग्रंथ, पुराण आदि में ब्रह्मविद्या के महत्त्व की यह कथा दी गयी है (श. ब्रा. ४.१.५.१८; ६.४.२.३; १४.१.१.१८; २०.२५; बृ. उ. २.५.१६.१७; ६३; मा. ६.९.५१–५५ दे. भा. ७.३६)।

मधुविद्या—इसका तत्त्वज्ञान 'मधुविद्या' नाम से प्रसिद्ध है। इस विद्या का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैः–' मधु का अर्थ मूलतत्त्व।-संसार का मूलतत्त्व पृथ्वी, पृथ्वी का अग्नि,

इस क्रम से वायु, सूर्य, आकाश, चंद्र, विद्युत्, सत्य, आत्मा तथा ब्रह्म की खोज हर एक तत्त्वज्ञ को करनी पडती है। मूल तत्त्व पता लगाने से, आत्मतत्त्व का संसार से घनिष्ठ तथा नित्य संबंध ज्ञात होता है। संसार तथा आत्मतत्त्व ये एक दूसरों से अभिन्न है। चक्र के जैसे आरा, उसी प्रकार आत्मतत्त्व का संसार से संबंध हैं। संसार का मूल तत्त्व ब्रह्म है। ब्रह्म तथा संसार की प्रत्येक वस्तु परस्परों से अभिन्न है'।

ऋग्वेद की ऋचाओं में इसके द्वारा प्रतिपादित मधुविद्या, बृहदारण्यकोपनिषद' में उन मंत्रों की व्याख्या कर के अधिक स्पष्ट की गयी है।

इस विद्या के महत्त्व के कारण ही, दधीच का नाम एक तत्त्वज्ञ के रूप में वेदों में आया है (तै. सं. ५.१.४. ४; श. ब्रा. ४.१.५.१८; ६.४.२.३; १४.१.१.१-८;२६; तां. ब्रा. १२.८.६; गो. ब्रा. १.५.२१; बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८)।

अस्थिप्रदान—वृत्र के कारण देवताएँ त्रस्त हुई। देवताओं ने वृत्रवध का उपाय विष्णु से पूछा। उसने कहा, 'दधीच की हड्डियों से ही वृत्र का वध होगा। उन हड्डियों के त्वष्टा से वज्र बना लो। हड्डियाँ माँगने को अश्वियों को भेजो'। हड्डियों के प्राप्त्यर्थ इस पर हथियार चलाने को त्वष्टा डरता था। किंतु आखिर वह राजी हुआ। उसने इसके शरीर पर नमक का लेप दिया। पश्चात् गाय के द्वारा नमक के साथ ही इसका मांस भी भक्षण करवाया। पश्चात् इसकी हड्डियाँ निकाली गयी। त्वष्टा ने उन हड्डियों से षट्कोनी वज्र तथा अन्य हथियार बनाये।

दधीचि के अस्थिप्रदान के बारे में, पुराणों में निम्नलिखित उल्लेख प्राप्त है। देवासुर संग्राम के समय, देवों ने इसके यहाँ अपने हथियार रखे थे। पर्याप्त समय के पश्चात् भी, उसे वापस न ले जाने से, दधीच ने उन हथियारों का तेज, पानी में घोल कर पी लिया। बाद में देवताएँ आ कर हथियार माँगने लगे। इसने सत्यस्थिति उन्हें कथन की, एवं उन हथियारों के बदले अपनी हड्डियाँ लेने की प्रार्थना देवों से की। देव उसे राजी होने पर, योगबल से इसने देहत्याग किया (म. व. ८८.२१; श. ५०.२९; भा. ६.९.१०; स्कन्द. १.१.१७; ७.१.३४; ब्रह्म. ११०; पद्म. उ. १५५; शिव. शत. २४)।

इसका आश्रम सरस्वती के किनारे था (म. व. ९८. १३)। गंगाकिनारे इसका आश्रम था (ब्रह्म. ११०.८)। इसे 'अश्वशिर' नामक विद्या तथा 'नारायण नामक' वर्म विदित था। नारायण वर्म (कवच) का निर्देश भागवत में मिलता है (भा. ६.८)। दधीच-तीर्थ कुरुक्षेत्र में प्रख्यात है (म. व. ८१.१६३)।

मत्स्य तथा वायुमत में यह भार्गव गोत्र का मंत्रकार था। कई ग्रंथों में इसका ऋचीक नामांतर भी प्राप्त है (ब्रह्मांड २.३२.१०४)।

'ब्राह्मण एवं क्षत्रियों में श्रेष्ठ कौन', इस विषय पर क्षुप एवं दधीच ऋषि में बहुत बड़ा विवाद हुआ था। उस वाद में, प्रारंभतः दधीच का पराभव हुआ। किंतु अंत में यह जीत गया, एवं इसने ब्राह्मणों का श्रेष्ठत्त्व प्रस्थापित किया (लिंग. १.३६)। इसी विषय पर क्षुवथु के साथ भी इसका विवाद हुआ था। उस चर्चा में अपना विजय हो, इसलिये क्षुवथु ने विष्णु की आराधना की। पश्चात् विष्णु ब्राह्मणरूप में दधीच के पास आया। विष्णु एवं दधीच का युद्ध हुआ। पश्चात् इसने विष्णु को शाप दिया, 'देवकुल के सारे देव रुद्रताप से भस्मसात हो जायेंगे'।

दनायु--प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या तथा कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)।

दनु--प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या तथा कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)। इससे दानव उत्पन्न हुएँ। दानव एक जाति का नाम हैं। केशिन्, नमुचि, नरक, शंबर आदि दानव सुविख्यात थे। इसके पुत्र का नाम वृत्र था (श. ब्रा. १.५.२.९)।

दनुपुत्र--एक ऋषि। ऋग्वेद की कुछ ऋचाओं का यह द्रष्टा हैं (ऋ. ३.६.१-१४, कश्यप देखिये)।

दंतक्रूर—एक क्षत्रिय। इसे परशुराम ने मारा (म. द्रो. परि. १ क्र. ८. पंक्ति. ८३७)।

दंतवक्र--करुष-देश का राजा। यह वृद्धशर्मन् तथा श्रुतदेवी का पुत्र था। कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. शां. ४.६)। द्रौपदी स्वयंवर में, लक्ष्यवेध का असफल प्रयत्न इसने किया था। वहाँ इसका वक्र नाम से निर्देश है (म. आ. १८२४*)। पांडवों के राजसूययज्ञ के समय, दक्षिण दिग्विजय में सहदेव ने इसे जीता था (म. स. २८.३. भा. ९.२४.३७)। भारतीययुद्ध में इसे पांडवों की ओर से रण-निमंत्रण दिया गया था (म. उ. ४.२२)। शिशुपाल, शाल्व, सौभ, विदूरथ के बाद, कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.७८.१३; जयविजय देखिये)।

दंतिल--मतंग ऋषि का पुत्र। इसका भाई कोहल।

दंदशूक—क्रोधवशा से उत्पन्न सर्पों में से प्रमुख।

दभीति--इंद्र का एक कृपापात्र गृहस्थ। इंद्र ने इसके लिये चुमुरि तथा धुनि का वध किया (ऋ. २.१५.९; ६.२६.६; ७.१९.४; १०.११३.९)। इसके लिये इंद्र ने तीस हजार दासों का वध किया (ऋ. ४.३०.२१)। दस्युओं का भी वध किया (ऋ. २.१३.९)। अश्वियों ने तुर्वीति सह इस पर कृपा की (ऋ. १.११२.२३)। यह भी इंद्र की आराधना करता था (ऋ. ६.२०.१३)।

दम--(सू. दिष्ट.) भागवतमतानुसार मरुत्त का पुत्र। विष्णु, वायु एवं मार्कंडेय के मत में नरिष्यन्त का पुत्र। इस की माता का नाम इंद्रसेना बाभ्रवी। माता के उदर में इसका गर्भ नौ वर्षों तक रहा था।

इस ने दैत्यराज वृषपर्वन् से धनुर्वेद, दैत्यश्रेष्ठ दुंदुभि से अस्त्रसमुदाय, शक्ति से साङ्गवेद, तथा राजर्षि आर्ष्टिषेण से योगशास्त्र सीखे थे।

दशार्णाधिपति चारुवर्मन् की कन्या सुमना ने इसका स्वयंवर में वरण किया था।

इसका पिता नरिष्यन्त वानप्रस्थाश्रम में गया था। मुनिअवस्था में तपस्या कर रहे नरिष्यन्त का वपुष्मत् ने वध किया। इसलिये इसने वपुष्मत् का वध किया (मार्कं. १३०.१३२; वपुष्मत् ३. देखिये)।

२. (सो. क्रोष्टु.) विदर्भ का पुत्र एवं दमयंती का भ्राता।

३. अंगिराकुल का एक ऋषि। सुदमोदम एवं मोदम इसीका ही पाठभेद है।

४. आभूतरजस् देवों में से एक।

५. सुधामन् देवों में से एक।

६. विकुंठ देवों में से एक।

दमघोष--चेदि देश का राजा। इसकी पत्नी श्रुतश्रवा, कृष्ण की बुआ थी। इसका पुत्र शिशुपाल (म. व. १५.३; प्रत्यग्रह देखिये)।

दमन--एक ऋषि। इसके प्रसाद से भीम राजा को दम आदि चार संतान हुई (म. व. ५०.६)।

२. दमयंती का भाई (म. व. ५०.९)।

३. कौरवों के पक्ष का क्षत्रिय। यह पौरव का पुत्र था (म. भी. ५७.२०)।

४. (सो. वसु.) मत्स्य तथा वायुमत में वसुदेव का पौरवी से उत्पन्न पुत्र।

५. एक देव। यह अंगिरा तथा सुरूपा का पुत्र था।

६. एक शिवावतार। यह वराह कल्प के वैवस्वत मन्वंतर की तीसरी चौकट के कलि में पुरांतिक में पैदा हुआ था। इसके चार शिष्य थे। उनके नामः-विशोक, विशेष, विपाप तथा पापनाशन। उस समय भार्गव नामक पुरुष व्यास था। उसकी सहायता इसने चार शिष्यों द्वारा की। यह निवृत्तिमार्ग का उपदेशक था (शिव. शत. ४)।

७. भारद्वाज का पुत्र। यज्ञोपवीत के बाद यह यात्रा करने निकला। राह में अमरकंटक के समीप इसकी गर्ग मुनि से भेंट हुई। उससे इसने काशीमाहात्म्य सुना एवं वहाँ तपस्या कर, यह मुक्त हुआ (स्कंद. ४.२.७४)।

८. एक राक्षस। इसीने भृगु ऋषि की स्त्री का हरण किया। यह तथा पुलोमन् एक ही व्यक्ति रहे होंगे (पद्म. पा. १४; अग्नि देखिये)।

दमनक--एक दैत्य। यह समुद्र में रहता था। मत्स्यावतार में, भगवान् विष्णु ने चैत्र शुक्ल चतुर्दशी के दिन इसका वध किया। इसका कलेवर धरती पर फेंक दिया। भगवान् के स्पर्श के कारण, यह सुगंधी तृण के रूप में पृथ्वी पर रह गया। यह तृण 'दौना' नाम से आज प्रसिद्ध है (स्कन्द. २.२.३९)।

दमयन्ती--विदर्भदेशाधिपति भीम राजा की कन्या तथा निषधदेश के राजा नल की पत्नी। भीम राजा की कन्या होने से इसका पैतृक नाम भैमी था। एक उपाख्यान के रूप में, नल-दमयंती की कथा महाभारत में दी गई है। विदर्भदेश के राजा भीम को संतति नहीं थी। एक बार अपने घर आये, दमन ऋषि का उसने स्वागत किया। इस ऋषि के आशीर्वाद से भीम राजा को दम, दांत, दमन आदि तीन पुत्र, एवं दमयन्ती नामक कन्या हुई (म. व. ५०.९)।

अपने अद्वितीय सौंदर्य से, इसने सब सुंदर स्त्रियों का गर्व हरण किया था। इसलिये इसे दमयन्ती नाम मिला। एक सुवर्ण हंस द्वारा इसने नल राजा के गुण सुने। उसीके द्वारा इसने अपना प्रेम नलराज को विदित किया। इसके स्वयंवर के समय देश देश के राजा एवं इंद्र, अग्नि, वरुण, आदि देव भी उपस्थित थे। उन सब का त्याग कर इसने निषधाधिपति नल का ही वरण किया। उससे इसे इंद्रसेना तथा इंद्रसेन नामक अपत्य हुएँ। राज्यसौख्य का उपभोग इन दोनों को, अधिक वर्षों तक नहीं मिला। द्यूत में नल अपना सब ऐश्वर्य तथा राज्य गँवा बैठा। नल-दमयन्ती को एक ही वस्त्र से वन में जाना पड़ा।

वन में नल एवं दमयंती पर अनेक संकट आये। इन संकटों से त्रस्त हो कर, दमयंती को सुप्तावस्था में अकेली

छोड़ कर नल चला गया। बाद में अयोध्या के ऋतुपर्ण राजा के यहाँ, बाहुक नाम से वह सारथ्यकर्म करने लगा।

बाद में इसे एक अजगर निगलने लगा। उस समय एक भील ने इसको बचाया। परन्तु उसके मन में दमयंती के लिये, पापवासना जाग्रत हुई। इस कारण, इसने अपने पातिव्रत्य सामर्थ्य से उसे दग्ध किया। तदनन्तर सार्थवाहों के काफिले के साथ, यह चेदिपुर आई, तथा सैरंध्री नाम धारण करने लगी। इसके पिता द्वारा इसकी खोज के लिये भेजे गये एक दूत ने इसे ढूँढ निकाला। पश्चात् यह अपने मायके में जा कर रहने लगी। नल का पता लगाने के हेतु, इसने अपना दूसरा स्वयंवर जाहीर किया। उस स्वयंवर में नल उपस्थित हुआ। नल तथा दमयंती का पुनर्मीलन हुआ। बाद में नल ने पुष्कर से अपना राज्य पुनः जीता। इससे इन दोनों का जीवन सुख से व्यतीत हुआ (म. व. ५४-७८; नल देखिये)।

दमयंती ने अपने दूसरे स्वयंवर का केवल नाटक रचाया था। इस स्वयंवर के लिये बाहुक (नल) एवं ऋतुपर्ण के सिवा और किसी को नहीं बुलाया था। इसके पिता भीम को भी इस स्वयंवर का पता नही था। बाहुक, नल ही है या नही, इसकी जाँच लेने के लिये, स्वयंवर का नाटक इसने रचाया था।

२. शैब्यपुत्र संजय की कन्या। एक बार, नारद तथा पर्वत ऋषि, बरसात शुरू होने कारण चार माहों तक, संजय राजा के घर में रहने के लिये आये। उनकी योग्य व्यवस्था कर, राजा ने दमयंती को उनकी सेवा के लिये नियुक्त किया।

बाद में नारद के प्रति इसके मन में प्रीति उत्पन्न हो गयी। पर्वत की अपेक्षा, नारद के आदरातिथ्य की ओर, यह जादा ध्यान देने लगी। पर्वत को संशय आ कर उसने नारद से पूछा। नारद ने कबूल किया कि, 'वह दमयंती से प्रेम करता है'। यह देख कर पर्वत ने क्रोधित हो कर नारद को शाप दिया, 'तुम वानरमुख बनोगे'। नारद ने भी पर्वत को शाप दिया, 'तुम स्वर्ग में न जा सकोगे'।

शाप के कारण, नारद वानर के समान दिखने लगा। तथापि दमयंती ने उसकी सेवा में कमी न की। संजय दमयंती के लिये वरसंशोधन कर रहा था। अपनी माता के द्वारा दमयंती ने पिता को सूचित किया कि, 'मैं नारद से प्रेम करती हूँ'। वानरमुख एवं भिक्षुक नारद को, अपनी कन्या देना राजा को योग्य न लगा। दमयंती की माता को भी जामात के नाते नारद पसंद नहीं था। तदनुसार उसने इसे समझाने का बहुत प्रयत्न किया। परंतु इसने कहा, 'मूर्ख राजपुत्र से शादी करने के बजाय, गायनविद्या जाननेवाले, गुणग्राही तथा मधुर संभाषण करनेवाले नारद का वरण ही श्रेयस्कर है।

अन्त में दमयंती के कथनानुसार, इसका विवाह संजय ने नारद से कर दिया। कालांतर में पर्वत मुनि ने अपना दिया हुआ शाप वापस लिया, तथा नारद पूर्ववत् दिखने लगा। दमयंती ने भी आनंद से यह वृत्तांत अपने मातापिता को बता दिया (दे. भा. ६. २६-२७; म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. २७४ से आगे; श्रीमती देखिये)।

दमवाह्य—अंगिरस् गोत्र का प्रवर। चमदाह्य इसका पाठभेद है।

दंभ—विप्रचित्ति दानव का पुत्र।

२. (सो. पुरूरवस्.) मत्स्य मतानुसार आयु का पुत्र।

दंभोद्भव—एक राजा। यह अपने ऐश्वर्य से मत्त हो कर, हमेशा ब्राह्मणों से पूछता था, 'मुझे से बढ़ कर श्रेष्ठ इस पृथ्वी पर कौन है'। ब्राह्मणों ने, इसका प्रश्न सुन कर, इसकी मज़ाक उडायी। फिर भी यह आदत से बाज न आया। तब ब्राह्मणों ने श्रेष्ठ नर-नारायण का नाम इसे बताया। यह सेनासहित नर-नारायण के आश्रम में गया। नरनारायण ने इसका पराभव किया, तथा इसका गर्व दूर किया। कृष्णदौत्य के समय परशुराम ने दंभोद्भव की यह कहानी बतायी है (म. उ. ९४; वि. ५१.९१७*; पंक्ति ३१*)। 'कौटिल्य के अर्थशास्त्र' में भी इसकी मदोन्मत्तता तथा नरनारायण के साथ युद्ध का निर्देश है। वहाँ डम्भोद्भव पाठ है (कौटिल्य. पृ. २८)।

दंभोलि—दृढास्य का पुत्र। यह अगस्त्यकुलोत्पन्न था। परंतु इसके पिता दृढास्य को पुलहने अपना पुत्र माना। इसलिये यह पौलह बना (विष्णु. १.१०.९)।

दया—कश्यप प्रजापति की स्त्री, एवं दक्ष प्रजाप्रति की कन्या (स्कंद. १.२.१४)। यह धर्म की पत्नी थी, यों कई स्थानों पर उल्लेख है। इसे अभय नामक पुत्र था (भा. ४.१.५०)।

दरद—दुर्योधन के पक्ष का एक बाह्लिक राजा (म. आ. ६१.५५८*; पंक्ति. ६)।

दरिद्योत--(सो. कुकुर.) भागवत मतानुसार दुंदुभि का पुत्र। विष्णु तथा वायु में, इसे अभिजित् कहा गया है।

दरीमुख--राम का सेनापति।

दर्प--(स्वा.) धर्म का उन्नति से उत्पन्न पुत्र।

दर्पणासि--कारुष राजा का पुत्र। इसने अपनी माता की आज्ञा के अनुसार, अपने पिता राजा कारुष का वध किया (भवि. ब्राह्म.८)।

दर्भक--(शिशु. भविष्य.) भागवत, विष्णु तथा ब्रह्मांड मतानुसार अजातशत्रु का पुत्र। वायु मतानुसार इसे दर्शक तथा मत्स्य मतानुसार वंशक कहा गया है।

दर्भवाह--अगस्त्यकुलोत्पन्न एक ऋषि।

दर्भि--एक ऋषि। इसने सातों समुद्रों से कहा था, 'तुम सारे एक तीर्थ उत्पन्न करो'। उन्होंने 'अर्धकील' नामक एक पापनाशक तीर्थ उत्पन्न किया (म. व. ८१. १३३-१३६)।

२. दण्डिन् देखिये।

दर्वा--उशीनर की पत्नी।

दार्विन्--(सो. उशी.) विष्णुमतानुसार उशीनर का पुत्र।

दर्श--कृष्ण का कालिंदी से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१.१४)।

२. धाता नामक आदित्य एवं सिनीवाली का पुत्र (भा. ६.१८.३)।

दर्शक--(शिशु. भविष्य.) वायुमत में बिंबिसारपुत्र।

दर्शनीय--मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

दल--(सू. इ.) राजा परीक्षित् का मंडूककन्या शोभना से उत्पन्न पुत्र (म. व. १९०.४३; शल देखिये)।

विष्णु एवं वायु मतानुसार, यह राजा पारियात्र का पुत्र था। भागवत में बल नाम उपलब्ध है। वंश तथा पुत्रसाम्य के कारण, परीक्षित् तथा पारियात्र ये दोनों व्यक्ति शायद एक ही प्रतीत होते है।

२. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

दलेशु--बलेक्षु देखिये।

दवशद--गौतम नामक शिवावतार का पुत्र।

दशग्व--एक आंगिरस कुल। नवग्व के साथ अनेक स्थानों पर इसका उल्लेख मिलता है (ऋ. १.६२.४; ३. ३९.५)। इंद्र ने इसका संरक्षण किया, ऐसा एक स्थान पर स्पष्ट उल्लेख है (ऋ. ८.१२.२)। आंगिरस का यह एक कुल रहा होगा।

दशज्योति--सुभ्राज् का पुत्र (म. आ. १.४२)।

दशद्यु--एक राजा। इसका तुग्र से युद्ध हुआ था। इस युद्ध में इंद्र ने दोनों का ही संरक्षण किया (ऋ. १. ३३.१४; ६.२६.४)।

दशामी--ब्रह्मदेव की मानसकन्या।

दशरथ--(सू. इ.) सूर्यवंश का एक विख्यात राजा। 'वाल्मीकिरामायण' का नायक एवं भारत की एक प्रातःस्मरणीय विभूति रामचंद्र का यह पिता था। इसीके नाम से राम, 'दाशरथि राम' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

यह अज राजा का पुत्र था। यह अतिरथी, यज्ञयाग करने वाला, धर्मनिष्ठ, मनोनिग्रही तथा जितेन्द्रिय था (वा. रा. बा. ६. २-४)। इसके पूर्वपुरुष अज-दीर्घ-बाहु-प्रजापाल इस रूप में भी प्राप्त है (पद्म. सृ. ८. १५३)। यह अयोध्या का राजा था (पद्म. पा. ७)। अतिविषयासक्त होने के कारण, इसके वृद्धावस्था के सारे दिन अनर्थकारी सावित हुएँ, एवं पुत्रशोक से इसे मरना पड़ा।

कौसल्या, सुमित्रा तथा कैकेयी नामक दशरथ की तीन पत्नियाँ प्रसिद्ध हैं। दशरथ को कौसल्या, सुमित्रा, सुरुपा तथा सुवेषा नामक चार पत्नियाँ थीं, ऐसा भी कहा गया है (पद्म. पा. ११६)। किंतु वास्तव में इसे तीन सौ पचास विवाहित स्त्रियाँ थीं। इतनी पत्नियों के पति होनेवाले पुरुष की गृहस्थिती जैसी रहनी चाहिये, वैसी ही इसकी थी। 'वाल्मीकिरामायण' में प्राप्त सीता के उद्गारों से इसकी पुरी जानकारी मिलती है। सीता अनसूया से कहती है, 'राम जिस प्रकार का व्यवहार अपनी माता कौसल्या से करता है, उसी प्रकार का व्यवहार अन्य राज-स्त्रियों से भी करता है। किंतु दशरथ हरएक स्त्री के तरफ उपभोग्य दृष्टि से देखता है। ऐसी स्त्रियों से भी राम माता के समान ही व्यवहार रखता है' (वा. रा. अयो. ११८. ५-६)। लक्ष्मण, भरत एवं राम के भाषण में भी इसके लिये आधार प्राप्त है। राम वनवासगमन कर रहा है, ऐसा ज्ञात होते ही, लक्ष्मण ने कौसल्या से कहा, 'विषय-भोगों के नियंत्रण में रहनेवाला, तथा जिसकी बुद्धि का विपर्यास हो गया है, ऐसा यह विषयी तथा वृद्ध राजा, कैकेयी की प्रेरणा से क्या नहीं बकेगा'? (वा. रा. अयो. २१. ३)।

कैकेयी से इसका विवाह इसकी विषयलंपटता पर कलश चढानेवाला है। इस विवाह के वक्त, यद्यपि कैकेयी बिलकुल जवान थी, बुढ़ापे की साया इसके शरीर पर

छाने लगी थी। कैकेयी से उत्पन्न पुत्र को, अयोध्या का सम्राट् बनाने का वचन दे कर, इसने कैकेयी के पिता को कन्यादान के लिये राजी किया था (वा. रा. अयो. १०७. ३)। राम के यौवराज्याभिषेक के समय भी, कैकेयी युवा अवस्था में थी, एवं बुढा दशरथ उसकी मुठ्ठी में था।

अपने बुढे पिता ने अपने माँ को विवाह के समय दिये वचन के कारण, राम युवराज नहीं बनेगा, यह कैकेयीपुत्र भरत को अच्छा नही लगा। इस कारण, वह अपने ननिहाल चला गया। यह अवसर देख कर, उसके ननिहाल में से किसी को न बताते हुएँ, दशरथ ने राम को यौवराज्याभिषेक करने की तैय्यारी की। किंतु एक संकट टालने के लिये इसने कोशिस की, तो उधर कैकेयी ने दूसरा ही संकट खड़ा किया। परंतु उससे सूर्यवंश का यश मलिन न हो कर, अधिक उज्वल ही हुआ।

इसे शांता नामक एक कन्या थी। उसे इसने अंगदेश का राजा, एवं इसका परममित्र रोमपाद को दत्तक दिया था। ऋश्यशृंग ऋषि को शांता विवाह में दे कर, उस ऋषि के सहाय से, इन दोनों मित्रों ने पुत्रकामेष्टियज्ञ का समारोह किया (भा. ९. २३. ८)।

पुत्रकामेष्टियज्ञ की प्रेरणा इसे कैसी मिली, इसकी कथा पद्मपुराण में दी गयी है। इसने सौ अक्षौहिणी सेना के साथ, सुमानसनगरी पर आक्रमण किया, वहाँ के राजा साध्य से एक माह युद्ध कर के उसे बंदी बनाया। तब उसका अल्पवयी पुत्र भूषण इसके साथ युद्ध करने आया। परंतु उसका भी इसने पराभव किया। युद्धसमाप्ति के बाद, एक माह तक, यह साध्य तथा भूषण के साथ रहा। उन दोनों का परस्परप्रेम देख कर इसके मत में विचार आया, 'मुझे भी भूषण के समान गुणवान् पुत्र हो'। इसने साध्य राजा को पुत्रप्राप्ति का उपाय पूछा। साध्य ने इसे 'विष्णु को संतुष्ट करने को कहा।

बाद में सुमानसनगर साध्य राजा को देकर, यह अयोध्या लौट आया। अनेक व्रत करने के बाद इसने पुत्रकामेष्टियज्ञ किया। तब विष्णु ने प्रकट हो कर इसे वर माँगने के लिये कहा। तब इसने दीर्घायुषी, धार्मिक तथा लोगों पर उपकार करनेवाले चार पुत्र माँगे। विष्णु ने कौसल्या, सुमित्रा, सुरुपा, तथा सुवेषा को चार पुत्र होंगे, यों आशीर्वाद दिया। दशरथ ने विष्णु से अपना पुत्र होने के लिये कहा। विष्णु ने वह मान्य कर के 'चरु' (यज्ञ की आहुति के लिये पके चावल) में प्रवेश किया। दशरथ ने उस चरु के चार भाग कर के अपनी चार स्त्रियों को दिये। बाद में कौसल्या, सुमित्रा, सुरुपा तथा सुवेषा को क्रमशः राम, लक्ष्मण, भरत, तथा शत्रुघ्न नामक पुत्र हुएँ। ब्रह्मदेव ने उनके जातकर्मादि संस्कार किये। (पद्म. पा. ११६)।

पूर्वजन्म में यह धर्मदत्त नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण था। इसने राक्षसयोनि प्राप्त हुएँ कलहा नामक स्त्री को अपना कार्तिकव्रत का आधा पुण्य दिया, एवं उसका उद्धार किया। इस जन्म में कलहा कैकेयी नाम से इसकी पत्नी बनी (पद्म. उ. १०६-१०७)।

ग्रहराज शनि के द्वारा, 'रोहिणीशकट' नक्षत्रमंडल का भेद होने का संकट, एक बार, पृथ्वी पर आया। यह ग्रहयोग ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से बड़ा ही खतरनाक समझा जाता है। उससे बारह वर्षों तक पृथ्वी में अकाल पड़ता है। उसे टालने के लिये, यह स्वयं नक्षत्रमंडळ में गया। धनुष्य सज्ज कर, इसने भयंकर संहारास्त्र की योजना की। यह देख कर, शनि इससे प्रसन्न हुआ, एवं उसने इष्ट वर माँगने के लिये इसे कहा। तब इसने कहा, 'जब तक पृथ्वी है, आकाश में चन्द्रसूर्य हैं, तब तक तुम रोहिणीशकट का भेद मत करो'। यह वर प्राप्त करते ही, दशरथ अपने नगर में वापस आया (पद्म. उ. ३३)।

अंत में श्रावण के शाप के अनुसार, पुत्रशोक से इसकी मृत्यु हुअी (श्रावण देखिये)। दशरथ की मृत्यु के बाद, भरत आने तक इसका शव अच्छा रहे, इस हेतु से, उसे तेल में रखा गया था (आ. रा. सार. ६)।

२. (सू. इ.) सूर्यवंश का राजा। यह मूलक का पुत्र था। रामपिता दशरथ के पूर्वकाल में यह अयोध्या का राजा था।

३. (सो. क्रोष्टु.) भविष्य, भागवत, विष्णु, वायु तथा पद्म के मतानुसार नवरथ का पुत्र (पद्म. सृ. १३)। मत्स्य के मतानुसार इसे दृढरथ नाम है।

४. (मौर्य. भविष्य.) विष्णु के मतानुसार सुयशस् का पुत्र। मत्स्य के मतानुसार यह शक का नाती था। अन्य पुराणों में इसका उल्लेख नहीं है।

५. रोमपाद १. देखिये।

दशाव्रज—एक राजा। अश्विनों ने इसका संरक्षण किया था (ऋ. ८.८.२०)। इंद्र ने भी इसपर कृपा की थी (ऋ. ८.४९.१०; ५०.९)।

दशशिप्र—एक ऋत्विज। इसके घर सोम पी कर इंद्र प्रसन्न हुआ था (ऋ. ८.५२.२.)।

दशारि—(सो. क्रोष्टु.) भविष्यमत में निरावृत्ति का पुत्र। अन्यत्र इसे दशार्ह कहा गया है।

दशार्णा—गांधारराज सुबल की कन्या, तथा धृतराष्ट्र की पत्नी।

दशार्ह—(सो. क्रोष्टु.) भागवत, विष्णु तथा वायु मत में निर्वृति का पुत्र। मत्स्यमत में यह निर्वृति का पौत्र एवं विदूरथ का पुत्र था।

दशावर—वरुणलोक का एक असुर।

दशाश्व—(सू. इ.) इक्ष्वाकु के शतपुत्रों में से एक (म. अनु २.६ कुं.)। यह महिष्मती नगरी का राजा था। इसे मदिराश्व नामक पुत्र था।

दशोणि—ऋग्वेदकालीन एक राजा। पणियों से इसका युद्ध चल रहा था, तब इंद्र ने इसकी सहायता कर, पणियों को भगाया (ऋ. ६.२०.४)। द्योतमान से हुएँ युद्ध में, दशोणि पर इंद्र ने कृपा की (ऋ. ६.२०.८)। अन्य स्थानों पर आये 'दशोणि' शब्द का अर्थ 'दस ऊंगलियाँ' है। वह व्यक्तिवाचक शब्द नहीं है (ऋ. १०.९६.१२)।

दशोण्य—एक ऋत्विज। इस पर इंद्र की निरतिशय कृपा थी (ऋ. ८.५२.२)। दशशिप्र के साथ इसका निर्देश प्राप्त है।

दस्यवे वृक—एक राजा। इसके औदार्य का वर्णन प्राप्त है (ऋ.८.५५.१; ५६.२)। यह दस्युओं का विजेता, एवं स्तावकों का उदार प्रतिपालक था। वालखिल्यों में, कृश तथा पृषध्र के सूक्त में, इसका वर्णन आया है। इससे प्रतीत होता है कि, वे इसके आश्रयदाता थे। इसका ऋषि के रूप में भी निर्देश प्राप्त उल्लेख है (ऋ. ८.५१.२)। ऋग्वेद के छप्पनवे सूक्त से तर्क चलता है कि, इसका पिता पूतक्रतु तथा माता पूतक्रता थी (ऋ. ८.५६.४)।

दस्र—अश्विनीकुमारों में से एक। सहदेव इसीके अंश से उत्पन्न हुआ था (भा. ९.२२)।

दहन—एकादश रुद्रों में से एक।

दाकव्य एवं **दाकायन**—वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

दाक्षपाय—कश्यपकुल का गोत्रकार।

दाक्षायण—एक राजवंश। 'दक्ष' राजा के वंशज संभवतः इस नाम से प्रसिद्ध हुएँ थे। इस वंश के राजा संस्कारविशेष के कारण, 'शतपथ ब्राह्मण' के समय तक, समृद्ध जीवन व्यतित कर रहे थे (श. ब्रा. २.४.४.६; दक्ष देखिये)।

अथर्ववेद एवं यजुर्वेद संहिताओं में, शतानीक सात्रजित ऋषि को दाक्षायणों ने स्वर्ण प्रदान करने का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. १.३५.१-२; वा. सं. ३४.५१-५२; खिल. ४.७.७.८)। कई जगह, 'दाक्षायण' व्यक्तिवाचक न हो कर, 'स्वर्ण' अर्थ से भी प्रयुक्त किया है (ऐ. ब्रा. ३.४०)। महाभाष्य में, पाणिनि को दाक्षायण कहा गया है।

दाक्षायणी—सती का नामांतर।

दाक्षि—अंगिरस् कुल का गोत्रकार।

२. अत्रिकुल का गोत्रकार।

दाक्षीपुत्र—पाणिनि देखिये।

दांडिक्य—एक भोजवंशीय नृप। एक ब्राह्मणकन्या का इसने अपहरण किया। उससे इसका नाश हुआ। दंड राजा एवं यह दोनो एक ही होंगे (कौटिल्य पृ. २८)।

दात—सुख देवों में एक।

दात्रेय—अराल शौनक का पैतृक नाम (इन्डि. स्टडि. ४.३७३)। 'दार्तेय' (दृति का वंशज) इसीका ही पाठभेद रहा होगा।

दाधीच—च्यवन का पैतृक नाम। 'दाधीच' का शब्दशः अर्थ 'दध्यञ्च् का वंशज,' ऐसा होता है (पं. ब्रा. १४.६; च्यवन देखिये)।

दान—पारावत देवों में से एक।

२. सुख देवों में से एक।

दानकाय—वसिष्ठगोत्र का ऋषिगण।

दानपति—अक्रूर का नामांतर (भा. १०.४९)।

दानव—एक मानव जाति। कश्यप तथा दनु की संतति 'दानव' कहलाती थी।

देव एवं असुरों के संग्राम में, देवों के विरुद्ध पक्ष में दानव, असुर, राक्षस, पिशाच, आदि शामिल थे।

दानवों में निम्नलिखित लोग प्रमुख माने जाते थेः—केशिन्, तारक, नमुचि, नरक, बाण, विप्रचित्ति, वृषपर्वन्, शंबर, हिरण्यकशिपु।

दानवों का निवासस्थान प्रायः हिमालय के पश्चिम भाग का पर्वतप्रदेश रहा होगा।

२. कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (कश्यप तथा दनु देखिये)।

दानिन्—सुख देवों में से एक।

दान्त—राजा भीमक का पुत्र तथा दमयंती का भ्राता (म. व. ५०.९)।

२. विकुंठ देवों में से एक।

३. सुधामन् देवों में से एक।

४. एक ऋषि। इसने भद्रतनु नामक ब्राह्मण को काम, क्रोध, लोभ आदि के लक्षण बताये, एवं उनका त्याग करने को उसे कहा (पद्म. क्रि. १७)।

दान्ता—एक अप्सरा (म. अनु. ५०.४८ कुं.)।

दाम—सुख देवों में से एक।

दामग्रन्थिन्—अज्ञातवास में विराटगृह में रहनेवाले नकुल का नाम (म. वि. ३.२)। भांडारकरपाठ-ग्रंथिक।

दामघोषि—शिशुपाल का पैतृक नाम।

दामचंद्र—पांडवपक्षीय एक राजा (म. द्रो. १३३. ३७)।

दामोष्णीष—एक ऋषि (म. स. ४.११)।

दारुक—कृष्ण का सारथि (म. व. २३.२७; भा. १०.५०; पद्म. उ. २५२)। रथ सज्ज करने के बारे में, कृष्ण से इसका संभाषण हुआ था। भारतीययुद्ध में, यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. ५६.१७–४१; मौ. ५.३)।

२. एक शिवावतार। यह वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वंतर के इक्कीसवीं चौखट में संपन्न हुआ। इस कारण, उस स्थान का नाम दारुवन हुआ। प्लक्ष, दार्भायणि, केतुमत् तथा गौतम इसके पुत्र थे (शिव. शत. ५)।

३. एक दैत्य।

दारुकि—दारुक का पुत्र तथा प्रद्युम्न का सारथि (म. व. १९.३)।

दारुण—कश्यप एवं अरिष्टा का पुत्र।

२. गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.९)।

दार्ढजयन्ति—वैपश्चित गुप्त लौहित्य तथा वैपश्चित् दृढजयन्त लौहित्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

दार्तेय—एक यज्ञवेत्ता। यज्ञ के संबंध में यथार्थ मत देनेवाला, ऐसा इसका उल्लेख मिलता है (क. सं. ३१. २)। दृति एवं वातवत् ऋषियों का यह पैतृक नाम है। उन्होंने खांडववन में सत्र किये थे। वह सत्र वातवत् ने अधूरा छोडा, परंतु दृति ने पूरा किया। इसलिये दार्तेयों का उत्कर्ष हुआ (पं. ब्रा. २५.३.६; अराल देखिये)।

दार्भायणि—दारुक नामक शिवावतार का शिष्य।

दार्भ्य—रथवीति का पैतृक नाम (बृहद्दे. ५.४९. ७९)। ऋग्वेद की ऋचा में इसका उल्लेख है (ऋ. ५. ६१.१७)। यह पैतृक नाम अन्यत्र भी कई वार आया है (तै. सं. २.६.२.३; मै. सं. १.४.१२; ६.५; सां. ब्रा. ७.४)। यह नाम केशिन् तथा रथप्रोत के लिये भी प्रयुक्त है (मै. सं. २.१.३; दाल्भ्य देखिये)।

दालकि—एक ऋषि। वायुमत में यह व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य था।

दाल्भि—बक का पैतृक नाम (का. सं. १०.६)।

दाल्भ्य—एक राजा 'दाल्भ्य' का शब्दशः अर्थ 'दल्भ का वंशज' हैं। यह दार्भ्य का पर्यायवाची शब्द रहा होगा। यह केशिन् (पं. ब्रा. १३.१७.८), चेकितान (छां. उ. १.८.१; जै. उ. ब्रा. २.३८.१) तथा बक (छां. उ. १.२.१३; १२.१.३; का. सं. ३०.२; म. व. २७५; २८२.१७) का पैतृक नाम है। दार्भ्य एवं दाल्भ्य में गड़बड़ी जान पड़ती है (दार्भ्य देखिये)। एक वैयाकरण के नाते भी इसका उल्लेख प्राप्त है (शु. प्रा. ४.१६)।

२. द्युमत्सेन का मित्र।

३. उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

दावसु अंगिरस—एक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. २५.५. १२.१४)।

दाशर्म—आरुणि का समकालीन एक आचार्य (क. सं. ७.६)।

दाशार्ह—मथुरा का राजा व्योमन् का पैतृक नाम। शिवमंत्र से यह पापमुक्त हुआ (स्कंद. ३.३.१)।

२. विदूरथ का मातृक नाम।

दाशूर—तपस्वी शरलोम का पुत्र। यह मगध देश के एक पर्वत पर रहता था। शरलोम की मृत्यु होने के कारण, यह शोकमग्न हुआ। तब इसके सामने अग्नि प्रकट हुआ। उसने वृक्षाग्र पर बैठ कर स्थिर रहने का वर, इसे प्रदान किया। इस प्रकार कदंब वृक्ष के अग्र पर यह बैठ गया। उससमय सारी दिशाएँ इसे स्त्रियों के समान दिखने लगी। फिर भी मानसिक यज्ञ से इसे आत्मबोध हुआ।

पश्चात् कदंब दाशूर ऋषि नाम से यह प्रसिद्ध हुआ इसे वनदेवता से एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। उसे इसने ज्ञानोंपदेश दिया (यो. वा. ४. ४. ८–५१)।

दासवेश—वेश देखिये।

दिक्पति—सत्य देवों में से एक।

दिंडि—सूर्य के सामने रथ में बैठनेवाला एक सेवक। यह सूर्य का प्रधान, एवं एकादश रुद्रो में से एक था

(भवि. ब्राह्म. ७६.१९)। ब्रह्माजी का शिरच्छेद इसके हाथ से हुआ था। सूर्य के सन्निध रहने से, उस पातक से यह मुक्त हुआ (सांब. १६)। इसे दिंडिन् भी कहा है।

यह महातपस्वी गणाधिपति था। पहले की गयी ब्रह्महत्या के निरसनार्थ, इसने सूर्याराधना की। सूर्य की कृपा से, यह ब्रह्महत्या से मुक्त हुआ। पश्चात् सूर्य से इसने क्रियायोग श्रवण किया (भवि. ब्राह्म. ६३)।

यह शंकर का अवतार था (भवि. ब्राह्म. ९१)। यह सूर्य के पूर्व में स्थित है। निरंतर भ्रमणशील होने के कारण, इसके लिये रुद्र नाम प्रयुक्त है (भवि. ब्राह्म. १२४)।

दिति—प्राचेतस दक्ष प्रजापति तथा असिक्नी की कन्या, एवं कश्यप की भार्या (कश्यप देखिये)। ऋग्वेद में इसका तीन स्थानों पर उल्लेख है। उनमें से दो स्थानों पर, अदिति के साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ५. ६२. ८; ४. २. ११)। तीसरे स्थान, इसका उल्लेख अदिति के साथ न हो कर, अग्नि, सवितृ एवं भग के साथ आया है (ऋ. ७. १५. १२)। कई वैदिक ग्रंथों में इसे 'देवी' कहा गया है (वा. सं. १८. २२; अ. वे. १५. १८. ४; १६. ६. ७)। अथर्ववेद में इसके पुत्रों का निर्देश आया है वे दैत्य एवं देवों के शत्रु मालूम होते हैं (भा. ७.७.१)। इससे पता चलता है कि, दिति एवं अदिति एक पक्ष में न हो कर, विरोधी पक्ष में थी।

दिलीप (प्रथम)—(सू. इ.) अयोध्या के अंशुमत् राजा का पुत्र। अपने 'भगीरथ' प्रयत्नों से, गंगा गदी पृथ्वी पर लानेवाले परमप्रतापी भगीरथ राजा का यह पिता था (भा. ९.९; मत्स्य. १२.४४; पद्म. सू. १०; उ. २१; ब्रह्म. ८.७५; लिंग. २.५.६; म. व. १०६.३७–४०)। रामायण में, भगीरथ का पिता दिलीप (प्रथम), एवं रघु का पितामह दिलीप खट्वांग, ये दोनो एक ही माने गये है (वा. रा. बा. ४२)। किंतु वे दोनों अलग थे।

अपने पितामह सगर का उद्धार करने के लिये इसने गंगा पृथ्वी पर लाने को चाहा। उसके लिये इसने तीस हजार वर्षों तक तपस्या की। किंतु गंगा लाने से पहले ही इसकी मृत्यु हो गयीं।

दिलीप खट्वांग—(सू. इ.) अयोध्या के सुविख्यात रघु राजा का पितामह। महाभारत में, खट्वांग नाम से इसका निर्देश प्राप्त है। रामायण में, भगीरथ का पिता दिलीप (प्रथम), एवं यह, ये दोनों एक ही माने गये है। किंतु वे दोनों अलग थे।

भागवत एवं विष्णुमत में विश्वसह का, ब्रह्मांड एवं वायुमत में विश्वमहत् का, तथा मत्स्यमत में यह रघु का पुत्र था। कई ग्रंथों में, इसे दुलिदुह का पुत्र भी कहा गया है (ब्रह्म. ८.८४; ह. वं. १.१५)। मत्स्य, पद्म, एवं अग्नि पुराणों में दी गयीं इसकी वंशावलि में एकवाक्यता नहीं है।

पितृ की कन्या यशोदा इसकी माता थी। इसकी पत्नी का नाम सुदक्षिणा था। इसका पुरोहित शांडिल्य था। दिलीप खट्वांग के प्रशंसा पर एक पुरातन श्लोक भी उपलब्ध है (ब्रह्मांड. ३.१०.९०–९२; ह. वं. १.१८; वायु. ७३.८४)।

काफी दिनों तक दिलीप राजा को पुत्र नहीं हुआ। पुत्रप्राप्ति के हेतु से, यह वसिष्ठ के आश्रम में गया। राजा के द्वारा विनंति की जाने पर, वसिष्ठ ने इसे पुत्र न होने का कारण बताया। वशिष्ठ बोले, "एक बार तुम इन्द्र के पास गये थे। उसी समय तुम्हारी पत्नी ऋतुस्नात होने का वृत्त तुम्हें ज्ञात हुआ। तुम तुरंत घर लौटे। मार्ग में कल्पवृक्ष के नीचे कामधेनु खडी थी। उसे नमस्कार किये विना ही तुम निकल आये। उस लापरवाही के कारण उसने तुम्हें शाप दिया, 'मेरे संतति की सेवा किये विना तुम्हें संतति नहीं होगी'। उस शाप से छुटकारा पाने के लिये मेरे आश्रम में स्थित कामधेनुकन्या नंदिनी की तुम सेवा करो। तुम्हें पुत्र होगा।" इसी समय वहाँ नंदिनी आई। उसे दिखा कर वसिष्ठ ने कहा, 'तुम्हारी कार्यसिद्धि शीघ्र ही होगी'।

इसने धेनु को चराने के लिये, अरण्य में ले जाने का क्रम शुरू किया। एक दिन मायावी सिंह निर्माण कर, नंदिनी ने इसकी परीक्षा ली। उस समय स्वदेहार्पण कर, धेनुरक्षण करने की सिद्धता इसने दिखायी। तब धेनु प्रसन्न हो कर, इसे रघु नामक विख्यात पुत्र हुआ (पद्म. उ. २०२–२०३)। यह कथा कालिदास के रघुवंश में पूर्णतः दी गयी है।

यह पृथ्वी पर का कुबेर था। इसने सैकडों यज्ञ किये थे। प्रत्येक यज्ञ में लाखों ब्राह्मण रहते थे। इसने सब पृथ्वी ब्राह्मणों को दान दी थी। इसीके यज्ञों के कारण, यज्ञ-प्रक्रिया निश्चित हुई। इसके यज्ञ में सोने का यूप था। इसका रथ पानी में डूबता नहीं था। दिलीप के घर पर 'वेदघोष,' 'धनुष की रस्सी की टँकार', 'खाओ', 'पियो', एवं 'उपभोग लो', इन पांच शब्दों का उपयोग निरंतर होता था (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ५१०

से आगे; शां. २९.६४-७२)। सम्राट तथा चक्रवर्ति के नाते इसका निर्देश किया जाता था।

३. (सो. कुरु.) एक पौरव राजा। भागवत मत में ऋक्ष्य का, एवं विष्णु, मत्स्य तथा वायु के मत में भीमसेन का पुत्र।

दिलीवय--भविष्य मत में मनुवंशी दशरथ का पुत्र।

दिवंजय—उदारधी एवं भद्रा का पुत्र।

दिवस्पति—रौच्य मन्वंतर में होने वाला इंद्र।

दिवस्पर्श--तुषित देवों में से एक।

दिवाकर—गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.१४)।

२. (सू. इ. भविष्य.) भागवतमत में भानु राजा का पुत्र। इसका पुत्र सहदेव। वायुमत में यह प्रतिव्यूह का पुत्र, एवं मत्स्य तथा विष्णुमत में प्रतिव्योम का पुत्र था। इसके शासनकाल में 'मत्स्यपुराण' का निर्माण हुआ (मत्स्य. २७१)। पौरव राजा अधिसोमकृष्ण तथा मगध देश का राजा सेनजित् इसके समकालीन थे।

३. (सो.) भविष्य मत में आतिथ्यवर्धन का पुत्र।

दिवावष्ट—कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण। दिवावस एवं दिवावसिष्ठ ये इसीके पाठभेद है।

दिवावष्टाश्व--कश्यपकुल का गोत्रकार।

दिवावस--दिवावष्ट देखिये।

दिवावसिष्ठ—दिवावष्ट देखिये।

दिवि—सत्य देवों में से एक।

दिविरथ--(सो. अनु.) भागवतमत में खनपान का पुत्र, एवं रथ राजा का पिता। विष्णुमत में यह पार का एवं वायु तथा मत्स्य मत में दधिवाहन का पुत्र था। इसका पुत्र धर्मरथ। महाभारत मे इसे दधिवाहन का पुत्र कह कर, इसका पुत्र अंग बताया है (म. शां. ४९.२०२)।

दिवीलक—(आंध्र. भविष्य.) विष्णुमत में लंबोदर का पुत्र। इसका नाम अपीतक एवं चिवीलक भी प्राप्त है।

दिवोदास--(सो. काश्य.) भागवत तथा विष्णुमत में भीमरथपुत्र तथा विष्णुमत में अभिरथपुत्र। ब्रह्म तथा वायु मत में यह भीमरथ का ही दूसरा नाम है। महाभारत में इसे काशीपति सौदेव कहा गया है। इसका पितामह हर्यश्व हो कर, पिता सुदेव अथवा भीमरथ था। इसका पराजय हैहय वीतहव्य ने किया। तब यह भरद्वाज ऋषि की शरण में गया।

इसके द्वारा पुत्रकामेष्टियज्ञ करने पर, इसे प्रतर्दन वा अप्रतिरथ नामक शत्रुनाशक पुत्र हुआ। उसने हैहय वीतहव्यों का पराभव किया तथा वीतहव्य को भृगु के आश्रम में छिपने के लिये मजबूर कर दिया (म. अनु. ८ कुं.)। प्रतर्दन के साथ भारद्वाज ऋषि का स्नेहसंबंध था (क. सं. २१.१०)।

इसकी पत्नी का नाम दृषद्वती। इसे दृषद्वती से ही प्रतर्दन हुआ था (ब्रह्म. ११.४०.४८)। प्रतर्दन, अप्रतिरथ, शत्रुजित्, ऋतध्वज, तथा कुवलाश्व ये सारे एक ही है (भा. ९.१७.६)।

इसे ययातिकन्या माधवी से प्रतर्दन हुआ, यह कथा महाभारत में दी गयी है (म. उ. ११५.१.१५)। किंतु कालदृष्टि से वह विसंगत अतएव असंभव मालूम पडती है। यह यमसभा का एक सदस्य था (म. स. ८.११)। 'भास्करसंहिता' के 'चिकित्सादर्पणतंत्र' का यह कर्ता है (ब्रह्मवै. २.१६)। धन्वन्तरि के आगे दिवोदास शब्द जोड़ा जाता है। वह शब्द वंशदर्शक होगा।

२. (सो. काश्य.) काशी देश का राजा। यह सुदेव का पुत्र तथा अष्टारथ का पिता था। परंतु ब्रह्म तथा महाभारत के सिवा अन्य स्थान की वंशावलि में, इतनी जानकारी भी नहीं मिलती।

हैहयवंशों से तुलना करने पर काश्यवंश में दो दिवोदासों को मान्यता देना अनिवार्य प्रतीत होता है। इसने भद्रश्रेण्य से काशी जीत ली, एवं वहाँ अपना राज्य स्थापित किया। किंतु निकुंभ के शाप से, इसे काशी छोड़ कर, गोमती तीर पर दूसरी राजधानी स्थापित करनी पड़ी। अतः हैहय तथा काश्य घरानों के झगड़ा कुछ काल के लिये स्थगित हुआ। किंतु भद्रश्रेण्य का पुत्र दुर्मद बड़ा होने पर, उसने दिवोदास का पराभव किया (म. अनु. ३०; ब्रह्म. ११.४८; १३.५४; ह. वं. १.२९; ब्रह्मांड. ३.६७; वायु. ९२.२६)। इसकी पत्नी का नाम सुयशा था। उससे इसे अष्टारथ नामक पुत्र हुआ था (ब्रह्म. १३.३१)।

दिवोदास अतिथिग्व—(सो. नील.) वैदिक युग का एक प्रमुख राजा। यह वध्र्यश्व का पुत्र, एवं भरतवंशान्तर्गत तृत्सु लोगों का सुविख्यात राजा सुदास का पिता (वा पितामह) था। 'अतिथिग्व' का शब्दशः अर्थ है, 'अतिथि का सम्मान करनेवाला'। यह उपाधि दिवोदास एवं सुदास को लगायी जाती थी (ऋ. १.५१.६; ७.१९.८)। 'अतिथिग्व' की उपपत्ति सायणाचार्य ने 'अतिथिगु का पुत्र' ऐसी दी है (ऋ. १०.४८.८)।

सरस्वती की कृपा से वध्र्यश्व को दिवोदास पुत्ररूप में प्राप्त हुआ (ऋ. ६.३१.१)। यह भरतों में से एक

था (ऋ. ६.१६.४; ५.१९), एवं तुर्वशों तथा यदुओं का विरोधी था (ऋ. ७.१९.८; ९.६१.२)। संभवतः इसके पुत्र का नाम 'पिजवन' हो कर, सुदास इसका पौत्र था। वध्न्यश्व, दिवोदास, पिजवन, तथा सुदास इस प्रकार इसका वंशक्रम होगा।

इसका महान् शत्रु शंबर एक दास एवं किसी पर्वतीय जाति का प्रधान था (ऋ. १.१३०.७; २.१२.११; ६.२६.५; ७.१८.२०)। इसने शंबर का कई बार पराभव किया (ऋ. १.५१.६; शंबर देखिये)।

अपने पिता वध्न्याश्व के समान, यह भी अग्नि का उपासक था (ऋ. ६.१६.५; १९)। इस लिये अग्नि को दैवोदास अग्नि नाम पड़ा (ऋ. ८.१०.२)। परुच्छेप के सूक्त में इसका संबंध दिखता है (ऋ. १.१३०.१०)। भरद्वाज के छठवें मंडल में इसके काफी महत्त्वपूर्ण उल्लेख हैं। इसका पुरोहित भरद्वाज था। आयु एवं कुत्स के साथ, यह इंद्र के हाथों से पराजित हुआ था। किंतु अदारसृत नामक साम के प्रभाव से, यह पुनः वैभवसंपन्न हुआ (पं. ब्रा. १५.३.७) भरद्वाज के साथ इसका संबंध पुराणादि में भी बार बार आया है। यह तथा दिवोदास नील वंशज एक ही होंगे।

ब्रध्न्यश्व को मेनका से एक कन्या तथा एक पुत्र हुएँ। उनमें से पुत्र का नाम दिवोदास, एवं कन्या का नाम अहल्या था। अहल्या शरद्वत गौतम को दी गयी थी (ह. वं. १.३२)। भागवतमत में यह मुद्गल का, विष्णु मत में वध्न्यश्व का, वायुमत में ब्रध्न्यश्व का, तथा मत्स्यमत में विंध्याश्व का पुत्र था। पुराणों में इसका पुत्र मित्रयु दिया गया है। परंतु वेदों में (ऋ. ८.६८.१७) इसका पुत्र इंद्रोत दिया है। ऋक्ष अश्वमेध, पूतक्रतु, प्रस्तोक तथा सौभरि ये लोग इसके समकालीन थे।

५. भृगुकुल का एक ऋषि, प्रवर तथा मंत्रकार (भृगु देखिये)। यह प्रथम क्षत्रिय था। बाद में ब्राह्मण बना (मत्स्य. १९५.४२; परुच्छेप दैवादासि देखिये)।

५. दिव्यादेवी देखिये।

दिवोदास भैमसेनी—अरुणि का समकालीन (क. सं. ७. १. ८)।

दिव्य—(सो. क्रोष्टु.) वायुमत में सात्वत का पुत्र। भागवत एवं मत्स्यमत में इसे अंधक, एवं विष्णुमत में इसे दिव्यांधक कहा गया है (अंधक २. देखिये)।

दिव्यजायु—पुरूरवा के उर्वशी से उत्पन्न आठ पुत्रों में छठवाँ (पद्म. सृ. १२)।

दिव्यमान—पारावत देवों में से एक।

दिव्या—हिरण्यकशिपु की कन्या तथा भृगु की पत्नी।

दिव्यादेवी—प्लक्षद्वीप के दिवोदास राजा की कन्या। दिवोदास ने इसका विवाह रूपदेश का चित्रसेन राजा से निश्चित किया। विवाहविधि शुरु होते ही चित्रसेन मृत हो गया। तब विद्वान् ब्राह्मणों के कथनानुसार, इसने रूपसेन से विवाह किया। परंतु वह भी मृत हो गया। इस प्रकार इसके इक्कीस पति मृत हो गये।

बाद में मंत्रियों की सलाह के अनुसार, इसका स्वयंवर रचा गया। किंतु स्वयंवर के लिये आये हुएँ सारे राजा, आपस में लड़ कर मर गये। इस अनर्थपरंपरा से इस को अत्यंत दुख हुआ, एवं यह अरण्य में चली गई (पद्म. भू. ८५)।

एक बार उज्वल नामक शुक प्लक्षद्वीप में आया। शोकमग्न दिव्यादेवी को उसने 'अशून्यशयन' व्रत बताया। मनोभाव से यह व्रत चार वर्षों तक करने पर, विष्णु ने इसे दर्शन दिया, तथा वह इसे विष्णुलोक ले गया (पद्म. भू. ८८)।

पूर्वजन्म में यह चित्रा नामक वैश्य की स्त्री थी (चित्रा ४. देखिये)।

दिव्याधक—दिव्य देखिये।

दिष्ट—(सू. दिष्ट.) वैवस्वत मनु का पुत्र। इसका बंधु नाभाग (भा. ८. १३; नभग देखिये)।

दीक्षित—कण्व का आर्यावती से उत्पन्न पुत्र। यह द्विविद का भाई था (भवि. प्रति. ४. २१)।

दीननाथ—एक विष्णु भक्त राजा। यह द्वापर युग में पैदा हुआ। इसे संतान न थी। पुत्रप्राप्ति के लिये इसने गालव ऋषि की सलाह से, नरयज्ञ करने का निश्चय किया। योग्य मनुष्यों को ढूँढ़ लाने के लिये इसने दूत नियुक्त किये।

इन दूतों को, दशपुर नगरी के कृष्णदेव ब्राह्मण के सुशीला से उत्पन्न तीन पुत्र, योग्य दिखाई पड़े। ब्राह्मण एक भी पुत्र देने के लिये तयार नही था। चार लाख मुहरे दे कर, दूत जबरदस्ती उसका ज्येष्ठ पुत्र ले जाने लगे। ब्राह्मण ने प्रार्थना की 'उसे छोड दो। मैं स्वयं आ रहा हूँ'। पश्चात् ब्राह्मण के छोटे पुत्र को ले जाने की कोशिश दूतों ने की, तो माता ने उन्हे रोक लिया। तब

मँझले पुत्र को वे जबरन ले गये। मातापिता ने अत्यधिक शोक किया।

बाद में सेवकों का पड़ाव विश्वामित्र के आश्रम में पड़ा। तब विश्वामित्र ने ब्राह्मण के मँझले पुत्र के बदले, खुद को नरमेध के लिये बलि के रुप में प्रस्तुत किया। परंतु नौकरों ने वह मान्य नहीं किया। पश्चात् विश्वामित्र राजा के पास आया। विश्वामित्र ने राजा से कहा, 'पूर्णाहुति दे कर भी पुत्रप्राप्ति हो सकती है'। यह सुनते ही उस पुत्र को छोड़ कर, राजा ने यज्ञ किया। उस ब्राह्मणपुत्र की जान बचाने के पुण्य से, विश्वामित्र को स्वर्गप्राप्ति, तथा दीननाथ को पुत्रप्राप्ति हुई (पद्म. ब्र. १२; शुनःशेप देखिये)।

दीप्तलोचन—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६)।

दीप्ति—अमिताभ देवों में से एक।

दीप्तिकेतु—दक्षसावर्णि मनु का एक पुत्र।

दीप्तिमत्—सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

दीप्तिमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

दीर्घ—मगध देश का एक क्षत्रिय। पांडु ने इसका वध किया (म. आ. १०५.१०)।

दीर्घजिह्व—दनुपुत्र। यह दानवों में से एक था।

२. एक विषैला सर्प। शेष के कोंष में एक मृतसंजीवक मणि था। उसके संरक्षकों में से यह एक था। (जै. अ. ३८)।

दीर्घजिह्वा—अशोकवन की एक राक्षसी।

दीर्घतपस्—(सो. काश्य.) राष्ट्र का पुत्र (दीर्घतमस् २. देखिये)। ब्रह्मपुराण में इसे काशेय का पुत्र बताया गया है (ब्रह्म. १३.६४)।

२. जंबुद्वीप के महेंद्र पर्वत पर रहने वाला एक तपस्वी। इसे पुण्य तथा पावन नामक दो पुत्र थे। उम्र के सौवें वर्ष में, पत्नी के सह इसकी मृत्यु हुई। उस कारण इसका पुत्र पावन शोकग्रस्त हुआ। तब पुण्य ने उसे उपदेश कर उसका मोहनिरसन किया (यो. वा. ५. १९-२१)। 'तृष्णाक्षय' के हेतु से यह कथा बताई गयी है।

३. एक व्यास। इसका पुत्र शुक (पद्म. पा. ७२)।

दीर्घतमस् मामतेय औचथ्य—अंगिरसकुल का एक सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. १. १४०-१६४)। यह ममता एवं उचथ्य ऋषि का पुत्र था। इसलिये इसे 'मामतेय' एवं 'औचथ्य' ये उपनाम प्राप्त हुएँ (ऋ. १. १५२. ६; ४. ४. १३)। 'दीर्घतपस्' इसीका ही पाठभेद है (वायु. ५९; ९८; १०२)।

बृहस्पति के शाप के कारण, यह जन्म के समय अंधा था (बृहद्दे. ४. ११. १५, २१-२५; ऋ. १. १४०-१६४)। इसलिये इसे 'दीर्घतमस्' (= दीर्घ अंधकार) नाम प्राप्त हुआ। यह सौ वर्षों तक जीवित रहा (ऋ. १. १५८. ६; सां. आ. २. १७)। सौ साल की बूढ़ी उमर में इसने 'केशव' परमेश्वर की उपासना की। उससे इसे दृष्टी प्राप्त हुओी, एवं लोग इसे 'गोतम' (= उत्तम नेत्रवाला) कहने लगे (म. शां. ३२८)। 'सुरभि' ने सूंघने पर इसे दृष्टि प्राप्त हुओी, ऐसी भी कथा उपलब्ध है (वायु. ९१)।

'भरत' राजाओं का यह पुरोहित था। भरत दौष्यंति को इसने 'ऐन्द्र अभिषेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८. २३)। यह अभिषेक यमुना के किनारे प्रपन्न हुआ (भा. ९. २०. २५; भरत देखिये)। एक मंत्र गायक के रुप में, इसका उल्लेख ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १. १५८. १)।

एक बूढ़े एवं का भी व्यक्ति के रूप में, इसकी कई कथाएँ ऋग्वेद में उपलब्ध है। इस वृद्ध को सम्हालते-सम्हालते इसके नौकर त्रस्त हो गये। यह मर जाये, इस हेतु से उन्होंने इसे अग्नि में डाल दिया, पानी में गला दिया। अन्त में, त्रैतन नामक दास ने इसका सिर काट लिया, एवं इसकी छाती फोड़ दी। फिर भी, प्रत्येक समय अश्वियों ने इसकी रक्षा की (ऋ. १. १५८. ४-६; बृहद्दे. ४. ११. १४)। बाद में इसे नदी में फेका दिया गया। नदी में बहता हुआ, यह अंग देश के किनारे जा लगा। वहाँ इसने उशिज् नामक दासकन्या से विवाह किया। उशिज् से इसे कक्षीवत् आदि पुत्र हुएँ (बृहद्दे. ४. २३)।

पुराणों में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। दीर्घतमस् को गर्भावस्था में ही सारे वेद, वेदांग तथा शास्त्र पूर्णतया अवगत थे (वायु. ९९. ३६-७८; ३७; मत्स्य. ४०; म. शां. ३२८-४७-४८)। विद्या के बल पर इसने प्रद्वेषी नामक रूपसंपन्न स्त्री से विवाह किया। उससे इसे गौतमादि अनेक पुत्र हुएँ। अपने कुल की अधिक वृद्धि हो, इस हेतु से इसने कामधेनु के पुत्रों से 'गो-रति' विद्या सीखी। उस विद्या के कारण, दिन के उजाले में, सब लोगों के समक्ष, यह स्त्रीसमागम करने

लगा। आश्रम के अन्य ऋषियों को यह पसंद नहीं आया। वे इसे आश्रम से भगा देने को उद्युक्त हो गये।

इसकी पत्नी प्रद्वेषी को पुत्रप्राप्ति हो गयी थी, एवं अंधा पति उसे अच्छा भी न लगता था। वह इसे भगाने के लिये अन्य आश्रमवासियों को सहाय करने लगी। वह कहने लगी, 'दीर्घतमस्‌ से तलाक ले कर मैं दूसरा पति कर लुंगी'।

घर छोडने के लिये उद्युक्त हुए अपने पत्नी को काबू में रखने के लिये, इसने धर्मशास्त्रकार नाते से पत्नीधर्म के नये नियम प्रस्थापित किये। वे नियम इस प्रकार थे:— 'जन्मभर स्त्री को एक ही पति रहेगा, वही उसका ईश्वर होगा। पति जीवित रहे या मृत, दूसरा पति स्त्री नही कर सकेगी। अगर स्त्री ने दूसरा पति किया, तो वह पतित हो जावेगी। पति के विना रहनेवाली स्त्रियाँ भी पतित रहेंगी। उनके पास धन होने पर भी, उन पतिशून्य स्त्रियों का परपुरुषसंभोग तथा तज्जन्य संतति व्यर्थ, अकीर्तिकर तथा निंदास्पद ही होंगी'।

बाद में प्रद्वेषी के कहने पर, इसके पुत्रों ने एक तख्ते पर इसे बांध कर, वह तख्ता गंगा में छोड़ दिया (म. आ. ९८.१८)। मत्स्य के अनुसार दीर्घतमस्‌ अपने चचेरे भाई शरद्वत्‌ के आश्रम में रहता था। दीर्घतमस्‌ अपने स्नुषा से विषयवासनायुक्त भाषण बोलने लगा। यह स्वैराचारी वर्तन शरद्वत्‌ को अच्छा न लग कर, उसने इसे आश्रम के बाहर निकाल दिया (मत्स्य. ४८)।

नदी में छोड़ा गया दीर्घतमस्‌ ऋषि, बहते-बहते आनव देश के सीमा के समीप आया। उस देश का राजा बलि सहजभाव से घूमते घूमते वहाँ आया था। उसने इस ऋषि को बडे सम्मान तथा आनंद से अपने अंतःपुर में रख लिया। तदनंतर बलि राजा ने सुदेष्णा नामक अपनी रानी को, संतति हेतु मन में रख कर, इस ऋषि की सेवा करने के लिये कहा। परंतु इसे अंध जान कर सुदेष्णा ने आप के बयाज, अपने "औशीनरी" नामक शूद्रवर्णीय दासी को इसके पास भेजा। उससे इस ऋषि को कक्षीवत्‌, दीर्घश्रवस्‌ आदि ग्यारह पुत्र हुएँ (म. स. १९.५)। वायुपुराण में इन पुत्रों में से 'कक्षीवत्‌' का नाम "काक्षीवत्‌" दिया है।

बाद में बलि एवं दीर्घतमस्‌ इन दोनों में, नवजातपुत्र किस का है, इस बारे में वाद शुरू हुआ। दीर्घतमस्‌ ने राजा को सुदेष्णा द्वारा की गयी चालबाजी बतायी। तब ऋषि को शांत कर, तथा पत्नी को समझा कर, बलि ने फिर एक बार सुदेष्णा को दीर्घतमस्‌ के पास भेज दिया। इससे उसे पाँच पुत्र उत्पन्न करवाये। उनके नाम अंग, वंग, पुंड्र, सुह्म तथा कलिंग थे। इन्हे बालेय क्षत्र तथा बालेय ब्राह्मण कहते है (ह. वं. १.३१; विष्णु. ४.१८; भा. ९. २०; २३; ब्रह्म. १.३)।

बाद में काक्षीवानादि पुत्रों को ले कर, यह गिरिव्रज (मत्स्य. ४८), वा गिरिप्रज (वायु. ९९) गया। कक्षीवान को इसने उदंक ऋषि के पास शिक्षाप्राप्ति के लिये भेजा (स्कन्द ३.१.१७-१८)।

महाभारत में, दीर्घतमस्‌ ऋषि का निर्देश अनेक बार आया है। यह इन्द्रसभा में इन्द्र के मनोरंजन का काम करता था (म. स. ७.१०)। यह पश्चिम दिशा के आश्रय में रहता था (म. अनु. १६५.६२)। इसे आशिज, औशिज, तथा असित कहा गया है (वायु. ९९ ४४; मत्स्य. ४८.८३)। उशिज इसका पितामह होने के कारण, इसका पैतृक नाम 'औशिज' होना संभवनीय है।

इसका पुत्र कक्षीवत्‌ एवं उसके भाईओं का 'गौतम' यह पैतृक नामांतर कई जगह प्राप्त है (मत्स्य. ४८.५३; ८४)। गोतम, दीर्घतमस्‌ का ही अन्य नाम था। इसके पशुतुल्य आचरण के कारण, इसे यह नाम मिला (वायु. ९९; ब्रह्मांड. ३.७४.३)। कई जगह, इसे गौतम भी कहा है (म. शां. ३२८.५०; म. स. १९.५-७)। लो. तिलकजी ने ऋग्वेद के 'दीर्घतमस्‌' शब्द का अर्थ, 'दीर्घ दिन के बाद अस्तंगत होनेवाला सूर्य,' किया है (आर्यों का मूलस्थान पृ. १४६)।

कई ग्रंथों में, सुदेष्णा रानी की शूद्रा दासी का नाम 'उशिज्‌' बताया है। इसीलिये, उस शूद्रा से उत्पन्न, इसके कक्षीवत्‌ एवं दीर्घश्रवस्‌ ये पुत्र, 'औशिज' यह मातृक नाम से प्रसिद्ध हुएँ (दीर्घश्रवस्‌ औशिज देखिये)

२. (सो. काश्य.) यह भागवत, विष्णु तथा वायु के मत में काशिराज राष्ट्र का पुत्र। इसे धन्वन्तरि नामक पुत्र था। वायु में दीर्घतपस्‌ पाठभेद है।

दीर्घनीथ—एक वैदिक ऋषि। इंद्र ने इस को संपत्ति दी थी (ऋ. ८.५०.१०)।

दीर्घनेत्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.४२)।

दीर्घप्रज्ञ—दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. आ. ६१. १५)।

दीर्घबाहु--(सू. इ.) खट्वांग (दिलीप द्वितीय) राजा का पुत्र। इसका पुत्र रघु (भा. ९.१०.१)। मत्स्य तथा पद्मपुराण में यही अजपुत्र के नाते उल्लिखित है। यह विष्णुभक्त था। इसे गद्दी पर बिठा कर, खट्वांग आत्मस्वरूप में लीन हो गया। ब्रह्म, हरिवंश तथा शिवपुराण, 'दीर्घ-बाहु' को रघु का विशेषण मानते हैं। इसीलिये रघुवंश में 'दीर्घबाहु' का उल्लेख नहीं है। गरुड पुराण में रघु का उल्लेख न हो कर केवल दीर्घबाहु का ही निर्देश है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६)।

दीर्घयज्ञ--अयोध्या का राजा। राजसूय के समय, भीम ने इसे पराजित किया था (म. स. ३१.२)।

दीर्घरोमन्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दीर्घलोचन--(सो. कुरु.) भीमद्वारा मारा गया धृतराष्ट्र का पुत्र (म. भी. ९२.२६)।

दीर्घश्रवस् औशिज--एक राजा। यह दीर्घतमस् एवं उशिज् का पुत्र था (दीर्घतमस् मामतेय देखिये)। यहाँ इसे वणिज् कहा गया है। इस पर अश्वियों ने कृपा की थी (ऋ. १.११२.११)। इस राजा को देश से निकाल दिया गया था। इसलिये यह भूख के कारण मर रहा था। एक साम गा कर इसने अन्न प्राप्त किया। (पं. ब्रा. १५.३.२५)। कक्षीवत् के साथ इसका निर्देश है।

दीर्घायु--एक क्षत्रिय। यह श्रुतायु का पुत्र था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.२९)।

दीर्घिका--वीरशर्मन् की कन्या। यह बहुत ऊँची थी। शास्त्रों में लिखा है, 'ऊँची लड़की से ब्याह करने वाला, छै माह में मर जाता है'। इस लिये इससे ब्याह करने को कोई तयार नहीं होता था।

अच्छा पति मिले, इसलिये इसने तपश्चर्या शुरू की। तप करते करते यह वृद्ध हो गयी। पश्चात् एक कुष्ठ रोग पीडित वृद्ध गृहस्थ, इसके पास आया। उसकी शर्तें स्वीकार कर, इसने उससे विवाह किया। कालोपरांत पति ने इसे यात्रा करने का अपना विचार बताया। यह उसे कंधे पर ले कर चली। जाते जाते शूलि पर चढाये गये मांडव्य को, इसका धक्का लग गया। क्रुद्ध हो कर मांडव्य ने इसे शाप दिया। परंतु पातिव्रत्य प्रभाव से इस पर उस शाप का कुछ परिणाम नहीं हुआ (स्कंद. ६. १३५; मांडव्य देखिये)। शांडिली एवं यह एक ही रही होंगी।

दुःशल--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुःशला--धृतराष्ट्र की कन्या। यह सिंधुराज जयद्रथ को विवाह में दी गयी थी (म. आ. १०८.१८)। इसका पुत्र सुरथ।

दुःशासन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का द्वितीय पुत्र (म. आ. १०८.२)। यह दुर्योधन की अनुमति से व्यवहार करता था, इसलिये उसने इसे यौवराज्य प्रदान किया था। यह पौलस्त्य का अंशावतार था। इसने शस्त्रास्त्रविद्या तथा धनुर्विद्या की शिक्षा द्रोण से ली थी।

द्रौपदी स्वयंवर के समय, उपस्थित राजाओं में यह भी शामिल था (म. आ. १७७.१)। बाद में द्रौपदी-सहित पांडव द्यूत में हार गये। कर्णद्वारा कानाफूसी मिलने पर, इसने भरी सभा में द्रौपदी का वस्त्रहरण किया। कृष्ण की आराधना कर, द्रौपदी ने अपनी रक्षा की। इसी समय दुःशासन का वध कर, उसके रक्त का प्राशन करने की घोर प्रतिज्ञा भीमसेन ने की (म. स. ६१.४६)।

पांडव अज्ञातवास में थे। तब उन्हें ढूँढने के उद्देश से कौरवों ने, मत्स्य देश के विराट राजा की गोशालाओं का ध्वंस किया, तथा जबरदस्ती से उसकी गायों का हरण किया। इस हमलें में दुःशासन शामिल था (म. वि. ३३.३)। अर्जुन ने विराटपुत्र उत्तर को सारथि बना कर, गोहरण कर के भागनेवाले कौरवोंका, पीछा किया। तब दुःशासन, विकर्ण, दुःसह तथा विविंशति नामक चार योद्धाओं ने महाधनुर्धर अर्जुन पर एक साथ आक्रमण किया। दुःशासन ने, उत्तर को घायल किया अर्जुन के वक्षभाग पर प्रहार कर उसे जख्मी किया। परंतु आखिर अर्जुन ने अपने बाणों से इसे घायल किया, एवं इसे भगा दिया (म. वि. ५६.२१-२२)।

भारतीययुद्ध के प्रथम दिन के संग्राम में, नकुल के साथ इसका द्वंद्वयुद्ध हुआ था (म. भी. ४५.२२-२४)। पश्चात् भीष्मद्वारा इकट्ठी की गयी सेना को भेद कर, भीम ने दुःशासनादि योद्धाओं पर आक्रमण किया। तब दुःशासन ने उसे घेर लिया (म. भी. ७३.१०)। भीष्मार्जुन युद्ध के समय शिखंडिन् को सामने ले कर अर्जुन युद्ध करने लगा। यह देखते ही भीष्म के संरक्षण के लिये, दुःशासन ने अर्जुन पर आक्रमण किया। दोनों में युद्ध हो कर, दुःशासन घायल हुआ (म. भी. १०६. ४३)।

पश्चात् सामने की कौरव सेना की पंक्ति तोड़ कर, अर्जुन उन्हें घायल करने लगा। उस समय पुनः दुःशासन तथा अर्जुन में युद्ध हो कर उसमें भी दुःशासन का पराभव हुआ (म. द्रो. ६५.५)।

अभिमन्यु का पराक्रम देख कर, द्रोण द्वारा की गई उसकी प्रशंसा, दुर्योधन से सही नहीं गई। उसने दुःशासनादि वीरों को उस पर आक्रमण करने की आज्ञा दी। दुःशासन तथा अभिमन्यु में काफी देर तक तुमुल युद्ध हुआ। अभिमन्यु के प्रबल बाणों से, व्यथित हो कर दुःशासन रथ में गिर पड़ा। इसे प्रबल मूर्च्छा आई। इसका सारथि इसे रण से दूर ले गया (म. द्रो. ३९. ११–१२)।

बाद में रणांगण में, सात्यकि से मिलते ही घबरा कर दुःशासन भाग आया, तब द्रोण ने इसका अत्यंत उपहास किया (म. द्रो. ९८)। वास्तविक देखा जावे, तो सात्यकि के साथ हुएँ युद्ध में ही दुःशासन मर सकता था, परंतु द्रौपदी वस्त्रहरण के समय की, भीम की प्रतिज्ञा का स्मरण हो कर, उसने दुःशासन का वध नहीं किया (म. द्रो. ६६. २६)।

इस प्रकार घनघोर भारतीययुद्ध चालू ही था। उस समय भीम ने दुःशासन पर आक्रमण किया। दोनों का घमासान युद्ध हो कर, दुःशासन ने भीम पर साक्षात् मृत्यु के समान, प्रचंड शक्ति छोडी। परंतु भीम ने अपनी गदा यूँ फेंकी जिससे उस दारुण शक्ति का विदारण हो कर, वह गदा दुःशासन के मस्तक पर जा गिरी। तत्काल दुःशासन भूमि पर गिर पड़ा। उसके मस्तक से रुधिरस्राव होने लगा। तत्काल भीम इसपर झपटा। 'द्रौपदी वस्त्रहरण,' 'केशग्रहण' तथा वनगमन के समय, 'गौगौं' कहने का स्मरण उसे दे कर, एवं अपनी प्रतिज्ञा का भी स्मरण दिला कर भीम ने इसके गले पर पैर रखा। इसके दोनों हाथ पकड़े। पास ही में खडे दुर्योधन, कर्ण, कृपाचार्य अश्वत्थामा आदि वीरों की ओर देख कर भीम ने क्रोध से कहा, 'अगर किसी में सामर्थ्य हो तो वह इसकी रक्षा करे। मेरी प्रतिज्ञा के अनुसार, अब मैं इसका रक्तप्राशन करनेवाला हूँ'। इतना कह कर उसने दुःशासन का वक्षविदारण किया, तथा सब के सामने इसका रक्त प्राशन करने लगा। वक्षस्थलभेद होने के कारण, दुःशासन की तत्काल मृत्यु हो गई (म. क. ६१)।

दुःशासन की मृत्यु के बाद, गांधारी ने श्रीकृष्ण के पास, अत्यंत शोक व्यक्त किया। रोते-रोते वह बोली जिस प्रकार सिंह के द्वारा कोई प्रचंड हाथी मारा जाये, उस प्रकार भीम द्वारा मारा गया मेरा दुःशासन अपने प्रचंड बाहु फैला कर सोया है (म. स्त्री. १८. १९. २०)।

दुःशासन को दौःशासनि नामक एक अत्यंत पराक्रमी पुत्र था। भारतीययुद्ध में दौःशासनि तथा अभिमन्यु का प्रचंड युद्ध हुआ। अनेक वीरों से लड़ कर थका हुआ अभिमन्यु दौःशासनि के एक गदाप्रहार से बेहोश हो गया (म. द्रो. ४८. १२)। बाद में दौःशासनि को द्रौपदी पुत्र ने मारा (म. क. ४. १४)।

यह सब शस्त्रास्त्रविद्या, सारथ्यकर्म तथा धनुर्विद्या में निपुण, अत्यंत शूर एवं पराक्रमी था (म. उ. १६२. १९)। परंतु दुष्टबुद्धि एवं मत्सरी होने के कारण, इसका नाश हुआ।

२. खड्गबाहु के पुत्र का सेनापति। एक बार गर्व से एक उन्मत्त हाथी पर यह बैठा। उस हाथी ने पैरों के नीचे कुचल कर इसे मार डाला।

बाद में यह हाथी हुआ। सिंहल देश के नृप ने इसे खड्गबाहु को दिया। उसने इसे एक कवि को दिया। उसने इसे मालव राजा को बेंच दिया। उसने इसका अच्छा पालनपोषण किया। फिर भी यह मृतप्रायसा होने लगा। तब स्वयं राजा इसके पास आया। हाथी ने मनुष्यवाणी से उसे कहा, 'गीता के १७ वें अध्याय का पाठ करनेवाला कोई व्यक्ति मेरे पास आयेगा, तो मेरी मानसिक पीड़ा नष्ट होगी,'।

इतना कह कर इसने अपना पूर्ववृत्तांत राजा को निवेदन किया। राजा ने उपरोक्त प्रकार का ब्राह्मण लाकर उसके द्वारा अभिमंत्रित जल हाथी पर डलवाया। जल के गिरते ही यह दिव्यदेह धारण कर स्वर्ग गया (पद्म. उ. १९१)।

दुःशीम—एक दाता। तान्व ने अपने सूक्त में इसका उदार कह कर उल्लेख किया है (ऋ. १०.९३.१४)।

दुःषन्त—(सो. पूरु.) दुष्यंत देखिये।

दुःसह—धृतराष्ट्र के शत पुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ११०.२९; ३५)।

२. लक्ष्मी की भगिनी 'अलक्ष्मी' का पति (लिंग. १.६)।

३. (सू. इ.) पुरुकुत्स का पुत्र। इसकी पत्नी का नाम नर्मदा।

दुःस्वभाव—दुर्बुद्धि देखिये।

दुदर्भ—सुहोत्र नामक शिवावतार का शिष्य।

दुंदुभि--मयासुर का पुत्र। मयासुर को हेमा नामक अप्सरा से दो पुत्र उत्पन्न हुएँ। उनमें से यह कनिष्ठ था (वा. रा. उ. १२.१३)।

दीर्घ तपस्या कर के इसने सहस्रावधि हाथियों का बल प्राप्त किया तथा महिष का रूप धारण किया। पश्चात् इसने समुद्र को युद्ध का आह्वान दिया। समुद्र ने इसे हिमालय के पास भेजा। हिमालय ने इसे वालिन् के पास भेजा। वालिन् के साथ हुएँ युद्ध में, दुंदुभि का पराजय हुआ। यह एक गुफा में जा छिपा। वहाँ वालिन् ने इसका वध किया।

मृत्यु के पश्चात् इसका कलेवर वालिन् ने दूर फेंका। वह मतंग ऋषि के आश्रम में जा गिरा। आश्रम की सारी वस्तुएँ रक्तरंजित हो गयी। वृक्ष भी टूट गये। तब मतंग ने क्रुद्ध हो कर वालिन् को शाप दिया, 'मेरे आश्रम में आते ही तुम मृत हो जावोगे'। तब से वह आश्रम वालिन् के लिये अगम्य हो कर, सुग्रीव का वासस्थान बन गया।

राम का सुग्रीव से दोस्ती का सुलूक हो गया। पश्चात् अपना सामर्थ्य दर्शाने के लिये, दुंदुभि के शरीर का कंकाल, राम ने अपने अंगूठे से दस योजन तक दूर उड़ा दिया (वा. रा. किं. ११.७-६५)। दुंदभि ने सोलह हजार स्त्रियों को कैद में रखा था। उन स्त्रियों की मुक्ति राम ने की। एक लाख स्त्रियों से एकदम विवाह करने का इसका संकल्प था (आ. रा. राज्य. १.११)।

२. एक गंधर्वी। ब्रह्मदेव की आज्ञानुसार अयोध्या में यह कैकेयी की मंथरा नामक दासी बनी (म. व. २५. ९.१०)।

३. (सो. यदु. कुकुर.) अनुपुत्र अंधक का पुत्र। इसका पुत्र अरिद्योत।

४. कश्यप तथा दनु का पुत्र।

५. सुतार नामक शिवावतार का शिष्य।

दुंदुभिनिह्राद--एक राक्षस। यह दिति का पुत्र, एवं प्रह्लाद का मामा था। देव-असुर युद्ध में, देवों का विजय एवं असुरों का पराभव होने लगा। देवों के इस विजय के लिये, ब्राह्मण ही उत्तरदायी है यह सोच कर, इसने ब्राह्मणों का संहार प्रारंभ किया। इस कार्य के लिये, काशी जैसे क्षेत्रों पर अपना अधिकार भी जमाया।

पश्चात् काशीवासी ब्राह्मणों को शंकर ने अभय दिया, 'मेरा स्मरण कर, जो ब्राह्मण दुंदुभिनिह्राद का विरोध करेंगे, वे सदा अजेय रहेंगे। बाद में शिवशक्ति से इस राक्षस का नाश हुआ। काशी के 'व्याघ्रेश्वरमाहात्म्य' में यह कथा दी गयी है (शिव. रुद्र. यु. ५८)।

दुरतिक्रम--शिवावतार सुहोत्र का शिष्य।

दुराचार--एक दुराचारी ब्राह्मण। वैताल आदि की पीड़ा से यह ग्रस्त था। धनुष्कोटितीर्थ, जाबालतीर्थ, एवं वेंकटाचलतीर्थ पर जाने के कारण, यह मुक्त हुआ (स्कंद. २. १. २. ५; ३. १. ३६)।

दुराधन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुराधर--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुरासद--भस्मासुर का पुत्र। इसने शिव से पंचाक्षरी विद्या प्राप्त कर, उसका जाप किया। उस जाप से संतुष्ट हो कर, शंकर ने इसे इच्छित वर दिया। उस वर के प्रभाव से, प्रमत्त हो कर यह सब को कष्ट देने लगा। शीघ्र ही शक्तिपुत्र ढुंढि ने इसका वध किया। (गणेश. १. ३८-४२)।

दुरितक्षय--(सो. पूरु.) महावीर्य राजा का पुत्र। विष्णु मत में उरुक्षय इसीका नामांतर है। त्रय्यारुणि, कवि, एवं पुष्करारुणि नामक इसके तीन पुत्र थे (भा. ९. २१.१९)। तपस्या के कारण, वे सब ब्राह्मण हो गएँ।

दुर्ग--हिरण्याक्ष के वंश के रुरु दैत्य का पुत्र।

दुर्गम--एक दैत्य। दुर्गादेवी ने इसका वध किया (स्कंद १. २. ६५)।

२. रुरु दैत्य का पुत्र। इसने सब ब्राह्मणों तथा ऋषियों के आधारस्तंभ, वेदों का नाश किया। इस कारण नित्य नैमित्तिक कर्म बंद हो गये। सर्वत्र हाहाकार मच गया। तब चतुर्भुजादेवी ने इसका वध किया (शिव. उ. ५०)।

३. (सो. द्रुह्यु.) विष्णु मत में धृत का पुत्र। दुर्दम, दुर्मनस् एवं विदुष इसके नामांतर हैं।

४. रेवती १. एवं विपाठा देखिये।

दुर्गमभूत--(सो. वसु.) विष्णु मत में वसुदेव का रोहिणी से उत्पन्न पुत्र।

दुर्गह--सायण के मत में पुरुकुत्स का पिता। पुरुकुत्स को दौर्गह यह पैतृक नाम प्रयुक्त है (ऋ. ४.४२.८; पुरुकुत्स देखिये)।

दुर्गा--विश्वव्यापक आदिमाया का एक नाम। इसे त्रिगुणात्मिका एवं देवी भी कहते है (देवी देखिये)।

दुर्जय--दनुपुत्र दानवों में से एक।

२. (सू. इ.) दशाश्व शाखा में से सुवीर का पुत्र। इसे दुर्योधन नामक एक पुत्र था (म. अनु. २.१२)।

३. एक रुद्रगण।

४. खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक।

५. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०८.३८)।

६. पांडवपक्षीय एक राजा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.४६)।

७. सुप्रतीक का पुत्र। इसने सब देश जीते। इसने हेतृप्रहेतृ की कन्या से विवाह किया (हेतृप्रहेतृ देखिये)। गौरमुख मुनि के पास चिंतामणि नामक एक मणि था। उसे प्राप्त करने के प्रयत्न में, यह मारा गया। जिस स्थान पर इसकी मृत्यु हुई, उस स्थान को 'नैमिषारण्य' कहते हैं (वराह. ११)।

दुर्जयामित्रकर्षण—(सो. सह.) अनंत का पुत्र। (सुप्रतीक १. देखिये)।

दुर्दम—(स्वा. प्रिय.) विक्रमशील राजा का पुत्र। इसकी माता का नाम कालिंदी था। प्रमुच नामक ऋषि की कन्या रेवती इसकी पत्नी थी।

२. दुर्गम का नामांतर (दुर्गम ३. देखिये)।

३. (सो. सह.) रुद्रश्रेण्य का पुत्र। कई ग्रंथों में, इसे भद्रश्रेण्य का पुत्र कह कर, इसका नाम दुर्मद बताया है (ह. वं. १.२९.६९; ब्रह्म. ११.४८)।

पद्म मत में यह भद्रसेन का पुत्र था। इसका पुत्र धनक (पद्म. सृ. १२)।

हैहय एवं काश्य कुलों की परस्पर स्पर्धा में भद्रश्रेण्य के अन्य पुत्रों का दिवोदास ने वध किया। किंतु अनजान होने से इसे छोड़ दिया। कालोपरांत इसने दिवोदास को पराजित कर, अपने पिता के वध का बदला लिया।

४. गोदावरी के तट पर प्रतिष्ठान नगर में रहनेवाला एक ब्राह्मण। यह किसी भी व्यक्ति से दान लेता था। इसलिये इसे नरक प्राप्त हुआ।

५. विश्वावसु गंधर्व का पुत्र। एक बार कैलास में वसिष्ठ, अत्रि आदि ऋषि शंकर की उपासना कर रहे थे। उस वक्त, अपनी सैंकडों पत्नियों के साथ यह वहाँ आया, तथा पास के 'हालास्यतीर्थ' में नग्नस्थिति में स्नान करने लगा। उसकी यह बदतमीजी को देख कर वसिष्ठ ने इसे शाप दिया, 'तुम राक्षस बनोंगे'। परंतु इसकी पत्नियों द्वारा प्रार्थना की जाने पर वसिष्ठ ने कहा, 'सोलह वर्ष के बाद तुम्हारा पति शाप से मुक्त हो कर तुम्हें वापस मिलेंगा। बाद में राक्षस हो कर यह गालव ऋषि को खाने दौडा। तब भगवान् विष्णु के सुदर्शन चक्र के कारण इसकी मृत्यु हो गयी। पश्चात् इसका उद्धार हुआ। एवं विमान में बैठ कर यह गंधर्व लोक में गया (स्कन्द. ३.१.४)।

दुर्दमन—(सो. कुरु.) भविष्य तथा भागवत के मतानुसार शतानीक का पुत्र। इसके लिये उदयन तथा उद्यान नामांतर भी प्राप्त है।

दुर्धर—रावण का एक प्रधान (वा. रा. सुं. ४९. ११)।

२. रामसेना का एक वानर। इसके पिता का नाम वसु (वा. रा. यु. ३०.३३)।

३. महिषासुर के पक्ष का एक राजा।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११०.२९; ३५)।

दुर्धर्ष—हनूमत् द्वारा मारा गया रावण का सेनापति (वा. रा. सुं. ४६)।

२. राम के द्वारा मारा गया एक रावणपक्षीय राक्षस (वा. रा. यु. ९. २१)।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

४. हिरण्याक्ष के पक्ष का एक असुर। यम ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ७०)।

दुर्धार—अंगदेश के राजा मायावर्मा का पुत्र (भवि. प्रति. ३.३१)।

दुर्बुद्धि—धृतराष्ट्र नाग का पुत्र। इसने अपने पिता के कहने पर, अपने बंधु की सहायता से, मृत हुएँ अर्जुन के सिर का हरण किया (जै. अ. ३९.६६-७६)।

दुर्बुद्धि जनमेजय— जनमेजय पारिक्षित २. देखिये।

दुर्मद—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया। (म. द्रो. १३०-३४)।

२. दुर्दम ३. देखिये।

३. वसुदेव का पौरवी से उत्पन्न पुत्र।

४. मयासुर का पुत्र। युद्ध के लिये वालिन् को इसने आह्वान दिया था। इस आह्वान को स्वीकार कर वालिन् ने इसे पराजित किया। पश्चात् यह भागने लगा। वालिन् ने इसका पीछा करने पर यह एक गुफा में जा कर छिप गया (आ. रा. सार. ८)।

दुर्मर्ष—एक असुर। समुद्रमंथन के वक्त इसने देवताओं से युद्ध किया था (भा. ८. १०. ३३)।

दुर्मर्षण--(सो. क्रोष्टु.) वसुदेव का बंधु। संजय को यह राष्ट्रपाली नामक भार्या से उत्पन्न हुआ था। (भा. ९. २४. ४२)।

२. (सो. कुरु.) भीम के द्वारा मारा गया धृतराष्ट्र का एक पुत्र (म. श. २५. ७)।

दुर्मित्र--(भविष्य.) कलियुग का एक राजा। यह बाह्लिक के बाद हुएँ पुष्पमित्र राजा का पुत्र था (भा. १२. १. ३४)।

२. (किलकिला. भविष्य.) भागवत मतानुसार किलकिला नगरी का एक राजा। विष्णु मतानुतार इसे पद्ममित्र, तथा वायु एवं ब्रह्मांड मतानुसार पद्ममित्र कहते थे।

दुर्मित्र कौत्स--सूक्तद्रष्टा। इसके सूक्त में, यह कुत्सपुत्र होने का निर्देश है (ऋ. १०. १०५. ११)।

दुर्मुख--कश्यप एवं खशा का पुत्र।

२. कद्रु का पुत्र एवं एक सर्प।

३. सुहोत्र नामक शिवावतार का शिष्य।

४. राम के पक्ष का एक वानर (वा. रा. यु. ३०. २३)।

५. वरुण की सभा का एक राक्षस सभासद (म. स. ९.१३)।

६. हिरण्याक्ष के पक्ष का एक राक्षस। यम ने दुर्धर्ष का वध किया। इसलिये इसने चिढ़ कर यम पर आक्रमण किया किंतु यम ने खड्ग से इसका वध किया (पद्म. सृ. ६८.१८)।

७. रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. यु. ९.३)।

८. महिषासुर के पक्ष का एक असुर। महिषासुर के कोषाध्यक्ष ताम्र ने इसे बाष्कल के साथ देवी से युद्ध करने के लिये भेजा। उस युद्ध में, देवी ने इसका वध किया (दे. भा. ५.१३)। पूर्वजन्म में यह पौलस्त्यों में से एक था (म. आ. ६१.८३)।

९. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। यह द्रौपदी-स्वयंवर में गया था (म. आ. १७७.१)। सहदेव ने इसे पराजित किया (म. द्रो. १०९.२०)। इसे यशोधर नामक पुत्र था (म. द्रो. १५९.४)। 'भांडारकर' महाभारत में, इसके नाम का यशोधन पाठभेद उपलब्ध है।

दुर्मुख पांचाल--पांचाल देश का राजा। इसको बृहदुक्थ वामदेव ऋषि ने महाभिषेक किया तथा महाभिषेक का रहस्य बताया। इसी कारण यह सम्राट् हुआ (ऐ. ब्रा. ८.२३)। यह युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित रहा होगा (म. स. ४.१९)। इसका पुत्र जनमेजय। भारतीय-युद्ध में वह युधिष्ठिर के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३६)।

दुर्योधन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र तथा गांधारी के सौ पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र एवं 'भारतीय-युद्ध' का सूत्रचालक। व्यास के महाभारत में एक 'खलनायक' के रुप में दुर्योधन की व्यक्तिरेखा चित्रांकित की गयी है। स्वजनों की हर एक वस्तु पर, पापी नजर डालनेवाला, लोभी, मत्सरी एवं मूढ राजा के रुप में इसका चरित्र महाभारत में दर्शाया गया है। किंतु दुर्योधन का यह चरित्रचित्रण एकांगी एवं इसके अन्य गुणों पर अन्याय करनेवाला है। यह उत्तम विद्यामंडित, रथी, सारथी, शस्त्रास्त्रविद्या में निष्णात, एवं उत्तम राज्यशासक था (म. उ. १६२. १९)। गदायुद्ध में भी यह अत्यंत प्रवीण था (म. आ. १३१)। यह एक सच्चा मित्र भी था। कर्ण, अश्वत्थामा, शल्य आदि अपने मित्रों के लिये इसने अपना सब कुछ न्योंछावर किया, एवं उनकी आमरण मैत्री संपादित की। एक राजा के नाते यह प्रजाहितदक्ष एवं आदर्श था, यों प्रशस्ति स्वयं युधिष्ठिर ने दी है।

अतीव राज्यतृष्णा एवं पांडवों के प्रति मत्सर के कारण, आमरण इसने पांडवों का द्वेष किया। इसके यही द्वेष का पर्यवसान आखिर भारतीय-युद्ध जैसे दारुण युद्ध में हुआ। उस युद्ध में इसका सारे संबंधियों के साथ सर्वनाश हुआ। भारतीय-युद्ध के प्रारंभ में कृष्ण ने अर्जुन को गीता सुनाई, एवं गीता से स्फूर्ति पा कर अर्जुन ने उस युद्ध में विजय प्राप्त किया। इस लिये अर्जुन को ही लोग भारतीययुद्ध का नायक समझते है। किंतु महाभारत में हरेक व्यक्ति से मित्रता वा शत्रुता के नाते संबंध रखनेवाला दुर्योधन यह एक ही सामर्थ्यशाली व्यक्ति है। दुर्दम महत्त्वाकांक्षा, संकुचित मनोवृत्ति, क्रूरता, एवं विनाश प्रवृत्ति इन स्वभावगुणों के कारण, दुर्योधन भारतीययुद्ध एवं महाभारत का खलनायक तथा नायक इन दो रूपोंमें एक ही साथ प्रतीत होता है।

जन्म--इसके जन्म के बारे में, महाभारत में दी गयी सारी आख्यायिकाएँ हेतुतः वक्रोक्तिपूर्ण. एवं इसके बारे में पाठकों का मन कलुषित कर देनेवाली है। यह कलि के अंश से उत्पन्न हुआ था। इसलिये इसके कारण सारे क्षत्रियों का नाश हुआ (म. आ. ६१.८०)। जन्म होते

ही दुर्योधन रोया। इसका रुदन गधे के चिल्लाने जैसा था। इसके रोते ही गधे, गीध, सियार, कौओ, आदि चिल्लाने लगे। तूफान चलने लगा, एवं दसों दिशाओं में खलबली मच गई। धृतराष्ट्र अत्यंत भयभीत हुआ। उसने भीष्म, विदुर, अनेक ब्राह्मणों तथा आप्तों को बुला कर कहा, 'राजपुत्र युधिष्ठिर दुर्योधन से बड़ा है। वह हमारे वंश का विस्तार भी करेगा। इस पर हमारा कुछ आक्षेप नहीं है। किंतु उसके बाद दुर्योधन राजा बनना चाहिये। हमारी इच्छानुसार वह राजा बनेगा, या नहीं, एवं बाद में क्या होगा, यह बताइये'।

धृतराष्ट्र ने यह कहते ही, क्रूर तथा हिंस्र पशु फिर से चिल्लाने लगे। चारों ओर से भयंकर अपशकुन हुएँ। उपस्थित ब्राह्मण एवं विदुर ने धृतराष्ट्र से कहा, 'इस पुत्र के जन्मकाल में, चूँ कि इतने अपशकुन हुएँ है, इससे स्पष्ट है कि, यह कुलक्षय करेगा। इसलिये इसका त्याग करना ही उचित है। तुम्हारे कुल का क्षेम एवं संसार का कल्याण यदि तुम चाहते हो, तो इस पुत्र का त्याग करो' (म. आ. १०७)।

अस्त्रविद्या--दुर्योधन युधिष्ठिर से छोटा था। किंतु दुर्योधन एवं भीम का जन्म एक ही दिन हुआ था। बचपन में कौरव एवं पांडव इकठ्ठे खेलते थे। धनुर्विद्या, अस्त्रविद्या आदि की शिक्षा, इन सब भाईयों ने मिलजुल के द्रोणाचार्य से ली थी (म. आ. १२२-१२३)। गदा-युद्ध की शिक्षा इसने बलराम से प्राप्त की थी (भा. १० ५७. २६; विष्णु. ४.१३)।

पांडवों को विषप्रयोग--पांडवों का युद्धकौशल्य एवं दिन ब दिन बढ़ता हुआ सामर्थ्य देख कर, कौरवों, एवं विशेष कर इसके मन में; उनके प्रति मत्सर उत्पन्न हुआ। हर एक जगह पाडवों के आगे जाने की ईर्ष्या इसके मन में उत्पन्न हुई। कौरव-पांडवों के गुरु द्रोणाचार्य ने गुरुदक्षणा के रूप में, द्रुपद को रणांगण में जीत कर लाने की आज्ञा की। पांडवों को फजीहत करने के हेतु दुर्योधन ने सर्व प्रथम द्रुपद को जीतने का प्रयत्न किया। किंतु दुर्योधन का यह प्रयत्न विफल हुआ, एवं कौरवों की दुर्दशा हुई।

धनुर्विद्या एवं अस्त्रविद्या में पांडव कौरवों से कतिपय श्रेष्ठ है, यह जान कर उनके नाश के लिये, यह नये-नये षड्यंत्र रचने लगा। सारा राज्य मुझे ही प्राप्त हो, इस लोभ के कारण यह पांडवों के नाश के नये-नये मार्ग ढूँढ़ता रहा। इसका मामा शकुनि एवं इसका मित्र कर्ण, उस कार्य में इसकी सहायता करने लगे।

एक बार भीम शहर के बाहर बाग में सोया था। उस वक्त, उसे गंगा नदी में फेंक कर, एवं अर्जुन तथा युधिष्ठिर को कैद कर, राज्य हासिल करने की तरकीब इसने सोची। गंगा नदी के किनारे प्रमाणकोटि तीर्थ पर इसने जलक्रीडा समारोह का आयोजन किया। सारे पांडवों को इसने उस समारोह के लिये बुलाया। भीम अत्यंत भुक्खड़ है, यह जान कर, उसके तयार अन्न में कालकूट विष इसेन मिलाया। एवं बडे ही प्रेम से वह अन्न भीम को खिलाया। बाद में कौरव पांडव सारे मिल कर जलक्रीड़ा करने गये। वहाँ जलविहार से भीम थक गया, तथा गंगा किनारे आराम से सो गया। वहाँ के ठंडे वायु ने तथा विषप्रभाव ने उसे निश्चेष्ट बना दिया। यह अवसर पा कर, दुर्योधन नें उसे गंगा नदी में ढकेल दिया (म. आ. १२७)। इस तरह, भीमरूपी कंटक अपनी राह में से दूर हुआ, यह सोच कर दुर्योधन को अत्यंत आनंद हुआ। किंतु भीम पुनः वापस आया, एवं इसकी यह अधम कृति, उसने बंधुओं को बताई। इस प्रकार भीम का वध करने का दुर्योधन का षड्यंत्र विफल रहा। फिर भी, भीम के सारथी को इसने गला घोंट कर मार ही दिया (म. आ. १२८)।

लाक्षागृहदाह--भीम का वध करने का यह प्रयत्न असफल होने के पश्चात्, पांडव एवं उनकी माता कुंती को जला कर मार डालने का व्यूह इसने रचा। इसने वारणावत-तीर्थ में, अपने मित्र पुरोचन द्वारा एक लाक्षागृह बनवाया। पश्चात्, धृतराष्ट्र के द्वारा पांडवों को, तीर्थयात्रा के निमित्त वारणावत भिजवाने की व्यवस्था इसने की। इसने बनायें लाक्षागृह में पांडव जल कर मरनेवाले ही थे, किंतु विदुर की सहायता से वे बच गये। उनकी जगह, अपने पाँच पुत्रों सहित एक भीलनी जल कर मृत हो गई। उनकी छः लाशें देख कर दुर्योधन अत्यंत आनंदित हुआ। लाक्षागृह की इस दुर्घटना का दोष लोगों ने कौरवों पर ही लगाया। इस प्राणसंकट से पांडव बच गये, यह ज्ञात होते ही दुर्योधन अत्यंत शरमाया (म. आ. १२९-१३८)। यह वृत्त धृतराष्ट्र को ज्ञात होने पर, उसने पांडवों को इन्द्रप्रस्थ में ला रखा। धृतराष्ट्र का यह कृत्य दुर्योधन को बिल्कुल अच्छा नहीं लगा।

विवाह--द्रौपदीस्वयंवर में दुर्योधन उपस्थित था (म. आ. १७७. १)। दुर्योधन ने, कलिंग देश के राजा

चित्रांगद की कन्या का, स्वयंवर में हरण किया (म. शां. ४. १२–१३)। काशिराज की कन्या दुर्योधन की स्त्री थी (म. आ. परि. १. क्र. १०७. पंक्ति १)। इसकी पत्नी का नाम भानुमती था (स्कंद. ६. ७३–७४)। यह बलराम का भी दामाद था (मार्क. ६. ३)। इसका पुत्र लक्ष्मण तथा कन्या लक्ष्मणा।

अर्धराज्य-प्रदान—धृतराष्ट्र ने पांडवों को आधा राज्य दे कर इन्द्रप्रस्थ में रखा। वहाँ उन्होंने अगणित संपत्ति प्राप्त की। युधिष्ठिर ने राजसूय यज्ञ किया। उसमें दुर्योधन धृतराष्ट्रसहित आया था। दुर्योधन को कोशागार का अधिकार दिया था। पांडव फजीहत हो इस हेतु से, इसने कोशागार में से अपरिमित द्रव्य खर्च किया परंतु द्रव्य की कमी नहीं पड़ी। इसके अतिरिक्त पांडवों की मयसभा देख कर, इसे पांडवों के तथा उनकी संपत्ति के प्रति, बड़ी ही ईर्ष्या उत्पन्न हुई (म. आ. १२९. ९–१०)। मयसभा की रचना में पानी की जगह जमीन, तथा जमीन की जगह पानी दीखता था। इससे इसकी फजीहत हो कर, अन्य स्त्रियों के साथ द्रौपदी भी हँसी। इससे इसे अत्यंत विषाद हुआ। यह हस्तिनापुर चला गया (म. स. परि. १. क्र. ३२. पंक्ति ११; अध्याय ४३)। पांडवों की संपत्ति देख कर दुर्योधन को बुरा लगा। तब धृतराष्ट्र ने इसे शील का महत्त्व निवेदित किया (म. शां. १२४)। परंतु उससे इसे कुछ फायदा नहीं हुआ।

द्यूतक्रीडा—पांडवों की संपत्ति हरण करने के हेतु से, इसने कपटद्यूत में पारंगत शकुनि मामा की अनुमति से, युधिष्ठिर को द्यूत खेलने के लिये आवाहन किया। द्यूत में पांडवों का सर्वस्व इसने जीत लिया। द्रौपदी की इसने भरी सभा में अवहेलना करवाई। इसने भीष्म-द्रोण आदि के प्रतिकार की भी पर्वाह नहीं की। द्यूत में हार जाने के कारण, पांडवों को बारह वर्ष वनवास तथा एक वर्ष अज्ञातवास का स्वीकार करना पड़ा। इसके अतिरिक्त अज्ञातवास में प्रकट होने पर, पुनः बारह वर्षों तक वनवास करना पडेगा, यह शर्त भी उन पर ड़ाली गयी। इस तरह, पांडवों को वनवास में भेज कर, यह उनके राज्य का उपभोग लेने लगा।

पांडवों के वनवास गमन के पश्चात्, कीर्तिप्राप्ति की इच्छा से, इसने नीति से राज्य किया। किंतु पांडव कहाँ हैं, क्या करते हैं आदि के बारे में गुप्त खोज यह हमेशा करता रहता था।

घोषयात्रा—एकबार, पांडव द्वैतवन में हैं, यह ज्ञात होते ही, घोषयात्रा के निमित्त यह वहाँ गया। इसके साथ इसके अनुयायी कर्ण, दुःशासन आदि थे। गोधन के अवलोकन के बाद, यह द्वैतवन के समीप, सरोवर में क्रीड़ा करने के लिये गया। उस वन में, पांडवों के संरक्षण के लिये, इन्द्र ने चित्रसेन गंधर्व को रखा था। चित्रसेन वही सरोवर में अपनी स्त्रियों के साथ जल क्रीड़ा कर रहा था। उसने दुर्योधन से वहाँ आने के लिये मनाई की। दुर्योधन ने उसे ही वहाँ से चले जाने के लिये कहा। इससे क्रोधित हो कर उन दोनों में युद्ध हुआ। उसमें चित्रसेन ने कर्ण को भगा दिया तथा दुर्योधन को बद्ध कर दिया।

एक सैनिक के द्वारा यह वृत्त पांडवों को मालूम हुआ। तब भीम को बड़ा अच्छा लगा। परंतु युधिष्ठिर ने पांडवों को उपदेश दे कर दुर्योधन को छुड़वाया। अर्जुन ने चित्रसेन का पराभव किया तथा दुर्योधन को छुड़ाया। धर्मराज को वंदन कर, मानहानि से क्रोधित हो कर, यह हस्तिनापुर वापस गया।

हस्तिनापुर वापस आते ही, इसके मित्र कर्ण ने इसका अभिनंदन किया। किंतु दुर्योधन ने उसे सारी घटना सुनाई तथा कहा कि, 'यह मुक्तता अर्जुन द्वारा हो गई है।' इसीलिये प्रायोपवेशन कर, प्राणत्याग करने का निश्चय इसने किया। अपने भाई दुःशासन को बुला कर, शकुनि तथा कर्ण की सहायता से, राज्य करने के लिये इसने उसे कहा। कर्ण तथा शकुनि ने इसे बहुत समझाया परंतु इसका निश्चय नहीं बदला। इसने वल्कल परिधान किये तथा दर्भासन पर यह बैठ गया। 'आथर्व मंत्र' कह कर इसने होमहवन शुरू किया। इतने में इसने एक स्वप्न देखा। उस स्वप्न में इसे दिखा कि, इसका सारा कौरवपरिवार एवं अनुयायी दैत्य ही है। पश्चात् एक राक्षसी की सहायता से, यह पाताल में गया। वहाँ दैत्यों ने आशीर्वाद दे कर इसे वापस भेज दिया। हस्तिनापुर आने के पश्चात्, भीष्म ने इसे पांडवों से सख्य करने के लिये कहा; परंतु इसने उसका उपहास किया (म. व. २३७–२४१)।

वैष्णवयज्ञ—इसके बाद, दुर्योधन ने कौरवों की ओर से, कर्ण को दिग्विजय के लिये भेजा। उसके आने के बाद, दुर्योधन ने राजसूय यज्ञ करने का निश्चय किया। परंतु पुरोहितों ने कहा, 'यह यज्ञ युधिष्ठिर द्वारा किया गया है, अतः तुम न कर सकोगे'। तब दुर्योधन ने 'वैष्णवयज्ञ' किया तथा खिजलाने के हेतू, पांडवों को यज्ञ का निमंत्रण

दिया। उस पर युधिष्ठिर ने आनंद प्रदर्शित कर कहा, 'तेरह वर्ष पूर्ण होने के पहले हम नहीं आ सकते' (म. व. २४१-२४३)।

द्रौपदी सत्वपरीक्षा—पांडवों का नाश करने की ही इच्छा दुर्योधन के मन में हमेशा रहती थी। एक बार अपने 'अयुत' नामक शिष्यपरिवार के साथ दुर्वास ऋषि इसके पास आया। इसने दीर्घकाल तक दुर्वास की कठिन सेवा की। संतुष्ट हो कर दुर्वास ने इसे वर माँगने के लिये कहा। तब कर्ण, शकुनि आदि की सलाह से इसने वर माँगा, 'जिस प्रकार आप यहाँ अतिथि बन कर आये हैं, उसी प्रकार शिष्यों सह आप पांडवों के पास काम्यकवन में जायें तथा उनका भोजन होने के बाद, द्रौपदी से अन्न माँग कर उसे त्रस्त करें। द्रौपदी अन्न न दे सके, तो उसे शाप दे' यह चाल दुर्वास को अच्छी नहीं लगी, परंतु निरुपाय हो कर उसने इसे मान्यता दी। पश्चात् पांडवों के पास जा कर, दुर्वास ने अन्न की याचना की। द्रौपदी के द्वारा यह माँग पूरी होने के बाद, दुर्वास के शाप से पांडव बच गये (दुर्वास देखिये)।

विराटनगरी में—बारह वर्ष वनवास के बाद, विराट के घर अज्ञातवास करने के लिये पांडव गये। दुर्योधन को कीचकवध का समाचार मिला (म. वि. २९.२७)। इसको शंका आई, 'चाहे जो हो, पांडव विराट के घर ही होंगे। इस समय यदि उन्हें ढूँढा गया, तो उन्हें पुनः बारह वर्षों तक वनवास में रहना पड़ेगा'। पांडवों को ढूँढने के हेतु, विराट का गोधन हरण करने का बहाना इसने सोचा, एवं उस काम के लिये इसने सुशर्मा को भेज दिया। परंतु वहाँ सुशर्मा का पराभव हुआ। बाद में भीष्मादिकों को साथ ले कर, इसने उत्तर दिशा से विराट नगरी पर आक्रमण किया। उस समय भी यह पराजित हुआ।

संजयदौत्य—इस प्रकार जो भी उपाय इसने किये, सब निष्फल हो कर पांडव प्रकट हुएँ तथा उपप्लव्य नगर में रहने लगे। यथान्याय आधा राज्य हमें मिले, इस हेतु से, उन्हों ने द्रुपद राजा के पुरोहित को धृतराष्ट्र के पास भेजा। परंतु उसका कुछ उपयोग नहीं हुआ। उल्टे धृतराष्ट्र ने ही संजय को युधिष्ठिर के पास भेजा। संजय ने धृतराष्ट्र का संदेश पांडवों को बताया, 'तुम पांडव धर्मात्मा हो। इसलिये हिंसारूप युद्ध न करते हुए भिक्षा माँग कर कहीं भी स्वस्थ चित्त से वास करो। भिक्षा से उपजीविका करना क्षत्रियों के लिये निंद्य है ऐसा यदि तुम सोंचते हो, तो क्षत्रियधर्म से तुम कृष्ण या द्रुपद के दरबार में रह सकते हो। कृष्ण तुम्हारा मित्र है। तथा द्रुपद तुम्हारा श्वशुर है। उसके पास रहने पर वे तुम्हें ना नहीं करेंगे। इसलिये दो में से एक मार्ग का स्वीकार कर राज्यविभाग न माँग कर, चुपचाप रहो,' (म. उ. २७)। संजय का यह भाषण सुन कर युधिष्ठिर को अत्यंत आश्चर्य हुआ। उसने कृष्ण को धृतराष्ट्र के पास भेजा (म. उ. ७०)। फिर भी उसका कुछ उपयोग न हो कर युद्ध के सिवा पांडवों को कोई चारा नहीं रहा। पांडव तथा दुर्योधन सेनाएँ इकठ्ठी करने लगे। मद्रदेश का राजा शल्य, पांडवों के पक्ष में जाना चाहता था। बडी युक्ति से दुर्योधन ने उसे अपने पक्ष में ले लिया (म. उ. ८.५३*)। कृष्ण की सहायता प्राप्त करने के लिये, दुर्योधन स्वयं द्वारका गया था। अर्जुन तथा यह कृष्ण के यहाँ एक ही साथ पहुँचे। अर्जुन ने स्वयं कृष्ण तथा दुर्योधन ने समस्त यादव सेना, अपने लिये कृष्ण से माँग ली (म. उ. ७.१९-२०)। बाद में दुर्योधन कृतवर्मा के पास गया। उसने एक अक्षौहिणी सेना इसे दी (म. उ. ७.२९; १९.१७)।

कृष्णदौत्य—दुर्योधन को युद्ध से परावृत्त करने के लिये कृष्ण (म. उ. ९३), परशुराम (म. उ. ९४.३), कृपाचार्य (म. श. ३), द्रोण (म. उ. १३७.२२), भीष्म (म. भी. ११६.४६) तथा अश्वत्थामा (म. क. ६४.२०) ने प्रयत्न किये; परंतु उसका कुछ उपयोग नहीं हुआ। कण्व ने भी उसे काफी उपदेश किया। परंतु कुछ उपयोग न हो कर, इसने कण्व का केवल उपहास किया। इस कारण कण्व ने इसे शाप दिया (म. उ. ९५)।

पांडवों की ओर से, दौत्य करने के लिये कृष्ण हस्तिनापुर में आया। उस समय, दुर्योधन ने कृष्ण को भोजन के लिये बुलाया। किंतु कृष्ण ने उसे अस्वीकार कर दिया (म. उ. ८९.३२)। पश्चात् धृतराष्ट्र के दरबार में इसने कृष्ण से कहा, सुई के अग्र पर रहेगी, इतनी भी भूमि हम पांडवों को नहीं देंगे (म. उ. १२५.२७)। इतना कह कर भरी सभा से यह अपने बंधु तथा अनुयायियों सहित चला गया (म. उ. १२६.२४-२७)। कृष्णदौत्य के समय कृष्ण को कैद करने का षड्यंत्र इसने रचा था, किंतु वह असफल हो कर पुनः इसकी फजीहत हुई।

भारतीययुद्ध—इस प्रकार युद्ध प्रारंभ हुआ। कौरवपक्ष का पहला सेनापति भीष्म था। उसके बाद, अश्वत्थामा तक अनेक सेनापति हुएँ परंतु उनके होते हुए भी दुर्योधन का अनेक बार पराजय ही हुआ।

प्रमुख योद्धाओं का रण में पतन होने के बाद, दुर्योधन अत्यंत भयभीत हुआ (म. श. २८.२४)। अन्त में 'जलस्तंभन विद्या' के योग से यह द्वैपायन सरोवर के जल में छिप कर बैठ गया (म. श. २९.७)। यह वृत्त पांडवों को ज्ञात हुआ, तब वे वहाँ आये। उस समय दुर्योधन बाहर नहीं आता था, इसलिये युधिष्ठिर ने इसके साथ कठोर भाषण किया (म. श. ३०)।

मृत्यु—दुर्योधन बड़ा मानी तथा जिद्दी था। युधिष्ठिर के कहने पर द्वैपायन ह्रद से यह बाहर आया। गदायुद्ध की तय्यारी होने लगी। युधिष्ठिर ने इसे उदार भाव से कहा, 'पांडवों में से किसी एक के साथ तुम युद्ध करो। उस युद्ध में तुम्हारा जय होने पर, तुम्हारा राज्य तुम्हे वापस देने का आश्वासन हम देते हैं'। नकुल एवं सहदेव से गदायुद्ध कर के, उनका पराजय करना इसके लिये आसान था। फिर भी इसने तुल्यबल भीम को ही युद्ध के लिये आवाहन किया। आखिर भीम नें गदायुद्ध के नियम तोड़ कर इस पर गदाप्रहार किया एवं इसका वध किया (म. श. ३३)।

भीम नें गदा युद्ध के नियम तोड़ कर इसकी बायी जाँघ गदाप्रहार से छिन्नभिन्न कर दी। गदायुद्ध का सर्वमान्य संकेत है कि, नाभि के नीचे कभी भी प्रहार नही किया जाता। फिर भी गदायुद्ध में दुर्योधन का पराजय अशक्य देख कर जंघा पर गदाप्रहार करने का इशारा कृष्ण ने भीम को किया। उस इशारे के अनुसार गदा प्रहार कर के भीम ने दुर्योधन की बायी जाँघ तोड़ डाली। यह अधर्म देख कर बलराम भड़क उठा। यह घटना मार्गशीर्ष बदि अमावस्या के दिन दोपहर में हुई (भारत-सावित्री)।

दुर्योधन का मनोगत—मृत्यु के पहले, कृष्ण एवं दुर्योधन में जो संवाद हुआ, उससे दुर्योधन का व्यक्तित्त्व, मनोगत एवं मनोव्यथाओं पर गहरा प्रकाश पडता है। महाभारत के शल्यपर्व में दिया गया यह संवाद, दुर्योधन-चरित्र की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है।

मृत्युशय्या पर पडे हुए दुर्योधन की ओर इशारा कर के कृष्ण ने कहा, 'इस दुर्योधन ने लोभवश, भीष्म द्रोण आदि का आज्ञापालन नहीं किया। अपने पिता के राज्य का उचित हिस्सा पांडवों द्वारा माँगने पर भी इसने नहीं दिया। यह अधम पुरुष न तो मित्र कहने के लायक है, न शत्रु। इस अवयवभग्न एवं काष्ठवत् मनुष्य के साथ बात करने में कुछ फायदा नहीं। चलो चलें। बडी अच्छी बात हुई, जो यह पापी पुरुष अपने बांधवों के साथ नष्ट हुआ।

कृष्ण का यह निंदागर्भ वक्तव्य सुन कर, दुर्योधन, यद्यपि खून से लथपथ तथा शक्तिहीन था, घुटनों के बल धरती पर हाथ टेक कर, ऊपर उछल पडा। जैसा कोई पूँछहीन साँप उछल कर सीधा खडा हो जाय। अपनी द्वेषभरी नजर चारों ओर घुमा कर, वेदना की तीव्रता के बावजूद, यह ठोस एवं कडे शब्दों में बोला, 'हे कंस के दास के पुत्र, तू बड़ा ही बेशरम है। भीम को जंघाघात करने को प्रेरित कर, तू ने मेरा अधर्म से वध किया है। धर्मयुद्ध करने वाले कुरुकुल का तू ने ही कुटिलता से संहार किया है'।

'लज्जा एवं घृणा ये चीजें तेरे पास नहीं है। शिखंडी को आगे बढ़ा कर, पितामह भीष्म को तू ने मारा। अश्वत्थामावध की किंवदन्ती उड़ा कर, तू ने ही द्रोण का वध करवाया। अर्जुनवध के लिये कर्ण ने रखी हुई 'अमोघशक्ति' घटोत्कच पर खर्च करने के लिये कर्ण को, तू ने ही विवश किया। हस्तविहीन भूरिश्रवा का वध तू ने ही करवाया। कर्ण के सर्पबाण से, रथ को जमीन में दबा कर, अर्जुन को तू ने ही बचाया। भूमि में फँसे हुए रथ चक्र को कर्ण बाहर निकाल ही रहा था, कि तू ने अधर्म से उस का वध करवाया। सीधे मार्ग से लड़ने पर, जय मिलना पांडवों के लिये असंभव था। इस कारण, अधर्म से लड़ने पर तू ने पांडवों कों विवश किया'।

दुर्योधन ने आगे कहा, 'आयु भर, मैं ने दानधर्म किया, अत्युत्तम राज्य चलाया, धर्म एवं नीति के साथ आचरण किया। आखिर तक मैं ने धर्मयुद्ध किया, एवं धर्मयुद्ध करते करते ही मैं जा रहा हूँ। देवदुर्लभ तथा मानवों को अप्राप्य ऐश्वर्य का उपभोग मैं ले चुका हूँ। आज वैसा ही मृत्यु मुझे मिल रहा है। मैं सबांधव स्वर्ग सिधारूँगा। किंतु अधर्म पर चलनेवाले तुम, नरक में ही गमन करोगे'।

दुर्योधन के इस प्रकार कहने पर, उसपर आकाश से देवगंधर्वो द्वारा फुलों की बौछार हुई। स्वयं कृष्णार्जुन यह देख कर चकाचौंध हो गये, फिर साधारण जनता का क्या पूँछे? पश्चात् सारे लोग युद्धनिवासस्थान पर वापस लौटे

पश्चात् संजय दुर्योधन को मिलने के लिये आया। उस समय भी अन्य समाचार के साथ, दुर्योधन ने अपने धर्माचरण की गवाही पुनः पुनः दी।

अश्वत्थामा खबर लेने पहुँचा। दुर्योधन ने उसे सैनापत्य दे कर, फिर यही बात दुहरायी। अपना धर्मपालन तथा पांडवों के अनीतिमय आचरण का कड़ा निषेध इसने व्यक्त किया। अश्वत्थामा क्रोधवश पांडवों के संहारार्थ निकला। लगभग पूरे संहार की खबर दुर्योधन को स्वयं अश्वत्थामा ने दी। उस पर दुर्योधन ने संतोष व्यक्त किया, तथा यह पंचतत्व में विलीन हुआ (म. सौ. ९)।

दुर्योधन के अग्निसंस्कार का निर्देश प्राप्त नहीं है। फिर भी यह स्वर्ग में देवताओं के साथ बैठा हुआ युधिष्ठिर ने प्रत्यक्ष देखा (म. स्वर्गा. १.४-५)।

कौटिल्य के मत में, बांधवों के साथ वैर करने से इसका नाश हुआ (कौटिल्य. अर्थशास्त्र. पृ. २२)।

२. (सू. इ.) दुर्जय राजा का पुत्र। इसकी पत्नी नर्मदा। इसे सुदर्शना नामक कन्या थी। वह अग्नि को विवाह में दी गयी थी (म. अनु. २.१२-५० कुं.)।

दुर्व--(सो. कुरु. भविष्य.) नृपंजय राजा का पुत्र। मत्स्यमत में उर्व तथा विष्णुमत में मृदु पाठभेद है।

२. बुध ७. देखिये।

दुर्वाक्षी--वसुदेव के भाई वृक की पत्नी।

दुर्वार--कुंडलनगराधिपति सुरथ राजा का पुत्र। सुरथ राजा ने राम का अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिया। उस अश्व को छुडाने के लिये शत्रुघ्न ने सुरथ से युद्ध किया। उस युद्ध में यह शामिल था (पद्म. पा. ४९)।

दुर्वारण—जालंधर दैत्य का दूत। जालंधर की आज्ञानुसार, क्षीरसागर से देव-दैत्यों ने निकाले चौदह रत्न माँगने के लिये, यह इंद्र के पास गया। परंतु उन्हें देने से इन्कार कर, इंद्र ने जालंधर से युद्ध घोषित किया। पश्चात् देव दैत्यों का संग्राम हो कर, उस में यम के साथ इसका युद्ध हुआ (पद्म. उ. ५)। बाद में विष्णु या शंकर में से प्रथम किससे युद्ध किया जावे, यह समस्या जालंधर के सामने आई। तब इसने उसे सलाह दी, 'वह प्रथम शंकर से युद्ध करें' (पद्म. उ. १६)।

दुर्वासस् आत्रेय--बडे उग्र तथा क्रोधी स्वभाव का एक ऋषि (मार्कं. १७.९-१६, विष्णु. १.९.४.६)। इसीके नाम से, क्रोधी एवं दूसरे को सतानेवाले मनुष्य को 'दुर्वासस्' कहने की लोकरीति प्रचलित हो गयी हैं।

जन्मकथा—दुर्वासस् का जन्म किस प्रकार हुआ, इसकी तीन अलग कथाएँ प्राप्त है। वे इस प्रकार हैः—

(१) ब्रह्माजी के मानसपुत्रों में से, दुर्वासस् एक था।

(२) अत्रि तथा अनसूया के तीन पुत्रों में से, दुर्वासस् एक था (भा. ४.१, विष्णु. १.२५)। पुत्रप्राप्ति के हेतु, अत्रि त्र्यक्षकुल पर्वत पर तपस्या करने गया। वहाँ उसने काफी दिनों तक तपस्या की। उस तपस्या के कारण, उसके मस्तक से प्रखर ज्वाला निकली, एवं त्रैलोक्य को त्रस्त करने लगी। पश्चात् ब्रह्मा, विष्णु, एवं शंकर अत्रि के पास आये। अत्रि का मनोरथ जान कर, अपने अंश से तीन तेजस्वी पुत्र होने का वर उन्होंने अत्रि को दिया। उस वर के कारण, अत्रि को ब्रह्मा के अंश से सोम (चंद्र), विष्णु के अंश से दत्त, एवं शंकर के अंश से दुर्वासस् ये तीन पुत्र हुएँ (शिव. शत. १९)

(३) शंकर के अवतारो में से दुर्वासस् एक था (मार्कं. १७.९-११; विष्णु. १.९.२)। शंकर ने त्रिपुर का नाश करने के लिये एक बाण छोड़ा। त्रिपुर का नाश करने के बाद, वह बाण छोटे बालक का रूप ले कर, शंकर की गोद में आ बैठा। उस बालक को ही दुर्वासस् नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १६०.१४-१५)।

पुराणों में इसे अत्रि ऋषि का पुत्र एवं दत्त आत्रेय का भाई कहा गया है (ब्रह्म. ११७.२; अग्नि. २०.१२)। किंतु कौन से निश्चित काल में यह पैदा हुआ, यह कहना मुष्किल है। पौराणिक कथाओं में, कालदृष्टि से परस्परों से सुदूर माने गये अनेक राजाओं के साथ, इसका निर्देश प्राप्त है। उनके नाम इस प्रकार हैः—(१) अंबरीष (भागवत. ९.४.३५), (२) श्वेतकि (म. आ. परि. १. ११८), (३) राम दाशरथि (पद्म. उ. २७१.४४), (४) कुन्ती (म. आ. ६७), (५) कृष्ण (ह. वं. २९८-३०३), (६) द्रौपदी (म. व. परि. १ क्र. २५)।

इन निर्देशों से, प्रतीत होता है कि, नारद के समान दुर्वासस् भी तीनों लोक में अप्रतिबंध संचार करनेवाली एक अमर व्यक्तिरेखा थी। इंद्र से अंबरीष, राम एवं कृष्ण तक, तथा स्वर्ग से पाताल तक किसी भी समय वा स्थान, प्रकट हो कर, अपना विशिष्ट स्वभाव दुर्वासस् दिखाता है। कालिदास के 'शाकुंतल' में भी, शकुंतला की संकटपरंपरा का कारण, दूर्वासस् का शाप ही बताया गया है। क्रुद्ध हो कर शाप देना, एवं प्रसन्न हो कर वरदान देना, यह दूर्वासस् के स्वभाव का स्थायिभाव था। इस कारण सारे लोग इससे डरते थे।

इसका स्वभाव बड़ा ही क्रोधी था। इसके क्रोध की अनेक कथाएँ पुराणों में दी गयी है। यह स्वयं कठोर व्रत का पालन करनेवाला तथा गूढ़ स्वभाव का था। इसके मन में क्या है, इसका पता यह किसी को नहीं लगने देता था।

स्वरूपवर्णन—इसका वर्ण कुछ पिंग-हरा तथा दाढी बहुत ही लंबी थी। यह अत्यंत कृश तथा पृथ्वी के अन्य किसी भी ऊँचे मनुष्य से अधिक ऊँचा था। यह हमेशा चिथड़े पहनता था। एक बिल्ववृक्ष की लंबी लकड़ी हाथ में पकड़ कर तीनों लोकों में स्वच्छन्दता से घुमने की इसकी आदत थी (म. व. २८७.४-६; अनु. १५९. १४-१५)। अपने क्रोधी स्वभाव से यह हमेशा लोगों को त्रस्त करता था।

और्व ऋषि की कन्या कंदली इसकी पत्नी थी। एक-बार इसने क्रोधित हो कर, शाप से उसको जला दिया (ब्रह्मवै. ४.२३-२४)।

जाबालोपनिषद में इसका निर्देश है (जा. ६; नारद तथा वपु देखिये)। जैमिनिगृह्यसूत्र के उपाकर्मांग तर्पण में दुर्वासस् का निर्देश है। उस से ज्ञात होता है कि यह एक सामवेदी आचार्य था। इसके नाम पर; आर्याद्विशती, देवीमहिम्नस्तोत्र, परशिवमहिमास्तोत्र, ललितास्तवरत्न आदि ग्रंथों का निर्देश है (C.C.)।

दुर्वासस् के क्रोध की एवं अनुग्रह की अनेक कथाएँ पुराणों में दी गयी है। उनमें से कुछ उल्लेखनीय कथाएँ नीचे दी गयी हैं।

अनुग्रह-कथा—(१) श्वेतकि नामक राजा का यज्ञ इसने यथासांग पूर्ण करवाया (म. आ. परि. १.११८)।

(२) एक बार शिलोञ्छवृत्ति से रहनेवाले मुद्गल की सत्वपरीक्षा इसने ली। अनन्तर उस पर अनुग्रह कर के, इसने उसे सदेह स्वर्ग जाने का वरदान दिया (म. व. २४६)।

(३) कुन्ती की परिचर्या से संतुष्ट हो कर, इसने कुन्ती को देवहूती नामक विद्या दी। उस विद्या के कारण, कुन्ती को इंद्रादि देवताओं से कर्णादि छः पुत्र हुएँ। (भा. ९.२४.३२)। इसने कुंती को 'अथर्वशिरस् मंत्र' भी दिए थे (म. व. २८९.२०)।

(४) एक बार स्नान करते समय, इसका वस्त्र बह गया। नग्न स्थिति में पानी के बाहर आना, इसे लज्जास्पद एवं कष्टकर महसूस हुआ। इसी समय पानी के उपरी भाग में द्रौपदी स्नान कर रही थी। दुर्वासस् की कठिनाई देख कर; उसने अपने वस्त्र का पल्ला फाड कर पानी के प्रवाह में उसे बहा दिया। उस पल्ले से इसका लज्जारक्षण हुआ। द्रौपदी की समयसूचकता से इसे अत्यंत आनंद हुआ। इस उपकार का प्रतिसाद देने के लिये, इसने द्रौपदी वस्त्रहरण के प्रसंग में, द्रौपदी का लज्जा-रक्षण किया (शिव. शत. १९)।

क्रोध-कथा--(१) स्वायंभुव मन्वन्तर में, एक विद्याधर द्वारा दी गई पुष्पमाला इसने इंद्र को दी। इंद्र का ध्यान न रहने के कारण, वह माला ऐरावत के पैरों के नीचे कुचली गयी। माला के इस अपमान को देख कर, यह भड़क उठा। इसने इंद्र को शाप दिया, 'तुम्हारी संपत्ति नष्ट हो जायगी'। इंद्र ने क्षमा माँगी। फिर भी इसने उःशाप नहीं दिया। तब विष्णु की आज्ञा से इंद्र ने समुद्रमंथन कर के संपत्ति पुनः प्राप्त की (विष्णु. १.९; पद्म. स. १-४)। समुद्रमंथन का यह समारोह चाक्षुष मन्वन्तर में हुआ (भा. ९.४; पद्म. सृ. २३१-२३३; ब्रह्म. वै. २.३६; स्कंद. २.९.८-९)।

(२) एक बार अम्बरीष राजा को इसने बिना किसी कारण ही त्रस्त किया। किंतु पश्चात् विष्णुचक्र से जीवित बचने के लिये, इसे अम्बरीष के ही पैर पकड़ने पडे (अम्बरीष २. देखिये)।

(३) एकबार दुर्वासस् ने एक हजार वर्षों का उपवास किया। उस उपवास के बाद भोजन पाने के लिये, यह दाशरथि राम के पास गया। उस समय राम, काल से कुछ संभाषण कर रहा था। किसी को अन्दर छोड़ना मना था। आज्ञाभंग का दंड मृत्यु था। इस कारण, लक्ष्मण ने दुर्वासस् को भीतर जाना मना किया। दुर्वासस् क्रुद्ध हो कर शाप देने को तैयार हो गया। यह देख कर लक्ष्मण ने इसे भीतर जाने दिया। राम ने इच्छित भोजन दे कर इस को तृप्त किया। किंतु लक्ष्मण को आज्ञाभंग के कारण, देह छोड़ना पडा (वा. रा. उ. १०५; पद्म. उ. २७१)।

(४) एक बार द्वारका में यह कृष्णगृह में गया। कृष्ण ने अनेक प्रकार से इसका स्वागत किया। इसने कृष्ण का 'सत्त्वहरण' करने के लिये, काफी प्रयत्न किये। इसने अपनी जूठी खीर, कृष्ण तथा रुक्मिनी के शरीर को लगायी। उन्हें रथ में जोत कर, द्वारका नगरी में यह घूमने लगा। राह में रुक्मिणी थक कर धीरे-धीरे चलने लगी। तब इसने उसे कोड़े से मारा। फिर भी कृष्ण ने सहनशीलता नहीं छोड़ी। तब प्रसन्न हो कर दुर्वासस् ने कृष्ण

को वर दिया, 'तेरे शरीर के जितने भाग को जूठी खीर लगायीं है, उतने सारे भाग वज्रप्राय होंगे एवं किसी भी शस्त्र का प्रभाव उनपर नहीं पडेगा' (म. अनु. २६४ कुं.)। रथ खींचते समय, थक कर रुक्मिणी को प्यास लगी। तब कृष्ण ने उसे पीने के लिये पानी दिया। तब अपनी आज्ञा के बिना रुक्मिणी ने पानी पिया, यह देख कर दुर्वासस् ने उसे शाप दिया, 'तुम भोगावती नामक नदी बनोगी, मद्यादि पदार्थों का भक्षण करोगी, तथा पतिविरही बनोगी' (स्कन्द. ७. ४. २-३)।

(५) पांडव वनवास गये थे, तब दुर्वासस् ऋषि दुर्योधन के पास गया। दुर्योधन ने उसकी उत्कृष्ट सेवा की। तब प्रसन्न हो कर दुर्वासस् ने उसे वर माँगने के लिये कहा। दुर्योधन ने कहा, 'पांडव तथा द्रौपदी का भोजन होने के बाद, आप उनके पास भोजन माँग ने जायें, तथा आपकी इच्छा पूर्ण न होने पर उन्हें शाप दें'। दुर्योधन का यह भाषण सुन कर यह पांडवों का सत्वहरण करने के लिये, उनके पास गया। परंतु वहाँ भी इसकी कृष्ण के कारण, फजीहत हुई। यह कथा, केवल महाभारत के बंबई आवृत्ति में दी गयी है (म. व. परि. १ क्र. २५)।

(६) ब्रह्मदत्त के पुत्र हंस तथा डिंभक मृगया करते हुएँ दुर्वासस् के आश्रम में गये। वहाँ उन्होंने आश्रम का विध्वंस कर दुर्वासस् को अत्यंत कष्ट दिये। उस समय इसने अपना हमेशा का क्रोधी स्वभाव छोड़ सहनशीलता दर्शाई। परंतु बाद में हंस डिंभक अधिक ही त्रस्त करने लगे, तब कृष्ण के पास इसने शिकायत की, एवं कृष्ण से उनका वध करवाया (ह. वं. ३. १११-१२९)।

(७) तीर्थाटन करने के बाद, यह काशी में शिवाराधना करने लगा। काफी तपस्या करने के बाद भी शंकर प्रसन्न नहीं हुआ, तब यह शंकर को ही शाप देने लगा। यह देख कर शंकर को इसके प्रति, वात्सल्ययुक्त प्रेम का अनुभव हुआ। उसने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर इसे संतुष्ट किया (स्कन्द ४.२.८५)।

(८) दुर्वासस् एक बार गोमती के तट पर, स्नान करने गया था। उस समय, कई दैत्य वहाँ आये तथा उन्होंने दुर्वासा को पीटा। राक्षसनाश के लिये दुर्वासस् ने कृष्ण की आराधना की (स्कन्द ७.४.१८)।

(९) एक बार यह तप कर रहा था। इसके इस तप के कारण, सारे देव भयभीत हो गये। उन्होंने वपु नामक अप्सरा को, इसका सत्वहरण करने के लिये भेजा। उसका पापी हेतु जान कर, दुर्वासस् ने उसे शाप दिया, 'तुम गरुड पक्षिणी बनोगी' (मार्क. १)।

दुर्विगाह--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दुर्विनीत--पांड्य देश के इध्मवाहन का पुत्र। यह मात्रागमनी था। धनुष्कोटि तीर्थ में स्नान करने से यह मुक्त हुआ (स्कंद. ३.१.३५)।

दुर्विमोचन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५.१३)।

दुर्विरोचन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १२०.६२)।

दुर्विषह--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५. १६)।

दुलिदुह--(सू. इ.) अनमित्र का पुत्र। यह महान् ज्ञाता था (ब्रह्म. ८.८४; ह. वं. १.१५.२४)। अन्य प्रसिद्ध पुराणों में इसका नाम नहीं है (म. आ. १.१७३)।

दुवस्यु--वान्दन देखिये।

दुष्कंत--एक राजा। रावण ने इसे जीता था।

दुष्कर्ण--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। शतानीक ने इसका वध किया (म. भी. ७५.४८-४९)।

२. भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३०.३४)।

दुष्टरीतु--संभवतः एक व्यक्ति का नाम (ऋ. २.२१. २; ६.१.१)।

दुष्टरीतु पौंस्यायन--सृंजय लोगों का राजा। इसके वंश में, लगातार दस पीढीयों से चलते आये राज्य से, इसे च्युत किया गया। परंतु चाक्र स्थपति ने बाह्रिक प्रातिपीय के विरोध की पर्वाह न करते हुए, इससे सौत्रामणी यज्ञ करवाया एवं इसे पुनः गद्दी पर बैठाया (श. ब्रा. १२.९. ३.१-३; १३)। दुष्टरीतु शब्द ऋग्वेद में दो बार आया है। किंतु वहाँ वह शब्द व्यक्तिवाचक है या नहीं, यह कहना मुश्किल है (ऋ. २.२१.२; ६.१.१)।

दुष्पण्य--पशुमान का पुत्र। दूसरे के लड़कों को भगा कर, यह पानी में डुबो देता था। राज्य की सीमा के बाहर निकाल देने पर भी, यह वही कार्य करता रहा। इसलिये ऋषियों ने इसे पिशाच होने का शाप दिया। किंतु सुतीक्ष्ण ने अग्नितीर्थ पर इसका क्रिया-कर्मांतर करने से यह मुक्त हो गया (स्कंद. ३.१.२२)।

दुष्प्रधर्ष--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५.१५)।

दुष्प्रधर्षण--धृतराष्ट्र का पुत्र। द्रौपदी के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१)।

दुष्प्रहर्ष--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. श. २६.१८-१९)।

दुष्यंत--(सो. पूरु.) का सुविख्यात राजा एवं 'चक्रवर्ति' सम्राट् भरत का पिता। वैशाली देश का तुर्वसु राजा एवं करंधम का पुत्र 'चक्रवर्ति' मरुत्त आविक्षित ने 'पौरव' वंश में जन्मे हुए दुष्यंत को गोद में लिया। कुरुवंशोंयों का राज्य मांधातृ के समय से हैहय राजाओं ने कब्जे में लिया था। वह इसने पुनः प्राप्त किया, एवं गंगा तथा सरस्वती नदीयों के बीच में स्थित प्रदेश में अपना राज्य पुनः स्थापित किया। इसलिये इसे 'वंशकर' कहा जाता है (म. आ. ६२.३; भागवत. ९.२३.१७-१८)।

दुष्मंत, दुःषन्त आदि इसीके ही नामांतर थे। इसके पुत्र भरत को 'दौष्यन्ति' 'दौःषन्ति' आदि नाम इसके इन नामों से प्राप्त हुए थे (ऐ. ब्रा. ८.२३; श. ब्रा. १३. ५.४.११-१४)। शतपथ ब्राह्मण के उपरोक्त उद्धरण में, भरत का पैतृक नाम 'सौद्युम्नि' दिया गया है। वह वस्तुतः 'दौष्यन्ति' चाहिये। मत्स्य पुराण में दुष्यंत को ही भरत दौष्यंति कहा है (मत्स्य. ४९.१२)।

इसके जन्मदातृ पिता एवं माता के नाम के बारे में एकवाक्यता नहीं है। भागवत में इसे रैभ्य राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२०.७)। भविष्यमत में, इसके पिता का नाम तंसु था। हरिवंश में, तंसु के दुष्यंत आदि चार पुत्र दिये गये है (ह. वं. १.३२.८)। किंतु विष्णुपुराण में दुष्यंत को तंसुपुत्र अनिल का पुत्र कहा गया है (विष्णु ४.१९)। महाभारत 'कुंभकोणम्' आवृत्ति में इसके पिता का नाम ईलिन दिया है (म. आ. ८९. १४; मत्स्य. ४९.१०)। ईलिन को दुष्यंत आदि पाँच पुत्र थे, ऐसा भी उल्लेख मिलता है। ब्रह्मांड में इसे ईलिन का नाती कहा गया है। वायु पुराण में इसके पिता का नाम मलिन दिया है। इसके पिता के नाम के संबंध में जैसी गड़बड़ी दिखती है, उसी तरह इसकी माता के नाम के बारे में भी दिखाई पड़ती है। इसकी माता के उपलब्ध नाम है उपदानवी (वायु. ६९.२४), रथंतरी (म. आ. ९०.२९)।

पौरव वंश के इतिहास में, तंसु से दुष्यंत के बीच के राजाओं के बारे में, पुराणों में एकवाक्यता नहीं है। लक्ष्मी नामान्तर से इसे लक्ष्णा नामक दूसरी भार्या तथा उसे जनमेजय नामक पुत्र था। यह जानकारी महाभारत की कुंभकोणम् आवृत्ति में प्राप्त है (म. आ. ९०.९०१*; ८९.८७७*)। इसकी राजधानी गजसाह्वय (हस्तिनापुर) थी (म. आ. ६८.१२)।

तुर्वसु कुलोत्पन्न करंधम के पुत्र मरुत्त राजा ने अपना पुत्र मान कर, इसे अपना सारा राज्य दिया (भा. ९.२३.१६-१७; विष्णु. ४.१६)। यह राज्यलोलुप था। इसलिये इसने राज्य स्वीकार किया। राज्य मिलने के बाद, यह पुनरपि पौरववंशी बन गया (भा. ९. २३.१८)। ययाति के शाप के कारण, मरुत्त राजा का यह वंश पुरुवंश में शामिल हो गया (मत्स्य. ४८.१-४)। ययाति के शाप से, इसका तुर्वसु वंश से संबंध आया (वायु. ९९.१-४)।

ब्रह्मपुराण में तुर्वसुवंशीय करंधमपुत्र मरुत्त ने, अपनी संयता नामक कन्या संवर्त को देने के बाद, उन्हें दुष्यंत पौरव नामक पुत्र हुआ, ऐसा उल्लेख है (१३)। हरिवंश में यही हकीकत अलग ढंग से दी गयी है। यज्ञ करने के बाद, मरुत्त को सम्मता नामक कन्या हुई। वह कन्या उसने यज्ञ दक्षिणा के रूप में, संवर्त नामक ऋत्विज को दी। पश्चात् संवर्त ने वह कन्या सुघोर को दी। उससे सुघोर दुष्यंत नामक पुत्र हुआ। दुष्यंत अपनी कन्या का पुत्र होने के कारण, मरुत्त ने उसे अपनी गोद में ले लिया। इसी कारण तुर्वसु वंश पौरवों में शामिल हुआ (१.३२)।

पौरवों का छीना गया राज्य दुष्यंत ने पुनः प्राप्त किया, तथा पुरु वंश की पुनः स्थापना की। यह स्थिति प्राप्त होने के पहले ही, इसका दत्तविधान हुआ होगा। इसका राज्य हैहयों ने नष्ट कर दिया था। इसीलिये इस राज्यच्युत राजपुत्र को गोद लिया गया होगा। परंतु पौरवों की सत्ता को पुनर्जीवित करने के हेतु से यह अपने को पौरववंशीय कहने लगा। पौरव सत्ता का पुनरुज्जीवन, दुष्यंत ने हैहय सत्ता सगर द्वारा नष्ट की जाने पर, तथा सगर के राज्य के नाश के बाद ही किया होगा। अगर ऐसा होगा, तो यह मरुत्त से एक दो पीढियाँ तथा सगर से दो पीढियाँ आगे होगा।

एक बार यह मृगया के हेतु से, कण्व काश्यप ऋषि के आश्रम में गया। वहाँ इसने काण्व आश्रम में शकुन्तला को देखा। कण्व काश्यप बाहर गया हुआ था। इसलिये परस्पर संमति से दुष्यन्त एवं शकुंतला का गांधर्वविवाह हो गया। बाद में शकुन्तला को इससे गर्भ

रह कर भरत नामक पुत्र हुआ। परंतु यह विवाह छुपके से किये जाने के कारण, शकुंतला को यह अस्वीकार करने लगा। बाद में आकाशवाणी ने सत्य परिस्थिति बतायी। तब राजा को उसके स्वीकार में कुछ बाधा नहीं रही (म. आ. २. ६३-६९; ९०; द्रो. परि. १. क्र. ८, पंक्ति ७३० से आगे; शां. २९; आश्व. ३; भा. ९.२०. ७-२२; विष्णु. ४. १९-२१; ह. वं. १. ३८; वायु. ९९. १३२)। शकुंतला को दोषवती मानने से इसे दुष्यंत नाम प्राप्त हुआ, ऐसा इसके 'दुष्यंत' नाम का विश्लेषण 'शब्द-कल्पद्रुम' में दिया है (दुष दोषवती मन्यते शकुन्तलाम् इति)। शकुन्तला से इसे भरत नामक पुत्र हुआ। उसे ब्राह्मण ग्रंथों में दौष्यंति नाम से, एवं अन्य ग्रंथों में सर्वदमन कहा गया है। दुष्यंत को पौरव कुल का आदि संस्थापक माना जाता है। राज्यशकट चलाने की इसकी पद्धति बहुत अच्छी थी (म. आ. ६२)।

२. (सो. अज.) अजमीढ का पुत्र। इसकी माता नीली (म. आ. ८९.२८)। परमेष्ठिन् राजा इसका भाई था। उत्तर एवं दक्षिण पंचाल देशों का राजवंश इन दो भाईयों से शुरू हुआ।

दूरसोम—मणिभद्र एवं पुण्यजनी का पुत्र।

दूर्व--गौड देश का एक ब्राह्मण (गणेश. १.३६.७६)।

दूषण—खर राक्षस का भाई (म. व. २६१.४३)। वज्रवेग तथा प्रमाथी नामक इसे दो भाई और थे। राम ने इसका वध किया (भा. ९.१०; म. व. २६१.४३)।

२. विश्ववसु एवं वाका का पुत्र।

दूषणा—ऋषभदेव के वंश के भौवन राजा की पत्नी। इसका पुत्र त्वष्टा।

दृढ--धृतराष्ट्र के पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२.३०; १३२.१११३५*, पंक्ति २)।

२. दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। इसका अदृढ नाम भी उपलब्ध है (म. क. ४.४१)।

दृढक्षत्र—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढच्युत आगस्त्य—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.२५)। यह अगस्त्य ऋषि एवं कृष्णेक्षणा का पुत्र था। इसीलिये इसका पैतृक नाम 'अगस्ति' दिया गया है। विभिंदुकीय के सत्र में यह उद्गाता था (जै. ब्रा. ३.२३३)। इसका पुत्र इध्मवाह (भा. ४.२८)।

दृढजयंत—विपश्चित् दृढजयंत लौहित्य देखिये।

दृढद्युम्न—दृढस्यु का नामांतर।

२. अगस्त्य गोत्र का मंत्रकार (मत्स्य. १४५.११४-११५)। दृढायु इसीका नामांतर था (ब्रह्मांड. २.३२. ११९-१२०)

दृढधनु—(सो. अज.) विष्णु तथा वायु के मत में सेनजित् का पुत्र। दृढरथ एवं दृढहनु इसीका नामांतर है।

दृढधन्वन् कौरव—(सो. कुरु.) द्रौपदीस्वयंवर के लिये आया हुआ एक क्षत्रिय (म. आ. १७७.१५)।

दृढनेमि—(सो. द्विमीढ.) भागवत, वायु तथा मत्स्य-मत में सत्यधृती का पुत्र। विष्णु मत में धृतिमान् का पुत्र।

दृढमति—एक शूद्र। इसके पीछे ब्रह्मराक्षस लगा हुआ था। किन्तु वेंकटाचल जाने पर उस पीड़ा से यह मुक्त हुआ (स्कन्द. २.१.१९)।

दृढरथ—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

२. (सो. क्रोष्टु.) मत्स्यमत में नवरथ का पुत्र (दशरथ ३. देखिये)।

३. (सो. अज.) मत्स्यमत में सेनाजित् का पुत्र (दृढधनु देखिये)।

दृढरथाश्रय—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढरुचि--प्रियव्रतपुत्र हिरण्यरेता का पुत्र।

दृढवर्मन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढसंध—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढसेन—द्रोण द्वारा मारा गया एक पांडवपक्षीय राजा (म. द्रो, २०.४०)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) विष्णु तथा ब्रह्मांडमत में सुश्रम का तथा वायुमत में सुव्रत का पुत्र। द्युमत्सेन इसी-का नामांतर है।

दृढस्यु—अगस्त्य एवं लोपामुद्रा का पुत्र। यह अत्यंत तपस्वी तथा विद्वान था। यह अरण्य में से समिधा के बडेबडे गठ्ठर लाता था। इस कारण, इसे इध्मवाह नाम प्राप्त हुआ।

ऋतु ऋषि निःसंतान था। इसलिये उसने दृढस्यु को अपना पुत्र माना था। उसी तरह पुलह एवं पुलस्त्य इन दोनों की संतति दुष्ट होने के कारण, वे भी इसे अपना पुत्र मानते थे (म. व. ९७.२३-२५)। इसके दृढास्यु, दृढायु एवं दृढद्युम्न नामांतर थे।

दृढहनु—(सो. अज.) भागवत मत में सेनजित् राजा का पुत्र (दृढधनु देखिये)।

दृढहस्त--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढाच्युत—अगस्त्यपुत्र दृढास्यु का नामांतर।

दृढायु--(सो.) पुरूरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्र। (म. आ. ७०.२२; पद्म. सृ. १२)।

२. अगस्त्यपुत्र (म. अनु. २७१.४० कुं.; दृढस्यु देखिये)।

दृढायुध--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र।

दृढाश्व--(सू. इ.) भागवत, विष्णु तथा भविष्य-मत में कुवलयाश्व का पुत्र। मत्स्य एवं वायु मत में यह कुवलाश्व का पुत्र था। पद्ममत में यह कुवलाश्व का नाती तथा धुंधुमार का पुत्र था (पद्म. सृ. ८)।

दृढास्य--दृढस्यु का नामांतर।

दृति ऐंद्रोत--इंद्रोत दैवाप का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)। अभिप्रतारिन् काक्षसेनि के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है (पं. ब्रा. १४.१.१२; १५)। 'दृतिवातवन्तौ' में निर्दिष्ट दृति भी यही रहा होगा (पं. ब्रा. २५.३.६)। 'महाव्रत' नामक श्रौतकर्म का सतत आचरण करने के कारण, इसका उत्कर्ष हुआ। यह सत्र भी इसी के नाम से प्रसिद्ध हुआ (का. श्रौ. २४.४.१६; ६. २५; आश्व. श्रौ. १२.३; सां. श्रौ. १३.२३.१; ला. श्रौ. १०.१०.७)। दृत तथा दृति दोनों एक ही रहे होंगे।

दृति ऐंद्रोत शौनक--इंद्रोत शौनक का पुत्र एवं शिष्य (वं. ब्रा. २)।

दृप्तबालाकि गार्ग्य--एक आचार्य (श. ब्रा. १४. ५.१; बृ. उ. २.१.१)। गार्ग्य बालाकि ऋषि अत्यंत गर्विष्ठ होने के कारण, उसे यह नामांतर प्राप्त हुआ। काशी के अजातशत्रु नामक राजा का यह समकालीन था। अजात शत्रु को उपदेश देने के लिये यह गया था।

दृभीक--इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. २.१४.३)।

दृशान भार्गव--एक मंत्रद्रष्टा (क. सं. १६.८)।

दृषद्वती--(सू. इ.) हर्यश्व राजा की पत्नी।

२. विश्वामित्र की स्त्री (ब्रह्म. १०.६७; ह. वं. १.२७; ब्रह्मांड. ६६.७५; वायु. ९२.१०३)।

३. काशी के दिवोदास (प्रथम) की पत्नी।

४. उशीनर की पत्नी।

दृष्टरथ--एक बड़ा राजा (म. अनु. २७१.५०.कुं.)।

दृष्टशर्मन्--(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्क का पुत्र।

देय--सुख देवों में से एक।

देव--एक प्राचीन मानवज्ञातिसंघ। प्राचीन वैदिक एवं पौराणिक ग्रंथों में, देव, असुर, राक्षस, पितर आदि ज्ञातिसंघों का, एवं इन ज्ञातियो के स्त्रीपुरुषों का निर्देश पुनः पुनः मिलता है। इन सारे ज्ञातिसंघों में, देव लोगो का ज्ञातिसंघ बौद्धिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से सर्वाधिक प्रगत एवं बलिष्ठ प्रतीत होता है।

आधुनिक काल में, पृथ्वी पर अनेक मानवजातियाँ रहती है। उसी प्रकार प्राचीन काल में, देव, असुर, गंधर्व, सर्प, नाग, गरुड, दानव, दैत्य आदि अनेक मानवजातियाँ अस्तित्व में थी। इन जातियों के स्त्रीपुरुषों को, सर्वसामान्य मानवों जैसे, हर्षखेदादि विकार थे। उनके विवाह हो कर उन्हें संतति पैदा होती थी। लड़ाई कर के वे आपस में झगड़ते भी थे।

सर्वथैव मानुषि रुप धारण किये हुएँ, ऐसे बहुत सारे देव प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त है। वैदिक ग्रंथो में से, अग्नि, इंद्र, मित्र, वरुण आदि देवों का चरित्रचित्रण इसी मानुषि आकृति से मिलता-जुलता है। पुराणों में से, राम, कृष्ण, शिव, विष्णु आदि देवों का व्यक्तिचित्रण भी मानुषि ढंग का ही है।

निरुक्त में, द्यु, अंतरिक्ष एवं पृथ्वी, ये तीन प्रदेश देवों का निवासस्थान बताये गये हैं। इससे ज़ाहीर है कि, कई देव पृथ्वी पर, कई अंतरिक्ष में, एवं कई द्युलोक में रहते थे। देवो मे सें अष्ट वसु पृथ्वी पर, ग्यारह रुद्र अंतरिक्ष में, एवं बारह आदित्य द्युलोक में रहते थे। हिंदु श्राद्धविधि में, वसु, रुद्र, एवं आदित्य इन तीन देवताओं को पिता, पितामह एवं प्रपितामह मान कर उन्हें तर्पण किया जाता है।

मनुष्यों में से अनेक पुरुष देवज्ञाति में प्रवेश पा सकते थे। जो पहले मनुष्य थे, किंतु पश्चात् देव हो गये, ऐसे ऋभु आदि व्यक्तिओं का निर्देश वैदिक ग्रंथो में प्राप्त है। अश्विनीकुमार भी पहले मनुष्य ही थें, किंतु बाद में वे देव हो कर, उन्हें यज्ञ की आहुति प्राप्त होने लगी। काशिराज धन्वन्तरि भी पहले मनुष्य था, किंतु पश्चात् पंचमहायज्ञ के वैश्वदेव में उन्हे देव के नाते प्रवेश प्राप्त हुआ। रामकृष्ण आदि अवतारी पुरुष भी पहले मनुष्य ही थे।

देवों के शासकवर्ग में, इंद्र, सप्तर्षि आदि लोग प्रमुख थे। इंद्रादि देवों के वर्णन से पता चलता है कि, वे भी पहले पराक्रमी मानव ही थे। अपने अतुल पराक्रम के कारण वे देव हो गये। पृथ्वी पर से सर्वाधिक पराक्रमी व्यक्ति को केवल देवत्त्व ही नही, इंद्रपद भी प्राप्त हो सकता था। प्रत्येक मनु के इंद्र एवं सप्तर्षि अलग रहते थे। इंद्रपद के प्राप्ति के लिये प्राचीन काल में कितने झगड़े

हुआ करते थे, एवं इंद्र के अश्वमेध यज्ञ का अश्व उड़ाने के कितने प्रयत्न अन्य राजाओं से होते थे, इसका साद्यंत इतिहास पुराणों में दिया गया है। जन्म से मनुष्य हो कर, इंद्रपद प्राप्त करनेवाले प्राचीन राजाओं में रजि, रजिपुत्र एवं नहुष, ये प्रमुख है। असुरो में से, प्रल्हाद, बलि, हिरण्यकशिपु ये राजा इंद्रपद प्राप्त करने में कामयाब हुएँ थे।

मनुष्य वंश के राजाओं में 'राजसूय यज्ञ' किया जाता था, उसी प्रकार देवज्ञाति के राजा भी चक्रवर्तिपद दर्शानेवाला वह यज्ञ करते थे। इस यज्ञ करनेवाले मनुष्य एवं देवज्ञाति के राजा क्रमशः 'मनुष्यराजन्' एवं 'देवराजन्' इन उपाधिओं से विभूषित किये जाते थे। प्राचीन चक्रवर्ति राजाओं में से, दिवोदास, वध्र्यश्व, वीतहव्य आदि सम्राट 'मनुष्यराजन्' थे, एवं सिंधुक्षित्, दीर्घश्रवस्, पृथु, कक्षीवत् आदि सम्राट् 'देवराजन्' थे (तां. ब्रा. १८. १०.५)।

देव, असुर, एवं मनुष्य ज्ञातियों में आपस में विवाह होते थे। पुराणों मे प्रसिद्ध, 'कच देवयानी' प्रणय में, कच देवों के पुरोहित बृहस्पति का पुत्र था, एवं देवयानी असुरों के पुरोहित शुक्र की कन्या थी। अन्त में, देवयानी का विवाह सोमवंशी क्षत्रिय नृप ययाति से हुआ। ययाति की द्वितीय पत्नी एवं देवयानी की सौत शर्मिष्ठा, असुर राजा वृषपर्वन् की कन्या थी।

ऋषि के पुत्र देवज्ञाति मे प्रविष्ट होने के कई उदाहरण भी प्राप्त हैं। भृगु ऋषि को पौलोमी नामक पत्नी से भुवन भौवन आदि बारह पुत्र हुएँ। ये भृगुपुत्र 'भृगुदेव' नाम से प्रसिद्ध हो गये (मत्स्य. १९.५.१२-१४)।

देव एवं असुरों के संग्राम की कथाएँ वेदकाल से पौराणिक काल तक अप्रतिहत रूप में प्राप्त होती हैं। इन संग्रामों में देवों द्वारा किये गये बारह निम्नलिखित संग्राम विशेष तौर पर उल्लेखनीय हैः-(१) नारसिंह-हिरण्यकशिपुहनन, (२) वामन-बलिबंधन, (३) वराह-हिरण्याक्षहनन, समुद्रद्वैधीकरण, (४) अमृतमंथन-इंद्र एवं प्रह्लाद का युद्ध, प्रह्लादपराजय, (५) तारकामय-इंद्र द्वारा प्रह्लादपुत्र विरोचन का वध, (६) आड़िवक-इंद्र एवं आड़िवक का युद्ध (७) त्रैपुर-शंकर एवं त्रिपुर का युद्ध (८) अंधक-शंकर एवं असुर, पिशाच तथा दानव का युद्ध, (९) वृत्रघातक-वृत्र का वध, (१०) धात्र (ध्वजपात), (११) हालाहल-इंद्र एवं असुर का युद्ध, (१२) कोलाहल-इंद्र एवं दैत्यदानव का युद्ध (मत्स्य. ४७.४२-४५; ४६-७३; पद्म. सृ. १३.१८३-१९६)। पद्मपुराण में 'आड़िवक' के स्थान में 'आजाव' एवं 'धात्र' के स्थान में 'ध्वजपात' संग्राम का निर्देश है। इन युद्धो में, देवज्ञाति के प्रमुख, इंद्र एवं शंकर बताये गये है। देव, पितर एवं मनुष्य ज्ञाति के मानवसंघ देवों के प्रमुख सहायक दर्शाये गये है। असुर ज्ञाति में हिरण्यकश्यपु, हिरण्याक्ष, बलि, प्रल्हाद, विरोचन, वृत्र, विप्रचित्ति, वृष ये असुर प्रमुख थे। उनके अनुयायी में पिशाच, दानव एवं असुर प्रमुख थे।

जिस में सामर्थ्य एवं शक्ति का साक्षात्कार है, वह हर एक व्यक्ति देव बन सकती है, ऐसी प्राचीन भारतियों की धारणा थी। इसी धारणा से, अग्नि, वायु, आदि पंचमहाभूतों को देव मानने की प्रवृत्ति वैदिक काल में निर्माण हुओ। इन पंचमहाभूतों से भी अधिक शक्ति 'ब्रह्म' में है, ऐसी धारणा उपनिषदों के काल में प्रचलित हुई। इसीलिये, उस काल में 'ब्रह्म' को देव कहने लगे। 'केनोपनिषद' में लिखा है कि, अग्नि, वायु आदि कितने भी सामर्थ्यशाली हो, उनकी शक्ति महद्भुत ब्रह्म के सामने कुछ भी नहीं है।

इस क्रम से, जिस में अधिक शक्ति हो, उसे देव मानने की प्रवृत्ति प्रस्थापित हुई। स्वायंभुव आदि मन्वन्तर में, सर्वश्रेष्ठ शासक राजा को 'इंद्र' उपाधि प्राप्त हुई। नाना तरह के अधिकार धारण करनेवाले साध्य, तुषित, तप, भृगु आदि लोग देवज्ञाति में शामिल किये गये। मानवों से जिन में अधिक सामर्थ्य था, वे यक्ष, गंधर्व, साध्य आदि ज्ञाति भी 'देवगण' में गिने जाने लगी।

संसार के आदिकरण को 'देव' कहलाने की प्रवृत्ति उपनिषत्काल में ही प्रचलित हुई। जनकसभा में विदग्ध शाकल्य ने याज्ञवल्क्य को पूछा, 'कति देवाः' (देव कितने है)? उत्तर में याज्ञवल्क्य ने कहा, 'संसार में एक ही देव है। पृथ्वी उसका शरीर है, अग्नि नेत्र है, ज्योति मन है। संसार के सारे जीवों का अधिष्ठान बना हुआ पुरुष पृथ्वी पर एक ही है, एवं वही केवल देव है।

दम (इंद्रियदमन), दया, दान, इन तीन 'द' कारों से कोई भी मनुष्य देवत्त्व पा सकता है, ऐसी भी एक धारणा भारतीय संस्कृति में दृढमूल है। इसी तत्त्व के विशदीकरण के लिये, 'बृहदारण्यकोपनिषद' में एक कथा दी गयी है। एक समय देव, मनुष्य एवं दानव प्रजापति के पास ज्ञान के लिये गये। प्रजापति ने उन सब को 'द' अक्षर का उपदेश श्रेयप्राप्ति के लिये दिया। उस 'द' कार का अर्थ देव, दानव, एवं मनुष्यों ने अपने

अपने स्वभावानुरूप किया। देवों ने दमन (इंद्रिय-दमन) कर के, मनुष्यों ने दान से, एवं दानवों ने दया से श्रेयप्राप्ति करने की कोशिश की (बृ. उ. ५.२.१-३)। किंतु 'देवत्व' प्राप्त करने के लिये इन तीनों 'द' की जरूरत रहती है, ऐसा उपनिषदों का कहना है।

इसी ढंग की और एक कथा महाभारत के 'अनुगीता' में दी गयी है। प्रजापति के पास श्रेयप्राप्ति का उपाय पूछने, पन्नग, देवर्षि, नाग तथा असुर आ गये। प्रजापति ने सब को 'ॐ' अक्षर से ही उपदेश दिया। उस उपदेश का अर्थ, हर एक व्यक्ति ने अपने अपने स्वभाव के अनुसार ग्रहण किया। सर्पों ने दंश, असुरों ने दया, देवों ने दान एवं महर्षिओं ने दमन, इस अर्थ से यह 'ॐ' स्वरूप उपदेश का अर्थ किया, एवं वैसे ही आचरण उन्होंने करना शुरू किया (म. आश्व. २६)। इस कथा से प्राचीन समाज के सर्प, असुर, देव आदि भिन्नभिन्न ज्ञातिसंघ के स्वभाववैशिष्ट्यों का पता चलता है।

उपरिनिर्दिष्ट चर्चा से ज़ाहिर है कि, प्राचीन काल में देव नाम की मानवों की एक ज्ञाति थी। पश्चात् उस जाति के व्यक्तिओं के उपर अधिदैविक एवं आध्यात्मिक संस्कार कर के, देवों को अतिमानुषा एवं दैवी रूप दिया गया। उससे देव नामक मानवजाति का स्वरूप धुँधला सा हो गया। रामकृष्णादि महापुरुषों का मानुष तथा दैविक स्वरूप संमिश्ररूप में स्पष्ट है। इंद्रादि देव भी पहले मानव थे। अनन्तर देवत्व का आरोप उन पर किया गया। उपनिषदों में 'इंद्र-विरोचनासंवाद' में, एक विशेष अध्यात्मिक स्थान भी उन्हें दिया गया है। दत्त, गणपति, स्कंद, उमा, आदि देव पहले सिद्ध, समर्थ, पराक्रमशील व्यक्ति के स्वरूप में लोगों के आदरस्थान बने। अनन्तर उन्हें देवता बनाया गया। अन्त में उनको आध्यात्मिक शुद्ध-परब्रह्म रूप देने का प्रयत्न हुआ। शिवादि देवों का पहला रुद्रादि स्वरूप तथा बाद का शिवस्वरूप सर्वथा भिन्न है। आध्यात्मिकता इष्ट है। फिर भी इन देवों का वास्तव स्वरूपदर्शन तथा प्राचीन मानव समाज का विभागात्मक ज्ञान भी इतिहास के अध्ययन लिये आवश्यक है।

२. एक व्यास (व्यास देखिये)।

देवऋषभ—वैवस्वत मन्वन्तर के धर्म ऋषि को भानु नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र। इसका पुत्र इंद्रसेन (भा. ६.६.५)।

देवक--(सो. कुरु.) युधिष्ठिर को पौरवी से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.२२.३०)।

२. (सो. कुकुर.) आहुक राजा का पुत्र। पूर्वजन्म में यह गंधर्वों का राजा था।

इसकी कन्या देवकी मथुरा के उग्रसेन राजा के मंत्री वसुदेव को दी गयी थी (म. आ. ६१.६२; भा. ९.२४; विष्णु. ४.१४)। पद्ममत में देवकी इसकी बहन थी। इससे साथ और छः बहनें इसने वसुदेव को दी थी। उग्रसेन इसका कनिष्ठ बंधु था। इसके पुत्र देववान्, उपदेव, सुदेव एवं देवरक्षित थे (पद्म. सृ. १३)।

देवक मान्यमान—एक असुर। यह तृत्सुओं का शत्रु, एवं शंबर का स्नेही था (ऋ. ७. १८.२०)। कई लोगों के मत में, 'स्वयं को देव माननेवाले' शंबर का ही यह नामांतर था।

देवकर—(सू. इ.) भविष्यमत में प्रतिव्योम का पुत्र। इसका पुत्र सहदेव।

देवकी—देवक की कन्या एवं कृष्ण की माता। यह वसुदेव की पत्नी थी। इसके विवाह के समय आकाशवाणी हुई, 'इसके अष्टम पुत्र के द्वारा मथुरा के कंस राजा का वध होगा'। इसलिये कंस ने इसे एवं इसके पति वसुदेव को कारागृह में रखा। बाद में इसे कीर्तिमत्, सुषेण, भद्रसेन, ऋजु, संमर्दन, भद्र, बलराम तथा कृष्ण नामक आठ पुत्र हुएँ। कृष्णजन्म के बाद, उसे कंस से बचाने के लिये, कृष्ण को नंद के घर छोड़ने की सलाह इसने वसुदेव को दी थी। (पद्म. ब्र. १३)।

बलराम तथा कृष्ण के पहले जन्मे हुएँ, इसके छः पुत्रों को कंस ने मार डाला। कृष्ण द्वारा कंसवध होने के बाद, देवकी तथा कृष्ण का मिलन हुआ। उसने देवकी की उसके मृत पुत्रों से भेट करवायी (भा. ९. २४; १०. ३; ४४)। पूर्वजन्म में यह सुतपस् की पत्नी पृश्नि थी (भा. १०. ३)। कृष्णनिर्याण की वार्ता सुनते ही इसने अग्नि-प्रवेश किया।

२. शैब्य की कन्या (ब्रह्म. २१२. ४)। यह युधिष्ठिर की पत्नी थी। इसका पुत्र यौधेय (म. आ. ९०.८३)।

३. ऋषभदेव के वंश के उद्गीथ की पत्नी (भा. ५. १५)। भांडारकर संहिता में देविका पाठभेद उपलब्ध है।

देवकीपुत्र—कृष्ण का मातृक नाम (छां. उ. ३ १७.६; कृष्ण देवकीपुत्र देखिये)।

देवकुल्या—स्वायंभुव मन्वंतर के मरीचि ऋषि के पुत्र की कन्या। इसने पूर्वजन्म में विष्णु के पग धोये थे, इसलिये इस जन्म में इसे 'स्वर्धुनी' (गंगा नदी) का जन्म प्राप्त हुआ (भा. ४. १४)।

२. भागवतमत में पूर्णिमा की कन्या (प्रस्ताव देखिये)।

देवक्षत्र—(सो. क्रोष्टु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य, वायु एवं पद्ममत में देवरात का पुत्र। भविष्यमत में देवरथ का पुत्र।

देवगर्भ—एक ऋषि। ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ में, इसने होता का काम किया था (पद्म. सृ. ३४)।

देवज—(सू. दिष्ट.) संयमन राजा का पुत्र।

देवजनी—मणिवर की पत्नी।

देवजाति—कश्यपकुल का गोत्रकार। वेदसाति इसीका पाठभेद है।

देवजित्—कश्यप तथा दनु का पुत्र।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

देवतरस् श्यावसायन काश्यप—ऋश्यशृंग का शिष्य (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)। वंश ब्राह्मण में भी इसका उल्लेख है। वहाँ इसे काश्यप शिष्य 'शवस' का पुत्र एवं शिष्य बताया है।

देवताजित्—(स्वा. प्रिय.) सुमति एवं वृद्धसेना का पुत्र। इसकी स्त्री का नाम आसुरी, एवं पुत्र का नाम देवद्युम्न था (भा. ५.१५.२)।

देवदत्त—(सू. नरि.) भागवतमत में उरुश्रवस् राजा का पुत्र। अग्नि, कानीन तथा जातुकर्ण्य ये इसके तीन पुत्र थे।

देवदत्त शठ—एक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

देवदर्श—कबंधायन का शिष्य। कबंध ने इसे अथर्ववेदसंहिता सिखायी थी। पिप्पलाद, ब्रह्मबल, मोद एवं शौल्कायनि आदि इसके चार शिष्य ये (व्यास देखिये)। वायु में वेदस्पर्श पाठ है। यह एक शाखाप्रवर्तक भी था (पाणिनि देखिये)। पाणिनि इसे देवदर्शन कहता है।

देवदर्शन—देवदर्श देखिये।

देवदास—मगध देश का एक ब्राह्मण। इसकी स्त्री उत्तमा अतीव पतिव्रता थी। इसके पुत्र का नाम अंगद तथा पुत्री का नाम वलया था। वलया ससुराल में सुखी थी।

इसका पुत्र अंगद तथा उसकी कन्या वलया गृहस्थी का भार उठाते थे। अतः इस पतिपत्नी ने तीर्थाटन के लिये जाने का निश्चय किया। मार्ग में एक सिद्ध इन्हें मिला। उसने एक उदाहरण बता कर इन्हें इंद्रप्रस्थ के बदरितीर्थ पर जाने के लिये कहा। तब यह दोनों इंद्रप्रस्थ गये। यमुना में स्नान करते ही, उद्धार हो कर यह दोनों स्वर्गलोक सिधारे (पद्म. उ. २१२)।

२. एक सुवर्णकार (रूपवती देखिये)।

देवद्युति—एक ऋषि। यह सरस्वती के किनारे आश्रम में रहता था। विष्णु के वर से इसे सुमित्र नामक पुत्र हुआ था।

देवद्युति ग्रीष्म ऋतु में पंचाग्निसाधन करता था। बड़ी भक्ति से उसने १००० वर्षों तक तपश्चर्या तथा विष्णुभक्ति की। उससे इसे अपूर्व तेज प्राप्त हुआ। वैशाख मास में एक दिन इसने विष्णु की स्तुति की। तब प्रगट हो कर विष्णु ने इसे वर माँगने के लिये कहा। परंतु निरिच्छ होने के कारण, इसने विष्णु की भक्ति ही माँगी (पद्म. उ. १२८)।

देवद्युम्न—(स्वा. प्रिय.) भागवतमत में सुमति का पुत्र (देवताजित् देखिये)।

देवन—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। यह देवक्षत्र के बाद राजगद्दी पर बैठा।

देवपति—भृगुकुल का गोत्रकार।

देवप्रस्थ—एक गोप। यह कृष्ण का मित्र था (भा. १०.२२)।

देवबाहु—(सो. क्रोष्टु.) भागवतमत में हृदीक का पुत्र।

२. रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

देवभाग—(सो. क्रोष्टु.) शूर का पुत्र। कंस की भगिनी कंसा इसकी पत्नी थी। उससे इसे चित्रकेतु, बृहद्बल एवं उद्धव नामक तीन पुत्र हुएँ।

देवभाग श्रौतर्ष—एक यज्ञवेत्ता ऋषि। यह श्रुत का पुत्र था। यज्ञपशु के शरीर के विभिन्न भाग किन्हें बाँट देना चाहिये, इसका ज्ञान इसे हुआ था। मृत्यु के समय भी, इसने यह गूढ़ज्ञान किसी को नहीं बताया। पश्चात् एक अमानवीय व्यक्ति ने यह ज्ञान बभ्रु के पुत्र गिरिज को बताया (ऐ. ब्रा. ७.१)।

दाक्षायणयाग के कारण, संजय तथा कुरु राजाओं में स्नेहभाव उत्पन्न हुआ। उस समय उन दोनों का यह पुरोहित था (श. ब्रा. २.४.४.५)। 'तैत्तिरीय ब्राह्मण' में सावित्र अग्नि के बारे में इसके मतों का उद्धरण दिया गया है (तै. ब्रा. ३.१०.९.११)। यज्ञ में इसके हाथों से

गलती होने के कारण, संजयों का नाश हुआ। यह वासिष्ठ सातहव्य का समकालीन था (तै. सं. ६.६.२.२)।

देवभूति--(शुंग. भविष्य.) भागवत तथा विष्णुमत में भागवत का पुत्र। देवभूमि तथा क्षेमभूमि इसी के नामांतर थे।

देवभूमि--(शुंग. भविष्य.) मत्स्य मत में पुनर्भव का, एवं ब्रह्मांड मत में भागवत का पुत्र। इसने दस वर्षों तक राज्य किया (देवभूति देखिये)।

देवमत--एक ऋषि। नारद के साथ इसका सृष्टि-उत्पत्ति के विषय में संवाद हुआ (म. आश्व. २४)।

देवमति--अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

देवमलिम्लुच्--रहस्यु का उपनाम।

देवमानुषि--(सो. क्रोष्टु.) भागवत तथा वायु के मत में शूर राजा को अश्मकी से उत्पन्न पुत्र। इसे 'देवमीढुष' भी कहा गया है।

देवमित्र शाकल्य--मांडुकेय ऋषि का पुत्र। इसने सौभरि आदि शिष्यों को संहिता कथन की। भागवत में इसे शाकल्य का साथी माना गया है। परंतु वायु तथा ब्रह्मांड के मत में, यह शाकल्य का शिष्य था। देवमित्र शाकल्य ने पाँच संहितायें पाँच शिष्यों को सिखाई। उनके शिष्यों के नाम-मुद्गल, गोखल, मत्स्य, खालीय तथा शैशिरेय। इसके नाम का वेदमित्र पाठभेद भी प्राप्त है (वेदमित्र, याज्ञवल्क्य तथा व्यास देखिये)।

अपने अश्वमेध यज्ञ के समय, जनक राजा ने एक प्रण जाहिर किया। सम्मीलित ब्राह्मणों में जो सर्वश्रेष्ठ साबित हो, उसे हजार गायें, उनसे कई गुना अधिक सुवर्ण, ग्राम, रत्न तथा असंख्य सेवक दिये जायेंगे, ऐसा प्रस्ताव उसने ब्राह्मणों के सामने रखा। अनेक ब्राह्मण स्पर्धा के कारण झगड़ने लगे। इतने में ब्रह्मवाहसुत याज्ञवल्क्य वहाँ आया। उसने अपने शिष्यों से कहा, 'यह सारा धन ले चलो, क्योंकि मेरी बराबरी करनेवाला वेदवेत्ता यहाँ कोई नहीं है। जिसे यह अमान्य होगा, वह मेरा आह्वान स्वीकार करे'।

अनेक ब्राह्मण वाद के लिये सामने आये तथा अनेक महत्त्वपूर्ण विषय पर विवाद हुएँ। सब को जीतने पर याज्ञवल्क्य ने शाकल्य से कुछ उपमर्दकारक बातें कहीं। वह बोला, 'ब्राह्मण का बल विद्या तथा तत्त्वज्ञान में नैपुण्य होता है। किसी भी प्रश्न का उत्तर देने के लिये मैं तैयार हूँ। इसलिये कौन सा भी प्रश्न पूछने का मैं तुम्हें आह्वान देता हूँ'।

यह सुन कर, शाकल्य क्रोध से पागल सा हो गया। याज्ञवल्क्य के कथनानुसार इसने उसे हजार प्रश्न पूछे। उन सारे प्रश्नों के उत्तर याज्ञवल्क्य ने दिये। पश्चात् याज्ञवल्क्य द्वारा शाकल्य को प्रश्न पूछा जाने का समय आया। याज्ञवल्क्य ने शर्त लगायी, 'इन प्रश्नों का उत्तर न दे सके, तो शाकल्य को मृत्यु स्वीकारनी पडेगी'। शाकल्य ने वह शर्त स्वीकार की। पश्चात् याज्ञवल्क्य ने प्रश्न पूछे, परंतु शाकल्य उनके उत्तर न दे सका। इसलिये शाकल्य ने मृत्यु का स्वीकार किया।

देवमित्र शाकल्य की मृत्यु के कारण, सब ब्राह्मणों को ब्रह्महत्या का पातक लगा। अतः पवनपुर जा कर वहाँ उन्होंने द्वादशार्क, वालुकेश्वर तथा ग्यारह रुद्रों का दर्शन लिया। चार कुंडों में स्नान किया। वाडवादित्य के प्रसाद से उत्तरेश्वर का दर्शन ले कर, वे सारे मुक्त हो गये (वायु. ६०.६९)।

देवमीढ--(सू. निमि.) भागवतमत में कृतिरथ का तथा वायुमत में कीर्तिरथ का पुत्र।

२. (सो. क्रोष्टु.) भागवतमत में हृदीक का पुत्र। इसका पुत्र शूर। इसकी पत्नी का नाम ऐक्ष्वाकी था (मत्स्य. ४६)। देवमीढुष, देवमानुषि एवं देवमेधस् इसीके नामांतर हैं।

३. (सो. पूरु.) द्विमीढ का नामांतर।

४. (सो. वृष्णि.) वृष्णि के पाँच पुत्रों में से तीसरा (पद्म. सृ. १३)।

देवमीढुष--(सो. क्रोष्टु.) विष्णुमत में हृदीक का, तथा मत्स्यमत में भजमान का पुत्र (देवमीढ २. देखिये)।

देवमुनि ऐरंमद--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४६)। 'पंचविंश ब्राह्मण' के मत में यह तुर का ही नामांतर है (२५.१४.५)।

देवमेधस्--(सो. क्रोष्टु.) भविष्यमत में हरिदीपक का पुत्र (देवमीढ २. देखिये)।

देवयान--काश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

देवयानी--असुरोंके राजपुरोहित शुक्राचार्य की कन्या। पुरंदर इंद्र की कन्या जयंती इसकी माता थी। शुक्राचार्य को प्रसन्न कर, दस वर्षों तक उसके पास रहने के बाद जयंती को यह कन्या हुई। प्रियव्रतपुत्री उर्जस्वती इसकी माता थी, ऐसा भी उल्लेख प्राप्त है (भा. ५.१.२५)।

देवों के कथनानुसार संजीवनी विद्या सीखने के लिये बृहस्पतिपुत्र कच असुर गुरु शुक्राचार्य के पास आ कर रह गया। कच का आकर्षक व्यक्तित्त्व देख, देवयानी

उससे प्रेम करने लगी। कच से विवाह करने का प्रस्ताव इसने उसके सामने प्रस्तुत किया। किंतु गुरुकन्या मान कर कच ने इसका पाणिग्रहण नहीं किया। तब 'तुम्हारी विद्या तुम्हें फलद्रूप नहीं होगी,' ऐसा शाप देवयानी ने उसे दिया। निरपराध होते हुए शाप देने के कारण, क्रुद्ध हो कर, कच ने भी इसे शाप दिया, 'कोई भी ऋषिपुत्र तुम्हारा वरण न करेगा'। इसीसे इसे क्षत्रियपत्नी बनना पड़ा।

कच के वापस जाने के बाद, एक बार वृषपर्वन् राजा की कन्या शर्मिष्ठा, तथा यह अपनी सखियों के साथ क्रीड़ा करने गई। उस वन में अपने अपने वस्त्र किनारे रख कर, ये बालायें जलक्रीड़ा करने लगी। नटखट इन्द्र ने इनका मज़ाक उडाने के लिये, सब के वस्त्र मिल जुल कर रख दिये। जलक्रीड़ा समाप्त होने पर सब सखियाँ एकदम बाहर आईं, तथा गड़बड़ी में जो भी वस्त्र जिसे मिला, उसे पहनने लगी। भागवत में कहा है कि, नंदी पर बैठ कर नदी किनारे से शंकर जा रहे थे। इस कारण लज्जित हो कर, ये लडकियाँ पानी से बाहर आयी, एवं वस्त्र परिधान करने लगी (भा. ९. १८)।

इस गड़बड़ी में, गल्ती से शर्मिष्ठा ने देवयानी की साड़ी पहन ली। अपनी साडी शर्मिष्ठा द्वारा पहनी देख कर, दवयानी अत्यंत क्रोधित हुई। देवयानी ने कहा, 'मेरी शिष्या होते हुए भी तुमने मेरा वस्त्र परिधान क्यों किया? तुम्हारा कभी भी कल्याण न होगा'। तब शर्मिष्ठा ने कहा, 'मैं राजकन्या हूँ तथा तुम मेरे पिता के पुरोहित शुक्राचार्य की कन्या हो। इतनी नीच हो कर भी, मेरे जैसी राजकन्या से तेढ़ी बात करने में तुम्हे शर्म आनी चाहिये'। इस प्रकार वे दोनों एक दूसरे को गालियाँ दे कर वस्त्रों का खींचतान करने लगीं। अन्त में शर्मिष्ठा ने वहीं एक कुएँ में इसे ढकेल दिया। इसकी मृत्यु हो गयी, ऐसे समझ कर वह नगर में वापस गई।

जिस कुएँ में देवयानी गिरी थी, उसके पास मृग के पीछे दौड़ता हुआ, नहुषपुत्र ययाति पहूँच गया। उदकप्राशनार्थ उस कुएँ में उसने झाँक कर देखा, तो भीतर एक अत्यंत तेजस्वी कन्या उसे दिख पड़ी। यह नग्न होने के कारण, उसने अपना उत्तरीय इसे पहनने के लिये दिया (भा. ९. १८)। बाद में ययाति ने इसे सारा वृत्तांत पूछा। तब इसने बताया, 'मैं शुक्राचार्य की कन्या हूँ'। यह ब्राह्मणकन्या है, यह जान कर ययाति ने इसका दाहिना हाथ पकड़ कर इसे बाहर निकाला। बाद में इससे विदा हो कर, वह अपने नगर वापस गया।

देवयानी को ढूँढने के लिये घूर्णिका नामक एक दासी आयी। देवयानी ने उसके द्वारा, अपने पिता उशनस् शुक्र को संदेशा भिजवाया, 'मैं वृषपर्वन् के नगर में नहीं आऊंगी'। घूर्णिका ने यह वृत्त, वृषपर्वन् के राजदरबार में बैठे शुक्राचार्य को बताया। उसे सुनते ही शुक्राचार्य तुरंत वन में आया, एवं अपनी दुःखी कन्या से मिला। इसकी हालत देखते ही वह बोला, 'अवश्य ही पूर्वजन्म में तुमने कुछ पाप किया होगा, जिसके कारण तुम्हें यह सज़ा मिल रही है'। पश्चात् देवयानी ने उसे शर्मिष्ठा के शब्द बताये। उन्हें सुन कर शुक्राचार्य को अत्यंत क्रोध आया। परंतु देवयानी ने पिता की सांत्वना की, एवं कहा, 'वृषपर्वन् की कन्या ने, तुमसे भी मेरा ज्यादा अपमान किया है। उससे मैं बदला ले कर ही रहूँगी'।

बाद में कोपाविष्ट शुक्राचार्य, दैत्य राजा वृषपर्वन् का त्याग करने के लिये प्रवृत्त हुआ। वृषपर्वन् ने नम्रता से उसकी क्षमा माँगी। तब शुक्र ने कहा, 'तुम देवयानी को समझाओ, क्यों कि, उसका दुख मैं सहन नहीं कर सकता'। तब वृषपर्वन् ने कहा, 'आप हमारे सर्वस्व के स्वामी हैं। इसलिये आप देवयानी को हमें मॉफ करने को कह दें'। यह सारा वृत्त शुक्राचार्य ने देवयानी को बताया। जवाब में इसने कहा कि, 'यह सब राजा मुझे स्वयं आ कर कहे'। तब वृषपर्वन् ने इससे कहा, 'हे देवयानी। तुम जो चाहो, मैं करने के लिये तैय्यार हूँ। किंतु तुम नाराज न हो'। तब देवयानी ने कहा, 'तुम्हारी कन्या शर्मिष्ठा अपनी सहस्र दासियों सह मेरी दासी बने, तथा जिससे मैं विवाह करूंगी, उसके घर भी वह दासी बन कर, मेरे साथ आये'।

देवयानी की यह शर्त मान्य कर, वृषपर्वन् ने शर्मिष्ठा को बुलावा भेजा। बुलानेवाली दासी ने देवयानी की शर्त के बारे में, सारा कुछ शर्मिष्ठा को पहले ही बताया था। देवयानी के पास जा कर, शर्मिष्ठा ने उसकी शर्त मान्य कर ली। तब देवयानी ने उपहास से उसे कहा, 'क्यों? मैं तो याचक की कन्या हूँ! राजा की कन्या पुरोहितकन्या की दासी भला कैसे हो सकती है?' शर्मिष्ठा ने कहा, 'मेरे दासी होने से, अगर मेरे हीनदीन ज्ञातिबांधव सुखी हो सकते है, तो दास्यत्व स्वीकार करने के लिये मैं तैयार हूँ'। तब देवयानी संतुष्ट हुई। बाद में इसका विवाह

ययाति राजा से हुआ। शर्त की अनुसार, शर्मिष्ठा भी इसकी दासी बन कर, ययाति के यहाँ गयी (म. आ. ७३. ७५; मत्स्य. २७–२९)।

बाद में इसकी दासी बनी हुई शर्मिष्ठा को, ययाति से पुत्र उत्पन्न हुआ। तब यह क्रोधित हो कर, फिर एक बार अपने पिता के पास गयी। इस कारण शुक्र ने ययाति को शाप दिया 'तुम वृद्ध बन जाओगे'। अन्त में ययाति के द्वारा बहुत प्रार्थना की जाने पर शुक्र ने उसे उःशाप दिया, 'तुम अपना वार्धक्य तरुण पुरुष को दे सकोगे'।

देवयानी को ययाति से यदु तथा तुर्वसु नामक दो पुत्र हुएँ थे (वायु. ९३.७७–७८)। किन्तु उन दोनों ने ययाति का वृद्धत्व स्वीकारना अमान्य कर दिया। ययाति ने उन दोनों को शाप दे दिया।

रामायण में, देवयानी के केवल यदु नामक पुत्र का निर्देश आया है (वा. रा. उ. ५८)।

देवरक्षित—(सो. कुकुर.) विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में देवक का पुत्र। देवरंजित एवं देववर्धन इसीके नामांतर है (पद्म. सृ. १३)।

देवरक्षिता—देवक राजा की कन्या एवं वसुदेव की स्त्री। इसे गद आदि नौं पुत्र थे (भा. ९.२४)।

देवरंजित—(सो. कुकुर.) वायुमत में देवक का पुत्र (देवरक्षित १. देखिये)।

देवरथ—(सो.) भविष्यमत में कुशुंभ का पुत्र (देवरात २. देखिये)।

देवराज—(सू. इ.) विकुक्षि का नामांतर (मत्स्य. १२.२६)।

२. (सू. निमि.) देवरात का पाठभेद।

३. एक ब्राह्मण। यह किरात नगर में व्यापार करता था। यह अत्यंत धूर्त एवं शराबी था। एक बार तालाब में यह स्नान करने गया। वहाँ शोभावती नामक वेश्या से इसका संबंध जड़ा। उसके कारण माँ, बाप तथा पत्नी का भी इसने वध किया।

एक बार यह प्रतिष्ठान नगर में गया। वहाँ इसने शिव का दर्शन लिया तथा शिवकथा सुनी। पश्चात् एक माह के बाद इसकी मृत्यु हुई। केवल अल्पकाल किये गये शिवपूजन के कारण, इसे कैलास में जाने का भाग प्राप्त हुआ (शिवपुराण माहात्म्य)।

४. काशी का राजा। इसकी कन्या सुदेवा। वह इक्ष्वाकु की पत्नी थी (पद्म. भू. ४२.६)।

देवराज वसिष्ठ—एक ऋषि। यह अयोध्या का राजा त्रय्यारुण का पुरोहित था। इसीके कारण त्रय्यारुण ने सत्यव्रत त्रिशंकु को, अयोध्या देश के बाहर निकाल दिया तथा अपना राज्य इस पर (अपने पुत्र) सौंप दिया (त्रिशंकु देखिये)। इसीके द्वारा विश्वामित्र ने आप को ब्राह्मण कहलवाया (JRAS १९१७. पृ. ४०–६७)।

देवराजन्—एक सन्मान्य उपाधि। देवों में से जिन्होंने राजसूययज्ञ किया, उन्हें यह उपाधि लगायी जाती थी (देव देखिये)। प्राचीन काल के सुविख्यात 'देवराजन्' की नामावली सायणाचार्य ने दी है। उनके नाम सिंधुक्षित् - सैन्धिक्षित, दीर्घश्रवस - दैर्घश्रवस, पृथु-पार्थ, कक्षीवत एवं काक्षीवत्। मानवों में जिन्होंने राजसूययज्ञ किये, उन्हें 'मनुष्यराजन्' कहा जाता था। 'मनुष्यराजन्' के प्रमुख नाम–दैवोदास, वाध्र्यश्व, वैतहव्य। 'देवराजन्' एवं 'मनुष्यराजन्' के कुछ साम प्रसिद्ध है (पं. ब्रा. १८.१०.५)।

देवरात—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह करंभ का पुत्र था। वायुमत में करंभक का पुत्र। भविष्यमत में इसे देवरथ कहा गया है (पद्म. सृ. १३)।

२. एक ऋषि। भागवत के अनुसार इसका पुत्र याज्ञवल्क्य। वायु तथा ब्रह्मांड में ब्रह्मवाह पाठभेद है।

३. एक गृहस्थ। इसे कला नामक कन्या थी। उसके पति का नाम शोण था। मारीच द्वारा कला का वध होने के बाद, देवरात तथा शोण उसको ढूँढ़ने, विश्वामित्र के यहाँ गये। वहाँ से वसिष्ठ को साथ ले कर वे शिवलोक में गये। मरते, समय, 'हर' का नाम मुख से निकलने के कारण, इसकी कन्या कैलास में पार्वती की दासी बनी थी। पार्वती ने इसे एवं शोण को सोमव्रत समारोह के लिये ठैरने के लिये कहा। वह समारोह समाप्त होने पर ये दोनों वापस आये (पद्म. पा. ११२)।

४. युधिष्ठिर की सभा का एक क्षत्रिय (म. स. ४. २२)।

देवरात जनक—(सू. निमि.) विदेह देश के सुविख्यात 'जनक' राजाओं में से एक (म. शां. २९८)। भागवत एवं वायु में इसे सुकेतु का, तथा विष्णु में स्वःकेतु का पुत्र बताया है। इसके घर में रुद्र ने एक शिवधनुष्य रखा था। 'सीता स्वयंवर' के समय, उस

धनुष का राम ने भंग किया (वा. रा. अयो. ६६)। राम का ससुर एवं सीता का पिता 'सीरध्वज जनक' से यह बहुत ही पूर्वकालीन था। यह याज्ञवल्क्य का समकालीन था। वायु में इसे 'देवराज' कहा गया है। धनुष का इतिहास बताते समय इसे निमि का पुत्र कहा गया है (वा. रा. बा. ६६.८)। किंतु 'रामायण' में दिया गया इसका वंशक्रम, पुराणों में दिये गये क्रम से अधिक विश्वासार्ह प्रतीत होता हैं। इसका पुत्र बृहद्रथ (दैवराति देखिये)।

देवरात वैश्वामित्र—शुनःशेप का नामांतर। शुनःशेप को विश्वामित्र ने पुत्र मान कर स्वीकार किया। उस समय शुनःशेप को यह नाम दिया गया (ऐ. ब्रा. ७.१७; सां. श्रौ. १५.२७)। पश्चात् एक गोत्र एवं प्रवर को भी यह नाम दिया गया। यह एक मंत्रकार भी था (अजीगर्त एवं जह्नु देखिये)

देवराति—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

देवल—एक ऋषि (क. सं. २२.११)। असित को एकपर्णा से उत्पन्न पुत्रों में से यह एक था। यह कश्यप गोत्र का एक मंत्रकार एवं प्रवर था। इसने हूहू गंधर्व को शाप दिया था (भा. ८.४)। असित देवल तथा देवल इन दोनों नामों से इसका निर्देश प्राप्त है। इसका छोटा भाई धौम्य। वह पांडवों का पुरोहित था (असित देखिये)।

धर्मशास्त्रकार—एक स्मृतिकार के नाते भी देवल सुविख्यात था। याज्ञवल्क्य पर लिखी गई 'मिताक्षरा' (१.१२८), 'अपरार्क,' 'स्मृतिचन्द्रिका' आदि ग्रंथों में देवल का उल्लेख किया गया है। उसी प्रकार देवल की स्मृति के काफी उद्धरण 'मिताक्षरा' में लिये गये हैं (१.१२०)। 'स्मृतिचन्द्रिका' में देवल स्मृति से ब्रह्मचारी के कर्तव्य, ४८ वर्षों तक पाला जानेवाला ब्रह्मचर्य, पत्नी के कर्तव्य आदि के संबंध में उद्धरण लिये गये हैं (स्मृ. ५२; ६३)। उसी प्रकार 'मिताक्षरा,' हरदत्त कृत 'विवरण,' अपरार्क आदि ग्रंथों में 'देवलस्मृति' में से आचार, व्यवहार, श्राद्ध, प्रायश्चित तथा अन्य बातों के संबंध में उद्धरण लिये गये हैं।

'देवल स्मृति' नामक ९० श्लोकों का ग्रंथ आनंदाश्रम में छपा है। उस ग्रंथ में केवल प्रायश्चित्तविधि बताया गया है। किंतु वह ग्रंथ मूल स्वरूप में अन्य स्मृतियों से लिये गये श्लोकों का संग्रह होगा। इसका रचनाकाल भी काफी अर्वाचीन होगा। क्योंकि, इस स्मृति के १७-२२ श्लोक तथा ३०-३१ श्लोक विष्णु के हैं, ऐसा अपरार्क में (३.१२००) बताया गया है। अपरार्क तथा स्मृतिचन्द्रिका में 'देवल स्मृति' से दायविभाग, स्त्रीधन पर रहनेवाली स्त्री की सत्ता आदि के बारे में उद्धरण लिये गये हैं। इससे प्रतीत होता है कि, स्मृतिकार देवल, बृहस्पति, कात्यायन आदि स्मृतिकारों का समकालीन होगा। देवल विरचित धर्मशास्त्र पर श्लोक एकत्रित कर, तीनसौ श्लोकों का संग्रह 'धर्मप्रदीप' में दिया गया हैं। उससे इसके मूल स्मृति की विविधता तथा विस्तार की पूर्ण कल्पना आती है।

२. जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४६.७)।

३. प्रत्यूष का पुत्र (म. आ. ६०.२५; विष्णु. १.१५.१७)। इसका भाई असित। स्वर्ग में जा कर, इसने पितरों को महाभारत का निरूपण किया था (म. आ. १.६४; अजित देखिये)।

४. एक शिवशिष्य। शिव ने श्वेत नाम से दो अवतार लिये। उनमें से दूसरे का शिष्य।

५. कृशाश्व को धिषणा से उत्पन्न पुत्र (भा. ६.६. २०)।

६. एक ऋषि। ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ में, ब्रह्मगणों का यह अग्नीध्र था (पद्म. सृ. ३४)।

देववत्—एक वैदिक राजा। इसका नाती सुदास (ऋ. ७.१८.२२)। इसका रथ अप्रतिहतगति था (ऋ. ८. ३१.१५)। वध्र्यश्व, दिवोदास तथा सुदास, इस प्रकार यदि वंशावलि मानी जाय, तो सुदास को देववत् का दौहित्र मानना चाहिये।

२. रुद्रसावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

३. (सो. कुकुर.) देवक का ज्येष्ठ पुत्र। उपदेव, सुदेव एवं देवरक्षित इसके बंधु थे (पद्म. सृ. १३)।

४. (सो. वृष्णि.) अक्रूर का पुत्र (पद्म. सृ. १३)।

५. एक ऋषि। पूर्वजन्म में यह केशव था। यह विष्णुस्वामी के मतों का अनुयायी था। इसने 'रामज्योत्स्नामय' नामक ग्रंथ लिखा (भवि. प्रति. ४.२२)।

देववती—ग्रामणी गंधर्व की कन्या एवं सुकेश राक्षस की पत्नी।

देववर—यजुर्वेदी ब्रह्मचारी।

देववर्णिनी—भारद्वाज ऋषि की कन्या तथा विश्रवा ऋषि की पत्नी। इसे वैश्रवण नामक पुत्र था।

देववर्धन--(सो. कुकुर.) भागवतमत में देवक का पुत्र (देवरक्षित देखिये)।

देववर्मन्--(मौर्य. भविष्य.) वायु तथा ब्रह्मांडमत में इंद्रपालित का पुत्र। इसने सात वर्षों तक राज्य किया। सोमशर्मा इसी का ही नामांतर है।

देवव्रर्ष--प्रियव्रत राजा का पुत्र (भा. ५.२०.९)।

देववात—भरत का पुत्र। इसके भाई का नाम देवश्रवस् था।

इन दोनों का एक संपूर्ण सूक्त है। दृषद्वती, सरस्वती एवं आपया नदी के तट पर, इसने यज्ञ किये थे (ऋ. ३.२३.२)।

देववीति—(स्वा. प्रिय.) मेरु की नौ कन्याओं में से एक तथा अग्नीध्रपुत्र केतुमाल की स्त्री।

देवव्रत—मालिनी देखिये।

२. भीष्म का नामांतर (म. आ. ९०.५०; ९४.६७)।

३. एक कर्मठ ब्राह्मण। एक बार एक कृष्णभक्त ने कृष्ण का पूजन किया। तीर्थ देने पर, इसने उसे अश्रद्धा से ग्रहण किया।

अतः इसे बाँस का जन्म मिला। पश्चात् पुण्यसंचय के कारण, उस बाँस से कृष्ण ने अपनी मुरली बनायी, एवं इसका उद्धार हो गया (पद्म. पा. ७३)।

देवशर्मन्—एक ऋषि। इसकी स्त्री रुचि (म. अनु. ७५. १८; ४१ कुं.)।

२. जनमेजय के सत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.९)।

३. वायुमत में व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

४. एक सदाचारी ब्राह्मण। अपने पिता का वर्षश्राद्ध सुयोग्य ब्राह्मण के हाथों से, यह हर साल करता था। एकबार श्राद्ध के बाद यह आँगन में बैठा था। तब एक बैल तथा कुतिया का संभाषण इसने सुना। उस संभाषण से इसे पता चला कि, वे दोनों इसके मातापिता हैं, तथा श्राद्ध की गड़बड़ी वो दोनों भूखे रह गये है।

अपने मातापिता को, बैल एवं कुतिया का जन्म कैसे प्राप्त हुआ, इसका कारण पूछने के लिये, यह वसिष्ठ के पास गया।

वसिष्ठ ने सारी घटनायें अन्तर्ज्ञान से जान कर, इसे बताया, 'रजस्वला स्थिति में तुम्हारी माता ने भोजन पका कर ब्राह्मणों को खिलाया। इस कारण उन दोनों को यह दुःस्थिति प्राप्त हुई है'। इस पर उपाय पूछने पर, वसिष्ठ ने भाद्रपद शुद्ध पंचमी को, ऋषिपंचमी व्रत करने के लिये इसे कहा। उसे करने के बाद, इसके मातापिता का उद्धार हुआ (पद्म. उ. ७७)।

५. एक ब्राह्मण। प्रत्येक पर्व में यह समुद्रसंगम पर श्राद्ध करता था। उस श्राद्ध से इसके पितर प्रत्यक्ष आ कर इसे आशीर्वाद देते थे। एक बार अपने पितरों के साथ यह पितृलोक गया। वहाँ अपने पितरों से भी अधिक सुखी अन्य पितर इसने देखे। उसका रहस्य पूछने पर इसे ज्ञात हुआ कि, उनके श्राद्ध महीसागर-संगम पर होते हैं। वहीं श्राद्ध करने का इसने निश्चय किया। पश्चात् यह पृथ्वी पर आया, एवं अन्य लोगों की सहायता से महीसागरसंगम पर इसने श्राद्ध किया। उससे इसके पितरों का उद्धार हुआ (स्कन्द. १. २. ३)।

६. पुरंदर नगर में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसने अनेक पुण्यकृत्य किये। किंतु उनसे इसके मन को शांति प्राप्त नहीं हुई। अन्त में भगवद्गीता के दुसरे अध्याय से इसे मनःशांति प्राप्त हुई। (पद्म. उ. १७६)।

७. मायापुरी में रहनेवाला अत्रिकुल का एक ब्राह्मण। इसकी कन्या का नाम गुणवती तथा दामाद का नाम चन्द्रशर्मा था। चंद्रशर्मा इसका शिष्य भी था। एक बार ये दोनों अरण्य में दर्भसमिधा लाने के लिये गये। एक राक्षस ने इनका वध किया। अनेक प्रकार के धर्माचरणों के कारण, ये वैकुंठ गये (पद्म. उ. ८८; सत्यभामा देखिये)।

८. कावेरी नदी के उत्तरतट पर रहनेवाला एक ब्राह्मण। कार्तिक माह में अपने पुत्र को इसने स्नानादि कर्म करने के लिये कहा। उसने दुर्लक्ष किया। तब क्रुद्ध हो कर, इसने पुत्र को शाप दिया, 'तुम चूहा बनोंगे'। बाद में पुत्रद्वारा प्रार्थना की जाने पर, इसने उःशाप दिया, 'कार्तिकमाहात्म्य सुनने पर तुम मुक्त हो जावोंगे'।

उस शाप के अनुसार, इसका पुत्र चूहा बन कर अरण्य में गया। एक बार एक आँवले के वृक्ष के नीचे, विश्वामित्र ऋषि अपने शिष्यों को कार्तिकमाहात्म्य बता रहा था। उसे सुन कर वह ब्राह्मणपुत्र मुक्त हुआ (स्कंद. २.४.१२)।

९. विष्णु का एक अवतार। जालंधर दैत्य एवं देवताओं का युद्ध चल रहा था। उस समय, जालंधर दैत्य की पत्नी वृंदा को एवं उसकी सखी स्मरदूति को फँसाने के लिये, विष्णु ने देवशर्मा नामक तपस्वी का वेष धारण किया।

अपने को भरद्वाज गोत्रज ऋषि बता कर, देवशर्मा के रूप धारण करनेवाला विष्णु वृंदा को अपने आश्रम में ले गया। पश्चात् जालंधर का रूप धारण कर के, विष्णु ने देवशर्मा के आश्रम में वृंदा का उपभोग लिया (पद्म. उ. १८; जालंधर देखिये)।

देवश्रवस्—(सो. क्रोष्टु.) शूर राजा को मारिषा से उत्पन्न पुत्र। कंस की भगिनी कंसवती इसकी स्त्री थी। इसे सुवीर एवं इषुमान् नामक दो पुत्र थे (भा. ९.२४)।

२. एक ऋषि (म. शां. ४७.५)। यह विश्वामित्र के कुल में पैदा हुआ था, एवं उसीके वंश का एक प्रवर भी था। इसे कुशिक गोत्र का मंत्रकार भी बताया गया है।

देवश्रवस् भारत—भरतवंश का एक राजा। दृषद्वती, सरस्वती, एवं आपया नदीयों के तट पर, इसने देववात् राजा के साथ काफी यज्ञ किये थे (ऋ. ३.२३. २-३)। महाभारत (भांडारकर इन्स्टिटयूट आवृत्ति) में 'वेदश्रवस्' नाम से इसका निर्देश प्राप्त है।

देवश्रवस् यामायन—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७)। अनुक्रमणी में इसे यम का पुत्र कहा गया है।

देवश्रेष्ठ—रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

देवसावर्णि—रौच्य मनु का नामांतर। यह तेरहवाँ मनु था, एवं तेरहवे मन्वंतर का अधिपति था (भा. ८. १३; ब्रह्मवै. २.५४)। पुराणों में इसका ऋतधामा नामांतर दिया गया हैं (मत्स्य. ९; मनु देखिये)।

देवसेना—दक्ष प्रजापति की कन्या। केशी दैत्य इसे हरण कर ले जा रहा था। इस वक्त इंद्र ने इसे छुड़ाया। पश्चात् इसने कार्तिकेय को वरण किया (म. व. २१३. १; २१८.४७)। महाभारत में दी गयी देवसेना की कथा रूपकात्मक प्रतीत होती है।

देवस्थान—एक ब्रह्मर्षि (म. शां. २०.१;४७.६)।

देवहव्य—एक ऋषि (म. स. ७.१६)।

देवहूति—स्वायंभुव मनु की कन्या, एवं कर्दम— प्रजापति की पत्नी (भा. ३.१२.५४)। इसे नौ कन्याएँ एवं कपिल नामक एक पुत्र था (भा. ३.२४)। कपिल ने इसे सांख्यशास्त्र का उपदेश दिया था। बाद में यह देहत्याग कर नदी बनी (भा. ९.३३)।

देवहोत्र—एक ऋषि। उपरिचर वसु के यज्ञ में यह ऋत्विज् था।

देवातिथि काण्व—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.४)। इसके सूक्त में रुम, रुशम, श्यावक तथा कृप का उल्लेख है (ऋ. ८.४.२), तथा अन्त में कुरुंग की दानस्तुति की है (ऋ. ८.४.१९)। एकबार अकाल पड़ा। यह अपने पुत्रों के साथ कंदमूल लाने के लिये अरण्य गया। वहाँ इसे कूष्मांड के फल प्राप्त हुएँ। इसने एक साम कह कर, उन फलों को गायों में परिवर्तित कर दिया (पं. ब्रा. ९. २.१९)।

२. (सो. कुरु.) क्रोधन एवं कंडू का पुत्र। विष्णु, मत्स्य तथा वायु पुराणों में इसे अक्रोधन का पुत्र कहा गया है। वैदर्भी मर्यादा इसकी स्त्री थी एवं ऋष्य वा रुच इसका पुत्र था (म. आ. ९०.२२; भा. ९.२२.११)।

देवाधिप—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा (म. आ. ६१.२७)।

देवानंद—(सो. मगध. भविष्य.) प्रियानंद राजा का पुत्र। इसने बीस वर्षों तक राज्य किया।

देवानीक—(सू. इ.) क्षेमधन्वा का पुत्र (पद्म. सृ. ८)।

देवांतक—रावण का पुत्र। हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ६.७०)।

२. एक राक्षस। यह हिरण्याक्ष राक्षस का मित्र था। उसकी ओर से युद्ध करते समय, यह यम के हाथों मारा गया (पद्म. सृ. ७०)।

३. एक असुर। यह रौद्रकेतु का पुत्र था। इसने अपने कृत्यों द्वारा त्रैलोक्य को त्रस्त कर रखा था। तब विनायक ने कश्यप के गृह में अवतार ले कर, इसका वध किया।

४. कालनेमि का पुत्र।

देवापि आर्ष्टिषेण—(सो. कुरु.) कुरुवंश का एक राजा एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९८)। इसके सूक्त में शंतनु राजा का उल्लेख भी प्राप्त है।

शंतनु तथा यह दोनों कुरुवंश का राजा प्रतीप एवं सुनंदा के पुत्र थे। उनमें से यह ज्येष्ठ तथा शंतनु कनिष्ठ बंधु था। फिर भी शंतनु गद्दी पर बैठा। इसी कारण राज्य में १२ वर्षों तक अवर्षण हुआ। ब्राह्मणों ने उससे कहा, 'तुम छोटे भाई हो कर गद्दी पर बैठे हो, इस कारण भगवान् वृष्टि नहीं करते है'।

शंतनु ने देवापि को राजसिंहासन पर बैठने के लिये बुलवाया। परंतु देवापि ने उसे कहा, 'तुम्हारा पुरोहित बन कर मैं यज्ञ करता हूँ। तब वर्षा होगी।' तब इसने ऋग्वेद में इसके नाम से प्रसिद्ध सूक्त का उद्घोष किया (नि. २. ११)। त्वचारोग होने के कारण, इसने राज्य अस्वीकार कर दिया तथा यह तपस्या करने अरण्य गया। सौ वर्ष का अवर्षण होने के कारण, शंतनु की प्रार्थना से इसने यज्ञ

किया (बृहद्दे. ७.१४–८; ८.७)। इससे प्रतीत होता है, क्षत्रिय हो कर भी, इसने ब्राह्मणवर्ण स्वीकार कर पौरोहित्य किया। पृथूदक नामक तीर्थ पर तपस्या कर के, इसने यह ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था (म. श. ३९.१०)।

'बृहस्पति की स्तुति कर, इसने वर्षा करवाई। अपने सूक्त में इसने स्वयं को 'औलान' कहलाया है (ऋ. १०. ९८.११)। पुराण में कुछ भेद से यही जानकारी उपलब्ध है।

महाभारत में इसे प्रतीप एवं शैब्या-स्त्री सुनंदी का पुत्र बताया गया है (म. आ. ९०.४६)। भागवत, मत्स्य, वायु एवं विष्णुमत में यह प्रतीपपुत्र होने के बारे में मतभेद नहीं है। इसे शंतनु तथा बाह्लिक नामक दो भाई थे। बचपन में ही इसने विरक्ति स्वीकार की (म. आ. ८९.५२; ९०.४६; ह. वं. १.३२.१०६)।

धर्मज्ञान की इच्छा से विरक्त हो कर, यह वन में गया। बाद में यह देवों का उपाध्याय बना। इसे च्यवन तथा इष्टक नामक दो पुत्र थे (वायु. ९९.२३२; ब्रह्म. १३. ११७)। कुष्ठरोग से पीडित होने के कारण, लोगों ने इसे राजा बनाना अमान्य किया था (मत्स्य. ५०. ३९)।

भागवत में उपरोक्त सारी कथा दे कर, उसमें और कुछ जानकारी भी दी गयी है। शंतनु ने देवापि को राज्य का स्वीकार करने की प्रार्थना की। शंतनु के प्रधानों ने कुछ बुद्धिमान् ब्राह्मणों को भेज कर इसकी मति पाखंड मतों की ओर प्रवृत्त की। अंत में शंतनु के पास आ कर यह वेदमार्ग की निंदा करने लगा। इससे यह पतित सिद्ध हो कर, राज्य के लिये अयोग्य बना, तथा शंतनु का दोष नष्ट हो गया (विष्णु. ४.२०.७)।

बाद में यह कलापिग्राम में रहने लगा। कलियुग में सोमवंश नष्ट होने के बाद, कृतयुगारंभ में इसने पुनः एक बार, सोमवंश की स्थापना की (भा. ९.२२)। कलियुग में वर्णाश्रमधर्म नष्ट होने के बाद, नये कृतयुग के आरंभ में, वर्णाश्रमधर्म की स्थापना इसीके हाथों से होनेवाली है (भा. १२. २; विष्णु. ४. २०. ७; ९; सुवर्चस् देखिये)।

२. चेदि देश का एक क्षत्रिय। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)।

३. आर्ष्टिषेण राजा के उपमन्यु नामक पुरोहित का पुत्र (मिथु देखिये)।

देवार्ह—(सो. विदू.) वायुमत में हृदीक का पुत्र।

देवावृध—(सो. क्रोष्टु) सात्वत राजा का पुत्र। इसका पुत्र बभ्रु। पद्ममत में यह सात्वत का द्वितीय पुत्र था। इसे पुत्र न था, इसलिये इसने पर्णाशा नदी के तट पर तपस्या की। तब नदी ने कन्या का रूप धारण कर इसे वरण किया। पश्चात् उस कन्यारूपधारी नदी से इस बभ्रु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (पद्म. सृ. १३)। इसने यज्ञ में ब्राह्मणों को कांचनछत्र अर्पण किया था (म. शां. २२६.२१; अनु. २००.७ कुं.)।

देवी—एक अप्सरा।

२. प्रह्लादपुत्र वीरोचन की स्त्री (भा. ६. १८. १६)।

३. वरुण की पत्नी। इसे बल नामक पुत्र एवं सुरा नामक कन्या थी (म. आ. ६०.५१; देवी ४. देखिये)।

४. विश्वव्यापक आदिमाया के लिये प्रयुक्त सामान्य-नाम। देवी का शब्दशः अर्थ 'स्त्री देवता' है। इस अर्थ से, देवों के स्त्रियों के लिये, यह शब्द प्रयुक्त किया जाता है। किंतु 'देवी' यह नाम प्रायः आदिमाया ने पृथ्वी पर लिये नानाविध अवतारों के लिये, अधिकतर प्रयुक्त किया जाता है।

पुराणों में 'देवी' यह देवता अत्यंत प्रभावशाली मानी गयी है। इसलिये किसी भी संकट के समय, देव एवं मानव, इसकी शरण में जा कर संकटमुक्त होते है। स्कंद, पद्म, मत्स्य पुराणों में देवी की पराक्रम की अनेक कथाएँ ग्रथित की गयी हैं। 'कालिका पुराण' एवं 'देवी भागवत' ये ग्रंथ देवीमाहात्म्य बताने के लिये ही केवल लिखे गये है। मार्कंडेय पुराण में, देवीमाहात्म्य बताने के लिये 'सप्तशती' नामक उपाख्यान की रचना की गयी है (मार्क. ७८–९०)। उसका पठन देवीभक्त लोग प्रतिदिन किया करते हैं।

मानव एवं सृष्टि में जो शक्तिस्रोत है, उसकी उपासना, 'देवी उपासना' का आद्य अधिष्ठान है। देवगणों में से दत्त, शिव, एवं गणेश इन देवताओं में, एवं स्वयं मनुष्य के शरीर में जो सामर्थ्य एवं शक्ति है, उन्हें एकत्रित कर के कार्यप्रवण बनाना, यह 'देवी उपासना' का मुख्य उद्देश्य है। देवीद्वारा विश्व की उत्पत्ति होती है, एवं विश्व का विस्तार ही उसीके कृपाप्रसाद से होता है। सृष्टिविस्तार के लिये, उस सृष्टि में हरएक प्राणिमात्र की आसक्ति या काम निर्माण होना बहुत जरूरी है। जब तक सृष्टि में मोह नहीं, तब तक सृष्टि का विस्तार नहीं हो सकता। सृष्टि के चराचर वस्तुओं के बारे में, उपासकों के मन में आसक्ति या काम निर्माण करना, एवं पश्चात् उस

आसक्ति को पूरी करना, यह 'देवी उपासना' से ही केवल साध्य हो सकता है।

देवी के अनेक अवतार पृथ्वी पर हो गये हैं। उस हर एक अवतार का प्रभाव एवं रूप अलग है। देवी के उस अवतार का नाम भी इसके उस अवतार के रूप एवं गुणवैशिष्ट्य के अनुसार विभिन्न रखा गया है। देवी के इन विभिन्न अवतारों के नाम एवं उनके गुणवैशिष्ट्य इस प्रकार है:—

(१) त्रिगुणात्मिका—चराचर सृष्टि का स्वरूप सत्त्व, रज एवं तम इन तीनो गुणों से युक्त, अतएव 'त्रिगुणात्मक' है। उन तीनो स्वरूप देवी धारण करती है। इसलिये उसे 'त्रिगुणात्मिका' कहते है। अपने त्रिगुणात्मक स्वरूप के कारण, आध्यात्मिक शक्ति के साथ आदि दैविक एवं आधिभौतिक सामर्थ्य ही, देवी अपने भक्तों को प्रदान करती है। उस कारण, 'देवी उपासना' से भक्तों की आध्यात्मिक, आधिदैविक एवं आधिभौतिक उन्नति हो जाती है।

(२) दुर्गा—मार्कंडेय पुराणान्तर्गत 'देवी माहात्म्य' में, देवी का निर्देश दुर्गा नाम से किया गया है, एवं उसे काली, लक्ष्मी, एवं सरस्वती का अवतार कहा है।

दुर्गम नामक असुर का वध करने के कारण, देवी को 'दुर्गा' नाम प्राप्त हुआ। देवों के नाश के लिये, दुर्गम तपस्या कर रहा था। ब्रह्मदेव को प्रसन्न कर, उसके वर से दुर्गम ने सारे वेद, पृथ्वी पर से चुरा लिये। उस कारण यज्ञयागादि सारे कर्म बंद हुएँ। पृथ्वी पर अनावृष्टि का भय छा गया। ब्राह्मणों ने विनंती करने पर, देवी ने शतनेत्रयुक्त रूप धारण कर, दुर्गम का वध किया, एवं उसने चुरायें हुएँ वेद मुक्त किये (पद्म. स्व. २८; दे. भा. ७.२८)।

(३) महिषासुर मर्दिनी एवं महालक्ष्मी—महिष नामक राक्षस, ब्रह्मदेव के वर के कारण उन्मत्त हो कर देवों को त्रस्त करने लगा। देवों ने प्रार्थना करने पर आदिमाया ने अष्टादश भुजायुक्तरूप धारण किया, एवं रणांगण में महिषासुर का वध किया। देवी के उस अवतार को 'महिषासुर मर्दिनी' एवं 'महालक्ष्मी' कहते है (महिषासुर देखिये)। महिषासुर का वध करने के बाद, उस स्थान पर महालक्ष्मी ने पापनाशनतीर्थ उत्पन्न किया (स्कंद. १.२.६५; ३.३०)।

(४) चामुंडा—शुंभ-निशुंभ नामक दो दानवों ने, देवी का वध करने के लिये, चण्ड-मुण्ड नामक दो राक्षस भेज दिये। किंतु देवी ने उन दोनों का ही वध किया। उस कारण, इसे 'चामुंडा' नाम प्राप्त हुआ। चण्ड-मुण्ड को मारने के बाद, चामुंडा ने शुंभ-निशुंभ का भी वध किया (स्कंद.५.१.३८;चंड ३. देखिये)।

शुंभ-निशुंभ के पक्ष का रक्तबीज नामक और एक असुर था। ब्रह्मदेव के वरप्रभाव से, उसके रक्त के बिंदु भूमि पर पडते ही उतने ही राक्षस निर्माण होते थे। इस कारण वह युद्ध में अजेय हो गया था। चामुंडा ने उसका सारा रक्त, भूमी पर एक ही रक्तबिंदु छिड़कने का मौका न देते हुये, प्राशन किया। उस कारण रक्तबीज का नाश हुआ (दे. भा. ५.२७-२९; मार्क. ८५; शिव. उमा. ४७; रक्तबीज देखिये)।

(५) शाकंभरी—अपने क्षुधित भक्तों को, देवी ने कंदमूल एवं सब्जियाँ खाने के लिये दी। उस कारण, उसे 'शाकंभरी' नाम प्राप्त हुआ।

(६) सती—दक्ष प्रजापति की कन्या के रूप में आदिमाया ने अवतार लिया, उसे 'सती' कहते हैं। अपनी इस कन्या का विवाह दक्ष ने महादेव से कर दिया।

पश्चात् दक्ष ने एक पशुयज्ञ प्रारंभ किया। उस यज्ञ के लिये, दक्ष ने अपनी कन्या सती एवं जमाई शिव को निमंत्रण नहीं दिया। फिर भी सती पिता के यज्ञस्थान में यज्ञसमारोह देखने आयी। वहाँ दक्ष ने उसका अपमान किया। तब क्रोधवश सती ने, यज्ञकुंड में अपना देह झोंक दिया।

शिव को यह ज्ञात होते ही, दुखी हो कर सती का अर्धदग्ध शरीर कंधे पर ले कर, वह नृत्य करने लगा। उस नृत्य से समस्त त्रैलोक्य त्रस्त हो गया। पश्चात् विष्णु ने शंकर को नृत्य से परावृत्त करने के लिये, सती के कलेवर का एक एक अवयव शस्त्र से तोड़ना प्रारंभ किया। जिन स्थानों पर सती के अवयव गिरे, उन स्थानों पर सती या शक्ति देवी के इक्कावन स्थान प्रसिद्ध हुएँ। उन्हे 'शक्तिपीठ' कहते है (शक्ति देखिये)।

(७) पार्वती, काली, एवं गौरी—दक्षकन्या सती ने हिमालय के उदर में पुनः जन्म लिया। हिमालय की कन्या होने से, इसे हैमवती, गिरिजा, एवं पार्वती ये पैतृक नाम प्राप्त हुएँ। इसकी शरीरकांति काली होने के कारण, उसे 'काली' नामांतर भी प्राप्त हुआ था।

एक बार शंकर ने मज़ाक के हेतु से, पार्वती की कृष्णवर्ण के उपलक्ष में, उसे 'काली' कह के पुकारा।

इसने यह अपमान समझा, एवं गौरवर्ण प्राप्त करने के लिये तपस्या करने, यह हिमालय पर्वत में गयी। शंकर अत्यंत स्त्रीलंपट होने से, उसके मंदिर में किसी भी स्त्री का प्रवेश न हो, ऐसी व्यवस्था इसने की। अपनी माता की सखी कुसुमामोदिनी एवं शिवगणों में से वीरक को, शंकर की मंदिरद्वार पर कड़ा पहारा रखने के लिये इसने कहा। फिर भी वीरक की दृष्टि बचा कर, अंधकासुर का अड़ि नामक पुत्र सर्प का रूप ले कर शिवमंदिर में पहुँच गया। पश्चात् पार्वती का रूप ले कर उसने शंकर को भुलाने का प्रयत्न किया। किंतु शंकर ने अंतर्ज्ञान से उसे पहचान कर उसका नाश किया।

वीरक पहारे पर होते हुए भी, अड़ि राक्षस को शिवमंदिर में प्रवेश मिल गया। उस लापरवही के लिये पार्वती ने उसे शाप दिया, 'तुम पृथ्वी पर शिला हो कर गिरोगे'। पश्चात् पार्वती की तपस्या से संतुष्ट हो कर, ब्रह्मदेव ने उसे गौरवर्ण प्रदान किया। उससे इसे गौरी नाम प्राप्त हुआ (पद्म. सृ. ४४; मत्स्य. १५५—१५८; कालि. ४७)।

(८) **कालिका**—दारुक दैत्य का संहार करने के लिये, पार्वती ने शंकर के कंठ से, एक महाभयानक देवी निर्माण की। वह कृष्णवर्णीय होने से उसे 'कालिका' नाम प्राप्त हुआ। कालिका ने एक गर्जना करते ही, दारुक अपने सैन्य के साथ मृत हो गया। शिव के कंठ से उत्पन्न होने के कारण, कालिका के शरीर में शिवकंठ में स्थित विष उतर गया था। उस कारण दारुक के वध पश्चात्, कालिका के उग्र स्वरूप से स्वयं देव त्रस्त हो गये। पश्चात् शंकर ने बालरूप धारण कर, कालिका का स्तनपान किया एवं उसका सारा विष शोषण किया। तब यह शान्त हो गयी (स्कंद. १.२.६२)।

(९) **मातृका**—देवी का और एक अवतार मातृका है। घंटाकर्णि, त्रैलोक्यमोहिनी आदि सात मातृका (सप्त-मातृका) प्राचीनकाल से प्रसिद्ध हैं। मुहेंजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्थनन में उपलब्ध 'सिंधुघाटी संस्कृति' में भी मातृका की मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं (मातृका देखिये)।

इसके अतिरिक्त देवी भागवत एवं मत्स्य पुराण में, देवी के अन्य चौदह अवतारों का निर्देश किया गया है। देवी के वे चौदह अवतार इस प्रकार है :—

१. **सिद्धांबिका**—स्कंद ने उसकी स्थापना की। २. **तारा**—यह दक्षिण दिशा में स्थित है। ३. **भास्करा**—यह पश्चिम दिशा का पालन करती है, एवं नक्षत्रों को प्रकाश देती है। ४. **योगीश्वरी**—यह उत्तर दिशा में रहती है। उसके दृष्टिपान से सनकादिक योगी सिद्ध बने। ५. **त्रिपुरा**—त्रिपुरासुर का वध करने के लिये, इसने शंकर की मदद की। ६. **कोलंबा**—यह पूर्व दिशा में वाराहगिरि पर रहती है। ७. **कपालेशी**—यह कोलंबा के साथ रहती है। ८. **सुवर्णाक्षी**। ९. **चर्चिता**। १०. **त्रैलोक्यविजया**—यह पश्चिम दिशा में रहती है। ११. **वीरा**। १२. **हरिसिद्धि**—यह प्रलय की देवता है। १३. **चंडिका**—ईशान्य में रहनेवाली इस देवी ने चंडमुंड का वध किया। १४. **भूतमाला अथवा भूतमाता**—यह गुह के भ्रूमध्य से निकली (स्कंद १.२.४७; ३.१.१७; मत्स्य. १३; दे. भा. ९)।

देवीपीठ--उपरिनिर्दिष्ट देवी अवतारों के अतिरिक्त, देवी के १०८ नाम, एवं स्थान पुराणों में मिलते हैं। देवी के ये स्थान 'देवीपीठ' नाम से पहचाने जाते हैं। पुराणों में निर्दिष्ट देवीपीठ एवं वहाँ स्थित देवी के अवतार के नाम निम्नलिखित सूची में दिये गये है। इस सूची में से प्रथम नाम देवीपीठ का, एवं उसके बाद कंस में दिया नाम वहाँ स्थित देवी के अवतार का है :—

अच्छोद (सिद्धदायिनी), अट्टहास (फुल्लरा), अमरकंटक (चण्डिका), अम्बर (विश्वकाया), अम्बर (विश्वकाया देवी), अश्वत्थ (वन्दनीया देवी), उज्जयिनी (चण्डिका), उत्कलात (विमला), उत्तरकुरु (औषधि), उत्पलावर्तक (लोला), उष्णतीर्थ (अभया), एकाम्रक (कीर्तिमती), कन्यकाश्रम (शर्वाणी), कपालमोचन (शुद्धा, शुद्धि,), कमलाक्ष (महोत्पलादेवी), कमलालय (कमला, कमलादेवी), करतोया तट (अपर्णा), करवीर (महिषमर्दिनी), करवीर (महालक्ष्मी), कर्कोट (मुकुटेश्वरी), कर्णाट (जयदुर्गा), कर्णिक (पुरुहूता), कश्मीर (महामाया), काञ्ची (देवगर्भा), कार्तिकेय (शाङ्करी, यशस्करी देवी), कान्यकुब्ज (गौरी), कामगिरी (कामाख्या), कायावरोहण (माता), कालंजर (काली), कालमाधव (काली), कालीपीठ (कालिका), काश्मीरमण्डल (मेधा), किरीट (किरीट), किष्किंध पर्वत (तारा), कुब्जाम्रक (त्रिसंध्या), कुमुद (सत्यवादिनी), कुरुक्षेत्र (सावित्री), कुशद्वीप (कुशोदका), कृतशौच (सिंहिका), केदार (मार्गदायिनी), कोटितीर्थ (कोटवी), गंगाद्वार (हरिप्रिया, रतिप्रिया देवी), गंगा (मंगला), गण्डकी (गण्डकी), गन्धमादन (कामुका, कामाक्षी), गया (मंगला), गोकर्ण (भद्र-

कालिका, भद्रकर्णिका), गोमन्त (गोमती), गोदाश्रमे (त्रिसंध्या), गोदावरी तट (विश्वेशी), चट्टल (भवानी), चन्द्रभागा (काला), चित्त (ब्रह्मकला देवी), चित्रकूट (सीता), चैत्ररथ (मदोत्कटा), छगलाण्ड (प्रचण्डा), जनस्थान (भ्रामरी), जयन्ती (जयन्ती) जालन्धर (त्रिपुरमालिनी), जालन्धर (विश्वमुखी), ज्वालामुखी, (अम्बिका), त्रिकूट (रुद्रसुंदरी), त्रिपुरा (त्रिपुरसुंदरी), त्रिस्रोता (भ्रामरी) देवदारुवन (पुष्टि), देवलोक (इंद्राणी), देविकातट (नन्दिनी), द्वारवती (रुक्मिणी), नंदीपुर (नंदिनी), नलहाटी (नला), नागवंधन (सुगंधा), नैपाल (महामाया), नैमिष (लिंगधारिणी), पञ्चसागर (वाराही), पयोष्णी (पिंगलेश्वरी), पाताल (परमेश्वरी), पारतटे (पारा), पिण्डारक वन (धृति), पुण्ड्रवर्धन (पाटला), पुरुषोत्तम (विमला), पुष्कर (सावित्री, पुरुहूतादेवी), प्रभास (चंद्रभागा), प्रभास (पुष्करावती), प्रयाग (ललिता), बदरी (उर्वशी), बहुला (चण्डिका), बिल्वक (बिल्वपत्रिका), ब्रह्मास्य (सरस्वती), भद्रेश्वर (भद्रा), भरताश्रम (अनंता, अंगना), भैरवपर्वत (अवन्ति), मकरन्दक (चण्डिका), मगध (सर्वानंदकरी), मणिवेदिक (गायत्री), मथुरा (देवकी), मन्दर (कामचारिणी), मर्कोट (मुकुटेश्वरी), मलयपर्वत (रम्भा), मलयाचल (कल्याणी), महाकाल (महेश्वरी), महालय (महापद्मा, महाभागा), महालिंग (कपिला), मांडव्य (माण्डवी देवी), मातृणा (वैष्णवी), माधव वन (सुगन्धा), मानस (दाक्षायणी), मानस (कुमुदा), मायापुरी (नीलोत्पला), मायापुरी (कुमारी), माहेश्वरपुरी (स्वाहा), मिथिला (महादेवी), मुकुट (सत्यवादिनी), यमुना (मृगावती), यशोर (यशोरेश्वरी), युगाद्या (भूतधात्री), रत्नावली (कुमारी), रामगिरि (शिवानी), रामतीर्थ (रमणा), रामा (तिलोत्तमा), रुद्रकोटि (रुद्राणी), लंका (इंद्राक्षी), ललित (संनति), वक्त्रेश्वर (महिषमर्दिनी), वराहशैल (जया), वस्त्रेश्वर (तृष्टि), वाराणसी (विशालाक्षी), विकूट (भद्रसुंदरी), विनायक (उमादेवी), विन्ध्य (विन्ध्यनिवासिनी), विन्ध्य कन्दर (अमृता), विपाशा (अमोघाशी), विपुल (विपुला), विमाष (कपालिनी), विराट (अम्बिका विशालाक्षी), विश्वेश्वर (पुष्टि, विश्वा), वृन्दावन (उमा), वृन्दावन (राधा), वेगल (प्रचण्डा), वेणानदी (अमृता), वेदवदन (गायत्री), वैद्यनाथ (जयदुर्गा), वैद्यनाथ (अरोगा), वैश्रवणालय (निधि), शङ्खोद्धार (ध्वनि), शालिग्राम (महादेवी), शिवकुण्ड (शिवानन्दा), शिवचक्र (शुभा-चण्डा), शिवलिंग (जनप्रिया), शिवसंनिधि (पार्वती), शुचि (नारायणि), शोण (शोणाक्षी), शोणसंगम (सुभद्रा), श्रीपर्वत (श्रीसुंदरी), श्रीशैल (महालक्ष्मी), श्रीशैल (माधवी), सती (अरुन्धती), सन्तान (ललिता), सरस्वती (देवमाता), सर्वशरीरिन (शक्ति), सहस्राक्ष (उत्पलाक्षी), सह्याद्रि (एकवीरा), सह्याद्रि (एकवीरा), सिद्धपुर (मातालक्ष्मी देवी), सिन्धुसंगम (सुभद्रा), सुगन्धा (सुनन्दा), सुपार्श्व (नारायणी), सूर्यबिम्ब (प्रभा), सोमेश्वर (वरारोहा), स्थानेश्वर (भवानी), हरिश्चन्द्र (चन्द्रिका), हस्तिनापुर (जयन्ती), हिंगुला (कोटरी), हिवावतपृष्ठ (नंदा), हिमाद्रि (भीमादेवी), हिरण्याक्ष (महोत्पला), हेमकूट (मन्मथा), कालिका. ६४; मत्स्य. १३; पद्म. सृष्टि. १७; दे. भा. ७.७;) ।

देहिन्--अमिताभ देवों में से एक ।

दैत्य--एक मानवजाति । कश्यप एवं दिती की संतती 'दैत्य' कहलाती थी । उस वंश के लोगों से ही यह मानवजाति उत्पन्न हो गयी होगी ।

दैत्यों का सुप्रसिद्ध राजा वृषपर्वन् था । उसकी कन्या शर्मिष्ठा पुरु राजा ययाति को विवाह में दी गयी थी । उससे आगे पुरु आदि वंश निर्माण हुएँ ।

दैत्यों का पुरोहित शुक्र था । उसके पास मृत को जीवित करनेवाली 'संजीवनी विद्या' थी । वह विद्या देवों ने, अपने पुरोहित बृहस्पति के पुत्र कच के द्वारा शुक्र से संपादित की ।

शुक्र के वंश में से शंड, मर्क, त्वष्टृ, वरुत्रि, त्वष्ट, त्रिशिरस्, विश्वकर्मन वृत्र, वरुचिन् ये पुरुष प्रसिद्ध हैं । ये सारे दैत्यों के पुरोहित एवं इंद्र के शत्रु थे । उनमें से शंड एवं मर्क दैत्यों को छोड़ कर देवों के पक्ष में जा मिले । उस कारण शुक्र ने उनको शाप दिया ।

आगे चल कर, दानव, दैत्य, राक्षस, नाग, दस्यु आदि शब्द वंशवाचक न रह कर गुणवाचक हो गये ।

दैत्यद्वीप--गरुड का पुत्र (म. उ. ९९.११) ।

दैत्यसेना--दक्ष प्रजापति की कन्या तथा केशी दैत्य की स्त्री (म. व. २१३.१) ।

दैय्यांपति--प्लक्ष का पैतृक नाम (तै. ब्रा. ३.१०.९. ३-५) । अग्निचिति की ईंटें बनाने की विद्या शांडिल्यायन ने इसे सिखायी थी (श. ब्रा. ९.५.१.१४) ।

दैर्घतम--(सो. काश्य.) दीर्घतमा का पुत्र। धन्वंतरि का यह पैतृक नाम था।

दैर्घतमस--कक्षीवत् देखिये।

दैव--अथर्वन् का पैतृक नाम।

दैवत्य--एक ऋषि। 'उपाकर्मांगआचार्यतर्पण' ग्रंथ में इसका उल्लेख है (जैमिनि देखिये)। एक राजा।

दैवराति--(सू. निमि.) देवरातपुत्र बृहद्रथ का यह पैतृक नाम था। इसके द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में याज्ञवल्क्य का शाकल्य से वाद हुआ था। पश्चात् याज्ञवल्क्य ने इसे तत्त्वज्ञान का उपदेश किया (म. शां. २९८.४)।

२. (सो. क्रोष्टु.) देवरातपुत्र देवक्षत्र का पैतृक नाम।

दैवल--एक ऋषि। असित का यह पैतृक नाम था। (पं. ब्रा. १४.११.१८, असित देखिये)।

दैववात--एक राजा। सृंजय राजा का यह पैतृक नाम था (ऋ. ४.१५.४)। यह अग्निपूजक था एवं तुर्वश तथा वृचीवत् राजाओं पर इसने विजय प्राप्त किया था (ऋ. ४.१५.४)। त्सिमर के मत में, अभ्यावर्तिन् चायमान पार्थव राजा एवं यह दोनों एक ही थे (अल्टिन्डिशे लेबेन १३३, १३४)। दिवोदास राजा की तरह, इसका राज्य भी सिंधु नदी के पश्चिम में था। कुरु राजा देववात के साथ भी इसका घनिष्ट संबंध था, यह इसके नाम से जाहिर होता है।

दैवाप--इन्द्रोत का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.४.१)।

दैवावृध--बभ्रु का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४)। सायणाचार्य दैवावृध एवं बभ्रु दो व्यक्ति मानते है।

दैवोदास--भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि।

दैवोदासि--प्रतर्दन का पैतृक नाम (सां. ब्रा. २६. ५. सां. उ. ३.१)। सुदास का भी यह पैतृक नाम रहा होगा (परुच्छेप एवं प्रतर्दन देखिये)।

दोष--अष्ट वसुओं में से एक।

दोषा--(स्वा. उत्तान.) पुष्पार्ण राजा की स्त्री। इसे प्रदोष, निशीथ एवं व्युष्ट नामक तीन पुत्र थे।

दौरेश्रवस--पृथुश्रवस् का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५. १५; ३)।

दौरेश्रुत--तिमिर्घि का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २५. १५; ३)।

दौर्गह--दुर्गह देखिये।

दौर्मुखि--यशोधरा का पैतृक नाम।

दौश्शालेय--दुःशलपुत्र सुरथ का पैतृक नाम।

दौश्शासनि--दुशासनपुत्र का पैतृक नाम। अभिमन्यु वध के लिये यह निमित्तमात्र बना।

दौष्यन्ति तथा दौष्यन्ति--भरत के पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२३; श. ब्रा. १३.५.४; ११)।

द्यावापृथिवी--एक देवताद्वय। ऋग्वेद में इन्हें कई बार मातापिता कहा गया है। द्यो को पिता तथा पृथिवि को माता मानने का संकेत ऋग्वेदकाल से प्रचलित है। यह जोड़ी इन्द्रादि की भी मातापिता है। पृथ्वी के सारे लोगों के मातापिता भी यही हैं।

द्यु--अष्टवसुओं में से एक। एक बार सारे वसु अपने भार्याओं के साथ वसिष्ठ के आश्रम में क्रीड़ा करने गये। वहाँ उन्होंने वसिष्ठ की कामधेनु देखी। कामधेनु के रूप एवं गुण देख कर, हरण करने का विचार उन्होंने किया। वसुओं में से द्यु ने कामधेनु चुरा ली।

कामधेनु के हरण की वार्ता ज्ञात होते ही, वसिष्ठ ने उन सब वसुओं को शाप दिया, 'तुम सब मनुष्य योनि में जन्म लो'। इस शाप के अनुसार द्यु ने गंगा के उदर से भीष्म के रूप में जन्म लिया (म. आ. ९३.४४)।

द्युत--धृत देखिये।

द्युतान मारुत--एक ऋषि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ९६; पं. ब्रा. १७.१.७; ६.४.२)। अन्य कई स्थानों में 'वायु देवता' अर्थ से इसका निर्देश प्राप्त है (वा. सं. ५.२७; तै. सं. ५.५.९.४; ६.२.१०.४; क. सं. १५.७; श. ब्रा. ३.६.१.१६)।

द्युति--द्रुति का नामांतर।

द्युतिमत्--(स्व. इ.) मदिराश्व राजा का पुत्र। इसका पुत्र सुवीर (म. अनु. २.९ कुं.)।

२. शाल्वदेशीय एक राजा। अपना राज्य इसने ऋचीक को दान दिया था। उस कारण इसे मरणोत्तर सद्गति प्राप्त हुई (म. अनु. १३७. २२–२३; शां. २२६–३३)।

३. स्वायंभुव मनु का एक पुत्र (पद्म. सृ. ७)।

४. दक्ष सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

५. आभूतरजस देवों में से एक।

६. सरस्वती के तट पर स्थित भद्रावती नामक नगर का राजा (पद्म. उ. ४९)।

७. मणिभद्र तथा पुण्य जनी का पुत्र।

द्युमत्--स्वायंभुव मन्वन्तर के वसिष्ठ तथा ऊर्जा का पुत्र (भा. ४१.४१)।

२. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र (मनु देखिये)।

३. प्रतर्दन राजा का नामांतर (प्रतर्दन देखिये)।

४. शाल्व राजा का प्रधान। कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.६)।

द्युमत्सेन--शाल्वदेशीय सत्यवत् वा चित्राश्व राजा का पिता (सावित्री देखिये)।

२. एक राजा। राजसूय दिग्विजय के समय, अर्जुन ने इसे जीता। यह धर्मराज की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.२७; २३.२७०* पंक्ति ४)। यह कृष्ण के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १ क्र. २१)।

३. (सो. मगध. भविष्य.) भागवत मत में शम का पुत्र। मत्स्य के मत में त्रिनेत्र का पुत्र (दृढसेन २. देखिये)।

द्युम्न--(स्वा. उत्तान.) चक्षुर्मनु तथा नड्वला का पुत्र (मनु देखिये)।

द्युम्न विश्वचर्षणि आत्रेय--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२३)।

द्युम्नीक वासिष्ठ--सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८७)।

द्योतन--सायण के मत में एक राजा का नाम (ऋ. ६.२०.८)।

२. सुतप देवों में से एक।

द्रविड़--कृष्ण तथा जांववती का पुत्र।

द्रविड़ा--(सू. दिष्ट.) वायु के मत में वैशाली के तृणबिंदु राजा की कन्या। इड़विड़ा इसीका ही नामांतर था। इसका पुत्र विश्रवस् (वायु. २.२४.१६; विश्रवस् देखिये)।

२. कई जगह इसे विश्रवस् की पत्नी बता कर, कुवेर को इन दोनों का पुत्र कहा है (भा. १.४.३; ४.१.३६)।

द्रविण--पृथु तथा अर्चि का पुत्र (भा. ५.२२.२४)।

२. धर नामक वसु का पुत्र (म. आ. ६०.२०)।

३. तुषित देवों में से एक।

द्रविणक--अग्नि को वसोर्धारा से उत्पन्न पुत्र (भा. ६.६.१३)।

द्राह्यायण--(णि) सामवेद के श्रौत तथा गृह्यसूत्र तैयार करनेवाला आचार्य। इसे खादिर भी कहते हैं। रुद्रभूती का यह पैतृक नाम था। इसे राणायनीय शाखा का सूत्रकार माना जाता है। किंतु हेमाद्रि के मत में, राणायनीय तथा कौथुम शाखा का सूत्रकार गोभिल नामक आचार्य है (श्राद्ध कल्प)। इसके द्वारा रचित 'खादिर श्रौतसूत्र' शार्दूलशाखा का माना जाता है (भगवद्दत्तकृत जै. उ. ब्रा. प्रस्तावना पृ. १७)।

द्रुति--(स्वा. प्रिय.) नक्त की पत्नी। इसे गय नामक एक पुत्र था (भा. ५.१५.६)।

द्रुपद--(सो. अज.) पांचाल देश का सुविख्यात राजा एवं द्रौपदी का पिता। उत्तर पांचाल देश के सोमक राजवंश के पृषत् राजा का यह पुत्र था। इस लिये, इसे 'सौमकि' नामांतर भी प्राप्त था (म. आ. परि. १. ७५.२७)।

पांचालाधिपति पृषत् राजा को काफी वर्षों तक पुत्र नहीं हुआ। पुत्रप्राप्ति के लिये उसने तपस्या की। तप करते समय, एक वार मेनका नामक अप्सरा वहाँ आयी। उसका लावण्य देख कर पृषत् मोहित हो गया, एवं उसका वीर्य स्खलित हो गया। उस वीर्य से एक बालक का जन्म हुआ। वही द्रुपद है (म. आ. परि. १ क्र. ७९, पंक्ति १५२-१७५)। यह मरुद्गणों के अंश से हुआ (म. आ. ६१.७४)। द्रुपद को यज्ञसेन (म. आ. १२२.२६), पांचाल, तथा पार्षत नामांतर भी प्राप्त थे।

द्रोणविरोध--द्रुपद ने अस्त्रशिक्षा तथा धनुर्विद्याशिक्षा, द्रोणाचार्य के पिता भरद्वाज के निरीक्षण में प्राप्त की थी। इसलिये द्रोण द्रुपद का गुरुबंधु था। धनुर्विद्या पूर्ण होने पर, द्रुपद ने भरद्वाज को गुरु दक्षिणा दी, एवं वचन दिया, 'मेरे राज्यारूढ होने पर यदि तुम या तुम्हारा पुत्र द्रोण मेरे पास सहायता माँगने आओगे, तो मैं तुम्हें अवश्य सहायता करूँगा'। बाद में द्रुपद अपने राज्य में चला गया।

द्रुपद को राज्याधिकार प्राप्त होने के बाद, पूर्ववचनानुसार इसकी सहायता माँगने के लिये, द्रोण इसके पास आया। परन्तु मदांध हो कर, द्रुपद ने सहायता की जगह द्रोण का अत्यंत उपहास किया। इस अपमान का बदला लेने के लिये, द्रोण ने पांडवों का आचार्यत्व मान्य किया, एवं उनके द्वारा द्रुपद से प्रतिशोध लिया (द्रोण देखिये)। बाद में द्रोण ने इसका आधा (उत्तर पांचाल) राज्य स्वयं ले कर, दूसरा आधा (दक्षिण पांचाल) राज्य वापस दे दिया। द्रुपद गंगातट पर दक्षिण पांचाल में माकंदी में राज्य करने लगा (म. आ. १२८.१५)। प्राचीन पांचाल ही आधुनिक रोहिलखंड है।

सोमक एवं सृंजय राजवंश के लोग भी इसके साथ दक्षिण पांचाल पधारे। ये सारे लोग भारतीय युद्ध में द्रुपद के साथ पांडवों के पक्ष में शामिल थे।

धृष्टद्युम्नजन्म--द्रोण ने अपने शिष्यों के द्वारा इसकी दुर्दशा करने के कारण, द्रुपद द्रोण पर अत्यंत

क्रोधित हुआ, तथा उसके नाश के लिये उपाय ढूँढने लगा। द्रोणविनाशक पुत्र की प्राप्ति के लिये यह ऋषियों के एवं ब्राह्मणों के आश्रम में घूमने लगा। एक बार उपयाज ऋषि के कहने पर, याज नामक काश्यपगोत्रीय ब्राह्मण के आश्रम में यह गया। वह ब्राह्मण अत्यंत लोभी होने के कारण, कौनसा भी असूक्त कर्म करने के लिये सदा तैयार रहता था। द्रुपद ने उसे पुत्रप्राप्ति का उपाय पूछा, एवं पुत्र होने पर एक अर्बुद धेनु दान देने का प्रलोभन उसे दिखाया (म. आ. १६.७.२१)। उसपर पुत्रप्राप्ति के लिये, यज्ञ करने की सलाह याज ने इसे दी।

उपयाज के उस सलाह के अनुसार, उपयाज तथा उसका भाई याज दोनों को अपने साथ नगर में ला कर, इसने यज्ञ किया। यज्ञसमाप्ति पर सिद्ध किया गया चरु खाने के लिये, याज ने द्रुपद की पत्नी सौत्रामणि को बुलाया। परन्तु उसके आने में विलंब होने पर, याज ने वह चरु अग्नि में झोंक दिया। तत्काल अग्नि में से एक कवचकुंडलधारी दिव्य पुरुष, तथा एक श्यामवर्णा स्त्री प्रकट हुई। उन्हें अपने पुत्र एवं पुत्री मान मान कर, इसने उनके नाम धृष्टद्युम्न तथा द्रौपदी रख दिये (म. आ. १५५)।

द्रौपदीस्वयंवर--द्रौपदी उपवर होते ही द्रुपद ने उसके स्वयंवर की तैयारी की। मत्स्ययंत्र का, धनुष्य द्वारा वेध करने वाले को ही द्रौपदी दी जायेगी, ऐसी शर्त इसने रखी थी। ब्राह्मण वेष में पांडव इस स्वयंवर में आये थे। अर्जुन ने शर्त पूरी की। इसे द्रुपद ने द्रौपदी दी। 'क्षत्रियों को छोड़ कर द्रुपद ने एक ब्राह्मण को अपनी कन्या दी, एवं हमारा अपमान किया,' ऐसी सारे क्षत्रिय राजाओं की कल्पना हुई।

उस कारण वे द्रुपद से लड़ने के लिये प्रवृत्त हो गये। किंतु पांडवों ने उन सब का पराजय किया। बाद में द्रुपद ने अपना पुरोहित पांडवों के निवासस्थान पर भेजा। द्रौपदीस्वयंवर का प्रण जीतने वाले पांडव ही हैं, यह जान कर इसे अत्यंत आनंद हुआ। बाद में बड़े ही समारोह के साथ, इसने पाँच पांडवों के साथ द्रौपदी का विवाह कर दिया (म. आ. १९०)।

भारतीय युद्ध में द्रुपद, पांडवों के पक्ष में प्रमुख था। इसने पांडवों की ओर से मध्यस्थता करने के लिये, अपने पुरोहित को धृतराष्ट्र के पास भेजा था। परंतु समझौते के सारे प्रयत्न निष्फल हो कर युद्ध प्रारंभ हुआ। तब अपने पुत्र, बांधव तथा सेना के सहित द्रुपद, पांडवों की सहायता के लिये, युद्ध में शामिल हुआ। भारतीय युद्ध में इसने काफी पराक्रम दर्शाया। भारतीय युद्ध के पंद्रहवे दिन हुए रात्रियुद्ध में, मार्गशीर्ष वद्य एकादशी के दिन प्रभात समय में, द्रोण के हाथों इसकी मृत्यु हुई (म. द्रो. १६१. ३४; भारत-सावित्री)।

द्रौपदी तथा धृष्टद्युम्न के सिवा, द्रुपद को शिखंडी, सुमित्र, प्रियदर्शन, चित्रकेतु, सुकेतु, ध्वजकेतु (म. आ. परि. १. क्र. १०३. पंक्ति. १०८-११०), वीरकेतु (म. द्रो. ९८. ३३), सुरथ एवं शत्रुंजय (म. द्रो. १३१. १२६) नामक अन्य पुत्र थे। धृष्टकेतु नामक पौत्र भी इसे था। इसके पुत्रों में से शिखंडी, जन्म के समय स्त्री था। बाद में एक यक्ष के प्रसाद से उसे पुरुषत्व प्राप्त हुआ। द्रुपद ने उसे शंकर से भीष्म के वध के लिये माँग लिया था (सौत्रामणि देखिये)।

द्रुम--अधिरथ सूत का पुत्र तथा कर्ण का भाई। भारतीय युद्ध में भीम के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १३०. २३)। भांडारकर संहिता में ध्रुव पाठभेद प्राप्त है।

२. महाभारतकाल का एक राजा। यह शिवि नामक दैत्य के अंश से पैदा हुआ था (म. आ. ६१. ८)।

३. गंधर्वों का पुरोहित (म. स. परि. १. क्र. ३, पंक्ति. १०)। कुबेर सभा में रह कर, यह कुबेर की उपासना करता था (म. सभा. परि. १.३.३०)। भीष्मकपुत्र रुक्मिन् का यह गुरु था (म. उ. १५५. ७)। इसने उसे विजय नामक धनुष्य दिया था (म. उ. १५५. ११०)।

द्रुमसेन--एक क्षत्रिय राजा। यह गविष्ठ नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ३२)। यह शल्य का चक्ररक्षक था। युधिष्ठिर द्वारा इसका वध हुआ (म. श. ११.५२)।

२. दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. आ. ६१. ३२)। यह धृष्टद्युम्न के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १४५. २४)।

द्रुमिल--ऋषभदेव तथा जयंती के शतपुत्रों में से एक। यह भगवद्भक्त था (भा. ५.४; ११.४)।

द्रुह्य--द्रुह्यु का नामांतर।

द्रुह्यु--ऋग्वेदकालीन एक मानवजाति। यदु, तुर्वशु, अनु, पूरु एवं द्रुह्यु ये ऋग्वेदकालीन पाँच सुविख्यात जातियाँ थी (ऋ. १. १०८. ८)। इस 'गण' के लोग भारत के उत्तर पश्चिम विभाग में रहते थे (रॉथ-त्सु. वे. १३१-१३३)। महाभारतकाल में यह लोग

गांधार देश में रहते थे (पार्गि. ज. ए. सो. १९१०. ४९)।

एकवचन तथा बहुवचन में 'द्रुह्यु' का निर्देश ऋग्वेद में कई बार आया है (ऋ. ६. ४६. ८; ७. १८. ६; १२; १४; ८. १०.५)। उनमें से एकवचन का निर्देश द्रुह्यु गण के राजा से संबंधित रहा होगा। यह राजा सुदास का शत्रु था, एवं पानी में डूब कर उसकी मृत्यु हो गयी (ऋ. ७. १८)। दाशराज्ञ युद्ध में इसे काफी महत्त्वपूर्ण स्थान था। इंद्र, अग्नि, एवं अश्वियों का यह भक्त था (ऋ.१.१०८.८; ८.१०.५)।

२. आयुपुत्र नहुष का पौत्र तथा ययाति को शर्मिष्ठा से उत्पन्न तीन पुत्रों में से एक (म. आ. ७८.१०;८४. १०; ९५. ९; गरुड. १.१३९; पद्म. सृ. १२)। अनु तथा पूरु इसके भाई थे। ययाति ने सब पुत्रों को बुला कर, उन्हें अपनी जरा लेने के लिये कहा। शर्मिष्ठा से उत्पन्न पूरू नामक पुत्र ने ही जरा लेना मान्य किया। तब अन्य पुत्रों को शाप दे कर, ययाति ने पूरु को ही गद्दी पर बैठाया।

जरा लेना अमान्य करने के कारण ययाति ने इसे शाप दिया, 'तुम्हारे प्रिय मनोरथ एवं भोग-आशा सदा अतृप्त रहेगी। जहाँ नित्य व्यवहार नावों से होता है, ऐसे दुर्गम देश में तुम्हे रहना पडेगा, एवं वहाँ भी राज्याधिकार से वंचित हो कर, 'भोज' नाम से तुम प्रख्यात होंगे' (वायु. ९४.४९-५०; ह. वं. १.३०.२८-३१; ब्रह्म. १२; १४६; म.आ. ७०)। उस शाप के अनुसार, इसको एवं इसके वंश को म्लेंछ लोगों के प्रदेश में राज्य मिल गया। इसके वंश की जानकारी अधिकांश पुराणों में मिलती है।

ययाति ने सप्तद्वीप पृथ्वी को समुद्र के साथ जीता था। उसके पाँच भाग कर, उसने अपने पुत्रों में बाँट दिये। उनमें से पश्चिमी भाग द्रुह्यु को मिला (ह. वं. १. ३०. १७-१८; विष्णु. ४. १०. १७)। परंतु इसके वंशज भरतखंड के उत्तर की ओर राज्य करते थे। इसके राज्य में म्लेंच्छ लोगों की काफी बस्ती होने का वर्णन प्राप्त है (भा. ९.२३.१६)। द्रुह्यु को पूर्व की ओर का राज्य दिया गया था, ऐसा भी कई जगह उल्लेख प्राप्त है (लिंग. १. ६७)। इसे बभ्रु तथा सेतु नामक दो पुत्र थे (ह. वं. १.३२.१२४; अग्नि. २७६)। मत्स्य के मत में इसे सेतु तथा केतु नामक दो पुत्र थे (मत्स्य. ४८)। द्रुह्यु को बभ्रु नामक एक ही पुत्र था, एवं बभ्रु को सेतु नामक पुत्र हुआ, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (विष्णु. ४.१७.१; भा. ९.२३.१४)। दुष्यन्त ने यह वंश पूरुवंश में मिला दिया। भृगु वंश के ऋषि इसके उपाध्याय थे।

३. पूरुवंश के मतिनार राजा के चार पुत्रों में से एक (म. आ. ९४. ११)।

द्रोण—भारतीय युद्धकालीन सुविख्यात युद्धशास्त्रज्ञ, कौरव एवं पांडवों का गुरु, एवं धर्मज्ञ आचार्य। आंगिरस गोत्रीय भरद्वाज ऋषि का यह पुत्र था। उस कारण, इसे 'द्रोण आंगिरस' भी कहते थे (म. उ. १४९.१७)। वसिष्ठ गोत्रीय शुक्राचार्य, एवं असित देवल, धौम्य, याज, काश्यप आदि ऋषि इसके समकालीन थे। आंगिरस गोत्रीय कृपाचार्य की बहन कृपी इसकी पत्नी थी। उससे इसे अश्वत्थामन् नामक पुत्र हुआ था (म. आ. १२१.१-१ १२; विष्णु. ४.१९.१८)।

द्रोण के पिता भरद्वाज ऋषि का आश्रम गंगाद्वार पर था (म.आ. १२१.१३३१*; १२३.६८)। एक दिन भरद्वाज मुनि गंगा नदी में स्नान करने के लिये गये थे। वहाँ घृताची नामक अप्सरा पहले से ही स्नान कर के, वस्त्र बदल रही थी। उसका वस्त्र खिसक गया था। उस अवस्था में उसे देख कर, भरद्वाज का वीर्य स्खलित हो गया। भरद्वाज ने उस वीर्य को उठा कर, एक द्रोण में रख दिया। उसी द्रोण से इसका जन्म हुआ। उस कारण इसे 'द्रोण' नाम प्राप्त हुआ। द्रोणकलश में जन्म होने के कारण, इसे 'अयोनिसंभव' (म. आ. ५७.८९; १२९.५; १५४. ५), 'कुंभयोनि' (म. द्रो. १३२.२२), 'कुंभसंभव' (म. द्रो. १३२.३०) आदि नाम प्राप्त हुएँ थे। इसके सिवा, शोणाश्व, रुक्मरथ, तथा भारद्वाज आदि नामांतर से भी इसका उल्लेख पाया जाता है (म. आ. १२२. १)। बृहस्पति एवं नारद के अंश से द्रोण का जन्म हुआ था, ऐसे निर्देश भी विभिन्न ग्रंथो में प्राप्त है (म. आ. ६१.६३; पद्म. सृ. ७६)।

शिक्षा—धनुर्वेद तथा ऋग्वेदादि अन्य वेदों का अध्ययन, इसने अपने पिता के ही पास किया। इसके अग्निवेश नामक चाचा ने इसे 'आग्नेयास्त्र' सिखाया (म. आ. १२१.७)। पिता के पास अध्ययन करते समय, पांचाल देश के पृषत् राजा का पुत्र द्रुपद, द्रोण का सहाध्यायी था। यही द्रुपद आगे इसका सब से बड़ा दुष्मन बन गया। भारतीय युद्ध में, इसका वध द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न ने ही किया।

तपस्या करते समय एक बार द्रोण को पता चला कि, जामदग्न्य परशुराम ब्राह्मणों को संपत्ति बाँट रहा है। द्रव्य-याचना के हेतु से द्रोण परशुराम के पास गया। परंतु परशुराम ने अपनी संपत्ति पहले ही ब्राह्मणों में बाँट डाली थी। अतएव अपने पास की अस्त्रविद्या ही उसने इसे दी। परशुराम से द्रोण को 'ब्रह्मास्त्र' नामक अस्त्र की प्राप्ति हुई (म. आ. १५४.१३; १२१)। परशुराम जामदग्न्य का काल देवराज वसिष्ठ के समकालीन, एवं द्रोण से काफी पूर्वकालीन माना जाता है। इस कारण, महाभारत में दी गयी 'ब्रह्मास्त्र विद्याप्रदान' की यह कहानी अविश्वसनीय मालूम पडती है।

इस प्रकार द्रोण अस्त्रविद्या में पूर्णतः कुशल बन गया। किंतु इतना विद्वान् होने पर भी, यह विपन्न एवं निर्धन ही रहा।

तब द्रव्यसहायताप्राप्ति की इच्छा से, यह अपने पुराने सहाध्यायी द्रुपद राजा के पास गया। परंतु द्रुपद ने इसका अपमान कर, इसे वापस भेज दिया (म. आ. १२२.३५–३७)। तब द्रोण द्रुपद पर अत्यंत क्रोधित हुआ, तथा उससे बदला लेने का विचार करने लगा। इस हेतु से यह हस्तिनापुर में गया एवं गुप्त रूप से अपने पत्नी के भाई कृपाचार्य के पास रहने लगा।

हस्तिनापुर में—एक बार कौरव तथा पांडव गुल्लीडंडा खेल रहे थे। तब उनकी गुल्ली पास ही के एक कुएँ में गिर पड़ी। वे उस गुल्ली को न निकाल सके। पास ही में द्रोण बैठा था। कुमारों ने गुल्ली निकाल देने की प्रार्थना द्रोण से की। द्रोण ने दर्भ की सहायता से गुल्ली निकाल दी। कुमारों ने यह वृत्त भीष्म को बताया। द्रोणाचार्य का मंत्रसामर्थ्य तथा अस्त्रविद्यानैपुण्य भीष्म को पूर्व से ही ज्ञात था। कुमारों के अध्यापन के लिये, द्रोण को नियुक्त करने के लिये, पहले से वह उत्सुक था। द्रोण हस्तिनापुर में आया है, यह ज्ञात होते ही, भीष्म इसे अपने घर में ले आया, एवं राजपुत्रों को धनुर्विद्या सिखाने का काम इसे सौंप दिया (म. आ. १२२)।

द्रोण कौरवपांडवों को धनुर्विद्या सिखाने लगा। इसके शस्त्रविद्याकौशल्य की कीर्ति चारों ओर फैल गई। नाना देशों के राजपुत्र इसके पास शिक्षा पाने के लिये आने लगे। एक बार एकलव्य नामक निषाद का पुत्र इसके पास विद्याध्ययन के लिये आया। किंतु निषादपुत्र होने के कारण, द्रोण ने उसे विद्या नहीं सिखाई।

द्रोण के पास बहुत सारे राजपुत्र विद्याध्ययन के लिये रहते थे। किंतु उन विद्यार्थिओं में अर्जुन इसका सब से अधिक प्रिय शिष्य था। एक बार सारे शिष्यों को ले कर, द्रोण नदी पर स्नान करने गया। उस वक्त एक नक्र ने इसका पैर पकड़ लिया। यह देख कर, अन्य सारे राजपुत्र भाग गये, किंतु अर्जुन ने नक्र से इसकी रक्षा की। तब प्रसन्न हो कर, द्रोण ने उसे ब्रह्मास्त्र सिखाया (म. आ. १२३.७४)।

द्रुपद का पराभव—बाद में द्रोण ने अपने सारे शिष्यों के धनुर्विद्यानैपुण्य की परीक्षा लिवायी। उसे पता चला कि, वे सब धनुर्विद्या में काफी जानकार हो गये हैं। यह देख कर, अपने पुराने शत्रु द्रुपद पर आक्रमण करने का इसने निश्चय किया। काफी दिनों से जो हेतु मन में था, उसे पूर्ण करने के लिये, अपने शिष्यों द्वारा द्रुपद का पराभव करने की तैयारी इसने की। बाद में जल्द ही पांचाल देश पर आक्रमण कर, इसने द्रुपद को जीत लिया। द्रुपद का आधा राज्य (उत्तर पांचाल) अपने पास रख कर, बचा (दक्षिण पांचाल) इसने उसे वापस दे दिया (म. आ. १२८.१२)।

यद्यपि अर्जुन इसका प्रिय शिष्य था, फिर भी 'सेवक' के नाते यह पहले से ही दुर्योधन का पक्षपाती था। पांडवों के अज्ञातवासकाल में, कौरवों ने विराट के गोधनों का हरण करवाया। तब विराटपुत्र उत्तर के साथ अर्जुन गायों की रक्षा के लिये आया। उस समय द्रोण कौरवों के पक्ष में युद्ध कर रहा था। युद्ध में अर्जुन ने द्रोण तथा अन्य रथी महारथियों का पराभव कर, गायों की रक्षा की (म. वि. ५३)। उस युद्ध में, अर्जुन ने स्वयं द्रोण को घायल कर, रणभूमि से पलायन करने के लिये मजबूर किया।

अज्ञातवास पूर्ण होने के बाद, पांडव यथाकाल प्रकट हुएँ। उन्होंने दुर्योधन के पास अपने राज्य की माँग की। उसके लिये उन्होंने कृष्ण को मध्यस्थता के लिये भेजा। उस समय द्रोण ने दुर्योधन को काफी उपदेश किया। पांडवों का हिस्सा उन्हें वापस देने के लिये भी कहा (म. उ. १४६.१५)।

परंतु द्रोण का यह कृत्य कर्णादि को पसंद नहीं आया। कर्ण एवं द्रोण की गरमागरम बहस हो कर, झगड़ा आगे बढ़ा। परंतु भीष्म के द्वारा मध्यस्थता करने पर, उन दोनों का झगड़ा मिट गया (म. उ. १३७–१४८)।

भारतीययुद्ध--दुर्योधन ने किसी का भी उपदेश नहीं सुना। भारतीययुद्ध का प्रसंग निर्माण हुआ। निरुपाय हो कर, द्रोण को कौरवों के पक्ष में लड़ना पड़ा। अनेक वर्ष कौरवों का नमक खाने के बाद, उन्हें सहायता देने का अवसर संपन्न हुआ था। उस अवसर पर उन्हे सहायता न देना, इसे योग्य नहीं प्रतीत हुआ।

भारतीययुद्ध के दसवें दिन, कौरवों का प्रथम सेनापति भीष्म मृत हुआ। तत्पश्चात् दुर्योधन ने द्रोण को सैनापत्य दिया। इसके रथ के ध्वज पर कृष्णाजिन तथा कमंडलु का चिन्ह था (म. द्रो. परि. १. क्र. ५, पंक्ति १-२)। पाँच दिन युद्ध कर के, इसने पांडवसेना में हाहाकार मचा दिया।

द्रोण के सैनापत्य के प्रथम दिन, दुर्योधन ने धर्मराज को जीवित पकड़ लाने की प्रार्थना इसे की। इसने अर्जुन के अतुल सामर्थ्य का वर्णन दुर्योधन के पास किया। उसे सुन कर, दुर्योधन तथा कर्ण ने व्यंग वचनों से इसे कहा, 'पांडवों की जय हो, यही भावना आपके हृदय में है। इस कारण, आप युद्ध में वेमन से लड़ते है' (म. द्रो. १६०)। तब कोपाविष्ट हो कर द्रोण ने प्रतिज्ञा की, 'पांडवपक्ष के किसी न किसी शूर योद्धा का वध मैं कल अवश्य ही करूंगा'। इस प्रतिज्ञा के अनुसार, इसने द्रुपद का वध किया (म. द्रो. १६१.३४)।

अभिमन्युवध की वार्ता सुन, संतप्त हो कर अर्जुन ने जयद्रथवध की प्रतिज्ञा की। तब द्रोण ने एक में एक ऐसे तीन व्यूह रच कर, जयद्रथ के संरक्षण की पराकाष्ठा की। फिर भी अर्जुन ने जयद्रथ वध किया ही। जयद्रथ-वध का बदला लेने के लिये, द्रोण ने अहोरात्र युद्ध चालू रखने की प्रतिज्ञा की, एवं मशालों की सहायता से रात्रि के समय भी युद्ध चालू रखा।

वध--वह युद्ध का पंद्रहवा दिन, अर्थात् द्रोण के सैनापत्याभिषेक का पाँचवाँ दिन था। दिन के युद्ध से सारे वीर थक गये थे, तथापि ईर्ष्यावश, रात्रि के समय भी वीरता से लड़ रहे थे। किंतु धीरे-धीरे सारी सेना को निद्रा ने घेर लिया। यह संधि देख कर, भीम ने इन्द्रवर्म राजा का अश्वत्थामा नामक हाथी मार डाला, एवं अश्वत्थामा मृत हो गया, ऐसी गर्जना की।

चिरंजीव होते हुए भी अश्वत्थामा मृत कैसे हुआ, इस विचार से द्रोण को आश्चर्य हुआ, एवं निर्णय के लिये, यह धर्मराज के पास गया। कृष्ण के कथनानुसार युधिष्ठिर ने द्रोण से कहा, 'अश्वत्थामा मृत हो गया है,'। कृष्ण के मना करने पर भी धर्म ने, अश्वत्थामा के पश्चात् 'हाथी' शब्द का उच्चार किया। परंतु वह उच्चारण इतने धीरे से किया गया कि, द्रोण उसे सुन न सका।

धर्म से यह वार्ता सुनते ही, पुत्रशोक से विव्हल हो कर द्रोण ने शस्त्रसंन्यास किया। इतने में द्रोण के भरद्वाजादि पितर वहाँ आकर उन्होंने इसे कहा, 'ब्राह्मण होते हुएँ भी क्षत्रियों के समान युद्ध कर, अस्त्रों से तुमने पृथ्वी को ताप दिया हैं। यह महत्पाप है। इसलिये विलंब मत करो। शस्त्र नीचे रख कर, योगमार्ग का आलंबन करो'। यह सुन कर, द्रोण ने शस्त्र नीचे रख दिया। अच्छी संधि देख कर, द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न ने निःशस्त्र द्रोण का खड्ग से वध किया (म. द्रो. १६५. ५४)।

पौष वद्य द्वादशी को दोपहर में द्रोण का वध हुआ (भारत-सावित्री)। नीलकंठ का कथन है कि, मृत्यु के समय इसकी उम्र चारसौ वर्ष की थी, परंतु इसकी उम्र पच्यासी वर्ष की होना अधिक संभवनीय है। 'अशीति-कात् परः' पाठभेद इस विषय में प्राप्त है। उससे प्रतीत होता है कि, युद्धकाल में द्रोण की आयु अस्सी से पच्यासी वर्ष की थी (म. द्रो. १६५.४९)।

भारतीय युद्ध में, इसने द्रुपदपुत्र शंख (म. भी. ७८. २१), वसुदान (म. द्रो. २०.४३), एवं विराट तथा द्रुपद का वध किया था (म. द्रो. १६१.३४)।

मृत्यु के पश्चात्, द्रोण स्वर्ग में गया, एवं कुछ काल के बाद बृहस्पति के अंश में विलीन हो गया (म. स्व. ४. २१; ५.१२)। श्रीव्यास ने आवाहन करने पर, परलोक-वासी कौरव-पांडव वीरों के साथ, यह गंगाजल से प्रगट हुआ, एवं इसने युधिष्ठिर को दर्शन दिया (म. आश्र. ३२.७)।

इंद्रियसंयम एवं तपस्या के कारण, समाज में इसे काफी मानमान्यता थी। इसका युद्धशास्त्रप्रभुत्व भी परशुराम जामदग्न्य जैसा ही अतुलनीय था। किंतु परशुराम का साहस एवं ज्वलंत स्वाभिमान इसमें न होने के कारण, इसकी सारी आयु सेवावृत्ति में ही व्यतीत हुई। उस दुर्बल सेवावृत्ति से, इसकी उत्तरआयु अयशस्वी एवं असमाधानी शाबित हुई।

द्रोण शार्ङ्ग--एक मंत्रद्रष्टा पक्षी (ऋ. १०. १४२. ३-४)। मंदपाल ऋषि को शार्ङ्गी नामक पक्षिणी से उत्पन्न चार पुत्रों में से यह एक था (म. आ. २२८. १७)।

यह ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ होगा, ऐसा मंदपाल ऋषि का इसके विषय में भविष्यकथन था (म. आ. २२९. ९-१०)। उस भविष्यकथन के अनुसार, उत्तर आयु में यह बड़ा ब्रह्मवेत्ता बन गया। इसने खांडववनदाह के समय, अग्नि की प्रार्थना कर, अपनी तथा अपने भाइयों की रक्षा की (म. आ. २२३. १६-१९; अनु. ५३. २२ कुं.)। इसने कंधरकन्या तार्क्षी से विवाह किया था। उससे इसे पिंगाक्ष, विबोध, सुपुत्र तथा सुमुख नामक चार पुत्र हुएँ (मार्क. ३. ३२; १. २४)।

२. एक वसु। इसकी पत्नी का नाम धरा था। अपने अगले जन्म में यह दोनों नंद तथा यशोदा बने (भा. १०. ८.४८-५०)। इसकी अभिमति नामक और एक पत्नी थी। उससे इसे हर्षशोकादि पुत्र हुएँ (भा. ६.६.११)।

द्रौणायन — भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि।

द्रौणायनि तथा **द्रौणि**--अश्वत्थामा का पैतृक नाम। व्यास नाम से इसका निर्देश करते समय, इसी नाम का उपयोग किया जाता है (अश्वत्थामन् देखिये)।

द्रौपदी— द्रुपद राजा की कन्या, एवं पांडवों की पत्नी। स्त्रीजाती का सनातन तेज एवं दुर्बलता की साकार प्रतिमा मान कर, श्री व्यास ने 'महाभारत' में इसका चरित्रचित्रण किया है। स्त्रीस्वभाव में अंतर्भूत प्रीति एवं रति, भक्ति एवं मित्रता, संयम एवं आसक्ति इनके अनादि द्वंद्व का मनोरम चित्रण, 'द्रौपदी' में दिखाई देता है। स्त्रीमन में प्रगट होनेवाली अति शुद्ध भावनाओं की असहनीय तड़पन, अतिरौद्र पाशवी वासनाओं की उठान, एवं नेत्रदीपक बुद्धिमत्ता का तुफान, इनका अत्यंत प्रभावी आविष्कार 'द्रौपदी' में प्रकट होता है। इसी कारण इसकी व्यक्तिरेखा प्राचीन भारतीय इतिहास की एक अमर व्यक्तिरेखा बन गयी है।

याज एवं उपयाज नामक ऋषिओं की सहायता से, द्रुपद ने 'पुत्रकामेष्टि यज्ञ' किया। उस यज्ञ के अग्नि में से, धृष्टद्युम्न एवं द्रौपदी उत्पन्न हुएँ (म. आ. १५५)। यज्ञ में से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'अयोनिसंभव' एवं 'याज्ञसेनी' नामांतर प्राप्त हुएँ (म. आ. परि. ९६.११;१५)। पांचाल के राजा द्रुपद की कन्या होने के कारण, इसे 'पांचाली', एवं इसके कृष्णवर्ण के कारण, 'कृष्णा' भी कहते थे। लक्ष्मी के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१. ९५-९७; १७५-७७)।

स्वयंवर, पंचपतित्व—द्रौपदी विवाहयोग्य होने के बाद, द्रुपद ने इसके स्वयंवर का निश्चय किया। स्वयंवर में भिन्न भिन्न देशों के राजा आये थे, परंतु मत्स्यवेध की शर्त वे पूरी न कर सके (द्रुपद देखिये)। अर्जुन ने मत्स्यवेध का प्रण जीतने पर, द्रौपदी ने अर्जुन को वरमाला पहनायी। बाद में पांडव इसे अपने निवासस्थान पर ले गये।

धर्म ने कुंती से कहा 'हम भिक्षा ले आये हैं।' उसे सत्य मान कर, कुंती ने सहजभाव से कहा, 'लायी हुई भिक्षा पाँचों में समान रूप में बाँट लो'। पांडवों के द्वारा लायी भिक्षा द्रौपदी है, ऐसा देखने पर कुंती पश्चात्ताप करने लगी। परंतु माता का वचन सत्य सिद्ध करने के लिये, धर्म ने कहा, 'द्रौपदी पाँचों की पत्नी बनेगी'।

द्रुपद को पांडवों के इस निर्णय का पता चला। एक स्त्री पाँच पुरुषों की पत्नी बने, यह अधर्म है, अशास्त्र है, ऐसा सोच कर वह बडे विचार में फँस गया। इतने में व्यासमुनि वहाँ आये, तथा उसने द्रुपद को बताया, 'द्रौपदी को शंकर का वर प्राप्त है कि, तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे। अतः पाँच पुरुषों से विवाह इसके बारे में अधर्म नहीं है'। द्रुपद ने उसके पूर्वजन्म की कथा पूछी। व्यास ने कहा, 'द्रौपदी पूर्वजन्म में एक ऋषिकन्या थी। अगले जन्म में अच्छा पति मिले, इस इच्छा से उसने शंकर की आराधना की। शंकर ने प्रसन्न हो कर, उसे इच्छित वर माँगने के लिये कहा। तब उसने पाँच बार 'पति दीजिये' यों कहा। तब शंकर ने इसे वर दिया कि, तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे (म.आ. १८७-१८८)। इसलिये द्रौपदी ने पाँच पांडवों को पति बनाने में अधर्म नहीं है।' यह सुन कर, द्रुपद ने धौम्य ऋषिद्वारा शुभमुहूर्त पर, क्रमशः प्रत्येक पांडव के साथ, द्रौपदी का विवाह कर दिया (म. आ. १९०)।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में, द्रौपदी के पंचपतित्व के संबंध में निम्नलिखित उल्लेख हैं। रामपत्नी सीता का हरण रावण द्वारा होनेवाला है, यह अग्नि ने अंतर्ज्ञान से जान लिया। उस अनर्थ को टालने के लिये, सीता की मूर्तिमंत प्रतिकृति अपनी मायासामर्थ्य के द्वारा उसने निर्माण की। सच्ची सीता को छिपा कर, मायावी सीता को ही राम के आश्रम में रखा। इससे सीता को राम का वियोग होने लगा। तब उसने शंकर की आराधना प्रारंभ की। शंकर ने प्रसन्न हो कर उसे वर माँगने के लिये कहा। पाँच बार, 'पति-समागम प्राप्त हो,' ऐसा वर सीता ने माँग लिया। तब शंकर ने उसे कहा, 'अगले जन्म में तुम्हें पाँच पति प्राप्त होंगे' (ब्रह्मवै. २.१४)। पाँचों पांडव एक ही इन्द्र

के अंश होने के कारण, वस्तुतः द्रौपदी एक की ही पत्नी थी (मार्क. ५)।

द्यूत—विवाहोपरांत काफी वर्ष द्रौपदी ने बडे सुख में बिताये। पांडवों का राजसूययज्ञ भी उसी काल में संपन्न हुआ। पांडवों से इसे प्रतिविंध्यादि पुत्र भी हुएँ। किंतु पांडवों के बढते ऐश्वर्य के कारण, दुर्योधन का मत्सर दिन प्रतिदिन बढता गया। उसने द्यूत का षड्यंत्र रच लिया, एवं द्यूत खेलने के लिये शकुनि को आगे कर, युधिष्ठिर का सारा धन हड़प लिया। अन्त में द्रौपदी को भी युधिष्ठिर ने दाँव पर लगा दिया। उस कमीने वर्तन के लिये उपस्थित राजसभासदों ने युधिष्ठिर का धिक्कार किया। विदुर को द्रौपदी को सभा में लाने का काम सौंपा गया। उसने दुर्योधन को अच्छी तरह से फटकारा, एवं उस काम करने के लिये ना कह दिया। पश्चात् द्रौपदी को सभा में लाने का कार्य प्रतिकामिन् पर सौंपा गया। वह भी हिचकिचाने लगा।

फिर यह काम दुःशासन पर सौंपा गया। दुःशासन का अन्तःपुर में प्रवेश होते ही द्रौपदी भयभीत हो कर स्त्रियों की ओर दौडने लगी। अंत में दौडनेवाली द्रौपदी के केश पकड़ कर, दुःशासन खींचने लगा। उस समय द्रौपदी ने कहा, 'मै रजस्वला हूँ। मेरे शरीर पर एक ही वस्त्र है। ऐसी स्थिति में मुझे सभा में ले जाना अयोग्य है'। उस पर दुःशासन ने कहा, 'तुम्हें द्यूत में जीत कर हमने दासी बनाया हैं। अब किसी भी अवस्था में तुम्हारा राजसभा में आना अयोग्य नहीं है'। इतना कह कर अस्ताव्यस्त केशयुक्त, जिसका पल्ला नीचें गिर पड़ा है, ऐसी द्रौपदी को वह बलपूर्वक केश पकड कर, सभा में ले आया (म. स. ६०.२२-२८)।

द्रौपदी का प्रश्न—सभा में आते ही आक्रोश करते हुए द्रौपदी ने प्रश्न पूछा, 'धर्म ने पहले अपने को दाँव पर लगाया, तथा हारने पर मुझे लगाया। तो क्या मैं दासी बन गई?' इसके प्रश्न का उत्तर कोई भी न दे सका (म. स. ६०.४३-४५)।

भीष्म ने सुनी अनसुनी की। बाकी सभा स्तब्ध रही। यह लगातार प्रश्नों की बौछार कर रही थी। सुन कर भी किसी के कान पर जूँ तक नहीं रेंगी। कर्ण, दुःशासनादि द्रौपदी की 'दासी दासी' कह कर अवहेलना करने लगे। भीम अपना क्रोध न रोक सका। जिन् हाथों से धर्म ने द्रौपदी को दाँव पर लगाया था, उन हाथों को जलाने के लिये, अग्नि लाने को उसने सहदेव से कहा। बडी कठिनाई से अर्जुन ने उसे शांत किया। इस पर धृतराष्ट्रपुत्र विकर्ण सामने आया, तथा द्रौपदी के प्रश्न का उत्तर देने की प्रार्थना उसने भीष्मादिकों से की। परंतु कोई उत्तर न दे सका। तब विकर्ण ने कहा, 'दाँव पर जीते गये धर्म ने चूँकि द्रौपदी को दाँव पर लगाया, अतः सचमुच यह जीती ही नहीं गई'। यह कहते ही सारे सभाजन विकर्ण की वाहवाह करने लगे।

द्रौपदी का यह नैतिक विजय देख कर, कर्ण सामने आ कर बोला, 'संपूर्ण संपत्ति दाँव पर लगाने पर, द्रौपदी अजित रह ही नहीं सकती। इसके अतिरिक्त द्रौपदी अनेक पतिओं की पत्नी होने के कारण, धर्मशास्त्र के अनुसार पत्नी न हो कर, दासी है। इसलिये पूरी संपत्ति के साथ यह भी दासी बन गई है'। पश्चात् द्रौपदी की ओर निर्देश कर के उसने दुःशासन से कहाँ, 'द्रौपदी के वस्त्र खींच लो। पांडवों के वस्त्र भी छीन लों'।

तब पांडवों ने एक वस्त्र छोड़, अन्य सभी वस्त्र उतार डालें। द्रौपदी का वस्त्र खींचने दुःशासन बढा, एवं इसके वस्त्र खींचने लगा। उसपर यह आर्तभाव से भगवान् को पुकारने लगी (म. स. ६१.५४२-५४३*)। भीम क्रोध से लाल हो गया। दुःशासन के रक्तप्राशन की प्रतिज्ञा उसने की। विदुर सामने आया। द्रौपदी के प्रश्न का उसने सभा को पुनः स्मरण दिला कर सुधन्वा की कथा बताई (सुधन्वन् देखिये)। द्रौपदी लगातार आक्रोश कर रही थी, 'स्वयंवर के समय केवल एक बार मैं लोंगों के सामने आई। आज मैं पुनः सब को दृष्टिगत हो रही हूँ। इस शरीर को वायु भी स्पर्श न कर सका, उसकी भरी सभा में आज अवहेलना चालू है'।

दुःशासन इसके वस्त्र खींच ही रहा था, किंतु इसकी लज्जारक्षा के लिये श्रीकृष्ण स्वयं चीररूप हो गये, एवं एक के बाद एक नये चीर उसने प्रकट किये (म. स. ६१. ४१)। द्रौपदी के शील की रक्षा हुई। अपने कृत्य के प्रति लज्जित हो कर, अधोमुख दुःशासन अपने स्थान पर बैठ गया (म. स. ६१. ४८)। अन्त में धृतराष्ट्र ने दुर्योधन को कडी डाँट लगाई। द्रौपदी को इच्छित वर दे कर, पतियों सहित उसने इसे दास्यमुक्त किया (म. स. ६३. २८-३२)।

वनवास—युधिष्ठिर के द्युत के कारण, पांडवों के साथ वन में जाने का प्रसंग द्रौपदी पर आया। वनवास में कौरवों के कारण, इसे अनेक तरह के कष्ट उठाने पड़े। एक बार इसका सत्वहरण करने के लिये, परमकोपी

दुर्वासस् ऋषि को दुर्योधन ने भेज दिया। दुर्वास ऋषि अपने शिष्यों के साथ, रात्रि के समय पांडवों के घर आया, एवं आधी रात में भोजन माँगने लगा। उस समय द्रौपदी का भोजन हो गया था। इसलिये सूर्यप्रदत्तस्थाली में पुनः अन्न निर्माण करना असंभव था। तब ऋषियों को क्या परोसा जावे, यह धर्मसंकट इसके सामने उपस्थित हुआ। आखिर विवश हो कर, इसने कृष्ण का स्मरण किया। कृष्ण ने भी स्वयं वहाँ आकर, इसके संकट का निवारण किया (म. व. परि. १. क्र. २५. पंक्ति. ५८–११७)।

पांडवों का निवास काम्यकवन में था। एक बार जयद्रथ आश्रम में आया। उस समय पाँचों पांडव मृगया के लिये गये थे। तब अच्छा अवसर देख कर, जयद्रथ ने द्रौपदी का हरण किया। इतने में पांडव वापस आये। जयद्रथ को पराजित कर, उन्होंने द्रौपदी को मुक्त किया। बाद में अपमान का बदला चुकाने के लिये, जयद्रथ के सिर का पाँच हिस्सों में मुंडन कर, उसे छोड़ दिया गया (म. व. २५६. ९; जयद्रथ देखिये)।

अज्ञातवास—वनवास की समाप्ति के बाद, अज्ञातवास के लिये पांडव विराटगृह में रहे। द्रौपदी सैरंध्री बन कर, एवं 'मालिनी' नाम धारण कर, सुदेष्णा के पास रही। उस समय इसने सुदेष्णा से कहा था, 'मैं किसी का पादसंवाहन अथवा उच्छिष्टभक्षण नही करूँगी। कोई मेरी अभिलाषा रखे, तो वह मेरे पाँच गंधर्व पतियों द्वारा मारा जायेगा'। द्रौपदी के इन सारे नियमों के पालन का आश्वासन सुदेष्णा ने इसे दिया (म. वि. ८.३२)। एक बार कीचक नामक सेनापति ने इसकी अभिलाषा रखी, परंतु भीम ने उसका वध किया (म. वि. १२–२२)। वनवास तथा अन्य समयों पर भी, अपनी तेजस्विता तथा बुद्धिमत्ता इसने कई बार व्यक्त की है (म. व. २८; २५२; शां. १४)।

पांडवों का वनवास तथा अज्ञातवास समाप्त होने पर, वे हस्तिनापुर लौट आये, एवं कौरवों के पास राज्य का हिस्सा माँगने लगे। अपने कौरव बांधवों से लड़ने की ईर्ष्या युधिष्ठिर के मन में नहीं थी। उनसे स्नेह जोड़ने के लिये, युधिष्ठिर दूत भेजना चाहता था। किंतु कौरवों के द्वारा किये गये अपमान का शल्य द्रौपदी भूल न सकती थी। कौरवों के साथ दोस्ती सलुक की बाते करनेवाले पांडवों के प्रति यह भड़क उठी। पांडवों के साथ कृष्ण को भी कड़े वचन कह कर, इसने उसको युद्ध के प्रति अनुकुल बनाया (म. उ. ८०)। इसने कृष्ण से कहा, 'कौरवों के प्रति द्वेषाग्नि, तेरह साल तक, मैंने अपने हृदय में, सांसों की फूँकर डाल कर, आज तक प्रज्वलित रखा हैं। कौरवों से युद्ध टाल कर, पांडव आज उस अग्नि को बुझाना चाहते है। उन्हें तुम ठीक तरह से समझा लो। नही तो, मेरे वृद्ध पिता द्रुपद, एवं मेरे पाँच पुत्र के साथ, मैं खुद कौरवों से लड़ाई करूँगी, एवं नष्ट हो जाऊँगी' (म. उ. ८०.४–४१)।

भारतीय युद्ध में अश्वत्थामन् ने द्रौपदी के सारे पुत्रों का वध किया। दारुक से यह वार्ता सुन कर द्रौपदी ने अन्नत्याग कर, प्राणत्याग करने का निश्चय किया। तब भीम ने उसे समझाया। अन्त में अश्वत्थामन् को पराजित कर, उसके मस्तकस्थित मणि ला कर, युधिष्ठिर के मस्तक पर देखने की इच्छा इसने प्रकट की। पश्चात् भीम ने वह कार्य पूरा किया (म. सौ. १५.२८–३०; १६.१९–३६)।

राज्यप्राप्ति—भारतीय युद्ध के बाद, पांडवों को निष्कंटक राज्य मिला। उस समय द्रौपदी ने काफी सुखोपभोग लिया।

बाद में स्त्री तथा बांधवों के साथ, युधिष्ठिर महाप्रस्थान के लिये निकला। राह में ही द्रौपदी का पतन हुआ। अपने पतियों में से, यह अर्जुन पर ही विशेष प्रीति रखती थी (म. महा. २.६)। उस पाप के कारण इसका पतन हुआ। किंतु कृष्ण का स्मरण करते ही, यह स्वर्ग चली गई (भा. १.१५.५०)।

इसे युधिष्ठिर से प्रतिविंध्य, भीम से सुतसोम, अर्जुन से श्रुतकीर्ति, नकुल से शतानीक, तथा सहदेव से श्रुतसेन नामक पुत्र हुएँ (म. आ. ९०.८२; ५८.१०२–१०३; ६१.८८; २१३.७२–७३)। श्रुतसेन के लिये श्रुतकर्म पाठ 'भागवत' में प्राप्त है (भा. ९.२२.२९)।

स्वभाव—द्रौपदी मानिनी थी। स्वयंवर के समय इसका प्रण जीतने कर्ण समर्थ था। किन्तु सूतपुत्र को वरने का इसने इन्कार किया (म. आ. १८६)। वनवास में पांडव तथा कृष्ण को द्रौपदी ने बार बार युद्ध की प्रेरणा दी। कृष्ण के शिष्टाई करने जाते समय, इसने अपने मुक्त केशसंभार की याद उसको दिलाई थी। भारतीय युद्ध में, अपने पुत्रों के वध का समाचार सुनते ही, अश्वत्थामा के वध की चेतावनी इसने पांडवों को दी। युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर राज्य स्वीकार करने के लिये हिचकिचाने लगा। उस समय भी इसने उसे राजदण्ड धारण करने के लिये समझाया।

महाभारत में द्रौपदी तथा भीम का स्वभावचित्रण विशेष रूप से किया है। द्रौपदी के स्वभावचित्रण में व्यावहारिक विचार, स्त्रीसुलभ अपेक्षा, जोश तथा स्फूर्ति का आविष्कार बडी खूबी से किया गया है। भीम भी द्रौपदी के विचार का समर्थक बताया गया है। द्रौपदी तथा भीम युधिष्ठिर के वर्ताव के बारे में कड़ा विरोध करते हुएँ दिखते है। किंतु आखिर युधिष्ठिर के सौम्य प्रतिपादन से वे दोनों भी चूप बैठने पर विवश होते हैं।

द्वारक--(सू. इ.) भविष्यमत में क्षेमधन्य का पुत्र।

द्विगत भार्गव—एक ऋषि। यह एक साम के पठन से स्वर्ग गया, तथा वहाँ से वह फिर मृत्युलोक में आया। पश्चात् यह पुनः स्वर्ग गया (पं. ब्रा. १४. ९. ३६)।

द्विज--(सो. अनु.) वायुमत में शूरसेन का पुत्र।

द्विजिह्व--रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

द्वित—ब्रह्ममानसपुत्र (भा. १०. ८४)।

२. गौतम ऋषि का पुत्र (त्रित देखिये)। द्वित आप्तों के नाम पर एक सूक्त है (ऋ. ९. १०३)।

द्विमीढ़--(सो. पूरु.) भागवत, मत्स्य तथा वायुमत में हस्ति का, एवं विष्णुमत में हस्तीनर का पुत्र। पद्मपुराण में इसे देवमीढ़ कहा गया है। यह एक स्वतंत्र वंश है। विष्णु, गरुड़ तथा भागवत में इसके बारे में काफी मतभेद है।

द्विमूर्धन्--दनुपुत्र एक दानव। पृथ्वीदोहन के समय यह दोग्धा बना था। विरोचन ने वत्स का काम किया था (म. द्रो. ६९. ३९. कुं.; परि. १. ८. ८०२)।

द्विविद—सुषेण वानर का पुत्र एवं सुग्रीव के प्रधान मैंद का भाई। इसने राम को काफी सहायता की थी। इसमें १०,००० हाथियों का बल था।

२. किष्किंधा का राजा एवं नरकासुर का मित्र। राजसूय यज्ञ के समय, इसने सहदेव को करभार दिया था (मैंद देखिये)।

नरकासुर का वध कृष्ण ने किया, यह सुनते ही यह कृष्ण तथा बलराम को त्रस्त करने लगा। बाद में बलराम से लड़ाई हो कर, यह बलराम के द्वारा मारा गया (म. व. २७३. ४; भा. १०. ६७)।

द्विवेदिन्--काश्यप कण्व को आर्यावती से उत्पन्न पुत्र (भवि. प्रति. १. ६; ४. २१)।

द्वैतरथ--(सो. क्रोष्टु.) वायुमत में हृदीक का पुत्र।

द्वैतवन—ध्वसन् का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३. ५. ४. ९)।

द्वैपायन—पराशरपुत्र व्यास का नामांतर (व्यास देखिये)।

द्व्यक्षी--अशोकवन की एक राक्षसी।

द्व्याख्येय--अंगिरस् कुल का एक गोत्रकार।

ध

धनक—(सो. सह.) भागवतमत में भद्रसेन का पुत्र। विष्णु एवं पद्म के मत में दुर्दम का पुत्र (पद्म. सृ. १२)।

धनंजय—एक प्रमुख नाग। कश्यप एवं कद्रू का यह पुत्र था (म. आ. ३१.५)। यह पाताल में रहता था (भा. ५.२४.३१)।

यह वरुण की सभा में उपस्थित हो कर, भगवान् वरुण की उपासना करता था (म. स. ९.९)। इसे त्रिपुरदाह के समय, भगवान् शिव के रथ में घोड़ों के केसर बाँधने की रस्सी बनाया गया था (म. क. २४.७२)। पूषन् के साथ यह माघ माह में घूमता है (भा. १२.११. ३९)।

२. अर्जुन का एक नाम। संपूर्ण देशों को जीत कर, कररूप में धन ले कर, उसके बीच में स्थित होने के कारण, अर्जुन का नाम धनंजय हुआ था (म. वि. ३९.११; अर्जुन देखिये)।

३. भगवान् शंकरद्वारा स्कंद को दी हुई असुरसेना का नाम (म. श. २७६*)।

२. वसिष्ठकुल का एक ब्राह्मण। इसे १०० स्त्रियाँ तथा अनेक पुत्र थे। इसने अपना धन उनमें बराबर बाँट दिया। फिर भी उन पुत्रों में अनबन बनी रहती थी। उन झंझटों से तंग आ कर, इसका करुण नामक पुत्र, भवनाशिनी नदी के तट पर रहने के लिये गया। अंत में अंत में शिवभस्म से इसका उद्धार हुआ। 'शिवभस्म' का माहात्म्य बताने के लिये यह कथा दी गयी है (पद्म. पा. १.१५२)।

३. एक वैश्य। दक्षिण समुद्र के तट पर यह रहता था। इसकी माता की मृत्यु होने पर, यह उसकी अस्थियाँ ले कर काशी गया। अस्थियाँ ढोनेवाले शबर साथी ने उसे द्रव्य का हाँडा समझ कर चुरा लाया। तब धनंजय पुनः उस शबर के घर गया। उसकी स्त्री को यथेच्छ द्रव्य देना मान्य कर, उसने वह हाँडा माँगा। परंतु शबर ने वह जंगल में ही छोड दिया था। इसलिये इसे वह नहीं मिला (स्कन्द. ४.१.३०)।

४. त्रेतायुग का एक ब्राह्मण। इसने विष्णु की अत्यंत भक्ति की। वस्त्रप्रावरण न होने के कारण, इसने पीपल की एक शाखा तोड़ कर आग जलाई। पीपल को तोड़ते ही, विष्णु के शरीर पर जख्म के घाव पड गये।

इसके भक्ति से प्रसन्न हो कर विष्णु इसके पास आया। इसने विष्णु के शरीर के जख्मों का कारण उसे पूछा। विष्णु ने कहा, 'अश्वत्थ की शाखा तोड़ने के कारण, मेरे शरीर पर ये घाव पड़े है'। तब यह अपनी गर्दन तोड़ने को तैय्यार हो गया। विष्णु ने इसे वर माँगने के लिये कहा। इसने वररूप में 'विष्णुभक्ति' की ही याचना की (पद्म. क्रि. १२)। 'अश्वत्थमाहात्म्य' बताने के लिये यह कथा दी गयी है।

५. अत्रि के कुल की वंशवृद्धि करनेवाला एक ऋषि।

६. वर्तमान मन्वन्तर का सोलहवाँ व्यास (व्यास देखिये)।

७. विश्वामित्रकुल का एक मंत्रद्रष्टा ब्रह्मर्षि (कुशिक देखिये)।

८. कुमारी का पति (म. उ. ११५.४६०* पंक्ति. ५)।

धनद—कुबेर का नाम। तृणबिंदु की कन्या इडविड़ा का पुत्र (म. स. ११.१३४* पंक्ति. २; भा. ९.२.३१–३२)।

२. मरुद्गणों में से तीसरे गणों में एक।

धनदा—स्कन्द की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१३)।

धनधर्मन्—(भविष्य.) वायुमत में मथुरा नगरी में राज्य करनेवाला तथा ब्रह्मांडमत में वैदेश का नागवंशी राजा। यह नखवान के बाद राजगद्दी पर बैठ गया।

धनपाल—अयोध्या नगरी का एक वैश्य। इसने सूर्य का एक दिव्य मंदिर बनवाया। एक पुराणिक को एक पूरे साल का वेतन दे कर, वहाँ पुराणपठन के लिये कहा। बाद में छः मास में ही इसकी मृत्यु हो गई। इसके संचित पुण्य के कारण, सूर्य ने विमान से इसे ले जा कर अपने आसन पर बिठाया, इसकी पूजा करवाई। पश्चात् इसे ब्रह्मलोक में पहुँचाया (भवि. ब्राह्म. ९४)।

२. (सो.) भविष्यमत में सावित्री का पुत्र। इसने ३००० वर्षों तक राज्य किया।

३. सरस्वती के तट पर भद्रावती नगर में रहनेवाला एक वैश्य। इसे धृष्टबुद्धि नामक दुर्वर्तनी पुत्र था (धृष्टबुद्धि देखिये)।

धनयाति—(सो.) भविष्यमत में संयाति का पुत्र।

धनवर्धन—कृतयुग में पुष्कर क्षेत्र में रहनेवाला एक सदाचारी वैश्य। एक बार वैश्वदेव कर के यह भोजन कर रहा था। बाहर 'अन्नं देहि' ऐसा शब्द इसने सुना। बाहर आ कर इसने देखा तो वहाँ कोई न था। तब वापस जा कर त्यक्त अन्न का भोजन इसने शुरु किया। त्यक्त अन्न खाने के पाप के कारण, उसी क्षण इसके सौ टुकड़े हो गये (भवि. ब्राह्म. ३.४२–४७)।

धनशर्मन्—मध्यदेश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। यह एक बार दर्भ, समिधा आदि लाने के लिये अरण्य में गया। अरण्य में इसने तीन पिशाच देखे। उन्हें देख कर इसने उनकी दुःस्थिति का कारण पूछा। बाद में उन पिशाच के उद्धार के लिये, इसने तिल तथा शहद का दान कर के 'वैशाख स्नान' का व्रत किया। उस व्रत का पुण्य इसने उन पिशाचों को दिया। इस पुण्य के बल, उन पिशाचों को मोक्षप्राप्ति हुई (पद्म. पा. ९८)।

धनायु—(सो. पुरूरवस्.) मत्स्य के मत में पुरूरवा के पुत्रों में से एक।

धनिष्ठा—सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक तथा प्राचेतसदक्ष की कन्या।

धनिन्—कप नामक देवों का दूत। ब्राह्मणों के पास जा कर इसने 'कप' देवों के सदाचार का वर्णन किया (म. अनु. २६२.८–१६ कुं.)।

धनुर्ग्रह—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक (म. आ. १०८.११)। इसके नाम के 'धनुग्रह' एवं

'धनुर्धर' ये पाठभेद उपलब्ध हैं। भीमसेन ने इसका वध किया (म. क. ८४.२-६)।

धनुर्धर—धनुर्ग्रह का नामांतर (धनुर्ग्रह देखिये)।

धनुर्ध्वज—एक अंत्यज (पद्मावती २. देखिये)।

धनुर्वक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

धनुष—(सो. ऋक्ष.) एक राजा। मत्स्यमत में यह सत्यधृति का पुत्र था। इसके लिये सुधन्वन् पाठभेद उपलब्ध है।

धनुषाक्ष—(धनुषाख्य) रैभ्यकुलोत्पन्न एक ऋषि। बालधि ऋषि के पुत्र मेधाविन् ने इसका अपमान किया। अतः उसके नाश के लिये इसने शाप दिया, जिसका कुछ परिणाम नहीं हुआ। तब इसने पर्वतशिला गिरा कर उसका विनाश कर दिया। पर्वत गिरने से ही मेधाविन् की मृत्यु होगी ऐसा उसको वर था (म. व. १३६; शां. ३२३.७)।

धनेयु—(सो. पुरूरवस्.) विष्णुमत में रौद्राश्व का पुत्र। इसे अन्यत्र धर्मेयु कहा है।

२. एक ऋषि। उपरिचर वसु के यज्ञ में यह सदस्य था (म. शां. ३२३.७)।

धनेश्वर—अवन्ती नगरी का एक पापी ब्राह्मण। यह निषिद्ध पदार्थों का व्यापार करता था। एक बार व्यापार के लिये यह माहिष्मती नगरी में गया। कार्तिक माह होने के कारण, अनेक पुण्यात्माओं से, तथा कीर्तन, पुराण, भजन, गायन आदि से उसका संबंध सहजवश आ गया। त्रिपुरी पौर्णिमा का दीपोत्सव भी इसने देखा। उसी रात्रि को सर्पदंश के कारण, इसकी मृत्यु हो गयी। यम ने इसे एक कल्प तक नर्क में रखने के लिये कहा। किन्तु उस नर्क के अग्निकुंड में भी यह बिनाकष्ट जीवित रहा। माहिष्मती नगरी में इसने किये हुए पुण्य का यह फल है, ऐसा नारद ने यम को बताया। नारद की सूचनानुसार यम ने इसे यक्ष योनि में भेज दिया। वहाँ यह कुबेर का सेवक बना (पद्म. उ. ११३-११४; स्कंद. २.४.२९)।

धन्या—उत्तानपाद ध्रुव की पत्नी।

धन्व—(सो. काश्य.) काशी देश का राजा। यह दीर्घतपस् के पश्चात् राजगद्दी पर बैठ गया। इसका 'धर्म' पाठभेद भी उपलब्ध है। आयुर्वेदशास्त्र का प्रणेता धन्वन्तरि इसीका पुत्र था (धन्वंतरि २. देखिये)।

धन्वन्तरि—देवताओं का वैद्य एवं 'आयुर्वेदशास्त्र' का प्रवर्तक देवता। समुद्रमंथन के समय, यह अमृत का श्वेत कमंडलु हाथ में रख कर समुद्र से प्रकट हुआ (म. आ. १६.३७)। इसे आदिदेव, अमरवर, अमृतयोनि एवं अब्ज आदि नामांतर भी प्राप्त है।

दुर्वासस् ने इंद्र को शाप दे कर, वैभवहीन बना दिया तब गतवैभव पुनः प्राप्त करने के लिये, देव दैत्यों ने क्षीरसमुद्र का मंथन किया। उस समुद्रमंथन से प्राप्त, चौदह रत्नों में से धन्वन्तरि एक था। समुद्र में से प्रकट होते समय, इसके हाथ में अमृतकलश था। जब यह समुद्र से निकला तब तेज से दिशाएँ जगमगा उठी (ह. वं. २९.१३)। यह विष्णु का अवतार एवं 'आयुर्वेद-प्रवर्तक' देवता था (विष्णु. १.९.९६; भा. १.३.१७; ८.८.३१-३५)। इसे आयुर्वेदशास्त्र का ज्ञान इंद्र के प्रसाद से एवं चिकित्साज्ञान भास्कर के प्रसाद से प्राप्त हुआ था (भवि. १.७२; मत्स्य. २५१.४)।

समुद्रमंथन से निकलने के पश्चात्, विष्णु भगवान् को इसने देखा। उसे देख कर यह ठिठक गया। विष्णु ने इसे 'अब्ज' (पानी से जिसका जनम हुआ) कह कर पुकारा। पश्चात् इसने विष्णु से प्रार्थना की, 'यज्ञ में मेरा भाग एवं स्थान नियत कर दिया जाय'। विष्णु ने कहा, 'यज्ञ के भाग एवं स्थान तो बँट गये है। किंतु अगले जन्म में तुम्हारी यह इच्छा पूरी होगी। उस जन्म में तुम विशेष ख्याति प्राप्त करोंगे। 'अणिमादि' सिद्धियाँ तुम्हें गर्भ से ही प्राप्त होगी, एवं तुम सशरीर देवत्व प्राप्त करोंगे। तुम 'आयुर्वेद' को आठ भागों में विभक्त करोंगे। एवं उस कार्य के लिये, लोग तुम्हें मंत्र से आहुति देने लगेंगे'।

विष्णु के उस आशिर्वचनानुसार, धन्वन्तरि ने द्वापर-युग में काशिराज धन्व (सौनहोत्र) के पुत्र के रूप में पुनर्जन्म लिया। उस जन्म में, इसने भरद्वाज ऋषिप्रणीत 'आयुर्वेद' आठ विभागों में विभक्त किया, एवं प्रजा को रोगमुक्त किया (वायु. ९२.९-२२; धन्वन्तरि २. देखिये)।

उस महान् कार्य के लिये, नित्यकर्मान्तर्गत पंचमहा-यज्ञ 'वैश्वदेव' में बलिहरण के समय, 'धन्वंतरये स्वाहा' कर के इसे यज्ञाहुति मिलने लगी। इस तरह, इसकी विष्णु भगवान् के पास की गयी प्रार्थना सफल हुई। वैद्यक एवं शल्यशास्त्र में पारंगत व्यक्तिओं को आज भी 'धन्वन्तरि' कहा जाता है (उल्लणकृत 'सुश्रुत संहिता टीका' सू. १. ३)।

धन्वन्तरि स्वरूप वर्णन—धन्वन्तरि देवता का स्वरूप वर्णन प्राचीन ग्रंथों में उपलब्ध है (भा. ८. ८. ३१-

३५)। आधुनिक भिषग्वर एवं वैद्य उसे 'धन्वन्तरि स्तोत्र' नाम से नित्य पठन करते हैः—

अथोदधेर्मथ्यमानात् काश्यपैरमृतार्थिभिः।
उदतिष्ठन्महाराज पुरुषः परमाद्भुतः॥
दीर्घपीवरदोर्दण्डः कम्बुग्रीवोऽरुणेक्षणः।
श्यामलस्तरुणःस्रग्वी सर्वाभरणभूषितः॥
पीतवासा महोरस्कः सुमृष्टमणिकुण्डलः।
स्निग्धकुञ्चितकेशान्तः सुभगः सिंहविक्रमः॥
अमृतापूर्णकलशं बिभ्रद् वलयभूषितः।
स वै भगवतः साक्षाद् विष्णोरंशांशसंभवः॥
धन्वन्तरिरिति ख्यातःआयुर्वेददृग् इज्यभाक्।

धन्वन्तरि की मूर्ति के बारे में, दक्षिण भारतीय तथा उत्तर भारतीय ऐसे कुल दो पाठ उपलब्ध हैं। उस प्रकार की मूर्तियाँ भी प्राप्त हैं। दक्षिण की धन्वन्तरि की मूर्ति आंध्र फार्मसी ने मद्रास में तैयार की है। उत्तर की मूर्ति, गीर्वाणेंद्र सरस्वति कृत 'प्रपंच सार' ग्रंथानुसार तैयार की गयी है, एवं वह काशी में वैद्य त्र्यंबक शास्त्री के पास थी। दोनों मूर्तियों की तुलना करने पर पता चलता है कि, वे समान नहीं हैं। उन में दाहिनी ओर की वस्तुएँ बायीं ओर, तथा बायीं ओर की वस्तुएँ दाहिनी ओर दिखायी दी गयी हैं। दक्षिण की मूर्ति में दाहिने उपरवाले हाथ में चक्र है। काशी की मूर्ति के उसी हाथ में शंख है। दक्षिण के नीचेवाले दाहिने के हाथ में जोंक हैं, तो काशी की मूर्ति के हाथ में अमृतकुंभ है। बाईं ओर के हाथों के बारे में भी यही फर्क दिखाई देता हैं।

२. (सो. काश्य.) काशी देश का राजा, एवं 'अष्टांग' आयुर्वेदशास्त्र का प्रवर्तक। यह काशी देश के धन्व (धर्म) राजा का पुत्र एवं दीर्घतपस् राजा का वंशज था। विष्णु भगवान् के आशीर्वाद से, समुद्रमंथन से उत्पन्न धन्वन्तरि नामक विष्णु के अवतार ने पृथ्वी पर पुनर्जन्म लिया। वही पुनरावतार यह था (धन्वन्तरि १. देखिये)।

दूसरे युगपर्यय में से द्वापर युग में, काशिराज धन्व ने पुत्र के लिये, तपस्या एवं अब्जदेव की आराधना की। अब्जदेव ने धन्व के घर स्वयं अवतार लिया। गर्भ में से ही आणिमादि सिद्धियाँ इसे प्राप्त हो गयी थीं। भारद्वाज ऋषि से इसने भिषक् क्रिया के साथ आयुर्वेद सीख लिया, एवं अपनी प्रजा को रोगमुक्त किया। उस महान् कार्य के लिये, इसे देवत्व प्राप्त हो गया।

इसने आयुर्वेदशास्त्र 'अष्टांगों' (आठ विभाग) में विभक्त किया। वे विभाग इस प्रकार हैः— १. काय (शरीरशास्त्र), २. बाल (बालरोग), ३. ग्रह (भूत-प्रेतादि विकार), ४. उर्ध्वांग (शिरोनेत्रादि विकार), ५. शल्य (शस्त्रघातादि विकार), ६. दंष्ट्रा (विष-चिकित्सा), ७. जरा (रसायन), ८. वृष (वाजीकरण) (ह. वं. २९.२०)।

इसे केतु नामक पुत्र था। (ब्रह्म. १३.६५; वायु. ९. २२; ९२; ब्रह्मांड. ३.६७; दे. भा. ९.४१)। सुविख्यात आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि दिवोदास इसका पौत्र वा प्रपौत्र था। उसके सिवा, इसके परंपरा के भेल, पालकाप्य आदि भिषग्वर भी 'धन्वन्तरि' नाम से ही संबोधित किये जाते है। विक्रमादित्य के नौ रत्नों में भी धन्वन्तरि नामक एक भिषग्वर था।

धन्वन्तरि—मनसा युद्ध—सर्पदेवता मनसा तथा वैद्य-विद्यासंपन्न धन्वन्तरि राजा के परस्परविरोध की एक कथा ब्रह्मवैवर्त पुराण कृष्णजन्मखंड में दी गयी है।

एक दिन, धन्वन्तरि अपने शिष्यों के साथ कैलास की ओर जा रहा था। मार्ग में तक्षक सर्प अपने विषारी फूत्कार डालते हुए इन पर दौड़ा। शिष्यों में से एक को औषधि मालूम होने के कारण, बड़े ही अभिमान से वह आगे बढ़ा। उसने तक्षक को पकड़ कर, उसके सिर का मणि निकाल कर, जमीन पर फेंक दिया। यह वार्ता सर्पराज वासुकि को ज्ञात हुई। उसने हजारों विषारी सर्प द्रोण, कालीय, कर्कोट, पुंडरीक तथा धनंजय के नेतृत्व में भेजे। उनके श्वासोच्छ्वास के द्वारा बाहर आई विषारी वायु से, धन्वन्तरि के शिष्य मूर्च्छित हो गये। धन्वन्तरि ने, वन-स्पतिजन्य औषध से उन्हें सावधान कर के, उन सर्पों को अचेत किया। वासुकि को यह ज्ञात हुआ। उसने शिव-शिष्य मनसा को भेजा। मनसा तथा गरुड़ शिवभक्त थे। धन्वन्तरि, गरुड़ का अनुयायी था। जहाँ धन्वन्तरि था, वहाँ मनसा आई। उसने धन्वन्तरि के सब शिष्यों को अचेत कर दिया। इस समय स्वयं धन्वन्तरि भी, शिष्यों को सावधान न कर सका। मनसा ने स्वयं धन्वन्तरि को भी, मंत्रतंत्र से अपाय करने का प्रयत्न किया, किंतु वह असफल रही। तब शिव द्वारा दिया गया त्रिशूल वह इस पर फेंकने ही वाली थी कि, शिव तथा ब्रह्म वहाँ आये। उन्होंने वह झगड़ा मिटाया। अंत में मनसा तथा धन्वन्तरि ने एक दूसरे की पूजा की। उसके बाद सब सर्प, देव, मनसा तथा धन्वन्तरि, अपने अपने स्थान रवाना हुएँ (ब्रह्मवै. कृष्ण. १.५१)।

धन्वन्तरि के ग्रंथ—धन्वन्तरि के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्रसिद्ध हैं—१. चिकित्सातत्त्व विज्ञान, २. चिकित्सा-दर्शन, ३. चिकित्साकौमुदी, ४. अजीर्णामृतमंजरी, ५. रोग-निदान, ६. वैद्यचिंतामणि, ७. वैद्य प्रकाश चिकित्सा, ८. विद्याप्रकाशचिकित्सा, ९. धन्वन्तरीय निघंटु, १०. चिकित्सासारसंग्रह, ११. भास्करसंहिता का चिकित्सा-तत्त्व विज्ञानतंत्र, १२. धातुकल्प, १३. वैद्यक स्वरोदय (ब्रह्मवै. २.१६)। इनके सिवा, इसने वृक्षायुर्वेद, अश्वायु-र्वेद तथा गजायुर्वेद का भी निर्माण किया था (अग्नि. २८२)।

धन्वन्तरि 'अमृताचार्य'—एक आयुर्वेदशास्त्रज्ञ। यह अंबष्ठ ज्ञाति में पैदा हुआ था। आद्य धन्वन्तरि से इसका निश्चित क्या संबंध है, यह कह नही सकते। इसके जन्म के बारे में निम्नलिखित कथा उपलब्ध है:-- एक बार गालव ऋषि दर्भ एवं काष्ठ लाने के लिये अरण्य में गया था। अधिक घूमने के कारण, वह तृषार्त हो गया। उतने में पानी ले जानेवाली एक लड़की को इसने देखा। उसने इसे पानी पिलाया। तब गालव ने उसे वर दिया, 'तुम्हे अच्छा पुत्र पैदा होगा'। किंतु उस लड़की ने कहा, 'अभी मेरा विवाह भी नही हुआ है'।

पश्चात् गालव ने दर्भ की एक पुरुषाकृति बना कर, उस वीरभद्रा नामक वैश्यकन्या को दी। उस पुरुषा-कृति से पुत्र निर्माण करने को उसे कह दिया। वीरभद्रा को उस दर्भपुरुष से एक सुंदर पुत्र हुआ। ब्राह्मण पिता से वैश्य स्त्री को वह पुत्र उत्पन्न हुआ, इस कारण वह अंबष्ठ ज्ञाति का बना। उसका नाम अमृताचार्य रखा गया। वही धन्वन्तरि है (अम्बष्ठाचारचंद्रिका)।

धन्वन्तरि 'दिवोदास'—(सो. काश्य.) काशी के धन्वन्तरि राजा का पौत्र एवं आयुर्वेदशास्त्र का एक प्रमुख आचार्य। बाल्यकाल से ही यह विरक्त था। बड़े प्रयत्न से इसे काशी का राजा बनाया गया (भवि. १.१)।

विश्वामित्र का पुत्र सुश्रुत एवं वृद्ध नामक ब्राह्मण इसके प्रमुख शिष्य थे (भवि. प्रति. ४.२०; अग्नि. २६९.१)। इसने 'काल्पवेद' (काल्प-रोगों से क्षीण हुआ देह) की रचना की। काल्पवेद के दर्शन से रोग नष्ट हो जाते थे। सुश्रुत ने उसका पठन कर, सौ अध्यायों का 'अश्रुत तंत्र' का निर्माण किया (भवि. प्रति. ४.९.१६-२३)।

कई प्राचीन ग्रंथों में, इसे कल्पदत्त ब्राह्मण का पुत्र कहा गया है। विष्णु ने गरुड को आयुर्वेद सिखाया, एवं इसने वह गरुड से सीख लिया (गरुड. १.१९७.५५)। ब्रह्मवैवर्तपुराण में इसे शंकर का उपशिष्य कहा है (ब्रह्मवै. ३.५१)।

अन्य कई स्थानों में, इसे कृष्णचैतन्य का शिष्य कहा है। एक बार यह कृष्णचैतन्य के पास गया। प्रकृति श्रेष्ठ या पुरुष श्रेष्ठ, इसके बारे में, इसका एवं कृष्णचैतन्य का विवाद हुआ। इसका कहना था, 'प्रकृति से पुरुष श्रेष्ठ है'। किन्तु कृष्ण चैतन्य ने कहा, 'दोनों भी श्रेष्ठ है'। कृष्णजी का कहना इसे मान्य हुआ एवं यह उसका शिष्य बन गया। कृष्णचैतन्य के शिष्यत्व की यह कहानी धन्वन्तरि 'दिवोदास' की ही है, या किसी अन्य धन्वन्तरि की, यह निश्चित रूप से कहना मुश्किल है।

धन्विन्--तामस मनु का एक पुत्र।

धमति--अंगिराकुल का एक ऋषि। धूनति पाठभेद है।

धमनी—ह्लाद नामक असुर की पत्नी। इसके पुत्र इल्वल तथा वातापि (भा. ६.१८.१५)।

धमिल्ला—अनुशाल्व राजा की पत्नी (जै. अ. ६१)।

धमधमा—स्कन्द की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १९)।

धर—धर्म तथा धूम्रा का पुत्र। इसकी पत्नी मनोहरा। इसके पुत्र द्रविण, हुतहव्यवह, शिशिर, प्राण रमण (विष्णु. १.१५) तथा रज (ब्रह्मांड ३.३.२१-२९)। महाभारत के मत में, इसे द्रविण तथा हुतहव्य-वह ये केवल दो ही पुत्र थे (म. आ. ६०.२०)।

२. सोम का पुत्र।

३. एक पांडवपक्षीय राजा (म. द्रो. १३३-३७)। यह युधिष्ठिर का संबंधी एवं सहायक था।

धरापाल—विदिशा नगरी का राजा। एक बार देवी ने अपने एक गण को शाप दिया, 'तुम सियार बनोगे'। सियार का स्वरूप प्राप्त हुए उस, गण ने वेतसी तथा वेत्रवती नदी के संगम पर प्राणत्याग किया। पश्चात् उसे ले जाने के लिये यम ने विमान भेज दिया।

यह देख कर धरापाल ने वहाँ एक विष्णुमंदिर बाँधा। एक पुराणज्ञ व्यक्ति को पुराणकथन के लिये नियुक्त किया। उस पुण्यसंचय के कारण, इसकी मृत्यु के बाद इसे ले जाने के लिये, यम ने विमान भेजा, तथा इसे स्वर्ग में पहुँचा दिया (पद्म. उ. २८)।

धरिणी—अग्निष्वात्तादि पितरों की मानसकन्या। इसे वयुना नामक एक बहन थी।

धरुण आंगिरस—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१५)।

धर्म—संपूर्ण लोगों को सुख देनेवाली एक देवता एवं ब्रह्माजी का मानसपुत्र। यह स्वायंभुव मन्वंतर में ब्रह्माजी के दाहिने स्तन से उत्पन्न हुआ (म. आ. ६०. ३०; मत्स्य. ३.१०; भा. ३.१२.२५)। यह एक प्रजापति था, एवं बुद्धि से उत्पन्न हुआ था। इसे भगवान् सूर्य का भी पुत्र कहा गया है (म. आ. ८१. ८९)। इसके वृष, यम आदि नामांतर उपलब्ध हैं।

दक्ष प्रजापति की दस पुत्रियाँ इसकी पत्नी थी (म. आ. ६०.१३-१४)। उनके नामः--कीर्ति, लक्ष्मी, धृति, मेधा, पुष्टि, श्रद्धा, क्रिया, बुद्धि, लज्जा एवं मति। आठो वसु इसके पुत्र थे (म. आ. ६०.१७)। इसके तीन श्रेष्ठ पुत्र थेः शम, काम, हर्ष (म. आ. ६०.३१)। इसे सत्या नामक और एक कन्या भी थी। वह इसने शंयु नामक अग्नि को दी (म. व. २०९.४)।

भागवत एवं पुराणों में, दक्ष प्रजापति की तेरह कन्याएँ इसे भार्यारूप में दी गयी थी, ऐसा निर्देश है (भा. ४. १; ब्रह्मांड. २.९.५०)। उनके नामः—श्रद्धा, मैत्री, दया, शांति, तुष्टि, पुष्टि, क्रिया, उन्नति, बुद्धि, मेधा, तितिक्षा, ह्री, एवं मूर्ति। इनमें से प्रथम बारह स्त्रियों से इसे बारह पुत्र हुएँ। उनके क्रमशः नामः—शुभ, प्रसाद, अभय, सुख, मुद, स्मय, योग, दर्प, अर्थ, स्मृति, क्षेम तथा प्रश्रय। तेरहवे मूर्ति नामक स्त्री से इसे नर-नारायण ऋषि पुत्ररूप में हुएँ।

इसीके अंश से विदुर एवं युधिष्ठिर पैदा हुएँ थे (म. आ. ६१.८४; ११०; म. व. २९८.२१)। इसने यक्ष-रूप से नकुल, सहदेव, अर्जुन, एवं भीमसेन को मूर्च्छित किया (म. व. २९८.६)। पश्चात् युधिष्ठिर के साथ इसके प्रश्नोत्तर हो गये (म. व. २९८.६-२५)। इसने युधिष्ठिर से पूछा, 'धर्म के पास पहूँचने के द्वार कौन से है?' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, 'अहिंसा, समता, शान्ति दया, एवं अमत्सर ये धर्म के पास पहूँचने के द्वार हैं। युधिष्ठिर के उस उत्तर से प्रसन्न हो कर, यह धर्मरूप में प्रकट हुआ। इसने युधिष्ठिर को वरदान दिया, 'अज्ञातवास में कौरवों से तुम सुरक्षित रहोंगे' (म. व. २९८.२५)। विदेह का राजा जनक से भी इसका संवाद हुआ था (म. आश्व. ३२)।

पांडवों के महाप्रस्थान के समय, कुत्ते का रूप धारण कर, धर्म उनके पीछे-पीछे गया था (म. महाप्रस्थान. ३.१३)। विदूर एवं युधिष्ठिर के मृत्यु के पश्चात्, वे दोनों धर्म में ही विलीन हो गये (म. स्वर्गा. ५.१९)।

२. भागवत में पुनः दूसरे स्थान पर, धर्म की पत्नी एवं पुत्रपरिवार के बारे में अन्य जानकारी दी गई है। वहाँ लिखा है कि, धर्म को भानु, लंबा, कुकुर्, यामी (जामि) विश्वा, साध्या, मरुत्वती, वसु, मुहूर्ता तथा संकल्पा नामक दस पत्नियाँ थी। उनसे इसे देव ऋषभ, विद्योत, संकट, स्वर्ग, विश्वेदेव, साध्यगण, मरुत्वान्, जयंत, मुहूर्ताभिमानी, देवगण, संकल्प, द्रोण, प्राण, ध्रुव, अर्क, अग्नि, दोष। वसु तथा विभावसु नामक पुत्र हुएँ (भा. ६.६.४-१०; मत्स्य. ५.२०३; विष्णु. १.१५. १०६-११०)। अन्य कई जगह, कुकुप् की जगह अरुंधती नाम प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.३.१.४४; वसु देखिये)।

यह जानकारी उस समय की है, जब पहले का धर्म महादेव के शाप से मृत हो गया था, एवं वैवस्वत मन्वंतर में ब्रह्मदेव के द्वारा अन्य धर्म उत्पन्न किया गया था (वायु. ४)। इससे जाहिर होता है कि, धर्म एवं उसका परिवार प्रत्येक युग में नया उत्पन्न हो कर उसी युग में लय भी होता था। युगभेद के अनुसार, जानकारी में फर्क होता है। असंगति भी उसी कारण प्रतीत होती है। पुराणों में भी यह कहा गया है (विष्णु. १.१५.८४; १०६-११०; पितर देखिये)।

३. यम का नाम (भा. ९.२२.२७)।

४. (सो. द्रुह्यु.) गांधार का पुत्र। इसका पुत्र धृत।

५. (सो. यदु. वृष्णि.) लिंग के मत में अक्रूर पुत्र।

६. (सो. यदु. क्रोष्टु.) भागवतमत में पृथुश्रवा का पुत्र (तम देखिये)।

७. (सो. यदु. सह.) हैहय राजा का पुत्र। इसे धर्मतत्व तथा धर्मनेत्र भी कहा गया है।

८. (सो. क्षत्र.) वायु के मत में दीर्घतमस् का पुत्र।

९. एक ब्रह्मर्षि। इसकी पत्नी वृत्ति (म. उ. ११७. १५; ११५.४६१*)।

१०. उत्तम मन्वन्तर के सत्यसेन अवतार का पिता। इसकी पत्नी सूनृता (भा. ८.१.२५)।

११. चाक्षुष मन्वन्तर का अवतार। इसके पुत्र नर-नारायण (दे. भा. ४.१६)।

१२. सुतप देवों में से एक।

१३. ब्रह्मदेव के पुष्कर क्षेत्र के यज्ञ का सदस्य (पद्म. सृ. ३४)।

१४. एक धार्मिक वैश्य। यह ग्राहकों से अत्यंत

सचाई से व्यवहार करता था (नरोत्तम देखिये; पद्म. सृ. ५०)।

१५. (पौर. भविष्य.) विष्णु के मत में रामचन्द्र का पुत्र।

१६. (सो. मगध. भविष्य.) विष्णु के मत में सुव्रत का पुत्र। अन्यत्र इसे धर्मनेत्र, धर्मसूत्र तथा सुनेत्र नाम हैं।

१७. एक व्यास (व्यास देखिये)।

धर्मकेतु—(सो. क्षत्र.) भागवतमत में सुकेतन का एवं विष्णु तथा वायु के मत में सुकेतु का पुत्र।

धर्मगुप्त—सोमवंशीय नंद राजा का पुत्र। एक बार यह अरण्य में गया था। संध्यासमय होने के कारण, उसी अरण्य के एक वृक्ष का इसने रातभर के लिये सहारा लिया।

रात के समय, उसी वृक्ष का सहारा लेने एक रीछ आया। उसके पीछे एक सिंह लगा हुआ था। रीछ ने राजा से कहा, 'मित्र, तुम घबराना नहीं। सिंह के डर से मैं यहाँ आया हूँ। हम दोनों इस वृक्ष के सहारे रात बिता लेंगे। आधी रात तक तुम जागो। आधी रात तक मैं जाग कर तुम्हें सम्हालूँगा'। राजा निश्चिंत मन से सो गया।

नीचे खड़ा सिंह, रीछ से बोला, 'तुम राजा को नीचे फेंक दो'। रीछ ने यह अमान्य कर कहा, 'विश्वासघात करना बहुत ही बड़ा पाप है'। बाद में राजा को जाग्रत कर, वह स्वयं सो गया।

सिंह ने राजा से कहा, 'तुम रीछ को नीचे ढकेल दो'। दुर्बुद्धि सूझ कर राजा ने रीछ को नीचे ढकेल दिया, परंतु सावधानी से रीछ ने वृक्षों के डालो में अपने आप को फँसा दिया। पश्चात् इसने क्रोधवश राजा को शाप दिया, 'तुम पागल हो जाओगे'।

रीछ आगे बोला, 'मैं भृगुकुल का ध्यानकाष्ट नामक ऋषि हूँ। मन चाहा रूप मैं ले सकता हूँ। तुम विश्वासघात से मुझे नीचे ढकेल रहे थे, इसलिये मैंने तुम्हें शाप दिया है'। सिंह से भी उसने कहा, 'तुम भद्र नामक यक्ष तथा कुबेर के सचिव थे। गौतम ऋषि के आश्रम में दोपहर में निर्लज्जता से स्त्री के साथ क्रीड़ा करने के कारण, गौतम ने तुम्हें सिंह बनने का शाप दिया था। मेरे साथ संवाद करने पर पुनः यक्षरूप प्राप्त होने का उःशाप भी, तुम्हे मिला था'। ध्यानकाष्ट का यह भाषण सुन कर, सिंह पुनः यक्ष बना एवं विमान में बैठ कर अलकापुरी चला गया।

धर्मगुप्त के पागल होने की वार्ता सुन कर, नंद राजा राजधानी में वापस आया। उसने जैमिनि ऋषि को, अपने पुत्र के पागलपन का उपाय पूछा। उसने राजा को पुष्करिणी तीर्थ पर, स्नान करने के लिये कहा। नंद ने वैसा करने पर, उसके पुत्र धर्मगुप्त का पागलपन निकल गया। पश्चात् नंद राजा पुनः तप करने के लिये वन में गया (स्कन्द. २.१.१३)।

धर्मजालिक—चाल देखिये।

धर्मतत्व—(सो. सह.) वायु मत में हैहय राजा का पुत्र (धर्म ७. देखिये)।

धर्मद—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ६७)।

धर्मदत्त—एक ब्राह्मण। यह करवीर नगर में रहता था। एक बार पूजासाहित्य ले कर, यह मंदिर में जा रहा था। राह में इसे कलहा नामक राक्षसी दिखी। उसे देखते ही यह भय से गर्भगलित हो गया। थोड़ा धीरज बाँध कर, इसने पास का पूजासाहित्य उस के मुख पर फेंक दिया। उस साहित्य में से एक तुलसीपत्र कलहा के शरीर पर गिरा, एवं उस से उसे पूर्वजन्म का स्मरण हो गया।

अपना क्रूर स्वभाव त्याग कर, दुष्ट राक्षसयोनि से मुक्ति का उपाय, कलहा ने धर्मदत्त से पूछा। धर्मदत्त के हृदय में कलहा के प्रति दया उत्पन्न हो गयी, एवं इसने अपने कार्तिक व्रत का पुण्य उसे दे दिया। इससे उसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. १०६-१०८; स्कन्द. २. ४. २४-२५)।

कार्तिकव्रत के पुण्य के कारण, अगले जन्म में यह दशरथ बना। कलहा इसके आधे पुण्य के कारण, इसकी पत्नी कैकयी बनी (दशरथ देखिये; आ. रा. सार. ५)।

२. कश्यप का स्नेही। कश्यपपुत्र गजानन को यह हमेशा अपने घर भोजन के लिये बुलाता था (गणेश. २.१४)।

धर्मदृश्—(सो. वृष्णि.) विष्णुमत में श्वफल्कपुत्र।

धर्मद्रवा—गंगा नदी का नामांतर। यह ब्रह्मदेव की सात भार्याओं में से एक थी। इसे ब्रह्मदेव ने अपने कमंडलु में रखा था। वामनावतार द्वारा विष्णु ने बली को बाँध कर देवों को निर्भय कर दिया। तत्पश्चात् ब्रह्मदेव ने इसे विष्णु के पैरों पर डाल कर, उसके पाँव धो डाले।

यह आकाश से हेमकूट पर्वत पर गिरी, तब शंकर ने इसे जटा में धारण किया। भगीरथ द्वारा ऐरावत की प्रार्थना की जाने पर, उसने अपने दाँतों से हेमकूट पर्वत में तीन छेद खोद ड़ाले। उनमें से गंगा बहने लगी। उस कारण इसे 'त्रिस्रोता' भी कहते हैं (पद्म. सृ. ६२)।

धर्मध्वज—रथध्वज राजा का पुत्र। इसे तुलसी नामक कन्या थी।

२. (सू. निमि.) विदेह देश का राजा। भागवतमत में यह कुशध्वज जनक का पुत्र था। इसे कृतध्वज तथा मितध्वज नामक दो पुत्र थे। यह पंचशिख का शिष्य था (म. शां. ३०८; ४-२४)। यही जनदेव होगा। महाभारत में दिये गये, 'धर्मध्वज-सुलभासंवाद' में मोक्ष का प्रतिपादन है (म. शां. ३०८)।

धर्मध्वजिन्—विदेह देश के जनककुल का एक क्षत्रिय। इसे असित ने पृथ्वीगीता बताई (विष्णु. ४.२४)। परंतु पृथ्वीगीता का प्रतिपादन इसे देवल ने किया, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (पद्म. उ. १९७.२७)।

धर्मन्—(सू. इ. भविष्य.) विष्णु के मत में यह बृहद्राज का पुत्र। इसके लिये धर्मिन् तथा बर्हि नाम भी है।

धर्मनारायण—एक व्यास (व्यास देखिये)।

धर्मनेत्र—(सो. सह.) हैहय वंश का एक राजा। विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह हैहय राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. १२; धर्म ७. देखिये)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) वायुमत में सुवन का पुत्र तथा ब्रह्मांड मत में सुव्रत का पुत्र। इसने पांच वर्षों तक राज्य किया (धर्म १३. देखिये)।

३. (सो. पूरु.) कुरु का प्रपौत्र एवं जानमेजय धृतराष्ट्र का पुत्र (म. आ. ८९.८९२*)।

धर्मपाल—दशरथ का अमात्य (वा. रा. अयो. ७)।

२. (सो.) भविष्यमत में आनंदवर्धन का पुत्र। इसने २७०० वर्षों तक राज्य किया।

धर्मबुद्धि—एक चोलवंशीय राजा। नास्तिकों के सहवास के कारण, दूसरे जन्म में यह गेंड़ा बना। उस जन्म में सुलोचना ने इसका वध किया। उस समय सुलोचना ने वीरवर नामक पुरुष का वेष धारण किया था। गंगासागर संगम तीर्थ में मरने के कारण, उस गेंड़े का उद्धार हुआ। विष्णुदूतों के साथ स्वर्ग में जाते समय, सुलोचना को इसने वर दिया, 'तुम्हारा पति से मिलन होगा' (पद्म. क्रि. ६)।

धर्मभृत्—दंडकारण्यवासी एक ऋषि। पंचाप्सर सरोवर में की जानकारी इसने राम को बतायी, एवं उस सरोवर में से आनेवाले चमत्कृतिजनक आवाज का कारण भी इसने उसे बताया (वा. रा. अर. ११)।

२. मत्स्यमत में अक्रूर का तथा वायुमत में श्वफल्क का पुत्र।

धर्ममूर्ति—बृहत्कल्प का एक राजा। इसकी पत्नी भानुमती। उसके सिवा इसे १०००० स्त्रियाँ थी। इसका कुलगुरु वसिष्ठ था। पूर्वजन्म में एक वेश्या के घर में स्वर्णकार का जन्म इसे मिला था। इसके द्वारा बनाया गया सुवर्णवृक्ष, उस वेश्या ने ब्राह्मणों को दान किया। अतः सद्यः जन्म में यह वैभवसंपन्न राजा बना। यही कथा पद्मपुराण में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। पहले यह शूद्र था। उसके बाद के जन्म में यह केंकडा बना, एवं स्वर्ग द्वारेश्वर के सामने मृत हो गया। उस पुण्यसंचय के कारण, यह सद्यःजन्म में वैभवसंपन्न राजा बन गया (पद्म. सृ. २१; स्कन्द. ५. २. २२)।

धर्मरथ—(सो. अनु.) अनुवंश का एक राजा। यह दिविरथ राजा का पुत्र था। इसका पुत्र चित्ररथ ऊर्फ रोमपाद वा लोमपाद।

२. (सू. इ.) सगर का एक पुत्र, जो कपिल के शाप से बचा था (पद्म. उ. २०)।

धर्मराज—गौड़ देश का राजा। यह गौड़ाधिपति गुणशेखर का पुत्र था। जैन धर्म का वैदिक धर्म पर हमला चालू था। तब इसने स्वयं वैदिक धर्म का स्वीकार किया, तथा अपनी कृति से वैदिक धर्म का श्रेष्ठत्व सब को दर्शा दिया। इसने अपने पिता का भी उद्धार किया (भवि. प्रति. २. १०)।

धर्मवर्ण—एक ब्राह्मण। कलियुग के अन्तिम काल में यह आनर्त देश में रहता था। एक बार यह पितृलोक गया। वहाँ इसने देखा कि, इसके पितर दूर्वांकूर के आधार पर लटक रहे हैं। उन्होंने अपने उद्धार के लिये इसे विवाह करने के लिये कहा। तब इसने विवाह किया। पश्चात् पुत्रजन्म होते ही, यह गंधमादन पर तपस्या करने चला गया (स्कन्द. २. ७. २२)।

धर्मवर्मन्—(सो. वृष्णि.) मत्स्यमत में अक्रूर का पुत्र।

धर्मवल्लभ—पुण्यपुर का राजा। अपने सत्यप्रकाश नामक मुंत्री के साथ, इसका अध्यात्म के विषय में संभाषण हुआ था (भवि. प्रति. २.११)।

धर्मवृद्ध—(सो. वृष्णि.) श्वफल्क के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.१६)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा। वायुमत में यह आयु का पुत्र था। क्षत्रवृद्ध इसीका नामांतर था। वायु पुराण के क्षत्रवृद्ध वंश का प्रारंभ इसी राजा से हुआ है।

धर्मव्याध—मिथिला नगरी में रहनेवाला एक धर्मपरायण व्याध। इसने कौशिक नामक गर्वोद्धत ब्राह्मण को, मातापिता की सेवा का माहात्म्य बता कर विदा किया (म. व. १९७.२०६)। इसे अर्जुन तथा अर्जुनी नामक अपत्य थे। उनमें से अर्जुनी विवाह योग्य होने के पश्चात्, मतंग ऋषि के पुत्र प्रसन्न से उसका विवाह हुआ।

धर्मव्याध अत्यंत धार्मिक था। पंच महायज्ञ, अग्नि परिचर्या तथा श्राद्धादि कर्म यह बहुत ही भाविकता से हररोज करता था। परंतु यह सारे धर्मकृत्य यह मृगया करते करते ही करता था। एक बार, अर्जुनी की सास ने उसे व्यंग वचन कहे, 'यह तो जीवघात करनेवालों की कन्या है। यह, तप करने वालों के आचार भला क्या समझेंगी?

धर्मव्याध को इसका पता चल गया। मतंग को इसने समझाया, 'शाकाहरी होते हुए भी तुम जीवघातक हो'। पश्चात् इसने संसार के सास ससुरों को शाप दिया, सासससुर पर बहुएँ कभी भी विश्वास नही रखेंगी, तथा यह भी न चाहेंगी कि उन्हें सासससुर हों (वराह. ८.)।

पूर्वजन्म में यह एक सामान्य व्याध था। काश्मीराधिपति वसु राजा को इसने पूर्वजन्म का ज्ञान दिया। उस कारण वसु राजा ने इसे वर दिया, 'अगले जन्म में तुम धर्मव्याध बनोगे' (वराह. ६)।

महाभारत में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। पूर्व जन्म में यह एक वेद पारंगत ब्राह्मण था। परंतु एक राजा की संगत में आ कर क्षात्रधर्म में एवं धनुर्विद्या में इसे रुची उत्पन्न हो गयी। एक बार यह उस राजा के साथ शिकार के लिये गया। अनजाने में इसके हाथ एक ऋषि का वध हो गया। ऋषि ने इसे शाप दिया, 'तुम शूद्रयोनि में व्याध बनोंगे'। अनजाने में अपराध हो गया आदि प्रार्थना ऋषि से करने पर, उसने उःशाप दिया, 'व्याध होते हुए भी तुम धर्मज्ञ बनोंगे। पूर्वजन्म का स्मरण तुम्हें रहेगा, एवं अपने मातापिता की सेवा तुम करोगे' (म. व. २०५; कौशिक ७. देखिये)।

महाभारत में धर्मव्याध के द्वारा, निम्नलिखित विषयों पर विवरण किया गया है:— वर्णधर्म का वर्णन (म. व. १९८.१९-५५); शिष्टाचार का वर्णन (म. व. १९८.५७-९४); हिंसा एवं अहिंसा का वर्णन (म. व. १९९); धर्मकर्मविषयक मीमांसा (म. व. २००); विषयसेवन से हानी एवं ब्राह्मीविद्या का वर्णन (म. व. २०१); इंद्रियनिग्रह का वर्णन (म. व. २०२)।

कालंजरगिरि पर इन्द्र के साथ सोम पीने का सम्मान इसे मिला था (ब्रह्म. १३.३९)।

धर्मव्रता—धर्म को धर्मवती से उत्पन्न कन्या। ब्रह्मपुत्र मरीचि की यह पत्नी थी। एक बार मरीचि ऋषि सोया हुआ था, उस वक्त ब्रह्मदेव इसके घर आया। इसने उसका सत्कार किया। किंतु उस प्रसंग के कारण, मरीचि को इसके चारित्र्य पर शक आ गया। उसने क्रोधवश इसे शाप दिया, 'तुम शिला बन जाओगी'। उसी शिला पर गया की विष्णुमूर्ति स्थित है। इसे देवव्रता नाम भी प्राप्त है (अग्नि. ११४)।

धर्मशर्मन्—एक ब्राह्मण। कश्यपकुल के विद्याधर ब्राह्मण के तीन पुत्रों में से, यह सब से कनिष्ठ था। इसके भाईयों में से वसुशर्मा तथा नामशर्मा ये दोनों बड़े भाई विद्वान् थे। किंतु इसे विद्याध्ययन में रुचि नहीं थी।

वृद्धापकाल में इसे अपने कृतकर्म पर पश्चात्ताप हुआ। पश्चात् एक सिद्ध के उपदेश के कारण, इसे आत्मज्ञान प्राप्त हुआ।

इसने अपने मनोरंजन के लिये एक तोता पाल रखा था। एक बार उस तोते को बिल्ली ने खा लिया। तब अत्यंत दुखित हो कर, यह मृत हो गया। दूसरे जन्म में इसें शुक का ही जन्म प्राप्त हो गया, एवं पूर्वसंचित के कारण यह जन्मतः आत्मज्ञानी बना (पद्म. भू. १-३)।

२. वायुमत में व्यास की ऋक्शिष्य परंपरा के शाकपूर्ण रथीतर का शिष्य (व्यास देखिये)।

धर्मसख—केकयवंश का एक राजा। इसे सौ पत्नियाँ थी परंतु संतान नहीं थी। अन्त में वृद्धापकाल में सुचन्द्रा नामक ज्येष्ठ स्त्री से इसे एक पुत्र हुआ। परंतु अन्य स्त्रियाँ वैसी ही संतानहीन रही। उनका दुख मन ही मन जान कर, धर्मसख राजा ने अपने मंत्रियों की सलाह के अनुसार, पुत्रकामेष्टि यज्ञ करने का निश्चय किया। दक्षिण समुद्र के पास के हनुमत्कुंड के पास यह यज्ञ प्रपन्न हुआ। उस यज्ञ के फलस्वरूप, इसकी सौ स्त्रियों को सौ पुत्र हुएँ (स्कन्द. ३.१.१५)।

धर्मसारथि--(सो. आयु.) त्रिककुद् राजा का पुत्र। इसका पुत्र शांतरथ।

धर्मसावर्णि--एक मनु। धर्म तथा दक्षकन्या सुव्रता को यह चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ। ग्यारहवें मन्वन्तर का यह अधिपति था। वायुपुराण में लिखा है कि, यह दसवें मन्वन्तर का अधिपति था (मनु देखिये)। देवी भागवत में उस मन्वन्तर का नाम 'सूर्यसावर्णि' दे कर, उसके अधिप का नाम वैवस्वतपुत्र 'नाभाग' दिया गया है (दे. भा. १०.१३)।

धर्मसूत्र--(सो. मगध. भविष्य.) भागवतमत में सुव्रत का पुत्र (धर्म १३. देखिये)।

धर्मसेतु--एक विष्णुअवतार। यह आर्यक तथा वैधृता से धर्मसावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ था (भा. ८.१३.२६)।

धर्मसेन--(सू. इ.) मांधातापुत्र अंबरीष का नामांतर।

धर्मस्व--एक ब्राह्मण। एक बार गंगा की डोली ले कर, यह घर जा रहा था। रास्ते में एक बैल ने, रत्नाकर नामक व्यापारी के कापकल्प नामक नौकर की हत्या की। कापकल्प स्वयं अत्यंत पापी था। किंतु उसकी अचानक मृत्यु के कारण, धर्मस्व के हृदय में उसकी प्रति दया उत्पन्न हुई। इसने उसके शरीर पर तुलसीपत्र से गंगोदक छिड़क दिया। इससे कापकल्प का उद्धार हो गया। गंगोदक का यह प्रभाव देख, धर्मस्व ने स्वयं गंगा की आराधना की, एवं वर प्राप्त किया, 'गंगा का नाम लेते लेते ही मुझे मृत्यु प्राप्त हो' (पद्म. क्रि. ७)।

धर्माकर--एक धार्मिक गृहस्थ। एक राजपुत्र ने अपनी सुस्वरूप भार्या, सुरक्षितता के उद्देश्य से छः महिनों तक इसके पास रख दी। फिर भी इस सच्चरित्र पुरुष के मन में उस स्त्री के बारे में कामवासना उत्पन्न नहीं हुई। छः महिने के बाद राजपुत्र वापस लौटा। कुत्सित लोगों ने राजपुत्र के हृदय में संशय उत्पन्न करने का प्रयत्न किया, परंतु कुछ लाभ नहीं हुआ। बाद में लोकनिंदा से त्रस्त हो कर, यह चिताप्रवेश करने लगा। उस अग्निपरिक्षा में से यह विनाकष्ट बाहर आया, एवं इसके निंदकों के मुख पर कोढ़ हो गया। देवों ने इसे 'सज्जनाद्रोहक' पदवी दी थी (पद्म. सृ. ५०)।

धर्मांगद--एक राजा। विदिशा नगरी के ऋतुध्वज-पुत्र रुक्मभूषण को संध्यावली नामक भार्या से यह उत्पन्न हुआ था। पिता की इच्छा पूर्ण करने के लिये, इसने अपना मस्तक मोहिनी को अर्पण किया। यही धर्मांगद अगले जन्म में सुव्रत बना (पद्म. भू. २२)।

धर्मात्मन्--वायु तथा ब्रह्मांड के मत में व्यास की सामशिष्य परंपरा का हिरण्यनाभ का शिष्य।

२. ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

धर्मारण्य--एक ब्राह्मण (म. शां. ३४९.५)। पद्मनाभ नामक नाग से इसने अध्यात्मविद्या प्राप्त की तथा उसके कारण यह कृतार्थ हो गया।

धर्मिन्--(सू. इ. भविष्य.) वायु के मत में भरद्वाज-पुत्र (धर्मन् देखिये)।

धर्मेयु--(सो. पूरु.) एक राजा। भागवत, मत्स्य तथा वायुमत में यह रौद्राश्व का पुत्र था। उसे यह मिश्रकेशी नामक अप्सरा के गर्भ से उत्पन्न हुआ (म. आ. ८९.१०; धनयु देखिये।

धातकि--प्रियव्रतपुत्र वीतिहोत्र का पुत्र। वीतिहोत्र ने इसे पुष्करद्वीप का आधा भाग दिया था (भा. ५. २०.३१)।

धातु--मरुतों के तीसरे गणों में से एक।

धातृ--वैवस्वत मन्वन्तर के बारह आदित्यों में से एक (भा. ६.६.३९; पद्म. सृ. ६)। इसकी माता का नाम अदिति, एवं पिता का नाम कश्यप था (म. आ. ५९. १५)। खाण्डववनदाह के समय, श्रीकृष्ण एवं अर्जुन के बींच युद्ध का संभव उत्पन्न हुआ था। उस समय, यह देवताओं की ओर से आया था (म. आ. २१८.३३)।

इसके द्वारा स्कंद को पाँच पार्षद प्रदान किये गये थे। उनके नाम :--कुन्द, कुसुम, कुमुद, डम्बर, एवं आडम्बर (म. श. ४४.३५)।

इसे कुहू, सीनीवाली, अनुमति, एवं राका नामक चार पत्नियाँ थी। उनसे इसे, सायंकाल, दर्श, पूर्णमास, एवं प्रातःकाल नामक चार पुत्र हुएँ (भा. ६.१८.३)। इसके पुत्रों के ये नाम रूपकात्मक प्रतीत होते है।

आदित्य के नाते, यह हरसाल कार्तिक मास में प्रकाशित होता है, एवं इसके ११०० किरणें रहती हैं (भवि. ब्राह्म. १.७८)। भागवतमत में, यह चैत्रमास ('मधुमास') में प्रकाशित होता है (भा. १२.११.३३; विवस्वत् देखिये)।

२. ब्रह्माजी का पुत्र। भागवतमत में, यह भृगु ऋषि को ख्याति से उत्पन्न हुआ था। इसके दूसरे भाई का नाम विधाता, एवं बहन का नाम लक्ष्मी (श्री) था।

विधाता एवं यह मनु के साथ रहते थे (म. आदि. ६०.५०)।

मेरुकन्या आयति इसकी पत्नी थी। उससे इसे मृकण्ड नामक पुत्र हुआ था (भा. ४.१.४३-४४)।

हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुई थी (म. उ. ८१.३८८)।

३. भृगु का पुत्र।

धात्र--एक पौराणिक योद्धा। 'द्वादश-संग्राम' में से धात्र नामक दशम-संग्राम में, इसने भाग लिया था। वार्त इसीका नामांतर था (मत्स्य. ४७.४४-४५)।

धात्रेय--अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

धात्रेयिका--द्रौपदी की दासी। जयद्रथ द्वारा द्रौपदी के अपहरण का समाचार इसने पांडवों को बताया था (म. व. २५३.१५)।

धानंजय्य--अंशु का पैतृक नाम।

२. एक आचार्य का पैतृक नाम (ला. श्रौ. १.१.२५; २.१.२; ९.१०)।

धानाक--लुश देखिये।

धान्यमालिनी--रावण की पत्नी। इसका पुत्र अतिकाय (वा. रा. सुं. २२.)।

२. एक अप्सरा। शाप के कारण, यह मगर बनी थी। कालनेमि राक्षस के वध के समय, हनुमान ने इसका उद्धार किया।

धान्यायनि--अंगिराकुल का एक ऋषि।

धान्व--असित नामक असुरों के ऋषि का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.४.३.११)। इसका 'धान्वन्' नामांतर भी प्राप्त है (शां. श्रौ. १६.२.२०)।

धाम--एक ऋषिसमुदाय का नाम। उत्तर दिशा में रह कर, श्री गंगा-महाद्वार का ये रक्षण करते है (म. उ. १०९.१४)।

धामन्--अमिताभ देवों में से एक।

२. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. एक नक्षत्र (ऋ. ९.६६.२)।

धारण--चन्द्रवत्सकुल में उत्पन्न एक कुलांगार नरेश। अपने दुर्वर्तन के कारण, यह स्वजनोंसमेत नष्ट हो गया (म. उ. ७२.१६)।

२. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)।

धारिणी--(स्वा.) स्वधा को पितरों से उत्पन्न कन्या। यह ब्रह्मचारिणी तथा ब्रह्मनिष्ठ थी (भा. ४.१.६४)।

धार्मिक--रामचन्द्र के सुज्ञ नामक मंत्रि का पुत्र।

धार्ष्टक--धृष्ट १. देखिये।

धिषणा--कृशाश्व ऋषि की पत्नी।

२. एक देवी। इसने स्कंद के अभिषेक के समय पदार्पण किया था (म. श. ४४.१२)।

धिष्ण्य--प्रतर्दन देवों में से एक।

२. अग्नि धिष्ण्य ऐश्वर देखिये।

धीमत्--(सो. पुरूरवस्.) पुरूरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में से द्वितीय पुत्र (म. आ. ७०.२२)।

२. तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. अगस्त्य का पुत्र। पुलस्त्य ने इसे दत्तक लिया था। यह अगस्त्यगोत्रीय था।

धीर शातपर्णेय--शतपर्ण का वंशज, एक ऋषि। यह महाशाल का शिष्य था (श. ब्रा. १०.३.३.१)।

धीरधी--काशी का एक शिवभक्त ब्राह्मण। अनन्य शिवोपासना करने के कारण, शिवजी इसपर प्रसन्न हुएँ, एवं इसकी हरप्रकार सहायता करने लगे।

शिवजी का इस पर प्रेम देख कर, शिवगणों को आश्चर्य हुआ। तब इसकी पूर्वजन्म की कहानी शिवजी ने अपने गणों से कथन की। शिवजी बोले, 'यह ब्राह्मण पूर्वजन्म में एक हंस था। एक बार यह एक सरोवर के उपर से जा रहा था। यकायक यह थक गया, एवं जमीन पर गिर पडा। पश्चात् इसका सफेद रंग बदल कर, यह कृष्णवर्ण हो गया। इसका सफेद रंग बदलने का कारण, सरोवर में स्थित एक कमलिनी ने इसे बताया, एवं गीता के दसवें अध्याय का पठन करते हुए शिवोपासना करने को उसे कहा। इस पुण्यसंचय के कारण, उस हंस को अगले जनम में ब्राह्मणजन्म प्राप्त हुआ है'।

शिवजी ने आगे कहा, 'पूर्वकथा में निर्देश किया हुआ हंस, अपने पूर्वजन्म में ब्राह्मण ही था। किंतु गलती से गुरु को पादस्पर्श करने के पाप के कारण, उसे हंस की योनि प्राप्त हुई'।

पश्चात् शिवकृपा से यह जीवन्मुक्त हुआ, एवं स्वर्ग चला गया (पद्म. उ. १८४)।

धीरोष्णी--एक पुरातन विश्वेदेव (म. अनु. १३८. ३२. कुं.)।

धुनि--इन्द्र से शत्रुत्व रखनेवाला एक आदिवासी प्रधान। यह एवं चुमुरि, इंद्र एवं दभीति के शत्रुपक्ष में थे (ऋ. २.१५.९; ६.१८.८; २०.१३; ७.१९.४; इन्द्र देखिये)।

धुंधु--एक राक्षस। यह मधुकैटभों का पुत्र, एवं 'उदकराक्षस' था (म. व. १९५.१)। देवताओं एवं हिरण्याक्ष राक्षस के युद्ध में, यह हिरण्याक्ष के पक्ष में शामिल था (पद्म. सृ. ६५)।

उज्जालक नामक वालुकामय प्रदेश में खुद अपने को वालुका में दबा कर यह रहता था। इसकी तपस्या से संतुष्ट हो कर, ब्रह्मदेव ने इसे अवध्यत्व प्रदान किया। उस वरदान से उन्मत्त हो कर, यह सबको सताने लगा। सूर्यवंशीय कुवलाश्व राजा के पुत्रों को इसने दग्ध किया। फिर उत्तंक ऋषि की प्रेरणा से कुवलाश्व ने इसका वध किया (वायु. ८८; विष्णुधर्म. १.१६; ब्रह्मांड. ३.६३.३१; ब्रह्म. ७.५४.८६; विष्णु. ४.२; ह. वं. १.११; भा. ९.६; कुवलाश्व देखिये)। इसे अरु का पुत्र भी कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६.३१)।

२. एक राजा। इसने जीवन में कभी मांस नही खाया (म. अनु. १७७.७३. कुं.)। इस पुण्यसंचय के कारण, यह स्वर्ग गया।

३. (सो. पुरूरवस्.) मत्स्यमत में पीतायुध का पुत्र तथा वायुमत में जयद का पुत्र।

धुंधुकारिन्—आत्मदेव का पुत्र। यह अत्यंत दुर्वर्तनी होने के कारण, इसका पिता आत्मदेव अरण्य में चला गया (पद्म. उ. १९६; धुंधुली देखिये)।

धुंधुमत्--(सू. दिष्ट.) विष्णुमत में केवल का पुत्र। इसे बंधुमत् भी कहते थे।

धुंधुमार--सूर्यवंशी बृहदश्वपुत्र कुवलाश्व का नामांतर (म. द्रो. ९४.४२)। धुंधु दैत्य का वध करने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ (म. व. १९५.२९)। ऐडविड़ राजा ने रुद्र से प्राप्त हुआ खड्ग इसे प्रदान किया (म. शां. १६६.७६)। उसी खड्ग से इसने धुंधु का वध किया।

अगस्त्य ऋषि के कमलों की चोरी होने पर, इसने शपथ खायी थी (म. आ. १४.३)। कई जगह, इसे कुवलाश्व का पुत्र भी कहा है (पद्म. सृ. ८)। इसे दृढाश्व, घृण (भद्राश्व), तथा कपिलाश्व नामक तीन पुत्र थे। धुंधु के साथ हुएँ युद्ध में, इसके एक हजार इक्कीस पुत्रों में से, केवल उपरोक्त तीन पुत्र बचे (वायु. ८८; म. व. १९३. ५-६; १९५.३६; भा. ९.६.२३)। इसने 'वरुथिनी एकादशी' का व्रत किया था। इस कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (पद्म. ४८; कुवलाश्व तथा धुंधु देखिये)।

धुंधुमूक—एक राजा। यह मेघवाहन कल्प में तीसरे त्रेतायुग में उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम विशल्या था। उसके द्वारा अत्यंत कुअवसर पर, इसे एक पुत्र पैदा हुआ।

उस पुत्र का विवाह होने पर भी, वह एक शूद्र स्त्री से रत हुआ। बाद में उसने उस स्त्री का वध किया। उस स्त्री के भाई ने धुंधुमूक राजा का, एवं विशल्या का वध किया। शूद्रोंद्वारा वध होने के कारण, धुंधुमूक के सारे घराने का नाश हुआ।

पश्चात् धुंधुमूक के दुराचारी पुत्र को किसी ने 'लिंगपूजाव्रत' का माहात्म्य बताया। शिवपंचाक्षर मंत्र ('शिवतराय') तथा शिवषडाक्षर मंत्र ('ॐ नमः-शिवाय') का अखंड जाप करने के कारण, उसका तथा उसके सारे मृत बांधवों का उद्धार हो गया (लिंग. २.८)।

धुंधुर--एक दैत्य। कश्यपगृह में अवतीर्ण गणेशजी का विनाश करने के लिये, इसने एक तोते का रूप धारण किया, एवं यह कश्यप के घर आया। किंतु गणेशजी ने इसका नाश किया (गणेश. २.८)।

धुंधुली—आत्मदेव की पत्नी। एक सिद्ध ने आत्मदेव को पुत्रप्राप्ति के लिये फल दिया था। वह फल उसने अपनी पत्नी धुंधली को भक्षण करने के लिये दिया। परंतु अपनी बहन की बूरी सलाह मान कर, इसने वह फल गाय को खिला दिया, एवं स्वयं गर्भवती होने का स्वाँग रचा दिया। पश्चात् अपनी बहन का पुत्र स्वयं ले कर, इसने झूटमूठ ही पति को बता दिया, 'मुझे पुत्र हुआ है'। उस पुत्र का नाम धुंधुकारी रख दिया गया (पद्म. उ. १९६)।

धूमती—अंगिराकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

धूमपा—पितरों एवं ऋषियों के एक समुदाय का नाम। ये लोग दक्ष के यज्ञ में उपस्थित थे (म. शां. २८४.८-९)।

धूमिनी—(सो.) पूरुवंशी अजमीढ़ राजा की पत्नी। इसका पुत्र ऋक्ष (म. आ. ८९.२८)।

धूमोर्णा—यमराज की भार्या (म. अनु. २७१.११. कुं.)।

२. मार्कंडेय ऋषि की पत्नी (म. अनु. २४८.४. कुं.)।

धूम्र—रामसेना के गद्‌गद् नामक वानर का पुत्र।

२. एक ऋषि। यह इंद्र की सभा में विराजमान होता था (म. स. ७.१६*)।

३. स्कंद का सैनिक (म. श. ४४.५९)।

धूम्र पराशर--पराशर कुलोत्पन्न एक कुल।

धूम्रकेतु—(स्वा. प्रिय.) भरत तथा पंचजनी का पुत्र।
२. (सू. दिष्ट.) भागवतमत में तृणबिंदु तथा अलंबुषा का पुत्र।

धूम्रकेश—कश्यप तथा दनु का पुत्र।
२. (स्वा. प्रिय.) वेनपुत्र पृथु तथा वेनकन्या अर्चि के पाँच पुत्रों में से तीसरा (भा. ४.२२.५४)। पृथु की मृत्यु के पश्चात्, उसके ज्येष्ठ पुत्र विजिताश्व ने इसे दक्षिण दिशा का स्वामित्त्व प्रदान किया (भा. ४.२४.२)।
३. कृशाश्व तथा दक्षकन्या अर्चि का पुत्र (भा. ६.६.२०)।

धूम्रलोचन—शुंभनिशुंभ दैत्यों का एक प्रधान। कालिका देवी ने इसका वध किया।

धूम्रा—दक्ष प्रजापति की कन्या, एवं धर्म नामक वसु की पत्नी। इसे धर एवं ध्रुव नामक दो पुत्र थे (म. आ. ६०.१८)।

धूम्राक्ष—धूम्राश्व का नामांतर।
२. रावण का प्रधान। हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ५२.१; म. व. २७०.१४)।
३. (सू. दिष्ट.) भागवत मत में हेमचंद्र का पुत्र। इसे धूम्राश्व नामांतर भी प्राप्त है।

धूम्रानीक—(स्वा. प्रिय.) मेधातिथि का पुत्र।

धूम्राश्व—(सू. दिष्ट.) वैशाली के सुचंद्र राजा का पुत्र। इसे धूम्राक्ष भी कहते थे।

धूम्रित—कश्यप एवं खशा का पुत्र।

धूर्त—प्रियव्रत राजा का प्रधान (गणेश. २.३२.१४)।
२. एक प्राचीन क्षत्रिय नरेश (म. आ. १.१७८)।

धूर्तक—कौरव्यकुल में उत्पन्न एक नाग। जनमेजय के सर्पसत्र में यह जल कर मारा गया (म. आ. ५२.१२)।

धृत—(सो. द्रुह्यु.) धर्म का पुत्र। धृत वा द्युत इसीके ही पाठभेद है।

धृतक—(सो. इ.) वायुमत में रुरुक का पुत्र। वृक इसका पाठभेद है।

धृतदेवा—(सो. वृष्णि.) देवक राजा की कन्या। यह वसुदेव से ब्याही गयी थी। इसे विपृष्ठ नामक एक पुत्र था (भा. ९.२४)।

धृतधर्मन्—प्रतर्दन देवों में से एक।

धृतराष्ट्र—(सो. कुरु.) दुर्योधन, दुःशासन आदि सौ कौरवों का जन्मांध पिता, एवं महाभारत की अमर व्यक्तिरेखाओं में से एक। अशांत, शंकाकुल एवं द्विधा स्वभाव का अंध एवं अपंग पुरुष मान कर, श्रीव्यास ने 'महाभारत' में धृतराष्ट्र का चरित्रचित्रण किया है। अंध व्यक्तिओं में प्रत्यहि दिखनेवाली लाचारी, परावलंबित्त्व एवं परप्रत्येयनेय बुद्धि के साथ, उसका संशयाकुल स्वभाव एवं झूटेपन, इन सारे स्वभावगुणों से धृतराष्ट्र का व्यक्तिमत्त्व ओतप्रोत भरा हुआ था। इस कारण, यद्यपि यह मूह से, 'पांडव एवं कौरव मेरे लिये एक सरीखे है,' ऐसा कहता था, फिर भी इसका प्रत्यक्ष आचरण कौरवों के प्रति सदा पक्षपाती ही रहता था। 'अपंगत्त्व के कारण मेरा राज्यसुख चला गया, मेरे पुत्रों का भी यही हाल न हो,' यह एक ही चिंता से यह रातदिन तड़पता था। इस कारण, वृद्ध एवं अपंग हो कर भी, इसके प्रति अनुकंपा एवं प्रेम नहीं प्रतीत होता है।

कुरुवंश का सुविख्यात राजा विचित्रवीर्य का धृतराष्ट्र 'क्षेत्रज' पुत्र था। विचित्रवीर्य राजा निपुत्रिक अवस्था में मृत हो गया। तत्पश्चात् कुरुवंश का क्षय न हो, इस हेतु से सत्यवती की आज्ञानुसार, विचित्रवीर्य की पत्नी अंबिका के गर्भ से, व्यास ने इसे उत्पन्न किया। गर्भाधान प्रसंग में व्यास का तेज सहन न हो कर, अंबिका ने आँखे मूँद ली। इसीलिये धृतराष्ट्र जन्म से अंधा पैदा हुआ (म. आ. १.९८)। हँस नामक गंधर्व के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१.७-८; ९९-१००; भा. ९.२२.२५)।

धृतराष्ट्र का पालनपोषण तथा विद्याभ्यास भीष्म की खास निगरानी में हुआ (म. आ. १०२.१५-१८)। जन्मतः बुद्धिवान् होने के कारण, यह शीघ्र ही वेदशास्त्रों में निष्णात हुआ। शिक्षा पूर्ण होने के बाद, भीष्म नें सुबल राजा की कन्या गांधारी से इसका विवाह कर दिया (म. आ. १०३)। गांधारी के सिवा, इसे निम्नलिखित स्त्रियाँ थीः—सत्यव्रता, सत्यसेना, सुदेष्णा, सुसंहिता, तेजःश्रवा, सुश्रवा, निकृति, शंभुवा तथा दशार्णा (म. आ. १०४-१११३ परि. पंक्ति. ५)।

गांधारी से धृतराष्ट्र को दुर्योधनादि सौ पुत्र, तथा दुःशला नामक एक कन्या हुई (म. आ. १०७.३७)। दुःशला का विवाह सिंधुराज जयद्रथ से किया गया था (म. आ. १०८.१८)। इन अपत्यों के अतिरिक्त, इसे युयुत्सु नामक एक दासीपुत्र भी था (म. आ. १०७.३६)। कौरवों में दुर्योधन, दुःशासन, विकर्ण तथा चित्रसेन प्रमुख थे (म. आ. ९०.३२)।

धृतराष्ट्र का भाई पाण्डु शापग्रस्त होने के कारण, वानप्रस्थाश्रम में चला गया, एवं अंधा हो कर भी धृतराष्ट्र कुरु देश का राजा बना। पश्चात् पाण्डु एवं उसकी पत्नी माद्री एकसाथ मर गये, एवं पाण्डुपुत्र युधिष्ठिर को यौवराज्याभिषेक किया गया (म. आ. परि. १.८०.२)। अपने पश्चात् युधिष्ठिर ही हस्तिनापुर का राजा बनेगा, एवं अपने पुत्र राज्य से वंचित होंगे, इस चिंता से धृतराष्ट्र अस्वस्थ हो गया। इतने में कणीक नामक इसके अमात्य ने पांडवविनाश की राह बतलानेवाला 'कूटनीति' का उपदेश इसे किया (म. आ. परि. १. ८१.१.१९०; कणिक देखिये)। उस उपदेश के अनुसार पांडवों के प्रति प्रेमभावना का दिखावा कर, उनके विनाश का षड्यंत्र रचने का काम इसने एवं इसके दुर्योधनादि पुत्रों ने शुरू किया।

पांडवों का नाश करने के लिये, धृतराष्ट्र ने उन्हें वारणावत नगरी में भेज दिया। उस नगरी में तयार किये 'लाक्षागृह' में, पांडवों को जला कर मार डालने का इसके पुत्र दुर्योधन का षड्यंत्र था। उसीके अनुसार, पांडवों के मृत्यु कि खबर भी इसे मिलगयी (म. आ. १३७.४), पांडवों के लिये इसने मिथ्या विलाप किया (म. आ. १३७. १०), एवं उनको 'जलांजली' भी प्रदान की (म. आ. १३७.११)।

पश्चात् पांडव जीवित है, यह देख कर भीष्म, द्रोण एवं विदूर के आग्रह के खातिर, पांडवों को आधा राज्य देना, धृतराष्ट्र ने बड़े ही कष्ट से मान्य किया (म. आ. १९९.२५)। युधिष्ठिर को इसने आधे राज्य का अभिषेक किया, एवं अपने भाइयोंसहित खाण्डवप्रस्थ में रहने के लिये उसे कह दिया (म. आ. १९९.२६)। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में भी यह उपस्थित था (म. स. ३१.५)।

पांडवों को आधा राज्य मिला, यह दुर्योधन को अच्छा नहीं लगा। द्यूत खेल कर, वह पांडवों से छीन लेने का विचार उसने किया। धृतराष्ट्र ने भी दुर्योधन के इस विचार को मूकसंमति दी। इसने विदूर के द्वारा, पांडवों को द्यूत के लिये आमंत्रण दिया (म. स. ५१.२०-२१) द्यूतक्रीडा में दुर्योधन ने पांडवों को जीत लिया, यह सुन कर इसे आनंद हुआ। द्रौपदीवस्त्रहरण के प्रसंग में भी, इसने दुर्योधनादि को परावृत्त नही किया (म. आ. ६१. ५१)। किंतु पश्चात् द्रौपदी ने विनंति करने पर, दास बने हुएँ पांडवों को धृतराष्ट्र ने मुक्त कर दिया (म. स. ६३. २८-३२)।

पांडवों के वनवासकाल में भी, धृतराष्ट्र पांडवों के पराक्रम की वार्ताएँ सुन कर, कभी संतप्त होता था (म. व. ४६), या कभी भयभीत होता था (म. व. ४८. १-१०)। पांडवों को फजिहत करने के हेतु से, इसने दुर्योधन के घोषयात्रा के प्रस्ताव को संमति दी (म. व. २३९.२२)। घोषयात्रा में पांडवों ने किये पराक्रम के कारण, धृतराष्ट्र चिन्ताग्रस्त हो गया, एवं सारी रात जागता बैठा। पश्चात् इसने विदुर को बुलवा कर, उससे कल्याण का मार्ग पूछ लिया (म. उ. ३३.९-११)। विदुर ने इसे पांडवों का राज्य उन्हें वापस देने के लिये कहा। किंतु विदुर की यह सलाह धृतराष्ट्र एवं दुर्योधन दोनों को ही अप्रिय सी लगी।

पांडवों का वनवासकाल समाप्त हुआ। कृष्ण ने दुर्योधन से कहा, 'राज्य का योग्य हिस्सा पांडवों को दे दो'। वह न देने पर, युद्ध करने की धमकी भी कृष्ण ने दुर्योधन को दी। उस समय धृतराष्ट्र ने संजय द्वारा युधिष्ठिर को उपदेश किया, 'अपनी तेरह वर्ष की तपश्चर्या का नाश कर के, तुम दुर्योधन के साथ युद्ध मत करो। दुर्योधन द्वारा कुछ न मिलने पर, भिक्षा माँग कर अपना निर्वाह करो'। धृतराष्ट्र के इस उपदेश से, इसकी कौरवों के प्रति पक्षपाती वृत्ति, एवं इसके स्वार्थीपन के बारे में, श्रीकृष्ण की खातरजमा हो गयी। 'कृष्णशिष्टाई' की सभा में, श्रीकृष्ण को कैद करने का दुर्योधन का विचार था। किंतु धृतराष्ट्र ने उसे इस विचार से परावृत्त किया (म. उ. १२९)। पश्चात् विश्वरूपदर्शन के लिये, इसने श्रीकृष्ण से आँखों की याचना की, एवं श्रीकृष्ण के कृपा से नेत्र पा कर, यह भगवत्स्वरूप दर्शन से कृतार्थ हुआ (म. उ. १२९.४९५*)।

बाद में अल्प ही कालावधि में भारतीय युद्ध छिड़ा। धृतराष्ट्र अंध होने के कारन, यह युद्ध में भाग न ले सका। युद्धप्रसंग प्रत्यक्ष देख भी न सका। युद्ध की घटनायें संजय के मुख से इसने सुनी। भीष्मद्रोणादि तथा इसी प्रकार अन्य कई वीर योद्धाओं के वध की वार्ता इसने सुनी। इसे प्रतीत होने लगा, 'कुरुकुल का क्षय होनेवाला है, कृष्ण की भविष्यवाणी सत्य सिद्ध होनेवाली है'।

धृतराष्ट्र दुर्योधन को कहने लगा, 'युद्ध से परावृत्त हो कर पांडवों का उचित अंश उन्हें दे दो'। परंतु अब बहुत देर हो चुकी थी। दुर्योधन ने पूरी जिद ठान ली थी। धृतराष्ट्र के उपदेश का कुछ लाभ नहीं हुआ। बाद में भारतीय युद्ध में इसके दुर्योधनादि सौ पुत्र तथा काफी

रथीमहारथी मृत हो गये। कौरवसेना में केवल अश्वत्थामा, कृपाचार्य तथा कृतवर्मा ये ही बड़े योद्धा बचे।

यह सुन कर धृतराष्ट्र, पुत्रशोक से विव्हल हो गया। पांडवों पर यह अत्यंत क्रोधित हुआ, तथा भीम से बदला चुकाने के लिये, इसने उसे कपट से आलिंगन के लिये बुलाया। परंतु इसका कपट कृष्ण ने पहचान लिया। उसने भीम के बदले, एक लोहे की मूर्ति धृतराष्ट्र के सामने रखी। उस मूर्ति को क्रोध से आलिंगन दे कर, धृतराष्ट्र ने उसे चूरचूर कर दिया। अपनी फज़ीहत देख कर, यह अत्यंत लज्जित हुआ। बाद में लोकलज्जास्तव यह पांडवों से प्रेमपूर्ण व्यवहार करने लगा (म. स्त्री. ११)।

युधिष्ठिर हस्तिनापुर का राज्य करने लगा। उस समय धृतराष्ट्र काफी दिनों तक वहीं रहा। उस समय युधिष्ठिर को इसने राजनीति का उपदेश किया (म. आश्व. ९–१२)। युधिष्ठिर भी धृतराष्ट्र के साथ बडे आदर से व्यवहार करता था। किंतु भीम के मर्मभेदिनी बातों से व्यथित हो कर धृतराष्ट्र ने वन में जाने का निश्चय किया। अपने वनगमन के समय, गांधारी, कुन्ती तथा विदुर आदि को यह साथ ले गया था। वनभ्रमण में व्यास से इसकी मुलाकात हुई। उस समय धृतराष्ट्र की प्रार्थनानुसार, व्यास ने इसके सारे मृत बांधवों का दर्शन इसे करवाया।

बाद में धृतराष्ट्र ने उग्र तप प्रारंभ किया। तप करते समय दावाग्नि में घिर कर इसकी मृत्यु हो गई (म. आश्र. ४५. ३४; भा. १. १३. ५६)। मृत्यु के पश्चात्, यह कुबेरलोक गया (म. आश्र. २७. ११)।

धृतराष्ट्र की मृत्यु के समय, उसके औरसपुत्रो में से एक भी जीवित न था। अतः इसके बाद पांडवकुल प्रारंभ हुआ।

स्वभाव—धृतराष्ट्र स्वभाव से बड़ा ही सीधा तथा गुणों का पक्षपाती था। इसके मन में कृष्ण, विदुर आदि के लिये बडा आदर था। किंकर्तव्यमूढ अवस्था में यह विदुर से सलाह प्राप्त करता था। एक दिन, पांडवों के साथ युद्ध टालने के विषय में बातचीत चल रही थी। इतने में पांडवों से बातचीत कर संजय वापस लौटा। दूसरे दिन राजसभा में वह पांडवों का मनोगत करनेवाला था। धृतराष्ट्र को इस बात का पता लगने पर, यह रात भर सुख की नींद न सो सका। इसने विदुर को आमंत्रित कर उससे सलाह पूँछी। विदुर ने उचित राजनीति बताकर, युद्ध टालने का उपदेश किया। यह कथाभाग उद्योग पर्वस्थित 'विदुर नीति' में काफी विस्तार के साथ दिया गया है। पूरी रात जाग कर, यह विदुर की सलाह लेता रहा। उस कारण, महाभारत के इस पर्व का नाम 'प्रजागर पर्व' रखा गया है।

शूद्र होने के कारण, विदुर को ब्रह्मज्ञान-कथन का अधिकार नहीं था। अतः उसने सनत्सुजात ऋषि के द्वारा, धृतराष्ट्र को तत्त्वज्ञान की बाते सुनवायी। अन्त में धृतराष्ट्र ने कहा, 'यह सब सत्य है, न्याय्य है, उचित है, किन्तु दुर्योधन की उपस्थिति में, मैं अपने मन को सम्हाल नहीं सकता (म. उ. ४०.२८–३०)।

धृतराष्ट्र के पुत्र—धृतराष्ट्र को गांधारी से कुल सौ पुत्र हुएँ। उन्हे 'कुरुवंश के' इस अर्थ से 'कौरव' कहते थे। उन सौ कौरवों की नामावलि महाभारत में ही अलग अलग ढंग से दी गयी है। उनमें से तीन नामावलियाँ अकारादि क्रम से नीचे दी गयीं हैं। इनमें प्रारंभ में दिया क्रमांक 'पुत्रक्रम' का है:—

नामावलि क्र. १:—९०. अनाधृष्य, ७६. अनुयायिन्, १३. अनुविंद, ५७. अनूदर, ६५. अपराजित, ८७. अभय, ४२. अयोबाहु, ८६. अलोलुप, ७३. आदित्यकेतु, ८२. उग्र, ६२. उग्रश्रवस्, ६३. उग्रसेन, ५० उग्रायुध, २२. उपचित्र, ३३. उपनंदक, ३०. ऊर्णनाभ, ९७. कनकध्वज, ५२. कनकायु, २०. कर्ण, ७७. कवचिन्, ९८. कुंडाशी, ९१. कुंडभेदिन्, ३६. कुंडोदर, ६४. क्षेममूर्ति, २४. चारुचित्रांगद, २१. चित्र, ९९. चित्रक, ४४. चित्रचाप, ३८. चित्रबाहु, ३९. चित्रवर्मन्, २३. चित्राक्ष, ५८. जरासंध, ९ जलसंध, ८०. दंडधार, ७९. दंडिन्पाशी, ९४. दीर्घबाहु, ९३. दीर्घलोचन, ६७. दुराधर, १४. दुर्धर्ष, १८. दुर्मुख, २५. दुर्मद, १७. दुर्मर्षण, ६. दुर्मुख, १. दुर्योधन, ४१. दुर्विमोचन, ५. दुःशल, ३. दुःशासन, १९. दुष्कर्ण, १६. दुष्प्रधर्षण, २६. दुष्प्रहर्ष, ४. दुःसह, ५५. दृढक्षत्र, ८४. दृढरथ, ५४. दृढवर्मन्, ५९. दृढसंध, ६९. दृढहस्त, ५३. दृढायुध, ८१. धनुर्ग्रह, ३२. नंद, ७५. नागदन्त; ७८. निषंगिन्, ६६. पंडितक, ३१. सुनाभ, ७. अपर, ४८. बलाकिन्, ७४. बह्वाशी, ४७. भीमबल, ८३. भीमरथ, ४९. भीम विक्रम (बलवर्धन), ४६. भीमवेग, ५१. भीमशर, ९५. महाबाहु, ४३. महाबाहु, ३७. महोदर, २. युयुत्सु, ८८. रौद्रकर्मन्, ७१. वातवेग, २८. विकट, ९. विकर्ण, १२. विंद, ९२. विराविन्, २७. विवित्सु, ८. विविंशति, ६७. विशालाक्ष,

८४. वीर, ८५. वीरबाहु, ९६. व्यूढोरू, ६०. सत्यसंध, २९. सम, ६१. सहस्रवाक, ४५. सुकुंडल, १५. सुबाहु, ११. सुलोचन, ७२. सुवर्चस्, ४०. सुवर्मन्, ३५. सुषेण, ७०. सुहस्त, ३४. सेनापति, ५६. सोमकीर्ति, १००. दुःशला, (कन्या) तथा, १०१. युयुत्सु (वैश्यापुत्र) (म. आ. ६८. परि. १ क्र. ४१.)।

नामावलि क्र. २:— ७८. अग्रयायिन्, ९१. अनाधृष्य, १०. अनुविंद, ५७. अनूदर, ६७. अपराजित, ८८. अभय, ४०. अयोबाहु, ८७. अलोलुप, ७५. आदित्यकेतु, ८४. उग्र, ६३. उग्रश्रवस्, ६४. उग्रसेन (अश्व-उग्रसेन), ४७. उग्रायुध, २४. उपचित्र, ३५. उपनंदक, ३२. ऊर्णनाभ, १००. कनकध्वज, १७. कर्ण, ७९. कवचिन्, ४९, ८२. कुंडधार, ९२. कुंडभेदिन्, ६८. कुंडशायिन्, १०१. कुंडाशिन्, ८१. कुंडिन्, ८०. क्रथन, २६. चारुचित्र, २३. चित्र, ४२, ९४. चित्रकुंडल, ३६. चित्रबाण, ३७. चित्रवर्मन्, २५. चित्राक्ष, ४१. चित्रांग, ५० चित्रायुध, ५९. जरासंध, ६. जलसंध, ९८. दीर्घबाहु, ९७. दीर्घरोमन, ७०. दुराधर, ११. दुर्धर्ष, २८. दुर्मद, १४. दूर्मर्षण, १५. दुर्मुख, १. दुर्योधन, २९. दुर्विगाह, ३९. दुर्विमोचन, ५. दुःशल, ३. दुःशासन, ४. दुःसह, १६. दुष्कर्ण, ६६. दुष्प्राजय, १३. दुष्प्रधर्षण, ५५. दृढक्षत्र, ९०. दृढरथाश्रय, ५४. दृढवर्मन्, ५८. दृढसंध, ७१. दृढहस्त, ८३. धनुर्धर, ३४. नंद, ७७. नागदत्त, ५१. निषंगिन्, ५२. पाशिन्, ९५. प्रमथ, ९६. प्रमाथिन्, ४६. बलवर्धन, ४५. बलाकिन्, ७६. बह्वाशी, ४४. भीमबल, ८५. भीमरथ, ४३. भीमवेग, २. युयुत्सु, ८९. रौद्रकर्मन्, ७३. वातवेग, १३. विकटानन, १९. विकर्ण, ९. विंद, १०२. विरजस्, ९३. विराविन्, ३०. विवित्सु, १८. विविंशति, ६९. विशालाक्ष, ८६. वीरबाहु, ५३. वृंदारक, ९६. व्यूढोरस्, २७. शरासन, २०. शल (शरसंध), ६०. सत्यसंध, २१. सत्व, ६१. सद, ७. सम, ८. सह, ३३. सुनाथ, १२. सुबाहु, २२. सुलोचन, ७४. सुवर्चस्, ३८. सुवर्मन्, ६२. सुवाक, ४८. सुषेण, ७२. सुहस्त, ६५. सेनानी, ५६. सोमकीर्ति, एवं १०३. दुःशला (कन्या) (म. आ. १०७.२–१४)।

नामावलि क्र. ३—अनाधृष्टि, अयोभुज, अलंबु, उपनद, करकायु, कुंडक, कुंडभेदिन्, कुंडलिन्, क्राथ, खड्गिन्, चित्रदर्शन, चित्रसेन, चित्रोपचित्र, जयत्सेन, जैत्र, तुहुंड, दीप्तलोचन, दीर्घनेत्र, दुर्जय, दुर्धर, दुर्धर्षण, दुर्विग्रह, दुष्प्रधर्ष, दृढ, नंदक, पंडित, बाहुशालिन्, भीम, भीमवेगरव, भूरिबल, मकरध्वज, रवि, वायुवेग, विराज, विरोचन, शत्रुंजय, शत्रुसह, श्रुतवर्मन्, श्रुतायु, श्रुतांत, संजय, सुचारू, सुचित्र, सुजात, सुदर्शन, सुलोचन।

इनका उल्लेख द्रौपदी स्वयंवर, घोषयात्रा, उत्तरगोग्रहण भारतीय युद्ध आदि प्रसंग में आया है (म. आ. १७७, भी. ६०, ७३, ७५, ८४; द्रो. १३१; १३२; वि. ३३; क. ६२; श. २५)।

उपरिनिर्दिष्ट नामावलियों में कुछ नाम बार बार आये हैं। कई जगह समानार्थक दूसरे शब्द का उपयोग किया गया है। इन नामावलि में प्राप्त पुत्रों की कुल संख्या भी सौ से अधिक है। किंतु उन में से सही नाम कौन से है, इसका निर्णय करने का कुछ भी साधन प्राप्त नहीं है।

२. नागकुल का एक नाग। यह वासुकि का पुत्र था।

अर्जुन के अश्वमेध-यज्ञ के समय, अर्जुन एवं उसका पुत्र बभ्रुवाहन में युद्ध संपन्न हुआ। उस युद्ध में, अर्जुन का सिर बभ्रुवाहन ने तोड़ दिया। फिर अर्जुन को पुनः जीवित करने के लिये, 'मृतसंजीवक' नामक मणि की खोज़, बभ्रुवाहन ने शुरू की। वह मणि शेष नाग के पास था, एवं उसके रक्षण का काम धृतराष्ट्र नाग पर सौंपा गया था। उसने बभ्रुवाहन को वह मणि देने से इन्कार कर दिया।

पश्चात् धृतराष्ट्र एवं बभ्रुवाहन का युद्ध हो कर, बभ्रुवाहन ने वह मणि छीन लिया। उस मणि के कारण, अर्जुन पुनः जीवित हो जावेगा, यह धृतराष्ट्र को अच्छा न लगा। इसने अपने पुत्रों के द्वारा अर्जुन का सिर चुरा लिया, एवं उसे बक दाल्भ्य के आश्रम में फेंक दिया (जै. अ. ३९)।

३. कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.१३)। यह वरुण की सभा में रह कर, उसकी उपासना करता था (म. स. ९.९)। नागों द्वारा पृथ्वी के दोहन के समय, यह दोग्धा बनाया गया था (म. द्रो. परि. १.८.८०६)। इसे शिवजी के रथ के 'ईषादण्ड' में स्थान दिया गया था (म. क. ३४.७२)। बलराम के शरीरत्याग के समय, उस 'भगवान् अनंतनाग' के स्वागत के लिये, यह प्रभासक्षेत्र के समुद्र में उपस्थित हुआ था (म. मौ. ५.१४)।

४. एक देवगंधर्व। यह कश्यप एवं मुनि का पुत्र था (म. आ. ५९.४१)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४४)। देवराज इन्द्र ने इसे दूत के नाते मरुत्त के पास भेजा था (म. आश्व. १०.२–८)।

यही देवगंधर्व भूतल पर धृतराष्ट्र राजा के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. स्व. ४.१२)।

५. जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) राजा का पुत्र, एवं भरतवंशी पूरु राजा का पौत्र (म. आ. ८९.४९)। जनमेजय के पश्चात् यह राजगद्दी पर बैठा। ये कुल आठ भाई थे। उनके नामः- पांडु, बाह्लीक, निषध, जांबूनद, कुंडोदर, पदाति, एवं वसाति। इसे 'कुण्डिक' आदि पुत्र थे (म. आ. ८९.४९-५०)। उनके नामः— कुण्डिक, हस्तिन्, वितर्क, क्राथ, कुण्डुल, हविःश्रवस्, इंद्राभ, सुमन्यु, अपराजित।

६. कश्यप एवं दनु का पुत्र।

७. पार्थुश्रवस का नामांतर (जै. उ. ब्रा. ४. २६. १५; पार्थश्रवस देखिये)।

धृतराष्ट्र ऐरावत--एक सर्पदैत्य। धृतराष्ट्र इसका नाम हो कर, ऐरावत (इरावत् का वंशज) इसका पैतृक नाम था (अथर्व. ८. १०. २९; पं. ब्रा. २५. १५. ३)। सर्पसत्र में यह 'ब्रह्मा' था।

धृतराष्ट्र पांचाल—एक राजा। बक दाल्म्य ऋषि ने इसका गर्वहरण किया था (बक दाल्म्य देखिये)।

धृतराष्ट्र पार्थुश्रवस—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ४. २६. १५)।

धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य—काशी का राजा (श. ब्रा. १३. ५. ४. २२)। इसने किये अश्वमेध यज्ञ के दिग्विजय के समय, शतानीक सत्राजित ने इसका पराजय किया, एवं इसके अश्वमेध का घोडा चुरा लिया। शतानीक सत्राजित पांचाल देश का राजा था (क. सं. १०. ६; श. ब्रा. १३. ५. ४. १८-२३)। उससे ज्ञात होत है कि, धृतराष्ट्र वैचित्रवीर्य का राज्य कुरुपांचाल से कुछ अलग, एवं उससे कही दूर बसा हुआ था।

'वैचित्रवीर्य' यह इसका पैतृक नाम था। उसका अर्थ 'विचित्रवीर्य का वंशज' ऐसा प्रतीत होता है।

बक दाल्म्य नामक पांचाल देश में रहनेवाले ऋषि से इसका संवाद हुआ था (क. सं. १०.६)।

धृतराष्ट्रिका--धृतराष्ट्री देखिये।

धृतराष्ट्री--ताम्रा की कन्या, एवं गरुड की पत्नी। इसने सभी प्रकारों के हंस, कलहंस, तथा चक्रवाकों को जन्म दिया था (म. आ. ६०.५६)।

धृतवर्मन्--त्रिगर्तराज सूर्यवर्मन् एवं केतुवर्मन् का भाई (म. आश्व. ७४. २२)। कौरवों के पक्ष का यह अत्यंत पराक्रमी महारथि था।

पांडवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, अर्जुन ने त्रिगर्त देश पर हमला किया। तत्पश्चात् संपन्न हुए युद्ध में, त्रिगर्त देश का राजा सूर्यवर्मा पराजित हुआ, एवं उसका भाई केतुवर्मा मारा गया। उस अवसर पर, सूर्यवर्मा एवं केतुवर्मा का भाई धृतवर्मा, अर्जुन के साथ युद्ध करने के लिये स्वयं आगे बढा। इसने अर्जुन पर बाणों की वर्षा की। इसके तेजस्वी बाण से अर्जुन के हाथ में गहरी चोट लगी, एवं गाण्डीव धनुष उसके हाथ से गिर गया। पश्चात् रोष से भरे हुए अर्जुन ने धृतवर्मा पर बाणों की वर्षा की। धृतवर्मा को बचाने के लिये त्रिगर्त योद्धाओं ने अर्जुन पर एकसाथ हमला किया। किंतु अर्जुन ने अठारह त्रैगर्त वीरों को मार कर, युद्ध में विजय संपादन किया। पश्चात् धृतवर्मा आदि सारे त्रिगर्त, दास बन कर अर्जुन की शरण में आये (म. आश्व. ७३.१६-२८)।

धृतव्रत--स्वायंभुव मन्वन्तर के अर्थवण ऋषि का चित्ति नामक भार्या से उत्पन्न पुत्र।

२. चक्षुर्मनु का नड्वला से उत्पन्न पुत्र।

३. (सो. अनु.) धृति राजा का पुत्र। इसका पुत्र सुकर्मा।

४. अंगिरा ऋषि के पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम (म. आ. ६०.५)।

धृतसेन--दुर्योधन के पक्ष का एक राजा (म. श. ४.३)।

धृति—दक्ष प्रजापति की कन्या, एवं धर्म की पत्नी (म. आ. ६०.१४; धर्म देखिये)। नकुल तथा सहदेव की माता माद्री इसीका अवतार मानी जाती है (म. आ. ६१.९८)।

२. सावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

३. (सो. अनु.) भागवत तथा विष्णुमत में विजय का पुत्र।

४. (सू. निमि.) विदेह देश का राजा। यह वीतहव्य जनक का पुत्र था। कुरुपौरव राजा विचित्रवीर्य एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास ये दोनों इसके समकालीन थे। इसका पुत्र बहुलाश्व।

५. (सो. कुकुर.) वायुमत में आहुक का पुत्र।

६. ब्रह्मधाना का पुत्र।

७. सृष्टि तथा छाया का पुत्र।

८. सुतप देवों में से एक।

९. सुधामन् देवों में से एक।

१०. (सो. कुकुर.) मत्स्यमत में वृष्णि का, तथा पद्म-मत में वृष्टि का पुत्र (पद्म. सृ. १३)।

११. (सो. वसु.) सारण राजा का पुत्र, एवं कृष्ण तथा रोहिणी का पौत्र। सारण को सत्य एवं धृति नामक दो पुत्र थे। इसके नाम का 'सत्यधृति' पाठभेद भी प्राप्त है (विष्णु. ४.१५.४)।

१२. (सो. क्रोष्टु.) विष्णुमत में रोमपादपुत्र बभ्रु का पुत्र (ज्ञाति देखिये)।

१३. (सू. निमि.) महाधृति का नामांतर।

१४. कुशद्वीप का राजा एवं ज्योतिष्मत् का पुत्र। इसका देश इसीके नाम से प्रसिद्ध था (विष्णु. २.४)।

१५. मनु नामक रुद्र की पत्नी।

१६. एक सनातन विश्वेदेव।

धृतिमत्--रैवत मनु का पुत्र।

२. सुदरिद्र ब्राह्मण का पुत्र (पितृवर्तिन् देखिये)।

३. (सो. पुरूरवस्.) मत्स्य तथा पद्ममत में पुरूरवा को उर्वशी से उत्पन्न पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. १२)।

४. (सो. द्विमीढ.) द्विमीढ राजवंश के यवीनर राजा का पुत्र। भागवत में इसे 'कृतिमत्' कहा गया है।

५. (सू. निमि.) एक राजा। वायुमत में यह महावीर्य जनक का पुत्र था। सत्यधृति एवं सुधृति इसीके नामांतर है।

धृतिमत् अंगिरस्-एक अग्नि। यह भानु का पुत्र था, एवं इसका गोत्र अंगिरस था (म. व. २११.१३)। इसके लिये दर्श तथा पौर्णमास याग में 'हविष्य' समर्पण किया जाता है। विष्णु इसीका नामांतर है।

धृष्ट--वैवस्वत मनु के नौ पुत्रों में से एक (भा. ८. १. १२)। हरिवंश, लिंग, एवं शिवपुराणों में इसे धृष्णु कहा गया है (ह. वं. १.१०.१)। महाभारत (भांडारकर इन्स्टिटयूट संहिता) में भी 'धृष्णु' पाठ प्राप्त है (म. आ. ७०.१३)।

इसे धृष्टकेतु, स्वधर्मन् एवं रणधृष्ट नामक तीन पुत्र थे (मत्स्य. १२.२०-२१; पद्म. सृ. ८; लिंग. १.६६.४६)। उन पुत्रों से 'धृष्टक' नामक मानवज्ञातियाँ निर्माण हुई। 'धृष्टक' ज्ञाति के लोग क्षत्रिय थे, एवं वाह्लीक देश (आधुनिक पंजाब प्रांत में स्थित वाल्हीक प्रदेश) में रहते थे (मार्कं. मार्क. पृ. ३११; शिव. ७.६०.२०; वायु. ८८. ४-५; ब्रह्म. ७.२५; विष्णु. ४.२.२)। धृष्टक लोग पहले क्षत्रिय थे, किंतु तपःसामर्थ्य से ब्राह्मण बन गये, ऐसा भी निर्देश प्राप्त है (भा. ९.२.१७)। गरुड पुराण के मत में वे वैश्य बन गये (गरुड. १.१३८.१५)। धृष्टक लोगों के लिये 'धार्ष्टक' नामांतर भी प्राप्त है।

२. हिरण्यकशिपु की सभा का एक दैत्य (भा. ७.२. १८)।

३. (सो. सह.) मत्स्यमत में सहस्रार्जुन का पुत्र।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। वायु तथा मत्स्य मत में यह कुंति राजा का पुत्र था। धृष्टि तथा वृष्णि इसी के नामांतर हैं।

५. (सो. कुकुर.) विष्णुमत में कुकर राजा का पुत्र। इसे वह्नि, वृष्टि तथा वृष्णि भी कहा गया है।

धृष्टकेतु--(सो. ऋक्ष.) चेदिराज शिशुपाल का पुत्र, एवं एक पराक्रमी पांडवपक्षीय राजा। हिरण्यकशिपु का पुत्र अनुह्राद के अंश से यह उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ७)। यह एवं इसके पुत्र अत्यंत शूर थे (म. उ. १६८. ८)। इसके साथ रण में युद्ध करने की किसी की हिम्मत न होती थी (म. उ. ७८. १४)।

भीम के द्वारा शिशुपाल का वध होने पर, धृष्टकेतु को चेदि देश के राजसिंहासन पर अभिषिक्त किया गया (म. स. ४२. ३१)। यह पहले से ही पांडवों का पक्षपाती एवं मित्र था। पांडवों के वनवास में, यह उन्हें मिलने के लिये गया था (म. व. १३. २)।

भारतीय युद्ध शुरू होते ही, पांडवों की ओर से धृष्टकेतु को रणनिमंत्रण दिया गया (म. उ. ४. ८)। एक अक्षौहणी सेना के साथ, यह पांडवों के पक्ष में शामिल हुआ (म. उ. १९. ७)। इसके पास कांबोज देश के सफेद-काले रंग के अत्युत्कृष्ट अश्व थे। वे भी इसने युद्ध के लिये लाये थे (म. द्रो. २२. १६)।

पांडवों के सात सेनापतियों में से एक के पद पर, इसे नियुक्त किया गया था (म. उ. १५४. १०-११)। अर्जुन के रथ का चक्ररक्षण का काम इस पर सौंपा गया था। वह कार्य भी इसने उत्कृष्ट तरह से निभाया (म. भी. १९. १८)।

भारतीय युद्ध में, इसने निम्नलिखित प्रतिपक्षीय वीरों से युद्ध कर के पराक्रम दिखाया था :-- (१) वाह्लीक (म. भी. ४३. ३५-३६); (२) भूरिश्रवा (म. भी. ३८०. ३५-३७); (३) पौरव (म. भी. ११२. १३-२४); (४) कृपाचार्य (म. द्रो. १३. ३१-३२); (५) अंबष्ठ (म. द्रो. २४. ४७-४८); (६) वीरधन्वन् (म. द्रो. ८१. ९-१०)।

एक बार यह तथा केकय देश का राजा बृहत्क्षत्र द्रोणाचार्य पर आक्रमण कर रहे थे। उस वक्त, त्रिगर्तराज वीरधन्वन् ने इन्हे रोकने की कोशिश की। फिर धृष्टकेतु एवं वीरधन्वन् इन वीरों में भयंकर युद्ध हुआ। वीरधन्वन् ने एक बाण छोड़ कर, इसका धनुष तोड़ दिया। फिर अपना टूटा हुआ धनुष फेंक, इसने सुवर्ण की मूठवाली एक महावीर्यशाली फौलादी शक्ति दोनों हाथों में पकड ली, एवं बराबर लक्ष्य वेध कर वह वीरधन्वन् के रथ पर फेंक दी। उस शक्ति के भयंकर प्रहार से वीरधन्वन् का सीना विदीर्ण हो गया, एवं वह तत्काल मृत हो गया (म. द्रो. ८२. ९-१७)।

पश्चात् द्रोण से लड़ते-लड़ते, इसका मित्र केकयराज बृहत्क्षत्र मृत हो गया। फिर इसने अपने सारथी को अपना रथ द्रोण के रथ की ओर बढ़ाने को कहा। पतंग जिस प्रकार अग्नि ज्योति पर झपटता है, उस प्रकार इसने द्रोण पर आक्रमण किया। किंतु इसके सीने पर एक तीक्ष्ण बाण मार कर द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. १०१.२२-३८)।

मृत्यु के पश्चात्, यह स्वर्गलोक में जा कर विश्वेदेवों में विलीन हो गया (म. स्व. ५.१३-१५)। व्यासजी ने आवाहन करने पर, परलोकवासी कौरवपांडव वीरों के साथ, यह भी गंगाजल से प्रगट हुआ था (म. आश्र. ४०.११)।

इसे करेणुमती नामक एक बहन, एवं रेणुमती नामक एक कन्या थी। उनमें से रेणुमती नकुल से ब्याहीं गयी थी (म. आ. ९०.८६)। वीतहोत्र नामक एक पुत्र भी इसे था (गरुड. १.१३९)।

२. (सू. निमि.) विष्णुमत में सत्यधृति का पुत्र। भागवत तथा वायुमत में यह सुधृति का पुत्र था।

३. (सो. काश्य.) भागवतमत में सत्यकेतु का एवं विष्णु तथा वायुमत में सुकुमार का पुत्र (गरुड. १.१३९)।

४. (सो. अज.) भागवत; विष्णु तथा वायुमत में धृष्टद्युम्न का पुत्र। यह भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में था। द्रोण ने इसका वध किया। इसकी मृत्यु से पांचाल वंश समाप्त हुआ (म. द्रो. १३०.१२)।

५. केकय देश का राजा। इसकी स्त्री श्रुतकीर्ति। इसे संतर्दन (विष्णु. ४.१४; भा. ९.२४.३८), चेकितान, बृहत्क्षत्र, विंद तथा अनुविंद (वायु. ९६.१५६) नामक पाँच पुत्र थे।

६. (सू.) एक राजा। वायु, मत्स्य तथा पद्ममत में यह धृष्ट का पुत्र, एवं वैवस्वत मनु का पौत्र था (पद्म. सृ. ८)।

७. नृग का पुत्र (लिंग. १.६६.४६)।

धृष्टद्युम्न—(सो. अज) पांचालराज द्रुपद का अग्नितुल्य तेजस्वी पुत्र। यह पृषत् अथवा जंतु राजा का नाती, एवं द्रुपद राजा का पुत्र था। द्रोणाचार्य का विनाश करने के लिये, प्रज्वलित अग्निकुंड से इसका प्रादुर्भाव हुआ था। फिर उसी वेदी में से द्रौपदी प्रकट हुई थी। अतः इन दोनों को 'अयोनिसंभव,' एवं इसे द्रौपदी का 'अग्रज बंधु' कहा जाता है (म. आ. ५७.९१)। अग्नि के अंश से इसका जन्म हुआ था (म. आ. ६१.८७)। इसे 'याज्ञसेनि', अथवा 'यज्ञसेनसुत' भी कहते थे।

द्रोण से बदला लेने के लिये, द्रुपद ने याज एवं उपयाज नामक मुनियों के द्वारा एक यज्ञ करवाया। उस यज्ञ के 'हविष्य' सिद्ध होते ही, याज ने द्रुपद की रानी सौत्रामणी को, उसका ग्रहण करने के लिये बुलाया। महारानी के आने में जरा देर हुई। फिर याज ने क्रोध से कहा, 'रानी! इस हविष्य को याज ने तयार किया है, एवं उपयाज ने उसका संस्कार किया है। इस कारण इससे संतान की उत्पत्ति अनिवार्य है। तुम इसे लेने आवो, या न आओ'। इतना कह कर, याज ने उस हविष्य की अग्नि में आहुति दी। फिर उस प्रज्वलित अग्नि से, यह एक तेजस्वी वीरपुरुष के रूप में प्रकट हुआ (म. आ. १५५. ३७-४०)। इसके अंगों की कांति अग्निज्वाला के समान तेजस्वी थी। इसके मस्तक पर किरीट, अंगों में उत्तम कवच, एवं हाथों में खड्ग, बाण एवं धनुष थे।

अग्नि से बाहर आते ही, यह गर्जना करता हुआ एक रथ पर जा चढ़ा, मानो कहीं युद्ध के लिये जा रहा हो (म. आ. १५५.४०)। उसी समय, आकाशवाणी हुई, 'यह कुमार पांचालों का दुःख दूर करेगा। द्रोणवध के लिये इसका अवतार हुआ है (म. आ. १५५.४४)'। यह आकाशवाणी सुन कर, उपस्थित पांचालों को बड़ी प्रसन्नता हुई। वे 'साधु, साधु' कह कर, इसे शाबाशी देने लगे।

द्रौपदी स्वयंवर के समय, 'मत्स्यवेध' के प्रण की घोषणा द्रुपद ने धृष्टद्युम्न के द्वारा ही करवायी थी (म. आ. १७६-१७९)। स्वयंवर के लिये, पांडव ब्राह्मणों के वेश में आये थे। अर्जुन द्वारा द्रौपदी जीति जाने पर, 'एक ब्राह्मण ने क्षत्रियकन्या को जीत लिया', यह बात सारे राजमंडल में फैल गयी। सारा क्षत्रिय राजमंडल क्रुद्ध हो

गया। बात युद्ध तक आ गयी। फिर इसने गुप्तरूप से पांडवों के व्यवहार का निरीक्षण किया (म. आ. १७९), एवं सारे राजाओं को विश्वास दिलाया 'ब्राह्मणरूपधारी व्यक्तियाँ पांडव राजपुत्र ही है' (म. आ. १८४)।

धृष्टद्युम्न अत्यंत पराक्रमी था। इसे द्रोणाचार्य ने धनुर्विद्या सिखाई। भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष में था। प्रथम यह पांडवों की सेना में एक अतिरथी था। इसकी युद्धचपलता देख कर, युधिष्ठिर ने इसे कृष्ण की सलाह से सेनापति बना दिया (म. उ. १४९.५४१)

युद्धप्रसंग में धृष्टद्युम्न ने बडे ही कौशल्य से अपना उत्तर-दायित्व सम्हाला था। द्रोण सेनापति था, तब भीम ने अश्वत्थामा नामक हाथी को मार कर, किंवदंती फैला दी कि, 'अश्वत्थामा मृत हो गया'। तब पुत्रवध की वार्ता सत्य मान कर, उद्विग्न मन से द्रोणाचार्य ने शस्त्रसंन्यास किया। तब अच्छा अवसर पा कर, धृष्टद्युम्न ने द्रोण का शिरच्छेद किया (म. द्रो. १६४; १६५.४७)।

धृष्टद्युम्न ने द्रोणाचार्य की असहाय स्थिति में उसका वध किया। यह देख कर सात्यकि ने धृष्टद्युम्न की बहुत भर्त्सना की। तब दोनों में युद्ध छिड़ने की स्थिति आ गयी। परंतु कृष्ण ने वह प्रसंग टाल दिया।

आगे चल कर, युद्ध की अठारहवे दिन, द्रोणपुत्र अश्वत्थामन् ने अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये, कौरवसेना का सैनापत्य स्वीकार किया। उसी रात को, त्वेष एवं क्रोध के कारण पागलसा हो कर, वह पांडवों के शिबिर में सर्वसंहार के हेतु घुस गया। सर्वप्रथम अपने पिता के खूनी धृष्टद्युम्न के निवास में वह गया। उस समय यह सो रहा था। अश्वत्थामन् ने इसे लत्ताप्रकार कर के जाग्रत किया। फिर धृष्टद्युम्न शस्त्रप्रहार से मृत्यु स्वीकारने के लिये तयार हुआ। किंतु अश्वत्थामन् ने कहा, 'मेरे पिता को निःशस्त्र अवस्था में तुमने मारा हैं। इसलिये शस्त्र से मरने के लायक तुम नहीं हो'।

पश्चात् अश्वत्थामन् ने इसे लाथ एवं मुक्के से कुचल कर, इसका वध किया (म. सौ. ८.२६)। बाद में उसने पांडवकुल का ही पूरा संहार किया। केवल पांडव ही उसमें से बच गये (म. सौ. ८.१७-२४)। यह घटना पौष वद्य अमावस को हुई (भारतसावित्री)।

धृष्टद्युम्न के कुल पाँच पुत्र थे। उनके नामः—क्षत्रंजय, क्षत्रवर्मन्, क्षत्रधर्मन्, क्षत्रदेव, एवं धृष्टकेतु। ये सारे धृष्टद्युम्नपुत्र द्रोण के हाथों मारे गये (म. द्रो. १०१. ६२; १३०.१२), एवं द्रुपद के पांचाल राजकुल का निर्वंश हो गया (म. द्रो. १५६; धृष्टकेतु देखिये)।

धृष्टबुद्धि—भद्रावती का वैश्य। वैशाख शुक्ल एकादशी का व्रत आचरने के कारण, यह मुक्त हुआ (पद्म. उ. ४९)।

धृष्टसुत—(सो. क्रोष्टु.) धृष्ट का नामांतर। वायुमत में यह कृति राजा का पुत्र था। धृष्ट राजा के लिये 'धृष्टसुत' यह पाठ गलत मालूम पडता है। संभवतः धृष्ट नामक सुत' की जगह धृष्ट का पुत्र ('धृष्टसुत') असावधानी से लिखा गया होगा (धृष्ट ४. देखिये)।

धृष्टि—दशरथ का प्रधान (वा. रा. अयो. ७)।

२. (सो. क्रोष्टु.) भागवत मत में कुंति राजा का पुत्र। इसका पुत्र विदूरथ था (धृष्ट ४. देखिये)।

धृणि—अंगिरस एवं पथ्या का पुत्र। इसका पुत्र सुधन्वा (ब्रह्मांड. ३. १)।

धृष्णु—एक कवि। यह वारुणि कवि के पुत्रों में से एक था। यह ब्रह्मज्ञानी एवं शुभलक्षणी था (म.अ. ८५.११३)।

२. यादव राजा धृष्ट का नामांतर (धृष्ट ४. देखिये)।

३. वैवस्वत मनु का द्वितीय पुत्र (म. आ. ६९. १८; ह. वं. १. १०. १; २९)। 'धार्ष्टक' नामक क्षत्रिय वंश इसीसे उत्पन्न हुआ।

धेना—बृहस्पति की पत्नी।

धेनुक—एक असुर। यह तालवन में निवास करता था, एवं गधे का रूप धारण कर रहता था। जो लोग वन में फल लेने आते थे, उन्हें यह मार डालता था। एक समय कई ग्वालबाल अपनी गायें चराते हुएँ तालवन के पास गये। फलों की सुगंध के कारण, सबके मन में उन फलों को खाने की इच्छा हुई। फिर बलराम ने वहाँ के फल चुराये। इतने में वन का रक्षक धेनुक, गधे का रूप धारण कर बलराम पर झपटा। किंतु बलराम नें इसे पटक कर, इसका वध किया (भा. १०. १२)।

धेनुमती—(स्वा. प्रिय.) देवद्युम्न राजा की स्त्री। इसका पुत्र परमेष्ठिन् (भा. ५. १५. ३)।

धौतमूलक—चीन देश का राजा। इसने अपनी मूर्खता के कारण, अपना एवं अपने कुल का नाश कर लिया (म. उ. ७२. १४)।

धौंधुमारि—धुंधुमार कुवलाश्व राजा के पुत्रों का पैतृक नाम।

धौम्य—देवल ऋषि का कनिष्ठ भ्राता, एवं पांडवों का पुरोहित। यह अपोद ऋषि का पुत्र था, एवं गंगानदी के तट पर, उत्कोचक तीर्थ में इसका आश्रम था (म. आ. १७४.६)। इसके पिता ने अन्नग्रहण वर्ज्य कर, केवल पानी पी कर ही सारा जीवन व्यतीत किया। उस कारण, उसे 'अपोद' नाम प्राप्त हुआ। अपोद ऋषि का पुत्र होने के कारण, धौम्य को 'आपोद' यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ३.१९)। इसे 'अग्निवेद्य' भी कहते थे (म. आश्व. ६३.९)।

चित्ररथ गंधर्व की मध्यस्थता के कारण, धौम्य ऋषि पांडवों का पुरोहित बन गया। लाक्षागृहदाह से बच कर, अर्जुन अपने भाईयों के साथ द्रौपदी स्वयंवर के लिये जा रहा था। उस वक्त, मार्ग में उसे चित्ररथ गंधर्व मिला। उसने अर्जुन से कहा, 'पुरोहित के सिवा राजा ने कहीं भी नहीं जाना चाहिये। देवल मुनि का छोटा भाई धौम्य उत्कोचक तीर्थ पर तपश्चर्या कर रहा है। उसे तुम अपना पुरोहित बना लो'। फिर अर्जुन ने धौम्य से प्रार्थना कर, उसे अपना पुरोहित बना लिया (म. आ. १७४. ६)।

पांडवों का पौरोहित्य स्वीकारने के बाद, धौम्य ऋषि पांडवों के परिवार में रहने लगा (म. स. २.७)। पांडवों के घर के सारे धर्मकृत्य भी, इसी के हाथों से होने लगे। पांडव एवं द्रौपदी का विवाह तय होने पर, उनका विवाहकार्य इसीने संपन्न किया। उस कार्य के लिये, इसने वेदी पर प्रज्वलित अग्नि की स्थापना कर के, उस में मंत्रों द्वारा आहुति दी, एवं युधिष्ठिर तथा द्रौपदी का गँठ-बंधन कर दिया। पश्चात् उन दोनों का पाणिग्रहण करा कर, उनसे अग्नि की परिक्रमा करवायी, एवं अन्य शास्त्रोक्त विधियों का अनुष्ठान करवाया। इसी प्रकार क्रमशः सभी पांडवों का विवाह इसने द्रौपदी के साथ कराया (म. आ. १९०.१०-१२)।

पांडवों के सारे पुत्रों के उपनयनादि संस्कार धौम्य ने ही कराये थे (म. आदि. २२०.८७)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में धौम्य 'होता' बना था (म. स. ३०.३५)। युधिष्ठिर को 'अर्धराज्याभिषेक' भी धौम्य ने ही किया था (म. स. ४९.१०)।

पांडवों के वनगमन के समय, महर्षि धौम्य हाथ में कुश ले कर, यमसाम एवं रुद्रसाम का गान करता हुआ, वनगमन के लिये उद्युक्त हुआ (म. स. ७१.७)। इसे उस अवस्था में देख कर, युधिष्ठिर को अत्यंत दुख हुआ। वह बोला, 'आप वन में न आयें। मैं भला वहाँ आप को क्या दे सकता हूँ?' फिर धौम्य ने युधिष्ठिर को सूर्योपासना के लिये प्रेरणा दी (म. व. ३.४-१२), एवं उसे सूर्य के 'अष्टोत्तरशत' नामों का वर्णन भी बताया (म. व. ३.१७-२९)। धौम्य ने युधिष्ठिर से कहा, 'हे राजन्, तुम घबराओ नहीं। तुम सूर्य का अनुष्ठान करो। सूर्य प्रसन्न हो कर, तुम्हारी चिन्ता दूर करेगा'।

धौम्य के कथनानुसार युधिष्ठिर ने सूर्य की स्तुति की। उससे प्रसन्न हो कर, सूर्यनारायण ने उसे 'अक्षयपात्र' प्रदान किया, एवं कहा, 'यह पात्र तुम द्रौपदी के पास दे दो। उससे वनवास में तुम्हे अन्न की कमी कभी भी महसूस नहीं होगी'। फिर धर्म ने वह पात्र द्रौपदी के पास दे दिया (म. व. ४; द्रौपदी देखिये)।

पांडवों के वनवासगमन के बाद, अर्जुन अस्त्रप्राप्ति के हेतु इन्द्रलोक चला गया। अर्जुन के जाने से युधिष्ठिर अत्यंत चिंताग्रस्त हो गया। फिर धौम्य ने उसे भिन्न-भिन्न तीर्थों, देशों, पर्वतों, एवं प्रदेशों के वर्णन बताये, एवं कहा, 'तुम तीर्थयात्रा करो'। उससे तुम्हारे अंतःकरण को शांति मिलेगी' (म. व. ८४-८८)।

वनवास में जयद्रथ राजा ने द्रौपदी का अपहरण करने का प्रयत्न किया। उस वक्त धौम्य ने जयद्रथ को फटकारा, एवं द्रौपदी की रक्षा करने का प्रयत्न किया (म. व. २५२. २५-२६)।

पांडवों के वनवास के बारह वर्ष के काल में, धौम्य ऋषि अखंड उनके साथ ही था। पांडवों के अग्निहोत्र-रक्षण की जिम्मावारी धौम्य ऋषि पर थी। वह इसने अच्छी तरह से निभायी (म. व. ५. १३९)। वनवास समाप्त हो कर अज्ञातवास प्रारंभ होने पर, युधिष्ठिर ने बडे ही दुख से धौम्य से कहा, 'अज्ञातवास के काल में हम आपके साथ न रह सकेंगे। इसलिये हमें विदा कीजिये'।

उस समय धौम्य ने युधिष्ठिर को अत्यंत मौल्यवान् उपदेश किया, एवं युधिष्ठिर की सांत्वना की। धौम्य ने कहा, 'भाग्यचक्र की उलटी तेढी गती से देव भी बच न सके, फिर पांडव तो मानव ही है'। अज्ञातवास काल में विराट के राजदरबार में किस तरह रहना चाहिये, इसका भी बहुमूल्य उपदेश धौम्य ने युधिष्ठिर को किया (म. वि. ४.६-४३)। फिर पांडवों के अग्निहोत्र का अग्नि को प्रज्वलित कर, धौम्य ने उनकी समृद्धि, वृद्धि, राज्यलाभ तथा भूलोक-विजय के लिये, वेदमंत्र पढ़ कर

हवन किया। जब पांडव अज्ञातवास के लिये, चले गये, तब उनका अग्निहोत्र का अग्नि साथ ले कर, धौम्य पांचाल देश चला गया (म. वि. ४. ५४-५७)।

भारतीय युद्ध में, भीष्मनिर्याण के समय, धौम्य ऋषि युधिष्ठिर के साथ उसे मिलने गया था। युद्ध समाप्त होने पर, श्रीकृष्ण ने पांडवों से बिदा ली। उस समय भी धौम्य उपस्थित था (भा. १. ९)। भारतीय युद्ध में मारे गये पांडवपक्ष के संबंधी जनों का दाहकर्म धौम्य ने ही किया था (म. स्त्री. २६. २७)।

युधिष्ठिर राजगद्दी पर बैठने के पश्चात्, उसने धौम्य की धार्मिक कार्यों के लिये नियुक्ति की (म. शां. ४१. १४)। धृतराष्ट्र, गांधारी एवं कुंती वन में जाने के बाद, एक बार युधिष्ठिर युयुत्सु के साथ उन्हें मिलने गया। उस वक्त हस्तिनापुर की व्यवस्था युधिष्ठिर ने धौम्य पर सौंपी थी (म. आश्र. ३०. १५)।

धौम्य ने धर्म का रहस्य युधिष्ठिर को बताया था (म. अनु. १९९)। धर्मरहस्य वर्णन करते समय, धौम्य कहता है, 'टूटे हुएँ बर्तन, टूटी खाटें, मुर्गियाँ, कुत्ते आदि को घर में रखना, एवं घर में वृक्ष लगाना अप्रशस्त है। फूटे बर्तनों में कलि वास करता है, टूटी खाट में दुर्दशा रहती है, तथा वृक्षों के आसपास जंतु रहते हैं। इसलिये उन सब से बचना चाहिये'। धौम्य ने 'धौम्यस्मृति' नामक एक ग्रंथ की रचना भी की थी (C. C.)।

२. एक ऋषि। व्याघ्रपाद ऋषि के दो पुत्रों में से यह एक था। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम उपमन्यु था (म. अनु. ४५. ९६. कुं.)। हस्तिनापुर के मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेट हुई थी (म. उ. ३८८*)।

सत्यवान का पिता द्युमत्सेन अपने प्रिय पुत्र तथा स्नुषा को ढूँढ़ते-ढूँढ़ते, इस ऋषि के आश्रम में आया था। फिर इसने उसे भविष्य बताया, 'तुम्हारा पुत्र शीघ्र ही स्नुषा के साथ जीवित वापस आयेगा' (म. व. २८२. १९)।

४. एक मध्यमाध्वर्यु।

धौम्र--एक ऋषि। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से यह मिलने गया था (म. शां. ४७.६६* पंक्ति. ९)।

ध्यानकाष्ठ—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि (धर्मगुप्त देखिये)।

ध्युषिताश्व—(सू. इ.) वायु मत में शंखण राजा का पुत्र। भागवत में इसे विधृति, एवं विष्णु में इसे व्युत्थिताश्व कहा गया है।

ध्रुक—(शुंग. भविष्य.) वायु मत में वसुमित्र राजा का पुत्र। इसे अंतक, आर्द्रक, भद्र, एवं भद्रक नामांतर भी प्राप्त थे।

ध्रुव—(स्वा. उत्तान.) उत्तानपाद राजा एवं सुनीति का पुत्र, एवं एक प्रातःस्मरणीय राजा (म. अनु. १५०)। अपने दृढनिश्चय एवं लगन की कारण, पाँच वर्ष की छोटी उम्र में, इसने ऋषियों को भी अप्राप्य 'श्रीविष्णुदर्शन' एवं नक्षत्रमंडल में ध्रुवपद प्राप्त किया। नक्षत्रमंडल में सप्तर्षिओं के पास स्थित 'ध्रुव तारा' यही है (भा. ४. १२.४२-४३)।

उत्तानपाद राजा की सुरुचि एवं सुनीति नामक दो रानियाँ थी। उनमें से सुरुचि उसकी प्रिय रानी थी, एवं सुनीति (सुनृता) से वह नफ़रत करता था। राजा के अप्रिय पत्नी का पुत्र होने के कारण, बालक ध्रुव को भी प्रतिदिन अपमान एवं मानहानि सहन करनी पडती थी।

एक बार उत्तानपाद राजा की गोद में, सुरुचि का पुत्र उत्तम खेल रहा था। यह देख, ध्रुव को भी पिता की गोद में खेलने की इच्छा हुई। अतः यह अपने पिता के गोद पर चढने लगा। किंतु राजा ने ध्रुव के तरफ देखा तक नही। ध्रुव की सौतेली माता सुरुचि ने ध्रुव का हाथ पकड कर कहा 'ईश्वर की आराधना कर के तुम मेरे उदर से पुनः जन्म लो। तभीं तुम राजा की गोद में खेल सकोगे'।

सौतेली माता का कठोर भाषण सुन कर, ध्रुव अत्यंत खिन्न हुआ। उस समय राजा भी चूपचाप बैठ गया। फिर ध्रुव रोते रोते अपनी माता के पास गया। सुनीति ने इसे गोद में उठा लिया। सौत का कठोर भाषण पुत्र के द्वारा सुन कर, उसे अत्यंत दुख हुआ। अपने कम-नसीब को दोष देते हुई, वह फूट फूट कर रोने लगी।

पश्चात् ईश्वराराधना का निश्चय कर, ध्रुव ने अपने पिता के नगर का त्याग किया। यह बात नारद को ज्ञात हुई। ध्रुव का ईप्सित जान लेने पर, उसने अपना वरदहस्त ध्रुव के सिर पर रखा। ध्रुव का स्वाभिमानी स्वभाव तथा क्षात्रतेज देख कर, नारद आश्चर्यचकित हो गया। उसने ध्रुव से कहा "तुम अभी छोटे हो। इतनी छोटी उम्र में तुम इतने स्वाभिमानी हो, यह बड़ी खुशी की बात है। किंतु मान-अपमान के झँझटों में पड़ कर, मन में असंतुष्टता का अग्नि सिलगाना ठीक नही है। क्यों कि, असंतोष का कारण मोह है, तथा मोह से दुःख ही दुःख पैदा होते है। भाग्य से जो भी मिले, उस पर संतोष मानना चाहिये। ईश्वर के आराधना का तुम्हारा निश्चय

बड़ा ही कठिन हैं। उसमें बड़ोबड़ों ने हार खाई है। अतः यह मार्ग त्याग कर, तुम घर लौट जाओ।

नारद का भाषण सुन कर ध्रुव ने कहा, 'मैं ने न्याय-निष्ठुर क्षत्रिय वंश में जन्म लिया है। मेरे स्वभाव में लाचारी नहीं है। सुरुचि के अपशब्दों से मेरा हृदय भग्न हो गया है। अतः आपके उपदेश का परिणाम मेरे उपर होना असंभव है। त्रिभुवन में श्रेष्ठ स्थान प्राप्त करने की आकांक्षा मेरे मनं में जाग उठी है। वह स्थान मुझे कैसे प्राप्त होंगा, यह आप मुझे बताइये। आप त्रैलोक्य में घूमते हैं। उस कारण मेरी समस्या का सुझाव, केवल आप ही कर सकते है।'

ध्रुव का यह भाषण सुन कर, नारद के अन्तःकरण में ध्रुव के प्रति अनुकंपा उत्पन्न हुआी। उसने कहा, 'अपने माता की आज्ञानुसार तुम श्रीहरि की कृपा संपादन करो। उसके लिये यमुना के किनारे मधुवन में जा कर, तुम इन्द्रिय-दमन करो'। इतना कह कर नारद ने ध्रुव से 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' नामक द्वादशाक्षरी गुप्तमंत्र प्रदान किया, एवं आशीर्वाद दे कर वह चला गया। स्कन्द तथा विष्णु पुराण में लिखा गया है कि, यह मंत्रोपदेश ध्रुव को सप्तर्षियों द्वारा प्राप्त हुआ। बाद में उत्तानपाद राजा को अपने कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ, एवं वह ध्रुव को वापस लाने के लिया घर से निकला। किंतु उसे नारद ने कहा, 'तुम्हारा पुत्र शीघ्र ही महत्कार्य कर के वापस आनेवाला है। इसलिये उसे वापस बुलवाने की कोशिश, इस समय तुम मत करो।'

नारद के कथनानुसार, ध्रुव ने मथुरा के पास यमुना के तट पर मधुवन में तपस्या प्रारंभ की, एवं 'ॐ नमो भगवते वासुदेवाय' यह द्वादशाक्षरी मंत्र का जाप प्रारंभ किया। तपस्या के समय ध्रुव की उम्र केवळ पाँच साल की थी।

फलाहार, उदकपान, एवं वायुभक्षण क्रमशः कर के, एक पैर पर खड़ा हो कर, ध्रुव श्रीविष्णु की आराधना करने लगा। तपस्या के पहले दिन ध्रुव ने 'अनशन' किया। दूसरे दिन से यह विधिपूर्वक आराधना करने लगा।

तपस्या के पहले महीने में, तीन दिन में एक बार यह कैथ एवं वेर के फल खा कर गुजारा करता था। दूसरे महीने में, हर छठे दिन सूखे पत्ते एवं कुछ तिनखे खाने का क्रम इसने शुरू किया। तीसरे महीने में केवल पानी पर रहना इसने प्रारंभ किया। वह पानी भी यह हर नवे दिन पीता था। चौथे महीने में, इसने पानी पीना भी छोड़ दिया, एवं केवल वायु पी कर, यह रहने लगा।

तपस्या के पाँचवे महीने में, प्राणवायु भी इसके वश में आ गया, एवं वायु पीना भी ध्रुव ने बंद किया। एक पाँव पर खड़ा हो कर, अहोरात्र यह श्रीविष्णु के ध्यान में मगन होने लगा।

छः महीनों तक ऐसी कड़ी तपस्या करने के पश्चात्, तपस्या की सिद्धि ध्रुव को प्राप्त हुई। इसकी अंगूठे के भार से पृथ्वी दबने लगी, एवं इन्द्रादिकों के श्वासों का अवरोध होने लगा। फिर सारे देव श्रीविष्णु की शरण में गये। विष्णु ने ध्रुव को तपश्चर्या से परावृत्त करने का आश्वासन देवतों को दिया। उस आश्वासन से सारे देव संतुष्ट हुएँ, एवं अपने अपने स्थान पर वापस लौटे।

पश्चात् गरुड पर आरूढ हो कर, श्रीविष्णु मधुवन में ध्रुव के पास आये, एवं उन्होंने सगुण स्वरूप में इसे दर्शन दिया। जिसके ध्यान में छः महीनों तक ध्रुव मग्न था, उसे साक्षात् देख कर वह अवाक् हो गया (भा. ४.८-९)। श्रीविष्णु का गुणवर्णन करने की बहुत सारी कोशिश ध्रुव ने की। किंतु वह करने में इसे असमर्थता प्रतीत हुई।

फिर श्रीविष्णु ने ध्रुव के कपोल को वेदस्वरूपी शंख से स्पर्श किया। पश्चात् उस शंख के कारण प्राप्त हुएँ वेदमय वाणी से, ध्रुव ने विष्णु का स्तवन किया। इससे प्रसन्न हो कर, विष्णु ने इसे इच्छित वर माँगने के लिये कहा। ध्रुव ने नक्षत्रमंडल में अचल स्थान प्राप्त करने का वर श्रीविष्णु से माँग लिया। विष्णु ने वह वर इसे दिया, एवं कहा, 'उत्तानपाद राजा तुम्हें राजगद्दी पर बैठा कर वन में जावेगा। तुम छत्तिस हजार वर्षों तक राज्य करने के बाद, नक्षत्रमंडल में अचल-स्थान प्राप्त करोगे। तुम्हारा सौतेला भाई उत्तम। मृगया के लिये वन में जावेगा, तब वहीं उसका नाश होगा। उत्तम की माता सुरुचि उसके मृत्यु के दुख के कारण, अरण्य में दावानल में प्रविष्ट होगी। तुम अनेक यज्ञ कर के सब को वंद्य तथा संसारमुक्त हो जाओगे'। बाद में ध्रुव ने श्रीविष्णु की पूजा की, तथा पश्चात् यह स्वनगर चला आया।

ध्रुव के आगमन की वार्ता उत्तानपाद को ज्ञात होते ही वह अत्यंत आनंदित हुआ। ध्रुव महत्कार्य कर के वापस आनेवाला है, यह नारद के भविष्यद्वाणी से उत्तानपाद पहले से जानता ही था। ध्रुव ने राजधानी में प्रवेश करते

ही, इसे शृंगारित हाथी पर बैठा कर, नगर में लाया गया। पिता ने इसके मस्तक का अवघ्राण किया। ध्रुव दोनों माताओं से मिला। सुरुचि ने इसे 'चिरंजीव हो' ऐसा आशीर्वाद दिया। माता, पिता तथा बंधुओं के साथ ध्रुव सुख से कालक्रमणा करने लगा। पश्चात् राजा ने इसे राज्याभिषेक किया, तथा स्वयं वन में चला गया।

एक बार ध्रुव का सौतेला भाई उत्तम, पर्वत पर मृगया के हेतु से गया। एक बलाढ्य यक्ष ने उसका वध किया। यह सुन कर ध्रुव ने अत्यंत क्रोधित हो कर, यक्षों के पारिपत्य के लिये विजयशाली रथ में बैठ कर, यक्षनगरी अलका पर आक्रमण किया। वहाँ घमासान युद्ध हुआ। यक्ष ने मायाजाल फैला कर, ध्रुव को निर्बल बना दिया। फिर ऋषियों ने ध्रुव को आशीर्वाद दिया, 'तुम्हारे शत्रु का निःपात होगा'। बादमें 'नारायणास्त्र' के योग से, ध्रुव ने यक्षो का मायापटल दूर कर के, यक्षों को पराजित किया।

इस प्रकार ध्रव गुह्यक नामक यक्षों का नाश कर रहा था। तब स्वायंभुव मनु को यक्षों पर दया आई। अपने नाती ध्रुव को उसने युद्ध से तथा गुह्य के हनन से परावृत्त किया। इतना ही नहीं, यक्षवध के कारण क्रोधित हुए कुवेर को प्रसन्न करने के लिये, मनु ने इसे कहा। फिर ध्रुव ने युद्ध बंद किया, एवं पितामह के कथनानुसार कुवेर का स्नेहभाव संपादित किया। कुवेर ध्रुव पर प्रसन्न हुआ एवं उसने इसे वर माँगने के लिये कहा। तब ध्रुव ने वर माँगा, 'मैं श्रीहरि का अखंड स्मरण करता रहूँ'।

छत्तिस हजार वर्षों तक राज्य करने के बाद, अपने वत्सर नामक पुत्र को गद्दी पर बैठा कर, ध्रुव वदरिकाश्रम में गया। इसे स्वर्ग में ले जाने के लिये एक विमान आया। उसमें बैठने के लिये यह जैसे ही तैयार हुआ, वैसे ही मृत्यु ने आ कर इससे कहा, 'स्वर्ग में जाने से पहले तुम्हें देहत्याग करना पडेगा'। परंतु यह मान्य न कर, मृत्यु के सिर पर पाँव रख कर, ध्रुव विमान में बैठ गया। स्वर्ग जाते समय, इसे अपने सुनीति माता का स्मरण हुआ, तथा उसे भी अपने साथ स्वर्ग ले जाने की इच्छा हुई। इतने में इसने देखा कि, सुनीति इसके पहले ही स्वर्ग जा पहूंची है।

अन्त में इसे सप्तर्षियों के समीप अचल ध्रुवपद प्राप्त हुआ। वह तारा 'ध्रुव' नाम से प्रसिद्ध है (भा. ४.८-१२; विष्णु. १.११-१२; मत्स्य. ४.३५-३८; लिंग. १. ६२; स्कन्द. ४.१.१९-२१; ह. वं. १.२.९-१३)।

अपने पूर्वजन्म में ध्रुव एक ब्राह्मणपुत्र था। इसने मातापिता की योग्य शुश्रूषा तथा धर्मपालन किया। पश्चात् एक राजपुत्र से इसकी मित्रता हुई। उसका वैभव देख कर इसे भी राजपुत्र बनने की इच्छा हुई। अपने पूर्वसंचित पुण्य के कारण, अगले जन्म में, यह उत्तानपाद राजा का पुत्र बना। (विष्णु. १.१२.८४-९०)।

ध्रुव ने पक्षवर्धिनी एकादशी का व्रत किया था (पद्म. उ. ३६)।

ध्रुवपरिवार—ध्रुव के कुल चार पत्नीयों का निर्देश प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त है। उनके नाम इसप्रकार हैः—

(१) भ्रमि—यह शिशुमार प्रजापति की कन्या थी। इससे ध्रुव को कल्प एवं वत्सर नामक दो पुत्र हुएँ। उनमें से वत्सर ध्रुव के पश्चात् राजगद्दी पर बैठा।

(२) इला—यह वायु ऋषि की कन्या थी। इससे ध्रुव को उत्कल (विरक्त) नामक एक पुत्र हुआ।

(३) शंभु—इससे ध्रुव को श्लिष्टि एवं भव्य नामक दो पुत्र हुएँ (विष्णु. १.१३.१; ह. वं. १.२-१४)।

(४) धन्या—यह मनु की कन्या थी। इससे ध्रुव को शिष्टि नामक एक पुत्र हुआ (मत्स्य. ४.३८)।

२. (सो. पुरूरवस्.) नहुष का पुत्र, एवं ययाति का भाई (म. आ. ७०.२८)। इसके नाम के लिये 'उद्धव' पाठभेद उपलब्ध है।

३. पांडवपक्षीय एक राजा। भारतीय युद्ध में पांडवों का ही विजय होगा, यह कर्ण को बताते समय, कृपाचार्य ने जिन पांडवपक्षीय राजाओं के नाम बताये, उनमें से यह एक था।

४. एक राजा। यमसभा में बैठ कर, यह सूर्यपुत्र यम की उपासना करता था (म. स. ८.१०)। इसके नाम के लिये 'भव' पाठभेद भी उपलब्ध है।

५. कौरवपक्ष का एक योद्धा। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३०.२३)।

६. सुख देवों में से एक।

७. विकुंठ देवों में से एक।

८. लेख देवों में से एक।

९. धर्म एवं वसु का पुत्र।

१०. धर्म को धूम्रा के गर्भ से उत्पन्न द्वितीय वसु (म. आ. ६०.१८)।

११. मधुवन के शाकुनि ऋषि के नौ पुत्रों में से ज्येष्ठ।

ध्रुव आंगिरस--सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१७३)। इसके सूक्तों में राष्ट्र तथा राजा के संबंध में प्रजातंत्रात्मक विचार दिखाई देते हैं।

ध्रुवक--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६०)।

ध्रुवक्षिति--लेख देवों में से एक।

ध्रुवरत्ना--स्कन्द की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.४)।

ध्रुवसंधि--(सू. इ.) कोशल देश के पुष्य राजा का पुत्र। इसे 'पौष्य' भी कहते थे। इसे लीलावती तथा मनोरमा नामक दो स्त्रियाँ थी। एक बार यह ससैन्य मृगया के हेतु वन में गया। वहाँ इसकी एक क्रूर सिंह से मुंठभेड़ हुई। उस में यह मारा गया। इसे लीलावती से शत्रुजित, तथा मनोरमा से सुदर्शन नामक पुत्र हुएँ थे (दे. भा. ३. १४)। भविष्य में इसके नाम का 'ध्रुवसेधि' पाठ प्राप्त है।

ध्रुवसंधि, सुसंधि एवं शंखण, ये इक्ष्वाकु वंश के राजा, दाशरथि राम के पूर्वकाल में हुएँ थे, ऐसा रामायण का कहना है। किंतु पुराणों में उन्हें दाशरथि राम के वंशज बताया गया है (पार्गि. ९३)।

ध्रुवसेधि--ध्रुवसंधि देखिये ।

ध्रुवाश्व--(सू. इ.) भानुमान राजा का नामांतर।

२. (सू. इ. भविष्य.) मत्स्यमत में सहदेव का पुत्र। इसका बृहदश्व नामांतर भी प्राप्त है।

ध्वज--प्रधान राजा का नाम (सांत्र ३. देखिये)।

ध्वजकेतु--द्रुपद का पुत्र (म. आ. २१८.१९)।

ध्वजवती--सूर्यदेव की आज्ञा से आकाश में ठहरने-वाली हरिमेधा ऋषि की कन्या (म. उ. १०८.१३)।

ध्वजसेन--द्रुपद का पुत्र (म. आ. परि. १०३. पंक्ति.१०९)।

ध्वजग्रीव--रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

ध्वजवती--हरिमेधा ऋषि की कन्या (म. उ. १०८. १३)।

ध्वनि--सुधामन् देवों में से एक।

ध्वन्य--एक राजा। यह लक्ष्मण का पुत्र था। प्रजापति पुत्र संवरण ऋषि ने, दान देने के कारण राजा की प्रशंसा की है (ऋ. ५.३३.१०)। त्रसदस्यु एवं मारुताश्व ऋषि ध्वन्य के आश्रय में थे।

ध्वसन द्वैतवन--मत्स्य देश का एक राजा। सरस्वती नदी के तट पर इसने अश्वमेध यज्ञ किया (श. ब्रा. १३. ५.४.९)।

ध्वसन्ति--ऋग्वेदकालीन एक राजा। इंद्र के शत्रु पुरुषंति के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है। यह दोनों कश्यप कुल के अवत्सार ऋषि के आश्रयदाता थे। अवत्सार ऋषि ने उल्लेख किया है कि, इन दोनों राजाओं से उसे धन मिला था (ऋ. ९.५८.३)। अश्विनों द्वारा इसे सहायता दी गयी थी (ऋ. १.११२.२३)। ध्वस्त्र तथा ध्वसंति एक ही होने की संभावना है। पुरुषंति के साथ भी ध्वस्र का उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ९.५८.३; साम. २. ४०९)।

ध्वस्रे यह स्त्रीलिंगी द्विवचन भी प्राप्त है (पं. ब्रा. १३.७.१२), किंतु वे किसी स्त्रियों के नाम होंगे या नहीं, यह कहना मुश्किल है (ध्वस्त्र देखिये)।

ध्वस्त्र--ऋग्वेदकालीन एक राजा। ध्वस्र एवं पुरुषन्ति राजाओं से विपुल संपत्ति प्राप्त करने का उल्लेख, अवत्सार काश्यप ने किया है (ऋ. ९.५८.३-४)। इसने तरंत तथा पुरुमिह्ल को दान दिया था (पं. ब्रा. १३.७.१२; जै. ब्रा. ३.१३९)। सायण ने शाट्यायन ब्राह्मण से उद्धरण ले कर इसका उल्लेख किया है (ऋ. ९. ५८. ३)। इसका उल्लेख द्विवचन की तरह भी कभी कभी किया जाता है। सायण के मत में वह आर्ष स्त्रीलिंगि है। ध्वस्र एवं ध्वसंति एक ही व्यक्ति रहे होगें।

न

नकवत्—(सो. क्रोष्टु.) वायुमत में हृदीक का पुत्र।

नकुल—(सो. कुरु.) हस्तिनापुर के पांडु राजा के पुत्रों में से एक, एवं पाँच पांडवों में से चौथा पांडव। अश्विनी कुमारों के द्वारा पांडुपत्नी माद्री के गर्भ से नकुल एवं सहदेव ये जुडवें पुत्र उत्पन्न हुएँ। उनमें से नकुल ज्येष्ठ था।

नकुल एवं सहदेव, ये दोनों अनूपम रूपशाली एवं परम मनोहर थे (म. आ. १.१४४)। नकुल स्वयं अश्वविद्यानिपुण भी था। कुरुकुल में नकुल जैसा रूपशाली और कोई नहीं था, इस कारण इसे 'नकुल' नाम प्राप्त हुआ था (म. वि. ५.१६७*)।

युधिष्ठिर, अर्जुन, एवं भीमसेन इन पांडवों के हर विचार एवं कृति में सहाय करनेवाले, मितभाषी एवं आज्ञापालक बंधुओं के रूप में, नकुल एवं सहदेव का चरित्रचित्रण 'महाभारत' में किया गया है। ये दोनों बंधु पराक्रमी हैं। किंतु उस पराक्रम को स्वतंत्र अस्तित्व न हो कर, वह अन्य पांडवों के पराक्रम में विलीन सा हुआ है। ये दोनों बंधु परम मातृभक्त हैं। किंतु उस मातृभक्ति का सारा झुकाव इनकी सापत्न माता कुंती की ओर है, एवं इनके बदले कुंती के ही चरित्र को, वह अधिक उठाव देता है। अपनी पत्नी द्रौपदी पर इन दोनों बंधुओं का काफी प्रेम है। किंतु द्रौपदी की इनके प्रति भावना मातृवत् वात्सल्य की थी। इस कारण, अन्य पांडवों की तुलना में ये दोनों बंधु फीके से प्रतीत होते हैं।

नकुल का जन्म शतशृंग नामक हिमालय के एक शिखर पर हुआ (म. आ. ११५)। शतशृंगनिवासी ऋषियों ने इसका नामकरणविधि किया (म. आ. ११५. १९)। कृष्णपिता वसुदेव ने काश्यप ऋषि द्वारा, अन्य पांडवों के साथ नकुल का भी उपनयन करवाया। शुकाचार्य द्वारा इसने अस्त्रविद्या एवं ढालतरवार चलाने की कला में निपुणता प्राप्त की (म. आ. १२३.३१)।

पांडु की मृत्यु के पश्चात्, नकुल की माता माद्री ने इसे एवं सहदेव को कुन्ती के हाथों सौंप दिया। वह स्वयं पति के साथ चिता पर आरूढ हो गयी (म. आ. १२४)। अन्य पांडवों की अपेक्षा, कुन्ती की नकुल सहदेव से विशेष प्रीति थी। पांडवों के वनवासगमन के समय, कुन्ती ने द्रौपदी से नकुल एवं सहदेव की विशेष देखभाल करने को कहा था।

पांडवों के उपनयन के बाद, शतशृंगनिवासी ऋषि उन्हें हस्तिनापूर ले आये, एवं उन्हें भीष्माचार्य के हाथों में सौंप दिया गया (म. आ. ११७.२९)। अन्य पांडवों के साथ, नकुल को भी द्रोणाचार्य ने नानाप्रकार के दिव्य एवं मानव अस्त्रों की शिक्षा प्रदान की (म. आ. १२२.२९)। विचित्र प्रकार से युद्ध करने में, नकुल विशेष प्रवीण हो गया। इस कारण, इसे 'अतिरथी' उपाधि प्राप्त हुई (म. आ. १३८.३०), एवं द्रुपद के साथ किये गये युद्ध में, इसे सहदेव के साथ पांडवपक्ष का 'चक्ररक्षक' बना दिया गया (म. आ. १३७.२७)। नकुल के शंख का नाम 'सुघोष' था (म. भी. २३.१६)।

अन्य पांडवों के साथ, धौम्य ऋषि ने नकुल का भी विवाह द्रौपदी से लगा दिया (म. आ. १९०.१०-१२)। द्रौपदी से नकुल को शतानीक नामक पुत्र हुआ (म. आ. २२०. ७९)। द्रौपदी के सिवा, शिशुपाल की कन्या एवं धृष्टकेतु की बहन रेणुमती अथवा करेणुमती नकुल को विवाह में दी गयी थी (म. आ. ९०.८६)। उससे इसे निरमित्र नामक पुत्र हुआ था (भा. ९.२२)।

युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ के समय, नकुल दिग्विजय करने, पश्चिम दिशा में गया था। अपने 'पश्चिम दिग्विजय' में, इसने वहाँ के राजाओं को जीत कर अगणित करभार लाया। इसने जीत कर लाये हुए खजाने का बोझ दस हजार ऊँट, बड़ी कठिनाई से ढो कर ला सके थे (म. स. २९.१७-१८)।

अपने पश्चिम दिग्विजय के लिये, खांडवप्रस्थ से बाहर निकलने पर, नकुल सर्वप्रथम कार्तिकेय को प्रिय रोहीतक पर्वत पर गया। वहाँ इसने मत्तमयूरकों से युद्ध किया। मत्तमयूरकों को जीत कर, इसने मरुभूमि, बहुधान्यक, शैरीषक तथा महेत्थ आदि देशों को जीत लिया। आक्रोश नामक राजर्षि का पराजय किया। बाद में दशार्ण, शिबि, त्रिगर्त, अंबष्ठ, मालव, कर्पट, मध्यमकेय, वाटधान तथा द्विज देशों को जीत कर यह वापस आया।

दिग्विजय के दूसरे भाग में, इसने पुष्करवन के लोग, उत्सवसंकेतगण, सिंधु तीर के ग्रामणीय, सरस्वती तीर के मत्स्याहारी शूद्र, एवं आमीर, पंचनद, अमर पर्वत,

उत्तर ज्योतिष, दिव्यकटपूर, द्वारपाल, रामठ, हारहूण, सुराष्ट्र, मद्र आदि देशों के राजाओं को अपनी सत्ता मान्य करने के लिये, इसने विवश किया एवं उनसे करभार लिया।

अपने इस 'दिग्विजय' में, इसने पांडवों के पितृतुल्य मित्र भगवान् श्रीकृष्ण एवं अपने मातुल मद्रराज शल्य को भी नहीं छोड़ा।

बाद में समुद्र के किनारे रहनेवाले पह्लव, वर्षक, किरात, यवन तथा शक लोगों से इसने करभार लिया, एवं हजारों ऊँटों पर वह लाद कर यह इन्द्रप्रस्थ वापस आया (म. स. २९; भा. १०.७२)।

युधिष्ठिर एवं दुर्योधन में हुए द्यूतसमारोह में, युधिष्ठिर ने इसे जूए के दाँव पर रखा, एवं वह इसे हार बैठा (म. स. ५८.११)। फिर अन्य पांडवों के साथ, अपने शरीर पर धूल लपेट कर, यह भी वनवास के लिये चला गया। वनवास में इसने क्षेमंकर, महामुख एवं सुरथ नामक राक्षसों का वध किया (म. व. २७१.१६–२२)। किंतु द्वैतवन के 'यक्षप्रश्न' के प्रसंग में, यह अर्जुन, भीम आदि के साथ बूरी तरह से हारा गया एवं सरोवर पर गिर पड़ा। पश्चात् युधिष्ठिर ने अपने सारे बंधुओं की मुक्तता की (म. व. ३१२.१३)।

अज्ञातवासकाल में यह विराट दरबार में, ग्रंथिक अथवा दामग्रंथिक नाम धारण कर के रहा था। इसका गुप्त नाम जयत्सेन था। यह पहले से ही अश्वविद्या में कुशल था। उस विद्या का उपयोग इसे विराट के दरबार में हुआ। अश्वों के रोग सुधारना, उनकी बुरी आदतें निकालना, एवं उन्हें शिक्षा देना आदि कामों में यह प्रवीण था। इस कारण, विराट ने अपनी अश्वशाला नकुल के हाथों सौंप दी थी (म. वि. १२.८)।

'कृष्णदौत्य' के समय, नकुल ने श्रीकृष्ण से समयोचित वर्तन कर युद्ध टालने की प्रार्थना की थी। नकुल ने कहा, 'कौरवों से संधि कर, युद्ध रुका देने की संभावना अभी तक बाकी है। इसलिये कौरवों से सुलह का प्रयत्न आखिर तक करना जरूरी है।' (म. उ. ७८)।

भारतीय युद्ध में, नकुल ने कौरव पक्ष के निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध कर, पराक्रम दिखाया था :-(१) दुःशासन (म. भी. ४३.२०–२२); (२) गांधारराज शकुनि (म. भी. १०१.३०–३१); (३) धृतराष्ट्रपुत्र विकर्ण (म. भी. १०६.११); (४) वाल्हीकराज शल्य (म. द्रो. १४.३०–३२); (५) दुर्योधन (म. द्रो. १६३.५१–५२)। इनमें से दुर्योधन के साथ हुए युद्ध में, इसने दुर्योधन पर सैंकडों बाण छोड़ कर, उसे बहुत ही जर्जर किया था। कर्ण के चित्रसेन, सत्यसेन, एवं सुषेण आदि तीन पुत्रों का नकुल ने वध किया (म. श. ९.१७–४९)।

कर्ण के साथ हुए युद्ध में, नकुल बुरी तरह से हारा गया था। उस युद्ध में, कर्ण नकुल को मारनेवाला ही था। किंतु अपनी माता कुंती को दिये वचन के अनुसार, कर्ण ने इसे जीवितदान दिया, एवं रण से पलायन करते हुए नकुल को जीवित छोड़ दिया (म. क. १७.९५)।

युधिष्ठिर हस्तिनापुर का राजा होने के पश्चात्, उसने नकुल को सेनाध्यक्ष पद पर नियुक्त किया (म. शां. ४१.११)। इसे धृतराष्ट्रपुत्र दुर्मर्षण का सुंदर महल रहने के लिये दिया (म. शां. ४४.१०–११)। युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय, नकुल एवं भीम पर हस्तिनापुर की रक्षा का काम सौंपा गया था (म. आश्व. ७१.२५)। उस यज्ञ के पहले, नकुल 'दक्षिणदिग्विजय' के लिये गया था। उस दिग्विजय में, इसने साभ्रमती नदी के किनारे देवी 'पांडुरार्या' नामक, तीर्थ की स्थापना की (पद्म. उ. १६१)।

महाप्रस्थान के समय; पांडव पृथ्वीप्रदक्षिणा करने निकले। हिमालय पर्वत पार कर, उत्तर की ओर जाते समय, उन्हे वालुकामय सागर दिखा। उस सागर में से, वे द्रुतगती से जा रहे थे। राह में सर्वप्रथम द्रौपदी की, एवं तत्पश्चात् नकुल की मृत्यु हुई।

नकुल के इस अकाली मृत्यु का कारण भीम ने युधिष्ठिर से पूछा। युधिष्ठिर ने कहा, 'अपने देहसौंदर्य का नकुल को बड़ा ही गरूर था। उस कारण, इसकी मार्ग में ही मृत्यु हो गयी है (म. महा. २.१२.१६)। मृत्यु के समय, इसकी आयु १०५ वर्षों की थी (युधिष्ठिर देखिये)।

स्वर्ग जाने पर, युधिष्ठिर ने नकुल को देखने की इच्छा प्रगट की (म. स्व. २.१०)। फिर नकुल एवं सहदेव तेजस्वी रूप में अश्विनीकुमारों के स्थान पर विराजमान होते हुएँ युधिष्ठिर को दिख पड़े (म. स्व. ४.९)।

नकुल के नाम पर 'वैद्यकसर्वस्व' नामक एक ग्रंथ उपलब्ध है (ब्रह्मवै. २.१६)।

२. युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ को तुच्छ बतानेवाला एक नेवला (म. आश्व. ९२)।

नकुलीश—पाशुपत दर्शनकार। इसका कारावन से संबंध आया था (लकुलिन् देखिये)।

नक्त—(स्वा. प्रिय.) पृथुषेण राजा का पुत्र। इसकी माता का नाम आकुति। द्रुति नामक पत्नी से इसे गय नामक पुत्र हुआ था (भा. ५. १५. ६)।

नखवत्—(भविष्य.) वायु के मतानुसार मथुरा में राज्य करनेवाला एक राजा।

२. (भविष्य.) ब्रह्मांड के मतानुसार वैदेश का एक नागवंशीय राजा।

नग—शत्रुघ्न का सेनापति।

नगरिन् जानश्रुतेय—उदित होमवादी एक आचार्य (ऐ. ब्रा. ५. ३०)। इसका पूरा नाम नगरिन् जानश्रुतेय काण्ड्विय था (जै. उ. ब्रा. ३. ४०. २)। सायण ने नगरिन् का अर्थ 'नगर में रहनेवाला' यों किया है। इसका ऐकदिशाक्ष मानुतंतव्य के साथ निर्देश कई जगह प्राप्त है।

नगृहू—नग्रह देखिये।

नग्नक—एक निषाद ज्ञातिसमुदाय। अमृत लाने गये गरूड़ ने, क्षुधाशमनार्थ पृथ्वी पर के कई निषाद खा लिये। पश्चात् गलें में जलन होने के कारण, खाये हुएँ सारे निषाद उसने बाहर उगले (गरूड़ देखिये)।

गरूड़ ने उगले हुएँ वे निषाद म्लेंछ बन गये। उनमें से आग्नेय दिशा की ओर जो निषाद गिरे, उन्हे 'नग्नक' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. सृ. ४७)।

नग्नजित्—गांधार देश का एक क्षत्रिय राजा, एवं कृष्ण की पत्नी सत्या का पिता। यह 'इषुपाद' नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२१; पापजित् पाठ)। कर्ण के दिग्विजय में, उसने इसका पराभव किया था (म. व. परि. १.२४.७०)।

भगवान् श्रीकृष्ण ने नग्नजित् के समस्त पुत्रों को पराजित किया था (म. उ. ४७. ६९)। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में था।

भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिंये 'पापजित्' पाठभेद उपलब्ध है।

२. एक वास्तुशास्त्रज्ञ। इसने वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा था (मत्स्य. २५२)।

३. प्रल्हाद का शिष्य, एक दैत्य। पृथ्वी पर, राजा 'सुबल' नाम से इसने अवतार लिया था।

नग्नजित् गांधार—गांधार देश का एक यज्ञवेत्ता राजा। पर्वत एवं नारद ने इसकी राजगद्दी पर प्रतिष्ठापना की थी (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। 'शतपथ ब्राह्मण' में अपने स्वर्जित नामक पुत्र के साथ इसका उल्लेख प्राप्त है (श. ब्रा. ८. १. ४. १०)। उस ग्रंथ में, संस्कार विषयक इस राजा के किसी वक्तव्य का व्यंग्योक्तिपूर्ण दृष्टि से निर्देश किया गया है।

'नग्नजित् गांधार,' यह एक ही व्यक्ति मान कर 'शतपथ ब्राह्मण' एवं 'ऐतरेय ब्राह्मण' में इसका निर्देश किया गया है। फिर भी सायणाचार्य 'नग्नजित्' एवं 'गांधार' को दो अलग व्यक्तियाँ मानते है। 'शतपथ ब्राह्मण' के जिस परिच्छेद में इसका निर्देश आया है, वहाँ अनेक राजाओं के ही नाम इकट्ठे दिये गये हैं। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति अलग मान कर अर्थ किया जाये, तो वह यथार्थ नहीं होगा।

नग्नहू—नग्रहू देखिये।

नग्नहू—एक ऋषिक (वायु. ५९.९२-९४)। इसके 'नग्नहू' एवं 'नगृहू' नामांतर भी प्राप्त हैं (मत्स्य. १४५.९५-९९; ब्रह्मांड. १.३२.१०१-१०३)।

नचक्षु—(सो.) भविष्यमत में मघपाल का शिष्य।

नचिकेतस्—ऋग्वेदकालीन सुविख्यात ऋषिकुमार। यह वाजश्रवस् का पुत्र एवं एक 'गोतम' था (तै. ब्रा. ३.११.८)। कठोपनिषद में इसे वाजश्रवस् के साथ उद्दालक का पुत्र भी कहा गया है (क. उ. १.१; १. ११)। उद्दालक के पुत्र होने के कारण, एवं 'आरुणि उद्दालकि' दोनों एक ही थे, ऐसा निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. ७१)। किंतु यह मत सर्वथा असंभव, एवं प्रसिद्ध आरुणि से नचिकेतस् का संबंध लगाने के उद्देश्य से प्रसृत किया गया प्रतीत होता है।

ऋग्वेद के सुविख्यात 'यमसूक्त' में, 'कुमार' नाम से संबोधित किया गया ऋषिकुमार नचिकेतस् ही है ऐसा सायणाचार्य का कहना है (ऋ. १०.१३५)। वाजश्रवस् का पुत्र नचिकेतस् अपने पिता की आज्ञा के अनुसार यम के पास गया, एवं यम को प्रसन्न कर वापस आया। यह कथा नचिकेतस् के नाम का स्पष्ट-निर्देश न करते हुए, उस सूक्त में दी गयी है।

नचिकेतस् का यह आख्यान विस्तृत रूप से तैत्तिरीय ब्राह्मण में दिया गया है। नचिकेतस् का पिता उद्दालक 'विश्वजित्' नामक यज्ञ कर रहा था। नचिकेतस् उम्र से छोटा हो कर भी, बड़ा ही परिणतप्रज्ञ एवं श्रद्धावंत था।

अपने पिता का यज्ञ यथासांग संपन्न होने में, यह हर तरह की सहायता करता था।

'विश्वजित्' यज्ञ में, याजक को सर्वस्व का दान करना पड़ता है। नचिकेत ने सोचा, 'यदि सर्वस्व दान करना है, तो मेरे पिता को मेरा दान भी कर देना चाहिये उसके सर्वस्व में मेरा प्रमुख रूप से अंतर्भाव होता है'। अपनी इस शंका का समाधान पूछने के लिये यह पिता के पास गया। इसका पिता अनेक प्रकार के दान दे रहा था। किंतु अच्छी गायों के बदले दूध न देनेवाली दुबली गायें वह दान में दे रहा था। इस पापकर्म के कारण, यज्ञ यथासांग न हो कर पिता को दोष लगेगा एवं उसका प्रायश्चित्त पिता के साथ मुझे भी भुगतना पडेगा, इस चिंता से नचिकेतस् शोकाकुल हो गया। अपने पिता को ऐसे गिरे हुए दान से परावृत्त करने की दृष्टि से नचिकेतस् ने पूछा, 'कस्मै मां दास्यसि? मुझे किसको दोगे?' इसे बालक समझ कर पिता ने इसका प्रश्न का कोई भी जबाब नहीं दिया। फिर भी नचिकेतस् ने उसका पीछा नहीं छोडा। तब उद्दालक ने डाँट कर इसे कहा, मैं तुम्हें मृत्यु को दे देना चाहता हूँ'।

उसी समय आकाशवाणी हुई, "हे गौतमकुमार नचिकेतस्, तुम्हारे पिता का उद्देश्य है कि, तुम यमगृह जाओ। यम घर में न हो एवं प्रवास के लिये गया हो, उसी दिन तुम यमगृह में जाना। यम घर में न होने के कारण, उसकी पत्नी एवं पुत्र तुम्हें भोजन के लिये प्रार्थना करेंगे। किंतु उस भोजन का तुम स्वीकार नहीं करना। वापस आने पर यम तुम्हारी पूछताछ करेगा। फिर उसे कहना, 'तीन रात्रि हो गई हैं'। फिर यम तुम्हें पूछेगा, 'पहले दिन क्या खाया?' फिर तुम उसे जवाब देना, 'तुम्हारी प्रजा खाई'। इससे यम को पता चलेगा कि, अतिथि यदि एक दिन अपने घर में भूखा रहा, तो प्रजा का क्षय होता है। दूसरे तथा तीसरे दिन के बारे में भी ऐसा ही प्रश्न पूछे जाने पर जवाब देना, 'दूसरे दिन तुम्हारे पशु, एवं तीसरे दिन तुम्हारा सुकृत खाया'। इससे यम को पत्ता चलेगा कि, अतिथि दूसरे तथा तीसरे दिन भूखा रहने पर घरसंसार के एवं पशु सुकृत की भी हानि होती हैं।"

आकाशवाणी के कथनानुसार नचिकेतस् यमगृह गया। यम के घर पहुँचने पर इसने यम के प्रश्नों को 'आकाशवाणी' ने कहे मुताबिक जबाब दिये। फिर यम ने सोचा, 'यह कोई बड़ा अधिकारी' बालक मालूम होता है। इसे मारना ठीक नहीं है। फिर यम ने आदर से नचिकेतस् सेकहा, 'भगवन्, मैं प्रसन्न हो गया हूँ। आप जो चाहे वह वर माँग लो।'

नचिकेतस् ने यम से निम्नलिखित तीन वर माँग लिये, १. जीवित वापस जा कर मैं अपने पिता से मिलूँ; २. मेरे द्वारा श्रौतस्मार्त कर्म अक्षय रहे; ३. मैं मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सकूँ' इस तरह, 'ब्रह्मविद्या' एवं 'योगविधि' प्राप्त कर के नचिकेतस् घर वापस आया (तै. ब्रा. ३. ११. ८; क. उ. ६. १८)।

'कठोपनिषद' में दिये गये 'नचिकेतस् आख्यान' में नचिकेतस् की यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। नचिकेतस् के पिता ने क्रोधवश, इसे यम के यहाँ जाने के लिये कहा। अपने पिता की आज्ञा प्रमाण मान कर, नचिकेतस् यम के पास गया, एवं अपने प्रगाढ़ एवं वक्तृत्वपूर्ण भाषण के कारण, इसने यमधर्म को प्रसन्न किया। यम ने इसे तीन वर दिये। उनमें से द्वितीय वर के कारण, अग्नि का ज्ञान एवं उसके चयन की सिद्धि नचिकेतस् को प्राप्त हो गयी। यम ने इसे वर दिया था, 'तुम्हारे द्वारा चयन किया गया अग्नि, तुम्हारे ही नाम से प्रसिद्ध होगा' (एतमग्निं तवैव प्रवक्ष्यन्ति जनासः') (क. उ. १. १९)। इस वर के अनुसार, अग्नि के चयन की इसकी पद्धति 'नचिकेतचयन' नाम से प्रसिद्ध हो गयी।

'तैत्तिरीय ब्राह्मण' के 'नचिकेताख्यान' में दिया गया, आकाशवाणीद्वारा इसे हुए मार्गदर्शन का कथाभाग 'कठोपनिषद' में नही दिया गया है।

'नाचिकेत आख्यान' का यही कथाभाग 'वराह-पुराण' एवं 'महाभारत' में कुछ फर्क के साथ दिया गया है (वराह. १७०-१७६; म. अनु. ७१)। एक बार नाचिकेत का पिता उद्दालकि नदी पर स्नान करने के लिये गया। स्नान तथा वेदाध्ययन में मग्न होने के कारण, नदी तट से समिधा, दर्भ, कलश, भोजन-सामग्री आदि लाने का स्मरण उसे नहीं रहा। तब उसने अपने पुत्र नाचिकेत से वह सामग्री लाने के लिये कहा। पिता की आज्ञानुसार यह नदी के किनारे गया। किंतु इसके जाने के पहले ही, पिता द्वारा माँगी गयी सारी वस्तुएँ पानी में बह गईं थीं। उस कारण, यह पिता की कोई भी चीज वापस न ला सका। यह सारी दुर्घटना इसने पिता को बतायी। फिर श्रम तथा क्षुधा से व्याकुल उद्दालकि के मुख से, 'मरो' शब्द निकला। शाप के कारण,

नाचिकेत तत्काल मृत हो गया। पुत्रमृत्यु के कारण, उद्दालकि अत्यंत शोकाकुल हुआ, एवं उसी शोकमग्न स्थिति में वह दिन तथा रात्रि इसने बिताई। दूसरे दिन नाचिकेत यमगृह से वापस आया एवं उसने यम के द्वारा बताया गया 'गोदानमाहात्म्य' अपने पिता को बताया। 'गोदानमाहात्म्य' बताने के लिये, नाचिकेत की यह पुरानी कथा 'महाभारत' में भीष्म ने युधिष्ठिर को बतायी है। नचिकेतस् अंगिरस कुल में पैदा हुआ था ऐसा कई अभ्यासकों का मत है। इसे नाचिकेत एवं नचिकेत नामांतर भी प्राप्त थे।

नड़ नैषध—एक राजा। इसके विजयों के कारण, अपने शत्रुपक्षीयों को यह मृत्यु के देवता 'यम' के समान प्रतीत होता था (श. ब्रा. २.२.४.१-२)। 'शतपथ ब्राह्मण' में दक्षिण के यज्ञाग्नि से इसकी तुलना की गयी है। इस रूपकात्मक वर्णन का यथार्थ अर्थ क्या है, यह नहीं समझ पाता। संभवतः यह दक्षिण देश का कोई राजा होगा। उसी कारण, दक्षिण दिशा का स्वामी 'यम' से इसकी तुलना की गयी सी दिखती है।

नड़ एवं दमयंती का पति नल एक ही होंगे। 'डलयोर भेदः' इस नियमानुसार, 'नड़' का बाद में प्रचार में आया रूप नल होगा। नल राजा निषध देश का सम्राट था, एवं इसी लिये 'नैषध' नाम से प्रसिद्ध था, यह बात यहाँ ध्यान में रखना जरूरी है। इसके नाम का 'नड़ नैषिध' पाठभेद भी कई जगह प्राप्त है।

नड़ायन—भृगुकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम का नवप्रभ पाठभेद भी प्राप्त है।

नड्वला—वीरण प्रजापति की कन्या, तथा चक्षुर्मनु की पत्नी (भा. ४.१३.१६)।

नदाकि—जिह्वक का नामांतर।

नदिवर्मन्--(ऐति.) परिहरवंशीय शांतिवर्मा का पुत्र (भवि. प्रति. ४.४)।

नदीज—एक प्राचीन राजा। पांडवों की ओर से इसे 'रणनिमंत्रण' भेजा गया था (म. उ. ४.२०)।

नंद--गोकुल एवं नंदगाँव में रहनेवाला गोपों का राजा एवं कृष्ण का पालक पिता (म. स. परि. १.२१. ७४५-७४७)। इसकी पत्नी यशोदा। यह द्रोणनामक वसु के अंश से उत्पन्न हुआ था (भा. १०.८.४८; पद्म. सृ. १३; ब्र. १३)। वसुदेव ने अपने नवजात बालक श्रीहरि को इसके घर में छिपा दिया था (भा. १०.३. ५१)। एक बार यह गुप्त रूप से वसुदेव से मिला भी था (भा. १०.४६.२७-३०)।

श्रीकृष्ण बहुत वर्षों तक नंद गोप के घर रहा था। एक बार यह पानी में डूब रहा था। किंतु कृष्ण ने इसे बाहर निकाला (भा. १०.२८.२-९)। यह स्यमन्त-पंचक क्षेत्र में कृष्ण से मिलने गया था (भा. १०.८२. ३१)। यह हरसाल 'इंद्रयाग' नामक इंद्र का उत्सव करता था। किंतु वह उत्सव बंद कर, कृष्ण ने इससे कार्तिक शुद्ध प्रतिपदा के दिन 'अन्नकूट' का उत्सव प्रारंभ किया (भवि. प्रति. ४.१९.६१)। यह जब कृष्ण विरह से व्याकुल हुआ। तब उद्धव ने इसका सांत्वन किया (भा. १०.४६.२७-३०)।

नंदगोप के कुल में यशोदा के गर्भ से एक कन्या उत्पन्न हुई थी। यह साक्षात् जगज्जननी दुर्गा का स्वरूप मानी जाती हैं। युधिष्ठिर ने विराटनगर जाते समय, उस देवी का चिंतन किया, एवं देवी ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर उसे वर दिया (म. वि. परि. १.४)। अर्जुन ने भी नंदगोप के कुल में उत्पन्न इस, देवी का स्तवन किया, एवं उसे विजयसूचक आशीर्वाद प्राप्त हुआ (म. भी. २३)।

यह मधुपुरी उर्फ मथुरा के आसपास के महावन में रहनेवाले आभीर भानु नामक गोपों का मुखिया था। आभीर भानु-चन्द्रसुरभि-सुश्रवस्-कालमेदु-चित्रसेन-नंद इस क्रम से इसकी वंशावलि महाभारत में दी गयी है। इसके पिता चित्रसेन को कुल नौ पुत्र थेः—१. सुनंद, २. उपनंद, ३. महानंद, ४. नंदन. ५. कुलनंद, ६. बंधुनंद, ७. केलिनंद, ८. प्राणनंद, ९. नंद (आदि. ११)।

२. एक विष्णुभक्त राजा। इसकी भक्ति से संतुष्ट हो कर विष्णु ने इसे एक सुंदर विमान दिया था। एक बार इसे मानससरोवर के सुवर्णकमलों का अपहार करने की दुर्बुद्धि हुई। तत्काल इसका विमान नष्ट हो कर इसके सारे शरीर पर कोढ़ हुआ। पश्चात् वसिष्ठ की सलाह के अनुसार, इसने प्रभासक्षेत्र में तप किया। उस तप के पुण्यसंचय के कारण यह मुक्त हो गया (स्कन्द. ७.१.२५६)।

३. वसुदेव को मदिरा से उत्पन्न पुत्र (भा. ९. २४. ८)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र। भीम ने इसका वध किया (म. क. ३५.१७)।

५. (नंद. भविष्य.) मगध देश का राजा। महानंदिन् के समय, शिशुनाग वंश का अंत हो कर शूद्रापुत्र नंद

गद्दी पर बैठा। इसने महानंदी का वध कर राज्य छीना था। इसके वंश में सुमाल्यादि आठ पुरुषों ने सौ वर्षोंतक राज्य किया। कौटिल्य ने नंद के आठ राजपुत्रों का वध कर, चन्द्रगुप्त को गद्दी पर बैठाया। (भा. १२.१)

कई पुराणों में, 'सुमाल्या' दि के बदले 'सुकल्पा' दि पाठ प्राप्त है (विष्णु. ४.२२-२४; वायु. २.३७; ब्रह्मांड. ३.७४)। नंद के जीवितकाल में ही कौटिल्य का विरोध प्रारंभ हो कर, नंद तथा उसके आठ पुत्र कौटिल्य के षड्यंत्र के कारण मारे गये, तथा नवनंदों का नाश हो कर चन्द्रगुप्त गद्दी पर बैठा (मत्स्य. २७२)।

कलि के तीन हजार तीन सौ दस वर्ष समाप्त होने पर, नंदराज्य का प्रारंभ हुआ था (स्कन्द. १.२.४०)।

६. एक पिशाच। इसके पिशाच योनि में जाने पर मुनिशर्मा नामक ब्राह्मण ने इसका उद्धार किया (पद्म. पा. ९४)।

७. विष्णु का एक पार्षद (भा. ४.१२.२२)।

८. एक कश्यपवंशी नाग (म. उ. १०१.१२)।

९. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६३)।

१०. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६४)।

नंदक—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र (म. भी. ६०.६)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था। भीम ने इसका वध किया।

२. वसुदेव को वृकदेवी से उत्पन्न पुत्र।

३. एक दुर्योधनपक्षीय योद्धा (म. भी. ६०.२१)।

४. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.११)।

नंदन--(सो. क्रोष्टु.) वायु के मतानुसार मनुवश राजा का पुत्र।

२. हिरण्यकशिपु का पुत्र। यह श्वेतद्वीप में राज्य करता था। शंकर के वर के कारण, यह सबको अजित हो गया था। दस हजार वर्ष राज्य करने के बाद, कैलास में जा कर यह शिवगणों में से एक बन गया (शिव. उ. २)।

३. मणिभद्र तथा पुण्यजनी का पुत्र।

४. अश्विनीकुमारों द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदो में से एक। दूसरे पार्षद का नाम वर्धन था (म. श. ४४.३३-३४)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६०)।

नंदनोदरदुंदुभि—(सो. कुकुर.) नल राजा का नामांतर (नल ४. देखिये)।

नंदपाल--न्यूहवंशीय चन्द्रदेव राजा का पुत्र। इसका पुत्र कुंभपाल था (भवि. प्रति. ४.३)।

नंदभद्र—एक धार्मिक वैश्य। काफी वर्षों तक इसे संतति नहीं हुई। इसकी कपिलेश्वर पर अत्यंत भक्ति थी। वृद्धापकाल में इसे एक पुत्र हुआ, परंतु विवाह होते ही कुछ दिनो में वह भी मृत हो गया।

इससे वैराग्य की इच्छा उत्पन्न हो कर, यह अध्यात्मज्ञान संपादन करने का प्रयत्न करने लगा। कुछ दिनों के बाद, एक सात वर्ष का बालक इसे मिला। तथा उसने इसकी अध्यात्मज्ञान की लालसा तृप्त की। बाद में सूर्य तथा रुद्र की उपासना कर के यह स्वर्ग पहुँच गया (स्कन्द. १.२.४६)।

नंदवर्धन--मागधवंशीय उदापाश्व राजा का पुत्र। इसका पुत्र नंदसुत (भवि. प्रति. २.६)।

२. (प्रद्योत. भविष्य.) भागवत मतानुसार जनक का पुत्र। इसके नाम के लिये नंदिवर्धन तथा वर्तिवर्धन पाठभेद प्राप्त हैं।

नंदसुत—नंदवर्धन १. देखिये।

नंदा—धर्मप्रजापति के तीसरे पुत्र हर्ष की पत्नी (म. आ. ६०.३२)। भांडारकर संहिता में, इसके नाम के लिये 'नंदी' पाठभेद उपलब्ध है।

२. पाताल के कपोत नाग की कन्या (मार्क. ६८.१९)।

नंदायनीय—वायुमत में व्यास की ऋक्शिष्य-परंपरा के बाष्कलि भारद्वाज का पुत्र तथा शिष्य।

नंदि--धर्म का पौत्र तथा स्वर्ग का पुत्र (भा. ६.६.६)।

२. उत्कल देश का राजा। इसने सुरथ के कोला नामक नगरी को घेरा डाला तथा सुरथ को जीता। किंतु अन्त में सुरथ ने इसका पराजय किया। पराजित हो कर भागते समय, पुष्पभद्रा नदी तट पर इसकी मुलाकात एक वैश्य से हुई। उसे ले कर यह मेधसाश्रम गया, एवं उससे इसे मंत्रोपदेश प्राप्त हुआ (ब्रह्मवै. २.६२; दे. भा. ५.३२-३५)।

३. एक देवगंधर्व। अर्जुन के जन्मकालिक उत्सव में यह शामिल हुआ था (म. आ. १४४.४५)।

नंदिन्--भगवान शिव का दिव्य पार्षद एवं वाहन। यह शालंकायनपुत्र शिलाद ऋषि का पुत्र था। इसे शैलादि पैतृक नाम प्राप्त है। निपुत्रिक होने के कारण, इसके पिता शिलाद ने पुत्रप्राप्ति के लिये तपस्या की। उस तपस्या से प्रसन्न हो कर शंकर ने उसे पुत्रप्राप्ति का वर

दिया। उस वर के अनुसार, यज्ञ के लिये जमीन जोतते समय, शिलाद को तीन आँखोंवाला, चार हाथोंवाला, एवं जटामुकटधारी शंकररूप बालक प्राप्त हुआ। यही नंदिन् है।

शिलाद इसे घर ले आया। तत्काल इसका रूप बदल कर, यह अन्य मनुष्यों के समान हुआ। नंदी आठ दस वर्षों का होने पर, मित्रावरुणों द्वारा इसे पता चला, 'यह अल्पायु है'। तब अपमृत्यु से बचने के लिये, इसने शंकर की आराधना की एवं अमरत्व प्राप्त किया। इसके तप से प्रसन्न हो कर शंकर ने इसे पुत्र माना, तथा अपने पार्षद गणों में इसे स्थान दिया।

नंदिन् ने मरुतों की कन्या सुयशा से विवाह किया था (शिव. पा. ७)। दक्षयज्ञ विध्वंस के प्रसंग में, इसने भग नामक ऋत्विज को बद्ध किया था (भा. ४. ५. १७)। दक्ष को भी तत्त्वविमुख होने का शाप दिया था (भा. ४. २. २१)। इसने रावण को भी शाप दिया था (वा. रा. उ. ५०)। अपने पितामह शालंकायन से इसने स्कन्दपुराण का 'अरुणाचलमाहात्म्य' सुना, तथा वह मार्केडेय ऋषि को बताया (स्कन्द. १. ३. २. १६)। राम के अश्वमेध प्रसंग में इसका हनुमान से युद्ध हुआ था (पद्म. पा. ४३)।

नंदिन् ऋषिपुत्र था, एवं स्वयं भी एक ऋषि ही था। फिर भी जनमानस में, शिव का वाहन नंदी 'बैल' माना जाता है। इस जनरीति का प्रारंभ कैसे हुआ, यह कहना मुष्किल है। शिव के पार्षद, नृत्यके समय, अश्व, बैल आदि प्राणियों के वेष परिधान करते थे। उसी कारण, उस प्राणियों से उनका साधर्म्य प्रस्थापित किया गया होगा।

२. इन्द्रग्राम में रहनेवाला एक ब्राह्मण। महाकाल नामक किरात के भक्तियोग से इसे शिवदर्शन का लाभ हुआ, एवं इसका उद्धार हुआ। पश्चात् यह शिवगणों में से एक बन गया (पद्म. उ. १४४)। कई ग्रंथों में इसे वैश्य कहा गया है (स्कन्द. १. १. ५)।

३. कश्यप को मुनी नामक स्त्री से उत्पन्नपुत्र।

नंदियशस्—(नाग. भविष्य.) एक राजा। वायु के मत में यह मथुरा नगरी के मधुनंद राजा का, तथा ब्रह्मांडमत में यह वैदेश नगरी के भूतिनंद का पुत्र था।

नंदिनी—कश्यप के द्वारा सुरभि के गर्भ से उत्पन्न एक गौ (म. आ. ९३.८)। समस्त जगत् पर अनुग्रह करने के लिये इस गौ का अवतार हुआ था, एवं पूजकों की कामनाएँ पूरी करने के कारण इसे 'कामधेनु' कहते थे। जो मनुष्य इसका दूध पीता था, वह दस हजार वर्षों तक युवावस्था में जीवित रहता था (म. आ. ९३. १९)।

यह वरुणपुत्र वसिष्ठ की 'होमधेनु' थी (म. आ. ९३.९)। उसके तापसवन में यह चरती रहती थी। एकबार, द्यु नामक वसु ने इसका अपहरण किया। इस कारण वसिष्ठ ने वसुओं को शाप दिया (म. आ. ९३.४४ द्यु देखिये)

इसके प्राप्ति के लिये, विश्वामित्र ने वसिष्ठ से याचना की थी। वसिष्ठ ने उसका इन्कार करने पर, विश्वामित्र ने इसका हरण किया (म. आ. १६५.२१)। पश्चात् अपने विभिन्न अंगों से हूण, यवन, किरात आदि की सृष्टि निर्माण कर, नंदिनी ने विश्वामित्र के सेना को पराजित किया एवं उस सेना को नष्ट कर दिया (म. श. ३९.२०-२१)।

नंदिवर्धन—(सू. निमि.) एक राजा। यह उदावसु का पुत्र था। इसका पुत्र सुकेतु जनक।

२. (प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा। भागवत के मतानुसार यह राजक का, मत्स्य के मतानुसार सूर्यक का तथा ब्रह्मांड के मतानुसार अजक का पुत्र था। मत्स्य मतानुसार इसने तीस वर्ष तथा ब्रह्मांडमतानुसार बीस वर्ष राज्य किया।

३. (शिशु. भविष्य.) एक राजा। भागवतमत में यह अजय का, विष्णुमत में उदयन का, वायु तथा ब्रह्मांड के मत में उदयिन् का तथा मत्स्यमत में उदासीन का पुत्र था। इसने चालीस वर्षों तक राज्य किया।

नंदिवेग—एक क्षत्रियवंश, जिसमें 'शम' नामक कुलांगार नरेश पैदा हुआ था (म. उ. ७२; १७)।

नंदिषेण—ब्रह्माजी के द्वारा स्कंद को दिये चार पार्षदों में से एक। शेष तीन पार्षदों के नामः- लोहिताक्ष, घंटाकर्ण, कुमुदमालिन् (म. श. ४४. २२)।

नंदीश—वास्तुशास्त्र पर लिखनेवाला एक ग्रंथकार (मत्स्य. २५२)।

नंदीश्वर—भगवान् शिव का एक दिव्य पार्षद। नन्दिन् इसीका ही नामांतर है (नन्दिन् १. देखिये)। यह कुवेर सभा में उपस्थित हुए शिव का, वाहन था (म. स. परि. १. ४. ९)।

नप्तृ—एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ९१. ३७. कुं.)।

नभ—स्वारोचिष मनु का पुत्र।

२. उत्तम मनु का पुत्र।

३. चाक्षुषमनु का पुत्र।

४. वैवस्वतमनु का पुत्र।

५. काश्यपकुल का एक गोत्रकार।

६. भार्गवकुल का एक मंत्रकार।

७. (सू. इ.) एक राजा। भागवतमत में यह निषध का, तथा वायु मतानुसार यह नल का पुत्र था। इसका पुत्र पुंडरीक।

नभःप्रभेदन वैरूप—सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११२)।

नभग—वैवस्वत मनु का पुत्र। इसका पुत्र नाभाग (भा. ८.१३.२; ९.४.१)। भागवत में नाभाग के नाम पर दी गई कथा, शिवपुराण में इसके नाम पर दी गई है (शिव. शत. २९)। इसके नाम के लिये नभग, नाभाग, नाभागारिष्ट, नाभानेदिष्ट आदि पाठभेद प्राप्त है।

नभस्—(सू. इ.) एक राजा। विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मत में यह नल का पुत्र था (पद्म. सृ. ८)। भागवत तथा वायुपुराण में इसे नभ भी कहा है।

२. उत्तममनु का पुत्र।

३. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

४. (सो. ऋक्ष.) एक राजा। वायुमत में यह ऊर्ज का पुत्र था (संभव देखिये)।

नभस्य—स्वारोचिष मनु का पुत्र।

२. उत्तममनु का पुत्र।

नभस्वत्—मुर दैत्य का एक पुत्र। कृष्ण ने इसका वध किया था (भा. १०. ५९.१२)।

नभस्वती—(स्वा. उत्तान.) विजिताश्व राजा की पत्नी। इसका पुत्र हविर्धान (भा. ४.२४.५)।

नभाक—एक ऋषि (ऋ. ८.४०.४-५)। इसने तयार किये ऋचाओं के द्वारा, देवों ने वल के कब्जे में गये अपनी गायों को बचा लिया (ऐ. ब्रा. ६.२४)। ऋग्वेद अनुक्रमणी में इसके नाम का निर्देश 'नाभाक' नाम से किया गया है। 'नाभाक काण्व' के नाम पर भी ऋग्वेद में दो सूक्त हैं (ऋ. १०.३९; ४२)।

नभाग तथा **नभागदिष्ट**—नभग देखिये।

नभोग—ब्रह्म सावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

नभोद—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३४)।

नमस्यु--(सो. पूरु.) भागवतमतानुसार प्रवीर राजा का पुत्र। इसका पुत्र चारुपद (मनस्यु देखिये)।

नमी साप्य—ऋग्वेद में निर्देश किया गया एक राजा (ऋ. ६.२०.६)।

'नमुचि' राक्षस के साथ इंद्र ने किये युद्ध में, इसने इंद्र को काफी मदद की थी (ऋ. १०.४८.९)। ऋग्वेद में कई जगह, इसका निर्देश केवल 'नमी' नाम से ही किया गया है (ऋ. १.५३.७)। सायण का कथन है कि, यह एक ऋषि था। परंतु पंचविंश ब्राह्मण के मतानुसार यह विदेह का राजा होगा (पं. ब्रा. २५.१०.१७; निमि देखिये)।

नमुचि—इंद्र का शत्रु एक राक्षस। समुद्र के 'फेन' (फेंस) के द्वारा इंद्र ने इसका वध किया। पौराणिक नृसिंह अवतार की कल्पना का मूल, इंद्र एवं नमुचि के युद्ध में ही है (ऋ. ८.१४.१३)। समुद्र के फेंस के द्वारा इसकी मृत्यु होने का कथाभाग, कुछ रूपकात्मक प्रतीत होता है। पं. सातवलेकरजी के मत में, यह समुद्र के फेंस से ठीक होनेवाला कोई रोग होगा।

महाभारत में, नमुचि को कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (म. आ. ५९.२२)। हिरण्यकशिपु ने देवों पर आक्रमण किया एवं उनका पराभव कर दिया। इस युद्ध में, नमुचि हिरण्यकशिपु राक्षस का सेनापति था (म. स. परि. १. क्र. २१; पंक्ति. ३५८)। यह वृत्र का अनुयायी था (भा. ६.१०.१९)। स्वर्भानुकन्या सुप्रभा इसकी भार्या थी (भा. ६.६.३२)।

एक बार भयभीत हो कर, यह सूर्यकिरण में प्रविष्ट हुआ तथा इसने इन्द्र से मैत्री की। उस समय इंद्र ने इससे बहुत सारे विषयों पर चर्चा की। संकट के कारण उत्पन्न होनेवाला दुख भगवत्-चिंतन से किस प्रकार दूर हो जाता है, इस विषय पर दोनों का संभाषण हुआ (म. शां. २१९)। फिर इसके वाक्पटुत्व एवं विद्वत्ता के कारण, प्रसन्न हो कर इंद्र ने इसे वरप्रदान किया, 'तुम आर्द्र अथवा सूखें किसी भी शस्त्र से मृत न होगे'। परंतु बाद में इंद्र ने सागरजल के फेन से इसका शिरच्छेद किया, तब उसके केवल सिर ने ही इंद्र का पीछा किया (म. श. ४२.३२)। पश्चात् ब्रह्मदेव के कहने पर, नमुचि ने जिस तीर्थ में गुप्त रूप से स्नान किया था, उसी 'अरुणासंगम' नामक तीर्थ में इंद्र ने स्नान किया। फिर इंद्र के पीछे पीछे नमुचि का सिर भी उस तीर्थ में आ गिरा। उस स्नान के कारण, नमुचि को समस्तक सद्गति मिली, एवं इच्छित अक्षय लोक उसे प्राप्त हुआ (म. शं. ४२.२९-३२)। वामनावतार में, वामन-

स्वरूप विष्णु ने बलि के साथ नमुचि को भी पाताल में गाड़ रखा था (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. ३५८–३५९)।

२. हिरण्याक्ष का सेनापति। इंद्र को मूर्च्छित कर इसने ऐरावत को नीचे गिराया, तथा माया से अनेक जंतु उत्पन्न किये। वे जंतु विष्णु ने अपने चक्र से नष्ट किये। पश्चात् इंद्र ने वज्र से इसका वध किया (पद्म. सृ. ६५)।

३. हिरण्याक्ष का एक और सेनापति। इंद्र पर इसने पाँच बाण छोड़े। परंतु इंद्र ने उन्हें बीच में ही तोड़ दिया। बाद में इसने अपनी माया से अंधकार उत्पन्न किया। परंतु अपने एक अस्त्र के द्वारा, इंद्र ने उस अंधकार को नष्ट किया। बाद में इंद्र के समीप आ कर, इसने उसके ऐरावत हाथी के दाँत पकड़े एवं इंद्र को नीचे गिरा दिया। परंतु उस काम में उसे मग्न देख कर, इंद्र ने अपने खड्ग से इसका सिर काट दिया (पद्म. सृ. ६९)।

४. तेरह सैंहिकेयों में से एक। विप्रचित्ति एवं सिंहिका का यह पुत्र था। परशुराम ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ६७)।

नय—रौच्य मनु का पुत्र।

२. तुषित साध्य देवों में से एक।

नर—'नरनारायण' नामक भगवत्स्वरूप देवताद्वयों में से एक। भगवान् नारायण इसका भाई था। नारायण एवं दोनों भगवान् वासुदेव के अवतार तथा धर्म के पुत्र थे। पांडुपुत्र अर्जुन इसीका अवतार बताया गया है (म. आ. .१; नरनारायण देखिये)।

दैत्यों को अमृत से वंचित करने के कारण हुए देवासुर-संग्राम में, नर ने अपने दिव्य धनुष से असुरों से संग्राम किया था। उस महाभयंकर संग्राम में इसने पंखयुक्त बाणों द्वारा पर्वत शिखरों को विदीर्ण किया, एवं समस्त आकाश-मार्ग को आच्छादित कर दिया। इस संग्राम के पश्चात्, देवों को प्राप्त अमृत की निधि, उन्होंने किरीटधारी नर के पास रक्षा के लिये सौंप दी।

दक्षयज्ञ के विध्वंस के लिये, शिव ने प्रज्वलित त्रिशूल चलाया था। यज्ञ का नाश करने के पश्चात्, वह नर के भाई नारायण की छाती में आ लगा। उस कारण शिव एवं नरनारायणों के दरमियान युद्ध शुरू हुआ। उस युद्ध में नर ने शिव पर सींक चलायी। परशु बन कर वह शिव के शरीर पर चली। किंतु शिव ने उसे खंडित कर दिया। अतः नर को 'खंडपरशु' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ३३०.४९)।

पश्चात् नर अपने बंधु नारायण के समवेत बदरिकाश्रम में तपस्या करने लगे। उस तपस्या के कारण, यह महान् तपस्वी बन गये (म. व. १२२४*) दंभोद्भव नामक असुर सम्राट से इसका एवं इसके भाई नारायण का महान् युद्ध हुआ था। उस युद्ध में दंभोद्भव का पराजय हुआ। पश्चात् पराजित हुए दंभोद्भव को इसने उपदेश प्रदान किया (म. उ. ९४)।

द्रौपदी वस्त्रहरण के समय, द्रौपदी ने अपनी लाज़ बचाने के लिये भगवान् श्रीकृष्ण के साथ, नर को भी पुकारा था (म. स. ६१.५४२*)।

२. एक गंधर्व। यह कुबेर की सभा में रह कर, उसकी उपासना करता था (म. स. १०.१४)।

३. एक प्राचीन नरेश। इसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया था (म. अनु. ११५.६४)।

३. तामस मनु का पुत्र।

४. (सू. दिष्ट.) सुधृति राजा का पुत्र।

५. (सो. अनु.) विष्णु के मत में उशीनर राजा का पुत्र। इसके नाम के लिये 'नववत्' पाठभेद उपलब्ध है।

६. एक वीरपुरुष। शंकर ने ब्रह्मदेव का पंचम मस्तक तोड़ दिया। फिर शंकर को सजा देने के लिये ब्रह्मदेव ने अपने पसीने से एक उग्र पुरुष निर्माण किया। उसने शंकर को अत्यंत त्रस्त किया। फिर शंकर ने स्वरक्षणार्थ विष्णु की प्रार्थना की। विष्णु ने अपनी अंगुलि काट कर रक्त से एक पुरुष निर्माण किया। उसी का नाम नर है। ब्रह्माजी के पसीने से निर्माण हुए उग्र पुरुष का वध कर, इसने शंकर को निर्भय बना दिया (पद्म. सृ. १४; भवि. ब्राह्म. २३)।

७. तुषित साध्य देवों में से एक।

८. (स्वा. नाभि.) विष्णुमत में गय का पुत्र।

९. (सो. पूरु.) भागवतमत में मन्युपुत्र। विष्णु, वायु तथा मत्स्यमत में भुवन्मन्यु पुत्र है।

नर भारद्वाज—सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.३५.१६)। भरद्वाज के पाँच पुत्रों में से एक। भरत ने भरद्वाज को दत्तक लेने के कारण, इसे बृहस्पति तथा भरत नामक दो दादा थे (ऋग्वेद वेदार्थदीपिका ६.५२)।

नरक—एक दानव। यह कश्यप तथा दनु का पुत्र था (म. आ. ५९.२८)। इंद्र ने इसे परास्त किया था।

२. तेरह सैंहिकेयों में से एक। यह विप्रचिति दानव तथा दितिकन्या सिंहिका का पुत्र था।

३. एक असुर, एवं प्राग्ज्योतिषपुर का राजा। पृथ्वी का पुत्र (भूमिपुत्र) होने के कारण, इसे भौम नाम भी प्राप्त था। इसकी माता भूदेवी ने विष्णु को प्रसन्न कर, इसके लिये 'वैष्णवास्त्र' प्राप्त किया था। उसी अस्त्र के कारण, नरकासुर बलाढ्य एवं अवध्य बना था। अपनी मृत्यु के पश्चात्, यही अस्त्र इसने अपने पुत्र भगदत्त को प्रदान किया (म. द्रो. २८)।

नरक का राज्य नील समुद्र के किनारें था। इसकी राजधानी प्राग्ज्योतिषपुर अथवा मूर्तिलिंग नगर में थी। इसके पाँच राज्यपाल थेः-- हयग्रीव, निशुंभ, पंचजन, विरुपाक्ष एवं मुर (म. स. परि. १क्र. २१ पंक्ति. १००६)। पृथ्वी भर की सुंदर स्त्रियाँ, उत्तम रत्न एवं विविध वस्त्र आदि का हरण कर, नरक अपने नगर में रख देता था। किंतु उन में से किसी भी चीज का यह स्वयं उपभोग नहीं लेता था।

गंधर्व, देवता, एवं मनुष्यो की सोलह हजार एक सौ कन्याएँ, एवं अप्सराओं के समुदाय में से सात अप्सराओं का नरक ने हरण किया था। त्वष्टा की चौदह वर्ष की कन्या कशेरु का, उसे मुर्च्छित कर नरक ने अपहरण किया था। उस समय इसने हाथी का मायावी रूप धारण किया था (म. स. परि. १क्र. २१पंक्ति. ९३८-९४०)। इंद्र का ऐरावत हाथी एवं उच्चैःश्रवा नामक अश्व का भी इसने हरण किया था। देवमाता अदिति के कुंडलों का भी नरक ने अपहरण किया था।

नरक ने पृथ्वी से अपहरण किया सारा धन, एवं स्त्रियाएँ अल्का नगरी के पास मणिपर्वत पर 'औदका' नामक स्थान में रखी हुई थी। मुर के दस पुत्र एवं अन्य प्रधान राक्षस, उस अंतःपुर की रक्षा करते थे। इसके राज्य की सीमा पर, मुर दैत्य के बनाये हुएँ छः हजार पाश लगाएँ गये थे। उन पाशों के किनारों के भागों में छुरे लगाएँ हुए थे। इस के बाद बड़े पर्वतों के चट्टानों के ढेर से एक बाड़ लगाई गयी थी। इस ढेर का रक्षक निशुंभ था। औदका के अंतर्गत लोहित गंगा नदी के बीच विरूपाक्ष एवं पंचजन ये राक्षस उस नगरी के रक्षक थे। (म. स. १.२१.९५३)।

नरक का वर्तन हमेशा ही देव तथा ऋषिओं के खिलाफ ही रहता था। स्वयं श्रीकृष्ण का भी इसने अपमान किया था। एक बार सारे यादव दाशार्ही सभा में बैठे हुएँ थे। उस समय समस्त देवमंडल को साथ ले कर इंद्र वहाँ आया। उस ने कृष्ण से पापी नरकासुर का वध करने की प्रार्थना की। श्रीकृष्ण ने भी नरक का वध करने की प्रतिज्ञा की।

पश्चात् सत्यभामा एवं इंद्र को साथ ले कर तथा गरुड पर आरुढ हो कर, श्रीकृष्ण प्राग्ज्योतिषपुर राज्य के सीमा पर पहुँच गया। उस राज्य की सीमा पर मुर दैत्य की चतुरंगसेना खड़ी थी। उस सेना के पीछे मुर दैत्य के बनाये हुएँ छः हजार तीक्ष्ण पाश थे। श्रीकृष्ण ने उन पाशों को काट कर, एवं मुर को मार कर राज्य की सीमा में प्रवेश किया। पश्चात् पर्वतों के चट्टानों के घेरे के रक्षक, निशुंभ पर श्रीकृष्ण ने हमला किया। इस युद्ध में निशुंभ, हयग्रीव आदि आठ लाख दानवों का वध कर श्रीकृष्ण आगे बढ़ा। पश्चात् औदका के अंतर्गत विरुपाक्ष एवं पंचजन नाम से प्रसिद्ध पाँच भयंकर राक्षसों से श्रीकृष्ण का युद्ध हुआ। उनको मार कर श्रीकृष्ण ने प्राग्ज्योतिषपुर नगर में प्रवेश किया।

प्राग्ज्योतिषपूर नगरी में, श्रीकृष्ण को दैत्यों के साथ विकट युद्ध करना पड़ा। उस युद्ध में लक्षावधि दानवों को मार कर, श्रीकृष्ण पाताल गुफा में गया। वहाँ नरकासुर रहता था। वहाँ कुछ देर युद्ध करने के बाद, श्रीकृष्ण ने चक्र से नरकासुर का मस्तक काट दिया (म. स. परि. १क्र. २१ पंक्ति. ९९५-११५५)। इसका वध करने के पहले, श्रीकृष्ण ने इसे ब्रह्मद्रोही, लोककंटक एवं नराधम कह कर पुकारा (म. स. परि. १क्र. २१ पंक्ति. १०३५)।

नरकासुर एवं श्रीकृष्ण कें युद्ध की कथा हरिवंश में कुछ अलग ढंग से दी गयी हैं। पंचजन दैत्य का वध करने के पश्चात्, श्रीकृष्ण ने प्राग्ज्योतिषपुर नगरी पर हमला किया।

नरकासुर से युद्ध शुरु करने के पहले श्रीकृष्ण ने पांचजन्य शंख फूँका। उस शंख की आवाज़ सुन कर नरक अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं अपने रथ में बैठ कर युद्ध के लिये बाहर चला आया। नरक का रथ अत्यंत विस्तृत, मौल्यवान एवं अजस्त्र था। इसके रथ को हजार घोडे जोते गये थे। इस प्रकार सुसज्ज हो कर, नरकासुर युद्धभूमि में आया, एवं श्रीकृष्ण से उसका तुमुल युद्ध हुआ। आखिर श्रीकृष्ण ने सुदर्शन चक्र मे उसका सिर काट लिया। फिर नरकासुर की माता ने, श्रीकृष्ण के पास आ कर, अदिति के कुंडल एवं प्राग्ज्योतिषपुर का राज्य उसे अर्पण कर दिया (ह. वं. २.६३; भा. १०.५९)। पश्चात्

श्रीकृष्ण ने नरकासुर के महल में प्रवेश कर वंदीगृह में रखी गयी सोलह हजार एक सौ स्त्रियों की मुक्तता की (पद्म. उ. २८८)। उन स्त्रियों को एवं काफी संपत्ति ले कर श्रीकृष्ण द्वारका लौट आया (भा. १०.५९)।

नरकासुर वध की कथा पद्मपुराण में भी दी गयी है। किंतु उस में 'नरकचतुर्दशी माहात्म्य' को अधिक महत्त्व दिया गया हैं।

नरकासुर ने तप तथा अध्ययन कर, तपःसिद्धि प्राप्त की थी। फिर इन्द्र को इससे भीति उत्पन्न हुई, एवं उसने नरकासुर का वध करने की प्रार्थना कृष्ण से की। पश्चात् श्रीकृष्ण ने इस तपःसिद्ध नरकासुर को हस्ततल से प्रहार कर के इसका वध किया। यह मरणोन्मुख हो कर भूमि पर गिरा तब इसने कृष्ण की स्तुति की। कृष्ण ने इसे वर माँगने के लिये कहा। इसने वर माँगा 'मेरे मृत्युदिन के तिथि को, जो सूर्योदय के पहले मंगलस्नान करेंगे, उन्हें नरक की पीड़ा न हो'। यह कार्तिक वद्य चतुर्दशी को मृत हुआ। इसलिये उस दिन को 'नरक चतुर्दशी' कहने की प्रथात शुरु हुई। उस दिन किया प्रातःस्नान पुण्यप्रद मानने की जनरीति प्रचलित हुई (पद्म. उ. ७६.६७)।

लोमश ऋषि के साथ पांडव तीर्थाटन के लिये गये थे। अलकनंदा नदी के पास जाने पर, शुभ्र पर्वत के समान प्रतीत होनेवाला शिखर लोमश ने उन्हें दिखाया। वे नरकासुर की अस्थियाँ थी (म. व. परि. १. क्र. १६. पंक्ति. २८-३१)। वरुण सभा में नरकासुर को सम्माननीय स्थान प्राप्त हुआ था (म. स. ९.१२)।

नरकासुर के वध के बाद उसकी माता के कथनानुसार, कृष्ण ने इसके पुत्र भगदत्त को अभयदान दिया। उस पर वरदहस्त रखा तथा उसे राज्य दिया (भा. १०.५९)।

नरकासुर की कथा कालिकापुराण में निम्नलिखित ढंग से दी गयी है। त्रेतायुग के उत्तरार्ध में यह वराहरूपी विष्णु को भूमि के द्वारा उत्पन्न हुआ। विदेह देश के राजा जनक ने सोलह वर्षों तक इसका पालन किया। प्राग्ज्योतिषपुर के किरातों से युद्ध कर के, इसने उनका नाश किया। बाद में राज्यश्री के कारण मदोन्मत्त होने पर, द्वापार युग में कृष्ण ने इसका नाश किया (कालि. ३९-४०)।

नरनारायण—एक भगवत्स्वरूप देवताद्वय। स्वायंभुव मन्वन्तर के सत्ययुग में भगवान् वासुदेव के चार अवतार धर्म के पुत्र के रूप में प्रगट हुएँ (म. शां. ३३४.९-१२) उनके नाम क्रमशः नर, नारायण, हरि एवं कृष्ण थे। उनमें से नर एवं नारायण यह बंधुद्वय पहले देवतारूप में, पश्चात् ऋषिरूप में, एवं महाभारतकाल में अर्जुन एवं कृष्ण के रूप में, अपने पराक्रम एवं क्षात्रतेज के कारण अधिकतम सुविख्यात हैं (नर एवं नारायण देखिये)।

नरनारायण की उपासना काफी प्राचीन है। महाभारत काल में अर्जुन एवं कृष्ण को, नरनारायणों का अवतार समझने के कारण, नरनारायणों की उपासना को नया रूप प्राप्त हो गया। पाणिनि में नरनारायणों के भक्तिसंप्रदाय का निर्देश किया है।

देवी भागवत के मत में, नरनारायण चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न हुएँ थे (दे. भा. ४.१६)। ये धर्म को दक्ष-कन्या मूर्ति से उत्पन्न हुये थे (भा. २.७)। ये धर्म को कला नामक स्त्री से उत्पन्न हुए थे, ऐसा भी उल्लेख प्राप्त है। पूर्ण शांति प्राप्ति के लिये, इन दोनों ने दुर्घट तप किया था (भा. १.३)। नरनारायण के दुर्घट तप से भयभीत हो कर, इन्द्र ने इनके तपोभंग के लिये कुछ अप्सराएँ भेजी। यह देख कर नारायण शाप देने के लिये सिद्ध हो गया, परंतु नर ने उसका सांत्वन किया (दे. भा. ४.१६; भा. २.७; पद्म. सृ. २२)। पश्चात् नारायण ने अपनी जंघा से उर्वशी नामक अप्सरा निर्माण कर, वह इन्द्र को प्रदान की (भा. ११.४.७)। इन्द्र द्वारा भेजी गई अप्सराओं को अगले अवतार में विवाह करने का आश्वासन दे कर इसने विदा किया (दे. भा. ४. १६)। बाद में इन्होंने कृष्ण तथा अर्जुनरूप से अवतार लिया। कृष्णार्जुनों को दर्शन दे कर इन्होंने उपदेश भी दिया (दे. भा. ४.१७; भा. १०.८९.६०)। यह बदरि-काश्रम में रहते थे (भा. ११.४.७)। इन दोनों ने नारद से किये अनेक संवादों का निर्देश प्राप्त है (म. शां. ३२१-३२४)।

एक बार हिरण्यकश्यपु का पुत्र प्रह्लाद ससैन्य तीर्थयात्रा करते करते, नरनारायण के आश्रम के पास आया। उस स्थान पर उसने बाण, तरकस आदि युद्धोपयोगी चीजें देखीं। इससे उसे लगा कि, इस आश्रम के मुनि शांत न हो कर दांभिक होंगे। उसने इन्हें वैसा कहा भी। इससे गर्मागर्म बातें हो कर, युद्ध करने तक नौबत आ गयी। पश्चात् नरनारायण एवं प्रह्लाद का काफी दिनों तक तुमुल युद्ध हुआ। उसमें कोई भी नहीं हारा। इस युद्ध के कारण देवलोक एवं पृथ्वी लोक के सारे लोगों को तकलीफ होने

लगी। फिर विष्णु ने मध्यस्थ का काम किया तथा यह युद्ध रोक लिया (दे. भा. ४.४.९)।

नरवाहन--कुवेर का नाम।

नरसिंह--गौड देश का राजा। इसके सेनापति का नाम सरभभेरुंड था। वह गीतापाठ करने के कारण मुक्त हुआ (सरभभेरुंड देखिये)।

नरांतक—अंगद द्वारा मारा गया रावण का पुत्र (भा. ९.१.१८; वा. रा. यु. ६९)।

२. रावण के प्रहस्त नामक प्रधान का पुत्र। यह द्विविद वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ५-८)।

३. रौद्रकेतु दैत्य का पुत्र। अपने दुष्कृत्यों से इसने सारे त्रैलोक्य को अत्यंत त्रस्त किया था। बाद में इसे पता चला कि, कश्यप गृहोत्पन्न विनायक के द्वारा अपनी मृत्यु होगी। तब विनायक के नाश के लिये इसने काफी प्रयत्न किये। परंतु वे निष्फल हो कर, विनायक ने इसका वध किया (गणेश. २.६१)।

४. कालनेमि राक्षस का पुत्र। हिरण्याक्ष के साथ हुए देवों के संग्राम में, जयंत ने इसका पराभव किया था (पद्म. सृ. ७५)।

नरामित्र—त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

नरि—(सो. कुकुर.) बहुपुत्र राजा का पुत्र। इसका पुत्र अभिजित् (पद्म. सृ. १३)।

नरिन्—वनरस नगर के तालन राजा का पुत्र (भवि. प्रति. ३.७)।

नरिष्यन्त—वैवस्वत मनु का पुत्र, एक राजा (म. आ. ७०-१३)। इसका पुत्र शक (पद्म. सृ. ८)। उसके सिवा, इसे चित्रसेन, ऋक्ष, मीढ्वस, कूर्च, इंद्रसेन आदि पुत्र भी थे। पश्चात् इसीके कुल में अग्निवेश्यायन ब्राह्मण पैदा हुएँ (भा. ९.२.१९-२२)। 'शक' लोग भी इसीके पुत्र कहलाते थे (ब्रह्म. ७.२४)। इसका पूरा वंश 'भागवत' में दिया गया है (भा. ९. २. १९-२२)।

२. (सो. दिष्ट.) एक राजा। वायु एवं विष्णुमत में यह मरुत्त का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम बाभ्रवी इंद्रसेना, एवं पुत्र का नाम दम था (मार्क. १३०.२)। वानप्रस्थाश्रम में रहते हुए इस राजा का वपुष्मत् ने वध किया। इसकी मृत्यु के बाद, इसकी पत्नी इंद्रसेना सती गयी (मार्क. १३१)।

नरोत्तम—एक ब्राह्मण। यह अपने मातापितरों का अनादर करता था। फिर भी तीर्थयात्रादिकों के योग से काफी पुण्य संपादन किया था। इसके गीले वस्त्र आकाश में अधर सूखते थे।

एक बार एक बगुले को शाप देने के कारण, इसका काफी पुण्य तथा दैवी सामर्थ्य नष्ट हो गया। इसे काफी दुख हुआ। इतने में इसने आकाशवाणी सुनी, 'तुम मूक नामक धार्मिक चांडाल के पास जाओ। वह तुम्हें धर्म का उपदेश करेगा'। यह उस चांडाल के पास गया। उस समय मूक अपने मातापितरों की सेवा कर रहा था। उसने इसे रुकने के लिये कहा। फिर भी यह नहीं रुका। फिर मूक ने इसे एक पतिव्रता के पास जाने के लिये कहा।

इतने में ब्राह्मण रूपधारी विष्णु अपने घर से बाहर निकला तथा उसने इसे पतिव्रता के घर पहुचा दिया। वह पतिसेवा करने में मग्न होने के कारण, उसने भी इसे रुकने के लिये कहा। इसे रुकने के लिये समय न होने के कारण, उसने इसे धर्म वैश्य के पास जाने के लिये कहा। वह ग्राहकों को माल देने में मग्न था, इसलिये उसने इसे धर्माकर के पास जाने के लिये कहा। उसने इसे एक वैष्णव के पास भेजा। वैष्णव के पास जाने पर उसने कहा, कि 'अवश्य ही तुम्हें विष्णु का दर्शन हुआ है। अब तुम्हारे वस्त्र अधर सूखेंगे'।

परंतु इस पर नरोत्तम ने कहा, मुझे अब तक विष्णु का दर्शन नहीं हुआ है। फिर वह वैष्णव इसे पूजागृह में ले गया। पूजागृह में इसे पतिव्रता का घर दिखानेवाला ब्राह्मण कमलासन पर बैठा हुआ दिखा। फिर नरोत्तम उसकी शरण में गया। पश्चात् विष्णु ने इसे मातापिता की सेवा करने के लिये कहा। उस सेवाधर्म के कारण, यह स्वर्लोक पहुँच गया (पद्म. सृ. ४७)।

नर्मदा—सोमप नामक पितरों की मानसकन्या।

२. एक गंधर्वी। अपनी तीन कन्याएँ इसने सुकेश राक्षस के तीन पुत्रों को दीं थीं (वा. रा. अर. ५)।

३. (सू. इ.) मांधातृ राजा की स्नुषा तथा पुरुकुत्स राजा की पत्नी। यह सर्पकन्या थी जो सर्पों ने पुरुकुत्स राजा को विवाह में दी थी (विष्णु. ४.३.१२-१३; भा. ९.७.२)। किंतु यह पुरुकुत्सपुत्र त्रसदस्यु की पत्नी थी, ऐसा भी निर्देश कई ग्रंथों में प्राप्त है।

४. एक नदी। एक बार, इक्ष्वाकु कुलोत्पन्न दुर्योधन राजा से विवाह करने की इच्छा इसे हुई। तब मनुष्य रूप धारण कर इसने उससे विवाह किया (म. अनु. २.१८)। दुर्योधन राजा से, इसे सुदर्शना नामक

कन्या पैदा हुई। किसी और समय, इसने मान्धातृ का पुत्र पुरुकुत्स को अपना पति बनाया था (म. आश्र. २०. १२-१३; नर्मदा ३. देखिये)।

नर्य—एक दानी पुरुष। इंद्र ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.५४.६; ११२.९; नार्य देखिये)।

नल--निषध देश का सुविख्यात राजा। यह वीरसेन राजा का पुत्र था (पद्म; सृ. ८; लिंग. १.६६.२४-२५; वायु. ८८; १७४; मत्स्य. १२.५६; ह. वं. १.१५; ब्रह्मांड. २.६३.१७३-१७४)। मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार वीरसेनपुत्र नल तथा निषधपुत्र नल दोनों इक्ष्वाकु वंश के ही हैं। किंतु लिंग, वायु तथा ब्रह्मांड एवं हरिवंश में वीरसेनपुत्र नल का वंश नहीं दिया गया है।

पांडवो के वनवासकाल में, युधिष्ठिर ने बृहदश्व ऋषि से कहा, 'मेरे जैसा बदनसीब राजा इस दुनिया में कोई नहीं होगा'। फिर बृहदश्व ने, युधिष्ठिर की सांत्वना के लिये उससे भी ज्यादा बदनसीब राजा की एक कथा सुनायी। वही नल राजा की कथा है (म. व. ५०)।

नल राजा निषध देश का अधिपति था, एवं युद्ध में अजेय था (म. आ. १.२२६-२३५)। एक बार, नल ने सुवर्ण पंखों से विभूषित बहुत से हंस देखे। उनमें से एक हंस को इसने पकड़ लिया (म. व. ५०.१९)। फिर उस हंस ने नल से कहा, 'आप मुझे छोड़ दें। मैं आपका प्रिय काम करूँगा। विदर्भनरेश भीम राजा की कन्या दमयंती को आप के गुण बताऊँगा, जिससे वह आपके सिवा दूसरे का वरण नहीं करेंगी'।

हंस का यह वचन सुन कर, नल ने उसे छोड़ दिया (म. व. ५०.२०-२२)। पश्चात् हंस ने दमयंती के पास जा कर, नल के गुणों का वर्णन किया। उससे दमयंती नल के प्रति अनुरक्त हो गयी (म. व. ५०-५१)।

यथावकाश दमयंती-स्वयंवर की घोषणा विदर्भाधिपति भीम राजा ने की। उसे सुन कर, नल राजा स्वयंवर के लिये विदर्भ देश की ओर रवाना हुआ। नारद द्वारा दमयंती स्वयंवर की हकीकत इंद्रादि लोकपालों को भी ज्ञात हुई। वे भी स्वयंवर के लिये विदर्भ देश चले आये। नल को देखते ही इसके असामान्य सौंदर्य के कारण, दमयंतीप्राप्ति की आशा इंद्रादि लोकपालों ने छोड़ दी। बाद में इंद्र ने नल राजा को सहायता के वचन में फँसाया, एवं उसे दूत बनाकर दमयंती को बताने के लिये कहा, 'लोकपाल तुम्हारा वरण करना चाहते है।'

इंद्र के आशीर्वाद के कारण, अदृश्य रूप में यह कुंडिनपुर में दमयंती के मंदिर में प्रविष्ट हो गया। वहाँ दमयंती तथा उसकी सखियों के सिवा यह किसी को भी नहीं दिखा। इस कारण, यह दमयंती तक सरलता से पहुँच सका। दमयंती के मंदिर में नल के प्रविष्ट होते ही, उसकी सारी सखियाँ स्तब्ध हो गई तथा दमयंती भी इस पर मोहित हो गई। बाद में दमयंती द्वारा पूछा जाने पर नल ने अपना नाम बता कर देवों का संदेशा भी उसे बताया (म. व. ५१-५२) फिर भी दमयंती का नल को पति बनाने का निश्चय अटल रहा।

दमयंती स्वयंवर में, उसकी परीक्षा लेने के लिये, नल के ही समान रूप धारण कर, इंद्रादि देव सभा में बैठ गये। स्वयंवर के लिये आये सहस्रावधि राजाओं का वरण न कर, दमयंती उस स्थान पर आई जहाँ नल बैठ था। वहाँ उसने देखा, पाँच पुरुष एक ही स्वरूप धारण कर एक साथ बैठे हैं। उसके सामने बड़ी ही समस्या उपस्थित हो गई। बाद में उसने कहा कि 'नल के प्रति मेरा अनन्य प्रेम हो, तो वह मुझे गोचर हो।' इतना कहते ही उसके पातिव्रत्यबल से सारे देव उनके 'वास्तव देवता स्वरूप' में उसे दिख पडे। घर्मबिंदुविरहित स्तब्ध दृष्टिवाले, प्रफुल्ल पुष्पमाला धारण करनेवाले, धूलि स्पर्शविरहित, तथा भूमि को स्पर्श न करते हुएँ खडे देव उसने देखे'। उन देवों को नमन कर, दमयंती ने नल को वरमाला पहनायी।

नल का वरण दमयंती द्वारा किये जाने के कारण, देवों को भी आनंद हुआ तथा उन्होंने इसे दो दो वर दिये। इंद्र ने इसे वर दिया, 'तुम्हे यज्ञ में मेरा प्रत्यक्ष दर्शन होगा, तथा सद्गति प्राप्त होगी'। अग्नि ने वर दिया, 'चाहे जिस स्थान पर तुम मेरी उत्पत्ति कर सकोंगे, तथा मेरे समान तेजस्वी लोक की प्राप्ति तुम्हें होगी'। यम ने इसे अन्नरस तथा धर्म के उपर पूर्ण निष्ठा रहने का, उसी प्रकार वरुण ने इच्छित स्थल पर जल उत्पन्न करने की शक्ति का वर दिया। वरुण ने इसे एक सुगंधी पुष्पमाला भी प्रदान की, एवं वर दिया, 'तुम्हारे पास के पुष्प कभी भी नहीं कुम्हलायेंगे'। इन वरों के अतिरिक्त, देवताप्रसाद से कहीं भी प्रवेश होने पर इसे भरपूर जगह मिलती थी, ऐसी भी कल्पना है।

पश्चात् भीमराज ने दमयंती विवाह का बड़ा समारोह किया। काफी दिनों तक नल को अपने पास रख लेने के बाद, इसे दमयंती सहित निषध देश में पहुँचा दिया।

निषध आने के बाद, इसने प्रजा का उत्तम पालन किया तथा अश्वमेधादि यज्ञ कर देवों को भी तृप्त किया। कुछ काल के बाद, दमयंती से इसे इंद्रसेन नामक पुत्र, तथा इंद्रसेना नामक कन्या ये अपत्य भी पैदा हुएँ (म. व. ५३-५४)।

एक बार देवसभा में, इंद्रादि देवों ने नल की स्तुति की। वह स्तुति वहाँ बैठे कलिपुरुष को सहन नहीं हुई। देवों के जाने के बाद वह द्वापर नामक युगपुरुष के पास गया, एवं उसने कहा, 'अगर तुम द्यूत के प्यादों' में मुझे प्रविष्ट होने दोंगे, एवं मेरी सहायता करोंगे, तो मैं नल को राज्य भ्रष्ट कर दूँगा' (म. व. ५५-१३)।

द्वापर के द्वारा मान्यता मिलने पर, उसे ले कर कलिपुरुष निषध देश में गया। वहाँ नल के शरीर में प्रविष्ट होने की संधि देखते हुए, गुप्तरूप से वह अनेक वर्षों तक रहा। एक दिन मूत्रोत्सर्ग करने के बाद, पादप्रक्षालन न करते हुए ही नल संध्योपासना करने बैठा। यह संधि देख, कली ने इसके शरीर में प्रवेश किया।

शरीर में कलि प्रविष्ट होते ही, नल को द्यूत खेलने की इच्छा हुई। इसने तत्काल अपने पुष्कर नामक भ्राता को द्यूत खेलने के लिये बुलाया। पुष्कर ने पास ही वृषभ रूप ले कर खड़े कलि को दाँव पर लगा कर, नल को खेलने का आह्वान दिया। दमयंती के सामने दिया यह आह्वान अपना अपमान समझ कर, नल ने दाँव पर दाँव लगाना शुरू किया। यह वृत्त नागरिकजनों को ज्ञात होते ही उन्होंने, मंत्रियों ने तथा स्वयं दमयंती ने हर प्रकार से इसे द्युत से परावृत्त करने की कोशिश की। शरीर में स्थित कलि के प्रभाव के कारण, नल द्यूत खेलता ही रहा। उस कारण, इसकी सारी संपत्ति, सुवर्ण, वाहन, रथ, घोडे तथा वस्त्र दूसरे पक्ष ने जीत लिये। अपना तथा अन्य किसी का भी उपदेश राजा नहीं सुन रहा है यह देख, दमयंती न अपने पुत्र तथा कन्या को वार्ष्णेय नामक सारथि के साथ रथ में बैठा कर, अपने पिता के यहाँ कुंडिनपुर भेज दिया (म. व. ५६-५७)।

नल का समस्त राज्य हरण कर लेने के बाद, पुष्कर ने इसे एक वस्त्र दे कर राज्य के बाहर निकाल दिया। इसके साथ दमयंती भी एक वस्त्र पहन कर निकल पडी। नगर के बाहर नल तीन दिनों तक रहा। पुष्कर ने ढिंढोरा पिटवाया, 'जो नल का सत्कार करेंगे, या उससे सज्जनता का व्यवहार करेंगे, उन्हें मृत्यु की सजा दी जावेगी'। इस कारण किसीने नल की सहायता नहीं की।

पश्चात् अपना राज्य छोड़ कर, नल एवं दमयंती अरण्य के मार्ग से जाने लगे। काफी दिन इसी प्रकार व्यतीत होने पर, क्षुधाग्रस्त नल को सुवर्णमय पंखयुक्त कुछ पंछी दिखे। खाने के लिये तथा धनप्राप्ति के हेतु से, वे पक्षी पकड़ने की इच्छा नल को हुई। इसलिये इसने उन्हें अपने वस्त्र में पकड़ लिया किंतु दुर्दैववशात् द्यूत के प्यादे ही नल का पीछा करते हुए, पक्षीरूप धारण कर के आये हुए थे। वे इसका वस्त्र ले कर उड़ गये। परिणामतः नल के पास जो एक वस्त्र था, वह भी चला गया एवं नग्न स्थिति में यह आगे जाने लगा।

जाते जाते नल ने दमयंती को कोसल तथा विदर्भ देश की ओर जानेवाला मार्ग दर्शाया, एवं कहा, 'तुम अपने पिता के घर विदर्भ देश चली जाओ'। फिर दमयंती ने नल से कहा, 'हम दोनों ही विदर्भ देश को जायें' किंतु नल को यह अच्छा न लगा।

पश्चात् मार्ग में नल एवं दमयंती को एक घर दिखा। दोनों उस घर में गये। थकावट के कारण दमयंती शीघ्र ही निद्राधीन हो गई। यह देख, उसे छोड़ कर अकेले चले जाने की इच्छा नल के मन में उत्पन्न हुई। तलवार से दमयंती का आधा वस्त्र काट कर, वह इसने परिधान किया। तथा चुपचाप उसे वहीं छोड़ कर, यह चला गया (म. व. ५८-५९; दमयंती देखिये)। बाद में चेदि देश के सुबाहु राजा की पत्नी की सैरंध्री बन कर दमयंती ने अपने बुरे दिन व्यतीत किये।

दमयंती को छोड़ कर चले जाने के बाद, नल ने एक स्थान पर प्रदीप्त दावाग्नि देखा। उससे करुण ध्वनि निकल रही थी, 'हे नल! मेरी रक्षा करो'। फिर अग्नि में घिरे कर्कोटक नाग को इसने बाहर निकाला। तब वह नाग प्रसन्न हो कर उसने नल से कहा, 'एक, दो, तीन, इस क्रम से तुम चलना शुरू करो। मैं तुम्हारा कुछ कल्याण करना चाहता हूँ। तुम्हारा चलना शुरू होते ही, वह कार्य मैं पूरा करूँगा।

कर्कोटक के आदेशानुसार यह कदम गिनते गिनते चलने लगा। अपने दसवें कदम पर इसने 'दश' कहा। 'दश' कहते ही कर्कोटक नाग ने इसे दंश किया, जिससे इस का रूप बदल कर, यह कृष्णवर्ण एवं कुरूप बन गया। फिर नल ने व्याकुल हो कर कर्कोटक से पूछा, 'तुमने यह क्या किया?' कर्कोटक ने इस पर कहा, 'तुम नाराज न हो। तुम्हारे लाभ के लिये ही मैंने तुम्हें दंश किया है। तुम्हारे ये बदले हुए रूप से अब तुम्हें कोई भी पहचान नहीं

सकेगा। इतना ही नहीं, मेरे विष की बाधा तुम्हारे शरीरस्थ कलि को ही हो जायेगी'। नल को एक वस्त्र प्रदान कर कर्कोटक ने आगे कहा, 'अब तुम बाहुक नामांतर से अयोध्या के राजा ऋतुपर्ण के पास जा कर वास करो। जब पूर्ववत् सुरूप होने की इच्छा तुम करोगे, तब स्नान करके यह वस्त्र ओढ लेना। इससे तुम्हे पूर्वस्वरूप प्राप्त होगा'। इतना कह कर कर्कोटक अंतर्धान हो गया (म. व. ६३. १९-२३)।

कर्कोटक के गुप्त होने के बाद नल दस दिनों से अयोध्या जा पहुँचा। ऋतुपर्ण राजा से मिल कर इसने कहा, 'मुझे अश्वविद्या तथा सारथ्य का पूर्ण ज्ञान है। आप मुझे आश्रय दें, तो मैं अपने पास रहने के लिये तैयार हूँ। ऋतुपर्ण ने इसे अपने आश्रय में रखा, एवं इसे अपनी अश्वशाला का प्रमुख बना दिया। नल के पुराने सारथि वार्ष्णेय तथा जीवल पहले से ही ऋतुपर्ण की अश्वशाला में काम करते थे। संयोगवश नल के ये पुराने नौकर इसके सहायक बना दिये गये। किंतु इसके नये रंगरूप में वे इसे पहचान नहीं सके।

अपनी पत्नी दमयंती, कन्या, तथा पुत्र का स्मरण कर के यह रोज विलाप करता था। एक दिन जीवल ने इसे पूछा, 'किसके लिये तुम हररोज शोक करते हो?' कुछ न कह कर यह स्तब्ध रह गया (म. व. ६४.१२-१९)।

ऋतुपर्ण राजा के यहाँ नौकरी करने से पहले ही वार्ष्णेय ने दमयंती के कथनानुसार उसके पुत्र तथा कन्या को कुंडिनपुर में भीमराजा के पास पहुँचा दिया था, तथा कहाँ था, कि 'नलराजा द्यूतासक्त हो गया अब उसका कोई भरोसा नहीं है'। बाद में भीमराजा को ज्ञात हुआ कि राज्यभ्रष्ट हो कर नल दमयन्ती सह अरण्य में चला गया है।

अपनी कन्या एवं जमाई को ढूँढ़ने के लिये भीमराजा ने सारे देशों में ब्राह्मण भेजे। उनमें से सुदेव नामक ब्राह्मण घूमते घूमते वहाँ गया, जहाँ दमयंती राजपत्नी की सैरंध्री बन कर दिन काट रही थी। दमयंती के पीपलपत्ते के समान ताम्रवर्णीय दाग़ के कारण उसने दमयंती को पहचान लिया, तथा कहा, 'तुम्हारे पिता की आज्ञानुसार मैं तुम्हें ढूँढ़ने आया हूँ'। यह सुन कर दमयंती अपने आपको सम्हाल न सकी, एवं फूट फूट कर रोने लगी। यह सारा वृत्त चेदिराजपत्नी सुनंदा ने राजमाता को बताया, उसे दमयंती की दुखभरी कहानी सुन कर बहुत ही खेद हुआ। बाद में उसने दमयंती का बड़ा सत्कार कर तथा साथ में सेना दे कर पालकी से इसे कुंडिनपुर पहुँचा दिया। दमयंती को देख कर भीम को अत्यंत आनंद हुआ। कन्या का शोध लगने के कारण एक चिंता से भीमराजा मुक्त हुआ। केवल नल ही को मालूम हो ऐसे संकेतदर्शक वाक्यों के साथ भीमराजा ने अनेक ब्राह्मण देश देश में नल को ढूँढने के लिये भेज दिये (म. व. ६४-६६)।

उनमें से पर्णाद नामक ब्राह्मण अयोध्या नगरी में आया। वहाँ पहुँचने के बाद दमयंती द्वारा बताये गये पूर्वस्मृति-निदर्शक तथा कर्तव्यबुद्धि जाग्रत करनेवाले अनेक वाक्य कहते कहते, वह नगर की वस्ती वस्ती में घूमने लगा। वे वाक्य सुन कर नल को अत्यंत दुख हुआ तथा एकांत में पर्णाद से मिल कर इसने कहा 'हीन दशा प्राप्त होने के कारण मैंने पत्नी का त्याग किया, इसलिये वह मुझे दोष न दे'। इतना होते ही पर्णाद द्रुतगति से अयोध्या से चला गया, एवं कुंडिनपुर आ कर यह वृत्त उसने दमयंती को बताया।

यह वृत्त सुन, दमयंती को अत्यंत आनंद हुआ, किंतु पर्णाद द्वारा किये गये बाहुक के रूपवर्णन के कारण वह संदेह में पड गयी। उस संदेह की निष्कृति करने के लिये उसने अपनी माता के द्वारा ऋतुपर्ण को संदेसा भेजा, 'नल जीवित है या मृत यह न समझने के कारण दमयंती अपना दूसरा स्वयंवर कल सूर्योदय के समय कर रही है; इसलिये अगर इच्छा हो तो आप वहाँ आयें' (म. व. ६५)।

कुंडिनपुर से अयोध्या काफी दूर होने के कारण, एक दिन में वहाँ पहुँचना ऋतुपर्ण को अशक्यप्रायसा लगा। फिर भी अपने सारथि बाहुक से उसने पूछा। बाहुक ने एक दिन में रथ से अयोध्या पहुँचने की शर्त मान्य की एवं बडी ही तेजी से रथ हाँका। मार्ग में ऋतुपर्ण का उत्तरीय गिर पड़ा। उसे उठाने के लिये राजा ने बाहुक को रथ खडा करने के लिये कहां। फिर बाहुक ने कहा 'आपका वस्त्र एक योजन पीछे रह गया है'। यह देख कर ऋतुपर्ण बाहुक के सारथ्यकौशल्य पर बहुत ही खुष हुआ। बाद में बाहुक से अश्वहृदयविद्या सीख कर, ऋतुपर्ण ने उसे 'अक्षहृदयविद्या' (द्यूत खेलने की कला) प्रदान की (म. व. ७०.२६)। इस प्रकार ये दोनों परम मित्र बन गये (ह. वं. १. १५; वायु. २६; विष्णु. ४. ४. १८; ब्रह्म. ८. ८०)।

अक्षहृदय विद्या प्राप्त होते ही, कलिपुरुष नल के शरीर से बाहर निकला। उसे देख कर जब नल उसे शाप देने के लिये उद्युक्त हुआ, तब कलि ने इसकी प्रार्थना करते हुए कहा "हे पुण्यश्लोक नल! तुम मुझे शाप मत दो। कर्कोटक नाग के विष से मेरा शरीर दग्ध हो गया है। दमयंती के शाप से भी मैं पीड़ित हूँ। आयदा से, कर्कोटक, दमयंती, नल तथा ऋतुपर्ण का नामसंकीर्तन करनेवालों को कलि की बाधा न होगी (म. व. ७८)। इतना कहते हुए कह वेड़ेलि के वृक्ष में प्रविष्ट हुआ। इस 'कलिप्रवेश' के कारण, वेहड़े (बिभीतक) का वृक्ष अपवित्र माना जाने लगा (म. व. ७०.३६)।

सायंकाल होने के पहले ही, बाहुक ने रथ कुंडिनपुर पहुँचाया। किंतु वहाँ स्वयंवरसमारोह का कुछ भी चिह्न मौजुद नहीं था। इस कारण, ऋतुपर्ण मन ही मन शरमा गया, एवं अपना मुँह बचाने के लिये कहा, 'यूँ ही मिलने के लिये मैं आया हूँ'। आये हुएँ लोगों में दमयंती को नल नहीं दिखा। किंतु ऋतुपर्ण के त्वरित आगमन का कारण नल ही है ऐसा विश्वास उसे हो गया, तथा जादा पूँछताछ के लिये, उसने अपने केशिनी नामक दासी को बाहुक के पास भेज दिया। उस दासी ने बड़े ही चातुर्य से, बाहुक के साथ दमयंती के बारे में प्रश्नोत्तर किये। फिर नल का हृदय दुख से भर आया, तथा वह रुदन करने लगा। यह सब वृत्त केशिनी ने दमयंती को बताया (म. व. ७१-७२)।

बाद में दमयंती ने केशिनी को बाहुक की हलचल पर सक्त नजर रखने के लिये कहा। बाहुक की एक बार परीक्षा लेने के लिये, दमयंती ने अग्नि तथा उदक न देते हुए अन्य पाकसाहित्य दिलाया। वह ले कर एवं जल तथा अग्नि स्वयं उत्पन्न कर बाहुक ने पाकसिद्धि की। उसी प्रकार बाहुक को अवगत 'पुष्पविद्या' (मसलने पर भी पुष्पों का न कुम्हलाना) तथा आकृतिविद्या ('छोटी चीज बडी बनाना') आदि बातें केशिनी ने स्वयं देखी (म. व. ७३.९; १६)।

बाद में दमयंती ने अपने पुत्र एवं पुत्री को दासी के साथ बाहुक के पास भेज दिये। नल अपना शोक संयमित न कर सका। बाद में ही बाहुक ने फिर दासी से कहा 'मेरे भी पुत्र ऐसे होने के कारण मुझे उनकी याद आयी (म. व. ७३.२६-२७)।

फिर दमयंती ने अपनी माता के पास संदेश भिजवाया, 'यद्यपि नल के अधिकांश चिह्न बाहुक में हैं, तथापि रूप के कारण मुझे कुछ शंका हो रही है। अगर आपकी आज्ञा मिले तो उसे बुला कर, मैं कुछ परीक्षा ले लूँ'। माता की आज्ञा प्राप्त होते ही उसने ब्राहुक से कहा, 'प्रतिव्रता तथा निरपराध स्त्री को अरण्य में अकेली छोड़ जानेवाला पुरुष पृथ्वी पर नल राजा के सिवा अन्य कोई नहीं है'। यह सुनते ही बाहुक ने कहा, 'पति सदाचारी तथा जीवित होते हुए भी, स्वयंवर करनेवाली स्त्री तुम्हारे सिवा अन्य कोई नहीं है'। फिर नल एवं दमयंती ने एक दूसरी को पहचान लिया। दमयंती ने कहा, 'यह सारा नाटक तुम्हे ढूँढ़ने के लिये ही मैंने रचाया था। दूसरी बार स्वयंवर करने की ही लालसा मुझे होती, तो क्या मैं अन्य राजाओं को निमंत्रित नहीं करती?' इतना कह कर वह स्तब्ध हो गई। इतने में वायु द्वारा आकाशवाणी हुई 'दमयंती निर्दोष है। तुम उसका स्वीकार करो'। उसे सुनते ही नल ने कर्कोटक नाग का स्मरण किया एवं उसने दिये दिव्य वस्त्र परिधान कर लिया। उस वस्त्र के कारण, नल का कुरूपत्व नष्ट हो कर, वह सुस्वरूप दिखने लगा। फिर नल ने दमयंती तथा पुत्रों का आलिंगन किया (म. व. ७३-७४)।

नल एवं दमयंती का मीलन होने के पश्चात् भीमराजा ने उनको एक माह तक अपने पास रख लिया। तब बाद में दमयंती एवं पुत्रों को साथ ले कर, नल राजा निषध देश की ओर मार्गस्थ हुआ। वहाँ पहुँचते ही नल ने पुष्कर को बुलावा भेजा, तथा उससे द्यूत खेल कर अपना राज्य हासिल किया (म. व. ७७)। मृत्यु के पश्चात्, नल यमसभा में उपस्थित हो कर, यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.१०)। भारतीय युद्ध के समय, यह देवराज इंद्र के विमान में बैठ कर, युद्ध देखने आया था (म. वि. ५१.१०)।

पूर्वजन्म—पूर्वजन्म में, नल राजा गौड देश के सीमा पर स्थित एक देश के पिप्पल नामक नगर में, एक वैश्य था। संसार से विरक्त हो, यह एक बार अरण्य में चला गया। वहाँ एक ऋषि के उपदेशानुसार, 'गणेशव्रत' करने के कारण यह अगले जन्म में नल राजा बन गया (गणेश. २.५२)। इसके ही पहले के जन्म में, नल एवं दमयंती आहुक एवं आहुका नामक भील तथा भीलनी थे। शिवप्रसाद से उन्हें राजकुल में जन्म प्राप्त हुआ। शंकर ने हंस का अवतार ले कर उन्हें सहायता दी थी (यतिनाथ देखिये)।

पाकशास्त्र तथा अश्वविद्या पर लिखित, नल राजा के कई ग्रंथ प्रसिद्ध हैं।

२. (सू. इ.) अयोध्या के ऋतुपर्ण राजा का पुत्र। इसे सुदास नामक पुत्र था। इसका मूल नाम सर्वकर्मन् अथवा सर्वकाम था (लिंग. १.६६.१)।

इसका पिता ऋतुपर्ण, निषध देश के नल राजा का मित्र था (नल १. देखिये)। वायुपुराण के मत में, प्राचीन भारतीय इतिहास में दो नल सुविख्यात थे:— १. अयोध्या का राजा इक्ष्वाकुवंशज नल—यह ऋतुपर्ण का पुत्र था। २. वीरसेन का पुत्र नैषध नल (वायु. ८८. १७४–१७५)।

३. (सो. क्रोष्टु.) भागवतमत में यदु राजा का पुत्र। इसे 'नील' नामांतर भी प्राप्त था।

४. (सो. कुकुर.) यादव राजा विलोमन् (तित्तिरि) का पुत्र। इसे 'नंदनोदरदुंदुभि' नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. ४४.६३)। मत्स्यमत में यह सर्प था।

५. इन्द्रसभा में उपस्थित एक ऋषि।

६. (सू. इ.) दल का नामान्तर।

७. तेरह सैंहिकेयों में से एक (ब्रह्म. ३)।

८. निषध राजा का पुत्र। इसका पुत्र नभ अथवा नभस् (ह. वं. १. १५. २८; ब्रह्म. ८; पद्म. सृ. ८; मत्स्य. १२. ५६)।

९. रामसेना का एक वानर, एवं रामसेतु बाँधनेवाला स्थापत्यविशारद। यह देवों के शिल्पी विश्वकर्मा एवं घृताची नामक अप्सरा का पुत्र था (म. व. २६७. ४१)। ऋतुध्वज मुनि के शाप से, विश्वकर्मा को वानर-योनि प्राप्त हुई। उसी जन्म में उसे यह पुत्र गोदावरी नदी के तट पर पैदा हुआ (वामन. ६२)। इसे अग्नि का पुत्र भी कहा है (स्कंद. ३. १. ४२)।

जी चाहे वह वस्तु निर्माण करने की शक्ति का वर, इसके पिता ने इसे दिया था (वा. रा. यु. २२)। राम की आज्ञा से इसने दक्षिण समुद्र पर सौ योजन लंबे एवं दस योजन चौड़े सेतु का निर्माण किया। वह सेतु 'रामसेतु' अथवा 'नलसेतु' नाम से प्रसिद्ध है (म. व. २६७–४६)। इसने एक ब्राह्मण को जाह्नवी नदी में शालिग्राम विसर्जन करने के कार्य में मदद की थी। इस पुण्यकार्य के कारण, उस ब्राह्मण ने इसे वर दिया, 'तुम्हारे पत्थर पानी में तर सकेंगे।' इसी सिद्धि के कारण, सेतुबंधन का कार्य यह सफलता से कर सका। सेतु बांधने का कार्य शुरु करने से पहले इसने गणेश तथा नवग्रहों की पूजा की थी (आ. रा. सार. १०)। प्रतपन, अकंपन, तथा प्रहस्त आदि रावणपक्षीय राक्षसों से युद्ध करते समय इसने काफी पराक्रम दर्शाया था (कुशलव देखिये)। राम केअश्वमेध यज्ञ के समय, यह अश्वरक्षण के लिये शत्रुघ्न के साथ गया था (पद्म. पा. ११)।

नलकूबर—देवों के धनाध्यक्ष कुबेर का पुत्र (म. स. १०. १८)। इसे मणिग्रीव नामक ज्येष्ठ बंधु था।

एकबार ये दोनों भाई अपने स्त्रियों के साथ गंगानदी के तट पर कैलास पर्वत के उपवन में क्रीडा कर रहे थे। सुरापान की नशा के कारण, इन में से किसी के शरीर पर वस्त्र न था। उसी मार्ग से नारद जा रहे थे। नारद को देखते ही शाप के भय से, इसकी स्त्रियों ने बाहर आ कर अपने अपने वस्त्र परिधान कर लिये। परंतु नलकूबर तथा मणिग्रीव इतने बेहोश थे कि, उन्होंने देवर्षि की कुछ भी मर्यादा न रखी। नग्नस्थिति में इन्हें देखते ही इन दोनों को अच्छा सबक सिखाने का विचार नारद ने किया। अपने शरीर पर वस्त्र है या नहीं, इसका भी होश जिन्हें नहीं है, उनके लिये वृक्षयोनि ही ठीक है, ऐसा विचार नारद ने किया, एवं इन्हे सौ वर्षोंतक वृक्ष होने का शाप दिया। नारद की कृपा से, उस स्थिति में भी इन्हें अपने पूर्वजन्म का स्मरण रहा, तथा कृष्ण के सान्निध्य से इनकी मुक्ति हो गयी।

कृष्णावतार में नंदगोप के घर के द्वार में स्थित 'अर्जुन-वृक्षों' का जन्म इन्हें प्राप्त हुआ था। एक बार नटखट कृष्ण की शैतानी से तंग आ कर, यशोदा ने कृष्ण को ऊखल से बाँध दिया। कृष्ण ऊखल को खींचते खींचते धीरे धीरे चलने लगा। चलते चलते आँगन में खड़े अर्जुनवृक्ष की जोड़ी के बीच, वह ऊखल अटक गया। फिर कृष्ण ने ऊखल जोर से खींचते ही दोनो वृक्ष आमूलाग्र गिर पड़े तथा नल कूबर एवं मणिग्रीव वृक्षयोनि से मुक्त हो गये (भा. १०. ९–१०; ह. वं. २.७.१४–१९; पौलस्त्य देखिये)।

एक बार इसकी प्रेयसी रंभा इसे मिलने जा रही थी। राह में, रावण ने रंभा पर बलात्कार किया। फिर इसने रावण को शाप दिया, 'तुम्हें न चाहनेवाली किसी भी स्त्री को तुम स्पर्श नहीं कर सकोंगे (म. व. २६४.६८–६९)। बलात्कार करते ही तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी' (वा. रा. उ. २६; रावण देखिये)।

नव—(सो. अनु.) मत्स्यमत में उशीनर राजा का पुत्र (नर ४. देखिये)।

नवक—एक ऋषि। विभिंदुक राजा के सत्र में इसने पत्नी के लिये इच्छा दर्शायी थी (जै. ब्रा. २.२३३)।

नवग्व—अंगिरसों में से एक वर्ग का नाम। इन्होंने इन्द्र की स्तुति की है (ऋ. ५.२९.१२)। नौ महीनों में ये यज्ञ समाप्त करते थे इसलिये इन्हें नवग्व कहते है (ऋ. १०.६२.४-६; दशग्व देखिये)।

२. एक श्रेष्ठतम अंगिरस ऋषि। यह प्राचीनकालीन रहस्यवादी जाति के लोगों एवं अंगिरसों के साथ संबंधित थे (ऋ. ४.५१.४; ९.१०८.४)।

नवतन्तु—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५८)।

नवप्रभ—नड़ायन देखिये।

नवरथ—(सो. क्रोष्टु.) भागवत, विष्णु, मत्स्य तथा पद्म के मतानुसार भीमरथ राजा का पुत्र। वायु तथा ब्रह्मांड मतानुसार यह रथवर राजा का पुत्र था।

नववास्त्व—अग्नि का आश्रित। घोरपुत्र कण्व ने अग्नि की प्रार्थना कर, नववास्त्व को अपने पास भेजने के लिये कहा है (ऋ. १.३६.१८)। संभवतः यह उशनस् का पुत्र एवं इंद्र के प्रियपात्रों में से एक था। किंतु ऋग्वेद में कई अन्य स्थानों में इंद्र द्वारा इसका वध होने का निर्देश भी प्राप्त है। भरद्वाज ने इन्द्र के द्वारा इसका वध करवा कर उशनस् का पुत्र वापस ला दिया (ऋ. ६. २०.११)। ऋग्वेद में तीसरे एक स्थान पर, 'नववास्त्व बृहद्रथ' नाम से इसका निर्देश आया है। इंद्र ने इसका नाश किया (ऋ. १०.४९.६)।

नहुष्—ऋग्वेदकालीन एक व्यक्ति (ऋ. १.१२२.१५)। 'नहुस्' एवं यह दोनों एक ही रहे होंगे।

नहुष—एक राजा। यह संभवतः 'पृथुश्रवस् कानीत' का कोई रिश्तेदार रहा होगा (ऋ. ८.४६.२७; नाहुष देखिये)।

२. (सो. पुरूरवस्.) प्रतिष्ठान (प्रयाग) देश का सुविख्यात सम्राट्, एवं वैवस्वत मनु की कन्या इला का प्रपौत्र। यह पुरूरवस् ऐल राजा का पौत्र, आयु राजा का पुत्र एवं ययाति राजा का पिता था (लिंग. १.६६.५९-६०; कूर्म. १.२२.३-४)। इसे कुल चार भाई थे। उनके नामः—क्षत्रवृद्ध (वृद्धशर्मन्), रंभ, रजि, अनेनस् (विपाप्मन्) (वायु. ९२.१-२; ब्रह्म. ११. १-२)।

यह आयु राजा को दानव राजा राहु या स्वर्भानु की कन्या प्रभा (स्वर्भानवी) नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (ह. वं. १.२८.१; म. आ. ७०.२३)। किंतु पद्ममत में, यह आयु की पत्नी इंदुमती को दत्त आत्रेय की कृपा से पैदा हुआ था (पद्म. भू. १०५)। वायुमत में, यह आयु को विरजा नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (वायु. ९४; ब्रह्म. १२.३४)। सुस्वधा पितरों की कन्या विरजा इसकी पत्नी थी। उससे इसे ययाति नामक पुत्र पैदा हुआ (मत्स्य. १५.२३)।

पद्मपुराण में, नहुष की जन्मकथा इस प्रकार दी गयी है। दत्तकृपा से आयु राजा की पत्नी इंदुमती गर्भवती रही। उस समय, हुंड राक्षस की कन्या अपनी सखियों के साथ नंदनवन में क्रीडा करने के लिये गयी। वहाँ सिद्ध चारणों के मुख से उसने सुना कि, अपने पिता हुंड की मृत्यु आयुपुत्र नहुष के द्वारा होनेवाली है। तत्काल घर जा कर इसने यह वृत्त अपने पिता को बताया।

इन्दुमती के गर्भ का नाश करने के उद्देश से, दैत्येंद्र हुंड एक अमंगल दासी के शरीर में प्रविष्ट हुआ, तथा नहुष का जन्म होते ही रात्रि के समय, इसे अपने घर ले आया। बाद में अपनी विपुला नामक भार्या के पास, नहुष को स्वाधीन कर, हुंड ने कहा, यह मेरा शत्रु है। इसलिये इसका मास पका कर, तुम मुझे खिला दो विपुला ने इस बालक को अपने रसोइये को सौंपा। किंतु रसोइये को इस पर दिया आ कर उसने इसे वसिष्ठ ऋषि के घर में पहुँचा दिया तथा हुंड को हिरन का माँस पका कर खाने के लिये दिया।

इस बालक को देखते ही, वसिष्ठ ने दिव्य दृष्टि से इसका सारा पूर्वेतिहास जान लिया तथा इसे 'नहुष' नाम प्रदान किया। वसिष्ठ ने ही इसका उपनयन करवाया एवं इसे वेद तथा धनुर्विद्या सिखाई।

पश्चात् वसिष्ठ के कथनानुसार इसने हुंड राक्षस पर आक्रमण किया। उस समय सारे देवों ने इसकी सहायता की। इस युद्ध में नहुष का विजय हो कर, इसने हुंड का वध किया। बाद में वसिष्ठ की अनुज्ञा से, इसके विरह में रातदिन व्याकुल हुई अशोकसुंदरी नामक स्त्री से, इसने विवाह किया, तथा उसे लेकर यह अपनी राजधानी लौट आया (पद्म भू. १०५-११७)।

एक बार, च्यवन ऋषि मछुओं के जाल में फँस गया। उसे मछुओं के हाँथ से छुड़ाने के लिये, नहुष ने च्यवन से उसके सही मूल्य के बारे में चर्चा की, एवं लाखों की संख्या में गौएं मछुओं को दे कर, च्यवन की मुक्तता की (म. अनु. ८६.६)। फिर च्यवन ने संतुष्ट हो कर नहुष

को वर दे दिया। घर आये त्वष्टृ का नहूष ने सम्मान किया था, एवं उस कार्य के लिये 'गवालंभन' भी किया था (म. शां. २६०.६)।

इंद्रपदप्राप्ति—अपने पराक्रम, गुण एवं पुण्यकर्म के कारण, देवताओं को भी दुर्लभ 'इंद्रपद' प्राप्त होने का सौभाग्य नहुष को प्राप्त हुआ। इतने में देवों का राजा इंद्र ने त्रिशिर नामक ब्राह्मण का वध किया। इस 'ब्रह्महत्या' के पातक के कारण, पागल सा हो कर, इंद्र इधर उधर घूमने लगा, एवं इंद्रपद की राजगद्दी खाली हो गयी।

इस अवसर पर, सारे देव एवं ऋषियों ने अपनी तपश्चर्या का बल नहुष को दे कर, इसे 'इंद्रपद' प्रदान किया, एवं आशीर्वाद दिया, 'तुम जिसकी ओर देखोगे, उसके तेज का हरण करोगे' (म. आ. ७०.२७)।

'इंद्रपद' पर आरूढ होने के बाद, कुछ काल तक, नहुष ने बहुत ही निष्ठा, नेकी, एवं धर्म से राज्य किया। स्वर्ग का राज्य प्राप्त होने के बाद भी, यह देवताओं को दीपदान, प्रणिपात, एवं पूजा आदि नित्यकर्म मनोभाव से करता रहा।

किंतु बाद में, 'मे देवेंद्र हूँ' ऐसा तामसी अभिमान इसके मन में धीरे धीरे छाने लगा। फिर सारी धार्मिक विधियाँ छोड़ कर, यह मतिभ्रष्ट एवं विषयलंपट बन गया। रोज भिन्न भिन्न उपवन में जा कर, यह स्त्रियोंके साथ क्रीडाएँ करने लगा। इस प्रकार कुछ दिन बीतने पर, इसने भूतपूर्व इंद्र की पत्नी इंद्राणी को देखा। उसका मोहक रूपयौवन देख कर यह कामोत्सुक हुआ, एवं इसने देवों को हुकुम दिया, 'इंद्राणी को मेरे पास ले आओ' (म. आ. ७५)।

फिर ड़र के मारे भागती हुई इंद्राणी वृहस्पति के पास गयी। बृहस्पति ने उसे आश्वासन दिया, 'मैं नहुष से तुम्हारी रक्षा करूँगा'। बाद में सारे देवों के सलाह के अनुसार, इंद्राणी नहुष के पास आयी, एवं उसने कहा, 'आपकी माँग पूरी करने के लिये, मुझे कुछ वक्त आप दें दे। उस अवधि में, मैं अपने खोये हुए पति को ढूँढ़ना चाहती हूँ'।

नहुष ने इंद्राणी की यह शर्त मान्य की। फिर देवों की कृपा से, इंद्राणी ने इंद्र को ढूँढ निकाला, एवं सारा वृत्तांत उसे बता दिया। फिर इंद्र ने उसे कहा, "तुम नहुष के पास जा कर उसे कहो, 'अगर सप्तर्षिओं ने जोंती हुए पालकी में बैठ कर, तुम मुझे मिलने आओंगे तो मैं तुम्हारा वरण करूंगी"।

इंद्राणी नहुष के पास आयी, एवं उसने अपनी शर्त उसे बतायी। नहुष ने यह शर्त बड़े ही आनंद से मान्य की। इसने सप्तर्षिओं को अपने पालकी को जोंत लिया, तथा स्वयं पालकी में बैठ कर, यह इंद्राणी से मिलने अपने घर से निकला। मार्ग में पालकी और तेज़ी से भगाने के लिये, कामातुर नहुष ने सप्तर्षिओं में से अगस्त्य ऋषि को लत्ताप्रहार किया, एवं बड़े क्रोध से कहा, 'सर्प, सर्प' ('जल्दी चलो')।

इस पर अगस्त्य ऋषि ने इसे क्रोध से शाप दिया, 'हे मदोन्मत्त! सप्तर्षिओं को पालकी को जोंतनेवाला तू स्वयंही पृथ्वी पर दस हजार वर्षों तक सर्प बन कर पड़े रहेगी'। अगस्त्य के इस शाप के अनुसार, नहुष तत्काल सर्प बन गया, एवं पालकी के बाहर गिरने लगा। फिर अगस्त्य को इसकी दया आयीं, एवं उसने इसे उःशाप दिया, 'पांडुपुत्र युधिष्ठिर तुम्हें इस हीन सर्पयोनि से मुक्त कर देगा (म. उ. ११.१७; अनु. १५६-१५७; भा. ६.१८.२-३; दे. भा. ६.७-८; विष्णु. १.२४)। अगस्त्य स्वयं सप्तर्षियों में से एक नहीं था। किंतु उसके जटासंभार में छिपा हुआ भृगु ऋषि सप्तर्षियों में से एक था। संभवतः इसी भृगु के कारण अगस्त्य को नहुष ने अपने पालकी का वाहन बनाया होगा।

महाभारत के मत में, भृगु ऋषि के कारण ही नहुष का स्वर्ग से पतन हुआ था। नहुष को सारे देवों ने तथा ऋषियों ने वर दिया था, 'तुम जिसकी ओर देखोगे, उसका तेज हरण कर लोगे'। उस वर के कारण अन्य सप्तर्षियों के साथ, अगस्त्य ऋषि का तेज नहुष ने हरण किया, एवं उसे अपने पालकी का वाहन बनाया। किंतु अगस्त्य की जटा में गुप्तरूप से बैठे भृगु को नहुष कुछ न कर सका, एवं उसका तेज कायम रहा। नहुष ने लत्ताप्रहार करते ही बाकी ऋषि चुपचाप बैठ गये। किंतु भृगु ने उसे शाप दिया (म. अनु. १५७)।

शापमुक्ति—बाद में सरस्वती नदी के तट पर द्वैतवन में पांडव अपने वनवास का काल व्यतीत करने आये। एक दिन भीमसेन हाथ में धनुष्य ले कर बन में मृगया के लिये निकला। यमुनागिरि पर घूमते घूमते, उसने एक गुफा के मुख में चित्रविचित्र रंग का एक अजगर देखा। भीम को देखते ही उस अजगर ने उसके ऊपर झड़प डाली, तथा उसकी दोनों बाहें जोर से पकड़ ली। दश-सहस्र नागों का बल अपने भुजाओं में धारण करनेवाले भीम की शक्ति उस अजगर के सामने व्यर्थ हो गई।

तब भीम ने पूछा, 'हे सर्पराज, तुम कौन हो ? मेरा तेज हरण करने की शक्ति तुझमें कैसी पैदा हो गई ?' फिर अजगर ने कहा, 'मैं नहुष नामक एक राजर्षि हूँ। अनेक विद्या, यज्ञ, कुलीनता, तथा पराक्रम के कारण, मैंने त्रैलोक्य का आधिपत्य प्राप्त किया था। किंतु पश्चात् मदोन्मत्त हो कर, मैंने सप्तर्षियों को अपने पालकी का वाहन बनाया। इसलिये अगत्स्य ऋषि ने शाप दे कर, मुझे इस हीन सर्पयोनि में जाने के लिये कहा। उःशाप माँगने पर उसने मुझे कहा, 'तुम जिस प्राणी पर झपटोगे, उसकी शक्ति हरण कर लोगे। आत्मनात्माविवेक के ज्ञान से परिपूर्ण पुरुष से मुलाकात होने पर, तुम शापमुक्त हो जाओगे'। 'तबसे ऐसे ही पुरुष का मैं इन्तजार कर रहा हूँ'।

इतने में युधिष्ठिर भीम को ढूँढ़ते ढूँढ़ते वहाँ पहुचा। अजगर के द्वारा भीम को पकड़ा हुआ देख कर, उसने सर्प से पूछा, 'तुम कौन हो ? भीम को तुमने क्यों पकड लिया है ?' तब अजगरस्वरूपी नहुष ने कहा, 'मैं तुम्हारा पूर्वज, एवं आयु नामक राजा का पुत्र हूँ। तुम्हारे द्वारा मेरे प्रश्नों के उत्तर दिये जाने पर मैं भीम को छोड़ दूँगा'।

बाद में नहुष ने युधिष्ठिर से प्रश्न किया, 'ब्राह्मण किस को कहते है ?' युधिष्ठिर ने उत्तर दिया, 'सत्य, दान, क्षमा, सच्छीलत्व, एवं इंद्रियदमन जिसके पास हो, वह मानव ब्राह्मण कहलाता है'। फिर सर्प ने पूछा, 'पृथ्वी में सर्वश्रेष्ठ ज्ञान कौनसा है'। युधिष्ठिर ने जवाब दिया, 'ब्रह्म का ज्ञान सर्वश्रेष्ठ कहलाता है'। इन उत्तरों से प्रसन्न हो कर, इसने भीम को छोड़ दिया, एवं इसका भी उद्धार हो कर, यह स्वर्ग में चला गया (म. व. १७५-१७८)।

पुत्र—नहुष के पुत्रों की संख्या एवं नामों के बारे में, पुराणों में एकवाक्यता नहीं है। अधिकांश पुराणों एवं महाभारत के मत में, नहुष को कुल छः पुत्र थे (म. आ. ७०.२८; ह. वं. १.३०.२; ब्रह्म. १२; विष्णु. ४. १०; भा. ९.१८.१; लिंग. १.६६)। कूर्म एवं पद्म के मत में, इसे कुल पाँच पुत्र थे (कूर्म. १.२२; पद्म. सृ. १२)। मत्स्य एवं अग्नि में, नहुष के सात पुत्रों के नाम दिये गये है (मत्स्य. २४.५०; अग्नि. २७४)।

पुराणों में दिये गये नहुष के पुत्रों के नाम इन प्रकार है —

(१) यति—यह नहुष का ज्येष्ठ पुत्र था।

(२) ययाति—यह नहुष के पश्चात् प्रतिष्ठान देश के राजगद्दी पर बैठ गया। इसी के नाम से 'पुरुरवस् वंश' को 'ययाति वंश' यह नया नाम प्राप्त हुआ।

(३) संयाति—यह उत्तर आयु में 'परिव्राजक' बन गया। इसके नाम के लिये, 'शर्याति' नामांतर भी प्राप्त है (पद्म. सृ. १२; अग्नि. २७४)।

(४) आयति या अयति—इसके नाम के लिये, 'उद्भव' नामांतर प्राप्त है (मत्स्य. २४.५०; पद्म. सृ. १२; अग्नि. २७४)।

(५) अधक (कूर्म. १.२२)—इसके नाम के लिये, पार्श्वक (ब्रह्म. १२), अंधक (लिंग. १.६६), वियति (विष्णु. ४.१०; भा. ९.१८.१; पद्म. सृ. १२) नामांतर प्राप्त है।

(६) वियाति (मत्स्य. २४)— इसके नाम के लिये विजाति (लिंग. १.६६), सुयाति (ह. वं. १.३०.२; ब्रह्म. १२), कृति (विष्णु. ४.१०; भा. ९.१८.१), ध्रुव (म. आ. ७०.२८) नामांतर प्राप्त है।

(७) मेघजाति (मत्स्य. २४.५०)— इसके नाम के लिये, मेघपालक नामांतर प्राप्त है (अग्नि. २७४)।

३. कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक प्रमुख नाग।

४. वैवस्वत मनु का पुत्र।

नहुष मानव—एक मंत्रद्रष्टा (ऋ. ९.१०१.७-९)।

नाक—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र (मनु देखिये)।

नाक मौद्गल्य—एक तत्त्वज्ञ आचार्य। ब्राह्मणों में कई बार इसका निर्देश प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३.१३.५; श. ब्रा. १२.५.२.१) अधिकांश स्थानों पर इसका निर्देश केवल 'नाक' नाम से आता है। किंतु नाक मौद्गल्य ऐसा स्पष्ट निर्देश एक ही स्थान पर है (बृ. उ. ६.४.४)। इसका ग्लाव मैत्रेय ऋषि से वाद हुआ था (गो. ब्रा. १.१.३१)। वेदों का अध्ययन तथा अध्यापन एक तरह की तपःसाधना है, ऐसा इसका प्रतिपादन था (तै. उ. १.९)।

नाकुरय—कश्यप कुल का गोत्रकार।

नाकुलि—भृगुकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम के लिये, 'लिंबुकि' पाठभेद उपलब्ध है।

२. नकुल का नामांतर।

नाग—कश्यप तथा कद्रु का पुत्र। यह मेरुकर्षिका नामक स्थान पर रहता था (मा. ५.१६.२६)। यह वरुण की सभा का सभासद था (म. स. ९.८; सर्प देखिये)।

२. प्राचीन मानव जातियों में से एक। दक्षकन्या कद्रू

को कश्यप ऋषि से एक सहस्र सर्प पैदा हुएँ। उन पुत्रों से ही आगे चल कर, नागजाति के लोग निर्माण हुएँ।

कश्यप के नागपुत्रों में निम्नलिखित नाग प्रमुख थेः— अनन्त, वासुकि, तक्षक, कर्कोटक, पद्म, महापद्म, शंख तथा कलिक।

एक बार ये प्रजा को बहुत कष्ट देने लगे। फिर ब्रह्मदेव ने इन्हें शाप दिया, 'जनमेजय के सर्पसत्र के द्वारा, एवं तुम्हारे सापत्न बंधु गरुड के द्वारा तुम्हारा नाश होगा'। शरण आने पर ब्रह्मदेव ने इन्हें उःशाप दिया, एवं एक सुरक्षित स्थान इनके लिये नियुक्त कर, वहाँ रहने के लिये इन्हे कहा। वहाँ 'नागतीर्थ' निर्माण हुआ। जिस दिन ये ब्रह्मदेव से मिलने गये, वह सावन माह के पंचमी का दिन था। नागमुक्ति का दिन होने के कारण, वह दिन 'नागपंचमी' नाम से प्रसिद्ध हुआ (पद्म. सृ. ३१)।

प्रमुख नागपुत्रों के बारे में पुराणों में प्राप्त जानकारी 'परिपत्रक' के रूप में, नीचे दी गई है :—

नाम	वर्ण	रंग	दृष्टि	दिशा	चिह्न
अनंत	ब्राह्मण	शुक्ल	सामने	पूर्व	पद्म
वासुकि	क्षत्रिय	आरक्त	बायीं ओर	आग्नेय	उत्पल
तक्षक	वैश्य	पीत	दायीं ओर	दक्षिण	स्वस्तिक
कर्कोटक	शूद्र	कृष्ण	पीछे	नैऋत्य	कमल
पद्म (नाग)	शूद्र	कृष्ण	चंचल	पश्चिम	पद्म
महापद्म	वैश्य	पीत	नीचे	वायव्य	शूल
शंखपाल	क्षत्रिय	आरक्त	बार बार निश्चेष्टित	उत्तर	छत्र
कुलिक (कंबल)	ब्राह्मण	शुक्ल	सर्वत्र (कपिल)	ईशान्य	अर्धचन्द्र

इन नागों के वंश आदि की विस्तृत जानकारी भविष्य पुराण में दी गयी है (भवि. ब्राह्म. ३३–३६)।

सर्पसत्र में दग्ध हुएँ नाग—जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुएँ, नाग वंश एवं नागों की विस्तृत नामावलि 'महाभारत' में दी गयी है। उन में से प्रमुख नागवंश एवं नागों के नाम इस प्रकार है।

वासुकिवंश—कोटिक, मानस, पूर्ण, सह, पैल, हलीसक, पिच्छिल, कोणप, चक्र, कोणवेग, प्रकालन, हिरण्यावाह, शरण, कक्षक, कालदन्तक, (म. आ. ५२. ५–६)।

तक्षकवंश—पुच्छण्डक, मण्डलक, पिण्डभेतृ, रभेणक, उच्छिख, सुरस, द्रङ्ग, बलहेड, विरोहण, शिलीशिलकर, मूक, सुकुमार, प्रवपन, मुद्गर, शशरोमन्, सुमनस्, वेगवाहन (म. आ. ५२.७–९)।

ऐरावतवंश—पारिवात, पारिमात्र, पाण्डर, हरिण, कृश, विहंग, शरभ, मोद, प्रमोद, संहतांङ्ग, (म. आ. ५२.१०)।

कौरव्यवंश—ऐण्डिल, कुण्डल, मुण्ड, वेणिस्कन्ध, कुमारक, बाहुक, शृङ्गवेग, धूर्तक, पात, पातर (म. आ. ५२.१२)।

धृतराष्ट्रवंश—शङ्कुकर्ण, पिङ्गलक, कुठारमुख, पेचक, पूर्णाङ्गद, पूर्णमुख, प्रहस, शकुनि, हरि, अमाठक, कोमठक, श्वसन, मानव, वट, भैरव, मुण्डवेगाङ्ग, पिशङ्ग, उद्रपारथ, ऋषभ, वेगवत्, पिण्डारक, महाहनु, रक्ताङ्ग, सर्वसारङ्ग, समृद्ध, पाट, राक्षस, वराहक, वारणक, सुमित्र, चित्रवेदिक, पराशर, तरुणक, मणिस्कन्ध, आरुणि (म. आ. ५२.१४–१७)।

निवासस्थान—नागों के तीन प्रमुख निवासस्थानों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है। वे स्थान इस प्रकार हैं:—

(१) **नागलोक**—यह नागों का प्रमुख निवासस्थान था (म. उ. ९७.१)। नागराज वासुकि इस देश के राजा थे। इस लोक की स्थिति भूतल से हजारो योजन दूर थी (म. आश्व.५७.३३)। यह लोक सहस्त्र योजन विस्तृत था।

(२) **नागधन्वातीर्थ**—सरस्वती नदी के तटवर्ती एक प्राचीन तीर्थ, जहाँ नागराज वासुकि का निवासस्थान था। यही उसको नागराज के पद पर अभिषेक हुआ था।

(३) **नागपुर**—नैमिषारण्य में गोमती नदी के तट पर स्थित एक नगर, जहाँ पद्मनाभ नामक नाग का निवासस्थान था (म. शां. ३४३.२–४)।

२. मथुरा का एक राजवंश (भोगिन् देखिये)।

नागदत्त--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३२. ११३५*)।

नागदत्ता--एक अप्सरा।

नागवीथी--धर्म ऋषि की यामी से उत्पन्न कन्या।

नागाशिन्--गरुड की एक प्रमुख संतान (म. उ. ९९.९।)

नागेय--वसिष्ठ कुल का गोत्रकार।

नागेश्वर--शंकर का एक अवतार। दारुक नामक राक्षस को मार कर, इसने सुप्रिय नामक वैश्यनाथ का संरक्षण किया था। यही अवतार 'औंढ्य नागनाथ है नाम से प्रसिद्ध है (शिव. शत. ४२)। भूतेश्वर इसका उपलिंग है (शिव. कोटि. ४.१)।

नाग्नजित--स्वर्जित का पैतृक नाम।

नाग्नजिती--सत्य ५. देखिये।

नाचिक(कि)--विश्वामित्र का पुत्र।

नाचिकेत--नचिकेतस् ऋषि का नामांतर (नचिकेतस् देखिये)।

नाडापिती--शकुंतला के लिये प्रयुक्त विशेषण। इसका अर्थ निश्चित रूप से बताया नहीं जा सकता (श. ब्रा. १३.५.४.१३)।

नाडचनीय--ब्रह्मांडमत में व्यास की सामशिष्य परंपरा के लोकाक्षि का शिष्य (व्यास देखिये)।

नाडायन--अंगिराकुल का गोत्रकार।

नाडीजंघ--एक बकराज। यह कश्यप ऋषि का पुत्र, एवं ब्रह्माजी का मित्र था। इसे 'राजधर्मन्' नामांतर भी प्राप्त था।

देवकन्या के गर्भ से जन्म लेने के कारण, इसकी शरीर की कान्ति देवता के समान दिखायी देती थी। यह बड़ा विद्वान्, एवं दिव्य तेज से संपन्न था (म. शां. १६३.१९-२०)।

गौतम नामक कृतघ्न ब्राह्मण ने इसका वध किया। किंतु सुरभि के फेन से यह पुनः जीवित हुआ (गौतम ५. देखिये)।

२. इंद्रद्युम्न सरोवर पर रहनेवाला एक चिरजीवि बक (म. व.)।

नाड्वलायन एवं **नाड्वलेय**--नड्वला के पुत्रों का मातृक नाम।

नाथ--विकुंठ देवों में से एक।

नान्यादृश--मरुद्गणों के छठवें गणों में से एक।

नाभ--नाभाक राजा का नामान्तर (नाभाक २. देखिये)।

२. चाक्षुष मन्वंतर का एक ऋषि।

३. (सो.) एक राजा। यह नल राजा का पुत्र था। इसने दस हजार वर्षों तक राज्य किया।

नाभावत्ति--भागवत्ति देखिये।

नाभाक--एक सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. ८.३९-४१)। यह 'नभाक' ऋषि का पुत्र था। ऋग्वेद के तीन या चार सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इसे दिया गया है (ऋ. ८.४१. २)।

'नाभाक काण्व' नाम से इसका निर्देश, कई जगह प्राप्त है। किंतु लुडविग के मत में, यह 'काण्व' न हो कर, 'आंगिरस' वंश का था (लुड. ऋग्वेद अनुवाद. ३. १०७)। इसके एक सूक्त में, यह सूर्यवंशी आंगिरस होने का निर्देश भी प्राप्त है।

अपने एक सूक्त में इसने कहा है, मेरे पिता नभाक, अंगिरस, मांधातृ एवं अत्री के तरह, नये स्तोत्र तयार कर मैं इंद्र एवं अग्नि की स्तुति कर रहा हूँ (ऋ. ८.४०. १२)। इस निर्देश के कारण, ऋषि इस काल मांधातृ के पश्चात् का था, यह शाबित होता है।

२. (सू. इ.) अयोध्या देश का एक राजा। वायु, भागवत, तथा विष्णुमत में, यह श्रुत का पुत्र था। मत्स्य मत में यह भगीरथ का पुत्र था। मत्स्य में इक्ष्वाकु राजा 'श्रुत' का निर्देश ही नहीं है।

विष्णु एवं वायु में इसे 'नाभाग', एवं भागवत में इसे 'नाभ' कहा गया है।

नाभाग--वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक, एवं प्राचीनकाल के एक महाप्रतापी राजा (पद्म. सृ. ८)। कई ग्रंथों में, इसे वैवस्वत मनु का पौत्र, एवं नभग राजा का पुत्र कहा गया है (म. आ. ७७.१४; भा. ९.४)।

इसने समुद्रपर्यंत पृथ्वी को सात दिन में जीता था, एवं सत्य के द्वारा उत्तम लोकों पर विजय पायी थी (म. व. २६.११)। पृथ्वी को जीतने के बाद, इसने उसे दक्षिणा के रूप में ब्राह्मणों को दे दिया (म. शां. ९७. २१)। किंतु शीलवान् एवं दयालु होने के कारण, दी हुई पृथ्वी स्वयं इसके पास वापस आ गयी (म. शां. १२४.१६-१७)।

इसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया था। मांसभक्षण के त्याग के इस पुण्य के कारण, इसे 'परावरतत्त्व' का

ज्ञान हो गया, एवं ब्रह्मलोक में इसे प्रवेश मिल गया (म. अनु. ११५.५८-६८)।

इसके सत्याचरण एवं उदारता की एक कथा पद्मपुराण में दी गयी है। अपने कुमारआयु में, यह गुरुगृह में विद्यार्जन कर रहा था। यह मौका देख, वैवस्वत मनु के अन्य पुत्रों ने उसका राज्य आपस में बाँट लिया। नाभाग को उसके राज्य के हिस्से से वंचित कर, इसे इसका पिता हिस्से के रूप में दिया। फिर इसके पिता ने इसे कहा, 'तुम चिंता मत करो। विपुल धनार्जन का रास्ता मैं तुम्हे दिखाता हूँ। आंगिरस ऋषि यज्ञ कर रहे है। यज्ञ के छठवें दिन उन्हे कुछ भ्रम सा हो कर, यज्ञ के मंत्र की उन्हे विस्मृति हो जाती है। उस वक्त, तुम उसे दो 'वैश्वदेवसूक्त' गा कर बताओ। उससे उसका यज्ञ पूरा होगा, एवं प्रसन्न हो कर, यज्ञ के लिये एकत्रित किया सारा धन वह तुम्हे दे देंगा।'

पिता के कथनानुसार, इसने अंगिरस् को 'मंत्रस्मरण के बारे में सहायता दी' एवं अंगिरस् ने भी यज्ञ का सारा धन इसे दे दिया। किंतु इसी वक्त एक कृष्णवर्णीय पुरुष का रूप धारण कर, रुद्र वहाँ उपस्थित हुआ, एवं यज्ञधन माँगने लगा। यज्ञ का अवशिष्ट धन पर रुद्र का ही अधिकार रहता है, यह जानते ही नामाग ने सारा द्रव्य रुद्र को दे दिया। इसकी इस उदारता से प्रसन्न हो कर, रुद्र ने आंगिरस के यज्ञ की सारी संपत्ति नाभाग को प्रदान की एवं इसे 'ब्रह्मविद्या' भी सिखायी (पद्म. सृ. ८)।

बिल्कुल यही कथा नाभानेदिष्ठ के नाम पर प्राचीन वैदिक ग्रंथों में दी गयी है (ऋ. १०.६१-६२)। ऋग्वेद के उन सूक्तों की रचना 'नाभाकक्काण्व' ने की हैं (ऋ. ८.३९-४१; नि. १०.५)।

नाभाग को अंबरीष नामक एक पुत्र था। इसके वंश की विस्तृत जानकारी बारह पुराणों में दी गयी है (वायु. ८९; विष्णु. ४.२; अग्नि. २७२; ब्रह्मांड. ३.६३; ब्रह्म. ७; मत्स्य. १२; ह. वं. १.१०; भा. ९.४-६)।

२. (सू. इ.) अयोध्या देश का राजा। विष्णु, वायु एवं भागवतमत में, यह श्रुत राजा का पुत्र था। मत्स्यमत में, भगीरथ राजा के दो पुत्रों में से यह कनिष्ठ पुत्र था। भागवत में इसका 'नाभ' नामांतर प्राप्त है। इसके पुत्र का नाम अंबरीष था। किंतु रामायण में अंबरीष इसके पूर्वकालीन बताया गया है।

इसके नाभागारिष्ट, नाभानेदिष्ट, एवं नाभागदिष्ट नामांतर भी प्राप्त हैं (अग्नि. २७२. १७१; नभग देखिये)।

३. (सू. दिष्ट.) वैशाली देश का राजा। यह वैवस्वत मनु का पौत्र, एवं दिष्ट राजा का पुत्र था। विष्णुमत में यह 'नेदिष्ट' का भागवतमत में यह 'दिष्ट' का, एवं वायुमत में यह मनु का पुत्र था (सुप्रभा ३. देखिये)।

नाभानेदिष्ठ मानव—एक सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. १०. ६१-६२)। यह स्वायंभुव मनु का पुत्र था। पुराणों में 'नाभाग' के नाम पर दी गयी 'आंगिरस यज्ञ' की कथा वैदिक ग्रंथों में इसके नाम पर दी गयी है (ऐ. ब्रा. ५. १४; तै. सं. ३. १. ९. ४-६; सां. ब्रा. २८. ४; ३०. ४; सां. श्रौ. २६. ११. २८-३०)।

'पंचविंशब्राह्मण' में इसके नाम का निर्देश 'नाभानेदिष्ठी' नाम से कर, इसने प्रणयित ऋग्वेद सूक्तों को 'नाभानेदिष्ठीय सूक्त' कहा गया है (पं. ब्रा. २०. ९. २)।

नाभि—एक राजा। प्रियव्रतपुत्र आग्नीध्र राजा को पूर्वचित्ति नामक अप्सरा से यह उत्पन्न हुआ था। इसे मेरुदेवी नामक स्त्री थी, जिससे इसे ऋषभदेव नामक पुत्र हुआ। इसके नाम से, इसके 'वर्ष' (राज्य) को 'अजनाभवर्ष' नाम प्राप्त हुआ (भा. ५. २. १९; ४. २)।

नाभिगुप्त—कुशद्वीप का राजा 'प्रैयव्रत' हिरण्यरेतस् के सात पुत्रों में से एक। हिरण्यरेतस् ने अपने राज्य के सात भाग कर, वे अपने सात पुत्रों में बाँट दिये थे (भा. ५.२०.१४; हिरण्यरेतस् देखिये)।

नायकि—अंगिरसकुल का गोत्रकार।

नायु—दक्ष एवं असिक्नी की कन्या, तथा कश्यप की पत्नी।

नारद—एक वैदिक द्रष्टा एवं यज्ञवेत्ता (अ. वे. ५. १९.९; १२.४.१६; २४; ४१; मै. सं. १.५.८)। यह हरिश्चंद्र राजा का पुरोहित था, एवं पुरुषमेध करने की राय इसीने उसे दी थी (ऐ. ब्रा. ७.१३)। वशा धेनु का मांस ब्राह्मण ने भक्षण करना योग्य है या अयोग्य, इस विषय में इसका नामनिर्देश अथर्ववेद में कई बार आया है।

यह बृहस्पति का शिष्य था (सां. ब्रा. ३.९)। यद्यपि सारी विद्याएँ इसने बृहस्पति से प्राप्त की थीं, तथापि 'ब्रह्मज्ञान' के प्राप्ति के लिये, यह सनत्कुमार के पास गया था (छां. उ. ७.१.१)।

सोमक साहदेव्य नामक अपने शिष्य को, इसने 'सोमविद्या' सिखायी थी (ऐ. ब्रा. ७.३४)। पर्वत नामक अन्य आचार्य के साथ, इसने आंत्रष्ठय एवं युधांश्रौष्टि राजाओं को 'ऐंद्रमहाभिषेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८.२१)।

२. एक देवर्षि एवं ब्रह्माजी का मानसपुत्र। एक धर्मज्ञ तत्त्वज्ञ, वेदांतज्ञ, राजनीतिज्ञ एवं संगीतज्ञ के नाते, नारद का चरित्रचित्रण महाभारत में किया गया है (म. आ. परि. १. १११)। जी चाहे वहाँ भ्रमण करनेवाले एक ऋषि के नाते, नारद तीनों त्रिकाल आकाशमार्ग से प्रवास करता था, एवं इसका संचार तीनों लोकों में रहता था। यह वेद एवं वेदांत में पारंगत, ब्रह्मज्ञानयुक्त, एवं नयनीतिज्ञ था। राजाओं के घर में इसे बृहस्पति जैसा मान था। यह 'नानार्थकुशल', एवं लोगों के धर्म, राजनीति एवं नित्यव्यवहार आदि विषयों के संशय दूर करने में प्रवीण था। स्वभाव से यह पुण्यशील सीदासादा एवं मृदुभाषणी था। यह उत्कृष्ट प्रवचनकार एवं संगीतकार था।

स्वरूपवर्णन—नारद की शरीरकांति श्वेत एवं तेजस्वी थी। इंद्र ने प्रदान किये सफेद, मृदु एवं धूत वस्त्र यह परिधान करता था। कानों में सुवर्णकुंडल, कंधों पर वीणा, एवं सिर पर, 'श्लक्ष्ण शिखा' (मृदु चोटी) से, यह अलंकृत रहता था।

जन्म—नारद ब्रह्माजी का मानसपुत्र एवं विष्णु का तीसरा अवतार था (भा. १.३.८; मत्स्य. ३.६-८)। यह ब्रह्माजी की जंघा से उत्पन्न हुआ था (भा. ३.१२. २८)। यह नरनारायणों का उपासक था (भा. १.३), एवं दर्शन तथा जिज्ञासापूर्ति के हेतु, यह उनके पास हमेशा जाता था (म. शां. ३२१.१३-१४)। यह चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षिओं में से एक था।

पुनर्जन्म—नारद ने दक्ष के 'हर्यश्व' नामक दस हजार पुत्रों को सांख्यज्ञान का उपदेश दिया, जिस कारण वे सारे विरक्त हो कर घर से निकल गये (म. आ. ७०. ५-६)। अपने पुत्रों को प्रजोत्पादन से परावृत्त करने के कारण, दक्ष नारद पर अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसे शाप दिया (विष्णु. १.१५)। इस शाप के कारण, नारद ब्रह्मचारी रह कर हमेशा भटकता रहा, एवं सारी दुनिया में झगड़े लगाता रहा (भा. ६.५.३७-३९)। दक्ष का शाप इसे जन्मजन्मांतर के लिये मिला था। इस कारण कश्यप प्रजापति के घर लिये अपने अगले जन्म में भी, दस के शाप की पीड़ा इसे पूर्ववत् ही भुगतनी पड़ी।

दक्ष के शाप की यही कहानी, अन्य पुराणों में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। हरिवंश के मत में, दक्ष ने नारद को शाप दिया, 'तुम नष्ट हो कर, पुनः गर्भवास का दुख सहन करोगे' (ह. वं. १.१५)। परमेष्ठी ने अन्य ब्रह्मर्षियों को आगे कर, नारद को उःशाप देने की प्रार्थना दक्ष से की। फिर दक्ष ने परमेष्ठी से कहा, 'मैं अपनी कन्या तुम्हें विवाह में दे दूँगा, एवं उस कन्या के गर्भ से नारद का पुनर्जन्म हो जायेगा (वायु. ६६.१३५-१५०; ब्रह्मांड. ३.२.१८)। इस उःशाप के अनुसार, परमेष्ठी का विवाह दक्षकन्या से होने के पश्चात्, उन्हे नारद पुत्ररूप में प्राप्त हो गया (ब्रह्म. १२.१२-१५)।

देवी भागवत के मत में, दक्ष ने नारद को शाप दिया, 'तुम्हारा नाश हो कर, अगला जन्म तुम्हें मेरे ही पुत्र के नाते लेना पडेगा'। इस शाप के अनुसार, नारद मृत हो गया एवं 'दक्ष' एवं वीरिणी के पुत्र के नाते, नया जन्म लेने पर विवश हो गया (दे. भा. ७.१)।

वायुपुराण के मत में, शिवजी के शाप के कारण जिन प्रजापतियों की मृत्यु हो गयी, उनमें नारद भी एक था (वायु. ६६.९)। अपने अगले जन्म में, यह कश्यप प्रजापति का पुत्र एवं अरुंधती तथा पर्वत इन कश्यप संतति का भाई बन गया (वायु. ७१. ७८. ८०)। महाभारत के मत में, पर्वत नारद का भाई न हो कर, भतीजा था (म. शां. ३०. ५; दे. भा. ६. २७)।

ब्रह्मवैवर्तपुराण में, नारद के पुनर्जन्म की कहानी कुछ अलग ढंग से दी गयी है। दक्ष के शाप के कारण, एक शूद्रस्त्रीगर्भ से यह पुनः उत्पन्न हुआ। इस नये जन्म में, इसकी माता कलावती नामक शूद्र स्त्री थी। द्रमिल नामक शूद्र की वह पत्नी थी। अपने पति की अनुमति से, कलावती ने पुत्रप्राप्ति के हेतु, कश्यप प्रजापति का वीर्य प्राशन किया। बाद में द्रमिल ने देहत्याग किया, एवं कलावती एक ब्राह्मण के घर प्रसूत हो कर, उसे एक पुत्र हुआ। वही नारद है। बाद में इसे कश्यप ऋषि को अर्पण किया गया। कृष्णस्तव के कारण, यह शापमुक्त हुआ, एवं ब्रह्मदेव ने इसे सृष्टि उत्पन्न करने की अनुज्ञा भी दी। किंतु यह आजन्म ब्रह्मचारी ही रहा।

महाभारत में, कश्यप एवं मुनि के पुत्र के रूप में,

नारद ने पुनः जन्म लिया, ऐसा निर्देश प्राप्त है (म. आ. ५९. ४३)।

देवों का वार्ताहर—त्रैलोक्य के राजाओं का वार्ताहर, एवं सलाहगार ऋषि मान कर, नारद का चरित्रचित्रण महाभारत में किया गया है। अर्जुन के जन्म के समय नारद उपस्थित था (म. आ. ११४.४६)। द्रौपदी के स्वयंवर में, अन्य गंधर्व एवं अप्सराओं के साथ, यह गया था (म. आ. १७८.७)। पश्चात् द्रौपदी के निमित्त, पांडवों का आपसमें कोई मतभेद न हो, इस उद्देश्य से नारद इंद्रप्रस्थ चला आया। पांडवों के प्रति, सुंद एवं उपसुंद की कथा का वर्णन कर, द्रौपदी के विषय में झगड़े से बचने के लिये कोई नियम बनाने की प्रेरणा, इसने पांड्वों को दे दी (म. आ. २०४)।

युधिष्ठिर इंद्रप्रस्थ का राजा होने के पश्चात्, नारद ने उसे हरिश्चंद्र की कथा सुना कर, राजसूय यज्ञ की प्रेरणा दी (म. स. ११.७०)। राजसूययज्ञ में अवभृथस्नान के समय, नारद ने स्वयं युधिष्ठिर को अभिषेक किया (म. स. ४९.१०)।

विदर्भ देश की राजकन्या दमयंती के स्वयंवर की वार्ता, इंद्र को नारद ने ही कथन की थी (म. व. ५१.२०-२४)। राजा अश्वपति के पास जा कर, सत्यवान् एवं सावित्री के विवाह का प्रस्ताव नारद ने ही प्रस्तुत किया था (म. व. २७८.११-३२)।

प्राचीन राजाओं की अनेक कथाएँ नारद के द्वारा 'महाभारत' में कथन की गयी हैं। उनमें से इसने सृंजय राजा को कथन किये, 'षोडश राजकीय उपाख्यान' की कथाएँ विशेष महत्त्वपूर्ण मानी जाती है (म. द्रो. परि. १.८.३२५-८७२)। उन कथाओं में निम्नलिखित राजाओं के चरित्र, पराक्रम, महत्ता, दानशीलता, एवं उत्कर्ष का वर्णन किया गया है:—१. आविक्षित मरुत्त, २. वैदिथिन सुहोत्र, ३. पौरव, ४. औशीनर शिबि, ५. दाशरथि राम, ६. ऐक्ष्वाकु भगीरथ, ७. ऐलविल दिलीप, ८. यौवनाश्व मान्धातृ, ९. नाहुष ययाति, १०. नाभाग अंबरीष, ११. यादव शशबिंदु, १२. आमूर्तरयस गय, १३. सांकृति रंतिदेव, १४. दौष्यन्ति भरत, १५. वैन्य पृथु, १६. जामदग्न्य परशुराम। नारद ने कथन की हुई येही कथाएँ, भारतीय युद्ध के बाद, श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से निवेदन की थी (म. शां. २९)।

भारतीय युद्ध के रात्रियुद्ध में, नारद ने कौरवपांडवों की सेनाओं में दीपक का प्रकाश निर्माण किया था (म. द्रो. १३८)। भारतीय युद्ध में हुए कौरवों के संपूर्ण विनाश की वार्ता, बलराम को नारद ने ही सुनायी थी (म. श. ५३. २३-३१)। अर्जुन एवं अश्वत्थामा के युद्ध में ब्रह्मास्त्र को शांत करने के लिये नारद प्रकट हुआ था (म. सौ. १४. ११-१२)। युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर के पास आ कर, उसका कुशल समाचार नारद ने पूछा था (म. शां. ९-१२)।

युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय नारद उपस्थित था (म. आश्व. ९०. ३८)। प्राचीन ऋषिओं की तपःसिद्धि का दृष्टान्त दे कर, नारद ने धृतराष्ट्र की तपस्याविषयक श्रद्धा को बढाया था (म. आश्र. २६.१)। वन में धृतराष्ट्र, कुन्ती, एवं गांधारी दावानल से दग्ध होने का समाचार, नारद ने ही युधिष्ठिर को कथन किया था (म. आश्र. ४५. ९-३१)। नारद ने युधिष्ठिर से कहा, 'धृतराष्ट्र लौकिक अग्नि से नहीं, किंतु अपने ही अग्नि से दग्ध हो गया है'। इतना कह कर, इसने युधिष्ठिर से धृतराष्ट्र को जलांजली प्रदान करने की आज्ञा दी (म. आश्र. ४७. १-९)। सांब के पेट से मुसल पैदा होने का शाप देनेवाले ऋषिओं में, नारद एक था (म. मौ. २. ४)।

तत्त्वज्ञ नारद—एक तत्त्वज्ञ के नाते, नारद श्रेष्ठ विभूति थे। तत्त्वज्ञ नारद ने दिये उपदेश के अनेक कथाभाग 'महाभारत' में निर्देश किये गये है। तीस लाख श्लोकोवाला 'महाभारत' नारद ने देवताओं को सुनाया था (म. आ. परि. १. ४) 'पंचरात्र' नामक आत्मतत्त्व का उपदेश नारद ने व्यास को दिया था (म. शां. ३२६)। इसने सूर्य के अष्टोत्तरशत नाम का उपदेश धौम्य को दिया था (म. व. ३. १७-२९)। इसने शुकदेव को वैराग्य, ज्ञान आदि विविध विषयों का उपदेश दिया था (म. शां. ३१६-३१८)। मार्कंडेय को नारद ने धर्मशास्त्र एवं तत्वज्ञान के बारे में जानकारी दी थी (म. अनु. ५४-६३ कुं.)। पूजनीय पुरुषों के लक्षण, एवं उनके आदरसत्कार से होनेवाले लाभ का वर्णन इसने श्रीकृष्ण को बताया था (म. अनु. ३१. ५-२५)। श्रीकृष्ण की माता देवकी को, विभिन्न नक्षत्रों में विभिन्न वस्तुओं के दान का महत्व नारद ने कथन किया था (म. अनु. ६४. ५-३५)।

'श्रेयःप्राप्ति' के लिये नारायण की उपासना करने का उपदेश, नारद ने पुंडरीक को दिया था (म. अनु. १२४)। समुद्र के किनारे ब्रह्मसत्र करनेवाले ज्ञानी

प्रचेताओं को नारद ने ज्ञानोपदेश दिया था (म. शां. ३१६-३१९)। सृष्टि की उत्पत्ति तथा लय के बारे में जानकारी इसीने देवल को बतायी थी (म. शां. २६७)। समंग के साथ इसका ज्ञानविषयक संवाद हुआ था (म. शां. २७५)। पुत्रशोक करनेवाले अकंपन राजा को, मृत्यु की कथा बता कर इसने शांत किया था (म. शां. २४८-२५०)। शास्त्रश्रवण से क्या लाभ होता है, इसकी जानकारी इसने गालव को दी थी (म. शां. २७६)।

प्राणापान में से प्रथम क्या उत्पन्न होता है, इसका ज्ञान नारद ने देवमत को प्रदान किया (म. आश्व. २४)। शतयूप को इसने स्वर्ग के बारे में जानकारी दी (म. आश्व. २७)।

भागवत आदि ग्रंथों में भी तत्त्वज्ञ नारद के अनेक निर्देश दिये गये है। सावर्णि मनु को 'पंचरात्रागमतंत्र' का उपदेश नारद ने दिया था (भा. १.३.८; ५.१९. १०)। इसने व्यास को 'भागवत' ग्रंथ लिखने की प्रेरणा दी थी (भा. १.५.८)। ऋषिओं को इसने 'भागवतमाहात्म्य' बताया था (पद्म. उ. १९३-१९५)।

संगीतकलातज्ञ—नारद श्रेष्ठ श्रेणी का संगीतकलातज्ज्ञ एवं 'स्वरज्ञ' था (म. आ. परि. १११.४०)। इसका 'नारदसंहिता' नामक संगीतशास्त्रसंबंधी एक ग्रंथ भी प्राप्त है।

नारद ने संगीत कला कैसी प्राप्त की, इसके बारे में कल्पनारम्य कथा अध्यात्मरामायण में दी गई है (अ. रा. ७)। एक बार लक्ष्मी के यहाँ संगीत का समारोह हुआ। उस समय गायनकला न आने के कारण, लक्ष्मी ने नारद को दासियों के द्वारा बेंत एवं धक्के मार कर सभास्थान से निकाल दिया, एवं संगीतकलाप्रवीण होने के कारण तुंबरु का सम्मान किया। यह अपमान सहन न हो कर, इसने लक्ष्मी को शाप दिया, 'तुम राक्षसकन्या बनोगी। मटके में इकट्ठा किया गया खून पी कर रहनेवाली स्त्री के उदर से तुम्हारा जन्म होगा। अपने माता के नीच कृत्य के कारण, तुम्हें घर से निकाल दिया जायेगा'।

गायन सीखने के लिये यह गानबंधुओं के पास गया। वहाँ यह गानविद्याप्रवीण बन गया, एवं इसे स्वरज्ञान हो कर, संगीतकला में अन्तर्गत दशसहस्र स्वरों का सूक्ष्म भेदाभेद यह समझने लगा। किन्तु इसका संगीत ज्ञान केवल ग्रांथिक ही रहा। इसके गले से निकलनेवाले स्वर अभी तक वेढंगे ही रहे। अपने अधुरे संगीतज्ञान का प्रदर्शन करने के हेतु, यह तुंबरु के पास गया। वहाँ इसे सारी रागिनियाँ टूटी मरोड़ीं अवस्था में दिखाई पडीं। इसने उन्हें उनकी यह विकल अवस्था का कारण पूछा। फिर उन्होंने कहाँ, 'तुम्हारे वेढंगे' गायन के कारण, हमारी यह हालत हो चुकी है। तुंबरु का गायन सुनने के बाद हमें पूर्वस्थिति प्राप्त होगी'।

रागिनियों के इस वक्रोक्तिपूर्ण भाषण से लज्जित हो कर, यह श्वेतद्वीप में गया। वहाँ इसने विष्णु की आराधना की। उस आराधना से प्रसन्न हो कर श्रीविष्णु ने इससे कहा, 'कृष्णावतार में मैं खुद तुम्हें गायन सिखाऊंगा'। इस वर के अनुसार, कृष्णावतार के समय, यह कृष्ण के पास गया। वह जांबवती, सत्यभामा एवं रुक्मिणी, इन कृष्णपत्नियों ने तथा बाद में स्वयं कृष्ण ने इसे गायनकला में पूर्ण पारंगत किया। श्रीकृष्ण के पास जाने के पहले यह पुनः एक बार तुंबरु के पास गया था। परंतु वहाँ धैवतों के साथ षड्जादि छः देवकन्याओं को इसने देखा, एवं शरम के मारे यह वहाँसे वापस चला आया।

नारद-नारदी—पुराणों में नारद का व्यक्तिचित्रण, एक धर्मज्ञ देवर्षि की अपेक्षा, एक हास्यजनक व्यक्ति के नाते भी किया गया प्रतीत होता है।

विष्णु की माया के कारण, नारद का रूपांतर कुछ काल के लिये 'नारदी' नामक एक स्त्री में हो गया था। यह कथा विभिन्न पुराणों में, अलग अलग ढंग से दी गई है। 'नारदपुराण' के मत में, वृंदा के कहने पर नारद ने एक बार सरोवर में डुबकी लगाई। उस सरोवरस्नान के कारण, इसका रूपांतर नारदी नामक स्त्री में हो गया। इसी नारदी का कृष्ण से वैवाहिक समागम हो गया। पश्चात् अन्य एक सरोवर में स्नान करने पर, इसे पुरुषरूप फिर वापस मिल गया (नारद. २. ८७; पद्म-पा. ७५)।

यही कथा 'ब्रह्मपुराण' में इस प्रकार दी गयी है। एक बार श्वेतद्वीप में जा कर, नारद ने श्रीविष्णु की स्तुति की। उसने प्रसन्न हो कर इसे वर माँगने के लिये कहा। फिर इसने कहा, 'भगवन् मुझे अपनी माया दिखाओ'। इसे गरुड पर बैठा कर विष्णु कान्यकब्ज देश ले गया, तथा एक सरोवर में स्नान करने के लिये उसने इसे कहा। स्नान के लिये सरोवर में डुबकी लगाते ही इसे पता चला कि, इसका रूपांतर काशिराज की कन्या सुशीला नामक स्त्री में हो गया है। बाद में सुशीला का रूप धारण किये हुए नारद का ब्याह विदर्भ राजा सुधर्मा से हुआ। पश्चात्

विदर्भ राजा सुशर्मा, तथा काशिराज का आपस में युद्ध हो कर, दोनों का ही नाश हो गया। जनककुल तथा भर्तृकुल दोनों का ही नाश देख कर, दुःखातिरेक से इसने चिता में प्रवेश किया।

बात यहाँ तक बढ़ते ही यह पानी से बाहर आया एवं यह सारा कथाभाग इसे सपने जैसा प्रतीत होने लगा। किन्तु उस प्रसंग के चिह्नस्वरूप जलने की निशानी इसकी जाँघ पर रह गई, तथा उसके दुःख से यह लगातार तड़पने लगा। सरोवर के किनारे बैठे हुए विष्णु का दर्शन लेते ही, इसकी वेदना शान्त हो गयी (ब्रह्म. २२८)।

'देवीभागवत' के कथनानुसार, अपने नारीअवतार में नारद तालजंघ राजा की पत्नी बना था, जिससे इसे बीस पुत्र पैदा हुएँ थे (दे. भा. ६. २८–३०)।

एक बार गाने की मधुर आवाज सुन कर, नारद ने वृंदा से पूछा, 'यह गाने की आवाज कहाँ से आ रही है?' फिर उसने इसे गीतगायन में तल्लीन कुब्जा दिखाई, एवं कुब्जा का जन्मवृत्तांत इसे बताया (नारद २.८०)।

विवाह—शिबिराज सृंजय की दमयंती नामक कन्या के साथ नारद का विवाह हुआ था, ऐसा कथाभाग कई पुराणों में दिया गया है। 'नारदविवाह' की ब्रह्मवैवर्त पुराण में दी गयी कथा इस प्रकार है (ब्रह्मवै. ४.१३०.१०–१५)। एक बार नारद तथा उसका भतीजा पर्वत घूमते घूमते शैव्यपुत्र सृंजय (संजय) के घर आये, एवं वहाँ कुछ काल तक रह गये। सृंजय ने इनका स्वागत किया, एवं अपनी कन्या दमयंती को इनके सेवा में नियुक्त किया। उस समय नारद तथा पर्वत में ऐसा करार हुआ था, 'इन दोनों के मन में जो भी बात आवेगी, वह छिपाना नहीं बल्कि तत्काल दूसरे को कथन करना, अगर कोई कुछ छिपाने की कोशिश करे, तो दूसरा उसे शाप दे सकता है'।

कई दिन बीतने के बाद, नारद दमयन्ती पर प्रेम करने लगा, किन्तु यह बात इसने पर्वत से छिपा रखी। नारद की इस दगाबाजी को देख कर, पर्वत इस पर अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं उसने इसे शाप दिया, 'तेरा मुख बानर के सदृश हो जावेगा, एवं अन्यों को तुम साक्षात् मृत्यु के समान दिखाई दोगे'। यह शाप सुन कर, नारद ने भी पर्वत को प्रतिशाप दिया, 'तुम्हें स्वर्गप्राप्ति नहीं होगी'।

इस पर पर्वत दीन हो कर नारद की शरण में आया, तथा इसे अपना शाप वापस लेने के लिये प्रार्थना करने लगा। फिर नारद एवं पर्वत ने अपने अपने शाप वापस ले लिये। पश्चात् सृंजय की कन्या दमयती से नारद का ब्याह हो गया (दमयंती देखिये)।

सुवर्णष्ठीविन् कथा—सृंजय की सेवा से संतुष्ट हो कर, नारद ने उसे वर माँगने के लिये कहा। सृंजय ने सर्वगुण-संपन्न पुत्र माँगा। नारद के वरानुसार कुछ दिनों के बाद सृंजय को एक पुत्र हुआ। महाभारत द्रोणपर्व के अनुसार, जिसके मूत्रपूरीषादि उत्सृष्ट पदार्थ सुवर्ण के है, ऐसा पुत्र सृंजय ने नारद से माँगा। नारद के आशीर्वाद से उसे वैसा ही सुवर्णष्ठीविन् नामक पुत्र पैदा हुआ। सुवर्णमय मलमूत्र विसर्जन करनेवाले उस बालक को कई चोर चुरा ले गये तथा उसका उदर उन्होंने विदीर्ण किया। किन्तु इच्छित सुवर्णप्राप्ति न होने के कारण, क्रोधित होकर वे आपस में ही लड़ कर मर गये (म. द्रो. ५५)।

शान्तिपर्व में यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गई है। 'अपना पुत्र इंद्र का पराजय करनेवाला हो,' ऐसी सृंजय की इच्छा थी। 'तुम्हारा पुत्र दीर्घायु नहीं होगा' ऐसा शाप पर्वत ने सृंजय को दिया था। फिर सृंजय अत्यंत निराश हो गया। उसका दीनवदन देख कर नारद ने उसे कहा, 'पर्वत के शाप से तुम्हारा पुत्र मृत होते ही, मेरा स्मरण करो। मैं तुम्हे उसी रूपगुण का दूसरा पुत्र प्रदान करूँगा।'

नारद के वर के अनुसार सृंजय को एक पुत्र हुआ। उसका नाम सुवर्णष्ठीविन् रख दिया गया। वह अपना पराभव करेगा ऐसा भय इंद्र को लगा। इसलिये इंद्र ने उस पुत्र के पीछे वज्र छोडा, जिससे कुछ फायदा नहीं हुआ। बाद में एक दाई के साथ वह पुत्र सरोवर की ओर घूमने गया। उस समय उसे एक शेर ने मार ड़ाला। पुत्रशोक से पागल से हुए, सृंजय ने नारद का स्मरण किया। फिर नारद प्रकट हुआ, एवं सृंजय के शोकहरणार्थ इसने उसे काफी उपदेश किया। उपदेश करते समय इसने मरुत्तादि राजाओं का चरित्र कथन कर के उसका दुःख कम किया। उसका शोक दूर होने पर, नारद ने उसे उसका मृत पुत्र वापस दिया (म. द्रो. परि. १. क्र. ५८)।

शत्रुघ्न को चेतावनी—रामायणकाल में राम का अश्वमेधीय अश्व वीरमणि ने पकड़ लिया। उस समय वहाँ प्रकट हो कर, नारद ने अश्व की रक्षा करनेवाले शत्रुघ्न को चेतावनी दी, एवं सावधानी से युद्ध करने के लिये कहा। 'युद्धभूमि में विजय अत्यंत प्रयत्न से ही प्राप्त होता है,' ऐसा इसके उपदेश का सार था।

कलियुग में—एक बार पुष्करक्षेत्र में ऋषिओं का सत्र चालू था। वहाँ अनेक प्रकार की चर्चाएँ चल रही थीं। उस में कलियुग के बारे में चर्चा करते वक्त एक ऋषि ने कहा, 'अन्य कौन से ही युग से कलियुग अच्छा है, क्यों कि उसमें फलप्राप्ति शीघ्र होती है।' इतने में नारद एक हाथ में शिश्न, तथा एक हाथ में जबान पकड़ कर वहाँ आया। इसने ऋषियों से कहा, 'ये दो इन्द्रिय कलियुग में अनिवार्य होती है। इसलिये इस पाखंड-प्रचुर भारत का त्याग कर आप अन्यत्र चलें'। यह सुनते ही ऋषियों ने सत्र समाप्त कर दिया, तथा वे वहाँ से चले गये (स्कन्द. २. ७. २२)। जिस समय ब्रह्मदेव ने सत्र किया, उस समय उपस्थित ब्रह्मगणों में नारद एक था (पद्म. सृ. ३४)। इसने कोटितीर्थ, जयादित्य, नवदेवी, भद्रादित्य इ. तीर्थों की स्थापना की (स्कन्द. १. ४३-४७)।

कृष्णकथाओं में नारद—एक बार नारद नंद के घर गया। वहाँ इसने सोचा कि, कृष्ण जब प्रत्यक्ष विष्णु है, तो उसकी पत्नी लक्ष्मी ने भी यहीं कहीं अवतार अवश्य लिया होगा। इसी विचार से इसने नंद के परिवार में लक्ष्मी का तलाश करना प्रारंभ किया। पश्चात् इसने देखा कि, भानु नामक गोप की अंधी, लूली, एवं बहरी कन्या बन कर, लक्ष्मी ने नंदपरिवार में जन्म लिया है (पद्म. पा. ७१)।

कृष्णजन्म के समय, उसके पिता वसुदेव एवं माता देवकी मथुरा का राजा कंस के कारागार में कैद किये गये थे। उस समय, वसुदेव एवं देवकी के आँठवे पुत्र से अपने को धोखा है, यह समझ कर, कारागार में पैदा हुएँ उनके पहले छः पुत्रों को कंस छोड़ देना चाहता था। किंतु कंस की पापराशि बढ़ाने के हेतु, उन सारे पुत्रों का वध करने की प्रेरणा नारद ने कंसराजा को दी। उस उपदेश के अनुसार, कंस ने देवकी के छः पुत्रों का, जन्मते ही वध किया (भा. १.१.६४)।

नरकासुर के बंदीखाने से मुक्त किये सोलह हजार स्त्रियों से, कृष्ण ने भिन्न भिन्न मंडपों में एक ही मुहूर्त पर विवाह किया। यह चमत्कृतिजनक वृत्त सुन कर नारद को बड़ा ही आश्चर्य हुआ। इस वार्ता की सत्यता अजमाने के लिये, यह कृष्ण के घर स्वयं चला आया, एवं हर-एक कृष्णपत्नी की कोठी में जा कर जाँच लेने लगा। वहाँ इसने देखा कि, अपने हरएक पत्नी के कोठी में, कृष्ण उपस्थित है, एवं किसी न किसी कार्य में वह मग्न है। फिर फजिहत हो कर, नारद कृष्ण की शरण में गया (भा. १०.५९.३३-४५)।

एक बार श्रीकृष्ण अपनी पत्नी रुक्मिणी के पास बैठा था। उस वक्त नारद ने प्रकट हो कर, उसे स्वर्ग का पारिजातक पुष्प दिया। श्रीकृष्ण ने उसे रुक्मिणी को दिया। इस कारण सत्यभामा तथा कृष्ण में झगड़ा हो गया (ह. वं. २.६५-७३; विष्णु. ५.३०)। 'पति का दान करने पर वही पति जन्मजन्मान्तर में प्राप्त होता है', आदि कह कर, इसने सत्यभामा से स्वयं ही श्रीकृष्ण का दान ले लिया। पश्चात् कृष्ण तथा पारिजातक वृक्ष के भार का सुवर्ण ले कर, इसने उसे लौटा दिया (पद्म. उ. ८८)।

पार्वती का विवाह शंकर के साथ करने की सलाह नारद ने हिमालय को दी थी (पद्म. सृ. ४३)।

इंद्रसभा में--एक बार इन्द्र अपनी सभा में अप्सराओं के साथ बैठा था। उस वक्त नारद वहाँ गया। उत्थापन के द्वारा योग्य मान देने के बाद, इन्द्र ने नारद से पूछा, 'मैं किस अप्सरा को नृत्य करने का आदेश दूँ'? नारद ने कहा 'गुणरूप में जो खुद को श्रेष्ठ समझती हो वही नृत्य करें'। तब मैं श्रेष्ठ, मैं श्रेष्ठ कह कर सारी अप्सराएँ आपस में झगड़ने लगी। यह देख इन्द्र ने उन्हें कहा, 'इसका निर्णय नारद ही कर देंगे'। नारद से पूछा जाते ही इसने कहा, 'तप करनेवाले दुर्वासस् को जो मोहित कर सके उसे ही मैं श्रेष्ठ कहूँगा'। पश्चात् वपु नामक एक अप्सरा ही इस काम के लिये तैयार हुई (मार्क. १.३०-४७)।

इनके अतिरिक्त अनेक पौराणिक व्यक्तिओं के साथ नारद का संबंध आता है (नलकूबर, प्रह्लाद, रुद्रकेतु, शेष तथा वृन्दा देखिये)।

धर्मशास्त्रकार—धर्मव्यवहार पर नारद के 'लघु-नारदीय' एवं 'बृहन्नारदीय' ऐसे दो ग्रंथ उपलब्ध हैं। मनु तथा नारद के मतों में काफी साम्य है। याज्ञवल्क्य तथा पराशर ने प्राचीन धर्मशास्त्रकारों में नारद का उल्लेख नहीं किया है। किंतु विश्वरूप ने, वृद्धयाज्ञवल्क्य का (याज्ञ. १.४-५) एक श्लोक उद्धृत कर, नारद को दस धर्मशास्त्रकारों में से आद्य धर्मशास्त्रकार मान लिया है। विश्वरूप ने अन्यत्र भी इसका उल्लेख अनेक बार किया है (याज्ञ. २.१९०; १९६; २२६; ३.२५२)।

मेधातिथि ने नारद का एक गद्य उद्धरण ले कर, इसका अनेक बार उल्लेख किया है। अग्निपुराण में नारदस्मृति का काफी भाग आया है। 'स्मृतिचन्द्रिका', 'हेमाद्रि'

'पराशरमाधवीय' आदि ग्रंथों में, नारद के काफी श्लोक लिये गये हैं।

नारद याज्ञवल्क्य का परवर्ती होगा। नारद ने सात प्रकार के दिव्य दिये हैं। याज्ञवल्क्य ने पाँच ही प्रकार के दिये हैं। नारद ने न्यायशास्त्र का सुसंगत विवेचन नहीं किया। याज्ञवल्क्य ने उसे व्यवस्थित ढँग से किया है।

नारद किस प्रदेश का रहनेवाला था, यह बताना कठिन है। इसने कार्षापण (सिक्का) का उल्लेख किया है। यह सिक्का पंजाब में प्रचलित था। कुछ लोग कहते हैं कि, यह नेपाल का निवासी होगा।

भट्टोजी दीक्षित ने 'ज्योतिर्नारद' नामक ग्रंथ का उल्लेख किया है (चतुर्विंशतिमत. ११)। रघुनंदन ने 'बृहन्नारद' का एवं 'निर्णयसिंधु', 'संस्कारकौस्तुभ' आदि ग्रंथों में 'लघुनारद' का निर्देश किया है। 'खुले आम किये गये पातक की अपेक्षा, गुप्तरूप से किया गया पातक कई गुना कम दोषार्ह है, क्यों कि, उसमें कम से कम पातक करनेवाले आदमी की धर्म के प्रति भीरूता प्रकट होती है', ऐसा धर्मशास्त्रकार के नाते नारद का कहना था (नारद. १३.२७)।

शिक्षाकार—नारद ने सामवेद पर एक 'शिक्षा' की रचना की। यह शिक्षा प्रायः श्लोकबद्ध है। 'भट्ट-शोभाकर' ने उस पर भाष्य लिखा है।

अन्य ग्रंथ—नारद के नाम पर 'नारदपुराण' एवं वास्तुशास्त्रसंबंधी अन्य एक ग्रंथ उपलब्ध हैं। उनमें से 'नारदपुराण' इसने 'सारस्वत कल्प' में बताया था (नारद. २.८२)।

३. विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५९)।

४. राम की सभा का एक धर्मशास्त्री। इसने शूद्र हो कर भी तपस्या करनेवाले शंबूक नामक शूद्र का, राम के द्वारा वध करवाया। सोलह साल की छोटी उम्र में मृत हुए एक ब्राह्मणपुत्र को इसने पुनः जीवित कर दिया (वा. रा. उ. ७४)।

नारद काण्व--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१३; ९. १०४-१०५)।

नारद-पर्वत—वैदिक ऋषिद्वय (ऐ. ब्रा. ७.३४; ८.२१; नारद १. देखिये)।

नारदिन्--विश्वामित्र का पुत्र।

नारदी--नारद ने एक बार वृंदारण्य के कौसुम सरोवर में स्नान किया, जिस कारण उसका पुरुषत्व नष्ट हो कर वह स्त्री बना। उस समय उसे नारदी नाम प्राप्त हुआ (नारद. उ. ८०; नारद देखिये)।

नारायण--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९०)।

२. एक भगवत्स्वरूप देवता, एवं स्वायंभुव मन्वंतर के सत्ययुग में प्रकट हुएँ भगवान् वासुदेव के चार अवतारों में से एक। यह एवं इसके तीन भाई नर, हरि एवं कृष्ण धर्म ऋषि के पुत्र के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुएँ थे (म. शां. ३३४.९.१२; नरनारायण एवं नर देखिये)। देवकीपुत्र कृष्ण इसीका ही अवतार बताया गया है (म. आ. १.१)।

दक्षयज्ञ के समय, भगवान् शंकर ने एक प्रज्वलित त्रिशूल चलाया। दक्षयज्ञ का विध्वंस कर के, वह भगवान् नारायण की छाती में आ लगा। फिर नारायण ने हुंकार किया, एवं वह त्रिशूल शंकर के हाथ में लौटा दिया। अपने त्रिशूल के अवमान से क्रुद्ध हो कर, शंकर ने नर एवं नारायण पर आक्रमण किया। पश्चात् हुए रुद्र-नारायण युद्ध में, नारायण ने रुद्र का गला दबा दिया। अतः रुद्र 'नीलकंठ' हो गया (म. शां. ३३०.४९)।

नारायण ने देव एवं दानवों को समुद्रमंथन के लिये प्रवृत्त किया (म. आ. १५.११-१३)। पश्चात् इसने मोहिनी का रूप धारण कर, देवताओं को अमृत पिलाया (म. आ. १६.३९-४०)। देवासुरसंग्राम में इसने असुरों का संहार किया था (म. आ. १७.१९-३०)।

नारायण के कृष्ण एवं श्वेत केश, श्रीकृष्ण एवं बलराम के रूप में प्रगट हुए थे। महाभारत काल में, यह अपने भाई नर के साथ, बदरिकाश्रम में सुवर्णमय रथ पर बैठ कर तपस्या करता था (म. शां. १२२४*)।

महाभारत में, श्रीविष्णु के वाराह, नृसिंह आदि अवतार नारायण के ही अवतार बताये गये हैं (म. स. ३८)। पृथ्वीलोक से श्रीकृष्ण का निर्याण होने के बाद, अपने नारायणस्वरूप में वह विलीन हो गया (म. स्वर्गा. ५.२४*)।

पौष मास में नारायण के पूजन से प्राप्त होनेवाले पुण्यफल का वर्णन महाभारत में दिया गया है (म. अ. १०९.४)।

पद्ममत में, पुष्करक्षेत्र में हुए ब्रह्माजी के यज्ञ में, उद्गातृगणों में से एक प्रतिहर्ता के नाते, नारायण उपस्थित था (पद्म. सृ. ३४)।

३. तुषित एवं साध्य देवों में से एक।

४. (कण्व. भविष्य.) एक राजा। भागवत तथा

विष्णु मत में यह भूमित्र का, वायुमत में भूतिमित्र का, तथा मत्स्य तथा ब्रह्मांड के मत में भूमिमित्र का पुत्र था।

नारायणि—अंगिरा कुल का गोत्रकार। 'परस्परायणि' इसका ही पाठभेद है।

नारायणी—मुद्गल ऋषि की स्त्री। इसी को 'इंद्रसेना' कहते थे।

२. दुर्गा का एक नाम। मार्कंडेय पुराण में इसका माहात्म्य दिया गया है (मार्क. ८८)।

नारी—मेरु की कन्या, तथा अग्नीध्रपुत्र करू की स्त्री (भा. ५. २. २३)।

नारीकवच--(सू. इ.) अश्मक देश के मूलक राजा का नामांतर (मूलक १. देखिये)। परशुराम के भय के कारण, यह सदैव नारीसमुदाय में रहता था। इस कारण इसे यह नाम प्राप्त हुआ।

नार्मर—एक वैदिक राजा। यह 'उर्जयन्ती' का राजा था। सहवसु के राजा के साथ इन्द्रशत्रु के रूप में, इसका उल्लेख प्राप्त है (ऋ. २. १३.८)।

नार्मेध—एक सूक्तद्रष्टा (शकपूत देखिये)।

नार्य--एक उदार वैदिक राजा। नर्य का वंशज होने से इसे नार्य नाम प्राप्त हुआ।

नार्षद--कण्व ऋषि का पैतृक नाम (ऋ. १०. ३१. ११; अ. वे. ४. १९. २)।

२. इन्द्र का शत्रु एक असुर (ऋ. १०. ६१. १३)।

३. अश्विनों का आश्रित। इसकी पत्नी का नाम रूशती था (ऋ. १. ११७. ८)।

नालायनी—इन्द्रसेना का नामांतर (मौद्गल्य ३. देखिये)।

नालीजंघ—नाड़ीजंघ देखिये।

नासत्य—अश्विनीकुमारों में से एक का नाम। दूसरे का नाम दस्र था (म. शां. २०१.१७)। मार्तांण्ड नामक आठवे प्रजापति के ये पुत्र थे।

नाविक—विदुर का मित्र। लाक्षागृह से बाहर आने के बाद, पांडवों को अपनी नौका के सहारे, इसने गंगा के पार पहुँचाया (म. आ. परि. १. क्र. ८५. पंक्ति. ७)। यह सामान्यनाम होगा।

नाहुष—एक सूक्तद्रष्टा (ययाति देखिये)।

२. एक राजा। यह नहुस् जाति के लोगों का राजा था। इसके पास अच्छे अश्व थे (ऋ. ८. ६.२४)।

निकुंत--भविष्य के मत में शोणाश्व का पुत्र।

निकुंभ--कृष्ण के द्वारा मारा गया एक दानव (ह. वं. २. ८५-९०; षट्पुर देखिये)।

२. प्रह्लाद का तृतीय पुत्र (म. आ. ५९. १९)। इसके सुंद एवं उपसुंद नामक दो पुत्र थे (म. आ. २०१. २०००)।

३. (सू. इ.) अयोध्या के हर्यश्व राजा का पुत्र (वायु. ८८.६२)। इसे संहिताश्व नामक एक पुत्र था (पद्म. सृ. ८; क्षेमक देखिये)। भागवत में इसके पुत्र का नाम बर्हणाश्व दिया हैं।

४. गणेश का प्राचीन नाम। वाराणसी में इसका मंदिर था। इसकी पूजाआराधना करने पर भी, दिवोदास की स्त्री सुयशा को पुत्र न हुआ। इसलिये उसने इसका देवालय तथा देवमूर्ति को उद्ध्वस्त किया। फिर क्रुद्ध हो कर, निकुंभ ने वाराणसी उद्ध्वस्त होने का शाप दिया (ब्रह्मांड. ६७. ३०-५५; वायु. ९०.२७.५२; ब्रह्म. ११.४३; गणपति देखिये)। उस शाप के अनुसार, क्षेमक राक्षस के द्वारा, वाराणसी उद्ध्वस्त हो गयी।

५. कश्यप एवं दनु का पुत्र, एक दानव (म. आ. ५८.२६)।

६. कुंभकर्ण के वृत्रज्वाला से उत्पन्न हुए दो पुत्रों में से दूसरा पुत्र (भा. ९.१०.१८) हनुमानजी ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ७५)।

७. रावण के पक्ष का एक राक्षस। नील नामक वानर ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ९.४३)।

८. दुर्योधन के पक्ष का एक योद्धा (म. द्रो. १३१. ८४)।

९. स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.५२)।

निकुंभनाभ—बलि दैत्य के सौ पुत्रों में से एक।

निकुषज--ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

निकृषज--कश्यप कुल का एक ब्रह्मर्षि। 'निकृतिज' इसका नामांतर हैं।

निकृति—सुबल राजा की कन्या, गांधारी की बहन, तथा धृतराष्ट्र की भार्या (म. आ; १०३. १११३; पंक्ति. ४)।

२. दंभ एवं माया की कन्या (भा. ४.८.३)।

निकृतिज—निकृतज देखिये।

निकोथक भायजात्य--एक ऋषि। भयजात का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ। यह प्रतिथि देवतरथ का शिष्य था (वं. ब्रा. २)

निक्षुभा--स्वर्गलोक की एक अप्सरा। सूर्य के शाप के कारण, इसे मृत्युलोक में जन्म प्राप्त हुआ, एवं सुजिह्व नामक मिहिर गोत्रीय सदाचारी ब्राह्मण के घर, कन्यारूप से इसका जन्म हुआ।

अपने पिता की आज्ञानुसार, यह हमेशा अग्नि प्रज्वलित कर लाया करती थी। एक दिन, इसके हाथ में स्थित अग्नि भड़क उठा, एवं उसकी फड़कती ज्वाला में, इसका अपूर्व रूपयौवन सूर्य को दिख पड़ा। सूर्य को इसके प्रति कामवासना जाग्रत हुई।

पश्चात् सूर्य मनुष्यरूप धारण कर, सुजिह्व के पास आया, एवं कहने लगा, 'मैने निक्षुभा का पाणिग्रहण किया है, एवं मुझसे उसे गर्भधारणा भी हुयी है'। फिर क्रुद्ध हो कर सुजिह्व ने निक्षुभा को शाप दिया, 'तुम्हारा गर्भ अग्नि से आवृत होने के कारण, तुम्हारी होनेवाली संतति, लोगों के लिये निंद्य एवं तिरस्करणीय होगी'।

फिर सूर्य अग्नि का रूप धारण कर, निक्षुभा के पास आया एवं उसने इसे कहा, 'तुम्हारी संतति अपूज्य होने पर भी, वह सद्विद्य एवं सदाचारी रहेंगी, एवं मेरे पूजा का अधिकार उसे प्राप्त होगा।

बाद में इसे सूर्य की गर्भ से अनेक पुत्र हुएँ। मग, द्विजातीय, भोजक आदि उनके नाम थे, एवं शाकद्वीप में वे रहते थे। पश्चात् कृष्णपुत्र सांब ने, उन्हे जम्बुद्वीप में से सांबपुर में स्थित सूर्यमंदिर में पूजाअर्चा का काम करने के लिये, नियुक्त किया। उनके साथ, उनके अठारह कुल सांबपुर में आये एवं बस्ती बना उधर ही रहने लगे। सांब ने भोजकुल में पैदा हुई कन्याएँ उन्हे प्रदान की (भवि. ब्राह्म. १३९-१४०; मग देखिये)।

भविष्यपुराण में दी गयी सूर्यवंशीय एवं मिहिरकुलीय लोगों की यह कथा रूपकात्मक प्रतीत होती है। शुरू में जातिबहिष्कृत मानें गये वे लोग, बाद में आनर्त देश के भोजवंश में सम्मीलित हो गये से दिखते है।

निखर्वट--रावण के पक्ष का एक राक्षस। तार नामक वानर नें इसका वध किया (म. व. २६९. ८)।

निगद पार्णवल्कि--एक वैदिक ऋषि। यह पर्णवल्क का वंशज, एवं गिरिशर्मन् काण्ठिविद्धि का शिष्य था (वं. ब्रा. १)।

निघ्न--(सू. इ.) अयोध्या का राजा। यह अनरण्य राजा का पुत्र था। इसे अनमित्र तथा रघूत्तम नामक दो पुत्र थे (पद्म. सृ. ८)।

२. (सो. वृष्णि) एक यादव राजा। विष्णु, मत्स्य एवं वायु के मतानुसार, यह अनमित्र राजा का पुत्र था। इसे 'निम्न' नामांतर भी प्राप्त था।

निचक्नु--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। विष्णु मत में यह अधिसामकृष्ण का पुत्र था (निमिचक्र देखिये)।

निचंद्र--कश्यप एवं दनु का पुत्र, एक दानव (म. आ. ५९. २६)।

नितंभू--एक महर्षि। यह शरशय्या पर पडे हुए भीष्मजी को देखने आया था (म. अनु. २६. ८)।

नितान मारुत--एक वैदिक व्यक्तिनाम (क. सं. २५. १०)।

नित्य--मरीचिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. कश्यप कुल का मंत्रकार।

३. शांडिल्यकुल का एक ऋषि। यह मंत्रद्रष्टा था।

निदाघ--कश्यपकुल का गोत्रकार। यह भृगु ऋषि का शिष्य था।

२. पुलस्त्य का पुत्र, एक ऋषि। यह ब्रह्मपुत्र ऋभु का शिष्य था (नारद. १.४९)।

निंदाज--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। वायुमत में यह शूरराजा का पुत्र था।

निद्राधर--कश्यप तथा दनु का पुत्र, एक दानव।

निधि--सुख देवों में से एक।

निध्रुव काण्व--एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.६३)। कश्यपवंश के वत्सार ऋषि का यह पुत्र था। च्यवन ऋषि तथा सुकन्या की कन्या सुमेधस्, इसकी स्त्री थी। कुंडपायिन् नामक सुविख्यात आचार्य इसीका ही पुत्र था। (ब्रह्मांड.. ३.८.३१; वायु. ७.२७)।

निंदिताश्व--एक वैदिक राजा। यह मेध्यातिथि का आश्रयदाता था (ऋ. ८.१;२०)।

'तिरस्कार्य अश्वोंवाला,' ऐसा इसका नाम का अर्थ लगाया जाये, तो यह कोई ईरानी राजा प्रतीत होता है। किंतु सायणाचार्य इसके नाम का अर्थ, 'अपने विपक्षियों के अश्वों को लज्जित करनेवाला,' ऐसा लगाते है।

निबंधन--(सू. इ.) अयोध्या के अरुण राजा का पुत्र। इसका पुत्र सत्यव्रत 'त्रिशंकु' नाम से प्रसिद्ध हुआ था (त्रिशंकु देखिये)। इसे त्रिबंधन भी कहते थे (भा. ९.७.४; त्रिधन्वन् देखिये)।

२. एक ऋषि। इसकी माता भोगवती के साथ इसका अध्यात्म विषय पर हुआ संवाद मनन करने योग्य है (म. शां. परि. १. क्र. १५; पंक्ति. ६)।

निमि ' विदेह '—अयोध्यापति इक्ष्वाकु राजा का बारहवाँ पुत्र, एवं ' विदेह ' देश तथा राजवंश का पहला राजा (वा. रा. उ. ५५; म. स. ८.९)। यह एवं इसका पुरोहित वसिष्ठ के दरम्यान हुए झगडे में, इन दोनों ने परस्पर को विदेह (देहरहित) बनने का शाप दिया था। उस विदेहत्व की अवस्था के कारण, इसे एवं इसके राजवंश को ' विदेह ' नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ६१.३२-३६; पद्म. पा. २२; २४-३७; वायु. ८९.४)। इसके नाम के लिये, ' नेमि ' पाठभेद भी उपलब्ध है।

इसका पिता इक्ष्वाकु मध्यदेश (आधुनिक उत्तर प्रदेश) का राजा था। इक्ष्वाकु के पुत्रों में विकुक्षि शशाद एवं निमि, ये दो प्रमुख थे। उनमे से विकुक्षि इक्ष्वाकु के पश्चात् अयोध्या का राजा बना, एवं उसने सुविख्यात इक्ष्वाकुवंश की स्थापना की। निमि को विदेह का राज्य मिला, एवं इसने विदेह राजवंश की स्थापना की।

गौतम ऋषि के आश्रम के पास, निमि ने इंद्र के अमरावती के समान सुंदर एवं समृद्ध नगरी की स्थापना की थी। उस नगरी का नाम ' वैजयंत ' या ' जयंत ' था। यह नगरी दक्षिण दंडकारण्य प्रदेश में थी, एवं रामायण काल में, वहाँ तिमिध्वज नामक राजा राज्य करता था (वा. रा. अयो. ९.१२)। ' जयंत ' नगरी निश्चितरूप में कहाँ बसी थी, यह कहना मुश्किल है। डॉ. भांडारकर के मत में, आधुनिक विजयदुर्ग ही प्राचीन जयंतनगरी होगी। श्री. नंदलाल दे के मत में आधुनिक वनवासी शहर की जगह जयंतनगरी बसी हुयी थी।

निमि की राजधानी ' मिथिला ' नामक नगरी में थी। उस नगरी का मिथिला नाम, इसके पुत्र ' मिथि जनक ' के नाम से दिया गया था (वायु. ८९.१-२; ब्रह्मांड. ३. ६४.१-२)।

एक बार, निमि ने सहस्र वर्षों तक चलनेवाले एक महान् यज्ञ का आयोजन किया। उस यज्ञ का ' होता ' (प्रमुख आचार्य) बनने के लिये इसने बड़े सम्मान से अपने कुलगुरु वसिष्ठ को निमंत्रण दिया। उस समय वसिष्ठ और कोई यज्ञ में व्यस्त था। उसने इससे कहा, ' पाँचसों वर्षों तक चलनेवाले एक यज्ञ के कार्य में, मैं अभी व्यस्त हूँ। इसलिये वह यज्ञ समाप्त होने तक तुम ठहर जाओ। उस यज्ञ समाप्त होते ही, मैं तुम्हारे यज्ञ का ऋत्विज बन जाऊँगा।

वसिष्ठ के इस कहने पर, निमि चुपचाप बैठ गया। उस मौनता से वसिष्ठ की कल्पना हुयी कि, यज्ञ पाँचसौ वर्षों तक रुकाने की अपनी सूचना निमि ने मान्य की है। इस कारण, वह इंद्र का यज्ञ करने चला गया।

इंद्र का यज्ञ समाप्त करने के बाद, वसिष्ठ निमि के घर वापस आया। वहाँ उसने देखा कि, राजा ने उसके कहने को न मान कर, पहले ही यज्ञ शुरू कर दिया है, एवं गौतम ऋषि को मुख्य ऋत्विज बनाया है। फिर क्रुद्ध हो कर वसिष्ठ ने पर्यंक पर सोये हुये निमि को शाप दिया, 'अपने देह से तुम्हारा वियोग हो कर, तुम विदेह बनोगे'। जागते ही इसे वसिष्ठ के शाप का वृत्तांत विदित हुआ। फिर निद्रित अवस्था में शाप देनेवाले दुष्ट वसिष्ठ गुरु से यह संतप्त हुआ, एवं इसने भी उसे वही शाप दिया (विष्णु. ४.५.१-५; भा. ९.१३.१-६; वा. रा. उ. ५५-५७)।

पद्म पुराण में ' वसिष्ठशाप ' की यही कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। अपने स्त्रियों के साथ, निमि द्यूत खेल रहा था। इतने में वसिष्ठ ऋषि यकायक वहाँ आ गया। द्यूत-क्रीडा में निमग्न रहने के कारण, निमि ने उसे उत्थापन आदि नही दिया। उस अपमान के कारण, वसिष्ठ ने इसे ' विदेह ' बनने का शाप दिया (पद्म. पा. ५.२२)।

वसिष्ठ के शाप के कारण, निमि का शरीर अचेतन हो कर गिर पड़ा, एवं इसके प्राण इधर-उधर भटकने लगे। इसका अचेतन शरीर सुगंधि तैलादि के उपयोग से स्वच्छ एवं ताज़ा रख दिया गया। निमि का यज्ञ समाप्त होने पर, यज्ञ के हविर्भाग को स्वीकार करने देवतागण उपस्थित हुये। फिर उन्होंने निमि से कुछ आशीर्वाद माँगने के लिये कहा। निमि ने कहा, ' शरीर एवं प्राण के वियोग के समान दुःखदायी घटना दुनिया में और नहीं है। एक बार ' विदेह ' होने के बाद, मैं पुनः शरीर-ग्रहण करना नहीं चाहता। दुनिया हर व्यक्ति की आँखो में मेरी स्थापना हो जाये, जिससे मानवी शरीर से मैं कभी भी जुदा न हो सकूँ '। निमि की इस प्रार्थना के अनुसार, देवों ने मानवी आँखों में इसे जगह दिलवायी। आँखों में स्थित निमि के कारण, उस दिन से मानवों की आँखे झपाने लगी, एवं आँख झपाने की उस क्रिया को ' निमिष ' कहने लगे (विष्णुधर्म. १.११७)।

मत्स्य एवं पद्मपुराण के मत में, ' विदेह अवस्था ' के शाप से मुक्ति पाने के लिये, निमि एवं वसिष्ठ ब्रह्माजी के पास गये। ब्रह्माजी ने वर प्रदान कर, निमि को मानवों

के आँखों में रहने के लिये कहा, एवं वसिष्ठ को मित्र एवं वरुण के अंश से जन्म लेने के लिये कह दिया (मत्स्य. २०१.१७-२२; पद्म. पा. २२.३७-४०)।

मृत्यु के समय निमि निसंतान था, और भावी युवराज के न होने के कारण, अराजकता फैलने का धोखा था। निमि के अचेतन शरीर से पुत्र निर्माण करने के हेतु, उसे यज्ञ की 'अरणी' बनायी गयी। उस 'अरणी' का मंथन करने के बाद, उससे एक तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुआ। वह 'अरणी' के मंथन से निकला, इसलिये उसे 'मिथि' कहने लगे (वायु. ८०)। माता के विना, केवल पिता से ही उसका जन्म हुआ, इस कारण उसे 'जनक' की उपाधि प्राप्त हुयी। 'विदेह' पिता का पुत्र होने के कारण, मिथि जनक को 'वैदेह' नामांतर भी प्राप्त था (वा. रा. उ. ५७)।

मृत्यु के पश्चात्, निमि यमसभा में प्रविष्ट हुआ, एवं सूर्यपुत्र यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.९)।

२. विदर्भ देश का राजा। इसने अगस्त्य ऋषि को अपनी कन्या एवं राज्य अर्पित किया था। उस पुण्य के कारण, इसे स्वर्गलोक प्राप्त हुआ (म. अनु. १३७. ११)।

३. अत्रि कुल में उत्पन्न एक ऋषि। यह दत्त आत्रेय का पुत्र था (म. अनु. ९१.५)। इसने श्रीमान् नामक अपने मृतपुत्र को पिंडदान किया, एवं इस तरह मृतों के लिये 'श्राद्ध' करने का संस्कार सर्व प्रथम आरंभ किया (म. अनु. ९१.१४-१५)। इसके द्वारा स्मरण करने पर, इसके पितामह अत्रि ऋषि ने इसे दर्शन दिया था, एवं इससे संभाषण किया था (म. अनु. ९१.१८)।

४. एक यादव राजा। विष्णु, वायु, एवं मत्स्यमत में, यह अंधक राजा का बंधु सात्वत भजमान का पुत्र था। भागवत में इसे 'निम्लोचि' कहा गया है (भा. ९.२४. ६-८)।

५. (सो. कुरु. भविष्य) एक राजा। भागवतमत में यह दंडपाणि राजा का पुत्र था।

निमिचक्र—(सो. कुरु. भविष्य) कुरु देश का राजा। अधिसामकृष्ण का पुत्र था। इसके राज्यकाल में, यमुना नदी में बाढ़ आ गयी। इस कारण हस्तिनापुर छोड कर, इसने कौशांबी नगर में अपनी नयी राजधानी बसायी। इसका पुत्र चित्ररथ। इसे निचक्नु, निर्वक्र, एवं विवक्षु आदि नामांतर भी प्राप्त थे।

निमिष—अमृतरक्षक देवों में से एक। इसका पक्षीराज गरुड़ से युद्ध हुआ था (म. आ. २८.१९)। इसके नाम के लिये, भांडारकर संहिता में 'निमेष' पाठभेद प्राप्त है।

निमेष—गरुड़ के पुत्रों में से एक।

निम्न—(सो. वृष्णि) एक यादव राजा। भागवतमत में यह अनमित्र राजा का पुत्र था (निघ्न देखिये)।

निम्लोचि—एक यादव राजा (निमि. ४. देखिये)।

नियज्ञ—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा। यह विश्वसह राजा का पुत्र था। इसके राज्यकाल में अधार्मिकता के कारण भयानक अनावृष्टि उत्पन्न हुयी, एवं उससे इसका राज्य नष्ट हुआ। इसकी रानी के द्वारा प्रार्थना करने पर, वसिष्ठ ऋषि ने एक यज्ञ किया। उस यज्ञ के कारण, इसे खट्वांग नामक पुत्र पैदा हुआ, एवं इसके राज्य में पुनः एक बार सुखसमृद्धि उत्पन्न हुयी (भवि. प्रति. १.१)।

नियति—ब्रह्माजी के सभा में रह कर, उसकी उपासना करनेवाली एक देवी। यह मेरु की कन्या एवं स्वायंभुव मन्वंतर के विधाता की पत्नी थी (भा. ४ १.४४)।

२. रौच्य मनु का पुत्र।

३. (सो. आयु.) एक राजा। यह नहुष का कनिष्ठ पुत्र था (पद्म. सृ. १२)।

नियम—सुख देवों में से एक।

२. आभूतरजस् देवों में से एक।

नियुतायु—कलिंग देश के श्रुतायु राजा का पुत्र। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.२७-२९; 'अयुतायु' भांडारकर संहिता)।

नियुत्सर्पि—शिव नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

नियुत्सा—प्रस्ताव राजा की स्त्री। इसे विभु नामक एक पुत्र था।

नियोधक—विराट राजा के दरबार में उपस्थित एक दंगली पहलवान (म. वि. २.५)। यह सामान्य नाम होगा।

निरताल—एक मध्यमाध्वर्यु।

निरमित्र—(सो. कुरु.) पांडुपुत्र नकुल का पुत्र। इसकी माता करेणुमती (म, आ. ९०.८४)।

२. सहदेव द्वारा मारा गया एक त्रिगर्तदेशीय राजकुमार। इसके पिता का नाम वीरधन्वन् (म. द्रो. ८२. २६)।

३. (सो. मगध भविष्य.) भागवत और विष्णु मतानुसार अयतायु का पुत्र। निरामित्र पाठभेद है।

निरय--एक प्रकार की म्लेंच्छ जाति। गरुड ने बहुत से निषाद खाये। उन्हें उगलने के बाद, वे सारे के सारे म्लेच्छ बन गये उनमें से ईशान में जो निषाद गिरे उन्हें 'निरय' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. सृ. ४७)।

निराकृति--दक्षसावर्णि मनु का पुत्र। निरामय इसी का ही पाठभेद है।

निरामय—एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७७)।

निरामर्द—एक प्राचीन राजा (म. आ. १. १७७)।

निरामित्र--ब्रह्मसावर्णि मनु का पुत्र।

२. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा। मत्स्यमत में यह अप्रतीपिन् राजा का पुत्र था। वायु तथा ब्रह्मांड मत में यह अयुतायु का पुत्र था। मत्स्य तथा ब्रह्मांड मत में इसने १०० वर्ष राज्य किया, किंतु वायु के मतानुसार इसने ४० वर्ष राज्य किया (निरमित्र ३. देखिये)।

३. (सो. पूरु. भविष्य.) एक राजा। मत्स्य एवं वायु मत में यह दंडपाणि राजा का पुत्र था।

निराव—वसुदेव का पौरवी से उत्पन्न पुत्र।

निरावृत्ति—(सो.) एक राजा। भविष्यमत में यह वृष्णि का पुत्र था। इसने पांच हजार वर्षों तक राज्य किया।

निरुक्तकृत्—विष्णुमत में व्यास की ऋक्शिष्य-परंपरा के शाकपूणि का निरुक्ताध्यायी शिष्य।

निरुत्सुक--रैवतमनु का एक पुत्र (पद्म. सृ. ७)।

२. रौच्य मनु का एक पुत्र।

निरुद्ध—ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का देवगण।

निर्ऋता--कश्यप एवं खशा की कन्या।

निर्ऋति--कश्यप एवं सुरभि का पुत्र।

२. एकादश रुद्रों में से एक (पद्म. सृ. ४०)। यह ब्रह्माजी का पौत्र एवं स्थाणु का पुत्र था (म. आ. ६०.२)। यह नैर्ऋत, भूत, राक्षस तथा दिक्पाल लोगों का अधिपति था। शत्रुनाश करने की इच्छा करनेवाले राजा इसकी उपासना करते थे (भा. २.३.९)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.५७)।

३. वरुणपुत्र अधर्म को इसे भय, महाभय तथा मृत्यु नामक तीन पुत्र थे (म. आ. ६०. ५२-५३)। ये सारे पुत्र 'नैर्ऋत' जनपद के रहनेवाले थे एवं भूत, राक्षससदृश योनि के समझे जाते थे।

निर्भय—रौच्य मनु का पुत्र।

निर्मित्र--(सो.) एक राजा। भविष्यमत में यह अहीनर का पुत्र था।

निर्मोक—सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. देवसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

निर्मोहक--रैवत मनुका पुत्र।

२. सावर्णि मनु का पुत्र।

३. रौच्य-मन्वंतर का ऋषि।

४. मधुवन के शकुनि ऋषि का पुत्र। यह महान् विरक्त था तथा संन्यास वृत्ति से रहता था।

निर्वक्र—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। वायु मत में यह अधिसामकृष्ण का पुत्र था (निमिचक्र देखिये)।

निर्वृत्ति—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। भागवतमत में, यह धृष्टि का, मत्स्य एवं वायुमत में धृष्ट का, विष्णुमत में वृष्णि का तथा पद्ममत में सृष्टि का पुत्र था।

२. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा। मत्स्यमत में यह सुनेत्र का पुत्र था। इसके नाम के लिये, 'नृपति' पाठभेद प्राप्त है। इसने ५८ वर्षों तक राज्य किया।

निल--राक्षसराज बिभीषण का एक प्रधान।

निवात--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा। वायुमत में यह शूर राजा का पुत्र था।

निवातकवच—दैत्यों का एक दल। हिरण्यकशिपु पुत्र संह्लाद के पुत्रों को यह 'सामूहिक' नाम प्राप्त था। इस दल के दैत्य रावण के मित्र थे, एवं इंद्र को भी अजेय थे (वा. रा. उ. २३)।

पांडवों के वनवासकाल में अर्जुन के साथ इनका युद्ध हुआ, एवं अर्जुन ने इनका संहार किया (म. व. १६७. १०; १६९.२; भा. ५.२४; ६.६; पद्म. सृ. ६)।

२. कश्यप एवं पुलोमा के पौलोम तथा कालकेय नामक दैत्य पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम। इनकी संख्या साठ सहस्र या चौहत्तर सहस्र थी (कश्यप देखिये)।

निवावरी—एक सूक्तद्रष्टा (सिकता देखिये)।

निशठ--एक वृष्णिवंशी राजकुमार (भा. ११.३०. १७; म. आ. २११.१०)। हरिवंश के अनुसार यह बलराम एवं रेवती का पुत्र था। यह सुभद्रा के लिये दहेज ले कर खांडवप्रस्थ में आया था। युधिष्ठिर के राजसूय एवं अश्वमेध यज्ञ में यह उपस्थित था (म. स. ३१.१६; ६५.४)। उपप्लव्यनगर में अभिमन्यु के विवाह में भी यह उपस्थित था (म. वि. ६७.२१)।

मृत्यु के पश्चात्, यह विश्वेदेवों में विलीन हो गया (म. स्व. ५.१६)।

२. यमसभा में रह कर, सूर्यपुत्र यम की उपासना करनेवाला एक प्राचीन राजा (म. स. ८.९०*)।

निशा—भानु (मनु) नामक अग्नि की तीसरी पत्नी। इसने अग्नि एवं सोम नामक दो पुत्र, एवं रोहिणी नामक कन्या को जन्म दिया था। उनके अतिरिक्त, इसे पाँच अग्निस्वरूप पुत्र भी थे। उनके नाम-वैश्वानर, विश्वपति, संनिहित, कपिल, एवं अग्रणी।

निशाकर—गरुड़ के प्रमुख पुत्रों में से एक (म. उ. ९९.१४)।

निशुंभ—शुंभ असुर का भाई, एवं जालंधर दैत्य का सेनापति (शुंभनिशुंभ देखिये)। इंद्र की अमरावती जीतने के बाद, जालंधर ने इसे युवराज्याभिषेक किया था (पद्म. उ. ८)। चंडिका देवी ने इसका वध किया (मार्क. ८६.३२)।

२. नरकासुर के चार प्रमुख राज्यपालों में से एक। यह भूतल से ले कर देवयान तक का मार्ग रोक कर खड़ा रहता था। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. १५३६)।

निश्चक—(सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार यह यज्ञदत्त राजा का पुत्र था। इसने एक सहस्र वर्षों तक राज्य किया।

निश्चर—धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षिओं में से एक।

२. बृहस्पतिपुत्र निश्चवन का नामांतर।

निश्च्यवन—बृहस्पति के तारा में उत्पन्न सात पुत्रों में से एक। यह अग्नि के समान यश, वर्चस् एवं कान्तियुक्त था। यह निष्पाप, निर्मल, विशुद्ध एवं तेजःपुंज था। इसके पुत्र का नाम विपाप्मन् या निष्कृति था (म. व. २०९. १२)। इसके पौत्र का नाम सत्य था।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर के सप्तर्षिओं में से एक।

निषंगिन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. क. ६२.५)।

निषध—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा। यह अतिथि राजा का पुत्र था।

२. (सो. पूरु.) भरतवंशी कुरु राजा का पौत्र, एवं जनमेजय राजा के चार पुत्रों में से चौथा पुत्र (म. आ. ८९.५०)। यह धर्म, अर्थ में कुशल, एवं समस्त प्राणिमात्रों के हित में संलग्न रहता था (म. आ. ९.५०)।

निषधाश्व—(सो. अज.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह कुरु राजा का पुत्र था।

निषाद—(स्वा. उत्तान.) एक म्लेच्छ राजा। यह मृत्यु की मानसी कन्या सुरथा का पौत्र एवं वेन राजा का पुत्र था। वेन राजा की मृत्यु के पश्चात्, ऋषियों ने उसके दाहिने जाँघ का मंथन किया। उस मंथन के कारण, एक 'ह्रस्वाकार' एवं कृष्णवर्ण पुरुष बाहर निकला। ऋषियों ने उसे कहा, 'निषीद (बैठ जाओ)'। उस कारण उस पुरुष का नाम 'निषाद' हो गया। आगे चल कर, इससे वन में रहनेवाले 'निषाद' नामक म्लेच्छ जाति की उत्पत्ति हुयी (म. शां. ५९.१०३; भा. ४.१४.४५; वेन देखिये)।

२. एक म्लेच्छ जाति (तै. सं. ४.५.४.२; का. सं. १७. १३; ऐ. ब्रा. ८.११)। संभवतः आधुनिक भिल्ल लोग यही होंगे। इनके एक ग्राम का एवं 'स्थपति' (नेता) का उल्लेख प्राप्त है (ला. श्रौ. ८.२.८)।

३. एक राजा। यह कालेय एवं क्रोधहंता नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ४८.६१)।

निष्कम्प—रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षिओं में से एक।

निष्किरीय—एक वैदिक पुरोहितवर्ग का सामुहिक नाम (पं. ब्रा. १२.५.१४)।

निष्कुटिका—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१२)।

निष्कृति—एक अग्नि। यह निश्च्यवन का पुत्र था, एवं इसे 'विपाप्मन्' नामांतर था। लोगों को संकट से 'निष्कृति' (छुटकारा) दिलाने के कारण, इसे निष्कृति नाम प्राप्त हुआ। इसका पुत्र स्वन (म. व. २०९.१४; विपाप्मन् देखिये)।

निष्टानक—कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक नाग।

निष्ठुर—एक व्याध। कार्तिक माह में, चंद्रशर्मा नामक ब्राह्मण से 'दीपमाहात्म्य' सुनने के कारण, इसे मुक्ति मिल गयी (स्कंद. २.४.७)।

२. अत्रिकुल का एक मंत्रकार। इसे 'गविष्ठर' भी कहते थे।

निष्ठूरिक—एक कश्यप वंशी नाग (म. उ. १०१. १२)।

निष्प्रकम्प्य—रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

निसंदि—एक असुर (वा. रा. उ. २२. २५)।

निसुंद—नरकासुर के परिवार में से एक दैत्य। यह श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया (म. व. १३.२६)।

निह्लाद--जालंधर की सेना का एक राक्षस। कुबेर ने इसका वध किया (पद्म. उ. ६)।

नीच्य--सिंधु एवं पंजाब प्रदेश में रहनेवाले लोगों का सामुहिक नाम (ऐ. ब्रा. ८-१४)।

नीतिन—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

नीथ--एक वृष्णिवंशी राजकुमार (म. व. १२०. १८)।

नीप--(सो. पुरु.) पुरुवंश का सुविख्यात राजा। भागवत, वायु एवं विष्णुके अनुसार यह पार (प्रथम) राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, यह पौर का पुत्र था। इसके पत्नी का नाम कृती अथवा कीर्तिमती था। उससे इसे ब्रह्मदत्त नामक पुत्र हुआ (भा. ९.२१.२४)।

इसके कीर्तिवर्धन आदि सौ पुत्र थे। वे सारे 'नीप' नाम से ही प्रसिद्ध थे। आगे चल कर, उन्हींसे सुविख्यात 'नीप वंश' का निर्माण हुआ।

२. नीप राजा से प्रारंभ हुआ क्षत्रियवंश। इसी वंश में, जनमेजय दुर्बुद्धि नामक कुलांगार राजा निर्माण हुआ (म. उ. ७२.१३)। उस राजा के दुर्वर्तन के कारण, उग्रायुध ने उसका वध किया, एवं नीपवंश नष्ट हो कर, द्विमीढ वंश में शामिल हो गया (मत्स्य. ४९; ह. वं १. २०; वायु. ९९. १७८)।

३. (सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंश का एक राजा। भागवत के अनुसार यह कृती राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसका उल्लेख प्राप्त नहीं है। यह धनुर्धर एवं तीक्ष्णशस्त्रधारी था। इसका पुत्र भल्लाट था (भा. ९. २१.२-८)।

नीपातिथि 'काण्व'— एक वैदिक ऋषि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ३४. १; १५)। किसी एक युद्ध में, इंद्र ने इसका रक्षण किया था (ऋ. ८. ४९. ९)। यह एक ख्यातिप्राप्त 'होता' था, एवं स्वयं इंद्र ने इसके घर आ कर सोम प्राशन किया था (ऋ. ८. ५१. १)। एक 'सामन्' का भी यह रचयिता था (पं. ब्रा. १४. १०. ४)।

नील— कश्यप एवं कद्रू से उत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.७)

२. विश्वकर्मा के अंश से उत्पन्न हुआ रामसेना का एक वानर (भा. ९. १०. १६; म. व. २७४. २५)। इसने दूषण का छोटा भाई प्रमाथि का वध किया था।

३. अग्नि के अंश से उत्पन्न हुआ रामसेना एक वानर (वा. रा. कि. ३१)। बिभीषण से मिलने के लिये, राम लंकानगरी जा रहे थे। उस समय किष्किंधा नगरी में, यह राम के दर्शन के लिये आया था (पद्म. सृ. ३८)।

रामरावण युद्ध में, इसने निकुंभ, प्रहस्त, एवं महोदर राक्षसों से घनघोर युद्ध किया; एवं निकुंभ तथा महोदर का वध किया (वा. रा. यु. ४३; ५८; ७०)। बाद में राम के अश्वमेधयज्ञ के समय, यह शत्रुघ्न के साथ अश्वरक्षणार्थ देशविदेश गया था (पद्म. पा. ११)।

४. (सो. सह.) अनूप देश का एक राजा एवं पांडवपक्ष का महान् योद्धा। यह उदार, रथी, संपूर्ण अस्त्रों का ज्ञाता, एवं महामनस्वी था (म. आ. १७७.१०)।

भारतीय युद्ध में, इसका अश्वत्थामन् के साथ दो बार युद्ध हुआ था। पहली बार अश्वत्थामन् ने इसके सीने में प्रहार कर, इसे घायल किया (म. भी. ९०.३३); एवं दूसरी बार इसका वध किया (म. द्रो. ३०.२५)। धृतराष्ट्रपुत्र दुर्जय से भी इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २५. ४३)।

५. (सो. पुरु.) पुरुवंश का सुविख्यात राजा। यह अजमीढ एवं नलिनी का पुत्र था। इसका पुत्र शांति।

नील ने उत्तर पांचाल देश में स्वतंत्र राज्य स्थापित किया। इसकी राजधानी अहिच्छत्र नगरी थी। इसने उत्तर पांचाल के सुविख्यात 'नीलराजवंश' की नींव डाली।

६. उत्तर पांचाल देश का सुविख्यात राजवंश। इस वंश के नील से पृषत् तक के सोलह राजाओं का निर्देश पुराणों में अनेक स्थानों पर प्राप्त है (वायु. ९९.१९४-२११; मत्स्य. ५०.१-१६)। उन राजाओं के नाम इस प्रकार हैः--१. नील, २. सुशांति, ३. पुरुजानु ४. रिक्ष, ५. भर्म्याश्व, ६. मुद्गल, ७. वध्र्यश्व, ८. दिवोदास, ९. मित्रयु, १०. मैत्रेय, ११. च्यवन, १२. पंचजन, १३. सुदास, १४. सहदेव, १५. सोमक, १६. पृषत्

यह राजवंश बहुत ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्यों कि, इनमें से अनेक राजाओं का निर्देश वैदिक ग्रंथों में मिलता है। इस वंश के मुद्गल, वध्र्यश्व, दिवोदास, सुदास, च्यवन, सहदेव, सोमक, पिजवन (पंचजन) आदि राजाओं का निर्देश ऋग्वेद एवं ब्राह्मणादि ग्रंथों में प्राप्त है। ऋग्वेद में वर्णित दाशराज्ञ युद्ध 'सुदास' ने किया था।

पृषत् राजा का उत्तराधिकारी द्रुपद था। द्रुपद राजा एवं द्रोणाचार्य के संघर्ष के कारण, पांचाल देश उत्तर

एवं दक्षिण विभागों में पुनः एक बार बाँट दिया गया (द्रुपद एवं द्रोण देखिये)।

७. दक्षिणापथ में से माहिष्मती नगरी का राजा, एवं दुर्योधनपक्ष का महान् योद्धा। यह क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। यह द्रौपदीस्वयंवर के लिये गया था (म. आ. १७७.१०)। संभवतः 'नीलध्वज' इसीका ही नामांतर था (नीलध्वज देखिये)।

पांडवों के राजसूय यज्ञ के समय, सहदेव द्वारा किये गये दक्षिण दिग्विजय में, इसका उससे भीषण युद्ध हुआ था (म. स. २८.१८)। उस युद्ध के समय, अग्निदेव ने इसे सहायता की थी। अग्नि को इसने अपनी कन्या प्रदान की थी। उस कारण, अग्नि ने इसकी सेना को अभयदान दिया था। फिर भी सहदेव ने इसे पराजित किया, एवं यह सहदेव की शरण में गया (म. स. २८.३६-३७)।

इसने नर्मदा नदी को भार्यारूप में पा कर, उसके गर्भ से सुदर्शना नामक कन्या उत्पन्न की। उसे अग्नि चाहने लगा। फिर इसने उन दोनों का विवाह करा दिया। उन्हें सुदर्शन नामक पुत्र हुआ (म. अनु. २)।

भारतीययुद्ध में, यह दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. उ. १९.२३)। यह कौरवों के पक्ष का एक ख्यातिप्राप्त रथी था (म. उ. १६३.४)।

८. (सो.) एक राजा एवं यदुपुत्रों में से तीसरा पुत्र।

९. भृगुकुल का एक गोत्रकार।

१०. भृगुकुल का एक ब्रह्मर्षि।

नीलकंठ--शिवजी का एक नामांतर। समुद्र से निकला हुआ 'हलाहल विष' शिवजी ने प्राशन किया। इसीसे जल कर उनके कंठ का वर्ण नीला हो गया। इसलिये उन्हे यह नाम प्राप्त हुआ (भा. ८.७)।

शिवजी एवं नारायण के बीच में हुये युद्ध में, नारायण ने शिवजी का गला घोंट दिया। इस कारण उसका गला नीला पड़ गया, ऐसी भी कथा प्राप्त है (नारायण देखिये)।

नीलध्वज--हस्तिनापुर के दक्षिण में नर्मदा नदी के किनारे स्थित माहिष्मती नगरी का राजा (जै. अ. १४.१४)। महाभारत में निर्दिष्ट नील राजा एवं यह दोनों संभवतः एक ही होंगे (नील ७. देखिये)।

'जैमिनि अश्वमेध' के अनुसार, इसकी पत्नी का नाम सुनंदा, एवं पुत्र का नाम प्रवीर था। पांडवों के द्वारा छोड़ा गया अश्वमेधीय अश्व प्रवीर ने पकड़ लिया, एवं अश्वरक्षणार्थ नियुक्त किये वृषकेतु को पराजित किया। किंतु पश्चात् अनुशाल्व ने प्रवीर को पराजित किया। फिर नीलध्वज स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ, एवं उसका अर्जुन से घमासान युद्ध प्रारंभ हुआ।

अपने ससुर नीलध्वज की सहायता के लिये, अग्नि युद्धभूमी में प्रविष्ट हुआ, एवं वह अर्जुन की सेना को दग्ध करने लगा। अर्जुन अग्नि की शरण में गया। फिर अग्नि ने नीलध्वज एवं अर्जुन इन दोनों के बीच में मित्रत्व स्थापित किया। बाद में, नीलध्वज अर्जुन की सहायता के लिये, उसके साथ दक्षिणदिग्विजय में शामिल हुआ (जै. अ. १४.१४)।

नीलपराशर--पराशरकुलोत्पन्न एक ऋषिगण (पराशर देखिये)।

नीलरत्न--राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्व के संरक्षणार्थ शत्रुघ्न के साथ गया हुआ एक वीर (पद्म. पा. ११)।

नीला--कपिल तथा केशिनी की कन्या। इसके द्वारा आलंवेय ने 'नैल' उत्पन्न किये। इसकी विकचा नामक कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.१४७-१४८)।

२. (सत्या ५. देखिये)।

नीलिनी--अजमीढ़ राजा की एक पत्नी।

नीली--अजमीढ़ राजा की पत्नी। इसके दुष्यन्त तथा परमेष्ठिन् नामक दो पुत्र थे (म. आ. ८९.२८)।

नीवार--वेदकालीन एक जंगली जाति (का. सं. १२.४; मै. सं. ३.४.१०; श. ब्रा. ५.१.४.१४)।

नृग 'ऐक्ष्वाक'--(सू. इ.) एक प्राचीन दानी राजा। भागवत एवं महाभारत के अनुसार, यह इक्ष्वाकु के शतपुत्रों में से एक था (म. स. ८.८)। इक्ष्वाकु के ४८ पुत्रों को दक्षिणापथ में राज्य प्राप्त हुआ था। उनमें से नृग का राज्य पयोष्णी (तापी) नदी के तट पर था (म. व. ८६.४-६)।

नृग ने पयोष्णी नदी के किनारे वाराहतीर्थ में यज्ञ किया था। उस समय इसने एक कोटि के उपर गौ का दान किया। उनमें से एक गौ गलती से पुनः एक बार राजा के गोसमूह में वापस आयी, एवं दूसरे ब्राह्मण को पुनः दान में दी गयी। इससे उन दो ब्राह्मणों में झगड़ा शुरू हो कर, वे दोनों राजा के पास फैसले के लिये आये।

उस झगड़े का फैसला देने में नृग को देर हुई। उस कारण, उन ब्राह्मणों ने इसे शाप दिया, 'तुम गिरगिट बनोंगे'। राजा ने प्रार्थना कर 'उःशाप' माँगा।

फिर ब्राह्मणों ने 'उःशाप' दिया, 'भगवान् कृष्ण के द्वारा तुम्हारा उद्धार होगा'।

पश्चात् अपने वसु नामक पुत्र को गद्दी पर बैठा कर, यह वन में गया। बाद में कृष्ण के हस्तस्पर्श से, गिरगिट-योनि से इसका उद्धार हो गया (म. अनु. ७०; भा. १०.६४; वा. रा. उ. ५३-५४)।

शौर्य एवं दान के कारण, मृत्यु के पश्चात् नृग को उत्तम लोकों की प्राप्ति हो गयी (म. भी. १७.१०)।

इसने आजन्म मांसभक्षण का निषेध किया था। उस कारण, इसे 'परावरतत्त्व' का ज्ञान हो कर, यह यमराज की सभा में विराजमान हो गया (म. अनु. ११५.६०)।

नृग 'औशीनर'--(सो. अनु.) एक राजा। भागवत एवं मत्स्य के अनुसार, यह उशीनर राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'मृग' कहा गया हैं।

नृग 'मानव'--(सू.) पद्म के अनुसार मनु के दस पुत्रों में से दूसरा पुत्र। पुराणों में कई जगह मनुपुत्र नाभाग एवं नृग एक ही माने गये है (लिंग. १.६६.४५)। इसके पुत्र का नाम सुमति था।

भागवत में नृग राजा की 'वंशावलि' विस्तृतरूप से दी गयी है (भा. ९.२.१७-१८)। किंतु वह विश्वासार्ह नहीं प्रतीत होती है। नृग एवं उसका पितामह ओघवंत के पूर्वपुरुषों के महाभारत में दिये गये नाम, इस 'वंशावलि' में नृग के 'वंशज' के नाते दिये गये है।

नृचक्षु--(सो. पूरु. भविष्य.) पूरुवंश का एक राजा। भागवत तथा मत्स्य के अनुसार यह सुनीथ का, एवं विष्णु के अनुसार ऋच का पुत्र था (त्रिचक्षु देखिये)।

नृत्यप्रिया--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१०)।

नृपंजय--(सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंश का एक राजा। विष्णु के अनुसार यह सुवीर का, एवं मत्स्य के अनुसार सुनीथ का पुत्र था।

२. (सो. पूरु. भविष्य.) पूरुवंशीय एक राजा। विष्णु, भागवत, एवं भविष्य के अनुसार यह मेधाविन् का पुत्र था। इसे 'पुरंजय' नामांतर भी प्राप्त है।

नृपति--(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा। वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, यह धर्मनेत्र का पुत्र था। इसने ५८ वर्षों तक राज्य किया (निर्वृत्ति देखिये)।

नृमेध आंगिरस--अग्नि का एक आश्रित, एवं सामद्रष्टा ऋषि (ऋ. १०.८०.३, पं. ब्रा. ८.८.२१)। ऋग्वेद के अनेक सूक्तों का प्रणयन इसने किया था (ऋ. ८.८९; ९०; ९८; ९९; ९.२७; २९)। अग्नि के कृपा से इसे शकपूत आदि पुत्र प्राप्त हुये। मित्रावरुणों ने इसका एवं सुमेधस् का रक्षण किया था (ऋ. १०.१३२.७)। परुच्छेप ऋषि ने इसके साथ स्पर्धा करने की कोशिश की, किंतु इसने उसको पराजित किया (तै. सं. २.५.८.३)।

नृषद--एक वैदिक ऋषि (ऋ. १०. ३१. ११)। यह कण्व ऋषि का पिता था, एवं इसके नाम से उसे 'नार्षद कण्व' नाम प्राप्त हुआ था।

नृसिंह--भगवान् विष्णु का चौदहवाँ अवतार। इसका आधा शरीर सिंह का, एवं आधा मनुष्य का था। इस कारण, इसे 'नृसिंह' नाम प्राप्त हुआ। इसका अवतार चौथे युग में हुआ था (दे. भा. ४.१६)। पुराणों में निर्देश किये गये बारह देवासुर संग्रामों में, 'नारसिंहसंग्राम' पहले क्रमांक में दिया गया है (मत्स्य. ४७.४२)।

हिरण्यकशिपु नामक एक राक्षस ने ग्यारह हजार पाँच सौ वर्षों तक तप कर, ब्रह्माजी को प्रसन्न किया, एवं ब्रह्माजी से अमरत्व का वर प्राप्त कर लिया। उस वर के कारण, देव, ऋषि, एवं ब्राह्मण अत्यंत त्रस्त हुये, एवं उन्होंने हिरण्यकशिपु का नाश करने के लिये अवतार लेने की प्रार्थना श्रीविष्णु से की। हिरण्यकशिपु का पुत्र प्रह्लाद भगवद्भक्त था। उसको भी उसके पिता ने अत्यंत तंग किया था। फिर प्रह्लाद के संरक्षण के लिये, एवं देवों को अभय देने के लिये, श्रीविष्णु 'नृसिंह अवतार' ले कर, प्रगट हुये।

हिरण्यकशिपु के प्रासाद के खंभे तोड़ कर, नृसिंह प्रगट हुआ (नृसिंह. ४४.१६), एवं सायंकाल में इसने उसका वध किया (भा. २.७; ह. वं. १.४१; ३९.७१; लिंग. १.९४; मत्स्य. ४७.४६; पद्म. उ. २३८)। गंगा नदी के उत्तर किनारे पर हिरण्यकशिपु का वध कर, नृसिंह दक्षिण हिंदुस्थान में गोतमी (गोदावरी) नदी के किनारे पर गया, एवं उसने वहाँ दण्डक देश का राजा अंबर्य का वध किया (ब्रह्म. १४९)। इस प्रकार वध करने से इसे खून चढ़ गया। फिर शिवजी ने शरभ का अवतार ले कर, नृसिंह का वध किया (लिंग. १.९५)।

वेदों में प्राप्त नमुचि की एवं नृसिंह की कथा अनेक दृष्टि से समान है। 'नृसिंह अवतार' का निर्देश 'तैत्तिरीय आरण्यक' में भी प्राप्त है। 'नृसिंहतापिनी' नामक एक उपनिषद् भी उपलब्ध है। नृसिंह की कथा प्रायः सभी पुराणों में दी गयी है। किन्तु प्रह्लाद की संकटपरंपरा एवं

नृसिंह का खंभे से प्रगट होने का निर्देश, कई पुराणों में अप्राप्य है (म. स. परि. १. क्र. २१; पंक्ति. २८५–२९५; ह. वं. ३.४१–४७; मत्स्य. १६१–१६४; ब्रह्मांड. ३.५; वायु. ३८.६६)।

नृसिंह की उपासना—नृसिंह की उपासना भारतवर्ष में आज भी अनेक स्थानों पर बड़ी श्रद्धा से की जाती है। नृसिंह के मंदिर एवं वहाँ पूजित नृसिंह के नाम, स्थानीय परंपरा के अनुसार, अलग अलग दिये जाते है। इन नृसिंहस्थानों की एवं वहाँ पूजित नृसिंहदेवता के स्थानीय नामों की सूचि नीचे दी गयी है। उनमें से पहला नाम नृसिंहस्थान का, एवं 'कोष्ठक' में दिया गया नाम नृसिंह का स्थानीय नाम का है।

नृसिंहस्थान—अयोध्या (लोकनाथ), आव्य (विष्णुपद), उज्जयिनी (त्रिविक्रम), ऋषभ (महाविष्णु), कपिलद्वीप (अनन्त), कसेरट (महाबाहु), कावेरी (नागशायिन्), कुण्डिन (कुण्डिनेश्वर), कुब्ज (वामन), कुब्जागार (हृषीकेश), कुमारतीर्थ (कौमार), कुरुक्षेत्र (विश्वरूप), केदार (माधव), केरल (बाल), कोकामुख (वराह), क्षिराब्धि (पद्मनाथ), गंधद्वार (पयोधर), गन्धमादन (अचिन्त्य), गया (गदाधर), गवांनिष्क्रमण (हरि), गुह्यक्षेत्र (हरि), चक्रतीर्थ (सुदर्शन), चित्रकूट (नराधिप), तृणबिंदुवन (वीर), तैजसवन (अमृत), त्रिकूट (नागमोक्ष), दण्डक (श्यामल), दशपुर (पुरुषोत्तम), देवदारुवन (गुह्य), देवशाला (त्रिविक्रम), द्वारका (भूपति), धृष्टद्युम्न (जयध्वज), निमिष (पीतवासस्), पयोष्णी (सुदर्शन), पाण्डुसह्य (देवेश), पुष्कर (पुष्कराक्ष), पुष्पभद्र (विरज), प्रभास (रविनन्दन), प्रयाग (योगमूर्ति), भद्रा (हरिहर), भाण्डार (वासुदेव), मणिकुण्ड (हलायुध), मथुरा (स्वयंभुव), मन्दर (मधुसूदन), महावन (नरसिंह), महेन्द्र (नृपात्मज), मानसतीर्थ (ब्रह्मेश), माहिष्मती (हुताशन), मेरुपृष्ठ (भास्कर), लिङ्गकूट (चतुर्भुज), लोहित (हयशीर्षक), वल्लीवट (महायोग), वसुरुद (जगत्पति), वाराणसी (केशव), वाराह (धरणीधर) वितस्ता (विद्याधर), विपाशा (यशस्कर), विमल (सनातन), विश्वासयूप (विश्वेश), वृंदावन (गोपाल), वैकुण्ठ (माल्योदपान), शालग्राम (तपोवास), शिवनदी (शिवकर), शूकरक्षेत्र (शूकर), सकल (गरुडध्वज), सायक (गोविंद), सिंधुसागर (अशोक), हलाङ्गर (रिपुहर), (नृसिंह. ६५)।

नेतिष्य (नेतिण्य)—भृगुकुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि।

नेत्र—(सो. सह.) एक राजा। भागवत के अनुसार यह धर्म राजा का पुत्र था।

नेदिष्ठ—वैवस्वत मनु का पुत्र।

नेम भार्गव—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. १००)।

नेमि—बलि के पक्ष का एक दैत्य (भा. ८. ६. २२)

२. (सू. इ.) एक राजा। वायु के अनुसार यह इक्ष्वाकु के पुत्रों में से एक था। अन्य पुराणों में, इसे 'निमि' कहा गया हैं।

नेमिकृष्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। वायु के अनुसार, यह पट्टमत् राजा का पुत्र था। इसने २५ वर्षों तक राज्य किया।

नेमिचक्र—(सो. पूरु. भविष्य.) हस्तिनापुर का एक राजा। यह असीमकृष्ण राजा का पुत्र था। यमुना नदी के बाढ़ से हस्तिनापुर नगर बह जाने के बाद, इसने अपनी नयी राजधानी कौशांबी नगर में बसायी। इसका पुत्र चित्ररथ (भा. ९. २२. ३९)।

नैकजिह्व—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

नैकदृश्—विश्वामित्र का पुत्र।

नैकशि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

नैगम—शाकपूर्ण रथीतर ऋषि के चार प्रमुख शिष्यों में से एक। अन्य तीन शिष्यों के नाम–केतव, दालकि, शतवलाक।

नैगमेश—कुमार कार्तिकेय का तृतीय भ्राता। इसके पिता का नाम अनल था (म. आ. ६०.२२)।

२. कार्तिकेय के चार मूर्तियों में से एक मूर्ति का नाम। अन्य दो मूर्तियों के नाम शाख एवं विशाख थे (म. श. ४३.३७)।

३. अनल वसु का पुत्र।

नैद्राणि—अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

नैध्रुव—कश्यपकुल का गोत्रकार। यह कश्यप ऋषि का पौत्र, एवं अवत्सार ऋषि का पुत्र था। यह छः कश्यप 'ब्रह्मवादिनों' में से एक था। अन्य ब्रह्मवादिनों के नाम-कश्यप, अवत्सार, रैभ्य, असित, देवल (वायु. ५९.१०३; मत्स्य. १४५. १०६–१०७; कश्यप देखिये)।

२. काश्यपवंश में से एक प्रमुख गोत्र का नाम। अन्य दो प्रमुख गोत्र–शांडिल्य, एवं रैभ्य।

नैध्रुवि—कश्यप ऋषि का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.४. ३३)।

नैर्ऋत—एक सूक्तद्रष्टा (कपोत नैर्ऋत देखिये)।

२. एक राक्षस। यह पृथ्वी के प्राचीन शासकों में से एक था (म. शां. २२०.५१-५३)।

३. एक 'रात्रीराक्षस' गण। उस गण के अन्य राक्षस समूह—पौलस्त्य, आगस्त्य, कौशिक (पार्गि. २४२)।

नैमिशि—शितिबाहु ऐषु नामक वैदिक ऋषि की उपाधि (जै. ब्रा. १.३६३)। शितिबाहु 'नैमिश' वन का रहनेवाला होने से, उसे यह उपाधि मिली होगी।

नैमिशीय—नैमिशवन में रहनेवाले लोगों का सामूहिक नाम (पं. ब्रा. २५. ६. ४; जै. ब्रा. १. ३६३)। ये लोग बहुत ही पूज्य माने जाते थे (कौ. ब्रा. २६. ५)। इस कारण नैमिशारण्यवासी ऋषियों को महाभारत सुनाया गया था।

नैल—एक ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

२. एक ज्ञातिसमूह (नीला १. देखिये)।

नैषध--दुर्योधन पक्ष के 'पौरव' राजा का नामांतर। यह निषध देश का राजा होने के कारण, उसे यह नाम प्राप्त हुआ था (पौरव देखिये)। धृष्टद्युम्न ने इसका वध किया (म. द्रो. ३१. ६३)।

२. दक्षिण देश के नड़ राजा की उपाधि (नैषिध देखिये)

नैषाद--निषाद जाति का एक व्यक्ति (कौ. ब्रा. २५. १५; वा. सं. ३०. ८)।

नैषादि-- द्रोणशिष्य एकलव्य का नामांतर (म. द्रो. १५६. १७)।

२. भविष्य एक राजवंश। नल नैषध राजा के वंश में उत्पन्न नौ राजा इस वंश में शामिल थे। उन्हें 'मेघ' नामांतर भी प्राप्त था। वे कोमला नामक नगरी में रहते थे।

नैषिध—दक्षिण देश के नड़ राजा का पैतृक नाम एवं उपाधि (श. ब्रा. २. ३. २. १-२)। इस नाम का बाद का रूप 'नैषध' है।

नोधस्—एक वैदिक कवि एवं सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.६१. १४; ६२. १३; एकद्यू देखिये)। यह पुरुकुत्स राजा का समकालीन था।

नोधस् गौतम--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१.५८-६४; ८. ८८; ९. ९३)। यह कक्षीवत् ऋषि का वंशज (पं. ब्रा. ७. १०. १०; २१. ९.१२; ऐ. ब्रा. ४. २७; अ. वे. १५. २. ४; ४.४), एवं गोतम ऋषि का पुत्र था (ऋ. १. ६०. ५; ४. ३२. ९; ८. ८८. ४)।

नौकर्णी--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. २८)। इसके नाम के लिये, सुकर्णी एवं नैककर्णी पाठभेद भी उपलब्ध हैं।

न्यग्रोध--(सो. कुकुर) भागवत के अनुसार मथुरा के उग्रसेन राजा का पुत्र, एवं कंस का भाई। धनुर्याग के समय, कृष्ण ने कंस का वध किया। फिर अपने भाई के मृत्यु का बदला लेने के लिये, यह आगे दौड़ा। उस समय, बलराम ने 'परिघ' फेंक कर इसका वध किया।

प

पक्थ--एक वैदिक ज्ञातिसमूह (ऋ. ७.१८.७)। इस जाति के लोगों ने दाशराज्ञयुद्ध में तृत्सु-भरतों का विरोध किया था। त्सिमर के मत में, आधुनिक अफ़गानिस्तान में स्थित 'पख्तून' जाति के लोग यही होंगे (त्सिमर-अल्टिन्डिशे लेबेन पृ. ४३०)।

२. पक्थ लोगों का एक राजा, एवं अश्विनों का आश्रित (ऋ. ८.२२.१०)। इसपर इंद्र की कृपा थी (ऋ. ८. ४९.१०)। दाशराज्ञयुद्ध में यह त्रसदस्यु के पक्ष में, एवं सुदास के विरोधी पक्ष में शामिल था (ऋ. ७.१८.७)। ऋग्वेद में एक जगह, इसका नाम 'तूर्वायण' बताया है, एवं इसे च्यवान ऋषि का शत्रु कहा है (ऋ. १०.६१.१-२)।

पक्ष—देवयोनि के अंतर्गत 'गुह्यक' जाति में से एक पुरुष। यह मणिवर एवं देवजनी के तीस पुत्रों में से एक था (मणिवर देखिये)।

२. (सो. अनु) एक राजा। वायु के अनुसार, अनु राजा का पुत्र चक्षु एवं यह, दोनों एक ही थे (चक्षु देखिये)।

पक्षगंत—एक ऋग्वेदी श्रुतर्षिगण।

पक्षालिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१९)।

पंकजित्—गरुड़ की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१० पाठ)।

पंकदिग्धांग—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६३)।

पंचक--इंद्र द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे का नाम उत्क्रोश था (म. श. ४४.३२ पाठ)।

पंचकर्ण वात्स्यायन--एक वैदिक गुरु। 'वात्स्य' का वंशज होने के कारण, इसे 'वात्स्यायन' नाम प्राप्त हुआ था।

मनुष्य के मस्तक में रहनेवाले सात प्राण, योगशास्त्र की परिभाषा में, 'सप्तसूर्य' कहलाते हैं। उन सप्तसूर्यों का दर्शन पंचकर्ण को हुआ था। इस अपूर्व अनुभव का वर्णन भी इसने दिया है (तै. आ. १.७.२)। 'वात्स्यायन कामसूत्र' नामक विश्वविख्यात कामशास्त्रविषयक ग्रंथ का रचयिता संभवतः यही होगा।

पंचचूडा—पाँच जूड़ोंवाली एक अप्सरा (म. व. १३४.११)। यह कुबेरसभा में विराजमान रहती थी (म. स. १०.११२*)।

परमपदप्राप्ति के लिये ऊपर की ओर जाते हुए शुकदेव को, एक बार इसने देखा, एवं यह आश्चर्यचकित हो उठी (म. शां. ३३२.१९-२०)।

नारी स्वभाव की निंद्यता का वर्णन इसने नारद के समक्ष किया था (म. अनु. ३८.११-३०)। पश्चात् वही नारीस्वभाव-वर्णन भीष्म ने युधिष्ठिर को बताया था। इसे 'पुँश्चली' एवं 'ब्राह्मी' नामांतर भी प्राप्त है।

पंचजन—वेदकालीन पाँच प्रमुख ज्ञातियों का सामूहिक नाम (ऐ. ब्रा. ३.३१; ४.२७; तै. सं. १.६.१.२; का. सं. ५.६; १२.६)। ऋग्वेद के प्रत्येक मंडल में 'पंचजनों' का उल्लेख मिलता है :--मंडल क्रमांक २, एवं ४ में एक एक बार; मंडल क्र. १.५.६.७. एवं ८ में दो दो बार; मंडल क्रमांक ३ एवं ९ में तीन-तीन बार; तथा मंडल क्रमांक १० में चार बार।

एक यौगिक शब्द के रूप में 'पंचजनों' का निर्देश उपनिषद में मिलता है (बृ. उ. ४.४.१७)। ये लोग सरस्वती नदी के तट पर रहते थे (ऋ. ६.६१.१२)।

'पंचजनों' के निम्नलिखित नामांतर वैदिक ग्रंथों में मिलते है :-

(१) पंचमानुष--(ऋ. ८.९.२)।

(२) पंचमानव--(अ. वे. ३.२१.५, २४.३; १२. १.१५)।

(३) पंचकृष्टि - (ऋ. २.२.१०; ३.५३.१६; ४. ३८.१०; अ. वे. ३.२४.३)।

(४) पंचक्षिति--(ऋ. १.७.९; ५.३५.२; ७.७५.४)

(५) पंचचर्षणि--(ऋ. ५.८६.२; ७.१५.२; ९. १०१.९)।

'पंचजन कौन थे--वैदिक वाङ्मय निर्दिष्ट, 'पंचजन' (पाँच जातियाँ) निश्चित कौन लोग थे, यह अत्यंत अनिश्चित है। इस बारे में कुछ मतांतर नीचे दिये गये हैं:--

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, देवता, मनुष्य, गंधर्व, सर्प एवं पितृगण ये पाँच ज्ञातिसमूह 'पंचजन' कहलाते थे (ऐ. ब्रा. ३.३१)।

औपमान्यव एवं सायणके अनुसार, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र एवं निषाद थे पाँच वर्ण 'पंचजन' थे (नि. ३. ८; ऋ. १. ७. ९)।

यास्क के अनुसार, गंधर्व, पितरः, देव, असुर, एवं रक्षस् इनका ही केवल 'पंचजनों' में समावेश होता था (निरुक्त. ३.८; बृ. उ.४.४.१७ शांकरभाष्य)।

रॉथ एवं गेल्डनर--के अनुसार, पृथ्वी के उत्तर, दक्षिण पूर्व, पश्चिम इन चार दिशाओं में रहनेवाले लोग एवं उनके बीच में स्थित आर्यगण ये पाँच पंचजन। 'पंचजन' में अभिप्रेत है (सेन्ट पीटर्सबर्ग कोश)। अपने मत की परिपुष्टि के लिये, उन्होंने अथर्ववेद में प्राप्त, 'पंच प्रदिशो मानवीः पंच कृष्टयः' (अ. वे. ३.२४.३) ऋचा का उद्धरण दिया है।

झिमर--के अनुसार, वैदिक 'पंचजनो' में केवल आर्य लोगों का समावेश अभिप्रेत है। इस कारण, अनु, द्रुह्यु, यदु, तुर्वश एवं पूरु इन आर्य जातियों को ही वैदिक ग्रंथों में 'पंचजन' कहलाना अधिकतम ठीक होगा।

उपरिनिर्दिष्ट मतांतरों में से झिमर का मत, सब से अधिक मान्य है। 'ब्राह्मण' ग्रंथों के काल में, पंचजनों के अंतर्गत पाँच जातियों को संभवतः 'पंचाल' यह नया नाम प्राप्त हुआ। पश्चात् कुरु लोगों का पंचजनों में समावेश हो कर, 'कुरु पंचाल' ये लोग 'सप्तजन' नये नाम से प्रसिद्ध हुये (श. ब्रा. १३.५.४.१४; ऐ. ब्रा. ८.२३; वेबर-इन्डिशे स्टुडियन १.२०२)।

२. नरकासुर के परिवार में स्थित पाँच राक्षसों का समूह। श्रीकृष्ण ने इनका वध किया (नरक देखिये)।

३. (सो. नील.) उत्तर पांचाल देश का सुविख्यात राजा। इसे 'च्यवन' नामांतर भी प्राप्त है। ऋग्वेद में इसका निर्देश 'पिजवन' नाम से किया गया प्रतीत होता है (ऋ. ७.१८.२२)। 'पंचजन' यह संभवतः 'पिजवन' का ही अपभ्रष्ट रूप होगा। अग्नि पुराण में, इसके नाम के लिये 'पंचधनुष' पाठभेद उपलब्ध है।

यह सृंजय राजा का पुत्र था। इसका पुत्र सोमदत्त (ब्रह्म. १३.९८; ह. वं. १.३२.७७)।

४. एक दैत्य। यह संह्राद नामक दैत्य का पुत्र था। यह शंख का रूप धारण कर समुद्र में रहता था। सांदीपनि ऋषि के मरे हुए पुत्र को, समुद्र में से वापस लाने के लिये श्रीकृष्ण समुद्र में गया। उस समय, उसने पंचजन का वध किया, एवं इसके अस्थियों से एक शंख बनाया। भगवान् श्रीकृष्ण का सुविख्यात 'पांचजन्य' शंख वही है (भा. ६.१८.१४; १०.४५.४०)।

५. एक प्रजापति। इसके 'पांचजनी' (असिक्नी) नामक एक कन्या थी। वह प्राचेतस दक्ष को पत्नी के रूप में दी गयी थी (भा. ६.४.५१)।

६. कपिल ऋषि के शाप से बचे हुये सगर के चार पुत्रों में से एक (पद्म. उ. २०; ब्रह्म. ८.६३)।

पंचजनी—ऋषभ राजा का पुत्र भरत की पत्नी। इसके कुल पाँच पुत्र थे। उनके नाम—सुमति, राष्ट्रभृत, सुदर्शन, आवरण, एवं धूम्रकेतु हैं (भा. ५.७.१-३)।

२. दक्ष की पत्नी (मत्स्य. ५.४)।

पंचधनुष—(सो. नील.) उत्तर पंचाल के पंचजन राजा का नामांतर।

पंचपत्तलक—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। ब्रह्मांड के अनुसार यह हाल राजा का पुत्र था (तल्क देखिये)।

पंचम—वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य (व्यास देखिये)।

पंचमेढ्र—एक राक्षस। इसकी पाँच इंद्रियाँ, पाँच पैर, दस हाथ तथा आठ सिर थे। यह असाधारण आहार लेता था। इसलिये वाली से युद्ध करते समय, इसने उसे निगल लिया था। वाली के बंधु सुग्रीव, तथा दधीचि कश्यपादि ऋषियों को भी इसने निगल लिया था। परंतु वीरभद्र ने इससे युद्ध कर, इसके पेट का विच्छेद किया एवं इन सबको बाहर निकाला (पद्म. पा. १०६)।

पंचयाम—भागवत के अनुसार, अष्ट वसुओं में से विभावसु का पौत्र, एवं आतप का पुत्र। इसकी माता का नाम उषा था। इसीके कारण पृथ्वी पर से सारे प्राणी कर्मप्रवृत्त हो जाते है (भा. ६.६.१६)।

पंचवक्त्र—स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)।

पंचवीर्य—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.१६)।

पंचशिख—एक प्राचीन ऋषि। इसे 'पंच कोशों' का एवं उन कोशों के बीच में स्थित ब्रह्म का अग्निशिखा के समान तेजस्वी ज्ञान था। इसलिये इसे 'पंचशिख' नाम प्राप्त हुआ था (म. शां. २११.६१२*)।

इसकी माता का नाम कपिला था। कपिला इसकी जन्मदात्री माता नहीं थी। उसका दूध पी कर यह बड़ा हुआ था। इसकी माता के नाम से, इसे 'कापिलेय' मातृक नाम प्राप्त हुआ। सांख्य ग्रंथों में इसे 'कपिल' कहा गया है (मत्स्य. ३.२९)।

गुरुपरंपरा—यह याज्ञवल्क्यशिष्य आसुरि ऋषि का प्रमुख शिष्य था (म. शां. २११.१०)। 'बृहदारण्यक उपनिषद' में इसकी गुरुपरंपरा इसप्रकार दी गयी हैः—उपवेशी, अरुण, उद्दालक, याज्ञवल्क्य, आसुरि, पंचशिख (बृहदारण्यक. ६.५.२-३)। पुराणों में इसकी गुरुपरंपरा कुछ अलग दी गयी है, जो इस प्रकार हैः— वोढु, कपिल, आसुरि, पंचशिख (वायु. १०१.३३८)।

इस गुरुपरंपरा में से कपिल ऋषि पंचशिख ऋषि का परात्पर गुरु (आसुरि नामक गुरु का गुरु) था। महाभारत में, कपिल एवं पंचशिख इन दोनों को एक ही मानने की भूल की गयी है (म. शां. ३२७.६४)। उस भूल के कारण, पंचशिख को चिरंजीव उपाधि दी गयी, जो वस्तुतः कपिल ऋषि की उपाधि थी (म. शां. २११.१०)। सांख्यशास्त्र के अभ्यासक, कपिल ऋषि को ब्रह्माजी का अवतार समझते हैं, एवं पंचशिख को कपिल का पुनरावतार मानते हैं।

शिष्य—मिथिला देश का राजा जनदेव जनक पंचशिख ऋषि का शिष्य था। उससे इसका 'नास्तिकता' के बारे में संवाद हुआ था (नारद. १.४५)। इस संवाद के पश्चात्, जनदेव जनक ने अपने सौ गुरुओं को त्याग कर, पंचशिख को अपना गुरु बनाया। फिर इसने उसे सांख्य तत्त्वज्ञान के अनुसार, मोक्षप्राप्ति का मार्ग बताया। निवृत्तिमार्ग के आचरण से जनन-मरण के फेरें से मुक्ति एवं परलोक की सिद्धि कैसी प्राप्त हो सकती है, इसका

उपदेश पंचशिख ने जनदेव जनक को दिया (म. शां. २११-२१२)।

पंचशिख का एक और शिष्य धर्मध्वज जनक राजा था (म. शां. ३०८)। महाभारत में प्राप्त 'सुलभा धर्मध्वज जनक संवाद' में, धर्मध्वज नें इसे अपना गुरु कहलाया है।

भारतीय षड्-दर्शनों की परंपरा में 'सांख्यदर्शन' सब से प्राचीन है। उस शास्त्र के दर्शनकारों में पंचशिख पहला दार्शनिक आचार्य माना जाता है। निम्नलिखित लोगों को पंचशिख ने 'सांख्यशास्त्र' सिखाया थाः— (१) धर्मध्वज जनक; (२) विश्वावसु गंधर्व (म. शां. ३०६. ५८); (३) काशिराज संयमन (म. शां. परि. १. क्र. २९)।

पंचशिख 'पराशरगोत्रीय' था। संन्यासधर्म एवं तत्त्वज्ञान का इसे पूर्ण ज्ञान था। यह ब्रह्मनिष्ठ था, एवं इसमें 'उहापोह' (ब्रह्मज्ञान का ग्रहण एवं प्रदान) की शक्ति थी। इसने एक सहस्र वर्षों तक 'मानसयज्ञ' किया था। 'पंचरात्र' नामक यज्ञ करने में यह निष्णात था (म. शां. २११; नारद. १. ४५)।

शुक्लयजुर्वेदियों के 'ब्रह्मयज्ञांगतर्पण' में इसका निर्देश प्राप्त है (पारस्करगृह्य. परिशिष्ट; मत्स्य. १०२. १८)।

ग्रंथ—'सांख्यशास्त्र' पर इसने 'षष्टितंत्र' नामक एक ग्रंथ भी लिखा था (योगसूत्रभाष्य. १. ४; २. १३; ३. १३)। वह ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं है। सांख्यदर्शन पर उपलब्ध होनेवाला प्राचीनतम ग्रंथ ईश्वरकृष्ण का 'सांख्यकारिका' है। ईश्वरकृष्ण का काल चौथी शताब्दी के लगभग माना जाता है।

सांख्यतत्त्वज्ञान—सांख्य अनीश्वरवादी दर्शन है। पुरुष एवं प्रकृति ही उसके प्रतिपादन के प्रमुख विषय हैं। सांख्य के अनुसार, प्रकृति एवं पुरुष अनादि से प्रभुत्ववान् है।' मैं सुखदुःखातिरिक्त तीन गुणों से रहित हूँ, इस प्रकार का विवेक प्रकृति एवं पुरुष में उत्पन्न होता है, तब ज्ञानोपलब्धि होती है। जब प्रारब्ध कर्म का भोग समाप्त हो कर आत्मतत्त्व का साक्षात्कार हो जाता है, तब मोक्षप्राप्ति हो जाती है।

सांख्य सत्कार्यवादी दर्शन है। सत्कार्यवाद की स्थापना के लिये, उस दर्शन में, असदकरण, उपादानग्रहण, सर्वसंभवाभाव, शक्यकरण एवं कारणाभव ये पाँच हेतु दिये गये है (सांख्यकारिका)। शंकराचार्यजी ने भी न्याय के असत्कार्यवाद के खंडनार्थ जो युक्तियाँ कथन की है, उन पर सांख्यकारिका का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। (वेदान्तसूत्र २.१.१८)।

कनिष्ठ अधिकारियों के लिये वैशेषिक एवं न्याय, मध्यम अधिकारियों के लिये सांख्य, और उत्तम अधिकारियों के लिये वेदान्त का कथन किया गया है। सांख्यदर्शन में प्रकृति के विभिन्न रूपगुणों की व्याख्या परिमाणवाद या विकासवाद का प्रतिपादन, पुरुष एवं प्रकृति का विवेचन, पुनर्जन्म, मोक्ष एवं परमतत्त्व का विश्लेषण, बहुत ही सूक्ष्म एवं वैज्ञानिक दृष्टि से किया गया है (गेरौला-संस्कृत साहित्य का इतिहास ४७१-४७३)।

२. दधिवाहन नामक शिवावतार का शिष्य।

पंचहस्त—दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

पंचाल—शतपथ ब्राह्मण कालीन एक लोकसमूह (श. ब्रा. १३. ५. ४. ७; जै. ब्रा. ३.२९.१)। ऋग्वेदकाल में यही लोग 'क्रिवि' नाम से, एवं महाभारतकाल में ये लोग 'पांचाल नाम से प्रसिद्ध थे (म. आ. ५५.२१; पांचाल देखिये)।

पंचाल लोगों का निर्देश प्रायः कुरु लोगों के साथ आता है। कुरु पंचालों के राजाओं का निर्देश 'ऐतरेय ब्राह्मण' में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.१४)। उनमें से क्रैव्य, दुर्मुख प्रवाहण जैवलि, एवं शोन ये पंचाल राजा प्रधान एवं महत्त्वपूर्ण है। केशिन् दाल्भ्य नामक और एक पंचाल राजा का निर्देश 'काठक संहिता' में प्राप्त है (का. सं. ३.२)। इन लोगों के नगरों में, 'परिचक्रा,' 'कांपील,' 'कौशांबी' ये प्रमुख थे (श. ब्रा. १३.५. ४.७)।

पंचाल लोगों के अंतर्गत 'क्रिवियों' के अतिरिक्त अन्य जातियाँ भी सम्मीलित थीं। 'पंचाल' नाम से पाँच ज्ञातियों का संदर्भ प्रतीत होता हैं। ऋग्वेद में निर्देशित पाँच जातियाँ ('पंचजन') एवं 'पंचाल' एक ही थे, ऐसा कई अभ्यासकों का कहना है (पंचजन देखिये)।

पंचाल देश के ब्राह्मण दार्शनिक एवं भाषाशास्त्रीय वादविवादों में प्रवीण रहते थे (बृ. उ. ६.१;१. छां. उ. ५.३.१)। महाभारतकाल में पंचाल देश का उत्तर एवं दक्षिण के रूप में विभाजन किया गया था। किंतु वैदिक साहित्य में उस विभाजन का कुछ उल्लेख नहीं मिलता।

२. (सो. नील.) भद्राश्व (भर्म्याश्व) राजा के पाँच पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम। 'पंच अलम्'

(पाँच पराक्रमी) के अर्थ से यह नाम भद्राश्व के पुत्रों के लिये प्रयुक्त किया जाता था। उन्ही के नाम से, उनके राज्य को 'पंचाल' नाम प्राप्त हुआ (पार्गि. ७५)।

पंचालचंड—पंचाल देश में उत्पन्न एक वैदिक ऋषि। वाणी के द्वारा ही वैदिक संहिताएँ 'संहित' की जाती है, ऐसा इसका मत था (ऐ. आ. ३.१.६; सां. आ. ७. १९)।

पंचिक—दक्षिण पांचाल देश के 'ब्राभ्रव्य पांचाल' आचार्य का नामांतर (ह. वं. २३.१२५६; ब्राभ्रव्य पांचाल देखिये)।

पज्र—एक वैदिक कुलनाम। पज्रिय कक्षीवत् ऋषि इसी कुल में पैदा हुआ था (ऋ. १.१२६.२–५)। यह कुल 'अंगिरस कुल' की ही एक उपशाखा थी (ऋ. १.५१.४ सायण.)। सोम को 'पज्रागर्भ' कहा गया है (ऋ. ९.८२.४)।

पज्रिय वा पज्य—'कक्षीवत् दीर्घतमस् औशिज' ऋषि का पैतृक नाम (ऋ. १.११६; ११७.१०; १२२. ७८)। इसके सूक्त में उत्तर पांचाल देश का राजा दिवोदास का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.११६.१८)। यह ऋषि भरत राजा के समकालीन, कक्षीवत् ऋषि से अलग एवं पश्चात्कालीन था, ऐसा पार्गिटर का कहना है (पार्गि. २२३)।

पटच्चर--'पटच्चर' देश के निवासियों का सामूहिक नाम। ये लोग जरासंध की भय से दक्षिण की ओर भाग गये थे (म. स. १३.२५)। सहदेव ने इन्हें दक्षिण-दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २८.४)। भारतीय युद्ध में, ये लोग युधिष्ठिर के पक्ष में लड़ने आये थे, एवं उसके साथ क्रौंचव्यूह के पृष्ठभाग में खड़े थे (म. भी. ४६.४७)।

२. एक राक्षस। रथसेन राजा ने इसका वध किया (म. द्रो. २२.५३)।

पटवासक--धृतराष्ट्र के कुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया (म. आ. ५७. १८; भांडारकर संहिता पाठ–'पटवासन')।

पट्टुमत्--(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह मेघस्वाति का, ब्रह्मांड के अनुसार आपोलव का, एवं वायु के अनुसार आपादबद्ध का पुत्र था। भागवत में इसे अटमान कहा गया है। इसने २४ वर्षों तक राज्य किया

पट्टुमित्र--(किलकिला. भविष्य.) विष्णु के अनुसार एक राजा।

पटुश—एक राक्षस, जिसने श्रीरामसेना के पनस नामक वानर से युद्ध किया था (म. व. २६९.८)।

पट्टमित्र—(भविष्य.) ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार पुष्पमित्र के बाद के तेरह राजाओं का सामूहिक नाम।

पठर्वन्--अश्वियों का कृपापात्र एक राजा (ऋ. १. ११२.१७ सायणभाष्य)।

पड्गृभि--एक वैदिक असुर (ऋ. १०.४९.५): 'पड्गृभि' का शब्दशः अर्थ 'पैर को पकड़ लेनेवाला', ऐसा होता है। श्रुतवर्मन् राजा के रक्षणार्थ, इंद्र ने इसको पराजित किया था।

पणव--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। वायु के अनुसार यह भजमान का पुत्र था।

पणि—एक वैदिक जाति। इस जाति के लोग वैदिक ऋषियों के देवताओं की उपासना न करनेवाले लोगो में मे थे। संभवतः ये कही आदिवासी अनार्य वा दैत्य रहे होंगे। इनके राजा का नाम 'बृबु' था। (ऋ. ६.४५. ३१–३३; बृबु देखिये)

रॉथ के अनुसार, 'पणि' शब्द 'पण' (विनिमय) धातु से व्युत्पन्न हुआ था, एवं 'पणि ऐसे जाति के लोग थे, जो विना किसी प्रतिप्राप्ति के अपना कुछ नहीं देते थे, अतः ये ऐसे कृपण लोग थे जो न तो देवों की उपासना करते थे, और न पुरोहितों को दक्षिणाएँ देते थे (रॉथ-सेंट पिटर्सवर्ग कोश)। यास्क एवं सायणाचार्य भी पणि को वणिज जाति का कहते हैं (निरुक्त. २.१७; ६.२६)।

ऋग्वेद के सूक्तकार अपने विरोधियों को 'इंद्रशत्रु,' 'अयज्वन्' आदि अपमान दर्शक शब्दों से संबोधित करते हैं। इस प्रकार पणियों को भी संबोधित किया गया है। इन्हे गंदे, कंजूस आदि विशेषणों से संबोधित किया गया है (ऋ. १०.१०८)। इन पर आक्रमण करने की प्रार्थना देवों से की गयी हैं एवं वामदेव ने अपनी प्रार्थना में कहा है, 'अत्यंत निबिड़ अंधकार में पणि गिरें (ऋ. ४.५१.३)। ऋग्वेद में एक स्थल पर, इन्हें शत्रु के नाते भेड़िया कहा गया है (ऋ. ६.५१.१४); एवं दूसरे एक स्थल पर इन्हें 'बेकनाट' (व्याज खानेवाला) कहा है (ऋ. ८-६६.१०) एक अन्य स्थल पर, इन्हें 'दस्यु' कह कर, इनके लिये 'मृध्रवाच' (कटु वाणी बोलनेवाला, एवं 'ग्रथिन्' (अपरिचित वाणी बोलनेवाला) शब्दों का

प्रयोग किया गया हैं (ऋ. ७.६.३)। इन्हें 'वैरदेय' कह कर मनुष्यों से हीन माना गया है (ऋ. ५.६१.८)।

कृपण के रूप में, पणि वैदिक यज्ञकर्ताओं के विरोधी थे (ऋ.१.१२४.१०; ४.५१.३)। दैत्यों के रूप में आ कर ये आकाश की गायों या जलों को रोक रखते थे (ऋ. १.३२.११; श. ब्रा. १३.८.२.३)। ऋग्वेद के 'सरमा-पणि-संवाद' में ऐसी ही एक कथा दी गयी हैं (ऋ. १० १०८)। पणियों ने इंद्र की गायों का हरण किया। फिर इंद्र के दूत बन कर, सरमा पणियों के पास आयी, एवं इंद्र की गायें लौटाने की धमकी उसने इन्हें दे दी। वही 'सरमा-पणि-संवाद' है।

पणियों का वध कर के देवों ने उन्हें पराजित किया था। फिर पणियों की सारी संपत्ति कब्जे में ले कर, देवों ने उसे अंगिरसों को दे दी (ऋ. १.८३.४)। अथर्वन् अंगिरस इंद्र का गुरु था, एवं उसने अग्नि उत्पन्न कर, उसे हवि अर्पण किया था। इस पुण्य के कारण, देवों ने अंगिरसों पर कृपा की।

लुडविग के अनुसार, 'पणि' लोग आदिवासी व्यवसायी थे एवं काफिलों में चलते थे (लुडविग–ऋग्वेद अनुवाद ३.२१३–२१५)। हिलेब्रान्ट के अनुसार ये लोग इराण में रहनेवाले थे, एवं स्ट्राबो के 'पर्नियन', टॉलेमी के 'पारूपेताइ,' अर्रियन के 'बारसायन्टेस' से समीकृत थे (हिलेब्रान्ट-वेदिशे- माइथॉलोजी १.८३)। दिवोदास राजा के साथ हुए पणियो के युद्ध का संबंध भी हिलेब्रान्ट ने इराण से ही लगाया है। किंतु दिवोदास एवं पणियों का यह स्थानान्तर असंभाव्य प्रतीत होता है।

२. पाताल का एक असुर (भा. ५.२४.३०)।

पण्डक—धर्मसावर्णि मन्वंतर के मनु का पुत्र।

पण्डित—एक विद्वान व्यक्ति के अर्थ से प्रयुक्त सामान्य नाम (बृ. उ. ३.४.१; छां. उ. ६.१४.२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ८४.२४; पाठभेद पण्डितक)।

पतंग प्राजापत्य—एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७७)। यह प्रजापति के वंश में उत्पन्न हुआ था। इसलिये इससे 'प्राजापत्य' उपाधि प्राप्त हुअी थी।

ऋग्वेद के उस सूक्त की रचना इसने की है, जिसमें 'पतंग' का अर्थ 'सूर्य पक्षी' है (ऋ. १०.१७७.१)। इसने प्रणयन किये साम के कारण, 'उच्चैःश्रवस् कौपेय' को मृत्यु के पश्चात् 'धूम्रशरीर' की प्राप्ति हो गयी (जै. उ. ब्रा. ३.३०.३)।

पतंचल 'काप्य'—एक वैदिक ऋषि। अंगिरसकुल के कपि नामक क्षत्रिय ब्राह्मणवंश में इसका जन्म हुआ था। यह मद्र देश में रहता था। एकबार भुज्यु लाह्यायनि नामक याज्ञवल्क्य का समकालीन ऋषि, घूमते घूमते इसके घर आया। वहाँ उसकी मुलाकात पतंजल की कन्या से हो गयी। उस कन्या के शरीर में सुधन्वन् अंगिरस नामक एक गंधर्व वास करता था। सुधन्वन् की कृपा से भुज्यु को विशेष ज्ञान की प्राप्ति हो गयी। इसी ज्ञान विषयक प्रश्न, 'याज्ञवल्क्य–भुज्यु संवाद' में भुज्यु ने याज्ञवल्क्य से पूछे (बृ. उ. ३.३.१; ७.१)। किंतु अंत में याज्ञवल्क्य ने उसे पराजित किया।

पतंजलि—संस्कृत भाषा का सुविख्यात व्याकरणकार एवं पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' नामक व्याकरणग्रंथ का प्रामाणिक व्याख्याकार। संस्कृत व्याकरणशास्त्र के बृहद् नियमों एवं भाषाशास्त्र के गंभीर विचारों के निर्माता के नाते पाणिनि, व्याडि, कात्यायन, एवं पतंजलि इन चार आचार्यों के नाम आदर से स्मरण किये जाते है। उनमें से पाणिनी का काल ५०० ख्रि पू. हो कर, शेष वैय्याकरण मौर्य युग के (४०० ख्रि. पू.–२०० ई. पू.) माने जाते है।

वैदिकयुगीन साहित्यिक भाषा ('छंदस्' या 'नैगम') एवं प्रचलित लोकभाषा ('लौकिक') में पर्याप्त अंतर था। 'देववाक्' या 'देववाणी' नाम से प्रचलित साहित्यिक संस्कृत भाषा को लौकिक श्रेणी में लाने का युग-प्रवर्तक कार्य आचार्य पाणिनि ने किया। पाणिनीय व्याकरण के अद्वितीय व्याख्याता के नाते, पाणिनि की महान् ख्याति को आगे बढ़ाने का दुष्कर कार्य पतंजलि ने किया। व्याकरणशास्त्र के विषयक नये उपलब्धियों के स्रष्टा, एवं नये उपादनों का जन्मदाता पतंजलि एक ऐसा मेधावी वैय्याकरण था कि, जिसके कारण ब्रह्माजी से ले कर पाणिनि तक की संस्कृत व्याकरणपरंपरा अनेक विचार वीथियों में फैल कर, चरमोन्नत अवस्था में पहुँची।

पतंजलि पाणिनीय व्याकरण का केवल व्याख्याता ही न हो कर, स्वयं एक महान् मनस्वी विचारक भी था। इसकी उँची सूझ एवं मौलिक विचार इसके 'व्याकरण महाभाष्य' में अनेक स्थानों पर दिखाई देते हैं। इसीलिये इसको स्वतंत्र विचारक की कोटि में खड़ा करते हैं। अपने निर्भीक विचार एवं असामान्य प्रतिभा के कारण, इसने

पाणिनीय व्याकरण की महत्ता बढ़ायी, एवं 'वैयाकरण पाणिनि' को 'भगवान् पाणिनि' के उँची स्तर तक पहुँचा दिया।

नामांतर—प्राचीन ग्रंथों एवं कोशों में, पतंजलि के निम्नलिखित नामांतर मिलते है :— गोनर्दीय, गोणिकापुत्र नागनाथ, अहिपति, फणिभृत्, फणिपति, चूर्णिकाकार, पदकार, शेष, वासुकि, भोगींद्र (विश्वप्रकाशकोश १.१६; १९; महाभाष्यप्रदीप. ४.२.९२; अभिधान. पृ. १०१)।

इन नामों में से, 'गोनर्दीय' संभवतः इसका देशनाम था, एवं 'गोणिकापुत्र' इसका मातृकनाम था। उत्तर प्रदेश के गोंडा जिला को प्राचीन गोनर्द देश कहा गया है। कल्हणकृत 'राजतरंगिणी' में, गोनर्द नाम से काश्मीर के तीन राजाओं का निर्देश किया गया है। 'गोनर्दीय' उपाधि के कारण, पतंजलि कश्मीर या उत्तर प्रदेश का रहनेवाला प्रतीत होता है। 'चूर्णिकाकार' एवं 'पदकार' इन नामों का निर्वचन नहीं मिलता।

पतंजलि के बाकी सारे नामांतर कि वह भगवान् शेष का अवतार था, इसी एक ही कल्पना पर आधारित है। शेष, वासुकि, फणिपति आदि पतंजलि के बाकी सारे नाम इसी एक कल्पना को दोहराते है।

काल—पतंजलि की 'व्याकरण महाभाष्य' में पुष्यमित्र एवं चंद्रगुप्त राजाओं की सभाओं का निर्देश प्राप्त है (महा. १.१.६८)। मिनॅन्डर नामक यवनों के द्वारा साकेत नगर घेरे जाने का निर्देश भी, 'अरुद्यवनः साकेतम्' इस रूप में, किया गया है। पुष्यमित्र राजा का यज्ञ संप्रति चालू है ('पुष्यमित्रं याजयामः') इस वर्तमानकालीन क्रियारूप के निर्देश से पतंजलि उस राजा का समकालीन प्रमाणित होता है। इसी के कारण, डॉ. रा. गो. भांडारकर, डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, डॉ. प्रभातचंद्र चक्रवर्ति प्रभृति विद्वानों का अभिमत है कि, पतंजलि का काल १५० ख्रि. पू. के लगभग था।

जीवनचरित्र—पतंजलि का जीवनचरित्र कई पुराणों में प्राप्त है। भविष्य के अनुसार, यह बुद्धिमान् ब्राह्मण एवं उपाध्याय था। यह सारे शास्त्रों में पारंगत था, फिर भी इसे कात्यायन ने काशी में पराजित किया। प्रथम यह विष्णुभक्त था। किंतु बाद में इसने देवी की उपासना की, जिसके फलस्वरूप, आगे चल कर, इसने कात्यायन को वादचर्चा में पराजित किया। इसने 'कृष्णमंत्र' का काफी प्रचार किया। इसने 'व्याकरणभाष्य' नामक ग्रंथ की रचना की। आखिर 'विष्णुमाया' के योग से, यह चिरंजीव बन गया (भवि. प्रति. २.३५)।

व्याकरणमहाभाष्य—पाणिनि का 'अष्टाध्यायी' का ग्रंथ लोगों को समझने के लिये कठिन मालूम पड़ता था। इस लिये अपने 'व्याकरणमहाभाष्य' की रचना पतंजलि ने की।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में आठ अध्याय एवं प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। इस तरह कुल ३२ पादों में 'अष्टाध्यायी' ग्रंथ का विभाजन कर दिया गया है।

पतंजलि के महाभाष्य की रचना 'आह्निकात्मक' है। इस ग्रंथ में कुल ८५ आह्निक है। 'आह्निक' का शब्दशः अर्थ 'एक दिन में दिया गया व्याख्यान' है। हर एक आह्निक को स्वतंत्र नाम दिया है। उन में से प्रमुख आह्निकों के नाम इस प्रकार है :— १. पस्पशा (प्रस्ताव), २. प्रत्याहार (शिवसूत्र-अइउण् आदि), ३. गुणवृद्धि संज्ञा, ४. संयोगादि संज्ञा, ५. प्रगृह्यादि संज्ञा, ६. सर्वनामाव्ययादि संज्ञा, ७. आगमादेशादिव्यवस्था, ८. स्थानिवद्भाव, ९. परिभाषा।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' पर सर्वप्रथम कात्यायन ने 'वार्तिकों' की रचना की। उन 'वार्तिकों' को उपर पतंजलि ने दिये व्याख्यान 'महाभाष्य' नाम से प्रसिद्ध है। पाणिनि-सूत्र एवं वार्तिकों में जो व्याकरणविषयक भाग है उसका स्पष्टीकरण महाभाष्य में तो है ही, किन्तु उसके साथ, जिन व्याकरणविषयक सिद्धान्त उन में रह गये है, उनको महाभाष्य में पूरा किया गया है। उसके साथ, पूर्वग्रंथों में जो भाग अनावश्यक एवं अप्रस्तुत है, यह पतंजलि ने निकाल दिया है। उसी कारण, पतंजलि के ग्रंथ को महाभाष्य कहा गया है। अन्य भाष्यग्रंथों में मूलग्रंथ का स्पष्टीकरण मात्र मिलता है, किन्तु पतंजलि के महाभाष्य में मूलग्रंथ की अपूर्णता पूरित की गयी है।

इसी कारण पाणिनि, कात्यायन एवं पतंजलि के व्याकरणविषयक ग्रंथों में पतंजलि का महाभाष्य ग्रंथ सर्वाधिक प्रमाण माना जाता है। अन्य शास्त्रों में सर्वाधिक पूर्वकालीन ('पूर्व पूर्व') आचार्य का मत प्रमाण माना जाता है। किन्तु व्याकरण शास्त्र में पतंजलि ने की हुई महत्त्वपूर्ण ग्रंथ की रचना के कारण, सर्वाधिक उत्तरकालीन आचार्य (पतंजलि) का मत प्रमाण माना जाता हैं। 'यथोत्तरं मुनीनां प्रामाण्यम्' इस अधिनियम व्याकरण-शास्त्र में प्रस्थापित करने का सारा श्रेय पतंजलि को ही है।

व्याकरण जैसे क्लिष्ट एवं शुष्क विषय को पतंजलि ने अपने महाभाष्य में अत्यंत सरल, सरस, एवं हृदयंगम ढंग से प्रस्तुत किया है। भाषा की सरलता, प्रांजलता, स्वाभाविकता एवं विषयप्रतिपादन शैली की दृष्टि से इसका महाभाष्य, समस्त संस्कृत वाङ्मय में आदर्शभूत है। इस ग्रंथ में तत्कालीन राजकीय, सामाजिक, आर्थिक एवं भौगोलिक परिस्थिति की यथातथ्य जानकारी मिलती है। भगवान् पाणिनि के जीवन पर भी महाभाष्य में काफी महत्त्वपूर्ण जानकारी मिलती है।

शुद्ध उच्चारण का महत्त्व--कृष्ण यजुर्वेद के अनुयायी, कठ लोगों का पाठ, पतंजलि के काल में परम शुद्ध माना जाता था। उनके बारे में पतंजलि ने कहा है, 'प्रत्येक नगर में कठ लोगों के द्वारा निर्धारित पाठ का प्रचलन है। उनका 'काठकधर्मसूत्र' नामक धर्मशास्त्रग्रंथ बहुत प्रसिद्ध है, एवं 'विष्णुस्मृति' उसी के आधार पर बनी है। आर्य साहित्य में जब तक उपनिषदों का महत्त्व रहेगा तब तक कठ लोगों का नाम भी बराबर बना रहेगा (महा. ४.३.१०१)।

'पाणिनि-शिक्षा की तरह, पतंजलि ने भी वेदपाठ के शुद्धोच्चारण, शुद्ध स्वरक्रिया एवं विधिपूर्वक संपन्न किये 'याग' पर बड़ा ज़ोर दिया है। इसका कहना है, अच्छा जाना हुआ, एवं अच्छी विधि से प्रयोग किया हुआ एक ही शब्द, स्वर्ग तथा मृत्यु दोनों लोकों की कामना पूर्ण करता है (एकः शब्दः सम्यग् ज्ञातः सुष्ठ प्रयुक्तः स्वर्गे लोके च कामधुग् भवति)।

पतंजलि के महाभाष्य में 'काठक', 'कालापक', 'मौदक', 'पैप्पलाद' एवं 'आथर्वण' नामक प्राचीन धर्मसूत्रों का निर्देश किया है। ये सभी धर्मसूत्र संप्रति अनुपलब्ध है। किन्तु इन विलुप्त धर्मसूत्रों का काल ७०० ख्रिस्त. पू. माना जाता है। भारतीय युद्ध का निर्देश पतंजलि ने अपने 'महाभाष्य' में दिया है। 'कंसवध' एवं 'बलिबंध' नामक दो नाटक कृतियों का निर्देश भी 'महाभाष्य' में दिया गया है। 'वासवदत्ता', 'सुमनोत्तरा', 'भैमरथी', आदि आख्यायिकाएँ पतंजलि को ज्ञात थी एवं उनमें अपने हाथ से यह काफी उलट-पुलट चुका था (महा. ४.३.८७)। पाटलिपुत्रादि नगरों का निर्देश भी महाभाष्य में अनेक बार आया है।

पूर्वाचार्य--पाणिनि के अष्टाध्यायी पर लिखे गये अनेक वार्तिक भाष्यों का निर्देश, पतंजलि ने 'महाभाष्य' में किया है। अकेले कात्यायन के पाठ पर तीन व्याख्याएँ पतंजलि के पहले लिखी जा चुकी थी। इसी प्रकार भारद्वाज, सौनाग आदि के वार्तिकपाठों पर भी अनेक भाष्य लिखे गये थे (महा. १.३.३; ३.४.६७; ६.३.६१)।

पतंजलि के महाभाष्य में निम्नलिखित वैयाकरणों के एवं पूर्वाचार्यों के मत उद्धृत किये गये है--

१. गोनर्दीय (महा. १. २. २१, २९, ३.१.९२)--कैयट, राजशेखर, एवं वैजयन्ती कोश के अनुसार, यह स्वयं पतंजलि का ही नाम है।

२. गोणिकापुत्र (महा. १.४.५१)—वात्स्यायन के कामसूत्रों में भी, इस आचार्य का निर्देश है (काम. १.१.१६)।

३. सौर्यभगवत् (महा. ८. २. १०६)—कैयट के अनुसार, यह सौर्य नगर का रहिवासी था (महाभाष्य प्रदीप. ८.२.१०६; काशिका. २.४.७)।

४. कुणरवाडव (महा. ३.२.१४; ७.३.१)।

टीकाकार--पतंजलि के महाभाष्य पर निम्नलिखित टीकाकारों की टीकाएँ लिखी जा चुकी थी। उनमें से कुछ टीकाएँ नष्ट हो चुकी हैं--

१. भर्तृहरि--महाभाष्य की उपलब्ध टीकाओं में सर्वाधिक प्राचीन एवं प्रामाणिक टीका भर्तृहरि की है। इसने लिखे हुए टीकाग्रंथ का नाम 'महाभाष्यदीपिका' था। मीमांसकजी के अनुसार, भर्तृहरि का काल ४५० वि. पू. था।

२. कैयट—महाभाष्य पर कैयट ने लिखे हुए टीकाग्रंथ का नाम 'महाभाष्यप्रदीप' था। कैयट स्वयं कश्मीरी था, एवं उसका काल ११०० माना जाता है।

३. मैत्रेयरक्षित (१२ वीं शती)—टीका का नाम-'धातुप्रदीप'।

४. पुरुषोत्तमदेव (१२ वीं शती वि.)- टीका का नाम-'प्राणपणित'।

५. शेषनारायण (१६ वीं शती)-टीका का नाम-'मुक्तिरत्नाकर'।

६. विष्णुमित्र (१६ वीं शती)-टीका का नाम-'महाभाष्यटिप्पण'।

७. नीलकंठ (१७ वी शती)-टीका का नाम-'भाषातत्त्वविवेक'।

८. शिवरामेंद्र सरस्वती (१७ वीं शती वि.)-टीका का नाम-'महाभाष्यरत्नाकर'।

८. शेषविष्णु (१७ वीं शती)—टीका का नाम—'महाभाष्यप्रकाशिका'।

१७ वीं शताब्दी में तंजोर के शहाजी राजा के आश्रित 'रामभद्र' नामक कवि ने पतंजलि के जीवन पर 'पतंजलि चरित' नामक एक काव्य लिखा था।

महाभाष्य का पुनरुद्धार—इतिहास से विदित होता है कि, महाभाष्य का लोप कम से कम तीन बार अवश्य हुआ है। भर्तृहरि के लेख से विदित होता है कि बैजि, सौभव, हर्यक्ष आदि शुष्क तार्किकों ने महाभाष्य का प्रचार नष्ट कर दिया था। चन्द्राचार्य ने महान् परिश्रम कर के दक्षिण से किसी पार्वत्य प्रदेश से एक हस्तलेख प्राप्त कर के उसका पुनः प्रचार किया।

कह्लण की 'राजतरंगिणी' से ज्ञात होता है कि, विक्रम की ८ वीं शती में महाभाष्य का प्रचार पुनः नष्ट हो गया था। कश्मीर के महाराज जयापीड ने देशान्तर से 'क्षीर' संज्ञक शब्दविद्योपाध्याय को बुला कर विच्छिन्न महाभाष्य का पुनः प्रचार कराया।

विक्रम की १८ वीं तथा १९ वीं शती में सिद्धांतकौमुदी तथा लघुशब्देंदुशेखर आदि अर्वाचीन ग्रंथों के अत्यधिक प्रचार के कारण, महाभाष्य का पठन प्रायः लुप्तसा हो गया था। स्वामी विरजानंद तथा उनके शिष्य स्वामी दयानंद सरस्वती ने महाभाष्य का उद्धार किया, तथा उसे पूर्वस्थान प्राप्त कराया।

'महाभाष्य' के उपलब्ध मुद्रित आवृत्तियों में, डॉ. फ्रॉन्झ कीलहॉर्नद्वारा १८८९ ई. स. में संपादित त्रिखण्डात्मक आवृत्ति सर्वोत्कृष्ट है। उसमें वार्तिकादिकों का निर्णय बहुत ही शास्त्रीय पद्धति से किया गया है। 'महाभाष्य' में उपलब्ध शब्दों की सूचि म. म. श्रीधरशास्त्री पाठक, एवं म. म. सिद्धेश्वरशास्त्री चित्राव इन ग्रंथकारों ने तयार की है, एवं पूना के भांडारकर इन्स्टिट्यूट ने उसे प्रसिद्ध किया है।

ये सारे ग्रंथ महाभाष्य की महत्ता को पुष्ट करते है।

अन्य ग्रंथ—व्याकरण के अतिरिक्त, सांख्य, न्याय, काव्य आदि विषयों पर पतंजलि का प्रभुत्त्व था। 'व्याकरण महाभाष्य' के अतिरिक्त पतंजलि के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैः— (१) सांख्यप्रवचन, (२) छंदोविचिति, (३) सामवेदीय निदान सूत्र (C.C.)

२. 'चरक संहिता' नामक आयुर्वेदीय ग्रंथ का प्रतिसंस्करण करनेवाला आयुर्वेदाचार्य। 'चरकसंहिता' पर इसने 'पातंजलवार्तिक' नामक ग्रंथ की रचना की थी। आषाढवर्मा के 'परिहारवार्तिक' एवं रामचंद्र दीक्षित के 'पतंजलि चरित' में पतंजलि के इस ग्रंथ का निर्देश है ('वैद्यकशास्त्रे वार्तिकानि च ततः')। पतंजलिरचित 'वातस्कंध-पैत्तस्कंधोपेत-सिद्धांतसारावलि' नामक और एक वैद्यकशास्त्रीय ग्रंथ लंदन के इंडिया ऑफिस लायब्रेरी में उपलब्ध है।

आयुर्वेदाचार्य पतंजलि के द्वारा कनिष्क राजा की कन्या को रोगमुक्त करने का निर्देश प्राप्त है। इससे इसका काल २०० ई०, माना जाता है।

पतंजलि ने 'रसशास्त्र' पर भी एक ग्रंथ लिखा था, ऐसा कई लोग मानते है। किंतु रसतंत्र का प्रचार छठी शताब्दी के पश्चात् होने के कारण, वह पतंजलि एवं चरकसंहिता पर भाष्य लिखनेवाले पतंजलि एक ही थे, ऐसा निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

३. 'पातंजलयोगसूत्र' (या सांख्यप्रवचन) नामक सुविख्यात योगशास्त्रीय ग्रंथ का कर्ता। कई विद्वानों ने 'पातंजल योगसूत्रों' को षड्-दर्शनों में सर्वाधिक प्राचीन बताया है, एवं यह अभिमत व्यक्त किया है कि, उसकी रचना बौद्धयुग से पहले लगभग ७०० ई. पू. में हो चुकी थी ('पतंजलि योगदर्शन' की भूमिका पृ. २)। किंतु डॉ. राधाकृष्णन् आदि आधुनिक तत्वज्ञों के अनुसार 'योगसूत्र' का काल लगभग ३०० ई. है ('इंडियन फिलॉसफी २.३४१-३४२)। उस ग्रंथ पर लिखे गये प्राचीनतम बादरायण, भाष्य की रचना व्यास ने की थी उस भाष्य की भाषा अन्य बौद्ध ग्रंथों की तरह है, एवं उसमें न्याय आदि दर्शनों के मतों का उल्लेख किया गया है। 'योगसूत्रों' पर लिखे गये 'व्यासभाष्य' का निर्देश 'वात्स्यायनभाष्य' में एवं कनिष्क के समकालीन भदन्त धर्मत्रात के ग्रंथों में उपलब्ध है।

योगसूत्र परिचय—विभिन्न प्राचीन ग्रंथों में बिखरे हुए योगसंबंधी विचारों का संग्रह कर, एवं उनको अपनी प्रतिभा से संयोज कर, पतंजलि ने अपने 'योगसूत्र' ग्रंथ की रचना की। 'योगदर्शन' के विषय पर, 'योगसूत्रों' जैसा तर्कसंमत, गंभीर एवं सर्वांगीण ग्रंथ संसार में दूसरा नहीं है। उस ग्रंथ की युक्तिशृंखला एवं प्रांजल दृष्टिकोण अतुलनीय है, एवं प्राचीन भारत की दार्शनिक श्रेष्ठता सिद्ध करता है।

'पातंजल योगसूत्र' ग्रंथ समाधि, साधन, विभूति एवं कैवल्य इन चार पादों (अध्यायों) में विभक्त किया गया है। उस ग्रंथ में समाविष्ट कुल सुत्रों की संख्या १९५ है।

समाधिपाद––में योग का उद्देश्य, उसका लक्षण एवं साधन वर्णन किया है। चित्त को एकाग्र करने की पद्धति इस 'पाद' में बतायी गयी है।

साधन पाद—में क्लेश, कर्म एवं कर्मफल का वर्णन है। इंद्रियदमन कर के ज्ञानप्राप्ति कैसी की जा सकती है, उसका मार्ग इस 'पाद' में बताया गया है।

विभूति पाद—में योग के अंग, उनका परिणाम, एवं 'अणिमा', 'महिमा' आदि सिद्धियों का वर्णन किया गया है।

कैवल्य पाद––में मोक्ष का विवेचन है। ज्ञानप्राप्ति के बाद आत्मा कैवल्यरूप कैसे बनती है, इसकी जानकारी इस 'पाद' में दी गयी है।

योग-दर्शन––आत्मा एवं जगत् के संबंध में, सांख्य-दर्शन जिन सिद्धांतो का प्रतिपादन करता है, 'योगदर्शन' भी उन्ही का समर्थक है। 'सांख्य' के अनुसार 'योग' ने भी पच्चीस तत्त्वों का स्वीकार किया है। किंतु 'योग-दर्शन' में एक छब्बीसवाँ तत्त्व 'पुरुषविशेष' शामिल करा दिया है, जिससे 'योग-दर्शन' सांख्यदर्शन जैसा निरीश्वरवादी बनने से बच गया है। फिर भी 'ईश्वर-प्रणिधानाद्वा' (१.२३) सूत्र के आधार पर कई विद्वान पतंजलि को 'निरीश्वरवादी' मानते है।

'योग-सूत्रों' के सिद्धांत अद्वैती है या द्वैती, इस विषय पर विद्वानों का एकमत नहीं हैं। 'ब्रह्मसूत्रकार' व्यास एवं शंकराचार्य ने पतंजलि को 'द्वैतवादी' समझ कर, सांख्य के साथ इसका भी खंडन किया है।

'योग सूत्र' के सिद्धांतो के अनुसार, चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग है (योग. १.२)। इन चित्तवृत्तियों का निरोध अभ्यास एवं वैराग्य से होता है (योग. १.१२; १५)। पुरुषार्थविरहीत गुण जब अपने कारण में लय हो जाते है, तब 'कैवल्यप्राप्ति' होती है (योग. ४.३४)। योगदर्शन का यह अंतिम सूत्र है।

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष एवं अभिनिवेश इन पंचविध क्लेशों से योग के द्वारा विमुक्त हो कर, मोक्ष प्राप्त करना, यह 'योगदर्शन' का उद्देश्य है। चंचल चित्तवृत्तियों को रोकने एवं योगसिद्धि के लिये, 'योगसूत्र' कार ने ग्यारह साधनों का कथन किया है। वे साधन इस प्रकार है:— यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, अभ्यास, वैराग्य, ईश्वर प्रणिधान, समाधि एवं विषयविरक्ति।

'योग-दर्शन' के अनुसार, संसार दुःखमय है। जीवात्मा को मोक्षप्राप्ति के लिये 'योग' एकमात्र ही उपाय है। 'योगदर्शन' का दूसरा नाम कर्मयोग भी है, क्यों कि साधक को वह 'मुक्तिमार्ग' सुझाता है।

४. 'इलावृतवर्ष' (भारतवर्ष) के उत्तर के मध्यदेश में उत्पन्न एक आचार्य।

५. कश्यप एवं कद्रू का पुत्र, एक नाग।

६. अंगिराकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार।

७. वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य-परंपरा के कौथुम पाराशर्य ऋषि का शिष्य (व्यास देखिये)।

पतत्रि—कौरवपक्षीय योद्धा। भीमसेन ने इसको रथहीन किया था (म. क. ३२.५२)।

पतन––एक राक्षस। यह रावण के पक्ष में था (म. व. २६९.२; भांडारकर संहिता पाठ–'पूतन')।

पताकिन्––एक सर्प। वरुण का यह उपासक था (म. स. ९.१०)।

२. कौरवपक्षीय एक योद्धा। इसे साथ ले कर अर्जुन पर आक्रमण करने का आदेश दुर्योधन ने शकुनि को दिया था (म. द्रो. १३१.८५)।

पत्तलक––(आंध्र. भविष्य.) विष्णुमत में हल का पुत्र (तलक देखिये)।

पथिन् सौभर––एक ऋषि। यह अयास्य आंगिरस का शिष्य एवं वत्सनपात् ब्राभ्रव का गुरु था (बृ. उ. २. ६.३; ४.६.३. काण्व)।

पथ्य—विष्णु, वायु एवं भागवत के अनुसार, व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा के कबंध का शिष्य (व्यास देखिये)। कबंध ने इसे एवं देवदर्श को अथर्ववेद सिखाया था। इसके तीन प्रमुख शिष्य थे। जिनके नाम:— जाजलि, कुमुदादि, शौनक हैं।

पथ्यवत्—रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

पथ्या—मनु की कन्या तथा अथर्वन् आंगिरस ऋषि की पत्नी। इसका पुत्र धृष्णि (ब्रह्मांड. ३.१.१०५)।

पदाति—पारिक्षित जनमेजय (प्रथम) राजा का सातवाँ पुत्र (म. आ. ८९.५०)।

पद्म—कश्यप एवं कद्रू के पुत्र, दो नाग। इन्हें संवर्तक और पद्मनाभ नामांतर प्राप्त थे (म. आ. ३१. १०; म. शां. ३६५.४)। ये बहुत धार्मिक थे तथा वरुण की सभा के सभासद थे (म. स. ९.८)। ये दोनों सूर्य का रथ खींचने के लिये गये थे। (म. शां. ३४५.८)।

२. ऐरावत का पुत्र, एक हाथी। इसे मंद नामांतर भी प्राप्त था। यह ऐलविल का वाहन था (ब्रह्मांड. ३. ७. ३३१)। इसका वर्ण श्वेतशुभ्र था।

३. माणिभद्र नामक शिवगण एवं पुण्यजनी का पुत्र।

४. एक निधि, जो कुबेर की सभा में थी (म. स. परि. १. ३. ३०)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ५२)।

६. एक राजा, जो यमसभा में रह कर सूर्यपुत्र यम की उपासना करता था (म. स.)

पद्मकेतन—गरुड़ का पुत्र।

पद्मगंधा—पूर्वजन्म में यह क्रौंची थी। इसकी हड्डियाँ गंगा में गिरने के कारण, यह इंद्र की प्रिया दासी बनी (जयंत ११ देखिये)।

पद्मचित्र—कद्रु-पुत्र नाग।

पद्मनाभ—एक ब्राह्मण। एक राक्षस इसे भक्षण करने के लिये आया, तब विष्णु ने अपने चक्र से इसकी रक्षा की। इसी कारण उस जगह पर चक्रतीर्थ उत्पन्न हुआ (स्कंद २. १. २३)।

२. कश्यप एवं कद्रु का पुत्र, एक नाग। यह नैमिषारण्य में गोमती नदी के तट पर 'नागपूर' नगर में रहता था (म. शां)। यह आत्मज्ञानी था। एक ब्राह्मण के पूछने पर इसने उसे सूर्यमंडल की कथा सुनायी थी। इसके शिष्य का नाम धर्मारण्य था।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

४. मणिवर नामक शिवगण, एवं देवजनी का पुत्र।

पद्ममित्र--(किलकिला. भविष्य.) विष्णु के अनुसार एक राजा।

पद्मवर्ण---मणिवर नामक शिवगण और देवजनी का पुत्र।

पद्महस्त--राजा नल का अमात्य (गणेश. १.५२. ९)।

पद्माकर—बिंदुगढ़ के राजा शारदानंद (कामपाल) का पुत्र (भवि. प्रति. ३.२५)।

पद्माक्ष—राजा चंद्रहास का कनिष्ठ पुत्र।

२. सीता देखिये।

पद्मावती—विदर्भनृप सत्यकेतु की कन्या, एवं माथुर देश के मथुरा नगर के उग्रसेन राजा की स्त्री। इस दम्पति का एक दूसरे पर अतीव प्रेम था। एक बार यह नैहर गयी थी। वहां गोभिल नामक कुबेर के एक दूत से गर्भवती हुई। हरिवंश में, 'गोभिल' के बदले 'द्रुमिल' नाम दिया गया है (ह. वं. २.२८)।

इसने गर्भ को नष्ट करने का बहुत प्रयत्न किया परंतु अंत में उस गर्भ ने कहा, 'कालनेमिदैत्य का विष्णु ने वध किया। उसका बदला लेने के लिये मैं जन्म ले रहा हूँ'। कालोपरांत यह प्रसूत हुयी तथा इसने कंस को जन्म दिया (पद्म. सृ. ४८-५१)।

२. प्रणिधी नामक एक श्रीमान् वैश्य की स्त्री। एक बार इसका पति व्यापार करने दूसरे ग्राम चला गया था। यह स्नान कर रह थी। फिर धनुर्ध्वज नामक अंत्यज ने इसे देखा। पाप वासना मे जाग्रत हो कर वह इसके बारे में पूछताछ करने लगा। इसकी सखियों द्वारा काफी निषेध किये जाने पर भी वह न माना। फिर उसकी मज़ाक उड़ाने के हेतु उन्होंने कहा, 'गंगा यमुना संगम में अगर प्राण दोगे, तो पद्मावती की प्राप्ति तुम्हे होगी।

फिर गंगा के संगम में जा कर सचमुच ही उसने प्राण दे दिये। तत्काल उसका रूप पद्मावती के पति प्राणिधी वैश्य के समान बन गया। बाद में सच्चा प्रणिधी तथा धनुर्ध्वज दोनों पद्मावती के घर पहुँच गये। फिर अपना वास्तव पति कौन है? इसके बारे में पद्मावती के मन में संदेह उत्पन्न हो गया। पश्चात्, श्री विष्णु ने स्वयं प्रकट हो कर, इसे दोनों के साथ पत्नी के रूप में रहने के लिये कहा, किंतु भूमंडल पर यह निषिद्ध है, ऐसा इसके द्वारा कहे जाने पर, श्री विष्णु उन तीनों को वैकुंठ ले गये (पद्म. क्रि. ४)।

३. शृगाल वासुदेव देखिये।

पद्मिनी—श्रीनिवास देखिये।

पनस—राम की सेना का एक वानर। इसका पट्टुशों से युद्ध हुआ था (म. व. २६७.६; २६९.९)। राम बिभीषण से मिलने के लिये लंका जा रहा था। राह में वह किष्किंधा नगरी के पास ठहरा। तब यह उत्सुकतापूर्वक उसके दर्शन करने आया था (पद्म. सृ. ३८)।

२. बिभीषण के अमात्यों में से एक।

पन्नग—ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

पन्नगारि—व्यास की ऋक् शिष्य परंपरा के वायु तथा ब्रह्मांड मत में बाष्कली भरद्वाज का शिष्य।

२. वसिष्ठ कुल का एक गोत्रकार। पर्णागारि इसका पाठभेद है।

पयस्य 'वारुण'—एक महर्षि। अंगिरस् के वारुण संज्ञक आठ पुत्रों में से एक (म. अनु. ८५,३०)।

पयोद—विश्वामित्र कुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

पयोदा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४४. ५२)।

पर—विश्वामित्र का पुत्र।

२. (सो. पूरु.) वायु के अनुसार समर राजा का पुत्र।

पर आट्णार—(सो. आयु.) एक वैदिक महाराजा यह 'अट्णार' का वंशज था, इसलिये इसे 'पर आट्णार नाम प्राप्त हुआ था। कई ग्रंथों में इसे 'हिरण्यनाभ कौसल्य' कहा गया है (सां. श्रौ. १६; श. ब्रा. १३.५.४.४; हिरण्यनाभ कौसल्य देखिये)। संभवत; यह कोसल देश के हिरण्यनाभ राजा का वंशज था।

एक विशेष यज्ञ करने के बाद, इसे पुत्र की प्राप्ति हुयी थी (तै. सं. ५.६.५.३; क. सं. २२.३; पं. ब्रा. २५ १६.३; जै. उ. ब्रा. २.६.११)। सांख्यायन श्रौतसूत्र में इसे 'पर आह्लार वैदेह' कहा गया हैं, जिससे कोसल एवं विदेह देश के घनिष्ट संबंध प्रतीत होते है (सां श्रौ. १३.९.११)।

परंजय—(सू. इ.) विष्णु मत में विकुक्षित पुत्र का नामांतर है। भागवत मत में पुरंजय इसका नामांतर हैं।

परण्यस्त—अंगिराकुल के गोत्रकार ऋषिगण।

परंतप—तामस मनु के दस पुत्रों में से एक।

परपक्ष—(सो. अनु.) एक राजा। वायु के अनुसार यह अनु का पुत्र था। इस के परमेक्ष, परमेषु, परोक्षप तथा पराक्ष नामांतर थे।

परम—वसिष्ठ कुल का गोत्रकार।

परमक्रोधिन्—एक विश्वेदेव (म. अनु. २१.३२)

परमेक्ष—(सो. अनु.) विष्णु के अनुसार अनुपुत्र परपक्ष राजा का नामांतर (परपक्ष देखिये)

परमेषु—(सो. अनु.) मत्स्य के अनुसार अनुपुत्र परपक्ष राजा का नामांतर (परपक्ष देखिये)।

परमेष्ठिन्—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (प्रजापति देखिये)। यह ब्रह्मा का शिष्य था। इसका शिष्य सनग (बृ. उ.२. ६.३; ४.६.३)। 'जैमिनि ब्राह्मण' के अनुसार यह प्रजापति का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२; नारद देखिये)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा। भागवत के अनुसार देवद्युम्न का तथा विष्णु के अनुसार इंद्रद्युम्न राजा का धेनुमती से उत्पन्न पुत्र। इसे सुवर्चला नामक स्त्री से प्रतीह नामक पुत्र हुआ (भा. ५.१५.३)।

३. (सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार यह आत्म-पूजक राजा का पुत्र था। इसने २७०० वर्षों तक राज्य किया।

४. (सो. अज.) पांचाल देश का एक राजा। यह अजमीढ राजा को नीली से उत्पन्न हुआ था। यह एवं उसका भाई दुष्यंत के सारे पुत्रों को 'पांचाल' कहते थे (म. आ. ८९.२८)।

परवीराक्ष—खर राक्षस के १२ अमात्यों में से एक।

परशु—उत्तम मनु का पुत्र।

२. एक राक्षस। यह शाकल्य को खाने आया था, तब विष्णु की कृपा से मुक्त हुआ (ब्रह्म. १६३)।

परशुचि—उत्तम मनु का पुत्र।

परशुबाहु—प्रियव्रत पुत्र प्रसादन राजा का नामांतर। काशी क्षेत्र में धुंडीराजा ने अपने हाथ का परशु इसे दिया तथा यह नाम रखा (गणेश. २.४९-५६; प्रियव्रत देखिये)।

परशुराम जामदग्न्य—महर्षि जमदग्नि का महान् पराक्रमी पुत्र, जिसने इक्कीस बार क्षत्रियों का संहार किया था।

भृगुवंश में पैदा होने के कारण, जमदग्नि एवं परशुराम 'भार्गव' पैतृक नाम से ख्यातनाम थे। भार्गव वंश के ब्राह्मण पश्चिम भारत पर राज्य करने वाले हैहय राजाओं के कुलगुरु थे। भार्गववंश के ब्राह्मण आनर्त (गुजरात) देश के रहनेवाले थे। पश्चात् हैहय राजाओं से भार्गवों का झगड़ा हो गया एवं वे उत्तरभारत के कान्यकुब्ज देश में रहने गये। फिर भी, बारह पीढ़ियों तक हैहय एवं भार्गव का वैर चलता रहा। इसीलिये प्राचीन इतिहास में २५५० ई. पू.-२३५० ई. पू. तक यह काल 'भार्गव-हैहय' नाम से पहचाना जाता है। हैहय एवं भार्गवों के वैर की चरम सीमा परशुराम जामदग्न्य के काल में पहुँच गयी, एवं परशुराम ने हैहयों का और संबधित क्षत्रियों का इक्कीस बार संहार किया। इसी कारण ब्राह्मतेज की मूर्तिमंत एवं ज्वलंत प्रतिमा बन कर, परशुराम इस विशिष्ट काल के इतिहास में अमर हो गया है।

'राम भार्गवेय' नामक एक वैदिक ऋषि का नाम एक सूक्तद्रष्टा के रूप में आया है (ऋ. १०.११०)। 'सर्वानुक्रमणी' के अनुसार यही परशुराम है। 'राम भार्गवेय' श्यापर्ण लोगों का पुरोहित था। 'राम भार्गवेय' एवं परशुराम एक ही थे यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

हैहय राजा कार्तवीर्य एवं परशुराम के युद्ध का निर्देश अथर्ववेद में संक्षिप्त रूप में आया है (अ. वे. ५.१८.१०)। अथर्ववेद के अनुसार, कार्तवीर्य राजा ने जमदग्नि ऋषि की धेनु हठात् ले जाने का प्रयत्न किया। इसीलिये परशुराम द्वारा कार्तवीर्य एवं उसके वंश का पराभव हुआ।

परशुराम महर्षि जमदग्नि के पाँच पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र था। इसकी माता का नाम 'कामली रेणुका' था जो इक्ष्वाकु वंश के राजा की पुत्री थी। परशुराम धनुर्विद्या में ही नहीं, बल्कि अन्य सभी अस्त्र-शस्त्र सम्बन्धी विद्याओं में प्रवीण था (ब्रह्म. १०)। यह विष्णु का अवतार था (पद्म. उ. २४८; मत्स्य. ४७.२४४; वायु. ९१.८८; ३६.९०)) इसका जन्म वैशाख शुक्ल तृतीया को हुआ था (रेणु. १४)। यह १९ वें त्रेतायुग में उत्पन्न हुआ था (दे. भा. ४.१६)। त्रेता तथा द्वापर युगों के संधिकाल में परशुराम का अवतार हुआ था (म. आ. २.३)।

शिक्षा––उपनयन के उपरांत यह शालग्राम पर्वत पर गया। वहाँ कश्यप ने इसे मंत्रोपदेश दिया (पद्म. ३. २४१)। इसके अतिरिक्त इसने शङ्कर को प्रसन्न कर धनुर्वेद, शस्त्रास्त्रविद्या एवं मंत्र प्रयोगादि का ज्ञान प्राप्त किया (रेणु. १५; ब्रह्मांड. ३.२२–५६–६०)।

शिष्य—तपस्या से वापस आते समय, राह में शालग्राम शिखर पर शान्ता के पुत्र को लकड़बग्घे से मुक्त करा कर यह उसे अपने साथ ले आया। वही आगे चल कर, अकृतव्रण नाम से परशुराम का शिष्य प्रसिद्ध हुआ।

आश्रम—जमदग्नि का आश्रम नर्मदा के तट पर था (ब्रह्मांड. ३.२३.२६)। परशुराम का आश्रम भी वही था।

रेणुकावध—एक बार जमदग्नि रेणुका पर क्रोधित हुये तथा परशुराम को उसका वध करने की आज्ञा दी, जिसका परशुराम ने तुरन्त पालन किया (म. व. ११६.१४)।

जमदग्नि इस पर प्रसन्न हुये तथा इनकी इच्छानुसार रेणुका को पुनः जीवित कर इसे वरदान दिया—तुम अजेय हो, तथा स्वेच्छा पर ही मृत्यु को प्राप्त हो सकते हो (विष्णुधर्म. १.३६.११)।

अस्त्रविद्या—परशुराम को निम्नलिखित अस्त्र-शस्त्रों की जानकारी प्राप्त थीः—

१ ब्रह्मास्त्र, २ वैष्णव, ३ रौद्र, ४ आग्नेय, ५ वासव, ६ नैर्ऋत, ७ याम्य, ८ कौबेर, ९ वारुण, १० वायव्य, ११ सौम्य, १२ सौर, १३ पार्वत, १४ चक्र, १५ वज्र, १६ पाश, १७ सर्व, १८ गांधर्व, १९ स्वापन, २० भौत, २१ पाशुपत, २२ ऐशीक, २३ तर्जन, २४ प्रास, २५ मारुड, २६ नर्तन, २७ अस्त्ररोधन, २८ आदित्य, २९ रैवत, ३० मानव, ३१ अक्षिसंतर्जन, ३२ भीम, ३३ जृम्भण, ३४ रोधन, ३५ सौपर्ण, ३६ पर्जन्य, ३७ राक्षस, ३८ मोहन, ३९ कालास्त्र, ४० दानवास्त्र, ४१ ब्रह्मशिरस (विष्णुधर्म १.५०)।

हैहयों से शत्रुत्व—हैहय राजा कृतवीर्य ने अपने कुलगुरु 'ऋचीक और्व भार्गव' को बहुत धन दिया था। पश्चात् वह धन वापस करने का ऋचीक ने इन्कार कर दिया। उस कारण कृतवीर्य का पुत्र सहस्रार्जुन (कार्तवीर्य अर्जुन) ने ऋचीक के उपर हाथ चलाया, जिस कारण अपने अन्य भार्गव बांधवों के साथ वह कान्यकुब्ज को भाग गया। ऋचीक स्वयं अत्यंत स्वाभिमानी एवं अस्त्रविद्या में कुशल था। कान्यकुब्ज पहुँचते ही, हैहयों से अपमान का बदला लेने की वह कोशिश करने लगा। उस कार्य के लिये, इसने नाना प्रकार के शस्त्रास्त्र इकट्ठा किये एवं उत्तर भारत के शक्तिशाली राजाओंको अपने पक्ष में लाने का प्रयत्न करने लगा। इस हेतु से, कान्यकुब्ज देश के गाधि राजा की कन्या सत्यवती के साथ विवाह किया एवं अपने पुत्र जमदग्नि का विवाह अयोध्या के राजवंश में से रेणु राजा की कन्या रेणुका के साथ कराया। इस तरह, कान्यकुब्ज एवं अयोध्या के ये दो देश भार्गवों के पक्ष में आ गये।

कामधेनुहरण––जमदग्नि पराक्रमी एवं अस्त्रविद्यानिपुण था। पर उसका पुत्र परशुराम उससे भी अधिक पराक्रमी था। एक बार परशुराम जब तप करने गया था, तब कार्तवीर्य अर्जुन जमदग्नि से मिलने उसके आश्रम में आया। तपश्चर्या को जाने के पहले, अपनी कामधेनु नामक गौ परशुराम ने अपने पिता जमदग्नि के पास अमानत रूप मे रखी थी। कार्तवीर्य ने उसे जमदग्नि से छीनने की कोशिश की। कामधेनु के शरीर से उत्पन्न हुये हजारों यवनों ने कार्तवीर्य का वध करने का प्रयत्न किया। किंतु अंत में

जमदग्नि को घूंसे लगा कर, एवं उसका आश्रम जला कर कार्तवीर्य कामधेनु के साथ अपने राज्य में वापस चला गया।

तपश्चर्या से लौटते ही, परशुराम को कार्तवीर्य की दुष्टता ज्ञात हुई, एवं इसने तुरंत कार्तवीर्य के वध की प्रतिज्ञा की। कई पुराणों के अनुसार, कार्तवीर्यवध की इस प्रतिज्ञा से इसको परावृत्त करने का प्रयत्न जमदग्नि ऋषि ने किया। उसने कहा–'ब्राह्मणों के लिये यह कार्य अत्याधिक अशोभनीय है'। परंतु परशुराम ने कहा 'दुष्टों का दमन न करने से परिणाम बुरा हो सकता है'। फिर जमदग्नि ने इस कृत्य के लिये ब्रह्मा की, तथा ब्रह्मा ने शंकर की संमति लेने के लिये कहा। संमति प्राप्त कर यह सरस्वती के किनारे अगस्त्य ऋषि के पास आया, तथा उसकी आज्ञा से गंगा के उद्गम के पास जा कर, इसने तपश्चर्या की। इस तरह देवों का आशीर्वाद प्राप्त कर, परशुराम नर्मदा के किनारे आया। वहाँ से कार्तवीर्य के पास दूत भेज कर, इसने उसे युद्ध का आह्वान किया।

हैहय एवं भार्गवों के शत्रुत्व का इतिहास जान लेने पर, जमदग्नि ने परशुराम को कार्तवीर्यवध से परावृत्त करने की कोशिश की थी, यह कथा अविश्वसनीय लगती है।

युद्ध—परशुराम की प्रतिज्ञा सुन कर, कार्तवीर्य ने भी युद्ध का आह्वान स्वीकार किया, एवं सेनापति को सेना सजाने के लिये कहा। अनेक अक्षौहिणी सेनाओं के सहित कार्तवीर्य युद्धभूमि पर आया। उसका परशुराम ने नर्मदा के उत्तर किनारे पर मुकाबला किया। युद्ध के शुरु में कार्तवीर्य की ओर से मत्स्य राजा ने परशुराम पर ज़ोरदार आक्रमण किया। बड़ी सुलभता के साथ परशुराम ने उसका वध किया। बृहद्बल, सोमदत्त एवं विदर्भ, मिथिला, निषध, तथा मगध देश के राजाओं का भी परशुराम ने वध किया। सात अक्षौहिणी सैन्य तथा एक लाख क्षत्रियों के साथ आये हुये सुर्यवंशज सुचन्द्र को परशुराम ने भद्रकाली की कृपा से परास्त दिया। सुचन्द्र के पुत्र पुष्कराक्ष को भी सिर से पैर तक काट कर, इसने मार डाला।

कार्तवीर्यवध—बाद में प्रत्यक्ष कार्तवीर्य तथा उसके सौ पुत्रों के साथ परशुराम का युद्ध हुआ। शुरु में कार्तवीर्य ने परशुराम को बेहोश कर दिया। किन्तु अन्त में परशुराम ने कार्तवीर्य एवं उसके पुत्रों का सौ अक्षौहिणी सेनासहित नाश कर दिया (ब्रह्मांड. ३.३९.११९; म. द्रो. परि. १ क्र. ८)। महाभारत के अनुसार, परशुराम ने कार्तवीर्य के सहस्र बाहु काट दिये, एवं एक सामान्य श्वापद जैसा उसका वध किया (म. शां. ४९.४१)। कार्तवीर्य के शूर, वृषास्य, वृष, शूरसेन तथा जयध्वज नामक पुत्रों ने पलायन किया। उन्होंने हिमालय की तराई में स्थित अरण्य में आश्रय लिया। परशुराम ने युद्ध समाप्त किया।

पश्चात् यह नर्मदा में स्नान कर के शिवजी के पास गया। वहाँ गणेशजी ने इसे कहा 'शिवजी के पास जाने का यह समय नहीं हैं'। फिर क्रुद्ध हो कर अपने फरसे से इसने गणेशजी का दाँत तोड़ दिया (ब्रह्मांड. ३.४२)। पश्चात् जमदग्नि के आश्रम में आ कर, इसने उसे कार्तवीर्यवध का सारा वृत्तांत सुनाया।

क्षत्रियहत्या के दोषहरण के लिये, जमदग्नि ने परशुराम को बारह वर्षों तक तप कर के, प्रायश्चित्त करने के लिये कहा। फिर परशुराम प्रायश्चित करने के लिये महेंद्र पर्वत चला गया। मत्स्य के अनुसार, यह कैलास पर्वत पर गणेशजी की आराधना करने गया (मत्स्य. ३६)। जिधर जिधर यह जाता था, वहाँ क्षत्रिय डर के मारे छिप जाते थे, तथा अन्य सारे लोग इसकी जयजयकार करते थे (ब्रह्मांड. ३.४४)।

जमदग्निवध—परशुराम तपश्चर्या में निमग्न ही था कि, इधर कार्तवीर्य के पुत्रों ने तपस्या के लिये समाधि लगाये हुवे जमदग्नि ऋषि का वध कर दिया, तथा वे उसका सिर ले कर भाग गये। ब्रह्मांड के अनुसार, जमदग्नि का वध कार्तवीर्य के अमात्य चंद्रगुप्त ने किया (ब्रह्मांड. ३.२९.१४)।

बारह वर्षों के बाद, परशुराम जब तपश्चर्या से वापस आ रहा था, तब मार्ग में ही इसे जमदग्नि के वध की घटना सुनायी गयी। जमदग्नि के आश्रम में आते ही, रेणुका ने इक्कीस बार छाती पीट कर जमदग्निवध को कथा फिर दोहरायी। फिर क्रोधातुर हो कर, परशुराम ने केवल हैहयों का ही नहीं, बल्कि पृथ्वी पर से सारे क्षत्रियों के वध करने की, एवं पृथ्वी को निःक्षत्रिय बनाने की दृढ़ प्रतिज्ञा की।

मातृतीर्थ की स्थापना—परशुराम के प्रतिज्ञा की यह कथा 'रेणुकामहात्म्य' में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। कार्तवीर्य जब जमदग्नि से मिलने उसके आश्रय में गया, तब कामधेनु की प्राप्ति के लिये उसने जमदग्नि का वध किया। फिर अपने पिता का और्ध्वदैहिक करने के लिये, परशुराम एक डोली में जमदग्नि का शव, एवं रेणुका को बैठा कर, 'कान्याकुब्जाश्रम' से बाहर निकला। अनेक

तीर्थस्थानों एवं जंगलों को पार करता हुआ, यह दक्षिण मार्ग से पश्चिम घाट के मल्लकी नामक दत्तात्रेयक्षेत्र में आया। वहाँ कुछ काल तक विश्राम करने के उपरांत यह चलनेवाला ही था, कि इतने में आकाशवाणी हुयी 'अपने पिता का अग्निसंस्कार तुम इसी जगह करों'। आकाशवाणी के कथनानुसार, परशुराम ने दत्तात्रेय की अनुमति से, जमदग्नि का अंतिम संस्कार किया। रेणुका भी अपने पति के शव के साथ आग्नि में सती हो गयी।

बाद में परशुराम ने मातृ-पितृप्रेम से विह्वल हो कर इन्हें पुकारा। फिर दोनों उस स्थान पर प्रत्यक्ष उपस्थित हो गये। इसी कारण उस स्थान को 'मातृतीर्थ' (महाराष्ट्र में स्थित आधुनिक माहूर) नाम दिया गया। इस मातृतीर्थ में परशुराम की माता रेणुका स्वयं वास करती हैं। इस स्थान पर रेणुका ने परशुराम को आज्ञा दी, 'तुम कार्तवीर्य का वध करो, एवं पृथ्वी को निःक्षत्रिय बना दो'।

नर्मदा के किनारे मार्कण्डेय ऋषि का आश्रम था। वहाँ मार्कण्डेय ऋषि का आशीर्वाद लेकर, परशुराम ने कार्तवीर्य का वध किया एवं पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की अपनी प्रतिज्ञा निभाने के लिये, यह आगे बढ़ा (रेणु. ३७-४०)।

हैहयविनाश—अपनी प्रतिज्ञा निभाने के लिये, परशुराम ने सर्वप्रथम अपने गुरु अगस्त्य का स्मरण किया। फिर अगस्त्य ने इसे उत्तम रथ एवं आयुध दिये। सहसाह इसका सारथि बना (ब्रह्मांड. ३.४६.१४)। रुद्र-द्वारा दिया गया 'अमित्रजित्' शंख इसने फूँका।

कार्तवीर्य के शूरसेनादि पाँच पुत्रों ने अन्य राजाओं को साथ ले कर, परशुराम का सामना करने का प्रयत्न किया। उनको वध कर, अन्य क्षत्रियों का वध करने का सत्र इसने शुरू किया। हैहय राजाओं की राजधानी माहिष्मती नगरी को इसने जला कर भस्म कर दिया। हैहयों में से वीतिहोत्र केवल बच गया, शेष हैहय मारे गये।

हैहयविनाश का यह रौद्र कृत्य पूरा कर, परशुराम महेंद्र पर्वत पर तपस्या करने के लिये चला गया। नये क्षत्रिय पैदा होते ही, उनका वध वरने की इसकी प्रतिज्ञा थी। उस कारण यह दस वर्षों तक लगातार तपस्या करता था, एवं दो वर्षों तक महेंद्र पर्वत से उतर कर, नये पैदा हुए क्षत्रियों को अत्यंत निष्ठुरता से मार देता था। इस प्रकार इक्कीस बारा इसने पृथ्वी भर के क्षत्रियों का वध कर, उसे निःक्षत्रिय बना दिया (ब्रह्मांड. ३.४६)।

निःक्षत्रिय पृथ्वी—इस तरह परशुराम ने चौंसठ कोटि क्षत्रियों का वध किया। उनमें से चौदह कोटि क्षत्रिय सरासर ब्राह्मणों का द्वेष करनेवाले थे। बचे हुए क्षत्रियों को इसने नाना प्रकार की सजाएँ दी। दंतक्रूर का इसने वध किया। एक हजार वीरों को इसने मूसल से मार डाला। हजारों कों तलवार से काट डाला। हजारों को पेड़ पर टाँग कर मार डाला, तथा उतने ही लोगों को पानी में डुबो दिया। हजारों के दाँत तोड़ कर नाक तथा कान काट लिये। सात हजार क्षत्रियों को मिर्च की धुनी दी। बचे हुये लोगों को बाँधकर, मार कर, तथा मस्तक तोड़कर नष्ट कर दिया। गुणावती के उत्तर में तथा खांडवारण्य के दक्षिण में जो पहाड़ियाँ हैं, उनकी तराई में क्षत्रियों से इसका युद्ध हुआ। वहाँ इसने दस हजार वीरों का नाश किया। उसके बाद काश्मीर, दरद, कुंति, क्षुद्रक, मालव, अंग, वंग कलिंग, विदेह, ताम्रलिप्त, रक्षोवाह, वीतिहोत्र, त्रिगर्त, मार्तिकावत, शिबि इत्यादि अनेक देश के राजाओं को कीड़ेमकोड़े के समान इसने वध कर दिया। इसी निर्दयता से जंगली लोगों का भी वध किया।

इस प्रकार परशुराम ने बारह हजार मूर्धाभिषिक्त राजाओं के सिर काट डाले। बाद में हजारों राजाओं को पकड़ कर, यह कुरुक्षेत्र ले आया। वहाँ पाँच बड़े कुण्ड खोद कर इसने उसे कैदी राजाओं के रक्त से भर दिया। पश्चात् उन कुंडों में परशुराम ने 'रुधिरस्नान' किया एवं अपने पितरों को तर्पण दिया। वे कुंड 'समंतपंचक तीर्थ' था 'परशुरामह्रद' नाम से आज भी प्रसिद्ध है।

बाद में गया जाकर चन्द्रपाद नामक स्थान पर इसने श्राद्ध किया (पद्म. स्व. २६)। इस प्रकारे अद्भुत कर्म कर के परशुराम प्रतिज्ञा से मुक्त हुआ। पितरों को यह क्षत्रियहत्या पसन्द न आई। उन्हों ने इस कार्य से छुटकारा पाने तथा पाप से मुक्ति प्राप्त करने के लिये, प्रायश्चित करने के लिये कहा (म. आ. २.४.१२)। पितरों की आज्ञा का पालन कर, यह अकृतव्रण के साथ सिद्धवन की ओर गया। रथ, सारथि, धनुष आदिको त्याग कर इसने पुनः ब्राह्मणधर्म स्वीकार किया। सब तीर्थों पर स्नान कर इसने तीन बार पृथ्वी की प्रदक्षिणा की, और महेन्द्र पर्वत पर स्थायी निवास बनाया।

अश्वमेधयज्ञ—पश्चात्, जीती हुयी सारी पृथ्वी कश्यप ऋषि को दान देने के लिये, परशुराम ने एक

महान् अश्वमेध यज्ञ का आयोजन किया। उस यज्ञ के लिये, बत्तीस हाँथ ऊँची सुवर्णवेदी इसने बनायी, एवं निम्नलिखित ऋषिओं को यज्ञाधिकार दिये—काश्यप (अध्वर्यु), गौतम (उद्गातृ), विश्वामित्र (होतृ) तथा मार्कण्डेय (ब्रह्मा)। भरद्वाज, अग्निवेश्यादि ऋषियों ने भी इस यज्ञ में भाग लिया। इस प्रकार यज्ञ समाप्त कर परशुराम ने महेन्द्र पर्वत को छोड़ कर, शेष पृथ्वी कश्यप को दान दे दी (म. शां. ४९; अनु. १३७.१२)। पश्चात् 'दीपप्रतिष्ठाख्य' नामक व्रत किया (ब्रह्मांड ३.४७)।

नया हत्याकांड—इस व्यवहार के कारण, परशुराम के बारे में लोगों के हृदय में तिरस्कार की भावना भर गयी। कुछ दिनों के उपरांत विश्वमित्र-पौत्र तथा रैम्यपुत्र परावसु ने भरी सभा में के इसे चिढ़ाया तथा कहा 'पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की प्रतिज्ञा तुमने की। परन्तु ययाति के यज्ञ के लिये एकत्रिप्र प्रतर्दन प्रभृति लोग क्या क्षत्रिय नहीं हैं? तुम मनचाही बकवास कहते हो। सच बात यह है कि सब ओर फैले क्षत्रियों के डर से तुम वन में मुँह छिपा कर बैठे हो'। इससे संतप्त हो कर परशुराम ने पुनः शस्त्र हाथ में लिया, तथा पहले निरपराधी मानकर छोड़े गये क्षत्रियों का वध किया। छोटों का विचार न कर, इसने माँ के गर्भ में स्थित बच्चों का भी नाश किया। अन्त में सम्पूर्ण पृथ्वी का दान कर स्वयं महेन्द्र पर्वत पर रहने के लिये चला गया (म. द्रो. परि. क्र. २६ पंक्ति ८६६)।

अभिमन्यु की मृत्यु से शोकग्रस्त युधिष्ठिर को यह कथा बताकर नारद ने शांत किया।

हत्याकांडसे बचे क्षत्रिय—परशुराम के हत्याकांड से बहुत ही थोड़े क्षत्रिय बच सके। उनके नाम इस प्रकार हैं:—

(१) **हैहय राजा वीतिहोत्र**—यह अपने स्त्रियों के अंतःपुर में छिपने से बच गया।

(२) **पौरव राजा ऋक्षवान्**—यह ऋक्षवान् पर्वतों के रीघों में जाकर छिपने से बच गया।

(३) **अयोध्या का राजा सर्वकर्मन्**—पराशर ऋषि ने शूद्र के समान सेवा कर इसे बचाया।

(४) **मगधराज बृहद्रथ**—गृध्रकुट पर्वत पर रहनेवाले बंदरों ने इसकी रक्षा की।

(५) **अंगराज चित्ररथ**—गंगातीर पर रहने वाले गौतम ने इसकी रक्षा की।

(६) **शिबीराजा गोपालि**—गायों ने इसकी रक्षा की।

(७) **प्रतर्दनपुत्र वत्स**—इसकी रक्षा गोवत्सों ने की।

(८) **मरुत्त**—इसे समुद्र ने बचाया।

इन राजाओं के वंश के लोग क्षत्रिय होते हुये भी, शिल्पकार, स्वर्णकार आदि कनिष्ठ श्रेणी के व्यवसाय करने पर विवश हुये।

इस प्रकार परशुराम के कारण, चारों ओर अराजकता फैल गयी। उस अराजकता को नष्ट करने के लिये, कश्यप ने चारों ओर के क्षत्रियों को ढूंढ़ना पुनः प्रारंभ किया, एवं उनके राज्याभिषेक कर सुराज्य स्थापित करने की कोशिश की (म. शां. ४९.५७–६०)।

'शूर्पारक' की स्थापना—अवशिष्ट क्षत्रियों के बचाव के लिये, कश्यप ने परशुराम को दक्षिण सागर के पश्चिमी किनारे जाने के लिये कहा। 'शूर्पारक' नामक प्रदेश समुद्र से प्राप्त कर, परशुराम वहाँ रहने लगा। भृगुकच्छ (भडोच) से ले कर कन्याकुमारी तक का पश्चिम समुद्र-तट का प्रदेश 'परशुराम देश' या 'शूर्पारक' नाम से प्रसिद्ध हुआ।

शूर्पारक प्रांत की स्थापना के कई अन्य कारण भी पुराणों में प्राप्त हैं। सगरपुत्रों द्वारा, गंगा नदी खोदी जाने पर, 'गोकर्ण' का प्रदेश समुद्र में डूबने का भय उत्पन्न हुआ। वहाँ रहनेवाले शुष्क आदि ब्राह्मणों ने महेंद्र पर्वत जा कर, परशुराम से प्रार्थना की। फिर गोकर्णवासियों के लिये नयी बस्ती बसाने के लिये, इसने समुद्र पीछे हटा कर, दक्षिणोत्तर चार सौ योजन लम्बे शूर्पारक देश की स्थापना की (ब्रह्मांड. ३. ५६. ५१–५७)।

परशुरामकथा का अन्वयार्थ—परशुराम द्वारा पृथ्वी निःक्षत्रियकरण की प्राचीन कथा में कुछ अतिशयोक्ति जरूर प्रतीत होती है। अयोध्या एवं कान्यकुब्ज के राजा अपनी माता रेणुका एवं मातामही सत्यवती के तरफ से परशुराम के रिश्तेदार थे। उन राजाओं को साथ ले कर परशुराम ने हैहयों को एवं हैहयपक्षीय राजाओं को इक्कीस बार युद्धभूमियों पर पराजित किया, इस 'परशुराम कथा' के अन्वयार्थ लगा जा सकता है। हैहयविरोधी इस युद्ध में, अयोध्या एवं कान्यकुब्ज के अतिरिक्त, वैशाली, विदेह, काशी आदि देशों के राजा भी परशुराम के पक्ष में शामिल थे। इसी कारण, परशुराम एवं हैहयों का युद्ध, प्राचीन भारतीय इतिहास का पहला महायुद्ध कहा जाता है।

कई अभ्यासकों के अनुसार, भार्गव लोग एवं स्वयं परशुराम 'नाविक' व्यवसाय के लोग थे, एवं पश्चिम

समुद्र किनारे रह कर, योरप, अफ्रीका आदि देशों से व्यापारविनिमय करते थे। इस व्यापार के कारण उन्होंने बहुत संपत्ति इकट्ठा की थी। पश्चिम भारतवर्ष पर राज्य करनेवाले हैहय लोग, विदेशी व्यापारविनिमय आर्य लोगों के कब्ज़े में लाना चाहते थे। इस कारण, कार्तवीर्य अर्जुन ने 'अत्रि' नामक नाविकव्यवसायी लोगों से दोस्ती की, एवं उनसे एक सहस्र युद्धनौकाएँ बना लीं। उसी एक हज़ार नौकाओं के कारण, कार्तवीर्य को सहस्र हाथोंवाला ('सहस्रार्जुन') नामक उपाधि मिली। पश्चात् कार्तवीर्य ने, भार्गवों से उनकी संपूर्ण संपत्ति माँगी। इस कारण, क्रुद्ध हो कर परशुराम ने हैहयों का नाश किया, एवं नर्मदा नदी के प्रदेश में से सारे हैहय राज्य का विध्वंस किया। यही विध्वंस पुराणों में 'निःक्षत्रिय पृथ्वी' के नाम से वर्णित है।

इस तरह ध्वस्त हैहय प्रदेश में परशुराम ने नया राज्य स्थापित किया, एवं पश्चिम समुद्र किनारे के भृगुकच्छ से लेकर कन्याकुमारी तक सारा प्रदेश नया बसाया। यही प्रदेश 'शूर्पारक' नाम से प्रसिद्ध हुआ, एवं पश्चिम के व्यापारविनिमय का केंद्रस्थान बन गया। हैहयों के विनाश से, पश्चिमी विदेशों का व्यापार उत्तर हिंदुस्थान के आर्य लोगों के हाथों से निकल गया, एवं दाक्षिणात्य द्रविड़ों के हाथों में वह चला गया (करंदीकर—'नवाकाळ' निबंध, १९३२–३३ ई.)।

फिर भी परशुराम हैहयों का संपूर्ण विनाश न कर सका। परशुराम के पश्चात, हैहय लोग 'तालजंघ' सामूहिक नाम से पुनः एकत्र हुये। तालजंघों में पाँच उपजातियों का सामवेश था, जिनके नाम थेः— वीतहोत्र, शर्यात, भोज, अवन्ति, कुण्डरिक (मत्स्य. ४३.४८–४९; वायु. ९४.५१–५२)। उन लोगों ने कान्यकुब्ज, कोमल, काशी आदि देशों पर बार बार आक्रमण किये, एवं कान्यकुब्ज राज्य का संपूर्ण विनाश किया।

ऐतिहासिक दृष्टि से, परशुराम जामदग्न्य, राम दाशरथि एवं पांडवों से बहुत ही पूर्वकालीन हैं। फिर भी 'रामायण' एवं 'महाभारत' के अनेक कथाओं में परशुरांम की उपस्थिति का वर्णन प्राप्त है।

महाभारत में— सौभपति शाल्व के हाथों से परशुराम पराजित हुआ। फिर कृष्ण ने शाल्व का वध किया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. ४७४–४८५)। करवीर शृगाल के उन्मत्त कृत्यों की शिकायत परशुराम ने बलराम एवं कृष्ण के पास की। फिर उसका वध भी कृष्ण ने किया (ह. वं. २.४४)। सैंहिकेय शाल्व का वध भी कृष्ण ने परशुराम के कहने पर ही किया (ह. वं. २. ४४)। सैंहिकेय शाल्व के वध के बाद, शंकर ने परशुराम को 'शंकरगीता' का ज्ञान कराया (विष्णुधर्म. १.५२.६५)। जरासंध के आक्रमण से डर कर, बलराम तथा कृष्ण राजधानी के लिये नये स्थान ढूँढ रहे थे। उस समय उनकी भेंट परशुराम से हुयी थी। परशुराम ने उन्हें गोमंत पर्वत पर रह कर जरासंध से दुर्गयुद्ध करने की सलाह दी (ह. वं. २.३९)।

महेंद्र पर्वत पर जब यह रहता था, तब अष्टमी तथा चतुर्दशी के ही दिन केवल अभ्यागतों से मिलता था (म. व. ११५.६)। पूर्व समुद्र की ओर भ्रमण करते हुये युधिष्ठिर की भेंट एक दिन परशुराम से हुयी थी। बाद में युधिष्ठिर गोदावरी नदी के मुख की ओर चला गया (म. व. ११७–११८)।

शूर्पारक बसाने के पूर्व परशुराम महेंद्र पर्वत पर रहता था। उसके उपरांत शूर्पारक प्रदेश में रहने लगा (ब्रह्मांड. ३.५८)।

भीष्माचार्य को परशुराम ने अस्त्रविद्या सिखायी थी। भीष्म अम्बा का वरण करे, इस हेतु से इन गुरुशिष्यओं का युद्ध भी हुआ था। एक महीने तक युद्ध चलता रहा, अन्त में परशुरान ने भीष्म को पराजित किया (म. उ. १८६. ८)। परशुराम ने क्षत्रियों की हिंसा की। उसके विषय में भीष्म ने इसे मुँहतोड़ जवाब दिया था। अपने को ब्राह्मण बताकर कर्ण ने परशुराम से शिक्षा प्राप्त की थी। बाद में परशुराम को यह भेद पता चला, और उन्होंने उसे शाप दिया।

परशुराम ने द्रोण को ब्रह्मास्त्र सिखाया था। दंभोद्भव राक्षस की कथा सुनाकर, परशुराम ने दुर्योधन को युद्ध से परावृत करने का प्रयत्न किया था (म. उ. ८४)। बम्बई के वाल्केश्वर मंदिर के शिवलिंग की स्थापना परशुराम ने की थी (स्कंद. सह्याद्रि. २–१)।

रामायण में—रामायण में भी परशुराम का निर्देश कई बार आया है। सीता-स्वयंवर के समय राम ने शिव के धनुष को तोड़ दिया। अपने गुरु शिव का, अपमान सहन न कर, परशुराम राम से युद्ध करने के लिये तत्पर हुआ। किंतु उस युद्ध में राम ने परशुराम को पराजित किया, एवं परशुराम के तपसामर्थ्य नष्ट होने का उसे शाप दिया (वा. रा. बा. ७४–७६)।

कालविपर्यास—परशुराम के महाभारत एवं रामायण में प्राप्त निर्देश कालविपर्यस्त हैं अतएव अनैतिहासिक प्रतीत होते है। जैसे पहले ही कहा है, परशुराम रामायण एवं महाभारत के बहुत ही पूर्वकालीन थे। इस कालविपर्यास का स्पष्टीकरण महाभारत एवं पुराणों में, परशुराम को चिरंजीव कह कर दिया गया है। संभव है कि, प्राचीनकाल के परशुराम की महत्ता एवं ब्रह्मतेज का रिश्ता महाभारत एवं रामायण के पात्रों से जोड़ने के लिये यह 'चिरंजीवत्व' की कल्पना प्रसृत की गयी हो।

परशुराम के स्थान—परशुराम के जीवन से संबंधित अनेक स्थान भारतवर्ष में उपलब्ध हैं। वहाँ परशुराम की उपासना आज भी की जाती है। उनमें से कई स्थान इस प्रकार हैं—

(१) जमदग्नि आश्रम (पंचतीर्थी)—परशुराम का जन्मस्थान एवं सहस्रार्जुन का वधस्थान। यह उत्तरप्रदेश में मेरठ के पास हिंडन (प्राचीन 'हर') नदी के किनारे है। यहाँ पाँच नदियों का संगम है। इसलिये इसे 'पंचतीर्थी' कहते है। यहाँ 'परशुरामेश्वर' नामक शिवमंदिर है।

(२) मातृतीर्थ (महाराष्ट्र में स्थित आधुनिक 'माहूर' ग्राम)—रेणुका दहनस्थान।

(३) महेंद्रपर्वत (आधुनिक 'पूरबघाट)—परशुराम का तपस्यास्थान। क्षत्रियों का संहार करने के पश्चात् परशुराम यहाँ रहता था। परशुराम ने समस्त पृथ्वी कश्यप को दान में दी, उस समय महेंद्रपर्वत भी कश्यप को दान में प्राप्त हुआ। फिर परशुराम 'शूर्पारक' के नये बस्ती में रहने के लिये गया।

(४) शूर्पारक (बंबई के पास स्थित आधुनिक 'सोपारा' ग्राम)—परशुराम का तपस्यास्थान। समुद्र को हटा कर, परशुराम ने इस स्थान को बसाया था।

(५) गोकर्णक्षेत्र (दक्षिण हिंदुस्थान में कारवार जिले में स्थित 'गोकर्ण' ग्राम)—परशुराम का तपस्यास्थान। समुद्र में डूबते हुये इस क्षेत्र का रक्षण परशुराम ने किया था।

(६) जंबुवन (राजस्थान में कोटा के पास चर्मण्वती नदी के पास स्थित आधुनिक 'केशवदेवराय-पाटन' ग्राम)—परशुराम का तपस्यास्थान। इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करने के बाद परशुराम ने यहाँ तपस्या की थी।

(७) परशुरामतीर्थ (नर्मदा नदी के मुख में स्थित आधुनिक 'लोहान्या' ग्राम)—परशुराम का तपस्यास्थान।

(८) परशुरामताल (पंजाब में सिमला के पास 'रेणुका-तीर्थ' पर स्थित पवित्र तालाब)—परशुराम के पवित्रस्थान। यहाँ के पर्वत का नाम 'जमदग्निपर्वत' है।

(९) रैणुकागिरि (अलवार-रेवाडी रेलमार्ग पर खैरथल से ५ मील दूर स्थित आधुनिक 'रैनागिरि' ग्राम) —परशुराम का आश्रमस्थान।

(१०) चिपळूण (महाराष्ट्र में स्थित आधुनिक चिपळूण ग्राम)—परशुराम का पवित्रस्थान। यहाँ परशुराम का मंदिर है।

(११) रामह्रद (कुरुक्षेत्र के सीमा में स्थित एक तीर्थस्थान)—परशुराम का तीर्थ स्थान। यहाँ परशुराम ने पाँच कुंडों की स्थापना की थी (म. व. ८१.२२-३३)। इसे 'समंतपंचक' भी कहते है।

परशुरामजयंती—वैशाख शुध तृतीया के दिन, रात्रि के पहले 'प्रहर' में परशुरामजयंती का समारोह किया जाता है। (धर्मसिंधु पृ. ९)। यह समारोह अधिक तर दक्षिण हिंदुस्थान में होता है, सौराष्ट्र में यह नहीं किया जाता है। इस समारोह में, निम्नलिखित मंत्र के साथ, परशुराम को 'अर्घ्य' प्रदान किया जाता है—

> जमदग्निसुतो वीर क्षत्रियान्तकरः प्रभो।
> ग्रहाणार्घ्यं मया दत्तं कृपया परमेश्वर॥

परशुराम साम्प्रदाय के ग्रंथ—'परशुरामकल्पसूत्र' नामक एक तांत्रिकसांप्रदाय का ग्रंथ परशुराम के नाम से प्रसिद्ध है। 'परशुरामप्रताप' नामक और भी एक ग्रंथ उपलब्ध है।

परशुरामशक—मलाबार में अभी तक 'परशुराम शक' चालू है। उस शक का वर्ष सौर रीति का है, एवं वर्षारंभ 'सिंहमास' से होता है। इस शक का 'चक्र' एक हजार साल का होता है। अभी इस शक का चौथा चक्र चालू है। इस शक को 'कोल्लमआंडु' (पश्चिम का वर्ष) कहते है (भा. ज्यो. ३७७)।

परस्परायणि—अंगिराकुल का एक ब्रह्मर्षि (नारायणि देखिये)।

पराक्ष—(सो. अनु) एक राजा। ब्रह्मांड के अनुसार, यह अनु राजा का पुत्र था (परपक्ष देखिये)।

परातंस—(सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार, यह प्रतंस का पुत्र था।

परानंद—मगध देश का राजा। नंदसुत को शूद्र स्त्री से उत्पन्न हुए, प्रनंद नामक राजा का यह पुत्र था। इसने १० वर्षों तक राज्य किया (भवि. प्रति. १.६)।

परायण—वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा के कौथुम पाराशर्य का शिष्य (व्यास देखिये)।

परावसु—एक ऋषि, जो रैभ्य मुनि का पुत्र एवं अर्वावसु ऋषि का बड़ा भाई था। विश्वामित्र ऋषि इसका पितामह था। यह अंगिरा का वंशज माना जाता था (म. शां. २०१.२५)।

हिंसक पशु के धोखे में, इसने अपने पिता रैभ्य का वध किया (म. व. १३९.६)। इस वध के कारण, इसे ब्रह्महत्या का पाप लगा, एवं यज्ञ के ऋत्विज का कार्य करने के लिये अपात्र बन गया।

अपने ब्रह्महत्या का पातक दूर करने के लिये, इसने अपने छोटे भाई अर्वावसु को वेदमंत्रयुक्त अनुष्ठान एवं तपस्या करने की आज्ञा दी, एवं यह स्वयं बृहद्द्युम्न राजा का यज्ञ करने चला गया (म. व. १३९.२)।

बृहद्द्युम्न के यज्ञ से 'ब्रह्मघातकी' होने के कारण, इसे निकलवा दिया। किंतु अर्वावसु के प्रयत्न से, यह निर्दोष साबित हुआ (म. व. १३९.१५)। पश्चात् उपरिचर के अश्वमेध यज्ञ में भी इसे स्थान दिया गया (म. शां. ३२७.७)।

एक बार परशुराम से इसकी मुलाकात हो गयी। इक्कीस बार पृथ्वी निःक्षत्रिय करनेवाले परशुराम से इसने व्यंग्य से कहा, 'पृथ्वी पर क्षत्रिय तो बहुत बाकी है। खुद को निःक्षत्रिय पृथ्वी करनेवाला कहला कर, तुम व्यर्थ ही आत्मप्रशंसा करते हो'। इसके इस उद्गार के कारण, परशुराम क्रोधित हुआ, एवं क्षत्रियसंहार का कार्य उसने पुनः आरम्भ किया (म. द्रो. परि. १ क्र. ८)।

परावृत्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। पद्म तथा विष्णु के अनुसार, यह रुक्मकवच का पुत्र था।

पराशर—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, स्मृतिकार, एवं 'आयुर्वेद' तथा 'ज्योतिषशास्त्र' के प्रवर्तक ऋषिओं में से एक। यह वसिष्ठ ऋषि का पौत्र, एवं शक्ति ऋषि का पुत्र था। यह शक्ति ऋषि के द्वारा 'अदृश्यन्ती' के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। इसीलिये इसे पराशर 'शाक्त्य' कहते थे। वसिष्ठ का भाई शतयातु ऋषि इसका चाचा था। इसके कुल तीन भाई थे। उनके नामः—अथीगु, गौरीविति, एवं जातूकर्ण या जातूकर्ण्य हैं।

ऋग्वेद अनुक्रमणी के अनुसार, ऋग्वेद के कुछ सूक्तों का प्रणयन पराशर ने किया था (ऋ. १.६५-७३)। एक परंपरा के रूप में 'पराशरों' का काठक अनुक्रमणी' में उल्लेख प्राप्त है (इन्डिशे स्टूडियेन ३.४६८०)। दस राजाओं के युद्ध में विजय पानेवाले सुदास राजा की प्रशस्ति में, अपने चाचा शतयातु एवं पितामह वसिष्ठ के साथ पराशर ऋषि का निर्देश आया है (ऋ. ७.१८.२१) इन तीन ऋषियों ने इंद्र के पास जा कर, सुदास के लिये उसकी सहायता प्राप्त की थी (गेल्डनर—इन्डिशे स्टुडियेन २. १३२)।

निरुक्त में 'पराशर' शब्द की व्युत्पत्ति बूढ़े ऋषि को उत्पन्न पुत्र ('पराशीर्णस्य स्थविरस्य जज्ञे') ऐसी दी गयी है (नि.६.३०)। उसका शब्दशः अर्थ ले कर, कई लोग पराशर को वसिष्ठ ऋषि को उसके बुढ़ापे में उत्पन्न हुआ पुत्र मानते हैं। किंतु यह ठीक नहीं है। अपने सातों पुत्रों की मृत्यु हो जाने पर, दुःख से पीड़ित वृद्ध वसिष्ठ ऋषि को पराशर का आधार प्राप्त हुआ था। उसीका संकेत निरुक्त के इस व्युत्पत्ति में किया गया है। महाभारत में भी निरुक्त के व्युत्पत्ति को इसी अर्थ से ले कर, पराशर को वसिष्ठ का पौत्र एवं शक्ति का मृत्यु के पश्चात् उत्पन्न पुत्र कहा गया है (म. आ. १६७.१५)।

एक बार वसिष्ठ का पुत्र शक्ति पुष्पादिक लाने के लिये अरण्य में गया था। वहाँ विश्वामित्र के लोगों ने उसे पकड़ कर अग्नि में झोंक दिया। अग्नि में जल कर मरते हुए शक्ति ने, 'इंद्र क्रतुं न आ भर पिता पुत्रेभ्यो यथा' (हे इंद्र-हमें ज्ञान दे। पिता अपने पुत्र को प्रदान करता है, वैसा धन तुम हमे दे) ऋचा के अर्धभाग की रचना की। पश्चात् वसिष्ठ ने उस ऋचा को पूरा किया (ऋ. ३२.२६)।

महाभारत के अनुसार, शक्ति ऋषि का वध राक्षसयोनि प्राप्त हुए कल्माषपाद ने किया (म. आ. १६६.३६)। शक्ति ऋषि के द्वारा उसकी पत्नी अदृश्यन्ती के गर्भ में से पराशर की उत्पत्ति हुई। बारह वर्षों तक अपने माता के गर्भ में रह कर इसने वेदाभ्यास किया।

अपने पुत्रों के मृत्यु से एवं वंशाक्षय के दुःख के कारण जीवन से ऊबकर, एक बार वसिष्ठ आश्रम से बाहर निकल पड़ा। शक्ति की विधवा पत्नी अदृश्यन्ती भी उसके पीछे-पीछे जाने लगी। इतने में यकायक वसिष्ठ के कानों पर सुस्वर 'वेदध्वनि' आने लगी। उसने पीछे मुड़ कर देखा।

उसे पता चला कि, अदृश्यन्ती के गर्भ से वेदध्वनि आ रही है। अपना वंश अभी तक जीवित है, यह जान कर वसिष्ठ को अत्यंत आनंद हुआ, एवं वह आश्रम में वापस आया। कुछ दिनों के बाद, अदृश्यन्ती से पराशर उत्पन्न हुआ। इसके पितामह वसिष्ठ ने इसका पालन-पोषण किया। दूसरे का लड़का खुद का समझ कर वसिष्ठ ने इसे सँभाला, इस कारण इसका 'पराशर' नाम रखा गया (म. आ. १६९. ३)।

बाल्यकाल में पराशर, वसिष्ठ ऋषि को अपना पिता समझ कर, उसे 'दादा, दादा' कह कर पुकारता था। वसिष्ठ को 'दादा' कह कर पुकारते ही, इसकी माता अदृश्यन्ती के आँखों में पानी भर आता था। अदृश्यन्ती ने इसे कई बार समझाया, "वसिष्ठ को तुम 'दादा' न कह कर, 'बाबा' (पितामह) कहो"। किंतु पराशर यह सूक्ष्म भेदाभेद नहीं समझता था।

पराशर के बड़े होने पर, अदृश्यन्ती ने राक्षसद्वारा हुए शक्ति ऋषि के घृणित वध की सारी कहानी इसे सुनायी। उसे सुनते ही, यह संपूर्ण जगत के विनाश के लिये तत्पर हुआ। किंतु भृगवंशी ऋचीक और्व ऋषि की कथा इसे सुना कर, वसिष्ठ ने इसे जगद्विनाश के संकल्प से परावृत्त किया (म. आ. १७२)।

राक्षससत्र—फिर भी पराशर का राक्षसों के प्रति क्रोध शमित न हुआ। आबालवृद्ध राक्षसों को मार डालने के लिये, इसने महाप्रचंड 'राक्षससत्र' का आयोजन किया। राक्षसों के प्रति वसिष्ठ भी पहले से क्रुद्ध था। इस कारण, पराशर के नये सत्र से वसिष्ठ ने न रोका। किंतु इसके 'राक्षससत्र' से अन्य ऋषियों में हलचल मच गयी। अत्रि, पुलह, पुलस्त्य, क्रतु, महाक्रतु आदि ऋषियों ने स्वयं सत्र के स्थान आकर, पराशर को समझाने की कोशिश की। पुलस्त्य ऋषि ने कहा, 'अनेक दृष्टि से राक्षस निरुपद्रवी एवं निरपराध है। अतः उनका वध करना उचित नहीं'। फिर वसिष्ठ ने भी पराशर को समझाया, एवं 'राक्षससत्र' बंद करने के लिये कहा। उसका कहना मान कर, पराशर ने अपना यज्ञ स्थगित किया। इस पुण्यकृत्य के कारण पुलस्त्य ने इसे वर दिया, 'तुम सकल शास्त्रों में पारंगत; एवं पुराणों के 'वक्ता' बनोंगे (विष्णु. १. १)।

राक्षससत्र के लिये सिद्ध की अग्नि, पराशर ने हिमालय के उत्तर में स्थित एक अरण्य में झोंक दी। वह अग्नि 'पर्वकाल' के दिन, राक्षस, पाषाण एवं वृक्षों को भक्षण करती हुयी आज भी दृष्टिगोचर होती है (म. आ. १६९-१७०; १७२; विष्णु. १.१; लिंग १. ६४)।

व्यासजन्म—एक बार पराशर तीर्थयात्रा के लिये गया था। यमुना नदी के किनारे, उपरिचर वसु राजा की कन्या सत्यवती को इसने देखा। सत्यवती के शरीर में मछली जैसी दुर्गंध आती थी। फिर भी उसके रूप यौवन पर मोहित हो कर पराशर ने उससे प्रेमयाचना की। पराशर के संभोग से अपना 'कन्याभाव' (कौमार्य) नष्ट होगा, ऐसी आशंका सत्यवती ने प्रकट की। फिर पराशर ने उसे आशीर्वाद दिया, 'संभोग' के बाद भी तुम कुमारी रहोगी, तुम्हारे शरीर से मछली की गंध (मत्स्यगंध) लुप्त हो जायेगी और एक नयी सुगंध तुम्हे प्राप्त होगी, एवं वह सुगंध एक योजन तक फैल जायेगी। इसी कारण लोग तुम्हे 'योजनगंधा' कहेंगे (म. आ. ५७.६३)। पश्चात् मनसोक्त एकांत का अनुभव लेने के लिये, पराशर ने सत्यवती के चारों ओर नीहार का पर्दा उत्पन्न किया।

पराशर को सत्यवती से व्यास नामक एक पुत्र हुआ। यमुना नदी के द्वीप में उसका जन्म होने के कारण, उसे 'द्वैपायन' व्यास कहते थे। (म. आ. ५७.९९; भा १.३)। सत्यवती को 'काली' नामांतर भी प्राप्त था। उस काली का पुत्र होने के कारण, व्यास को 'कृष्णद्वैपायन' उपाधि प्राप्त हो गयी (वायु. २.१०.८४)।

पार्गिटर के अनुसार, प्राचीन काल में 'पराशर शाक्त्य' एवं 'पराशर सागर' नामक दो व्यक्ति वसिष्ठ के कुल में उत्पन्न हुए। उनमें से 'पराशर शाक्त्य' वैदिक सुदास राजा के समकालीन वसिष्ठ ऋषि का पौत्र एवं शक्ति ऋषि का पुत्र था। दूसरा 'पराशर सागर' सगर वसिष्ठ का पुत्र, एवं कल्माषपाद तथा शंतनु राजा का समकालीन था। इन दो पराशरों में से 'पराशर शाक्त्य' ने राक्षससत्र किया था, एवं दूसरे पराशर ने सत्यवती से विवाह किया था (पार्गि. २१८)। किंतु पार्गिटर के इस तर्कपरंपरा के लिये विश्वसनीय आधार उपलब्ध नहीं हैं। पौराणिक वंशावली में भी एक 'शक्तिपुत्र पराशर' का ही केवल निर्देश प्राप्त है।

आदरणीय ऋषि—एक आदरणीय ऋषि के नाते, महाभारत में पराशर का निर्देश अनेक बार किया गया है। इसने जनक को कल्याणप्राप्ति के साधनों का उपदेश दिया था (म. अनु.२७९-२८७)। कालोपरांत वही उपदेश भीष्म ने युधिष्ठिर को बताया था। उसे ही 'पराशरगीता'

कहते है। इसने युधिष्ठिर को 'रुद्रमाहात्म्य' कथन किया था (म. अनु. ४९)। इसने अपनें शिष्यों को विविध ज्ञानपूर्ण उपदेश दिये थे (म. अनु. ९६.२१)। पराशर द्वारा किये गये 'सावित्रीमंत्र' का वर्णन भी महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. १५०)।

परिक्षित राजा के प्रायोपवेशन के समय, पराशर गंगानदी के किनारे गया था (भा. १.१९.९)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म को देखने के लिये यह कुरुक्षेत्र गया था (म. शां. ४७.६६)। इंद्रसभा में उपस्थित ऋषियों में भी, पराशर एक था (म. स. ७.९)।

वेदव्यास—ब्रह्मा से ले, कर कृष्णद्वैपायन व्यास तक उत्पन्न हुए ३२ वेदव्यासों में से पराशर एक प्रमुख वेदव्यास था। जो ऋषिमुनि वैदिक संहिता का विभाजन या पुराणों को संक्षिप्त कर ले, उसे 'वेदव्यास' कहते थे। उन वेदव्यासों में ब्रह्मा, वसिष्ठ, शक्ति, पराशर एवं कृष्ण-द्वैपायन व्यास प्रमुख माने जाते है।

धर्मशास्त्रकार—पराशर अठारह स्मृतिकारों में से एक प्रमुख था। इसकी 'पराशरस्मृति' एवं उसके उपर आधारित 'बृहत्पराशर संहिता' धर्मशास्त्र के प्रमुख ग्रंथों में गिने जाते हैं। पराशर के नाम पर निम्नलिखित धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ उपलब्ध है :—

(१) **पराशरस्मृति**—यह स्मृति जीवानंद संग्रह (२.१–५२), एवं बॉम्बे संस्कृत सिरीज़ में उपलब्ध है। डॉ. काणे के अनुसार, इस स्मृति का रचनाकाल १ली शती एवं ५. वी शती के बीच का होगा। याज्ञवल्क्यस्मृति एवं गरुड पुराण में इस स्मृति के काफी उद्धरण एवं सारांश दिये गये हैं (याज्ञ. १. ४; गरुड. १. १०७)।

इस स्मृति में कुल बारह अध्याय, एवं ५९२ श्लोक है। इस स्मृति की रचना कलियुग में धर्म के रक्षण करने के हेतु से की गयी है। कृतयुग के लिये 'मनुस्मृति', त्रेतायुग के लिये 'गौतमस्मृति', द्वापारयुग के लिये 'शंखलिखितस्मृति', वैसे ही कलियुग के लिये 'पराशरस्मृति' की रचना की गयी (परा. १.२४)। मनुस्मृति गौतम स्मृति की अपेक्षा, पराशरस्मृति अधिक 'प्रगतिशील' प्रतीत होती है। उसमें ब्राह्मण व्यक्ति को शूद्र के घर भोजन करने की एवं विवाहित स्त्रियों को पुनर्विवाह करने की अनुमति दी गयी है। परचक्र, प्रवास, व्याधि एवं अन्य संकटों के समय, व्यक्ति ने सर्वप्रथम अपनें शरीर का रक्षण करना आवश्यक है, उस समय धर्माधर्म की विशेष चिन्ता करने की जरुरत नहीं, ऐसा पराशर का कहना है (परा. ७)। पुत्रों के प्रकार बताते समय, 'औरस' पुत्रों के साथ, 'दत्तक, क्षेत्रज' एवं 'कृत्रिम' इन पुत्रों का निर्देश पराशर ने किया है (रा. ४.१४)। पति के मृत्यु के बाद, पत्नी का सती हो जाना आवश्यक है, ऐसा पराशर का कहना है (परा. ४)। क्षत्रिकों के आचार, कर्तव्य एवं प्रायश्चित के बारे में भी, पराशर ने महत्त्वपूर्ण विचार प्रगट किये हैं (परा. १.६–८)।

'पराशरस्मृति' में आचार्य मनु के मतों के उद्धरण अनेक बार लिये गये है (परा. १.४; ८)। सभी शास्त्रों के जाननेवाले एक आचार्य के रूप में इसने मनु का निर्देश किया है। मनु के साथ उशनस् (१२.४९), प्रजापति (४.३; १३), तथा शंख (४.१५) आदि धर्मशास्त्र-कारों का भी, इसने निर्देश किया है। वेद वेदांग, एवं धर्मशास्त्र के अन्य ग्रंथो का निर्देश एवं उद्धरण 'पराशरस्मृति' में प्राप्त है। अपने स्मृति के बारहवें अध्याय में इसने कुछ वैदिक मंत्र दिये हैं। उनमें से कई ऋग्वेद में एवं कई शुक्लयजुर्वेद में प्राप्त हैं।

पराशर के राजधर्मविषयक मतों का उद्धरण कौटिल्य ने अपने 'अर्थशास्त्र' में अनेक बार कहा है। 'मिताक्षरा' 'अपरार्क', 'स्मृतिचंद्रिका', 'हेमाद्रि' आदि अनेक ग्रंथों में पराशर के उद्धरण लिये गये हैं। विश्वरूप ने भी इसका कई बार निर्देश किया है (याज्ञ. ३.१६; २५७)। इससे स्पष्ट है की ९ वें शती के पूर्वार्ध में 'पराशर-स्मृति' एक 'प्रमाण ग्रंथ' माना जाता था।

(२) **बृहत्पराशरसंहिता**—यह स्मृति जीवानंद संग्रह में (२.५३–३०९) उपलब्ध है। 'पराशरस्मृति' के पुनर्संस्करण एवं परिवृद्धिकरण कर के इस ग्रंथ की रचना की गयी है। इस ग्रंथ में बारह अध्याय एवं ३३०० श्लोक हैं। पराशर परंपरा के सुव्रत नामक आचार्य ने इस ग्रंथ की रचना की है। यह ग्रंथ काफ़ी उत्तरकालीन है।

(३) **वृद्धपराशर स्मृति**—पराशर के इस स्वतंत्र स्मृतिग्रंथ का निर्देश अपरार्क (याज्ञ. २.३१८), एवं माधव (पराशर माधवीय. १.१.३२३०) ने किया है।

(४) **ज्योति पराशर**—इस स्मृतिग्रंथ का निर्देश हेमाद्रि ने अपने 'चतुर्वर्गचिंतामणी (३.२.४८) में एवं भट्टोजी दिक्षित ने अपने 'चतुर्विंशतिमत' में किया है।

(५) पराशर नितिशास्त्र—कौटिल्य ने इसका निर्देश किया है।

ज्योतिषशास्त्रकार--सिद्धांत, होरा एवं संहिता इन तीन स्कंधो से युक्त ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक अठारह ऋषियों में पराशर प्रमुख था। ज्योतिषशास्त्रकार अठारह ऋषियों के नाम इस प्रकार है—सूर्य, पितामह, व्यास, वसिष्ठ, अत्रि, पराशर, कश्यप, नारद, गर्ग, मरीचि, मनु, अंगिरा, लोमश, पौलिश, च्यवन, यवन, भृगु एवं शौनक (कश्यपसंहिता)। अपने ज्योतिषशास्त्रीय ग्रंथों में, पराशर ने 'वसंत संपात' स्थिति का निर्देश किया है।

पराशर के ज्योतिषशास्त्रीय ग्रंथ इस प्रकार हैः—

(१) पराशरसंहिता--इस ग्रंथ में, पराशर ने ज्योतिषशास्त्र से संबंधित निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का निर्देश किया हैः-ब्रह्मा मायारुण, वसिष्ठ, मांडव्य, वामदेव। पराशर के ज्योतिषशास्त्रीय शिष्यों में, मैत्रेय एवं कौशिक प्रमुख थे।

(२) बृहत्पाराशर होराशास्त्र—इस ग्रंथ में १२००० श्लोक है।

(३) लघुपाराशरी

(४) पाराशर्यकल्प—विमानविद्या पर महाग्रंथ, पराशरपरंपरा के किसी व्यासने लिखा है।

आयुर्वेदशास्त्रज्ञ—पराशर एक आयुर्वेदशास्त्रज्ञ भी था। यह अग्निवेश, मेल, काश्यप एवं खण्डकाप्य इन आयुर्वेदाचार्यों से समकालीन था। पराशर के नाम पर निम्नलिखित आयुर्वेदीय ग्रंथ प्राप्त हैंः--(१) पराशरतंत्र, (२) वृद्धपराशर, (३) हस्तिआयुर्वेद, (४) गोलक्षण, (५) वृक्षायुर्वेद।

पुराण इतिहासज्ञ—पराशर पुराण एवं इतिहास-शास्त्र में भी पारंगत था। पुराण ग्रंथो में, 'विष्णु पुराण' सारस्वत ने पराशर को एवं पराशर ने अपने शिष्य मैत्रेयको बताया था। विष्णु पुराण में, पराशर को इतिहास एवं पुराणों में विज्ञ कहा गया है (विष्णु. १. १)। 'भागवत पुराण' भी सांख्यायन ऋषिद्वारा पराशर एवं बृहस्पति को सिखाया गया, एवं वह पराशर ने मैत्रेय को सिखाया (भा. ३.८)। पराशर के नाम पर 'पराशरोप पुराण' नामक एक पुराण ग्रंथ उपलब्ध है। माधवाचार्य ने उसका निर्देश किया हैं।

अन्य ग्रंथ--पराशर के नाम पर पराशर वास्तुशास्त्र' नामक एक वास्तुशास्त्र विषयक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है। विश्वकर्मा ने उसका निर्देश किया है। 'पराशर केवलसार' तथा एक ग्रंथ और भी पराशर ने लिखा था।

पराशर वंश--पराशर के वंश की कुल छः उपशाखायें उपलब्ध है। उनके नामः-१.गौरपराशर, २. नीलपराशर ३. कृष्णपराशर, ४. श्वेतपराशर, ५. श्यामपराशर, ६. धूम्रपराशर (मत्स्य. २००)।

(१) गौरपराशर--इस वंश के प्रमुख कुलः-कांडशय (कांडूशय), गोपालि, जैह्वाप (समय), भौमतापन (समतापन), वाहनप (वाहयौज)।

(२) नीलपराशर--इस वंश के प्रमुख कुलः--केतुजातेय, खातेय (ग), प्रपोहय (ग), वाह्ममय, हर्यश्वि।

(३) कृष्णपराशर--इस वंश के प्रमुख कुलः--कपिमुख (कपिश्रवस्) (ग), काकेयस्थ (कार्केय) (ग), कार्ष्णायन (ग), जपातय (ख्यातपायन) (ग), पुष्कर।

(४) श्वेतपराशर—इस वंश के प्रमुख कुलः—इषीकहस्त ,उपय (ग), बालेय (ग), श्राविष्ठायन, स्वायष्ट (ग)।

(५) श्यामपराशर—इस वंश के प्रमुख कुल :—क्रोधनायन, क्षैमि, वादरि, वाटिका, स्तंत्र।

(६) धूम्रपराशर--इस वंश के प्रमुख कुलः—खल्यायन (ग), तंति (जर्ति), तैलेय, यूथप, एवार्ष्णायन।

उपनिर्दिष्ट वंशो में से, 'गौरपराशर' वंश के लोग वसिष्ठ, मित्रावरुण एवं कुंडिन इन तीन प्रवरों के हैं। बाकी सारे वंश के लोग पराशर, वसिष्ठ एवं शक्ति इन तीन प्रवरों के हैं।

२. एक ऋग्वेदी श्रुतर्षि, ऋषिक एवं ब्रह्मचारी। यह व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से बाष्कल ऋषि का शिष्य था। इसके नाम से इसकी शाखा को 'पराशरी' नाम प्राप्त हुआ।

३. वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य-परंपरा में से हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य। ब्रह्मांड में इसके नाम के लिये 'पाराशर्य' पाठभेद प्राप्त है।

४. व्यास की सामशिष्यपरंपरां में से कुथुमि ऋषि का शिष्य।

५. ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

६. ऋषभ नामक शिवावतार का शिष्य।

७. धृतराष्ट्र के वंश में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में स्वाहा हो गया (म. आ. ५२.१७)।

८. एक ऋषि। इसने ऋतुपर्णपुत्र नल राजा का रक्षण किया था (भा. ९.९.१७; सर्वकर्मन् देखिये)।

परिक्कूट--विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार।

परिकृष्ट-- वायु और ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा के हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य।

परिक्षित्--एक कुरुवंशीय वैदिक राजा। अथर्ववेद में इसके राज्य की समृद्धि एवं शान्ति का गौरवपूर्ण निर्देश किया गया है (अ. वे. २०.१२७.७-१०)। अथर्ववेद के जिन मंत्रों में इसकी प्रशस्ति है, उन्हें ब्राह्मण ग्रंथों में 'पारिक्षित्य मंत्र' कहा गया हैं (ऐ. ब्रा ६.३२. १०; कौ. ब्रा. ३०.५; गो. ब्रा. २.६.१२; सां. श्रौ. १२-१७; सां. ब्रा. ३०.५)।

वैदिक साहित्य में जनमेजय राजा का पैतृक नाम 'पारिक्षित' दिया गया हैं। वह उपाधि उसे वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट 'परिक्षित्' राजा के पुत्र होने से मिली होगी।

महाकाव्य में इसे 'प्रतिश्रवस्' का पितामह एवं 'प्रतीप' का प्रपितामह कहा गया है। झिमर के अनुसार, अथर्ववेद में निर्दिष्ट 'प्रातिसुत्वन्' एवं 'प्रतिश्रवस्' दोनों एक ही थे (झिमर, आल्टिन्डिशे लेवेन, १३१)। इस राजा की प्रशंसा करने के लिये, अन्य देवताओं, विशेषतः अग्नि के साथ, इसकी स्तुति की गयी है।

२. (सू. इ.) अयोध्या का इक्ष्वाकुवंशीय राजा। मंडूकों के राजा आयु की कन्या सुशोभना से इसका विवाह हुआ था। विवाह के समय, सुशोभना ने इसे शर्त रखी थी, 'मेरे लिये पानी का दर्शन वर्ज्य है। इसलिये पानी का दर्शन होते ही, मैं तुम्हें छोड़ कर चली जाऊँगी।'

एक बार यह मृगया के लिये वन में गया था। वहाँ प्रसंगवशात् यह अपनी पत्नी के साथ एक बावड़ी के पास आया। वहाँ पानी का दर्शन होते ही, अपने शर्त के अनुसार, सुशोभना पानी में लुप्त हो गयी। फिर क्रुद्ध हो कर, परिक्षित् ने अपने राज्य में मंडूकवध का सत्र शुरू किया उस सत्र से घबरा कर, मंडूकराज आयु इसकी शरण में आया, एवं इसकी खोई हुई पत्नी उसने इसे वापस दी। पश्चात् सुशोभना से इसे शल, दल, तथा बल नामक तीन पुत्र हुये (म. व. १९०)।

३. (सो. कुरु) एक कुरुवंशीय राजा, एवं कुरु राजा का पौत्र। यह कुरु आविक्षित के आठ पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसे अश्ववत् तथा अभिष्वत् नामांतर भी प्राप्त थे (म. आ. ८९.४५-४६)। इसके भाइयों के नाम इस प्रकार थे:--शबलाश्व, आदिराज, विराज, शाल्मलि, उच्चैःश्रवा, भंगकार और जितारि।

इसके माता का नाम बाहिनी था। इसे कुल सात पुत्र थे। उनके नाम--१. कक्षसेन, २. उग्रसेन ३. चित्रसेन, ४. इंद्रसेन, ५. सुषेण, ६. भीमसेन, ७. जनमेजय (म. आ. ८९.४६-४८)। वे सारे पुत्र धर्म एवं अर्थ के ज्ञाता थे।

४. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा। यह कुरु राजा अरुग्वत् (अनश्वत्) एवं मागधी अमृता का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम बाहुदा सुयशा था। उससे इसे भीमसेन नामक पुत्र हुआ था। कुरु राजा से लेकर शंतनु तक का इसका वंशक्रम इस प्रकार है:--कुरु-विडूरथ अरुग्वत्-परिक्षित्-भीमसेन -प्रतीप-शंतनु (म. आ. ९०.४३-४८)।

५. एक कुरुवंशीय सम्राट्। यह अर्जुन का पौत्र तथा अभिमन्यु एवं उत्तरा का पुत्र था।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठनेवाला पहला 'कुरुवंशीय' सम्राट परिक्षित है। राजधर्म एवं अन्य व्यक्तिगुणों से यह परिपूर्ण था। किंतु इसकी राज्य की समृद्धि एवं इसने अन्य देशों पर किये आक्रमणों की जो कथाएँ क्रमशः अथर्ववेद एवं पुराणों में दी गयी है, वे इसकी न हो कर, संभवतः किसी पूर्वकालीन 'परिक्षित्' राजा की होंगी (परिक्षित् १. देखिये)।

महाभारत के अनुसार, परिक्षित् का राज्य सरस्वती एवं गंगा नदी के प्रदेश में स्थित था। आधुनिक थानेश्वर, देहली एवं गंगा नदी के दोआब का उपरिला प्रदेश उसमें समाविष्ट था (रॉयचौधरी-पृ. २०)। कलियुग का प्रारंभ, एवं नागराज तक्षक के हाथों इस की मृत्यु, हुयी थी ये परिक्षित् के राज्यकाल की दो प्रमुख घटनाएँ थी।

जन्म-- अश्वत्थामा के द्वारा छोड़े गये ब्रह्मास्त्र के कारण, उत्तरा के गर्भ में स्थित परिक्षित् झुलसने लगा। फिर उत्तरा ने भगवान् विष्णु को पुकारा। श्रीविष्णु ने इस गर्भ की रक्षा की। इसलिये इसका नाम 'विष्णुरात' रखा गया।

जन्म लेने के उपरांत, यह गर्भकाल में अपनी रक्षा करनेवाले श्रीविष्णु को इधरउधर ढूँढने लगा। इस कारण, इसे 'परीक्षित्' (परि+ईक्ष) नाम प्राप्त हुआ (भा. १. १२.३०)। 'परिक्षित्' नाम की यह व्युत्पत्ति कल्पनारम्य, प्रतीत होती है, क्यों की, इस व्युत्पत्ति के अनुसार, 'परिक्षित्'

का नाम 'परीक्षित्' होना चाहिये। किंतु महाभारत में सर्वत्र इसका नाम 'परिक्षित्' दिया गया है। महाभातर के अनुसार, कुरुवंश 'परिक्षीण' होने के पश्चात् इसका जन्म हुआ, इस कारण 'परिक्षित्' नाम प्राप्त हुआ (म. आश्व. ७०.१०)

श्रीकृष्ण के मृत्यु के पश्चात्, युधिष्ठिर ने छत्तीस वर्षों तक राज्य किया। पश्चात् युधिष्ठिर ने राज्यत्याग कर, इसे राजगद्दी पर बैठाया गया (म. महा. १.९) बाद में द्रौपदी के सहित सारे पाण्डव महाप्रस्थान के लिए चले गये। राज्याभिषेक के समय यह छत्तीस वर्ष का था। इसकी पत्नी मद्रवती थी। बंबई आवृत्ति में इसका नाम माद्रवती प्राप्त है। भागवत में लिखा है कि, इसके मातुल की कन्या इरावती इसकी पत्नी थी। उससे इसे जनमेजय, श्रुतसेन, उग्रसेन तथा भीमसेन नामक चार पुत्र हुयें (म. आ. ९०-९३; आश्व. ६८; भा. १.१२.१६; ९.२२.३५)।

राज्य में कलिप्रवेश—कृपाचार्य को ऋत्विज बना कर, इसने भागीरथी के तट पर तीन अश्वमेधयज्ञ किये। इसके यज्ञ में देव प्रत्यक्ष रूप से अपना हविर्भाग लेने आये थे। जब यह कुरुजांगल देश में राज्य कर था, इसे ज्ञात हुआ कि कलि ने राज्य में प्रवेश लिया है। तत्काल यह अपनी चतुरंगी सेना ले कर निकल पड़ा। भारत, केतुमाल, उत्तरकुरु, भद्राश्व आदि खण्ड जीत कर, इसने वहाँ के राजाओं से करभार प्राप्त किया।

एक बार इसने सरस्वती के किनारे गोरूप धारी पृथ्वी, तथा तीन पैरोंवाले वृक्षभरूपधारी धर्म का संवाद सुना। इस संवाद से इसे पता चला कि, श्रीकृष्ण के निजधाम चले जाने के कारण, कलि ने इस पृथ्वी में प्रवेश पा लिया है, और शूद्ररूप धारण कर वह सब को दुःख देता हुआ गाय बैलों को मार रहा है। इस से खिन्न हो कर कलि को समाप्त करने के लिये यह उद्यत हो उठा। कलि इसकी शरण में आया। इसके राज्य से बाहर जाने की आज्ञा स्वीकार कर उसने राजा से पूछा, 'मेरे निवास के लिये कौन कौन स्थान हैं?' तब जुआ, मद्य, व्यभिचार, हिंसा, तथा स्वर्ण नामक पाँच स्थान, राजा ने कलि के रहने के लिये नियत किये। इससे धर्म तथा पृथ्वी को भी संतोष हुआ (भा. १.१६.१७)।

शाप--एक बार जब यह मृगया के लिये अरण्य में गया था, तब अत्यधिक प्यासा हो कर पीने के लिए जल ढूँढ़ने लगा। इधरउधर जल ढूँढ़ने के उपरांत, यह शमीक ऋषि के आश्रय गया। शमीक उस समय ध्यान में निमग्न था, अतएव जल के लिये की गई याचना सुन न सका। क्रोधित हो कर, धनुष की नोक से एक मृत सर्प उठा कर, इसने शमीक ऋषि के गले में डाल दिया, और अपने नगर वापस लौट आया (म. आ. ३६.१७-२१)। पास ही खेल रहे शमीक ऋषि के शृंगी नामक पुत्र को यह ज्ञात हुआ। उसने क्रोधित हो कर इसे शाप दिया, मेरे पिता के कंधे पर मृत सर्प डाल कर जिसने उसका अपमान किया है, उस परिक्षित् राजा को आज से सातवें दिन मेरे द्वारा प्रेरित नागराज तक्षक दंश करेगा'। इस कथा में से शमीक ऋषि के पुत्र का नाम, कई जगह 'गविजात' दिया गया है।

बाद में, शमीक को अपने पुत्र का शापवचन ज्ञात हुआ। उसने अपने शिष्य गौरमुख के द्वारा यह शाप परिक्षित को सूचित कराया, और पुत्र की भर्त्सना की (म. आ. ३८.१३-२८)।

शाप का पता चलते ही, परिक्षित् को अपने कृतकर्म का पश्चाताप हुआ। अपनी सुरक्षा के लिये, इसने सात मंजिलवाला स्तम्भयुक्त महल बनवाया, एवं औषधि, मंत्र आदि जाननेवालों मांत्रिको के समेत यह वहाँ रहने लगा। भागवत में लिखा है की, शाप सुनते ही परिक्षित् को वैराग्य उत्पन्न हो गया, और यह गंगा के किनारे प्रायोपवेशन के विचार से ईश्वर का ध्यान करने लगा। वहाँ अत्रि, अरिष्टनेमि इत्यादि कई ऋषि आये।

बाद में इसने अपने पुत्र जनमेजय का राज्याभिषेक किया। महाभारत में दिया गया है कि, परिक्षित् की मृत्यु के बाद जनमेजय का राज्याभिषेक हुआ। ऋषियों के बीच बातचीत चल ही रही थी कि सोलहवर्षीय शुकाचार्य ऋषि सहज भाव से उस स्थान पर उपस्थित हुआ। सब ने उनका स्वागत किया। परिक्षित् ने भी उसे उच्चासन दिया तथा श्रद्धा के साथ उनकी पूजा की। इसने उनसे मरणोन्मुख पुरुष के निश्चित कर्तव्य तथा सिद्धि के साधन पूछे। इसके सिवाय और भी प्रश्न किये। शुकाचार्य ने इसके सारे प्रश्नों के यथायोग्य उत्तर दिये (भा. १.१७.१९; २.८)। इस प्रकार समग्र 'भागवत' पुराण शुकाचार्य के द्वारा श्रवण कर, यह पूर्ण ज्ञानी बना। इसका तक्षक दंश का भय नष्ट हुआ, तथा शुकाचार्य भी वहाँ से चला गया।

पूर्व में दिये गये शाप के अनुसार, ऋषिपुत्र शृंगी के द्वारा सातवें दिन भेजा गया तक्षक, परिक्षित् को दंश करने जा रहा था। इसी समय मार्ग में काश्यप नामक

मांत्रिक, राजा का विष उतार कर, द्रव्य प्राप्ति की इच्छा से राजा के पास जा रहा था। उसे विपुल धनराशि दे कर तक्षक ने वापस भेज दिया (काश्यप २. देखिये)।

तक्षकदंश—तक्षक ने कुछ नागों को फल, मूल, दर्भ, उदक आदि देकर तापस वेश से परिक्षित् के पास भेजा। तक्षक स्वयं अतिसूक्ष्म जन्तु का रूप धारण कर फलों में प्रविष्ट हुआ। तापसवेषधारी नाग राजद्वार के पास आकर कहने लगे, 'हम राजा को अथर्वण मंत्रों से आशीर्वाद देकर अभिषेक करने के लिये, तथा राजा को उत्कृष्ट फल देने के लिये आये हैं।'

परिक्षित् ने उनके फल स्वीकार किये। वे फल सुहृदों को खाने के लिये दे कर, इसने एक बड़ा सा फल स्वयं खाने के लिये फोड़ा। उसमें से एक सूक्ष्म जन्तु बाहर निकला। उसका वर्ण लाल तथा आखें काली थी। उसे देख कर, परिक्षित् ने बड़े ही व्यंग्य से मंत्रियों से कहा, 'आज सातवाँ दिन है, एवं सूर्य अस्ताचल को जा रहा है। फिर भी नागराज तक्षक से मुझे भय प्राप्त नहीं हुआ। इसलिये कहीं यह जन्तु ही तक्षक न बन जाये, तथा मुझे डस कर मुनिवाक्य सिद्ध न कर दे'।

इतना कह कर परिक्षित् ने उस जन्तु को अपनी गर्दन पर धारण किया। तत्काल तक्षक ने भयंकर स्वरूप धारण कर इसके शरीर से लिपट गया, तथा अपने मुख से निकलनेवाली भयंकर विषमय ज्वालाओं से परिक्षित् के शरीर को दग्ध करने लगा। पश्चात् तक्षक आकाशमार्ग से चला गया (म. आ. ३६-४०; ४५-४७; दे. भा. २. ८-१०)।

भागवत के अनुसार, ब्राह्मणरूप धारण कर, तक्षक ने परिक्षित् के महल में प्रविष्ट पाया, तथा परिक्षित को दंश किया। जिससे परिक्षित् की मृत्यु हो गयी (भा. १२.६)। मृत्यु के समय इसकी आयु छियान्नवे वर्ष की थी। इसने कुल साठ वर्षों तक राज्य किया (दे. भा. २.८)।

परिक्षित्कथा का अन्वयार्थ—महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त 'परिक्षित्वध' की उपनिर्दिष्ट कथा ऐतिहासिक दृष्टि से यथातथ्य प्रतीत होती है। परिक्षित् के राज्यकाल में, गांधार देश में नाग लोगों का सामर्थ्य काफ़ी बढ़ गया था। भारतीययुद्ध के कारण, हस्तिनापुर के पौरव राज्य क्षीण एवं बलहीन बन गया था। उसकी इस दुर्बल अवस्था का फायदा उठा कर, नागों के राजा तक्षक ने हस्तिनापुर पर आक्रमण किया। तक्षक के इस आक्रमण का प्रतिकार परिक्षित् न कर सका, एवं तक्षक के हाथों इसकी मृत्यु हो गयी।

पौराणिककाल—परीक्षित् के राज्यारोहण से ले कर, मगध देश के बृहद्रथ राजवंश के समाप्ति तक का काल, प्राचीन भारतीय इतिहास में 'पौराणिककाल' माना जाता है। यह कालखंड भारतीययुद्ध (१४०० ई. पू.) से शुरु होता है, एवं मगध देश में 'नंद राजवंश' के उदयकाल (४०० ई. पू.) से समाप्त होता है। इस काल में उत्तर एवं पूर्वभारत में उत्पन्न हुयें पौरव, ऐक्ष्वाकु, एवं मागध राजाओं की विस्तृत जानकारी पुराणों में मिलती है। उन राजाओं के समकालीन पंचाल, काशी, हैहय, कलिंग, अश्मक, मैथिल, शूरसेन एवं वीतहोत्र राजवंशों की प्रासंगिक जानकारी पुराणों में दी गयी है। कहीं-कहीं तो, विशिष्ट राजवंश में पैदा हुए राजाओं की केवल संख्या ही पुराणों में प्राप्त है। पुराणो में प्राप्त इस 'कालखंड' की जानकारी, आधुनिक उत्तर प्रदेश एवं दक्षिण विहार से मर्यादित है।

पुराणों के अनुसार, 'परिक्षित्जन्म' से लेकर मगध देश के महापद्म नंद के अभिषेक तक का कालावधि, एक हजार पाँचसौ वर्षों का दिया गया है (मत्स्य. २७३.३६)। किंतु 'विष्णुपुराण' में 'ज्ञेय' के बदले 'शतं' पाठ मान्य कर, यही अवधि एक हजार एक सौ पंद्रह वर्षो का निश्चित किया गया है (विष्णु. ४.२४.३२)।

७. एक प्राचीन नरेश, जो कुरुवंशी अभिमन्युपुत्र से भिन्न था। इसके पुत्र जनमेजय की ब्रह्महत्या का निवारण इन्द्रोत मुनि ने किया था (म. शां. १४७-१४८)।

परिघ—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य तथा वायु के अनुसार, यह रुक्मकवच का पुत्र था। पद्म के अनुसार, यह रुक्मकवच का पौत्र, एवं परावृत् का पुत्र था (पद्म. सृ. १३)। इसे पालित तथा पुरुजित् नामांतर प्राप्त थे।

२. अंशद्वारा स्कंद को दिये गये पाँच पार्षदों में से एक। अन्य चार पार्षदों के नाम इस प्रकार थेः—वट, भीम, दहति, एवं दहन।

३. बिडालोपाख्यान में वर्णित व्याध का नाम (म. शां. १३६-११०)।

परिप्लव—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। विष्णु के अनुसार, यह सुखीबल राजा का पुत्र था। किन्तु भागवत में इसे सुखीनल का पुत्र कहा गया है। इसके नाम के

लिये प्रजानि, परिष्णाव, एवं परिप्लुत पाठभेद भी प्राप्त है (सुनय देखिये)।

परिप्लुत--परिप्लव का नामांतर।

परिबर्ह--गरुड के पुत्रों में से एक।

परिमति--भव्य देवों में से एक।

परिव्याध--पश्चिम दिशा में रहनेवाला एक महर्षि (म. शां. २०१.२९)।

परिश्रवस्--कुरुवंशीय राजा प्रतीप का नामान्तर (प्रतीप देखिये)।

परिश्रुत--स्कंद के दो सैनिकों के नाम (म. श. ४४. ५५-५६)।

परिष्णव--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह सुखीनल का पुत्र था। परिप्लव इसीका ही नामांतर था (परिप्लव देखिये)।

परिष्वंग--एक ऋषि। यह स्वायंभुवमन्वंतर के मरीचि ऋषि को. ऊर्णा नामक स्त्री से उत्पन्न, छः पुत्रों में से एक था। इसके अन्य पाँच भाइयों के नाम इस प्रकार थेः--स्मर, उद्‌गीथ, क्षुद्रभृत्, अग्निष्वात्त, एवं घृणी (भा. १०.८५; दे. भा. ४.२२)। अगले जन्म में इसने कृष्ण के छः बंधुओं में से एक को पुनः जन्म लिया, एवं कंस के हाथों यह मारा गया (भा. १०.८५.५१)।

परिहर--चित्रकूट के पास स्थित कलिंजर नगर का एक राजा। यह अथर्वपरायण एवं बौद्ध लोगों पर विजय पानेवाला था। इसने बौद्ध लोगों की हिंसा कर, उन पर विजय पाया था (भवि. प्रति. ११.७)। इसने बारह वर्षों तक राज्य किया (भवि. प्रति ४.४)।

परुच्छेप दैवोदासी-एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १. १२७-१३९)। सूक्तद्रष्टा नाते से ब्राह्मण ग्रंथों में भी इसका उल्लेख प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ५. १२-१३; सां. ब्रा. २३.४; कौ. ब्रा. २३.४.५)। कुछ शब्दों का बार-बार उपयोग करने की इसकी आदत थी (नि. १०.४२)।

नृमेध तथा परुच्छेप ऋषियों में मंत्रसामर्थ्य के बारे में स्पर्धा हुई थी। उसमें नृमेध ने गीली लकड़ी से धुआँ उत्पन्न किया। फिर परुच्छेप ने बिना लकड़ी से अग्नि उत्पन्न कर, नृमेध को हराया (तै. सं. २.५.८.३)।

परुष--खर राक्षस के १२ अमात्यों में से एक।

परोक्ष--(सो. अनु.) भागवत के अनुसार, अनु राजा के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ (परपक्ष देखिये)।

पर्जन्य--एक देवता। ऋग्वेद में इस देवता का वर्णन तीन सूक्तों में आया हैं। इसे वृषभ (ऋ. ५.८३.१; अ. वे. ४.१५.१), वशा (ऋ. ७.१०१.३), पिता (ऋ. ९.८२.३; अ. वे. ४.१५.१२), पृथ्वी की माता, एवं पर्जन्य का पिता (अ. वे. १०.१०.६) कहा गया है। यह वशा की पत्नी कही गयी है। इसमें एवं इंद्रदेवता में काफी साम्य है (ऋ. ८.३.१)।

२. रैवत मन्वंतर का एक सप्तर्षि।

३. फाल्गुन माह में भ्रमण करनेवाला सूर्य (भा. १२. ११.४०)। इसके साथ निम्नलिखित लोग रहते हैं:--(१) ऋतु नामक यक्ष, (२) वर्चस् नामक राक्षस, (३) भरद्वाज नामक ऋषि, (४) विश्वा नामक अप्सरा, (५) सेनजित् नामक गंधर्व, तथा (६) ऐरावत नामक नाग।

४. कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक देवगंधर्व (म. आ. ५९.४३)। पाठभेद 'प्रद्युम्न'। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४५)।

पर्णजंघ--विश्वामित्र के पुत्रों में एक।

पर्णय--एक दानव। इंद्र ने अतिथिग्व राजा के लिये इसका वध किया (ऋ. १.५३.८; १०.४८.८)।

पर्णवि--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पर्णा--हिमवत् को मेना से उत्पन्न तीन कन्याओं में से एक। 'एकपाटला' इसीका ही नामांतर था (एकपाटला देखिये)।

पर्णागारि--वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार (पन्नगारि ३. देखिये)।

पर्णाद--एक विदर्भनिवासी ब्राह्मण। इसे दमयंती ने नल राजा के शोधार्थ अयोध्या भेजा था। बाहुक नामधारी नल का समाचार इसने दमयंती को बताया। फिर दमयंती ने इसे पुरस्कार दिया (म. व. ६८.१)।

२. एक ऋषि। विदर्भवासी सत्य नामक ब्राह्मण के यज्ञ में, इसने होतृ का काम किया था (म. शां. २६४. ८ पाठ)।

३. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११)। हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुयी थी (म. उ. ३८८*)।

पर्णाशा--वरुण की सभा में उपस्थित एक नदी (म. स. १०३*)। इसने वरुण के द्वारा श्रुतायुध नामक पुत्र को जन्म दिया। वरुण ने उस पुत्र को अवध्य होने का वर दिया था (म. द्रो. ६७.४४-५८)।

पर्णिन्--वायु के अनुसार, व्यास की यजुः शिष्यपरंपरा के याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य (व्यास देखिये)।

पर्णिनी--एक अप्सरा (ब्रह्मांड. ३.७.१८-२४)।

पर्युषित--एक पापी पुरुष। प्रेतयोनि में गये इस मनुष्य का पृथु नामक ब्राह्मण ने उद्धार किया (पद्म. सृ. ३२)।

पर्वण--रावण के पक्ष के राक्षसों एवं पिशाचों का एक दल (म. व. २६९.२)।

पर्वत--एक देवर्षि। यह कश्यप ऋषि का मानसपुत्र (ब्रह्मांड. ३.८.८६), एवं नारद महर्षि का भतीजा था (म. स. ४.१३; ७.९; १०.२७; शां. ३०.२८)। महाभारत में अनेक स्थलों पर, यह एवं नारद का साथ साथ निर्देश प्राप्त है। इन दोनों को गंधर्व एवं देवर्षि माना जाता है।

यह जनमेजय के सर्पसत्र का सदस्य था (म. आ. ४८.८)। यह युधिष्ठिर की सभा में (म. स. ४.१३), इंद्रसभा में (म. स. ७.९), एवं कुबेरसभा में (म. स. १०.२६) विराजता था। यह शरशय्या पर पड़े हुये भीष्म के दर्शन के लिये गया था (भा. १.९.६)। पांडवों के वनवासकाल में, यह उन्हें मिलने 'काम्यकवन' गया था, एवं शुद्धभाव से तीर्थयात्रा करने की आज्ञा उन्हें दी थी (म. व. ९१.१७-२५)।

एक बार संजय राजा की कन्या दमयंती से, नारद एवं यह दोनों एकसाथ प्रेम करने लगे। पश्चात् दमयंती एवं नारद का विवाह होने पर, इसने क्रुद्ध हो कर नारद को शाप दिया, 'तुम वानरमुख बनोंगे' (म. शां. ३०.२४; नारद देखिये)।

ब्रह्मसरोवर के तट से, अगस्त्य ऋषि के कमलों की चोरी होने पर, अन्य ऋषियों के साथ इसने भी शपथ खायी थी (म. अनु. १४३.३४)।

पर्वत काण्व--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१२; ९.१०४; १०५)। नारद के साथ इसका कई बार उल्लेख आया है (ऐ. ब्रा. ८.२१; ७.१३; ३४; सां. श्रौ. १५.१७.४)। इसे देव भी माना गया है।

पर्वतायु--बालधि ऋषि का पुत्र। 'मेधावी' इसीका नामांतर था।

पर्वतेश्वर--विंध्य देश का राजा। प्रजा को अत्यधिक त्रस्त करने, तथा द्रव्य का अति लोभ करने के कारण, यम ने इसे घोर नरक में भेजा। बाद में इसे वानर का जन्म प्राप्त हुआ। अपहार के कारण, इसका पुरोहित सारसपक्षी बना। एक बार यह वानर उस पक्षी को पकड़ने के लिये गया। तब सारस पक्षी ने गतजन्म बता कर कहा, 'बाद के जन्म में हम दोनों हंस होनेवाले हैं, तथा उसके बाद हमें मनुष्य देह प्राप्त होगी'। उसके कथनानुसार इसे फिर मनुष्यजन्म प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १२९)।

पर्शु--पाणिनि के अनुसार एक आयुधजीवि संघ (पा. सू. ५.३.११७)। ऋग्वेद में इन लोगों का निर्देश पृथु लोगों के साथ 'पृथु-पर्शव' नाम से प्राप्त है (ऋ. ७ ८३.१)। इन दो लोगों ने सुदास राजाको मदद दी, एवं मिल कर कुरुश्रवण राजा को पराजित किया (ऋ. १०.३३.२)। लुडविग के अनुसार, आधुनिक मध्य एशिया में रहनेवाले 'पर्थियन' एवं पर्शियन लोग ही, संभवतः प्राचीन 'पृथुपार्शव' मानवसंघ रहा होगा (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद)।

प्राचीन पर्शिया के लोगों के साथ वैदिक आर्यों का घनिष्ठ संबंध था। उस ऐतिहासिक संबंध को पृथु एवं पर्शुओं के निर्देश से पुष्टि मिलती है। भाषाशास्त्रीय दृष्टि से, वैदिक 'पर्शु' एवं प्राचीन ईरानी 'पार्स' तथा बावेरु भाषा में प्राप्त 'परसु' (बहिस्तून शिलालेख) ये तीन ही शब्दों में काफ़ी साम्यता है।

'पर्शु' संघ का हरएक सदस्य 'पार्शव' कहलाता था। पाणिनि के समय, ये लोग भारत के दक्षिणपश्चिम के प्रदेश में रहते थे। उत्तर भारत में रहनेवाले 'पार्थोइ' लोगों का निर्देश 'पेरिप्लस' में प्राप्त है।

२. ऋग्वेद के दानस्तुति में निर्दिष्ट एक राजा (ऋ. ८.६.४६)। यह संभवतः 'पर्शु' मानवसंघ का राजा रहा होगा। वत्स काण्व ऋषि का प्रतिपालक 'तिरिंदर पारशव्य' नामक एक राजा था (सां. श्रौ. १६.११.२०) वह संभवतः इसी 'पर्शु' राजा का पुत्र होगा।

पर्शु मानवी--पर्शु लोगों की एक राजकुमारी (ऋ. १०.८६.२३)। कात्यायन के अनुसार, यह पर्शु लोगों में से एक स्त्री का नाम था (पा. सू. ४.१.१७७. वार्तिक २)। इसे कुल बीस पुत्र हुये थे।

सायण के अनुसार, यह एक मृगी का नाम था।

पलस्तिजमदग्नि--एक ऋषि इसने ससर्परीविद्या सूर्य से ला कर विश्वामित्र को दी। सायण इसका अर्थ दीर्घायुषी जमदग्नि लेते हैं (ऋ. ३.५३.१६)।

पलांडु--एक यजुर्वेदी श्रुतर्षि।

पलाला--सप्तमाताओं में से एक (म. व. २१७.९)।

पलिंगु--इसका उल्लेख हिरण्यकेशी शाखा के पितृतर्पण में है (स. गृ. २०,८.२०)।

पलित--विडालोपख्यान में वर्णित एक चूहे का नाम (म. शां. १३६.२१)। इसका लोमश नामक विलाव के साथ संवाद हुआ था (म. शां. १३६.३४-१९८)।

पलिता--स्कंद की अनुचरी मातृका। पाठभेद-'पालिता' 'पाणिता' 'प्राणिता' (म. श. ४५.३)।

पलिगुप्त लौहित्य--एक ऋषि। यह श्याम जयंत लौहित्य ऋषि का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। प्राचीन वाङ्मय में पलि शब्द प्राप्त नहीं है।

पवन--उत्तममनु के पुत्रों में से एक।

पवमान--अग्नि के स्वाहा से उत्पन्न तीन पुत्रों में से एक। इसका पुत्र हव्यवाह। यह अरणी से उत्पन्न गार्हपत्य अग्नि का अंश था तथा गृहस्थों को पूज्य था (मत्स्य. ५१.३)।

२. (स्वा. उत्तान.) विजिताश्व राजा के तीन पुत्रों में से दूसरा पुत्र। यह पूर्वजन्म में अग्नि था। वसिष्ठ के शाप के कारण इसे मनुष्यजन्म प्राप्त हुआ था (भा. ४.२४.४)।

३. (स्वा. प्रिय.) मेधातिथि के सात पुत्रों में से तीसरा पुत्र। इसका खंड इसी के नाम से प्रसिद्ध है (भा. ५.२०.२५)।

पवित्र--एक ब्राह्मण। इसकी स्त्री बहुला। अनपत्यपति ब्राह्मण इसका मित्र था। इन दोनों के पूछने पर, लोमश ने इन्हें अतिथिधर्म बताया था।

एक वार पवित्र ने तीक्ष्ण तथा नुकीले हथियार से एक चूहे को मारा। उस चूहेको मरते हुए देख कर इसने उस पर तुलसी के पत्ते रखे, तथा नारायण का नामोच्चार करने लगा। तब उस चूहे का उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. २५)।

२. भौत्यमन्वन्तर का देवगण।

३. इंद्रसावर्णि मन्वन्तर का देव।

पवित्र आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.६७.२२ ३२; ७३; ८३)।

पवित्रपाणि--एक ब्रह्मर्षि (म. स. ४.१३; ७.८२)। यह युधिष्ठिर की सभा एवं इंद्रसभा का सदस्य था (म. स. ४.१५; ७.८२*)।

पवीरु--एक राजा श्रुष्टिगु ने उल्लेख किया है कि इंद्र की कृपा से इसे संपत्ति प्राप्त हुई (ऋ. ८.५१.९)। 'आयुधवान्' इस अर्थ का इसे विशेषण भी माना है (वा. सं. ३३. ८२)।

पशु--सविता नामक पाँचवें आदित्य के पृश्नि नामक स्त्री से उत्पन्न आठ संतानों में से एक (भा. ६.१८.१)।

पशुदा--स्कन्द की एक अनुचरी मातृका (म. श. ४५.२७)।

पशुमत्--दुष्पण्य देखिये।

पशुसख--सप्तर्षियों का सेवक, एक शूद्र। यह पशुओं का मित्र था, इस कारण इसे यह नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १४२.४३)। इसकी स्त्री का नाम गंडा था (म. अनु. १४१.५)। वसिष्ठ ऋषि के कमल की चोरी के समय, इसे भी शपथ खानी पड़ी थी (म. अनु. १४३.४०)।

पशुहन--वृषा का पुत्र।

पष्ठवाह--एक वैदिक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १२.५. ११)।

पह्लव--हरिश्चंद्र के कुल से गर राजा का राज्य छीन लेनेवाले राजाओं में से एक। इसे गर के पुत्र सगर ने जीत कर, दाढ़ी रखने की शर्त पर छोड़ दिया (पद्म. ३.२०)।

२. एक म्लेंछ जाति, जो 'नंदिनी' नामक गौ की पूँछ से उत्पन्न हुई थी (म. आ. १६५.३५)। नकुल ने इस जाति के लोगों को जीता था (म. स. २९.१५)। ये लोग युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ में उपहार लाये थे (म. स. ४८.१४)। ये मान्धाता के राज्य में निवास करते थे (म. शां. ६५.१३-१४)।

पाक--इंद्र के द्वारा मारा गया एक असुर। इसीके कारण इंद्र का नाम 'पाकशासन' हुआ (भा. ७.२.४; ८. ११. २२; म. शां. ९९.४८)।

पाकस्थामन् कौरयाण--एक ऋषि। मेधातिथि काण्व ने इसके उदारतापूर्ण दान का गौरव गान किया था (ऋ. ८.३.२१-२४)।

पाचि--(सो. पुरु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, यह नहुष राजा के सात पुत्रों में से एक था (मत्स्य. २४.५०)।

पांचजनी--दक्षपत्नी असिक्नी का नामांतर (असिक्नी देखिये)।

पांचजन्य--पाँच ऋषियों के अंश से उत्पन्न एक अग्नि। इसे 'तपस्' नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २१०.५)।

पांचाल--प्राचीन उत्तर भारत का एक लोकसमूह। इन्हीं लोगों का निर्देश वेदों में 'क्रिवि' नाम से, एवं

ब्राह्मणग्रंथों में 'पांचाल' नाम से किया हुआ प्रतीत होता है (पंचाल देखिये)।

इन लोगों के देश के, 'उत्तर पांचाल' एवं 'दक्षिण पांचाल' ऐसे दो विभाग, गंगा नदी के द्वारा किये गये थे। उनमें से उत्तर पांचाल देश पर 'नील' राजवंश का राज्य था, एवं दक्षिण पांचाल पर 'अजमीढ' वंश का। इसी देश का पश्चिम-पूर्व प्रदेश 'प्राच्य पांचाल' नाम से सुविख्यात था (संहितोपनिषद् ब्राह्मण २)। महाभारत काल में दक्षिण पांचाल देश का राजा द्रुपद था, एवं उसकी कन्या द्रौपदी थी। पांचाल देश की होने के कारण उसे 'पांचाली' नामांतर प्राप्त था (म. आ.)।

२. दुर्मुख एवं शोण राजाओं का नामांतर (ऐ. ब्रा. ८.२३; श. ब्रा. १३.५.४.७)। पंचाल जाति के लोगों का राजा होने के कारण, उन्हें यह नाम प्राप्त हुआ था।

३. एक ऋषि। इसका मूल नाम 'सुवालक' या 'गालव' था। इसका गोत्र 'बाभ्रव्य' था, एवं यह 'पंचाल' देश का रहनेवाला था। इस कारण इसे 'बाभ्रव्य पांचाल' कहते थे (बाभ्रव्य देखिये)।

वामदेव द्वारा बताये ध्यानमार्ग से इसने भगवान् की आराधना की। उसीके कृपा से वेदों का क्रमविभाग करने का दुष्कर कार्य, यह सर्वप्रथम कर सका (म. शां. ३३०.३७-३८; पितृवर्तिन् देखिये)।

पांचालचंड--एक वैदिक ऋषि। वैदिक संहिता का तत्त्वज्ञान की दृष्टि से अर्थ लगाने के लिये 'वाच्' (वाणी) यही संहिता है, ऐसा इसका मत था (ऐ.आ.३.१.६)।

पांचाली--पांचाल देश के द्रुपद राजा की कन्या 'द्रौपदी' का नामांतर (भा. १.७.३८; द्रौपदी देखिये)।

पांचाल्य--आरुणि उद्दालक ऋषि का नामांतर (म. आ. ३.२४)। यह स्वैदायन शौनक एवं शौचेय प्राचीनयोग्य ऋषियों का समकालीन था (श. ब्रा. ११. ४.१-९)। इसके शिष्यों में कहोद (कौशीतकी) प्रमुख था, एवं इसने अपनी सुजाता नामक कन्या उसे विवाह में दी थी (उद्दालक देखिये)।

पांचि--एक वैदिक ऋषि। 'पंचन्' का वंशज होने से इसे 'पांचि' नाम प्राप्त हुआ था (श. ब्रा. २. १. ४.२७)। 'सोमयज्ञ' में, तीन अंगुल ऊँची वेदि बनाने की पद्धति इसने प्रस्थापित की (श. ब्रा. १.२.५.९)।

पाटल--एक वानर। बिभीषण से मिलने लंका जा रहे राम से, यह किष्किंधा नगरी में मिला था, एवं इसने राम का बड़े ही भक्तिभाव से दर्शन लिया (पद्म.सृ.३८)।

पाटव--'चाक्र' नामक वैदिक ऋषि का पैतृक नाम (श. ब्रा. १२.८.१.१७; ९.३.१)। 'पटु का वंशज' इस अर्थ से 'पाटव' शब्द का उपयोग किया होगा।

पाटिक--'श्याम पराशर' के कुल में उत्पन्न एक ऋषि (पराशर देखिये)।

पाडक--वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा के हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य। पाठभेद-'मांडूक'।

पाणिक--अंगिराकुल का एक ऋषि।

पाणिकूर्म--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)। पाठभेद-'पाणि कूर्च'।

पाणिन--कश्यप एवं कद्रू का पुत्र, एक नाग।

पाणिनि--लौकिक संस्कृत भाषा का वैयाकरण, जिसका 'अष्टाध्यायी' नामक ग्रंथ संस्कृतभाषा का श्रेष्ठतम व्याकरणग्रंथ माना जाता है।

संस्कृत भाषा के क्षेत्र में, एक सर्वथा नये युग के निर्माण का कार्य आचार्य पाणिनि एवं इसके द्वारा निर्मित 'पाणिनीय व्याकरण' ने किया। यह युग लौकिक संस्कृत का युग कहा जाता है, जो वैदिक युग की अपेक्षा सर्वथा भिन्न है। जब वैदिक संस्कृत भाषा पुरानी एवं दुर्बोध होने लगी, तब उत्तर पश्चिम एवं उत्तर भारत के ब्राह्मणों में उस भाषा का एक आधुनिक रूप साहित्यिक भाषा के रूप में प्रस्थापित हुआ। इस नये साहित्यिक भाषा को व्याकरणबद्ध करने का महत्त्वपूर्ण कार्य पाणिनि ने किया, एवं इस भाषा को 'लौकिक संस्कृत' यह नया नाम प्रदान किया।

पाणिनि केवल व्याकरणशास्त्र का ही आचार्य नहीं था। एक व्याकरणकार के नाते, लौकिक संस्कृत का भाषाशास्त्र एवं व्याकरणशास्त्र की सामग्री इकठ्ठा करते करते, तत्कालीन भारतवर्ष (५०० ई. पू.) की राजकीय, सांस्कृतिक, सामाजिक, एवं भौगोलिक सामग्री शास्त्रीय दृष्टि से एकत्र करने का महान् कार्य पाणिनि ने किया। अन्य व्याकरणकारों की अपेक्षा, इस कार्य में पाणिनि ने अत्यधिक सफलता भी प्राप्त की।

इस कारण, पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' वेद के उत्तरकालीन एवं पुराणों के पूर्वकालीन प्राचीन भारतीय इतिहास का श्रेष्ठतम प्रमाणग्रंथ माना जाता है। ढाई सहस्र वर्षों के दीर्घ कालावधि के पश्चात्, पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' का पाठ जितने शुद्ध एवं प्रामाणिक रूप में आज भी उपलब्ध है, उसकी तुलना केवल वेदों के विशुद्ध पाठों से की जा सकती है। किंतु वेदों के शब्द हमें

विशुद्धरूप में प्राप्त हो कर भी, उनका अर्थ अस्पष्ट एवं धुँधला सा प्रतीत होता है। संस्कृत व्याकरणशास्त्र की श्रेष्ठ परंपरा के कारण, पाणिनीय व्याकरण के शब्द एवं अर्थ दोनों भी विशुद्ध रूप में आज भी उपलब्ध है। इस कारण ऐतिहासिक दृष्टि से, पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' का मूल्य वैदिक ग्रंथों की अपेक्षा आज अधिक माना जाता है।

कई वर्षों के पूर्व, केवळ शब्दसिद्धि के दृष्टि से 'पाणिनीय व्याकरण' का अध्ययन किया जाता था। फिर कई अध्ययनशील लोगों ने ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक दृष्टि से 'पाणिनीय व्याकरण' की समालोचन करने का कार्य शुरू किया, एवं ऐतिहासिक सामग्री का एक नया विश्व, अभ्यासकों के लिये खोल दिया। ई. पू. ५०० के लगभग भारत में उपलब्ध प्राचीन लोकजीवन की जानकारी पाने के लिये, एवं उस काल के ऐतिहासिक अंधयुग में नया प्रकाश डालने के लिये 'पाणिनीय व्याकरण' का अध्ययन अत्यावश्यक है, यह विचारप्रणाली आज सर्वमान्य हो चुकी है। इस नयी विचारप्रणाली के निर्माण का बहुतांश श्रेय, बनारस विद्यापीठ के डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल एवं उनके ग्रंथ 'पाणिनिकालीन भारतवर्ष' को देना जरूरी है।

नामांतर--पुरुषोत्तमदेव के 'त्रिकांडशेष' कोश के अनुसार, पाणिनि को निम्नलिखित नामांतर प्राप्त थे:-- पाणिन्, दाक्षीपुत्र, शालंकि, शालातुरीय, एवं आहिक।

मातापिता--पतंजलि ने पाणिनी को 'दाक्षीपुत्र' कहा है, जिससे प्रतीत होता है की, पाणिनि के माता का नाम 'दाक्षी' था, एवं वह दक्षकुल से उत्पन्न था (महा. १.१.२०)। इसके पिता का नाम 'शलंक' था, एवं पाणिनि' इसका कुलनाम था। हरिदत्त के अनुसार, पाणिपुत्र 'पाणिन्' नामक ऋषि का पाणिनि पुत्र था (पदमंजरी २.१४)। छंदःशास्त्र का रचयिता पिंगल ऋषि पाणिनि का छोटा भाई था (षड्गुरुशिष्यकृत 'वेदार्थ-दिपिका')। व्याडि नामक व्याकरणाचार्य को 'दाक्षायणि' नामांतर था, जिससे प्रतीत होता हैं कि, वह पाणिनि का मामा था। व्याडि के 'संग्रह' नामक ग्रंथ की प्रशंसा पतंजलि ने की हैं (महा. २.३.६६)।

अध्ययन--पाणिनि के विद्यादाता गुरु का नाम 'वर्ष' था (कथासरित. १.४.२०)। ब्रह्मवैवर्त के अनुसार, शेष इसका गुरु था (ब्रह्मवै. प्रकृति. ४.५७)। काव्य-मिमांसा के अनुसार, वर्ष, उपवर्ष, पिंगल एवं व्याडि इन सहाध्यायियों के साथ, पाणिनि ने पाटलीपुत्र में शिक्षा प्राप्त की, एवं वहाँ शास्त्रपरीक्षा में यह उत्तीर्ण हुआ (काव्यमी. १०)। माहेश्वर को भी पाणिनि का गुरु कहा गया है, जिसका कोई आधार नही मिलता है। कई अभ्यासकों के अनुसार, पाणिनि की शिक्षा तक्षशिला में हुई थी (एस्. के. चटर्जी, 'भारतीय आर्यभाषा तथा हिंदी' पृ. ६६)।

पाणिनी के अनेक शिष्य भी थे (महा. १.४.१)। उनमें 'कौत्स' नामक शिष्य का निर्देश 'महाभाष्य' में प्राप्त है (३.२.१०८)।

अष्टाध्यायी के प्राणभूत १४ सूत्रों का अध्ययन करने पर पता चलता है कि, पाणिनि ने शिवोपासना कर के '१४ माहेश्वरी सूत्रों' (प्रत्याहार सूत्रों) की प्राप्ति साक्षात् शिवजी से की थी, एवं उन सूत्रों के आधारं पर अपने व्याकरणग्रंथ की रचना की।

निवासस्थान--'शालातुरीय' नाम से, पाणिनि 'शलातुर' ग्राम का रहनेवाला था, ऐसा कई अभ्यासकों का कहना है (वर्धमान कृत 'गणरत्न महोदधि' पृ. १)। अफगानिस्थान की सीमा पर, अटक के समीप स्थित आधुनिक लाहुर ग्राम ही प्राचीन शलातुर है। अन्य कई अभ्यासकों के अनुसार, शलातुर पाणिनि का जन्मस्थान न हो कर, इसके पूर्वजों का निवासस्थान था। पाणिनि का जन्म वाहीक देश में कहीं हुआ था (अष्टा. ४.२. ११७)।

काल--पाणिनि पारसीकों तथा उनके सेवक यवनों या ग्रीकों से परिचित था। उससे पाणिनी का काल संभवतः ५ वी शताब्दी ई. पू. रहा होगा। डॉ. अग्रवाल के अनुसार, ४८०–४१० ई. पू., पाणिनि का काल था। पाणिनि की मृत्यु एक सिंह के द्वारा हुई थी (पंचतंत्र श्लो. ३६)।

पूर्वाचार्य--पाणिनि को लौकिक संस्कृत का पहला वैय्याकरण माना जाता है। किंतु स्वयं पाणिनि ने 'अष्टाध्यायी' में 'पाराशर्य' एवं 'शिलालि' इन दो पूर्वाचार्यों का, एवं उनके द्वारा विरचित 'भिक्षुसूत्र' एवं 'नटसूत्र' नामक दो ग्रंथो का निर्देश किया है (अष्टा. ४.३.११०)। उनके सिवा, 'अष्टाध्यायी' में निम्नलिखित आचार्यों का निर्देश प्राप्त है--अपिशालि (६.१.९२), काश्यप (८.४.६७), गार्ग्य, गालव (६.३.६१; ७.१.७४; ३.९९; ८.३.२०; ४.६७), चाक्रवर्मन (६.१.१३०), भारद्वाज (७.२.६३),

शाकटायन (३.४. १११; ८.३.१९; ४.५१), सेनक (५.४.११२), स्फोटायन (६.१.१२१)।

'अष्टाध्यायी' में निम्नलिखित ग्रंथों का निर्देश प्राप्त है—अनुब्राह्मण (४.२.६२), अनुप्रवचन (५.१.१११), कल्पसूत्र (४.३.१०५), क्रम (४.२.६१), चात्वारिंश (ऐतरेय ब्राह्मण) (५.१.६२), त्रैंश (सांख्यायन ब्राह्मण) (५.१.६२), नटसूत्र (४.३.११०), पद (४.२.६१), भिक्षुसूत्र (४.३.११०), मीमांसा (४.२.६१), शिक्षा (४.२.६१)। उपनिषद एवं आरण्यक ग्रंथों का निर्देश 'अष्टाध्यायी' में अप्राप्य है। 'उपनिषद' शब्द 'पाणिनीय व्याकरण' में आया है। किंतु वहाँ उसका अर्थ 'रहस्य' के रूप में लिया गया है (१.४.७९)।

'अष्टाध्यायी' के लिये जिन वैदिक ग्रंथों से, पाणिनि ने साधनसामग्री ली उनके नाम इस प्रकार हैः—अनार्ष (१.१.१६; ४.१.७८), आथर्वणिक (६.४. १७४), ऋच् (४.१.९; ८.३.८), काठक–यजु (७.४. ३८), छन्दस् (१.२.३६), निगम (३.८१; ४.७४; ४. ९; ६.३.११३; ७.२.६४), ब्राह्मण (२.३.६०; ५.१. ६२), मंत्र (२.४.८०), यजुस् (६.१.११५; ७.४. ३८; ८.३.१०२), सामन् (१.२.३४)।

'अष्टाध्यायी' में निम्नलिखित वैदिक शाखाप्रवर्तक ऋषियों का निर्देश प्राप्त है :-- अश्वपेज, उख, कठ, कठशाठ, कलापिन्, कषाय, (कशाय, का.) काश्यप, कौशिक, खंडिक, खाडायन, चरक, छगल, छंदोग, तल, तलवकार, तित्तिरि, दण्ड, देवदर्शन, देवदत्त शठ, पैङ्गच (४.३-१०५, उदाहरण), पुरुपांसक (पुरुषासक), बह्वृच, (४.३.१२९), याज्ञवल्क्य (वार्तिक) रज्जुकंठ, रज्जुभार, वरतंतु, वाजसनेय, वैशंपायन, शापेय (सांपेय, का.), शाष्पेय (शाखेय, का.) शाङ्गरव (सांगरव, का.) शाकल, शौनक, सापेय, स्कन्द, स्कन्ध, स्तंभ (स्कंभ, का.) (पा. सू. ४.३.१०२-१०९ गणों सहित; १२८, १२९)।

इन में केवल तलवकार तथा वाजसनेय प्रणीत ब्राह्मण ग्रंथ आज उपलब्ध हैं। अन्य लोगों के कौन से ग्रन्थ थे यह बताना असंभव है।

उलप, तुंबरु तथा हरिद्रु (४.३.१९४) ये नाम 'काशिका' में अधिक हैं।

'अष्टाध्यायी'—पाणिनि की 'अष्टाध्यायी' ग्रंथ आठ अध्यायों में विभक्त है। प्रत्येक अध्याय में चार पाद हैं। बत्तीस पाद एवं आठ अध्यायों के इस ग्रंथों में कुल ३९९५ सूत्र हैं। इन सूत्रों में 'अइउण' आदि १४ माहेश्वरी सूत्रों का भी संग्रह है।

लौकिक संस्कृत भाषा को व्याकरणीय नीतिनियमों में विठाना, यह 'अष्टाध्यायी' के अंतर्गत सूत्रों का प्रमुख उद्देश्य है। वहाँ संस्कृत भाषा का क्षेत्र वेद एवं लोकभाषा माना गया है, तथा उन दोनों भाषाओं का परामर्श 'अष्टाध्यायी' में लिया गया है। संस्कृत की भौगोलिक मर्यादा, गांधार से आसम (सूरमस) में स्थित सरमा नदी तक, एवं कच्छ से कलिंग तक मानी गयी है। उत्तर के काश्मीर कांबोज से ले कर, दक्षिण में गोदावरी नदी के तट पर स्थित अश्मक प्रदेश तक वह मर्यादा मानी गयी है।

अष्टाध्यायी में किया गया शब्दों का विवेचन, दुनिया की भाषाओं में प्राचीनतम समझा जाता है। उस ग्रंथ में किया गया प्रकृति एवं प्रत्यय का भेदाभेददर्शन, तथा प्रत्ययों का कार्य निर्धारण के कारण पाणिनि की व्याकरण-पद्धति शास्त्रीय एवं अतिशुद्ध बन गयी है।

पाणिनीय व्याकरणशास्त्र—पाणिनि ने अपनी 'अष्टाध्यायी' की रचना गणपाठ, धातुपाठ, उणादि, लिंगानुशान तथा फिटसूत्र ये ग्रंथों का आधार ले कर की है। उच्चारण–शास्त्र के लिये अष्टाध्यायी के साथ शिक्षा ग्रंथों के पठन–पाठन की भी आवश्यकता रहती है। पाणिनि प्रणीत व्याकरणशास्त्र में इन सभी विषयों का समावेश होता है। पतंजलि के अनुसार, गणपाठ की रचना पाणिनि व्याकरण के पूर्व हो चुकी थी (महाभाष्य. १. ३४)। परस्पर भिन्न होते हुए भी व्याकरण के एक नियम के अंतर्गत आ जानेवाले शब्दों का संग्रह 'गणपाठ' में समाविष्ट किया गया है। गणपाठ में संग्रहीत शब्दों का अनुक्रम प्रायः निश्चित रहता है। गण में छोटे छोटे नियमों के लिये अंतर्गणसूत्रों का प्रणयन भी दिखलायी पड़ता है। गणपाठ की रचता पाणिनिपूर्व आचार्यों द्वारा की गयी होगी। फिर भी वह पाणिनि व्याकरण की महत्त्वपूर्ण अंग बन गयी है।

धातुपाठ तथा उणादि सूत्र भी पाणिनि पूर्व आचार्यों द्वारा प्रणीत होते हुए भी, 'पाणिनि व्याकरण' का महत्त्वपूर्ण अंग बन गयी है। लिंगानुशासन पाणिनिरचित है। 'पाणिनीय शिक्षा' में पाणिनि के मतों का ही संग्रह है।

फिट्सूत्रों की रचना शांतनवाचार्य ने की है। फिर भी पाणिनि ने उनको स्वीकार किया है। प्रत्येक शब्द स्वाभाविक उदात्तादि स्वरयुक्त हैं। तदनुसार, शब्दों का

उच्चारण करने मात्र से ही शब्दों का शुद्ध तथा अर्थ-बोधक ध्वनि निकलती है। इसलिए केवल वर्णों के पठन-मात्र से ही नहीं बल्कि आघातादि सहित शब्दों का उच्चारण वांछनीय है। इसलिए पाणिनि ने स्वरप्रक्रिया लिखी तथा 'फिट्सूत्र' जो उदात्त, अनुदात्त व स्वरित शब्दों का संग्रह तथा नियम बतलाया है और उसको मान्यता दी है।

गणपाठ, धातुपाठ, उणादि, लिंगानुशासन, फिट्सूत्र तथा शिक्षा ये पाणिनि सूत्रों के महत्त्वपूर्ण अंग हैं। इनका संग्रह करने से, सूत्रों की रचना करने में, पाणिनि को सुलभता प्राप्त हुई। इस प्रकार व्याकरण के क्षेत्र में एक रचनात्मक कार्य करके पाणिनि ने संस्कृत भाषा को सर्वाधिक शक्तिशाली बनाया।

पाणिनि का समन्वयवाद—व्याकरणशास्त्र में पाणिनि ने नैरुक्त एवं गार्ग्य सम्प्रदायों के बीच समन्वय स्थापित करने का प्रयत्न किया। नैरुक्त संप्रदाय एवं शाकटायन के अनुसार, संज्ञावाचक शब्द धातुओं से ही बने हैं। गार्ग्य तथा दूसरे वैय्याकरणों का मत इससे कुछ भिन्न था। उनका कहना था, खींचतान करके प्रत्येक शब्द को धातुओं से सिद्ध करना उचित नहीं है।

पाणिनि ने 'उणादि' शब्दों को अव्युत्पन्न माना है, तथा धातु से प्रत्यय लगाकर, सिद्ध हुये शब्दों को 'कृदन्त' प्रकरण में स्थान दिया है। पाणिनि के अनुसार, 'संज्ञाप्रमाण' एवं 'योगप्रमाण' दोनों अपने अपने स्थान पर इष्ट एवं आवश्यक हैं। शब्द से जाति का बोध होता है, या व्यक्ति का, इस संबंध में भी पाणिनि ने दोनों मतों को समयानुसार मान्यता दी है। धातु का अर्थ 'क्रिया' हो, अथवा 'भाव' हो, यह भी एक प्रश्न आता है। पाणिनि ने दोनों को स्वीकार किया है।

लोकजीवन--जैसे पहले कहा जा चुका है, कि पाणिनि की अष्टाध्यायी में, ५०० ई. पू. के प्राचीन भारतवर्ष के सांस्कृतिक, सामाजिक राजनैतिक एवं धार्मिक लोकजीवन की ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यधिक प्रामाणिक जानकारी प्राप्त होती है। प्राचीन भारतवर्ष के वर्ण, एवं जातियों, आर्य एवं दासों के संबंध, शिक्षा आदि सामाजिक विषयों पर पाणिनि ने काफ़ी प्रकाश डाला है। पाणिनिकालीन भारत में राजशासित एवं लोकशासित दोनों प्रकार की शासन पद्धतियाँ वर्तमान थीं जिसका विवरण अष्टाध्यायी में प्राप्त है।

पाणिनिकालीन भूगोल--अष्टाध्यायी में प्राप्त भौगोलिक विवरण का महत्त्व अन्य सारे विवरणों की अपेक्षा कहीं अधिक है। ५०० ई. पू. प्राचीन भारत के जनपदों, पर्वतों, नदियाँ, वनों एवं ग्राम व नगरों की स्थिति का अत्यधिक प्रामाणिक ज्ञान अष्टाध्यायी द्वारा प्राप्त होता है।

(१) जनपद—पाणिनि के अष्टाध्यायी, एवं गणपाठ में निम्नलिखित जनपदों का निर्देश प्राप्त है:--अंबष्ठ (८.२.९७); अजाद (४.१.१७१); अवन्ति (४.१.१७६); अश्मक (४.१.७३); उदुंबर (४.३.५३); उरश (४.३.९३; गण.); उशीनर (४.२.११८); ऐषुकारि (४.२.५४); कंबोज (४.१.१७५); कच्छ (४.२.१३४); कल्कूट (४.१.१७१); कलिंग (४.१.१७०); काश्मिर (४.२.१३३; ४.३.९३; गण.); कारस्कर (६.१.१५६); काशि (४.१.११६); किष्किंधा (४.३.६३; गण.); कुरु (४.१.१७२; १७६; २.१३०); कुंति (४.१.१७६); केकय (७.३.२); कोसल (४.१.१७१); गंधारि (४.१.१६९); गब्दिका (४.३.६३; गण.) त्रिगर्त (५.३.११६); दरद् (४.३.९३; गण.); धूम (४.२.१२७); पटच्चर (४.२.११०; गण.)। प्रत्यग्रथ (४.१.१७१); पारस्कर (६.१.१४७); बर्बर (४.३.९३; गण.); ब्राह्मणक (५.२.७१); भर्ग (४.१.१११); भारद्वाज (४.१.११०); भौरिकि (४.२.५४); मगध (४.१.१७०); मद्र (४.२.१३१); यक्ललोम (४.२.११०; गण.); युगंधर (४.२.१३०); यौधेय (४.१.१७८; ५.३.११७); रंकु (४.२.१००); वाहीक (४.२.११७); वृजि (४.२.१३१); सर्वसेन (४.३.९२; गण.); साल्व (४.२.१३५); साल्वावयव (४.१.१७३); साल्वेय (४.१.१६९); सूरमस (४.१.१७०); सिंधु (४.३.९२); सौवीर (४.२.७६)।

(२) पर्वत—पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्नलिखित पर्वतों का निर्देश प्राप्त है:—अंजनागिरि, किंशुलगिरि; (६.३.११६); त्रिककुत् (५.४.१४७); भंजनागिरि; लोहितागिरि; विदूर (४.३.८४); शाल्वकागिरि।

(३) नदियाँ--पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्नलिखित नदियों का विवरण प्राप्त है:--अजिरवती (६.३.११७); उध्रय (३.१.११५); चर्मण्वती (८.२.१२); देविका (७.३.१); भिद्य (३.१.११५); वर्णु (४.२.१०३); विपाश् (४.२.७४); शरावती (६.३.११९); सरयू (६.४.१७४); सिंधु (४.६.९३); सुवास्तु (४.२.७७)।

(५) वन--पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्न वनों का उल्लेख प्राप्त हैः-- अग्रेवण (८.४.४); कोटरवण, पुरगावण, मिश्रकावण, शारिकावण, तथा सिध्रकावण।

(५) ग्राम व नगर--पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्नलिखित ग्राम एवं नगरों का निर्देश प्राप्त हैः-- अज़स्तुंद (६.१.१५५); अरिष्टपुर (६.२.१००); आश्वायन (४.२.११०); आश्वकायन या अश्वक (४.१.९९); आसंदीवत् (८.२.१२; ४.२.८६); ऐषुकारिभक्त (४.२.५४); कत्रि (४.२.९५); कपिस्थल (७.२.९१); कापिशी (४.२.९९); कास्तीर (६.१.१५५); कुण्डिन (४.२.९५; गण.); कूचवार (४.३.९४); कौशाम्बी (४.२.९७); गौडपुर (६.२.२००); चक्रवाल (४.२.८०); चिहणकंथ (६.२.१२५); तक्षशिला (४.३.९३); तूदी (४.३.९४); तौषावण (४.२.८०); नड्वल (४.२.८८); नवनगर (६.२.८९); पलदी (४.२.११०); फल्कपुर (४.२.१०१); मार्देयपुर (४.२.१०१); महानगर (६.२.८९); माहिष्मती (४.२.९५); मंडु तथा खंडु (४.२.७७); रोणी (४.२.७८); वरण (४.२.८२); वर्मती (४.३.९४); वाराणसी (४.२.९७); वार्णव (४.२.७७-१०३); शलातुर (४.३.९४); शर्करा (४.२.८३); शर्यणावत् (४.२.८६); शिखावल (४.२.८९); श्रावस्ती (४.२.९७); संकल (४.२.७५); सरालक (४.३.९३); सांकाश्य (४.२.८०); सौभूत (४.२.८०); सौवास्तव (४.२.७७); हास्तिनायन (६.४.१७४)।

सिक्के--पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में निम्नलिखित सिक्कों का निर्देश प्राप्त हैः--कार्षापण (५.१.२९;३४.४८); त्रिंशत्क (५.१.२४); माष (५.१.३४); विंशतिक (५.१.२७); शतमान (५.१.२७); शाण (५.१.३५); सुवर्णमाशक (५.१.३४); सुवर्णहिरण्य (६.२.५५)।

परिमाणदर्शक शब्द--पाणिनि के अष्टाध्यायी में निम्नलिखित परिमाणदर्शक शब्द प्राप्त हैं:--

(१) कालपरिमाण--अपराह्ण (४.३.२४); अहोरात्र (२.४.२८); नक्तंदिव (५.४.७७); परिवासर (५.१.९२); पूर्वाह्ण (४.३.२४); मास (५.१.८१); व्युष्ट (५.१.९७); संवत्सर (४.३.५०)।

(२) वस्तुपरिमाण--आचित (४.१.२२; ५.१.५३); कुलिज (५.१.५५); बिस्त (४.१.२२;५.१.३१); भार (६.२.३८); मंथ (६.२.१२२); शाण (५.१,३५; ७.३.१७)।

(३) परिमाण-- अंजलि (५.४.१०२); आढक (५.१.५३); कंस (५.१.२५; ६.२.१२२); कुंभ (६.२.१०२); खारी (५.१.३३); निष्पाव (३.३.२८); पाय्य (३.१.१३९); वह (३.३.११९); शूर्प (५.१.२६; ६.२.१२२)।

(४) क्षेत्रपरिमाण--अंगुलि (५.४.८६), काण्ड (४,१.२३); किष्कु (६.१.१५७) दिष्टि (६.२.७१); पुरुष (४.१.२४); योजन (४ कोस; ५.१.७४); वितस्ति (६.२.७१); हस्ति (५.२.३८)

अष्टाध्यायी के वार्तिककार-- पतंजलि के महाभाष्य में अष्टाध्यायी के निम्नलिखित वार्तिककारों के निर्देश प्राप्त हैः-- कात्य वा कात्यायन (३.२.११८); कुणरवाडव (३.२.१४;७.३.१) भारद्वाज (१.१.२०); सुनाग (२.२.१८); क्रोष्टा (१.१.३); वाडव (८.२.१०६), व्याघ्रभूति एवं वैयाघ्रपद्य।

अष्टाध्यायी के वृत्तिकार -- 'अष्टाध्यायी' पर लिखे गये 'वृत्ति' एवं भाष्यग्रंथों में, जयादित्य एवं वामन नामक ग्रंथकारों द्वारा लिखी गयी, 'काशिका' नामक ग्रंथ अत्यधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। 'काशिका' के अतिरिक्त, निम्नलिखित वृत्तिकारों ने 'अष्टाध्यायी' पर भाष्य एवं वृत्तियाँ लिखी हैं। उन ग्रंथकारों के लिखे हुए 'वृत्तिग्रंथ' का निर्देश इसी सूची में किया गया है।

'काशिका' के पूर्वकालीन वृत्तिकार--१ कुणी (अष्टाध्यायीवृत्ति) २. माथुर (माथुरिवृत्ति); ३. श्वोभूति (श्वोभूतिवृत्ति); ४. वररुचि (वाररुचवृत्ति); ५. देवनंदी (शब्दावतारन्यास), ६. दुर्विनित (शब्दावतार)

काशिका के उत्तरकालीन वृत्तिकार-- १. भर्तृहरि (भागवृत्ति); २. मर्त्रीश्वर; ३. भट्टजयंत; ४. केशव; ५. इंदुमित्र (इंदुमतिवृत्ति); ६. मैत्रेयरक्षित (दुर्घटवृत्ति); ७. पुरुषोत्तमदेव (भाषावृत्ति); ८. शरणदेव (दुर्घटवृत्ति); ९. भट्टोजीदीक्षित (शब्दकौस्तुभ); १०. अप्पय दिक्षीत (सूत्रप्रकाश); ११. नीलकंठ वाजपेयी (पाणिनीय दीपिका), १२. अन्नंभट्ट (पाणिनीय मिताक्षरा); १३. स्वामी दयानंदसरस्वती (अष्टाध्यायी भाष्य)।

पाणिनि के व्याकरण ग्रंथ--१. अष्टाध्यायी, २.धातुपाठ, ३. गणपाठ, ४. उणादिसूत्र, ५. लिंगानुशासन। इनमें से 'अष्टाध्यायी' को छोड़ कर बाकी सारे ग्रंथ, उसी मूल

ग्रंथ के पाणिनिसम्मत परिशिष्टस्वरूप हैं। इसी कारण, प्राचीन ग्रंथकार उनका 'खिल' शब्द से व्यवहार करते हैं।

उपरिनिर्दिष्ट ग्रंथों के अतिरिक्त, पाणिनि के नाम पर शिक्षासूत्र, जाम्बवतीविजय (पातालविजय) नामक काव्य एवं 'द्विरूपकोश' नामक कोशग्रंथ भी उपलब्ध हैं।

पाणिमत्--एक नाग। यह वरुण की सभा में रह कर वरुण की उपासना करता था (म. स. ९.१००*)।

पाणीतक—पूषाद्वारा स्कन्द को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे का नाम 'कालिक' था (म. श. ४४.३९)। पाठ-पालितक।

पांड—कण्व के पुत्रों में से एक। इसकी माता का नाम आर्यावती था। 'सरस्वती' की कन्या से इसे सोलह पुत्र हुये। वे सब आगे चलकर गोत्रकार बन गये (भवि. प्रति. ४.२१)।

पांडर--ऐरावत के कुल में उत्पन्न हुआ एक नाग। जनमेजय के सर्पसत्र में यह जलकर मर गया (म. आ. ५८.१०)।

पांडव—कुरुवंशीय पाण्डु राजा के पाँच पुत्रों का सामूहिक नाम। युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल तथा सहदेव ये पाँचों पाण्डु-पुत्र, पाण्डव कहलाते हैं (पांडु देखिये)।

पांडु—(सो. कुरु.) हस्तिनापुर का कुरुवंशीय राजा एवं 'पांडवो' का पिता। यह एवं इसका छोटा भाई धृतराष्ट्र कुरुवंशीय सम्राट विचित्रवीर्य के दो 'क्षेत्रज' पुत्र थे। इनमें से धृतराष्ट्र जन्म से अंधा था, एवं यह जन्मतः 'पांडुरोग' से पीड़ित था। शारीरिक दृष्टि से पंगु व्यक्ति का जीवन कैसा दुःखपूर्ण रहता है, इसका हृदय हिला देनेवाला चित्रण, पांडु एवं धृतराष्ट्र इन दो बंधुओ के चरित्रचित्रण के समय श्रीव्यास ने 'महाभारत' में किया है।

जन्म - कुरुवंश में पैदा हुए शंतनु राजा के चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र थे। उनमें से चित्रांगद गंधर्वों के द्वारा. युद्धभूमि में मारा गया, एवं विचित्रवीर्य छोटा हो कर भी, हस्तिनापुर के राज्य का अधिकारी हुआ।

पश्चात् विचित्रवीय की युवावस्था में ही अकाल मृत्यु हो गयी। उस समय उसकी पत्नी अंबालिका संतानरहित थी। फिर कुरुकुल निर्वंशी न हो, इस हेतु से विचित्रवीर्य की माता सत्यवती ने अपनी पुत्रवधू अंबालिका को 'नियोग' के द्वारा संतति प्राप्त करने की आज्ञा दी। पराशर ऋषि से उत्पन्न अपने ज्येष्ठ पुत्र व्यास को भी यही आज्ञा सत्यवती ने दी। उस आज्ञा के अनुसार, व्यास अंबालिका के शयनमंदिर गया। व्यास की जटाधारी एवं भस्मचर्चित् उग्र आकृति देख कर, अंबालिका मन ही मन घबरा गयी, एवं भय से उसका मुख फीका पड़ गया। यह देखते ही क्रुद्ध हो कर व्यास ने उसे शाप दिया, 'मुझे देखते ही तुम्हारा चेहरा निस्तेज एवं फीका पड़ गया है, अतएव तुम्हारा होनेवाला पुत्र भी निस्तेज एवं श्वेतवर्ण का पैदा होगा एवं उसका नाम भी पांडु रक्खा जायेगा'। बाद में अंबालिका गर्भवती हुई, एवं उसे व्यास की शापोक्तिनुसार, श्वेतवर्ण का पाण्डु नामक पुत्र हुआ (म. आ. ५७.९५; ९०.६०; १००; स. ८.२२)।

शिक्षा--पाण्डु का पालनपोषण इसके चाचा भीष्म ने पुत्रवत् किया। उसने इसके उपनयनादि सारे संस्कार भी किये। इससे ब्रह्मचर्यविहित योग्य व्रत तथा अध्ययन करवाया। यह श्रुति-स्मृतियों में पंडित तथा व्यायाम-पटु बना। चार वेद, धनुर्वेद, गदा, खड्ग, युद्धशास्त्र, गज-शिक्षा, नीतिशास्त्र, इतिहास, पुराण, कला तथा तत्वज्ञान में यह पारंगत हुआ (म. आ. १०२.१५-१९)।

विवाह--कुंति-भोज राजाने अपनी कन्या पृथा (कुंती) का स्वयंवर किया, वहाँ कुन्ती ने पाण्डु का वरण किया। उसे ले कर पाण्डु हस्तिनापुर आया। बाद में, भीष्म के मन में पाण्डु का दूसरा विवाह करने की इच्छा हुयी। वह मंत्री, ब्राह्मण, ऋषि तथा चतुरंगिनी सेना के साथ मद्र-राज शल्य के नगर में गया। शल्य ने आदर के साथ उसका स्वागत किया। भीष्म ने पाण्डु के लिये शल्य की बहन माद्री को माँगा। शल्य को यह प्रस्ताव पसन्द आया। किंतु उसने कहा, 'मेरे कुल की रीति पूर्ण होनी चाहिये। इस रीति के अनुसार, स्वर्ण, स्वर्णाभूषण, हाथी, घोड़े, रथ, वस्त्र, मणि, मूंगा तथा अनेकानेक प्रकार के रत्न मुझे माद्री के बदले प्राप्त होना ज़रूरी है'। भीष्म ने यह शर्त मंजूर की। ये सारी चीजें उसने शल्य को दीं। उन्हें पा कर शल्य अत्याधिक संतुष्ट हुआ तथा अपनी बहन माद्री को यथाशक्ति अलंकार पहना कर, उसने भीष्म के हाथों सौंप दिया। माद्री के साथ भीष्म हस्तिनापुर आया, तथा सुमुहूर्त में पाण्डु ने माद्री का पाणिग्रहण किया (म. आ. १०५)।

राज्यप्राप्ति (दिग्विजय)—पांडु के बंधुओं में से धृतराष्ट्र अंधा तथा विदुर शूद्र था। अतएव पांडु का राज्याभिषेक किया गया तथा यह हस्तिनापुर का राजा बना (म. आ. १०३.२३)। माद्री के पाणिग्रहण के ठीक एक माह के उपरांत, पाण्डु संपूर्ण पृथ्वी जीतने के उद्देश्य से बाहर निकला। इसने साथ में एक बड़ी सेना

भी ली। सब से पहले इसने पर्वतों पर रहनेवाले दशार्ण नामक लुटेरे लोगों को जीत लिया, एवं उनकी सेना तथा निशानादि छीन लिये। बाद में अनेक राजाओं को लूटकर उन्मत्त बने मगधाधिपति दीर्घ को उसी के प्रासाद में मारकर, उसके राज्यकोष एवं हाथियों का दल ले लिया। इसी प्रकार काशी, मिथिला, सुह्म तथा पुंड्र राजाओं को पराजित कर, इसने उन सारे देशों में कौरवों का ध्वज फहराया। यही नहीं, पृथ्वी के सब राजाओं ने पाण्डु को 'राजेंद्र' माना, तथा इसे काफ़ी नज़राने दिये। इस प्रकार अनेक देश तथा राजाओं को पादाक्रांत कर दिग्विजयी हो कर, यह हस्तिनापुर लौट आया (म. आ. १०५)।

विभिन्न देशों को जीत कर लायी हुयी धनराशि, पांडु ने अपने बंधुबांधवों में बाँट दी। पश्चात्, धृतराष्ट्र ने पांडु के नाम से सौ अश्वमेधयज्ञ किये, एवं हर एक यज्ञ में लाख लाख स्वर्ण मुद्रायें दक्षिणा में दान दीं (म. आ. १०६)।

शाप—एकबार यह मृगया के लिये बन में गया था। तब मृगरूप धारण कर अपने मृगरूपधारिणी पत्नी से मृगरूप धारण कर के मैथुन करनेवाले किंदम नामक मुनि को साधारण मृग समझ कर इसने उस पर बाण छोड़े। इससे मुनि का मैथुनभंग हुआ, तथा उसके प्राणपखेरू उड़ चले। मरण के पूर्व उसने पांडु को शाप दिया, 'मिथुनासक्त अवस्था में मेरा वध करनेवाले तुम्हारी मृत्यु भी मैथुनप्रसंग में ही होगी' (म. आ. १०९.२८)।

इस शाप के कारण, पांडु को अत्यधिक पश्चात्ताप हुआ, तथा इसने संन्यासवृत्ति लेकर अवधूत की तरह रहने का निश्चय किया। इसके साथ इसकी पत्नियों ने भी वानप्रस्थाश्रम में रह कर तपस्या करने की इच्छा प्रकट की। कुन्ती तथा माद्री को साथ लेकर यह घूमते घूमते नागशत, कालकूट, हिमालय तथा गंधमादन आदि पर्वतों को लाँघ कर, चैत्ररथवन गया। वहाँ से यह इन्द्रद्युम्न सरोवर गया। पश्चात् हंसगिरि पर्वत को लाँघ कर यह शतशृंगगिरि पर गया, और वहाँ तपस्या करने लगा (म. आ. ११०)।

पुत्रेच्छा—एक बार कुछ ऋषि ब्रह्माजी से मिलने जा रहे थे। पाण्डु को भी उनके साथ स्वर्ग जाने की इच्छा हुई। किंतु ऋषियों ने इसे कहा, 'तुम हमारे साथ ब्रह्मलोक न जा सकोगे, क्योंकि, तुम निःसंतान हो'। फिर पाण्डु ने उनसे कहा, 'निःसंतान होने के कारण, आज मैं ब्रह्मलोक से वंचित किया जा रहा हूँ। मैंने देव, ऋषि, तथा मानवों को तुष्ट किया है, तथापि पितरों को संतुष्ट नहीं कर पाया। ऐसी स्थिति में मुझे क्या करना चाहिये? जिस 'नियोग' के मार्ग से मेरा जन्म व्यास से हुआ, उसी प्रकार क्या मेरी पत्नियों को पुत्र की प्राप्ति नहीं हो सकती हैं?' ऋषियों ने अशीर्वाद्पूर्वक इससे कहा, 'तथास्तु। उत्कृष्ट तपस्या के कारण तुम्हें यही पुत्रों की प्राप्ति हो जायेगी'।

पश्चात् इसने कुंती से 'नियोग' द्वारा पुत्र उत्पन्न करने के लिए आग्रह किया। इसने कुंती से कहा, 'तुम्हारे बहनोई एवं तुम्हारी बहन श्रुतसेना का पति केकयराज शारदंडायनि 'नियोग' संतति के पुरस्कर्ताओं में से एक है। पुत्रों के बारह प्रकार होते हैं। औरस संतति न होने पर, स्वजातियों से अथवा श्रेष्ठ जातियों से 'नियोग' के द्वारा संतति प्राप्त करने की आज्ञा शारदंडायनि ने दी है। इसलिये अपने पूर्वजों एवं स्वयं को अधोगति से बचाने के लिये, तुम 'नियोग' से तपोनिष्ठ ब्राह्मण के द्वारा संतति प्राप्त करो' (म. आ. १११)।

कुंती ने इसका विरोध किया। उसने इसे कहा, 'व्युषिताश्व राजा की पत्नी भद्रा को उस राजा के शव से पुत्र उत्पन्न हुआ था। यह मार्ग कितना भी नीच क्यों न हो, पर इसे 'नियोग' से कहीं अधिक अच्छा समझती हूँ। तब पाण्डु ने क्रुद्ध हो कर कहा, 'पुत्रोत्पत्ति के लिए समागम करने की आज्ञा पति के द्वारा दी जाने पर, जो स्त्री वैसा आचरण नहीं करती, उसे भ्रूणहत्या का पाप लगता है। उद्दालकपुत्र श्वेतकेतु नामक आचार्य का यही धर्मवचन है। इसी धर्मवचन के अनुसार, सौदास राजा ने अपनी पत्नी दमयंती का समागम वसिष्ठ ऋषि से करवा कर, 'अश्मक' नामक पुत्र प्राप्त किया था'। इतना कह कर, पाण्डु ने कुन्ती को स्मरण दिलाया, 'मेरा जन्म भी व्यास के द्वारा इसी 'नियोग' मार्ग से हुआ है' (म. आ. ११२-११३)।

पुत्रप्राप्ति—फिर कुन्ती ने पांडु को दुर्वासा के द्वारा उसे प्राप्त हुए पुत्रप्राप्ति के मंत्र की कथा बताकर कहा, 'उस मंत्र का जप कर, इष्टदेवता का स्मरण करने पर तुझे अवश्य पुत्रप्राप्त होगा'। फिर पांडु के आज्ञा के अनुसार, कुन्ती ने उस मंत्र का तीन बार जाप कर, क्रमशः यमधर्म, वायु एवं इंद्र को आवाहन किया। उन देवताओं के अंश से कुन्ती को क्रमशः

युधिष्ठिर, भीम एवं अर्जुन नामक पुत्र उत्पन्न हुये (म. आ. ११४)।

इसके उपरांत पुत्रोत्पत्ति करना व्यभिचार होगा, यह कहकर कुन्ती ने पुत्रोत्पन्न करना अमान्य कर दिया। बाद में पांडु की आज्ञा से, कुन्ती ने माद्री को दुर्वासा का मंत्र प्रदान किया, तथा अश्विनीकुमारों के प्रभाव से, उसे नकुल सहदेव नामक जुड़वा पुत्र हुये (म. आ. १११-११३)।

मृत्यु--एक बार वसंत ऋतु में, पांडु राजा अपने भार्याओं के साथ अरण्य में घूम रहा था। अरण्य की उद्दीत सुषमा से प्रभावित हो कर यह कामातुर हुआ। माद्री अकेली इसके पीछे पीछे आ रही थी। झीने वस्त्रों से सुसज्जित माद्री के यौवनाकर्षण पर मुग्ध हो कर उसके न कहने पर भी हठात् इसने उसके साथ समागम किया। किंदम ऋषि द्वारा दिये गये शाप के अनुसार, माद्री से संभोग करते ही इसकी मृत्यु हो गयी।

इसके परलोकवासी होने पर, माद्री इसके शव के साथ सती हो गयी। पांडवों ने इसका एवं माद्री की अंत्येष्टि क्रिया कश्यप ऋषि के द्वारा सम्पन्न करायी (म. आ. ११६; ११८)।

२. धाता का पुत्र (वायु. १.२८)

३. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा। यह जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) का पुत्र था। इसे धृतराष्ट्रादि सात भाई थे (म. आ. ९९.४९)।

४. अंगिराकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार।

पांडुर--स्कन्द का एक सैनिक।

पांडुरोचि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पांड्य--(सो. तुर्वसु.) दक्षिण भारत का एक राजवंश एवं लोकसमूह। इस वंश के राजा तुर्वसुवंश के जनापीड़ राजा के वंशज कहलाते थे।

तुर्वसुवंश का मरुत्त राजा पुत्रहीन था। उसने पूरुवंशीय दुष्यंत राजा को गोद लिया, एवं इस तरह तुर्वसुवंश का स्वतंत्र अस्तित्त्व नष्ट करके, उसे पूरुवंश में शामिल कर लिया गया। किंतु पद्म के अनुसार, तुर्वसुवंश में आगे चल कर, दुष्कृत, शरूथ, जनापीड़ ये राजा उत्पन्न हुये। उनमे से जनापीड राजा को पांडय, केरल, चोल्य एवं कुल्य नामक चार पुत्र थे। इन चारों पुत्रों ने (दक्षिण भारत में क्रमशः पांडय, केरल, चोल एवं कुल्य कोल) राज्यों की स्थापना की (वायु. ९९.६)।

२. एक पांडयवंशीय राजा। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. द्रो. २२.१६७*)

३. पांडय राजा मलयध्वज का नामांतर। इसके पिता का वध श्रीकृष्ण ने किया (पांडय २. देखिये)। फिर अपने पिता के वध का बदला लेने के लिये, पांडयराज मलयध्वज ने भीष्म, द्रोण एवं कृप से अस्त्रविद्या प्राप्त की एवं यह कर्ण, अर्जुन, रुक्मि के समान शूर बना।

यह श्रीकृष्ण की द्वारकानगरी पर आक्रमण करना चाहता था। किंतु इसके सुहृदों ने इसे इस साहस से परावृत्त किया एवं यह पांडवों का मित्र बना।

यह द्रौपदीस्वयंवर में (म. आ. १७७.१८१६*) तथा युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में (म. स. ४८.४७७*) उपस्थित था।

भारतीय युद्ध में, यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १९.९)। इसके रथ पर सागर के चिह्न से युक्त ध्वजा फहराती थी एवं इसके रथ, के अश्व चन्द्रकिरण के समान श्वेत थे। इसके अश्वों के उपर 'वैदूर्यमणियों' की जाली बिछायी थी। (म. द्रो. २४.१८३*) अंत में अश्वत्थामा ने इसका वध किया (म. क. १५. ३-४३)।

महाभारत में इसके लिये निम्नलिखित नामांतर प्राप्त है:--

(१) **चित्रवाहन**--यह मणलूर का नृप, एवं अर्जुन की पत्नी चित्रांगदा का पिता था (म. आ. २०७.१३-१४)।

(२) **मलयध्वज पांडय**--सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय में इसे जीता था (म. स. परि. १. १५. ६७)।

(३) **प्रवीर पांडय**--यह पांडय देश का राजा था (म. क. १५.१-२)।

४. विदर्भ देश का राजा। यह महान् शिवभक्त था। एक दिन प्रदोष के समय यह शिवपूजा कर रहा था। नगर के बाहर कुछ आवाज सुनाई देने पर, शिवपूजा वैसी ही अधूरी छोड़कर यह बाहर आया। पश्चात् इसके राज्य पर हमला करने के लिये आये शत्रु के प्रधान का इसने वध किया।

शत्रुवध का कार्य समाप्त कर यह घर वापस आया एवं शिव की पूजा वैसी ही अधूरी छोड़कर इसने अन्नग्रहण किया। इस पाप के कारण, अगले जनम में इसे सत्यरथ नामक राजा का जन्म प्राप्त हुआ एवं शत्रु के हाथों इसकी

अकाल मृत्यु हो गयी (शिव. शतरुद्र ३१.४७-५५; सत्यरथ देखिये)।

पात—ऐरावत कुल का एक नाग। जनमेजय के सर्पसत्र में यह अपने पातर नामक मित्र के साथ मारा गया (म. आ. ५७.१२)।

पातालकेतु--जालंधर की सेना का एक असुर (पद्म. उ. १२)।

२. एक असुर। विश्वावसु नामक गंधर्व की मदालसा नामक कन्या का हरण कर, यह उसे पाताल ले गया। ऋतध्वज नामक राजा ने इसे पराजित कर मदालसा को मुक्त किया (ऋतध्वज देखिये)।

पाथ्य--वृषन् ऋषि का पैतृक नाम (वृषन् पाथ्य देखिये)।

पादप--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पादपायन—मत्स्य के अनुसार पालंकायन ऋषि का नामांतर (पालंकायन देखिये)।

पापनाशन—दमन नामक शिवावतार का शिष्य।

पायु—अंगिराकुल का एक ऋषि।

पायु भारद्वाज-- एक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.७५)। यह दिवोदास राजा का आश्रित था (अश्वत्थ देखिये)। भारद्वाज नामक ऋषि की 'पायु' उपाधि थी (ऋ. ६.४७.२४)।

युद्ध के शस्त्रों का वर्णन करनेवाले, तथा राजाओं को युद्ध के लिये आवाहन करनेवाले ऋग्वेद के एक युद्ध-सूक्त के प्रणयन का श्रेय पायु को दिया गया है (ऋ. ६.७५)। बृहद्देवता के अनुसार, अभ्यावर्तिन् चायमान एवं प्रस्तोत सांजय नामक राजाओं को सहाय देने के लिए, इसने इस सूक्त की रचना की थी (बृहद्दे. ५.१२४)।

पार--(सो. पूरु.) कान्यकुब्ज देश का राजा। भागवत, विष्णु एवं मस्त्य के अनुसार, यह 'पृथुसेन' एवं वायु के अनुसार, यह 'पृथुषेण' का पुत्र था। मत्स्य में इसे 'पौर' कहा गया है। इसके पुत्र 'नीप' नामक सामूहिक नाम से प्रख्यात थे।

२. (सो. पूरु.) एक नीपवंशीय राजा। विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह समर राजा का पुत्र था।

इसका वंशक्रम भागवत में एवं अन्य पुराणों में विभिन्न पद्धति से दिया गया है, जो इस प्रकार है:--

भागवत	अन्य पुराण
—	नीप
—	समर
—	पार
—	पृथु
—	सुकृति
पार	विभ्राज
नीप	अणुह
ब्रह्मदत्त	ब्रह्मदत्त

पुराणों में प्राप्त इन दो वंशक्रमों को एकत्र करने पर 'पार' 'एवं' 'विभ्राज' ये दोनों एक ही थे, एवं पार का नामान्तर विभ्राज था, ऐसी गलत धारणा हो जाती है। भागवत में दिये वंशक्रम में नीप से अणुह तक के पाँच राजाओं के नाम नहीं दिये गये है। इस कारण, यह गड़बड़ी हो गयी है।

३. (सो. अनु.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह अंगराजा का पुत्र था।

४. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

पारःकारिरेव—'पारिकारारिरेव' नामक अंगिरा-कुल के गोत्रकार।

पारण--अगस्त्यकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

पारद--एक प्राचीन जाति का नाम। ये लोग आधुनिक उत्तर बलूचिस्तान के प्रदेश में कहीं रहते थे। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, ये लोग हर तरह के "उपायन" ले कर उपस्थित हुये थे (म. स. ४७.१०)।

महाभारतकालीन एक लोकसमूह। ये लोग द्रोणाचार्य के साथ भीष्मजी के पीछे पीछे चल रहे थे (म. भी. ८३.७)।

२. एक राजा। हरिश्चन्द्र के वंश के गर राजा का राज्य जीतनेवाले राजाओं में से यह एक था। गर राजा के पुत्र सगर ने, इसके सिर के सारे केशों का मुंडन कर इसे मुक्त किया था (पद्म. उ. २०)।

पारशव—धृतराष्ट्र एवं पांडु राजा के बंधु विदुर का नामांतर। शूद्रा के गर्भ से ब्राह्मणद्वारा उत्पन्न पुत्र को 'पारशव' कहते थे (म. अनु. ४८.५)। अंबलिका रानी की शूद्र दासी के गर्भ से व्यासमुनि द्वारा विदुर का जन्म हुआ। इस कारण उसे 'पारशव' कहते थे।

पारशवी—विदुर की पत्नी। यह देवराज की कन्या थी।

पारशव्य—तिरिंदिर ऋषि का पैतृक नाम (सां. श्रौ. सू. १६.११.२०)। 'परशु' का वंशज होने से तिरिंदिर को यह उपाधि प्राप्त हो गयी होगी।

पारस्कर—शुक्लयजुर्वेद के 'पारस्कर' गृह्यसूत्र' नामक सुविख्यात ग्रंथ का कर्ता। डॉ. जयसवाल के अनुसार पारस्करगृह्यसूत्र का रचनाकाल ५०० ई. पू. एवं उसके वर्तमान संस्करण का काल २०० ई. पू. है।

गार्हस्थ्यजीवनविषयक धार्मिक विधियों का वर्णन करना यह गृह्यसूत्रों का प्रमुख उद्देश्य है। 'पारस्कर' गृह्यसूत्र के अतिरिक्त अन्य प्रमुख गृह्यसूत्रों के नाम इस प्रकार है :— आश्वलायन–गृह्यसूत्र, शांखायन–गृह्यसूत्र, मानव–गृह्यसूत्र, बौधायन–गृह्यसूत्र आपस्तंत्र–गृह्यसूत्र हिरण्यकेशी–गृह्यसूत्र, भारद्वाज–गृह्यसूत्र, पारस्कर–गृह्यसूत्र, द्राह्यायण–गृह्यसूत्र, गोभिल–गृह्यसूत्र, खादिर–गृह्यसूत्र तथा कौशिक–गृह्यसूत्रं।

कई अभ्यासकों के अनुसार, पारस्कर एवं कात्यायन एक ही थे।

पारावत—वैदिककाल में यमुना नदी के तट पर रहने वाला एक लोकसमूह (ऋ. ८.३४.१८)। पंचविंश ब्राह्मण में, इन लोगों का निर्देश, 'पारावत-गण' नाम से किया गया है एवं तुरश्रवस् को इनका पुरोहित बताया गया है (पं. ब्रा. ९.४.१०-११)। इन लोगों द्वारा दिये गये दानों का निर्देश वसुरोचिष् के दानस्तुति में किया गया है (ऋ. ८.३४.१८)। सरस्वती नदी को 'पारावतघ्नी' (पारावतों का वध करनेवाली) कहा गया है (ऋ. ६. ६१.२)। यह निर्देश भी, इनके यमुना नदी के तट पर रहने की पुष्टि करता है।

हिलेब्रांट के अनुसार, गेड्रोसिया की उत्तरी सीमा पर वसे हुयें टॉलेमीकालीन 'पारुएटे' लोग ये ही थे (वेदिये माइथौलोजी १.९७)। इन लोगों का मूल नाम 'पर्वतीय' था एवं पश्चात् अपभ्रंश से पारावत बना।

२. वसिष्ठ के बारह पुत्रों का सामूहिक नाम। बारह 'पारावतों' के नाम इस प्रकार हैं :— अजिह्म, अजेय, आयु, दिव्यमान, प्रचेतस्, महाबल, महामान, दान, यज्वत्, विश्रुत, विश्वेदेव तथा समंज (ब्रह्मांड. २.३६. ९-१५)।

३. स्वारोचिष मन्वंतर का देवगण।

४. ऐरावत कुल का एक सर्प, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया था (म. आ. ५२.१०)।

पाराशर—वैदिक कालीन एक आचार्य। पाराशर ने ६१ श्लोकों से युक्त पाराशरी शिक्षा लिखी है। यह शुक्लयजुर्वेद की शिक्षा है। शुक्लयजुर्वेद के कहे जानेवाले स्वर, आनुनासिक, विसर्ग आदि का आजकल प्रचलित वर्णन के समान वर्णन इस शिक्षा में प्राप्त है। याज्ञवल्की, वासिष्ठी, कात्यायनी, पाराशरी, गौतमी, मांडव्यी तथा पाणिनि आदि शिक्षाओं का उल्लेख इस शिक्षा में प्राप्त है (श्लो. ७७-७८)। उससे प्रतीत होता है कि यह शिक्षा काफी आधुनिक काल की होगी। यह शिक्षा कहने वाले को वैष्णवपद प्राप्त होगा, ऐसा फल अन्त में बताया गया है (श्लो. १६९)।

पाराशरीकौंडिनीपुत्र—वैदिक कालीन एक ऋषि। यह गार्गीपुत्र का शिष्य था (श. ब्रा. १४.९.४.३०)। माध्यंदिन शाखा के 'बृहदारण्यक उपनिषद' में दिये अंतिम 'विद्यावंश' में भी इसका निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ६.४.३०)।

पाराशरीपुत्र—वैदिक कालीन एक ऋषि। 'बृहदारण्यक उपनिषद' में दिये 'विद्यावंश' में इसे विभिन्न स्थानों में निम्नलिखित आचार्यों का शिष्य कहा गया है- कात्यायनीपुत्र (बृ. ६.५.१), औरस्वतीपुत्र (बृ. उ. ६.५.१)। वात्सीपुत्र (बृ. उ. ६.५.२)। तथा वार्कारुणीपुत्र (श. ब्रा. १४.९.४.३१)। इसके शिष्यों में भारद्वाजीपुत्र, औपस्वतीपुत्र तथा वात्सीपुत्र प्रमुख थे। इस में संदेह नहीं कि, इन विद्यावंशों में एक ही 'पाराशरीपुत्र' अभिप्रेत न हो कर, इनसे अलग अलग व्यक्तियों का तात्पर्य है।

पाराशर्य—एक उपनिषदकालीन ऋषि। बृहदारण्यक उपनिषद में दिये गये 'विद्यावंशों' में इसे अन्योन्य स्थानों में भरद्वाज, वैजवापायन तथा जातूकर्ण्य का शिष्य कहा गया है (बृ. उ. ३.६.२; ४.६.३)। वैजवापायन का शिष्य होने का अन्यत्र समर्थन हैं (तै. आ. १.९.२)। सामविधान ब्राह्मण में किसी व्यास पाराशर्य ऋषि को विष्वक्सेन का शिष्य बताया गया है (सामविधान ब्रा. ३.४१.१)।

इसके शिष्यों में पाराशर्यायण, सैतव प्राचीन योग्य तथा भारद्वाज ये प्रमुख थे (बृ. उ. २.६.२-३)। पाणिनि के सूत्रों में, भिक्षुसूत्र रचयिता पाराशर्य का निर्देश है (४.३.११०)।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११) हस्तिनापुर जाते समय, श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुई थी।

३. सांकृत्य का शिष्य (बृ. उ. २.५.२०; ४.५.२६ माध्यं.)

पाराशर्य कौथुम—एक आचार्य। वायु तथा ब्रह्मांड के अनुसार, यह व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से एक था। यह कुथुमिनू का शिष्य रहा होगा।

पाराशर्यायण—पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य। इसका शिष्य घृतकौशिक (बृ. उ. २.६.३; ४.६.४)।

पारिकारारिरेव—अंगिराकुल का गोत्रकार।

पारिक्षित—जनमेजय नामक आचार्य का पैतृक नाम। अथर्ववेद के कुछ मंत्रों का नाम 'पारिक्षितिऋचा' दिया गया है (ऐ. ब्रा. ६.३२; सां. ब्रा. ३०.५; गो. ब्रा. २.६.१२)। वे मंत्र अथर्ववेद में हैं (१२७.७–१०) पारिक्षित आगे चल कर नामशेष हो गये होंगे, क्योंकि पारिक्षित कहाँ होंगे, इसके बारे में आध्यत्मिक उपपत्ति जोड़ी गयी है (बृ. उ. ३.३.१)। उससे यह इस समय भी प्राचीन था। यह शब्द पारिक्षित तथा पारीक्षित दोनों प्रकार से उपलब्ध है।

पारिजात—नारद के साथ मय की सभा में आया हुआ एक ऋषि (म. स. ५.३)।

२. पुलह तथा श्वेता का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७.१८०–१८१)।

पारिजातक—जितात्मा मुनि, जो युधिष्ठिर की सभा में विराजते थे (म. स. ४.१२)।

पारिप्लव—रैवत मन्वन्तर के भूतरजसों में एक देवगण।

पारिभद्र—(स्वा. प्रिय.) एक राजा। यह प्रियव्रतपुत्र यज्ञबाहु के सात पुत्रों में से पाँचवा पुत्र था।

पारिभद्रक—कौरव पक्ष के योद्धाओं का एक दल, जो संभवतः परिभद्र देश का निवासी था (म. भी. ४७.९)।

३. ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जलकर मर गया था (म. आ.)।

पारियात्र—(सू. इ.) भागवतमत में अनीह का, वायुमत में अहीनगु का, विष्णुमत में रुरु का तथा भविष्य मत में कुरु का पुत्र।

२. सर्पसत्र में दग्ध हुए ऐरावतकुल का एक सर्प (म. आ. ५२.१०)।

पारिश्रुत—स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.५५)।

पारुच्छेप—अनानत ऋषि का पैतृक नाम।

पार्णवल्कि—निगद ऋषि का पैतृक नाम।

पार्थ—कुन्ती (पृथा) के पुत्रों के लिये प्रयुक्त मातृक नाम। महाभारत में यह नाम प्रायः युधिष्ठिर एवं अर्जुन के लिये ही प्रयुक्त है। किंतु कई जगह कुन्ती के तीनों पुत्रों के लिये, एवं एक स्थान पर 'कर्ण' के लिये भी इसका प्रयोग किया गया है (म. उ.)।

पार्थव—अभ्यावर्तिन् चायमान देखिये।

पार्थिव—अंगिराकुल का गोत्रकार गण।

पार्थुश्रवस—धृतराष्ट्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ४.२६.१५) श्रांत्युदक के समय कौन सा मंत्र कहना चाहिये इस संबंध में इस आचार्य का मत दिया गया है (कौ. सू. ९.१०)। मधुपर्क गाय से करे ऐसा इसका कथन है (कौ. सू. १७.२७)।

पार्थ्य—तान्व नामक वैदिक आचार्य का पैतृक नाम। इसके द्वारा दान माँगने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.९३.१५)। सर्वानुक्रमणी से ऐसा प्रतीत होता है की 'पार्थ्य' के स्थान पर 'पार्थ' है जो तान्व का पैतृक नाम है। आश्वलायन श्रौतसूत्रों में भी पार्थ का निर्देश प्राप्त है (१२.१०; तान्व देखिये)।

पार्वणि—कार्षणि देखिये।

पार्वति—दक्ष का पैतृक नाम (श. ब्रा. २.४.४.६; कौ. ब्रा. ४.४)।

पार्वती—हिमालय तथा मेना की कन्या एवं शिवजी की पत्नी। नारद के कहने पर हिमालय ने इसे शंकर को व्याह दिया। एक समय यह शंकर के साथ क्रीडा कर रही थी, तब इसने शंकर के नेत्र बंद कर लिये। शंकर के नेत्रों में सोम, सूर्य तथा अग्नि का वास होने के कारण चारों ओर अंधकार फैल गया तथा विनाश (क्षय) आरंभ हो गया। ऋषियों के कहने पर इसने क्रीड़ा रोक दी। बाद में शंकर के कथनानुसार इसने अरुणाचल पर तपश्चर्या की। गौतम ने इसे अरुणाचल का माहात्म्य बताया (स्कन्द. १.३. ३–१२)।

पहले यह काले रंग की थी परंतु अनरकेश्वर तीर्थ में स्नान कर वहाँ के लिंग के समक्ष दीपदान करने के कारण यह गौरवर्ण की हो गयी (स्कंद. ५.१.३०)। इसने 'गौरीव्रत' का निर्माण किया तथा उसकी महिमा धर्मराज को बतायी (भवि. ब्राह्म. २१)।

एक समय कल्पवृक्ष के नीचे बैठ कर इसने सुंदर स्त्री की इच्छा की, जिससे 'अशोकसुंदरी' एक सुंदर स्त्री

उत्पन्न हुई। उसे पार्वती ने अपनी कन्या माना तथा उसे वर दिया 'तुम सोमवंश के राजा नहुष की स्त्री होगी' (अशोकसुंदरी देखिये)।

इसके शरीर के मल से गजानन की उत्पत्ति हुयी। शंकर से इसे कार्तिकेय नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। इसके अतिरिक्त बाण तथा वीरभद्र को इसने अपने पुत्र माने थे। देवताओं की प्रार्थना पर इसने दुष्टों के संहार के लिये अनेक अवतार लिये। इस कारण इसके अनेक नाम हैं (देवी, दुर्गा तथा सती देखिये)।

पार्वतीय—महाभारत काल का एक राजा, जो कुपथ नामक दानव के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ५५८*)।

२. दुर्योधन के मामा शकुनि का नामांतर।

३. महाभारतकालीन एक लोगसमूह। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, ये लोग उपहार ले कर आये थे (म. स. ४८.७)। पांडवों के वनवास काल में जयद्रथ की सेना में शामिल हो कर, इन लोगों ने पांडवों पर आक्रमण किया था (म. व. २५५.८)।

भारतीययुद्ध में ये लोग कौरवदल में शामिल थे, एवं शकुनि तथा उलूक के साथ रहा करते थे (म. क. ३१.१३)। पांडव वीरों ने इनका युद्ध में संहार किया (म. श. १.२६)।

पार्वतेय—एक राजर्षि, जो क्रयनामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५५*)।

पार्षत—द्रुपद राजा का नामांतर (म. आ. १२१. ९)।

पार्षद्वाण—एक वैदिक राजा। 'पृषद्वाण' का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ। एक आश्चर्यजनक कार्य करनेवाले राजा के रूप में, इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ८.५१.२)। ऋग्वेद में इसके बारे में जो सूक्त प्राप्त हैं, वह श्रुष्टिगु द्वारा रचित हैं। यह प्रस्कण्व का आश्रयदाता था (ऋ. ८.५१.२)।

पार्ष्ण शैलन—वैदिककालीन एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. २.४.८)।

पार्ष्णि—चेकितान राजा का सारथि।

पार्ष्णिक्षेमन—एक विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३०)।

पाल—वासुकि के कुल में उत्पन्न एक नाग जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हो गया (म. आ. ५२.५)। पाठभेद 'पैल'।

पालक—(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा। यह प्रद्योत राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, इसने अठ्ठाइस वर्षों तक, तथा वायु तथा ब्रह्मांड के अनुसार, चौबीस वर्षों तक राज्य किया।

पालकाप्य—एक वैद्यकाचार्य एवं 'हस्त्यायुर्वेदसंहिता' नामक सुविख्यात ग्रन्थ का रचयिता। प्रस्तुत ग्रन्थ में, हाथियों के रोग-निदान की विवेचना प्राप्त है। इस ग्रंथ में निम्नलिखित विषयों की व्याख्या की गयी हैः— १. महारोगस्थान (अध्याय.संख्या १८); २. क्षुद्ररोगस्थान (अध्याय. ७२); ३. शल्यस्थान (अध्याय. ३४); ४. उत्तरस्थान (अध्याय. ३६)।

पालकाप्य ने अंगदेश के राजा रोमपाद को 'हस्त्यायुर्वेद' सिखाया था। इसका यह ग्रंथ प्रायः श्लोकबद्ध है, किन्तु कई अध्यायों की रचना गद्य में भी की गयी है।

'हस्त्यायुर्वेद' के अतिरिक्त पालकाप्य के लिखे अन्य ग्रंथ इस प्रकार हैंः-- १. गजायुर्वेद (अग्नि. २२९.४४); २. गजचिकित्सा; ३. गजदर्पण; ४. गजपरीक्षा। इन में से 'गजायुर्वेद' संभवतः हस्त्यायुर्वेद का ही नामांतर होगा।

पालंकायन—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार। मत्स्य में इसका नाम 'पादपायन' दिया गया है (मत्स्य. २००.१२)।

पालित—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह परावृत राजा का पुत्र था। इसके 'परिघ' एवं 'पुरुजित्' नामांतर भी प्राप्त हैं। (परिघ १. देखिये)।

पालिता—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. ३)। पाठभेद-(भांडारकर संहिता)-'पलिता'।

पालितक—पूषन् द्वारा स्कंद को दिये गये पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम 'कालिक' था (म. श. ४४.३९)।

पालिशय—वसिष्ठकुल के गोत्रकार ऋषिगण।

पावक—(स्वा. उत्तान.) एक राजा। यह विजिताश्व का पुत्र था। वसिष्ठ के शाप से, इसे मनुष्ययोनि में जन्म लेना पड़ा (भा. ४.२४.४)।

२. एक वैदिक सूक्तद्रष्टा। यह अग्नि एवं 'स्वाहा' का पुत्र था (अग्नि एवं अग्नि पावक देखिये)।

३. 'प्रजापति भरत' नामक अग्नि का पुत्र। इसे 'महत्' नामांतर भी प्राप्त है (म. व. २०९.८)।

पावकाक्ष—राम की सेना का एक वानर (वा. रा. यु. ७३ ६४)।

पावन--भगवान् कृष्ण का मित्रविंदा नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१.१६)

२. दीर्घतपस् ऋषि का कनिष्ठ पुत्र। इसके बड़े भाई का नाम 'पुण्य' था (पुण्य १, देखिये)।

३. एक विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३०)।

पावमान्य--एक वैदिक मंत्रसंघ (ऐ. आ. २.२. २)। आश्वलायन लोगों के तर्पण में, इनका उल्लेख है।

पाशद्युम्न वायत—वैदिककालीन एक राजा। पाशद्युम्न राजा का 'वायत' पैतृक नाम है।

इसके द्वारा किये गये यज्ञ में, इन्द्र स्वयं उपस्थित हुआ था। किन्तु वसिष्ठ के कहने पर, इन्द्र इसके यज्ञ को त्याग कर, सुदास राजा के यज्ञ में चला गया (ऋ. ७. ३३.२)।

पाशिन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया था (म. क. ६२.२-३)।

पाष्याजिति—अंगिराकुल का एक गोत्रकार। 'पौषमजिति' इसी का पाठभेद है (पौषाजिति देखिये)।

पिंग--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

पिंगल--एक छंदःशास्त्रज्ञ आचार्य एवं छंदःशास्त्र नामक सुविख्यात ग्रंथ का कर्ता।

इसे पिंगलाचार्य या पिंगलनाग कहते थे (भट्ट हलायुध टीका)। कई विद्वानों के अनुसार, यह सम्राट अशोक का गुरु था। किन्तु 'पाणिनिशिक्षा' की 'शिक्षाप्रकाश' नामक टीका के अनुसार 'छन्दःशास्त्र' का रचयिता पिंगल, वैयाकरण पाणिनि का अनुज था (शिक्षासंग्रह पृ. ३८५): कात्यायन के सुविख्यात वृत्तिकार षड्गुरुशिष्य का भी यही मत है (वेदार्थदीपिका पृ. ९७)। अन्य विद्वानों के अनुसार यह पाणिनि का मामा था।

छन्दःशास्त्र—छन्दःशास्त्र को छः वेदांगों में से एक गिना जाता है। पाणिनि के गणपाठ में छन्दःशास्त्र के छंदोविजिति, छंदोविचिति, छंदोमान तथा छंदोभाषा ये चार पर्याय प्राप्त हैं (ऋगयनादिगण ४.३.७३)। शेष पाँच वेदांग इस प्रकार हैं, शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त तथा ज्योतिष।

छन्दःशास्त्रविषयक प्राचीनतम उपलब्ध ग्रन्थ 'ऋक्प्रातिशाख्य' है। उस ग्रंथ का मुख्य विषय व्याकरण है, किंतु उसमें वैदिक छंदों पर भी प्रकाश डाला गया है।

'ऋक्प्रातिशाख्य' में उपलब्ध छंद विषयक जानकारी काफ़ी अधूरी है, इसी कारण पिंगल का 'छंदःशास्त्र' वेदांग का सर्वाधिक प्राचीन एवं महत्त्वपूर्ण ग्रन्थ माना जाता है। इसमें वैदिक छंदों के साथ लौकिक छंदों पर भी प्रकाश डाला गया है। इस ग्रन्थ में आरंभ से चौथे अध्याय के सातवें सूत्र तक, वैदिक छंदों की जानकारी दी गयी है। शेष अवशिष्ट ग्रन्थ में लौकिक छंदों की चर्चा की गयी है। इसी ग्रन्थ का एक संस्करण 'प्राकृतपिंगल' नाम से प्रसिद्ध है, जिसमें प्राकृत के छन्दों की जानकारी दी गयी है। 'प्राकृतपिंगल' का रचनाकाल १४ वीं शती माना जाता है।

पूर्वाचार्य—छन्दःशास्त्र के प्रवर्तक भगवान् शिव माने गये हैं। छन्दःशास्त्र की गुरुपरंपरा इस प्रकार दी गयी है:— शिव—बृहस्पति—दुश्च्यवन—इंदु—मांडव्य —पिंगल।

पिंगल के 'छन्दःशास्त्र' में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त है:— अग्निवेश्य, आंगिरस, काश्यप (७. ९), कौशिक (३.६६), क्रौष्टुकि (३.२९), गौतम (३.६६), ताण्डिन् (३.३६), भार्गव (३.६६), माण्डव्य (७.३४), यास्क (३.३०), रात (७.३४), वसिष्ठ (३.६६), सैतव (५.१८)।

२. कश्यप तथा कद्रू से उत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.९)।

३. भृगुकुल का एक ऋषि। यह जनमेजय के सर्पसत्र में सदस्य था (म. आ. ४८.६)। इसी नाम के एक और ऋषि का निर्देश महाभारत में अन्यत्र प्राप्त है (म. आ. ४८.७)। पाठभेद-'बोलपिंगल'।

४. एक यक्षराज, जो भगवान शिव का सखा था। यह शिव की रक्षा के लिए श्मशानभूमि में निवास करता था (म. व. २२१.२२)।

५. सूर्य के 'अठारह विनायक' नामक अनुचरों में से एक। सूर्य के द्वारा प्राप्त वरदान के बल पर, दैत्यों ने देवों को त्रस्त करना प्रारंभ किया। तब उन दैत्यों का संहार करने के हेतु, ब्रह्मादि देवों ने 'अठारह विनायक' नामक सशस्त्र अनुचरों का एक दल सूर्य के पास तैनात किया। उनमें से पिंगल नामक अग्नि की योजना सूर्य के दक्षिण दिशा में की गयी। यह अग्नि का वर्ण 'पिंगल'

होते के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ था (साम्ब. १६; भवि. ब्राह्म. ५६; ७६; ११७)।

६. पुरुकुत्स नगर का एक दुराचारी ब्राह्मण। इसकी पत्नी व्यभिचारिणी थी, जिसने इसका वध किया।

अगले जन्म में, इसकी पत्नी को तोते का एवं इसे गीध का जन्म प्राप्त हुआ। पूर्वजन्म की शत्रुता याद कर के, गीध (पिंगल) ने तोते का वध किया। बाद में एक व्याध ने इसका भी वध किया। पश्चात्, गंगातट पर रहनेवाले वटु नामक ब्राह्मण ने गीता के पाँचवें अध्याय को सुनाकर इनका उद्धार किया। इस प्रकार इन दोनों को पितृलोक की प्राप्ति हुयी (पद्म. उ. १७९)।

७. एकादश रुद्रों में से एक। ब्रह्मा ने अपनी ग्यारह कन्याओं से विवाह कर, 'एकादश रुद्र' नामक ग्यारह पुत्रों को उत्पन्न किया। उनमें पिंगल एक था (पद्म. सृ. ४०)।

८. कश्यप एवं सुरभि का पुत्र (शिव. रुद्र. १८)।

९. एक राक्षस। भीम नामक एक व्याध शिकार के लिए अरण्य में घूम रहा था। उस समय पिंगल राक्षस उसके पीछे लग गया। फिर भीम शमी के पवित्र पेड़ पर चढ़ गया। पेड़ पर चढ़ते समय, शमी की एक टहनी टूट कर, नीचे स्थित गणेशजी की मूर्ति पर गिर पड़ी। इस पुण्यकर्म के कारण, भीम व्याध एवं पिंगल राक्षस का उद्धार हो गया (गणेश. २.३६)।

१०. सूर्य का एक अनुचर, एवं लेखक (भवि. ब्राह्म. ५६; ७६; १२४)।

पिंगलक--एक यक्ष, जो शिव का सखा एवं स्कन्द का अनुचर था (म. स. १०. १७; म. व. २२१. २२)।

पिंगला--अवन्तिनगर की एक वेश्या। मंदर नामक एक ब्राह्मण इस पर आसक्त था।

इसने ऋषभ नामक योगी की सेवा की। इस पुण्य के कारण, इसे अगले जन्म में चंद्रांगद राजा के कुल में जन्म प्राप्त हुआ। यह चंद्रांगद की पत्नी सीमंतिनी के गर्भ से उत्पन्न हुयी, तथा इसका नाम कीर्तिमालिनी रखा गया। पश्चात्, यह भद्रायु राजा की पत्नी बनी (भद्रायु देखिये)।

२. विदेह देश के मिथिला नगर की एक वेश्या। एक दिन यह हर रोज़ की तरह अर्धरात्रि तक प्रतीक्षा करती रही, पर कोई ग्राहक न आया। इस घटना से इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, तथा अंत में इसे मोक्ष प्राप्त हुआ (भा. ११.८.२२-४४)। इसने अवधूत को आत्मज्ञान का उपदेश दिया था, जिससे वह इसे अपना गुरु मानता था (भा. ११.७.३४)।

इसकी जीवनगाथा भीष्म ने युधिष्ठिर को सुनायी थी (म. शां. १६८. ४६-५२)।

३. अयोध्या नगरी की एक स्त्री। एक बार यह विषयोपभोग की इच्छा से, राम के पास गयी। किन्तु एकपत्नीव्रतधारी राम ने, इसकी माँग अस्वीकार कर दी, तथा कहा, 'कृष्णावतार में तुम कंस की कुब्जा नामक दासी बनोगी। उस समय कृष्ण के रूप में, मैं तुम्हे स्वीकार करूँगा'।

यह बात जब सीता को ज्ञात हुयी, तब क्रुद्ध हो कर उसने पिंगला को शाप दिया 'राम से विषय-भोग की लिप्सा रखनेवाली सुंदरी, तेरा शरीर अगले जन्म में तीन स्थानों से टेढ़ा होगा'। पिंगला ने सीता से दया की याचना की। फिर सीता ने कहा, 'अगले जन्म में कृष्ण तुम्हारा उद्धार करेगा' (आ. रा. विलास. ८)।

पिंगलाक्ष--शिव के रुद्रगणों में से एक।

पिंगा--मांडूकी ऋषि की द्वितीय पत्नी (ऐतरेय देखिये)।

पिंगाक्ष--एक शबर। परोपकार करते हुये, इसकी मृत्यु हो गयी। इस कारण, मृत्यु के पश्चात यह 'निर्ऋति लोक' का अधिपति बन गया (स्कन्द ४. १.१२)।

२. मणिभद्र नामक शिवगण एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक (मणिभद्र देखिये)।

पिंगाक्षी--स्कन्द की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.२१)।

पिच्छल--वासुकिवंश में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया (म. आ. ५२.५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'पिच्छिल'।

पिजवन--एक वैदिक राजा, एवं सुदास राजा का पिता (नि. २.२४)। ऋग्वेद में, सुदास के लिए 'पैजवन' उपाधि पैतृक नाम के नाते प्रयुक्त की गयी है (ऋ. ७. १८.२२; २३; २५; ऐ. ब्रा. ८.२१)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, 'पिजवन' एवं 'पंचजन, दोनों एक ही थे (पंचजन ३. देखिये)।

पिंजरक--कश्यप एवं कद्रू पुत्र, एक नाग (म. आ. ३१.६; म. उ. १०१.१५)।

पिठर--वरुण की सभा का एक असुर (म. स. ९. १३)।

पिठरक--कश्यप एवं कद्रु का पुत्र, एक नाग (म. आ. ३१.१४)। यह जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मर गया था (म. आ. ५२.१४)। पाठभेद--'पीठरक' (म. उ. १०१.१४)।

पिठीनस्—एक वैदिक राजा। इसके रक्षण के लिये, इंद्र ने रजि नामक दानव का वध किया था (ऋ. ६.२६.६)। सायणाचार्य के अनुसार, 'रजि' एक स्त्री का नाम है, जिसे इंद्र ने पिठीनस् को प्रदान किया था।

पिंडसेक्तृ—तक्षककुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया (म. आ. ५२.७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'पिंडभेत्तृ'।

पिंडारक--कश्यपवंशी एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया (म. आ. ५२.१६)।

२. एक यादव राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१८)।

३. (सो. वसु.) एक राजा। यह वसुदेव राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, यह उसे रोहिणी से, एवं वायु के अनुसार, पौरवी से उत्पन्न हुआ था।

४. धृतराष्ट्रकुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया (म. आ. ५२.१६)।

पितरः—एक देवतासमूह। इन्हे 'पिंड' नामांतर भी प्राप्त है (म. शां. ३५५. २०)। मनुष्य प्राणी के पूर्वजों एवं सारे मनुष्यजाति के निर्माणकर्ता देवतासमूह, इन दोनों अर्थों में 'पितर' शब्द का उपयोग ऋग्वेद, महाभारत एवं पुराणों में मिलता है। प्राचीन भारतीय वाङ्मय में प्राप्त 'पितरों' की यह कल्पना प्राचीन ईरानी वाङ्मय में निर्दिष्ट 'फ्रवेशि' से मिलती जुलती है।

ऋग्वेद में प्राप्त 'पितृसूक्त' में पितरों के उत्तम, मध्यम, एवं अधम प्रकार दिये गये है (ऋ. १०.१५.१)। ऋग्वेद में निम्नलिखित पितरों का निर्देश प्राप्त हैः-अंगिरस, वैरूप, अथर्वण, भृगु, नगग्व, दशग्व (ऋ. १०.१४.५-६)। इनमें से 'अंगिरस' पितर प्रायः यम के साथ रहते थे (ऋ. १०.१४.३-५)। वे अग्नि से (ऋ. १०. ६२.१), एवं आकाश से (ऋ. ४.२.१५) उत्पन्न हुये थे। नगग्व एवं दशग्व अंगिरस पितरों के ही उपविभाग थे।

पितरों को सोमरस प्रिय था (ऋ. १०.१५.१)। इन्हें यज्ञ में 'स्वधा' कह कर आहुति दी जाती थी। ये कुशासन पर सोते थे (ऋ १०.१५.५)। अग्नि एवं इंद्र के साथ, ये यज्ञभाग को स्वीकार करने के लिए उपस्थित होते थे (ऋ. १०.१५.१०)।

मृत व्यक्ति की आत्मा, अग्नि के माध्यम से यमलोक में बसे हुये पितरों तक पहुँच जाती थी (ऋ. १०.१६.१-२)। पितरो के इस मार्ग को 'पितृयाण' या 'अर्चिरादि' कहते थे (गी. ८.२४-२६)। पितरों का राजा यम था। यम का राज्य 'माध्यामिक' (पितृलोक) नामक लोक में स्थित था (निरुक्त ११.१८)। मानवों में पितृलोक पहुँचने वाला, पहिला मृतक यम था। इसलिये वह पितृलोक का राजा बना। पितृलोक का यह यमराज स्वर्ग में सर्वोच्च था। तैत्तिरीय ब्राह्मण में भूलोक एवं अंतरिक्ष के साथ, पितृलोक का निर्देश प्राप्त है, एवं उसे तृतीयलोक कहा गया है (तै. ब्रा. १.३.१०.५)। बृहदारण्यकोपनिषद में भी भूलोक, देवलोक, एवं पितृलोक ऐसे तीन लोकों का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. १.५.१६)।

शतपथ ब्राह्मण में, पितरों के सोमवंत, बर्हिषद, एवं अग्निष्वात्त, ऐसे तीन प्रकार दिये गये है (श. ब्रा. २.६.१.७)। उस ग्रन्थ के अनुसार, 'सोमयज्ञ,' 'चरुयज्ञ,' एवं 'सामान्ययज्ञ' करनेवाले व्यक्ति मृत्यु के बाद, क्रमशः सोमवन्त, बर्हिषद, एवं अग्निष्वात्त पितर बन जाते हैं।

मनु के अनुसार, पितरो का जन्म ऋषियों से हुआ, एवं उन पितरों से देव एवं मनुष्य जाति का निर्माण हुआ। आगे चल कर, देवों नें चर एवं अचर सृष्टि का निर्माण किया (मनु. ३.२०१)।

वैदिक वाङ्मय में, पितरों को देवों से अलग माना गया है। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, मानववंश के गंधर्व, पितर, देव, सर्प, एवं मनुष्य ये पाँच प्रमुख विभाग थे। उनमें से, देव एवं पितरों से मनुष्यजाति का निर्माण हुआ (ऐ. ब्रा. ३.३१)।

उत्तरकालीन ग्रन्थों में तीन से अधिक पितरों का निर्देश पाया जाता है। 'नंदिपुराण' के अनुसार, आग्निष्वात्त, बर्हिषद, काव्य, सुकालिन् ये क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों के पितर माने गये है। मनुस्मृति में इन चार वर्णो के पितरो के नाम, सोमप, हविर्भुज, आज्यप एवं सुकालिन् दिये गये हैं (मनु. ३.१९३-१९८)। मनु ने अन्य एक स्थान पर, अनग्निदग्ध, अग्निदग्ध, काव्य, बर्हिषद, आग्निष्वात्त, सौम्य इन पितरों को ब्राह्मणों के पितर कहा है (मनु. ३.१९९)।

पुराणों एवं महाभारत में प्रायः सर्वत्र सात पितृगणों का निर्देश प्राप्त है। स्कंदपुराण में नौ पितृगणों का निर्देश हैं, जिनके नाम इस प्रकार हैः—अग्निष्वात्त,

बर्हिषद, आज्यप, सोमप, रश्मिप, उपाहूत, अयंतु, श्राद्धभुज, नांदिमुख (स्कंद. ४.२१६.९-१०)। इनमें से अग्निष्वात्त, बर्हिषद, आज्यप एवं सोमप, ये क्रमशः पूर्व, दक्षिण, पश्चिम तथा उत्तर दिशाओं के रक्षक हैं।

मार्कंडेय पुराण में पितरों के कुल ३१ गणों का निर्देश प्राप्त है, जिनके नाम इस प्रकार हैं:-- विश्व, विश्वभुज, आराध्य, धर्म, धन्य, शुभानन, भूतिद, भूतिकृत, भूति, कल्याण, कल्पताकर्तृ, कल्प, कल्पतराश्रम, कल्पताहेतु, अनघ, वर, वरेण्य, वरद, पुष्टिद, तुष्टिद, विश्वपातृ, धातृ, महत्, महात्मन, महित, महिमावत्, महाबल, सुखद, धनद, धर्मद, भूतिद। इनमें से शुभ्र, आरक्त, सुवर्ण एवं कृष्णवर्णीय पितरों की उपासना क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, एवं शूद्र करते हैं (माकं. ९२.९२)।

पितृगणों में से निम्नलिखित पितर, अंगिरस एवं स्वधा के पुत्र माने जाते हैः—अग्निष्वात्त, बर्हिषद, सौम्य, आज्यप, साग्नि, एवं अनग्नि। दक्षकन्या स्वधा इनकी पत्नी थी, एवं उससे इन्हें वयुना एवं धारिणी नामक दो कन्यायें उत्पन्न हुयी थीं (भा. ४.१.६४)।

उत्पत्ति—वायुपुराण में पितरो की उत्पत्ति की कथा इस प्रकार दी गयी है। कि, सबसे पहले ब्रह्माजी ने देवों की उत्पत्ति की। आगे चल कर, देवों ने यज्ञ करना बंद किया। इस कारण क्रुद्ध हो कर, ब्रह्माजी ने देवों को शाप दिया, 'तुम मूढ़ बनोंगे'। देवों के मूढ़ता के कारण, पृथ्वी के तीनों लोकों का नाश होने लगा। फिर ब्रह्माजी ने देवों को अपने पुत्रोंकी शरण में जाने के लिये कहा।

ब्रह्माजी की इस आज्ञा के अनुसार, देवगण अपने पुत्रों के पास गये। फिर देवपुत्रों ने देवगणों को प्रायश्चित्तादि विधि कथन किये। इस उपदेश से संतुष्ट हो कर, देवगणों ने अपने पुत्रों से कहा, 'यह उपदेश कथन करनेवाले तुम हमारे साक्षात् 'पितर' ही हो। उस दिन से समस्त देवपुत्र 'पितर' नाम से सुविख्यात हुये, एवं स्वर्ग में देव भी उनकी उपासना करने लगे (वायु. २. १०; ब्रह्मांड. ३.९)। यहाँ पितरः—का प्रयोग 'पाताः' (संरक्षण करनेवाला) ऐसे अर्थ से किया गया है।

बाकी सारे पुराणों में, पितरों को ब्रह्माजी का मानसपुत्र कहा गया है (विष्णु. १.५.३३)। पुराणों में निर्दिष्ट सात पितृगणों को सप्तर्षिको का पुत्र भी, कई जगह कहा गया है।

प्रियखाद्यपदार्थ—श्राद्ध के समय 'प्राचीनावीति' कर, एवं 'स्वाध' कह कर दिया गया अन्न एवं सोम, योगमार्ग के द्वारा, पितर भक्षण करते हैं। इन्हें गेंडक का मांस, चावल, यव, मूँग, गन्ना, सफ़ेद पुष्प, फल, दर्भ, उड़द, गाय का दूध, घी, शहद आदि पदार्थ विशेष पसंद थे।

इनके अप्रिय पदार्थों में, मसूरी, सन एवं सेमी के बीज, राजमाष, कुलीथ, कमल, बेल, रुई, धतूरा, कड़वा, नीम, अडुलसा, भेड़ बकरियाँ एवं उनका दूध प्रमुख था। इस कारण, ये सारे पदार्थ 'श्राद्धविधि' के समय निषिद्ध माना गया है।

मनोविकार—पितरों को लोभ, मोह तथा भय ये विकार उत्पन्न होते हैं, किंतु शोक नहीं होता। ये जहाँ जी चाहे वहाँ 'मनोवेग' से जा सकते हैं, किंतु अपनी इच्छायें व्यक्त करनें में ये असमर्थ रहते हैं।

हर एक कल्प के अंत में, ये शाप के कारण नष्ट हो जाते हैं, एवं कल्पारंभ में, उःशाप के कारण, पुनः जीवित होते हैं (ब्रह्मांड. ३.९-१०; वायु. ७१.५९-६०; पद्म. सृ. ९; ह. वं. १.१६-१८; मत्स्य. १३-१५; १४१)।

तैत्तिरीय संहिता के अनुसार, 'स्मशानचिति' करने से हरएक मनुष्य को 'पितृलोक' में प्रवेश प्राप्त हो सकता है (तै. सं. ५.४.११)। धर्मशास्त्र के अनुसार, पितृकार्य से देवकार्य श्रेष्ठ माना गया है।

पितृगण--पितरों के गणों के दैवी एवं मानुष ऐसे दो मुख्य प्रकार थे। इनमें से दैवी पितृगण अमूर्त हो कर स्वर्ग में ब्रह्माजी के सभा में रहते थे (म. स. ११.४६.)। वे स्वयं श्रेष्ठ प्रकार के देव हो कर, समस्त देवगणों से पूजित थे। वे स्वर्ग में रहते थे, एवं अमर थे।

मानुष पितृगण में मनुष्य प्राणियों के मृत पिता, पितामह, एवं प्रपितामह का अन्तार्भाव था। जिनका पुण्य अधिक हो ऐसे ही 'मृत पितर' मानुष पितृगणों में शामिल हो सकते थे। इन पितृगणों के पितर प्रायः यमसभा में रहते थे। सहस्र वर्षों के हर एक नये युग में, इस पितृगण के सदस्य नया जन्म लेते थे, एवं उनसे नये मनु एवं नये मनुष्यजाति का निर्माण होता था।

दैवी पितर—इन्हें 'अमूर्त' 'देवदेव' 'भावमूर्ति' 'स्वर्गस्थ' ऐसे आकार, उत्पत्ति, महत्ता एवं वसतिस्थान दर्शानेवाले अनेक नामांतर प्राप्त थे। ये आकाश से भी सूक्ष्मस्वरुप थे, एवं परमाणु के उदर में भी रह सकते थे। फिर भी ये अत्यधिक समर्थ थे। दैवी पितृगण संख्या में कुल तीन थे, जिनके नाम इस प्रकार हैं:—

(१) **वैराज**—यह पितृगण विरजस् (सत्य, सनातन) नामक स्थान में रहता था। इस पितृगण के लोग ब्रह्माजी

के सभा में रहकर, उनकी उपासना करते थे (म. स. १३३*) इनकी मानसकन्या मेना थी। दैत्य, यक्ष, राक्षस, किन्नर, गंधर्व, अप्सरा, भूत, पिशाच, सर्प, एवं नाग इनकी उपासना करते थे।

(२) अग्निष्वात्त—यह पितृगण वैभ्राज (विरजस्) नामक स्थान में रहता था। दैत्य, यक्ष, राक्षसादि इसकी उपासना करते थे।

(३) बर्हिषद--यह पितृगण दक्षिण दिशा में सोमप (सोमपदा) नामक स्थान में रहता था। इनकी मानसकन्या पीवरी थी।

महाभारत में तृतीय दैवी पितर का नाम एकशृंग दे कर, बर्हिषद को मानुष पितर कहा गया है (म. स. ११.३०; १३३*)

मूर्त अथवा मानुष पितर—इन्हें 'मूर्त,' 'संतानक.' (संतनिक), सूक्ष्ममूर्ति ऐसे नामांतर भी प्राप्त थे। इन पितृगणों में, निम्नलिखित पितृगणों का समावेश होता है :-

१. हविष्मत् (काव्य)--यह पितृगण मरीचिगर्भ प्रदेश में रहता था। इनकी मानस कन्या गो थी। ब्राह्मण इनकी उपासना करते थे।

२. सुस्वाधा (उपहूत)—यह पितृगण कामग (कामधुक्) प्रदेश में रहता था। इनकी मानसकन्या यशोदा थी। क्षत्रिय इनकी उपासना करते थे।

३. आज्यप--यह पितृगण पश्चिम दिशा में मानस (सुमनस्) प्रदेश में रहता था। इनकी उपासना वैश्य करते थे।

४. सोमप—यह पितृगण उत्तर दिशा के सनातन (स्वर्ग) प्रदेश में रहता था। इनकी मानसकन्या नर्मदा थी। शूद्र इन की उपासना करते थे। महाभारत में, 'मानुषि पितर' नाम से सोमप, बर्हिषद, गार्हपत्य, चतुर्वेद, तथा इन, चार पितृगणो का निर्देश किया गया है। वहाँ हविष्मत्, सुस्वधा, आज्यप इन पितृगणों का निर्देश अप्राप्य है।

पितृकन्या—पुराणों में अनेक जगह पितरों के वंश (पितृवंश) की विस्तृत जानकारी दी गयी है (वायु. ७२. १–१९; ७३. ७७.३२.७४–७६; ब्रह्मांड. ३.१०.१–२१; ५२–९८; ३.१३.३२; ७६–७९; ह. वं. १.१८; ब्रह्म. ३४.४१–४२; ८१.९३, मत्स्य. १३.२–९; १४.१–१५; पद्म. सृ. ९.२–५६; लिंग. १.६.५–९; ७०.३३१; ८२.१४–१५; २.४५.८८)

इस जानकारी के अनुसार, सात मुख्य पितरों ने अपने अपने मन से एक एक कन्या ('मानसी कन्या') उत्पन्न की। उन कन्याओं के नाम इस प्रकार थेः—मेना, अच्छोदा (सत्यवती), पीवरी, गो, यशोदा, विरजा, नर्मदा। इस कन्याओं की विस्तृत जानकारी पुराणों में प्राप्त है, जो इस प्रकार हैः—

(१) मेना—इसका विवाह हिमवंत पर्वत से हुआ था। इसको मैनाक नामक एक पुत्र, एवं अपर्णा, एकपर्णा, एवं एकपाटाला नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुयी थीं।

मेना की तीन कन्याओं में से, अपर्णा 'देवी उमा' बन गयीं। एकपर्णा ने असित ऋषि से विवाह किया, जिससे उसे देवल नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। एकपाटाला का विवाह शतशिलाक के पुत्र जैगीषव्य ऋषि से हुआ, जिससे उसे शंख एवं लिखित नामक दो पुत्र हुए।

(२) अच्छोदा—सुविख्यात अच्छोदा नदी यही है। इसने पितरों की आज्ञा अमान्य कर, चेदि देश का राजा वसु एवं अद्रिका' नामक अप्सरा के कन्या के रूप में पुनः जन्म लिया, एवं यह नीच जाति की कन्या ('दासेयी') बन गयी इसे काली एवं सत्यवती नामांतर भी प्राप्त थे।

इसे पराशर ऋषि से व्यास नामक एक पुत्र, एवं शंतनु राजा से विचित्रवीर्य, एवं चित्रांगद नामक दो पुत्र हुये।

(३) पीवरी—इसका विवाह व्यास ऋषि के पुत्र शुक्राचार्य से हुआ था। उससे इसे कृष्ण, गौर, प्रभु, शंभु एवं भूरिश्रुत ऐसे पाँच पुत्र, एवं कीर्तिमती (कृत्वी) नामक एक कन्या उत्पन्न हुयी (ब्रह्मांड. ३.१०.८०–८१)।

पीवरी की कन्या कीर्तिमती का विवाह अनुह राजा से हो कर, उससे कीर्तिमती को ब्रह्मदत्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

(४) गो—इसे 'एकशृंगा' नामांतर भी प्राप्त था। इसका विवाह शुक्राचार्य से हो कर, उससे इसे सुविख्यात 'भृगु' वंश की स्थापना करनेवाले पुत्र उत्पन्न हुये।

(५) यशोदा—इसका विवाह अयोध्या के राजा वृद्धशर्मन् (विश्वशर्मन्) के पुत्र विश्वमहत् (विश्वसह) राजा से हुआ, जिससे इसे दिलीप द्वितीय (खट्वांग) नामक पुत्र हुआ।

(६) विरजा—इसका विवाह सुविख्यात सोमवंशीय राजा नहुष से हो कर, उससे इसे ययाति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

(७) नर्मदा—इसका विवाह अयोध्या के राजा पुरुकुत्स से हो कर, उससे इसे त्रसदस्यु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। कई उत्तरकालीन, ग्रंथों में, नर्मदा को 'नदी' कहा गया है, एवं उसका सुविख्यात नर्मदा नदी से एकात्म स्थापित किया ग या है (मत्स्य. १५. २८)।

इनके सिवा निम्नलिखित पितृकन्याओं का निर्देश पुराणों में प्राप्त है :—

१. कृत्वी (कीर्तिमती) अणु ह. पत्नी (ह. वं. १ २३. ६) २. एकपर्णा, ३. एकपाताला, ४. अपर्णा (उमा)।

'पितृकन्या' कथा का अन्वयार्थ—पार्गिटर के अनुसार, पितृकन्याओं के बारे में पुराणों में दी गयी सारी जानकारी, इतिहास एवं काल्पनिक रम्यता के संमिश्रण से बनी है। पुराणों में निर्दिष्ट पितृकन्याओं में, विरजा (वायु. ९३. १२), यशोदा (वायु ८८. १८१-१८२), कृत्वी, (कीर्तिमती) ये तीन प्रमुख हैं। इनके पतियों के नाम क्रमशः नहुष, विश्वमहत् एवं अनुह हैं। ये तीनों कन्याएँ एवं उनके पतियों का आपस में बहन भाई का रिश्ता था। अपने बहनों (पिता की कन्याओं) से नहुष, विश्वमहत्, एवं अनुह ने विवाह किया। इस कारण इन कन्याओं को 'पितृकन्या' (पिता की कन्या) नाम प्राप्त हुये। पितृकन्या के इस ऐतिहासिक अर्थ को त्याग कर, 'पितरों की कन्या' यह नया अर्थ पुराणों ने प्रदान किया है। भाई एवं बहन का विवाह निषिद्ध मानने के कारण, यह अर्थान्तर पुराणों द्वारा स्थापित किया गया होगा।

पुरुकुत्स (नर्मदा), शुक्र (गो), शुक (पीवरी) इन राजाओं ने भी शायद अपने बहनों के साथ शादी की होगी। पितृकन्याओं में से मेना काल्पनिक प्रतीत होती है। मेना की कन्याओं में से, एकपाताला, एकपर्णा, एवं अपर्णा ये तीनों नाम वस्तुतः उमा (देवी पार्वती) के ही पर्यायवाची शब्द हैं (पार्गि. ६९-७०)।

पितृवंश—ब्रह्मांड पुराण में, अग्निष्वात्त एवं बर्हिषद इन दो पितरों के (ब्रह्मांड. २. १३. २९-४३) वंश की विस्तृत जानकारी दी गयी है। पुराणों के अनुसार, 'मैथुनज' मानवी संतति का निर्माण चाक्षुष दक्ष से हुआ था। स्वायंभुव दक्ष के पूर्वकालीन मानव-वंश की जानकारी अग्निष्वात एवं बर्हिषद पितरों के वंशावलि में प्राप्त है, जिस कारण, 'ब्रह्मांडपुराण' में प्राप्त पितृवंश की जानकारी नितांत महत्त्वपूर्ण प्रतीत होती है।

ब्रह्मांड के पुराण के अनुसार, अग्नि एवं बर्हिषद इन दो पितरों को स्वधा से क्रमशः 'मेना' एवं 'धारणी' नामक दो कन्याएँ उत्पन्न हुयीं। इनमें से मेना का विवाह हिमवत् से हो कर, उसे मैनाक नामक पुत्र हुआ। धारणी का विवाह मेरु से हो कर, उससे उसे मंदर नामक पुत्र, एवं वेला, नियति, तथा आयति नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुयीं।

इनमें से वेला का विवाह समुद्र से हुआ, एवं उससे उसे सवर्णा नामक कन्या उत्पन्न हुयी। सवर्णा का विवाह प्राचीनबर्हि से हो कर, उससे उसे प्रचेतस् नामक दस पुत्र हुये। प्रचेतस् को स्वायंभुव दक्ष नामक पुत्र था, जिसके पुत्र का नाम चाक्षुष दक्ष था। उसी स्वायंभुव एवं चाक्षुष दक्ष से आगे चलकर 'मैथुनज' अर्थात् मानवी सृष्टि का, निर्माण हुआ।

पितामह— एक स्मृतिकार। एक प्राचीन धर्मशास्त्र-कार के नाते से, इसका निर्देश 'वृद्धयाज्ञवल्क्यस्मृति' में किया गया है।

इसके 'शौच' विषयक अभिमतों का निर्देश विश्वरूप ने किया है (याज्ञ. १.१७)। 'मिताक्षरा' एवं 'अपरार्क' में, पितामह के व्यवहारशास्त्र, आह्निक एवं श्राद्धसंबंधी मतों का उद्धरण प्राप्त है। 'स्मृतिचंद्रिका' में भी, इसके व्यवहार एवं श्राद्धविषयक दस श्लोकों का उद्धरण लिया गया है।

'पितामहस्मृति' में विशेषतः 'व्यवहारशास्त्र' का विचार किया गया है। पितामह के अनुसार, वेद, वेदांग, मीमांसा, स्मृति, पुराण, एवं न्याय ये सारे ग्रंथ मिला कर 'धर्मशास्त्र' का रूप निर्धारित करते हैं (पिता. पृ. ६०१)। इसकी स्मृति में, 'क्रयपत्र,' 'स्थितिपत्र' 'समाधिपत्र' 'विशुद्धिपत्र' आदि 'दस्तखतों' की व्याख्या प्राप्त है। राजा के न्यायसभा में आवश्यक सेवकों एवं वस्तुओं की नामावलि पितामह ने दी है, जो इस प्रकार हैः—लेखक, गणक, शास्त्रपाल, साध्यपाल, सभासद, हिरण्य, अग्नि, एवं उदक।

किन्हीं दो व्यक्तियों में विवाद होने पर, सर्वप्रथम ग्रामपंचायत के सामने उसका निर्णय होना चाहिये, ऐसा पितामह का मत है। उसके बाद, 'नगरसभा' एवं अन्त में राजा के सामने; इस क्रम से विवाद का निर्णय होना आवश्यक है, ऐसा इसने लिखा है।

पितामह की स्मृति में, 'बृहस्पतिस्मृति' का निर्देश प्राप्त है। इस निर्देश के कारण, पितामह का काल

चौथी से सातवीं ईसवी के बीच माना जाता है।

पितृ-- दक्षकन्या स्वधा का पति। इसे 'पितर' नामांतर भी प्राप्त है (पितर देखिये)।

पितृवर्तिन्--कुरुक्षेत्र के कौशिक ब्राह्मण के सात पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र। इसके स्वसृप (खसृप), क्रोधन, हिंस्र, पिशुन, कवि और वाग्दुष्ट आदि भाई थे। ये सातो भाई गर्ग ऋषि के शिष्य बन कर रहे थे। हरिवंश के अनुसार, कौशिक विश्वामित्र नामक इनके पिता ने इन्हें शाप दिया, तत्पश्चात् यह एवं इसके भाई गर्ग ऋषि के शिष्य बने।

पिता के पश्चात् इन्हें बड़ा कष्ट सहना पड़ा। एक दिन सातो भाई गर्ग की कपिला नामक गाय को उसके बछड़े के साथ अरण्य में ले गये। वहाँ क्षुधाशांति के हेतु, इसके भाइयों ने गाय को मार कर खाने की योजना बनायी। कवि तथा स्वसृम ने इसका विरोध किया, परन्तु श्राद्धकर्मनिपुण पितृवर्ति ने कहा, 'अगर गोवध करना ही है, तो पितृ के श्राद्ध के हेतु करो, जिससे गाय को भी सद्गति मिले और हम लोगों को पाप न भुगतना पड़े'।

इसका कथन सब को मान्य हुआ। दो भाइयों को देवस्थान पर, तीन को पितृस्थान पर, तथा एक को अतिथि के रूप में बैठाया, एवं स्वयं को यजमान बनाकर, पितृवर्तिन् ने गाय का 'प्रोक्षण' किया। संध्या के समय गर्गाश्रम में वापस आने के बाद, बछड़ा गुरु को सौंप कर, इन्होंने बताया, कि 'धेनु व्याघ्र द्वारा भक्षित की गयी'।

कालांतर में इन सातों बन्धुओं की मृत्यु हो गयी। क्रूरकर्म करने, तथा गुरु से असत्य भाषण करने के कारण, इन लोगों का जन्म व्याधकुल में हुआ। इस योनि में इनके नाम निर्वैर, निर्वृति, शान्त, निर्मन्यु, कृति, वैधस तथा मातृवर्तिन् थे। पूर्वजन्म में किये पितृतर्पण के कारण, इस जन्म में, ये 'जातिस्मर' बन गये थे। मातृपितृभक्ति में वैराग्यपूर्वक काल बिता कर, इनकी मृत्यु हुयी। मृत्यु के पश्चात् इन्हें कालंजर पर्वत पर मृगयोनि प्राप्त हुयी।

मृगयोनि में इनके नाम निम्नलिखित थे:--उन्मुख, नित्यवित्रस्त, स्तब्धकर्ण, विलोचन, पंडित, घस्मर तथा नादिन् कहा जाता है। कहा जाता है, अभी तक कालंजर पर्वत पर इनके पदचिह्न दिखाई पड़ते हैं। यह कालंजर पर्वत, वर्तमान बुंदेलखण्ड के बांदा जिले में बदौसा तहसील में स्थित, कालंजर ही होगा।

तीसरे जन्म में, ये शरद्वीप में चक्रवाक पक्षी बने। इस जन्म में, इनके नाम इस प्रकार थे:—निस्पृह, निर्मम, क्षांत, निर्द्वन्द्व, निष्परिग्रह, निर्वृत्ति तथा निभृत (ह. वं. १.२१.३१)। पद्म पुराण में, इनके नाम इस प्रकार दिये गये है:--सुमना, कुसुम, वसु, चित्तदर्शी, सुदर्शी, ज्ञाता तथा ज्ञानपारग (पद्म. सृ. १०)। मत्स्यपुराण के अनुसार, मृगयोनि में इनके नाम इस प्रकार थे:—सुमनस्, कुमुद, शुद्ध, छिद्रदर्शी, सुनेत्रक, सुनेत्र तथा अंशुमान् (मत्स्य. २०.१८)।

चौथे जन्म में ये मानससरोवर पर हंस पक्षी हुये। उस समय के इनके नाम हरिवंश में प्राप्त हैं, पर वहाँ भिन्न भिन्न अध्यायों में भिन्न भिन्न नाम दिये गये है। एक स्थान पर उनके नाम इस प्रकार हैं:—सुमना, शुचिवाच, शुद्ध, पंचम, छिद्रप्रदर्शन, सुनेत्र तथा स्वतंत्र। अन्य स्थान पर वे इस प्रकार प्राप्त हैं:-- पद्मगर्भ, अरविंदाक्ष, क्षीरगर्भ, सुलोचना, उरुबिंदु, सुबिंदु तथा हेमगर्भ। पद्मपुराण तथा मत्स्यपुराण में 'हंसयोनि' नहीं दी गयी है, परन्तु उन पुराणों के 'चक्रवाकयोनि' में दिये गये नामों में, तथा हरिवंश में 'हंसयोनि' के प्रथम दिये गये सात नामों में अत्यधिक साम्य है।

एक बार ये सातो बन्धु मानससरोवर पर तपश्चर्या कर रहे थे। तब कांपिल्य नगर का पुरुकुलोत्पन्न नीप राजा 'विभ्राज' अपने पत्नी के सहित वहाँ आया, एवं सरोवर में क्रीड़ा करने लगा। पद्मपुराण में इसी राजा का नाम 'अणुह' दिया गया है। राजा का ऐश्वर्य देख कर, स्वतंत्र (पितृवर्तिन्), छिद्रदर्शन (कवि), तथा सुनेत्र (स्वसृप) के मन में ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए लिप्सा जाग्रत हुयी। फिर अन्य भाइयों ने क्रुद्ध हो कर इन तीन भाइयों को शाप दिया।

इस शाप के कारण, स्वतंत्र (पितृवर्तिन्) अगले जन्म में विभ्राज राजा के कुल में जन्म लेने को विवश हुआ। विभ्राज राजा का पुत्र अणुह एवं उसकी पत्नी कृत्वी के कोख में, इसने ब्रह्मदत्त नाम से जन्म लिया।

इन सातो बंधुओं द्वारा बध की गयी कपिला, नये जन्म में सन्नति नाम से देवल ऋषि की कन्या, एवं ब्रह्मदत्त की पत्नी बनी। उसे ब्रह्मदत्त से विष्वक्सेन नामक पुत्र हुआ। यह पुत्र पूर्वजन्म में स्वयं राजा विभ्राज ही था। ब्रह्मदत्त वेदवेदांगों में निपुण था, एवं उसको समस्त प्राणीजाति की भाषाओं का ज्ञान था (ब्रह्मदत्त देखिये)।

पूर्वोक्त शाप के ही कारण, स्वतंत्र (पितृवर्तिन्) के अन्य दो भाई छिद्रदर्शन तथा सुनेत्र ने पांचाल (पांचाल्य, पांचिक) एवं कंडरिक नाम से बत्स तथा बाभ्रव्य वंश में जन्म लिया एवं वे ब्रह्मदत्त के मित्र बने। इनके नाम पद्मपुराण में 'पुंडलीक' तथा 'सुब्रालक,' तथा मत्स्यपुराण में 'कंडरीक' तथा 'सुब्रालक' दिये गये है, एवं उन्हे ब्रह्मदत्त के मंत्री का पुत्र कहा गया है।

उन दो भाइयों में से पांचाल (कवि) ऋग्वेद में प्रवीण था, तथा उसने ब्रह्मदत्त का आचार्यत्व स्वीकार किया। पश्चात् पांचाल ने वेदों का क्रम लगाया तथा 'शिक्षा' नामक ग्रन्थ का नि.र्ण कर के, 'योगाचार्य' की पदवी प्राप्त की। कण्डरीक सामवेद तथा यजुर्वेद में निष्णात था, तथा उसने ब्रह्मदत्त का छंदोगत्व तथा अध्वर्युत्व स्वीकार किया।

बचे हुये चारों बंधुओं ने एक दरिद्री ब्राह्मण के घर में, ध्रुतिमान्, क्षुमनस्, विद्वान् तथा सत्यदर्शी नामों से जन्म लिया। मत्स्यपुराण में, उनके नाम धृतिमान्, तत्वदर्शी, विद्याचण्ड तथा तपोत्सुक प्राप्त हैं। बाद में, उन ब्राह्मण-पुत्रों ने अरण्य में तपश्चर्या करने का निश्चय किया, एवं उस कार्य के लिये, उन्होंने अपने वृद्ध पिता से अनुमति माँगी। किंतु वृद्ध पिता ने, उसे इन्कार कर दिया। तब इन्होंने अपने पिता की उपजीविका के लिये ब्रह्मदत्त राजा के पास जाने के लिये कहा। वहाँ निम्न-लिखित श्लोक कहने के लिये कह कर, वे बंधु स्वयं अरण्य में चले गयेः—

सप्तव्याधा दशार्णेषु, मृगाः कालिंजरे गिरौ॥
चक्रवाकाः शरद्वीपे, हंसाः सरसि मानसे॥ १॥
तेऽभिजाताः कुरुक्षेत्रे, ब्राह्मणा वेदपारगाः॥
प्रस्थिता दीर्घमध्वानं, यूयं किमवसीदथ॥ २॥

भिन्न भिन्न स्थानों में ये श्लोक भिन्न भिन्न तरह से दिये गये है। किंतु सर्वत्र उनका अर्थ एक ही है।

जैसे ही ब्राह्मण ने ये श्लोक ब्रह्मदत्त के यहाँ जा कर कहे, वैसे ही ब्रह्मदत्त, पांचाल्य, तथा कण्डरीक को अपने पूर्वजन्म का स्मरण हो आया, तथा वे मूर्च्छित हो कर गिर पड़े। बाद में, ब्रह्मदत्त ने उस ब्राह्मण को विपुल धन दिया, तथा विष्वक्सेन का राज्याभिषेक कर, अपनी पत्नी तथा प्रधान के साथ तपश्चर्या करने चला गया।

इन सात बन्धुओं ने जो पित्रार्चन किया, उसके कारण इन्हें अगले सभी जन्मों में अपने पूर्व ब्राह्मण-जन्म का ज्ञान रहा, एवं ये उग्रतम तपस्या करते रहे। इस तपस्या के फलस्वरुप ही, इन्हें उत्तरोत्तर उच्च जन्म की प्राप्ति होती रही, तथा अन्त में इन्हें मोक्ष प्राप्त हुआ। मोक्ष प्राप्ति के पूर्व, इन्हें जो योनि प्राप्त हुयी, एवं इन्हें जो नामांतर मिलते रहे, वे इनके पूर्वसंचित पुण्यकर्मों के कारण ही प्राप्त हुए थे। किन्तु पुराणों में इनके सारे जन्मों का, एवं इन्हे प्राप्त हुए सारे नामों की पूरी जानकारी प्राप्त नहीं है। सभी पुराणों में इस बारे में एकवाक्यता भी नहीं है; तथा कहीं कहीं कथनों को दोहराया भी गाया है।

पितृवर्तिन् की उपर्युक्त कथा मार्कंडेय ऋषि ने भीष्माचार्य को सुनायी थी। श्राद्धकर्म के समय, इन कौशिकपुत्रों के पहले निर्दिष्ट किये श्लोकों का पठन किया जाता है (ह. वं १.२१-२४; मत्स्य. २०-२१; पद्म, सृ. १०)।

पितृवर्धन— (सो.) एक राजा। भविष्य के अनुसार श्राद्धदेव का पुत्र था।

पिनाकिन्— ग्यारह रुद्रों में से एक (म. आ. ६०. २; मं. शां. २०१.१९)। यह ब्रह्माजी के पौत्र, तथा स्थाणु का पुत्र था। अर्जुन के जन्मकाल में यह उपस्थित था (म. आ. ११४.५७)।

२. भगवान् शिव का नामांतर। भगवान शिव का पिनाक नामक धनुष था, जिसके कारण उसे पिनाकिन् नाम प्राप्त हुआ। इसने त्रिपुरासुर को भस्म कर, उससे शशमण्डल का राज्य जीत लिया (भवि. प्रति. ३.८)

महाभारत के अनुसार, भगवान् शंकर का त्रिशूल उसके पाणि (हाथ) से आनत होकर (मुड़कर) धनुषाकृति बन गया। इस कारण, उस धनुष को 'पिनाक' एवं उसके धारण करनेवाले शिव को 'पिनाकिन्' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. २७८.१८ (२८९.१७–१८ नीलकंठ टीका)।

पिप्पल— मित्र नामक आदित्य एवं रेवती के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र (म. ६. १८. ६)।

२. एक ब्राह्मणभक्षक राक्षस, जो अगस्त्य ऋषि के द्वादशवर्षीय सत्र के समय लोगों को त्रस्त करता था।

३. एक कश्यप कुलोत्पन्न ब्राह्मण। उग्र तपस्या के कारण इसका अहंकार काफ़ी बढ़ गया था। पर, एक बार माता-पिता की सेवा करके सर्ववश्यता प्राप्त करनेवाले सुकर्मन् ऋषि को देखकर इसका अहंकार जाता रहा (पद्म, भू. ६१-६३; ८४; सुकर्मन् देखिये)।

पिप्पलाद-- उपनिषद्कालीन एक महान् ऋषि. एवं अथर्व वेद का सर्व प्रथम संकलनकर्ता। यह व्यास की अथर्वन् शिष्य परम्परा में से देवदर्श (वेदस्पर्श) का शिष्य था (व्यास देखिये, ब्रह्म. उ. १)। पिप्पलाद का शब्दार्थ, पीपल के फल खाकर जीनेवाला (पिप्पल+अद्) होता है।

अथर्ववेद की पिप्पलाद नामक एक शाखा उपलब्ध है। इस शाखा का प्रवर्तक शायद यही होगा।

इसके माता-पिता के नाम के बारे में, भिन्न-भिन्न जानकारी प्राप्त है। दधीचि ऋषि को प्रातिथेयी (वडवा अथवा गभस्तिनी) नामक पत्नी से यह उत्पन्न हुआ। किन्तु कई ग्रथों में इसके माता का नाम सुवर्चा अथवा सुभद्रा दिया गया है। इनमें से सुभद्रा दधीचि ऋषि की दासी थी। सम्भवतः यह दधीचि का दासीपुत्र था।

अन्य कई ग्रंथों में, इसे याज्ञवल्क्य एवं उसकी बहन का पुत्र कहा गया है। फिर भी यह दधीचि ऋषि के पुत्र के रूप में विख्यात है।

दधीचि की मृत्यु के समय, उसकी पत्नी प्रातिथेंयी गर्भवती थी। अपने पति की मृत्यु का समाचार सुनकर उसने उदरविदारण कर अपना गर्भ बाहर निकाला तथा उसे पीपल वृक्ष के नीचे रखकर, दधीचि के शव के साथ सती हो गयी। उस गर्भ की रक्षा पीपल वृक्ष ने की। इस कारण इस बालक को पिप्पलाद नाम प्राप्त हुआ।

पशु-पक्षियों ने इसकी रक्षा की, तथा सोम ने इसे सारी विद्याओं में पारंगत कराया। बाल्यकाल में मिले हुए कष्टों का कारण, शनि ग्रह को मानकर, इसने उसे नीचे गिराया। त्रस्त होकर शनि इसकी शरण में आया। इसने शनिग्रह को इस शर्त पर छोड़ा कि, वह बारहवर्ष से कम आयु वाले बालकों को तकलीफ़ न दे। कई ग्रन्थों में बारह वर्ष के स्थान पर सोलह वर्ष का निर्देश भी प्राप्त है। इसीलिये आज भी शनि की पीड़ा से छुटकारा पाने के लिए पिप्पलाद, गाधि एवं कौशिक ऋषियों का स्मरण किया जाता है (शिव. शत. २४-२५)।

एक बार अपने पिता पर क्रोधित होकर इसने एक कृत्या का निर्माण कर, उसे याज्ञवल्क्य पर छोड़ा। याज्ञवल्क्य शंकर की शरण में गया। इस कृत्या का नाश किया तथा याज्ञवल्क्य एवं पिप्पलाद में मित्रता स्थापित करायी (स्कन्द. ५.३. ४२)।

यही कथा ब्रह्मपुराण में कुछ अलग ढंग से दी गयी है। अपनी माता-पिता की मृत्यु का कारण देवताओं को मानकर, उनसे बदला लेने के लिए इसने शंकर की आराधना की, तथा एक कृत्या का निर्माण करके उसे देवों पर छोड़ा। यह देखकर शंकर ने मध्यस्थ होकर देवों तथा इसके बीच मित्रता स्थापित करायी। बाद में, अपनी माता-पिता को देखने की इच्छा उत्पन्न होने के कारण, देवों ने स्वर्ग में इसे दधीचि के पास पहुँचाया। दधीचि इसे देखकर प्रसन्न हुआ तथा इससे विवाह करने के लिए आग्रह किया। स्वर्ग से वापस आकर इसने गौतम की कन्या से विवाह किया (ब्रह्म. ११०.२२५)।

एकबार, जब यह पुष्पभद्रा नदी में स्नान करने जा रहा था, तब वहाँ अनरण्य राजा की कन्या पद्मा को देखकर इसने उसकी माँग की। शापभय से अनरण्य राजा ने अपनी कन्या इसे प्रदान की। जिससे इसे दस पुत्र हुये (शिव. शत. २४-२५)।

दधीचि के देहत्याग के स्थान पर कामधेनु ने अपनी दुग्धधारा छोड़ी। इसीसे इस स्थान को 'दुग्धेश्वर' कहते थे। यहाँ पिप्पलाद तपश्चर्या करता था। एकबार जब यह अपनी तपस्या में निमग्न था तब वहाँ कोलासुर आकर इसका ध्यानभंग करने के हेतु इसे पीड़ित करने लगा। तत्काल, इसके पुत्र कहोड़ ने एक कृत्या का निर्माण करके उससे कोलासुर का वध कराया। इसी से इस स्थान को 'पिप्पलादतीर्थ' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १५५, १५७)

नर्मदा-तट पर इसने तपस्या की थी। इसी से उस स्थान को 'पिप्पलाद-तीर्थ' कहते हैं (स्कन्द. ५.३.४२)।

शरशय्या पर पडे हुए भीष्म के पास अन्य ऋषिगणों के साथ यह भी वहाँ आया था (म. शा. ४७.६६ पंक्ति ६)।

पैप्पलाद संहिता--अथर्ववेद की कुल दो संहितायें उपलब्ध हैं। उनमें से एक की रचना शौनक ने की है, एवं दूसरी का रचयिता पिप्पलाद है। पिप्पलाद विरचित अथर्ववेद की संहिता 'पैप्पलाद संहिता' नाम से प्रसिद्ध है। यह संहिता बीस काण्डों की है, तथा उस संहिता का प्रथम मंत्र 'शन्नो देवीः' है। पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य' में एवं ब्रह्मयज्ञान्तर्गत तर्पण में, इसी मंत्र का उद्धरण प्राप्त है। व्हिटने के अनुसार, 'पैप्पलाद संहिता' में 'शौनक संहिता' की अपेक्षा, 'ब्राह्मण पाठ' अधिक हैं, तथा अभिचारादि कर्म भी अधिक दिये गये हैं। (व्हिटने कृत अथर्ववेद अनुवाद-प्रस्तावना पृ. ८०)।

अथर्ववेदसंहिता का संकलन करते समय पिप्पलाद ने ऐन्द्रजालिक मंत्रों का संग्रह किया था। कुछ दिनों बाद पैप्पलाद शाखा के नौ खण्ड हुये जिनमें शौनक तथा पैप्पलाद (काश्मीरी) प्रमुख थे। अथर्ववेद के पैप्पलाद शाखा के मूलपाठ को शार्वे तथा ब्लूमफील्ड ने हस्तलिपि के फोटो-चित्रों में सम्पादित किया है, जिसका कुछ अंश प्रकाशित भी हो चुका है।

अन्यग्रंथ—पिप्पलाद का 'पैप्पलाद ब्राह्मण' नामक एक ब्राह्मणग्रंथ उपलब्ध है, जिसके आठ अध्याय है। उसके अतिरिक्त 'पिप्पलाद श्राद्धकल्प' एवं 'अगस्त्य कल्पसूत्र' नामक पिप्पलादशाखा के और दो ग्रंथ भी उपलब्ध हैं।

तत्त्वज्ञान—प्रश्नोपनिषद में एक तत्त्वज्ञानी के नाते इसका निर्देश प्राप्त है। मोक्ष शास्त्र को पैप्पलाद कहने की प्रथा थी (गर्भोपनिषद्)।

प्रश्नोपनिषद, अथर्ववेद का एक उपनिषद है। पिप्पलाद के पास सुकेशा भारद्वाज, शैव्य सत्यकाम, सौर्यायणि गार्ग्य, कौसल्य आश्वलायन, भार्गव वैदर्भी तथा कबंधिन् कात्यायन आदि ऋषि ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने आये थे। उन्हें एक वर्ष तक आश्रम में रहने के बाद, प्रश्न पूछने की अनुज्ञा प्राप्त हुयी। उन्होंने जिस क्रम से प्रश्न पूछे वह ब्रह्मज्ञान की स्वरूपता समझने के लिये पर्याप्त हैं।

कबंधिन् कात्यायन ने प्रथम प्रश्न किया, 'किस मूलतत्त्व से सृष्टि पैदा हुयी?' पिप्पलाद ने कहा, 'प्रजापति ने 'रयि' (अचेतन) एवं प्राणों (चेतन) के मिथुन से सृष्टि का निर्माण किया'

भार्गव वैदर्भी ने दूसरा प्रश्न किया 'उत्पन्न सृष्टि की धारणा किन देवताओं द्वारा होती है। पिप्पलाद ने उत्तर दिया, 'प्राण देवता द्वारा सृष्टि की धारणा होती है'।

कौसल्य आश्वलायन ने तीसरा प्रश्न किया 'प्राण की उत्पत्ति कैसे होती है? पिप्पलाद ने उत्तर दिया, 'आत्मा से'

सौर्यायणि गार्ग्य ने चौथा प्रश्न किया' 'स्वप्न में जाग्रत तथा निद्रित कौन रहता हैं?' उत्तर मिला, 'निद्रा में आत्मा केवल जाग्रत रहती है, शेष सब निद्रा में विलीन हो जाते हैं।

शैव्य सत्यकाम ने पाचवाँ प्रश्न किया, 'प्रणव का ध्यान करने से मानव की इच्छा कहाँ तक सफल होती है?" उत्तर मिला, "सदैव प्रणव ध्यान करनेवाला मनुष्य आत्मज्ञान प्राप्त कर अमरता को प्राप्त होता है।"

सुकेशा भारद्वाज ने छठाँ प्रश्न किया, 'षोडश कल पुरुष' (परमात्मा) का रूप क्या है?' पिप्पलाद ने उत्तर दिया, "वह हर एक व्यक्ति के शरीर में निवास करता है, जिसके कारण वह सर्वव्यापी है। बहती गंगा जिस प्रकार समुद्र में विलीन हो जाती है उसी प्रकार समस्त सृष्टि उसी में विलीन हो जाती है। केवल पुरुष शेष रहता है। इस ज्ञान की प्राप्ति पर मानव को अमरता प्राप्त होती है। वही परब्रह्म है।"

इन छै संवादों में पिप्पलाद द्वारा व्यक्त किये गये विचारों में उनके क्रमबद्ध तत्त्वज्ञान का प्रत्यक्ष परिचय प्राप्त है।

२. परिक्षित् राजा के पास आया हुआ एक ऋषि (भा. १.१९.१०)।

पिप्पलायन--(स्वा. प्रिय.) एक भगवद्भक्त राजा। ऋषभ देवों द्वारा जयंती नामक स्त्री से उत्पन्न नौ सिद्धपुत्रों में से एक (भा. ५.४.११; ११.३.३५)।

पिप्पल्य--कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

पिप्रु--वैदिक कालीन एक असुर राजा, एवं इंद्र का शत्रु। ऋजिश्वन् ऋषि के लिए इंद्रने इसको कई बार पराजित किया था (ऋ. १.१०१.१-२; ४.१६.१३; ५.२९.११; ६.२०.७)।

यह अनेक दुर्गों का स्वामी था (ऋ. १.५१.५)। यह दास था (ऋ. ८.३२.२); एवं काली संतानोंवाले तथा काली जाति के लोग इसके मित्र थे।

रॉथ के अनुसार, यह एक दानव था (सेन्ट पीटर्सबर्ग कोश)। लुडविग इसे 'मानवशत्रु' मानते हैं। 'पिप्रु' का शब्दार्थ 'प्रतिरोधक' होता है।

पिलि--भृगुकुल का एक गोत्रकार।

पिशंग--वैदिककालीन एक ऋषि। पञ्चविंश ब्राह्मण के अनुसार, सर्पोत्सव करने वाले दो 'उन्नेतृ' पुरोहितों में से यह एक था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

२. धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जलकर मर गया था।

३. मणिवर एवं देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक (मणिवर देखिये)।

पिशाच--दानवों का एक लोकसमूह। ये लोग उत्तर-पश्चिम सीमा प्रदेश, दर्दिस्थान, चित्रल आदि प्रदेशों में रहते थे। काफ़िरिस्थान के दक्षिण की ओर एवं लमगान (प्राचीन-लम्याक) प्रदेश के समीप रहने वाले, आधुनिक 'पशाई-काश्मिर' लोग सम्भवतः यहीं

हैं। ग्रियर्सन, ने भी ध्वनिशास्त्र की दृष्टि से इस मत को समीचीन माना है। (पिशाच, ज. रॉ. ए. सो. १९५०; २९५–२८८)

'पिशाच' का शब्दार्थ 'कच्चा माँस का भक्षण करने वाला है'। अर्थववेद के अनुसार, इन लोगों में कच्चे माँस के भक्षण करने की प्रथा थी, इस कारण इन्हें पिशाच नाम प्राप्त हुआ (अ. वे. ५. २९. ९)। वैदिक वाङ्मय में निर्दिष्ट दैत्य एवं दानवों का उत्तर-कालीन विकृत रूप पिशाच है। पिशाचों का अर्थ सम्भवतः 'वैताल' अथवा 'प्रेतभक्षक' था।

अर्थववेद में दानवों के रूप में इसका नाम कई बार आया है (अ. वे. २. १८. ४; ४. २०. ६–९; ३६. ४; ३७. १०; ५. २९. ४–१०; १४; ६. ३२. २; ८. २. १२; १२. १. ५०)। इन लोगों का निर्देश ऋग्वेद में 'पिशाचि' नाम से किया गया है (ऋ. १. १३३. ५)। राक्षसों तथा असुरों के साथी मनुष्य एवं पितरों के विरोधी लोगों के रूप में इनका निर्देश वैदिक साहित्य में स्थान स्थान पर हुआ है (तै. सं. २. ४; १. १; का. सं. ३७–१४) किन्तु कहीं कहीं इनका उल्लेख मानव रूप में भी हुआ है। कुछ भी हो यह लोग संस्कारों से हीन व बर्बर थे और इसी कारण यह सदैव घृणित दृष्टि से देखे जाते थे। उत्तर पश्चिमी प्रदेश में रहने वाले अन्य जातियों के समान ये भी वैदिक आर्य लोगों के शत्रु थे। सम्भवतः मानव माँस भक्षण की परस्परा इनमें काफ़ी दिनों तक प्रचलित रही।

ब्राह्मण ग्रन्थों के अनुसार, इन लोगों में, 'पिशाच-वेद' अथवा 'पिशाचविद्या' नामक एक वैज्ञानिक विद्या प्रचलित थी (गो. ब्रा. १. १. १०; आश्व. श्रौ. सू. १०. ७. ६)। अथर्ववेद की एक उपशाखा 'पिशाचवेद' नाम से भी उपलब्ध है (गो. ब्रा. १. १०)।

ब्रह्मपुराण के अनुसार, पिशाच लोगों को गंधर्व, गुह्यक, राक्षस के समान एक 'देवयोनिविशेष' कहा गया है। सामर्थ्य की दृष्टि से, इन्हे क्रमानुसार इस प्रकार रखा गया है–गंधर्व, गुह्यक, राक्षस एवं पिशाच। ये चारों लोग विभिन्न प्रकार से मनुष्य जाति को पीड़ा देते हैं– यक्ष गंधर्व 'दृष्टि' से, राक्षस शरीरप्रवेश से एवं पिशाच रोगसदृश पीड़ा उत्पन्न करके। ये सारे लोग पुलस्त्य, पुलह एवं अगस्त्य वंशोत्पन्न थे। इनमें से पिशाचो का स्वतंत्र वंश उपलब्ध है। वह रुद्र के उपासक गणों में माना जाता है (ब्रह्मांड. २. ७. ८८–१७०)।

महाभारत में, एक विशेष भूतयोनि के रूप में पिशाचों का निर्देश प्राप्त है। ये कच्चा माँस खानेवाले व रक्त पीनेवाले लोग थे (म. द्रो. ४८.४७)। इन्होंने घटोत्कच के साथ रह कर उसकी सहायता की थी और कर्ण पर आक्रमण किया था (म. द्रो. १४२. ३५;१५०.१०२)। अर्जुन और कर्ण के युद्ध में ये उपस्थित थे (म. क. ६३.३१)।

प्रघस नामक एक राक्षस व पिशाचों का संघ था (म. श. २६९.२)। पिशाचों के राजा के रूप में रावण का निर्देश भी कई जगह प्राप्त है (म. व. २५९.३८)। ब्रह्मा एवं कुबेर के सेवक के रूप में इनका निर्देश प्राप्त है (म. स. ११. ३१)। शिवजी के पार्षदो के रूप में भी पिशाचों का निर्देश आता है। गोकर्ण पर्वत पर इन लोगों ने शिवजी की आराधना की थी (म. व. ८३.२३)। मुञ्जवत पर्वत पर पार्वती सहित तपस्या करते हुए शिव की आराधना इन लोगों ने की थी (म. आश्र. ८.५)।

पैशाची भाषा एवं संस्कृति—इनकी भाषा पैशाची थी, जिसमें 'बृहत्कथा' नामक सुविख्यात ग्रंथ 'गुणाढ्य' (४ थी शती ई. पू.) ने लिखा था। गुणाढ्य का मूल ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं है, किंतु उसके आधार लिखे गये 'कथासरित्सागर' (२ री शती ई.) एवं 'बृहत्कथा-मंजरी' नामक दो संस्कृत ग्रंथ आज भी प्राप्त हैं, एवं संस्कृत साहित्य के अमूल्य ग्रंथ कहलाते हैं। इनमें से 'कथासरित्सागर' का कर्ता सोमदेव हो कर, 'बृहत्कथा-मंजरी' को क्षेमेंद्र ने लिखा है।

इन सारे ग्रंथों से अनुमान लगाया जाता है कि, ईसासदी के प्रारंभकाल में, पिशाच लोगों की भाषा एवं संस्कृति प्रगति की चरम सीमा पर पहुँच गयी थी। यहाँ तक, कि, इनकी भाषा एवं ग्रंथों को पर्शियन सम्राटों ने अपनाया था। इनकी यह राजमान्यता एवं लोकप्रियता देखने पर पैशाची संस्कृति एवं राजनैतिक सामर्थ्य का पता चल जाता है। सर्वप्रथम मध्यएशिया में रहनेवाले ये लोग, धीरे धीरे भारतवर्ष के दक्षिण सीमा तक पहुँच गये।

महाभारतकालीन पिशाच जनपद के लोग। ये लोग युधिष्ठिर की सेना में क्रौंचव्यूह के दाहिने पक्ष की जगह खड़े किये थे (म. भी. ४६.४९)। इनमें से बहुत से लोग भारतीययुद्ध में मारे गये थे (म. आश्र. ३९.६)।

दुर्योधन की सेना में राजा भगदत्त के साथ पिशाचदेशीय सैनिक थे (म. भी. ८३.८)। श्रीकृष्ण ने किसी समय पिशाच देश के योद्धाओं को परास्त किया था (म. द्रो. १०.१६)।

३. एक यक्ष का नाम (म. स. १०.१५)।

पिशाचि--पिशाच लोगों का नामांतर (पिशाच देखिये)।

पिशुन--कुरुक्षेत्र के कौशिक ब्राह्मण के सात पुत्रों में से एक। इसके अन्य भाइयों में पितृवर्तिन् प्रमुख था (पितृवर्तिन् देखिये)।

पीठ--नरकासुर का सेनापति, एक असुर। भगवान् कृष्ण ने इसका वध किया (म. द्रो. १०.५; भा. १०. ५९.१४)।

पीडापर--कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक।

पीतहव्य--वीतहव्य का नामांतर।

पीतायुध--(सो. पूरु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, चारुपद इसीका नामांतर था (चारुपद देखिये)।

पीवर--तामस मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

पीवरी--अग्निष्वान्त पितरों की कन्या तथा व्यास ऋषि के पुत्र शुक की स्त्री। इसे कृष्ण, गौर, प्रभु, शंभु तथा भूरिश्रुत नामक पाँच पुत्र एवं कीर्तिमती नामक एक कन्या थी। कीर्तिमती का विवाह अणुह राजा से हुआ था, एवं उससे उसे ब्रह्मदत्त नामक पुत्र हुआ था (ब्रह्मांड. ३.१०.८०-८१)।

पद्मपुराण में, इसके पुत्रों के नाम कृष्ण, गौरप्रभ एवं शंभु तथा कन्या का नाम कृत्वी बताया गया है (पद्म. सृ. ९-४०-४१ १; पुलह २. देखिये)।

पितरों द्वारा उत्पन्न की गयी मानसकन्याओं में पीवरी एक थी (पितरः देखिये)।

पुंजिकस्थला--दस प्रधान अप्सराओं में से एक। अर्जुन के जन्ममहोत्सव में इसने गाया था (म. आ. ११४.४६)। यह कुबेर की सभा में रहकर, उसकी उपासना करती थी (म. स. १०.१०)।

शाप के कारण, अगले जन्म में यह कुंजर नामक वानर की कन्या अंजना हुयी (वा. रा. कि. ६६; अंजना देखिये)।

पुंजिकस्थली--वैशाख में सूर्य के साथ रहनेवाली एक अप्सरा (भा. १२.११.३४)।

पुंडरीक--(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंश का एक राजा। इसे पुंडरिकाक्ष भी कहते थे (पद्म. सृ. ८)।

यह नभ राजा का पुत्र था। इसे क्षेमधन्वन् अथवा क्षेमधृत्वन् नामक पुत्र था (क्षेमधृत्वन् पुंडरिक देखिये)।

२. कश्यप वंश का एक नाग, जो पाताललोक में रहता था (म. उ. १०३.१३, बभ्रुवाहन देखिये)।

३. यम की सभा का एक सभासद (म. स. ८. १४)।

४. एक तीर्थसेवी ब्राह्मण, जिसका नारद से 'सर्वोत्तमतत्व' के संबंध में संवाद हुआ था (म. अनु. १८६. ३; पद्म. उ. ८०)।

इसे भगवान् नारायण का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ था, एवं उसके साथ परमधाम की प्राप्ति भी हुयी थी (म. अनु. १२४)।

५. एक दिग्गज (म. द्रो. १२१.२५ बंबई प्रत)।

६. एक राजा, जो अम्बरीष राजा का मित्र था। इन दोनों ने अधर्म का आचरण किया। बाद में पश्चाताप कर के इन्होंने जगन्नाथ की आराधना की, जिस कारण इन्हें भगवान् का प्रत्यक्ष दर्शन हुआ, एवं मोक्ष की प्राप्ति हुयी (स्कंद. २.२.४-५)।

७. नागपुर का नाग राजा। इसके दरबार में ललित नामक एक गायक था। 'कामदा एकादशी' का व्रत करने के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. ४०)। 'कामदाएकादशी' का माहात्म्य कथन करने के कारण इसकी कथा दी गयी है।

८. एक भगवद्भक्त, जिसका 'ॐ नमो नारायणाय' मंत्र से उद्धार हुआ। अंत में विष्णु इसे अपने साथ वैकुंठ ले गया (पद्म. उ. ८१)।

९. एक भगवद्भक्त। यह विदर्भ नगर के मालव नामक ब्राह्मण का भतीजा था। इसके घर विष्णु एक मास तक रहा था। इसका भरत नामक एक दुष्टचरित्र भाई था। भरत के मृत्योपरांत, इसने पुष्करतीर्थ में उसका क्रियाकर्म किया, जिस के कारण भरत का उद्धार हुआ (पद्म. उ. २१५.)।

१०. कुरुक्षेत्र के कौशिक ब्राह्मण के सात पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

पुंडरीका--एक अप्सरा, जो कश्यप तथा मुनि की कन्या थी। इसने अर्जुन के जन्मोत्सव में नृत्य किया था (म. आ. ११४.५२)।

२. वसिष्ठ ऋषि की कन्या।

पुंडरीकाक्ष— इक्ष्वाकु वंश के पुंडरीक राजा का नामांतर (पुंडरीक १. देखिये)।

२. भगवान् श्रीकृष्ण का नामांतर (म. उ. ६८.६)।

पुंडरीयक-- एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३४)।

पुंडलिक— कुरुक्षेत्र के कौशिक ब्राह्मण के सात पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

पुंड्र— (सो. अनु.) अनुवंश का एक राजा। यह बलि राजा के छः पुत्रों में से एक था (अंग एवं बलि देखिये)।

२. पुंड्र देश के लोगों के लिये प्रयुक्त एक सामूहिक-नाम। इन लोगों को पाण्डु राजा ने जीता था (म. आ. १०५.१२)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय ये लोग भेंट लेकर आये थे (म. स. ४८.१७)

कर्ण ने अपने दिग्विजय के समय इन लोगों को, एवं इनके पौंड्रक वासुदेव नामक राजा को जीता था (म. क. ५.१९)। पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ के समय अर्जुन ने इन्हें जीता था (म. आश्व. ८४.२९)।

३. वसुदेव के सुतनु से उत्पन्न दो पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र।

४. ब्रह्माण्ड के अनुसार, व्यास के यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य।

पुंड्रक—एक प्राचीन क्षत्रिय नरेश, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.२६)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह 'दुकूलादि' भेंट लाया था (म. स. ४८.४७)।

पुण्य--महेन्द्रपर्वत पर रहनेवाले दीर्घतपस् नामक तपस्वी के दो पुत्रों में से एक। इसका भाई पावन था, जो अत्यधिक गँवार था। अपने माता-पिता की मृत्यु के उपरांत इसने अपने शोकग्रस्त भाई पवन को उपदेश देकर उसे शोक से मुक्त किया (यो. वा. ५.१९-२१)।

२. (सो. ऋक्ष.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, यह पुण्यवान नामक राजा का पुत्र था।

पुण्यकृत्—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३०)।

पुण्यजन—एक राक्षस। कुशस्थली (द्वारिका) का शर्यातवंशीय राजा ककुद्मिन् रैवत जब ब्रह्माजी से मिलने गया था, तब उसकी अनुपस्थिति में इसने उसके राज्य पर अधिकार जमा लिया। इसके भय से त्रस्त होकर, रैवत के सौ भाई राज्य से भाग कर इधर उधर चले गये। आगे चलकर शर्यातवंश हैहयवंश में विलीन हो गया (विष्णु. ४.२.१-२)।

पुण्यजनी—मणिभद्र नामक शिवगण की पत्नी। इसके पिता का नाम ऋतुस्थ था। मणिभद्र से इसे तेइस पुत्र हुये (ब्रह्मांड ३.७.१२२-१२५; मणिभद्र देखिये)।

पुण्यनामन्--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ५५)।

पुण्यनिधि—मथुरा का चन्द्रवंशी राजा। इसने रामेश्वर में रहकर विष्णु की आराधना की। तब इसकी तपस्या से प्रसन्न होकर, भगवान विष्णु 'सेतुमाधव' नाम से रामेश्वर में निवास करने लगे (स्कंद. ३.५१)।

पुण्यवत्--(सो. ऋक्ष.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह वृषभ राजा का पुत्र था। इसे 'पुष्यवत्' नामांतर भी प्राप्त था।

पुण्यशील—गोदावरी के तट पर निवास करनेवाला एक ब्राह्मण। एक बार इसने एक वंध्या स्त्री के ब्राह्मण पति को श्राद्धकर्म के लिए बैठाया। इस पापकर्म के कारण इसका मुख गर्दभ के समान हो गया। अन्त में, वेंकटाचल के स्वामितीर्थ में तथा आकाशगंगातीर्थ में स्नान करने के उपरांत, इसे इस शाप से छुटकारा मिला, एवं इसका मुख पहले की तरह हो गया (स्कंद. २.१.२२)।

पुण्यश्रवस्--एक ऋषि। विष्णुभक्त होने के कारण, कृष्णावतार के समय इसने नंद के भाई के घर, मे लवंगा नामक गोपी के रूप में जन्म लिया (पद्म. पा. ७२.१५२)।

पुत्र--स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

पुत्रक--(सो. ऋक्ष.) एक राजा। वायु के अनुसार यह कुरु राजा का पुत्र था। इसका 'प्रजन' नामांतर भी प्राप्त है।

पुत्रव--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

पुत्रसेन--मैत्रायणी संहिता में निर्दिष्ट किसी एक व्यक्ति का नाम (मै. सं. ४.६.६)।

पुत्रिकषेण--(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। वायु के अनुसार, हाल तथा पंचसप्तक राजाओं के पश्चात् यह राजगद्दी पर बैठा (वायु. ९९.३५३)। इसके पुरीन्द्रसेन, पुरीषभीरु तथा प्रविल्लसेन नामांतर भी प्राप्त हैं। इसने इकीस वर्षों तक राज्य किया।

पुनर्दत्त--सांख्यायन आरण्यक में निर्दिष्ट एक आचार्य (सां. आ. ८.८)।

पुनर्भव समाभाग वा भागवत --(शुंग. भविष्य.)

एक शुंगवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार यह वज्रमित्र राजा का पुत्र था।

पुनर्वत्स काण्व--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७)।

पुनर्वसु--(सो. कुकुर.) एक यादव राजा। भागवत के अनुसार यह दरिद्योत का, वायु तथा विष्णु के अनुसार अभिजित का, तथा मत्स्य के मतानुसार नल या नंदनोदरदुंदुभि का पुत्र था। इसके आहुक तथा आहुकी नामक दो पुत्र थे।

२. दक्ष की कन्या, जो सोम की पत्नी थी।

पुनर्वसु आत्रेय—एक प्राचीन आयुर्वेदाचार्य। चरक संहिता के मूल ग्रंथ 'अग्निवेशतंत्र' के रचयिता अग्निवेश का तथा उसके सहपाठी भेल आदि का यह गुरु था।

यह ब्रह्मा के मानसपुत्र देवर्षि अत्रि का पुत्र था। आत्रेय शब्द से 'अत्रिपुत्र' 'अत्रिवंशज' एवं 'अत्रि-शिष्यपरम्परा' का बोध होता है, किन्तु यहाँ 'आत्रेय' शब्द पुत्र-वाचक ही है। क्योंकि, चरकसंहिता में विभिन्न स्थानों पर इसके लिये 'अत्रिसुत', 'अत्रि-नंदन' आदि का स्पष्ट निर्देश है (चरक. सू. ३.२९; ३०.५०.)।

इसके पिता अत्रि ऋषि स्वयं आयुर्वेदाचार्य थे। 'काश्यपसंहिता' के अनुसार, इन्द्र ने कश्यप, वसिष्ठ, अत्रि एवं भृगु ऋषियों को आयुर्वेद की शिक्षा दी थी। अश्वघोष के अनुसार, आयुर्वेद चिकित्सातंत्र का जो भाग अत्रि ऋषि पूरा न कर सके, उसे उसके पुत्र पुनर्वसु आत्रेय ने पूर्ण किया (अश्वघोष-'बुद्धचरित' १.४३)।

इसकी माता का नाम चन्द्रभागा था; जिस कारण इसे 'चान्द्रभाग' अथवा चान्द्रभागी नामांतर भी प्राप्त है (काश्यप. उपोद्घात पृ. ७७)। कृष्णयजुर्वेदीय होने के कारण इसे 'कृष्णात्रेय' भी कहते हैं (चरक. सू. ११.६५)।

अपने पिता अत्रि ऋषि तथा भरद्वाज ऋषि से आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कर, यह आयुर्वेदाचार्य बना। सामान्यतः यह भरद्वाज ऋषि का समकालीन माना जाता है। किन्तु एक तिब्बतीय कथा के अनुसार, सुप्रसिद्ध बौद्धभिक्षु जीवक की आयुर्वेदीय शिक्षा आचार्य आत्रेय द्वारा तक्षशिला में हुयी थी।

पुनर्वसु आत्रेय यायावर ऋषि थे, एवं इनके रहने का कोई स्थान निश्चित न था। यह पर्यटन करते हुये आयुर्वेद का उपदेश देते थे, एवं विद्वानों की सभाओं में भाग लेते थे। महर्षि भरद्वाज के द्वारा आयोजित एक 'वैद्यक-सभा' में यह उपस्थित थे।

शिष्य—आत्रेय के कुल छः शिष्य थे, जिनके नाम इस प्रकार थेः-अग्निवेश, भेल, जतूकर्ण, पराशर, हारीत तथा क्षीरपाणि (चरक. १.३०;३७)।

ग्रन्थ—इसका सुविख्यात ग्रन्थ 'आत्रेयसंहिता' है। इस ग्रन्थ के अनेक हस्तलेख विभिन्न हस्तलेखसंग्रहों में प्राप्त हैं।

आजकाल प्रकाशित 'हारीतसंहिता' में पाँच विभिन्न 'आत्रेय संहिताओं' के निर्देश प्राप्त हैं, जिनकी श्लोक-संख्या क्रमशः चौवीस हज़ार, बारह हज़ार, छः हज़ार, तीन हज़ार एवं पंद्रह सौ दी गयी हैं।

आत्रेय के नाम पर लगभग तीस 'आयुर्वेदीय योग' उपलब्ध हैं। इनमें से 'बल तैल' एवं 'अमृताद्य तैल' का निर्देश चरक संहिता में प्राप्त है (चरक. चि. २८. १४८-१५६; १५७-१६४)।

पुरंजन--एक प्राचीन राजा। स्वायंभुव मन्वन्तर के प्राचीनबर्हि राजा को ब्रह्मज्ञान का उपदेश देते समय, नारद ने इस राजा का निर्देश किया था (भा. ४.२५-२९)।

पुरंजय--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा। इसे 'इंद्रवाह' एवं 'ककुत्स्थ' नामांतर भी प्राप्त थे।

२. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा। विष्णु, मत्स्य, एवं वायु के अनुसार, यह सृंजय राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, इसे 'वीर' नामांतर भी प्राप्त था।

३. (सो. पूरु. भविष्य.) एक पूरुवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार, यह 'मेधावि' राजा का पुत्र था।

४. एक नागवंशीय राजा। विष्णु के अनुसार, यह किलकिला का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार यह मथुरा का राजा था। इसके पिता का नाम विंध्यशक्ति था।

५. (सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा। भागवत के अनुसार, यह जरासंध के वंश का अंतिम राजा था। इसके प्रधान का नाम शुनक था, जिसने इसका वध कर 'प्रद्योत' नामक स्वतंत्र राजवंश की नींव डाली (भा. १२.१.२)।

विष्णु में इसका नाम 'रिपुंजय' दिया गया है (४. रिपुंजय देखिये)।

६. (भविष्य) मागधवंशीय विश्वस्फूर्ति राजा का नामांतर। पापबुद्धि होकर भी यह अति पराक्रमी था। इसकी राजजधानी पद्मावती नगरी थी। गंगाद्वार से प्रयाग तक का सारा प्रदेश इसके राज्य में शामिल था।

इसने 'वर्णाश्रम व्यवस्था' को नष्ट कर, पुलिंद, यदु तथा मद्रक नामक नये वर्ण स्थापित किये (भा. १२.१. ३६-४०)।

पुराणों में दी गयी वंशावली में इसका नाम अप्राप्त है।

पुरंदर—वैवस्वत मन्वन्तर के इन्द्र का नामांतर (इन्द्र देखिये)। मत्स्य पुराण में निर्दिष्ट अठारह वास्तुशास्त्रकारों में पुरंदर का निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २५२. २-३)। अन्य वास्तुशास्त्रकारों के नाम इस प्रकार हैः— भृगु, अत्रि, वसिष्ठ, विश्वकर्मा, मय, नारद, नग्नजित्, विशालाक्ष, ब्रह्मा, कुमार, नन्दीश, शौनक, गर्ग वासुदेव, शुक्र, बृहस्पति, अनिरुद्ध।

महाभारत के अनुसार, भगवान् शिव ने धर्म, अर्थ, एवं काम शास्त्र पर 'वैशालाक्ष' नामक एक ग्रन्थ की रचना की, जिसकी अध्यायसंख्या कुल दस हज़ार थी। उस बृहद्ग्रन्थ का संक्षिप्तीकरण, आचार्य पुरंदर ने किया। इसके इस ग्रन्थ का नाम 'बाहुदंतक' था, जिसमें अध्यायों की संख्या पाँच सहस्र थी। संभवतः आचार्य पुरंदर की माता का नाम बहुदंती था। हो सकता है इसी कारण, इसने अपने इस ग्रन्थ का नाम 'बाहुदंतक' रक्खा हो (म. शां. ५९.८९-९०)।

२. तप अथवा पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र। महान् तपस्या के पश्चात् 'तप' अग्नि को 'तपस्याफल' की प्राप्ति हुयी। उसे प्राप्त करने के लिए, पुरंदर नाम से स्वयं इंद्र ने अग्नि के पुत्र के रूप में जन्म लिया था (म. व. २११.३)।

पुरंधि—वध्रिमती नामक एक वैदिक स्त्री का नामान्तर (ऋ. १.११६.१२)। अश्विनों ने इसे हिरण्यहस्त नामक एक पुत्र प्रदान किया था।

पुरय—एक वेदिक राजा। ऋग्वेद की एक दानस्तुति में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६.६३.९)। भरद्वाज को इस के द्वारा अश्वों की प्राप्ति हुयी थी।

पुराण—काठकसंहिता में निर्दिष्ट एक ऋषि का नाम (का. सं. ३९.७)

२. कुशिककुल का मंत्रकार। इसे 'पूरण' नामान्तर भी प्राप्त था।

पुरींद्रसेन—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार, यह मदुलक का पुत्र था। इसे पुत्रिकषेण नामान्तर भी प्राप्त है (पुत्रिकषेण देखिये)।

पुरीमत्—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा भागवत के अनुसार, यह गोमतीपुत्र का पुत्र था। इसे 'पुलीमत्' एवं 'पुलोम' नामांतर भी प्राप्त थे।

पुरीषभीरु—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। भागवत के अनुसार, यह तलक का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार, यह पंचपत्तलक का पुत्र था। इसे 'पुत्रिकषेण' नामान्तर भी प्राप्त है (पुत्रिकषेण देखिये)।

पुरीष्य—पंचचित नामक अग्नि का नामान्तर। यह विधाता नामक आठवें आदित्य को क्रिया नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (भा. ६.१८.४)।

पुरु—एक प्राचीन क्षत्रिय नरेश, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (४.२३ पाठ.)।

२. भागवत के अनुसार, वसुदेव एवं सहदेवा का पुत्र।

पुरुकुत्स—अंगिराकुल के कुत्स नामक उपगोत्रकार के तीन प्रवरों में से एक। एक मंत्रद्रष्टा के रूप में भी इसका निर्देश प्राप्त है (अंगिरस् देखिये)।

पुरुकुत्स 'ऐक्ष्वाक'—(सू. इ.) पुरु देश का एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा (श. ब्रा. १३.५.४.५)।

सुविख्यात वैदिक राजा सुदास के समकालिन राजा के नाते से, इसका निर्देश ऋग्वेद में कई बार आया है (ऋ. १.६३.७)। संभवतः दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा ने इसे पराजित किया था (ऋ. ७.१८)। इस युद्ध में यह मारा अथवा पकड़ा गया था, जिसके बाद इसकी पत्नी पुरुकुत्सानी ने 'पुरुओं' के भाग्य को लौटाने के लिये, एक पुत्र की उत्पत्ति थी की। उस पुत्र का नाम त्रसदस्यु था (ऋ. ४.४२.८); एवं उसे 'पौरुकुत्स्य' (ऋ. ५.३३.८); तथा 'पौरुकुत्सि' (ऋ. ७.१९.३), नामांतर भी प्राप्त थे।

दासों पर विजय पानेवाला पुरु राजा के नाम से, पुरुकुत्स का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ.६.२०.१०)। दिव्य अस्त्रों की सहायता से, यह अनेक युद्धों में विजित हुआ (ऋ. १.११२.७; १४)।

ऋग्वेद में एक स्थान पर पुरुकुत्स को 'दौर्गह' विशेषण लगाया गया है (ऋ. ४.४२.८)। इससे प्रतीत होता है की, यह 'दुर्गह' का पुत्र या वंशज था। किंतु 'सीग' के अनुसार, 'दौर्गह' किसी अश्व का नाम हो कर, पुरुकुत्स के पुत्रप्राप्ति के लिये आयोजित

किये अश्वमेध यज्ञ की ओर संकेत करता है (सा. ऋ. ९६–१०२)।

पुराणों में भी पुरुकुत्स का निर्देश कई बार प्राप्त है। भागवत, विष्णु तथा वायु के अनुसार, यह इक्ष्वाकुवंशीय राजा मांधाता का बिंदुमती से उत्पन्न पुत्र था। नागकन्या नर्मदा इसकी पत्नी थी।

नागों से शत्रुता करनेवाले गंधर्वों का इसने नाश किया जिस कारण नागों ने इसे वर दिया, 'तुम्हारा नाम लेते ही, किसी भी आदमी को सर्पदंश के भय से छुटकारा प्राप्त होगा' (भा. ९.६.३८; ९.७.३)।

इसके वसुद, त्रसदस्यु, तथा अनरण्य नामक तीन पुत्र थे। पद्म के अनुसार, इसके धर्मसेतु, मुचकुंद तथा शक्तमित्र नामक तीन भाई तथा दुःसह नामक एक पुत्र था (पद्म. सृ. ८)।

मत्स्य के अनुसार इसे 'पुरुकृत्' नामांतर भी प्राप्त है। कुरुक्षेत्र के वन में तपस्या कर, इसने 'सिद्धि' प्राप्ति की थी, जिस कारण यह स्वर्गलोक में पहुँच गया (म. आश्व. २६.१२-१३)। यह यम सभा में रह कर, यम की उपासना करता था (म. स. ८.१३)।

पुरुकुत्स कात्य—एक क्षत्रिय राजा, जो तप से ब्राह्मण बन गया था (वायु. ९१.११६)।

पुरुकुत्सानी—इक्ष्वाकुवंशीय पुरुकुत्स राजा की पत्नी एवं त्रसदस्यु राजा की माता (ऋ. ४.४२.९)।

पुरुकृत्—मत्स्य के अनुसार, इक्ष्वाकुवंशीय पुरुकुत्स राजा का नामांतर (पुरुकुत्स 'ऐक्ष्वाक' देखिये)।

पुरुज--(सो. नील.) एक नीलवंशीय राजा। भागवत के अनुसार, यह सुशांति राजा का पुत्र था। विष्णु, वायु तथा मत्स्य में, इसे 'पुरुजानु' कहा गया है। कई अन्य पुराणों में, इसका 'पुरुजाति' नामांतर भी प्राप्त है (ह. वं.१.३२.६४; ब्रह्म. १३.८३)।

पुरुजाति तथा **पुरुजानु**--नीलवंशीय पुरुज राजा का नामांतर (पुरुज देखिये)।

पुरुजित्—(सू. निमि.) एक निमिवंशीय राजा। भागवत के अनुसार, यह अज नामक 'जनक' राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अरिष्टनेमि था।

२. एक राजा, जो कुन्तिभोज राजा का पुत्र एवं कुंती का भाई था। इसके दूसरे भाई का नाम भी कुन्तिभोज ही था (म. स. १३.१६-१७)।

भारतीय युद्ध में, यह पांडवपक्ष में शामिल था (म. उ. १६९.२; भी. २३.५)। इसके रथ के अश्व इंद्रधनु के समान विविध रंगी थे (म. द्रो. २२.३९)। दुर्मुख के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २४.३८)। द्रोण ने इसका वध किया था (म. क. ४.७३)। मृत्यु के पश्चात्, यह यमसभा में यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.१८)।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह रुचक राजा के पाँच पुत्रों में से ज्येष्ठ था।

४. (सो. कुकुर.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह वसुदेव का भाई एवं अपने पिता आनक के दो पुत्रों में से कनिष्ठ था (भा. ९.२४.४१)। इसकी माता का नाम कंका था।

५. श्रीकृष्ण तथा जांबवती के पुत्रों में से एक।

पुरुणीथ शातवनेय—वैदिककालीन एक यज्ञकर्ता ऋषि, एवं भारद्वाज लोगों का पुरोहित (ऋ. १.५९.७) 'शातवनेय' इसका यह नाम संभवतः शतवनी का पुत्र या वंशज होने की ओर संकेत करता है। भारद्वाज लोगों से इसका घनिष्ठ संबंध था। ऋग्वेद में अन्य एक स्थान पर, एक स्तावक के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.९.६)।

पुरुंड—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

पुरुदम—अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक स्तोता (अ. वे. ७७.७३.१)। इसका निर्देश बहुवचन के रूप में प्राप्त है, जिस कारण, यह किसी समूह का नाम प्रतीत होता है।

पुरुद्वत्—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, यह पुरुवस् का तथा वायु के अनुसार, यह महापुरुवेश का पुत्र था।

पुरुद्वह--धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. (सो. क्रोष्टु) एक राजा। वायु के अनुसार यह पुरुद्वत् राजा का भद्रवती से हुआ पुत्र था (वायु. २४.४७)।

पुरुपंथिन्—एक वैदिक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का दाता था (ऋ. ह. ६.६३.१०)

पुरुमाय्य—एक वैदिक राजा, जो इन्द्र का आश्रित था (ऋ. ८.६८.१०)। संभवतः यह अतिथिग्व, ऋक्ष एवं अश्वमेध राजाओं का पिता अथवा रिश्तेदार था। सायण के अनुसार, यह व्यक्तिवाचक नाम न हो कर, प्रियमेध राजा की केवल उपाधि थी।

पुरुमित्र--एक वैदिक राजा, जिसकी कन्या का नाम कमद्यू था। कमद्यू ने अपने पिता की इच्छा के विरुद्ध विमद नामक ऋषि से विवाह किया था (ऋ १.११७.२०; १०.३९.७; विमद देखिये)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के ग्यारह महारथि पुत्रों में से एक (३२८*)। पांडवों के द्यूतक्रीड़ा के समय यह उपस्थित था (म. स. ५२.५३)।

भारतीय युद्ध में यह अभिमन्यु द्वारा घायल हुआ था (म. भी. ६९.२३)।

३. एक क्षत्रिय राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. भी. ५३.२५)।

पुरुमीह्ळ 'आंगिरस'—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७१)। पुरुमीह्ळ 'वैददश्वि' एक वैदिक ऋषि (ऋ.१. १५१.२; १८३.५; अ. वे. ४.२९.४; १८.३.१५)। इनका आश्रित एवं तरन्त ऋषि ये दोनों विददश्व के पुत्र थे। श्यावाश्व नामक एक गायक था (बृहद्दे. ५ ४९)। ओल्डेन बर्ग के अनुसार, यह कथा असंभाव्य प्रतीत होती है।

ऋग्वेद में अन्य एक स्थान पर इसे एवं तरन्त को ध्वस्त्र तथा पुरुषन्ति नामक राजाओं से दान मिलने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ९.५८.३)। 'सीग' के अनुसार पुरुमिह्ळ तथा तरन्त ये दोनों राजा थे एवं जब तक ऋषि नहीं बन जाते तब तक अपने जाति के नियमों के अनुसार ये दान नहीं ग्रहण कर सकते थे।

पुरुमिह्ळ सौहोत्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ४. ४३-४४)। पूरुवंश का सुविख्यात राजा पुरुमीढ यह दोनों एक ही होंगे!

पुरुमीढ—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा। मत्स्य वायु तथा भागवत के अनुसार, यह हस्ती राजा का, एवं विष्णु के अनुसार यह हस्तिनर राजा का पुत्र था। यह निःसंतान ही था कि मर गया।

महाभारत के अनुसार, यह सुहोत्र राजा का तृतीय पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम ऐक्ष्वाकी था। इसके अजमीढ एवं सुमीढ नामक दो भाई थे (म. आ. ८९.२६)। महाभारत में दिये गये इसके मातापिता के नाम ग़लत मालूम होते हैं, क्योंकि, वहाँ दी हुयी वंशावली में कई पीढ़ियाँ छोड़ दी गयी हैं।

पुरुमेध आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ८९-९०)।

पुरुयशस्—एक पांचाल देश का राजा। स्कंद के अनुसार, यह भूरियश राजा का पुत्र था। याज एवं उपयाज नामक ब्रह्मण इसके गुरु थे, जिनके उपदेश से इसने 'वैशाख धर्म' का अनुष्ठान किया था। इस अनुष्ठान के कारण, इसे अपार राज्यवैभव प्राप्त हुआ था (स्कंद २.७.१५-१६)।

पुरुवस—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह मधु राजा का पुत्र था। इसे 'कुरुवंश' तथा 'कुरुवत्स' नामांतर भी प्राप्त थे।

पुरुवसु—एक वैदिक स्तोता (ऋ ५.३६.३)।

पुरुष—चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक।

२. मरुतों के छठवें गण में से एक।

पुरुषन्ति—एक वैदिक राजा, जिसने किसी गायक को उपहार प्रदान किये थे (ऋ. ९.५८.३)। ऋग्वेद में अन्य एक स्थान पर, इसे अश्विनों का आश्रित कहा गया है (ऋ. १.११२.२३)। इन दोनों स्थानों पर, इसका निर्देश ध्वसन्ति एवं ध्वस्र राजाओं के साथ प्राप्त है।

ऋग्वेद की एक दानस्तुति में, इसकी एवं ध्वस्र राजा की स्तुति अवत्सार काश्यप ऋषि द्वारा की गयी है (ऋ. ९. ५९.३-४)। पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार, 'ध्वस्रा' एवं 'पुरुषन्ति' ये दोनों स्त्रीलिंगी प्रयोग हैं एवं संभवतः किन्हीं स्त्रियों के नाम प्रतीत होते हैं (पं. ब्रा. १३.७.१२)।

पुरुषासक—एक वैदिक शाखाप्रवर्तक (पाणिनि देखिये)।

पुरुषोत्तम—पौंड्रक वासुदेव का नामान्तर।

पुरुहन्मन्—एक वैदिक सूक्त द्रष्टा (ऋ. ८.७०)। ऋग्वेद सर्वानुक्रमणिका में इसे आंगिरस कहा गया है। पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार, यह 'वैखानस' वंशीय था (पं. ब्रा. १४. ९ २९)।

पुरुहोत्र—(सो. क्रोष्टु) एक राजा। भागवत के अनुसार यह अनु राजा का, पद्म के अनुसार कुरुवंश, विष्णु के अनुसार अनुरथ का, एवं भविष्य के अनुसार कुरुवत्स का पुत्र था। इसे 'पुरुवस' नामांतर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम अंशु था (पद्म. सृ. १३)।

पुरूरवस् 'ऐल'—प्रतिष्ठान (प्रयाग) देश का सुविख्यात राजा। सुविख्यात सोमवंश की प्रतिष्ठापना करनेवाले राजा के रूप में, यह पुरुरवस् प्राचीन भारतीय इतिहास का एक महत्त्वपूर्ण राजा माना जाता है। यह एवं इसके ऐल वंश का राज्य यद्यपि प्रतिष्ठान में था, फिर भी यह स्वयं हिमालय प्रदेश का रहनेवाला था।

पुरूरवस् राजा सूर्यवंश के इक्ष्वाकु राजा के समकालीन था। यह स्वयं अत्यंत पराक्रमी था। इसने पृथ्वी के सात द्वीप जीतकर उन पर अपना राज्य स्थापित कर, सौ अश्वमेध यज्ञ किये थे।

इसके राज्य के उत्तर में अयोध्या जैसा बलिष्ठ राज्य था, एवं दक्षिण में युद्धशास्त्र में विख्यात करुष लोग थे। इस कारण इसका राज्य पूर्व एवं उत्तरपूर्व दिशाओं में स्थित गंगाके दोआब, मालवा एवं पूर्व राजपूताना प्रदेशों तक फैला था। पुरूरवस् के मृत्यु के समय, यह सारा प्रदेश ऐल साम्राज्य में समाविष्ट हो गया।

पुरूरवस् को 'ऐल' (इडा नामक यज्ञीय देवी का वंशज) उपाधि प्राप्त थी। यद्यपि पुरूरवस् का निर्देश वैदिक ग्रंथों में बार बार प्राप्त है, फिर भी इसकी ऐल उपाधि इसे पुराणकालीन राजा के रूप में स्थापित करती है।

उर्वशी एवं पुरूरवस् का सुप्रसिद्ध 'प्रणयसंवाद' वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (ऋ. १०.९५; श. ब्रा. ११.५. १)। ऋग्वेद में इसे 'ऐल' कहा गया है। यह स्वयं क्षत्रिय हो कर भी वैदिक सूक्तकार एवं मंत्रकार था, जिसका निर्देश ऋग्वेद एवं पुराणों में प्राप्त हैं (ऋ. १०.९५; मत्स्य. १४५.११५-११६. ब्रह्मांड. २.३२. १२०-१२१)। अग्नि के द्वारा पुरूरवस् पर अनुग्रह किये जाने का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १. ३४)।

पौराणिक ग्रंथों के अनुसार पुरूरवस् बुध राजा को इला से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ७०.१६; मत्स्य. १२. १५; पद्म. सृ. ८; १२; ब्रह्म. १०; दे. भा. १.१३; भा. ९.१५; ह. वं. १.११.१७)। यह सोमवंश का मूल पुरुष है। इसको ऐल कहा है (वायु. ९१.४९-५०)।

पुरूरवा की राजधानी प्रतिष्ठानपुरी थी (ब्रह्म. ७.२२; ह. वं. १.१०.२२-२३)।

यह काशी का राजा था। इसके द्वारा प्रयाग प्रांत पर भी राज्य करने का उल्लेख मिलता है (वा. रा. उ. २५; ह. वं. २.२६.४९)। यह सप्तद्वीप का राजा था, तथा इसने सौ अश्वमेध किये थे (मत्स्य. २४.१०-१३)। महाभारत में, इसे त्रयोदश समुद्रद्वीपों का अधिपति कहा गया है (म. आ. ७०.१७)।

एक बार देवसभा में नारद ने पुरूरवा के गुणों का गान किया था। यह सुनकर उर्वशी पुरूरवा पर मोहित हो गयी। उसी समय भूतल पर जाने का शाप मित्रावरुणों ने उसे दिया। उर्वशी भूतल पर आई। पृथ्वी पर आते ही केशी नामक दैत्य ने उसे देख लिया, तथा उसका हरण किया।

पुरूरवा ने उर्वशी को केशी से मुक्त कराया। पश्चा इसने उर्वशी के रूप पर मोहित हो कर, उससे विवाह करने की इच्छा प्रदर्शित की। उर्वशी ने इसकी बात तो मान ली, किंतु उसके साथ तीन विचित्र शर्तें रक्खीं:--(१) मेरे द्वारा पुत्रवत् पाली गयी तीन भेड़ें हैं, जिनकी रक्षा सतर्कता से होनी चाहिये। (२) मैथुन को छोड़कर तुम कभी भी मुझे नग्न स्थिति में न दिखायी दो (३) मेरा आहार केवल घी होगा। हरिवंश में उर्वशी की तीसरी शर्त कुछ भिन्नता से दी गयी है। उसमें लिखा है की उर्वशी ने इसे कहा, 'तुम्हें केवल घी खाकर ही जीवित रहना होगा' (ह. वं. १.३६.१४-१५)।

उर्वशी की सारी शर्तें मानकर राजा ने उससे विवाह कर लिया। उर्वशी गन्धर्वों की प्रिय थी, अतएव उन्होंने उसे स्वर्ग वापस लाने की योजना बनायी। एक दिन पलंग के पाये से बंधी भेड़ों को गन्धर्वगण खोल कर जाने लगे। यह देख कर उर्वशी चिल्लाई, तथा पुरूरवा नग्नावस्था में ही पलंग से शीघ्र दौड़ कर भेड़ो को पकड़ने के लिए आगे बढ़ा। इतने में बिजली के कौंध से, नग्न पुरूरवा उर्वशी को दिख गया। फिर अपने नियम के अनुसार, उर्वशी इसे छोड़कर गंधर्वलोक चली गयी।

उर्वशी के वियोग में पुरूरवा पागल सा इधर उधर भटकने लगा। ऐसी ही अवस्था में उर्वशी ने इसे देखा। फिर इसके प्रति दयालु होकर, उसने इसे कहा, 'गंधर्व तुम्हें वरप्रदान करने वाले हैं। उस समय तुम मेरे नित्य साहचर्य का वर माँग लो।

पश्चात्, गंधर्वो द्वारा वर माँगने के लिये कहे जाने पर, इसने उनसे गंधर्वत्व एवं उर्वशी के साहचर्य का वर माँग लिया। गंधर्वों ने इसे अग्नि के सहित एक स्थाली प्रदान की। उर्वशी न देकर, गंधर्वो ने केवल स्थाली ही दी, इससे नाराज़ होकर, इसने वह स्थाली अरण्य में ही फेंक दी, एवं यह घर वापस लौट आया।

कालोपरांत, इसे अपने कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ। फिर अरण्य में फेंक दी 'स्थाली' वापस लाने, यह अरण्य गया। वहाँ इसने देखा की 'स्थाली' लुप्त हो गयी है, एवं उस स्थान पर एक अश्वत्य वृक्ष उत्पन्न खड़ा है। उस अश्वत्थ वृक्ष को अग्निरूप मानकर इसने उससे एक 'अरणि' तथा 'मंथा' बनाई, तथा उससे अग्नि उत्पन्न किया। बाद में उस अग्नि के दक्षिणाग्नि, आहवनीय तथा गार्हपत्य नामक तीन विभाग कर, इसने उनसे उत्कृष्ट हवन किया। इस हवन से प्रसन्न होकर, गन्धर्वों ने इसे

'सालोक्य' गंधर्वास्था प्रदान की (श. ब्रा. ११.५.१. १३-१७; विष्णु. ४.६.१)

शतपथ ब्राह्मण में दी गयी यह कथा ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण है। पुरूरवस् के पहले एक ही अग्नि की उपासना प्रचलित थी। उसे बदल कर इसने तीन अग्नि की उपासना शुरू की (अग्नि. २७४.१४; विष्णु.४.६. ४९)।

एक बार धर्म, अर्थ, काम नामक तीनों पुरुषार्थ मानव-रूप धारण कर इसका सत्त्व देखने आये। इसने सबका सत्कार किया, परंतु धर्म को अत्यधिक आदर एवं सम्मान दिया। इससे कुपित होकर अर्थ तथा काम ने इन्हें शाप दिया, 'लोभ के कारण तुम्हारा विनाश हो जायेगा'।

गंधर्वलोक में देवअनुचर तुंबरु का उपहास करने के कारण, वह उर्वशी तथा पुरूरवा से क्रुद्ध हुआ एवं उसने इन्हे शाप दिया, 'परस्पर वियोगावस्था को प्राप्त कर तुम दोनो दुःखी होगे'। पश्चात्, इन दोनों ने गंधमादन पर्वत के 'साध्यामृत तीर्थ' में स्नान किया, एवं इस पुण्यक्रम से दोनों शापमुक्त हो गये (स्कन्द ३.१.२२.)। हर महीने की अमावास्या को यह पितरों को तृप्त करता था (वायु. ५६)

नैमिषारण्य के द्वादश वार्षिक सत्र के समय यह अयोध्या का राजा था। उर्वशी इस पर मोहित हो गयी थी। समुद्र के अठारह द्वीप इसने जीते थे, तथापि इसे संपत्ति का लोभ न छूटा। इसने संपत्ति के लोभ से द्वादश-वर्षीय सत्र के स्वर्णमय वेदी पर हमला किया।

अग्नि को गंगा से एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। उस पुत्र की नाल को जैसे ही पर्वत पर डाला गया, नाल स्वर्णमय हो गयी। उसी स्वर्ण को लेकर इस द्वादशवर्षीय सत्र की वेदी बनायी गयी। बृहस्पति स्वयं वहाँ उपाध्याय था। ऐल पुरुरवा मृगया करते हुए वहाँ आया। सोने की वेदी देख कर उसे आश्चर्य हुआ। लोभ से पागल होकर यह स्वर्ण-वेदी के स्वर्ण का हरण करने लगा। तब सत्र ऋषि क्रोधित हो गये। उन्होंने दर्भरूपी वज्र से इसका वध किया, और उर्वशी से उत्पन्न आयु नामक पुत्र गद्दी पर बैठाया गया। कौटिल्य ने, इस प्रसंग का संकेत करते हुये लिखा है, 'पुरूरवा राजा ने अत्याचार तथा अनाचारपूर्वक धन इकठ्ठा किया (कौटिल्य पृ. २२)।

पश्चात् पुरूरवस्पुत्र आयु ने सब को शान्त कर, सत्र को पुनः आरम्भ किया (ब्रह्मांड. ३. २. १४-२३; वायु. २)। महाभारत एवं वायु में कश्यप से पुरूरवा ने किये तत्त्वज्ञान पर संवादो का निर्देश प्राप्त है। ब्राह्मणादि चारों वर्णों की उत्पत्ति, तथा उनके अधिकार के बारे में इसका वायु से, तथा इन चारों वर्णो के परस्परव्यवहार के सम्बन्ध में कश्यप से संवाद हुआ था (म. शां. ७३. ७४)।

पद्म एवं ब्रह्म पुराणों में प्राप्त 'एकादशीमाहात्म्य' की कथाओं में पुरूरवा का निर्देश प्राप्त है। एकादशी को उपवास करने के पश्चात्, द्वादशी के दिन तेल खाने का पाप पुरूरवा ने किया, जिस कारण इसका शरीर कुरूप हो गया। इसने दुःखी हो कर तीन महीने तक उपवास कर, विष्णु की आराधना की। इसीसे संतुष्ट हो कर, विष्णु ने इसे ऐसा सुन्दर स्वरूप प्रदान किया कि, उर्वशी इस पर मोहित हो गयी (पद्म. उ. १२५)।

ऐसी ही और एक कथा मत्स्य में दी गयी है। पूर्व जन्म में यह द्विजग्राम का ब्राह्मण था। द्वादशी के दिन उपवास कर, इसने राज्यप्राप्त की इच्छा से जनार्दन की पूजा की। इस पुण्यकर्म के कारण, उसी जन्म में इसे मद्र-देश का राज्य प्राप्त हुआ। किंतु पश्चात् उपवास के दिन अभ्यंग स्नान करने के पाप के कारण, यह रूपहीन बन गया। फिर अपना विगत सौंदर्य पुनः प्राप्त करने के लिए, यह हिमालय पर तपश्चर्या करने गया (मत्स्य. ११५)।

पुरूरवा का पुरोहित वसिष्ठ था (ब्रह्म. १५१. ८-१०; पद्म. भू. १०८)। इसका हिमालय से विशेष सम्बन्ध दिखता है। ऐलवंश के राजाओं के मूलस्थान के सम्बन्ध में पुरूरवाचरित्र से काफ़ी बोध होता है। पुरूरवा का पिता 'इल' था, जिसके नाम से 'इलावृत' देश स्थापित हुआ था (मत्स्य. १२. १४; पद्म. सृ. ८)। यह देश भारतमें हिमालय के उत्तर की ओर, मेरु पर्वत के समीप बसा हुआ था।

इसके अतिरिक्त, पुरूरवा की जन्मकथा भी इसी प्रदेश से संलग्न प्रतीत होती है। ऐलों की सत्ता का उद्गम प्रयाग (इलाहाबाद) में हुआ था। फिर भी उनका मूलस्थान हिमालय के मध्यभाग से तथा उसपार के देशों में था। इसके कई उदाहरण प्राप्त हैं। पुरूरवा की कथा में निर्दिष्ट सारे स्थान, जैसे कि मंदाकिनी नदी, अलका, चैत्ररथ और नंदनवन, गंधमादन तथा मेरु पर्वत एवं कुरु देश नाम से प्रसिद्ध गंधर्वों का देश, ये सारे इसी प्रदेश के हैं। यह निश्चित है कि उत्तर कुरु प्रान्त से गंधर्वों का संबन्ध प्राचीन काल से चला आरहा है (मत्स्य.११४ ८२, वायु ३५; ४१; ४७)।

पुरूरवा की पत्नी उर्वशी गंधर्वी थी। इसके वंशजो ने

भी गंधर्वकन्याओं से विवाह किया था (कूर्म. १.२३. ४६)। अन्त में यह स्वयं एक गंधर्व बन गया।

उर्वशी से इसे कुल छः पुत्र हुये, जिनके नाम इस प्रकार थेः–आयु, श्रुतायु, सत्यायु, रय, विजय, जय (भा. ९.१५.१)। महाभारत में उर्वशीपुत्रों के नाम इस प्रकार दिये गये है :–आयु, धीमत्, अमावसु, दृढायु, वनायु, एवं श्रुतायु (म. आ. ७०. २२)। कई ग्रंथो में इसके आठ पुत्रों का भी उल्लेख है और कुछ में सात पुत्र बताये गए हैं (ब्रह्म. १०; लिंग १.६६; ह. वं. १.२७.१-२)। भागवत में दिया गया है कि, इसने अग्नि को भी पुत्र माना था (भा. ९.१५)।

कुछ स्थानों पर रय, विजय तथा जय के स्थान पर 'धीमान्,' 'अमावसु,' 'शतायु,' तथा 'विश्वावसु' पाठभेद भी मिलता है (वायु ९१.५१-५२)। मत्स्य, एवं अग्नि पुराणों में इसके आठ पुत्रों के नाम इस प्रकार दिये गये हैं:–आयु, दृढायु, अश्वायु, धनायु, धृतिमत्, वसु, शुचिविद्य (दिविजात), शतायु (मत्स्य. २४.३३-३४; अग्नि. २७४.१५; पद्म. सृ. १२)।

इसके पुत्रों में से आयु को प्रतिष्ठाननगरी का राज्य प्राप्त हुआ, तथा अमावसु (विजय) कन्नौज का अधिपति बना। इसके पुत्रों के जो सात अथवा आठ नाम पुराणों में प्राप्त होते हैं, वे संभवतः किसी एक या दो व्यक्तियों के नामांतर होंगे। क्योंकि इसके दो प्रमुख पुत्र आयु तथा अमावसु के नाम सारे पुराणों में एकवाक्यता से प्राप्त होते हैं।

पुरूरवस्कथा का अन्वयार्थ–ब्राह्मण लोगों के साथ पुरूरवस् द्वारा किये विरोध का कथाभाग, ऐतिहासिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माना जाता है। वैवस्वत मनु के समय ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों में सहकार्य था। ऐल पुरूरवस् के समय ब्राह्मण-क्षत्रियों में विरोध पैदा हुआ। ऐल पुरूरवस् ब्राह्मणों के साथ विरोध करने लगा। ब्राह्मणों की दौलत पुरूरवस् ने हठ से जब्त कर ली। सनत्कुमार ने ब्रह्मलोक से आकर, पुरूरवस् से को ब्राह्मणविरोध न करने के लिये कहा। फिर भी पुरूरवस् ने एक न सुनी। तब ब्राह्मणों ने लोभवश पुरूरवस् को शाप दिया, एवं उसे नष्ट करने का प्रयत्न किया। तब पुरूरवस् ने उर्वशी के मध्यस्थता से गंधर्वलोग की सहायता प्राप्त की। गंधर्वलोक से अग्नि को प्राप्त कर पुरूरवस् ने अपना कार्य फिर शुरू किया (म. आ. ७०. १२-२१)। इस का तात्पर्य यह होता है कि, स्थानीय लोगों के विरोध की शान्त करने के लिये, पुरूरवस् ने अपने मूलस्थान गंधर्वलोक से सहायता ली, तथा अपना राज्यशासन सुव्यवस्थित किया। पुरूरवस् के पितृव्य वेन नामक राजा का भी ब्राह्मणों ने वध किया था।

धनलोभ के कारण अत्याचार करने से इसका नाश होने का निर्देश, कौटिल्य ने भी किया है (अर्थशास्त्र पृ. २२)।

२. दीप्ताक्षवंश का एक कुलपांसन राजा। कुलपांसन होने के कारण, अपने सुहृद एवं बांधवों के साथ इसका नाश हुआ (म. उ. ७२.१५)।

पुरोचन–दुर्योधन राजा का म्लेच्छ मंत्री एवं मित्र। दुर्योधन के कथनानुसार पांडवों के नाश के लिए इसने वारणावत में लाक्षागृह का निर्माण किया था (म. आ. १३२. ८-१३)।

वारणावत नगरी में इसने पांडवों का स्वागत किया, एवं उन्हें समस्त सुख-सामग्री प्रदान कर लाक्षागृह में ठहराया (म. आ. १३४. ८-१२)। बाद में, पांडवों के साथ रहने के उद्देश्य से यह वहाँ गया। उस समय इसने अपने रथ में खर जोत रक्खे थे। अन्त में, अपने बनाये हुये लाक्षागृह में ही जल कर यह मर गया (म. आ. १३२-१३६)।

पुरोजव–(स्वा. प्रिय.) एक राजा। भागवत के अनुसार यह मेधातिथि के सात पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र था।

२. प्राण नामक वसु का कनिष्ठ पुत्र, जिसकी माता का नाम ऊर्जस्वती था (भा. ६.६.१२)।

३ अनिल नामक वसु का पुत्र।

पुरोद्वह–धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

पुलक–एक मृगरूपी दैत्य। तप कर इसने शंकर को प्रसन्न किया, तथा उनसे अद्‌भुत सुगंध के प्राप्त की याचना कर, वर प्राप्त किया। बाद में, उस सुगंध से यह देवस्त्रियों को मोहित कर, संसार को त्रस्त करने लगा। ऐसी परिस्थिति में देवों ने शंकर से इसकी शिकायत की। शंकर ने कुपित होकर, इससे असुर देह छोड़ने के लिए कहा। इसने शंकर के आदेश को मानते हुए उनसे प्रार्थना की, कि मेरे द्वारा धारण की हुयी सुगंध मुझ से वापस न ली जाये (स्कंद. १.३.१.१३)।

२. मत्स्य के अनुसार, शुनक राजा का नामांतर।

पुलस्त्य–ब्रह्माजी के आठ मानसपुत्रों में से एक, जो छः शक्तिशाली महर्षियों में गिने जाते हैं (म. आ. ६०.४)। ब्रह्माजी के अन्य सात मानस पुत्रों के नाम इस प्रकार हैं:–

भृगु, अंगिरस, मरीचि, अत्रि, वसिष्ठ, पुलह एवं क्रतु (वायु. ४९.६८-६९)।

स्वायंभुव मन्वन्तर में यह ब्रह्मा के उदान से उत्पन्न हुआ। यह स्वायंभुव दक्ष का दामाद तथा शंकर का साढू था। दक्ष द्वारा अपमानित होने पर, शंकर ने इसे दग्ध कर मार डाला। दक्षकन्या प्रीति इसकी पत्नी थी (ब्रह्मांड. २.१२.२६-२९; विष्णु. १.१०)।

शंकर के शाप से ब्रह्माजी के बहुत सारे पुत्र मर गये, जिनमें यह एक था (मत्स्य.१९५)।

महाभारत के अनुसार, यह ब्रह्माजी के कान से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५९.१०; मत्स्य ३.६-८; वायु.६६.२२; भा. ३.१२.२४)। ब्रह्माजी द्वारा उत्पन्न हुये प्रजापतियों में यह एक था (मत्स्य. १७१.२६-२७; भा. ३.१२)। कर्दम प्रजापति की कन्या हविर्भुवा अथवा हविर्भुक् इसकी पत्नी थी। महाभारत में इसके प्रतीच्या एवं संध्या नामक दो और पत्नियों का भी निर्देश प्राप्त है (म. उ.११५. ४६०*; ११५.११)।

पुत्र—पुराणों में दी गयी पुलस्त्य के पुत्रों की नामावली इस प्रकार है :—

(१) प्रीतिपुत्र—दानाग्नि, देवबाहु, अत्रि (ब्रह्मांड. २.१२.२६-२९); दंभोलि (अगस्त्य) (विष्णु.१.१०)।

हविर्भुवापुत्र—अगस्त्य; विश्रवा (भा. ४.१.३६)।

इनके सिवा, पुलस्त्य को प्रीति से सद्वती नामक एक कन्या उत्पन्न हुयी थी।

२. वैवस्वत मन्वतर में पैदा हुआ आद्य पुलस्त्य ऋषि का पुनरावतार। शिवाजी के शाप से मरे हुए ब्रह्माजी के सारे मानसपुत्र, वैवस्वत मन्वंतर के प्रारंभ में ब्रह्मा जी द्वारा पुनः उत्पन्न किये। उस समय यह अग्नि के 'पिंगल' केशों में से उत्पन्न हुआ।

एक बार यह मेरु पर्वत पर तपस्या कर रहा था। उस समय गंधर्वकन्यायें पुनः पुनः इसके समीप आकर इसकी तपस्या में बाधा डालने लगी। फिर इसने क्रुद्ध हो कर, उन्हें शाप दिया, 'जो भी कन्या मेरे सामने आयेगी, वह 'गर्भवती' हो जायेगी।

वैशाली देश के तृणबिंदु राजा की कन्या गौ अथवा इडविडा असावधानी से इसके सामने आ गयीं। तुरंत अप्सराओं को इसके द्वारा दिये गये शाप के कारण, वह गर्भवती हो गयी। बाद में पुलस्त्य से उसका विवाह हो गया, एवं उससे इसे विश्रवस ऐड़विड़ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २५८.१२; वा. रा. उ. ४)।

तृणबिंदु राजा का काल, त्रेतायुग का तीसरा मास माना जाता है। विश्रवस् का निवासस्थान नर्मदा नदी के किनारे पश्चिम भारत प्रदेश में था (म. व. ८७.२-३)। इन दो निर्देशों के आधार पर, पुलस्त्य का काल एवं स्थल-निर्णय किया जा सकता है।

एक बार 'महीसागर संगमतीर्थ' अतिगर्व के कारण, उद्धत हो उठा। इसलिये पुलस्त्य ने उसे 'स्तंभगर्व' यह नया नाम प्रदान किया (स्कंद. १.२.५.८)। ब्रह्माजी ने पुष्करतीर्थ पर किये यज्ञ समारोह में, अध्वर्यु के स्थान पर पुलस्त्य की योजना की गयी थी।

पुत्र—पुलस्त्य को इडविडा से विश्रवस् ऐड़विड़ नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था। विश्रवस् से उत्पन्न पुलस्त्यवंश की बहुत सारी संतति राक्षस थी। इस कारण पुलस्त्य ने अगस्त्य ऋषि का एक पुत्र गोद लिया (मत्स्य. २०२.१२-१३)। इसी दत्तोलि (दंभोलि) नामक पुत्र से, आगे चल कर, पुलस्त्यवंश की 'अगस्त्य शाखा' का निर्माण हुआ।

पुलस्त्यवंश—पुलस्त्यवंश की विस्तृत जानकारी महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है (म. आ. ६६; वायु. ७०.३१-६३; ब्रह्मांड. ३.८; लिंग. १.६३; मत्स्य. २०२, भा ४.१.३६)। इस वंश के लोग 'पौलस्त्य राक्षस' नामक सामूहिक नाम से प्रख्यात थे, जिसमें निम्नलिखित तीन शाखाओं का अंतर्भाव होता था :—

(१) कुबेर वैश्रवण शाखा—पुलस्त्यपुत्र विश्रवस् को बृहस्पतिकन्या देववर्णिनी से कुबेर नामक पुत्र हुआ। कुबेर स्वयं यक्ष था, किंतु उसके चार पुत्र (नलकूबर, रावण, कुंभकर्ण, एवं बिभीषण), तथा एक कन्या (शूर्पणखा) राक्षस थे। उन्हीं से आगे चल कर, पौलस्त्य राक्षसवंश की स्थापना हुयी। इन राक्षसों का सम्राट स्वयं कुबेर ही था।

(२) अगस्त्य शाखा—पुलस्त्य ने गोद में लिये अगस्त्यपुत्र दत्तोलि (दंभोलि) से आगे चल कर, अगस्त्य नामक 'ब्रह्मराक्षस' वंश की स्थापना हुयी। ब्राह्मणवंश से उत्पन्न हुये राक्षसों को ब्रह्मराक्षस कहते थे। ये ब्रह्मराक्षस वेदविद्याओं में पारंगत थे, एवं रात्रि के समय, यज्ञयागादि विधि करते थे। हिरण्यशृंग पर ये कुबेर की सेवा करते थे (वायु. ४७. ६०-६१; ब्रह्मांड २.१८.६३-६४)। इस शाखा के राक्षस प्रायः दक्षिण हिंदुस्थान एवं 'सीलोन' में रहते थे।

(३) विश्वामित्र तथा कौशिक शाखा—अगस्त्यों के साथ, विश्वामित्र एवं कौशिक शाखा के लोग भी 'पौलस्त्य ब्रह्मराक्षसों' में गिने जाते थे। ये लोग पौलस्त्यवंश में किस तरह प्रविष्ट हुये, यह नहीं कह सकते, किंतु 'अगस्त्यों' की तरह इन्हे भी 'रात्रिराक्षस' कहा जाता था।

३. महाभारतकालीन एक ऋषि। अर्जुन के जन्ममहोत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. ११४.४२)। पराशर द्वारा किये राक्षससत्र का विरोध करने के लिए अन्य महर्षियों के साथ, यह भी था। एवं इसने पराशर को समझाकर राक्षससत्र बंद करने पर विवश किया (म. आं. १७२.१०–११)।

इसने भीष्म को विभिन्न तीर्थों का वर्णन, एवं पृथ्वी प्रदक्षिणा का महात्म्य कथन किया था (म. व. ८०–८३)। शरशय्या पर पड़े हुये भीष्म से मिलने आये हुये ऋषियों में, यह भी शामिल था (म. शां. ४७.६६*)।

४. एक धर्मशास्त्रकार। 'वृद्धयाज्ञवल्क्य' में प्राप्त स्मृतिकारों की नामावली में इसका निर्देश प्राप्त है। 'शारीर शौच' के विषय पर, इसके एक श्लोक का उद्धरण विश्वरूप ने दिया है (याज्ञ. १.१७)। श्राद्धविधि के समय, ब्राह्मण शाकाहार का, क्षत्रिय तथा शूद्र माँस का, एवं शूद्र शहद का उपयोग करे, ऐसा इसका मत था (याज्ञ. १.२६१)।

'मिताक्षरा' में, पुलस्त्य के दो श्लोकों का उद्धरण प्राप्त है, जिनमें ग्यारह नशा लानेवाली वस्तुओं के नाम देकर, बारहवें अत्यंत बुरे मादक पदार्थ के रूप में शराब का निर्देश किया गया है (याज्ञ. ३.२५३)।

संध्या, श्राद्ध, अशौच, संन्यासधर्म, प्रायश्चित्त आदि के संबंध में, 'पुलस्त्य स्मृति' के अनेक श्लोकों का निर्देश अपरार्क ने किया है। ज्ञानकर्मसमुच्चय के संबंध में भी, पुलस्त्य के दो श्लोक अपरार्क ने दिये हैं (अपरार्क. याज्ञ. ३.५७)। आह्निक तथा श्राद्ध के विषय में, पुलस्त्य के चालीस श्लोक 'स्मृतिचंद्रिका' में दिये गये हैं। रविवार, मंगलवार, एवं शनिवार के दिन स्नान करने से क्या पुण्यफल की प्राप्ति होती है, इसके बारे में भी, पुलस्त्य का निर्देश 'स्मृतिचंद्रिका' में प्राप्त है।

राम, परशुराम, नृसिंह तथा त्रिविक्रम आदि के जपानुष्ठान से क्या लाभ होता है, इस विषय में इसके मत उल्लेखनीय है। चंडेश्वर के 'दानरत्नाकर' में, मृगाजिनदान के विषय में, पुलस्त्य का एक गद्य उद्धरण लिया गया है।

'पुलस्त्यस्मृति' का रचनाकाल संभवतः ईसा के चौथी, सातवीं शताब्दी के बीच कहीं होगा)।

५. चैत्र माह में धाता नामक आदित्य के साथ घूमनेवाला एक ऋषि (भा. १२.११.३३)।

पुलह—ब्रह्माजी के आठ मानसपुत्रों में से एक, जो छः शक्तिशाली ऋषियों में गिना जाता था (म. आ. ६०.४)।

स्वायंभुव मन्वंतर में यह ब्रह्माजी के नाभि से अथवा 'व्यान' से उत्पन्न हुआ (भा. ४.१.३८)। यह स्वायंभुव दक्ष का दामाद तथा शिवजी का साढ़ू था। दक्ष द्वारा अपमानित होने पर, शिवजी ने इसे दग्ध कर मार डाला। दक्षकन्या क्षमा इसकी पत्नी थी।

भागवत् में, इसके गति नामक और एक पत्नी का निर्देश प्राप्त है। ब्रह्माजी के अन्य मानसपुत्रों के साथ, यह भी शिवजी के शाप से मृत हुआ (मत्स्य. १९५)।

क्षमापुत्र—अपने क्षमा नामक पत्नी से, इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुएः—

(१) **कर्दम**—अत्रि ऋषि की आत्रेयी 'श्रुति' नामक कन्या से इसका विवाह हुआ था, जिससे इसे शंखपाद एवं काम्या नामक दो सन्ताने हुयीं। उनमें से शंखपाद दक्षिण दिशा का प्रजापति था। काम्या का विवाह स्वायंभुव मनु का पुत्र प्रियव्रत राजा से हुआ था, जिससे उसे दस पुत्र, एवं दो कन्यायें उत्पन्न हुयीं। उन दस प्रियव्रतपुत्रों ने आगे चल कर, क्षत्रियत्त्व को स्वीकार किया, एवं वे सप्तद्वीपों के स्वामी बन गये (ब्रह्मांड. २. १२.३०–३५; प्रियव्रत देखिये)।

(२) **कनकपीठ**—अपनी यशोधरा नामक पत्नी से, इसे सहिष्णु एवं कामदेव नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए।

(३) **उर्वरीवत्** (४) **सहिष्णु** (५) **पीवरी** (कन्या)

गतिपुत्र—अपने गति नामक पत्नी से, इसे कर्दम, उर्वरीवत् एवं सहिष्णु नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए (विष्णु १.१०.१०)।

२. वैवस्वत मन्वन्तर में पैदा हुआ आद्य पुलह ऋषि का पुनरावतार। शिवजी के शाप से मरें हुये ब्रह्माजी के सारे मानसपुत्र, उसने वैवस्वत मन्वन्तर में पुनः उत्पन्न किये। उस समय, यह अग्नि के लंबे केशों में से उत्पन्न हुआ।

इसे संध्या नामक एक पत्नी थी। इसके अतिरिक्त क्रोधा की बारह कन्यायें इसकी पत्नियाँ थीं, जिनके नाम इस प्रकार थे--मृगी, मृगमंदा, हरिभद्रा, इरावती, भूता, कपिशा, दंष्ट्रा, रिषा, तिर्या, श्वेता सरमा तथा सुरसा (ब्रह्मांड. ३.७.१७१)।

पुलहवंश--महाभारत के अनुसार, पुलह की संतति मनुष्य न हो कर, मृग, सिंह, रीछ, व्याघ्र, किंपुरुष आदि योनि की थीं (म. आ. ६०.७)। वायु के अनुसार, इसके पुत्रों में दानव, रक्ष, गंधर्व, किन्नर, भूत, सर्प, पिशाच आदि प्रमुख थे (वायु. ७०. ६४-६५; ७३.२४.२५)।

मार्कंडेय के अनुसार, पुलह के कर्दम, अर्ववीर एवं सहिष्णु नामक तीन पुत्र थे (मार्क. ५२.२३-२४)। ये पुत्र दुष्टचरित्र थे, अतएव पुलह ने अगस्त्य के पुत्र दृढ़ास्य (दृढ़च्युत) को गोद लिया। पद्म में इसी अगस्त्यपुत्र का नाम दंभोलि दिया गया है।

इसी कारण पुलह के वंश की दो शाखायें हो गयीं। इनमें से पुलह के निजी पुत्र 'पौलह' अमानुषी योनि के थे, एवं अगस्त्यशाखा के पुत्र ब्रह्मराक्षस योनि के थे (मत्स्य. २०२.९-१०)।

३. महाभारतकालीन एक ऋषि। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४२)। शरशय्या पर पड़े हुये भीष्म के पास आये हुये ऋषियों में यह एक था (म. अनु. २६.४)। अलकनंदा नदी के तट पर यह जप-तप करता था (म. व. परि. १.१६.१२)

४. एक ऋषि, जो ब्रह्माजी के द्वारा पुष्करक्षेत्र में किये यज्ञ में 'प्रत्युद्गाता' था (पद्म. सृ. ३४)।

५. वैशाख माह में अर्यमा नामक सूर्य के साथ घूमनेवाला एक ऋषि (भा. १२.११.३४)

पुलिन--अमृतरक्षक देवों में से एक (म. आ. २८. १९)।

पुलिन्द--(शुंग. भविष्य.) एक शुंगवंशीय राजा। भागवत के अनुसार यह भद्रक का, ब्रह्मांड के अनुसार भद्र का, वायु के अनुसार ध्रुक का, एवं मत्स्य के अनुसार अन्तक का पुत्र था। विष्णु में इसे 'आर्द्रकपुत्र पुलिंदक' कहा गया है।

२. किरातों का एक राजा, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.४७*)।

३. पुलिंद देश के निवासियों के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम। ये पहले क्षत्रिय थे, किंतु ब्राह्मणों के शाप के कारण शूद्र बन गये (म. अनु. ३३.२२-२३)। ये म्लेच्छ जातियों में थे, जो कलियुग में पृथ्वी के शासक बने (म. व. १८६.३०)।

वसिष्ठ ऋषि की गौ नन्दिनी के क्रुपित होने पर, उसके मुख से निकले फेन से ये उत्पन्न हुये थे (म. आ. १६५.३६)। भीम ने इन लोगों पर हमला किया, एवं इनके महानगर को ध्वस्त कर, इनके राजा सुकुमार एवं सुमित्र को जीत लिया (म. स. २६.१०)। सहदेव ने भी इन्हीं दोनों राजाओं पर विजय प्राप्त की थी (म. स. २८.४)।

भारतीय युद्ध में, ये लोग दुर्योधन की सेना में सम्मिलित थे (म. उ. १५८.२०)। पांड्य-नरेश के साथ इनका युद्ध हुआ था एवं उसके बाणों द्वारा ये आहत हुये थे (म. क. १५.१०)।

पुलिमत्--(आंध्र. भविष्य.) एक आन्ध्रवंशीय राजा। विष्णु के अनुसार, यह गोमतीपुत्र राजा का पुत्र था। इसे 'पुरीमत्' नामांतर भी प्राप्त था (पुरीमत् देखिये)।

पुलुष प्राचीनयोग्य--एक वैदिक ऋषि, जो 'प्राचीनयोग' का वंशज था। यह दृति ऐन्द्रोत शौनक नामक ऋषि का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

पुलोमत्--एक राक्षस, जिसने भृगुपत्नी पुलोमा का हरण किया था (म. आ. ५.१५)। हरण के समय पुलोमा के गर्भ में च्यवन ऋषि था, जिसके तेज से यह राक्षस जल कर भस्म हो गया (पुलोमा देखिये)।

२. एक राक्षस, जो हिरण्यकशिपु एवं वृत्रासुर का अनुयायी था (भा. ६.६.३१; १०.२०; ७.२.५)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

४. प्रहेति नामक राक्षस का पुत्र। इसके मधु, पर, महोग्र तथा लवण नामक चार पुत्र थे।

५. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार, यह गौतमीपुत्र राजा का पुत्र था। इसने अठ्ठाइस वर्षों तक राज्य किया।

६. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा। मत्स्य के अनुसार, यह चण्डश्री का पुत्र था। इसने सात वर्षों तक राज्य किया। इसके पुलोवा, पुलोमारि, पुलोमाचि, सलोमार्चि नामक चार पुत्र थे।

पुलोमजा--पुलोमत् दैत्य की कन्या। 'शिवव्रत' करने के कारण यह इन्द्रपत्नी शची बनी (स्कंद. ४.२.८०)।

पुलोमा—वारुणि भृगु ऋषि की पत्नी, एवं च्यवन ऋषि की माता (विष्णुधर्म. १. ३२; गणेश. ५. २९)। इसे पौलोमी नामांतर भी प्राप्त है (विष्णु. ७.३२)। इसका पति भृगु ब्रह्ममानसपुत्रों में से एक था।

पुलोमा जब बहुत छोटी थी, तब इसे डराने के विचार से इसके पिता ने सहजभाव से कहा, 'हे राक्षस! इसे ले जा।' संयोग की बात थी, कि उधर से पुलोमत् नामक राक्षस जा रहा था। उसने यह कथन सुनकर, मन से इसका वरण किया। कालांतर में, जब यह बड़ी हुई, तब इसके पिता ने इसकी शादी भृगु के साथ कर दी, क्योंकि उसे पूर्व की अघटित घटना का ज्ञान न था।

एक बार जब यह गर्भवती थी, तब पुलोमत् इसके आश्रम में आया। उस समय भृगु ऋषि स्नान हेतु बाहर गये थे, अतएव इसने पुलोमत् का उचित आदरसत्कार कर, उसे कंदफलादि खाने के लिए दिये। पुलोमत् ने मिले हुये सत्कार को स्वीकार कर, वह पुलोमा के हरण की बात सोचने लगा।

जिज्ञासा को संतुष्ट करने के लिये, उसने अग्नि से पूछा, 'मैने पुलोमा का मन से वरण किया है, पर समझ नहीं पा रहा, वास्तव में यह किसकी पत्नी है। अग्नि ने कहा 'तुमने इसके बाल्यकाल में ही अपने मन में अवश्य वरण कर लिया हो, किन्तु यह भृगु ऋषि की पत्नी है। मेरे समक्ष भृगु ने इसका विधिवत् वरण किया है।

पुलोमत् राक्षस अग्नि के उत्तर से सहमत न हुआ, और वराहरूप धारण कर, उसने पुलोमा का हरण किया। अपनी माँ पुलोमा का हरण देखकर, उस के गर्भ में स्थित च्यवन ऋषि ने गर्भ से बाहर आकर, वराहरूप राक्षस को अपने तेज से दग्ध किया।

पुलोमा के कुल उन्नीस पुत्र हुये, जिनमें से बारह देव तथा सात राक्षस थे। इन पुत्रों की सूची भृगुवंश में प्राप्त है (म. आ. ५-६)।

२. दैत्य कुल की एक कन्या, जिसके पुत्रों को 'पौलोम' कहते हैं। यह वैश्वानर दानव की कन्याओं में से एक थी।

इसने एवं इसकी सहेली कालका ने घोर तपस्या कर के ब्रह्माजी से वर माँगा 'देवता, राक्षस एवं नागों के लिए अवध्य पुत्रों की प्राप्ति हमें हो। उन्हे रहने के लिये एक सुन्दर नगर हो, जो अपने तेज से जगमगा रहा हो विमान की भाँति आकाश में विचरनेवाला हो, एवं नाना प्रकार के रत्नों से युक्त हो। वहाँ ऐसा नगर हो जिसे देवतागण जीत न सकें (म. व.१७०.७-१२)।

ब्रह्माजी ने इसे एवं कालका को इच्छित वर प्रदान किया एवं प्रजापति कश्यप को इससे विवाह करने की आज्ञा दी। कश्यप से इसे असंख्य संताने हुयीं, जो 'पौलोम' नाम से सुविख्यात हुयीं।

ब्रह्माजी के वर से कालका को प्राप्त पुत्रों को कालकंज कहते थे। आगे चलकर 'पौलोम' एवं 'कालकंज, निवातकवच' नाम से विख्यात हुये, जो इनका सामूहिक नाम था। वे लोग संख्या में साठ-हज़ार थे, एवं हिरण्यपुर नामक नगरी में रहते थे (म. व. १६९; निवातकवच २ देखिये)।

पुलोभारि--(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। ब्रह्मांड के अनुसार, यह दण्डश्री राजा का पुत्र था (पुलोमत् ६. देखिये)।

पुलोमार्चि--(आंध्र. भविष्य.) एक राजा। विष्णु के अनुसार, यह चण्डश्री राजा का पुत्र था (पुलोमत् ६. देखिये)।

पुलोवा—(आंध्र भविष्य.) एक राजा। वायु के अनुसार, यह दण्डश्री राजा का पुत्र था (पुलोमत ६. देखिये)।

पुष्कर—वरुणदेव का प्रिय पुत्र, जिसके नेत्र विकसित कमल के समान सुंदर थे। इसी कारण, सोम की 'ज्योत्स्ना काली' नामक कन्या ने पतिरूप से इसका वरण किया था (म. उ. ९६.१२)।

२. निषधाधिपति नल का छोटा एवं सौतेला भाई, जिसने नल राजा का सारा राज्य जुए के खेल में जीत लिया था (म. व. ५६.९)

कलि ने इसे नल राजा से जुआ खेलने का आदेश दिया था। उस आदेशानुसार, इसने नल से जूआ खेला एवं नल का सर्वस्व जीत लिया।

नल राजा के अज्ञातवास के पश्चात्, उसने पुनः एकबार पुष्कर को जुआ खेलने का आवाहन किया, एवं इससे अपना राज्य वापस जीत लिया (म. व. ७७.१८)।

३. कृष्णपराशर कुल का एक गोत्रकार।

४. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा। यह राम दाशरथि का पुत्र, कुश का वंशज, एवं सुनक्षत्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अंतरिक्ष था (भा. ९.१२.१२)। इसे 'किन्नर' एवं 'किन्नराश्व' नामांतर भी प्राप्त थे।

५. श्रीकृष्ण के पुत्रों में से एक (भा. १०.९०.३४)।

६. वसुदेव के भाई वृक को दुर्वाक्षी नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र (भा. ९.२४.४३)।

पुष्करमालिन्--विदेह देश का राजा ऐंद्रद्युम्न जनक का नामांतर। इसे 'उग्रसेन' नामांतर भी प्राप्त था। महाभारत के अनुसार, पुष्करमालिन् ऐंद्रद्युम्न एवं उग्रसेन एक ही जनक राजा के नामांतर थे, एवं यह राजा वरुण-पुत्र वंदिन् एवं अष्टावक्र ऋषियों के वाद सभा में उपस्थित था (म. व. १३३.१३; १३४.१; वंदिन् देखिये)।

पुराणों में प्राप्त वंशावलि में, इनमें से एक भी जनक का नाम प्राप्त नहीं है। इस कारण, इन नामों में से सही नाम कौनसा है, यह बताना कठिन है।

पुष्करमालिनी--एक धर्मचारिणी स्त्री, जो विदर्भ देश में 'उंच्छवृत्ति' से रहनेवाले सत्य नामक ऋषि की पत्नी थी। महाभारत में, इसके नाम के लिये 'पुष्कर-चालिनी', एवं 'पुष्करधारिणी', पाठभेद उपलब्ध हैं।

अत्यंत व्रतस्थ होने के कारण, यह 'कृशतनु' एवं पवित्र बन गयी थी। यह पति के कथनानुसार आचरण करती थी, एवं वन में सहजरूप ये प्राप्त मोरपंखो से बना हुआ वस्त्र धारण करती थी। पशुयज्ञ से इसे सख्त नफ़रत थी (म. शां. २६४.६)।

पुष्कराक्ष—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो सुचंद्र राजा का पुत्र था। परशुराम जामदग्न्य ने सर से पाँव तक विच्छेद कर, इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.४०.१३, परशुराम देखिये)।

पुष्करारुणि—(सो. पूरु.) एक पुरुवंशीय राजा। भागवत के अनुसार, यह दुरतिक्षय राजा के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ था। जन्म से यह क्षत्रिय था, किंतु तपस्या के कारण ब्राह्मण बन गया (भा.९.२१.२०)। इसे 'पुष्करिन्' नामांतर भी प्राप्त था।

पुष्करिणी—सम्राट भरत की स्नुषा, एवं भरतपुत्र भुमन्यु की पत्नी (म. आ. ८९.२१)। इसे कुल छः पुत्र थे, जिनके नाम इसप्रकार थेः–सुहोत्र, दिविरथ, सुहोता, सुहवि, सुयजु एवं ऋचीक।

२. व्युष्ट राजा की पत्नी, जिसे सर्वतेजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१३.१४))।

३. उल्मुक राजा की पत्नी। इसे कुल छः पुत्र थे, जिनके नाम इस प्रकार थेः–अंग, सुमनस्, ख्याति, क्रतु, अंगिरा एवं गय (भा. ४.१३.१७)।

पुष्करिन्—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा। वायु के अनुसार, यह उभक्षय राजा का, एवं विष्णु के अनुसार उरुक्षय राजा का पुत्र था। इसे 'पुष्करारुणि' नामांतर भी प्राप्त था (पुष्करारुणि देखिये)।

पुष्कल—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दशरथपुत्र भरत के दो पुत्रों में से कनिष्ठ था। इसकी माता का नाम मांडवी था (वायु. ८८; ब्रह्मांड. ३.६३.१९०; विष्णु. ४.४७; अग्नि ११.७-८;९;११-१२)।

पद्म पुराण के पातालखंड में, राम दाशरथि के अश्वमेधां यज्ञ का विस्तृत वर्णन प्राप्त है, जिससे इसकी शूरता की प्रचीति मिलती है (पद्म. पा. १—६८)। राम दाशरथि ने कुल तीन अश्वमेध यज्ञ किये। उन तीनों यज्ञ के समय, अश्व की रक्षा करने का काम शत्रुघ्न के साथ पुष्कल ने ही निभाया था (पद्म. पा.१.११)।

इस कार्य में अनेक राक्षस एवं वीरों से इसे सामन करना पड़ा। सुबाहुपुत्र दमन को इसने परास्त किया (पद्म. पा.२६)। चित्रांग के साथ हुए युद्ध में, इसने उसका वध किया (पद्म. पा.२७)। विद्युन्माली एवं उग्रदंष्ट्र राक्षसों से इसका भीषण युद्ध हुआ (पद्म. पा. ३४)। रुक्मांगद एवं वीरमणि से भी इसका युद्ध हुआ था (पद्म. पा.४१–४६ अन्त में लव ने राम का अश्वमेधीय अश्व रोक करा इसे पराजित किया (पद्म. पा. ६१)।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार, पुष्कल ने गांधार देश जीत कर, उस देश में पुष्कलावती अथवा पुष्कलावत नामक नगरी की स्थापना की, एवं उसे अपनी राजधानी बनायी (वा. रा. उ. १०१.११)।

पद्म के अनुसार इसकी पत्नी का नाम कांतिमती था (पद्म. पा. ६७)।

२. (सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा मत्स्य के अनुसार, यह शुद्धोदन राजा का पुत्र था। इसे सिद्धार्थ नामान्तर प्राप्त है (मत्स्य, २७२. १२; सिद्धार्थ देखिये)। इसे 'राहुल', 'रातुल' एवं 'लांगलिन्' नामांतर भी प्राप्त थे।

पुष्टि--स्वायंभुव मन्वन्तर की कन्या, एवं धर्म की पत्नी (म. आ. ६०.१३)। स्मय इसका पुत्र था (भा. ४.१.४९–५१)।

यह ब्रह्माजी के सभा में रह कर उनकी उपासना करती थी (म. स. ११.१३२*)। अर्जुन जब इंद्रलोक की यात्रा के लिए गया था, तब उसकी रक्षा के लिए द्रौपदी ने इसका स्मरण किया था (म. व. ३८.१४९*)।

२. ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा के हिरण्यनाभ का शिष्य।

३. (सो. वसु.) एक राजा वायु के अनुसार, यह

सुवदेव राजा का पुत्र था एवं इसकी माता का नाम मदिरा था।

४. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

पुष्टिगु काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८, ५०)। ऋग्वेद के 'वालखिल्य सूक्त' में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.५१.१)।

पुष्टिद—मार्कंडेय पुराण के अनुसार, इक्तीस पितृगणों में से एक (मार्कं. ९२–९४; पितर देखिये)।

पुष्टिमति--भरत नामक अग्नि का नामांतर। यह संतुष्ट होने पर पुष्टि प्रदान करता है, इस कारण इसका नाम 'पुष्टिमति' है (म. व. २११.१)।

पुष्प—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा। विष्णु के अनुसार, यह हिरण्यनाभ राजा का पुत्र था। इसे 'पुष्य' नामांतर भी प्राप्त था (पुष्य देखिये)।

२. कश्यपवंशीय एक नाग (म. उ. १०१.१३)।

पुष्पदंष्ट्र—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू का पुत्र था।

पुष्पदंत—विष्णु का एक पार्षद (भा. ९. २१. १७)।

२. एक गन्धर्व, जिसके पुत्र का नाम माल्यवान् था (पद्म. उ. ४३)। देवी भागवत के अनुसार, यह 'शिवमहिम्न स्तोत्र' का रचयिता था (दे. भा. ९.२०)।

३. एक रुद्रगण (पद्म. उ. १२)।

४. मणिवर एवं देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

५. पार्वती द्वारा कुमार कार्तिकेय को दिये गये तीन पार्षदों में से एक। अन्य दो पार्षदों के नाम 'उन्माद' एवं 'शंकुकर्ण' थे (म. श. ४४.४७)।

पुष्पदंती--चित्रसेन गंधर्व की नातिन। एक बार इन्द्र की सभा में, यह एवं माल्यवत् गंधर्व-अन्य देव-गंधर्वों के साथ नृत्य कर रहे थे। नृत्य के बीच में ही माल्यवत् के रूप पर मुग्ध हो जाने के कारण, यह ताल-स्वर से अलग नृत्य करने लगी। इस कारण क्रुद्ध होकर इन्द्र ने इन दोनों को पिशाच हो जाने का शाप दिया।

पश्चात् 'जया' नामक एकादशीव्रत करने के कारण, ये दोनो इन्द्रशाप से मुक्त होकर स्वर्ग में फिर शामिल हो गये (पद्म. उ. ४३; माल्यवत् देखिये)।

पुष्पधन्वन्--रति का पति, कामदेव का नामांतर। पुष्प का धनुष धारण करने के कारण, कामदेव को यह नामांतर प्राप्त हुआ।

पुष्पयशस् औदव्रजि—एक वैदिक आचार्य, जो संकर गौतम नामक ऋषि का शिष्य था। इसका शि॰ भद्रशर्मन् था (वं. ब्रा. ३)।

पुष्पवत्—(सो. ऋक्ष.) महाभारत के अनुसार, एक पृथ्वीशासक राजा। अत्यधिक पराक्रमी एवं अजेय होकर भी, अन्त में इसे मृत्यु का मुख देखना पड़ा (म. शां. २२०.५०–५५)।

भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह ऋषभ राजा का पुत्र था।

पुष्पवाहन—रथंतर कल्प का एक राजा। इसकी पत्नी का नाम लावण्यवती था, जिसके दस हज़ार पुत्र थे।

पूर्वजन्म में यह व्याध था। 'द्वादशीव्रत' करनेवाली अनंगवती नामक वेश्या को विष्णु-पूजन के लिये इसने कमल के फूल बड़े भक्ति-भाव से प्रदान किये थे। इसी पुण्य के कारण, अगले जन्म में इसे पुष्पवाहन राजा की योनि प्राप्त हुयी।

भृगुऋषि ने पुष्पवाहन राजा को इसके पूर्वजन्म की कथा को बताकर, इससे इस जन्म में भी द्वादशीव्रत करने को कहा, जिससे मुक्ति की प्राप्त हो सके (पद्म. सृ. २०)

पुष्पातन—एक यक्ष, जो कुबेर की सभा में रहकर उसकी उपासना करता था (म. स. १०. १७)।

पुष्पान्वेषि—अंगिराकुल में उत्पन्न एक गोत्रकार

पुष्पार्ण—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो सुविख्यात बाल्योगी ध्रुव राजा का पौत्र था। इसके पिता का नाम वत्सर, एवं माता का नाम स्वर्वीथी था। यह अपने छः भाइयों में ज्येष्ठ था।

इसके प्रभा एवं दोषा नामक दो पत्नियाँ थी। प्रभाः से इसे प्रातः, सायं, एवं मध्याह्न, तथा दोषा से प्रदोष, निशीथ और व्युष्ट नामक पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ४. १३. १२–१४)।

पुष्पोत्कटा—एक अतिसुन्दरी राक्षसकन्या, जो सुमालि राक्षस की पुत्री थी। इसकी माता का नाम केतुमती था (वा. रा. उ. ५. ४०)।

इसके पति का नाम विश्रवस् था, जिससे इसे रावण एवं कुंभकर्ण नामक पुत्र हुये थे। कुबेर ने इसे विश्रवस् की सेवा में नियुक्त किया था। यह गायन एवं नृत्य में निपुण थी (म. व. २५९. ७)।

पुष्य—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा। भागवत एवं वायु के अनुसार, यह हिरण्यनाथ राजा का पुत्र था। वायु एवं विष्णु में इसे 'पुष्प' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम ध्रुवसन्धि था (दे. भा. ३. १४)।

पुष्यश्रवस्--एक विष्णुभक्त ऋषि। विष्णुभक्ति के कारण, कृष्णावतार में इसने नंद के भाई के यहाँ, 'लवंगा' नामक कन्या के रूप में जन्म लिया था (पद्म. पा. ७२)।

पूजनी—कांपिल्य नगर के ब्रह्मदत्त राजा के भवन में निवास करनेवाली एक चिड़िया (म. शां. १३७.५) यह समस्त प्राणियों की बोली समझती थी, तथा सर्वज्ञ और सम्पूर्ण तत्त्वों को जाननेवाली थी। राजकुमार सर्वसेन ने इसके बच्चे मार डाले थे, अतएव इसने भी उसकी आँखें फोड़ दी थी (म. शां. १३७.१७)।

पश्चात्, इसने राजभवन छोड़ना चाहा। राजा ब्रह्मदत्त ने इससे रहने के लिए आग्रह किया, किन्तु इसने राजा की प्रार्थना अस्वीकार कर दी। राजभवन छोड़ते समय इसका एवं ब्रह्मदत्त का तत्त्वज्ञान सम्बन्धी संवाद हुआ था (म. शां. १३७.२१-१०९; ब्रह्मदत्त देखिये)।

पूतक्रता--ऋग्वेद के 'वालखिल्य' सूक्त में निर्देशित एक स्त्री, जो संभवतः पूतक्रतु राजा की पत्नी थी (ऋ. ९. ५६.४)। पाणिनि के व्याकरण के अनुसार, इस शब्दका रूप 'पूतक्रतायी' था (पा. ४.१.३६)

पूतक्रतु—एक वैदिक राजा, जो अश्वमेध राजा का पुत्र था (ऋ. ८.६८.१७)। कई विद्वानों के अनुसार, अतिथिग्व इंद्रोत, अश्वमेध तथा पूतक्रतु सम्भवतः एक ही व्यक्ति के नाम थे। सायण के अनुसार, पूतक्रतु किसी स्वतंत्र व्यक्ति का नाम नहीं था। इसके पुत्र का नाम दस्यवे वृक था (ऋ. ८.५६.२)।

पूतदक्ष आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ९४)।

पूतना—एक राक्षसी, जो कंस की बहन, एवं घटोदर राक्षस की पत्नी थी। कंस ने इसे श्रीकृष्ण का वध करने के लिये गोकुल भेजा था। गोकुल में यह नवतरुणी स्त्री का रूप धारण कर, अपने स्तनों में विष लगाकर, वहाँ के बच्चों को अपने स्तन से दूध पिलाकर, उनका वध करने लगी। इस प्रकार गोकुलग्राम के न जाने कितने बालकों की जान लेकर, श्रीकृष्ण की भी इसी भाँति मारने की इच्छा से, एक दिन यह नंद के घर गयी। इसने अपने स्तनों में श्रीकृष्ण को लगाया ही था, कि बालक कृष्ण ने दूध के साथ इसके प्राणों को भी चूसना शुरू कर दिया। पूतना वेदना में व्याकुल होकर तड़पने लगी, और प्राण त्याग दिये (म. स. परि. १ क्र. २१. पंक्ति ७५९; भा. १०.६; पद्म. ब्र. १३; विष्णु. ५.५. ब्रह्मवै. ४.१०)।

हरिवंश के अनुसार, यह कंस की दाई थी। इसने पक्षिणी का रूप धारण कर, गोकुल में प्रवेश किया था। दिनभर आराम कर, रात में सब के सो जाने पर, कृष्ण के मुख में दूध पिला कर मारने के हेतु से, इसने अपना स्तन दिया। कृष्ण ने दूध के साथ, इसके प्राणों का शोषण कर, इसका वध किया (ह. वं. २.६)

आदिपुराण के अनुसार, यह कैतवी नामक राक्षस की कन्या, एवं कंस राजा की पत्नी की सखी थी। इसकी बहन का नाम वृकोदरी था। कंस के आदेशानुसार गोकुल में जाकर, दस बारह दिन के आयुवाले बच्चो को कालकूट-युक्त स्तन के दूध को पिला कर, इसने उनका नाश किया। बाद में जब कृष्ण को मारने की इच्छा से यह उनके घर गयी, तो कृष्ण ने इसका वध किया (आदि. १८)।

पूर्वजन्म में यह बलि राजा की कन्या थी, और इसका नाम रत्नमाला था। बलि के यज्ञ के समय, वामन भगवान् को देखकर इसकी इच्छा हुयी थी कि, वामन मेरा पुत्र हो, और इसे मैं अपना स्तनपान कराऊँ। इसकी यह इच्छा जान कर, वामन ने कृष्णावतार में कृष्ण के रूप में इसका स्तनपान कर, इसे मुक्ति प्रदान किया था (ब्रह्मवै. ४.१०)।

इसे राक्षसयोनि क्यों प्राप्त हुयी ? इसकी कथा आदि पुराण में इस प्रकार दी गयी है। एक बार कालभीरू ऋषि अपनी कन्या चारुमती के साथ कहीं जा रहे थे कि, उन दोनों ने सरस्वती के तट पर तपस्या करते हुये कक्षीवान् ऋषि को देखा। कक्षीवान के स्वरूप को देखकर, एवं उसे योग्य वर समझकर, कालभीरू अपनी पुत्री चारुमती को शास्त्रोक्त विधि से उसे अर्पित की। बाद में, कक्षीवान् तथा चारुमती दोनों सुखपूर्वक रहने लगे। एकबार कक्षीवान् तीर्थयात्रा को गया था। इसी बीच एक शूद्र ने चारुमती को अपने वश में कर लिया। आते ही कक्षीवान् को अपनी पत्नी का दुराचरण ज्ञात हुआ, तथा उन्होंने उसे राक्षसी बनने का शाप दिया। चारुमती के अत्यधिक अनुनय-विनय करने पर कक्षीवान् ने कहा, 'जाओ, कृष्ण के द्वारा ही तुम्हें मुक्ति प्राप्त होगी।'

कक्षीवान् ऋषि के उपर्युक्त शाप के कारण, चारुमती को पूतना राक्षसी का जन्म प्राप्त हुआ (आदि. १८)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१६)। अन्य मातृकाओं के समान यह भी बालकों द्वारा पूजित है (म. व. २१९.२६)।

पूतिमाष—अंगिराकुल में उत्पन्न एक ऋषि।

पूरण वैश्वामित्र--विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार, सूक्तकार तथा प्रवर (ऋ. १०.१६०)। इसे 'पुराण' नामान्तर भी प्राप्त था।

महाभारत में एक ऋषि के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (म. शां. ४७.६६, पंक्ति ११*)। किन्तु वहाँ इसके नाम का निर्देश 'पूरण' नाम से तो किया गया है, पर वहाँ इसकी 'वैश्वामित्र' उपाधि का कोई भी उल्लेख प्राप्त नहीं है।

पूरु—ऋग्वेदकालीन एक जातिसमूह। अनु, द्रुह्यु, तुर्वसु, एवं यदु लोगों के साथ, इनका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १. १०८. ८)।

दाशराज्ञ युद्ध में, सुदास राजा के हाथों पूरु लोगों को पराजित होना पड़ा (ऋ. ७. ८. ४)। ऋग्वेद के एक सूक्त में, पूरु लोगों के एक राजा का, एवं सुदास की पराजय के लिए असफल रूप में प्रार्थना करनेवाले राजपुरोहित विश्वामित्र का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७. १८. ३)।

यद्यपि दाशराज्ञ युद्ध में पूरुओं का पराजय हुआ, फिर भी ऋग्वेदकाल में ये लोग काफी सामर्थ्यशाली प्रतीत होते हैं। इन लोगों ने अनेक आदिवासी लोगों पर विजय प्राप्त किया था (ऋ. १. ५९. ६; १३१. ४; ४. २१. १०)। तृत्सु एवं भरत जातियों से इन लोगों का अत्यंत घनिष्ठ संबंध था, एवं उन जातियों के साथ, पूरु लोग भी सरस्वती नदी के किनारे रहते थे (ऋ. ७. ९६. २)।

कई विद्वानों के अनुसार, पूरु लोग सर्वप्रथम दिवोदास राजा के साथ सिन्धु नदी के पश्चिम में रहते थे, और बाद को ये सरस्वती नदी के किनारे रहने लगे। सिकंदर को एक पौरव राजा 'उस हयदस्पीस' नामक स्थान के समीप मिला था (अरियन-इंडिका ८. ४)। यह स्थान सरस्वती नदी एवं पश्चिम प्रदेश के बीच में कहीं स्थित था।

पूरु लोगों के अनेक राजाओं का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है, जिससे इन लोगों का महत्व प्रस्थापित होता है। ऋग्वेद में प्राप्त पूरु राजाओं की वंशावलि इस प्रकार है :—,दुर्गह- गिरिक्षित- पुरुकुत्स- त्रसदस्यु। इन में से पुरुकुत्स, तृत्सु लोगों का राजा सुदास का समकालीन था, एवं काले रंग के अनेक 'दास' लोगों पर उसने विजय प्राप्त किया था (ऋ. ७. ५. ३)। काले रंग के दासों से लड़नेवाला पुरुकुत्स राजा स्वयं गौरवर्णीय होगा। कई विद्वानों के अनुसार ऋग्वेद में प्राप्त कृष्णवर्णीय दासों का यह वर्णन, भारतवर्ष के आदिवासियों को लक्षित करता है। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है। ऋग्वेद के अनुसार, पुरुकुत्स के पुत्र त्रसदस्यु का जन्म अत्यंत दुरवस्थ काल में हुआ था (ऋ. ४. ४२. ८-९)। दाशराज्ञ युद्ध में पुरुकुत्स राजा की मृत्यु हो गयी थी।

पूरुवंश के 'कुरुश्रवण त्रासदस्यव' नामक एक राजा का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०. ३३. ४)। दाशराज्ञ युद्ध के पश्चात्, तृत्सु, भरत एवं पूरु जातियों में मित्रता स्थापित हुयी, एवं इन तीन जातियों को मिला कर 'कुरु जाति' की स्थापना की गयी। कुरु जाति का प्रत्यक्ष निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त नहीं है, किंतु कुरुश्रवण त्रासदस्यव राजा के निर्देश से इस मित्रता का अप्रत्यक्ष प्रमाण मिलता हैं। सुदास, पौरुकुत्सि, त्रसदस्यु, एवं पूरु इन सभी राजाओं का इंद्रद्वारा रक्षण किया जाने का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ७. १९. ३)।

वैदिक ग्रंथो में इसके नाम के लिए, सर्वत्र 'पूरु' पाठ उपलब्ध है। केवल शतपथ ब्राह्मण में 'पुरु' पाठ प्राप्त है, एवं वहाँ पुरु को 'असुर रक्षस्' कहा गया है (श. ब्रा. ६. ८. १. १४)। पौराणिक ग्रंथों में से, केवल वायुपुराण में 'पुरु' पाठ उपलब्ध है।

२. 'पौरववंश' की स्थापना करनेवाला सुविख्यात राजा, जो महाभारत के अनुसार, ययाति राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। ययाति राजा के शेष चार पुत्रों के नाम इसप्रकार थे:- अनु, द्रुह्यु, यदु एवं तुर्वसु (म. आ. १. १७२)। ययाति राजा एवं उनके पाँच पुत्रों का निर्देश ऋग्वेद में भी प्राप्त है, किन्तु वहाँ ययाति एक ऋषि एवं सूक्तद्रष्टा बताया गया है, एवं अनु, द्रुह्यु यदु, तुर्वसु तथा पूरु का निर्देश स्वतंत्र जातियों के नाते से किया गया है। 'वैदिक इंडेक्स' के अनुसार, ऋग्वेद की जानकारी अधिक ऐतिहासिक है, एवं महाभारत तथा पुराणों में दी गयी जानकारी ग़लत है (वै. इ. २. १८७)।

महाभारत के अनुसार, यह ययाति राजा को शर्मिष्ठ के गर्भ से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ७०.३१)। इसकी राजधानी प्रतिष्ठान नगर में थी।

यह अपने पिता के सभी पुत्रों में कनिष्ठ था। किंतु इसने ययाति की जरावस्था लेकर उसे अपना तारुण्य प्रदान किया था (म. आ. ७०.४१) इस उदारता एवं पितृभक्ति से प्रसन्न होकर, कनिष्ठ होकर भी, ययाति ने इसे अपना समस्त राज्य दे दिया, एवं इसे 'सार्वभौम राज्याभिषेक' करवाया। इसके राज्याभिषेक के समय, सभाजनों ने दृढ़तापूर्वक कहा, 'जो पिता की आज्ञा का पालन करता है वहीं उसका वास्तविक पुत्र है, एवं उसे ही राज्याधिकार मिलना चाहिये'। अन्त में ययाति के आदेशानुसार, पूरु का राज्याभिषेक किया गया। इसके अन्य भाइयों को भी राज्य प्रदान किये गये, पर अपने पिता का 'सार्वभौमत्त्व' पूरु को ही प्राप्त हुआ (भा. ९. १९. २३)।सुविख्यात 'पूरुवंश' की स्थापना इसने की। इस कारण इसे 'वंशकर' भी कहा गया है (म. आ. ७०.४५)।

कालांतर में, विषयोपभोग से ऊबकर, ययाति ने पूरु का तारुण्य वापस कर दिया (ह. वं. १. ३. ३६; मत्स्य. ३२; ब्रह्म. १२; वायु. ९३. ७५; विष्णु. ४. १०-१६)।

महाभारत में, पूरु को 'पुण्यश्लोक' राजा कहा गया है। यह माँसभक्षण का निषेध कर, परावर-तत्त्व का ज्ञान प्राप्त कर चुका था (म. अनु. ११५.५९)। यह यमसभा में रहकर यम की उपासना करता था (म. स.८.८)।

पुत्र—पूरु की कौसल्या तथा पौष्टी नामक दो पत्नियाँ थी। कौसल्या से इसे जनमेजय, तथा पौष्टी से प्रवीर, ईश्वर, तथा रौद्राश्व नामक पुत्र हुए। इसके पुत्रों में से जनमेजय वीर एवं प्रतापी था, अतएव वही इसके पश्चात् राजगद्दी का अधिकारी हुआ (म. आ.९०.११)।

महाभारत में अन्यत्र, 'पौष्टी' कौसल्या का ही नामांतर माना गया है, एवं जनमेजय तथा प्रवीर एक ही व्यक्ति मान कर प्रवीर को 'वंशकर' कहा गया है (म. आ. ८९.५)। भागवत में प्रवीर को पूरु का नाती कहा गया है (भा.९.२०.२)।

पूरुवंश—पूरु ने सुविख्यात पूरुवंश की स्थापना की। इसलिये इसके वंशज 'पौरव' कहलाते है, एवं उनकी विस्तृत जानकरी आठ पुराणों एवं महाभारत में प्राप्त है (वायु. ९९.१२०; ब्रह्म. १३.२-८; ह. वं.१.२०.३१-३२; मत्स्य.४९.१; विष्णु. ४.१९; भा.९.२०-२१; अग्नि.२७८. १; गरुढ़.१.१३९; म. आ. ८९-९०)।

पूरुवंश के तीन प्रमुख विभाग माने जाते है :- १ (सो. पूरु)—पूरु से लेकर अजमीढ तक के राजा इस विभाग में समाविष्ट किये जाते हैं; २. (सो. ऋक्ष) अजमीढ से लेकर कुरु तक के राजा इस विभाग में समाविष्ट होते है; ३. (सो. कुरु)—कुरु से ले कर पांडवों तक के राज इस विभाग में आते हैं।

पूरुवंश के अजमीढ राजा को नील, बृहदिषु एवं ऋक्ष नामक तीन पुत्र थे। इनमें से ऋक्ष हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठा। नील एवं बृहदिषु ने उत्तर एवं दक्षिण पांचाल के स्वतंत्र राज्य स्थापित किये।

ऋक्ष राजा के वंश में से कुरु राजा ने सुविख्यात कुरु वंश की स्थापना की। कुरु राजा को जह्नु, परीक्षित् एवं सुधन्वन् नामक तीन पुत्र थे। उनमें से जह्नु, कुरु राजा का उत्तराधिकारी बना, एवं उसने हस्तिनापुर का कुरुवंश आगे चलाया। सुधन्वन् का वंशज वसु ने चेदि एवं मगध में स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। परिक्षित् का पुत्र जनमेजय (दूसरा) ने गार्ग्य ऋषि के पुत्र का अपमान किया, जिस कारण गार्ग्य ने उसे शाप दिया। उस शाप के कारण, उसका एवं उसके श्रुतसेन, उग्रसेन एवं भीमसेन नामक पुत्रों का राज्याधिकार नष्ट हो गया।

जह्नु राजा का पुत्र सुरथ था सुरथ से ले कर अभिमन्यु तक की वंशावलि पुराणों एवं महाभारत में विस्तार से दी गयी है।

२. अर्जुन का सारथि, जिसे राजसूय यज्ञ के लिये अन्नसंग्रह के काम पर जुट जाने का आदेश मिला था (म. स. ३०.३०)।

३. (स्वा. उत्तान.) एक राजा। यह चक्षुर्मनु की नड्वला से उत्पन्न पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसे 'पूरुष' नामांतर भी प्राप्त था (भा. ८.५.७) भागवत में इसे 'पुरु' भी कहा गया है (भा. ४.१३.१६)।

४. (सो. अमा.) एक राजा। भागवत के अनुसार यह जह्नु का पुत्र था। इसे अज एवं अजमीढ नामांतर भी प्राप्त थे। इसका पुत्र बलाकाश्व था।

पूरु आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१६-१७)।

पूर्ण—वासुकि-कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५)।

२. एक देवगंधर्व, जो कश्यप द्वारा प्राधा (क्रोधा) से उत्पन्न पुत्र था (म. आ. ५९.४५)।

पूर्णदंष्ट्र—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू का पुत्र था (म. आ. ३१.१२)

२. कुबेर के अनुचरों में से एक (दे. भा. १२.१०)

३. गंधमादन पर्वत पर रहनेवाले रत्नभद्र यक्ष का पुत्र (स्कंद. ४.१.३२)। इसे हरिकेश (पिंगल) नामक एक पुत्र था।

इसका पुत्र हरिकेश शिवभक्त था, अतएव कुबेर-भक्त पूर्णभद्र ने उसे घर से निकाल दिया। अन्त में शिव का कृपापात्र होकर हरिकेश, गणेश बन गया (मत्स्य. १८०)।

स्कंदपुराण में, पूर्णभद्र को भी शिवभक्त कहा गया है।

४. मणिवर तथा देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

पूर्णभद्र वैभांडकि--एक पौराणिक ऋषि, जिसकी कृपा से चंप नामक राजा को हर्यंग नामक पुत्र हुआ था।

यह चंप एवं उसके पुत्र हर्यंग का आचार्य था। इसी कारण हर्यंग के यज्ञ में यह इंद्र का ऐरावत लाया था (ह. वं १.३१.४९-५०; ब्रह्म. १३.४४; मत्स्य. ४८.९८)।

पूर्णमास—अगस्त्यकुल का एक गोत्रकार (अगस्त्य देखिये)।

२. भागवत के अनुसार, कृष्ण के कालिन्दी से उत्पन्न दस पुत्रों में से एक (भा. १०.६.१)

३. बारह आदित्यों में से धातृ नामक आदित्य का पुत्र। इसकी माता का नाम अनुमति था (भा ६.१८.३)।

४. मणिवर तथा देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

पूर्णमुख—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)।

पूर्णरसा—कृष्ण की प्राणसखी (पद्म. पा.७४)।

पूर्णाश—एक देवगंधर्व, जो कश्यप तथा क्रोधा का पुत्र था।

पूर्णांगद—धृतराष्ट्र कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्प-सत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)।

पूर्णायु--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं क्रोधा (प्राधा) का पुत्र था (म. आ. ५९.४५)।

पूर्णिमत्—कर्दम प्रजापति की कला नामक कन्या के दो पुत्रों में से कनिष्ठ। वह मरीचि ऋषि का पुत्र था। इसके भाई का नाम 'पूर्णिमा' था। इसके विरग तथा विश्वग नामक दो पुत्र, तथा देवकुल्या नामक एक कन्या थी (भा. ४.१.१४)।

पूर्णिमागतिक—भृगुकुल का एक गोत्रकार। कई ग्रंथों में, इसके नाम के लिए 'पौर्णिमागतिक'-पाठभेद प्राप्त है।

पूर्णोत्संग--(आंध्र. भविष्य) एक आन्ध्रवंशीय राजा। विष्णु के अनुसार यह शातकर्णि का, मत्स्य के अनुसार श्रीमल्लकर्णि का, तथा भागवत के अनुसार श्रीशांतकर्ण का पुत्र था। भागवत में इसका 'पौर्णमास' नामांतर प्राप्त है। इसने अठारह वर्षों तक राज्य किया था।

पूर्य--कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

पूर्वचित्ति—स्वायंभुव मन्वंतर की एक अप्सरा, जिसकी गणना छः सर्वश्रेष्ठ अप्सराओं में की जाती थी (म. आ. ११४.५४)। अर्जुन के जन्ममहोत्सव में जिन दस अप्सराओं ने भाग लेकर, नृत्य प्रस्तुत किया था, उनमें यह एक थी (म. आ. ११४.५४)।

यह प्रियव्रतपुत्र अग्नीध्र राजा की पत्नी थी। इसे ब्रह्मदेव ने उसके पास भेजा था। अग्नीध्र से इसे कुल नौ पुत्र हुए, जिनके नाम इस प्रकार थे-नाभि, किंपुरुष, हरिवर्ष, इलावृत, रम्यक, हिरण्यमय, कुरु, भद्राश्चव तथा केतुमाल। इसके बाद यह पुनः ब्रह्मदेव के पास चली गयी (भा. ५. २. ३-२०)।

मलय पर्वत पर शुकदेवजी की श्रेष्ठता को देखकर, यह आश्चर्यचकित हो उठी थी, एवं श्रद्धावनत होकर इसने आदरभाव व्यक्त किया था (म. शां. ३१९. २०)।

२. एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी। यह पूस के महीने में भग नामक सूर्य के साथ घूमती है (भा. १२. ११. ४२)।

पूर्वपालिन्—महाभारतकालीन एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४. १७)।

पूर्वा—सोम की सत्ताइस पत्नियों में से एक।

पूर्वा भाद्रपदा—सोम की सत्ताइस पत्नियों में से एक।

पूर्वातिथि--अत्रिकुलोत्पन्न एक प्रवर एवं मंत्रद्रष्टा।

पूर्वेन्द्र--'पूर्वकल्प' में पांडवों के रूप में उत्पन्न पाँच इन्द्र।

पूषणा--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.२०)।

पूषन्—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक देवता, जो संभवतः सूर्यदेवता का नामांतर है। ऋग्वेदान्तर्गत आठ सूक्तों में, इस देवता का वर्णन प्राप्त है। इनमें से एक सूक्त में इन्द्र एवं पूषन् की स्तुति की गयी है, एवं दूसरे एक सूक्त में सोम एवं पूषन् को संयुक्त देवता मानकर उनकी स्तुति की गयी है।

उत्तरकालीन वैदिककाल में इस देवता का निर्देश अप्राप्य है। इसकी महत्ता का वर्णन जहाँ वेदों में

प्राप्त है, वहाँ इसका स्वरूपवर्णन स्पष्ट नहीं हो पाया है।

रुद्र की भाँति यह जटा एवं दाढ़ी रखता है (ऋ.६.५५. २; १०. २६. ७)। इसके पास सोने का एक भाला है (ऋ १. ४३. ६)। इसके पास एक अंकुश भी है (ऋ. ६. ५३. ९)। यह दंतहीन है। यह पेज या आटे को तरल पदार्थ के रूप में ही खा सकता है (ऋ. ६.५६. १; श ब्रा. १. ७. ४. ७)। अग्नि की तरह, यह भी समस्त प्राणियों को एक साथ देख सकता है।

यह सम्पूर्ण चराचर का स्वामी है (ऋ. १. ११५. १)। इसे उत्तम सारथि भी कहा गया है (ऋ. ६. ५६. २)। बकरे इसके रथ के वाहन हैं (ऋ. १. ३८.४)।

सूर्य एवं अग्नि की भाँति, यह अपनी माता (रात्रि) एवं बहन (उषा) से प्रेमयाचना करनेवाला है (ऋ. ६ ५५. ५)। इसकी पत्नी का नाम सूर्या था (ऋ. ६. ५८. ४.)। इसकी कामतप्त विह्वलता देखकर, देवताओं ने इसका विवाह सूर्या से संपन्न कराया। सूर्या के पति के नाते, विवाह के अवसर पर इसका स्मरण किया जाता है, एवं इससे प्रार्थना की जाती है, 'नववधू का हाथ पकड़ कर उसे आशीर्वाद दो।'

सूर्य के दूत के नाते, यह अन्तरिक्षसमुद्र में अपने स्वर्ण-नौका में बैठकर विहार करता है (ऋ. ६. ५८. ३)। यह द्युलोक में रहता है, एवं सारे विश्व का निरीक्षण करता हुआ भ्रमण करता है। सूर्य की प्रेरणा से, यह सारे प्राणियों का रक्षण करता है। यह 'आघृणि' अर्थात अत्यंत तेजस्वी माना जाता है।

पृथ्वी एवं द्युलोक के बीच यह सदैव घूमता रहता है। इस कारण, यह मृत व्यक्तियों को अपने पितरो तक पहुँचा देता है।

यह मार्गों में व्यक्तियों का संरक्षण करनेवाला देवता माना जाता है, जो उन्हे लूटपाट, चोरी तथा अन्य आपत्ति-विपत्तियों से बचाता है (ऋ. १.४२.१-३)। इसी कारण यह 'विमुचो नपात्' अर्थात् मुक्तता का पुत्र कहा जाता है। कई जगह इसे 'विमोचन' कह कर, पापों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए इसकी प्रार्थना की गयी है (अ.वे.६.११२. ३)। शत्रु दूर होकर मार्ग संकटरहित होने के लिये, इसकी प्रार्थना की जाती है (ऋ.१.४२.७)। इसी कारण, प्रवास के प्रारंभ में ऋग्वेद के ६.५३ सूक्त का पठन कर, पूषन् को बलि देने के लिये सूत्रग्रंथों में कहा गया है (सां. गृ. २. १४.१९)।

यह पथदर्शक देवता माना जाता है (वा. सं. २२. २०)। यह मार्गज्ञ होने के कारण, खोया हुआ माल पुनः प्राप्त करवा देता है (ऋ. ६. ४८. १५; आश्व. गृ. ३. ७. ९)। यह पशुओं की रक्षा करता है, एवं उन्हें रोगों तथा संकटों से बचाता है (ऋ. ६. ५४. ५-७)।

इसे प्राणिमात्र अत्यंत प्रिय हैं। यह भूलेभटके प्राणियों को सुरक्षित वापस लाता है (ऋ. ६. ५४. ७)। यह अश्वों का भी रक्षण करता है। इसीकारण गायों के चराने के लिये लेते समय, पूषन् की प्रार्थना की जाती है (सां. गृ. ३. ९)।

ऋग्वेद में इसके लिये निम्नलिखित विशेषण प्रयुक्त किये गये हैं :— अजाश्व, विमुचोनपात्, पुष्टिंभर, अनष्टपशु, अनष्टवेदस्, करंमाद, विश्ववेदस्, पुरुवसु, तथा पशुप। इनमें से विश्ववेदस्, अनष्टवेदस्, पुरुवसु, पुष्टिंभर इन सारी उपाधियों का अर्थ 'वैभव देनेवाला' होता है। 'पूषन्' का शब्दार्थ ही यही है।

निरुक्त के अनुसार, पूषन् को आदित्य एवं सूर्यदेवता का एक रूप माना गया है। वेदोत्तर वाङ्मय में भी 'सूर्य का नामांतर' अर्थ से 'पूषन्' का निर्देश अनेक बार किया गया है। इसे मार्गरक्षक, एवं प्राणिरक्षक देवता मानने का कारण भी संभवतः यही होगा।

'पूषन्' की दन्तविहीन होने की अनेक कथाएँ ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त हैं। अपनी कन्या के साथ विवाहसंबध रखनेवाले प्रजापति को रुद्र ने वध किया। प्रजापति के यज्ञ में से अवशिष्ट भाग पूषन् ने भक्षण किया। इस कारण 'पूषन्' दन्तविहीन बना (श. ब्रा. १. ७. ४. ७)। प्रजापति द्वारा किये हुए यज्ञ में रुद्र को आमंत्रित न करने के कारण, उसने उस यज्ञ को रोक दिया। पश्चात् यज्ञसिद्धि के लिये देवों ने रुद्र को प्रसन्न किया, एवं हविर्भाग का कुछ भाग पूषन् को दिया। देवों ने प्रदान किये उस हविर्भाग के कारण, पूषन् के दाँत टूट गये (तै. सं. २. ६. ८. २-७)।

पौराणिक ग्रंथोंमें भी, पूषन् का निर्देश प्राप्त है। भागवत के अनुसार, यह स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्षयज्ञ में ऋत्विज था। उस यज्ञ में इसनें शंकर की हँसी उड़ायी। इसकारण शिवगणों मे से चंडीश नामक गण नें इसे बाँध कर इसके दाँत तोड़ डाले (भा. ४. ५. २१-२२) पश्चात्, शंकर ने इसे वर दिया, "तुम यजमानों के दाँतो से हविर्भाग भक्षण करोगे एवं लोग तुम्हे 'पिष्टभुज' कहेंगे"। उसी दिन से यह 'पिष्टभुज' बना, एवं

जिनके हाथ न हों, ऐसे लोगों के यज्ञकार्य यह करने लगा (भा. ४. ७. ४-५)।

२. बारह आदित्यों में से एक (भा. ६.६.३९, पद्म. सृ. ६, म. आ. ५९.१५)।यह तपस् (माघ) माह में प्रकाशित होता है (भा. १२.११.३४)। कई ग्रन्थों के अनुसार, यह पौष माह में प्रकाशित होता है (भवि. ब्राह्म. ७.८)। भागवत के अनुसार, दक्षयज्ञ में उपस्थित पूषन् तथा यह दोनों एक ही थे (भा. ६.६. ४३)। महाभारत में भी, भगवान् शंकर द्वारा इसके दाँत तोड़ने का निर्देश प्राप्त है (म. द्रो. १७३.४८)।

किन्तु दक्षयज्ञ का पूषन् एवं द्वादशादित्यों में से एक पूषन् संभवतः दो अलग व्यक्ति थे। क्यों कि, स्वायंभुव मन्वन्तर में द्वादशादित्य अस्तित्व में नहीं थे। उन्हें दक्ष ने यज्ञ कर के वैवस्वत मन्वन्तर में उत्पन्न किया था।

इसने स्कंद को 'पालितक' एवं 'कालिका' नामक दो पार्षद प्रदान किये थे (म. श. ४४.३९)।

पूषमित्र गोभिल—एक वैदिक ऋषि, जो अश्वमित्र गोभिल का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम सगर था (वं. ब्रा. ३)

पृथ--रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

पृथग्भाव--चाक्षुष मन्वन्तर का एक देवगण।

पृथवान—दुःशीम नामक उदार दाता का नामांतर (ऋ. १०.९३.१४)।

पृथा—पांडवों की माता कुंती का नामांतर। यह शूरसेन यादव की कन्या थी, एवं संसार की अनुपम सुंदरी मानी जाती थी। कुन्ती या कुंतिभोज राजा ने इसे गोद लिया था (भा. ९.२४. ३९, पद्म. सृ. १३)।

पृथाश्व--एक प्राचीन नरेश, जो यमसभा में रह कर उसकी उपासना करता था (म. स. ८.१८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'पृथ्वश्व'।

पृथिन् वैन्य--पृथु 'वैन्य' राजा का नामांतर (पृथु वैन्य देखिये)।

पृथिवी--'द्यावापृथिवी' नामक देवताद्वय में से एक। ऋग्वेद में इसे सर्वत्र माता एवं देवता कह कर, इस पर अनेक सूक्त रचे गये है (द्यावापृथिवी देखिये)।

पृथिवींजय--वरुण की सभा का एक असुर (म. स. ९.१२)।

पृथु--(स्वा. नाभि) एक राजा। विष्णुमतानुसार यह प्रसार राजा का पुत्र था।

२. दक्षसावर्णि मनु का पुत्र।

३. तामसमनु का पुत्र।

४. तामस मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

५. द्युआदि अष्ट वसुओं में से एक। भाइयों के कथनानुसार इसने वसिष्ठ की गाय चुराई। अतः वसिष्ठ ने इसे तथा इसके अन्य भाइयों को शाप दिया, 'तुम्हें मनुष्य जन्म प्राप्त होगा।' बाद में यह शंतनु से गंगा के उदर में अपने अन्य भाइयों के साथ जन्मा। परंतु द्यु को छोड़ कर, अन्य वसुओं को जन्मतः ही पानी में डुबो देने के कारण, यह पुनः वसु के जन्म में आया (म. आ. ९३)।

६. (सू. इ.) एक राजा। भागवत तथा विष्णु के अनुसार, यह इक्ष्वाकुवंशीय अनेनस् राजा का पुत्र था। वायु में अनेनस् को पृथुरोमन् नामांतर दिया गया है।

इसने सौ यज्ञ किये थे। इसके पुत्र का नाम विश्वगश्व था (म. व. १९३.२-३)। रामायण में इसे अनरण्य राजा का पुत्र कहा गया हैं, और इसके पुत्र का नाम त्रिशंकु दिया गया है (वा. रा. बा. ७०.२४)।

७. (सो. अज.) एक राजा। विष्णु तथा मत्स्य के अनुसार यह पार द्वितीय राजा का पुत्र था। इसे पृथु नामांतर भी प्राप्त है।

८. (सो. नील.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह पुरुजानु राजा का पुत्र था (चक्षु २ देखिये)

९. (सो. वृष्णि) एक राजा। भागवत के अनुसार यह चित्ररथ राजा का पुत्र था।

१०. (सो. वृष्णि.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार यह अक्रूर का पुत्र एवं इसकी माता का नाम अश्विनी है।

११. (सो. वृष्णि.) एक वृष्णिवंशीय राजा। भागवत के अनुसार यह रुचक राजा का पुत्र था। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१७)। रैवतक पर्वत के उत्सव में यह शामिल था (म. आ. २११. १०) हरिवंश में इसे 'पृथुरुक्म' कहा गया है। संभव है, पृथु तथा रुक्म को मिलाकर ही इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो।

१२. शुक के पाँच पुत्रों में से प्रभु का नामांतर।

१३. ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक मानव संघ (ऋ. ७.८३. १)। इनका निर्देश प्रायः 'पर्शु' लोगों के साथ आता है। लुडविग के अनुसार, आधुनिक पार्शियन एवं पर्शियन लोग ही प्राचीन 'पृथु' एवं 'पर्शु' लोग होंगे।

१४. एक सदाचारसंपन्न ब्राह्मण। एक बार यह तीर्थयात्रा करने जा रहा था। इसे पाँच विद्रूप प्रेतपुरुष दिखलायीं पड़े। वे सब अन्नदान के अभाव तथा याचकों के साथ अशिष्ट व्यवहार के कारण निंद्य प्रेतयोनि में गये थे। उनमें से प्रत्येक व्यक्ति विकलांगी था। 'पर्युषित' वेदत्र था। 'सूचिमुख' सुई के समान था। शीघ्रग पंगु था। 'रोहक' गर्दन न उठा सकता था, तथा 'लेखक' को चलते समय अत्यधिक कष्ट होता था। बाद में, इस ब्राह्मण ने उन्हें प्रेतत्व की निवृत्ति के लिए आहार, आचार तथा व्रत बतलाये, तब उन सबका उद्धार हुआ (पद्म. सृ. २७.१८-४६)।

पृथु 'वैन्य'—पृथ्वी का पहला राजा एवं राजसंस्था का निर्माता (श. ब्रा. ५. ३. ५. ४; क. सं. ३७. ४; तै. ब्रा. २.७. ५. १; पद्म. भू. २८.२१)। इसी कारण प्राचीन ग्रंथो में, 'आदिराज', 'प्रथमनृप', 'राजेंद्र', 'राजराज', 'चक्रवर्ति', 'विधाता', 'इन्द्र' 'प्रजापति' आदि उपाधियों से यह विभूषित किया गया है। महाभारत मे सोलह श्रेष्ठ राजाओं में इसका निर्देश किया गया है (म. द्रो. ६९; शां. २९.१३२; परि. १. क्र. ९)।

पृथ्वीदोहन अथवा नव समाजरचना--इसने भूमि को अपनी कन्या मानकर उसका पोषण किया। इसी कारण 'भू' को 'पृथुकन्या' या 'पृथिवी' कहते है (विष्णु. १.१३; मत्स्य. १०; पद्म. भू. २८; ब्रह्म. ४; ब्रह्मांड. २.३७; भा. ४.१८; म. शां. २९.१३२)।

पृथु के द्वारा पृथ्वी के दोहन की जाने की रूपात्मक कथा वैदिक वाङ्मय से लेकर पुराणों तक चली आ रही है। इस कथा की वास्तविकता यही है कि, इसने सही अर्थों में पृथ्वी का सृजन सिंचन कर, उसे धन-धान्य से पूरित किया।

मानवीय संस्कृति के इतिहास में, कृषि एवं नागरी व्यवस्था का यह आदि जनक था। इसके पूर्व, लोग पशुपक्षियों के समान इधर उधर घूमते रहते थे, प्राणियों को मार कर उनका माँस भक्षण करते थे। इस प्रकार पृथ्वी की प्राणि-सृष्टि का विनाश होता जा रहा था, एवं उनके हत्या का पाप लोगों पर लग रहा था। इसे रोकने के लिए पृथु ने कृषि व्यवस्था को देकर लोगों को अपनी जीवकोपार्जन के लिए एक नए मार्ग का निर्देशन किया। यह पहला व्यक्ति था, जिसने भूमि को समतल रूप दिया, उससे अन्नादि उपजाने की कला से लोगों को परिचित कराया, एवं इस तरह एक नई संस्कृति एवं सभ्यता का निर्माण किया।

कृषि-कला के साथ साथ पृथु ने लोगों को एक जगह बस कर रहना भी सिखाया। इस प्रकार, ग्राम, पुर, पत्तन, दुर्ग, घोष, व्रज, शिबिर, आकर, खेट, खर्वट आदि नए नए स्थानों का निर्माण होने लगा। इसके साथ ही साथ लोगों को पृथ्वी के गर्भ में छिपी हुयी सकल औषधि, धान्य, रस, स्वर्णादि धातु, रत्नादि एवं दुग्ध आदि प्राप्त करने की कला से इसने बोध कराया (भा. ४.१८)।

इसने पृथ्वी के सारे मनुष्य एवं प्राणियों को हिंसक पशुओं, चोरों एवं दैहिक विपत्तियों से मुक्त कराया। अपनी शासन-व्यवस्था द्वारा यक्ष राक्षस, द्विपाद चतुष्पाद सारे प्राणियों, एवं धर्म अर्थादि सारे पुरुषार्थों के जीवन को सुखकर बनाया। इसने अपने राज्य में धर्म को प्रमुखता दी, एवं राज्यशासन के लिए दण्डनीति की व्यवस्था दी। प्रजा की रक्षा एवं पालन करने के कारण इसे 'क्षत्रिय' तथा 'प्रजारंजनसम्राज्' उपाधि से विभूषित किया गया (म. शां. ५९.१०४-१४०)।

पृथु ने पृथ्वी पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यादि वर्गोंकी प्रतिष्ठापना की, एवं हर एक व्यक्ति को अपनी वृत्ति के अनुसार उपजीविका का साधन उपलब्ध कराया। इसी कारण यह संसार में मान्य एवं पूज्य बना (ब्रह्मांड. २.३७.१-११)।

महाभारत के अनुसार, कृतयुग में धर्म का राज्य था। अतएव दण्डनीति की आवश्यकता उस काल में प्रतीत न हुयी। कालान्तर में लोग मोहवश होकर राज्यव्यवस्था को क्षीण करने लगे। इसी कारण शासन के लिए राजनीति, शासनव्यवस्था एवं राजा की आवश्यकता पड़ी। पृथु ही पृथ्वी का प्रथम प्रशासक था।

पृथु के 'पृथ्वीदोहन' की कथा पद्मपुराण में इस प्रकार दी गयी है। प्रजा के जीवन-निर्वाह व्यवस्था के लिए यह धनुष-बाण लेकर पृथ्वी के पीछे दौड़ा। भयभीत होकर पृथ्वी ने गाय का रूप धारण किया। इससे विनती की, 'तुम मूझे न मारकर, मेरा दोहन कर, सर्व प्रकार के वैभव प्राप्त कर सकते हो'। पृथ्वी की यह प्रार्थना पृथु ने मान ली एवं इसने पृथ्वी का दोहन किया (पद्म. सृ. ८)।

दोहकगण—पृथ्वी की नानाविध वस्तुओं के दोहन करनेवाले देव, गंधर्व, मनुष्य, आदि की तालिका अथर्ववेद में एवं ब्रह्मादि पुराणों में दी गयी है। उनमें से

अथर्ववेद में प्राप्त तालिका इस प्रकार है (अ. वे. ८.२८):—

वर्ग	दोहन करनेवाला	वत्स	पात्र	दुग्ध
असुर	द्विमूर्धन्	विरोचन	लोह	माया
पितर	अंतक	यम	रौप्य	स्वधा
मनुष्य	पृथुवैन्य	वैवस्वतमनु	पृथ्वी	कृषि एवं सस्य
ऋषि	बृहस्पति	सोम	छंदस्	तप तथा वेद
देव	रवि	इन्द्र	चमस्	बल
गंधर्व	वसुरुचि	चित्ररथ	कमल	सुगंध
यक्ष	रजतनाभि	कुबेर	मृण्मय	अंतर्धान
सर्प	धृतराष्ट्र	तक्षक	तुंबा	विष
राक्षस	जातुनाभ	सुमाली	कपाल	रक्त
वृक्ष	शाल (जिसे राल बनते हैं)	पिंपरी	पलाश	तोड जाने पर भी पुन निर्माण होना
पर्वत	मेरु	हिमालय	पत्थर	महौषधि तथा रत्न

इस तालिका अनुसार, मानवों के जातियों में से असुर, पितर आदि 'वर्गों' ने पृथ्वी से माया, स्वधा आदि वस्तुओं का दोहन किया (प्राप्ति की), जिन पर उन विशिष्ट वर्गों का गुजारा होता है। इस तालिका में, मनुष्य जाति का प्रतिनिधि पृथु वैन्य को मानकर उसने पृथ्वी से 'कृषि' एवं 'सस्य' को प्राप्त किया ऐसा कहा गया है।

पृथु वैन्य चाक्षुष मन्वन्तर में पैदा हुआ माना जाता है। ध्रुव उत्तानपाद राजा के पश्चात् एवं मरुतों के उत्पत्ति के अनंतर, पृथ वैन्य का युगारंभ होता है। पृथ वैन्य के पश्चात् पृथ्वी पर वैवस्वत मनु एवं उसके वंश का राज्य शुरू होता है।

एक उदारदाता, कृषि का आविष्कर्ता, एवं मनुष्य तथा पशुओं के अधिपति के रूप में वैदिक साहित्य में, इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.९३.१४; अ. वे. ८. १०.२४; पं. ब्रा. १३. ५.१९)। वेन का वंशज होने के कारण इसे 'वैन्य' उपाधि प्राप्त थी (ऋ. ८.९.१०) शतपथ ब्राह्मण में इसका निर्देश 'पृथु' नाम से किया गया है, किन्तु सायणभाष्य में सर्वत्र इसे 'पृथिन्' कहा गया हैं। अथर्ववेद में भी 'पृथिन्' पाठ उपलब्ध है (अ. वे. ८. २८. ११)।

राज्यभिषेक—शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, पृथ्वी में सर्वप्रथम पृथु का राज्याभिषेक हुआ। इसी कारण राज्याभिषेक का धार्मिक विधियों में किये जानेवाले 'पूर्वोत्तरांगभूत' होम को 'पार्थहोम' कहते हैं। इस राज्याभिषेक के कारण ग्राम्य एवं आरण्यक व्यक्तियों एवं पशुओं का पृथु राजा हुआ (श. ब्रा. ५. ३. ५. ४)। इसने 'पार्थ' नामक साम कहकर समस्त पृथ्वी का आधिपत्य प्राप्त किया (पं. ब्रा. १३. ५. २०)। एक ऋषि एवं तत्त्वज्ञानी के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. १.१०.९; ऋ. १०.१४८.५)।

इसका राज्यभिषेक महारण्य अथवा दंडकारण्य में संपन्न हुआ (म. शां. २९.१२९)। इसके राज्याभिषेक के समय, भिन्न भिन्न देवों ने इसे विभिन्न प्रकार के उपहार प्रदान किये। इन्द्र ने अक्षय्य धनु एवं स्वर्ण मुकुट, कुबेर ने स्वर्णासन, यम ने दण्ड, बृहस्पति ने कवच, विष्णु ने सुदर्शन चक्र, रुद्र ने चन्द्रविम्बांकित तलवार, त्वष्टु ने रथ एवं समुद्र ने शंख दिया।

पुराणों में इसे वैन्य अथवा वेण्य कहा गया है। यह चक्षुर्मनु के वंश के वेन राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. २)। वेन राजा अत्यधिक दुष्ट था जिससे प्रजा बड़ी त्रस्त थी। उस समय के महर्षियों ने पूजा के साथ सद्व्यवहार करने के लिए बहु उपदेश दिये, पर उसका कोई प्रभाव न पड़ा। संतप्त होकर ऋषियों ने वेन को मार डाला। राजा के अभाव में अराजकता फैल गयी, जनता च्योर, डाकुओं से पीड़ित हो उठी। पश्चात, सब ऋषियों ने मिलकर वेन की दाहिनी भुजा का, तथा विष्णु के अनुसार दाहिनी जंघा का मंथन किया।

इस मंथन से सर्व प्रथम विन्ध्यनिवासी निषाद तथा धीवर उत्पन्न हुए। तत्पश्चात् वेन की दाहिनी भुजा से पृथु नामक पुत्र एवं अर्चि नामक कन्या उत्पन्न हुयी (भा. ४. १५. १-२) पृथु विष्णु का अंशावतार था एवं जन्म से ही धनुष एवं कवच धारण किये हुए उत्पन्न हुआ था। इसके अवतीर्ण होते ही महर्षि आदि प्रसन्न हुए तथा उन्होंने इसे सम्राट बनाया (पद्म. भू. २८)।

राज्याभिषेक होने के उपरांत पृथु ने प्राचीन सरस्वती नदी के किनारे ब्रह्मावर्त में सौ अश्वमेध करने का संकल्प

किया। निन्यानवे यज्ञ पूरे ही जाने के बाद इन्द्र को शंका हुयी कि, कहीं यह मेरा इन्द्रासन न छीन ले। अतएव उसने यज्ञ के अश्व को चुरा लिया। यही नहीं, कापालिक वेष धारण कर इन्द्र ने पृथु का यज्ञ न होने दिया। इस पर क्रोधित होकर पृथु इन्द्र का वध करने को उद्यत हुआ। दोनों में काफ़ी संघर्ष न हो, इस भय से बृहस्पति तथा विष्णु ने मध्यस्थ होकर, दोनों में मैत्री की स्थापना कराई। भागवत के अनुसार अत्रि ऋषि की सहायता से पृथु-पुत्र विजिताश्व ने इन्द्र को पराजित किया (भा. ४.१९)

इसने महर्षियों को आश्वासन दिया, 'मैं धर्म के साथ राज्य करूँगा। आप मेरी सहायता कीजिये'।

महर्षियों ने इस पर 'तथास्तु' कहा। तत्पश्चात् शुक्र इसका पुरोहित बना, एवं निम्नलिखित ऋषि इसके अष्टमंत्री बनेः- वालखिल्य-सारस्वत्य, गर्ग-सांवत्सर, अत्रि-वेदकारक, नारद- इतिहास, सूत, मागध, बंदि (म. शां. ५९. ११६ ११८, १३१*,)। पुरोहित, सारस्वत्य, सांवत्सर, वेदकारक, इतिहास, और राजा ये छः नाम मिलते है। बाकी दो नाम का निर्देश नहीं है। सूत-मागध ये वंदिजन अलग है।

सम्भव है मध्ययुगीन काल में, महाराष्ट्र के छत्रपति शिवाजी ने अष्टप्रधान की शासनव्यवस्था यही से अपनायी हो।

पृथु की राजप्रतिज्ञा—राज्याधिकार प्राप्त करने के पूर्व, ऋषियों ने पृथु वैन्य से निम्नलिखित शपथ ग्रहण करने को कहा-

> "नियतो यत्र धर्मो वै, तमशङ्कः समाचर।
> प्रियाप्रिये परित्यज्य, समः सर्वेषु जन्तुषु ॥
> कामक्रोधौ च लोभं च, मानं चोत्सृज्य दूरतः ॥
> यश्च धर्मात्प्रविचलेल्लोके, कश्चन मानवः ॥
> निग्राह्यस्ते स बाहुभ्यां, शश्वद्धर्ममवेक्षतः।
> प्रतिज्ञां चाधिरोहस्व, मनसा कर्मणा गिरा ॥
> पालयिष्याम्यहं भौमं, ब्रह्म इत्येव चासकृत्"।

[मैं नियत-धर्म को निर्भयता के साथ आचरण में लाऊँगा। अपनी रुचि तथा अभिरुचि को महत्त्व न देकर समस्त प्राणियों के साथ समता का व्यवहार करूँगा।

मैं, काम, क्रोध, लोभ और मान को छोड़कर धर्मच्युत व्यक्तियों को शाश्वत धर्म के अनुसार दण्ड दूँगा।

मैं 'मनसा वाचा कर्मणा' बार बार प्रतिज्ञा करता हूँ कि प्रजाजन को भौमब्रह्म समझकर उसका पालन करूँगा (म. शां. ५९. १०९-११६)।]

राजनीति की दृष्टि से इस प्रतिज्ञा में नियतधर्म एवं शाश्वतधर्म के पालन पर जो ज़ोर दिया गया है, वह अत्यधिक महत्त्वपूर्ण है। राज्य में विभिन्न धर्मों के माननेवाले व्यक्ति होते हैं, पर राजा उन सबको एकसूत्र में बाँधकर जिस धर्म के द्वारा राज्य करता है वह समन्वय-वादी, समतापूर्ण, सर्वजनहिताय होता है। इसी को इस प्रतिज्ञा में 'नियत' एवं शाश्वत 'धर्म' कहा गया है। यह शाश्वत धर्म के पालन की कल्पना प्राचीन भारतीय संस्कृति की देन है। पृथु वैन्य की यह प्रतिज्ञा इग्लैण्ड आदि की राज्य-प्रतिज्ञा से काफ़ी मिलती है। अन्तर केवल इतना है, कि वहाँ की प्रतिज्ञा किसी विशेष धर्म-प्रणाली में ही आबद्ध है, पर पृथु द्वारा ग्रहण की गयी प्रतिज्ञा अखिल मानव-धर्म को ही राजधर्म मानकर उसे ही प्रतिस्थापित करते की बात कहती है।

कालिदास के रघुवंश में प्राप्त रघु राजा की प्रशस्ति में भी, 'प्रकृतिरंजन,' प्रजा का 'विनयाधान' एवं 'पोषण' आदि शब्दों द्वारा यही कल्पना दोहरायी, गयी है।

महाभारत के अनुसार, पृथु के अश्वमेध यज्ञ में अत्रि ऋषि ने इसे 'प्रथमनृप' 'विधाता,' 'इंद्र' और 'प्रजापति' कहकर इसका गौरवगान किया। यह गौतम को असहनीय था अतएव उसने अत्रि ऋषि से वाद-विवाद किया। इस वाद-विवाद में सनत्कुमार ने अत्रि का पक्ष लेकर उसका समर्थन किया। तत्पश्चात् पृथु ने अत्रि को बहुत सा धन देकर उसका सत्कार किया (म. व.. १८३)।

पृथु की राजपद्धति प्रजा के लिए अत्यधिक सुखकारी सिद्ध हुयी। इसकी राजधानी यमुना नदी के तट पर थी। सूत एवं मागध नामक स्तुतिपाठक जाति की उत्पत्ति इसी के राज्यकाल में हुयी। उनमें से सूतों को इसने अनूप देश एवं मागधों को मगध एवं कलिंग देश पुरस्कार के रूप में प्रदान किये (वायु. ६२.१४७; ब्रह्मांड २.३६.१७२; ब्रह्म. ४.६७; पद्म. भू. १६.२८; अग्नि. १८.८५; वा. रा. बा. ३५.५-३५; कूर्म. पू. १.६; शिव. वाय. ५६.३०-५६.३०-३१)।

काफ़ी समय तक राज्य करने के उपरांत पृथु को वन में जाने की इच्छा हुयी। और यह अपनी पत्नी अर्चि को साथ लेकर वन गया। वन में इसकी मृत्यु हो गयी और इसके साथ इसकी पत्नी भी सती हो गयी (भा. ४.२३)।

पुत्र—भागवत के अनुसार पृथु को कुल पाँच पुत्र थे,

जिनके नाम इस प्रकार थेः—विजिताश्व (अन्तर्धान), धूम्रकेश, हर्यक्ष, द्रविण एवं वृक (भा. ४.२२.५४)। विष्णु के अनुसार, इसके अंतर्धि तथा पालित नामक दो ही पुत्र थे (विष्णु. १.१४.१)।

पृथुवंश--पृथुवंश की जानकारी ब्रह्मांड पुराण में दी गयी है (२.३७.२२-४२)। पृथु के पुत्र का नाम अंतर्धान। कन्या का नाम शिखण्डिनी था, जिसके पुत्र का नाम हविर्धान था। हविर्धान को आग्नेयी धिषणा नामक पत्नी से कुल छः पुत्र हुए, जिनके नाम निम्नलिखित हैः- प्राचीनबर्हिष, शुक्ल, गय कृष्ण, प्रज, अजित इनमें से प्राचीनबर्हिष का विवाह समुद्रतनया सवर्णा से हुआ, जिससे उसे दस प्रचेतस् उत्पन्न हुए। प्रचेतसों का विवाह वृक्षकन्या मारिषा से हुआ जिससे उन्हें दक्ष प्रजापति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

पृथु-वंश में पृथु से लेकर दक्ष प्रजापति तक की संतति 'अयोनिज' सन्तति कहलाती है। दक्ष प्रजापति के पश्चात मैथुनज सन्तति का आरम्भ हुआ।

पृथुक—रैवत मन्वंतर का देवगण। इस गण में निम्नलिखित आठ देवता सम्मिलित हैंः— अजित, ओजिष्ठ जिगीषु, वानदृष्ट, विजय, शकुन, सत्कृत और सत्यदृष्टि (ब्रह्मांड. २.३६.७३)।

पृथुकर्मन्- (सो. क्रोष्टु) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह शशबिन्दु का पुत्र था।

पृथुकीर्ति—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य, विष्णु तथा वायु के अनुसार, यह शशबिन्दु राजा का पुत्र था।

२. शूर राजा की कन्या श्रुतदेवा का नामांतर

पृथुग—चाक्षुष मन्वंतर का देवगण।

पृथुगश्व—एक राजा, जो यम सभा में उपस्थित था। इसके नाम के लिए 'पृथुलाश्व' पाठभेद भी उपलब्ध है (म. स. ८.२०)।

पृथुग्रीव—खर राक्षस का एक अमात्य। इसे 'पृथुश्याम' नामांतर भी प्राप्त है।

पृथुजय—(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। भागवत के अनुसार यह महाभोज राजा का पुत्र था। विष्णु, मत्स्य, तथा वायु में इसे शशबिन्दु का पुत्र कहा गया है।

पृथुतेजस्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। यह शशबिंदु राजा का नाती था (पद्म. सृ. १३)।

पृथुदर्भ--(सो. अनु.) शिवि 'औशीनर' के पुत्र बृहद्गर्भ राजा का नामांतर।

पृथुदात्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। वायु के अनुसार, यह शशबिन्दु राजा का पुत्र था।

पृथुदान--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। विष्णु के अनुसार, यह शशबिन्दु राजा का पुत्र था।

पृथुधर्मन्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य और वायु के अनुसार, यह शशबिन्दु राजा का पुत्र था।

पृथुपर्शु--ऋग्वेद में निर्दिष्ट मानव जातिसंघद्वय (ऋ. ७. ८३. १)। लुडविग के अनुसार, आधुनिक पार्थियन एवं पर्शियन लोग ही प्राचीन 'पृथु' एवं 'पर्शु' लोग होंगे।

सायण के अनुसार, 'पृथु' किसी जाति का नाम न होकर 'पर्शु' का विशेषण है, तथा 'पृथुपर्शु' नाम से चौड़े कुठार वाले किसी जाति विशेष की ओर संकेत मिलता है।

पृथुमनस्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। मत्स्य के अनुसार, यह शशबिन्दु राजा का पुत्र था।

पृथुयशस्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। भागवत के अनुसार, यह महाभोज राजा का पुत्र था। विष्णु, मत्स्य एवं वायु में इसे शशबिन्दु राजा का पुत्र कहा गया है।

पद्म के अनुसार यह शशबिन्दु का नाती था (पद्म. सृ. १३)।

पृथुरश्मि—यति नामक यज्ञविरोधी लोगों में से एक। यति लोग यज्ञविरोधी होने के कारण, इंद्र की आज्ञा से लकड़बग्घे के द्वारा मरवा डाले गये। इनमें से बृहद्गिरि. रायोवाज एवं पृथुरश्मि ही बच सके। इन्द्र ने इन तीनों का संरक्षण किया एवं उन्हें क्रमशः ब्रह्मविद्या, वैश्यविद्या एवं क्षत्रियविद्या सिखायी।

पृथुरश्मि के अनुरोध पर इन्द्र ने इसे क्षात्रविद्या के साथ क्षत्रियों का सामर्थ्य भी प्रदान किया। इसके नाम से 'पार्थुरश्म' नामक साम प्रसिद्ध है, जिसका पठन-पाठन क्षत्रियों का तेज संवर्धित करता है (पं. ब्रा. १३.४.१७; यति देखिये)।

ब्रह्मांड पुराण में, पुथुरश्मि के पिता का नाम वरुत्रिन् कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.१.८३-८४; वरुत्रिन् देखिये)।

पृथुरुक्य--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा। विष्णु एवं पद्म के अनुसार यह परावृत्त राजा का पुत्र था। मत्स्य तथा वायु में इसे रुक्मकवच का पुत्र कहा गया है।

पृथुरोमन्--इक्ष्वाकुवंशीय अनेनस् राजा का नामांतर (पृथु. ६. देखिये)।

पृथुलाक्ष--(सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो चतुरंग राजा का पुत्र था। इसके चार पुत्र थे, जिनके नाम बृहद्रथ, बृहत्कर्मन्, बृहद्भानु और चंप थे (भा. ९. २३. ११; म. स. ८.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) —'पृथ्वक्ष'।

पृथुवक्त्रा--स्कंद की एक अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१८)। इसके नाम के लिए 'पृथुवक्षा' एवं 'पृथुवस्त्रा' पाठभेद उपलब्ध हैं।

पृथुवेग--एक राजा, जो यम की सभा में उपस्थित था (म. स. ८.१२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'पंचहस्त'।

पृथुश्याम--पृथुग्रीव नामक राक्षस का नामांतर।

पृथुश्रवस्--दक्ष सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशी राजा। विष्णु, मत्स्य और वायु के अनुसार, यह शशविन्दु राजा का तथा भागवत के अनुसार महाभोज राजा का पुत्र था। पद्म में इसे शशविन्दु राजा का नाती कहा गया है (पद्म. सृ. १३)

३. द्वैतवन में पांडवों के साथ रहनेवाला ऋषि। यह युधिष्ठिर का बड़ा सम्मान करता था (म. व. २७.२२)।

४. एक राजा, जो पुरुवंशीय राजा अयुतनायी की पत्नी कामा का पिता था (म. आ. ९०.२०)। यह यमसभा में रहकर यम की उपासना करता था (म. स.८.१२)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

६. एक नाग, जो बलराम के स्वागतार्थ प्रभासक्षेत्र में आया था (म. मौ. ५.१४)।

पृथुश्रवस् कानीत--एक उदार दाता, जो वश अश्व्य नामक ऋषि का आश्रयदाता था (ऋ. ८.४६.२१)। अश्विनी कुमारों ने इस पर कृपा की थी (ऋ.१.११६. २१)।

पृथुश्रवस् दौरेश्रवस--एक ऋषि, जो सर्पसत्र में 'उद्गातृ' नामक पुरोहित का काम करता था (पं. ब्रा. २५.१५.३)। 'दूरेश्रवस्' का वंशज होने के कारण, इसे दौरेश्रवस उपाधि प्राप्त हुयी होगी।

पृथुषेण--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो विभु राजा का पुत्र था। इसकी स्त्री का नाम आकुति तथा पुत्र का नाम नक्त था (भा.५.१५.६)।

पृथुसेन--(सो. अज.) एक राजा। विष्णु, मत्स्य, तथा वायु के अनुसार यह रुचिराश्व राजा का पुत्र था। भागवत में इसे रुचिराश्व राजा का नाती एवं पार राजा का पुत्र माना गया है।

२. (सो. अनु.) मत्स्य के अनुसार अंगराज कर्ण का पुत्र (मत्स्य. ४८)। किन्तु अन्यत्र इसका नाम अप्राप्य है।

पृश्नि--सविता नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६. १८१.)।

२. मरुतों की माता। इसे देवी मान कर ऋग्वेद की कई ऋचाओं की रचना की गयी है (ऋ.६.४८.२१-२२)।

३. स्वयंभुव मन्वंतर के सुतपा प्रजापति की पत्नी। इसीने कृष्णावतार में देवकी के रुप में जन्म लिया था (भा. १.३.३२)। इसके उदर से कृष्ण का जन्म हुआ था। अतएव कृष्ण को 'पृश्निगर्भ' भी कहा जाता है (पृश्निगर्भ देखिये)।

४. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो वायु और विष्णु के अनुसार, अनमित्र राजा का पुत्र था। इसे वृष्णि और वृषभ नामांतर भी प्राप्त थे।

५. एक प्राचीन महर्षियों का समूह, जिन्होंने द्रोणाचार्य के पास आकर उनसे युद्ध बंद करने को कहा था (म. द्रोण. १६४.८८)। इन्होंने स्वाध्याय के द्वारा स्वर्ग प्राप्त किया था (म. शां. परि. १.४.१३)।

पृश्निगर्भ--भगवान् श्रीकृष्ण का नामांतर। श्रीकृष्ण की माता देवकी पूर्वजन्म में सुतपा प्रजापति की पत्नी पृश्नि थीं। उसी का पुत्र होने के कारण कृष्ण को पृश्निगर्भ कहते हैं। यह त्रेतायुग का उपास्य देव है, जो कि विष्णु का अवतार माना जाता है (भा. १०.३.३५; ११.५. २६)।

महाभारत के अनुसार,-अन्न, वेद, जल और अमृत को पृश्नि कहते हैं। ये सारे तत्त्व भगवान् श्रीकृष्ण के गर्भ में रहते हैं, इसलिये उसका नाम पृश्निगर्भ पड़ा। इस नाम के उच्चारण से त्रित मुनि कूप से बाहर हो गये थे (म. शां. ३२८.४०)।

पृश्निगु--अश्विनियों के अश्रित राजाओं में से एक (ऋ.१.११२.७)। पुरुकुत्स और शुचन्ति राजाओं के साथ इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है।

२. गेल्डनर के अनुसार, एक वैदिक जाति का सामूहिक नाम (ऋ.७.१८.१०)।

पृश्निमेधस्--सुमेधस् देवों में से एक।

पृषत--(सो. नील.) उत्तर पांचाल देश का एक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का मित्र एवं द्रुपद राजा का पिता था (म. आ.१५४.६; ह. वं. १.३२.७९-८०)। विष्णु और वायु के अनुसार यह, सोमक राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'जंतु' राजा का पुत्र कहा गया है।

उत्तर पांचाल देश का राजा सुदास अत्यंत पराक्रमी था, किन्तु सुदास के पश्चात् पुरु एवं द्विमीढ़ राजाओं ने उत्तर पांचाल देश पर आक्रमण कर के उसे जर्जरित कर दिया। द्विमीढ़ राजा उग्रायुध ने सुदास राजा के नाती एवं पृषत राजा के पितामह सोमक का वध किया, एवं उत्तर पांचाल का राज्य जीत लिया। इस तरह राज्य से पदच्युत हुआ राजकुमार पृषत् दक्षिण पांचाल देश के कांपिल्य नगरी में भाग गया। तत्पश्चात् उग्रायुध ने कुरु राज्यपर आक्रमण किया किन्तु कुरु राजा भीष्म ने उसे पराजित कर उसका वध किया।

पश्चात् भीष्म ने पृषत को उत्तर पांचाल देश देकर पुनः राज्यगद्दी पर बिठाया।

पृषत राजा के पुत्र का नाम द्रुपद था इसी कारण द्रुपद को पार्षत कहते थे। उत्तर पांचाल देश में गंगाद्वार में भरद्वाज ऋषि का आश्रम था। भरद्वाज पृषत राजा का मित्र भी था। इसी कारण पृषत् ने अपने पुत्र द्रुपद को भरद्वाज ऋषि के यहाँ विद्या अध्ययन के लिये भेजा था। भरद्वाजपुत्र द्रोण एवं द्रुपद में पहले बडी मित्रता थी। पर बाद में दोनों एक दूसरे के कट्टर शत्रु बन गये। अपने शिष्य अर्जुन की सहायता से द्रोण ने उत्तर पांचाल का राज्य द्रुपद से जीत लिया एवं उसे दक्षिण पांचाल देश की ओर भगा दिया। (द्रुपद देखिये; ह. वं. १.२०; ७४-७५; म. आ. १२८ १५)।

पृषदश्व--(सू. नाभाग.) एक राजा। भागवत, विष्णु तथा ब्रह्मांड के अनुसार यह विरूप राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम रथीवर था। अंगिरस ऋषि की सेवा करने के कारण इसने ब्राह्मणपद प्राप्त किया एवं, यह अंगिरस गोत्र का मंत्रकार हुआ। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-- 'रुषदश्व'।

२. (सू. इ.) एक राजा। विष्णु के अनुसार यह अनरण्य राजा का पुत्र था। वायु में इसे त्रसदश्व कहा गया है।

३. यम की सभा का एक क्षत्रिय राजा (म. स. ८. १३)। इसे अष्टक राजा के द्वारा खड्ग की प्राप्त हुयी थी (म. शां. १६०.७९)।

पृषध्र--एक राजा, जो वैवस्वत मनु का नवाँ पुत्र था। इसकी माता का नाम संज्ञा था (म. आ. ७०.१४; ह. वं. १.१०.२)। भागवत के अनुसार, इसकी माता श्रद्धा थी (भा. ९.१.१२)। च्यवन ऋषि का यह शिष्य था।

महाभारत के अनुसार यह प्रातःसायंकालीन कीर्तन करने योग्य राजाओं में से एक है, क्योंकि इसको स्मरण करने से धर्म की प्राप्ति होती है (म. अनु. १६५.५८-६०) इसने कुरुक्षेत्र में तपस्या करके स्वर्ग प्राप्त किया था (म. आश्र. २६.११)।

पृषध्र के कुल दस भाई थे, जिनके नाम इस प्रकार हैः-श्राद्धदेव (सौतेला भाई), इक्ष्वाकु, नृग, शर्याति, दिष्ट, धृष्ट, करुषक, वरिष्यन्त, नभग तथा कवि। कई अन्य ग्रन्थों में इसके कई और भाइयों के नाम भी प्राप्त है (मनु देखिये)।

२. एक ब्राह्मणपुत्र। गुरुगृह में शिक्षा प्राप्त करते हुए, एक दिन इसने एक सिंह को देखा कि वह गाय को मुँह में दबाये आश्रम से लिये जा रहा है। गाय की रक्षा के हेतु इसने अपना खड्ग शेर को मारा, पर सायंकाल के समय अंधेरा हो जाने के कारण, वह खड्ग गाय को लगा और वह तत्काल मर गयी। दूसरे दिन गुरु को जैसे ही यह समाचार ज्ञात हुआ उसने पृषध्र को उत्पाति तथा उद्दण्ड समझकर तत्काल शाप दिया, 'तू शूद्र हो जा'। इस शाप के कारण, यह शूद्र होकर वन वन भटकता हुआ अन्त में दावानल से घिरकर मृत्यु को प्राप्त हुआ (भा. ९.२.२-१४; ह. वं. १.११; वायु. ८६.२४.२; ब्रह्मांड. ३.६१.२; ब्रह्म. ७.४३; लिंग. १.६६.५२; मत्स्य. १२.२५; अग्नि. २७२.१८; विष्णु. ४.१.१३; गरुड. १.१३८.५; पद्म. सृ. २)।

३. द्रुपद का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में अश्वत्थामा द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३१.१२९)।

पृषध्र काण्व--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५९)। ऋग्वेद के वालखिल्य सूक्त में भी इसका निर्देश प्राप्त है। वहाँ मेध्य एवं मातरिश्वन् के साथ इसका उल्लेख आया है (ऋ. ८.५२.२)।

पृषध्र मेध्य मातरिश्वन्--एक वैदिक राजा, जो प्रस्कण्व का प्रतिपालक था (सां. श्रौ. १६.११.२५-२७)।

पृष्टध्र--वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में हिरण्यनाभ ऋषि का एक शिष्य।

पेदु--एक वैदिक राजा, जो अश्विनियों का आश्रित

था (ऋ. १.११७.९; ११८.९; ११९.१०; १०.३९.१०) एक निकृष्ट अश्व को बदलने के लिए अश्विनियों ने इसे एक प्रथित अश्व प्रदान किया था। इसीलिये उस अश्व को 'पैद्व' कहा गया है (ऋ. ९.८८.४. अ. वे. १०.४.५)। मैकडोनेल के अनुसार, 'पैद्व' अश्व सम्भवतः सूर्य के अश्व का ही प्रतिनिधित्व करता है (वैदिक माइथॉलॉजी पृ. ५२)।

पेरुक—एक वैदिक राजा, जो भरद्वाज का आश्रयदाता था। भरद्वाज ने इससे धन प्राप्त किया था (ऋ. ६. ६३. ९)।

पैंगलायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि। 'पिंगल' के वंश में उत्पन्न होने के कारण, इसे 'पैंगलायनि' नाम प्राप्त हुआ।

पैंगि—यास्क का पैतृक नाम (वेवर: इन्डिशे स्टूडियन. १.७१)।

पैंगीपुत्र--एक ऋषि, जो शौनकीपुत्र का शिष्य था (बृ. उ. ६.४.३०, माध्यं.)। 'पिंग' के किसी स्त्री-वंशज का पुत्र होने के कारण ही, सम्भव है इसे 'पैंगी-पुत्र' नाम प्राप्त हुआ हो।

पैंग्य--एक तत्त्वज्ञ जो कौषीतकियों से सम्बद्ध ऋग्वेदिक परम्परा का गुरु, एवं याज्ञवल्क्य का शिष्य था (बृ. उ. ३. ७.११)। एक अधिकारी विद्वान् के रूप में, 'कौषीतकि ब्राह्मण' में अनेक बार इसका उल्लेख आया है (कौ. ब्रा. ८.९; १६.९)। 'कौषीतकि उपनिषद्' में इसें आचार्य कहा गया है (कौ. उ. २. २.१)। आपस्तंब श्रौतसूत्र में इसका उल्लेख 'पैंगायणी' नाम से किया गया है (आ. श्रौ. ५.१५.८)।

शतपथ ब्राह्मण में, इसका नाम मधुक दिया गया है एवं पैंग्य इसका पैतृक नाम बताया गया है (श. ब्रा. १२.२.२.४; ११.७.२.८)। 'पैंग्य' शब्द से एक व्यक्ति को बोध होता है अथवा अनेक का, यह कहना असम्भव है।

इसके सिद्धान्त को पैंग्य-मत कहते ह (कौ. ब्रा ३. १. १९.९)। प्रवर्तन के समान, यह भी प्राण को ब्रह्म माननेवाला था। काशिकाकार ने प्राचीन कल्पों की श्रेणी में पैंगी तथा अरूणपराजी और नवीन कल्पों की श्रेणी में अश्मरथ को उद्धृत किया है। सांख्यायन ब्राह्मण में अनेक स्थानों पर यज्ञकर्मों में इसके मतों को स्वीकार किया गया है (सां. ब्रा. २६.४)। आश्वलायन गृह्यसूत्र के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका उल्लेख है। पौर्णिमा इष्टि तथा आमवास्या इष्टि के विषय में पैंग्य तथा कौषीतकि के मतों में विभिन्नता है (ऐ. ब्रा. ७. १०)।

निदानसूत्र एवं अनुपदसूत्रों में इसके अनुगामियोंको 'पैंगिन' कहा गया है (निदा. ४.७; अनु. १.८)। इसके शिष्यों में चूड भागवित्ति प्रमुख था।

ग्रन्थः—पैंग्य के नाम से निम्न लिखित ग्रन्थ प्राप्त हैः—

१. पैंग्यायन (नि) ब्राह्मण, जिसका निर्देश बौधायन श्रौतसूत्र में किया गया है (बौ. श्रौ. २. ७; आ. श्रौ. ५.१५.८;); २. पैंगलीकल्प, जिसका निर्देश जैन शाकटायन की 'चिन्तामणिवृत्ति' में किया गया है (चिंतामणि. ३. १. ७५); ३. पैंगलोपनिषद, ४. पैंगिरहास्य ब्राह्मण ५. पैंग्य स्मृति

२ एक ऋषि, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४. १५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'पैंग'

पैज—एक ऋषि, जो भागवत के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्य परंपरा के जातूकर्ण्य ऋषि का शिष्य था (व्यास देखिये)।

पैजवन- सुदास राजा का पैतृक नाम। पिजवन का पुत्र या पिजवन का वंशज, उन दोनों अर्थ से 'पैजवन' उपाधि प्रयुक्त हो सकती है। संभवतः दिवोदास एवं सुदास के बीच में उत्पन्न कोई राजा का नाम पिजवन हो। गेल्डनर के अनुसार, 'पैजवन' दिवोदास राजा की उपाधि थी, एवं दिवोदास सुदास राजा का पिता था (ऋग्वेद ग्लॉसरी. ११५)।

२. एक शूद्र, जिसने वेदों का अधिकार न होने के कारण, 'ऐंद्राग्न' विधि से मंत्रहीन यज्ञ कर के, उसकी दक्षणा के रूप मे एक लाख पूर्णपात्र दान किये थे (म. शां. ६०.३४-३८)।

पैठक—एक असुर, जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया था (म. स. परि. १.२१.१५८२)।

पैठीनसि--एक स्मृतिकार एवं 'पैठनसि धर्मसूत्र' नामक ग्रंथ का कर्ता। यद्यपि याज्ञवल्क्य स्मृति में इसका उल्लेख प्राप्त नहीं है, फिर भी यह काफ़ी प्राचीनकालीन रहा होगा।

धर्मशास्त्रांतर्गत श्राद्धसंबंधी इसके द्वारा दी बहुत सारी विधियाँ अथर्ववेद से मिलती जुलती है। अतः यह संभवतः अथर्ववेद परंपरा का रहा होगा।

'स्मृतिचंद्रिका,' 'अपरार्क,' 'मिताक्षरा,' एवं अन्य कई में ग्रंथों में इसके मतों के उद्धरण प्राप्त है।

पैठीनसी--भरद्वाज ऋषि की पत्नी (ब्रह्म. १३३.२)

पैप्पल--कश्यप कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पैल--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

२. एक ऋषि, जो पिली ऋषि का वंशज एवं भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार था (म. आ. ५७.७४)।

३. एक ऋषि, जो कृष्ण द्वैपायन व्यास का शिष्य था। इसको व्यास ने संपूर्ण वेदों का एवं महाभारत का अध्ययन कराया था (म. आ. ५७.७४)। व्यासने इसे ब्रह्मांडपुराण भी सिखाया था (ब्रह्मांड. १.१.१४)।

यह वसु ऋषि का पुत्र था, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में धौम्य ऋषि के साथ यह 'होता' बना था (भा. १.४.२१; १२.६.५२)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म के पास, अन्य ऋषियों के साथ यह भी आया था। (म. शां. ४७.६५*)।

इसके शिष्यों में, इंद्रप्रमति एवं बाष्कल प्रमुख थे। (व्यास देखिये)।

४. एक ऋषि, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्‌शिष्य परंपरा के शाकवैण रथीतर ऋषि का शिष्य था।

५. 'भास्कर संहिता' के अंतर्गत 'निदानतंत्र' ग्रंथ का कर्ता (ब्रह्मवै. २.१६)।

६. वासुकिकुल एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जल कर मारा गया था (म. आ. ५२.५)।

पैलगार्ग्य--एक ऋषि, जिसके आश्रम पर काशिराज की कन्या अंबा ने तपस्या की थी (म. उ. १८७.२७)।

पैलमौलि--कश्यपकुल एक गोत्रकार।

पोतक--कश्यपवंश का एक नाग (म. उ. १०१ ११)।

पोष्ट्ट--अमिताभ देवो में से एक

पौंस्यायन--संजय राजा दुष्टरीतु का पैतृक नाम (श. ब्रा. १२.९.३.१)।

पौंडव--वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम के लिये 'खांडव' पाठभेद उपलब्ध है।

पौंडरिक--इक्ष्वाकु राजा क्षेमधृत्वन् (क्षेमधन्वन्) का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २२.१८.७)।

पौंड्र--करूष राजा पौंड्रक वासुदेव का नामांतर (भा. ११.५.४८)।

२. नंदिनी गौ के पार्श्वभाग से प्रकट हुयी एक म्लेच्छ जाति (म. आ. १६५. ३६)। इनके लिये 'पुंड्र' पाठभेद प्राप्त है।

३. पौंड्र देश के निवासियों के लिये प्रयुक्त एक सामूहिक नाम मांधाता के राज्य में जो निवास करते थे (म. शां. ६५.१४)। ये लोग पहले क्षत्रिय थे, किन्तु ब्राह्मणों के क्रोधसे शूद्र हो गये (म. अनु. ३५.१७-१८)।

इन लोगों को श्रीकृष्ण ने पराजित किया था। (म. स. परि. १.२१.१५६३) युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी ये लोग उपस्थित थे (म. व. ४८.१८)।

भारतीय युद्ध में ये लोग, युधिष्ठिर की ओर से क्रौंच व्यूह में शामिल थे (म. भी. ४६.४९)। अंत में कर्ण ने इन को पराजित किया था (म. द्रो. ३२*)।

पौंड्रक--धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. कुंभकर्ण का नाती एवं, कुंभकर्णपुत्र निकुंभ का पुत्र। राम-रावण युद्ध के समय निकुंभ की पत्नि गर्भवती होने के कारण, नैहर गयी थी। इस युद्ध में हनुमानजी ने निकुंभ का वध किया था। तत्पश्चात उसकी पत्नी ने पौंड्रक नामक पुत्र को जन्म दिया।

आनंद रामायण के अनुसार, इसने मायापुरी का राजा शतमुखी रावण की सहायता से विभिषण को राज्यभ्रष्ट करने का व्यूह रचा था। किंतु राम ने इसे पकड़ कर विभीषण के हवाले कर दिया, एवं रावण का वध किया (आ. रा. राज्य. ५)।

पौंड्रक मत्स्यक--एक क्षत्रिय राजा, जो दनायु के बलवीर नामक दैत्यपुत्र के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.४१)। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में शामिल था।

पौंड्रक वासुदेव--पुंड्र, करूष, एवं वंग देशों का राजा जो जरासंध के पक्ष में शामिल था (म. स. १३.१९)।

इसके पिता का नाम वसुदेव था (म. आ. १७७. १२)। पुंड्र देश का राजा होने से इसे पौंड्रक कहते थे। कृष्ण वसुदेव से विभिन्नता दर्शाने के लिये इसका पौंड्रक वासुदेव नाम प्रचलित हुआ था। चेदि देश में यह 'पुरुषोत्तम' नाम से सुविख्यात था। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१२)।

कौशिकी नदी की तट पर किरात, वंग, एवं पुंड्र देशों पर इसका स्वामित्व था। यह मुर्ख एवं अविचारी था। इस कारण यह स्वयं को परमात्मा वासुदेव कहलाने लगा, एवं भगवान कृष्ण का वेष परिधान करने लगा। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, इसने उसे करभार दे कर युधिष्ठिर का एवं भगवान् कृष्ण का सार्वभौमत्व मान्य किया था (म. स. २७.२०.२९२)। फिर भी इस युद्ध के पश्चात्

बडी उन्मत्तता से भगवान कृष्ण को इसने संदेशा भेजा, 'पृथ्वी के समस्त लोगों पर अनुग्रह कर उनका उद्धार करने के लिये, मैंने वासुदेव नाम से अवतार लिया है। भगवान् वासुदेव का नाम एवं वेषधारण करने का अधिकार केवल मेरा है। इन चिह्नोंपर तेरा कोई भी अधिकार नहीं है। तुम इन चिह्नों को एवं नाम को तुरन्त ही छोड़ दो, वरना युद्ध के लिये तैयार हो जाओ।'

इसकी यह उन्मत्त वाणी सुनकर, कृष्ण अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसे प्रत्युत्तर भेजा, 'तेरा संपूर्ण विनाश करके, मैं तेरे सारे गर्व का परिहार शीघ्र ही करुंगा'।

यह सुनकर, पौंड्रक कृष्ण के विरुद्ध युद्ध की तैयारी शुरू करने लगा। अपने मित्र काशीराज की सहायता प्राप्त करने के लिये यह काशीनगर गया। यह सुनते ही कृष्ण ने ससैन्य काशिदेश पर आक्रमण किया। कृष्ण आक्रमण कर रहा है यह देखकर, पौंड्रक स्वयं दो अक्षौहिणी सेना लेकर बाहर निकला। काशिराज भी तीन अक्षौहिणी सेना लेकर इसकी सहायता करने आया। युद्ध के समय पौंड्रक ने शंख, चक्र, गदा, शार्ङ्ग धनुष, वनमाला, रेशमी पीतांबर, उत्तरीय वस्त्र, मौल्यवान् आभूषण आदि धारण किया था, एवं यह गरुड़ पर आरुढ़ था। इस नाटकीय ढंग से, युद्धभूमि में प्रविष्ट हुए इस 'नकली कृष्ण' को देखकर भगवान कृष्ण को अत्यंत हँसी आयी। पश्चात् इसका एवं इसके परिवार के लोगों का वध कर, कृष्ण द्वारका नगरी वापस गया। काशिपति के पुत्र सुदक्षिण ने अभिचार से कृष्णपर हमला किया, जिसे कृष्ण ने पराजित किया (भा. १०.६६)।

पद्मपुराण के अनुसार, पौंड्रक वासुदेव एवं इसके मित्र काशिराज, दोनों एक ही व्यक्ति थे, एवं इसका और कृष्ण का युद्ध द्वारका नगरी में संपन्न हुआ था। इसने शंकर की घोर तपस्या कर, वरदान प्राप्त किया था, 'तुम कृष्ण के समान होगे'। युद्ध में कृष्ण ने इसका शिरच्छेद किया, एवं इसका सर काशी नगरी की ओर झोंक दिया। दण्डपाणि नामक इसके पुत्र ने एक कृत्या कृष्ण पर छोड़ दी। कृष्ण ने अपने सुदर्शनचक्र के द्वारा उस कृत्या एवं दण्डपाणि का वध किया, एवं काशीनगरी को जला कर भस्म कर दिया (पद्म. उ. २७८)।

पौतक्रत—ऋग्वेद में निर्दिष्ट दस्यवें वृक राजा नामान्तर। दस्यवे वृक की माता का नाम संभवतः पूतक्रता था, इस कारण इसे यह नाम प्रात हुआ हो (ऋ. ८.५६.१)। पृषध्र के सूक्त में इसका निर्देश प्रास है।

पौति मत्स्यक—एक राजा, जिसे भारतीय युद्ध में पांडवो की ओर से रणनिमंत्रण भेजा गया था (म. उ. ४.१७)।

पौतिमाषीपुत्र—काण्वशाखा के बृहदारण्यक उपनिषद में निर्दिष्ट एक आचार्य (बृ. उ. ६.५.१)। संभवतः यह 'पूतिमाष' के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होगा। इसके गुरु का नाम कात्यायनीपुत्र था।

पौतिमाष्य—काण्व शाखा के बृहदारण्यक उपनिषद में निर्दिष्ट एक आचार्य (बृ. उ. २.६.१; ४.६.१)। संभवतः यह 'पूतिमाष' का पुत्र या वंशज होगा। इसके गुरु का नाम गौपवन था।

पौतिमाष्यायण—एक आचार्य, जो कौंडिन्यायन एवं रैभ्य नामक आचार्यों का गुरु था। संभवतः यह 'पौतिमाष्य' का वंशज होगा।

पौत्रायण—एक उदार दाता, जिसका पैतृक नाम जानश्रुति था (छां. उ. ४.१.१; जानश्रुति देखिये)।

पौत्रि—अत्रिकुल का एक प्रवर।

पौर—एक पूरु राजा, जिसकी सहायता इंद्र ने की थी। रुम एवं रुशम राजाओं के साथ, ऋग्वेद में इसका भी निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.३.१२)। सिकंदर का प्रतिद्वंदी राजा पौरव (पूरोस) संभवतः यही होगा (ऋ. ५.७४.४)।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार, पृथुसेन राजा का पुत्र था।

पौर आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.७३-४७)।

पौरव—एक राजा, जो शरभ नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२८)। इसका सही नाम 'विष्वगश्व' एवं कुलनाम पौरव था। यह पर्वतीय देश का राजा था, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, अर्जुनद्वारा पराजित हुआ था (म. स. २४.१३)।

भारतीय युद्ध में, एक महारथि के नाते, यह दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६४.१९)। चेदिराज धृष्टकेतु के साथ इसका द्वंद्वयुद्ध हुआ था (म. भी. ११२. १५)। पश्चात् इसका अभिमन्यु के साथ युद्ध हुआ, जिसमें अभिमन्यु ने इसके केश पकड़कर इसे घसीटा था (म. क. ४.३५)। इसके पुत्र का नाम दमन था (म. भी. ५७.२०।

२. पूरुकुल का दानवीर राजा, जिसका निर्देश महाभारत में 'षोडष- राजकीय' उपाख्यान में किया गया है (म. द्रो. परि. १, क्र. ८; पंक्ति ३८४)। सृंजयराजा के अश्वमेध में, नारद ने इसका जीवनचरित्र कथन किया था।

३. पांडवों के पक्ष का एक राजा, जिसका अश्वत्थामा ने रथशक्ति फेंक कर वध किया था (म. द्रो. १७१-६४)।

४. विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अ. ४. ५५)।

पौरवक--एक क्षत्रियजाति, जिसके लोग युधिष्ठिर के साथ क्रौंचव्यूह में खडे थे (म. भी. ४६.४७)।

पौरवी--युधिष्ठिर की पत्नी, जिससे इसे देवक नामक पुत्र हुआ था (भा. ९.२२.३०)।

२. वसुदेव की स्त्रियों में से एक (पद्म. सृ. १३)। इसके निम्नलिखित पुत्र थेः--सुभद्र, भद्रवाह, दुमर्द, एवं भद्र (भा. १२.११.३५)।

पौरा--गाधि की माता पौरुकुत्सा का नामांतर (ब्रह्म. १०.२८; पौरुकुत्सा देखिये)।

पौरिक--पुरिका नगरी का एक राजा, जिसे पाप के कारण सियार की योनि में जन्म प्राप्त हुआ था (म. शां. १२२.३-५)।

पौरुकुत्स--अंगिराकुल का मंत्रकार।

२. पूरुराजा त्रसदस्यु का पैतृक नाम।

पौरुकुत्सा--कान्यकुब्ज देश के गाधि राजा की माता (रेणुका. ७)। इसे पौरा नामांतर भी प्राप्त है।

पौरुकुत्सि--पूरुराजा त्रसदस्यु का पैतृक नाम।

पौरुकुत्स्य--पूरुराजा त्रसदस्यु का पैतृक नाम।

पौरुशिष्टि--तपोनित्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. उ. १.९.१; तै. आ. ७.८.१)। पुरुशिष्ट का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

पौरुषेय--ज्येष्ठ माह में सूर्य के साथ घूमनेवाला एक राक्षस (भा. १२.११.३५)।

२. यातुधान राक्षस का पुत्र। इसे निम्नलिखित पुत्र थे:- क्रूर, विकृत, रुधिराद, मेदाश एवं वपाश (ब्रह्मांड. ३.७.९४)।

पौर्णिमास--अगस्त्य कुल का गोत्रकार।

२. (आंध्र. भविष्य) आंध्रवंशीय पूर्णोत्संग राजा का नामांतर (पूर्णोत्संग देखिये)।

पौर्णिमागतिक--भृगुकुल का गोत्रकार 'पुर्णिमागतिक' के लिये प्रयुक्त पाठभेद।

पौलकायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पौलस्त्य--पुलस्त्य ऋषि के पुत्र विश्रवस् ऋषि का पैतृक नाम (१ पुलस्त्य देखिये)।

२. पुलस्त्यकुल के राक्षस, जो दुर्योधन के भाइयों के रूप में पुनः उत्पन्न हुए थे (म. आ. ६१.८२)।

३. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

५. भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

पौलह--दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, जो पुलह का दत्तक पुत्र दृढास्यु के वंश में उत्पन्न हुआ था (२ पुलह देखिये)।

३. पुलहकुल के राक्षस।

पौलि--वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

पौलुषि--सत्ययज्ञ नामक आचार्य का पैतृकनाम (श. ब्रा. १०.६.१.१)। 'पुलुष' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में 'पौलुषित' पाठभेद प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. १.३९.१)।

पौलोम--पुलोमा नामक देव्यकन्या के पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम (२ पुलोमा देखिये)।

ये हिरण्यपुर नामक नगरी के स्वामी थे (म. व. १७०.१२-६३; भा. ६.६.३५)। ब्रह्माजी ने इनकी माता पुलोमा को दिये वर के कारण, ये अत्यंत उन्मत्त हो गये थे। फिर अर्जुन ने इनके साथ युद्ध कर, इनका संहार किया (म. स. १६९; पद्म. सृ. ६; २ निवातकवच देखिये)।

२. दक्षिण समुद्र के समीप स्थित 'पौलोमतीर्थ' में ग्राह बन कर रहनेवाली एक अप्सरा। इसका एवं इसके वर्गा नामक सखी का अर्जुन ने उद्धार किया था (म. आ. २०८.३)।

पौलोमी--वारुणि भृगु ऋषि की पत्नी पुलोमा का नामांतर (विष्णु. ७.३२; पुलोमा देखिये)। इसे भृगु ऋषि से च्यवन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. ३. १.७४-१००; भृगु देखिये)।

२. पुलोमा नामक असुर की कन्या, जिसे 'शची' नामांतर भी प्राप्त है (शची देखिये)। शची पौलोमी का निर्देश एक ऋग्वेद सूक्त की द्रष्टीके रूप में प्राप्त है (ऋ. १०. १५९)। यह देवराज इंद्र की पत्नी थी, जिससे इसे जयंत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. १०६.४)।

अध्यात्म रामायण में, इसे पुलोमि असुर की कन्या कहा गया है (अध्या. रा. अयो. १.१५)। भागवत के अनुसार, यह द्वादश आदित्यों में से शक्र नामक आदित्य की पत्नी थी, जिससे इसे जयंत, ऋषभ एवं मीढुष नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ६.१८.७)।

पौषाजिति—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं ऋषि। इसके नाम के लिये 'पौषजिति' एवं 'पाष्याजिति' पाठभेद उपलब्ध हैं।

पौष्करसादि—सांख्यायन आरण्यक में निर्दिष्ट एक गुरु एवं आचार्य (सां. आ. ७.१७; आप. ध. १.६.१९. ७; १०.२८.१)। संभवतः यह किसी 'पुष्करसादि' का वंशज रहा होगा। उपनयन के बाद, उसी दिन गायत्री-मंत्र का उपदेश 'उपनीत' बालक को करना चाहिये, ऐसा इसका मत था (सां. आ. ७.१७)। तदनुसार गायत्रीमंत्र का उपदेश आज भी किया जाता है।

तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में, एक वैय्याकरण के नाते पौष्करसादि का निर्देश प्राप्त है (तै. प्रा. ५.३७-३८; पा. सू. वार्तिक. ८.४.४८)। संभवतः धर्मशास्त्रकार एवं वैय्याकरण पौष्करसादि दोनों एक ही होंगे।

पौष्टी—पूरु राजा की पत्नी, जिसे पूरुद्वारा प्रवीर, ईश्वर एवं रौद्राश्व नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८९.४)।

पूरु राजा की कौसल्या नामक और एक पत्नी भी थी। किंतु महाभारत में एक स्थान पर प्राप्त निर्देश के अनुसार, पौष्टी का ही नामांतर कौसल्या था (म. आ. ९०.११)।

पौष्णायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

पौष्पिण्डच—सामविधान ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक गुरु एवं आचार्य, जो जैमिनि का शिष्य था (वेबर, इन्डिशे स्टूडियेन, ४.३७७)। व्यास की सामशिष्यपरंपरा का सुविख्यात आचार्य 'पौष्यंजि' अथवा 'पौष्पिंजि' संभवतः यही होगा (पौष्यंजि देखिये)।

पौष्य—इक्ष्वाकुवंशीय राजा पुष्यपुत्र ध्रुवसंधि का नामांतर। आचार्य वेद इसका पुरोहित था। इसकी पत्नी ने अपने दिव्य कुंडल उत्तंक ऋषि को प्रदान किये थे (म. आ. ३.८५)।

पश्चात् इसका एवं उत्तंक ऋषि का झगड़ा हो गया, जिस कारण, इसने उसे 'अनपत्य' होने का शाप दिया। उत्तंक ने भी इसे अंधा होने का प्रतिशाप दिया (म. आ. ३.१२७)।

२. एक राजा, जो करवीर नगरी के राजा पूषन् का पुत्र था। इसकी तीन स्त्रियाँ होते हुए भी इसे एक भी पुत्र न था। आगे चल कर शंकर की कृपा से इसे चंद्रशेखर नामक एक पुत्र हुआ।

इसकी राजधानी दृषद्वती नदी के किनारे ब्रह्मावर्त के समीप स्थित करवीर नगरी में थी (कालि. ४९)।

पौष्यंजि—एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्य परंपरा के सुकर्मन् जैमिनि का शिष्य था। इसे 'पौष्पिंजि' एवं 'पौष्पिंड्य' नामांतर भी प्राप्त हैं।

यह सामवेदी श्रुतर्षि था। सुकर्मन् जैमिनि नामक सुविख्यात आचार्य के 'पौष्यंजि' एवं 'हिरण्यनाभ कौसल्य' ये दो प्रमुख शिष्य थे। उनमें से पौष्यंजि ने सामवेद की पांचसो संहिताएँ बनायी, एवं वे अपने लौगाक्षि (लोकाक्षि), कुथुमि, कुशुमिन्, एवं लांगलि नामक चार शिष्यों को सिखायीं। आगे चल कर उसी चार शिष्यों से सामवेद की परंपरा का निर्माण हुआ (व्यास देखिये)। इसके निर्माण किये, सामदेवपरंपरा को सामवेद की 'उदीच्या शाखा' कहते है।

ब्रह्मांड के अनुसार, इसने याज्ञवल्क्य को योगविद्या सिखाई थी।

पौष्यायन—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

प्रकालन—वासुकिलकुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जलकर मारा गया (म. आ. ५२.५)।

प्रकाश—एक भृगुवंशी ब्राह्मण, जो गृत्समदवंशीय 'तम' नामक ऋषि का पुत्र था (म. अनु. ३०.६३)।

प्रकाशक—रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

प्रकृति—रैवत मन्वंतर का एक देवगण।

प्रगाथ काण्व—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा, जो 'प्रगाथ' नामक मंत्रो का प्रणेता था (ऋ. ८.१.१-२; ऐ. आ. २. २.२)।

ऋग्वेदांतर्गत एक मिश्र जाति के छंद का नाम 'प्रगाथ है। उस छन्द में निबद्ध मंत्रों की रचना करने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ। ऋग्वेदानुक्रमणिका के अनुसार, यह दुर्गह राजा का समकालीन था। आश्वलायन के ब्रह्मयज्ञांग तर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है।

प्रगाथ घौर—घोर आंगिरस ऋषि के दो पुत्रों में से एक। इसके भाई का नाम कण्व था। एक बार इसने कण्व की पत्नी से छेड़छाड की। इस कारण, कण्व इस पर क्रुद्ध हुआ, एवं इसको शाप देने लगा। फिर इसने उससे एवं उसकी पत्नी की क्षमा माँगी (कण्व १. देखिये)।

प्रघस—रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो हनुमान् के द्वारा मारा गया (वा. रा. सुं. ४६. ३७; म. व. २६९. २)।

२. एक राक्षस, जो सुग्रीव के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ४३)।

३. राक्षस एवं पिशाचों के दल (म. व. २८५. १ – २)।

प्रघसा—एक राक्षसी, अशोकवन में सीता के रक्षणार्थ नियुक्त की गयी थी (वा. रा. सुं. २४. ४१)।

२. स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१६)।

प्रघास—लेखदेवों में से एक।

प्रघोष—श्रीकृष्ण का लक्ष्मणा से उत्पन्न एक पुत्र (भा. १०. ६१. १५)।

प्रचंड—एक राक्षस, जिसने त्रिपुरासुर एव शंकर के युद्ध में कार्तिकेय से युद्ध किया था (गणेश. १.४३)।

२. एक गोप, जिसके घर जाबालि ऋषि नें चित्रगंधा गोपी के रुप में जन्म लिया था।

३. विष्णु का एक पार्षद।

प्रचिन्वत्—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, भागवत एवं विष्णु के अनुसार, जनमेजय (प्रथम) का पुत्र था। इसे प्राचिन्वत् नामांतर भी प्राप्त है।

प्रचेतस्—एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५.५३–५४)।

२. प्राचीनबर्हिष तथा समुद्रतनया सवर्णा के दस पुत्रों का सामूहिक नाम। भागवत में इसके माता का नाम शतद्रुती दिया गया है (भा. ४.२४.१३)।

ये दस प्रचेतस् धनुर्वेद में पारंगत थे (विष्णु. १.१४. ६; ह. वं. १.२.३३)। इन्होंने समुद्रजल में रहकर दस हजार वर्षों तक तपस्या की। उस समय पृथ्वी पर जंगल ही जंगल थे। वृक्षों की वृद्धि को देखकर, प्रचेतस् जंगलों को नष्ट करने लगें। तब वृक्षों के अधिपति सोम ने इन्हें वृक्षों को नष्ट करने से रोका, तथा भेंट के रूप में वृक्षकन्या वार्क्षी अथवा मारिषा इन्हें अर्पित की (मारिषा देखिये)। दस प्रचेतसो द्वारा मारिषा से दक्ष नामक पुत्र हुआ। वही पुत्र दक्ष प्राचेतस तथा दक्ष प्रजापति नाम से प्रसिद्ध हुआ (विष्णु, १.१५.१–९; ह. वं. १.२.४६)। इसी प्राचेतस दक्ष से, आगे चल कर 'मैथुनज' मानवसृष्टि का प्रारम्भ हुआ।

३. एक स्मृतिकार, जिसका निर्देश पराशरस्मृति में प्राप्त स्मृतिकारोंकी तालिका में दिया गया है। किंतु याज्ञवल्क्य स्मृति में इसका निर्देश उपलब्ध नहीं है।

नित्यकर्म, श्राद्ध, अशौच, एवं प्रायश्चित के संबंध में प्रचेतस् के मतों के गद्य उद्धरण 'मिताक्षरा', 'अपरार्क' 'स्मृतिचंद्रिका', एवं 'हरदत्त' (गौतम. २३) में प्राप्त हैं। अशौच एवं प्रायश्चित के संबंध में इसने अपने 'बृहत्प्रचेतस' नामक ग्रंथ में दिये मतों का निर्देश 'मिताक्षरा' (याज्ञ. ३.२०.२६३–२६४)। 'हरदत्त' (गौतम. २२ १८), तथा अपरार्क में किया है।

"रसोइया, शिल्पकार, वैद्य, दासदासी, राजा एवं राजा का अधिकारीवर्ग, इन लोगों को अशौचपालन करने की आवश्यकता नहीं है' ऐसा इसका अभिमत था (याज्ञ. ३.२७)। प्रचेतस् के इस श्लोक का मेधातिथि ने स्मृति की तरह निर्देश किया है (मनु. ५.६०)। किंतु वहाँ प्रचेतस् के नाम का निर्देश नही किया गया है। इस उद्धरण से जाहिर है कि, मनु एवं विष्णु जैसे श्रेष्ठ स्मृतिकारों में प्रचेतस् का निर्देश मेधातिथि के काल में हुआ करता है।

इसके द्वारा लिखित 'वृद्धप्रचेतस्' नामक और भी एक ग्रंथ था, जिसके उद्धरण 'मिताक्षरा' एवं 'अपरार्क' में दिये गये है।

४. लेखदेवों में से एक।

५. पारावत देवों में से एक।

६. प्रसूत देवों में से एक।

७. (सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार 'दुर्मन' राजा का, विष्णु के अनुसार 'दुर्गम' का, एवं मत्स्य के अनुसार, 'दुर्दम' का पुत्र था। इसे 'सुचेतस्' नामांतर भी प्राप्त है।

इसके प्राचेतस नामक सौ पुत्र थे, जो उत्तर दिशा में जा कर म्लेंच्छ लोगों के राजा बन गये। इस प्रकार इसका 'द्रुह्यु' वंश विनष्ट हो गया।

८. भार्गवकुल का एक मंत्रकार।

९. वरुण का नामांतर (भा. ७.१२.२८; म. स. ७. १४)।

प्रचेतस् आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६४)।

प्रचेष्ट—तालध्वज नगर के माधव नामक राजकुमार का सेवक (माधव ५. देखिये; पद्म. क्रि. ५)।

प्रजंघ—रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो अंगद द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ७६.२७)।

२. राम के पक्ष का एक बानर, जिसने संपाति नामक राक्षस का वध किया (वा. रा. यु. ४३)।

प्रजन—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार कुरु राजा के पाँच पुत्रों में से कनिष्ठ था।

प्रजा—एक ब्राह्मण, जो पूर्वजन्म में 'भिल' था। अपने व्याध योनि में, इसने श्रीविष्णु के पूजा के लिये कमल के फूल एकत्र कर, एक ब्राह्मण को प्रदान किये। इस पुण्यकर्म के कारण, अगले जन्म में इसे शुचिर्भुत ब्राह्मणकुल में जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. क्रि. १३)।

प्रजागरा—एक अप्सरा, जिसने इंद्रसभा में संपन्न हुए अर्जुन के स्वागतसमारोह में नृत्य गायन किया था (म. व. ४४.३०)।

प्रजाति--स्वायंभुव मन्वंतर के जित देवों में से एक।

२. मनु के पुत्रों में से एक। इसके पुत्र का नाम क्षुप था (म. आश्व. ४. २)। इसके नाम के लिये 'प्रसंधि' पाठभेद भी उपलब्ध है।

प्रजादर्प--एक मध्यमाध्वर्यु।

प्रजानि--(सू. दिष्ट.) एक राजा। विष्णु एवं वायु के अनुसार यह प्रांशु राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'प्रमति' कहा गया है।

२. प्रांशुपुत्र प्रजाति राजा का नामांतर। इसके पुत्र का नाम खनित्र था (मार्क. ११४.७-८)

प्रजापति--एक वैदिक देवता, जो संपूर्ण प्रजाओं का स्रष्टा माना जाता है। महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट 'ब्रह्मा' देवता से इस वैदिक देवता का काफी साम्य है, एवं ब्रह्मा की बहुत सारी कथाएँ इससे मिलती जुलती हैं (ब्रह्मन् देखिये)।

ऋग्वेद के दशम मण्डल में चार बार प्रजापति का नाम एक देवता के रूप में आया है। देवता प्रजापति को बहुत सन्तानों 'प्रजाम्' को प्रदान करने के लिये आवाहन किया गया है (ऋ. १०.८५.४३)। विष्णु, त्वष्टु तथा धातृ के साथ इसकी भी सन्तान प्रदान करने के लिए स्तुति की गयी है (ऋ. १०.१८४)। इसे, गायों को अत्यधिक दुग्धवती बनानेवाला कहा गया है (ऋ. १०.१६९)।

इसकी प्रशस्ति में ऋग्वेद का एक स्वतंत्र सूक्त है, जिसमें इसे पृथ्वी का सर्वोच्च देवता कहा गया है (ऋ. १०.१२१)। इस सूक्त में, आकाश एवं पृथ्वी, जल एवं सभी जीवित प्राणियों के स्रष्टा के रूप में इसकी स्तुति की गयी है, तथा कहा गया है, पृथ्वी में जो कुछ भी है, उसके अधिपति (पति) के रूप मे प्रजापति का जन्म (जात) हुआ है। यह श्वास लेनेवाले समस्त गतिशील जीवों का राजा है। यही सब देवों में श्रेष्ठ है। इसी के विधानों का सभी प्राणी पालन करते हैं। यही नहीं, इसका यह विधान देवताओं को भी मान्य है। इसने आकाश तथा पृथ्वी की स्थापना की है, यही अन्तरिक्ष के स्थानों में व्याप्त है, तथा समस्त विश्व तथा समस्त प्राणियों को अपनी भुजाओं से अलिंगन करता है।

अथर्ववेद तथा वाजसनीय संहिता में साधारणतया, ब्राह्मण ग्रन्थों में नियमित रूप से, इसे सर्व प्रमुख देवता माना गया है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह देवों का पिता है (श. ब्रा. ११.१.६; तै. ब्रा. ८.१.३)। सृष्टि के आरम्भ में अकेले इसी का अस्तित्व था (श. ब्रा. २.२.४), एवं यह पृथ्वी का सर्वप्रथम याज्ञिक था (श. ब्रा. २.४.४; ६.२.३)। देवों को ही नहीं, वरन् असुरों को भी इसीने बनाया था (तै. ब्रा. २.२.२)।

सूत्रों में, इसे ब्रह्मा के साथ समीकृत किया गया है (आश्व. गृ. ३.४)। 'वंशब्राह्मण' में इसे ब्रह्मा का शिष्य कहा गया है, एवं इसके शिष्य का नाम मृत्यु कहा गया है (वं. ब्रा. २)। ऋग्वेद के कई सूक्तों का यह मन्त्रद्रष्टा भी है (ऋ. ९.१०१.१३-१६)।

सर्वप्रमुख देवता—उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में, इसे सर्वप्रमुख देवता के स्थानपर प्रतिस्थापित किया गया है। उपनिषदों के दर्शनशास्त्र में इसे 'परब्रह्म' अथवा 'विश्वात्मा' कहा गया है। तत्वज्ञान के संबंध में जब कभी किसी प्रकार की शंका उठ खड़ी होती थी, तब देव, दैत्य, एवं मानव प्रजापति के पास आकर अपनी शंका का समाधान करते थे (ऐ. ब्रा. ५.३; छां. उ. ८.७.१; श्वेत. उ. ४.२)।

ऋग्वेद, ब्राह्मण एवं उपनिषद् ग्रन्थों में प्रजापति को प्रायः देवता के रूप में माना गया है। लेकिन, इन्ही ग्रन्थों में कई स्थानों में इसे अन्य रूपों में भी निरूपित किया गया है।

ऋग्वेद में एक स्थानपर, प्रजापति उस 'सवितृ' की उपाधि के रूप में आता है, जिसे आकाश को धारण करनेवाला, एवं विश्व का प्रजापति कहा गया है (ऋ. ४. ५३)। दूसरे एक स्थानपर इसे सोम की उपाधि के रूप में प्रस्तुत किया गया है (ऋ. ९.५)। ब्राह्मण एवं उपनिषद ग्रंथों में, प्रजापति शब्द, विभिन्न अर्थोंसे प्रयुक्त किया गया है, जिनमें से कई इस प्रकार है:-यज्ञ, बारह माह, वैश्वानर, अन्न, वायु, साम, एवं आत्मा। इससे प्रतीत होता

है कि, उस समय किसी भी वस्तु की महत्ता वर्णित करने के लिए, 'प्रजापति' उपधि का प्रयोग होता था। पंचविंश ब्राह्मण में, सभी का महत्व वर्णन करने के लिए, उन्हें प्रजापति उपाधि दी गयी है (पं. ब्रा ७.५.६)।

सृष्टि-आरंभ—वैदिक वाङ्मय में प्रजापति के जीवन सम्बन्धी कई कथायें दी गयी हैं जिनमें से निम्नलिखित प्रमुख हैं:--

प्रजापति की आस्थि संधियों ढीली हो गयीं थीं, तब देवों ने यज्ञ कर उन्हें ठीक किया (श. ब्रा. १. ६. ३. ३५)।

प्रजापति सर्वप्रथम अकेला था। कालान्तर में, प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा से, उसने अपने शरीर के माँस को निकालकर उसकी आहुति अग्नि में दी। अग्नि से इसके पुत्र के रूप में बिना सींगों का एक बकरा उत्पन्न हुआ (तै. सं. २. १. १)।

प्रजापति के द्वारा उत्पन्न की गयी प्रजा इसके अधिकार के अन्दर न रहकर वरुण के अधिकार में चली गयी। जब इसने उन्हें वापस बुलाना चाहा, तब वरुण ने उन्हें अपने कब्जे से छोड़ने के लिए इन्कार कर दिया। फिर प्रजापति ने एक सफ़ेद खुरवाला कृष्णवर्णीय पशु वरुण को भेंट स्वरूप प्रदान करने का आश्वासन दिया। इस पर प्रसन्न होकर, वरुण ने प्रजा के उपर का अपना अधिकार उठा लिया, और प्रजापति प्रजा का स्वामी बन बैठा (तै. सं. २. १.२)।

पृथ्वी उत्पन्न होने के बाद, देवों की प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा हुई, और उन्होंने प्रजापति के कथनानुसार तपश्चर्या कर, अग्नि के आश्रय से एक गाय उत्पन्न की। उस गाय के लिए सब देवों ने प्रयत्न कर अग्नि को संतुष्ट किया। बाद में, उस गाय से प्रत्येक देव को तीन सौ तेंतीस देव प्राप्त हुए। इस प्रकार असंख्य प्रजा उत्पन्न हुई (तै. सं. ७.१.५)।

प्राचीन काल में, प्रजापति ने यज्ञ की ऋचाओं एवं छंदों का परस्पर में वितरण किया। उस समय इसने अपना अनुष्टुप छंद 'अच्छावाकीय' नामक ऋचा को प्रदान किया। अनुष्टुम नाराज होकर प्रजापति को दोष देने लगा। फिर सोमयज्ञ कर प्रजापति ने उस यज्ञ में अनुष्टुप् छंद को अग्रस्थान दिया। तब से उस छंद का उपयोग वैदिक 'सवनों' में सर्वप्रथम होने लगा।

प्रजापति की प्रजा जब उसे त्याग कर जाने लगी, तब इसने अग्नि की सहायता से प्रजा को पुनः प्राप्त किया (ऐ. ब्रा. ३.१२)। इसने 'अग्निष्टोम' नामक यज्ञ कर, उसमें अपने आप को समर्पित कर, देवों से अपनी प्रजा पुनः प्राप्त की (पं. ब्रा. ७.२.१)।

मनुष्य होते हुए भी देवत्व प्राप्त ऋषिओं को, एकबार प्रजापति ने 'तृतीयसवन' में बुलाकर, उनके साथ सोमपान किया। इसको उचित न समझकर, अग्नि आदि देवताओं ने इसकी कटु आलोचना की (ऐ. ब्रा. ३.३०)।

सूर्यपूजा अर्घ्य--राक्षसों की उग्र तपस्या से सन्तुष्ट होकर, प्रजापति राक्षसों के पास आया, इसने उनसे वर माँगने को कहा। राक्षसों ने कहा 'हम सूर्य से लड़ना चाहते हैं'। प्रजापति ने उनकी माँग स्वीकार कर, उन्हें वर प्रदान किया। तब से प्रतिदिन सूर्योदय से सूर्यास्त तक राक्षस सूर्य से लड़ते रहते हैं। इस युद्ध में सूर्य की सहायता करने के लिये, ब्रह्मनिष्ठ लोग पूर्व की ओर भगवान् सूर्य को अर्घ्यदान देते हैं। अर्घ्य के जल का एक एक बूँद वज्र बनकर राक्षसों का प्रहार करता हैं। इससे पराजित होकर राक्षसगण अपने 'अरुणद्वीप' नामक देश को भाग जाते है (तै. आ. २.२)।

इंद्र की उत्पत्ति—प्रजापति ने देव तथा असुर निर्माण किये, परन्तु राजा उत्पन्न नहीं किया। बाद में, देवों के प्रार्थना करने पर इसने इन्द्र उत्पन्न किया। त्रिष्टुप नामक देवता ने १५ धाराओं का वज्र इन्द्र को प्रदान किया। उस वज्र से इन्द्र ने असुरों को पराजित कर, देवों के लिए स्वर्ग प्राप्त किया।

स्वर्ग को भोगभूमि समझकर सभी देवगण आये थे, पर वहाँ पर खानेपीने की कोई वस्तु न पाकर उन्होंने 'अयास्य' नामक आंगिरस गोत्र के ऋषि को, यज्ञ अनुष्ठान की कार्यप्रणाली से अवगत कराकर उसे पृथ्वी पर भेजा। भूलोक पर जाकर 'अयास्य' ने यज्ञानुष्ठान कर देवों को हविर्भाग देने की कल्पना प्रसारित की (तै. ब्रा. २.२.७)।

इन्द्र तथा वृत्र में घोर युद्ध हुआ। युद्ध में वृत्र ने तीव्र गति से अपनी श्वास को छोड़कर इन्द्र के पक्ष के सभी योद्धाओं को भयभीत कर भगा दिया, पर मरुतों ने इन्द्र का साथ न छोड़ा। मरुतों की सहायता से इन्द्र ने वृत्र का बध कर प्रजापति का मान प्राप्त करना चाहा। उसकी यह इच्छा तो पूरी न हो सकी, पर प्रजापति ने उसके इस कार्य से प्रसन्न हो कर उसे 'महेन्द्र' पदवी दी। (ऐ. ब्रा. ३.२०-२२)। प्रजापति के नेतृत्व में, देवों ने इन्द्र का राज्याभिषेक किया, जिससे उसे सभी अभीष्ट वस्तुओं की प्राप्ति हुयी। इन समस्त शक्तियों को पाकर

अन्त में, उसने मृत्यु पर भी विजय प्राप्त की (ऐ. ब्रा. ८.१२; १४)।

यज्ञारम्भ—एक बार प्रजापति ने यज्ञ किया, जिसमें यह स्वयं 'होता' बना। इस समय सभी देवताओं की इच्छा थी कि, मुझे अधिष्ठाता मान कर यह यज्ञ किया जाय। ऐसी स्थिति में, प्रजापति ने 'आपो रेवती' (ऋ. १०.३०.१२) मन्त्र के द्वारा यज्ञारम्भ किया। 'आप' तथा 'रेवती' इन दो शब्दों से सब देवों का निर्देश होता है, इसलिये प्रत्येक देव को संतोष हुआ कि, यज्ञ का प्रारंभ मुझे सम्बोधित करके किया गया है (ऐ. ब्रा. २.१६)।

एक बार इसके तीनों पुत्र— देव, मनुष्य तथा असुर उपदेश ग्रहण करने की इच्छा से आये। प्रजापति ने उन तीनों को 'द' का उपदेश दिया। इस 'द' उपदेश का आशय हर एक पुत्रों के लिए भिन्न भिन्न था। देवों के लिए दमन, मनुष्यों के लिए दान, तथा असुरों के लिए दया का उपदेश देकर, इसने उन्हें अपनी मुक्ति प्राप्त करने का एकमेव साधन बताया (बृ. उ. ५.१-३)।

सृष्टि निर्माण व व्यवस्था—एक बार प्रजापति के मन में सृष्टिसृजन की इच्छा उत्पन्न हुयी। इसने अपने अन्तर्मन से एक धूम्रराशि का निर्माण किया, जिससे अग्नि, ज्योति, ज्वाला एवं प्रभा आदि उत्पन्न हुए। पश्चात्, उन सबने मिलकर एक ठोस गोले का रूप धारण किया, जिससे प्रजापति का मूत्राशय बना। इस मूत्राशय को परमेश्वर ने फोड़ा, जिससे समुद्र की उत्पत्ति हुयी। समुद्र, क्योंकि मूत्राशय से उत्पन्न हुआ है, इसी से उसका पानी खारा रहता है तथा वह पीने लायक नहीं होता।

जलमय समुद्र से ही प्रजापति ने क्रमानुसार, पृथ्वी, अंतरिक्ष तथा द्यौ उत्पन्न किये। इसके बाद, अपने शरीर से असुरों का निर्माण कर, दिवस रात्रि तथा अहोरात्रि के संधिकाल को बनाया। इस प्रकार, प्रजापति ने सारी प्रजा का निर्माण किया (तै. ब्रा. २.२.९)।

देवों को पैदा करने के उपरान्त प्रजापति ने देवों में कनिष्ठ इन्द्र को उत्पन्न कर, उससे कहा, 'मेरी आज्ञा से तुम स्वर्ग में जाकर देवो पर शासन करो।'

इन्द्र स्वर्ग गया, पर वहाँ किसी ने उसे अपना राजा न माना, क्योंकि वह सबसे आयु में छोटा, तथा शक्ति में अधिक न था। इन्द्र वापस आया, और प्रजापति से देवों के कथन को दुहरा कर उसने अपने विशेष तेज को देने की याचना की। प्रजापति ने इन्द्र से कहा 'यदि मै तुम्हें अपना तेज दे दूँगा, तो फिर मुझे कौन पूँछेगा?'। इस पर इन्द्र ने उत्तर दिया, 'तुम 'क' नाम से प्रसिद्ध होगे। अपना तेज मुझे दे डालने के बाद भी तुम्हारा प्रजापतित्व कायम रहेगा'। इतना सुन कर प्रजापति ने अपने तेज को एक 'पदक' का रूप देकर उसे इन्द्र के मस्तक पर बाँध दिया। तब कहीं इन्द्र इस योग्य बना कि, वह देवों का अधिपति बनकर उन पर राज्य कर सके (तै. ब्रा. २.२.१०)।

कन्याविवाह—एक बार प्रजापति ने सोम एवं तीन वेद नामक पुत्र, तथा सीतासावित्री नामक कन्या उत्पन्न की। उन में से तीन वेदों को सोम ने अपनी मुठ्ठी में बन्द कर रखा था।

पश्चात्, सीतासावित्री के मन में सोम से विवाह करने की इच्छा उत्पन्न हुयी। पर सोम सीतासावित्री को न चाह कर, प्रजापति की श्रद्धा नामक अन्य कन्या से विवाह करना चाहता था। प्रजापति की सहानुभूति सीतासावित्री के प्रति अधिक थी, और यह चाहता था कि, सोम का विवाह सीतासावित्री से ही हो। इसी कारण, सलाह लेने के लिए आयी हुयी सीतासावित्री को, इसने एक वशीकरण मंत्र से अवगत कराया। 'स्थागर' नामक एक सुगन्धमय वनस्पति को घिसकर, इसने उसके मस्तक में चन्दन की भाँति टीका लगाकर, उसे आशीष देकर विदा किया।

तब सीतासावित्री सोम के यहाँ गयी। वशीकरण के प्रभाव से, सोम उस पर मोहित हो कर प्रेमभरा व्यवहार करने लगा, और शादी के लिए तैयार हो गया। किन्तु, शादी के पूर्व सीतासावित्री ने सोम की प्रेमपरीक्षा लेने के लिए उसके सामने शर्त रखी, 'वह उसके सिवा किसी अन्य नारी से भोग न करेगा, तथा मुठ्ठी में छिपी हुयी वस्तु का उसे स्पष्ट ज्ञान करायेगा'। सोम को ये शर्तें मंजूर हुयीं और सीतासावित्री का विवाह सोम के साथ सम्पन्न हुआ। इसप्रकार वशीकरण के प्रभाव से दोनों सुखपूर्वक रहने लगे। तैत्तिरीय ब्राह्मण में, प्रजापति का यह वशीकरणप्रयोग विस्तार के साथ बताकर कहा गया है कि, जो इस वशीकरण का प्रयोग करेगा उसे इच्छित वस्तु प्राप्त होगी (तै. ब्रा. २.३.१०)।

ऐतरेय ब्राह्मण में, प्रजापति की कन्या का नाम 'सूर्यासावित्री' बताया गया है (ऐ. ब्रा. ४.७)। अपनी इस कन्या का विवाह प्रजापति ने सोम के साथ निश्चित किया। 'सूर्यासावित्री' के विवाहोत्सव में,

प्रजापति ने सारे देवों को निमंत्रित किया। उस समय प्रजापति ने सहस्र ऋचाओंवाला एक 'आश्विन स्तोत्र' का निर्माण कर, उसे उन देवों के सम्मुख प्रस्तुत किया। उस स्तोत्र को सुन कर सभी देवताओं के मन में उसके प्राप्ति की अभिलाषा उत्पन्न हुयी। ऐसी स्थिति में, देवों के बीच उत्पन्न हुयी कलह को मिटाने के लिए प्रजापति ने एक प्रतियोगिता रक्खी, जिसके अनुसार, यह तय किया गया कि, जो देवता गाहर्पत्य तक दौड़ में प्रथम आयेगा उसे ही यह स्तोत्र प्रदान किया जायेगा। इस दौड़ में अश्विनीकुमार प्रथम आये, और उन्हे स्तोत्र की प्राप्त हुयी (ऐ. ब्रा ४. ७)।

दुहितृगमन—ऐतरेय ब्राह्मण एवं मैत्रायणी संहिता में, प्रजापति के अपनी कन्या 'उषस्' पर ही आसक्त हो जाने की कथा प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ३. ३३; मै. सं. ४. २)।

एक बार, अपनी ही कन्या 'द्यौ' तथा 'उषस्' को देखकर, प्रजापति में काम-वासना उत्पन्न हुयी, एवं यह उनके पीछे दौड़ने लगा। इससे डरकर इसकी कन्याओं ने रोहित नामक मृगी का रूप धारण कर लिया। तब इसने ऋष्य नामक मृग का रूप धारण कर, उनसे मैथुन किया। सारे देवताओं ने 'दुहितागमन' का यह निन्दनीय कर्म देखकर, इस पापी पुरुष को नष्ट करने की ठान ली। फिर, हर एक देव ने अपने रौद्रअंश को एकत्र कर 'भूतवान' नामक एक भयंकर पुरुष का निर्माण किया, जिसने प्रजापति का पापी देह नष्ट किया। प्रजापति का मृगरूपी मृतदेह, मृगनक्षत्र के रूप में आज भी आकाश में दिखाई पड़ता है। जिस बाण से प्रजापति का हनन किया गया था, उस बाण की नोंक, मध्य तथा फाल आज भी हमें आकाश में दिखाई पड़ती हैं। रोहिणी नक्षत्र ही प्रजापति की कन्या है।

उस समय जो प्रजापति का वीर्य गिरा उससे निम्नलिखित प्राणी इस क्रम से उत्पन्न हुएः— अग्नि, वायु, आदित्य, तीन वेद, भूः, भूवः, स्वः, अ उ म (ऐ. ब्रा. ३. ३३; ५. २)।

कामी प्रजापति ने अपनी 'द्यौ' एवं 'उषस्' नामक कन्याओं से भोग करते समय, जो वीर्य असावधानी में नीचे भूमि पर स्खलित किया था, कालान्तर में वही वीर्य चारों ओर बहने लगा। मरुतों ने उसे एकत्र कर उसका पिंड बनाया। उस पिंड से आदित्य एवं वारुणि भृगुओं की उत्पत्ति हुयी। उन दोनों के निर्माण के पश्चात्, शेष बचे बचे हुए वीर्यकण दग्ध होकर अंगार के समान फूलने लगे। उन अंगारों से अंगिरस निर्माण हुए। जो अंगार जलकर कोयले के समान काले हो गये, उनसे कृष्णवर्णीय पशुओं की उत्पत्ति हुयी। उन अंगारों के सहयोग से पृथ्वी का जो भाग तप्त होकर लाल हो गया, उनसे रक्तवर्णीय पशुओं का निर्माण हुआ (ऐ. ब्रा. ३. ३४)।

शतपथ ब्राह्मण में भी प्रजापति द्वारा प्रजोत्पत्ति की यही कथा इसी प्रकार दी गयी है। किन्तु इस ग्रन्थ में प्रजापति के हनन के लिए देवों द्वारा उत्पन्न किये भयंकर पुरुष का नाम 'भूतवान' की जगह 'रुद्र' दिया गया है, एवं इसके स्खलित वीर्य से उत्पन्न पुत्र का नाम 'अग्नि मारुत उक्थ' दिया गया है (श. ब्रा. १. ७. ४)।

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, प्रजापति का वध करने के पश्चात्, देवों का क्रोध पुनः शान्त हुआ, और उन्होंने फिर से इसका अभिषेक किया, एवं इसे 'यज्ञ प्रजापति' नाम प्रदान किया (श. ब्रा. १. ७. ४)।

प्रजा निर्मित करने के उपरांत, प्रजापति को आपसी झगड़ों को निपटा कर के, वैधानिक दण्डादि भी देना पड़ता था। तत्त्वज्ञान के संबंध में जब कभी शंकायें उठती थीं, तो उनके निवारणार्थ देव, दैत्य अथवा मनुष्यलोग प्रजापति के पास जाया करते थे (छां. उ. ८. ७. १. ३; ऐ. ब्रा. ५. ३; श्वेत. ४. २)।

२. ब्रह्मदेवों के मानस पुत्रों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम।

वायुपुराण के अनुसार, ब्रह्मा ने सृष्टि की उत्पत्ति की, जिसको बढ़ाने के लिए, अपने शरीर के विभिन्न अवयवों से उसने अनेक मानसपुत्र निर्माण किये। मानसपुत्रों के निर्माण के पीछे उनका हेतु सृष्टि विस्तार ही था। इस कारण ब्रह्माने अपने मानसपुत्रों को प्रजा उत्पन्न करने की आज्ञा दी। इसी कारण, ब्रह्मा के मानस पुत्रों को प्रजापति सामूहिक नाम प्राप्त हुआ।

पुराणों में 'प्रजापति' शब्द की व्याख्या 'संतति उत्पन्न करनेवाला' ऐसी की गयी है, जैसा कि वायुपुराण में लिखा है—

लोकस्य संतानकरास्तैरिमा वर्धिताः प्रजाः।
प्रजापतय इत्येवं पठ्यन्ते ब्रह्मणः सुताः॥

(वायु. ६५.४८)

मत्स्य पुराण में भी यही विचार प्रकट किये गये हैं, जो निम्नलिखित श्लोक में द्रष्टव्य है—

'विश्वे प्रजानां पतयो येभ्यो लोका विनिसृताः'
(मत्स्य. १७१.२५)।

प्रजापतियों की संख्या—प्रजापतियों की संख्या के बारे में कहीं भी एकवाक्यता नहीं है। पुराणों में प्रजापतियों की संख्याओं के लिये, सात, तेरह, चौदह, इक्कीस आदि भिन्न भिन्न संख्यायें प्राप्त हैं। बहुत सारे पुराणों में निम्नलिखित व्यक्तियों का निर्देश प्रजापति के नाम से किया गया है—मरीचि, अत्रि, अंगिरस, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, वसिष्ठ, भृगु, नारद। वायु, ब्रह्मांड, गरुड़, मत्स्य एवं महाभारत में 'अन्य', 'बहवः' ऐसा निर्देश कर, और भी कई व्यक्तियों की नामावली प्रजापति के नाम से दी गयी है। जिस व्यक्ति के संतति की संख्या अधिक हो, उसे प्रजापति की संज्ञा पुराणों में प्रदान की गयी दिखती है। पुराणों में बहुत सारी जगहों पर प्रजापति को समस्त सृष्टि का सृजन करनेवाले ब्रह्मा से समीकृत किया गया है। कई जगह इसे व्यास भी कहा गया है (व्यास देखिये)।

प्रजापतियों की नामावलि—विभिन्न पुराणों में प्रजापतियों की नामावलि निम्नप्रकार से दी गयी है—

(१) **वायु एवं ब्रह्मांड पुराण**—कर्दम, कश्यप, शेष, विक्रांत, सुश्रवस्, बहुपुत्र, कुमार, विवस्वत्, अरिष्टनेमि, बहुल, कुशोच्चय, वालखिल्य, संभूत, परमर्षय, मनोजव, सर्वगत, सर्वभोग (वायु. ६५.४८; ब्रह्मांड. २.९.२१; ३.१)।

(२) **गरुड़ पुराण**—धर्म, रुद्र, मनु, सनक, सनातन, सनत्कुमार, रुचि, श्रद्धा, पितर, बर्हिषद, अग्निष्वात्त, कव्यादान, दीप्यान, आज्यपान (गरुड़. १.५)।

(३) **मत्स्य पुराण**—गौतम, हस्तींद्र, सुकृत, मूर्ति, अप्, ज्योति, न्यय, स्मय। मत्स्य में निर्दिष्ट ये सारे प्रजापति स्वायंभुव मन्वन्तर में पैदा हुए थे (मत्स्य. ९.९–१०; १७१.२७)।

(४) **महाभारत**—रुद्र, भृगु, धर्म, तप, यम, मरीचि, अंगिरा, अत्रि, पुलस्त्य, पुलह क्रतु, वसिष्ठ, चन्द्रमा, क्रोध, विक्रीत, बृहस्पति, स्थाणु, मनु, क, परमेष्ठिन्, दक्ष, सप्त पुत्र, कश्यप, कर्दम, प्रल्हाद, सनातन, प्राचीनबर्हि, दक्ष प्राचेतस, सोम, अर्यमन्, शशबिंदुपुत्र, गौतम (म. स. ११.१४; शां. २०१; भा. ३.१२.२१)।

महाभारत में मरीचि ऋषि के पुत्र कश्यप को प्रजापति कहा गया है, एवं उसे मनुष्य, देव एवं राक्षसों का आदि पुरुष कहा गया है। महाभारत के अनुसार, मरीचि ऋषि के पुत्र का नाम प्रजापति अरिष्टनेमि अथवा कश्यप था, जिसका विवाह दक्ष की कन्याओं से हुआ था। उसी कश्यप से सारी सृष्टि का निर्माण हुआ। यादवों के चक्रवर्ति राजा शशबिन्दु को भी महाभारत में एक जगह प्रजापति कहा गया है (म. शां. २००. ११–१३)।

ब्रह्मांड के अनुसार, हर एक कल्प में, नयी नयी सृष्टि का निर्माण करना प्रजापति का कार्य रहा है। स्वायंभुव मन्वन्तर के प्रजापति को कोई संतान न होती थी। फिर ब्रह्मा ने स्वयं कन्या को उत्पन्न कर उसे दक्ष को दिया। पश्चात्, दक्ष ने अनेक कन्यायें उत्पन्न कर उन्हें उस मन्वन्तर के प्रजापतियों को प्रदान किया। किन्तु दक्षयज्ञ के संहार में शंकर ने सारे प्रजापतियों को दग्ध कर दिया (ब्रह्मांड. २.९.३१–६७)।

पद्म के अनुसार, रोहिणी नक्षत्र की देवता प्रजापति माना गया है। प्रजापति को जब शनि की पीड़ा होती है, तब सृष्टि का संहार (लोकक्षय) होता है (पद्म. उ. ३३)।

३. एक धर्मशास्त्रकार। बौधायन के धर्मसूत्र में, प्रजापति के धर्मशास्त्रविषयक मत ग्राह्य माने गये हैं (बौ. ध. २.४. १५; २. १०. ७१)। वसिष्ठ ने भी अपने धर्मशास्त्र में इसके मतों का अनेक बार निर्देश किया है (व. ध. ३. ४७; १४.१६.१९; २४–२५; ३०–३२)। बौधायन तथा वसिष्ठ धर्मसूत्रों में निर्दिशित प्रजापति के सारे श्लोक मनुस्मृति में पुनः प्राप्त हैं। इसी के आधार पर कहा जा सकता है कि, बौधायन तथा वसिष्ठ ने प्रजापति को मनु का ही नामांतर माना है।

आनंदाश्रम संग्रह में (९०–९८), प्रजापति, की श्राद्धविषयक एक स्मृति दी गयी है, जिसमें एक सौ अट्ठानवे श्लोक हैं। ये श्लोक अनुष्टुप, इन्द्रवज्रा, उपजाति, वसंततिलका तथा स्रग्धरा वृत्तों में हैं। इस स्मृति में कल्पशास्त्र, स्मृति, धर्मशास्त्र तथा पुराणों पर विचार किया गया है।

'कन्या' एवं 'वृश्चिक' राशियों के बारे में प्रजापति स्मृति में एक श्लोक प्राप्त है, जिसे कार्ष्णाजिनि ने उद्धृत किया है। अशौच एवं प्रायश्चित के बारे में प्रजापति के श्लोक मिताक्षरा में दिये गये हैं (याज्ञ. ३. २५. २६०)। पदार्थशुद्धि, श्राद्ध, गवाह, 'दिव्य' तथा अशौच के सम्बन्ध में इसके श्लोक 'अपरार्क' ने उद्धृत किये हैं। किन्तु वे श्लोक मुद्रित प्रजापतिस्मृति में अप्राप्य हैं। 'परिव्राजक' के सम्बन्ध में इसका एक गद्य उद्धरण भी 'अपरार्क' में दिया गया है (अपरार्क. ९५२)।

प्रजापति के अनुसार, श्राद्धविधि के अवसर पर अपनी माता को पिण्डदान देते समय अपने मामा के गोत्र का निर्देश करना चाहिये। इसके इस मत का उल्लेख लौगाक्षि एवं अपरार्क ने किया है (अपरार्क. ५४२)।

प्रजापति के लोकव्यवहार सम्बन्धी विचारधारा का उल्लेख अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका, पराशर माधवीय तथा अन्य ग्रन्थों में किया गया है। इसके अनुसार, गवाहों के 'कृत' अथवा 'अकृत' ऐसे दो प्रमुख प्रकार होते हैं। इसका यह मत नारदस्मृति से लिया हुआ प्रतीत होता है (ऋणादान श्लो. १४९; अपरार्क. ६६६; स्मृतिचं. व्य. ८०)। इसने प्रतिवादी के ग्राह्य उत्तरों का विवेचन कर, उनके चार प्रकार बताये हैं (स्मृतिचं. व्य. ९८; परा. मा. ३. ६९-७३)। 'दिव्य' के सम्बन्ध में लिखे गये इसके श्लोक 'पराशरमाधवीय' में दिये गये हैं।

प्रजापति के अनुसार, निःसंतान विधवा का अपने पति की सम्पूर्ण संपत्ति पर अधिकार है, एवं उसके मासिक तथा वार्षिक श्राद्ध करने का अधिकार भी उसे ही प्राप्त है। उक्त श्राद्ध के समय विधवा को अपने पति के सगे संबंधियों का सन्मान करना चाहिये ऐसा इसका अभिमत था (परा. मा. ३.५३६)।

४. महर्षि कश्यप का नामांतर। इसने वालखिल्यों से देवराज इन्द्र पर अनुग्रह करने के लिए प्रार्थना की थी (म. आ. २७.१६-२१)।

५. रथंतर कल्प का एक राजा। इसकी पत्नी का नाम चन्द्ररूपा था, जिसने 'त्रिरात्र तुलसीव्रत' नामक उपासना की थी (पद्म. उ. २५)।

प्रजापति परमेष्ठिन्—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२९)।

प्रजापति वाच्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ३. ३८; ५४-५६; ९.८४)।

प्रजापति वैश्वामित्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ३. ३८; ५४-५६)।

प्रजावत् प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८३; ऐ. ब्रा. १.२१)। इसकी माता का नाम सुपर्णा था, जिससे इसे सौपर्णेय नाम प्राप्त हुआ था (तै. आ. १०.६३)। ऐसा माना जाता है कि, प्रवर्ग्य नामक अनुष्ठान में यदि कोई व्यक्ति इसके द्वारा रचित सूक्त का पठन करे, तो उसे अवश्य ही पुत्र की प्राप्ति होती है।

प्रज्ञ—अमिताभ देवों में से एक।

प्रज्योति—अमिताभ देवों में से एक।

प्रणित—मरीचिगर्भ देवों में से एक।

प्रणिधि—बृहद्रथ वासिष्ठ के अंश से उत्पन्न पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र (म. व. २१०.४)।

२. एक धनिक वैश्य, जिसकी पत्नी का नाम पद्मावती था (पद्मावति २. देखिये)।

प्रतंस—(सो.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार, अवतंस राजा का पुत्र था।

प्रतपन—एक रावणपक्षीय राक्षस, जिसका नल द्वारा वध हुआ था (वा. रा. यु. ४३.२३)।

प्रतर्दन—(सो. काश्य.) काशी जनपद का सुविख्यात राजा, एवं एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९६; १०.१७९. २)। यह ययाति राजा की कन्या माधवी का पुत्र था।

वैदिक साहित्य में इसे काशिराज दैवोदासि कहा गया है। इसके पुत्र का नाम भरद्वाज था (क. सं २१.१०)। भरद्वाज ऋषि ने क्षत्रश्री प्रातर्दनि राजा की दानस्तुति की थी, जिससे पता चलता है कि प्रतर्दन राजा को क्षत्रश्री नामक एक और पुत्र था (ऋ. ६.२६.८)।

कौषीतकि ब्राह्मण के अनुसार, नैमिषारण्य में ऋषियों द्वारा किये यज्ञ में यह उपस्थित हुआ, और ऋषियों इसने से प्रश्न किया, 'यज्ञ की, त्रुटियों का परिमार्जन किस प्रकार किया जा सकता है।' उस यज्ञ में उपस्थित अलीकयु नामक ऋषि इसके इस प्रश्न का उत्तर न दे सका था (श. ब्रा. २.६.५)।

कौषीतकि उपनिषद् के अनुसार, युद्ध में मृत्यु हो जाने पर यह इन्द्रलोक चला गया था (कौ. उ. ३.१)। वहाँ इसने बड़ी चतुरता के साथ इन्द्र को अपनी बातों में फँसा कर, उससे ब्रह्मविद्या का ज्ञान एवं इन्द्रलोक प्राप्त किया (कौ. उ. ३.३.१)।

वैदिक वाङ्मय में, इसे दैवोदासि उपाधि दी गयी है, जो इसका वैदिक राजा सुदास के बीच सम्बन्ध स्थापित कराती है। इसका भरद्वाज नामक एक पुरोहित भी था, जो इसके और सुदास राजा के बीच का सम्बन्ध पुष्ट करता है।

भाषा-विज्ञान की दृष्टि से, इसका प्रतर्दन नाम 'तृत्सु' एवं 'प्रतृद्' लोगों के नामों से सम्बन्ध रखता है, क्योंकि उक्त तीनों शब्दों में 'तर्द' धातु है।

पौराणिक साहित्य में इसे सर्वत्र काशीनरेश कहा गया है। किन्तु वैदिक ग्रन्थों में इस प्रकार का निर्देश आप्रप्य है।

महाभारत में इसे ययाति की कन्या माधवी से उत्पन्न पुत्र कहा गया है (म. स. ८; व. परि. १. क्र. २१. ६; पंक्ति ९७; उ. ११५. १५)। ययाति से जोड़ा गया इसका यह सम्बन्ध कालदृष्टि से असंगत है। भीमरथ प्रतर्दन ने शूर-वीरता के कारण ही द्युमत्, शत्रुजित्, कुवलयाक्ष, ऋतध्वज, वत्स आदि नाम प्राप्त किये थे (विष्णु. ४.५-७)।

भीमरथ को काशिराज दिवोदास नामक पुत्र भारद्वाज के प्रसाद से हुआ था। दिवोदास के पितामह हर्यश्व को हैहय राजाओं ने अत्यधिक त्रस्त किया, तथा उसका राज्य छीन लिया। हर्यश्व का पुत्र सुदेव तथा पौत्र दिवोदास दोनों हैहयों को पराजित न कर सके। इसलिये दिवोदास ने हैहयों का पराभव करनेवाला प्रतर्दन नामक पुत्र भारद्वाज से माँगा। यह जन्म लेते ही तेरह वर्ष का था, एवं सब विद्याओं में पारंगत था (म. अनु. ३०.३०)।

प्रतर्दन का पराक्रम—माहिष्मती के हैहयवंश में पैदा हुये चक्रवर्ती कार्तवीर्य अर्जुन ने नर्मदा से लेकर हिमालयप्रदेश तक अपना साम्राज्य स्थापित किया था। काशी के दिवोदास आदि राजा कार्तवीर्य से परास्त होकर अपने प्रदेश से भाग गये। काशी राज्य जंगल में बदल गया, और उसे नरभक्षक राक्षसों ने अपना अड्डा बना लिया।

पिता के दुःख का कारण ज्ञात होते ही, प्रतर्दन ने हैहयवंशीय तालजंघ, वीतहव्य तथा उसके पुत्रों को, पराक्रम के बल पर युद्ध में परास्त कर, काशीप्रान्त को पुनः प्राप्त किया। क्षेमकादि राक्षसों का वध कर, एक बार फिर से काशीप्रदेश को बसा कर इसने उसे सुगठित राज्य का रूप दिया।

यह शूरवीर होने के साथ साथ परमदयालु एवं ब्राह्मणभक्त भी था। इसके द्वारा अपने सब पुत्रो को मरते देखकर वीतहव्य घबरा कर भार्गव के आश्रय में गया। भार्गव ने उसको उबारने के लिये प्रतर्दन से कहा, 'यह ब्राह्मण है, अतएव इसका वध न होना चाहिये'। पश्चात् प्रतर्दन ने उसे छोड़ दिया।

एक बार इसने अपना पुत्र ब्राह्मण को दान दे दिया था, यही नहीं इसने ब्राह्मण को अपनी आँखें (म. शां. २४०. २०), तथा शरीर (म. अनु. १३७-५)। तक ब्राह्मण को दान स्वरूप दी थीं। इसका पितामह ययाति स्वर्ग से नीचे गिरा, तब इसने अपना पुण्य देकर उसे पुनः स्वर्ग भेजा था (म. आ. ८७. १४-१५)।

एक बार यह नारद के साथ रथ में बैठकर जा रहा था, तब एक ब्राह्मण ने इसके रथ के अश्व माँग लिये। यह स्वयं अपना रथ खींचकर ले जाने लगा। बाद में कुछ ब्राह्मणादि और आये और उन्होंने भी अश्व माँगे। परन्तु पास में अश्व न होने के कारण यह ब्राह्मणों की माँग पूरी न कर सका, और त्रस्त होकर इसने उन्हें कुछ अपशब्द भी कहे। अतः भाइयों के साथ स्वर्ग जाते जाते आधे मार्ग से यह नीचे गिर गया (म. व. परि. १ क्र. २१. ६. पंक्ति. ११०-१२५)।

इसे अलर्क के सिवाय अन्य पुत्र भी थे, पर अलर्क ही इसके बाद सिंहासन का अधिकारी हुआ (भा. ९. १७. ६)।

प्रतर्दन का तत्त्वज्ञान—कौषीतकी उपनिषद् में इंद्र-प्रतर्दन संवाद से प्रतर्दन के तत्त्वज्ञान का परिचय प्राप्त है। दिवोदास का पुत्र प्रतर्दन तत्त्वज्ञान की शिक्षा प्राप्त करने के लिए इन्द्र के पास गया। इन्द्र ने इसे बताया— 'ज्ञान से परम कल्याण प्राप्त होता हैं। ज्ञाता सर्व दोषों से और पापों से मुक्त होता है। प्राण ही आत्मा है। संसार का मूल तत्त्व प्राण है। प्राण से ही सब दुनिया चलती है। हस्तपादनेत्रादि विरहितों के सारे व्यवहारों को देखने से पता चलता है कि, संसार में प्राण ही मुख्य तत्त्व है।'

उपनिर्दिष्ट इन्द्रप्रतर्दन संवाद में इन्द्र काल्पनिक है। प्रस्तुत संवाद में इन्द्र द्वारा प्रतिपादित समस्त तत्वज्ञान प्रतर्दन द्वारा ही विरचित है। इस संवाद से प्रतर्दन की प्रत्यक्ष प्रमाणवादिता स्पष्ट है।

महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट प्रतर्दन दो व्यक्ति न होकर, एक ही व्यक्ति का बोध कराते हैं। जिस दिवोदास राजा के वंश में यह पैदा हुआ, उसकी वंशावलि महाभारत तथा पुराणों में कुछ विभिन्न प्रकार से दी गयी है। इसीलिए इस प्रकार का भ्रम हो जाता है। पर वास्तव में महाभारत तथा पुराणों के दिवोदास दो अलग अलग व्यक्ति हैं। उनमें से महाभारत में निर्दिष्ट दिवोदास का वंशज प्रतर्दन था।

२. उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित देव अन्तर्निहित हैं:—अवध्य, अवरति, ऋतु, केतुमान्, धिष्ण्य, धृतधर्मन्, यशस्विन्, रथोर्मि, वसु, वित्त, विभावसु, सुधर्मन् (ब्रह्मांड. २.३६. ३०-३१)।

३. शिव देवो में से एक।

प्रताप--सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ के रथ के पीछे ध्वजा लेकर चलता था। सम्भवतः यह जयद्रथ का भाई रहा होगा (म. व. २४९.१०)। अर्जुन ने इसका वध किया था (म. व. २५५.१२१४*)। इसके नाम के लिये 'पराकु' पाठभेद प्राप्त है।

प्रतापाग्र्य—एक योद्धा, जो रामचन्द्र के अश्वमेध यज्ञ के समय शत्रुघ्न के साथ अश्वरक्षणार्थ गया था (पद्म. पा. ११.२२)। दमन नामक राक्षस से इसका युद्ध हुआ था, जिसमें यह मूर्च्छित हुआ था (पद्म. पा. २३)।

प्रतापिन्—एक राजकुमार, जो कुण्डलपुर के सुरथ राजा के दस पुत्रों में से एक था (पद्म. पा. ४९)।

प्रति—(सो. क्षत्र.) प्रतिक्षत्र राजा का नामांतर (प्रतिक्षत्र २. देखिये)। भारत मे इसे कुश राजा का पुत्र कहा गया है।

प्रतिक्षत्र—(सो. क्रोष्टु.) एक क्रोष्टुवंशीय राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार शमीक राजा का पुत्र था।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार, क्षत्रवृद्ध राजा का पुत्र था। वायु में इसका नाम 'प्रतिपक्ष' एवं भागवत में 'प्रति' दिया गया है। यह किस देश में राज्य करता था, कहना कठिन है। हरिवंश में इसे पुरूरवस्वंशीय अनेनस् राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इसका वंश भी वहाँ दिया गया है (ह. वं. १.२९; अनेनस् देखिये)।

इसके वंश की जानकारी अन्य पुराणों में भी दी गयी है (भा. ९.१७.१६–१८; ब्रह्म. ११.२७.३१; वायु. ९७. ७–११।

प्रतिक्षत्र आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.४. ६)।

प्रतिक्षिप्त—(सो. क्रोष्टु.) क्रोष्टुवंशीय प्रतिक्षत्र राजा का नामांतर (प्रतिक्षत्र २. देखिये)।

प्रतिक्षेत्र—(सो. क्रोष्टु.) एक क्रोष्टुवंशीय राजा, जो शोणाश्व राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भोज था (पद्म. सृ. १३)।

प्रतित्वक—(सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार, मरु राजा का पुत्र था। इसे 'प्रतिबंधक', 'प्रतीपक', 'प्रतींधक' एवं 'प्रदीपक' नामांतर भी प्राप्त है।

प्रतिथि देवतरथ—एक आचार्य, जो देवतरस् श्यावसायन ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम निकोथन था (वं. ब्रा. २)।

प्रतिपक्ष—(सो. क्षत्र.) प्रतिक्षत्र राजा का नामांतर। वायु में इसे धर्मवृद्ध राजा का पुत्र कहा गया है (प्रतिक्षत्र २. देखिये)।

प्रतिप्रभ आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.४९)।

प्रतिबंधक—(सू. निमि.) प्रतित्वक राजा का नामांतर (प्रतित्वक देखिये)। विष्णु में इसे मरु राजा का पुत्र कहा गया है।

प्रतिबाहु—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार, श्वफल्क राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम नंदिनी है। इसे 'प्रतिवाह' नामांतर भी प्राप्त था।

२. एक राजा, जो कृष्ण का प्रपौत्र, एवं वज्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुबाहु था।

प्रतिभानु—श्रीकृष्ण एवं सत्यभामा के पुत्रों में से एक।

प्रतिभानु आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ४८)।

प्रतिमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

प्रतिरथ--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो मतिनार राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कण्व (अग्नि. २७७. ५; गरुड. १४०. ४)।

प्रतिरथ आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ४७)।

प्रतिरूप—एक दैत्य, जो एक समय समस्त पृथ्वी का शासक था। किंतु अंत में कालवश हो कर, इसे अपना समस्त राज्य छोडना पड़ा (म. शां २२०. ५२–५५)।

प्रतिरूपा-- स्वायंभुव मन्वंतर के अग्नीध्र राजा की स्नुषा, एवं अग्नीध्रपुत्र किंपुरुष की पत्नी। यह मेरु की कन्या थी (भा. ५. २. २३)।

प्रतिवाह--(सो. वृष्णि.) प्रतिबाहु नामक यादव राजा का नामांतर (प्रतिबाहु १. देखिये)।

प्रतिविंध्य—(सो. कुरु.) युधिष्ठिर राजा का द्रौपदी से उत्पन्न पुत्र (म. आ. ५७. १०२; ९०. ८२; भा. ९.२२.२९)। जन्म के समय यह विन्ध्य पर्वत के सदृश अचल दिखाई पड़ा, अतएव इसे 'प्रतिविन्ध्य' नाम प्रदान किया गया (म. आ. २१३. ७२)। महाभारत में इसे 'यौधिष्ठिर' एवं 'यौधिष्ठिरि' कहा गया है।

भारतीय युद्ध में इसके अश्व शुभ्रवर्ण के कहे गये हैं, जिनके कंठ नीले थे। इसका चित्र राजा के साथ युद्ध हुआ था, जिसमें इसने उसका वध किया (म. क.

१०.३१)। अलम्बुश एवं दुःशासन के साथ भी इसका युद्ध हुआ था, किन्तु उन दोनों युद्ध में यह पराजित हुआ (म. भी. ९६.३७-४९; द्रो.१४३-३१-४२)।

अश्वत्थामन् ने रात्रि के समय सोते हुए पाण्डवों के कुटुम्बियों का संहार किया था, जिसमें यह भी मारा गया (म. द्रो. २२. २०, सौ. ८. ५०)। इसका मृत्युदिन मार्गशीर्ष अमावस्या माना जाता है (भारत-सावित्री)।

२. शाकल देश का एक सुविख्यात राजा, जो एकचक्र नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२२)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय अर्जुन ने इसे पराजित किया था (म. स. २३. १५)। भारतीय युद्ध में, यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४. १३)।

प्रतिवेश्य-- एक आचार्य, जो बृहद्दिव का शिष्य था (सां. आ. १५. १)। इसके शिष्य का नाम प्रातिवेश्य था।

प्रतिव्यूह-- (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार वत्सव्यूह राजा का पुत्र था। इसे 'प्रतिव्योम' नामांतर भी प्राप्त है।

प्रतिव्योमन्--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वत्सवृद्ध का, विष्णु के अनुसार वत्स व्यूह का और मत्स्य के अनुसार वत्सद्रोह का पुत्र था। इसे प्रतिव्यूह नामांतर भी प्राप्त है।

प्रतिश्रवस्--प्रतीप नामक एक कुरुवंशीय राजा का नामांतर (प्रतीप १. देखिये)।

प्रतिश्रुत—वसुदेव का शांतिदेवा से उत्पन्न पुत्र (भा. ९. २४. ५०)।

प्रतिष्ठा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. २८)।

प्रतिहर्तृ--(स्वा. प्रिय.) एक यज्ञकर्मप्रवीण राजा, जो प्रतीह राजा के तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसकी माता का नाम सुवर्चला था। इसकी स्त्री का नाम स्तुति था, जिससे इसे अज और भूमन् नामक दो पुत्र थे (भा. ५. १५. ५)। विष्णु में इसे नाभिवंशीय प्रतिहार राजा का पुत्र कहा गया है।

२. मरुद्गणो के छठवें गण में से एक।

प्रतिहार—(स्वा. नाभि.) एक नाभिवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार परमेष्ठिन् राजा का पुत्र था।

प्रतीक—(सू. नृग.) एक राजा, जो वसु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम ओघवत् था (भा. ९.२. १८)।

प्रतीकाश्व—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार भानुमत् राजा का पुत्र था। इसे 'प्रतीकाश्व' और 'प्रतीपाश्व' नामांतर प्राप्त थे।

प्रतीच्या—महर्षि पुलस्त्य की पतिव्रता पत्नी (म. उ. ११५.११*)। प्रतीच्या के स्थान पर कहीं कहीं संध्या पाठभेद भी प्राप्त है।

प्रतीत--स्वारोचिष मनु के पुत्र प्रथित का नामांतर।

२. एक विश्वदेव (म. अनु. ९१.३२)।

प्रतीताश्व--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार भानुरथ का पुत्र था। इसे 'प्रतीकाश्व' नामांतर प्राप्त है (प्रतीकाश्व देखिये)।

प्रतीदर्श श्वैक्न—एक वैदिक राजा, जो पांचालदेश के राजा सुप्लन् सहदेव का समकालीन था। यह 'श्विन्कों' का राजा था, जिस कारण इसे 'श्वैक्न' उपाधि प्राप्त हुयी। शतपथ ब्राह्मण में, इसे प्रतीदर्श ऐभावत कहा गया है, जिससे यह किसी इभावत् का वंशज प्रतीत होता है (श. ब्रा. १२. ८. २. ३)।

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह एक बार राजगद्दी से पदच्युत किया गया था। किन्तु दाक्षायणयज्ञ अथवा वसिष्ठयज्ञ करने के पश्चात्, इसे पुनः राजगद्दी प्राप्त हुयी। आगे चलकर यह पुनः लोकप्रिय राजा हुआ (श. ब्रा. २. ४. ४. ३-४)।

प्रतीन्धक--निमिवंशीय प्रतित्वक राजा का नामांतर (प्रतित्वक देखिये)।

प्रतीप-- (सो. कुरु.) एक विख्यात कुरुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य, भविष्य और वायु के अनुसार, भीमसेन का प्रपौत्र और दिलीप का पुत्र था। किन्तु महाभारत में इसे भीमसेन राजा का पुत्र कहा गया है, एवं केकय राजकन्या सुकुमारी को इसकी माता कहा गया है। इसे परिश्रवस् (पर्यश्रवस्) नामांतर भी प्राप्त है (म. आ. ९०. ४५)। यह ब्रह्मदत्त राजा का समकालीन था, एवं भीष्म का पितामह था (ह. वं. १. २०. ११-१२) महाभारत में इसका वंशक्रम निम्न प्रकार दिया गया हैः- कुरु-विडूरथ अरुग्वत्-परिक्षित्-भीमसेन-प्रतिश्रवस् तथा प्रतीप (म. आ. ९०.४१-४५)।

इसकी पत्नी का नाम शैब्या सुनन्दा था, जिससे इसे देवापि, शन्तनु तथा बाह्लीक नामक पुत्र थे (म. आ. ९०.४६)।

महाभारत में अन्य एक स्थान पर इसे जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) का पौत्र एवं धृतराष्ट्र राजा का पुत्र कहा गया है। वहाँ इसका वंशक्रम निम्नप्रकार से दिया गया है :--कुरु-अविक्षित् एवं परिक्षित्-जनमेजय-धृतराष्ट्र-प्रतीप (म. आ. ८९.४२-५२)।

यह काफ़ी वृद्ध हो गया था, फिर भी इसे कोई पुत्र न था। अतएव सन्तानप्राप्ति की इच्छा से इसने तप करना प्रारम्भ किया। तपस्या करते समय, एक दिन मनस्विनी गंगा उत्तम गुणों से युक्त होकर एक नवयौवना स्त्री का रूप धारण कर उपस्थित हुयीं, और इसके गोद में जा बैठी। गंगा ने प्रतीप से प्रार्थना की, 'वह उसे पत्नी के रूप में स्वीकार करले' पर इसने उस प्रार्थना को इन्कार करते हुए कहा, जब मुझे पुत्र होगा, तब उससे तुम विवाह करना'।

तपश्चर्या के उपरांत यह अपने निवासस्थान वापस आया। कालान्तर में, इसे शंतनु, देवापि तथा बाह्लीक नामक तीन पुत्र हुए। शंतनु को यह अत्यधिक चाहता था। अतएव मृत्यु के समय इसने उससे कहा 'तुम मेरी आज्ञा मान कर अरण्य में जाओ। वहाँ तुम्हें एक सुन्दर स्त्री मिलेगी, जो तुमसे विवाह की इच्छा प्रकट करेगी। तुम विना किसी सोच विचार के उससे विवाह कर लेना।' पश्चात्, शंतनु जंगल में गया एवं गंगा से उसका विवाह हो गया (म. आ. ९० ५०)।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक ऋषि।

प्रतीप प्रातिसुत्वन--अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक राजा (अ. वे. २०. १२९. २; ऐ. ब्रा. ६. ३३. २)।

सांख्यायन श्रौतसूत्र में इसे केवल 'प्रतिसुत्वन' कहा गया है, जिस शब्द की निरुक्ति बौटलिंग के अनुसार यह है-- सत्वनों के विपरीत दिशा में जिसका जन्म हुआ था।

प्रतीपक--निमिवंशीय प्रतित्वक राजा का नामांतर (प्रतित्वक देखिये)।

प्रतीपाश्व (सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय प्रतीकाश्व राजा का नामांतर (प्रतीकाश्व देखिये)। मत्स्य में इसे ध्रुवाश्व राजा का पुत्र कहा गया है।

प्रतीबोध--अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक ऋषि, जिसका बोध ऋषि के साथ उल्लेख आया है (अ. वे. ५.३०. १०;८.१.१३)

प्रतीर--भौत्य मनु का पुत्र।

प्रतीह--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो परमेष्ठिन् राजा का पुत्र था। इसकी माता तथा स्त्री दोनों का ही नाम सुवर्चला है। इसके प्रतिहर्तृ, प्रस्तोतृ और उद्गातृ नामक तीन पुत्र थे (भा. ५.१५.३)।

प्रतृद्--तृत्सु नामक जातिसमूह का नामांतर (ऋ. ७ ३३.१४) तृत्सु राजा दिवोदास के वंश में प्रतर्दन नामक एक राजा उत्पन्न हुआ था, जो तृत्सु एवं 'प्रतृद्' के समीकरण की पुष्टि करता है (लुडविग-ऋग्वेद अनुवाद, ३.१५९)

प्रतोष--यज्ञ नामक विष्णु के सातवें अवतार का पुत्र, जिसकी माता का नाम दक्षिणा था।

२. स्वारोचिष मन्वंतर का एक देव।

प्रत्यग्र--(सो.ऋक्ष.) एक राजा, जो भागवत और विष्णु के अनुसार उपरिचर वसु के पुत्रों में से एक था (म.आ.६४.४४)। वायु एवं मत्स्य में इसके नाम क्रमशः प्रत्यग्रह, तथा प्रत्यश्रवस् दिये गये हैं (वा. रा. ब्रा. ३२. १-११)।

यह 'चैद्यवंश' का अन्तिम राजा प्रतीत होता है, क्योंकि, इसके वंश की चली आई परंपरा का इतिहास इसके उपरांत लुप्तप्राय है। केवल तीन राजाओं के नाम भारतीय युद्धकाल में मिलते हैं जिसके नाम, दमघोष, शिशुपाल, और धृष्टकेतु है।

प्रत्यग्रह--उपरिचर वसु के द्वितीय पुत्र प्रत्यग्र राजा का नामांतर (प्रत्यूह देखिये)।

प्रत्यंग--एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७८)।

प्रत्यश्रवस्--उपरिचर वसु के द्वितीय पुत्र प्रत्यग्र राजा का नामांतर (प्रत्यग्र देखिये)।

प्रत्यह--भृगुकुल के गोत्रकार। प्रत्यूह का नामांतर।

प्रत्यूष--अष्टवसुओं में से एक, जो धर्म एवं प्रभाता का पुत्र था (म. आ. ६०.१७-१९; प्रत्यूह देखिये)।

प्रत्यूह-- भृगुकुल का एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'प्रत्यूष-पाठभेद भी प्राप्त है।

प्रथ वासिष्ठ--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१८१.१)।

प्रथित-- स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

प्रदातृ--एक विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३२)।

प्रदीपक--निमिवंशीय प्रतित्वक राजा का नामांतर (प्रतित्वक देखिये)।

प्रदोष--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पुष्पार्ण राजा का ज्येष्ठ पुत्र था। इसकी माता का नाम दोषा था (भा. ४.१३.१४)।

प्रद्युम्न--एक राजा, जो चक्षुर्मनु के बारह पुत्र में से एक था। इसकी माता का नाम नड्वला (भा. ४.१३. १६)। इसे 'सुद्युम्न' नामांतर भी प्राप्त है।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार भानुमत् राजा का पुत्र था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक सुविख्यात यादव राजा, जो सनत्कुमार के अंश से भगवान् कृष्ण को रुक्मिणी से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.९१)। यह श्रीकृष्ण का तीसरा स्वरूप माना जाता है (म. अनु. १५८.३९)।

पूर्वजन्म—यह मदन का अवतार था, जिसने शंबरासुर का वध करने के लिए रुक्मिणी की कोख में जन्म लिया था। शंबरासुर की पत्नी मायावती, पूर्वजन्म में इसकी पत्नी रति थी। पूर्वजन्म में मदन की मृत्यु के उपरांत, इसकी पत्नी रति को शंबरासुर भगा लाया, इसी का बदला लेने के लिए इसे अवतार लेना पड़ा।

बाल्यकाल--शंबरासुर को जैसे ही ज्ञात हुआ कि मदन ने उसका वध करने के हेतु प्रद्युम्न के रूप में रुक्मिणी के उदर में जन्म लिया हैं, वह तत्काल सूतिकागृह में जा कर छः दिन के शिशु प्रद्युम्न को लेकर भागा, तथा इसे ले जाकर समुद्र में फेंक कर निश्चिंत हो गया। दैवयोग से, इसे एक मछली ने निगल लिया, तथा यह वहाँ उसके पेट में भी जीवित रहा। यह मछली एक मछुए को मिली। मछुए ने अच्छी मछली देखकर उसे शंबरासुर को भेंट की।

शंबरासुर हँसी-खुशी घर आया तथा उक्त मछली को अपनी स्त्री मायावती को दे दी। जैसे ही मायावती ने मछली काटी वैसे ही उसमें एक दिव्य बालक को देखकर वह आश्चर्य-चकित हो गयी, एवं उसके मन में विभिन्न शंकाएँ उठने लगी। उसी क्षण भ्रमण करते हुए नारद वहाँ आ पहुँचे तथा उन्होने मायावती की शंका का समाधान करते हुए कहा, 'यह दिव्य बालक साधारण न होकर साक्षात मदन है, जिसने इस जन्म में रुक्मिणी के उदर में जन्म लिया है। पूर्वजन्म में तुम इसकी पत्नी रति, थीं, अतः तुम इसकी सेवा करो। यह तुम्हारा पति है।' नारद के वचनों का विश्वास करके, मायावती अत्यधिक आनन्दित हुयी। उसने बालक प्रद्युम्न को पाल-पोस कर बड़ा किया, तथा सारी विद्याओं में उसे पारंगत कराया। कालान्तर में, बड़े होने के बाद इसका और शंबरासुर का युद्ध हुआ, जिसमें इसने शंबरासुर का वध किया। पश्चात् अपनी भार्या को पुनः प्राप्त कर, यह उसके साथ रुक्मिणी से मिलने गया (विष्णु. ५.२६; ह. वं. २.१०४-१०७; भा. १०.५५)।

हरिवंश में, यह कथा कुछ इसी प्रकार दी गयी है, अन्तर केवल इतना है कि, शंबरासुर ने शिशु प्रद्युम्न को समुद्र में न फेंक कर, उसे मायावती को दे दिया, क्योंकि निःसंतान होने के कारण वह दुःखित थी।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में प्राप्त कथा हरिवंश से मिलती जुलती है। अन्तर केवल इतना है कि, प्रद्युम्न के बड़े हो जाने पर एक दिन सरस्वती मायावती के पास आयी और उसने ही शंबरासुर के पूर्व कुकृत्यों का लेखा जोखा प्रद्युम्न तथा मायावती के सम्मुख प्रस्तुत किया उस कारण प्रद्युम्न ने शंबरासुर का वध किया (ब्रह्मवै. ४. ११२)।

प्रद्युम्न-शाल्व युद्ध--प्रद्युम्न यादव सेना का महारथि था (भा. १०. ९०. ३३)। कृष्ण ने राजसूय यज्ञ में शिशुपाल का वध किया था। उससे क्रुद्ध होकर अपने मित्र शिशुपाल का बदला लेने के लिए, शाल्व ने बड़े ज़ोर शोर से कृष्ण की द्वारका पर चढ़ाई कर दी। युद्ध की विकरालता को देख कर, यादवसेना घबरा गयी। तब इसने यादवसेना का नेतृत्व कर बड़े पराक्रम के साथ शाल्व का मुक़ाबला किया (म. व. १६. ३०-३२; म. व. १७)। युद्ध करते करते यह युद्धभूमि में मूर्च्छित हो गया (म. व. १७. २२)। इसका सारथि सूतपुत्र दारुक इसे रणभूमि से हटा कर ले गया (म. व. १८. ३)। ठीक हो जाने पर, यह पुनः युद्धभूमि में आ उठा, और घमासान युद्ध करके अपने शत्रुनाशक अद्‌भूत बाण से शाल्व को परास्त किया (म. व. १५.१६.२०; भा. १०.७६.१३)।

युधिष्ठिर द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में, इसने उसकी काफ़ी सहायता की थी, और यह हस्तिनापुर आया था (म. आश्व. ६५.३)। यही नहीं, अश्वरक्षण के लिए यह ससैन्य अर्जुनादि के साथ देशविदेश गया था (जै. अ. १२)।

कालान्तर में, यादववंशीय लोग आपस में एक दूसरे से लड़ने लगे, जिससे कि उनमें वह शक्ति न रह गयी जो पूर्व थी। मौसल युद्ध में उनका भोजों के साथ युद्ध हुआ, जिसमें प्रद्युम्न की मृत्यु हो गयी (म. मौ. ४.३३; भा. ११.३०.१६; गणेश. १.४९)। मृत्योपरांत यह सनत्कुमार के स्वरूप में प्रविष्ट हो गया (म. स्व. ५.११)।

परिवार—इसे शतद्युम्न नामांतर भी प्राप्त है। मायावती के अतिरिक्त, रुक्मिन् की कन्या रुक्मवती अथवा शुभांगी इसकी दूसरी पत्नी थी (भा. १०.६१.१८;

९०.१६), जिसने स्वयंवर में इसका वरण किया था (ह. वं. २.६१.४)। रुक्मवती (शुभांगी) से इसे अनिरुद्ध नामक पुत्र था (म. मी. ६५. ७१)।

वज्रनाभ दैत्य की कन्या प्रभावती इसकी तीसरी पत्नी थी, जिसका इसने हरण किया था (ह. वं. २. ९०. ४)। इस कारण वज्रनाभ का भाई निकुंभ से इसका युद्ध हुआ था।

प्रद्युम्न से बदला लेने के लिए, निकुंभ ने भानु यादव की कन्या भानुमती का हरण किया। इससे क्रुद्ध हो कर कृष्णार्जुनों ने निकुंभ पर हमला किया, जिसमें यह भी निकुंभ के विपक्ष में था। इस युद्ध में इसने अपने मायावी युद्धकौशल का अच्छा परिचय दिया। अन्त में निकुंभ श्रीकृष्ण द्वारा मारा गया (ह. वं. २. ९०-९१)।

प्रद्योत--कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

२. (प्रद्योत. भविष्य.) प्रद्योत वंश का प्रथम राजा, जो शुनक का पुत्र था। वायु में इसे सुनीक का पुत्र कहा गया है।

इसका पिता शुनक सूर्यवंश का अंतिम राजा रिपुंजय अथवा अरिंजय राजा का महामात्य था। उसने रिपुंजय राजा का वध कर, राजगद्दी पर अपने पुत्र प्रद्योत को बिठाया, जिससे आगे चल कर प्रद्योत राजवंश की स्थापना हुयी।

भविष्य में इसे क्षेमक का पुत्र कहा गया है, एवं इसे 'म्लेच्छहंता' उपाधि दी गयी है (भवि. प्रति. १.४)। इसके पिता क्षेमक अथवा शुनक का म्लेच्छों ने वध किया। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए, नारद के सलाह से इसने 'म्लेच्छयज्ञ' आरम्भ किया। उस यज्ञ के लिए इसने सोलह मील लम्बा एक यज्ञ-कुण्ड तैयार किया। पश्चात्, इसने वेदमंत्रों के साथ निम्नलिखित म्लेच्छ जातियों को जला कर भस्म कर दिया:- हारहूण, वर्बर, गुरुंड, शक, खस, यवन, पल्लव, रोमज, खरसंभव द्वीप के कामस, तथा सागर के मध्यभाग में स्थित चीन के म्लेच्छ लोग। इसी यज्ञ के कारण इसे 'म्लेच्छहंता' उपाधि प्राप्त हुयी।

प्रद्योतवंश—प्रद्योत के राजवंश में कुल पाँच राजा हुए, जिनके नाम क्रम से इस प्रकार थे:-प्रद्योत, पालक, विशाखयूप, जनक (अजक), तथा नंदवर्धन (नंदिवर्धन अथवा वर्तिवर्धन)। इन सभी राजाओं ने कुल एक सौ अड़तीस वर्षों तक राज्य किया (भा. १२.१; विष्णु. ४.२२.२४; वायु. ९९.३११-३१४)।

इस वंश का राज्यकाल संभवतः ७४५ ई. पू. से ६९० ई. पू. के बीच माना जाता है। उक्त राजाओं के नाम सभी पुराणों में एक से मिलते हैं। जनक तथा नंदवर्धन राजाओं के नामांतर केवल वायु में प्राप्त है।

प्रद्वेषी—अंगिराकुलोत्पन्न दीर्घतमस् ऋषि की पत्नी, जिससे इसे गौतमादि पुत्र उत्पन्न हुए थे।

दीर्घतमस् ऋषि बूढ़ा एवं अंधा होने के कारण, यह उससे तलाक लेना चाहती थी। किंतु एक धर्मशास्त्रकार के नाते से दीर्घतमस् ने इसे धर्मनीति का उपदेश देते हुए कहा, 'पत्नी का कर्तव्य है कि एक व्यक्ति को ही अपना पति मान कर अपने संपूर्ण जीवन को उसे समर्पित कर दे'। दीर्घतमस् के द्वारा इतना समझाये जाने पर भी यह न मानी, तथा अपने गौतमादि पुत्रों की सहायता से इसने दीर्घतमस् को उठा कर नदी में झोंक दिया (दीर्घतमस् देखिये; म. आ. ९८.१०३७*; परि. १.५६)।

प्रधान--एक प्राचीन राजर्षि, जिसे सुलभा नामक सुविख्यात ब्रह्मनिष्ठ कन्या थी। सुलभा के साथ विदेहराज जनक का तत्वज्ञान के विषय पर संवाद हुआ, जो सुविख्यात है (म. शां. ३०८.१८२; सुलभा देखिये)

प्रधिमि--एक ऋषि, जो जटीमालिन् नामक शिवावतार का शिष्य था।

प्रपोहय--पराशरकुल का एक गोत्रकार ऋषिगण।

प्रबल—कृष्ण का लक्ष्मणा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०. ६१.१५)।

२. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.२१.१६)।

प्रबाहु—कौरवपक्ष का योद्धा। इसने अभिमन्यु पर बाणों की वर्षा की थी (म. द्रो. ३६.२५.२६)।

प्रबुद्ध--(स्वा. प्रिय.) एक भगवद्भक्त राजर्षि, जो ऋषभदेव के नौ सिद्धपुत्रों में से एक था। इसने निमि को उपदेश दिया था (भा. ५.४.११; ११.३.१८)।

प्रभ—रामसेना का एक वानर (वा. रा. उ. ३६)।

प्रभंकर--जयद्रथ राजा का भाई (म. व. २४९.११)।

प्रभंजन--एक राजा, जो मणिपुरनरेश चित्रवाहन का पूर्वज था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'प्रभंकर'।

प्रभंजन राजा ने निःसंतान होने कारण, शिव की उग्र तपस्या कर के उनसे वंशवृद्धि के लिए संतानप्राप्ति की प्रार्थना की। तपस्या से संतुष्ट, होकर शिव ने वरदान

दिया, 'तुम्हारे वंश में कोई व्यक्ति निःसंतान न होगा। पर हर व्यक्ति के केवल एक एक ही संतान होगी, उससे अधिक नहीं।'

वरप्राप्ति के उपरांत, इसके कुल में हर एक को एक एक पुत्र हुआ, और चित्रवाहन तक राज्य चलता रहा। किन्तु चित्रवाहन के चित्रांगदा नामक कन्या हुयी। चित्रवाहन राजा को इसी कन्या के द्वारा वंश आगे चलाना था। इसलिए चित्रवाहन ने 'दौहित्राधिकार' के शर्त पर, यह कन्या अर्जुन को दी। पश्चात् चित्रांगदा को अर्जुन से बभ्रुवाहन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे चित्रवाहन ने मणिपुर का राज्य प्रदान किया (म. आ. २०७)।

२. गंधवती नगरी का राजा। दस हज़ार वर्षों तक शिव की आराधना कर के इसने 'दिग्पालत्व' प्राप्त किया। इसके पुत्र का नाम पूतात्मन् था (स्कन्द. ४.१.१३)।

३. क्षत्रियकुलोत्पन्न एक राजा। बालक को स्तनपान कराती हुई हिरनी को बाण से इसने मारा। उसके द्वारा दिये गये शाप के कारण, १०० वर्षों तक इसे व्याघ्रयोनि में रहना पड़ा। व्याघ्रयोनि में जब इसे नंदा नामक गाय ने उपदेश दिया, तब यह व्याघ्रदेह को नष्ट कर पुनः राजदेह प्राप्त कर सका (पद्म. सृ. १८)।

प्रभद्रक—पांचालो का एक क्षत्रियदल, जो भारतीय युद्ध में पांडवो के पक्ष में शामिल था (म. उ. ५६.३३)। ये युद्ध में अजेय थे, एवं प्रायः द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न तथा शिखण्डी का अनुगमन करते थे (म. भी. १९.२१-२२; ५२.१४)।

ये अधिकतर शल्य द्वारा मारे गये (म. श. १०. २१)। जो व्यक्ति शल्य के द्वारा बाकी बचे थे, वे अश्वत्थामा द्वारा रात्रिसंहार में मारे गये (म. सौ. ८.६१)।

प्रभद्रा—अंगराज कर्ण के पुत्र वृषकेतु की पत्नी। इसे भद्रावती नामांतर भी प्राप्त है (जै. अ. ६३)।

प्रभव—एक देव, जो भृगु तथा पौलोमी के पुत्रों में से एक था।

प्रभा—विवस्वान् आदित्य की पत्नी, जिसकी संज्ञा तथा राज्ञी नामक दो सौतें थीं। इसके पुत्र का नाम प्रभात था (पद्म. सृ. ८)।

२. देवमाताओं में से एक, जो ब्रह्मा के सभा में रहकर उनकी उपासना करती थी (म. स. ११.१३२*, पंक्ति १)। इसके नाम के लिए 'प्राधा' पाठभेद उपलब्ध है।

३. अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

४. (स्वा. उत्तान.) पुष्पार्ण राजाकी दो स्त्रियों में से एक (भा. ४.१३.१३)।

५. स्वर्भानु नामक दानव की कन्या, जिसका विवाह आयु राजा से हुआ था। इसे नहुष आदि पुत्र थे (ब्रह्मांड. ३.६.२६)।

६. सगर की सुमति नामक ज्येष्ठ पत्नी का नामांतर। इससे ही सगर को साठ हज़ार पुत्र हुये थे (मत्स्य. १२. ३९-४२)।

७. मद्रदेश का राजा प्रियव्रत की एक पत्नी (प्रियव्रत ३. देखिये)।

प्रभाकर—अत्रिकुल का एक महान् ऋषि, जिसका विवाह पूरुवंशीय रौद्राश्व (भद्राश्व) की घृताची अप्सरा से उत्पन्न दस कन्याओं से हुआ था। इसकी पत्नियों के नाम इस प्रकार थे-रुद्रा, शूद्रा, भद्रा, मलदा, मलहा, खलदा, नलदा, सुरसा, गोचपला तथा स्त्रीरत्नकूटा।

राहु से ग्रसित सूर्य को देखकर उसे कष्ट से उबारने के लिए, इसने 'स्वस्ति' कहा, जिससे सूर्य कष्ट से मुक्तता पा कर पुनः पूर्व की भाँति प्रकाशित होने लगा। इस पुण्यकृत्य के कारण इसे प्रभाकर नाम प्राप्त हुआ। ज्ञानगरिमा तथा योग्यता के बल पर इसने अत्रिकुल के गौरव को संवर्धित किया।

एक बार इसने यज्ञ किया, जिसके उपलक्ष में देवों ने विपुल धनराशि के साथ साथ इसे दस पुत्र प्रदान किये। उनमें से प्रमुख इस प्रकार थेः--स्वस्ति, आत्रेय, कक्षेय, संस्त्रय, सभानर, चाक्षुष तथा परमन्यु (ह. वं. १.३१. ८-१७)।

२. एक कश्यपवंशीय नाग।

३. सुतप देवों में से एक।

प्रभाता--धर्म की पत्नी वसु का नामांतर। प्राचेतस दक्ष की कन्या एवं धर्म की पत्नी वसु को कल्पभेदानुसार प्रभाता, धूम्रा आदि नाम प्राप्त थे (वसु १५. देखिये)। प्रत्यूष तथा प्रभास नामक दो वसु इसके पुत्र माने जाते हैं (म. आ. ६०.१९)।

प्रभानु--श्रीकृष्ण का सत्यभामा से उत्पन्न पुत्र (भा. १०.६१.१०)।

प्रभावती--मेरुसावर्णि की कन्या स्वयंप्रभा का नामांतर (स्वयंप्रभा देखिये; म. व. २६६.४१)। यह एक तपस्विनी थी, जो मय दानव के निवासस्थान पर

तपस्या करती थी। यह सीता की खोज में गये वानरों से मिली थी।

२. यौवनाश्व राजा की पत्नी।

३. चंपकनगरी के राजा हंसध्वज के पुत्र सुधन्वन् की पत्नी।

४. अंगराज चित्ररथ की पत्नी, जो सुविख्यात ऋषि देवशर्मन् की पत्नी रुचि की बड़ी बहन थी (म. अनु. ४२.८)। इसने अपनी बहन रुचि से दिव्य पुष्प मँगवा देने के लिए अनुरोध किया था, जो देवशर्मन् ने अपने शिष्य विपुल द्वारा पूरा किया (म. अनु. ४२.१०)।

५. मयासुर के पुत्र बल नामक दैत्य की पत्नी (बल ८. देखिये)।

६. वज्रनाभ नामक दानव की कन्या। वज्रनाभ का वध कर कृष्णपुत्र प्रद्युम्न ने इससे विवाह किया था (ह. वं. २.९०-९७)।

७. स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.३)।

८. सूर्यदेव की पत्नियों में से एक (म. उ. ११५.८)।

प्रभास--एक वसु, जो धर्म का पुत्र था। इसकी माता का नाम प्रभाता था (म. आ. ६०.१९)। विष्णु में, इसके पुत्र निम्नलिखित बताये गये हैं:--विश्वकर्मन् (प्रजापति), अजैकपात्, अहिर्बुध्न्य, रुद्र, हर, बहुरूप, त्र्यम्बक, अपराजित, वृषाकपि, शम्भु, कपर्दिन्, रेवत्, मृगव्याध, शर्व एवं कपालिन् (विष्णु. १. १५)। इन पुत्रों में से विश्वकर्मन् नामक पुत्र इसे बृहस्पति की बहन वरस्त्री (भुवना) से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६०. २६; ब्रह्मांड. ३.३.२१-२९)।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५९)। इसके नाम के लिये 'प्रवाह' पाठभेद उपलब्ध है।

३. सुतप देवों में से एक।

प्रभु--दक्षयज्ञ के ऋत्विज भग नामक ऋषि को सिद्धि नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र (भा. ६. १८. २)।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५८)। इसके नाम के लिये 'वासुप्रभ' पाठभेद उपलब्ध है।

३. तुषित देवों में से एक।

४. साध्य देवों में से एक।

५. सुमेधस् देवों में से एक।

६. अमिताभ देवों में से एक।

७. ब्रह्मसभा का एक ऋषि।

८. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

९. शुक ऋषि का पीवरी से उत्पन्न एक पुत्र, जिसे पृथु नामांतर भी प्राप्त है।

प्रभुवसु आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५ ३५-३६; ९. ३५. ३६)।

प्रभुसुत--इक्ष्वाकुवंशीय प्रसुश्रुत राजा का नामांतर (प्रसुश्रुत देखिये)।

प्रभूति--मरीचिगर्भ देवों में से एक।

प्रभोज्य--एक वानर, जो राम के पक्ष में शामिल था (वा. रा. उ. ३६.४८)।

प्रमगंद नैचाशाख--ऋग्वेद में निर्दिष्ट कीकट लोगों का राजा, जो सुदास राजा का शत्रु था (ऋ. ३.५३ १४)। प्रमगंद नाम से यह कोई अनार्य राजा प्रतीत होता है। इसकी 'नैचाशाख' (नीच जाति में उत्पन्न) उपाधि भी इसी ओर संकेत करती है।

सायण के अनुसार, नैचाशाख से किसी स्थान के नाम के सम्बन्ध की ओर संकेत मिलता है। यास्क ने निरुक्त में इसे कुसीदकपुत्र कहा है (नि. ६.३२)। सम्भव है, इसके नाम प्रमगंद से ही मगध शब्द का निर्माण हुआ।

प्रमतक--एक ऋषि, जो जनमेजय के सर्पसत्र का सदस्य था (म. आ. ४८.७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'शमटक'।

प्रमति--विष्णु का एक अवतार, जो चाक्षुष मन्वन्तर के कलियुग नामक अन्तिम युग में चंद्र का पुत्र, हुआ था (मत्स्य. १४४.६०)।

२. प्रयाग के शूर नामक ब्राह्मण का पुत्र, जिसे सेनापति बना कर कृतयुग के अंतिम चरण में ब्राह्मणों ने क्षत्रियों को परास्त किया था (विष्णुधर्म १.७४)।

३. बिभीषण के चार अमात्यों में से एक (वा. रा. यु. ३७.७)।

४. च्यवन ऋषि का पुत्र, जिसकी माता का नाम सुकन्या था (म. आ. ५.७)। महाभारत में अन्य स्थान पर, इसे वीतहव्य के पुत्र गृत्समद के कुल में जन्म लेनेवाले वागीन्द्र का पुत्र बताया गया है (म. अनु. ३०.५८-६४)। इसे प्रमिति नामांतर भी प्राप्त हैं (म. आ. ८.२; अनु. ३०.६४)।

घृताची नामक अप्सरा से इसे रुरु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५.६-७)। स्थूलकेश मुनि की कन्या प्रमद्वरा से इसने रुरु का विवाह कराया था (म. आ.

८.१२-१३)। आस्तीकपर्व की कथा इसने रुरु को सुनाई थी (म. आ. ५३.४६७*)।

शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म के पास आये हुए ऋषियों में यह भी एक था।

५. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो वायु के अनुसार जनमेजय का पुत्र था। भागवत के अनुसार, यह 'प्रजानि' राजा का ही नामांतर था (प्रजानि देखिये)। विष्णु में, इसे 'स्वमति' कहा गया है।

६. अमिताभ देवों में से एक।

प्रमथ--एक रुद्रगण, जिन्होंने धर्माधर्मसंबंधी रहस्य का कथन किया था (म. अनु. १३१)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

प्रमद--एक वसिष्ठपुत्र, जो उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक था (भा. ८.१.२४)।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

प्रमद्वरा--एक अप्सरा, जो मेनका को विश्वावसु गंधर्व द्वारा उत्पन्न हुयी थी। स्थूलकेश नामक ऋषि ने इसका पालनपोषण कर, इसका विवाह रुरु ऋषि से कर दिया (म. आ. ८.२; १३; अनु. ३०.६५)। रुरु से इसे शुनक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

एक बार साँप ने इसे काटा, जिससे इसकी मृत्यु हो गयी, फिर पति की आयु से यह पुनः जीवित हो गयी (म. आ. ९.१५)।

प्रमंथु--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वीरव्रत राज के दो पुत्रों में से कनिष्ठ था। इसकी माता का नाम भोजा था (भा. ५.१५.१५)।

प्रमंदनी--अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक अप्सरा (अ. वे. ४.३७.३)। मूलतः यह शब्द किसी मधुर गंधयुक्त लता का नाम है (कौ. सू. ८.१७)।

प्रमंधु--एक यक्ष, जो हरिश्चन्द्र राजा के धन का संरक्षक था। इसके शरीर की दुर्गंध को विश्वामित्र ने तीर्थोदक की सहायता से दूर किया था (स्कंद. २.८.७)।

प्रमर--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक व्यक्ति (ऋ. १०.२७.२०)।

प्रमाथ--एक राक्षस, जो खरदूषण नामक राक्षसों का अमात्य था (वा. रा. अर. २३.३३)। वाल्मीकि रामायण में अन्यत्र इसे प्रमाथिन् कहा गया है। इसका वध राम ने किया (वा. रा. अर. २६.२१)।

२. राम की सेना का एक वानर।

३. यमराज के द्वारा स्कंन्द को दिये गये पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम उन्माथ था (म.श.४४.२७)।

प्रमथिन्--एक राक्षस, जो दूषण राक्षस का छोटा भाई था (म. व. २७१.१९-२०)। यह विश्रवस् ऋषि को बलाका राक्षसी से उत्पन्न पुत्रों में से एक था।

यह कुंभकर्ण का अनुयायी था। लक्ष्मण के साथ युद्ध करते समय, यह वानर सेनापति नील द्वारा मारा गया था (म. व. २७१.२५)।

२. दूषण के प्रमाथ नामक अमात्य का नामांतर (प्रमाथ १. देखिये)।

३. धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीम के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३२.११३५*, पंक्ति २)।

४. घटोत्कच का साथी एक राक्षस, जिसका दुर्योधन द्वारा वध हुआ था (म. भी. ८७.२०)।

प्रमाथिनी--एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित थी (म. आ. ११४.५२)।

प्रमाद--वसिष्ठ का पुत्र, जो उत्तम सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था।

प्रमिति--च्यवन ऋषि पुत्र प्रमति का नामांतर (प्रमति ४. देखिये)।

प्रमिला--हिमालय-प्रदेश में स्थित 'स्त्रीराज्य' की स्वामिनी।

भारतीय युद्ध के उपरांत, पांडवों द्वारा किये गये अश्वमेध का घोडा भ्रमण करता हुआ इसके राज्य में आया था, जिसे इसने पकड कर अपने अधिकार में कर लिया। घोडे के संरक्षण के लिए अन्य महारथियों के साथ वीर अर्जुन भी था। घोडे के पकडे जाने पर इसका तथा अर्जुन का घोर युद्ध हुआ, जिसमें यह अत्यधिक वीरता के साथ लढ़ी तथा अर्जुन के छक्के छुडा दिये।

अर्जुन की असमर्थता देख कर आकाशवाणी हुयी, 'अर्जुन, तुम प्रमिला को युद्ध में परास्त कर के घोड़ा वापस नहीं ले सकते। यदि तुम्हें अश्वमेध के घोडे की रक्षा ही करनी है, तो इससे सन्धि कर, विवाह कर के सफलता प्राप्त करो'।

अर्जुन ने आकाशवाणी की आज्ञानुसार, प्रमिला से सन्धि करके उससे विवाह किया, तथा अश्वमेध के घोडे को छुड़ा लिया (जै. अ. २१-२२)।

प्रमुच--दक्षिण दिशा में रहनेवाला एक महर्षि (म. शां. २०१.२७)।

प्रमुचि--एक ऋषि, जो दाशरथि राम से मिलने अयोध्या आया था (वा. रा. उ. १.३)।

प्रमोद--ब्रह्मा का मानसपुत्र, जो उसके कंठ से उत्पन्न हुआ था। इसे हर्ष नामांतर भी प्राप्त है (मत्स्य. ३. ११)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार दृढाश्व राजा का पुत्र था। इसे हर्यश्व नामक एक पुत्र था।

३. ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया था (म. आ. ५२.१०)।

४. स्कन्द का एक सैनिक।

प्रमोदन--एक ब्रह्मर्षि (वा. रा. उ. ९०.५)।

प्रमोदिनी--सुसंगित नामक गंधर्व की कन्या (पद्म. उ. १२८)।

प्रम्लोचा--दस प्रमुख अप्सराओं में से एक, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित थी (भा. १२.११.३७; म. आ. ११४.५४; स. १०.११)।

२. एक अप्सरा, जिसे इन्द्र ने कण्डु ऋषि के तपोभंग के लिए भेजा था। इसकी कन्या का नाम मारिषा था, जिसे सोम तथा वृक्षों ने पालपोस कर बड़ा किया, एवं प्रचेतसों को विवाह में प्रदान किया (भा. ४.३०.१३)।

प्रयस्वत आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २०)।

प्रयुत--एक गन्धर्व, जो कश्यप एवं मुनि का पुत्र था (म. आ. ५९.४२)।

प्रयोग भार्गव--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.१०२; तै. सं. ५.१.१०.२; क. सं. १९.१०)।

प्ररुज--अमृत की रक्षा करनेवाला एक देव, जिसका गरुड़ से युद्ध हुआ था (म. आ. २८.१९)।

२. राक्षसों तथा पिशाचों का एक दल, जो रावण के पक्ष में शामिल था (म. व. २६९.२)।

प्रलंब--एक राक्षस, जो कश्यप तथा दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२८)। देवासुर संग्राम में जब पराजित हुआ था, तब यह उसके विरोध में राक्षसपक्ष की ओर का एक सेनापति था (म. स. परि. १; क्र. २१)।

२. एक असुर, जिसे कंस ने कृष्णवध के लिए गोकुल भेजा था। गोकुल में गोपवेष धारण कर, यह कृष्ण बलराम आदि गोपों के साथ खेलने लगा। खेल के बीच में, कृष्ण की अजेय शक्ति का अनुमान लगा कर इसकी हिम्मत कृष्ण से बोलने की न हुयी। इसी कारण बलराम को अपने कंधे पर रखकर, दैत्याकार रूप धारण कर यह भागने के लिए उद्यत हुआ। फिर बलराम ने मस्तक पर मुष्टिप्रहार कर तत्काल इसका वध किया (ह. वं. २.१४; भा. १०.१८; विष्णु. ५.९-३७)।

बलराम ने जिस स्थान पर प्रलंब का वध किया था, उस स्थान को हरिवंश में 'भांडीरवन,' तथा भागवत में, 'भांडीरवट' कहा गया है।

महाभारत में प्रलंब का वध बलराम के द्वारा न होकर कृष्ण के द्वारा हुआ है (म. द्रो. १०.९)। बलराम को कृष्ण का अभिन्न रूप माना जाता है। इसी अर्थ से यह निर्देश महाभारत में किया गया होगा।

प्रलंबक--एक ऋषि, जो तप नामक शिवावतार का शिष्य था।

प्रलंबायन--एक ऋषिगण, जो वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकारों में से एक था।

प्रवसु-- (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो ईलिन राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम रथंतरी था। इसे निम्नलिखित चार भाई थे:--दुष्यंत, शूर, भीम, तथा वसु (म. आ. ८९. १४-१५)।

प्रवहण--उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. तामस मन्वन्तर के योगवर्धनों में से एक।

प्रवालक--कुवेर की सभा का एक यक्ष (म. स. १०. १७)।

प्रवाह--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ६५)।

प्रवाहक--एक ऋषि, जो दंडीमुंडी नामक शिवावतार का शिष्य था।

प्रवाहण जैवलि--पांचाल देश का एक राजा, जो दार्शनिक शास्त्रार्थों में प्रवीण था (बृ. उ. ६.१.१.७, माध्यं; छां. उ. १.८.१; ५.३.१)। यह उद्दालक राजा का समकालीन था। सम्भवतः जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में निर्दिष्ट 'जैवलि' इसीका नामांतर है। जीवल का वंशज होने के कारण, इसे 'जैवलि' अथवा 'जैवल' उपाधि प्राप्त हुयी होगी।

यह परम विद्वान् एवं ज्ञानी होने के साथ, तत्वज्ञान का महापंडित भी था। एक बार इसने अपने पांचाल राज्य में तत्वज्ञान परिषद् का आयोजन किया। वहाँ तत्वचर्चा में इसे पराजित करने के उद्देश्य से, श्वेतकेतु आरुणेय उस परिषद् में आया। किन्तु राजा के द्वारा पूँछे गये पाँच प्रश्नों में से एक का भी उत्तर वह न दे सका। पराजित होकर वह अपने घर गया, तथा ज्ञानशिक्षा देनेवाले अपने

पिता पर अत्यधिक क्रुद्ध हो कर, प्रवाहण द्वारा पूँछे गये प्रश्नों के उत्तर पूँछने लगा।

श्वेतकेतु का पिता उद्दालक आरुणि भी उन प्रश्नों का उत्तर न दे सका। फिर वे दोनों प्रवाहण राजा की शरण में आकर, इससे 'ब्रह्मविद्या' की दीक्षा माँगने लगे। इसने स्वयं क्षत्रिय हो कर भी उन ब्राह्मणों को दीक्षित किया। अब तक यह ज्ञान क्षत्रियों के ही पास था। यह पहली व्यक्ति है, जिसने यह परमज्ञान ब्राह्मणों को प्रदान किया।

उद्‌गीथ की उपासना के सम्बन्ध में इसका 'शिलक शालावत्य' एवं 'चैकितायन दाल्भ्य' नामक ऋषियों से शास्त्रार्थ हुआ था (छां. उ. १.८.१; बृ. उ. ६.२.१)।

प्रवाहित--उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

प्रविल्लसेन--आंध्रवंशीय पुत्रिकषेण राजा का नामांतर (पुत्रिकषेण देखिये)।

प्रवीण--भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

प्रवीर--काशीनगर का एक चाण्डाल, जिसने राजा हरिश्चन्द्र को खरीदा था। इसे वीरबाहु नामातर भी प्राप्त है।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु तथा भविष्य के अनुसार, प्राचिन्वत् राजा का पुत्र था। किन्तु महाभारत में इसे पूरु राजा पुत्र माना गया है। इसके दो भाइयों का नाम ईश्वर एवं रौद्राश्व था।

पूरु राजा का ज्येष्ठ पुत्र जनमेजय किसी कारण राज्य के लिए अयोग्य साबित हुआ, जिससे उसे हटाकर प्रवीर को राजगद्दी पर बिठाया गया। पश्चात् इसीसे पूरुवंश आगे चला। इसी कारण महाभारत में इसे 'वंशकृत' (वंश को आगे चलानेवाला) कहा गया है (म. आ. ९०.४)।

महाभारत में इसकी पत्नी का नाम शूरसेनी (श्येनी) एवं पुत्र का नाम मनस्यु (नमस्यु) बताया गया है (म. आ. ८९.४)।

इसने तीन अश्वमेध यज्ञ एवं एक विश्वजित् यज्ञ किये थे। उन यज्ञों को संपन्न करने के उपरांत इसने वानप्रस्थ आश्रम ग्रहण किया (म. आ. ९०.११)।

३. (सो. नील.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार हर्यश्व राजा का पुत्र था। इसे जवीनर नामांतर भी प्राप्त है (जवीनर देखिये)।

४. माहिष्मती के नीलध्वज राजा का पुत्र।

५. पांड्य देश का एक राजा, जिसे मलयध्वज एवं चित्रवाहन नामांतर प्राप्त है। इसकी कन्या का नाम चित्रांगदा था, जिससे इसने 'पुत्रिकाधर्म' के शर्त पर अर्जुन को प्रदान किया था।

भारतीय युद्ध में अश्वत्थामा के साथ युद्ध करते समय यह मारा गया (म. क. १५.४२)।

६. एक क्षत्रिय-कुल, जिसमें अजबिंदु नामक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.१४)।

प्रवीरक--(किलकिला. भविष्य.) किलकिला नगरी का एक राजा, जो मौन राजवंश के नष्ट होने पर राजगद्दी पर बैठा था (भा. १२.१.१३)।

प्रवेपन--तक्षक-कुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में जलकर भस्म हो गया था (म. आ. ५२.८)।

प्रशमी--अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागत-समारोह में नृत्य किया था (म. अनु. ५०.४८)।

प्रश्रय--स्वायंभुव मन्वंतर के धर्म ऋषि का ह्री नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र।

प्रश्रुत--इक्ष्वाकुवंशीय प्रसुश्रुत राजा का नामांतर।

प्रसंधि--वैवस्वत मनु के पुत्रों में से एक। इसके पुत्र का नाम क्षुप था। इसके नाम के लिए 'प्रजापति' पाठभेद उपलब्ध हैं (म. आश्व. ४.२)।

प्रसन्न--इक्ष्वाकुवंशीय सेनजित् राजा का नामांतर (सेनजित् २ देखिये)।

प्रसभ--रामसेना का एक वानर।

प्रसाद--स्वायंभुव मन्वंतर के धर्म ऋषि का मैत्री नामक स्त्री से उत्पन्न पुत्र।

प्रसार--(स्वा. नाभि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उद्गीथ का पुत्र था।

प्रसुश्रुत--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार मरु का पुत्र था। इसके नाम के लिए 'प्रसुसुत' एवं 'प्रश्रुत' पाठभेद उपलब्ध हैं।

प्रसूत--रैवत मन्वंतर के अंत में उत्पन्न हुआ एक देवतासमूह, जिसमें निम्नलिखित आठ देव शामिल थे:-- प्रचेतस्, महायशस्, मुनि, वनेन, श्येनभद्र, श्वेतचक्षु, सुप्रचेतस् तथा सुमनस् (ब्रह्मांड. २.३६.७०)।

२. चाक्षुष मन्वंतर में उत्पन्न एक देवगण।

प्रसूति--स्वायंभुव मनु की तीन कन्याओं में से एक, जो दक्ष प्रजापति को ब्याही थी (भा. ३.१२.५४; ४.१.१)।

प्रसृत--एक दैत्य, जिसका गरुड़ द्वारा वध हुआ था (म. उ. १०३.१२)।

प्रसृति--स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

प्रसेन--(सो. वृष्णि.) एक यादववंशीय राजा, जो निम्न नामक राजा का द्वितीय पुत्र था। विष्णु, मत्स्य, पद्म एवं वायु में इसे निम्न राजा का पुत्र कहा गया है, तथा इसके ज्येष्ठ भ्राता का नाम सत्राजित बताया गया है। ये दोनों भाई जुड़वा पैदा हुए थे एवं कुबेर की भाँति सद्गुणों से संपन्न थे। इसे 'प्रसेनजित्' नामांतर भी प्राप्त था।

इसके पास स्यमंतक मणि था, जिससे प्रतिदिन प्रचुर धनराशि झरती रहती थी। इसे धारण कर एक बार यह जंगल गया, वहाँ सिंह ने इसका वध किया। पश्चात् ऋक्षराज जांबवत् ने वह मणि इसके मृतदेह से निकाल कर प्राप्त की (पद्म. सृ. १३; भा. ९.२४.१३; १०.५६.१३; दे. भा. माहात्म्य. २)। पद्म में प्राप्त कथा में सिंह का वृत्तांत नहीं है, उसमें जांबवत् द्वारा प्रसेन के वध की कथा वर्णित है।

२. कर्ण का पुत्र, जिसका सात्यकि द्वारा वध हुआ (म. क. ६०.४)। वध के पूर्व केकय सेनापति उग्रकर्मन् से इसका युद्ध हुआ था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'सुषेण'।

प्रसेनजित्--एक राजा, जो महाभौम राजा की सुयज्ञा नामक पत्नी का पिता था। इसने एक लाख सवत्सा गऊओं का दान कर के उत्तम लोक प्राप्त किया था (म. शां. २४०.३६)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार कृशाश्व राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम गौरी था, जिससे इसे 'युवनाश्व' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (युवनाश्व ३. देखिये)। भविष्य में इसे संकटाश्व राजा का पुत्र कहा गया है।

३. एक राजा, जो जमदग्नि की पत्नी रेणुका का पिता था। इसे रेणु नामांतर भी प्राप्त है (म. व. ११६.२)। कई विद्वानों के अनुसार, रेणुका के पिता एवं सुयज्ञा के पिता दोनों एक ही व्यक्ति थे (प्रसेनजित् १. देखिये)।

४. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विश्वसाह्व का पुत्र था।

५. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार लांगल का, विष्णु के अनुसार रातुल का, मत्स्य के अनुसार पुष्कल का, एवं वायु के अनुसार राहुल का पुत्र था।

पालिग्रन्थों में इसका निर्देश 'पसेनदि' नाम से किया गया है। यह गौतम बुद्ध का समकालीन राजा था। पूरुवंशीय राजा उदयन (दुर्दमन) एवं शिशुनागवंशीय राजा अजातशत्रु ये दोनों भी इसके समकालीन थे।

प्रस्कण्व--(सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार मेधातिथि राजा का पुत्र था। प्रस्कण्ववंश के लोग पहले क्षत्रिय थे, किन्तु बाद में वे ब्राह्मण हुए (भा. ९.२०.७)।

प्रस्कण्व काण्व--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.४४-५०; ८.४९; ९.९५)। सांख्यायन श्रौतसूत्र के अनुसार इसे पृषध मेध्य मातरिश्वन् से पारितोषिक प्राप्त हुआ था (सां. श्रौ. १६.११.२६)।

प्रस्ताव--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भूमन् राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम देवकुल्या था। इसकी स्त्री का नाम नियुत्सा था, जिससे इसे विभु नामक पुत्र था (भा. ५.१५.६)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, उद्गीथ राजा का पुत्र था।

प्रस्तोक सार्ञ्जय--एक वैदिक राजा एवं उदार दाता (ऋ. ६.४७.२२)। लुडविग के अनुसार, दिवोदास अतिथिग्व और अश्वत्थ (अश्वथ) इसी के ही नामांतर हैं (लुडविग-ऋग्वेद अनुवाद ३.१५८)। सायणाचार्य का भी यही अभिमत है।

सांख्यायन श्रौतसूत्र के अनुसार, इसने भरद्वाजपुत्र गर्ग को अतुल धनराशि दानस्वरूप प्रदान की थी (सां. श्रौ. १६.११.११; बृहद्दे. ५.१२४)।

प्रस्तोतृ--(स्वा. प्रिय.) एक यज्ञकुशल राजा, जो प्रतीह और सुवर्चला का द्वितीय पुत्र था।

प्रहरण--श्रीकृष्ण का भद्रा से उत्पन्न एक पुत्र।

प्रहस्त--रावण के परिवार का एक राक्षस, जो सुमाली राक्षस का पुत्र था। इसकी माता का नाम केतुमती था। इसके भाइयों के नाम अकंपन, विकट, कालिकामुख, दंड, धूम्राक्ष, सुपार्श्व, संह्रादिन्, प्रघस तथा भासकर्ण थे, तथा राका, कैकसी, कुंभीनसी तथा पुष्पोत्कटा नामक चार बहनें भी थीं (वा. रा. उ. ५.३८-४०)।

यह रावण का मामा और मंत्री (वा. रा. उ. ११.२) होने के साथ साथ, उसकी सेना का अधिपति भी था (वा. रा. सुं. ४९.११; भा. ९.१०.१८)।

यह अत्यधिक वीर एवं पराक्रमी था। इसने कैलास पर्वत पर मणिभद्र को पराजित किया था (वा. रा. यु. १९. ११)। राम-रावण युद्ध में यह रावण की सुरक्षा तथा उसकी मदद के लिए सदैव उसके साथ रहता था। युद्धभूमि में इसने अपना अभूतपूर्व कौशल भी दिखाया। युद्ध के पाँचवे दिन रावणपक्षीय नरांतक आदि अधिकांश योद्धाओं को युद्ध में परास्त होता देख कर, इसने नील नामक वानर पर धावा बोल दिया। किन्तु, नील के द्वारा इसका वध हुआ (वा. रा. यु. ५८. ५४)।

महाभारत के अनुसार, इसका विभीषण के साथ युद्ध हुआ और यह विभीषण द्वारा ही रणभूमि में मारा गया (म. व. २७०.५)

२. विश्रवस् तथा पुष्पोत्कटा का पुत्र।

प्रहास--धृतराष्ट्र कुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२. १४)। इसके नाम के लिए 'प्रहस' पाठभेद भी प्राप्त है।

२. वरुण का मंत्री (वा. रा. उ. २३. ४९)

३. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४५.२६४*)।

प्रहासक--एक राक्षस, जो कश्यप और खशा का पुत्र था।

प्रहेति--राक्षसों का आदि पुरुष। इसका कनिष्ठ भ्राता हेति था (वा. रा. उ. ४.१३)। इसकी पत्नी का नाम भया था, जिससे इसे विद्युत्केश नामक पुत्र था।

२. एक राक्षस, जो वृत्रासुर का अनुयायी था (भा. ६. १०. २०)।

३. एक राक्षस, जो वैशाख में अर्यमा नामक सूर्य के साथ घूमता है। इसे वैश्रवण के सेवक ब्रह्मधाता का पुत्र कहा गया है (भा. १२. ११. ३४)

४. ब्रह्मांड के अनुसार युयुधान का पुत्र, जिसे माल्यवत्, सुमालिन् और पुलोमत् नामक पुत्र थे (ब्रह्मांड. ३.७.९१)।

प्रह्लाद--एक हरिभक्त असुर, इन्द्र, एवं धर्मज्ञ, जो हिरण्यकशिपु नामक असुर राजा का पुत्र था। पालिग्रंथों में इसका निर्देश 'पहाराद' नाम से किया गया है, एवं इसे 'असुरेंद्र' कहा गया है (अंगुत्तर ४.१९७)। इसकी माता का नाम कयाधू था (म. आ. ५९.१८; भा. ७.४; विष्णु. १.१६)।

इसका, इसकी माता कयाधू एवं पुत्र विरोचन का निर्देश तैत्तिरीय ब्राह्मण में प्राप्त है (तै. ब्रा. १.५.९)। यह निर्देश देवासुर संग्राम के उपलक्ष्य में किया गया है।

कई विद्वानों के अनुसार, ईरान का पुण्यात्मा शासक 'परधात' अथवा 'पेशदात' और ये दोनों एक ही थे। ईरानी राजा 'परधात' का पूरा नाम 'हाओश्यांग परधात' था। हाओश्यांग का अर्थ होता है, 'पुण्यात्माओं का राजा'। परधात ने पूजा-पाठ से ईश्वर को प्रसन्न कर लिया था (मैथोलोजी ऑफ ऑल रेसेस-ईरान, पृ. २९९-३००)।

जन्म--पद्मपुराण के अनुसार, कयाधू के गोद में प्रह्लाद ने दो बार जन्म लिया था। इसका पहला जन्म हिरण्यकशिपु एवं हिरण्याक्ष दानवों का देवों से जब युद्ध शुरू था, उस समय हुआ था। उस जन्म में इसे विश्वरुपदर्शन भी हुआ था। पश्चात्, श्रीविष्णुद्वारा इसका वध हुआ।

इसके वध का समाचार सुन कर, इसकी माता रोने लगी। फिर नारद वहाँ आया एवं उसने कहा, 'तुम शोक मत करो। यही प्रह्लाद पुनः तुम्हारे गर्भ में जन्म लेगा, एवं उस जन्म में वह श्रीविष्णु का परमभक्त बनेगा। अपने पराक्रम एवं पुण्यकर्म के कारण, उसे इंद्रत्व प्राप्त होगा। यह मेरी भविष्यवाणी है, जिसे तुम गुप्त रखना'। पद्मपुराण के इस कथा में प्रह्लाद की माता का नाम कयाधू के बदले कमला दिया गया है। (पद्म. भू. ५.१६.३०)।

नारद द्वारा कयाधू को दिया हुआ सारा उपदेश कयाधू के गर्भ में स्थित प्रह्लाद ने सुना। इसी कारण यह जन्मसे ही ज्ञानी पैदा हुआ।

विष्णुभक्ति--जन्म से यह परमविष्णुभक्त था। इसकी विष्णुभक्ति इसके असुर पिता हिरण्यकशिपु को अच्छी नहीं लगती थी। इसे विष्णुभक्ति छोड़ने पर विवश करने के लिये, उसने इसे डराया, धमकाया तथा मरवाने का भी प्रयत्न किया। विष्णुपुराण के अनुसार, हिरण्यकशिपु ने इसका वध करने के लिये, इसे हाथी द्वारा कुचलने का प्रयत्न किया। यही नहीं, इसे सर्पद्वारा डसाने का, पर्वत से गिराने का, गढ्ढे में गाड़ने का, विष पिलाने का, वारुणी-पाश से बाँधने का, शस्त्रद्वारा मारने का, जलाने का, कृत्या छोड़ने का, माया छोड़ने का, संशोषक वायु छोड़ने का, तथा समुद्रतल में गाडने का आदि बहुत सारे प्रयत्न किये, किन्तु श्रीविष्णु की कृपा से, प्रह्लाद अपने पिता द्वार रचे गये इन सारे षड्यंत्रों से बच गया (विष्णु. १.१७; भा. ७. ५)। अन्य पुराणों में हिरण्यकशिपु द्वारा प्रह्लाद को दिये गये इन कष्टों का निर्देश अप्राप्य है (नृसिंह देखिये)

इतने कष्ट सहकर भी प्रह्लाद ने विष्णुभक्ति का त्याग न किया। अंत में पिता के बुरे वर्ताव से तंग आ कर, इसने दीनभाव से श्रीविष्णु की प्रार्थना की। फिर, श्रीविष्णु नृसिंह का रूप धारण कर प्रकट हुए। नृसिंह ने इसके पिता का वध किया, एवं इसे वर माँगने के लिये कहा। किन्तु अत्यन्त विरक्त होने के कारण, इसने विष्णुभक्ति को छोड़ कर बाकी कुछ न माँगा (भा. ७.६.१०)।

इसके भगवद्भक्ति के कारण, नृसिंह इसपर अत्यंत प्रसन्न हुआ। हिरण्यकशिपु के वध के कारण, नृसिंह के मन में उत्पन्न हुआ क्रोध भी इसकी सत्वगुणसंपन्न मूर्ति देखने के उपरांत शमित हो गया।

यह अत्यन्त पितृभक्त था। पिता द्वारा अत्यधिक कष्ट होने पर भी, इसकी पितृभक्ति अटल रही, एवं इसने हर समय अपने पिता को विष्णुभक्ति का उपदेश दिया। पिता की मृत्यु के उपरांत भी, इसने नृसिंह से अपने पिता का उद्धार करने की प्रार्थना की। नृसिंह ने कहा, 'तुम्हारी इक्कीस पीढ़ियों का उद्धार हो चुका है'। यह सुन कर इसे शान्ति मिली। पश्चात् हिरण्यकशिपु के वध के कारण दुःखित हुये सारे असुरों को इसने सांत्वना दी।

पश्चात् यह नृसिंहोपासक एवं महाभागवत बन गया (भा. ६.३.२०)। यह 'हरिवर्ष' में रह कर नृसिंह की उपासना करने लगा (भा. ५.१८.७)।

विष्णुभक्ति के कारण प्रह्लाद के मन में विवेकादि गुणोंका प्रादुर्भाव हुआ। विष्णु ने स्वयं इसे ज्ञानोपदेश दिया, जिस कारण यह सद्विचारसंपन्न हो कर समाधि-सुख में निमग्न हुआ। फिर श्रीविष्णु ने पांचजन्य शंख के निनाद से इसे जाग्रत किया, एवं इसे राज्याभिषेक किया। राज्याभिषेक के उपरान्त श्रीविष्णु ने इसे आशीर्वाद दिया, 'षड्रिपुओं की पीड़ा से तुम सदा ही मुक्त रहोगे' (यो. वा. ५.३०-४२)। यह आशीर्वचन कह कर श्रीविष्णु स्वयं क्षीरसागर को चले गये।

इंद्रपदप्राप्ति—इंद्रपदप्राप्ति करनेवाला यह सर्वप्रथम दानव था। इसके पश्चात् आयुपुत्र रजि इंद्र हुआ, जिसने दानवों को पराजित कर के इंद्रपद प्राप्त किया।

परिवार—इसके पत्नी का नाम देवी था। उससे इसे विरोचन नामक पुत्र एवं रचना नामक कन्या हुई (भा. ६.६; ६.१८.१६; म. आ. ५९.१९; विष्णु. १. २१.१)।

संवाद—विभिन्न व्यक्तिओं से प्रह्लाद ने किये तत्वज्ञान पर संवादों के निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं, जिनसे इसके ज्ञान, विवेकशीलता एवं तार्किकता पर काफ़ी प्रकाश डाला जाता है।

हंस (सुधन्वन्) नामक ऋषि से इसका 'सत्यासत्य भाषण' विषय पर संवाद हुआ था। हंस ऋषि का प्रह्लादपुत्र विरोचन से झगड़ा हुआ था, एवं उस कलह का निर्णय देने का काम प्रह्लाद को करना था। इसने अपना पुत्र असत्य भाषण कर रहा है, यह जानकर उसके विरुद्ध निर्णय दिया, एवं सुधन्वन् का पक्ष सत्य ठहराया। इस निर्णय के कारण सुधन्वन् प्रसन्न हुआ एवं उसने विरोचन को जीवनदान दिया (म. उ. ३५.३०-३१; विरोचन देखिये)।

इसका तथा इसके नाती बलि का लोकव्यवहार के संबंध में संवाद हुआ था। बलि ने इसे पुछा 'हम क्षमाशील कब रहे, तथा कठोर कब बने?' बलि के इस प्रश्न पर प्रह्लाद ने अत्यंत मार्मिक विवेचन किया।

बलि ने वामन की अवहेलना की। उस समय क्रुद्ध हो कर इसने बलि को शाप दिया, 'तुम्हारा संपूर्ण राज्य नष्ट हो जायेगा।' पश्चात् वामन ने बलि को पाताललोक में जाकर रहने के लिये कहा। बलि ने अपने पितामह प्रह्लाद को भी अपने साथ वहाँ रखा (वामन. ३१)।

एकबार प्रह्लाद के ज्ञान की परीक्षा लेने के लिये, इंद्र इसके पास ब्राह्मणवेश में शिष्यरूप में आया। उस समय प्रह्लाद ने उसे शील का महत्त्व समझाया। उन बातों से इंद्र अत्यधिक प्रभावित हुआ, एवं उसने इसे ब्रह्मज्ञान प्रदान किया (म. शां. २१५)।

अजगर रूप से रहनेवाले एक मुनि से ज्ञानप्राप्ति की इच्छा से इसने कुछ प्रश्न पूछे। उस मुनि ने इसके प्रश्नों का शंकासमाधान किया, एवं इसे भी अजगरवृत्ति से रहने के लिये आग्रह किया (म. शां. १७२)।

उशनस् ने भी इसे तत्वज्ञान के संबंध में दो गाथाएँ सुनाई थी (म. शां. १३७.६६-६८)।

पूर्वजन्मवृत्त—पद्म के अनुसार, पूर्वजन्म में प्रह्लाद सोमशर्मा नामक ब्राह्मण था, एवं इसके पिता का नाम शिवशर्मा था (पद्म. भू. ५.१६)। पद्म में अन्यत्र उस ब्राह्मण का नाम वसुदेव दिया गया है, एवं उसने किये नृसिंह के व्रत के कारण, उसे अगले जन्म में राजकुमार प्रह्लाद का जन्म प्राप्त हुआ, ऐसा कहा गया है (पद्म. उ. १७०)

२. कद्रूपुत्र एक सर्प, जिसने कश्यपऋषि को उच्चैःश्रवस नामक घोडा प्रदान किया था (म. शां. २४.१५)।

३. एक वाह्लीकवंशीय राजा, जो शलभ नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२९)।

प्रांशु—चाक्षुष मनु का एक पुत्र।

२. वैवस्वत मनु का एक पुत्र।

३. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वत्सप्रीति का, विष्णु के अनुसार वत्सप्रि का, तथा वायु के अनुसार भलंदन का पुत्र था। इसकी माता का नाम सुनंदा (मुदावती) था (मार्क. ११४.३)।

प्राक्शृंगवत्—कुणिगर्ग ऋषि की वृद्धकन्या नामक मानसकन्या का पति (वृद्धकन्या देखिये)।

प्रागर्हि--एक आचार्य, जिसके यज्ञविषयक मतों का निर्देश सांख्यायन ब्राह्मण में प्राप्त है (सां. ब्रा. २६.४)। यज्ञ करते समय यदि कोई कर्म करने से छूट जाये, तो उस अंतरित क्रिया को कब तथा कैसे किया जाये, उसका विधान इसने बताया है।

प्रागाथ--अंगिराकुल का एक ब्रह्मर्षि। इसके कुल में उत्पन्न निम्नलिखित आचार्यों का निर्देश ऋग्वेद में सूक्तद्रष्टा के नाते से आया है:—हर्यत प्रागाथ (ऋ. ८.७२), भर्ग प्रागाथ (ऋ. ८.६०–६१), कलि प्रागाथ (ऋ. ८.६६)।

प्रागाथम-- 'प्रागावस' नामक अंगिराकुल के गोत्रकार का नामांतर।

प्रागायण--एक ऋषिगण, जो कश्यपकुल का गोत्रकार था।

प्रागावस--अंगिरा कुल का एक गोत्रकार, जिसके नाम के लिए 'प्रागाथम' पाठभेद प्राप्त है।

प्राचिन्वत्--पूरुवंशीय 'प्राचीन्वत्' राजा का नामांतर (प्राचीन्वत् देखिये)।

प्राचीनगर्भ--अलम्बुषा नामक अप्सरा के पुत्र सारस्वत ऋषि का नामांतर।

२. सृष्टि तथा छाया का एक पुत्र।

प्राचीनबर्हि 'प्रजापति'—(स्वा. उत्तान.) एक प्रजापति, जो मनुवंशीय हविर्धान नामक राजा को हविर्धानी नामक पत्नी से उत्पन्न ज्येष्ठ पुत्र था (म. अनु. १४७. २४–२५)।

इसका वास्तविक नाम 'बर्हिषद' था। कहते हैं, इसने इतने यज्ञ किये कि, यज्ञ करते समय पूर्व दिशा की ओर रक्खे गये 'पूर्वाग्र दर्भों' से पृथ्वी आच्छादित हो उठी। इसीलिये इसे प्राचीनबर्हि (प्राचीन = पूर्व; बर्हि = दर्भ) नाम प्राप्त हुआ।

समुद्रकन्या शतद्रुति अथवा सवर्णा इसकी पत्नी थी, जिससे इसे प्रचेतस् नामक दस पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ४. २४.८.१३; ह. वं. १.२.३१; विष्णु. १.१४.३–६; म. अनु. १४७.२४–२५)।

कर्मकाण्ड और योगाभ्यास में यह अत्यंत कुशल था। इसके निम्नलिखित पाँच भाई थे, जिनकी सहायता से इसने विभिन्न स्थानों पर अनेक यज्ञ किये—गय, शुक्ल, कृष्ण, सत्य और जितव्रत।

इसे योग्य राजर्षि देख कर, नारद ने पुरंजन राजा का आख्यान बता कर ब्रह्मज्ञान दिया (भा. ४. २५–२९)। ब्रह्मा ने नारायण से श्रवण किया हुआ 'सात्त्वतधर्म' इसे सिखाया, यही नहीं, ब्रह्मा ने 'ऋष्यादि क्रम' का ज्ञान भी इसे दिया।

महाभारत में इसे अत्रिकुलोत्पन्न एक नृप, एवं प्रजापति कहा गया है (म. शां. २०१.६)। वृद्धावस्था में यह अपने पुत्रों पर प्रजारक्षण का भार सौंप कर, तपस्या के हेतु कपिलाश्रम चला गया (भा. ४.२९.८१)। आकाश में स्थित, सप्तर्षियों में, पूर्वदिशा की ओर बर्हिषद नाम से यह निवास करता है।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर का एक राजा। दक्ष प्रजापति के यज्ञ में सती ने देहत्याग किया था, उस समय यह भरतखण्ड का राजा था।

प्राचीनयोग--एक आचार्य, जो वायु और ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में शृंगीपुत्र ऋषि का पुत्र था (व्यास देखिये)।

प्राचीनयोगीपुत्र--एक आचार्य, जो सांजीवीपुत्र नामक ऋषि का पुत्र था। इसके शिष्य का नाम कार्शकेयीपुत्र था (बृ. उ. ६.५.२)। शतपथ ब्राह्मण में इसके शिष्य का नाम भाल्लकीपुत्र दिया गया है (श. ब्रा. १४. ९. ४. ३२)। संभव है, 'प्राचीनयोग' की किसी स्त्री-वंशज का पुत्र होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो।

२. एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में कौथुम पाराशर्य ऋषि का शिष्य था।

प्राचीनयोग्य 'शौचेय'--तत्त्वज्ञान का एक आचार्य, जो पाराशर्य का शिष्य था (बृ. उ. २. ६. २)। यह उद्दालक का समकालीन था, एवं इसके शिष्य का नाम गौतम था (श. ब्रा. ११. ५. ३. १; ८)। सम्भव है,

'प्राचीनयोग' ऋषि का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो।

एक तत्वज्ञानी के नाते से इसका उल्लेख उपनिषदों में प्राप्त है (छां. उ. ५.१३.१; तै. उ. १.६.२)। इसके वंश के निम्नलिखित आचार्यों का निर्देश जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में प्राप्त हैं:--पुलुष, सत्ययज्ञ, सोमशुष्म (जै. उ. ब्रा. १. ३९. १)।

प्राचीनशाल औपमन्यव--एक आचार्य एवं ईश्वर-शास्त्रविद्, जो सत्ययज्ञ एवं इन्द्रद्युम्न का समकालीन था (छां. उ. ५.११.१)। जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में इसका निर्देश 'प्राचीनशालि' नाम से किया गया है, एवं इसे एक उद्गाता पुरोहित कहा गया है (जै. उ. ब्रा. ३.१०. १)। इसकी परंपरा के 'प्राचीनशाल' लोगों का निर्देश भी उक्त ब्राह्मण ग्रंथ में प्राप्त है।

प्राचीनशालि--प्राचीनशाल औपमन्यव नामक आचार्य का नामांतर (जै.उ. ब्रा. ३.७.२; ३; ५; ७)।

प्राचीन्वत्--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो पूरु राजा का पौत्र एवं जनमेजय (प्रथम) का पुत्र था। इसकी माता का नाम अनंता था। इसे 'अविद्ध' नामांतर भी प्राप्त है। इसने एक रात्रि में, उदयाचल से लेकर सारी प्राची दिशा को जीत लिया, इसीलिए इसका नाम प्राचीन्वत् पड़ा। इसकी स्त्री का नाम आश्मकी यादवी था, जिससे इसे शय्याति (संयाति) नामक पुत्र था (म. आ. ९०.१२-१३)।

प्राचेतस--वाल्मीकि ऋषि का नामांतर (भा. ९.११. १०)। वाल्मीकि रामायण में वाल्मीकि ने स्वयं को प्राचेतस कहा है (वा. रा. उ. ९६.१८)। यह भृगुकुल में उत्पन्न हुआ था (वा. रा. उ. ९३.१६-१८; ९४.२५; मत्स्य. १२.५१; म. शां. ५८.४३)। इसने अघमर्षण तीर्थ पर दीर्घकाल तक तपस्या की थी (भा. ६.४.२१)।

२. (सो. द्रुह्यु.) दस प्रचेताओं द्वारा वार्क्षी या मारिषा से उत्पन्न सौ पुत्रों का सामूहिक नाम, जिनमें दक्ष प्रजापति प्रमुख था (म. आ. ७०.४)। ये उत्तर दिशा में रहनेवाले म्लेंच्छों के अधिपति हुए।

३. प्राचीनबर्हि के दस पुत्रों का सामूहिक नाम।

प्राचेय—कश्यपकुल का एक गोत्रकार।

प्राजापत्य--प्रजापति के वंशजों का सामुहिक नाम। प्रजापति के वंशज होने के नाते, निम्नलिखित वैदिक सूक्तकारों को 'प्राजापत्य' उपाधि प्राप्त है—आरुणि सौपर्णेय (तै. आ. १०.७९), पतंग (ऋ. १०.१७७), परमेष्ठिन् (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२), प्रजावत् (ऐ. ब्रा. १.२१), यक्ष्मनाशन (ऋ. १०.१६१), यज्ञ (ऋ. १०. १३०), विमद (ऋ. १०.२०), विष्णु (ऋ. १०.१८४), संवरण (ऋ. ५.३३)।

प्राण—स्वायंभुव मनु के दामाद भृगु ऋषि का पौत्र। भृगुपुत्र विधाता इसका पिता एवं मेरुकन्या नियति इसकी माता थी। इसे वेदशिरस् नामक एक पुत्र था (भा. ४.१.४४)

२. स्वारोचिष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. अष्टवसुओं में से दूसरा वसु। इसके पिता का नाम सोम और माता का नाम मनोहरा था। इसके बड़े भाई का नाम वर्चा, एवं दो छोटे भाइयों का नाम शिशिर और रमण था (म. आ. ६०.२१)।

४. एक देव, जो अंगिरा और सुरूपा मारीची के पुत्रों में से एक था।

५. साध्य देवों में से एक।

६. तुषित देवों में से एक।

७. एक राजा, जो वसिष्ठ की कन्या पुंडरिका का पति था (वसिष्ठ देखिये)।

प्राणक—प्राण नामक अग्नि का पुत्र (म. व. २१०.१)।

प्रातर—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पुष्पार्ण एवं प्रभा का ज्येष्ठ पुत्र था।

२. धाता नामक सातवें आदित्य का पुत्र, जिसकी माता का नाम राका था (भा. ६.१८.३)।

३. कौरव्यकुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१२)। पाठभेद-(भांडारकर संहिता)-'पातपातर'।

प्रातरह्न कौहल-- एक आचार्य, जो केतु वाज्य ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम सुश्रवस् वार्षगण्य था (वं. ब्रा. १)।

प्रातर्दन— संयमन नामक आचार्य का पैतृक नाम (कौ. उ. २.५)।

प्रातर्दनि--क्षत्रश्री राजा का नामांतर (ऋ. ६.२६. ८)। प्रतर्दन का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

प्रातिकामिन् (प्रातिकामी)--दुर्योधन का सारथि (म. स. ६०.२-३)। दुर्योधन की सभा में द्रौपदी को लाने के लिए सर्वप्रथम यही गया था। द्रौपदी ने जब सभा में आने से इन्कार कर दिया, तब इसने द्रौपदी के द्वारा कहीं हुयी बात सभा में आ कर दुर्योधन से कहीं (म. स. ६०.

४-१७)। दुर्योधन ने इसे पुनः द्रौपदी के पास जाने के लिये कहा। लेकिन भीम के डर के कारण, इसने पुनः जाना अस्वीकार कर दिया (म. स. ६०.२९)। यह भारतीय युद्ध में मारा गया (म. श. ३२.४३)।

प्रातिथेयी--लोपामुद्रा की बहन गभस्तिनी का नामांतर (वडवा एवं गभस्तिनी देखिये)। इसके नाम के लिये 'नातिथेयी' पाठभेद भी प्राप्त हैं।

प्रातिपीय—कुरु राजा 'बह्लिक' का पैतृक नाम (श. ब्रा. १२.९.३.३)। इसे प्रतिवंश राजा का शिष्य कहा गया है (सां. आ. १५.१)।

प्रातिवेश्य—एक आचार्य, जो प्रतिवेश्य ऋषि का शिष्य था (सां. आ. १५.१)।

प्रातीबोधीपुत्र—सांख्यायन आरण्यक में निर्दिष्ट एक आचार्य (सां. आ. ७.१३; ऐ. ब्रा. ३.१.५)। संभव है, 'प्रतीबोध' के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ हो।

प्रातृद--भाल्ल नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.३१.४; बृ. उ. ५.१३.१)।

प्राद्युम्नि—यादव राजा अनिरुद्ध का नामांतर (म. स. ६०)।

प्राधा--प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या एवं कश्यप ऋषि की पत्नी। इसकी माता का नाम असिक्नी था। इसे 'अरिष्टा' नामांतर भी प्राप्त है (अरिष्टा देखिये)।

कश्यप ऋषि से इसे तेइस देवगंधर्व पुत्र, एवं इक्कीस अप्सरा कन्यायें उत्पन्न हुयीं। इसके पुत्रों में हाहा, हूहू, तुम्बरु एवं असिबाहु, तथा कन्याओं में अलम्बुषा तथा अनवद्या प्रमुख थीं (कश्यप देखिये)।

महाभारत में प्राधा के दस पुत्र, एवं आठ कन्यायें दी गयीं हैं (म. आ. ५९.१२; ४४-४६)।

प्राध्वंसन--एक आचार्य, जो प्रध्वंसन नामक ऋषि का शिष्य था। बृहदारण्यक उपनिषद् मे मृत्यु नामक आचार्य का पैतृक नाम 'प्राध्वंसन' बताया गया है (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)। अथर्वन् दैव इसका शिष्य था।

प्राप्ति—जरासन्ध की कन्या एवं जरासन्धपुत्र सहदेव की छोटी बहन। यह कंस की पत्नी थी। इसकी दुसरी बहन अस्ति भी कंस को ब्याही थी (भा. १०. ५०. १)।

महाभारत में, इसका निर्देश प्रास्ति नाम से किया गया है (म. स. १४. ३०)। किन्तु यह पाठभेद त्रुटिपूर्ण प्रतीत होता है।

२. धर्म के शम नामक पुत्र की पत्नी (म. आ. ६०. ३०)।

प्रामति--ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

प्रायण—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

प्रावरेय--गर्गों का पैतृक नाम (क. सं. १३. १२)।

प्रावहि--एक आचार्य, जिसके द्वारा यज्ञविधि में असावधानी से हुए 'कर्मविपर्यास' के लिये प्रायश्चित्त बताया गया है (सां. ब्रा. २६.४)। इसके नाम के लिये 'प्रागहि' पाठभेद प्राप्त है।

२. अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

प्रावारकर्ण--एक चिरंजीवी उलूक, जो हिमालय-पर्वत पर निवास करता था (म. व. १९१.४)।

प्रावाहणि--बब्बर नामक साहित्याचार्य का पैतृक नाम (बब्बर देखिये)।

प्रावेणि--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

प्राश्नीपुत्र--एक आचार्य, जो आसुरायण ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम सांजवीपुत्र था (बृ. उ. ६.५.२)। शतपथ ब्राह्मण में, इसे आसुरिवासिन् का शिष्य, एवं इसके शिष्य का नाम काशीकेयीपुत्र बताया गया है (श. ब्रा. १४.९.४.३३)।

प्रास्ति--जरासंध की कन्या 'प्राप्ति' का नामांतर (प्राप्ति १. देखिये)।

प्रास्रवण—अवत्सार ऋषि का पैतृक नाम (सां. ब्रा. १३.३)। इसके नाम के लिए 'प्राश्रवण' पाठभेद भी उपलब्ध है।

प्रियक--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६०)।

प्रियभृत्य--एक नृप (म. आ. १.१७६)।

प्रियंवदा—राधिका की सखी। अर्जुनि नामक स्त्री का रूप धारण करनेवाले अर्जुन के जपानुष्ठान के समय, इसने उसका संरक्षण किया था (पद्म. पा. ७४)।

प्रियदर्शन—द्रुपद का एक पुत्र। द्रौपदीस्वयंवर के उपरांत हुए युद्ध में, कर्ण ने इसका वध किया था (म. आ. परि. १. क्र. १०३; पंक्ति १३१-१३२)।

प्रियनिश्चय--भव्य देवों में से एक।

प्रियमाल्यानुलेपन--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५५)।

प्रियमेध आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. २.१-४०; ६८; ६९; ८७; ९.२८)। ऋग्वेद में इसके

परिवार के लोगों का निर्देश 'प्रियमेधाः' नाम से किया गया है (ऋ. १.४५.४)। प्रियमेध ब्राह्मण अजमीढ वंश में उत्पन्न माने जाते हैं (भा. ९.२१.२१)। इसके वंश में पैदा हुए 'प्रियमेध' नामक ऋषियों ने आत्रेय उद्मय राजा के लिए यज्ञ किया था (ऐ. ब्रा. ८.२२; प्रैयमेध देखिये)।

इसके द्वारा रचित सूक्तों में अतिथिग्वपुत्र इंद्रोत, आश्वमेध और ऋक्षपुत्र राजाओं का उल्लेख आश्रयदाता के रूप में किया गया है (ऋ. ८.६८.१५-१९)। इसका संरक्षण अश्विनीयों ने भी किया था (ऋ. ८.५. २५)।

ओल्डेनबर्ग के अनुसार, जिन सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इसे ऋग्वेद में दिया गया है, वे इसके द्वारा रचित नहीं हो सकते (ओल्डेन. त्सी. गे. ४२.२१७)।

प्रियरथ--एक राजा, जो पज्रों का आश्रयदाता था (ऋ. १.१२२.७)। सायणाचार्य के अनुसार, यह किसी व्यक्तिविशेष का नाम न होकर विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है।

प्रियवर्चा--कुबेर की एक अप्सरा। यह शाप के कारण मगर बनी थी, जिसका अर्जुन ने बाद में उद्धार किया था (स्कंद. १.२.१)।

प्रियव्रत--एक राजा, जो स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम शतरूपा था। इसके पराक्रम के कारण, पृथ्वी पर सात द्वीप एवं सात समुद्रों का निर्माण हुआ (भा. ३.१२.५५; ४.७.८; पद्म. सृ. ३; भवि. ब्राह्म. ११७)।

इसके द्वारा सात द्वीपों एवं सात समुद्रों के निर्माण की चमत्कारपूर्ण कथा भागवत में निम्न रूप से वर्णित है।

प्रियव्रत राजा अत्यंत पराक्रमी था। एकबार अपने एक पहियेवाले रथ में बैठ कर अत्यंत वेग से इसने मेरु के चारों ओर प्रदक्षिणा की। इसका वेग इतना अधिक था कि, सूर्य मेरु के जिस भाग पर प्रकाश डालता था, उसके विपरीत दिशा में हमेशा यह रथ घुमा लेता था। इसलिये मेरु पर्वत की जो दिशा सूर्य के अभाव में अंधकारमय रहनी चाहिये, वह भी इसके प्रकाश के योग से आलोकित रहती थी। इसलिये इसके राज्यकाल में पृथ्वी पर कभी भी अंधकार न रहा। इसके रथ के पहियों के कारण मेरु के चारों ओर जो सात गड्ढ़े हुए, वे ही बाद में सप्तसमुद्र के नाम से प्रसिद्ध हुए, तथा प्रत्येक दो गड्ढों के बीच में जो जगह बची, वे द्वीप बन गये। इस प्रकार प्रियव्रत के रथ के कारण, मेरु पर्वत के चारों ओर सात समुद्र तथा सप्तद्वीप बने।

प्रियव्रत को विश्वकर्म की कन्या बर्हिष्मती दी गयी थी। उससे इसे इध्मजिह्व, यज्ञबाहु, महावीर, अग्नीध्र, सवन, वीतिहोत्र, मेधातिथि, घृतपृष्ठ, कवि तथा हिरण्यरेतस् नामक दस पुत्र तथा ऊर्जस्वती नामक कन्या हुयी। उनमें से महावीर, कवि तथा सवन नामक तीन पुत्र बचपन में ही तपस्या के लिए वन में चले गये। बाकी बचे सात पुत्रों को इसने एक एक द्वीप बाँट दिये (भा. ५. १; वराह. ७४)। इसके पुत्रों में बाँटे गये सप्तद्वीप इस प्रकार थे:-इध्मजिह्व--प्लक्षद्वीप, यज्ञबाहु-शाल्मलिद्वीप, अग्नीध्र-जंबुद्वीप, वीतिहोत्र-पुष्करद्वीप, मेधातिथि-शाकद्वीप, घृतपृष्ठ-क्रौंचद्वीप, हिरण्यरेतस्-कुशद्वीप। इसकी ऊर्जस्वती नामक कन्या का विवाह कविपुत्र उशनस् ऋषि से हुआ था।

ब्रह्माण्ड में इसकी पत्नी का नाम काम्या बताया गया है, एवं उसे पुलहवंशीय कहा गया है। काम्या से उत्पन्न हुए प्रियव्रत राजा के दस पुत्रों ने आगे चल कर क्षत्रियत्व को स्वीकार किया, एवं वे सप्तद्वीपों के स्वामी बन गये (ब्रह्माण्ड. २.१२.३०-३५)।

इसे बर्हिष्मती (काम्या) के अतिरिक्त और भी एक पत्नी थी, जिससे इसे उत्तम, तापस एवं रैवत नामक तीन पुत्र हुए। वे पुत्र स्वायंभुव एवं स्वारोचिष मन्वन्तरों के पश्चात् संपन्न हुए उत्तम, तामस तथा रैवत मन्वन्तरों के स्वामी बन गये।

प्रियव्रत अत्यंत धर्मशील था, एवं देवर्षि नारद इसका गुरु था। इसने ग्यारह अर्बुद (दशकोटि) वर्षों तक राज्य किया। बाद में राज्यभार पुत्रों को सौंप कर, यह नारद द्वारा उपदेशित योगमार्ग का अनुसरण कर, अपनी पत्नी के साथ साधना में निमग्न हुआ।

इसका मेधातिथि नामक पुत्र शाकद्वीप का राजा था। वहाँ इसने सूर्य का एक देवालय बनवाया। किन्तु शाकद्वीप में एक भी ब्राह्मण न होने के कारण, अब समस्या यह थी कि, मूर्ति की स्थापना किस प्रकार की जाय। तब इसने सूर्य का आवाहन कर उससे सहायता के लिए याचना की। सूर्य ने इसे दर्शन दे कर 'मग' नामक आठ ब्राह्मणों का निर्माण किया, तथा उनके सन्मान की इसे रीति बतायी (भविष्य. ब्राह्म. ११७; मग देखिये)।

२. आद्य देवों में से एक।

३. मद्र देश का राजा। इसे कीर्ति तथा प्रभा नामक दो स्त्रियाँ थीं। इसके दो प्रधानों का नाम धूर्त तथा कुशल था। इसके पुत्र का नाम क्षिप्रप्रसादन था, जो परम गणेशभक्त था। इसे गणेशजी द्वारा परशु प्राप्त होने के कारण, परशुबाहु भी कहा जाता है (गणेश.)।

प्रियव्रत रौहिणायन—शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य (श. ब्रा. १०.३.५.१४)।

प्रियव्रत सोमापि— एक आचार्य, जो सोमप नामक ऋषि का पुत्र था (ऐ. ब्रा. ७.३४; सां. आ. १५.१)। इसके नाम के लिए 'प्रियव्रत सौमापि' पाठभेद भी उपलब्ध है। सांख्यायन आरण्यक में इसे 'सोमप' (सोम पीनेवाला) उपाधि से उद्देशित किया गया है।

पितरों के 'मृत' और 'अमृत' दो प्रकार होते हैं। पितरों में से 'ऊम' नामक पितर 'अमृत' प्रकार में आते हैं। किन्तु प्रियव्रत के अनुसार, जो पितर यज्ञ में भाग लेते हैं वे सभी 'अमृत' प्रकार में आते हैं।

प्रीति--दक्ष की कन्या, जो पुलस्त्य ऋषि की पत्नी थी। पुलस्त्य से इसे दानाग्नि, देवबाहु, अत्रि नामक तीन पुत्र, एवं सद्वती नामक एक कन्या थी (पुलस्त्य देखिये)।

२. कामदेव की पत्नी रति का नामांतर।

प्रैयमेध--आचार्यों का एक सामूहिक नाम, जिन्होंने अंगराज के पुरोहित आत्रेय उद्मय के लिये यज्ञ किया था (ऐ. ब्रा. ८.२२)। तैत्तिरीय ब्राह्मण में तीन प्रैयमेधों का निर्देश प्राप्त है (तै. ब्रा. २.१.९.१)। उनमें से एक केवल एक समय, सुबह ही 'अग्निहोत्र' होम करता था; दूसरा सुबहशाम दो बार, तथा तीसरा सुबह, दोपहर, तथा शाम तीनों समय 'अग्निहोत्र' होम करता था। पश्चात्, इन तीनों में यह तय पाया गया कि, उक्त होम दिन में केवल दो बार ही किया जाये। तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी यह कथा इसी प्रकार दी गयी है।

यजुर्वेद संहिताओं में इन्हें सभी यज्ञगायनों का विज्ञ कहा गया है (का. सं. ६.१; मै. सं. १.८)। गोपथ ब्राह्मण में इन्हें भारद्वाज कहा गया है (गो. ब्रा. १.३.१५)।

ऋग्वेद के सिंधुक्षित् नामक सूक्तद्रष्टा को प्रियमेधपुत्र के अर्थ से 'प्रैयमेध' पैतृक नाम प्रदान किया गया है।

प्रोति कौशांबेय कौसुरुबिन्दि—एक आचार्य, जो उद्दालक ऋषि का शिष्य और उसका समकालीन था (श. ब्रा. १२.२.२.१३)। गोपथ ब्राह्मण में इसे 'प्रोदि कौशाम्बेय कौसुरविन्द' कहा गया है (गो. ब्रा. १. २. २४)। किसी कुसुरुविन्द का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

तैत्तिरीय संहिता में इसे औद्दालकि (उद्दालक का वंशज) कहा गया है (तै. सं. ७.२.२.१)। इससे प्रतीत होता है कि, इसके पैतृक नाम एवं समकालीनता से सम्बन्धित वक्तव्यों को अधिक महत्त्व न देना चाहिये।

प्रोवा—प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या, जो कश्यप ऋषि की पत्नी थी। इसकी माता का नाम असिक्नी था। कश्यप से इसे कोई भी सन्तान न हुयी (कश्यप देखिये)।

प्रोष्ठपाद वारक्य—एक आचार्य, जो कंस वारकि नामक ऋषि का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

प्रौष्ठपद—कुवेर का कोषाध्यक्ष और मंत्री (वा. रा. उ. १५.१६)।

प्लक्ष--दारुक नामक शिवावतार का शिष्य।

प्लक्ष दय्यांपति—एक आचार्य, जो अत्यंहस् आरुणि नामक ऋषि का समकालिन था। उसने अपने शिष्यों के द्वारा इससे सावित्राग्नि के बारे में अशोभनीय प्रश्न पुछवाये थे (तै. ब्रा. ३.१०. ९.३)।

प्लति--गय प्लात नामक आचार्य का पिता।

प्लवंग--राम की सेना का एक वानर (वा. रा. उ. ४०.७)।

प्लाक्षायण--एक वैयाकरण, जो आचार्य प्लाक्षि का समकालीन था। विसर्ग सन्धि के बारे में इसके मत तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में निर्देशित है (तै. प्रा. ९.६)।

प्लाक्षि—एक वैयाकरण, जो प्लाक्षायण नामक आचार्य का समकालीन था। विसर्गसन्धि के बारे में इसके इसके मत तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में दिये गये है (तै. प्रा. ५.३.८; ९:६; तै. आ. १.७.३)। प्लक्ष का वंशज होने के कारण, इसे प्लाक्षि नाम प्राप्त हुआ होगा।

'प्लाक्षि' उपाधि पैतृक नाम के रूप में 'सप्तकर्ण' को भी दी गयी है (सप्तकर्ण देखिये)

प्लात--गय प्लात नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ५.२; गय प्लात देखिये)। संभव है, 'प्लति' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

प्लायोगि--आसंग नामक दानवीर राजा एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (आसंग देखिये)।

फ

फलभक्ष--कुवेर की सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१७)।

फलहार--अंगिराकुल का एक गोत्रकार।

फलौदक--कुवेर की सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१७)।

फल्गुतंत्र--अयोध्या का राजा, जो सगर राजा का पिता था। इसकी वृद्धावस्था में तालजंघादि हैहयों ने अयोध्या पर आक्रमण कर, उसे अपने अधिकार में कर लिया, और इसे अपनी पत्नी के साथ राज्य से निकाल दिया। अयोध्या से निकल कर, यह सपत्नीक और्वाश्रम में आकर रहने लगा, और वहीं इसकी मृत्यु भी हुयी। मृत्यु के समय इसकी पत्नी गर्भवती थी, जिसे कालांतर में सगर नामक पुत्र हुआ (ब्रह्मांड. ३.४७)।

मत्स्य तथा विष्णु पुराण में इसके नाम के लिए 'बाहु' पाठभेद प्राप्त है (बाहु देखिये)।

फाल्गुन--अर्जुन का नामांतर। हिमालय के शिखर पर, उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में अर्जुन का जन्म हुआ था। इसीसे उसे यह नाम प्राप्त हुआ (म. वि. ३९.१०)।

फेन--(सो. उशी.) उशीनरवंशीय एक राजा, जो उपद्रथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुतपस् एवं पौत्र का नाम बलि औशीनर था, जो अपने समय का सुविख्यात शासक था (ह. वं. १.३१.३२)।

फेनप--एक ऋषिसमुदाय, जो गोदुग्ध के फेन को खा कर ही जीवित रहते थे (म. उ. १००.५; अनु. ४५. ४१ कुं.)।

२. भृगुकुल का एक गोत्रकार, जिसकी कथा भीष्म द्वारा युधिष्ठिर को गोमहात्म्य बताने के लिए निवेदित की गयी थी। इसका मूल नाम सुमित्र था। यह त्रिशिखर पर्वत पर, कुलजा नदी के तट पर, गाय के दूध का फेन खा कर जीवित रहता था। इसलिये इसे फेनप नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १२०-१२३ कुं.)।

३. पितरों में से एक।

ब

बक--कंस के पक्ष का एक असुर, जिसे कंस ने कृष्ण के वध के लिये गोकुल भेजा था।

बगुले का वेश धारण कर यह गोकुल गया। वहाँ गोप सखाओं के साथ क्रीड़ा में निमग्न कृष्ण को देख कर इसने उसे निगल लिया। कृष्ण इसके शरीर में पहुँच कर इसे पीड़ा से दग्ध करने लगा। अतएव इसने उसे तत्काल उगल कर, यह अपनी पैनी चोंच से उसे मारने लगा। इसका यह कुकृत्य देखकर, कृष्ण ने इसकी चोंच के दोनों जबड़ों को चीरकर इसका वध किया (भा. १०. ११)।

ब्रह्मवैवर्त पुराण के अनुसार, पूर्वजन्म में यह सहोत्र नामक गंधर्व था। यह कृष्णभक्त था, और दुर्वास ऋषि के आश्रम में रहकर, कृष्ण की प्राप्ति लिए इसने अत्यधिक तपस्या भी की। एक बार कृष्ण की पूजा के हेतू पार्वती के सरोवर से कमल तोड़ने के अपराध में, वहाँ के रक्षकों द्वारा यह शिवजी के सम्मुख पेश किया गया। शिवजी ने इसकी निष्ठा को देखकर आशीष देते हुए कहा, 'अगले जन्म में तुम्हें कृष्ण के दर्शन होंगे, एवं उन्हींके हाथों तुम्हें मुक्ति भी प्राप्त होगी' (ब्रह्मवै. ४. १६)।

२. एक नरभक्षी राक्षस, जो एकचक्रा से दो कोस की दूरी पर, यमुना नदी के किनारे वेत्रवन नामक घने जंगल की एक गुफा में रहता था। इसका एकचक्रा नगरी तथा वहाँ के जनपद पर शासन चलता था (म. आ. १४८. ३-८)। अलंबुस तथा किर्मीर-इसके भाई थे।

एकचक्रा नगरी के व्यक्तियों ने अत्यधिक परेशान हो कर, इसे घरबैठे ही भोजन भेजवा देने के लिए, हर एक व्यक्ति की पारी बाँधी दी।

अब हर एक दिन इसके भोजन के लिए, तीस मन चावल, दो भैंसे तथा एक व्यक्ति नगरनिवासियों की ओर से जाने लगी। एक दिन एक गरीब ब्राह्मण की पारी आयी, जिसके घर लाक्षागृह से निकलने के उपरांत कुंती के साथ पांडवों ने निवास किया था। ब्राह्मण के उपर आयी हुयी विपत्ति को देख कर, कुंतीद्वारा भीम सब खाने-पीने के सामान के साथ राक्षस के निवासस्थान भेजा गया। भीम बक के यहाँ जाकर सारे सामान को स्वयं खाने लगा। यह देख कर बक क्रोधित होकर भीम पर झपटा, और दोनों में मल्लयुद्ध आरम्भ हो गया। अन्त में भीम ने बक का वध किया (म. आ. ५५.२०; १४४–१५२)।

३. अंधकासुर के पुत्र आडि नामक असुर का नामांतर (आडि देखिये)।

बक दाल्भ्य—एक ऋषि, जो दाल्भ्य ऋषि का भाई था (म. स. ४.९; २६.५; परि. १. क्र. २१. पंक्ति १–४)। महाभारत में इसके नाम का निर्देश दाल्भ्य के साथ प्रायः हर एक जगह आया है। किन्तु, यह निर्देश कभी 'बकदाल्भ्यौ' (बक एवं दाल्भ्य) रूप से, एवं कभी 'बको दाल्भ्यः' (दल्भ का पुत्र बक) रूप में भी प्राप्त है। इसीकारण यह दाल्भ्य ऋषि का भाई था, अथवा दल्भ ऋषि का पुत्र था, यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता। उपनिषदों में 'दाल्भ्य' बक ऋषि का पैतृक नाम दिया गया है (छां. उ. १.२.१३; क. सं. ३०.२; दाल्भ्य देखिये)।

कई विद्वानों के अनुसार, ग्लाव मैत्र एवं यह दोनों एक ही व्यक्ति थे। 'जैमिनि उपनिषद् ब्राह्मण' में, आजकेशिनों के लिए इन्द्र को विवश करनेवाले एक व्यक्ति के रूप में, तथा कुरु-पंचाल के रूप में इसका उल्लेख किया गया है (जै. उ. ब्रा. १.९.२;४.७.२)।

तीर्थयात्रा करता हुआ बलराम, बक दाल्भ्य के आश्रम आया था। वहाँ बलराम को इसके बारे में निम्नलिखित कथा ज्ञात हुयी। उस कथा में बक दाल्भ्य के प्रत्यक्ष उपस्थिति का उल्लेख नहीं है, जिससे ज्ञात होता है कि, उस समय यह आश्रम में न था।

एक बार, यह नैमिषारण्य के ऋषियों द्वारा आयोजित द्वादशवर्षीयसत्र एवं विश्वजित् यज्ञ में भाग लेकर, पांचाल देश पहुँचा। वहाँ के राजा ने इसका उचित आदरसत्कार कर, उत्तम जाति की इक्कीस गायों को दक्षिणा के रूप में इसे भेंट की। इन गायों को स्वीकार कर, इसने उन्हें नैमिषारण्यवासी ऋषियों का प्रदान करते हुए कहा, 'इन गायों को आप लोग ग्रहण करें, मैं सार्वभौम कुरुराजा धृतराष्ट्र के पास जाकर पुनः दक्षिणा प्राप्त करूँगा'।

धृतराष्ट्र से विरोध—धृतराष्ट्र के पास जाने के बाद इसे वहाँ धृतराष्ट्र द्वारा मृतक गायों की दक्षिणा प्राप्त हुयी। अपने इस अपमान को देखकर, यह कुरुराज पर अत्यधिक क्रोधित हुआ एवं उसके विनाश के लिए यज्ञ करने लगा। दक्षिणा में प्राप्त मृतक गायों को उसी यज्ञ में हवन कर, इसने धृतराष्ट्र के वंश, राज्य आदि के विनाश के लिए प्रार्थना की।

इस यज्ञ का प्रभाव यह हुआ कि, धृतराष्ट्र का राज्य दिन पर दिन उजड़ कर नष्टप्राय होने लगा, मानों किसी—ने हरेभरे बन के वृक्षों को कुल्हड़ी से काट कर रख दिया हो। राष्ट्र की हालत देखकर, ज्योतिषियों के परामर्श से धृतराष्ट्र बक ऋषि की शरण गया, एवं राष्ट्र को विनाश से मुक्त करने की याचना करने लगा। धृतराष्ट्र की दयनीय स्थिति को देख कर, तथा उसकी प्रार्थना से द्रवीभूत होकर, यह राष्ट्रसंहारक मन्त्रों को छोड़कर राष्ट्रकल्याण-कारी मन्त्रों के उच्चारण के साथ पुनः यज्ञ करने लगा, जिससे राष्ट्र विनाश से बच गया। इससे प्रसन्न होकर धृतराष्ट्र ने बक ऋषि को अनेकानेक सुन्दर गायों को दक्षिणा के रुप में भेंट दी, जिन्हें लेकर यह नैमिषारण्य वापस लौट गया (म. श. ४०)।

तत्त्वज्ञान—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह ब्रह्मा नामक ऋत्विज बना था। पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्व के रक्षणार्थ निकला हुआ अर्जुन इसका दर्शन करने के लिए इसके आश्रम आया था। उस समय अर्जुन के साथ जो इसका संवाद हुआ था, वह इसकी परम विरक्ति एवं मितभाषणीय स्वभाव पर काफ़ी प्रकाश डालता है।

इसके आश्रय में कोई झोपडी न थी। यह खुले मैदान में, सर पर एक वटवृक्ष के पत्ते को रक्खे हुए तपस्या कर रहा था। अर्जुन ने इसे इसप्रकार बैठा देखकर प्रश्न किया 'यह सर पर वटपत्र क्या अर्थ रखता है?' इसने जवाब दिया 'धूप से बचने के लिए'। अर्जुन ने पुछा, 'इसके लिए आप को झोपडी आदि बनवाना चाहिये'। इसने जवाब दिया 'उम्र इतनी कम है कि, इन चीज़ों के लिए समय ही कहाँ?' इस पर अर्जुन ने इसकी आयु पूँछी। तब इसने जवाब दिया 'ब्रह्मा की बीस अहोरात्रि'।

ब्रह्मा का हर एक दिन और रात एक सहस्त्र वर्षों की होती है, यह मन ही मन जान कर, अर्जुन को इसकी आयु हजारों सालों की प्रतीत हुयी। बाद में, अर्जुन इसे पालकी में सम्मानपूर्वक बिठा कर युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ में ले गया (जै. अ. ६०)।

बहुत वर्षों तक जीनेवाले व्यक्ति को किन दुःख-सुखों के बीच गुजरना पडता है, इस सम्बन्ध में इसका तथा इन्द्र का संवाद हुआ था। इस संवाद में इन्द्र ने उल्लेख किया है कि, इसकी आयु एक लाख वर्षों से भी अधिक थी (म. व. परि. १. क्र. २१)।

यह अधिक काल तक जीवित रहा, इसके सम्बन्ध में एक और कथा 'जैमिनि अश्वमेध' में दी गयी है। एक बार इसने अभिमान में आ कर ब्रह्मा से कहा, 'मैं तुमसे आयु में ज्येष्ठ हूँ, अतएव मेरा स्थान तुमसे ऊँचा है'। ब्रह्मा ने इसके द्वारा इसप्रकार की अपमानभरी वाणी सुन कर, इसके मिथ्याभिमान एवं भ्रम के निवारणार्थ प्राचीन ब्रह्मदेवों का साक्षात् दर्शन करा कर सिद्ध कर दिया कि, यह उसकी तुलना में कुछ भी नही था (जै. अ. ६१)।

लंकाविजय के पूर्व, राम बक दाल्भ्य के आश्रम गया था, और समुद्र किस प्रकार पार किया जाय, इसके बारे में राय माँगी थी। तब इसने राम को 'विजया एकादशी' का व्रत बता कर उसे करने के लिए कहा। इसी व्रत के कारण ही, राम रावण का वध कर विजय प्राप्त कर सका (पद्म. उ. ४४)।

छांदोग्य उपनिषद् में—बक दाल्भ्य की एक कथा दी गयी है, जिसमें ऐहिक सुखप्राप्ति के लिए मन्त्रोच्चारण का स्वांग रचानेवाले लोगों का लक्षणात्मक रूप से उपहास किया गया है। यह कथा कुत्तों से सम्बधित है, जो बक दाल्भ्य द्वारा देखी गयी। इन्होंने देखा कि, एक सफेद कुत्ते से अन्य कुत्ते अपने खाने की समस्या को रखकर निवेदन कर रहे है, 'हम भुखे है, क्या खायें! कहाँ से हमें कैसे अन्न प्राप्त हो!' सफेद कुत्ते ने कहा, 'ठीक है, कल आओ, हम देंगे तुम्हें भोजन'। यह सुनकर कुत्ते चले गये और दुसरे दिन फिर उसी सफेद कुत्ते के पास पहुँचे। बक ऋषि भी जिज्ञासावश दूसरे दिन सफेद कुत्ते की करामत देखने को हाजिर हुए। ऋषि ने देखा कि, सभी कुत्तों के चुपचाप खडे हो जाने के उपरांत, गर्दन उँची कर सफेद कुत्ता साभिमानपूर्वक मनगठन्त मन्त्र उँच्चारीत करने लगा—'हिम् ॐ। हम खायेंगे। ॐ हम पियेंगे। भगवान् हमें अनाज दे। हे अनाज देनेवाले प्रभो, हमें अनाज दे। (छां. उ. १.१२)।

बकनख—विश्वामित्र का ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक। (म. अनु. ४.१८)।

बकी—पूतना राक्षसी का नामांतर।

बटु—गीता का नित्यपाठ करनेवाला भक्त ब्राह्मण। धर्माचरण करने के कारण, मृत्योपरांत इसे स्वर्ग की प्राप्ति हुयी। पर इसका नश्वर शरीर इसी लोक में रहा। पक्षियों ने इसके मृत शरीर के समस्त मांस को खा डाला, केवल अस्थिपंजर ही शेष बचा। पश्चात् वर्षा के दिनों में इसकी खोपडी बरसाती पानी से भर गयी, जिसके स्पर्श से एक पापी का उद्धार हुआ (पद्म. उ. १७९)

बध्यश्व—(सो. नील.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुमहायशस् राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, 'बध्यश्व' सुविख्यात 'वध्न्यश्व' राजा का ही पाठभेद है (वध्न्यश्व देखिये)।

बंदिन्—ऐंद्रद्युम्नि जनक राजा के राजसभा का वाक्पटु पंडित (म. व. १३२.४)। राजा जनक को इसने अपना परिचय 'वरुणपुत्र' के रूप में दिया था (म. व. १३४.२४)। किन्तु महाभारत में अन्यत्र, इसे सूतपुत्र भी कहा गया है (म. व. १३४.२१)।

इसने अन्य ब्राह्मणों के साथ कहोड को शास्त्रार्थ में परास्त कर, शर्त के अनुसार जल में डूबोया था (म. व. १३२.१३)। अन्त में, अष्टावक्र ने अपने पिता कहोड की मृत्यु का बदला लेने के लिये, इसे वादविवाद में हराया था (म. व. १३४.३-२१)। इस समय अष्टावक्र की आयु दस ग्यारह वर्षों ही की थी (म. व. १३२.१६; १३३.१५; अष्टावक्र देखिये)। इस प्रकार पुरानी शर्त के अनुसार, ऐंद्रद्युम्नि जनक ने इसे समुद्र में प्रवेश करने के लिए विवश किया (म. व. १३४.३७)।

महाभारत में दी गयी बंदिन् की कथा में, जनक को ऐन्द्रद्युम्नि (म. व. १३३.४), उग्रसेन (म. व. १३४.१। तथा पुष्करमालिन् (म. व. १३३.१३) कहा गया है। विदेह की वंशावलि में जनक के ये नाम अनुपलब्ध हैं।

महाभारत में इसके नाम के लिए बंदिन् (म. व. १३२.१३; १३३.१८; १३४.२), तथा बंदि (म. व. १३२.४.१३३.५) दोनों पाठभेद प्रात हैं।

बंधु—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, वेगवान् राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसे 'बुध' भी कहा गया है।

बंधु गौपायन (लौपायन)--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २४. १; १०. ५७-६०) ।

बंधुपालित (मौर्य. भविष्य)--एक राजा, जो वायु के अनुसार कुनाल का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार कुशाल का पुत्र था। इसने आठ वर्षों तक राज्य किया।

बंधुमत्--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार केवल राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वेगवान् था। इसके नाम के लिए 'धुंधुमत्' पाठभेद भी उपलब्ध है (धुंधुमत् देखिये)।

बबर प्रावाहणि--एक आचार्य, जो श्रेष्ठ वक्ता बनना चाहता था। इसी इच्छा के वशीभूत होकर इसने पंचविंश यज्ञ किया था, जिससे इसे भाषासौन्दर्यशक्ति, साहित्यज्ञान तथा वक्तृत्वकला प्राप्त हुयी (तै. सं. ७. १. १०. २) ।

बभ्रु--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो ययाति का पौत्र एवं द्रुह्यु का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सेतु था। कई ग्रन्थों में इसे बभ्रुसेतु भी कहा गया है, पर वास्तविकता यह है कि, सेतु इसके भाई का नाम था। वायु में इसके पुत्र का नाम रिपु दिया गया है (वायु. ९९.७.)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो रोमपाद का पुत्र था। पद्म में इसे लोमपाद का पुत्र कहा गया है, और इसके पुत्र का नाम धृति बताया गया है (पद्म. सृ. १३) ।

कई ग्रन्थों में इसके पुत्र का नाम कृति भी मिलता है।

३ विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मज्ञानी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५०) । इसके वंश के लोग भी 'बाभ्रव्य' नाम से ही प्रसिद्ध हुए (ब्रह्म. १०. ६१; वायु. ९१. ९९) ।

४. सात्वतवंशीय अक्रूर राजा का नामांतर (ब्रह्मांड. १.७१.८१; म. शां. ८२. १७; अक्रूर देखिये) ।

५. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास के अथर्ववेदशिष्य परंपरा के आंगिरस शुनक का शिष्य था। इसे आंगिरस ने अथर्वसंहिता प्रदान की थी (भा. १२ ७.३; व्यास देखिये)।

६. मत्स्यनरेश विराट का एक पुत्र (म. उ. ५६. ३३) ।

७. कश्यप कुलोत्पन्न संपाति का ज्येष्ठ पुत्र। इसके भाई का नाम शीघ्रग था (पद्म सृ. ६.६८) ।

८. ऋषभ पर्वत पर रहनेवाला एक गंधर्व।

९. एक स्मृतिकार, जो बभ्रुस्मृति का रचयिता कहा जाता है (C. C.)।

बभ्रु आत्रेय--एक वैदिक आचार्य एवं सूक्तद्रष्टा, जिसने ऋणंचय राजा से उपहार प्राप्त किये थे (ऋ. ५. ३०. ११-१४) । ऋग्वेद में अन्य जगह इसे अश्वियों का आश्रित भी कहा गया है (ऋ. ८.२२.१०; बृहद्दे. ५. १३.३३-३४) । अथर्ववेद में भी एक स्थान पर बभ्रु का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ४.२९.२) । किन्तु व्हिटने इसे व्यक्तिवाचक नाम नहीं मानते।

बभ्रु काश्य--काशी का सुविख्यात राजा, जिसे श्रीकृष्ण की कृपा से राज्यश्री का लाभ हुआ था (म. ३. २८. १३) ।

बभ्रु कौम्भ्य--तांड्य ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक सामद्रष्टा (तां. ब्रा. १५.३.१३) ।

बभ्रु दैवावृध--(सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो सात्त्वतपुत्र देवावृध का पुत्र था। इसकी माता का नाम पर्णाशा था। इसके नाम के लिये 'भानु' पाठभेद प्राप्त है।

यह राजर्षि यज्ञविद्या में बडा ही निपुण था। सहदेव सार्ञ्जय ने इसे सोम बनाने की विशेष पद्धति प्रदान की थी। ऐतरेय ब्राह्मण में इसे पर्वत एवं नारद का शिष्य कहा गया है (ऐ. ब्रा. ७. ३४)। सायणाचार्य इसे दो अलग व्यक्ति मानते है।

यह बड़ा ही दयालु एवं उपकारी राजा था। इसने लोगों को दान भी प्रचुर यात्रा में दिये थे। इसकी उदारता के कारण ही, इसे दानपति नाम प्राप्त हुआ था।

इसके पुण्यकर्मों के कारण, इसके वंश का उद्धार हुआ (भा. ९.२४.१०.) । इसके वंश के नृप भोज 'मार्तिवतक' नाम से सुविख्यात हैं (ब्रह्म. १५.३५-४५.) ।

महाभारत में इसे वृष्णिवंशीय यादव, एवं यदुवंशियों के सात मंत्रिपुंगवों में से एक कहा गया है (म. स. १३. १५९*) ।

सुभद्राहरण के समय रैवतक पर्वत पर हुए महोत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. २११.१०) । एकबार श्रीकृष्ण से मिलने यह द्वारका गया था, उस समय शिशुपाल ने इसके पत्नी का हरण किया था (म. स. ४२.१०) ।

द्वारका में हुए 'यादवी युद्ध' के समय, इसने श्रीकृष्ण के पास ही बने हुए पेयपदार्थों का सेवन किया था (म. मौ. ४.१५)। द्वारका में हुए यादवी युद्ध में सारे यादव लोगों का संहार हो गया, एवं द्वारकानिवासी यादव-स्त्रियों की जान खतरे में आ गयी। उस समय दस्यु आदि

चोर धनादि के लोभ से आक्रमण न करे, इसलिये यादव स्त्रियों का रक्षण करने का काम, श्रीकृष्ण नें इसे एवं दारुक को कहा था। किंतु इसके पहले ही मौसलयुद्ध में फेंके गये एक मूसल से इसकी मृत्यु हो गयी (म. मौ. ५.५-६)।

बभ्रुमालिन्—युधिष्ठिर की सभा का ऋषि (म. स. ४.१४)।

बभ्रुवाहन— मणिपुरनरेश' चित्रवाहन की पुत्री चित्रांगदा के गर्भ से अर्जुनद्वारा उत्पन्न एक शूरवीर शासक (म. आ. २०७.२१-२३)। चित्रवाहन ने अर्जुन को अपनी कन्या देने से पूर्व वह शर्त रक्खी थी कि, 'इसके गर्भ से जो भी पुत्र होगा, वह यही रह कर इस कुलपरम्परा का प्रवर्तक होगा। इस कन्या के विवाह का यही शुल्क आपको देना होगा।' 'तथास्तु' कह कर अर्जुन ने वैसा ही करने की प्रतिज्ञा की।

जन्म—चित्रांगदा के पुत्र हो जाने पर उसका नाम बभ्रुवाहन रक्खा गया। उसे देख कर अर्जुन ने राजा चित्रवाहन से कहा—'महाराज! इस बभ्रुवाहन को आप चित्रांगदा के शुल्क के रूप में ग्रहण कीजिये, जिससे मैं आप के ऋण से मुक्त हो जाऊँ'। इस प्रकार बभ्रुवाहन धर्मतः चित्रवाहन का पुत्र माना गया (म. आ. २०६.२४-२६)। चित्रवाहन राजा उसी प्रभंजन राजा का वंशज था, जिसने पुत्र न होने पर शंकर की तपस्या कर पुत्रप्राप्ति के लिये वर प्राप्त किया था (प्रभंजन देखिये)। चित्रवाहन के उपरांत यह मणिपूर राज्य का अधिकारी बना, जिसकी राजधानी मणलूरपूर थी (म. आ. ३.८१; परि. १, क्र. ११२)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, इसने सहदेव को करभार दिया था (म. स. परि. १, क्र. १५. पंक्ति ७३)।

अर्जुनविरोध—युधिष्ठिर द्वारा किये गये अश्वमेध के अश्व के साथ, घूमता घूमता अर्जुन इसके राज्य में आया था। इसने यज्ञ का अश्व देख कर उसे अपने अधिकार में कर लिया। पर जैसेहि इसे पता चला कि, यह मेरे पिता का ही अश्व है, इसने अश्व को धनधान्य तथा द्रव्यादि के साथ अर्जुन के पास लौटा दिया। अर्जुन ने बभ्रुवाहन के इस कार्य की कटु आलोचना की, तथा इसकी निर्बलता तथा असहाय स्थिति पर शोक प्रकट करते हुए इसके द्वारा दिये गये द्रव्यादि को लौटा दिया।

अर्जुन के व्यंग वचनों को सुन कर, इसने अपने मंत्री सुबुद्धि के साथ यज्ञ के अश्व को पकड़ कर नगर भेज दिया, तथा अपने सेनापति सुमति के साथ ससैन्य अर्जुन पर धावा बोल दिया। इस युद्ध में बभ्रुवाहन ने अपने अभूतपूर्व शौर्य का प्रदर्शन किया, तथा अर्जुन को रण में परास्त कर उसका वध किया। इसी युद्ध में कर्णपुत्र वृषकेतु का भी इसने वध किया (जै. अ. ३७)।

विजयोल्लास में निमग्न बभ्रुवाहन राजधानी वापस लौटा, तथा अपनी वीरता की कहानी के साथ अर्जुन की मृत्यु का समाचार इसने चित्रांगदा को कह सुनाया। यह समाचार सुनते ही, इसकी माँ शोक में विलाप करती हुयी पति के शव के साथ सती होने को तत्पर हुयी। इस प्रतिक्रिया को देख कर, अपनी माता-पिता का हत्यारा अपने को मान कर, यह स्वयं ही आत्महत्या के लिये प्रस्तुत हुआ।

मृतसंजीवन—उक्त स्थिति को देख कर, इसकी सौतेली माँ उलूपी, जो अर्जुन की नागपत्नी थी, वह भी दुःखित हुयी। उसने इसे तथा चित्रांगदा को सात्वना देते हुए युक्त बतायी कि, यदि यह शेषनाग के पास जा कर मृतसंजीवक मणी को ले आये, तो अर्जुन पुनः जीवित हो सकता है। इसपर यह शेषनाग से मणि लाने गया, किंतु अन्य सर्पों के बहकाने पर शेषनाग ने इसे मणि देने से इन्कार कर दिया। अन्त में, शेषनाग को युद्ध में परास्त कर, यह उस मणि को लेकर अपने नगर वापस आया।

मणि को लेकर यह अर्जुन के शवके पास गया। किंतु इसने वहाँ देखा कि, अर्जुन का कटा हुआ सर किसी के द्वारा चुरा लिया गया है। यह बड़ा हताश हुआ, किन्तु कृष्ण अपने पुण्यप्रभाव से पुनः उस सर को वापस लाया। इस प्रकार अर्जुन मणि के द्वारा जीवित किया गया। दोनों पिता-पुत्र पुनः मिले, तथा अर्जुन अश्वमेध अश्व के साथ आगे चल पड़ा (जै. अ. २१-४०)।

महाभारत में अर्जुन एवं बभ्रुवाहन के बीच हुए युद्ध की कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। इस ग्रन्थ में अर्जुन की मृत्यु नहीं दिखायी गई है; बल्कि दिखाया गया है कि, बभ्रुवाहन ने अपनी सौतेली माता उलूपी के द्वारा प्राप्त किये हुए मायावी अस्त्रों के द्वारा अर्जुन को युद्ध में मूर्च्छित किया (उलूपी देखिये)।

यह घटना सुन कर चित्रांगदा ने उलूपी की निर्भत्सना की, तथा उसे बुरा भला कहा। उलूपी ने अपनी गल्ती स्वीकार कर बभ्रुवाहन को मृतसंजीवक मणि दी, तथा कहा 'इसे ले जा कर अर्जुन के वक्षस्थल पर रक्खो। वह पुनः

जीवित हो जायेगा' (म. आश्व. ८१.९-१०)। मणि के स्पर्श से अर्जुन पुनः जीवित हो उठा। पितापुत्र दोनों गले मिले। पश्चात्, अर्जुन ने बड़े सम्मान के साथ बभ्रुवाहन को युधिष्ठिर के होनेवाले अश्वमेध के लिये निमंत्रित किया, एवं यह अपनी दोनों माताओं के साथ यज्ञ में सम्मिलित हुआ (म. आश्व. ९०. १)।

२. कृतयुग का एक राजा। एक बार यह मृगया के हेतु वन को गया था, जहाँ सुदेव की प्रेतात्मा ने अपने पूर्वजन्म की कथा इससे कही थी (गरुड. २.९)।

बम्ब आजद्विष—एक आचार्य, जो अजद्विष का वंशज था (जै. उ. ब्रा. २. ७. २-६)। इसके नाम के लिए 'विम्ब' पाठभेद उपलब्ध है।

बम्बाविश्वावयस्—एक ऋषिद्वय, जिन्होंने एक विशिष्ट देवता को सोमरस अर्पित करने का एक नया संप्रदाय स्थापित किया था। इन्होंने किसी अन्य संस्कारों का भी प्रणयन किया था (तै. सं. ६. ६. ८. ४; क. सं. २९. ७)। काठक संहिता में, इनके नाम के लिये 'बम्भा', एवं मैत्रायणी संहिता में 'बम्ब' पाठभेद दिया गया है (मै. सं. ४. ७. ३)।

बरु—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ९६; ऐ. ब्रा. ६. २५; सां. ब्रा. २५. ८)।

बर्कु वार्ष्ण--शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जिसने 'अन्तिम तत्व नेत्र' का प्रतिपादन किया था (श. ब्रा. १. १. १. १०; बृ. उ. ४. १. ४; ५. १. ८)।

बर्बर—बर्बर देश के निवासी। इनकी गणना उन म्लेच्छ जातियों में की जाती है, जिनकी उत्पत्ति नन्दिनी के पार्श्वभाग से हुयी थी (म. आ. १६५.३६)। अन्य म्लेच्छ वंशियों के साथ, राजा सगर ने इन्हें भी पराजित किया था, किन्तु अपने गुरु विश्वामित्र के आग्रह पर, इन्हे विकृतरूप बना कर छोड़ दिया (सगर देखिये)।

महाभारत के अनुसार, भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय के समय, तथा नकुल ने अपने पश्चिमदिग्विजय के समय इन्हें जीतकर भेट वसूल की थी (म. स. २९.१५)। ये युधिष्ठिर राजसूय यज्ञ में भी भेंट लेकर आयें थे (म. आ. ४७.१९)।

बर्बरिक--भीमपुत्र घटोत्कच का पुत्र, जो प्रग्ज्योतिषपुर के गुरु दैत्य की कन्या मौर्वी से उत्पन्न हुआ था। 'चंडिका कृत्य' में अतिशय पराक्रम दिखाने के कारण, इसे 'चंडिल' नामांतर भी प्राप्त हुआ। श्रीकृष्ण ने स्नेहवंश इसे 'सुहृदय' नाम दिया था।

पूर्वजन्म—पूर्वजन्म में यह सूर्यवर्चस् नाम यक्ष था। एक बार दानवों के अत्याचार से पीड़ित हो कर, समस्त देव विष्णु के पास गये एवं दानवों का नाश कर पृथ्वी के भूभार हरण की प्रार्थना उन्होंने विष्णु से की। उस समय इसने अहंकार के साथ कहा, 'विष्णु की क्या आवश्यकता है, मैं अकेला सारे दैत्यों का नाश कर सकता हूँ'। इसकी यह गर्वोक्ति सुन कर ब्रह्मा ने इसे शाप दिया, 'अगले जन्म में कृष्ण के हाथों तेरा वध होगा'।

देवी उपासना—ब्रह्मा के द्वारा मिले हुए शाप का शमन करने के हेतु, अगले जन्म में कृष्ण ने इससे देवी उपासना करने के लिये उपदेश दिया। अंत में विजय नामक ब्राह्मण की कृपा से देवी को प्रसन्न कर, इसने महाजिह्वा नामक बलिष्ठ राक्षसी, तथा रेपलेंद्र राक्षस का वध किया। दुहद्रु नामक गर्दभी एवं एक जैन श्रमण का भी मुष्टिप्रहार द्वारा वध किया। विजय ने इसे शत्रु के मर्मस्थान को वेधने के लिये विभूति प्रदान की, एवं भारतीय युद्ध में कौरवों के विपक्ष में उसे प्रयोग करने के लिये कहा।

एक बार अपने पितामह भीम को न पहचान कर, इसने उसके साथ मल्लयुद्ध कर पराजित किया। बाद में पता चलने पर, आत्मग्लानि अनुभव कर यह आत्महत्त्या के लिए प्रस्तुत हुआ। तत्काल, देवी ने प्रकट हो कर कहा, 'तुम्हें कृष्ण के हाथों मर कर मुक्ति प्राप्त करनी है, अतएव यह कुकृत्य न करो'।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था, तथा कौरवपक्ष को परास्त करने के लिए इसने अपनी विभूति का प्रयोग किया था। वह विभूति पाण्डव, कृपाचार्य, एवं अश्वत्थामा को छोड कर बाकी सारे मित्रों तथा शत्रुओं के मर्मस्थान पर लगी, जिससे रणभूमि में कोलाहल मच गया। यह विभूति कृष्ण के पैर के तलवे पर भी लगी, जिससे क्रोधित हो कर कृष्ण ने सुदर्शन चक्र से इसका सर काट दिया। पश्चात् देवी ने इसे पुनः जीवित किया। भारतीय युद्ध के पश्चात्, श्रीकृष्ण के कहने पर यह 'गुप्तक्षेत्र' में जा कर निवास करने लगा (स्कंद. १.२.६०-६६)।

बर्हकेतु—दक्ष सावर्णि मनु का एक पुत्र।

बर्हणाश्व--(सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार निकुंभ राजा का पुत्र था। विष्णु, वायु तथा मत्स्य में, इसे 'संहताश्व' कहा गया है।

बर्हिन्--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के दस देवगंधर्व पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४५)

बर्हिषद्-- दैवी ज्ञाति के पितरों का एक गण, जो दक्षिण दिशा में सोमप (सोमपदा) नामक स्थान में रहता था। इसकी मानसकन्या का नाम पीवरी था (पितर देखिये)।

२. (स्वा. उत्तान.) प्राचीनबर्हि प्रजापति का नामान्तर (प्राचीनबर्हि प्रजापति देखिये)।

३. त्रिलोकी को उत्पन्न करने में समर्थ पूर्वदिशा-निवासी सप्तर्षियों में से एक (म. शां. २०८. २७-२८)। ब्रह्माजी नें इसे सात्वतधर्म का उपदेश दिया था (म. शां. ३३८. ४५-४६)।

बर्हिष्मती--स्वायंभुव मन्वंतर के प्रजापति की कन्या, जो स्वायंभुव मनु के ज्येष्ठपुत्र प्रियव्रत को विवाह में दी गयी थी (भा. ५. १. २४)।

बर्हिसादि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बल--एक असुर, जो कश्यप एवं दनायु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६५; स्कंद १.४.१४)। इसे निम्न-लिखित तीन भाई थेः--विक्षर, वीर एवं वृत्र (म. आ. ५९.३२)। यही पौंड्र देश के राजा के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.४१)।

हिरण्याक्ष की ओर से यह इंद्र के साथ युद्ध करने गया था, जिस समय इसने इंद्र को ऐरावत के साथ नीचे गिरा कर मूर्च्छित किया था। अन्त में इंद्र ने इसका वध किया (पद्म. सृ. ६७)।

२. वरुण एवं उसकी ज्येष्ठ पत्नी देवी का एक पुत्र (म. आ. ६०.५१)।

३. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो परिक्षित् एवं मंडुकराज की कन्या सुशोभना का पुत्र था। इसके शल एवं दल नामक दो भाई थे (म. व. १९०)। भागवत में दल एवं बल ये दोनो एक ही व्यक्ति माने गये है (दल १. देखिये)।

४. रामसेना का एक वानर, जो कुंभकर्ण के साथ युद्ध में उसका ग्रास बन गया था (म. व २७१. ४)।

५. वायुद्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दुसरे पार्षद का नाम अतिबल था (म. श. ४४.४०)।

६. एक प्राचीन ऋषि, जो अंगिरा का पुत्र था एवं पूर्व दिशा में निवास करता था (म. शां. २०१.२५)। इसके नाम के लिये 'नल' पाठभेद प्राप्त है।

७. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३०)।

८. एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था। दिति द्वारा सौ वर्षोंतक तप करने पर यह उत्पन्न हुआ था। बड़ा होने पर कश्यप ने इसका व्रतबंध किया, एवं इसे ब्रह्मचर्य का उपदेश दिया। पश्चात् इसने सौ वर्षों तक ब्रह्मचर्यव्रत का पालन कर घोर तपस्या की।

इसका तप समाप्त होने पर, दिति ने इसे स्वर्ग पर आक्रमण करने के लिये कहा। किन्तु कश्यप की दूसरी पत्नी अदिति को यह वृत्तांत ज्ञात होते ही उसने इंद्र को चेतावनी दी। अनंतर समुद्रकिनारे जाप करते हुए इसे देख कर, इंद्र ने वज्रप्रहार कर इसका वध किया (पद्म. भू. २३)।

९. विष्णु का एक पार्षद। वामनावतार के समय, वामनरूपधारी श्रीविष्णु ने बलि को पाताल में ढकेल दिया। तत्पश्चात् बलि के यज्ञमंडप में उसके अनुगामियों ने काफी हलचल मचा दी। उससमय उन राक्षसों का जिन विष्णुपार्षदों ने निवारण किया, उनमें यह एक था (भा. ८.२१.१६)।

१०. कुशिककुल का एक मंत्रकार, जिसे उद्गल नामांतर भी प्राप्त था।

११. वायु के अनुसार भृगुकन्या श्री का पुत्र।

१२. गरुड एवं कश्यपकन्या शुकी के छः पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

१३. अनायुषा नामक राक्षसी के पाँच पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ३.६.३१-३७)।

१४. श्रीकृष्ण एवं लक्ष्मणा के पुत्रों में से एक।

१५. बलराम का नामांतर।

१६. एक मायावी दैत्य, जो मयासुर का पुत्र था। यह अतल नामक पाताल में रहता था। इसने छियान्नवे प्रकार की 'माया' का निर्माण कर, उसे मायावी दैत्यों को दिया था, जिसका प्रयोग कर वे लोगों को त्रस्त किया करते थे।

एक बार इसने जमुहाई ली, जिससे स्वैरिणी, कामिनी तथा पुंश्चली नामक तीन प्रकार की दुश्चरित्र स्त्रियों के गण उत्पन्न हुए। उन स्त्रियों पास हाटक नामक एक ऐसा पेयपदार्थ था, जिसे पुरुषों को पिला कर एवं उन्हें कामवासना की भावना में उन्मत्त बना कर, वे संभोग करवाती थी (भा. ५.२४.१६)।

इंद्र एवं जालंधर दैत्य के बीच हुए युद्ध में, इसने जालंधर की ओर से लड़कर, युद्ध में इन्द्र के छक्के छुड़ा दिये, तथा अन्त में इन्द्र परास्त होकर इसकी शरण में

आया। इन्द्र ने बल की स्तुति की, जिससे प्रसन्न होकर इसने उससे वर माँगने को कहा। इन्द्र ने कहा 'तुम मुझे अपने शरीर का दान दो, उसे ही मैं चाहता हूँ'। बल ने कहा, 'तुम मेरे शरीर को ही चाहते हो, तो उसके टुकडे कर उसे प्राप्त करो'। फिर इन्द्र ने इसके शरीर के अनेक टुकडें कर उन्हें इधरउधर फेंक दिये। ये टुकडें जहाँ जहाँ गिरे, वही रत्नों की खाने खडी हो गयी।

इसकी मृत्यु के बाद, इसकी पत्नी प्रभावती शोक में विलाप करती हुयी असुरों के गुरु शुक्राचार्य के पास गयी, तथा उनसे सारी कथा बता कर, अपने पति के जिलाने की प्रार्थना की। शुक्राचार्य ने कहा, 'बल को जिलाना असम्भव है। मैं माया के प्रभाव से उसकी वाणी को तुम्हे अवश्य सुनवा सकता हूँ'। गुरुकृपा से प्रभावती ने बल की वाणी सुनी--'तुम मेरे शरीर में अपने शरीर को त्याग कर मुझे प्राप्त करो'। ऐसा सुन कर बल की देह में अपने शरीर को त्याग कर, प्रभावती उसीमें मिल कर नदी बन गयी (पद्म. उ. ६)।

बलक--तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

३. मणिवर एवं देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

बलद--एक अग्नि, जो भानु नामक अग्नि का जेष्ठ पुत्र था। यह प्राणियों को प्राण एवं बल प्रदान करता है।

बलन्धरा--काशिराज की कन्या, जो पांडुपुत्र भीमसेन की भार्या थी। इसके विवाह के लिये काशिराज ने यह शर्त रखी थी कि, जो अधिक बलवान् हो, वही इसके साथ विवाह कर सकता है। भीमसेन ने यह शर्त जीत ली, एवं उसका इसके साथ विवाह संपन्न हो गया। भीमसेन से इसे सर्वग नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०. ८४)।

बलबन्धु--रैवत मनु का एक पुत्र।

२. एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७७)।

३. त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

बलमित्र--एक राजा, जो वीरमणिपुत्र रुक्मांगद का मौसेरा भाई था। राम के अश्वमेध यज्ञ का अश्व वीरमणि ने पकड लिया था। उस समय हुए शत्रुघ्न एवं वीरमणि के युद्ध में, यह वीरमणि के पक्ष में शामिल था (पद्म. पा. ४०)।

बलमोदक--कुंडल नगरी का राजा सुरथ का पुत्र। राम के अश्वमेध यज्ञ का अश्व सुरथ ने पकड लिया था। उस समय हुए शत्रुघ्न एवं सुरथ के युद्ध में, यह सुरथ के पक्ष में शामिल था (पद्म. पा. ४९)।

बलराम--(सो. वृष्णि.) वसुदेव तथा रोहिणी का पुत्र, जो भगवान् श्रीकृष्ण का अग्रज, एवं शेष का अवतार था (म. आ. ६१. ९१)। भगवान् नारायण के श्वेत केश से इसका अविर्भाव हुआ था (म. आ. १८९.३१)।

वसुदेव देवकी कंस के द्वारा कारागार में बन्दी थे। उसीसमय देवकी गर्भवती हुयी, तथा बलराम उसके गर्भ में सात महीने रहा। इसके उपरांत योगमाया से यह वसुदेव की द्वितीय पत्नी रोहिणी के गर्भ में चला गया, जो उस समय गोकुल में थी। वहीं इसका जन्म हुआ (भा. ९. २४. ४६; १०. २. ८; पद्म. उ. २४५)। एक गर्भ से दूसरे गर्भ में जाने के कारण, इसे संकर्षण नाम प्राप्त हुआ।

यह देखने में अत्यंत सुन्दर था, अतएव इसे 'राम', तथा बलपौरुष के कारण 'बलराम' कहा गया। यह शत्रुओं के दमन के लिये सदैव हल तथा मूसल धारण करता था। अतएव इसे 'हली', 'हलायुध', 'सीरपाणी', 'मूसली' तथा 'मुसलायुध' भी कहते है।

बलराम कृष्ण से तीन माह बड़ा था तथा सदैव कृष्ण के साथ रहता था (म. आ. २३४)। यह बाल्यावस्था से ही परमपराक्रमी, युद्धवीर एवं साहसी था, तथा इसने धेनुक तथा प्रलंब नामक असुरों का वध किया था (म. स. परि. १. क्र. २१, पंक्ति. ८१९-८२०; विष्णु. ५. ८-९; भा. १०. १८; ह. वं. २. १४. ६२)।

यह सदैव नीलवस्त्र धारण करता था, तथा इसके शरीर में सदैव कमलों की माला रहती थी। ये सारी चीजे इसे यमुना नदी से प्राप्त हुयी थी, जिसकी कथा निम्न प्रकार से विष्णुपुराण में दी गयी है।

एक बार इसने भावातिरेक में आ कर यमुना से भोग करने की इच्छा प्रकट की। यमुना तैयार न हुयी, तब क्रोध में आ कर इसने मथुरा के पास उसका प्रवाह मोड़ दिया, जिसे विष्णु में 'यमुनाकर्ष' कहा गया है। तब यमुना ने बलराम को शरीर में धारण करने के लिए नील परिधान, तथा कमलों की माला दे कर इसे प्रसन्न किया (विष्णु. ५.२५)।

बाल्यकाल--सांदीपनि ऋषि के यहाँ कृष्ण के साथ इसने वेदविद्या, ब्रह्मविद्या तथा अस्त्रशस्त्रादि का ज्ञान प्राप्त किया। यह गदायुद्ध में अत्यधिक प्रवीण था। इसकी शक्ति-साहस के ही कारण, कृष्ण जरासंध को सत्रह बार युद्ध में

पराजित कर सका। जरासंध का वध करने के लिये, इसने तपस्या कर 'संवर्तक' नामक हल, एवं 'सौनंद' नामक मुसल प्राप्त किया था (ह. वं. २.३५.५९-६५; विष्णु. ५.२२.६-७)।

विद्याध्ययन के उपरांत, ककुद्मीकन्या रेवती से इसका विवाह हुआ, तथा अधिकाधिक यह आनर्त देश में अपने श्वसुर के यहाँ ही रहता था। जरासंध इतनी बार कृष्ण से हार चुका था, फिर भी चिन्ता का कारण बना हुआ था; अतएव कृष्ण ने मथुरा से हटकर अपनी राजधानी द्वारका बनायी।

एक बार यह नंद तथा यशोदा से मिलने के लिए गोकुल गया था, तथा वहाँ दो माह रहा भी था। यह आसवपान का बड़ा शौकीन था, अतएव इसके लिये उसकी भी व्यवस्था की गयी थी।

जल्दबाज स्वभाव--यह वीरपराक्रमी एवं अजेय था, उसी तरह यह इतना भावुक एवं जल्दबाज़ भी था कि, उतावलेपन में ऐसा कार्य कर बैठता कि, जिससे परिवार के लोक तंग आ जाते। इसमें किसी चीज़ के सोचने समझने की विवेकपूर्ण समझदारी न थी।

हस्तिनापुर में दुर्योधन की पुत्री लक्ष्मणा के विवाह के संबंध में स्वयंवर था। बलराम के भतीजे कृष्णपुत्र सांब ने स्वयंवर में जा कर, लक्ष्मणा का हरण किया। किन्तु दुर्योधन द्वारा हस्तिनापुर में दोनों पकड़ कर लाये गये। दुर्योधन कौरववंशीय होने के कारण, कभी न चाहता था कि उसकी कन्या यादववंशीय कृष्णपुत्र सांब को ब्याही जाये। उक्त घटना को सुनते ही बलराम हस्तिनापुर गया। क्रोधाग्नि में सारे कौरवपक्षीय राजाओं को इसने पराजित किया, एवं इसने हस्तिनापुर को अपने हल से खीच उसकी रचना ही घुमायी, एवं उसको तेढ़ामेढ़ा बना दिया (विष्णु. ५.३५; भा. १०.६८; लक्ष्मणा २. देखिये)। यही कारण है कि, हस्तिनापुर का धरातल आज भी ऊँचानीचा अजीब तरह का है।

यादववंशीय राजा सत्राजित् के पास स्यमंतक मणि था, जिसे कृष्ण चाहता था। पर सत्राजित् ने उसे देने से इन्कार कर दिया। उस मणि के संबंध में सत्राजित् एवं कृष्ण के दरम्यान हुए झगड़े में, बलराम ने सत्राजित् का पक्ष स्वीकार लिया, एवं लोगों के सामने कृष्ण को दोषी ठहराते हुए आरोप लगाया, 'तुम मणि के इच्छुक थे, तुमने ही स्यमंतक चुराया है'। इस घटना के कारण बलराम कृष्ण से इतना नाराज हुआ कि, बिना कुछ कहे मिथिला चला गया, एवं इसने दुर्योधन को गदायुद्ध की शिक्षा भी दी (विष्णु. ४.१३; भा. १०. ५७; सत्राजित् देखिये)। बलराम के नाराज होने की यह कथा भागवत में नहीं दी गयी है।

दुर्योधन एवं भीम उसके शिष्य थे। अतएव यह नहीं चाहता था कि, इसके दोनो शिष्य आपस में लड़कर मृत्यु को प्राप्त हो। इसी कारण भारतीय युद्ध के प्रारंभ में, जब दुर्योधन कृष्ण की मदद माँगने के लिये आया था, तब इसने कृष्ण से कहा था, 'कौरव एवं पांडव हमारे लिये एकसरीखे है। इसी कारण सहाय्यता करनी ही हो, तो वह हमने दुर्योधन की करनी चाहिए'। किन्तु कृष्ण ने इसकी बात न सुनी। इस कारण, भारतीय युद्ध के पूर्व ही, यह कृष्ण से क्रुद्ध हो कर, तीर्थयात्रा के लिये चला गया।

बलराम की तीर्थयात्रा--बलराम की तीर्थयात्रा का विस्तृत वर्णन भागवत तथा महाभारत शल्यपर्व में दिया गया है। भागवत की तीर्थयात्रावर्णन में विभिन्न प्रकार के तीर्थस्थानों का विवरण प्राप्त है।

बलराम का प्रथम संकल्प 'प्रतिलोम सरस्वती यात्रा' करने का था। इस निश्चय के अनुसार यह प्रभास, पृथूदक, बिंदुसर, त्रितकूप, सुदर्शन, विशाल, ब्रह्मतीर्थ, चक्रतीर्थ, सरस्वती, यमुना एवं गंगा नदी के तट पर स्थित तीर्थों की यात्रा कर के, नैमिषारण पहुँच गया।

नैमिषारण्य में ऋषिमुनियों की पुराणचर्चा चल रही थी। सारे मुनियों ने उत्थापन दे कर, इसके प्रति आदरभाव प्रकट किया। किन्तु पुराणचर्चा में मुख्य सूत का काम करनेवाला रोमहर्षण नामक ऋषि धर्मकार्य में व्यस्त होने के कारण, इसे उत्थापन न दे सका। इस कारण क्रोधित हो कर, शराब के नशे में इसने उसका वध किया (भा. १०. ७८. २८; रोमहर्षण देखिये)। पुराणचर्चा समारोह मे एक ही कोलाहल मच गया, एवं सारे ऋषियों ने इसे ब्रह्महत्या के पातक से दोषी ठहराया। इस पातक से छुटकारा पाने के लिये, यह ग्यारह वर्षों की यात्रा करने के लिये पुनः निकला।

मार्कंडेय के अनुसार, सूत का वध इसके द्वारा द्वारका के समीप स्थित रैवतोद्यान में हुआ (मार्क. ६. ७; ३५-३६)। किन्तु महाभारत एवं भागवत में यह वधस्थान नैमिषारण्य ही बताया गया है। यह वध बलराम के यात्रा के मध्य में हुआ, ऐसा भागवत का कथन है; किन्तु मार्कंडेय के अनुसार, यह वध बलराम के यात्रारंभ में ही हुआ था।

अपने द्वितीय यात्रा के लिये यह निकलनेवाला ही था कि, शल्य ने इसके सम्मुख आकर भीम एवं दुर्योधन के गदायुद्ध की वार्ता इसे सुनाई। अपने दो प्रियशिष्यों के युद्ध की वार्ता सुन कर, यह शीघ्र ही द्वैपायन ह्रद नामक युद्धस्थान में चला आया। इसने उस युद्ध को टालने का काफी प्रयत्न किया, किन्तु दोनो प्रतिपक्षियों ने इसकी एक न सुनी। इस पर क्रुद्ध हो कर, यह द्वारका चला गया (भा. १०.७८-७९)।

महाभारत के अनुसार, दुर्योधन एवं भीम के दरम्यान हुए गदायुद्ध में भीम ने कपट से दुर्योधन का वध किया। इस कारण बलराम भीम पर अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं भीम को मारने दौड़ा। किन्तु कृष्ण ने इसे दुर्योधन के सारे कुकृत्यों की याद दिला कर, इसका क्रोध शान्त किया (म. श. ५९. १४-१५)।

तीर्थयात्रा का द्वितीय पर्व—भागवत में इससे की गयी यात्रा के द्वितीय पर्व का सविस्तृत वर्णन प्राप्त है। उस यात्रा में इसने निम्नलिखित पवित्र स्थानों के दर्शन किये:— सरयु, हरिद्वार, गोमती, गंडकी, विपाशा, शोणभद्र, गया, परशुराम क्षेत्र, सप्तगोदावरी, वेणा, पंपा, भीमरथी, शैलपर्वत, वेंकटगिरी, कामोष्णी, कांची, कावेरी, श्रीरंग, मदुरा, सेतुबंध, कृतमाला, ताम्रपर्णी, अगस्त्याश्रम, दुर्गादेवी, अनंतपुर, पंचाप्सरा, केरल, त्रिगर्त, गोकर्ण, आर्यादेवी, शूर्पारक, तापी, पयोष्णी, निर्विंध्या, दंडकारण्य, नर्मदा, एवं मनु। इन सारे स्थानों की यात्रा समाप्त कर, यह कुरुक्षेत्र वापस आया।

श्रीकृष्ण का पौत्र अनिरुद्ध का विवाह विदर्भराजा रुक्मिन् की पौत्री रोचना से संपन्न हुआ। उस समय, रुक्मिन् ने बलराम के साथ कपट से द्यूत खेलना चाहा, एवं उसने इसकी काफी निंदा भी की। क्रोधाविष्ट हो कर, बलराम ने द्यूत का सुवर्णमय पट रुक्मिन् को मार कर, उसका वध किया (ह. वं. २. ६१; रुक्मिन् देखिये)। नरकासुर का मित्र द्विविद नामक वानर का भी इसने वध किया था (विष्णु. ५. ३६)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, इसने द्वारकापुरी में मद्यपान-निषेध की आज्ञा जारी की था (म. मौ. १.२९)। किंतु इसके अनुयायी यादवों ने इसकी एक न सुनी, एवं वे आपसमें लड़कर मर गये। इस तरह सारे यादवों का संपूर्ण विनाश होने पर, इसने प्रभास क्षेत्र में यौगिकमार्ग से देहत्याग किया (म. मौ. ५.१२-१५; भा. ११. ३०)। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसके मुख से एक विशालकाय श्वेतसर्प बाहर निकला, जिसका श्रीकृष्ण को दर्शन हुआ (म. मौ. ५.१२-१६)। इसके मृत देह पर इसकी पत्नी रेवती सती हो गयी (पद्म. उ. २५२)।

२. एक महाबली नाग (म. अनु. १३२.८)।

बलवर्धन—(सो.पूरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

बलवाक—युधिष्ठिर की मयसभा मे उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)।

बला—अत्रि की पत्नी।

बलाक—(सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पूरु राजा का, एवं वायु तथा विष्णु के अनुसार, अज राजा का पुत्र था। इसे बलाकाश्व नामांतर भी प्राप्त था (बलाकाश्व देखिये)।

२. एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से शातपूर्ण का शिष्य था। भागवत में इसे जातुकर्ण का शिष्य कहा गया हैं।

३. एक व्याध, जो जानवरों की शिकार कर अपने मातापिता एवं आश्रितों की जीविका चलाता था। एक बार इसने एक हिंसक श्वापद को मार डाला। उस श्वापद ने समस्त प्राणियों का अंत कर देने के लिये वर प्राप्त किया था, एवं इसी कारण ब्रह्मा ने उसे अंधा कर दिया था। उस श्वापद को मार देने के कारण, इस व्याध के उपर पुष्पों की वृष्टि हुई, तथा यह विमान पर बैठ कर स्वर्गलोक को चला गया (म. क. ४९.३४-४१)।

बलाकाश्व—(सो. अमा.) एक राजा, जो जन्हु का पौत्र एवं अज (सिंहद्वीप) का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कुशिक था (म. अनु. ७.४)। इसे बलाक नामांतर भी प्राप्त था (बलाक १. देखिये)।

बलाकिन्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक (म. आ. ६१. परि. १. क्र. ४१)।

२. एक ऋषि, जो अंगिराकुल का गोत्रकार था।

बलाक्ष—एक प्राचीन नरेश, जो विराट के गोग्राहण के समय अर्जुन एवं कृपाचार्य का युद्ध देखने के लिये, इंद्र के विमान पर बैठ कर आया था (म. वि. ५९.९)।

बलाढ्य—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

बलानीक—द्रुपद राजा का एक पुत्र, जो अश्वत्थामा द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३१.१२७)।

२. मत्स्यराज विराट का भाई, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३५)।

बलायु--पुरूरवस् को ऊर्वशी से उत्पन्न आठ पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. १२)।

बलारक—अत्रिकुल के मंत्रकार वल्गूतक का नामांतर (वल्गूतक देखिये)।

बलाश्व—(सू. दिष्ट.) खनिनेत्रपुत्र करंधम राजा का मूल नाम (मार्के. ११८. ७)। इसके पुत्र का नाम अविक्षित् था।

बलाहक—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

२. एक राजा, जो जयद्रथ का भाई था। इसके पिता का नाम वृद्धक्षत्र था (म. व. २४९. १२)।

३. एक राजा, जिसे शिव ने गोवत्स के रूप में दर्शन दिया था। पश्चात् गोवत्स के दर्शन के स्थान पर एक दिव्य शिवलिंग उत्पन्न हुआ, एवं वह अणुप्रमाण में दिन बदिन परिवर्धित होने लगा। किन्तु एक कर्मचांडाल उसके दर्शन के लिये आते ही, उसका वर्धन स्थगित हुआ (स्कंद. ३. २. २७)।

४. श्रीकृष्ण के रथ का एक अश्व, जो दाहिने पार्श्व में जोता जाता था (म. वि. ४०.२१)।

बलि—एक सुविख्यात असुर, जो वामनावतार में श्रीविष्णु द्वारा पाताल में ढकेल दिया गया था (बलि वैरोचन देखिये)।

२. अनु देश का सुविख्यात राजा (बलि आनव देखिये)।

३. युधिष्ठिर के सभा का एक ऋषि, जो जितेंद्रिय तथा वेदवेदाङ्गों में पारंगत था। इसने युधिष्ठिर को अनेक पुण्यकारक गाथाएँ सुनाई थी (म. स. ४. ८)। हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में इसकी श्रीकृष्ण से भेंट हुयी थी (म. उ. ८१.३८८*)।

४. एक शिवावतार, जो वाराहकल्प में से वैवस्वत मन्वन्तर की तेरहवी चौखट में उत्पन्न हुआ था। इसका अवतार गंधमादन पर्वत पर स्थित वालखिल्याश्रम में हुआ था। इसके सुधामन्, काश्यप, वसिष्ठ तथा विरजस् नामक चार पुत्र थे (शिव. शत. ५)।

५. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार आंध्र वंश का पहला राजा था। इसे शिप्रक, शिशुक एवं सिंधुक नामान्तर भी प्राप्त थे।

६. सावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

७. (सो. यदु.) एक यादव राजा, जो कृतवर्मन् का पुत्र था। रुक्मिणी की कन्या चारुमती इसकी पत्नी थी (भा. १०.६१. ४)।

८. अत्रिकुल का एक गोत्रकार।

९. आंगिरसकुल का एक गोत्रकार।

१०. रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

बलि आनव--(सो. अनु.) पूर्व आनव प्रदेश का सुविख्यात राजा, जो सुतपस् राजा का पुत्र था। यह इक्ष्वाकुवंशीय सगर राजा का समकालीन था। आनव प्रदेश शुरु में आधुनिक मोंघीर तथा भागलपुर प्रान्तों में सीमित था। किन्तु अपने पराक्रम के कारण, इसने अपना साम्राज्य काफी बढ़ा कर, पूर्व हिंदुस्थान का सारा प्रदेश उसमें समाविष्ट कराया।

हरिवंश के अनुसार, पूर्वजन्म में वह बलि वैरोचन नामक सुविख्यात दैत्य था। अपनी प्रजा में यह अत्यंत लोकप्रिय था, एवं उन्हींके अनुरोध पर इसने अगले जन्म में बलि आनव नाम से पुनः जन्म लिया।

इसने ब्रह्मा की कठोर तपस्या की थी, जिस कारण ब्रह्मा ने इसे वर दिये, 'तुम महायोगी बन कर कल्पान्त तक जीवित रहोगे। तुम्हारी शक्ति अतुल होगी, एवं युद्ध में तुम सदा ही अजेय रहोगे। अपनी प्रजा में तुम लोकप्रिय रहोगे, एवं लोग सदैव तुम्हारी आज्ञा का पालन करेंगे। धर्म के सारे रहस्य तुम्हे ज्ञात होंगे, एवं तुम्हारे धर्मसंबंधी विचार धर्मविज्ञों में मान्य होंगे। धर्म को सुसंगठित रूप दे कर, तुम अपने राज्य में चातुर्वर्ण्य की स्थापना करोगे' (ह. वं. १. ३१. ३५-३९)।

इसकी पत्नी का नाम सुदेष्णा था। काफी वर्षों तक इसे पुत्र की प्राप्ति न हुयी थी। फिर दीर्घतमस् औचथ्य मामतेय नामक ऋषि के द्वारा इसने सुदेष्णा से पाँच पुत्र उत्पन्न कराये (दीर्घतमस् देखिये)। दीर्घतमस् ऋषि से उत्पन्न इसके पुत्रो के नाम निम्न थेः—अंग, वंग, कलिंग, पुंड्र एवं सुह्म (ब्रह्मांड. ३.७)। भागवत में इसके आंध्र नामक और एक पुत्र का निर्देश किया गया है (भा. ९. २३)। हरिवंश में सुह्म के बदले सुस नामान्तर प्राप्त है (ह. वं. १.३१)। इसके वंशजों को 'बालेय क्षत्र' अथवा 'बालेय ब्राह्मण' सामूहिक नाम प्राप्त था (मत्स्य. ४८.२५; विष्णु. ४.१८.१; ब्रह्म. १३.३१; ह. वं. १.३१ ३४-३५)। इसके द्वारा स्थापित किये हुए वंश को आनव वंश कहते है।

अपने कल्प के अन्त में, देहत्याग कर यह स्वर्गलोक चला गया। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसका साम्राज्य इसके पुत्रों में बाँट दिया गया। जिस पुत्र को जो राज्य मिला, उसीके नाम पर उस राज्य का नामरण हुआ (भा. ९.

२३; म. आ. ९२.१०४२*)। इसके पुत्रों को प्राप्त राज्यों की जानकारी निम्न प्रकार हैः—

(१) अंग—अंगदेश (आधु. भागलपुर एवं मोंघीर इलाका)।

(२) वंग—वंगदेश (आधु. ढाका एवं चितगाँव इलाका)।

(३) कलिंग—कलिंग देश (आधु. उडीसा राज्य में से समुद्र तटपर स्थित प्रदेश)।

(४) पुंड्र—पुंड्र देश (आधु. उत्तर बंगाल प्रदेश)।

(५) सुह्म—सुह्मदेश (आधु. बर्दवान इलाका)।

यह एवं असुर राजा बलि वैरोचन सरासर अलग थे। किन्तु कई पुराणों में असावधानी से इन्हे एक व्यक्ति मान कर, बलि आनव को 'दानव' एवं 'वैरोचन' कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७४.६६; मत्स्य. ४८.५८)। किन्तु पुराणों में प्राप्त वंशावलियों में इसे स्पष्ट रूप से आनव कहा गया है, एवं इसकी वंशावलि भी आनव नाम से ही दी गयी है।

बलि वैरोचन—एक सुविख्यात विष्णुभक्त दैत्य, जो प्रह्लाद का पौत्र एवं विरोचन का पुत्र था। इसकी माता का नाम देवी था (म. आ. ५९.२०; स. ९.१२; शां. २१८.१; अनु. ९८; भा. ६.१८.१६; ८.१३. वामन. २३.७७)। स्कंद में इसकी माता का नाम सुरुचि दिया गया है (स्कंद. १.१.१८)। विरोचन का पुत्र होने से, इसे 'वैरोचन' अथवा 'वैरोचनि' नामान्तर प्राप्त थे। इसे महाबलि नामांतर भी प्राप्त था, एवं इसकी राजधानी महाबलिपुर में थी।

'आचाररत्न' में दिये गये सप्तचिरंजीव पुण्यात्माओं में बलि का निर्देश प्राप्त है (आचार. पृ. १०)। बाकी छः चिरंजीव व्यक्तिओं के नाम इस प्रकार हैः—अश्वत्थामन्, व्यास, हनुमान्, बिभीषण, कृप, परशुराम, (मार्कंडेय)।

बलिकथा का अन्वयार्थ—बलि दैत्यों का राजा था (वामन. २३)। दैत्यराज होते हुए भी, यह अत्यंत आदर्श, सत्त्वशील एवं परम विष्णुभक्त सम्राट था (ब्रह्म. ७३; कूर्म. १.१७; वामन. ७७–९२)।

दैत्यलोग एवं उनके राजा पुराण एवं महाभारत में बहुशः असंस्कृत, वन्य एवं क्रूर चित्रित किये जाते है। बाण, गयासुर एवं बलि ये तीन राजा पुराणों में ऐसे निर्दिष्ट है कि, जो परमविष्णुभक्त एवं शिवभक्त होते हुए भी, देवों ने उनके साथ अत्यंत क्रूरता का व्यवहार किया, एवं अंत में अत्यंत निर्घृणता के साथ उनका नाश किया। डॉ. राजेंद्रलाल मित्र, डॉ. वेणिमाधव बारुआ आदि आधुनिक विद्वानों ने पुराणों में निर्दिष्ट इन असुरकथाओं के इस विसंगति पर काफि प्रकाश डाला है। संभव यही है कि, देव एवं दैत्यों का प्राचीन विरोध सत् एवं असत् का विरोध न होकर, दो विभिन्न ज्ञाति के लोगों का विरोध था, एवं बलि, बाण एवं गयासुर केवल देवों के विपक्ष में होने के कारण देवों ने उनका नाश किया हो।

स्वर्गप्राप्ति—एक बार श्रीविष्णु ने किंचित्काल के लिये देवों के पक्ष का त्याग किया। यह सुसंधी जान कर, दैत्यगुरु शुक्राचार्य ने बलि को देवों पर आक्रमण करने की प्रेरणा दी। तदनुसार बलि ने स्वर्गपर आक्रमण किया, एवं देवों के छक्के छुड़ा दिये। बलि से बचने के लिये, देवों अपने मूल रूप बदल कर स्वर्ग से इतस्ततः भाग गये। किन्तु वहाँ भी बलि ने उनका पीछा किया, एवं उनको संपूर्णतः हराया।

पश्चात् बलि ने अपने पितामह प्रह्लाद को बड़े सम्मान के साथ स्वर्ग में आमंत्रित किया, एवं उसे स्वर्ग में अत्यधिक श्रेष्ठता का दिव्य पद स्वीकारने की प्रार्थना की। प्रह्लाद ने बलि के इस आमंत्रण का स्वीकार किया, एवं बलि को स्वर्ग के राज्यपद का अभिषेक भी कराया। अभिषेक के पश्चात्, बलि ने प्रह्लाद की आशिश माँगी एवं स्वर्ग का राज्य किस तरह चलाया जाय इस बारे में उपदेश देने की प्रार्थना की। प्रह्लाद ने इस उपदेश देते हुए कहा, 'हमेशा धर्म की ही जीत होती है, इस कारण तुम धर्म से ही राज्य करो' (वामन. ७४)।

प्रह्लाद के उपदेश के अनुसार, राज्य कर, बलि ने एक आदर्श एवं प्रजाहितदक्ष राजा ऐसी कीर्ति त्रिखंड में संपादित की (वामन. ७५)।

समुद्रमंथन—एकबार बलि ने इंद्र की सारी संपत्ती हरण की, एवं उसे यह अपने स्वर्ग में ले जाने लगा। किन्तु रास्ते में वह समुद्र में गिर गयी। उसे समुद्र से बाहर निकलाने के लिये श्रीविष्णु ने समुद्रमंथन की सूचना देवों के सम्मुख प्रस्तुत की। समुद्रमंथन के लिए बलि का सहयोग पाने के लिये सारे देव इसकी शरण में आ गये। बलि के द्वारा इस प्रार्थना का स्वीकार किये जाने पर, देव एवं दैत्यों ने मिल कर समुद्रमंथनसमारोह का प्रारंभ किया (भा. ८. ६; स्कंद. १. १. ९)।

बलि के विगत संपत्ति को पुनः प्राप्त करना, यह देवों की दृष्टि से समुद्रमंथन का केवल दिखावे का कारण था। उनका वास्तव उद्देश तो यह था कि, उस मंथन से

अमृत प्राप्त हो एवं उसकी सहाय्यता से देवदैत्यसंग्राम में देवपक्ष विजय प्राप्त कर सके। दैत्यपक्ष के पास 'मृत-संजीवनी विद्या' थी, जिसकी सहाय्यता से युद्ध में मृत हुए सारे असुर पुनः जीवित हो सकते थे। देवों के पास ऐसी कौनसी भी विद्या न होने के कारण, युद्ध में वे पराजित होते थे। इसी कारण देवों ने समुद्रमंथन का आयोजन किया, एवं उसके लिए दैत्यों का सहयोग प्राप्त किया। समुद्रमंथन का यह समारोह चाक्षुषमन्वन्तर में हुआ, जिस समय मंत्रद्रुम नामक इंद्र राज्य कर रहा था (भा. ८. ८; विष्णु. १. ९; मत्स्य, २५०-२५१)।

समुद्रमंथन का समारोह एकादशी के दिन प्रारंभ हो कर द्वादशी के दिन समाप्त हुआ। एकादशी के दिन, उस मंथन से सर्व प्रथम 'कालकूट' नामक विष उत्पन्न हुआ, जिसका शंकर ने प्राशन किया। पश्चात् अलक्ष्मी नामक भयानक स्त्री उत्पन्न हुई, जिसका विवाह श्रीविष्णु द्वारा उद्दालक नामक ऋषि के साथ किया गया। तत्पश्चात् ऐरावत नामक हाथी, उच्चैःश्रवस् नामक अश्व एवं धन्वन्तरि, पारिजातक, कामधेनु, तथा अप्सरा इन रत्नों का उद्भव हुआ। द्वादशी के दिन लक्ष्मी उत्पन्न हुई, जिसका श्रीविष्णु ने स्वीकार किया। तत्पश्चात् चंद्र एवं अमृत उत्पन्न हुए। अमृत से ही तुलसी का निर्माण हुआ (पद्म. ब्र. ९. १०)।

समुद्रमंथन से प्राप्त रत्न—समुद्रमंथन से निर्माण हुए रत्नों के नाम, संख्या एवं उनका क्रम के बारे में पुराणों में एकवाक्यता नहीं है। एक स्कंदपुराण में ही इन रत्नों के नाम एवं क्रम निम्नलिखित दो प्रकारों में दिये गये हैं:—

१. लक्ष्मी, २. कौस्तुभ, ३. पारिजातक, ४. धन्वन्तरि, ५. चंद्रमा, ६. कामधेनु, ७. ऐरावत, ८. अश्व (सप्तमुख), ९. अमृत, १०. रम्भा, ११. शार्ङ्ग धनुष्य, १२. पांचजन्य शंख, १३. महापद्मनिधि तथा, १४. हालाहलविष (स्कंद. ५. १. ४४)।

१. हालाहलविष, २. चंद्र, ३. सुरभि धेनु, ४. कल्पवृक्ष, ५. पारिजातक, ६. आम्र, ७. संतानक, ८. कौस्तुभ रत्न (चिंतामणि), ९. उच्चैःश्रवस्, १०. चौसष्ट हाथियों के समूह के साथ ऐरावत, ११. मदिरा, १२. विजया, १३. भंग, १४. लहसुन, १५. गाजर, १६. धतूरा, १७. पुष्कर, १८. ब्रह्मविद्या, १९. सिद्धि, २०. ऋद्धि, २१. माया, २२. लक्ष्मी, २३. धन्वन्तरि, २४. अमृत (स्कंद. १. १. ९-१२)।

महाभारत एवं मत्स्य में निम्नलिखित केवळ सात रत्नों का निर्देश प्राप्त है:—सोम, श्री (लक्ष्मी), सुरा, तुरग, कौस्तुभ, धन्वन्तरि, एवं अमृत (म. आ. १६. ३३-३७; मत्स्य. २५०-२५१)।

इंद्र-बलि संग्राम—समुद्रमंथन हुआ, किंतु राक्षसों को कुछ भी प्राप्त न हुआ। अतएव राक्षसों ने संघठित हो कर देवों पर चढाई कर दी। देवों-दैत्यों के इस भीषण युद्ध में बलि ने अपनी राक्षसी माया से इंद्र के विरोध में ऐसा युद्ध किया कि, उसके हारने की नौबत आ गयी। इस युद्ध में इसने मयासुर द्वारा निर्मित 'वैहानस' विमान का प्रयोग किया। इंद्र की शोचनीय स्थिति देख कर विष्णु प्रकट हुए, तथा उन्होंने बलि के मायावी जाल को काट फेंका। पश्चात् बलि इंद्र के वज्रद्वारा मारा गया। बलि के मर जाने पर, नारद की आज्ञानुसार, इसका मृत शरीर अस्ताचल ले जाया गया, जहाँ पर शुक्राचार्य के स्पर्श तथा मंत्र से यह पुनः जीवित हो उठा (भा. ११. ४६-४८)।

इंद्रपदप्राप्ति—बलि के जीवित हो जाने पर शुक्राचार्य ने विधिपूर्वक इसका ऐन्द्रमहाभिषेक किया, एवं इससे विश्वजित् यज्ञ भी करवाया। पूर्णरूपेण राज्यव्यवस्था को अपने हाथ ले कर इसने सौ अश्वमेध यज्ञ भी किये (भा. ८.१५.३४)।

विश्वजित् यज्ञ के उपरांत यज्ञदेव ने प्रसन्न हो कर, इसे इंद्ररथ के समान दिव्य रथ, सुवर्णमय धनुष, दो अक्षय तूणीर तथा दिव्य कवच दिये। इसके पितामह प्रह्लाद ने कभी न सूखनेवाली माला दी। शुक्राचार्य ने एक दिव्य शंख, तथा ब्रह्मदेव ने भी एक माला इसे अर्पित की (म. शां. २१६.२३)।

प्रह्लाद के द्वारा शाप—इसप्रकार सारी स्वर्गभूमि बलि के अधिकार में आ गयी। देवतागण भी निराश हो कर देवभूमि छोड़ कर अन्यत्र चले गये।

इसके राज्य में सुख सभी को प्राप्त हुआ, किन्तु ब्राह्मण एवं देव उससे वंचित रहे। उन्हें विभिन्न प्रकार के कष्ट दिये जाने लगे, जिससे ऊब कर वे सभी विष्णु से फरियाद करने के लिए गये। सब ने विष्णु से अपनी दुःखभरी व्यथा कह सुनाई। विष्णु ने कहा, 'बलि तो हमारा भक्त है, पर तुम्हारे असहनीय कष्टों को देख कर, उनके निवारणार्थ में शीघ्र ही वामनावतार लूँगा' (ब्रह्म. ७३)।

धीरे धीरे बलि के राज्य की व्यवस्था क्षीण होने लगी। राक्षसों का बल घटने लगा। एकाएक इस गिरावट को देख कर, बलि अत्यधिक चिंतत हुआ, तथा इस विचित्र परिवर्तन का कारण जानने के हेतु प्रह्लाद के पास गया। कारण पूँछने पर प्रह्लाद ने बताया 'भगवान विष्णु वामनावतार लेने के लिए आदिति के गर्भ में वासी हो गये हैं, यही कारण है कि तुम्हारा आसुरी राज्य दिन पर दिन रसातल को जा रहा है'। प्रह्लाद के बचनों को सुन कर इसने तत्काल उत्तर दिया, 'उस हरि से हमारे राक्षस अधिक बली है'। बलि की इस अहंकारभरी वाणी को सुन कर प्रह्लाद ने क्रोधित हो कर शाप दिया 'तुम्हारा राज्य नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा'। प्रह्लाद की वाणी सुन कर यह आतंकित हो उठा तथा, तुरंत क्षमा माँगते हुए उसकी शरण में आया। किंतु प्रह्लाद ने इससे कहा, 'मेरी शरण में नही, तुम विष्णु की ही शरण जाओ, वही तुम्हारा कल्याण निहित है' (वामन. ७७)।

वामन को दान—नर्मदा के उत्तरी तट पर स्थित भृगुकच्छ नामक प्रदेश में जब इसका अन्तिम अश्वमेध यज्ञ चल रहा था, तब एक ब्राह्मणवेषधारी बालक के रूप में वामन भगवान् ने प्रवेश किया। बलि ने वामन का आदरसत्कार कर उनकी पूजा की, तथा कुछ माँगने के लिए प्रार्थना की (भा. ८. १८. २०-२१)। वामन ने इससे तीन पग भूमि माँगी। शुक्राचार्य ने यह देख कर बलि को तुरन्त समझाया, 'यह ब्राह्मण बालक और कोई नहीं, स्वयं वामनावतारधारी विष्णु हैं। तुम इन्हें कुछ भी न दो'। किन्तु बलि ने गुरु की वाणी की उपेक्षा करते हुए कहा, 'नहीं! मैं अवश्य दूँगा! जब प्रत्यक्ष ही परमेश्वर मेरे द्वार पर अतिथि रूप से आया है, तो मैं उसे अवश्य ही इच्छित वस्तु प्रदान करूँगा (वामन. ९१)।

बलि की इस प्रकार की वाणी सुन कर, शुक्र ने क्रोधित हो कर शाप दिया, 'बलि! तुमने मेरी उपेक्षा की है, मेरे आज्ञा की अवहेलना की है। तुम अपने को अत्यधिक बुद्धिमान् समझते हो। तुम्हारा यह ऐश्वर्य, यह राजपाट नष्ट-भ्रष्ट हो जाये'।

वामन भगवान् ने इसकी तथा इसके पूर्वजों की यशगाथा का गान किया, और बलि ने उसे तीन पग भूमि दान देने के लिए मंत्र पढ़ते हुए अर्घ्य दिया। हाथों पर जल छोड़ते ही वामनरूपधारी विष्णु ने विशाल रूप धारण कर प्रथम पग में पृथ्वी, द्वितीय में स्वर्गलोक नापते हुए, इससे प्रश्न किया कि, तीसरा पैर किधर रखूँ (म. स. परि. १ क्र. २१. पंक्ति. ३३४-३३५)।

बलि को वामन द्वारा इस प्रकार ठगा जाना देख कर इसके सैनिकों ने उद्यत हो कर उस पर आक्रमण करने लगे। किन्तु इसने उन्हें समझाते हुए कहा, 'हमारा अन्तिम समय आ गया है, जो हो रहा है उसे होने दो'। पश्चात् वरुण ने विष्णु की इच्छा जान कर, इसे वरुणपाश में बाँध लिया (वामन. ९२)।

वामन द्वारा तीसरे पग के लिए भूमि माँगे जाने पर, गुरु शुक्राचार्य ने एक बार फिर बलि को दान के लिए रोका, पर बलि न माना। यह देख कर अर्घ्यदान देनेवाले पात्र के अन्दर शुक्र ऐसा बैठ गया कि, जिससे दान देते समय उस पात्र से जल न निकल सके। बलि को शुक्र की यह बात मालूम न थी। जैसे ही पात्र की टोंटी से जल न गिरा, यह कुश के अग्रभाग से उसे साफ करने लगा जिससे शुक्राचार्य की एक आँख फूट गयी और तब से शुक्राचार्य को 'एकाक्ष' नाम प्राप्त हुआ (नारद. १.११)।

बलिबंधन—पश्चात् वामन ने कहा, 'तुमने तीसरे पग की जमीन दे कर अपने बचनों का पालन नहीं किया है। यह सुन कर बलि ने उत्तर दिया 'तुमने कपट के साथ मेरे साथ व्यवहार किया है, पर मैं अपना वचन निभाऊंगा। भूमि तो बाकी नहीं बची; मैं अपना मस्तक बढाता हूँ, उसमें अपना तीसरा पग रख कर, इच्छित वस्तु प्राप्त करो' (पद्म. पा. ५३)।

बलि की यह स्थिति देख कर इसकी स्त्री विंध्यावली ने वामन भगवान् से बलि के उद्धार के लिए प्रार्थना की। विंध्यावली की भक्तिपूर्ण मर्मवाणी को सुन कर विष्णु प्रसन्न हो कर वर देते हुए कहा 'तुम अभी पाताल लोक में निवास करो, वहाँ मैं तुम्हारा द्वारपाल बनूँगा, मेरा सुदर्शन चक्र सदैव तुम्हारी रक्षा करेगा। आगे चल कर सावर्णि मन्वन्तर में तुम इन्द्र बनोगे'।

उक्त घटना कृतयुग के पूर्व काल की है। वह दिन कार्तिक शुद्ध प्रतिपदा का था, जब बलि ने वामन को दान दिया था। इस लिए उस दिन को चिरस्मरणीय रखने के लिये वामन ने बलि को वर दिया, 'यह पुण्यदिन 'बलि प्रतिपदा' के नाम से विख्यात होगा, और इस दिन लोग तुम्हारी पूजा करेंगे' (स्कंद. २४.१०)।

इसके पश्चात्, वामन ने इसे वरुण पाश से मुक्त किया, और बलि ब्रह्मा, विष्णु, महेश को नमस्कार कर,

पाताललोक चला गया। बलि के जाने के उपरांत विष्णु ने शुक्राचार्य को आदेश दिया कि वह यज्ञ के कार्य को विधिपूर्वक समाप्त करें (भा. ८.१५-२३; म. स. परि. १. क्र. २१; वामन ३१; ब्रह्म. ७३)। वामन ने बलि का राज्य मन पुत्रों को देख कर, पृथ्वी एवं स्वर्ग को दैत्यों से मुक्त कराया (स्कंद. ७.२.१९)।

विष्णुद्वारा, बलि के 'पातालबंधन' की पुराणों में दी गयी कथा ऐतिहासिक, एवं काफी प्राचीन प्रतीत होती है। पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में इस कथा का निर्देश प्राप्त हैं (पा. सू. ३.१.२६)। पतंजलि के अनुसार बलि का पातालबंधन काफी प्राचीन काल में हुआ था; फिर भी उसका निर्देश महाभाष्यकाल में 'बलिम् बन्धयति' इस वर्तमानकालीन रूप में किया जाता था।

रावण का गर्वहरण—वाल्मीकि रामायण में बलि के पाताल निवास की एक रोचक कथा दी गयी है, जो द्रष्टव्य है। एक बार रावण ने इसके पास आ कर कहा, 'मैं तुम्हारी मुक्ति के लिये आया हूँ, तुम हमारी, सहायता प्राप्त कर, विष्णु के बन्धनों से मुक्त हो सकते हो। यह सुन कर बलि ने अग्नि के समान चमकनेवाले दूर पर रक्खे हुए हिरण्यकशिपु के कुंडल उठा कर लाने के लिये रावण से कहा। रावण ने उस कुण्डल को उठाना चाहा, पर बेहोश हो कर गिर पडा, तथा मुँह से खून की उल्टियाँ करने लगा। बलि ने उसे होश में ला कर समझाते हुए कहा, 'यह एक कुण्डल है, जिसे मेरा प्रपितामह हिरण्यकशिपु धारण करता था।' उसे तुम उठा न सके। महान् पराक्रमी भगवान् विष्णु द्वारा ही हिरण्यकशिपु मारा गया, तथा उसी विष्णु को किस बल से चुनौती दे कर तुम मुझे मुक्त कराने आये हो। वह विष्णु परमशक्तिमान् एवं सब का मालिक है'। ऐसा कह कर इसने उसे विष्णुलीला का वर्णन सुनाया (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त सर्ग १)।

आनंद रामायण में इसी प्रकार की एक और कथा दी गयी है। एक बार रावण बलि को अपने वश में करने के लिए पाताललोक गया। वहाँ बलि अपनी स्त्रियों के साथ पाँसा खेल रहा था। किसी ने रावण की ओर गौर किया। एकाएक एक फाँसा उछल कर दूर गिरा, तब इसने उस फाँसे को उठाने के लिये रावण से कहा। रावण ने फाँसा उठा कर देना चाहा, पर उसे हिला तक सका। तब वहाँ पर फाँसा खेलती हुयी स्त्रियों ने रावण का ऐसा उपहास किया कि, यह वहाँ से चम्पत हो गया (आ. रा. सार. १३)।

महाभारत के अनुसार राज्य से च्युत किये जाने पर बलि को गर्दभयोनि प्राप्त हुयी, एवं यह इधर उधर भटकने लगा। ब्रह्मदेव ने बलि को ढूँढ़ने के लिए इन्द्र से कहा, तथा आदेश दिया की इसका वध न किया जाये।

महाभारत में यह भी कहा गया है कि, इसने ब्राह्मणों से मदपूर्ण अनुचित व्यवहार किया, इसी लिए लक्ष्मी ने इसका परित्याग किया (म. शां. २१६. २१८)। योगवसिष्ठ जैसे वेदान्त ग्रन्थों में भी अनासक्ति का प्रतिपादन करने के लिए, इसकी कथा दृष्टान्तरूप में दी गयी है (यो. वा. ५.२२.२९)।

महाभारत के अनुसार, अपनी मृत्यु के पश्चात् बलि वरुणसभा में अधिष्ठित हो गया (म. स. ९. १२)। स्कंद पुराण में बाष्कलि नामक एक दैत्य की एक कथा दी गयी है, जो बलि के जीवनी से बिलकुल मिलती जुलती है (स्कंद. १. १. १८; बाष्कलि देखिये)। उसी पुराण में इसके पूर्वजन्म की कहानी दी गयी है, जिसके अनुसार पूर्वजन्म में इसे कितव बताया गया हैं। भागवत में एक स्थान पर इसे 'इंद्रसेन उपाधि से विभूषित किया गया है (भा. ८. २२. ३३)।

संवाद—यह बड़ा तत्त्वज्ञानी था। तत्त्वज्ञान के संबंध में इसके अनेक संवाद महाभारत तथा पुराण में प्राप्त हैं। राजा अपनी राजलक्ष्मी किस प्रकार खो बैठता है, उसके संबंध में बलि तथा इंद्र का संवाद हुआ (म. शां. २१६)। इसके पितामह प्रह्लाद से 'क्षमा श्रेष्ठ अथवा तेज श्रेष्ठ' पर इसका संवाद हुआ (म. व. २९)। दैत्यगुरु शुक्र से इसका 'उपासना में पुष्प तथा धूप-दीप' के बारे में संवाद हुआ (म. अनु. ९८)।

परिवार—बलि की कुल दो पत्नियाँ थी :—(१) विंध्यावलि (भा. ८.२०.१७; मत्स्य १८७.४०); (२) अशना, जिससे इसे बाण प्रभृति सौ पुत्र उत्पन्न हुये थे (भा. ६.१८.१७, विष्णु. १.२१.२)। भागवत में इसकी कोटरा नामक और एक पत्नी का निर्देश प्राप्त है, जिसे बाणासुर की माता कहा गया है (भा. १०.६३.२०)।

बलि के सौ पुत्रों में निम्नलिखित प्रमुख थे :—
बाण (सहस्रबाहु), कुंभगर्त (कुंभनाभ), कुष्मांड, मुर, दय, भोज, कुंचि (कुशि), गर्दभाक्ष (वायु. ६७.८२-८३)। महाभारत में केवल बलिपुत्र बाण का निर्देश प्राप्त है (म. आ. ५९.२०)।

बलि की कन्याओं में निम्नलिखित प्रमुख थीः—शकुनी, पूतना (वायु. ६७.८२-८३; ब्रह्मांड. ३.५. ४२-४४)।

बलि के वंशज इस अर्थ से 'बालेय' नाम का प्रयोग पुराणों में प्राप्त है। किंतु वहाँ बलि वैश्वानर एवं बलि आनव इन दोनों में से किस के वंशज निश्चित अभिप्रेत है, यह कहना मुष्किल है (बलि आनव देखिये)।

बलि की उपसनाः--श्रद्धारहित हो कर एवं दोषदृष्टि रखते हुए जो दान किया जाता है, उस निकृष्ट जाति के दान में से कई भागों का स्वामी बलि माना जाता है (म. अनु. ९०.२०)। देवीभागवत के अनुसार कौनसा भी धर्मकर्म दक्षिणा के सिवा किया जाये, तो वह देवों तक न पहुँच कर बलि उसका स्वामी बन जाता है। उसी तरह निम्नलिखित हीनजाति के धर्मकृत्यों का पुण्य उपासकों के बदले बलि को प्राप्त होता हैः--श्रद्धारहित दान, अधम ब्राह्मण के द्वारा किया गया यज्ञ, अपवित्र पुरुष का पूजन, अश्रोत्रिय के द्वारा किया गया श्राद्धकर्म, शूद्र स्त्री से संबंध रखनेवाले ब्राह्मण को किया हुआ द्रव्यदान, अश्रद्ध शिष्य के द्वारा की गयी गुरुसेवा (दे. भा. ९.४५)।

बलिप्रतिपदा के दिन बलि की उपासना जाती है। यह उपासना बहुशः राजाओं द्वारा की जाती है, एवं वहाँ बलि, उसकी पत्नी विंध्यावलि एवं उसके परिवार के कुम्मांड, बाण, मुर आदि असुरों के प्रतिमाओं की पूजा बड़े ही भक्तिभाव से की जाती है। उस समय निम्नलिखित बलिस्तुति का पाठ ही भक्तिभाव से किया जाता हैः--

बलिराज नमस्तुभ्यं विरोचनसुत प्रभो।
भविष्येंद्र सुराराते पूजेयं प्रतिगृह्यताम्।

(भविष्योत्तर. १४०. ५४; पद्म. उ. १३४. ५३)

बलिभद्र--रुद्र गणों में से एक।

बलिवाक--युधिष्ठिर के मयसभा का एक ऋषि (म. स. ४. १२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'बल्वाक'।

बलिविंध्य--एक राजा, जो रैवत मनु का पुत्र था।

बलीह--एक क्षत्रियकुल, जिसमें अर्कज नामक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२. २०)। उस राजा के कारण, इस कुल का नाश हुआ।

बलेक्षु--एक गोत्रकार ऋषिगण, जो वसिष्ठ कुल में उत्पन्न हुआ था। इसके नाम के लिये 'दलेशु' पाठभेद प्राप्त है।

बलोत्कटा--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. २२)।

बलोन्मत्त--रुद्रगणों में से एक।

बल्गुतक--अत्रिकुल के मंत्रकार 'वल्गूतक' का पाठभेद (वल्गूतक देखिये)।

बल्बूथ--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक दानशूर पुरुष, जिसने तरुक्ष एवं पृथुश्रवस् के साथ अनेक गायकों को उपहार प्रदान किये थे (ऋ. ८.४६.३२)। वश अश्व्य नामक ऋषि ने इसके द्वारा दिये दिये दानों का गौरवपूर्ण उल्लेख किया है।

ऋग्वेद में इसे एक दास कहा गया है, किन्तु रोथ के अनुसार, यह स्वयं दास न हो कर इसके द्वारा किये गये एक सौ दासों के दान का उल्लेख वहाँ अभिप्रेत है। त्सिमर के अनुसार यह स्वयं एक आदिवासी अथवा आदिवासी माता का पुत्र था (आल्टिन्डिशे लेबेन ११७)।

बल्लव--अज्ञातवास के समय पाण्डुपुत्र भीमसेन का सांकेतिक नाम, जिसका व्यवसाय सूपान (पाककर्ता) बताया गया है (म. वि. २. १)।

बल्लाल--गणेश का परमभक्त, जो कल्याण नामक वैश्य का पुत्र था। अपने बाल्यकाल से श्रीगणेश की पूजा यह करता था। छोटे छोटे पत्थरों को एकत्र कर एवं उन्हे गणेश मान कर यह उनकी पूजा करता था।

इसके मातापिता ने इसे गणेश की पूजा से परावृत्त करने के काफी प्रयत्न किये। किंतु वे सारे असफल हुए। एक बार उन्हों ने इसे पेड़ पर उलटा टाँग कर काफी पीटा। फिर भी इसने अपनी गणेशभक्ति न छोड़ी। अंत में, जिस स्थान पर यह गणेश की पूजा करता था, वहाँ बल्लालेश्वर अथवा बल्लालविनायक नामक गणेश का स्वयंभु स्थान का निर्माण हुआ (गणेश. १.२२)।

बल्वल--एक दानव, जो विप्रचित्ति दानव का पौत्र एवं इल्वल दानव का पुत्र था। नैमिषारण्य के ऋषियों को यह अत्यधिक पीड़ा देता था। इस कारण बलराम ने इसका वध किया (भा. १०.७८.११; स्कंद. ३.१.१९)।

बस्त रामकायन--मैत्रायणि संहिता में निर्दिष्ट एक आचार्य (मै. सं. ४. २. १०)। इसके नाम के लिये 'बस्त समकायन' पाठभेद प्राप्त है।

बहुगव--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार सुद्यु का, एवं विष्णु के अनुसार सुद्युम्न का पुत्र था। इसके नाम के लिये 'बहुगविन्' तथा 'बहुविध' पाठभेद प्राप्त है।

बहुगविन्--धुंधु दैत्य के पुत्रों में से एक।

२. (सो. पूरु.) पूरुवंशीय बहुगव राजा का नामान्तर, जिसे वायु में धुंधु का पुत्र कहा गया है। (बहुगव देखिये)।

बहुदन्ती—वैवस्वत मन्वन्तर के पुरन्दर नामक इंद्र की माता। पुरन्दर द्वारा वास्तुशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा गया है, जिसमें उसने स्वयं को बाहुदन्तक नाम से अपना निर्देश किया है (पुरन्दर देखिये)।

बहुदंष्ट्र—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

बहुदामा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. १०)।

बहुपुत्र—एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५.५३)।

२. (सो. कुकुर.) एक राजा, जो तित्तिर राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम नरि था।

बहुपुत्रिका—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. ३)।

बहुमूलक--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.३७६*)।

बहुयोजना--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. ९)।

बहुरथ-- (सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रिपुञ्जय राजा का पुत्र था। यह द्विमीढ वंश का अन्तिम राजा माना जाता है। विष्णु में इसे बृहद्रथ, मत्स्य में विरथ, एवं वायु में वीररथ कहा गया है।

बहुरूप—एकादश रुद्रों में से एक (म. शां. २०१.१९)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रियव्रत राजा का पौत्र, एवं मेधातिथि राजा का पुत्र था।

बहुल--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था। वायु में इसे प्रजापति कहा गया है (वायु. ६५.५४)।

२. तालजंघ वंश का एक कुलांगार राजा, जिसके दुर्वर्तन के कारण तालजंघ वंश का नाश हुआ (म. उ. ७२. १३)।

बहुलध्वज-- रत्ननगरी के ताम्रध्वज राजा का प्रधान।

बहुला-- विदुर नामक वेश्यागामी ब्राह्मण की पत्नी। अपने पति की मृत्यु के पश्चात्, इसने गोकर्ण क्षेत्र में पुराणश्रवण का पुण्यकर्म किया, जिसके कारण पापी विदुर मुक्त हुआ (स्कंद. ३. ३. २२)।

बहुलाश्व—(सू. निमि.) एक निमिवंशीय राजा, जो धृति जनक राजा का पुत्र था। श्रीकृष्ण इससे मिलने आया था। इसके पुत्र का नाम कृति जनक था (भा. १०. ८६. १६)।

बहुविध--(सो. पूरु.) पूरुवंशीय बहुगव राजा का नामान्तर (बहुगव देखिये)। मत्स्य में इसे धुंधु राजा का पुत्र कहा गया है।

बहुवीति--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बाह्लिक--अथर्ववेद में निर्दिष्ट किसी जाति के लोगों का सामूहिक नाम, जो मूजवन्त एवं महावृष लोगों के तरह उत्तरी प्रदेश में रहते थे। अथर्ववेद में ज्वर (तक्मन्) को इन तीन लोगों के प्रदेश में स्थानांतरित होने का आवाहन किया गया है (अ. वे. ५.२२)। इस निर्देश से प्रतीत होता है कि, ये सारे लोग वैदिक आर्यों के विपक्ष में थे।

ब्लूमफिल्ड के अनुसार, बाह्लिक शब्द से 'बहिस्' याने किसी बाहर से आये गये लोगों का संकेत किया जाता है।

बाह्लिक प्रातिपीय--एक कुरुवंशी राजा, जो संजय राजा दुष्टरीतु पौंस्यायन का विरोधक था (श. ब्रा. १२. ९.३.३)। दुष्टरीतु अपना वंशानुगत राज्यपद प्राप्त न कर सके, इसलिये इसने काफ़ी प्रयत्न किये। किन्तु रेवोत्तरस् पाटव चाक्र स्थपति इन मित्र की सहाय्यता से दुष्टरीतु ने राज्यपद प्राप्त कर ही लिया।

महाभारत में इसका निर्देश बाह्लीक नाम से किया गया है, एवं इसे प्रतीप राजा का पुत्र, तथा शंतनु एवं देवापि राजा का भ्राता कहा गया है (म. आ. ९०. ४६; बाह्लीक देखिये)।

बह्वाशिन्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. भी. ८४.२८)।

बह्वीच--एक राक्षस, जो कश्यप एवं क्रोधा के पुत्रों में से एक था।

बाडभीकार (वाडवीकार)—एक वैयाकरण, जिसके द्वारा वर्णविकार के सम्बंध में मत प्रतिपादित है (तै. प्रा. १४. १३)।

बाडेयीपुत्र--एक आचार्य, जो बृहदारण्यक उपनिषद् के अनुसार, मौषिकीपुत्र का शिष्य था (बृ. उ. ६.४.३० माध्यं.)। इसके शिष्य का नाम गर्गीपुत्र था (श. ब्रा. १४. ९. ४. ३०)।

बाण--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक सुविख्यात असुर, जो असुर राजा बलि वैरोचन का पुत्र था। शिव का पार्षद होने के कारण, इसे महाकाल नामान्तर भी प्राप्त था (म. आ ५९.२०-२१)। पद्म में

इसे 'भूतों' का राजा कहा गया है (पद्म. २५.११)। यह सहस्रबाहु होने के कारण, अत्यधिक पराक्रमी एवं युद्ध में अजेय था।

बलिपत्नी अशना से उत्पन्न हुए शतपुत्रों में यह ज्येष्ठ था। मत्स्य में इसकी माता का नाम विंध्यावलि दिया गया है (मत्स्य. १८७.४०)। इसकी राजधानी दैत्यों के सुविख्यात त्रिपुरो में से शोणितपुर में थी। कई ग्रंथों में, उस नगरी का निर्देश 'लोहितपुर' नाम से भी किया गया है। हरिवंश में बाण की जीवनकथा विस्तृत रूप में दी गयी है (ह. वं. २.११६-१२८)।

दैत्यों की ये त्रिपुर नगरियों आकाश में सदैव संचरण किया करती थीं। ये निर्भेद्य थी, जिन्हें कोई जीत न सकता था। इसके रहस्य का कारण थीं दैत्य स्त्रियाँ, जिनके पति-सेवा के प्रभाव से ये नगरियाँ पृथ्वी पर न आतीं थी तथा आकाश में ही तैरती थी। दैत्य लोग इन नगरियों में रहते तथा देवों एवं ऋषियों के आश्रमों में जाकर उत्पात मचाते। इससे ऊब कर देव ऋषि आदि भगवान् शंकर के पास गये, तथा अपने कष्टों का निवेदन कर उबारने के लिए प्रार्थना की।

शंकर भगवान ने भक्तों की मर्मान्तक वाणी को सुनकर नारद को स्मरण किया। याद करते ही, स्मरणगामी नारद तत्काल प्रकट हुए। शंकर ने देवर्षि नारद से निवेदन किया कि, वह राक्षसों की नगरियों में जाकर वहाँ की पत्नियों का ध्यान पतिसेवा से हटाकर दूसरी ओर लगा दें, जिससे ये नगर पृथ्वी पर आ सकें, तथा इन अजेय राक्षसों का नाश हो सके।

शंकर के वचनों को स्वीकार कर, नारद वहाँ गया, तथा वहाँ की स्त्रियों को विभिन्न प्रकार के अन्य धार्मिक पूजा-पाठों की ओर उनका ध्यान आकर्षित कर पति-सेवा व्रत से हटा दिया। जिसके कारण, नगरों की शक्ति कम होने लगी। ऐसी स्थिति देखकर, शंकर ने तीन नोकों वाले बाण से तीनों नगरों को वेध दिया। शंकर ने अग्नि को भी आज्ञा दी कि, ये त्रिपुर नगरियों जला दी जाय। अग्नि ने आज्ञा पाते ही उन्हें भस्मीभूत करना शुरू किया।

शिवभक्ति—नगरों को जलता देख कर, बाण अपनी नगरी से अपने उपास्यदेव का शिवलिंग साथ ले कर बाहर निकला। यह शिवभक्त था, अतएव अपने को कष्ट में पाकर इसने 'तोटक छन्द' के द्वारा, शंकर की पूजा कर के उसे प्रसन्न किया। प्रसन्न हो कर शंकर ने इसकी शोणितपुर नगरी बचा दी, तथा अन्य दो को जलने दिया। वे दोनों जलकर क्रमशः 'शैल' तथा 'अमरकंटक' पर्वत पर गिरी। इसी कारण उन दो स्थानों पर दो तीर्थ बन गये (मत्स्य १८७-१८८; पद्म. स्व. १४-१५)।

एक बार खेल में निमग्न शिवपुत्र कार्तिकेय को देख कर यह प्रसन्नता से विभोर हो उठा। तथा इसके मन में यह इच्छा जाग्रत हुयी कि मैं शंकर-पुत्र बनूँ। यह सोच कर इसने कड़ी तपस्या की, जिससे प्रसन्न हो कर शंकर ने इसे वर माँगने के लिए कहा। इसने शंकर से प्रार्थना की, 'मेरी उत्कट अभिलाषा है कि, कार्तिकेय की भाँति माता पार्वती मुझे पुत्र के रूप में ग्रहण करे'। शंकर ने वरप्रदान करते हुए, कार्तिकेय के जन्मस्थान का नित्य के लिए इसे अधिपति बनाया (ह. वं. २.११६.२२)। कार्तिकेय ने प्रसन्न हो कर इसे अपना तेजस्वी ध्वज एवं मयूर बाहन प्रदान किया। शिवपुत्र द्वारा दिये गये ध्वज में मयूर की छाप थी, जिसका सर मयूर का न हो कर मनुष्य का था (ह. वं. १.११६.२२; शिव. रुद्र. यु. ५३)।

शंकर द्वारा प्राप्त वरों का निर्देश शिव पुराण में भी प्राप्त है, लेकिन उसमें कुछ भिन्नता हैं। शिवपुराण में लिखा है कि, इसने भगवान शंकर के साथ ताण्डव में भाग लेकर अत्यधिक सुन्दर नृत्य किया था, जिससे प्रसन्न हो कर इसे ये वर प्राप्त हुए थे। इसके सिवाय इसने शंकर से यह भी वर माँगा कि, वह भविष्य में उसके परिवार का रक्षण करता हुआ इसे चिरन्तन आनंद प्रदान करता रहेगा। शंकर ने इसे यह वरदान दे कर, वह स्वयं अपने पुत्र कार्तिकेय एवं गणेश के साथ इसकी रक्षार्थ इसके नगर में रहने लगा (शिव. रुद्र. यु. ५१)।

भागवत के अनुसार, तांडवनृत्य के समय इसने शिव के साथ वाद्यवादन किया था, जिससे प्रसन्न हो कर उसने इसे उक्त वरप्रदान किये थे (भा. १०. ६२)।

बाण ने शंकर द्वारा प्राप्त किये हुए इन वरों के बल पर, अनेकानेक बार इन्द्रादि देवों को जीत कर, जब जैसा चाहा किया। किसी में इतनी शक्ति न थी, जो इसके तेज के सामने ठहर सके। एक बार महाबली बाण ने शंकर से कहा, 'मेरी अनंत शक्ति मेरे अंदर लड़ने के लिए मुझे मजबूर कर रही है; पर कोई भी मेरी टक्कर का नजर नहीं आ रहा। हज़ार बाहुओं को तृप्ति करने के लिए मैं दिग्गजों से भी लड़ने गया, पर वे भी मेरी शक्ति के सामने ठहर न सके। अब मै युद्ध करना चाहता हूँ। मुझे उसमें ही शान्ति है। यह युद्ध कब होगा?' उत्तर देते हुए

शंकर ने कहा 'जिस दिन कार्तिकेय द्वारा दिया गया ध्वज ध्वस्त होगा, उसी के बाद तुम्हारी यह इच्छा पूर्ण होगी। तुम्हे युद्ध का अवसर प्राप्त होगा'। पश्चात इसके ध्वज पर इन्द्र का वज्र गिरा, तथा वह ध्वस्त हो गया।

उषा-अनिरुद्ध-प्रणय—इसके उषा नामक एक कन्या थी, जो अत्यधिक नियंत्रण में रख्खी जाती थी। एक बार एक पहरेदार द्वारा इसे यह सूचना प्राप्त हुई कि, उषा किसी परपुरुष से अपने सम्पर्क बढ़ा रही हैं। इससे संतप्त होकर, सत्यता जानने की इच्छा से यह उसके महल गया। वहाँ इसने देखा कि, उषा एक पुरुष के साथ द्यूत खेल रही है। दोनों को इस प्रकार निमग्न देखकर यह क्रोध से लाल हो उठा, तथा अपने शस्त्रास्त्र तथा गणों के साथ उस पर आक्रमण बोल दिया। पर उस पुरुष का बाल बाँका न हुआ। उसने बाण के हर वार का कस कर मुकाबला किया। वह पुरुष कोई साधारण नहीं, वरन् कृष्ण का पौत्र अनिरुद्ध ही था। अन्त में बाण ने अपने को गुप्त रखकर अनिरुद्ध पर नागपाश छोड़े। उन नागों ने उषा तथा अनिरुद्ध को चारों ओर से जकड़ लिया, तथा दोनों कारागार में बन्दी बनाकर डाल दिये गये।

कृष्ण से युद्ध—अनिरुद्ध के कारावास हो जाने की सूचना जैसे ही कृष्ण को प्राप्त हुयी, वह अपनी यादव सेना के साथ शोणितपुर पहुँचा, तथा समस्त नगरी को सैनिकों से घेर लिया। दोनों पक्षों में घनघोर युद्ध हुआ। बाण की रक्षा के लिए उसकी ओर से शंकर भगवान्, कार्तिकेय एवं गणेश भी थे। इस युद्ध में गणेश का एक दाँत भी टूटा, जिससे उसे 'एकदंत' नाम प्राप्त हुआ।

इस युद्ध में, पद्म के अनुसार, बाण का युद्ध सबसे पहले बलराम से हुआ, तथा भागवत एवं शिवपुराण के अनुसार, इसका सर्वप्रथम युद्ध सात्यकि से हुआ। कृष्ण के साथ इसका युद्ध बाद में हुआ, जिसमें कृष्ण के अपार बलपौरुष के समक्ष इसके सभी प्रयत्न असफल हो गये। इन समस्त युद्धों में, पहले बाण की ही जीत नज़र आती थी; किन्तु अन्त में इसको हर एक युद्ध में पराजय का ही मुँह देखना पड़ा।

अन्त में जैसे ही कृष्ण ने सुदर्शन चक्र के द्वारा इसका वध करना चाहा, वैसे ही अष्टावतार लम्बा के रूप में पार्वती इसके संरक्षण के लिए नग्नावस्था में ही दौड़ी आई। भागवत में पार्वती के इस रूप को 'कोटरा' कहा गया है। इसके पूर्व भी, इसी युद्ध में पार्वतीजी अपने पुत्र कार्तिकेय की रक्षा के लिये आई थी, तथा उन्हें अब दुबारा इसकी रक्षा के लिए आना पड़ा, क्योंकि वह वचनबद्ध थीं। कृष्ण ने पार्वती से अलग रहने के लिए कहा, किन्तु वह न मानी तथा कृष्ण से निवेदन किया, 'यदि तुम चाहते हो कि मैं पुत्रवती रहूँ, मेरा पुत्र जीवित रहे, तो बाण को जीवनदान दो। मैं इसकी रक्षा के ही लिये तुम्हारे सम्मुख हूँ'। कृष्ण ने प्रत्युत्तर देते हुए कहा 'मैं तुम्हारी उपेक्षा नहीं कर सकता, किन्तु यह अहंकारी हैं, इसे अपने हज़ार बाहुओं पर गर्व है; अतएव इसके दो हाथों को छोड़कर समस्त हाथों को नष्ट कर दूँगा'। इतना कह कर कृष्ण ने इसको दो हाथों को छोड़कर शेष हाथ काट दिये (पद्म. ३. २. ५०)। भागवत तथा शिवपुराण के अनुसार विष्णु ने इसके चार हाथ रहने दिये, तथा शेष काट डाले (भा. १०.६३.४९)।

शिवपुराण में कृष्ण द्वारा इसका वध न होने कारण दिया गया है। जब कृष्ण ने इसका वध करना चाहा, तब शिव ने उनसे कहा 'दधीचि, रावण एवं तारकासुर जैसे लोगों का वध करने के पूर्व तुमने मेरी संमति ली थी। बाण मेरे लिये पुत्रवत् है, उसको मैंने अमरत्व प्रदान किया है; अतः मेरी यही इच्छा है कि, तुम इसका वध न करो।

वरप्राप्ति--भागवत के अनुसार कृष्ण ने इसे इसलिये जीवित छोडा, क्यों कि, उसने इसके प्रपितामह प्रह्लाद को वर प्रदान किया था कि, वह उसके किसी वंशज का वध न करेगा। इसी कारण इसका वध नही किया, केवल गर्व को चूर करने के लिये हाथ तोड़ दिये। इसके साथ ही कृष्ण ने वर दिया, 'तुम्हारे ये बचे हुए हाथ जरामरण रहित होंगे, एवं तुम स्वयं भगवान् शिव के प्रमुख सेवक बनोंगे (भा. १०.६३)।

युद्ध समाप्त होने पर भगवान् शिव ने भी इसे अन्य वर भी दिये, जिनके कारण इसे अक्षय गाणपत्य, बाहुयुद्ध में अग्रणित्व, निर्विकार शंभुभक्ति, शंभुभक्तों के प्रति प्रेम, देवों से तथा विष्णु से निर्वैरत्व, देवसाम्यत्व (अजरत्व एवं अमरत्व) इसे प्राप्त हुए (शिव. रुद्र. यु. ५९)। हरिवंश तथा विष्णु पुराण के अनुसार, शिव ने इसे निम्न वर और प्रदान कियेः--बाहुओं टूटने के वेदना का शमन होना, बाहुओं के टूटने के कारण मिली विद्रूपता का नष्ट होना, शिव की भक्ति करने पर पुत्र की प्राप्ति होना आदि (ह. वं. २.१२६; विष्णु. ५.३०)।

उषा-अनिरुद्ध विवाह—तत्पश्चात् कृष्ण ने इसे बडे सम्मान के साथ द्वारका बुलाया, एवं उषा तथा अनिरुद्ध का विवाह संपन्न कराया। विवाहोरान्त कृष्ण ने इसे बडे स्नेह से विदा किया। इसने उषा के अनिरुद्ध से उत्पन्न पुत्र को अपने राज्य का उत्तराधिकारी बनाया, जिससे प्रतीत होता है कि इसको कोई पुत्र न था (शिव. रुद्र. यु. ५९)। किन्तु ब्रह्मांड में इसकी पत्नी लोहिनी से उत्पन्न इसके 'इंद्रधन्वन्' नामक पुत्र का निर्देश प्राप्त हैं (ब्रह्मांड. ३.५.४५)।

इसे 'अनौपम्या' नामक और भी अनेक पत्नियाँ थीं, जिनका निर्देश पद्म एवं मत्स्य में प्राप्त है (पद्म. १४; मत्स्य. १८७. २५)।

'नित्याचार पद्धति' नामक ग्रंथ के अनुसार, बाण के द्वारा चौदह करोड शिवलिंगों की स्थापना देश के विभिन्न भागों में की गयी थी। ये लिंग 'बाणलिंग' नाम से सुविख्यात थे। नर्मदा गंगा आदि पवित्र नदियों में प्राप्त शिवलिंगाकार पत्थरों को भी, बाणासुर के नाम से 'बाणलिंग' कहा जाता है (नित्याचार. पृ. ५५६)।

बाणकथा का अन्वयार्थ—सदाचारसंपन्न एवं परम ईश्वरभक्त हो कर भी जिन असुरों का देवों के द्वारा अत्यंत निर्घृणता के साथ संहार किया गया, उन असुरों में बाण प्रमुख था। इसके वंश में से इसका पिता बलि, इसका प्रपितामह प्रह्लाद, एवं इसका पितुःप्रपितामह हिरण्यकशिपु इन सारे राजाओं को देवों के साथ लड़ना पडा। इससे प्रतीत होता है कि, देव एवं दैत्य जातिओं के पुरातन शत्रुत्व के कारण ये सारे युद्ध उत्पन्न हुए थे। पिढियों से चलता आ रहा यह शत्रुत्व किसी व्यक्ति का व्यक्तिगत शत्रुत्व न हो कर, दो जातिओं का संघर्ष था (बलि वैरोचन देखिये)। बाण की जीवनकथा में शैव एवं वैष्णवों के परंपरागत संघर्षों की परछाइयाँ भी अस्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

आकाश में तैरती हुयी बाण की शोणितपुर राजधानी किसी पर्वतीय प्रदेश में स्थित नगरी के ओर संकेत करती है। शोणितपुर को लोहितपुर एवं बाणपुर नामान्तर भी प्राप्त थे (त्रिकाण्ड. ३२. १७; अभि. १३३. ९७७)। आसाम में स्थित ब्रह्मपुत्रा नदी का प्राचीन नाम भी लोहित ही था। इससे प्रतीत होता है कि, बाण का राज्य सद्यःकालीन आसाम राज्य के किसी पहाडी में बसा होगा। यह पहाडी अत्यंत दुर्गम होने के कारण, देवों के लिये बाण अजेय बना होगा।

३. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६२)।

बादरायण—एक आचार्य, जिसने ब्रह्मसूत्रों की रचना की थी (जै. सू. १.१.५; २.१९; १०.८.४४; ११.१. ६४)। बदर का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

'वैष्णव भागवत' में, कृष्णद्वैपायन व्यास एवं बादरायण एक ही व्यक्ति माने गये है (भा. ३.५.१९)। स्वयं शंकराचार्य भी ब्रह्मसूत्रों के रचना का श्रेय बादरायण को प्रदान करते है (ब्र. सू. ४.४.२२)। किन्तु संभवतः ब्रह्मसूत्रों की मूल रचना जैमिनि के द्वारा हो कर, उन्हे नया संस्कारित रूप देने का काम बादरायण ने किया होगा। सुरेश्वराचार्य ने अपने 'नैष्कर्म्यसिद्धि' नामक ग्रंथ में वैसा स्पष्ट निर्देश किया है (नैष्कर्म्य. १.९०)। द्रमिडाचार्य ने भी अपने 'श्रीभाष्यश्रुतप्रकाशिका' नामक ग्रंथ में सर्वप्रथम वंदन जैमिनि को किया है, एवं उसके पश्चात् बादरायण का निर्देश किया है।

कई विद्वानों के अनुसार, बादरायण एवं पाराशर्य व्यास दोनो एक ही व्यक्ति थे। किन्तु सामविधान ब्राह्मण में दिये गये आचार्यों के तालिका में इन दोनों का स्वतंत्र निर्देश किया गया है, एवं इन दोनों में चार पीढ़ीयों का अंतर भी बताया है। बादरायण स्वयं अंगिरसकुल का था (आप. श्रौ. २४.८-१०), एवं इसके शिष्यों में तांडि एवं शाट्यायनि ये दोनो प्रमुख थे। पाराशर्य व्यास अंगिरसकुल का न हो कर वसिष्ठकुल का था।

बादरि-बादरायण-भिन्नता—जैमिनिसूत्रों में निर्दिष्ट बादरि नामक आचार्य एवं बादरायण दो स्वतंत्र व्यक्ति थे। क्यों कि, बादरायण के मतों से विपरीत बादरि के अनेक मतों का निर्देश 'बादरि सूत्रों' में प्राप्त है। बादरायण देह का भाव तथा अभाव इन दोनों को मान्य करता है। इसके विपरीत, बादरि देह की अभावयुक्त अवस्था को ही मानता है। इस मतभिन्नता से दोनों आचार्य अलग व्यक्ति होने की संभावना स्पष्ट होती है (ब्र. सू. ४. ४.१०-१२)।

सत्याषाढ के गृह्यसूत्र में इसके गर्भाधान विषयक मतों का निर्देश प्राप्त है, जिसमें यह विधि स्त्री को प्रथम ऋतु प्राप्त होते ही करने के लिये कहा गया है (स. गृ. १९. ७.२५)।

ब्रह्मसूत्र—बादरायण के द्वारा रचित 'ब्रह्मसूत्र' के कुल चार अध्याय, सोलह पाद, एक सौ बयान्नवे अधिकरण एवं पाँच सौ पछपन सूत्र हैं। इस ग्रंथ को उत्तर

मीमांसा, बादरायण सूत्र, ब्रह्ममीमांसा, वेदान्तसूत्र, व्यास-सूत्र एवं शारीरक सूत्र आदि नामान्तर भी प्राप्त है।

इस ग्रंथ में बृहदारण्यक, छांदोग्य, कौषीतकी, ऐतरेय, मुंडक, प्रश्न, श्वेताश्वतर, जाबाल एवं आथर्वणिक (अप्राप्य) आदि उपनिषद ग्रंथों में प्राप्त वाक्यों का विचार किया गया है।

इस ग्रंथ में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों के मत उनके नामोल्लेख के साथ ग्रथित किये गये हैं:— आत्रेय, आश्मरथ्य, औडुलोमि, काशकृत्स्न, कार्ष्णाजिनि, जैमिनि एवं बादरि। इन पूर्वाचार्यों में से बादरि का निर्देश चार सूत्रों में, औडुलोमि का तीन सूत्रों में, आश्मरथ्य का दो सूत्रों में, एवं बाकी सारे आचार्यों का निर्देश एक एक सूत्र में किया गया हैं। स्वयं बादारायण के मत आठ सूत्रों में दिये गये है।

इन सूत्रों का मुख्य उद्देश उपनिषदों के तत्त्वज्ञान का समन्वय करना, एवं उसे समन्वित रूप में प्रस्तुत करना है। महाभारत, मनुस्मृति एवं भगवद्गीता के तत्त्वज्ञान को उद्देश कर भी कई सूत्रों की रचना की गयी है। ये सारे सूत्र काफी महत्त्वपूर्ण है, किन्तु भाष्यग्रन्थों के सहाय्य के सिवाय उनका अर्थ लगाना मुष्किल है। उन में से कई सूत्रों के शंकराचार्य के द्वारा दो दो अर्थ लगाये गये हैं (ब्र. सू. १.१.१२–१९; ३१; ३.२७; ४.३; २.२.३९–४० आदि)। कई जगह पाठभेद भी दिखाई देते हैं (ब्र. सू. १.२.२६; ४.२६)।

इस ग्रन्थ की रचनापद्धति प्रथम पूर्वपक्ष, एवं पश्चात् सिद्धान्त इस पद्धति से की गयी है। किंतु कई जगह प्रथम सिद्धान्त दे कर, बाद में उसका पूर्वपक्ष देने की 'प्रति-लोम' पद्धति का भी अवलंब किया गया है (ब्र. सू. ४. ३.७–११)।

अपना विशिष्ट तत्त्वज्ञान स्पष्ट रूप से ग्रथित करने का प्रयत्न बादरायण ने इस ग्रन्थ के द्वारा किया है। इसका यह प्रयत्न श्री व्यासरचित भगवद्गीता से साम्य रखता है।

बादरायणि—शुक ऋषि का नामांतर।

बादरि—जैमिनि सूत्रों में निर्दिष्ट एक आचार्य (जै. सू. ३.१.३; ६.१.२७; ८.३.६; का. श्रौ. ४.३.१८; ब्र. सू. ४.४.११; बादरायण देखिये)।

२. श्याम पराशर कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बादुलि—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५३)।

बाध्यश्व—भार्गवकुल का एक मंत्रकार।

बाध्योग—जिह्वावत् नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. माध्यं ६.४.३३; जिह्वावत् देखिये)। बध्योग का वंशज होने के कारण उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

बाभ्रव—एक आचार्य, जो वेद, छंद, शरीर एवं महा-पुरुष आदि को अध्ययन के विषय मानता था (ऐ. आ. ३.२.२)। सांख्यायन आरण्यक में इसके नाम के लिए 'वात्स्य' पाठभेद प्राप्त है (सां. आ. ८.३)।

२. एक तत्वज्ञ, जिसका बाष्कलि नामक आचार्य से 'ब्रह्म की अनिर्वचनीयता' के बारे में संवाद हुआ था (४ बाष्कलि देखिये)।

बाभ्रव— बत्सनपात् नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. माध्यं. २. ५. २२; ४. ५. २८)।

ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त शुनःशेप की कथा में कापिलेय एवं बाभ्रव लोगों को शुनःशेप के वंशज बताये गये है (ऐ. ब्रा. ७. १७)। बभ्रु का वंशज होने से इसे 'बाभ्रव' नाम प्राप्त हुआ होगा। बभ्रु के द्वारा रचित एक सामन् का निर्देश पंचविंशब्राह्मण में प्राप्त है (पं. ब्रा. १५. ३.१२)।

बाभ्रव्य—गिरिज एवं शंख नामक आचार्यों का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१; जै. उ. ब्रा. ३.४१.१; ४.१७.१)।

आश्वलायन गृह्यसूत्र के ब्रह्मयज्ञांग तर्पण में, क्रम के पाठन की परंपरा शुरु करनेवाले आचार्य के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. प्रा. ११. ३३)।

२. विश्वामित्रकुल का एक गोत्रकार।

३. एक गोत्र का नाम। गालवमुनि इसी गोत्र में उत्पन्न हुए थे।

बाभ्रव्य पांचाल—एक आचार्य, जो दक्षिण पांचाल देश के ब्रह्मदत्त राजा के दो मंत्रियों में से एक था (ह. वं. १.२०.१३)। इसका संपूर्ण नाम 'सुब्रालक (गालव) बाभ्रव्य पांचाल' था। इसे 'बह्वृच' एवं 'आचार्य' ये उपाधियाँ प्राप्त थी (ह. वं. १.२३.२१)। यह सर्व-शास्त्रविद् एवं योगशास्त्र का परम अभ्यासक था (मत्स्य. २०.२४; २१.३०)।

इसने ऋग्वेद की शिक्षा तयार कर उसका प्रचार किया। इसने वेदमंत्रों का क्रम निश्चित किया, एवं उसका प्रचार भी किया (पद्म. पा. १०; ह. वं. १.२४.३२; म. शां. ३३०. ३७–३८; पांचाल ३. देखिये)। ऋक् संहिता के क्रमपाठ के रचना का श्रेय वैदिक ग्रंथों में भी बाभ्रव्य पांचाल को

दिया गया है। पाणिनि ने भी बाभ्रव्य एवं इसके द्वारा रचित क्रम का निर्देश किया है (पा. सू. ४.१.१०६; २.६१)।

ब्रह्मदत्त राजा के कंडरिक (पुंडरिक) एवं बाभ्रव्य नामक दो मंत्रियों ने समस्त वैदिक ऋचाओं को एकत्र कर उनको ऋग्वेद, सामवेद एवं यजुर्वेद इन संहिताओं में विभाजित किया। उन संहिताओं का अंतीम एकत्रीकरण एवं संस्करण व्यास ने किया।

२. एक कामशास्त्रकार एवं वात्स्यायन के कामसूत्र का पूर्वाचार्य। वात्स्यायन के अनुसार, कामशास्त्र की सर्वप्रथम रचना श्वेतकेतु ने की, एवं श्वेतकेतुप्रणीत कामशास्त्र के संक्षेपीकरण का कार्य बाभ्राव्य पांचाल ने किया।

मत्स्य में 'क्रमपाठ रचयिता' बाभ्रव्य एवं 'कामसूत्रकार' बाभ्रव्य को अनवधानी से एक माना गया है। किन्तु कामसूत्रकार बाभ्रव्य का पूर्वाचार्य श्वेतकेतु क्रमपाठरचयिता बाभ्रव्य से काफी उत्तरकालीन था। इससे प्रतीत होता है कि, ये दो बाभ्रव्य अलग व्यक्ति थे।

बाभ्रव्यायणि—विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

बार्हत्सामा—अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक स्त्री, जो बृत्सामन् की कन्या थी। गर्भाधान सरल बनानेवाले एक सूक्त में इसका निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ५. २५. ९)।

बार्हदिषु—अजमीढवंशीय राजाओं के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम। अजमीढपुत्र बृहदिषु राजा से ले कर, उसी वंश के भल्लाट तक के राजा 'बार्हदिषवः' नाम से विख्यात थे (भा. ९.२१.२६)।

बार्हद्रथ—मगध देश के बृहद्रथ राजा के वंशजों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम। इनकी राजधानी गिरिव्रज नगर में थी। पुराणों में इस वंश के कुल बाइस या बत्तीस राजाओं का निर्देश प्राप्त है (बृहद्रथ देखिये)।

बार्हस्पत्य—शंयु, विदथिन् एवं भारद्वाज आदि आचार्यों का पैतृक नाम। बृहस्पति का वंशज होने से उन्हे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

बाल—एक ब्राह्मण, जो अत्यंत पापी एवं पाखंड मतप्रवर्तक था। अपनी मृत्यु के पश्चात्, इसे पुनः एक बार मनुष्यजन्म प्राप्त हुआ। अपने इस नये जन्म में इसने गतपापों का क्षालन करने के लिये सरस्वती मंत्र का जप किया, जिस कारण इसके सारे पापों का नाश हो कर, अगले जन्म में यह मैत्रेय-नामक सद्वर्तनी ऋषि बन गया (स्कंद २.४६)।

२. वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

बालखिल्य—ब्रह्माजी के वालखिल्य नामक शक्तिशाली पुत्रों का नामांतर (वालखिल्य देखिये)।

बालडि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बालधि—एक शक्तिशाली ऋषि, जिसने पुत्रप्राप्ति के लिए घोर तपस्या की थी। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर देवों ने इसे वर माँगने के लिए कहा। किंतु इसके द्वारा अमरपुत्र की माँग की जाने पर देवों ने इसे कहा, 'इस सृष्टि की हर एक वस्तु नश्वर है, इसी कारण अमर पुत्र की अपेक्षा करना भी व्यर्थ है'। फिर सामने दिखाई देनेवाले पर्वत की ओर निर्देश करते हुए इसने देवताओं से कहा, 'यह पर्वत जितने वर्ष रह सकेगा उतनी आयु का पुत्र आप मुझे प्रदान करे'।

इसकी प्रार्थना के अनुसार, देवों ने इसे एक पुत्र प्रदान किया जिसका नाम मेधावी था। उसे यह बड़े लाड़प्यार से 'पर्वतायु' कहता था। बड़ा होने पर पर्वतायु देवों के वर का आश्रय ले कर अत्यंत उद्दण्ड बन गया। एक बार उसने धनुषाक्ष नामक महर्षि का विना किसी कारण अपमान किया। उस समय महर्षि ने पर्वतायु को शाप दिया, 'तुम भस्म हो जाओगे'।

महर्षि के इस शाप का पर्वतायु पर कोई भी असर न हुआ, एवं वह जीवित ही रहा। अपना शाप विफल हुआ यह देख कर धनुषाक्ष ऋषि को अत्यंत आश्चर्य हुआ। पश्चात् दिव्यदृष्टि से उसने पर्वतायु के वर का रहस्य जान लिया, एवं अपने तपोबल से एक भैंसा निर्माण कर उसके द्वारा वह पर्वत खुदवा डाला, जिसके उपर पर्वतायु की आयु निर्भर थी। उसी क्षण पर्वतायु की मृत्यु हो गयी (म. व. १३४)। अपने प्रिय पुत्र की मृत्यु पर बालधि ऋषि ने काफ़ी विलाप किया।

बालन्दन—वत्सप्री ऋषि का पैतृक नाम, जो संभवतः भालन्दन (भलंदन का वंशज) का विभेदात्मक रूप है (वेबर-इंडिशे स्टूडियन ३.४५९.४७८)।

बालपि—भृगु कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बालवय—वसिष्ठकुल का एक गोत्रकार।

बालस्वामी—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ६०)।

बालाकि—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

२. गार्ग्य बालाकि नामक ऋषि का नामांतर (गार्ग्य बालाकि देखिये)। इसे दृप्त बालाकि नामांतर भी प्राप्त है (श. ब्रा. १४.५.१)। इसके नाम के लिए 'बालाक्या'

पाठभेद भी उपलब्ध है (काश्यपीबालाक्या माठरीपुत्र देखिये)।

बालानामयिक--स्कन्द का एक सैनिक (म. श. ४४.६९)।

बालायनि--एक आचार्य, जिसे बाष्कलि ने वालखिल्य संहिता सिखायी थी (भा. १२.६.६०)।

बालावती--कण्व ऋषि की कन्या, जिसने उत्तम पति के प्राप्त्यर्थ कठोर तपस्या की थी। एक बार भगवान् सूर्य-नारायण अतिथि रूप में इसके यहाँ आया, एवं कुछ वेर इसे प्रदान कर उन्हे पकाने के लिए कहा।

सूर्यनारायण की आज्ञानुसार यह वेर पकाने लगी। किन्तु चुल्हे की सारी लकडियाँ समाप्त होने पर भी वेर न पके; फिर इसने अपने पाँव चुल्हे में लगा दिये। यह देख कर सूर्य इसपर प्रसन्न हुआ, एवं इसे वर देते हुए कहा, 'तुम्हारी सारी कामनाएँ पूरी होंगी'। उसी दिन से उस स्थान को 'वालप' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १५२)।

इसकी उपरिनिर्दिष्ट कथा में, एवं अरुंधती की कथा में काफी साम्य है (अरुन्धती ३. देखिये)।

बालिशय--वसिष्ठकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

बालिशायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बालेय--गंधर्वायण नामक आचार्य का पैतृक नाम।

२. पराशर गोत्रोत्पन्न एक ऋषिगण।

३. बलि आनव राजा से उत्पन्न ब्राह्मण एवं क्षत्रिय लोगों का सामुहिक नाम।

बाष्कल--हिरण्यकशिपु का एक पुत्र (म. आ. ५९. १८)। इसे कुल चार भाई थेः- प्रह्लाद, संह्लाद, अनुह्लाद, एवं शिबि (म. आ. ५९.१८)। भगदत्त असुर के रूप में, यह पृथ्वी पर पुनः उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.९)।

२. हिरण्यकशिपु का पौत्र एवं अनुह्लाद का पुत्र। इसकी माता का नाम सूर्मि था।

३. प्रह्लाद का पुत्र। इसके नाम के लिये बाष्कलि पाठभेद भी प्राप्त है।

४. महिषासुर का एक पुत्र (मार्क. ७९.४२)।

५. संह्लाद नामक असुर का पुत्र। इसे चंड, दक्ष एवं सुर नामक तीन पुत्र थे।

६. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से पैल ऋषि का पुत्र था। इसके नाम के लिये 'बाष्कलि' पाठभेद प्राप्त है (व्यास देखिये)।

बाष्कलि--प्रह्लाद का पुत्र (पद्म. सृ. ६)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं मंत्रकार ऋषि। यह वालखिल्य संहिता का रचयिता था, जो इसने अपने बालायनि, भज्य, एवं कासार नामक शिष्यों को सिखायी थी (भा. १२.६.५९)।

३. एक ऋग्वेदी श्रुतर्षि एवं ब्रह्मचारी।

४. एक तत्त्वज्ञ, जिसका निर्देश शंकराचार्य के ब्रह्मसूत्र-भाष्य में प्राप्त हैं। उक्त ग्रन्थ में इसका एवं बाध्व ऋषि के बीच हुए शास्त्रार्थ एक आख्यायिका के रूप में वर्णित है। बाष्कलि ने बाध्व से पूँछा 'ब्रह्म कैसा है?' वह मौन रहा। उसकी मौनता को देख कर, इसने दो तीन बार अपने प्रश्न को बार बार रक्खा। तब बाध्व ने कहा, 'अपने मौन सम्भाषण से ही, मैं व्यक्त कर चुका हूँ कि, ब्रह्म अनिर्वचनीय है (यतो वाचो निवर्तन्ते)। अब तुम समझ न सको तो दोष किसका है?' (ब्र. सू. ३. २.१७)।

बाध्व द्वारा बाष्कलि को ब्रह्म की स्वरूपता का कराया हुआ यह ज्ञान, बड़ा नाटकीय एवं तार्किक है।

५. एक दैत्य, जिसने तपस्या के बल पर सारा त्रैलोक्य जीत कर इन्द्रपद प्राप्त किया। विष्णुधर्म एवं पद्म में इसकी कथा दी गयी है, जो सम्पूर्णतः बलि वैरोचन की वामनावतार की कथा से मिलती जुलती है। इसे 'त्रिविक्रम' का अवतार कहा गया है। सम्भव है, यह एवं 'बलि वैरोचन' दोनों एक ही हों।

इसके द्वारा इंद्रपद प्राप्त कर लेने के बाद, वामना-वतारी विष्णु ने ब्राह्मणकुमार के रूप में आ कर, इससे यज्ञ के लिए तीन पग भूमि दान माँगी। जैसे ही बाष्कलि ने दानसंकल्प के लिए अर्घ्य दिया, कि वामन ने विशाल रूप धारण कर, एक पग से ब्रह्माण्ड, द्वितीय से सूर्य-मण्डल, तथा तृतीय से ध्रुवमण्डल नाप कर, इसके सम्पूर्ण ऐश्वर्य का हरण कर लिया।

वामन ने जैसे ही ब्रह्मांड पर पैर रक्खा, वैसे ही उसके पगस्पर्श से वह फूट गया, तथा उससे गंगा की धारा फूट चली (विष्णुधर्म. २१.१; पद्म. सृ. ३०)।

बाष्कलि भारद्वाज--एक आचार्य, जो वायु एवं भागवत के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा के सत्यश्री ऋषि का शिष्य था।

बाष्किह--शुनस्कर्ण राजा का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १७.१२.६)। 'बुष्किह' का वंशज होने से उसे यह नाम

प्राप्त हुआ होगा। बौधायन श्रौतसूत्र में इसे शिवि राजा का वंशज कहा गया है (बौ. श्रौ. २१.१७)।

बार्हीक—उत्तरी पश्चिम पंजाब में रहनेवाले लोगों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम (श. ब्रा. १.७.३.८)। ये अग्नि को 'भव' नाम से संबोधित करते थे।

बाहु--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो सगर राजा का पिता था (म. शां. ५७.८)। मत्स्य एवं विष्णु में इसे वृक राजा का, एवं वायु में इसे धृतक राजा का पुत्र कहा गया है। ब्रह्मांड में इसे 'फल्गुतंत्र' नामान्तर दिया गया है, एवं भागवत में इसके नाम के लिये 'बाहुक' पाठभेद प्राप्त है। इसे 'असित' नामान्तर भी प्राप्त है (वा. रा. बा. ७०.३०; अयो. ११०.१८)।

ब्रह्मांड के अनुसार यह कृतयुग में पैदा हुआ, एवं इसने पृथ्वी के सप्तद्वीपों में सात अश्वमेध यज्ञ किये (ब्रह्मांड. ३.६३.१२१; वायु. ८९.१२३; ह. वं. १.१४; ब्रह्म. ८.३०; शिव. वा. ६१.२३; नारद. १.७१.५)। इसे कुल दो पत्नियाँ थी। उनमें से केशिनी अथवा कालिंदी नामक पत्नी से इसे सगर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (सगर देखिये)।

हैहय राजा तालजंघ ने शक, कंबोज आदि राजाओं के सहाय्यता से इसपर आक्रमण कर इसका पराजय किया। इस पराजय के पश्चात्, यह और्व ऋषि के आश्रम में रहने के लिए गया, एवं उसी आश्रम में इसकी मृत्यु हो गयी (मत्स्य. १२.४०; पद्म. सृ. ८; लिंग. १.६६.१५; विष्णुधर्म. १.१६)।

२. एक शक्तिशाली राजा, जिसे भारतीय युद्ध के समय पाण्डवों की ओर से रणनिमंत्रण भेजा गया था (म. उ. ४.२९)।

३. सुंदरवेग वंश का एक 'कुलपांसन' राजा, जिसने अपने दुर्वर्तन के कारण अपने कुल का विनाश कराया (म. उ. ७२.१३)।

४. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पृथु राजा का पुत्र था।

५. इंद्रसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

६. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

बाहुक—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय बाहु राजा का नामान्तर (बाहु १. देखिये)। भागवत में इसे वृक राजा का पुत्र कहा गया है।

२. निषधराज नल राजा का नामान्तर, जब की वह सूतअवस्था में अयोध्यानरेश ऋतुपर्ण के यहाँ रहता था (म. व. ६४.२; नल १. देखिये)।

३. कौरव्य कुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१२)।

४. एक वृष्णिवंशीय वीर, जिसके पराक्रम के बारे में सात्यकि ने श्रीकृष्ण से चर्चा की थी (म. व. १२०.१८)।

बाहुगर--(सो.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार सुद्युम्न राजा का पुत्र था।

बाहुदा सुयशा--परिक्षित् द्वितीय राजा की कुरुवंशीय पत्नी (सुयशा देखिये)। इसके पुत्र का नाम भीमसेन था।

बाहुरि—वसिष्ठ कुल के वाग्ग्रंथि नामक गोत्रकार के लिये उपलब्ध पाठभेद (वाग्ग्रंथि देखिये)।

बाहुवृक्त-- ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक ऋषि, जिसने युद्ध में शत्रुओं पर विजय प्राप्त की थी (ऋ. ५. ४४. १२)।

बाहुवृक्त आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ७१-७२)।

बाहुशालिन्--धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

बाह्य--अंगिराकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो वायु के अनुसार भजमान राजा का पुत्र।

बाह्यकर्ण—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१. ९)।

बाह्यका--यादवराजा सात्वंत भजमान की पत्नी जो सृंजय राजा की कन्या थी। इसे शताजित्, सहस्राजित् एवं आयुताजित् नामक तीन पुत्र थे।

बाह्यकुंड--कश्यप वंश में उत्पन्न एक नाग, जिसे नारद ने इंद्रसारथि मातलि को वरस्वरूप में दिखाया था (म. स. १०१. १०)।

बाह्लीक--(सो. पूरु.) कुरुवंशीय प्रतीप राजा का पुत्र, जो देवापि एवं शन्तनु का ज्येष्ठ भाई था (भा. ९. २२)। इसकी माता का नाम सुनंदा था, जो शिवि देश की राजकन्या थी (म. आ. ८९.५२)। शिवि राजा को पुत्र न था, जिस कारण यह उस राज्य का उत्तराधिकारी बन गया। प्रतीप का पुत्र होने से इसे 'प्रातिपीय' उपाधि प्राप्त थी। भागवत के अनुसार, इसके पुत्र का नाम सोमदत्त था (भा. ९. २२. १८)।

भारतीय युद्ध में, यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। दुर्योधन की ग्यारह अक्षौहिणी सेनाओं के जो सेनापति चुने गये थे, उनमें यह भी एक था। यह स्वयं अतिरथि था (म. उ. १६४. २८)। धृष्टकेतु, द्रुपद,

शिखण्डिन् आदि के साथ इसका युद्ध हुआ था। अन्त में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२. १५)।

महाभारत में इसका नाम बाह्लीक, बाह्लिक, तथा बाह्निक इन तीन प्रकारों में उपलब्ध है।

२. बाह्लीक देश में रहनेवाले लोगों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम (बाहीक देखिये; म. भी. १०.४५)।

३. (सो. पूरु.) एक राजा, जो भरतवंशीय कुरु राजा का पौत्र, एवं जनमेजय का तृतीय पुत्र था।

४. एक राजा, जो शत्रुपक्षविनाशक महातेजस्वी 'अहर' के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२५)।

५. कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

महाभारत में इसे 'बाह्लीकराज' कहा गया है। द्रौपदीपुत्रों के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. ७१.१२)।

६. युधिष्ठिर के सारथि का नाम (म. स. ५२.२०)।

७. (किलकिला. भविष्य.) किलकिलावंशीय एक राजा।

बिड़ाल—दैत्यराज महिषासुर का एक प्रधान।

बिड़ालज--अंगिराकुल के गोत्रकार 'विराडप' के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (विराडप देखिये)।

बिडौजस्--देवी आदिति का पुत्र, जो उसे विष्णु के प्रसाद से प्राप्त हुआ था (पद्म. भू. ३.५)।

बिद--भृगुकुल का एक गोत्रकार एवं मंत्रकार।

बिन्दु--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. अंगिरसकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बिन्दुग-बाष्कलग्राम में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम चंचला था। यह वेश्यागामी एवं निकृष्ट विचारोंवाला था, अतएव इसकी सदाचरणी पत्नी चंचला भी इसके प्रभाव में आ कर, बुरे कर्मों की ओर अग्रेसर हो, उसीमें लिप्त हो गयी। बिन्दुग को जब यह पता चला तो इसने उसके सामने यह शर्त रखी, 'तुम वेश्यावृत्ति का कर्म खुशी से अपना सकती हो, किंतु तुम्हे सारे पैसे मुझे देने होंगे'। इस शर्त को मान कर चंचुला पूर्ण रूप से वेश्या बन गयी। मृत्यु के उपरांत, दोनो विंध्य पर्वत पर पिशाच बने।

बाद को शिवपुराण के श्रवण तथा शिवभजन के कारण, चंचला पिशाचयोनि से मुक्त हुयी। उसके प्रार्थना करने पर, पार्वतीजी ने अपने पार्षद तुंबरु द्वारा विंध्य पर्वत पर पिशाची बिन्दुग को शिवकथा का श्रवण करवाया, जिससे उसे भी मुक्ति प्राप्त हुयी (शिवपुराण-महात्म्य अ. ४)।

बिन्दुमत्—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार मरीचि एवं बिंदुमती का पुत्र है। इसकी पत्नी का नाम सरधा था, जिससे इसे मधुर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

बिन्दुमती—(स्वा. प्रिय.) ऋषभदेव के वंश में उत्पन्न मरीचि राजा की पत्नी। इसके पुत्र का नाम विन्दुमत् था।

२. सोमवंशीय शशबिन्दु राजा की ज्येष्ठ कन्या, जो युवनाश्वपुत्र मांधाता की पत्नी थी। इसे 'चैत्ररथी' नामान्तर भी प्राप्त है। मांधाता राजा से इसे अंबरीष, पुरुकुत्स एवं मुचकुंद नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ८८.७२; ब्रह्मांड ३.६३.७०)।

३. मदनपत्नी रति के अश्रुबिंदुओं से उत्पन्न एक कन्या, जिसे 'अश्रुविन्दुमती' नामान्तर भी प्राप्त है। मदन का पुनर्जन्म होने के पश्चात् रति के आँखों में आनंदाश्रु झरने लगे। उनमें से दाये आँख से टपके हुए अश्रुओं से इसका जन्म हुआ।

बड़ी होने पर इसका विवाह पूरुवंशीय ययाति राजा से हुआ। गर्भवती होने पर, पृथ्वी के सारे लोकों में प्रवास करने की इसे इच्छा हुयी। फिर ययाति ने सारा राज्यभार अपना पुत्र पूरु पर सौंप कर, वह इसे पृथ्वीप्रदक्षिणार्थ ले गया (पद्म. भू. ७७-८२)। किन्तु ययाति से उत्पन्न इसके पुत्र का नाम क्या था, इसका निर्देश अप्राप्य है।

बिन्दुसार—(शिशु. भविष्य.) एक शिशुनागवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार क्षत्रौजस् का पुत्र था। जैन एवं बौद्ध वाङ्मय में निर्दिष्ट 'श्रेणिक बिंबिसार' यही है। इसे विधिसार, विविसार एवं विंध्यसेन आदि नामान्तर प्राप्त थे।

२. (मौर्य. भविष्य.) एक मौर्यवंशीय राजा, जो विष्णु एवं भविष्य के अनुसार, पट्टण के चंद्रगुप्त राजा का पुत्र था। इसे वारिसार एवं भद्रसार नामान्तर भी प्राप्त थे।

यह स्वयं बौद्धधर्मीय था, एवं पौरसाधिपति सुलून (सेल्युकस निकेटर) राजा की कन्या से इसने विवाह किया था (भवि. प्रति. २.७)।

बिम्ब—(सो. वृष्णि.) एक राजा, जो वसुदेव एवं भद्रा के पुत्रों में से एक था।

बिल्व—एक विष्णु भक्त, जो आगे चल कर शिवभक्त बन गया।

आदिकल्प में ब्रह्मा ने विल्व वृक्ष (बेलपत्र वृक्ष) का निर्माण किया, जिसे 'श्रीवृक्ष' भी कहते है। इस वृक्ष के नीचे एक व्यक्ति रहने लगी, जिसे ब्रह्मा ने 'विल्व' नाम दिया। बाद में, इसकी भक्तिभावना तथा व्यवहार से प्रसन्न हो कर, इन्द्र ने इसे पृथ्वी का राज्य करने के लिये कहा। इस महान् उत्तरदायित्व को सभाँलने के लिये इसने इन्द्र से वज्र माँगा, जिसके बलपर सुलभता के साथ राज्य किया जा सके। इन्द्र ने इससे कहा, 'तुम वज्र ले कर क्या करोगे ? जब कभी भी आवश्यकता पड़े, तुम मुझे याद कर उसे प्राप्त कर सकते हो'।

एक बार कपिल नामक एक शिवभक्त ब्राह्मण घूमता घामता इसके यहाँ आ पहुँचा। शीघ्र ही दोनों में मित्रता हो गयी। एक दिन इसमें तथा कपिल में शास्त्रार्थ हुआ, जिसका विषय था, 'तप श्रेष्ठ है अथवा कर्म'। यह चीज यहाँ तक जोर पकड़ गयी, कि इसने वज्र का स्मरण कर उसके द्वारा कपिल के दो टुकडे कर दिये। कपिल में भी शिव की भक्ति तथा अपने तप का बल था; अतएव उसने शिव के द्वारा पुनः अमरत्व प्राप्त किया।

इधर विल्व ने विष्णु के पास जा कर उन्हें प्रसन्न-कर, वर प्राप्त किया कि, संसार के समस्त प्राणी इससे डरते रहें। किन्तु इस वर द्वारा इसे कुछ लाभ न हुआ। अन्त में, विष्णुभक्ति से इसका मन शिवभक्ति की ओर झुका, तथा यह महाकालवन में शिवलिंग की आराधना करने लगा। एक बार घुमता हुआ कपिल उधर आ पहुँचा। वहाँ इसे इस रूप में देख कर वह अति प्रसन्न हुआ, तथा दोनो मित्र हो गये (स्कंद. ५. २. ८३)।

बिल्वक--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

विल्वतेजस्--तक्षककुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'बलहेड'।

बिल्वपत्र--कश्यपवंशीय एक नाग, जो नारदद्वारा मातलि को वरस्वरूप में दिखाया गया था (म. उ. १०१. १४)।

विल्वपांडुर--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

बिल्वि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिये 'भल्लि' पाठभेद प्राप्त है।

वीज--विश्वेदेवों में से एक।

बीजवाप (बीजवापिन्)--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वीभत्सु--अर्जुन का नामान्तर (म. वि. ३९.१०)।

बुडिल आश्वतराश्वि वैयाघ्रपद्य--एक गायत्री-वेत्ता एवं मूलतत्त्वप्रतिपादक आचार्य, जो विदेह जनक एवं केकयराज अश्वपति का समकालीन था (बृ. उ. ५. १४.८; श. ब्रा. १०.६.१.१)। संभव है, 'बुलिल आश्वतर अश्वि' तथा यह दोनो एक ही व्यक्ति हो।

अनेक ज्ञाताओं की विद्वत्सभा में इसने आत्मा की संबंध में अपने विचार प्रकट किये, एवं 'शर्य' स्वयं ही आत्मा है, ऐसा अभिमत इसने व्यक्त किया (छां. उ. ५. ११.१)। इसका एवं विदेह जनक का विवाद हुआ था, जिसमें जनक ने इस पर 'प्रतिग्रह' लेने का दोषारोप किया था।

संभव है, व्याघ्रपद का वंशज होने के कारण, इसे 'वैयाघ्रपद्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ हो।

बुद्धि--दक्षप्रजापति की कन्या, जो धर्म की पत्नी थी। इसे कुल नौ बहने थी, जो सारी धर्म ऋषि की पत्नियाँ थी। इसने एवं इसके बहनों ने ब्रह्माजी द्वारा धर्म का द्वार निश्चित किया था (धर्म देखिये; म. आ. ६०.१४)।

२. एक राजा, जो सावर्णि मनु का पुत्र था।

३. तुषित देवों में से एक।

बुद्धिकामा--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.१२)। इसके नाम के लिए 'वृद्धिकामा' पाठभेद प्राप्त है।

बुदबुदा--एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी (म. आ. २०८.१९; स. १०.११) ब्राह्मण के शाप के कारण, यह ग्राह हो कर जल में रहने लगी। पश्चात् अर्जुन द्वारा इसका ग्राहयोनि से उद्धार हुआ। (म. आ. २०८.१९)।

बुध--एक ग्रह, जो बृहस्पति की पत्नी तारा का चन्द्रमा से उत्पन्न पुत्र था (पद्म. सृ. ८२)। यह बृहस्पति-पत्नी का पुत्र था, इस कारण इसे 'बृहस्पतिपुत्र' नामांतर प्राप्त है। क्यों कि, यह चन्द्रमा से उत्पन्न हुआ, इसलिये इसे चन्द्र (सोम) वंश का उत्पादक कहा जाता है (पद्म. उ. २१५)।

इसकी पत्नी का नाम इला था, जो मनु की कन्या थी। इला से इसे पुरूरवस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. १४७.२६-२७)। यही पुरुरवस् सोमवंश

का आदि पुरुष माना जाता है (पद्म. सृ. ८; १२; दे. भा. १.१३)। 'भविष्य' में इसे चन्द्र एवं रोहिणी का पुत्र कहा गया है।

जन्म—बृहस्पति की दो पत्नियाँ थीं, जिनमें से दूसरी का नाम तारा था। सोम ने तारा का हरण किया था, एवं उससे ही उसे बुध नामक पुत्र हुआ (ऋ. १०.१०९)। पुराणों में भी यह कथा अनेक बार आयी है (वायु. ९०.२८-४३; ब्रह्म. ९.१९-३२; मत्स्य. २३; पद्म. सृ.१२.३३-५८)। उक्त ग्रन्थों में निर्दिष्ट बुध के जन्म की कथा रूपात्मक प्रतीत होती है, एवं आकाश में स्थित गुरु (बृहस्पति), चन्द्र, बुध आदि ग्रहनक्षत्रों को व्यक्ति मान कर इस कथा की रचना की गयी है।

विष्णुधर्म में इसके जन्म की कथा कुछ दूसरी भाँति दी गयी है। कश्यप ऋषि की धनु नामक स्त्री थी, जिससे उसे रज नामक उत्पन्न हुआ पुत्र था। रज का विवाह वरुण की कन्या वारुणी से हुआ। एक बार समुद्र में स्नान करते समय, वारुणी उसी में डूब गयी। उसे डूबा हुआ देख कर, उसे ढूँढ़ने के लिए चन्द्रमा ने जल में प्रवेश किया। उसके प्रवेश करते ही समुद्र में हिलोरें उठने लगी, और उससे एक बालक बाहर निकला। वही बालक बुध था। बृहस्पतिपत्नी तारा ने इस बालक बुध के संरक्षण का भार लिया, किन्तु बाद को असुविधा के कारण इसे चन्द्रपत्नी दाक्षायणी को दे दिया (विष्णुधर्म. १. १०६)।

बृहस्पति ने इसका जातिकर्मादि संस्कार किये थे। यह परम विद्वान् हो कर 'हस्तिशास्त्र' में विशेष पारंगत था (पद्म. सृ. १२.)। भास्कर संहिता के अन्तर्गत 'सर्वसारतंत्र' का यह रचयिता माना जाता है (ब्रह्मवै. २. १६)।

अदिति को शाप—एक बार इसने व्रत किया, एवं उसकी समाप्ति होने पर यह कश्यप ऋषि की पत्नी अदिति के पास भिक्षा के लिए गया और भिक्षा की याचना की। भिक्षा न मिलने पर इसने अदिति को शाप दिया, जिस कारण उसे एक मृत-अण्ड पैदा हुआ। उस अण्ड से कालोपरान्त श्राद्धदेव की उत्पत्ति हुयी। मृत अण्ड से पैदा होने के कारण, उसे 'मार्तंड' नामांतर प्राप्त हुआ (म. शां. ३२९.४४)।

भागवत में इसका विवरण एक ग्रह के रूप में दिया गया है। बुध ग्रह सौरमण्डल में शुक्रग्रह से दो लाख योजन की दूरी पर स्थित माना जाता है। यह शुभग्रह अवश्य है; किन्तु जब सूर्य का उल्लंघन कर जाता है, तब अनावृष्टि द्वारा संसार को त्रस्त करता है (भा. ५. २२)।

२. एक वानप्रस्थी ऋषि, जिसने वानप्रस्थधर्म का पालन एवं प्रसार कर स्वर्गलोक प्राप्त किया था (म. शां. २३९. १७)।

३. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार वेगवत् राजा का पुत्र था। इसे 'बंधु' नामांतर भी प्राप्त है।

४. एक स्मृतिकार एवं धर्मशास्त्रज्ञ, जिसका निर्देश अपरार्क, कल्पतरु, जीमूतवाहनकृत 'कालविवेक' आदि ग्रन्थों में प्राप्त है। इसके द्वारा रचित धर्मशास्त्र का ग्रन्थ काफी छोटा है, जिसमें निम्नलिखित विषयों का विवेचन करते हुए, इसने उन पर अपने विचार प्रकट किये हैं:— गर्भाधान से लेकर उपनयन तक के समस्त संस्कार, विवाह तथा उसके प्रकार, पंच-महायज्ञ, श्राद्ध, पाकयज्ञ, हविर्यज्ञ, सोमयाग, एवं ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं संन्यासियों के कर्तव्य आदि।

बुध के द्वारा रचित उक्त ग्रन्थ प्राचीन नहीं प्रतीत होता। उसके अनुशीलन से यह पता चलता है कि, इसने पूर्ववर्ती धर्मशास्त्रवेत्ताओं द्वारा कथित सामग्री को संग्रहीत मात्र किया है। इस ग्रन्थ के सिवाय 'कल्पयुक्ति' नामक इसका एक अन्य ग्रन्थ भी प्राप्त है (C. C.)

५. मगध देश का एक राजा, जो हेमसदन राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम अंजनी था (स्कंद. १. २. ४०)।

६. एक राक्षस, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था।

७. सुतप देवों में से एक।

८. गौड देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जो दुर्व एवं शाकिनी का पुत्र था। यह अत्यंत दुराचारी, दुर्व्यसनी एवं पाशविक वृत्तियों का था। एक बार शराब पी कर वेश्यागमन के हेतु यह एक वेश्या के यहाँ आ कर रातभर वहीं पड़ा रहा। इसके घर वापस न लौटने पर, इसका पिता ढूंढ़ता हुआ इसके पास पहुँचा, एवं इसकी निर्भत्सना की। उसके इस प्रकार कहने पर, इसने तत्काल अपने पिता को लात से मार कर उसका वध किया।

बाद को जब यह घर आया, तब इसकी माता ने अपनी बुरी आदतों को छोड़ने केलिये इसे समझाया। इसने उस बेचारी का भी वध किया। कालांतर में इस हत्यारे ने अपनी पत्नी को भी न छोड़ा, तथा उसे भी मार कर खतम कर दिया।

एक दिन इसने कालभी ऋषि की सुलभा नामक पत्नी को देखा, तथा तुरंत ही उसका हरण कर उसके, साथ बलात्कार किया। इससे क्रुद्ध हो कर ऋषिपत्नी ने शाप दिया, 'तुम कोढ़ी हो जाओ'। फिर यह कोढ़ी हो कर इधर उधर घूमने लगा।

घूमते घूमते यह शूरसेन राजा के नगर आ पहुँचा, जहाँ वह अपनी संपूर्ण नगरी के साथ विमान में बैठकर स्वर्ग जाने की तैयारी में था। विमान चालकों ने लाख प्रयत्न किया, लेकिन वह उड़ न सका। तब देवदूतों ने कोढ़ी बुध को दूर भगा देने के लिए शूरसेन से प्रार्थना की, क्यों कि, इस हत्यारे की पापछाया के ही कारण विमान पृथ्वी से खिसक न सका।

शूरसेन दयालु प्रकृति का धर्मज्ञ शासक था। अतएव उसने बुध को देखा, एवं गजानन नामक चतुरक्षरी मंत्र से इसके कोढ को समाप्त कर, इसे भी स्वानंदपुर ले जाने की व्यवस्था की (गणेश. १. ७६)।

१०. द्रविण देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण। इसकी पत्नी अत्यंत दुराचारिणी थी, किंतु दीपदान के पुण्य-कर्म के कारण, उसके समस्त पाप नष्ट हो गयें (स्कंद. २४.७)।

११. एक अग्निहोत्र करनेवाला ब्राह्मण, जो मधुवन में रहनेवाले शाकुनि नामक ऋषि का पुत्र था (पद्म. स्व. ३१)।

बुध आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१)।

बुध सौमायन--पंचविंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य, जिसके द्वारा यज्ञदीक्षा ली गयी थी (पं. ब्रा. २४.१८.६)। सोम का वंशज होने से, इसे 'सौमायन' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

बुध सौम्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१०१)।

बुधकौशिक--एक ब्रह्मर्षि, जो रामरक्षा नामक सुविख्यात स्तोत्र का रचयिता है।

बुध्न--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में एक था।

बुलिल आश्वतर आश्वि--बुडिल आश्वतराश्वि नामक आचार्य का नामान्तर (बुडिल आश्वतराश्वि देखिये)। विश्वजित् याग में पठन करने योग्य शस्त्रमंत्रों के संबंध में, इसका गौश्ल नामक आचार्य से वादविवाद हुआ था (ऐ. ब्रा. ६.३०; गौश्ल देखिये)।

बृबु तक्षन्--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक उदार दाता, जो पणि लोगों का अधिपति था (ऋ. ६.४५.३१-३३)। बृबु तक्षन् एवं प्रस्तोक सार्ञ्जय राजाओं से भरद्वाज ऋषि को विपुल उपहार प्राप्त होने का निर्देश ऋग्वेद एवं सांख्यायन श्रौतसूत्र में प्राप्त है (सां. श्रौ. १६.११. ११)।

यह स्वयं पणि अतएव हीन जाति का होने के कारण, इसके द्वारा कोई ऋषि दान न लेता था। किंतु भरद्वाज ऋषि अपने परिवार के साथ निर्जन अरण्य में रहता था, एवं उसे जीविका का कोई भी साधन उपलब्ध नहीं था। इस कारण बृबु से गायों का दान (प्रतिग्रह) लेते हुए भी, उसे भरद्वाज को कोई दोष न लगा (मनु. १०.१०७) संभवतः मनुस्मृति में निर्दिष्ट बृधु तक्षन् एवं बृबु तक्षन् एक ही व्यक्ति होंगे।

बृबु स्वयं एक पणि था। किंतु 'पाणियों का उन्मूलन करनेवाला' ऐसा भी आशय ऋग्वेद के निर्देश से ग्रहण किया जा सकता है। यदि ऐसा ही है, तो 'पणि' का अर्थ 'व्यापारी लोग' हो कर, बृबु उनका राजा होना संभवनीय है।

बृसय--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक दानव जाति, जो पणि एवं पारावत् लोगों के साथ संबंधित थी (ऋ. १.९३.४; ६.३१.१)। ये लोक पणि एवं पारावतों के साथ 'अर्कोसिया' अथवा 'ड्रैन्जियाना' प्रदेश निवास करते थे।

सायण के अनुसार, ऋग्वेद के भारद्वाज रचित सूक्त में इसे 'त्वष्टावृत्रपिता' कहा गया है, एवं इसके पुत्र वृत्र का वध करने की प्रार्थना सरस्वती से की गयी है (ऋ. ६. ३१.३)।

ऋग्वेद में अन्यस्थान पर, अग्नि एवं सोम के द्वारा बृसय के वंशजों का वध होने के कारण, उन देवताओं की स्तुति की गयी है (ऋ. १.९३.४)।

बृहच्छुक्र--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

बृहच्छ्लोक--एक आदित्य, जो उरुक्रम आदित्य का पुत्र था। इसकी माता का नाम कीर्ति था। सौभाग्यादि आदित्य इसके पुत्र थे।

बृहज्जिह्व--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

बृहज्जोति-- एक ऋषि, जो महर्षि अंगिरा को सुभा से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक (म. व. २०८.२)।

बृहत्--एक राजा, जो कालेय नामक दैत्य गणों में से आठवे दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६७.५५)।

२. स्वायंभूव मन्वन्तर के जिताजित् देवों में से एक।

३. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. (सो. पूरु.) पूरुवंशीय हस्तिन् राजा का नामान्तर (ब्रह्म. १३. ८०)।

५. (सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय बृहद्राज राजा का नामान्तर (बृहद्राज देखिये)।

६. दक्षसावर्णि मनु का एक पुत्र।

बृहती—देवसावर्णि मन्वन्तर के विष्णु की माता, जो देवहोत्र ऋषि की पत्नी थी (भा. ८. १३. ३२.)।

बृहत्कर्मन्--एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार पृथुलाक्ष राजा का, एवं विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार भद्ररथ राजा का पुत्र था।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार बृहद्वसु का, एवं वायु के अनुसार महाबल का पुत्र था। इसे बृहत्काय नामान्तर भी प्राप्त है।

३. (मगध. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड एवं विष्णु के अनुसार सुक्षत्र का, वायु के अनुसार सुकृत का, एवं मत्स्य के अनुसार सुरक्ष का पुत्र था। भागवत में इसे बृहत्सेन कहा गया है। मत्स्य, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने २३ वर्षों तक राज्य किया।

बृहत्काय--(सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, बृहद्भानु का पुत्र।

बृहत्कीर्ति--एक ऋषि, जो अंगिरा ऋषि को सुभा नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था।

बृहत्केतु—महाभारत में निर्दिष्ट एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.७७)।

बृहत्क्षण--इक्ष्वाकु वंशीय बृहत्क्षय राजा का नामांतर।

बृहत्क्षत्र--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार मन्यु का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार भुवन्मन्यु का पुत्र था। इसे बृहत्क्षेत्र नामांतर भी प्राप्त है।

२. भगीरथवंशीय एक राजा, जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१९)।

३. केकय देश का नरेश, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. १७७.१९)। महाभारत में इसके रथ के अश्वों का वर्णन प्राप्त है (म. द्रो. २२. १७)। भारतीययुद्ध में कृपाचार्य एवं क्षेमधूर्ति से इसका द्वंद्व युद्ध हुआ था, जिसमें इसने उन दोनों को परास्त किया था (म. द्रो. ४५.५२)। अंत में द्रोणाचार्य के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १०१.२१)।

४. निषध देश का राजा, जो भारतीययुद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. ३१.६३)

बृहत्क्षय--(सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार बृहद्बल राजा का पुत्र था। संभवतः यह भारतीययुद्धकालीन रहा होगा।

बृहत्क्षेत्र--पूरुवंशीय बृहत्क्षत्र राजा का नामांतर (बृहत्क्षत्र १. देखिये)।

बृहत्सामन् आंगिरस--एक अंगिरसकुलोत्पन्न आचार्य, जिसे क्षत्रियों ने अत्यधिक त्रस्त किया था। उन कष्टों के फलस्वरूप, अंत में स्वयं क्षत्रिय लोग भी विनष्ट हो गये (अ. वे. ५.१९.२)।

बृहत्सेन--एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। इसकी कन्या का नाम लक्ष्मणा था, जो कृष्ण की पत्नी थी। भारतीय युद्ध में यह दुर्योधन के पक्ष में शामिल था।

२. मगधवंशीय बृहतकर्मन् राजा का नामांतर (बृहत्कर्मन् ३. देखिये)।

३. श्रीकृष्ण को भद्रा नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्र।

४. एक आचार्य, जिसे नारद ने ब्रह्मविद्या की परंपरा कथन की थी। आगे चल कर यही परंपरा इसने इंद्र को निवेदित की थी (गरुड. २.१)।

बृहत्सेना—नलपत्नी दमयंती की धाय एवं परिचारिका, जो परिचर्या के काम में निपुण, एवं मधुरभाषिणी थी। राजा नल को जुवे में हरते जान कर, दमयन्ती ने इसे अपने मंत्रियों को बुलाने के लिए भेजा था (म. व. ५७. ४)। तदनुसार इसने विश्वसनीय पुरुषों के द्वारा वार्ष्णेय नामक सुत को बुलवाया था।

बृहदनु--(सो. पूरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार अजमीढ राजा के प्रपौत्र का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम बृहदिषु था (बृहदिषु १. देखिये)।

बृहदंबालिका--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.४)।

बृहदश्व--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो श्रावस्त का पुत्र था। इसकी राजधानी श्रावस्ती नगरी में थी, एवं इसके पुत्र का नाम कुवलाश्व था।

यह एक आदर्श एवं प्रजाहितदक्ष राजा था। वृद्धापकाल में, इसने अपने पुत्र कुवलाश्व को राजगद्दी पर बिठा

कर, वानप्रस्थाश्रम के लिये अरण्य में जाना चाहा। किन्तु उत्तंक ऋषि ने इसे रोंक दिया, एवं वन में जाने के पहले धुंधु नामक दैत्य का विनाश करने की प्रार्थना इसे की। फिर इसने अपने पुत्र कुवलाश्व को धुंधु दैत्य को नष्ट करने की आज्ञा दी, एवं यह स्वयं वन चला गया (म. व. १९३-१९४; वायु. ६८; विष्णुधर्म १.१६)।

२. एक महर्षि, जो काम्यकवन में युधिष्ठिर से मिलने आये थे। युधिष्ठिर ने इसका उचित आदर सत्कार किया, एवं इसके प्रति अपने दुःखदैन्य का निवेदन किया। इसने युधिष्ठिर को समझाते हुए निषधराज नल के दुःखदैन्य की कथा उसे सुनाई। पश्चात् युधिष्ठिर को 'अक्षहृदय' एवं 'अश्वशिर' नामक विद्याओं का उपदेश दे कर, यह विदा हो गया (म. व. ७८)।

शरशय्या पर पडे हुए भीष्म से मिलने आये ऋषियों में, यह भी शामिल था (भा. १.९.६)।

३. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. शिव के श्वेत नामक दो अवतारों में से श्वेत (द्वितीय) का शिष्य।

५. (सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो सहदेव राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे 'ध्रुवाश्व' कहा गया है।

बृहदिषु--(सो. अज.) एक अजमीढवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार अजमीढ राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे अजमीढ के प्रपौत्र का पुत्र बृहदनु का पुत्र कहा गया है। मत्स्य के अतिरिक्त बाकी सारे पुराणों में अजमीढ से बृहदनु तक के राजाओं का निर्देश अप्राप्य है।

२. (सो. नील.) एक नीलवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार भर्म्याश्व का, विष्णु के अनुसार हर्यश्व का, मत्स्य के अनुसार भद्राश्व का, एवं वायु के अनुसार रिक्ष राजा का पुत्र था।

बृहदुक्थ--अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार एवं ऋषिक। इसे 'बृहदुत्थ' एवं 'बृहद्वक्षस्' नामान्तर भी प्राप्त है।

२. निमिवंशीय देवराज जनक राजा का नामान्तर (बृहद्रथ ३. देखिये)।

बृहदुक्थ वामदेव--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा एवं पुरोहित (ऋ. १०.५४-५६)। शतपथब्राह्मण में इसे वामदेव का पुत्र इस अर्थ से 'वामदेव्य' कहा गया है (श. ब्रा. १३.२.२.१४)। पंचविंश ब्राह्मण में इसे वामनेय (वाम्नी का वंशज) कहा गया है (पं. ब्रा. १४. ९. ३७.३८)। किन्तु हॉपकिन्स के अनुसार, यहाँ वामदेव्य पाठ ही स्वीकरणीय है।

इसके द्वारा किये गये स्तुतिपाठों का निर्देश वत्रि के सूक्त में प्राप्त है (ऋ. ५.१९.३)। इसने पांचाल देश के दुर्मुख नामक राजा को राज्याभिषेक किया था (ऐ. ब्रा. ८.२३)।

इसके पुत्र का नाम वाजिन् था, जिसकी मृत्योपरान्त उसके मृत शरीर के भाग उठा कर ले जाने के लिये, इसने देवों से प्रार्थना की थी (ऋ. १०.५६)।

बृहदुच्छ--निमिवंशीय देवराज जनक का नामान्तर (बृहद्रथ ३. देखिये)।

बृहदुत्थ--बृहदुक्थ नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर (बृहदुक्थ १. देखिये)।

बृहद्दैशान--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भविष्य के अनुसार बृहद्बल राजा का पुत्र था।

बृहद्गर्भ--(सो. उशी.) शिबि औशीनर राजा का पुत्र। एक बार शिबिराजा के पास एक अतिथि आया, एवं उसने कहा, 'मेरी यही इच्छा है, तुम्हारे पुत्र बृहद्गर्भ का माँस पक कर मुझे खाने के लिए मिले'।

शिबि राज नें अपनी इसके प्रति की सारी वात्सल्य-भावना दूर रख कर इसका वध किया, एवं अतिथि की माँग पूरी की (म. शां. २२६. १९; शिबि देखिये)।

बृहद्गिरि--यति नामक यज्ञविरोधी लोगों में से एक। यति लोग यज्ञविरोधी होने के कारण, इंद्र की आज्ञा से लकडबग्घे के द्वारा मरवा डाले गये। इस वधसत्र में से यह, रयोवाज एवं पृथुरश्मि ही बच सके। इंद्र ने इन तिनों का संरक्षण किया, एवं उन्हें क्रमशः ब्रह्मविद्या, वैद्यविद्या एवं क्षत्रियविद्या सिखायी (पं. ब्रा. ८. १. ४. पृथुरश्मि देखिये)। पंचविंश ब्राह्मण में इसके द्वारा रचित एक सामन् का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. १३.४.१५-१७)।

बृहद्गुरु--एक प्राचीन राजा (म. आ. १.१७३)।

बृहद्दिव आथर्वण--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२०.८-२०)। इससे रचित सूक्त में इसने स्वयं को 'अथर्वन्' कहा है। यह सुम्नयु नामक आचार्य का शिष्य था (सां. आ. १५.१)। ऐतरेय ब्राह्मण में भी इसका नामोल्लेख प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ४.१४)।

बृहद्द्युम्न--एक महाप्रतापी नरेश, जिसने अपने यज्ञ में रैभ्यपुत्र अर्वावसु और परावसु को सहयोगी बनाया था (म. व १३९.१; रैभ्य एवं पुनर्वसु देखिये)।

बृहद्धनु--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो बृहन्मनस् का पुत्र था।

बृहद्बल--(सू. इ.) कोसल देश का एक सम्राट, जो भागवत के अनुसार तक्षक राजा का, एवं अन्य पुराणों के अनुसार विश्रुतवत् राजा का पुत्र था।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीमसेन ने किये पूर्व दिग्विजय में उसने इसे परास्त किया था (म. स. २७.१)। राजसूय यज्ञ में इसने युधिष्ठिर को चौदह हजार उत्तम अश्व भेंट में प्रदान किये थे।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। दुर्योधन ने अपने सैन्यसमुद्र में इनकी उपमा 'समुच्चाल' (ज्वार) से की थी (म. उ. १५८.३८)। अन्त में अभिमन्यु से हुए घनघोर युद्ध में, यह उसीके द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ४६.२४; भा. ९.१२.८)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वसुदेवभ्राता देवभाग एवं कंसा का पुत्र था (भा. ९.२४.४०)।

३. गांधारराज सुबल राजा का एक पुत्र, जो शकुनि का भाई था। अपने भाई शकुनि एवं वृषक के साथ यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था।

४. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार बृहत्कर्मन् का पुत्र था।

बृहद्बलध्वज--एक कुष्ठरोगी ऋषि, जो सूर्य की आराधना कर कुष्ठरोग से मुक्त हुआ (भवि. ब्राह्म. २१०))

बृहद्ब्रह्मन्--एक ऋषि, जो अंगिरस ऋषि को सुभा नामक पत्नी से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक था (म. व. २०८.२)।

बृहद्भानु--एक देव, जो द्यु का पुत्र था (म. आ. १.४०)।

२. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार पृथुलाक्ष का, एवं विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार बृहत्कर्मन् का पुत्र था।

३. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार बृहदिपु का पुत्र था। विष्णु के अनुसार, इसे बृहद्वसु, तथा वायु के अनुसार बृहद्विष्णु नामान्तर प्राप्त है।

४. श्रीकृष्ण एवं सत्यभामा के पुत्रों में से एक।

५. इंद्रसावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न एक अवतार, जो सत्रायण एवं विताना का पुत्र था।

६. भानु नामक अग्नि का नामान्तर।

बृहद्भास--एक ऋषि, जो अंगिरस ऋषि को सुभा नामक पत्नी से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक था।

बृहद्भासा--सूर्य की एक कन्या, जो भानु (मनु) नामक अग्नि की भार्या थी (म. व. २११.९)।

बृहद्रण--इक्ष्वाकुवंशीय बृहत्क्षय राजा का नामान्तर।

बृहद्रथ--एक राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद में 'नवावास्त्व' राजा के साथ प्राप्त है (ऋ. १.३६.१८)। वैकुंठ नामक इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. १०.४९.६)। संभव है कि, बृहद्रथ स्वतंत्र राजा का नाम न हो कर, 'नवावास्त्व' राजा की ही उपाधि हो।

२. (सो. ऋक्ष.) मगध देश का राजा, जो चेदिराज सम्राट उपरिचर वसु का पुत्र, एवं जरासंध का पिता था (म. आ. ५७.२९)। यह मगध देश का बलवान् राजा तीन अक्षौहिणी सेना का स्वामी, एवं अत्यंत पराक्रमी योद्धा था (म. स. १६.१२)।

काशिराज की दो जुडवी कन्याए इसकी पत्नियाँ थी। इसने एकांत में अपनी दोनो पत्नियों के साथ प्रतिज्ञा की थी, 'मैं तुम दोनों के साथ कभी विषम व्यवहार न करूँगा।'

इसे दुनिया के सारे सुख एवं भोग इसे प्राप्त थे, किंतु पुत्र न था। पुत्रप्राप्ति के लिये इसने पुत्रकामेष्टि यज्ञ भी किया, किंतु कुछ लाभ न हुआ। अंत में यह अपनी दोनों पत्नियों के साथ चंडकौशिक नामक मुनि के पास गया, एवं अनेक प्रकार के रत्नों से इसने उसे संतुष्ट किया। पश्चात् ऋषि ने इसे वन में आने का कारण पूछने पर, इसने अपनी निपुत्रिक अवस्था उसे कथन की।

पुत्रप्राप्ति के लिये चंडकौशिक मुनि ने इसे आम का एक फल दिया, एवं उसे अपने दो पत्नियों को समविभाग में देने के लिये कहा। ऋषि के आदेशानुसार राजा ने वह फल दो भागों में विभक्त कर के, एक एक भाग पत्नियों को खिलाया। पश्चात् दोनों को गर्भ रहा। प्रसवकाल आने पर दोनों के गर्भ से शरीर का आधा-आधा भाग उत्पन्न हुआ। उन दो टुकडो को रानियों ने बाहर फेंक दिया। जरा नामक राक्षसी ने उन दोनों टुकडों को जोड़ दिया, जिससे एक बलवान् कुमार सजीव हो उठा।

राक्षसी ने वह बालक राजा को अर्पित कर दिया। राजा उस बालक को ले कर महल में आया। इसने बालक का जातकर्म आदि किया, एवं उसका नाम जरासंध रखा गया। पश्चात् इसने मगध देश में राक्षसीपूजन का

महान् उत्सव मनाने की आज्ञा दी (म. स. १६-१७)।

जरासंध बड़ा होने पर, इसने उसे अपने राज्य पर अभिषिक्त किया, एवं अपनी दोनों पत्नियों के साथ यह तपोवन चला गया (स. १७.२५)।

इसने ऋषभ नामक राक्षस का वध कर के उसकी खाल से तीन नगाड़े बनवाये थे, जिनपर चोट करने से महिने भर आवाज होती रहती थी। ये नगाड़े इसने अपनी गिरिव्रज नामक राजधानी के महाद्वार पर रखे थे (म. स. १९.१५-१६)।

बृहद्रथ राजा को 'बार्हद्रथ' राजवंश का आद्य पुरुष माना जाता है। इसीसे आगे चल कर उस वंश का विस्तार हुआ (बार्हद्रथ देखिये)।

३. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो देवरात जनक का पुत्र था। विष्णु के अनुसार इसे बृहदुक्थ, एवं वायु के अनुसार बृहदुच्छ तथा दैवराति नामान्तर भी प्राप्त है।

अध्यात्मज्ञान के प्राप्ति के लिये इसने शाकल्य, याज्ञवल्क्य आदि ऋषियों को अपने राज्य में निमंत्रित किया था। उपस्थित सारे ऋषियों में से याज्ञवल्क्य ही अत्यंत ब्रह्मनिष्ठ है, यह जान कर इसने उससे अध्यात्मज्ञान का उपदेश प्राप्त किया (म. शां. २९८; भा. ९.१३; याज्ञवल्क्य देखिये)।

इसे महावीर्य नामक पुत्र था, जो इसके पश्चात् विदेह देश का राजा बन गया।

४. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार पृथुलाक्ष का, वायु के अनुसार बृहत्कर्मन् का, एवं विष्णु के अनुसार भद्ररथ राजा का पुत्र था। इसे बृहत्कर्मन् एवं बृहद्भानु नामक दो भाई थे।

५. (सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार जयद्रथ का पुत्र था।

६. एक तत्वज्ञानी, जिसका नामोल्लेख मैत्रायणी उपनिषद में प्राप्त है (मै. उ. १.२; २.१)।

७. (सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंशीय बहुरथ राजा का नामान्तर (बहुरथ देखिये)।

८. एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम इंदुमती था (इंदुमती ३. देखिये)।

९. अंगदेश का एक दानशूर राजा, जिसके द्वारा किये गये दान का वर्णन स्वयं श्रीकृष्ण ने किया था। महाभारत में निर्दिष्ट सोलह श्रेष्ठ राजाओं में इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसे 'अंग बृहद्रथ' कहा गया हैं (म. शां. २९.२८-३४)।

परशुराम के द्वारा किये गये क्षत्रिय संहार से इसे गोलांगूल नामक वानर ने बचाया, एवं गृध्रकूट नामक पर्वत पर इसे छिपा कर रख दिया। पश्चात् परशुराम के द्वारा सारी पृथ्वी कश्यप को दान दिये जाने पर, यह अपने राज्य में लौट आया, एवं पहले की तरह राज्य करने लगा (म. शां. ४९.७३)।

१०. एक राजा, जो सूक्ष्म नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.१९)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-बृहन्त।

११. एक अग्नि, जो वसिष्ठपुत्र होने के कारण, 'वासिष्ठ' भी कहलाता है। इसके पुत्र का नाम प्रणिधि था (म. व. २११.८)।

१२. दुर्योधनपक्षीय एक राजा (म. उ. १९६.१०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'बृहद्बल'।

१३. (सो. पूरु. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार तिग्मज्योति का, मत्स्य एवं विष्णु के अनुसार तिग्म का, तथा भागवत के अनुसार तिमि राजा का पुत्र था।

१४. (मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार शतधन्वन् का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार शतधनु का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार इसने ७० वर्षों तक, एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने ७ वर्षों तक राज्य किया। मत्स्य के अतिरिक्त बाकी सारे पुराणों में इसे मौर्यवंश का अंतीम राजा माना गया है।

१५. दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

बृहद्रथ ऐक्ष्वाक—एक राजा, जो शाकायन्य ऋषि के पास आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए गया था। शाकायन्य स्वयं मैत्री ऋषि का शिष्य था।

शाकायन्य को इसने कहा, 'अत्यंत गहरे कुएँ में गिरे हुए जानवर के समान मनुष्यप्राणि की स्थिति है। अतएव आप ही मुझे मुक्ति का रास्ता बताने की कृपा करें'। फिर शाकायन्य ने ब्रह्मज्ञान एवं पुनर्जन्म का विवेचन कर इसे मुक्ति का मार्ग बता दिया (मैत्रा. उ. १.१-७)।

बृहद्राज—(सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत एवं भविष्य के अनुसार अमित्रजित् राजा का, विष्णु के अनुसार मित्रजित् का, एवं मत्स्य के

अनुसार सुमित्र का पुत्र था। इसे बृहत् एवं भरद्वाज नामान्तर भी प्राप्त है।

बृहद्वक्षस्—अंगिराकुलोत्पन्न मंत्रकार बृहदुक्थ का नामांतर।

बृहद्वन्--एक गंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४६)।

बृहद्वपु—सत्यदेवों में से एक।

बृहद्वसु--वंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य (वं. ब्रा. ३)।

२. वशवर्तिन् देवों में से एक।

३. पूरुवंशीय बृहद्धानु राजा का नामांतर (बृहद्धानु ३. देखिये)।

बृहद्विष्णु--पूरुवंशीय बृहद्धानु राजा का नामांतर (बृहद्धानु ३. देखिये)।

बृहद्ध्वज--एक राक्षस, जो दूसरे लोगों के धनधान्य एवं स्त्रियों का अपहार करता था।

एक बार भीमकेश नामक राजा की केशिनी नामक स्त्री को इसने देखा। यह उसका अपहार करनेवाला ही था, कि केशिनी ने इसे कहा, 'मैं अपने पति का अत्यधिक द्वेष करती हूँ। इसी कारण, मैं स्वयं तुम्हारे साथ आने के लिए तैयार हूँ'।

कोशिनी के अपने रथ में बिठा कर, यह उसे गंगासागरसंगम पर ले गया। किंतु उस प्रदेश में कोशिनी का पति भीमकेश का राज्य होने के कारण, वह डर के मारे मर गयी। फिर उसकी मृत्यु के दुख से यह भी मर गया। किंतु इन दोनों की मृत्यु गंगासागरसंगम जैसे पवित्र स्थल पर होने के कारण, इन्हे विष्णुलोक की प्राप्ती हुयी (पद्म. क्रि. ४)।

बृहन्त--कुलूत देश का राजा। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, अर्जुन ने किये उत्तर दिग्विजय में, इसका अर्जुन के साथ युद्ध हुआ था। उस युद्ध में इसका पराजय हुआ, एवं अनेक प्रकार के रत्नों की भेंट लेकर यह अर्जुन की सेवा में उपस्थित हुआ था (म. स. २४.४-११)। द्रौपदी के स्वयंवर में भी यह उपस्थित था (म. आ. १७७.७)।

युधिष्ठिर के प्रति इसके मन में अत्यधिक आदरभाव था। इस कारण, भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.१३)। इसके रथ को जोते गये अश्व अत्यधिक सुंदर थे (म. द्रो. २२.४४)। अन्त में दुःशासन के द्वारा यह मारा गया (म. क. ४.६५)।

२. कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो क्षेमधूर्ति का भाई था। भारतीय युद्ध में सात्यकि के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. द्रो. २४.४५)। अन्त में इसी युद्ध में यह मारा गया (म. क. ४. ४१)।

३. (सो. पूरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार बृहदनु राजा का पुत्र था।

बृहन्नडा--अर्जुन का नामान्तर, जो उसने विराट नगर में अज्ञातवास के समय स्वीकृत किया था (म. वि. २२-अर्जुन देखिये)।

बृहन्मति आंगिरस-एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ३९-४०)।

बृहन्मनस्--(सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार, बृहद्रथ राजा का पुत्र था। इसे यशोदेवी एवं सत्या नामक दो पत्नियाँ थी। उनमें से यशोदेवी से इसे जयद्रथ, एवं सत्या से विजय नामक पुत्र उत्पन्न हुए।

२. एक ऋषि, जो महर्षि अंगिरा को सुमना (सुभा) नामक पत्नी से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक था (म. व. २०८.२)।

३. (सो. पूरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार बृहन्त राजा का पुत्र था।

बृहन्मित्र--एक ऋषि, जो महर्षि अंगिरा को सुमना (सुभा) से उत्पन्न सात पुत्रों में से एक था (म. व. २०८.२)।

बृहन्मेदस्--(सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो वसुष्मत् राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम श्रीदेव था (कूर्म. १.२४.६-१०)।

बृहस्पति--एक वैदिक देव, जो बुद्धि, युद्ध एवं यज्ञ का अधिष्ठाता माना जाता है। इसे 'सदसस्पति', 'ज्येष्ठराज' तथा 'गणपति' नाम भी दिये गये हैं (ऋ. १.१८. ६-७; २.२३.१)। बृहदारण्यक उपनिषद में बृहस्पति को वाणी का पति (बृहती+पति = वाणी + पति) माना गया है (बृ. उ. १.३.२०-२१)। मैत्रायणी संहिता एवं शतपथ ब्राह्मण में इसे 'वाचसपति' (वाच का स्वामी) कहा गया है (मै. सं. २.६.; श. ब्रा. १४.४.१)। वैदिकोत्तर साहित्य में, इसे बुद्धि एवं वाक्पटुता का देवता के रूप में व्यक्त किया गया है।

इस देवता का ऋग्वेद में प्रमुख स्थान है, एवं उसमें ग्यारह सम्पूर्ण सूक्तों द्वारा इसकी स्तुति की गयी है। दो सूक्तो में इन्द्र के साथ युगुलरूप में भी इसकी

गुणावली गायी गई है (ऋ. ४.४९; ७.९७)। इस ग्रन्थ में बृहस्पति नाम प्रायः एक सौ वीस बार, एवं 'ब्रह्मणस्पति' के रूप में इसका नाम लगभग पचास बार आया है। ऋग्वेद के लोकपुत्र नामक सूक्त के प्रणयन का भी श्रेय इसे प्राप्त है (ऋ. १०.७१-७२)।

जन्म--उच्चतम आकाश के महान् प्रकाश से बृहस्पति का जन्म हुआ था। जन्म होते ही इसने अपनी महान तेजस्वी शक्ति एवं गर्जन द्वारा अन्धकार को जीत कर उसका हरण किया (ऋ. ४.५०; १०.६८) इसे दोनों लोगों की सन्तान, तथा त्वष्टृ द्वारा उत्पन्न हुआ भी कहा जाता है (ऋ. ७.९७; २.२३)। जन्म की कथा के साथ साथ यह भी निर्देश प्राप्त होता है की, यह देवों का पिता है, तथा इसने लुहार की भाँति देवों को धमन द्वारा उत्पन्न किया है (ऋ. १०.७२)।

रूप-वर्णन--ऋग्वेद के सूक्तों में इसके दैहिक गुणों का सांगोपांग वर्णन तो नहीं मिलता, फिर भी उसकी एक स्पष्ट झलक अवश्य प्राप्त है। यह सप्त-मुख एवं सप्त-रश्मि, सुन्दर जिह्वावाला, तीक्ष्ण सीघोंवाला, नील पृष्ठवाला तथा शतपंखोंवाला वर्णित किया गया है (ऋ. ४.५०; १.१९०; १०.१५५; ५. ४३; ७.९७)। इसका वर्ण स्वर्ण के समान अरुणिम आभायुक्त है, तथा यह उज्वल, विशुद्ध तथा स्पष्ट वाणी बोलनेवाला कहा गया है (ऋ. ३.६२; ५.४३; ७.९७)।

इसके पास एक धनुष्य है, जिसकी प्रत्यंचा ही 'ऋत' है; एवं अनेक श्रेष्ठ बाण हैं, जिन्हें शस्त्र के रूप में प्रयोग करता है (ऋ. २.२४; अ. वे. ५.१८)। यह स्वर्ण कुठार एवं लौह कुठार धारण करता है, जिसे त्वष्टा तीक्ष्ण रखता हैं (ऋ. ७.९७; १०.५३)। इसके पास एक सुन्दर रथ है। यह ऐसे ऋत रूपी रथ पर खड़ा होता है, जो राक्षसों का वध करनेवाला, गाय के गोष्टों को तोड़नेवाला, एवं प्रकाश पर विजय प्राप्त करनेवाला है। इसके रथ को अरुणिम अश्व खींचते हैं (ऋ. १०.१०३; २.२३)।

गुण-वर्णन--बृहस्पति को 'ब्रह्मणस्पति' (स्तुतियों का स्वामी) कहा गया है, क्यों कि, यह अपने श्रेष्ठ रथ पर आरूढ़ हो कर देवों तथा स्तुतियों के शत्रुओं को जीतता है (ऋ. २.२३)। इसी कारण यह द्रष्टाओं में सर्वश्रेष्ठ एवं स्तुतियो का श्रेष्ठतम अधिराज कहा गया है (ऋ. २.२३)। यह समस्त स्तुतियों को उत्पन्न एवं उच्चारण करनेवाला है (ऋ. १.१०९; १.४०)। यह मानवीय पुरोहितों को स्तुतियां प्रदान करनेवाला देव है (ऋ. १०.९८.२७)।

बृहस्पति एक पारिवारिक पुरोहित है (ऋ. २.२४)। शतपथ ब्राह्मण में इसे सोम का पुरोहित कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.२), एवं ऋग्वेद में इसे प्राचीन ऋषियों ने पुरोहितों में श्रेष्ठपद (पुरो-धा) पर प्रतिष्ठित किया है। बाद के वैदिक ग्रन्थों में इसे ब्रह्मन् अथवा पुरोहित कहा गया है।

बृहस्पति युद्धोपम प्रवृत्तियोंको अर्जित करनेवाला है। इसने सम्पत्ति से भरे पर्वत का भेद कर, शम्बर के गढों को मुक्त किया था (ऋ. २.२४)। इसे दोनों लोकों में गर्जन करनेवाला, प्रथमजन्मा, पवित्र, पर्वतों में बुद्धिमान्, वृत्रों (वृत्राणि) का वध करनेवाला, दुर्गों को छिन्न-भिन्न करनेवाला, तथा शत्रुविजेता कहा गया है (ऋ. ६. ७३)। यह शत्रुओं को रण में पछाड़नेवाला, उनका दमन करनेवाला, युद्धभूमि में असाधारण योद्धा है, जिसे कोई जीत नहीं सकता (ऋ. १०.१०३; २.२३; १.४०)। इसीलिए युद्ध के पूर्व आह्वान करनेवाले देवता के रूप में इसका स्मरण किया जाता है (ऋ. २.२३)।

इन्द्रपुराकथा में, गायों को मुक्त करनेवालों में, अग्नि की भाँति बृहस्पति का भी नाम आता है। बृहस्पति ने जब गोष्ठों को खोला तथा इन्द्र को साथ लेकर अन्धकार द्वारा आवृत्त जलस्रोतों को मुक्त किया, तब पर्वत इनके वैभव के आधीन हो गया (ऋ. २.२३)। अपने गाय-कदल के साथ, इसने गर्जन करते हुए 'बल' को विदीर्ण किया; तथा अपने सिंहनाद द्वारा रेंभती गायों को बाहर कर दिया (ऋ. ४.५०)। पर्वतों से गायों को ऐसा मुक्त किया गया, जिस प्रकार एक निष्प्राण अण्डे को फोड़ कर जीवित पक्षी उन्मुक्त किया जाता है (ऋ. १०.६८)।

बृहस्पति त्रितायुओं का हरणकर्ता एवं समृद्धि प्रदाता देव के रूप में, अपने भक्तों द्वारा स्मरण किया जाता है (ऋ. २.२५)। यह एक ओर भक्तों को दीर्घव्याधियाँ से मुक्त करता है, उनके समस्त संकटो, विपत्तियों, शापों तथा यंत्रणाओं का शमन करता है (ऋ. १.१८; २.२३); तथा दूसरी ओर उन्हें वांछित फल, सम्पत्ति, वृद्धि तथा समृद्धि से सम्पन्न करता है (ऋ. ७.१०.९७)।

बृहस्पति मूलतः यज्ञ को सम्पन्न करनेवाला पुरोहित है, अतएव इसका एवं अग्नि का सम्बन्ध अविच्छिन्न है। मैक्स मूलर इसे अग्नि का एक प्रकार मानता है। रौथ कहता है,

'यह पौरोहित्य-प्रधान देवता स्तुति की शक्ति का प्रत्यक्ष प्रतिरूप है'।

चतुर्विंश तथा अन्य याग इसके नाम पर उल्लिखित है (तै. सं. ७.४.१)। इसके नाम पर कुछ साम भी है, जिनके स्वरों के गायन की तुलना क्रौंच पक्षी के शब्दों से की गयी है (छां. उ. १.२.११)।

इसके पत्नी का नाम धेना था (गो.ब्रा.२-९)। धेना का अर्थ 'वाणी' है। इसकी जुहू नामक एक अन्य पत्नी का भी उल्लेख प्राप्त है।

कई अभ्यासकों के अनुसार, आकाश के सौरमंडल में स्थित बृहस्पति नामक नक्षत्र यही था। इसकी पत्नी का नाम तारा था, जिसे सोम के द्वारा अपहार किया गया था। बृहस्पति की पत्नी तारा से सोम को बुध नामक पुत्र भी उत्पन्न हुआ था (वायु. ९०.२८-४३; ब्रह्म. ९.१९-३२; म. उ. ११५.१३)। ज्योतिर्विदों के अनुसार बृहस्पति के इस कथा में निर्दिष्ट सोम, तारा, बुध एवं बृहस्पति ये सारे सौरमंडल में स्थित विभिन्न नक्षत्रों के नाम हैं (बुध देखिये)।

२. एक ऋषि; जो देवों का गुरु एवं आचार्य था। (ऐ. ब्रा. ८.२६)। महाभारत में इसे एवं सोम को ब्राह्मणों का राजा कहा गया है (म. आश्व. ३)। यह दैत्य एवं असुरों का गुरु 'भार्गव उशनस् शुक्र' का समवर्ती था। देवदैत्यों का सुविख्यात संग्राम, जिसमें बृहस्पति एवं शुक्र इन दोनों ने बड़ा ही महत्वपूर्ण भाग लिया था, इक्ष्वाकुवंशीय ययाति राजा के राज्यकाल में हुआ था। दैत्यगुरु शुक्र की कन्या देवयानी से ययाति ने विवाह किया था। इस कारण, शुक्र एवं देवगुरु बृहस्पति ययाति के समकालीन प्रतीत होते है।

एक बार, देवगुरु बृहस्पति का इंद्र ने अपमान किया, जिसके कारण, इसने इंद्र तथा देवों को त्याग दिया। लेकिन जब विना बृहस्पति के, तरह तरह की अड़चनें पड़ने लगीं, तब देवों ने मिलकर इससे माफी माँगी, और पुनः इसे देवगुरु के स्थान पर सुशोभित किया (भा. ६.७)।

दैत्यों का पराजय--देवदानवों के बीच घोर संग्राम हुआ, जिसमें देवों को हार का मुँह देखना पड़ा। दानवों ने शक्ति, शासन और संजीवनी आदि के बल पर देवों को हर प्रकार के कष्ट देना आरम्भ किया। यही नहीं, शुक्राचार्य देवों को समूल नष्ट करने के लिए घोर तपस्या में लग गया। तब इन्द्र ने अपनी कन्या जयन्ती को शुक्र के पास उसके तप को भंग करने के लिये भेजा। वहाँ जा कर, जयन्ती ने उसे अपने सेवाभाव तथा मोहपाश में बाँध लिया। इस अवसर का लाभ उठाकर बृहस्पति ने तेजबल से शुक्र का रूप धारण कर एवं दानवों में नास्तिक धर्म प्रचार से उन्हें धर्मभ्रष्ट करने लगा। तब दैत्यों का पराभव हुआ (पद्म. सृ. १३; उशनस् देखिये)।

इन्द्रपद प्राप्त कर नहुप. तामसी प्रवृत्तियों में इतना लिप्त हो गया कि, उसने धार्मिक विधियों को त्याग कर स्त्रीभोग में ही अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ ली, तथा उत्पात मचाने लगा। एक बार उसने इन्द्राणी को देखा, तथा उसके रूपयौवन पर मोहित हो कर उसे पकड़ मंगाया। तब वह भागती हुई बृहस्पति के पास आयी, तथा इसने इसे आश्वासन दिया, 'इन्द्र तेरी रक्षा करेगा, तेरा सतीत्व रक्षित है। तुम्हें चिन्ता की आवश्यकता नहीं।' इसने ही इन्द्राणी को सलाह दी कि, नहुष से वह कुछ अवधि माँगे तथा इस प्रकार उसे धीरज दिला कर तरकीब से अपनी रक्षा करे (म. उ. १२.२५)। बाद को इन्द्र के द्वारा बताये हुए मार्ग पर चल कर, इन्द्राणी ने नहुष पर विजय प्राप्त की (म. उ. ११; नहुष देखिये)।

उपरिचर वसु के द्वारा निमंत्रण दिया जाने पर बृहस्पति ने उसके द्वारा किये यज्ञ में होता होना स्वीकार किया। उपरिचर वसु विष्णु का परम भक्त था। इसीलिये विष्णु ने इस यज्ञ में स्वयं भाग ले कर यज्ञ के प्रसाद (पुरोडाश) को प्राप्त किया। बृहस्पति को विष्णु की उपस्थिति का विश्वास न हुआ। उसने समझा कि, उपरिचर झूट बोल रहा है, तथा स्वयं की महत्ता बढ़ाने के लिए खुद पुरोडाश खाकर विष्णु की उपस्थिति का बहाना कर रहा है। यह समझ कर इसने उसे शाप देना चाहा। किन्तु एकत, द्वित तथा त्रित ने बृहस्पति के क्रोध को शांत कराया, एवं विश्वास दिलाया कि, 'उपरिचर सत्य कहता है। हम लोगों ने स्वयं विष्णु के दर्शन किये है' (म. शां. ३२३)। इसने उपरिचर वसु राजा को 'चित्रशिखण्डि-शास्त्र' का ज्ञान विधिवत् प्रदान किया था (म. शां. ३२३.१-३)।

असुर एवं गंधर्वों के समान देवों ने भी पृथ्वी का दोहन किया। उस समय देवों ने बृहस्पति को वत्स बनाया था (भा. ४.१८.१४)। अथर्ववेद के अनुसार, ऋषियों के द्वारा किये पृथ्वीदोहन में बृहस्पति दोग्धा (दोहन करनेवाला) बनाया था, सोम को वत्स, तथा छंदस को पात्र बनाया गया था। उस दोहन से तप तथा वेदों

का निर्माण दुग्ध रूप में हुआ (अ. वे. ८.२८; पृथु वैन्य देखिये)।

प्रभासक्षेत्र में स्थित सोमेश्वर के शिवमंदिर में, बृहस्पति ने एक हजार वर्षों तक शिव की आराधना कर उसे प्रसन्न किया। शिव ने इसे आशीर्वाद दिया 'आकाश में स्थित सौरमण्डल में तुम बृहस्पति नामक ग्रह रूप में प्रतिष्ठित होगे' (स्कंद. २.४.१-१७)। शिवकृपा से इसने प्रभासक्षेत्र में बृहस्पतीश्वर नामक शिवलिंग की स्थापना की (स्कन्द. ७.१.४८)।

संवाद—देवों के गुरु बृहस्पति का तत्त्वज्ञानी के नाते कई विद्वानों से शास्त्रार्थ हुआ, जो इसके ज्ञान, तर्क एवं त्वरितबुद्धि को प्रत्यक्ष प्रमाणित करते है।

युधिष्ठिर तथा इसके बीच जन्ममरण के संबंध में संवाद हुआ था, जिस में इसने उनके प्रकारों का वर्णन था। इसने युधिष्ठिर को बताया था कि, किस प्रकार प्राणी विभिन्न प्रकार के पाप कर के, उसके अनुसार ही भिन्न भिन्न योनियों में जन्म ले कर जन्ममरण के बन्धनों के बीच विचरण किया करता है (म. अनु. १११)। इसने उसे दान के स्वरूप की व्याख्या करते हुए, अन्नदान की महिमा का गान किया था (म. अनु. ११२)। युधिष्ठिर को जीवन में धर्मकर्म की आवश्यकता पर बल देते हुए, इसने उसे धर्म एवं अहिंसा का उपदेश दिया था (म. अनु. ११३)।

देवराज इंद्र को भी इसने अपनी ज्ञानगरिमा से कई उपदेश दिये। उसको वाणी की महत्ता बनाते हुए इसने उसे मधुर वचन बोलने का उपदेश दिया (म. शां. ८५.३-१०)। उसे धर्मोपदेश दिया, तथा धर्माचरण की आज्ञा दी (म. अनु. १२५)। भूमि का मूल्य तथा भूमिदान की महत्ता का ज्ञान भी इसने इंद्र को कराया था (म. अनु. ६२.५५-९२)। इसके समय में मनुष्यों का पशु की तरह यज्ञ में हवन किया जाता था। अतएव इंद्र नें प्रार्थना की कि, यह मनुष्यों को बलि के रूप में समर्पित करना बंद करे (म. आश्व. ५.२५-२७)।

कोसलाधिपति वसुमनस् से इसने राजसंस्था की आवश्यकता एवं राजा के कर्तव्य के बारे में उपदेश दिया था (म. शां. ६८)। इक्ष्वाकुवंशीय मांधाता राजा के पूँछने पर, इसने उसे गोदान के संबंध में अपने विचार प्रकट किये थे (म. अनु. ७६.५-२३)।

३. आंगिरस कुलोत्पन्न एक ऋषि, जो वैशाली के मरुत्त आविक्षित राजा का पुरोहित था। यह वैशाली के करंधम राजा का पुरोहित अंगिरा नामक महर्षि का पुत्र था। यह स्वायंभुव मन्वंतर में पैदा हुआ था। इसकी माता का नाम स्वरूपा था (भा. ४. १; म. आ. ६०.५, आश्व. ५.४; ब्रह्मांड ३.३.१)। कई ग्रंथों में, इसकी माता का नाम श्रद्धा दिया गया है। यह निर्देश सही हो, तो यह स्वायंभुव मन्वंतर का न हो कर, वैवस्वत मन्वंतर में उत्पन्न हुआ होगा। महाभारत में अन्यत्र, इसकी उत्पत्ति अग्नि से बताई गई है (म. व. २०७.१८)।

इसे संवर्त, तथा उतथ्य नामक दो भाई थे, जिनके साथ आजीवन इसका संघर्ष चलता रहा। इन भाइयों में से, उतथ्य इसका ज्येष्ठ भाई था, जिसके नाम के लिये, वेदार्थदीपिका में, 'उचथ्य,' ब्रह्मांड एवं मत्स्य में 'उशिज,' एवं वायु में 'अशिज' पाठभेद प्राप्त हैं। इन पाठभेदों में से, 'उचथ्य' पाठभेद ही सही प्रतीत होता है।

एक बार इसने उतथ्य की गर्भवती पत्नी ममता के साथ संभोग किया। संभोग करते समय ममता के उदर में स्थित बालक ने बृहस्पति से बार बार उक्त क्रिया करने पर प्रतिबन्ध लगाया। इस पर क्रोधित हो कर इसने उस बालक को शाप दिया कि, वह जन्मांध पैदा हो। यही बालक बाद को अन्धे दीर्घतमस् के रूप में पैदा हुआ। इसके तथा ममता के संभोग द्वारा भरद्वाज नामक पुत्र हुआ, जो बाद को इक्ष्वाकुवंशीय नरेश दुष्यन्तपुत्र भरत द्वारा गोद लिया गया (म. आ. ९८; मत्स्य. ४९; वेदार्थदीपिका ६. ५२)।

संवर्त से इसका झगड़ा ईर्ष्या के कारण हुआ। यह आरम्भ से ही देवों का एवं पृथ्वी के पाँच सम्राटों में से मरुत्त नामक सम्राट का भी पुरोहित था। एक बार अपना यज्ञ कराने के लिए इन्द्र ने इसे आमंत्रित किया। यह वहाँ गया, तथा वहाँ की सुखसामग्री एवं विलास देख कर वहीं रहा गया। इधर पृथ्वी पर मरुत्त को भी यज्ञ करना था। अतएव उसने इसे उपस्थित न जानकर, इसके भाई संवर्त द्वारा यज्ञ कार्य कराना आरम्भ किया। जैसे ही इसे यह ज्ञात हुआ, इसने इसमें अपना अपमान समझा, तथा इंद्र को आदेश दिया कि, वह संवर्त द्वारा किया गया मरुत्त का यज्ञ विध्वंस कर दे। इन्द्र अपनी समस्त सेना को ले कर यज्ञ विध्वंस हेतु गया, किंतु संवर्त के ब्रह्मतेजोबल के सम्मुख उसे परास्त होना पड़ा। पश्चात् मरुत्त का यज्ञ निर्विघ्न समाप्त हुआ (म. आश्व. ५.९)।

परिवार--बृहस्पति की पत्नियाँ, एवं पुत्रों के बारे में अनेक निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है। किंतु, वहाँ देवता बृहस्पति, देवगुरु बृहस्पति एवं बृहस्पति आंगिरस इन तीन स्वतंत्र व्यक्तियों के बारे में पृथगात्मता नही है, एवं इन तीनों को बहुत बूरी तरह संमिश्रित किया गया है। उदाहरणार्थ, तारा की कथा में, बृहस्पति को देवगुरु एवं आंगिरस कहा गया है (मत्स्य. ८३.३०; विष्णु. ४.६.७)। देवगुरु बृहस्पति को भी, अनेक स्थानों पर, आंगिरस कहा गया है, एवं बृहस्पति आंगिरस को अनेक स्थानों पर देवगुरु कहा गया है। वस्तुतः इन तीनों व्यक्तियाँ संपूर्णतः विभिन्न थी, जैसे कि ऊपर बताया गया है।

इस कारण, बृहस्पति की पत्नियाँ एवं पुत्रों के जो नाम पुराणों में प्राप्त हैं, वे निश्चित कौन से बृहस्पति से संबधित है, यह कहना असंभव है।

बृहस्पति को तारा (चांद्रमसी) एवं शुभा नामक दो पत्नियाँ थी। कई ग्रंथों में, प्रजापति की कन्या उषा को भी बृहस्पति की पत्नी बताया गया है। उनमें से शुभा से इसे सात कन्याँ, एवं तारा से सात पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुयी।

शुभा की कन्याओं के नाम इस प्रकार थेः--भानुमती, रागा, अर्चिष्मती, महामंती, महिष्मती, सिनिवाली एवं हविष्मती। तारा को अग्नि के नाम धारण करनेवाले सात पुत्र उत्पन्न हुए, जिनके नाम इस प्रकार थे:--शंयु, निश्चवन, विश्वभुज, विश्वजित्, वडवाग्नि, एवं स्विष्टकृत। उतथ्य नामक अपने भाई की पत्नी ममता से इसे भरद्वाज नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जिसे इसने 'आग्नेयास्त्र' प्रदान किया था।

तारा की कन्या का नाम स्वाहा था, जो वैश्वानर अग्नि की पत्नी थी (स्वाहा २. देखिये)।

कुशध्वज (कच) नामक इसके और एक पुत्र का निर्देश महाभारत में अनेक बार आता है (म. अनु. २६; कच २. देखिये)। किन्तु बृहस्पतिपत्नियों में से कौनसी पत्नी से वह उत्पन्न हुआ था, यह कहना मुष्किल है, क्यों कि, शुभा एवं तारा के पुत्रों में कही भी कच का नाम प्राप्त नही होता है।

द्रोणाचार्य की उत्पत्ति भी बृहस्पति के अंश से ही हुई थी, ऐसा माना जाता है। बृहस्पति की भुवना नामक एक ब्रह्मवादिनी एवं योगपरायण बहन थी, जो प्रभास नामक वसु की पत्नी थी, तथा उससे उसे विश्वकर्मन् नामक पुत्र पैदा हुआ था।

४. एक तत्वज्ञ आचार्य, जिसने धर्मशास्त्र, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र, एवं व्याकरणशास्त्र पर अनेक ग्रंथों की रचना की थी।

इसके द्वारा लिखित 'बृहस्पतिस्मृति' नामक एक ही ग्रंथ मुद्रित रूप में प्राप्त है। किंतु कौटिलीय अर्थशास्त्र, कामंदकीय नीतिसार, याज्ञवल्क्यस्मृति, अपरार्क, स्मृतिचंद्रिका आदि विभिन्न विषयक ग्रंथों में, इसके मत एवं इसके ग्रंथों के उद्धरण प्राप्त है, जिनसे प्रतीत होता है कि, इसके द्वारा धर्मशास्त्र, अर्थशास्त्र, व्याकरणशास्त्र, वास्तुशास्त्र, अदि विषयों पर काफी ग्रंथरचना की गई होगी।

बृहस्पति के द्वारा लिखित 'बृहस्पतिस्मृति' नामक जो ग्रंथ सांप्रत उपलब्ध है, वह अत्यधिक छोटा है, उसमें केवळ अस्सी श्लोक हैं, एवं उसे आनंदाश्रम पूना ने प्रकाशित किया है। जीवानंद के संग्रह में भी इसके नाम पर एक छोटी स्मृति है, किन्तु उसमें दानप्रशंसा आदि साधारण विषयों की चर्चा की गयी है।

अपरार्क आदि स्मृतियों में बृहस्पतिस्मृति के काफी उद्धरण लिये गये हैं, जिनसे इसकी मूल स्मृति की महत्ता का अनुमान किया जा सकता है। मुकदमों के दो प्रकारो (फौज़दारी तथा दीवानी) का प्रचलन सर्वप्रथम इसके द्वारा ही किया गया है। इसने ही सर्वप्रथम यह विधान रक्खा कि, जिन विधवाओं का पुत्र न हों, उन्हे पति के मृत्यु के बाद समस्त संपत्ति की अधिकारणी समझा जाय। वात्स्यायन कामसूत्र में इसके मतों का निर्देश प्राप्त है। राजा के सोलह प्रधान होने चाहिये, ऐसा इसका अभिमत था, जो कौटिल्य अर्थशास्त्र में निर्दिष्ट है। इसकी 'स्मृति' में नाणक, दीनार आदि सिक्कों की जानकारी प्राप्त है। बृहस्पति, आंगिरस, नारद एवं भृगु इन चार ऋषियों ने मनुस्मृति को चार विभागो में विभक्त करने का निर्देश प्राप्त है। इन चार आचार्यों में बृहस्पति के मत संपूर्णतः मनु के अनुकूल हैं।

अपरार्क एवं कात्यायन द्वारा लिये गये इसके उद्धरणों एवं नाणक एवं दीनार सिक्कों के आधार पर अनुमान किया गया है कि, धर्मशास्त्रकार बृहस्पति का समय दूसरी शताब्दी ईसा उपरांत होगा।

वायु में बृहस्पति द्वारा किये गये इतिहास पुराण विषयक प्रवचन का निर्देश प्राप्त है, एवं 'अष्टांगहृदय' में

इसके द्वारा रचे गए 'अंगदतंत्र' नामक वैद्यकीय ग्रंथ का निर्देश प्राप्त है (वायु. १०३-५९; अष्टांग. पृ. १८)।

ग्रन्थ--१. बृहस्पतिस्मृति; २. बार्हस्पत्यशास्त्रः-- ब्रह्मदेव द्वारा रचित 'बाहुदन्तक' नामक ग्रंथ को बृहस्पति ने तीन हज़ार अध्यायों में संक्षिप्त किया जिसे 'बार्हस्पत्यशास्त्र' कहते हैं; ३. दानबृहस्पति-बृहस्पति के इस ग्रंथ का निर्देश अपरार्क एवं दानरत्नाकार में प्राप्त हैं; ४. स्वप्नाध्याय; ५. चार्वाक दर्शनः- बृहस्पति द्वारा रचित इस ग्रंथ का निर्देश प्राप्त है। ६. वास्तुशास्त्रः- बृहस्पति द्वारा वास्तुशास्त्र पर लिखित एक ग्रंथ का निर्देश मत्स्य में प्राप्त है (मत्स्य. २५२; व्यास देखिये)।

५. जनमेजय के सर्पसत्र में उपस्थित एक ऋषि।

बृहस्पति शायस्ति--एक आचार्य, जो भवत्रात शायस्थि नामक ऋषि का शिष्य (इंडिशे स्टूडियेन ४. ३७२)।

बैजभृत—भृगुकुल का एक गोत्रकार।

बैजवाप--बृहदारण्यक उपनिषद में निर्दिष्ट एक आचार्य (बृ. उ. माध्यं. २.५.२०; ४.५.२६; श. ब्रा. १४.५.५.२०)। बीजवाप का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

बैजवापायन—बृहदारण्यक उपनिषद में निर्दिष्ट एक आचार्य (बृ. उ. माध्यं. २.५.२०; ४.५.२०; श. ब्रा. १४.५.२०)। बैजवाप का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके नाम के लिए 'वैजवापायन' पाठभेद भी प्राप्त है।

बैजवापि—एक आचार्य, जो संभवतः बीजवाप अथवा बीजवापिन् का वंशज होगा (मै. सं. १.४.७)।

बैद—धौम्य ऋषि का एक शिष्य (म. आ. ६. ७९)।

२. हिरण्यदत्त नामक आचार्य का पैतृक नाम।

बोध--व्यास की ऋक् शिष्य परंपरा में से बौध्य नामक आचार्य के लिये उपलब्ध पाठभेद (बौध्य देखिये)।

२. एक ऋषि, जो अथर्ववेद में प्रतिबोध नामक ऋषि के साथ निर्दिष्ट है (अ. वे. ५.३०.१०; ८.१.१३)।

बोधप--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

बोध्य—व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से बौध्य नामक आचार्य का नामांतर (बौध्य देखिये)।

२. एक आचार्य, जिसका नहुष राजा के साथ तत्त्वज्ञान विषय में संवाद हुआ था, जो 'बोध्यगीता' नाम से प्रसिद्ध है (म. शां. १७१.५८)।

बोध्य ने नहुष से कहा, 'मैं दूसरों को जो उपदेश करता हूँ, उसी अनुसार सर्वप्रथम मेरा आचरण रहता है। मै स्वयं किसी का गुरु न हो कर, सारे विश्व को मैं गुरु मानता हूँ। मैं ने पक्षियों से अद्रोह का पाठ सीखा है। उसी तरह पिंगला वेश्या से नैराश्य, मृग से त्याग, इषुकार से एकाग्रता, एवं कुमारी कन्या से एकाकित्व का पाठ मुझे प्राप्त हुआ है' (म. शां. १७१.५७-६१।

'बोध्य गीता' में प्राप्त उपर्युक्त तत्त्वज्ञान, एवं मंकि ऋषि प्रणीत 'मंकिगीता' का प्रतिपादन दोनो एक ही है।

बौधक—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य ऋषि का वाजसनेय शिष्य था।

बौधायन—कल्पसूत्रों का प्रवर्तक एक आचार्य, जो संभवत. कृष्ण यजुर्वेदशाखा का ऋषि था। इसके द्वारा विरचित 'बौधायन धर्मसूत्र' में कण्व बोधायन नामक पूर्वाचार्य का निर्देश प्राप्त है (बौ. ध. २.५.२७)। संभव है, यह उसी कण्व बोधायन का पुत्र अथवा वंशज होगा। धर्मसूत्र का भाष्यकार गोविंदस्वामिन् के अनुसार, बौधायन को 'काण्वायन' नामान्तर प्राप्त है (बौ. ध. १.३.१३.)।

बौधायन धर्मसूत्र में इसके नाम के लिए 'बोधायन' एवं 'बौधायन' दोनो भी पाठ प्राप्त है। कई स्थानों में इसे 'भगवान्' बोधायन कहा गया है।

बौधायन शाखा—यह संभवतः दक्षिण भारत में स्थित कृष्णा नदी के मुहाने में स्थित प्रदेश में रहता होगा। बौधायन शाखा के ब्राह्मण आज भी उसी प्रदेश में अधिकतर दिखाई देते हैं। वेदों का सुविख्यात भाष्यकार सायणाचार्य स्वयं बौधायन शाखा का था। बौधायन शाखा के ब्राह्मणों को 'प्रवचनकार शाखीय' नामान्तर भी प्राप्त है। गृह्यसूत्रों में स्वयं बौधायन को भी 'प्रवचनकर्ता' कहा गया है। पल्लव राजा नंदिवर्मन् के ९ वी शताब्दी के अनेक शिलालेखों में 'प्रवचनकार' लोगों को दान देने का निर्देश प्राप्त है (इन्डि. ॲन्टि. ८.२७३-२७४)। बौधायन के धर्मसूत्रों में भी दाक्षिणात्य लोगों के रीतिरिवाजों का निर्देश प्राप्त है।

बौधायन सूत्र--बौधायन के द्वारा रचित बौधायन सूत्रों का संग्रह संपूर्ण अवस्था में अभी तक अप्राप्य है जैसे

कि, आपस्तंब एवं हिरण्यकेशिन् आचार्यों का संग्रह किया गया है। डॉ. बर्नेल के द्वारा बौधायन के बहुत सारे सूत्र छः विभागों में एकत्रित किये गये है, जो इस प्रकार हैः— (१) श्रौतसूत्र (१९ प्रश्न); (२) कर्मान्तसूत्र (२० प्रश्न); (३) द्वैधसूत्र (४ प्रश्न); (४) गृह्यसूत्र (४ प्रश्न); (५) धर्मसूत्र (४ प्रश्न); (६) शूल्बसूत्र (३ प्रश्न)।

बौधायन सूत्रों के विभाग—डॉ. कालेन्ड के अनुसार बौधायन के सूत्र निम्नलिखित उन्चास प्रश्नों में विभाजित हैः–प्रश्नक्रमांक १–२१ श्रौतसूत्र; २२–२५ द्वैधसूत्र; २६–२८ कर्मान्तसूत्र; २९–३१ प्रायश्चित्त सूत्र; ३२ शूल्बसूत्र; ३३–३५ गृह्यसूत्र; ३६ गृह्यप्रायश्चित्त; ३७ गृह्यपरिभाषा सूत्र; ३८–४१ गृह्य परिशिष्ट सूत्र; ४२–४४ पितृमेध सूत्र; ४५ प्रवरसूत्र; ४६–४९ धर्मसूत्र।

बौधायन श्रौतसूत्र—कालेन्ड के अनुसार, बौधायन का श्रौतसूत्र उपलब्ध श्रौतसूत्रों में प्राचीनतम है। उस सूत्रग्रंथ में ‘द्वैध’ एवं ‘कर्मान्त’ नामक दो स्वतंत्र अध्याय सम्मीलित है, जिनमें द्वैध अध्याय में तैत्तिरीय शाखा के बहुत सारे पूर्वाचार्यों के मत उद्धृत किये गये है। इस सूत्रग्रंथ का अंग्रेजी अनुवाद वैदिक संशोधक मंडल (पूना) के द्वारा प्रकाशित किये गये ‘श्रौत-कोश’ नामक ग्रंथ में प्राप्त है।

बौधायनधर्मसूत्र—कृष्ण यजुर्वेद के तीन प्रमुख आचार्यों में काण्व बोधायन, आपस्तंब, एवं हिरण्यकेशिन् ये तीन प्रमुख माने जाते हैं। उनमें से भी कण्व बोधायन प्राचीनतम था, एवं कृष्ण यजुर्वेदियों के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में उसका निर्देश बाकी दो आचार्यों के पहले किया जाता है। किन्तु जो ‘बौधायनधर्मसूत्र’ वर्तमान काल में उपलब्ध है, वह निश्चित रूप में आपस्तंब धर्मसूत्र के उत्तरकालीन है। यह प्रायः उपनिषदों से भी उत्तरकालीन है, क्यों कि, इसके धर्मसूत्र में छांदोग्य उपनिषद से मिलताजुलता एक उद्धरण प्राप्त है।

आपस्तंब की तुलना में बौधायन, गौतम एवं वसिष्ठ ये उत्तरकालीन धर्मसूत्रकार अधिक प्रगतिशील विचारों के प्रतीत होते है। नियोगजनित संतति आपस्तंब तिरस्करणीय मानता है (आप. २.६.१३.१–९)। किन्तु गौतम, बौधायन एवं वसिष्ठ के द्वारा विशेष प्रसंगों में नियोग स्वीकार किया गया है।

शबर के द्वारा लिखित धर्मशास्त्र का काल ५०० ई. के पूर्व का माना जाता है। शबर के काल में ‘बौधायनधर्मसूत्र’ एक सर्वमान्य एवं सन्मान्य धर्मग्रंथ माना जाता था। इससे प्रतीत होता है कि, बौधायन धर्मशास्त्र का रचना काल ईसा पूर्व ५००–२०० के बीच कही होगा।

बौधायन के धर्मसूत्र में वसंत सम्पात की स्थिति वेदांगज्योतिष के अनुसार दी गयी है। उससे प्रतीत होता है कि, इसका काल ईसा शताब्दी के पूर्व लगभग १२०० होगा (कविचरित्र)

बौधायन धर्मसूत्र का जो संस्करण सांप्रत प्राप्त है, उसमें बहुत सारा भाग प्रक्षिप्त है, एवं कई भाग गौतम धर्मसूत्र एवं विष्णु धर्मसूत्र में से लिया गया है। उसमें पुनरुक्ति भी काफी प्राप्त है।

बौधायन धर्मसूत्र के प्रश्न चार विभागों में विभाजित है, एवं उसमें मुख्यतः निम्नलिखित विषयों का विवेचन किया गया हैः—चातुवर्ण्य में आवश्यक नित्याचार के नियम, पंचमहायज्ञ एवं अन्य यज्ञ यथासांग करने के लिए आवश्यक वस्तु, विवाह के नानाविध प्रकार, प्रायश्चित्त, नियोग संतति उत्पन्न करने के लिए आवश्यक नियम, श्राद्धविधि, प्राणायाम, अघमर्षण एवं जप आदि।

बौधायन धर्मसूत्र में वेद, तैत्तिरीय संहिता, तैत्तिरीय ब्राह्मण, तैत्तिरीय आरण्यक, शतपथ ब्राह्मण, उपनिषदों, निदान आदि ग्रंथों से उद्धरण लिये गये हैं। ऋग्वेद के अघमर्षण एवं पुरुषसूक्त ये दोनो ही सूक्त बौधायन ने लिये हैं। उसी तरह बौधायन ने औपंजाघनि, कात्य, काश्यप प्रजापति आदि धर्मशास्त्रकारों का उल्लेख अपने ग्रंथों में किया है।

शबर, कुमारिल, मेधातिथि आदि टीकाकारों ने बौधायन धर्मसूत्र का उल्लेख अपने ग्रंथों में किया है। उसी तरह विश्वरूप में, एवं मिताक्षरा में बौधायन के चौथे प्रश्न के अनेक सूत्र उद्धृत किये गये हैं।

बौधायन धर्मसूत्र में गणेश की पूजा का निर्देश प्राप्त है, एवं उसमें गणेश के निम्नलिखित नामान्तर दिये गये है :— विघ्न, विनायक, स्थूल, वरद, हस्तिमुख, वक्रतुंड, लंबोदर (बौ. ध. २.५.२१)। उस ग्रंथ में रवि, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि आदि राशियों के ग्रहों का, तथा राहु एवं केतु ग्रहों का निर्देश प्राप्त है (बौ. ध. २.५.२३)। विष्णु के बारह नाम भी उस ग्रंथ में दिये गये है (बौ. ध. २.५.२४)। रंगभूमि पर अभिनय करना, एवं अभिनय सिखाना इन दोनो कार्यों की गणना बौधायन के द्वारा ‘उपपातको’ में की गयी है (बौ. ध.

२.१.४४)। 'दत्तकमीमांसा' नामक ग्रंथ में बौधायन के 'दत्तक' संबंधी जो सारे उद्धरण लिये गये है, वे बौधायन धर्मसूत्र के न हो कर, बौधायन गृह्यशेषसूत्र में से लिये गये है (बौ. गृ. २.६)।

टीकाकार--बर्नेल के अनुसार, बौधायन श्रौतसूत्र का सर्वाधिक प्राचीन टीकाकार भवस्वामिन् था, जो ८ वीं शताब्दी में पैदा हुआ था। बौधायन धर्मसूत्र की अत्यधिक ख्यातिप्राप्त टीका गोविंदस्वामिन् के द्वारा विरचित है, किन्तु वह टीकाकार काफ़ी उत्तरकालीन प्रतीत होता है।

बौधायनस्मृति--आनंदाश्रम (पूना) के द्वारा प्रकाशित 'स्मृतिसमुच्चय' नामक ग्रंथ में, बौधायन के द्वारा विरचित एक स्मृति दी गयी है, जो आठ अध्यायों की है। उस स्मृति के हर एक अध्याय में तीन चार प्रश्न पूछे गये हैं, एवं उन प्रश्नों के उत्तर वहाँ दिये गये है।

२. एक आचार्य, जो ब्रह्मसूत्र का सुविख्यात 'वृत्तिकार' माना जाता है। रामानुजाचार्य के द्वारा लिखित 'श्रीभाष्य' बौधायन के 'ब्रह्मसूत्रवृत्ति' पर आधारित है। इससे प्रतीत होता है कि, वृत्तिकार बौधायन स्वयं शंकराचार्य के काफी पहले का होगा। अनेक विद्वानों के अनुसार, यह द्रविड देश में पैदा हुआ था।

बौधीपुत्र--एक आचार्य, जो शालंकायनीपुत्र का शिष्य था (बृ. उ. माध्यं. ६.४.३१)। इसके शिष्य का नाम कौत्सीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३१)। बोध के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने के कारण इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

बौधेय--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

बौध्य--एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से बाष्कलि ऋषि का शिष्य था। इसके नाम के लिये 'बोध' एवं 'बोध्य' पाठभेद प्राप्त है (व्यास देखिये)।

ब्रध्न--एक राजा, जो भौत्य मनु के पुत्रों में से एक था।

ब्रध्नश्व--एक राजा। एक बार श्रुतर्वन् नामक राजा को साथ ले कर अगस्त्य ऋषि इसके पास आया, एवं इससे धन की याचना करने लगा।

इसने अगस्त्य ऋषि के सामने अपने आय-व्यय का संपूर्ण विवरण रख दिया, जिसमें इसकी आय एवं व्यय दोनों एक बराबर थे, एवं बचा हुआ पैसा एक भी न था। फिर अगस्त्य ने इससे कोई भी धन लेने के लिए इन्कार कर दिया; एवं इसे साथ ले कर, वह किसी अन्य जगह धन की याचना के लिए चला गया (म. व. ९६)।

ब्रह्मकृतेजन--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार 'ब्राह्मपुरेयक' के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (ब्राह्मपुरेयक देखिये)।

ब्रह्मगार्ग्य--एक ब्राह्मण, जो श्रीकृष्ण का पुरोहित था (पद्म. स. २३)।

ब्रह्मचारिन्--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्रावा का पुत्र था (म. आ. ५९.४५)। महाभारत में अन्यत्र इसे क्रोधा का पुत्र कहा गया है। अर्जुन के जन्मोत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. ११४.३७)।

२. स्कंद का नामान्तर।

ब्रह्मजित्--संह्लादपुत्र कालनेमि नामक राक्षस का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.५.३८)।

ब्रह्मतन्वि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

ब्रह्मदत्त--(सो. पूरु.) पांचालदेशीय कांपिल्य नगर का एक राजा, जो भागवत के अनुसार नीप राजा का पुत्र था (म. शां. १३७)। विष्णु, मत्स्य एवं वायु में इसे अणुह राजा का पुत्र कहा गया है।

इसकी माता का नाम कीर्तिमती अथवा कृत्वी था, जो शुकाचार्य की कन्या थी। देवल ऋषि की कन्या सन्नति इस कीपत्नी थी (ह. वं. १.२३-२५)। किन्तु भागवत में इसकी पत्नी का नाम गो दिया गया है (भा. ९.२२.२५)। भागवत एवं विष्णु में इसके पुत्र का नाम विष्वक्सेन दिया गया है। किन्तु मत्स्य एवं वायु में इसके पुत्र का नाम क्रमशः युगदत्त, एवं युगसूनु दे कर, इसके पौत्र का नाम विष्वक्सेन बताया गया है। महाभारत में इसके पुत्र का नाम सर्वसेन बताया गया है।

इसके भवन में निवास करनेवाली पूजनी नामक चिड़िया के बच्चों को इसका पुत्र सर्वसेन ने मारा, अतएव पूजनी ने भी सर्वसेन की आँखे फोड डाली (म. शां. १३७.१७)। पश्चात् पूजनी ने इसका राजभवन छोड़ना चाहा। राजा ब्रह्मदत्त ने उसे रहने के लिये काफ़ी आग्रह किया। किन्तु अपने शत्रु के घर रहने से उसने इन्कार कर दिया। राजभवन छोड़ते समय पूजनी का एवं इसका तत्वज्ञान संबंधी संवाद हुआ था (म. शां. १३७.२१-१०९; पूजनी देखिये)।

इसने जैगीषव्य ऋषि से योगविद्या प्राप्त कर, योगतंत्र नामक ग्रंथ का निर्माण किया था (भा. ९.२२.२६)।

महाभारत के अनुसार, सुविख्यात वैदिक आचार्य कण्डरीक के वंश में इसका जन्म हुआ था, एवं उसीके वंश में उत्पन्न हुआ कण्डरीक नामक अन्य एक पुरुष इसका मंत्री था। मत्स्य में बाभ्रव्य पांचाल सुबालक एवं कण्डरीक को क्रमशः इसका मंत्री एवं मंत्रीपुत्र कहा गया है (मत्स्य. २०.२४; २१.३०)। यह स्वयं वेदशास्त्रविद् था, एवं इसने अथर्ववेद के एवं कण्डरीक ने सामवेद के क्रमपाठ की रचना की थी (म. शां. ३३०.३८-३९)। अथर्ववेद संहिता का पदपाठ एवं शिक्षा की भी इसने रचना की थी।

योगाचार्य गालव इसका मित्र था, एवं इसने सात जन्मों के जन्ममृत्युसंबंधी दुःखों का बारबार स्मरण कर के योगजनित ऐश्वर्य प्राप्त किया था। इसने ब्राह्मणों को 'शंखनिधि' दे कर ब्रह्मलोक भी प्राप्त किया था (म. अनु. १३७.१७; शां. २२६.२९)। समस्त प्राणियों एवं पक्षियो की बोली इसे अवगत थी (ह. वं. १.२०-२४)।

भीष्म का पितामह प्रतीप राजा का यह समकालीन था (ह. वं. १.२०.११-१२)।

२. कांपिल्य नगरी का राजा, जो सोमदा नामक गंधर्वी का पुत्र था। सोमदा गंधर्वी ने चूलि नामक महर्षि की अनन्यभाव से सेवा की, जिससे प्रसन्न हो कर उस ऋषि ने सोमदा को इसे पुत्ररूप में प्रदान किया।

कुशनाभ नामक दैत्य ने वायु (वात) के कारण वक्र हुयी अपनी सौ कन्याएँ इसे प्रदान की। इसने उन कन्याओं की वक्रता दूर कर उनका स्वीकार किया (वा. रा. बा. ३३)।

३. सूर्यवंशीय एक राजा, जिसने साबरमती नदी के तट पर शंकर की उग्र तपस्या कर, वहाँ अपने नाम से प्रसिद्ध एक शिवलिंग की स्थापना की (पद्म. उ. १३५)।

४. शाल्व देश का एक राजा, जिसके पुत्र का नाम हंस था (हंस ७. देखिये)।

ब्रह्मदत्त चैकितानेय--एक आचार्य, जो कुरुवंशीय राजा अभिप्रतारिन् का आश्रित था (जै. उ. ब्रा. १.३८. १; ५९.१)। चेकितान का वंशज होने से इसे 'चैकितानेय' उपाधि प्राप्त हुयी होगी (चैकितानेय देखिये)। इसके द्वारा प्राणविद्या कथन किये जाने का निर्देश बृहदारण्यक उपनिषद में प्राप्त है (बृ. उ. १.३.२४)।

ब्रह्मदेव--पांडवपक्षीय एक योद्धा, जो पांडवों की सेना की रक्षा के लिए शिखण्डी के क्षत्रदेव नामक पुत्र के साथ उपस्थित था (म. उ. १९६.२५)।

ब्रह्मधना--कश्यप ऋषि के रक्षस नामक असुरपुत्र की पत्नी। इसे निम्नलिखित नौ पुत्र थे:--अम्बुक, केलि, क्षम, ध्वति, ब्रह्मपेत, यज्ञहा, यज्ञापेत, श्वात एवं सर्प। इसे निम्नलिखित चार कन्याएँ भी थी:--अपहारिणी, क्षमा, महाजिह्वा एवं रक्तकर्णी (ब्रह्मांड. ३.७.९८)।

ब्रह्मधातृ--कुबेर का एक सेवक, जो प्रहेति राक्षस का पुत्र था।

ब्रह्मन्--एक पौराणिक देवता, जो सम्पूर्ण प्रजाओं का स्रष्टा माना जाता है। इसने सर्वप्रथम प्रजापति बनाये, जिन्होंने आगे चल कर प्रजा का निर्माण किया। वैदिक ग्रन्थों में निर्दिष्ट प्रजापति देवता से इस पौराणिक देवता का काफ़ी साम्य है एवं प्रजापति की बहुत सारी कथायें इससे मिलती जुलती (प्रजापति देखिये)। सृष्टि के आदि-कर्त्ता एवं जनक चतुर्मुख ब्रह्मन् का निर्देश, जो पुराणों में अनेक बार आता है, वह वैदिक ग्रन्थों में अप्राप्य है। किंतु वेदों में 'धाता', 'विधाता', आदि ब्रह्मा के नामांतर कई स्थानों पर आये है।

उपनिषद् ग्रन्थों में ब्रह्मन् का निर्देश प्राप्त है, किन्तु वहाँ इसके सम्बन्ध में सारे निर्देश एक तत्त्वज्ञ एवं आचार्य के नाते से किये गये है। वहाँ उसे सृष्टि का सृजनकर्ता नहीं माना है। उपनिषदों के अनुसार यह परमेष्ठिन् ब्रह्म नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. २.६.३; ४.६. ३)। सारी सृष्टि में यह सर्वप्रथम उत्पन्न हुआ (मुं. उ. १.१.२)। इसने अथर्वन् को ब्रह्मविद्या प्रदान की थी (मुं. उ. १.१.२)। इसी प्रकार इसने नारद को भी ब्रह्म विद्या का ज्ञान कराया थां (गरुड. उ. १-३)। छांदोग्य उपनिषद में ब्रह्मोपनिषद् नामक एक छोटा उपनिषद् प्राप्त है, जो सुविख्यात ब्रह्मोपनिषद् से अलग है। इस उपनिषद् का ज्ञान ब्रह्मा ने प्रजापति को कराया, एवं प्रजापति ने 'मनु' को कराया था (छां. उ. ३.११.३-४)। ब्रह्मन् नामक एक ऋत्विज का निर्देश भी उपनिषद् ग्रन्थों में प्राप्त है।

जन्म--पुराणों के अनुसार भगवान् विष्णु ने कमल रूपधारी पृथ्वी का निर्माण किया, जिससे आगे चल कर ब्रह्मन् उत्पन्न हुआ (मत्स्य. १६९.२; म. व. परि. १ क्र. २७; पंक्ति. २८.२९; भा. ३.८.१५)।

महाभारत के अनुसार, भगवान विष्णु जब सृष्टि के निर्माण के सम्बन्ध में विचारनिमग्न थे, उसी समय उनके मन में जो सृजन की भावना जाग्रत हुयी, उसीसे ब्रह्मा का सृजन हुआ (म. शां. ३३५.१८)।

महाभारत में अन्यत्र कहा है कि, सृष्टि के प्रारम्भ में सर्वत्र अन्धकार ही था। उस समय एक विशाल अण्ड प्रकट हुआ, जो सम्पूर्ण प्रजाओं का अविनाशी बीज था। उस दिव्य एवं महान् अण्ड में से सत्यस्वरूप ज्योतिर्मय सनातन ब्रह्म अन्तर्यामी रूप से प्रविष्ट हुआ। उस अण्ड से ही प्रथमदेहधारी प्रजापालक देवगुरु पितामह ब्रह्मा का अविर्भाव हुआ। एक तेजोमय अण्ड से सृष्टि का निर्माण होने की यह कल्पना, वैदिक प्रजापति से, चिनी 'कु' देवता से, एवं मिस्र 'रा' देवता से मिलती जुलती है (प्रजापति देखिये, म. आ. १.३०; स्कंद. ५.१,३)।

विष्णु के अनुसार, विश्व के उत्पत्ति आदि के पीछे अनेक अज्ञात एवं अगम्य शक्तियों का बल सन्निहित है, जो स्वयं ब्रह्मन् है। यह स्वयं उत्पत्ति आदि की अवस्था से अतीत है। इसी कारण इसकी उत्पत्ति की सारी कथाएँ औपचारिक हैं (विष्णु. १.३)।

महाभारत में ब्रह्मन् के अनेक अवतारों का वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसके निम्नलिखित अवतारों का विवरण दिया गया हैः— मानस, कायिक, चाक्षुष, वाचिक, श्रवणज, नासिकाज, अंडज, पद्मज (पाद्म)। इनमें से ब्रह्मन् का पद्मज अवतार अत्यधिक उत्तरकालीन माना जाता है (म. शां. ३५७.३६-३९)।

सृष्टि के सृजन के समय, इसने सृष्टि के सृजनकर्ता ब्रह्मा, सिंचनकर्ता विष्णु, एवं संहारकर्ता रुद्र ये तीनों रूप स्वयं धारण किये थे। यही नहीं, सृष्टि के पूर्व मत्स्य, तथा सृष्टि के सृजनोपरांत बाराह अवतार भी लेकर इसने पृथ्वी का उद्धार भी किया था।

चतुर्मुख—यह मूलतः एक मुख का रहा होगा, किन्तु पुराणों में सर्वत्र इसे चतुर्मुख कहा गया है, एवं उसकी कथा भी बताई गयी है। इसने अपने शरीर के अर्धभाग से शतरूपा नामक एक स्त्री का निर्माण किया, जो इसकी पत्नी बनी। शतरूपा अत्यधिक रूपवती थी। यह उसके रूप के सौन्दर्य में इतना अधिक डूब गया कि, सदैव ही उसे देखते रहना ही पसन्द करता था।

एक बार अनिंद्य-सुंदरी शतरूपा इसके चारों ओर परिक्रमा कर रही थी। वहीं पास में इसके मानसपुत्र भी बैठे थे। अब यह समस्या थी कि, शतरूपा को किस प्रकार देखा जाये कि, वह कभी आँखो से ओझल न हो। बार बार मुड़ मुड़कर देखना पुत्रों के सामने अभद्रता थी। अतएव इसने एक मुख के स्थान पर चार मुख धारण किये, जो चारों दिशाओं की ओर देख सकते थे।

शतरूपा एक बार आकाशमार्ग से ऊपर जा रही थी। अतएव इसने जटाओं के उपर एक पाँचवाँ मुख भी धारण किया था, किन्तु वह बाद को शंकर द्वारा तोड़ डाला गया। इसे स्त्री के रूप सौन्दर्य में लिप्त होने कारण, अपने उस समस्त तप को जड़मूल से खो देना पड़ा, जो इसने अपने पुत्रप्राप्ति के लिए किया था (मत्स्य. ३.३०-४०)।

'जैमिनिअश्वमेध' में ब्रह्मा की एक कथा प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, अति प्राचीन काल में ब्रह्मा को चार से भी अधिक मुख प्राप्त थे। बक दाल्भ्य नामक ऋषि को यह अहंकार हो गया था कि, मैं ब्रह्मा से भी आयू में ज्येष्ठ हूँ। उसका यह अहंकार चूर करने के लिए, ब्रह्मा ने पूर्वकल्प में उत्पन्न हुए ब्रह्माओं का दर्शन उसे कराया। उन ब्रह्माओं को चार से भी अधिक मुख थे, ऐसा स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (जै. अ. ६०-६१)।

शंकर से विरोध—शंकर ने इसका पाँचवा मुख क्यों तोड़ा इसकी विभिन्न कथायें पुराणों में प्राप्त हैं।

मत्स्य के अनुसार, एक बार शंकर की स्तुति कर ब्रह्मा ने उसे प्रसन्न किया एवं यह वर माँगा कि वह उसका पुत्र बने। शंकर को इसका यह अशिष्ट व्यवहार सहन न हुआ, और उसने क्रोधित होकर शाप दिया, 'पुत्र तो तुम्हारा मैं बनूँगा, किन्तु तेरा यह पाँचवा मुख मेरे द्वारा ही तोड़ा जायेगा'।

सृष्टिनिर्माण के समय इसने 'नीललोहित' नामक शिवावतार का निर्माण किया। शेष सृष्टि का निर्माण करते समय, इसने उस शिवावतार का स्मरण न किया, जिसकारण क्रुद्ध होकर उसने इसे शाप दिया, 'तुम्हारा पाँचवाँ मस्तक शीघ्र ही कटा जायेगा'।

मत्स्य में अन्यत्र लिखा है कि, इसके पाँचवें मुख के कारण बाकी सारे देवों का तेज हरण किया गया। एक दिन यह अभिमान में आकर शंकर से कहने लगा, 'इस पृथ्वी पर तुम्हारे अस्तित्व होने के पूर्व से मैं यहाँ निवास करता हूँ, मैं तुमसे हर प्रकार ज्येष्ठ हूँ'। यह सुनकर क्रोधित हो कर शंकर ने सहजभाव से ही इसके मस्तके को अपने अँगूठे से मसल कर पृथ्वी पर ऐसा फेंक दिया, मानों किसी ने फूल को क्रूरता के साथ डाली से नोच कर जुदा कर दिया हो (मत्स्य १८३. ८४-८६)। इसका मस्तक तोड़ने के कारण, शंकर को ब्रह्महत्या का पाप लगा। उस पाप से छुटकारा पाने के लिये, ब्रह्मा के कपाल को लेकर उसने कपालीतीर्थ में उसका विसर्जन किया (पद्म. सृ. १५)।

पाँचवे मस्तक के कट जाने के उपरांत, इसके अन्य मस्तक स्तम्भित हो गये। उनमें से स्वेदकण निकल कर मस्तक पर छा गये। जिसे देखकर इसने उन स्वेदकणों को हाथ से निचोड़ कर जमीन में फेंका। फेंकते ही उससे एक रौद्र पुरुष उत्पन्न हुआ, जिसको इसने शंकर के पीछे पीछे छोड़ दिया। अंत में शंकर ने उसे पकड़ कर विष्णु के हवाले किया (स्कंद ५.१.३-४)।

ब्रह्मा एवं शंकर के आपसी विरोध की और अन्य कथाएँ भी पुराणों में प्राप्त हैं। एक बार शिवपत्नी सती के रूपयौवन पर यह आकृष्ट हुआ, जिस कारण क्रुद्ध हो कर शंकर इसे मारने दौड़ा। किन्तु विष्णु ने शंकर को रोकने का प्रयत्न किया। फिर भी शंकर ने इसे 'ऐंद्रशिर' एवं 'विरूप' बनाया। इसकी विरूपता के कारण सारे संसार में यह अपूज्य ठहराया गया (शिव. रुद्र. स. २०)।

एक बार शंकर ने अपनी संध्या नामक कन्या का दर्शन इसे कराया। उसे देखते ही ब्रह्मा मोहित हो गया। शंकर ने इसका यह अशोभनीय एवं अनुचित कार्य इसके पुत्रों को दिखा कर, उनके द्वारा इसका उपहास कराया। अपने इस अपमान का बदला लेने के लिए, ब्रह्मा ने दक्षकन्या सती का निर्माण कर, दक्ष द्वारा शंकर का अत्यधिक अपमान कराया (स्कंद २.२.२३)। इसे दाहिने अँगूठे से दक्ष का, एवं बाये से दक्षपत्नी का निर्माण हुआ था (म. आ. ६०.९)।

स्कन्द के अनुसार, सृष्टि का निर्माण करने के लिए ब्रह्मा एवं नारायण सर्वप्रथम उत्पन्न हुए थे। सृष्टि निर्माण करने के पश्चात्, ब्रह्मा तथा नारायण में यह विवाद हुआ कि, उन दोनों में कौन श्रेष्ठ है? यह झगड़ा जब तय न हो सका, तो दोनों शंकर के पास गये। वहाँ शंकर ने दोनों के सामने एक प्रस्ताव रखा कि, जो व्यक्ति शिवलिंग के आदि एवं अन्त को शोध कर, सर्वप्रथम उसकी सूचना उसे देगा, वही ज्येष्ठ बनने का अधिकारी होगा। ब्रह्मा ने उर्ध्वमार्ग से शोध करना आरम्भ किया, किन्तु इसे सफलता न मिली। तब इसने 'गौ' एवं 'केतकी' को अपना झूठा गवाह बना कर, शंकर के सामने पेश करते हुए कहा, 'मै ने शिवलिंग के आदि एवं अन्त शोध किया है, जिसके प्रत्यक्ष गवाह देनेवाले गौ एवं 'केतकी' सम्मुख है'। यह सुन कर ब्रह्मा को ज्येष्ठपद दिया गया। किन्तु बाद में असलियत मालूम होने के उपरांत, शंकर ने नारायण को ज्येष्ठ, एवं इसे कनिष्ठ एवं अपूज्य ठहराया।

पश्चात्, शंकर के कथनानुसार, इसने गंधमादन पर्वत पर एक यज्ञ किया, जिस कारण श्रौत एवं स्मार्त धर्मविधियों में इसे पूज्यत्व प्रदान किया गया (स्कन्द. १.१.६; १.३.२; ९-१५; ३.१.१४)।

सृष्टि निर्माण—इसने अनेकानेक प्राणियों का सृजन किस प्रकार किया, इसकी कथा विभिन्न पुराणों में तरह तरह से दी गयी है।

महाभारत के अनुसार, वरुणरूपधारी शंकर ने एक बार यज्ञ किया, जिसमें ब्रह्मा ने अपने वीर्य की आहुति दी। उसी यज्ञ से प्रजापतियों का जन्म हुआ (म. अनु. ८५.९९-१०२)।

पद्म के अनुसार, इसने सर्वप्रथम तमोगुणी प्रजा उत्पन्न की, एवं उसके उपरांत क्रमशः रजोगुणी, तथा सतोगुणी प्रजा का निर्माण किया। इसके द्वारा निर्माण की गयी तमोगुणी सृष्टि पाँच प्रकार की थी, जो निम्नलिखित हैं:—तम, मोह, महामोह, तामिस्र एवं अन्धतामिस्र। यह पाँचो प्रकार की सृष्टि अन्धकारमय थी, एवं उसमें केवल नागों की उत्पत्ति ब्रह्मा ने की थी।

तत्पश्चात् इसने विभिन्न प्रकारों की कुल आठ सृष्टियों का निर्माण किया, जिनके नाम एवं उनमें उत्पन्न प्राणियों के नाम इस प्रकार हैं:—तिर्यक्स्रोतस् (पशु), ऊर्ध्वस्रोतस् (देव), अर्वाक्स्रोतस् (मनुष्य), अनुग्रह, भूत, प्राकृत, वैकृत एवं कौमार।

पद्म में यह भी लिखा है कि, देव, राक्षस, पितर, मनुष्य, यक्ष एवं पिशाच गणों की उत्पत्ति ब्रह्मा ने अपने मनःसामर्थ्य से की। ब्रह्मा का पहला शरीर तमोगुणी था, जिसके 'जघन' से असुरों का निर्माण हुआ। पश्चात, इसने अपने तमोगुणी शरीर का त्याग कर, नये सतोगुणी शरीर को धारण किया। इसके द्वारा परित्याग किये गये तमोगुणी शरीर से रात्रि का निर्माण हुआ, एवं इसके द्वारा धारण किये गये सतोगणी शरीर से देवों की उत्पत्ति हुई। पश्चात् इसने अपने द्वितीय शरीर का भी त्याग किया, जिससे दिन की उत्पत्ति हुयी। इसके तृतीय शरीर से 'पितर' उत्पन्न हुए, एवं उसके त्यक्त भाग से संध्याकाल की उत्पत्ति हुयी। इसके चतुर्थ शरीर से मनुष्य उत्पन्न हुए, एवं उसके त्यक्त भाग से उषःकाल का निर्माण हुआ। इसके पाँचवे शरीर से यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुए।

अपने शरीर के द्वारा देवता, ऋषि, नाग एवं असुर निर्माण करने के पश्चात्, इसने उन चारों प्राणिगणों को एकाक्षर 'ॐ' का उपदेश किया था (म. आश्व. २६. ८; देव देखिये)।

ब्रह्मा के शरीर के विभिन्न भागों से किन किन प्राणियों की उत्पत्ति हुयी है, इसकी जानकारी विभिन्न पुराणों में तरह तरह से दी गयी है। पद्म के अनुसार, ब्रह्मा के हृदय से बकरी, उदर से गाय, भैंस आदि ग्राम्य पशु, पैरों से अश्व, गद्धे, ऊँट आदि वन्य पशु उत्पन्न हुए। मत्स्य के अनुसार, इसके दाहिने अंगूठे से दक्ष, हृदय से मदन, अधरों से लोभ, अहंभाव से मद, आँखो से मृत्यु, स्तनाग्र से धर्म, भ्रूमध्य से क्रोध, बुद्धि से मोह, कंठ से प्रमोद, हथेली से भरत, एवं शरीर से शतरूपा नामक पत्नी उत्पन्न हुयीं। उक्त वस्तुओं एवं व्यक्तियों की कोई माता नहीं थी, कारण ये सभी ब्रह्मा के शरीर से ही पैदा हुए थे। मत्स्य एवं महाभारत के अनुसार, इसके शरीर से मृत्यु नामक स्त्री की उत्पत्ति हो गयी थी (म. द्रो. परि. १.८. १५०)।

वेदों का निर्माण—पुराणों के अनुसार, ब्रह्म के चार मुखों से समस्त वैदिक साहित्य एवं ग्रंथों का निर्माण हुआ है। विभिन्न प्रकार के वेद निर्माण करने के पूर्व, इसने पुराणों का स्मरण किया था। पश्चात्, अपने विभिन्न मुखों से इसने निम्नलिखित वैदिक साहित्य का निर्माण कियाः— (१) पूर्वमुख से-गायत्री छंद, ऋग्वेद, त्रिवृत, रथंतर एवं अग्निष्टोम; (२) दक्षिणमुख से-यजुर्वेद, पंचदश ऋक्समूह, बृहत्साम एवं उक्थयज्ञ; (३) पश्चिममुख से-सामवेद, सप्तदश ऋक्समूह, वैरुपसाम एवं अतिरात्रयज्ञ; (४) उत्तरमुख से-अथर्ववेद, एकविंश ऋक्समूह, आप्तोर्याम, अनुष्टुप छंद एवं वैराजसाम।

वेदादि को निर्माण करने के पश्चात्, इसने ब्रह्मा नाम से ही सुविख्यात हुए अपने निम्नलिखित मानसपुत्रों का निर्माण कियाः—मरीचि, अत्रि, अंगिरस्, पुलस्त्य, पुलह, क्रतु, दक्ष, भृगु एवं वसिष्ठ (ब्रह्मांड. २. ९)। महाभारत में इसके धाता एवं विधाता नामक दो मानसपुत्र और दिये गये हैं (म. आ. ६०.४९)।

मदन को शाप—ब्रह्मा की पत्नी शतरूपा के लिए मत्स्य में सावित्री, सरस्वती, गायत्री, ब्रह्माणी आदि नामांतर दिये गये है। अपने द्वारा उत्पन्न पुत्रों को प्रजोत्पत्ति करने की आज्ञा देकर, यह स्वयं अपनी पत्नी सावित्री के साथ रत हुआ, जिससे स्वायंभुव मनु की उत्पत्ति हुयी। शतरूपा अथवा सावित्री इसके द्वारा ही पैदा की गयी थी। अतएव उसका एवं ब्रह्मा का सम्बन्ध पिता एवं पुत्री का हुआ। किन्तु इसने उसे अपनी धर्मपत्नी मानकर उसके साथ भोग किया। पुराणों में प्राप्त यह कथा, वैदिक ग्रन्थों में निर्दिष्ट प्रजापति के द्वारा अपनी कन्या उषा से किये 'दुहितृगमन' से मिलती जुलती है (प्रजापति देखिये)। मत्स्य के अनुसार, ब्रह्मा स्वयं वेदों का उद्गाता एवं 'वेदराशि' होने के कारण, यह दुहितृगमन के पाप से परे है (मत्स्य. ३)।

अपने द्वारा किये गये दुहितृगमन से लज्जित होकर, एवं कामदेव को इसका जिम्मेदार मानकर, इसने मदन को शाप दिया कि, वह रुद्र के द्वारा जलकर भस्म होगा। इसके शाप को सुनकर मदन ने जबाब दिया, 'मैंने तो अपना कर्तव्य निर्वाह किया है। उसमें मेरी त्रुटि क्या है?' यह सुनकर ब्रह्मा ने उसे उःशाप दिया, 'रुद्र के द्वारा दग्ध होने के बाद भी तुम निम्नलिखित बारह स्थान पर निवास करोगेः—स्त्रियों के नेत्रकटाक्ष, जंघा, स्तन, स्कंध, अधरोष्ठ आदि शरीर के भाग, तथा वसंतऋतु, कोकिलकंठ, चंद्रिका, वर्षाऋतु, चैत्रमास और वैशाखमास आदि' (मत्स्य. ४. ३-२०; स्कंद ५.२.१२)।

प्रभासक्षेत्र में यज्ञ—स्कंद में, ब्रह्मा की पत्नी सावित्री एवं गायत्री को एक न मान कर अलग अलग माना गया है, एवं सावित्री के द्वारा इसे तथा अन्य देवताओं को जो शाप दिया गया था उसकी कथा निम्न प्रकार से दी गयी है :- एक बार ब्रह्मा ने प्रभासक्षेत्र में एक यज्ञ किया, जिसमें यज्ञ की मुख्य व्यवस्था विष्णु को, ब्राह्मणसेवा इन्द्र को, एवं दक्षिणादान कुबेर को सौंपी गयी थी।

ब्रह्मा के इस यज्ञ में निम्नलिखित ऋषि ब्रह्मन्, उद्गातृ, होतृ एवं अध्वर्यु बने थेः—

(१) ब्रह्मन्गण—नारद (ब्रह्मा), गौतम अथवा गर्ग (ब्राह्मणाच्छंसी), देवगर्भ व्यास (होता), देवल भरद्वाज (आग्नीध्र)।

(२) उद्गातृगण-अंगिरस् मरीचि गोभिल (उद्गाता), पुलह कौथुम (उद्गाता अथवा प्रस्तोता), नारायण शांडिल्य (प्रतिहर्ता), अत्रि अंगिरस् (सुब्रह्मण्य)।

(३) होतृगण—भृगु (होता), वसिष्ठ मैत्रावरुण (मैत्रावरुण ऋत्विज्), क्रतु मरीचि (अच्छावाच्), च्यवन गालव (ग्रावा अथवा ग्रावस्तुद्)।

(४) अध्वर्युगण—पुलस्त्य (अध्वर्यु), शिबि अत्रि (प्रतिष्ठाता अथवा प्रस्थाता), बृहस्पति रैभ्य (नेष्टा),

अंशपायन सनातन (उन्नेता)। बाकी सारे ऋषि इसके यज्ञ के सदस्य बने थे।

सावित्री से शाप--यज्ञ की दीक्षा लेकर यह यज्ञ प्रारम्भ करने ही वाला था कि, इसे ध्यान आया कि, यज्ञकुण्ड के पास सावित्री उपस्थित नहीं है, और बिना पत्नी के यज्ञ आरम्भ नहीं किया जा सकता। अतएव इसने सावित्री को बुलावा भेजा, पर सावित्री के आने में देर हुयी। पता नहीं उसे वहाँ आने में हिचकिचाहट थी, अथवा वह अकेले न आकर लक्ष्मी के साथ आने के लिए उसे ढूँढ़ रही थी, बहरहाल उसे देरी हुयी। इस देरी से ब्रह्मा चिढ़ गया, तथा उसने इन्द्र को आज्ञा दी कि, शीघ्र ही किसी स्त्री को इस कार्य की पूर्ति के लिए लाया जाय। इन्द्र एक ग्वाले की कन्या ले आया। ब्रह्मा ने उसे 'गायत्री' नाम देकर वरण किया, एवं यज्ञ पर उसे बिठा कर कार्य आरम्भ किया।

कुछ समय के बाद सावित्री आयी, तथा उसने देखा कि यज्ञ करीब करीब हो चुका है। यह देखकर वह ब्रह्मा एवं उपस्थित देवों पर अत्यधिक क्रुद्ध हुयी कि, मेरे बिना यज्ञ किस प्रकार आरम्भ हुआ। कुपित होकर उसने ब्रह्मा को शाप दिया कि, वह अपूज्य बनकर रहेगा, उसकी कोई पूजा न करेगा (स्कंद ७.१.१६५)।

सावित्री ने अन्य देवताओं को भी शाप दिये जो इस प्रकार थे:--इन्द्र को--हमेशा पराभव होने का एवं कारावास भोगने का; विष्णु को--भृगु ऋषि के द्वारा शाप मिलने का, स्त्री का राक्षसद्वारा हरण होने का, तथा पशुओं की दास्यता में रहने का; रुद्र को--ब्राह्मणों के शाप से पौरुष के नष्ट होने का; अग्नि को--अपवित्र पदार्थों की ज्वाला से अधिक भड़कने का; ब्राह्मणों को--लोभी बनने का, दूसरे के अन्न पर जीवित रहने का, पापियों के घर भी यज्ञहेतु जाने का, तथा द्रव्यसंचय में अधिक प्रयत्नशील रहने का आदि।

इस प्रकार प्रमुख देवताओं को शाप देकर सावित्री वापस आयी। देवस्त्रियों ने उसका साथ न दिया अतएव सावित्री ने उन्हें शाप दिया कि 'तुम सभी वंध्या रहोगी' लक्ष्मी को शाप दिया 'तुम चंचल रहकर, मूर्ख, म्लेंच्छ, आग्रही तथा अभिमानी लोगों की संगति करोगी'। इन्द्राणी को शाप दिया, 'तुम्हारी इज्जत लेने के लिए नहुष तुम्हारा पीछा करेगा, तथा तुम्हें अपनी रक्षा के लिए बृहस्पति के घर पर छिपकर बैठना पडेगा।

गायत्री से वरदान--सावित्री के चले जाने के उपरान्त, गायत्री ने समस्त देवताओं एवं उनकी धर्मपत्नियों को विभिन्न वरप्रदान करते हुए कहा, 'ब्रह्मा की पूजा करनेवाले व्यक्ति को सुख एवं मोक्ष प्राप्त होगा। इन्द्र शत्रुद्वारा पराजित होकर भी, ब्रह्मा की सहायता प्राप्त कर पुनः अपना पद प्राप्त करेगा। विष्णु को मनुष्यजन्म में पत्नी विरह सहन करना पडेगा, किन्तु अन्त में वह शत्रुओं को परास्त कर लोगों का पूज्य बनेगा। शंकर के पूजक पाप से मुक्त होकर अपना उद्धार करेंगे। अग्नि की तृप्ति पर ही देवों को सुख और शान्ति मिलेगी। लक्ष्मी सब को प्रिय होगी, तथा वह हरएक जगह पूजी जायेगी; उसके कारण ही लोग तेजस्वी होंगे। देवस्त्रियाँ संततिविहीन होने पर भी उन्हे निःसंतान होने का दुःख न होगा' (पद्म. सृ. १७)।

यज्ञ में उपस्थित तीन अतिथि--ब्रह्मा का यह यज्ञ सहस्त्र युगों तक चलता रहा, अर्थात् यह ब्रह्मा की वर्षगणना से करीब अर्ध वर्ष तक चला (स्कंद. ६.१९४)। स्कंद के अनुसार, ब्रह्मा के इस यज्ञ में तीन विभिन्न व्यक्ति विचित्र रूप से यज्ञ में आये, जिनकी कथा अत्यधिक रोचक है।

यज्ञ चल रहा था कि, शंकर अपनी विचित्र वेशभूषा में आया, और अपना कपाल मंडप में रख दिया। उसे कोई पहचान न सका। ऋत्विजों में से एक ने उस कपाल को बाहर फेंकने का प्रयत्न किया, किन्तु उसके फेंकते ही उस स्थान पर लाखों कपाल उत्पन्न हो गये। यह कृत्य देख कर सब को आभास हुआ कि, यह भगवान् शंकर की ही लीला हो सकती है। अतएव समस्त देवताओं ने तुरंत उसकी स्तुति कर, उससे क्षमा माँगी। शंकर प्रसन्न हुए और ब्रह्मा से वर माँगने को कहा। किन्तु ब्रह्मा ने यज्ञ की दीक्षा लेने के कारण शंकर से वर माँगने की मजबूरी प्रकट की, और स्वयं शंकर को वर प्रदान किया। इसके उपरांत ब्रह्मा ने यज्ञकुण्ड की उत्तर दिशा की ओर शंकर को उचित आसन देकर, उसके प्रति अपना सम्मान प्रकट किया।

दूसरे दिन एक बटु ने यज्ञमंडप में प्रवेश कर सहजभाव से एक सर्प छोड़ दिया, जिसने उपस्थित होतागणों को अपने पाश में बाँध लिया। इस कृत्य से क्रोधित होकर उपस्थित सदस्यों ने शाप दिया कि, वह स्वयं सर्प हो जाये। किन्तु उस बटु 'शंकर भगवान्' की स्तुति कर शाप से मुक्त हुआ।

तीसरे दिन एक विद्वान् अतिथि आया और उसने कहा, 'आप सभी लोगों से मैंने केवल गुण प्राप्त किये हैं, अतएव मैं विद्वान् बनने का अधिकारी हूँ'। ब्रह्मा ने उसका सत्कार किया एवं उसे उचित आसन दिया।

उपर्युक्त यज्ञ के अतिरिक्त, ब्रह्मा के द्वारा निम्नलिखित स्थानों पर यज्ञ करने के निर्देश प्राप्त हैं:-हिरण्यशृंग पर्वत पर बिंदुसर के समीप, धर्मारण्य में ब्रह्मसर के समीप, एवं कुरुक्षेत्र में (म. स. ३.८.९; म. व. ८२.७४; १२९.१)।

अन्य कथाएँ—एक बार अभिमान में आ कर तारकासुर नामक दैत्य देवों को अत्यधिक त्रस्त करने लगा। फिर उसके विनाश के लिए ब्रह्मा ने अपनी एक मानसकन्या निशा अथवा विभावरी को शंकरपत्नी पार्वती बनने के लिए भेजा। आगे चलकर उसी पार्वती के गर्भ से उत्पन्न हुए स्कंद ने तारकासुर का नाश किया (मत्स्य. १५४. ४७-७२)। शिवप्रसाद से इसने पुलोमा नामक दैत्य का वध किया (स्कंद. ५.२.६६)। जिस समय शंकर ने त्रिपुरासुर का वध किया था, उस समय ब्रह्मा उसका सारथी था (म. क. २४.१०८)।

इसकी मानसकन्याओं में सरस्वती नामक कन्या इसे विशेष प्रिय थी। इस कारण इसके दर्शनार्थ वह प्रतिदिन आया करती थी। एक बार, इसके दर्शन के लिए सहजवश आया हुआ पुरूरवस् राजा सरस्वती को देखकर उसपर मोहित हुआ। फिर अपनी पत्नी उर्वशी के द्वारा सरस्वती को बुलवा कर, उसके साथ रत हुआ। यह जान कर क्रुद्ध हुए ब्रह्मा ने अपनी पुत्री सरस्वती को नदी बन जाने का शाप दिया। उर्वशी के द्वारा प्रार्थना की जाने पर ब्रह्मा ने सरस्वती को उःशाप दिया, नदी हो जाने के उपरांत तुम नदियों में पवित्र समझी जाओगी' (ब्रह्म. १०१)।

विष्णु, रुद्र आदि अन्य देवताओं के समान ब्रह्मा के द्वारा भी अनेक तीर्थस्थान, एवं पवित्र क्षेत्रों का निर्माण किया गया था। इन्द्रद्युम्न नामक राजा के द्वारा अनुरोध करने पर, ब्रह्मा ने सुविख्यात 'जगन्नाथ' क्षेत्र की स्थापना की थी (स्कंद. २.२.२३)।

ब्रह्मा की कालगणना—ब्रह्मा की आयु सौ वर्षों की मानी जाती है। किन्तु ये सौ वर्ष सामान्य लोगों की वर्षगणना से भिन्न हैं। अतएव उस हिसाब से इसकी कुल आयु लाखों वर्षों की ठहरती है।

ब्रह्मा की कालगणना में एक वर्ष में तीन सौ साठ दिन रहते है। किन्तु इसका एक दिन एक हजार 'पर्यायों' का बनता है, एवं एक पर्याय में कृतयुग (१७२८००० वर्ष), त्रेतायुग (१२९६००० वर्ष), द्वापरयुग (८६४००१ वर्ष), तथा कलियुग (४३२००० वर्ष) समाविष्ट होते है। ब्रह्मा के कालगणना की तालिका इस प्रकार है:—

ब्रह्मा का एक दिन अथवा एक कल्प = १००० पर्याय,
१ पर्याय = कृत, त्रेता, द्वापर एवं कलियुग
(कृतयुग = १,७२८००० वर्ष
त्रेतायुग = १२,९६००० वर्ष
द्वापरयुग = ८,६४००१ वर्ष
कलियुग = ४,३२००० वर्ष)
४,३२०००१ वर्ष
∴ ब्रह्मा का एक दिन = ४३,२००००×१०००
= ४३,२०००००० वर्ष
(विष्णु. ३.२.४८)।

पौराणिक कालगणना के अनुसार, ब्रह्मा का एक वर्ष विष्णु के एक दिन के बराबर होता है, एवं विष्णु का एक वर्ष शंकर के एक दिन के बराबर होता है (स्कंद. ६.१.९४)।

पद्म के अनुसार, ब्रह्मा के आयु के ५० वर्ष अर्थात् एक परार्ध समाप्त हो चुका है, एवं दूसरा चल रहा है (पद्म. सृ. ३; स्कंद. ७.१.१०४)। इसकी रात्रि का काल वही हैं, जिसे नैमित्तिक प्रलय का काल कहा जाता है (भा. ३.११.२२-३५; १२.४.२; विष्णु. १.३.११-२७; मत्स्य. १४२.५.३६)। हर एक कल्प के आरम्भ में, जो अवतार ब्रह्मा द्वारा लिए गये हैं, उस कल्प को वही नाम दिया जाता है।

ग्रन्थ—ब्रह्मा द्वारा 'वास्तुशास्त्र' पर लिखित एक ग्रन्थ उपलब्ध है (मत्स्य. २५२.२)। 'दण्डनीति' नामक एक लक्ष अध्यायों का एक अन्य ग्रन्थ भी इसके द्वारा लिखा गया था। आगे चलकर शंकर ने उस ग्रन्थ को दस हजार अध्यायों में संक्षिप्त किया, जिसे 'वैशालाक्ष' कहते है। बाद में, इन्द्र ने उसे पाँच हजार अध्यायों में संक्षिप्त किया, एवं उसे 'बाहुदंतक' नाम दिया। आगे चलकर अन्य ऋषियों के द्वारा वह और संक्षिप्त किया गया। बृहस्पति ने उसे संक्षिप्त कर तीन हजार अध्यायों का, एवं उसके बाद शुक्राचार्य ने उसे और भी संक्षिप्त कर एक हजार अध्यायों का बना दिया। बाद में वह ग्रन्थ प्रजापति के द्वारा अति संक्षिप्त कर दिया गया (म. शां. ५९.८७; प्रजापति देखिये)।

स्थान—पद्म में ब्रह्म के एक सौ आठ स्थानों का निर्देश प्राप्त है (पद्म. सृ. २९.१३२-१५९)।

ब्रह्मबल—व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से ब्रह्मबलि नामक आचार्य का नामान्तर।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

ब्रह्मबलि—एक आचार्य, जो व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से देवदर्श ऋषि के चार शिष्यों में से एक था।

ब्रह्मबलिन्—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि।

ब्रह्ममालिन्--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार गण।

ब्रह्मरात--याज्ञवल्क्य ऋषि का पिता (विष्णु. ३. ५.२)। भागवत में इसके नाम के लिए 'देवरात' पाठभेद प्राप्त है (देवरात ३. देखिये)। वायु. में इसे 'ब्रह्मवाह' कहा गया है।

२. शुकाचार्य का नामान्तर (भा. १.९.८)।

ब्रह्मराति—याज्ञवल्क्य ऋषि का पैतृक नाम।

ब्रह्मवत्—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि एवं मंत्रकार।

ब्रह्मवादिनी—प्रभास नामक वसु की पत्नी।

ब्रह्मवाह—याज्ञवल्क्य का पिता 'ब्रह्मरात' के नाम के लिये उपलब्ध पाठभेद (वायु. १.६०.४१; ब्रह्मरात देखिये)।

ब्रह्मवृद्धि छंदोगमाहकि—एक आचार्य, जो मित्रवर्चस् ऋषि का शिष्य था (वं. ब्रा. १)।

ब्रह्मशत्रु—रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. सुं. ५.५४)।

ब्रह्मसावर्णि—दसवे मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो ब्रह्मा एवं दक्षकन्या सुव्रता का पुत्र था (ब्रह्मांड. ४.१. ३९-५१; मार्क. ९१.१०)। यह चाक्षुष मन्वन्तर में पैदा हुआ था (वायु. १००.४२; मनु देखिये)।

भागवत में इसे उपश्लोक का पुत्र कहा गया है (भा. ८.१३.२१)। देवीभागवत में दसवें मन्वन्तर का नाम 'मेरुसावर्णि' बताया गया है, एवं उसके अधिपति के नाते ब्रह्मसावर्णि का नाम न दे कर, वैवस्वतपुत्र पृषध्र का नाम दिया गया है (दे. भा. १०.१३)।

ब्रह्मसूनु—ग्यारहवें मन्वन्तर का अधिपति मनु (मत्स्य. ९.३६)।

ब्रह्महत्या—शंकर के द्वारा निर्माण की गयी एक देवी, जो उसने भैरव नामक राक्षस का वध करने के लिये उत्पन्न की थी।

भैरव नामक राक्षस ने ब्रह्मा का सर काट लिया। फिर शंकर ने इसे निर्माण किया, एवं इसे भैरव के पीछे छोड़ दिया। भारत के सारे शिवस्थानों में इसका उत्सव मनाया जाता है; केवल काशी में इसका उत्सव नही होता। शिवपुराण में वर्णन किया इसका माहात्म्य अतिशयोक्त प्रतीत होता है।

ब्रह्महन्—एक राक्षस, जो अनायुषा नामक राक्षसी का पौत्र, एवं वृष राक्षस का पुत्र था।

ब्रह्मातिथि काण्व--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५)।

ब्रह्मापेत--एक राक्षस, जो ब्रह्मधान राक्षस का पुत्र था (ब्रह्मांड ३.७.९८)। यह अश्विन माह में सूर्य के साथ भ्रमण करता हैं (भा. १२.११.४३)।

ब्रह्मावर्त--(स्वा। प्रिय.) एक राजा, जो ऋषभएवं जयंती का पुत्र था (भा. ५.४.१०)।

ब्रह्मिष्ठ--(सो. नील.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार मुद्गल राजा का पुत्र था। इसकी स्त्री का नाम इंद्रसेना था।

ब्राह्मण--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू का पुत्र था।

ब्राह्मपुरेयक--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण। इसके नाम के लिए 'ब्रह्मकृतेजन' पाठभेद प्राप्त है।

भ

भक्षक—एक शूद्र, जो अत्यंत पापी था। एक बार प्यास से अत्यधिक व्याकुल होकर, इसने तुलसी चौरे के पास आकर, उसके पवित्र जल को ग्रहण किया, जिससे इसके समस्त पाप धुल गये। पश्चात्, एक व्याध द्वारा मारे जाने के उपरांत इसे स्वर्ग प्राप्त हुआ।

यह पूर्व जन्म में एक विलासी राजा था, जिसने एक सुन्दर स्त्री का अपहरण कर, उसका सतीत्व नष्ट किया था। इसी पापकर्म के कारण इस शूद्रयोनि में अनेकानेक यातनाए भोगनी पड़ी (पद्म. ब्र. २२)।

भग—एक वैदिक देवता जो सम्पत्ति, वैभव एवं सौभाग्य

की देवता मानी जाती है। यह बारह आदित्यों में से एक माना ज़ाता है। ऋग्वेद में आदित्यों की संख्या छः दी गयी है, एवं निम्नलिखित देवताओं को आदित्य कहा गया है:—भग, मित्र, अर्यमन्, वरुण, दक्ष एवं अंश (ऋ. २.२७)।

ऋग्वेद का एक सूक्त प्रमुखतःभग की स्तुति में अर्पित किया गया है (ऋ. ७.४१)। ऋग्वेद में कुल साठ स्थानों में इस देवता का नाम आता है। भग का शाब्दिक अर्थ 'प्रदान करनेवाला' है। यही कारण है कि, वैदिक सूक्तों में सम्पत्ति के वितरक के रूप में इसका निर्देश कई बार हुआ है। अपने उपासकों को यह सम्पत्ति से परिपूर्ण (भगवान्) बनाता है (ऋ. ५.४६)। इसकी बहन का नाम उषा था (ऋ. १.१२३.५)।

भग के नेत्रों को रश्मियों से विभूषित कहा गया है (ऋ. १. १३६)। यास्क ने इसे पूर्वाह्न का अधिपति कहा है (नि. १२.१३)। ऋग्वेद में आदित्य, सूर्य, विवस्वत्, पूषन्, अर्यमन्, वरुण, मित्र तथा भग को अलग अलग देवता माना गया है। पर वास्तव में ये सारे सूर्य के ही अनेक रूप हैं (ऋ. ८.३५.१३–१५)। भग नाम का ईरानी रूप 'बघ' (देव) है, जो 'अहुर मज्द' की एक उपाधि के रूप में प्राप्त है।

२. बारह आदित्यों मे से एक। शतपथ ब्राह्मण में, प्रजापति के यज्ञ मे इसने अपनी आँखे किस प्रकार खोई इसका वर्णन प्राप्त है। प्रजापति के यज्ञ में यह दक्षिण दिशा में बैठा था। रुद्र के द्वारा प्रजापति का 'वेध' किये जाने पर, उसके यज्ञ का हविर्भाग इसके पास लाया गया जिसे देखने से इसकी आँखे जाती रही (श. ब्रा. १.७.४)।

रुद्र के द्वारा इसकी आँखे नष्ट होने की यही कथा भागवत में अन्य प्रकार से दी गयी है। दक्ष के यज्ञ में यह ऋत्विज था। दक्षद्वारा शिव की निंदा किये जाने पर, आँखो के संकेत से इसने दक्ष को इशारा करते हुए उसे और प्रोत्साहित किया था। इस कारण शिव के पार्षद वीरभद्र ने इसकी आँखे बाहर निकाल लीं (भा. ४.५.१७–२०)। महाभारत के अनुसार, स्वयं रुद्र ने इसकी आँखे फोड़ डाली थीं (म. अनु. २६५. १८ कुं.)। पश्चात् यह शंकर की शरण में गया, जिस कारण शंकर ने इसे उःशाप दिया 'तुम मित्रों की आँखों से देख सकोगे (भा. ४.७.३)।

इसकी पत्नी का नाम सिद्धि था, जिससे इसे महिमा, विभु तथा प्रभु नामक पुत्र, तथा आशि नामक कन्या थी (भा. ६.१८.२; ६.६. ३९)।

महाभारत में इसे बारह आदित्यों में से एक कहा गया है, ८वं इसकी माता का नाम अदिति, एवं पिता का नाम कश्यप बताया गया है। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में तथा स्कंद के अभिषेक में उपस्थित था (म. आ. ११४.५५; श. ४४.५)। खाण्डववनदाह के समय घटित हुए युद्ध में यह इन्द्र के पक्ष में था, एवं तलवार तथा धनुष्य लेकर इसने शत्रु पर आक्रमण किया था (म. आ. २१८.३५)।

३. सौरमण्डल का एक आदित्य (म. आ. ५९.१५)। यह माघ माह में प्रकाशित होता है, एवं इसकी ११०० किरणें होती है (भवि. ब्राह्म. १.७८)। भागवत के अनुसार, यह पौष माह में प्रकट होता है, और इसके साथ स्फूर्ज, राक्षस, अरिष्टनेमि गंधर्व, ऊर्ण, यक्ष, आयु ऋषि कर्कोटक नाग तथा पूर्वचित्ति अप्सरा रहती हैं (भा. १२. ११.४२)।

४. एकादश रुद्रों में से एक, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में सम्मिलित था (म. आ. ११४.५८)।

भगदत्त—प्राग्ज्योतिषपुर का अधिपति, जो नरक (भौमासुर) तथा भूमि का पुत्र था (म. द्रो. २८.१)। इसे 'भौमासुर' मातृकनाम भी था, परन्तु कई ग्रंथों में इसे 'भौमासुरपुत्र' भी कहा गया हैं (भा. १०.५९)।

एक बार इसके पिता भौम ने इन्द्र के कवच एवं कुण्डल का हरण किया, जिसके कारण क्रुद्ध होकर कृष्ण ने युद्ध में उसे परास्त कर उसका एवं उसके सात पुत्रों को मौत के घाट उतार दिया। भूमि ने कृष्ण से विलाप कर अपने पुत्र का जीवनदान माँगा। इस प्रकार कृष्ण ने प्रसन्न होकर भगदत्त को पुनः जीवित कर दिया।

पिता के पश्चात् यह प्राज्योतिषपुर देश का अधिपति हुआ, जिसकी राजधानी प्रागज्योतिष थी। यह देश आधुनिक काल का आसाम प्रांत ही है। इसका किरात, चीन एवं समुद्रतटवर्ती सैनिकों के साथ युद्ध भी हुआ था। यह युद्धशिक्षा में पारंगत था। इसे यवनाधिप भी कहा गया है (म. स. १३.१३–१४)। आसाम प्रांत में हाथी उस समय भी होते थे, अतएव यह गजयुद्ध में बड़ा प्रवीण था।

यह पण्डु राजा का मित्र था (म. स. १३.१४)। यह द्रौपदी के स्वयंवर गया था (म. आ. १७७.१२)। जरासंध का मित्र होने पर भी यह युधिष्ठिर के प्रति पिता की भाँति स्नेह रखता था। यह इन्द्र का मित्र एवं इन्द्र के समान ही पराक्रमी था। राजसूय दिग्विजय के समय अर्जुन के साथ इसका घोर युद्ध हुआ था। अर्जुन की

वीरता से प्रसन्न हो कर, इसने उसकी इच्छा के अनुसार कार्य करने की प्रतिज्ञा की थी, तथा अतुल धनराशि भेंट देकर उसे बिदा किया था (म. स. २३.२७४)

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह यवनों के साथ उपस्थित था, तथा अच्छी जाति के वेगशाली अश्व एवं बहुत सी भेंटसामग्री इसने युधिष्ठिर को दी थी। इसने युधिष्ठिर को बड़ी शान शौकत के साथ हीरे तथा पद्मरागमणि के आभूषण एवं विशुद्ध हाथीदाँत की बनी मूठवाली तलवार भेंट दे कर अपनी आदर भावना प्रकट की थी (म. स. ४७. १४)। भारतीय युद्ध में, चीन तथा किरात सैनिकों के साथ भगदत्त कौरवों के पक्ष में शामील हुआ था (म. उ. १९.१४-१५)

यह युद्धभूमि में बड़ा बलवान् एवं साहसी राजा था। बड़े बड़े योद्धाओं से इसकी लड़ाइयाँ हुयी थी। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में था। यह सेनासहित दुर्योधन की सहायता के लिए आया था (म. उ. १९.१५)। प्रथम दिन के संग्राम में ही इसका एवं विराट का युद्ध हुआ था (म. भीष्म. ४३.४६-४८)। इसने अपने बाहुबल से भीम को भी रणभूमी में मूर्च्छित कर, घटोत्कच को पराजित किया था (म. भी. ६०.४७)।

इसने दशार्णराज को युद्धभूमि में पराजित किया था, एवं वह इसके द्वारा ही मारा गया (म. भी.; ९१. ४२-४४)। इसने भीमसेन के सारथि विशोक को युद्धभूमि में लडते लडते मूर्च्छित कर दिया था। इसके द्वारा क्षत्रदेव की दाहिनी भुजा का विदारण हुआ था इसके सिवाय सात्यकि एवं द्रुपद के साथ भी इसका घोर संग्राम हुआ, जिसमें गजयुद्ध का कौशल दिखाते हुए, इसने अपने बाणों से सेना को त्रस्त कर दिया था (म. भी. १०७.७-१३)

एकबार कर्ण ने अपने दिग्विजय के समय इसे पराजित किया था (म. व. परि. १.२४.३६)। इसका अर्जुन के साथ कई बार युद्ध हुआ (म. भी.११२.५६-६०)।

इसका अन्तिम युद्ध भी अर्जुन के साथ हुआ। उस समय यह काफ़ी वृद्ध हो चुका था। बुढापे के कारण बढी हुई श्वेत पलकों को पट्टे से बाँध कर, यह युद्धभूमि में अर्जुन के साथ डटा रहा। इसने उसके ऊपर वैष्णवास्त्र फेंका, तब अर्जुन ने उस अस्त्र का नाश कर, इसके पलकों के पट्टे को तोड कर इसका वध किया। यह घटना मार्गशीर्ष वद्य दशमी को हुयी थी (भारत सावित्री)

भगदत्त के कृतप्रज्ञ तथा वज्रदत्त नामक पुत्र थे। कृतप्रज्ञ भारतीय नकुल के द्वारा मारा गया अतएव वज्रदत्त राजगद्दी का अधिकारी बनाया गया (म. अ.४.२९)। अर्जुन का वज्रदत्त से भी युद्ध हुआ था, जिसमें अर्जुन ने उसे जीता था (म. आश्व. ७५.१-२०)।

भगदा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.२६)

भगधर—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो वायु के अनुसार विद्योपरिचर का पुत्र था (वायु. ९९.२२१)। कई पुराणों में इसके पिता के नाम के लिए 'चैद्योपरिचर' पाठभेद प्राप्त है।

भगनंदा—स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५. ११)। इसके नाम के लिए, 'भंगदा' पाठभेद प्राप्त है।

भगपाद—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भगवत्—तुषित देवों में से एक।

भगवत् औपमन्यव काराडि:—एक सामवेदी आचार्य, जिसका निर्देश जैमिनिगृह्यसूत्र के अन्तर्गत उपाकर्माग तर्पण में प्राप्त है (जै. गृ. १.१४)।

भगीरथ—(सू. इ.) सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो सम्राट दिलीप का पुत्र था। अपने पितरों के उद्धार करने के लिए इसने अनेकानेक प्रयत्न कर गंगा नदी को पृथ्वी पर लाया, एवं इस तरह अपने प्रपितामह असमंजस्, पितामह अंशुमत् एवं पिता दिलीप से चलता आ रहा प्रयत्न सफल किया। इसी कारण आगे चलकर लोगों ने अत्यधिक प्रयत्न के लिए 'भगीरथ' नाम को लाक्षणिक रूप में प्रयुक्त करना आरम्भ किया।

इसके प्रपितामह असमंजस् के पिता सगर के कुल साठ हजार पुत्र थे, जो कपिल ऋषि के शाप के कारण दग्ध हो गये। बाद को कपिल ऋषि ने अंशुमत् तथा दिलीप से उनके मुक्ति का मार्ग बताते हुए कहा 'यदि तुम लोग अपने पितरों का उद्धार ही करना चाहते हो, तो गंगा नदी की आराधना कर उसे पृथ्वी पर आने के लिए प्रार्थना करो, तभी तुम्हारे पूर्वजों का निस्तार सम्भव है'।

अंशुमत् तथा दिलीप ने तप किया, लेकिन वे सफल न हो सके; उनका प्रयत्न अधूरा ही रहा। तब इसने हिमालय पर जा कर गंगा लाने के लिए घोर तप किया। गंगा इससे प्रसन्न हुयी, तथा पृथ्वी पर उतरने के लिए उसने अपनी अनुमति दे दी। अब समस्या थी कि, गंगा के तीव्र प्रवाह को पृथ्वी पर किस प्रकार उतारा जाय; कारण सम्भव था, पृथ्वी उसके वेग गति से बह जाये। इस कार्य के लिए गंगा ने इसे शंकर की सहायता लेने के लिए कहा।

गंगा के कथनानुसार इसने शंकर की आराधना आरम्भ कर दी। पश्चात् शंकर इसकी तपस्या से प्रसन्न हो, गंगा के वेग प्रवाह को जटाओं के द्वारा रोकने के लिए तैयार हो गये।

गंगावतरण—बाद में शंकर ने अपनी जटा के एक बाल को तोड़ कर गंगा को पृथ्वी पर उतारा। गंगा का जो क्षीण प्रवाह सर्वप्रथम पृथ्वी पर आया, उसे ही 'अलकनंदा' कहते हैं। बाद को, गंगा ने वेगरूप धारण कर भगीरथ के कथनानुसार, उसी मार्ग का अनुसरण किया, जिस जिस मार्ग से होता हुआ यह गया। अंत में यह कपिलआश्रम के उस स्थान पर गंगा को ले गया, जहाँ इसके पितर शाप से दग्ध हुए थे। वहाँ गंगा के स्पर्शमात्र से सभी पितर शाप से मुक्ति पाकर हमेशा के लिए उद्धरित हो गये (म. व. १०७; वा. रा. बा. १.४२-४४; भा. ९.९. २-१०; वायु. ४७.३७; ८८.१६८; ब्रह्म. ७८; विष्णु. ४.४.१७)।

गंगा को पृथ्वी पर उतारने का श्रेय इसे ही है। इसी लिये गंगा को इसकी कन्या कहा गया है, तथा इसके नाम पर ही उसे 'भागीरथी' नाम दिया गया है (ह. वं. १.१५-१६; नारद. १.१५; ब्रह्मवै. १.१०)।

पद्म के अनुसार, गंगा आकाश से उतर कर शंकर की जटाओं में ही उलझ कर रह गयी। तब सगर ने शंकर से प्रार्थना कर, उसे पृथ्वी पर छोड़ने के लिए निवेदन किया (पद्म. उ. २१)। भगीरथ से सम्बन्धित गंगावतरण की कथा में, सगर का नाम जो पद्म पुराण में सम्मिलित किया गया है, वह उचित नहीं प्रतीत होता है।

गंगा को पृथ्वी पर लाने के उपरांत यह पूर्ववत् फिर राज्य करने लगा। यह धर्मप्रवृत्तिवाला दानशील राजा था। इसने दान में अपनी हंसी नामक कन्या कौत्स ब्राह्मण को दी थी (म. अनु. १२६.२६-२७) इसने भागीरथी के तट पर अनेकानेक घाट बनवाये थे। न जाने कितने यज्ञ कर ब्राह्मणों को हजारों सालंकृत कन्याएँ, एवं अपार धनराशि दक्षिणा के रूप में देकर उन्हें सन्तुष्ट किया था। इसके यज्ञ की महानता इसी में प्रकट है कि, उसमें देवगण भी उपस्थित होते थे (म. द्रो. परि. १. क्र. ८)। ब्राह्मणों को अनेकानेक गायों का दान देकर इसने अपनी दानशीलता का परिचय दिया था। अकेले कोहल नामक ब्राह्मण को ही इसने एक लाख गायें दान में दी थी, जिसके कारण इसे उत्तमलोक की प्राप्ति हुयी (म. अनु. १३७.२६-२७; २००.२७)। श्रीकृष्ण ने भी इसकी दानशीलता की सराहना की है (म. शां. २९.६३-७०)। महाभारत में दिये गये गोदानमहात्म्य में भी इसका निर्देश प्राप्त है (म. अनु. ७६.२५)।

वैदिक वाङ्मय में निर्दिष्ट 'भगीरथ ऐक्ष्वाक' एवं यह सम्भवतः एक ही व्यक्ति रहे होंगे। भगीरथ के नाभाग (नभ), तथा श्रुत नामक दो पुत्र थे। इसके उपरांत श्रुत गद्दी पर बैठा।

महाभारत में सोलह श्रेष्ठ राजाओं का जो आख्यान नारद ने संजय राजा को सुनाया था, उसमें भगीरथ की कथा सम्मिलित है (म. शां. ५३-६३)।

भगीरथकथा का अन्वयार्थ—आधुनिक विद्वानों के अनुसार, भगीरथ की यह कथा रूपात्मक है। गंगा पहले तिब्बत में पूर्व से उत्तर की ओर बहती थी, जिससे कि, उत्तरी भारत अक्सर आकालग्रस्त हो जाता था। इसके लिये भगीरथ के सभी पूर्वजों ने प्रयत्न किया कि, किसी प्रकार गंगा के प्रवाह को घुमाकर दक्षिणीवाहिनी बनाया जाये। किन्तु वह न सफल हो सके। लेकिन भगीरथ अपने प्रयत्नों में सफल रहा, तथा उसने गंगा की धार मोड़ कर उत्तर भारत को हराभरा प्रदेश बना दिया। सगर के साठ हजार पुत्र सम्भवतः उसकी प्रजा थीं, जिसे यह पुत्र के समान ही समझाता था।

२. द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित एक राजा (म. आ. १७७.१९)।

भगीवसु—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक प्रवर। इसके नाम के लिए 'भार्गिवसु' पाठभेद प्राप्त है।

भगेरथ ऐक्ष्वाक—इक्ष्वाकुवंशीय एक राजा (जै. उ. ब्रा. ४.६.१.२)। एकबार इसने यज्ञसमारोह का आयोजन किया, एवं उपस्थित ऋषिमुनियों से पृच्छा की, 'वह ज्ञान कौनसा है, जो जान लेने पर संसार की सारी जानकारी प्राप्त होती है'। इसके इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कुरुपांचालों में से बक दाल्भ्य नामक ऋषि ने कहा, 'गायत्रीमंत्र यह एक ही मंत्र ऐसा है, जिसमें सृष्टि की सारी जानकारी छिपी हुयी है'।

इस निर्देश से प्रतीत होता है कि, इक्ष्वाकुगण के लोग कुरुपांचालों से संबंधित थे। बौद्ध ग्रंथों में उन्हे पूर्वी भारत में रहनेवाले बताया गया है, वह असंभवनीय दिखाई देता है।

भङ्ग—तक्षक कुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्प सत्र में मारा गया (म. आ. ५२.८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'डङ्ग'।

भङ्गकार—एक राजा, जो सोमवंशीय कुरु राजा का पौत्र, एवं अविक्षित् राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.४६)।

२. (सो. वृष्णि.) यादववंशीय एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शक्तिसेन राजा का, एवं वायु के अनुसार शक्रजित् राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम द्वारवती था (म. आ. २११.११; वायु. ९६.५३-५५)। मत्स्य में इसकी पत्नी का नाम वीरवती दिया गया है (मत्स्य. ४५.१९, ब्रह्मांड. ३.७१.५४-५६)। इसकी निम्नलिखित तीन कन्याएँ थीं :— सत्यभामा, व्रतिनी एवं पद्मावती (प्रस्वापिनी, तपस्विनी) (ह. वं. १.३८.४५-४६; मत्स्य ४५.१९-२१)। इसे सभाक्ष एवं नावेय (तारेय) नामक दो पुत्र थे (ह. वं. १.३८.४८; ब्रह्म. १६.४८)। यह रैवतक पर्वत के महोत्सव में उपस्थित था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'भद्रकाल'।

भङ्गश्रवस्—वैदिक ग्रंथों में निर्दिष्ट एक आचार्य (क. सं. ३८.१२)। इसके नाम के लिए 'भङ्गयश्रवस्' पाठभेद प्राप्त हैं।

भङ्गश्विन्—एक राजा, जो शफाल का राजा ऋतुपर्ण का पिता था (बौ. श्रौ. २०.१२)। आपस्तंब श्रौतसूत्र में ऋतुपर्णकयोवधि का 'भंग्याश्विनौ' के रूप में उल्लेख है (आ. श्रौ. २१.२०)। महाभारत में इसे 'भांगासुरी' (भागास्वरि, मांगस्वरि, भांग) कहा गया है (म. स. ८.१५; व. ६८.२; ६९.१०)।

भङ्गास्वन—एक प्राचीन राजर्षि, जो आजन्म इन्द्र का विरोधी रहा (म. अनु. १२.१०)। इसके नाम के लिए 'भाङ्गस्वन' पाठभेद प्राप्त है।

इसे कोई सन्तान न थी, अतएव यह अत्यधिक चिन्तित रहता था। पुत्रप्राप्ति के लिए इसने अग्नि देवता को प्रसन्न करने के लिए 'अग्निष्टोम यज्ञ' किया। उस यज्ञ को देखकर इन्द्र इस पर नाराज हुआ कि, 'यह यज्ञ मेरे अपमान के लिए किया जा रहा हैं, क्योंकि सारे हविर्भाग के प्राप्त करने का अधिकार अग्नि को ही होगा, मुझे नहीं'। अतएव वह इससे बदला लेने का मार्ग ढूंढने लगा। कालान्तर में अग्नि की कृपा से इसे सौ पुत्र हुए।

एक बार यह अपने कुछ सैनिकों के सहित शिकार खेलने गया। वहाँ यह जंगल में भटकता हुआ एक सुन्दर सरोवर के पास आ खड़ा हुआ, तथा फिर उसमें नहाने की इच्छा से उतर पडा। इंद्र नें सुअवसर देख कर बदला लेने की भावना से, इसे एक स्त्री बना दिया (म. अनु. १२.१०)। बाद को जब इसेने अपने विचित्र शरीर के परिवर्तन को देखा, तब दुःखी होकर अपने राज्य वापस आया, तथा अपना समस्त राज्यभार पुत्रों को देकर वन चला गया।

वन में जाकर स्त्रीरूपधारणी भङ्गास्वन ने एक तपस्वी से विवाह किया, तथा उससे इसे सौ पुत्रों हुए। कालोपरांत इसने अपने इन पुत्रों को पहलेवाले पुत्रों के पास भेजकर, उन्हें भी राज्य से उचित भाग दिलवाया। इस प्रकार यह इस स्त्रीरूप में भी आनंदपूर्वक जीवन बिताता रहा।

इसके इस सुखी जीवन को देखकर इन्द्र को बड़ा क्रोध आया, क्योंकि उसने इसे यह स्त्रीरूप कष्टमय जीवन बिताने के लिए दिया था, सुख भोगने के लिए नहीं। इन्द्र को एक तरकीब सूझी। वह ब्राह्मणवेष धारण कर इसके पुत्रों के राज्य में गया, जहाँ इसके दो सौ पुत्र भलीप्रकार रहते थे। वहाँ जाकर उसने उनमें ऐसी फुट डाल दी कि, सब आपस में लड़भिड़ कर कट मरे।

यह अपने राज्य गया, तथा पुत्रों की यह दशा देखकर फूट फूट रोने लगा। इन्द्र जो ब्राह्मणवेश में वहीं उपस्थित था, वह भी इसके दुःख को देखकर पसीज उठा।

फिर इन्द्र ने अपने साक्षात् स्वरूप को प्रकट कर इसे दर्शन दिया। इसने उसकी प्रार्थना की, तथा फिर इन्द्र ने प्रसन्न हो कर इसके सभी पुत्रों को पुनः जीवित कर दिया। इन्द्र ने इससे पूँछा, 'यदि तुम पुनः पुरुषयोनि में आना चाहते हो, तो मै तुम्हे पुरुषरूप प्रदान कर सकता हूँ'। किन्तु इसने कहा, 'पुरुष की अपेक्षा स्त्री अधिक मोहक एवं कोमल है, अतएव मै स्त्री ही रहना चाहती हूँ।' इस प्रकार मृत्यु तक भङ्गस्वत स्त्री ही रहा (म. अनु. १२)।

भङ्गचश्रवस्—एक आचार्य (तै. आ. ६.५.२)। यह एवं भङ्गश्रवस् संभवतः एक ही होंगे।

भज—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्‌शिष्य परंपरा में से शाकवैण रथीतर ऋषि का शिष्य था (व्यास देखिये)।

भजमान—(सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो सत्वत राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम कौसल्या था। इसे सात्वत अथवा अन्धक नामक एक भाई था। इसे बाह्यका एवं संजया (उपबाह्यका) नामक दो पत्नियाँ थी, जो दोनों ही सृंजय राजा की कन्याएँ थी। उनमें से बाह्यका से इसे शताजित्, सहस्राजित् एवं अयुताजित्; एवं सृजया से निम्लोचि, वृष्णि एवं किंकिण नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४.६-८)। ब्रह्म में बाह्यका से उत्पन्न

इसके पुत्रों का नाम क्रिमि, क्रमण, धृष्ट, शूर, एवं पुरंजय दिये गये हैं, एवं शताजित् आदि पुत्रों को पुत्र सृजया के पुत्र कहा गया है (ब्रह्म. १५.३२-३४).।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो सात्वत (अंधक) राजा का पुत्र था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार विदूरथ राजा का पुत्र था।

भजिन्--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार सात्वत राजा का पुत्र था।

भजेरथ--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक व्यक्तिनाम, जिसका निर्देश अगस्त्य, असमाति एवं इक्ष्वाकु ऋषियों के साथ प्राप्त है। सायण के अनुसार, यह असमाति ऋषि का शत्रु, अथवा वैकल्पिक अर्थ में उसका पूर्वज था। लुड्विग एवं ग्रिफिथ के अनुसार, यह किसी व्यक्तिनाम न हो कर इससे किसी स्थाननाम का आशय है।

भज्य--एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्शिष्य परंपरा में से बाष्कलि का शिष्य था। बाष्कलि ऋषि ने इसे 'वालखिल्य संहिता' सिखाई थी (भा. १२. ६. ६०)।

भट्टादित्य--सूर्य देवता का नामान्तर। उस देवता को नारदभट्ट ने पृथ्वी पर लाया, इस कारण उसे यह नामान्तर प्राप्त हुआ था (स्कंद. २.४३)।

भद्र--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक यक्ष, जो कुबेर का मंत्री था। गौतम ऋषि के शाप के कारण, इसे पशुयोनि प्राप्त होकर यह सिंह बन गया।

३. भद्र गणराज्य में रहनेवाले लोगों का सामुहिक नाम। इन लोगों के क्षत्रिय राजकुमारों नें युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय बहुतसा धन उसे अर्पित किया था (म. स. ४८. १३)। इनके नाम के लिए 'मद्र' पाठभेद प्राप्त है। कर्ण ने अपने दिग्विजय के समय इन्हे जीता था (म. व. परि. १.२४.६७)।

४. चेदि देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। अन्त में कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५०)।

५. तुषित देवों में से एक।

६. उत्तम मन्वन्तर का एक देव

७. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो इंद्रप्रमति ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम उपमन्यु था।

८. (सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार शिवि राजा के पांच पुत्रों में से एक था। इसके नाम के लिए 'भद्रक, एवं 'मद्रक' पाठभेद प्राप्त हैं।

९. (सो. वसु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में से एक था।

१०. (सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक था।

११. श्रीकृष्ण का कालिंदी से उत्पन्न एक पुत्र (भा. १०.६१.१४)।

१२. (शुंग. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार वसुमित्र राजा का पुत्र था। इसने दो वर्षों तक राज्य किया।

भद्रक--अनुवंशीय भद्र राजा के लिए उपलब्ध पाठभेद (भद्र. ८. देखिये)।

२. (शुंग. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वसुमित्र राजा का पुत्र था।

३. एक आचारभ्रष्ट ब्राह्मण। अपनी सारी आयु इसने पापकर्मों में व्यतीत की। किन्तु संयोगवश इसने प्रयाग में तीन दिन माघस्नान पुण्य संपादन किया।

आगे चल कर, इसकी एवं अवंती के पुण्यश्लोक राजा की मृत्यु एक ही दिन हुयी। वीरसेन राजा नें सोलह अश्वमेधयज्ञ कर काफ़ी पुण्य संपादन किया था। फिर भी इसने किये माघस्नान के पुण्य के कारण, यह एवं वीरसेन दोनों एक ही विमान में बैठकर स्वर्ग चले गये (पद्म. उ. १२८)।

भद्रकल्प--(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी का पुत्र था।

भद्रकार--एक राजा, जो जरासंध के भय से अपने भाई एवं सेवकों के सहित दक्षिण दिशा में भाग गया था (म. स. १३.२५)।

२. अविक्षितपुत्र भङ्गकार के लिए उपलब्ध पाठभेद (भङ्गकार देखिये)।

भद्रकाली--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.११)।

२. देवी दुर्गा का एक नामांतर। दक्षयज्ञ के विध्वंस के समय यह पार्वती के कोप से प्रकट हुयी थी (म. शां. २८४.५३)। अर्जुन ने इस नाम से देवी दुर्गा का स्तवन किया था (म. भी. २३. परि. १ क्र. १)।

भद्रगुप्ति--(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी का पुत्र था।

भद्रचारु--श्रीकृष्ण एवं रुक्मिणी का एक पुत्र।

भद्रज--(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

भद्रतनु--एक दुराचारी ब्राह्मण, जो दान्त की कृपा से विष्णुभक्त बन कर मुक्त हुआ (पद्म. क्रि. १७)।

भद्रदेह--(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक था।

भद्रबाहु--एक दैत्य, जो हिरण्याक्ष के पक्ष में शामिल था। हिरण्याक्ष ने देवों से किये युद्ध में यह अग्नि के द्वारा दग्ध हो गया (पद्म. सृ. ७५)।

२. (सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

भद्रमति--एक दरिद्री ब्राह्मण। इसे छः पत्नियाँ, एवं दो सौ चवालिस पुत्र थे (नारद. १.११)।

एकबार इसने 'भूमिदान महात्म्य' सुना, जिससे इसे स्वयं भूमिदान करने की इच्छा उत्पन्न हुयी। किन्तु इसके पास भूमि न होने के कारण, इसने कौशांबी नगरी में जा कर वहाँ के राजा से ब्राह्मणों दान देने के लिए भूमि माँगी। इस तरह प्राप्त भूमि इसने ब्राह्मणों को दान में दी। पश्चात् इसने व्यंकटाचल में स्थित पापनाशनतीर्थ में स्नान भी किया। इन पुण्यकर्मों के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हो गयी (स्कंद. २.१.२०)।

भद्रमनस्--पुलह की पत्नी, जो कश्यप एवं क्रोधा की नौ कन्याओं में से एक थी। इसके नाम के लिए 'भद्रमना' पाठभेद भी प्राप्त है। देवताओं का हाथी ऐरावत इसका पुत्र था (म. आ. ६९.६८)।

भद्ररथ--(सो. वसु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

२. (सो. अनु.) एक राजा, जो हर्यंग राजा का पुत्र था।

भद्रवती--परिक्षित (प्रथम) राजा की भार्या, जिसके पुत्र का नाम जनमेजय था (म. आ. ९०.९३)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'माद्रवती'।

भद्रवाह--एक राजा, जो भागवत के अनुसार वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में से एक था।

भद्रविघ्न--(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

भद्रविद्--कंस के द्वारा मारे गये वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक।

भद्रशर्मन् कौशिक--एक आचार्य, जो पुष्पयशस् औदव्रजि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम अर्यमभूति था (वं. ब्रा. ३)।

भद्रशाख--स्कंददेव का एक नामान्तर, जो इसे बकरे के समान मुख धारण करने के कारण प्राप्त हुआ था (म. व. २१७.४)।

भद्रश्रवस्--एक ऋषि, जो भद्राश्वखंड में रहनेवाले धर्म ऋषि का पुत्र था। यह हयग्रीव की प्रतिमा की उपासना करता था (भा. ५.१८.१)

भद्रश्रेण्य--(सो. सह.) काशी देश का एक हैहय राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार, महिष्मत् राजा का पुत्र था। इसे भद्रसेनक एवं रुद्रश्रेण्य नामान्तर भी प्राप्त थे। दिवोदास राजा ने इसे पराजित कर काशी देश का राज्य इससे जीत लिया। पश्चात् इसने दिवोदास को पराजित किया; किन्तु दिवोदास ने पुनः एक बार इसपर हमला कर, इसका एवं इसके सौ पुत्रों का वध किया। इस आक्रमण में से इसका दुर्दम नामक पुत्र अकेला ही बच सका, जिसने आगे चलकर दिवोदास को पराजित किया (दिवोदास २. देखिये; ह. वं. १.२९.६९-७२;३२.२७-२८)।

भद्रसार--(मौर्य. भविष्य.) एक मौर्यवंशीय राजा, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, चंद्रगुप्त राजा का पुत्र था (बिंदुसार २. देखिये)।

२. (सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव के रोहिणी से उत्पन्न पुत्रों में से एक था।

३. काश्मीर देश का राजा। इसे सुधर्मन् नामक एक पुत्र था, जो तारक नामक प्रधानपुत्र के साथ हमेशा शिव की उपासना करता रहता था। इसने अपने पुत्र को शिवभक्ति से परावृत्त करने का काफी प्रयत्न किया। किन्तु उसका कुछ फायदा न होकर, सुधर्मन् की शिवोपासना बढ़ती ही रही।

एक बार पराशर ऋषि इसके यहाँ अतिथी बनकर आया था। उस समय इसने अपने पुत्र की शिवोपासना एवं विरक्ति की समस्या उसके सामने रख दी। पराशर ने इसकी एवं इसके पुत्र के पूर्वजन्म की कहानी इसे सुनाकर इसे सांत्वना दी, एवं इससे रुद्राभिषेक करवाया। तदोपरान्त अपने पुत्र सुधर्मन् को राजगद्दी पर बिठाकर यह वन में चला गया (स्कंद. ३.३.२०-२१)।

भद्रसेन--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो ऋषभदेव एवं जयन्ती के पुत्रों में से एक था।

भद्रसेन आजातशत्रव--एक राजा, जिसके नाश के लिए उद्दालक आरुणि नामक ऋषि ने अभिचाररूप (वशीकरण) याग किया था (श. ब्रा. ५.५.१४)।

भद्रसेनक--हैहय राजा भद्रश्रेण्य का नामान्तर (भद्रश्रेण्य देखिये)।

भद्रा--कुवेर की प्रियपत्नी। कुन्ती ने द्रौपदी को दृष्टान्त रूप में इसका वर्णन बताया था (म. आ. १९१.६)।

२. विशालक नामक नरेश की कन्या, जिसका विवाह करुषाधिपति वसुदेव से हुआ था। चेदिराज शिशुपाल ने करुषराजा का वेष धारण कर, माया से इसका अपहरण कर लिया (म. स. ४२.११)।

३. श्रीकृष्ण की भगिनी सुभद्रा का नामांतर (म. आ. २११.१४)।

४. सोम की कन्या, जो अपने समय की सर्वश्रेष्ठ सुंदरी मानी जाती थी। इसने उचथ्य ऋषि को पतिरूप में प्राप्त करने के लिये तीव्र तपस्या की थी। इसकी यह इच्छा जान कर, सोम के पिता अत्रि ऋषि ने उचथ्य को बुला कर, उसके साथ इसका विवाह संपन्न कराया (म. अनु. १५४.१०-१२)।

पश्चात् वरुण ने इसका अपहरण किया, जिस कारण क्रोधित हो कर, इसके पति उचथ्य ने पृथ्वी का सारा जल प्राशन किया। फिर वरुण उसकी शरण में आया, एवं उसने भद्रा को अपने पति के पास लौटा दिया (म. अनु. १५४.२८)।

५. वसुदेव की चार पत्नियों में से एक (भा. ९.२४. २९)। वसुदेव की मृत्योपरांत, यह उसके साथ सती हो गयी (म. मौ. ७.१८; २४)।

६. मेरु की कन्या, जो प्रियव्रत राजा के भद्राश्व नामक पौत्र की पत्नी थी (भा. ५.२.२३)।

७. अत्रि ऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८.७४-८७)।

८. श्रीकृष्ण की एक पत्नी, जो केकयाधिपति धृष्टकेतु की कन्या थी। इसकी माता का नाम श्रुतकीर्ति था। भागवत में इसे वसुदेव की बहन, एवं श्रीकृष्ण की फफेरी बहन कहा गया है (भा. १०. ५८.५६)।

इसे एक कन्या एवं निम्नलिखित दस पुत्र थे :-संग्रामजित्, बृहत्सेन, शूर, प्रहरण, अरिजित, जय, सुभद्र, वाम, आयु एवं सत्यक (भा. १०.६१.१)।

९. पूरुवंशीय परिक्षित् (प्रथम) राजा की पत्नी भद्रवती के लिये उपलब्ध पाठभेद (भद्रवती देखिये)।

भद्रा काक्षीवती--पूरुवंशीय व्युषिताश्व राजा की पत्नी, जो कक्षीवान् राजा की कन्या थी। यह अत्यंत रुपवती थी। पति के मृत्यु के बाद, उसके शव से इसे सात पुत्र पैदा हुए (म. आ. १२०.३३-३६)।

भद्रायु--एक राजा, जो शिव का परम भक्त था। इसे कोढ़ था, जिस कारण इसे जीवित अवस्था में ही मृत्यु की यातना सहनी पडती थी। इसकी पत्नी का नाम कीर्तिमालिनी था।

यह सोलह वर्ष का होने पर, इसके घर ऋषभ नामक शिवावतार अवतीर्ण हुआ। उसने इसे 'राजधर्म' का उपदेश दिया, एवं प्रसाद के रूप में इसके मस्तक में विभूति लगाया। शस्त्र के रूप में, उसने इसे खड्ग एवं शंख दे कर, बारह सहस्र हाथियों का वल इसे प्रदान किया। उस शस्त्रास्त्रों के बल से, यह युद्ध में अजेय बन गया (शिव. शत. ४.२७)।

शिव के ऋषभ अवतार के शिवपुराण में प्राप्त वर्णन से, वह अवतार प्रवृत्तिमार्गीय प्रतीत होता है।

एक बार इसके राज्य में, शिव ने एक व्याघ्र का रूप धारण कर, एक ब्राह्मण के पत्नी का अपहरण किया। फिर इस प्रजाहितदक्ष राजा ने अपनी पत्नी उस ब्राह्मण को दान में दी, एवं यह स्वयं अग्निप्रवेश के लिए सिद्ध हुआ। इसकी इस त्यागवृत्ति से संतुष्ट हो कर, शिव ने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये, एवं ब्राह्मण की पत्नी उसे लौटा दी (स्कंद. ३.३.१४)।

अपने पूर्वजन्म में, यह मंदर नामक राजा था, एवं इसकी पत्नी कीर्तिमालिनी उसकी पिंगला नामक पत्नी थी (स्कंद. ३.३.१२; ९.१४)।

भद्रावती--व्युषिताश्व की पत्नी भद्रा का नामांतर।

भद्राश्व--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो सुविख्यात सम्राट प्रियव्रत् का पौत्र, एवं अग्नीध्र का पुत्र था (म. शां. १४.२४)। इसकी माता का नाम उपचित्ति था। मेरु की कन्या भद्रा इसकी पत्नी थी (भा. ५.२.१९)। इसका पिता अग्नीध्र जंबुद्वीप का सम्राट था। जंबुद्वीप का जो भाग इसे प्राप्त हुआ, वह इसीके नामसे 'भद्राश्ववर्ष' नाम से प्रसिद्ध हुआ (म. भी. ७.११)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत एवं महाभारत के अनुसार, कुवलाश्व राजा का पुत्र था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'दृढाश्व'।

३. (सो. नील.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार, पृथु राजा का पुत्र था। इसे हर्यश्व एवं भर्म्याश्व नामांतर भी प्राप्त थे।

४. (सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार, वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

५. (सो. पूरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार अहंवर्च राजा का पुत्र था। इसे रौद्राश्व नामांतर भी प्राप्त था। इसे कुल दस कन्याएं थी, जो प्रभाकर (आत्रेय) ऋषि को विवाह में दी गयी थी।

भद्रेश्वर--मध्यदेश का एक सूर्योपासक राजा। इसके दाहिने हाथ पर यकायक कोढ़ उत्पन्न हुआ, जिससे छुटकारा पाने के लिए, इसने एवं इसके प्रजा ने कठोर सूर्योपासना की। सूर्यप्रसाद से इसका कोढ़ नष्ट हुआ, एवं इसे मुक्ति मिल गयी (पद्म. सृ. ७९)।

भनस्य--(सो.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार प्रवीर राजा का पुत्र था।

भय--एक राक्षस, जो अधर्म के द्वारा उत्पन्न तीन भयंकर राक्षसों में से एक था। इसकी माता का नाम निर्ऋति था। इसके अन्य दो भाइयों का नाम महाभय एवं मृत्यु था। ये तीनों राक्षस सदा पापकर्म में लगे रहते थे (म. आ. ६६.५५)।

२. एक वसु, जो द्रोण एवं अभिमति का पुत्र था (भा. ६.६.११)।

भयंकर--सौवीर देश का राजकुमार, जो जयद्रथ के रथ के पीछे हाथ में ध्वजा ले कर चलता था। यह द्रौपदीहरण के समय जयद्रथ के साथ गया था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. व. २४९.११-१२; २५५.२७)।

२. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

भयंकरी-- स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५.४)।

भयद आसमात्य--एक राजा, जो संभवतः असमाति राजा का वंशज था (जै. उ. ब्रा. ४. ८. ७)। भयद राजा का निर्देश पुराणों में भी प्राप्त है।

भयमान वार्षागिर--एक राजा, जो सायणाचार्य के अनुसार, एक वैदिक मंत्रद्रष्टा भी था (ऋ. १.१००. १७)।

भया--एक राक्षसी, जो हेति नामक राक्षस की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम विद्युत्केश था (वा. रा. उ. ४.१६)।

भयानक--जालंधर के पक्ष का एक दैत्य (पद्म. उ. ९)।

भर--एक राजा, जो आर्ष्टिषेण नामक राजर्षि का पुत्र था। इसकी माता का नाम जया, एवं पत्नी का नाम सुप्रभा था।

भरणी--प्राचेतस दक्ष की सत्ताईस कन्याओं में से एक, जो सोम को विवाह में दी गयी थी। आकाश में स्थित भरणी नक्षत्र यही है। 'चंद्रव्रत' में, भरणी नक्षत्र को चंद्रमा का सिर मान कर पूजा करने का विधान प्राप्त है (म. अनु. ११०.९)। भरणी नक्षत्र में जो ब्राह्मणों के धेनु का दान करता है, वह इस लोक में बहुतसी गौओं को, तथा परलोक में महान् यश को प्राप्त करता है (म. अनु. ६४.३५)।

भरत--(सो. पूरु.) एक सुविख्यात पूरुवंशीय सम्राट, जो दुष्यन्त राजा का शकुंतला से उत्पन्न पुत्र था (भरत दौःषन्ति देखिये)।

२. (सो. इ.) अयोध्या के दशरथ राजा का पुत्र (भरत 'दाशरथि' देखिये)।

३. (स्वा. नाभि.) एक महायोगी राजर्षि, जो ऋषभ राजा का पुत्र था (भरत 'जड' देखिये)।

४. एक सुविख्यात मानवसमूह। ऋग्वेद के तीसरे एवं सातवें मण्डल में सुदास एवं तृत्सुओं के सम्बन्ध में इनका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ३.३३.११-१२; ७.३३.६)।

ऋग्वेद में विश्वामित्र को 'भरतों का ऋषभ' अर्थात भरतों में श्रेष्ठ कहा गया है। विपाश् एवं शतुद्री नदियों के संगम के उस पार जाने के लिए विश्वामित्र ने भरतों को मार्ग बताया था (ऋ. ३.३३.११)। ऋग्वेद में अन्यत्र, भरतों की एक पराजय एवं वसिष्ठ की सहायता से उनकी रक्षा होने का स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.८.४)। ऋग्वेद के छठवें मण्डल में इन्हें दिवोदास राजा का सम्बन्धी बताया गया है (ऋ. ६.१६.४-५)। सम्भव है, सुदास एवं दिवोदास यह दोनों राजा स्वयं भरतगण के थे (ऋ. ६.१६. १९)।

ऋग्वेद में दूसरे स्थान पर भरतगण एवं तृत्सुओं को पूरूओं के शत्रु के रूप में वर्णित किया गया है। इस प्रकार तृत्सुओं तथा भरतों का घनिष्ट सम्बन्ध अवश्य था, चाहे उसका कारण कुछ भी रहा हो। गेल्डनर तृत्सुओं को इनके परिवार का कहता है, तथा ओल्डेनबर्ग भरतों के पारिकारिक गायक वसिष्ठ को ही तृत्सुगण कहता है (वेदिशे. स्टूडियन. २.१३६)। हिलेब्रान्ट तृत्सुओं तथा

भरतों के सम्बन्ध में दो जातियों के मिश्रण का आभास देखता है (वेदिशे माइथौलेजी १.१११)।

भरतगण का उल्लेख यज्ञकर्ता राजाओं के रूप में कई ग्रन्थों में आया है। शतपथ ब्राह्मण में, अश्वमेध यज्ञ करनेवाले राजा के रूप में 'भरत दौःषन्ति' तथा 'शतानीक सात्रजित' नामक अन्य भरतों का उल्लेख प्राप्त है (श. ब्रा. १३.५.४)। ऐतरेय ब्राह्मण में, दीर्घतमस् मामतेय द्वारा अपना राज्याभिषेक करानेवाले 'भरत दौःषन्ति', तथा सोमशुष्मन् वाजरत्नायन नामक पुरोहित के द्वारा अभिषिक्त हुए 'शतानीक' का विवरण प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.२३)। इन भरत राजाओं ने काशी के राजाओं को जीत कर, गंगा तथा यमुना के पवित्र तटों पर यज्ञ किये थे (श. ब्रा. १३.५.४; ११.२१)।

महाभारत में कुरु राजवंश के राजाओं को भरतवंशीय ही माना गया है। इससे प्रतीत होता है कि, ब्राह्मण ग्रन्थों के काल तक भरतगण कुरु पांचालजाति में विलीन हो चुके थे (श. ब्रा. १३.५.४)।

ऋग्वेद में एक जगह सुदास एवं दिवोदास, तथा पुरुकुत्स एवं त्रसदस्यु इन दोनों की मित्रता का निर्देश मिलता है। ओल्डेनबर्ग के अनुसार, ये निर्देश भरत, पूरु तथा कुरु राजवंशों के सम्मीलन की निशानी माननी चाहिये (ऋ. १.११२.१४; ७.१९.८)।

ऋग्वेद में 'अग्नि भारत' को भरतों की अग्नि के अर्थ में, तथा 'भारती' का प्रयोग भरतों की देवी के रूप में हुआ है (ऋ. २.७.१; १.२२.१०)।

इस मानववंश में उत्पन्न हुए राजा (जैसे, सुदास एवं दिवोदास) सूर्यवंशी थे अथवा नहीं, यह कहना कठिन है। वायुपुराण में मनु राजा को 'लोगों का पोषण करनेवाला' अर्थ से 'भरत' कहा गया है, एवं उसीके नाम से इस देश तथा यहाँ के निवासियों को 'भारत' नाम प्राप्त होने का निर्देश है (वायु. ४५.७६)।

५. नाट्यशास्त्र का प्रणयन करनेवाला सुविख्यात आचार्य, जिसका 'भारतीयनाट्यशास्त्र' नामक ग्रंथ नाट्यलेखन एवं नाट्यप्रयोगशास्त्र का सर्वप्रथम एवं प्रमाण ग्रंथ माना जाता है।

इसके द्वारा लिखित नाट्यशास्त्र में, 'नंदिभरत संगीत पुस्तकम्' ऐसा निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है की, इसका नाम नंदिभरत होगा। नंदिभरत के नाम पर 'अभिनयदर्पण' नामक अभिनयशास्त्र का एक ग्रन्थ, एवं संगीतशास्त्र पर अन्य एक भी उपलब्ध है। विष्णु पुराण में 'गंधर्ववेद' नामक संगीतशास्त्रीय ग्रंथ का भी इसे कर्ता कहा गया है (विष्णु. ३.६.२७)। पिशेल ने अपने नाट्यशास्त्र के जर्मन अनुवाद में 'भरत' शब्द का अर्थ 'अभिनेता' ऐसा किया है, एवं इसे देवों द्वारा अभिनीत नाट्यप्रयोगों का निर्देशक कहा है।

नाट्यप्रयोग में अभिनय करनेवाले अभिनेताओं को मार्गदर्शन करनेवाले 'नटसूत्र' पाणिनिकाल में अस्तित्व में थे (पा. ४.३.११०)। भरत ने इन्ही नटसूत्रों का विस्तार कर, अपने नाट्यशास्त्र की रचना की। इसके ग्रंथ में नाट्याभिनय, नृत्य, संगीत, नाट्यगीत एवं काव्यशास्त्र का विस्तारशः परामर्श लिया गया है।

दुर्भाग्यवश भरत के द्वारा रचित मूल 'नाट्यशास्त्र' आज उपलब्ध नही है। सांप्रत उपलब्ध नाट्यशास्त्र का बहुतसारा भाग प्रक्षित है; एवं वह एक ग्रंथकार की नही, बल्की अनेक ग्रंथकारों की रचना प्रतीत होती है। उसमे से कई श्लोक अनुष्टुभ वृत्त में, एवं कई आर्या वृत्त में रचे गये है; एवं कई भाग गद्यमय है।

नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति—भरत के नाट्यशास्त्र के कुल ३८ अध्याय है, जिसमे से पहिले एक एवं आखिरी तीन अध्यायों में नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति की कथा दी गयी है। उस कथा के अनुसार, एक बार इंद्रादि सारे देव ब्रह्मा के पास गये, एवं उन्होने प्रार्थना की, 'नेत्र एवं कान इन दोनों को तृप्त करे ऐसे कोई कलामाध्यम का निर्माण करने की आप कृपा करें'। देवों की इस प्रार्थना के अनुसार, ब्रह्मा ने 'नाट्यवेद' नामक पाँचवे वेद का निर्माण किया।

'नाट्यवेद' में निर्दिष्ट तत्त्वों के अनुसार निर्माण किये गये प्रथम नाट्यप्रयोग का आयोजन इंद्र ने असुरों पर प्राप्त किये विजय के सम्मानार्थ, भरत मुनि द्वारा इंद्र के राजप्रासाद में किया गया। इस नाट्यप्रयोग का कथाविषय 'देवासुर संग्राम' ही था, जिसे देख कर उपस्थित असुरगण संतप्त हो उठा। उन्होनें अपने राक्षसी माया से नाट्यप्रयोगों में भाग लेनेवाले अभिनेताओं की वाणी, स्मृति एवं अभिनयसामर्थ्य पर पाश डालना शुरु किया, जिससे नाट्यप्रयोग, में बाधा आ गयी।

राक्षसों के इस असंमजस व्यवहार का कारण ब्रह्मा के द्वारा पूछा जाने पर राक्षस कहने लगे, 'भारतमुनि निर्मित नाट्यकृति में राक्षस का चित्रण देवों की अपेक्षा गिरे हुए खलनायक के रूप में किया गया है। यह हमे पसंद नही है'। फिर ब्रह्मा ने जवाब दिया, 'देव एवं असुरों की सुष्टता एवं

दुष्टता दर्शाने के लिये नाट्यवेद का निर्माण मैने किया है। मानवी जीवन की साकार प्रतिमा दर्शकों के सामने प्रगट करना, इस कला का मुख्य ध्येय है। जीवन के सारे पहलू, यथातथ्य रूप में प्रगट कर, एवं दुनिया के उत्तम, मध्यम एवं नीच व्यक्तियों को दिखा कर, दर्शकों को ज्ञान एवं मनरंजन एकसाथ ही प्रदान करना नाट्यमाध्यम का मुख्य उद्देश्य है। इसी कारण दुनिया का सारा कलाज्ञान, शास्त्र, धार्मिक विचार एवं यौगिक सामर्थ्य का दर्शन इस कला में तुम्हे प्राप्त होगा'।

नाट्यकला का पृथ्वी पर आगमन—स्वर्ग में स्थित इंद्र प्रासाद में सर्वप्रथम निर्मित भरत की नाट्यकृति पृथ्वी पर कैसी अवतीर्ण हुयी, इसकी कथा भी 'भरत नाट्यशास्त्र में' दी गयी है। इस कथा केअनुसार, इस नाट्यकृति में भाग लेनेवाले अभिनेताओं ने उपस्थित ऋषिओं का व्यंजनापूर्ण हावभावों से उपहास किया, जिस कारण ऋषिओं ने क्रुद्ध होकर नाट्यव्यवसायी लोगो को शाप दिया, 'उच्च श्रेणी के कलाकार हो कर भी समाज की दृष्टि से तुम नीच एवं गिरे हुए होकर रहोगे। अपनी स्त्रिया एवं पुत्रों के सहारे तुम्हे जीना पडेगा'।

ऋषिओं के इस शाप के कारण नाट्यकला नष्ट न हो, इस हेतु से भरत ने यह कला अपने पुत्र एवं स्वर्ग की अप्सराओं को सिखायी, एवं उन्हे पृथ्वी पर जा कर उसका प्रसार करने के लिए कहा। पृथ्वी पर जाने से पहले ब्रह्मा ने उन्हे वर प्रदान किया, 'तुम्हारी कला सदैव लोगों को प्रिय, अतएव अमर रहेगी'।

मत्स्य के अनुसार, भरतमुनि रचित 'लक्ष्मी स्वयंवर' नामक नाट्यकृति में लक्ष्मी की भूमिका करनेवाली उर्वशी अप्सरा से कुछ त्रुटि हो गयी, जिस कारण भरत ने उसे पृथ्वी पर जाने का, एवं पुरूरवस् राजा की पत्नी बनने का शाप दिया (मत्स्य. २४.१-३२)।

भारतीय नाटयशास्त्र एवं मत्स्य में प्राप्त इन कथाओं से ज्ञात होता है कि, उस समय नाट्यकाल आज की भाँति लोकप्रिय थी, एवं जनमानस में उसके प्रति अतीव आकर्षण था।

भारतीय नाट्यशास्त्र—भरतरचित नाट्यशास्त्र में नाट्यकृति का केवल साहित्यिक दृष्टि से नही, बल्की कला, संगीत, नृत्य, अभिनय आदि सर्वांगीण दृष्टि से विचार किया गया है। उस ग्रन्थ में नाट्यप्रयोग संबंधी निम्नलिखित विषयों का परामर्श लिया गया है:—रंगमंच की रचना, एवं उसके उद्घाटन के लिये आवश्यक धार्मिक विधि (अ. २-३); नृत्य एवं अभिनय में शारीरीक चलनवलन से वसंत, ग्रीष्मादि ऋतु, एवं त्वेष, दुःख हर्षादि भावना कैसी सूचित करे (अ. ४-५); नानाविध रस, भावना, एवं अलंकार आदि का नाट्यकृति में आविष्कार (अ. ६-८, १६); पात्रों की भाषा उनका देश एवं व्यवसाय के अनुसार कैसी बदल देना चाहिये (अ. १७); नाट्यकृतिओं के दस प्रकार, एवं उनके वैशिष्टय (अ. १८); नाट्यकृति की गतिमानता बढ़ाना (अ. १९); नाट्यशैली के विभिन्न प्रकार (अ. २०); देव, दानव, मनुष्यों के पात्रचित्रण के लिये नानाविध वेषभूषा, रंगभूषा आदि (अ. २१); नाट्यकृति के नायक, नायिका, खलनायक आदि पात्रों के विभिन्न प्रकार (अ. २२-२४); अभिनेताओं की नियुक्ति एवं शिक्षा (अ. २६, ३५), नाट्य-प्रयोग का समय, स्थल एवं प्रसंग की नियुक्ती (अ. २७); नाट्यसंगीत एवं नृत्य (अ. २८-३४)।

भरत के नाट्यशास्त्र में, नाट्यकृतिओं के निम्नलिखित दस प्रकार माने गये है:— नाटक, प्रकरण, भाण, प्रहसन, डीम, व्यायोग, समवकार, वीथी, उत्सृष्टांक एवं इहामृग। अग्निपुराण में भरत नाट्यशास्त्र के काफ़ी उद्धरण लिये गये है (अग्नि. ३३७-३४१)। किंतु वहाँ नाट्यकृतिओं के सत्ताईस प्रकार दिये गये है।

भरत के नाट्यशास्त्र में, निम्नलिखित आठ रसों का विवरण प्राप्त है:—शृंगार, हास्य, करुण, रौद्र, वीर, भयानक, बीभत्स, एवं अद्भुत। इस नामावलि में शांतरस का अंतर्भाव नही किया गया है, क्यो कि, वह विदग्ध काव्य का रस माना जाता है।

नाट्यकृति का संविधानक (वस्तु, इतिवृत्त), नायक एवं नायिकाओं के विभिन्न प्रकार भी भरत नाट्यशास्त्र में दिये गये है।

विंटरनिट्स के अनुसार, भरत की नाट्यकृति में रस, नायक आदि की वर्गीकरणपद्धति अधिकतर ग्रांथिक पद्धति की है, व्यवहारिक उपयोगिता एवं नये विचारों का दिग्दर्शन उसमें कम है।

काल—हरप्रसाद शास्त्री के अनुसार, उपलब्ध नाट्यशास्त्र का काल ई. स. दुसरी शताब्दी माना लेना चाहिये। संभव है, नाट्यशास्त्र में अंतर्गत अभिनयसंबंधी कारिका इससे पुरानी हो। देवदत्त भांडारकर के अनुसार, इस ग्रंथ में प्राप्त संगीतसंबंधी अध्याय काफ़ी उत्तरकालीन, अतएव

चौथी शताब्दी का प्रतीत होता है। महाकवि भास के काल में भरत का नाट्यशास्त्र सुविख्यात् ग्रन्थ था। कालिदास को भी भरत एवं उसके नाट्यशास्त्र से काफी परिचय था। 'विक्रमोवर्शीयम्' में भरत नाट्यनिर्देशक के नाते इंद्र के राजप्रासाद में प्रवेश करता हुआ दिखाया गया है, एवं उक्त नाट्यकृति में भरत के 'अष्टरस' संबधी सिद्धांत का विवरण प्राप्त है।

६. मगधाधिपति इंद्रद्युम्न राजा के दरबार एक धर्मज्ञ ऋषि। इंद्रद्युम्न राजा के पत्नी ने इंद्र नामक ब्राह्मण से व्यभिचार किया। पश्चात् राजा के द्वारा प्रार्थना करने पर, इसने इंद्र ब्राह्मण को शाप दे कर उसका नाश किया (यो. वा. ३.९०)।

७. एक अग्नि, जो शंभु नामक अग्नि का द्वितीय पुत्र था। इसे ऊर्ज नामांतर भी प्राप्त था। पौर्णमास याग के समय, इसे सर्व प्रथम हविष्य एवं घी अर्पण किया जाता है (म. व. २०९.५)।

८. एक अग्नि, जो अद्‌भुत नामक अग्नि का पुत्र था। यह मरे हुए प्राणियों के शव का दाह करता है। इसका अग्निष्टोम में नित्य वास रहता है; अतः इसे 'नियत' भी कहते है (म. व. २१२.७)।

९. एक अग्नि, जो शंभुपुत्र भरत नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २०९.६-७)। इसे पुष्टीमति नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २११.१; पुष्टीमति देखिये)।

१०. वाराणसी क्षेत्र में रहनेवाला एक योगी, जिसने गीता के चौथे अध्याय का पाठ कर बदरी (बेर) बनी हुई दो अप्सराओं का उद्धार किया था (पद्म. उ. १७८)।

११. शूद्रवृत्ति से रहनेवाला एक दुराचारी ब्राह्मण। इसके भाई का नाम पुंडरीक था। एक मृत मनुष्य के शव को अग्नि देने का पुण्यकर्म करने के कारण, यह मुक्त हो गया (पद्म. उ. २१८-२१९)।

१२. एक राजा, जो मौत्य मनु के पुत्रों में से एक था।

१३. (सो. तुर्वसु.) करंधमपुत्र मरुत्त राजा का नामांतर (मरुत्त १. देखिये)।

भरत 'जड'--(स्वा. नाभि.) एक महायोगी एवं गुणवान् राजर्षि, जो 'जडभरत' नाम से सुविख्यात हैं। अजनाभवर्ष का राजा नाभि के पुत्र ऋषभदेव को इन्द्र की की कन्या जयन्ती से सौ पुत्र हुए, जिनमें यह ज्येष्ठ था। पहले इस देश का नाम अजनाभ वर्ष था। बाद को इसीके नाम से इस देश का नाम भारतवर्ष हुआ (भा. ५.४.९; वायु. ३३.५२; ब्रह्मांड. २.१४.६२; लिंग. १. ४७.२४; विष्णु. २.१.३२)। वायु के अनुसार, इसके पूर्व इस देश का नाम 'हिमवर्ष' था।

बहुत दिनों तक राज्य करने के उपरांत, इसका पिता राजा ऋषभ इसका राज्याभिषेक कर वन चला गया। पिता के द्वारा राज्यभार सौंप देने के उपरांत, इसने विश्वरूप की कन्या पंचजनी का वरण किया। यह अपने पिता की ही भाँति प्रजापालक, दयालु एवं धार्मिक प्रवृत्ति का राजा था। इसकी प्रजा भी निजधर्म का पालन करती हुयी सुख के साथ जीवन निर्वाह करती थी। इसने यज्ञकर्मों के 'प्रकृति विकृतियो' का पूर्ण ज्ञान संपादित कर, बडे बडे यज्ञों को कर यज्ञपुरुष की आराधना की थी। इस प्रकार भक्तिमार्ग का अवलंबन करता हुआ इसने एक कोटि वर्षों तक राज्य किया। तदोपरांत राज्य को छोड़कर यह तप के लिए पुलहाश्रम चला गया (भा. ५.७.८)।

द्वितीय जन्म--पुलह का आश्रम गंडकी नदी के किनारे बडे सुन्दर स्थान पर बना था। वहीं जाकर यह सूर्यमंत्र का जाप कर तपस्या करने लगा। एक दिन इसने एक गर्भवती हरिणी देखी, जो तृषित होकर श्लथ शरीर बडी जल्दी जल्दी पानी पी रही थी। इतने में सिंहगर्जना से भयत्रस्त होकर वह एकदम भगी। वैसे ही उसके गर्भ में स्थित शावक गिर कर पानी के प्रवाह में वह गया, तथा वह त्रस्तनयनों से देखती कुंजो में विलीन हो गयी। भरत ने शावक को पानी से निकाला, तथा इसे आश्रम ले आया। इस हरीणशावक के प्रति इसकी स्नेह भावना इतनी बढ़ गयी, कि उसी मोह में नित्य होनेवाली दिनचर्या तथा अपनी तपस्या से भी वह उदासीन हो गया। उन्हें चौवीस घन्टे मृगशावक ही याद रहता तथा उसी की ही चिन्ता। यहा तक कि, मृत्यु के समय भी इसे यही चिन्ता थी कि, मेरे बाद इस शावक का क्या होगा? इसी कारण मृत्योपरांत इसे मृगजन्म ही प्राप्त हुआ।

मृगयोनि में इसे अपने पूर्वजन्म का पूर्णज्ञान था। अतएव अपने मातापिता के मोह का परित्याग कर, यह उसी पुलहआश्रम में आकर, शाल वृक्षों की पवित्र छाया में एकाग्रचित्त होकर तपस्या करने लगा। जब इसे पता चला कि इसकी मृत्यु निकट आ गयी है, तब गंडकी नदी के पवित्र जल में गले तक डूबकर इसने अपने मृग शरीर का त्याग किया।

तृतीय जन्म—मृगयोनि के उपरांत, इसने अंगिराकुल के एक सद्गुणसम्पन्न ब्राह्मण की दूसरी पत्नी के गर्भ से जन्म लिया। इस जन्म में इसे 'जड़ भरत' नाम प्राप्त हुआ। इस जन्म में भी इसे अपने पूर्वजन्मों का ज्ञान था, तथा यह भी पता था कि मेरा यह अन्तिम जन्म है। अतः कही फिर जन्म न लेना पडे इस कारण, यह मोहमाया को छोडकर सब से अलग रहने लगा। इसका विचार था, 'यदि मैं किसी से, किसी प्रकार का सम्पर्क सम्बन्ध तथा प्रेमभाव रखूँगा तो लोग भी मुझसे सम्बन्ध बढायेंगे, तथा इसप्रकार मायामोह के बन्धनों में उलझ कर मुझे जन्म मरण के बन्धनों में बार बार बन्धना पड़ेगा'। इसीलिए यह इस प्रकार का आचरण दिखाने लगा कि, लोक इसे मूर्ख, मंदबुद्धि, अंधा तथा बहरा समझे। इसप्रकार कर्मबन्धनों से अलग रहकर, दत्तचित्त होकर यह ब्रह्मचिन्तन मैं सदैव निमग्न रहने लगा।

इसको इस प्रकार उदासीन देखकर भी, इसके पिता ने गृहस्थाश्रम के उपनयनादि सभी संस्कारों को कर के इसे वेदशास्त्रों की शिक्षा आदि का भी ज्ञान कराया। किन्तु यह तो अपने राग में ही मस्त रहा। इसकी यह उदासीनता तथा उपेक्षित भाव देखकर इसके पिता पुत्र दुःख में ही मर गये। इसकी माता भी उसीके साथ सती हो गयी; किन्तु इसमें कोई अन्तर न आया। आगे चलकर, इसके भाइयों ने भी इसे जड़ समझ कर, इसकी पढ़ाईलिखायी बन्द कर, इससे सम्बन्ध तोड़ लिए। यह भी भक्तिभावना में निमग्न कभी वेगारी करता, कभी भिक्षा माँगता, तथा कभी मज़दूरी कर के अपना पेट पालता। एक बार यह वीरासन में बैठा खेत की रक्षा कर रहा था, की राजदूतों ने इसे देखा, तथा पकड़ कर बलि देने के लिए भद्रकाली के मन्दिर ले गये। किन्तु देवी ने इसकी परम प्रतिभा को पहचान कर, इसका संरक्षण कर लिया, एवं उन राजदूतों का नाश किया (भा. ५.९-१०; विष्णु. २.१३-१६)।

एक बार सिंधु-सौवीर देश का राजा रहूगण कपिलाश्रम में ब्रह्मज्ञान का उपदेश सुनने के लिए जा रहा था। जाते जाते वह इक्षुमती के तट पर आ पहुँचा। उसने वहाँ के अधिपति से पालकी ले जाने के लिए कहारों को मँगाने के लिए कहा। पालकी ले जाने के लिए जब कोई दीख न पड़ा, तो वेगार रूप में राजा की पालकी उठाने के लिए इससे कहा गया। यह बिना हिचकिचाहट के तैयार हो गया। पालकी ले जानेवाले सभी कहार तेज चलते थे। किंतु यह राह में धीरे धीरे इस प्रकार कदम रखता, कि कहीं कोई कीड़ामकोडा इसके पैर से कुचल कर मर न जाये। इस प्रकार, इसके धीरे चलने से राजा को पालकी के अंदर झटके लगने लगे। उसने जब इसका कारन पूछा, तब उसे पता चला की, इसमें जडभरत का ही दोष है, अन्य का नहीं।

रहूगण राजा से संवाद—राजा ने पालकी से झाँक कर इसको देखते ही कहा, 'तुम दिखते तो हृष्टपुष्ट हो, किंतु पालकी ले जाने में इतने सुस्त क्यों'? तब जड भरत ने उत्तर दिया, 'मजबूती शरीर की नहीं, आत्मा की होती है, तथा मेरी आत्मा अभी इतनी पुष्ट कहाँ? पश्चात्, इसे तत्त्वज्ञानी समझ कर, राजा पालकी से उतर लिया, एवं उसने इससे आत्मबोध के संबंध में उपदेश ग्रहण कर मुक्ति प्राप्त की। इसने राजा को अपने पूर्वजन्म की घटनाओं के साथ साथ उसे अन्य बातें भी बतायी थीं। इस प्रकार उसे ज्ञान प्रदान कर यह बन को चला गया (भा. ५.११-१४; नारद १.४८-४९; विष्णु. २.१३-१६)।

भागवत के अनुसार, इसका इतना महान् चरित्र था, कि अनुकरण करना तो दूर रहा, किसी में इतना सामर्थ्य नहीं कि, वह इस प्रकार के त्यागमय जीवन को अपना ने की बात सोचे, तथा यदि वह सोचे भी, तो यह उसीके प्रकार की बात होगी कि, कोई नीच मक्खीं गरुड़ की बराबरी के लिए प्रयत्नशील हो (भा. ५.१४.४२)।

परिवार—ऋषभपुत्र के जन्म में, इसे अपने पंचजनी नामक पत्नी से निम्नलिखित पाँच पुत्र हुए:— सुमति, राष्ट्रभृत्, सुदर्शन, आवरण, एवं धूम्रकेतु। पुलह ऋषि के आश्रम में जाने के पूर्व, इसने अपना संपूर्ण राज्य अपने पुत्रों में बाँट दिया था (भा. ५.७.१-१३)।

भरत 'दाशरथि'—(सू. इ.) अयोध्या के राजा दशरथ का पुत्र। इसकी माता का नाम कैकयी था। कुशध्वज जनक की कन्या मांडवी इसकी पत्नी थी।

जिस समय राम को राज्याभिषेक होनेवाला था, यह शत्रुघ्न के साथ अपने मामा के घर गया था। अयोध्या का राज्य इसे दिलाने के लिए इसकी माँ कैकेयी ने दशरथ से वरदान प्राप्त किया कि, राम को वनवास, तथा भरत को अयोध्या का राज्य दिया जाय। दशरथ कैकेयी के पूर्व वचन-बद्ध थे। वह जब चाहे वरदान प्राप्त कर सकती थी। इसी आधार पर उसने उक्त वरदान ऐसे विचित्र अवसर

पर माँगे कि, दशरथ ने अपनी प्रतिज्ञा तो पूरी की; किन्तु राम के वनगमनोपरांत पुत्रशोक में प्राण त्याग दिया। राम वन चले गये थे, दशरथ भी इस संसार में न रहे, अतएव राज्य की व्यवस्था संभालने के लिए सिद्धार्थ नामक मंत्री से भरत को बुला लाने के लिए भेजा गया।

इधर भरत अपने ननिहाल में नित्यप्रति अनिष्टकारी स्वप्नों को देखने के कारण, अत्यंत दुःखी व चिंतित था। सिद्धार्थ इसे लेने के लिए आया, और विना कुछ बताये अयोध्या वापस बुला लाया। अयोध्या आकर इसे अपनी माँ के द्वारा सभी समाचार ज्ञात हुए।

कैकयी का षड्यंत्र--राज्यप्राप्ति के लिए, माँ कैकैयी द्वारा रचे गये इस षड्यंत्र को देख कर भरत क्रोधाग्नि में पागल हो उठा, और अपनी माँ की कटु आलोचना करते हुए उसकी घोर निर्भर्त्सना की। भरत को अपनी माँ की इस राज्यलिप्सा तथा अधिकार प्राप्ति की भावना से इतना अधिक दुःख हुआ कि, यह वहाँ ठहर न सका, और सीधे कौसल्या से मिलने के लिए उसके महल की ओर चल पड़ा। कौसल्या भी इससे मिलने के लिए विह्वल थी, क्योंकि उसकी धारणा थी कि, शायद यह समस्त जाल भरत की सम्मति से ही विछाया गया है। भरत के आते ही कौसल्या ने बुरा भला कहते हुए अपने व्यंग बाणों से इसके हृदय को विदीर्ण कर दिया। अन्त में शोक विह्वल भरत को हाथ जोड़ कर शपथ खाकर कहना पड़ा कि, इस जाल फरेब से उसका कोई सम्बन्ध नहीं है, उसका नाम व्यर्थ में जोड़ कर उसे पापी ठहराया गया है।

इसके आने के दूसरे दिन गुरु वसिष्ठ ने राजा दशरथ को क्रियाकर्म करने के लिए कहा। तब भरत ने भी गुरु की आज्ञा मान कर, तेल की कढ़ाई में रक्खे गये दशरथ के सुरक्षित शव को निकाल कर, विधिपूर्वक अग्निहोत्राग्नि देकर, पिता की अन्तिम क्रिया पूरी की (वा. रा. अयो. ७०-७७)।

चौदह दिनोपरांत, जब यह अपने मृत पिता के अंतिम संस्कारों से निवृत्त हुआ, तब राज्याधिकारियों एवं मंत्रियों ने इसे सिंहासन स्वीकार कर के राज्य संचालन की प्रार्थना की। इसने सब को समझाते हुए कहा, 'राज्य का अधिकारी मृत पिता का ज्येष्ठ पुत्र ही हो सकता है, मैं नहीं। राजा होने का अधिकार केवल राम को हीं है, कारण वह हमारे सभी भाइयों में ज्येष्ठ एवं योग्य हैं। हमें चाहिये कि, राम जहाँ कहीं हो हम अपने सम्पूर्ण साज-बाज के साथ वहाँ जाकर राज्यभार उन्हें सौंप कर उनका राज्याभिषेक करें'। भरत के इस आवेशपूर्ण उत्तर को सुनकर वसिष्ठ आदि लोगों ने बहुविध भावों से भरत को समझाया, किन्तु यह अपनी वाणी पर अटल रहा। यहीं नहीं, भरत ने यहाँ तक कह डाला, 'अगर राम वापस नहीं आयेंगे, तो मैने भी निश्चय कर रक्खा है कि, मै राज्य को स्वीकार न करके लक्ष्मण के समान स्वयं वनवासी हो कर, राम की सेवा करते हुए अपने धर्म का निर्वाह करूँगा'। यह कह कर भरत ने राज्याधिकारियों को आज्ञा दी कि, राजपथों को ठीक किया जाये, तथा शीघ्रातिशीघ्र जाने की सभी तैयारियाँ शुरू की जाये।

राम की खोज--राम से मिलने के लिए भरत अपने परिवार, प्रजा, गुरुजनों के साथ अयोध्या से यात्रा के लिए निकल पड़ा। सब से पहला विश्राम, भरत ने गंगा के किनारे शृंगवेरपुर के पास किया। वहाँ इसने गुह से भेंट की, तथा राम के संबंध में अनेकानेक सूचनाओं को प्राप्त कर, उसकी ही सहायता से अपने परिवार सहित गंगा को पार कर 'भरद्वाज आश्रम' की ओर चल पड़ा। मार्ग में संपूर्ण परिवार के साथ चैत्रमुहुर्त में यह प्रयाग वन पहुँचा। वहाँ कुछ देर विश्राम करने के उपरांत, कुछ चुने हुए व्यक्तियों को लेकर यह भरद्वाज आश्रम की ओर चल पड़ा, तथा शेष व्यक्तियों से वहीं ठहरने की आज्ञा दी।

भरत जब गुह से मिला था, तो उसे भी इसे देख कर पहले शंका हुयी थी। यही हाल भरद्वाज का भी हुआ। भरत को देखते ही उसके हृदय में यह बात दौड़ गयी कि, कहीं राम का कंटक हमेशा के लिए मार्ग से दूर करने के लिए भरत तो नहीं आया! भरत के मिलते ही भरद्वाज ने स्पष्ट शब्दों में अपनी धारणा प्रकट की। किन्तु भरत के बार बार कहने तथा वसिष्ठ द्वारा विश्वास दिलाये जाने पर, भरद्वाज मुनि को इस पर विश्वास हुआ। उन्होंने इसका तथा इसकी सेना का उत्कृष्ठ भोजनादि दे कर आदर सत्कार करते हुए बताया, 'राम इस समय चित्रकूट में निवास कर रहे हैं, और तुम उनसे भेंट कर सकते हो'।

भरत ने भरद्वाज मुनि से कौसल्या तथा के कैकयी का जो परिचय दिया है, वह एक ओर करुणा से ओतप्रोत है तथा दूसरी ओर घृणा, क्रोध एवं आत्मग्लानि से परिपूर्ण है। कौसल्या का परिचय देते हुए भरत ने कहा, 'शोक तथा उपवास से कृश तथा दीनहीन बनी हुयी, मेरे पिता की पटरानी कौसल्या को आप देख रहे हैं। इसीने सिंह के समान पराक्रमी राम को जन्म दिया है'। अपनी माँ को घृणापूर्ण दृष्टि से देखते हुए भरत ने कहा, 'यह क्रोधी, अविचारिणी,

अभिमानिनी, स्वयं को भाग्यशालिनी समझनेवाली, ऐश्वर्यलुब्ध सज्जन के समान दिखनेवाली, परन्तु दुर्जन, दुष्ट, तथा दुर्बुद्धि, मेरी माता कैकेयी है'। भरत ने भरद्वाज आश्रम में एक दिन निवास किया। उसके उपरांत भरद्वाज ने राम की पर्णकुटी की ओर जानेवाले यमुना तट का मार्ग समझाकर आदरपूर्वक इसे बिदा किया (वा. रा. अयो. ९२)।

भरद्वाज के द्वारा निर्देशित मार्ग पर चल कर यह चित्रकूट पहुँचा। भरत के आने की सूचना मिलते ही लक्ष्मण आग बबूला हो उठा; उसे पूर्ण विश्वास हुआ कि भरत ससैन्य राम से युद्ध करने आ रहा है। किन्तु राम के अत्यधिक समझाने पर उसका वह संदेह दूर हुआ।

राम से भेंट—भरत आ कर, अतिविह्वलता के साथ राम से लिपट गया एवं अपने हृदय की समस्त आत्मग्लानि को प्रकट करते हुए बार बार उससे माफी माँगने लगा। इसने राम को घर की सारी परिस्थिति बतलाते हुए आग्रह किया कि, वह अयोध्या चल कर राज्यभार ग्रहण करे। इसके साथ जाबालि तथा वसिष्ठ आदि ने भी बार बार निवेदन किया। किन्तु राम न माने। राम ने पिता के वचनों को सत्य प्रमाणित करने के लिए कहा, 'मुझे पिता की आन प्यारी है। मेरा कर्तव्य है कि मैं पिता की आज्ञा को स्वीकार कर उनके पण की रक्षा करूं। इसलिए मैं न अयोध्या जाउँगा, और न राज्य सिंहासन ही स्वीकार करूँगा'।

राम की यह वाणी सुन कर इसने उनके आश्रम के सामने सत्याग्रह करने की योजना बनायी। किन्तु राम ने कहा कि, यह क्षत्रियों का मार्ग न होकर ब्राह्मणों का मार्ग है; यह तुम्हारे लिये अशोभनीय है। अन्त में भरत को समझाते हुए राम ने कहा—

"लक्ष्मीश्चन्द्रादपेयाद्वा हिमवान् वा हिमं त्यजेत्।
अतीयात् सागरो वेलां न प्रतिज्ञामहं पितुः॥
कामाद्वा तात लोभाद्वा मात्रा तुभ्यमिदं कृतम्।
न तन्मनसि कर्तव्यं वर्तितव्यं च मातृवत्॥"
(वा. रा. अयो. ११२.१८-१९)

अन्त में राम के अत्यधिक समझाये जाने पर इसने उनकी पादुकाओं को ले कर कहा; 'मैं इन पादुकाओं के नाम से चौदह वर्ष तक राज्य चलाऊँगा, तथा जिस प्रकार तुम वन में रह कर जटायें एवं वस्त्र धारण करते हो, उसी प्रकार मैं भी जीवन व्यतीत करूँगा, तथा फलफूलों को खा कर ही अपना जीवन निर्वाह करूँगा। यदि तुम चौदह वर्षों के उपरांत वापस न आये, तो मैं अग्नि में प्रवेश कर, अपना शरीर त्याग दूँगा'। इतना कहकर राम की पादुकाओं को लेकर यह वापस आया।

नन्दिग्राम में—अयोध्या आ कर पादुकाओं को लेकर, यह नन्दिग्राम में वनवासी की भाँति रह कर राज्य करने लगा। इस प्रकार राज्यसंचालन करते समय छत्र-चामर, उपहार सभी चीजें पादुकाओं को ही अर्पित की जाती थी, तथा यह निमित्तमात्र बन कर राम की अमानत समझ कर अयोध्या के राज्य का संचालन करता रहा।

राम के वनवास के चौदह वर्षों तक नन्दिग्राम में रह कर यह राजकाज देखता रहा। अन्त में राम ने हनुमान् के द्वारा अपने आने की सूचना भरत के पास भिजवायी।

जिस समय हनुमान् आया, उसने देखा कि वल्कल तथा कृष्णाजिन धारण करनेवाला, आश्रमवासी, कृश, दीन, जटाधारी, शरीर की पर्वाह न करनेवाला, फलफूल पर जीनेवाला तपस्वी भरत भावनिमग्न बैठा है।

इसे देखते ही हनुमान् ने सश्रद्ध भरत के पास आकर राम के आगमन की सूचना इसे दी। हनुमान् द्वारा रामागमन की सूचना सुनकर भरत अत्यंत प्रसन्न हुआ, एवं अनेकानेक पारितोषिक प्रदान कर इसने उसका आदरसत्कार किया। दिये गये पारितोषिकों में सोलह सुन्दर स्त्रियों के देने का भी उल्लेख प्राप्त है।

बाद में, भरत तथा शत्रुघ्न ने उत्तम प्रकार से नगर का शृंगार कर राम का स्वागत किया, तथा बडे समारोह से, राम का राज्याभिषेक कर, अपने पास अमानत के रूप में रक्खे हुए अयोध्या के राज्य को राम को वापस दिया। राम ने राज्यभार की स्वीकार कर अपना युवराज लक्ष्मण को बनाने की इच्छा प्रकट की, क्यों कि, राम के उपरांत ज्येष्ठ होने के कारण उसका ही नाम आता है। लेकिन लक्ष्मण के स्वीकार न करने पर, भरत का यौवराज्याभिषेक किया गया (वा. रा. यु. १२५-१२८; पद्म. पा. १-२)।

युद्धप्रसंग—भरत के सम्पूर्ण जीवन में सम्भवतः एक बार ही युद्ध में भाग लेने का अवसर प्राप्त हुआ। राम के राज्यकाल में, भरत के कैकयाधिपति मामा के पास से राम को संदेश मिला, 'मैं गन्धर्वों से घिर गया हूँ तथा आपकी सहायता चाहता हूँ'। अतएव उसको गन्धर्वों से मुक्त करने के लिए राम ने इसके नेतृत्व में अपनी सेना भेजी थी। इस सेना में भरत के दो पुत्र तक्ष तथा पुष्कल भी थे।

भरत ने अपनी सेना के साथ जा कर सिन्धु के दोनों तटों पर स्थित उपजाउ प्रदेश में रहनेवाले गंधर्वों को

पराजित किया, तथा दो नगरो की स्थापना की। एक का नाम 'तक्षशिला' रख कर वहाँ का राज्याधिकारी तक्ष को नियुक्त किया, तथा दूसरी नगरी का नाम 'पुष्कलावत' रख कर वहाँ का राज्य पुष्कल को सौंपा। इस युद्ध को जीतने तथा राज्यादि की स्थापना में भरत को पाँच वर्ष लगे। बाद को यह अयोध्या वापस आया (वा. रा. उ. १०१)।

अन्त में इस महापुरुष ने, राम के उपरांत अयोध्या से डेढ कोस की दूरी पर स्थित 'गोप्रतारतीर्थ' में देहत्याग किया (वा. रा. १०९.११; ११०.२३)।

तुलसीरामायण में—रामचरित-मानस में तुलसीदास जी ने भरत का समस्त रूप—

पुलह गात हिय सिय रघुबीरू,
जीह नामु जप लोचन नीरू,

में प्रकट कर दिया है। 'मानस' में भरत का चरित्र सभी से उज्ज्वल कहा गया है।

'लखन राम सिय कानन बसहीं,
भरत भवन बसि तपि तनु कसहीं
कोउ दिसि समुझि करत सब लोगू,
सब विधि भरत सराहन जोगू'।

तुलसी ने अपनी भक्तिभावना भरत के रूप में ही प्रकट की है। भरत त्याग, तपस्या, कर्तव्य तथा प्रेम के साक्षात् स्वरूप हैं। इसकी चारित्रिक एकनिष्ठा एवं नैतिकता के साथ कवि इतना अधिक एकात्म्य स्थापित कर लेता है, कि स्वयं भरत की प्रेमनिष्ठा कवि की आत्मकथा बन जाती है।

भरत का यह साधु चरित 'पउम चरिउ' (स्वयंभुव) 'भरत-मिलाप' (ईश्वरदास), गीतावली (तुलसीदास), 'साकेत' (मैथिलीशरण गुप्त), एवं 'साकेत-सन्त' (बलदेवप्रसाद मिश्र) आदि प्रसिद्ध हिन्दी काव्यों में भी भारतीय संस्कृति के आदर्श प्रतीक के रूप में चित्रित किया गया है।

भरत दौःषन्ति--(सो. पूरु.) एक सुविख्यात पूरुवंशीय सम्राट, जो दुष्यन्त राजा का शकुन्तला से उत्पन्न पुत्र था (म. आ. ९०. ३३; ८९; १६; वायु. ४५ ८६)। महाभारत में निर्दिष्ट सोलह श्रेष्ठ राजाओं में इसका निर्देश प्राप्त है (म. शां. २९.४०-४५)। इससे भरत राजवंश की उत्पत्ति हुयी, एवं इसीसे शासित होने के कारण इस देश का नाम भारतवर्ष पड़ा (म. आ. २.९६*)।

बचपन में बड़े बड़े दानवों, राक्षसों तथा सिंहों का दमन करने के कारण, कण्वाश्रम के ऋषियों ने इसका नाम सर्वदमन रक्खा था (म. आ. ६८.८)। इसे 'दमन' नामांतर भी प्राप्त था। शतपथ ब्राह्मण में इसे 'सौद्युम्नि' कहा गया है (श. ब्रा. १३.५.४.१०)। कण्व ऋषि के आश्रम में शकुन्तला रहती थी, उस समय सुविख्यात पूरुवंशीय राजा दुष्यन्त ने उससे गान्धर्वविवाह किया था, एवं उसी विवाह से भरत का जन्म हुआ। जब भरत तीन साल का हो गया, तब इसके युवराजाभिषेक के लिए कण्व ऋषि ने शकुन्तला को पुत्र तथा अपने कुछ शिष्यों के साथ प्रतिष्ठान के लिए विदा किया।

दुष्यन्त ने इसे तथा शकुन्तला को न पहचान कर इसका तिरस्कार किया, एवं शकुन्तला को पत्नीरूप में स्वीकार करने के लिए राजी न हुआ। शकुन्तला ने बहुत कुछ कहा, किन्तु कुछ फायदा न हुआ। ऐसी स्थिति देखकर आकाशवाणी हुयी, 'शकुन्तला तुम्हारी स्त्री एवं भरत तुम्हारा पुत्र है, इन्हें स्वीकार करो'। आकाशवाणी की आज्ञा के अनुसार, दुष्यन्त ने भरत को पुत्र रूप में स्वीकार कर, उसका युवराज्याभिषेक किया।

राज्यपद प्राप्त होने पर भरत ने दीर्घतमस् मामतेय ऋषि को अपना पुरोहित बनाकर गंगा नदी के तट पर चौदह, एवं यमुना नदी के तीर पर तीन सौ अश्वमेध यज्ञ सम्पन्न कराये। इसी के साथ 'मष्णार' नामक यज्ञ कर्म कर सौ करोड सौ, कृष्णवर्णीय अलंकारो से विभूषित हाथियों को दान में दिया (म. शां. २९.४०-४५)। ऐतरेय ब्राह्मण में, सौ करोड सौ गायें इसके द्वारा दान देने का निर्देश है, एवं इसके अश्वमेधों की संख्या भी विभिन्न रूप में दी गयी है (ऐ. ब्रा. ८.२३)। महाभारत में, इसके द्वारा सरस्वती नदी के तट पर तीन सौ अश्वमेध यज्ञ करने का निर्देश प्राप्त है (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. १४४; शां. २९.४१)।

पश्चात् अपने रथ को तैतीस सौ अश्व जोतकर इसने दिग्विजयसत्र का प्रारंभ किया। दिग्विजय कर, शक, म्लेच्छों तथा दानवों आदि का नाश कर अनेकानेक देवस्त्रियों को कारागृह से मुक्ति दिलाई। इसने अपने राज्य का विस्तार उत्तर दिशा की ओर किया। सरस्वती नदी से लेकर गंगा नदी के बीच का प्रदेश इसने अपने अधिकार में कर लिया था। इसके पिता दुष्यन्त के समय इसके राज्य की राजधानी प्रतिष्ठान थी, किन्तु आगे चल कर इसके राज्य की राजधानी का गौरव हस्तिनापुर को दिया

गया, तथा प्रतिष्ठान नगरी वत्स राज्य में विलीन हो गयी। यही नही, हस्तिनापुर नगर इसके द्वारा बसाया भी गया। बाद को इसके वंश के पाँचवे पुरुष हस्तिन् ने उसे और उन्नतिशील बना कर उसे अपने नाम से प्रसिद्ध किया (वायु. ९९.१६५; मत्स्य. ४९.४२)।

शतपथ ब्राह्मण में श्रेष्ठ सम्राट भरत द्वारा सात्वत राजा का अश्वमेधीय अश्व पकड लेने का निर्देश है (श. ब्रा. ३.५.४.९; २१)। शतपथ ब्राह्मण के इस निर्देश में दुष्यन्तपुत्र भरत एवं दशरथपुत्र भरत के बीच में भ्रान्ति हो गयी है, क्योंकि, सात्वत राजा राम दाशरथि का समकालीन था।

परिवार—इसे कुल चार पत्नियाँ थीं, जिनमें काशिराज सर्वसेन की कन्या सुनन्दा पटरानी थी। इसकी शेष पत्नीयाँ विदर्भ देश की राजकन्याएँ थीं। शादी के उपरांत विदर्भ कुमारियों से भरत को एक एक पुत्र हुए। पर इन तीन रानियों के तीनों पुत्र, पिता की भाँति बल तथा योग्यता में ऐश्वर्यपूर्ण न थे, अतएव उनकी माताओं ने उन्हें मार डाला (ब्रह्म. १३.५८; ह. वं. १.३२; भा. ९. २०.३४)। आगे चल कर एक गहन समस्या आ पड़ी, की भरत का उत्तराधिकारी कोन हो ? ।

पुत्रप्राप्ति के लिए भरत ने अनेकानेक यज्ञ किए, अन्त में मरुतों को प्रसन्न करने के लिए 'मरुत्स्तोम' यज्ञ भी किया। मरुतों ने प्रसन्न होकर बृहसपति के पुत्र भरद्वाज को इसे पुत्र के रूप मे प्रदान किया। संभव है, यहाँ मरुत् देवता का संकेत न होकर, वैशालिनरेश मरुत्त अभिप्रेत हो (मरुत्त देखिये)।

भरद्वाज पहले ब्राह्मण था, किन्तु इसके पुत्र होने के उपरांत क्षत्रिय कहलाया। दो पिताओं का पुत्र होने के कारण ही भरद्वाज को 'द्वयामुष्यायण' नाम प्राप्त हुआ (भरद्वाज देखिये)। भरत के मृत्योपरान्त भरद्वाज ने अपने पुत्र वितथ को राज्याधिकारी बना कर, वह स्वयं वन में चला गया (मत्स्य. ४९.२७-३४; भा. ९. २०; वायु. ९९.१५२-१५८)।

महाभारत में इसकी पत्नी सुनन्दा से इसे भूमन्यु नामक पुत्र होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. ९०. ३४)। पर वास्तव में भूमन्यु इसका पुत्र न होकर पौत्र (वितथ का पुत्र) था।

भविष्य के अनुसार, इसने पृथ्वी को नानाविध देश-विभागों में बाँट दिया, एवं इसीके कारण इस देश को 'भारतवर्ष' नाम प्राप्त हुआ (भवि. प्रति. १.३)।

भरतवंश—इसके वंश में उत्पन्न सारे पुरुष 'भरत' अथवा 'भारतवंशी' कहलाते है (ब्रह्म. १३.५७; वायु. ९९ १३४)। इसके वंश में पैदा हुए पाँचवे पुरुष हस्तिन् को अजमीढ एवं द्विमीढ नामक दो पुत्र थे। उनमें से अजमीढ़ ने हस्तिनापुर का पूरुवंश आगे चलाया, एवं द्विमीढ ने आधुनिक बरेली इलाके में अपने स्वतंत्र द्विमीढ वंश की स्थापना की।

अजमीढ की मृत्यु के बाद, उसका पुत्र ऋक्ष हस्तिनापुर का सम्राट बना एवं उसके बाकी दो पुत्र नील एवं बृहदिषु ने उत्तर पांचाल एवं दक्षिण पांचाल के स्वतंत्र राजवंशों की स्थापना की। इस तरह भरतवंश ने शाखाओं में फैलकर, उत्तर भारत के शासन की बागडोर अपने हाथों में ले ली।

भरद्वाज ब्राह्मण था। भरतपुत्र होकर वह क्षत्रिय हुआ, इस प्रकार भरतवंश की एक शाखा क्षत्रियब्राह्मण नाम से प्रसिद्ध हुयी। उस शाखा में उरुक्षय वंश के महर्षि एवं काप्य, सांकृति, शैन्य गार्ग्य आदि क्षत्रियब्राह्मण प्रमुख थे (भरद्वाज देखिये)।

भरती—भरत नामक अग्नि की कन्या।

भरद्वसु—एक ऋषि, जो वसिष्ठकुल का मंत्रकार था।

भरद्वाज—एक सुविख्यात वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसे ऋग्वेद के छठवे मण्डल के अनेक सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. ६. १५. ३;१६.५; १७.४; ३१ ४)। भरद्वाज तथा भरद्वाजों का स्तोतारूप में भी, उक्त मण्डल में निर्देश कई बार आया है। अथर्ववेद एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में भी इसे वैदिक सूक्तद्रष्टा कहा गया है (अ. वे. २.१२.२; ४.२९.५; क. स. १६.९; मै. सं २.७.१९; वा. सं. १३.५५; ऐ. ब्रा. ६.१८.८.३; तै. ब्रा. ३.१०.११. १३. कौ. ब्रा. १५.१; २९.३)।

भरद्वाज ने अपने सूक्तों में बृबु, बृसय एवं पारावतों का निर्देश किया है (ऋ. ८.१०.८)। पायु, रजि, सुमिहळ साय्य, पेरुक एवं पुरुणीथ शातवनेय इसके निकटवर्ती थे। पुरुपंथ राजा का भरद्वाज के आश्रयदाता के रूप में निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६. ६७. १-३; १०.१३७. १; सर्वानुक्रमणी; बृहद्दे. ५.१०२)।

हिलेब्रान्ट के अनुसार, भरद्वाज लोग सृंजयो के साथ भी संबद्ध थे (वेदिशे माइथालोजी- १.१०४)। सांख्यायन श्रौतसूक्त के अनुसार, भरद्वाज ने प्रस्तोक सार्ञ्जय से पारितोषिक प्राप्त किया था (सां. श्रौ. १६.११)। कई विद्वानों के अनुसार, ये सारे लोग मध्य एशिया में स्थित

अर्कोसिया एवं डूँजियाना में रहनेवाले थे। किंतु इसके बारे में प्रमाणित रूप से कहना कठिन है।

वेदों का अथांगत्व--तैत्तरीय ब्राह्मण में, भरद्वाज के वेदाध्ययन के बारे में एक कथा दी गयी है। एक बार भरद्वाज ऋषि ने समस्त वेदों का अध्ययन करना आरम्भ किया। किन्तु समय की न्यूनता के कारण यह कार्य पूरा न कर सका, अतएव इसने इन्द्र की तपस्या करना आरंभ किया। इन्द्र को प्रसन्न कर इसने यह वरदान प्राप्त किया कि, यह सौ सौ वर्ष के तीन जन्म प्राप्त करेगा, जिनमें वेदों का सम्पूर्ण ज्ञानग्रहण कर सके।

यह तीन जन्म ले कर वेदों का अध्ययन करता रहा, किन्तु सम्पूर्ण ज्ञान प्राप्त न कर सका। इससे दुःखी होकर यह रुग्णावस्था में चिन्तित पड़ा था कि, इन्द्र ने इसे दर्शन दिया। इसने इन्द्र से वेदों के ज्ञान की पूर्णता प्राप्त के लिए पुनः एक जन्म प्राप्त करने के लिए प्रार्थना की। इन्द्र ने इसे समझाने के लिए समस्त वेदों को तीन भागों में विभाजित कर दिये, जो पर्वताकार रूप में विशाल थे। फिर उनमें से एक ढेर से मुठी भर वेदज्ञान को उठा कर उसके एक कण को दिखाते हुए इंद्र ने इसे कहा, 'तीन जन्मों में तुमने इतना ज्ञान इतने परिश्रम से प्राप्त किया है, और क्या, तुम इन पर्वताकार रूपी वेदाध्ययन को एक जन्म में प्राप्त कर लोगे? यह असम्भव है। तुम अपनी इस हठ को छोड़कर मेरी शरण में आकर मेरा कहना मानो। सम्पूर्ण वेद ज्ञान प्राप्त करने के लिए तुम 'सावित्राग्निचयन' यज्ञ करो। इसीसे तुम्हारी जिज्ञासा पूर्ण होगी तथा तुम्हे स्वर्ग की प्राप्ति होगी।' इस प्रकार इन्द्र के आदेशानुसार इसने उक्त यज्ञ सम्पन्न करके यह स्वर्ग का अधिकारी बना (तै. ब्रा. ३.१०.९-११)। 'सावित्राग्निचयन' की यही विद्या आगे चलकर अहोरात्राभिमानी देवताओं ने विदेहपति जनक को दी थी।

२. अंगिरसवंशीय सुविख्यात ऋषि, जो बृहस्पति अंगिरस् ऋषि का पुत्र था। यह एवं इसके पिता बृहस्पति दोनों वैशाली देश के रहने वाले थे, जहाँ मरुत्त राजाओं का राज्य था। बृहस्पति का पुत्र होने के कारण इसे 'भरद्वज बार्हस्पत्य,' एवं उशिज का वंशज होने के कारण इसे 'भरद्वाज औशिज' भी कहा जाता है। यह त्रेतायुग के प्रारम्भ काल में हुआ था। बृहस्पति का एक भाई उचथ्य था, जिसकी पत्नी का नाम ममता था। ममता से बृहस्पति द्वारा उत्पन्न पुत्र ही भरद्वाज है।

भरद्वाज के नामकरण के सम्बन्ध में अनेकानेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त है, इसका नाम भरद्वाज क्यों पडा? (वायु. ९९.१४०-१५०; मत्स्य ४९.१७-२५; विष्णु. ४.१९.५-७)। किन्तु वे बहुत सी कथाएँ कपोलकल्पित प्रतीत होती है। महाभारत के अनुसार, इसके जन्मोपरांत बृहस्पति तथा ममता में यह विवाद हुआ कि, इसके संरक्षण का भार कौन ले। दोनों ने एक दूसरे से कहा, 'तुम इसे संभालों (भरद्वाजमिमम्)'। इसी कारण इसका नाम भरद्वाज पड़ा (म. अनु. १४२.३१ कुं.)।

इस प्रकार ममता तथा बृहस्पति का इसके संभालने के सम्बन्ध में विवाद चलता रहा। यह देखकर वैशाली-नरेश मरुत्त ने भरद्वाज का पालनपोषण किया। बृहद्देवता में कहा गया है कि, इसका पालन पोषण मरुत् देवता ने किया (बृहद्दे. ५.१०२-१०३)। किन्तु यह ठीक नही जान पडता। इसका पालनापोषण वैशाली नरेश मरुत्त ने ही किया होगा, क्योंकि बृहस्पति वैशाली देश का राजगुरु था। पुराणों में भी बृहद्देवता की बात दुहरायी गयी है कि, भरद्वाज के मातापिता ने जब इसको त्याग दिया, तब मरुत् देवता ने इसका पालन पोषण किया (भा. ९,२०, विष्णु. ४. १९; मत्स्य. ४९; वायु. ९९. १४०-१५७; ब्रह्मांड. २. ३८)।

वैशाली के पश्चिम में स्थित काशी देश का राजा सुदेवपुत्र दिवोदास था, आगे चल कर यह उसका पुरोहित बना। यह दिवोदास राजा वही है, जिसने वाराणसी नगरी की स्थापना की थी। एक बार हैहयराजा वीतहव्य ने काशी देश पर आक्रमण कर दिवोदास को ऐसा परास्त किया कि, उसे भगा कर भरद्वाज के घर में शरण लेनी पड़ी। बाद में भरद्वाज ने दिवोदास राजा के पुत्रप्राप्ति के लिए एक यज्ञ किया, जिससे प्रतर्दन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. ३०.३०.)। महाभारत के अनुसार, केवल भरद्वाज ऋषि के ही कारण, आगे-चल कर, प्रतर्दन राजा वीतहव्य तथा ऐलों को पराजित कर, अपने पिता की गद्दी को प्राप्त कर काशीनरेश हो सका (म. अनु. ३४.१७)। पंचविंश ब्राह्मण में भी इसी कथा का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. १५.३.७; क. सं. २१.१०)।

पुराणों के अनुसार, मरुत्त राजाओं ने भरद्वाज ऋषि को सुविख्यात पूरुवंशीय राजा भरत को पुत्र रूप में प्रदान किया था (वायु. ९९.१५१; मत्स्य. ४९.२६)। वायु एवं मत्स्य के इन कथनों को मान्यता देने के पूर्व हमें यह भी समझना चाहिए कि, यह राजा भरत के एक दो

पीढ़ी पूर्व था। अतएव यह सम्भव है कि, यह स्वयं उसका दत्तक पुत्र न हुआ हो। सम्भव है, इसका पुत्र था पौत्र भरद्वाज विदाथिन् राजा भरत को दत्तक रूप में दिया गया हो (भरद्वाज ३. देखिये)।

ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, यह लम्बा, क्षीणशरीर एवं गेहुए रंग का था (ऐ. ब्रा. ३४९) यह अत्यंत दीर्घायु तपस्वी एवं विद्वान था (ऐ. आ. १.२.६)। इसका यांज्ञवल्क्य ऋषि से तत्त्वज्ञान के सम्बन्ध में संवाद हुआ था। 'जगत्सृष्टिप्रकार' के सम्बन्ध में इसका एवं भृगु ऋषि से संवाद हुआ था (म. शां. १७५)। इसने धन्वन्तरि को आयुर्वेद सिखाया था (ब्रह्मांड. ३.६७)

यह ब्रह्मा द्वारा किये गये पुष्करक्षेत्र के यज्ञ उपस्थित था (पद्म. सृ. ३४)। सर्पविष से मृत्यु हुए प्रमद्वरा को देख कर रोनेवाले स्थूलकेश ऋषि के परिवार में यह भी एक था (म. आ. ८.२१)।

३. एक सुविख्यात ऋषि, जो पूरुसम्राट भरत को पुत्र के रूप में प्रदान किया गया था। सम्भवतः यह बृहस्पति ऋषि के पुत्र भरद्वाज बार्हस्पत्य का पुत्र या पौत्र था (भरद्वाज २. देखिये)। इसका नाम विदथिन् था, जिसके कारण यह 'भरद्वाज विदथिन्' नाम से सुविख्यात हुआ।

पूरुवंशीय सम्राट भरत के कोई पुत्र न था, इस कारण मरुत्त राजा नें भरत को इसे पुत्र रूप में प्रदान किया। भरद्वाज स्वयं ब्राह्मण था, किन्तु भरत का पुत्र होने के कारण यह क्षत्रिय कहलाया। दो वंशों के पिताओं के पुत्र होने के कारण इसे 'द्व्यामुष्यायण' एवं इसके कुल में उत्पन्न लोगों को 'द्व्यामुष्यायणकौलीन' कहा जाता है। भरत के मृत्योपरांत भरद्वाज ने अपने पुत्र वितथ को राज्याधिकारी ना कर, यह स्वयं वन में चला गया (मत्स्य. ४९.२७-३४; वायु. ९९.१५२-१५८)।

क्योंकि इसका नाम विदाथिन् था, अतएव इसके पुत्र एवं वंश के लोग 'वैदथिन' नाम से सुविख्यात हुए। इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र थेः— ऋजिश्वन्, सुहोत्र, शुनहोत्र, नर, गर्ग (सर्वानुक्रमणी ६.५२)। सम्भव है, यह इसके पुत्र न होकर वंशज हो।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो विश्वामित्र के पुत्र रैभ्य ऋषि का मित्र था। इसके पुत्र का नाम यवक्रीत था।

रैभ्य ऋषि ने एक कृत्या का निर्माण किया था, जिसने इसके पुत्र यवक्रीत को मार डाला। पुत्रशोक से विह्वल हो कर, यह आग में जल कर मृत होने के लिये तत्पर हुआ, तब रैभ्य ऋषि के पुत्र अर्वावसु ने यवक्रीत को पुनः जीवित किया (म. व. १३५-१३८)। पुत्र को पुनः प्राप्त कर यह प्रसन्न हुआ एवं स्वर्ग चला गया।

५. पूर्व मन्वंतर का एक ब्रह्मर्षि। यह किसी समय गंगाद्वार में रहकर कटोर व्रत का पालन कर रहा था। एक दिन इसे एक विशेष प्रकार के यज्ञ का अनुष्ठान करना था। अतएव अन्य महर्षियों के साथ यह गंगास्नान करने गया। वहाँ पहले से नहा कर वस्त्र बदलती हुयी घृताची अप्सरा को देखकर इसका वीर्य स्खलित हो गया, जिससे इसको श्रुतावती नामक कन्या हुयी (म. श. ४७)। श्रुतावती के लिए भांडारकर संहिता में 'स्रुचावती' पाठभेद भी प्राप्त है।

६. अंगिराकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसका आश्रम गंगाद्वार में था (म. आ. १२१)। उत्तर पांचाल का राजा पृषत इसका मित्र था। गंगाद्वार से चल कर हविर्धान होता हुआ, यह गंगास्नान को जा रहा था। उस समय स्नान कर के निकली हुयी घृताची नामक अप्सरा को उभरती हुई युवावस्था को देखकर इसका अमोघ वीर्य पर्वत की कंदरा में स्खलित हुआ। इसने उस वीर्य को दोनें (द्रोण) में सुरक्षित कर रखा, जिससे इसे द्रोण नामक पुत्र हुआ (म. आ. ५७.८९; १५४.६)।

इसके पुत्र द्रोण एवं पृषत राजा के पुत्र द्रुपद में बाल्यावस्था में बड़ी घनिष्ठता थी, किन्तु आगे चलकर उन दोनों में इतनी कटुता उत्पन्न हो गयी कि, पीढ़ियों तक आपस की दुश्मनी खत्म न हो सकी (द्रुपद एवं द्रोण देखिये)।

बृहस्पति ने इस ऋषि को आग्नेय अस्त्र प्रदान किया था, जो इसने अग्नि के पुत्र आग्निवेश को दिया था (म. आ. १२१.६; १५८.२७)।

७. वाल्मीकि ऋषि का शिष्य, जो प्रयाग में रहता था। जब क्रौंच पक्षियों के जोडे को देखकर वाल्मिकि के मुख से करुण वाणी काव्य के रूप में प्रस्फुटित हुयी थी, तब यह उपस्थित था (वा. रा. बा. २.७-२१)। ब्रह्मपुराण के अनुसार ऐसा प्रतीत होता है कि, भरद्वाज की पत्नी का नाम सम्भवतः 'पैठिनसी' था। वाल्मीकि ने सर्वप्रथम इसे ही रामायण की कथा बतायी थी (यो. वा. १.२)।

दंडकारण्य जाते समय दाशरथि राम ने इसके दर्शन किये थे, और इसका आतिथ्य स्वीकार किया था। राम के द्वारा रहने के लिए स्थान माँगने पर इसने अपना

आश्रम ही ले लेने के लिए उससे कहा। किन्तु राम ने कहा, 'यहाँ से अयोध्या निकट है,अतएव अयोध्यावासियों से मुझे सदैव अडचने प्राप्त होती रहेंगी'। यह सुनकर, इसने राम के रहने के लिए दस मील दूर पर स्थित चित्रकूट में रहने के लिए व्यवस्था कर दी, तथा उसका मार्ग बता कर विदा किया (वा. रा. अयो. ५४-५५)।

राम को वापस लाने के लिए जब भरत वन को गया था, तब वह अपने सेना को दूर रखकर, इसके आश्रम आया था। भरत को देखकर भरद्वाज के मन में शंका उठी थी कि, राम को अकेला समझ कर उन्हे मार कर भरत निष्कंटक राज्य तो नहीं करना चाहता। इस सम्बन्ध में इसमें भरत से प्रश्न भी किया था, जिसे सुन कर भरत की आँखों में आसू आ गये थे। भरत के द्वारा दिये गये विश्वास पर इसने उसका ससैन्य आदरसत्कार किया था। उसके खाने पीने तथा ठहरने की इसने सुन्दर व्यवस्था की थी। भरत एक रात इसके यहाँ ठहरा भी था, तथा बडे भावुक भावों में भर कर अपनी माताओं का परिचय इसे दिया था। भरत के द्वारा पूँछे जाने पर, इसने उसे राम के रहने का मार्ग बताते हुए कहा था कि, वह यहाँ से ढाई योजन दूर पर है (वा. रा. अयो ९०.९२)।

रावण का वध कर राम इसके आश्रम आया था, और उसने इससे मुलाकात की थी। इसने राम का स्वागत कर, उसका आदरसत्कार करते हुए वरप्रदान किया था, 'तुम जिस मार्ग से होकर जाओगे उस मार्ग के वृक्षफल वसंत ऋतु के समान होकर फलफूलमय हो जायेंगे' (वा. रा. यु. १२४)।

अश्वमेध यज्ञ के बाद राम पुनः भरद्वाज से मिलने के लिए गौतमी नदी के तट पर स्थित आश्रम में आया था। राम को सारे ऋषियों के साथ आश्रम में अतिथरूप में आया हुआ देखकर, इसने उन सब का स्वागत कर भोजनादि के लिए प्रार्थना की थी। इसके आश्रम में शंभु ने राम के पूछने पर, श्राद्धनिर्णय, शिवपूजाविधि और भस्ममाहात्म्य की कथा बतायी थी (पद्म. पा. १०५)।

८. एक अग्नि, जो शंयु नामक अग्नि का ज्येष्ठ पुत्र था। धर्म की कन्या सत्या इसकी माता थी। इसकी पत्नी का नाम वीरा था, जिससे इसे वीर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. व. २०९. ९)। यज्ञ में प्रथम आज्यभाग के द्वारा इस भरद्वाज नामक अग्नि की पूजा की जाती है।

सम्भवतः भरद्वाज वर्तमान मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक होगा। प्रतिवर्ष फाल्गुन माह में सूर्य के साथ भ्रमण करनेवाला नक्षत्र भी यही होगा।

९. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पडे हुए भीष्म से मिलने गया था (भा. १.९.६)।

१०. एक ऋषि जो, बारहवें या उन्नीसवें युग का व्यास था।

११. एक धर्मशास्त्रकार, जिसके द्वारा श्रौतसूत्र और धर्मसूत्र की रचना की गयी है। इसके द्वारा लिखित श्रौतसूत्र की हस्तलिखित पाण्डुलिपि बम्बई विश्वविद्यालय के ग्रंथालय में उपलब्ध है, जिसमें कुल दस अध्याय (प्रश्न) है, एवं उसमे 'आलेखन' और'आश्मरथ्य' धर्मशास्त्रकारों का उल्लेख कई बार आया है। इस ग्रंथ में इसका निर्देश 'भरद्वाज' एवं 'भारद्वाज' इन रूपों से आया है।

विश्वरूप एवं अन्य भाष्यकारों के भाष्यों में भरद्वाज के धर्मशास्त्र विषयक सूत्रग्रन्थ का उल्लेख आया है। याज्ञवल्क्य स्मृति पर विश्वरूपद्वारा लिखित भाष्य में भरद्वाज के मतों का उल्लेख किया गया है। उसमें लिखा है कि, गुरुओं को अपने शिष्यों को संध्यावंदन, यज्ञकर्म एवं शुद्ध भाषा सिखानी चाहिये, तथा उन्हें म्लेच्छ भाषा से दूर रहने की शिक्षा देनी चाहिए (याज्ञ. १.१५)। दूसरों को कष्ट देने की बात को सोचना भी पाप है, ऐसा इसका मत था, एवं इस पाप के लिए इसने प्रायश्चित्त भी बताया है (याज्ञ. १.३२)। श्राद्ध के समय किस अनाज का प्रयोग न करना चाहिए, तथा शूद्रस्पर्श के उपरांत स्नान द्वारा अपने को किस तरह शुद्ध करना चाहिए, इसके बारे में भी इसने अपना अभिमत दिया है (याज्ञ. १.१८५; २३६)। घर में जब गृह्याग्नि का संस्कार बन्द हो, तो क्या प्रायश्चित्त लेना चाहिए, इसके विषय में भरद्वाज के मत का उल्लेख अपरार्क ने किया है (अपरार्क. ११५५)।

श्रौतसूत्र एवं धर्मसूत्र के अतिरिक्त, इसके द्वारा लिखित एक स्मृति पद्य में लिखी हुई मानी गयी है, जिसके उद्धरण स्मृतिचंद्रिका एवं हरदत्त में प्राप्त है।

अर्थशास्त्रकार– एक अर्थशास्त्रकार के नाते भरद्वाज का निर्देश कौटिल्यअर्थशास्त्र में सात बार आया है। कौटिल्य अर्थशास्त्र में कणिक भारद्वाज नामक आचार्य का उल्लेख प्राप्त है, जो सम्भवतः यही होगा (कौटिल्य. ५.५)। कौटिल्य ने इसके जिन मतों का उल्लेख किया है, वह निम्न प्रकार से हैं:–राजा को अपने सहपाठियों में से मंत्रियो का चुनाव करना चाहिए; राजा को राजनैतिक निर्णयों को अपने आप

एकान्त में सोचकर देना चाहिए; जो राजकुमार अपने पिता के प्रति प्रेम एवं मर्यादा का उल्लंघन करता हुआ अवहेलना करता हो, उसको भेदनीति के द्वारा दण्ड देना चाहिए; राजा जिस समय मरणासन्न स्थिति में हो, उस समय मंत्री को चाहिए कि राजकुमारों के बीच कोई न कोई कलह पैदा कर दे; राजसंकट के काल में राजा एवं मंत्री में सर्व लोगों ने राजा की सहायता करनी चाहिये, किन्तु व्यवहार में देखा जाता है कि, लोग बलवान का ही पक्ष लेते है। इसका यह अन्तिम अभिमत महाभारत में इन्ही शब्दों में वर्णित है (म. शां. ६७.११)।

महाभारत में इसके एवं राजा शत्रुंजय के बीच हुआ संवाद प्राप्त है, जिसमें साम, दाम, दण्ड, भेद आदि नीतियों में दण्डनीति को श्रेष्ठता दी गयी है (म. शां. १४०)। इसी पर्व में प्राप्त राज्यशास्त्रकारों की नामावली में इसका नाम भी सन्निहित है (म. शां. ५८.३)।

'यशस्तिलक' नामक राज्यशास्त्रविषयक ग्रन्थ में, भरद्वाज के राजनैतिक अभिमत से सम्बन्धित दो पद्य उद्धरण प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका राज्यविषयक ग्रन्थ पद्यरूप में १० वी शताब्दी में प्राप्त था।

भरद्वाज के व्यवहारविषयक मतों का उल्लेख कई ग्रन्थों में प्राप्त है। मुकदमे गवाही देने के पूर्व व्यक्तियों द्वारा लिए गये शपथ के इसने चार प्रकार बताये हैं (पराशर माधवीय २.२३१)। किन्ही दो व्यक्तियों के बीच हुए समझौता, विनिमय एवं बँटवारे को खारिज करना हो, तो उसकी अवधि नौ दिन की बताई गयी है, किन्तु यदि उसमें किसी प्रकार के कानूनी झगडे हो, तो उसकी अवधि नौ साल तक हो सकती है (सरस्वतीविलास. पृ. ३१४; ३२०)। इन उद्धरणों से यह सिद्ध है, कि इसका व्यवहारविषयक ग्रन्थ राजशास्त्रविषयक ग्रन्थ से अलग है।

अन्य ग्रंथ--१ भरद्वाजसंहिता--पंचरात्र सांप्रदाय के इस ग्रंथ में कुल चार अध्याय हैं; २. भरद्वाजस्मृति, जिसका निर्देश पद्म में प्राप्त है, एवं जिसके उद्धरण हेमाद्रि, विज्ञानेश्वर, बालंभट्ट आदि ग्रंथकारों के द्वारा लिये गये है; ३. वास्तुतत्त्व; ४. वेदपादस्तोत्र (C.C.)।

१२. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार, अमित्रजित् राजा का पुत्र था।

भरद्वाजि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भरुक--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, विजय राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिये 'रुचक' एवं 'रुरुक' पाठभेद प्राप्त हैं।

भर्ग--एक रुद्र, जो एकादश रुद्रों में से अंतिम था। यह शिव नामांतर भी है।

२. (सो. तुर्वसु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, वह्नि राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भानुमत् था।

३. (सो. काश्य.) काशी देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार, वीतिहोत्र राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिये 'भार्ग' एवं 'गार्ग्य' पाठभेद प्राप्त हैं। इसके पुत्र का नाम भर्गभूमि था।

भर्ग प्रागाथ--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.६०-६१)।

भर्गभूमि--(सो. काश्य.) काशी देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार भर्ग राजा का पुत्र था।

भर्तृहरि--एक सुविख्यात संस्कृत व्याकरणकार, जो पतंजलि के 'व्याकरणमहाभाष्य' का सर्वाधिक प्राचीन एवं प्रामाणिक टीकाकार माना जाता है। महाभाष्य पर लिखी हुई इसकी टीका का नाम 'महाभाष्यप्रदीप' है।

पुण्यराज के अनुसार, भर्तृहरि के गुरु का नाम वसुरात था। चिनी प्रवासी इत्सिंग के अनुसार, यह बौद्धधर्मीय था, एवं इसने सात बार प्रव्रज्या ग्रहण की थी (इत्सिंग पृ. २७४)। किंतु मीमांसकजी के अनुसार, यह वैदिकधर्मीय ही था (संस्कृत व्याकरण का इतिहास—पृ. २५७)।

वाक्यपदीय--संस्कृत भाषा में अंतर्गत शब्दों का संपूर्ण विवेचन पाणिनि एवं पतंजलि नें अपने व्याकरण ग्रंथो के द्वारा किया। किंतु उन्ही शब्दों को ब्रह्मस्वरूप मान कर, तत्वज्ञान की दृष्टि से व्याकरणशास्त्र का अध्ययन करने का महनीय कार्य भर्तृहरि ने अपने 'वाक्यपदीय' नामक ग्रंथ के द्वारा किया। इस ग्रंथ के निम्नलिखित तीन कांड है:—ब्रह्मकांड, वाक्यकांड, प्रकीर्णकांड।

मीमांसा, सांख्य, योग आदि दर्शनों का निर्माण होने के पश्चात्, व्याकरणशास्त्र एक अनुपयुक्त शास्त्र कहलाने लगे। किंतु शब्दों के अर्थ का ज्ञान प्राप्त होने पर, शब्दब्रह्म की प्राप्ति होती हैं, ऐसा नया सिद्धान्त भर्तृहरि ने प्रस्थापित किया, एवं इस प्रकार व्याकरणशास्त्र का पुनरुत्थान किया।

व्याडि का संग्रहग्रंथ नष्ट होने पर, पाणिनीय व्याकरणशास्त्र विनष्ट होने का संकट निर्माण हुआ; उसी संकट से

व्याकरणशास्त्र को बचाने के लिये 'वाक्यपदीय' ग्रंथ की रचना की गयी है, ऐसा निर्देश उस ग्रंथ के द्वितीय कांड में प्राप्त है।

ग्रंथ--१. महाभाष्यदीपिका; २. वाक्यपदीय; ३. वाक्यपदीय के पहले दो कांडो पर 'स्वोपज्ञटीका'; ४. वेदान्तसूत्रवृत्ति; ५. मीमांसासूत्रवृत्ति।

२. एक व्याकरणकार, जो संस्कृत व्याकरणशास्त्र को काव्य के रूप में प्रस्तुत करनेवाले 'भट्टिकाव्य' का रचयिता था। इसने 'भागवृत्ति' नामक अन्य एक ग्रंथ भी लिखा था।

३. एक राजा, जो शृंगार, नीति एवं वैराग्य नामक 'शतकत्रयी' ग्रंथ का रचयिता था।

भर्त्स्य--कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

भर्म्याश्व--(सो. नील.) पांचाल देश का सुविख्यात राजा, जो अर्क राजा का पुत्र था। इसे मुद्गल आदि पाँच अत्यंत पराक्रमी पुत्र थे, जिन्हे देखकर यह हमेशा कहा करता था, 'मेरे राज्य के संरक्षण के लिये मेरे पाँच पुत्र ही केवल काफी ('पंच अलम्') है।'

इस कारण इसके इन पुत्रों को 'पंचाल' सामुहिक नाम प्राप्त हुआ, जिससे आगे चलकर इसका देश ही 'पंचाल' नाम से प्रसिद्ध हुआ (पंचाल देखिये; भा. ९.२१. ३१-३२)।

भलंदक--(सू. दिष्ट.) भलंदन राजा के लिये उपलब्ध पाठभेद (भलंदन २. देखिये)।

भलंदन--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो जन्म से तो ब्राह्मण था, किंतु नीच वाणिज्यकर्म करने के कारण वैश्य बन गया था (मार्क. ११३. ३; ब्रह्म. ७.२६; विष्णु. ४.१.१५; भा. ९.२.२३)।

भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह नाभाग राजा का पुत्र था, एवं इसके पुत्र का नाम वत्सप्रीति था। मत्स्य में इसके नाम के लिये 'भलंदक' पाठभेद प्राप्त है। मत्स्य एवं ब्रह्मांड में, इसे वैश्य जाति का मंत्रद्रष्टा ऋषि कहा गया है (मत्स्य. १४५.११६; ब्रह्मांड. २. ३२. १२१); किंतु प्रतीत होता है कि, यह पुनः ब्राह्मण हुआ था (ब्रह्म. ७.४२)।

भलानस्--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक जातिसंघ, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास के शत्रुपक्ष में शामिल था। पक्थ, अलिन, विषाणिन एवं शिव जातियों के समवेत इनका निर्देश ऋग्वेद में आता है (ऋ. ७. १८.७)।

त्सिमर के अनुसार, इनमें एवं आधुनिक बोलन दर्रे में काफी नामसादृश्य है, जिससे प्रतीत होता है कि, इनका मूल निवासस्थान पूर्वी बलुचिस्तान था (त्सिमर-अल्टिन्डिशे लेबेन, १२६)।

भल्लविन्--लांगली भीम नामक शिवावतार का शिष्य।

भल्लाट--(सो. पूरु.) एक पुरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार विश्वक्सेन का, एवं वायु के अनुसार, उदक्सेन राजा का पुत्र था। भागवत में इसके लिये 'भल्लाद' पाठभेद प्राप्त है।

भल्लि--विल्वि नामक भृगुकुल के गोत्रकार के लिये उपलब्ध पाठभेद (विल्वि देखिये)।

२. (सो. कुकुर.) यादव राजा नल का नामांतर (नल ४. देखिये)। यह विलोमन् राजा का पुत्र था, एवं इसके पुत्र का नाम अभिजित् था। इसे 'नंदनोदर-दुंदुभि' अथवा 'चंदनोदकदुंदुभि' नामांतर भी प्राप्त है

३. एक यादव, जो वसुदेव एवं रथराजी का पुत्र है।

४. रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

भव--कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक। इसके नाम के लिये 'भल' पाठभेद प्राप्त है।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक, जो ब्रह्मा का पौत्र एवं स्थाणु का पुत्र था (म. आ. ६०.१-३)।

३. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३५)।

भवत्रात शायस्थि--एक आचार्य, जो कुस्तुक शार्कराक्ष्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम बृहस्पतिगुप्त शायस्थि था (वं. ब्रा. १)।

भवद्--(सो.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार, मनस्यु राजा का पुत्र था।

भवदा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

भवनन्दि--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भवन्मन्यु--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार, वितथ राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिये 'मन्यु' पाठभेद भी प्राप्त है (भा. ९.२१.१)। इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र थेः--बृहत्क्षत्र, नर, गर्ग, महावीर्य एवं जय (विष्णु. ४.१९.९)।

भव्य--रैवतमन्वतर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित आठ देव शामिल थे :--परिमति, प्रियनिश्चय, मति, मन, विचेतस्, विजय, सुजय एवं स्योद (ब्रह्मांड. २.३६.७१-७२)।

२. चाक्षुष मन्वंतर का एक देव।

३. (स्वा. उत्तान.) उत्तानपादवंशीय एक राजा, जो ध्रुव राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम भूमि था।

४. दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों मे से एक।

भस्मासुर--एक असुर, जो शिव के विभूति में स्थित एक कंकड़ से उत्पन्न हुआ था। मराठी भाषा मे लिखित 'शिवलीलामृत' में केवल इसकी कथा प्राप्त है। संस्कृत पुराणों में कही भी इसकी कथा नही दी गयी है; किंतु उन पुराणों में प्राप्त कालपृष्ठ एवं वृक नामक असुरों के कथा से इसकी कथा काफी मिलती जुलती है (कालपृष्ठ, एवं वृक देखिये)।

यह शिव का परमभक्त था, जिस कारण उसने इसे वर दिया था कि, जिसके सर पर यह हाथ रखेंगा, वह तत्काल दग्ध हो कर भस्म हो जायेगा। शिव के इस वर के कारण, यह सारे लोगों को अत्यधिक त्रस्त करने लगा। फिर इसे विनष्ट करने के लिए, श्रीविष्णु ने मोहिनी का अवतार लिया। 'मुक्तनृत्य' की एक मुद्रा में, अपना हाथ अपने ही सर पर रखने के लिए इसे विवश कर, मोहिनी ने इसका वध किया (शिवलीला. १२)।

भागलि--एक गृह्यसूत्रकार, जिसके मतों के उद्धरण कौषीतकी गृह्यसूत्र में प्राप्त है। शान्त्युदक करते समय कौनसे मंत्र का उच्चारण करना चाहिये, इस विषय में इसके मत प्राप्त है (कौ. गृ. ९.१०)। इसका यह भी अभिमत था कि, मधुपर्क करते समय गाय का उपयोग नही करना चाहिये (कौ. गृ. १७.२७)।

भागवत--(शुंग. भविष्य.) एक शुंगवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार विक्रमित्र राजा का, एवं अन्य पुराणों के अनुसार, वज्रमित्र का पुत्र था। मत्स्य में इसके नाम के लिए 'समाभाग' पाठभेद प्राप्त है।

भागवित्तायन--वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण। इसके नाम के लिए 'भागवित्रासन' पाठभेद प्राप्त है।

भागवित्ति--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से कुथुमि ऋषि का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसके नाम के लिए 'नामवित्ति' पाठभेद प्राप्त है।

२. बृहदारण्यक उपनिषद में निर्दिष्ट 'चूड' अथवा 'चूल' नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.३; १७.८. माध्यं; ६.३.९-१० काण्व.)।

३. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भागवित्रासन--भागवित्तायन नामक ऋषिगण के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (भागवित्तायन देखिये)।

भागस्वरि--दशार्ण देश के राजा ऋतुपर्ण का नामांतर (भांगासुरि देखिये)।

भागान्य--एक क्षत्रिय, जो तप के फलस्वरूप ब्राह्मण एवं ऋषि बना था (वायु. ९१.११६)।

भागिल--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भागुरि--सुविख्यात व्याकरणकार, कोशकार, ज्योतिषशास्त्रज्ञ एवं स्मृतिकार। उन विभिन्न विषयों पर इसके नाम पर अनेकानेक ग्रंथ उपलब्ध हैं, किंतु इन सब ग्रंथो का प्रवक्ता एक ही भागुरि है या भिन्न भिन्न, यह अज्ञात है।

संभवतः 'भागुरि' इसका पैतृक नाम था, एवं इसके पिता का नाम 'भगुर' था। पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में, लोकायतशास्त्र पर व्याख्या लिखनेवाली भागुरी नामक किसी स्त्री का निर्देश प्राप्त है (महा. ७.३.४५)। संभव हैं, वह स्त्री आचार्य भागुरि की बहन हो। इसके गुरु का नाम बृहद्गर्ग था। मेरु पर्वत का आकार चतुष्कोनयुक्त है, ऐसा इसका मत वायु में उद्धृत किया गया हैं (वायु. ३४.६२)।

व्याकरणशास्त्रकार--यद्यपि पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में भागुरि का निर्देष अप्राप्य है, तथापि अन्य व्याकरण ग्रंथों में भागुरि के काफी उद्धरण लिये गये है। इन उद्धरणों से प्रतीत होता हैं कि, इसका व्याकरण भलीप्रकार परिष्कृत एवं श्लोकबद्ध था, एवं वह पाणिनीय व्याकरण से कुछ विस्तृत था।

भागुरि का यह अभिमत था कि, जिन शब्दों का प्रारंभ 'अपि' अथवा 'अव' उपसर्ग से होता हैं; वहाँ 'अ' का लोप होता हैं (जैसे कि, अवगाह = वगाह, अपिधान = पिधान)। इसका यह भी सिद्धान्त था कि, हलन्त शब्दों की प्रक्रिया में हलन्त का लोप हो कर 'आ' प्रत्यय लगाया जाता है (जैसे कि, वाक् = वाचा दिश् = दिशा)।

भागुरि के व्याकरणविषयक कुछ और उद्धरण जगदीश तर्कालंकार ने अपने 'शब्दशक्तिप्रकाशिका' में उद्धृत किये है।

कोशकार--पुरुषोत्तमदेव की 'भाषावृत्ति,' एवं सृष्टिधरकृत 'भाषावृत्ति टीका' से प्रतीत होता है कि, भागुरि के द्वारा 'त्रिकाण्डकोश' नामक एक शब्दकोश की रचना की गयी थी। इसका यह कोश आज भी उपलब्ध हैं

एवं क्षीरस्वामिन्, हलायुध, महेश्वर, हेमचंद्र, केशव, महीप, मेदिनीकार, रामसुक्त एवं मल्लीनाथ आदि शब्दकोशकारो नें इसके वचन उदधृत किये है। 'माधवीयधातु वृत्ति,' एवं 'अमरकोश' की अनेकानेक टीकाग्रंथों में इसके मतों के उद्धरण प्राप्त हैं।

ज्योतिषशास्त्रकार—भागुरि के ज्योतिषशास्त्रविषयक मतों का निर्देश वराहमिहिर कृत 'बृहत्संहिता', भोज कृत 'राजमार्तंड', एवं 'गर्गसंहिता' आदि ग्रंथों में प्राप्त हैं (बृहत्सं. ४८.२)।

स्मृतिकार—भागुरि के स्मृतिविषयक मतों का निर्देश 'विवादरत्नाकर' नामक ग्रंथ में कमलाकर नामक एक स्मृतिकार ने किया प्राप्त है। इसकी स्मृति को 'बागुरि-स्मृति' नामांतर भी प्राप्त है।

साम एवं यजुःशाखाओं का आचार्य—'प्रपंचहृदय' 'जैमिनीय गृह्यसूत्र टीका' आदि ग्रंथों में भागुरि को सामशाखा का, एवं लौगाक्षिगृह्यसूत्र की टीका में इसे यजुःशाखा का आचार्य कहा गया है। इससे प्रतीत होता है कि, इन दोनों शाखाओं के संबंध में कुछ ग्रंथरचना इसने की थी।

अलंकारशास्त्रज्ञ—सोमेश्वर कवि के 'साहित्यकल्पद्रुम' में, एवं अभिनवगुप्त के 'ध्वन्यालोक' में भागुरि के द्वारा लिखित 'अलंकारशास्त्र' ग्रंथ के कुछ उद्धरण प्राप्त है।

सांख्यदर्शनकार—दयानंद सरस्वती कृत 'सत्यार्थ-प्रकाश' में, एवं 'संस्कारविधि' नामक ग्रंथ में, भागुरि के द्वारा विरचित 'सांख्यदर्शनभाष्य' का निर्देश प्राप्त है।

दैवतशास्त्रज्ञ—शौनक कृत 'बृहद्देवता' में भागुरि के देवताविषयक मतों के अनेक उद्धरण प्राप्त है, जिनसे प्रतीत होता है कि, इसने दैवतशास्त्रविषयक कोई 'अनुक्रमणिका' ग्रंथ अवश्य लिखा होगा।

२. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ का सदस्य था (जै. अ. ६३; जै. गृ. १.१४)

भाङ्गास्वन—भङ्गस्वन नामक राजर्षि का नामांतर (भङ्गास्वन देखिये)।

भाङ्गसुरि—दशार्ण देश के ऋतुपर्ण राजा का नामांतर। इसके नाम के लिए 'भागस्वरि' पाठभेद भी प्राप्त है (म. स. ८))।

भाजिर—भौत्य मन्वंतर का एक देव। इसके नाम के लिए 'भ्राजिर' पाठभेद प्राप्त है।

भाडितायन—शाकदास नामक आचार्य का पैतृक नाम।

भाण्डायनि—एक ऋषि, जो इंद्र की सभा में उपस्थित हो कर इंद्र की उपासना करता था (म. स. ७.१०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'शाव्यायन'।

भात—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार सिंधुक राजा का पुत्र था। संभवतः यह आंध्रवंशीय कृष्ण राजा के नाम के लिए पाठभेद रहा होगा (कृष्ण ६. देखिये)।

भानु—विवस्वत् अथवा सूर्यदेवता का नामांतर (म. आ. १.४०)।

२. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा (क्रोधा) का पुत्र था (म. आ. ५९.४६)।

३. श्रीकृष्ण को सत्यभामा से उत्पन्न एक महारथी पुत्र। मृत्यु के पश्चात्, यह विश्वेदेवो में प्रविष्ट हो गया (म. स्व. ५.१३)।

४. एक अग्नि, जो च्यवन आंगिरस ऋषि के अंश से उत्पन्न हुआ था। इसके पिता का नाम पांचजन्य था (म. व. २१०.९)। इसे 'मनु' एवं 'बृहद्भानु' नामांतर भी प्राप्त है (म. व. २११.८-९)।

इसे सोमकन्या बृहद्भासा एवं सुप्रजा नामक दो पत्नियाँ थी। इसे निम्नलिखित छः पुत्र थेः—बृहद्भासापुत्र–बल, मन्युमत् एवं विष्णु (धृतिमत्); सुप्रजापुत्र–आग्रयण, वैश्वदेव एवं स्तुभ (म. व. २११.८)।

५. एक राजा, जो कौरव एवं अर्जुन के दरम्यान हुए 'गोग्रहण युद्ध' देखने के लिए इंद्र के विमान में बैठ कर उपस्थित हुआ था (म. वि. ५१.१०)।

६. दक्ष की एक कन्या, जो धर्म से ब्याही गयी थी। इसके पुत्र का नाम देवऋषभ था।

७. एक यादव, जिसने प्रद्युम्न राजा से शस्त्रास्त्रविद्या प्राप्त की थी (म. व. १८०.२७)। इसकी कन्या का नाम भानुमती था, जिसका विवाह पांडु राजा के पुत्र सहदेव से हुआ था (म. स. २.परि. १.१३; ह. वं. २.२०.७६)।

८. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, प्रतिव्योम राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम दिवाक अथवा दिवाकर था (भा. ९. १२)।

९. स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

१०. उत्तम मन्वंतर का एक देवगण।

११. सुतप देवों में से एक।

भानुदत्त—शकुनि का भाई, जो सुबल राजा के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.११३६*)।

भानुदेव—एक पांचाल योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया था (म. क. ३२.३७)।

भानुमत्--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, केशिध्वज राजा का, एवं वायु के अनुसार सीरध्वज का पुत्र था।

२. कलिंग देश का राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ५०.३५)।

३. (सो. तुर्वसु.) एक तुर्वसुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार भर्ग राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम त्रिभानु था।

४. कोसल देश का सुविख्यात राजा। इसकी कन्या का नाम कौसल्या था, जो सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय सम्राट दशरथ को विवाह में दी गयी थी (वा. रा. बा. १३. २६)। दशरथ के द्वारा किये गये पुत्रकामेष्टि यज्ञ के समय इसे बड़े सम्मान के साथ निमंत्रित किया गया था।

५. कृष्ण को सत्यभामा से उत्पन्न पुत्रों में से एक।

६. (सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार बृहदश्व राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसके नाम के लिये 'भानुरथ' पाठभेद प्राप्त है।

भानुमत् औपमन्यव--एक आचार्य, जो आनन्दज चान्धनायन नामक आचार्य का शिष्य था। संभवतः यह उपमन्यु का वंशज था, जिस कारण इसे 'औपमन्यव' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। इसके शिष्य का नाम ऊर्जयत् औपमन्यव था (वं. ब्रा. १)।

भानुमती--पूरुवंशीय राजा अहंयाति की पत्नी, जो कृतवीर्य राजा की कन्या थी। भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिए 'अहंपाति' पाठभेद प्राप्त है। इसके पुत्र का नाम सार्वभौम था (म. आ. ९०.१५)।

२. अंगिरस् ऋषि की ज्येष्ठ कन्या, जो अत्यंत रूपवती थी (म. व. २०८.३)।

३. भानु यादव की कन्या, जो सहदेव 'पांडव' की पत्नी थी। निकुंभ नामक दानव ने इसका हरण किया था। पश्चात् अर्जुन, कृष्ण एवं प्रद्युम्न ने निकुंभ का वध कर, इसे विमुक्त किया (ह. वं. २.९०)।

४. बृहत्कल्प के धर्ममूर्ति राजा की पत्नी (धर्ममूर्ति देखिये)।

५. सगर राजा की पत्नी शैब्यकन्या केशिनी का नामान्तर (भा. ९.८.९)। इसके पुत्र का नाम असमंजस् था।

६. बृहस्पति आंगिरस् ऋषि की कन्या, जो उसे शुभा नामक पत्नी से उत्पन्न हुयी थी।

७. धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन राजा की एक पत्नी। स्कंद के अनुसार, इसने हाटकेश्वर नामक शिवलिंग की स्थापना की थी (स्कंद. ६.७३-७४)।

भानुरथ—इक्ष्वाकुवंशीय भानुमत् राजा का नामांतर (भानुमत् ६. देखिये)।

भानुविंद—एक यादव (भा. १०.६.१४)।

भानुश्चंद्र--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय, राजा, जो मत्स्य के अनुसार चंद्रगिरि राजा का पुत्र था।

भानुसेन--अंगराज कर्ण का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीम के द्वारा मारा गया था (म. क. ३२.४९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'सत्यसेन'।

भामिनी—वैशाली के अविक्षित राजा की पत्नी। इसके पुत्र का नाम मरुत्त था, जो आगे चल कर वैशाली का सुविख्यात सम्राट बना (मार्कं. १२४)। एक बार यह नागलोक में गयी थी, जहाँ इसने सर्पों को अभय दिया कि, इसका होनेवाला पुत्र मरुत्त उनकी रक्षा करेगा (मार्कं. १२६)।

२. स्कंद की अनुचरी मातृका 'भाविनी' के लिए उपलब्ध पाठभेद (भाविनी देखिये)।

भायजात्य—निकोथक नामक आचार्य का पैतृक नाम (वं. ब्रा. ४.३७३)।

भारत--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम, जो भरत का पुत्र अथवा वंशज इस अर्थ से प्रयुक्त हुआ है। ऋग्वेद में निम्नलिखित सूक्तद्रष्टाओं का पैतृक नाम 'भारत' बताया गया है:--अश्वमेध (ऋ. ५.२७); देववात एवं देवश्रवस् (ऋ. ३.२३)।

भारद्वाज—उपनिषदों में निर्दिष्ट कई आचार्यों का सामुहिक नाम। बृहदारण्यक उपनिषद में इन्हे निम्नलिखित आचार्यों के शिष्य के रूप में निर्दिष्ट किया है:—भारद्वाज, पाराशर्य, बलाका कौशिक, ऐतरेय, असुरायण एवं बैजवापायन (बृ. उ. २.५.२१ माध्यं; २.६.२ काण्व; ४.५.२७ माध्यं.)।

२. ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम, जो भरत का पुत्र अथवा वंशज इस अर्थ से प्रयुक्त हुआ है। ऋग्वेद निम्नलिखित सूक्तद्रष्टाओं का पैतृक नाम 'भारद्वाज' बताया गया है:—ऋजिश्वन् (ऋ. ६.४९); गर्ग (ऋ. ६.४७); गर्ह्मीविपीत, नर (ऋ. ६.३५); पायु (ऋ. ६.७५); वसु (ऋ. ९.८०); वाह्नेय; शाश; शिरिंबिठ (ऋ. १०.

१५५); शुनहोत्र (ऋ. ६.३३); शूष वाह्नेय (वं. ब्रा. २); सत्यवाह; सप्रत; सुकेशिन् (प्र. उ. १.१); सुहोत्र (ऋ. ६.३१)।

३. एक सामवेदी श्रुतर्षि।

४. अंगिरस् गोत्र का एक मंत्रकार एवं गोत्रकार।

५. एक ऋषिक। वायु के अनुसार, 'ऋषिक' शब्द का अर्थ ऋषि का पुत्र, अथवा सत्यमार्ग से चलनेवाला आदर्श पुरुष, ऐसा दिया गया है (.वायु. ५९.९२-९४)। मत्स्य एवं ब्रह्मांड में, इसके नाम के लिए 'भरद्वाज' पाठभेद प्राप्त है (मत्स्य. १४५.९५-९७; ब्रह्मांड. २. ३२.१०१-१०३)।

६. वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

७. एक श्रौतसूत्रकार, जिसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध है:— १. भारद्वाज प्रयोग, २. भारद्वाज शिक्षा (कृष्णयजुर्वेद तैत्तिरीय शाखा); ३. भारद्वाज संहिता; ४. भारद्वाज श्रौतसूत्र (कृष्ण यजुर्वेद); ५. वृत्तिसार (C. C.)।

८. एक ऋषि, जिसने द्युमत्सेन राजा को आश्वासन दिया था, 'तुम्हारा पुत्र एवं सावित्री का पति सत्यवान् पुनः जीवित होगा' (म. व. २८२.१६)।

९. एक व्याकरणकार। सामवेद के 'ऋक्तंत्रप्रातिशाख्य' के अनुसार व्याकरणशास्त्र का निर्माण सर्वप्रथम ब्रह्मा ने किया एवं उस शास्त्र की शिक्षा ब्रह्मा ने बृहस्पति को, बृहस्पति ने इंद्र को, एवं इंद्र ने भारद्वाज को दी। आगे चल कर व्याकरण का यही ज्ञान भारद्वाज ने अपने शिष्यों को प्रदान किया।

पाणिनि ने आचार्य भारद्वाज के व्याकरणविषयक मतों का उल्लेख किया है (पा. सू. ७.२.६३)। पतञ्जलि ने भी 'भारद्वाजीय व्याकरण' से संबंधित कई वार्तिकों का निर्देश किया है (महा. १.७३; १३६; २०१)।

ऋक्प्रातिशाख्य एवं तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में भी, भारद्वाज के व्याकरण विषयक मतों का उल्लेख प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, आचार्य भारद्वाज ने 'ऐंद्र व्याकरण' की परंपरा को आगे चलाया। आगे चल कर, यही व्याकरण पाणिनीय व्याकरण में अंतर्भूत हुआ।

भारद्वाजायन--पंचविंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य। भरद्वाज का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। एक बार इसने एक सत्र का प्रारंभ किया, जिसमें हर एक दिन के अनुष्ठान का फल इसे पूछा गया था (पं. ब्रा. १०.१२.१)।

भारद्वाजि--भारद्वाज ऋषि का पुत्र।

भारद्वाजी--रात्रि नामक एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री का पैतृक नाम (रात्रि देखिये)।

भारद्वाजीपुत्र--एक आचार्य, जो पाराशरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.१ माध्यं.) बृहदारण्यक उपनिषद में अन्यत्र इसे 'वात्सीमांडवीपुत्र' कहा गया है (ब्र. उ. ६.४.३० माध्यं; श. ब्रा. १४.९. ४.३०)।

२. एक आचार्य, जो पैङ्गीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (श. ब्रा. १४.९.४.३०)। इसके शिष्य का नाम हारिकर्णीपुत्र था।

३. एक आचार्य, जो पाराशरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वात्सीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३१)।

भारुकच्छ—एक क्षत्रिय (म. स. ४७.८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'मरुकच्छ'।

भारुण्ड—उत्तर कुरुवर्ष में रहनेवाले महाबली पक्षियों का एक सामुहिक नाम। ये उत्तर कुरुवर्ष में मरे हुए लोगों की लाशों को उठा कर, कंदराओं में फेंक देते थे (म. भी. ८.२१)।

भार्ग—(सो. काश्य.) काशीदेश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार वैनहोत्र राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिए 'भर्ग' पाठभेद भी प्राप्त है (भर्ग ३. देखिये)।

भार्गभू—(सो. काश्य.) काशीदेश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार भार्ग राजा का पुत्र था। भागवत, एवं वायु में इसके नाम के लिए 'भार्गभूमि' एवं 'गर्गभूमि' पाठभेद प्राप्त है।

भार्गभूमि—काशीदेश के 'भार्गभू' राजा के लिए उपलब्ध पाठभेद।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार, अमावसु राजा का पुत्र था।

भार्गव—एक कुलनाम, जो प्रायः भृगु वारुणि ऋषि के कुल में उत्पन्न लोगों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। इस कुल में उत्पन्न प्रमुख व्यक्तियों के नाम निम्नलिखित हैं:- च्यवन, उशीनस् शुक्र, गृत्समद, कवि, कृत्नु, जमदग्नि, परशुराम जामदग्न्य, नेम, प्रयोग, प्राचेतस, भृगु, वाल्मीकि, वेन, सोमाहुति एवं स्यूमरश्मि (भृगु वारुणि देखिये)।

परशुराम जामदग्न्य के द्वारा पृथ्वी निःक्षत्रिय किये जाने पर, उसे भार्गव कुल में उत्पन्न ब्राह्मणों ने 'अवभृथ

स्नान' का संकल्प बताया था। वर्तमान काल में इस कुल के ब्राह्मण प्रायः गुजराथ प्रदेश में भडोच में दिखाई देते है।

२. वैवस्वत मन्वन्तर का तीसरा एवं छब्बीसवाँ व्यास।

३. ऋषभ नामक शिवावतार का शिष्य।

४. भौत्य मनु का एक पुत्र, जो सप्तर्षियों में से एक था।

५. एक देवसमूह, जिसमें बारह देव समाविष्ट थे (मत्स्य. १९५.१२-१३)।

भार्गवत--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भार्गायण--सुत्वन् नामक राजा का गोत्रनाम (सुत्वन् कैरिशीय भार्गायण देखिये)।

भार्गेय--भृगुकुल के 'मार्गेय' नामक गोत्रकार के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (मार्गेय देखिये)।

भार्म्यश्व--मुद्गल नामक ऋषि का पैतृक नाम।

भालंदन--वत्सप्रि नामक ऋषि का पैतृक नाम।

भालुकि--एक ऋषि, जो पांडवों के साथ द्वैतवन में गया था (म. स. ४.१३; व. २७.२२)।

२. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लांगलि ऋषि का शिष्य था।

इसने योगशास्त्र पर एक ग्रंथ लिखा था, जिसका आधार 'हटप्रदीपिका' नामक ग्रंथ में लिया गया है (C.C.)।

भालुकीपुत्र--एक आचार्य, जो क्रौंचिकीपुत्र नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम राथीतरीपुत्र था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)।

२. एक आचार्य, जो प्राचीनयोगीपुत्र नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वैदभृतीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३२; बृ. उ. ६.४.३२ माध्यं.)।

भाल्ल प्रातृद--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३०.३१.४)।

भाल्लवि--एक आचार्य, जिसके द्वारा प्रणीत एक आचारविशेष का निर्देश पंचविंश ब्राह्मण में प्राप्त है (पं. ब्रा. २.२.४)। सायण के अनुसार, यह व्यक्तिवाचक नाम न हो कर किसी शाखा के नाम का द्योतक है।

भाल्लविन्--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जिसके द्वारा निर्मित एक ब्राह्मण ग्रंथ प्राप्त है। इसके ग्रंथ का उद्धरण बौधायन धर्मसूत्र में उपलब्ध है (बौ. ध. १.२. ११)। कई ग्रंथों में इसका निर्देश बहुवचन में प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह किसी एक व्यक्ति का नाम न हो कर, किसी गुरुपरंपरा का नाम होगा (जै. उ. ब्रा. २.४.७)।

भाल्लवेय--इंद्रद्युम्न नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.६.१.१; छां. उ. ५.११.१; १४.१)। 'भाल्लवि' का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

शतपथ ब्राह्मण में एक अधिकारी आचार्य के रूप में इसका निर्देश कई बार प्राप्त है (श. ब्रा. १.७.३.१९; २.१.४.६; १३.४.२.३)।

भावन--उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण।

२. भृगु वारुणि ऋषि को दिव्या नामक पत्नी से उत्पन्न बारह देवों में से एक।

भावयव्य--स्वनय नामक राजा का पैतृक नाम (स्वनय देखिये; सां. श्रौ. १५.११.५.)।

भावास्यायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भाविनि--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.११)। इसके नाम के लिए 'भामिनि' पाठभेद प्राप्त है।

भाव्य--स्वनय नामक राजा का पैतृक नाम (ऋ. १. १२६. १; नि. ९. १०)।

भास--एक तपस्वी, जो सह्याद्रि में स्थित अत्रि ऋषि के आश्रम में रहनेवाले एक ऋषि का पुत्र था। यह विलास नामक राजा का परम मित्र था।

भासकर्ण--रावण का एक सेनापति, जो हनुमान् के द्वारा मारा गया (वा. रा. सुं. ४६.३७)।

भासा--पूरुवंशीय राजा अयुतायिन् की पत्नी, जो पृथुश्रवस् राजा की कन्या थी। इसके पुत्र का नाम अक्रोधन था।

भासी--कश्यप ऋषि की कन्या, जो उसे ताम्रा नामक पत्नी से उत्पन्न हुयी थी। आगे चल कर, इससे भास, उलूक आदि पक्षी उत्पन्न हुए।

२. एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा (अरिष्टा) से उत्पन्न आठ कन्याओं में से एक थी।

भासुर--तुषित देवों में से एक।

भास्कर--एक आदित्य, जो कश्यप एवं अदिति से उत्पन्न बारह आदित्यों में से एक था।

२. स्कंद के भास्वर नामक पार्षद के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (भास्वर देखिये)।

भास्करि--एक ऋषि, जो शरशय्या पर पडे हुए भीष्म से मिलने आया था (म. शां. ४७.६६*; पंक्ति. ११)।

भास्वर--सूर्य के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम सुभ्राज था (म. श.

४४.२८)। इसके नाम के लिए 'भास्कर' पाठभेद प्राप्त है।

भिक्षु आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११७)।

भिक्षुवर्य--शंकर का एक अवतार, जिसने सत्यरथ नामक राजा को काफ़ी त्रस्त किया था (सत्यरथ देखिये)।

भिषज् आथर्वण--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ९७)।

२. काठक संहिता में निर्दिष्ट एक प्राचीन चिकित्सक (का. सं. १६.३)।

भीम--(सो. कुरु.) कुरुवंशीय पांडु राजा को कुन्ती से उत्पन्न पाँच पुत्रों में से तीसरा पुत्र (भीमसेन पांडव देखिये)।

२. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि का पुत्र था।

३. तीसरे मरुद्गणों में से एक।

४. विकुंठ देवों में से एक।

५. एकादश रुद्रों में से एक।

६. एक अग्नि, जो पांचजन्य अथवा तप नामक अग्नि का पुत्र था।

७. एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं देवताओं के बीच हुए युद्ध में अग्नि के हाथों मारा गया (पद्म. सृ. ७५)।

८. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

९. (सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, विजय राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में, इसे अमावसु राजा का पुत्र कहा गया है।

१०. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो हरिवंश एवं ब्रह्म के अनुसार, ज्यामध राजा का पुत्र था। महाभारत में इसे 'निमि' कहा गया है। संभवतः यह ऋथ राजा का नामांतर रहा होगा।

११. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो दाशार्ह (विदुरथ) राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. १३)।

१२. (सो. क्रोष्टु.) आनर्त (गुजराथ देश) का एक यादव राजा, जो सत्वत राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अंधक था। यह राम दाशराथी राजा का समकालीन था। शत्रुघ्न ने मधु दैत्य का वध कर मथुरा नगरी की स्थापना की, उस नगरी को इसने जीत लिया था।

१३. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो इलिन एवं रथन्तरी का पुत्र था (म. आ. ८९.१५)। इसे निम्नलिखित चार भाई थेः—दुष्यंत, शूर, प्रवसु, एवं वसु।

१४. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार, महावीर्य राजा का पुत्र था।

१५. एक राक्षस, जो लंकानरेश रावण का मित्र था। लंका में आने के बाद, हनुमान सर्वप्रथम इसके घर के छपरे पर अवतीर्ण हुआ था (वा. रा. सुं. ६)।

१६. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार, रुचिर राजा का पुत्र था।

१७. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ६०.३१)।

१८. पाँच विनायकों में से एक। देवताओं के यज्ञ का विनाश करनेवाले पांचजन्य के द्वारा इन पाँच विनायकों का निर्माण हुआ था।

१९. अंश के द्वारा स्कंद को दिये गये पाँच पार्षदों में से एक। अन्य पार्षदों के नाम निम्नलिखित थेः— परिघ, वट, दहति, एवं दहन।

२०. यमसभा में रह कर यम की उपासना करनेवाले राजाओं का एक समूह, जिसमें कुल सौ राजा समाविष्ट थे। प्राचीन काल में ये राजा पृथ्वी के शासक थे; किन्तु काल से पीड़ित हो कर ये पृथ्वीलोक छोड़ कर यमसभा में उपस्थित हुए (म. शां. २२७.४९)।

२१. गौड देश में रहनेवाले दुर्व नामक ब्राह्मण का मित्र। गणेशपुराण में वर्णित बुध नामक दुराचारी ब्राह्मण की कथा में इसका निर्देश प्राप्त है (गणेश. १.७६; बुध. ८. देखिये)।

२२. द्वापर युग में उत्पन्न हुआ एक शूद्र। यह अत्यंत दुराचरणी एवं चौर्यकर्म में निपुण था। एक बार यह एक ब्राह्मण के घर चोरी के हेतु गया, एवं उसकी सेवा करने के बहाने वहीं रह गया।

पश्चात् ब्राह्मण के घर चोरी के हेतु आये हुए कई अन्य चोरों के हाथों यह मारा गया। मृत्यु के पश्चात, किंचित्-काल तक की गयी ब्राह्मणसेवा के कारण इसका उद्धार हुआ (पद्म. ब्रह्म. १४)।

२३. एक खाटिक, जिसकी कथा गणेश पुराण में शमीवृक्ष का महात्म्य बताने के लिए कथन की गयी है।

२४. एक कुम्हार, जो तोण्डमान नामक राजा के राज्य में रहता था। यह रोज श्रीनिवास की पूजा करता था, जिस कारण इसका उद्धार हुआ (स्कंद. २.१.१०)

२५. विदर्भ देश के कौण्डिन्य नगरी का राजा, जो चित्रसेन राजा का पुत्र था। इसे कोई पुत्र न था, जिस कारण विरक्त हो कर, इसने अपना राज्य मनोरंजन एवं

सुमन्तु नामक प्रधानों के हाथों सौंप दिया, एवं यह वन में चला गया।

वन में इस विश्वामित्र ऋषि आ मिले, जिन्होंने इसे गणेश उपासना का व्रत करने के लिए कहा। यह व्रत करने पर इसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम रुक्मांगद था (गणेश. १.१९-२७)।

२६. विदर्भ देश का एक राजा, जो दमयंती का पिता था (भीम वैदर्भ देखिये)।

भीम वैदर्भ--विदर्भ देश का सुविख्यात राजा, जो निषधराज नल की पत्नी दमयंती का पिता था। यह एवं चेदि देश का राजा वीरबाहु समवर्ती थे।

दशार्ण नरेश सुदामन् की कन्या इसकी पत्नी थी (म. व. ६६.१२-१३)। काफ़ी वर्षों तक अनपत्य रहने के बाद, दमन ऋषि की कृपाप्रसाद से इसे तीन उत्तम पुत्र एवं एक कन्या प्राप्त हुयी। इसके पुत्रों के नाम दम, दान्त एवं दमन थे, एवं कन्या का नाम दमयंती था (म. व. ५०.९)।

इसके द्वारा किये गये दमयंती के स्वयंवर में निषध देश का राजा नल का दमयंती ने वरण किया (म. व. ५४.२५)। कलि केशाप से नल एवं दमयंती को अत्यधिक कष्ट सहने पडे; उस समय इसने उन दोनों को एवं उनके पुत्रों को काफ़ी सहाय्यता की थी (दमयंती एवं नल देखिये)।

२. विदर्भ देश का सुविख्यात राजर्षि, जिसका निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में निर्दिष्ट 'सोम परंपरा' में प्राप्त है। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, शापर्ण नामक पुरोहितगण के द्वारा यज्ञवेदी की स्थापना की जाने पर, सोमविद्या की विशिष्ट परंपरा दैवावृध ने भीम राजा को सिखायी, एवं उसी परंपरा भीम ने वैदर्भ राजा को सिखायी (ऐ. ब्रा. ७.३४)। उस ग्रंथ में, भीम एवं वैदर्भ को अलग व्यक्ति माना गया है। किंतु सायणाचार्य के अनुसार, ये दोनों एक ही व्यक्ति थे।

इसकी कथा में नारद एवं पर्वत इन दो ऋषियों का संबंध निर्दिष्ट है, किंतु उसके बारे में निश्चित रूप से कहना असंभव है।

भीमक--विदर्भ देश के भीष्मक राजा का नामांतर (भीष्मक देखिये)।

भीमकाय--त्रिपुरासुर का एक सेवक। त्रिपुर ने इसे कुछ काल तक पृथ्वी का राज्य प्रदान किया था (गणेश. १.३९.१३)।

भीमकी--कृष्ण की पत्नी रुक्मिणी का नामांतर।

भीमकेश--एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम केशिनी था। बृहद्ध्वज नामक राक्षस ने उसका हरण किया था (बृहद्ध्वज देखिये)।

भीमजानु--एक प्राचीन नरेश, जो यमसभा में उपस्थित था (म. स. ८.१९)।

भीमपायन--कश्यपकुल के भौजपायन नामक गोत्रकार के लिए उपलब्ध पाठभेद (भौजपायन देखिये)।

भीमबल--धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। इसके नाम के लिए भूरिबल पाठभेद भी प्राप्त है (म. आ. परि. १.४१. १५)। भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा इसका वध हुआ।

२. एक देवता, जो पांचजन्य के द्वारा उत्पन्न पाँच विनायकों में से एक थी।

भीमरथ--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया।

२. कौरवपक्षीय एक योद्धा, जो द्रोणनिर्मित गरुडव्यूह के हृदयस्थान में खड़ा हुआ था (म. द्रो. १९.३३)। पांडवपक्षीय म्लेंच्छराज शाल्व राजा का इसने वध किया था (म. द्रो. २४.२६)।

३. युधिष्ठिर की सभा एक राजा (म. स. ४.२२)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार विकृति राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे विमल राजा का पुत्र कहा गया है।

५. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार केतुमत् राजा का पुत्र था। विष्णु में इसके नाम के लिए 'अभिरथ' पाठभेद प्राप्त है। महाभारत में इसका निर्देश 'भीमसेन' नाम से किया गया है (भीमसेन ३. देखिये)।

भीमविक्रम--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

भीमवेग--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भीमवेगरव--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

भीमशंकर--एक शिवलिंग, जो सह्याद्रि में स्थित डाकिनी क्षेत्र में है। इसने भीम का वध कर कामरूपेश्वर सुदक्षिण राजा का रक्षण किया (शिव. शत. ४२)।

महाराष्ट्र में पूना जिले में स्थित भीमाशंकर नामक शिवस्थान यही है। इसके उपलिंग का नाम भीमेश्वर है (शिव. कोटि. १)।

भीमशर-धृतराष्ट्र के शतपुत्रों मे से एक।

भीमसेन—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि का पुत्र था। यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था।

२. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार, ऋक्ष राजा का पुत्र था। मत्स्य के अनुसार, यह दक्ष राजा का पुत्र था।

३. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जिसका निर्देश पुराणों में 'भीमरथ' नाम से प्राप्त है (भीमरथ २. देखिये)।

इसके पुत्र दिवोदास को गालव ऋषि ने अपनी कन्या माधवी विवाह में दी थी। इसका पुत्र होने के कारण, दिवोदास को 'भैमसेनि' पैतृकनाम प्राप्त था (म. उ. ११७.१; क. सं. ७.२)।

भीमसेन 'पांडव'—(सो. कुरु.) पाण्डु राजा के पाँच 'क्षेत्रज' पुत्रों में से एक, जो वायु के द्वारा कुन्ती के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। इसके जन्मकाल में आकाशवाणी हुयी थी, 'यह बालक दुनिया के समस्त बलवानों में श्रेष्ठ बनेगा (म. आ. ११४.१०)।

पाण्डवों में भीम का स्थान सर्वोपरि न कहें, तो भी वह किसी से भी कुछ कम न था। बाल्यकाल से ही यह सबका अगुआ था। भीम के बारे में कहा जा सकता है कि, यह वज्र से भी कठोर, एवं कुसुम से भी कोमल था। एक ओर, यह अत्यंत शक्तिशाली, महान् क्रोधी तथा रणभूमि में शत्रुओं का संहार करनेवाला विजेता था। दूसरी ओर, यह परमप्रेमी, अत्यधिक कोमल स्वभाववाला दयालु धर्मात्मा भी था। न जाने कितनी बार, किन किन व्यक्तियों के लिए अपने प्राणों पर खेल कर, इसने उनकी रक्षा कर, अपने धर्म का निर्वाह किया। इस प्रकार इसका चरित्र दो दिशाओं की ओर विकसित हुआ है, तथा दोनों में कुछ शक्तियों पृष्ठभूमि के रूप में इसे प्रभावित करती रहीं। वे हैं, इसका अविवेकी, उद्दण्ड एवं भावुक स्वभाव।

भीम निश्चल प्रकृति का, भोलाभाला, सीधा साफ आदमी था; यह राजनीति के उल्टे सीधे दाँव-पेंच न जानता था। सबके साथ इसका सम्बन्ध एवं बर्ताव स्पष्ट था, चाहे वह मित्र हो, या शत्रु। यह स्पष्टवक्ता एवं निर्भीक प्राणी था।

परम शारीरिक शक्ति का प्रतीक मान कर, श्री व्यास के द्वारा, भीमसेन का चरित्रचित्रण किया गया है। पांडवों में से अर्जुन शस्त्रास्त्रविद्या का, भीम शारीरिक शक्ति का, एवं पांडवपत्नी द्रौपदी भारतीय नारीतेज का प्रतीक माने जा सकती हैं। ये तीनो अपने अपने क्षेत्र में सर्वोपरि थे, किंतु पांडवपरिवार के बीच हुए कौटुंबिक संघर्ष में, इन तीनो को उस युधिष्ठिर के सामने हार खानी पडती थी, जो स्वयं आत्मिक शक्ति का प्रतीक था। संभव है, इन चार ज्वलंत चरित्रचित्रणों के द्वारा श्रीव्यास को यही सूचित करना हो कि, दुनिया की सारी शक्तियों में से आत्मिक शक्ति सर्वश्रेष्ठ है।

स्वरुपवर्णन—भीम का स्वरूपवर्णन भागवत में प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह अत्यंत भव्य शरीरवाला स्वर्ण कान्तियुक्त था। इसके ध्वज पर सिंह का राजचिन्ह था, एवं इसके अश्व रीछ के समान कृष्णवर्ण थे। इसके धनुष का नाम 'वायव्य', एवं शंख का नाम 'पौंड्र' था। इसका मुख्य अस्त्र गदा था।

कौरवों का, विशेष कर दुर्योधन तथा धृतराष्ट्र का, यह आजन्म विरोधी रहा। दुर्योधन इससे अत्यधिक विद्वेष रखता था, एवं धृतराष्ट्र इससे काफ़ी डरता था। भागवत के अनुसार, इसने दुर्योधन एवं दुःशासन के सहित, सभी धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया था (भा. १.१५. १५)।

बाल्यकाल—जन्म से ही यह अत्यन्त बलवान् था। जन्म के दसवें दिन, यह माता की गोद से एक शिलाखण्ड पर गिर पड़ा। किंतु इसके शरीर पर जरा सी भी चोट न लगी, एवं चट्टान अवश्य चूर चूर हो गयी (म. आ. ११४.११-१३)। इसके जन्म लेने के उपरांत इसका नामकरण संस्कार शतशृंग ऋषियों के द्वारा किया गया। बाद को वसुदेव के पुरोहित काश्यप के द्वारा इसका उपनयन संस्कार भी हुआ।

भीम बाल्यकाल से ही अत्यंत उद्दंड था। कौरवपांडव बाल्यावस्था में जब एकसाथ खेला करते, तब किसी में इतनी ताकत न थी कि, इसके द्वारा की गयी शरारत का जवाब दे। दुर्योधन अपने को सब बालकों में श्रेष्ठ, एवं सर्वगुणसंपन्न राजकुमार समझता था। किन्तु इसकी ताकत एवं शैतानी के आगे उसको हमेशा मुँह की खानी पड़ती थी (म.आ.१२७.५-७)। भीम भी सदैव दुर्योधन की झूटी शान को चूर करने में चूकता न था। इस प्रकार शुरू से ही पाण्डवों का अगुआ बन कर, यह दुर्योधादि के नाके चने चबवाये रहता। इस प्रकार, इसके कारण आरम्भ से ही, पाण्डवों तथा कौरवों के बीच एक बडी खाई का निर्माण हो चुका था।

दुर्योधन के षड्यंत्र--दुर्योधन कौरवपुत्रों में बड़ा होशियार, चालबाज एवं धूर्त था। उसने इसे खत्म करने के अनेकानेक कई षड्यंत्र रचे। आजीवन वह भीम की जान के पीछे पड़ा ही रहा, कारण वह नहीं चाहता था कि, यह कॉंटा उसे जीवन भर चुभता रहे। एक बार जब यह सोया हुआ था, तब दुर्योधन ने इसे ऊपर से नीचे फेंकवा दिया, किन्तु इसका बाल बांका न हुआ। दूसरी बार उसने इसे सर्पों द्वारा कटवाया, तथा तीसरी बार भोजन में विष मिलवा कर भी इसे खिलवाया, पर भीम जैसा का तैसा ही बना रहा (म. आ. ११९)।

जब दुर्योधन के ये षड्यंत्र सफल न हुए, तब उसने इसका वध करने के लिए एक दूसरी युक्ति सोची। उसने गंगा नदी से जल काट कर, एक जलगृह का निर्माण किया, एवं उसमें जलक्रीड़ा करने के लिए पाण्डुपुत्रों को आमंत्रित किया। जब सब लोग जलक्रीड़ा कर रहे थे, तब सभी ने एक दूसरे को फल देकर जलविहार किया। दुर्योधन ने अपने हाथों से भीम को विषयुक्त फल खिलाये, जिसके कारण जलक्रीड़ा करता हुआ भीम थक कर नदी के किनारे आ कर लेट गया, तथा नींद में सो गया। यह सुअवसर देख कर, दुर्योधन ने इसे लता एवं पल्लवादि से बाँध कर बहती धारा में फेंकवा दिया (म. आ. ११९. परि. १. ७३)। इस प्रकार जल के प्रवाह में बहता हुआ भीम पाताल में स्थित नागलोक जा पहुँचा।

नागलोक में--नागलोग पहुँचते ही, इसके शरीरभार से अनेकानेक शिशुनाग कुचल कर मर गये, जिससे क्रोधित हो कर सर्पों ने इसके ऊपर हमला बोल दिया, एवं इसको खूब काटा, जिससे इसके शरीर का विष उतर गया, एवं मूर्च्छा जाती रही। जाग्रत अवस्था में आ कर, यह नागों को मारने लगा, जिससे घबरा कर वे सभी भागते हुए नागराज वासुकि के पास अपनी आपबीती सुनाने गये। वासुकि पहचान गया कि, सिवाय भीम के और कोई नहीं हो सकता।

वासुकि इसके पास तुरन्त आया, एवं इसे आदर-पूर्वक अपने घर ले जा कर इसकी बड़ी आवभगत की (आर्यक देखिये)। हज़ारो नागों के बल को देनेवाले अमृत कुंभ को दिखा कर उसने भीम से कहा कि, जितना चाहो मनमानी पी कर आराम करो। तब इसने आठ कुंभो को आठ घूँट में ही पी डाला, एवं पी कर ऐसा सोया कि, आठ दिन बाद ही उठा। इन आठ कुंभों के दिव्य रसपान से इसे एक हज़ार हाथियों का बल प्राप्त हुआ। इसके जगने के उपरांत, नागों के द्वारा इसका मंगलाचरण गाया गया, एवं उनके द्वारा इसे दस हज़ार हाथियों के समान बलशाली होने का वरदान दिया गया। बाद को यह नागों के द्वारा नागलोक से पृथ्वी पर पहुँचा कर, सकुशल बिदा किया गया।

नागलोक से लौट कर यह खुशी खुशी हस्तिनापुर आ पहुँचा, एवं इसने अपनी सारी कथा माँ कुंती को प्रणाम कर कह सुनायी। कुंती ने सब कुछ सुन कर, इस कथा को किसीसे न कहने का आदेश दिया।

शिक्षा--इसने राजर्षि शुक से गदायुद्ध की शिक्षा प्राप्त की थी (म. आ. परि. १. क्र. ६७)। अन्य पाण्डवों की भाँति, इसे भी कृपाचार्य ने अस्त्रशस्त्रों की शिक्षा दी थी (म. आ. १२०.२१)। पश्चात् द्रोणाचार्य ने इसे एवं अन्य पाण्डवों को नानाप्रकार के मानव एवं दिव्य अस्त्र-शस्त्रों की शिक्षा दी थी।

गदायुद्ध की परीक्षा लेते समय, इसके तथा दुर्योधन के बीच लड़ाई छिड़नेवाली ही थी कि, गुरु द्रोण ने अपने पुत्र अश्वत्थामा के द्वारा उन्हे शांत कराया (म. आ. १२७)। युधिष्ठिर के युवराज्यभिषेक होने के उपरांत, बलराम ने इसे खड्ग, गदा एवं रथ के बारे में शिक्षा दे कर अत्यधिक पारंगत कर दिया (म. आ. परि. १ क्र. ८०. पंक्ति. १-८)।

भीम तथा अर्जुन की शिक्षा समाप्त होने के उपरांत, द्रोण ने गुरुदक्षिणा के रूप में इनसे कहा कि, ये ससैन्य राजा द्रुपद को परास्त करें। इस युद्ध में भीम ने अपने शौर्यबल से द्रुपद राजा की राजसेना को परास्त किया, एवं उसकी राजधानी कुचल कर ध्वस्त कर देनी चाही, किंतु अर्जुन ने इसे रोक कर, राज्य को विनष्ट होने से बचा लिया (म. आ. परि. १. क्र. ७८. पंक्ति. ५१-१५५)।

लाक्षागृहदाह--वारणावत में, धृतराष्ट्र के आदेशानुसार बनाये गये लाक्षागृह में अन्य पाण्डवों तथा कुन्ती के साथ, यह भी जल कर मरनेवाला था, किन्तु विदुर के सहयोग से सारे पाण्डव बच गये। लाक्षागृह से निकलने के उपरांत, इसने अपने हाथ से ही लाक्षागृह को जला दिया, जिसमें शराब पिये अपने पाँच पुत्रों के सहित ठहरी हुई एक औरत जल मरी। उसीमें शराब के नशें में चूर दुर्योधन का एक सेवक भी जल गया था (म. आ. १३२-१३६)।

लाक्षागृह से निकल कर, अपने भाइयों के साथ विदुर के सेवक की मदद से, इन्होंने गंगा नदी पार की। तदोपरांत शीघ्रातिशीघ्र दूर भाग चलने के हेतु से, अपने माँ को कन्धे पर, नकुल-सहदेव को कमर पर, तथा धर्मार्जुन को हाथ में लेकर दौड़ते हुए, भीम ने एक जंगल में आ कर शरण ली। कुन्ती तथा अन्य पांडव थक कर इतने प्यासे हो गये थे कि, उन्हे पेड़ की छाया में लिटा कर, यह पानी लाने गया। पानी ला कर इसने देखा कि, सब थक कर सो गये हैं। अतएव यह उनके रक्षार्थ जगता हुआ, उनके उठने की प्रतीक्षा में बैठा रहा।

हिडिंबाविवाह--इसी वन में, एक नरभक्षक राक्षस हिडिंब रहता था, जिसने मनुष्यसुगन्धि का अनुमान लगा कर, अपनी बहन हिडिंबा को इन्हें लाने के लिए कहा। हिडिंबा आई, तथा भीम को देखकर, इसके व्यक्तित्व पर मोहित होकर, इसे वरण में प्राप्त कर लेनेके लिए निवेदन करने लगी। किन्तु भीम ने हिडिंबा की इस प्रार्थना को अस्वीकार कर दिया। उधर अधिक देर हो जाने पर, वस्तुस्थिति की जाँच करता हुआ हिडिंब राक्षस भी आ पहुँचा। पहले भीम एवं उसमें वादविवाद हुआ, फिर दोनों युद्ध में जूझने लगे।

इस द्वन्द्वयुद्ध की आवाज़ से सभी पांडव जग पडे, एवं उन्हें सारी बातें भीम के द्वारा पता चलीं। पश्चात् भीम ने हिडिंब राक्षस का वध किया, एवं कुन्ती तथा अपने भाइयों के साथ इसने आगे चलने के लिए प्रस्थान किया।

किन्तु हिडिंबा ने इसका साथ न छोड़ा, वह इसका पीछा करती हुई साथ लगी ही रही। अन्त में कुन्ती ने इन दोनों में मध्यस्थता कर के भीम को आदेश दिया कि, वह हिडिंबा का वरण करे। भीम ने हिडिंबा के सामने एक शर्त रखीं कि, उसके एक पुत्र होने तक ही यह उसके साथ भोगसम्बन्ध रक्खेगा। हिडिंबा ने इसे अपनी स्वीकृति दे दी, तथा दोनों का विवाह हो गया। विवाह के उपरांत भीम एवं हिडिंबा रम्य स्थानों में घूमते हुए वैवाहिक जीवन के आनंदो में निमग्न रहे। कालान्तर में, इसे हिडिंबा से घटोत्कच नामक पुत्र हुआ।

बकासुरवध--महर्षि व्यास के कथनानुसार, यह अन्य पाण्डवों एवं अपनी माँ के साथ एकचक्रा नगरी में गया, जहाँ अपनी माता के आदेश पर, इसने बकासुर का वध कर, एकचक्रानगरी को कष्टों से उबारा था (बक देखिये)।

द्रौपदीस्वयंवर--द्रुपद राजा की कन्या द्रौपदी (कृष्णा), जब स्वयंवर में अर्जुन द्वारा जीती गयी, तब वहाँ पर हुए युद्ध में इसका एवं शल्य का भीषण युद्ध हुआ था। द्रौपदी को जीत कर, अर्जुन और भीम वापस लौटे, एवं माँ से विनोद में कहा कि, हम लोग भिक्षा लाये हैं। मज़ाक को न समझ सकने के कारण, माँ ने उस भिक्षा को आपस में बाँट लेने को कहा। इस प्रकार द्रौपदी अर्जुन के साथ भीमादि की भी पत्नी हुयी (म. आ. १८०-१८१)।

जरासंधवध--धर्मराज ने राजसूय यज्ञ किया, जिसमें कृष्ण की सलाह से युधिष्ठिर ने अर्जुन तथा भीम को जरासंध पर आक्रमण करने को कहा। वहाँ भीम एवं जरासंध में दस दिन युद्ध चलता रहा, और जब जरासंध लड़ते लड़ते थक सा गया, तब कृष्ण के संकेत पर, इसने उसे खड़ा चीर कर फेंक दिया। किन्तु वह फिर जुड़ गया। तब कृष्ण के द्वारा पुनः संकेत पा कर, इसने उसे फिर चीर डाला, तथा दाहिने भाग को अपनी दाहिनी ओर, तथा बायें भाग को अपने बायों ओर फेंक दिया, जिससे दोनों शरीर के भाग जुड़ न सकें (म. स. १८)।

पूर्वदिग्विजय--फिर भीम को धर्मराज ने पूर्व दिशा की ओर विजय प्राप्त करने के लिए भेजा, जिसमें राजा भद्रक इसके साथ था (भा. १०.७२.४४)। इसने क्रमशः पांचाल, विदेह गण्डक, दशार्ण तथा अश्वमेध इत्यादि पूर्ववर्ती देशों को जीत कर, दक्षिण के पुलिन्द नगर पर धावा बोल दिया। वहाँ के राजा को जीत कर, यह चेदिराज शिशुपाल के पास गया, तथा वहाँ एक माह रह कर, इसने कुमार देश का श्रेणिमन्त राजा को जीता। फिर 'गोपालकच्छदेश', उत्तरकोसल, मल्लाधिप, हिमालय के समीपवर्ती जलोद्भव देश, भल्लाट, शुक्तिमान्पर्वत, काशिराज सुबाहु, सुपार्श्व, राजपति क्रथ, मत्स्यदेश, मलद, अभयदेश, पशुभूमि, मदधार पर्वत तथा सोमधेयों को जीत कर, यह उत्तर की ओर मुड़ा। बाद में भीम ने वत्सभूमि, भर्गाधिप, निषादाधिपति, मणिमत् आदि प्रमुख राजाओं के साथ साथ, दक्षिणमल्ल, भोगवान्पर्वत, शर्मक, वर्मक, वैदेहक जनक आदि को सुलभता के साथ जीत लिया।

शक तथा बर्बरों को जीतने के लिये, इसने उन्हें कूटनीति से जीता। इनके अतिरिक्त इंद्रपर्वत के समीप के किराताधिपति, सुह्म, प्रसुह्म, मागध, राजा दण्ड, राजा दण्डधार, तथा जरासंध के गिरिव्रज नगर आदि को अपने पौरुष के बल जीत लिया। फिर इन्ही लोगों की सहायता ले कर, कर्ण तथा पर्वतवासी राजाओं को जीत कर, मोदागिरी के राजा का वध कर, इसने पुंड्राधिप वासुदेव पर आक्रमण बोल दिया। पश्चात् कौशिकी कच्छ

के महौजस राजा को जीत कर, इसने वंगराज पर आक्रमण कर दिया।

इसकी विजय यहीं समाप्त न हुयी। इसके उपरांत समुद्रसेन, चन्द्रसेन, ताम्रलिप्त, कर्वटाधिपति, सुह्माधिपति सागरवासी म्लेच्छों, लोहित्यों आदि को जीत कर, यह इंद्रप्रस्थ को वापस आया (म. स. २६-२७)।

राजसूययज्ञ—चारों भाई जब चारों दिशाओं से दिग्विजय कर के, अतुल धनाराशि के साथ वापस लौटे, तब धर्मराज ने राजसूययज्ञ आरंभ किया। इस यज्ञ में हर भाई को भिन्न भिन्न कार्य सौंपे गये, जिसमें भीम को पाकशाला का अधिपति बनाया गया (भा. १०.७५.४)।

यह राजसूययज्ञ मयसभा में हुआ, जिसकी रचना बड़ी चतुरता के साथ की गयी थी। जो कोई उसे देखता, वह उसकी विचित्रता देख कर चकित रहा जाता। इस सभा में पाण्डवों ने अपने बलऐश्वर्य की ऐसी झाँकी प्रस्तुत की, कि दुर्योधन ईर्ष्या से जला जा रहा था। इसके सिवाय उसे कई जगह मूर्ख बनना पड़ा, तथा जहाँ कहीं दुर्योधन को नीचा देखना पड़ता, वहीं भीम अट्टाहास करता हुआ उसकी हँसी उड़ाता। इसका यह परिणाम हुआ कि, दुर्योधन ने पाण्डवों के समस्त ऐश्वर्य को कुचल कर मिटा देने के लिए, एक योजना बनाई।

द्रौपदीवस्त्रहरण—दुर्योधन ने धर्मराज को द्यूतक्रीड़ा के लिए बुलाया। दुर्योधन ने अपने स्थान पर शकुनि को आसन दे कर, कपटतापूर्ण ढंग से धर्मराज की समस्त धनसंपत्ति का ही हरण न किया, बल्कि द्रौपदी को भी जीत कर, उसे भरी सभा में बुला कर, उसका अपमान किया। दुःशासन उसका वस्त्र खींचने लगा, एवं दुर्योधन अपने बायें अंग को नग्न कर के द्रौपदी के सामने खड़ा हो गया। दुःशासन की इस धृष्टता को देख कर, भीम उबल पड़ा, एवं इसने उसकी बाँयी जाँघ तोड देने की, एवं उसकी छाती फाड कर उसका रक्त पीने की भीषण प्रतिज्ञा की (म. स. ५३.६३)।

अपने भाई युधिष्ठिर के ही कारण, द्यूतक्रीडा का भयानक संकट आ गया, यह सोचकर भीम युधिष्ठिर से अत्यधिक क्रोधित हुआ। इसने उससे कहा, 'जो कुछ हुआ है, उसके जिम्मेदार तुम ही हो। तुम्हारे ही हाथों का दोष है, जिन्होंने द्यूत खेल कर धनलक्ष्मी, ऐश्वर्य सब कुछ मिट्टी में मिला दिया'। इतना कहा कर इसने अपने भाई सहदेव से कहाः—

"अस्याः कृते मन्युरयं त्वयि राजन्निपात्यते।
बाहू ते संप्रधक्ष्यामि, सहदेवाग्निमानय॥"

(म. स. ६१.६)

(तुम मुझे अग्नि ला कर दो, मेरी इच्छा है कि, युधिष्ठिर के द्यूत खेलनेवाले हाथों को जला दूँ)।

दुःशासन के द्वारा किये गये उपहास पर क्रोधित होकर, इसने प्रण किया कि, यह दुर्योधन के साथ धृतराष्ट्र के सभी पुत्रों का वध करेगा (म. स. ६८.२०-२२)।

वनवास—वनवासगमन का निश्चय हो जाने के उपरांत, भीम समस्त भाईयों के साथ वन की ओर चल पडा। वहाँ बक के भाई किर्मीर के साथ युधिष्ठिर की ऐसी बातें हुई कि, स्थिति युद्ध तक आ पहुँची। तब भीम ने उसे परास्त कर उसका वध किया (म. व. १२.२२-६७)।

वनवासकाल में जब द्रौपदी ने युधिष्ठिर से सन्यासवृत्ति को त्याग कर, राज्यप्राप्ति के लिए प्रयत्न करने को कहा, तब भीम ने भी धर्मराज के पुरुषार्थ की प्रशंसा करते हुए, उसे युद्ध के लिए उत्साहित किया था।

इसने युधिष्ठिर से कहा, 'तुम्हे धर्माचरण ही करना हो तो तुम संन्यास ले कर तपस्या करने वन में चले जाना' (म. व. ३४)। किन्तु धर्मराज के युक्तिपूर्ण वचनों के आगे यह चुप हो गया (म. व. ३४-३६)।

गर्वहरण—एक बार, जब यह द्रौपदी से प्रेमालाप करता हुआ बातों में विभोर था, तब हवा में उड़ता हुआ एक हज़ार पंखुडियोंवाला (सहस्रदल) कमल इनके सामने आ गिरा। तब द्रौपदी ने उस प्रकार के कई कमल इससे लाने को कहे। अपनी प्रियतमा की इच्छा पूर्ण करने के लिए भीम वैसे ही पुष्प लाने के लिए गंधमादन पर्वत पर आ पहुँचा (म. व. १४६.१९)। इसके चलते समय होनेवाली गर्जना से हनुमान् ने इसे पहचान लिया, तथा आगे जाने पर कोई इसे शाप न दे, इस भय से वह मार्ग में अपनी पूँछ फैला कर बैठ गया।

वहाँ आ कर इसने हनुमान को मार्ग से हटने लिए कहा, तथा उसके न हटने पर, इसने उसकी पूँछ पकड कर फेंक देने का प्रयत्न किया। किन्तु जब यह पूँछ तक न उठा सका, तब यह उसकी शरण में गया। हनुमान ने इस प्रकार इसके अभिमान को नीचा दिखा कर, इसे सदुपदेश दिए। समुद्रोल्लंघन काल में धारण किये गये अपने विराटरूप को दिखा कर, हनुमान् ने भीम को आशीष दे कर वर दिया, 'जिस समय तुम रण में सिंहनाद करोगे, उस समय मै अपनी आवाज़ से तुम्हारी आवाज़

दीर्घकाल तक निनादित करूँगा, तथा अर्जुन के रथ पर बैठ कर तुम्हारी रक्षा करूँगा' (म. व. १५०.१३-१५)। इतना कह कर परिस्थिति समझाते हुए हनुमान् ने इसे आगे जाने के लिए कहा। उसने इसे सौगंधिक सरोवर का मार्ग बता कर कमलों के प्राप्त करने की विधि भी बताई (म. व. १४६-१५०)।

कुबेर से विरोध--यह सरोवरों से कमल प्राप्त करने के लिए सौगन्धिकवन पहुँचा। वहीं कैलास की तलहटी में स्थित कुबेर का सौगन्धिक सरोवर था, जिसकी रक्षा के लिए उसने क्रोधवश नामक राक्षस रख छोडे थे। इसका क्रोधवश नामक राक्षसों के साथ युद्ध हुआ, तथा इसने उन्हे परास्त कर भगा दिया, तथा कमल तोड़ने लगा (म. व. १५२.१६-२३)। राक्षस भग कर कुबेर के पास गए, तथा कुबेर ने इसे यथेच्छा विहार करने, एवं कमलों के तोड़ने की अनुमति प्रदान की (म. व. १५२.२४)।

उधर धर्मराज को कुछ अपशकुन दृष्टिगोचर होने लगे, जिससे शंकित होकर घटोत्कच के साथ वह भीम के पास आ पहुँचा। कुबेर ने उसका स्वागत किया, तथा धर्मराज एवं भीम को अतिथि के रूप में ठहरा कर उनका खूब आदरसत्कार किया। इस प्रकार भीम एवं कुबेर में मित्रता स्थापित हो गयी।

एक बार द्रौपदी ने भीम से क्रोधवश राक्षसों को मारकर सम्पूर्ण प्रदेश को भयरहित करने के लिए प्रार्थना की। भीम तत्काल राक्षसों के उत्पात को दमन करने के लिए निकला पड़ा, एवं अनेकानेक क्रोधवश राक्षसों को मार कर यमपुरी पहुँचा दिया। उनमें कुबेर का मित्र मणिमान् भी मारा गया (म. व. १५८)। जो बचे, वे फरियाद लेकर कुबेर के पास जा पहुँचे। पहले तो कुबेर क्रोध से लाल हो उठा, किन्तु बाद को उसे स्मरण हो आया कि, 'यह भीम की गल्ती नहीं, बल्कि अगस्त्य मुनि के द्वारा दिये गये शाप का परिणाम है, जीसे मुझे भुगतना पड़ रहा है'। ऐसा समझकर वह भीम के पास आया, तथा इससे सन्धि कर, कुछ दिनों तक अपने यहाँ रखकर, खूब आदरसत्कार किया (म. व. १५७-१५८)। पश्चात् धर्म के साथ इसने मेरु पर्वत के दर्शन किए, तथा पूर्ववत् गंधमादन पर्वत पर रहकर वनवास की अवधि पूरी करने लगा।

नहुषमुक्ति--एक बार अरण्य में प्रवेश करते समय अजगररूपधारी राजा नहुष ने भीम को निगल लिया। पश्चात् उसके द्वारा पूँछे गये प्रश्नों के उचित उत्तर देकर युधिष्ठिर ने भीम के उसके चंगुल से बचाया, तथा नहुष राजा भी अजगरयोनि से मुक्त हुआ (म. व. १७३; १७८; नहुष २. देखिये)।

दुर्योधन-चित्रसेन युद्ध--एक बार पाण्डवों को अपने वैभव का प्रदर्शन करने के लिए, कौरव अपनी पत्नियों को लेकर द्वैतवन में आ पहुँचे। वहाँ इन्द्र की आज्ञा से, चित्रसेन गन्धर्व ने उनको बन्दी बनाकर इन्द्र के पास ले जाने लगा। तब युधिष्ठर ने भीम से कहा कि, यह अपने भाइयों को कष्ट से मुक्त कराये। भीम ने दुर्योधन के पकड़े जाने पर प्रसन्नता प्रकट करते हुए, उसकी कटु आलोचना की। किन्तु युधिष्ठिर के समझाये जाने पर यह कौरवों को चित्रसेन से मुक्त करा कर वापस लाया, एवं युधिष्ठिर के सामने पेश किया। युधिष्ठिर ने सब को मुक्त किया (म. व. २३४-२३५)।

जयद्रथ से युद्ध--एक बार पाण्डव मृगया को गये थे, इसी बीच अवसर को देखकर, राजा जयद्रथ ने द्रौपदी एवं कुलोपाध्याय धौम्य ऋषि का हरण किया। परिस्थिति का ज्ञान होते ही, पाण्डवों ने जयद्रथ पर धावा बोल दिया। भीम ने बड़ी वीरता के साथ जयद्रथ से युद्ध किया, एवं उसे नीचे गिराकर अपने पैरों के ठोकर से उसके मस्तक को चूर कर, उसके बाल को काट कर, घसीटता हुआ युधिष्ठिर के सामने हाजिर किया। किन्तु धर्मराज ने उसे छोड़ दिया (म. व. २५४-२५५)।

यक्षप्रश्न--एक बार धर्मादि के लिए पानी लाने के लिए नकुल गया। वहाँ पर यक्षरूप यमधर्म ने उसे पानी लेने के पूर्व अपने प्रश्नों के उत्तर माँगे, किन्तु वह न माना, तथा पानी पिया, जिस कारण वह मृत हो कर गिर पड़ा। धर्म की आज्ञानुसार गये हुए सहदेव, अर्जुन, तथा भीम की यही स्थिति हुयी। अन्त में युधिष्ठिर ने यक्ष के प्रश्नों का तर्कपूर्ण उचित उत्तर देकर वर प्राप्त कर, सभी भाइयों को पुनः जीवित कराया (मं. व. २९७; युधिष्ठिर देखिये)।

अज्ञातवास--वनवास की अवधि समाप्त होने के बाद, अज्ञातवास का समय आ पहुँचा। द्रौपदी के साथ सारे पाण्डवों ने अपने वेश बदल कर, विराट राजा के यहाँ गुप्तरूप से रहने का निश्चय किया। उस समय भीम ने वहाँ पर बल्लव नाम धारण कर, रसोइये एवं पहलवान की जिम्मेदारी सँभाली। महाभारत की कई प्रतियों मे, इसका नाम 'पौरोगव बल्लव' दिया गया है

(बल्लव देखिये)। पाण्डवों के बीच इसका सांकेतिक नाम 'जयेश' था (म. वि. ५.३०; २२.१२)।

बल्लव का रूप धारण कर यह, विराट के दरबार में प्रविष्ट हुआ, एवं इसने यह सूचित किया कि, यह इससे पूर्व युधिष्ठिर के यहाँ का रसोइया था। जिस कारण विराट ने इसे अपनी पाकशाला का अधिपति बनाया (म. वि. ७)।

एकबार विराट की सभा में शंकरोत्सव में मल्लयुद्ध का आयोजन किया गया, उसमें जीमूत नामक मल्ल के द्वारा दी गयी चुनौती किसीने स्वीकार न की। यह डरता था कि कहीं लोग इसे पहचान न लें, फिर भी इसे मल्लयुद्ध में उतरना ही पड़ा, जिसमें भीम ने जीमूत को कुश्ती में हरा कर उसका वध किया (म. व. १२)।

कीचकवध—राजा विराट का साला कीचक, द्रौपदी पर मोहित होकर उस पर बलात्कार का प्रयत्न करने लगा। द्रौपदी ने उसी रात को पाकशाला में जा कर भीम को जगाया, तथा कीचक के वध की प्रार्थना की। भीम के द्वारा बताये हुए तरीके के अनुसार, द्रौपदी ने कीचक को नृत्यागार में बुलाया। वहाँ उसका एवं भीम का भयंकर युद्ध हुआ, जिससें इसने उसका वध किया (म. वि. २१.६२)।

सुबह कीचक के अनेकानेक बन्धुओं ने आ कर सैरन्ध्री (द्रौपदी) पर यह आरोप लगा या कि, उसके कारण ही यह सब कुछ हुआ। अतएव उसे पकड़ कर मृत कीचक के साथ जलाने की नियोजना की। वे उसे जलाने ही जा रहे थे, कि भीम विरूप वेशभूषा धारण कर, एक वृक्ष उखाड़ कर उनको मारने की ओर दौड़ा। उपकीचकों ने इसे इसप्रकार अपनी ओर आता हुआ देखकर समझ गये कि, यह सैरन्ध्री का गंधर्वपति आ टपका, अतएव वे अपनी जान छोड़ कर भागने लगे। किन्तु भीम से भग कर कहाँ जाते ? इसने एक सौ पाँच उपकीचकों का वध कर द्रौपदी को बन्धनमुक्त किया। पश्चात् यह एवं द्रौपदी भिन्नभिन्न मार्गों से नगर में वापस आये (म. वि. २२-२७)।

भीम-कृष्ण संवाद—भारतीय युद्ध के पूर्व, पाण्डवों की ओर से कृष्ण कौरवों के दरबार में गया था, एवं निवेदन किया था कि, पांडवों की उचित माँगों को ध्यान में रखकर उनके प्रति न्याय किया जाये। जाते समय भीम ने कृष्ण से कहा था, सामनीति के द्वारा यदि आपसी सम्बन्ध न टूटे, तो अच्छा है।

इस पर कृष्ण ने इससे कहा था, 'यह स्वभाव के विरुद्ध तुम क्या कह रहे हो' ? तब इसने कृष्ण को तर्कपूर्ण उत्तर देते हुए कहा था, 'आपने मुझे सही नहीं पहचाना। मैं पराक्रमी एवं बलशाली जरूर हूँ; किन्तु मैंनें यही देखा है कि, युद्धलिप्सा से राजकुल नष्ट हो जाते है। इतिहास साक्षी है कि, अभी तक भारत में अठारह कुलघातक (कुलनाशक) राजा ऐसे हुए, है जिन्होंने अपनी युद्धलिप्सा के कारण, अपने समस्त कुलों को जड़मूल से समाप्त कर दिया। इसी कारण मैं यही चाहता हूँ कि, जहाँ तक हो युद्ध से अलग रहकर कुरुकुल को नष्ट होने से बचायें' ('मा स्म नो भरता नशन्') भीम के चरित्र की यह उदात्त प्रवृत्ति, एवं समझदारी को देख कर कृष्ण चकित हो गया (म. उ. ७२-७४)।

भारतीय युद्ध—जिस युद्ध को टालने के लिए लाखों प्रयत्न किये गये वह भारतीय युद्ध शुरू हुआ, जिसमें कौरवों एवं पाण्डवों के साथ अनेकानेक वीर योद्धाओं ने भाग लिया।

प्रथम दिन—प्रथम दिन के युद्धारम्भ में दुर्योधन के साथ इसका द्वन्द्वयुद्ध हुआ (म. भी. ४३.१७-१८)। युद्ध प्रारम्भ होते ही, कलिंग देश के राजा भानुमान्, निषध देश के राजा केतुमान् तथा श्रुतायु ने भीम पर आक्रमण बोल दिया। भीम ने भी चेदि, मत्स्य तथा करुष को साथ ले कर उनपर आक्रमण किया। किन्तु उन सब के विरुद्ध कोई ठहर न सका, केवल भीम ही मैदान में डटा रहा। इसने कलिंगों के साथ युद्ध करते हुए भानुकुल के शक्रदेव का वध किया (म. भी. ५०.२१-२२)। पश्चात् इसने कलिंग राजा भानुमान् एवं उसके बाद चक्ररक्षक सत्य एवं सत्यदेव का वध किया। इसके बाद इसने निषध देश के राजा केतुमान् का भी वध किया। कलिंग देश की गजसेना को ध्वस्त कर के खून की नदियाँ बहा दी (म. भी. ५०.७७-८३)।

इतने कुचले जाने पर भी कलिंग ने पुनः तैयारी कर के, इस पर फिर चढाई कर दी। उस समय शिखंडी, धृष्टद्युम्न तथा सात्यकि इसकी सहायता के लिए आगे आये। ऐसी स्थिति देख कर, भीष्म ने कौरवसेना को व्यवस्थित कर के भीम पर धावा बोल दिया। उस समय भीम की ओर से सात्यकि ने भीष्म के सारथि को मार ड़ाला, जिस कारण भीष्म के रथ के अश्व इधरउधर भगने लगे (म. भी. ५०; ५१.१)।

चौथा दिन--भारतीय युद्ध के चौथें दिन, शल्य एवं धृष्टद्युम्न का घमासान युद्ध हुआ, जिसमें उन दोनों की सहायता करने के लिए उनके दस दस सहायक थे। उन सहायकों में शल्य के पक्ष में दुर्योधन, एवं द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न के पक्ष में भीम प्रमुख था। युद्ध के प्रारम्भ होते ही, भीम ने दुर्योधन पर आक्रमण किया, एवं दुर्योधन की समस्त गजसेना का संहार किया।

दुर्योधन की आज्ञा से उसकी सारी सेना ने पुनः भीम पर धावा बोल दिया, किन्तु भीम ने उस सारी सेना का संहार किया। कौरवसेना की यह दुरवस्था देखकर उनके सेनापति भीष्म ने स्वयं भीम पर आक्रमण किया (म. भी. ५९.२१)। उसी समय सात्यकि ने भीष्म पर हमला किया, एवं यह सुअवसर देखकर भीम पुनः एक बार दुर्योधन से भिड़ गया। इस युद्ध में दुर्योधन ने एक बाण भीम की छाती में मारकर इसे घायल कर दिया। मूर्च्छा से उठते ही, भीम ने अद्भुत पराक्रम दिखाकर निम्नलिखित धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया :--सेनापति, जलसंध, सुषेण, उग्र, वीरबाहु, भीम, भीमरथ एवं सुलोचन (म. भी. ५८-६०)।

छठवा दिन—भारतीय युद्ध के छठवे दिन, भीम ने अत्यधिक पराक्रम दिखा कर शत्रुओं का अपने गदा से इस प्रकार विनाश किया, जैसे कोई हँसिये से घास काटता है, अथवा कोई डंडे से मिट्टी के ढेले फोड़ता है। किन्तु इस युद्ध में यह असंख्य बाणों से घायल होकर इतना बिंध गया, कि द्रुपदपुत्र ने इसे अपने रथ में उठाकर शिबिर में वापस लाया (म. भी. ७३.३६-३७)।

आठवा दिन--युद्ध के आठवे दिन, भीष्म अत्यधिक संतप्त हो कर युद्धभूमि में आया, किन्तु रणांगण में प्रवेश करते ही भीम ने उसके सारथी को मार डाला, जिस कारण भीष्म का रथ इधर उधर भागने लगा।

पश्चात्, धृतराष्ट्रपुत्र सुनाभ का भीष्म ने वध किया, जिस कारण संतप्त होकर धृतराष्ट्र के सात पुत्रों ने भीम पर आक्रमण किया, जिनके नाम इस प्रकार थेः—आदित्य-केतु, बह्वाशी, कुंडधार, महोदर, अपराजित्, पंडितक, एवं विशालाक्ष। किंतु भीम ने इन धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया (म. भी. ८४.१४-२८)।

इसी दिन संध्या के समय भीम ने निम्नलिखित धृतराष्ट्र-पुत्रों का वध किया :— अनाधृष्टि, कुंडभेदिन्, वैराट, कुंडलिन्, दीर्घलोचन, विराज, दीप्तलोचन, दीर्घबाहु, सुबाहु, एवं कनकध्वज (मकरध्वज) (म. भी. ९२.२६)।

नौवाँ दिन--युद्ध के नौवें दिन कौरवपक्षीय भगदत्त एवं श्रुतायु राजा ने अपने गजदल की सहायता से भीम को घेर कर वध करने का प्रयत्न किया। किन्तु भीम ने सारे गजदल के साथ उन्हें परास्त किया (म. भी. ९८)।

दसवाँ दिन--युद्ध के दसवें दिन, भीम को एक साथ ही दस राजाओं के साथ युद्ध करना पड़ा, जिनके नाम इस प्रकार थेः--भगदत्त, कृप, शल्य, कृतवर्मा, आवंत्य बंधु, जयद्रथ, चित्रसेन, विकर्ण एवं दुर्मर्षण। किन्तु यह इस युद्ध में अजेय रहा।

उसी समय शिखण्डी को आगे कर, अर्जुन भीष्म पर आक्रमण कर रहा था कि, यह दूसरी ओर से हट कर अर्जुन की सहायता के लिए आ पहुँचा। दोनो ने मिल कर भीष्म पर जोर-शोर के साथ युद्ध करना आरम्भ किया। इस युद्ध में अर्जुन ने अपने भीषण बाणों से भीष्म के सारे शरीर को बिंधा दिया (म. भी. १०९.७)।

ग्यारहवाँ दिन--युद्ध के ग्यारहवें दिन, अभिमन्यु ने शल्य के सारथि का वध किया, जिससे क्रोधित हो कर शल्य ने उसे गदायुद्ध के लिए चुनौती दी। किन्तु अभिमन्यु को हटा कर भीम स्वयं उससे गदायुद्ध करने लगा। इस युद्ध में भीम ने शल्य को युद्ध में मूर्च्छित किया (म. द्रो. १३)।

चौदहवाँ दिन—युद्ध के चौदहवें दिन, अर्जुन जयद्रथ का वध करने के लिए गया। किन्तु उसे काफ़ी समय लग जाने के कारण, युधिष्ठिर ने अर्जुन की रक्षा के लिए भीम को भेजा। अर्जुन की सहायता के लिए जब यह आगे बढ़ा, तब इसे सत्रह राजाओं ने उस तक पहुँचने में बाधा डाली। इसने उन सभी को परास्त किया, जिनके नाम निम्नलिखित थे :—दुःशल, चित्रसेन, कुंडभेदिन्, विविंशति, दुर्मुख, दुःसह, विकर्ण, शल, विंद, अनुविंद, सुमुख, दीर्घबाहु, सुदर्शन, वृंदारक, सुहस्त, सुषेण, दीर्घलोचन, अभय, रौद्रकर्मन्, सुवर्मन् एवं दुर्विमोचन।

आगे चल कर, कौरवसेनापति द्रोण स्वयं इसके मार्ग में बाधक बन कर उपस्थित हुआ। इसका एवं द्रोण का उग्र वादविवाद हुआ, एवं वाद को द्रोण से चिढ़ कर इसने उनका रथ भग्न किया। आगे चल कर, इसने दुःशासन को पराजित किया, एवं कुंडभेदी, अभय एवं रौद्रकर्मन्

आदि राजाओं को पुनः एक वार परास्त कर, यह आगे बढ़ा।

पश्चात्, द्रोण फिर एक वार इसके मार्ग का बाधक हुआ। फिर भीम ने उसके एक के पीछे एक कर के आठ रथों को ध्वस्त कर, द्रोण को युद्ध में परास्त किया। इस प्रकार, यह अर्जुन तक पहुँच गया, एवं शंखनाद के द्वारा अर्जुन तक कुशलपूर्वक पहुँचने की सूचना इसने युधिष्ठिर को दी।

कर्ण से युद्ध—इसे अर्जुन के समीप आता हुआ देख कर, कर्ण ने इस पर आक्रमण किया। फिर भीम ने कर्ण के रथ के अश्वों को मार कर, उसे रथविहीन कर दिया, जिस कारण कर्ण वृषसेन के रथ में बैठ कर वापस चला गया। इसी युद्ध में भीम ने दुःशल का वध किया (म. द्रो. १०४)।

अपने नये रथ में बैठ कर कर्ण युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ, एवं भीम को पुनः युद्ध के लिए आवाहन किया। भीम ने आवाहन स्वीकार कर, उसे दो वार मूर्च्छित एवं रथविहीन कर के, युद्धभूमि से भग जाने के लिए विवश किया। इस युद्ध में भीम ने दुर्मुख का वध किया (म. द्रो. १०९. २०)।

कर्ण को परास्त होता देख कर, दुर्मर्षण, दुःसह, दुर्मद, दुर्धर तथा जय नामक योद्धाओं ने भीम पर आक्रमण किया। किन्तु भीम ने उन सबका वध किया। फिर दुर्योधन ने अपने भाइयों में से शत्रुंजय, शत्रुसह, चित्र, चित्रायुध, दृष्ट, चित्रसेन एवं विकर्ण को कर्ण की सहायता के लिए भेजा। किन्तु भीम के द्वारा ये सभी लोग मारे गये। इन सभी दुर्योधन के भाइयों में भीम विकर्ण को अत्यधिक चाहता था। इसलिए उसकी मृत्यु पर भीम को काफ़ी दुःख हुआ। इसी युद्ध में भीम ने चित्रवर्मा, चित्राक्ष एवं शरासन का भी वध किया (म. द्रो. ११०-११२)।

इसके उपरांत भीम एवं कर्ण का पुनः एकवार युद्ध हुआ, जिसमें कर्ण को फिर एकवार हारना पड़ा। इस प्रकार कई वार भीम से हार खाने के उपरांत, कर्ण ने भीम से युद्ध करने का हठ छोड़ दिया (म. द्रो. ११४)। इसी युद्ध में कर्ण ने एक बार इसे, 'अत्यधिक भोजन भक्षण करनेवाला रसोइया' कह कर चिढ़ाया, जिससे चिढ़ कर इसने अर्जुन से अनुरोध किया कि, कर्ण को शीघ्रातिशीघ्र मार कर वह कर्णवध की अपनी प्रतिज्ञा पूरी करें (म. द्रो. ११४)।

रौद्र पराक्रम—उसी दिन हुए रात्रि युद्ध के समय, अपने पिता की मौत का बदला लेने के लिए, भानुमान् कलिंग के पुत्र ने भीम पर आक्रमण किया, जिसका इसने एक घूँसे का प्रहार मार कर वध किया। बाद को इसने कौरवपक्षीय ध्रुव राजा एवं जयरात के रथों पर कूद कर, उन्हें अपने घूँसे एवं थप्पड़ों से मार कर, काम तमाम किया। इसी प्रकार दुष्कर्ण को भी रौंद कर उसका वध किया (म. द्रो. १३०)।

पश्चात् इसका बाह्लीक राजा से युद्ध हुआ, जिस में इसने उसके पुत्र को मूर्च्छित किया। बाह्लीक ने स्वयं भीम को भी मूर्च्छित किया। मूर्च्छा हटते ही, इसने फिर कौरवसेना का संहार शुरू कर दिया, तथा दृढरथ, नागदत्त, विरजा एवं सुहस्त नामक योद्धाओं का वध किया (म. द्रो. १३२)। इसी संहार में इसने दुर्योधन एवं कर्ण को पुनः एक बार पराजित किया, जिसमें कर्ण के रथ, धनुपादि को कुचल दिया। कर्ण ने भी इसका रथ भग्न कर दिया, जिसके कारण इसे नकुल के रथ का सहारा लेना पड़ा (म. द्रो. १६१)।

इसी दिन कौरव सेनापति द्रोण ने द्रुपद एवं विराट राजा का वध किया, जिसका बदला लेने के लिए द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न को साथ ले कर भीम ने द्रोण पर हमला कर दिया। किन्तु उसका कुछ फायदा न हुआ। द्रोण के द्वारा दिखाई गई वीरता, एवं उसके परिणाम से सभी पाण्डवों के पक्ष के लोग भयभीत एवं त्रस्त हो उठे।

पंद्रहवाँ दिन—पंद्रहवें दिन, कृष्ण ने पाण्डवों के बीच बैठ कर, द्रोणाचार्य के मारने की योजना को समझाते हुए कहा, 'द्रोणाचार्य को खुले मैदान में जीतना असम्भव है, उसे किसी चालाकी के साथ ही जीता जा सकता है। मेरा यह प्रस्ताव है कि, उसे विश्वास दिला दिया जाये कि, उसका पुत्र अश्वत्थामा मर गया है। इसका परिणाम यह होगा कि, वह पुत्रशोक में विह्वल हो कर अस्त्र नीचे रख देगा। फिर उसे मारना कठिन नहीं।' कृष्ण की सलाह के अनुसार, भीम ने अपनी सेना में से किसी इंद्रवर्मा नामक योद्धा के अश्वत्थामा नामक हाथी को गदाप्रहार से मार दिया। पश्चात् यह द्रोण के रथ के पास जा कर चिल्लाने लगा, 'अश्वत्थामा मर गया'।

द्रोणवध—यह बात सुनते ही, पुत्रशोक से विह्वल द्रोण ने अपने शस्त्रादि नीचे रख दिये, एवं इस प्रकार असहाय स्थित में द्रोण को देख कर, द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न ने क्रूरता के साथ उसका वध किया (म. द्रो. १६४)। अपने गुरु की इस

प्रकार घृणित हत्या को देख कर, अर्जुन शोकाकुल हो उठा, एवं उसे युद्ध के प्रति ऐसी विरक्ति उत्पन्न हो गयी, जैसे उसे युद्ध के प्रारम्भ में हुयी थी। अर्जुन ने कहा, 'जिस युद्ध में इस प्रकार की अधार्मिक कार्यप्रणालियों का प्रयोग करना पड़ता है, वह युद्ध मैं नहीं करूँगा'। इस पर भीम ने अर्जुन की बड़ी कटु आलोचना करते हुए कहा, 'गुरु द्रोणाचार्य ब्राह्मण थे, और फिर भी क्षत्रियों की भाँति युद्ध-भूमि में उतरे। इससे बड़ा अधर्म क्या हो सकता है? रही बात कि, तुम युद्धभूमि को छोड़ कर जा रहे हो, तो जा सकते हो। तुम्हे घमण्ड है अपने शस्त्रशक्ति की, पर तुम नहीं जानते कि, अकेला भीम कौरवसेना के संहार करने में समर्थ है' (म. द्रो. १६८)।

अपने पिता के शोक में संतप्त अश्वत्थामा ने क्रोधाग्नि में उबल कर भीम के ऊपर 'नारायण अस्त्र' का प्रयोग किया, जिससे त्रस्त हो कर भीम तथा इसकी सेना शस्त्रादि छोड़ कर हतबुद्धि हो कर भगने लगी। अश्वत्थामा के नारायण अस्त्र को समेट लेने के लिए, अर्जुन ने वारुणि अस्त्र का प्रयोग कर, अश्वत्थामा को रथ के नीचे खींच कर उसे शस्त्रविहीन कर दिया। नारायण अस्त्र के शमन के उपरांत, भीम पुनः ससैन्य आया। किन्तु अश्वत्थामा के द्वारा इसका सारथी घायल हुआ, जिससे इसे युद्धभूमि से हटना पड़ा (म. द्रो. १७०-१७१)।

सोलहवाँ दिन--युद्ध के सोलहवें दिन कर्णार्जुनों के द्वारा व्यूहरचना होने के उपरांत भीम तथा क्षेमधूर्ति का हाथी पर से युद्ध हुआ। भीम ने क्षेमधूर्ति को पराजित कर, हाथी मार कर उसे नीचे उतरने के लिए मजबूर किया, एवं बाद में उसका वध किया (म. क. ८)। कुछ देर के उपरांत, अश्वत्थामा एवं भीम के बीच में घोर संग्राम हुआ, जिसमें दोनों एक दूसरे के शरों से घायल हो कर मूर्च्छित हुए, तथा अपने अपने सारथियों के द्वारा युद्ध-भूमि से हटाये गये (म. क. ११)।

सत्रहवाँ दिन—सत्रहवें दिन दुर्योधन ने जब देखा कि, उसकी समस्त सेना बुरी तरह ध्वस्त होती जा रही है, तब उसने अपना सेना का सुसंगठन कर के, भीम को समाप्त करने के लिए, स्वयं युद्धभूमि में उतर कर उस पर धावा बोल दिया। किन्तु भीम ने उसको पराजित कर उसकी समस्त गजसेना को पराजित किया (म. क. परि. १. क्र. १४-१५)।

कर्ण से युद्ध—कुछ देर के बाद कर्ण तथा भीम का युद्ध हुआ। कर्ण भीम से लड़ाई में परास्त हो कर युद्धभूमि से विमुख हो कर भाग जाने ही वाला था, कि दुर्योधन ने अपने भाइयों को युद्ध के लिए उत्तेजित करते हुए, भीम के विरुद्ध लड़ने के लिए प्रोत्साहित किया। उन सब के साथ भीम का घोर युद्ध हुआ, जिसमें इसने विवित्सु, विकट, सह, क्रोथ, नंद तथा उपनंद आदि धृतराष्ट्रपुत्रों का वध कर, श्रुतवा, दुर्धर, सम निषंगी, कवची, पाशी, दुष्प्र, धर्ष, सुबाहु, वातवेग, सुवर्चस्, धनुर्ग्रह, तथा शल आदि को युद्ध में परास्त किया।

तब तक कर्ण पुनः तैयार हो कर युद्धभूमि में आ पहुँचा। लेकिन भीम ने उसे एक ही बार में वेध दिया। इससे कर्ण क्रोध में पागल हो उठा, और उसने भीम का ध्वज अपने बाण से उखाड़ कर, इसके सारथी को काट कर इसे रथ-विहीन कर दिया (म. क. ३५)। कर्ण के बाणों से विंध कर युधिष्ठिर बिल्कुल त्रस्त हो गया। भीम को, जैसे ही यह पता चला, वैसे ही इसने अर्जुन को उसके समाचार जानने के लिए भेज दिया (म. क. ४५)।

कुछ समय के उपरांत, भीम दत्तचित्त हो कर दुर्योधन की सेना के संहार करने में जुट गया। दुर्योधन की आज्ञा से शकुनि ने भीम पर आक्रमण किया, किन्तु इसने उसे भूमि पर गिरा दिया, और वह बाद में दुर्योधन के रथ के द्वारा बाहर लाया गया (म. क. ४५)।

दुःशासनवध—शकुनि को परास्त हुआ देख कर दुःशासन आगे आया, एवं भीम पर आक्रमण बोल दिया। उसे देखते ही भीम ने उसके सारथी एवं घोड़े मार डाले, एवं उसे जमीन पर गिरा कर, स्वयं रथ से उतर कर, उसके हाथ को तोड़ डाला। पश्चात् उसकी छाती फोड़ कर, इसने उसके रक्त का प्राशन किया, तथा उसके रक्त के सने हाथों से द्रौपदी की वह वेणी गूँथी, जो दुःशासन द्वारा मुक्त की गयी थी (पद्म. उ. १४९)। इस प्रकार भीम ने दुःशासन को मार कर अपना प्रण पूरा किया। इसी समय इसने अलंबु, कवची, खड्गिन्, दण्डधार, निषंगी, वातवेग, सुवर्चस् पाशी, धनुर्ग्रह अलोलुप, शल, संध (सत्यसंध) आदि धृतराष्ट्रपुत्रों का वध किया (म. क. ६१-६२)।

अठारहवाँ दिन--अठारहवें दिन के युद्ध में कृतवर्मा ने भीम के घोड़े को मार डाला, तथा भीम द्वारा नये घोड़ों के प्रयोग किये जाने पर, अश्वत्थामा ने उन्हें भी मार डाला। भीम ने यह देख कर कृतवर्मा का रथ विध्वंस कर, शल्य से युद्ध कर, उसके सारथी को मार डाला। यह देखकर,

वह इससे गदायुद्ध करने लगा, जिसमें इसने उसे मूर्च्छित कर पराजित किया (म. श. १२)।

इसने इक्कीस हज़ार पैदल सेना एवं न जाने कितना गजसेना का विनाश किया। इससे लड़ने के लिए निम्नलिखित धृतराष्ट्रपुत्र आये। किन्तु इसने सब का वध किया:- दुर्मर्षण, श्रुतान्त (चित्राङ्ग) जैत्र, भूरिबल (भीमबल), रवि, जयत्सेन, सुजात, दुर्विषह (दुर्विषाह), दुर्विमोचन, दुष्प्रधर्ष (दुष्प्रधर्षण), श्रुतवान् (म. श. २५.४-१९)। इसके बाद धृतराष्ट्रपुत्र सुदर्शन का भी इसने वध किया (म. श. २६)।

दुर्योधनवध--दुर्योधन को 'जलस्तंमन विद्या' आती थी, अतएव वह जलाशय के अन्दर, पानी में छिपकर बैठ गया। पाण्डवों को इसका पता चला, एवं वे जलाशय के निकट आकर उसे युद्ध के लिए आह्वान करने लगे। युधिष्ठिर ने सहजभाव से कहा, 'हम सब से एक साथ तुम युद्ध न करो। हम पाँचो में जिससे चाहो युद्ध कर सकते हो, और उस युद्ध यें यदि तुम उसे हरा दोगे, तो हम पूरा राज्य तुम्हे दे देंगे'। यह सुन कर कृष्ण आगे आया, और भीम को आगे करते हुए कहा, 'किसी और को नहीं, भीम को ही जीत लो। समस्त राज्य तुम्हारा है'। इस प्रकार दुर्योधन को भीम से भिड़ा दिया गया। कारण, कृष्ण जानता था कि, दुर्योधन गदायुद्ध में प्रवीण है; उसका जवाब केवल भीम ही है, और कोई नहीं।

इस प्रकार दुर्योधन एवं भीम की लढ़ाई टक्कर के साथ होने लगी। अर्जुन ने कृष्ण की सलाह से अपनी बायी जाँघ ठोंक कर भीम को संकेत दिया कि, इसने क्या पण किया था। अपनी प्रतिज्ञा का ध्यान आते ही, भीम ने भीषण गदाप्रहार से दुर्योधनकी जाँघ तोड़ दी एवं उसे नीचे गिरा दिया। इसने दुर्योधन का तिरस्कार करते हुए एक लात कस कर उसके मस्तक पर ऐसी मारी कि, तत्काल उसकी मृत्यु हो गयी -(म. श. ५८.१२)। बलराम क्रोधित हो कर भीम पर आक्रमण करने के लिए दौड़ा, तथा कहा 'यह अधर्म युद्ध है'। किन्तु, कृष्ण ने उसे तत्काल समझा कर रोक लिया (म. श. ५९.२०-२१)।

अश्वत्थामावध—द्रौपदी शोक में संतप्त युधिष्ठिर से कहने लगी कि, वह अश्वत्थामा की मृत्यु का समाचार सुनाना चाहती हैं, जिसने उसके पुत्रों का वध किया है। युधिष्ठिर उसको समझाने लगा। तब वह भीम के पास आयी तथा कहा 'अश्वत्थामा को मार कर उसका मणि ले आओ, तभी मुझे शांति मिलेगी'। यह अश्वत्थामा से युद्ध करने के लिए चल पड़ा, तथा साथ में अर्जुन भी इसकी रक्षार्थ गया। भीम ने अश्वत्थामा के साथ घोर युद्ध किया, जिसमें वह इसकी शरण में आया तथा अपनी मणि निकाल कर दे दी (म. सौ. ११-१६)।

धृतराष्ट्रविद्वेष--भारतीय युद्ध के उपरांत, सभी लोग हस्तिनापुर पहुँचे। वहाँ आपस के वैमनस्य को भूल कर एकता के साथ रहने की बात धृतराष्ट्र ने रक्खी, तथा पाण्डवों के साथ आलिंगन कर गले मिलने की अभिलाषा प्रकट की। युधिष्ठिर से गले मिलने के बाद, जैसे उसने भीम को बुलाया, वैसे ही उसकी मुखमुद्रा भाप कर, कृष्ण ने भीम को हटा कर अन्धे धृतराष्ट्र के आगे भीम के क़द की लौहप्रतिमाला खड़ी की। धृतराष्ट्र भीम का नाम सुनते ही खौल उठता था। अतएव उस लौहप्रतिमा को भीम समझ कर इतनी जोर से आलिंगन किया कि, मुर्ति चूर चूर होकर ध्वस्त हो गयी। बाद को जब उसे पता चला कि, वह मूर्ति थी, तो मन में बड़ा लज्जित हुआ। यह देख कर कृष्ण ने धृतराष्ट्र को बहुत बुराभला कहा (म. स्त्री १२-१३)।

भीम गांधारी से भी मिलने गया, एवं उसे अपनी सफ़ाई देते हुए क्षमा माँगी, जिससे सुन कर गांधारी शान्त हुई (म. स्त्री. १४)।

युवराजपद--धर्मराज युधिष्ठिर को संबोधित करते हुए भीम ने संन्यास का विरोध किया, एवं कर्तव्यपालन पर ज़ोर देते हुए कहा कि, वह दुःखों की स्मृति एवं मोह को त्याग कर, मन को क़ाबू में रख कर राज्यशासन करे, एवं पाप के नाश के लिए अश्वमेध यज्ञ कर धर्म की स्थापना करे। धर्मराज ने भीम की सलाह मान कर इसे युवराज के रूप में अभिषेक किया (म. शां. ४१.८)।

बाद में सारे पाण्डवो धृतराष्ट्र से प्रेम व्यवहार रखने लगे, किन्तु भीम धृतराष्ट्र को फूटी आँखो न देख सकता था। जब धृतराष्ट्र ने वन जाने के लिए इच्छा प्रकट की, एवं राजकोष से धन की माँग की, तब भीम ने उसका विरोध किया। तब युधिष्ठिर तथा अर्जुनादि ने अपने कोषों से उसे द्रव्य दिया (म. आश्र. १७)।

भीमजलाकी एकादशी—एक बार व्यास ने इसे निर्जला एकादशी के माहात्म्य को बताया। उसे करने को यह तैयार तो हुआ, किन्तु भोजनभक्त होने के कारण, यह सोच में पड़ा गया कि, मुझे इस व्रत को हर माह पड़ेगा। किन्तु जब इसे

पता चला कि, बिना किसी भोजन तथा जलग्रहण किये हुए केवल एक बार इस व्रत को कर लेने से, सब एकादशियों का फल प्राप्त होता है, तो यह तत्काल तैयार हो गया। तब से ज्येष्ठ माह की शुद्ध एकादशी व्रत को 'भीमजलाकी एकादशी', एवं उसके दुसरे दिन को 'पाण्डव द्वादशी' कहते हैं (पद्म. उ. ५१)।

गर्वपरिहार—स्कंदपुराण में भीम के अहंकारनाश की एक कथा दी गई है। एकबार युद्ध समाप्ति के उपरांत, सभी पाण्डवों के साथ कृष्ण उपस्थित था। बातचीत के बीच सब ने युद्धविजय का श्रेय कृष्ण को देना आरम्भ किया, जिसे सुनकर भीम अहंकार के साथ कहने लगा, 'यह मैं हूँ, जिसने अपने बल से कौरवों का नाश किया है। श्रेय का अधिकारी मै हूँ'।

तब गरुड़ पर बैठकर कृष्ण भीम को अपने साथ लेकर आकाशमार्ग से दक्षिण दिशा की ओर उड़ा। समुद्र तथा सुवेल पर्वत लाँघ कर लंका के पास बारह योजन व्यास के सरोवर को दिखा कर, कृष्ण ने भीम से कहा कि, यह उसके तल का पता लगा कर आये। चार कोस जाने पर भी भीम को उसके तल का पता न चला। वहाँ के तमाम योद्धाओं उसके ऊपर आक्रमण करने लगे। तब यह हाँफता हुआ ऊपर आया, एवं अपनी असमर्थता बताते हुए सारा वृत्तांत कह सुनाया। कृष्ण ने अपने अँगूठे के झटके से उस सरोवर को फेंक दिया, एवं इससे कहा, 'यह राम द्वारा मारे गये कुंभकर्ण की खोपडी है, तथा तुम पर आक्रमण करने वाले योद्धा, सरोगेय नामक असुर हैं'। यह चमत्कार देखकर भीम का अहंकार शमित हुआ, एवं लज्जित होकर इसने कृष्ण से माफी माँगी (स्कंद. १.२.६६)।

मृत्यु—काफी वर्षों तक राज्यभोग करने के उपरांत, अग्नि के कथनानुसार, पाण्डवों ने शस्त्रसंन्यास एवं राज्यसंन्यास लिया, एवं वे उत्तर दिशा की ओर मेरु पर्वत पर की ओर अग्रसर हुए। मेरु पर्वत पर जाते समय युधिष्ठिर को छोड़ कर द्रौपदी सहित सारे पाण्डव इस क्रम से गल गये :- द्रौपदी, सहदेव, नकुल अर्जुन एवं भीम। स्वर्गारोहण के पूर्व ही अपना पतन देखते हुए, इसने युधिष्ठिर से उसका कारण पूछाँ। युधिष्ठिर ने कारण बताते हुए कहा, 'तुम अपने को बलशाली तथा दूसरे के तुच्छ मानते थे, तथा अत्यधिक भोजनप्रिय थे। इसी लिए तुम्हारा पतन हो रहा है' (म. महा. २)।

मृत्यु के समय इसकी आयु एक सौ सात साल की थी (युधिष्ठिर देखिये)।

परिवार—भीम की कुल तीन पत्नियाँ थी :—हिडिंबा, द्रौपदी एवं काशिराज की कन्या बलधरा। उनमें से द्रौपदी से इसे सुतसोम नामक पुत्र हुआ (म. आ. ५७.९१)। हिडिंबा से इसे घटोत्कच नामक पुत्र हुआ। भागवत में द्रौपदी से उत्पन्न इसके पुत्र का नाम श्रुतसेन दिया गया है।

काशिराज कन्या बलधरा को स्वयंवर में जीत कर प्राप्त किया था। उससे इसे शर्वत्रात नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.८४)। भागवत में इसकी तीसरी पत्नी का नाम 'काली' दिया गया है, एवं उससे उत्पन्न पुत्र का नाम 'सर्वगत' बताया गया है (काली देखिये; भा. ९.२२.२७-३१)। महाभारत के अनुसार, इसकी पत्नी काली चेदि देश के सुविख्यात राजा शिशुपाल की बहन थी, जो भीम का कट्टर शत्रु था (म. आश्र. ३२.११)।

भीमसेन पारिक्षित—सुविख्यात पूरुवंशीय सम्राट परिक्षित् का पुत्र, जो जनमेजय पारिक्षित का बन्धु था (श. ब्रा. १३.५.४.३)। शौनक नामक आचार्य ने इससे एक यज्ञ करवाया था (सां. श्रौ. १६.९.३; विष्णु. ४.२०.१; म. आ. ३.१)। कुरुक्षेत्र में किये यज्ञ में इसने देवताओं की कुत्तियाँ सरमा के बेटे को पीटा था।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो अरुग्वत् पुत्र परिक्षित् (द्वितीय) का पुत्र था। इसकी माता का नाम सुयशा था। इसकी पत्नी का नाम सुकुमारी था, जो केकय देश की राजकुमारी थी। सुकुमारी से इसे पर्यश्रवस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. ९०-४५)।

भीरु—मणिभद्र नामक दक्ष के पुत्रों में से एक। इसकी माता का नाम पुण्यजनी था।

भीषण—एकचक्रा नगरी में रहनेवाले बक नामक असुर का पुत्र। इसके पिता का वध भीमसेन के द्वारा हुआ (बक देखिये)। अपने पितृवध के कारण, यह मन ही मन जलता रहा, जिसके कारण आगे चल कर, इसने पांडवों का अश्वमेधीय अश्व एकचक्रा नगरी के समीप पकड़ लिया। पश्चात् अर्जुन ने इसके साथ घोर युद्ध कर इसका वध किया (जै. अ. २२)।

२. एक असुर, जिसे हनुमान् ने परास्त किया था (पद्म. उ. २०६)।

३. (सो. विदूरथ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार हृदिक राजा का पुत्र था।

भीष्म—(सो. कुरु.) सुविख्यात राजनीति एवं रणनीति शास्त्रज्ञ जो कुरु राजा शन्तनु के द्वारा गंगा नदी के गर्भ से उत्पन्न हुआ था। अष्टवसुओं में से आठवें वसु के अंश से यह उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.५०)। इसका मूल नाम 'देवव्रत' था। गंगा का पुत्र होने के कारण, इसे 'गांगेय' 'जाह्नवीपुत्र,' 'भागीरथीपुत्र' आदि नामांतर भी प्राप्त थे। 'भीष्म' का शाब्दिक अर्थ 'भयंकर' है। इसने अपने पिता शन्तनु के सुख के लिए आजन्म अविवाहित रहने एवं राज्यत्याग करने की भयंकर प्रतिज्ञा की थी। इसीसे इसे 'भीष्म' कहा गया।

ध्येयवादी व्यक्तित्व—एक अत्यधिक पराक्रमी एवं ध्येयनिष्ठ राजर्षि के रूप में भीष्म का चरित्रचित्रण श्री व्यास के द्वारा महाभारत में किया गया है। परशुराम जामदग्न्य के समान युद्धविशारदों को युद्ध में परास्त करनेवाला भीष्म महाभारतकालीन सर्वश्रेष्ठ पराक्रमी क्षत्रिय माना जा सकता है।

अपने इस पराक्रम के बल पर कुरुकुल का संरक्षण करना, एवं उस कुल की प्रतिष्ठा को बढाना, यही ध्येय भीष्म के सामने आमरण रहा। कुरुवंशीय राजा शंतनु से ले कर चित्रांगद, विचित्रवीर्य, पाण्डु, धृतराष्ट्र तथा दुर्योधन तक कौरववंश की 'संरक्षक देवता' के रूप में यह प्रयत्नशील रहा।

अपने इस ध्येय की पूर्ति के लिये, अपनी तरुणाई में सभी विलासादि से यह दूर रहा, एवं वृद्धावस्था में मोक्षप्राप्ति के प्रति कभी उत्सुक न रहा। यह चाहता था केवल कुरुवंश का कल्याण एवं प्रतिष्ठा, जिसके लिए यह सदैव प्रयत्नशील रहा।

भीष्म का दैवदुर्विलास यही था कि, जिस कुरुवंश की महत्ता के लिए यह आमरण तरसता रहा, उसी कुरुकुल का संपूर्ण विनाश इसके आँखों के सामने हुआ, एवं इसके सारे प्रयत्न विफल साबित हुए। चित्रांगद, विचित्रवीर्य, पाण्डु, धृतराष्ट्र जैसे अल्पायु, कमजोर एवं शारिरीक व्याधीउपाधियों से पीडित राजाओं के राज्य को अपने मजबूत कंधों पर सँभलनेवाला भीष्म, भारतीययुद्ध के काल में कुरुवंश को आपसी दुही से न बचाया सका।

इसी कारण, भारतीय युद्ध के दसवें दिन, इसने अत्यंत शोकाकुल हो कर अर्जुन से कहा, 'मुझे युद्ध में परास्त कर मेरा पराजय करने की ताकद दुनिया में किसी को भी नही है। किंतु मेरा दुर्भाग्य यही है कि, पराजित हो कर ही मुझे मृत्यु प्राप्त करनी है। अतएव, मुझे युद्ध में हरा कर, तुम विजय प्राप्त करो'।

योग्यता—भीष्म सर्वशास्त्रवेत्ता, परम ज्ञानी एवं तत्त्वज्ञान का महापंडित था। यह किसी की समस्याओं की तत्काल सुलझा देनेवाला, संशय का शमन करनेवाला, तथा जिज्ञासुओं की शंकासमाधान करनेवाला सात्विक विचारधारा का उदार महापुरुष था। यह रणविद्या, राजनीति, अर्थशास्त्र, एवं अध्यात्मज्ञान के साथ धर्म, नीति, एवं दर्शन का परमवेत्ता था।

गंगा ने वसिष्ठद्वारा, इसे समस्त वेदों में पारंगत कराया था। बृहस्पति तथा शुक्राचार्य के द्वारा इसने अस्त्रशस्त्र का ज्ञान प्राप्त किया था। परशुराम से अन्य आस्त्र शास्त्रो के साथ धनुर्वेद, राजधर्म तथा अर्थशास्त्र भी सीखा था (म. आ. ९४.३१-३६)। इसके अतिरिक्त च्यवन भार्गव से साङ्गवेद, वसिष्ठ से महाबुद्धि, पितामहसुत से अध्यात्म, एवं मार्कण्डेय से यतिधर्म का ज्ञान प्राप्त किया था। शुक्र तथा बृहापति का तो यह साक्षात् शिष्य ही था। यह किसी के मारने से न मरनेवाला 'इच्छामरणी' था, अर्थात जब यह चाहे तभी इसकी मृत्यु सम्भव थी (म. शां. ३८.५-१६; ४६. १५-२३)।

जन्म—ब्रह्मा के शाप के कारण, गंगा नदी को पूरुवंशीय राजा शंतनु की पत्नी बनना पड़ा। वसिष्ठ के शाप तथा इंद्र की आज्ञा से अष्टवसुओं ने गंगा के उदर में जन्म लिया। उनमें से सात पुत्रों को गंगा ने नदी में डुबो दिया। आठवाँ पुत्र 'द्यु' नामक वसु का अंश था, जिसको डुबाते समय शंतनु ने गंगा से विरोध किया। यही पुत्र भीष्म है, जिसे साथ ले कर गंगा अन्तर्धान हो गयी। इस आठवें पुत्र को वसुओं द्वारा यह शाप दिया गया था कि, यह निःसंतान ही होगा।

अपने पुत्र भीष्म को गंगा को दे देने के उपरांत, करीब छत्तीस वर्षों के उपरांत शंतनु मृगया खेलने गया। हिरन के पीछे दौड़ता हुआ गंगा नदी के पास आ कर उसने देखा कि, यकायक उसका पानी कम हो गया। शंतनु को आश्चर्य की सीमा न रही। जब उन्होंने देखा कि, एक सुन्दर बालक ने अपने अचूक शरसंधान के द्वारा गंगा का प्रवाह रोक रक्खा है। इस प्रकार बालक की अस्त्रविद्या को देख कर, वह चकित हो गया (म. आ. ९४.२२-२५)।

यह बालक और न हो कर, शंतनुपुत्र भीष्म ही था। किन्तु इतने दिनों के बाद देखने के कारण, वह उसे पहचान न सका। जैसे ही शंतनु ने इसे देखा, वह तत्काल ही दृष्टि से ओझिल हो गया। उसके मन में शंका हुयी, कहीं यह मेरा तो पुत्र नहीं ? यह बात मन में आते ही उसने गंगा को सम्बोधित कर पुत्र को पुनः दिखाने के लिए आग्रह किया। तब स्त्रीरूपधारणी गंगा शुभ्र परिधानों तथा बहुमूल्य अलंकारों को धारण किए हुए उपस्थित हुयीं। अन्त में गंगा ने सपूंर्ण पूर्वकथन कहते हुए, अपने पुत्र भीष्म को अपनी गोद से उतार कर, राजा शंतनु को दिया (म. आ. ९४.३१)।

जिस समय गंगा ने भीष्म को दिया, उस समय उसका मातृहृदय शोक से विह्वल था, क्योंकि, जिस पुत्र का पालन पोषण किया, शिक्षादि दी, वही पुत्र आज उससे दूर जा रहा था। अंत में गंगा उस पुत्र को दे कर अंतर्धान हो गयीं।

हस्तिनापुर में—शंतनु ने गांगेय (भीष्म) को अपनी राजधानी हस्तिनापुर लाया, तथा शुभ मुहूर्त पर उसका युवराज्याभिषेक किया (म. आ. ९४.३८)। इस प्रकार राज्यसूत्र को अपने हाथों में ले कर, यह अपने पिता की राज्यव्यवस्था की देखरेख करने लगा। इसकी योग्यता एवं व्यवहार से समस्त प्रजा एवं अन्यजन प्रसन्न थे।

भीष्मप्रतिज्ञा—गंगा के विरह में पीड़ित शंतनु को कुछ भी न सूझता था। एक दिन जब वह मृगया के लिए गया था, तो उसे पास ही कहीं किसी सुगन्ध का ज्ञान हुआ। उस सुगन्ध को ढूंढ़ते ढूंढ़ते, वह एक धीवरकन्या सत्यवती के पास आ खड़ा हुआ, जिसके शरीर से वह मादक सुगन्ध चारों ओर फैल कर, वातावरण को भर रही थी। शंतनु उसकी उठती युवावस्था एवं कौमार्य को देख कर लुब्ध हो उठा, एवं धीवर से उसे प्राप्त करने की इच्छा प्रकट की। किन्तु धीवर ने सत्यवती को देने से इन्कार करते हुए कहा, 'भीष्म के रहते हुए, सत्यवती का भावी पुत्र राज्य नहीं प्राप्त कर सकता। आप उसके भावी पुत्र को अपने उपरांत राज्याधिकारी घोषित करें, तो मैं आप को सत्यवती को इसी क्षण दे सकता हूँ।' धीवर की यह बात सुनते ही शंतनु खिन्न हो उठा, एवं निराश हृदय वापस लौट आया, क्योंकि वह नहीं चाहता था कि, भीष्म सा योग्य नेता राज्याधिकार से पदच्युत किया जाय।

सत्यवती की मोहकता ने शंतनु के हृदय में इतना घर कर लिया कि, वह दिन पर दिन चिन्ता में जलने लगा। भीष्म ने पिता की उदासीनता का कारण कई बार पूँछा, किन्तु उसने इसे लज्जावश न बताया। आखिर एक दिन भीष्म को पता चल ही गया। पितृसुख के लिए स्वार्थत्याग करने का निश्चय कर, यह उस धीवर के पास जा पहुँचा। वहाँ इसने धीवर से अपने पिता के लिए सत्यवती को माँगा, किंतु उसने अबकी बार भी वही शर्त सामने रखी। तब भीष्म ने आजन्म ब्रह्मचारी रह कर राज्यलोभ छोड़ कर, सदैव सत्यवती के पुत्रों की रक्षा करते हुए, उसके द्वारा हुए ज्येष्ठ पुत्र को ही राज्याधिकारी बनाने की प्रतिज्ञा की (म.आ. ९४.७९)। इसकी इस भयंकर प्रतिज्ञा सुन कर देवताओ ने पुष्पवर्षा करना आरम्भ किया, एवं इसे 'भीष्म' नाम दिया (म. आ. ९४.९३)।

शंतनु की मृत्यु—भीष्म सत्यवती को ले आया, जिसे देखते ही पिता ने इसे आनंदित हो कर आशीर्वाद दिया, 'तुम 'इच्छामरणी' होगे' (म. आ. ९४.९४)। बाद में सत्यवती के चित्रांगद तथा विचित्रवीर्य नाम के दो पुत्र हुए। उनमें से चित्रांगद को गद्दी पर बैठा कर भीष्म स्वयं राज्यभार ले कर राजकाज चलाता रहा।

उग्रायुधवध—शन्तनु की मृत्यु के उपरांत, उसकी नवयौवना पत्नी सत्यवती को प्राप्त करने के लिए पड़ोस के राजा उग्रायुध ने भीष्म के पास सन्देश भेजा कि, यह अपनी सौतीली माँ सत्यवती को उसके यहाँ भेज दे। किन्तु अपने पिता के शोक में विह्वल भीष्म ने इसका कोई उत्तर न दिया। इस पर क्रोधित होकर उग्रायुध ने भीष्म पर चढ़ाई करने के लिए सेनापति को आज्ञा दी। लोगों ने समझाया भी कि, भीष्म इस समय अशौच में है। अतएव इस समय उसे छेड़ना उचित नहीं। किन्तु उग्रायुध ने भीष्म पर हमला कर दिया। युद्ध तीन दिन तक चलता रहा, तथा उसके उपरांत, भीष्म ने उग्रायुध का वध किया (ह. वं. १.२०.४९-७१; म. शां. २७.१)।

विचित्रवीर्य का राज्यारोहण—एक बार गंधर्वो से युद्ध करता हुआ चित्रांगद उनके द्वारा मारा गया, तब सत्यवती की अनुमति से इसने विचित्रवीर्य को गद्दी पर बैठाया। किन्तु विचित्रवीर्य अभी छोटा ही था, अतएव राज्य की पूरी देखदेख भीष्म ही करता था। विवाहयोग्य आयु होने के उपरांत, भीष्म ने उसके विवाह का निश्चय किया। इतने में इसे पता चला कि, काशिराज की तीन कन्याओं अंबा, अंबिका एवं अंबालिका की शादी के लिए

स्वयंवर होने वाला है। अतएव यह वहाँ गया, एवं वहाँ एकत्र हुए सभी राजाओं को चुनौती देकर, उसकी तीनों कन्याओं का हरण कर आया। विचित्रवीर्य का उन कन्याओं से विवाह करने लिए इसने मुहुर्तादि भी ठीक कराई। किन्तु बड़ी बहन अंबा को छोड़कर अन्य दो बहनों से ही विचित्रवीर्य का विवाह हुआ, जिनका नाम अंबिका एवं अंबालिका था।

अंबाविरोध—काशिराज की बड़ी कन्या अंबा ने कहा कि, 'मैं विचित्रवीर्य से शादी न करूँगी, कारण कि मने मन में शाल्व का वरण किया है'। भीष्म इस पर राजी हो गया। अंबा शाल्व के पास गयी, लेकिन वह अंबा की वरण करने को राजी न हुआ। तब उसने आकर भीष्म से कहा, 'मै शाल्व से विवाह करना चाहती थी, तथा तुम उसमें बाधक बन कर आये। तुमने मेरा हरण किया है, अतएव शास्त्रोक्त के अनुसार, तुम्हें मुझसे शादी करनी चाहिए। मैं कदापि विचित्रविर्य से विवाह न करूगी, मेरा उससे सम्बन्ध ही क्या?' किन्तु भीष्म तैयार न हुआ। इस कारण अंबा भीष्म से अत्यधिक क्रुद्ध हुयी, एवं इसके प्राप्ति के लिए तप करने लगी।

तपस्याकाल में, एक दिन अंबा की भेंट अपने नाना होत्रवाहन सृंजय से हुयी। उससे अंबा ने अपना सारा रोना कह सुनाया कि, किस तरह वह शाल्य का वरण करना चाहती थी, तथा किसी प्रकार शाल्व एवं भीष्म उसका वरणरूप में स्वीकार करने लिए राजी नहीं है। यह कह कर, अंबा ने सृंजय से कुछ मदद चाही। लेकिन उसने कहा, 'यदि तुम मदद ही चाहती हो, तो परशुराम के पास जाओ। वह तुम्हारी मदद करेंगे।'

परशुराम से युद्ध—फिर अंबा परशुराम के पास गयी, एवं उससे प्रार्थना की कि, वह भीष्म का वध करे, जिसने उसका हरण कर उसका जीवन बर्बाद किया है, तथा वरण करने के लिए भी तैयार नहीं है। परशुराम ने कहा 'मैंने किसी ब्राह्मण के कार्य हेतु ही अस्त्रग्रहण करने की, प्रतिज्ञा की है, अतएव मैं असमर्थ हूँ'। अन्त में अंबा द्वारा बार बार प्रार्थना किये जाने पर, परशुराम ने भीष्म को समझा कर मामले को सुलझाने की बात सोची।

आगे चल कर परशुराम ने गुरु के नाते भीष्म को बहुविध उपदेश दिया, एवं इस बात पर जोर दिया कि, यह अंबा को स्वीकार करे। किन्तु भीष्म अपनी बात पर अटल रहे। इससे क्रोधित होकर परशुराम ने भीष्म को द्वन्द्वयुद्ध के लिए चुनौती दी। दोनों युद्ध के लिए तत्पर ही थे कि, पुत्रचिन्ता से युक्त गंगा ने आकर भीष्म से कहा, 'परशुराम तुम्हारे गुरु हैं, तुम्हें उनसे युद्ध करना शोभा नहीं देता'। भीष्म ने कहा, 'युद्ध मै नहीं कर रहा, किन्तु अपने सत्य की रक्षा हमें करनी ही है। इस प्रकार यदि तुम्हें समझाना ही हैं, तो परशुराम से कहो कि वह अपने हठ को छोड़कर मेरी स्थिति पर ध्यान दें'। अपने पुत्र भीष्म को परशुराम के क्रोध से उबारने के लिए, गंगा परशुराम के पास गयी, तथा उसे बहुविध समझाने का प्रयत्न किया। किन्तु परशुराम अपने हठ पर अटल रहे।

परशुराम एवं भीष्म में चार दिन तक घोर युद्ध हुआ (म. उ. १७६-१८६)। अंत में अपने 'प्रस्वाप अस्त्र' के बल से भीष्म ने परशुराम को युद्ध में परास्त किया (म. उ. १८७.४)।

शिखंडिजन्म—भीष्म को समूल नष्ट करने के लिए अंबा पीछे पड़ गयी। पहले उसने घोर तप किया, फिर परशुराम के द्वारा इसे नष्ट करना चाहा। इसे देख कर गंगा नदी ने अंबा को शाप दिया कि, वह टेडी मेड़ी क्षुद्र नदी बनेगी। अंबा अपने अपमान का बदला लेने के लिए जी जान से जुटी ही रही। उसने शिव की उपासना कर के उससे वरदान प्राप्त किया, 'इस जन्म में न सही, अगले जन्म में शिखण्डी बन कर, तुम भीष्म के मृत्यु का कारण बन कर, उससे अपना बदला ले सकोगी'। शिवप्रसाद के बल से अगले जन्म में शिखण्डी का जन्म ले कर, अंबा ने भीष्म का बध कराया (म. उ. १७०-१९३)।

विचित्रवीर्य की मृत्यु—सात वर्षों तक राज्यभोग के साथ-साथ अत्यधिक भोगविलास में निमग्न हुआ विचित्रवीर्य राजा राजयक्ष्मा से पीड़ित मृत्यु को प्राप्त हुआ। अपनी पत्नी अंबिका एवं अंबालिका से उसे कोई संतान न थी। अतएव सत्यवती ने भीष्म को आज्ञा दी कि, वह विचित्रवीर्य की पत्नियों से संभोग कर के नियोग द्वारा पुत्र उत्पन्न करे। किंतु इसने अपनी सौतेली माता की आज्ञा की अवहेलना कर, अपने ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा पर यह दृढ़ रहा। हार कर सत्यवती ने व्यास के द्वारा संतान उत्पन्न करा कर, विचित्रवीर्य के राज्य के उत्तराधिकारी के रूप में दो पुत्र रत्न प्राप्त किये।

धृतराष्ट्र एवं पाण्डु का जन्म—विचित्रवीर्य के पुत्रों में से प्रथम पुत्र धृतराष्ट्र जन्मान्ध था, अतएव भीष्म ने विचित्रवीर्य

के उपरांत पाण्डु को राजगद्दी पर बैठाया। किन्तु पाण्डु की शीघ्र ही मृत्यु हो गयी, अतएव राज्य की सारी व्यवस्था धृतराष्ट्र ही देखने लगा। धृतराष्ट्र का व्यवहार अपने तथा पाण्डु के पुत्रों में भिन्न था, जिसका परिणाम यह हुआ कि, कौरवों एवं पाण्डु के पुत्रो (पाण्डवों) के बीच एक खाई पैदा हो गयी, जो कालांतर में चौडी ही होती गयी। अपने पिता शंतनु एवं उसके बाद विचित्रवीर्य के काल से लेकर, उसकी मृत्यु तक भीष्म हस्तिनापुर राज्य के सर्वांगीण विकासपथ की ओर ले जाने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहा। यह राज्य का सब से बड़ा कर्ताधर्ता सलाहकार एवं हर प्रकार की व्यवस्था का निर्देशक था।

धृतराष्ट्र के व्यवहार में पक्षपात देखकर, द्रुपद राजा के पुरोहित ने आकर भीष्म से शिकायत की, कि धृतराष्ट्र अपने पुत्रों की ओर सजग, एवं पाण्डवों की ओर उपेक्षित व्यवहार करता है। भीष्म ने पुरोहित का योग्य स्वागत कर पाण्डवों की ओर पूरी तरह से ध्यान देने का उन्हे वचन दिया (म. उ. २१)।

युधिष्ठिर द्वारा किये गये राजसूययज्ञ में पाण्डवों ने चतुर्दिशाओं में दिग्विजय प्राप्त कर यशःकीर्ति प्राप्त किया। पाण्डवों के इस दिग्विजय को देखकर भीष्म ने कर्ण से कहा, 'अर्जुन तुमसे अधिक पराक्रमी है जिसका उदाहरण सम्मुख है। पाण्डवों के ये दिग्विजय का कारण अर्जुन ही है।' भीष्म की इस कठोर वाणी को सुनकर कर्ण तिलमिला गया, तथा कहने लगा कि, वह अर्जुन से कहीं अधिक श्रेष्ठ है। इतना कहकर वह दिग्विजय के लिए निकल पड़ा (म. व. परि १. क्र. २४)।

भारतीय युद्ध--पाण्डवों से बन्धुत्व भाव रखने के लिए भीष्म ने अनेक बार दुर्योधन को समझाया, किन्तु उसका कुछ भी फायदा न हुआ। आखिर बात युद्ध तक आ गयी, एवं इसे दुर्योधन की मनमानी के बीच अपनी विचार-धारा की हत्या करनी पडी। इसे कौरवपक्ष के सेना-पतित्व का भार भी ग्रहण करना पड़ा। इस भार वहन करने के पूर्व उसने दुर्योधन से दो शर्तें रखी थी। पहली शर्त यह थी कि, यह पाण्डवो से युद्ध कर उन्हें पराजित अवश्य करेगा, किन्तु युद्ध में किसी पाण्डव की हत्या अपने हाथों न करेगा। दूसरी शर्त थी कि, जिस समय यह युद्ध करेगा उस समय कर्ण इसके साथ युद्ध न करेगा, उसे इसके पीछे रहना पडेगा (म. उ. १५३.२१-२४)।

कौरवसेना का अधिपत्य स्वीकारते समय भीष्म ने दुर्योधन से विश्वास दिलाया, 'मैं सेनाकर्म, व्यूहरचना, भृत एवं अभृत लोगों से कार्य चलाना, सैन्यसंचलन एवं आक्रमण कर्मों में प्रवीण हूँ। युद्धशास्त्र में मेरा ज्ञान देवगुरु बृहस्पति के समान है। मैं तुम्हे विश्वास दिलाना चाहता हूँ कि, मैं तुम्हारा सेनापत्य का कार्य अच्छी तरह से निभाऊंगा, एवं एक महिने से पहले पांडवसेना को ध्वस्त कर दूंगा' (म. उ. १९४)।

कौरव एवं पांडव सेना का बलाबल—भारतीय युद्ध आरम्भ होने के पूर्व सेनापति भीष्म ने कौरव एवं पांडवों के चतुरंगिणी सेना की विस्तृत जानकारी एवं बलाबल दुर्योधन को बताया था (म. उ. १६४)। महाभारत के 'रथसंख्यान' पर्व (१६१-१६९) में प्राप्त इस जानकारी से प्रतीत होता है कि, जिस प्रकार पदाति-दल, अश्व-दल आदि में सैनिकों की विभिन्न श्रेणियाँ थी, उसी प्रकार कुशलता की मात्रा से रथसेना में भी अनेक पद थे।

भीष्म के द्वारा बतायी गयी श्रेणियाँ इस प्रकार थी :- रथयूथपयूथप, महारथ, अतिरथ, अर्धरथ एवं रथोदार। उनमें से रथयूथपयूथप सबसे बड़ा पद था, एवं रथीदार सबसे छोटा पद था। भीष्म के द्वारा निर्देश किये गये कौरवसेना के विभिन्न रथयोद्धा निम्न प्रकार थेः—

कौरवपक्ष

(१) अतिरथ-भीष्म, कृतवर्मन् भोज, बाह्लीक, शल्य।

(२) अर्धरथ--कर्ण।

(३) एकरथ--शकुनि, सुदक्षिण कांबोज, दंडधार।

(४) महारथ--अश्वत्थामन्, जो रथ योद्धाओं में अतुल्य माना जाता था, और पौरव।

(५) रथ--अचल, वृषक गांधार।

(६) रथयूथपयूथप--उग्रायुध, कृप शारद्वत, द्रोण, भूरिश्रवस्।

(७) रथवर--जलसंध मागध।

(८) रथसत्तम--बृहद्बल कौसल्य, वृषसेन, दुर्योधन-पुत्र लक्ष्मण, विंद एवं अनुविंद, शल्य, जयद्रथ, अलायुध।

(९) रथोदार--दुर्योधन, सुशर्मन्, एवं उसके चार भाई।

पांडवपक्ष

(१) अतिरथ--धृष्टद्युम्न (सेनापति), कुंतिभोज पुरुजित्, वसुदान, श्रेणिमत्, सत्यजित् (द्रुपदपुत्र)।

(२) अर्धरथ--क्षत्रधर्मन् (धृष्टद्युम्नपुत्र)।

(३) महारथ—अज, अमितौजस् चेकितान, जयन्त, द्रुपद, द्रौपदेय, धृष्टकेतु (शिशुपालसुत), भोज, रोचमान, विराट, शंख, श्वेत, सत्यजित्, सत्यधृति।

(४) रथ—अर्जुन, उत्तमौजस् उत्तर वैराटि, काश्य (अष्टरथ), भीम (अष्टरथ), वार्धक्षेमि।

(५) रथमुख्य—शिखंडिन्।

(६) रथयूथपयूथप—अभिमन्यु, घटोत्कच, माधव, सात्यकि।

(७) रथसत्तम—क्रोधहन्तृ, चित्रायुध, सेनाबिन्दु।

(८) रथिन्—नकुल, सहदेव।

(९) रथोत्तम—क्षत्रदेव, पांड्यराज।

(१०) रथोदार—काशिक, केकयबन्धु (पंचक), चंद्रसेन, नील, मदिराश्व, युधामन्यु, युधिष्ठिर, व्याघ्रदत्त, शंख, सुकुमार, सूर्यदत्त।

कर्ण-भीष्म विरोध—भीष्म के द्वारा किये गये उपर्युक्त रथि महारथियों के वर्णन में कर्ण को रथी अथवा महारथी न कहकर केवल अर्धरथों में उसकी गणना की। द्रोणाचार्य ने भी उसे अपनी संमति दी। यह अपना अपमान समझकर कर्ण क्रोध से उछल पडा। उसने दुर्योधन से कहा, 'बुढ़ापे के कारण, भीष्म मतिभ्रष्ठ हो चुका है। ऐसे मतिभ्रष्ट लोगों की सलाह लेना मुझे सरासर मूर्खता प्रतीत होती है। दुष्टबुद्धि भीष्म कौरवों में फूट पाडना चाहता है। मेरी राय यही है कि, इस मतिभ्रष्ट एवं दुष्टबुद्धि बूढे का पल्ला तुम छोड दो। जबतक यह भीष्म कौरवसेना का सेनापति है तबतक मैं युद्ध में भाग नही लूँगा' (म. उ. १६५.१०–२७)।

इस पर भीष्म ने भी अत्यंत क्रुद्ध हो कर दुर्योधन से कहा, 'कवचकुंडल आदि के त्याग से निर्बल, एवं परशुराम तथा ब्राह्मणों के शाप से इंद्रियदुर्बल हुए पापी कर्ण के लिए, अर्धरथ यह नीच श्रेणि ही योग्य है'। आगे चल कर इसने कर्ण से कहा, 'मुझे बूढ़ा कहने की हिंमत तू ने की है। किन्तु मै चूनौति देता हूँ कि, युद्ध में तुम्हारा पराजय करने की ताकद आज भी मेरे जर्जर बाहुओं में है। परशुराम जामदग्न्य आदि यों को मैंने रणभूमि में पराजित किया है। फिर तेरे जैसे पापी मनुष्य का पराजय करना मेरे बाये हाथ का खेल है'।

अपने गुरु भीष्म एवं परममित्र कर्ण के दरम्यान हुए इस वाक्युद्ध के कारण, दुर्योधन अत्यधिक कष्टी हुआ, एवं उसने इन दोनों को शान्त होने के लिए प्रार्थना की (म. उ. १६६.१–१०)।

सेनापत्य—भारतीय युद्ध में प्रथम दस दिन यह कौरव सेना का सेनापति रहा। इसके रथ की पताका पर ताड़वृक्ष का चिह्न था (म. वि. १४८.५)। इन दस दिनों में अत्यधिक वीरता के साथ लड़कर, एवं सैन्यसंचालन कर, इसने पांडवों की सेना को ध्वस्त कर जर्जर ही नहीं बनाया; बल्कि उनकी जीत की आशा को भी मिट्टी में मिला दिया। इसकी युद्धवीरता का प्रमाण इससे अधिक क्या हो सकता है कि, युद्धभूमि में कभी अस्त्रग्रहण न करने की प्रतिज्ञा करनेवाले भगवान कृष्ण को भी अस्त्रग्रहण करना पड़ा। भारतीय युद्ध के तीसरे एवं नवें दिन अर्जुन की रक्षा के लिए कृष्ण को हाथ में सुदर्शन चक्र ले कर युद्धभूमि में उतरना पड़ा (म. भी. ५५; १०२)।

भारतीययुद्ध के तीसरे दिन इसका तथा अर्जुन का घनघोर युद्ध हुआ, जिसमें अर्जुन आहत हो कर मूर्च्छित हो गया। यह देख कर कृष्ण अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं अर्जुन की रक्षा के लिए हाथ में सुदर्शन चक्र ले कर स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ। कृष्ण का यह रौद्ररूप देख कर भीष्म ने अपने अस्त्र-शस्त्र नीचे रख दिये, एवं श्रद्धावनत हो कर कृष्ण से कहा, 'स्वयं कृष्ण भगवान् से मेरी हत्या हो रही है, यह मेरा सौभाग्य है'। ऐसा कह कर इसने कृष्ण का स्तवन किया। इतने में अर्जुन ने होश में आकर कृष्ण से प्रार्थना की, 'युद्धभूमि में आप न उत्तरे, अभी मै युद्ध के लिए काफी हूँ'।

दुर्योधनआक्षेप—भारतीययुद्ध के दसवें दिन, दुर्योधन ने भीष्म पर आक्षेप लगाते हुए कहा, 'आप का मन तो पाण्डवों के पक्ष की ओर है। अतएव युद्ध में हमारी जीत संभव कहाँ?' भीष्म ने चिन्तित हो कर गंभीरतापूर्वक कहा, 'मैं बूढ़ा हूँ, फिर भी जो होता है करता हूँ, तथा किसी प्रकार कर्तव्य से च्युत नहीं। पाण्डव बल पौरुष में श्रेष्ठ तथा रणभूमि में अजेय हैं। फिर यदि तुम मेरे रणकौशल को ही देखना चाहते हो तो कल देख सकते हो। देखना, या तो कल पाण्डवों की हार होगी, या मेरी मृत्यु' (म. भी. १०५.२६)।

पाण्डवविहीन पृथ्वी को बनाने की भीष्मप्रतिज्ञा को सुन कर सभी पाण्डव भयभीत हो उठे। क्यों कि, वे समस्त कौरवसेना में भीष्म की ही शक्ति का सिक्का मानते थे। कृष्ण ने पाण्डवों के बचाने के लिए अर्जुनादि के सामने अपने विचार प्रकट करते हुए कहा, 'तुम लोग यदि अपना जीवन चाहते हो, तो भीष्म की मृत्यु का उपाय करो, अन्यथा तुम को पराजित हो कर, अपने प्राणों की आहुति देनी पड़ेगी'।

कृष्ण से भेंट—नवें दिन की रात्रि को कृष्ण धर्मादि पाण्डवों को साथ ले कर भीष्म से मिलने उसके शिविर गया। कृष्ण ने भीष्म से कहा, 'आपकी प्रतिज्ञा सुन कर सभी पाण्डव आतंकित हो उठे हैं। अब आपकी मृत्यु किस प्रकार सम्भव हो कि, जिससे पाण्डव की रक्षा की जा सके?।' भीष्म ने कृष्ण के प्रश्न का उत्तर देते हुए कहा, 'जिसके रथ का ध्वज अभद्र हो, जो हीन जाति का हो, अथवा जो स्त्री हो उससे मैं युद्ध कदापि न करूँगा।' द्रुपद राजा का पुत्र शिखण्डी पूर्वकाल में स्त्री था, बाद में पुरुष बना। अतएव उसे सामने कर के, यदि अर्जुन युद्ध करेगा, तो मै कुछ न कर सकूँगा, तथा मुझे अर्जुन सहज ही युद्ध में जीत सकेगा। इस प्रकार पाण्डव सुलभता के साथ रणभूमि में कौरव को जीतकर राज्य प्राप्त कर सकते हैं' (म. भी. १०३)।

दूसरे दिन भीष्म के बताये हुए मार्ग को अपना कर शिखण्डी को सामने रखकर अर्जुन ने भीष्म को पराजित किया (म. भी. ११३-११४)। भीष्म पतन का यह दिन पौष के कृष्णपक्ष की सप्तमी थी, एवं उससमय फल्गुनी नक्षत्र था (भारतसावित्री)।

शरशय्या—इसके वध के समय सर्वांग बाणों से विद्ध था। रथ से गिरकर बाणों पर ही टिका हुआ भूमि पर यह इस प्रकार आ गिरा, मानों शरशय्या में लेटा हो। इसका सर केवल बाणों से बचा था, जो शरशय्या से लटक रहा था। उसे देखकर अर्जुन ने तीन बाणों को मार कर, इसके सर के लिए तकिया बना दिया। शरशय्या में पड़ा हुआ यह अधिक प्यासा हो उठा था, जिसे देखकर अर्जुन ने अपने एक बाण द्वारा गंगा नदी के प्रवाह को अपनी ओर खींचकर, उस धारा के द्वारा भीष्म की तृषा का हरण किया। अर्जुन की इस सेवा से भीष्म अत्यधिक प्रसन्न हुआ (म. भी. ११५)।

जिस समय भीष्म पितामह शरशय्या में आहत था, उस समय अनेकानेक ऋषि, मुनि, देवी देवतादि इसके दर्शन करने आये थे। इन सारे ऋषिमुनियों को एवं अपने कौरवपांडव बांधवो को इसने नानाविध रूप से उपदेश दिया। इसने दुर्योधन से कहा, 'मेरी मृत्यु कौरव पाण्डवों के बीच हुए वैरभाव की अन्तिम आहुति हो, तो अच्छा है। इससे तुम सभी विनष्ट होने से बच जाओगे'।

यह आजीवन कर्ण को हेय दृष्टि से देखता रहा, कारण कि वह जन्म से हीन था। कर्ण भी हृदय से इसका आदर न करता था। किन्तु अन्तिम समय, जब कर्ण इससे मिलने आया, तब सारे भेदभावों को भूल कर इसने उसका दृढ़ आलिंगन करते हुए सदुपदेश दिया, 'या तो तुम कौरव पाण्डवों के बीच मित्रता स्थापित कराओ, अथवा कौरवों के पक्ष को छोड़कर पाण्डवों के पक्ष में सम्मिलित हो जाओ'। दुर्योधन को तनमनधन से मित्रता का व्रत लेने वाले कर्ण ने भीष्म से कहा, 'दुर्योधन मेरा मित्र है, अतः आप मुझे यह अनुज्ञा दें कि, उसी के पक्ष में लड़ता हुआ मैं पाण्डवों का पराभव करूँ'। भीष्म ने उसके व्रत को सुनकर उसे अनुज्ञा प्रदान की (म. भी. ११६-११७)।

भारतीय युद्ध में अपने कुरुवंशी बन्धुओं का क्षय देख कर युधिष्ठिर अत्यधिक शोकमग्न हुआ था। उसे इस प्रकार उदास देखकर, अपने धर्मोपदेश के द्वारा भीष्म ने उसे शान्ति प्रदान की। युधिष्ठिर को धर्मोपदेश देते समय भीष्म इतना शक्तिहीन हो चला था कि, कृष्ण ने उसे शक्ति प्रदान कर, उपदेश देने के योग्य बनाया (म. शां. ५२; भा. १.९; ९.२२.१९)। पितामह भीष्म एवं युधिष्ठिर के बीच हुयी ज्ञानचर्चा महाभारत के 'शान्ति' एवं 'अनुशासन' पर्व में प्राप्त है, जो आज भी अपनी अपार ज्ञानराशि के कारण, जीवन के परम सत्य की ओर पथनिर्देश कराने में सर्वश्रेष्ठ मानी जाती है।

प्राणत्याग--अर्जुन के द्वारा आहत होकर जब यह शरशय्या पर पड़ा हुआ था, उस समय सूर्य दक्षिणायन था। अतएव इच्छाबल पर इसने अपने प्राणों को रोक रखा था। जैसे ही सूर्य उत्तरायण आया, इसने अपने प्राण विसर्जित किये (म. अनु. १६८.७)। यह दिन माघ सुदी अष्टमी थी (निर्णयसिंधु पृ. १६३)। जिस समय यह अपने प्राणों को त्याग कर निजधाम जाने की तैयारी में था, उस समय अनेकानेक शत्रुमित्र पक्ष के लोगों के अतिरिक्त, न जाने कितने ऋषिमुनि आदि इसके दर्शन कर, उपदेश ग्रहण करने की लालसा से आये थे। इसकी मृत्यु विनशन क्षेत्र में हुयी (भा. १.९.१)।

मृत्यु के समय इसकी आयु सम्भवतः १८६ वर्षों की थी। यह उम्र में करीब अपनी सौतेली माँ सत्यवती का समवयस्क था, तथा सत्यवती का पुत्र व्यास, जो उसे कौमार्य अवस्था में हुआ था, वह तो इससे कहीं अधिक छोटा था।

भीष्मचरित्र का एक कलंकित क्षण--भीष्म कौरववंश का वह प्रकाशस्तम्भ था, जिसने आजीवन लोगों को अपने चरित्र, कार्य, एवं रीतिनीति से आलोकित कर, उसे सन्मार्ग दिखाया। फिर भी इसके जीवन में एक

अवसर यह भी आता है कि, कौरव पाण्डवों की भरी सभा में निर्वस्त्र की जानेवाली द्रौपदी विलाप कर के भीष्म से न्याय की माँग करती है, तथा भीष्म उसकी दीनहीन दशा न देखकर, उसे पत्नीधर्म का पाठ पढ़ाते हैं।

द्यूत खेलते समय धर्म ने अपने को, समस्त पाण्डवों को तथा अन्त में द्रौपदी को भी हार लिया। कौरव द्रौपदी की लोकलज्जा का हरण कर, उसका उपहास करने लगे, तथा सभी बडे बूढ़ों के साथ भीष्म भी चूपचाप बैठ गया। द्रौपदी ने इसी से न्याय की माँग की, क्यों कि, यह पाण्डवों तथा कौरव दोनों का हितैषी था, यही नहीं, यह परम धर्मात्मा, न्यायी एवं उचित अनुचित का समझने वाला, सभी से उम्र में बड़ा, तथा कौरववंश का कर्ताधर्ता प्रमुख व्यक्ति था। द्रौपदी ने इससे प्रश्न किया, 'धर्मराज जब कौरवों द्वारा स्वयं अपने को हार गये हैं, तब क्या उन्हें अधिकार है कि, मुझे वह दाँव पर लगायें'?- भीष्म ने उत्तर दिया, 'वस्तुतः अधिकार तो नहीं, क्योंकि तुम्हें दाँव पर लगाना अनुचित है। अतएव तुम्हें कोई जीत नहीं सकता। लेकिन तुम्हें न भूलना चाहिए कि, स्त्री सदैव पति के आधीन रही है, तथा उसे अपनी पत्नी पर सदैव अधिकार रहा है। आज तुम्हारा पति युधिष्ठिर कौरवों का दास है, अतएव आर्यपत्नी होने के कारण, तुम दास की दासी हो (म. स. ६०.४०-४२)।

भीष्म के द्वारा दिये गये इस उपदेश ने द्रौपदी के हृदय को सन्तोष एवं शान्ति तो प्रदान न किया, किन्तु उसके मन को अधिक उद्विग्न बना दिया। द्रौपदी चाहती थी कि, भीष्म उस आर्तनाद करने वाली कुलवधू की लुटती हुयी लज्जा को देखकर, दुर्योधन के द्वारा दिये गये आदेशों का खण्डन करते हुए उसकी नारीत्व की रक्षा करेगा। किन्तु भीष्म तो पति की आज्ञाओं का अन्धा पालन करने पर प्रवचन दे कर ही, अपने कर्तव्य की इतिश्री समझ बैठे (म. वि. परि. १.६०.२५-४५)।

कुछ धूमिल स्थल—भीष्म के चरित्र में यदाकदा कुछ धूमिल स्थल और दीख पड़ते हैं। कौरवों ने द्यूत में पाण्डवों को बुलाकर कपटपूर्ण व्यवहार के द्वारा उन्हें जीतने की योजना बनाई, जिसकी पूर्ण सूचना इसे प्राप्त थी। फिर भी इसने एक बार भी दुर्योधनादि को रोकने का प्रयत्न न किया। दुर्योधन को एक बार नहीं, हज़ार बार इसने कहा की, उसका पक्ष न्याय का नहीं, वह अन्यायी है। फिर भी भारतीय युद्ध के समय, इसने अपने आदर्शों के विरुद्ध दुर्योधन को अपना राजा मानकर, पग पग पर उसका साथ दिया। दूसरी ओर युद्धनीति के विरुद्ध, इसने अपने मरने का रहस्य कृष्ण एवं युधिष्ठिर को बताया, जो इसके विपक्षी थे। महाभारत के कई पाण्डुलिपियों में प्राप्त श्लोकों से पता चलता है कि, इन कमज़ोरियों को दृष्टि में रखकर कृष्ण ने भी इसकी कटु आलोचना की थी।

'अर्थस्य पुरुषो दासः':—कौरवों का पक्ष अन्यायी हो कर भी इसने उनका साथ क्यों दिया, इसका स्पष्टीकरण भीष्म ने महाभारत में निम्न प्रकार किया है–

'अर्थस्य पुरुषो दासः' दासस्त्वर्थो न कस्यचित्।
इति सत्यं महाराज, बद्धोऽस्म्यर्थेन कौरवैः॥

(पुरुष अर्थ का दास है, पर अर्थ किसी का दास नही है। हे महाराज, यह सत्य है, कौरवों ने मुझे अर्थ से बाँध लिया हैं)।

उपर्युक्त भीष्म के कथन से साधारण रूप में यही अर्थ निकलता है कि, यह अर्थ (धन, संपत्ति) को प्रधानता देता है। यदि हम इसे इस प्रकार ले, तो भीष्म के ये शब्द इसके आदर्शात्मक जीवन का धब्बा प्रतीत होता है जो उसके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को ढक देता है।

किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, 'अर्थस्य पुरुषो दासः' शब्दों से भीष्म के द्वारा प्रकट की गयी विवशता सिर्फ़ संपत्ति के विषय में न हो कर अधिक तर राजनैतिक ढ़ंग की थी। 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में अर्थ की व्याख्या 'राजनैतिक कर्तव्य' इस अर्थ से की गयी हैं। इस प्रकार, राजनैतिक कर्तव्यों से बँधा हुआ भीष्म यदि अपने व्रत के अनुसार, आजीवन कौरव पक्ष के दुःखसुखों में सदैव एक क्रियाशील कर्ताधर्ता रहा तो, इसमें कुछ भी अनौचित्य प्रतीत नही होता।

भीष्म की तरह द्रोण, कृप एवं शल्य आदि ने भी 'अर्थेन बद्धः' कह कर दुर्योधन के पक्ष का स्वीकार किया था। उन में से द्रोण दक्षिणपांचाल देश का राजा था, एवं शल्य युधिष्ठिर का मातुल एवं मद्र का राजा था। इन सारें राजा महाराजाओं के 'अर्थेन बद्धः' कथन से यही तात्पर्य प्रतीत होता है कि, वे सारे दुर्योधन से वचनबद्ध थे, एवं उसी के कारण, दुर्योधन के पक्ष में शामिल हो गये थे (म. भी. ४१.३६-३७; ५१-५२; ६६-६७; ७७-७८)।

अन्य धूमिल स्थल—आधुनिक दृष्टि से हम देखे तो हमें कुछ उचित नहीं लगता कि, अपने पिता की भोगपिपासा

की तृप्ति के लिए भीष्म इतना बड़ा ब्रह्मचर्य का व्रत लेकर आगे बढ़े। उस व्रत के कारण, आगे आनेवाली कर्तव्य-शृंखालाओं को भी इसे बार बार उपेक्षा करनी पड़ी। लेकिन यह लकीर का फकीर बना, एवं अपनी पुरानी प्रतिज्ञा पर जमा रहा। इसने आजन्म ब्रह्मचर्य का व्रत न लिया होता, तो कुरुवंश दो भागों में विभक्त होकर, आपस में टकरा कर खत्म न हो जाता। चित्रांगद तथा विचित्रवीर्य ऐसी सन्ताने न होती, जो अल्पायु में ही मर गयी। पांडु तथा धृतराष्ट्र ऐसे पुत्र न होते कि, एक क्षय से मरा, तो दूसरा जन्मान्ध पैदा हुआ। इसका कारण था कि यह सभी नियोग द्वारा जन्मे थे किसी में तेज, बल तथा शक्ति न थी जिस भीष्म में वह थी, वह कर्मपथ से हठ कर निष्क्रिय धर्मपथ अपना बैठा था।

भीष्मक—एक भोजवंशीय नरेश, जो विदर्भ देश का अधिपति था। महाभारत के अनुसार, यह पृथ्वी के चौथाई भाग का स्वामी, इन्द्रसखा एवं अत्यंत बलवान राजा था। इसे हिरण्यरोमन् एवं भीमक नामान्तर भी प्राप्त थे (म. उ. १५५.१)। भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिए 'हिरण्यलोमन्' पाठभेद प्राप्त है। इसकी राजधानी कुंडिनपुर नगरी में थी।

अपनी अस्त्रविद्या के बल से इसने पांड्य, ऋथ, कैशिक जैसे दाक्षिणात्य देशों पर विजय पायी थी (म. उ. १५५. १–२)।

इसके भाई का नाम आकृति था, जो परशुराम जामदग्न्य के समान शौर्यसंपन्न था। इसे रुक्मिणीनामक एक कन्या, एवं निम्नलिखित पाँच पुत्र थे:-- रुक्मिन, रुक्मरथ, रुक्मबाहु, रुक्मकेश एवं रुक्ममालिन् (भा. ३.३.३; १०.५२.२२)। यह शुरु से ही मगध देश का राजा जरासंध के प्रति भक्ति रखता था, एवं भगवान् कृष्ण के विपक्ष में था (म. स. १३.२१)। इसी कारण कृष्ण ने इसकी कन्या रुक्मिणी का हरण कर, उससे 'राक्षसविधि' से विवाह किया।

पांडवों के राजसूय यज्ञ के समय, दक्षिण दिग्विजय करता हुआ सहदेव विदर्भ देश में आ पहुँचा। उस समय भोजकट नगरी में भीष्मक एवं रुक्मिन् का उससे दो दिनों तक घनघोर संग्राम हुआ, जिसमें इन्हे हार माननी पडी। अन्त में इसने सहदेव के शासन का स्वीकार किया। महाभारत में रुक्मिन् का निर्देश 'महामात्र भीष्मक' नाम से किया गया है (म.स. २८. ४१)। भीष्मक के राज्यकाल में विदर्भ की राजधानी कुंडिनपुर में थी। भीष्मक के पुत्र रुक्मिन् ने भोजकट नगरी में अपनी नयी राजधानी बसा ली।

भुजकेतु--एक राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था।

भुजंगम--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

भुजातपूर--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भुज्यु तौग्र्य—एक राजा, जो अश्वियों का आश्रित था। तुग्र राजा का पुत्र होने के कारण, इसे 'तौग्र्य' 'तुग्र्य' उपाधियाँ प्राप्त थी।

एकबार इसका पिता तुग्र इसपर क्रुद्ध हुआ, जिस कारण उसने इसे परद्वीपस्थ शत्रु पर आक्रमण करने के लिए भेज दिया (ऋ. १.११६.३–५; ११७.१४–१५; ११९.४)। समुद्र में प्रवास करते समय, इसकी नौका अचानक टूट पडी, जिस कारण यह बड़े संकट में फँस गया। उस समय सौ पतवार वाले नाव में प्रविष्ट हो कर अश्वियों ने इसका रक्षण किया, एवं इसे सुरक्षित रूप में किनारे पहूँचा दिया।

अश्वियों के पराक्रम का वर्णन करने के लिए उपर्युक्त कथा का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. १. ११२.६; ६.६२.६–७; ६८.७; १०.४०.७; ६५.१२; १४३.५)।

भुज्यु लाह्यायानि--एक आचार्य, जो याज्ञवल्क्य ऋषि का समकालीन था। 'लह्यायन' का वंशज होने के कारण, इसे 'लाह्यायन' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

पतंचल काप्य नामक आचार्य के कन्या के शरीर में प्रविष्ट होनेवाले सुधन्वन् आंगिरस नामक ऋषि से इसे विशेष ज्ञान की प्राप्त हो गयी थी। उसी ज्ञान के बल से इसने याज्ञवल्क्य ऋषि को वादविवाद में परास्त करना चाहा। किन्तु अन्त में उस वादविवाद में इसका ही पराजय हुआ (बृ. उ. ३.३.१)।

भुमन्यु--(सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो जनमेजय (प्रथम) का पौत्र, एवं धृतराष्ट्र राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.५१)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)– 'सुमन्यु'।

२. (सो. पूरु.) एक महर्षि, जो दुष्यंत राजा का पौत्र, एवं भरत दौष्यान्ति राजा का पुत्र था। भरद्वाज ऋषि के कृपाप्रसाद से यह उत्पन्न हुआ था। इसकी माता का नाम सुनंदा था, जो काशीनरेश सर्वसेन की कन्या थी (म. आ. ९०.३४)।

इसके पिता भरत ने इसे यौवराज्याभिषेक किया। किन्तु आरम्भ से ही विरक्त प्रकृति का होने के कारण, इसने राज्यपद का स्वीकार न किया, एवं भरत के पश्चात् इसका पुत्र सुहोत्र राजगद्दी पर बिठाया गया।

इसे ऋचीककन्या पुष्करिणी एवं दशार्हकन्या विजया नामक दो पत्नियाँ थी। पुष्करिणी से इसे निम्नलिखित छः पुत्र उत्पन्न हुएः--वितथ, सुहोतृ, सुहोत्र, सुहवि, सुयजु एवं ऋचीक (म. आ. ८९.१८-२१)।

३. एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. १२२.५८)।

भुव--(स्वा. नाभि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार, प्रतिहर्त्य राजा का पुत्र था।

भुवत--मगध देश के सुव्रत राजा के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (सुव्रत ४. देखिये)।

भुवन--एक देव, जो कश्यप एवं सुरभि का पुत्र था।

२. एक महर्षि, जो शरशय्यापर सोये हुए भीष्म से मिलने आया था (म. अनु. २६.८)।

३. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३५)।

४. एक देव, जो भृगु एवं पौलोमि का पुत्र था।

भुवन आप्त्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५०)।

भुवना--बृहस्पति की भगिनी, जो अष्टवसुओं में से प्रभास नामक वसु की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम विश्वकर्मन् था (ब्रह्मांड. ३.३.२१-२९)।

भुवन्मन्यु (भुवमन्यु)--(सो. पूरु.) पूरुवंशीय भवन्मन्यु राजा के लिए उपलब्ध पाठभेद।

भूत--एक प्राचीन भारतीय मानवजाति का सामूहिक नाम। पुराणों में मानवजाति समूह के चार प्रकार कहे गये हैं, जो निम्न हैं- (१) धर्मप्रजा, जो धर्मऋषि से उत्पन्न हुयी थी। (२) ईश्वरप्रजा, जो ईश्वर से उत्पन्न हुयी थी। (३) काश्यपीयप्रजा, जो कश्यप ऋषि से हुयी थी। (४) पुलहप्रजा, जो पुलह ऋषि से उत्पन्न हुयी थी। उनमें से भूतयोनि के लोग पुलह प्रजा में से माने जाते हैं (ब्रह्माण्ड. १.३२.८८-९८; २.३.२-३४; २.७)।

जन्म--ब्रह्माण्ड के अनुसार, इन लोगों की उत्पत्ति भूत-तत्त्व से हुयी थी, एवं ये कपिशवर्णीय थे। इनका खाद्यपदार्थ 'पिशित' था (ब्रह्माण्ड २.८.३९-४०)। इनके जन्म की कथा ब्रह्माण्ड में निम्न प्रकार दी गयी है। ब्रह्मा ने नील-लोहित रुद्र को प्रजा उत्पन्न करने के लिए कहा, तब उसने सती के उदर से अपने ही समान पिंगल, सनिषंग, कपर्दी तथा नीललोहित वर्णवाले लाखों भूत उत्पन्न किये, जो पिशित खानेवाले तथा आज्य तथा सोम प्राशन करनेवाले थे (ब्रह्माण्ड. २.९.६८-७८)।

स्वरूपवर्णन--ये छोटे अवयववाले (कृशाक्ष), लम्बे कानवाले (लंबकर्ण), बड़े तथा लटकते हुए ओठवाले (लम्बस्फिक, प्रलंबोष्ठ), लम्बे दाँतवाले (दंष्ट्रिन), लम्बे नखवाले (नखिन्), स्थूल शरीरवाले (स्थूलपिंडक), लम्बी भौंहोंवाले (बभ्रुव), घुँघराले खुरदरे केशवाले (हरिकेश, मुञ्जकेश), नीललोहित एवं पिंगल वर्णवाले, एवं ठिंगने शरीरवाले होते थे। ये सबल, संगीतविरोधी, सर्प का यज्ञोपवीत धारण करनेवाले, तथा विभिन्न रंगविरंग लेपों से अपने शरीर को रंगानेवाले होते थे। ये शिव की सभा में उपस्थित रहनेवाले, हाथों में खोपड़ी धारण करनेवाले लोग थे, जो केशों को मुकुट की भाँति बना कर बाँधते थे। ये नग्नावस्था में रहते थे, तथा कभी कभी विचित्र प्रकार के वस्त्रों के साथ हाथी के चर्म को भी धारण करते थे। इनके हथियार शूल, धनु, निषंग, वरुथ तथा असि थे।

ये 'उर्ध्वरेतस्' अर्थात ब्रह्मचर्यपालन करनेवाले थे। इनमें विवाह पद्धति न होने के कारण, इनकी पत्नियाँ न होती थी। इनके सर्वसाधारण गुणों से ही इनके कुछ गण हुए थे, जिनके नाम इस प्रकार थे--शूलधर, कृत्तिवास, कपिर्दिन्, कपर्दिन्, कपालिन्, मुंजकेश, नीललोहित आदि।

ये पूर्वकाल में अत्यंत जंगली थे, किन्तु असुर एवं देवों के साथ सम्बन्ध आने पर, ये पूर्व से काफ़ी सुधर गये। असुरों के सम्पर्क में आ कर, इन्होंने युद्धकला एवं राज-नीति सीखी, तथा अपने प्रकार की एक समाजव्यवस्था स्थापित की।

पुराण के निर्देशों से प्रतीत होता है कि, स्वायंभुव मन्वन्तर के पूर्वकालीन युग में ये भारतवर्ष में निवास करते थे। उस समय इनका निवासस्थान हिमालय पर्वत के उत्तर भाग में तथा उसके निकटवर्ती प्रदेशों में था। ये भारत के सर्व प्राचीन आदिवासी माने जाते हैं।

असुरों एवं भूत गणों के बीच काफी लड़ाई चलती रही। अन्त में ये उनके हमलों से अपने को बचाने के लिए, विन्ध्यपर्वत की ढ़ालों तथा घाटियों में रहने आये।

भूतनायक--पुराणों में रुद्र को भूतों का राजा माना है। उस रूप में रुद्र को 'भूतनायक' एवं 'गणनायक,' तथा भूतों को 'रुद्रानुचर' एवं 'भवपरिषद्' कहा गया

है। किन्तु रुद्र एक व्यक्ति न हो कर, इनके राजा का सामान्य नाम था। कई जगह, इनके राजा को 'गणपति' कहा गया है। इन लोगों में जो व्यक्ति सबसे अधिक बलवान् होता था, उसे राजा बना कर ये लोग उसे 'रुद्र' नाम से विभूषित करते थे। पुराणों में, इस प्रकार के दो रुद्रों का निर्देश मिलता है। उनमें से वीरभद्र नामक रुद्र 'सिंहमुख' नामक भूतगणों का प्रमुख था (वामन. ४.१७)। दूसरा नंदिकेश्वर नामक रुद्र शैलादि नामक भूत गणों का मुखिया था (मत्स्य. १८१.२)।

वामन के अनुसार, भूतगणों की कुल संख्या ग्यारह करोड़ मानी जाती है। इन भूतगणों में स्कंद, शाख एवं भैरव आदि प्रमुख व्यक्ति थे, तथा इनके अधिकार में अनेकानेक गण थे। वामन में भूतों के रूप एवं अस्त्रों की विस्तृत जानकारी दी गयी है। वहाँ पर इनके मुख की आकृति का वर्णन 'वानरास्य' एवं 'मृगेन्द्रवदन' नाम से किया गया है। भस्म, खट्वांग आदि इनके प्रमुख आयुध थे (वामन. ६७.१-२३)। इनके ध्वज पर प्रायः किसी पशु अथवा पक्षी का चिन्ह रहता था, एवं उसी पशु अथवा पक्षी के नाम से 'मयूरध्वज' अथवा 'मयूर-वाहन' ऐसे नाम गणनायक को प्राप्त होते थे।

असुरों से युद्ध--भगवान् शंकर एवं अंधकासुर के बीच हुए युद्ध में, भूतगण शंकर के पक्ष में शामिल था। इस युद्ध में, सर्वप्रथम 'विनायक' नामक भूतों के गणपति ने अंधक पर आक्रमण किया, जिस में अंधक के द्वारा वह परास्त हुआ। तत्पश्चात् नंदी नामक अन्य एक गणपति ने अंधक पर आक्रमण किया, एवं विनायक की सहाय्यता से अंधक से घमासान युद्ध कर उसे परास्त किया। अंधक शंकर की शरण में आने पर, उसे भी शिव ने अपने एक भूतगण का गणपति बनाया, एवं वह भृंगी नाम से प्रसिद्ध हुआ।

भगवान् शंकर ने महिषासुर एवं शुंभ निशुंभ के साथ किये युद्ध में, उसके भूतगणों का अधिपति रुद्र न हो कर 'रुद्राणी' नामक कई भूतस्त्रियाँ थी। इन दोनों युद्ध में भूतगणों का विजय हुआ। पुराणों में इन सारे युद्धों का निर्देश देवीमहात्म्य बताने के लिए किया गया है। यही कारण है कि, इन युद्धों का निर्देश वामन तथा मार्कंडेय पुराणों में एवं 'देवीमहात्म्य' में ही केवल उपलब्ध है।

भूतगणों के बहुत सारे युद्ध असुरगणों से ही हुए थे। किन्तु दक्षयज्ञ के समय, इन्हे देवपक्ष से संग्राम करना पडा। उस युद्ध में भी भूतगणों का विजय हुआ, एवं देव-पक्ष को बहुत बूरी तरह से हार खानी पडी (वायु. १. ३०.८९-१०१)।

देव एवं असुरों के साथ किये युद्ध में यद्यपि भूतगणों का विजय हुआ, फिर भी अन्त में इन्हे उत्तरी भारत का प्रदेश छोड़ कर, दक्षिण भारत में स्थलांतर करना पड़ा। भूतगणों का यह स्थलांतर वैवस्वत मन्वन्तर के काल तक पूर्ण हो कर उस समय ये लोग संपूर्णतः दक्षिण भारत के रहिवासी बन चुके थे।

२. एक हैहयवंशीय राजा। स्कंद के अनुसार, इसके पुत्र का नाम शंख था (शंख ४. देखिये)।

३. (सो. यदु. वसु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार वसुदेव एवं पौरवी का पुत्र था।

४. एक ब्रह्मर्षि, जो भृगु ऋषि का पुत्र था।

भूतकर्मन्—कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो नकुल-पुत्र शतानीक के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २४. २३)।

भूतकेतु—एक राजा, जो दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक था।

भूतज्योति--(सू. नृग.) एक राजा, जो सुमति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वसु था।

भूतधामन्--एक इंद्र, जिसे ऋतुधामन् नामान्तर भी प्राप्त है। जिन इंद्रों के अंश से पांडवों की उत्पत्ति हुओ थी, उन में से दूसरा इंद्र यह था (म. आ. १८९. १९१६* पाठ.)।

भूतनंद--(किलकिला. भविष्य.) एक किलकिला-वंशीय राजा, जिसने पचास वर्षों तक राज्य किया।

भूतनय--रैवत मन्वन्तर का एक देव।

भूतमथन--स्कंद का एक सैनिक। इसके नाम के लिए 'भूतलोन्मथन' पाठभेद प्राप्त है (म. श. ४४. ६४)।

भूतरजस्--रैवत मन्वन्तर का एक देवगण। इसके नाम के लिए 'भूतरय' एवं 'भूतरज' पाठभेद प्राप्त हैं।

भूतवर्मन्--दुर्योधन पक्ष के 'भूतशर्मन्' नामक राजा के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद।

भूतवीर--पुरोहितों के परिवार का एक सामुहिक नाम। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, जनमेजय पारिक्षित राजा ने अपने कुलपरंपरागत कश्यप नामक पुरोहितों की उपेक्षा कर, इन्हे अपने पुरोहित बनाये, एवं इन्हीं के हाथों एक यज्ञसमारोह का आयोजन किया। किन्तु कश्यपों में से

असितमृग नामक आचार्य ने इन्हे यज्ञमंडप से बाहर निकाल दिया, एवं स्वयं पौरोहित्यपद धारण किया।

आगे चल कर विश्वंतर नामक राजा ने अपने श्यापर्ण नामक पुरोहितगण की इसी तरह उपेक्षा की। उस समय श्यापर्ण पुरोहितों ने अपने अनुगामियों को असितमृग कश्यप की उपर्युक्त कथा निवेदित की, एवं विश्वंतर राजा से जबरदस्ती से पौरोहित्य प्राप्त करने की सूचना दी। उसपर राम भार्गवेय नामक ऋषि ने विश्वंतर से पौरोहित्य प्राप्त किया (ऐ. ब्रा. ७.२७)।

भूतशर्मन्--कौरव पक्ष का एक राजा, जो द्रोणाचार्य के द्वारा निर्मित गरुडव्यूह के ग्रीवास्थान में खड़ा था (म. द्रो. १९.६)। इसके नाम के लिए 'भूतवर्मन्' पाठभेद प्राप्त है।

भूतसंतापन--एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष के पुत्रों में से एक था (भा. ७.२.१८)।

भूता—पुलह ऋषि की पत्नी, जो कश्यप एवं क्रोधा की कन्याओं में से एक थी।

भूतांश काश्यप—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो कश्यप ऋषि का वंशज था (ऋ. १०.१०६)।

इसे पुत्र न होने के कारण, इसने अश्वियों की स्तुति करनेवाले एक सूक्त की रचना की। इसके द्वारा रचित यह सूक्त अत्यंत दुर्बोध है, एवं उसका अर्थ अत्यंत धूमिल है (बृहद्दे. ८.१८.२१)।

भूति--विश्वमित्र का एक पुत्र।

२. अंगिरस् ऋषि का एक शिष्य, जो अत्यंत क्रूर एवं क्रोधी था (मार्क. ९६.२)।

३. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार सात्यकि के पुत्रों में से एक था।

४. मार्कंडेय पुराण में निर्दिष्ट पितरों का एक गण (मार्क. ९२.९२)।

भूतिकृत एवं **भूतिद**--मार्कंडेय पुराण में निर्दिष्ट, पितरों का एक गण (मार्क. ९२.९२)।

भूतितीर्था--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२७)।

भूतिनंद—(नाग. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार, मथुरा देश का राजा था।

भूतिमित्र--(कण्व. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार वसुदेव राजा का पुत्र था। ब्रह्मांड एवं मत्स्य में, इसके नाम के लिए 'भूमिमित्र,' एवं भागवत एवं विष्णु में 'भूमित्र' पाठभेद प्राप्त है।

भूपति--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३२)।

भूमन--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रतिहर्तृ एवं स्तुति का पुत्र था। इसे ऋषिकुल्या एवं देवकुल्या नामक दो पत्नियाँ थी, जिनसे इसे क्रमशः उद्गीथ एवं प्रस्ताव नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ५.१५.१५)।

भूमि--एक भूदेवी, जो ब्रह्मा की पुत्री, एवं भगवान् नारायण की पत्नी थी।

भगवान् नारायण के वाराह अवतार में उससे इसे एक पुत्र हुआ, जिसका नाम भौम अथवा नरकासुर था। भगवान् श्रीकृष्ण के द्वारा भौमासुर का वध होने पर, इसने स्वयं प्रकट हो कर, अदिति के दोनो कुंडल लौटा दिये, एवं भौमासुर के संतान की रक्षा के लिए श्रीकृष्ण से प्रार्थना की (भा. १०.५९.३१)।

एकबार दैत्यों के कारण यह अत्यंत त्रस्त हुयी। फिर अपना भार उतारने के लिए इसने भगवान् विष्णु से प्रार्थना की, जो वाराह अवतार ले कर विष्णु ने पूर्ण की (म. व. १४२. परि. १. क्र. १६. पंक्ति. ८२-१०८)।

परशुराम के द्वारा क्षात्रिय-संहार हो जाने के बाद, इसने कश्यप ऋषि से सर्वसमर्थ 'भूपाल' निर्माण करने के लिए प्रार्थना की, एवं परशुराम के हत्याकांड से बचे हुए क्षत्रिय राजकुमारों का पता भी उसे बताया था (म. शां. ४९.६३-७९)।

सुविख्यात सम्राट् पृथु वैन्य ने इसका दोहन किया था, जिस समय इसने उसे अपनी कन्या मानने के लिए प्रार्थना की थी (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति ७९१*)।

महाभारत के अनुसार, अंग राजा से स्पर्धा करने के कारण, यह अदृश्य हो गयी थी। पश्चात् कश्यप ऋषि ने इसे पुनः स्थिर किया, जिस कारण, इसे कश्यप ऋषि की कन्या इस अर्थ से 'काश्यपी' नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. १५३.२)।

श्रीकृष्ण को इसने ऋषि, पितर, देव एवं अतिथियों के सत्कार का महत्व कथन किया था (म. अनु. ९७. ५-२३)। इसका महिमा संजय ने धृतराष्ट्र से कथन किया था।

२. भूमिपति नामक प्राचीन नरेश की पत्नी (म. उ. ११५.१४)। संभव है, यह व्यक्तिवाचक नाम न हो कर, एक उपाधि के रूप में इसका प्रयोग किया गया होगा।

भूमिंजय—विराटपुत्र उत्तर का नामान्तर (म. वि. ३३.९)।

२. एक कौरवपक्षीय योद्धा, जो द्रोणाचार्य के द्वारा निर्मित गरुडव्यूह के हृदयस्थान पर खड़ा था (म. द्रो. १९.१३-१४)।

भूमित्र--कण्ववंशीय भूतिमित्र राजा के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (भूतिमित्र देखिये)।

भूमिनी--पूरुवंशीय अजमीढ राजा की पत्नी।

भूमिपति--एक प्राचीन राजा (म. उ. ११५.१४)। संभव है, यह किसी व्यक्ति का नाम न होकर, उपाधि के रूप में प्रयुक्त किया होगा।

भूमिपाल--एक प्राचीन नरेश, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ.६१.५६-६१)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.२१)।

भूमिशय--एक प्राचीन नरेश, जिसे अमूर्तरयस् राजा से खड्ग की प्राप्ति हुयी थी। आगे चल कर, उस खड्ग को इसने भरत दौष्यंति राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७३)।

भूयसि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भूयोमेधस्--सुमेधस् देवों में से एक।

भूरि--(सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय सम्राट, जो सोमदत्त राजा का पुत्र था। इसे भूरिश्रवस् एवं शल नामक दो भाई थे।

भारतीय युद्ध के समय, यह कौरव पक्ष में शामिल था। उस युद्ध में हुए रात्रियुद्ध में, यह सात्यकि के द्वारा मारा गया (भा. ९.२२.१८; म. द्रो. १४१.१२)। अपनी मृत्यु के पश्चात्, यह एवं इसके भाई विश्वेदेवों में सम्मिलित हो गये (म. स्व. ५.१४)।

२. (सो. कुरु. भविष्य.) एक कुरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार विविक्षु राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसे 'उष्ण', तथा भागवत में इसे 'उक्त' कहा गया है

भूरिकीर्ति--एक राजा, जो कुश एवं लव का श्वशुर था। इसे चंपिका एवं सुमति नामक दो नातनें थी जो क्रमशः कुश एवं लव को विवाह में दी गयी थी, (आ. रा. विवाह. १)।

भूरितेजस्--एक प्राचीन नरेश, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ५८-६१)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४. २३)।

भूरिद्युम्न--एक प्राचीन राजा, जो यमसभा में उपस्थित था (म. स. ८.१८; २०; २५; शां. १२६. १४)। इसके पिता का नाम वीरद्युम्न था।

यह दुर्भाग्य के कारण विनष्ट हुआ था। किन्तु कृशतनु नामक ऋषि ने अपने तपोबल से इसे पुनः जीवित किया (कृशतनु देखिये)। गोदान करने के कारण, इसे स्वर्ग-प्राप्ति हो कर यह यमसभा में उपस्थित हुआ (म. अनु. ७६.२५)।

२. कृष्णभक्त एक ऋषि, जिसने शान्तिदूत बन कर हस्तिनापुर जाते समय मार्ग में श्रीकृष्ण की दक्षिणावर्त परिक्रमा की थी (म. उ. ८१. २७)।

३. दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

४. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

भूरिबल--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. श. २५.१२)। इसके नाम के लिए भीमबल पाठभेद प्राप्त है।

भूरियशस्--पांचालदेशीय एक राजा, जिसके पुत्र का नाम पुरुयशस् था (पुरुयशस् देखिये)।

भूरिश्रवस्--एक कुरुवंशीय राजा, जो सोमदत्त राजा का पुत्र था (म. आ. १७७.१४)। इसे यूपकेतु एवं यूपध्वज नामान्तर भी प्राप्त थे (म. द्रो. २४.५३; स्त्री. २४.५)।

इसे भूरि एवं शल नामक और दो बंधु थे। अपने पिता एवं बन्धुओं के साथ, यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. स. ३१.८)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी यह उपस्थित था।

भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था। अपनी एक अक्षौहिणी सेना के सहित, यह दुर्योधन की सहाय्यता के लिए युद्ध में प्रविष्ट हुआ (म. उ. १९. १२)। यह रथयुद्ध में अत्यंत प्रवीण था, एवं इसकी श्रेणि 'रथयूथपयूथप' थी (म. उ. १६५. २९)।

भारतीय युद्ध में शंख, धृष्टकेतु, भीम, शिखण्डिन् आदि के साथ इसका युद्ध हुआ था। मणिमत् नामक राजा का इसने वध किया था (म. द्रो. २४. ५१)।

भूरिश्रवस्-सात्यकि-युद्ध--भारतीय युद्ध में यादव राजा सात्यकि के साथ इसका अत्यंत रौद्र युद्ध हुआ।

कुरुवंशीय भूरिश्रवस् एवं यादववंशीय सात्यकि का शत्रुत्व वंशपरंपरागत था। भूरिश्रवस् के पिता सोमदत्त एवं सात्यकि के पिता शिनि दोनो देवकी के स्वयंवर में उपस्थित थे, एवं उस समय से इन दो कुलों में वैर का अग्नि सुलग

रह था। उस स्वयंवर में देवकी ने शिनि का वरण किया। उससे क्रुद्ध हो कर सोमदत्त ने शिनि से युद्ध प्रारंभ किया, जिसमें शिनि ने सोमदत्त को जमीन पर घसीट दिया, एवं उसके केश पकड़ कर उसे लत्ताप्रहार किया (शिनि एवं सोमदत्त देखिये)।

भूरिश्रवस् ने भी इस वैर की परंपरा अखंडित रखी थी। भारतीय युद्ध के प्रारंभ में ही इसने सात्यकि के दस पुत्रों का वध किया था (म. भी. ७०.२५)।

भूरिश्रवस् एवं सात्यकि के दरम्यान हुए युद्ध में, यह सात्यकि का वध करनेवाला ही था, कि इतने में सात्यकि को बचाने के लिए अर्जुन ने पीछे से आ कर इसका दाहिना हाथ तोड़ दिया (म. द्रो. ११७.६२)। क्षत्रिय के लिए अशोभनीय इस कृत्य से यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं अपना टूटा हुआ दाहिना हाथ अर्जुन के सम्मुख फेक कर, इसने उसकी काफी निर्भर्त्सना की (म. द्रो. ११८)। पश्चात् इस कृत्य का निषेध करने के लिए इसने आमरण अनशन शुरु किया। उसी निःशस्त्र अवस्था में सात्यकि ने इसका सर काट कर इसका वध किया (म. द्रो. ११८. ३५-३६)।

इस क्रूरकर्म के कारण, अर्जुन एवं सात्यकि की सभी लोगों ने काफी निर्भर्त्सना की। किन्तु अर्जुन ने अपने आत्मसमर्थन करते हुए कहा, 'संकुल युद्ध में शत्रु का पीछे से हाथ तोड़ने में कोई भी दोष नही है'। सात्यकि ने भी कौरवों के द्वारा निःशस्त्र अभिमन्यु का किया गया वध का दृष्टान्त दे कर, अपने कृत्य का समर्थन किया (म. द्रो. ११८.४२-४५; ४७)।

मृत्यु के पश्चात् यह विश्वेदेवों में सम्मिलित हुआ (म. स्व.)।

२. एक ऋषि, जो शुक तथा पीवरी के पुत्रों में से एक था।

३. एक राजा, जो मेरुसावर्णि मनु के पुत्रों में एक था।

४. एक आचार्य, जो मध्यमाध्वर्युओं में से एक था।

भूरिश्रुत--शुकपुत्र भूरिश्रवस् नामक आचार्य का नामांतर।

भूरिषेण--एक राजा, जो ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक था।

२. (सु. शर्याति.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार शर्याति राजा को पुत्रों में से एक था।

भूरिहन्--एक राक्षस, जो प्राचीन काल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५०; ५४-५५)।

भृगवाण--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.१२०. ५)। ऋग्वेद में एक स्थान पर यह उस व्यक्ति का नाम है, जिसे 'शोभ' कहा गया है। किन्तु लुड्विग के अनुसार, इसका सही नाम 'घोष' था। कक्षिवत् नामक आचार्य से यह संबंधित था, किन्तु उस संबंध का स्वरूप अत्यंत संदिग्ध है।

ऋग्वेद में अन्यत्र यह शब्द अग्नि की उपाधि के रूप में आता है, जिससे भृगुओं के द्वारा की जानेवाली अग्निपूजा का आशय प्रतीत है (ऋ. १.७१.४; ४. ७.४)।

भृगु--एक वैदिक पुरोहित गण। ऋग्वेद में इसका निर्देश अग्निपूजकों के रूप में कई बार किया गया है (ऋ. १.५८.६; १२७.७)। इन्हे सर्व प्रथम अग्नि की प्राप्ति हुयी, जिसकी कथा ऋग्वेद में अनेक बार दी गयी है (ऋ. २.४.२; १०.४६.२; तै. सं. ४.६.५.२)। मातरिश्वन् के द्वारा इनकी अग्नि लाने की कथा ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ३.५.१०)।

दाशराज्ञ युद्ध के समय भृगुगण के पुरोहित लोगों का निर्देश द्रुह्युओं के साथ अनेक बार आता है (ऋ. ८.३. ९; ६.१८; १०२.४)। द्रुह्यु तथा तुर्वश के साथ साथ भृगुओं का भी राजा सुदास के शत्रुओं के रूप में उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ७.१८)।

यह एक प्राचीन जाति के लोग थे, क्यों कि, स्तोतागण अंगिरसों तथा अथर्वनों के साथ साथ इनकी अपने सोमप्रेमी पितरों के रूप में चर्चा करते हैं। समस्त तैंतीस देवों, मरुतों, जलों, अश्विनों, उषस् तथा सूर्य के साथ भृगुओं का भी सोमपान करने के लिए आवाहन किया गया है (ऋ. १०.१४; ८.३)। इनकी सूर्य से तुलना की गई है, तथा यह कहा है कि, इनकी सभी कामनाएँ तृप्त हो गयीं थीं (ऋ. ८.३)।

अग्नि को समर्पित सूक्तों में बार बार भृगुओं को प्रमुखतः मनुष्यों के पास अग्नि पहुँचाने के कार्य से संबंद्ध दर्शित किया गया है। अग्नि को भृगुओं का उपहार कहा गया है (ऋ. ३.२)। मंथन करते हुये इन लोगों ने स्तुति के द्वारा अग्नि का आवाहन किया था (ऋ. १.१२७)। अपने प्रशस्तिगीतों से इन लोगों ने अग्नि को लकड़ी में प्रकाशित किया था (ऋ. १०.१२२)। ये लोग अग्नि को पृथ्वी की नाभि तक लाये (ऋ. १.१४३)।

जहाँ अथर्वन् ने संस्कारों तथा यज्ञों की स्थापना की, वहीं भृगुओं ने अपनी योग्यता से अपने को देवों के रूप

में प्रकट किया (ऋ. १०.९२)। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि, इनकी योग्यता प्रमुखतः अग्नि उत्पन्न करने वाले व्यक्तियों के रूप में व्यक्त की गयी है। अग्नि के अवतरण तथा मनुष्यों तक उसके पहुँचाने की पुराकथा प्रमुखतः मातरिश्वन् तथा भृगुओं से संबंधित हैं। किंतु जहाँ मातरिश्वन् उसे विद्युत् के रूप में आकाश से लाते हैं, वहीं भृगु उसे लाते नहीं, बल्कि केवल यही माना गया है कि यह लोग पृथ्वी पर यज्ञ की प्रतिष्ठा तथा संपादन के लिए उसे प्रदीप्त करते हैं।

व्युत्पत्ति की दृष्टि से भी 'भृगु' शब्द का अर्थ 'प्रकाशमान' है, जैसा कि भ्राज (प्रकाशित होना) धातु से निष्पन्न होता है। बर्गेन के विचार इस बात पर कदाचित ही सन्देह किया जा सकते है कि, मूलतः 'भृगु' अग्नि का ही मूल नाम था; जब कि कुन तथा बार्थ इस मत पर सहमत है कि, अग्नि के जिस रूप का यह प्रतिनिधित्व करता है, वह विद्युत् है। कुन तथा वेबर ने अग्नि पुरोहितों के रूप में भृगुओं को यूनानी देवों के साथ समीकृत किया है।

बाद के साहित्य में भृग-गण एक वास्तविक परिवार है तथा कौषीतकि ब्राह्मण के अनुसार, ऐतशायन भी इनके एक अंग है। पुरोहितों के रूप में भृगओं का 'अग्नि-स्थापन' तथा 'दशपेयक्रतु' जैसे अनेक संस्कारों के सम्बन्ध में उल्लेख है। अनेक स्थलों पर ये लोग अंगिरसों के साथ भी संयुक्त है (तै. सं. १.१.७.२; मै. सं. १.१.८; तै. ब्रा. १.१.४.८; ३.२.७.६; श. ब्रा. १.२.१.१३)। इन दो परिवारों का घनिष्ठ सम्बन्ध इस तथ्य से प्रकट होता है कि, शतपथ ब्राह्मण में 'च्यवन' को 'भार्गव' या 'आंगिरस' दोनो ही कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.५.१)। अथर्ववेद में, ब्राह्मणों को त्रस्त करनेवाले लोगों पर पड़नेवाली विपत्तियों का दृष्टान्त देने के लिए 'भृगु' नाम का उपयोग किया गया है।

ऋग्वेद में एक स्थान पर, भृगुगण का निर्देश एक योद्धाओं के समूह के रूप भी किया हुआ प्रतीत होता है (ऋ. ७.१८.६)।

२. कश्यपकुल का गोत्रकार ऋषिगण।

भृगु प्रजापति--पुराणों में निर्दिष्ट प्रजापतियों में से एक, जो स्वायंभुव तथा चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक था। स्वायंभुव मन्वन्तर में इसकी उत्पत्ति ब्रह्मा के हृदय से हुयी। यह स्वायंभुव मनु का दामाद एवं शंकर का साढू था।

दक्षयज्ञ--शंकर का अपमान कर के जिस समय दक्ष ने यज्ञ किया था, उस समय यह उपस्थित था, एवं दक्ष के द्वारा की गई शंकर की निन्दा में इसने भी भागा लिया था। शंकर को जब यह ज्ञात हुआ तब उसने सबसे पहले नंदी को यज्ञविध्वंस करने के लिए भेजा, किंतु भृगु ने उसे शाप दे कर भगा दिया। तब शिव ने अपने पार्षद वीरभद्र को भेजा। वीरभद्र ने दक्षयज्ञ का विध्वंस किया, तथा यज्ञ में भाग लेनेवाले सभी ऋषियों को विद्रूप बना डाला। उसने क्रोध में आकर इसकी दाढ़ी भी जला डाली। यह विध्वंसकारी लीला से भयातुर हो कर, सभी ऋषियों एवं देवों ने शंकर की स्तुति की, जिससे प्रसन्न हो कर शंकर ने इसे बकरे के दाढ़ी प्रदान की (भा. ४.५.१७-१९)। ब्रह्मांड के अनुसार, दक्ष द्वारा अपमानित होने के कारण शिव ने इसे जला डाला था (ब्रह्मांड. २.११.१-१०)।

देवदैत्य संग्राम--देवों तथा असुरों के बीच होंनेवाले युद्ध में दैत्यो को पराजय का मुख देखना पड़ा। यह देख कर, असुरों के गुरु शुक्र 'संजीवनी' मंत्र लाने के लिए गया। दूसरी ओर भृगु, जो असुरों का बड़ा पक्षपाती था, वह भी तपस्या के लिये चला गया। तब इसकी पत्नी देवों से संग्राम करती रही। विष्णु ने उसे युद्धभूमि में डट कर देवों को मारते हुए देखा। पहले तो वह शान्त रहे, फिर बिना विचार किये हुए कि वह स्त्री है, उन्होंने अपने सुदर्शन चक्रद्वारा उसका वध किया।

भृगु को जैसे ही यह पता चला, इसने संजीवनीमंत्र से अपनी पत्नी को जिला लिया, तथा विष्णु को शाप दिया, 'तुम्हे गर्भ में रह कर उसकी पीड़ा को सहन कर, पृथ्वी पर अवतार लेना पड़ेगा' (दे. भा. ४.११-१२)। स्त्रीवध उचित है अथवा अनुचित इसके बारे में यह निर्देश रामायण में प्राप्त है। 'ताडकावध' के समय विश्वामित्र ने राम को समझाते हुए कहा था कि, विशेष प्रसंग में 'स्त्रीवध' अनुचित नहीं, उचित है (वा. रा. बा. २५.२१)।

विष्णु को भृगु से शाप मिलने की एक दूसरी कथा पद्मपुराण में प्राप्त है। विष्णु ने पहले भृगु को यह वचन दिया था कि, वह इसके यज्ञ की रक्षा करेगा। किन्तु यज्ञ के समय वह इन्द्र के निमंत्रण पर उसके यहाँ चला गया। यज्ञ के समय विष्णु को न देख कर दैत्यों ने इसके यज्ञ का नाश किया। इससे क्रोधित हो कर भृगु ने विष्णु को मृत्युलोक में दस बार जन्म लेने का शाप दिया (पद्म. भू. १२१)।

देवों की परीक्षा--एक बार स्वायंभुव मनु ने एक यज्ञ किया, जिसमें यह विवाद खड़ा हुआ कि, ब्रह्मा विष्णु तथा महेश में कौन श्रेष्ठ है? भृगु उस में था, अतएव इस बात का पता लगाने का काम इसे सौंपा गया। भृगु सर्वप्रथम कैलाश पर्वत पर शंकरजी के यहाँ गया। वहाँ पर नंदी ने इसे अन्दर जाने के लिए रोका, कारण कि वहाँ शंकर-पार्वती क्रीड़ा में निमग्न थे। इसप्रकार के अपमान एवं उपेक्षा को यह सहन न कर सका, और क्रोधावेश में शंकर को शाप दिया, 'तुम्हारे शरीर का आकार लिंग रूप में माना जायेगा, तथा तुम्हारे उपर चढ़ाये हुये जल को ले कर कोई भी व्यक्ति तीर्थ रूप में पान न करेगा'।

इसके उपरांत यह ब्रह्मा के पास गया, वहाँ ब्रह्मा ने न इसको नमस्कार ही किया, और न इसका उचित सम्मान कर उत्थापन ही दिया। इससे क्रोधित होकर इसने शाप दिया, 'तुम्हारा पूजन कोई न करेगा'।

अंत में यह विष्णु के पास गया। विष्णु उस समय सो रहे थे। यह दो देवताओं से रुष्ट ही था। क्रोध में आकर भृगु ने विष्णु के सीने पर कस कर एक लात मारी। विष्णु की नींद टूटी तथा उन्होंने इसे नमस्कार कर पूछा, 'आप के पैरों को तो चोट नहीं लगी?'। विष्णु की यह शालीनता देखकर भृगु प्रसन्न हुआ, तथा इसने विष्णु को सर्वश्रेष्ठ देवता की पदवी प्रदान की (पद्म. उ. २५५)। भृगु के द्वारा किये गये लात के प्रहार को श्रीविष्णु ने 'श्रीवत्स' चिह्न मानकर धारण किया (मा. १०.८९.१--१२)।

परिवार—ब्रह्माण्ड के अनुसार, इसकी पत्नी दक्षकन्या ख्याति थी, जिससे इसे लक्ष्मी, धातृ तथा विधातृ नामक सन्तानें हुयीं। लक्ष्मी ने नारायण का वरण किया, तथा उससे बल तथा उन्माद नामक पुत्र हुए। कालान्तर में बल को तेज, तथा उन्माद को संशय नामक पुत्र हुए। भृगु ने मन से कई पुत्र उत्पन्न किये, जो आकाशगामी होकर देवों के विमानों के चालक बने।

ख्यातिपुत्र धातृ की पत्नी का नाम नियति, तथा विधातृ की पत्नी का नाम आयति था। नियति को मृकंड, एवं आयति को प्राण नामक पुत्र हुए। मृकंड को मनस्विनी से मार्कंडेय हुआ। मार्कंडेय को धूम्रा से वेदशिरस् हुआ। वेदशिरस् को पीवरी से मार्कंडेय नाम से प्रसिद्ध ऋषि हुए। प्राण को पुंडरिका से द्युतिमान् नामक पुत्र हुआ, जिसे उन्नत तथा स्वनवत् नामक पुत्र हुए। ये सभी लोग भार्गव के नाम से प्रसिद्ध हुए (ब्रह्मांड. २.११.१-१०; १३.६२)।

भागवत, विष्णुपुराण तथा महाभारत में भी इसके परिवार के बारे में सूचना प्राप्त होती है (भा. ४.१. ४५; विष्णु. १.१०.१-५; म. आ. ६०.४८; कवि तथा उशनस् देखिये)

भृगु 'वारुणि'—ब्रह्मा के आठ मानस पुत्रों में से एक, जिससे आगे चल कर ब्राह्मण कुलों का निर्माण हुआ। ब्रह्मा के आठ मानस पुत्र इस प्रकार हैं:--भृगु, अंगिरस्, मरीचि, अत्रि, वसिष्ठ, पुलस्त्य, पुलह एवं क्रतु (वायु. ९.६८-६९)। 'पितामह' ब्रह्मा से उत्पन्न होने के कारण, इन सभी ऋषियों को 'पैतामहर्षि' सामुहिक नाम प्राप्त हैं। यह अग्नि की ज्वाला से उत्पन्न हुआ, अतः इसका नाम 'भृगु' पड़ा (म. अनु. ८५.१०६)।

जन्म—महाभारत एवं पुराणों के अनुसार, ब्रह्मा के द्वारा किये गये यज्ञ से भृगु सर्वप्रथम उत्पन्न हुआ, एवं शिव ने वरुण का रूप धारण कर इसे पुत्र रूप में धारण किया। इसलिए इसे 'वारुणि' उपाधि प्राप्त हुयी (म. आ. ५. २१६*; अनु. १३२.३६; ब्रह्मांड. ३.२.३८)। कई पुराणों के अनुसार, ब्रह्ममानस पुत्रों में से कवि नामक एक और पुत्र का निर्देश प्राप्त है, उसे भी वरुणरूपधारी शिव ने पुत्र रूप में स्वीकार किया, जिसके कारण कवि को भी भृगु का भाई कहा जाता है।

ब्राह्मण ग्रन्थों में भी इसे 'वारुणि भृगु' कहा गया है। किन्तु वहाँ इसे प्रजापति का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी जन्मकथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। इन ग्रन्थों के अनुसार, प्रजापति ने एक बार अपना वीर्य स्खलित किया, जिसके तीन भाग हो गये, एवं इन भागों से आदित्य, भृगु एवं अंगिरस् की उत्पत्ति हुयी (ऐ. ब्रा. ३.३४)। पंचविंश ब्राह्मण में इसे वरुण के वीर्यस्खलन से उत्पन्न हुआ कहा गया है (पं. ब्रा. १८.९.१)। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह वरुण द्वारा उत्पन्न किया गया, एवं उसी के द्वारा इसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति हुयी, जिस कारण इसे 'भृगु वारुणि' नाम प्राप्त हुआ (श. ब्रा. ११.६.१.१; तै. आ. ९.१; तै. उ. १.३.१.१)।

गोपथ ब्राह्मण के अनुसार, सृष्टि की उत्पत्ति के लिए जिस समय ब्रह्मा तपस्या में लीन था, उस समय उसके शरीर से स्वेदकण पृथ्वी पर गिरे। उन स्वेदकणों में अपनी परछाई देखने के कारण ही, ब्रह्मा का वीर्य स्खलन हुआ। उस वीर्य के दो भाग हुए—उनमें से जो भाग शान्त, पेय एवं स्वादिष्ट था, उससे भृगु की उत्पत्ति हुयी; एवं जो भाग खारा, अपेय एवं अस्वादिष्ट था, उससे अंगिरस् ऋषि की

उत्पत्ति हुयी। जन्म लेते ही इसने अपने मुँह से जो नाद निसृत किया, उसी कारण इसका नाम 'अथर्वन्' हुआ। आगे चल कर अथर्वन् एवं अंगिरस् से दस दस, मिल कर बीस ऋषि उत्पन्न हुए, जिन्हे 'अथर्वन् आंगिरस' नाम प्राप्त हुआ।

वेदोत्पत्ति—अथर्वन् ऋषि के द्वारा ब्रह्मा को जो वेदमंत्र दृष्टिगत हुए, उन्हीं के द्वारा 'अथर्ववेद' की रचना हुयी, एवं अंगिरस ऋषि के द्वारा दृष्टिगत हुए मंत्रों से 'आंगिरस-वेद' का निर्माण हुआ।

ब्रह्मा के द्वारा पुष्कर क्षेत्र में किये गये यज्ञ में यह 'होता' था, एवं देवों के द्वारा तुंगक आरण्य में किये गये यज्ञ में यह आचार्य था। इन्हीं दोनों यज्ञों के समय, इसने 'भीष्मपंचकव्रत' किया था (पद्म. सृ. ३४; स्व. ३९; उ. १२४)। इसे संजीवनी विद्या अवगत थी, जिसके बल से इसने जमदग्नि को पुनः जीवित किया था (ब्रह्मांड. १.३०)।

नहुष को शाप—नहुष के अविवेकी व्यवहारों से देवतागण एवं सारी प्रजा त्रस्त थी। उसे देख कर अगस्त्य ऋषि भृगु ऋषि से मंत्रणा लेने के लिए आया। इसने उसे राय दी कि, तुम सभी सप्तऋषि नहुष के रथ के वाहन बनो। इस प्रकार सभी सप्तऋषियों ने नहुष के रथ को खींचा। रथ धीमा चल रहा था, अतएव नहुष ने क्रोध में आकर तेज चलने के लिए 'सर्प–सर्प' कहा, तथा एक लात अगस्त्य के मारी। इस समय अगस्त्य की जटाओं में भृगु विराजमान था, अतएव लात इसे लगी, तथा इसने नहुष को सर्प (नाग) बन जाने के लिए शाप दिया, तथा उसे इन्द्रपद से च्युत किया (म. अनु. ९९; नहुष देखिये)।

एक बार हिमालय तथा विंध्य पर्वतों में अकाल पड़ा। उस समय यह हिमालय पर गया। वहाँ पर इसने एक विद्याधर दम्पति को देखा, जिसमें पति का मुख किसी शाप के कारण व्यांघ्र का था। उस दम्पति के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने उस पुरुष को पौष शुद्ध एकादशी का व्रत करने के लिए कहा, जिसके द्वारा वह शाप से मुक्त हो सका (पद्म. उ. १२५)।

संवाद—महाभारत एवं पुराणों में, इसके अन्य राजाओं एवं ऋषियों के बीच तत्त्वज्ञान सम्बधी जो वार्ताएँ हुई, उनका स्थान स्थान पर निर्देश मिलता है। इसका एवं भरद्वाज का जगत की उत्पत्ति तथा विभिन्न तत्त्वों के वर्णन के संबन्ध में संवाद हुआ था (म. शां. १७५.४८३*)। इसने वीतहव्य को शरण देकर उसे ब्राह्मणत्व प्रदान कर उपदेश दिया था (म. अनु. ३०.५७–५८)। इसी प्रकार निम्नलिखित विषयों पर इसके द्वारा व्यक्त किए गये विचारों में इसका दार्शनिक पक्ष देखने योग्य हैः— शरीर के भीतर जठरानल तथा प्राण, अपान आदि वायुओं की स्थिति (म. शां. १७८), सत्य की महिमा, असत्य के दोष तथा लोग परलोक के दुःखसुख का विवेचन (म. शां. १८३), परलोक तथा वानप्रस्थ एवं संन्यास धर्मों का वर्णन आदि (म. शां. १८५)। इसने सोमकान्त राजा को गणेश पुराण भी बताया था (गणेश. १.९)।

आश्रम—भृगुतुंग नामक पर्वत पर भृगु ऋषि का आश्रम था, जहाँ इसने तपस्या की थी। इसी के ही कारण, इस पर्वत को 'भृगुतुंग' नाम प्राप्त हुआ था।

तत्वज्ञान—तैत्तिरीय उपनिषद में एक तत्वज्ञ के नाते भृगु वारुणि का निर्देश प्राप्त है। इसके द्वारा पंचकोशात्मक ब्रह्म का कथन प्राप्त है, जिसके अनुसार अन्न, प्राण, मन, विज्ञान एवं आनंद इस क्रम से ब्रह्म का वर्णन किया गया है (तै. उ. ३.१.१–६)। किन्तु ब्रह्म की प्राप्ति केवल विचार से ही हो सकती है, ऐसा इसका अन्तिम सिद्धान्त था।

परिवार—भृगु को दिव्या तथा पुलोमा नामक दो पत्नियाँ थी। उन में से दिव्या हिरण्याकशिपु नामक असुर की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.१.७४; वायु. ६५.७३)। महाभारत में पुलोमा को भी हिरण्यकशिपु की कन्या कहा गया है।

पुलोमा से इसे कुल उन्नीस पुत्र हुए, जिनमें से बारह देवयोनि के एवं बाकी सात ऋषि थे। इससे उत्पन्न बारह देव निम्नलिखित थेः–भुवन, भावन, अंत्य, अंत्यायन, क्रतु, शुचि, स्वमूर्धन्, व्याज वसुद, प्रभव, अव्यय एवं अधिपति।

पुलोमा से उत्पन्न सात ऋषि निम्नलिखित थेः-च्यवन, उशनस् शुक्र, वज्रशीर्ष, शुचि, और्व, वरेण्य एवं सवन।

ब्रह्मांड में उपर्युक्त सारे देव एवं ऋषि दिव्या के पुत्र कहे गये है, एवं केवल च्यवन को पुलोमा का पुत्र बताया गया है (ब्रह्मांड. ३.१.८९–९०,९२)।

इसके पुत्रों में उशनस् शुक्र एवं च्यवन ये दो पुत्र अत्यधिक महत्वपूर्ण थे, क्यों कि, उन्हीसे आगे चल कर भृगु (भार्गव) वंश का विस्तार हुआ। इनमें से शुक्र का वंश दैत्यपक्ष में शामिल हो कर विनष्ट हो गया। इस तरह च्यवन ऋषि के परिवार से ही आगे चल कर

सुविख्यात भार्गव वंश निर्माण हुआ। भृगुवंश के इन दो प्रमुख वंशकार ऋषियों का वंशविस्तार निम्नलिखित है :--

(१) शुक्र का परिवार--शुक्र को अपनी गो नामक पत्नी से वरुत्रिन्, त्वष्टु, शंड एवं मर्क ऐसे चार पुत्र हुए। उनमें से वरुत्रिन् को रजत्, पृथुरश्मि एवं बृहदंगिरस् नामक तीन ब्रह्मिष्ठ एवं असुरयाजक पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ६५.७८)। वरुत्रिन् के ये तीनो पुत्र दैत्यों के धर्मगुरु थे, एवं वे देवासुर संग्राम में अन्य दैत्यों के साथ नष्ट हो गये। त्वष्टु को त्रिशिरस् विश्वरूप एवं विश्वकर्मन् नामक दो पुत्र थे।

शुक्र के अन्य दो पुत्र शंड एवं मर्क शुरु में दैत्यों के धर्मगुरु थे। किन्तु पश्चात् वे देवों के पक्ष में शामिल हो गये, जिस कारण शुक्र ने उन्हे विनष्ट होने का शाप दिया। इनमें मर्क से मार्कंडेय नामक वंश की उत्पत्ति हुयी।

भौगोलिक दृष्टि से शुक्र एवं उसका परिवार उत्तरी भारत के मध्यप्रदेश से संबंधित प्रतीत होता है (शुक्र देखिये)।

(२) च्यवन का परिवार--च्यवन ऋषि को शर्याति राजा की कन्या सुकन्या से आप्नवान् एवं दधीच नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें से आप्नवान् के वंश में ऋचीक, जमदग्नि एवं परशुराम जामदग्न्य इस क्रम से एक से एक अधिक पराक्रमी एवं विद्यासंपन्न पुत्र उत्पन्न हुए। आप्नवान् के इन पराक्रमी वंशजों नें हैहयवंशीय राजाओं के साथ किया शत्रुत्व सुविख्यात है (परशुराम जामदग्न्य देखिये)। भार्गव वंश के इस शाखा का विस्तार पश्चिम हिंदुस्थान में आनर्त प्रदेश में हुआ था।

दधीच ऋषि को सरस्वती नामक पत्नी से सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। किन्तु भार्गव वंश के इस शाखा के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त नहीं है।

भार्गवगण--ब्रह्मांड के अनुसार, भार्गव वंश में उपर्युक्त भृगुवंशीयों के अतिरिक्त निम्नलिखित सात गण प्रमुख थेः--१. वत्स, २. विद, ३. आर्ष्टिषेण, ४. यस्क ५. वैन्य, ६. शौनक, ७. मित्रेयु (ब्रह्मांड. ३.१. ७४-१००)।

क्षत्रियब्राह्मण--च्यवन ऋषि के परिवार ने ब्राह्मण हो कर भी क्षत्रियकर्म स्वीकार लिया, जिस कारण, भार्गव वंशियों को 'क्षत्रियब्राह्मण' उपाधि प्राप्त हुअी। भृगु के इस क्षत्रियब्राह्मण वंश में, निम्नलिखित ऋषि भी समाविष्ट थेः--मत्स्य, मौद्गलायन, सांकृत्य, गार्ग्यायन, गार्गिय, कपि, मैत्रेय, वध्र्यश्व एवं दिवोदास (मत्स्य. १९५.२२-२३)। ब्रह्मांड में भार्गव वंश के उन्नीस सूक्तकारों का निर्देश प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.३२. १०४-१०६)। वहाँ इन भार्गव वंश के बहुत सारे क्षत्रिय ब्राह्मण ऋषियों का अंतरभाव किया है।

भृगु-आंगिरस परिवार--भृगु वारुणि, उसका भाई कवि एवं अंगिरस् आग्नेय, ये तीनो प्राचीन ब्राह्मण कुलों के आद्य निर्माता ऋषि माने जाते है। प्रारंभ में ये तीनों ब्राह्मण वंश स्वतंत्र थे। किन्तु आगे चल कर भृगु, कवि एवं अंगिरस् ये तीनो वंश एकत्रित हुए, जिन्हे 'भृगु-आंगिरस' अथवा 'आंगिरस' नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. ८५.१९-३८)। इस भृगु-आंगिरस वंश में भृगु के सात पुत्र, एवं अंगिरस् तथा कवि के प्रत्येकी आठ पुत्रों के के वंशज सम्मिलित थे। इस वंश में सम्मिलित हुए अंगिरस् एवं कवि के पुत्रों के नाम निम्नलिखित थेः--

(१) अंगिरस्पुत्र--बृहस्पति, उतथ्य, पयस्य, शांति, घोर, विरूप, सुधन्वन् एवं संवर्त।

(२) कविपुत्र--कवि, काव्य, धृष्णु, बुद्धिमत्, उशनस् भृगु, विरज, काशिन् एवं उग्र।

भृगु एवं आंगिरस वंश एक होने के बाद उनके ग्रंथ ही 'भृग्वंगिरस्' अथवा 'अथर्वांगिरस्' नाम से एकत्र हो गये। आधुनिक काल में उपलब्ध अथर्वसंहिता भृगु एवं आंगिरस ग्रंथों के सम्मीलन से ही बनी हुयी है।

विवाहसंबंध--आधुनिक काल में, विवाह करते समय जिन दो गोत्रों के प्रवर एक है, उन में विवाह तय नहीं किया जाता। भृगु एवं अंगिरस् ये दो गोत्र ही केवल ऐसे है कि, जहाँ प्रवर एक होने पर भी विवाह तय करने में बाधा नहीं आती है। संभव है, ये दोनों मूल गोत्रकार अलग वंश के होने के कारण, यह धार्मिक परंपरा प्रस्थापित की गयी हो।

भृगु गोत्रियों में भृगु, जामदग्न्य भृगु ऐसे अनेक भेद हैं। आंगिरस वंशियों में भी भरद्वाज-आंगिरस, गौतम आंगिरस ऐसे अनेक भेद प्राप्त हैं। इन सारे गोत्रों में काफ़ी नामसादृश्य दिखाई देता हैं। किन्तु इन सारे गोत्रों के मूल गोत्रकार विभिन्न वंशों में उत्पन्न हुये थे। यही कारण है कि, इन गोत्रों के प्रवर एक हो कर भी उन में विवाह होता है।

वैदिक वाङ्मय में भृगु प्रजापति एवं भृगु वारुणि स्वतंत्र

व्यक्ति दिये गये हैं। किन्तु पौराणिक वाङ्मय में उन्हें बहुत बूरी तरह संमिश्रित किया गया है। अंगिरसों के संबंध में भी यही स्थिति प्रतीत होती है (अंगिरस् देखिये)।

ग्रंथ—भृगुस्मृति; २. भृगुगीता, जिसमें वेदान्त विषयक प्रश्नों की चर्चा की गयी है; ३. भृगुसंहिता, जिसमें ज्योतिष-शास्त्रविषयक प्रश्नों की चर्चा की गयी है; ४. भृगुसिद्धान्त; ५. भृगुसूत्र (C.C.)।

मत्स्य के अनुसार, इसने वास्तुशास्त्र विषयक एक ग्रंथ की रचना भी की थी।

मनुस्मृति से प्रतीत होता है, कि धर्मशास्त्र से संबंधित विषयों पर भी इसके द्वारा कई ग्रंथों की रचना हुयी थी (मनु देखिये)।

भृगुकुल के गोत्रकार--भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकारों में पंच-प्रवरात्मक (पाँच प्रवरोंवाले), चतुःप्रवरात्मक (चार प्रवरोंवाले), त्रिप्रवरात्मक (तीन प्रवरोंवाले), एवं द्विप्रवरात्मक (दो प्रवरोंवाले) ऐसे चार प्रमुख प्रकार है।

(१) पंचप्रवरात्मक गोत्रकार--भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार पंचप्रवरात्मक है, जिनके आप्नवान्, और्व, च्यवन, जमदग्नि, एवं भृगु, ये पाँच प्रवर होते हैः—अनंतभागिन्, अनुमति, आप्नवान, आलुकि (जलाभित), आवेद (आंत्राज), उपरिमंडल, ऐलिक, और्व, कार्षणि (पार्वणि), कुत्स, कौचहास्तिक, कोटिल, कौत्स, कौसि, क्षुभ्य, गायन, गार्ग्यायण, गार्हायण, गोष्ठायन, चल्कुंडल, चातकि, चांद्रमसि, च्यवन, जमदग्नि, जविन् (ग), जालधि, जिह्वक (जिह्वाक, नदाकि), दंडिन् (दर्भि), देवपति, नडायन (नवप्रभ), नाकुलि, नीतिन् (ग), नील, नेतिष्य, नैकजिह्व पांडुरोचि, पूर्णिमागतिक (पौर्णिमागतिक), पैंगलायनि, पैल, पौर, फेनप, बालाकि, भृगु, भ्राष्टकायणि, मंड (मुंड), मांकायन (कार्मायन), मार्कंड, मार्गेय (भागेय), मांडव्य, मांडूक, माल्यनि मृग (भृत), मौद्गलायन, यज्ञपिंडायन, (यद्रामिलायन एवं याज्ञ), योधेयि, रौहित्यायनि, ललाटि (ललाटि), लिंबुकि, लुब्ध, लोलाक्षि, लौक्षिण्य, लौहवैरिण, वांगायनि, वात्स्य (वत्स्य), वाह्मयन (महाभाग), विरूपाक्ष विष्णु, वीतिहव्य वैकर्णिनि (वैकर्णेय), वैगायन, वैशंपायन, वैश्वानरि, वैहीनरि, व्याधाज्य, शारद्वतिक, शार्कराक्षि, शाङ्गरव, शिखावर्ण, शौनक, शौनकायन-जीवन्ति (शौन-कायन जीवंतिक), सकौवाक्षि (सकौगाक्षि), सगालव, सांकृत्य, सात्यायनि, सार्पि, सावर्णिक, सोक्ति, सौचाक, सौधिक, सौह, स्तनित एवं स्थलपिंड।

भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार भी पंचप्रवरात्मक ही हैं; किंतु उनके आप्नवान्, आर्ष्टिषेण, च्यवन, भृगु एवं रूपि ये पाँच प्रवर होते हैं :—आपस्तंबि, आर्ष्टिषेण, अश्वायनि, कटायनि, कपि, कार्दमायनि, गार्दभि, ग्राम्यायणि, नैकशि, बिल्वि (भल्ली), भृगुदास, मार्गपथ एवं रूपि।

(२) चतुःप्रवरात्मक गोत्रकार—भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार चतुःप्रवरात्मक हैं, जिनके भृगु, रैवस, वीतिहव्य एवं वैवस ये चार प्रवर होते हैंः—काश्यपि, कौशापि गार्गीय, चलि, जाबालि, जैवन्त्यायनि, तिथि, दम (मोदन, सदमोदम), पिलि, पौष्णायन, बालपि, भागवित्ति, भागिल, मथित (माधव), मौज, यस्क, रामोद, वीतिहव्य, श्रमदा-गपि और सौर।

(३) त्रिप्रवरात्मक गोत्रकार—भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार त्रिप्रवरात्मक हैं, जिनके आप्नवान्, च्यवन, एवं भृगु ये तीन प्रवर होते हैंः—उभयजात, और्वेय (ग), कायनि, जमदग्नि, पौलस्त्य, विद, बैजभृत, मारुत (ग), और शाकटायन।

भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार भी त्रिप्रवरात्मक है, किन्तु उनके दिवोदास, भृगु एवं वध्न्यश्व ये तीन प्रवर होते हैं :—अपिकायनि, अपिशि (अपिशली), खांडव, द्रौणायन, मैत्रेय, रौक्मायणि (रौक्मायण), शाकटाक्ष, शालायनि, और हंसजिह्व।

(४) द्विप्रवरात्मक गोत्रकार--भृगुकुल के निम्नलिखित गोत्रकार द्विप्रवरात्मक हैं, जिनके गृत्समद एवं भृगु ये दो प्रवर होते हैंः—एकायन, कार्दमायनि, गृत्समद, चौक्षि, प्रत्यह (प्रत्यूह), मत्स्यगंध, यज्ञपति, शाकायन, सनक और सौरि (मत्स्य. १९५)।

भृगुकुल के मंत्रकारः--भृगुकुल के मंत्रकारों की नामावलि मत्स्य, वायु, एवं ब्रह्मांड में प्राप्त है (मत्स्य. १४५.९८-१००; वायु. ५९.९५-९७; ब्रह्मांड. २.३२. १०४-१०६)। उनमें से ब्रह्मांड में प्राप्त नामावलि निम्न-लिखित है, जिसमें वायु एवं ब्रह्मांड में उपलब्ध पाठ कोष्ठक में क्रमशः दिये गये हैः—आत्मवत्, आर्ष्टिषेण (अद्विषेण), ऊर्व (और्व), गृत्स (गृत्समत्), च्यवन, जमदग्नि, दधीच (ऋचीक), दिवोदास, प्रचेतस्, ब्रह्मवत् (वाध्न्यश्व) भृगु, युधाजित्, वीतहव्य, वेद (विद), वैन्य (पृथु)' शौनक, सारस्वत, सुवेधस् (सुवर्चस्, सुमेधस्)।

इनके अतिरिक्त, अपर, नम, प्रश्वार नामक मंत्रकारों का निर्देश केवल वायु में; कवि नामक मंत्रकार का निर्देश

वायु एवं ब्रह्मांड में; एवं च्यवन और युधिजित् का निर्देश केवल मत्स्य में प्राप्त है।

भृगुदास—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भृग्वंगिरस्—अथर्ववेद जाननेवाले ऋषिसमुदाय के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम (गो. ब्रा. १.३.१; श. ब्रा. १.२.१.१३)। यह ऋषिसमुदाय प्रायः भृगु एवं अंगिरस्‌वंशीय ऋषियों से बना हुआ था। ऋग्वेद में कई स्थानों पर इनका निर्देश अथर्वन् लोगों के साथ किया गया है (ऋ. ८.३५.३; १०.१४.६)। किंतु भृगु, अथर्वन् एवं अंगिरस् ये विभिन्न वंश के लोग थे, ऐसा भी निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.१३.६)।

गोपथ ब्राह्मण के अनुसार, अथर्वन् एवं अंगिरस् ये भृगु के नेत्र माने गये है। यही कारण है कि, भृग्वंगिरस् अथर्ववेद का ही नामांतर माना जाता है (गो. ब्रा. १.२. २२)। अथर्वन् सांस्कारिक ग्रंथों में भी 'भृग्वंगिरसः' यह शब्द अथर्ववेद के लिए प्रयुक्त हुआ है (ब्लूमफिल्ड–अथर्ववेद ९.१०.१०७)। याज्ञवल्क्य स्मृति में भृग्वंगिरस् एवं अथर्वांगिरस् यें शब्द 'अथर्ववेद' अर्थ से प्रयुक्त हुये है, एवं हरएक राजपुरोहित इस वेदविद्या में प्रवीण होना चाहिए, ऐसा कहा गया है। मनु के अनुसार, अथर्ववेद में मंत्रविद्या को अधिकतर प्राधान्य दिये जाने के कारण, उस वेद को एवं उसे जाननेवाले लोगों को समाज गिरी हुयी नजर से देखा करता था (मनु. ११. ३३)।

शतपथ ब्राह्मण में वसिष्ठ को 'अथर्वनिधि' कहा गया है, एवं अथर्ववेद का निर्देश 'क्षत्र' नाम से किया गया है (श. ब्रा. १४.८.१४.४)।

भृंग—त्रिधामन् नामक शिवावतार का शिष्य।

भृंगिन्—शिवगणों में-से एक।

भृंगीरीटी—एक शिवगण। अंधकासुर को शिवगणत्व प्राप्त होने के बाद उसने यह नाम स्वीकार लिया था (अंधक देखिये)।

भृत—भृगुकुल के मृग नामक गोत्रकार के लिए उपलब्ध पाठभेद (मृग देखिये)।

भृतकील—कुशिककुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भृम्यश्व—(सो. नील.) एक राजा, जो मुद्गल नामक राजा का पिता था (नि. ९.२४)। इसके नाम के लिए निम्नलिखित पाठभेद प्राप्त हैं:—वाह्याश्व (ह. वं. १.३२; ब्रह्म. १३.९५–९६); भर्म्याश्व (मा. ९.२१.३२–३३); हर्यश्व (विष्णु. ४. १९.१५); भद्राश्व (मत्स्य. ५०.४)।

इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र थे:— मुद्गल, संजय (सृंजय), बृहदिषु, यवीनर, कांपिल्य (कपिल अथवा कृमिलाश्व)। पंचाल २. और भर्म्याश्व देखिये।

भृशाश्व—एक ऋषि, जिसके पुत्र का नाम देवप्रहरण था।

भृशुंडिन—एक मछुआ, जो दंडकारण्य में चौर्यकर्म कर अपनी जीविका चलाता था।

एक बार मुद्गल ऋषि दंडकारण्य में से जा रहे थे, जब इसने उनकी राह रोंक दी। किन्तु मुद्गल ऋषि के ब्राह्मतेज के सामने यह निष्प्रभ हुआ। पश्चात् मुद्गल ने इसे उपदेश दिया, एवं श्रीगणेश की उपासना करने के लिए कहा।

मुद्गल के उपदेश के अनुसार, इसने एकाग्रचित्त कर श्रीगणेश की उपासना की। इस उपासना के कारण, इसके दो भृकुटियों के बीच एक शुंड उत्पन्न हुयी, एवं यह स्वयं श्रीगणेश जैसा दिखाई देने लगा (गणेश. १. ५७)। इसे गणेश स्वरूप मान कर स्वयं इंद्र इसके दर्शन के लिए उपस्थित हुआ था (गणेश. १.६७)।

भेडी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

भेतृ—विकुंठ देवों में से एक।

भेद—एक राजा, जो सुदास एवं तृत्सुभरतों के दस शत्रुओं में से एक था। यमुना के तट पर हुए दाशराज्ञ युद्ध में, सुदास के द्वारा यह पराजित हुआ था (ऋ. ७. १८.१८; ३३.३)। संभव है, यह अज, शिग्रु एवं यक्षु आदि लोगों का राजा था, जिनका भी दाशराज्ञ युद्ध में पराभव हुआ था। रौथ के अनुसार, भेद एक जाति का नाम था, जिसके राजा का नाम भी भेद था। किन्तु ऋग्वेद में भेद शब्द सदैव एकवचन में ही प्रयुक्त हुआ है।

अथर्ववेद के अनुसार, इन्द्र ने भेद राजा से एक गाय (वशा) माँगी थी, जिसे देने में इसने इन्कार कर दिया था। इस पाप के कारण, इसका नाश हुआ (अ. वे. १२.७.४९–५०)। संभव है, ऋग्वेद में निर्दिष्ट अज एवं शिग्रु जातियाँ अनार्य रही हो, एवं उनका नेतृत्व करनेवाला यह राजा भी अनार्य हो। इसी कारण, इसे एक दुष्ट मान कर इसके दुःखद अंत का वर्णन वैदिक ग्रंथों में किया गया हो।

भेरीस्वना--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२५)।

भेरुंड—एक पक्षी, जो जटायु का पुत्र था।

भेल—एक सुविख्यात आयुर्वेदाचार्य, जो पुनर्वसु आत्रेय का शिष्य था। यह अग्निवेश का समकालीन था। इसके द्वारा 'भेल संहिता' नामक सुविख्यात ग्रंथ की रचना की गयी थी।

भैमसेन—मैत्रायणी संहिता में निर्दिष्ट एक व्यक्तिनाम (मै. सं. ४.६.६)।

भैमसेनि--दिवोदास राजा का पैतृक नाम (क. सं. ७.८)।

२. घटोत्कच राक्षस का पैतृक नाम (म. मी. ७९.३२)।

भैरव--एक रुद्रगण, जो वाराणसी नगरी का क्षेत्रपाल माना जाता है।

एकबार विष्णु एवं ब्रह्मा अत्यंत गर्वोद्धत हो गये, एवं भगवान् शंकर का अपमान करने लगे। इस अपमान के कारण शंकर अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, जिससे एक अतिभयानक शिवगण की उत्पत्ति हुई। वही भैरव है। इसे निम्नलिखित नामान्तर प्राप्त थे :--कालभैरव, आमर्दक, पापभक्षण एवं कालराज। लिंग के अनुसार, वीरभद्र नामक शिवपार्षद को भैरव का ही अन्य रूप माना गया है (लिंग. १.९६; वीरभद्र देखिये)।

ब्रह्महत्या—उत्पन्न होते ही, इसने अपने बाये हात की उँगली के नख से ब्रह्मा का पाँचवा सिर तोड़ डाला, क्यों कि, ब्रह्मा के उस मुख से शिव की निंदा की गयी थी। ब्रह्मा के पाँचवे मुख का इस प्रकार नाश करने के कारण, इसे ब्रह्महत्या का पातक लगा। उस पाप से छुटकारा पाने के लिए, शंकर ने ब्रह्मा के कपाल को हाथ में ले कर इसे भिक्षा माँगने के लिए कहा। उसी समय शिव ने ब्रह्महत्या नामक एक स्त्री का निर्माण किया, एवं उसे इसके पिछे जाने के लिए कहा।

यह अनेक तीर्थस्थानों में घूमता रहा, किन्तु इसका ब्रह्महत्या का दोष नष्ट न हुआ। अन्त में शिव ने इसे वाराणसी क्षेत्र में जाने के लिए कहा। शिव के आदेशानुसार, यह वाराणसी क्षेत्र में गया, जिस में प्रवेश करते ही इसका ब्रह्महत्या का पातक धुल गया। पश्चात् इसके हाथ में स्थित ब्रह्मा का कपाल भी नीचे गिर पडा, एवं उसे भी मुक्ति प्राप्त हुयी। जिस स्थान पर ब्रह्मा के कपाल को मुक्ति मिली, उस स्थान पर 'कपालमोचनतीर्थ' नामक सुविख्यात तीर्थ का निर्माण हुआ (शिव. शत. ८-९; स्कंद. ३.१.२४)।

वंश—कालिका पुराण में, भैरवस्तोत्र नामक मंत्र की विस्तृत जानकारी उपलब्ध है। वहाँ इसका वंश ही विस्तृत रूप में दिया गया है। उस पुराण के अनुसार, वाराणसी का सुविख्यात राजा विजय इसीके वंश में उत्पन्न हुआ था। उस राजा ने खाण्डवी नगर को उध्वस्त कर खाण्डववन का निर्माण किया था (कालिका. ९२)।

कालिका पुराण के अनुसार, भैरव एवं वेताल ये शिवपार्षद अपने पूर्वजन्म में महाकाल एवं भृंगी नामक शिवदूत थे। पार्वती के शाप के कारण, उन्हे अगले जन्म में मनुष्ययोनि प्राप्त हुअी (कालिका. ५३; वेताल देखिये)।

पुराणों में अष्टभैरवों की नामावली प्राप्त है, जिसमें निम्नलिखित भैरव निर्दिष्ट है:- असितांग, रुरु, चण्ड, क्रोध, उन्मत्त, कुपति (कपालिन्), भीषण एवं संहार।

२. धृतराष्ट्र वंश का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२. १५)।

भोगवती--निबंधन नामक ऋषि की माता (निबंधन देखिये)।

भोगिन्--(भविष्य.) एक राजा, जो वायु तथा ब्रह्मांड के अनुसार, मथुरा के शेष नामक राजा का पुत्र था।

भोज--ऐतरेय ब्राह्मण में प्रयुक्त नृपों की उपाधि (ऐ. ब्रा. ८.१२; १४.१७.)। इन्हें 'भौज्य' नामांतर भी प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.३२; ८.६; १२; १४; १६)।

ऋग्वेद में भोज शब्द का प्रयोग दाता अर्थ में भी किया गया है (ऋ. १०. १०७.८-९)।

२. एक लोकसमूह, जो सुदास राजा का अनुचर था। ऋग्वेद के अनुसार, इन लोगों ने विश्वामित्र ऋषि के अश्वमेध यज्ञ में उसकी सहायता की थी (ऋ. ३. ५३.७)।

३. पुराणों में निर्दिष्ट महाभोज राजा के वंशजों के लिये प्रयुक्त सामूहिक नाम। इन लोगों की एक शाखा मृत्तिकावत् नगर में रहती थी, जो बभ्रु दैवावृध नाम राजा से उत्पन्न थी हुई (ब्रह्म. १५.४५)।

४. एक राजवंश, जो सुविख्यात यादवकुल में अंतर्गत था (म. आ. २१०.१८)। इन्हे वृष्णि, अंधक, आदि नामांतर भी प्राप्त थे। इस वंश में उत्पन्न एक

राजा को उशीनर से एक खड्ग की प्राप्ति हुई थी (म. शां. १६६.८९)।

संभव है, इस वंश में निम्नलिखित राजा समाविष्ट थे :—

(१) विदर्भाधिपति भीष्म—इसे महाभारत में भोज कहा गया है (म. उ. १५५.२)।

(२) कुकुरवंशीय आहुक—इसे हरिवंश में भोज कहा गया है (ह. वं. १.३७.२२)।

(३) विदर्भाधिपति रुक्मिन्—इसने 'भोजकट' (भोजों का नगर) नामक नयी राजधानी की स्थापना की थी (रुक्मिन् देखिये)।

(४) महाभोज—यह यादववंशीय सात्वत राजा का पुत्र था। भागवत के अनुसार इसके वंशज भोज कहलाते थे (भा. ९.२४.७–११)।

५. मार्तिकावत् (मृत्तिकावती) नगरी का एक राजा, जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७. ६)। कलिंगराज चित्रांगद राजा की कन्या के स्वयंवर में भी यह उपस्थित था (म. शां. ४.७)। महाभारत में कई जगह, इसे 'मार्तिवतक भोज' कहा गया है, एवं युधिष्ठिर की राजसभा का एक राजर्षि नाम से इसका वर्णन किया गया है।

भारतीय युद्ध में यह कौरव पक्ष में शामील था, एवं अभिमन्यु के द्वारा इसकी मृत्यु हो गयी थी (म. द्रो. ४७.८)।

६. एक राजवंश, जो हैहयवंशीय तालजंघ राजवंश में समाविष्ट था।

७. (सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार, प्रतिक्षत्र राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसका 'स्वयंभोज' नामांतर दिया गया है, एवं इसे क्रोष्टुवंशीय कहा गया है।

८. कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

९. कान्यकुब्ज देश का एक राजा। एक बार इसे एक सुंदर स्त्री का दर्शन हुआ, जिसका सारा शरीर मनुष्याकृति होने पर भी केवल मुख हिरणी का था।

इस विचित्र देहाकृति स्त्री को देखने पर इसे अत्यधिक आश्चर्य हुआ, एवं इसने उसकी पूर्वकहानी पूछी। फिर इसे पता चला की, वह स्त्री पूर्वजन्म में हिरनी थी। उस हिरनी के शरीर का जो भाग तीर्थ में गिरा, उसे मनुष्याकृति प्राप्त हुई, एवं केवल मुख तीर्थस्पर्श न होने से हिरणी का ही रह गया।

पश्चात् इसने इस स्त्री के मुख का खोज किया, एवं उसे तीर्थ में डुबों दिया, जिस कारण उस स्त्री को सुंदर मनुष्याकृति मुख की प्राप्ति हो गई। पश्चात् इस राजा ने उस स्त्री के साथ विवाह किया (स्कंद ७.२.२)।

भोजक—एक सूर्यपूजक राजा (भवि. ब्राह्म. १. ११७)।

भोजपायन—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भोज्या—सौवीरराज की सर्वांगसुंदर कन्या, जिसका सात्यकि ने अपनी रानी बनाने के लिये हरण किया था (म. द्रो. ९.२९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'भोजा'।

२. वीरव्रत नामक राजा की पत्नी (वीरव्रत देखिये)।

३. आर्यक नामक नाग की कन्या, जिसे मारिषा नामान्तर भी प्राप्त है। इसका विवाह शूर राजा से हुआ था, जिससे इसे वसुदेवादि पुत्र उत्पन्न हुयें।

४. भोज देश की राजकन्या, जिसका यादववंशीय ज्यामघ राजा ने रानी बनाने के लिये हरण किया था। किंतु पश्चात् ज्यामघ ने अपने पुत्र विदर्भ से इसका विवाह संपन्न कराया (ज्यामघ देखिये)।

भौजपायन—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण। इसके नाम के लिये 'भीमपायन' पाठभेद प्राप्त है।

भौत्य—एक राजा, जो चौदहवा मनु माना जाता है। इसे 'इंद्रसावर्णि' एवं 'चंद्रसावर्णि' नामांतर भी प्राप्त थे (मनु देखिये)।

यह भूति नामक ऋषि का पुत्र था, जिस कारण इसे भौत्य नाम प्राप्त हुआ था। भूति ऋषि को बहुत दिनों तक पुत्र न था। पश्चात् उसके शान्ति नामक शिष्य ने अपने गुरु को पुत्र प्राप्ति हों, इस हेतु से अग्नि की उपासना की, जिस कारण अग्नि के प्रसाद से इसकी उत्पत्ति हो गयी।

भौम—नरकासुर का नामांतर (नरकासुर देखिये)।

२. शिवपुत्र मंगल का नामान्तर (मंगल २. देखिये)।

३. एक राक्षस, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका पुत्र था। इसे 'नल' एवं 'नभ' नामान्तर भी प्राप्त है (विप्रचित्ति २. देखिये)। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.६.१८–२२)।

भौमतापायन—गौरपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भौमाश्वी शैब्या औशीनरी—उशीनर देश की राजकन्या, जिसे द्रौपदी के सदृश पाँच पति थे। निवंतु राजा के पाँच पुत्रों से इसका एकसाथ विवाह हुआ था,

जिनके नाम निम्नलिखित थेः--साल्वेय, शूरसेन, श्रुतसेन, तिन्दुसार, एवं अतिसार।

इसके पति बडे धार्मिक एवं आपस में मिलजुल कर रहनेवाले थे। इसी कारण इसने स्वयंवर में उनका वरण किया था। इन पाँच पतियों से इसे पाँच पुत्र उत्पन्न हुए, जिन्होने आगे चल कर मत्स्य देश में पाँच स्वतंत्र राजवंशों की स्थापना की (म. आ. परि. १०१)।

भौरिक--एक दैत्य, जो अग्नि के द्वारा दग्ध किया गया था। हिरण्याक्ष एवं देवों के दरम्यान हुए युद्ध में, अग्नि के द्वारा हिरण्याक्ष के पक्ष के सात असुर दग्ध हुये। उनमें से यह एक था (पद्म. सृ. ७५)।

भौवन--वैदिक राजा विश्वकर्मन् का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.७.१.१५; ऐ. ब्रा. ८.२१.८.१०; नि. १०.२६; विश्वकर्मन् देखिये)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो मंथु एवं सत्या का पुत्र था।

३. एक भृगुवंशीय गोत्रकार, जो भृगु एवं पौलोमी का पुत्र था।

४. एक राजा, जो गौतमी नदी के दक्षिणतट पर स्थित भौवन नामक नगरी का राजा था (ब्रह्म. १७०.१-२)।

भौवायन--कपिवन नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. २०.१३.४)। यजुर्वेद संहिताओं में कपिवन का निर्देश प्रायः 'भौवायन' नाम से ही प्राप्त है (का. सं. ३२.२; मै. सं. १.४; वा. सं. १३.५४)। इसने 'अतिरात्र' नामक यज्ञ किया था, जिसके कारण इसे विपुल धन प्राप्त हुआ था।

भ्रमर--सौवीर देश का एक राजकुमार, जो सौवीर नरेश जयद्रथ का भाई था। यह जयद्रथ के रथ के पीछे हाथ में ध्वज ले कर चलता था। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदीहरण के समय यह उपस्थित था। उसी समय हुए युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. व. २५५.२७)।

भ्रमि--उत्तानपादपुत्र ध्रुव राजा की पत्नी, जो शिशुमार प्रजापति की कन्या थी (भा. ४.१०.१)।

भ्राजिष्ठ--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो घृतपृष्ठ राजा का पुत्र था।

भ्रामरि--एक राक्षसी, जो जंभासुर की अनुगामिनी थी। उस राक्षस के कथनानुसार, यह अदिति का रूप धारण कर, श्रीगणेश का वध करने के लिए कश्यपगृह में अवतीर्ण हुयी। इसने श्रीगणेश को विषमिश्रित मोदक खिलाकर उसका वध करना चाहा। किन्तु श्रीगणेश ने उन मोदकों को हजम कर अपने मुष्टिप्रहार से इसका वध किया (गणेश. २.२१)।

भ्राष्टकायणि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

भ्राष्ट्रकृत्--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

म

मकरकेतु--श्रीकृष्णपुत्र प्रद्युम्न राजा का नामान्तर।

मकरध्वज--हनुमान् का पुत्र, जो उसके स्वेदबिन्दु से उत्पन्न हुआ था। एकबार हनुमान् का एक स्वेदबिन्दु दक्षिणसागर में रहनेवाली एक मगर पर गिर पड़ा, जिससे इसकी उत्पत्ति हुयी (आ. रा. सार. ११)। अहिरावण महिरावण युद्ध के समय, इसकी एवं हनुमान् की भेंट हुयी थी (अहिरावण-महिरावण देखिये)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया था (म. भी. ९२.२६)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'कनकध्वज' (कनकांगद)।

३. केरल देशाधिपति चंद्रहास राजा का पुत्र। इसके नाम के लिए 'मकराक्ष' पाठभेद भी प्राप्त है।

मकराक्ष--एक राक्षस, जो जनस्थान में रहनेवाले खर नामक राक्षस का पुत्र था। राम ने इसका वध किया।

मक्षु--एक महर्षि, जो माक्षव्य नामक सुविख्यात आचार्य का पिता था (माक्षव्य देखिये)।

मखोपेत--एक दैत्य, जो कार्तिक माह के विष्णु नामक सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.४४)।

मग--शाकद्वीप में रहनेवाले वेदवेत्ता ब्राह्मणों का एक समूह। महाभारत में इनके नाम के लिए 'मङ्ग' पाठभेद प्राप्त है (म. भी. १२.३४)।

कृष्णपुत्र सांब ने अपनी उत्तर आयु में सूर्य की कठोर तपस्या की, जिस कारण प्रसन्न हो कर भगवान् सूर्य-नारायण ने अपनी तेजोमयी प्रतिमा उसे पूजा के लिए प्रदान की। उस मूर्ति की प्रतिष्ठापना के लिए, सांब ने चन्द्रभागा नदी के तट पर एक अत्यधिक सुंदर मंदिर बनवाया।

भगवान सूर्यनारायण के पूजापाठ के लिए सांब ने शाकद्वीप में रहनेवाले मग नामक ब्राह्मणों को बडे ही सम्मान के साथ बुलाया। सांब के इस आमंत्रण के कारण, मग ब्राह्मणों के अठारह कुल चंद्रभागा नदी के तट पर उपस्थित हुये, एवं वहीं रहने लगे (भवि. ब्राह्म. ११७; सांब. २६)।

भविष्य में इनके नाम के लिए 'भ्रग' पाठभेद प्राप्त है। किन्तु वह सुयोग्य प्रतीत नही होता है।

'मग' जाति के ब्राह्मण भारत में आज भी विद्यमान है।

मगध--मगध देश में रहने वाले लोगों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम। किसी समय बृहद्रथ राजा एवं उसका बार्हद्रथ वंश इन लोगों का राजा था।

इन लोगों के राजाओं में निम्नलिखित प्रमुख थे:- जयत्सेन, जरासंध, बृहद्रथ, दीर्घ, एवं सहदेव।

पाण्डु राजा ने इन लोगों के दीर्घ नामक राजा का वध किया था (म. आ. १०५.१०)। महाभारत काल मे इन लोगों का राजा जरासंध था, जिसका भीम ने वध किया था। जरासंध के पश्चात् सहदेव इन लोगों का राजा बना। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, सहदेव उपस्थित था (म. स. ४८.१५)। भारतीय युद्ध में मगध देश के लोग पाण्डवों के पक्ष में शामिल थे (म. उ. ५२.२; सहदेव देखिये)।

वैदिक निर्देश--यद्यपि यह नाम ऋग्वेद में अप्राप्य है, अथर्व वेद में इनका निर्देश प्राप्त है। वहाँ ज्वर-व्याधि को पूर्व में अंग एवं मगध लोगों पर स्थानांतरित होने की प्रार्थना की गई है (अ. वे. ५.२२.१४)। यजुर्वेद में प्राप्त पुरुषमेध के बलिप्राणियों की नामावली में 'मागध' लोगों का निर्देश प्राप्त है (वा. सं ३०.५.२२; तै. ब्रा. ३.४.१.१)। अथर्ववेद के व्रात्यसूक्त में व्रात्य लोगों के साथ इनका निर्देश आता है (अ. वे. १५.२. १-४)। संभव है, ये एवं कीकट दोनों एक ही थे।

कौषीतकि आरण्यक में मध्यम प्रातिबोधीपुत्र आदि सुविख्यात आचार्यों को 'मगधवासिन्' कहा गया है। इससे प्रतीत होता है कि, कभी कभी मगध में प्रतिष्ठित ब्राह्मण भी निवास करते थे। किंतु ओल्डेनबर्ग इसे अप-वादात्मक घटना मानते है (७.१४)।

बौधायन तथा अन्य सूत्रों में मगधगणों का निर्देश एक जाति के रूप में प्राप्त है (बौ. ध. १.२.१३; आ. श्रौ. २२.६.१८)। उत्तरकालीन साहित्य में, मगध देश को भ्रमणशील चारण लोगों का मूलस्थान माना गया है।

शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, इन लोगों में ब्राह्मणधर्म का प्रसार अत्यधिक कम था, एवं इनमें अनार्य लोगों की संख्या अत्यधिक थी। संभव यही है, कि भारत के पूर्व कोने में रहनेवाले इन लोगों पर आर्यगण अपना प्रभाव नहीं प्रस्थापित कर सके थे।

मघवत्--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. इन्द्र का नामांतर (पद्म. भू. ६)।

मघा--सोम की पत्नी, जो दक्ष प्रजापति की सत्ताईस कन्याओं में से एक थी।

मङ्कण--एक दरिद्री ब्राह्मण, जो आकथ नामक शिवभक्त का पिता था (आकथ देखिये)।

मंकणक--एक प्राचीन ऋषि, जो मातरिश्वन् तथा सुकन्या का पुत्र था। कश्यप के मानसपुत्र के रूप में इसका वर्णन प्राप्त है (वामन. ३८.२)।

बाल्ब्रह्मचारी की अवस्था में सरस्वती नदी के किनारे 'सप्त सारस्वत तीर्थ' में जाकर, यह हजारों वर्ष स्वाध्याय करते हुए तपस्या में लीन रहा। एकबार इसके हाथ में कुश गड जाने से घाव हो गया, जिससे शाकरस बहने लगा। उसे देखकर हर्ष के मारे यह नृत्य करने लगा। इसके साथ समस्त संसार नृत्य में निमग्न हो गया। ऐसा देखकर देवों ने शंकर से प्रार्थना की, कि इसे नृत्य करने से रोकें; अन्यथा इसके नृत्य के प्रभाव से सभी विश्व रसातल को चला जायेगा।

यह सुनकर ब्राह्मण रूप धारण कर शंकर ने इससे नृत्य करने का कारण पूछा। तब इसने कहा, 'मेरे हाथ से जो रस वह रहा है, इससे यह प्रकट है कि, मुझे सिद्धि प्राप्त हो गयी है। यही कारण है कि, आज मै आनंद में पागल हो खुशी से नाच रहा हूँ'। यह सुनकर ब्राह्मण

वेषधारी शंकर ने अपने अँगूठे में एक चोट मारकर उससे बर्फ की तरह श्वेत झरती हुयी भस्म निकाली, जिसे देखकर यह चकित हो उठा। यह तत्काल समझ गया कि, वह कोई अवतारी महापुरुष है। इसके नमस्कार करते ही शंकर ने अपने दर्शन दिये, तथा प्रसन्न होकर वर माँगने के लिए कहा। मंकणक ने शंकरजी के पैरों में गिरकर स्तुति की, तथा वर माँगा कि, वह इसे इस अपार प्रसन्नता से मुक्त करें, जिसके प्रसन्नता के उन्माद में यह अपनी तपस्या से भी विलग हो गया था। शंकर ने कहा, 'ऐसा ही होगा, मेरे प्रसाद से तुम्हारा तप सहस्र गुना अधिक हो जायेगा' (म. व. ८१.९८-११४; श.३७. २९-४८; पद्म. सृ. १८; स्व. २७; स्कन्द. ७.१-३६; २७०)।

एक बार तपस्याकाल में यह स्नान हेतु सरस्वती नदी में उतरा। वहाँ समीप ही स्नान करनेवाली एक सुन्दरी को देखकर इसका वीर्य स्खलित हुआ। यह देख कर इसने उस वीर्य को कमण्डलु में एकत्र कर उसके सात भाग किये, जिससे निम्नलिखित सात पुत्र उत्पन्न हुएः—वायुवेग, वायुबल, वायुहा, वायुमण्डल, वायुज्वाल, वायुरेतम् और वायुचक्र (म. श. ३७.२९-३२; मरुत् देखिये) महाभारत में इन सातों पुत्रों को सप्तर्षि कहा गया हैं। यही सात पुत्र मरुतों के जनक हैं।

मंकन—वाराणसी में निवास करनेवाला एक नाभी, जो श्रीगणेशजी का परम भक्त था। दिवोदास (द्वितीय) के राज्यकाल में, शिवजी ने काशी नगर को निर्जन बनाना चाहा। इस काम के लिये, उसने अपने पुत्र श्रीगणेश (निकुंभ) को नियुक्त किया।

तदोपरांत, श्रीगणेश ने मंकन को दृष्टांत दे कर काशी नगरी के सीमापर अपना एक मंदिर बँधवाने के लिए कहा, जिस आज्ञा का इसने तुरंत पालन किया। काशी का यह 'निकुंभ मंदिर' अत्यधिक सुविख्यात हुआ, एवं अपना ईप्सित प्राप्त करने के लिये देश देश के लोग उसके दर्शन के लिये आने लगे। निकुंभ ने अपने सारे भक्तों की कामनाएँ पूरी की, किंतु दिवोदास राजा की पुत्रप्राप्ति की इच्छा अपूर्ण ही रख दी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर उसने निकुंभ मंदिर को उद्ध्वस्त किया। इस पाप के कारण, निकुंभ ने समस्त काशी नगर निर्जन होने का शाप दिवोदास राजा को दे दिया, एवं इस तरह काशी नगर को विरान बनाने की शिवाजी की कामना पूरी हो गई (वायु. ९२.३८; ब्रह्मांड ३. ६७.४३)।

मंकि—एक प्राचीन आचार्य, जिसकी कथा भीष्म ने युधिष्ठिर से कही थी। इस कथा का यही सार था कि, जो भाग्य में होगा उसे कोई टाल नहीं सकता। 'चाहे जितना बल पौरुष का प्रयोग करो, किन्तु यदि भाग्य में बदा नहीं है, तो कुछ भी न होगा। संसार में हर एक व्यक्ति की सामान्य कामनाएँ भी अपूर्ण रहती है। इसी कारण कामना का त्याग करना ही सुखप्राप्ति का सर्वश्रेष्ठ मार्ग है', यही महान् तत्त्व मंकि के जीवनकथा से दर्शाया गया है।

मंकि नामक एक लोभी किसान था, जो हर क्षण धन प्राप्त की लिप्सा में सदैव अन्धा रहता था। एक बार इसने दो बैल लिए, तथा उन्हे जुएँ में जोत कर यह खेत पर काम कर रहा था। जिस समय बैल तेजी के साथ चल रहे थे, उसी समय उनके मार्ग में एक ऊँट बैठा था। इसने ऊँट न देखा, और बैलों के साथ उसकी पीठ पर जा पहुँचा। इसका परिणाम यह हुआ कि, दौड़ते हुए दोनों बैलों को अपनी पीठ पर तराजू की भाँति लटका कर ऊँट भी इतनी जोर से भगा कि, दोनों बैल तत्काल ही मर गये।

यह देख कर मंकि को बड़ा दुःख हुआ, एवं इस अवसर पर इसने भाग्य के सम्बन्ध में बड़े उच्च कोटि के विचार प्रकट किये, जिसमें तृष्णा तथा कामना की गहरी आलोचना प्रस्तुत की गयी है। इसके यह सभी विचार 'मंकि गीता' में संग्रहित हैं। उक्त घटना से इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, एवं अन्त में यह धनलिप्सा से विरक्त हो कर परमानंद स्वरूप परब्रह्म को प्राप्त हुआ (म. शां. १७१.१-५६)।

तत्त्वज्ञान—'मंकि गीता' का सार भीष्म के द्वारा इस प्रकार वर्णित हैः—

सर्वसाम्यम् अनायासः, सत्यवाक्यं च भारत।
निर्वेदश्चाविवित्सा च, यस्य स्यात्स सुखी नरः ॥
(म. शां १७१.२)।

मंकि का यह तत्त्वज्ञान बौद्धपूर्वकालीन आजीवक सम्प्रदाय के आचार्य मंखलि गोसाल के तत्त्वज्ञान से काफी साम्य रखता है। यह दैववाद की विचारधारा को मान्यता देनेवाला आचार्य था। केवल दैव ही बलवान् है, कितना ही परिश्रम एवं पुरुषार्थ करो, किन्तु सिद्धि प्राप्त नहीं होती, यही 'मंकि गीता' का उपदेश है, तथा ऐसा ही प्रतिपादन मंखलि गोसाल का था।

सम्भव है, मंकी तथा मंखलि गोसाल दोनों एक ही व्यक्ति हों। आजीवक सम्प्रदाय भोग-प्रधान दैववाद का

अनुसरण करनेवाला था। सम्राट अशोक के समय आजीवक संप्रदाय का काफी प्रचार था, एवं समाज उसका काफी आदर करता था। अशोक के शिलालेखों में आजीवक लोगों का बडे सम्मान के साथ निर्देशन किया गया है। नागार्जुन पहाडियों में उपलब्ध शिलालेखों में आजीवकों को गुहा प्रदान करने का निर्देश प्राप्त है।

आगे चलकर बौद्ध एवं जैन धर्म के प्रचार के कारण आजीतकों की लोकप्रियता धीरे धीरे विनष्ट हो गयी, तथा आजीवकों के द्वारा प्रतिष्ठापित भोगप्रधान दैववाद के स्थान पर तप के द्वारा ब्रह्मप्राप्ति की प्रधानता का बोलबाला हुआ।

२. त्रेतायुग का ऋषि, जो कौषीतक नामक ब्राह्मण का पुत्र था। यह वैदिकधर्म का पालन करनेवाला, अग्निहोत्र करनेवाला, एवं वैष्णवधर्म पर विश्वास करनेवाला परम सदाचारी ब्राह्मण था।

इसे स्वरूपा एवं विश्वरूपा नामक दो पत्नियाँ थी, किन्तु कोई पुत्र न था। इसी कारण इसने अपने गुरु की आज्ञा से साबरमती नदी के तट पर चार वर्षों तक तपस्या की, जिससे इसे अनेक पुत्र उत्पन्न हुये।

साबरमती के तट पर जिस स्थान पर इसने तप किया उसे 'मंकितीर्थ' नाम प्राप्त हुआ। इस तीर्थ को 'सप्तसारस्वत' नामांतर भी प्राप्त था।

द्वापर युग में पाण्डव इस तीर्थ के दर्शनों के लिए आये थे। उस समय उन्होंने इस तीर्थ को 'सप्तधार' नाम प्रदान किया था (पद्म. उ. १३६)।

मंगल--बौधायन श्रौतसूत्र में निर्दिष्ट एक आचार्य (बौ. श्रौ. २६.२)।

२. एक शिवपुत्र, जो शिव के घर्मविन्दु से पैदा हुआ था। दक्षयज्ञ में सती की मृत्यु हो जाने के कारण, उसके विरहताप से पीड़ित हो कर, शंकर उसकी प्राप्ति के लिये तप करने लगा। तप करते समय शंकर के मस्तक से एक घर्मबिंदु पृथ्वी पर गिरा। उससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे मंगल नाम प्राप्त हुआ। आगे चल कर शंकर ने नवग्रहों में उसकी स्थापना की। यह समस्त पृथ्वी का पालनकर्ता माना जाता है। ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से, मंगल भूमि एवं भार्या का संरक्षणकर्ता माना जाता है। इसीसे इसे 'भौम' भी कहते है (शिव. रुद्र. २.१०; स्कन्द. ४.१.१७)। अग्नि के संपर्क से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'अंगारक' नाम भी प्राप्त हुआ था (विष्णुधर्म. १.१.६; पद्म. सृ. ८१)।

स्कन्द के अनुसार, शिव के अश्रुबिंदुओं से इसकी उत्पत्ति हुयी थी (स्कन्द. ७.१.४५)। स्कंद में इसके उत्पत्ति की कथा इस प्रकार दी गयी है:--शंकर ने हिरण्याक्ष की विकेशी नामक कन्या से विवाह किया था। एक दिन शंकर विकेशी से संभोग करने ही वाला था कि, वहाँ अग्नि आ पहुँचा। उसे देख कर शंकर क्रोध से लाल हो उठा, तथा उसकी आँखों से अश्रुबिंदु टपकने लगे। उन अश्रुबिंदुओं में से एक तेजोमय अश्रु विकेशी के मुख में जा गिरा, जिससे वह गर्भवती हो गयी। किंतु आगे चल कर शंकर के तेजोमय गर्भ को वह सहन न कर सकी, तथा उसने उसे बाहर गल दिया। बाद को उस गर्भ से एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे पृथ्वी ने स्तनपान करा कर बड़ा किया। यही पुत्र मंगल कहलाया।

भविष्यपुराण में मंगल की उत्पत्ति कुछ दूसरे प्रकार से दी गयी है। उसमें इसकी उत्पत्ति शिव के रक्तविन्दु से कही गयी है (भवि. ब्राह्म. ३१)। गणेशपुराण में इसे भारद्वाज का पुत्र कहा गया है, एवं गणेश की कृपा के द्वारा किस प्रकार यह ग्रह बना, उसकी भी कथा दी गयी है।

३. एक देव, जो स्वायंभुव मन्वंतर के जित देवों में से एक था।

मंगला--एक देवी, जिसने त्रिपुरवध के समय भगवान् शंकर को वरप्रदान किया था (ब्रह्मवै. ३.४४)।

मचक्नुक--एक यक्ष, जो समन्तपंचक एवं कुरुक्षेत्र के सीमा पर स्थित 'मचक्नुक तीर्थ' में रहता था। उस स्थान में यह द्वारपाल के रूप में निवास करता था। इसको प्रणाम करने पर सहस्र गोदान का पुण्य प्राप्त होता था (म. व. ८९.१७१)। इसके नाम के लिए 'मचक्रुक' पाठभेद भी प्राप्त है। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'अरन्तुक'।

मच्छिल्ल--(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो सम्राट उपरिचर वसु का चतुर्थ पुत्र था। इसकी माता का नाम गिरिका था (म. आ. ५७.२९)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय यह उपस्थित था (म. स. ३१.१३)।

महाभारत (बम्बई संस्करण) एवं विष्णु में इसे 'मावेल्ल', एवं वायु में इसे 'माथैल्य' कहा गया है।

मज्जान--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६५)।

मंजुघोषा--एक अप्सरा, जिसे मेधाविन् ऋषि ने पिशाच बनने का शाप दिया था (मेधाविन् ४. देखिये)।

मणि—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु का पुत्र था। गिरिव्रज नगरी के निकट इसका निवासस्थान था (म. आ. ३१.६)। इसने शिव की तपस्या कर गरुड से अभयदान का वर प्राप्त किया था (ब्रह्म. ९०)।

२. ब्रह्मा की सभा का एक ऋषि (म. स. ११.१२५*; पंक्ति. ६)।

३. स्कंद का एक पार्षद, जो उसे चंद्रमा के द्वारा दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम सुमालिन् था (म. श. ४५.२९)।

मणिकंधर—कुवेर का एक सेनापति।

मणिकार्मुकधर—कुवेर का एक सेनापति।

मणिकुंडल—एक राजा, जिसकी कथा ब्रह्म में गोदावरी नदी के तट पर स्थित 'चक्षुस्तीर्थ' (मृतसंजीवन तीर्थ) का माहात्म्य वर्णन करने के लिए कथन की गयी है।

एक बार यह एवं इसका मित्र वृद्धगौतम व्यापार के लिए विदेश चले गये। वहाँ इन्होने आपसमें हौंड़ लगायी, जिस कारण वृद्धगौतम ने इसका सब कुछ जीत लिया, एवं इसे अंधा एवं लूला बना कर छोड़ दिया। पश्चात् चक्षुस्तीर्थ में स्नान करने के कारण, इसकी सारी शारीरिक व्याधियाँ नष्ट हो गयीं, एवं इसका राज्य इसे पुनः प्राप्त हुआ (ब्रह्म. १७०)।

मणिकुंडला--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. २०)। इसके नाम के लिए 'मणिकुट्टिका' पाठभेद प्राप्त है।

मणिग्रीव--एक यक्ष, जो कुवेर का पुत्र था। इसके छोटे भाई का नाम नलकुवर था (नलकुवर देखिये)।

मणिधर--एक यक्ष, जो लोहित पर्वत पर रहता था।

मणिभद्र--कुवेर सभा का एक यक्ष (म. स. १०.१४)। यह यात्रियों एवं व्यापारियों का उपास्य देव माना जाता है। मरुत्त का धन लाने के लिए जाते समय, युधिष्ठिर ने इसकी पूजा की थी (म. आ. ६४.६)।

इसके पिता का नाम रजतनाभ एवं माता का नाम मणिवरा था। क्रतुस्थ की कन्या पुण्यजनी इसकी पत्नी थी, जिससे इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:-असोम, ऋतुमत्, रुद्रप्रथ, दर्शनीय, दुरसोम, द्युतिमत्, नंदन, पद्म, पिंगाक्ष, भीरु, मणिमत्, मंडक, महाद्युति, मेघवर्ण, रुचक, वसु, शंख, सर्वानुभूत, सिद्धार्थ, सुदर्शन, सुभद्र, सुमक एवं सूर्यतेजस् (ब्रह्मांड. ३.७.१२२-१२५)।

२. कुवेर का एक सेनापति। रावण के सेनापति प्रहस्त ने कैलास पर्वत पर इसे परास्त किया था (वा. रा. यु. १९.११)

३. शिवगणों में से एक (पद्म. उ. १७)।

मणिभूष—कुवेर का एक सेनापति।

मणिमत्—एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक।

२. वरुणसभा का एक नाग (म. स. ९.९)।

३. एक यक्ष, जो कुवेर का सेनापति एवं सखा था। एकबार यह विमान मे बैठकर आकाशमार्ग से जा रहा था। उस समय यमुना नदी के तटपर तपस्या करनेवाले अगस्त्य ऋषि का इसने अपमान किया, जिस कारण उसने इसे शाप दिया, 'शीघ्र ही मनुष्य के द्वारा तुम्हारा वध होगा'।

पाण्डवों के वनवासकाल में वे घूमते-घूमते हिमवान् पर्वत पर स्थित कुवेरवन में आये। उस समय कुवेरवन के कुछ कमल लाने के लिए भीम ने उस वन में प्रवेश किया, कि मणिमत् के साथ उसका युद्ध हुआ। उसी युद्ध में भीम ने इसका वध किया (म. व. १५७.४९-५७)।

४. एक राजा, जो दनायुपुत्र वृत्रासुर नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.४२)। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.७)। भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २७.१०)।

भारतीय युद्ध में भूरिश्रवस् (सौमदत्ति यूपकेतु) राजा ने इसका वध किया (म. द्रो. २४. ५१)।

मणिमंत्र—एक यक्ष, मणिवर एव देवजनी के 'गुह्यक' पुत्रों में से एक।

मणिवक्र--एक वसु, जो आप नामक वसु के पुत्रों में से एक था।

मणिवर--एक यक्ष, जो रजतनाथ एवं मणिवरा के दो पुत्रों में से एक था। क्रतुस्थलाकन्या देवजनी इसकी पत्नी थी, जिससे उत्पन्न इसके पुत्र 'गुह्यक' सामुहिक नाम से सुविख्यात थे।

'गुह्यक' पुत्र--मणिवर को देवजनी से उत्पन्न गुह्यक पुत्रों के नाम निम्नलिखित थे:—अहित, कुमुदाक्ष, कुसु, कृत, चर, जयावह, पक्ष, पद्मनाथ, पद्मवर्ण, पिंशंग, पुष्पदन्त, पूर्णभद्र, पूर्णमास, वल्क, मणिमंत्र, महासुद, मानस, वर्धमान, विजय, विमल, विवर्धन, श्वेत, सवीर,

सारण, सुक्रमल, सुगंध, सुचंद्र, स्थूलकर्ण, हिरण्याक्ष एवं हैमवंत (ब्रह्मांड. ३.७.१२७-१३१)।

मणिवरा--रजतनाभ नामक यक्ष की पत्नी।

मणिवाहन--(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो महाभारत के अनुसार कुशांब का, एवं वायु के अनुसार कुश राजा का नामान्तर था। मत्स्य में इसे 'हरिवाहन' कहा गया है, एवं इसे कुश राजा से अलग व्यक्ति माना गया है।

मणिस्थक--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

मणिस्कंध--धृतराष्ट्र कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१७)।

मणिस्रग्विन्--एक यक्ष, जो कुवेर का सेनापति था।

मंड--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'मुण्ड' पाठभेद प्राप्त है।

मंडक--एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

मंडलक--तक्षक कुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ (म. आ. ५०.६०)।

मंडूक--एक आचार्य, जिसने अथर्ववेद की 'शिक्षा' लिखी थी। उस शिक्षाग्रंथ में कुल १८९ श्लोक हैं।

२. एक जनसंघ, जिनके राजा का नाम आयु था। आयु राजा की सुशोमना नामक कन्या थी, जिसका विवाह इक्ष्वाकुवंशीय परिक्षित् राजा से हुआ था। सुशोमना को परिक्षित् राजा से शल, दल एवं बल नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. १९०; शल देखिये)।

३. एक महर्षि, जो मांडुकेय नामक सुविख्यात आचार्य का पुत्र था।

मतंग--एक प्राचीन राजा, जो शाप के कारण व्याध बना। व्याध होने के कारण ही इसे 'मतंग' नाम प्राप्त हुआ।

जिस समय यह व्याध की अवस्था में जीवन यापन करता था, उस समय इसने महर्षि, विश्वामित्र की पत्नी का दुर्भिक्ष काल में भरणपोषण किया था (म. आ. ६५. ३१)।

आगे चलकर यह पुनः राजा हुआ, और इसने एक यज्ञ किया, जिसमें इसके उपकार का बदला चुकाने के लिये स्वयं महर्षि विश्वामित्र पुरोहित बना। इस यज्ञ में इन्द्र भी सोमपान के लिए उपस्थित हुआ था (म. आ. ६५.३३)।

२. एक महर्षि, जिसके मतंगाश्रम का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. व. ८२.४२३ पंक्ति ३)। सम्भव है, मतंगकेदार नामक तीर्थस्थान का नामकरण इसीके नाम पर किया गया हो (म. व. ८३.१७)।

३. एक तपस्वी, जिसकी व्यभिचारिणी ब्राह्मणी माँ ने एक नाई के साथ संभोग करके इसे जन्म दिया था। अपने इस दूषित जन्म के कलंक को धोने के लिए, इसने आजीवन तपस्या की, किन्तु यह इस दोष से मुक्त न हो सका। 'वंशानुक्रम से प्राप्त कलंक किसी प्रकार मिटाया नहीं जा सकता,' इसी सत्य को प्रमाणित करने के लिए महाभारत में इसकी निम्न कथा दी गयी है (म. अनु. २७-२९)।

गर्दभी से संवाद—एक बार इसके ब्राह्मण पिता ने इसे यज्ञ करने के लिए जंगल से समिधा तथा दर्भ लाने को कहा। पिता की आज्ञा को मानकर, गाडी में एक गर्दभी एवं उसके बच्चे को जोतकर यह जंगल की ओर चल पड़ा। राह में गर्दभी का बच्चा छोटा होने के कारण माँ के बराबर न चल पा रहा था, जिससे क्रोधित हो कर इसने उस बच्चे के नाक पर लगातार चाबुक से कई चोटें की। गर्दभी का बच्चा चोटों से जख्मी हो गया, एवं दर्दपीड़ा में विह्वल होकर माँ की ओर देखने लगा। तब गर्दभी ने उसे सान्त्वना देते हुए कहा, 'ब्राह्मण दयालु होते है, तथा चाण्डाल क्रूर। यह अपना जाति के अनुसार, तुमसे व्यवहार कर रहा है, इस लिए तुम्हें सहना ही पड़ेगा'।

गर्दभी की इस बात को सुनकर इसने तत्काल पूछा, 'मैं ब्राह्मण हूँ, मेरे माता-पिता ब्राह्मण है, तब मै चाण्डाल कैसे हुआ? मैने किस प्रकार अपना ब्राह्मणत्व नष्ट कर दिया है, और मैं आज चांण्डाल हूँ?'। तब गर्दभी ने बताया, तुम्हें 'जन्म देनेवाला पिता एक नाई था, जो तुम्हारा माता का पति न था। अतएव तुम ब्राह्मण कहा से हुए, और तुममें ब्राह्मणत्व कहाँ?।

तपस्या—इस कथा को सुन कर यह तत्काल घर आया, और अपने पिता को अपने जन्म की कहानी बताकर, ब्राह्मणत्वप्राप्त करने के लिए तपस्या के लिए चल पडा। इसकी तपस्या से प्रसन्न होकर इन्द्र ने इसे दर्शन दिया, किन्तु इसके द्वारा ब्राह्मणत्व माँगे जाने पर इन्द्र ने कहा, 'चांडालयोनि में उत्पन्न व्यक्ति को ब्राह्मणत्व मिलना असम्भव है'। तब इसने एक पैर पर खड़े होकर

सौ वर्षों तक और तपस्या की। किन्तु इन्द्र ने फिर प्रकट होकर यही कहा, 'अप्राप्य वस्तु की कामना करना व्यर्थ है। ब्राह्मणत्व सरलता से नहीं प्राप्त होता, उसके प्राप्त करने के लिए अनेक जन्म लेने पडते है'। किन्तु यह इन्द्र के उत्तर से सन्तुष्ट न हुआ, और गया में जा कर अंगूठे के बल खडे होकर, इसने पुनः सौ वर्षों तक ऐसी तपस्या की, कि केवल अस्थिपंजर ही शेष बचा।

अन्त में इन्द्र ने इसे पुन दर्शन दिया और कहा, 'ब्राह्मणत्व छोडकर तुम कुछ भी माँग सकते हो'। तब इसने इन्द्र से निम्नलिखित वर प्राप्त कियेः—मनचाही जगहों पर विहार करना, जो चाहे वह रूप लेना, आकाशगामी होना, ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों के लिए पूज्य होना, एवं अक्षय कीर्ति की प्राप्ति करना। इन्द्र ने इसे यह भी वर दिया, 'स्त्रियाँ ऐश्वर्य प्राप्ति के लिए तुम्हारी पूजा करेंगी, एवं छन्दोदेव नाम से तुम उन्हे पूज्य होगे।'

आगे चलकर मतंग ने देहत्याग किया, एवं इन्द्र से प्राप्त वरों के बल पर, यह समस्त मानवजाति के लिए पूज्य बना।

४. एक आचार्य, जो दाशरथि राम को फल देनेवाले शबरी का गुरु था (वा. रा. अर. ७४)।

५. इक्ष्वाकुवंशीय राजा त्रिशंकु का नामांतर (म. आ. ६५. ३१-३४)। वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों के शाप के कारण, त्रिशंकु को मतंग-अवस्था प्राप्त हुयी, जिस कारण उसे यह नाम प्राप्त हुआ (त्रिशंकु देखिये)।

मति—दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो धर्म की पत्नी थी (म. आ. ६०.१४)।

२. एक देव, जो स्वायंभुव मन्वन्तर के जित नामक देवों में से एक था।

३. आभूतरजस् देवों में एक।

४. भव्य देवों में से एक।

मतिनार--(सो. पूरु.) पूरुवंशीय 'अंतिनार' राजा का नामान्तर। इसे 'रंतिनार' एवं 'रंतिभार' नामान्तर भी प्राप्त थे (म. आ. ८९.१०-१२)।

महाभारत में इसे पूरु राजा के पौत्र अनाधृष्टि (रुचेयु) का पुत्र कहा गया है, एवं इसके तंसु, महान्, अतिरथ द्रुह्यु नामक चार पुत्र दिये गये है।

मत्कुणिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१९)। भांडारकर संहिता में 'मन्थनिका' पाठ प्राप्त है।

मत्त—रावण का भाई एवं लंका का एक बलाढ्य राक्षस, जिसका ऋषभ नामक वानर ने वध किया।

२. रावण के महापार्श्व नामक अमात्य का नामान्तर।

मत्तमयूर--एक क्षत्रियसमुदाय, जिसे नकुल ने अपने पश्चिमदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २९.५)।

मत्स्य--विष्णु के दशावतारों में से प्रथम। भगवान् विष्णु ने अखिल मानवजाति के कल्याण के लिए एवं वेदों का उद्धार करने के लिए जो दस अवतार पृथ्वी पर लिए, उनमें से यह प्रथम है। पद्म के अनुसार, शंखासुर द्वारा वेदों के हरण किये जाने पर उनकी रक्षा के लिए विष्णु ने यह अवतार लिया (पद्म. उ. ९०-९१; स्. १)। भागवत के अनुसार, विष्णु का यह दशम अवतार चाक्षुष मन्वन्तर काल में उत्पन्न हुआ (भा. १.३.१५)।

मत्स्यावतार—पृथ्वी पर मत्स्यावतार किस प्रकार हुआ, इसकी सब से प्राचीनतम प्रमाणित कथा शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है। एक बार, आदिपुरुष वैवस्वत मनु प्रातःकाल के समय तर्पण कर रहा था, कि अर्घ्य देते समय उसकी अंजलि में एक 'मत्स्य' आ गया। 'मत्स्य' ने राजा मनु से सृष्टिसंहार के आगमन की सूचना से अवगत कराते हुए आश्वासन दिया कि, आपत्ति के पूर्व ही यह मनु को सुरक्षित रूप से उत्तरगिरि पर्वत पर पहुँचा देगा, जहाँ प्रलय के प्रभाव की कोई सम्भावना नहीं। इसके साथ ही इसने यह भी प्रार्थना की कि, जबतक यह बड़ा न हो तब तक मनु इसकी रक्षा करें।

यह 'मत्स्य' जब बड़ा हुआ, तब मनु ने उसे महासागर में छोड़ दिया। पृथ्वी पर जलप्रलय होने पर समस्त प्राणिमात्र बह गये। एकाएक मनु के द्वारा बचाया हुआ मत्स्य प्रकट हुआ, एवं इसने मनु को नौका में बैठाकर उसे हिमालय पर्वत की उत्तरगिरि शिखर पर सुरक्षित पहुँचा दिया। आगे चलकर मनु ने अपनी पत्नी इड़ा के द्वारा नयी मानव जाति का निर्माण किया (श. ब्रा. १.८.१.१; मनु वैवस्वत देखिये)

पुराणों में—पद्म में मत्स्यावतार की यह कथा कुछ अलग ढंग से दी गयी है। कश्यप ऋषि को दिति नामक पत्नी से उत्पन्न मकर नामक दैत्य ने ब्रह्मा को धोखा देकर वेदों का हरण किया, एवं इन वेदों को लेकर वह पाताल में भाग गया। वेदों के हरण हो जाने के कारण, सारे विश्व में अनाचार फैलने लगा, जिससे पीडित होकर ब्रह्मा ने विष्णु

की शरण में आकर उसे वेदों की रक्षा की प्रार्थना की। तब विष्णु ने मत्स्य का अवतार लेकर मकरासुर का वध किया एवं उससे वेद लेकर ब्रह्मा को दिये।

आगे चलकर एक बार फिर मकर दैत्य ने वेदों का हरण किया, जिससे विष्णु को मत्स्य का अवतार लेकर पुनः वेदों का संरक्षण करना पड़ा (पद्म. उ. २३०)।

मत्स्यपुराण में मत्स्यावतार की कथा निम्न प्रकार से दी गयी है :— पच्चीसवें कल्प के अन्त में ब्रह्मदेव की रात्रि का आरम्भ हुआ। जिस समय वह नींद में था, उसी समय प्रलय हुआ, जिससे स्वर्ग, पृथ्वी आदि लोग डूब गये। निद्रावस्था में ब्रह्मदेव के मुख से वेद नीचे गिरे, तथा हयग्रीव नामक दैत्य ने उनका हरण किया। इसीसे हयग्रीव नामक दैत्य का नाश करने के लिए भगवान् विष्णु ने सूक्ष्म मत्स्य का रूप धारण किया, तथा वह कृतमाला नदी में उचित समय की प्रतीक्षा करने लगा।

इसी नदी के किनारे वैवस्वत मनु तप कर रहा था। एक दिन तर्पण करते समय उसकी अंजलि में एक छोटासा मत्स्य आया। वह इसे पानी मे छोड़ने लगा कि, मत्स्य ने उससे अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना की। तब दयालु मनु ने इसे कलश में रक्खा। यह मत्स्य उत्तरोत्तर बढ़ता रहा, अन्त में मनु ने इसे सरोवर में छोड़ दिया। तथापि इसका बढ़ना बन्द न हुआ। त्रस्त होकर मनु इसे समुद्र में छोड़ने लगा, तब इसने उससे प्रार्थना की, 'मुझे वहाँ अन्य जलचर प्राणी खा डालेंगे, अतएव तुम मुझे वहाँ न छोड़ कर मेरी रक्षा करो'। तब मनु ने आश्चर्यचकित होकर इससे कहा, 'तुम्हारे समान सामर्थ्यवान् जलचर मैंने आजतक न देखा है, तथा न सुना है। तुम एक दिन में सौ योजन लंबेचौड़े हो गये हो, अवश्य ही तुम कोई अपूर्व प्राणी हो। तुम परमेश्वर हो, तथा तुमने जनकल्याण हेतु ही जन्म लिया होगा'।

यह सुनकर मत्स्य ने कहा, 'आज से सातवें दिन सर्वत्र प्रलय होगी, तथा सारा संसार जलमग्न हो जायेगा। इसलिए नौका में सप्तर्षि, दवाइयाँ, बीज इत्यादि लेकर बैठ जाओ। अगर नौका हिलने लगे तो वासुकि की रस्सी बनाकर मेरे सींग में बाँध दो'।

प्रलय आने पर मनु ने वैसा ही किया, एवं मत्स्य की सहायता के द्वारा वह प्रलय से बचाया गया (मत्स्य. १–२; २९०)।

भागवत में मत्स्यद्वारा बचाये गये राजा का नाम वैवस्वत मनु न देकर दक्षिण देशाधिपति सत्यव्रत दिया गया है। उस ग्रन्थ के अनुसार, प्रलय के पश्चात् मत्स्यावतारी विष्णु ने सत्यव्रत राजा को मन्वन्तराधिपति प्रजापति बनने का आशीर्वाद दिया, एवं उसे मत्स्यपुराण संहिता का उपदेश भी दिया (भा. १.३.१५; ८.२४; मत्स्य. १. ३३–३४)। उस आशीर्वाद के अनुसार, सत्यव्रत राजा वैवस्वत मन्वंतर में से कृतयुग का मनु बन गया।

विष्णुधर्म के अनुसार, प्रलय के पश्चात् केवल सप्तर्षि जीवित रहे, जिन्हे मत्स्यरूपधारी विष्णु ने शृंगी बनकर हिमालय के शिखर पर पहुँचा दिया, एवं उनकी जान बचायी (विष्णुधर्म. १.७७; म. व. १८५)।

मत्स्यकथा का अन्वयार्थ––मनु का निवासस्थान समुद्र के किनारे था। आधुनिक वैज्ञानिक दृष्टि से, समुद्र में बाढ़ आने के पूर्व समुद्र की सारी मछलियां तट की ओर भाग कर किनारे आ लगती है, क्योंकि बाढ़ के समय उन्हे गन्दे जल में स्वच्छ प्राणवायु नहीं प्राप्त हो पाती। सम्भव यही है कि, पृथ्वी में जलप्लावन के पूर्व समुद्र से सारी मछलियाँ तट की ओर भगने लगी हों, तथा उनमें से एक मछली मनु के सन्ध्या करते समय अंजलि में आ गयी हो। इससे ही मनु ने समझ लिया होगा कि, बहुत बड़ी बाढ़ आनेवाली है, क्यों कि सारी मछलियाँ किनारे आ लगी है। इस संकेत से ही पूर्वतैयारी करके उसने अपने को जलप्लावन से बचाया हो। इसी कारण प्रलयोपरांत मनु को वह मछली साक्षात् विष्णु प्रतीत हुयी हो। बहुत सम्भव है कि, मत्स्यावतार की कल्पना इसी से की गयी हो।

२. मत्स्यदेश में रहनेवाले लोगों के लिये प्रयुक्त सामुहिक नाम। ऋग्वेद में इनका निर्देश सुदास राजा के शत्रुओं के रूप में किया गया है (ऋ. ७.१८.६)। शतपथ ब्राह्मण में ध्वसन् द्वैतवन राजा को मत्स्य लोगों का राजा (मात्स्य) कहा गया है (श. ब्रा. १३.५.४.९)। ब्राह्मण ग्रंथों में वश एवं शाल्व लोगों के साथ इनका निर्देश प्राप्त है (कौ. ब्रा. ४.१; श. ब्रा. १.२.९)। मनु के अनुसार, मत्स्य, कुरुक्षेत्र, पंचाल, शूरसेनक आदि देशों को 'ब्रह्मर्षि देश' सामुहिक नाम प्राप्त था (मनु. २.१९; ७.१९३)।

महाभारत में इन लोगों का एवं इनके देश का निर्देश अनेक बार आता है, जहाँ इन्हे धर्मशील एवं सत्यवादी कहा गया है (म. क. ५.१८)। पाण्डवों के वनवासकाल में, वारणावत से एकचक्रा नगरी को जाते समय पाण्डव इस देश में कुछ काल तक ठहरे थे (म. आ. १४४.२)।

इस देश के निवासी जरासंध के भय से अपना देश छोड़ कर दक्षिण भारत की ओर गये थे (म. स. १३.२७)। भीमसेन ने अपनी पूर्वदिग्विजय के समय इन लोगों को जीता था (म. स. २७.८)। सहदेव ने भी अपनी दक्षिण दिग्विजय के समय मत्स्य एवं अपरमत्स्य लोगों को जीता था (म. स. २८.२-४)

अपने अज्ञातवास के समय पाण्डवों ने इस देश में निवास किया था। उस समय इनलोगों का राजा विराट था (म. वि. १.१३-१६)।

भारतीय युद्ध में एक अक्षौहिणी सेना लेकर मत्स्यराज विराट युधिष्ठिर की सहाय्यता के लिए आया था (म. उ. १९.१२)। इन लोगों के अनेक वीरों का भीष्म एवं द्रोण ने वध कीया था (म. भी. ४५.५४; द्रो. १६४.८५)। बचे हुए वीरों का संहार अश्वत्थामा ने भारतीय युद्ध के अंतिम दिन किया था (म. सौ. ८. १५०)।

भौगोलिक मर्यादा—संभव है कि, आधुनिक भरतपूर अल्वार, धौलपूर, एवं करौली प्रदेश मिलकर प्राचीन मत्स्य देश बना होगा। १९४८ इ. स. में भारत सरकार ने 'मत्स्ययुनियन' नामक संघराज्य की स्थापना की थी, जिसमें यही प्रदेश शामिल थे। आगे चलकर मत्स्य युनियन का सारा प्रदेश राजस्थान में शामिल किया गया।

मत्स्य देश की राजधानी विराटनगरी में थी, जो जयपूर के पास बैराट नाम से आज भी प्रसिद्ध है।

३. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो उपरिचर वसु को एक मत्स्यी के द्वारा उत्पन्न जुड़वे संतानों में से एक था। इसे मत्स्यगंधा नामक जुड़वी बहन भी थी (म. आ. ५७.५१)।

४. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से देवमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके नाम के लिए 'वास्य' पाठभेद प्राप्त है।

मत्स्यकाल--(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो वायु के अनुसार, उपरिचर वसु (इंद्रसख) राजा का पुत्र था। संभव यही है, कि इसका सही नाम मत्स्य था, एवं यह एवं इसकी काली (मत्स्यगंधा) नामक जुड़वी बहन, इन दोनो के नाम के लिए 'मत्स्यकाल' नाम प्रयुक्त किया गया हो (मत्स्य ३. देखिये)।

मत्स्यगंध—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मत्स्यगंधा--कुरुवंशीय शंतनु राजा की पत्नी, जो उपरिचर वसु राजा को एक मत्स्यी से उत्पन्न पुत्री थी। इसे सत्यवती नामान्तर भी प्राप्त था (सत्यवती देखिये)। पूर्वजन्म में यह पितरों की कन्या अच्छोदा थी। इसके पुत्र का नाम कृष्ण द्वैपायन था।

मत्स्यदग्ध—अंगिराकुलोत्पन्न एक प्रवर।

मत्स्याच्छाद्य--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मथन—तारकासुर के पक्ष का एक असुर, जो विष्णु के द्वारा मारा गया था (मत्स्य. १५१)।

मथित--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'माधव' पाठभेद प्राप्त है।

माथित यामायन--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १९)।

मद--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

२. ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो उसके अहंकार से उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. ३.११)।

३. रुद्र गणों में से एक।

४. राम दाशरथि राजा के सुज्ञ नामक मंत्री का पुत्र।

५. एक राक्षस, जो च्यवन ऋषि के द्वारा उत्पन्न हुआ था। इसके उत्पत्ति की कथा महाभारत में इस प्रकार दी गयी है। एक बार सोमपान करनेवाले देवतागणों ने अश्वियों को सोमपान करने से इन्कार किया। फिर अश्वियो ने च्यवन ऋषि की मदद माँगी। च्यवन ऋषि ने अपने मंत्रों के बल से देवतागणों का पराभव किया। पश्चात् इंद्र ने क्रुद्ध हो कर च्यवन ऋषि पर आक्रमण करना चाहा, जिसका प्रतिकार करने के लिए च्यवन ने अग्नि में से एक महाभयंकर राक्षस का निर्माण किया। उसी का ही नाम मद था।

उत्पन्न होते ही मद ने अपना प्रचंड मुख खोल दिया, जिसमें समस्त देवतागण समा गये एवं इसकी जिव्हा पर तैरने लगे। फिर समस्त देवताओं के साथ, इंद्र च्यवन ऋषि की शरण में गया, एवं उसने अश्वियों को सोमपान में सहभागी करना स्वीकार कर दिया (म. व. १२४.१८-१९; अनु. १५७.२७-३२)।

मदुगल--एक ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

मदन--ब्रह्मा के पुत्र कामदेव का नामान्तर (कामदेव देखिये)।

२. केरल देश के धृष्टबुद्धि नामक राजमंत्री का पुत्र।

मदनमंजरी—नीलध्वजपुत्र प्रवीर राजा की पत्नी।

मदनसुंदरी—एक गोपी, जो कृष्ण को अत्यधिक प्रिय थी।

मदनिका—एक अप्सरा, जो मेनका की कन्या थी। इसका विवाह विद्युद्रूप नामक राक्षस से हुआ था। पक्षिराज

गरुड के वंशज कंधर ने विद्युद्रूप राक्षस का वध किया। तदोपरान्त यह कंधर की पत्नी बनी, जिससे इसे तार्क्षी नामक कन्या उत्पन्न हुई (मार्क. २)।

मदयन्ती—मित्रसह कल्माषपाद राजा की पत्नी। इसे वसिष्ठ ऋषि से अश्मक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. १६८.२५; १७३.२२; शां. २२६.३०)।

उत्तंक नामक सुविख्यात ऋषि अपने गुरु वेद ऋषि की आज्ञा के अनुसार, इसके कुण्डल माँगने के लिए इसके यहाँ आये थे। इसने उन्हे कुण्डल दे कर संतुष्ट किया था (म. आश्व. ५७.५८; उत्तंक देखिये)।

२. कृष्ण की एक सखी (पद्म. पा. ७४)।

मदालसा--काशी देश के ऋतुध्वज राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम अलर्क था। यह अत्यंत ब्रह्मनिष्ठ थी। एक बार पातालकेतु नामक राक्षस ने इसका हरण किया। पश्चात् ऋतुध्वज राजा ने पातालकेतु को परास्त कर इसकी मुक्तता की।

मदिरा—एक स्त्री, जो देवदैत्यों ने किये समुद्रमंथन से निकले हुए चौदह रत्नों में से एक थी। इसे 'सुरा' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. श्रीकृष्णपिता वसुदेव की अनेक पत्नियों में से एक। वसुदेव की मृत्यु के पश्चात् देवकी, भद्रा एवं रोहिणी नामक अन्य वसुदेवपत्नियों के साथ यह सती हो गयी (म. मौ. ८.१८)।

मदिराश्व—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दशाश्व राजा का पुत्र था। यह परमधर्मात्मा, सत्यवादी, तपस्वी, दानी एवं वेद तथा धनुर्वेद में पारंगत था (म. अनु. २.७–८)।

इसे द्युतिमत् नामक पुत्र, तथा सुमध्यमा नामक कन्या थी (म. अनु. २·८)। अपनी कन्या को हिरण्यहस्त नामक ऋषि को विवाह में प्रदान कर, यह स्वर्गलोक चला गया (म. शां. २२६.३४; अनु. १३७.२४)।

२. मत्स्यनरेश विराट का भाई। इसके नाम के लिए 'मदिराक्ष' पाठभेद भी प्राप्त है (म. उ. १६८.१४)।

त्रिगर्तों के द्वारा गोहरण के समय इसने कवचधारण कर उनसे युद्ध किया था।

भारतीय युद्ध में राजा विराट के चक्ररक्षक के रूप में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. वि. ३२. ३०)। यह एक उदाररथी, सम्पूर्ण अस्त्रों का ज्ञाता, एवं मनस्वी वीर था (म. उ. १६८.१५)। भारतीय युद्ध में द्रोण ने इसका वध किया।

मदोत्कट—एक शिवगण।

मद्र—मद्र देश में रहनेवाले लोगों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम। बृहदारण्यक उपनिषद में इन लोगों का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ३.३.१; ७.१)। उपनिषदों में वर्णित मद्रगण कुरुओं भाँति मध्यदेश के कुरुक्षेत्र नामक स्थान में बसे हुए थे। उस समय पतंचल काप्य नामक आचार्य इन्हीके बीच रहता था।

ऐतरेय ब्राह्मण में उत्तर मद्र लोगों का निर्देश प्राप्त है, जिन्हे हिमालय पर्वत के उस पार ('परेण हिमवन्तम्') उत्तर कुरुओं के पड़ोस के रहिवासी बताया गया है (ऐ. ब्रा. ८.१४.३)। त्सिमर के अनुसार, ये लोग काश्मीर के रावी एवं चिनाब के मध्यवर्ति भूभाग में रहते थे (आल्टिन्डिशे. लेवेन. १०२)।

महाभारतकाल में इन लोगों का राजा शल्य था, जिसकी बहन माद्री कुरुवंशीय राजा पाण्डु को विवाह में दी गयी थी। उस समय भीष्म अपने मंत्री, ब्राह्मण, एवं सेना को साथ ले कर इस देश में आये थे, एवं उसने पाण्डु के लिए माद्री का वरण किया (म. आ. १०५. ४–५)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, पाण्डुपुत्र नकुल ने इन लोगों पर प्रेम से विजय प्राप्त किया था, एवं ये-लोग युधिष्ठिर के लिए भेंट ले कर आये थे (म. स. २९. १३; ४८.१३)।

महाभारत के पूर्वकाल में, सती सावित्री का पिता अश्वपति मद्र देश का नरेश था (म. व. २९३.१३)। कर्ण ने मद्र एवं वाहीक देशों को आचारभ्रष्ट बता कर उनकी निंदा की थी (म. क. ३०.९; ५५; ६२; ६८–७१)।

२. अनुवंशीय 'मद्रक' राजा के लिए उपलब्ध पाठभेद।

३. स्वारोचिष मन्वन्तर का एक देव।

मद्रक--(सो. अनु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार शिवि राजा का पुत्र था। इसके नाम के लिए 'मद्र' पाठभेद प्राप्त है।

२. एक मद्रदेशीय योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था (म. भी. ७.७)।

३. एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। इसके नाम के लिए 'नंदिक' पाठभेद प्राप्त है (म. आ. ६१.५५)।

मद्रगार शौङ्गायनि--एक आचार्य, जो साति औट्राक्षि नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम काम्बोज औपमन्यव था (व. ब्रा. १)।

शुङ्ग का वंशज होने से इसे 'शौङ्गायनि' उपाधि प्राप्त हुई। त्सिमर के अनुसार, इन नामों से 'कम्बोजों' एवं 'मद्रों' के सबंध का संकेत मिलता है (आल्टिन्डिशे लेवेन १०२)

मद्रा—अत्रि ऋषि की दस स्त्रियों में से एक। इसके पुत्र का नाम सोम था (ब्रह्मांड. ३.८.८४-८७)।

मधु—उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

२. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

४. मधुकैटभ नामक सुविख्यात असुरद्वयों में से एक (मधुकैटभ देखिये)।

५. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विन्दुमत् एवं सरघा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वीरजन था।

६. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत एवं भविष्य के अनुसार देवक्षत्र का, विष्णु के अनुसार क्षत्र का, मत्स्य के अनुसार दैवक्षत्र का, एवं वायु के अनुसार देवन राजा का पुत्र था।

७. (सो. यदु. सह.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार वृष का, एवं भागवत के अनुसार सहस्रार्जुन का पुत्र था।

८. एक यादव राजा, जिसकी माता का नाम लोला था। यह अत्यंत सदाचरणी एवं शिव का परमभक्त था। इसके तप एवं सदाचरण से प्रसन्न हो कर शिव ने इसे एक त्रिशूल प्रदान किया था। यह त्रिशूल जब तक इसके पास रहेगा, तब तक यह युद्ध में अवध्य एवं अजेय रहेगा, ऐसा इसे शिव का वर था (लोला देखिये)।

इसकी पत्नी का नाम कुम्भीनसी था, जिससे इसे लवण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। लवण अत्यंत दुराचारी था, इसलिए शत्रुघ्न ने उसका वध किया था। रामायण के अनुसार, शत्रुघ्न ने उसका बाण से, एवं हरिवंश के अनुसार खड्ग से उसका शिरच्छेद किया (वा. रा. उ. ६९.३६; ह. वं. १.५४.५३)।

मधु स्वयं यादवों का राजा था, किन्तु रामायण में इसे दैत्य भी कहा गया है। इसका पुत्र लवण निपुत्रिक अवस्था में मृत होने के पश्चात् इसकी राजधानी मधुपुरी भीम नामक यादव राजा ने जीत ली, एवं वह वहाँ का राजा बना (ह. वं २.३८)।

९. कृष्ण के पौत्रों में से एक।

मधुक पैंग्य--एक आचार्य, जो याज्ञवल्क्य ऋषि का शिष्य था (श. ब्रा. ११.७.२.८; सां. ब्रा. १६.९)। इसके शिष्य का नाम चूड भागवित्ति था (बृ. उ. ६.३. ८-९ काण्व.)। पिंग का वंशज होने से इसे 'पैंग्य' उपाधि प्राप्त हुयी होगी।

मधुकुंभा—स्कंद की अनुचरी एक मातृक (म. श. ४५.१८)।

मधुकैटभ—एक सुविख्यात असुरद्वय। ये मधु तथा कैटभ नामक दो असुर ब्रह्मदेव के स्वेद से उत्पन्न हुए थे (विष्णुधर्म. १. १५)।

जन्म-पद्म के अनुसार इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के तमोगुण से हुयी थी (पद्म. सृ. ४०)। देवी भागवत में कहा गया है कि, इनकी उत्पत्ति विष्णु के कान के मैल से हुयी थी (दे. भा. १.४)।

महाभारत के अनुसार, इन दोनों की उत्पत्ति भगवान् विष्णु के कान के मैल से हुयी थी। भगवान् ने मिट्टी से इनकी आकृति बनायी थी। इनकी मूर्ति में वायु के प्रविष्ट हो जाने से ये सप्राण हो गये थे। इन दोनों में मधु की त्वचा कोमल थी, अतएव इसे 'मधु' नाम प्राप्त हुआ था। मधु सहित कैटभ की उत्पत्ति का वर्णन महाभारत में प्राप्त है। भगवान् विष्णु के नाभिकमल पर भगवत्प्रेरणा से जल की दो बूँदें पड़ी थीं, जो रजोगुण तथा तमोगुण की प्रतीक थी। भगवान् ने उन दोनों बूँदों की ओर देखा, तथा उनमें से एक बूँद मधु तथा दूसरी कैटभ हो गयी (म. शां. ३५५.२२-२३)।

मृत्यु-इन्होंने तप कर के अजेयत्व प्राप्त किया था। बाद में अपने स्वभाव के अनुसार, जब ये सब लोगों को त्रस्त करने लगे, तब विष्णु ने इनका वध किया (दे. भा. १.४)।

ये पैदा होने के उपरांत ही ब्राह्मणों का वध करने लगे थे, तथा ब्रह्मा को भी मारने के लिए उद्यत हुए थे (म. व. १३.५०*)। ब्रह्मदेव ने विष्णु की स्तुति की, तब विष्णु ने इनसे पचास हज़ार वर्षों तक युद्ध किया। लेकिन यह मरते ही न थे। अन्त में इन्हे मोहित कर विष्णु ने इनसे इनकी मृत्यु का वर माँगा, तथा बाद में गोद में लेकर इनका वध किया (पद्म. क्रि. २; मार्क. ७८; ह. वं. ३.१३)। इनकी मेद से पृथ्वी बनने के ही कारण पृथ्वी को 'मेदिनी' नाम

प्राप्त हुआ (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति १३३-१३५; शां. ३३५)। भगवान् विष्णु ने इन्हे ब्रह्मा के कहने पर मारा था, अत एव उसे 'मधुसूदन' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. २००.१४-१६)। पद्म के अनुसार, देवासुर संग्राम में ये हिरण्याक्ष के पक्ष में शामिल थे, एवं देवों से मायायुद्ध करते थे। इसी कारण विष्णु ने इनका वध किया (पद्म. सृ. ७०)।

ये असुरों के पूर्वज माने जाते हैं, जो तमोगुणी प्रवृत्ति के उग्र स्वभाववाले थे, तथा सदा भयानक कार्य किया करते थे।

मधुच्छन्दस् वैश्वामित्र--एक ऋषि, जो ऋग्वेद के प्रथम मंडल में से पहले दस सूक्तों का रचयिता माना जाता है (कौ. ब्रा. २८.२)। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, यह विश्वामित्र का इक्यावनवाँ पुत्र था (ऐ. ब्रा. ७.१८)। शतपथ ब्राह्मण में सुविख्यात् 'प्रउग' (प्रातःकालिन स्तुति-स्तोत्र) सूक्त का कर्ता इसे कहा गया है (श. ब्रा. १३.५. १.८)। यह सूक्त प्रायः प्रातःकाल के समय गाया जाता है। इसके द्वारा रचित यह सूक्त गायत्री छंद में है (ऐ. आ. १.१.३)।

विश्वामित्र के कुल सौ पुत्र थे। उनमें से शुनःशेप नामक पुत्र का ज्येष्ठ भ्रातृत्व विश्वामित्र के पहले पचास पुत्रों ने मान्य न किया। किंतु अगले पचास पुत्रों ने उसे मान्यता दी, जिसमें मधुच्छंदस् प्रमुख था। इस कारण विश्वामित्र इस पर अत्यंत प्रसन्न हुआ, एवं उसने इसे शुभाशीर्वाद दिये।

वैवस्वत मनु का पुत्र शर्यात राजा का यह पुरोहित था (शर्यात देखिये)। यह विश्वामित्र गोत्र का गोत्रकार एवं प्रवर तथा कुशिक गोत्र का मंत्रकार था (म. अनु. ४. ४९-५०)। महाभारत में एक वानप्रस्थी ऋषि के नाते से इसका निर्देश प्राप्त है।

२. प्रमतिपुत्र सुमति राजा का पुरोहित, जो योगमार्ग से मुक्त हुआ था (पद्म. सृ. १५)।

मधुप--स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित देवों में से एक।

२. एक राजा, जो कृष्णांश राजा का शत्रु था। इसके पुत्र का नाम वीरसेन था (भवि. प्रति. ३.२२)।

मधुपर्क--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१४)।

मधुपिंग--लांगली भीम नामक शिवावतार का शिष्य।

मधुर--एक असुर, जो वृत्रासुर का पुत्र था।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६६)।

३. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो विन्दुमत् राजा का पुत्र था।

मधुरस्वरा--स्वर्गलोक की एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित थी (म. आ. ४४.३०)।

मधुरावह--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मधुरुह--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो घृतपृष्ठ राजा का पुत्र था।

मधुष्पंद--विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

मधुलिका--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४६.१८)। इसके नाम के लिए 'मधुरिका' पाठभेद प्राप्त है।

मधुवर्ण--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६७)।

मध्य--कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक।

मध्यंदिन--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुष्पार्ण एवं प्रभा का पुत्र था।

मध्यम प्रातीबोधीपुत्र माण्डुकेय--एक आचार्य (सां. आ. ७.१३)। प्रतीबोध के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने से इसे 'प्रातीबोधीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ होगा।

मन--भव्य, तुषित एवं साध्य देवों में से एक।

मनस्--सायण के अनुसार, एक ऋषि (ऋ. ५. ४४.१०)।

मनसा--एक देवी, जिसमें विषबाधा दूर करने का अलौकिक सामर्थ्य था। यह सामर्थ्य इसे शिवकृपा से प्राप्त हुआ था।

इन्द्र एवं सर्पादि विषैलि जातियाँ इसकी उपासना करती थी, एवं वासुकि जैसे सर्प इसके उपासकों में थे। पृथ्वी पर के समस्त सर्पों पर इसका वरदहस्त था।

यह सर्पों के विष को लीलया उतार देती थी, जिसे साक्षात् धन्वन्तरि भी नहीं उतार सकते थे। अतः इसे धन्वंतरि से भी बढ़कर मानते है, एवं सर्पविद्यासंपन्न लोग इसे अपनी देवता मानते है। ग्रामों में आज भी इसकी पूजा की जाती है (ब्रह्मवै. ३.५१)।

जनमेजय ने किये सर्पसत्र से इन्द्र तक्षक आदि नाग बचे थे, उन्होंने इस देवी की पूजा की थी (दे. भा. ९.४८)।

यह कश्यप ऋषि की कन्या, एवं वासुकि सर्प की भगिनी मानी जाती है। इसका विवाह जरत्कारु नामक ऋषि से हुआ था, जिससे इसे आस्तिक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ

था। इसके इस सारे परिवार का निर्देश इसके संबंधित निम्नलिखित मंत्र में प्राप्त है :—

आस्तिकस्य मुनेर्माता, भगिनी वासुकेस्तथा।
जरत्कारुमुनेः पत्नी, मनसा देवी नमोस्तु ते॥

२. सिंधु दैत्य की कन्या।

मनस्यु—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय सम्राट, जो पूरु राजा का पौत्र एवं प्रवीर राजा का पुत्र था। वायु में इसे अविद्ध का, एवं मत्स्य में इसे प्राचीन्वत् राजा का पुत्र कहा गया है। इसकी माता का नाम शौरसेनी था, जो शूरसेन राजा की कन्या थी (म. आ. ८९.६-७)।

इसकी पत्नी का नाम सौवीरी था, जिससे इसे शक्त, संहनन एवं वाग्मिन् नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे।

२. (स्वा. नाभि.) एक राजा, जो महत् राजा का पुत्र था। विष्णु में इसके नाम के लिये 'नमस्यु' पाठभेद प्राप्त है।

मनस्विनी—दक्षप्रजापति की कन्या, जो धर्म की पत्नी थी। धर्म से इसे चंद्रमा नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

२. पूरुवंशीय सम्राट अन्तिनार राजा की पत्नी (मत्स्य. ४९.७)।

३. उत्तानपाद राजा की सुनृता नामक पत्नी से उत्पन्न कन्या।

मनावी—'मनु की पत्नी' इस अर्थ से प्रयुक्त शब्द (क. सं. ३०.१; श. ब्रा. १.१.४.१६)।

मनु—मानवसृष्टि का आदि पुरुष (मनु 'आदिपुरुष' देखिये)।

२. एक राजा, जिसके राज्यकाल में जलप्रलय हो कर, श्रीविष्णु ने मत्स्यावतार लिया था (मनु वैवस्वत देखिये)।

३. 'मनुस्मृति' नाम सुविख्यात धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ का कर्ता (मनु स्वायंभुव देखिये)।

४. एक अर्थशास्त्रकार (मनु प्राचेतस देखिये)।

५. एक अग्निविशेष, जो तप नाम धारण करनेवाले पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र था। इसकी सुप्रजा, बृहद्भासा एवं निशा नामक तीन पत्नियाँ थी। उनमें से प्रथम दो से इसे छः पुत्र एवं तीसरी से इसे एक कन्या तथा सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। इसके पुत्रों में निम्नलिखित चार पुत्र प्रमुख थे:—वैश्वानर, विश्वपति, स्विष्टकृत् एवं कर्मन (म. व. २२३)।

६. एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४४)।

७. एक ऋषि, जो कृशाश्व ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम धिषणा था (मा. ६.६.२०)।

८. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार मधु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम मनुवश था।

९. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार, लोमपाद राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम ज्ञाति था।

१० (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो शीघ्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रसुश्रुत था।

११. धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

१२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मनु 'आदिपुरुष'—मानवसृष्टि का प्रवर्तक आदिपुरुष, जो समस्त मानवजाति का पिता माना जाता है (ऋ. १.८०.१६; ११४.२; २.३३.१३; ८.६३.१; अ. वे. १४.२.४१; तै. सं. २.१.५.६)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, मनु वैवस्वत तथा यह दोनों एक ही व्यक्ति थे (मनु वैवस्वत देखिये)।

ऋग्वेद में प्रायः बीस बार मनु का निर्देश व्यक्तिवाचक नाम से किया गया है। वहाँ सर्वत्र इसे 'आदिपुरुष' एवं मानव-जाति का पिता, तथा यज्ञ एवं तत्संबंधित विषयों का मार्गदर्शक माना गया है। मनु के द्वारा बताये गये मार्ग से ले जाने की प्रार्थना वेदों में प्राप्त है (ऋ. ८.३०.१)।

मानवजाति का पिता—ऋग्वेद में पांच बार इसे पिता एवं दो बार निश्चित रूप से 'हमारे पिता' कहा गया है (ऋ. २.३३)। तैत्तिरीय संहिता में मानवजाति को 'मनु की प्रजा' (मानव्यः प्रजाः) कहा गया है (१.५.१.३)। वैदिक साहित्य में मनु को विवस्वत् का पुत्र माना गया है, एवं इसे 'वैवस्वत' पैतृक नाम दिया गया है (अ. वे. ८.१०; श. ब्रा. १३.४.३)। यास्क के अनुसार, विवस्वत् का अर्थ सूर्य होता है, इस प्रकार यह आदिपुरुष सूर्य का पुत्र था (नि. १२.१०)। यास्क इसे सामान्य व्यक्ति न मानकर दिव्यक्षेत्र का दिव्य प्राणी मानते है (नि. १२.३४)।

वैदिक साहित्य में यम को भी विवस्वत् का पुत्र माना गया है, एवं कई स्थानों पर उसे भी मरणशील मनुष्यों में प्रथम माना गया है। इससे प्रतीत होता है कि, वैदिक काल के प्रारम्भ में मनु एवं यम का अस्तित्व अभिन्न था, किन्तु उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में मनु को

जीवित मनुष्यों का एवं यम को दूसरे लोक में मृत मनुष्यों का आदिपुरुष माना गया। इसीलिए शतपथ ब्राह्मण में मनु वैवस्वत को मनुष्यों के शासक के रूप में, तथा यम वैवस्वत को मृत पितरों के शासक के रूप में वर्णन किया गया है (ऋ. ८.५२.१; श. ब्रा. १३.४.३) यह मनु सम्भवतः केवल आर्यों के ही पूर्वज के रूप में माना गया है, क्योंकि अनेक स्थलों पर इसका अनार्यों के पूर्वज द्यौः से विभेद किया है।

यज्ञसंस्था का आरंभकर्ता—मनु ही यज्ञप्रथा का आरंभकर्ता था, इसीसे इसे विश्व का प्रथम यज्ञकर्ता माना जाता है (ऋ. १०.६३.७; तै. सं. १.५.१.३; २.५.९.१; ६.७.१; ३.३.२.१; ५.४.१०.५; ६.६.६.१; ७.५.१५.३)। ऋग्वेद के अनुसार, विश्व में अग्नि प्रज्वलित करने के बाद सात पुरोहितों के साथ इसने ही सर्वप्रथम देवों को हवि समर्पित की थी (ऋ. १०.६३)।

यज्ञ से ऐश्वर्यप्राप्ति--तैत्तिरीय संहिता में मनु के द्वारा किये गये यज्ञ के उपरांत उसके ऐश्वर्य के प्राप्त होने की कथा प्राप्त है। देव-दैत्यों के बीच चल रहे युद्ध की विभीषिका से अपने धन की सुरक्षा करने के लिए देवों ने उसे अग्नि को दे दिया। बाद को अग्नि के हृदय में लोभ उत्पन्न हुआ, एवं वह देवों के समस्त धनसम्पत्ति को लेकर भागने लगा। देवों ने उसका पीछा किया, एवं उसे कष्ट देकर विवश किया कि, वह उनकी अमानत को वापस करे। देवों द्वारा मिले हुए कष्टों से पीड़ित होकर अग्नि रुदन करने लगा, इसी से उसे 'रुद्र' नाम प्राप्त हुआ। उस समय उसके नेत्रों से जो आँसू गिरे उसीसे चाँदी निर्माण हुयी, इसी लिए चाँदी दानकर्म में वर्जित है। अन्त में अग्नि ने देखा कि, देव अपनी धन-सम्पत्ति को वापस लिए जा रहे हैं, तब उसने उनसे कुछ भाग देने की प्रार्थना की। तब देवों ने अग्नि को 'पुनराधान' (यज्ञकर्मों में स्थान) दिया। आगे चलकर मनु, पूषन्, त्वष्टु एव धातृ इत्यादि ने यज्ञकर्म कर के ऐश्वर्य प्राप्त किया (तै. सं. १.५.१)।

मनु ने सभी लोगों के प्रकाशहेतु अग्नि की स्थापना की थी (ऋ. १.३६)। मनु का यज्ञ वर्तमान यज्ञ का ही प्रारंभक है, क्यों कि, इसके बाद जो भी यज्ञ किये गये, उन में इसके द्वारा दिये गये विधानों को ही आधार मान कर देवों को हवि समर्पित की गयी (ऋ. १.७६.)। इस प्रकार की तुलनाओं को अक्सर क्रियाविशेषण शब्द 'मनुष्वत्' (मनुओं की भाँति) द्वारा व्यक्त किया गया है। यज्ञकर्ता भी अग्नि को उसी प्रकार यज्ञ का साधन बनाते हैं, जिस प्रकार मनुओं ने बनाया था (ऋ. १.४४) वे मनुओं की ही भाँति अग्नि को प्रज्वलित करते हैं, तथा उसीकी भाँति सोम अर्पित करते हैं (ऋ. ७.२; ४.३७)। सोम से उसी प्रकार प्रवाहित होने की स्तुति की गयी है, जैसे वह किसी समय मनु के लिए प्रवाहित होता था (ऋ. ९.९६)।

समकालीन ऋषि—मनु का अनेक प्राचीन यज्ञ-कर्ताओं के साथ उल्लेख मिलता है, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैः-अंगिरस् और ययाति (ऋ. १.३१), भृगु और अंगिरस (ऋ. ८.४३), अथर्वन् और दध्यञ्च (ऋ. १.८०), दध्यञ्च, अंगिरस्, अत्रि और कण्व (ऋ. १.१३९)। ऐसा कहा गया है कि, कुछ व्यक्तियों ने समय समय पर मनु को अग्नि प्रदान कर उसे यज्ञ के लिए प्रतिष्ठित किया था, जिनके नाम इस प्रकार हैं--देव (ऋ. १.३६), मातरिश्वन् (ऋ. १.१२८), मातरिश्वन् और देव (ऋ. १९.४६), काव्य उशना (ऋ. ८.२३)।

ऋग्वेद के अनुसार, मनु विवस्वत् ने इन्द्र के साथ बैठ कर सोमपान किया था (वाल. ३)। तैत्तिरीय संहिता और शतपथ ब्राह्मण में मनु का अक्सर धार्मिक संस्कारादि करनेवाले के रूप में भी निर्देश किया गया है।

मन्वंतरों का निर्माण--आदिपुरुष मनु के पश्चात्, पृथ्वी पर मनु नामक अनेक राजा निर्माण हुए, जिन्होने अपने नाम से नये-नये मन्वंतरों का निर्माण किया।

ब्रह्मा के एक दिन तथा रात को कल्प कहते हैं। इनमें से ब्रह्मा के एक दिन के चौदह भाग माने गये हैं, जिनमें से हर एक को मन्वन्तर कहते हैं। पुराणों के अनुसार, इनमें से हर एक मन्वन्तर के काल में सृष्टि का नियंत्रण करनेवाला मनु अलग होता है, एवं उसीके नाम से उस मन्वन्तर का नामकरण किया गया है। इस प्रकार जब तक वह मनु उस सृष्टि का अधिकारी रहता है, तब तक वह काल उसके नाम से विख्यात रहता है।

चौदह मन्वंतर—इस तरह पुराणों में चौदह मन्वन्तर माने गये हैं, जो निम्नलिखित चौदह मनुओं के नाम से सुविख्यात हैं :--१. स्वायंभुव, २. स्वारोचिष, ३. उत्तम (औत्तम,), ४. तामस, ५. रैवत, ६. चाक्षुष, ७. वैवस्वत, ८. सावर्णि (अर्कसावर्णि) ९. दक्षसावर्णि, १०. ब्रह्मसावर्णि ११. धर्मसावर्णि १२. रुद्रसावर्णि, १३. रौच्य, १४. भौत्य। इनमें से स्वायंभुव से चाक्षुष

तक के मन्वंतर हो चुके है, एवं वैवस्वत मन्वंतर सांप्रत चालू है। बाकी मन्वंतर भविष्यकाल में होनेवाले हैं।

पाठभेद—चौदह मन्वन्तर के अधिपतियों मनु के नाम विभिन्न पुराणों में प्राप्त है। इनमें से स्वायंभुव से ले कर सावर्णि तक के पहले आठ मनु के नाम के बारे में सभी पुराणों में प्रायः एकवाक्यता है, किंतु नौ से चौदह तक के मनु के नाम के बारे में विभिन्न पाठभेद प्राप्त है, जो निम्नलिखित तालिका में दिये गये हैं:—

	वायु	पद्म	मार्कं.	ब्रह्मवैवर्त एवं भागवत	मत्स्य	ब्रह्म	विष्णु
९.	सावर्ण	रौच्य	सूर्यसावर्णि	दक्षसावर्णि	रौच्य	रैभ्य	दक्षसावर्णि
१०.	सावर्ण	भौत्य	ब्रह्मसावर्णि	ब्रह्मसावर्णि	मेरुसावर्णि	रौच्य	ब्रह्मसावर्णि
११.	सावर्ण	मेरुसावर्णि	धर्मसावर्णि	धर्मसावर्णि	ब्रह्मसावर्णि	मेरुसावर्णि	धर्मसावर्णि
१२.	सावर्ण	ऋभु	रुद्रसावर्णि	रुद्रसावर्णि	ऋतसावर्णि	—	रुद्रसावर्णि
१३.	रौच्य	ऋतुधामन्	रौच्य	देवसावर्णि	ऋतधामन्	—	रौच्य
१४.	भौत्य	विष्वक्सेन	भौत्य	इंद्रसावर्णि (चंद्रसावर्णि)	विश्वक्सेन	भौत्य	भौत्य

उपर्युक्त हर एक मन्वन्तर की कालमर्यादा चतुर्युगों की इकत्तर भ्रमण माने गये हैं। चतुर्युगों की कालमर्यादा तेतालीस लाख वीस हज़ार मानुषी वर्ष माने गये हैं। इस प्रकार हर एक मन्वन्तर की कालमर्यादा तेतालीस लाख वीस हजार × इकत्तर होती है।

हर एक मन्वन्तर का राजा मनु होता है, एवं उसकी सहायता के लिए सप्तर्षि, देवतागण, इन्द्र, अवतार एवं मनुपुत्र रहते हैं। इनमें सप्तर्षियों का कार्य प्रजा उत्पन्न करना रहता है, एवं इन प्रजाओं का पालन मनु एवं उसके पुत्र भूपाल बन कर करते हैं। इन भूपालों को देवतागण सलाह देने का कार्य करते हैं, एवं भूपालों को प्राप्त होनेवाली अड़चनों का निवारण इन्द्र करता है। जिस समय इन्द्र हतबल होता है, उस समय स्वयं विष्णु अवतार लेकर भूपालों का कष्ट निवारण करता है।

मनु एवं उसके उपर्युक्त सारे सहायकगण विष्णु के अंशरूप माने गये है, तथा मन्वन्तर के अन्त में वे सारे विष्णु में ही विलीन हो जाते हैं। किसी भी मन्वन्तर के आरम्भ में वे विष्णु के ही अंश से उत्पन्न होते हैं (विष्णु. १.३)।

स्वायंभुव मन्वन्तर

१. मनु--स्वायंभुव।

२. सप्तर्षि--अंगिरस् (भृगु), अत्रि, क्रतु, पुलस्त्य, पुलह, मरीचि, वसिष्ठ।

३. देवगण—याम या शुक्र के जित, अजित् व जिताजित् ये तीन भेद थे। प्रत्येक गण में बारह देव थे (वायु. ३१.३-९)। उन गणों में निम्न देव थे-ऋचीक, गृणान, जनिमत्, जर, जविष्ठ, दुह, बृहच्छुक्र, मितवत्, विभाव, विभु, विश्वदेव, श्रुति, सोमपायिन् (ब्रह्माण्ड. २. १३)। इन देवों में तुषित नामक बारह देवों का एक और गण था (भा. ४.१.८)।

४. इन्द्र--विश्वभुज् (भागवत मतानुसार यज्ञ)। इन्द्राणी 'दक्षिणा' थी (भा. ८.१.६)।

५. अवतार—यज्ञ तथा कपिल (विष्णु एवं भागवत मतानुसार)।

६. पुत्र—अग्निबाहु (अग्निमित्र, अतिबाहु), अग्नीध्र (आग्नीध्र), ज्योतिष्मत्, द्युतिमत्, पुत्र (वपुष्मत्, सत्र, सह), मेधस् (मेध, मेध्य), मेधातिथि, वसु (बाहु), सवन (सवल), हव्य (भव्य)।

मार्कंडेय के अनुसार, इसके पुत्रों में से पहले सात भूपाल थे। भागवत तथा वायु के अनुसार, इसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र थे। प्रियव्रत के दस पुत्र थे।

स्वारोचिष मन्वंतर

१. मनु—स्वारोचिष। कई ग्रन्थों में इस मन्वन्तर के मनु का नाम 'द्युतिमत्' एवं 'स्वारोचिस्' बताया गया है।

२. सप्तर्षि--अर्ववीर (उर्वरीवान्, ऊर्ज, और्व), ऋषभ (कश्यप, काश्यप), दत्त (अत्रि), निश्च्यवन (निश्चर, ल), प्राण, बृहस्पति (अग्नि, अलि), स्तम्ब

(ऊर्जस्तंब, ऊर्जस्वल)। ब्रह्माण्ड में स्वारोचित मन्वन्तर के कई ऋषियों के कुलनाम देकर उन्हें सप्तर्षियों का पूर्वज कहा गया है।

३. देवगण--तुषित, इडस्पति, इध्म, कवि, तोष, प्रतोष, भद्र, रोचन, विभु, शांति, सुदेव (स्वह्न), पारावत।

४. इन्द्र--विपश्चित्। भागवत के अनुसार, यज्ञपुत्र रोचन।

५. अवतार--तुषितपुत्र अजित (विभु)।

६. पुत्र--अयस्मय अपोमूर्ति (आपमूर्ति), ऊर्ज, किंपुरुष, कृतान्त, चैत्र, ज्योति (रोचिष्मत्, रवि), नभ, (नव, नभस्य), प्रतीत (प्रथित, प्रसृति, बृहदुक्थ), भानु, विभृत, श्रुत, सुकृति (सुषेण), सेतु, हविघ्न (हविध्र)। इसके पुत्रों के ऐसे कुछ नाम मिलते हैं, किन्तु उनमें से कुल नौ या दस की संख्या प्राप्त है। मत्स्य के अनुसार, इस मन्वन्तर में ऋषियों की सहायता के लिए वसिष्ठपुत्र सात प्रजापति बने थे। किन्तु उन सब के नाम मनु पुत्रों के नामों से मिलते हैं, जैसे--आप, ज्योति, मूर्ति, रय, सकृत, स्मय तथा हस्तीन्द्र।

उत्तम मन्वन्तर

१. मनु--उत्तम।

२. सप्तर्षि--अनघ, ऊर्ध्वबाहु, गात्र, रज, शुक्र (शुक्ल), सवन, सुतपस्। ये सब वसिष्ठपुत्र थे, एवं वासिष्ठ इनका सामान्य नाम था। पूर्वजन्म में ये सभी हिरण्यगर्भ के ऊर्ज नामक पुत्र थे।

३. देवगण--प्रतर्दन (भद्र, भानु, भावन, मानव), वशवर्तिन् (वेदश्रुति), शिव, सत्य, सुधामन्। इन सबके बारह बारह के गण थे।

४. इन्द्र--सुशांति (सुकीर्ति, सत्यजित्)।

५. अवतार--सत्या का पुत्र सत्य, अथवा धर्म तथा सुनृता का पुत्र सत्यसेन।

६. पुत्र--अज, अप्रतिम, (इष, ईष), ऊर्ज, तनूज (तनूर्ज, तर्ज), दिव्य (दिव्यौषधि, देवांबुज), नभ (नय), नभस्य (पवन, परशु, परशुचि), मधु, माधव, शुक्र, शुचि (शुति, सुकेतु)।

तामस मन्वन्तर

१. मनु--तामस।

२. सप्तर्षि--अकपि (अकपीवत्), अग्नि, कपि (कपीवत्), काव्य (कवि, चरक), चैत्र (जन्यु, जह्नु, जल्प), ज्योतिर्धर्मन् (ज्योतिर्धामन्, धनद), धातृ (धीमत्, पीवर), पृथु।

३. देवगण--वीर, वैधृति, सत्य (सत्यक, साध्य), सुधी, सुरूप, हरि। मार्कण्डेय के अनुसार, इनकी कुल संख्या सत्ताइस है। अन्य ग्रंथों में उल्लेख आता है कि, ये पुत्र एक एक न होकर सत्ताइस सत्ताइस देवों के गण थे।

४. इन्द्र--शिखि (त्रिशिख, शिवि)।

५. अवतार--हरि, जो हरिमेध तथा हरिणी का पुत्र था। इसे एक स्थान हर्या का पुत्र कहा गया है।

६. पुत्र--अकल्मष (अकल्माष), कृतबंधु, कृशाश्व, केतु, क्षांति, खाति (ख्याति), जानुजंघ, तन्वीन्, तपस्य, तपोद्युति (द्युति), तपोधन, तपोभागिन्, तपोमूल, तपोयोगिन्, तपोरति, दृढेषुधि, दान्त, धन्विन्, नर, परंतप, परीक्षित, पृथु, प्रस्थल, प्रियभृत्य, शतहय, शांत (शांति), शुभ, सनातन, सुतपस्।

७. योगवर्धन--कौकुरुण्डि, दाल्भ्य, प्रवहण, शङ्ख, शिव, सस्मित, सित। ये योगवर्धन केवल इसी मन्वंतर में मिलते हैं।

रैवत मन्वन्तर

१. मनु--रैवत।

२. सप्तर्षि--ऊर्ध्वबाहु (सोमप), देवबाहु (वेदबाहु), पर्जन्य, महामुनि (मुनि, वसिष्ठ, सत्यनेत्र), यदुध्र, वेदशिरस् (वेदश्री, सत्ताश्रु, सुधामन्, सुबाहु, स्वधामन्), हिरण्यरोमन् (हिरण्यलोमन्)।

३. देवगण--आभूतरजस् (भूतनय, भूतरजय)। इसके रैभ्य तथा पारिप्लव (वारिप्लव) ये दो भेद हैं। इसके अतिरिक्त अमिताभ, प्रकृति, वैकुंठ, शुभ आदि देवगणों में प्रत्येक में १४ व्यक्ति हैं।

४. इन्द्र--विभु

५. अवतार--विष्णु के अनुसार संभूतिपुत्र मानस, तथा भागवत के अनुसार शुभ्र तथा विकुंठा का पुत्र 'वैकुंठ'।

६. पुत्र--अव्यय (हव्यप), अरण्य (आरण्य), अरुण, अर्जुन, कवि (कपि), कंबु, कृतिन्, तत्त्वदर्शिन् धृतिकृत्, धृतिमत्, निरामित्र, निरुत्सुक, निर्मोह, प्रकाश (प्रकाशक), बलबंधु, बाल, महावीर्य, युक्त, वित्तवत्, विंध्य, शुचि, शृंग, सत्यक, सत्यवाच्, सुयष्टव्य (सुसंभाव्य), हरहन्।

चाक्षुष मन्वन्तर

१. मनु--चाक्षुष।

२. सप्तर्षि--अतिनामन्, उत्तम (उन्नत, भृगु), नभ (नाभ, मधु), विरजस् (वीरक), विवस्वत् (हविष्मत्), सहिष्णु, सुधामन्, सुमेधस्।

३. देवगण--आद्य (आप्य), ऋभ, ऋभु, पृथग्भाव (प्रथुक-ग, यूथग), प्रसूत, भव्य (भाव्य), वारि (वारिमूल), लेख।

४. इन्द्र--भवानुभव या मनोजव अथवा मंत्रद्रुम।

५. अवतार--विष्णु मतानुसार विकुंठापुत्र वैकुंठ, तथा भागवत मतानुसार वैराज तथा संभूति का पुत्र अजित्।

६. पुत्र--अग्निष्टुत, अतिरात्र, अभिमन्यु, ऊरु (रुरु) कृति, तपस्विन्, पुरु (पुरुष, पूरु), शतद्युम्न, सत्यवाच्, सुद्युम्न।

वैवस्वत मन्वन्तर

१. मनु--वैवस्वत।

२. सप्तर्षि--अत्रि, कश्यप (काश्यप, वत्सर), गौतम (शरद्वत्), जमदग्नि, भरद्वाज (भारद्वाज), वसिष्ठ (वसुमत्), विश्वामित्र।

३. देवगण--आंगिरस (दस), अश्विनी (दो), आदित्य (बारह), भृगुदेव (दस), मरुत् (उन्चास), रुद्र (ग्यारह), वसु (आठ), विश्वेदेव (दस), साध्य (बारह)।

४. इन्द्र--ऊर्जस्विन् या पुरंदर या महाबल।

५. अवतार--वामन।

६. पुत्र--अरिष्ट (दिष्ट, नाभागारिष्ट, नाभानेदिष्ट, रिष्ट, नेदिष्ट, उद्दिष्ट), इक्ष्वाकु, इल (सुद्युम्न), करुष, कुशनाभ, धृष्ट (धृष्णु), नभ (नभग, नाभ, नाभाग), नृग, पृषध्र, प्रांशु, वसुमत्, शर्याति।

सावर्णि मन्वंतर

१. मनु--सावर्णि।

२. सप्तर्षि--अश्वत्थामन् (द्रौणि), और्व (काश्यप, रुरु, श्रृंग), कृप (शरद्वत्, शारद्वत्), गालव (कौशिक), दीप्तिमत्, राम (परशुराम जामदग्न्य), व्यास (शतानंद, पाराशर्य)।

३. देवगण--अमिताभ (अमृतप्रभ), मुख्य (सुख, विरज), सुतप (सुतपस्, तप)।

४. इन्द्र--बलि (वैरोचन)। बलि वैरोचन की आसक्ति इन्द्रपद पर नहीं रहती है। अतएव कालान्तर में इन्द्रपद छोड़कर वह सिद्धगति को प्राप्त करेगा।

५. अवतार--देवगुह्य तथा सरस्वती का पुत्र सार्वभौम अवतार होगा, तथा बलि के बाद वह सब व्यवस्था देखेगा।

६. पुत्र--अधृष्ट (अधृष्णु), अध्वरीवत् (अवरीयस्, अर्ववीर, उर्वरीयस्, (वीरवत्), अपि, अरिष्ट (चरिष्णु, विष्णु), आज्य, ईड्य, कृति, (धृति, धृतिमत्), निर्मोह, यवसङ्, वसु, वरीयस्, वाच् (वाजवाजिन्, विरज, विरजस्क), वैरिशमन, शुक्र, सत्यवाच्, सुमति।

दक्षसावर्णि मन्वन्तर

१. मनु--दक्षसावर्णि।

२. सप्तर्षि--ज्योतिष्मत्, द्युतिमत्, मेधातिथि (मेधामृति, माधातिथि), वसु, सत्य (सुतपस्, पौल्ह), सबल (सवन, वसित, वशिन), हव्यवाहन (हव्य, भव्य)।

३. देव--दक्षपुत्र हरित के पुत्र निर्मोह, पार (पर, संभूत), मरिचिगर्भ, सुधर्म, सुधर्मन्, सुशर्माण। इनमें से हर एक के साथ बारह व्यक्ति हैं।

४. इन्द्र--कार्तिकेय ही आगे चलकर अद्‌भुत नाम से इन्द्र होगा।

५. अवतार--आयुष्मत् एवं अंबुधारा का पुत्र ऋषभ अवतार होगा।

६. पुत्र--अनीक (ऋचीक, अर्चिष्मत्, नाक), खड्गहस्त (पंचहस्त, पंचहोत्र, शापहस्त), गय, दीप्तिकेतु (दासकेतु, बर्हकेतु), धृष्टकेतु (धृतिकेतु, भूतकेतु), निराकृति (निरामय), पृथुश्रवस् (पृथश्रवस्), बृहत् (बृहद्रथ, बृहद्यश,), भूरिद्युम्न।

ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर

१. मनु--ब्रह्मसावर्णि।

२. सप्तर्षि--आपांमूर्ति (आपोमूर्ति), अप्रतिम (अप्रतिमौजस, प्रतिम, प्रामति), अभिमन्यु (नभस, सप्तकेतु), अष्टम (वसिष्ठ, वशिष्ठ, सत्य, सद्य), नभोग (नाभाग), सुकृति (सुकीर्ति), हविष्मति।

देव--अर्चि (सुखामन, सुखासीन, सुधाम, सुधामान, सुवासन, धूम, निरुद्ध, विरुद्ध)।

४. इन्द्र--शान्ति नामक इन्द्र होगा।

५. अवतार--विश्वसृष्टय के गृह में विषूचि के गर्भ से विष्वक्सेन नामक अवतार होगा।

६. पुत्र--अनमित्र (निरामित्र), उत्तमौजस, जयद्रथ, निकुंभज, भूरिद्युम्न, भूरिषेण, भूरिसेन, वीरवत् (वीर्यवत्), वृषभ, वृषसेन, शतानीक, सुक्षेत्र, सुपर्वन्, सुवर्चस्, हरिषेण।

धर्मसावर्णि मन्वन्तर

१. मनु--धर्मसावर्णि।

२. सप्तर्षि--अग्नितेजस्, अनघ (तनय, नग, भग), अरुण (आरुणि, तरुण, वारुणि), उदधिष्णन् (उरुधिष्ण्य, पुष्टि, विष्टि, विष्णु), निश्चर, वपुष्मत् (ऋष्टि), हविष्मत्।

३. देव--तीस कामग (काम-गम, कामज), तीस निर्माणरत (निर्वाणरति, निर्वाणरुचि), तीस मनोजव (विहंगम)।

४. इन्द्र--वृष (वृषन्, वैधृत) इन्द्र होगा।

५. अवतार--इस मन्वन्तर के अवतार का नाम धर्मसेतु है, जो धर्म (आर्यक) एवं वैधृति के पुत्र के रूम में जन्म लेनेवाला है।

६. पुत्र--आदर्श, क्षेमधन्वन् (क्षेमधर्मन्, हेमधन्वन्), गृहेषु (दृढायु), देवानीक, पुरुद्दह (पुरोवह) पौण्ड्रक (पंडक), मत (मनु, मरु), संवर्तक (सर्वग, सर्वत्रग, सर्ववेग, सत्यधर्म), सर्वधर्मन् (सुधर्मन्, सुशर्मन्)।

रुद्रसावर्णि मन्वन्तर

१. मनु--रुद्रसावर्णि।

२. सप्तर्षि--तपस्विन्, तपोधन, (तपोनिधि, तमोशन, तपोधृति, तपोमति), तपोमूर्ति, तपोरति (तपोर्राव), द्युति (अग्निध्रक, कृति), सुतपस्।

३. देव--रोहित (लोहित), सुकर्मन् (सुवर्ण), सुतार (तार, सुधर्मन्, सुपार), सुमनस्।

४. इन्द्र--ऋतधामन् नामक इन्द्र होनेवाला है।

५. अवतार--सत्यसहस् तथा सूनृता का पुत्र स्वधामन् अवतार होगा।

६. पुत्र--उपदेव (अहूर), देववत् (देववायु), देवश्रेष्ठ, मित्रकृत् (अमित्रहा, मित्रहा), मित्रदेव (चित्रसेन, मित्रविंदु, मित्रविंद), मित्रबाहु, मित्रवत्, विदूरथ, सुवर्चस्।

रौच्य मन्वन्तर

१. मनु--रौच्य।

२. सप्तर्षि--अव्यय (पथ्यवत्, हव्याप), तत्वदर्शिन्, धृतिमत्, निरुत्सुक, निर्मोक, निष्कंप, निष्प्रकंप, सुतपस्।

३. देव--सुकर्मन्, सुत्रामन् (सूशर्मन्), सूधर्मन्। प्रत्येक देवगण तीस देवों का होगा।

४. इन्द्र--दिवस्पति (दिवस्वामिन्)।

५. अवतार--देवहोत्र तथा वृहती का पुत्र अवतार होगा।

६. पुत्र--अनेक क्षत्रबद्ध (क्षत्रविद्ध, क्षत्रविद्धि, क्षत्रवृद्धि), चित्रसेन, तप (नय, नियति), धर्मधृत, (धर्मभृत, सुव्रत), धृत (भव), निर्भय, पृथ (दृढ), विचित्र, सुतपस् (सुरस), सुनेत्र।

भौत्य मन्वन्तर

१. मनु--भौत्य।

२. सप्तर्षि--अग्निबाहु (अतिबाहु), अग्निध्र (आग्नीध्र), अजित, भार्गव (मागध, माधव, स्वाजित), मुक्त (युक्त), शुक्र, शुचि।

३. देव--कनिष्ठ, चाक्षुष, पवित्र, भाजित (भाजिर, भ्राजिर), वाचावृद्ध (धारावृक)। प्रत्येक के साथ पाँच पाँच देव होगे।

४. इन्द्र--शुचि ही इस समय इन्द्र होगा।

५. अवतार--सत्रायण एवं विताना का पुत्र वृहद्भानु अवतार होगा।

६. पुत्र--अभिमानिन् (श्रीमानिन्), उग्र (ऊरु, अनुग्रह), कृतिन् (जिष्णु, विष्णु), गभीर (तरंगभीरू), गुरु, तरस्वान् (बुद्ध, बुद्धि, ब्रध्न), तेजस्विन् (ऊर्जस्विन् ओजस्विन्), प्रतीर (प्रवीण), शुचि, शुद्ध, सबल, सुबल)।

इसके उपरांत प्रलय होगा तथा ब्रह्मा विष्णु के नाभिकमल में योगनिद्रित होंगे (ह. वं. १.७; मार्के. ५०; ९७; विष्णु. ३.१-२; ब्रह्मवै. २.५४; ५७-६५; स्कन्द. ७. १.१०५; मवि. ब्राह्म. २; मध्य. २; मत्स्य. ९; भा. ८.१; ५;१३; वायु. ३१-३३; १००.९-११८; ब्रह्मांड. २.३६; ३.१; ब्रह्म. ५; पद्म. सृ. ७)।

मनु आप्सव--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.१०१ १०-१२)।

मनु चाक्षुष--चाक्षुष नामक मन्वन्तर का अधिपति मनु, जिसके पुत्र का नाम वरिष्ठ था (म. अनु. १८.२०; चाक्षुष ६. एवं मनु 'आदिपुरुष' देखिये)।

मनु प्राचेतस--एक राजनीतिशास्त्रज्ञ, जो प्राचेतस नामक मन्वन्तर का अधिपति मनु था। महाभारत के अनुसार, इसने राजधर्म एवं राजशास्त्र पर एक ग्रंथ की रचना की थी (म. शां. ५७.४३; ५८.२)। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में, एवं राजशेखर के ग्रंथों में इसके राजनीति-

विषयक मतों का निर्देश प्राप्त हैं (मनु स्वायंभुव देखिये)।

मनु वैवस्वत--वैवस्वत नामक पाँचवे मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो विवस्वत् नामक राजा का पुत्र था। इसके नाभागारिष्ट नामक पुत्र का निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (तै. सं. ३.१.९.४)।

इसे निम्नलिखित दस पुत्र थेः--प्रांशु, धृष्ट, नरिष्यन्त, नाभाग, इक्ष्वाकु, करूष, शर्याति, इल, पृषध्र, एवं नाभानेदिष्ट । इसे इला नामक एक कन्या थी, जिसे पुरूरवस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. अनु. १४७. २७)।

त्रेतायुग के आरंभ में सूर्य ने मनु को, एवं इसने अपने पुत्र को सात्वत धर्म का उपदेश किया था।

सृष्टिप्रलय--सृष्टि प्रलय के समय एक मत्स्य द्वारा मनु वैवस्वत के बचाने की कथा सम्पूर्ण वैदिक एवं उत्तर वैदिक ग्रन्थों में किसी न किसी रूप में प्राप्त है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, जब सारी सृष्टि जलप्रवाह से बह जाती थी, तब मनु एक नाव में बैठा कर एक मत्स्य के द्वारा बचा गया था (श. ब्रा. १.८.१)। प्रलय के उपरांत अपनी उस इला नामक पुत्री के माध्यम से ही मनु मानव जाति की प्रथम सन्तान के जनक हुए, जो उन्हींके हवि से उत्पन्न हुयी थी। यह कथा अथर्ववेद तक के समय में भी ज्ञात थी, ऐसा इसी संहिता के एक स्थल द्वारा व्यक्त होता है (अ. वे. १९.३९.८)।

महाभारत में पृथ्वी के जलप्रलय की एवं मत्स्यावतार की कथा प्राप्त है (म. व. १८५)। उस कथा के अनुसार प्रलयकाल में इसकी नौका नौबंधन नामक हिमालय के शिखर पर आकर रुकी थी। कई ग्रंन्थों में हिमालय के इस शिखर का नाम नावप्रभ्रंशन दिया गया है।

मत्स्यपुराण के अनुसार, इसकी नौका हिमालय पर्वत पर नहीं, बल्कि मलय पर्वत पर रुकी थी। भागवत में मनु को द्रविड देश का राजा कहा गया हैं, एवं इसका नाम सत्यव्रत बताया गया है (भा. १.३.१५)।

विभिन्न साहित्यों में प्राप्त जलप्लावन-कथा--जलप्लावन की यह कथा संसार के विभिन्न साहित्यिक, धार्मिक ग्रन्थों एवं लोककथाओं आदि में प्राप्त है।

यूनानी-साहित्य में ड्यूकलियन तथा उसकी पत्नी पीरिया की कथा में मनु जैसा ही वर्णन मिलता है (मिथ आफ़ ऐनशियन्ट ग्रीस एण्ड रोम, पृष्ठ. २२-२३)। यूनान के अतिरिक्त बेबीलोनिया के साहित्य में भी जलप्लावन सम्बन्धी कथाएँ मिलती हैं। 'अत्रहसिस' महाकाव्य में वर्णित एक कथा के अनुसार, अर्डेटस के पुत्र ज़िसथ्रस जलप्लावन के उपरांत देवों को बलि देकर बेबीलोनिया नगर का पुनः निर्माण करता है (दि फ्लड लिजेन्ड इन संस्कृत लिटरेचर पृ. १४८-१४९)। बेबीलोनिया में गिलगमेश महाकाव्य में इसी प्रकार के जलप्लावन की एक कथा प्राप्त है। ईसाई धर्मग्रन्थ बाइबिल में यह कथा विस्तार से दी गयी है, जिसमें नूह का वर्णन मनु की भाँति किया गया है। कुरानशरीफ़ में यह कथा बाइबिल से मिलती जुलती है। अन्तर केवल इतना है कि, बाईबिल में हज़रत नूह की नाव अएएट पर्वत पर आकर रुकती है, जब कि कुरान में उस पर्वत का नाम जूदी दिया गया है (दि होली कुरान पृष्ठ ११.३.२५-४९)। इसके अतिरिक्त चैल्डिया के साहित्य में भी हासीसद्रा परमेश्वर 'ई' के आदेशानुसार अपने को जलप्लावन से बचाता है।

इसके अतिरिक्त पारसी धार्मिक ग्रन्थ वेंदीदाद तथा पहलवी, सुमेरिन, आइसलैण्ड, वेल्स, लिथुआनिया एवं असीरिया के साहित्य में यह जलप्लावन की कथा मिलती है। इसके साथ ही चीन, ब्रह्मा, इंडोचीन, मलाया, आस्ट्रेलिया, न्यूगिनी, मैलेवेशिया, पालीमेशिया, उत्तर दक्षिणी अमरीका आदि देशों में जलप्लावन सम्बन्धी कथायें प्राप्त हैं।

संसार की समस्त जलप्लावन सम्बन्धी कथाओं की तुलना करने पर यही ज्ञात होता है कि, दक्षिण एशिया की समस्त कथायें समान हैं, क्योंकि उनमें सर्वत्र सम्पूर्ण पृथ्वी के डूबने एवं अधिकांश पदार्थों के नष्ट होने का विवरण प्राप्त है। उत्तरी एशिया की कथाओं में से चीन जापान की कथाओं में पूर्ण विनाश का वर्णन हैं। योरप में ऐसे विनाश के वर्णन कम हैं, तथा अफ्रीका की कथाओं में जलप्लावन का वर्णन बिल्कुल नहीं है।

प्रलयोत्तर मानवी समाज का आदिपुरुष--मनु वैवस्वत प्रलयोत्तरकालीन मानवी समाज का आदिपुरुष माना जाता है, एवं पुराणों में निर्दिष्ट सारे राजवंश उसीसे ही प्रारंभ होते है। राज्यशासन के नानाविध यमनियम के प्रणयनों का श्रेय इसको ही दिया जाता है। खेती में से जो उत्पादन होता है, उसमें से छटवाँ भाग राज्यशासन का खर्चा निभाने के लिए राजा को मिलना चाहिए, इस सिद्धान्त के प्रणयन का श्रेय भी इसको दिया जाता है।

कालनिर्णय--पुराणों में प्राप्त वंशावलियों के अनुसार, मनु वैवस्वत का राज्यकाल भारतीययुद्ध से पहले ९५ पिढ़ियाँ माना गया है। भारतीययुद्ध का काल ईसा. पू. १४०० माना जाये, तो मनु वैवस्वत का काल ईसा. पू. ३११० साबित होता है। ज्योतिर्गणितीय हिसाब से भी ३१०२ यह वर्ष कलियुग के प्रारंभ का वर्ष माना जाता हैं। हिब्रु एवं बाबिलोन साहित्य में निर्दिष्ट मेसापोटेमिया के जलप्रलय का काल भी ईसा. पू. ३१०० माना जाता है। इससे प्रतीत होता है कि, शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट मनु वैवस्वत का जलप्रलय भी इसी समय हुआ था।

परिवार--मनु के कुल दस पुत्र थे, जिसमें से इला का निर्देश पुराणों में इल नामक पुरुष, एवं इला नामक स्त्री ऐसे द्विरूप पद्धति से प्राप्त है।

इसके नौ पुत्रों की एवं उनके द्वारा स्थापित राजवंशों की जानकारी निम्न प्रकार है:--

१. इक्ष्वाकु--इसका राज्य अयोध्या में था, एवं इसके पुत्र विकुक्षि ने सुविख्यात ऐक्ष्वाक राजवंश की स्थापना की।

२. शर्याति--इसने आनर्त-देश में राज्य करनेवाले सुविख्यात 'शार्यात' राजवंश की स्थापना की। इसके पुत्र का नाम आनर्त था, जिससे प्राचीन गुजरात को आनर्त नाम प्राप्त हुआ था।

३. नाभानेदिष्ट--इसने उत्तर बिहार प्रदेश में सुविख्यात वैशाल राजवंश की स्थापना की। इसके राज्य की राजधानी वैशाली नगर में थी, जो आधुनिक मुजफ़रपुर जिले में स्थित बसाढ गाँव माना जाता हैं।

४. नाभाग--इसके द्वारा स्थापित नाभाग राजवंश का राज्य गंगा नदी के दुआब में स्थित मध्यदेश में था। इस राजवंश में रथीतर लोग भी समाविष्ट थे, जो क्षत्रिय ब्राह्मण कहलाते थे।

५. धृष्ट--इससे 'धार्ष्टक' क्षत्रिय नामक जाति का निर्माण हुआ, जो पंजाब के वाहीक प्रदेश में राज्य करते थे। इन लोगों का निर्देश क्षत्रिय, ब्राह्मण एवं वैश्य इन तीनों तरह से किया हुआ प्राप्त है।

६. नरिष्यंत--कई अभ्यासकों के अनुसार, शक लोग इसी राजा के वंशज थे।

७. करूष--इसके वंशज करूष लोग थे, जो आधुनिक रेवा प्रदेश में स्थित करूप देश में रहते थे, एवं कुशल योद्धा माने जाते थे।

८. पृषध्र--इसने अपने गुरु के गाय का वध किया, जिस कारण इसे राज्य का हिस्सा नही मिला।

९. प्रांशु--इसके वंशजों के बारे में कोई जानकारी नही है।

इलापुत्र--इला का विवाह बुध से हुआ, जिससे उसे पुरूरवस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुरूरवस् ने सुविख्यात ऐल (चंद्र) राजवंश की स्थापना की जिससे आगे चल कर कान्यकुब्ज, यादव (हैहय, अन्धक, वृष्णि), तुर्वसु द्रुह्यु, आनव, पंचाल, बार्हद्रथ, चेदि आदि राजवंशों का निर्माण हुआ।

इला के पुरुष अंश का रुपान्तर आगे चलकर सुद्युम्न नामक किंपुरुष में हुआ, जिससे सौद्युम्न नामक राजवंश का निर्माण हुआ। इस राजवंश की उत्कल, गया एवं विनताश्व नामक तीन शाखाएँ थी, जो क्रमशः उत्कल, गया एवं उत्तरकुरु प्रदेश पर राज्य करती थी। आगे चल कर आनव एवं कान्यकुब्ज राजाओं ने सौद्युम्न राज्यों को जीत लिया।

करुष, नाभाग, धृष्ट, नरिष्यंत, प्रांशु एवं पृषध्र लोगों के राज्य ऐलवंशीय पुरूरवस्, नहुष एवं ययाति ने जीत लिया, जिस कारण ये सारे राजवंश शीघ्र ही विनष्ट हो गये।

इसके वंश में उत्पन्न उत्तरकालीन राजाओं का काल संभवतः निम्नलिखित माना जाता है:--

ययाति--ई. पू. ३०१०।

मांधातृ--ई. पू. २७४०।

अर्जुन कार्तवीर्य--ई पू. २५५०।

सगर, दुष्यन्त एवं भरत--ई. पू. २३५०-२३००।

राम दाशरथि--ई. पू. १९५० (हिस्टरी ॲन्ड कल्चर ऑफ इंडियन पीपल-१.२७०)।

हिंन्दी साहित्य में--आधुनिक हिन्दी साहित्य में मनु के जीवन से सम्बन्धित जयशंकर 'प्रसाद' द्वारा लिखित 'कामायनी' हिन्दी काव्याकाश का गौरव ग्रन्थ है। इसके कथानक का आधार प्राचीन ग्रन्थ ही है, जिसमें मानव मन, बुद्धि तथा हृदय के उचित सन्तुलन को स्थापित कर चिरदग्ध दुःखी वसुधा को आशा बँधाती हुयी समन्वयवाद, समरसता एवं आनंदवाद के द्वारा मंगलमय महान संदेश देने का प्रयत्न किया गया है।

कामायनी पन्द्रह सर्गों में विभक्त है, तथा हर एक सर्ग का नामकरण वर्ण्य विषय के आधार पर हुआ है।

इसमें 'आनन्द' की चरम सिद्धि तथा अन्तिम ढ़ाई सर्गों में शान्ति की वहती मन्दाकिनी देखने योग्य है।

प्रस्तुत ग्रन्थ में मनु का चरित्र एक मानवीय चरित्र के रूप में ही प्रकट हुआ है। 'प्रसाद' जी ने मनु का चरित्र अस्वाभाविक तथा दैवी नहीं, बल्कि इसी जगत के मानवीय रूप का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। मनु एक सच्चे मानव की भाँति गिरे भी हैं, तथा उठे भी हैं। मनु का यह पतन एवं उत्थान विश्वमानव के लिए एक आशाप्रद संदेश देता है, तथा प्रवृत्ति-निवृत्ति का समन्वय कर के एक संतुलित जीवन व्यतीत करने की शिक्षा देता है।

कामायनी के प्रधान चरित्र नायक मनु का कई रूपों में चित्रण प्राप्त है। उनका पहला रूप नीतिव्यवस्थापक का है, जो 'इला,' 'स्वप्न' तथा 'संघर्ष' आदि सर्गों में हुआ है। इसका सीधा सम्बध 'इला' से है। दूसरा, वैदिक कर्मकाण्डी ऋषि के रूप में हुआ है, जिसके दो पहलू हैं—पहला तपस्वी मनु का, जो 'किलाताकुली' के आने के पूर्व में मिलता है, दूसरा 'हिंसक यजमान' मनु का, जो असुर पुरोहितों के आगमन के पश्चात् पाया जाता है। इनका तीसरा रूप 'मनु-इला युग' के अन्त में देखा जा सकता है, जब वे आनंद पथ में चल कर शिवत्व प्राप्त करने में सफल होते हैं। इस प्रकार 'कामायनी' में मनु पात्र का विकास देवता मनु, ऋषि मनु, प्रजापति मनु तथा आनंद के अधिकारी मनु के रूप में हुआ है।

मनु सावर्णि—सावर्णि नामक आठवे मन्वन्तर का अधिपति मनु। एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाम से इसका निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (ऋ. वे. ८.१०.२४; श. ब्रा. १३.४.३.३; आ. श्रौ. १०.७; नि. १२.१०)। 'सवर्णा' का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

ऋग्वेद में इसका निर्देश मनु 'सांवरणि' नाम से किया गया है (ऋ. ८.५१.१)। संभव है, 'संवरण' का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। लुड्विग के अनुसार, यह तुर्वशों का राजा था (लुड्विग-ऋग्वेद अनुवाद. ३.१६६)।

महाभारत में इसे मनु सौवर्ण कहा गया है, एवं बताया गया है कि, इसके मन्वन्तर में वेदव्यास सप्तर्षि पद पर प्रतिष्ठित होंगे (म. अनु. १८.४३)।

मनु स्वायंभुव—एक धर्मशास्त्रकार, जो स्वायंभुव नामक पहले मन्वन्तर का मनु माना जाता है।

यह ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था। वायु में इसे आनंद नामक ब्रह्मा से उत्पन्न हुआ कहा गया है। आनंद ने पृथ्वी पर वर्णव्यवस्था स्थापित की, एवं विवाहसंस्था का भी निर्माण किया। किन्तु आगे चलकर यह व्यवस्था मृतवत् हो गयी, जिसका पुरुद्धार स्वायंभुव मनु ने किया (वायु. २१.२८; ८०१४६-१६६; २१.२८)।

इसकी राजधानी सरस्वती नदी के तट पर स्थित थी। अपने सभी शत्रु को पराजित कर यह पृथ्वी का पहला राजा बना था।

ब्रह्मा के शरीर के दाये भाग से उत्पन्न शतरूपा नामक स्त्री इसकी पत्नी थी, जिससे इसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र, एवं तीन कन्याएँ उत्पन्न हुयी। उत्तानपाद राजा के वंश में हीं ध्रुव, मनु चाक्षुष, पृथु वैन्य, दक्ष, एवं मनु वैवस्वत नामक सुविख्यात राजा उत्पन्न हुए।

मनु स्वायंभुव का ज्येष्ठ पुत्र प्रियव्रत पृथ्वी का पहला क्षत्रिय माना जाता है। उसे उत्तम, तामस एवं रैवत नामक तीन पुत्र थे, जो बचपन में ही राज्यत्याग कर तपस्या के लिए वन में चले गये। आगे चल कर प्रियव्रत के ये तीन पुत्र क्रमशः तीसरे, चौथे, एवं पाँचवें मन्वन्तर के अधिपति बने थे।

मनु स्वायंभुव की एक कन्या का नाम आकूति था, जिससे आगे चलकर मनु स्वारोचिष नामक दूसरे मनु का जन्म हुआ।

भविष्य पुराण में मनु के द्वारा प्रणीत धर्मशास्त्र का निर्देश 'स्वायंभुवशास्त्र' नाम से किया गया है। बाद को इस शास्त्र का चतुर्विध संस्करण भृगु, नारद, बृहस्पति एवं अंगिरस् द्वारा किया गया था (संस्कारमयूख पृष्ठ. २)। विश्वरूप के ग्रन्थ में भी मनु का निर्देश 'स्वायंभुव' नाम से किया गया है, एवं इसके काफी उद्धरण भी लिये गये हैं (याज्ञ. २.७३-७४; ८३;८५)। किन्तु विश्वरूप द्वारा दिये गये मनु एवं भृगु के श्लोक 'मनुस्मृति' में आजकल अप्राप्य है (याज्ञ १.१८७-२५२)। अपरार्क ने भृगुस्मृति का एक श्लोक दिया है, जो मनु का कहा गया है (याज्ञ. २.९६)। किन्तु वह श्लोक भी मनुस्मृति में अप्राप्य है।

स्मृतिकार—निरुक्त में जहाँ पुत्र एवं पुत्री के अधिकारों का वर्णन किया गया है, वहीं स्वायंभुव मनु का स्मृतिकार के रूप में उल्लेख किया गया है। निरुक्त से यह पता चलता है कि, इसका मत था कि, पुत्र एवं पुत्री को पिता की संपत्ति में समान अधिकार है। उन्हीं श्लोकों को मनु की स्मृति कहा गया है (नि. ३.४)। इससे स्पष्ट है

कि, स्वायंभुव मनु की स्मृति यास्क के पूर्व में वर्तमान थी। गौतम तथा वसिष्ठ आदि स्मृतिकारों ने मनु के मतों को दिया है। आपस्तंब ने भी लिखा है कि, मनु श्राद्धकर्म का प्रणेता था (आप. ध. २.७.१६.१)।

धर्मशास्त्र की निर्मिति--महाभारत के अनुसार, ब्रह्मा ने मनु के द्वारा धर्मविषयक एक लाख श्लोकों की रचना करवायी। आगे चलकर, उन्हीं श्लोकों का आधार लेकर उशनस् एवं बृहस्पति ने धर्मशास्त्रों का निर्माण किया (म. शां. ३३२.३६)।

नारद गद्यस्मृति के अनुसार, मनु ने एक लाख श्लोकों के धर्मशास्त्र की रचना कर नारद को प्रदान किया, जिसमें एक हज़ार अस्सी अध्याय, एवं चौवीस प्रकरण थे। उसी धर्मशास्त्र ग्रन्थ को नारद ने बारह हज़ार श्लोकों में संक्षिप्त कर के मार्कंडेय ऋषि को दिया। उसी ग्रन्थ को आठ हज़ार श्लोकों में संक्षिप्त कर मार्कंडेय ने सुमति भार्गव को प्रदान किया, जिसने आगे चलकर इसी ग्रन्थ को चार हज़ार श्लोकों में संक्षिप्त किया। मेधातिथि ने नारद स्मृति के इस उद्धरण को दुहराया है।

मनुस्मृति का प्रणयन—मनुस्मृति का जो संस्करण आज उपलब्ध है, उस ग्रन्थ के अनुसार, ब्रह्मा से विराज नामक ऋषि की उत्पत्ति हुयी, जिससे आगे चल कर मनु उत्पन्न हुआ। पश्चात् मनु से भृगु, नारद आदि दस ऋषि पैदा हुए। धर्मशास्त्र का शिक्षण सर्वप्रथम ब्रह्मा ने मनु को प्रदान किया, जिसे आगे चलकर इसने अपने इन पुत्रों को दिया (मनु. १.५८)। मनुस्मृति के प्रणयन की कथा इस प्रकार हैः-एक बार कई ऋषिगण चारो वर्णों से सम्बन्धित धर्मशास्त्रविषयक जानकारी प्राप्त करने के लिए आचार्य मनु के पास आये। मनु ने कहा, 'यह सारी जानकारी तुम लोगों को हमारे शिष्य भृगु द्वारा प्राप्त होगी' (मनु. १. ५९-६०)। पश्चात्, भृगु ने मनु की धर्मविषयक सारी विचारधारा उन सबके सामने रक्खी। वही मनुस्मृति है। उस ग्रन्थ में मनु को 'सर्वज्ञ' कहा गया है (मनु. २.७)।

मानवधर्मशास्त्र का पुनर्संस्करण--मैक्समूलर के अनुसार, प्राचीनकाल के मानवधर्मसूत्र का पुनः संस्करण कर के मनुस्मृति का निर्माण किया गया है (सेक्रिड बुक्स आफ ईस्ट, खण्ड. २५ पृष्ठ. १८)। आधुनिक काल में प्राप्त 'मनुस्मृति' मनु के द्वारा लिखित है, अथवा मनु के नाम को जोड़कर किसी अन्य द्वारा लिखी गयी है, कहा नही जा सकता। महाभारत के अनुसार, स्वायंभुव मनु धर्मशास्त्र का, एवं प्राचेतस मनु अर्थशास्त्र के आचार्य माने गये हैं (म. शां ११.१२;५७.४३)। इस प्रकार प्राचीनकाल में धर्मशास्त्र एवं अर्थशास्त्र पर लिखे हुए दो स्वतंत्र ग्रन्थ उपलब्ध थे, जो उक्त मनुओं द्वारा लिखित थे। इस प्रकार सम्भव है कि, किसी अज्ञात व्यक्ति ने इन दोनों ग्रन्थों की सामग्री के साथ साथ प्राचीन धर्मशास्त्रमर्मज्ञों की विचारधारा को और जोड़कर, आधुनिक मनुस्मृति के स्वरूप का निर्माण किया हो।

उपलब्ध मनुस्मृति महाभारत से उत्तरकालीन मानी जाती है। सम्भव है, इस ग्रन्थ की रचना के पूर्व 'बृहद्-मनुस्मृति' एवं 'वृद्धमनुस्मृति' नामक दो बड़े स्मृति-ग्रन्थ उपलब्ध थे। इन्हीं ग्रन्थों को संक्षिप्त कर दो हजार सात सौ श्लोकोंवाली मनुस्मृति की रचना भृगु ने की हो।

मनुस्मृति ग्रंथ में इस रचना का जनक स्वायंभुव मनु कहा गया है, एवं उसके साथ अन्य छः मनुओं के नाम दिये गये हैं (मनु १.६२)।

मनुस्मृति में बारह अध्याय हैं, एवं दो हजार छः सौ चौरान्नवे श्लोक हैं। उस ग्रन्थ में प्राप्त अनेक श्लोक वसिष्ठ एवं विष्णु धर्मसूत्रों से मिलते जुलते हैं। इस ग्रन्थ में प्राप्त धर्मविषयक विचार गौतम, बौधायन एवं आपस्तंब से मिलते जुलते हैं। उक्त ग्रंथ की शैली अत्यधिक सरल है, जिसमें पाणिनि के व्याकरण का अनुगमन किया गया है। इस ग्रंथ का तत्त्वज्ञान एवं शब्दप्रयोग कौटिल्य अर्थशास्त्र की शैली से काफी साम्य रखता है।

विषयानुक्रमणिका—मनु-मृति में कुल बारह अध्याय हैं, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख विषयों पर विचारविवेचन किया गया हैं :—

अ. १.—धर्मशास्त्र की निर्मिति, एवं मनुस्मृति की परम्परा।

अ. २.--धर्म क्या है?-धर्म की उत्पत्ति किससे हुयी है?-धर्मशास्त्र का अधिकार किन किन को प्राप्त है-संस्कारों की आवश्यकता क्या है?

अ. ३.--ब्रह्मचर्यव्रत का पालन कैसे किया जाये? ब्राह्मण किस वर्ण की कन्या से शादी करे?- विवाहों के आठ प्रकार-पतिपत्नी के कर्तव्य।

अ. ४.—गृहस्थधर्मियों का कर्तव्य।

अ. ५.--घर में किसी की मृत्यु अथवा जन्म के समय अशौच का कालनिर्णय।

अ. ६.--वानप्रस्थधर्म का पालन।

अ. ७.—राजधर्म का पालन–राजा के लिए आवश्यक चार विद्याएँ–राजा में उत्पन्न होनेवाले कामजनित दस, एवं क्रोधजनित आठ दोषों का विवरण।

अ. ८.—न्यायपालन से संबंधित राजा के कर्तव्य–मनुप्रणीत अठराह विधियों का विवरण।

अ. ९.—पतिपत्नी के वैधानिक कर्तव्य–नारियों के दोषों का वर्णन।

अ. १०.—चारों वर्णों के कर्तव्य।

अ. ११.—दानों के विविध प्रकार एवं उनका महत्त्व–पाँच महापातक एवं उनके लिए प्रायश्चित।

अ. १२.—कर्मों के विविध प्रकार एवं ब्रह्म की प्राप्ति–मानवशास्त्र के अध्यापन से होनेवाले लाभ।

'मनुस्मृति' में निर्दिष्ट ग्रंथ—मनुस्मृति में प्राप्त विभिन्न ग्रन्थों के निर्देश से पता चलता है कि, इस ग्रन्थ के रचयिता मनु को कितने पूर्वलिखित ग्रन्थों की सूचना प्राप्त थी। मनुस्मृति में ऋक्, यजु एवं सामवेदों का निर्देश प्राप्त हैं, एवं अथर्ववेद का निर्देश 'अथर्वांगिरस्' श्रुति नाम से किया गया है (मनु. ११.३३)। उसके ग्रन्थ में आरण्यकों का भी निर्देश प्राप्त है (मनु. ४.१२३)। इसे छः वेदांग ज्ञात थे (मनु. २.१४१; ३.१८५; ४.९८)। इसे अनेक धर्मशास्त्र के ग्रन्थ ज्ञात थे, एवं इसने धर्मशास्त्र के विद्वानों को 'धर्मपाठक' कहा है (मनु. ३.२३२; १२.१११)। इसके ग्रन्थ में निम्नलिखित धर्मशास्त्रकारों का निर्देश प्राप्त है :—अत्रि, गौतम, भृगु, शौनक, वसिष्ठ एवं वैखानस (मनु. ३.१६; ६.२१; ८.१४०)।

प्राचीन साहित्य में से आख्यान, इतिहास, पुराण एवं खिल आदि का निर्देश मनुस्मृति में प्राप्त है (मनु. ३.२३२)। वेदान्त में निर्दिष्ट ब्रह्म के स्वरूप का विवेचन मनु द्वारा किया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि, मनु को उपनिषदों का भी काफ़ी ज्ञान था (मनु. ६.८३; ९४)। इसके ग्रन्थ में कई 'वेदबाह्य स्मृतियों' का भी निर्देश प्राप्त है। इसे बौद्ध जैन आदि इतर धर्मों का भी ज्ञान था (मनु. १२.९५)। इसने अपने ग्रन्थ में वेदनिन्दक तथा पाखण्डियों का भी वर्णन किया है (मनु. ४.३०; ६१; १६३)।

इसने अस्पृश्य एवं शूद्र लोगों की कटु आलोचना की है, एवं उन्हें कड़े नियमों में बाँधने का प्रयत्न किया है (मनु. १०.५०–५६; १२९)। इसका कारण यह हो सकता है कि, इन दलित जातियों ने वैदिक धर्म से इतर धर्मों की स्थापना करने के प्रयत्नों में, जैन तथा बौद्ध धर्म को आगे बढ़ने में योगदान देना प्रारम्भ किया हो।

'मनुस्मृति' के भाष्य—मनुस्मृति के भाष्यों में से सब से प्राचीन भाष्य मेधातिथी का माना जाता है, जिसकी रचना ९०० ई० में हुयी थी। विश्वरूप ने अपने यजुर्वेद के भाष्य में मनुस्मृति के दो सौ श्लोकों का उद्धरण किया है। इन दोनों ग्रन्थकारों के सामने जो मनुस्मृति प्राप्त थी, वह आज की मनुस्मृति से पूर्ण साम्य रखती है।

शंकराचार्य के वेदान्त सूत्रभाष्य में भी मनुस्मृति के काफी उद्धरण प्राप्त है (वे. सू. १.३.२८; २.१.११; ४.२.६; ३.१.१४; ३.४.३८)। शंकराचार्य के द्वारा निर्देशित इन उद्धरणों से पता चलता है कि, वे इन सूत्रों को गौतम धर्मसूत्रों से अधिक प्रमाणित मानते थे।

'मनुस्मृति' का रचनाकाल—मनु का मत था कि, ब्राह्मण यदि अपराधी है, तो उसे फाँसी न देनी चाहिए, बल्कि उसे देश से निकाल देना चाहिए (मनु. ८.३८०)। इसके इस मत का निर्देश 'मृच्छकटिक' में मिलता है। वलभी के राजा धरसेन के ५७१ ई. के शिलालेख में उस राजा को मनु के धर्मनियमों का पालनकर्ता कहा गया है। जैमिनि सूत्रों के सुविख्यात भाष्यकार शबरस्वमिन् द्वारा ५०० ई० में रचित भाष्य में मनु के मतों का निर्देश प्राप्त है।

इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है कि, दूसरी शताब्दी के उपरांत मनुस्मृति को प्रमाणित धार्मिक ग्रन्थ माना जाने लगा था। किन्तु कालान्तर में इसकी लोकप्रियता को देखकर लोगों ने अपनी विचारधारा को भी इस ग्रन्थ में संनिविष्ट कर दिया, जिससे इसमें प्रक्षिप्त अंश जुड़ गये। उन तमाम विचार एक दूसरे से मेल न खाकर कहीं कहीं एक दूसरे से विरोधी जान पड़ते है (मनु. ३. १२–१३; २३–२६; ९. ५९–६३; ६४–६९)। बृहस्पति के निर्देशों से पता चलता है कि, मनुस्मृति में ये प्रक्षिप्त अंश तीसरी शताब्दी में जोड़े गये।

मनुस्मृति याज्ञवल्क्यस्मृति से पूर्वकालीन मानी जाती है। उपलब्ध मनुस्मृति में यवन, कांबोज, शक, पह्लव, चीन, ओड्र, द्रविड, मेद, आंध्र आदि देशों का उल्लेख प्राप्त है। इन सभी प्राप्त सूचनाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि, उपलब्ध मनुस्मृति की रचना तीसरी शताब्दी के पूर्व हुयी थी। सभवतः इसकी रचना २०० ई० पूर्व से लेकर २०० ई० के बीच में किसी समय हुयी थी।

अन्य ग्रन्थ—मनु के नाम से 'मनुसंहिता' नामक एक तन्त्रविषयक ग्रन्थ भी प्राप्त है (C.C.)।

मनु स्वारोचिष--स्वारोचिष नामक द्वितीय मन्वंतर का अधिपति मनु। इसकी माता का नाम आकूति था, जो मनु स्वायंभुव की कन्या थी। इसे ब्रह्मा ने सात्वत धर्म का उपदेश दिया था, जो कालान्तर में इसने अपने पुत्र शंखपद को प्रदान किया था (म. शां. ३३६.३४-३५; स्वारोचिष देखिये)।

मनुज--दस विश्वेदेवों में से एक।

मनुवश--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार मनु राजा का पुत्र था।

मनुष्यधर्मन्--कुवेर का नामान्तर।

मनुष्यराजन्--एक सन्मान्य उपाधि, जो राजसूय यज्ञ करनेवाले मनुष्य राजाओं के लिए प्रयुक्त की जाती थी। राजसूय यज्ञ करनेवाले देवों के लिए 'देवराजन्' उपाधि प्रयुक्त की जाती थी (देवराजन् देखिये)।

मनुसुत--ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

मनोजव--अनिल नामक वसु का ज्येष्ठ पुत्र। इसकी माता का नाम शिवा था (म. आ. ६०.२४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'पुरोजव'।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो मेधातिथि राजा का पुत्र था।

३. चाक्षुष मन्वन्तर का इन्द्र।

४. लेख देवों में से एक।

५. धर्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देव।

६. सोमवंशीय एक राजा, जिसका मंगलतीर्थ नामक तीर्थस्थान में स्नान करने के कारण उद्धार हुआ था (स्कंद. ३.१.१२)।

मनोजवा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१६)।

मनोभद्र--एक राजा, जिसका गंगामाहात्म्य श्रवण करने के कारण उद्धार हुआ (पद्म. क्रि. ३)।

मनोभवा--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी।

मनोभुव--चाक्षुष मन्वन्तर का एक इन्द्र।

मनोरमा--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में यह उपस्थित थी।

२. ध्रुवसंधि राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सुदर्शन था।

३. विद्याधराधिप इंदीवराक्ष नामक गंधर्व की कन्या (इंदीवराक्ष देखिये)।

मनोहरा--सोम नामक वसु की पत्नी, जिसे निम्नलिखित चार पुत्र थे :--वर्च, शिशिर, प्राण एवं रमण (म. आ. ६०.२१)।

२. अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागत के लिए इन्द्रसभा में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

मंथरा--कैकयी की एक कुब्जी दासी, जो दुन्दुभी नामक गंधर्वी के अंश से उत्पन्न हुयी थी (म. व. २६०. १०)। महाभारत में रामोपाख्यान में, जब राम की सहायता करने के लिए देवताओं द्वारा ऋक्षों तथा वानरों की स्त्रियों से पुत्र उत्पन्न करने का उल्लेख किया गया है, तब गंधर्वी दुन्दुभी को मंथरा के रूप में प्रकट होने की चर्चा मिलती है (म. व. २६०.१०)। इसी मंथरा कैकयी के मन में भेद उत्पन्न कर राम के वनगमन का कारण बनी थी।

वाल्मीकि रामायण की मंथरा कैकयी की चिरकाल से पतिता दासी है, जो राम का राज्याभिषेक सुनकर क्रोध से प्रज्वलित हो उठती है। यह कैकयी को भावी अरिष्टों की ओर ध्यान दिलाकर अपने वश में ऐसा कर लेती है कि, वह इसकी प्रशंसा करने लगती है (वा. रा. अयो.९. ४१-५०)। कैकेयी इसके द्वारा ही समझाये जानेपर राम को वन में भेजने के लिए प्रवृत्त हुयी। कैकेयी राम के राज्यभिषेक से अत्यधिक प्रसन्न थी, किन्तु इसके द्वारा दी गयी दलीलों को सुनकर वह हतबुद्ध हो गयी, और दशरथ से वर माँग कर राम को वन भेजा (वा. रा. अयो. ७.९) शत्रुघ्न इसके इस दुष्कार्य से इतने क्रुद्ध हो उठते है कि, वह मंथरा को पीटते भी है (वा. रा. अयो.७८)। अग्नि में, मंथरा के इस उत्पीडन को राम के वनवास का कारण बताया है (अग्नि. ५.८)।

आनन्द रामायण में लिखा है कि, मंथरा कृष्णावतार के समय जन्म लेगी, तथा पूतना के रूप में कृष्ण के द्वारा मारी जायेगी (आ. रा. ९.५.३५)। अन्य स्थल पर कंस के यहाँ कुब्जा के रूप में अवतार लेने की बात भी कही गयी है (आ. रा. १.२.३)।

इसी प्रकार पद्मपुराण के पाताल खण्ड के गौडीय पाठ (अध्याय १५), आनन्द रामायण (आ. रा. १.२.२) कृत्तिवास रामायण (२.४) में इसकी कथा प्राप्त है। बाद के अनेक वृत्तान्तों में मंथरा को मोहित करने के लिए सरस्वती के भेजे जाने का भी वर्णन मिलता है (अ. रा.

२.२.४४; आ. रा. १.६.४१)। तोरवो रामायण में मंथरा को विष्णु की माया का अवतार माना गया है।

'रामचरित मानस' में--इस प्रकार प्राचीन एवं अर्वाचीन राम साहित्य में इसका नाम सर्वत्र प्राप्त है। तुलसीदास के द्वारा रचित 'रामचरित मानस' में कवि ने अधिदैविक तत्व का योग कर इसे निर्दोष सावित किया है। तुलसी मंथरा का कटु चित्रण करने के पूर्व कह देते है-- 'गई गिरा मति फेरि'। राम के अवतार कारण का लक्ष्य देवों की दुःखनिवृत्ति वतलाया गया है, अतएव देवताओं को रामवनवास की प्रेरणा सरस्वती के द्वारा देना संगतपूर्ण जान पड़ता है। तुलसीद्वारा चित्रित मंथरा वड़ी वाक्पटु, अनुभवी, कुशल दूती की भाँति है, जो बड़े मनोवैज्ञानिक ढंग से केकैयी के हृदय के भावों को परिवर्तित कर, राम को वन भेजने के लिए उसे विवश कर देती है।

२. विरोचन दैत्य की कन्या। यह दैत्यकन्या सम्पूर्ण पृथ्वी को विनाश करने के लिए तत्पर हुयी, तव इन्द्र ने इसका वध किया।

इसकी कथा रामायण में राम के द्वारा तारकावध के समय कही गयी है। इसी की कथा बता कर राम ने लक्ष्मण से कहा था कि, स्त्री का वध करना अवश्य उचित नहीं है, किन्तु जव आवश्यकता ही आ पड़े, तो स्त्रीवध किसी प्रकार हेय कार्य नहीं है (वा. रा. बा. २५.२०)।

मंथिनी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४८.२५)। इसके नाम के लिए 'स्थेरिका' पाठभेद प्राप्त है।

मंथु--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वीरव्रत राजा का पुत्र था।

मंद--रावण के पक्ष का एक राक्षस।

मन्दपाल--एक विद्वान् महर्षि, जिसे मृत्यु के बाद पितृऋण को न उतारने के कारण स्वर्ग की प्राप्ति न हुयी थी।

पितृऋण--मन्दपाल धर्मज्ञों में श्रेष्ठ तथा कठोरव्रत का पालन करनेवाला था। यह ऊर्ध्वरेता मुनियों के मार्ग का आश्रय लेकर सदा वेदों के स्वाध्याय, धर्मपालन तथा तपस्या में संलग्न रहता था। अपनी तपस्या पूर्ण कर देहत्याग कर, जब यह पितृलोक पहुँचा, तब इसे सत्कर्मों के फलानुसार स्वर्ग की प्राप्ति न हुयी। तब इसने देवताओं से इसका कारण पूछा। देवताओं ने बताया, 'आपके उपर पितृऋण है। जब तक वह पितृऋण तुम्हारे द्वारा न उतारा जायेगा, तब तक स्वर्ग की प्राप्ति असम्भव है। इस ऋण को उतारने के लिए तुम्हें सन्तान उत्पन्न करके अपनी वंशपरम्परा को अविच्छन्न बनाने का प्रयत्न करना चाहिए'।

यह सुनकर शीघ्र संतान उत्पन्न करने के लिए, इसने शार्ङ्गक पक्षी होकर जरितृ नामवाली शार्ङ्गिका से संबंध स्थापित किया। उसके गर्भ से चार ब्रह्मवादी पुत्रों को जन्म देकर, यह लपिता नामवाली यक्षिणी के पास चला गया। बच्चे अपनी माँ के साथ ही खाण्डव-वन में रहे। जब अग्निदेव ने उस वन को जलाना आरम्भ किया, उस समय इसने अग्नि की स्तुति की, तथा अपने पुत्रों की जीवनरक्षा के लिए वर माँगा। तब अग्निदेव ने 'तथास्तु' कह कर इसकी प्रार्थना स्वीकार की (म. आ. २२०)।

इसने अपने बच्चों की रक्षा करने की बात अपनी दूसरी पत्नी लपिता से कहीं, किन्तु उसने इससे ईर्ष्यायुक्त वचन कहे, एवं इसे अपने पुत्रों के पास जाने से रोक लिया। तब इसने स्त्रियों के सौतिया डाह रूपी दोष का वर्णन करते हुए बताया कि, वह चाहे जितना सत्य कहे, यह उस पर विश्वास नहीं कर सकता।

पश्चात् यह अपनी पूर्वपत्नी जरितृ, तथा पुत्रों के पास गया। किन्तु वे इसे पहचान न सके। बाद को इसने जरितृ तथा अपने पुत्रों के साथ देशान्तर में प्रस्थान किया (म. आ. २२२; जरितृ देखिये)।

मंदर--एक दुराचारी ब्राह्मण, जो पिंगला नामक वेश्या पर आसक्त था। आगे चलकर इसने ऋषभ नामक योगी की सेवा की। इस पुण्यकर्म के कारण अगले जन्म में यह भद्रायु नामक राजकुमार हुआ (भद्रायु देखिये)।

मंदाकिनी--पुलस्त्यपुत्र विश्रवस् नामक ऋषि की दो पत्नियों में से एक। भगवान् शंकर के प्रसाद से इसे कुवेर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (पद्म. पा. ६)।

मंदाकिन्य--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मंदार--एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का ज्येष्ठ पुत्र था। भगवान् शंकर ने इसे एक वर प्रदान किया था, जिसके बल से यह एक अर्बुद वर्षों तक इन्द्र से युद्ध करता रहा। युद्ध में यह अजेय था, जिस कारण भगवान् विष्णु का सुदर्शन चक्र, एवं इन्द्र का वज्र इसके शरीर पर टकरा कर तिनके के समान जीर्ण-शीर्ण हो गये (म. अनु. १४.७४-८२)।

२. धौम्य ऋषि का पुत्र, जिसका विवाह मालव देश में रहनेवाले और्व नामक ब्राह्मण की शमिका नामक

कन्या से हुआ था (गणेश. २.३४.१३; और्व ३. देखिये)।

मंदीर--कात्यायन श्रौतसूत्र में निर्दिष्ट एक व्यक्ति, जिसके पशुओं ने गंगा नदी के जल का पान करना अस्वीकार कर दिया था (का. श्रौ. १३.३.२१)।

मंदुलक—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार हाल राजा का पुत्र था।

मंदोदरी—रावण की धर्मपरायण पत्नी, जो मयासुर की कन्या थी। यह हेमा अथवा रम्भा नामक अप्सरा से उत्पन्न हुयी थी (वा. रा. उ. १२.१९, स्कंद. ५.३.३५; ब्रह्मांड. ३.६.२८–३०)।

अध्यात्मरामायण के अनुसार, राम दाशरथि की पत्नी सीता इसकी ही कन्या थी (सीता देखिये)।

२. सिंहलद्वीप के चंद्रसेन राजा की कन्या, जिसकी माता का नाम गुणवती था।

यह विवाहयोग्य होने पर, चंद्रसेन राजा ने इसके विवाह की तैयारी की, एवं इंद्र देश के सुधन्वन् नामक राजा से इसका विवाह निश्चित किया। किन्तु इसने इस विवाह से इन्कार कर दिया, एवं पिता से कहा, 'पुरुष दगाबाज होते है, इसलिये मैं विवाह करना नही चाहती हूँ'। इसके कहने पर चंद्रसेन राजा ने इसका विवाह स्थगित किया।

आगे चलकर मंदोदरी के कनिष्ठ बहन के विवाह की तैयारी हुयी। उस महोत्सव में उपस्थित हुए चारुदेष्ण नामक राजपुत्र पर मोहित हो कर, इसने उसका वरण किया। किन्तु पश्चात् चारुदेष्ण ने इसे धोखा दिया, जिस कारण पुरुषजाति के संबंध में इसकी प्रकट हुयी आशंका सच साबित हुयी।

३. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)।

मन्मथकर—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६७)।

मंधातृ--एक राजा, जिसपर आश्वियों ने कृपा की थी (ऋ. १.११२.१३)।

२. एक ऋषि, जो अंगिरस् ऋषि के समान महान् तपस्वी था (ऋ. ८.४०.१२)।

मंधातृ यौवनाश्व--एक सम्राट, जिसे कबंध आथर्वण के पुत्र विचारिन् ने शिक्षित किया था (गो. ब्रा. १.२. १०)। युवनाश्व का वंशज होने के कारण, इसे यौवनाश्व पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (मांधातृ देखिये)।

मन्यु—एक वैदिक देवता, जिसे क्रोध की मूर्तिमन्त प्रतीक रूप देवता माना जाता है। ऋग्वेद के दो सूक्तों में इस देवता का आवाहन किया गया है (ऋ. १०.८३–८४)।

यह युद्ध में अजेय, एवं अग्नि के भाँति जाज्वल्यमान् देवता है। मरुतों के साथ यह अपने भक्तों को विजय तथा संपत्ति प्रदान करता है। तपस् नामक अन्य देवता के साथ यह अपने भक्तों की रक्षा करता है, एवं उनके शत्रुओं को परास्त करता है।

ब्रह्म में इस देवता के उत्पत्ति की कथा इस प्रकार दी गयी है। एकबार देवदानव युद्ध में देवताओं की हार हो रही थी। उस समय विजयप्रति के लिए उन्होनें गौतमी नदी के तट पर तपस्या की। इस तपस्या से संतुष्ट हो कर, भगवान् शंकर ने देवों को अभयदान दिया, एवं दैत्यों के संहार के लिए अपने तृतीय नेत्र से मन्यु नामक देवता का निमीण किया। आगे चल कर इसने दैत्यों को पराजित किया (ब्रह्म. १६२)।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भरद्वाज का पुत्र था। इसे बृहत्क्षय आदि पाँच पुत्र थे (भा. ९. २१.१)। भविष्य में इसके नाम के लिए 'मन्युमत्' पाठभेद प्राप्त है।

मन्यु तापस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ८३–८४)।

मन्यु वासिष्ठ्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७. १०–१२)।

मन्युमत्—भानु नामक अग्नि का द्वितीय पुत्र (म. व. २११.११)।

ममता—उचथ्य आंगिरस नामक ऋषि की पत्नी एवं दीर्घतमस् मामतेय नाम-ऋषि की माता (ऋ. १.१४७.३; उचथ्य, दीर्घतमस् मामतेय, बृहस्पति आंगिरस एवं भरद्वाज देखिये)।

ऋग्वेद में अन्यत्र प्राप्त भरद्वाज के एक सूक्त में भरद्वाज ऋषि का निर्देश 'ममतेव' नाम से किया गया है (ऋ. ६.५०.१५)। भरद्वाज के द्वारा रचित इस सूक्त में ममता के द्वारा रचित स्तोत्रों का निर्देश किया गया है, जिससे प्रतीत होता है कि, ममता भरद्वाज के लिए अत्यंत आदरणीय व्यक्ति थी।

मय--एक दानव, जो दानवों में सर्वश्रेष्ठ शिल्पी एवं दानव नरेश नमुचि का भाई था (म. आ. २१८.३९)। कश्यप ऋषि को दनु नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्रों में यह एवं नमुचि प्रमुख थे। रामायण में इसे दिति का पुत्र कहा

गया है (वा. रा. उ. १२.३)। किन्तु रामायण का कथन ऐतिहासिक प्रतीत नहीं होता।

पुराणों में नमुचि नाम के दो व्यक्तियों का वर्णन मिलता है। उनमें से एक दानव था, एवं दुसरा तेरह सैंहिकेयों में से एक था। मय दानव नमुचि का भाई था। हिरण्याक्ष एवं हिरण्यकशिपु के समय जो दैत्य तथा दानवों का संग्राम हुआ था, उसमें यह दैत्यों के पक्ष में शामिल था (म. स. ५१.७)।

दक्षिण समुद्र के निकट सह्य, मलय और दर्दुर नामक पर्वतों के आसपास एक विशाल गुफा के भीतर बने हुए भवन में त्रेतायुग में यह निवास करता था। वहाँ प्रभावती नामवाली एक तपस्विनी तपस्या करती थी, जिसने हनुमान् आदि वानरों को नाना प्रकार के भोज्य पदार्थ और भाँति भाँति के पीने योग्य रस दिये थे (म. व. २६६.४०-४३)।

शिल्पशास्त्रज्ञ—दैत्यराज वृषपर्वन् द्वारा किये गये होम के समय इसने एक अति चमत्कृतिपूर्ण सभा का निर्माण किया था। यह सभा कैलास पर्वत के उत्तर में मैनाक नामक पर्वत में स्थित विन्दुसरोवर के पास निर्मित की गयी थी। वृषपर्वन् राजा ने इस सभा में यज्ञ पूरा किया, एवं उसके उपरांत सभा की सारी सामग्री अपने कोषागार में रख दी (म. स. १;३)।

इसके मित्रों में ताराक्ष, कमलाक्ष एवं विद्युन्माली नामक तीन असुर प्रमुख थे। उनके कथनानुसार ही इसने दैत्यों के संरक्षण के लिए त्रिपुर नामक तीन नगरों का निर्माण किया, जो आकाश में बादलों की भाँति घूमा करते थे। उनमें से एक स्वर्ण का, दूसरा चाँदी का तथा तीसरा लोहे का बना था (म. क. २४.१४; लिंग. १७१)।

आगे चल कर दैत्यों को विनाश करने के लिए भगवान् शंकार ने इन त्रिपुरों को जला दिया, एवं सारे दैत्यों का संहार किया। तब मय ने अमृत कुण्ड का निर्माण कर दैत्यों को पुनः जीवित किया। यह देख कर, विष्णु एवं ब्रह्मा ने गो एवं गोवत्स का रूप धारण कर, उस कुण्ड के समस्त अमृत को पी डाला, जिससे सभी असुर पुनः मर गये (भा. ७.१०)।

खांडववन में—कृष्ण एवं अर्जुन ने जब अग्नि को खाण्डववन भक्षण करने को दिया, उस समय मय इसी वन में नागराज तक्षक के घर में निवास करता था। जब वन को अग्नि ने जलाना आरम्भ किया, तब इसे कृष्ण ने तक्षक के घर से भागते देखा। भगते हुए मय को देखकर अग्नि ने मूर्तिमान होकर गर्जन किया, एवं इसे अपनी लपटों में समेटना चाहा। यह देखकर श्रीकृष्ण ने इसे मारने के लिए सुदर्शन उठाया। यह भाग कर तत्काल अर्जुन की शरण में आया, और अर्जुन ने इसे अभयदान देकर अग्नि एवं कृष्ण से बचाया (म. आ. २१९.३९)।

अर्जुन के इस उपकार का बदला चुकाने के लिए मय ने उसकी कुछ सेवा करने की इच्छा प्रकट की, किन्तु अर्जुन ने इसकी सेवा स्वीकार न की। फिर इसने अपने को दानवों का विश्वकर्मा बताते हुए अर्जुन के लिए किसी वस्तु का निर्माण करने की इच्छा प्रकट की (म. स. १.६-९)। पश्चात् श्रीकृष्ण ने इसे युधिष्ठिर के लिए एक दिव्य सभाभवन निर्मान करने को कहा।

मयसभा—कृष्ण के कहने पर इसने वृषपर्वन् के कोषागार से समस्त सामग्री ला कर मयसभा नामक दिव्य सभागृह का निर्माण किया (म. स. १.१२)। युधिष्ठिर ने अपने राजसूय यज्ञ का समारोह इसी मयसभा में आयोजित किया था। उक्त सभा के वैभवविलास को देख कर दुर्योधन ईर्ष्या से पागल हो उठा था। इस सभा की यह विचित्रता थी कि, स्थलभाग जल की भाँति, एवं जल के स्थान स्थल की भाँति प्रतीत होते थे। दुर्योधन इस विचित्र रचना से अनभिज्ञ था, अतएव उसे कई बार भ्रम में पड़ कर भीम की हँसी का कारण बनना पड़ा। इस प्रकार सभा का यह अत्यधिक वैभव दुर्योधन के लिए चिन्ता का कारण बन गया, तथा यहींसे उसके हृदय में ईर्ष्या की भावना दुश्मनी में बदल गयी, जिसने आगे चल कर भारतीय युद्ध को जन्म दिया।

राजसूय यज्ञ के समय इसने भीम को एक गदा एवं अर्जुन को देवदत्त नामक शंख प्रदान किया था। इसमें से गदा को यह वृषपर्वन् से, तथा 'देवदत्त' शंख वरुण से लाया था (म. स. ३.७)। इसी यज्ञ के समय इसने अर्जुन को एक मायामय ध्वज भी दिया था।

इसके ज्येष्ठ बन्धु नमुचि का इन्द्र ने वध किया, जिसके कारण क्रोधित हो कर, देवों को नाश करने के लिए इसने घोर तपस्या प्रारम्भ की, तथा विभिन्न प्रकार की माया-विद्याओं को प्राप्त किया। इससे अत्यधिक भयातुर होकर इन्द्र ने ब्राह्मण वेष धारण कर इससे वर माँगने आया। ब्राह्मणवेषधारी इन्द्र को बिना माँगे ही मय ने कहा, 'तुम जो चाहते हो वह तुम्हे मिलेगा'। यह सुनकर इन्द्र ने कहा कि, वह मैत्री चाहता है। तब इसने उससे कहा, 'मेरी तुमसे कोई शत्रुता नहीं, तब मैत्री माँगने की क्या आवश्यकता? हम तुम दोनों मित्र ही है'। यह

सुनकर इन्द्र अपने असली रूप में प्रकट हुआ, तथा कहा, 'मै तुम्हारे भाई नमुचि का वध करनेवाला इन्द्र हूँ, जो अपनी त्रुटी स्वीकार करते हुए तुमसे मित्रता करना चाहता हूँ'। यह सुन कर मय ने इन्द्र की शत्रुता को भुला कर उससे मित्रता की, एवं दोनों ने एक दूसरे को मायावी विद्याओं का ज्ञान कराया (ब्रह्म. १२४)।

मत्स्य के अनुसार, इसने वास्तुशास्त्र से संबधित एक ग्रन्थ की रचना की थी (मत्स्य. २५२)। इसके नाम पर शिल्प एवं ज्योतिषशास्त्र विषयक कई ग्रन्थ भी प्राप्त हैं (C.C.)।

परिवार—इसे कुल दो पत्नियाँ थी। उनमें से पहली पत्नी का नाम हेमा था, जो इसे देवताओं ने अर्पण की थी। हेमा से इसे मायाविन् एवं दुंदुभि नामक पुत्र एवं मंदोदरी नामक कन्या उत्पन्न हुभी थी (वा. रा. उ. १२ १९)।

ब्रह्मांड के अनुसार, इसकी दूसरी पत्नी का नाम रम्भा था, जिससे इसे निम्नलिखित पुत्र प्राप्त हुए थेः- अजकर्ण, कालिक, दुंदुमि, महिष एवं मायाविन्। उस ग्रंथ में मंदोदरी को रम्भा की कन्या कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६.२८-३०)।

मत्स्य में इसकी मन्दोदरी, कुहू एवं उपदानवी नामक तीन कन्याएँ दी गयी है। किन्तु वे किससे उत्पन्न हुभी यह उपलब्ध नही हैं। उनमें से कुहू धाता की पत्नी थी (भा. ६.१८.३)। भागवत में उपदानवी को वैश्वनर नामक दानव की कन्या कहा गया है (भा. ६.६.३३)।

२. एक असुर, जो त्वष्टा का पुत्र था। इसकी माता का नाम प्रह्लादी-विरोचना था (वायु. ८४.२०)।

ज्ञातिनाम--त्वष्टृ एवं मय ये पहले तो व्यक्तिनाम थे। किन्तु आगे चलकर ये शिल्पियों का ज्ञातिवाचक एवं गुणवाचक नाम बने। ये लोग स्वयं को मय ज्ञाति के, एवं मयवंशीय कहलाने लगे। पश्चात् शिल्पशास्त्र पर जिन ग्रंथों का निर्माण हुआ, उन्हे भी 'मयसंहिता' आदि नाम प्राप्त हुये।

यही कारण है कि, प्राचीन भारतीय इतिहास के विभिन्न कालों में विभिन्न त्वष्टृ एवं मय व्यक्तियों का निर्देश प्राप्त है। इस वंश के मूल पुरुष त्वष्टृ एवं मय, असुर अथवा दानव प्रतीत होते है। क्यों कि, उनका जो वर्णन महाभारत एवं पुराणो में प्राप्त है, वह आर्य लोगों से विभिन्न प्रतीत होता है (प्रभावती १ तथा ५. देखिये)।

मयूर--एक सुविख्यात असुर, जो इस पृथ्वी में विश्व नामक राजा के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.३३)।

मयूरध्वज--रत्ननगर का एक राजा। इसने सात अश्वमेध यज्ञ करने के उपरांत, नर्मदा तट पर अपना अठवाँ अश्वमेध यज्ञ प्रारम्भ किया। इसके अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण का भार इसके पुत्र सुचित्र अथवा ताम्रध्वज पर था, जो अपने बहुलध्वज नामक प्रधान के साथ दिग्विजय के लिए निकला था। लौटते समय सुचित्र को युधिष्ठिर द्वारा किये गये अश्वमेध का अश्व मिला, जो मणिपुर नगर से होता हुआ इसके नगर आया था। सुचित्र ने उसे पकड़ कर कृष्णार्जुन से युद्ध किया, तथा युद्ध में उन्हे मूर्च्छित कर के अश्व के साथ नगर में प्रवेश किया।

उधर मूर्च्छा से सावधान होने के उपरांत, कृष्ण ने ब्राह्मण का तथा अर्जुन ने ब्राह्मणबालक का रूप धारण कर मयूरध्वज की राजधानी रत्नपुर में प्रवेश किया। इसके पास आकर ब्राह्मण वेषधारी कृष्ण ने कहा, 'अपने पुत्र का विवाह कराने के लिए तुम्हारे पुरोहित कृष्णशर्मा के पास धर्मपुर नामक स्थान से हम आ रहे थे कि, आते समय जंगल में मेरे बेटे को एक सिंह ने पकड़ लिया। मैंने तत्काल नृसिंह भगवान् का स्मरण किया, किन्तु वह प्रकट न हुए। फिर मुझे देख कर उस सिंह ने कहा कि, तुम अगर मयूरध्वज राजा का आधा शरीर मुझे लाकर दोगे, तो मै तुम्हारे पुत्र को वैसे ही वापस कर दूँगा।'

ब्राह्मण द्वारा यह माँग की जाने पर, मयूरध्वज राजा बढ़ई के द्वारा अपना शरीर कटवाने के लिए तैयार हो गया। वैसे ही इसकी पत्नी कुमुद्वती ने आकर कहा, 'राजा का वामांग मैं हूँ, इसलिए आप मुझे ले सकते हैं।' ब्राह्मण ने कहा, 'सिंह ने दाहिना अंग लाने के लिए कहा है।

इसका शरीर जब आरे द्वारा काटा जाने लगा, तब इसकी बायीं आँख से पानी टपका। इसे देखकर ब्राह्मण ने तत्काल कहा कि, दुःखपूर्व दिया गया दान मै नहीं चाहता। तब मयूरध्वज ने कहा, 'आँख के अश्रु शारीरिक कष्ट के कारण नहीं निकल रहे, इसका कारण कोई दूसरा है। बाईं आँख इसलिए रोती है कि, काश दाहिने अंग की भाँति वामांग भी सार्थक हो गया होता, तो कितना अच्छा था'।

इतना सुनते ही ब्राह्मणवेषधारी कृष्ण ने अपने साक्षात् दर्शन देकर इसके शरीर को पूर्ववत् किया, एवं दृढ आलिंगन कर आशीष दिया। बाद में अपना यज्ञ

पूर्ण कर, मयूरध्वज राजा कृष्णार्जुन के साथ अश्व के संरक्षण के लिए उनके साथ चला गया (जै. अ. ४१-४६)।

मयूरेश्वर--श्रीगणेश का एक अवतार, जो महाराष्ट्र में स्थित मोरगाँव स्थान में स्थित है।

मयोभुव--अगस्त्य कुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं प्रवर।

मरण--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'मरणाशन' पाठभेद प्राप्त है।

मरीचि--इक्कीस प्रजापतियों में से एक, जो स्वायंभुव मन्वन्तर में ब्रह्माजी के नेत्र से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ३२१.३३)। यह ब्रह्माजी की सभा में रहा कर उनकी उपासना करता था (म. स. ११.१४)।

यह ब्रह्माजी का प्रथम पुत्र था। इसे विष्णु ने खड्ग दिया था, जिसे इसने अन्य महर्षियों को दिया था (म. शां. १६०.६५)।

यह दक्ष का जामाद तथा शंकर का साढू था। इसने शंकर का अपमान किया था, तब शंकर ने इसे भस्म कर डाला। दक्ष की कन्या संभूति इसकी पत्नी थी। इसे संभूति से पूर्णमास नामक पुत्र, तथा कृष्टि, वृष्टि, त्विषा तथा उपचिति नामक कन्याएँ हुई। पूर्णमास को सरस्वती से विरुज, पर्वेश, यजुर्धान आदि पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड २. ११)।

भागवत के अनुसार इसकी दो पत्नियाँ थीं (भा. ३. २४ २२)। उसमें से एक का नाम कर्दमकन्या कला, तथा दूसरी का नाम ऊर्णा था। इसे कला से दो पुत्र हुए, एक कश्यप तथा दूसरा पूर्णिमा। ऊर्णा से इसे स्मर, उद्‌गीथ, परिष्वंग, क्षुद्रभृत तथा घृणी सन्ताने हुयीं (भा. १०.८५; ४७-५१; दे. भा. ४. २२)। अग्निष्वात्त नामक पितर भी इसका पुत्र था।

वैवस्वत मन्वन्तर में ब्रह्मदेव ने इसे अग्नि से पैदा किया था। उस समय इसे कश्यप नामक पुत्र एवं सुरूपा नामक कन्या हुयी थी। यह, इसका पुत्र कश्यप, एवं अवत्सार, असित, नैध्रुव, नित्य तथा देवल ये कश्यप कुलके सात मंत्रद्रष्टा थे (मत्स्य. १४४, कश्यप देखिये)। यह प्रजापति भी था (वायु. ६५.६७)।

इन्द्रप्रस्थ में सात तीर्थों में स्नान करने के कारण, इसे सात पुत्र हुए थे (पद्म. उ. २. २२)।

महाभारत के अनुसार, 'चित्रशिखण्डी' कहे जाने वाले ऋषियों में से यह भी एक था। यह आठ प्रकृतियों में भी गिना जाता है (म. शां.३२२.२७)। यह शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म के पास मिलने गया था, एवं अर्जुन के जन्मोत्सवमें भी उपस्थित था।

२. एक धर्मशास्त्रकार, जिसके मतों के उद्धरण मिताक्षरा, अपरार्क, स्मृतिचन्द्रिका आदि ग्रंथों में प्राप्त हैं। उन ग्रंथों में निम्नलिखित विषयों पर, मरीचि के मतों को उद्धृत किया गया है:-आह्निक, अशौच, श्राद्ध, प्रायश्चित्त एवं व्यवहार।

अपरार्क ने मरीचि के द्वारा लिखित तर्पण के संबंधित एक श्लोक उद्धृत किया है, जिसमें रविवार के दिन तर्पण करने का माहात्म्य बताया गया है (अपरार्क. १३२; २३५; स्मृतिचं. आन्हिक. पृ. १२३)।

मरीचि ने विधान प्रस्तुत करते हुए कहा है कि, श्रावण भाद्रपद में नदी में स्नान न करना चाहिए (अपरार्क. पृ. २३५)। अपरार्क ने अशौच के सम्बन्ध में मरीचि का एक उद्धरण दिया है, जो गद्य में है (अपरार्क. ९०८)

व्यवहारशास्त्र--मरीचि अचल संपत्ति के बारे में अपना मत देते हुए कहता है, 'अचल सम्पत्ति यदि दूसरे के हाथ वेचना है, खरीदना है, दान में देना है अथवा उसका बटवाँरा करना है, तो यह आवश्यक है कि, किये गए सारे वैधानिक कार्य मौखिक न होकर लिखित होने चाहिए। तभी वे नियमानुकूल है, अन्यथा नही (परा. मा. ३. १२८; स्मृति. चं. ६०)। अगर किसी व्यक्ति ने अधिकारियों की सम्मति से किसी व्यापारी की कोई सम्पत्ति खरीदी, तथा बाद को पता चला कि, व्यापारी द्वारा वेंची गयी संपत्ति किसी अन्य की थी, तब उसे उस व्यापारी से उसका पैसा कानून से वापस मिल जायेगा। अगर वह व्यापारी रुपये ले कर लापता हो गया है, तब संपत्ति के खरीददार एवं असली मालीक के बीच में ले दे कर समझौता कर देना चाहिए.' (अपरार्क. ७७५)।

मरीचि के द्वारा मानसिक व्याधियों (आधि) के चार प्रकार बताये हैं—भोग्य, गोप्य, प्रत्यय, एवं अज्ञात।

३. एक ज्योतिषशास्त्रज्ञ, जिसका निर्देश नारदसंहिता में प्राप्त है।

४. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वृषभदेव के वंश में उत्पन्न सम्राज नामक राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम उत्कला था। इसके पत्नी का नाम बिन्दुमती था, जिससे इसे बिन्दुमत् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

५. एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित थी (म. आ. ११४.४२)।

६. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

मरीचिगर्भ—दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक देव।

मरीचिप—एक ऋषियों का संघ (म. अनु. १४.५७)। 'मरीचिप' का शाब्दिक अर्थ 'सूर्यकिरणों पर जीवित रहनेवाला' होता है। वालखिल्य ऋषियों को भी 'मरीचिप' कहा गया है।

मरु—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो शीघ्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रसुश्रुत था।

इस राजा ने योगसिद्धि के द्वारा चिरजीवन की प्राप्ति की थी। भागवत के अनुसार, कलियुग में समस्त क्षत्रिय वंशों का विनाश होनेवाला है, जिस समय पौरव एवं देवापि के साथ यह क्षत्रिय वंश का पुनरुज्जीवन करनेवाले है (भा. ९.१२.६; १२.२.३७)। उस समय, उन्नीसवें युग-पर्याय के प्रारंभ में मरु राजा को सुवर्चस् नामक पुत्र उत्पन्न होनेवाला है (ब्रह्मांड. ३.७४. २७१; सुवर्चस् देखिये)।

२. (सू. निमि.) विदेह देश का एक निमिवंशीय राजा, जो हर्यश्व जनक नामक राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रतींधक था (भा. ९.१३.१५)।

३. एक दैत्य, जो नरकासुर का प्रमुख सहाय्यक था। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (नरकासुर देखिये)।

४. मुर नामक दैत्य के लिए उपलब्ध पाठभेद (मुर देखिये)।

मरुक—महाभारत में निर्दिष्ट एक लोकसमूह (म. स. ४८.४७५* पंक्ति २)।

मरुत्—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक सुविख्यात देवता-गण, जो पं. सातवलेकरजी के अनुसार, वैदिक सैनिक संघटन एवं सैनिक संचलन का प्रतीक था। ऋग्वेद के तैतीस सूक्त इन्हे समर्पित किये गये हैं। अन्य सात सूक्त इन्द्र के साथ, एवं एक एक सूक्त अग्नि तथा पूषन् के साथ इन्हें समर्पित किया गया है।

ये लोग देवों का एक समूह अथवा 'गण' अथवा 'शर्धस्' हैं, जिनका निर्देश बहुवचन में ही प्राप्त है (ऋ. १.३७)। इनकी संख्या साठ की तीन गुनी अर्थात् एक सौ अस्सी, अथवा सात की तीन गुनी अर्थात् एक्कीस है (ऋ. ८.८५; ऋ. १.१३३; अ. वे. १३.१)। ऋग्वेद में इन्हें कई स्थानों पर सात व्यक्तियों का समूह कहा गया है (ऋ. ५.६२.१७)।

जन्म—ऋग्वेद में इनके जन्म की कथा दी गयी है, जहाँ इन्हे रुद्र का पुत्र कहा गया है (ऋ. ५.५७)। वेदार्थ-दीपिका में इन्हें रुद्रपुत्र नाम क्यों प्राप्त हुआ इसकी दो कथायें प्राप्त हैं। इनके जन्म होने पर इनके सैकडो खण्ड हो गये, जिन्हे रुद्र ने जोड़ कर जीवित किया। इसी प्रकार यह भी कहा गया है कि, रुद्र ने वृषभरूप धारण कर पृथ्वी से इन्हें उत्पन्न किया (वेदार्थदीपिका. २.३३)।

इनकी माता का नाम पृश्नि था (ऋ. २.३४; ५.५२)। रुद्र का पुत्र होने के कारण, इन्हें 'रुद्रियगण' एवं 'पृश्नि का पुत्र होने के कारण इन्हे 'पृश्निमातरः' कहा गया हैं (ऋ. १.३८.२३;)। सम्भव है, पृश्नि का प्रयोग गाय के रूप मे हुआ हो, क्योंकि, अन्यत्र इन्हें 'गोमातरः' कहा गया हैं (ऋ. १.८५)।

ऋग्वेद में अन्यत्र कहा गया है कि, अग्नि ने इन्हें उत्पन्न किया (ऋ. ७.३); वायु ने इन्हे आकाश के गर्भ में अवस्थित किया (ऋ. १.१३४)। इस प्रकार ये आकाश में उत्पन्न हुए, जिस कारण इन्हें 'आकाशपुत्र' (ऋ. १०.७७), 'आकाश के वीर' (ऋ. १.६४.१२२) कहा गया है। अन्य स्थान पर इन्हें समुद्र का पुत्र भी कहा गया है, जिस कारण इन्हें 'सिन्धुमातरः' उपाधि दी गयी है (ऋ. १०.७८)। अन्यत्र इन्हे 'स्वोद्‌भूत' कहा गया है (ऋ. १.१६८)।

इनमें से सभी मरुत्‌गण एक दूसरे के भ्राता हैं, न उनमें कोई बड़ा है, तथा न कोई छोटा है (ऋ. ५.५९; १.१६५)। इन सबका जन्मस्थान एवं आवास एक है (ऋ. ५.५३)। इन्हे पृथ्वी पर वायु में एवं आकाश में रहनेवाले कहा गया है (ऋ. ५.६०)।

पत्नी—इनका सर्वाधिक सम्बन्ध देवी 'रोदसी' से है, जो सम्भवतः इनकी पत्नी थी। देवी रोदसी को इनके साथ सदैव रथ पर खड़ी होनेवाली कहा गया है (ऋ. ५.५६)। इनका स्वरूप सूर्य के समान प्रदीप्त, अग्नि के समान प्रज्वलित एवं अरुणआभायुक्त है (ऋ. ६.६६) इन्हे अक्सर विद्युत् से सम्बन्धित किया गया है। ऋग्वेद में प्राप्त विद्युत् के सभी निर्देश इनके साथ प्राप्त हैं।

वस्त्र एवं अलंकार—मरुत्‌गण मालाओं एवं अलंकारों से सुसज्जित कहे गये हैं (ऋ. ५.५३)। ये स्वर्णिम प्रावारवस्त्र धारण करते हैं (ऋ. ५.५५)। इनके शरीर स्वर्ण के अलंकारों से सजे हैं, जिनमें बाजूबन्द तथा 'खादि' प्रमुख हैं (ऋ. ५.६०)। इनके कन्धों पर तोमर, पैरों में 'खादि', वक्ष पर स्वर्णिम अलंकार, हाथों

में अग्निमय विद्युत्, तथा सर पर स्वर्ण शिरस्त्राण बतलाया गया है (ऋ. ५.५४)। इनके हाथ में धनुषबाण तथा भाले रहते हैं। वज्र तथा एक सोने की कुल्हाडी से भी ये युक्त हैं (ऋ. ५.५२.१३; ८.८.३२)।

रथ--इनके स्वर्णिम रथ विद्युत् के समान प्रतीत होते हैं, जिनके चक्रधार एवं पहिये स्वर्ण के बने हैं (ऋ. १. ६४.८८)। जो जवाश्व इनके रथों को खींचते हैं, वे चितकबरे हैं (ऋ. ५.५३.१)। सभी प्राणी इनसे भयभीत रहते हैं। इनके चलने से आकाश भय से गर्जन करने लगता है। इनके रथों से पृथ्वी तथा चट्टाने विदीर्ण हो जाती है (ऋ. १. ६४; ५.५२)। इस लिएं इन्हें प्रचण्ड वायु के समान वेगवान् कहा गया है (ऋ. १०.७८)।

कार्य—मरुतों का प्रमुख कार्य वर्षा कराना है। ये समुद्र से उठते हैं, एवं वर्षा करते हैं (ऋ. १.३८)। ये जल लाते हैं, एवं वर्षा को प्रेरित करते हैं (ऋ. ५.५८)। जब ये वर्षा करते हैं, तब मेघों से अंधकार उत्पन्न कर देते हैं (ऋ. १.३८)। ये आकाशीय पात्र एवं पर्वतों से जलधारायें गिराते हैं, जिस कारण पृथ्वी की एक नदी को 'मरुद्वृद्धा' (मरुतों द्वारा वृद्धि की हुयीं) कहा गया है (ऋ. १०.७५)।

गायन—वायु के द्वारा निसृत ध्वनि ही मरुतों का गायन है, जिसके कारण इन्हें कई स्थानों पर गायक कहा गया है (ऋ. ५.५२.६०; ७.३५)। झंझावात के साथ समीकृत करके इन्हे स्वभावतः कई स्थानों पर इन्द्र की साथी एवं मित्र कहा गया है। ये लोग अपनी स्तुतियों तथा गीतों से इन्द्र की शक्ति एवं सामर्थ्य को बढ़ाते है (ऋ. १.१६५)। ये लोग इन्द्र के पुत्रों के समान है, जिन्हें इन्द्र का भ्राता भी कहा गया है (ऋ. १.१००; १.१७०)।

झंझावात की देवता—विद्युत्, आकाशीय गर्जन, वायु एवं वर्षा के साथ इनका जो विवरण प्राप्त है, इससे स्पष्ट है कि मरुत्गण झंझावात का देवता है। वैदिकोत्तर ग्रन्थों में इन्हें 'वायु' मात्र कहा गया है। किन्तु वैदिक साहित्य में ये कदाचित् ही वायुओं का प्रतिनिधित्व करते हैं, क्योंकि इनके गुण मेघों एवं विद्युत् से ग्रहीत हैं।

व्युत्पत्ति—मरुत् शब्द की व्युत्पत्ति पर विचार करने से पता चलता है कि मरुत् 'मर' धातु से निसृत हैं, जिसके अर्थ 'मरना,' 'कुचलना' अथवा 'प्रकाशित होता' तथा 'शब्द' होते हैं। इसमें से 'प्रकाशित' तथा 'शब्द' मरुत् के व्यक्तित्व एवं वर्णन से मेल खाते हैं एवं इसके अन्य अर्थ लेना अनुचित सा प्रतीत होता हैं। वेदार्थदीपिका में इनके नाम की व्युत्पक्ति कुछ अलग ढंग से जरूर दी गयी है। उसमें कहा गया है कि, जन्म लेते ही इन्हें ज्ञात हुआ कि इन्हे मृत्युयोग है, जिस कारण ये रोने लगे। इन्हें रोता देखकर इनके पिता रुद्र ने इन्हें 'मा रोदीः' (रुदन मत करो) कहा। इस कारण इन्हें मरुत् नाम प्राप्त हुआ (वेदार्थदीपिका २.३३)।

ऋग्वेद में इन्हें सम्बोधित करके लिखे गये सूक्त में एक संवाद प्राप्त है, जिसमें इन्हें कुशल तत्त्वज्ञानी कहा गया है, जो तत्त्वज्ञान के सम्बन्ध में अगस्त्य एवं इन्द्र से विचार-विमर्श करते हैं (ऋ. १.१६५)।

दिति के पुत्र--महाभारत तथा पुराणों में इन्हें दिति एवं कश्यप के पुत्र कहा गया है, एवं इनकी कुल संख्या उन्चास बतायी गयी है। वहाँ इनकी जन्मकथा निम्न प्रकार से दी गयी है--दिति के कश्यप ऋषि से सारे उत्पन्न पुत्र विष्णु द्वारा मारें गये। तत्पश्चात् दिति ने कश्यप से वर माँगा, 'इन्द्र को मारनेवाला एक अमर पुत्र मुझे प्राप्त हो'। दिति द्वारा माँगा हुआ वरदान कश्यप ने प्रदान किया, एवं उसे गर्भकाल में व्रतावस्थां में रहने के लिए कहा।

कश्यप के कथनानुसार, दिति व्रतानुष्ठान करते हुए रहने लगी। इन्द्र को जब यह पता चला कि, दिति अपने गर्भ में उसका शत्रु उत्पन्न कर रही है, तब वह तत्काल उसके पास आकर उस पुत्र को समाप्त करने के इरादे से साधुवेष में रहने लगा। एकबार दिति से अपने व्रत में कुछ गल्ती हुयी कि, इंद्रने योगबल से उसके गर्भ में प्रवेश कर उसके गर्भ के सात टुकड़े कर दिये। किन्तु जब वे न मरे तब उसने उन सातों टुकडो के पुनः सात टुकडे कर के उन्हें उन्पचास भागों में काट डाला। इसके द्वारा काटे गये टुकडे रोने लगे, तब इन्द्र ने 'मा रोदीः' कहकर उन्हें शान्त किया, जिसके कारण इन्हे मरुत् नाम प्राप्त हुआ।

इन्हे टुकड़े टुकड़े कर दिया गया, एवं फिर भी जब ये न मरे, तब इन्द्र समझ गया कि ये अवश्य देवता के अंश हैं। गर्भ के अंशों ने भी इंद्र स्तुति की कि, उन्हे मारा न जाये। तब इन्द्र ने कहा, 'आज से तुम सब हमारे भाई हो, तथा तुम सब को हम स्वर्ग ले जायेंगे।'

कालान्तर में दिति के उन्पचास पुत्र हुए, जिन्हे देखकर वह आश्चर्यचकित हो गयी एवं साधुवेषधारी इन्द्र से उसका कारण पूछने लगी। तब इन्द्र ने एक के स्थान पर कई पुत्र होने के रहस्य का उद्घाटन करते हुए सारी कथा बता कर कहा, 'ये सारे पुत्र तुम्हारे तपःसामर्थ्य पर ही

जीवित बचे हैं, जिन्हे में स्वर्ग में ले जाकर यज्ञ के हविर्भाग का अधिकारी बनाकर भाई की भाँति रक्खुँगा (म. आ. १३२. ५३; शां. २०७.२; भा. ६.१८; मत्स्य. ७. १४६)।

इंद्र-दिति संवाद--रामायण में यही कथा कुछ अलग ढ़ंग से दी गयी है। दिति की गर्भावस्था में साधुवेषधारी इंद्र उसकी सेवा में रहा। इन्द्र की सेवा से संतुष्ट रहकर दिति ने उससे कहा, 'जिस गर्भ को तुम्हें मारने के लिए पाल रही हूँ वह तुम्हें न मारकर सदैव तुम्हारी सहायता करे यही मेरी इच्छा है'। किन्तु इन्द्र को सन्तोष न हुआ, एवं उसने दिति के गर्भ में प्रवेश कर के गर्भ को नाश करने के लिए उसके सात टुकड़े किये। इस पापकर्म करने के उपरांत इन्द्र बाहर आया, एवं सारी कथा बता कर दिति से क्षमा माँगने लगा। फिर दिति ने उससे कहा, 'तुम्हें मारने की तामसी इच्छा मैने की, अतः यह सर्वप्रथम मेरी ही गल्ती है। अब मेरी यही इच्छा है कि, तुम्हारे द्वारा किये गये गर्भ के वे सात टुकड़े वायु के सप्तप्रवाह में प्रविष्ट होकर देवस्थान प्राप्त करें। इन्द्र ने दिति को वर प्रदान किया, जिस कारण मरुत्गणों के साथ दिति ने स्वर्ग प्राप्त किया (वा रा. बा. ४७)।

इन्द्र ने दिति के साथ इतना पापकर्म किया, फिर भी वह सत्य से अलग न रहा, एवं दिति से सदैव सत्य भाषण ही किया। इसपर सन्तुष्ट होकर दिति ने इन्द्र को वर दिया 'मेरे होनेवाले पुत्र हमेशा तुम्हारे मित्र एवं सहयोगी रहेंगे (स्कन्द ६. २४; विष्णु १.२१; ३.४०; पद्म सृ. ७; मू. २६)।

सात मरुद्गण--ब्रह्मांड में मरुतों के सात गणों की नामावली प्राप्त है, जिनमें से हरेक गण में प्रत्येकी सात मरुत् अंतर्भूत हैं। ब्रह्मांड में प्राप्त मरुद्गणों की नामावली इस प्रकार है:—

प्रथम गण--१. चित्रज्योतिस्, २. चैत्य, ३. ज्योतिष्मत्, ४. शक्रज्योति, ५. सत्य, ६. सत्यज्योतिस्, ७. सुतपस्।

द्वितीय गण--१. अमित्र, २. ऋतजित, ३. सत्यजित, ४. सुतमित्र, ५. सुरमित्र, ६. सुषेण, ७. सेनजित्।

तृतीय गण--१. उग्र, २. धनद, ३. धातु, ४. भीम, ५. वरुण

चतुर्थ गण--१. अभियुक्ताक्षिक, २. साहूय

पंचम गण--१. अन्यदृश, २. ईदृशु, ३. द्रुम, ४. मित, ५. वृक्ष, ६. समित् ७. सरित्।

षष्ठ गण--१. ईदृक्ष, २. नान्यादृश् ३. पुरुष, ४. प्रतिहर्तृ, ५. समचेतन, ६. समवृत्ति, ७. संमित।

सप्तम गण--इस गणों के मरुतों का नाम अप्राप्य है। किन्तु ब्रह्मांड के अनुसार, देव दैत्य एवं मनुष्ययोनियों से मिलकर इस गण के मरुत् बने हुए थे।

उपरनिर्दिष्ट मरुद्गणों में से प्रत्येक गण में वास्तव में सात सात मरुत होने चाहिये, किन्तु कई मरुतों के नाम अप्राप्य होने के कारण, यह नामावली अपूर्ण सी प्रतीत होती है। महाभारत में मंकणकपुत्रों को मरुद्गण के उत्पादक कहा गया है (म. श. ३७.३२)।

मरुद्गणों के स्थान—उपर्युक्त मरुद्गणों के निवास के बारे में विस्तृत जानकारी ब्रह्मांड एवं वायु में प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है :—

अनुक्रम	निवासस्थान	भ्रमण कक्षा
प्रथम गण	पृथ्वी	पृथ्वी से मेघ तक
द्वितीय गण	सूर्य	सूर्य से मेघ तक
तृतीय गण	सोम	सोम से सूर्य तक
चतुर्थ गण	ज्योतिर्गण	ज्योतिर्गणों से सोम तक
पंचम गण	ग्रह	ग्रहोंसे नक्षत्रों तक
षष्ठ गण	सप्तर्षि मंडल	सप्तर्षि मंडल से ग्रहों तक
सप्तम गण	ध्रुव	ध्रुव से साप्तर्षियों तक (ब्रह्मांड. ३.५.७९-८८; वायु. ६७.८८-१३५)।

२. एक पौराणिक मानवजातिसंघ, जो वैशालि नगरी के उत्तरीपूर्व प्रदेश में स्थित पर्वतों में निवास करता था। ये लोग प्रायः पर्वतीय प्रदेश में निवास करते थे, एवं अन्य मानवजातियों से इनका विवाहसंबंध भी होता था।

सम्भव है, राम दाशरथि का परम भक्त हनुमान इस मरुत् जाति में उत्पन्न हुआ था। इस जाति का और एक सुविख्यात सम्राट मरुत्त आविक्षित था, जो इक्ष्वाकुवंशीय दिष्ट कुल का राजा था। मरुत्त आविक्षित भी वैशालि देश काही राजा था। वैदिक पूजाविधि में अंतर्गत 'मंत्रपुष्प' के मंत्रों से प्रतीत होता है कि, मरुत्त आविक्षित राजा के यज्ञों में मरुत् लोगों ने 'परिवेष्टृ' का काम किया था।

इन जाति के लोग पहले तो मानव थे, किन्तु कालोपरान्त इन्हे देवत्व प्राप्त हुआ। यही कारण है कि, पहले

इन्हे यज्ञ का हविर्भाग नही मिलता था, जो कालोपरान्त इन्हे मिलने लगा।

मरुत—एक महर्षि, जिसने शान्तिदूत बनकर हस्तिनापुर जानेवाले श्रीकृष्ण की परिक्रमा की थीं (म. उ.८१.२७)।

मरुत्त—(सू. दिष्ट.) वैशालि देश का सुविख्यात सम्राट, जो अविक्षित राजा का पुत्र था (मरुत्त आविक्षित कामप्रि देखिये)।

२. (सो. तुर्वसु.) एक तुर्वसुवंशीय राजा, जो करंधम राजा का पुत्र था। यह निःसंतान होने के कारण, इसने रैभ्यपुत्र दुष्यन्त को अपना पुत्र मान लिया था (भा. ९. २३.१७)। दुष्यन्त स्वयं पूरुवंशीय था। उसे मरुत्त के द्वारा गोद में लिये जाने के कारण, आगे चलकर, तुर्वसु वंश का स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट हुआ, एवं वह पूरुवंश में शामिल हुआ। मत्स्य के अनुसार, इसे 'भरत' नामान्तर भी प्राप्त था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार तितिक्षु राजा का, एवं वायु के अनुसार उशनस् राजा का पुत्र था।

मरुत्त आविक्षित कामप्रि—(सू. दिष्ट.) वैशालि देश का एक सुविख्यात सम्राट, जो अविक्षित राजा का पुत्र, एवं करन्धम राजा का पौत्र था। महाभारत में इसे चक्रवर्ति एवं पाँच श्रेष्ठ सम्राटों में से एक कहा गया है। इसकी माता का नाम भामिनी था (मार्क. १२७.१०)।

ऐतरेय ब्राह्मण में इसे कामप्र का वंशज, एवं बृहस्पति आंगिरस का भाई बताया गया है। संवर्त के द्वारा इसके राज्याभिषेक किये जाने की कथा भी वहाँ दी गयी है (ऐ. ब्रा. ८.२१.१२; मार्क. १२६.११-१२)। शतपथ ब्राह्मण में इसे 'अयोगव' जाति में उत्पन्न कहा गया है (श. ब्रा. १३.५.४.६)।

इंद्र-मरुत्त विरोध—बृहस्पति आंगिरस ऋषि इसका पुरोहित था, एवं संवर्त आंगिरस इसका ऋत्विज था। बृहस्पति एवं संवर्त दोनों भाई तो अवश्य थे, किन्तु दोनों में बड़ा वैमनस्य था।

सम्राट मरुत्त एवं इन्द्र में सदैव युद्ध चलता ही रहता था, किन्तु इन्द्र इसे कभी भी पराजित न कर पाया। अन्त में इन्द्र को एक तरकीब सूझी, जिसके द्वारा मरुत्त को तंग करके उसे नीचा दिखाया जा सके। इन्द्र बृहस्पति के यहाँ गया, एवं बातों ही बातों में उसे राजी कर लिया कि, वह भविष्य में मरुत्त के यज्ञकार्य में पुरोहित का कार्य न करेगा।

कालान्तर में मरुत्त ने यज्ञ करना चाहा, तथा उसके लिए बृहस्पति के पास जाकर इसने उनसे प्रार्थना की कि, वह पुरोहित का पद सँभालें। किन्तु इन्द्र के द्वारा दिये गये मंत्र के अनुसार, बृहस्पति ने इसे कोरा जवाब दे दिया। बृहस्पति से निराश होकर यह वापस लौट रहा था कि, इसे रास्ते में नारद मिला, जिसने इससे कहा, 'इसमें घबराने की बात क्या है? बृहस्पति न सही, उसके भाई संवर्त को वाराणसी से लाकर अपना यज्ञकार्य पूर्ण कर सकते हो'। मरुत्त को यह बात जँच गयी, तथा यह वाराणसी जाकर संवर्त को बड़े आग्रह के साथ यज्ञ में ऋत्विज बनाने के लिए ले आया।

जब इन्द्र ने देखा कि बिना बृहस्पति के भी मरुत्त का यज्ञ आरम्भ हो रहा है, तथा संवर्त उसका ऋत्विज बनाया गया है, तब उसने इस यज्ञ में विभिन्न प्रकार से कई बाधाएँ डालने का प्रयत्न किया। इन्द्र ने पहले अग्नि के साथ मरुत्त के पास यह संदेश भेजा कि, बृहस्पति यज्ञकार्य करने के लिए तैयार है, अतएव संवर्त की कोई आवश्यकता नहीं है। अग्नि मरुत्त के पास आया, किन्तु वह संवर्त को वहाँ देखकर इतना डर गया कि, कहीं वह उसे शाप न दे दे। इसलिए वह मरुत्त से इन्द्र के संदेश को कहे बिना ही वापस लौट आया।

इसके बाद इंद्र ने धृतराष्ट्र नामक गंधर्व से मरुत्त को संदेश भेजा, 'यदि तुम यज्ञ करोगे, तो मैं तुम्हे वज्र से मार डालूँगा'। किन्तु संवर्त के द्वारा आश्वासन दिलाये जाने पर, मरुत्त अपने निश्चय पर कायम रहा। यज्ञ का प्रारंभ करते ही, इसे इन्द्र के वज्र का शब्द सुनायी पड़ा। यह वज्रशब्द को सुन कर भयभीत हो उठा, परन्तु संवर्त ने इसे धैर्य बँधाया।

मरुत्त का यज्ञ—इस प्रकार संवर्त की सहायता से मरुत्त ने अपना यज्ञ यमुना नदी के तट पर 'प्लक्षावरण तीर्थ' में प्रारंभ किया (म. व. १२९.१६)। वाल्मीकि रामायण के अनुसार, यह यज्ञ 'उशीरबीज' नामक देश में हुआ था (वा. रा. उ. १८)।

मरुत्त की इच्छा थी कि, इन्द्र, बृहस्पति एवं समस्त देवता इस यज्ञ में भाग ले कर हवन किये गये सोम को स्वीकार करें एवं उसे सफल बनायें। अतएव अपने मंत्रप्रभाव से संवर्त इन सभी देवताओं को बाँध कर यज्ञस्थान पर ले आया। मरुत्त ने सभी देवताओं का सन्मान किया, एवं उनकी विधिवत् पूजा की।

उस यज्ञ में भगवान शंकर ने प्रचुर धनराशि के रूप में इसे हिमालय का एक स्वर्णमय शिखर प्रदान किया था। प्रतिदिन यज्ञकार्य के अन्त में, इसकी यज्ञसभा में इन्द्र आदि देवता, तथा बृहस्पति आदि प्रजापतिगण सभासद के रुप में बैठा करते थे। इसके यज्ञमण्डप की सारी सामग्रियाँ सोने की बनी हुयी थी। इसके घर में मरुद्गण रसोई परोसने का कार्य किया करते थे। विश्वेदेव इसकी यज्ञसभा के सभासद थे। इसने यज्ञवेदी पर बैठ कर, मंत्रपुरस्सर हविर्द्रव्य का हवन कर, देवताओं, ऋषियों, तथा पितरों को संतुष्ट किया था। ब्राह्मणों को शय्या, आसन, सवारी, तथा स्वर्णराशि प्रदान की थी। इस प्रकार इसके व्यवहार से इन्द्र बड़ा प्रसन्न हुआ, एवं दोंनों में मित्रता स्थापित हो गयी। बाद को मरुत्गणो द्वारा यथेष्ट सोमपान कर के सभी लोग यज्ञ से संतुष्ट होकर वापस लौटे।

रावण से विरोध--बाद में मरुत्त के इस यज्ञ में विघ्न डालने के हेतु से रावण आया। रावण को देख कर यह उससे युद्ध करने के लिए तत्पर हुआ। किन्तु इसने यज्ञ-दीक्षा ली थी, अतएव यज्ञ से उठना इसके लिए असम्भव था। रावण ने इसके यज्ञ के वैभव को देखा, तथा बिना किसी प्रकार की हानि पहुँचाये वापस लौट गया (वा. रा. उ. ८)।

राज्यवैभव—यज्ञ के उपरांत यह अपनी राजधानी वापस आया, एवं समुद्र से घिरी हुयी पृथ्वी पर राज्य करना प्रारम्भ किया। इस प्रकार प्रजा, मन्त्री, धर्मपत्नी, पुत्र तथा भाइयों के साथ, इसने एक हज़ार वर्षों तक राज्य किया था।

मार्कंडेय के अनुसार, एक बार यह पृथ्वी के समस्त सर्पों का विनाश करने को उद्यत हुआ था, किन्तु अपनी माता मामिनी के द्वारा अनुरोध करने पर, इसने सर्पों के मारने का इरादा छोड़ दिया (मार्कं. १२६.३-१५; १२७.१०)।

महाभारत में—महाभारत के अनुसार, यह पराक्रमी एवं धर्मनिष्ठ राजा था, जिसने सौ यज्ञ किये थे (म. द्रो. परि. १. क्र. ८ पंक्ति ३३६-३५०; शां. २९.१६-२१; आश्व. ४. १०; भा. ९. २)। महाराज मुचुकन्द से इसे एक खड्ग प्राप्त हुआ था, जिसे इसने रैवत राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७६)।

परिवार—मरुत्त की निम्नलिखित कुल सात पत्नियाँ थीः—१. विदर्भकन्या प्रभावती; २. सुवीरकन्या सौवीरी; ३. मगधनरेश केतुवीर्य की कन्या सुकेशी; ४. मद्रराज सिंधुवीर्य की कन्या केकयी; ५. केकयनरेश की कन्या सैरंध्री; ६. सिन्धुराज की कन्या वपुष्मती; ७. चेदिराज की कन्या सुशोभना।

मरुत्त को इन पत्नीयों से कुल अठारह पुत्र हुए, जिनमें से नरिष्यंत ज्येष्ठ था (मार्कं. १२८.४५-४८)। महाभारत के अनुसार, इसे दम नामक एकलौता पुत्र, एवं एक कन्या थी। इसकी मृत्यु के उपरांत दम इसके राज्य का अधिकारी हुआ। इसकी कन्या का विवाह अंगिरस् ऋषि से हुआ था (म. शां. २२६.२८; अनु. १३७.१६)।

मरुत्वत्—प्राचेतस दक्ष की कन्या मरुत्वती का ज्येष्ठ पुत्र।

मरुत्वती—प्राचेतस दक्ष की एक कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। इसे मरुत्वत् एवं जयन्त नामक दो पुत्र थे (भा. ६.६.४-८; पद्म. सृ. ४०)।

मरुदेव—(सू. इ. भविष्य.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भविष्य के अनुसार सुप्रतीक राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार सुप्रतीप का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुनक्षत्र था।

मरुद्गण—देवताओं का एक गण (म. श. ४४.६)।

२. एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति का पुत्र था (भवि. प्रति. ४.१७)।

मर्क—असुरों के सुविख्यात पुरोहितद्वय शंडामर्क (शंड एवं मर्क) में से एक (शंडामर्क देखिये)। कई ग्रंथों में मर्क का स्वतंत्र निर्देश भी प्राप्त है (वा. सं. ७.१३;१७)। हिलेब्रान्ट के अनुसार, शंड एवं मर्क दोनों ही ईरानी नाम हैं, एवं ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट 'गृध्र' नाम मर्क का ही प्रतिरूप है (वेदिशे माइथौलोजी. ३.४४२)।

मर्कटय--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'कटक' पाठभेद प्राप्त है।

मर्यादा--एक विदर्भराजकुमारी, जो पुरुवंशीय राजा अपराचिन की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम अरिह था (म. आ. ९०.१८)।

२. विदेहराज की कन्या, जो पूरुवंशीय राजा देवातिथि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम ऋच था।

मलद-- पूर्व भारत में रहनेवाला एक लोकसमूह, जिसे भीमसेन नें जीता था (म. स. २७.८)। भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवपक्ष में शामिल थे (म. द्रो. ६.६)।

मलदा—अत्रि ऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८.७४-८७)।

मलय--एक राजा, जो प्रियव्रतवंशीय ऋषभदेव राजा का पुत्र था। वृषभदेव ने अपने अजनाभवर्ष के राज्य के नौ विभाग कर, उनमें से एक भाग इसे प्रदान किया था (भा. ५.४.१०; ऋषभदेव १०. देखिये)।

२. गरुड का एक पुत्र (म. स. ९९.१४)। इसके नाम के लिए 'मालय' पाठभेद प्राप्त है।

मलयध्वज—मणलूर नगरी के चित्रवाहन नामक पाण्ड्य राजा का नामान्तर (चित्रवाहन देखिये)।

२. एक पाण्ड्य राजा, जिसे वैदर्भी नामक पत्नी से कृष्णेक्षणा (लोपामुद्रा) नामक कन्या उत्पन्न हुयी थी (भा. ४.२८.३० लोपामुद्रा देखिये)।

मलिन--एक पुरुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार वसु राजा का पुत्र था। इसे 'इलिल' नामान्तर भी प्राप्त था (इलिल देखिये)।

मल्ल–राम दाशरथि राजा के सुज्ञ नामक मंत्रि का पुत्र।

२. धर्म के सात पुत्रों में से एक। 'मल्लारि माहात्म्य' के अनुसार, मार्तंड नामक भैरव ने इसका वध किया।

३. मल्ल देश में रहनेवाले लोगों के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम। महाभारतकाल में, इन लोगों के राजा का नाम पार्थिव था, जिसे भीमसेन ने परास्त किया था (म. स. २७.३)। इन लोगों में गणतंत्रपद्धति का राज्य था, एवं इनकी राजधानी कुशीनगर (कुशीनारा) नगर में थी।

मल्लिकार्जुन (ज्योतिर्लिंग)—एक शिवावतार, जो श्रीशैल पर निवास करता था। इसके एक भक्त ने अपने पुत्र के दर्शन के लिए इसकी प्रार्थना की थी, जिसकी पूर्तता करने के लिए यह स्वर्गिरि पर निवास करने के लिए गया (शिव. शत. ४२)। इसके उपलिंग का नाम 'रुद्रेश्वर' था (शिव. कोटि. १)।

मशक गार्ग्य—एक आचार्य, जो स्थिरक गार्ग्य नामक ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। सामवेदान्तर्गत 'मशक कल्पसूत्र' अथवा 'आर्षेय कल्पसूत्र' नामक ग्रंथ का यह रचयिता था (ला. श्रौ. ७.९.१४; अनुपदसूत्र. ९९)। इसके शिष्य का नाम अतिधन्वन् था (वं. ब्रा. २)।

मशर्शार--ऋग्वेद में निर्दिष्ट नहुष लोगों का एक राजा (ऋ. २.१२२.१५)। इसे कुल चार पुत्र थे, जिन्होंने दीर्घतमस् पुत्र कक्षीवत् को काफ़ी त्रस्त किया था।

मषपाल--एक राजा, जो भविष्य के अनुसार सुनीथ राजा का पुत्र था।

मसृण--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

महत्--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (स्वा. नाभि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार विराट राजा का पुत्र था।

३. अमिताभ देवों में से एक।

४. पितरों में से एक।

५. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो अन्तिनार राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.११)।

६. एक अग्नि, जो प्रजापति भरत नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २०९.८)।

महत्तर--एक अग्नि, जो 'पांचजन्य' नामक अग्नि के पाँच पुत्रों में से एक था (म. व. २१०.९)।

महत्पौरव--(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सार्वभौम राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसके नाम के लिए 'महापौरव' पाठभेद प्राप्त है।

महस्वत्--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार अमर्षण राजा का, एवं विष्णु के अनुसार अमर्ष राजा का पुत्र था। वायु में इसके नाम के लिए 'सहस्वत्' पाठभेद प्राप्त है।

महाकपाल—दूषण राक्षस का अमात्य (वा. रा. अर. २३.३३)।

महाकपि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

महाकर्ण--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

महाकर्णि--मगधराज अंबुवीच का दुष्ट मंत्री (म. आ. १९६.१९)।

महाकर्णी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२५)।

महाकाय--एकादश रुद्रों में से एक।

२. रावण के पक्ष का एक राक्षस।

महाकाया—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२३)।

महाकाल (ज्योतिर्लिंग)—एक शिवावतार, जो उज्जयिनी में क्षिप्रा नदी के तट पर स्थित महाकाल नामक तीर्थस्थान में निवास करता है। यह द्वादश ज्योतिर्लिंगों में से एक माना जाता है (ज्योतिर्लिंग देखिये)। इसके उपलिंग का नाम 'दुग्धेश' था (शिव. कोटि. १)।

इसने केवळ अपनी हुंकार से ही दूषण नामक असुर को भस्मसात् किया था (शिव. शत. ४२)। इसने ब्रह्माजी का पाँचवाँ सिर नष्ट किया था (स्कंद. ५.१.३)।

२. बाणासुर का नामान्तर।

महाकाली—एक देवी, जो महादेव की आदिशक्ति मानी जाती है (दे. भा. ६.६)।

महागिरि—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

महाचक्रि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

महाचूडा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.५)।

महाजय—नागराज वासुकि के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम जय था (म. श. ४४.४८)।

महाजवा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२१)।

महाजानु—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक श्रेष्ठ द्विज, जो प्रमद्वरा के सर्पदंशन के समय उसे देखने के लिए आया था (म. आ. ८.२०)।

महाजिह्वा—ब्रह्मधना नामक राक्षसी की कन्या।

२. एक राक्षसी, जिसका बर्बरिक ने वध किया था (बर्बरिक देखिये)।

महातपस्—एक ऋषि, जिसने सुप्रभ राजा को विष्णु की उपासना करने का उपदेश दिया था (वराह. १७)।

महातेजस्—एकादश रुद्रों में से एक।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

३. एक राजा, जो जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) का पुत्र था (म. आ. ८९.५०)।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.२०)।

महात्मन्—(सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार महद्भानु का पुत्र था।

महादंष्ट्र—रावण के पक्ष का एक राक्षस।

महादेव—भविष्यपुराण नामक ग्रंथ का कर्ता।

महादेवा—यादव राजा देवक की कन्या।

महाद्युति—एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७२ पाठ.)।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक।

३. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

महाधृति—(सू. निमि.) एक निमिवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार विसृत का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार विबुध का पुत्र था।

महानंद—मद्रदेश का एक राजा, जिसका नरिष्यन्त पुत्र दम ने सुमना के स्वयंवर के समय वध किया था (मार्क. १३०.५२)। इसके नाम के लिए 'महानाद' पाठभेद भी प्राप्त है।

महानंदा—एक वेश्या, जो परम शिवभक्त थी। इसके पास एक बन्दर तथा एक मुर्गा था, जिन्हें यह रुद्राक्षों से सजाये रहती थी। जब यह शिव की भक्तिभावना में भजन करती हुयी उसीमें तल्लीन रहती, तब बंदर तथा मुर्गा इसके साथ नृत्य किया करते थे।

शिव से भेंट—एक बार भगवान् शंकर एक वैश्य का रूप धारण कर, इसकी परीक्षा लेने के लिए स्वयं आये। वैश्यरूपधारी शंकर के पास एक रत्नकंकण था, जिसे देख कर महानंदा की इच्छा उसे प्राप्त करने की हुयी। वैश्य ने इससे कहा कि, वह रत्नकंकण तो दे सकता हैं, पर उसकी मूल्य यह क्या देगी? तब महानंदा ने कहा, 'इस कंकण को प्राप्त करने के लिए, मैं आपके पास तीन दिन पत्नीरूप में रह सकती हूँ'।

वैश्यने कंकण और रत्नमय लिंग इसको रखने को दिया, और उसके बदले इसे तीन दिन तक पत्नीरूप में स्वीकार किया। एक रात को आग लगने के कारण, वह रत्नमय लिंग जल गया, जिससे दुखित होकर वैश्य प्राण देने को उद्यत हुआ। महानंदा ने जब देखा कि, वह देहत्याग के लिए उद्यत है, तो यह भी उसके साथ सती होने को तैयार हुई। क्योंकि, इन तीन दिनों में, शर्त के अनुसार यह उसकी पत्नी थी, तथा पत्नीं होने के कारण इसे पत्नीधर्म निबाहना जरुरी था।

महानंदा की कर्तव्यभावना देखकर शंकर प्रसन्न हुए, एवं दर्शन दे कर इसके समस्त पापों का हरण किया (शिव. शत. २६)। महानंदा के सम्मुख प्रगट हुए शिव के इस अवतार को 'वैश्येश्वर' कहते हैं।

महानंदिन्—(शिशु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार नंदिवर्धन का पुत्र था। शिशुनाग वंश का यह अंतीम राजा था, जिसके पश्चात् शूद्र वंश में उत्पन्न महापद्म नंद राजा मगध देश का राजा बन गया। यह नंद राजा इसीका ही एक शूद्रा से उत्पन्न पुत्र था (महापद्म देखिये)। मत्स्य, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने ४३ वर्षों तक राज्य किया।

२. एक धर्मनिष्ठ राजा, जो पूर्वजन्म में भीमवर्मन् नामक दुराचारी क्षत्रिय था।

महानाद—रावण के मामा प्रहस्त नामक राक्षस का अमात्य (वा. रा. यु. ५८.१९)।

२. शिशुनागवंशीय महानंदिन् राजा का नामांतर।

महानाभ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं रुषाभानु के पुत्रों में से एक था।

महानील—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

महानुभाव—चाक्षुष मन्वन्तर के देवों में से एक।

महापद्म—(नंद. भविष्य.) नंदवंश का प्रथम राजा, जो वायु, एवं मत्स्य के अनुसार शिशुनाग वंश के अंतिम राजा महानंदिन् का पुत्र था। यह उसे एक शूद्र स्त्री से उत्पन्न हुआ था। इसने अपने पिता का वध कर, अपने स्वतंत्र नंदवंश की स्थापना की। इसे नंद नामांतर भी प्राप्त था।

मत्स्य एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने ८८ वर्षों तक, एवं वायु के अनुसार २८ वर्षों तक राज्य किया था।

२. एक दिग्गज, जो भारतीययुद्ध में घटोत्कच के गजसेना में शामिल था (म. भी. ६०.५१)।

महापद्म—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

महापरिषदेश्वर—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६१)।

महापार्श्व—एक राक्षस, जो रावण का अमात्य था। इसे 'मत्त' नामांतर भी प्राप्त था। विश्रवस् ऋषि को पुष्पोत्कटा नामक पत्नी से उत्पन्न पुत्रों में से यह एक था। राम-रावण युद्ध में यह अंगद के हाथों इसका वध हुआ (वा. रा. यु. ९८.२२)।

महापुरुवश—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार नंदन राजा का पुत्र था।

महापौरव—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सार्वभौम राजा का पुत्र था। वायु एवं हरिवंश में इसे क्रमशः 'महत्पौरव' एवं 'महत्' कहा गया है।

महाबल—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार बृहदिष्णु राजा का पुत्र था।

३. विष्णु का एक पार्षद।

४. शिव का एक पार्षद।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.१०६)।

६. वैवस्वत मन्वन्तर का इंद्र।

७. गुहावासिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

८. पितरों में से एक।

महाबला—स्कंद की अनुचरी मातृकाद्वय (म. श. ४४.१०६)।

महाबाहु—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'वीरबाहु'

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.११३५*, पंक्ति. १)।

३. (सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा, जो वायु के अनुसार श्रुतंजय राजा का पुत्र था। भागवत एवं विष्णु के अनुसार इसे 'विप्र', मत्स्य के अनुसार इसे 'विभ', एवं ब्रह्मांड के अनुसार 'रिपुञ्जय' नामांतर प्राप्त थे। इसने पैंतीस वर्षों तक राज्य किया।

महाभय—एक राक्षस, जो अधर्म एवं निर्ऋति का पुत्र था। निर्ऋति का पुत्र होने से, इसे एवं इसके भय एवं मृत्यु नामक दो भाईयों को 'नैर्ऋत' राक्षस कहते थे।

महाभाग—भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार 'वाह्ययन' के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद।

महाभागा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं खशा की कन्याओं में से एक थी।

महाभिष—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंश में उत्पन्न एक प्राचीन राजा, जो सत्यवादी तथा पराक्रमी था। कुंभकोणम् प्रति में 'महाभिष' के स्थान पर 'महाभिषज' नाम प्राप्त है।

पूर्वजन्म में इसने एक सहस्र अश्वमेध, एवं सौ राजसूय यज्ञों के द्वारा इन्द्र को संतुष्ट कर के स्वर्गलोक प्राप्त किया था (म. आ. ९१.१-२)।

ब्रह्मा से शाप—एक बार जब यह ब्रह्मलोग गया, तब वहाँ इसने अन्य देवताओं ऋषियों तथा समस्त नदियों के साथ महानदी गंगा को भी देखा। जब इसने उसे देखा, तब गंगा के शरीर का वस्त्र हवा में उड़ रहा था, जिसे देख कर सब ने अपनी नज़रें शीघ्र झुका ली। किन्तु महाभिष एकटक उसे देखता ही रहा। गंगा ने भी इसे प्रेमभरी दृष्टि से देखा, तथा दोनों एक दूसरे से स्नेह-बन्धन में एकाएक बँध गये। दोनों के इस प्रेमभरे खिंचाव

को देख कर, ब्रह्मा ने दोनों को मृत्युलोक में जन्म लेने के लिए शाप दिया।

यह सुन कर दोनों ने ब्रह्मदेव की क्षमा माँगते हुए अत्यधिक अनुनय विनय किया। तब ब्रह्मा ने कहा, 'तुम लोग स्वर्गलोक वापस आओगे, किन्तु इसके लिए तुम दोनों को न जाने कितना पुण्य करना पड़ेगा'।

इस शाप के अनुसार, महाभिष सोमवंश में उत्पन्न होकर शंतनु नाम से प्रसिद्ध हुआ, तथा गंगा इसकी पत्नी बनी (म. आ. ९१.१; दे. भा. २.३; भा. ९.२२; शंतनु देखिये)।

महाभोज—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो सात्वत राजा का पुत्र था। आगे चल कर, इसके नाम से इसके वंशज 'भोजवंशीय' कहलाने लगे (भा. ९.२४.७-११)।

महाभौम—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो अरिह राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम आंगी था। इसकी पत्नी का नाम सुयज्ञा था, जिससे इसे अयुतानायिन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. ९०. ८९९*; ९०.१९)।

महामख--एक आदित्य, जो सवितृ नामक आदित्य का पुत्र था। इसकी माता का नाम पृश्णि था (भा. ६. १८.१)।

महामणि--(सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार जनमेजय राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम महामनस् था।

महामती—अंगिरस् ऋषि की सात कन्याओं में से एक (म. व.२०८.७)।

महामनस्—(सो. अनु.) एक चक्रवर्ती राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार महाशाल नामक राजा का पुत्र था (वायु. ९९.१७)। विष्णु में इसे महामणि राजा का पुत्र कहा गया है। इसे उशीनर एवं तितिक्षु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे।

महामर—एक राजा, जो प्रमर नामक राजा का पुत्र था। इसने तीन वर्षों तक राज्य किया था (भवि. प्रति. ४.१)।

महामान--पारावत देवों में से एक।

महामालिन्—एक राक्षस, जो खर राक्षस का अमात्य था (वा. रा. अर. २३.३२)।

२. रावण के पक्ष का एक असुर।

महामुख--जयद्रथ की सेना का एक योद्धा, जो द्रौपदीहरण के समय हुए युद्ध में, नकुल के द्वारा मारा गया (म. व. २५५.१६-१७)।

महामुद--एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

महामुनि--रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

महामूर्ति--विभीषण की पत्नी। राम दाशरथि के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने अपने पति विभीषण के साथ सरयु नदी के तट पर जा कर, उस नदी का पवित्र जल अश्वमेधीय अश्व के स्नान के लिये लाया। आगे चल कर, उसी जल से राम ने अपने अश्वमेधीय अश्व को स्नान कराया (पद्म. पा. ६७)।

महायशस्--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार संकृति राजा का पुत्र था।

२. प्रसूतदेवों में से एक।

३. लेखदेवों में से एक।

महायशा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२७)।

महायोग--गुहवासिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

महारथ--विश्वामित्र के पुत्रों में से एक।

२. (सो. ऋक्ष.) उपरिचर वसु राजा के बृहद्रथ नामक पुत्र का नामान्तर।

महारव—एक यादव राजा, जो रैवतक पर्वत पर हुए उत्सव में शामिल था (म. आ. २११.११)। इसके नाम के लिए 'सहाचर' पाठभेद प्राप्त है।

महाराज--एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार अज राजा का पुत्र था।

२. ब्रह्म में निर्दिष्ट एक राजा, जिसकी कन्या का विवाह मणिकुण्डल नामक राजा से हुआ था (मणिकुण्डल देखिये)।

महारोमन्—(सू. निमि.) विदेह देश का राजा, जो कृतिरात जनक का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम स्वर्णरोमन् था।

महारौद्र--एक राक्षस, जो घटोत्कच का साथी था। भारतीययुद्ध में यह दुर्योधन के द्वारा मारा गया (म. भी. ९१.२०-२१)।

महालक्ष्मी--देवी लक्ष्मी का एक नामान्तर (देवी एवं लक्ष्मी देखिये)।

महावशिन्--(सू. निमि.) विदेह देश का राजा, जो भागवत के अनुसार कृति राजा का पुत्र था।

महावीर--एक राजा, जो क्रोधवशसंज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

२. एक आचार्य, जो स्वायंभुव मनु के सुविख्यात पुत्र प्रियव्रत राजा के तीन विरक्त पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम बार्हिष्मती था। इसे 'वृतोद' नामान्तर भी प्राप्त था। अपने बाल्यकाल में ही तपस्या के लिए यह वन में चला गया, एवं पश्चात् इसने संन्यासआश्रम का स्वीकार किया। यह श्रीकृष्ण का परमभक्त था, जिस कारण ज्ञानसंपन्न हो कर, इसने ब्रह्मत्व प्राप्त किया (भा. ५.१)।

३. एक पराक्रमी राजा,जो राम के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा करने के लिए शत्रुघ्न के साथ उपस्थित था (पद्म पा. ११)।

महावीर्य--(सू. निमि.) विदेह देश का राजा, जो दैवराति बृहद्रथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुधृति था।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार मन्यु राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे कृमि राजा का पुत्र कहा गया है। इसके पुत्र का नाम दुरितक्षय था।

३. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

महावेगा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१५)।

महाव्रत--विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

महाश--श्रीकृष्ण एवं मित्रविंदा के दस पुत्रों में से एक।

महाशक्ति--श्रीकृष्ण एवं लक्ष्मणा के दस पुत्रों में से एक।

महाशंख--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६)। भागवत के अनुसार, यह पाताल में रहता था (भा. ५.२४.३१)। यह मार्गशीर्ष माह के सूर्य के साथ भ्रमण करनेवाले प्राणियों में से एक था (भा. १२.११.४१)।

महाशाल--(सो. अनु.) एक अनुवंशीय राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार जनमेजय राजा का पुत्र था।

२. एक ब्राह्मणसमूह, जिसने अश्वपति कैकेय राजा से शिक्षा प्राप्त की थी (श. ब्रा. १०.६.१.१)। संभव है, इन ब्राह्मणों का महत्व बढ़ाने के लिए इनका इस प्रकार वर्णन किया गया है।

महाशाल जाबाल--शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्य। इसने धीर शातपर्णेय को शिक्षा प्रदान की थी (श. ब्रा. १०.३.१.१)। शतपथ ब्राह्मण में अन्यत्र इसे अश्वपति राजा से शिक्षा प्राप्त करनेवाले ब्राह्मणों में से एक कहा गया है (श. ब्रा. १०.६.१.१)। छांदोग्य उपनिषद में इसके नाम का निर्देश 'प्राचीनशाल औपमन्यव' नाम से किया गया है, एवं 'महाशाल' शब्द 'एक महान् गृहवाला' इस अर्थ से एक विशेषण के रूप में प्रयुक्त किया गया है (छां. उ. ५.११.१; ३; ६.४.५)। मुण्डक उपनिषद में भी 'महाशाल' शब्द एक उपाधि के रूप में शौनक के लिए प्रयुक्त किया गया है (मुं. उ. १. १.३; ब्रह्म. उ. १)।

महाशिरस्--युधिष्ठिर के सभा का एक ब्रह्मर्षि (म. स. ४.८)।

२. एक नाग, जो वरुण की सभा में उपस्थित था (म. स. ९.१४)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

महाश्व--एक राजा, जो यमसभा में उपस्थित था (म. स. ८.१८)।

महासत्त्व--(सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार आराधिन् राजा का पुत्र था।

महासुर--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

महासेन--स्कंद का नामान्तर (म. व. २१४.२६; स्कंद देखिये)।

महास्वना--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२५)।

महाहनु--(सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था।

२. तक्षक कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

महाहय--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो शतजित् राजा का पुत्र था।

महित--पितरों में से एक।

महिदास ऐतरेय--एक आचार्य, जो 'ऐतरेय ब्राह्मण' एवं 'ऐतरेय आरण्यक' नामक ग्रंथों का रचियता माना जाता है। इसीके ही नाम से उन ग्रंथों को 'ऐतरेय' उपाधि प्रदान की गयी होगी। संभव है, यह स्वयं 'इतर' अथवा 'इतरा' नामक किसी स्त्री का वंशज होगा,

जिस कारण इसे 'ऐतरेय' मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

ऐतरेय आरण्यक में इसका अनेक बार निर्देश प्राप्त है। किंतु वहाँ कहीं भी इसे उस ग्रंथ का रचयिता नही कहा गया है (ऐ. आ. २.१.८; ३.७)।

छांदोग्य उपनिषद एवं जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में के अनुसार, यह एक सौ सोलह वर्षों तक जीवित रहा। इसे रोग ने अनेक तरह के कष्ट दिये। किंतु इसने रोग को चुनौति दी, 'तुम मुझे चाहे कितने भी सताओं, मैं तुम्हारे कष्टों से नहीं मरूँगा' (छां. उ. ३.१६.७; जै. उ. ब्रा. ४.२.११)।

महिनेत्र—(सो. मगध.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार द्युमत्सेन राजा का पुत्र था।

महिमत्--एक आदित्य, जो भग एवं सिद्धि का पुत्र था (भा. ६.१८.२)।

महिमावत्---पितरों में से एक।

महिष--ब्रह्मांड के अनुसार, महिषासुर का नामांतर (ब्रह्मांड. ३.६.२८-३३)।

महिषदा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२७)। इसके नाम के लिए 'गोमहिषदा' पाठभेद प्राप्त है।

महिषानना--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२५)।

महिषासुर--एक असुर, जो मयासुर एवं रंभा का पुत्र था।

जन्म—इसका पिता रंभासुर बड़ा शंकरभक्त था, जिसने अपनी तपस्या से उसे प्रसन्न कर वरदान माँगा, 'हे प्रभो, मैं निःसंतान हूँ, मुझे एक भी पुत्र नहीं है। अतएव मेरी इच्छा है कि, तुम मेरे पुत्र बनों'। शंकर ने 'तथास्तु' कहा। एक दिन मार्ग से जाते समय, रंभासुर को चित्रवर्ण की एक सुन्दर महिषी दिखी। तब उसने उसमें अपना वीर्य स्थापित किया, जिससे कालांतर में शंकरांश का बल लेकर महिषासुर उत्पन्न हुआ। महिषासुर ने देवी की आराधना कर के उसके भक्तों में शाश्वत स्थान किया। प्राप्त

वध--इसने तप से ब्रह्मदेव को प्रसन्न किया, तथा वरदान प्राप्त किया कि, यह मनुष्य के हाथों से न मारा जाये। बाद को ब्रह्मदेव के वरदान की प्राप्त कर इसने तीनें लोकों का कष्ट देना आरंभ किया। तब देवी ने अष्टादश-भुज रूप धारण कर इसका वध किया (दे. भा. ५,१६; मार्क. ८०; पार्वती देखिये)।

एक बार शिकार करते-करते यह अरुणाचल पर्वत पर गया, जहाँ पार्वती तपस्या कर रही थी। वहाँ उसकी सौन्दर्यसुषमा को देखकर यह उस पर मोहित हो गया, तथा एक वृद्ध अतिथि का रूप धारण कर, उससे तपस्या करने का कारण पूछाँ। तब पार्वती ने कहा, 'मै परम बलवान् भगवान् शंकर का वरण करना चाहती हूँ, इसीसे तपस्या कर रही हूँ'। तब इसने कहा, 'मैं भी बलवान् हूँ; एवं चाहता हूँ कि तुम मेरा वरण करो'। तब पार्वती ने इसे युद्ध के लिए ललकारते हुए अपना बल प्रदर्शन करने के लिए कहा। महिषासुर ने पार्वती के साथ घोर युद्ध किया, किन्तु अन्त में उसके द्वारा यह मारा गया (स्कन्द. १.३; १०. ११; शिव. उ. ४६)।

जिस स्थान पर देवी ने इसका वध किया था, वही स्थान सम्भवतः 'देवीपुर तीर्थ' है (स्कन्द. ३.१.६-७)।

महाभारत में, इसे महेश्वर द्वारा वर प्राप्त होने की चर्चा है (म. अनु. १४.२१४)। एक बार इसने देवताओं को परास्त कर के रुद्र के रथ पर भी आक्रमण किया था (म. व. २२१.५७)। महाभारत के अनुसार, स्कन्द ने इसका वध किया था (म. व. २२१.६६)।

महिष्मत—(सो. सह.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सोहंजी राजा का, एवं विष्णु के अनुसार साहंजि का पुत्र था। मत्स्य एवं वायु में इसके पिता का नाम क्रमशः 'संहत' एवं 'संज्ञेय' दिया गया है।

इसके पुत्र का नाम रुद्रश्रेण्य था। हरिवंश के अनुसार, इसने माहिष्मती नगरी बसायी थी (ह. वं. १. ३३.५)।

महिष्मती--महर्षि अंगिरस् की छठी कन्या। इसे 'अनुमती' नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २०८.६)। भांडारकर संहिता में इसके नाम का 'हविष्मती' पाठ स्वीकार लिया है।

२. बृहस्पति की कन्याओं में से एक। इसकी माता का नाम शुभा था।

मही--एक दुराचारी ब्राह्मण स्त्री, जो धृतव्रत नामक ब्राह्मण की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सनाज्जात था।

अपने पति के मृत्यु के पश्चात् यह निराधार हो गयी, जिस कारण इसे वेश्यावृत्ति का स्वीकार करना पड़ा। आगे चल कर, इसका इतना अधःपात हुआ कि, इसने अपना पुत्र सनाज्जात से भी समागम किया। किंतु इतनी

दुराचारी होने पर भी, गंगा स्नान के कारण इसका उद्धार हुआ (ब्रह्म. ९२)।

महीजित्--माहिष्मती नगरी का एक राजा, जो द्वापर युग में उत्पन्न हुआ था। इसने पुत्रप्राप्ति के लिए, श्रावण शुक्ल एकादशी के दिन 'पुत्रदा एकादशी' का व्रत किया, जिस कारण इसे एक सुपुत्र की प्राप्ति हुई (पद्म. उ. ५५)।

महीरथ--एक राजा, जिसने वैशाख माह में स्नान का व्रत कर, अपना एवं अपने परिवार के लोगों का उद्धार किया (पद्म. पा. ९९-१०१; स्कंद. २.७.४)।

महीषक--एक जातिसमूह, जो पहले क्षत्रिय था, किंतु आगे चल कर, अपने दुराचरण के कारण शूद्र बन गया (म. अनु. ३३.२२-२३)। इनके नाम के लिए 'महिषक' एवं 'माहिषक' पाठभेद भी प्राप्त है। संभवतः आधुनिक मैसूर प्रदेश में ये लोग रहते होंगे।

अर्जुन ने अपने दक्षिण दिग्विजय के समय इन्हे जीता था (म. आश्व. ८४.४१)। महाभारत के अनुसार, ये लोग आचार विचार से अत्यधिक दूषित थे (म. क. ३७. ४५)।

महेंद्र--अगस्त्यकुलोत्पन्न एक ऋषि।

महेश--एक शिवावतार। एक बार शिव के वेताल नामक द्वारपाल ने पृथ्वी पर जन्म लिया जिस समय उसकी रक्षा के लिए शिव एवं पार्वती ने क्रमशः महेश एवं शारदा के नाम से पृथ्वी पर अवतार लिये थे (शिव. शत. १४; वेताल देखिये)।

महैतरेय--एक आचार्य, जिसका ऋग्वेदी ब्रह्मयज्ञांग-तर्पण में निर्देश प्राप्त है।

महोदक--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

महोदय--वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक। अयोध्या के राजा सत्यव्रत त्रिशंकु ने विश्वामित्र ऋषि को ऋत्विज बना कर, एक यज्ञसमारोह का आयोजन किया। उस समय इसके पिता वसिष्ठ के साथ इसे भी त्रिशंकु राजा ने बड़े सम्मान के साथ निमंत्रित किया था। उस निमंत्रण को इसने अस्वीकार कर दिया, एवं संदेश भेजा, 'चाण्डाल त्रिशंकु जहाँ यजमान है एवं चाण्डाल विश्वामित्र जहाँ ऋत्विज है, ऐसे यज्ञ में मैं नहीं आ सकता'। इसका यह अपमानजनक संदेश सुन कर, विश्वामित्र अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसे निषाद बनने का शाप दिया (वा. रा. बा. ५९.२०-२१)।

महोदर--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीमसेन ने नाराच नामक बाण इसकी छाती में मार कर इसका वध किया (म. भी. ८४.२६)।

३. एक राक्षस, जो घटोत्कच का मित्र था। कामकटंकटा को जीतने के लिए घटोत्कच जब प्राग्ज्योतिषपुर जाने निकला, उस समय यह उसका एक अनुचर था (स्कंद. १. २.५९-६०)।

४. एक ऋषि। श्रीराम के द्वारा मारे गये एक राक्षस का मस्तक इसकी जाँघ में आ कर चिपक गया था। पश्चात् सरस्वती नदी के तट पर स्थित 'औषनस' नामक तीर्थ में स्नान करने के कारण, वह चिपका हुआ सिर छुट गया। इसी कारण, औषनस तीर्थ को 'कपालमोचन' नाम प्राप्त हुआ (म. श. ३८.१०-२३)।

५. रावण के पुत्रों में से एक। राम-रावण युद्ध में इसने सर्व प्रथम अंगद से, एवं तत्पश्चात् नील नामक वानर से युद्ध किया, जिसने इसका वध किया (वा. रा. यु. ७०. ३१)।

६. रावण का एक दुष्टबुद्धि प्रधान (वा. रा. उ. १४.१)। रावण सीता को वश में लाने के लिए चाहता था। उस समय इसने रावण को सलाह दी थी कि, राम-वध की झूटी वार्ता फैलाने से ही सीता वश में आ सकती है। इसने रावण से कहा, 'मैं स्वयं द्विजिह्व, कुंभकर्ण, संह्रादिन् तथा वितर्दन नामक राक्षसों को साथ ले कर, राम से युद्ध करने के लिए जाता हूँ। उस युद्ध से लौट आते समय, हम 'राम मर गया' इस प्रकार चिल्लाते हुए अशोकवन में प्रवेश करेंगे। इस वृत्त को सुनते ही भयभीत हो कर सीता तुम्हारे वश में आयेगी' (वा. रा. यु. ६४.२२-३३)।

महोदर प्रधान की यह सलाह रावण एवं कुंभकर्ण ने अस्वीकार कर दी, एवं रावण ने अकेले कुंभकर्ण को ही रणभूमि में भेज दिया। पश्चात् इसका सुग्रीव के साथ युद्ध हो कर, यह उसीके हाथों मारा गया (वा. रा. यु. ९७.३६)।

७. रावण के मातामह सुमालि नामक राक्षस का सचिव। राम रावण युद्ध के समय, रावण की सहाय्यता के लिए यह सुमालि राक्षस के साथ बाहर आया था (वा. रा. उ. ११.२)।

८. रावण का एक भाई, जो विश्रवस् एवं पुष्पोत्कटा के पुत्रों में से एक था (वा. रा. यु. ७०.६६)। हनुमत् ने इसका वध किया था।

९. एक प्रातःस्मरणीय नृप (म. अनु. १६५.५२)।

महौजस्—एक राजा, जो कालेय (पाँचवाँ) के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.१९)।

२. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. ६१.५०)।

३. एक क्षत्रिय कुल, जिसमें 'वरयु' (वरप्र) नामक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.१५)।

४. वसुदेव एवं भद्रा के पुत्रों में से एक।

५. तुषित देवों में से एक।

महौदवाहि—एक आचार्य, जिसका ऋग्वेदी ब्रह्मयज्ञांग तर्पण में निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.४.४)।

माक्षति—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

माक्षव्य—एक आचार्य, जो मक्षु नामक महर्षि का पुत्र था। इसने संहिता शब्द का तात्विक अर्थ लगाने का प्रयत्न किया है, जिसके अनुसार द्यौ एवं पृथ्वी स्वयं एक आचार्य है, जिन्होने आकाश नामक एक संहिता का निर्माण किया है (ऐ. आ. ३.१.१)।

मागध—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था। महाभारत में इसे 'मगध देशाधिपति' कहा गया है। अभिमन्यु नें इसका वध किया था (म. भी. ५८.४४)।

२. मगधराज जरासंध का नामान्तर (भा. ३.३.१०)।

३. मौत्य मन्वन्तर का एक देवतागण।

४. मौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

मांकायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'कार्मायन' पाठभेद प्राप्त है।

मांगलिन—एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से पौष्यंजिन ऋषि का शिष्य था (व्यास देखिये)।

माचाकीय—तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में निर्दिष्ट एक व्याकरणाचार्य। 'य'कार तथा 'व' कार का लोप कहाँ होता है, इसके बारे में इसका अभिमत प्राप्त है (तै. प्रा. १०.२२)।

माचेल—पाण्डवों के पक्ष का एक महारथि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट ले कर उपस्थित हुआ था (म. स. ३१.१३)। इसके नाम के लिए 'माचेल्लक' पाठभेद भी प्राप्त है।

माचेल्लक—माचेल्लक देश के रहिवासी लोगों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम। भारतीय युद्ध में ये लोक कौरवों के पक्ष में शामिल थे। इनके नाम के लिए 'मावेल्लक' पाठभेद भी प्राप्त है।

इन्होंने एवं त्रिगर्तराज सुशर्मन् ने अर्जुन को युद्ध में विनष्ट करने की प्रतिज्ञा की थी (म. द्रो. १६.२०)। किंतु उस समय हुए युद्ध में अर्जुन ने इनका संहार किया (म. द्रो. १८.१६)।

द्रोणाचार्य कौरवसेना का सेनापति होने पर, उसे आगे कर के इन्होने फिर एक बार अर्जुन पर आक्रमण किया (म. द्रो. ६६.३८)। किंतु अर्जुन ने पुनः एक बार इनका संहार किया (म. क. ४.४७-४९)।

माठर—सूर्य की एक पार्श्ववर्ती देवता, जो हमेशा सूर्य के दक्षिण में रहता है। सूर्य की सेवा करने के लिए इसकी नियुक्ति इन्द्र के द्वारा की गयी थी (भवि. ब्राह्म. २३)।

महाभारत के अनुसार, दक्षिण भारत में 'माठरवन' नामक एक तीर्थस्थान था, जहाँ इसका विजयस्तंभ सुशोभित होता था (म. व. ८६.७)।

२. अष्टादश विनायकों में से एक (साम्ब. १६)।

३. एक आचार्य, जो 'सांख्यकारिकावृत्ति' नामक ग्रंथ का रचयिता माना जाता है। 'अष्टकाकर्म' में तंत्र करना चाहिए ऐसा इसका अभिमत था, जो कौषितकी ब्राह्मण में उद्धृत किया गया है (कौ. ब्रा. १३८. १६)।

४. कश्यप एवं भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

माठरीपुत्र—काश्यपि बालाक्य नामक आचार्य का नाम (बृ. उ. ६.४.३१ माध्यं; श. ब्रा. १४.९.४.३१-३२)। संभव है, किसी 'मठर' का स्त्रीवंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

माणिचर—एक यक्ष, जो कुवेर का अत्यंत प्रिय सचिव था। इसके नाम के लिए 'माणिच्चार' (वा. रा. उ. १५), एवं 'माणिभद्र' (म. आ. ५७.५०७* पंक्ति. १; स. १०.१६) पाठभेद प्राप्त हैं। संभव है, यह एवं मणिभद्र दोनों एक ही थे (मणिभद्र. २. देखिये)।

यह मंदार पर्वत के शिखर पर रहता था (म. व. १४०.४)। रावण एवं कुवेर के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने रावणपक्षीय धूम्राक्ष नामक राक्षस को गदा-

प्रहार से मूर्च्छित किया था। यह देख कर रावण अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसपर आक्रमण कर इसे पराजित कर दिया (वा. रा. उ. १५)।

मांटि—एक आचार्य, जो गौतम ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम आत्रेय था (बृ. उ. २.६.३; ४.६. ३ काण्व.)।

२. एक शिवभक्त, जो कालभीति नामक सुविख्यात शिवपार्षद का पिता था (कालभीति देखिये)।

मांडकर्णि—दण्डकारण्य में रहनेवाला एक ऋषि, जिसकी कथा धर्मभृत् ऋषि ने श्रीराम को सुनाई थी (वा. रा. अर. ११.८-२०)। यह अत्यन्त धर्मनिष्ठ ऋषि था, जिसने जलाशय में खड़े रहकर, एवं केवल वायुभक्षण कर दस हजार वर्षों तक कठोर तपस्या की थी। इसकी इस तपस्या से अग्नि आदि सारे देव घबरा गये, एवं इसकी तपस्या में बाधा डालने के लिए, उन्होंनें पाँच अप्सराएँ इसके पास भेज़ दी।

उन अप्सराओं को देख कर यह मोहित हुआ, एवं इसने अपनी तपस्या का त्याग किया। पश्चात् इसने अपने तपःसामर्थ्य से पंचाप्सर नामक सरोवर में एक विलासगृह का निर्माण किया, जहाँ यह उन अप्सराओं के साथ क्रीडा करने लगा। इसकी इस क्रीडा के कारण, उस सरोवर से गायनवादन की आवाज दिनरात आती रहती थी। उसी आवाज को सुनकर, उसका रहस्य श्रीराम ने धर्मभृत ऋषि को पूछा था।

मांडवी—विदेह देश के कुशध्वज राजा की कन्या, जो अयोध्या के दशरथ राजा के पुत्र भरत की पत्नी थी (वा. रा. बा. ७३.३१-३२)।

२. एक स्त्री, जो सम्भवतः वात्सी मांडवीपुत्र नामक आचार्य की माता थी (बृ. उ. ६.४.३० माध्यं.)। सम्भवतः मण्डु का स्त्री वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

मांडव्य—एक आचार्य, जो कौत्स ऋषि का शिष्य था (श. ब्रा. १०.६.५.९; सां. आ. ७.२; बृ. उ. ६.५.४ काण्व.)। इसके शिष्य का नाम मांडूकायनि था।

ऐतरेय आरण्यक के अनुसार, इसने ऋग्वेद संहिता का तात्विक अर्थ प्रतिपादन किया था (ऐ. आ. ३.१.१; ऋ. प्रा. प्रस्तावना)। इसने शुक्ल यजुर्वेद की शिक्षा की रचना की थी, जिसका निर्देश 'पाराशरी संहिता' में प्राप्त है (पा. सं. श्लो. ७७-७८)। ब्रह्मयज्ञांतर्गत पितृतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.४.४; सां. गृ. ४. १०; ६.१)।

२. एक आचार्य, जो विदेह देश के जनक राजा का मित्र था (वेबर, इंडिशे स्टूडियेन. १.४८२)।

३. एक प्रसिद्ध ब्रह्मर्षि, जो धैर्यवान्, सब धर्मों का ज्ञाता, सत्यनिष्ठ और तपस्वी था।

इसके नाम के लिये 'अणिमांडव्य' एवं 'आणि-मांडव्य' पाठभेद भी प्राप्त है।

चोरी का इल्ज़ाम—चोरी के कारण इसको सजा मिलने की विभिन्न कथाएँ अनेक ग्रन्थों में प्राप्त है। मार्कंडेय तथा गरुडपुराण में दिया गया है कि, राजा ने इस पर चोरी का इल्जाम लगाया; एवं चोरी के संशय पर ही इसे सूली पर चढ़ाया (गरुड़. १.१४२)। पद्म के अनुसार, सुलक्षण राजा एक बार मृगयाके हेतु अरण्य में गया, तथा अपना घोड़ा एक पेड़ में बाँध दिया। जब वह लौट आया, तब वहाँ घोड़ा न था। अतएव राजा ने वहाँ पर तपस्या करते हुए मांडव्य से अपने घोड़े के बारे में पूछा, किन्तु यह मौन रहा। तब राजाज्ञा से राजदूतों ने समाधिस्थ मांडव्य को बन्दी बनाकर इसे सूली पर चढ़ा दिया। आगे चल कर असली चोर पकड़ा गया, तब राजा ने इसे छोड़ दिया। किन्तु इसके शरीर में किंचित शूलाग्र रह गया, जिसके कारण इसे 'आणिमांडव्य' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. उ. १४१)। इसी पुराण में अन्यत्र यह भी लिखा है कि, राजा की कुछ चीजे चोरी चली गयी थी, और उसीके शक में इसे सजा मिली थी (पद्म. उ. ५१)।

प्रमोदिनी से विवाह—स्कंद के अनुसार, देवपन्न राजा की कन्या कामप्रमोदिनी का हरण कर, शंबर ने उसके गहने मांडव्याश्रम के पास डाल दिये। प्रमोदिनी को पता लगानेवाले दूतों को इसके आश्रम के पास गहने मिले। इससे राजा को यह शक हुआ कि, इसने ही उसकी कन्या का हरण किया है। अतः उसने इसे सूली पर चढ़ाने की आज्ञा प्रदान की। किन्तु अन्त में जब उसे अपनी कन्या शंबरासुर से पुनः प्राप्त हुयी, तब राजा ने प्रमोदिनी का विवाह मांडव्य से कर दिया (स्कन्द. ५.३. १६९-१७२)।

स्कंद में अन्यत्र कहा गया है कि, यात्रा करते करते मांडव्य ऋषि 'विश्वामित्र तीर्थ' के पास आया। वहाँ इसने देखा कि, कुछ राजद्रव्य पड़ा हुआ है, जिसे छोड़कर चोर लोग भाग गये थे। राजद्रव्य के पास खड़े हुए

मांडव्य को देख कर, दूतों ने इसे चोर समझकर पकड़ा, तथा राजाज्ञा से सूली पर चढ़ा दिया (स्कंद. ६. १३७)।

यम से संवाद—महाभारत के अनुसार, निरपराध होने पर भी इसको सूली पर चढ़ाया गया था (म. आ. ५७.७७-७९)। इसने शूल के अग्रभाग पर तपस्या की थी। इसकी दयनीय दशा से संतप्त, एवं तपस्या से प्रभावित हो कर, पक्षीरूपधारी महर्षिगण इसके पास आये थे।

पश्चात् यह लिंगदेह धारण कर यमधर्म के पास गया था, एवं उससे प्रश्न किया, 'मैने शुद्धभाव से सदैव तपस्या की, किंतु मुझे भयंकर सजा क्यों दी गयी'? तब यमधर्म ने कहा, 'तुम बचपन में पतिंगो के पुच्छभाग में सींक घुसेड़ते रहे हो, इसी कारण तुम्हें सूली पर चढ़ाये जाने का दण्ड मिला है (म. आ. १०१)। यह सुनते ही मांडव्य ने नियम बनाया कि, बारह तथा चौदह-वर्षीय बालकों द्वारा नादानी में किये गये अशुभ कर्मों का पाप उन्हे न भुगतना पड़ेगा।

इसके साथ ही इसने यम को शाप दिया कि, वह शूद्रकुल में जन्म लेगा। मांडव्य के शाप के ही कारण, यमधर्म को अगले जन्म में विदुर का जन्म लेना पड़ा (म. आ. १०१.२५-२७)।

यमधर्म की उपर्युक्त कथा में मांडव्य के द्वारा पीड़ित किटाणु का नाम पतिंगा कहा गया है (म. आ. १०१.२४)। किंतु अन्य स्थानों में उसके नाम बगुला (स्कंद. ६.१३६), टिड्डी (पद्म. उ. १४१) एवं भौंरा (पद्म. सृ. ५२) इत्यादि दिया गया है।

ब्राह्मण का शाप—जब यह सूली पर था, तब एक दिन आधी रात के समय कौशिक के कुल में उत्पन्न हुआ एक सर्वांगकुष्ठी ब्राह्मण अपनी पत्नी के कंधे पर बैठा वेश्या के घर जा रहा था। अंधकार में जाते समय गलती से उसका पैर इसे लग गया, तब इसने क्रोध में आकर तत्काल शाप दिया, 'सूर्योदय होते ही तुम मर जाओगे' (स्कंद. ६.१३५)। ऐसा सुनकर ब्राह्मण की उस पतिव्रता पत्नी ने अपने पातिव्रत्य के बल पर सूर्योदय ही रोक दिया। बाद में अनुसूया द्वारा समझाये जाने पर उसने सूर्योदय होने दिया, तथा देवों की कृपा से मृत पति को जीवित अवस्था में प्राप्त किया, जिसका शरीर कामदेव के समान सुंदर था (गरुड. १.१४२; मार्क. १६; स्कंद. ५.३.१६९-१७२; ६.१३५; पद्म. सृ. ५१; कौशिक १४. देखिये)।

संवाद--महाभारत के अनुसार, यह बड़ा ज्ञानी था, तथा इसने विदेहराज जनक से तृष्णा का त्याग करने के विषय में प्रश्न किया था (म. शां. २६८)। इसने शिव-महिमा के विषय में युधिष्ठिर को अपना अनुभव बताया था (म. अनु. १८.४६-५२)। जब श्रीकृष्ण हस्तिनापुर जा रहे थे, तब उनसे अनेक ऋषिगण मिलने आये थे, जिसमें यह भी एक था (म. उ. ८१.३८८)।

इसके सम्बन्ध में यह भी प्राप्त है कि, यह भृगु-कुलोत्पन्न गोत्रकार था, एवं ज्योतिषशास्त्र का पंडित था। इसके नाम पर 'मांडव्यसंहिता' नामक ग्रन्थ भी उपलब्ध है (C. C.)।

मांडूक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मांडूकायनि—एक आचार्य, जो मांडव्य नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम सांजीवीपुत्र था (श. ब्रा. १०.६.५.९; बृ. उ. ६.५.४ काण्व.)

मांडूकायनीपुत्र--एक आचार्य, जो मांडूकीपुत्र नामक ऋषि का पुत्र था। इसके शिष्य का नाम जायन्तीपुत्र था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। सम्भव है, मांडूक के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

मांडूकि—एक ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

मांडूकीपुत्र—एक आचार्य, जो शांडिलीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम मांडूकायनी-पुत्र था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। सम्भव है, मंडूक के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

मांडूकेय--एक आचार्यसमूह, जो ऋग्वेदपाठ के एक विशेष शाखा का प्रणयिता माना जाता है। ऐतरेय आरण्यक के 'मांडूकेयीय' नामक अध्याय की रचना इन्हीके द्वारा की गयी है (ऐ. आ. ३.२.६; सां. आ. ८.११)।

ऐतरेय आरण्यक में इस समूह के आचार्यों के अनेक मत प्राप्त हैं, जिनमें संहिता की व्याख्या दी गयी है। उस व्याख्या के अनुसार, पृथ्वी को पूर्वरूप संहिता, द्यौ को उत्तररूप संहिता, एवं वायु को द्यौ एवं पृथ्वी का संम्मीलन करनेवाली संहिता कहा गया है (ऐ. आ. ३.१. १; ऋ. प्रा. १.२)।

ऋग्वेद के आरण्यकों में निम्नलिखित आचार्यों का पैतृक नाम मांडूकेय दिया गया है:—शूरवीर, ह्रस्व, दीर्घ, मध्यमप्रातिबोधीपुत्र (ऐ. आ. ३.१.१; सां. आ. ७.१२; ७.२; ७.१३)।

२. एक आचार्य, जो मंडूक नामक महर्षि का पुत्र था। ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.४.४)। ऋक्प्रातिशाख्य के अनुसार, स्वरों के बारे में इसने अनेक महत्त्वपूर्ण मत प्रतिपादन किये थे (ऋ. प्रा. २००)।

विष्णु, ब्रह्मांड एवं भागवत में, इसे व्यास की ऋक्शिष्य परंपरा में से इंद्रप्रमति ऋषि का शिष्य कहा गया है। इसके पुत्र का नाम सत्यश्रवस् था, जो इसका शिष्य भी था।

मातंग—एक मुनि, जिसके राजनीति विषयक अनेक मत महाभारत में दुर्योधन के द्वारा उद्धृत किये गये हैं। इसके ये मत निम्नप्रकार थे, 'वीर पुरुष को चाहिये कि, वह सदा उद्योग ही करे। किसीके सामने नतमस्तक न हो; क्यों कि, उद्योग करना ही पुरुष का कर्तव्य एवं पुरुषार्थ है। वीर पुरुष असमय में नष्ट भले ही हो जाये, परंतु कभी शत्रु के सामने सिर न झुकाये' (म.उ. १२५. १९-२०)।

२. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा का एक पुत्र था।

मातंगिन्—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मातंगी—कश्यप एवं क्रोधवशा की नौ कन्याओं में से एक। इसने हाथियों को जन्म दिया था (म. आ. ६०.६४)।

मातरिश्वन्—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक देवता, जो प्रायः अग्नि तथा अग्नि को उत्पन्न करनेवाले देवता से समीकृत की गयी है।

इस देवता का निर्देश ऋग्वेद के तृतीय मंडल में पाँच बार, एवं षष्ठ मंडल में एक बार प्राप्त है। उनमें से तीन स्थलों पर इसे अग्नि का ही नामांतर बताया गया है (ऋ. ३. ५.९; २६.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र तनूनपात्, नराशंस, यम एवं मातरिश्वन् को अग्नि के ही नामांतर बताये गये हैं (ऋ. १.१६४; ३.२९)।

अग्नि का दिव्यरूप—ऋग्वेद के प्रथम मंडल के अनुसार, मातरिश्वन् अग्नि के एक दिव्य रूप का मूर्तीकरण प्रतीत होता है। वहाँ इसे आकाश से पृथ्वीपर आनेवाला विवस्वत् का दूत बताया गया है, एवं इसके द्वारा गुप्त अग्नि को पृथ्वी पर लाने का संकेत भी किया गया है (ऋ. १.२८.२; ३.५.९; ६.८.४)। मातरिश्वन् को विद्युत् से समीकृत किया गया प्रतीत होता है। ऋग्वेद के विवाहसूक्त में दो प्रेमियों के हृदय को संयुक्त करने के लिए मातरिश्वन् का आवाहन किया गया है (ऋ. १०.८५.४७)।

अथर्ववेद, ब्राह्मण ग्रंथ एवं उनके उत्तरकालीन साहित्य में मातरिश्वन् नाम वायु की उपाधि के रूप में प्रयुक्त किया गया है। इसे वायु के समान वेगवान्, एवं सर्प की भाँति फूँफकार मारता हुआ बताया गया है (ऋ. १.६.६०; ३. २९.११; जै. उ. ब्रा. ४.२०.८)।

व्युत्पत्ति—भाषाशास्त्रीय दृष्टि से मातरिश्वन् शब्द का अर्थ, 'जिसका अपनी माता में निर्माण हुआ हो' किया जाता है। यहाँ माता शब्द से गर्जन करनेवाले मेघ का आशय हो सकता है, क्यों कि, मातरिश्वन् आकाश से आ सकते हैं। यास्क के अनुसार, मातरिश्वन् की व्युत्पत्ति, 'जो अंतरिक्ष में (मातरि) साँस लेता है (श्वन्)' ऐसी की गयी है। वहाँ इसे वायु में साँस लेनेवाला पवन माना गया है (नि. ७.२६)।

२. एक सुविख्यात यज्ञकर्ता, जिसका निर्देश ऋग्वेद के वालखिल्य सूक्त में मेध्य एवं पृषध्र नामक आचार्यों के साथ प्राप्त है (ऋ. ८.५२.२)। सांख्यायन श्रौतसूत्र में इसका निर्देश पृषध्र, मेध्य मातरिश्वन्, एवं मातरिश्व नाम से किया गया है (सां. श्रौ. १६.११.२६)। किन्तु वे दोनों पाठ योग्य नहीं प्रतीत होते हैं, क्यों कि, पृषध्र एवं मेध्य ये दोनो मातरिश्वन् से अलग व्यक्ति थे। ऋग्वेद में अन्यस्थान पर दध्यङ को मातरिश्वपुत्र कहा गया है (ऋ १०.४८.२)।

३. गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक (म. उ. ९९. १४)।

मातलि—इंद्र का सारथि। इसकी पत्नी का नाम सुधर्मा था, जिससे इसे गोमुख नामक पुत्र, एवं गुणकेशी नामक कन्या उत्पन्न हुयी थी (म. उ. ९५.१९-२०)।

अपनी कन्या गुणकेशी के लिए सुयोग्य वर खोजने के लिए, यह नारद को साथ लेकर पाताल लोक गया था (म. उ. ९६.८)। वहाँ नागकुमार सुमुख के साथ इसने अपनी कन्या का विवाह तय किया, एवं नागराज आर्यक को अपने साथ ले कर, यह स्वर्गलोक में इंद्र के पास गया। वहाँ इंद्र के संमति से गुणकेशी एवं सुमुख का विवाह हुआ (गुणकेशी एवं सुमुख देखिये)।

रामरावण युद्ध के समय, इन्द्र का रथ ले कर यह श्रीराम की सेवा में उपस्थित हुआ था। इसीके रथ में बैठ कर श्रीराम ने रावण वध किया था (म. व. २७४. १३-२७)।

पाण्डवों के वनवास के समय, यह इंद्र की आज्ञा से अर्जुन को स्वर्ग में ले जाने के लिए उपस्थित हुआ था (म. व. ४३)।

मातृका—देवी के सुविख्यात अवतारों में से एक। महाभारत में इनका स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जिनमें इन्हे दीर्घनखी, दीर्घदन्त, दीर्घतुण्ड, निर्मासगात्री, कृष्णमेघनिभ, दीर्घकेश, लंबकर्ण, लंबपयोधर एवं पिंगाक्ष कहा गया है। ये जी चाहे रुप धारण करनेवाली (कामरूपधर), जी चाहे वहाँ भ्रमण करनेवाली (कामरूपचारी), एवं वायु के समान वेगवान् (वायुसमजव) थी। इनका निवासस्थान वृक्ष, चत्वर, गुफा, स्मशान, शैल एवं प्रस्रवण में रहता था (म. श. ४५.३०-४०)।

जन्मकथा—मत्स्य में मातृकाओं के जन्म की कथा विस्तृत रुप में दी गयी है। हिरण्याक्ष राक्षस का पुत्र अंधक शिव का परमभक्त था। शिव ने उसे वर प्रदान किया था, 'रणभूमि में तुम्हारे लहू के हर एक बूँद से नया अंधकासुर उत्पन्न होगा, जिस कारण तुम युद्ध में अजेय होंगे'। शिव के इस आशीर्वाद के कारण, सारी पृथ्वी अंधकासुरों से त्रस्त हुयी। फिर इन अंधकासुरों का लहू चुसने के लिए शिव ने ब्राह्मी, माहेश्वरी आदि सात मातृकाओं का निर्माण किया। इन्होने अंधकासुर का सारा लहू चूस लिया, एवं तत्पश्चात् शिव ने अंधकासुर का वध किया।

अंधकासुर का वध होने के पश्चात्, शिव के द्वारा उत्पन्न सात मातृका पृथ्वी पर के समस्त प्राणिजात का लहू चूसने लगी। फिर उनका नियंत्रण करने के लिए, शिव ने नृसिंह का निर्माण किया, जिसने अपने जिह्वादि अवयवों से घंटाकर्णी, त्रैलोक्यमोहिनी, आदि बैतीस मातृकाओं का निर्माण किया। अपना नियुक्त कार्य समाप्त करने पर, शिव ने उन पर लोकसंरक्षण का काम सौंपा, एवं इस तरह रुद्र के साथ मातृका पृथ्वी पर चिरकाल तक रहने लगी (मत्स्य. १७९)।

मातृकाओं की संख्या—महाभारत एवं पुराणों में मातृकाओं की कई नामावलियाँ प्राप्त है, जिनमें इनकी संख्या सात, अठारह, एवं बैतीस बतायी है। महाभारत के शल्यपर्व में कार्तिकेय (स्कंद) की अनुचरी मातृकाओं की नामावली प्राप्त है, जहाँ इनकी संख्या बैतीस बतायी गयी है, एवं उसमें प्रभावती, विशालाक्षी आदि नाम के निर्देश प्राप्त है।

पुराणों एवं महाभारत में प्राप्त मातृकाओं की नामावलियाँ इस प्रकार है:—

(१) सप्तमातृका—ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वाराही नारसिंही, वैष्णवी, ऐन्द्री (मार्क. ८८.११-२०; ३८)।

(२) अष्टमातृका—ब्राह्मी, माहेश्वरी, चंडी, वाराही, वैष्णवी, कौमारी, चामुण्डा एवं चर्चिका।

(३) शिशुमातृका—काकी, हलिमा, रुद्रा, बृहली, आर्या, पलाला एवं मित्रा (म. व. २१७.९)।

(४) अष्टादश मातृका—विनता, पूतना, कष्टा, पिशाची, अदिति (रेवती), मुखमण्डिका, दिति, सुरभि, शकुनि, सरमा, कद्रू, विलीनगर्भा, करंजनीलया, धात्री, लोहितायनि, आर्या (म. आर. २१९.२६-४१)। महाभारत के इस नामावली में बाकी दो नाम अप्राप्य है।

(५) चौदह मातृका—गौरी, पद्मा, शची, मेधा, सावित्री, विजया, जया, देवसेना, स्वधा, स्वाहा, धृति, पुष्टि, तुष्टि एवं 'कुलदेवता', जो हरेक व्यक्ति के लिए अलग-अलग होती है (गोभिल. स्मृ. १.११-१२)।

मातृकाओं की प्राचीनता—वैदिक ग्रंथों में एवं गृह्यसूत्रों में मातृकाओं का निर्देश अप्राप्य है। ऋग्वेद में सप्तमाताओं का निर्देश प्राप्त है, किन्तु वहाँ सात नदियों एवं सात स्वरों को माता कहा गया है (ऋ. ९.१०२.४)। ईसा की पहली शताब्दि से मातृकापूजन का स्पष्ट निर्देश प्राप्त होता है। वराहमिहिर के बृहत्संहिता में, एवं शूद्रक के मृच्छकटिक में मातृकापूजन का स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (बृहत्सं. ५८.५६)। स्कंदगुप्त के विहार स्तंभलेख में मातृकापूजन का निर्देश प्राप्त है (गुप्त शिलालेख. पृ. ४७; ४९)। चालुक्य एवं कदंब राजवंश मातृकाओं के उपासक थे (इन्डि, ॲन्टि. ६.७३; ६.२५)। मालवा के विश्वकर्मन् राजा के अमात्य मयूराक्ष ने ४२३ ई. में मातृकाओं का एक मंदिर बनवाया था (गुप्त शिलालेख. पृ. ७४)।

पश्चिमी एशिया के 'द्रो' नामक प्राचीन संस्कृति में, तथा मोहेंजोदड़ो एवं हड़प्पा में स्थित सिन्धु संस्कृति में मातृकाओं की पूजा की जाती थी। उस संस्कृति के जो सिक्के प्राप्त हुए हैं, वहाँ मातृका के सामने नर अथवा पशुबलि के दृश्य चित्रित किये गये है।

इससे प्रतीत होता है कि, मातृकाओं की उपासना वैदिकेतर संस्कृति में प्राचीनतम काल से अस्तित्व में थी। आगे चल कर, वैदिक संस्कृति के उपासकों ने इस देवता

को अपनाया, एवं उसे दुर्गा अथवा देवीपूजा में संमीलित कराया।

मातृकाओं की प्रतिमा—मातृका के प्रतिमाओं की पूजा सारे भारतभर की जाती है, जहाँ इनका रूप अर्धनग्न, एवं शिरोभूषण, कण्ठहार, तथा मेखलायुक्त दिखाई देता है। जनश्रुति के अनुसार, मातृकाओं की सर्वाधिक पीड़ा दो वर्षों तक के बालकों को होती है। इसी कारण, बालक का जन्म होते ही पहले दस दिन मे मातृकाओं की पूजा की जाती है।

२. अर्यमा नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६.६. ४२)।

मातेय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मात्स्य—एक ऋषि, जो यज्ञ में अत्यधिक प्रवीण था (अ. वे. १९.३९.९)। तैत्तिरीय ब्राह्मण में इसका निर्देश मत्स्य नाम से किया गया है (तै. ब्रा. १.५.२.१)। वहाँ इसे यज्ञेषु एवं शतद्युम्न राजा का पुरोहित कहा गया है। कौनसा भी यज्ञसमारोह शुरू करना हो, तो वह सुअवसर या शुभमूहूर्त देख कर करना चाहिए, ऐसी प्रथा इसने शुरू की।

२. सरस्वती नदी के तट पर यज्ञ करनेवाला एक ब्राह्मणसमूह, जिसका अध्वर्यु ध्वसन् द्वैतवन था (श. ब्रा. १३.५.४.९; ध्वसन् द्वैतवन देखिये)।

माथव—विदेघ नामक राजा का पैतृकनाम (विदेघ देखिये)।

माथैल्य—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो वायु के अनुसार उपरिचर वसु राजा का पुत्र था। महाभारत में इसके नाम के लिए 'मत्सिल्ल' पाठभेद प्राप्त है (मत्सिल्ल देखिये)।

मादी—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

माद्रवती—अभिमन्युपुत्र परिक्षित् राजा की कन्या, जो जनमेजय द्वितीय की माता थी। इसके नाम के लिए 'मद्रवती', 'भद्रा' एवं 'भद्रावती' पाठभेद प्राप्त है (म. आ. ९०.९२)।

२. पाण्डु राजा की द्वितीय पत्नी माद्री का नामांतर (म. आश्व. ५२.५४; माद्री देखिये)।

माद्री—मद्रदेश के राजा ऋतायन की पुत्री, जो पाण्डु की द्वितीय पत्नी, तथा नकुल-सहदेव की माता थी। मद्रराज शल्य इसका भाई था। यह 'धृति' नामक देवी के अंश से उत्पन्न हुई थी (म. आ. ६१.९८)।

प्राचीन काल में रावी तथा व्यास नदी के बीच के दोआब का भाग 'मद्र' कहलाता था, जो आजकल पंजाब प्रान्त में स्थित है। उन दिनों शाकल मद्रदेश की राजधानी थी, तथा इस देश की राजकन्याओं को सामान्यतः 'माद्री' कहते थे (म. स. २९.१३)

विवाह—यह परम रूपवती थी, कारण एक तो यह देवी से उत्पन्न हुयी थी, दूसरे पंजाब प्रान्त के लोग सुन्दर होते ही है। अतएव इसकी सुन्दरता की प्रशंसा सुन कर, भीष्म ने शल्य के यहाँ जा कर इसे पाण्डु के लिए माँगा था। शल्य के यहाँ यह नियम था कि, वरपक्ष से अत्यधिक धनसम्पति लेकर लड़की दी जाति थी, अतएव भीष्म को उनकी प्रथा के अनुसार, कन्या के शुल्क के रूप में बहुतसा धन देना पड़ा था। तब उस देश की रीतिरिवाज के अनुसार, शल्य ने भी आभूषणों आदि से अलंकृत कर के माद्री को भीष्म के हाथों सौंप दिया। बाद में भीष्म ने हस्तिनापुर में आ कर शुभ दिन तथा शुभ मुहूर्त में पाण्डु से इसका विवाह किया (म. आ. १०५.५-६)।

पुत्रप्राप्ति—किंदम मुनि के द्वारा पाण्डु को शाप दिया जाने पर, पाण्डु के साथ माद्री भी वन मे रहने के लिए गयी थी (म. आ. ११०)। वहाँ ऋषियों के कथनानुसार, पाण्डु ने कुन्ती को पुत्र उत्पन्न करने की आज्ञा दी। उसने दुर्वासस् के 'आकर्षण मंत्र' के प्रभाव से तीन पुत्र उत्पन्न किये। बाद में कुंती ने अधिक पुत्र उत्पन्न करने के लिए मनाही कर दी। तब माद्री की प्रार्थनानुसार, पाण्डु ने वह मंत्र कुंती से इसे दिलाया। उस मंत्र के स्मरण से, इसे अश्विनीकुमार जैसे सुन्दर नकुल तथा सहदेव नामक पुत्र हुए (भा. ९.२२.२८; म. आ. ११५.२१)।

पाण्डु की मृत्यु—एक दिन यह मृगया खेलनेवाले पाण्डु के साथ वन में अकेली ही थी। उस समय वसंत ऋतु था, तथा मौसम भी बड़ा सुहावना एवं चित्ताकर्षक था। इसके द्वारा पहने हुए बारीक़ वस्त्र इसकी सुंदरता में और चार चाँद लगा रहे थे। ऐसे सुंदर मौसम में, इसे इस तरह सुंदर देख कर पाण्डु के मन में कामेच्छा उत्पन्न हुयी, तथा इसके हज़ार बार मना करने पर भी, पाण्डु ने इसे बाहुपाश में भर लिया। पाण्डु का ऐसा करना ही था कि, शाप के अनुसार, उसकी मृत्यु हो गयी। अपने पति पाण्डु के निधन पर, इसने न जाने कितना पश्चात्ताप किया, एवं खूब रोयी (म. आ. ११६.२५-३०)।

पाण्डु के साथ सती होने के लिए, इसने कुन्ती से बार बार प्रार्थना की। किन्तु शतशृङ्ग निवासी ऋषियों ने इसे आश्वासन देते हुए सती न होने के लिए बारबार अनुरोध किया। अन्त में कुन्ती की आज्ञा लेकर, इसने पाण्डु की मृतदेह के साथ चितारोहण किया (म. आ. ११६)।

सती होने के पूर्व इसने जो पाण्डवों को शिक्षा दी थी, वह भ्रातृत्व एवं एकता के लिए एक आदर्श शिक्षा है।

इसकी मृत्यु के उपरान्त, धृतराष्ट्र की आज्ञा से, विदुर आदि द्वारा पाण्डु तथा माद्री की अन्त्येष्टिकर्म राजोचित ढंग से किया गया, एवं भाई-बन्धुओं द्वारा इन दोनों को जलांजलि दी गयी।

मृत्योपरांत माद्री ने अपने पति के साथ महेन्द्रभवन में निवास किया (म. स्व. ४.१६; ५.१२)।

२. मद्र कन्या एवं श्रीकृष्णपत्नी लक्ष्मणा का नामान्तर (लक्ष्मणा २. देखिये)।

३. सोमवंश के क्रोष्टु राजा की पत्नी, जिसे निम्नलिखित चार पुत्र थे :--युधाजित्, देवमीढुष, वृष्णि एवं अंधक (ब्रह्मा. १४.१.३)

४. यादवराजा सात्वतपुत्र वृष्णि की पत्नी।

माधव--उत्तम मन्वन्तर के मनु का पुत्र।

२. भौत्य मनु का एक पुत्र।

३. भृगुकुल का एक गोत्रकार, जिसके लिए 'मथित' पाठभेद प्राप्त है।

४. एक राजा, जो तालध्वज नगर के विक्रम राजा का पुत्र था। इसकी चमत्कृतिपूर्ण जीवनकथा पद्म में प्राप्त है।

यह चन्द्रकला नामक क्षत्रिय स्त्री को अत्यधिक चाहता था, किंतु वह इससे विवाह न करना चाहती थी। अतएव उसने माधव से कहा, 'सुलोचना नामक एक सुंदर राजकन्या की जानकारी मै तुम्हे बताती हूँ, जो मुझसे कही अधिक सुंदर, तथा तुम्हारी जीवनसंगिनी बनने योग्य है।

प्लक्षद्वीप में--चंद्रकला के कथनानुसार, माधव अपने दिव्य अश्व की सहायता से समुद्र को लाँघ कर प्लक्षद्वीप गया, जहाँ सुलोचना रहती था। वहाँ जाकर इसे पता चला कि, उसकी शादी एक 'विद्याधर' से होने वाली है। अतएव इसने तुरन्त ही सुलोचना को एक प्रेमपत्र भेजा, एवं अपनी जानकारी बताते हुए उससे शादी की इच्छा व्यक्त की। सुलोचना ने पत्रोत्तर देकर इसे आश्वासन दिया कि, विवाह मण्डप में विद्याधर का वरण न कर के, वह इसका ही वरण करेगी।

दूसरे दिन पाणिग्रहण के समय विवाहमण्डप में इसे नींद आ गयी। यह देखकर इसके प्रचेष्ट नामक सेवक ने सुलोचना का हरण किया, तथा यह सोता ही रहा। सुलोचना ने माधव से शादी करने का प्रण किया था। अतएव वह प्रचेष्ट के यहाँ से भाग कर, सुषेण नामक राजा के यहाँ वीरवर नामक पुरुष का वेष धारण कर के नौकरी करने लगी। एक दिन वहाँ उसने एक गेंडा मारा, जो पूर्वजन्म में धर्मबुद्धि नामक राजा था (धर्मबुद्धि देखिये)।

सुलोचना से विवाह--सुलोचना के वियोग में पीड़ित होकर, एक दिन विद्याधर एवं प्रचेष्ट गंगा में प्राण देने के लिए जा रहे थे। किंतु वे दोनो सुलोचना के द्वारा बचा लिये गये। बाद में सुलोचना को ढूँढते ढूँढते एकाएक वहाँ माधव भी आ पहुँचा, जो सुलोचना से निराश होकर गंगा के तट पर आत्महत्या के लिए आया था। सुलोचना को देखकर, इसने अपनी सारी कथा उसे कह सुनायी, एवं उसके साथ विवाह किया। आगे चलकर यही माधव प्रख्यात विष्णु-भक्त बना (पद्म. क्रि. ५.६)।

५. (सो. यदु.) एक यादव राजा, जो यदु राजा का पुत्र था। धूम्रवर्ण नामक नाग की कन्या इसकी माता थी।

इसके पुत्र का नाम सत्त्वत, एवं पौत्र का नाम भीम था। उनमें से भीम राजा राम दाशरथि राजा का समकालीन था।

सुविख्यात यादव वंश की स्थापना यदु एवं उसका पुत्र माधव राजा ने की थी। यादव-वंश का वंशक्रम निम्नप्रकार है :--

माधव-सत्वत-भीम-कुश-लव-भीम-अंधक-रैवत-ऋक्ष-रैवत-विश्वगर्भ-वसु-बभ्रु-सुषेण-सभाक्ष-(ह. वं. २.३८)।

इनमें से सात्वतराज भीम राजा के राज्यकाल में मधुवन में स्थित लवणाक्ष का वध शत्रुघ्न ने किया, एवं मधुवन में मथुरा नगरी की स्थापना भीमराजा के द्वारा की गयी।

६. एक धार्मिक ब्राह्मण। एक दिन होम में बलि देने के लिए यह एक बकरा लाया। यह उसका वध करने जा रहा था कि, उस बकरे ने मानव-वाणी में अपने पूर्वजन्म की कथा बतायी, एवं इससे प्रार्थना की कि, यदि यह उसे गीता के नौवें अध्याय को सुना कर उसका वध करे, तो वह भी अपने दुःख से मुक्त हो जाये। माधव ने बकरे की प्रार्थना को मान कर उसे गीता के नौवें

अध्याय को सुनाया, जिससे उसका उद्धार हुआ (पद्म. उ. १८३)।

माधवी—नहुषकुलोत्पन्न राजा ययाति की कन्या (म. उ. ११३.४५५*)। यह अल्पायु थी। एक ब्रह्मनिष्ठ ने इसे वरदान दिया था कि, यह चाहे जितनी बार पुत्र उत्पन्न करे, लेकिन इसका यौवन सदैव एक सा रहेगा, एवं पुत्र उत्पन्न कर के भी यह चिरकुमारी रहेगी।

गालव ऋषि को दान--एक बार गुरुदक्षिणा में सहायता प्राप्त करने के लिए गालव ऋषि ययाति के पास आया। उस समय गालव ऋषि का सारा पैसा पुण्यकार्य में खर्च हो गया था, किंतु उसे अपने गुरु विश्वामित्र को दक्षिणा कहीं न कहीं से देनी ही थी। ययाति के पास धन की कमी न थी, किंतु गालव ऋषि को देने के लिए उसके पास वैसे आठ सौ अश्व न थे, जैसे कि गालव ऋषि ने विश्वामित्र के लिये ययाति से माँगे थे। अतएव उसने अपनी पुत्री गालव को दे कर कहा, 'तुम मेरी पुत्री को ले सकते हो, दूसरे राजा को इसे दे कर तुम उससे धन ही नहीं, बल्कि राज्य भी प्राप्त कर सकते हो (म. उ. ११४)।

हर्यश्व से विवाह—यह कन्या अत्यन्त सुंदर तथा सुलक्षणी थी, अतएव इसे ले कर गालव ऋषि इक्ष्वाकु-कुलोत्पन्न राजा हर्यश्व के पास गया। हर्यश्व ने पुत्र प्राप्ति के लिए अनेकानेक प्रयत्न किये थे, फिर भी वह निःसंतान था। वह माधवी को देखते ही उस पर मोहित हो गया, किंतु गालव ऋषि की माँग के अनुसार, उसके पास आठ सौ अश्व न थे, जो एक कान से कृष्ण तथा चन्द्रप्रभायुक्त हों। इसलिए उसने गालव ऋषि के सामने शर्त रक्खी, 'इस समय मुझसे केवल दो सौ अश्व ले ले, जो मेरे पास है, तथा मुझे माधवी दे दो। जब मुझे माधवी से पुत्र प्राप्त हो जायेगा, तो मैं उसे तुम्हे वापस कर दूँगा'। ऐसा कह कर, गालव ऋषि की आज्ञा से राजा हर्यश्व ने माधवी को अपने पास रख लिया।

गालव ऋषि का कार्य पूर्ण करने के उद्देश्य से माधवी ने हर्यश्व से सारी वस्तुस्थिति बताकर कहा, 'मुझे अभी चार राजाओं को और दिया जायेगा'। कालान्तर में इसने अपने गर्भ से वसुमत् (वसुमनस्) नामक पुत्र को जन्म दिया, जो आगे चलकर अयोध्या का राजा हुआ (म. उ. ११४.१७)।

काल अवधि समाप्त होते ही, गालव ऋषि इसे राजा हर्यश्व से ले गया, एवं यह भी राजवैभव के मोह से ऊब कर सहर्ष उसके साथ चलने को तैयार हो गयी। प्राप्त हुए वर के अनुसार, यह पुनः कुमारी बन गयी।

दिवोदास से विवाह--बाद में गालव माधवी को लेकर काशिराज दिवोदास राजा के पास गया। दिवोदास ने गालव को उसी प्रकार के दो सौ अश्व दिये, तथा हर्यश्व राजा के समान क़रार कर के, पुत्रोत्पन्न करने के लिए माधवी को अपने पास रख दिया। कालान्तर में माधवी से दिवोदास को 'प्रतर्दन' नामक पुत्र हुआ (म. उ. ११५.१५)। क़रार की अवधि समाप्त होते ही, गालव ऋषि दिवोदास के पास आया, तथा माधवी को वापस ले गया।

उशीनर से विवाह—अन्त में गुरुदक्षिणा की पूर्ति के लिए, गालव इसे भोज नगरी के उशीनर राजा के पास ले गया। उपरलिखित प्रकार से क़रार कर के, गालव ने उशीनर से भी दो सौ अश्व प्राप्त किये, एवं पुत्र होने की अवधि तक के लिए माधवी को राजा के पास छोड़ दिया। कालान्तर में उशीनर राजा को माधवी से 'शिवि' नामक पुत्र हुआ (म. उ. ११६.२०)।

क़रार की अवधि समाप्त होने के बाद, जब गालव माधवी को उशीनर से ले कर जा रहा था, तब मार्ग में उसे गरुड़ मिला। उसने इसे बताया, 'इसके बाद आपको और ऐसे अश्व मिलना असम्भव है। इसलिए जो छः सौ अश्व मिले है, उन्हें लेकर आप अपने गुरु विश्वामित्र को दे दें, तथा शेष दो सौ अश्वों के स्थान पर, माधवी को ही उसे प्रदान करें'।

विश्वामित्र से विवाह—गालव को यह चीज़ पसन्द आयी, और उन्होंने ऐसा ही किया। विश्वामित्र ने भी गालव की यह प्रार्थना मान ली। कालान्तर में विश्वामित्र को माधवी से अष्टक नामक पुत्र हुआ (म. उ. ११७.१८)। अष्टक के जन्मोपरान्त, माधवी को गालव के हाथ सौंप कर विश्वामित्र तप के लिए चले गया।

विश्वामित्र को गुरुदक्षिणा देने में गालव सफल रहा, अतएव वह बड़ा प्रसन्न था। जिस कन्या के कारण, उसका यह संकट दूर हुआ, उस माधवी को ययाति राजा के यहाँ पहुँचाकर, गालव भी तपश्चर्या के लिए वन में चला गया।

स्वयंवर--राजा ययाति ने माधवी का स्वयंवर निश्चित करके, इसे रथ पर बैठा कर सारे देश में घुमाया। किन्तु

इसने किसी राजपुत्र को पसन्द न करके, वन में रहकर तपस्या करना ही स्वीकार किया।

पुत्र—इस तरह माधवी को कुल चार पुत्र उत्पन्न हुए, जिनके नाम निम्नप्रकार थे:- १. वसुमनस् (वसुमत), जो इसे हर्यश्व राजा से उत्पन्न हुआ था (म. उ. ११४. १७); २. प्रतर्दन, जो इसे दिवोदास राजा से उत्पन्न हुआ था (म. उ. ११५. १५); ३. शिबि, जो इसे उशीनर राजा से उत्पन्न हुआ था (म. उ. ११६.२०); ४. अष्टक, जो इसे विश्वामित्र ऋषि से उत्पन्न हुआ था। (म. उ. ११७. १८)।

ययाति का उद्धार—आगे चल कर, इसका पिता ययाति अपने इहलोक के पुण्यकर्मों के कारण स्वर्ग को प्राप्त हुआ। किन्तु वहाँ ययाति ने देव, ऋषि एवं ब्राह्मणों का अवमान किया, जिस पाप के कारण, देवों ने उसे स्वर्ग से भ्रष्ट कराया। फिर उसने देवों की प्रार्थना की, 'मेरे पापनाशनार्थ मुझे सुजनसंगति का लाभ मिले, जिस कारण मैं स्वर्ग को पुनः प्राप्त कर सकूं'।

देवों ने ययाति की इस प्रार्थना सुन ली, एवं उसके पौत्र एवं माधवी के पुत्र वसुमनस्, प्रतर्दन, शिवि एवं अष्टक जहाँ यज्ञ कर रहे थे, उसी नैमिषारण्य में उन्हों ने ययाति को ढकेल दिया। माधवी के चारो पुत्रों ने स्वर्ग से भ्रष्ट हुए अपने मातामह का अत्यंत आदरभाव से स्वागत किया, एवं अपने यज्ञों का एवं धर्माचरण का सारा पुण्य स्वीकारने की प्रार्थना उसे की।

ययाति को पुण्यदान—इतने में माधवी वहाँ प्रविष्ट हुयी, एवं पुत्र एवं पौत्रों के पुण्य का स्वीकार करने का सर्वप्रथम अधिकार पिता एवं पितामह को ही है, ऐसी धर्माज्ञा इसने ययाति के बतायी। फिर अपने चारों पुत्रों के यज्ञकर्म का पुण्य स्वीकारने की, एवं उसके बल से स्वर्ग में पुनः प्रविष्ट होने की इसने उसे प्रार्थना की।

इस प्रकार माधवी ने गालव ऋषि को संकटमुक्त कराया, एवं अपने पुत्रों के पुण्य का दान स्वर्ग से च्युत अपने पिता को कर उसे स्वर्गप्राप्ति कराया (म. आ. ८७; म. उ. १०४–११८)।

अपनी कन्या के द्वारा ययाति का उद्धार होने की कथा मत्स्य में भी प्राप्त है। वहाँ वसुमनस्, प्रतर्दन, शिबि एवं अष्टक इन चारों का मातामह ययाति था, ऐसा निर्देश भी प्राप्त है। किन्तु मत्स्य में ययाति राजा के कथा में माधवी का निर्देश प्राप्त नहीं हैं (मत्स्य. ३५–४२)।

कालविपर्यास—उत्तम कन्या अपने कुल का, एवं पितरों का उद्धार करनेवाली होती है, इस तत्व का प्रतिपादन करने के लिए माधवी की कथा महाभारत में दी गयी है। इस कथा का प्रमुख उद्देश्य तत्त्वप्रतिपादन होने के कारण, उस में ऐतिहासिक दृष्टि से कालविपर्यास के अनेक दोष आये हैं। उस कथा में हर्यश्व, दिवोदास, उशीनर एवं विश्वामित्र समकालिन बताये गये है, जो ऐतिहासिक दृष्टि से वास्तव नही है।

२. रथध्वज राजा के पुत्र धर्मध्वज की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम तुलसी था।

३. पूरुपुत्र जनमेजय 'प्रथम' की पत्नी।

४. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.७)।

माधुकि—एक आचार्य का पैतृक नाम, जिसे मान्यता नही प्रदान की गयी थी (श. ब्रा. २.१.४.२७)।

माधुच्छंदस—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। अघमर्षण एवं जेतृ नामक आचार्यों का पैतृक नाम 'माधुच्छंदस' बताया गया है।

माध्यंदिन--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य के पंद्रह शिष्यों में से एक था। शुक्लयजुर्वेदसंहिता एवं शतपथ ब्राह्मण के काण्व एवं माध्यंदिन शाखाओं के स्वतंत्र ग्रंथ उपलब्ध है। उनमें से माध्यंदिन शाखा का, एवं उस शाखा के ग्रंथों का यह प्रवर्तक आचार्य था।

शुक्लयजुर्वेद की एक शिक्षा की रचना भी इसने की थी, जिसमें कुल चालीस श्लोक हैं। शुक्लयजुर्वेद की 'लघुमाध्यंदिन' नामक एक अन्य शिक्षा भी इसने लिखी थी, जिसमें कुल अठ्ठाईस श्लोक हैं।

माध्यंदिनायन—एक आचार्य, जो सौकरायण नामक ऋषि का शिष्य था। माध्यंदिन का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ था। इसके शिष्य का नाम जाबालायन था (बृ. उ. ४.६.२ काण्व.)।

माध्यम—वैदिक ऋषिसमुदाय का एक सांकेतिक नाम, जो ऋग्वेद के दूसरे मण्डल से ले कर सातवे मण्डल तक के रचयिता ऋषियों के लिए प्रयुक्त किया जाता है (कौ. ब्रा. १२.३; ऐ. आ. २.२.२)। 'ऋग्वेद के मध्य से संबंधित' अर्थ से इन्हे 'माध्यम' नाम प्राप्त हुआ होगा। आश्वलायन गृह्यसूत्र के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इनका निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.४.२)।

मान--अगस्त्य ऋषि का नामान्तर (ऋ. ७.३३.१३)। इसके वंशजों का निर्देश ऋग्वेद में 'मानाः' नाम से किया है, जो ऋग्वेद के सुविख्यात सूक्तद्रष्टे माने जाते हैं (ऋ. १.१६९.८)। ऋग्वेद में मान्य नामक एक ऋषि का भी निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः इसका ही पुत्र होगा। 'मान' 'मान्य', एवं 'मानाः, इन सारे ऋषियों का पैतृक नाम ऋग्वेद में 'मैत्रावरुणि' बताया गया है।

मानदन्तव्य--एक आचार्य (खा. गृ. २.१.५; गो. गृ. १.६.१)। संभवतः यह एवं 'मानुतन्तव्य' दोनो एक ही रहे होंगे।

मानव--नाभानेदिष्ठ एवं शार्यात नामक आचार्यों का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ५.१४.२; ४.३१.७; श. ब्रा. ४.१. ५.२)। मनु का वंशज इस अर्थ से यह नाम प्रयुक्त हुआ होगा। ऋग्वेद में चक्षुस् एवं नाहुष नामक सूक्त-द्रष्टाओं का पैतृक नाम 'मानव' बताया गया हैं (ऋ. ९.१०६.४-६; ९.१०१.७-९)।

२. एक पुराणवेत्ता एवं धर्मशास्त्रकार, जिसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है:--मानव उपपुराण (दे. भा. ३.३); मानव श्रौतसूत्र (मैत्रायणी शाखा); मानव वास्तुलक्षण।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. उत्तम मन्वंतर का एक देवविशेष।

मानवी--परशु एवं इडा नामक वैदिक वाङ्मय में निर्दिष्ट स्त्रियों का पैतृक नाम (श. ब्रा. १.८.१.२६; तै. सं. २.६.७.३; ऋ. १०.८६.३३)। मनु का स्त्रीवंशज इस अर्थ से यह नाम प्रयुक्त हुआ होगा।

मानस--ज्योतिर्भास नामक लोक में रहनेवाले पितरों का सामुहिक नाम।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

३. वशवर्तिन् देवों में से एक।

४. वासुकीकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५)।

५. धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१५)। इसके नाम के लिए 'मानव' पाठभेद प्राप्त है।

मानारि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मानिनी--विदूरथ राजा की कन्या, जो सूर्यवंशीय राजा की पत्नी थी (राज्यवर्धन् देखिये)।

मानुतंतव्य--ऐकादशाक्ष नामक राजा का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ५.३०)। मनुतंतु का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। शतपथ ब्राह्मण में सौमाप नामक दो आचार्यों का पैतृक नाम 'मानुतंतव्य' बताया गया है (श. ब्रा. १३.५.३.२)।

मान्दार्य मान्य--एक ऋषि का नाम, जो संभवतः अगस्त्य ऋषि का ही नामांतर है। मान का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। ऋग्वेद के अगस्त्य ऋषि के द्वारा रचित सारे सूक्तों के अंत में सूक्तकार के लिए यह उपाधि प्रयुक्त की गयी है (ऋ. १.१६५.१५;१६६. १५; १६७.११; १६८.१०)।

मान्धातृ यौवनाश्व--(सू. इ.) ऋग्वेद में निर्दिष्ट अयोध्या का एक सुविख्यात राजा, जो अश्विनों का आश्रित था (ऋ. १. ११२. १३) ऋग्वेद में इसका निर्देश अनेक बार प्राप्त है, किंतु वहाँ प्रायः सर्वत्र इसे 'मंधातृ' कहा गया है। 'मान्धातृ' का शब्दशः अर्थ 'पवित्र व्यक्ति' है, जिस आशय में इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.११२.१३; ८.३९.८; १०.२.२)। अन्य एक स्थान पर इसे अंगिरस् की भाँति पवित्र कहा गया है (ऋ. ८. ४०.१२)। लुडविग के अनुसार, यह एक राजर्षि था, एवं यह एवं नाभाक दोनों एक ही व्यक्ति थे (ऋ. ८. ३९-४२; लुडविग-ऋग्वेद अनुवाद ३. १०७)।

यह इक्ष्वाकुवंशीय युवनाश्व (द्वितीय) अथवा सौद्युम्नि राजा का पुत्र था, एवं इसकी माता का का नाम गौरी था, जो पौरव राजा मतिनार राजा की कन्या थी। इसी कारण इसे 'यौवनाश्व' पैतृकनाम, एवं 'गौरिक' मातृक नाम प्राप्त हुआ था (वायु. ८८. ६६-६७)। पुराणों में इसे विष्णु का पाँचवाँ अवतार, 'चक्रवर्तिन्' 'सम्राट' 'दानशूर धर्मात्मा' एवं सौ अश्वमेध एवं राजसूय करनेवाला बताया गया है। यह मनु वैवस्वत के वंश में बीसवी पिढ़ी में उत्पन्न हुआ था, जिस कारण इसका राज्यकाल २७४० ई. पू. माना जाता है (मनु वैवस्वत देखिये)। यह यादव राजा शशबिन्दु का सम-कालीन था, जिससे इसका आजन्म शत्रुत्व रहा था। इसने इन्द्र का आधा सिंहासन जीत लिया था।

इसने अपने राज्य के सीमावर्ती पौरव एवं कान्यकुब्ज राज्यों को जीता था, एवं उत्तरीपश्चिम में स्थित द्रुह्यु एवं आनव राजाओं को परास्त किया था। यादव राजा इसके रिश्तेदार थे, जिस कारण इसने उनपर आक्रमण नही

किया था। किन्तु पश्चिमी भारत में स्थित हैहय राजाओं को इसने जीता था।

जन्म—इसके पिता युवनाश्व राजा को सौ पत्नियाँ थी, परन्तु उनमें से किसी को भी कोई संतान न थी। अतएव वह हमेशा दुःखी रहता था। एक बार वह जंगल में घूमते घूमते एक आश्रम में आ पहुँचा। वहाँ के ऋषियों ने उसके द्वारा पुत्रप्राप्ति के लिए एक यज्ञ करवाया। यज्ञ समाप्त होने के बाद, जब सारे लोग भोजन कर रात्रि को सो रहे थे, तब युवनाश्व राजा की नींद टूटी, तथा वह अत्यधिक प्यासा हुआ। प्यास बुझाने के लिए यज्ञमंडप में रक्खे हुए हविर्भागयुक्त पेय पदार्थ (पृषदाज्य) उसने भूल से प्राशन किया, जो ऋषियों ने उसकी राजपत्नियों को गर्भवती होने के लिए रक्खा था। कालान्तर में उसके द्वारा पिया गया 'पृषदाज्य जल' इसके उदर में गर्भ का रूप धारण कर बढ़ने लगा, तब ऋषियों ने युवनाश्व राजा की कुक्षि का भेद कर उसके उदर से बालक को बाहर निकाला। यही मांधातृ है।

संगोपन एवं नामकरण--अब यह समस्या थी कि, इसका पालनपोषण कौन करे। उसी समय भगवान् इन्द्र प्रत्यक्ष प्रकट हुए, तथा उन्होंने कहा, 'यह मुझे पान करेगा (मां धाता), अर्थात इसका पोषण मैं करूँगा'। ऐसा कह कर इंद्र ने अपनी अमृतपूर्ण करांगुली इसे पीने के लिए दे दी। इसीलिए इस बालक का नाम 'मांधातृ' (मुझे चूसनेवाला) रक्खा गया (म. व. १२६; द्रो. परि. १. क्र. ८ पंक्ति. ५२८-५४१; शां. २९.७४-८६; दे. भा. ७.९-१०)।

पराक्रम--इन्द्रहस्त के पान करने के कारण, यह अत्यन्त बलवान् हुआ, एवं शीघ्रता के साथ बढ़ने लगा। बारह दिन की ही आयु में यह बारह वर्ष के लड़के के समान दिखाई देने लगा। शीघ्र ही यह सब विद्याओं का परमपंडित हो कर तप करने में तत्पर हुआ। अपने तप के सामर्थ्य पर ही इसने 'अजगव' नामक धनुष, तथा अन्य दिव्यास्त्रों को प्राप्त किया। यह बड़ा वीर एवं पराक्रमी राजा था, जिसने अंगार, मरुत्त, गय तथा बृहद्रथ आदि को युद्ध में परास्त किया था। द्रुह्यु राजवंश के बभ्रु राजा के पुत्र रिपु के साथ इसका चौदह माह तक घोर संग्राम चलता रहा। किन्तु अन्त में इसने उसे पराजित कर उसका वध किया (वायु. ९९. ८)। यही नहीं, इसने अपने बलपौरुष से रावण को भी पराजित किया था (भा. ९.६.२६-३८)।

यह इतना बहादुर था कि, एक दिन में ही इसने सारी पृथ्वी जीत ली थी (म. शां. १२४.१६), तथा जयसूचक सौ राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञ किये थे। इसके पराक्रम का वर्णन विष्णु पुराण में निम्नलिखित रूप से किया गया है--

> यावत्सूर्य उदेति स्म, यावच्च प्रतितिष्ठति।
> सर्वं तद्यौवनाश्वस्य, मांधातुः क्षेत्रमुच्यते ॥
> (विष्णु. ४.२.१९)

शूरवीर होने के साथ साथ यह दानवीर भी था। इसने बृहस्पति से गोदान के विषय में प्रश्न किया था (म. अनु. ७६.४)। यही नही, यह सदा लाखों गोदान भी करता था (म. अनु. ८१.५-६)। दस्युओं से इसने अपने प्रजा की रक्षा की थी, जिससे इसे 'त्रसदस्यु' नाम प्राप्त हुआ था। इसने एक बार दानस्वरूप अपना रक्तदान भी दिया था।

व्रतवैकल्य--प्रजापालन के प्रति इसकी कर्तव्यभावना तथा दयालुता का परिचय पद्मपुराण से मिलता है। एक बार इसके राज्य में वर्षा न हुयी, जिसके कारण सारे देश में अकाल पड़ गया। सारे देश में हाहाकार मच गया, लोग अपने नित्यकर्मों को भूल गये। वेदों का पठनपाठन बन्द हो गया। प्रजा की इस दशा को देखकर यह बड़ा दुःखी हुआ, एवं इसका कारण जानने के लिए इसने आंगिरस ऋषि से पृच्छा की। तब उसने बताया, 'तुम्हारे राज्य में एक वृषल तप कर रहा है, इसीलिए यह अकाल फैला है। जब तक उसका वध न किया जायेगा, तब तक जलवर्षा न होगी'। किन्तु इसने तपस्वी का वध करना उचित न समझा, तथा दुर्भिक्ष को समाप्त करने के लिए, पद्मा नामक एकादशी का व्रत करना प्रारंभ किया। उस व्रत के कारण, सारे राज्य में खूब वर्षा हुयी, एवं लोगों को भी अकाल से छुटकारा मिला (पद्म. उ. ५७)। पद्मपुराण में अन्यत्र कहा है कि, इसने 'वरुथिनी एकादशी' का व्रत भी किया था (पद्म. उ. ४८)।

संवाद—इसका विभिन्न ऋषिमुनियों के अतिरिक्त अन्य देवीदेवताओं के साथ भी संबंध था। इंद्र इसका परम मित्र था। सृञ्जय को समझाते हुए नारदजी ने इसकी महत्ता का वर्णन किया था (म. द्रो. ५९)। श्रीकृष्ण ने स्वयं अपने मुख से इसके गुणों का गान करते हुए, इसके यज्ञों के प्रभाव का वर्णन किया था (म. शां. २९.७४-८६)।

राजधर्म के विषय में इंद्र-रूपधारी विष्णु के साथ इसका संवाद हुआ था (म. शां. ६४-६५)। अंगिरापुत्र उतथ्य ने इसे राजधर्म के विषय में उपदेश दिया था, जो 'उतथ्य गीता' नाम से सुविख्यात है (म. शां. ९१-९२)। इसके राज्य में मांसभक्षण का निषेध था (म. अनु. ११५.६१)।

इसने वसुहोम (वसुदम) से दंडनीति के विषय में जानकारी पूछी थी (म. शां. १२२)।

मृत्यु--बाद में दैवयोग से इसके मन में अपने पराक्रम के प्रति गर्व की भावना उत्पन्न हो गयी, एवं इंद्र के आधे राज्य को प्राप्त करने की इच्छा से, इसने उसे युद्ध के लिए चुनौती दी। इंद्र ने स्वयं युद्ध न कर के इसे लवणासुर से युद्ध करने के लिए कहा। पश्चात् लवण ने इसे युद्ध में परास्त कर इसका वध किया (वा. रा. उ. ६७.२१)। आगे चल कर, यही लवण दशरथ के पुत्र शत्रुघ्न के द्वारा मारा गया था।

परिवार--मांधातृ क्षत्रिय था, किंतु अपनी तपस्या के बल पर ब्राह्मण बन गया था (वायु. ९१.११४)।

मांधातृ का विवाह यादव राजा शशबिन्दु की कन्या बिन्दुमती से हुआ था, जिसकी माता का नाम चैत्ररथी था। उससे इसे मुचुकुंद, अम्बरीष तथा पुरुकुत्स नामक पुत्र हुए थे (वायु. ८८.७०-७२)। पद्मपुराण में इसके पुरुकुत्स, धर्मसेतु, मुचुकुंद, शक्रमित्र नामक चार पुत्र दिये गये हैं (पद्म. सृ. ८)। इसे पचास कन्याएँ भी थीं, जिनका विवाह सौभरि ऋषि के साथ हुआ था। इसे कावेरी नामक एक बहन भी थी, जिसका विवाह कान्यकुब्ज देश का राजा जह्नु से हुआ था। कई ग्रंथों में कावेरी को इसकी कन्या अथवा पौत्री कहा गया है।

इसके पश्चात् इसका ज्येष्ठ पुत्र पुरुकुत्स अयोध्या देश का राजा बन गया, जिसने अपने पिता का राज्य और भी विस्तृत किया। उसने नर्मदा नदी के तट पर रहनेवाले नाग लोगों की कन्या नर्मदा से विवाह कर, मौनेय गंधर्व नामक उनके शत्रुओं को परास्त किया था। इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है कि, पुरुकुत्स के राज्य का विस्तार नर्मदा नदी के किनारे तक हुआ था (पुरुकुत्स देखिये)।

मांधातृ का तृतीय पुत्र मुचुकुंद एक पराक्रमी राजा था, जिसने नर्मदा नदी के तट पर ऋक्ष एवं पारियात्र पर्वतों के बीच एक नगरी की स्थापना की थी। वही नगरी आगे चल कर 'माहिष्मती' नाम से सुविख्यात हुयी (मुचुकुंद एवं महिष्मत् देखिये)।

मान्य--अगस्त्य ऋषि का नामान्तर (मान्दार्य मान्य देखिये)। मान का वंशज होने के कारण, अगस्त्य ऋषि को यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

मान्य मित्रावरुण--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.६७)।

मान्यमान--देवक नामक राजा का पैतृक नाम (ऋ. ८.१८.२०)। मन्यमान का पुत्र होने के कारण, देवक को यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। मान्यमान का शब्दशः अर्थ 'अभिमानी व्यक्ति' होता है।

मान्यवती--करंधमपुत्र अविक्षित् राजा की पत्नी, जो भीम राजा की कन्या थी। इसके स्वयंवर के समय, अविक्षित् राजा ने इसका हरण किया था (मार्के. ११९.१७)।

मामतेय--दीर्घतमस् ऋषि का मातृक नाम (ऋ. १.१४७.३; ऐ. ब्रा. ८. २३. १)। ममता का वंशज होने के कारण, इसे यह मातृक नाक प्राप्त हुआ होगा।

मांबुधि--कुशिककुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मायव--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक राजा (ऋ. १०.९३. १५)। लुडविग के अनुसार, यह राम का पैतृक नाम था (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद. ३.१६६)। मयु अथवा मायु का वंशज होने से, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

माया--अधर्म नामक धर्मविरोधी पुरुष की कन्या, जिसकी माता का नाम मृषा था। ब्रह्म नामक अपने भाई से इसे लोभ एवं निकृति नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (अधर्म देखिये)।

सृष्टि का निर्माण करते समय, ब्रह्मा ने इसकी मदद ली थी। उस समय निम्न सात वस्तुओं का निर्माण इसके द्वारा किया गया था :-

(१) गायत्री--जिससे आगे चल कर समस्त वेदों का निर्माण हुआ। तदोपरान्त वेदों से समस्त संसार का निर्माण हुआ।

(२) सत्यवती--जिससे आगेचल कर समस्त ओषधी एवं जीवपोषक वनस्पतियों का निर्माण हुआ।

(३) ज्ञानविद्या--जिससे आगेचल कर सारे शास्त्रों का निर्माण हुआ।

(४) लक्ष्मी--जिससे आगे चल कर वस्त्र एवं आभूषण उत्पन्न हुये।

(५) उमा--जिसने शिव की सहाय्यता ले कर समस्त शास्त्रों का भूलोक में प्रसार किया। इसी कारण उमा को ज्ञानमाता नाम प्राप्त हुआ।

(६) वर्णिका--जिसने समस्त सृष्टि के संरक्षण का भार अपने कंधे पर लिया, एवं दुष्टों का संहार किया। इसीने ही आगे चलकर मधु, कैटभ एवं रुरु नामक दैत्यों का वध किया था।

(७) धर्मद्रवा--एक नदी, जो आगे चल कर गंगा नाम से प्रसिद्ध हुयी (पद्म. सृ. ६२)।

मायामोह--विष्णु का अवतार, जो उसने दैत्यों की वंचना करने के लिए धारण किया था।

मायावती--मदन की पत्नी रति का नामांतर, जो उसने शंबरासुर के घर रहते समय धारण किया था।

शिव के द्वारा मदन का दाह होने पर, रति शंबरासुर के यहाँ रहने के लिए गयी। आगे चल कर, मदन ने श्रीकृष्ण के पुत्र प्रद्युम्न के रूप में पुनः जन्म लिया। उस समय इसने प्रद्युम्न के द्वारा शंबरासुर का वध किया, एवं प्रद्युम्न के साथ विवाह किया (भा. १०.५५.१६; विष्णु. ५.२७; प्रद्युम्न देखिये)।

मायाविन्--एक असुर, जो मयासुर का पुत्र था। इसकी माता का हेमा था। ब्रह्मांड में इसकी माता का नाम 'रंभा' दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६.२८-३०)। वालि ने इसका वध किया।

मायु--एक आचार्य, जिसका निर्देश तान्व एवं पार्थ नामक ऋषियों के साथ प्राप्त है।

मारिषा--दस प्रचेताओं की पत्नी, जो प्राचेतस दक्ष की माता थी (म. आ. ७०.५)।

इसके पिता का नाम कण्डु ऋषि था, जिसे प्रम्लोचा नामक अप्सरा से यह उत्पन्न हुयी थी (विष्णु. १.१५; भा. ४.३०)। इसका जन्म होते ही, प्रम्लोचा अप्सरा ने इसे एक पेड़ के नीचे रख दिया, एवं वह स्वयं स्वर्ग चली गयी। इस समय यह भूख के मारे रोने लगी, तब सोम ने अपनी तर्जनी से अमृत पिला कर इसे पालपोस कर बड़ा किया (विष्णु. १.१५; ब्रह्म. १७८; ह. वं. १.२)। जिस वृक्ष के नीचे यह थी, उसी वृक्ष के सहारे यह बड़ी हुयी। इसलिए इसे 'वार्क्षी' नामांतर प्राप्त हुआ (भा. ४.३०.४७; म. आ. १८८.१०*)।

मारीच--एक राक्षस, जो रावण का आश्रित था। यह सुंद राक्षस का पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम ताटका था (वा. रा. बा. २५)। ब्रह्मांड में इसे ह्राद राक्षस का पुत्र, एवं हिरण्यकशिपु का नाती बताया गया है (ब्रह्मांड. ३.५.३६)। ब्रह्मा के वर के कारण, इसे देवताओं से भी अजेयत्व प्राप्त हुआ था (वा. रा. अर. ३८)।

पूर्वजन्म--पूर्वजन्म में यह एक यक्ष था, जिसके पिता का अगस्त्य ऋषि ने वध किया था। बड़ा होने पर, इसे अगस्त्य ऋषि के इस कृत्य का ज्ञान हुआ, जिस कारण इसने उस पर आक्रमण किया। पश्चात् अगस्त्य ऋषि ने इसे अगले जन्म में राक्षस प्राप्त होने का शाप दिया (वा. रा. बा. २५)।

राम से युद्ध--इसमें दस हज़ार हाथियों का बल था। यह सुमालि राक्षस के चार अमात्यों में से एक था। अपनी माता के साथ यह मलद तथा करुप देशों में रहता था, तथा पास ही होनेवाले विश्वामित्र के यज्ञ का विध्वंस करता था। इसलिये विश्वामित्र अपने यज्ञ के संरक्षण के लिए, राम को दशरथ से ले आये। राम के बाण से इसके भाई सुबाहु का वध हुआ, एवं उसी बाण के पुच्छभाग से आहत हो कर, यह समुद्र में जा गिरा (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ५०१)। बाद में यह लंका में रावण का आश्रित बना कर रहने लगा।

जिस समय राम, लक्ष्मण तथा सीता पंचवटी में आ कर रहे थे, तब यह दो राक्षसों के साथ हिरन का रूप धारण कर, राम से अपनी शत्रुता का बदला लेने के लिए वहाँ गया। इन्हे देखकर राम ने बाण छोड़े, जिसमें इनके दोनों साथियों का वध हुआ, एवं यह वहाँ से भाग निकला (वा. रा. अर. ३८.३९)।

वध--बाद में जब रावण ने सीताहरण का विचार किया, तब उसने इसकी सहायता माँगी। परन्तु यह राम से इतना अत्यधिक घबराता था कि, 'र' शब्द से आरम्भ होनेवाले राजीव, रत्न तथा रमणी शब्द सुनकर ही धैर्य खो बैठता। इसने रावण से बारबार अनुनय विनय किया, किन्तु उसके डरवाने धमकाने में आ कर, इसे मजबूरन उसका साथ देना पड़ा (वा. रा. अर. ४०-४१)।

पंचवटी में आने के उपरांत, यह सुंदर मृग का रूप धारण कर घूमने लगा। इसे देखकर सीता ने राम से इसे मारने के लिये कहा, जिससे वह इसके मृगचर्म की सुंदर कंचुकी बना सके। सीता की इच्छा पूर्ण करने के हेतु, राम ने इसका पीछा किया, एवं इसका वध किया (वा. रा. अर. ४३-४५; म. व. २६२.१७-२१)। मरते समय इसने राम की भाँति पुकारा, 'लक्ष्मण दौडो'। इसे

सुन कर, सीता ने राम को आपत्ति में जान कर, तुरन्त लक्ष्मण को उसकी सहायतार्थ भेजा। इधर रावण ने सीता का हरण किया।

२. कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मारीचि--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

मारुत--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. नितान एवं द्युतान नामक वैदिक सूक्तद्रष्टाओं का सामूहिक नाम।

मारुतंतव्य—विश्वामित्र ऋषि के पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५४)।

मारुताशन--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. ५७)।

मारुताश्व--विदथ नामक राजा का पैतृक नाम (ऋ. ५.३३.९)। मरुताश्व का वंशज होने के कारण, उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

मार्कट--मार्कंड नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार के लिए उपलब्ध पाठभेद (मार्कंड. २. देखिये)।

मार्कटि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मार्कंड--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'मार्कट' पाठभेद प्राप्त है।

मार्कंडेय—भृगुवंश में उत्पन्न एक महामुनि, जो मृकंड अथवा मृकंडु ऋषि का पुत्र था (अग्नि. २०.१०; विष्णु. १.१०.३; नारद. १.४; भा. ४.१-४५)। मृकंड का पुत्र होने से इसे 'मार्कंडेय' अथवा 'मार्कंड' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (मत्स्य. १०३.१३-१५)।

जन्म—पार्गिटर के अनुसार, उषनस् शुक्र का पुत्र मर्क इसका पिता था। उषनस् शुक्र के सारे वंशज दानव एवं अनार्य लोगों के साथ संबंध प्रस्थापित करने के कारण विनष्ट हुए। उनमें से केवल मर्क एवं शंड इन दो पुत्रों ने आर्य लोगों से संबंध प्रस्थापित किया, जिस कारण उनकी परंपरा अबाधित रही। मर्क का पुत्र मार्कंडेय तो भृगुकुल का सुविख्यात गोत्रकार बना (मत्स्य. १९५. २०)।

अमरत्व--दीर्घायु प्राप्त करनेवाले ऋषि के रूप में मार्कंडेय का निर्देश अनेक ग्रंथों में प्राप्त है (म. व. ८६. ५;१८०.३९)। कहीं कहीं इसके अमर होने का उल्लेख भी मिलता है (म. व. १८०.४)। संभव यही है कि, अपने मार्कंडेय नामक वंशजों के कारण इसकी परंपरा अबाधित रही हो, एवं उसीका संकेत इसे अमर कह कर किया गया हो।

मार्कंडेय दसवें त्रेतायुग में उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम धूमोर्णा था (म. अनु. १४६.४)। प्रारम्भ में इसकी आयु कम थी, किन्तु बाद में यह दीर्घायु हुआ। पहले इसे केवल छः महीने की आयु प्राप्त हुयी थी। किन्तु पाँच महीने तथा चौवीस दिन बीतने के बाद, सप्तर्षियों ने इसे दर्शन देकर दीर्घायु प्राप्त करने का आशीर्वाद दिया। ब्रह्मा ने इसे ऋषिश्रेष्ठत्व तथा कल्पांत तक आयु प्रदान की, तथा पुराणों के रचने का वर प्रदान किया।

पाँचवे वर्ष में इसका उपनयन संस्कार हुआ था। सप्तर्षियों ने इसे दण्ड तथा यज्ञोपवीत दिया था (पद्म. सृ. ३३)। इसने अपना एक आश्रम स्थापित किया था, जिसकी पूर्ण जानकारी पुलस्त्य ने राम को बतायी थी (नारद. १.५)।

तपस्या—मार्कंडेय ऋषि ने अत्यधिक घोर तप किया था। यह तप छः मन्वन्तरों तक चलता रहा। इसकी तपस्या से घबरा कर, पुरंदर नामक इन्द्र ने इसकी तपस्या में विघ्न उत्पन्न करने के लिए अनेकानेक प्रयत्न किये। पुरंदर ने सर्वप्रथम वसंत का निर्माण किया; बाद में अप्सराओं एवं गंधर्वों आदि के साथ कामदेव को इसकी तपस्या भंग करने के लिए भेजा, किंतु यह अपनी तपस्या में निमग्न रहा। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर नर-नारायण, बालमुकुंदरूपी ब्रह्म, तथा स्वयं शंकर भगवान् ने इसे दर्शन दिया। शंकर ने इसे वर प्रदान करते हुए कहा, 'तुम्हारी सारी इच्छायें पूर्ण होंगी। तुम्हें अविच्छिन्न यश प्राप्त होगा। तुम त्रिकालदर्शी होगे, तुम्हें आत्मनात्मविचार का सम्यक ज्ञान होगा, तथा तुम श्रेष्ठ पुराण के कर्ता हो कर, कल्पसमाप्ति तक अजर एवं अमर होंगे (भा. १२.८-१०)। इस प्रकार शंकर ने इसे चौदह कल्पों तक की आयु प्रदान की (भा. ४.१.४५; म. व. १३०.३२)।

श्रेष्ठता—यह ब्रह्माजी की सभा में रह कर उसकी उपासना करता था (म. स. ११.१२)। ब्रह्माजी के पुष्कर क्षेत्र में हुए यज्ञ में भी यह उपस्थित था (पद्म. सृ. ३३)। इसने हजार हज़ार युगों के अंत में होनेवाले अनेक महाप्रलय के दृश्य देखे थे। ब्रह्मा को छोड़ कर संसार में इससे बड़ी आयुवाला कोई दूसरा व्यक्ति नहीं था। प्रलयकाल में जब सारी सृष्टि विनष्ट हो जाती है,

तब यह ब्रह्माजी के पास रह कर उनकी आराधना में निमग्न रहता है। प्रलयकाल के उपरांत, पुनः रची गयी सारी सृष्टि को सब से पहले यही देखता है। इसने अपनी चित्तवृत्तियों का निरोध कर, लोकगुरु ब्रह्मा की कृपा से मरीचि आदि प्रजापतियों को भी जीत लिया था।

यह भगवान् नारायण के समीप रहनेवाले भक्तों में सर्वश्रेष्ठ था। इसने सर्वव्यापक परब्रह्म की उपलब्धि के लिए, स्थानभूत हृदयकमल की कर्णिका का यौगिक-कला से उद्घाटन किया था, एवं वैराग्य तथा अभ्यास से प्राप्त हुयी दिव्यदृष्टि के द्वारा विश्वरचयिता भगवान् का अनेक बार दर्शन किया था। इसलिए सब को मारनेवाली मृत्यु, तथा शरीर को जर्जर बना देनेवाली जरा इसका स्पर्श नहीं कर सकती थी (म. व. १८६.२-११)।

इसने कल्पांत में वटवृक्ष तथा प्रलय का भी दर्शन किया था (ब्रह्म. ५२.५३)। इसने बालमुकुन्द के उदर में प्रवेश कर वहाँ ब्रह्माण्ड का दर्शन किया था। (म. व. १८८.८८-१२५)। उदर से बाहर निकलने पर, इसने बालमुकुन्द का स्तवन कर उससे वार्तालाप किया था (ब्रह्म. ५४.५६; म. व. १८६.८१-१२९)।

मयसभा में जब पाण्डवों ने प्रवेश किया था, तब यह वहाँ उपस्थित था (म. स. ४.१३)। ब्रह्मसभा में भी जब पाण्डव गये थे, तब यह वहाँ उपस्थित था (म. स. ११. १२५* पंक्ति. १)। युधिष्ठिर जब मार्कंडेय के आश्रम में गया था, तब लोमश ऋषि ने उसे मार्कंडेय का चरित्र सुनाया था (म. व.१३०)। युधिष्ठिर के वनवास के समय जब यह उससे मिलने गय था, तब वहाँ श्रीकृष्ण भी उपस्थित थे।

उपदेश—इसने पाण्डवों को धर्म का आदेश दिया था। युधिष्ठिर के द्वारा प्रश्न किये जाने पर, इसने उससे महर्षियों तथा राजर्षियों के जीवनसम्बन्धी विविध उपदेशपूर्ण कथायें सुनायी थीं। इसने युधिष्ठिर को विस्तार से बहुविधरूप से धर्मोपदेश दिया था, एवं प्रयागक्षेत्र का माहात्म्य बताया था (म. व. १७९-२२१; मत्स्य. १०३-११२)। इसने युधिष्ठिर आदि को श्रीराम का उपाख्यान, तथा सती सावित्री का चरित्र सुनाया था (म. व. २५७-२८३)। इसने भद्रतनु नामक ब्राह्मण को दान्त से उपदेश प्राप्त करने के लिए कहा था, एवं हेममाली को शाप से विमुक्त किया था (पद्म. क्रि. १७; पा. ५२)।

इसने धृतराष्ट्र को त्रिपुरवध की कथा सुनायी थी (म. क. २४)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म को देखने के लिए अन्य ऋषियों के साथ यह भी गया था (म. शां. ४७.६६*)। यह भीष्म के प्रयाणकाल के समय भी उपस्थित था (म. अनु. २६.६)।

इसने नारद से विभिन्न प्रकार के प्रश्न किये थे (म. अनु. २२.७)। नारद ने इसे चार युग तथा भार्याधर्म के बारे में बताया था (म. अनु. ५४; ५७)। युधिष्ठिर ने महाप्रस्थान से पूर्व अन्य ऋषियों के साथ इसका भी पूजन किया था (म. महा. १.३*)।

मार्कंडेय-युधिष्ठिर संवाद—महाभारत वनपर्व में 'मार्कंडेयसमस्यापर्व' नामक एक उपपर्व है, जिसमें मार्कंडेय एवं युधिष्ठिर के बीच में हुए तत्त्वज्ञानसम्बन्धी अनेकानेक संवादों का वृत्तान्त प्राप्त है (म. व. १७९-२२१)। उस पर्व में निम्नलिखित विषयों पर मार्कंडेय ने अपने विचार एवं कथासूत्रों का विवेचन किया है:—ब्राह्मणमहात्म्य एवं हैहयवृत्तान्तकथन; पृथु वैन्य के यज्ञ में हुआ अत्रि-गौतम संवाद; स्वाध्याय दानवृत्तिमहात्म्य, (१८४); वैवस्वत मनु का चरित्र एवं मत्स्योपाख्यान (१८५); प्रलयकालीन भगवत्महात्म्य (१८६-१८७); वायुप्रोक्त कलिभविष्यकथन (१८८-१८९); द्वितीय बार ब्राह्मणमहात्म्य (१९०); वृद्धतम इन्द्रद्युम्न कथा (१९१); धुंधमारआख्यान (१९२-१९५); पतिव्रताख्यान (१९६-१९७); ब्राह्मणव्याधसंवाद (१९८-२०६); आंगिरसोत्पत्ति (२०७-२२१)।

इन सारे संवादों से प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में इसका अत्यधिक सम्मान था, एवं इसके तत्त्वज्ञानसम्बन्धी विचारधारा से युधिष्ठिर आदि ज्ञानी भी प्रभावित थे।

ग्रन्थ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है:-
१. मार्कंडेयस्मृति, २. मार्कंडेयसंहिता। उसी प्रकार इसने 'मार्कंडेयस्तोत्र' नामक शिव का स्तोत्र भी किया था (C. C.)। इसने तामस पुराणों में से 'मार्कंडेय' तथा 'वाराह' नामक पुराणों की रचना की थी (भवि. प्रति. ३.२८.१३)।

परिवार—इसकी धर्मपत्नी का नाम धूमोर्णा था (म. अनु. १४६.४)। इसके पुत्र का नाम वेदशिरस् था (विष्णु १.१०.४)।

आश्रम—मार्कंडेय ऋषि का आश्रम हिमालय के उत्तर भाग में पुष्पभद्रा नदी के तट पर चित्रा नामक शिला के पास था। वहाँ इसने अत्यंत उग्र तपस्या की, जिससे भयभीत हो कर इंद्र ने इसकी तपस्या में बाधा डालने का

प्रयत्न किया। किंतु इसकी तपस्या अटूट रही। अंत में नरनारायणों ने प्रसन्न हो कर, इस पर अनुग्रह किया।

२. एक ऋषि, जो अयोध्या के दशरथ राजा के उपऋत्विजों में से एक था (वा. रा. .बा. ७.५)। राम दाशरथि राजा के आठ धर्मशास्त्रियों में से यह एक था (वा. रा. उ. ७४.४)। सीतास्वयंवर के समय यह राम के साथ मिथिला गया था (वा. रा. बा. ६९.४)। पद्म के अनुसार, इसने राम को 'अवियोगद कूप' नामक पवित्र कुआँ दिखाया था (पद्म. सृ. ३३)।

वाल्मीकि रामायण में प्रायः सर्वत्र इसका निर्देश 'दीर्घायु' नाम से प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, मार्कंडेय इसका पैतृक नाम था, एवं मृकंड का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ था।

३. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से इंद्रप्रमति ऋषि का शिष्य था। अन्य पुराणों में इसके नाम के लिए 'मांडुकेय' पाठभेद प्राप्त है (व्यास देखिये)।

मार्गणप्रिया—कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक।

मार्गपथ—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मार्गवेय--मृगवुपुत्र राम नामक आचार्य का मातृक नाम (राम मार्गवेय देखिये)।

मार्गेय--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'भार्गेय' पाठभेद प्राप्त है।

मार्जार--एक राजा, जो प्रजापतिपुत्र जांबवत् का पुत्र था। ब्रह्मांड के अनुसार, आगे चल कर, इसीसे मार्जार जाति उत्पन्न हुयी (ब्रह्मांड ३.७.३०६)।

मार्जारास्या--केसरी वानर की पत्नी। आनंद रामायण के अनुसार, इसे निर्ऋति घर्घरस्वन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (आ. रा. सार. १३)।

मार्जारि--(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार जरासंध का पौत्र, एवं सहदेव राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों के अनुसार, इसे 'सोमाधि' अथवा 'सोमापि' नामांतर भी प्राप्त थे। इसके पुत्र का नाम श्रुतश्रवस् था।

मार्तांड--एक आदित्य, जो द्वादशादित्यों में से आठवाँ माना जाता है (म. आ. ७०.१०; भा. ५.२०. ४४; ब्रह्मांड. ३.७.२७८-२८८)। महाभारत में इसे कामधेनु का पति कहा गया है (म. अनु. ११७.११)।

'मार्तांड' का शब्दशः अर्थ मृत होता है। कई अभ्यासकों के अनुसार, पृथ्वी के जिस स्थान पर सूर्य सात महिनों तक क्षितिज में रहता है, एवं आठवें माह में अस्तंगत होता है, उसी स्थान में इस आदित्य का निवास होता है।

मार्तिकावत—एक लोकसमूह, जो समुद्र के किनारे अबु पहाडी के प्रदेश में निवास करता था। परशुराम ने इस देश के क्षत्रियों का संहार किया था (म. द्रो. परि. १.८.८४७)। इस देश का सुविख्यात राजा शाल्व था, जिसका श्रीकृष्ण ने वध किया था (म. व. १५-१६; शाल्व देखिये)। भारतीय युद्ध के समय, इस देश का राजा भोज मार्तिकावत था। भोज मार्तिकावत के साथ अभिमन्यु का युद्ध हुआ था (म. द्रो. ४७.८)।

मार्तिकावतक—मार्तिकावत के राजा शाल्व का नामान्तर (म. द्रो. ४७.८)।

२. चित्ररथ गंधर्व का नामान्तर।

मार्दमर्षि—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५७)।

मार्ष्टिपिंगलि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मार्ष्टि--(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था।

मार्ष्टिवत्—(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था।

मालतिका--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.४)।

मालती--इक्ष्वाकुवंशीय शत्रुघातिन् राजा की पत्नी।

२. मद्र देश के अश्वपति राजा की पत्नी। इसके नाम के लिए 'मालवी' पाठभेद प्राप्त है (मालवी देखिये)। सत्यवान् राजा की पत्नी सावित्री इसीकी ही कन्या थी (सावित्री देखिये)।

मालय—गरुड की प्रमुख सन्तानों में से एक (म. उ. ९९.१४)। पाठभेद-'मलय'।

मालयनि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मालव—पश्चिम भारत में रहनेवाला एक लोकसमूह। नकुल ने अपने पश्चिम दिग्विजय में इनका पराजय किया था (म. स. २९.६)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय ये लोग उपस्थित थें, एवं इन्होने विपुल धनराशि युधिष्ठिर को अर्पण की थी (म. स. ३१.११; ५२.१४)।

भारतीय युद्ध में ये लोग कौरव पक्ष में शामिल थे। भीष्म की आज्ञा के अनुसार, इन लोगों ने अर्जुन से मुकाबिला किया था (म. भी. ५५.७४)। किंतु अन्त में

अर्जुन ने मालव योद्धाओं को गहरी चोट लगायी थी (म. द्रो. १८.१६)। युधिष्ठिर ने भी इन लोगों का संहार किया था (म. द्रो. १३२.२३-२५)। परशुराम ने इस देश के क्षत्रियों का संहार किया था (म. द्रो. परि. १.८. ८४५)।

सिकंदर के समय ये लोग पंजाब में रहते थे। इन्होंने एवं क्षुद्रक लोगों ने सिकंदर का काफ़ी प्रतिकार किया। किंतु अन्त में इन्हे हार खानी पडी, एवं पंजाब देश को छोड़ कर, एवं सिंधु नदी को पार कर, ये लोग राजस्थान के मार्ग से उज्जयिनि के पास आ कर रहने लगे। इन्हीके कारण, उस प्रदेश को 'मालव' नाम प्राप्त हुआ।

२. सौ क्षत्रियपुत्रों का एक समूह, जो मद्रदेश के अश्वपति राजा को मालवी नामक पत्नी से उत्पन्न हुआ था (मालवी देखिये)।

३. विदर्भ नगरी में रहनेवाला एक विष्णुभक्त ब्राह्मण (पद्म. उ. २१८)।

मालवी--नरेश अश्वपति राजा की बड़ी रानी, एवं सावित्री की माता। इसे मालव नामक सौ पुत्र उत्पन्न होने का वरदान प्राप्त हुआ था (म. व. २८१.५८)। इसके नाम के लिए 'मालती' पाठभेद भी प्राप्त है।

२. केकय राजा की पत्नी सुदेष्णा का नामांतर (म. वि. १.१९-३२)।

मालाधर--सिद्धेश्वर नामक राजा का पुत्र, जिसकी पत्नी का नाम श्यामबाला था (पद्म. ब्र. ११)।

मालावती--कुशध्वज जनक राजा की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम वेदवती था (वेदवती देखिये)।

मालि--एक राक्षस, जो सुकेश नामक राक्षस एवं देववती का पुत्र था। वसुदा नामक गंधर्वी इसकी पत्नी थी, जिससे इसे अनल, अनिल, हर एवं संपाति नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए थे। उन पुत्रों को 'मालेय' सामूहिक नाम प्राप्त था।

इसने अनेक वर्षों तक तप कर अमरत्व एवं अजेयत्व प्राप्त किया था। विश्वकर्मा ने इसे रहने के लिए लंका नगरी प्रदान की थी। अन्त में श्रीविष्णु के द्वारा इसका वध हुआ (वा. रा. उ. ५)।

मालिनी—सप्त शिशुमातृकाओं में से एक (म. व. २१७.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'बृहली'।

२. एक राक्षसकन्या, जो कुबेर की आज्ञा से विश्रवस् ऋषि के परिचर्या के लिए रही थी। विश्रवस् ऋषि से इसे विभीषण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २५९.१-८)।

३. अज्ञातवास के समय द्रौपदी से धारण किया गया नाम (म. वि. ८.१९)।

४. एक अप्सरा, जो पुष्कर एवं प्रम्लोचा नामक अप्सरा की कन्या थी (म. वि. ८.१४)। इसका विवाह रुचि राजा से हुआ था, जिससे इसे रौच्य नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। रौच्य नामक मन्वन्तर का अधिपति रौच्य वही है (मार्क. ९५.५)।

५. एक दुर्वर्तनी ब्राह्मण स्त्री। अपने दुर्वर्तन के कारण, अगले जन्म में इसे श्वानयोनि प्राप्त हुयी। आगे चल कर, वैशाख शुक्ल द्वादशी के दिन द्वादशी व्रत करने के कारण, इसे मुक्ति प्राप्त हो गयी, एवं अगले जन्म में यह उर्वशी नामक अप्सरा हुयी (स्कंद. २.७.२४)।

मालेय—चार राक्षसों का एक समूह, जो विभीषण के अमात्य का काम करता था। इनके नाम इस प्रकार थेः- अनल, अनिल, हर एवं संपाति (वा. रा. उ. ५.४३)।

माल्य—आर्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १३.१०.८)।

माल्यपिंडक—एक सर्प, जो नारद ने माल्ती को वर के रूप में प्रदान किया था (म. उ. १०१.१३)।

माल्यवत्--एक राक्षस, जो सुकेश राक्षस का ज्येष्ठ पुत्र था। इसकी माता का नाम देववती था। इसके दो छोटे भाईयों के नाम सुमालि एवं मालि थे। यह रावण का मातामह था।

आगे चल कर सुकेश के तीनों पुत्रों की शादियाँ नर्मदा नामक गंधर्वी की तीन कन्याओं से हुयीं। उनमें से सुन्दरी नामक कन्या की शादी माल्यवत् से हुयी थी।

तपस्या—अपने पिता के तपःसामर्थ्य एवं ऐश्वर्य को प्राप्त कर, यह अपने भाइयों के साथ घोर तपस्या करने लगा। शीघ्र ही इसने अपनी तपस्या से ब्रह्मदेव को प्रसन्न कर उससे वर प्राप्त किया, एवं त्रिकूट पर्वत के शिखर पर, सौ योजन लम्बी एवं वीस योजन चौड़ी सुवर्णमंडित लंका नामक नगरी प्राप्त की। पश्चात् यह सपरिवार वहाँ जा कर रहने लगा।

विष्णु से युद्ध—कालोपरांत यह तथा इसके भाई गर्व में उन्मत्त हो कर देवादि को विभिन्न प्रकार से कष्ट देने लगे। उन कष्टों से ऊब कर सारे देव शंकर के निर्देश पर विष्णु के पास गये। तब इन राक्षसों के वध की प्रतिज्ञा कर के विष्णु ने देवों को भय से मुक्त किया। जैसे ही माल्यवत् को विष्णु की यह प्रतिज्ञा ज्ञात हुयी, यह बहुत घबराया, एवं विष्णु के द्वारा की गयी प्रतिज्ञा इसने अपने भाइयों से कह

सुनायी। भाइयों ने इसको धीरज धराया, एवं देवों से युद्ध करने का निश्चय किया। इस युद्ध में, विष्णु ने अन्य देवों के साथ इससे घोर संग्राम करते हुए, इसके भाई मालि का बध किया। तब विष्णु के पराक्रम से डर कर, यह अपने भाई सुमाली के साथ पाताल लोक में जाकर रहने लगा।

लंकाप्रवेश—इधर लंका में वैश्रवण नामक कुवेर निवास करता रहा। कुछ समयोपरांत एक दिन यह अपने पाताल-पुरी से निकल कर मृत्युलोक जा रहा था कि, इसने वैश्रवण एवं उसके पिता विश्रवस् को पुष्पक विमान में बैठ कर जाते हुए देखा। उसके वैभव को देख कर यह आश्चर्यचकित हो उठा, एवं उस प्रकार के ऐश्वर्य के भोगलालसा की कामना से इसने अपनी कन्या कैकसी वैश्रवण को दी। कालोपरांत इसी कैकसी से रावण इत्यादि पुत्र हुए (सुमालि देखिये)। बाद में जब रावण लंका का राजा हुआ, तब माल्यवत् अपने भाई सुमालि तथा अपने परिवार के अन्य राक्षसों के साथ, लंकापुरी में आ कर रहने लगा (वा. रा. उ. ११)।

बाद में रावण के द्वारा सीता का हरण किया जाने पर, इसने उसे सीता को तुरन्त राम के पास लौटा देने के लिए कहा था (वा. रा. यु. ३५.९-१०)। उस समय इसने व्याकुलता से परिपूरित हो कर भावनापूर्ण उपदेश रावण को दिया था।

परिवार--इसे अपनी पत्नी सुन्दरी से वज्रमुष्टि, विरूपाक्ष, दुर्मुख, सुप्तघ्न, यज्ञकोप, मत्त, तथा उन्मत्त नामक पुत्र, तथा अनला नामक पुत्री उत्पन्न हुयी थी (वा. रा. उ. ५. ३५-३६)।

२. पुष्पदंत नामक गंधर्व का पुत्र। एक बार इन्द्रसभा में जब अनेक गंधर्व नृत्यगायन के लिए एकत्र हुए थे, तब उनमें माल्यवत् तथा चित्रसेन की नातिन पुष्पदंती उपस्थित थी। ये दोनों अत्यंत सुंदर थे, अतएव आपसी प्रेमभावना में अनुरक्त हो गये। इससे ये तालस्वर से अलग गाने लगे। इन्द्र ने इन्हें बेसुरा गाते हुए देख कर, राक्षस होने का शाप दिया। फिर ये दोनों पिशाच हो गये।

काफ़ी समय बीत जाने के उपरांत, एक बार माघ माह की दशमी के दिन इनका आपस में झगड़ा हो गया, तथा पिशाचयोनि प्राप्त होने के कारण, ये दोनों आपस में एक दूसरे को सताने लगे। बाद को इन्होंने निश्चय किया कि, इस योनि से मुक्ति प्राप्त करने के लिए, कोई भी पापाचरण से ये दूर रहेंगे।

दूसरे दिन उपवास कर के, इन लोगों ने एक पीपल के वृक्ष के नीचे बैठ कर 'रात्रिजागरण' किया, जिसके फलस्वरूप इन्हे 'जया एकादशी' का पुण्य प्राप्त हुआ। इस पुण्य के बल पर ही ये शाप से मुक्त हो सके। बाद में इन्द्र की आज्ञा से, ये दोनों पतिपत्नी बन कर सुख से रहने लगे (पद्म. उ. ४३)।

मावेल्ल--उपरिचर वसु राजा के 'मच्छिल्ल' नाम पुत्र के लिए उपलब्ध पाठभेद (मच्छिल्ल देखिये)।

मावेल्लक--एक लोकसमूह, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् के साथ अर्जुन से लड़ने के लिए उपस्थित हुआ था। संभवतः 'मच्छिल्ल' लोगों का यह नामान्तर होगा।

माषशरावय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि गण। संभवतः 'माषशरावीय ब्राह्मण' नामक ग्रंथ की रचना इन्हींके द्वारा की गयी होंगी। वह ब्राह्मण ग्रंथ के उद्धरण मात्र आज उपलब्ध है, मूल ग्रंथ नष्ट हो चुका है।

मासकृत--सुतप देवों में से एक।

माहकि--वंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक गुरु का पैतृक नाम (वं. ब्रा. २)। महक का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

माहाचमस्य-एक गुरु, जिसे 'भूर्, भुवस्, स्वर्' की त्रयी में 'महस्' संयुक्त कराने का श्रेय दिया गया है (तै. आ. १.५.१)। महाचमस् का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

माहित्थि--एक आचार्य, जो वामकक्षायण नामक ऋषि का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम कौत्स था (बृ. उ. ६.५.४ काण्व.; श. ब्रा. १०.६.५.९)। यज्ञकर्म संबंधित विधियों में यह अत्यधिक तज्ञ था, जिस कारण इसके तत्संबंधि मतों का उद्धरण शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. ६.२.२.१०; ८.६.१.१६; ९.५.१.५७)।

माहिष्मत--चंपावती नगरी का एक राजा, जिसे कुल पाँच पुत्र थे। उनमें से ज्येष्ठ पुत्र अत्यंत दुराचारी था, जिस कारण उसे 'लुंपक' नाम प्राप्त हुआ था। आगे चल कर, इसने उस पुत्र को नगर से बाहर निकाल दिया (पद्म. उ. ४)।

माहेश्वरावतार--शिव का एक अवतार (शिव देखिये)।

मिचक्रुत--रुद्रसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

मिंजिका एवं मिंजिक--रुद्र के दो अपत्य, जो श्वेत पर्वत पर उत्पन्न हुए थे (म. व. २२०.१०-१६)। अपनी संतानों के आरोग्य चाहनेवाले मातापिता इनकी उपासना करते है।

मित--(सो. पूरु.) एक राजा, जो जय राजा का पुत्र था।

२. एक मरुत् देव, जो मरुतों के पाँचवे गण में सम्मिलित था।

मितध्वज--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार धर्मध्वज जनक का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम खांडिक्य जनक था।

मिति--उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

मित्र--एक वैदिक देवता, जिसका निर्देश ऋग्वेद में प्रायः सभी जगह वरुण के साथ प्राप्त है। ऋग्वेद में इस देवता को महान् आदित्य कहा गया है, एवं इसके द्वारा मनुष्यों में एकता लाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.८२)। इससे प्रतीत होता है कि, मित्र एक सूर्यदेवता, एवं विशेषतः सूर्य से संबंधित प्रकाश की देवता है। वैदिक ग्रंथों में सभी स्थानों पर मित्र को दिन के साथ, एवं वरुण को रात्रि के साथ संबंधित किया है।

अथर्ववेद के अनुसार, मित्र प्रातःकाल के समय उन सभी वस्तुओं को अनावृत कर देता है, जिन्हें वरुण ने अच्छादित किया था (अ. वे. ९.३)। यजुर्वेदी पर मित्र को एक श्वेत, तथा वरुण को एक कृष्ण-वर्णीय प्राणि बलि अर्पित करने का निर्देश तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त है (तै. सं. २.१.७.९.; मै. सं. २.५)।

वैदिक ग्रंथों के समान अवेस्ता में भी मित्र को सौर देवता माना गया है, जहाँ इसका निर्देश 'मिथ्र' नाम से किया गया है। वैदिक ग्रंथों के भाँति अवेस्ता में भी, इसे समस्त प्राणिजाति का मित्र, एवं प्रकृति की एक हितकर शक्ति माना गया है।

२. बारह आदित्यों में से एक। इसकी माता का नाम आदिति, एवं पिता का नाम कश्यप था (म. आ. ५९.१५)। अन्य आदित्यों के साथ यह अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था। खाण्डववनदाह के समय हुए युद्ध में, इसने इन्द्र की ओर से हाथ में चक्र लेकर, अर्जुन एवं श्रीकृष्ण पर आक्रमण किया था। इसने स्कंद को सुव्रत एवं सत्यसन्ध नामक दो पार्षद प्रदान किये थे (म. श. ४४.३७)।

इसकी पत्नी का नाम रेवती था, जिससे इसे उत्सर्ग, अरिष्ट एवं पिप्पल नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ६.१८.६)।

भविष्य के अनुसार, मार्गशीर्ष माह में प्रकाशित होनेवाले सूर्य को मित्र कहते है, एवं इसके ग्यारहसौ किरण रहते है (भवि. ब्राह्म. ७८.५७)। भागवत के अनुसार यह ज्येष्ठ माह में प्रकाशित होता हैं (भा. १२.११.३५; वरुण देखिये)।

३. लकुलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

४. वसिष्ठ तथा ऊर्जा के पुत्रों में से एक।

मित्रघ्न--रावणपक्षीय एक असुर, जो राम के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ४३.२७)।

मित्रजित्--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सुवर्ण राजा का पुत्र था। भागवत, वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'अमित्रजित्,' तथा मत्स्य में इसे 'सुमित्र' कहा गया है।

मित्रज्ञ--पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र, जो पाँच देव, विनायकों में से माना जाता है (म. व. २१०.१२)।

मित्रदेव--त्रिगर्तराज सुशर्मन् राजा का भाई, जो भारतीय युद्ध में अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १८.८)।

२. रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

मित्रधर्मन्--पांचजन्य अग्नि का एक पुत्र, जो पाँच देव विनायकों में से एक माना जाता है।

मित्रबाहु--रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

मित्रभू काश्यप--एक आचार्य, जो विभांडक काश्यप नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम इंद्रभू काश्यप था (वं. ब्रा. २)।

मित्रभूति लौहित्य--एक आचार्य, जो कृष्णदत्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

२. एक आचार्य, जो विष्णु, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा मे से रोमहर्षण ऋषि का शिष्य था।

मित्रयु--(सो. नील.) एक नीलवंशीय राजा, जो दिवोदास राजा का पुत्र था। मत्स्य एवं वायु में इसे 'मित्रायु,' एवं भागवत एवं विष्णु में से इसे 'मित्रेयु' कहा गया है।

इसके पुत्र का नाम च्यवन था (गरुड. १.१४.२२)। किन्तु वायु एवं मत्स्य में इसके पुत्र का नाम 'मैत्रेय' कहा गया है। हरिवंश के अनुसार, यह एक शाखा-प्रवर्तक आचार्य था, जिससे 'मैत्रेय ब्राह्मण' एवं 'मैत्रायणी शाखा' उत्पन्न हुयी (ह. वं. १.३२)।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसकी कन्या का नाम मैत्रेयी था।

मित्रवत्—एक तपस्वी, जो सौपुर नामक नगर में रहता था। एक बार इसने शिव के मंदिर में गीता के दूसरे अध्याय का पाठ किया, जिस कारण इसके मन को पूर्णशान्ति प्राप्त हुयी।

आगे चल कर, देवशर्मा नामक एक ब्राह्मण को मनःशान्ति की इच्छा उत्पन्न हुयी। फिर मुक्तकर्मा नामक तपस्वी के कहने पर वह इसके पास आया। पश्चात् इसने देवशर्मा को भी गीता के दूसरे अध्याय का पठन करने के लिए कहा (पद्म. उ. १७६)।

२. पांचजन्य अग्नि का एक पुत्र, जो पाँच देव विनायकों में से एक माना जाता है (म. व. २१०.११)।

३. रुद्रसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

मित्रवर्चस् स्थैरकायण--एक आचार्य, जो सुप्रतीत औलुण्डय नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम ब्रह्मवृद्धि छांदोग्यमाहकि था (वं. ब्रा. १)।

'स्थिरक' का वंशज होने के कारण, इसे 'स्थैरकायण' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

मित्रवर्धन--पांचजन्य अग्नि का पुत्र, जो पाँच देव विनायकों में से एक माना जाता है (म. व. २१०.११)।

मित्रवर्मन्--त्रिगर्तराज सुशर्मन् का भाई, जो भारतीय युद्ध में अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.९)।

मित्रविंद--रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

२. एक देवता। रथन्तर नामक अग्नि को दी हुयी हवि इसे प्राप्त होती है (म. व. २१०.१९)।

मित्रविंद काश्यप--एक आचार्य, जो सुनीथ कापटव नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम केतु वाज्य था (वं. ब्रा. १)।

मित्रविंदा—अवंतीनरेश जयसेन राजा की कन्या, जो श्रीकृष्ण की आठ पटरानियों में से एक थी। इसकी माता का नाम राजाधिदेवी था, जो श्रीकृष्ण की फूफा थी। इसे विन्द एवं अनुविंद नामक दो भाई थे।

इसके स्वयंवर के समय, श्रीकृष्ण ने इसका हरण किया। श्रीकृष्ण से इसे निम्नलिखित दस पुत्र उत्पन्न हुयें थे:-वृक, हर्ष, अनिल, गृध्र, वर्धन, उन्नाद, महाश, पावन, वह्नि एवं क्षुधि (भा. १०.५८. ३०-३१; ६१.१६)।

द्वारका में इसका महल वैदूर्य मणि के समान कान्तिमान्, एवं हरे रंग का था। देवगण भी उसकी सराहना करते थे (म. स. परि. १.२१.१२६०)।

मित्रसह—इक्ष्वाकुवंशीय कल्माषपाद राजा का नामांतर।

मित्रसेन—दुर्योधन के पक्ष का एक राजा, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.२०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'मित्रदेव'।

२. रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

मित्रहन्--रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

मित्रा--मैत्रेय कौषारव नामक आचार्य की माता (मैत्रेय कौषारव देखिये)।

२. देवी उमा की अनुगामिनी सखी (म. व. २२१.२०)।

मित्रातिथि--एक राजा, जो कुरुश्रवण राजा का पिता, एवं उमश्रवस् राजा का पितामह था (ऋ. १०.३३.७)। इसकी मृत्यु के पश्चात्, कवष ऐलूष नामक ऋषि ने इसके पौत्र उमश्रवस् की सांत्वना की थी।

मित्रावरुण—'मित्र एवं वरुण' देवताओं के लिए प्रयुक्त संयुक्त नामांतर (म. श. ५३.१२; मित्र एवं वरुण देखिये)। इनका आश्रम 'कारपवनतीर्थ' के समीप था।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक प्रवर, जिनके पुत्रों का नाम अगस्त्य एवं वसिष्ठ था (भा. ६.१८.५)।

मित्रेयु--नीलवंशीय राजा मित्रयु के लिए उपलब्ध पाठभेद (मित्रयु १. देखिये)।

मिथि--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो निमिराजा के मृत देह का मंथन करने पर उत्पन्न हुआ था। मंथन से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'मिथि' अथवा 'मिथिल' नाम प्राप्त हुआ था (भा. ९.१३.१३)।

विदेह देश की राजधानी मिथिला की स्थापना इसीने की थी। इसके पुत्र का नाम उदावसु था (वायु. ८९.४-६; ब्रह्मांड. ३.६४.१-६)।

मिथिल—(सो. अज.) एक राजा, जो भरत का वंशज था। इसके पुत्र का नाम जह्नु था (म. अनु. ७.२)। महाभारत के बम्बई संस्करण में प्राप्त वंशावली में, इसके स्थान पर अजमीढ़ राजा का नाम प्राप्त है।

२. (सू. निमि.) निमिपुत्र मिथि राजा का नामान्तर।

मिथु—एक क्रूर दानव। एक समय सरस्वती नदी के किनारे, आर्ष्टिषेणपुत्र भर राजा अपने उपमन्यु नामक पुरोहित के साथ अश्वमेध यज्ञसमारोह कर रहा था। इसने भर एवं उपमन्यु इन दोनों को उठा कर पाताल में भगाया। पश्चात् उपमन्यु के देवापि नामक पुत्र ने शिव की उपासना कर उन दोनो की मुक्तता की (ब्रह्म. १२७.५६-५७)।

मिश्रकेशी--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४८)। पूरु राजा के पुत्र रौद्राश्व के साथ इसका विवाह हुआ था, जिससे इसे निम्नलिखित दस महाधनुर्धर पुत्र उत्पन्न हुए थेः--अन्वग्भानु, रुचेयु, कक्षेयु (कृकणेयु), स्थंडिलेयु, वनेयु, स्थलेयु, तेजेयु, सत्येयु, धर्मेयु (घर्मेयु), एवं संततेयु (संततेयु) (म. आ. ८९.८७३*; ८९.९-१० पाठ.)।

२. वसुदेव के भाई वत्सक राजा की पत्नी, जिससे इसे वृक आदि पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४.४३; म. आ. ५९.४८)।

मिश्री--एक नाग, जो बलराम के स्वर्गारोहण के समय, उसके स्वागतार्थ प्रभासक्षेत्र में उपस्थित था।

मीढुष--शक्र नामक आदित्य का एक पुत्र। इसकी माता का नाम पौलोमी था (पौलोमी १. देखिये)।

मीढ्वस्--(सू. नरि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार दक्ष राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कूर्च था।

मीनरथ--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो अनेनस् राजा का पुत्र था। भागवत में इसके नाम के लिए 'समरथ' पाठभेद प्राप्त है।

मुकुट--एक क्षत्रिय वंश, जिसमें 'विगाहन' नामक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था।

मुकुटा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. २३)।

मुकुंद--एक राजा, जिसकी अस्थियाँ सहजवश यमुना नदी में गिरने के कारण यह मुक्त हुआ था। (पद्म. उ. २०९-२१०)।

मुक्त--भौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

मुक्तकर्मन्--एक मुमुक्षु साधक, जो गीता के दूसरे अध्याय के पठन से मुक्त हुआ था (मित्रवत् देखिये)।

मुखकर्णी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)। इसके नाम के लिए 'सुकर्णी' पाठभेद प्राप्त है।

मुखमंडिका--शिशुग्रहस्वरूपा दिति का नामान्तर (म. व. २१९.२९)।

मुखर--एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)।

मुखसेचक--धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)। इसके नाम के लिए 'मुखमेचक' पाठभेद प्राप्त है।

मुख्य--सावर्णि मन्वन्तर का एक देवविशेष।

मुचि--एक राक्षस, जो नमुचि का छोटा भाई था। इन्द्र ने नमुचि का वध करने पर, इसने क्रुद्ध हो कर इंद्र पर आक्रमण किया। पश्चात् इंद्र ने इसका भी वध किया (पद्म. सृ. ६८)।

मुचुकुंद--(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मांधातृ राजा का तृतीय पुत्र था। राम दाशरथि के पूर्वजों में से यह इकतालिसवाँ पुरुष था। इसके नाम के लिए 'मुचकुंद' पाठभेद भी प्राप्त है (म. शां. ७५. ४)।

इसकी माता का नाम विन्दुमती था (ब्रह्मांड. ३.६३. ७२; मत्स्य. १२.३५; ब्रह्म. ७.९५)। इसने नर्मदा नदी के तट पर पारिपात्र एवं ऋक्ष पर्वतों के बीच में अपनी एक नयी राजधानी स्थापन की थी। आगे चल कर, हैहय राजा महिष्मंत ने उस नगरी को जीत लिया, एवं उसे 'माहिष्मती' नाम प्रदान किया। इससे प्रतीत होता है कि, मुचुकुंद राजा की उत्तर आयु में इक्ष्वाकु वंश की राजसत्ता काफ़ी कम हो चुकी थी। इसने 'पुरिका' नामक और एक नगरी की भी स्थापना की थी, जो विंध्य एवं ऋक्ष पर्वतों के बीच में बसी हुयी थी (ह. वं. २.३८.२; १४-२३)।

मुचुकुंद-वैश्रवण संवाद--मुचुकुंद ने अपने बाहुबल से पृथ्वी को अपने अधिकार में ला कर, उस पर राज्य स्थापित किया था। इसकी जीवनकथा एवं वैश्रवण नामक इंद्र के साथ हुआ इसके संवाद का निर्देश महाभारत में प्राप्त है, जो कुन्ती ने युधिष्ठिर को बताया था (म. उ. १३०.८-१०; शां. ७५)।

एक बार स्वबल की परीक्षा देखने के लिए इसने कुवेर पर आक्रमण कर दिया। तब कुवेर ने राक्षसों का निर्माण कर, इसकी समस्त सेना का विनाश किया। अपनी बुरी स्थिति देख कर, इसने अपना सारा दोष पुरोहितों के सर पर लादना शुरू किया। तब धर्मज्ञ वसिष्ठ ने उग्र तपश्चर्या कर राक्षसों का वध किया। उस समय कुवेर ने इससे कहा, 'तुम अपने शौर्य से मुझे युद्ध में परास्त करो। तुम ब्राह्मणों की सहायता क्यों लेते हो?' तब इसने कुवेर को तर्कपूर्ण उत्तर देते हुए कहा, 'तप तथा मंत्र का बल ब्राह्मणों के पास होता है, तथा शस्त्रविद्या क्षत्रियों के पास होती है। इस प्रकार राजा का कर्तव्य है कि, इन दोनों शक्तियों का उपयोग कर राष्ट्र का कल्याण करे'। इसके इस विवेकपूर्ण वचनों को सुन कर कुवेर ने इसे पृथ्वी का

राज्य देना चाहा, किन्तु इसने कहा, 'मैं अपने बाहुबल से पृथ्वी को जीत कर, उस पर राज्य करूंगा'।

कालयवन का वध—कालयवन नामक राक्षस एवं श्रीकृष्ण से संबंधित मुचुकुंद राजा की एक कथा पद्म, ब्रह्म, विष्णु, वायु आदि पुराणों में, एवं हरिवंश में प्राप्त है। उस कथा में इसके द्वारा कालयवन राक्षस का वध करने का निर्देश प्राप्त है। किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से यह कथा कालविपर्यस्त प्रतीत होती है ?

एक बार देवासुर संग्राम में, दैत्यों के विरुद्ध लड़ने के लिए देवों ने मुचुकुंद की सहाय्यता ली थी। उस युद्ध में देवों की ओर से लड़ कर इसने दैत्यों को पराजित किया, एवं इस तरह देवों की रक्षा की।

इसकी वीरता से प्रसन्न हो कर, देवों ने इसे वर माँगने के लिए कहा। किन्तु उस समय अत्यधिक थका होने के कारण, यह निद्रित अवस्था में था। अतएव इसने वरदान माँगा, 'मैं सुख की नींद सोऊ, तथा यदि कोई मुझे उस नींद मे जगा दे, तो वह मेरी दृष्टि से जल कर खाक हो जाये'। इसके सिवाय, इसने श्रीविष्णु के दर्शन की भी इच्छा प्रकट की।

इस प्रकार पर्वत की गुफा में यह काफ़ी वर्षों तक निद्रा का सुख लेता रहा। इसी बीच एक घटना घटी। कालयवन ने कृष्ण को मारने के लिए उसका पीछा किया। कृष्ण भागता हुआ उसी गुफा में आया, जहाँ पर यह सोया हुआ था। इसके ऊपर अपना उत्तरीय डाल कर, कृष्ण स्वयं छिप गया। पीछा करता हुआ कालयवन गुफा में आया, तथा इसे कृष्ण समझ कर, लात के प्रहार से उसने इसे जगाया। मुचुकुंद बड़े क्रोध से उठा, तथा जैसे ही इसने कालयवन को देखा, वह जलकर वही भस्म हो गया।

कृष्णदर्शन--बाद में कृष्ण ने इसे दर्शन दे कर, राज्य की ओर जाने को कहा, तथा वर प्रदान किया, 'तुम समस्त प्राणियों के मित्र, तथा श्रेष्ठ ब्राह्मण बनोगे, तथा उसके उपरांत मुक्ति प्राप्त कर मेरी शरण मे आओगे'। श्रीकृष्ण के द्वारा पाये अशीर्वचनों से तुष्ट हो कर, यह अपनी नगरी आया। वहाँ इसने देखा कि, इसके राज्य को किसी दूसरे ने ले लिया है, एवं सभी मानव निम्न विचारधारा एवं प्रवृत्ति के हो गये है। यह देखते ही यह समझ गया कि, कलियुग का प्रारंभ हो गया है।

यह अपने नगर को छोड़ कर हिमालय के बदरिकाश्रम में जा कर तप करने लगा। वहाँ कुछ दिनों तक तपश्चर्या करने के उपरांत, राजर्षि मुचुकुंद को विष्णुपद की प्राप्ति हुयी (भा. १०.५१; विष्णु. ५.२३; ब्रह्म. १९६; ह. वं. १.१२.९; २.५७)।

संवाद--यह उन राजाओं में था, जो सायंप्रातः-स्मरणीय हैं (म. अनु. १६५.५४)। इसने परशुराम से शरणागत की रक्षा के विषय में प्रश्न किया था, और उन्होंने इसे उचित उत्तर दे कर, कपोत की कथा बता कर, इसकी जिज्ञासा शान्त की थी (म. शां. १४१-१४५)। राजा काम्बोज से इसे खड्ग की प्राप्ति हुयी थी, जिसे बाद को इसने मरुत्त को प्रदान किया (म. शां १६०.७५) गोदानमहिमा के विषय में इसका निर्देश आदरपूर्वक आता है (म. अनु. ७६.२५)। यही नहीं, अपने जीवनकाल में इसने मांस भक्षण का भी निषेध कर रक्खा था।

परिवार--इसके पुरुकुत्स और अंबरीष नामक दो भाई थे (भा. ९.६.३८; वायु. ८८.७२; विष्णु. ४.२.२०)। इसकी बहनों की संख्या ५० थीं, जिनका वरण सौभरि ऋषि ने किया था (गरुड. १.१३८.२५)।

२. एक राजा, जिसकी कन्या का नाम चन्द्रभागा, तथा दामाद का नाम शोभन था (पद्म. उ. ६०)।

मुंज--एक ऋषि, जो द्वैतवन में पाण्डवों के साथ उपस्थित था।

मुंज सामश्रवस—एक राजा, जो समश्रवस् का वंशज था (जै. उ. ब्रा. ३.५.२; ष. ब्रा. ४.१)।

मुंजकेतु--युधिष्ठिर की सभा का एक राजा (म. स. ४.१८)।

मुंजकेश—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की अथर्वन्‌शिष्यपरंपरा में से सैंधवायन नामक ऋषि का शिष्य था। अन्य पुराणों में इसे 'बभ्रु' का ही नामांतर बताया गया है। इसके नाम पर पाँच ग्रंथ उपलब्ध हैं।

२. एक क्षत्रिय राजा, जो निचंद्र नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२६)। भारतीय युद्ध में पाण्डवों की ओर से इसे रणनिमंत्रण भेजा गया था (म. उ. ४.१४)।

मुंड--एक असुर, जो शुंभ एवं निशुंभ का सेनापति था। इसका निर्देश चण्ड नामक असुर के साथ प्रायः सर्वत्र प्राप्त हैं (चंडमुंड देखिये)।

२. भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार 'मंड' के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद।

३. कौरव दल का एक मुंडदेशीय योद्धा (म. भी. ५२.९ पाठ.)।

मुंडवेदांग--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२. १५)।

मुंडी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. १७)। इसके नाम के लिए 'मंडोदरी' पाठभेद प्राप्त है।

मुंडिभ औदन्य (औदन्यव)-एक आचार्य (श. ब्रा. १३.३.५.४)। उदन्य का पुत्र अथवा वंशज होने से इसे 'औदन्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (तै. ब्रा. ३.९.१५. ३)। सेंट पीटर्सबर्ग कोश के अनुसार, ओदन का पुत्र होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ था।

अश्वमेध यज्ञ के समय, यज्ञकर्ता पुरुष के हाथों भ्रूणहत्या आदि के जो पातक होते है, उनसे मुक्तता मिलने के लिए इसने प्रायश्चित्तविधि बताया है, जो अवभृत स्नान के पहले किया जाता है।

मुद--एक ऋषि, जो स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्म ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम तुष्टि था।

मुदावती—विदूरथ राजा की कन्या, जिसका हरण कुजृंभ नामक राक्षस ने किया था। भलंदन राजा के पुत्र वत्सप्रि ने कुजृंभ का वध किया, एवं इसे छुड़ा कर इससे विवाह किया। इसे 'सुनंदा' नामान्तर भी प्राप्त था (मार्क. ११३.६४)।

मुदावर्त--हैहयवंश का एक कुलांगार राजा (म. उ. ७२.१३)।

मुदित--राम की सेना का एक वानर।

मुदिता—सह नामक अग्नि की भार्या (म. व. २१२. १)।

मुद्गर--तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)।

मुद्गरपर्णक--एक कश्यपवंशीय नाग, जिसका विवाह मातलि की कन्या गुणकेशी के साथ करने का प्रस्ताव नारद ने किया था (म. उ. १०१.१३)।

मुद्गरपिंडक—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू का पुत्र था।

मुद्गल—एक वैदिक राजा, जिसकी पत्नी का नाम मुद्गलानी था (ऋ. १०.१०२)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसकी पत्नी का नाम इंद्रसेना दिया गया है।

चोरों का पीछा—यह एवं इसकी पत्नी के संबंध में जो सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त है, उसका अर्थ अत्यंत अस्पष्ट है। षड्गुरुशिष्य के अनुसार, एक समय चोरों ने इसकी सारी गायें एवं बैल चुरा लिए, केवल एक बूढ़ा बैल बच गया। पश्चात् उसे ही केवल गाड़ी को जोत कर इसने चोरों का पीछा किया, एवं एक लकड़ी का 'मुद्गल' (द्रुघण) को फेंक कर, भागनेवाले चोरों को पकड़ लिया (ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी पृष्ठ १५८)। यास्क के अनुसार, इसने दो बैलों की अपेक्षा बैल एवं द्रुघण गाडी को जोत कर, चोरों का पीछा किया था (नि. ९.२३-२४)।

पिशेल के अनुसार, रथ की एक दौड़ में अपनी पत्नी की सहायता से मुद्गल विजयी हुआ था, जिसका निर्देश ऋग्वेद के इस सूक्त किया गया है (वेदिशे स्टूडियेन १. १२४)।

२. (सो. अज.) एक राजा, जो भर्म्याश्व या भद्राश्व राजा का पुत्र था। यह एवं इसके वंशज पहले क्षत्रिय थे, किन्तु बाद को ब्राह्मण बन गये थे। इसका वंश इसी के नाम से 'मुद्गल वंश' कहलाया जाता है, एवं इसके वंश में उत्पन्न क्षत्रिय ब्राह्मण 'मुद्गल' अथवा 'मौद्गल' ब्राह्मण कहलाते है (भा. ९.२१; वायु. ९९.१९८; ब्रह्मवै. ३.४३.९७; मत्स्य. ५०.३-६; ह. वं. १.३२. ६८; मैत्रेय सोम देखिये)।

३. एक आचार्य, जिसका निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (अ. वे. ४.२९,६; आश्व. श्रौ. १२.१२; बृहद्दे. ६. ४६)। इसीके वंश में निम्नलिखित आचार्य उत्पन्न हुये, जो 'मौद्गल्य' कहलाते है :—नाक, शतबलाक्ष, एवं लांगलायन।

४. वेदविद्या में पारंगत एक आचार्य, जो जनमेजय के सर्पसत्र में सदस्य था। इसे 'मौद्गल्य' नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २४६.२७)।

यह कुरुक्षेत्र में शिलोञ्छवृत्ति से जीवन-निर्वाह करता था। एक समय दुर्वास ऋषि इसके आश्रम में आये, एवं उसने इसकी सत्वपरीक्षा लेनी चाही। किन्तु यह अपने सत्व से अटल रहा, जिस कारण प्रसन्न हो कर, दुर्वास ने इसे स्वर्गप्राप्ति का आशीर्वचन दिया। किन्तु स्वर्ग अशाश्वत होने के कारण, इसने स्वर्ग में जाने से इन्कार कर दिया (म. व. २४६-२४७)।

शतद्युम्न नामक राजा ने इसे एक सुवर्णमय भवन प्रदान किया था (म. शां. २२६.३२; अनु. १३७. २१)।

५. अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, जो दत्त आत्रेय का पुत्र था।

६. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, मंत्रकार एवं प्रवर।

७. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से देवमित्र ऋषि का शिष्य था। इसके नाम के लिए 'मौद्गल' पाठभेद प्राप्त है।

मुक्तिकोपनिषद् में इसका निर्देश उपलब्ध है (मु. उ. १.३५)। इसके नाम पर एक स्मृति भी प्राप्त है (C. C.)।

८. चोल देश के राजा का पुरोहित, जिसने अपने राजा के लिए विष्णुयाग नामक यज्ञ किया था। इसके द्वारा किया गया यह याग निष्फल शापित हुआ, जिस कारण चोल राजा ने आत्महत्त्या की, एवं इसने अपनी शिखा उखाड डाली। तब से मुद्गल वंश के ब्राह्मण शिखा नही रखते है (पद्म. उ. १११; स्कंद. २.४.२७)।

इसकी स्त्री का नाम भागिरथी था, जिससे इसे मौद्गल्य नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (मौद्गल्य २. देखिये)।

पद्म में 'द्वादशीव्रत महात्म्य' कथन करने के लिए, मुद्गल नामक एक ब्राह्मण की कथा दी गयी है (पद्म. उ. ६६)। स्कंद में क्षीरकुंड का माहात्म्य कथन करने के लिए, मुद्गल की एक कथा दी गयी है (स्कंद. १.३.३७)। संभवतः इन सारी कथाओं में निर्दिष्ट मुद्गल एक ही व्यक्ति होगा।

९. एक गणेशभक्त ब्राह्मण, जिसने संभवतः गणेश-जीवन पर आधारित 'मुद्गल पुराण' की रचना की थी।

मुद्गला--एक ब्रह्मवादिनी स्त्री।

मुद्गलानी--मुद्गल नामक राजा की पत्नी, जिसे इंद्रसेना नालायनी नामान्तर भी प्राप्त था (म. व. ११४. २४; मुद्गल देखिये)। भांडारकर संहिता में इसके नाम के लिए 'नाडायनी' पाठभेद प्राप्त है।

मुद्गलायन--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मुनि--कश्यप ऋषि की पत्नी, जो प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या थी। इसकी माता का नाम असिक्नी था। इसे कश्यप ऋषि से भीमसेन आदि सोलह देवगंधर्व पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ५९.४१-४३; कश्यप देखिये)।

२. अहन् नामक वसु का एक पुत्र (म. आ. ६७. २३)।

३. (सो. पूरु.) कुरु राजा के पाँच पुत्रों में से एक, जिसकी माता का नाम वाहिनी था। इसे निम्नलिखित चार भाई थे:--अश्ववान्, अभिष्यन्त, चैत्ररथ एवं जनमेजय (म. आ. ८८.५०)।

४. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

५. दस विश्वेदेवों में से एक।

६. वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

७. प्रसूत देवों में से एक।

८. अमिताभ देवों में से एक।

९. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो वायु के अनुसार प्रद्युम्न राजा का पुत्र था। विष्णु एवं भागवत में इसे 'शुचि' कहा गया है।

१०. एक राजा, जो द्युतिमत् राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका देश (वर्ष) इसी के नाम से सुविख्यात था (मार्कं. ५.२४)।

११. एक ऋषिविशेष। महाभारत एवं पुराणों में ऋषि एवं मुनियों का निर्देश अनेक वार आता है, उनमें से 'मुनि' शब्द की व्याख्या महाभारत में इसप्रकार दी गयी है:—

> मौनाद्धि स मुनिर्भवति, नारण्यवसनान्मुनिः।
>
> (म. उ. ४३.३५)।

(कोई भी साधक मौनव्रत का पालन करने से मुनि बनता है, केवल वन में रहने से नही)।

उपनिषदों के अनुसार, अध्ययन, यज्ञ, व्रत एवं श्रद्धा से जो ब्रह्म का ज्ञान प्राप्त करता है, उसे मुनि कहा गया है (बृ. उ. ३.४.१; ४.४.२५; तै. आ. २. २०)।

सन्तान एवं दक्षिणा की प्राप्ति आदि पार्थिव विचारों का आचरण करनेवाले व्यक्तियों को प्राचीन ग्रंथों में पुरोहित कहा गया है।

मुनिवीर्य—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३१)।

मुनिशर्मन्--एक विष्णुभक्त ब्राह्मण। इसने पिशाच-योनि में प्रविष्ट हुए निम्नलिखित व्यक्तियों का उद्धार किया था:--वारिवाहन, चन्द्रशर्मा, वेदशर्मा, विदुर, एवं नंद (पद्म. पा. ९४)।

मुमुचु--दक्षिण दिशा में रहनेवाला एक ऋषि (म. अनु. १६५.३९)।

मुर--एक दैत्य, जो ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न हुए तालजंघ नामक दैत्य का पुत्र था। इसकी राजधानी चंद्रवती नगरी में थी। इसके नाम के लिए 'मुरु' पाठभेद प्राप्त है।

वध—ब्रह्मा के अंश से उत्पन्न होने के कारण, इसने समस्त देवों का ही नही, बल्कि साक्षात् श्रीविष्णु का भी पराजय किया। इससे घबरा कर, श्रीविष्णु ने रणभूमि से पलायन किया, एवं वह बद्रिकाश्रम की सिंहावती नामक गुँफा में योगमाया का आश्रय ले कर सो गया। किन्तु मुर

उसका पीछा करता हुआ वहाँ भी पहुँच गया। पश्चात् श्रीविष्णु ने अपनी योगमाया से एक देवी का निर्माण किया, जिसके द्वारा मुर का वध हुआ।

मुर का वध करनेवाले देवी पर श्रीविष्णु अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उन्होंने उसे वर प्रदान किया, 'आज से तुम्हारा नाम 'एकादशी' रहेगा, एवं समस्त पापों का नाश करने का सामर्थ्य तुम्हे प्राप्त होगा' (पद्म. उ. ३६. ५०-८०)।

२. एक पंचमुखी राक्षस, जो नरकासुर का सेनापति था। इसे निम्नलिखित सात पुत्र थे:--ताम्र, अन्तरिक्ष, श्रवण, विभावसु, वसु, नभस्वत् एवं अरुण (भा. १०.५९.३-१०)।

इसने नरकासुर के प्राग्ज्योतिषपुर के राज्य के सीमा पर छः हजार पाश लगाये थे, जिनके किनारों पर छूरे लगाये थे। उन पाशों को इसके नाम से 'मौरव' पाश कहते थे। श्रीकृष्ण ने उन पाशों को अपने सुदर्शन चक्र से तोड़ कर, इसका एवं इसके सात पुत्रों का वध किया (म. स. परि. १.२१.१००६))

३. एक यवन राजा, जो जरासंध का मांडलिक था (म. स. १३.१३)। इसकी कन्या का नाम मौर्वी कामकटंकटा था, जो घटोत्कच को विवाह में दी गयी थी (घटोत्कच देखिये)।

४. एक राक्षस, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। शिव की तपस्या कर, इसने उससे वर प्राप्त किया था कि, अपना हाथ यह जिसके हृदय पर रखेगा वह तत्काल मृत होगा।

श्वेतद्वीप में इसका एवं श्रीकृष्ण का युद्ध हुआ, जिसमें इसका हाथ इसीके हृदय पर रखने के लिए कृष्ण ने इसे विवश किया, एवं इसका वध किया (वामन. ६०-६१)। इसका वध करने के कारण, कृष्णरूपधारी श्रीविष्णु को 'मुरारि' नाम प्राप्त हुआ।

मुरु--मुर राक्षस के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (मुर. १.२. ३. देखिये)।

मुष्कवत्--इंद्र नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का विशेषण।

मुष्टिक--वसिष्ठपुत्र 'महोदय' का नामांतर। विश्वामित्र के शाप के कारण, महोदय को एवं उसके भाईयों को निषाद बनना पड़ा, जिस समय उन्हे यह नाम प्राप्त हुआ था (वा. रा. बा. ५९.२०-२१; ६०.१)।

२. कंससभा का एक मल्ल, जो बलराम के द्वारा मारा गया था (भा. १०.४४.२४)।

मुसल--विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५३)।

मुहूर्त--एक देवसमूह, जो धर्मऋषि एवं मुहूर्ता के पुत्र थे।

मुहूर्ता--धर्मऋषि की पत्नी, जो प्राचेतस दक्ष की कन्याओं में से एक थी। मुहूर्त नामक देवसमूह इसी के ही पुत्र थे (भा. ६.६.४-९)।

मूक--हिरण्यकशिपु के वंश का एक राक्षस, जो सुंद एवं ताटका का पुत्र था।

२. तक्षक वंश का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.८)।

३. एक चाण्डाल, जो अत्यंत मातृभक्त एवं पितृभक्त था। नरोत्तम नामक एक ब्राह्मण इसके पास उपदेशप्राप्ति के लिए आया था (पद्म. सृ. ५०; नरोत्तम देखिये)।

४. एक दानव, जो इंद्रकील पर्वत पर रहता था। उस पर्वत पर तपस्या करने के लिए आये अर्जुन को, इसने वराहरूप धारण कर काफ़ी त्रस्त किया था, जिस कारण अर्जुन ने इसका वध किया था (म. व. ४०.७-३३)।

शिवपुराण के अनुसार, इसीके ही कारण किरातरूपधारी शंकर एवं अर्जुन का युद्ध हुआ था। एक समय, यह वराह रूप धारण कर घुमता था, जब किरात एवं अर्जुन दोनों ने ही इसे बाण मार कर विद्ध किया। तदोपरान्त इस वराह का वध किसने किया, इस संबंध में किरात एवं अर्जुन के बीच वाद-विवाद हुआ, जिस कारण सुविख्यात 'किरातार्जुननीय' युद्ध हुआ (शिव. शत. ४१)।

मूचीप (मूवीप)--एक बर्बर जाति, जो संभवतः 'मूतिब' का पाठभेद है (सां. श्रौ. १२.२६-६)।

मूजवंत--एक जाति, जिसका निर्देश महावृष, गंधार एवं बह्लिक लोगों के साथ प्राप्त है (अ. वे. ५.२२. ५)। संभवतः ये सारी जातियाँ समाज से बहिष्कृत थी, जिस कारण ज्वर को इन लोगों के प्रदेश मे जाने की प्रार्थना की गयी है। एक दूरस्थ लोगों के रूप में इनका निर्देश यजुर्वेद संहिताओं में भी प्राप्त है (तै. सं. १.८; का. सं. ९.७)।

काश्मीर की दक्षिणपश्चिमी निचली पहडीयों को मूजवंत पर्वत कहा जाता था। संभव है, उसी पर्वत के नाम से इन लोगों को 'मूजवंत' नाम प्राप्त हुआ होगा। बाद के महाकाव्य में मूजवंत पर्वत को हिमालय के अंतर्गत एक पर्वत बताया गया है।

ऋग्वेद में सोम को 'मौजवंत' (मूजवंत पर्वत से प्राप्त) कहा गया है (ऋ. १०.३४.१)।

मूढ--एक राक्षस, जिसका ऋषिका नामक उपासिका के लिए शिव नें वध किया था (शिव. कोटि. ७)।

मूतिव--एक बर्बर जाति, जो विश्वमित्र की जाति-बहिष्कृत संतानों में से एक थी (ऐ. ब्रा. ७.१८.२)। इनके नाम के लिए 'मूचीप' अथवा 'मूवीप' पाठभेद भी प्राप्त है (सां. श्रौ. १५.२६.६)।

मूर्तरय--(सो. अमा.) कान्यकुब्ज देश का एक राजा, जो कुश राजा का पुत्र था (भा. ९.१५.४)। ब्रह्म में इसे 'मूर्तिमत्', एवं विष्णु में इसे 'अमूर्तरयस्' कहा गया है (ब्रह्म. १०.३३; अमूर्तरयस् देखिये)। इसने धर्मारण्य नामक नगर बसाया था (वा. रा. बा. ३२.२)।

मूर्ति--प्राचेतस दक्ष की सोलह कन्याओं में से एक, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। यह नर एवं नारायण की माता थी (भा. ४.१.५२)।

२. स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक था।

३. स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

४. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

मूर्तिमत्--मूर्तरय नामक राजा के नाम के लिए उपलब्ध पाठभेद (मूर्तरय देखिये)।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार अन्तिनार राजा का पुत्र था।

मूर्धन्--एक देव, जो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था।

मूर्धन्वत् आंगिरस (वामदेव्य)--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.८८)।

मूल--सोम की पत्नियों में से एक।

मूलक--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो नारीकवच नाम से सुविख्यात था। भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह अश्मक राजा का पुत्र था। परशुराम के डर से, यह स्त्रियों में छिपा रहने के लिए विवश हुआ। इस कारण इसे 'नारीकवच' नाम प्राप्त हुआ।

ऐतिहासिक दृष्टि से, अश्मक एवं मूलक राजाओं से परशुराम काफ़ी पूर्वकालीन माना जाता है। इक्ष्वाकुवंशीय कल्माषपाद राजा के पश्चात् अयोध्या का राज्य काफ़ी कमजोर हुआ। इसी के कारण, मूलक राजा का संवर्धन काफ़ी गुप्तता से किया गया होगा, जिसका संकेत इसके 'नारीकवच' नाम के जनश्रुति में प्राप्त है।

इसके पुत्र का नाम दशरथ था, जिससे आगे चल कर इक्ष्वाकुवंश का विस्तार हुआ!

२. एक राक्षस, जो कुंभकर्ण का पुत्र था। इसका जन्म मूल नक्षत्र में होने के कारण, कुंभकर्ण ने इसे अशुभ मान कर फेंक दिया था। किन्तु मधुमक्खियों ने इसे शहद पिला कर बड़ा किया।

बड़ा होने पर यह अत्यंत बलवान् हुआ, एवं समस्त पृथ्वी को त्रस्त करने लगा। इसी कारण सीता ने राम के द्वारा इसका वध करवाया (आ. रा. राज्य. ५-६)।

मूलचारिन्--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लौगाक्षि नामक ऋषि का शिष्य था।

मूलमित्र गोभिल--एक आचार्य, जो वत्समित्र गोभिल का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वरुणमित्र गोभिल था (वं. ब्रा. ३)।

मूलहर--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मूषकाद (मूषिकाद)--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था। इंद्रसारथी मातलि को नारद ने इसका परिचय कराया था (म. उ. १०१.१४)।

मृकंड (मृकण्डु)--स्वायंभुव मन्वन्तर का एक ऋषि, जो धाता ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम आयति था। इसकी पत्नी का नाम मनस्विनी था, जिससे इसे मार्कंडेय नामक सुविख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ४.१.४३-४४; ब्रह्मांड. २.१-६; मार्क. ४९.२०)।

विष्णु, नारद, वायु एवं मार्कंडेय में इसके नाम के लिए 'मृकंडु' पाठभेद प्राप्त है (विष्णु. १.१०; वायु. २८.५; नारद. १.४)। इसने एक 'अयुत युग' तक शालिग्रामतीर्थ पर तपस्या की थी।

मृक्तवाह द्वित आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१८; द्वित देखिये)।

मृग--सोम की पत्नियों में से एक।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसके नाम के लिए 'भृत' पाठभेद प्राप्त है।

मृगकेतु--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मृगमंदा--पुलह ऋषि की पत्नी, जो कश्यप एवं क्रोधा की कन्याओं में से एक थी। इससे रीछ आदि प्राणी उत्पन्न हुए (म. आ. ६०.६०)।

मृगय--एक दानव, जिसे इंद्र ने श्रुतर्वन् आर्क्ष राजा की रक्षा के लिए परास्त किया था (ऋ. १०.४९.५)।

२. कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मृगवती--कृतवर्मा राजा की कन्या, जो पूर्वजन्म में अलंबुसा नामक देवस्त्री थी (अलंबुसा देखिये)।

मृगव्याध--ग्यारह रुद्रों में से एक, जो ब्रह्माजी के आत्मज स्थाणु का पुत्र था। यह आकाश में मृग नामक नक्षत्र के रूप में दिखाई देता है (ऐ. ब्रा. ३.३३)।

मृगी—पुलह ऋषि की एक पत्नी, जो कश्यप एवं क्रोधा की कन्याओं में से एक थी। संसार के समस्त मृग इसीके ही संतान माने जाते हैं।

मृगेंद्रस्वातिकर्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार स्कंदस्वाति राजा का पुत्र था। इसने तीन वर्षों तक राज्य किया था।

मृतपस्—दानवों के सुविख्यात दस कुलों में से एक (म. आ. ५९.२८)।

मृत्यु--एक स्त्रीदेवता, जो ब्रह्मा के द्वारा जगत्संहार के लिए उत्पन्न की गयी थी। ऋग्वेद एवं महाभारतादि ग्रंथों में निर्दिष्ट यमदेवता से इसका काफी साम्य है। ऋग्वेद में कई स्थानों पर इसे यम से समीकृत किया गया है (ऋ. १.१६५)। अथर्ववेद में मृत्यु को यम का दूत कहा गया है (अ. वे. ५.३०)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र मृत्यु को मनुष्यों का, एवं यम को पितरों का अधिपति कहा गया है (अ. वे. ५.२४)। यम के भाँति, इसे भी समस्त प्राणियों का नाशक माना गया है (यम देखिये)।

ब्रह्मा से संवाद—इसकी उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्मा ने इसे जगत्क्षय करने के लिए कहा। ब्रह्मा के इस आज्ञा को सुन कर, यह रोदन करने लगी, एवं इसने उसकी प्रार्थना की, 'मृत्यु से प्राणिमात्र को अत्यंत दुःख होता है। अतः यह कार्य मैं करना नही चाहती हूँ'। उस पर ब्रह्मा ने इसे कहा, 'जगत्संहार का प्रत्यक्ष काम रोग करेंगे। उस संहार का तुम्हे केवल निमित्त बनना है। उत्पत्ति की तरह मृत्यु भी हर एक प्राणिमात्र के लिए आवश्यक है, एवं वही कार्य तुम्हे करना है' (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति ६७–२१५; शां. २४९–२५०)।

सनत्सुजातआख्यान—महाभारत के 'सनत्सुजातीय' नामक आख्यान में, मृत्यु के संबंध में तात्विक विवेचन प्राप्त है। उस आख्यान में धृतराष्ट्र सनत्सुजात नामक ऋषि से प्रश्न करता है, 'देव एवं असुर ब्रह्मचर्य से मृत्यु पर विजय पा सकते है, इस प्रकार तुम्हारा कहना है। फिर भी मृत्यु समस्त प्राणिजातियों के लिए अटल दिखाई देता है। इस मृत्यु पर विजय पानी हो, तो क्या करना चाहिये'? इस प्रश्न पर सनत्सुजात जवाब देते है:—

'धीरास्तु धैर्येण तरन्ति मृत्युम्।

(धैर्यशील लोग अपने धैर्य से मृत्यु पर विजय पाते है)
(म. उ. ४२.१२)।

मृत्यु से बचने एवं दीर्घायु प्राप्त करने के लिए, अथर्ववेद में अनेक प्रकार के अभिचार दिये गये है (अ. वे. ६२)।

महाभारत में, मृत्यु एवं इक्ष्वाकु के बीच हुआ संवाद प्राप्त है (म. शां. १९२)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र इसे कर्माधीन एवं परतंत्र कहा गया है (म. अनु. १.७४)।

२. समस्त प्राणियोंका नाश करनेवाला एक पुरुषदेवता, जो अधर्म एवं निर्ऋति के तीन पुत्रों में से एक था। यह समस्त लोगों का अंतक है, इसी कारण इसे कोई पत्नी, या पुत्र न थे (म. आ. ६०.५३; ५४९*)।

अर्जुनक नामक व्याध एवं सर्प से इसका संवाद हुआ था (म. अनु. १.५०–६७)। इसने नचिकेतस् को ब्रह्मविद्या सिखायी थी (क. उ. ३.१६; ६.१८)।

३. एक आचार्य, जो प्रजापति नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वायु था (वं. ब्रा. २)।

४. कलि एवं दुरुक्ति की कन्याओं में से एक।

५. एक व्यास (व्यास देखिये)।

६. वेन नामक सुविख्यात राजा का मातामह, जिसकी मानसकन्या का नाम सुनीथा था (वेन. २ देखिये)।

मृद—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार श्वफल्क राजा का पुत्र था।

मृदु—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार नृपंजय राजा का पुत्र था।

मृदुर—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो वायु एवं भागवत के अनुसार श्वफल्क राजा का पुत्र था।

मृदवित्--एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार श्वफल्क राजा का पुत्र था।

मृध्रवाच्--दस्यु लोगों का नामान्तर। मृध्रवाच का शब्दशः अर्थ 'शत्रु की भाषा बोलनेवाला' होता है, एवं इसी अर्थ से दस्युओं के लिए इस शब्द का प्रयोग किया गया है (दस्यु देखिये)।

मृलिक—एक देव, जो स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित् देवों में से एक था।

मृळिक वासिष्ठ--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७. २५-२७; १०.१५०)।

मृषा--अधर्म की पत्नी, जिसे दम्भ एवं माया नामक दो सन्तानें थी (भा. ४.८.२)।

मेकल—एक लोकसमूह, जो पहले क्षत्रिय था, किन्तु ब्राह्मणों के साथ ईर्ष्या करने से नीच हुआ (म. अनु. ३५.१७-१८)। भारतीय युद्ध में ये लोग कोसलनरेश बृहद्बल के साथ उपस्थित थे, एवं भीष्म की रक्षा करते थे (म. भी. ४७.१३)।

२. (भविष्य.) एक राजवंश, जो वायु के अनुसार पट्टमित्र राजा के पश्चात् उत्पन्न हुआ था।

मेघ—तारकासुर के पक्ष का एक असुर।

२. स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

३. (भविष्य.) एक राजवंश, जो कोमल नामक नगरी में राज्य करता था। ब्रह्मांड के अनुसार इस वंश में नौ राजा, एवं वायु के अनुसार सात राजा थे (नल देखिये)।

मेघकर्णा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२६)।

मेघजाति—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार पुरूरवस् राजा का पुत्र था।

मेघनाद—रावणपुत्र 'इंद्रजित्' का नामांतर (इंद्रजित् १. देखिये)।

२. घटोत्कचपुत्र मेघवर्ण' का नामांतर (मेघवर्ण १. देखिये)।

३. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

मेघनिनाद—घटोत्कच का पुत्र 'मेघवर्ण' का नामांतर (मेघवर्ण १. देखिये)।

२. रावणपुत्र 'इंद्रजित्' का नामांतर (इंद्रजित् १. देखिये)।

मेघपृष्ठ--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो घृतपृष्ठ राजा का पुत्र था।

मेघमाला—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

मेघमालिन्—खर राक्षस का एक अमात्य।

२. स्कंद का एक पार्षद, जो उसे मेरु के द्वारा प्रदान किया गया था। दूसरे पार्षद का नाम 'कांचन' था (म. श. ४४.४३)।

मेघवत्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

मेघवर्ण--घटोत्कच का पुत्र, जिसे 'मेघनाद' एवं 'मेघनिनाद' नामांतर प्राप्त थे। पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ के समय, यह अश्वरक्षणार्थ अर्जुन के साथ उपस्थित था।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

मेघवर्णा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)। पाठभेद -'एकचक्रा'।

मेघवासस्—वरुण की सभा का एक असुर (म. स. ९.१४)।

मेघवाह—जैगीषव्य नामक शिवावतार का एक शिष्य।

मेघवाहन--जरासंध का अनुयायी एक नृप (म. स. १३.१२)।

२. एक दैत्य, जो विष्णु के पदप्रहार से मृत हुआ (स्कंद. ७.१.२४)।

मेघवाहिनी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)। पाठभेद-'मेघवासिनी'।

मेघवेग—कौरव पक्ष का एक वीर, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४८.१६)।

मेघशर्मन्—एक सूर्यभक्त ब्राह्मण, जिसने सूर्य का जाप कर शन्तनु के राज्य में पर्जन्यवृष्टि करायी (भवि. प्रति. ४.८)।

मेघसंधि--(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजकुमार, जो जरासंध का पौत्र, एवं सहदेव राजा का पुत्र था। पुराणों में इसके 'मार्जारि', 'सोमाधि' एवं 'सोमापि' आदि नामांतर प्राप्त हैं।

अपने पिता सहदेव के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.७)। पाण्डवों के अश्वमेध यज्ञ का अश्व इसने रोका था, एवं अर्जुन से युद्ध भी किया था। किंतु इस युद्ध में अर्जुन ने इसे पराजित किया (म. आश्व. ८३)।

मेघस्वना--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.८)।

मेघस्वाति—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार चिबीलक राजा का, विष्णु के अनुसार दिवीलक राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार अपीतक राजा का पुत्र था।

मेघहन्तृ--सुमेधस् देवों में से एक।

मेघहास--राहु का एक पुत्र। अपने पिता का श्रीविष्णु के द्वारा शिरच्छेद हुआ, यह सुन कर इसने गौतमी नदी के तट पर घोर तपस्या की। इस तपस्या से,

इसने अपने पिता को आकाश की ग्रहमाला में स्थान, एवं स्वयं के लिए 'नैर्ऋतताधिपत्व' प्राप्त किया (ब्रह्म. १४२)।

मेचक—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न 'सेचक' नामक सर्प का नामान्तर (सेचक देखिये)।

मेद—ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ।

मेदिनी—पृथ्वी का एक नाम। भगवान् विष्णु के द्वारा मधु एवं कैटभ नामक दो दैत्यों का वध होने पर, उनकी लाशें जल में डूब कर एक हो गयी, एवं उन्हीके मेद से सारी पृथ्वी आच्छादित हों गयी। इसी कारण पृथ्वी को 'मेदिनी' नाम प्राप्त हुआ (मधुकैटभ देखिये)।

मेदोहन—भीषण नामक राक्षस का पुरोहित।

मेध--एक यज्ञकर्ता आचार्य, जिसका निर्देश कण्व एवं दीर्घनीथ लोगों के साथ प्राप्त है (ऋ. ८.५०.१०)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रियव्रत राजा का पुत्र था (मार्के. ५०.१६)।

मेधज--सुमेधस् देवों में से एक।

मेधस्--स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

२. सुमेधस् देवों में से एक।

मेधा--दक्ष प्रजापति की कन्या एवं धर्म ऋषि की पत्नी। इसके पुत्र का नाम स्मृति था।

मेधातिथि—(स्वा. प्रिय.) शाकद्वीप का एक सुविख्यात राजा, जों प्रियव्रत एवं बर्हिष्मती के पुत्रों में से एक था। इसे निम्नलिखित सात पुत्र थे :—पुरोजव, मनोजव, पवमान, धूम्रानीक, चित्ररेफ, बहुरूप, एवं विश्वाधार। अपने दधिसमुद्र से वेष्टित शाकद्वीप के राज्य के सात विभाग कर, इसने अपने उपरनिर्दिष्ट पुत्रों में बाँट दिये (भा. ५.१.२०-२५)।

मार्कंडेय के अनुसार, यह प्लक्षद्वीप का राजा था, एवं इसने उस द्वीप के सात भाग कर, अपने निम्नलिखित भाईयों में बाँट दिये थे :—शाक्रमव, शिशिर, सुखोदय, आनंद, शिव, क्षेमक एवं ध्रुव। आगे चल कर प्लक्षद्वीप के ये सात भाग इसके भाईयों के सात नाम से सुविख्यात हुयें (मार्के. २९-३१)।

२. एक ऋषि, जो वसिष्ठ की अरुन्धती नामक पत्नी का पिता था। इसका आश्रम चन्द्रभागा नदी के तट पर था। इसने ज्योतिष्टोम नामक यज्ञ किया था (कालि. २२)।

३. वैवस्वत मन्वन्तर का सत्रहवाँ व्यास।

४. एक प्राचीन महर्षि, जिसका पिता कण्व पूरब के सप्तर्षियों में से एक था (म. शां. २०१.२६)।

महाभारत के अनुसार, यह एक दिव्य महर्षि था, एवं इसने वानप्रस्थाश्रम का स्वीकार कर, स्वर्ग-प्राप्ति की थी (म. शां. २३६.१५)। उपरिचर वसु राजा के यज्ञ का यह एक सदस्य था (म. शां. ३२३.७)। यह इंद्रसभा का भी सदस्य था (म. स. ७.१५)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से यह मिलने के लिये आया था, एवं युधिष्ठिर के द्वारा यह पूजित हुआ था (म. अनु. २६. ३-९)।

५. सुमेधस् देवों में से एक।

६. एक ऋषि, जो परिक्षित राजा की मृत्यु के समय उपस्थित था (भा. १.१९.१०)।

७. दक्षसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

मेधातिथि काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ.१. १२.२३; ८.१.३-२९; २.४१-४२; ९२)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसका निर्देश 'मेध्यातिथि काण्व' नाम से प्राप्त है (ऋ. १.३६.१०)। इसने स्वयं को 'काण्व मेधातिथि' कहलाया है (ऋ. ८.२०.४०)।

वैदिकऋषि--यह कण्व का वंशज, एवं प्रसिद्ध वैदिक ऋषि था। ऋग्वेद के अनुसार, इंद्र इसके पास एक मेष के रूप में आया था (ऋ. ८.२.४०)। यही पुराकथा सुविख्यात 'सुब्रह्मण्य मंत्र' में भी निहित है, जिसमें इन्द्र को 'मेधातिथि का मेष' कहा गया है, एवं जिसका पाठन यज्ञमंडप में सोम को ले आते समय पुरोहित करते है (जै. ब्रा. २.७९; श. ब्रा. ३.३.४.१८)।

पंचविंश ब्राह्मण में, इसके एवं वत्स ऋषि के दरम्यान हुए वादसंवाद का निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसने उसे हीन-कुलत्व का लांच्छन लगाया था। किन्तु वत्स ने अग्निपरीक्षा के द्वारा, अपने कुल की श्रेष्ठता साबित की थी (पं. ब्रा. १४.६.६)।

यह विभिन्दुकियों के यज्ञ का बृहस्पति था, जिन्होंने इसे विपुल गायें प्रदान की थी (जै. ब्रा. ३.२३३)। आसंग राजा ने भी इसे विपुल धन प्रदान किया था। अतः इसने उसकी स्तुति की थी (ऋ. ८.२.४१-४२)। अथर्ववेद में इसका उल्लेख अनेक ऋषियों के साथ प्राप्त हैं (अ. वे. ४.२९.६)।

काण्वशाखा—आंगिरस गोत्र के लोगों में से 'काण्व' अथवा 'काण्वायन' गोत्र के आदिपुरुष मेधातिथि, एवं इसके पिता कण्व माने जाते है। वायु, मत्स्य, विष्णु एवं गरुड

के अनुसार, सुविख्यात पौरव राजा अजमीढ को कण्व-नामक एक पुत्र था, जिसका पुत्र मेधातिथि था। आगे चल कर, इसी मेधातिथि से काण्वायन ब्राह्मण उत्पन्न हुए (मत्स्य. ४९.४६-४७; वायु. ९९.१६९-१७०)।

इसी 'काण्वायन' गोत्र में निम्नलिखित वैदिक सूक्तद्रष्टा आचार्य उत्पन्न हुए थे:—प्रगाथ काण्व (ऋ. ८.६५.१२ बृहद्दे. ६.३५-३९); पृषध्र काण्व, जो दस्यवेवृक का समकालीन था (ऋ. ८.५६.१-२); देवातिथि काण्व (ऋ. ८.४.१७); वत्स काण्व (ऋ. ८.६.४७); सध्वंस काण्व (ऋ. ८.८.४)।

मेधातिथि गौतम—एक ऋषि, जिसकी पत्नी का नाम अहल्या, एवं पुत्र का नाम चिरकारिन् था (चिरकारिन् देखिये)।

मेधाविन्—एक उद्दण्ड ऋषिपुत्र, जो बालधि ऋषि का पुत्र था। इसकी आयु पर्वतों पर निर्भर थी, इसलिए इसे 'पर्वतायु' भी कहते थे। धनुषाक्ष नामक मुनि ने इसकी आयु के निमित्तभूत पर्वतों को भैंसों से विदीर्ण करा दिया, जिस कारण इसकी मृत्यु हुयी (म. व.१३४; बालधि देखिये)।

२. एक ब्राह्मण बालक, जिसने अपने पिता को संसार की क्षणभंगुरता बता कर मोक्ष एवं धर्म की ओर प्रेरित किया था (म. शां. १६९)। यही कथा मार्कंडेय में अधिक विस्तृत रूप में प्राप्त है (मार्क. १०)।

बौद्धधर्मीय 'धम्मपद' में, एव जैनधर्मीय 'उत्तराध्यायन सूत्र' में यही कथा कुछ अलग ढँग से प्राप्त है, जहाँ इसे राजकुमार मृगपुत्र कहा गया है (धम्म. ४. ४७-४८; उत्तराध्यायन. १४.२१-२३)। इससे प्रतीत होता है कि, तत्कालीन समाज में प्रचलित एक ही लोककथा के आधार पर, इन तीनों कथाओं की रचना की गयी हैं। इनमें से महाभारत में प्राप्त कथा सर्वाधिक सुयोग्य प्रतीत होती है।

३. (सो. कुरु. भविष्य.) एक कुरुवंशीय राजा, जो विष्णु, वायु एवं भागवत के अनुसार सुनय राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार सुतपस् राजा का पुत्र था।

४. च्यवन ऋषि का एक पुत्र, जिसकी कथा 'पापमोचनी एकादशी' का माहात्म्य बताने के लिए पद्म में दी गयी है।

पापमोचनी एकादशी—एक बार चैत्ररथ नामक वन में इसकी मंजुघोषा नामक अप्सरा से भेंट हुयी। उसके रूप-यौवन से यह मोहित हुआ, एवं अपनी तपस्या छोड़ कर, यह उसीके साथ रहने लगा।

इस तरह अनेक साल बीत जाने पर मंजुघोषा ने इसे समय की कल्पना दी। फिर अपने तपःक्षय के विचार से यह विव्हल हो उठा, एवं इसने मंजुघोषा को पिशाच बनने का शाप दिया। उसके द्वारा दया की याचना की जाने पर, इसने उःशाप दिया, 'चैत्र माह के कृष्णपक्ष की पापमोचनी एकादशी का व्रत करने पर तुम्हें मुक्ति प्राप्त होगी।'

आगे चल कर, अपने पिता के कहने पर इसने भी उसी एकादशी का व्रत किया, जिस कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुयी (पद्म. उ. ४६)।

मेधाविनी—कुलिंद राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम चंद्रहास था।

मेध्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५३-५६; ५७-५८)। ऋग्वेद के वालखिल्य सूक्त में इसका मेध्य एवं मातरिश्वन् के साथ निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८. ५२.२)।

२. स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

मेध्यातिथि काण्व—मेधातिथि काण्व नामक वैदिक ऋषि का नामान्तर (मेधातिथि काण्व देखिये)। ऋग्वेद में इसे वैदिक सूक्तद्रष्टा बताया गया है (ऋ. ८.३; ३३; ९.४१-४३)।

मेनका—स्वर्गलोक की एक श्रेष्ठ अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी। इसकी गणना छः प्रधान अप्सराओं में की जाती थी (म. आ. ६८. ६७)। अर्जुन के जन्मोत्सव में, एवं उसके स्वागत-समारोह में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५३; व. ४४.२९)।

ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में इसे वृषणश्व की पुत्री अथवा कन्या कहा गया है (ऋ. १.५१.१३; श. ब्रा. ३.३.४.१८)। उन्ही ग्रंथों में वृषणश्व की एक उपाधि 'मेन' दी गयी है, जिस कारण इसे मेनका नाम प्राप्त हुआ होगा (ष. ब्रा. १.१)।

विवाह—इसे ऊर्णायु गंधर्व की पत्नी कहा गया है। गंधर्वराज विश्वावसु से इसे प्रमद्वरा नामक कन्या उत्पन्न हुयी थी। स्थूलकेश ऋषि के आश्रम में प्रमद्वरा को जन्म दे कर, इसने उसे वहीं त्याग दिया (म. आ. ८.६-८)।

इसके लावण्य से पृषत् राजा मोहित हुआ था, जिससे इसे द्रुपद नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

विश्वामित्र की तपस्या में बाधा डालने के लिए, इंद्र ने इसे उसके पास भेजा दिया था। इसने विश्वामित्र को मोहित कर, उसका तपोभंग किया। उससे इसे शकुन्तला नामक कन्या उत्पन्न हुयी। इसके अतिरिक्त, इसके वध्र्यश्व नामक एक पति का भी निर्देश प्राप्त है।

२. पितृकन्या मेना का नामान्तर।

३. पितृकन्या मेना की एक कन्या।

मेना—एक पितृकन्या, जो आप्य नामक पितरों की कन्या, एवं हिमवत् की पत्नी थी। कई ग्रंथों में इसे वैराज नामक पितरों की मानसकन्या कहा गया है।

इसे मैनाक तथा क्रौंच नामक दो पुत्र, एवं अपर्णा, एकपर्णा, एकपाताला एवं मेनका नामक चार कन्याएँ थीं (भा. ४७; ह. वं. १.१८.११–१५; मार्के. ५०.१६; मत्स्य. १३; पितर देखिये)।

मेरु—एक पर्वत, जिसे निम्नलिखित नौ कन्याएँ थी:—मेरुदेवी, प्रतिरूपा, उग्रदंष्ट्री, लता, रम्या, श्यामा, नारी, भद्रा, एवं देववीति। मेरु की इन नौ कन्याओं के विवाह सुविख्यात सम्राट आग्नीध्र के नौ पुत्रों के साथ हुए थे (भा. ५.२.२३; आग्नीध्र देखिये)।

भागवत में इसके आयति एवं नियति नामक और दो कन्याओं का निर्देश प्राप्त है, जिनके विवाह क्रमशः धातृ एवं विधातृ से हुए थे (भा. ४.१.४४)।

मेरुदेवी—मेरुपर्वत की एक कन्या, जिसका विवाह आग्नीध्र राजा का पुत्र नाभि राजा से हुआ था। इसके पुत्र का नाम ऋषभदेव था (भा. १.३.१३; ५.४.२)।

मेरुसावर्णि अथवा **मेरुसावर्ण**—एक ऋषि, जिसने युधिष्ठिर को हिमालय पर्वत पर धर्म एवं ज्ञान का उपदेश दिया था (म. स. ६९.१२)। यह अत्यंत तपस्वी, जितेंद्रिय एवं त्रैलोक्य में विख्यात था (म. अनु. १५०. ४४–४५)।

२. दक्षकन्या सुव्रता के चार पुत्रों का सामूहिक नाम (वायु. १००.४२)। इस समूह में निम्नलिखित चार पुत्र शामिल थे, जो नौवें, दसवें, ग्यारहवें एवं बारहवें मन्वन्तर के अधिपति 'मनु' कहलाते है:—दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि एवं रुद्रसावर्णि (मार्के. ५०)।

इन्होंने मेरुपर्वत पर तपस्या की थी, जिस कारण इन्हें मन्वन्तरों का अधिपतित्व प्राप्त हो गया (ब्रह्मांड. १.२४)।

३. मत्स्य के अनुसार, दसवें मन्वन्तर का अधिपति मनु।

४. पद्म के अनुसार, ग्यारहवें मन्वन्तर का अधिपति मनु।

मेष—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५९)।

मेषकिरीटकायन—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मेषप—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

मेषहृत्—गरुड के पुत्रों में से एक।

मैत्रावरुण अथवा **मैत्रावरुणि**—वसिष्ठ एवं अगस्त्य ऋषियों का नामांतर (वसिष्ठ देखिये)।

मैत्रि—एक ऋषि, जो 'मैत्रि उपनिषद' का प्रवर्तक माना जाता है। इसकी माता का नाम मित्रा था (मै. उ. २.२.२)।

मैत्रि उपनिषद—'मैत्रि उपनिषद' नामक सुविख्यात ग्रंथ का कर्ता इसे मानते है। विचार एवं शब्दसंपत्ति इन दोनों दृष्टि से, यह उपनिषद अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस ग्रंथ में सात अध्याय हैं, जिसमें से पहले चार काफ़ी पूर्वकालीन हैं।

इस ग्रंथ के प्रारंभ में बताया गया है कि, एक बार बृहद्रथ राजा शाकायन्य ऋषि के पास आत्मज्ञान के हेतु गया। उस समय शाकायन्य ऋषि ने अपने गुरु मैत्रि ऋषि का तत्त्व उसे समझाया। वही 'मैत्रि उपनिषद' है।

इस उपनिषद में अंतरात्मा को मानवी शरीर का चालक कहा गया है, एवं उसीकी प्रेरणा से मानवी शरीर कुम्हार के चक्र की भाँति घूमता है, ऐसा कहा गया है। आत्मा के सचेतनत्व का 'मैत्रि उपनिषद' का यह सिद्धांत प्लेटो के सिद्धान्त से मिलता जुलता है।

इस ग्रंथ में मानवी शरीर का वर्णन करते समय, उसे एक रथ कहा गया है, जिसके अश्व कर्मेंद्रियों से बने है, एवं ज्ञानेंद्रिय को उसकी बागडोर, मानवी मन को उसका सारथी, एवं देहस्वभाव को उसका चाबुक (सचेतक) कहा गया है (मै. उ. २.९)।

इस उपनिषद में सात्विक, राजस एवं तामस गुणों का जो वर्णन प्राप्त है, वह भगवद्गीता से साम्य रखता हैं।

मैत्री—दक्ष की तेरह कन्याओं में से एक, जो स्वायंभुव मन्वन्तर के धर्मऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम प्रसाद था।

मैत्रेय—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

२. ग्लाव एवं बक दाल्भ्य नामक आचार्यों का पैतृक नाम (छां. उ. १.१२.१; गो. ब्रा. १.१.३१; अ. वे. ११०)।

मैत्रेय कौशारव—एक सुविख्यात आचार्य एवं तत्वज्ञानी। ऐतरेय ब्राह्मण में इसे 'कौशारव' नामक आचार्य का पैतृक अथवा मातृक नाम बताया गया है, एवं इसके द्वारा सुत्वन् कैरिशिय राजा को 'ब्राह्मण परिमर' विद्या प्रदान की जाने की कथा दी गयी है (ऐ. ब्रा. ८.२८.१८)।

नाम--पाणिनि के अनुसार, यह मित्रेयु नामक आचार्य का पुत्र था, जिस कारण इसे 'मैत्रेय' पैतृक नाम प्राप्त हुआ (पा. सू. ६.४.१७४; ७.३.२)। छांदोग्य उपनिषद के अनुसार, यह किसी मित्रा नामक स्त्री का पुत्र था, जिस कारण इसे 'मैत्रेय' यह मातृक नाम प्राप्त हुआ था (छां. उ. १.१२.१)।

भागवत में इसे कुषारव एवं मित्रा का पुत्र कहा गया हैं, जिस कारण इसे 'कौषारव' अथवा 'कौषारवि' पैतृक उपाधि प्राप्त हुयी होगी (भा. ३.४.२६; ३६; ५. १७)।

युधिष्ठिर की मयसभा में भी यह उपस्थित था (म. स. ४.८)।

दुर्योधन को शाप—जिस समय पांडव वनवास में थे, उस समय व्यास के आदेशानुसार, यह धृतराष्ट्र एवं दुर्योधन के पास उन्हें पाण्डवों के बल-पौरुष का ज्ञान कराने के लिए गया था। इसने दुर्योधन को बार बार समझाया, एवं अनुरोध किया, 'तुम पाण्डवों से द्रोह मत करो'। किन्तु दुर्योधन ने हँसते हुए इसकी खिल्ली उड़ाई, एवं जाँघ ठोकते हुए इसके द्वारा दिये गये उपदेश का अनादर किया। तब इसने क्रोधावेश में दुर्योधन को शाप दिया, 'तुम्हारी यह जंघा भीम की गदा के द्वारा भग्न होगी। यदि अब भी तुम पाण्डवों से मित्रता स्थापित करने को तैयार हो, तो मेरी यह शापवाणी व्यर्थ हो सकती है, अन्यथा नहीं' (म. व. ११.३२)।

व्यास-मैत्रेय संवाद--मैत्रेय धार्मिय प्रवृत्ति का ऋषि था, एवं ऋषि मुनियों के सत्संग के कारण, यह ज्ञानी, दानी एवं वेदमार्ग का अनुसरण करनेवाला हुआ था। यह एकान्त में रहना विशेष पसंद करता था। एक बार वाराणसी में यह गुप्तरूप से एग स्वैरिणी के घर में रहता था। यकायक श्री व्यास ने वहाँ आ कर इसे दर्शन दिया। मैत्रेय व्यास को देख कर अति प्रसन्न हुआ, एवं इसने उसकी विधिवत् पूजा की। पश्चात् इसने व्यास से विज्ञान, ज्ञान एवं तप के संबंध नानाविध प्रश्न किये, एवं व्यास ने उन प्रश्नों के यथोचित जवाब दे कर इसे आत्मज्ञान कराया। विद्या, ज्ञान, एवं तप का ज्ञान करानेवाला यह 'व्यास-मैत्रेय संवाद' महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. १२०-१२२)

विदुर-मैत्रेय-संवाद—श्रीकृष्ण ने जिस समय उद्धव को उपदेश दिया था, उस समय मैत्रेय भी वहाँ उपस्थित था। श्रीकृष्ण की इच्छा थी कि, इस उपदेश के समय तत्वज्ञानी विदुर भी उपस्थित होता तो अच्छा था। किंतु विदुर उन दिनों तीर्थयात्रा के लिए बाहर गया था। तीर्थयात्रा के उपरांत विदुर ने कृष्ण के उस उपदेश को सुनना चाहा, जिसे उसने उद्धव को दिया था। किन्तु विदुर के लौटने तक कृष्ण का निर्वाण हो चुका था।

उस उपदेश को सुनने तथा जानने की इच्छा से, विदुर ऊद्धव के पास गया, लेकिन उद्धव ने उसे मैत्रेय के पास भेज कर कहा, 'मैत्रेय परम ज्ञानी है। कृष्ण की वाणी का कथन वही कर सकता है'। तब विदुर मैत्रेय के पास आया। मैत्रेय ने विदुर को कृष्ण का उपदेश सुनाया। इस उपदेश के अन्तर्गत 'कर्दमदेवहुति-संवाद,' 'ध्रुवचरित्र' तथा 'दक्षयज्ञ' आदि की कथाओं का वर्णन तत्त्वज्ञान के दृष्टि से किया गया था।

मैत्रेय के द्वारा कृष्ण का यह उपदेश जो विदुर से कहा गया, वह भागवत के तृतीय तथा चतुर्थ स्कंदों में प्राप्त है, जिसे 'विदुर-मैत्रेय संवाद' कहा गया है। अध्यात्म के क्षेत्र में यह अपने किस्म का अनूठा संवाद हैं।

कृष्ण के द्वारा उद्धव को दिया गया संवाद भागवत के एकादश स्कंद में प्राप्त है। महाभारत में जिस प्रकार गीता एवं अनुगीता है, उसी प्रकार भागवत में 'उद्धव-कृष्ण संवाद' एवं 'विदुर-मैत्रेयसंवाद' भी महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

भीष्म के देहत्याग के समय, तमाम ऋषियों के साथ यह भी वहाँ उपस्थित था (म. शां. ४७.६५)। यह व्यास की भाँति चिरंजीव माना जाता है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि, आज भी यह अपने भक्तों को दर्शन देता है।

मैत्रेय सोम--(सो. नील.) उत्तर पंचाल देश का सुविख्यात ब्रह्मक्षत्रिय राजा, जो 'मैत्रेय ब्राह्मणशाखा' का उत्पादक माना जाता है। अपने पितामह दिवोदास, एवं पिता मित्रेयु के समान, यह भी भृगुवंशीयों में संमिलित हो गया था, जिस कारण इसे 'मैत्रेय भार्गव' भी कहा जाता है (मत्स्य. ५०.१३; वायु.९९. २०६; ब्रह्म. १३; ह. वं.

१.३२.७५-७७)। इसके बाद इसका पुत्र सृंजय उत्तर पंचाल देश के राजगद्दी पर बैठा।

मैत्रेय ब्राह्मण—मैत्रेय राजा से 'मैत्रेय ब्राह्मण' नामक ब्राह्मणजाति का निर्माण हुआ। मैत्रेय एवं इसके पूर्वज 'क्षत्रिय ब्राह्मण' कहलाते थे। उत्तर पंचाल देश के मुद्गल राजा का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मिष्ठ सर्वप्रथम ब्राह्मण बन गया, जिससे 'मुद्गल' अथवा 'मौद्गल्य' नामक क्षत्रिय ब्राह्मण उत्पन्न हो गये। ये ब्राह्मण स्वयं को 'आंगिरस' कहलाते थे (मत्स्य. ५-७; वायु. ९०.१९८-२०१)।

ब्रह्मिष्ठ का पुत्र वध्र्यश्व, एवं पौत्र दिवोदास ये दोनो वैदिक सूक्तद्रष्टा थे, एवं भार्गव कुल में शामिल हो गये थे (ऋ. १०.५९.२; ८.१०३.२)। स्वयं मैत्रेय, एवं इसका पिता मित्रयु 'भार्गव' कहलाते थे। पराशर ऋषि ने मैत्रेय को 'विष्णु पुराण' का ज्ञान कराया था (विष्णु. १.१. ४-५)।

मैत्रेय एवं मौद्गल्य ब्राह्मण कुलों में कोई भी विख्यात ऋषि उत्पन्न न हुआ था, किन्तु मैत्रेय कौशारव नामक एक ऋषि का निर्देश वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (मैत्रेय कौशारव देखिये)।

मैत्रेयी—एक सुविख्यात ब्रह्मवादिनी स्त्री, जो याज्ञवल्क्य महर्षि की दो पत्नियों में से एक थी (बृ. उ. ४. ५.१)। बृहदारण्यक उपनिषद् में इसका अनेक बार उल्लेख प्राप्त है, जहाँ इसके एवं याज्ञवल्क्य ऋषि के संवाद उद्धृत किये गये हैं (बृ. उ. २.४.१-२; ४.५.१५)। यह संभवतः ब्रह्मवाह के पुत्र याज्ञवल्क्य की पत्नी होगी।

मैत्रेयी-याज्ञवल्क्यसंवाद— याज्ञवल्क्य महर्षि ने संन्यास लेने पर, उसकी जायदाद में से उसके अध्यात्मिक ज्ञान का हिस्सा मैत्रेयी ने माँगा। उस समय मैत्रेयी एवं याज्ञवल्क्य के बीच हुए संवाद का निर्देश 'बृहदारण्यक उपनिषद्' में प्राप्त है (बृ. उ. ४.५.१-६)। मैत्रेयी ने कहा, 'मुझे अध्यात्मिक ज्ञान की आकांक्षा इसलिए है किं, साक्षात् सुवर्णमय पृथ्वी प्राप्त होने पर भी मुझे अमरत्व प्राप्त नही होगा, जो केवल अध्यात्मज्ञान से प्राप्त हो सकता है। जिस संपत्ति से मुझे अमरत्व प्राप्त नहीं होगा, उसे ले कर मैं क्या करूं' (येनाहं नामृता स्याम्, किमहं तेन कुर्याम्)।

फिर याज्ञवल्क्य ने इसे जवाब दिया, 'जो तुम कह रही हो वह ठीक है। तुम्हारे इन विचारों से मैं प्रसन्न हूँ। इसी कारण, मैं तुम्हे आत्मज्ञान सिखाना चाहता हूँ। आत्मा का अध्ययन एवं मनन करने से ही संसार के हर एक वस्तु का ज्ञान प्राप्त होता है। इसी कारण, इस सर्वश्रेष्ठ ज्ञान का साक्षात्कार मैं तुम्हे करना चाहता हूँ'।

इस संवाद में आत्मा शब्द का अर्थ 'विश्व का अन्तीम सत्य' लिया गया है।

बृहदारण्यक उपनिषद में अन्यत्र याज्ञवल्क्य एवं मैत्रेयी के बीच हुए अन्य एक संवाद का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ४.५.११-१५)। मैत्रेयी याज्ञवल्क्य से पूछती है, 'मनुष्य जब बेहोश होता है, तब उसकी आत्मा का क्या हाल होता है? वह परमात्मा से विलग होता है, या वैसा ही रहता है'? उसपर याज्ञवल्क्य ने जवाब दिया, 'बेहोश अवस्था में भी आत्मा एवं परमात्मा एक ही रहते है, क्यों कि, आत्मा 'अगृह्य' 'अशीर्य' एवं 'असंग' रहता है'।

याज्ञवल्क्य के द्वारा आत्मज्ञान की प्राप्ति होने पर, अपनी सारी जायदाद अपनी सौत कात्यायनी को दे कर, यह याज्ञवल्क्य के साथ वन में चली गयी।

मैनाक--एक सुविख्यात पर्वत, जो हिमालय एवं मेनका (मेना) का पुत्र था (ह. वं. ११८.१३)। वाल्मीकिरामायण में इसका चरित्र एक व्यक्ति मान कर दिया गया है।

इन्द्र ने पृथ्वी के सारे सारे पर्वतों के पंख तोड़ डाले। उस समय, यह भय के मारे समुद्र में जा कर छिप गया। हनुमत् लंका दहन के लिए जा रहा था, उस समय यह समुद्र के कहने पर बाहर आया, एवं अपने शिखर पर सवार होने की प्रार्थना इसने हनुमत् से की। इसके पुत्र का नाम क्रौंच था (वा. रा. सुं. १.१०५)।

मैंद--राम के पक्ष का एक वानर, जो सुषेण वानर के दो पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसके कनिष्ठ बन्धु का नाम द्विविद था। ये दोनों भाई अंगद वानर के मामा थे (भा. १०.६.२)।

वालिवध के पश्चात्, सुग्रीव ने सीता के शोधार्थ जो वानर गंधमादन पर्वत पर भेजे थे, उनमें यह भी शामिल था (वा. रा. कि. ४१.७)।

राम-रावण युद्ध में इसने अत्यधिक पराक्रम दिखाया था। इसने एक घूँसा मार कर, वज्रमुष्टि नामक असुर का वध किया (वा. रा. यु. ४३.२७)। इसने यूपाक्ष नामक असुर का भी वध किया था (वा. रा. यु. ७६.३४)।

इन्द्रजित् से युद्ध—इन्द्रजित् के साथ हुए मायावी युद्ध में राम एवं लक्ष्मण मूर्च्छित हुए। उस समय, बिभीषण ने कुबेर से प्राप्त देवी उदक सारे रामपक्षीय वानरों को आँखों में लगाने के लिए दिया, जिसका उपयोग करते ही गुप्त रूप से लड़ाई करनेवाले इन्द्रजित् के सैन्य के सारे असुर वानरसैन्य को साफ दिखाई देने लगे। इस उदक को अपनी आँखों को लगा कर, इसने भी काफ़ी पराक्रम दिखाया था (म. व. २७३.१–१३)।

यह एवं इसका भाई द्विविद ने किष्किंधा नामक गुफा के समीप सहदेव से युद्ध किया था, जो दक्षिणदिग्विजय के लिए उस नगरी में आया था। आगे चल कर, इन्होंने सहदेव को रत्न आदि करभार प्रदान किया, एवं उसे विदा किया (म. स. परि. १. क्र. १३ पंक्ति. १५–२०)।

मैरावण—महिरावण नामक राक्षस का नामान्तर। अहिरावण एवं महिरावण राक्षसों की कथा 'आनंद रामायण' में प्राप्त है, जहाँ उन्हे 'मैरावण' एवं 'ऐरावण' कहा गया है (अहिरावण–महिरावण देखिये)।

मोद—हिरण्याक्ष के पक्ष का एक असुर, जिसका देवासुरसंग्राम के समय वायु ने वध किया था।

२. ऐरावतकुलोत्पन्न एक सर्प, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)

३. मौद्ग नामक आचार्य का नामान्तर।

मोदोष—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की अथर्वन्‌शिष्यपरंपरा में से वेददर्श नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

मोह—ब्रह्मा का एक पुत्र, जो उसकी छाया से उत्पन्न हुआ था (भा. ३.२०)। मत्स्य के अनुसार, यह ब्रह्मा की बुद्धि से उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. ३.११)।

मोहक—एक राजकुमार, जो राम के परमभक्त सुरथ नामक राजा का पुत्र था। सुरथ राजा ने राम का अश्वमेधीय अश्व रोंक दिया था, जिस समय यह सुरथ की ओर से युद्ध में शामिल था (पद्म. पा. ४९)।

मोहना—सुग्रीव की पत्नी। राम के अश्वमेधीय अश्व को स्नान कराने के लिए, इसने अपने पति के साथ सरयू का जल लाया था (पद्म. पा. ६७)।

मोहिनी—विष्णु का एक अवतार, जो चाक्षुष मन्वन्तर में हुआ था। समुद्रमंथन से चौदह रत्न निकले, जिसमें अमृत भी था। देव एवं दानवों ने मिल कर समुद्रमंथन किया, जिस कारण दोनों को अमृतप्राशन करने का अधिकार था। इसलिए वे अमृतप्राशनार्थ एकत्रित हुयें। दानवों ने अपने अधिकार में अमृतकलश रक्खा था। देवों को अमृत पी कर अमर होने की इच्छा थी, किन्तु वे यह नही चाहते थे कि, दानव अमृतपान कर अमर हो जाये। इस अवसर पर, श्रीविष्णु ने मोहिनी नामक सुंदर अप्सरा का रूप धारण कर दानवों को मोहित किया। यह सुअवसर देखकर, देवों ने यथेष्ट अमृतपान किया, एवं वे अमर हुयें (भा. १.३; ८.८–१२; म. आ. १७. ३९–४०; भस्मासुर देखिये)।

२. एक वेश्या, जो मृत्यु के समय गंगाजल पीने के कारण, अगले जन्म में द्रविड देश के वीरवर्मा राजा की पटरानी हुयी (पद्म. उ. २२०)।

मौजवत—अक्ष नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

२. मूजवन्त् लोगों का नामान्तर (मूजवन्त् देखिये)।

मौंज—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मौंजकेश—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मौंजवृष्टि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मौंजायन—युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११)। हस्तिनापुर जाते समय, मार्ग में श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुयी थी (म. उ. ८१.३८८*)।

मौंजायनि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद–'कौञ्जायनि'।

मौद्ग—एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार व्यास की अथर्वन्‌शिष्यपरंपरा में से देवदर्श नामक आचार्य का शिष्य थे। पाठभेद–'मोद' एवं 'मोदोष'।

मौद्गल—एक आचार्य, जो वेदमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद–'मुद्गल' (व्यास देखिये)

मौद्गलायन—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

मौद्गल्य—एक पैतृक नाम, जो नाक, शतबलाक्ष एवं लांगलायन आदि आचार्यों के लिए प्रयुक्त हुआ है (श. ब्रा. १२.५.२.१; नि. ११.६; ऐ. ब्रा. ५.३.८)। 'मुद्गल' का वंशज होने के कारण, उन्हे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक ब्रह्मचारी पुरुष, जिसने ग्लाव मैत्रेय नामक आचार्य ले साथ वाद-विवाद किया था (गो. ब्रा. १.१. ३१)।

३. एक ब्राह्मण, जो मुद्गल एवं भागीरथी का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम जाबाला था। विष्णु की आज्ञानुसार गरुड के द्वारा दिया हुआ भुट्टा इसने

गौतमी नदी के तट पर दान में दिया, जिस कारण इसे ऐश्वर्य एवं समृद्धि प्राप्त हुयी।

४. एक वृद्ध एवं कोढ़ी ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम नालायनी इन्द्रसेना था। इसकी पत्नी ने इसकी सेवा कर इसे प्रसन्न रखा था।

एक बार नालायनी की इच्छा होने पर, इसने पाँच प्रकार के रूप धारण कर, उसके साथ क्रीडा की। फिर भी वह अतृप्त रही। इस पर क्रुद्ध हो कर, इसने उसे अगले जन्म में पाँच पाण्डवों की पत्नी द्रौपदी बनने का शाप दिया (म. आ. परि. १. क्र. १००. पंक्ति. ६०–८०)।

महाभारत में अन्यत्र इसका, एवं इसकी पत्नी का नाम क्रमशः 'मुद्गल' एवं 'चन्द्रसेना' दिया गया है (म. व. ११४.२४; उ. ४५९*)।

५. अंगिराकुलोत्पन्न एक प्रवर।

६. राम की सभा का एक मंत्री (वा. रा. उ. ७४.४)।

७. जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य (म. आ. ४८.९)।

८. एक आचार्य, जो शतद्युम्न नामक राजा का गुरु था। पाठभेद–'मुद्गल' (मुद्गल ४. देखिये)।

९. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने के लिए उपस्थित था (म. शां. ४७. ६६*)। पाठभेद–'मुद्गल'।

मौन--अणीचिन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (कौ. ब्रा. २३.५)। 'मुनि' वंशज होने से, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

मौर्य—(ऐति.) एक सुविख्यात राजवंश, जिसमें चंद्रगुप्त आदि दस राजा हुए थे। पुराणों के अनुसार, इस वंश के राजाओं ने १३७ वर्षों तक राज्य किया। इस वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थेः-- चन्द्रगुप्त, बिन्दुसार, अशोक, सुयशस् (कुनाल) एवं दशरथ। व्हिन्सेन्ट स्मिथ के अनुसार, इस राजवंश का राज्यकाल इ. पू. ३२२–१८५ माना गया है।

मौर्वी कामकटंकटा--मुरु नामक यवन राजा की कन्या, जो घटोत्कच की पत्नी थी। इसे 'काम' नामक देवी से युद्ध में अजेयत्व प्राप्त हुआ था।

कृष्ण के द्वारा मुरु राजा का वध होने पर, इसने श्रीकृष्ण के साथ तीन दिनों तक युद्ध किया। अन्त में कामदेवी ने इस युद्ध में मध्यस्थता की।

आगे चल कर, यह प्रागज्योतिषपुर में रहने लगी, जहाँ इसका विवाह घटोत्कच के साथ हुआ (स्कंद. १. २. ५९–६०)।

मौलि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक आचार्य, जो बाभ्रव्य नामक आचार्य का पिता था। बाभ्रव्य ने पृषध्र राजा को शूद्र बनने का शाप दिया था (पृषध्र देखिये)। उस समय इसने उन दोनों में मध्यस्थता की थी।

मौषिकीपुत्र—एक आचार्य, जो हारिकर्णीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम बाडेयीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३०; बृ. उ. ६.४.३० माध्यं.)। मूषिका के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने के कारण, इसे 'मौषिकीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ होगा।

मौहूर्तिक--एक देव, जो धर्म ऋषि एवं मुहूर्ता के पुत्रों में से एक था।

म्लेच्छ—एक जातिविशेष, जो नन्दिनी गौ के फेन से उत्पन्न हुयी थी। महाभारत में इनका वर्णन 'मुण्ड', 'अर्धमुण्ड', 'जटिल', एवं 'जटिलानन' शब्दों में किया गया है (म. द्रो. ६८.४४)। सर्वप्रथम ये लोग भारत के उत्तर-पश्चिमी सीमा प्रदेश में रहते थे। किन्तु धर्म से भ्रष्ट हुये सारी जातियों को 'म्लेच्छ' सामान्य नाम मनुस्मृति के काल में दिये जाने लगा।

भाषा—शतपथ ब्राह्मण में म्लेच्छ भाषा का निर्देश प्राप्त है, जहाँ उसे अनार्य लोगों की बर्बर भाषा कहा गया है (श. ब्रा. ३.२.१.२४)।

महाभारत में—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में, म्लेच्छों का राजा भगदत्त समुद्रतटवर्ति म्लेच्छ लोगों के साथ उपस्थित हुआ था (म. स. ३१.१०)।

महाभारत में सर्वत्र इन्हें नीच एवं धर्मभ्रष्ट माना गया है। प्रलय के पहले पृथ्वी पर म्लेच्छों का राज्य होने की, एवं विष्णुयशस् कल्कि के द्वारा इनका संहार होने की भविष्यवाणी वहाँ दी गयी है (म. व. १८८. २९–८९)। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ में, ब्राह्मणों को देने के बाद जो धन बचा हुआ था, वह शूद्र एवं म्लेच्छ लोगों ने उठा लिया था (म. आश्व. ९१.२५)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीमसेन ने अपने पूर्व-दिग्विजय में समुद्रतट पर रहनेवाले म्लेच्छ लोगों

को जीता था, एवं उन से मणि, रत्न, सुवर्ण, रजत, चंदन आदि भेंटवस्तुएँ प्राप्त की थी (म. स. २७. २५-२६)।

सहदेव ने अपनी दक्षिण दिग्विजय में, एवं नकुल ने अपनी पश्चिम दिग्विजय में, इन लोगों पर विजय प्राप्त की थी (म. स. २८.४४; २९.१५)। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय भी, अर्जुन ने इन्हे जीता था।

इससे प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में इन लोगों के उपनिवेश पश्चिम, पूर्व एवं दक्षिण भारत में समुद्र के तट पर भी थे।

भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवपक्ष में शामिल थे। इस युद्ध में, इन्होंने पाण्डवसेना पर क्रोधी गजराज छोड़ दिये थे (म. क. १७.९)। किन्तु अर्जुन ने समस्त 'जटिलानन' म्लेच्छों का संहार किया (म. द्रो. ६८.४२)। यादवराजा सात्यकि ने भी इनका संहार किया था (म. द्रो. ९५.३६)। इनके अंग नामक राजा का वध नकुल के द्वारा हुआ था (म. क. १४.१४-१७)।

म्लेच्छहन्तृ—म्लेच्छयज्ञ करनेवाले प्रद्योत राजा का नामान्तर (प्रद्योत २. देखिये)।

य

यक्ष—देवयोनि की एक जातिविशेष, जो पुलह एवं पुलस्त्य ऋषिओं की संतान मानी जाती है (म. आ. ६०.५४१)। महाभारत में इन लोगों को 'क्षुद्रदेवता' कहा गया है, एवं कुवेर को इनका राजा कहा गया है (म. आ. १. ३३; व. १११.१०-११)। ये लोग कुवेर की सभा में लाखों की संख्या में उपस्थित रह कर, उसकी उपासना करते थे (म. स. १०.१८)।

पद्म के अनुसार, ब्रह्मा के पाँचवें शरीर से यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुये। इन्हे कोई माता न थी, क्यों कि, ब्रह्मा ने अपने मनःसामर्थ्य से इन्हे उत्पन्न किया था (ब्रह्मन् देखिये)।

उत्पन्न होते ही इन्होंने ब्रह्मा से पूछा, 'हमारा कर्तव्य क्या है?' (किं कुर्मः)। फिर ब्रह्मा ने इन्हे कहा, 'तुम यज्ञ करो' (यक्षध्वम्)। इसीकारण इन्हे 'यक्ष' नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ४.१३)। यक्ष नाम की यह उपपत्ति कल्पनारम्य प्रतीत होती है। केन उपनिषद में 'यक्ष' शब्द का अर्थ 'आदि कारण ब्रह्म' दिया गया है।

ये लोग विद्याधरों के निवासस्थान के नीचे मेरु पर्वत के समीप रहते थे। महाभारत एवं पुराणों में निम्नलिखित यक्षों का निर्देश प्राप्त है:—

१. कुवेर के सेनापति—मणिकंधर, मणिकार्मुकधर, मणिभूष, मणिमत्, मणिभद्र, पूर्णभद्र, मणिस्रग्विन् (दे. भा. १२.१०)।

२. कुवेरसभा में उपस्थित यक्ष—मणिमंत्र, मणिवर, जिसके पुत्र 'गुह्यक' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे। इन्ही पुत्रों के कारण कुवेर को 'गुह्यकाधिपति' उपाधि प्राप्त हुयी थी।

भीमसेन ने मणिमत्, कुवेर आदि यक्षों को परास्त किया था (म. व. १५७; भीमसेन देखिये)। सुंद एवं उपसुंद नामक राक्षसों ने भी इन्हे पराजित किया था (म. आ. २०२.७)।

कुवेर यक्ष लोगों का राजा था, किन्तु उसके रावण विभीषणादि चार पुत्र राक्षस थे। इन राक्षसपुत्रों की सन्तति भी राक्षस ही थी। इसी कारण कुवेर को यक्ष एवं राक्षसों का राजा कहा गया है।

२. एक यक्ष, जिसने पाण्डवों के वनवासकाल में युधिष्ठिरादि पाण्डवों को तत्त्वज्ञानविषयक प्रश्न पूछे थे (म. व. २९८.६-२५)। ये सारे प्रश्न धर्म ने यक्ष का वेष धारण कर पूछे थे (धर्म १. देखिये)।

३. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा का पुत्र था। इसका जन्म संध्यासमय में हुआ था। अपने बाल्यकाल में यह अपनी माता को खाने के लिए दौडा। किन्तु इसके छोटे भाई रक्षस् ने इसका निवारण किया।

स्वरूपवर्णन—ब्रह्मांड में इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे विलोहित, एककर्ण, मुंजकेश, ह्रस्वास्य, दीर्घजिह्व, बहुदंष्ट्र, महाहनु, रक्तपिंगाक्षपाद, चतुष्पाद, दो गतियों का, सारे शरीर पर बालवाला, चतुर्भुज, सुंदर

नाकवाला, एवं बड़े मुँहवाला कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७. ४२)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम जंतुधना था, जो शंड नामक असुर की पत्नी थी (ब्रह्मांड. ३.७.८६)। अपनी इस पत्नी से, इसे 'यातुधान' सामूहिक नाम धारण करनेवाले राक्षस पुत्ररूप में उत्पन्न हुयें (यातुधान देखिये)।

एक बार इसने वसुरुचि नामक गंधर्व का रूप ले कर, ऋतुस्थला अप्सरा से संभोग किया, जिससे इसे रजतनाभ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (ब्रह्मांड. ३.७.१-१२)। पुत्र-जन्म के पश्चात्, इसने ऋतुस्थला को अप्सरागणों में लौटा दिया।

४. एक व्यास (व्यास देखिये)।

यक्षिणी—एक देवी, जिसके प्रसादरूप नैवेद्य के भक्षण से ब्रह्महत्त्या के पातक से मुक्ति प्राप्त होती है।

यक्षु—एक राजा, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के विपक्ष में था (ऋ. ७.१८.६)। संभवतः यह 'यदु' राजा का ही नामान्तर होगा।

२. एक लोकसमूह, जिन्होंने दाशराज्ञ युद्ध में भेद के नेतृत्व में सुदास राजा के विपक्ष में हिस्सा लिया था (ऋ. ७. १८.१९)। अज एवं शिग्रु लोगों के साथ, इन्होंने परुष्णी एवं यमुना नदी के तट पर हुये संग्रामों में भाग लिया था। इंद्र के द्वारा भेद का वध होने पर, ये लोग भेंट ले कर इंद्र की शरण में गये।

ऋग्वेद में प्राप्त निर्देशों से ये लोग अनार्य जाति के प्रतीत होते हैं। अज एवं शिग्रु लोगों के साथ, ये संभवतः पूर्व भारत में निवास करते होंगे।

यक्षेश्वर--एक शिवावतार, जो देवों के गर्वहरण के लिए अवतीर्ण हुआ था। समुद्रमंथन के बाद देवताओं को अमृत प्राप्त हुआ, जिस कारण वे अत्यधिक गर्वोद्धत हुये। उस समय, उनका गर्वहरण करने के लिए, शिव ने यक्षेश्वर नाम से अवतार लिया।

इसने देवताओं की परीक्षा लेने के लिए, उनके सामने बाँस का एक तिनका रख दिया; एवं उसे हिलाने को कहा। देवतागण उस कार्य में असफल होने पर, उन्हे अपने वास्तव सामर्थ्य का ज्ञान हुआ (शिव. शत. ३६)। इसी प्रकार की कथा 'केन उपनिषद' में भी प्राप्त है।

यक्ष्मनाशन प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१.६१)।

यंकणा--रंकण नामक ब्राह्मण की स्त्री।

यजत--एक यज्ञकर्ता, जिसका अन्य ऋषियों के साथ निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४४.१०-११)। ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट 'यजत आत्रेय' नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा, एवं यह दोनो एक ही होंगे (ऋ. ५.६७-६८)।

यजत आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (यजत देखिये)।

यजु--(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार उपरिचर वसु राजा का पुत्र था।

यजुदाय--(सो. वसु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार वसुदेव एवं देवकी का पुत्र था।

यज्ञ--विष्णु का सातवाँ अवतार, जो स्वायंभुव मन्वन्तर में रुचि नामक ऋषि एवं आकूति के पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम दक्षिणा था, जिससे इसे तृषित नामक बारह देव पुत्ररूप में उत्पन्न हुयें। इसे 'सुयज्ञ' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. २. ७.२)।

स्वायंभुव मनु राजा ने 'पुत्रिकापुत्रधर्म' से इसका स्वीकार कर, इसे अपना पुत्र मान लिया था, एवं इसे अपने मन्वन्तर का इंद्र बनाया था (भा. १.३.१२;४.१. ८;८.१.१८; विष्णु. ३. १. ३६)।

सुश्रुत संहिता के अनुसार, प्राचीन काल में रुद्र के द्वारा इसका शिरच्छेद किया गया था। उस समय, अश्विनीकुमारों ने इन्द्र की सहाय्यता से, इसके सर पर शल्यकर्म किया, एवं इसका सिर पूर्ववत् किया (सु. सं. १.१४)।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार गौतमी का पुत्र था।

यज्ञ प्राजापत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १३०)।

यज्ञकृत्—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार विजय का राजा पुत्र था।

यज्ञकोप--रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो राम के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ९.४३)।

यज्ञदत्त—कांपिल्य नगर का एक अग्निहोत्री ब्राह्मण, जिसके पुत्र का नाम गुणनिधि था (शिव. रुद्र. सृ. १८)।

२. भगदत्त राजा के पुत्र 'वज्रदत्त' का नामांतर (वज्रदत्त देखिये)।

३. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जो यज्ञकर्म में निपुण था। यह यामुन पर्वत की तलहटी में निवास करता था (पद्म. पा. ९६)।

४. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार शतानीक राजा का पुत्र था।

यज्ञपति--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

यज्ञपिंडायन--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'यद्रामिलायन'।

यज्ञबाहु--(स्वा. प्रिय.) शाल्मलिद्वीप का एक सुविख्यात राजा, जो भागवत के अनुसार प्रियव्रत राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम बार्हिष्मती था।

इसे निम्नलिखित सात पुत्र थेः--सुरोचन, सौमनस्य, रमणक, देववर्ष, पारिभद्र, आप्यायन एवं अविज्ञात (भा. ५.२०.९)। इसने शाल्मलिद्वीप के अपने राज्य के सात भाग कर, उन्हे अपने उपनिर्दिष्ट पुत्रों में बाँट दिये। आगे चल कर, उस द्विप के सात भाग इसके सात पुत्रों के नाम से सुविख्यात हुयें (भा. ५.१.२५)।

यज्ञवचस् राजस्तंबायन--एक आचार्य, जो तुर कावषेय नामक आचार्य का शिष्य था (श. ब्रा. १०.४.२.१; मै. सं. ३.१०.३; ४.८.२)। इसके शिष्य का नाम कुश्रि था (बृ. उ. ६.५.४ काण्व)। राजस्तंब का वंशज होने कारण, इसे 'राजस्तंबायन' नाम प्राप्त हुआ होगा।

यज्ञवराह--वराहरूपधारी श्रीविष्णु का नामान्तर (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. १२८)।

यज्ञवाह--अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६५)।

यज्ञशत्रु--एक राक्षस, जो लंका में रहनेवाले खर नामक राक्षस का अनुगामी था (वा. रा. अर. २३.३१)।

यज्ञशर्मन--द्वारका में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जो शिवशर्मन् नामक एक तपस्वी ब्राह्मण का पुत्र था।

एकबार इसकी पितृभक्ति की परीक्षा लेने के लिए, इसके पिता शिवशर्मन् ने माया से इसकी पत्नी का वध किया। पश्चात् उसने इसे पत्नी की शरीर टुकड़े टुकड़े कर, उन्हें फेंक देने के लिए कहा। अपने पिता की आज्ञानुसार, इसने यह पाशवी कृत्य किया। इस पर इसका पिता प्रसन्न हुआ, एवं उसने इसे अपनी पत्नी को पुनः जीवित करने के लिए कहा (पद्म. भू. १.)।

यज्ञश्री--(आंध्र. भविष्य.) एक सुविख्यात आंध्रवंशीय राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार गौतमीपुत्र राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसका 'शिवश्री' नामान्तर दिया गया है। इसके पितामह का नाम शिवस्वाति था। भागवत एवं विष्णु में इसे शिवस्कंद राजा का, एवं वायु में गौतम राजा का पुत्र कहा गया है।

यज्ञसेन--पांचालनरेश द्रुपद राजा का नामान्तर (म. आ. १२२.२६; द्रुपद देखिये)।

यज्ञसेन चैत्र--एक आचार्य, जिसका पैतृक नाम 'चैत्र' अथवा 'चैत्रियायण' था (का. सं. २१.४; तै. सं. ५.३.८.१)।

यज्ञहन--एक राक्षस, जो रक्षस् एवं ब्रह्मधना का पुत्र था।

२. कृष्णपुत्र वृष का पुत्र।

यज्ञहोत्र--उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

यज्ञापेत--एक राक्षस, जो रक्षस् एवं ब्रह्मधना का पुत्र था।

यज्ञेषु--एक यज्ञकर्ता, जिसके पुरोहित का नाम मात्स्य था। यज्ञ प्रारंभ करने के लिए उत्तम मुहूर्त जाननेवाले मात्स्य ने, एक सुमुहूर्त पर इसका यज्ञ प्रारंभ किया, एवं संपन्न बनने में इसे सहाय्यता की (तै. सं. १. ५. २. १)।

यज्वन्--पारावत देवों में से एक।

यति--यज्ञविरोधी एक जातिसमूह, जिनका निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. ८.३.९; ६.१८)। ये लोग यज्ञविरोधी होने के कारण, इन्द्र ने एक अशुभ मुहूर्त में इन्हे लकड़बग्घे (सालावृक) को दे दिया था। इनमें से पृथुरश्मि, बृहत्गिरि एवं रायोवाज ही अपने को बचा सके। उनकी दया आ कर इंद्र ने उनकी रक्षा की, एवं उन्हे क्रमशः क्षात्रविद्या, ब्रह्मविद्या, एवं वैश्यविद्या सिखायी (तै. सं. २.४.९.२; का. सं. ८.५; पं. ब्रा. १३.४.१६)।

मनुस्मृति में इस कथा का निर्देश प्राप्त है, एवं जानबूझ कर ब्रह्महत्त्या करने पर प्रायश्चित्त लेनेवाले लोगों में मनु ने इन्द्र का निर्देश किया है (मनु. ११.४५. कुल्लूकभाष्य)।

२. एक आचार्य, जिसका निर्देश सामवेद में भृगु ऋषि के साथ किया गया है (सा. वे. २.३०४)।

३. (सो. पुरुरवस्.) नहुष के छः पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र। कुकुत्स्थ राजा की कन्या गो इसकी पत्नी थी (ब्रह्म. १२.३; वायु. ९३.१४)।

नहुष राजा का ज्येष्ठ पुत्र होने के कारण, उसके पश्चात् प्रतिष्ठान के राजगद्दी पर इसका ही अधिकार था। किंतु यह प्रारंभ से ही विरक्त था, जिस कारण अपने छोटे भाई ययाति को राज्य दे कर, यह स्वयं वन में चला

गया (म. आ. ७०.२८*; ६९२; भा. ९.१८.१-२; पद्म. सृ. १२; मत्स्य. २.४.५१; ह. वं. १.३०.३)।

४. ब्रह्मदेव का एक मानसपुत्र (भा. ४.८.१)।

५. विश्वामित्र का एक पुत्र।

६. शिवदेवों में से एक।

यतिनाथ—एक शिवावतार। अबु के पहाड पर आहुका नामक एक भिल्लदम्पती रहते थे। इसने उन पर कृपा की, जिसके कारण अगले जन्म में उन्हे राजवंश में नल एवं दमयंती के रूप में जन्म प्राप्त हुआ (शिव. शत. २८)।

यतीश्वर—शिखण्डिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

यदु—एक जातिसमूह, जो दाशराज्ञ युद्ध में भरत राजा सुदास के विपक्ष में था (ऋ. ७.१९.१८)। त्सीमर के अनुसार, यदु, अनु, द्रुह्यु एवं तुर्वश लोग मिल कर प्राचीन 'पंचजन' लोग बने थे, जिनका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (त्सीमर- आल्टिन्डिशे लेबेन. १२२; १२४)। दाशराज्ञ युद्ध में अर्ण एवं चित्ररथ राजा पानी में डूब कर मर गये, जिनके साथ ये लोग भी मरनेवाले थे। किन्तु इन्द्र ने इन्हें बचाया। यदु एवं तुर्वश लोगों को सुदास राजा के हाथ में देने की प्रार्थना, ऋग्वेद में वसिष्ठ के द्वारा इन्द्र से की गयी है (ऋ. ७.१९.८)। इन्द्र के द्वारा इन्हे सुदास राजा के हाथ सौंप देने का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है।

इससे प्रतीत होता है कि, ये लोग शुरु में सुदास राजा के शत्रु थे, किन्तु आगे चल कर उसके मित्र बने (ऋ. ४. ३०.१७; ६.२०.१२; ४५.१)।

२. यदु लोगों का राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है। यह सुदास राजा का शत्रु था, किन्तु इंद्र का उपासक था (ऋ. १.१०८.८; १७४. ९; ५.३१.७; ७.१९.८.)। दाशराज्ञ युद्ध में यह एवं तुर्वश राजा अपनी जान बचा कर भाग गये थे, जब की इसके मित्र अनु एवं द्रुह्यु मारे गये थे। इसके साथ उग्रदेव, नर्य, तुर्वीति, एवं वैय्य आदि व्यक्तियों के निर्देश प्राप्त हैं (ऋ. १.३६.१८; ५४.६)। ऋग्वेद में इसके वंशजों का निर्देश 'याद्व' नाम से किया गया है (ऋ. ७.१९.८.)। किन्तु इनमें से किसी का भी निर्देश पुराणों में प्राप्त नही है।

३. (सो. आयु.) ययाति राजा के पाँच पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र। ययाति राजा को देवयानी से दो पुत्र उत्पन्न हुये थे, जिनके नाम यदु एवं तुर्वसु थे (ह. वं. १.३०. ५; म. आ. ७८.९; मत्स्य. ३२.९)।

अपने पिता ययाति को युवावस्था देने से इसने अस्वीकार कर दिया। इस कारण, ज्येष्ठ पुत्र होते हुये भी ययाति ने प्रतिष्ठान देश के अपने राज्य से इसे वंचित कर, अपने कनिष्ठ पुत्र पूरु को राज्य प्रदान किया। ययाति के मृत्यु के पश्चात्, उसके राज्य का थोडा हिस्सा इसे प्राप्त हुआ, जिसमें मध्य भारत के चर्मण्वती (चंबल), वेत्रवती (वेटवा), शुक्तिमती (केन) नदियों से वेष्टित प्रदेश शामिल था। हरिवंश के अनुसार, ययाति के राज्य में से पूर्वीउत्तर प्रदेश का राज्य इसे प्राप्त हुआ था (ह. वं. १.३०.१८)।

इसी प्रदेश में इसने अपना सुविख्यात राजवंश एवं स्थापित किया। इस राजवंश ने मथुरा, गुजराथ, काठेवाड प्रदेश में स्थित राक्षस लोगों का नाश किया। पश्चात् इन दोनों प्रदेश में यादव एवं उन्हीके ही वंश के हैहय लोगों का राज्य स्थापित हुआ।

शाप—शुक्राचार्य के शाप के कारण, इसके पिता ययाति का तारुण्य नष्ट हुआ। फिर ययाति ने अपने ज्येष्ठ पुत्र यदु को अपनी जरा ले कर उसके बदले इसका तारुण्य देने की प्रार्थना की। यदु ने अपने पिता की यह प्रार्थना अस्वीकार कर दी। इस पर क्रुद्ध हो कर ययाति ने इसे शाप दिया, 'आज से तुम एवं तुम्हारे वंशज राज्यधिकार से वंचित रहोगे' (म. आ. ७९.१-७)। यदु के जिस भाईयों ने इसका अनुकरण किया, उन्हें भी ययाति का यही शाप प्राप्त हुआ।

पौराणिक ग्रंथों में ययाति ने इसे निम्नलिखित अन्य शाप देने का निर्देश प्राप्त है:— १. 'तुम मातुलकन्या-परिणय करोंगे'। २. 'तुम मातृद्रव्य का हरण करोंगे' (पद्म. भू. ८०)। ३. 'तुम सोमवंश में न रहोंगे'। ४. तुम यातुधान नामक राक्षस उत्पन्न करोंगे' (वा. रा. उ. ५९.५; १४-१६; २०)।

ययाति का अत्यंत प्रिय पुत्र होते हुये भी, यदु ने अपने पिता की जरा लेना अस्वीकार क्यों कर दिया, इसका स्पष्टीकरण वायु एवं भागवत में प्राप्त है। इन ग्रंथों के अनुसार, अपना यौवन ले कर अपने पिता अपनी ही माता से भोगविलास करे, यह कल्पना इसे अपवित्र एवं अवैध प्रतीत हुयी। इसी कारण, यद्यपि पिता की प्रार्थना मान्य करने से पित्राज्ञा का पालन करने का पुण्य प्राप्त होगा, फिर भी उससे मात्रागमन का महान् दोष भी लगेगा, ऐसे सोच कर, इसने ययाति की प्रार्थना अमान्य कर दी (वायु. ९३; भा. ९.१९.२३)।

हरिवंश एवं ब्रह्म के अनुसार, यदु ने किसी ब्राह्मण को कई वस्तु दान में देने का अभिवचन दिया था, जिस कारण इसने ययाति की जरा स्वीकार ने में असमर्थता प्रकट की (ह. वं. १.३०.२३–२४; ब्रह्म. १२)।

इसे एवं इसके भाई अनु को यद्यपि राज्य प्राप्त हुआ था, फिर भी सार्वभौम राज्याधिकार से ये सदा के लिए वंचित रहे (विष्णु. ५.३)। इसी कारण ' यादव वंश ' में उत्पन्न हुयें कृष्ण आदि राजा को, एवं ' अनुवंश ' में उत्पन्न हुयें कर्ण आदि को अन्य सार्वभौम राजाओं से उपेक्षा सहनी पडी। श्रीकृष्ण को ' ग्वाला ', एवं कर्ण को ' सूतपुत्र ' व्यंजनात्मक उपाधियाँ उनके विपक्ष के लोगों के द्वारा प्रदान की जाती थी।

परिवार—हरिवंश के अनुसार, यदु को कुल पाँच पत्नियाँ थी, जो धूम्रवर्ण नामक नाग की कन्याएँ थी। इन पाँच पत्नियों से इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र उत्पन्न हुयेः– १. पद्मवर्ण, २. माधव, ३. मुचुकुंद, ४. सारस, ५. हरित (ह. वं. २.३८.२)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र इसके ' सहस्त्रद ' एवं ' पयोद ' नामक दो पुत्रों का निर्देश प्राप्त है (ह. वं. १.३३.१)।

इनके अतिरिक्त, निम्नलिखित ग्रंथों में यदु के पुत्र इस प्रकार बताये गये हैः—

१. भागवत में––क्रोष्टु, सहस्रजित्, नल, एवं रिपु (भा. ९.२३)।

२. मत्स्य में––नील, अंतिक, एवं लघु (मत्स्य. ४३. ७)।

३. वायु में––जित एवं लघु (वायु. ९४.२)।

४. विष्णु में––क्रोष्टु (विष्णु. ४.११)।

५. पद्म में––भोज, भीमक, अंधक, कुंजर, वृष्णि, श्रुतसेन, श्रुताधार, कालदंष्ट्र एवं कालजित (पद्म. भू. १०९)।

पार्गिटर के अनुसार, भागवत में प्राप्त यदुपुत्रों की नामावली प्रक्षिप्त है। यदु के पुत्रों में केवल दो पुत्र ही महत्त्वपूर्ण थे :—१. क्रोष्टु, जिसने मथुरा में यादव वंश की स्थापना की; २. सहस्रजित्, जिसने हैहय वंश की स्थापना की (पार्गि. ८७)।

यादववंश––पुराणों में यादववंश की जानकारी विस्तृत रूप में उपलब्ध है, किंतु वहाँ प्राप्त बहुत सारे निर्देश एक दूसरे से मेल नही खाते है। वायु के अनुसार, यादव वंश की ग्यारह शाखाएँ थी (वायु. ९६.२५५)। मत्स्य के अनुसार, इनकी एकसौ शाखाएँ थी (मत्स्य. ४७.२५–२८)। हरिवंश के अनुसार, यदु के पाँच पुत्रों ने यादव वंश की पाँच शाखाएँ प्रस्थापित की। उनमें से माधव ने मथुरा नगरी में राज्य स्थापित किया, एवं मुचकुंद, सारस, हरित एवं पद्मवर्ण राजाओं ने दक्षिण हिंदुस्थान में महाराष्ट्र में आ कर स्वतंत्र राज्य स्थापित किये, जो आगे चल कर करवीर (कोल्हापूर) आदि नामों से प्रसिद्ध हुये। हरिवंश में प्राप्त माधव की वंशावली निम्न प्रकार है :—माधव–सत्वत्–भीम सात्वत–अंधक–रैवत–ऋक्ष एवं विश्वगर्भ–वसुदेव, दमघोष, वसु, बभ्रु, सुषेण एवं सभाक्ष–श्रीकृष्ण (ह. वं. २.३८.३६–५१)।

सात्वत शाखा—इनमें से भीम सात्वत राम दाशरथि राजा का समकालीन था। उसने इक्ष्वाकुवंशीय शत्रुघातिन् राजा से मथुरा नगरी को जीत कर, वहाँ अपना राज्य स्थापित किया। सात्वत राजा को भजमान, देवावृध, अंधक एवं वृष्णि नामक चार पुत्र थे, जिनके कारण, यादव वंश की चार शाखाएँ उत्पन्न हुयी। उनमें से देवावृध एवं उसके पुत्र बभ्रु ने अबु पहाड़ी के प्रदेश में स्थित मार्तिकावत देश में अपना राज्य स्थापित किया।

अंधक एवं उसके दो पुत्र कुकुर एवं भजमान, मथुरा में राज्य करते रहे। कंस राजा उन्ही के वंश में उत्पन्न हुआ था। भजमान के पुत्र 'अंधक' नाम से ही सुविख्यात हुये, एवं उनका राज्य मथुरा के पास ही कहीं था। भारतीय युद्ध के समय कृतवर्मन् उनका राजा था। वृष्णि का राज्य गुजराथ में द्वारका प्रदेश में था (वृष्णि देखिये)।

अन्य शाखाएँ—इनके सिवा यादव वंशों के अन्य कई उपशाखाओं का राज्य विदर्भ, अवंती, दशार्ण प्रदेश में भी था।

हैहकों का मुख्य राज्य नर्मदा नदी के किनारे, माहिष्मती में था, एवं उनकी वीतहोत्र, शर्यात, भोज, अवन्ती एवं तुंडिकेर नामक पाँच शाखाएँ प्रमुख थी।

यद्यपि हैहयों के उपशाखाओं में से 'भोज' एक था, फिर भी गुजरात के वृष्णियों को छोड़ कर बाकी सारे यादव वंश ' भोज ' सामुहिक नाम से प्रसिद्ध थे। इसी कारण, निम्नलिखित यादव राजाओं को 'भोज' कहा गया है :— उग्रसेन, कंस, कृतवर्मन्, विदर्भराज भीष्मक, एवं रुक्मिन्।

भीम सात्वत से ले कर श्रीकृष्ण तक के यादव राजाओं का मुख्य राज्य मथुरा में ही था। जरासंध की भय से, श्रीकृष्ण ने एक स्वतंत्र यादव राज्य पश्चिम समुद्र के तट पर सुराष्ट्र में स्थित द्वारका नगरी में स्थापित किया।

श्रीकृष्ण के समय, यादवों की संख्या कुल तीन कोटि थी, जिनमें से साठ लाख लोग शूर योद्धा थे।

अठारह महारथ—भागवत में यादववंश में उत्पन्न अठारह शूर योद्धाओं की नामावलि दी गयी है, जो निम्न-प्रकार है:— प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, दीप्तिमत्, भानु, साम्ब, मधु, बृहद्भानु, चित्रभानु, वृक, अरुण, पुष्कर, वरबाहु, श्रुतदेव, सुनंदन, चित्रबाहु, विरूप, कवि एवं न्यग्रोध (भा. १०.९०.३३-३४)। इनमें से प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, एवं वज्र भारतीय युद्ध के पश्चात् हुये मौसल युद्ध में मारे गये। इसी युद्ध में समस्त यादव वंश का भी जड़मूल से संहार हुआ। इस महाभयानक संहार का वर्णन भागवत, एवं महाभारत में प्राप्त है (भा. ३.४.१-२; म. मौ. ४)। इस संहार से केवल चार पाँच यादव ही बच सके (भा. १.१५.२३)।

आर्यसंस्कृति का प्रसार—प्राचीन आर्यसंस्कृति का प्रसार राजपूताना, गुजरात, मालवा एवं दक्षिण के प्रदेशों में करने का महान कार्य यादव लोगों ने किया। पूर्वकाल में ये सारे प्रदेश अनार्य थे, जिन्हे आर्य धर्म एवं संस्कृति की दीक्षा यादवों ने दी। यह कार्य करते समय, ये लोग अनार्य लोगों के साथ सम्मिलित हुये कर्मठ आर्यधर्म का पालन न कर सके। इसी कारण महाभारत एवं पुराणों में इन्हे 'असुर' कहा गया है, एवं उत्तरी पश्चिमी भारत के 'नीच्य' एवं 'अपाच्य' जातियों में इनकी गणना की गयी है। फिर भी आर्यधर्म के प्रसार में इन्होंने जो कार्य किया वह प्रशंसनीय है। यादवों का सर्वश्रेष्ठ नेता श्रीकृष्ण था, जो धर्मनीति एवं युद्धनीति में प्रवीण होने के कारण, समस्त भारतवर्ष का नेता बन गया एवं साक्षात् विष्णु का अवतार कहलाने लगा। आर्यसंस्कृति के प्रसार में यादवों के द्वारा किये गये कार्य में श्रीकृष्ण का बड़ा हाथ रहा है।

यादवनिंदा—महाभारत में भूरिश्रवस् राजा के द्वारा यादवों की अत्यधिक कटुशब्दों में आलोचना की गयी है, जहाँ उन्हे आचारहीन (व्रात्य), निंद्यकर्म करनेवाले, एवं गर्हणीय योनि के कहा गया है (म. द्रो. ११८.१५)। कौटिलीय अर्थशास्त्र में भी इन्हे 'छलकपट करनेवाले' कहा गया है, एवं द्वैपायन के साथ कपट करने से इनका नाश होने का निर्देश प्राप्त है (कौ. अ. पृ. २२)।

४. विदर्भदेश का एक राजा, जिसने अपनी प्रभा अथवा सुमति नामक कन्या सगर राजा को विवाह में दी थी।

५. (सो. ऋक्ष.) एक राजकुमार, जो उपरिचर वसु राजा का पुत्र था। युद्ध में यह किसी से पराजित नही होता था (म. आ. ५७.२९)।

६. स्वायंभुव मन्वन्तर के जित देवों में से एक।

यदुध्र—रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

यद्रामिलायन—भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार 'यज्ञपिंडायन' का नामान्तर।

यम—एक पार्षद, जो वरुण के द्वारा स्कंद को प्रदान किया गया था। दूसरे पार्षद का नाम 'अतियम' था (म. श. ४.४.४१)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'घस', एवं 'अतिघस'।

यम वैवस्वत—समस्त प्राणियों का नियमन करने-वाला एक देवता, जो मृत्युलोक का अधिष्ठाता माना जाता है। वैदिक ग्रंथों में इसे मृत व्यक्तियों को एकत्र करनेवाला, मृतकों को विश्रामस्थान प्रदान करनेवाला, एवं उनके लिए आवास निर्माण करनेवाला कहा गया है (ऋ. १०.१४; १८; अ. वें. १८.२)। ऋग्वेद में इसे मृतकों पर शासन करनेवाला राजा कहा गया है (ऋ. १०.१६)। इसके अश्व स्वर्ण नेत्रों तथा लौह खुरोंवाले हैं।

इसके पिता का नाम विवस्वत् था, एवं इसकी माता का नाम सरण्यु था (ऋ. १०.१४; १७)। इसी कारण इसे 'वैवस्वत' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. १०. १४.१; ५८.१; ६०.१०; १६४.२)। अथर्ववेद में इसे 'विवस्वत्' से भी श्रेष्ठ बताया गया है (१८.२)। उपनिषदों में इसे देवता माना गया है (बृ. उ. १. ४. ४.११; ३.३.९.२१)।

पहला राजा—इसे पहला मनुष्य कहा गया है (अ. वे. ८.३.१३)। इसे राजा भी कहा गया है (कौ. उ. ४. १५; ऋ. ९.११३; १०.१४)। शतपथ में इसे दक्षिण का राजा माना गया है (श. ब्रा. २.२.४.२)। ऋग्वेद के तीन सूक्तों में इसका निर्देश हुआ है (ऋ. १०. १४. १३५; १५४)।

निवासस्थान—यम का निवासस्थान आकाश के दूरस्थ स्थानों में था (ऋ. ९.११३)। वाजसनेय संहिता में यम एवं उसकी बहन यमी को उच्चतम आकाश में रहनेवाले कहा गया हैं, जहाँ ये दोनों संगीत एवं वीणा के स्वरों से घिरे रहते हैं (वा. सं. १२.६३)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसका वासस्थान तीन द्युलोकों में सब से उँचा कहा गया है (ऋ. १.३.५-६)।

दूत—यम के दूतों में दो श्वान प्रमुख थे, जो चार नेत्रोंवाले, चौड़ी नासिकावाले, शबल, उदुंबल (भूरे), एवं सरमा के पुत्र थे (ऋ. १०.१४.१०)। ऋग्वेद में अन्यत्र 'उलूक' एवं 'कपोत' को भी यम के दूत कहा गया है (ऋ. १०.१६५.४)।

मित्रपरिवार—यम के मित्रों में अग्नि प्रमुख है, जिसे यम का मित्र एवं पुरोहित कहा गया है (ऋ. १०.२१; ५२)। मृत लोगों को द्युलोक में ले जानेवाला अग्नि यम का मित्र होना स्वाभाविक ही प्रतीत होता है। इसके अन्य मित्रों में वरुण एवं बृहस्पति प्रमुख थे, जिनके साथ यह आनंदपूर्वक निवास करता था। वैदिक साहित्य में अन्यत्र निम्नलिखित देवताओं को यम से समीकृत किया गया है:— अग्नि (तै. सं. ३.३.८.३); वायु (नि. १०.२०.२); एवं सूर्य (ऋ. १०.१०; १३५.१)।

यम-यमी संवाद—यम एवं उसकी जुड़वा बहन यमी का संवाद ऋग्वेद में प्राप्त है, जहाँ यमी इससे संभोग के लिए प्रार्थना करती है। उस समय यम ने भगिनीसंभोग अधर्म कह कर उसे निराश किया। फिर यमी ने इससे कहा, 'यहाँ कौन देख रहा है'? तब इसने कहा, 'देवदूत देखते है, जिनका निवास-संचार हर एक स्थान पर है' (न निमिषन्त्येते देवानां स्पर्श इह ये चरन्ति) (ऋ. १०.८)। यह कथा उस समय की है, जब मानव-समाज में नीतिशास्त्र अप्रगल्भ अवस्था में था।

आत्मसमर्पण—ऋग्वेद के एक सूक्त में यम के द्वारा मृत्यु की स्वीकार किये जाने का, एवं यज्ञकुंड में आत्माहुति देने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.१३.४)। उस सूक्त के अनुसार, देवों के कल्याण के लिए यम ने मृत्यु की स्वीकार की (अवृणीत मृत्युम्), एवं अपना प्रिय शरीर यज्ञकुंड में झोंक दिया (प्रियां यमस्तन्वं प्रारिरेचीत्)।

ऋग्वेद के इस महत्वपूर्ण सूक्त से प्रतीत होता है कि, वैदिक आर्यों के यज्ञसंस्था के प्रारम्भ में यज्ञकर्ता स्वयं की आहुति देता था। आत्मबलिदान की इसी कल्पना से यज्ञसंस्था का प्रारंभ हुआ। प्रजा तथा देवों के कल्याण के लिए, आत्मसमर्पण करनेवाला यम एक आद्य यज्ञकर्ता माना जाता है। आगे चल कर, यज्ञ में आत्मबलिदान की जगह यज्ञीय पशु का हवन करने की प्रथा प्रचलित हुयी।

मृत्यु का देवता—यम मरणशील मनुष्यों में प्रथम था, अतएव उसे मृत होनेवालों में प्रधान माना गया, तथा इसे मृत्यु के साथ समीकृत किया गया। अथर्ववेद तथा बाद के पुराकथाशास्त्र में, मृत्यु का भय के साथ घनिष्ठ रूप से संबद्ध होने के कारण, यम मृत्यु के देवता बन गया। बाद की संहिताओं में 'अंतक' 'मृत्यु' 'निर्ऋति' के साथ यम का उल्लेख कर, 'मृत्यु' को इसका दूत कहा गया है (अ. वे. ५.३०; १८.२)। अथर्ववेद में मृत्यु को मनुष्यों का, तथा यम को पितरों का अधिपति कहा गया है, तथा 'निद्रा' को कहा गया है कि, वह यम के क्षेत्र से आती है।

व्युत्पत्ति—यम शब्द का भाषाशास्त्रीय आशय 'यमज' (जुड़वां पैदा होनेवाला) है, जिस अर्थ में इसका निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. १०.१०)। अवेस्ता में निर्दिष्ट 'यिम' का अर्थ भी यही है। इसके अतिरिक्त, 'निर्देशक' अर्थ से 'यम' का प्रयोग भी ऋग्वेद में कई बार हुआ है। उत्तरकालीन साहित्य में, यम को दुष्टों का यमन (नियंत्रित) करनेवाला देवता माना गया है।

वेदकालोपरांत यम—महाभारत तथा पुराणों में इसे विवस्वत् तथा संज्ञा का पुत्र कहा गया है (ह. वं. १.९.८; मार्के. ७४.७; भा. ६.६.४०; मत्स्य. ११.४; विष्णु. ३.२.४; पद्म. सृ. ८; वराह. २०.८; भवि. प्रति. ४.१८)। संज्ञा को सूर्य का तेज सहन न होता था, इसलिए वह उसके सामने आते ही नेत्र बन्द कर लेती थी। इसीलिए सूर्य ने उसे शाप दिया, 'तुम्हारे उदर से प्रजा-संहारक यम जन्म लेगा' (मार्के. ७४.४)। यम यमी जुड़वा संतान थे (पद्म. सृ. ८)।

यम को शाप—इसने छाया नामक अपनी सौतेली माता की निर्भर्त्सना कर के उसे लातों से मारा था (ब्रह्म. ६); एवं दाहिना पैर उठा कर उसकी निर्भर्त्सना की थी (मत्स्य. ११.११; पद्म. सृ. ८)। इसलिए छाया ने एकदम क्रोध से इसे शाप दिया, 'तुम्हारा यह पैर गल जायेगा। उसमें पीप, रक्त तथा कीडे होंगे' (मत्स्य. ११.१२)। उसके बाद यम अपने पिता के पास गया, तथा सारी स्थिति कह सुनाई। तब पिता ने इसे उःशाप दिया, जिसके संबंध में काफी मत मतान्तर है:—'पैर हड्डी सहित न गलेगा, केवळ पैर का मांस कीड़े खा लेंगे' (ह. वं १.९.३१; वायु. ८४. ५५)! 'पीप रक्त इत्यादि कीड़े खा लेंगे, तथा बाद में पैर पूर्ववत् हो जायेगा' (मत्स्य. ११.१७)। 'एक लाल पैर का पक्षी पैर खा लेगा, तथा बाद में पैर छोटा परन्तु सुन्दर बन जायेगा'।

पितरों का प्रमुख—बाद में इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, और इसने तप करना प्रारंभ किया। तब ब्रह्मदेव ने इसे

पितरों का स्वामित्त्व, तथा संसार के पापपुण्यों पर नज़र रखने का काम दिया (पद्म. सृ. ८)। इसे 'धर्म' नामांतर भी प्राप्त था (ब्रह्म. ९४. १६-३२)।

यम-नचिकेत संवाद—कठोपनिषद् में 'यम-नचिकेत संवाद' नामक एक तत्त्वज्ञानविषयक संवाद प्राप्त है, जिसके अनुसार एक बार नचिकेतस् यम से मिलने यम लोक में गया। वहाँ यम ने उसे 'पितृक्रोधशमन' एवं 'अग्निज्ञान' ये दो वर प्रदान किये। उसके पश्चात् नचिकेतस् ने यम से पूछा 'मृत्यु के बाद प्राण कहाँ जाता है? यम ने कहा, 'मृत्य के उपरांत प्राणगमन की स्थिति तुम मत पूछो' (मरणं मानु प्राक्षीः)। किन्तु नचिकेतस् के अत्यधिक आग्रह पर यम ने कहा, 'मृत्यु के उपरांत प्राण नष्ट नहीं होता। कर्म के अनुसार, उसे गति प्राप्त होती है'।

इसके पश्चात् नचिकेतस् ने यम से ब्रह्म के स्वरूप के बारे में प्रश्न किया। तब यम ने उत्तर दिया, 'देवताओं को भी ब्रह्म के सत्यस्वरूप का ज्ञान नहीं है। क्यों कि, ब्रह्मज्ञान जटिल एवं गहन है'। इस प्रकार कठोपनिषद में वर्णित यम, देवता न हो कर एक आचार्य है, जिसने धार्मिक मनोवृत्तियों के वशीभूत हो कर, तात्विक रूप से धर्म की व्याख्या कर के लोगों को उपदेश दिया है (क. उ. १.१६)। यही यम-नचिकेत संवाद अग्निपुराण में भी प्राप्त है (अग्नि. ३८५)।

यम को नारायण से 'शिवसहस्रनाम' का उपदेश मिला था, जिसे भी इसने नचिकेत को प्रदान किया था (म. अनु. १७.१७८-१७९)।

यमगीता—यम एवं यमदूतों के बीच हुओ अनेकानेक संवाद 'यमगीता' नाम से प्रसिद्ध है। यमगीता निम्नलिखित पुराणों में ग्रथित की गयी हैः— विष्णुपुराण (३.७); नृसिंहपुराण (८); अग्निपुराण (३८२); स्कंदपुराण।

महाभारत में वर्णित यम—महाभारत में इसे प्राणियों का नियमन करनेवाला यमराज कहा गया है, जो भगवान सूर्य का पुत्र, एवं सब के शुभाशुभ कर्मों का साक्षी बताया गया है (म. आ. ६७.३०)। इसे मारीच कश्यप एवं दाक्षायणी का पुत्र कहा गया है (म. आ. ७०.१०)। अणीमाण्डव्य ने इसे शूद्रयोनि में जन्म लेने के लिए शाप दिया था (म. आ. १०१.२५), क्यों कि, यम ने उसे निरपराधी होते हुए भी फाँसी की सजा दी थी। बाद को इसने विदुर के रूप में जन्म लिया था (भा. १.१३.१५; म. आ. ५७.८०; १००.२८; १०१. २७)।

पूर्वकाल में नैमिषारण्य में यम वैवस्वत ने शामित्र (कर्म) नामक यज्ञ किया था। वहाँ इसने यज्ञदीक्षा ली, जिससे संसार मृत्यु के द्वारा नष्ट होने से बच गया। सभी व्यक्ति अमर हो गए, तथा इस प्रकार संसार में जनसंख्या बढने लगी। तब इसने युद्धादि को जन्म दिया, जिससे प्राणियों की संख्या मृत्यु के द्वारा कम हो गयी (म. आ. १८९.१-८)। खाण्डवदाह के समय, श्रीकृष्ण तथा अर्जुन से युद्ध करने के लिए इंद्र की ओर से, यह भी कालदण्ड ले कर आया था (म. आ. २१८.३१)।

एक बार इसको उद्देशित कर कुन्ती ने मंत्र का उच्चारण किया, जिसके कारण इसे उसके पास जाना पड़ा। वहाँ उसके उदर से इसने एक पुत्र उत्पन्न किया। वही 'युधिष्ठिर' है (म. आ. ११४.३)। इसने अर्जुन को एक अस्त्र प्रदान किया था (म. व. ४२.२३)। इसने दमयन्तीस्वयंवर के समय राजा नल को भी वर प्रदान किया था। धर्मराज के द्वारा इसके प्रश्नों के योग्य उत्तर देने के कारण, एक सरोवर में मृत पड़े उसके चारों भाइयों को इसने जीवित किया था, तथा अज्ञातवास में सफल होने का उसे वरदान भी दिया था (म. व. २९७-२९८)। सावित्री को अनेक वर देने के उपरांत, इसने उसे सत्यवान् का पुनः जीवित होने का वर प्रदान किया था (म. व. २८१.२५-५३)।

इंद्र ने इसे पितरों का राजा बनाया था। पितरों के द्वारा पृथ्वीदोहन के समय यह बछड़ा बना था (अ. वे. २.८.२८)। त्रिपुरदाह के समय, यह शिव के बाण के पूछभाग में प्रतिष्ठित था। इसका महर्षि गौतम के साथ धर्मसंवाद हुआ था (म. शां. १२७)। इसने उसे मातृ-पितृऋण से मुक्त होने का मार्ग बताया था।

यम मुंज पर्वत पर शिव की उपासना करता था (म. आश्व. ८.१-६)। इसकी पत्नी का नाम धूमोर्णा था (म. अनु. १६५.११)।

अन्य पुराणों के अनुसार, इसकी नगरी का नाम संयमिनी था, जो मानसोत्तर पर्वत पर स्थित थी (भवि. ब्राह्म. ५३)। रामभक्त सुरथ की परीक्षा ले कर, इसने उसे वर दिया था, 'तुम्हें मृत्यु तभी प्राप्त होगी, जब तुम राम के दर्शन कर लोगे (पद्म. पा. ३९)।

यम की उपासना—यम को उसकी बहन यमी ने कार्तिक शुक्ल द्वितीया को भोजन दिया था। इसी लिए

इसने उसे वर दिया था कि, जो भी इस दिन बहन के हाथों बना भोजन ग्रहण करेंगे, उन्हे सदैव सौख्य प्राप्त होगा (स्कंद. २.४.११)।

हर्षण राजा के विश्वरूप नामक पिता को तथा विष्टि नामक माता को भीषण स्वरूप प्राप्त हुआ था। हर्षण ने यम की उपासना कर इससे प्रार्थना की कि, उन्हे सौम्य स्वरूप प्राप्त हो। तब इसने उन्हे गंगास्नान का व्रत बताया (ब्रह्म. १६५)।

एक बार इसके तप को देख कर इंद्र को भय हुआ, एवं उसने एक अप्सरा को भेज कर, इसका तप भंग करना चाहा। तब इसने इंद्र को सूचित किया कि, यह उसका इंद्रासन नहीं चाहता। बाद को इसने 'धर्मारण्य' नामक प्रदेश प्राप्त किया, जो शंकर का वासस्थान था (स्कंद. ३.२४)।

ग्रन्थ--यम के नाम पर तीन ग्रन्थ उपलब्ध हैं:—१. यमसंहिता, २. यमस्मृति, ३. यमगीता।

धर्मशास्त्रकार—याज्ञवल्क्य के द्वारा दी गयी धर्मशास्त्रकारों की सूची में यम का भी उल्लेख आता हैं (१.५)। वसिष्ठ धर्मसूत्र में यम के श्लोक आये हैं। अपरार्क ने शंखस्मृति में यम के धर्मविषयक विचारों को व्यक्त किया है, जिसके अनुसार कुछ पक्षियों का ही माँस खाना उचित कहा गया है (अपरार्क पृ. ११६७)। हर एक रूप में दूसरे जीवों के प्राणों की रक्षा के लिए भी वहाँ गया है। जीवानंद संग्रह में इसके श्लोकों की संख्या अठत्तर दी गयी हैं, जो आत्मशुद्धि एवं प्रायश्चित्त से सम्बन्धित हैं। आनंदाश्रम के 'स्मृतिसमुच्चय' में इसकी निन्नानवे श्लोकों की स्मृति प्राप्त है, जिसमें प्रायश्चित्त, श्राद्ध आदि के बारे में विचार प्राप्त है। इसकी स्मृति में इसका निर्देश 'भास्वति' (सूर्यपुत्र) नाम से किया गया है।

यम के अनुसार, विवाह के पश्चात् पत्नी का स्वतंत्र गोत्र नष्ट हो कर, उसका एवं उसके पति का गोत्र एक ही होता है (याज्ञ. १.२५४)। 'बृहद् यम स्मृति' नामक एक अन्य स्मृतिग्रंथ भी प्राप्त हैं, जिसमें पाँच अध्याय, एवं १८२ श्लोक प्राप्त है। उस स्मृति में शुद्धि आदि विषयों का विचार किया गया है। इस स्मृति में 'यम' एवं 'शातातप' आचार्यों के निर्देश प्राप्त हैं (बृहद्-यम. ३.४२; ५.२०)।

विश्वरूप, विज्ञानेश्वर, अपरार्क, स्मृतिचंद्रिका आदि उत्तरकालीन ग्रंथों में 'यमस्मृति' में से तीन सौ के उपर श्लोक उद्धृत किये गये है, जिनमें निम्नलिखित विषयों पर यम के विचार प्राप्त हैं:— श्राद्ध (याज्ञ. १.२२५); गोवध का प्रायश्चित्त (याज्ञ. ३.२६२); कन्या का विवाहयोग्य वय (स्मृतिचं. पृ. ७९); अपवित्र अन्न शुद्ध कैसे किया जा सकता है (अपरार्क. पृ. २६७); ब्रह्मचारी का वेश कैसा चाहिए (अपरार्क. पृ. ५८); ब्राह्मण को देहान्त शासन न देना चाहिए (स्मृतिचं. पृ. ३१६); असुर पत्नी का स्त्रीधन (याज्ञ. २.१४५); व्यभिचार (अपरार्क. पृ. ८६०)। आयुष्यक्षय के संबंध में इसने नचिकेत को बतायी हुयी गाथाएँ महाभारत में प्राप्त हैं (म. अनु. १०४.७२–७६)।

यम के अनुसार, स्त्रियों के लिए संन्यास-आश्रम अप्राप्य है। उन्हें चाहिये कि, वे अपनी एवं अपनी जाति के संतानों की सेवा करे (स्मृतिचं. पृ. २५४)।

यम के द्वारा रचित 'लघुयम' एवं 'स्वल्पयम' स्मृतिग्रंथों के उद्धरण भी हरदत्त, अपरार्क एवं स्मृतिरत्नाकर में प्राप्त हैं।

यमक—एक लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय भेंट ले कर उपस्थित थे (म. स. ४८. १२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'वैयमक'।

यमदूत—विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

यमराज--एक ग्रंथकार, जिसने 'भास्करसंहिता' के अंतर्गत 'ज्ञानार्णवतंत्र' की रचना की थी (ब्रह्मवै. २.१६)।

यमिन--स्वायंभुव मन्वन्तर के जिताजित् देवों में से एक।

यमी वैवस्वती--यम वैवस्वत की बहन, जो विवस्वत् आदित्य एवं संज्ञा की कन्या थी (भा. ६.६.४०; ८. १३.९)। कई ग्रंथों में इसकी माता का नाम सरण्यू दिया गया है। इसे 'यमुना' नामान्तर भी प्राप्त था। ऋग्वेद के एक सूक्त का प्रणयन भी इसने किया था (ऋ. १०.१०)।

ऋग्वेद में इसने अपने भाई यम के साथ किया हुआ 'यम-यमी संवाद' प्राप्त है, जहाँ इसने यम से संभोग की याचना की थी (ऋ. १०.८; यम वैवस्वत देखिये)।

'भय्यादूज' का व्रत कर, इसने अपने भाई यम को प्रसन्न किया था (स्कंद. २.४.११)।

यमुना--यमी वैवस्वती का नामान्तर।

ययाति--(सो. आयु.) प्रतिष्ठान देश का एक सुविख्यात राजा, जो नहुष राजा का पुत्र, एवं देवयानी तथा शर्मिष्ठा का पति था। महाभारत एवं पुराणों में इसे

'सम्राट' एवं 'श्रेष्ठ विजेता' कहा गया है। इसका राज्य-काल ३०००-२७५० ई. पू. माना जाता है।

इसने अपने पितामह आयु एवं पिता नहुष के कान्यकुब्ज देश के राज्य का विस्तार कर, अयोध्या के पश्चिम में स्थित मध्यदेश का सारा प्रदेश अपने राज्य में समाविष्ट किया। उत्तरी पश्चिम में सरस्वती नदी तक का सारा प्रदेश इसके राज्य में समाविष्ट था। इसके अतिरिक्त कान्यकुब्ज देश के दक्षिण, दक्षिणीपूर्व एवं पश्चिम में स्थित बहुत सारा प्रदेश इसने अपने बाहुबल से जीता था।

ऋग्वेद में इसे एक प्राचीन यज्ञकर्ता माना गया है, जो वेद की कुछ ऋचाओं का द्रष्टा था (ऋ. १.३१.१७; १०. ६३.१; ९.१०१.४-६)। ऋग्वेद में एक बार इसका निर्देश नहुष राजा के वंशज 'नहुष्य' के रूप में किया गया है। पूरु के साथ इसके सम्बन्ध का निर्देश वैदिक ग्रंथो में अप्राप्य है। इसलिए महाकाव्य की परम्परा को निश्चित रूप से त्रुटिपूर्ण मानना चाहिए।

जन्म—ययाति का वंश अग्नि, चन्द्र तथा सूर्य से उत्पन्न हुआ था (म. आ. १.४४)। प्रजापतिओं में यह दसवाँ था (म. आ. ७१.१)। यह नहुष को, सुधन्वन् संज्ञक पितृकन्या विरजा से उत्पन्न पुत्रों में से दूसरा था (म. आ. ७०.२९; ८४.१; ९०.७; उ. ११२.७; द्रो. ११९.५; अनु. १४७.२७; वा. रा. उ. ५८; भा. ९.१८; विष्णु. ४.१०; गरुड. १.१३९.१८; पद्म. सृ. १२; अग्नि. २७४; वायु. ९३; ह. वं. १३०; ब्रह्म. १२; कूर्म. १.२२; लिंग. १.६६)। मत्स्य में, इसकी माता का नाम 'सुधन्वन्' की जगह 'सुस्वधा' दिया गया है (मत्स्य. १५.२०-२३)। पद्म के अनुसार, यह नहुष को अशोक-सुन्दरी नामक स्त्री से हुआ था (पद्म. भू. १०९)। इसके भाइयों की संख्या तथा नाम पुराणों में भिन्न भिन्न दिये गये हैं (नहुष देखिये)। इसका ज्येष्ठ भ्राता यति योग का आश्रय लेकर मुनि हो गया, तथा नहुष अजगर बन गया, जिससे यह भूमण्डल का सम्राट बना।

महाभारत में इसका जीवनचरित्र दो विभागों में दिया गया है:—(१) पूर्वयायात, जिसमें इसके स्वर्गगमन तक का चरित्र प्राप्त है; (२) उत्तरयायात, जहाँ इसके स्वर्गपतन के बाद का जीवन ग्रथित किया गया है (म. आ. ७०-८०; ८१-८८; मत्स्य. ३४-८८)।

देवयानी से भेंट—एक बार मृगया के निमित्त जंगल में विचरण करता हुआ, तृषा से व्याकुल होकर यह एक कुँए के निकट आया। जैसे ही इसने कुँए में पानी देखना चाहा कि, इसे उसमें एक नग्न सुन्दरी दिख पड़ी। ययाति ने तत्काल उसे अपना उत्तरीय देकर, एवं उसका दाहिना हाथ पकड़ कर बाहर निकाला। बाद में उस स्त्री से इसे पता चला कि, वह दैत्यराज शुक्र की कन्या देवयानी है। अन्त में यह अपने नगर वापस आया (म. आ. ७३.२२-२३; भा. ९.१८)।

एक बार इसने देवयानी के साथ एक अन्य कन्या को देख कर उन दोनों का परिचय करना चाहा। तब देवयानी ने बताया, 'मैं शुक्राचार्य की कन्या हूँ, तथा यह वृषपर्वा की कन्या शर्मिष्ठा है, जो मेरी दासी है। यह सुन कर राजा ने अपना परिचय दिया, एवं विदा होने के लिए देवयानी से आज्ञा माँगी। तब देवयानी ने राजा को रोक कर उससे प्रार्थना करते हुए कहा, 'मैंने दो सहस्र दासी तथा शर्मिष्ठा के सहित आपको तन-मन धन से वरण किया है। अतएव आप मुझे अपनी पत्नी बना कर गौरवान्वित करे'।

ययाति-देवयानीसंवाद—प्रतिलोम विवाह उस समय सर्वत्र प्रचलित न थे, अतएव इसने साफ इन्कार कर दिया। तब इसका तथा देवयानी का परस्परसंवाद हुआ, जिसमें देवयानी ने कहा, 'हे राजा, तुम न भूलो कि, जब जब क्षत्रियकुल का संहार हुआ है, तब ब्राह्मणों से ही क्षत्रियों की उत्पत्ति हुयीं है। लोपामुद्रादि क्षत्रिय कुमारिकाओं का भी ब्राह्मणों से विवाह हुआ है। मेरे पिता आपके न माँगने पर भी यदि मुझे आपको देते हैं, तो आपको कुछ भी आपत्ति न होनी चाहिए। मैं कहती हूँ, इसमें आपको कुछ भी दोष एवं पाप न लगेगा'।

भागवत के अनुसार, देवयानी ने ययाति से कहा, 'कच के द्वारा मुझे यह शाप मिल चुका है कि, मुझसे कोई भी ब्राह्मणपुत्र शादी न करेगा। इसीलिए मैं तुमसे बार बार विवाह का निवेदन कर रही हूँ' (भा. ९.१८)। किन्तु महाभारत के अनुसार, देवयानी ने कच के शाप की बात ययाति से न बतायीं, तथा तर्क के द्वारा उसे समझाने की कोशिश की कि, ययाति उससे विवाह कर ले।

विवाह—बाद में शुक्राचार्य ने देवयानी की इच्छा के अनुसार, उसकी शादी ययाति से कर दी। शुक्र ने विवाह में धनसंपत्ति के साथ दो हजार दासियाँ के साथ शर्मिष्ठा को भी ययाति को दिया, तथा कहा, 'शर्मिष्ठा कुलीन घराने की कन्या है, उसे कभी अपनी शय्या पर न बुलाना'। चलते समय शुक्राचार्य ने ययाति से कहा, 'देवयानी मेरी प्रिय कन्या है। तुम इसे अपनी पटरानी

बनाओ; तुम्हें प्रतिलोमविवाह का कुछ भी दोष न लगेगा'। अंत में यह देवयानी को उनकी दासियों के सहित के अपने नगर वापस लाया।

पुत्रप्राप्ति--बाद में इसने अशोकवनिका के पास ही शर्मिष्ठा तथा उसकी दासियों की योग्य व्यवस्था कर दी। वहाँ देवयानी के साथ यह प्रसन्नपूर्वक विलासमय जीवन बिताता रहा। कालांतर में देवयानी से इसे दो पुत्र भी हुए।

एक बार ययाति को एकान्त में देख कर शर्मिष्ठा इसके पास आयी, तथा इससे अपने ऋतुकाल को सफल बनाने की प्रार्थना की। पहले ययाति एवं शर्मिष्ठा में परस्पर संवाद हुआ, किन्तु अंत में इसे शर्मिष्ठा की यथार्थता को स्वीकार कर, उसे अपनी भार्या बना कर सहवास करना पड़ा। कालान्तर में उससे इसे तीन तेजस्वी पुत्र हुए।

शुक्र से शाप--एक दिन देवयानी ने शर्मिष्ठा के तीन पुत्र देखे। पूछने पर जैसे ही उसे पता चला कि, शुक्र के द्वारा रोके जाने पर भी, ययाति ने शर्मिष्ठा को भार्या के रूप में स्वीकार कर उसे तीन पुत्र दिये हैं, वह क्रोध में जल उठी, एवं तत्काल पिता के घर को चली गयी। उसके पीछे पीछे यह भी जा पहुँचा। वहाँ जैसे ही शुक्राचार्य को सारी बातें पता चलीं, उन्हों ने ययाति को जराग्रस्त होने का शाप दिया।

तब ययाति ने शुक्राचार्य से प्रार्थना की कि, वह उसे इस शाप से बचाये। तब शुक्राचार्य ने प्रसन्न हो कर कहा, 'तुमने मेरा स्मरण किया है, अतएव मैं तुम्हें वरदान देता हूँ कि, तुम अपनी यह जरावस्था किसी को भी दे कर, उसका तारुण्य ले सकते हो। जो पुत्र तुम्हें अपनी तरुणता दे, तथा तुम्हारी वृद्धावस्था स्वीकार करे, उसे ही तुम अपने राज्य का अधिकारी बनाओं; चाहे वह कनिष्ठ ही क्यों न हो। तुम्हे तरुणता देनेवाला तुम्हारा पुत्र दीर्घजीवी, कीर्तिवान् तथा अनेक पुत्रों का पिता बनेगा' (भा. ९.१८; ब्रह्म. १४६)। इस प्रकार वृद्धावस्था को धारण कर ययाति अपने नगर वापस आया (म. आ. ७८. ४०-४१)।

पुत्रों को शाप--राजधानी में आकर, इसने अपने ज्येष्ठ पुत्र यदु से कहा, 'तुम अपनी युवावस्था दे कर, मेरी वृद्धता एवं चित्तदुर्बलता हज़ार वर्षों के लिए स्वीकार करो'। यदु ने इन्कार करते हुए कहा, 'मेरे समान आपके अन्य भी पुत्र हैं। आप उनसे यही माँग करे, तो अच्छा होगा। यह सुन कर ययाति ने उसे शाप दिया, तुम एवं तुम्हारे पुत्रों राज्य के अधिकार से वंचित होगे' (यदु देखिये)।

आगे चल कर, यही प्रश्न इसने तुर्वसु से किया, किन्तु वह भी तैयार न हुआ। तब इसने उसे शाप दिया, 'तुम्हारी संतति नष्ट हो जावेगी, तथा जिन म्लेच्छों के यहाँ धर्म, आचार, विचार को स्थान न दिया जाता हो, एवं जहाँ की कुलीन स्त्रियाँ नीच वर्णों के साथ रमण करती हो, उसी पापी जाति के तुम राजा बनोगे'।

पश्चात् यह शर्मिष्ठा के ज्येष्ठ पुत्र द्रुह्यु के पास गया। वह भी जरावस्था को लेने के लिए तैयार न हुआ। फिर इसने उसे शाप दिया, 'तुम्हारा कल्याण कभी न होगा! तुम्हे ऐसे दुर्गम स्थान पर रहना पड़ेगा, जहाँ का व्यापार नावों के माध्यम से होता है। वहाँ भी तुम्हें अथवा तुम्हारे वंशजों को राज्यपद की प्राप्ति न होगी, तथा तुम राज्याधिकार से वंचित होकर 'भोज' कहलाओगे'।

इसके उपरांत यह अपने पुत्र अनु के पास गया। वह भी राजी न होने पर, इसने उसे शाप दिया, 'तुम इसी समय जराग्रस्त हो जाओगे। तुम्हारे द्वारा 'श्रौत' अथवा 'स्मार्त' अग्नि की सेवा न होगी, एवं तुम नास्तिक बन जाओगे' (म. आ. ७९.२३)।

यौवनप्राप्ति--सबसे अन्त में यह अपने कनिष्ठ पुत्र पूरु के पास गया, एवं उसकी युवावस्था माँगी। पूरु तैयार हो गया। तब इसने उसके शरीर में अपनी जरा को दे कर उसका यौवन स्वयं ले लिया। पश्चात् इसने उसे वर प्रदान किया, 'आज से मेरा सारा राज्य तुम्हारा एवं तुम्हारे पुत्रों का होगा' (म. आ. ७९.२४-३०)।

पूरु का यौवन प्राप्त कर ययाति अपनी विषयवासनाओं को पूर्ण करने में निमग्न हुआ। इसने देवयानी तथा शर्मिष्ठा से खूब विषयसुख लिया। बाद में इसने विश्वाची नामक अप्सरा के सहित नंदनवन में, तथा उत्तरस्थ मेरु पर्वत के अलका नामक नगरी में अनेक प्रकार की विलासात्मक लिप्साओं का भोग किया। गौ नामक अप्सरा के साथ चैत्ररथवन वन में विलास किया। इतना सुख लूटने के बाद भी, जब इसका जी न भरा, तब इसने अनेक यज्ञ किये, दान दिये, तथा राजनीति का अनुसरण कर के प्रजा को सुखी बनाया। अब यह विषयवासनाओं से अत्यधिक ऊब चुका था।

विरक्तावस्था-- इसी विरक्त अवस्था में इसने अपनी जीवन गाथा रुपक में बाँध कर देवयानी को कह सुनाई। इस कथा में एक बकरा एवं बकरी की कथा कथन कि थी,

जो सदैव भोगलिप्सा में ही विश्वास करते थे (भा. ९. १९)। अत्यधिक भोग लिप्सा से आत्मा किस प्रकार विरक्त बनती है, इसकी कथा इसने पुत्र पूरु को सुनाई, एवं कहाः—

न जातु कामः कामानामुपभोगेन शाम्यति।
हविषा कृष्णवर्त्मेव भूय एवाभिवर्धते॥
(म. आ. ८०, ८४०*; विष्णु. ४. १०. ९-१५)।

(कामोपभोग से काम की तृष्णा कम नही होती, बल्कि बढती है, जैसे कि अग्नि में हविर्भाग डालने से वह और जोर से भडक उठती है।)

वानप्रस्थाश्रम—अंत में इसने पूरु को उसकी जवानी लौटा कर, उससे अपनी वृद्धावस्था ले ली। इसके उपरांत, इसने बड़े शौक से पूरु को राज्याभिषेक किया। जनता ने इसका विरोध किया कि, राज्य ज्येष्ठ पुत्र को ही मिलना चाहिए। किन्तु इसने जनता को तर्कपूर्ण उत्तर दे कर शान्त किया, तथा वानप्रस्थाश्रम की दीक्षा ले कर ब्राह्मणों के साथ यह वन चला गया (म. आ. ८१. १-२)।

पुराणों के अनुसार, वनगमन के पूर्व ययाति ने अपने प्रत्येक पुत्र को भिन्न भिन्न प्रदेश दिये। तुर्वसु को आग्नेय, यदु को नैर्ऋत्य, द्रुह्यु को पश्चिम, अनु को उत्तर, तथा पूरु को गंगा-जमुना के बीच में स्थित मध्य-प्रदेश दिया (वायु. ९३; कूर्म. १. २२)। कई पुराणों में यही जानकारी कुछ अन्य प्रकार से दी गयी है, जो निम्न-लिखित हैः— यदु को ईशान्य (ह. वं. १.३०.१७-१९); पूर्व (ब्रह्म. १२), दक्षिण (विष्णु. ४.३०; लिंग १. ६६); द्रुह्य को आग्नेय; यदु को दक्षिण; तुर्वसु को पश्चिम, तथा अनु को उत्तर प्रदेश का राज्य दिया गया (भा. ९.१९)।

उत्तरयायात आख्यान—अपने पुत्रों को राज्य प्रदान करने के पश्चात्, इसने भृगु पर्वत पर आ कर तप किया, एवं अपनी भार्याओं के साथ यह स्वर्गलोक गया। स्वर्ग में जाने के उपरांत, इसके घमण्डी स्वभाव, एवं दूसरों को अपमानित करने की भावना ने इसे निस्तेज कर दिया, एवं इंद्र ने इसे स्वर्ग से भौमनर्क में ढकेल दिया। किन्तु यह अपनी इच्छा के अनुसार, नैमिषारण्य में इसकी कन्या माधवी के पुत्र प्रतर्दन, वसुमनस, शिबि तथा अष्टक जहाँ यज्ञ कर रहे थे, वहाँ जा कर गिरा। तब इसकी कन्या माधवी ने अपना आधा पुण्य, तथा गालव ने अपने पुण्य का अठवाँ अंश इसे प्रदान किया, जिस कारण यह पुनः स्वर्ग का अधिकारी बन गया (म. आ. ८१-८८; मत्स्य. २५-४२; माधवी देखिये)।

बाद में नैमिषारण्य में पाँच स्वर्णरथ आये, जिनमें चढ़ कर यह अपने चार नातियों के साथ पुनः स्वर्गलोक का अधिकारी हुआ। स्वर्गलोक में जाने के उपरांत, ब्रह्मदेव ने इसे बताया, 'तुम्हारे पतन का कारण तुम्हारा अभिमान ही था। अब तुम यहाँ आ गये हो, तो अभिमान छोड़ कर स्वस्थ मन से यहाँ वास करो (म. आ. ८१-८८; उ. ११८-१२१; मत्स्य. ३४-४२)।

वाल्मीकि रामायण में-ययाति की यह कथा वाल्मीकि रामायण में भी प्राप्त है, किंतु वह कथा पुराणों से कुछ भिन्न है। उसमें लिखा हैं कि, जब यदु ने इसकी जरावस्था को स्वीकार न किया, तब इसने शाप दिया, 'तुम यातुधान तथा राक्षस उत्पन्न करोगे। सोमकुल में तुम्हारी संतति न रहेगी, तथा वह उदण्ड होगी'। इसी के शाप के कारण, यदु राजा से क्रौंचवन नामक वन में हज़ारो यातुधान उत्पन्न हुए (वा. रा. उ. ५९)।

पद्म में—पद्म के अनुसार, पहले यह बड़ी धार्मिक प्रवृत्ति का राजा था, तथा धर्मभावना से ही राज्य करता था। किंतु इन्द्र के द्वारा भड़काने पर, इसका मस्तिष्क कुमार्गों की ओर लग गया।

इसकी धर्मपरायणता को देख कर इंद्र को शंका होने लगी कि, कहीं यह मेरे इंद्रासन को न ले ले। अतएव उसने अपने सारथी मातलि को भेजा कि, वह इसे ले आये। मातलि तथा इसके बीच परमार्थ के संबंध में संवाद हुआ, परंतु यह स्वर्ग न गया। तब इन्द्र ने गंधर्वो के द्वारा ययाति के सामने 'वामनावतार' नाटक करवाया। उसमें रति की भूमिका देख कर यह विमुग्ध हों उठा।

अश्रुबिंदुमती से विवाह—एक बार मलमूत्रोत्सर्ग करने के बाद, इससे पैर न धोया। यह देख कर जरा तथा मदन ने इसके शरीर में प्रवेश किया। कालांतर में एक बार जब यह शिकार के लिए अरण्य में गया था, तब इसे 'अश्रुबिन्दुमती' नामक एक सुंदर स्त्री दिखाई दी। तब इसने उसका परिचय प्राप्त करना चाहा। तब उसकी सखी विशाला ने उसका परिचय देते हुए इसे बताया, 'मदन-दहन के उपरांत रति ने अति विलाप किया, तब देवों ने उस पर दया कर के अनंग मदन का निर्माण किया। इस प्रकार अपने पति को पुनः पा कर रति प्रसन्नता से रोने लगी। रोते समय उसकी बाँयी आँख से

जो अश्रुबिन्दु टपका, उसीसे इस सुंदरी का जन्म हुआ है। अब यह बड़ी हो गयी है, तथा स्वयंवर करना चाहती है'। यह सुन कर ययाति ने अश्रुबिन्दुमती से कहा, 'मैं तुमसे शादी करने को तैयार हूँ'। अश्रुबिं-दुमती ने कहा, 'यदि तुम दूसरे को जरा दे कर यौवन प्राप्त कर लो, तब मैं तुम्हारे साथ विवाह कर सकती हूँ'।

यह सुन कर, यौवन माँगने के लिए यह अपने 'तुरु', 'यदु', 'कुरु', एवं 'पूरु' इन चार पुत्रों के पास गया। उनमें से तुरु एवं यदु ने इसे यौवन देने से इन्कार किया, जिस कारण इसने उन्हे नानाविध तरह के शाप दिये। तीसरा पुत्र कुरु अल्पवय का था, अतएव यह उसके पास न गया। चौथे पुत्र पूरु ने अपना यौवन इसे प्रदान किया। तत्पश्चात् इसने अश्रुबिंदुमती से विवाह किया, जिसने इसे अपनी अन्य दो पत्नियों से संबंध न रखने की शर्त विवाह के समय लगा दी।

इसे एवं अश्रुबिन्दुमती को इस प्रकार रहते देख कर, देवयानी तथा शर्मिष्ठा को अत्यधिक सौतिया दाह हुआ। यह देख कर इसने यदु को आज्ञा दी, 'इन दोनों का वध करो'। किन्तु उसने इसकी आज्ञा का उल्लंघन किया। इससे क्रोधित हो कर ययाति ने यदु को शाप दिया, 'तुम्हारे वंश के पुरुष मामा की पुत्री के साथ वरण करेंगें, तथा मातृद्रव्य में हिस्सा लेंगे (पद्म. भू. ८०.१३)

बाद में, मेनका के सुझाये जाने पर अश्रुबिन्दुमती ने इससे अनुरोध किया कि, यह स्वर्ग देखने चले। तब इसने अपना सम्पूर्ण राज्य पूरु को दे कर, उसे राजनीति का उपदेश दिया, एवं यह वैकुंठ चला गया (पद्म. भू. ६४. ८३; ७७.७७)।

श्रेष्ठ सम्राट—इसका जीवन विभिन्न प्रकार के मोड़ों से गुज़रा। एक ओर जहाँ यह धर्मात्मा, दानी महापुरुष था, वहीं कालचक्र में फँस कर भोग-लिप्सा में ऐसा चिपका कि, अपने को ही भूल बैठा। किन्तु विभिन्न प्रभावों के द्वारा किये गये इसके कार्यों को छोड़ कर, इसका निष्पक्ष रूप से अवलोकन करने पर पता चलता हैं कि, ययाति मन तथा इन्द्रियों को संयम में रखनेवाला भूमण्डल का श्रेष्ठ सम्राट था। इसके भक्तिभाव से देवताओं तथा पितरों का पूजन कर, यज्ञों के अनुष्ठानों को करते हुए, समस्त पृथ्वी का पालन किया था (म. आ. ८०)।

इन्द्र ने इसे एक स्वर्ण का रथ दिया था। इस रथ को ले कर इसने छः रात्रियों में सम्पूर्ण पृथ्वी को जीत लिया, तथा समस्त देव, दानवों एवं मनुष्यों में यह अजेय साबित हुआ (ह. वं. १.३०.६-७)। लिंग में यह भी दिया गया है कि, यह रथ ययाति को शुक्र के द्वारा दिया गया था, तथा उसके साथ अक्षय तूणीर भी इसे दिये गये थे (लिंग. १.६६)। ब्रह्म के अनुसार, इसने पृथ्वी को छः दिनों में, तथा लिंग के अनुसार छः महीनें में जीता था (ब्रह्म. १२; लिंग. १.६६)। ब्रह्मदेव द्वारा निर्मित दिव्य खड्ग नहुष ने इसे दिये, तथा इसने वह पूरु को दे दिया था (म. शां. १६०.७३)।

यह अपने समय का बड़ा प्रसिद्ध राजा था, जिसके नाम के सामने स्थान स्थान पर 'सम्राट' 'सार्वभौम' इत्यादि उपाधियां लगाई जाती थीं। जब यह यज्ञ करता था, तब सरस्वती तथा अन्य नदियाँ, सतसागर तथा पर्वत इसे दुग्ध तथा घी देते थे (म. श. ४०.३०)। देवासुर-युद्ध में इसने देवताओं की सहायता की थी (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ५७३; शां. २९.९०)। अज्ञात-वास के अन्त में पांडवों के द्वारा किया गया युद्ध देखने के लिये, यह देवों के विमान में बैठ कर आया था (म. वि. ५१.९)।

धार्मिकता—जहाँ राजाओं में यह सम्राट था, वहीं इसमें दानवीरता की भी कमी न भी (म. व. परि. १. क्र. २)। यह बड़ा प्रजापालक राजा था (म. आ. ८४. ८५७*; शां. २९.८८-८९; अनु. ८१.५)। इसने गुरुदक्षिणा देने के लिए, एक ब्राह्मण को हजार गौओं का दान किया था (म. व. १९०. परि. १.२०. ३) सरस्वती नदी के किनारे जो 'यायत' नामक प्रसिद्ध तीर्थ है, वह इसीके कारण प्रचलित हुआ (म. श. ४०.२९)। यह शंकर का बड़ा भक्त था (लिंग १. ६६)। इसे 'काशीपति' भी कहा गया है (म. उ. ११३. ३)। यह यमसभा में रह कर सूर्यपुत्र यम की उपासना करता था (म. स. ८.८)।

परिवार—ययाति को दो पत्नियाँ थीं:—१. देवयानी, जो सुविख्यात भार्गव ऋषि उशनस् शुक्र की कन्या थी, २. शर्मिष्ठा, जो असुर राजा वृषपर्वन् की कन्या थी। पद्म में इसकी अश्रुबिंदुमती नामक तृतीय पत्नी का निर्देश प्राप्त है (पद्म. भू. ६४.१०८)। किन्तु अन्य कहीं भी उसका निर्देश अप्राप्य है।

ययाति राजा को कुल पाँच पुत्र थे। उनमें से यदु एवं तर्वसु इसे देवयानी से, एवं अनु, द्रुह्यु एवं पूरु नामक तीन पुत्र शर्मिष्ठा से उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८०.१३-

१४; ९०.८-९)। इन पुत्रों के अतिरिक्त इसे माधवी एवं सुकन्या नामक दो कन्याएँ भी थी (विष्णुधर्म. १. ३२)। किंतु अन्य ग्रंथों में सुकन्या को वैवस्वत मनु के पुत्र शर्याति की कन्या कहा गया है।

ययातिपुत्रों के राज्य--ययाति ने अपना साम्राज्य अपने पाँच पुत्रों में बाँट दिया, जहाँ उन्होंने पाँच स्वतंत्र राजवंशों की स्थापना की। उनकी जानकारी निम्न-प्रकार है :--

१. **यदु**--इसे मध्यदेश के चर्मण्वती (चंबल), वेत्रवती (वेटवा) एवं शुक्तिमती (केन) नदियों से वेष्टित प्रदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ उसने यादववंश की स्थापना की।

२. **तुर्वसु**--इसे मध्यदेश के आग्नेय भाग में स्थित बाहरे प्रदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ उसने तुर्वसु (यवन) वंश का राज्य स्थापित किया।

३. **अनु**--इसे मध्यदेश के उत्तर भाग में स्थित गंगा यमुना नदियों के दोआब का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ उसने अनु (म्लेच्छ) राज्य स्थापित किया।

४. **द्रुह्यु**--उसे मध्यप्रदेश के यमुना नदी के पश्चिम में, एवं चंबल नदी के उत्तर में स्थित प्रदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ उसने द्रुह्यु (भोज) वंश का राज्य स्थापित किया।

५. **पूरु**--इसने ययाति की जरा स्वीकारने के कारण, ययातिपुत्रों में सब से छोटा होने पर भी, पूरु प्रतिष्ठान देश का राजा बनाया गया। इसे राज्य का सब से बडा हिस्सा मिल गया, जिस में सारा मध्यदेश एवं गंगा-यमुना के दो आब का प्रदेश समाविष्ट था। सोमवंश की मुख्य शाखा पूरु राजा से 'पूरुवंश' अथवा 'पौरव' कहलाने लगी।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के जित देवों में से एक।

यवक्री--'यवक्रीत' ऋषि का नामांतर।

यवक्रीत--भरद्वाज ऋषि का एकलौता पुत्र, जिसने वेदों की विद्या को प्राप्त करने के लिए घोर तप किया था (म. व. १३५.१३)। 'यवक्रीत' का शाब्दिक अर्थ 'यव दे कर खरीदा गया' होता है। इसे 'यवक्री' नामांतर भी प्राप्त था। इसका आश्रम स्थूलशिरस् ऋषि के आश्रम के पास था (म. व. १३५.१३८)। ज्ञान केवल अध्ययन से ही प्राप्त हो सकता है, तप से नही, इस तत्त्व के प्रतिपादन के लिए इसकी कथा महाभारत में दी गयी है।

यवक्रीत एवं इसके पिता दोनों तपोनिष्ठ व्यक्ति थे, किंतु इन दोनों को ब्राह्मणलोग आदर की दृष्टि से न देखते थे, क्यों कि, इनमें वेदों की ऋचाओं के निर्माण करने की शक्ति न थी।

तपस्या--यवक्रीत ने वेदज्ञान प्राप्त करने के लिए कठोर तप किया, जिससे घबरा कर इंद्र ने इसे सूचना की कि, यह अपने इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए व्यर्थ प्रयत्न न करे। किंतु यह प्रचंड अग्नि को प्रज्वलित कर के वेदप्राप्ति की लिप्सा में कठोर तप करता ही रहा। इंद्र के बार बार मना करने पर इसने उसे उत्तर दिया, 'अगर तुम मेरी मनःकामना पूरी न करोगे, तो मैं इससे भी कठिन तप कर कें, अपने प्रत्येक अंग को छिन्नभिन्न कर, जलती हुई अग्नि में होम कर दूँगा।'

इंद्र से भेंट--यवक्रीत के न मानने पर, इंद्र ने वृद्ध ब्राह्मण का वेप धारण किया, एवं वह संध्या के समय घाट पर जाकर, भागीरथी में मुट्ठी भर भर कर बालू डालने लगा। उसे ऐसा करते देख कर, इसने उसका कारण पूछा। तब इंद्ररूपधारी ब्राह्मण ने कहा, 'भागीरथी में बालू डाल डाल कर, लोगों के लिए मै एक पूल निर्माण करना चाहता हूँ'। इसने उस ब्राह्मण की खिल्ली उड़ायी, एवं उसको इस निरर्थक कार्य को न करने की सलाह देते हुए कहा, 'यह भागीरथी की धारा का प्रवाह मुट्ठी भर मिट्टी से तुम नहीं रुका सकते। सेतु बाँधने की कोरी कल्पना में तुम अपने श्रम को व्यर्थ न गवाँओं'। तब ब्राह्मण ने कहा, 'जिस प्रकार तुम वेदज्ञान की प्राप्ति के लिए तप कर रहे हो, उसी प्रकार मैं भी लगा हूँ। तब हँसने की बात ही क्या?'

यह सुन कर यवक्रीत ने इंद्र को पहचान लिया, तथा उससे क्षमा माँगते हुए वरदान माँगा, 'मेरी योग्यता अन्य सारे ऋषिओं से श्रेष्ठ हो'। तब इंद्र ने इसके द्वारा माँगे गये सभी वर देते हुए कहा, 'तुम्हें एवं तुम्हारे पिता में वेदों के सृजन करने की शक्ति जाग्रत होगी। तुम अन्य लोगों से श्रेष्ठ होंगे, तथा तुम्हारे सभी मनोरथ पूर्ण होंगे' (म. व. १३५)।

इन्द्र के द्वारा वर प्राप्त कर यह अपने पिता भरद्वाज के पास आया, एवं उसे वरप्राप्ति की कथा सविस्तार बतायी। भरद्वाज ने इसकी गर्वपूर्ण वाणी को सुन कर, इसकी अभिमानभावना को नाश करने के लिए, इसे बालधि ऋषि तथा उसके पुत्र मेधाविन् की कथा सुनायी, एवं

इसे उपदेश दिया की, गर्व करने के क्या दुष्परिणाम होते हैं।

रैभ्य से विरोध—जिस स्थान पर यह तथा इसके पिता रहते थे, वहीं पास में ही विश्वामित्र ऋषि का पुत्र रैभ्य भी आश्रम बना कर, अर्वावसु तथा परावसु नामक अपने पुत्रों के साथ रहता था। रैभ्य के साथ उसकी स्नुषा, परावसु की परम सुंदरी पत्नी भी रहती थी। एक बार घूमते घूमते यह रैभ्य आश्रम के पास आया, तथा स्नुषा के रूप को देख कर इतना अधिक पागल हो उठा कि, उसके बार बार मना करने पर भी, इसने उसके साथ बलात्कार किया। बाद को स्नुषा ने सारी कथा रो रोकर अपने श्वशुर रैभ्य ऋषि को बतायी।

यवक्रीत की यह आवारगी एवं निर्लज्ज कामातुरता की कहानी सुन कर, रैभ्य क्रोध में तमतमाने लगा। उसने अपनी दो जटायें उखाड कर, उन्हे अग्नि में होम कर, एक राक्षस तथा एक सुंदर स्त्री का निर्माण किया, एवं उन्हे यवक्रीत का नाश करने की आज्ञा की। उस कृत्यारूपी सुन्दर स्त्री ने तप करते हुए यवक्रीत को मोहित किया, एवं इसका समस्त तेज ले लिया। तब राक्षस अपने शूल को ले कर इस पर दौड़ा। यह राक्षस को भस्म करने के लिए पानी धूँडने लगा। उसे न देख कर भागता भागता यह नदियों के पास गया, किंतु वहाँ नदीयाँ में भी पानी न था। तब इसने पिता की होमशाला में आ कर, उसमें घुस कर, प्राण बचाना चाहा। किंतु आश्रम के अंधे शूद्र के द्वारा यह बाहर ही रोक लिया गया। उसी समय अवसर देख कर, राक्षस ने अपने शूल से प्रहार कर इसके वक्षःस्थल को विदीर्ण किया, एवं इसका वध किया। इस प्रकार रैभ्य ऋषि की श्रमपूर्वक संपादित की हुयी विद्या के आगे यवक्रीत की वरप्राप्ति की विद्या ठहर न सकी।

बाद में ब्रह्मयज्ञ कर के भरद्वाज मुनि आश्रम आये, तथा यह देख कर कि, आज होमशाला की अग्नि प्रज्वलित नहीं है, उन्होंने इसका कारण अपने गृहरक्षक शूद्र से पूछा। उस शूद्र ने सारी कथा कह सुनायी, तथा भरद्वाज तुरंत ही समझ गये कि, मना करने पर भी यह अवश्य ही रैभ्य के आश्रम गया होगा। पुत्र को धरती पर पड़ा हुआ देख कर भरद्वाज ने कहा, 'हे मेरे एकलौते पुत्र, तुम्हें बार बार मना किया, किंतु तुम न माने। वेदों के ज्ञान को पा कर, तुम घमण्डी, तथा कठोर बन कर पापकर्म में रत हुए हो। आज मैं पुत्रशोक में कितना विह्वल हूँ। तुम्हारी मृत्यु तो हुई, किंतु तुमको मरवानेवाला रैभ्य भी अपने पुत्र के द्वारा ही मारा जायेगा'। इस प्रकार विलाप करते हुए भरद्वाज मुनि ने रैभ्य को शाप दिया, एवं मृत पुत्र के साथ ही अग्नि में प्रविष्ट हो कर, उसने अपनी जान दे दी (म. व. १३७)।

मुक्ति—कालांतर में भरद्वाज के द्वारा दिये गये शाप के कारण, रैभ्य अपने पुत्र परावसु के द्वारा मारा गया। यह देख कर, रैभ्य के परमसुशील पुत्र अर्वावसु ने उग्र तप कर के सूर्य तथा देवों को प्रसन्न किया। उसने उनके द्वारा वर प्राप्त कर, भरद्वाज, यवक्रीत तथा रैभ्य को जीवित कर पितृहत्या के दोष से अपने बंधु परावसु को मुक्त किया एवं दो अन्य वर भी प्राप्त किये। पहला वर माँगा कि, 'मेरे पिता भरद्वाज के द्वारा किये गये वध का स्मरण उसे न रहे,' तथा दूसरा माँगा कि, 'मुझे जो वेद को प्रकाशित करनेवाला सूर्यमंत्र प्राप्त हुआ है, वह हमारे परिवार एवं परम्परा में सदैव बना रहे'।

बाद में इंद्रादि देवों ने यवक्रीत से बताया, 'रैभ्य ने गुरु से वेदों का अध्ययन किया है, इसलिए सामर्थ्य में वह तुमसे श्रेष्ठ है'। भरद्वाज ने अर्वावसु का अभिनंदन किया, तथा उसके इस उपकार के लिए बार बार प्रशंसा की। अंत में यह अपने पिता के साथ उसके आश्रम रहने गया (म. व. १३८)।

यवन—कृष्ण के द्वारा मारे गये 'कालयवन' राजा का नामान्तर (म. व. १३.२९; कालयवन देखिये)।

२. हैहयराज का एक साथी, जिसे सगर ने पराजित किया था। पश्चात् यह वसिष्ठ ऋषि की शरण में गया, जिसने इसे जीवितदान तो दिया; किन्तु इसके सर के बाल निकालने की, एवं दाढ़ी रखने की सजा इसे थी (पद्म. उ. २०)।

३. एक लोकसमूह, जो गांधार देश के सीमाभाग में स्थित 'अरिआ' एवं 'अर्कोशिया' प्रदेश में रहते थे। प्राचीन वाङ्मय में 'अयोनियन' ग्रीक लोगों के लिए 'यवन' शब्द प्रायः प्रयुक्त किया जाता है। इन युनानी लोगों को फारसी भाषा में 'यौन' कहते थे, जिसका ही रूपान्तर प्राकृत भाषा में 'यौन', एवं संस्कृत में 'यवन' नाम से किया गया प्रतीत होता है।'

उपनिवेश—सिकंदर के हमले के पूर्वकाल में योन लोगों का एक उपनिवेश, अफगाणिस्तान में बल्ख एवं समरकंद के बीच के प्रदेश में बसा हुआ था, जिन लोगों का राजा 'सेर्क्सस' था। पाणिनि के व्याकरण में 'यवन लिपि' का निर्देश है, जो संभवतः प्राग्मौर्य थी, एवं इन्ही

लोगों के द्वारा प्रस्थापित की गयी थी (पा. सू. ४.१.४९; कात्यायन वार्तिक. ३)।

सिकंदर के हमले के पश्चात्, यवन लोगों का एक उपनिवेश भारत के उत्तरीपश्चिम प्रदेश में बसा हुआ था। चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार में आये हुये मेगॅस्थिनिस, दिओन्सिअस आदि परदेशीय वकील यवन ही थे।

अशोक के बारहवे स्तंभलेख में, 'योन' लोगों के देश में महारक्षित नामक बौद्ध भिक्षु धर्मप्रचारार्थ भेजने का निर्देश प्राप्त है। 'योन धर्मरक्षित' नामक अन्य एक बौद्ध धर्मगुरु अशोक के द्वारा 'अपरान्त' प्रदेश में भेजा गया था। रुद्रदामन् के जुनागड स्तंभलेख में, अपरान्त प्रदेश का राज्य योनराज तुषाष्प के द्वारा नियंत्रित किये जाने का, एवं वह सम्राट अशोक का राजप्रतिनिधि होने का निर्देश प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, अशोक के राज्यकाल में यवन लोगों की एक बसाहत पश्चिमी भारत में गुजरात प्रदेश में भी बसी हुयी थी।

पतंजलि के महाभाष्य में, मिनैन्डर नामक यवन राजपुत्र ने 'साकेत' (अयोध्या) एवं 'मध्यमिका' नगरी को युद्ध में घिरा लेने का निर्देश प्राप्त है (महा. २.११९)। आगे चल कर शुंगराजा पुष्यमित्र एवं वसुमित्र ने यवनों को पराजित किया। आंध्र राजा गौतमीपुत्र शातकर्णी ने इनका संपूर्ण नाश किया।

महाभारत में—महाभारत के अनुसार, यवन लोग ययातिपुत्र तुर्वसु के वंशज थे (म. आ. ८०.२६)। ये लोग पहले क्षत्रिय थे; किंतु ब्राह्मणों से द्वेष रखने के कारण, बाद में शूद्र बन गये थे (म. अनु. ३५.१८)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र इन्हे नंदिनी के योनि (मूत्र) प्रदेश से उत्पन्न कहा गया है (म. आ. १६५.३५)।

सहदेव ने अपनी दक्षिणदिग्विजय में इनके नगरों को जीता था (म. स. २८.४९)। नकुल ने भी अपनी पश्चिम दिग्विजय में इन्हे परास्त किया था (म. स. २९.१५ पाठ.)। कर्ण ने अपनी पश्चिम दिग्विजय में इन्हे जीता था (म. व. परि. १.२४.६६)।

भारतीय युद्ध में, ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे। कांबोजराज सुदक्षिण यवनों के साथ एक अक्षौहिणी सेना ले कर भारतीय युद्ध में उपस्थित हुआ था (म. उ. १९.२१-२२)। भारतीय युद्ध में यवनों के साथ अर्जुन का (म. द्रो. ६८.४१;९६.१), एवं सात्यकि का (म. द्रो. ९५.४५-४६) घनघोर युद्ध हुआ था।

यवस—सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक। पद्म में इसे 'यवसु' कहा गया है (पद्म. सृ. ७)।

२. इध्मजिह्व राजा के सात पुत्रों में से एक।

यविष्ठ—स्वायंभुव मन्वन्तर के जिदाजित् देवों में से एक।

२. अग्नि का एक नामान्तर।

यविनर—(सो. द्विमीढ.) द्रुह्युकुलोत्पन्न एक सुविख्यात राजा, जो मत्स्य के अनुसार अजमीढ राजा का, एवं भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार द्विमीढ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम धृतिमंत (कृतिमत्) था।

२. (सो. नील.) उत्तर पंचाल देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार भर्म्यश्व राजा का पुत्र था। इसे मुद्गल, संजय, बृहदिषु, एवं कांपिल्य नामक चार भाई थे। भर्म्यश्व राजा के ये पाँच पुत्र 'पंचाल' नाम से सुविख्यात थे।

यवीयस्—(सो. नील.) एक राजा, जो वायु के अनुसार ऋक्ष राजा का पुत्र था।

२. एक आचार्य, जो वायु के एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य था।

यश—सुतभ देवों में से एक।

२. विकुंठ देवों में से एक।

यशस्कर—शिवदेवों में से एक।

यशस्विन्—प्रतर्दन देवों में से एक।

यशस्विन् जयन्त्य लौहित्य—एक आचार्य, जो कृष्णरात त्रिवेद लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. ३; जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। लोहित का वंशज होने से इसे 'लौहित्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

यशस्विनी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१०)।

यशोदा—हविष्मत् नामक पितरों की मानसकन्या (ह. वं. १.१८.६१)। कई ग्रंथों में इसे 'सुस्वधा' (उपहूत) पितरों की कन्या कहा गया है। इसका विवाह इक्ष्वाकुवंशीय विश्वमहत् (विश्वसह) राजा से हुआ था, जिससे इसे दिलीप खट्वांग नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. ३.१०.९०)।

मत्स्य में इसे इक्ष्वाकुवंशीय अंशुमत् राजा की पत्नी कहा गया है (मत्स्य. १५.१८)। किन्तु यह अयोग्य प्रतीत होता है। अंशुमत् राजा के पुत्र का नाम भी दिलीप (प्रथम) ही था। संभव है, इसी नामसादृश्य से

मत्स्य में, इसे अंशुमत् की पत्नी होने का अयोग्य निर्देश किया गया होगा।

२. नंद गोप की पत्नी, जिसने श्रीकृष्ण को पालपोस कर बडा किया था (भा. १०.२.९)। यह देवक नामक गोप की कन्या थी। भागवत में, इसे द्रोण नामक वसु की पत्नी धरा का अवतार कहा गया है (भा. १०.८.५०; रापण देखिये)।

यशोदेवी--अनुवंशीय सम्राट बृहन्मनस् की पत्नी।

यशोधन--पाण्डवपक्षीय दुर्मुख पांचाल नामक राजा का पुत्र। इसे 'दौर्मुखी' पैतृक नाम भी प्राप्त था (म. द्रो. १५९.४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)— 'यशोधर'।

यशोधर—श्रीकृष्ण एवं रुक्मिणी का एक पुत्र (म. अनु. १४.३३)।

यशोधरा--विरोचन दैत्य की कन्या, जो त्वष्ट्ट की पत्नी थी। इसे 'वैरोचनी यशोधरा' एवं 'रचना' नामान्तर भी प्राप्त थे। इसे त्वष्ट्ट से निम्नलिखित दो पुत्र उत्पन्न हुये थेः-त्रिशिरस् विश्वरूप, एवं विश्वकर्मन् (संनिवेश) (ब्रह्मांड. ३.१.८६-८७)।

२. त्रिगर्तराज की कन्या, जो पूरुवंशीय सम्राट हस्तिन् की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम विकुंठन था। पाठभेद-- 'यशोदा'।

यशोभद्र—एक राजा, जो मनोभद्र राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम वीरभद्र था। पूर्वजन्म में गंगास्नान का पुण्य करने के कारण, इसे राजकुल में जन्म प्राप्त हुआ था (पद्म. क्रि. ३)।

यशोमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

यशोवती—हैहय राजा एकवीर की पत्नी।

यशोवसु—(सो. अमा.) एक राजा, जो वायु के अनुसार कुश राजा का पुत्र था। विष्णु में इसे 'अमावसु' एवं भागवत में 'वसु' कहा गया है।

यस्क—एक व्यक्ति, जो गिरिक्षित का वंशज था (का. सं. १३.१२)। इसी कारण इसे 'गैरिक्षित' कहा गया है।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, जिसके नाम के लिए 'यस्कावर' पाठभेद प्राप्त है। पाणिनि ने यस्क नामक एक आचार्य का निर्देश किया है (पा. सू. २.४.६३; ४.१.११२)। आश्वलायन श्रौतसूत्र के गोत्रप्रवरों की तालिका में 'यस्क' का निर्देश प्राप्त है (आ. श्रौ. ६.१०.१०)। संभवतः ये सारे व्यक्ति एक ही होंगे।

याज—कश्यपकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो यमुना नदी के तट पर निवास करता था। द्रोण का विनाश करनेवाला पुत्र उत्पन्न करने के लिए द्रुपद राजा ने इससे, एवं इसके भाई उपयाज से एक यज्ञ कराया था।

यह वेदाभ्यासक एवं सूर्यभक्त ऋषि था। किन्तु प्रारंभ से ही, यह अत्यंत हीन मनोवृत्ति का एवं लोभी था (म. आ. १५५.१४-२१)। पंचाल देश का द्रुपद राजा एक ऐसे पुत्र की कामना मन में रखता था, जो उसके शत्रु द्रोणाचार्य का वध करे। इसने एवं इसके भाई उपयाज ने एक अर्बुद धेनुओं के बदले में, द्रुपद राजा के पुत्रकामेष्टी यज्ञ का काम स्वीकार लिया (म. आ. १६७.२१)। यज्ञ समाप्त होने पर, यज्ञ में सिद्ध किया गया 'चरु' भक्षण करने के लिए, इसने द्रुपदपत्नी सौत्रामणि को बुलाया। उसे आने में विलंब होते ही, इस तामसी ऋषि ने वह चरु अग्नि में झोंक दिया, जिससे द्रुपदपुत्र धृष्टद्युम्न उत्पन्न हुआ (द्रुपद देखिये)।

पंचाल देश में राज्य करनेवाला पुरुयशस् राजा भी याज एवं उपयाज ऋषियों का ही शिष्य था (स्कंद. २.७.१५-१६; पुरुयशस् देखिये)।

याज्ञ--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

याज्ञतुर--ऋषभ नामक अश्वमेध करनेवाले राजा का पैतृक नाम (श. ब्रा. १२.८.३.७; सां. श्रौ. १६.९.८.१०)। 'यज्ञतुर' का वंशज होने से, इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

याज्ञदत्त--वसिष्ठकुलोत्पन्न याज्ञवल्क्य नामक गोत्रकार का नामान्तर (याज्ञवल्क्य २. देखिये)।

याज्ञवल्क्य--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसे याज्ञदत्त नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. २००.६)।

३. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से बाष्कल नामक ऋषि का शिष्य था। इसीके नाम से व्यास की उस ऋक्शिष्यपरंपरा को 'याज्ञवल्क्य' नाम प्राप्त हुआ (वायु. ६०.१२-१५)।

४. एक आचार्य, जिसके आश्रय में विष्णुयशस् नामक ब्राह्मण के घर, कल्कि नामक विष्णु का ग्यारहवाँ अवतार उत्पन्न होनेवाला है (भा. १.२.३५)। वास्तव में, कल्कि अवतार इसके पहले ही हो चुका है। किन्तु उस अवतार के जीवन-चरित्र में किसी याज्ञवल्क्य नामक आचार्य का निर्देश अप्राप्य है।

५. विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५१)।

याज्ञवल्क्य वाजसनेय—एक सर्वश्रेष्ठ विद्वान्, वादपटु, एवं आत्मज्ञ ऋषि, जो 'शुक्लयजुर्वेद संहिता' का प्रणयिता माना जाता है। यह उद्दालक आरुणि नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६. ४. ३. माध्यं.)। यह सांस्कारिक एवं दार्शनिक समस्या का सर्वश्रेष्ठ अधिकारी विद्वान् था, जिसके निर्देश शतपथ ब्राह्मण, एवं बृहदारण्यक उपनिषद में अनेक बार प्राप्त हैं (श. ब्रा. १. १. १. ९; २. ३. १. २१; ४. २. १. ७; बृ. उ. ३. १. २ माध्यं.)।

ओल्डेनबर्ग के अनुसार, यह विदेह देश में रहनेवाला था। जनक राजा के द्वारा इसे संरक्षण मिलने की जो कथा बृहदारण्यक उपनिषद में प्राप्त है, उससे भी यही प्रस्थापित होता है। किन्तु इसका गुरु उद्दालक आरुणि कुरुपंचाल देश में रहनेवाला था, जिस कारण इसको भी उसी देश के निवासी होने की संभावना है।

नाम— यज्ञवल्क्य का वंशज होने के कारण, इसे 'याज्ञवल्क्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। बृहदारण्यक उपनिषद में इसे 'वाजसनेय' कहा गया है (बृ. उ. ६. ३. ७–८, ६.५.३; श. ब्रा. १४.९.४.३३)। महीधर के अनुसार, वाजसनि का पुत्र होने के कारण, इसे वाजसनेय नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके 'मध्यंदिन' नामक शिष्य के द्वारा इसके शुक्लयजुर्वेद संहिता का प्रचार होने के कारण, इसे 'माध्यंदिन' भी कहते है।

विष्णु में इसे ब्रह्मरात का पुत्र, एवं वैशंपायन का शिष्य कहा गया है (विष्णु. ३.५.२)। वायु, भागवत, एवं ब्रह्मांड में इसके पिता का नाम क्रमशः 'ब्रह्मवाह', 'देवरात' एवं 'ब्रह्मराति' प्राप्त है (वायु. ६०.४१; भा. १२.६.६४; ब्रह्मांड. ३.३५.२४)। ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'ब्रह्मवाह' नाम प्राप्त हुआ था (वायु.६०.४२)। महाभारत में इसे वैशंपायन ऋषि का भतिजा एवं शिष्य कहा गया है (म. शां. ३०६. ७७६*)। उद्दालकशिष्य याज्ञवल्क्य एवं वैशंपायनशिष्य याज्ञवल्क्य दोनों संभवतः एक ही होंगे। उनमें से उद्दालक इसका दार्शनिक शास्त्रों का, एवं वैशंपायन वैदिक सांस्कारिक शास्त्रों का गुरु था।

इनके अतिरिक्त, हिरण्यनाभ कौशल्य नामक इसका और एक गुरु था, जिससे इसने योगशास्त्र की शिक्षा प्राप्त की थी (ब्रह्मांड. ३.६३.२०८; वायु ८८.२०७; विष्णु. ४. ४.४७; भा. ९.१२.४)।

योग्यता—याज्ञवल्क्य के दो प्रमुख पहलू माने जाते हैं। यह वैदिक संस्कारों का एक श्रेष्ठ ऋषि था, जिसे 'शुक्ल यजुर्वेद' एवं 'शतपथ ब्राह्मण' के प्रणयन का श्रेय दिया जाता है। इसके साथ ही साथ यह दार्शनिक समस्याओं का सर्वश्रेष्ठ आचार्य भी था, जिसका विवरण 'बृहदारण्यक उपनिषद' में विस्तारशः प्राप्त है। वहाँ इसने अत्यंत प्रगतिशील दार्शनिक विचार सरलतम भाषा में व्यक्त किये है, जो विश्व के दार्शनिक साहित्य में अद्वितीय माने जाते हैं।

यजुःशिष्यपरंपरा—याज्ञवल्क्य यजुःशिष्यपरंपरा में से वैशंपायन ऋषि का शिष्य था। वैशंपायन ऋषि के कुल ८६ शिष्य थे, जिनमें श्यामायनि, आसुरि, आलंबि, एवं याज्ञवल्क्य प्रमुख थे (वैशंपायन देखिये)। वैशंपायन ने 'कृष्णयजुर्वेद' की कुल ८६ संहिताएँ बना कर, याज्ञवल्क्य के अतिरिक्त अपने बाकी सारे शिष्यों को प्रदान की थीं। वैशंपायन के शिष्यों में से केवल याज्ञवल्क्य को 'कृष्णयजुर्वेद संहिता' प्राप्त न हुयी, जिस कारण इसने 'शुक्लयजुर्वेद' नामक स्वतंत्र संहिता-ग्रंथ का प्रणयन किया।

कृष्णयजुर्वेद का शुद्धीकरण—याज्ञवल्क्य ने 'कृष्णयजुर्वेद' के शुद्धीकरण का महान् कार्य सम्पन्न किया, एवं उसी वेद के संहिता में से चालीस अध्यायों से युक्त नये शुक्लयजुर्वेद का निर्माण किया (श. ब्रा. १४.९.४.३३)। याज्ञवल्क्य के पूर्व, कृष्णयजुर्वेद संहिता में यज्ञविषयक मंत्र, एवं यज्ञप्रक्रियाओं की सूचनायें, उलझी हुई सन्निहित थीं। उदाहरणार्थ, तैत्तिरीय संहिता में 'इषेत्वेति छिनत्ति' मंत्र प्राप्त है। यहाँ 'इषेत्वेति' (इषे त्वा) वैदिक मंत्र है, जिसके पठन के साथ 'छिनत्ति' (लकड़ी तोड़ना) की प्रक्रिया बताई गयी है।

याज्ञवल्क्य की महानता यह है कि, इसने 'इषे त्वा' की भाँति वैदिक मंत्रभागों को अलग कर उन्हें 'शुक्ल युजुर्वेद' संहिता में बाँध दिया, एवं 'इति छिनत्ति' जैसे याज्ञिक प्रक्रियात्मक भागों को अलग कर, ब्राह्मण ग्रन्थों में एकत्र किया।

कृष्णयजुर्वेद के इस शुद्धीकरण के विषय में, याज्ञवल्क्य को अपने समकालीन आचार्यों से ही नहीं, बल्कि, अपने गुरु वैशंपायन से भी झगड़ा करना पड़ा। आगे चल कर संहिताविषयक धर्मग्रंथसम्बन्धी यह वादविवाद, एक देशव्यापी आन्दोलन के रूप में उठ खड़ा हुआ। अन्त में यह विवाद हस्तिनापुर के सम्राट जनमेजय (तृतीय) के

पास तक जा पहुँचा, और उसने याज्ञवल्क्य की विचारधारा को सही कह कर उसका अनुमोदन किया।

जनमेजय की राजसभा में—जनमेजय का राजपुरोहित उस समय वैशंपायन था, जिसे छोड कर यज्ञों के अध्वर्युकर्म के लिए उसने याज्ञवल्क्य को अपनाया। किन्तु इसके परिणामस्वरूप, जनमेजय के विरुद्ध उसकी प्रजा में अत्यधिक क्षोभ की भावना फैलने लगी, जिस कारण उसे राजसिंहासन को परित्याग कर बनवास की शरण लेनी पड़ी। इतना हो जाने पर भी, जनमेजय ने अपनी ज़िद न छोड़ी, और याज्ञवल्क्य के द्वारा ही अश्वमेधादि यज्ञ करा कर, 'महावाजसनेय' उपाधि उसने प्राप्त की। इसके परिणाम स्वरूप वैशंपायन और उसके अनुयायियों को मध्यदेश छोड़ कर पश्चिम में समुद्रतट, एवं उत्तर में हिमालय की शरण लेनी पड़ी।

इस प्रकार, धार्मिक आधार पर खड़ी हुई याज्ञवल्क्य और वैशंपायन के बीच के विवाद ने राजनैतिक जीवन के आदर्शों का आमूल परिवर्तन किया, जो भारतीय इतिहास में एक अनूठी घटना सावित हुयी। इस प्रकार सर्वसाधारण से लेकर राजाओं तक को भी अपने प्रभाव से बदल देनेवाला याज्ञवल्क्य एक युगप्रवर्तक आचार्य बन गया।

शुक्ल यजुर्वेद का प्रणयन—अन्य वैदिक आचार्यों के समान याज्ञवल्क्य भी कर्म एवं ज्ञान के सम्मिलन को महत्त्व प्रदान करता था। इसी कारण, 'शुक्लयजुर्वेद' का प्रणयन करते समय, इसने उस ग्रंथ के अन्त में 'ईश उपनिषद' का भी साम्मिलन किया है। शुक्लयजुर्वेद वैदिक कर्मकाण्ड का ग्रंथ हैं। उसे ज्ञानविषयक 'ईश उपनिषद' के अठारह मंत्र जोड़ने के कारण, उस ग्रंथ की महत्ता कतिपय वढ़ गयी है। वैदिक कर्मकाण्ड का अंतिम साध्य आत्मज्ञान की प्राप्ति है। इसी तत्त्व का साक्षात्कार 'ईश उपनिषद' से होता है।

अपने समय के सर्वश्रेष्ठ उपनिषदकार माने गये याज्ञवल्क्य ने कर्म एवं ज्ञान का सम्मिलन करनेवाले 'शुक्लयजुर्वेद' की रचना की, इस घटना को वैदिक साहित्य के इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। वैदिक परंपरा मंत्रों के अर्थ से संगठित है। वह अर्थ मूलस्वरूप में रखने के लिए, प्रसंगवश मंत्रों के शब्दों में बदला किया जा सकता है, इसी क्रांतिकारी विचारधारा का प्रणयन याज्ञवल्क्य ने किया, एवं यह वैदिक सूक्तकारों में एक श्रेष्ठ आचार्य बन गया।

ईश उपनिषद्—शुक्लयजुर्वेद संहिता का चालीसवाँ अंतिम अध्याय 'ईश उपनिषद' अथवा 'ईशावास्य उपनिषद' से बना हुआ है। इस उपनिषद में केवल अठारह मंत्र है, फिर भी, वह प्रमुख दस उपनिषदों में से एक माना जाता है। शंकराचार्य से ले कर विनोबाजी तक के सारे प्राचीन एवं आधुनिक आचार्य, उसे अपना नित्यपाठन का ग्रंथ मानते है। इस उपनिषद में, 'सारा संसार ईश्वर से भरा हुआ है' (ईशावास्यमिदं सर्वम्), यह सिद्धान्त बहुत ही सुंदर तरीके से कथन किया गया है। इसी उपनिषद के अन्य एक मंत्र में, धनलोभ का निषेध किया गया है।

शतपथ ब्राह्मण—शुक्लयजुर्वेद का ब्राह्मण ग्रंथ 'शतपथ ब्राह्मण है। इस ग्रंथ में चौदह काण्ड, एवं सौ अध्याय हैं। उनमें से १-४ एवं १०-१४ काण्डों में याज्ञवल्क्य के 'यज्ञप्रक्रिया' 'देवताविज्ञान' आदि विषयक सिद्धान्त ग्रथित किये गये हैं। इस ग्रंथ के ५-९ काण्डों में तुर कावपेय एवं शांडिल्य के सिद्धान्तों का संग्रह याज्ञवल्क्य के द्वारा किया गया है। इस ग्रंथ का प्रचंड विस्तार, एवं उसमें प्रकट किये गये प्रगतिशील विचारों के कारण, 'शतपथब्राह्मण' वैदिक सास्करिक सिद्धान्तों का एक अद्वितीय ग्रंथ माना जाता है।

इसी ग्रंथ के अंतिम भाग में 'बृहदारण्यक उपनिषद' का समावेश किया गया हैं। ब्रह्मज्ञान एवं आत्मज्ञान के विषय में याज्ञवल्क्य का तत्वज्ञान इस उपनिषद में समाविष्ट किया गया है।

कात्यायन के वार्तिक में 'शतपथ ब्राह्मण' को पुराणकल्प में विरचित अन्य ब्राह्मण ग्रंथों से उत्तरकालीन कहा गया है (पुराणप्रोक्तेषु ब्राह्मणकल्पेषु) (पा. सू. ३.३. १०५)।

वैशंपायन से विरोध—अपने गुरु वैशंपायन से याज्ञवल्क्य का विरोध किस कारण से हुआ, इसके संबंध में अनेकानेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त है, जिनमें ऐतिहासिकता के बदले काल्पनिकता अधिक प्रतीत होती है।

एक बार सब ऋषियों ने नियत समय पर मेरु पर्वत पर एकत्र होने का निश्चय किया। उस समय यह भी तय हुआ कि, जो भी ऋषि समय पर न आयेगा, उसे ब्रह्महत्या का पाप लगेगा। दैवयोग से, वैशंपायन समय पर न पहुँच सका, तथा उसे ब्रह्महत्या का पाप सहना पड़ा। तब उसने ब्रह्महत्या के अपने पाप को समाप्त करने के लिए, अपने सभी शिष्यों से प्रायश्चित्त लेने के लिए कहा। उस समय,

याज्ञवल्क्य ने आत्मप्रशंसा से वशीभूत हो कर कहा, 'सब शिष्यों की क्या आवश्यकता है? मैं अकेला ही काफ़ी हूँ'। इसकी ऐसी गर्वोक्ति सुन कर वैशंपायन क्रोधित हो उठा, तथा उसने इससे कहा, 'तुमने मुझसे जो वेद सीख लिये हैं, वे मुझे वापस करो'।

गुरु के शाप के कारण, सीखे हुये सारे वेद इसे निगलने पड़े, जिसे वैशंपायन के बाकी शिष्यों ने उठा लिये। वेद-विहीन होने के कारण, यह विद्याहीन, स्मृतिहीन एवं कुष्ठरोगी बन गया। किन्तु पश्चात्, सरस्वती की कृपा से इसने नया वेद प्राप्त कर लिया, एवं यह पूर्व की भाँति तेजस्वी बन गया (म. शां. ३०६; वायु. ६१.१८–२२)।

सूर्य से वेदप्राप्ति––सूर्य से वेद स्वीकार करते समय, याज्ञवल्क्य ने अश्व का रूप धारण किया था, जिस कारण इसके वेदों तथा शिष्यों को 'वाजिन्' नाम प्राप्त हुआ (वायु. ६१.२२)। अन्य पुराणों के अनुसार, वेद लेते समय इसने नहीं, बल्कि सूर्य ने अश्व का रूप धारण किया था (भा. १२.६.७३; ब्रह्मांड. २.३५.२६–७४)।

स्कंद में इसके गुरु का नाम वैशंपायन न देकर, शाकल्य दिया है एवं अपने आथर्वण मंत्र के बल से शाकल्य ने इसकी समस्त वेदविद्या वापस लेने की कथा वहाँ बतायी है (स्कंद. ६.१२९)।

कालनिर्णय—सूर्य से वेदविद्या सीखने के बाद, इसने वह विद्या जनक, कात्यायन, शतानीक, जनमेजय (तृतीय) आदि राजाओं को सिखायी थी (विष्णु. ४.२१.२)। इससे याज्ञवल्क्य ऋषि शतानीक एवं जनमेजय (तृतीय) राजाओं का समकालीन प्रतीत होता है।

महाभारत में, याज्ञवल्क्य के द्वारा देवराति जनक के सभा में वाद-विवाद करने का निर्देश प्राप्त है। किन्तु उस समय देवराति जनक का होना असंभव प्रतीत होता है। उस समय जो जनक था, उसका स्पष्ट उल्लेख यद्यपि अप्राप्य है, तथापि शतानीक, जनमेजय इत्यादि याज्ञवल्क्य के समकालीन राजाओं से प्रतीत होता है कि, उस समय का जनक उग्रसेन होगा (पुष्करमालिन् देखिये)। एक तर्क यह भी दिया गया है कि, 'देवराति' जनक का विशेषण न होकर, याज्ञवल्क्य का विशेषण है (पं. भगवत्दत्त- वैदिक वाङ्मय का इतिहास, पृ. २६४)।

महाभारत में, जनक एवं विश्वावसु गंधर्व के साथ याज्ञवल्क्य के द्वारा किये तत्त्वज्ञानविषयक संवाद का निर्देश प्राप्त है (म. शां २९८–३०६)। वहाँ इसने विश्वावसू के चौवीस प्रश्नों के उत्तर दिये हैं (म. शां. ३०६.२६–८०)।

दार्शनिक समस्याओं का आचार्य––'बृहदारण्यक उपनिषद' के दूसरे, तीसरे एवं चौथे अध्यायों में याज्ञवल्क्य की दार्शनिक महत्ता, एवं सिद्धान्तों का परिचय प्राप्त होता है। उनमें से दूसरे अध्याय में, याज्ञवल्क्य का अपनी ब्रह्मवादिनी पत्नी मैत्रेयी से तत्वज्ञान पर संवाद प्राप्त है; तीसरे अध्याय में विदेह देश के जनक राजा के दरबार में इसके द्वारा अनेकानेक तत्वज्ञानियों से हुए वाद-विवादों की जानकारी दी गयी है; एवं चौथे अध्याय में स्वयं जनक राजा से हुए इसके तत्वज्ञान पर संवाद प्राप्त है। इन सारे संवादों से याज्ञवल्क्य के प्रागतिक व्यक्तित्व, एवं दार्शनिक तत्वज्ञान पर काफ़ी प्रकाश पडता है।

जनक राजा के दरबार में — जनक राजा के यज्ञ-मंडप में कुरुपंचाल देश के अनेकानेक तत्वज्ञ उपस्थित हुये थे। याज्ञवल्क्य ने उन सारे तत्वज्ञों को वाद-विवाद में परास्त किया। बृहदारण्यक उपनिषद के अनुसार, याज्ञवल्क्य ने जिन आचार्यों के साथ वाद-विवाद किये थे, उन के नाम, एवं वाद-विवाद के विषय निम्न प्रकार हैं:—

१. **अश्वल**—'मृत्यु से मुक्ति कैसे प्राप्त हो सकती है' (बृ. उ. ३.१)।

२. **जारत्कारव आर्तभाग**––'आठ ग्रह एवं आठ उपग्रह कौनसे हैं' (बृ. उ. ३.२)।

३. **भुज्यु लाह्यायनि**––'मृत्यु के उपरांत परलोक में क्या होता है; यज्ञ करनेवाले परिक्षित् राजा को कौन सी गति मिली (बृ. उ. ३.३)।

४. **उषस्त चाक्रायण**–'सर्वअन्तर्यामी आत्मा' (बृ. उ. ३.४)।

५. **कहोल कौषीतकेय**—'सर्वअन्तर्यामी आत्मा' (बृ. उ. ३.५)।

६. **गार्गी वाचक्नवी**—'जगत का मूल कारण क्या है' (बृ. उ. ३.६)।

७. **वाचक्नवी**––'ब्रह्म' (बृ. उ. ३.८)।

८. **उद्दालक आरुणि**—'अन्तर्यामी आत्मा'; 'परलोक' (बृ. उ. ३.७)।

९. **विदग्ध शाकल्य**—'देव कितने है' (बृ. उ. ३.९)।

उपरिनिर्दिष्ट आचार्यों के सिवा, याज्ञवल्क्य ने निम्नलिखित आचार्यों से भी तत्वज्ञानसंबंधी वाद-विवाद किये

थे, जिनका निर्देश बृहदारण्यक उपनिषद के चौथे अध्याय में प्राप्त हैं :--

१. उदंक शौल्बायन--'प्राणब्रह्म' (बृ. उ. ४.१.२.३)।

२. बर्कु वार्ष्ण--'चक्षुब्रह्म' (बृ. उ. ४.१.४)।

३. गर्दभीविपीत भारद्वाज--'श्रोत्रब्रह्म' (बृ. उ. ४.५)।

४. सत्यकाम जाबाल--'मनोब्रह्म' (बृ. उ. ४.१.६)।

५. विदग्ध शाकल्य--'हृदयब्रह्म' (बृ. उ. ४.१.७)।

वादविवाद के विषय--जनक के दरबार में हुये वाद-विवाद में, अश्वल एवं विदग्ध शाकल्य ने याज्ञवल्क्य से ईश्वर एवं कर्मकाण्ड के विषय में प्रश्न पूछे थे, जो विशेष कठिन नहीं थे। शाकल्य ने इससे पूछा, 'देव कितने है' (कति देवाः)। इस पर याज्ञवल्क्य ने देवों की संख्या तीन हज़ार तेंतीस, तेंतीस, तीन, ऐसी विभिन्न प्रकार से बताकर, अंत में ये सारे एक ही परमेश्वर के विविध रूप है, ऐसा कह कर बहुत ही सुंदर जवाब दिया था (बृ. उ. ३.९.१-३)।

अपने इस जवाब से याज्ञवल्क्य ने शाकल्य को मौन कर दिया। यही नहीं, वादविवाद के शर्त के अनुसार, शाकल्य को मृत्यु स्वीकार करनी पड़ी, एवं उसकी अस्थियाँ भी उसके शिष्यों को प्राप्त न हुई (बृ. उ. ३.९.४-२६)

शाकल्य की तुलना में, याज्ञवल्क्य से वाद विवाद करनेवाले जनकसभा के अन्य ऋषिगण अधिकतर अधिकारी व्यक्ति थे, एवं उनके द्वारा पूछे गये प्रश्न भी अधिक कठिन थे। मृत्यु के पश्चात् आत्मा की क्या गति होती है, यह पूछनेवाला जारत्कारव; अंतिम सत्य का स्वरूप क्या होता है, यह पूछनेवाला उषस्त; आत्मानुभव किस मार्ग से मिलता है, यह पूछनेवाला कहोल; एवं परमात्मा सर्वांतर्गत हो कर भी अचेतन अथवा चेतनायुक्त कैसे रह सकता है, यह पूछनेवाले उद्दालक एवं गार्गी, ये उस समय के सर्वश्रेष्ठ तत्त्वज्ञ थे। उनके प्रश्नों को तर्कशुद्ध जवाब दे कर, याज्ञवल्क्य ने विद्वत्सभा में अपना श्रेष्ठत्व प्रस्थापित किया।

निष्प्रपंच सिद्धान्त--इसी वाद-विवाद में याज्ञवल्क्य ने आत्मा के विषयक अपने 'निष्प्रपंच सिद्धान्त' का पुनरुच्चार किया। इसने कहा, 'आत्मा बड़ा नहीं, उसीतरह छोटा भी नहीं। वहा ऊँचा नहीं, उसी तरह नीचा भी नहीं। वह रुचि, दृष्टि एवं गंध के विरहित है (बृ. उ. ३.८.८)। वह सृष्टि के समस्त वस्तुमात्रों का अंतर्नियामक है, जिसके कारण सारी सृष्टि कठपुतलियों के जैसी नाचती है'।

पुराणों में--देवमित्र शाकल्य के साथ याज्ञवल्क्य ने किये वादविवाद की कथा, पुराणों एवं महाभारत में भी विस्तृत रूप से दी गयी है।

विदेह देश के देवराति (दैवराति) जनक ने अश्वमेध यज्ञ प्रारंभ किया, तथा उस सम्बन्ध में सैकड़ो ऋषियों को निमंत्रित भी किया (म. शां. ३०६)। उस यज्ञ में, हज़ार गायों के अतिरिक्त न जाने कितने स्वर्ण, रत्नादि सामने रख कर उसने कहा, 'यह सारी सुखसामग्री, तथा ग्रामादि और सेवक आदि सारी संपत्ति वह ऋषि ले सकता है, जो उपस्थित सभा में सर्वश्रेष्ठ हो'। यह सुन कर कोई न उठा। तब याज्ञवल्क्य सामने आया, तथा अपने शिष्य सामश्रवस् से इसने कहा, 'मेरे समान वेदवक्ता यहाँ कोई नहीं है। इसलिए यह समस्त संपत्ती हमारी है। उसे तुम उठा लो'।

इतना कह कर फिर समस्त उपस्थितजनों को सम्बोधित कर याज्ञवल्क्य ने कहा, 'यदि कोई भी व्यक्ति मुझे सर्वश्रेष्ठ नहीं समझता, तो उसे मेरी ओर से चुनौती है कि, वह मेरे सामने आये'। इतना सुनते ही सारी सभा में खलभली मच गई, और कई ब्राह्मण इससे वादविवाद करने आये। लेकिन सभी इसमे परास्त हुए।

उपस्थित पंडितों से इसका कई विषयों पर वादविवाद हुआ। सब को जीतने के बाद, इसने देवमित्र शाकल्य को ललकारते हुए कहा, 'मरी हुई धौंकनी के समान चुप क्यों बैठे हो? कुछ बोलो तो'। इस प्रकार इसकी वाणी सुन कर शाकल्य ने अकेले ही समस्त धन ले जाने के संबंध में इससे शिकायत की। तब याज्ञवल्क्य ने कहा, 'ब्राह्मण का बल है विद्या, एवं तत्त्वज्ञान में निपुणता। क्यों कि, मैं किसी प्रकार के प्रश्न का उत्तर देने के लिए अपने को समर्थ समझता हूँ, इसलिए इस समस्त धन पर मेरा अपना अधिकार है'।

याज्ञवल्क्य की ऐसी वाणी सुन कर देवमित्र शाकल्य क्रोध से पागल हो गया, और उसने इससे एक हज़ार प्रश्न पूछे, जिनके सभी उत्तर इसने बड़ी निपुणता एवं विद्वत्ता के साथ दिये। फिर याज्ञवल्क्य की प्रश्न पूछने की बारी आई। याज्ञवल्क्य ने एक ही प्रश्न उससे किया। किन्तु शाकल्य उसका भी उत्तर न दे सका, जिसके परिणामस्वरूप उसे अपनी जान से हाथ धोना पड़ा।

देवमित्र शाकल्य की मृत्यु से सब ब्राह्मणों को ब्रह्महत्या का को पाप लगा। इसलिए सभी उपस्थित जनों ने पवनपुर में जा कर द्वादशार्क, वालुकेश्वर, एकादश रुद्र इत्यादि के दर्शन

किये, और चारों कुण्डों में स्नान किया। उसके उपरांत इन्होंने उत्तरेश्वर में जा कर वाडवों का दर्शन किया, जिससे सभी व्यक्ति हत्यादोष से मुक्त हुए (वायु. ६०.६९-७१)। प्रस्तुत कथा पुरातन इतिहास के रूप में भीष्म के द्वारा युधिष्ठिर से कही गयी है (म. शां २९८.४; ३०६.९२)। वंशावलि के अनुसार, दैवराति जनक दाशरथि राम से काफ़ी पूर्वकालीन माना जाता है।'

याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी-संवाद--याज्ञवल्क्य ऋषि के द्वारा संन्यास लिये जाने पर, उसने अपनी संपत्ति कात्यायनी एवं मैत्रेयी नामक अपनी दो पत्नियों में विभाजित करनी चाही। उस समय इसकी ब्रह्मवादिनी पत्नी मैत्रेयी ने इससे अध्यात्मिक ज्ञान का हिस्सा माँगा, एवं इसे अमरत्व प्राप्त करने का मार्ग पूछा। उस समय इसने मैत्रेयी से कहा, 'पति, पत्नी, संतान, संपत्ति ये सारे आत्मा के ही अनेकविध रूप है। इस आत्मा का निरीक्षण, अध्ययन एवं मनन (निदिध्यास) करने से ही समस्त वस्तुजातों का ज्ञान प्राप्त होता है' (बृ. उ. २. ४.२-५; मैत्रेयी देखिये)।

आत्मा का स्वरूप बताते हुये याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी से कहा, 'जिस तरह समस्त स्पर्श त्वचा में केंद्रीभूत होते हैं, अथवा सारे विचार मन में समा जाते हैं, उसी प्रकार संसार की सारी चीज़े आत्मा में केंद्रीभूत होती हैं (बृ. उ. २.८.११)। इसी कारण, आत्मप्राप्ति ही मानवी प्रयत्नों का सब से बडा साध्य है। बाकी सारे ध्येय भुलावे के (आर्तम्) हैं'।

ध्येयात्मक अद्वैतवाद--केवल आत्मा के ज्ञान से ही बाह्यसृष्टि का ज्ञान हो सकता है, इस सिद्धान्त का विवरण करते समय, याज्ञवल्क्य ने आत्मा एवं मानवी मन का ध्येयात्मक अद्वैत प्रतिपादित किया। इस प्रतिपादन के समय, इसने आत्मा को दुंदुभी बजानेवाला वादक कह कर, मानवी मन को, दुंदुभी वाद्य की उपमा दे दी। याज्ञवल्क्य ने कहा, 'दुंदुभी बजानेवाले को हाथ में पकड़ लेने से, दुंदुभी का आवाज सहजवश हाथ में आता है। उसी प्रकार आत्मा की ज्ञान होने से, संसार की सारी वस्तुमात्रों का ज्ञान विना किसी कष्टों से प्राप्त हो सकता है' (बृ. उ. २.४.६-९)।

अमरत्व की प्राप्ति--अमरत्व की प्राप्ति कैसे हो सकती है, इसका विवरण करते हुये याज्ञवल्क्य ने कहा, 'आत्मा के श्रवण, मनन एवं चिंतन कर आत्मतत्त्व के व्यापकत्व का अनुभव हर एक साधक ने करना चाहिये (आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः)। आत्मतत्त्व के इसी अनुभव से अमरत्त्व प्राप्त हो सकता है (एतावद् खलु अमृतत्वम्)। आत्मतत्व का यह साक्षात्कार केवल मन से ही हो सकता है (मनसैवानुद्रष्टव्यम्)'।

जनक-याज्ञवल्क्यसंवाद--बृहदारण्यक उपनिषद् के चौथे अध्याय में आत्मज्ञानसम्बधी 'जनक-याज्ञवल्क्य-संवाद' प्राप्त है। इस संवाद के प्रारम्भ में याज्ञवल्क्य ने जनक से पूछा, 'अन्तिम सत्य के बारे में किन किन ऋषियों के उपदेश आज तक आपने सुना है'। उस पर जनक ने कहा, 'वाणी को परमसत्य कहनेवाले जित्वन् शैलिनि का, प्राण को ब्रह्म कहनेवाले उदंक शौल्वायन का, चक्षु को परमसत्य कहनेवाले बर्कु वार्ष्ण का, कर्ण को ब्रह्म कहनेवाले गर्दभीविपीत भारद्वाज का, मन को ब्रह्म कहनेवाले सत्यकाम जाबाल का, एवं हृदय को अन्तिम सत्य कहनेवाले विदग्ध शाकल्य का उपदेश आज तक मैंने श्रवण किया है'। उस पर याज्ञवल्क्य ने कहा, 'तुम्हारे द्वारा सुने गये ये उपदेश अंशतः सत्य है, पूर्णरूपेण नही' (बृ. उ. ४.१.२-७)।

अपने इस कथन से याज्ञवल्क्य यह कहना चाहता था कि, इन्द्रियों अथवा मन से परमसत्य प्राप्त होना असम्भव है। वह तो केवल आत्मज्ञान से ही प्राप्त हो सकता है। क्यों कि, आत्मा ही केवल सत्य है, मन एवं इन्द्रियाँ केवल साधनमात्र है।

मृत्यु का वर्णन--मृत्यु के समय मानवी देहात्मा की स्थिति क्या होती है, उसका अत्यंत सुंदर वर्णन याज्ञवल्क्य ने जनक राजा को बताया था। इसने कहा, 'मृत्यु के समय मनुष्य की प्रज्ञात्मा उसके देहात्मा पर आरूढ होती है। इसी कारण, बोझ से लदे हुए गाडी जैसा आर्त चित्कार मृत्यु की समय मानवी देहात्मा से निकलती है (बृ. उ. ४.३.३५)। मृत्यु के पूर्व आँखो में से प्राणरूपी पुरुष सर्व प्रथम निकल जाता हैं। पश्चात् हृदय का नोंक प्रकाशित होता है, जिसकी सहाय्यता से नेत्र, मस्तक अथवा अन्य कौनसी भी इंद्रियाँ के द्वारा आत्मा निकल जाती है। उस समय, मनुष्य का कर्म ही केवल उसके साथ रहता है, जो आत्मा के अगले जन्म का मार्गदर्शक बनता है (बृ. उ. ४.४.१-५)।

तत्त्वज्ञान- (१) **सुखैकपुरुषार्थवाद**--'नैतिक कल्याण मानवीय जीवन का अन्तिम साध्य जरूर है; फिर भी ऐहिक सुख का महत्त्व नैतिक कल्याण से कम नहीं है,' ऐसा याज्ञवल्क्य का मत था। राजा जनक के सभा में जब यह गया तब उसने इसे उद्देशित कर कहा, 'आप धनलक्ष्मी तथा गायों को प्राप्त करने के लिए आयें हैं, अथवा विद्वानों के बीच चल रही चर्चा में भाग ले कर विजय प्राप्त

करने आये हैं ? ' उस समय विश्वास के साथ इसने जवाब दिया, 'दोनों के लिए (उभयमेव सम्राट्); जिनकी सींगों में स्वर्ण मुद्रिकाओं की थैलियाँ लगी हुई हैं, ऐसी गायों की प्राप्ति मैं उतनी ही आवश्यक समझता हूँ, जितना कि आवश्यक, विद्वानों के बीच अपनी विजय'।

अपने द्वारा कही उक्त बात का स्पष्टीकरण करते हुए इसने स्वयं कहा है, 'मेरा पिता का कथन था कि, बिना धन प्राप्त किये किसी को भी आत्मज्ञान न देना चाहिए'। 'किन्तु आत्मज्ञान का उपदेश किये बगैर किसी से दक्षिणा न लेनी चाहिये, ' ऐसा भी इसका अभिमत था (अननुच्य हरेत-दक्षिणां न गृह्णीयात्)।

जनक राजा के पुरोहित अश्वल के द्वारा पूछने पर भी याज्ञवल्क्य ने स्पष्ट शब्दों में कहा था, 'मैं ब्रह्मज्ञ जरुर हूँ; किन्तु मैं धन की कांक्षा भी मन में रखता हूँ (गोकामा एव वयं स्मः)'।

इस प्रकार आध्यात्मिक एवं आधिभौतिक इन दोनों को मान्यता देनेवाला याज्ञवल्क्य पाश्चात्य 'साफ़िस्ट' लोगों जैसा प्रतीत होता है। 'साफ़िस्ट' वह लोग है, जो तत्त्वज्ञान के उपलक्ष में धनग्रहण करना कोई खराबी नहीं मानते हैं।

(२) आत्मज्ञान--'जीवन में आत्मज्ञान प्राप्त करना सम्भव है, और वही अन्तिम सत्य है', ऐसा इसका अभिमत था। जनक ने इससे प्रश्न किया था, 'मनुष्य की ज्योति कौन है, जो उसे प्रकाश देती है ? ' इस प्रश्न का यथाविध उत्तर देते हुए इसने सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि को मनुष्य की ज्योति बता कर कहा, 'आत्मज्ञान मनुष्य की अन्तिम ज्योति है, जो सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि की अनुपस्थिति में भी उसे प्रकाश देती है' (बृ. उ. ४.३.२-६)।

जब कि आत्मा ही केवल ज्ञेय एवं ज्ञाता रहता है, उस अवस्था का वर्णन याज्ञवल्क्य ने उक्त कथन में व्यक्त किया है। अरस्तू (ॲरिस्टॉटल) उसे 'थिओरिया' अथवा 'उन्मन' अवस्था कहता है।

(३) शुद्धाद्वैतवाद अथवा कर्ममीमांसा—याज्ञवल्क्य शुद्धाद्वैतवाद का पुरस्कर्ता था, जिसके अनुसार आत्मा अजर, अमर एवं कालातीत अवस्था में सर्वत्र उपस्थित रहता है। इस कारण, मृत्यु के साथ होनेवाले आत्मा के स्थलांतर अथवा जन्मान्तर में शोक अथवा दुःख करने की आवश्यकता नहीं है। जिस तरह घाँस का नया तिनका प्राप्त किये बगैर भँवरा अपना पहला तिनका नहीं छोड़ता है, उसी प्रकार अपने वास्तव्य की नयी व्यवस्था हुये बगैर आत्मा अपनी पुरानी बदन को नही छोड़ता है। इस प्रकार, मृत्यु ही स्वयं एक माया होने के कारण, उसमें दुःख नहीं मानना चाहिये। जिस प्रकार सुवर्णकार पुराने अलंकारों से नया, एवं पहले से भी अधिक सुंदर अलंकार बना सकता है, उसी प्रकार आत्मा को पहले से भी अधिक सुंदर जन्म प्राप्त होना संभवनीय है (बृ. उ. ४.४.४)।

याज्ञवल्क्य के यह विचार सुन कर इसकी पत्नी मैत्रेयी भीतिग्रस्त हुयी। इसी कारण अपने मतों का अधिक विवरण न करते हुए याज्ञवल्क्य ने कहा, 'जो मैने कहा है वह संसार के अज्ञ लोगों के लिए काफ़ी है' (बृ. उ. २.४.१३)।

चरित्रचित्रण—याज्ञवल्क्य अपने युग का एक अद्वितीय विद्वान्, वादपटु, एवं आत्मज्ञानी था। यह बड़ा उग्र स्वभाव का था। जनक की विद्वत्सभा में विवाद करते समय, इसने शाकल्य से आक्रोशपूर्ण शब्दों में कहा था, 'आगे तुम इस प्रकार के प्रश्न करोगे, तो तुम्हारा सर काट कर पृथ्वी पर लोटने लगेगा' (मूर्धा ते निपतिष्यति)। यह क्रोधी था, उसी प्रकार परमदयालु तथा कोमल प्रवृत्तियों का भी था, जो इसके द्वारा अपनी पत्नी मैत्रेयी के संवाद से प्रकट है।

यह जरुर है कि, वादविवाद के बीच स्त्रीजाति हो, अथवा कोई भी हो, किसी के प्रति यह कृपाभावना नही दिखाता था। गार्गी से चल रही चर्चा के बीच, इसने उसे 'तुम बहुत प्रश्न कर रही हो' (अतिप्रश्नं पृच्छसि) कह कर, उद्दामता न दिखाने के लिए डाँटा था।

यह बड़ा होशियार भी था। जब जनक की सभा में जारत्कारव ने ज्ञान एवं कर्म के संबंध में कुछ ऐसे प्रश्न किये थे, जो केवल अधिकारी व्यक्तियों ही जान सकते है। उसके जवाब इसने उसे सभा से अलग ले जा कर, एकान्त में बताये थे।

यह अपने समय का सब से बड़ा वादपटु था। अश्वल ने इससे 'आचार्य-सम्प्रदाय' के सम्बन्ध में बहुत कठिन प्रश्न पूछे, जिनके तत्काल उचित उत्तर दे कर इसने उसे निरुत्तर किया।

आत्मगत भाषण—अधिकारी विद्वान् के द्वारा तत्वज्ञान-सम्बन्धी प्रश्न पूछे जाने पर ही, उसका जवाब देने की इसकी पद्धति थी। किंतु कभी कभी ऐसा भी होता था कि, भावतिरेक में यह प्रश्न की परिघ से अलग बातों विषयों की विवेचना कर, उनका भी कथन करने लगता

था। उदाहरणार्थ, जनक की सभा में उद्दालक के प्रश्न का उत्तर देते समय यह एकाएक ध्यानमग्न हुआ, तथा ईश्वर की व्यापकता बताते हुए इसने कहा, 'ईश्वर तो जगत्व्यापी है'। याज्ञवल्क्य के उक्त विचार 'अन्तर्यामी ब्राह्मण' नामक ग्रन्थ में सम्मिलित है (बृ. उ. ३.७.१)।

जनक राजा के साथ हुए संवाद में, आत्मा के 'अव्यय रूप' के सम्बन्ध में अपने विचार भी इसने विना पूछे ही प्रकट किये थे। इस प्रकार, जब यह भावमग्न हो कर आत्मज्ञानसम्बन्धी विचारों को प्रकट करता था, तो प्रकट ही करता जाता था, जैसे कि आकाश के बादल बरसते नहीं, तथा जब ऋतु पा कर बरसते हैं, तो बरसते ही जाते हैं।

परिवार--याज्ञवल्क्य को मैत्रेयी एवं कात्यायनी नामक दो पत्नियाँ थी। उनमें से मैत्रेयी आध्यात्मिक ज्ञान की पिपासु थी। इस कारण, इसने उसे आत्मज्ञान कराया, एवं संन्यास लेने के पश्चात् भी यह उसे अपने साथ अरण्य में ले गया (मैत्रेयी देखिये)। स्कंद में मैत्रेयी के लिए 'कल्याणी' नामान्तर प्राप्त है (स्कंद. ६.१३०-१३१)। वैदिक ग्रंथों में से 'जाबालोपनिषद्' एवं 'शतपथ ब्राह्मण' में भी उसका उल्लेख प्राप्त है (श. ब्रा. १.४.१०-१४)।

इसकी दूसरी पत्नी कात्यायनी एक सामान्य गृहिणी थी, जिससे इसे कात्यायन एवं पिप्पलाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुये थे (स्कंद. ५.३; ४२.१; पिप्पलाद देखिये)।

शिष्यपरंपरा—काण्व एवं माध्यंदिन परंपरा में इसके निम्नलिखित शिष्यों का निर्देश प्राप्त है :--

१. आसुरि—यह याज्ञवल्क्य का प्रमुख शिष्य था, जिससे 'आसुरि' नामक शिष्यशाखा का निर्माण हुआ (श. ब्रा. १४.९.४.३३)। आसुरि के शिष्य का नाम 'पंचशिख' अथवा 'कापिलेय' अथवा 'कपिल' था (मत्स्य. ३. २९)। पंचशिख के शिष्यों में विदेह के राजा 'जनक जानदेव' एवं 'जनक धर्मध्वज' प्रमुख थे। पंचशिख के शिष्यों में आसुरायण प्रमुख था, जो यास्क का समकालीन था।

२. मधुक पैंग्य--इसके शिष्यों में चूड भागवित्ति प्रमुख था। चूड भागवित्ति से लेकर जानकि आयस्थूण, सत्यकाम जाबाल ऐसी इसकी शिष्यपरंपरा थी (बृ. उ. ६.३.७-११)।

३. सामश्रवस्--इसे जनक के विद्वत्सभा में अपनी ओर से संपत्ति उठाने के लिए याज्ञवल्क्य ने कहा था।

इनके सिवा महाभारत में इसके सौ शिष्य बताये गये हैं (म. शां. ३०६.१७; व्यास देखिये)।

शाखाप्रवर्तक शिष्य--वायु में याज्ञवल्क्य के निम्नलिखित पंद्रह शाखाप्रवर्तक शिष्य बताये गये हैं--१. कण्व; २. वैधेय; ३. शालिन्; ४. मध्यंदिन; ५. शापेयिन; ६. विदिग्ध; ७. उद्दल; ८. ताम्रायण; ९. वात्स्य; १०. गालव; ११. शैशिरिन्; १२. आटविन्; १३. पर्णिन्; १४. वीरणिन् १५. परायण (वायु. ६१.२४-२५)। इन शिष्यों को 'वाजिन्' सामुहिक नाम प्राप्त था।

ब्रह्मांड में ये नाम कई पाठभेदों के साथ प्राप्त हैं (ब्रह्मांड. २.३५.८-३०)। अन्य पुराणों में भी इन शाखा-प्रवर्तक आचार्यों के नाम अनेकानेक रूप से दिये गये हैं।

इन शाखाप्रवर्तक आचार्यों में से 'कण्व' एवं 'माध्यंदिन' शाखाओं के ग्रंथ आज प्राप्त हैं। बाकी शाखाओं के ग्रंथ नष्ट हो चुके हैं।

ग्रंथ--याज्ञवल्क्य के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है :--१. शुक्लयजुर्वेद संहिता (श. ब्रा. १४.९.४.३३); २. ईशावास्योपनिषद; ३. सांग शतपथ ब्राह्मण (म. शां. ३०६.१-२५); ४. बृहदारण्यक उपनिषद (याज्ञ. ३. ११०); ५. याज्ञवल्क्यशिक्षा, जिसमें २३२ श्लोक हैं; ६. मनःस्वारशिक्षा, जिसमें हस्तस्वर की अपेक्षा भिन्न प्रकार के विचारों को प्रतिपादित किया गया है; ७. बृहद्-याज्ञवल्क्य; ८. बृहद्योगीयाज्ञवल्क्य; ९. योगशास्त्र। इनके सिवा इसके नाम पर 'याज्ञवल्क्यस्मृति' नामक एक स्मृतिग्रंथ भी प्राप्त है।

शुक्लयजुर्वेद—शुक्लयजुर्वेद संहिता के कुल चालीस अध्याय हैं, एवं उनमें निम्नलिखित विषयों का विवरण प्राप्त हैं :—अ. १-२, दशपूर्णमासमंत्र एवं पिंडपितृयज्ञ; अ. ३, नित्याग्निकर्म, अग्निप्रतिष्ठा, हवन एवं चातुर्मास्य-यज्ञ; अ. ४-८, सोमयज्ञ, पशुयज्ञ एवं राजसूययज्ञ के मंत्र अ. ९-१०,-सोमयज्ञ के मंत्र; अ. ११-१८, अग्निचयन-विधि एवं मंत्र; अ. १९-२१, सौत्रामणियज्ञ के मंत्र; अ. २२-२५, अश्वमेधयज्ञ के मंत्र; अ. २६-३०, पुरुषमेध (यज्ञरहस्य); अ. ३१, पुरुषसूक्त; अ. ३२, तत्त्वज्ञान (उपनिषद्); अ. ३३-३४, शिवसंकल्पोपनिषद्; अ. ३५, अंत्येष्टिमंत्र, अ. ३६-३९, प्रवर्ग्य मंत्र; अ. ४०, ईशावास्य उपनिषद्। इनमें से अध्याय २६-३५ को 'खिल' (परिशिष्ट) कहते है।

यह संहिता गद्य एवं पद्य भागों से बनी है। उनमें से पद्य भाग ऋग्वेद से लिया गया है, एवं गद्य भाग नया है। उस गद्य भाग को ही 'यजुः' कहते है, जिस कारण इस वेद को यजुर्वेद नाम प्राप्त हुआ है।

इस वेद के श्रौतसूत्र की रचना कात्यायन ने की है। उसमें 'श्रौत' एवं 'गृह्य' ये दोनों सूत्र समाविष्ट किये गये है, जिसमें से 'गृह्य' सूत्र 'पारस्कर गृह्यसूत्र' नाम से सुविख्यात है। इन सूत्रों का प्रतिशाख्य भी कात्यायन के द्वारा ही विरचित है।

शुक्लयजुर्वेद का शिक्षाग्रंथ 'याज्ञवल्क्यशिक्षा' है, जो इस वेद के उच्चारण की दृष्टी से अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। स्वर एवं उच्चारण की दृष्टी से यह वेद अन्य वेदों से काफी अलग है। प्रायः इस वेद में 'य' एवं 'ष' का उच्चारण क्रमशः 'ज' एवं 'ख' जैसे किया जाता है। अनुस्वारों का उच्चारण भी सानुनासिक किया जाता है। इस वेदों के स्वर भी उच्चारण से व्यक्त करने के बदले, हाथों के द्वारा अधिकतर व्यक्त किये जाते हैं।

याज्ञवल्क्यस्मृति--इस ग्रंथ में एक हजार श्लोक हैं, जो तीन काण्डों में विभाजित किये गये हैं। यद्यपि इस ग्रंथ के आरंभ में इसकी रचना का श्रेय 'शतपथ ब्राह्मण' 'योगशास्त्र' आदि ग्रंथों के रचयिता योगीराज याज्ञवल्क्य को दिया गया है, फिर भी 'मिताक्षरा' के अनुसार, इस ग्रंथ का रचयिता याज्ञवल्क्य न हो कर, इसका कोई शिष्य था। फिर भी इस ग्रंथ की विचारधारा शुक्लयजुर्वेद एवं तत्संबंधित अन्य ग्रंथों से काफ़ी साम्य रखती है।

इस ग्रंथ में प्राप्त व्यवहारविषयक विवरण अग्निपुराण में प्राप्त 'व्यवहारकाण्ड' से मिलता जुलता है। इस स्मृति में प्राप्त वेदान्तविषयक विवरण शंकराचार्य के 'ब्रह्मसूत्र' से काफी मिलता जुलता है (याज्ञ. ३.६४; ६७; ६९; १०९; ११९; १२५; १४०; २०५)।

हर एक सप्ताह में अंतर्भूत किये गये 'इतवार', 'सोमवार' आदि वारों का संबंध आकाश में स्थित 'रवि,' 'सोम' आदि ग्रहों से है, ऐसा स्पष्ट निर्देश याज्ञवल्क्यस्मृति में, प्राप्त है। इस स्मृति में नाणक आदि सिक्कों का, एवं ताम्रपट, शिलालेख आदि उत्कीर्ण शिलालेखों का भी निर्देश प्राप्त हैं (याज्ञ. १.२९६; ३१५)। इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ का रचनाकाल ई. स. पहली शताब्दी के लगभग होगा।

याज्ञसेन--शिखंडिन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (सां. ब्रा. ७-४)।

याज्ञसेनी--द्रुपदपुत्र शिखंडिन् का नामान्तर (म. भी. १०८.१९)।

याज्ञेयि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

यातुधान--एक राक्षस, जो कश्यप एवं सुरसा के के पुत्रों में से एक था। इसके कुल में उत्पन्न राक्षसों को 'यातुधान' वांशिक नाम प्राप्त था।

२. एक राक्षससमूह, जो रक्षस् एवं जंतुधना की संतान मानी जाती है। इस समूह में निम्नलिखित राक्षस शामिल थेः-- हेति, प्रहेति, उग्र, पौरुषेय, वध, विद्युत्, स्फूर्ज, वात, आय, व्याघ्र, सूर्य (ब्रह्मांड. ३.७.९०; रक्षस् देखिये)।

यातुधानी--एक कृत्या, जो राजा वृषादर्भि के द्वारा किये गये यज्ञ में से उत्पन्न हुयी थी (म. अनु. ९३. ५३)। वृषादर्भि ने इसे सप्तर्षियों का वध करने के लिए उत्पन्न किया था। 'मनसा' नाम धारण कर यह सप्तिर्षियों के पास उनके नाशार्थ गयी। किन्तु वहाँ उपस्थित शुनःसखरूपधारी इन्द्र ने इसका वध किया (वृषादर्भि देखिये)।

याद्व--एक लोकसमूह, जो संभवतः यदु लोगों का ही नामांतर होगा। यदु राजा के वंशज होने से इन्हे यह नाम प्राप्त हुआ होगा। ऋग्वेद में इनके संपत्ति का एवं दानशूरता का उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ७.१९.८)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र आसंग प्लायोगि नामक आचार्य के द्वारा इनके पशुसंपत्ति का निर्देश किया गया है (ऋ. ८.१.३१)।

पर्शु राजा एवं उसका पुत्र तिरिंदर से इन लोगों का शत्रुत्व था। तिरिंदर ने इन्हे दास बना कर इनका दान किया था (ऋ. ८.६.४८)। सायणाचार्य के अनुसार, इनकी सारी संपत्ति तिरिंदर ने वत्स काण्व नामक आचार्य को प्रदान की थी।

यान--वसिष्ठ के पुत्रों में से एक।

याम--स्वायंभुव मन्वन्तर का एक देवतासमूह (म. भी. ८.१.१८)। इस समूह में निम्नलिखित बारह देव शामिल थेः- यदु, ययाति, विवध, स्त्रासत, मति, विभास, क्रतु, प्रयाति, विश्रुत, द्युति, वायव्य एवं संयम (ब्रह्मांड. २.१३.९३)।

यामायन--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित वैदिक सूक्तद्रष्टाओं के लिए प्रयुक्त हैः-- ऊर्ध्वकृषन (ऋ. १०. १४४); कुमार (ऋ. १०.१३५); देवश्रवस् (ऋ. १०. १७); मथित (ऋ. १०.१९); शंख (ऋ. १०.१५) एवं संकुसुक (ऋ. १०.१८)।

यामिनी--प्राचेतस दक्ष प्रजापति की कन्या, जो कश्यप ऋषि की पत्नियों में से एक थी। इसकी संतान शलभ

मानी जाती है। इसकी माता का नाम असिक्नी था (भा. ६.६.२१)।

यामी—दक्ष राजा की कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नियों में से एक थी। इसे 'जामि' नामान्तर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम स्वर्ग एवं कन्या का नाम नागवीथी था।

यामुनि—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'सामुकि'।

यास्य—स्वायंभुव मन्वंतर का एक देव।

यायावर--एक व्यक्ति, जिसका कोई निश्चित आवास न था (तै. सं. ५.२.१.७; का. सं. १९.१२)। 'यायावर' का शब्दशः अर्थ 'इधर उधर घूमनेवाला' होता है।

२. संन्यासियों का एक समूह, जो मुनिवृत्ति से कठोर व्रत पालन करते हुये इधर उधर घूमते रहते थे। जरत्कारु नामक सुविख्यात ऋषि इनमें से ही एक था (म. आ. १३.१०-१३)। इस ऋषि के धार्मिकता का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. अनु. १४२)।

महाभारत में अन्यत्र जरत्कारु ऋषि के पितृगण का नाम 'यायावर' बताया गया हैं। उन्हें कोई संतान न होने के कारण, वे स्वर्ग से च्युत हो गये थे। अतएव पुनः स्वर्गप्राप्ति होने के लिए, इन्होंने जरत्कारु ऋषि से, विवाह कर पुत्रप्राप्ति करने की प्रार्थना की थी (म. आ. १३.१४-१६; ४१.१६-१७)।

यास्क--निरुक्त नामक सुविख्यात ग्रंथ का कर्ता, जो 'शब्दार्थतत्त्व' का परमज्ञाता माना जाता है। यस्क ऋषि का शिष्य होने से इसे संभवतः 'यास्क' नाम प्राप्त हुआ होगा। इसने प्रजापति कश्यप के द्वारा लिखित निघंटु नामक ग्रंथ पर विस्तृत भाष्य लिखा था, जो 'निरुक्त' नाम से प्रसिद्ध है। इसके द्वारा लिखित यह ग्रंथ वेदार्थ का प्रतिपादन करनेवाला सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथ माना जाता है। महाभारत के अनुसार, दैवी आपत्ति से विनष्ट हुआ निरुक्त ग्रंथ इसे विष्णुप्रसाद के कारण पुनः प्राप्त हुआ (म. शां. ३३०.८-९)। इसी कारण इसने अनेक यज्ञों में श्रीविष्णु का शिपिविष्ट नाम से गान किया है (म. शां. ३३०.६-७)।

बृहदारण्यक उपनिषद में यास्क को आसुरायण नामक आचार्य का समकालीन, एवं भारद्वाज ऋषि का गुरु कहा गया है (बृ. उ. २.५.२१; ४.५.२७ माध्यं; श. ब्रा. १४.५.५.२१)। संभवतः निरुक्तकार यास्क एवं उपनिषदों में निर्दिष्ट यास्क दोनो एक ही व्यक्ति होंगे। उसी ग्रंथ में अन्यत्र इसके शिष्य का नाम जातूकर्ण्य दिया गया है (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३)।

निरुक्त के अंत में यास्क को 'पारस्कर' कहा गया है, जिससे प्रतीत होता है कि यह पारस्कर देश में रहनेवाला था।

पाणिनि के व्याकरणग्रंथ में यास्क शब्द की व्युत्पत्ति प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह पाणिनि के पूर्वकालीन था (पा. सू. २.४.६३)। पिंगल के छंदःसूत्र में एवं शौनक ऋक्प्रातिशाख्य में इसका निर्देश प्राप्त है (छं. सू. ३.३०; शौनक देखिये)। इसका काल लगभग ई. पू. ७७० माना जाता है।

निरुक्त—वेदों में प्राप्त मंत्रों का शब्दव्युत्पत्ति, शब्दरचना आदि के दृष्टी से अध्ययन करनेवाले शास्त्र को 'निरुक्त' कहते है। यद्यपि आग्रायण, औदुंबरायण, औपमन्यव, शाकपूणि आदि प्राचीन भाषाशास्त्रज्ञों ने निरुक्तों की रचना की थी, तथापि उनके ग्रंथ आज उपलब्ध नहीं हैं। प्राचीन निरुक्त ग्रंथों में से यास्क का निरुक्त ही आज उपलब्ध है, जिसमें ऋग्वेद के कई मंत्रों के अर्थ का स्पष्टीकरण, एवं देवताओं के स्वरूप का निरूपण किया गया है। इस ग्रंथ में गार्ग्य, औदुंबरायण एवं शाकपूणि नामक पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त है।

निरुक्त तथा व्याकरण ये दोनों शास्त्र शब्दज्ञान एवं शब्दव्युत्पत्ति से ही संबंधित है। वेदमंत्रों का अर्थ जानने के लिए पहले उनकी 'निरुक्ति' जानना आवश्यक होता है। इसी कारण, जो कठिण शब्द व्याकरणशास्त्र से नही सुलझते थे, उनके अर्थज्ञान के लिए निरुक्त की रचना की गयी है।

यास्क के पहले 'निघंटु' नामक एक वैदिक शब्दकोश था, जिस पर इसने निरुक्त नामक अपने भाष्य की रचना की। वेदों में प्राप्त विशिष्ट शब्द विशिष्ट अर्थ में क्यों रूढ है, इसकी निरुक्ति इस ग्रंथ में की गयी है। इसी कारण वर्णागम, वर्णविपर्यय, वर्णविकार, वर्णनाश, आदि विषयों का प्रतिपादन निरुक्त में किया गया है। यास्क ने वैदिक शब्दों को धातुज मान कर उनकी निरुक्ति की है, जिस कारण वह एक असाधारण ग्रंथ बन गया है। इस ग्रंथ में वैदिक शब्दों की व्याख्या के साथ व्याकरण, भाषाविज्ञान, साहित्य आदि विषयों की जानकारी भी प्राप्त हैं।

निरुक्त में नैघंटुक, नैगम एवं दैवत नामक तीन काण्ड है, जो बारह अध्यायों में विभक्त किये गये है।

पूर्वाचार्य—यास्क ने अपने 'निरुक्त' में इस विषय के बारह निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का निर्देश किया है :— औदुम्बरायण, औपमन्यव, वार्ष्यायणि, गार्ग्य, आग्रहायण, शाकपूणि, और्णवाभ, तैटीकि, गाल्व, स्थौलाष्ठीवि, क्रौष्टु एवं कात्थक्य।

भाषाशास्त्रज्ञ—एक प्राचीन भाषाशास्त्रज्ञ के नाते, यास्क भाषाशास्त्रीय विचारप्रणालियों का आद्य आचार्य माना जाता है। इसका मत था, कि जो शब्द भाषा के प्रचलित (लौकिक) शब्दों के समान रहते है, वे ही अर्थवान् बनते है (अर्थवन्तः शब्दसाम्यात्) (नि. १. १६)।

अपने ग्रंथ में वैदिक मंत्रों का अशुद्ध उच्चारण करनेवाले व्यक्तियों की यास्क ने कटु आलोचना की है। इसने कहा है, स्वर एवं वर्ण से भ्रष्ट हुयें मंत्र इंद्रशत्रु की भाँति वाग्वज्र हो कर यजमान को विनष्ट कर देते है।

वैदिक मंत्रों का प्रथम दर्शन करनेवाले प्रतिभावान् व्यक्ति को इसने मंत्रद्रष्टा अथवा ऋषि कहा है (ऋषिर्दर्शनात्, ऋषयः मंत्रद्रष्टारः) (नि. २.११)।

युक्त—रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के अजित देवों में से एक।

३. मौत्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

युक्ताश्व आंगिरस—एक सामद्रष्टा ऋषि (पं. ब्रा. ११.८.८)। अपनी पूर्वायुष्य में यह वेदवेत्ता ऋषि था। किन्तु एक वार इसने दो नवजात शिशुओं का हरण कर उनका वध किया। इस पाप के कारण, इसका वेदों का सारा ज्ञान नष्ट हुआ।

वेदों के पुनःप्राप्ति के लिए इसने कठोर तपस्या की, जिस कारण इसके प्रतिभा जाग्रत हो कर इसने एक साम की रचना की। आगे चल कर इसे पुनः वेदज्ञान प्राप्त हुआ।

युगदत्त—(सो. पूरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार ब्रह्मदत्त का, एवं वायु के अनुसार योग राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५८; वायु. ९९.१८०)।

युगंधर—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार कुणि राजा का, मत्स्य के अनुसार द्युम्नि का, एवं वायु के अनुसार भूति राजा का पुत्र था।

२. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो सात्यकि राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। द्रोण से युद्ध करते समय, द्रोण के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. १५.३१; साल्व देखिये)।

युगप—एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४५)।

युगादिदेव—एक राजा, जिसका गया नदी में स्नान करने के कारण उद्धार हुआ (स्कंद. ५.१.५७)।

युद्धतुष्ट—(सो. कुकुर.) एक राजा, जो वायु के अनुसार उग्रसेन राजा का पुत्र था। वायु तथा विष्णु में इसे 'युद्धमुष्टि', एवं भागवत में इसे 'सृष्टि' कहा गया है।

युद्धमुष्टि—युद्धतुष्ट नामक यादव राजा का नामान्तर।

युद्धोन्मत्त—रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

युधांश्रौष्टि औग्रसैन्य—एक राजा, जिसे पर्वत एवं नारद ऋषि ने ऐन्द्र 'महाभिषेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८. २१.७)। पौराणिक वाङ्मय में निर्दिष्ट 'युद्धमुष्टि' अथवा 'युद्धतुष्ट' राजा यही है (युद्धतुष्ट देखिये)। उग्रसेन राजा का पुत्र होने से इसे 'औग्रसैन्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

युधाजित्—केकय देश के अश्वपति राजा का पुत्र, जो दशरथ की पत्नी कैकेयी का भाई था। एक समय अपने भतिजे भरत एवं शत्रुघ्न को केकय देश को ले गया था, जो अवसर देख कर दशरथ ने राम को यौवराज्याभिषेक किया (वा. रा. बा. ७७; दशरथ देखिये)।

२. अवन्ति देश का एक राजा, जो इक्ष्वाकुवंशीय सुदर्शन राजा के लीलावती नामक पत्नी का पिता था। अपने जामात सुदर्शन से इसका शत्रुत्व था, जिस कारण इसने उसे राजगद्दी से निकाल कर उसके भाई शत्रुजित् को अयोध्या का राज्य प्रदान किया था (सुदर्शन ९. देखिये)।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो क्रोष्टु एवं माद्री का पुत्र था (ब्रह्म. १४; ह. वं. १.३८.११)। अन्य पुराणों में इसे वृष्णि का पुत्र कहा गया है (पद्म. सृ. १३; वायु. ९६; मत्स्य. ४५; विष्णु. ४.१३; भा. ९. २४)। इसे शिनि एवं अनमित्र नामक दो पुत्र थे। इसीके वंश में उत्पन्न हुये श्वफल्क एवं चित्ररथ नामक राजाओं ने स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की थी (भा. ९. २४; यदु. ३. देखिये)।

४. भृगुकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

युधाजित—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अनमित्र एवं पृथ्वी का पुत्र था (मत्स्य. ४५.२५; पद्म सृ. १३)।

युधामन्यु—पंचाल देश का एक राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था। यह महारथि, महाधनुर्धर, तथा गदा एवं धनुष्य के युद्ध में अत्यंत प्रवीण था (म. उ. १६७.५; १९७.३)। भारतीय युद्ध में यह अर्जुन का चक्ररक्षक था (म. भी. १६.१९)। इसके रथ के अश्व 'सारंग' वर्णके थे (म. द्रो. २२. १६०*)। इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था :-कृतवर्मन् एवं कृप (म. द्रो. ६७.२९); द्रोण एवं दुर्योधन (म. द्रो. १०५.८१९*); कर्ण का भाई चित्रसेन (म. क. ८३.३९)।

द्रोणपुत्र अश्वत्थामा ने शिबिर में निद्रिस्त पांडव योद्धाओं का संहार किया, जिस समय उसके द्वारा यह भी मारा गया (म. सौ. ८.३४-३५)।

युधिष्ठिर—(सो. कुरु.) पाण्डुराजा की पत्नी कुन्ती का ज्येष्ठ पुत्र (मा. ९.२२.२७; म. आ. ९०.६९)।

तत्त्वदर्शी राजाः—एक धीरोदात्त, ज्ञानी, धर्मनिष्ठ एवं तात्विक प्रवृत्तियों का महात्मा मान कर, युधिष्ठिर का चरित्रचित्रण श्रीव्यास के द्वारा महाभारत में किया गया है। एक महाधनुर्धर एवं पराक्रमी व्यक्ति के नाते से अर्जुन महाभारत का नायक प्रतीत होता है। किन्तु अर्जुन की एवं समस्त पाण्डवों की सर्वोच्च प्रेरकशक्ति एवं अधिष्ठाता पुरुष, वास्तव में युधिष्ठिर ही है।

अपने समय का सर्वश्रेष्ठ क्षत्रिय होते हुये भी, सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण के सारे गुण इसमें सम्मिलित थे। इस तरह इसका व्यक्तिमत्त्व तत्कालीन क्षत्रिय नृपों से नही, बल्कि विदेह देश के तत्त्वचिंतक एवं तत्वज्ञ राजाओं से अधिक मिलता जुलता था। 'विदेह' जनक से ले कर गौतम बुद्ध तक के जो तत्त्वदर्शी राजा प्राचीन भारत में उत्पन्न हुये, उसी परंपरा का युधिष्ठिर भी एक तत्त्वदर्शी राजा था। महाभारत में प्राप्त युधिष्ठिर के अनेक नीतिवचन एवं विचार गौतमबुद्ध के वचनों से मिलते जुलते है।

चिंतनशील व्यक्तित्व—युधिष्ठिर पाण्डवों का ज्येष्ठ भ्राता था, जिस कारण यह आजन्म उनका नेता रहा। फिर भी इसका व्यक्तित्त्व क्रियाशील क्षत्रिय के बदले, एक तत्त्वदर्शी एवं पूर्णतावादी तत्त्वज्ञ होने के कारण, स्वयं पराक्रम न करते हुये भी इसे अपने भाईयों को कार्यप्रवण करने का मार्ग अधिक पसंद था। इसी कारण अपने पराक्रमी भाईयों को कार्यप्रवण करने का, एवं उनके कर्तृत्व को पूर्णत्व प्राप्त कराने का कार्य यह करता रहा। स्वभाव से यह पूर्णतावादी था, इसलिए इसे जीवन की त्रुटियाँ तथा अपूर्णता का ज्ञान एवं विवेक अधिक था। इसकी चिंतनशीलता एवं अन्य पाण्डवों की क्रियाशीलता का जो आंतरिक विरोध इसकी आयु में चलता रहा, वहीं पांडवों का संघर्ष एवं परस्परसौहार्द का अधिष्ठान था।

स्वभाव से अत्यंत चिंतनशील एवं अजातशत्रु हो कर भी, इसे सारी आयुःकाल में अपने कौरव भाईयों के साथ झगड़ना पडा, एवं उत्तरकालीन आयु में उनके साथ महायुद्ध भी करना पड़ा। फिर भी धर्म, नीति, सत्य, क्षमा, आत्मौपम्य आदि जिन धारणाओं को इसने जीवन का मूलाधार मानने का व्रत स्वीकृत किया था, उससे यह आजन्म अटल रहा। धर्म का आद्य मूलतत्त्व उच्चतम नीतिमत्ता है, ऐसी इसकी धारणा थी। उसी नीतिमत्ता का पालन वैयक्तिक, कौटुंविक एवं राजनैतिक जीवन में होना चाहिये, इस ध्येयपूर्ति के लिए यह आजन्म झगड़ता रहा।

धर्म का अधिष्ठान अध्यात्म में नही, बल्कि दया, क्षमा, शांति जैसे आचरण में है, ऐसी इसकी भावना थी। इसी कारण, धर्माचरण मोक्षप्राप्ति के लिए नही, बल्कि अपने बांधवों के सुखसमाधान के लिए करना चाहिये, ऐसी इसकी विचारधारा थी।

अपने इन अभिमतों के सिध्यर्थ, इसे आजन्म कष्ट सहने पड़े, शत्रुमित्रों की एवं पाण्डव बांधवों की नानाविध व्यंजना सुननी पड़ी। फिर भी यह अपने तत्त्वों से अटल रहा। अपनी इसी विचारों के कारण, यह आजन्म एकाकी रहा, एवं एकाकी अवस्था में ही इसकी मृत्यु हुयी।

जन्म—तूल राशि में जब सूर्य, तथा ज्येष्ठा नक्षत्र में जब चन्द्र था, तब दिन के आठवें अभिजित् मुहुर्त पर आश्विन सुदी पंचमी के दिन दूसरे प्रहर में इसका जन्म हुआ (म. आ. ११४.४; नीलकंठ टीका—१२३.६)। युधिष्ठिर आदि सभी पाण्डव इन्द्रांश थे (मार्क ५.२०-२६)। इसके जन्मकाल में आकाशवाणी हुयी थी— 'पाण्डु का यह प्रथम पुत्र युधिष्ठिर नाम से विख्यात होगा, इसकी तीनों लोकों में प्रसिद्धी होगी। यह यशस्वी, तेजस्वी तथा सदाचारी होगा। यह श्रेष्ठ पुरुष धर्मात्माओं में अग्रगण्य, पराक्रमी एवं सत्यावादी राजा होगा' (म. आ. ११४. ५-७)।

स्वरूपवर्णन—यह शरीर से कृश तथा स्वर्ण के समान गौरवर्ण का था। इसकी नाक बड़ी तथा नेत्र आरक्त एवं विशाल थे। यह लम्बे कद का था, एवं इसका वक्षःस्थल

विशाल था। इसके स्नायु प्रमाणबद्ध थे (म. आश्र. ३२.६)।

ध्वज एवं आयुध—इसके धनुष्य का नाम 'माहेन्द्र' एवं शंख का नाम 'अनंतविजय' था। इसके रथ के अश्व हस्तिदंत के समान शुभ्र थे, एवं उनकी पूँछ कृष्ण-वर्णीय थी। इसके रथ पर नक्षत्रयुक्त चंद्रवाला स्वर्णध्वज था। उस पर यंत्र के द्वारा बजनेवाले 'नंद' तथा 'उपनंद' नामक दो मृदंग थे (म. द्रो. २२.१६२. परि. १. क्र. ५. पंक्ति ४-७)।

शिक्षा—इसके संस्कारों के विषय में मतभेद है। किसी प्रति में लिखा है कि सभी संस्कार शतशृंग पर हुए, और किसी में हस्तिनापुर के बारे में उल्लेख मिलता है। कहते है कि, शतशृंगनिवासी ऋषियों द्वारा इसका नामसंस्कार हुआ (म. आ. ११५.१९-२०), तथा वसुदेव के पुरोहित काश्यप के द्वारा इसके उपनयनादि संस्कार हुए (म. आ परि १-६७)

शर्यातिपुत्र शुक्र से इसने धनुर्वेद सीखा, तथा तोमर चलाने की कला में यह बड़ा पारंगत था (म. आ. परि. १.६७.२८-३४)। प्रथम कृप ने, तथा बाद में द्रोणाचार्य ने इसे शस्त्रास्त्र विद्या सिखायी थी (म. आ. १२०.२१;१२२)। कौरव पाण्डवों की द्रोण द्वारा ली गयी परीक्षा में इसने अपना कौशल दिखा कर सब को आनंदित किया था (म. आ. १२४-१२५)। गुरुदक्षिणा देने के लिए इसने भीमार्जुन की सहाय्यता ली थी (म. आ. परि. ७८. पंक्ति ४२)

पाण्डवों के पिता पाण्डु का देहावसान उनके बाल्यकाल में ही हुआ था। कौरव बांधवों की दुष्टता के कारण, इसे अपने अन्य भाइयों के भाँति नानाविध कष्ट सहने पडे। किन्तु इसी कष्टों के कारण इसकी चिंतनशीलता एवं नीति-परायणता बढती ही रही। कौरवों की जिस दुष्टता के कारण, अर्जुन ने ईर्ष्यायुक्त बन कर नवनवीन अस्त्र संपादन किये, एवं भीम में अत्यधिक कटुता उत्पन्न कर वह कौरवो के द्वेष में ही अपनी आयु की सार्थक्यता मानने लगा, उन्ही के कारण युधिष्ठिर अधिकाधिक नीतिप्रवण एवं चिंतनशील बनता गया। भारतीययुद्ध जैसे संहारक काण्ड के समय, भीष्मद्रोणादि नीतिपंडितों की सूक्तासूक्त-विषयक धारणाएँ जड़मूल से नष्ट हो गयी, उस प्रलय-काल में भी युधिष्ठिर की नीतिप्रवणता वैसी हि अबाधित एवं निष्कलंक रही।

यौवराज्याभिषेक— यह क्षात्रविद्यासंपन्न होने पर, धृतराष्ट्र ने भीष्म की आज्ञा से इसे यौवराज्याभिषेक किया, एवं अर्जुन इसका सेनापति बनाया गया (म. आ. परि. १. क्र. ७९. पंक्ति. १९१-१९३)। इसने अपने शील, सदाचार एवं प्रजापालन की प्रवृत्तियों के द्वारा अपने पिता पाण्डु राजा की कीर्ति को भी ढक दिया। इसकी उदारता एवं न्यायी स्वभाव के कारण, प्रजा इसे ही हस्तिनापुर के राज्य को पाने के योग्य बताने लगी।

पाण्डवों की बढती हुयी शक्ति एवं ऐश्वर्य को देख कर दुर्योधन मन ही मन इसके विरुद्ध जलने लगा, एवं पाण्डवों को विनष्ट करने के षड्‌यंत्र रचाने लगा, जिनमें धृतराष्ट्र की भी संमति थी (म. आ. परि. १. क्र. ८२. पंक्ति. १३१-१३२)।

लाक्षागृहदाह—धार्तराष्ट्र एवं पाण्डवों के बढते हुऐ शत्रुत्व को देख कर, इन्हे कौरवों से अलग वारणावत नामक नगरी में स्थित राजगृह में रहने की आज्ञा धृतराष्ट्र ने दी। इसी राजगृह को आग लगा कर इन्हे मारने का षड्‌यंत्र दुर्योधन ने रचा। किन्तु विदुर की चेतावनी के कारण, पाण्डव इस लाक्षागृह-दाह से बच गये। विदुर के द्वारा भेजे गये नौका से ये गंगानदी के पार हुये। पश्चात् सभी पाण्डवों के साथ इसका भी द्रौपदी के साथ विवाह हुआ।

अर्ध राज्यप्राप्ति—द्रौपदी-विवाह के पश्चात्, धृतराष्ट्र ने हस्तिनापुर के अपने राज्य के दो भाग किये, एवं उसमें से एक भाग इसे प्रदान किया। अपने राज्य में स्थित खाण्डवप्रस्थ नामक स्थान में इन्द्रप्रस्थ नामक नयी राजधानी बसा कर, यह राज्य करने लगा (म. आ. १९९)।

राजसूययज्ञ—इसकी राजधानी इंद्रप्रस्थ में मयासुर ने मयसभा का निर्माण किया, जो स्वर्ग में स्थित इन्द्रसभा, वरुणसभा, ब्रह्मसभा के समान वैभवसंपन्न थी। एक बार युधिष्ठिर से मिलने आये हुये नारद ने मय-सभा को देख कर अत्यधिक प्रसन्नता व्यक्त की, एवं कहा, 'हरिश्चंद्र राजा ने राजसूय यज्ञ करने के कारण, जो स्थान इंद्रसभा में प्राप्त किया है, वही स्थान तुम्हारे पिता पाण्डु प्राप्त करना चाहते है। यदि तुम राजसूय यज्ञ करोंगे तो तुम्हारे पिता कि यह कामना पूर्ण होगी' (म. स. ५.१२)।

नारद की इस सूचना का स्वीकार कर, युधिष्ठिर ने श्रीकृष्ण की सहाय्यता से राजसूययज्ञ का आयोजन किया।

इस यज्ञ के सिध्यर्थ इसने अर्जुन, भीम, सहदेव एवं नकुल इन भाईयों को क्रमशः उत्तर, पूर्व, दक्षिण एवं पश्चिम दिशाओं में भेज दिया। इन दिग्विजयों से अपार संपत्ति प्राप्त कर, पाण्डवों ने अपने राजसूय-यज्ञ का प्रारंभ किया (भा. १०.७२.७४)।

श्रीकृष्ण की आज्ञा से, इसने स्वयं राजसूय यज्ञ की दीक्षा ली थी। इसके यज्ञ के प्रमुख पुरोहितगण निम्नलिखित थे :—ब्रह्मा–द्वैपायन व्यास; सामग–सुसामन्; अध्वर्यु–ब्रह्मिष्ठ याज्ञवल्क्य; होता–वसुपुत्र पैल एवं धौम्य (म. स. ३०.३४–३५)।

इस यज्ञ में कौरव, यादव एवं भारतवर्ष के अन्य सभी राजा उपस्थित थे। इस यज्ञ की व्यवस्था युधिष्ठिर के द्वारा निम्नलिखित व्यक्तियों पर सौंपी गयी थी :—भोजनशाला–दुःशासन; ब्राह्मणों का स्वागत–अश्वत्थामा, दक्षिणाप्रदान–कृपाचार्य; आयव्ययनिरीक्षण–विदुर; ब्राह्मणों का चरणक्षालन–श्रीकृष्ण; सामान्य प्रशासन–भीष्म एवं द्रोण।

इस यज्ञ में प्रतिदिन दस हजार ब्राह्मणों को स्वर्ण की स्थालियों में भोजन कराया जाता था। एक लाख ब्राह्मणों को इस तरह भोजन दिया जाने पर, 'लक्षभोजन' सूचक शंखध्वनि की जाती थी (म. स. ४५.३०)। इस प्रकार इसका राजसूय यज्ञ सर्वतोपरि सफल रहा।

दुर्योधनविद्वेष––युधिष्ठिर के द्वारा किये गये इस यज्ञ की सफलता को देख कर दुर्योधन ईर्ष्या से जल-भून गया। युधिष्ठिर के द्वारा खर्च की गयी अगणित संपत्ति, एवं लोगों के द्वारा की गयी युधिष्ठिर की प्रशंसा उसे असह्य प्रतीत हुयी (म. स. ३२.२७; भा. १०.७४)। इसी कारण इसे जड़मूल से उखाड़ फेंकने की योजनाएँ वह बनाने लगा। इसे युद्ध में जीतना तो असंभव था। इसी कारण द्यूत के द्वारा इसकी समस्त धन-संपत्ति हरण करने की शकुनि मामा की सूचना उसने मान्य की। पश्चात् इसी सूचना को स्वीकार कर, धृतराष्ट्र ने विदुर के द्वारा युधिष्ठिर को द्यूत खेलने का निमंत्रण दिया।

द्यूत–पराजय—हस्तिनापुर में संपन्न हुए द्यूतक्रीडा में, दुर्योधन के स्थान पर शकुनि ने बैठ कर युधिष्ठिर को पूरी तरह से हरा दिया, एवं इसका सबकुछ जीत लिया। यह धन, राज्य, भाई तथा द्रौपदी सहित अपने को भी हार गया। द्यूत खेल कर पराजित होने के बाद, इसने बारह-वर्ष का वनवास एवं वर्ष एक का अज्ञातवास स्वीकार लिया, एवं यह भी शर्त मान्य की कि, यदि अज्ञातवास के समय पाण्डव पहचाने गये, तो इन्हें बारह वर्षों का वनवास और सहना पडेगा (म. स. ७१)।

वनवास—कार्तिक शुक्ल पंचमी के दिन यह अपने अन्य भाई एवं द्रौपदी के साथ वनवास के लिए निकला। यह जब अरण्य की ओर चला, उस समय हस्तिनापुर के अनेक नगरवासी इसके साथ जाने के लिए तत्पर हुये। इसने इन सभी लोगों को लौट जाने के लिए कहा, एवं ऋषिजनों में से केवल इसके उपाध्याय धौम्य इसके साथ रहे। वनवास के प्रारंभ में ही इसने सूर्य की प्रार्थना कर, अक्षय्य अन्न-प्रदान करनेवाली एक स्थाली प्राप्त की। इस तरह अपनी एवं अपने बांधवों की उपजीविका का प्रश्न हल किया (म. व. १–४)।

युधिष्ठिर के द्यूत खेलने के समय एवं द्रौपदी वस्त्रहरण के समय श्रीकृष्ण हस्तिनापुर में नही था, क्यों कि, उसी समय शाल्व ने द्वारका पर आक्रमण किया था। पाण्डवों के वनवास की वार्ता ज्ञात होते ही वह इनसे मिलने वन में आया। उस समय धार्तराष्ट्रों पर आक्रमण कर, उनका राज्य पाण्डवों को वापस दिलाने का आश्वासन कृष्ण ने इसे दिया। किन्तु इसने दृढता से कहा, 'मैंने कौरवों से शब्द दिया है कि, बारह साल वनवास एवं एक साल अज्ञातवास हम भुगत लेंगें। यह मेरी आन है, एवं उसे किसी तरह भी निभाना यह हमारा कर्तव्य है। इसी कारण वनवास की समाप्ति के पश्चात् ही हमें राज्य के पुनःप्राप्ति का विचार करना चाहिए'।

द्रौपदी–युधिष्ठिर संवाद––पाण्डवों के वनवास के प्रारंभ में ही, द्वैत-वन में द्रौपदी ने युधिष्ठिर के पास अत्यधिक विलाप किया। उसने कहा, 'द्रुपद राजा की कन्या, पाण्डुराजा की स्नुषा एवं तुम्हारी पटरानी, जो मैं आज तुम्हारे कारण वनवासी बन गयी हूँ। भीम जैसे राजकुमार एवं अर्जुन जैसे योद्धा आज भूख एवं प्यास से व्याकुल हो कर इधर उधर घूम रहे है। अपने बांधवों की यह हालत देख कर भी तुम चुपचाप क्यों बैठते हो? दुर्योधन अत्यंत पापी एवं लोभी है, एवं उसका नाश करना ही उचित है'।

इस पर युधिष्ठिर ने कश्यपगीता का निर्देश करते हुए कहा, 'क्षमा पर ही सारा संसार निर्भर है। राज्य के लोभ से अपने मन में स्थित क्षमाभावना का त्याग करना उचित नही है। लोभ से बुद्धि मलीन हो जाती है।

'केवल पाण्डवों का ही नही, बल्कि सारे भरत वंश का नाश होने का समय आज समीप आया है। फिर भी अपनी मन की शान्ति हमें नहीं छोडनी चाहिये'।

युधिष्ठिर का यह वचन सुन कर द्रौपदी और भी क्रुद्ध हुयी। समस्त सृष्टि के संचालक विधातृ की दोष देते हुये उसने कहा, 'तुम्हारे आत्यंतिक धर्मभाव से मैं तंग आयी हूँ। कहते है कि, धर्म का रक्षण करने पर वह मनुष्यजाति का रक्षण करता है। किन्तु धर्माचरण का कुछ भी फायदा तुम्हे नही हुआ है। अपनी समस्त आयु में तुमने यज्ञ किये, दान दिये, सत्याचरण किया। एक साया जैसे तुम धर्म का पीछा करते रहे। फिर भी उसके बदले हमे दुःख के सिवा कुछ भी न मिला'।

द्रौपदी के इस कटुवचन को सुन कर युधिष्ठिर ने अत्यंत शान्ति से कहा, फलों की कामना मन में रखकर धर्म का आचरण करना उचित नहीं है। जो नीच एवं कमीने होते है, वे ही धर्म का सौदा करते है। अपने दुर्भाग्य के लिए देवताओं को दोष देना श्रद्धाहीनता का द्योतक है। धर्म असफल होने पर तप, ज्ञान एवं दान निष्फल हो जायेंगे, एवं समस्त मनुष्य जाति पशु बन जायेंगी। परमात्मा की कर्तृत्वशक्ति अगाध है। उसकी निंदा करने का पापाचरण तुमने न करना चाहिये'। युधिष्ठिर ने आगे कहा, 'दुर्योधन की राजसभा में मैंने वनवास की प्रतिज्ञा की है, जो मुझे अपने प्राणों से भी अधिक प्रिय है। हमें सत्य कभी भी न छोंडना चाहिये (म. व. २८-३१)।

इसी संभाषण के अन्त में इसने अपने भाईयों से कहा 'कौरवों के साथ द्यूत खेलते समय मैं हारा गया, इस कारण आप मुझे जुआँरी एवं मूरख कह कर दोष देते है, यह ठीक नही। जब मैं द्यूत के लिए उद्यत हुआ था, उस समय आप चुपचाप क्यों बैठे'?

इसी समय व्यास ने युधिष्ठिर से कहा, 'बांधवों के लिए यही अच्छा है कि, वे सदैव एकत्र न रहे। ऐसे रहने से प्रेम बढता नही, बल्कि घटता है'। इसी कारण, व्यास ने इसे एक ही स्थान पर न रहने की सूचना दी (म. व. ३७.२७-३२)। व्यास के इस वचन को प्रमाण मान कर इसने अर्जुन को 'पाशुपतास्त्र' प्राप्त करने के लिए भेज दिया एवं द्रौपदी का भार भीम पर सौंप कर यह निश्चिंत हुआ।

इसके पश्चात् यह कुछ काल तक काम्यकवन में रहा, जहाँ इसके दुःख का परिहार करने के लिए, बृहदश्व ऋषि ने नल राजा का चरित्र इसे कथन किया (म. व. ७८. १७)। इसी समय उसने इसे 'अक्षहृदय' एवं 'अक्षविद्या' प्रदान की, जिस कारण यह द्यूतविद्या में अजिंक्य बन गया।

तीर्थयात्रा—एक बार लोमश ऋषि इसे वनवास में मिलने आये, एवं उन्होंने इसे कहा, 'अर्जुन को अपनी तपस्या से लौट-आने में काफी समय लगनेवाला है। इसी कारण तुम्हारी मनःशांति के लिए तुम भारतवर्ष की यात्रा करोंगे, तो अच्छा होगा। इसी समय पुलस्त्य एवं धौम्य ऋषि ने भी इसे तीर्थयात्रा करने का महत्त्व कथन किया था (म. व. ८०-८३-८४-८८)।

पश्चात् यह लोमश ऋषि के साथ तीर्थयात्रा के लिए निकल पड़ा। लोमश ऋषि ने इसे तीर्थयात्रा करते समय अनेकविध तीर्थस्थान, नदियाँ, पर्वत आदि का माहात्म्य कथन किया, एवं उस माहात्म्य के आधारभूत प्राचीन ऋषि, मुनि एवं राजाओं की कथा इसे सुनाई (म. व. ८९-१५३)। महाभारत के जिस 'तीर्थयात्रा पर्व' में युधिष्ठिर की इस यात्रा का वर्णन प्राप्त है, वहाँ पुष्कर-तीर्थ एवं कुरुक्षेत्र को भारतवर्ष के सर्वश्रेष्ठ तीर्थ कहा गया है, एवं समुद्रस्नान का माहात्म्य भी वहाँ कथन किया गया है।

नहुषमुक्ति—तीर्थयात्रा समाप्त करने के पश्चात्, पाण्डव गंधमादन पर्वत पर गये। वहाँ अर्जुन भी पाशुपतास्त्र संपादन कर स्वर्ग से वापस आया था (म. व. १६२-१७१)। गंधमादन पर्वत के नीचे पाण्डव जिस समय अरण्य में संचार कर रहे थे, उस समय अजगर रूपधारी नहुष ने भीम को निगल लिया। नहुष के द्वारा पूछे गये धर्मविषयक अनेकानेक प्रश्नों के युधिष्ठिर ने सुयोग्य उत्तर दिये, एवं इस तरह भीम को अजगर से मुक्तता की (म. व. १७७-१७८; नहुष देखिये)। तत्पश्चात् नहुष की अजगरयोनि से मुक्तता हो कर वह भी स्वर्ग चला गया। भीम के शारीरिक बल से युधिष्ठिर का आत्मिक सामर्थ्य अधिक श्रेष्ठ था, यह बताने के लिए यह कथा दी गयी है।

घोषयात्रा—पाण्डव जिस समय द्वैतवन में निवास करते थे, उस समय उन्हे अपना वैभव दिखाने के लिये दुर्योधन वहाँ ससैन्य उपस्थित हुआ। चित्रसेन गंधर्व ने उसे पकड लिया। तत्पश्चात् दुर्योधन के सेवक युधिष्ठिर के पास मदद की याचना करने के लिए आ पहुँचे। उस समय भीम ने कहा 'दुर्योधन हमारा शत्रु है। उसकी जितनी बेइज्ज़ती हो, उतना हमारे लिए अच्छा ही है'। किन्तु युधिष्ठिर कहा, 'दुर्योधन हमारा कितना ही बड़ा शत्रु हो, उसकी किसी दूसरे के द्वारा बेइज्ज़ती होना

हमारे कुरुकुल के लिए लांछन है। कौरवों के साथ संघर्ष करते समय, सौ कौरव एवं पाँच पाण्डव अलग अलग रहेंगे, किन्तु किसी परकीय शत्रु से युद्ध करते समय, हम दोनो एक सौ पाँच बन कर उसका प्रतिकार करे, यही उचित है—

परस्पराणां संघर्षे, वयं पञ्च च ते शतम्।
अन्यैः सह विरोधे तु, वयं पञ्चाधिकं शतम्।

जयद्रथ की मुक्तता—इसीके ही पश्चात् थोडे दिन में जयद्रथ ने द्रौपदी का हरण करने का प्रयत्न किया (म. व. २५५.४३)। उसी समय भी इसने जयद्रथ धृतराष्ट्र की कन्या दुःशीला का पति है, यह जान कर उसकी मुक्तता की (म. व. २५६.२१-२३)।

जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदीहरण से खिन्न हुये युधिष्ठिर को, मार्कंडेय ऋषि ने रावण के द्वारा किये गये सीताहरण की, एवं अश्वपति राजा की कन्या सावित्री की कथा सुनाई, एवं मनःशांति प्राप्त करा दी।

यक्षप्रश्न—कालान्तर में यह काम्यकवन छोड़ कर फिर द्वैतवन में रहने लगा। एक बार सभी लोग प्यासे थे। इसने नकुल से पानी लाने के लिए कहा किन्तु नकुल वापस न लौटा। तब इसने बारी बारी से सहदेव, अर्जुन तथा भीम को भेजा। किन्तु कोई वापस न लौटा। हार कर यह जलाशय के तट पर आया तब अपने सभी भाइयों को मूर्च्छित देखकर अत्यधिक क्षुब्ध हुआ, एवं दुःख से पीड़ित हो कर विलाप करने लगा। तत्काल, इसे शंका हुयी कि दुर्योधन ने इस जलाशय में विष घुलवा दिया हो। इतने में एक ध्वनि आयी, 'तुम मेरे प्रश्नों का उत्तर दो, फिर पानी ले सकते हो। यदि मेरी बात न मानोंगे, तो तुम्हारी भी यही हालत होगी, जो तुम्हारे भाइयों की हुयी है।

तब बक रूप धारण कर, उस यक्ष ने इसे अस्सी प्रश्न किये, जो साधारण बुद्धि, तत्वज्ञान, दर्शन, धर्म तथा राजनीति सम्बन्धी थे। इसने उन सभी का उत्तर संतोषजनक दिया। उनमें से प्रमुख प्रश्न तथा उनके उत्तर निम्नलिखित थे (यक्ष प्रश्न की तालिका देखिये)।

इस प्रकार अपने सभी प्रश्नों का तर्कपूर्ण उत्तर पा कर, बकरूपधारी यक्ष ने सन्तुष्ट होकर युधिष्ठिर से कहा, 'तुम अपने भाइयों में किसी एक को पुनः प्राप्त कर सकते हो'। तब इसने माद्रीपुत्र नकुल का जीवनदान माँगा। तब इसके पक्षपातरहित समत्वबुद्धि को देख कर यक्ष प्रसन्न हो उठा। उसने इसके सभी भाइयों को जीवित कर दिया,

यक्ष के प्रश्न	युधिष्ठिर के उत्तर
सूर्य का आधार क्या है?	ब्रह्म।
सूर्य के साथ कौन है?	देवता।
धर्म का अधिष्ठान क्या है?	सत्य।
आदमी को बल कैसे प्राप्त होता है?	धैर्य से।
कौन आदमी मृत है?	धनहीन।
कौन राष्ट्र मृत है?	जहाँ अराजकता है।
ब्राह्मण देवत्व किस प्रकार पा सकता है?	विद्या से।
क्षत्रिय देवत्व किस प्रकार प्राप्त कर सकता है?	शस्त्रादि से।
जीवित कौन है?	देवता, अतिथि, नौकर-चाकर, पितर एवं आत्मा को तृप्त करनेवाला।

तथा वर दिया, 'अज्ञातवास के समय तुम्हें कोई पहचान न सकेगा'। वह यक्ष कोई दूसरा न था, बल्कि साक्षात यमधर्म ही था। उसने इसे विराटनगरी में रहने के लिए कहा, तथा ब्राह्मण की अरणी देते हुए वर प्रदान किया, 'लोभ, क्रोध तथा मोह को जीत कर दान, तप तथा सत्य में तुम्हारी आसक्ति हो (म. व. २९५-२९८)।

अज्ञातवास—पाण्डवों के अज्ञातवास में इसने गुप्त रूप से जय, तथा प्रकट रूप से कंक नामक ब्राह्मण का रूप धारण किया था (म. वि. १.२०; ५. ३०)। अज्ञातवास शुरु होने के पूर्व धौम्य ऋषि ने इसे अज्ञात वास में

किस तरह आचरण करना चाहिये, इस विषय में उपदेश किया था। पश्चात् अपने बन्धु एवं द्रौपदी के साथ, मत्स्यराज विराट के यहाँ इसने अज्ञातवास का एक वर्ष विताया (म. वि. ६. ११)।

यह द्यूतक्रीडा का बड़ा शौकिन एवं ब्रडा प्रवीण खिलाडी था। यह द्यूत में विराट के धन को जीतता था, एवं गुप्त रूप से वह अपने भाईयों से देता था (म. वि. १२.५)। एक बार द्यूत खेलते समय इसने बृहन्नला (अर्जुन) की काफ़ी तारीफ की, जिस कारण क्रुद्ध होकर विराट ने इसकी नाक पर एक पाँसा फेंक कर मारा। उससे इसकी नाक से खून बहने लगा, जिसे द्रौपदी ने अपने पल्ले से पोंछ लिया था (म. वि. ६३)।

संधि का प्रयत्न--ज्येष्ठ कृष्ण अष्टमी के दिन पाण्डव अपने वनवास एवं अज्ञात वास से प्रकट हुये। तत्पश्चात् इसने द्रुपद राजा के पुरोहित को राज्य का आधा हिस्सा माँगने के लिए भेज दिया (म. उ. ६.१८)। पुरोहित ने धृतराष्ट्र से युधिष्ठिर का संदेश कह सुनाया, एवं भीष्म द्रोणादि ने भी उसका समर्थन किया। धृतराष्ट्र ने युधिष्ठिर की माँग का सीधा जवाब नहीं दिया, किन्तु संजय के हाथों इतना ही संदेश भेद दिया, 'मैं आप से सख्य भाव रखना चाहता हूँ। जो लोग मूढ एवं अधर्मज्ञ होते है, वे ही केवल युद्ध की इच्छा रखते है। तुम स्वयं ज्ञाता हो। इसी कारण अपने बांधवों को युद्ध से परावृत्त करो, यही उचित है'।

इस पर युधिष्ठिर ने जवाब दिया, 'वनवास के आपत्काल में पाण्डवों ने भिक्षा माँग कर अपना गुजारा किया है। अभी आपत्काल समाप्त होने पर भिक्षावृत्ति से जीना हमारे लिए असंभव है। फिर भी शान्ति का आखिरी प्रयत्न करने के लिए मैं श्रीकृष्ण को धृतराष्ट्र के दरबार में भेज देता हूँ'।

युधिष्ठिर-कृष्ण संवाद—युधिष्ठिर पहले से हीं युद्ध करने के विरुद्ध था। इसी कारण, इसने कृष्ण से हर प्रयत्न से युद्ध टालने की प्रार्थना की। इसने कहा, 'युद्ध में सर्वनाश के सिवा कुछ संपन्न नही होता है। जिस तरह पानी में मछलिया एक दूसरी के साथ झगडती हैं, एवं एक दूसरी को खा जाती है, उसी तरह युद्ध में क्षत्रिय, क्षत्रिय के साथ झगड़ते है, एवं एक दूसरे का संहार करते है। क्षत्रिय लोग युद्ध में पराजय की अपेक्षा मृत्यु को अधिक पसंत करते है। किन्तु जिस युद्ध में अपने सारे बान्धवों का संहार होता हैं, उससे सुख की प्राप्ति कैसे हो सकती है? शत्रुत्व युद्ध से घटता नही, बल्कि बढ़ता है। इसी कारण शांति में जो सुख है, वह युद्ध में कहाँ'?

इसी दौत्यकर्म के समय धृतराष्ट्र के राजगृह में रहनेवाली अपनी माता कुन्ती से मिलने के लिए, इसने श्रीकृष्ण को बार बार प्रार्थना की थी। इसने कहा, 'हमारी माता कुन्ती को जीवन में दुख के सिवा अन्य कुछ भी नही प्राप्त हुआ। फिर भी बाल्यकाल में उसने दुर्योधन से हमारा संरक्षण किया'।

कृष्णदौत्य—युधिष्ठिर के कहने पर श्रीकृष्ण दुर्योधन के दरबार में गया, एवं उसने कहा, 'अविस्थल, वृकस्थल माकंदी (आसंदी), वारणावत आदि पाँच गाँव पाण्डवों के भरणपोषण के लिए आप युधिष्ठिर को दे दे। इतना छोटा हिस्सा प्राप्त होने पर भी, युधिष्ठिर धार्तराष्ट्रों से संधि करने के लिए तैय्यार है (म. उ. ७०-७५)।

किन्तु दुर्योधन ने सुई की नोंक के बराबर भी भूमि पाण्डवों को देना अमान्य कर दिया (म. उ. १२६.२६)। अन्त में कुरुक्षेत्र में हिरण्यवती नदी के किनारे खाई खोद कर युधिष्ठिर ने अपनी सेना एकत्र की (म. उ. १४९.७-७४)। युद्ध टालने का अखीर का प्रयत्न करने के लिए, इसने फिर एकबार उलूक राजा को मध्यस्थता के लिए दुर्योधन के पास भेज दिया, एवं कहा 'भाईयों का यह रिश्ता न टूटे तो अच्छा'। किन्तु मामला उलझता ही गया, सुलझा नही, एवं भारतीय युद्ध का प्रारंभ हुआ (म. उ. १५७).

भारतीय युद्ध-पाण्डवपक्ष के योद्धा--भारतीय युद्ध प्राचीन भारतीय इतिहास का पहला महायुद्ध माना जाता है। इस कारण इस युद्ध में तत्कालीन भारतवर्ष का हर एक राजा, कौरव अथवा पाण्डव किसी न किसी पक्ष में शामिल था। भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में निम्नलिखित देश शामिल थे:—

१. मध्यदेश के देश—वत्स, काशी, चेदि, करूष, दशार्ण एवं पांचाल। पार्गिटर के अनुसार, मध्यदेश में से मत्स्य, पूर्व कोसल; एवं विंध्य एवं आडावला पर्वत में रहनेवाली वन्य जातियाँ भी पाण्डवों के पक्ष में शामिल थी।

२. पूर्व भारत के देश--पूर्व भारत में से केवल पश्चिम मगध देश एवं उसका राजा जरासंधपुत्र सहदेव पाण्डवों के पक्ष में थे।

३. पश्चिम भारत--गुजरात में एवं गुजरात के पूर्व भाग में रहनेवाले. यादव राजा, जैसे कि, वृष्णि राजा युयुधान एवं यादव राजा सात्यकि।

४. उत्तरी पश्चिम भाग के देश--अभिसार देश, जो काश्मीर के दक्षिणी पश्चिम दिशा में स्थित था। पार्गिटर के अनुसार, इसी प्रदेश में स्थित केकय देश भी पांण्डवों के पक्ष में शामिल था।

५. दक्षिण भारत के देश—पाण्ड्य देश एवं कर्नाटक में रहनेवाली कई द्रविड जातियाँ।

उपर्युक्त नामावली से प्रतीत होता है कि, पाण्डवों के पक्ष में दक्षिण मध्यदेश के सारे देश, जैसे कि, मत्स्य, चेदि, करुष, काशी एवं पांचाल; पूर्व भारत के पश्चिम मगध आदि देश; गुजराथ के सारे यादव; एवं दक्षिणी भारत के पाण्ड्य राजा शामिल थे।

पाण्डवों के पक्ष में पांचाल देश का राजा द्रुपद, चेदिराज धृष्टकेतु, मगधदेशाधिपति जयत्सेन, यमुना-तीर निवासी पाण्ड्य एवं यादव राजा सात्यकि प्रमुख थे। इनमें से द्रुपद पाण्डवों का, श्वशुर था एवं सात्यकि श्रीकृष्ण का रिश्तेदार था। नकुलसहदेव का मामा मद्रराज शल्य एक अक्षौहिणी सैन्य ले कर पाण्डवों के सहाय्यार्थ निकला था। किन्तु रास्ते में उसका विपुल आदरातिथ्य कर दुर्योधन ने उसे अपने पक्ष में शामिल करा लिया।

विदर्भ देश का राजा रुक्मिन् ससैन्य पाण्डवों की सहाय्यार्थ आया था। किन्तु उसका कहना था, 'यदि पाण्डव मेरी सहाय्य की याचना करेंगे, तो ही मैं उनकी सहाय्यता करूंगा। इस पर अर्जुन ने उसे कहा, 'यह युद्ध एक रणयज्ञ है। जिसकी जैसी इच्छा हो, उस पक्ष में हर एक राजा शामिल हो सकता है। किसी की हम याचना करने के लिए तैय्यार नही है'। बलराम पाण्डवों का रिश्तेदार था, किन्तु उसकी सारी सहानुभूति दुर्योधन की ओर थी। इस उलझन से छुटकारा पाने के लिए, वह किसी के पक्ष में शामिल न हो कर तीर्थयात्रा के लिए चला गया।

कौरवपक्ष के देश—भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में निम्नलिखित देश शामिल थे:—

१. पूर्व भारत के देश—प्राचीन मगध साम्राज्य के पश्चिम मगध छोड़ कर बाकी सारे देश, जैसे कि, पूर्व मगध, विदेह, अंग, वंग, कलिंग, जिन सारे देशों पर अंगराज कर्ण का स्वामित्व था; प्राग्ज्योतिष (चीन एवं किरात जातियों के साथ)। इस समय प्राग्ज्योतिष का राजा भगदत्त था। पार्गिटर के अनुसार, उत्कल, मेकल, आंध्र एवं उन सारे प्रदेशों में रहनेवाली वन्य जातियाँ भी कौरवों के पक्ष में शामिल थी।

२. मध्यदेश के देश--कोसल, वत्स एवं शूरसेन। इस समय कोसल देश का राजा बृहद्बल था।

३. उत्तरीपश्चिम भारत के देश—सिन्धुसौवीर, गांधार त्रिगर्त, केकय, शिबि, मद्र, वाह्लिक, क्षुद्रक, मालव, अंबष्ठ, एवं कंबोज। इनमें से सिन्धुसौवीर, गांधार, त्रिगर्त, मद्र, अंबष्ठ एवं कंबोज देशों के राजा क्रमशः जयद्रथ, शकुनि, सुशर्मन्, शल्य, श्रुतायु एवं सुदक्षिण थे। पार्गिटर के अनुसार, इन देशों में रहनेवाली वन्य जातियाँ भी कौरवों के पक्ष शामिल थी।

४. मध्यभारत के देश—माहिष्मती, भोज-अंधक-वृष्णि, विदर्भ, निषाद, शाल्व एवं अवंती देशों के यादव राजा। इन देशों में से माहिष्मती, भोज-अंधकवृष्णि एवं अवंती देशों के राजा क्रमश नील, कृतवर्मन् एवं विंद-अनुविंद थे। पार्गिटर के अनुसार, आधुनिक बड़ौदा नगर के दक्षिण एवं दक्षिणीपूर्व प्रदेश में रहनेवाले सारे यादव राजा, दखन प्रदेश में रहनेवाली वन्य जातियाँ, एवं मध्य भारत में स्थित कुन्तल देश भी कौरवों के पक्ष में शामिल था।

उपर्युक्त नामावलि से प्रतीत होता है कि, कौरवों के पक्ष में उत्तर, उत्तरीपश्चिम, मध्य एवं पूर्व भारत के प्रायः सारे देश शामिल थे। उन देशों में उत्तर एवं दक्षिणी पूर्व भारत के सारे देश; बंगाल एवं पश्चिमी आसाम के सारे देश; बंगाल के दक्षिण में गोदावरी तक का फैला हुआ सारा प्रदेश; मध्यदेश के शूरसेन, वत्स एवं कोसल देश; उत्तरी भारत के शाल्व, मालव आदि सारे देश, एवं मध्य-भारत के अवन्ति आदि सारे देश समाविष्ट थे।

कौरवों के पक्ष में शकयवनादि देशों का राजा, माहिष्मती का राजा नील, केकयाधिपति केकय, प्राग्ज्योतिषपुर का राजा भगदत्त, सौवीर देश का राजा जयद्रथ, त्रिगर्तराज सुशर्मन्, गांधारराज बृहद्बल, कौरव राजा भूरिश्रवस्, अंगराज कर्ण आदि राजा प्रमुख थे। इनमें से जयद्रथ, सुशर्मन् एवं कर्ण का पाण्डवों से पुरातन शत्रुत्व था, जिस कारण वे कौरवों के पक्ष में शामिल हो गये थे

इस प्रकार, कौरव एवं पाण्डवों के बीच हुआ भारतीय युद्ध वास्तव में एक ओर दक्षिण मध्य देश एवं पांचाल देश, एवं दूसरी ओर बाकी सारा भारत देश इनके बीच हुआ था। इस तरह सेनाबल के दृष्टि से कौरवों का पक्ष पाण्डवों से कतिपय बलवान् था।

कई अभ्यासकों ने वांशिक दृष्टि से इस युद्ध को उभय पक्षीयों का अध्ययन करने का प्रयत्न किया है। किन्तु

उसमें कुछ तथ्य नहीं प्रतीत होता है, क्यों कि, पाण्डव एवं कौरव इन दोनो पक्ष में शामिल हुए राजाओं में कौनसा भी वांशिक साधर्म्य नही था। इन दोनों पक्षों में शामिल होनेवाले देश प्रायः सर्वत्र अपने राजा के कारण विशिष्ट पक्ष में आये थे, एवं बहुत सारे स्थानों पर राजा एवं प्रजा अलग अलग वंशों के थे।

युद्धशिबिर—पाण्डवों के पक्ष का युद्धशिबिर मत्स्य देश की राजधानी उपप्लव्य नगरी में था, एवं समस्त मत्स्य देश में उनकी सेना एकत्रित की गयी थी। कौरवपक्ष का युद्धशिबिर कुरु देश की राजधानी हस्तिनापुर में था। किन्तु उनका सैन्यविस्तार इतना प्रचंड था कि, दक्षिण पंजाब से ले कर उत्तर कुरुक्षेत्र से होता हुआ वह उत्तर पंचाल देश तक अर्धचंद्राकृति वह फैला हुआ था। उस शिबिर का विस्तार ५ योजन (४० मील) था। एक प्रचंड नगर के समान उसकी शान थी, एवं वहाँ नौकर, शिल्पी, सूतमागध, गणिका आदि सारा परिवार उपस्थित था (म. उ. १. १९६.१५)।

सांख्यिक बलाबल–भारतीय युद्ध में पाण्डवों की सेनासंख्या सात अक्षौहिणी एवं कौरवों की सेनासंख्या ग्यारह अक्षौहिणी थी। कौरव पक्ष की ग्यारह अक्षौहिणी सेना में से एक एक अक्षौहिणी सेना निम्नलिखित दस राजाओं के द्वारा लायी गयी थी—भगदत्त, भूरिश्रवस्, कृतवर्मन्, विंद, जयद्रथ, अनुविंद, सुशर्मन, नील, केकय, एवं कांबोज।

महाभारत में निर्दिष्ट 'अक्षौहिणी,' सैन्यसंख्या दर्शानेवाली एक सामान्य गणनापद्धति न हो कर, वह रथ, हाथी, अश्व, पैदल आदि विभिन्न प्रकार के सैनिकों से बना हुआ एक 'सैनिकी विभाग' था। इस तरह एक अक्षौहिणी सेना में १०९३५० पैदल, ६५६१० अश्वदल, २१८७० गजदल, एवं २१८७० रथों का समावेश होता था। यह सेनाविभाग पत्ती, सेनामुख, गुल्म आदि उपविभागों में विभाजित किया जाता था, जिनमें से हर एक की गणसंख्या निम्नप्रकार रहती थी (सेनागणना पद्धति की तालिका दखिये)।

सेनाप्रमुख एवं सेनापति––पाण्डवों की सात अक्षौहिणी सेना के निम्नलिखित सात सेनाप्रमुख (अधिपति) चुने गये थेः—द्रुपद, विराट, धृष्टद्युन्म, भीम, शिखंडिन्, चेकितान एवं सात्यकि। पाण्डवों का मुख्य सेनापति धृष्टद्युम्न था, जो युद्ध के अठरह दिन सैनापत्य का काम निभाता रहा। पाण्डव सेना का सर्वश्रेष्ठ मार्गदर्शक श्रीकृष्ण ही था।

सेनागणनापद्धति की तालिका

	पत्ती	सेनामुख (= ३ पत्ती)	गुल्म (= ३ सेनामुख)	गण (= ३ गुल्म)	वाहिनी (= ३ गण)	पृतना (= ३ वाहिनी)	चमू (= ३ पृतना)	आनीकिनी (= ३ चमू)	अक्षौहिणी (= १० आनीकिनी)
रथ	१	३	९	२७	८१	२४३	७२९	२१८७	२१८७०
हाथी	१	३	९	२७	८१	२४३	७२९	२१८७	२१८७०
अश्व	३	९	२७	८१	२४३	७२९	२१८७	६५६१	६५६१०
पैदल	५	१५	४५	१३५	४०५	१२१५	३६४५	१०९३५	१०९३५०

(म. आ. २.१५-२३)

पाण्डवों के सेना में से रथी महारथी आदी विभिन्न श्रेणियों के योद्धाओं की विस्तृत जानकारी महाभारत में प्राप्त है (भीष्म देखिये)।

कौरव पक्ष के ग्यारह अक्षौहिणी सेना के निम्नलिखित सेनाप्रमुख चुने गये थेः—कृप, द्रोण, शल्य, कांबोज, कृतवर्मन्, कर्ण, अश्वत्थामन्, भूरिश्रवस्, जयद्रथ, सुदक्षिण एवं

शकुनि (म. उ. १५२.१२८-१२९)। भारतीय युद्ध के अठरह दिनों में कौरवपक्ष के निम्नलिखित सेनापति हुये थे:- पहले १० दिन—भीष्म; ११-१५ दिन-द्रोण; १६-१७ दिन-कर्ण; १८ वें दिन का प्रथमार्ध-शल्य; द्वितायार्ध-दुर्योधन।

युद्ध का प्रारंभ—मार्गशीर्ष शुद्ध त्रयोदशी के दिन भारतीय युद्ध का प्रारंभ हुआ एवं पौष अमावस्या के दिन वह समाप्त हुआ। इस तरह यह युद्ध अठारह दिन अविरत चलता रहा। युद्ध के पहले दिन पाण्डवों का सैन्य उत्तर की ओर आगे बढा, एवं कुरुक्षेत्र की प्रश्चिम में आ कर युद्ध के लिए सिद्ध हुआ। इस पर कौरव सैन्य कुरुक्षेत्र की पश्चिम में प्रविष्ट हुआ, एवं उसी मैदान में भारतीय युद्ध शुरू हुआ।

युद्ध के प्रारंभ में युधिष्ठिर अपना कवच एवं शस्त्र उतार कर पैदल ही कौरव सेना की ओर निकला। इसका अनुकरण करते हुए इसके चारो भाई भी चल पड़े। अपने गुरु भीष्म, द्रोण एवं कृपाचार्य से वंदन कर इसने युद्ध करने की अनुज्ञा माँगी, एवं कहा, 'इस युद्ध में हमें जय प्राप्त हो, ऐसा आशीर्वाद आप दे दिजिए'। गुरुजनों का आशीर्वाद मिलने के बाद, इसने अपने सेनापति को युद्ध प्रारंभ करने की आज्ञा दी (म. भी. ४१.३२-३४)।

प्रारंभ में—प्रथम दिन के युद्ध में इसका शल्य के साथ युद्ध हुआ था। भीष्म के पराक्रम को देखकर इसे बड़ी चिन्ता हुई थी, एवं उसके युद्ध से भयभीत हो कर इसने धनुष्य वाण तक फेंक दिया था (म. भी. ८१.२९)। इसने भीष्म के साथ युद्ध भी किया, किन्तु पराजित रहा। भीष्म का विध्वंसकारी युद्ध देखकर इसने बड़े करुणपूर्ण शब्दों में भीष्मवध के लिए पाण्डवों की सलाह ली थी, तथा कृष्ण से कहा था, 'आप ही भीष्म से पूछे कि, उनकी मृत्यु किस प्रकार हो सकती है (म. भी. १०३.७०-८२)।

भीष्म के बाद द्रोण—दुर्योधन ने भीष्म के बाद द्रोणाचार्य को सेनापति बनाया। द्रोण द्वारा वर माँगने के लिए कहा जाने पर, दुर्योधन ने उससे यह इच्छा प्रकट की थी कि, वह उसके सम्मुख युधिष्ठिर को जिंदा पकड़ लाये। तब द्रोण ने कहा था, 'अर्जुन की अनुपस्थिति में ही यह हो सकता है'। दुर्योधन युधिष्ठिर को जीवित पकड़कर इस लिए लाना चाहता था कि, उसे फिर द्यूत खेलने के लिए मज़बूर करे, और समस्त पाण्डवों को फिर वनवास भेज कर चैन की वन्सी बजाओं।

युधिष्ठिर ने जब द्रोण की प्रतिज्ञा सुनी, इसने तब अर्जुन को अपने पास ही रहने के लिए कहा (म. द्रो १३.७४२)। द्रोणाचार्य द्वारा निर्मित 'गरुडव्यूह' को देख कर यह अत्यधिक भयभीत हुआ था (म. द्रो १९.२१-२४)। अभिमन्यु के मृत्यु के बाद इसने बहुत करुण विलाप किया था, तथा व्यासजी से मृत्यु की उत्पत्ति आदि के विषय में प्रश्न किया था। व्यास के द्वारा अत्यधिक समझाये जाने पर यह शोकरहित हुआ था (म. द्रो. परि. १.८)।

इसने युद्ध में दुर्योधन एवं द्रोणाचार्य को मूर्च्छित कर परास्त किया था (म. द्रो. १३७.४२)। किन्तु इसी युद्ध में कृतवर्मन् ने इसे परास्त किया था, एवं कर्ण से यह घबरा उठा था। अभिमन्यु की भाँति भीमपुत्र घटोत्कच की मृत्यु से भी यह अत्यधिक शोकविव्हल हो उठा था।

पश्चात् द्रोण ने अपने अत्यधिक पराक्रम के बल से इसे विरथ कर दिया, एवं डर कर यह युंद्धभूमि से भाग गया (म. द्रो. ८२.४६)। अन्त में—

'अश्वत्थामा हतो ब्रह्मन्निवर्तस्त्राहवादिति'

कह कर यह द्रोण की मृत्यु का कारण बन गया (द्रोण देखिये; म. द्रो. १६४.१०२-१०६)। द्रोणवध के समय इसने 'नरो वा कुञ्जरो वा' कह कर द्रोणाचार्य से मिथ्या भाषण किया, जिस कारण पृथ्वी पर निराधार अवस्था में चलनेवाला इसका रथ भूमि पर चलने लगा (म. द्रो १६४.१०७)।

द्रोणाचार्य के सैनापत्य के काल में कौरव एवं पाण्डवों के सैन्य का अत्यधिक संहार हुआ, जिस कारण उन दोनों का केवल दो दो अक्षौहिणी सैन्य बाकी रहा।

कर्णवध—द्रोण के उपरांत कर्ण सेनापति बना, जिसने इसका पराभव कर इसकी काफ़ी निर्भर्त्सना की (म. क. ४९.३४-४०)। पराजित अवस्था में, इसका वध न कर कर्ण ने इसे जीवित छोड़ दिया। इस अपमानित एवं घायल अवस्था में लज्जित हो कर यह शिबिर में लौट आया। इतने में इसे ढूँढने के लिए गये कृष्ण एवं अर्जुन भी वापस आये। उन्हे देख कर यह समझा कि, वे कर्ण का वध कर के लौट आ रहे है। अतएव इसने उनका बड़ा स्वागत किया, किन्तु अर्जुन के द्वारा सत्यस्थिति जानने पर, यह अत्यंत शांत प्रकृति का धर्मात्मा क्रोध से

पागल हो उठा, एवं इसने अर्जुन की अत्यंत कटु आलोचना की।

युधिष्ठिर-अर्जुन-संवाद--इस समय युधिष्ठिर एवं अर्जुन के दरम्यान जो संवाद हुआ, वह उन दोनों के व्यक्तित्व पर काफ़ी प्रकाश ड़ालता है।

इसने अर्जुन से कहा, 'बारह साल से कर्ण मेरे जीवन का एक काँटा बन कर रह गया है। एक पिशाच के समान वह दिनरात मेरा पीछा करता है। उसका वध करने की प्रतिज्ञा तुमने द्वैतवन में भी की थीं, किन्तु वह अधुरी ही रही। तुम कर्ण का वध करने में यद्यपि असमर्थ हों, तो यहीं अच्छा है कि, तुम्हारा गांडीव धनुष, बाण, एवं रथ यहीं उतार दो'।

अर्जुन ने प्रतिज्ञा की थी कि, जो उसे गांडीव धनुष उतार देने को कहेगा, उसका वह वध करेगा। इसी कारण उसने युधिष्ठिर से कहा, 'युद्ध से एक योजन तक दूर भागनेवाले तुम्हें पराक्रम की बातें छेड़ने का अधिकार नहीं है। यज्ञकर्म एवं स्वाध्याय जैसे ब्राह्मणकर्म में तुम प्रवीण हो। ब्राह्मण का सारा सामर्थ्य मुँह में रहता हैं। ठीक यही तुम्हारी ही स्थिति है। तुम स्वयं पापी हो। तुम्हारे द्यूत खेलने के कारण ही हमारा राज्य चला गया, एवं हम संकट में आ गये। ऐसी स्थिति में मुझे गांडीव धनुष उतार देने को कहनेवाले तुम्हारा मैं यही शिरच्छेद करता हूँ'।

अर्जुन जैसे अपने प्रिय बन्धु से ऐसा अपमानजनक (प्राकृत) भाषण सुन कर, पश्चाताप भरे स्वर में इसने उसे कहा, 'तुम ठीक कह रहें हो। मेरी मूढता, कायरता, पाप एवं व्यसनासक्तता के कारण ही सारे पाण्डव आज संकट में आ गयें है। तुम्हारे कटु वचन मुझसे अभी नहीं सहे जाते हैं। इसी कारण तुम मेरा शिरच्छेद करो, यही अच्छा है। नही तो, मैं इसी समय वन में चला जाता हूँ'।

युधिष्ठिर की यह विकल मनस्थिति देख कर सारे पाण्डव भयभीत हो गये। अर्जुन भी आत्महत्त्या करने के लिए प्रवृत्त हुआ। अन्त में श्रीकृष्ण ने युधिष्ठिर से आश्वासन दिया, 'आज ही कर्ण का वध किया जाएगा'। इस आश्वासन के अनुसार, अर्जुन ने कर्ण का वध किया (म. क. परि. १. क्र. १८. पंक्ति ४५-५०)।

जिस कर्ण के वधके लिए यह तरस रहा था, वह पाण्डवों का ही एक भाई एवं कुंती का एक पुत्र है, यह कर्ण-वध के पश्चात् ज्ञात होने पर, युधिष्ठिर आत्मग्लानि से तिलमिला उठा। कर्ण एवं कुंती के चेहरे में साम्य है, यह पहले से ही यह जानता था। इस साम्य का रहस्यभेद न करने से बन्धुवध का पातक अपने सर पर आ गया इस विचार से यह अत्यधिक खिन्न हुआ। यही नहीं, कर्णजन्म का रहस्य छिपानेवाली अपनी प्रिय माता कुन्ती को इसने शाप दिया।

कर्णवध के पश्चात्, शिविर में सोये हुए पाण्डवपरिवार का अश्वत्थामन् ने अत्यंत क्रूरता के साथ वध किया, जिसमें सभी पाण्डवपुत्र मर गये। । इस समाचार को सुन कर यह अत्यंत दुःखी हुआ था।

बाद में द्रौपदी ने विलाप करते हुए इससे अश्वत्थामा तथा उसके सहकारियों के वध करने की प्रार्थना की। युधिष्ठिर ने कहा कि, वह अरण्य चला गया है। बाद को द्रौपदी द्वारा यह प्रतिज्ञा की गयी कि, अश्वत्थामा के मस्तक की मणि युधिष्ठिर के मस्तक पर वह देखेगी, तभी जीवित रह सकती है। तब, भीम, कृष्ण अर्जुन तथा युधिष्ठिर के द्वारा द्रौपदी का प्रण पूरा किया गया (म. सौ. ९. १६)।

दुर्योधनवध--दुर्योधन एवं भीम के दरम्यान हुये द्वंद्वयुद्ध में भीम ने दुर्योधन की बायी जाँघ फाड़ कर उसे नीचे गिरा दिया, एवं उसी घायल अवस्था में लत्ताप्रहार भी किया। उस समय युधिष्ठिर ने भीम की अत्यंत कटु आलोचना की। इसने कहा, 'यह तुम क्या कर रहें हो? दुर्योधन हमारा रिश्तेदार ही नही, बल्कि एक राजा भी है। उसें घायल अवस्था में लत्ताप्रहार करना अधर्म है'। पश्चात् इसने दुर्योधन के समीप जा कर कहा, 'तुम दुःख मत करना। रणभूमि में मृत्यु आने के कारण, तुम धन्य हो। सारे रिश्तेदार एवं बांधव मृत होने के कारण, हमारा जीवन हीनदीन हो गया है। तुम्हे स्वर्गगति तो जरुर प्राप्त होंगी। किन्तु बांधवों के विरह की नरकयातना सहते सहते हमें यहाँ ही जीना पडेगा'।

बचे हुए वीर--दुर्योधनवध के पश्चात् भारतीय युद्ध की समाप्ति हुयी। कौरव एवं पाण्डवों के अठारह अक्षौहिणी सैन्य में से केवल दस लोग बच सके। उनमें पाण्डवपक्ष में से पाँच पाण्डव, कृष्ण एवं सात्यकि, तथा कौरवपक्ष में से कृप, कृत एवं अश्वत्थामन् थे (म. सौ. ९.४७-४८)। युद्धभूमि से बचें हुए इन लोगों में धृतराष्ट्र पुत्र युयुत्सु का निर्देश भी प्राप्त है, जो युद्ध के प्रारंभ में ही पाण्डवपक्ष में मिला था।

भारतीययुद्ध के मृतकों की संख्या युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को तीन करोड़ बतायी थी, जो सैनिक एवं उनके अन्य सहाय्यक मिला कर बतायी होगी। युद्धभूमि में लड़नेवाले एक सैनिक के लिए दस सहाय्यक रहते थे (म. स्त्री. २६.९-१०)।

विरक्ति—युद्ध में मृत हुए अपने बांधवों का अशौच तीस दिनों तक मानने के बाद युधिष्ठिर हस्तिनापुर में लौट आया (म. शां. १.२)। युद्ध की विभीषिका को देख कर यह इतना दुःखी था कि, किसी से कुछ भी न कह पाता था, तथा मन ही मन आन्तरिक पीड़ा में सुलग रहा था। अपने मन की पीड़ा को अग्रजों से ही कह कर यह कुछ शान्ति का अनुभव कर सकता था, किन्तु कहे तो किससे? कृष्ण ने इसे युद्ध के लिए प्रेरित ही किया था, तथा उसका ढाँचा भी उसीके द्वारा बनाया गया था। धृतराष्ट्र स्वयं अपने सौ पुत्रों एवं साथियों की पीड़ा से पीड़ित था। व्यास भी दुखी था, कारण उसका भी तो कुल नाश हुआ था। इस प्रकार इसके मन में राज्यग्रहण के संबंध में विरक्ति की भावना उठी, एवं इसने राज्य छोड़ कर वानप्रस्थाश्रम स्वीकारने का निश्चय किया। इस समय, अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव, द्रौपदी आदि ने इसे गृहस्थाश्रम एवं राज्यसंचालन का महत्त्व समझाते हुए इसकी कटु आलोचना की।

युधिष्ठिर-अर्जुन-संवाद—इस समय हुआ युधिष्ठिर-अर्जुनसंवाद अत्यधिक महत्वपूर्ण है। अर्जुन ने इसे क्रुद्ध हो कर कहा, 'राज्य प्राप्त करने के पश्चात्, तुम भिक्षापात्र लेकर वानप्रस्थाश्रम का स्वीकार करोंगे तो लोग तुम्हे हँसेंगे। तुम युद्ध की सारी बाते भूल कर आनेवाले राज्य-वैभव का विचार करो, जिससे तुम जीवन के सारे दुःखों को भूल जाओंगे। किन्तु मैं जानता हूँ कि, तुम्हारे लिए यह असंभव हैं, क्यों कि, सुख के समय भी, जीवन की दुःखी यादगारें तुम्हें आती ही रहती हैं'।

इस पर युधिष्ठिर ने कहा, 'जिसे तुम सुख तथा दुःख कहते हो वह सापेक्ष है। विदेह देश का जनक राजा अपनी राजधानी मिथिला जलने पर भी शान्त रहा, क्यों कि, उसकी आध्यात्मिक संपत्ति अपार थी'। इस पर अर्जुन ने कहा, 'अपना राज्य जला कर वानप्रस्थाश्रम लेनेवाले जनक जैसे मूढ राजा का दृष्टान्त देना यहाँ उचित नही है। प्रजापालन एवं देवता, अतिथि एवं पंचमहाभूतों का पूजन यही राजा का प्रथम कर्तव्य है'। इस पर युधिष्ठिर ने कहा 'तुम केवल अस्त्रविद्या ही जानते हो, धर्म एवं शास्त्रों का उचित अर्थ तुम्हे समझना असंभव है। मैंने वेद, धर्म एवं शास्त्रों का अध्ययन किया है। इसी कारण धर्म का सूक्ष्म स्वरूप केवल मैं ही जानता हूँ। धन एवं राज्य से तप अधिक श्रेष्ठ है, जिससे मनुष्यप्राणि को सद्गति प्राप्त होती है'।

अंत में युधिष्ठिर एवं अर्जुन के बीच श्रीव्यास ने मध्यस्थता की। उसने कहा, 'राज्य से सुख प्राप्त होता हो या न हो, उसका स्वीकार करना ही उचित है। आप्तजनों के सहवास की परिणति वियोग में ही होती है। इस कारण उनकी मृत्यु का दुःख करना व्यर्थ है। रही बात धन की, यज्ञ करने में ही धन की सार्थकता है।

राज्याभिषेक—धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों की मृत्यु से हस्तिनापुर के कुरुवंश का राज्य नष्ट हुआ। बाद में कृष्ण ने इसका राज्याभिषेक किया, एवं मार्कंडेय ऋषि के कथनानुसार इससे प्रयागयात्रा करवायी (पद्म. स्व. ४०.४९)। तत्पश्चात् व्यास की आज्ञानुसार इसने तीन अश्वमेध यज्ञों का आयोजन किया (म. आश्व. ९०.१५; भा. १.१२.३४)।

इस यज्ञ में व्यास प्रमुख ऋत्विज था, एवं बक दाल्भ्य, पैल, ब्रह्मा, वामदेव आदि सोलह ऋत्विज थे (म. आश्व. ७१.३)। जैमिनि अश्वमेध में इन सोलह ऋत्विजों के नाम दिये हैं (जै. अ. ६३)। इस यज्ञ के लिए द्रव्य न होने के कारण, इसने वह हिमवत् पर्वत से मरुत्तों से लाया (म. आश्व. ९.१९-२०)। इस यज्ञ की व्यवस्था इसने अपने भाईयों पर निम्न प्रकार से सौंपी थी:—अश्वरक्षण-अर्जुन, राज्यपालन— भीम एवं नकुल; कौटुंबिक व्यवस्था-सहदेव (म. आश्व. ७१.१४-२०)।

इस यज्ञ के समय, इसने पृथ्वी का अपना सारा राज्य व्यास को दान में दिया, जो व्यास ने इसे लौटा कर उसके मूल्य का धन ब्राह्मणों को दान में देने के लिए कहा (म. आश्व. ९१.७-१८१)।

गर्वहरण—अश्वमेध यज्ञ में एक नेवला के द्वारा किये गये युधिष्ठिर के गर्वहरण की चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में दी गयी है। अश्वमेध यज्ञ के पश्चात्, एक विचित्र नेवला इसके पास आया, जिसका आधा शरीर किसी ब्राह्मण द्वारा अन्नदान किया जाने पर छोडे गये पानी में लोट लगाने के कारण, स्वर्णमय हो गया था। उसने आ कर युधिष्ठिर से कहा, 'आपके अश्वमेध यज्ञ की प्रशंसा सुन कर अपने आधे बचे अंग को स्वर्णमय बनाने आया था। किन्तु, यहाँ यह शरीर स्वर्णमय न हो सका'। इससे यज्ञकर्ता युधिष्ठिर के मन में उत्पन्न हुआ अभिमान नष्ट

हो गया, तथा नेवले का अर्धांग भी स्वर्णमय हो गया (म. आश्व. ९२-९५; जै. अ. ६६; उच्छंवृत्ति देखिये)।

धृतराष्ट्र का वनगमन—अश्वमेध यज्ञ के पश्चात् धृतराष्ट्र की अनुमति से युधिष्ठिर ने राज्यसंचालन आरंभ किया। पश्चात् धृतराष्ट्र ने अन्न-सत्याग्रह कर के, वन में जाने के लिए इससे अनुमति माँगी। यह अत्यधिक दुःखी हुआ, एवं उसे ही राज्य अर्पित कर इसने स्वयं वन में जाने की इच्छा प्रकट की (म. आश्र. ६.७-९)। पश्चात् व्यास के समझाने पर युधिष्ठिर ने धृतराष्ट्र को वन जाने की अनुमति दे दी (म. आश्र. ८.१)। चलते समय धृतराष्ट्र ने इसे राजनीति का उपदेश दिया (म. आश्र. ९-१२)।

वन में जाते समय धृतराष्ट्र ने अपने पूर्वजों का श्राद्ध करने के लिए हस्तिनापुर राज्य के कोशाध्यक्ष भीम के पास कुछ द्रव्य की याचना की। किन्तु भीम ने उसे देने से साफ इन्कार कर दिया। फिर युधिष्ठिर एवं अर्जुन ने अपने खानगी द्रव्य दे कर उसे विदा किया (म. आश्र. १७)। बाद को यह धृतराष्ट्र से मिलने के लिए 'शतयूपाश्रम' में भी गया था (म. आश्र. ३१-३२)।

विदुर का निर्याण हिमालय में हुआ, जिस समय यह उसके पास था। विदुर की मृत्यु के पश्चात् उसकी प्राणज्योति युधिष्ठिर के शरीर में प्रविष्ट हुयी, जिस कारण यह अधिक सतेज बना (म. आश्र. ३३.२६)।

महाप्रस्थान—द्वारका में वृष्णि एवं यादव लोग आपस में झगड़ा कर के विनष्ट हुये। तत्पश्चात् हुए कृष्ण-निर्याण की वार्ता सुन कर यह अत्यधिक खिन्न हुआ। अभिमन्यु के ३६ साल के पुत्र परिक्षित् को राज्याभिषेक कर, एवं धृतराष्ट्र को वैश्य स्त्री से उत्पन्न मृयुत्सु नामक पुत्र को प्रधानमंत्री बना कर, यह महाप्रस्थान के लिए निकल पड़ा। इस समय इसके पाण्डव बन्धु एवं द्रौपदी भी राज्य छोड़ कर इसके साथ निकल पड़े (भा. १.१५. ३७-४०)।

महाभारत के अनुसार, परिक्षित् का भार उसके गुरु कृपाचार्य पर सौंप कर युधिष्ठिर ने महाप्रस्थान की तैयारी की। परिक्षित् राजा की गृहव्यवस्था इसने उसकी दादी सुभद्रा के उपर सौंप दी, एवं इंद्रप्रस्थ का राज्य श्रीकृष्ण का प्रपौत्र वज्र को दिया, जो यादवसंहार के कारण निराश्रित बन गया था। इसके पूर्व, इसने राजवैभव छोड़ कर वल्कल धारण कियें एवं अग्निहोत्र का विसर्जन किया। इस तरह पाँच पांडव, द्रौपदी एवं इसके साथ सहजवश आया हुआ एक कुत्ता भारत प्रदक्षिणा के लिए निकले, एवं पूरब की ओर चल पड़े।

'लौहित्य' नामक सलिलार्णव में अपने धनुष्य बाण विसर्जित कर ये निःशस्त्र हुयें। पश्चात् दक्षिणीपश्चिम दिशा में मुड़ कर ये द्वारका नगरी के पास आयें। अन्त में पुनः उत्तर की ओर मुड़ कर हिमालय में प्रविष्ट हुयें। वहाँ इन्होंने वालुकार्णव एवं मेरुपर्वत के दर्शन लियें। पश्चात् इन्होंने स्वर्गारोहण प्रारंभ किया (म. महा. १-२)।

स्वर्गारोहण—स्वर्गारोहण के समय, मार्ग में द्रौपदी, सहदेव, नकुल, अर्जुन एवं भीमसेन ये एक एक कर क्रमशः गिर पड़े। अन्त में युधिष्ठिर एवं श्वानरूपधारी यमधर्म ही बाकी रहे। ये दोनों स्वर्गद्वार पहूँचते ही, स्वयं इंद्र रथ ले कर इसे सदेह स्वर्ग में ले जाने के लिए उपस्थित हुआ। यह रथ में बैठनेवाला ही था कि, कुत्ते ने भी इसके साथ रथ में बैठना चाहा, जिसे इंद्र ने इन्कार कर दिया। इसने कुत्ते के सिवा स्वर्ग में प्रवेश करना अमान्य कर दिया। फिर यमधर्म अपने सही रूप में प्रकट हुआ, एवं इन्द्र इन दोनों को सदेह अवस्था में स्वर्ग ले गया।

मृत्यु—महाभारत के भीष्म, द्रोण, कर्ण, दुर्योधन आदि व्यक्तियों की मृत्यु में जो नाट्य प्रतीत होता हैं, वह युधिष्ठिर की मृत्यु में नहीं है। इसकी मृत्यु में उदात्तता जरुर है, किन्तु आजन्म सत्य एवं नीतितत्त्व के पालन में एकाकी अस्तित्व बितानेवाला युधिष्ठिर अपनी मृत्यु में भी एकाकी रहा। सारे तत्त्वदर्शी एवं ध्येयवादी व्यक्ति अपनी आयु में तथा मृत्यु में एकाकी रहे, यही विधिघटना युधिष्ठिर की मृत्यु में पुनः एकबार प्रतीत होती है।

स्वर्गप्रवेश—स्वर्ग में पहुँचते ही नारद ने इसकी स्तुति की, एवं इन्द्र ने इसकी उत्तम लोक में रहने की व्यवस्था की। किन्तु इसने स्वर्ग में प्रवेश करते ही अपने भाइयों के संबंध में पूछा। फिर यमधर्म ने इसकी सत्वपरीक्षा लेने के लिए, इसके सारे पाण्डव बांधव नर्कलोक में वास कर रहे हैं, ऐसा मायावी दृश्य दिखाया। यह दृश्य देख कर इसने यमधर्म से कहा, 'मैं अकेला स्वर्गसुख का उपभोग लेना नहीं चाहता हूँ। मेरे समस्त बांधव जिस नर्कलोक में वास कर रहे हैं, वही मैं उनके साथ रहना चाहता हूँ (म. स्व. २. १४)।

यमधर्म से भेंट—इस पर यमधर्म ने अपने अंशावतार से उत्पन्न युधिष्ठिर को साक्षात् दर्शन दिया एवं कहा, 'आज तक तीन बार मैंने तुम्हारी सत्त्वपरीक्षा लेनी चाही। किन्तु उन तीनो समय तुमने खुद को एक सत्त्वनिष्ठ क्षत्रिय

साबित किया है। इसी कारण मैं तुमसे अत्यधिक प्रसन्न हूँ' (म. स्व. ५.१९)।

यमधर्म के द्वारा निर्दिष्ट युधिष्ठिर की सत्वपरीक्षा के तीन प्रसंग निम्न है :—(१) यक्षप्रश्न, जिस समय यमधर्म ने यक्ष का रूप ले कर युधिष्ठिर के पाण्डव बांधवों में से किसी एक को जीवित करने का आश्वासन दिया था। इस समय युधिष्ठिर ने माद्री से उत्पन्न अपना सौतेला भाई सहदेव को जीवित करने को कहा था।

(२) स्वर्गारोहण के समय, यमधर्म ने कुत्ते का रूप धारण कर युधिष्ठिर की परीक्षा लेनी चाहीं। उस अवसर पर कुत्ते को साथ ले कर ही स्वर्ग में प्रवेश करने का निर्धार युधिष्ठिर ने प्रकट किया, एवं कुत्ते के बगैर स्वर्ग में प्रवेश करने से इन्कार कर दिया।

(३) स्वर्ग में प्रवेश करने के पश्चात्, इसने अपने भाईयों के साथ नर्क में रहना पसंद किया।

पश्चात् युधिष्ठिर ने स्वर्ग में स्थित मन्दाकिनी नदी में स्नान कर अपने मानवी शरीर का त्याग किया, एवं यह दिव्य लोक में गया (म. स्व. ३.१९)। वहाँ इसकी श्रीकृष्ण, अर्जुन आदि की भेंट हुयी। अन्त में यह यमधर्म के स्वरूप में विलीन हुआ (म. स्व. ३.१९)।

परिवार—युधिष्ठिर को द्रौपदी एवं पौरवी नामक दो पत्नियाँ थी। उन में से द्रौपदी से इसे प्रतिविंध्य एवं पौरवी से देवक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ९.२२. २७-३०)। महाभारत में इसकी दूसरी पत्नी का नाम देविका, एवं उससे उत्पन्न इसके पुत्र का नाम यौधेय दिया गया है (म. आ. ९०.८३)।

भारतीय युद्ध में इसके दोनों पुत्र मारे गये, जिस कारण इसके पश्चात् अभिमन्यु का उत्तरा से उत्पन्न पुत्र परिक्षित् हस्तिनापुर का राजा बन गया (भा. १.१५-३२)।

परिक्षित् राजा के राज्यारोहण से द्वापर युग समाप्त हो कर, कलियुग प्रारंभ हुआ ऐसा माना जाता है। पुराणों में प्राप्त प्राचीनकालीन राजवंश का इतिहास भी इसी घटना के साथ समाप्त होता है। परिक्षित् राजा के उत्तरकालीन राजवंशों की पुराणों में प्राप्त जानकारी वहाँ भविष्यकालीन कह कर बतायी गयी है (परिक्षित् देखिये)।

आयु—युधिष्ठिर की आयु के संबंध में सविस्तृत जानकारी महाभारत कुंभकोणम् संस्करण में प्राप्त है। किन्तु भांडारकर संहिता में उस जानकारी को प्रक्षिप्त माना गया है (म. आ. परि. १. क्र. ६७. पंक्ति ४५-६५)।

इस जानकारी के अनुसार, सोलहवें वर्ष में यह सर्वप्रथम हस्तिनापुर आया। वहाँ तेरह वर्ष विताने के बाद छः महीने तक जतुगृह में, छः महीने एकचक्रा में, एक वर्ष द्रुपद के घर में, पाँच वर्ष दुर्योधनादि के साथ तथा तेइस वर्ष इन्द्रप्रस्थ में वितायें। बाद में कौरवों द्वारा द्यूतक्रीड़ा में हार जाने के कारण बारह वर्ष वनवास तथा एक वर्ष अज्ञातवास में रहा। अज्ञातवास के उपरांत युद्ध हुआ, तथा युद्ध के बाद इसने छत्तीस वर्षों तक राज्य किया। इस प्रकार इसने अपने जीवन के एक सौ आठ वर्ष वितायें। इसके छोटे भाई इससे क्रमशः एक एक वर्ष से छोटे थे। कई ग्रंथों के अनुसार इसने नौ वर्षों तक राज्य किया था (गर्ग. सं. १०.६०.९)। किन्तु यह जानकारी गलत प्रतीत होती है।

कालनिर्णय—पुराणों में प्राप्त परंपरा के अनुसार, भारतीय युद्ध का काल ई. पू. ३१०२ माना गया है। युधिष्ठिर के नाम से 'युधिष्ठिर शक' अथवा 'कलि अब्द' नामक एक शक भी अस्तित्व में था, जिसका प्रारंभकाल पुराणों में ई. पू. ३१०२ बताया गया है। किन्तु शिलालेख ताम्रपटादि कौनसे भी ऐतिहासिक साहित्य में 'युधिष्ठिर शक' का निर्देश प्राप्त नहीं है। इस कारण आधुनिक योरिपियन विद्वान् 'युधिष्ठिर शक' की धारणा निर्मूल एवं निराधार बताते हैं।

आधुनिक विद्वानों के अनुसार भारतीय युद्ध का काल इ. पू. १४०० माना जाता है (हिस्ट्री ॲन्ड कल्चर ऑफ इंडियन पीपल १. ३०४)। यद्यपि वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में भारतीय युद्ध का निर्देश प्राप्त नही है, फिर भी सूत्र ग्रंथों में इस युद्ध का निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३. ४.४; सां. श्रौ. १५.१६)। पाणिनि के काल में भारतीय युद्ध में भाग लेनेवाले कृष्ण-अर्जुनादि व्यक्तियों की देवता मान कर पूजा होने लगी थी।

तिथिनिर्णय—महाभारत में प्राप्त तिथिवर्णनों से प्रतीत होता है कि, उस समय चान्द्रमास का उपयोग किया जाता था। पाण्डवों ने अपना वनवास भी चान्द्रवर्ष के अनुसार ही बिताया था (म. वि. ४२.३-६; ४७)।

युधिष्ठिर के जीवन में से कई घटनाओं का तिथिवर्णन महाभारत में प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है :—

युधिष्ठिर का जन्म—अश्विन शुक्ल ५।
कौरवों से द्यूत—अश्विन कृष्ण ८।
वनवास का प्रारंभ—कार्तिक शुक्ल ५।
कौरवों की घोषयात्रा—ज्येष्ठ कृष्ण ८।

अज्ञातवास की समाप्ति--ज्येष्ठ कृष्ण ८।
अभिमन्यु एवं उत्तरा का विवाह--ज्येष्ठ कृष्ण ११।
भारतीय युद्ध का प्रारंभ--मार्गशीर्ष शुक्ल १३।
अभिमन्यु की मृत्यु--पौष कृष्ण ११।
भारतीय युद्ध की समाप्ति--पौष अमावस्या।
युधिष्ठिर का हस्तिनापुर प्रवेश--माघ शुक्ल १।
अश्वमेध यज्ञ का प्रारंभ--चैत्र शुक्ल १५।

युध्यामाधि--एक राजा, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास के द्वारा मारा गया था (ऋ. ७.१८.२०)।

युयुत्सु--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का वैश्य स्त्री से उत्पन्न पुत्र (म. आ. ५७.९९. ५२८* पंक्ति. ४; १७७. २)। क्षत्रिय पिता को वैश्य स्त्री से उत्पन्न होने के कारण इसे 'करण' भी कहते थे। महाभारत में 'करण' एक मिश्र जाति का नाम बताया गया है।

धृतराष्ट्र का पुत्र हो कर भी, कौरवों का पाण्डवों के साथ का दुर्व्यवहार इसे पसंद न था, जिस कारण इसकी सद्भावना हमेशा पाण्डवों के ओर ही थी। दुर्योधन की प्रेरणा से भीमसेन को विषयुक्त अन्न खिलाया जाने की सूचना, इसने पहले ही उसे दी थी (म. आ. ११९. ४०)।

भारतीय युद्ध में यह प्रथम कौरवों के पक्ष में शामिल हुआ था (म. भी. ४१. ९५)। किन्तु बाद में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल हुआ (म. द्रो. २२.२७)। यह योद्धाओं में श्रेष्ठ, उत्तम धनुर्धर, शूर एवं बलवान् था। इसके रथ के अश्व शक्तिशाली एवं पृथुल थे (म. द्रो. २२.२७)। भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध हुआ था:--सुबाहु (म. द्रो. २४.१४), भगदत्त (म. द्रो. २५.४८-५१), उलूक (म. क. १८.१-१०);

भारतीय युद्ध से बचे हुये लोगों में से यह एक था। युद्ध के पश्चात्, युधिष्ठिर के द्वारा धृतराष्ट्र की सेवा में इसे नियुक्त किया गया था (म. शां. १४१.१६)। अश्वमेध यज्ञ के पूर्व पाण्डव जब धृतराष्ट्र से मिलने वन गये थे, एवं मरुत्त का धन लाने हिमालय गये थे, उन दोनों समय हस्तिनापुर की रक्षा का भार इसी पर सौंपा गया था (म. आश्र. ३०.१५; आश्व. ६२.२३)।

पाण्डवों के महाप्रस्थान के समय, परिक्षित् राजा की एवं कुरु राज्य की रक्षा का भार भी युधिष्ठिर ने इसी पर निर्भर किया था (म. महा १.६-७)। इससे प्रतीत होता है कि, धृतराष्ट्र का पुत्र हो कर भी युधिष्ठिर इससे काफी प्रेम एवं विश्वास करता था।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

युयुध--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो वस्वनन्त राजा का पुत्र था (भा. ९.१३.२५)।

युयुधान--(सो. वृष्णि.) सुविख्यात यादव राजा 'सात्यकि' का नामान्तर (सात्यकि देखिये)।

युवन् कौशिक--एक आचार्य, जिसके 'शांत्युदक' यज्ञ के संबंधित मतों के उद्धरण प्राप्त है (कौ. सू. ९.११)।

युवनस्--लेख देवों में से एक।

युवनाश्व--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व (प्रथम) नाम से सुविख्यात है। भागवत के अनुसार यह चंद्रराजा का, विष्णु के अनुसार आर्द्र का, मत्स्य के अनुसार इन्दु का, एवं वायु के अनुसार आंध्र राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम श्रावस्त था।

२ (सू. इ.) इक्ष्वाकुवंश में उत्पन्न एक सुविख्यात नरेश, जो युवनाश्व (द्वितीय) नाम से सुविख्यात हैं। महाभारत में इसे सुद्युम्न राजा का पुत्र कहा गया है, जिस कारण इसे सौद्युम्नि नामान्तर भी प्राप्त था। विष्णु एवं वायु के अनुसार यह प्रसेनजित् राजा का, मत्स्य के अनुसार रणाश्व का एवं भागवत के अनुसार सेनजित् का पुत्र था।

इसकी सौ पत्नियाँ थी, जिनमें से गौरी इसकी पटरानी थी। बहुत वर्षों तक इसे पुत्र न था। इसलिए पुत्रप्राप्ति के लिए भृगु ऋषि को अध्वर्यु बना कर इसने एक यज्ञ का आयोजन किया। यज्ञसमारोह की रात्रि में अत्यधिक प्यासा होने के कारण, इसने भृगुऋषि के द्वारा इसकी पत्नियों के लिए सिद्ध किया गया जल गलती से प्राशन किया। इसी जल के कारण, इसमें गर्भस्थापना हो कर इसकी बायी कुक्षी से 'मांधातृ' नामक सुविख्यात पुत्र का जन्म हुआ (म. व. १९३.३; भा. ९.६.२५-३२; मांधातृ देखिये)।

इसकी गौरी नामक पत्नी पौरवराजा मतिनार की कन्या थी। वायु में इसके द्वारा गौरी को शाप दिये जाने की एक कथा प्राप्त है, जिस कारण वह बाहुदा नामक नदी बन गयी (वायु. ८८.६६; ब्रह्मांड. ३.६३.६७; ब्रह्म. ७. ९१; ह. वं १. १२. ५)।

इसकी एक कन्या का नाम कावेरी था, जो गंगा नदी का ही मानवी रूप थी (ह. वं. १.२७.९)। अपनी इस कन्या को इसने नदी बनने का शाप दिया, जो आज ही नर्मदा नदी की सहाय्यक नदी के नातें विद्यमान है (मत्स्य. १८९. २-६)।

अपने पूर्ववर्ती रैवत नामक राजा से इसे एक दिव्य खड्ग की प्राप्ति हुयी थी, जो इसने अपने वंशज रघु

राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७६)। यह एक सुविख्यात दानी राजा था, जिसने अपनी सारी पत्नियाँ एवं राज्य ब्राह्मणों को दान में दिया था (म. शां. २१६. २५)।

३. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व (तृतीय) नाम से सुविख्यात था। यह मांधातृपुत्र अंबरीष राजा का पुत्र था। मांधातृ एवं इसके वंशज क्षत्रिय ब्राह्मण कहलाते थे, जिस कारण इसे भी यही उपाधि प्राप्त थी। यह एवं इसका पुत्र हरित, अंगिरस ब्राह्मण कुल में प्रविष्ट हुयें थे। एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते से इसका उल्लेख प्राप्त है (ऋ. १०.१३४)। इसे अंगिरस कुल का एक मंत्रकार भी कहा गया है। इसके पितामह मांधातृ ने एक प्रवर के नाते इसका स्वीकार किया था (भा. ९.७.१)।

४. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पृथु राजा का पुत्र था।

५. शूलिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

यूथग—चाक्षुष मन्वन्तर का देवगण।

यूथप—धूम्रपराशरकुलोत्पन्न एक ऋषि।

यूपकेतु—इक्ष्वाकुवंशीय शत्रुघातिन् राजा का नामान्तर (शत्रुघातिन् देखिये)।

२. कुरुवंशीय भूरिश्रवस् राजा का नामान्तर (म. द्रो. २४.५३)।

यूपध्वज--भूरिश्रवस् राजा का नामान्तर (म. स्त्री. २४.५)

यूपाक्ष--रावण का एक सेनापति, जो हनुमत् के द्वारा मारा गया था (वा. रा. सुं, ४६.३२)।

२. एक राक्षस, जो रामरावण युद्ध में मैंद नामक वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ७६.३४)

योग—एक ऋषि, जो धर्म एवं क्रिया के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१.५१)। यह तपस्वी, जितेंद्रिय एवं त्रैलोक्य में सुविख्यात था (म. अनु. १५०.४५)।

योगदायन—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

योगवती—मेना की तृतीय कन्या, जो जैगीषव्य ऋषि की पत्नी थी (पद्म. सृ. ९)।

योगसूनु—(सो. पूरु.) पूरुवंशीय युगदत्त राजा का नामान्तर (युगदत्त देखिये।

योगीश--जैगीषव्य नामक शिवावतार का एक शिष्य।

योगेश्वर--शिव का प्रथम अवतार, जो वैवस्वत मनु के रूप में इस पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था। यह वराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर में, द्वापर युग शुरू होनें के पहले अवतीर्ण हुआ था।

२. विष्णु का एक अवतार, जो देवसावर्णि मन्वन्तर में बृहतीपुत्र देवहोत्र के रूप में अवतीर्ण हुआ था (भा. ८. १३.३२)।

३. रौच्य मन्वन्तर का एक देवावतार।

४. एक देवता का समूह, जो कलियुग के श्वेतकली नामक प्रथम खण्ड में उत्पन्न हुआ था। इसमें निम्नलिखित देवता सम्मिलित थे :—१. रुद्र, २. सुतार, ३. तारण, ४. सुहोत्र, ५. कंकण, ६. लोक, ७. जैगीषव्य, ८. दधिवाहन, ९. ऋषभ, १०. उग्र, ११. अत्रि, १२. गौतम, १३. वेदशीर्ण, १४. गोकर्ण आदि (स्कंद. १.२.४०)।

५. एक सुविख्यात योगीसमूह, जो भागवत धर्म के सर्वश्रेष्ठ ज्ञाता माने जाते हैं। ये ऋषभ ऋषि के पुत्र थे, एवं नग्न अवस्था में सर्वत्र घूमते थे। इस समूह में निम्नलिखित योगी शामिल थे :— कवि, हरि, अंतरिक्ष, प्रबुद्ध, पिप्पलायन, अविर्होत्र, द्रुमिल, चमस एवं करभाजन।

इस योगीसमूह नें मिथिलानरेश निमि के यज्ञ में भाग ले कर, उसे भागवतधर्म का उपदेश किया था (भा. ११.२-५)।

योजनगंधा--व्यासमाता सत्यवती का नामान्तर (सत्यवती देखिये)।

यौगंधरि—साल्व लोगों का एक नामान्तर (मंत्रपाठ २.११-१२)। युगंधर के वंशज होने से इन्हे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

यौधयान—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

यौधेय--(सो. कुरु.) युधिष्ठिर का एक पुत्र, जो उसे शैब्य गोवासन राजा की कन्या देविका से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.८३)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार प्रतिविंध्य राजा का पुत्र था।

३. एक जातिविशेष, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट ले कर उपस्थित हुयी थी (म. स. ५२. १४)।

यौन—यवन जाति का नामान्तर (यवन देखिये)।

यौयुधान अथवा **यौयुधानि**—यादव राजा सात्यकि का एक पुत्र, जो यादवों के हत्याकांड से बचे हुये वीरों में से एक था। युधिष्ठिर ने इसे सरस्वती नदी के तट पर स्थित इन्द्रप्रस्थ का राज्य प्रदान किया था (म. मौ. ८. ६९)। महाभारत के कई संस्करणों में इसकी माता का नाम सरस्वती बताया गया है, जो अयोग्य प्रतीत होता है।

यौवनाश्व--युवनाश्व राजा के पुत्र मांधातृ का पैतृक नाम (मांधातृ देखिये)।

२. भद्रावती नगरी के श्वेतपर्ण राजा का पैतृक नाम (श्वेतपर्ण यौवनाश्व देखिये)।

३. इक्ष्वाकुवंशीय युवनाश्व (तृतीय) राजा का नामान्तर (युवनाश्व ३. देखिये)।

यौवनाश्वि--मांधातृ राजा का नामान्तर।

र

रक्त--एक असुर, जो महिषासुर का पुत्र था। यह स्वायंभुव मन्वन्तर का सुविख्यात असुर हिरण्याक्ष के समान पराक्रमी था। इसे बल एवं अतिबल नामक दो पुत्र थे।

इसकी सेना अत्यंत प्रचंड थी, जिसके बल से इसने इन्द्र को भी परास्त किया था। इसके धूम्राक्ष आदि तैतीस सेनापति थे, जो प्रत्येकी एक हजार अक्षौहिणी सेना के अधिपति थे (स्कंद. ७.१.११९)।

रक्तकर्णी--एक राक्षसी, जो रक्षस् एवं ब्रह्मधना की कन्या थी।

रक्तबीज--एक असुर, जो शुंभ एवं निशुंभ के पक्ष में शामिल था। इसे रुद्र का वरदान था कि, जब भी यह घायल हो कर इसके खून की बूँदें भूमि पर गिरेंगी, उनसे इसके सादृश उतने ही राक्षस निर्माण होंगे। रुद्र के इस वर के कारण, यह अत्यंत उन्मत्त बन गया था।

एक बार यह शुंभ-निशुंभ के पक्ष में चामुंडा देवी से युद्ध करने गया। इस युद्ध में मध्यस्थता करते समय, इसने बड़ी उद्दण्डता से देवी से कहा, 'तुम शुंभ-निशुंभ की पत्नी हो जाओ, नही तो इस युद्ध में तुम्हारा पराजय अटल है'। फिर देवी ने अत्यंत भयंकर रूप धारण कर इसका सारा खून भूमि पर एक ही बूँद छिड़कने का मौका न देते हुये प्राशन किया। इस तरह देवी ने इसका एवं इससे उत्पन्न राक्षसों का संपूर्ण विनाश किया (दे. भा. ५.२७-२९; मार्के. ८५; शिव. उमा. ४७; देवी-चामुंडा देखिये)।

रक्तांग--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

रक्ष--एक व्यास (व्यास देखिये)।

रक्षस्--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा का पुत्र था। इसका जन्म प्रातःकाल के समय हुआ था। इसकी पत्नी का नाम ब्रह्मधना था, जिससे इसे नौ पुत्र एवं चार कन्याएँ उत्पन्न हुयीं थी (ब्रह्मधना देखिये)।

इसका सविस्तृत स्वरूपवर्णन ब्रह्मांड में निम्न प्रकार प्राप्त है :-यह तीन पैरोंवाला, तीन हाथोंवाला, तीन सिरवाला, काली आँखेवाला, खड़े बालवाला, एवं पीली मूँछेवाला था। इसका शरीर शक्तिशाली किंतु कद में छोटा था। इसके स्कंध विशाल थे, किन्तु उदर अत्यंत कृश था। यह प्रबाहु, जिह्वास्य, शंकुकर्ण, पिंगलोद्वृत्तनयन, जटिल, महोरस्क, पृथुघोण, अस्थूल एवं लंबमेढ्राण्डपिंडक था। यह अत्यंत विरूप था, जिसका मूँह कानों तक फटा हुआ था, एवं नाक फैली हुयी थी। इसे केवल आठ ही दाँत थे। कौनसी भी शीला का यह मुष्टिप्रहार से चकनाचूर कर देता था, जिस कारण इसे 'शीलसंहनन' उपाधि प्राप्त हुयी थी (ब्रह्मांड. ३.७.४७)।

२. एक मानव जातिविशेष, जो वैदिक साहित्य में प्रायः सर्वत्र मनुष्यजाति के शत्रुओं, पार्थिव दैत्यों, एवं राक्षसों के लिए प्रयुक्त किया गया है।

वैदिक साहित्य में असुरों, राक्षसों एवं पिशाचों को क्रमशः देवों, मनुष्यों एवं पितरों का विरोधी कहा गया है (तै. सं. २.४.१)। इस कारण, जहाँ वृत्र, पिप्रु, शंबर आदि इंद्र के शत्रुओं को असुर कहा गया है, वहाँ मनुष्यजाति के यज्ञों का विनाश करनेवाले यातु एवं यातुधान राक्षसों को रक्षस् कहा गया है। वैदिक साहित्य में दैत्य, दानव एवं असुर शब्द समानार्थी रूप में प्रयुक्त किये गये है।

पाणिनि के अष्टाध्यायी में असुर, रक्षस् एवं पिशाच तीन स्वतंत्र मानव जातियाँ मानी गयी है, जिनके 'आयुधजीवीसंघों' का निर्देश वहाँ स्वतंत्र रूप से किया गया है।

पौराणिक साहित्य एवं महाभारत, रामायण में रक्षस्, असुर, दैत्य दानव ये सारे शब्द समानार्थी मान कर प्रयुक्त किये गये है; जिससे प्रतीत होता है कि, उस समय मनुष्य एवं देवों के शत्रुओं के लिए ये सारे नाम उल्ले हुए रूप में प्रयुक्त हो जाने लगे थे। उपनिषदों में भी मानवी देह को आत्मा माननेवाले दुष्टात्माओं को असुर अथवा रक्षस् कहा गया है।

ऋग्वेद में पचास से अधिक वार रक्षसों का निर्देश प्राप्त है, जहाँ प्रायः सर्वत्र किसी देवता को इनका विनाश करने के लिए आवाहन किया गया है, अथवा रक्षसों के संहारक के रूप में देवताओं की स्तुति की गयी है।

रक्षसों का वर्णन करनेवाले ऋग्वेद के दो सूक्तों में, इन्हें यातु (ऐन्द्रजालिक) नामान्तर प्रदान किया गया है। (ऋ. ७.१०४.१०;८७)। यजुर्वेद में 'यतः' शब्द का प्रयोग एक दुष्ट जाति के रूप में किया गया है, एवं इन्हें रक्षसों की उपजाति कहा गया है।

स्वरूपवर्णन--अथर्ववेद में रक्षसों का अत्यंत विस्तृत स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ उन्हे प्रायः मानवीय रूप हो कर भी, उनमें कोई न कोई दानवी विरूपता होने का वर्णन प्राप्त है। इन्हें तीन सर, दो मुख, रीछों जैसी ग्रीवा, चार नेत्र, पाँच पैर रहते थे, इनके पैर पीछे की ओर मुड़े हुये एवं उँगलीविहीन रहते थे। इनके हाथों पर सिंग रहते थे (अ. वे. ८.६)। इनका वर्ण नीला, पीला अथवा हरा रहता था (अ. वे. १९.२२)। इन्हें मनुष्यों जैसी पत्नि, पुत्र आदि परिवार भी रहता था (अ. वे. ५.२२)।

नानाविध रूप--ये लोग कुत्ता, गृध्र, उलूक, बंदर आदि पशुपक्षियों के वेशान्तर में (ऐंद्रजालिक विद्या में) अत्यंत प्रवीण थे (अ. वे.७.१०४)। भाई, पति अथवा प्रेमी का वेश ले कर ये लोग स्त्रियों के पास जाते थे, एवं उनकी संतानों को नष्ट कर देते थे (अ. वे. १०.१६२)।

आहार--ये लोग मनुष्यों एवं अश्वों का माँस भक्षण करते थे एवं गायों का दूध पिते थे (ऋ. १०.८७)। माँस एवं रक्त की अपनी क्षुधा तृप्त करने के लिए, ये लोग प्रायः मनुष्य के शरीर में प्रवेश कर उन पर आक्रमण करते थे। मनुष्यों के शरीर में इनका प्रवेश (आ विश) रोंकने के लिए ऋग्वेद में अग्नि का आवाहन किया गया है।

मनुष्यों को पीड़ा--ये लोग प्रायः भोजन के समय मुख से मनुष्यों के शरीर में प्रवेश करते थे, एवं तत्पश्चात् उनके माँस को विदीर्ण कर उन्हे व्याधी-ग्रस्त कर देते थे। (अ. वे. ५.२९)। ये मनुष्यों की वाचाशक्ति नष्ट कर देते थे, एवं उनमें अनेक विकृतियाँ निर्माण कर देते थे।

विचरण--संध्यासमय अथवा रात्रि के समय ये लोग विचरण करते थे। उस समय, ये लोग नर्तन करते हुए, गद्धों की भाँति चिल्लाते हुए, अथवा खोपड़ी की अस्थि से जलपान करते हुए नज़र आते थे (अ. वे. ८.६)। इनके विचरण का समय अमावास्या की रात्रि में रहता था। पूर्व दिशा में प्रकाशित होनेवाले सूर्य से ये डरते थे (अ. वे. १.१६; २.६)।

ये लोग दिव्य यज्ञों में विघ्न उत्पन्न कर देते थे, एवं हवि को इधर उधर फेंक देते थे (ऋ. ७.१०४)। ये पूर्वजों की आत्माओं का रूप धारण कर पितृयज्ञ में भी बाधा उत्पन्न करते थे (अ. वे. १८.२)।

अग्नि से विरोध--अंधःकार को भगानेवाला एवं यज्ञ का अधिपति अग्नि रक्षसों का सर्वश्रेष्ठ संहारक माना गया है। वह इन्हें भस्म करने का, भगाने का एवं नष्ट करने का काम करता है (ऋ. १०.८७)। इसी कारण अग्नि को 'रक्षोहन्' (रक्षसों का नाश करनेवाला) कहा गया है।

ये केवल अपनी इच्छा से नही, किन्तु अभिचारियों के द्वारा बहकाने से मनुष्यजाति को दुःख पहुँचाते है। इसी कारण रक्षसों को बहकानेवाले अभिचारियों को ऋग्वेद में 'रक्षोयुज्' (रक्षसों को कार्यप्रवण करनेवाला) कहा गया है (ऋ. ६.६२)। अथर्ववेद में अन्यत्र रक्षसों की प्रार्थना की गयी है कि, वे उन्हीं को भक्षण करे जिन्हों ने इन्हे भेजा है (अ. वे. २.२४)।

व्युत्पत्ति--भाषाशास्त्रीय दृष्टि से रक्षस् शब्द 'रक्ष्' (क्षति पहुँचाना) धातु से उत्पन्न माना जाता है। किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, यहाँ रक्ष् धातु का अर्थ रक्षित करना लेना चाहिये, एवं 'रक्षस्' शब्द की व्युत्पत्ति 'वह, जिससे रक्षा करना चाहिये' माननी चाहिये। बर्गेन के अनुसार, ये लोग किसी दिव्य संपत्ति के 'रक्षक' (लोभी) थे, जिस कारण इन्हें रक्षस् नाम प्राप्त हुआ था।

रक्षस् कल्पना का विकास--दैनिक जीवन में मनुष्य-जाति पर उपकार करनेवाले आधिभौतिक शक्ति को प्राचीन साहित्य में देव नाम दिया गया। उसी तरह मनुष्यजाति को घिरा कर उन्हें क्षति पहूँचानेवाले दुष्टात्माओं की कल्पना विकसित हो गयी, जिसका ही विभिन्न रूप असुर, रक्षस्, पिशाच आदि में प्रतीत होता है। इस तरह इन सारी जातियों को मनुष्यों को त्रस्त करनेवाले दुष्टात्माओं का वैयक्तीकृत रूप कहा जा सकता है।

इस कल्पना का प्रारंभिक रूप इंद्र एवं वृत्रासुर के युद्ध में प्रतीत होता है। बाद में वही कल्पना क्रमशः देवों एवं असुरों के दो परस्परविरोधी एवं संघर्षरत दलों के रूप में विकसित हुयी।

असुरों का वैयक्तीकरण--वैदिक साहित्य में रक्षस् एवं पिशाचों की अपेक्षा, असुरों का वैयक्तीकरण अधिक प्रभावशाली रूप में आविष्कृत किया गया है, जहाँ देवों से विरोध करने वाले निम्नलिखित असुरों का निर्देश स्पष्ट रूप से प्राप्त है:—अनर्शनि (ऋ. ८.३२); अर्बुद (ऋ. १०.६७); इलीविश (ऋ. १.१.३३); उरण (ऋ. २.१४) चुमुरि (ऋ. ६.२६); त्वष्टृ (ऋ. १०.७६); दभीक (ऋ.२.१४); धुनि (२.१५); नमुचि (ऋ. २.१४.५); पिप्रु (ऋ. १०.१३८); रुधिक्रा (ऋ. २.१४.५); बल (ऋ. १०.६७); वर्चिन् (ऋ. ७.९९); विश्वरूप (ऋ. १०.८); वृत्र (ऋ ८.७८); शुष्ण (ऋ. ४.१६); श्रुविंद (ऋ. ८.३२); स्वर्भानु (ऋ. ५.४०)। मैत्रायणि संहिता में कुसितायी नामक एक राक्षसी का निर्देश प्राप्त है, जिसे कुसित की पत्नी कहा गया है (मै. सं. ३.२.६)।

ऋग्वेद में--स्वयं देवता हो कर भी, जिनमें मायावी अथवा गुह्यशक्ति हों, ऐसे देवों को भी ऋग्वेद में 'असुर' कहा गया है। इससे प्रतीत होता है कि, असुरों की दुष्टता की कल्पना उत्तर ऋग्वेदकालीन है। ऋग्वेदरचना के प्रारंभिक काल में गुह्य शक्ति धारण करनेवाले सभी देवों को 'असुर' उपाधि प्रदान की जाती थी। जेंद अवेस्ता में भी असुरों का निर्देश, 'अहुर' नाम से किया गया है। ऋग्वेद एवं अवेस्ता में असुर (अहुर) शब्द, कई जगह ऐसी सर्वोच्च देवताओं के लिए प्रयुक्त किया गया है, जो परमप्रतापी माने गये हैं। झरतुष्ट्र धर्म का आद्य संस्थापक अहुर मझ्द स्वयं एक असुर ही था।

इरान में असुरपूजा—कई अभ्यासकों के अनुसार, वैदिक आर्य प्राचीन पंजाब देश में आये, उस समय उनमें 'सुर' एवं 'असुर' दोनों देवों की पूजा पद्धति शुरु थी। कालोपरान्त वैदिक आर्यों की दो शाखाएँ उत्पन्न हुयी, जिनमें से असुर देवों की उपासना करनेवाले वैदिक आर्य मध्य एशिया में स्थित इरान में चले गये। दूसरी शाखा भारत में रह गयी, जिसमें सुर देवों की पूजा ज़ारी रही। इसी कारण उत्तरकालीन भारतीय वैदिक साहित्य में 'असुर' देव निंद्य एवं गर्हणीय माने जाने लगे, एवं उन्हें देवताविरोधी मान कर उनका चरित्रचित्रण उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में किया गया। भारतीय वैदिक आर्यों में सुर देवों की पूजा प्रस्थापित होने के पूर्वकाल में प्रायः सभी वैदिक देवताओं को 'असुर' कहा गया है, जिनके नाम निम्नलिखित है:—अग्नि (ऋ. ३.३.४); इन्द्र (ऋ. १.१७४.१); त्वष्टृ (ऋ. १.११०.३); पर्जन्य (ऋ. ५.८३.६); पूषन् (ऋ. ५.५१.११); मरुत् (ऋ. १.६४.२)।

उपनिषदों में--छांदोग्य उपनिषद में विरोचन दैत्य की कथा प्राप्त है, जिसमें देव एवं असुरों के जीवन एवं आत्मज्ञानविषयक तत्त्वज्ञान का विभेद अत्यंत सुंदर ढंग से दिया गया है। उस कथा के अनुसार, प्रजापति के मिथ्याकथन को सही मान कर, विरोचन दैत्य आँखों में, आइने में, एवं पानी में दिखनेवाले स्वयं के परछाई को ही आत्मा समझ बैठा। इस तरह छांदोग्य उपनिषद के अनुसार, मानवी देह का अथवा उसकी परछाई को आत्मा समझनेवाले तामस लोग असुर कहलाते हैं। आगे चल कर, इन्ही असुर लोगों की परंपरा देहबुद्धि को आत्मा मानने की मूल करनेवाले चार्वाक आदि तत्वज्ञों ने चलायीं (छां. उ. ८.७; विरोचन देखिये)।

अष्टाध्यायी में—पाणिनि के अष्टाध्यायी में रक्षस्, असुर आदि लोगों का अलग अलग निर्देश प्राप्त है। वहाँ निम्नलिखित असुरों का निर्देश देवों के शत्रु के नाते से किया गया है:--दिति, जो दैत्यों की माता थी (पा. सू. ४.१.८५); कद्रू, जो सर्पों की माता थी (पा. सू. ४.१.७१)। इनके अतिरिक्त निम्नलिखित असुर जातियों का भी निर्देश अष्टाध्यायी में प्राप्त है:—असुर (पा. सू. ४.४.१२३); रक्षस् (पा. सू. ४.४.१२१); यातु (पा. सू. ४.४.१२१)। इसी ग्रंथ में 'आसुरी माया' का निर्देश भी प्राप्त है, जिसका प्रयोग असुर विद्या के लिए होता था (पा. सू. ४.४.१२३)।

अष्टाध्यायी में असुर, पिशाच एवं रक्षस् इन तीनों जातियों का निर्देश 'आयुधजीवी' संघों में किया गया है, जिनकी जानकारी निम्नप्रकार है:--

(१) **असुर**—पर्शुसंघ की भाँति असुर लोग भी मध्य एशिया में रहते थे, जिनका निवासस्थान आधुनिक असिरिया में था। ये लोग वैदिक आर्यों के पूर्वकाल में भारतवर्ष में आये थे, एवं सिंधु-घाटी में स्थित सिंधु सभ्यता के जनक संभवतः यही थे। बहिस्तून के शिलालेख में इनका निर्देश 'अथुरा' एवं 'अस्सुर' नाम से किया गया है। अष्टाध्यायी में पर्शु आदि आयुधजीवी गण में

इन्हें समाविष्ट किया गया हैं (पा. सू. ५.३.११७; पर्श्वादिगण)। भांडारकरजी के अनुसार, शतपथ ब्राह्मण में असुरों के मगध (दक्षिण बिहार) में स्थित उपनिवेशों का निर्देश प्राप्त है।

(२) रक्षस्--उत्तरी बलूचिस्थान के चगाई प्रदेश में रहनेवाले आधुनिक रक्षानी लोग संभवतः यही होंगे। इन्हे राक्षस भी कहते थे।

(३) पिशाच--प्राचीन वाङ्मय में कच्चा माँस खानेवाले लोगों को 'पिशाच' सामुहिक नाम प्रदान किया गया है। ग्रीअरसन के अनुसार, उत्तर-पश्चिम सीमान्त प्रदेश में दरदिस्थान एवं चितराल प्रदेश के लोगों में कच्चा माँस खाने का रिवाज था, जिस कारण, इस प्रदेश के लोग ही प्राचीन पिशाच लोग होने की संभावना है। बर्नेल के अनुसार, आधुनिक लमगान प्रदेश में रहनेवाले पशाई काफ़ि लोग ही प्राचीन पिशाच लोग थे (पिशाच देखिये)।

पुराणों में--पुराणों में असुर, दानव, दैत्य एवं राक्षस जातियों का स्वतंत्र निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २५.८; १७; ३०; ३७; २६.१७)। किन्तु इन ग्रंथों में इन सारी जातियों का स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट हो कर, अनार्य एवं दुष्ट लोगों के लिए ये सारे नाम उपाधि की तरह प्रयुक्त किये गये प्रतीत होते हैं। महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट रक्षस् (राक्षस), असुर, दैत्य एवं दानव निम्न हैं:--१. वृषपर्वन्, जो दैत्य एवं दानवों का राजा था, एवं जिसकी कन्या शर्मिष्ठा का विवाह पूरुवंशीय ययाति राजा से हुआ था; २. शाल्वलोग, जिन्हे दानव एवं दैत्य कहा गया है, एवं जिनका राज्य अबु पहाड़ी के प्रदेश में था; ३. हिडिंब, जो राक्षसों का राजा था, एवं जिसकी बहन हिडिंबा का विवाह भीमसेन पाण्डव के साथ हुआ था; ४. घटोत्कच, जो राक्षसों का राजा था, एवं जो भारतीय-युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था; ५. भगदत्त, जो प्राग्ज्योतिषपुर के म्लेंच्छ लोगों का राजा था, एवं जिसके राज्य पर पूर्वकाल में सदियों तक दानव, दैत्य एवं दस्युओं का राज्य था; ६. हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष प्रह्लाद एवं बलि, जो सर्वश्रेष्ठ असुरसम्राट माने जाते थे; ७. रावण, जो लंका में स्थित राक्षसों के राज्य का अधिपति था; ८. बाण, जो दैत्यों का राजा था, एवं जिसकी कन्या उषा का विवाह श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध से हुआ था।

पुराणों में प्राप्त पुलस्त्य, पुलह एवं अगस्त्य ऋषि की सतान राक्षस कही गयी हैं (वायु. ७०.५१-६५)। ययाति राजा के सुविख्यात आख्यान में, उसके द्वारा अपने पुत्र यदु को 'यातुधान' नामक राक्षस संतति निर्माण करने का शाप देने की कथा प्राप्त है (यदु देखिये)।

सामान्य उपाधि--आगे चल कर, राक्षस एवं दैत्य एक वांशिक उपाधि न रह कर, किसी भी दुष्ट, धर्मविहीन एवं खलप्रवृत्त राजा को ये उपाधियाँ लगायी जाने लगी, जिसके उदाहरण निम्नप्रकार हैः--१. यादवराजा मधु, जो वास्तव में पूरुवंशीय ययाति एवं यदु राजाओं का वंशज था; २. कंस, जो वास्तव में मथुरा देश का यादव राजा था; ३. लवण माधव, जो मधु राजा का ही वंशज था; ४. जरासंध, जो वास्तव में मगध देश का भरतवंशीय राजा था। इसी तरह बौद्ध तथा जैन लोगों को, एवं दक्षिण भारत के द्रविड लोगों को पुराणों में असुर एवं दैत्य कहा गया है (ब्रह्म. १६०.१३; विष्णु. ३.१७.८-९)।

रक्षा--ऋक्ष ऋषि की बहन, जो प्रजापति की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम जांबवत् था (ब्रह्मांड. ३.७.२९९-३००)।

रक्षिता--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी।

रक्षोहन् ब्राह्म--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१६२)।

रघु--(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जिसका निर्देश महाभारत में प्राप्त प्राचीन राजाओं की नामावलि में प्राप्त है (म. आ. १.१७२)। भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, यह दीर्घबाहु राजा का पुत्र, एवं दिलीप खट्वांग राजा का पौत्र था। मत्स्य एवं पद्म में इसे निघ्न नामक राजा का पुत्र कहा गया है (पद्म. सृ. ८)। किन्तु निघ्न राजा के पुत्र का नाम रघूत्तम था, जो संभवतः इक्ष्वाकुवंशीय होते हुये भी रघु राजा से अलग था (निघ्न देखिये)।

कालिदास के रघुवंश में इसे दिलीप राजा का पुत्र कहा गया है, जो उसे नंदिनी नामक धेनु के प्रसाद से प्राप्त हुआ था (र. वं. २)। रघुवंश में प्राप्त यह कथा पद्म में भी पुनरुक्त है (पद्म. उ. २०३)।

यह इक्ष्वाकुवंश का एक श्रेष्ठ राजा होने के कारण इसे अयोध्या का पहला राजा कहा गया है (ह. वं. १.१५.२५)। इसकी महत्ता के कारण, आगे चल कर, इक्ष्वाकुवंश 'रघुवंश' नाम से सुविख्यात हुआ।

पराक्रम--इसके पराक्रम एवं दानशूरता की कथा रघुवंश एवं स्कंद में प्राप्त है। एक बार दशदिशाओं में विजय कर, इसने विपुल संपत्ति प्राप्त की, एवं अपने गुरु वसिष्ठ की आज्ञानुसार विश्वजित् यज्ञ किया। उस यज्ञ के कारण,

इसकी सारी संपत्ति व्यतीत हुयी, एवं यह निष्कांचन बन गया।

इसी अवस्था में विश्वामित्र ऋषि का शिष्य कौत्स इसके पास द्रव्य की याचना करने आया, जो उसे अपनी गुरुदक्षिणा की पूर्ति करने के लिए आवश्यक था। यह स्वयं द्रव्यहीन होने के कारण, कौत्स की माँग पूरी करने के लिए इसने कुबेर पर आक्रमण किया, एवं उसे इसके राज्य पर स्वर्ण की वर्षा करने के लिए मजबूर किया। इस स्वर्ण में से कौत्स ने चौदह करोड़ सुवर्णमुद्रा दक्षिणा के रूप में स्वीकार ली, एवं उन्हें अपने गुरु विश्वामित्र को दक्षिणा के रूप में दी (स्कंद. २.८.५)। रघुवंश में यही कथा प्राप्त है, किन्तु वहाँ कौत्स के गुरु का नाम विश्वामित्र की जगह वरतंतु बताया गया है (र. वं. ५)।

महाभारत के अनुसार, इसे अपने पूर्वज युवनाश्व राजा के द्वारा दिव्य खड्ग की प्राप्ति हुयी थी, जो आगे चल कर इसने अपने वंशज हरिणाश्व को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७६)।

रघु के पश्चात् इसका पुत्र अज अयोध्या का राजा हुआ, जिसका पुत्र दशरथ एवं पौत्र राम दाशरथि इक्ष्वाकु वंश के सर्वश्रेष्ठ राजा साबित हुयें।

रंगदास—एक शूद्र, जो वेंकटाचल पर्वत पर स्थित श्रीनिवास का परमभक्त था। इसने वेंकटाचल में अनेक मंदिर बँधवाये थे (स्कंद. २.१.९)।

रंगवेणी--सारंग नामक गोप की कन्या, जो पूर्वजन्म में हरिधामन् नामक ऋषि थी (हरिधामन् देखिये)।

रचना--विरोचन दैत्य की यशोधरा नामक कन्या का नामान्तर (यशोधरा देखिये)।

रज—एक सप्तर्षि, जो वसिष्ठ एवं ऊर्जा के पुत्रों में से एक था।

२. धर नामक वसु के पुत्रों में से एक।

३. (स्वा. नाभि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार विरज राजा का पुत्र था।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६८)।

रजत—शुक्राचार्यपुत्र के वरत्रिन् के तीन यज्ञविरोधी पुत्रों में से एक (वरत्रिन् देखिये)।

रजतनाभ--एक यक्ष, जो यक्ष एवं क्रतुस्थला के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम मणिवरा था, जो अनुह्राद नामक राक्षस की कन्या थी। उससे इसे मणिवर एवं मणिभद्र नामक दो पुत्र उत्पन्न हुये थे।

रजन कोणेय अथवा कौणेय--एक आचार्य, जो अंधा था (तै. सं. २.३.८.१; क. सं. २७.२)। ऋतुजित् जानकि नामक आचार्य ने इसके लिए सफलतापूर्वक यज्ञ संपन्न कर, इसे पुनः दृष्टि प्रदान की थी (क. सं. ११.१)। इसके पुत्र का नाम उग्रदेव राजनि था (पं. ब्रा. १३.४.११)।

अथर्ववेद में इसे कुष्ठरोगी बताया गया है, एवं रजनी नामक पौंधे के द्वारा यह पुनः निरोगी होने का निर्देश प्राप्त है (ब्लूमफिल्ड, अ. वे. २६६.२६७)।

रजि--(सो. पुरूरवस्.) पुरूरवस्वंशीय एक राजा, जो प्रतिष्ठान देश के आयु राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम प्रभा था, जो दानव राजा स्वर्भानु की कन्या थी (म. आ. ७०.२३)। इसके अन्य चार भाईयों के नाम क्रमशः नहुष, क्षत्रवृद्ध, (वृद्धशर्मन्), रंभ, एवं अनेनस् (विपाप्मन्) थे।

यह एवं इसके 'राजेय क्षत्रिय' नामक वंशज इन्द्र के साथ स्पर्धा करने से विनष्ट होने की कथा कई पुराणों में प्राप्त है। यह स्वयं अत्यंत पराक्रमी था, एवं युद्ध में जिस पक्ष में रहता था, उसे विजय प्राप्त कराता था। एक बार देवासुर संग्राम में इंद्रपद प्राप्ति की शर्त पर यह देवों के पक्ष में शामिल हुआ। उस समय इन्द्र भी स्वयं दुर्बल बन गया था, एवं स्वर्ग का राज्य सम्हालने की ताकद उसमें नही थी। इस कारण इंद्र ने खुशी से अपना राज्य इसे प्रदान किया। इस तरह यह स्वयं इंद्र बन गया।

आगे चल कर इससे सैंकडो पुत्र उत्पन्न हुये, जो 'राजेय क्षत्रिय' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। वे सारे पुत्र नादान थे, एवं इंद्रपद सम्हालने की ताकद उनमें से किसी एक में भी न थी। इस कारण, इन्द्र ने देवगुरु बृहस्पति की सलाह से उन पुत्रों को भ्रष्टबुद्धि बना कर उनका नाश किया, एवं उनसे इंद्रपद ले लिया (भा. ९.१७; वायु. ९२. ७६-१००; ब्रह्म ११; ह. वं. १.२८; मत्स्य. २४. ३४-४९)।

वायु में इसे विष्णु का अवतार बताया गया है, एवं इसके द्वारा कोलाहल पर्वत पर दानवों के साथ किये गये युद्ध का निर्देश किया गया है। इस युद्ध में देवताओं की सहाय्यता से इसने दानवों पर विजय प्राप्त की थी (वायु. ९९.८६)।

२. एक दानव राजा, जिसका इंद्र ने पिठीनस् नामक राजा के संरक्षण के लिए वध किया था (ऋ. ६.२६.६)।

सायणाचार्य के अनुसार, रजि एक स्त्री का नाम है, जिसे इंद्र ने पिठीनस् राजा को प्रदान किया था।

रजेयु—(सो. पूरु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार रौद्राश्व राजा का पुत्र था। भागवत एवं विष्णु में इसे 'ऋतेयु,' एवं मत्स्य में इसे 'औचेयु' कहा गया है।

रज्जुकंठ—एक व्याकरणकार, जिसका उल्लेख पाणिनि के अष्टाध्यायी में एक वैदिक शाखाप्रवर्तक ऋषि के नाते किया गया है (पाणिनि देखिये)।

रज्जुबाल—जटायु के पुत्रों में से एक।

रज्जुभार—एक व्याकरणकार, जिसका उल्लेख पाणिनि के अष्टाध्यायी में एक वैदिक शाखाप्रवर्तक ऋषि के नाते किया गया है (पाणिनि देखिये)

रण—एक राक्षस, जिसका हिरण्याक्ष एवं देवताओं के दरम्यान हुए युद्ध में वायु के द्वारा वध हुआ था (पद्म. सृ. ७०५)।

रणक--(सू. इ. भविष्य.) अयोध्या का एक राजा, जो भागवत के अनुसार क्षुद्रक राजा का पुत्र था। इसे 'कुलक' नामान्तर भी प्राप्त था।

रणंजय—(सू. इ. भविष्य.) अयोध्या का एक राजा, जो कृतंजय राजा का पौत्र, एवं व्रात राजा का पुत्र था। भागवत, विष्णु एवं भविष्य में इसे कृतंजय राजा का ही पुत्र कहा गया है। मत्स्य के अनुसार, इसे 'रणेजय' नामान्तर प्राप्त था।

रणधृष्ट--वैवस्वत मनुपुत्र धृष्ट के तीन पुत्रों में से एक (धृष्ट देखिये)।

रणाश्व—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार संहताश्व राजा का पुत्र था।

रणेजय—अयोध्या के रणंजय राजा का नामान्तर।

रणोत्कट--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४. २६४*)।

रता—दक्षप्रजापति की एक कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। अहन् नामक वसु इसका पुत्र था (म. आ. ६०.१९)।

रति—धर्म ऋषि के पुत्र कामदेव की पत्नी (म. आ. ६०.३२; भा १०. ५५. ७)। यह दक्षप्रजापति के घर्मबिन्दुओं से उत्पन्न हुयी थी (कालि.३; शिव, रुद्र. स. ४)। शिव के तृतीय नेत्र से कामदेव का भस्म होने पर, यह अत्यधिक शोक करने लगी, जब शिव ने स्वयं प्रकट हो कर इसे सांत्वना दी (पद्म. सृ. ४३)। पश्चात्, यह ब्रह्मा की सभा में रह कर उसकी उपासना करने लगी (म. स. ११.१३२*)।

अगले जन्म में इसे शंबरासुर की पत्नी मायावती का जन्म प्राप्त हुआ, जिस समय इसने श्रीकृष्णपुत्र प्रद्युम्न के रूप में अपने पति कामदेव को पुनः प्राप्त किया (पद्म. पा. ७०; प्रद्युम्न देखिये)। अपने इस जन्म में इसकी उम्र अपने पति प्रद्युम्न से अधिक थी (पद्म. भू. १०३)।

२. अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में कुवेर भवन में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

३. अजनाभ वर्ष के राजा ऋषभदेव के वंशज विभु राजा की पत्नी (भा. ५. १५. १६)। इसके पुत्र का नाम पृथुषेण था।

रतिकला--श्रीकृष्ण की एक प्राणसखी।

रतिगुण--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था।

रतिनार--पुरुवंशीय रंतिभार राजा का नामान्तर।

रतिविदग्धा—हस्तिनापुर की एक वेश्या, जिसे ब्राह्मणों को अन्नदान करने के पुण्य के कारण, मृत्यु की पश्चात् वैकुंठ की प्राप्ति हुयी (पद्म. क्रि. २०)।

रतिसर्वस्वा--श्रीकृष्ण की एक प्राणसखी (पद्म. पा. ७४)।

रत्नकूटा--अत्रि ऋषि की पत्नियों में से एक (ब्रह्मांड. ३. ७४-८७)।

रत्नग्रीव—कांचन नगरी का एक राजा, जो विष्णु का परम भक्त था। नील पर्वत पर श्रीविष्णु की उपासना करने के कारण, इसे सरूप मुक्ति प्राप्त हो कर, यह विष्णुलोकवासी बन गया (पद्म. पा. १७-२२)।

रत्नचूड--पाताललोक का एक राजा (रत्नावलि देखिये)।

रत्ना—यादवराजा अक्रूर की पत्नियों में से एक।

रत्नाकर--एक वैश्य, जो एक बैल के द्वारा मारा गया था। इसकी मृत्यु के समय धर्मस्व नामक एक ब्राह्मण ने इस पर गंगोदक का संमार्जन किया, जिस कारण इसे विष्णुलोक की प्राप्ति हो गयी (पद्म. क्रि. ७)।

रत्नांगद—पाण्ड्य देश के वज्रांगद राजा का नामान्तर (वज्रांगद देखिये)।

रत्नावलि--एक राजकन्या, जिसे रत्नेश्वर नामक शिवमंदिर में शिव की नृत्योपासना करने के कारण, पाताल

लोक का रत्नचूड नामक राजा पति के रूप में प्राप्त हुआ (स्कंद. ४.२.६७)।

रथकार--एक जातिविशेष, जो वैश्यों से हीन, किन्तु शूद्रों से श्रेष्ठ मानी जाती थी (क. सं. १७.१३; श. ब्रा. १३.४.२.१७)। याज्ञवल्क्य के अनुसार, 'माहिष्य' (क्षत्रिय पति एवं वैश्य पत्नी का पुत्र), एवं 'करणी' (वैश्य पति एवं शूद्र पत्नी की कन्या) इन दोनों की संतान रथकार नाम से कहलायी जाती थी (याज्ञ. १.९५)।

किन्तु ऐतिहासिक दृष्टि से, इन्हे रथ का निर्माण करने वाली एक जातिविशेष मानना ही अधिक सयुक्तिक प्रतीत होता है। हिलेब्रान्ट के अनुसार, ये लोग अनु जाति से ही उत्पन्न हुयें थे। अनु एवं रथकार ये दोनो जातियाँ उन ऋभुओं की उपासक थीं, जो स्वयं अत्यंत उत्कृष्ट रथ बनाती थी (वेदिशे माइथौलोजी, ३.१५२-१५३)।

रथकृत--एक यक्ष, जो धातृ नामक आदित्य के साथ चैत्रमाह में भ्रमण करता है (भा. १२.११.३३)।

रथजूति--अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक व्यक्तिनाम (अ. वे. १९.४४.३)।

रथध्वज--विदेह देश के कुशध्वज जनक राजा का पिता। इसकी पौत्री का नाम वेदवती था (वेदवती देखिये)।

रथध्वान--वीर नामक अग्नि का नामान्तर (वीर १०. देखिये)।

रथन्तर--एक अग्नि, जो पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २१०.७)। इसे 'तरसाहस' नामक दो भाई थे। यह पांचजन्य के मुख से प्रकट हुआ था।

२. एक साम, जो मूर्तिमान् स्वरूप में ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रहता था (म. स. ११.२१)। इसीके द्वारा वसिष्ठ ऋषि ने इन्द्र का मोह दूर कर उसे प्रबुद्ध बनाया था।

रथन्तरी अथवा **रथन्तर्या**--पूरुवंशीय दुष्यन्त राजा की माता, जो ईलिन (इलिल) राजा की पत्नी थी (म. आ. ९०.२९)। दुष्यन्त के अतिरिक्त इसे निम्नलिखित चार पुत्र थे :--शूर, भीम, प्रवसु एवं वसु (म. आ. ८९.१५)।

रथप्रभु--वीर नामक अग्नि का नामान्तर (वीर १०. देखिये)।

रथप्रोत दार्भ्य--मैत्रायणि संहिता में निर्दिष्ट एक आचार्य (मै. सं. २.१.३)। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह एक पुरोहित न हो कर एक राजा था। दर्भ का वंशज होने से इसे 'दार्भ्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

रथराजी--वसुदेव की पत्नियों में से एक।

रथवर--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार भीमरथ राजा का पुत्र था।

रथवाहन--मत्स्यनरेश विराट के भाईयों में से एक। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३९)।

रथवीति दार्भ्य--एक ऋषि, जो हिमालय के दूरस्थ पर्वतों में गायों से परिपूर्ण (गोमतीर् अनु) प्रदेश में रहता था (ऋ. ५.६१.१७-१९)। एक बार अंगिरा श्यावाश्व नामक आचार्य ने, तरंत नामक राजा के यज्ञ में होमकर्म करने के लिए इसे आमंत्रित किया। उस समय यह अपनी कन्या को साथ ले कर यज्ञ करने गया। वहाँ श्यावाश्व के पिता अर्चनानस् आत्रेय ने अपने वेदवेत्ता पुत्र के लिए इसके कन्या की माँग की। किन्तु इसने साफ़ इन्कार कर दिया, एवं श्यावाश्व को अपने यज्ञ से बाहर निकाल दिया। किन्तु अंत में तरन्त राजा के कहने पर इसने अपनी कन्या श्यावाश्व को दे दी (ऋ. सायणभाष्य ५.६१)।

बृहद्देवता के अनुसार, तरन्त राजा को शशीयसी नामक पत्नी से एक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जिसके लिए उसने रथवीति के कन्या की माँग की थी (बृहद्दे. ५. ५०-८१)।

आधुनिक विद्वानों के अनुसार, रथवीति दार्भ्य एक आचार्य न हो कर एक राजा था, एवं श्यावाश्व इसका पुत्र था। श्यावाश्व ने अपने पिता एवं मरुतों की सहाय्यता से अपने लिए एक पत्नी प्राप्त की थी, जिसका निर्देश ऋग्वेद के उपर्युक्त सूक्त में प्राप्त है (ओल्डेनबर्गः ऋग्वेद नोटेन. १.३५३-३५४)।

रथसेन--पाण्डव पक्ष का एक योद्धा, जिसके रथ के अश्व मटर के फूल के समान रंगवाले थे, एवं उनकी रोमराजी श्वेतलोहित वर्ण की थी (म. द्रो. २२.५८)।

रथस्वन--एक यक्ष, जो मित्र नामक सूर्य के साथ ज्येष्ठ माह में भ्रमण करता है (भा. १२.११.३५)।

रथाक्ष--स्कंद एक का सैनिक (म. श. ४४.५८)। पाठभेद-'झषाक्ष'

रथाग्रणी--एक योद्धा, जो रामचन्द्र के अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण के लिए शत्रुघ्न के साथ उपस्थित था (पद्म. पा. ११)।

रथीतर--(सू. इ.) एक राजा, जो मनु वैवस्वत-कुलोत्पन्न नाभागवंशीय पृषदश्व राजा का पुत्र था।

नाभाग से ले कर रथीतर तक का वंशक्रम वायु में निम्न-प्रकार प्राप्त है:—नाभाग—अंबरीष—विरूप—पृषदश्व—रथीतर (वायु. ८८.५-७)।

रथीतर ब्राह्मण—इसे कुल दो पुत्र थे, जो जन्म से क्षत्रिय हो कर भी आंगिरसवंशीय ब्राह्मणों में शामिल हो गयें। इसी कारण रथीतर वंश के लोग रथीतर गोत्र के क्षत्रिय ब्राह्मण बन गये (ब्रह्मांड. ३.६३.५-७), एवं उनका निर्देश आंगिरस कह कर किये जाने लगा (मत्स्य. १९६.३८)। रथीतर ब्राह्मण कौनसे समय आंगिरस वंश में शामिल हुये यह कहना मुष्किल है, किन्तु बाद के पौराणिक साहित्य में उनका निर्देश प्रायः अप्राप्य है। रथीतर का निर्देश अंगिरस कुल का गोत्रकार एवं प्रवर नाम से किया गया है।

रथीतरों की ब्रह्मक्षत्रिय बनने की यही कथा भागवत में विपरीत रूप में दी गयी है, जिसके अनुसार, रथीतर राजा को पुत्र न होने के कारण, इसने अंगिरस् ऋषि से संतति उत्पन्न करायी। रथीतर राजा की यही संतान आगे चल कर रथीतर ब्राह्मण नाम से प्रसिद्ध हुयीं (भा. ९.६.३)।

२. बौधायन श्रौतसूत्र में निर्दिष्ट एक आचार्य (बौ. श्रौ. २२.११; बृहद्दे. १.२६; ३.४०)।

रथीतर शाकपूर्ण—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से सोमति नामक आचार्य का शिष्य था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे सत्यश्री का शिष्य कहा गया है। विष्णु में इसे 'शाकपूर्ण' एवं ब्रह्मांड में 'शाकवैण' कहा गया है। वेबर के अनुसार, इन पाठभेदों में से 'शाकपूणि' पाठ ही सर्वाधिक स्वीकरणीय है। यह ऋग्वेद के तीन प्रमुख शाखाप्रवर्तक आचार्यों में से एक माना जाता है। ऋग्वेद के अन्य दो शाखाप्रवर्तक आचार्यों के नाम देवमित्र शाकल्य एवं बाष्कलि भारद्वाज थे।

इसने ऋग्वेद की तीन संहिताओं की एवं निरुक्त की रचना की। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:—केतन, दालकि, शतबलाक, एवं नैगम। विष्णु के अनुसार, निरुक्त ग्रंथ की रचना रथीतर के द्वारा न हो कर इसके शिष्य नैगम ने की थी।

रथोर्मि—प्रतर्दन देवों में से एक।

रंति—रन्तिनार राजा का नामान्तर (रन्तिनार देखिये)।

रंतिदेव सांकृत्य—(सो. पूरु.) सुविख्यात भरतवंशीय सम्राट, जिसका निर्देश महाभारत में प्राप्त सोलह श्रेष्ठ राजाओं की नामावली में प्राप्त है। एक श्रेष्ठ दानी राजा के नाते इसका निर्देश महाभारत में पुनः पुनः प्राप्त है (म. शां. २९. ११३-१२१)।

मत्स्य, भागवत एवं विष्णु में इसे संकृति राजा का पुत्र कहा गया है, जिस कारण इसे 'सांकृत्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. १३७.६)। वायु के अनुसार इसे त्रिवेद नामान्तर प्राप्त था। इसकी माता का नाम सत्कृति था। सुविख्यात पौरव राजा रंतिनार (मतिनार, रंतिभार) से यह काफ़ी उत्तरकालीन था। भरत से ले कर रंतिदेव तक का वंशक्रम इस प्रकार है:—भरत-वितथ-भुवमन्यु-नर-संकृति-रंतिदेव। इस वंशक्रम से प्रतीत होता है कि, हस्तिनापुर का सुविख्यात सम्राट हस्तिन् इसका चाचा था।

यज्ञपरायणता—इसका राज्य चर्मण्वती (आधुनिक चंबल) नदी के किनारे था, एवं इसकी राजधानी दशपुर नगरी में थी (मेघ. ४६-४८)। महाभारत में इसकी दानशूरता का, एवं इसके द्वारा किये गये यज्ञयागों का सविस्तर वर्णन प्राप्त है। अतिथियों की व्यवस्था के लिए अपने राजगृह में इसने दो लाख पाकशास्त्रियों की नियुक्ति की थी। इसके यज्ञ में बलिप्राणि बन स्वर्ग प्राप्ति हों, इस उद्देश्य से यज्ञीय पशु स्वयं ही इसके यज्ञ में प्रवेश करते थे।

एक बार एक गोयज्ञ करने के लिए इसके राज्य की गायों ने इसे विवश किया, किन्तु इनमें से एक गाय आहुति देने के लिए नाराज़ दिखाई देने पर इसने अपना गोयज्ञ उसी क्षण बन्द कर दिया। यज्ञ में पशुओं की आहुति देने के बाद, उनकी बची हुयी चमड़ी यह नजीक ही स्थित नदी में फेंक देता था, जिस कारण उस नदी को चर्मण्वती (चमड़ी को धारण करनेवाली) नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. १२३.१३)।

दानशूरता—इसने अपनी सारी संपत्ति दान में दी थी (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ६९५)। इसका नियम था कि, इसके यहाँ आया हुआ अतिथि विन्मुख न लौटे। इसके इस नियम के कारण, इसके परिवार को काफ़ी कष्ट सहने पडते थे। एक बार तो ४८ दिनों तक इसके परिवार के सदस्यों को भूखा रहना पड़ा। अगले दिन यह अन्न-ग्रहण करनेवाला ही था कि, कई शूद्र एवं चाण्डाल अतिथि इसके यहाँ आ पहूँचे। फिर उस दिन भी भूखा रह कर इसने अपने अपना सारा अन्न उन्हें दे दिया (भा. ९. २१)। अपने गुरु वसिष्ठ को विधिवत् अर्घ्यदान करने के

कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हो गयी (म. शां. २६.१७; अनु. २००.६)।

सांकृत्य ब्राह्मण—रंतिदेव राजा के एवं इसके भाई गुरुधि के वंशज जन्म से क्षत्रिय हो कर भी ब्राह्मण बन गयें। इस कारण वे 'सांकृत्य ब्राह्मण' कहलाते थें। कालोपरान्त ये आंगिरस कुल में शामिल हो गये, जिसके एक गोत्रकार के नाते उनका निर्देश प्राप्त है (वायु. ९९. १६०)।

रंतिनार--(सो. पूरु.) सुविख्यात पूरुवंशीय सम्राट, जो ऋतेयु नामक राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे अंतिनार, भागवत में इसे रंतिभार, एवं वायु में इसे रंति कहा गया है। मत्स्य एवं वायु में इसके पिता का नाम क्रमशः औचेयु एवं रजेयु दिया गया है।

इसकी पत्नी का नाम सरस्वती था (वायु. ९९. १२९), जिसका नाम मत्स्य में मनस्विनी दिया गया है। अपनी इस पत्नी से इसे निम्नलिखित चार पुत्र उत्पन्न हुये थेः--तंसु, महान्, अतिरथ एवं द्रुह्यु। कई पुराणों के अनुसार, इसे अप्रतिरथ (प्रतिरथ) नामक और एक पुत्र भी था, जिसके पुत्र काण्व ने आंगिरसांतर्गत काण्व शाखा का प्रारंभ किया (पार्गि. २२५)।

रभस--रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ४. ३६)।

२. रावण पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. यु. ९.१)।

३. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो आयुपुत्र रंभ का पुत्र था। महाभारत में इसे सोम एवं मनोहरा का पुत्र कहा गया है (म. आ. ६०.२१)।

रभेणक--तक्षक कुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया था (म. आ. ५२.७)।

रमठ—एक म्लेंच्छ जाति, जो मांधातृ के राज्यकाल में उसके राज्य में निवास करती थी (म. शां. ६५.१४)।

रमण—एक वसु, जो धर नामक वसु के पुत्रों में से एक था।

रमणक--एक राजा, जो प्रियव्रत पुत्र यज्ञबाहु के सात पुत्रों में से तीसरा था। इसका राज्य (वर्ष) इसीके ही नाम सें प्रसिद्ध था (भा. ५. २०.९)।

२. एक राजा, जो प्रियव्रतपुत्र वीतिहोत्र के दो पुत्रों से ज्येष्ठ था (भा. ५. २०. ३१)।

रंभ—(सो. पूरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार, पुरूरवस् राजा का पौत्र, एवं आयु राजा के पुत्रों में से चौथा पुत्र था। स्वर्भानु असुर की कन्या प्रभा इसकी माता थी। हरिवंश के अनुसार, इसे कोई पुत्र न था (ह. वं. १.२९)। किन्तु भागवत में इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया हैः—रंभ-रभस-गंभीर-अक्रिय। रंभ के ये सारे वंशज जन्म से क्षत्रिय हो कर भी आगे चल कर ब्राह्मण बन गये (भा. ९.१७.१०)।

२. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, विविंशति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम खनिनेत्र था।

३. रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. २६)।

४. रंभ-करंभ नामक दो दानवों में से एक।

रंभ-करंभ--दानवद्वय, जो कश्यप एवं दनु के पुत्र थे। एक बार ये दोनों भाई पानी में तप कर रहे थे, जब इन्द्र ने मगर का रूप धारण कर इनमें से करंभ का बध किया।

अपने भाई की मृत्यु से रंभ अत्यधिक दुःखी हुआ, एवं आत्महत्या करने के लिए उद्यत हुआ। उस समय अग्नि ने प्रकट हो कर इसे सान्त्वना दी, एवं वरप्रदान किया, 'तुम्हारे वंश की परंपरा आगे चलानेवाला विजयी पुत्र तुम्हे प्राप्त होगा'। अग्नि के इस वर के अनुसार, इसे महिषासुर नामक एक पुत्र उत्पन्न हुआ। आगे चल कर एक महिष के द्वारा रंभ का बध हुआ (दे. भा. ५.२; शिव. उ. ४६)।

रंभा--एक सुविख्यात अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक थी (म. आ. ५९.४८)। यह कुबेरसभा में रहती थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में, एवं अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५१; अनु. १९.४४)। इसने इंद्रसभा में भी अर्जुन के स्वागतार्थ नृत्य किया था (म. व. ४४. २९)।

कुबेरपुत्र नलकूबर के साथ यह पत्नी के नाते से रहती थी। एक बार रावण ने इस संबंध में इसकी खिल्ली उड़ायी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर नलकूबर ने रावण को शाप दिया, 'तुझे न चाहनेवाली किसी स्त्री से अगर तूं बलात्कार करेगा, तो तुझे प्राणों से हाथ धोना पडेगा'। नलकूबर के इसी शाप के कारण राम के द्वारा रावण का बध हुआ (म. व. २६४.६८-६९)।

विश्वामित्र के तपोभंग के लिए इन्द्र ने इसे उसके पास भेजा था। किन्तु विश्वामित्र ने इन्द्र के षड्यंत्र को पहचान लिया, एवं क्रुद्ध हो कर इसे शाप दिया, 'तुम हजारों वर्षों तक शिला बन कर रहोगी (म. अनु. ३.११)।

वाल्मीकि रामायण के अनुसार, विश्वामित्र ने इसे ब्राह्मण के द्वारा उद्धार होने का उःशाप भी प्रदान किया था।

स्कंद में श्वेतमुनि के द्वारा इसका उद्धार होने की कथा प्राप्त है। एकबार श्वेतमुनि का एक राक्षसी से युद्ध हुआ। उस समय श्वेतमुनि के द्वारा छोडे गये 'वायु अस्त्र' के कारण वह राक्षसी एवं शिलाखंड बनी हुयी रंभा, दोनों भी आँधी में फँसकर 'कपितीर्थ' में जा गिरी। इस कारण रंभा एवं राक्षसी का रुप प्राप्त हुयी वारांगना दोनों भी मुक्त हो गयीं (स्कंद. ३.१.३९)।

महाभारत में अन्यत्र इसे तुंबरु नामक गंधर्व की पत्नी कहा गया है (म. उ. १०.११.११२*)। किन्तु वाल्मीकि रामायण में इससे संबंध रखने के कारण, तुंबरु को विराध नामक राक्षस का रूप प्राप्त होने की कथा प्राप्त है (वा. रा. अर. ४.१६-१९)। इससे प्रतीत होता है कि, तुंबरु इसका वास्तव पति नही था।

२. मयासुर की पत्नी, जिससे इसे निम्नलिखित छः संतान उत्पन्न हुयी थीः—मायाविन्, दुंदुभि, महिष, कालिका, अजकर्ण एवं मंदोदरी (ब्रह्मांड. ३.६.२८-२९)।

रम्यक--(स्वा. प्रिय.) 'रम्यकवर्ष' नामक देश का राजा, जो भागवत के अनुसार, आग्नीध्र राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम 'पूर्णवित्ति' एवं पत्नी का नाम 'रम्या' था।

रम्या--मेरु की नौ कन्याओं में से पाँचवी कन्या, जो रम्यक राजा की पत्नी थी (भा. ५.२.६३)

रय--(सो. पुरूरवस्) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, पुरूरवस् राजा का पुत्र था।

२. एक प्रजापति, जो स्वायंभुव मन्वन्तर के वसिष्ठ ऋषि का पुत्र था।

रवि—सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ राजा का भाई था। यह जयद्रथ के पीछे हाथ में ध्वजा ले कर चलता था (म. व. २४९.१०)। जयद्रथ के द्वारा द्रौपदी का हरण किये जाने पर हुये युद्ध में अर्जुन के द्वारा इसका वध हुआ था।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया था (म. श. २५.१२)।

रशादु--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार 'स्वाहि' राजा का, भागवत के अनुसार 'श्वाहि' राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार 'स्वाह' राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'रुशेकु,' एवं विष्णु तथा मत्स्य में इसे 'रुषद्गु' कहा गया है।

रश्मि--सुतप देवों में से एक।

रश्मिकेतु--रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो राम के द्वारा मारा गया था (वा. रा.सुं. ६; यु. ९; ४७)।

रश्मिवत्--एक सनातन विश्वेदेव।

रस--तुषित देवों में से एक।

रसद्वीचि--अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार हरप्रीति का नामांतर।

रसपासर--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से कुथुमि नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे पराशर कहा गया है।

रसमंथरा, रसवल्लरी, रसालया--श्रीकृष्ण की प्राणसखियाँ (पद्म. पा. ७४)।

रसिप—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

रहस्युदेव मलिम्लुच--एक व्यक्ति, जिसने 'मुनि-मरण' नामक स्थान पर संततुल्य वैखानसों का वध किया (पं. ब्रा. १४.४.७)।

रहूगण--एक परिवार, जिसमें गोतम राहूगण नामक ऋषि का जन्म हुआ था। शतपथ ब्राह्मण में इनका निर्देश 'राहूगण' नाम से प्राप्त है। इस पैतृक नाम को धारण करनेवाले अनेक आचार्यों का निर्देश वहाँ प्राप्त है (श. ब्रा. १.४.१०-१९)।

ऋग्वेद में गोतमऋषि का पैतृक नाम 'राहूगण' बताया गया है। गोतम के द्वारा रचित एक सूक्त में वह कहता है, 'हम राहूगण अग्नि के इन मधुस्तोत्रों की रचना करते हैं' (ऋ. १.७८.५; गोतम ३. देखिये)। गोतम राहूगण विदेघ देश के माधव राजा का उपाध्याय था।

२. सिंधुसौवीर देश का एक राजा, जिसका भरत (जड) नामक तत्वज्ञ के साथ संवाद हुआ था।

एक बार यह पालकी में बैठकर कपिलाश्रम में ब्रह्मज्ञान का उपदेश सुनने जा रहा था। जब यह इक्षुमती नदी के तट पर जा पहूँचा, उस समय वहाँ के अधिपति ने जड भरत को पालकी उठाने के लिए पकड़ लाया। भरत स्वयं एक महान् तत्त्वज्ञ एवं सिद्ध पुरुष है, इसका पता चलते ही यह उसकी शरण में गया, एवं उससे शरीर तथा आत्मा की भिन्नता के संबध में, इसने ज्ञान संपादन किया (भा. ५.१०-१४; भरत जड देखिये)।

भागवत में प्राप्त 'भरत-रहूगण संवाद' में इक्षुमती नदी, चक्र नदी, शालग्राम तीर्थ, पुलस्त्य एवं पुलह

ऋषियों के आश्रम, कालंजर तीर्थ आदि तीर्थस्थानों का निर्देश प्राप्त है (मा. ५.८.३०; १०.१)।

रहूगण आंगिरस—आंगिरसकुलोत्पन्न एक आचार्य, जिसके द्वारा रचित दो सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ९. ३७-३८)। ऋग्वेद में एक कुलनाम के नाते रहूगण का निर्देश प्रायः प्राप्त है। किन्तु 'रहूगण आंगिरस' के निर्देश से प्रतीत होता है कि, रहूगण एक व्यक्तिनाम भी था।

राका--अंगिरस् ऋषि की कन्या, जो भागवत के अनुसार, उसे श्रद्धा नामक पत्नी से उत्पन्न हुई थी।

२. एक वैदिक देवता, जो समृद्धि एवं उदारता की देवी मानी गयी है (ऋ. २.३२; ५.४२)।

३. एक राक्षसकन्या, जो सुमाली राक्षस एवं केतुमती की कन्या थी। कुबेर की आज्ञा के अनुसार, यह विश्रवस् ऋषि की परिचर्या में रहती थी। आगे चल कर, उस ऋषि से इसे खर नामक राक्षस एवं शूर्पणखा नामक राक्षसी उत्पन्न हुयी (म. व. २५९.३-८)। यह रावण-कुंभकर्ण एवं बिभीषण की सौतेली माँ थी, जो सारे पुत्र विश्रवस् ऋषि को पुष्पोत्कटा नामक पत्नी से उत्पन्न हुये थे।

४. द्वादश आदित्यों में से धाता नामक आदित्य की पत्नी।

रामकर्णि--राहुकर्णि नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

रागा--बृहस्पति आंगिरस ऋषि की सात कन्याओं में से एक, जिसकी माता का नाम शुभा था। इसपर समस्त प्राणिसृष्टि अनुराग करती थी, जिस कारण इसका नाम रागा हुआ (म. व. २०८.४)।

राजक--(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विशाखयूप राजा का पुत्र था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'अजक', विष्णु में 'जनक' एवं मत्स्य में 'सूर्यक' कहा गया है। वायु के अनुसार इसने ३१ वर्षों तक, एवं मत्स्य तथा ब्रह्म के अनुसार इसने २१ वर्षों तक राज्य किया था। इसके पुत्र का नाम नंदिवर्धन था।

राजकेशिन्—अंगिराकुलोत्पन्न एक ऋषि।

राजधर्मन्—एक धर्मप्रवृत्त बकराज, जो कश्यपऋषि का पुत्र एवं ब्रह्मा का मित्र था (म. शां. १६३. १८-१९)। इसे नाडिजंघ नामान्तर भी प्राप्त था। एक बार गौतम नामक एक कृतघ्न ब्राह्मण इससे मिलने आया, जिसका उचित आदर सत्कार कर, इसने अपने विरुपाक्ष नामक राक्षस मित्र से उससे विपुल धन दिलाया। आगे चल कर गौतम ने कृतघ्नता से इसका वध किया। किन्तु राक्षसराज विरूपाक्ष ने सुरभि गौ के दूध के झाग से इसे जीवित किया, एवं गौतम का वध किया। जीवित होने के पश्चात्, इसने इन्द्र से गौतम को पुनः जीवित करने के लिए अनुरोध किया, जिस पर इन्द्र ने अमृत छिड़क कर गौतम को प्राणदान दिया। तत्पश्चात् इसने गौतम को विपुल धन आदि दे कर बिदा किया (म. शां १६३-१६७; गौतम ५. देखिये)।

राजन्—सूर्य के दो द्वारपालों में से एक (भवि. ब्राह्म. ७६)।

राजनि--उग्रदेव नामक राजा का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १४.३.१७; तै. आ. ५.४.१२)। 'रजन' का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

राजन्यर्षि--सिंधुक्षित् राजा के लिए प्रयुक्त एक उपाधि (पं. ब्रा. १२.१२.६)। क्षत्रिय ब्राह्मण राजाओं के लिए यह उपाधि प्रयुक्त की जाति होगी।

राजवर्तप--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसे 'राजवल्लभ' नामान्तर भी प्राप्त था।

राजवल्लभ—राजवर्तप नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

राजस्तंबायन--यज्ञवचस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.४.२.१)। राजस्तंब का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

राजश्रवस् वेन--देवी भागवत में निर्दिष्ट एक व्यास।

राजाज—शंभु राजा का एक पुत्र (ब्रह्मांड. ३.५.४०)।

राजाधिदेव--(सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार, विदूरथ राजा पुत्र था। वायु में इसे राज्याधिदेव कहा गया है। इसके पुत्र का नाम 'शोणाश्व' था (पद्म. सृ. १३)।

राजाधिदेवी—सोमवंशीय शूर राजा की पाँच कन्याओं में से कनिष्ठ कन्या, जिसकी माता का नाम मारिषा था। इसका विवाह अवंती देश का राजा जयसेन से हुआ था (मा. ९.२४.३१; १०.५८.३१)।

राजिक--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ ऋषि का शिष्य था।

राज्ञ--सूर्य का द्वारपाल (भवि. ब्राह्म. १२४)।

राज्ञी--रैवत मनु की एक कन्या, जो विवस्वान् आदित्य के तीन पत्नियों में से द्वितीय थी। इसके पुत्र का नाम रेवत था।

राज्यवर्धन--(सू. दिष्ट.) वैशाली देश का एक राजा, जो दम राजा का पुत्र था। दक्षिणनरेश विदूरथ राजा की कन्या इसकी पत्नी थी।

यह बड़ा तपस्वी एवं त्रिकालदर्शी राजा था। अपनी मृत्यु निकट आयी है यह बात ज्ञात होने पर, यह वार्ता इसने अपनी प्रजा कों सुनायी, एवं तपस्या के लिए यह वन चला गया।

पश्चात् इसकी प्रजा एवं अमात्यों ने सूर्य की आराधना की, एवं उससे वर प्राप्त किया, 'तुम्हारा राज्यवर्धन राजा दस हजार वर्षों तक रोगरहित, जितशत्रु, धनधान्यसंपन्न एवं स्थिरयौवन अवस्था में जीवित रहेगा'।

तदोपरान्त इसकी प्रजा ने वन में जा कर इसे सूर्य के द्वारा प्राप्त वर की सुवार्ता कह सुनाई। किन्तु यह वार्ता सुन कर इसे सुख के बदले दुख ही अधिक हुआ। यह कहने लगा, 'इतने वर्षों तक जीवित रहने पर, मुझे पुत्र-पौत्रादि तथा प्रजा की मृत्यु देखनी पड़ेगी, एवं मेरा सारा जीवित दुःखमय हो जाएगा'। इस दुःख से छुटकारा पाने के लिये इसने स्वयं अपनी प्रजा पौत्र एवं भृत्य आदि के लिए भी दस हजार वर्षों की आयु का वरदान प्राप्त किया (मार्क. १०६-१०७)।

राज्याधिदेव--विदूरथवंशीय राजाधिदेव राजा का नामान्तर।

राड--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार-व्यास की सामशिष्य परंपरा में से कृति नामक ऋषि का शिष्य था।

राडवीय--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

राणायनि--एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्य-परंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था। इसी से ही आगे चल कर सामवेदीय ब्राह्मणों की 'राणाय-नीय' शाखा का निर्माण हुआ। सामवेदी लोगों के ब्रह्म-यज्ञांगतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (जै. गृ. १.१४; गोभिल एवं द्राह्यायण देखिये)।

राणायनीपुत्र--एक आचार्य (ला. श्रौ. ६.९.१६)।

रातहव्य आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ६५-६६)।

रात्रि--रात्रि की एक अधिष्ठात्री देवी, जिसका निर्देश ऋग्वेद में 'नक्ता' नाम से किया गया है। ऋग्वेद में इसे उषस् की छोटी बहन कहा गया है (ऋ. १.१२४) एवं उषस् के साथ इसका अनेक बार एक युगल रूप मे निर्देश किया गया है ('उषासानक्ता' अथवा 'नक्तोषासा')।

अपनी बहन उषस् की भाँति इसे भी आकाश की पुत्री कहा गया है। ऋग्वेद में रात्रि का एक सूक्त प्राप्त है, जहाँ तारों से प्रकाशमान रात्रि का बड़ा ही काव्यमय वर्णन प्राप्त है (ऋ. १०.१२७)। यह अपने तारकामय नेत्रों से प्रकाशित होती है, एवं अपने प्रकाश के द्वारा अंधकार को भगाती है। इसके आने पर, अपने घोंसलों में लौट आनेवाले पक्षियों की भाँति, मनुष्य अपने अपने घर लौट आते हैं। चोरों को एवं भेड़ियों को दूर रखने के लिए, तथा पथिकों को सुरक्षित स्थान पर पहुँचाने के लिये इसकी प्रार्थना की गयी है।

यह अपने मूर्तिमान् स्वरूप धारण कर स्कंद के अभिषेक समारोह में उपस्थित हुई थी (म. श. ४४.१३)। शची ने अपनी मनोकामना की पूर्ति के लिए इसकी आराधना की थी (म. उ. १३.२१-२३)।

रात्रि भारद्वाजी--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री (ऋ. १०. १२७)।

राथीतर--सत्यवचस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. उ. १.९.१)। रथीतर का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके धर्मविषयक अनेक मतों का निर्देश बौधायन श्रौतसूत्र में प्राप्त है (बौ. श्रौ. ७.४)।

राथीतरीपुत्र--एक आचार्य, जो भालुकिपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.१ काण्व.)। अन्यत्र इसे क्रौंचिकीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (बृ. उ. ६.४.३२ माध्यं.)। इसके शिष्य का नाम शांडिलीपुत्र था। रथीतर के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने से, इसे 'राथीतरीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ था।

राधगौतम--वंश ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक आचार्यद्वय (वं. ब्रा. २)। ये गातृ नामक आचार्य के पुत्र, एवं गौतम नामक आचार्य के शिष्य थे।

राधा--कृष्ण की सुविख्यात प्राणसखी एवं उपासिका, जिसका निर्देश गोपालकृष्ण की बाललिलाओं में पुनः पुनः प्राप्त है। गोकुल में रहनेवाले एवं राधा के साथ नानाविध क्रीडा करनेवाले 'गोपालकृष्ण' का निर्देश पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य, महाभारत एवं नारायणीय आदि ग्रंथों में अप्राप्य है। इसके नाम का सर्वप्रथम निर्देश

हरिवंश, वायु एवं भागवत में प्राप्त है, जिनका रचना-काल ई. स. तीसरी शताब्दी माना जाता है।

सृष्टिउपकारक पाँच विष्णुशक्तियों में से राधा एक मानी गयी है (दे. भा. ९.१; नारद. २.८१)। यह संपत्ति की अधिष्ठात्री है, तथा इसे कान्ता, अतिदान्ता, शान्ता, सुशीला, सर्वमंगला, आदि नाम प्राप्त हैं।

लक्ष्मी के दो रूप माने गये हैं--एक राधा एवं दूसरा लक्ष्मी। इसी प्रकार कृष्ण के भी द्विभुज एवं चतुर्भुज ऐसे दो रूप माने गये है। इनमें से द्विभुज कृष्ण गोलोक में निवास करता है, जहाँ राधा उसकी पत्नी है। चतर्भुज कृष्ण वैकुंठ में निवास करता है, एवं वहाँ उसकी पत्नी लक्ष्मी है (ब्रह्मवै. २.४२.५६-५७; दे. भा. ९.१; आदि. ११)। यह गोलोक में नही, बल्कि वैकुंठ में ही रह कर श्रीकृष्ण की सेवा करती है, ऐसा निर्देश भी कई पुराणों में प्राप्त है (दे. भा. ९.१८)।

जन्म--यह गोकुल में वैश्य वृषभानु नामक गोप को कलावती नामक पत्नी से उत्पन्न हुई थी (ब्रह्मवै. २.४९. ३५-४२; नारद. २.८१.)। पद्म में इसे वृषभानु राजा की कन्या कहा गया है। यह राजा यज्ञ के लिए पृथ्वी साफ़ कर रहा था, उस समय, उसे भूमिकन्या के रूप में राधा प्राप्त हुई। पश्चात् उसने इसे अपनी कन्या मान कर इसका भरणपोषण किया (पद्म. ब्र. ७)। कृष्ण के वामांग से यह उत्पन्न हुई, ऐसी कथा भी कई पुराणों में प्राप्त है (ब्रह्मवै. २.१२.१६)।

पृथ्वी पर अवतार--राधा का अवतार पृथ्वी पर किस कारण से हुआ, यह बतानेवाली अनेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त हैं, जो काफी कल्पनारम्य प्रतीत होती हैं। कृष्णावतार लेते समय विष्णु ने अपने परिवार के समस्त देवताओं को पृथ्वी पर अवतार लेने के लिए आज्ञा दी। इस आज्ञा के अनुसार, विष्णु की प्रियसखी राधा ने पृथ्वी पर जाना स्वीकार किया, एवं भाद्रपद शुक्ल अष्टमी के दिन, ज्येष्ठा नक्षत्र के चतुर्थ चरण में प्रातःकाल के समय जन्म लिया (आदि. ११)।

नारद के अनुसार, एक बार श्रीविष्णु विरजा नामक गोपी को अपने साथ रासमंडल में ले गये। यह सुनते ही राधा क्रुद्ध हुयी एवं विष्णु के पास गयी। किन्तु वहाँ पहुँचने के पहले ही वे दोनों लुप्त हो गये। बाद में इसने विरजा को पुनः एक बार कृष्ण एवं सुदामा के साथ बैठते हुए देखा। इस कारण इसने श्री विष्णु की काफ़ी निंदा की। जब सुदामा ने इसे खूब डाँटा एवं इसे शाप दिया, 'तुम्हे मानवयोनि में जन्म प्राप्त होगा, जिस समय तुम्हे कृष्ण से काफ़ी विरह सहना पड़ेगा' (नारद. २.८१; ब्रह्मवै. २.४९)।

पश्चात् इसने भी सुदामा को शाप दिया, 'तुमने मुझे बूरा भला कहा है, अतः तुम्हे दानव-योनि में जन्म प्राप्त होगा (दे. भा. ९.१९)। राधा के इस शाप के कारण, सुदामा शंखचूड नामक असुर बन गया (ब्रह्मवै. २.४९. ३४)। पश्चात् कृष्ण ने सुदामा को उःशाप दिया, 'गोलोक का आधा क्षण अर्थात् एक मन्वन्तर तक ही तुम असुर रहोगे। पश्चात् तुम्हे मुक्ति प्राप्त होगी'। नारद में सुदामा की असुर-अवस्था की कालमर्यादा सौ साल दी गयी है (नारद. २. ८१)।

कृष्ण से विवाह--मानव योनि में जन्म लेने के पश्चात् राधा का कृष्ण से विवाह, वैशाख शुक्ल तृतीया के दिन रोहिणी नक्षत्र पर हुआ था (आदि. ११)। किन्तु अन्य पुराणों में गोकुलनिवासी राधा को कृष्ण की सखी बताया गया है, एवं इसके पति का नाम 'रापाण' दिया गया है (ब्रह्मवै. २.४९.३७)।

ब्रह्मवैवर्त के काण्व शाखा में राधा का आख्यान प्राप्त है, जहाँ राधा एवं कृष्ण को एक दूसरे का उपासक कहा गया है (ब्रह्मवै. २. ४८.१२-१३)। राधा एवं कृष्ण के उपासक 'राधाकृष्ण' नाम का जाप कर के इनकी उपासना करते हैं। 'राधाकृष्ण' के स्थान पर 'कृष्णराधा' इस क्रम से नामोच्चारण करने परनरक की प्राप्ती होती है, ऐसी भक्तों की धारणा है (ब्रह्मवै. २. ४९-५९)।

राधा के नामस्मरण का माहात्म्य बतानेवाला एक मंत्र का पाठ राधाकृष्ण के उपासक प्रतिदिन करते है, जो निम्नप्रकार है:--

> राशब्दोच्चारणाद्भक्तो राति मुक्तिं सुदुर्लभाम्।
> धाशब्दोच्चारणाद् दुर्गे धावत्येव हरेः पदम्॥
> रा इत्यादानवचनो धा च निर्वाणवाचकः।
> ततोऽवाप्नोति मुक्तिं च येन राधा प्रकीर्तिता॥
> (ब्रह्मवै. २.४८. ४०; ४२)

राधा की उपासना--राधा एवं कृष्ण की उपासना का प्राचीनतम ग्रंथ 'ज्ञानामृतसार' है, जो 'नारद पंचरात्र' नामक संहिता में समाविष्ट है। इस ग्रंथ के अनुसार, कृष्ण गोलोक नामक दिव्य लोक में निवास करते हैं, जहाँ राधा भी उनकी प्रियतम सखी बन कर रहती है (ज्ञानामृत. २.३.२४)। इस ग्रंथ में राधा को

कृष्ण के बराबर ही श्रेष्ठ माना गया है, एवं इन दोनो की उपासना करने से भक्त को भी गोलोक की प्राप्ति होती है, ऐसा कहा गया है। इस ग्रंथ का रचना काल ई. स. ४ थी शताब्दी माना गया है।

(१) निंबार्क सांप्रदाय—राधाकृष्ण संप्रदाय का अन्य एक उपासक निंबार्क माना जाता है, जो ई. स. ११ वी शताब्दी में उत्पन्न हुआ था। निंबार्क स्वयं रामानुज संप्रदाय का था। किंतु जहाँ रामानुज नारायण, एवं उसकी पत्नी लक्ष्मी (भू अथवा लीला) की उपासना पर जोर देते है, वहाँ निंबार्क गोपालकृष्ण एवं राधा के उपासना को प्राधान्य देते हैं। निंबार्क का यह तत्त्वज्ञान 'सनक सांप्रदाय' नाम से सुविख्यात है। निंबार्क स्वयं दक्षिण देश में रहनेवाला तैलंगी ब्राह्मण था, फिर भी वह स्वयं उत्तर भारत में मथुरा एवं वृन्दावन के पास रहता था। इस कारण इसके सांप्रदाय के बहुत सारे लोग उत्तर प्रदेश एवं बंगाला में दिखाई देते हैं। ये लोग अपने भालप्रदेश पर गोपीचंदन का टीका लगाते हैं एवं तुलसीमाला पहनते हैं।

(२) वल्लभ सांप्रदाय--राधाकृष्ण सांप्रदाय का अन्य एक महान् प्रचारक 'वल्लभ' माना जाता है, जो १५ वीं शताब्दी में उत्पन्न हुआ था। गोकुल में नानाविध बाल-लीला करनेवाला गोपालकृष्ण एवं उसकी प्रियसखी राधा 'वल्लभ संप्रदाय' के अधिष्ठात्री देवता हैं। इस संप्रदाय के अनुसार, गोलोक, जहाँ कृष्ण एवं राधा निवास करते हैं, वह श्रीविष्णु के वैकुंठ से भी श्रेष्ठ है, एवं उस लोक में प्रवेश प्राप्त करना यहीं प्रत्येक साधक का अंतीम ध्येय है।

(३) सखीभाव सांप्रदाय—राधाकृष्ण की उपासना का और एक आविष्कार 'सखीभाव' संप्रदाय है, जहाँ साधक स्वयं स्त्रीवेष धारण कर राधा-कृष्ण की उपासना करते हैं। राधा के समान स्त्रीवेष धारण करने से श्रीकृष्ण का साहचर्य अधिक सुलभता से प्राप्त हो सकता है, ऐसी इन लोगों की धारणा है। उन्हें राधाकृष्ण की उपासना का एक काफ़ी विकृत रूप माना जा सकता है (भांडारकर, वैष्णविजम्, पृ. ९३; ११७,१२३; १२६।

(४) श्री विठ्ठल-उपासना—महाराष्ट्र में कृष्ण-उपासना का आद्य प्रवर्तक पुंडलीक माना जाता है, जिसकी परंपरा आगे चल कर नामदेव एवं तुकाराम आदि संतों ने चलायी। किन्तु महाराष्ट्र में प्राप्त श्रीविठ्ठल की उपासना में राधा का स्थान श्रीकृष्ण की पत्नी रुक्मिणी के द्वारा लिया गया प्रतीत होता है। रुक्मिणी के कारण श्रीकृष्ण पंढरपुर (पुंडलीकपुर) में आया, तथा श्रीविठ्ठल नाम से प्रसिद्ध हुआ।

२. (सो. अनु.) अधिरथ सूत की पत्नी, जिसे राधिका नामांतर भी प्राप्त था। कुन्ती के द्वारा नदी में छोड़ा गया कर्ण इसे मिला था। इसने उसका नाम वसुषेण रखा था। कर्ण को मिलने के बाद इसे अन्य औरस पुत्र भी हुए थे (म. आ. १०४.१४-१५; व. २९३.१२)।

राधिक—(सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार जयसेन राजा का पुत्र था। विष्णु, वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'आराविन्', 'आराधि' एवं 'रुचिर' कहा गया है।

राधेय—सांख्यायन आरण्यक में निर्दिष्ट एक आचार्य (सां. आ. ७.६)। राधा का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. अंगराज कर्ण का मातृक नाम। अधिरथ सूत की पत्नी राधा ने कर्ण को पाल-पोस कर बड़ा किया था, जिस कारण, उसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ था (कर्ण १. देखिये)।

३. अधिरथ सूत एवं राधा के चार पुत्रों का सामुहिक नाम। भारतीय युद्ध में ये चार ही पुत्र कौरवों के पक्ष में शामिल थे, जिनमें से एक अभिमन्यु के द्वारा, एवं बाकी तीन अर्जुन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. ३१.७)।

राम—ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक राजा, जहाँ दुःशीम पृथवान् एवं वेन नामक राजाओं के साथ इसके दानशूरता की प्रशंसा की गयी है (ऋ. १०.९३.१४)। लुडविग के अनुसार, इसका पैतृक नाम 'मायव' था (लुडविग, ऋग्वेद का अनुवाद. ३.१६६)।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सेनजित् राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसका निर्देश अप्राप्य है।

३. सावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

४. श्रीकृष्ण के ज्येष्ठ भ्राता बलराम का नामान्तर।

५. परशुराम जामदग्न्य का नामान्तर

राम औपतस्विनि--एक यज्ञवेत्ता आचार्य, जो उपतस्विन् का पुत्र एवं याज्ञवल्क्य का समकालीन था। 'अंसुग्रह' नामक यज्ञ के संबंधी इसके मतों का निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. ४. ६. १. ७)।

राम क्रातुजातेय वैयाघ्रपद्य--एक आचार्य, जो शंग शात्यायनि आत्रेय नामक आचार्य का शिष्य, एवं शंख बाभ्रव्य नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.

४०.१; ४.१६.१)। 'क्रतुजात' एवं व्याघ्रपद्' नामक आचार्यों का वंशज होने के कारण, इसे 'क्रातुजातेय' एवं 'वैयाघ्रपद्य' पैतृक नाम प्राप्त हुए होगे।

राम जामदग्न्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११०; कात्यायन सर्वानुक्रमणी)। परशुराम जामदग्न्य एवं यह दोनों एक ही व्यक्ति थे (परशुराम देखिये)।

राम दाशरथि—अयोध्या का एक सुविख्यात सम्राट, जो भारतीयों की प्रातःस्मरणीय विभूति मानी जाती है। यह अयोध्या के सुविख्यात राजा दशरथ के चार पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र था। ई. पू. २३५०-१९५० यह काल भारतीय इतिहास में अयोध्या के रघुवंशीय राजाओं का काल माना जाता है, जिसके वैभव की परमोच्च सीमा राम दाशरथि के राज्यकाल में हुई।

आदर्श पुरुषश्रेष्ठ--एक आदर्श पुरुषश्रेष्ठ मान कर, वाल्मीकि रामायण में राम का चरित्रचित्रण किया गया है। प्राचीन भारतीय परंपरा के अनुसार, आदर्शपुत्र, आदर्श पति, आदर्श राजा इन तीनो आदर्शों का अद्वितीय संगम राम के जीवनचरित्र में हुआ है। एकवचन, एक-पत्नी, एकबाण इन व्रतों का निष्ठापूर्वक आचरण करनेवाला राम सर्वतोपरी एक आदर्श व्यक्ति है, जिसका सारा जीवन-चरित्र आदर्श जीवन का एक वस्तुपाठ है। अहिंसा, दया, अध्ययन, सुस्वभाव, इंद्रियदमन एवं मनोनिग्रह इन छः गुणों से युक्त एक आदर्श व्यक्ति का जीवनचरित्र लोगों के सम्मुख रखना, यही वाल्मीकि रामायण का प्रमुख हेतु है।

इस दृष्टि से वाल्मीकि रामायण के प्रारंभ के श्लोक दर्शनीय है, जहाँ वाल्मीकि ऋषि नारद से पृथ्वी के एक आदर्श व्यक्ति का जीवनचरित्र सुनाने की प्रार्थना करते है :—

को न्वस्मिन् सांप्रतं लोके, गुणवान् कश्च वीर्यवान्।

(इस पृथ्वी में जो गुणसंपन्न, पराक्रमी, धर्मज्ञ, सत्यवक्ता, दृढव्रत, चारित्र्यवान्, ज्ञाता, लोकप्रिय, संयमी, तेजस्वी ऐसे व्यक्ति का जीवनचरित्र मैं सुनना चहाता हूँ)।

वैयक्तिक सद्गुणों का आदर्श—इस तरह वैयक्तिक सद्गुणों का उच्चतम आदर्श, समाज के सम्मुख रखना यह वाल्मीकि-प्रणीत रामकथा का प्रमुख उदेश है। इसकी तुलना महाभारत में वर्णित युधिष्ठिर राजा से ही केवल हो सकती है। किन्तु युधिष्ठिर का चरित्रचित्रण करते समय एक तत्त्वदर्शी एवं धर्मनिष्ठ राजा को कौटुंबिक एवं सामाजिक घटक के नाते कदम कदम पर कौनसी कठिनाईयाँ उठानी पडती है, एवं मनस्ताप सहना पड़ता है, इसका चित्रण व्यास-प्रणीत महाभारत में किया गया है। वहाँ व्यक्तिधर्म को गौणत्व दे कर, समाजधर्म एवं राष्ट्रधर्म का चित्रण प्रमुख उद्देश्य माना गया है। उसके विपरीत, व्यक्तिगत सद्गुण एवं वैयक्तिक धर्माचरण का आदर्श राम दाशरथि को मान कर, उसका चरित्रचित्रण वाल्मीकि के द्वारा किया गया है। इस कारण श्रीकृष्ण जैसा राजनीतिज्ञ, अथवा युधिष्ठिर जैसा धर्मज्ञ न होते हुए भी, राम प्राचीन भारतीय इतिहास का एक अद्वितीय पूर्ण-पुरुष प्रतीत होता है।

प्राचीन क्षत्रिय समाज में, जब बहुपत्नीकत्व रूढ था, उस समय एक पत्नीकत्व का आदर्श इसने प्रस्थापित किया था। परशुराम जामदग्न्य के पृथ्वी निःक्षत्रिय करने की प्रतिज्ञा के कारण, सारा क्षत्रिय समाज जब हतप्रभ एवं निर्वीर्य बन गया था, उस समय आदर्श क्षत्रिय व्यक्ति एवं राजा का आचरण कैसा हो, इसका वस्तुपाठ राम ने क्षत्रियों के सम्मुख रख दिया। रावण जैसे राक्षसों के आक्रमण के कारण, जब सारा दक्षिण भारत ही नहीं, बल्कि गंगा घाटी का प्रदेश ही भयभीत हो चुका था, उस समय राम ने अपने पराक्रम के कारण, इस सारे प्रदेश को भीतिमुक्त किया, एवं इस तरह केवल उत्तर भारत में ही नहीं बल्कि दक्षिण भारत में भी आर्य संस्कृति की पुनःस्थापना की। इस तरह एक व्यक्ति एवं एक राजा के नाते राम के द्वारा किया गया कार्य अद्वितीय ऐतिहासिक महत्त्व रखता है।

नाम--यद्यपि उत्तरकालीन साहित्य में 'रामचंद्र' नाम से राम दाशरथि का निर्देश अनेक बार प्राप्त है, फिर भी वाल्मीकि रामायण में सर्वत्र इसे राम ही कहा गया है। क्वचित एक स्थल में इसे चंद्र की उपमा दी गयी है (वा. रा. यु. १०२.३२)। संभव है, चंद्र से इस सादृश्य के कारण, इसे उत्तरकालीन साहित्य में 'रामचंद्र' नाम प्राप्त हुआ होगा।

जन्म--जैसे पहले ही कहा गया है, ई. पू. २०००-१९५० लगभग यह राम दाशरथि का काल माना गया है। भारतीय परंपरा के अनुसार, वैवस्वत मन्वन्तर के चौबीसवे त्रेतायुग में यह उत्पन्न हुआ था (ह. वं १.४१; ब्रह्मांड. ३. ८.५४; ब्रह्म. २१३.१२४; वायु. ७०.४८; मत्स्य. ४७.२४७; भा. ९.१०.५२; पद्म. पा. ३६)। महाभारत के अनुसार, यह अट्ठाईसवें त्रेतायुग में उत्पन्न

हुआ था (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ४९४-४९५)।

दशरथ राजा को कौसल्या, सुमित्रा एवं कैकेयी नामक तीन पत्नियाँ होते हुए भी कोई भी पुत्र न था। इसी अवस्था में पुत्रप्राप्ति के हेतु उसने ऋष्यशृंग ऋषि से एक 'पुत्रकामेष्टी यज्ञ' कराया। उस यज्ञ में सिद्ध किये गये 'चरु' का आधा भाग दशरथ की पटरानी कौसल्या ने भक्षण किया, जिस कारण यज्ञ के पश्चात् एक साल बाद उसके गर्भ से राम दाशरथि का जन्म हुआ।

राम का जन्म चैत्र शुक्ल नवमी के दिन दोपहर के बारह बजें, जब पाँच ग्रह उच्चस्थिति में थे उस समय हुआ था। उस समय पुनर्वसु नक्षत्र, कर्क लग्न एवं लग्न में गुरुचंद्र योग था (वा. रा. बा. १८.८-९; अ. रा. १. ३; पद्म. उ. २४२)।

अवतार--पौराणिक साहित्य में इसे श्री विष्णु का सातवा अवतार कहा गया है। वाल्मीकि रामायण में इसे अनेक बार श्रीविष्णु के सदृश पराक्रमी कहा गया है (वा. रा. बा. १.३८), किन्तु श्रीविष्णु का अवतार कहीं भी नही कहा गया है। क्वचित् एक स्थान पर जहाँ इसे श्रीविष्णु का अवतार कहा गया है (वा. रा. यु. १.१७), वह भाग प्रक्षिप्त प्रतीत होता है।

उत्तरकालीन साहित्य में रामभक्ति की कल्पना का जों जो विकास होने लगा, तब उसके साथ साथ राम के अवतारवाद की कल्पना भी दृढ़ होती गयी। रामतापनीय उपनिषद् से ले कर अध्यात्मरामायण तक के समस्त राम भक्तिविषयक रचनाओं में राम को केवल विष्णु का ही नहीं, बल्कि साक्षात् परब्रह्म का ही अवतार माना गया है (अ. रा. बा. १)। इन ग्रंथों के अनुसार, जन्म लेते ही अपनी माता कौसल्या को इसने श्रीविष्णु के रूप में दर्शन दिया था (अ. रा. बा. १.३.१३-१५; पद्म. उ. २६९. ८०; आ. रा. १.२.४)। महाभारत के अनुसार, यह मार्कंडेय के अंश से, एवं हरीवंश के अनुसार विश्वामित्र के अंश से उत्पन्न हुआ था। देवी भागवत में राम एवं लक्ष्मण को नरनारायण का अवतार कहा गया है।

स्वरूपवर्णन-- राम का स्वरूपवर्णन 'वाल्मीकि रामायण' में प्राप्त है, जिसका पाठन रामभक्त लोग आज भी नित्यपाठ के स्तोत्र की भाँति करते है :-

विपुलांसो महाबाहुः कम्बुग्रीवो महाहनुः।
महोरस्को महेष्वासो, गूढजत्रुररिंदमः॥
आजानुबाहुः सुशिराः, सुललाटः सुविक्रमः।
समः समविभक्ताङ्गः, स्निग्धवर्णः प्रतापवान्॥
पीनवक्षा विशालाक्षो, लक्ष्मीवान् शुभलक्षणः।
धर्मज्ञः सत्यसंधश्च, प्रजानां च हिते रतः॥
विष्णुना सदृशो वीर्ये, सोमवत् प्रियदर्शनः।
कालाग्निसदृशः क्रोधे, क्षमया पृथिवीसमः॥
(वा. रा. बा. १.१०-१८)।

नामकरण एवं शिक्षा--राम का नामकरण दशरथ राजा के कुलगुरु वसिष्ठ के द्वारा हुआ, जिसने 'रामस्य लोकरामस्य' कह कर इसका नाम 'राम' रख दिया (वा. रा. बा. १८. २९)। नामकरण एवं उपनयन के पश्चात् वसिष्ठ से इसे शस्त्र एवं शास्त्रों की शिक्षा प्राप्त हुई (वा. रा. बा. १८.३६-३७)। इसे यजुर्वेद का भी ज्ञान प्राप्त था (वा. रा. सुं.३५.१४)

वसिष्ठ से उपदेशप्राप्ति--शिक्षा समाप्त होने पर सोलह वर्ष का राम तीर्थयात्रा करने के लिए निकला। इस तीर्थयात्रा को समाप्त करने पर, राम के मन में यकायक विरक्ति की भावना उत्पन्न हुई, एवं धन, राज्य, माता आदि का त्याग कर प्राणत्याग करने के विचार इसके मन में आने लगे :--

किं धनेन किमम्बाभिः किं राज्येन किमीहया।
इति निश्चयमापन्नः प्राणत्यागपरः स्थितः॥
(यो. वा. १.१०.४६)।

राम की यह विलक्षण वैराग्यवृत्ति देख कर वसिष्ठ ने उसे ज्ञानकर्मसमुच्चयात्मक उपदेश प्रदान किया, जो 'योगवासिष्ठ' नामक ग्रंथ में समाविष्ट है।

वसिष्ठ ने राम से कहा, 'आत्मज्ञान एवं मोक्षप्राप्ति के लिए अपना दैनंदिन व्यवहार एवं कर्तव्य छोड़ने की आवश्यकता नही है। जीवन सफल बनाने के लिए कर्तव्य निभाने की उतनी ही ज़रूरत है, जितनी आत्मज्ञान की हैः-

उभाभ्यामेव पक्षाभ्यां यथा खे पक्षिणां गतिः।
तथैव ज्ञानकर्मभ्यां जायते परमं पदम्॥
केवलात्कर्मणो ज्ञानान्नहि मोक्षोऽभिजायते।
किन्तूभाभ्यां भवेन्मोक्षः साधनं तूभयं विदुः॥
(यो. वा. १.१.७-८)।

(आकाश में घूमनेवाला पंछी जिस तरह अपने दो पंखों पर तैरता है, उसी तरह ज्ञान एवं कर्मों का समुच्चय करने से ही मनुष्य को जीवन में परमपद की प्राप्ति हो सकती है। केवल ज्ञान अथवा केवल कर्म की उपासना करने

से मोक्ष की प्राप्ति होना असंभव है। इसी कारण इन दोनों का समन्वय कर के ही, ज्ञानी लोग मोक्ष की प्राप्ति कर लेते हैं)।

विश्वामित्रसहवास—राम युवावस्था में प्रविष्ट होने पर, एक बार विश्वामित्र महर्षि दशरथ राजा से मिलने आयें। उन्होंने कहा, 'मैंने दण्डकारण्य में आजकल एक यज्ञ का प्रारंभ किया है, जिसमें मारीच एवं सुबाहु नामक राक्षसों की दुष्टता के कारण, काफ़ी रुकावटें पैदा हो रही है। ये दोनो राक्षस यज्ञस्थल में आ कर सड़ा हुआ रक्त एवं माँस की वर्षा करते हैं, एवं यज्ञ में बाधा उत्पन्न करते हैं। उन राक्षसों का वध तुम्हारे नवयुवा पुत्र राम एवं लक्ष्मण ही केवल कर सकते हैं। उन्हें मेरी सहाय्यता के लिए दण्डकारण्य में भेजने की आप कृपा करे'।

वसिष्ठ की सूचना के अनुसार, दशरथ राजा ने विश्वामित्र की यह प्रार्थना मान्य कर दी, एवं राम लक्ष्मण को विश्वामित्र के साथ जाने की आज्ञा दी। कमर को विजयशाली तलवार एवं कंधे पर धनुष्य एवं बाण लगाये हुए राम एवं लक्ष्मण विश्वामित्र के साथ दण्डकारण्य की ओर चल पड़े।

दण्डकारण्य जाते समय इन्होंने सर्व प्रथम सरयू नदी पार की। उसी नदी के तट पर विश्वामित्र ने रामलक्ष्मण को 'बल' एवं 'अतिबल' नामक मंत्रों का ज्ञान कराया, जिनके कारण भूख एवं प्यास को सहन करने की ताकद इन्होंमें उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् अंगदेश में स्थित कामाश्रम में ये पहुँचे, जहाँ विश्वामित्र ने इन्हें मदनदाह की कथा सुनाई (वा. रा. बा. ३२–४८)।

ताटकावध--तदोपरान्त गंगा नदी पार कर ये दण्ड-कारण्य में आ पहुँचे, जहाँ विश्वामित्र ने इन्हें दण्डकारण्य का पूर्व इतिहास बताया, एवं कहा, 'आज जहाँ तुम घना जंगल देख रहे हो, वहाँ पूर्वकाल में अगस्त्य ऋषि का संपन्न देश था। सुंद राक्षस की पत्नी ताटका एवं उसका पुत्र मारीच के कारण, यहाँ की सारी बस्ती आज उजड़ गयी है। ताटका में बीस हाथियों का बल है, जिसकारण उसे समस्त पौरजन डरते हैं। ऋषिमुनियों को पीड़ा देनेवाली उस राक्षसी का वध करने के लिए ही मैं आज तुम्हें यहाँ लाया हूँ'।

ताटका स्त्री होने के कारण, उसके हाथ एवं पैर ही तोड़ कर उसे हतबल बनाने का पहले इसका विचार था। किन्तु ताटका के द्वारा आकाश में से पत्थरों का मारा किये जाने पर, इसने अपना एक बाण छोड़ कर उस महाकाय एवं विरूप राक्षसी का वध किया, एवं उसके द्वारा विजन किये गये मलद एवं करुषक देशों को पुनः आबाद बनाया (वा. रा. बा. २४)।

मारीच एवं सुबाहु से युद्ध—ताटकावध के पश्चात् विश्वामित्र रामलक्ष्मणों को साथ ले कर सिद्धाश्रम में गये, जहाँ उनका यज्ञसमारोह चल रहा था। वहाँ पहुँचने पर विश्वामित्र ने इससे कहा, 'यह वहीं स्थान है, जहाँ बलि वैरोचन के वध के लिए भगवान् विष्णु ने वामनावतार धारण किया था। इस स्थान पर मेरा आश्रम बसा हुआ है, एवं यहाँ मैंने यज्ञ समारोह भी प्रारंभ किया है। किन्तु मारीच एवं सुबाहु राक्षसों के कारण, यज्ञकार्य आज असम्भव हो रहा है। इस कारण मेरी यही इच्छा है कि, तुम उनसे युद्ध कर उन्हें परास्त करो'।

विश्वामित्र की आज्ञा के अनुसार, राम एवं लक्ष्मण ने छः दिन अहोरात्र यज्ञमंडप में कड़ा पहारा किया। छठे दिन प्रातःकाल के समय, मारीच एवं सुबाहु ने यज्ञभूमि पर आक्रमण किया। राम ने मानवास्त्र का प्रयोग कर, मारीच को शतयोजन की दूरी पर समुद्र में फेंक दिया, एवं 'अग्नि अस्त्र' से सुबाहु का वध किया।

अहल्योद्धार--इस प्रकार विश्वामित्र का कार्य समाप्त कर, राम एवं लक्ष्मण ने अयोध्या नगरी के लिए पुनः प्रस्थान किया। मार्ग में विश्वामित्र ने इन्हें गंगा नदी की कथा सुनाई। कान्यकुब्ज देश, शोण नदी, भागीरथी नदी, विशाला नगरी आदि तीर्थस्थानों का दर्शन लेते हुए ये मिथिला नगरी के समीप ही स्थित गौतमाश्रम में आ पहुँचे। वहाँ विश्वामित्र ने राम को अहल्या की कथा सुनाई, एवं तत्पश्चात् राम ने अपने पदस्पर्श से उस शापित स्त्री का उद्धार किया (वा. रा. बा. २७)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, राम के द्वारा किये गये ताटकावध एवं अहिल्योद्धार, ये दोनो कथाएँ रूपकात्मक हैं। दण्डकारण्य प्रदेश प्राचीन काल में गंगा नदी तक फैला हुआ था। उसे राक्षसों की पीड़ा से मुक्त कर वहाँ की बंजर भूमि को राम ने पुनः सुजला एवं सुफला बना दिया, यही इन दोनो कथाओं का वास्तव अर्थ प्रतीत होता है (अहल्या देखिये)।

सीतास्वयंवर—पश्चात् विश्वामित्र की सूचना के अनुसार, ईशान्य की ओर मुड़ कर राम एवं लक्ष्मण सीरध्वज जनक राजा की मिथिला नगरी में सीतास्वयंवर के लिए पधारे। वहाँ राम ने जनक राजा के द्वारा लगायी गयी सीतास्वयंवर की शर्त के अनुसार, शिवधनुष को लीलया उठा कर उसे बाण लगाया, जिस समय शिव-

धनुष भंग हो कर उसके दो टुकड़े हुयें। पश्चात् जनक राजा ने राम को सीता विवाह में दे दी, एवं कहाः--

इयं सीता मम सुता, सहधर्मचरी तव ॥
प्रतीच्छ चैनां भद्रं ते, पाणिं गृह्णीष्व पाणिना ।
पतिव्रता महाभागा, छायेवानुगता सदा ॥
(वा. रा. बा. ७३.२६-२७)।

(मेरी कन्या सीता आज से धर्म मार्ग पर चलते समय तुम्हें साथ देगी। साया के समान वह तुम्हारे साथ रहेगी। उसका तुम स्वीकार करो)

उत्तर भारत में विवाहान्तर्गत कन्यादान के समय इन श्लोकों का आज भी बड़ी श्रद्धा भाव से पठन किया जाता हैं।

राम के विवाह के समय, जनक राजा नें राम के भाई लक्ष्मण, भरत एवं शत्रुघ्न के विवाह क्रमशः ऊर्मिला, मांडवी एवं श्रुतकीर्ति से करायें। उनमें से उर्मिला स्वयं जनक की, एवं माण्डवी एवं श्रुतकीर्ति जनक के छोटे भाई कुशध्वज की कन्याएँ थी (वा. रा. बा. ७३)।

वाल्मीकि रामायण में अन्यत्र लक्ष्मण अविवाहित होने का, एवं भरत का विवाह सीतास्वयंवर के पहले ही होने का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. अर. १८.३; बा. ७३.४)। इन निर्देशों को सही मान कर, कई अभ्यासक राम के साथ साथ उसके अन्य भाईयों का विवाह होने का वाल्मीकि रामायण में प्राप्त निर्देश प्रक्षिप्त मानते हैं।

परशुराम से संघर्ष—विवाह के पश्चात् अयोध्या आते समय, यकायक परशुराम ने राम के मार्ग का अवरोध किया। उसने राम से कहा, 'मेरे गुरु शिव के धनुष का भंग कर तुमने उनका अवमान किया है। मैं यही चाहता हूँ कि, मेरे हाथ में जो विष्णु का धनुष्य है उसका भी भंग कर तुम्हारें ताकद की प्रचीति मुझे दो'।

इस पर राम ने परशुराम से कहा, 'अपने पिता के वध का बदला लेने के लिए पृथ्वी के समस्त क्षत्रियों की नाश करने के लिए आप उद्यत हुए है, किन्तु अन्य क्षत्रियों की भाँति मैं आपकी शरण में न आऊँगा'। इतना कह कर राम ने परशुराम के विष्णुधनुष का भी भंग किया, जिस पर परशुराम इसकी शरण में आया।

इस तरह बड़ी उद्दण्डता से क्षत्रियसंहार के लिए तुले हुए परशुराम को राम ने परास्त किया, एवं पृथ्वी पर बचे हुए क्षत्रियों का रक्षण किया (वा. रा. बा. ७६-७७)।

यौवराज्याभिषेक--विवाह के समय, राम एवं सीता की आयु पंद्रह एवं छः वर्षों की थी। अयोध्या में आने के पश्चात् बारह वर्षों तक राम तथा सीता का जीवन परस्परों के सहवास में अत्यंत आनंद से व्यतीत हुआ। अपने सद्‌गुण एवं धर्मपरायणता के कारण यह अपने पौरजनों में भी काफ़ी लोकप्रिय बना था।

इसकी आयु सत्ताईस वर्षों की होने पर, दशरथ राजा ने इसे यौवराज्याभिषेक करने का निश्चय किया। इस समय उसने अपने सभाजनों से कहा, 'राम राजकारण में कुशल है, एवं शौर्य में इसकी बराबरी करनेवाला क्षत्रिय आज पृथ्वी पर नहीं है। इसी कारण मैं अपने सारे पुत्रों में से राम को ही यौवराज्याभिषेक करना चाहता हूँ'।

इस तरह राम के यौवराज्याभिषेक का दिन चैत्र माह में पुष्यनक्षत्र में निश्चित किया गया। यौवराज्याभिषेक के अगले दिन रात्रि में राम तथा सीता ने उपोषण किया एवं दर्भासन पर निद्रा की। तत्पश्चात् होमहवनादि धार्मिक विधि भी कियें। दूसरे दिन प्रातःकाल में यह यौवराज्याभिषेक के लिए निकल ही रहा था, इतने में दशरथ राजा की ओर से सुमंत्र की हाथों इसे बुलावा आया।

कैकेयी से संभाषण--उस बुलावे के अनुसार, कैकेयी के महल में बैठे हुए अपने पिता से मिलने जाने पर, दशरथ ने इससे कोई भी भाषण न किया। फिर कैकेयी ने राम से कहा, 'दशरथ राजा तुमसे कुछ कहना चाहते हैं, किन्तु तुम्हारे प्रेम के कारण, कह नहीं पातें। इस अवस्था में तुम्हारा यही कर्तव्य है, कि उनकी इच्छा का तुम पालन करो'।

इसपर दशरथ राजा की हर एक इच्छा का पालन करने का अपना दृढनिश्चय व्यक्त करते हुए राम ने कहा :—

'अहं हि वचनाद्राज्ञः, पतेयमपि पावके ॥
भक्षयेयं विषं तीक्ष्णं, पतेयमपि चार्णवे ।
नियुक्तो गुरुणा पित्रा, नृपेण च हितेन च ॥
तद्ब्रूहि वचनं देवि, राज्ञो यदभिकांक्षितम् ।
करिष्ये प्रतिजाने च, रामो द्विर्नाभिभाषते ॥'
(वा. रा. अयो. १८.२८-३०)।

(दशरथ के द्वारा आज्ञा किये जाने पर, मैं अग्निप्रवेश, विषभक्षण आदि के लिए भी सिद्ध हूँ। क्यों कि, दशरथ राजा मेरा पिता, गुरु, एवं हितदर्शी है। अतः राजा का मनोगत बताने की कृपा आप करें। उसका तुरंत ही पालन किया जाएगा, यही मेरी आन है। मैं सत्यप्रतिज्ञ हूँ, एवं प्रतिज्ञा का पालन करना अपना धर्म समझता हूँ।)

राम के इस कहने पर कैकेयी ने देवासुरयुद्ध के समय, दशरथ राजा के द्वारा दिये गये दो वरों की कथा कह सुनाई, एवं कहा, 'ये वर मैंने राजा से आज माँग लिये है, जिसके अनुसार अयोध्या का राज्य मेरे पुत्र भरत को प्राप्त होगा, एवं तुम्हें चौदह वर्षों के लिए वनवास जाना पडेगा'।

इस पर राम ने जीवनमुक्त सिद्ध की भाँति 'शुभ छत्र' एवं अन्य राजभूषणों का त्याग किया, एवं स्वजन एवं पौरजनों से विदा ले कर वन की ओर प्रस्थान किया (वा. रा. अयो. २०.३२-३४)।

राम का वनगमन का यह निश्चय सुन कर इसकी माता कौसल्या, एवं बन्धु लक्ष्मण ने इसे इस निश्चय से परावृत्त करने का काफ़ी प्रयत्न किया। लक्ष्मण ने इसे कहा, 'बुढ़ापे के कारण, दशरथ राजा की बुद्धि विनष्ट हो चुकी है। इस कारण, उसकी आज्ञा का पालन करने की कोई भी जरुरत नही है'।

इन आक्षेपों को उत्तर देते समय, एवं अपनी तात्त्विक भूमिका का विवरण करते हुए राम ने कहा—

धर्मोहि परमो लोके धर्मे सत्यं प्रतिष्ठितम्।
धर्मसंश्रितमप्येतत्पितुर्वचनमुत्तमम्॥
(वा. रा. अयो. २१.४१)।

(इस संसार में धर्म सर्वश्रेष्ठ है, एवं धर्म ही सत्य का अधिष्ठान है। मेरे पिता ने जो आज्ञा मुझे दी है, वह भी इसी धर्म का अनुसरण करनेवाली है)।

राम ने आगे कहा, 'राजा का यही कर्तव्य है कि वह सत्यमार्ग से चले। राजा के द्वारा असत्याचरण किये जाने पर, उसकी प्रजा भी असत्यमार्ग की ओर जाने की संभावना हैं'।

वनवास—राम के साथ इसका भाई लक्ष्मण, एवं इसकी पत्नी सीता इसके साथ वनवास में गये। ये तीनों अयोध्या छोड़ कर सायंकाल के समय पैदल ही तमसा नदी पर आयें, जहाँ अयोध्या के समस्त पौरजन वनवासगमन की इच्छा से इनके साथ आये। प्रातःकाल के समय वनवासगमन के लिए उत्सुक पौरजनों कों भुलावा दे कर राम, सीता तथा लक्ष्मण के साथ आगे बढ़े। तत्पश्चात् वेदश्रुति, स्यंदिका, गोमती आदि नदियों को पार कर, ये दक्षिण दिशा की ओर जाने लगे (वा. रा. अयो. ४९)।

अयोध्या राज्य के सीमा पर पहुँचते ही इसने अयोध्या एवं वहाँ की देवताओं को पुनः एकबार वंदन किया। पश्चात् शृंगवेरपुर नगरी के समीप भागीरथी नदी को पार कर, निषादराज गुह ने इसे दक्षिण की ओर पहुँचा दिया। वहाँ पहुँचते ही राम ने पुनः एकबार लक्ष्मण को अयोध्या लौट जाने के लिए कहा, किन्तु लक्ष्मण अपने निश्चय पर अटल रहा (वा. रा. अयो. ५३)।

बाद में प्रयाग आ कर राम ने भरद्वाज से मुलाकात की, एवं वनवास के चौदह साल शान्तता से कहाँ बिताये जा सकेंगे, इसके संबंध में उस मुनि की सलाह ली। भरद्वाज ने इन्हें चित्रकूट पर्वत पर पर्णकुटी बना कर रहने की सलाह दी। इस सलाह के अनुसार, कालिंदी नदी को पार कर यह चित्रकूट पर्वत पर पहुँच गया, जहाँ पर्णकुटी बना कर रहने लगा।

तत्पश्चात् भरद्वाज ऋषि को साथ ले कर, भरत इससे मिलने चित्रकूट आया। वहाँ दशरथ राजा की मृत्यु की वार्ता उसने इसे सुनाई, एवं अयोध्या नगरी को लौट आने की इसकी बार बार प्रार्थना की। इसने उसे कहा, 'जो कुछ हुआ है, उसके संबंध में अपने आप को दोष दे कर, तुम दुःखी न होना। जो कुछ हुआ है उसमें किसी मानव का दोष नहीं, वह ईश्वर की इच्छा है। इस कारण तुम वृथा शोक मत करो, बल्कि अयोध्या जा कर, राज्य का सम्हाल करो। यही तुम्हारा कर्तव्य है'।

दण्डकारण्यप्रवेश—भरत के अयोध्यागमन के पश्चात् राम को चित्रकूट पर्वत पर रहने में उदासीनता प्रतीत होने लगी। इस कारण, इसने चित्रकूट पर्वत को छोड़ कर दक्षिण में स्थित दण्डकारण्य में प्रवेश किया। वहाँ सर्वप्रथम यह अत्रि ऋषि के आश्रम में गया, एवं उसका एवं उसकी पत्नी अनसूया का दर्शन लिया।

आगे चल कर घोर अरण्य प्रारंभ हुआ, जहाँ इसने विराध नामक राक्षस का वध किया। तत्पश्चात् यह शरभंग ऋषि के आश्रम में गया, जहाँ उस ऋषि ने अपनी सारी तपस्या का दान कर, इसे पुनः राज्य प्राप्त करा देने का आश्वासन दिया। किन्तु इसने अत्यंत नम्रता से उसका इन्कार किया, एवं यह सुतीक्ष्ण ऋषि के आश्रम में गया। वहाँ जाते समय इसे राक्षसों के द्वारा मारे गये तपस्वियों की हड्डियों का ढेर दिखाई दिया, तब इसने वहाँ स्थित ऋषियों को आश्वासन दिया, 'मैं अब इसी वन में रह कर राक्षसों की पीड़ा से तुम्हारी रक्षा करूँगा' (वा. रा. अर. ७)।

राक्षस-विरोध—राक्षस संहार की राम की इस प्रतिज्ञा को सुन कर सीता ने इसे इस प्रतिज्ञा से परावृत्त करने

का प्रयत्न किया। उसने कहा, 'राक्षसों का संहार कर, ऋषिकुलों का रक्षण करना चतुरंगसेनाधारी राजा का कर्तव्य है; हमारे जैसे एकाकी एवं शस्त्र-विहीन वनवासियों का नहीं। इसी कारण, स्वसंरक्षण के अतिरिक्त अन्य किसी कारण से भी राक्षसों का वध करना हमारे वनवासधर्म के लिए योग्य नहीं है'।

इस पर राम ने कहा, 'ब्राह्मणों को अभयदान देना, यह हर एक क्षत्रिय का कर्तव्य है, चाहे वह राज्य पर हो या न हो। मैंने ऋषियों को अभयदान दिया है। अब चाहे आकाश भी गिर पड़े; मैं अपनी प्रतिज्ञा से हटनेवाला नहीं हूँ'।

राम के इसी प्रतिज्ञा के कारण, दण्डकारण्यनिवासी राक्षसों से इसका शत्रुत्व उत्पन्न हुआ, एवं सीताहरण, रावण से युद्ध आदि अनेकानेक आपत्तियाँ इसके वनवास काल में उत्पन्न हुयीं।

इस तरह दण्डकारण्य के, ऋषियों के सहवास में राम ने अपने वनवास के दस साल बितायें। कई आश्रम में यह तीन महिनें रहा, तथा कहींकहीं यह एक साल तक भी रहा। जहाँ जहाँ यह गया, वहाँ इसका हार्दिक स्वागत ही हुआ।

इस प्रकार दस साल बड़े ही आनंद से बिताने के बाद, यह अगस्त्य एवं लोपामुद्रा के दर्शन के लिए अगस्त्य आश्रम में गया। वहाँ अगस्त्य ने इसे विश्वकर्मा के द्वारा भगवान् विष्णु के लिए बनाया गया दिव्य धनुष्य, एवं अक्षय्य तुणीर प्रदान कियें, एवं पंचवटी में रह कर वहाँ के राक्षसों का संपूर्ण नाश करने का आदेश इसे दिया (वा. रा. अर. १२.२४-३०)।

पंचवटी में—तत्पश्चात् राम पंचवटी में पर्णकुटी बाँध कर रहने लगा। वहाँ गरुड के भाई अरुण का पुत्र जटायु इनसे मिला, एवं उसने रामलक्ष्मण का आश्रम में न होने के काल में, सीता के संरक्षण का भार स्वीकार लिया (वा. रा. अर. १४)।

शूर्पणखावध—पंचवटी में वास करते समय, एक बार लंकाधिपति रावण की बहन शूर्पणखा राम से मिलने आई। इसे देख कर उसकी कामवासना जागृत हुई, एवं उसने इससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की। फिर इसकी आज्ञा के अनुसार, लक्ष्मण ने उस राक्षसी के नाक एवं कान काट दियें; तथा उसके भाई खर एवं उसके दूषण, त्रिशिरस् आदि चौदह सेनापतियों का भी वध किया।

पंचवटी में हुयें राक्षससंहार से अकंपन नामक एक राक्षस ही केवळ बच सका, जिसने एवं शूर्पणखा ने लंकाधिपति रावण को जनस्थान प्रदेश में पंचवटी ग्राम में राम के द्वारा किए गये राक्षससंहार की वार्ता कह सुनाई।

सीताहरण—इस पर रावण ने मारीच नामक अपने 'कामरूपधर' (मन चाहे रूप धारण करनेवाले) मित्र से कांचनमृग का रूप धारण करने के लिए कहा, एवं उसकी सहाय्यता से रामलक्ष्मण को आश्रम से बाहर निकाल कर, ऋषिवेश में सीता का हरण किया।

उसी समय सीता के द्वारा पुकारे जाने पर जटायु ने रावण से युद्ध किया। किंतु रावण ने उसके दोनों पंख काट लियें, जिस कारण वह आहत हो कर मूर्च्छित गिर पड़ा।

बाद में जब रामलक्ष्मण सीता को ढूँढने के लिए निकले, तब जटायु ने इन्हें रावण के द्वारा सीता के हरण किये जाने की, एवं दक्षिण की ओर प्रस्थान करने की वार्ता कह सुनाई। इतना कह कर जटायु ने देहत्याग किया। जटायु की मृत्यु देख कर राम अत्यधिक विह्वल हुआ, एवं इसने उसे साक्षात् अपना पिता मान कर उसका दाहसंस्कार किया (वा. रा. अर. ७२)।

कबंधवध—जटायु के दाहकर्म के पश्चात, सीता की खोज़ करते हुए राम एवं लक्ष्मण अगस्त्याश्रम की ओर मुड़े। मार्ग में इन्हें कबंध नामक एक राक्षस मिला, जिसका राम ने वध किया। मरते समय, कबंध ने सीता की मुक्ति के लिए, ऋष्यमूक पर्वत पर पंपा सरोवर के किनारे वनवासी अवस्था में रहनेवाले सुग्रीव वानर की सहाय्यता लेने की राम को सलाह दी। तदनुसार राम ऋष्यमूक पर्वत की ओर मुड़ा, जहाँ जाते समय, इसने मतंगाश्रम में मतंग ऋषि की शिष्या शबरी के आतिथ्य का स्वीकार किया।

वालिवध—बाद में यह सप्तसागर तीर्थ पर जा कर, पंपा सरोवर की ओर चल पड़ा, जहाँसे यह ऋष्यमूक पर्वत पर पहुँच गया। अपने भाई वालि के द्वारा विजनवासी किया गया सुग्रीव, राम को देख कर शंकित हुआ, जिस कारण उसने अपने मंत्री हनुमत् को राम के पास भेज़ दिया।

हनुमत् ने बड़ी कुशाग्र बुद्धि से इसका परिचय पूछा, एवं अंत में अपनी पीठ पर बिठा कर सुग्रीव के पास ले आया। सुग्रीव एवं राम ने आपस में मिल कर बात की, एवं पश्चात् अग्नि की सौगंध खा कर, परस्परों को सहाय्यता

करने की प्रतिज्ञा की। सीताहरण के समय गिरें हुए आभूषण सुग्रीव ने इसे बतायें। इसी समय, राम ने वालि के वध की प्रतिज्ञा की। पश्चात् वालि एवं सुग्रीव का घमासान युद्ध होते समय, वही सुअवसर मान कर, वृक्ष के पीछे से इसने एक बाण वालि पर छोड़ दिया, एवं उसका वध किया (वा. रा. कि. २६.१४)।

वालि का आक्षेप--राम ने वालिवध करते समय जो कपटाचरण किया, वह क्षत्रिययुद्धनीति के विरुद्ध माना गया है। इस युद्ध के पूर्व वालि ने अपनी पत्नी तारा से राम के संबंध में कहा था--

'धर्मज्ञश्च कृतज्ञश्च कथं पापं करिष्यति'।
(वा. रा. किं. १६)।

(राम धर्मज्ञ एवं कृतज्ञ होने के कारण, उसके हाथों कौनसा भी पापकर्म होना असंभव है)।

इसी कारण, मृत्यु के समय, वालि ने राम को उसके कपटाचरण के लिए काफ़ी दोष दिया, जिसका कोई भी उत्तर राम न दे सका। राम ने उसे इतना ही कहा, 'अपने भाई के राज्य एवं पत्नी का अपहरण वरनेवाले तुम, अत्यंत पापी हो, जिस कारण मैंने तुम्हारा वध किया है (वा. रा. कि. १७-१८)। रे. बुल्के के अनुसार, राम-वालि संवाद के ये दोनों सर्ग प्रक्षिप्त है (रामकथा पृ. ४७९)।

सीता की खोज़--वालिवध के पश्चात्, राम ने किष्किंधा के राज्य पर सुग्रीव को राज्याभिषेक किया। अनन्तर वर्षाऋतु अर्थात श्रावण से कार्तिक मास तक के चार महिने राम ने प्रस्त्रवणगिरी के एक गुफा में बितायें (वा. रा. कि. २७-२८)।

वर्षाकाल समाप्त होने पर भी, जब सुग्रीव ने सीताशोध के संबंध में कोई प्रयत्न नहीं शुरु किया, तब राम ने लक्ष्मण के द्वारा उसकी काफ़ी निर्भत्सना की। फिर सुग्रीव ने सीता की खोज़ के लिए नाना दिशाओं में अपने निम्नलिखित वानर सेनापति भेज दियें:--उत्तर दिशा में-शतवली; पूर्व दिशा में-विनत; पश्चिम दिशा में-सुषेण; दक्षिण दिशा में--हनुमत्, तार एवं वालिपुत्र अंगद (वा. रा. कि. २९-४७)। हनुमत् के साथ गयें वानरसैन्य में निम्नलिखित वानर भी शामिल थे:--अनंग, नील, सुहोत्र, शरारि, शरगुल्म, नज, गवाक्ष, गवय, वृषम, सुषेण, मैंद, द्विविद, गंधमादन, उल्कामुख, एवं जांबवत् (वा. रा. कि. ४१)।

उपर्युक्त सेनापतियों में से हनुमत् की योग्यता जान कर राम ने उसे 'अभिज्ञान' के रूप में 'स्वनामांकोपशोभित' अंगुठी सौंप दी थी (वा. रा. कि. ४४.१२)। रे. बुल्के के अनुसार, वाल्मीकि रामायण में प्राप्त वानरों के प्रेषण की अधिकांश सामग्री प्रक्षिप्त है (रामकथा पृ. ४८६)।

हनुमत् एवं उसके साथियों ने विंध्य पर्वत की गुफाओं में, एवं ऋक्षबिल गुफा में, सीता का शोध किया। वह न लगने पर, सभी वानर निरुत्साहित हो कर प्रायोपवेशन करने लगे। इतने में जटायु के भाई संपाति ने एक सौ योजना की दूरी पर समुद्र में निवास करनेवाले रावण का पता वानरों को बताया। फिर हनुमत् ने समुद्र लँघ कर सीता का शोध लगाया। इस कालावधी में सारे वानर एक पैर पर खड़े हो कर तपस्या करते रहे (वा. रा. कि. ६७.३४)।

लंका पर आक्रमण--मसीता को ढूँढ निकालने के उपलक्ष्य में राम ने हनुमत् की बड़ी प्रशंसा की, एवं लंका के बारे में सारी जानकारी भी प्राप्त की। पश्चात् नील को सेनापति बना कर, उत्तर फाल्गुनी नक्षत्र के सुमुहूर्त पर इसने लंका की ओर प्रयाण किया। इस तरह यह महेन्द्रपर्वत के शिखर पर आ पहुँचा (वा. रा. यु. १-५)

जब हनुमत् सीता से मिल कर वापस आया, तब उसके पराक्रम के कारण, रावण के मंत्रिमंडल में काफ़ी कोलाहल मच गया। रावण के छोटे भाई बिभीषण ने उसे सलाह दी कि, सीता को जल्द वापस किया जाए। रावण के द्वारा उसे इन्कार किये जाने पर, अपने अनल, पनस, संपाति एवं प्रमति नामक चार प्रधानों के साथ, बिभीषण राम के पक्ष में शामिल होने के लिए उपस्थित हुआ।

बिभीषण से मित्रता--बिभीषण को अपने पक्ष में शामिल करने के संबंध में सुग्रीवादि वानर शुरु में अत्यंत नाराज़ थे। किन्तु, उस समय राम ने कहा--

बद्धांजलिपुटं दीनं याचन्तं शरणागतम्।
न हन्यादानृशंस्यार्थमपि शत्रुं परंतप॥
(वा. रा. यु. १८.२७)

(शरण में आये हुए किसी भी व्यक्ति को, उसके सारे प्रमादों की माफ़ी कर उसे अभयदान देना, यह मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।)

राम ने आगे कहा, 'इस समय, साक्षात् रावण भी मेरी शरण में आएगा, तो उसे भी मैं अभयदान दूँगा'। बिभीषण के द्वारा किया गया रावण पक्ष का त्याग, एवं

राम के द्वारा उसे दिया गया अभयदान, ये दोनों प्रसंग वैष्णव धर्म की परंपरा में 'भगवद्गीता' के समान ही महत्त्वपूर्ण एवं पवित्र माने जाते हैं।

पश्चात् इसने बिभीषण को रावण का वध कर, उसे लंका का राजा बनाने का आश्वासन दिया। बिभीषण ने भी इसे वचन दिया कि, वह रावणवध में इसकी सहाय्यता करेगा (वा. रा. यु. १७-१९)।

राम के द्वारा लंका पर आक्रमण होने के पूर्व, रावण ने अपने शुक नामक गुप्तचर के द्वारा, सुग्रीव को अपने पक्ष में लाने का प्रयत्न किया, किन्तु सुग्रीव ने उसकी उपेक्षा की।

सेतुबंध—लंका में पहुँचने के लिए समुद्र पार करना आवश्यक था। समुद्र में मार्ग प्राप्त करने के लिए, इसने कुशासन पर आधिष्ठित हो कर, एवं तीन दिनों तक प्रायोपवेशन कर, समुद्र की आराधना की। किन्तु समुद्र ने इसे मार्ग न दिया, जिस कारण इसने क्रुद्ध हो कर समुद्र पर ब्रह्मास्त्र का प्रयोग किया (वा. रा. यु. २१)। तत्पश्चात् समुद्र इसकी शरण में आया, एवं विश्वकर्मापुत्र नल के द्वारा समुद्र पर वृक्षों तथा पत्थरों से एक सेतु बाँधने की उसने इसे सलाह दी।

नील के द्वारा निर्माण किया गया यह सेतु सौ योजन लंबा था, जो उसने पाँच दिनों में, प्रतिदिन चौदह, बीस, इक्कीस, बाइस, तेइस योजन इस क्रम से तैयार किया था। इस सेतु के द्वारा, ससैन्य, समुद्र को लाँघ कर यह लंका पहुँच गया (वा. रा. यु. २०.४१-७७)। वहाँ 'सुवेल पर्वत' के समीप इसने पड़ाव डाले (वा. रा. यु. २३-२४)।

लंका का अवरोध—वानर सेना के समुद्र पार करने के बाद, रावण ने शुक, सारण एवं शार्दूल नामक अपने गुप्तचरों को वानरवेश से राम सेना की ओर भेज़ दिया, तथा रामसेना की गणना करने के लिए कहा। किंतु बिभीषण ने उनको पहचान लिया, एवं राम के संमुख पेश किया। पश्चात् वे शरण आने के कारण, राम ने उन्हें जीवनदान दिया (वा. रा. यु. २५-२७)। रे. बुल्के के अनुसार, वाल्मीकि रामायण में प्राप्त गुप्तचरों का यह वृत्तांत, एवं तत्पश्चात् दिया गया राम के कटे हुए मायाशीर्ष का वृत्तांत प्रक्षिप्त है (रामकथा पृ. ५५५-५५६)।

युद्ध के पूर्व, राम ने अपनी सेना को सुसंघटित बनाया, जिसमें अंगद को लंका के दक्षिण द्वार पर, हनुमत् को पश्चिम द्वार पर, एवं नील को पूर्व द्वार पर आक्रमण के लिए नियुक्त किया गया। लंका के उत्तर द्वार पर, लक्ष्मण की सहाय्यता से राम ने रावण से स्वयं ही सामना देने का निश्चय किया (वा. रा. यु. ३७)।

दूतप्रेषण—रावण से युद्ध शुरू करने के पूर्व, राम ने सुवेल पर्वत पर चढ़ कर लंका का निरीक्षण किया। उसी समय, सुग्रीव सहसा पर्वत पर चढ़ कर लंका का के गोपुर पर कूद पड़ा, एवं वहाँ अकेले ही उसने रावण को द्वंद्वयुद्ध में परास्त किया (वा. रा. यु. ४०)।

तत्पश्चात् बिभीषण के परामर्श पर, राम ने अंगद के द्वारा रावण को संदेश भेजा, 'यदि तुम सीता को नहीं लौटाओंगे, तो मैं सारे राक्षसों के साथ तुम्हारा संहार करूँगा'। अंगद के मुँह से राम का यह संदेश सुन कर, रावण ने उसका वध करने का आदेश दिया। चार राक्षसों ने अंगद को पकड़ना चाहा, किंतु अंगद उन चारों को उठा कर इतने वेग से एक भवन पर कूद पड़ा कि, वे राक्षस निःसहाय्य भूमि पर गिर पड़े। पश्चात् अंगद उस भवन ढहा कर, सुरक्षितता से राम के पास आ पहुँचा। राम ने जब समझ लिया कि, किसी प्रकार मित्रता के साथ युद्ध टालना असंभव है, तब इसने अपने सेनापति नील को युद्ध शुरु करने की आज्ञा दे दी (वा. रा. यु. ४१-४२)।

प्रथम दिन—लंका को वानरसेना से अवरुद्ध जान कर, रावण ने उसका सामना करने के लिए अपनी सेना को भेज़ दिया। इस समय राम एवं इसके सहयोगियों के द्वारा निम्नलिखित राक्षस योद्धा मारे गये:—राम के द्वारा—अग्निकेतु, रश्मिकेतु, मित्रघ्न एवं यज्ञकेतु; प्रजंघ के द्वारा—संपाति; सुग्रीव—प्रघस; लक्ष्मण—विरूपाक्ष; मैंद—वज्रमुष्टि; नील—निकुंभ; द्विविद—अशनिप्रभ; सुषेण—विद्युन्मालिन्; गजवर—तपन; हनुमत्—जंबुमालिन्; नल—प्रतपन (वा. रा. यु. ४३)।

सायंकाल के समय, प्रथम दिन का युद्ध समाप्त हुआ, किंतु राक्षसों के द्वारा पुनः युद्ध प्रारंभ किये जाने पर राम ने यज्ञशत्रु, महापार्श्व, महोदर, शुक एवं सारण आदि राक्षसों का पराजय किया।

नागपाश—तत्पश्चात् अंगद ने रावण के पुत्र इंद्रजित् से युद्ध प्रारंभ कर उसे परास्त किया। फिर इंद्रजित् ने ब्रह्मा के वरदान से अदृश्य हो कर, राम एवं लक्ष्मण को नागमय शरों से आहत किया, जिस कारण ये दोनों निश्चेष्ट पड़े रहे। तब इंद्रजित् ने इन दोनों को मृत समझ कर वैसी सूचना रावण को दी (वा. रा. यु. ४२-४६)।

यह सुन कर रावण ने सीता एवं त्रिजटा को पुष्पक विमान में बैठा कर, रणभूमि मे मूर्च्छित पड़े हुए राम-लक्ष्मण को दिखलाया। सीता इन दोनों को मृत समझ कर विलाप करने लगी, किन्तु त्रिजटा ने उसको वास्तव परिस्थिति का ज्ञान दिला कर सांत्वना दी (वा. रा. यु. ४७–४८)।

बाद में राम को जैसे ही होश आया, यह लक्ष्मण को मूर्च्छित देख कर विलाप करने लगा (वा. रा. यु. ४९)। पश्चात् सुषेण ने राम को कहा कि, ओषधि लाने के लिए हनुमत् को द्रोणाचल भेज़ दिया जाये। किन्तु इसी समय, गरुड का युद्धभूमि में आगमन हुआ, जिसको देखते ही नागपाश के सारे नाग भाग गयें, एवं उसके स्पर्शमात्र से ही राम एवं लक्ष्मण स्वस्थ हो गयें (वा. रा. यु. ५०)। रे. बुल्के के अनुसार, गरुड़ के आगमन का यह कथाभाग प्रक्षिप्त है (रामकथा. ५६२)

राक्षससंहार—युद्ध के दूसरे दिन हनुमत् ने रावणपक्षीय योद्धा धूम्राक्ष का वध किया (वा. रा. यु. ५१–५२)। तीसरे दिन अंगद ने वज्रदंष्ट्र आदि राक्षसों का वध किया (वा. रा. यु.५३–५४)। चौथे दिन हनुमत् ने अकंपनादि राक्षसों का वध किया (वा. रा. यु. ५५–५६)। पाँचवे दिन रावण का प्रमुख सेनापति प्रहस्त, अग्निपुत्र नील वानर के द्वारा मारा गया, एवं उसके सैन्य में से नरान्तक, महानंद, कुंभहनु आदि राक्षसों का भी संहार हुआ (वा. रा. यु. ५७–५८)।

युद्ध के छठवें दिन, रावण स्वयं अपना पुत्र इंद्रजित् एवं आतिकाय आदि राक्षसों के साथ स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ। उसने सुग्रीव, गवाक्ष आदि वानरों को परास्त किया, एवं 'अग्नि-अस्त्र' के द्वारा नील वानर का पराजय किया।

तत्पश्चात् रावण एवं लक्ष्मण का युद्ध हुआ, जिसमें 'ब्रह्मास्त्र' के द्वारा उसने लक्ष्मण को मूर्च्छित किया। रावण उसे उठा कर ले जाने लगा, किंतु हनुमत् लक्ष्मण को रणभूमि से उठा कर राम के पास ले आया। तत्पश्चात् राम ने हनुमत् के स्कंध पर आरूढ हो कर, रावण को आहत किया, एवं उसके मुकुट को बाण मार कर नीचे गिरा दिया। पश्चात् राम ने रावण को रणभूमि से भाग जाने पर मज़बूर कर दिया (वा. रा.यु. ५९)।

उसी दिन शाम को राम ने कुंभकर्ण का भी वध किया, जिस समय इसने सर्वप्रथम उसकी भुजाएँ, तत्पश्चात् उसके पैर, एवं अंत में उसका सिर अपने बाणों से काट दिया। मृत्यु की पश्चात्, कुंभकर्ण का सिर सूर्योदयकालीन चंद्रमा के समान आकाश में दिखाई पड़ा, एवं वह स्वयं पृथ्वी पर गिर कर, उसके प्रचंड देह के कारण अनेक भवन गिर पड़े।

युद्ध के सातवें दिन रामपक्षीय वानरों ने देवान्तक, नरांतक, त्रिशिरस् एवं अतिकाय नामक चार रावणपुत्रों का वध किया। महोदर एवं महापार्श्व नामक रावण के भाईयों का भी वध किया गया। उनमें से नरान्तक का वध अंगद के द्वारा, देवान्तक एवं त्रिशिरस् का वध हनुमत् के द्वारा, महोदर का वध नील के द्वारा, एवं अतिकाय का वध लक्ष्मण के द्वारा हुआ (वा. रा. यु. ६९–७१)।

इंद्रजित् का वध—युद्ध के आठवें दिन रावण का पुत्र इंद्रजित् अदृश्य रूप से रणभूमि में आया, एवं उसने वानरसेना पर ऐसा ज़ोरदार हमला किया कि, उसमें ६८ करोड़ वानर मारे गयें। इंद्रजित् के द्वारा छोड़े गये ब्रह्मास्त्र के कारण, राम एवं लक्ष्मण मूर्च्छित हुयें (वा. रा. यु. ७३)।

रात्री के समय विभीषण एवं हनुमत् मशाल ले कर युद्धभूमि में आये, एवं उन्होंने देखना शुरू किया कि, कौन मरा एवं कौन बचा। उस समय उन्हें सर्वप्रथम जांबवत् मिला, जिसने हनुमत से आज्ञा दी; 'इसी समय, हिमालय के ऋषभ शिखर पर जा कर, वहाँसे संजीवनी, विशल्यकरिणी, सुवर्णकरिणी एवं संधानी नामक चार ओषधियाँ ले आंना'। हनुमत् के द्वारा उपर्युक्त वनस्पतियाँ लाने के उपरान्त, जांबवत् ने राम एवं लक्ष्मण को होश में लाया, एवं संपूर्ण वानरसेना को पुनः जीवित किया (वा. रा. यु. ७४)।

युद्ध के नौवें दिन वानरों ने लंका में घुस कर, उसे आग लगा दी, एवं कुंभ, निकुंभ, यूपाक्ष आदि राक्षसों का वध किया (वा. रा. यु. ७५–७७)। इसी दिन राम के द्वारा मकराक्ष राक्षस मारा गया (वा. रा. यु. ७८–७९)।

बाद में इंद्रजित ने अपने मायावी युद्ध के कारण, वानरसेना में हाहाक्कार मचा दिया, एवं उन्हे घबराने के लिए, उनकी आँखों के सामने सीतावध का मायावी दृश्य निर्माण किया। तत्पश्चात् वह निकुंभिला नामक स्थान में जा कर, वानरसंहार के लिए आसुरी–यज्ञ करने लगा। विभीषण की सलाह के अनुसार, लक्ष्मण ने वहाँ जा कर इंद्रास्त्र छोड़ कर उसका वध किया। पश्चात् इस युद्ध में मूर्च्छित एवं मृत हुयें वानरों को सुषेण ने पुनः जीवित किया (वा. रा. यु. ९१)।

अपने पुत्र इंद्रजित् के वध की वार्ता सुन कर रावण अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं अपने खड्ग से सीता का वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। किन्तु सुपार्श्व नामक उसके आमात्य ने इस पापकर्म से उसे रोंक लिया, एवं चैत्र कृष्ण १४ का दिन युद्ध की तैयारी में व्यतीत कर, अमावास्या के दिन राम पर आखिरी हमला करने की सलाह उसने उसे दी (वा. रा. यु. ९२.६२)।

रावणवध—चैत्र अमावास्या के दिन रावण ने राक्षसों के जय के लिए हवन शुरु किया, किन्तु वानरों ने उसके यज्ञकार्य में बाधा उत्पन्न की। फिर क्रोध में तमतमाता हुआ रावण, महापार्श्व, महोदर एवं विरुपाक्ष नामक तीन सेनापतियों के साथ युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ। राम ने उसके साथ घमासान युद्ध किया। उस समय राम की सहाय्यार्थ आये हुए विभीषण एवं लक्ष्मण को रावण ने मूर्च्छित किया। सुषेण ने हिमालय से प्राप्त वनस्पतियों से उन दोनों को पुनः होश में लाया (वा. रा. यु. १०२)।

तत्पश्चात् राम इंद्र के द्वारा दिये गये दिव्य रथ पर आरूढ हुआ, एवं अगस्त्य के द्वारा दिये गये ब्रह्मास्त्र से रावण का हृदय विदीर्ण कर इसने उसका वध किया (वा. रा. यु. ११०; म. व. २७४.२८)। वाल्मीकि रामायण के दक्षिणात्य पाठ के अनुसार, अगस्त्य ऋषि ने राम को 'आदित्य हृदय' नामक स्तोत्र सिखाया था, जिसके पाठन से रावण का वध करने में यह यशस्वी हुआ।

राम-रावण के इस अंतीम युद्ध में रावण के सिर पुनः पुनः उत्पन्न होने की कथा वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। इस कथा के अनुसार, राम ने रावण के कुल एक सौ सिर काट दियें (एकमेव शतं छिन्नं शिरसा तुल्यवर्चसः) (वा. रा. यु. १०७.५७)।

अध्यात्म रामायण के अनुसार, रावण के नाभिप्रदेश में अमृत रखा था। विभीषण की सलाह के अनुसार, राम ने 'आग्नेय अस्त्र' छोड़ कर उस अमृत को सुखा दिया, एवं रावण का वध किया (अध्या. रा. युद्ध. ११.५३; आ. रा. १. ११.२७८;)

महाभारत के अनुसार, रावण ने अंतीम युद्ध के समय राम एवं लक्ष्मण का रूप धारण करनेवाले बहुत से मायामय योद्धाओं का निर्माण किया था। किन्तु राम ने अपने ब्रह्मास्त्र से इन सारे योद्धाओं को रावण के साथ ही जला दिया, जिस कारण उनकी राख भी शेष न रही (म. व. २७४.८; ३१)।

रावणवध से राम-रावण युद्ध समाप्त हुआ। तत्पश्चात् राम के अनुरोध पर, विभीषण ने अपने भाई रावण का विधिवत् अग्निसंस्कार किया (वा. रा. यु. १११)। मंदोदरी आदि रानियों को सांत्वना दे कर इसने उन्हें लंका के लिए रवाना किया। रावण की अंतीम क्रिया होने के उपरान्त, राम ने लक्ष्मण के द्वारा विभीषण को लंका का राजा बना कर उसका राज्याभिषेक किया। बाद में, राम ने समुद्र में बनाया हुआ सेतु भी तोड़ा, जिससे आगे चल कर लंका को परकीय आक्रमण का भय न रहे (पद्म. सृ. ३८)।

अग्नि-परीक्षा—तत्पश्चात् विभीषण के द्वारा सीता को शिविका में बैठा कर राम के पास लाया गया। इस समय राम ने सीता से कहा, 'रावण से युद्ध कर मैंने तुझे आज विमुक्त किया है। मैंने आज तक किया हुआ युद्ध तुम्हारे आसक्ति के कारण नहीं, बल्कि एक क्षत्रिय के नाते मेरा कर्तव्य निभाने के लिए किया है। तुझे पुनः प्राप्त करने में मुझे आनंद ज़रुर हुआ है; किन्तु इतने दिनों तक एक अन्य पुरुष के घर तुम्हारे रहने के कारण, तुम्हारा पुनः स्वीकार करना असंभव है'।

राम का यह कथन सुन कर, सीता ने अपने सतीत्व की सौगंध खायी; एवं लक्ष्मण के द्वारा चिता तैयार कर, वह अग्निपरीक्षा के लिए सिद्ध हुई (वा. रा. यु. ११६)। इतने में अनेक देवता के सम्मुख अग्नि देवता नें सीता के सतीत्व का साक्ष दिया, एवं उसका स्वीकार करने के लिए राम से कहा। तब राम ने सीता के अग्निपरीक्षा के संबंध में अपनी भूमिका विशद करते हुए कहा, 'मुझे सीता पर संदेह नहीं है, एवं कभी नहीं था। मैंने यह सब कुछ इसलिये कहा कि, कोई भी सीता के चरित्र पर आक्षेप न करें (वा. रा. यु. ११८)।

दक्षिण की विजययात्रा—इस तरह रावण से युद्ध कर, उसका वध करने के कारण, राम का वनवास पाण्डवों के वनवास की भाँति केवल एक वनवास ही न रह कर, दक्षिण भारत की विजययात्रा में परिणत हुआ।

अपने चौदह-वर्षों के वनवास में से १२॥ वर्ष इसने पंचवटी में वनवासी तपस्वी की भाँति व्यतीत कियें। वनवास के बाकी बचे हुए १॥ वर्ष इसने राक्षसों के संग्राम में व्यतीत किया, जो कार्तिक कृष्ण १० के दिन शूर्पणखा-वध से प्रारंभ हुआ, एवं अगले साल के वैशाख शुक्ल १२ के दिन रावणवध से समाप्त हुआ। इस राक्षससंग्राम के कारण, रावण के द्वारा लंका में

स्थापित बलाढ्य राक्षस साम्राज्य विनष्ट हुआ। दक्षिण भारत का सारा प्रदेश राक्षसों के भय से विमुक्त हो कर, वहाँ दाक्षिणात्य वानरों का राज्य प्रस्थापित हुआ, एवं अगस्त्य के द्वारा दक्षिण भारत में प्रस्थापित किये गये आर्य संस्कृति का दृढ रूप से पुनरुत्थान हुआ। इस तरह राम का दक्षिण दिग्विजय अनेकानेक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है। इस दृष्टि से सीता के अग्निपरीक्षा की कथा भी रूपकात्मक प्रतीत होती है, जो संभवतः राम के द्वारा शुरु किये गये दक्षिण भारत की आबादी एवं पुनर्वसन के कार्य की यशस्विता प्रतीकरूप से दर्शाती है। सीता शब्द का शब्दशः अर्थ भी भूमि ही है (सीता देखिये)।

राक्षससंग्राम का तिथिनिर्णय—राम एवं रावण का युद्ध कुल ८७ दिनों तक चलता रहा, उनमें से पंद्रह दिन कोई युद्ध न हुआ था, जिस कारण राम-रावण का प्रत्यक्ष युद्ध ७२ दिनों तक हुआ प्रतीत होता है। यह युद्ध माघ शुद्ध द्वितीया को शुरु हुआ, एवं वैशाख कृष्ण द्वादशी के दिन रावण वध से समाप्त हुआ।

लंका का स्थलनिर्णय—रावणसंग्राम के संबंध में, लंका के स्थलनिर्णय की समस्या महत्त्वपूर्ण प्रतीत होती है। रायचौधरी आदि अभ्यासकों के अनुसार, आधुनिक सिलोन ही लंका है, एवं आधुनिक महाराष्ट्र प्रदेश ही प्राचीन दण्डकारण्य है। किबे आदि अन्य अभ्यासक लंका का स्थान आधुनिक मध्य हिंदुस्थान में अमरकंटक पर्वत के पास मानते हैं। वडेर आदि कई अन्य अभ्यासक आधुनिक मालदिव अंतरीप को राक्षसद्वीप मानते हैं। अन्य कई अभ्यासकों के अनुसार, प्राचीन लंका देश आधुनिक आंध्र प्रदेश के उत्तर में बंगाल उपसागर के बीच कहीं बसा हुआ था। डॅनिएल जॉन के अनुसार, प्राचीन लंका आधुनिक सीलोन के दक्षिण में अथवा दक्षिणीपूर्व में कहीं बसी हुई थी (डॉ. पुसाल्कर स्टडीज इन दि एपिक्स ॲन्ड पुराणाज पृ. १९१)।

वानर कौन थे—किबे एवं हिरालाल के अनुसार, अमरकंटक पर्वत के प्रदेश में रहनेवाले वन्य लोग प्राचीन काल में वानर, एवं आधुनिक गोंड लोग राक्षस कहलाते थे। अन्य कई अभ्यासक राक्षसों को असुरवंशीय मानते हैं। चक्रवर्ती राजगोपालाचारी के अनुसार, आधुनिक द्रविड प्रदेश में रहनेवाले द्रविडवंशीय लोग रामायण काल में वानर कहलाते थे (डॉ. पुसाल्कर, पृ. १९२; वानर देखिये)।

उत्तर काण्ड का विश्लेषण—कई अभ्यासकों के अनुसार, रावणवध के साथ ही साथ राम का दैवी अवतार समाप्त होता है। अपने इस अवतारकार्य के समाप्ति के पश्चात्, इक्ष्वाकुवंश का एक राजा यही मर्यादित स्वरूप रामचरित्र धारण करता है। इसी कारण, वाल्मीकि रामायण के उत्तर काण्ड में चित्रित किया गया राम, पहले काण्डों में चित्रित राम से अलग व्यक्ति प्रतीत होता है। रे. बुल्के भी संपूर्ण उत्तर काण्ड को प्रक्षिप्त मानते है, जिसकी रचना वाल्मीकि के द्वारा नही, बल्कि भिन्न भिन्न उत्तरकालीन कवियों के द्वारा हुयीं है (रामकथा, पृ. ६०५-६०६)। वाल्मीकिद्वारा रचित 'आदिरामायण' एवं अन्य प्राचीन ग्रंथों में भी राम के द्वारा रावण की पराजय, एवं सीता की पुनःप्राप्ति के साथ ही 'रामकथा' समाप्त की गयी है।

अयोध्यागमन—युद्ध के पश्चात् राम, सीता एवं लक्ष्मण को साथ ले कर पुष्पक विमान में बैठकर अयोध्या की ओर चल पड़े। उस समय राक्षससंग्राम में भाग लेनेवाले समस्त वानरों ने इच्छा प्रकट की, कि वे अयोध्या में रामराज्याभिषेक देखना चाहते हैं। इस कारण, उन्हे एवं सुग्रीवादि अपने मित्रों को साथ ले कर यह अयोध्या में आया। अयोध्या जाते समय, राम ने सीता को युद्धभूमि, नल के द्वारा बाँधा गया सेतु, किष्किंधा आदि ऐतिहासिक स्थान बतायें।

राम के चौदह वर्षों के वनवास में से एक दिन बाकी था, इसलिए वैशाख शुद्ध पंचमी के दिन, इसने भरद्वाज ऋषि के आश्रम में वास किया, एवं हनुमत् के द्वारा अपने आने का संदेश भेजा। दूसरे दिन पुष्य नक्षत्र के अवसर पर, नंदिग्राम में राम एवं भरत की भेंट हुयी, एवं उसके साथ अयोध्या जा कर, अपनी माताओं एवं वसिष्ठ आदि गुरुजनों के इसने दर्शन किये (वा. रा. यु. १२६)।

रामराज्याभिषेक—वैशाख शुक्ल सप्तमी के दिन, राम एवं भरत ने मंगल स्नान किये, एवं इसका राज्याभिषेक तथा भरत का यौवराज्याभिषेक वसिष्ठ के द्वारा किया गया। अनंतर राम ने पहले ब्राह्मणों को तथा बाद में सुग्रीवादि वानरों को विपुल दान दिया। राम ने लक्ष्मण को युवराज बनाना चाहा, किन्तु लक्ष्मण के द्वारा उस पद को अस्वीकार किये जाने पर, भरत को युवराज बनाया गया।

वाल्मीकि रामायण में रामाभिषेक के लिए आमंत्रित राजाओं की जानकारी सविस्तृत रूप में प्राप्त है, जहाँ इसके

सीरध्वजादि आप्त, प्रतर्दनादि मित्र, एवं तीन सौ मांडलिक राजाओं के उपस्थिति का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. उ. ३७-४०)। इस समारोह के समय, सुग्रीव आदि को छः महिने तक अतिथि के रूप में रख कर आदरपूर्वक विदा किया गया। बिभीषण के द्वारा राम को दिया गया पुष्पक विमान कुबेर को वापस भेज दिया गया (वा. रा. उ. ४१)। तत्पश्चात् राम ने अत्यधिक कुशलता के साथ राज्य किया, जिस कारण आज भी आदर्श राज्य को लोग 'रामराज्य' कहते है (वा. रा. यु. १२८)।

सीतात्याग--कुछ समयोपरांत सीता गर्भवती हुई, तथा उसने अरण्य में घूमने की इच्छा प्रकट की। उसको अगले दिन तपोवन में भेज देने का आश्वासन दे कर, राम अपने मित्रों के साथ परिहास की कहानियाँ सुनने बैठा। उस समय, राम ने भद्र नामक अपने मित्र से पूछाँ, 'मेरे, सीता, एवं भरत आदि के विषय में लोग क्या कहते है'? तब भद्र ने सीता के कारण हो रहे लोकापवाद, एवं जनता की आचरण पर पडने वाले उसके कुप्रभाव निर्देश करते हुआ कहा-

> **अस्माकमपि दारेषु सहनीयं भविष्यति।**
> **यथा हि कुरुते राजा प्रजास्तमनुवर्तते॥**
> (वा. रा. उ. ४३.१९)

(राम के द्वारा सीता का स्वीकार किये जाने के कारण हमको भी अपनी स्त्रियों का वैसा ही आचरण अब सहना पड़ेगा। क्यों कि, जैसा आचरण राजा करता है, वैसा ही आचरण प्रजा करती है)।

लोकापवाद की यह कथा सुन कर, राम अत्यधिक व्याकुल हुआ। दूसरे दिन इसने लक्ष्मण को बुला कर सीता को गंगा नदी के उस पार छोड़ आने का आदेश दिया। तदनुसार, तपोवन दिखलाने के बहाने लक्ष्मण सीता को रथ पर ले गया, एवं उसने सीता को वाल्मीकि ऋषि के आश्रम के समीप छोड़ दिया। उस समय, लक्ष्मण ने बडे दुःख के सांथ सीता को बताया कि, लोकापवाद के कारण राम ने उसका त्याग किया है (वा. रा. उ. ६९)।

कालिदास के रघुवंश में प्राप्त सीतात्याग की कथा में भद्र को राम का मित्र नही, किंतु गुप्तचर बताया गया है (रघु. १४)। कथासरित्सागर एवं भागवत में एक धोबी का उदाहरण दे कर लोकापवाद की यह कथा प्रस्तुत की गयी है। एक बार गुप्तवेश में घुमते हुए राम ने देखा कि, एक धोबी अपनी स्त्री को अपने घर से निकाल रहा है। उस समय धोबी ने अपनी पत्नी से कहा, 'मै राम की तरह नही हूँ, जिन्होंने दीर्घकाल तक दूसरे के घर में रहनेवाली सीता का पुनः स्वीकार किया' (कथा. ९.१. ६६; भागवत. ९.११.९)।

कुश-लव जन्म—वाल्मीकि के आश्रम में, सीता ने दो पुत्रों को जन्म दिया, जिनका नाम वाल्मीकि ने कुश एवं लव रख दिया (वा. रा. उ. ६६)। बाद में कुश एवं लव वाल्मीकि के शिष्य बन गयें, जिसने उन्हें समग्र रामायण सिखा दिया। बाद में वे दोनों सभाओं में जा कर रामायण का गान करने लगे। किसी दिन राम ने उन दोनों को अयोध्या के राजमार्ग में रामायण का गान करते हुए देखा, जब उन्हें महल में ले जा कर इसने भरत आदि भाईयों के साथ रामायण का गान सुना (वा. रा. बा. ४)।

अश्वमेधयज्ञ—रावण स्वयं ब्राह्मण था, जिस कारण उसका वध करने से राम को ब्रह्महत्या का पाप लग गया। उस पाप से बचनें के लिए, राम ने अगस्त्य ऋषि के कथनानुसार अश्वमेधयज्ञ का आयोजन किया (पद्म. पा. ८-१०; शत्रुघ्न देखिये)। इसके पूर्व, राम ने राजसूय यज्ञ करने की इच्छा प्रगट की थी। किंतु भरत के द्वारा, उस यज्ञ के कारण राजवंश के विनाश का भय व्यक्त करने पर, राम ने दस अश्वमेध यज्ञ करने का निश्चय किया। लक्ष्मण ने भी उसी सूचना को अनुमोदन दिया (वा. रा. उ. ८३-८४)।

अश्वमेध यज्ञ करते समय पत्नी की उपस्थिति आवश्यक रहती है, अतएव इसने सीता की स्वर्णमूर्ति बनवा कर एवं उसे अपने पास रख कर यज्ञानुष्ठान किया (वा. रा. उ. ९९.७)। इसी अश्वमेध यज्ञ के समय, कुशलव के साथ ले कर वाल्मीकि ऋषि उपस्थित हुए, एवं उन्होंने उनके द्वारा रामायण का गान करा, राम से कुशलव का परिचय करवाया (कुश-लव देखिये)।

उपर्युक्त यज्ञ के अतिरिक्त, राम के द्वारा वाजपेय, अग्निष्टोम, अतिरात्र आदि यज्ञ करने का निर्देश भी प्राप्त है (वा रा. उ. ९९.९-१०)।

सीता का भूमिप्रवेश—अश्वमेध यज्ञ के अवसर पर, अपने पुत्रों को देख कर, राम ने वाल्मीकि के द्वारा सीता को भी बुलावा भेज दिया। इस पर सीता को साथ ले कर वाल्मीकि रामसभा में उपस्थित हुए, एवं उसने सीता के सतीत्व की साक्ष दी। तदनंतर राम के द्वारा सीता

को अपने सतीत्व का प्रमाण देने के लिए अनुरोध किये जाने पर, सीता ने स्वयं को निष्पाप बताते हुए पृथ्वी में प्रवेश किया (वा. रा. उ. ९७; सीता देखिये)।

देहत्याग—कुछ समय के उपरांत, कौसल्या, सुमित्रा, कैकेयी आदि राम के माताओं का क्रमशः देहान्त हुआ (वा. रा. उ. ९९)। लक्ष्मण भी सरयू नदी के तट पर जा कर, एवं कृतांजलि हो कर सशरीर स्वर्ग चला गया (वा. रा. उ. १०३-१०६)। फिर लक्ष्मण के वियोग के कारण दुःखी हो कर, राम ने भरत, शत्रुघ्न एवं सुग्रीव के साथ सरयू नदी के तट पर देहत्याग किया। पश्चात् यह विष्णु के रूप में प्रविष्ट हुआ, एवं इसके साथ आयें हुए बाकी सारे लोग 'संतानक' लोग में प्रविष्ट हुयें (वा. रा. उ. १०७-११०)।

रामकथा का तिथिनिर्णय—जैसे पहले ही कह गया है कि, वनवास जाते समय राम एवं सीता की आयु क्रमशः सताईस एवं अठारह वर्षों की थी। चौदह वर्षों का वनवास भुगतने के पश्चात् राम को राज्याभिषेक हुआ, जिस समय राम एवं सीता की आयु क्रमशः बयालिस एवं तैतीस वर्षों की थी। रावण के बंदिवास में सीता कुल ग्यारह मास एवं चौदह दिनों तक थी (स्कंद. ३.३.३०; पद्म. पा. ३६)।

राम के वनवास के प्रथम दिन से ले कर, राज्याभिषेक तक की महत्त्वपूर्ण घटनाओं का तिथिनिर्णय उपर्युक्त पुराणों में निम्न प्रकार दिया गया है:—

वैशाख शुक्ल १—वनवास का प्रथम दिन।

वैशाख शुक्ल २—चित्रकूट की ओर गमन।

वैशाख शुक्ल ६—चित्रकूट में भरत से भेंट।

(बारह वर्ष, छः महिनों तक पंचवटी में निवास)

कार्तिक कृष्ण १०—शूर्पणखा के नाक एवं कान काटना।

फाल्गुन कृष्ण ८—रावण के द्वारा सीता का हरण।

(दस महिनों के बाद)

मार्गशीर्ष शुक्ल ९—सीताशोध के लिए गये हनुमत् की संपाति से भेंट।

मार्गशीर्ष शुक्ल ११—महेंद्रपर्वत पर से हनुमत् का लंका के लिए उड़ान।

मार्गशीर्ष शुक्ल १२—अशोकवन में हनुमत् एवं सीता की भेंट।

मार्गशीर्ष शुक्ल १३—हनुमत् के द्वारा अक्ष आदि राक्षसों का वध, एवं अशोकवन का विध्वंस।

मार्गशीर्ष शुक्ल १४—रावण के द्वारा हनुमत्-बंधन, एवं हनुमत् के द्वारा लंकादहन।

मार्गशीर्ष शुक्ल १५—हनुमत् का महेंद्रपर्वत पर पुनरागमन।

पौष कृष्ण १-५—हनुमत् का महेंद्र से किष्किंधा तक प्रवास।

पौष कृष्ण ६—हनुमत् की वानरों से भेंट, एवं मधुवन का विध्वंस।

पौष कृष्ण ७—हनुमत् की राम से भेंट।

पौष कृष्ण ८—राम के द्वारा रावणवध की प्रतिज्ञा, एवं उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र तथा विजय योग पर, दक्षिण की ओर प्रयाण।

पौष कृष्ण ९-३०—राम का किष्किंधा से समुद्र तक का प्रवास।

पौष शुक्ल १-३—राम का समुद्र तट पर आगमन।

पौष शुक्ल ४—बिभीषण का राम के पास आना।

पौष शुक्ल ५—राम के द्वारा समुद्र पार करने का विचार।

पौष शुक्ल ६-९—समुद्र के तुष्ट्यर्थ राम का प्रायोपवेशन।

पौष शुक्ल १०-१३—सेतुबंधन।

पौष शुक्ल १४—राम का सुवेल पर्वत पर आगमन।

पौष शुक्ल १५—माघ कृष्ण २-राम सेना का सुवेल पर्वत पर आगमन।

माघ कृष्ण ३-१०—रामसेना के द्वारा लंका का अवरोध।

माघ कृष्ण ११—शुक एवं सारण नामक रावण के दूतों का राम के पास आगमन।

माघ कृष्ण १२—राम की सेनागणना।

माघ कृष्ण १३-३०—रावण की सेनागणना।

माघ शुक्ल १—रावण के पास अंगद का दूत के रूप में जाना।

माघ शुक्ल २-८—युद्धारंभ।

माघ शुक्ल ९—इंद्रजित् के द्वारा रामलक्ष्मण का नागपाश में बंधन।

माघ शुक्ल १०—गरुडमंत्र की सहाय्यता से हनुमत् के द्वारा राम-लक्ष्मण की मुक्ति।

माघ शुक्ल ११-१२—हनुमत् के द्वारा धूम्राक्ष का वध।

माघ शुक्ल १३—हनुमत् के द्वारा अकंपन का वध।

माघ शुक्ल १४—फाल्गुन कृष्ण १—नील के द्वारा प्रहस्त का वध।

फाल्गुन कृष्ण २–४—राम-रावण का युद्ध एवं रावण का युद्धभूमि से पलायन।

फाल्गुन कृष्ण ५–८—कुंभकर्ण को जगाना।

फाल्गुन कृष्ण ९–१४—राम के द्वारा कुंभकर्ण से युद्ध एवं वध।

फाल्गुन कृष्ण ३०—युद्धविराम।

फाल्गुन शुक्ल १–४—राम लक्ष्मणों का इंद्रजित् से युद्ध।

फाल्गुन शुक्ल ५–७—लक्ष्मण के द्वारा अतिकाय का वध।

फाल्गुन शुक्ल ८—इंद्रजित् से द्वितीय युद्ध।

फाल्गुन शुक्ल ९–१२—कुंभ एवं निकुंभ का वध।

फाल्गुन शुक्ल १३—चैत्र कृष्ण १–मकराक्ष का वध।

चैत्र कृष्ण २—इंद्रजित् से तृतीय युद्ध, एवं लक्ष्मण की मूर्च्छा।

चैत्र कृष्ण ३–७—युद्धविराम, एवं हनुमत् के द्वारा लक्ष्मण के लिए ओषधी लाना।

चैत्र कृष्ण ८–१३—इंद्रजित् से चतुर्थ युद्ध एवं वध।

चैत्र कृष्ण १४—रावण का आसुरि यज्ञ।

चैत्र कृष्ण ३०—रावण का युद्धभूमि में प्रवेश।

चैत्र शुक्ल १–५—राम-रावणयुद्ध, एवं रावण का युद्धभूमि से पलायन।

चैत्र शुक्ल ६–८—महापार्श्व आदि राक्षसों का वध।

चैत्र शुक्ल ९—राम–रावणयुद्ध एवं रावण का युद्ध भूमि से पलायन।

चैत्र शुक्ल १०—युद्धविराम।

चैत्र शुक्ल ११—इंद्र के द्वारा राम के लिए रथ का प्रेषण।

चैत्र शुक्ल १२—वैशाख कृष्ण ४—राम-रावणयुद्ध, एवं रावण का वध।

वैशाख कृष्ण १५—युद्धसमाप्ति एवं रावण का अंतिम संस्कार।

वैशाख शुक्ल २—बिभीषण का राज्याभिषेक।

वैशाख शुक्ल ३—राम एवं सीता की भेंट।

वैशाख शुक्ल ४—राम का विमान में बैठ कर अयोध्या के लिए प्रस्थान।

वैशाख शुक्ल ५—राम के चौदह वर्षों के वनवास की समाप्ति, एवं उसी दिन प्रयाग में भारद्वाज–आश्रम में आगमन।

वैशाख शुक्ल ६— नंदिग्राम में राम एवं भरत की पुनर्भेट।

वैशाख शुक्ल ७—राम का राज्याभिषेक।

सर्वमान्य तिथियाँ—वाल्मीकि रामायण के 'तिलक टीका' में एवं कालिकापुराण में राम के वनवास का तिथि–निर्णय कुछ अलग ढँग से प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है:– चैत्र शुक्ल १०–वनवास का प्रथम दिन; भाद्रपद शुक्ल १–युद्धारंभ; आश्विन शुक्ल १– राम–रावणयुद्ध; आश्विन शुक्ल ९–रावण वध; कार्तिक कृष्ण ८–राम का अयोध्या में आगमन। उत्तर भारत में रामलीला आदि भी इन्हीं तिथियों के अनुसार होते है।

चांद्रमास के अनुसार, अधिक मास छोड़ कर काल गणना की जाएँ, तो यह कालगणना वाल्मीकि रामायण से भी बिलकुल मिलती जुलती है (वा. रा. यु. १११ तिलक टीका; कालिका ६२.२३–३९)।

ताम्रपटों का निर्देश—जब वनवास के बाद राम अयोध्या में आया, तब इसने ताम्रपट पर अपने पराक्रम का वर्णन, एवं राज्यशासन के कुछ नियम लिखवाये। इसने उन ताम्रपटों की स्थापना श्रीमातास्थान, बकुलार्क, एवं धर्मस्थान आदि स्थानों में की, एवं इस समारोह के उपलक्ष्य में पचास गाँव ब्राह्मणों को दान में दियें (स्कंद. ३.२.२४)।

'कालनिर्णयरामायण' ग्रन्थ—कई रामायणों में राम कथा की प्रधान घटनाओं की तिथियाँ दी हैं, जिनमें निम्न रामायणग्रंथ प्रमुख हैः—१. अग्निवेश रामायण–श्लोक संख्या १०५; २. भव्द्रामायग–(कल्याण 'रामायणांक' पृ. ३०४) ३. लोमश रामायण–जो पद्मपुराण के पातालखंड में प्राप्त है (पद्म. पा. ३६)।

इनके अतिरिक्त व्यासकृत 'रामायणतात्पर्यदीपिका,' श्रीनिवासराघवकृत 'रामायण संग्रह' एवं 'रामावतारकाल-निर्णय सूचिका' आदि ग्रन्थों में भी रामचरित्र की तिथियों का वर्णन प्राप्त हैं।

चरित्रचित्रण—एक सत्यपराक्रमी क्षत्रिय, आज्ञाधारक पुत्र एवं स्वदारनिरत पति के रूप में राम का चरित्र वाल्मीकि रामायण में किया गया है। तिब्बती, खोतानी, सिंहली एवं मलय आदि विदेशी रामकथाओं में भी राम प्रायः एक पत्नीव्रती राजा के रूप में चित्रित किया गया है। यह वाल्मीकीय आदर्श का ही स्वाभाविक विकास प्रतीत होता है।

सीता के प्रति राम का विशुद्ध एवं निरतिशय प्रेम का चित्रण वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है (वा. रा. अर. ३.६०–६६; ७५; सुं. २७–२८; ३०; यु. ६६; उ. ५)। अत्रि ऋषि के आश्रम में सीता ने अत्रिपत्नी अनसूया से कहा था, 'राम मुझसे इतना ही प्रेम करते है, जितना मैं उनसे करती हूँ। इसी कारण, मैं अपने आप को अत्यंत भाग्यवान् समझती हूँ।

रामचरित्र के दोष—राम स्वयं एक अत्यंत सच्चरित्र एवं क्षत्रियधर्म का पालन करनेवाला आदर्श राजा होते हुए भी, इसके चरित्र के कुछ दोष वाल्मीकि रामायण एवं उत्तररामचरित में दिखाये गये है, जो निम्न प्रकार है:– १. स्त्री होते हुए भी इसने ताटका का वध किया; २. खर से युद्ध करते समय यह तीन पग पीछे हटा (वा. रा. अर. ३०.२३); ३. वृक्ष के पीछे छिप कर इसने वालि का वध किया (उत्तरराम. ५); ४. लोकापवाद के भय से निर्दोष सीता का त्याग किया; ५. अहिरावण के पत्नी के महल प्रवेश किया।

इसमें से अंतिम आक्षेप अनैतिहासिक मान कर छोड़ा जा सकता है। ताटका का वध विश्वामित्र के संमति से किये जाने के कारण, एवं खर के वध के समय शरसंधान के लिए पीछे हटने के कारण, इन दोनों प्रसंग में राम निर्दोष प्रतीत होता है। सीतात्याग के संबंध में व्यक्तिधर्म एवं राजधर्म का संघर्ष प्रतीत होता है। रही बात वालि-वध की, जिस समय राम का आचरण असमर्थनीय प्रतीत होता है।

परिवार—राम को अपनी पत्नी सीता से कुश एवं लव नामक दो पुत्र उत्पन्न हुयें थे, जिनका जन्म राम के द्वारा सीता का त्याग किये जाने पर वाल्मीकि ऋषि के आश्रम में हुआ था। राम के पश्चात् कुश दक्षिण कोसल का राजा बन गया। लव को उत्तर कोसल देश का राज्य प्राप्त हुआ, जिसकी राजधानी श्रावस्ती नगरी में थी। राम के पश्चात् अयोध्या नगरी उजड़ गयी, जिस कारण कुश ने विंध्य पर्वत के दक्षिण तट पर कुशावती नामक नयी राजधानी की स्थापना की।

राम के छोटे भाई लक्ष्मण को अंगद एवं चंद्रकेतु नामक दो पुत्र थे। उन्हें राम ने क्रमशः हिमालय पर्वत के समीप स्थित कारुपथ एवं मल्ल देशों का राज्य प्रदान किया। उन प्रदेशों में 'अंगदिया' एवं 'चंद्रचक्रा' नामक राजधानियाँ बसा कर वे दोनों राज्य करने लगे (वा. रा. उ, १०२)।

राम के तृतीय बन्धु भरत को अपनी माता कैकेयी का केकय राज्य प्राप्त हुआ, जिसमें सिन्धु (आधुनिक उत्तर सिंध) प्रदेश भी शामिल था। भरत के तक्ष एवं पुष्कल नामक दो पुत्र थे, जिन्होंने आगे चल कर गंधर्व लोगों से गांधार देश को जीत लिया, एवं वहाँ क्रमशः तक्षशिला एवं पुष्कलावती नामक राजधानियों की स्थापना की (वा. रा. उ. १०१)। इनमें से तक्षशिला नगरी के खण्डहर आधुनिक रावलपिंडी के उत्तरीपश्चिम में २० मील पर स्थित भीर में प्राप्त हैं, एवं पुष्कलावती के खण्डहर आधुनिक पेशावर के उत्तरीपश्चिम में १७ मील पर कुभा एवं सुवास्तु नदियों के संगम पर स्थित चारसद्दा ग्राम में प्राप्त हैं।

राम के चतुर्थ बन्धु शत्रुघ्न ने यमुना नदी के पश्चिम में सात्वत यादवों को पराजित कर, उनका राजा मधु राक्षस का पुत्र माधव लवण का वध किया, एवं मधुपुरी अथवा मधुरा (मथुरा) में अपनी राजधानी स्थापित की।

शत्रुघ्न को सुबाहु एवं शत्रुघातिन् नामक दो पुत्र थे। शत्रुघ्न के पश्चात् उनमें से सुबाहु मधुरा नगरी में राज्य करने लगा, एवं शत्रुघातिन् को वैदिश नगरी का राज्य प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. १०७–१०८)।

राम के परिवार के इन लोगों के राज्य काफ़ी दिनों तक न रह सकें। गांधार देश में स्थित तक्ष एवं पुष्कल को उसी प्रदेश में रहनेवाले द्रुह्यु लोगों ने जीत लिया। शत्रुघ्नपुत्र, सुबाहु एवं शत्रुघातिन् को यादव राजा भीम सात्वत ने मधुराराज्य से पदभ्रष्ट किया, जहाँ पुनः एक बार यादववंशीयों का राज्य शुरु हुआ। लक्ष्मणपुत्र अंगद एवं चंद्रकेतु के राज्य भी नष्ट हो गयें, एवं लव के उत्तर कोसल देश के राज्य की भी वही हालत हुई। आगे चल कर अयोध्या का सूर्यवंशीय राज्य भी नष्टप्राय हुआ, एवं उत्तरी भारत का सारा राज्य पौरव एवं यादव राजाओं के हाथ में चला गया।

वाल्मीकि रामायण—रामचरित्र का प्राचीनतम विस्तृत ग्रन्थ 'वाल्मीकि रामायण' है, जो आदिकवि वाल्मीकि की रचना मानी जाती है। रे. बुल्के के अनुसार, इस ग्रंथ का रचनाकाल ई. पू. ३०० माना गया है। इस ग्रन्थ की कुल श्लोकसंख्या २४००० हैं, जो बाल, अयोध्या, अरण्य, किष्किंधा, सुंदर, युद्ध एवं उत्तर आदि सात कांडों में विभाजित है।

महाभारत में रामकथा—महाभारत के वनपर्व में 'रामोपाख्यान' नामक एक उपपर्व है, जिसमें उन्नीस

अध्याय है। जयद्रथ के द्वारा द्रौपदी का हरण किये जाने पर युधिष्ठिर की मनःशांति के लिए मार्कंडेय ऋषि ने उसे प्राचीन राम-कथा सुनाई, जो 'रामोपाख्यान' में समाविष्ट की गयी है (म. व. २५८-२७६)।

इसके अतिरिक्त महाभारत वनपर्व में संक्षेप रामायण प्राप्त है, जो हनुमत् ने भीमसेन को कथन किया था (म. व. १४७. २३-३८)। महाभारत में प्राप्त 'षोडश राजकीय उपाख्यान' में भी राम दाशरथि का निर्देश प्राप्त है।

पुराणों में रामकथा—निम्नलिखित पुराण-ग्रन्थों में रामकथा प्राप्त हैः—

(१) **ब्रह्मांडपुराण**—राम, विष्णु का अवतार (ब्रह्मांड. ३.७३); सीताजन्म (ब्रह्मांड. ३.६४)।

(२) **विष्णुपुराण**—संक्षिप्त रामकथा (विष्णु. ४.४) सीताजन्म (विष्णु. ४.५)।

(३) **वायुपुराण**—संक्षिप्त रामकथा (वायु. ८८. १८३-१९६); सीताजन्म (वायु. ८९.२२)।

(४) **भागवतपुराण**—रामकथा (भा. ९.१०-११)।

(५) **कूर्मपुराण**—राक्षसवंशवर्णन (कूर्म. पूर्व.१९); सूर्यवंश के अंतर्गत रामकथा (कूर्म. पूर्व. २१); पतिव्रतोपाख्यान में सीताचरित्र (कूर्म. उत्तर. ३४)।

(६) **वराहपुराण**—रामजन्म (वराह. ४५)।

(७) **अग्निपुराण**—रामकथा, जो वाल्मीकि रामायण के सात खण्डों का संक्षेप है (अग्नि. ५-११)।

(८) **लिंगपुराण**—संक्षिप्त रामकथा (लिंग. पूर्व. ६६.३५-३६)।

(९) **नारदपुराण**—संक्षिप्त रामकथा (नारद. १. ७५)।

(१०) **ब्रह्मपुराण**—रामचरित्र, जो संपूर्णतः हरिवंश से उद्धृत किया गया है (ब्रह्म. २१३); रावणचरित्र (ब्रह्म. १७६); रामतीर्थ माहात्म्य (ब्रह्म. ७०-१७५)।

(११) **गरुडपुराण**—रामकथा (गरुड. १४३)।

(१२) **स्कंदपुराण**—रावणवध (स्कंद. माहेश्वर-); दशरथ का जन्म (स्कंद. २०-२५); वाल्मीकि की जन्मकथा (स्कंद. वैष्णव. २०-२५); सेतुबंधन की कथा (स्कंद. ब्राह्म. २-४७); कालनिर्णय रामायण (स्कंद. धर्मारण्य. ३०-३१)।

(१३) **पद्मपुराण**—राम का अश्वमेध यज्ञ (पद्म. पा. १-६८); लोमश रामायण (पद्म. पा. ३६); जांबुवत् रामायण (पद्म. पा. ११२); रामचरित्र (पद्म. उ. २६९-२७१)।

(१४) **नृसिंहपुराण**—जिसमें वाल्मीकि रामायण के प्रथम छः काण्डों की कथा संक्षेप में दी गयी है (नृसिंह ४७-५२)।

रामभक्ति-सांप्रदाय—भागवतादि पुराण ग्रंथों में राम एवं कृष्ण को विष्णु का अवतार माना गया है। किन्तु फिर भी रामोपासना कृष्णोपासना की अपेक्षा काफ़ी उत्तरकालीन प्रतीत होती है। यद्यपि राम को विष्णु का अवतार मानने की कल्पना ईसा की पहली शताब्दी में प्रस्थापित हो चुकी थी, फिर भी इस सांप्रदाय की प्रतिष्ठा ग्यारहवीं शताब्दी के बाद ही प्रस्थापित होती सी प्रतीत होती है (डॉ. भांडारकर, वैष्णविजम पृ. ४७)। रामपंचायतन की प्रतिमा, जिसमें राम, लक्ष्मण, भरत, सीता एवं हनुमत् समाविष्ट किये जाते हैं, वह भी इसी काल में उत्पन्न प्रतीत होती है।

रामभक्तिप्रभावित उपनिषद् ग्रन्थ—निम्नलिखित तीन उपनिषद् ग्रंथ रामभक्ति सांप्रदाय से प्रभावित माने जाते हैं:— १. रामपूर्वतापनीय; २. रामोत्तरतापनीय; ३. रामरहस्य। इन तीनो ग्रंथों में रामयंत्र, राममंत्र एवं सीतामंत्र का निर्देश प्राप्त है, एवं इन ग्रंथों में राम एवं सीता को क्रमशः परमपुरुष एवं मूल प्रकृति माना गया है।

निम्नलिखित वैष्णवोपदनिषदों में भी रामकथा का निर्देश प्राप्त हैः— १. कलिसंतरण; २. गोपालोत्तरतापनीय; ३. तारसार; ४. त्रिपाद-विभूति-महानारायण; ५. मुक्तिकर। इनके अतिरिक्त शाक्तोपनिषदों में भी 'सीतोपनिषद्' का निर्देश प्राप्त है।

रामभक्ति का विकास—रामभक्ति के विकास के साथ साथ रामकथा को भक्ति सांप्रदाय के ढाँचें में बिठाने की आवश्यकता निर्माण हुई, जिसके फलस्वरूप अनेकानेक सांप्रदायिक रामायणों का निर्माण हुआ। इन सांप्रदायिक रामायणों में अध्यात्म, आनंद एवं अद्भुत ये तीन रामायण ग्रंथ प्रमुख माने जाते हैं।

आधुनिक भारतीय भाषाओं में लिखित रामायण ग्रंथों में तुलसी द्वारा विरचित 'रामचरितमानस' एक अद्वितीय ग्रंथ है, जिसमें रामचरित्र की सर्वांगीण झाँकि आदर्शात्मक रूप में प्रस्तुत की गयी है।

सांप्रदायिक रामायण ग्रन्थ—इन ग्रंथों में निम्नलिखित ग्रंथ प्रमुख माने जाते हैं:—

(१) अध्यात्मरामायणः—ग्रंथकर्ता—अनिश्चित, किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार रामानंद इस ग्रंथ के रचयिता थे; रचनाकाल—इ. स. १४ वीं अथवा १५ वीं शताब्दी; लोकसंख्या—४३९९, जो ७ काण्डों में, एवं ६५ सर्गों में विभाजित है; महत्त्व—यह ग्रंथ सांप्रदायिक रामायणों में सब से अधिक महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस ग्रंथ में रामानुज के द्वारा प्रतिपादित समुच्चयवाद का स्पष्ट शब्दों में विरोध किया गया है, विशिष्टाद्वैत का कहीं भी समर्थन नहीं हुआ। आनंद रामायण, तुलसीदासजी-कृत रामचरितमानस एवं एकनाथ के मराठी भावार्थ-रामायण पर इसका काफ़ी प्रभाव है। रामभक्ति के विकास में इस ग्रंथ का महत्त्व अधिक माना जाता है।

इस ग्रंथ में राम एवं सीता को क्रमशः परम पुरुष एवं माया माना गया है, एवं इसी रूपक के द्वारा शंकराचार्य-प्रणीत अद्वैत वेदांत का प्रतिपादन किया गया है। सरल प्रतिपादन, भक्तिप्राधान्य, अद्वैत तत्त्वज्ञान का प्राधान्य, एवं अल्पविस्तार, इन गुणों के कारण यह ग्रंथ भारतीय रामभक्तों में विशेष आदरणीय माना जाता है।

(२) आनंदरामायण—रचनाकाल—१५ वीं शताब्दी, अर्थात् अध्यात्म रामायण के पश्चात्, एवं एकनाथ के पूर्व; श्लोकसंख्या—१२२५२, जो निम्नलिखित ९ काण्डों में विभाजित है:—सार, यात्रा, याग, विलास, जन्म, विवाह, राज्य, मनोहर एवं पूर्ण। इस ग्रंथ में अध्यात्म रामायण के कई उद्धरण प्राप्त हैं।

(३) अद्भुतरामायण—रचनाकाल—ई. स. १३००-१४००; श्लोकसंख्या—१३५३, जो २७ सर्गों में विभाजित है; महत्त्व—इस ग्रंथ की रचना 'वाल्मीकिभारद्वाजसंवाद' के रूप में प्राप्त है, एवं उसके अधिकांश सर्ग में (११-१५) राम एवं हनुमत् का भक्ति के विषय में एक संवाद प्राप्त है।

(४) महारामायण (=योगवासिष्ठ=वसिष्ठ रामायण) ग्रंथकर्ता—वसिष्ठ; रचनाकाल—ई. स. ८ वीं शताब्दी (विंटरनित्स), अथवा ११ वीं शताब्दी (डॉ. राघवन्); श्लोकसंख्या—३२ हजार; महत्त्व—यह ग्रंथ वसिष्ठ एवं राम के संवाद के रूप में लिखा गया है, जिसमें अध्यात्म का विस्तृत एवं प्रासादिक विवेचन प्राप्त है।

(५) तत्त्वसंग्रहरामायण—ग्रंथकर्ता—राम ब्रह्मानंद; रचनाकाल—ई. स. १७ वी शताब्दी; महत्त्व—इस ग्रंथ में रामकथा के तत्त्व (अर्थात् राम के परब्रह्मत्व) पर प्रकाश डाला गया है।

(६) पुरातनरामायण (जांबवत् रामायण)—जो पद्म-पुराण पातालखंड में प्राप्त है। यह प्रायः गद्य में है, एवं जांबवत् के द्वारा राम को कथन किया गया है।

(७) संक्षेपरामायण—जो महाभारत वन पर्व में प्राप्त है (म. व. १४७.२३-३८), एवं हनुमत् के द्वारा भीम को कहा गया है।

(८) मंत्ररामायण—जिसमें रामायण के वेदमूलत्व का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रंथ में, ग्रंथकर्ता नीलकंठ ने वैदिक मंत्रों का एक संग्रह प्रस्तुत किया है, जिसका परोक्षार्थ रामकथा से संबंध रखता है।

(९) भुशुंडीरामायण (= मूलरामायण = आदि-रामायण)—जो पूर्व, पश्चिम, दक्षिण, उत्तर नामक पर्वों में विभाजित है।

(१०) वेदान्तरामायण—जिसमें वाल्मीकि के द्वारा परशुराम का जीवन चरित्र राम को सुनाया गया।

इनके अतिरिक्त निम्नलिखित रामायण-ग्रंथों का निर्देश श्रीरामदास गौड के 'हिन्दुत्व' में प्राप्त है, जिनमें से अधिकांश ग्रंथ १७ वीं शताब्दी अथवा उसके बाद की रचनाएँ प्रतीत होती हैं:—महारामायण, संवृत्तरामायण, लोमश-रामायण, अगस्त्यरामायण, मंजुलरामायण, सौपद्मरामायण, सौहार्दरामायण, सौर्यरामायण, चांद्ररामायण, मैंदरामायण, सुब्रह्मरामायण, सुवर्चसरामायण, देवरामायण, श्रवण-रामायण, एवं दुरंतरामायण।

बौद्ध एवं जैन वाङ्मय में रामकथा—ई. पू. चौथी शताब्दी से ई. स. सोलहवी शताब्दी तक के बौद्ध एवं जैन साहित्य में, रामकथाविषयक अनेकानेक ग्रंथ प्राप्त हैं, जिनमें निम्नलिखित ग्रन्थ प्रमुख है:—दशरथजातक की गाथाएँ (ई. पू. ४ थी शताब्दी); अनामकजातक (ई. १ ली शताब्दी); पउमचरियम्, दशरथकथानकम् (ई. ४ थी शताब्दी); पद्मचरित (ई. ७ वीं शताब्दी); पउमचरिउ (ई. ८ वीं शताब्दी); रामलक्खणचरियम् (ई. ९ वीं शताब्दी); अंजनापवनांजय (ई. १३ वीं शताब्दी); रामदेवपुराण; बलभद्रपुराण (ई. १५ वीं शताब्दी); सौमसेन विराचित रामचरित (ई. १६ वीं शताब्दी)।

आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा—आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा पर आधारित अनेकानेक ग्रन्थों की निर्मिति ११ वी शताब्दी के उत्तरकाल में हो चुकी है, जिनकी संक्षिप्त जानकारी निम्नप्रकार है:—

(१) असमीया--शंकरदेव द्वारा विरचित माधव-कंदलीरामायण (१४ वीं शताब्दी); गीतिरामायण, रामविजय, श्रीरामकीर्तन (१६ वीं शताब्दी), गणक-चरित, कथा रामायण (१७ वीं शताब्दी)।

(२) उड़ीया--'उत्कलवाल्मीकि' बलरामदासकृत जगमोहनरामायण, रामविभा (१६ वीं शताब्दी); रघुनाथविलास, अध्यात्मरामायण (१७ वीं शताब्दी)।

(३) उर्दू--मुन्शी जगन्नाथ कृत रामायण खुश्तर (१९ वीं शताब्दी)।

(४) कन्नड--पंपरामायण (११ वीं शताब्दी); नरहरिकृत तोरवेरामायण, एवं मैरावण काल्ग (१६ वीं शताब्दी)।

(५) काश्मीरी--काश्मीरी रामायण, अर्थात् रामावतारचरित।

(६) गुजराती--रामलीला ना पदों (१४ वीं शताब्दी); रामविवाह, रामबालचरित, सीताहरण (१५ वीं शताब्दी); रावणमंदोदरीसंवाद, सीताहनुमानसंवाद, लवकुशाख्यान (१६ वीं शताब्दी); रणयज्ञ, सीताविरह (१७ वीं शताब्दी)।

(७) गुरुमुखी पंजाबी—गुरुगोविंदसिंह कृत रामावतार अर्थात् गोविंद रामायण (१७ वीं शताब्दी)।

(८) तमिळ—कंबरामायण (१२ वीं शताब्दी)।

(९) तेलुगु-- रंगनाथकृत द्विपदरामायण, निर्वचनोत्तर रामायण, विठ्ठलराजुकृत उत्तररामायण (१३ वीं शताब्दी); भास्कररामायण (१४ वीं शताब्दी); मोल्लरामायण (१६ वीं शताब्दी); कट्टवरदकृत द्विपद रामायण।

(१०) बंगाली—कृत्तिवासरामायण (१५ वीं शताब्दी); अद्भुताश्चर्य रामायण, रामायणगाथा; अद्भुतरामायण, अध्यात्मरामायण (१७ वीं शताब्दी)।

(११) मराठी--भावार्थ रामायण (१६ वीं शताब्दी); श्रीधर द्वारा विरचित रामविजय (१८ वीं शताब्दी)।

(१२) मलयालम--रामचरितम् (१४ वीं शताब्दी); कण्णश्शरामायण (१५ वीं शताब्दी); अध्यात्मरामायण (१६ वीं शताब्दी)।

(१३) सिंहली--रामकथा (१५ वीं शताब्दी)।

(१४) हिन्दी--भरतमिलाप, रामचरितमानस (१६ वीं शताब्दी); रामचंद्रिका, अंवधविलास, गोविंदरामायण (१७ वीं शताब्दी)।

इनके अतिरिक्त तिब्बती, खोतानी, मलायी, श्यामी, कांबोदिया, एवं जावा की भाषाओं में भी, राम कथा-विषयक साहित्य प्राप्त है, जिसकी रचना नौवीं शताब्दी से लेकर सोलहवीं शताब्दी तक हो चुकी है।

राम मार्गवेय श्यापर्णेय—एक आचार्य, जो श्यापर्णो के पुरोहित परिवार में से एक था (ऐ. ब्रा. ७.२७.३)। यह मृगवु का पुत्र था, जिस कारण इसे मार्गवेय पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

इसका मत था कि, क्षत्रियों के द्वारा किये गये यज्ञ में, सोम के स्थानपर औदुंबर के फूलों का उपयोग करना चाहिए, जो मत इसने विश्वंतर राजा को कथन किया था। ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र लोगों के लिये अलग अलग वस्तुओं का सोमरस इसके द्वारा बताया गया है, जिसके अनुसार इन चार जातियों को क्रमशः सोमवल्ली, औदुंबर (पीपल एवं प्लक्ष), दधि, एवं जल का सोम के लिये उपयोग करने को कहा गया है।

यह विश्वंतर राजाओं का पुरोहित था। विश्यापर्ण नामक पुरोहितों ने विश्वंतर राजाओं के पुरोहित बनने की कोशिश की। किन्तु इसने विश्यापर्णो को दूर हटा कर, अपना पौरोहित्य पुनः प्राप्त किया।

रामकायन—बस्त नामक आचार्य का पैतृक नाम।

रामकृष्ण--एक व्याकरणाचार्य, जिसके द्वारा रचित षोडशश्लोकी शिक्षाग्रंथ प्राप्त है। उस ग्रंथ में वर्णोच्चार का ही केवल विचार किया गया है। स्वयं शंकर के मुख से इस शिक्षाग्रंथ का प्रणयन हुआ ऐसा निर्देश उक्त ग्रंथ के प्रारंभ में है।

२. एक मुनि, जिसके तप के कारण वेंकटाचल पर 'रामकृष्णतीर्थ' का निर्माण हुआ (स्कंद. २.१.१५)।

रामचंद्र--(पौर. भविष्य.) एक राजा, जो पुरंजय राजा का पुत्र था।

रामठ—एक म्लेंछ जाति, जिसे नकुल ने अपने पश्चिम दिग्विजय के समय जीता था युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय ये लोग उपस्थित थे। पाठभेद- 'रमठ'।

रामेश्वर ज्योतिर्लिंग--शंकर का एक अवतार, जो रामेश्वर में प्रगट हुआ था। शिव का यह अवतार रामचंद्र के लिए लिया गया था (शिव. शत. ४२.)। इसके उपलिंग का नाम गुप्तेश्वर था (शिव. कोटि १.)।

रामोद—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रायाण—गोकुल का एक ग्वाला, जो कृष्ण की माता यशोदा का भाई था (ब्रह्मवै. २.४९.३७-३९)।

इसकी पत्नी का नाम राधा था। इसे 'रापाण' नामान्तर भी प्राप्त था (ब्रह्मवै. ४.३)

रायोवाज--एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. ८.१.४; १४.४.१७)। यह यति लोगों में से एक था, एवं इन्द्र ने इसे वैद्यविद्या प्रदान की थी (यति १. देखिये)।

रावण 'दशग्रीव'--लंका का सुविख्यात राक्षस सम्राट, जो पुलस्त्यपुत्र विश्रवस् नामक राक्षस का पुत्र था। राम दाशरथि की पत्नी सीता का हरण करने के कारण, रावण प्राचीन भारतीय इतिहास में पाशवी वासना एवं दुष्टता का प्रतीक बन गया है।

नाम--इसे रावण नाम क्यों प्राप्त हुआ, इस संबंधी कथा वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। शिव के द्वारा इसकी भुजाएँ कैलास पर्वत के नीचे दबायी गयीं। उस समय, इसने क्रोध एवं पीड़ा से भीषण चीत्कार (रावः सुदारुणः) किया, जिस कारण इसे रावण नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. ३.१६.२९)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र 'शत्रु को भीषण चीत्कार करने पर विवश करनेवाला' इस अर्थ से इसे 'शत्रु रावण' कहा गया है (वा. रा. सुं. २३.८)।

हनुमत् की तरह रावण का नाम भी एक अनार्य नाम का संस्कृत रुपान्तर प्रतीत होता है। पार्गिटर के अनुसार, रावण शब्द तामिल 'इरैवण' (=राजा) का संस्कृत रूप है (पार्गि. २७७)। रायपुर जिले में रहनेवाले गोंड लोग अपने को आज भी रावण के वंशज मानते है। राँची जिले के कटकयाँ गाँव में 'रावना' नामक परिवार आज भी विद्यमान है। इससे स्पष्ट है कि, रामकथा में निर्दिष्ट लंकाधिपति रावण एवं उसकी राक्षस प्रजा विंध्य प्रदेश एवं मध्य भारत में निवास करनेवाली अनार्य जातियों से कुछ ना कुछ संबंध ज़रूर रखती थी। इस तरह रावण एवं राक्षस वास्तव में यही नाम धारण करनेवाले इसी प्रदेश के आदिवासी थे (बुल्के, रामकथा पृ. १२३)।

रावण का उपनाम 'दशग्रीव' (=दशशीर्ष, दशानन) था, जिस कारण इसे दस सिर एवं बीस हाथ थे, ऐसा कल्पनारम्य वर्णन अनेकानेक रामायण ग्रंथों में एवं पुराणों में किया गया है। किंन्तु संभव है, 'दशग्रीव' नाम पहले इसे रूपक के रुप में प्रयुक्त किया होगा (दशग्रीव, अर्थात् जिसकी ग्रीवा दश अन्य साधारण ग्रीवों के समान बलवान् हो), एवं बाद में यह रुपकात्मक अर्थ नष्ट हो कर इसे दस मुख होने की कल्पना प्रसृत हो गयी हो। पार्गिटर के अनुसार, दशग्रीव शब्द किसी द्राविड़ नाम का संस्कृत रूप होगा। वाल्मीकि रामायण में कई जगह, इसे एक मुख, एवं दो हाथ होने का स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (वा. रा. सुं. २२.२८; यु. ४०.१३;५९.४६; १०७.५४-५७; १०९.३; ११०. ९-१०; १११.३४-३७)।

अथर्ववेद में एक 'दशास्य'वाले (दशमुख) ब्राह्मण का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ४.६.१)। इस निर्देश का प्रभाव भी रावण के स्वरूप की कल्पना पर पड़ा होगा।

स्वरूपवर्णन--रावण का शरीर प्रचंड, बलिष्ठ एवं 'नीलांजनचयोपम' अर्थात् कृष्णवर्णीय था। इसकी आँखे क्रूर, विकृत एवं कृष्णपिंगल वर्ण की थीं (वा. रा. सुं. २२.१८)। इसकी दोनों भुजाएँ इंद्रध्वज के समान बलिष्ठ थी, एवं उन पर स्वर्ण के बाहुभूषण रहते थे। इसके स्कंध अत्यंत विशाल थे, जिन पर इंद्रवज्र के आघात से उत्पन्न हुयें अनेक घाव स्पष्ट रूप से दिखाई देते थें। क्रोधित होने पर इसकी आँखे लाल, महाभयंकर एवं दैदीप्यमान बनती थी (वा. रा. सुं. १०.१५-२०)।

इसे केवल दो ही हाथ थे, किन्तु युद्ध के समय अपनी इच्छा के अनुसार, दश (अथवा विंश) हस्तधारी बनने की शक्ति इसमें थी।

वाल्मीकि रामायण में क्वचित् इसे वाघ, उँट, हाथी अश्व आदि की नानाविध शीर्ष धारण करनेवाला, फैली हुयीं (विवृत्त) आँखोवाला, एवं भूतगणों से परिवेष्टित कहा गया है (वा. रा. यु. ५९.२३)। किन्तु इस प्रकार का वर्णन वाल्मीकि रामायण में बहुत ही कम है।

जन्म--पुलस्त्य ऋषि का पुत्र विश्रवस् रावण का पिता था। उसकी माता का नाम केशिनी था, जो सुमालि राक्षस की कन्या थी।

वाल्मीकि रामायण में इसकी जन्मकथा निम्न प्रकार दी गयी है:--ब्रह्मा ने जलसृष्टि का निर्माण करने के पश्चात्, प्राणिसृष्टि का निर्माण किया, जिनमें से यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुयें। इन राक्षसों का एक प्रमुख नेता हेति था, जिसके पुत्र का नाम विद्युत्केश एवं पौत्र का नाम सुकेश था। सुकेश को माल्यवान्, सुमालि एवं मालि नामक तीन पुत्र थे, जिन्हांने ब्रह्मा से अमरत्व का वरदान प्राप्त किया था। उन राक्षसों के लिए विश्वकर्मा ने त्रिकूट पर्वत पर लंका का निर्माण किया। ये तीनों भाई देवताओं तथा तपस्वियों को त्रस्त करने लगे, जिस कारण विष्णु ने मालि का वध किया, एवं सुमालि को लंका छोड़ कर, रसातल जाने पर विवश किया।

विश्रवस् ऋषि को अपनी देववर्णिनी नामक पत्नी से कुवेर (वैश्रवण) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। एक बार सुमालि ने कुवेर कों पुष्पक विमान पर विराजमान हो कर बड़े ही वैभव से भ्रमण करते हुए देखा, जिस कारण उसने अपनी कन्या कैकसी विश्रवस् ऋषि को विवाह में देने का निश्चय किया। विश्रवस् ऋषि ने कैकसी का स्वीकार करते हुए कहा, 'तुम इस दारुण समय पर आई हो, इस कारण तुम्हारे पुत्र क्रूरकर्मा राक्षस होंगे; किन्तु अंतीम पुत्र धर्मात्मा होगा'। इसी शाप के अनुसार, कैकसी को रावण, कुंभकर्ण, एवं शूर्पणखा नामक लोकोद्वेग-करी संतान, एवं बिभीषण नामक धर्मात्मा पुत्र उत्पन्न हुआ।

महाभारत में रावण को विश्रवस् एवं पुष्पोत्कटा का पुत्र कहा गया है। विश्रवस् का अन्य पुत्र कुवेर था, जिसने अपने पिता की सेवा के लिए पुष्पोत्कटा, राका एवं मालिनी नामक तीन सुंदर राक्षसकन्याएँ नियुक्त की। इन राक्षसकन्याओं में से पुष्पोत्कटा से रावण एवं कुंभकर्ण का, राका से खर एवं शूर्पनखा का, एवं मालिनी से बिभीषण का जन्म हुआ (म. व. २५९.७)।

वाल्मीकि रामायण एवं महाभारत में प्राप्त उपर्युक्त कथाओं में रावण को ब्रह्मा का वंशज एवं कुवेर का भाई कहा गया है, जो कल्पनारम्य प्रतीत होता है। रावण का स्वतंत्र निर्देश प्राचीन साहित्य में रामकथा के अतिरिक्त अन्य कहीं भी प्राप्त नहीं है, जैसा कि ब्रह्मा अथवा कुवेर का प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, प्राचीन ऐति-हासिक राक्षस कुल से रावण का कोई भी संबंध वास्तव में नहीं था। किन्तु रामकथा के विकास के साथ साथ रावण का भी महत्त्व बढ़ने पर, राक्षस वंश के साथ इसका संबंध प्रस्थापित किया गया।

भागवत में इसका संबंध हिरण्याकशिपु एवं हिरण्याक्ष के साथ प्रस्थापित किया गया है, जहाँ विष्णु के द्वारपाल जय एवं विजय शापवश अपने अगले तीन जन्मों में, क्रमशः हिरण्यकशिपु एवं हिरण्याक्ष, रावण एवं कुंभकर्ण, शिशुपाल एवं दंतवक्र के रूप में पृथ्वी पर प्रगट होने का निर्देश प्राप्त हैं (भा. ७.१.३५-३६)।

तपश्चर्या--रावण के सौतेला भाई वैश्रवण कुवेर ने तपस्या कर के चतुर्थ लोकपाल (धनेश) का पद एवं पुष्पक विमान प्राप्त किया। विश्रवस् ने भी अपने पुत्र कुवेर को लंका का राज्य प्रदान किया था, जो राक्षसों के द्वारा विष्णु के भय से छोड़ा गया था (वा. रा. उ. ३)। एक बार, कुवेर पुष्पक विमान में बैठ कर अपने पिता विश्रवस् ऋषि से मिलने आया। रावण की माता कैकसी ने इसका ध्यान कुवेर की ओर आकर्षित कर के कहा, 'तुम भी अपने भाई के समान वैभवसंपन्न बन जाओ'। अतः यह अपने भाईयों के साथ गोकर्ण में तपस्या करने लगा (वा. रा. उ. ९.४०-४८)।

इस तरह यह दस हजार वर्षों तक तपस्या करता रहा, जिसमें प्रति सहस्त्र वर्ष के अंत में, यह अपना एक सिर अग्नि में हवन करता था। दस हजार वर्षों के अन्त में यह अपना दसवाँ सिर भी हवन करनेवाला ही था कि, इतने में प्रसन्न हो कर ब्रह्माने इसे वर दिया, 'तुम सुपर्ण, नाग, यक्ष, दैत्य, दानव, राक्षस तथा देवताओं के लिए अवध्य रहोगे'। पश्चात् ब्रह्मा ने इसके नौ सिर लौटा कर, इसे इच्छारूपी बनने का भी वर प्रदान किया (वा. रा. उ. १०-१८-२६; पद्म. पा. ६; म. व. २६९. २६)।

ब्रह्मा से वर प्राप्त करने के पश्चात्, रावण ने अपने पितामह सुमालि के अनुरोध पर अपने मंत्री प्रहस्त को कुवेर के पास भेज दिया, एवं लंका का राज्य राक्षसवंश के लिए माँग लिया। तत्पश्चात् अपने पिता विश्रवस् ऋषि की आज्ञा मान कर कुवेर कैलास चला गया, एवं रावण ने अपने राक्षसबांधवों के साथ लंका को अपने अधिकार में ले लिया (वा. रा. उ. ११.३२)।

अत्याचार--ब्रह्मा से वर प्राप्त करने के पश्चात्, लंका-धिपति रावण पृथ्वी पर अनेकानेक अत्याचार करने लगा। इसने अनेक देव, ऋषि, यक्ष, गंधर्वों का वध किया, एवं उनके उद्यानों को नष्ट किया। यह देख कर इसके सौतेले भाई कुवेर ने दूत भेजकर इसे सावधान करना चाहा। किन्तु रावण ने अपनी तलवार से उस दूत का वध किया, एवं अपने मंत्रियों के साथ कैलासपर्वत पर रहनेवाले कुवेर पर आक्रमण किया। वहाँ इसने यक्ष सेना को पराजित किया, एवं कुवेर को द्वंद्व युद्ध में परास्त कर उसका पुष्पक विमान छीन लिया (वा. रा. उ. ९)

गर्वहरण--कुवेर को पराजित करने के बाद, पुष्पक विमान में बैठकर यह कैलासपर्वत के उपर से जा रहा था, तब पुष्पक अचानक रुक गया। फिर रावण पुष्पक से पृथ्वी पर उतरा, एवं शिवपार्षद नंदी का वानरमुख देख कर इसने उसका उपहास किया। इस कारण नंदी ने इसे शाप दिया, 'मेरे जैसे वानरों के द्वारा तुम पराजित होंगे' (वा. रा. उ. १६)।

पश्चात् यह कैलास पर्वत को जड़मूल से उखाड़ देने की चेष्टा करने लगा। कैलास पर्वत को उठा कर यह लंका में ले जाना चाहता था। रावण के बल से पर्वत हिलने लगा, किन्तु शिव ने अपने पादांगुष्ठ से कैलास पर्वत को नीचे दबाया, जिससे रावण की भुजाएँ उस पर्वत के नीचे जकड़ गयीं।

फिर रावण विविध स्तोत्रों के द्वारा शिव का गुणगान करने लगा, एवं एक सहस्त्र वर्षों तक विलाप करता रहा। तत्पश्चात् शिव इस पर प्रसन्न हुयें, एवं उन्होंने रावण की भुजाएँ मुक्त कर उसे चंद्रहास नामक खड्ग प्रदान किया एवं अपने भक्तों में शामिल करा दिया। तदोपरान्त रावण परमशिवभक्त बन गया, एवं एक सुवर्णलिंग सदा ही साथ रखने लगा (वा. रा. उ. ३१)। रावण की शिवभक्ति की कथाएँ आनंद रामायण, एवं स्कंद तथा पद्म पुराणों में भी प्राप्त है (आ. रा. १.१३.२६-४४; पद्म. उ. २४२)।

विवाह--एक बार रावण ने मृगया के समय दिति के पुत्र मय को देखा, जो अपनी पुत्री मंदोदरी के साथ वन में टहल रहा था। रावण का परिचय प्राप्त करने के पश्चात्, मय ने मंदोदरी का विवाह इससे करना चाहा। रावण ने इस प्रस्ताव को स्वीकार लिया। विवाह के समय मय ने रावण को एक अमोघ शक्ति प्रदान की, जिससे राम-रावण युद्ध में इसने लक्ष्मण को आहत किया था (वा. रा. उ. १२)।

वेदवती से शाप--एक बार कुशध्वज ऋषि की कन्या वेदवती, नारायण को पतिरूप में प्राप्त करने के लिए तप करती थी। इस समय रावण उसके रूपयौवन पर मोहित हो कर, उस पर अत्याचार करने पर प्रवृत्त हुआ। इस पर वेदवती ने इसे शाप दिया, 'मैं तुम्हारे नाश के लिए अयोनिजा सीता के रूप में पुनः जन्म ग्रहण करूँगी' (वा. रा. उ. १७)।

विजययात्रा--रावण की विजययात्रा का सविस्तृत वर्णन वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है, जिसके अनुसार इसने निम्नलिखित राजाओं का पराभव किया :—मरुत्त, दुष्यन्त, सुरथ, गाधि, मय, पुरूरवस् एवं अनरण्य। तत्पश्चात् रावण ने नारद की सलाह से यमलोक पर आक्रमण किया, जिसमें इसने यम की सेवकों परास्त किया। अनंतर इसने वरुणालय में नागों का राजा वासुकि को परास्त किया, अश्मनगर में अपने बहनोई विद्युज्जिह्व का वध किया, एवं वरुणसेना को परास्त कर वह वापस आया (वा. रा. उ. १८-२३)।

अपनी विजययात्रा के उपलक्ष्य में रावण जब लंका में अनुपस्थित था, तब मधु नामक दैत्य ने इसकी बहन कुंभीनसी का हरण किया। यह सुन कर, रावण ने अपने सैन्य के साथ, मधुपुर पर आक्रमण किया। किन्तु अपनी बहन के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने मधु दैत्य को अभय दिया (वा. रा. उ. २५.४६)।

मधुदैत्य के यहाँ से यह कैलासपर्वत की ओर गया, जहाँ इसने अपने भाई कुबेर की स्नुषा रंभा पर अत्याचार करना चाहा। रंभा ने इसे खूब समझाया कि, वह इसकी पुत्रवधू, अर्थात् कुबेरपुत्र नलकूबर की पत्नी है। किंतु इसने उत्तर दिया, 'अप्सराओं को कोई पति होता ही नहीं' (पतिरप्सरसां नास्ति), एवं इसने रंभा के साथ बलात्कार किया। पश्चात् यह वार्ता सुन कर नलकूबर ने इसे शाप दिया, 'न चाहनेवाली किसी स्त्री की इच्छा करने से तुम्हारे मस्तक के सात टुकड़े हो जाएँगे (वा. रा. उ. २६.५५)।

तदोपरांत रावण ने कैलास पर्वत पार कर इंद्रलोक पर आक्रमण किया, जहाँ हुए युद्ध में इसके पितामह सुमालि का वध हुआ। पश्चात् इसके पुत्र मेघनाद ने इंद्र को परास्त किया, एवं उसे लंका में ले आया, जिस कारण उसे इंद्रजित् नाम प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ३०)।

पराजय—इसकी विजययात्राओं के साथ इसके कई पराजयों का निर्देश भी वाल्मीकिरामायण में प्राप्त है। एक बार यह माहिष्मती नगरी के समीप नर्मदा नदी में स्नान कर शिवपूजा करने के लिए गया। वहाँ माहिष्मती का हैहय राजा कार्तवीर्य अर्जुन अपनी पत्नियों के साथ आया था। उसने अपनी सहस्र भुजाओं से नर्मदा की धारा रोंक दी, जिस कारण नदी विपरीत दिशा से बहने लगी, एवं रावण के द्वारा चढ़ाई गयी शिवपूजा के फूल ले गयी। इस पर रावण अर्जुन से द्वंद्वयुद्ध करने गया। किंतु इस युद्ध में कार्तवीर्य ने इसे परास्त कर माहिष्मती के कारावास में रख दिया। बाद में पुलस्त्य ऋषि ने मध्यस्तता कर रावण की मुक्तता की, एवं कार्तवीर्य के साथ मित्रता प्रस्थापित की (वा. रा. ३. ३१-३३)।

पार्गिटर के अनुसार, कार्तवीर्य अर्जुन पुलस्त्य से काफ़ी पूर्वकालीन था, जिससे प्रतीत होता है कि, इस कथा में निर्दिष्ट रावण किसी अन्य द्रविड राजा था (पार्गि. २४२)।

कार्तवीर्य के कारागृह से मुक्त होने के पश्चात्, रावण फिर योग्य प्रतिद्वंद्वियों का शोध करने लगा। पश्चात् यह

किष्किंधा में वालि के पास युद्ध करने के लिए गया, जब वालि ने इसे बगल में दबा कर क्रमशः पश्चिम, उत्तर एवं पूर्व सागरों में घुमाया। तब यह वालि के सामर्थ्य को देख कर अत्यधिक आश्चर्यचकित हुआ, एवं अग्नि के साक्षी में यह उसका मित्र बना (वा. रा. उ. ३४)।

पराजय की अन्य कथाएँ—यह पाताललोक में बलि राजा को भी जीतने गया था। किन्तु वहाँ भी इसे नीचे देखना पड़ा (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त १-५; बलि वैरोचन देखिये)।

एक बार नारद के कथनानुसार, यह श्वेतद्वीप में युद्ध करने गया। तब वहाँ की स्त्रियों ने इसे लीलापूर्वक एक दूसरी की ओर फेंक दिया। इस कारण अत्यंत भयभीत हो कर, यह समुद्र के मध्य में जा गिरा (वा. रा. उ. प्र. ३७)।

यह सीता-स्वयंवर के लिए जनक राजा की मिथिला नगरी में गया था। जनक राजा के प्रण के अनुसार, इसने शिवधनुष्य उठाने की कोशिश की। किन्तु उसे सम्हाल न सकने के कारण वह इसकी छाती पर गिरा; तब राम ने इसकी मुक्तता की (आ. रा. ७.३)। यह कथा वाल्मीकि रामायण में अप्राप्य है।

सीताहरण—एक बार राम के द्वारा विरूपित की गई रावण की बहन शूर्पणखा इसके पास आयी, एवं उसने खरवध का समाचार, एवं सीता के सौंदर्य की प्रशंसा इसे सुनाई। फिर इसने सीता का हरण करने का मन में निश्चय किया। इस कार्य में सहाय्यता प्राप्त करने के लिए यह मारीच नामक इच्छारूपधारी राक्षस के पास गया, एवं कांचनमृग का रूप धारण कर सीताहरण में सहाय्यक-बनने की इसने उसे प्रार्थना की। मारीच ने इस प्रार्थना का इन्कार कर दिया, एवं स्पष्ट शब्दों में कहा, 'यदि तुम सीताहरण की ज़िद चलाओगे तो लंका का सत्यानाश होगा'।

किन्तु रावण ने मारीच की यह सलाह न मानी, एवं उसे इस कार्य में सहाय्यता करने के पुरस्कारस्वरूप, आधा राज्य प्रदान करने का आश्वासन दिया। रावण ने उसे यह भी कहा, 'यदि यह प्रस्ताव तुम स्वीकार नहीं करोगे, तो मैं तुम्हारा वध करूँगा'।

मारीच की संमति प्राप्त करने के बाद, रावण ने उसे अपने रथ में बिठा कर, जनस्थान की ओर प्रस्थान किया। वहाँ राम कांचनमृगरूपधारी मारीच के पीछे चले जाने पर, एवं लक्ष्मण उसकी खोज के लिए जाने पर, एक परिव्राजक के रूप में रावण ने सीता की पर्णकुटी में प्रवेश किया। उससे आतिथ्यसत्कार ग्रहण करने के पश्चात्, इसने अपना परिचय देते हुए कहा--

> भ्राता वैश्रवणस्याऽहं सापत्नो वरवर्णिनि।
> रावणो नाम भद्रं ते दशग्रीवः प्रतापवान्॥
> (वा. रा. अर. ४८.२)।

(मेरा नाम रावण है, एवं मैं कुबेर का सापत्न भाई हूँ। सुविख्यात पराक्रमी राजा दशग्रीव तो मैं ही हूँ)।

पश्चात् इसने सीता को अपने साथ आ कर लंका की महारानी बनने की प्रार्थना की। इसने उसके सामने राक्षस-विवाह का प्रस्ताव रखते हुए कहा--

> अलं व्रीडेन वैदेहि धर्मलोपकृतेन ते।
> आर्षोऽयं देवि निष्पन्दो यस्त्वामभिभविष्यति॥
> (वा. रा. अर. ५५.३४-३५)।

(अपने पति का त्याग करने के कारण, धर्मविरुद्ध आचरण करने का भय तुम मन में नहीं रखना, क्यों कि, जिस विवाह का मैं प्रस्ताव रखता हूँ, वह वेदप्रतिपादित ही है)।

रावण के इस प्रस्ताव का सीता के द्वारा अस्वीकार किये जाने पर, इसने अपना प्रचंड राक्षस-रूप धारण किया, एवं सीता को ज़बरदस्ती से रथ में बिठा कर यह लंका की ओर चला गया। मार्ग में बाधा डालनेवाले जटायु के पंख तोड़ कर इसने उसका वध किया। पश्चात् इसने सीता को लंका में स्थित अशोकवन में रख दिया (वा. रा. अर. ४३-५४; पद्म. उ. २४२; भा. ९.१०. ३०; म. व. २६३)।

श्री. चिं. वि. वैद्य के अनुसार, वाल्मीकि रामायण के सीताहरण के वृत्तांत में प्राप्त कांचनमृग का आख्यान प्रक्षिप्त है, एवं अद्भुत रस की उत्पत्ति के लिए यह आख्यान बाद में रामायण में रखा गया है (वैद्य, दि रिडल ऑफ दि रामायण पृ. १४४)।

रावण-सीता संवाद—हनुमत् ने अशोकवन में प्रवेश पा कर सीता की भेंट ले ली। उसी रात्री के अन्त में रावण अपनी पत्नियों के साथ सीता का दर्शन करने आया, एवं इसने दीनतापूर्वक सीता से प्रार्थना की, 'पति के रूप में तुम मेरा स्वीकार करो'। सीता के द्वारा इस प्रार्थना का इन्कार किये जाने पर, इसने क्रुद्ध हो कर कहा—

द्वाभ्यामूर्ध्वं तु मासाभ्यां भर्तारं मामनिच्छतीम्।
मम त्वां प्रातराशार्थे सूदाश्छेत्स्यन्ति खण्डशः॥
(वा. रा. सुं. २२.९)

(दो महिने में अगर तुम स्वेच्छा से मेरी पत्नी न बनोगी, तो रसोयें तुम्हारे शरीर के टुकड़े कर, मेरे प्रातःकाल के भोजन के लिए पकायेंगे।)

इतना कह कर रावण ने पहारा देनेवाली राक्षसियों को आदेश दिया कि, वे सीता को इसके वश में लाने का प्रयत्न करती रहें। किन्तु सीता को वश में लाने के उनके हर प्रयत्न असफल रहे, एवं सीता अपने वचनों पर दृढ रही (वा. रा. यु. ३१-३२; म. व. २८१)।

रावण-विभीषण संवाद—रावण के छोटे भाई विभीषण ने, धर्म एवं नीति का अनुसरण कर, सीता को राम के पास लौटाने के लिए इससे पुनः अनुरोध किया, एवं ऐसे न करने पर इसका एवं इसके लंका के राज्य का नाश होने की आशंका भी व्यक्त की।

इसने विभीषण की एक न सुनी, एवं कहा —

घोराः स्वार्थप्रयुक्तास्तु ज्ञातयो नो भयावहाः
(वा. रा. यु. १६.७)।

(अप्रामाणिक, संशयात्मा एवं स्वयं की जवाबदारी टालनेवाले स्वजातीय लोग ही राज्य के सबसे बड़े शत्रु होते है।)

आगे चल कर विभीषण को राक्षसकुल का कलंक (कुलपांसन) बता कर इसने कहा, 'वीर पुरुष के सबसे बड़े शत्रु उसके भाई ही होते है, जैसे कि रानहाथी का सबसे बड़ा शत्रु व्याध के पक्ष में मिलनेवाला उसका भाई ही होता है'। इस कठोर निर्भर्त्सना से घबरा कर विभीषण ने चार राक्षसों के साथ लंका छोड़ दी, एवं वह राम के पक्ष में जा मिला। रावण के मातामह माल्यवत् ने भी इसे बहुत समझाया। किन्तु उसके उपदेशों का इसके उपर कुछ प्रभाव न पड़ा (वा. रा. यु. ३५)।

युद्धारंभ—राम से युद्ध शुरू होने के पूर्व रावण ने शुक को रामसेना की जानकारी प्राप्त करने के लिए भेजा था, एवं सुग्रीव के पास संदेश भी भेजा था कि, वह युद्ध में राम की सहाय्यता न करे (वा. रा. यु. २०)। किन्तु उसका कुछ भी परिणाम न हुआ, एवं शान्ति के सारे प्रयत्न अयशस्वी हो कर इसका राम के साथ युद्ध शुरू हुआ।

सेनावर्णन—रावण की सेना बहुत बड़ी थी, जिसके छः सेनापति प्रमुख थे :—महोदर, प्रहस्त, मारीच, शुक, सारण एवं धूम्राक्ष (वा. रा. उ. १४.१)। युद्ध के प्रारंभ में इसने प्रहस्त, महापार्श्व, महोदर एवं अपने पुत्र इंद्रजित् को लंका के चारों द्वार के संरक्षण के लिए नियुक्त किया था। लंका के मध्यभाग के संरक्षण का भार विरुपाक्ष पर सौंपा गया था, एवं यह स्वयं शुक, सारण एवं अन्य सेना के साथ उत्तरद्वार पर खड़ा हुआ था (वा. रा. यु. ३६)।

युद्ध के प्रारंभ में, राम एवं लक्ष्मण को नागपाश में बँधा जाने का प्रसंग इसने सीता त्रिजटा से विदित कराया, एवं सीता को वश में लाने का आखिरी प्रयत्न किया। किन्तु उस प्रयत्न में यह असफल रहा।

बाद में राम के साथ किये गये युद्ध में एक एक कर के प्रहस्त, धुम्राक्ष, वज्रदंष्ट्र, अकंपन आदि इसके सारे सेनापति, एवं इसका भाई कुंभकर्ण एवं पुत्र इंद्रजित् मारे गयें। तत्पश्चात् क्रोध में आकर यह सीता के वध के लिए उद्यत हुआ। किन्तु सुपार्श्व नामक इसके अमात्य ने स्त्रीवध से इसे रोक दिया (वा. रा. यु. ९२.५८)।

रामरावणयुद्ध—राम एवं रावण का युद्ध कुल दो बार हुआ था। इसमें से पहले युद्ध में विभीषण ने इसके रथ के घोड़ों का वध किया था। तत्पश्चात् इसने रथ से उतर कर, शक्ति नामक एक बरछी विभीषण की ओर फेंक दी, किन्तु लक्ष्मण ने उस शक्ति को छिन्नभिन्न कर फेंक दिया। पश्चात् मय के द्वारा दी गयी 'अमोघा' शक्ति लक्ष्मण पर छोड़ कर इसने उसे मूर्च्छित किया। तत्पश्चात् राम ने लक्ष्मण को हनुमान आदि वानरों की रक्षा में छोड़ कर, रावण पर ऐसा हमला किया कि, यह रणभूमि छोड़ कर भाग गया (वा. रा. यु. ९९-१००)।

इंद्रजित् के वध के पश्चात् यह 'जयप्रापक' नामक मंत्र का जाप करने बैठा। इस वार्ता को सुन कर, विभीषण ने राम से किसी तरह भी इस जाप में बाधा डालने की सूचना दी, क्यों कि, इस जाप का पूरा होते ही यह शिव की प्रसाद से अजेय होने की संभावना थी।

विभीषण की सूचना के अनुसार, अंगद मंदोदरी के केशों को खींच कर रावण के पास ले आया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर रावण ने अपना जाप यज्ञ अधुरा ही छोड़ दिया, एवं यह युद्धभूमि में आ डटा (वा. रा. यु. ८२ प. उ. पाठ)।

वध—इसके उपरान्त राम-रावण का विकराल युद्ध हुआ। इस युद्ध के समय इन्द्र ने अपना रथ, एवं मातलि

नामक सारथी राम के सहाय्यार्थ भेजा। अगस्त्य ने भी राम को आदित्य नामक स्तोत्र प्रदान किया। राम-रावण का यह युद्ध सात दिनों तक चलता रहा। इस युद्ध में रावण एक बार मूर्च्छित हुआ, एवं अपने सारथि के द्वारा युद्धभूमि से दूर लाया गया (वा. रा. यु. १०२-१०३)।

होश में आते ही रावण पुनः एक बार युद्धभूमि में आ उतरा। अंत में अगस्त्य के द्वारा दिये गये ब्रह्मास्त्र इसकी छाती पर मार कर, राम ने इसका वध किया। (वा. रा. यु. १०८; म. स. परि. १. क्र. २१ पंक्ति. ५३६; व. २९१.२९; द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ४४७)। राम-रावण के इस अंतीम युद्ध में रावण के सिर पुनः पुनः उत्पन्न होते थे, यहाँ तक कि, राम ने रावण के एकसौ सिर काट दिये (वा. रा. यु. १०७.५७)।

परिवार--मंदोदरी के अतिरिक्त रावण के धान्यमालिनी नामक अन्य एक पत्नी का निर्देश प्राप्त है, जो अतिकाय की माता थी (वा. रा. सुं. २२.३९; यु. ७१. ३०)।

इन दो पत्नियों के अतिरिक्त रावण को हज़ार पत्नियाँ थी, जिनमें देव, गंधर्व, नाग आदि स्त्रियों का समावेश था (वा. रा. अयो. १२३.१४; सुं. १०-११; १८; २२; यु. ११०; उ. २२)।

रावण के पुत्रों में इंद्रजित् सर्वाधिक प्रसिद्ध है। उसके अतिरिक्त इसे निम्नलिखित अन्य पुत्र भी थेः— अक्ष, (वा. रा. सुं. ४७); अतिकाय (वा. रा. यु. ७१. ३०); त्रिशीर्ष (वा. रा. यु. ७०); नरान्तक (वा. रा. यु. ६९); देवान्तक (वा. रा. यु. ७०)।

रावण को कुंभकर्ण एवं बिभीषण नामक दो भाई, एवं शूर्पणखा नामक बहन थी। उनके अतिरिक्त मत्त एवं युद्धोंमत्त नामक इसके अन्य दो भाईयों का, एवं कुंभिनसी नामक एक बहन का भी निर्देश प्राप्त है (वा. रा. यु. ७१.२)।

चरित्रचित्रण—राम जैसे परमवीर राजा को युद्ध में ललकारने की हिंमत करनेवाला रावण, स्वयं एक परमऐश्वर्युक्त, शोभासंपन्न एवं पराक्रमी राजा था। रावण स्वयं एक साधारण सम्राट न था, किन्तु समस्त पृथ्वी को जीतनेवाला एक लोकव्यापी आतंक भी था। स्वर्णासन पर बैठ कर अग्नि जैसे तेजस्वी दिखनेवाले रावण को देख कर, स्वयं राम भी प्रभावित हो चुका था (वा. रा. अर. ३२.५; यु. ५९.२६)। इस उग्र तथा पाप करनेवाले राजा को देख कर, पृथ्वी के चर प्राणी ही क्या, वायु, वृक्ष, आदि अचर वस्तु भी कंपित होती थी (वा. रा. अर. ४६.६-८)।

यह कुशल राजनीतिज्ञ एवं दिग्विजयी सम्राट् था। इसकी प्रजा ऐश्वर्यसंपन्न एवं धनधान्य से पूरित थी (वा. रा. सुं. ४.२१-२७; ९.२-१७)। इसके राज्य में अनेकानेक वस्तुओं निर्माण करने की कला चरम सीमा पर थी (वा. रा. सुं. ६)।

यह अपने मंत्रिगणों में अत्यधिक आदरणीय था, एवं यह स्वयं मंत्रियों के विचारविमर्श पूछ कर ही राज्य का कारोबार चलाता था (वा. रा. अर. ३८.२३-३३)।

परमपराक्रमी होने के साथ, यह उच्चश्रेणी का रसिक एवं संगीतज्ञ भी था (वा. रा. सुं. ४४. ३२)। अपने परिवार के लोगों के प्रति यह अत्यन्त स्नेहशील था। अपनी बहन शूर्पणखा विधवा होने पर, यह बड़ा दुःखी हुआ था (वा. रा. उ. २४)।

महापंडित रावण--रावण वेदों का महापंडित, एवं समस्त शास्त्रो का माना हुआ विद्वान् था। वाल्मीकि रामायण में इसे 'वेदविद्यानिष्णात' (वेदविद्याव्रतस्नातः) एवं 'आचारसंपन्न' (स्वकर्मनिरतः) कहा गया है (वा. रा. यु.९२.६०)। शाखाओं के क्रम के अनुसार वेदों का विभाजन करने का काम इसके द्वारा किया गया था। इसके नाम पर ऋग्वेद का एक भाष्य एवं वेदों का एक पदपाठ भी प्राप्त है। बलराम रामायण के अनुसार, इसने वैदिक मंत्रों का संपादन कर, वेदों की एक नयी शाखा का निर्माण भी किया था।

रावण के नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ भी प्राप्त हैः-- अर्कप्रकाश, कुमारतंत्र, इंद्रजाल, प्राकृत कामधेनु, प्राकृतलंकेश्वर, ऋग्वेदभाष्य, रावणभेट आदि।

कई अभ्यासकों के अनुसार, उपर्युक्त ग्रंथ लिखनेवाला रावण, लंकाधिपति रावण से कोई अलग व्यक्ति था।

'तुलसी रामायण' में—'मानस' में चित्रित किया गया रावण इंद्रियलोलुप, कुटिल राजनीतिज्ञ, क्रोधी एवं परम शक्तिशाली खलपुरुष है। यह एक वस्तुवादी, अधार्मिक, अभिमानी एवं हठी व्यक्ती है, जो मारीच, बिभीषण, माल्यवत्, प्रहस्त, कुंभकर्ण एवं मंदोदरी के द्वारा किये गये सदुपदेश पर किंचित भी ध्यान नहीं देता है।

'मानस' में रावण के अनाचारों, अत्याचारों एवं निरंकुशता की ओर विशेष संकेत किया गया है, एवं इसे नीच, खल, अधम आदि विशेषणों से भूषित किया

गया हैं (मानस. ३.२३.८; ३.२८.८)। इससे प्रतीत होता है कि, राम के चरित्रचित्रण में तुलसी का मन जितना रमा है, उतना उसके प्रतिपक्षी रावण के चित्रण में नही।

रावण शतमुख—मायापुरी का राक्षस नृप, जो कुंभकर्ण का पौत्र पौंड्रक राजा का मित्र था। बिभीषण के विरोधी पक्ष में होने के कारण राम ने इसका वध किया (आ. रा. राज्य. ५)।

रावण सहस्रमुख—पुष्करद्वीप का एक सहस्रमुखी राक्षस, जिसका सीता के द्वारा वध हुआ था (अद्भुत रा.१७)।

राष्ट्र—(सो. क्षत्र) एक राजा, जो वायु के अनुसार काशि राजा का पुत्र था।

राष्ट्रपाल—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजकुमार, जो कंस राजा का भाई, एवं उग्रसेन के नौ पुत्रों में से एक था।

राष्ट्रपाला अथवा राष्ट्रपालिका—मथुरा के उग्रसेन राजा की कन्या, जो वसुदेव के भाई सृंजय राजा की पत्नी थी। इसे वृक एवं दुर्मषण नामक दो पुत्र थे (भा. ९. २४-२५; ४२)।

राष्ट्रपिंड—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

राष्ट्रभृत—अथर्ववेद में निर्दिष्ट तीन अप्सराओं में से एक (अ. वे. १६.११८; वा. सं. १५.१५-१९)। अन्य दो अप्सराओं के नाम उग्रजित एवं उग्रपश्या थे।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार भरत एवं पंचजनी के पुत्रों में से एक था।

राष्ट्रवर्धन—दशरथ राजा के अष्टप्रधानों में से एक (वा. रा. बा. ७.३)।

२. राज्यवर्धन राजा का नामान्तर (राज्यवर्धन देखिये)।

राहु—एक दानव, जो अष्टग्रहों में से एक पापग्रह माना जाता है। सूर्य को ग्रसित करनेवाले दानव के रूप में इसका निर्देश अथर्ववेद में प्राप्त है (अ. वे. १९.९-१०)।

पुराणों में इसे कश्यप एवं दनु का पुत्र बताया गया है। अन्य ग्रंथों में से इसे कश्यप एवं सिंहिका का पुत्र कहा गया है (म. आ. ५९.३०; विष्णुधर्म. १.१०६; पद्म. सृ. ४०)। भागवत एवं ब्रह्मांड में इसे विप्रचित्ति एवं सिंहिका का पुत्र कहा गया है (भा. ६.६.३७; १८.१३; ब्रह्मांड. ३.६.१८-२०)।

स्वर्भानु नामक एक आसुर प्राणि का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है, जिसे सूर्य के प्रकाश को रोंकनेवाला माना गया है (ऋ. ५.४०; स्वर्भानु देखिये)। वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट स्वर्भानु का स्थान ही वैदिकोत्तर पुराकथाशास्त्र में राहु के द्वारा लिया गया है, जिस कारण इसे 'चंद्रार्क-प्रमर्दन' (चंद्र एवं सूर्य को जीतनेवाला) कहा गया है (भा. ५.२३.७)। कई पुराणों में इसका नामान्तर स्वर्भानु बताया गया है (ब्रह्मांड. ३.६.२३)। शिशुमार चक्र के गले में इसका निवासस्थान था।

शिरच्छेद—समुद्रमंथन के उपरान्त देव-गण अमृत-पान करने लगा, जब यह दानव भी प्रच्छन्न रूप धारण कर अमृतपान में शामिल हुआ। अमृत इसके गलें तक ही पहुँच पाया था कि, सूर्यचंद्र ने यह दैत्य होने की सूचना विष्णु को दी। विष्णु ने तत्काल इसका शिरच्छेद किया, जिससे इसका सिर वदन से अलग हो कर धरती पर जा गिरा (म. आ. १७.४.६)।

पश्चात् इसके सिर से केतु का निर्माण हुआ, एवं यह सिरविरहित अवस्था में घूमने लगा। तदोपरान्त विष्णु की डर से ये दोनों भाग गयें। किन्तु सूर्य एवं चंद्रमा के प्रति राहु-केतुका द्वेष कम न हुआ। इसी कारण, ये आज भी उन्हे ग्रासते रहते हैं, जिसे क्रमशः सूर्यग्रहण एवं चंद्रग्रहण कहते हैं (पद्म. ब्र. १०)।

राहु ग्रह का आकार वृत्ताकार माना जाता है। इसका व्यास बारह हज़ार योजन, तथा दायरा बयालिस हज़ार योजन है।

जिस समय शंकर एवं जालंधर का युद्ध हुआ था, उस समय यह जालंधर की ओर से राजदूत बन कर शंकर के पास गया था (पद्म. उ. १०)। किन्तु वहाँ शंकर की क्रोधाग्नी से डर कर यह भाग गया (पद्म. उ. १९)। इस पापग्रह के प्रभाव की जानकारी संजय ने धृतराष्ट्र को बताई थी (म. स. १३.३९-४१)। ब्रह्मा की सभा में उपस्थित ग्रहों में भी इसका नाम प्राप्त है।

इसकी कन्या का नाम सुप्रभा था (पद्म. सृ. ६), जिसे भागवत में स्वर्भानुपुत्री कहा गया है। कई अन्य पुराणों में इसकी कन्या का नाम प्रभा दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६. २३; विष्णु. १.२१)।

राहुकर्णि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'रागकर्णि'।

राहुल—(सू. इ. भविष्य.) शुद्धोदन राजा के पुत्र पुष्कल राजा का नामान्तर (पुष्कल. २. देखिये)।

राहूगण—गोतम नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १.४.१.१०)। रहुगण का वंशज होने से, इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (रहूगण देखिये)।

रिक्ष—(सो. नील.) नीलवंशीय चक्षु राजा का नामान्तर (चक्षु २. देखिये)।

रिपु--(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार बभ्रु राजा का पुत्र था।

२. (सो. पुरूरवस्) एक राजा, जो भागवत के अनुसार यदु राजा का पुत्र था।

रिपुंजय—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सुवीर राजा का पुत्र था। इसे नृपंजय नामान्तर भी प्राप्त था।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो ध्रुवपुत्र शिष्ट राजा के चार पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम सुच्छाया था।

३. (सो. मगध. भविष्य.) मगधवंशीय महाबाहु राजा का नामान्तर। ब्रह्मांड में इसे श्रुतंजय का पुत्र कहा गया है (महाबाहु ३. देखिये)।

४. (सो. मगध. भविष्य.) मगधदेश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार विश्वजित का, एवं मत्स्य के अनुसार अचल राजा का पुत्र था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे अरिंजय, तथा भागवत में इसे पुरंजय कहा गया है। इसने पचास वर्षों तक राज्य किया। इसके शुनक नामक प्रधान ने इसका वध कर, अपने प्रद्योत नामक स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की।

५. एक ब्राह्मण, जो उदारधी एवं भद्रा के दो पुत्रों में से एक था।

६. कुण्डल नगरी के सुरथ राजा का पुत्र। सुरथ ने राम का अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिया था। उस समय शत्रुघ्न के साथ हुए युद्ध में, यह सुरथ के साथ युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ था (पद्म. पा. ४९)।

७. एक ब्राह्मण, जो अपने अगले जन्म में काशी देश के दिवोदास नामक राजा बना। एक बार काशीदेश में से अग्नि लुप्त हुआ, जिस समय इसने स्वयं अग्नि का काम निभाया (स्कंद. ४.२.३९-५८)।

रिपुताप—एक शूर योद्धा, जो शत्रुघ्न के साथ राम के अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण के लिए उपस्थित था (पद्म. पा. ११)।

रिपुवार--वीरमणि राजा का सेनापति। वीरमणि के द्वारा राम का अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिये जाने पर, इसने शत्रुघ्न के साथ युद्ध किया था।

रिषा--कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी।

रिष्ट--वैवस्वत मनु के पुत्रों में से एक।

२. यम सभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८. १४)।

रुक्म—(सो. क्रोष्टु.) एक यादवराजा, जो भागवत के अनुसार रुचक राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम पृथु था, जिस कारण इन दोनों का एकत्र निर्देश अनेक ग्रंथों में प्राप्त है।

रुक्मकवच—एक यादवराजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार कंबलबर्हिष राजा का पुत्र था। विष्णु एवं पद्म में इसे शिनेयुं राजा का, एवं भागवत में इसे रुचक राजा का पुत्र कहा गया है।

रुक्मकेश—एक राजकुमार, जो विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा के पाँच पुत्रों में से चौथा पुत्र था (भा. १०.५२.२२)।

रुक्मबाहु--एक राजकुमार, जो विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा के पाँच पुत्रों में से तीसरा पुत्र था (भा. १०.५२.२२)।

रुक्मभूषण--विदिशा नगरी का एक राजा, जो ऋतुध्वज राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम धर्मांगद था (धर्मांगद देखिये)।

रुक्ममालिन्—एक राजकुमार, जो विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा के पाँच पुत्रों में से पाँचवा पुत्र था (भा. १०.५२.२२)।

रुक्मरथ--एक राजकुमार, जो विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा के पाँच पुत्रों में से दूसरा पुत्र था (भा. १०.५२.२२)। द्रौपदी स्वयंवर के समय यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१३)।

२. मद्रदेशाधिपति शल्य राजा का ज्येष्ठ पुत्र, जो अपने पिता एवं भाई रुक्मांगद के साथ द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१३)।

भारतीययुद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। युद्ध के प्रारंभ में इसका श्वेत से युद्ध हुआ था, जिसके बाणों से यह आहत हुआ था (म. भी. परि. १. क्र. ४. पंक्ति. १०)।

इसका अभिमन्यु से युद्ध हुआ था, जिसमें यह एवं इसके अन्य भाई मारे जाने का निर्देश प्राप्त है (म. द्रो. ४४.१३)। किन्तु सहदेव के द्वारा इसका वध होने का निर्देश भी महाभारत में अन्यत्र प्राप्त है (म. क. ४.२७)। इनमें से अभिमन्यु के द्वारा इसका वध होने की संभावना अधिक प्रतीत होती है। सहदेव के द्वारा मारा

गया योद्धा शल्यपुत्र रुक्मरथ न हो कर, शल्य का अन्य पुत्र रुक्मांगद होगा।

३. (सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार महापौरव राजा का पुत्र था।

४. द्रोणाचार्य का नामांतर, जो उसे उसके सुवर्णरथ के कारण प्राप्त हुआ था (म. द्रो. १२.२२)।

५. त्रिगर्तदेशीय राजकुमारों के एक दल का सामूहिक नाम। इसने कर्ण की आज्ञा से अर्जुन पर आक्रमण किया था (म. द्रो. ८७.१९-२५)।

रुक्मवती—विदर्भदेशाधिपति भीष्मक राजा की पौत्री, एवं रुक्मि की कन्या। अपनी बहन रुक्मिणी के कहने पर रुक्मि ने अपनी इस कन्या का विवाह रुक्मिणी का पुत्र प्रद्युम्न के साथ किया था (भा. १०.६१.२३)।

रुक्मांगद—मद्रराज शल्य का द्वितीय पुत्र, जो अपने पिता एवं ज्येष्ठ बंधु रुक्मरथ के साथ द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१३)। भारतीय-युद्ध में यह सहदेव के द्वारा मारा गया (रुक्मरथ २. देखिये)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो ऋतुध्वज राजा का पुत्र था (नारद. २.१२.२०)। इसकी पत्नी का नाम विंध्यावली, एवं पुत्र का नाम धर्मांगद था।

रुक्मांगद राजा की एकादशीव्रत पर विशेष श्रद्धा थी। ब्रह्मा के मन में इसे उस व्रत से भ्रष्ट करने की इच्छा उत्पन्न हुई, जिस काम के लिए उसने मोहिनी नामक अप्सरा की नियुक्ति की। एक बार यह मंदर पर्वत पर शिकार करने गया था, जहाँ मोहिनी भी उपस्थित हुई। मोहिनी ने अपने नृत्यगायन से इसका मन आकर्षित किया, एवं इसने उससे विवाह की माँग की।

एक बार मोहिनी ने इसे अपने प्रेम की आन दे कर, एकादशीव्रत से इसे परावृत्त करने का प्रयत्न किया। किन्तु इसने मोहिनी की माँग अमान्य कर दी। फिर उसने इसे अपने पुत्र धर्मांगद का सिर तलवार से काटने को कहा। मोहिनी की इस माँग को यह पूरी करने-वाला ही था कि, इतने में श्रीविष्णु ने साक्षात प्रकट हो कर, इस कृत्य से इसे परावृत्त किया, एवं प्रसन्न हो कर इसे अनेकानेक वर प्रदान किये (नारद. २.३६)।

३. वीरमणि राजा का पुत्र, जिसने राम का अश्व-मेधीय अश्व पकड़ लिया था। तत्पश्चात हुए युद्ध में शत्रुघ्नपुत्र पुष्कल ने इसे परास्त कर आहत कर दिया (पद्म. पा. ३९-४१)।

४. एक कुष्ठरोगी राजा, जो कौंडिन्यपूर के भीम राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम चारुहासिनी था। श्रीगणेश के चिंतामणि-क्षेत्र में स्नान करने के कारण, यह कुष्ठ रोग से मुक्त हुआ (गणेश १.२७-३५)।

रुक्मिणी—विदर्भाधिपति भीष्मक (हिरण्यरोमन्) राजा की लक्ष्मी के अंश से उत्पन्न कन्या, जो श्रीकृष्ण की पटरानी थी (ह. वं. २.५९.१६)। भीष्मक राजा की कन्या होने के कारण इसे 'भैष्मी,' एवं विदर्भराजकन्या होने के कारण इसे 'वैदर्भी' नामान्तर भी प्राप्त थे (भा. १०.५३.१; ६०.१)। इसके पिता भीष्मक को हिरण्यरोमन् नामान्तर होने के कारण, इसे एवं इसके पाँच बन्धुओं को 'रुक्मि' (सुवर्ण) उपपद से शुरु होने-वाले नाम प्राप्त हुयें थे (भीष्मक देखिये)।

श्रीकृष्ण से प्रेम—विवाहयोग्य होने के उपरांत, एक बार, नारद के द्वारा कृष्ण के गुण, रूप तथा सामर्थ्य का वर्णन इसने सुना, जिस कारण कृष्ण के ही साथ विवाह करने का निश्चय इसने किया (भा. १०.५२.३९)।

इसके रूप एवं गुणों को सुन कर कृष्ण के मन में भी इसके प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हुई, तथा उन्होंने इसके साथ विवाह करने की अपनी इच्छा इसके पिता भीष्मक से प्रकट की। परन्तु इसका ज्येष्ठ भ्राता रुक्मि जरासंध का अनुयायी था, एवं कंसवध के समय से कृष्ण से क्रोधित था। अतएव उसने भीष्मक से कहा, 'रुक्मिणी की शादी कृष्ण से न कर के शिशुपाल के साथ कर दो, जो कन्या के लिए अधिक योग्य वर है'। भीष्मक ने अपने पुत्र की इस सूचना का स्वीकार किया, एवं इसका विवाह शिशुपाल से निश्चित किया।

यह वार्ता सुन कर यह अत्यधिक दुःखित हुई, एवं इसने मौका देख कर श्रीकृष्ण को एक पत्र लिखा, जो सुशील नामक एक ब्राह्मण के द्वारा इसने द्वारका भेज दिया। इस पत्र में इसने श्रीकृष्ण के प्रति अपनी प्रणय-भावना स्पष्ट रूप से प्रगट कर, आगे लिखा था, 'हमारे घर ऐसी प्रथा है कि, विवाह के एक दिन पूर्व कन्या नगर के बाहर स्थित अंबिका के दर्शन के लिए जाती है। उस समय गुप्त रूप में आ कर, आप मेरा हरण करें'।

श्रीकृष्ण का आगमन—रुक्मिणी का यह पत्र मिलते ही, कृष्ण सुशील ब्राह्मण के सहित रथ में बैठ कर एक रात्रि में आनर्त देश से कुंडिनपुर पहुँच गये। यह देख कर, एवं परिस्थिति गंभीर जान कर, बलराम भी यादवसेना को ले कर कृष्ण के पीछे निकल पड़ा। बलराम

एवं कृष्ण विदर्भ देश से क्रथ तथा कौशिक देश में गयें, जहाँ के राजाओं ने उनका काफ़ी सत्कार किया (ह. वं. २.५९)।

भागवत एवं विष्णु के अनुसार, कृष्ण एवं बलराम शिशुपाल एवं रुक्मिणी के विवाहसमारोह में शामिल होने के बहाने कुंडिनपुर आयें थे (भा. १०.५३; विष्णु. ५.२६)।

चेदिराज शिशुपाल एवं रुक्मिणी का विवाह भली प्रकार निर्विघ्न सम्पन्न हो, इसके लिए निम्नलिखित राजा अपनी सेनाओं सहित विद्यमान थे--दंतवक्त्रपुत्र सुवक्त्र, पौंड्राधिपति वासुदेव, वासुदेवपुत्र सुदेव, एकलव्यपुत्र, पांड्य-राजपुत्र, कलिंगराज, वेणुदारि, अंशुमान्, क्राथ, श्रुतधर्मा, कालिंग, गांधाराधिपति, कौशांबीराज आदि। इसके अतिरिक्त भगदत्त, शल, शाल्व, भूरिश्रवा तथा कुंतिवीर्य आदि राजा भी आयें हुए थे।

रुक्मिणीहरण—विवाह के एक दिन पूर्व, कुलपरंपरा के अनुसार रुक्मिणी शहर के बाहर भवानी के दर्शन करने के लिए गई, तथा वहाँ जाकर कृष्ण को ही पति के रूप में प्राप्त करने की प्रार्थना इसने की। हरिवंश के अनुसार, यह इन्द्र एवं इन्द्राणी के दर्शन के लिए गई थी।

दर्शन करने के उपरांत, रुक्मिणी बाहर आकर कृष्ण को इधर उधर देखने लगी। तब शत्रुओं को देखते देखते कृष्ण ने इसे अपने रथ में बैठा दिया, एवं शत्रुओं की सेना को पराजित करने का भार अपनी यादवसेना को सौंप कर कृष्ण ने इसका हरण किया। तब बलराम तथा अन्य यादवों ने विपक्षियों को पराजित किया।

रुक्मी का पराजय—बाद में रुक्मिणी के ज्येष्ठ भ्राता रुक्मी, कृष्ण को भली प्रकार दण्डित करने के लिए, नर्मदा तट से पीछा करता हुआ कृष्ण के पास आ पहुँचा। जैसे ही उसने रुक्मिणी तथा कृष्ण को एक दूसरे से निकट बैठा हुआ देखा, वह क्रोध से पागल हो उठा, एवं उसने कृष्ण से युद्ध करना प्रारम्भ कर दिया। भीषण संग्राम के उपरांत कृष्ण ने रुक्मी को पराजित किया। कृष्ण उसका वध करनेवाला ही था, कि इसने अपने भाई का जीवन-दान उससे माँगा। तब कृष्ण ने रुक्मी को विद्रूप कर के छोड़ दिया। भाई को विद्रूप देखकर यह रोने लगी, तब बलराम ने इसे सान्त्वना दी, एवं कृष्ण को उसके इस कृत्य के लिए काफ़ी डाटा।

अन्त में बड़ी धूमधाम के साथ इसका एवं कृष्ण का विवाह द्वारका में संपन्न हुआ (भा. १०.५४; ८३; ह. वं. २.६०; विष्णु. ५.२६; पद्म. उ. २४७-२४९)।

प्रासादवर्णन--विश्वकर्मा ने इन्द्र की प्रेरणा से कृष्ण एवं रुक्मिणी के लिए एक मनोहर प्रासाद का निर्माण किया था, जिसका विस्तार एक योजन था। उसके शिखर पर सुवर्ण चढाया था, जिस कारण वह मेरु पर्वत के उत्तुंगशृंग की शोभा धारण करता था (म. स. परि. १. २१. १२४०)

भाग्यश्री किस तरह प्राप्त हो सकती है, इस संबंध में इसका स्वयं भाग्यश्री देवी से संवाद हुआ था, जिस समय श्रीकृष्ण भी उपस्थित था (म. अनु. ३२)। अपने स्वयंवर की कहानी इसने द्रौपदी को सुनाई थी (भा १०.८३)।

भागवत में इसके द्वारा श्रीकृष्ण से किये गये प्रणय-कलह का सुंदर वर्णन प्राप्त है (भा. १०.६०)।

पुत्रप्राप्ति--विवाह के पश्चात् इसे प्रद्युम्न नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसके बचपन में ही शंबरासुर ने उसका हरण किया, जिस कारण इसने अत्यधिक शोक किया था। प्रद्युम्न साक्षात् मदन का ही अवतार था, जिसे इसके भाई रुक्मिन् ने अपनी कन्या रुक्मवती विवाह में प्रदान की थी।

अग्निप्रवेश--श्रीकृष्ण की मृत्यु के पश्चात् इसने एवं श्रीकृष्ण की अन्य चार पत्निओं ने चितारोहण किया। ब्रह्म के अनुसार, श्रीकृष्ण की मृत्यु के पश्चात् उसकी आठ पत्नीयों ने अग्निप्रवेश किया, जिसमें यह प्रमुख थी।

महाभारत में रुक्मिणी के एक आश्रम का निर्देश प्राप्त है, जो उज्जानक प्रदेश की सीमा में स्थित था। इस स्थान पर इसने क्रोध पर विजय पाने के लिए घोर तपस्या की थी (म. व. १३०.१५)।

परिवार--रुक्मिणी को श्रीकृष्ण से चारुमती नामक एक कन्या, एवं निम्नलिखित दस पुत्र उत्पन्न हुयें थेः--प्रद्युम्न, चारुदेष्ण, सुदेष्ण, चारुदेह, सुचारु, चारुगुप्त, भद्रचारु, चारुचंद्र, विचारु, एवं चारु (भा. १०.६१; ह. वं. २. ६०)।

महाभारत में इसके पुत्रों के नाम निम्न प्रकार प्राप्त हैंः--चारुदेष्ण, सुचारु, चारुवेश, यशोधर, चारुश्रवस्, चारुयशस्, प्रद्युम्न एवं शंभु (म. अनु. १४.३३-३४)।

रुक्मिन्--विदर्भदेश का एक श्रेष्ठ राजा, जो विदर्भाधिपति भीष्मक (हिरण्यरोमन्) के पाँच पुत्रों में से ज्येष्ठ

पुत्र था। यह एवं इसके पिता यादववंशीय विदर्भ राजा के वंश में उत्पन्न हुयें थे, एवं स्वयं को भोजवंशीय कहलाते थे। महाभारत में इसे दन्तवक्र एवं क्रोधवश नामक असुरों के वंश से उत्पन्न हुआ कहा गया है (म. आ. ६१.५७)।

यह अत्यंत पराक्रमी था। इसने गंधमादननिवासी द्रुम ऋषि का शिष्य हो कर, चारों पादों से युक्त संपूर्ण धनुर्वेद की विद्या प्राप्त की थी। द्रुम ऋषि ने इसे इंद्र का विजय नामक एक धनुष भी प्रदान किया था, जो गांडीव, शार्ङ्ग आदि धनुष्यों के समान तेजस्वी था (म. उ. १५५. ३-१०)। परशुराम ने इसे ब्रह्मास्त्र प्रदान किया था।

श्रीकृष्ण से पराजय—इसके मन के विरुद्ध, इसकी बहन रुक्मिणी का श्रीकृष्ण ने हरण किया। उस समय, क्रुद्ध हो कर अपने पिता के सामने इसने प्रतिज्ञा की, 'मैं कृष्ण का वध कर रुक्मिणी को वापस लाऊँगा, अन्यथा लौट कर कुण्डिनपुर कभी न आऊँगा'।

तत्पश्चात् अपनी एक अक्षौहिणी सेना के साथ, इसने श्रीकृष्ण पर हमला किया। इस युद्ध में श्रीकृष्ण ने इसे परास्त कर इसे विरूप कर दिया (भा. १०.५२-५४; रुक्मिणी देखिये)। तत्पश्चात् अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार, यह कुण्डिनपुर वापस न गया, एवं जिस स्थान पर कृष्ण ने इसे परास्त किया था, वहीं भोजकट नामक नई नगरी बसा कर यह रहने लगा। इसी कारण उत्तरकालीन साहित्य में इसे भोजकट नगर का राजा कहा गया है (म. उ. १५५.२; व. २५५.११)।

सहदेव के दक्षिणदिग्विजय के समय, इसने एवं इसके पिता भीष्मक ने उसके साथ दो दिनों तक युद्ध किया था, एवं तत्पश्चात् उसके साथ संधि किया था (म. स. २८.४०-४१)। दुर्योधन की ओर से दक्षिणदिग्विजय के लिए निकले हुए कर्ण के युद्धकौशल्य से प्रसन्न हो कर, इसने उसे भेंट एवं कर प्रदान किये थे (म. व. परि. १. क्र. २४. पंक्ति. ५१-५४)।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध के प्रारंभ में, बड़े अभिमान से एक अक्षौहिणी सेना ले कर यह भोजकट से निकला, एवं कृष्ण को प्रसन्न करने के हेतु से पाण्डवों के पास गया। वहाँ इसने अर्जुन से बड़ी उद्दण्डता से कहा, 'यदि पाण्डव मेरी सहाय्यता की याचना करेंगे, तो मैं उनकी सहाय्यता करने के लिए तैयार हूँ'। अर्जुन के द्वारा इन्कार किये जाने पर, यह दुर्योधन के पास गया, जहाँ इसने अपना उपर्युक्त कहना दोहराया (युधिष्ठिर देखिये)। किन्तु अभिमानी दुर्योधन ने भी इसकी सहाय्यता ठुकरा दी। तब अपमानित हो कर यह अपने नगर में लौट आया (म. व. ११५)।

परिवार—इसे रुक्मवती अथवा शुभांगी नामक एक कन्या थी, जिसका विवाह रुक्मिणीपुत्र प्रद्युम्न से हुआ था। इसकी रोचना नामक पौत्री का विवाह कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध से हुआ था। रोचना के विवाह के समय इसने बलराम के साथ कपटता के साथ द्यूत खेला था, एवं उसकी निंदा की थी, तब क्रोधित हो कर बलराम ने स्वर्ण के पाँसों से इसका वध किया (ह. वं. २.६१.५; २७-४६; भा. १०.६१)।

रुक्मेषु—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार रुक्मकवच राजा का पुत्र था। भागवत में इसे रुचक राजा का, तथा विष्णु एवं पद्म में इसे परावृत् राजा का पुत्र कहा गया है।

अपने भाई पृथुरुक्म की सहाय्यता से, इसने यादव राजा ज्यामघ को अपने राज्य से भगा दिया। तत्पश्चात् ज्यामघ ने शुक्तिमती नामक नगरी में नया राज्य स्थापित किया (ब्रह्म. १४.१०-१६; ज्यामघ देखिये)।

रुक्ष—पूरुवंशीय उरुक्षय राजा का नामान्तर।

रुच—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुनीथ राजा का पुत्र था। इसे ऋच नामान्तर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम नृचक्षु (त्रिचक्षु) था।

रुचक—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार उशनस् राजा का पुत्र था।

२. (सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय भरुक राजा का नामान्तर।

३. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

रुचि—एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मन से उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम आकूति था, जो स्वायंभुव मनु की कन्या थी। आकूति से इसे यज्ञ एवं दक्षिणा नामक जुड़वे संतान (मिथुन) उत्पन्न हुयें। पुत्रिकाधर्म की शर्त के अनुसार, इसने उन दोनों पुत्रों को मनु को वापस दे दिया (भा. ३.१२.५६; ४.१.२; पद्म. सृ. ३; ब्रह्मांड. १. १. ५८)।

२. एक प्रजापति। यह पहले ब्रह्मचारी था, किन्तु पितरों के कहने पर इसने मालिनी नामक अप्सरा से विवाह किया, जो वरुणपुत्र पुष्कर एवं प्रम्लोचा नामक अप्सरा की कन्या थी (गरुड. १.८९-९०; मार्क. ९२)।

३. एक अप्सरा, जिसने अलकापुरी में अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४४)।

४. देवशर्मन् नामक ऋषि की पत्नी, जिस पर इन्द्र मोहित हुआ था (म. अनु. ४०.१७-१८)। एक बार इसकी रक्षा का भार अपने शिष्य विपुल पर सौंप कर, देवशर्मन् यज्ञ के लिए बाहर गया। तत्पश्चात् कामासक्त इंद्र इसके पास आया, एवं भोग की याचना करने लगा। फिर विपुल ने इन्द्र का प्रतिकार किया एवं इसके सतीत्व की रक्षा की।

इसकी बहन का नाम प्रभावती था, जो अंगराज चित्ररथ की पत्नी थी। प्रभावती के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने उसे एक दिव्य पुष्प प्रदान किया था (म. अनु. ४२; प्रभावती ४. देखिये)। अंत में अपने पति के साथ यह स्वर्गलोक गयी (म. अनु. ४३.१७)।

५. नहुष राजा की कन्या, जो आप्नवान् ऋषि की पत्नी थी।

रुचिपर्वन्—दुर्योधनपक्षीय एक राजा, जो कृति राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में सुपर्वन राजा ने इसका वध किया (म. द्रो. २५.४५)।

रुचिप्रभ—एक राक्षस, जो प्राचीन काल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५२)। पाठभेद- 'रुचि-प्रभु'।

रुचिर--(सो. कुरु.) कुरुवंशीय राधिक राजा का नामान्तर। मत्स्य में इसे जयत्सेन राजा का पुत्र कहा गया है।

रुचिरधि--पुरूरवस्वंशीय गुरु राजा का नामान्तर (गुरु. २. देखिये)। विष्णु में इसे संकृति राजा का पुत्र कहा गया है।

रुचिराश्व--(सो. अज.) एक राजा, जो सेनजित् राजा का पुत्र था।

रुचिरोमा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.७)। पाठभेद-'कद्रुला'।

रुचीक--गुहवासिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

रुतिमत्--(सो. कुरु. भविष्य.) कुरुवंशीय वृष्णिमत् राजा का नामान्तर। वायु में इसे शुचिद्रथ राजा का पुत्र कहा गया है।

रुद्र—वैवस्वत मन्वंतर का एक देवगण।

रुद्र-शिव—एक देवता, जो सृष्टिसंहार का मूर्तिमान् प्रतीक माना जाता है। प्राचीन भारतीय साहित्य में निर्देशित त्रिमूर्ति की कल्पना के अनुसार, ब्रह्मा को सृष्टि उत्पत्ति का, विष्णु को सृष्टिसंचालन (स्थिति) का, एवं शिव को सृष्टिसंहार का देवता माना गया है।

भयभीत करनेवाले अनेक नैसर्गिक प्रकोप एवं रोग-व्याधि आदि के साथ मनुष्यजाति को दैनंदिन जीवन में सामना करना पड़ता है। वृक्षों को उखाड़ देनेवाले झंझा-वात, मनुष्यों एवं पशुओं को विद्युत् एवं उल्कापात से नष्ट कर देनेवाले निसर्गप्रकोप, एवं समस्त पृथ्वी में संहारसत्र शुरू करनेवाले रोग एवं व्याधियाँ आदि की, मनुष्यजाति प्रागैतिहासिक काल से ही शिकार बन चुकी है। इसी नैसर्गिक एवं व्याधिजनित प्रकोपों का प्रतीकरूप मान कर रुद्रदेवता की उत्पत्ति वैदिक आर्यों के मन में हुई, जिस तरह उन्हें प्रातःकाल में 'उषस्' देवता का, एवं उदित होनेवाले सूर्य में 'मित्र' देवता का साक्षात्कार हुआ था।

वैदिक साहित्य में नैसर्गिक एवं व्याधिजनित उत्पात निर्माण करनेवाले देवता को रुद्र कहा गया है, एवं उसी उत्पातों का शमन करनेवाले देवता को शिव कहा गया है। इस प्रकार रुद्र एवं शिव एक ही देवता के रौद्र एवं शांत रूप है।

सृष्टि का प्रचंड विस्तार एवं सुविधाएँ निर्माण करनेवाले परमेश्वर के प्रति मनुष्यजाति को जो आदर, कृतज्ञता एवं प्रेम प्रतीत हुआ, उसीका ही मूर्तिमान् रूप भगवान् विष्णु है, एवं उसी सृष्टि का विनाश करनेवाले प्रलयंकारी देवता के प्रति जो भीति प्रतीत होती है, उसीका मूर्तिमान् रूप रुद्र है। पाश्चात्य देवताविज्ञान में सृष्टिसंचालक एवं सृष्टिसंहारक देवता प्रायः एक ही मान कर, इन द्विविध रूपों में उसकी पूजा की जाती है। किन्तु भारतीय देवताविज्ञान में सृष्टि की इन दो आदि-शक्तियों को विभिन्न माना गया है, जिसमें से सृष्टि संचालक शक्ति को विष्णु-नारायण-वासुदेव-कृष्ण कहा गया है, एवं सृष्टिसंहारक शक्ति को रुद्र कहा गया है।

इस तरह ऋग्वेद से ले कर गृह्यसूत्रों तक के ग्रंथों में रुद्रदेवताविषयक कल्पनाओं की उत्क्रांति जब हम देखते है, तब ऐसा प्रतीत होता है कि, ऋग्वेद आदि ग्रन्थों में रुद्र निसर्गप्रकोप का एक सामान्य देवता था। वही रुद्र उत्तरकालीन ग्रंथों में पशु, जंगल, पर्वत, नदी, स्मशान आदि सारी सृष्टि को व्यापनेवाला एक महाबलशाली देवता मानने जाने लगा, एवं यह विष्णु के समान ही सृष्टि का एक श्रेष्ठ देवता बन गया।

स्वरूप-वर्णन—ऋग्वेद में इसका स्वरूप वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसका वर्ण भूरा (बभ्रु), एवं रूप अतितेजस्वी बताया गया है (ऋ. २.३३)। यह सूर्य के समान जाज्वल्य, एवं सुवर्ण की भाँति प्रदीप्त है (ऋ. १.४३)। पूषन् देवता की भाँति यह जटाधारी है। बाद की संहिताओं में इसे सहस्रनेत्र, एवं नीलवर्णीय ग्रीवा एवं केशवाला बताया गया है (वा. सं. १६.७; अ. वे. २.२७)। इसका पेट कृष्णवर्णीय एवं पीठ रक्तवर्णीय है (अ. वे. १५.१)। यह चर्मधारी है (वा. सं. १६.२-४; ५१)।

महाभारत एवं पुराणो में प्राप्त रुद्र का स्वरूपवर्णन कल्पनारम्य प्रतीत होता है। इस वर्णन के अनुसार, इसके कुल पाँच मुख थे, जिनमें से पूर्व, उत्तर, पश्चिम एवं उर्ध्व दिशाओं की ओर देखनेवाले मुख सौम्य, एवं केवल दक्षिण दिशा की ओर देखनेवाला मुख रौद्र था (म. अनु. १४०.४६)। इन्द्र के वज्र का प्रहार इसकी ग्रीवा पर होने के कारण, इसका कंठ नीला हो गया था (म. अनु. १४१.८)। महाभारत में अन्यत्र, समुद्र-मंथन से निकला हुआ हलाहल विष प्राशन करने के कारण, इसके नीलकंठ बनने का निर्देश प्राप्त है, जहां इसे 'श्रीकंठ' भी कहा गया है (म. शां. ३४२.१३)।

पुराणों में भी इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे चतुर्मुख (विष्णुधर्म. ३.४४-४८; ५५.१); अर्धनारीनटेश्वर (मत्स्य. २६०); एवं तीन नेत्रोंवाला कहा गया है।

निवासस्थान—वैदिक ग्रंथों में इसे पर्वतों में एवं मूजवत् नामक पर्वत में रहनेवाला बताया गया है (वा. सं. १६.२-४; ३.६१)।

इसका आद्य निवासस्थान मेरुपर्वत था, जिस कारण इसे 'मेरुधामा' नामान्तर प्राप्त था (म. अनु. १७. ९१)। विष्णु के अनुसार, हिमालय पर्वत एवं मेरु एक ही हैं (विष्णु. २.२)। कृष्ण द्वैपायन व्यास ने एवं कुबेर ने मेरुपर्वत पर ही इस की उपासना की थी।

महाभारत में अन्यत्र, इसका निवासस्थान मुंजवान् अथवा मूजवत् पर्वत बताया गया है, जो कैलास के उस-पार था (म. आश्व. ८.१; सौ. १७.२६, वायु. ४७. १९)। कैलास एवं हिमालय पर्वत भी इसका निवासस्थान बताया गया है (म. भी. ७.३१; ब्रह्म. २९.२२)।

इसका अत्यंत प्रिय निवासस्थान काशी में स्थित स्मशान था (म. अनु. १४१.१७-१९, नीलकंठ टीका) इसी कारण शिव के भक्तों में काशी अत्यंत पवित्र एवं मुमुक्षुओं का वसतिस्थान माना गया है (मैत्रेय देखिये) संवर्त को शवरूप में शिवदर्शन का लाभ काशीक्षेत्र में ही हुआ था।

तपस्यास्थान—हिमवत् पर्वत के मुंजवत् शिखर पर शिव का तपस्यास्थान है। वहां वृक्षों के नीचे, पर्वतों के शिखरों पर, एवं गुफाओं में यह अदृश्यरूप से उमा के साथ तपस्या करता है। इसकी उपासना करनेवाले, देव-गंधर्व, अप्सरा, देवर्षि, यातुधान, राक्षस एवं कुबेरादि अनुचर विकृत रूप में वहीं रहते हैं, जो रुद्रगण नाम से प्रसिद्ध हैं। शिव एवं इसके उपासक अदृश्य रूप में रहते हैं, जिस कारण वे चर्मचक्षु से दिखाई नहीं देते (म. आश्व. ८.१-१२)।

वाहन एवं ध्वज—दक्षप्रजापति ने शिव को नंदिकेश्वर नामक वृषभ प्रदान किया; जिसे इसने अपना ध्वज एवं वाहन बनाया। इसी कारण शिव को 'वृषभध्वज' नाम प्राप्त हुआ (म. अनु. ७७.२७-२८; शैलाद देखिये)।

आयुध—इसका प्रमुख अस्त्र विद्युत्-शर (विद्युत्) है, जो इसके द्वारा आकाश से फेंके जाने पर, पृथ्वी को विदीर्ण करता है (ऋ. ७.४६)। इसके धनुष्बाण एवं वज्र आदि शस्त्रों का भी निर्देश प्राप्त है (ऋ. २.३३.३; १०; ५.४२.११; १०.१२६.६)।

ऋग्वेद में प्राप्त रुद्र के इस स्वरूप एवं अस्त्रवर्णन में आकाश से पृथ्वी पर आनेवाली प्रलयंकर विद्युत अभिप्रेत होती है।

पराक्रम—ऋग्वेद में इसे भयंकर एवं हिंसक पशु की भाँति विनाशक कहा गया है (ऋ. २.३३)। अपने प्रभावी शस्त्रों से यह गायों एवं मनुष्यों का वध करता है (ऋ. १.११४.१०)। यह अत्यंत क्रोधी है, एवं क्रुद्ध होने पर समस्त मानवजाति को विनष्ट कर देता है। इसी कारण, इसकी प्रार्थना की गयी है कि, यह क्रोध में आ कर अपने स्तोताओं एवं उनके पितरों, संतानों, संबंधियों, एवं अश्वों का वध न करे (ऋ. १.११४)।

अपने पुत्र एवं परिवार के लोगों को रोगविमुक्त करने के लिए भी इसकी प्रार्थना की गयी है (ऋ. ७. ४६.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे 'जलाष' (व्याधियों का उपशमन करनेवाला) एवं 'जलाषभेषज' (उपशामक औषधियों से युक्त) कहा गया है (ऋ. १.४.३-४)। यह चिकित्सकों में भी श्रेष्ठ चिकित्सक है (ऋ. २.३३

४), एवं इसके पास हज़ारों औषधियाँ है (ऋ. ७.४६. ३)।

यह दानवों की भाँति केवल क्रूरकर्मा ही नही, बल्कि प्रसन्न होने पर मानवजाति का कल्याण करनेवाला, एवं पशुओं का रक्षण करनेवाला होता है। इसी कारण, ऋग्वेद में इसे शिव (ऋ. १०.९२.९), एवं पशुप (ऋ. १.११४.९)। कहा गया है।

तैत्तिरीय संहिता में--यजुर्वेद के शतरुद्रीय नामक अध्याय में रुद्र का स्वमावचित्रण अधिक स्पष्ट रूप से प्राप्त है (तै. सं. ४.५.१; वा. सं. १६)। वहाँ इसका 'रुद्र स्वरूप' (रुद्रतनुः), एवं 'शिव स्वरूप' (शिवतनुः) का विभेद स्पष्ट रूप से बताते हुए कहा गया है :—

या ते रुद्र शिवा तनू शिवा विश्वस्य भेषजी।
शिवा रुद्रस्य भेषजी तया नो मृड जीवसे ॥
(तै. सं. रुद्राध्याय २)।

(रुद्र के घोरा एवं शिव नामक दो रूप हैं, जिनमें से पहला रूप दुःखनिवृत्ति एवं मृत्युपरिहार करनेवाला, एवं धन, पुत्र, स्वर्ग आदि प्रदान करनेवाला है; एवं दूसरा रूप आत्मज्ञान एवं मोक्ष प्रदान करनेवाला है)।

यजुर्वेद संहिता में मेघ से समीकृत कर के रुद्र का वर्णन किया गया है। इसे गिरीश एवं गिरित्र (पर्वतों में रहनेवाला) कहा गया है, एवं इसे जंगलों का, एवं वहाँ रहनेवाले पशुओं, चोर, डाकू एवं अन्त्यजों का अभिनियन्ता कहा गया है। यजुर्वेद में अग्नि को रुद्र कहा गया है, एवं उसे मखघ्न विशेषण भी प्रयुक्त किया गया है (तै. सं. ३.२.४; तै. ब्रा. ३.२.८.३)। रुद्र के द्वारा दक्षयज्ञ के विध्वंस की जो कथा पुराणों में प्राप्त है, उसीका संकेत यहाँ किया होगा।

यजुर्वेद में इसे कपर्दिन् (जटा धारण करनेवाला), शर्व (धनुष्बाण धारण करनेवाला), भव (चर एवं अचर सृष्टि को व्यापनेवाला), शंभु (सृष्टिकल्याण करनेवाला), शिव (पवित्र), एवं कृत्तिवसनः (पशुचर्म धारण करनेवाला) कहा गया है (वा. सं. ३.६१; १६.५१)।

इसके द्वारा असुरों के तीन नगरों के विनाश का निर्देश भी प्राप्त है (तै. सं. ६.४.३)।

यजुर्वेद में रुद्र-गणों का निर्देश प्राप्त है, एवं इस गण के लोग जंगल में रहनेवाले निषाद आदि वन्य जमातियों के 'गणपति' होने का निर्देश भी प्राप्त है। रुद्र वन्य जमातियों का राजा अथवा प्रमुख होने का निर्देश सर्वप्रथम यजुर्वेद संहिता में ही प्राप्त होता है।

इस तरह जंगलों का देवता माना गया रुद्र, जंगलों में रहनेवाले लोगों का भी देव बन गया, जो संभवतः वैदिक रुद्र देवता का एवं अनार्य लोगों के रुद्रसदृश देवता के सम्मीलन की ओर संकेत करता है।

अथर्ववेद में—इस वेद में रुद्र के कुल सात नाम प्राप्त है, किन्तु उन्हें एक नहीं, बल्कि सात स्वतंत्र देवता माना गया है। जिस तरह सूर्य के सवितृ, सूर्य, मित्र, पूषन् आदि नामान्तर प्राप्त है, उसी प्रकार अथर्ववेद में प्राप्त रुद्रसदृश देवता, एक ही रुद्र के विविध रुप प्रतीत होते है, जिनके नाम निम्न प्रकार हैः--

१. ईशान,--जो समस्त मध्यमलोक का सर्वश्रेष्ठ अधिपति है।

२. भव,—जो मध्यमलोक के पूर्वविभाग का राजा, व्रात्य लोगों का संरक्षक एवं उत्तम धनुर्धर है। यह एवं शर्व पृथ्वी के दुष्ट लोगों पर विद्युत्रूपी बाण छोड़ते हैं। इसे सहस्र नेत्र हैं, जिनकी सहायता से यह पृथ्वी की हरेक वस्तु देख सकता है (अ. वे. ११.२.२५)। यह आकाश, पृथ्वी एवं अंतरिक्ष का स्वामी है (अ. वे. ११.२.२७)। भव, शर्व एवं रुद्र के बाण कल्याणप्रद (सदाशिव) होने के लिए, इनकी प्रार्थना की गयी है (अ. वे. ११.६.९)।

३. शर्व,—जो उत्तम धनुर्धर एवं मध्यमलोक के दक्षिण विभाग का अधिपति है। इसे एवं भव को 'भूतपति' एवं 'पशुपति' कहा गया है (अ. वे. ११.२.१)।

४. पशुपति,—जो मध्यमलोक के पश्चिम विभाग का अधिपति है। इसे अश्व, मनुष्य, बकरी, मेंढक एवं गायों का स्वामी कहा गया है (अ. वे. ११.२.९)।

५. उग्र,—यह एक अत्यंत भयंकर देवता है, जो मध्यमलोक के उत्तर विभाग का अधिपति कहा गया है। यह आकाश, पृथ्वी एवं अंतरिक्ष के सारे जीवित लोगों का स्वामी है (अ. वे. ११.२.१०)।

६. रुद्र,--जो कनिष्ठ लोक का स्वामी है; एवं रोग-व्याधि, विषप्रयोग एवं आग फैलाने की अप्रतिहत शक्ति इसमें है। अग्नि, जल, एवं वनस्पतियों में इसका वास है, एवं पृथ्वी के साथ चंद्र एवं ग्रहमंडल का नियमन भी यह करता है (अ. वे. १३.४.२८)। इसी कारण, इसे 'ईशान' (राजा) कहा गया है।

७. महादेव,--जो उच्चलोक का अधिपति है।

ब्राह्मण ग्रंथों में--इन ग्रंथों में रुद्र को उषस् का पुत्र कहा गया है, एवं जन्म के पश्चात् इसे प्रजापति के द्वारा आठ विभिन्न नाम प्राप्त होने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. ६.१.३.७; कौ. ब्रा. ६.१.९)। इनमें से सात नाम यजुर्वेद की नामावलि से मिलते जुलते है, एवं आठवाँ नाम 'अशनि' (उल्कापात) बताया गया है। किन्तु इन ग्रंथों में ये आठ ही नाम एक रुद्र देवता के ही विभिन्न रूप दिये गये हैं। इनमें से, रुद्र, शर्व, उग्र एवं अशनि रुद्र के जगत्संहारक रूप के प्रतीक हैं, एवं भव, पशुपति, महादेव एवं ईशान आदि बाकी चार नाम इसके शान्त एवं जगत्प्रतिपालक रूप के द्योतक हैं। इस तरह ऋग्वेद काल में पृथ्वी को भयभीत करनेवाले जगत्संहारक-रुद्रदेवता को, ब्राह्मण ग्रंथों के काल में जगत्संहारक एवं जगत्प्रतिपालक ऐसे द्विविध रूप प्राप्त हुयें।

ब्राह्मण ग्रंथों में रुद्र के उत्पत्ति की एक कथा भी दी गई है। प्रजापति के द्वारा दुहितृगमन किये जाने पर उसे सजा देने के लिए रुद्र की उत्पत्ति हुई। पश्चात् रुद्र ने पशुपति का रूप धारण कर मृगरूप से भागनेवाले प्रजापति का वध किया। प्रजापति एवं उसका वध करनेवाला रुद्र आज भी आकाश में मृग एवं मृगव्याध नक्षत्र के रूप में दिखाई देते हैं (ऐ. ब्रा. ३.३३; श. ब्रा. १.७.४.१-३; ब्रह्म. १०२)।

उपनिषदों में--रुद्र-शिव से संबंधित सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण उपनिषद 'श्वेताश्वतर उपनिषद' है, जिसमें रुद्र-शिव को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ देवता कहा गया है।

अनादि अनंत परमेश्वर का स्वरूप क्या है, एवं आत्मज्ञान से उसकी प्राप्ति कैसे हो सकती है, इसकी चर्चा अन्य उपनिषदों के भाँति इस उपनिषद में भी की गयी है। किन्तु यहाँ प्रथम ही जगत्संचालक ब्रह्मन् का स्थान जीवित व्यक्ति का रंग एवं रूप धारण करनेवाले रुद्र-शिव के द्वारा लिया गया है। इस उपनिषद में रुद्र, शिव, ईशान एवं महेश्वर को सृष्टि का अधिष्ठात्री देवता (देव) कहा गया है, एवं इसकी उपासना से एवं ज्ञान से ब्रह्मज्ञान प्राप्त होता हैं, ऐसा कहा गया है। इस उपनिषद के अनुसार, सृष्टि का नियामक एवं संहारक देवता केवल रुद्र ही है (श्वे. उ. ३.२), जो गूढ, सर्वव्यापी एवं सर्वशासक है (श्वे. उ. ५.३), एवं केवल उसीके ज्ञान से ही मोक्षप्राप्ति हो सकती है (श्वे. उ. ४.१६)। इस ग्रंथ में विश्वमाया का नाम प्रकृति दिया गया है, एवं उस माया का शास्ता रुद्र बताया गया है (श्वे. उ. ४.१०)।

श्वेताश्वतर उपनिषद शैवपंथीय नहीं, बल्कि आत्मज्ञान का एवं ईश्वरप्राप्ति का पंथनिरपेक्ष मार्ग बतानेवाला एक सर्वश्रेष्ठ प्राचीन उपनिषद माना जाता है, एवं इसी कारण शंकराचार्य, रामानुज आदि विभिन्न पंथ के आचार्यों ने इसके उद्धरण लिये हैं।

यह उपनिषद ग्रंथ भक्तिसांप्रदाय एवं रुद्र-शिव की उपासना का आद्य ग्रंथ माना जाता है, एवं इसका काल भगवद्गीता के पूर्वकालीन है, जिसे वासुदेव कृष्ण की उपासना का आद्य ग्रंथ माना जाता है। इससे प्रतीत होता है कि, भगवद्गीता तक के काल में भारतवर्ष में रुद्र-शिव ही एकमेव उपास्य देवता थी, जिसके स्थान पर भवद्गीता के पश्चात्, रुद्र एवं वासुदेव कृष्ण इन दोनों देवताओं की उपासना प्रारंभ हुयीं।

केन उपनिषद में--रुद्र-शिव की पत्नी उमा (हैमवती) का सर्वप्रथम निर्देश इस उपनिषद में प्राप्त है, जहाँ उसे स्पष्ट रूप से शिव की पत्नी नही, बल्कि साथी कहा गया है। इंद्र, वायु, अग्नि आदि वैदिक देवताओं की शक्ति, जिस समय काफ़ी कम हो चुकी थी एवं रुद्र-शिव ही एक देवता पृथ्वी पर रहा था, उस समय की एक कथा इस उपनिषद में दी गयी है:--एक बार देवों के सारे शत्रु को ब्रह्मन् ने पराजित किया, किन्तु इस विजयप्राप्ति का सारा श्रेय इंद्र, अग्नि आदि देवता लेने लगे। उस समय रुद्र-शिव देवों के पास आया। देवों का गर्वपरिहार करने के लिए इसने अग्नि, वायु एवं इंद्र के सम्मुख एक घाँस का तिनका रखा, एवं उन्हें क्रमशः उसे जलाने, भगाने एवं उठाने के लिए कहा। इस कार्य में तीनों वैदिक देव असफल होने के पश्चात्, हैमवती उमा ने ब्रह्मस्वरूप रुद्र-शिव का माहात्म्य उन्हें समझाया।

'शिव अथर्वशिरस् उपनिषद' में भी रुद्र की महत्ता का वर्णन प्राप्त है। किन्तु वहाँ रुद्र-शिव के संबंधी तात्त्विक जानकारी कम है, एवं शिवोपासना के संबंधी जानकारी अधिक है, जिस कारण यह उपनिषद् काफ़ी उत्तरकालीन प्रतीत होता है।

गृह्यसूत्रों में--इन ग्रंथों में गायों का रोग टालने के लिए शूलगव नामक यज्ञ की जानकारी दी गयी है, जहाँ बैल के 'वपा' की आहुति रुद्र के निम्नलिखित बारह नामों का उच्चारण के साथ करने को कहा गया है:--रुद्र; शर्व; उग्र; भव; पशुपति; महादेव; ईशान; हर; मृड; शिव; भीम एवं शंकर। इनमें से पहले तीन

जगत्संहारक रुद्र के, दूसरे चार नाम जगत्प्रतिपालक रुद्र के, एवं अंतिम पाँच नाम नये प्रतीत होते हैं।

पारस्कर गृह्य एवं हिरण्यकेशी गृह्यसूत्रों में शूलगव यज्ञ की प्रक्रिया दी गयी है। किन्तु वहाँ रुद्र के बदले इंद्राणी, रुद्राणी, शर्वाणी, भवानी आदि रुद्रपत्नियों के लिए आहुति देने को कहा है, एवं 'भवस्य देवस्य पत्न्यै स्वाहा' इस तरह के मंत्र भी दिये गये हैं (पा. गृ. ३. ८; हि. गृ. २.३.८)।

इन्हीं ग्रंथों में पर्वत, नदी, जंगल, स्मशान आदि से प्रवास करते समय, रुद्र की उपासना किस तरह करनी चाहिये, इसका भी दिग्दर्शन किया गया है (पा. गृ. १५, हि. गृ. ५.१६)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में रुद्र का निर्देश शिव एवं महादेव नाम से किया गया है। वहाँ इसकी पत्नी के नाम उमा, पार्वती, दुर्गा, काली, कराली आदि बताये गये हैं, एवं इसके पार्षदों को 'शिवगण' कहा गया है।

मुंजवत् पर्वत पर तपस्या करनेवाले शिव को योगी अवस्था कैसी प्राप्त हुई इसकी कथा महाभारत में प्राप्त है। सृष्टि के प्रारंभ के काल में, ब्रह्माकी आज्ञा से शिव प्रजा-उत्पत्ति का कार्य करता था। आगे चल कर, ब्रह्मा के द्वारा इस कार्य समाप्त करने की आज्ञा प्राप्त होने पर, शिव पानी में जा कर छिप गया। पश्चात् ब्रह्मा ने दूसरे एक प्रजापति का निर्माण किया, जो सृष्टि उत्पत्ति का कार्य आगे चलाता रहा। कालोपरान्त शिव पानी से बाहर आया, एवं अपने अनुपस्थिति में भी प्रजा-उत्पत्ति का कार्य अच्छी तरह से चल रहा है, यह देख कर इसने अपना लिंग काट दिया, एवं यह स्वयं मुंजवत् पर्वत पर तपस्या करने के लिये चला गया।

इसी प्रकार की कथा वायुपुराण में भी प्राप्त है। ब्रह्मन् के द्वारा नील लोहित (महादेव) को प्रजाउत्पत्ति की आज्ञा दिये जाने पर, उसने मन ही मन अपनी पत्नी सती का स्मरण किया, एवं हज़ारो विरूप एवं भयानक प्राणियों (रुद्रसृष्टि) का निर्माण किया, जो रंगरूप में इसी के ही समान थें। इस कारण ब्रह्मा ने इसे इस कार्य से रोंक दिया। तदोपरान्त यह प्रजा-उत्पत्ति का कार्य समाप्त कर 'पाशुपत योग' का आचरण करता हुआ मुंज पर्वत पर रहने लगा (वायु. १०; विष्णु. १.७-८; ब्रह्मांड. २.९.७९)।

उपासक-गण—महाभारत में निम्नलिखित लोगों के द्वारा शिव की उपासना करने का निर्देश प्राप्त है :—
१. अर्जुन, जिसने पाशुपतास्त्र की प्राप्ति के लिए शिव की दोबार उपासना की थी (म. भी ३८-४०; द्रो. ८०-८१); २. अश्वत्थामन्, जिसके शरीर में प्रविष्ट हो कर शिव ने पाण्डवों के रात्रिसंहार में मदद की थी (म. सौ. ७); ३. श्रीकृष्ण, जिसने अपनी पत्नी जांबवती को तेजस्वी पुत्र प्राप्त होने के लिए तपस्या की थी, एवं जिसे शिव एवं उमा ने कुल चौवीस वर प्रदान किये थें (म. अनु. १४); ४. उपमन्यु, जिसने कड़ी तपस्या कर शिव से इच्छित वर प्राप्त कियें थे; ५. शाकल्य, जिसने शिव-प्रसाद से ऋग्वेद संहिता एवं पदपाठ की रचना में हिस्सा लिया था (म. अनु. १४)।

इनके अतिरिक्त, शिव के उपासकों में अनेकानेक ऋषि, राजा, दैत्य, अप्सरा, राजकन्या, सर्प आदि शामिल थे, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार है:- १. ऋषि—दुर्वासस्, परशुराम, मंकणक; २. राजा—राम दाशरथि, जयद्रथ, द्रुपद, मणिपुरनरेश प्रभंजन, श्वेतकि; ३. दैत्य—अंधक, अंधकपुत्र आडि, जालंधर, त्रिपुर, बाण, भस्मासुर, रावण, रक्तबीज, वृक, हिरण्याक्ष; ४. अप्सरा—तिलोत्तमा; ५. राजकन्या—अंबा, गांधारी; ६. सर्प—मणि।

इनमें से दैत्य एवं असुरों के द्वारा शिव की उदारता एवं भोलापन का अनेकबार गैर फायदा लिया गया, जो त्रिपुर, भस्मासुर, रक्तबीज, रावण आदि के चरित्र से विदित है।

अष्ट-रुद्र—पुराणों में अष्टरुद्रों की नामावलि दी गयी है, जो शतपथ ब्राह्मण की नामावलि से मिलती जुलती है। इन ग्रंथों के अनुसार, ब्रह्मा से जन्म प्राप्त होने पर यह रोदन करते हुए इधर उधर भटकने लगा। पश्चात् इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, ब्रह्मा ने इसे आठ विभिन्न नाम, पत्नियाँ एवं निवासस्थान आदि प्रदान कियें।

प्रमुख पुराणों में से, विष्णु, मार्कंडेय, वायु एवं स्कंद में अष्टमूर्ति महादेव की नामावलि प्राप्त है (विष्णु. १. ८; मार्क. ४९; पद्म. सृ. ३; वायु. २७; स्कंद. ७.१. ८७)। इन पुराणों में प्राप्त रुद्र की पत्नियों, संतान, निवासस्थान आदि की तालिका निम्नप्रकार है :-

रुद्र का नाम	पत्नी	संतान	निवासस्थान
रुद्र	सुवर्चला अथवा सती	शनैश्चर	सूर्य
भव	उमा (उषा)	शुक्र	जल
शर्व (शिव)	विकेशी	मंगल	मही
पशुपति	शिवा	मनोजव	वायु
भीम	स्वाहा (स्वधा)	स्कंद	अग्नि
ईशान	दिशा	स्वर्ग	आकाश
उग्र	दीक्षा	संतान	यज्ञीय ब्राह्मण
महादेव	रोहिणी	बुध	चंद्र

कालिदास के शाकुन्तल की नांदी में, अष्टमूर्ति शिव का निर्देश है, जहाँ उपर्युक्त तालिका में दिये गयें रुद्र के निवासस्थानों को ही 'अष्टमूर्ति' कहा गया हैं :-- जल, वह्नि, सूर्य, चंद्र, आकाश, वायु, पृथ्वी (अवनी) एवं यज्ञकर्ता (शा. १.१)।

एकादश रुद्र—महाभारत एवं पुराणों में प्रायः सर्वत्र रुद्रों की संख्या एकादश बतायी गयी हैं, एवं उनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के शरीर से उत्पन्न एक ही आद्य रुद्र से होने की कथा बताई गयी है। किन्तु इन ग्रंथों में प्राप्त एकादश रुद्रों की नामावलि एक दूसरी से मेल नहीं खाती है। इनमें से प्रमुख ग्रंथों में प्राप्त नामावलियाँ निम्न प्रकार है :—

१. महाभारत—मृगव्याध, शर्व, निर्ऋति, अजैकपात्, अहिर्बुध्न्य, पिनाकिन्, दहन, ईश्वर, कपालिन्, स्थाणु, एवं भव (म. आ. ५०.१-३)।

२. स्कन्द पुराण में--भूतेश, नीलरुद्र, कपालिन्, वृषवाहन, त्र्यंबक, महाकाल, भैरव, मृत्युंजय, कामेश, एवं योगेश (स्कंद. ७.१.८७)। इस पुराण के अनुसार, कृतयुग में अष्ट रुद्र उत्पन्न हुयें, एवं कलियुग में ग्यारह रुद्रों का अवतार हुआ, जिनकी नामावलि यहाँ दी गयी है। ये ग्यारह रुद्र, दस वायु एवं एक आत्मा मिल कर बन गयें हैं, जिनमें से दस वायु के नाम निम्न हैं :-- प्राण, अपान, व्यान, उदान, समान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त एवं धनंजय।

३. भागवत में--इस ग्रंथ में ग्यारह रुद्रों के नाम, उनकी पत्नियाँ, एवं निवासस्थान दिये गयें हैं, जो निम्न प्रकार है :--

रुद्र का नाम	पत्नी	निवासस्थान
मन्यु	धी	हृदय
मनु	वृत्ति	इंद्रिय
महिनस् (सोम)	उशना	असु
महत्	उमा	व्योम
शिव	नियुता	वायु
ऋतध्वज	सर्पि	अग्नि
उग्ररेतस्	इला	जल
भव	अंबिका	मही
काल	इरावती	सूर्य
वामदेव	सुधा	चंद्र
धृतध्वज	दीक्षा	तप

(भा. ३.१२.७-१८)।

विभिन्न पुराणों में—उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त अन्य पुराणों में प्राप्त एकादश रुद्र के नाम एवं उनके संभवनीय पाठभेद निम्न प्रकार है :-- १. अजैकपात् (अज, एकपात्, अपात्); २. अहिर्बुध्न्य; ३. ईश्वर (सुरेश्वर, विश्वेश्वर, अपराजित, शास्तृ, त्वष्ट्र); ४. कपालिन्; ५. कपर्दिन्; ६. त्र्यंबक (दहन, दमन, उग्र, चण्ड, महातेजस्, विलोहित, हवन), ७. बहुरूप (निंदित, निर्ऋति महेश्वर), ८. पिनाकिन् (भीम); ९. मृगव्याध (रैवत, परंतप); १०. वृषाकपि (विरूपाक्ष, भग); ११. स्थाणु (शंभु, रुद्र, जयंत, महत्, अयोनिज, हर, भव, शर्व, ऋत, सर्वसंज्ञ, संध्य एवं सर्प)।

जन्म की कथाएँ--रुद्र के जन्म के संबंधी विभिन्न कथाएँ पुराणों में प्राप्त है। सृष्टि के विस्तार का कार्य ब्रह्मा के सनंदन आदि प्रजापतिपुत्रों पर सौंपा गया था। किंतु वह काम उनके द्वारा यथावत् न किये जाने पर ब्रह्मा क्रुद्ध हुआ, एवं अपनी भ्रुकुटि उसने वक्र की। ब्रह्मा के उस वक्र किये भ्रुकुटि से ही रुद्र का जन्म हुआ (विष्णु. १.७.१०-११)। पद्म एवं भागवत में भी इसे

ब्रह्मा के क्रोध से उत्पन्न कहा गया है (पद्म. सृ. ३; भा. ३.१२.१०)। अन्य पुराणों में, इसे ब्रह्मा के अभिमान से (ब्रह्मांड. २.९.४७); ललाट से (भवि. ब्राह्म ५७); मन से (मत्स्य. ४.२७); मस्तक से (स्कंद. ५.१.२) उत्पन्न कहा गया है।

विष्णु के अनुसार, प्रजोत्पादनार्थ चिंतन करने के लिए बैठे हुए ब्रह्मा को एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो शुरु में रक्तवर्णीय था, किन्तु पश्चात् नीलवर्णीय बन गया। ब्रह्मा का यही पुत्र रुद्र है। स्कंद में शंकर के आशीर्वाद से ही ब्रह्मा के रुद्र नामक पुत्र होने की कथा प्राप्त है।

अन्य पुराणों में रुद्रगणों को कश्यप एवं सुरभि के (ह. वं. १.३; ब्रह्म ३.४७-४८; शिव. रुद्र. १७); भूतकन्या सुरूपा के (भा. ६.६. १७); तथा प्रभास एवं बृहस्पतिभगिनी के (विष्णु १. १५. २३) पुत्र कहा गया है। महाभारत में कई स्थानों पर, रुद्र देवता के स्थान पर एकादश रुद्रों का निर्देश किया गया है (म. आ. ६०.३; ११४. ५७-५८; शां. २०१.५४८ *; अनु. २५५.१३; स्कंद. ६.२७७; पद्म सृ. ४०)।

पराक्रम—इसके पराक्रम की विभिन्न कथाएँ पुराणों में प्राप्त हैं। गंधमादन पर्वत पर अवतीर्ण होनेवाली गंगा इसने अपने जटाओं में धारण की (पद्म. स्व. ३)। अपने श्वसुर दक्ष के द्वारा अपमान किये जाने पर, इसने उसके यज्ञ का विध्वंस अपने वीरभद्र नामक पार्षद के द्वारा कराया। ब्रह्मा के द्वारा अपमान होने पर, इसने उसका पाँचवाँ सिर अपने दाहिने पाँव के अंगूठे के नाखुन से काट ड़ाला। ब्रह्मा का सिर काटने से इसे ब्रह्महत्त्या का पातक लगा, जो इसने काशी क्षेत्र में निवास कर नष्ट किया (पद्म. सृ. १४)। कई अन्य पुराणों में ब्रह्मा का पाँचवा सिर इसने अपने भैरव नामक पार्षद के द्वारा कटवाने का निर्देश प्राप्त है (शिव. विद्या. १.८)।

ब्रह्मा के यज्ञ में यह हाथ में कपाल धारण कर गया, जिस कारण इसे यज्ञ के प्रवेशद्वार के पास ही रोका दिया गया। किन्तु आगे चलकर इसके तपःप्रभाव के कारण, इसे यज्ञ में प्रवेश प्राप्त हुआ, एवं ब्रह्मा के उत्तर दिशा में बहुमान की जगह इसे प्रदान की गई (पद्म. सृ. १७)।

समुद्रमंथन से निकला हलाहल-विष इसने प्राशन किया जिस कारण, इसकी ग्रीवा नीली हो गई, एवं इसके शरीर का अत्यधिक दाह होने लगा। उस दाह का उपशम करने के लिए, इसने अपने जटासंभार में उसी समुद्रमंथन से निकला हुआ चंद्र धारण किया, जिस कारण इसे 'नीलकंठ,' एवं 'चंद्रशेखर' नाम प्राप्त हुयें।

ब्राह्मणों का नाश करने के हेतु, एक दैत्य हाथी का रूप धारण कर काशीनगरीं में प्रविष्ट हुआ था, जिसका इसने वध किया, एवं उसका चर्म का वस्त्र बनाया। इसी कारण इसे 'कृत्तिवासस्' (हाथी का चर्म धारण करनेवाला) नाम प्राप्त हुआ (पद्म. स्व. ३४)।

देव असुरों के युद्ध में यह प्रायः देवों के पक्ष में ही शामिल रहता था, एवं देवसेना के सेनापति के नाते इसने अपने पुत्र कार्तिकेय को अभिषेक भी किया था (विष्णुधर्म. १.२३३)। फिर भी अपना श्रेष्ठत्व प्रस्थापित करने के लिए इसने देवों से तीन बार, एवं नारायण तथा कृष्ण से एक एक बार युद्ध किया था (म. शां. ३३०)। नारायण के साथ किये युद्ध में, इसने उसके छाति पर शूल से प्रहार किया था, जो व्रण 'श्रीवत्स-चिह्न' नाम से प्रसिद्ध है (म. शां ३३०. ६५)।

महाभारत में वर्णन किये गये शिव के पराक्रम में दक्ष-यज्ञ का विध्वंस, एवं त्रिपुरासुर का वध (म. क. २४). इन दोनों को प्राधान्य दिया गया है (दक्ष प्रजापति एवं त्रिपुर देखिये)। त्रिपुरासुर के वध के पहले इसने उसके आकाश में तैरनेवाले त्रिपुर नामक तीन नगरों को जला दिया। शिव के द्वारा किये गयें त्रिपुरदाह का तात्त्विक अर्थ महाभारत में दिया गया है, जिसके अनुसार स्थूल, सूक्ष्म, एवं कारण नामक तीन देहरूप नगरों का शिव के द्वारा दाह किया गया। हर एक साधक को चाहिए की, वह भी शिव के समान इन तीन नगरों का नाश करे, जो दुष्कर कार्य शिव की उपासना करने से ही सफल हो सकता है।

तामस-रूप—यह भूत पिशाचों का अधिपति था, एवं अमंगल वस्तु धारण कर इसने कंकाल, शैव, पाषंड, महादेव आदि अनेक तामस पंथों का निर्माण किया था। विष्णु की आज्ञानुसार, इसने निम्नलिखित ऋषियों को तामसी बनाया था:—कणाद, गौतम, शक्ति, उपमन्यु, जैमिनि, कपिल, दुर्वास, मृकंडु, बृहस्पति, भार्गव एवं जामदग्न्य। देवों के यज्ञ में हविर्भाग प्राप्त न होने के कारण, इसने क्रुद्ध हो कर भग एवं पूषन् को क्रमशः

एकाक्ष एवं दंतविहीन बनाया था, एवं यज्ञ देवता को मृग का रूप ले कर भागने पर विवश किया था।

भूतपिशाचों के गणों के वीरभद्र आदि अधिपति इसके ही पुत्र माने जाते हैं। इसी कारण इसको एवं इसकी पत्नी को क्रमशः 'महाकाल' एवं 'काली' कहा गया है। स्कंद में इसे सात सिरोंवाला कहा गया है, जिनमें से हर एक सिर अज, अश्व, बैल आदि विभिन्न प्राणियों से बना हुआ था। इन सिरों में से अपना अज एवं अश्व का सिर, इसने क्रमशः ब्रह्मा एवं विष्णु को प्रदान किया था।

वामन आदि पुराणों में रुद्र के तामस स्वरूप का अधिकांश वर्णन प्राप्त है। भूतपतित्व, शीघ्रकोपित्व, एवं आहारादि में मद्यमांस की आधिक्यता, ये रुद्र के तामस स्वरूप की तीन प्रमुख विशेषताएँ है।

शिवदेवता की उत्क्रांति—इस तरह हम देखते है कि, रुद्र-शिव के उपासकों के मन में इस देवता की दो प्रतिमाएँ प्रस्तुत की गयी हैं। इन ग्रंथों में निर्दिष्ट तामस रुद्र का वर्णन ज्ञानप्रधान एवं योग-साधना में मग्न हुए शिव से अलग है। वेदों के पूर्वकालीन अनार्य रुद्र का उत्क्रान्त आध्यात्मिक रूप शिव माना जाता है। ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रन्थों में जो रुद्र था, वहीं आगे चल कर, उपनिषद ग्रन्थों में शिव बन गया, एवं उसे परमशुद्ध आध्यात्मिक रूप प्राप्त हो गया। उसकी पूजा मद्यमांस से नहीं, बल्कि फलपुष्पादि पदार्थों से की जाने लगी। कोई न कोई कामना मन में रख कर, परमेश्वर की उपासना करनेवाले सामान्य जनों के अतिरिक्त, परब्रह्मप्राप्ति की आध्यात्मिक इच्छा मन में रखनेवाले तत्त्वज्ञ भी उसे 'महादेव' मानने लगे।

किंतु सामान्य भक्तों में उनके आध्यात्मिक अधिकार के अनुसार, शिव के तामस रूप की पूजा चलती ही रही, जिसका आविष्कार रुद्र के भैरव, कालभैरव आदि अवतारों की उपासना में आज भी प्रतीत होता है।

रुद्र-शिव के इसी दो रूपों का विशदीकरण महाभारत में प्राप्त है, जहाँ रुद्र की 'शिवा' एवं 'घोरा' नामक दो मूर्तियाँ बतायी गयीं है :—

> द्वे तनू तस्य देवस्य वेदज्ञा ब्राह्मणा विदुः।
> घोरामन्यां शिवामन्यां ते तनू बहुधा पुनः॥
> (म. अनु. १६१.३)

(शिव की घोरा एवं शिवा नामक दो मूर्तियाँ है, जिनमें से घोरा अग्निरूप, एवं शिवा परमगुह्य अध्यात्मस्वरूप महेश्वर है)।

परिवार—रुद्र-शिव को निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीः– १. दक्षकन्या सती; २. हिमाद्रिकन्या पार्वती (उमा) (दक्ष, सती एवं पार्वती देखिये)।

रुद्र को सती से कोई भी पुत्र नही था। पार्वती से इसे निम्नलिखित दो पुत्र उत्पन्न हुयें थेः—१. गजानन (गणपति), जो पार्वती के शरीर के मल से उत्पन्न हुआ था; २. कार्तिकेय स्कंद, जो शिव का सेनापति था (गणपति एवं स्कंद देखिये)।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त, पार्वती ने भूतपिशाचाधिपति वीरभद्र को, एवं बाणासुर को अपने पुत्र मान लिया था, जिस कारण यें दोनों भी शिव के पुत्र ही कहलाते हैं (वीरभद्र एवं बाण देखिये)। इसने शैलादपुत्र नंदिन् को भी अपना पुत्र माना था (नंदिन् देखिये)।

रुद्रोपासना—रुद्र शिव की उपासना प्राचीन भारतीय इतिहास में अन्य कौनसे भी देवता की अपेक्षा प्राचीन है। ऐतिहासिक दृष्टि से रुद्र-शिव की इस उपासना के दो कालखंड माने जाते हैं:– १. जिस काल में शिव की प्रतिकृति की उपासना की जाती थी; २. जिस काल में शिव की प्रतिकृति के उपासना का लोप हो कर, उसका स्थान शिवलिंगोपासना ने ले लिया।

यद्यपि ऋग्वेद में शिश्न देवता की उपासना करनेवाले अनार्य लोगों का निर्देश दो बार प्राप्त है (ऋ. ७. २१. ५;१०.९९.३), फिर भी रुद्र की उपासना में लिंगोंपासना का निर्देश प्राचीन वैदिक वाङ्मय में कहीं भी प्राप्त नहीं होता है। यही नही, पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में शिव, स्कंद एवं विशाख की स्वर्ण आदि मौल्यवान् धातु के प्रतिकृतियों की पूजा करने का स्पष्ट निर्देश प्राप्त है (महा. ३.९९)। वेम कद्फिसस् के सिक्कों पर भी शिव की त्रिशूलधारी मूर्ति पाई जाती है, एवं वहाँ शिव के प्रतीक के रूप में शिवलिंग नहीं, बल्कि नन्दिन् दिखाया गया है।

शिवलिंगोपासना का सर्वप्रथम निर्देश श्वेताश्वतर उपनिषद में पाया जाता है, जहाँ 'ईशान रुद्र' को सृष्टि के समस्त योनियों अधिपति कहा गया है (श्वे. उ. ४.११; ५.२)। किन्तु यहाँ भी शिवलिंग शिव का प्रतीक होने का स्पष्ट निर्देश अप्राप्य है, एवं सृष्टि के समस्त प्राणि जातियों का सृजन रुद्र के द्वारा किये जाने का तात्त्विक अर्थ अभिप्रेत है। महाभारत में दिये गये उपमन्यु के आख्यान में शिवलिंगोपासना का स्पष्ट रूप से निर्देश प्रथम ही पाया जाता है।

डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, रुद्र–शिव सर्वप्रथम वैदिक देवता था, किन्तु आगे चल कर, वह व्रात्य, निषाद आदि वन्य एवं अनार्य लोगों का भी देवता बन गया। उन लोगों के कारण रुद्र–शिव के संबंधी प्राचीन वैदिक आर्यों के द्वारा प्रस्थापित की गयी कल्पनाओं में पर्याप्त फ़र्क किये गये, एवं भूतपति, सर्पधारण करनेवाला, स्मशान में रहनेवाला एक नया देवता का निर्माण हुआ। रुद्र के इस नये रूपान्तर के साथ ही साथ उसके प्रतिकृति की उपासना करने की पुरातन परंपरा नष्ट हो गयी, एवं उसका स्थान शिवलिंग की उपासना करनेवाली नयी परंपरा ने ले लिया।

अन्य कई अभ्यासकों के अनुसार, अनार्य लोगों से पूजित रुद्रदेवता, वैदिक रुद्र देवता से काफ़ी पूर्वकालीन है, एवं इन्हीं रुद्रपूजक लोगों का निर्देश ऋग्वेद में यज्ञविरोधी, शिश्नपूजक अनार्य लोगों के रूप में किया गया है। अनार्य लोगों के इस मद्यमांसभक्षक, भूतों से वेष्टित, एवं अत्यंत क्रूरकर्मा तामस देवता को वैदिक रुद्र देवता से सम्मीलित कर, उसके उदात्तीकरण का एक महान् प्रयोग वैदिक आर्यों के द्वारा किया गया। इस प्रयोग के कारण, रुद्र देवता अपने नये रूप में जनमानस की एक अत्यंत लोकप्रिय देवता बन गई, एवं उसके अनार्य वन्य एवं अंत्यज भक्तों के भक्ति का भी एक नया उदात्तीकरण हो गया। अनार्यों के इस देवता के तामस स्वरूप को उदारता का, शक्ति का एवं तपश्चरण का एक नया पहलु वैदिक आर्यों के द्वारा प्रदान किया गया। श्वेताश्वतर जैसे उपनिषदों ने तो रुद्र–शिव को समस्त सृष्टि का नियंता एवं परब्रह्म प्राप्ति करानेवाला परमेश्वर बना दिया। यह उदात्तीकरण का कार्य करते समय, अनार्य रुद्र देवता के कुछ तामस पहलु वैदिक रुद्र देवता में आ ही गयें, जिनमें से शिवलिंगोपासना एवं लिंगपूजा एक है।

मुँहेंजोदड़ो में—शिव की अत्यधिक प्राचीन प्रतिकृति मुँहेंजोदड़ो एवं हड़प्पा के उत्खनन में प्राप्त हुए सिन्धु सभ्यता के खंडहरों में दिखाई देती हैं। इस उत्खनन में शिवस्वरूप से मिलते जुलतें देवता के कई सिक्के प्राप्त है, जहाँ तीन मुखवाले एक देवता की प्रतिमा चित्रांकित की गई है। यह देवता योगासन में बैठी है, एवं उसके शरीर के निचला भाग विवस्त्र है। मुँहेंजोदड़ो के इस देवता का स्वरूप महाभारत में वर्णित किये गए शिव के 'त्रिशीर्ष' (चतुर्मुख), 'विवस्त्र' (दिग्वासस्), 'ऊर्ध्वलिंग' (ऊर्ध्वरेतस्), 'योगाध्यक्ष' (योगेश्वर), स्वरूप से मिलता जुलता है (म. अनु. १४.१६२; १६५; ३२८; १७.४६; ७७; ९९)। इन सिक्कों के आधार पर, सर जॉन मार्शल के द्वारा यह अनुमान व्यक्त किया गया है कि, ई. पू. ३००० कालीन सिन्धुघाटी सभ्यता में शिव के सदृश कई देवताओं की पूजा अस्तित्व में थी।

मुँहेंजोदड़ो में प्राप्त देवता के बाये बाजू में व्याघ्र एवं हाथी है, एवं दाये बाजू में बैल एवं गण्डक हैं। यह चित्र महाभारत में प्राप्त शिव के वर्णन से मिलता जुलता है, जहाँ इसे 'पशुपति', 'शार्दूलरूप', 'व्यालरूप', 'मृगबाणरूप', 'नागचर्मोत्तरच्छद', 'व्याघ्राजीन', 'महिषघ्न', 'गजहा' एवं 'मण्डलिन्', तथा इसकी पत्नी दुर्गा को 'गण्डिनी' कहा गया है (म. अनु. १४. ३१३; १७.४८; ६१; ८५; ९१)।

पश्चिम एशिया में—इस प्रकार महाभारत में प्राप्त शिववर्णन में एवं मुँहेंजोदडो में प्राप्त त्रिशिर देवता में काफ़ी साम्य दिखाई देता है। किन्तु शिव का प्रमुख विशिष्टता जो वृषभ, वह मुँहेंजोदड़ो में प्राप्त सिक्कों में नही दिखाई देता है। महाभारत में शिव को सर्वत्र 'वृषभवाह' एवं 'वृषभवाहन' कहा गया हैं (म. अनु. १४.२९९; ३९०)। इस विशिष्ट दृष्टि से ई. पू. २००० में पश्चिम एशिया में हिटाइट लोगों के द्वारा पूजित तेशब देवता से शिव का काफ़ी साम्य दिखाई देता है। बाबिलोनिया में प्राप्त अनेक शिल्पों में एवं अवशेषों में तेशब देवता की प्रतिमा दिखाई देती हैं, जहाँ उसे वृषभवाहन एवं त्रिशुलधारी बताया गया है। उसकी पत्नी का नाम माँ था, जिसकी जगन्माता मान कर पूजा की जाती थी।

वैदिक एवं पौराणिक वाङ्मय में निर्दिष्ट रुद्र में एवं तेशब देवता में काफ़ी साम्य है। तेशब से समान रुद्र–शिव हाथ में विद्युत्, धनुष (धन्वी, पिनाकिन्), त्रिशूल (शूल), दण्ड, परशु, पट्टीश आदि अस्त्र धारण करता है (ऋ. २.३३.३; म. अनु. १४.२८८; २८९; १७.४३; ४४; ९९)। तेशब के समान रुद्रशिव भी अंबिका का पति है, जिसे पार्वती, देवी एवं उमा कहा गया है (म. व. ७८.५७; अनु. १४.३८४; ४२७)। तेशब देवता की पत्नी सिंहारूढ वर्णित है, जो सिंहवाहिनी देवी दुर्गा से साम्य रखती है (मार्क. ४.२)। सुसा में प्राप्त तेशब देवता के पत्नी का चित्रण–प्रायः मधुमक्षिका के साथ किया गया है, जो मार्कंडेय में निर्दिष्ट 'भ्रामरीदेवी' से साम्य रखता है (मार्क. ८८.५०; दे. भा. १०.१३)।

मार्कंडेय के अनुसार, भ्रामरीदेवी ने अरुण नामक असुर का वध किया था, जिससे प्रायः असीरिया एवं इराण में रहनेवाले कई विपक्षीय जाति का बोध होता है।

सुमेर में—शुक्लयजुर्वेद मे प्राप्त 'शत्रुंजय-सूक्त' रुद्र-शिव को उद्देश्य कर लिखा गया है, जिसकी सारी विचारधारा सुमेरियन देवता नेर्यल को उद्देश्य कर लिखे गये सूक्त से काफ़ी मिलतीजुलती है।

इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है की, ॲनातोलिया, मेसोपोटॅमिया एवं सिन्धुघाटी सभ्यता में प्राप्त नानाविध देवताओं से भारतीय रुद्रशिव कोई ना कोई साम्य जरूर रखता है (रॉय चौधरी--स्टडीज इन इंडियन ॲन्टिक्विटीज, पृष्ठ २००-२०४)।

शिव के अवतार—अपने भक्तो के रक्षण के लिए एवं शत्रु के संहार के लिए शिव ने नानाविध अवतार नानाविध कल्पों में लिये, जिनकी जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है। इन अवतारों की संख्या विभिन्न पुराणों में पाँच, दस, अठ्ठाईस एवं शत बताई गई है। शिव के इन सारे अवतारों में निम्नलिखित अवतार अधिक प्रसिद्ध है:--

(१) **चार अवतार**--१. शरभ, जो अवतार इसने नृसिंह का पराजय करने के लिए धारण किया था, २. मल्लारि, जो अवतार इसने मणिमल्ल का वध करने के लिए धारण किया था, ३. दुर्वासस्, जो अवतार त्रिमूर्ति में स्थित माना जाता है; ४. पंचशिख, जो अवतार त्रिपुरदाह के पश्चात् अवतीर्ण हुआ था।

(२) **पंच अवतार**--शिव पुराण में शिव के निम्नलिखित पाँच अवतार दिये गयें हैं:-सद्योजात, अघोर, तत्पुरुष, ईशान, वामदेव (शिव. शत. १)।

(३) **दश अवतार**--विष्णु के समान शिव के द्वारा भी दश अवतार लियें गयें थें, जो निम्मप्रकार हैं:-महाकाल, तार, भुवनेश, श्रीविद्येश, भैरव, छिन्नमस्तक, धूमवत्, बगलामुख, मातंग, कमल (शिव शतरुद्र. १७)।

(४) **अठ्ठाईस अवतार**--वाराह कल्प के वर्तमान कल्प में शिव के द्वारा कुल अठ्ठाईस अवतार लिये गये थे, जो तत्कालीन द्वापर युग के व्यास को सहाय्यता करने के लिए उत्पन्न हुयें थे। पुराणों मे प्राप्त अवतारों की इस नामावलि में हर एक अवतार के चार चार शिष्य बतायें गयें हैं, एवं कहीं कहीं इन अवतारों का अवतीर्ण होने का स्थान भी बताया गया है। वायु में इन्हीं अवतारों को 'माहेश्वरावतार' कहा गया है। शिव के अठ्ठाईस अवतार, उनका अवतीर्ण होने का स्थान, एवं शिष्यों के नाम निम्न प्रकार है:-

(१) **श्वेत**--(छागल पर्वत)-श्वेत, श्वेतशिख, श्वेताश्व, श्वेतलोहित।

(२) **सुतार**--दुंदुभि, शतरूप, हृषीक, केतुमत्।

(३) **दमन**—विशोक, विशेष, विपाप, पापनाशन।

(४) **सुहोत्र**--सुमुख, दुर्मुख, दुदर्भ, दुरतिक्रम।

(५) **कंक**--सनक, सनत्कुमार, सनंदन, सनातन।

(६) **लोकाक्षि**—सुधामन्, विरजस्, संजय, अंडज।

(७) **जैगीषव्य**--(काशी)—सारस्वत, योगीश, मेघवाह, सुवाहन।

(८) **दधिवाहन**—कपिल, आसुरि, पंचशिख, शाल्वल।

(९) **ऋषभ**—पराशर, गर्ग, भार्गव, गिरीश।

(१०) **भृगु**--(भृगुतुंग)—भृंग, बलबंधु, नरामित्र, केतुशृंग।

(११) **तप**--(गंगाद्वार)—लंबोदर, लंबाक्ष, केशलंब, प्रलंबक।

(१२) **अत्रि**--(हेमकंचुक)— सर्वज्ञ, समबुद्धि, साध्य, शर्व।

(१३) **बलि**--(वालखिल्याश्रम)-- सुधामन्, काश्यप, वसिष्ठ, विरजस्।

(१४) **गौतम**--अत्रि, उग्रतपस्, श्रावण, श्रविष्ट।

(१५) **वेदशिरस्**--(सरस्वती के तट पर)--कुणि, कुणिबाहु, कुशरीर, कुनेत्रक।

(१६) **गोकर्ण**—(गोकर्णवन)—काश्यप, उशनस्, च्यवन, बृहस्पति।

(१७) **गुहावासिन्**—(हिमालय)--उतथ्य, वामदेव, महायोग, महाबल।

(१८) **शिखंडिन्**--(सिद्धक्षेत्र या शिखंडिवन)--वाचःश्रवस्, रुचीक, स्यवास्य, यतीश्वर।

(१९) **जटामालिन्**--हिरण्यनामन्, कौशल्य, लोकाक्षिन्, प्रधिमि।

(२०) **अट्टहास**--(अट्टहासगिरि)—सुमंतु, बर्वरि, कबंध, कुशिकंधर।

(२१) **दारुक**--(दारुवन)--प्लक्ष, दार्भायणि, केतुमत्, गौतम।

(२२) **लांगली भीम**—(वाराणसी)— मल्लविन्, मधु, पिंग, श्वेतकेतु।

(२३) श्वेत--(कालंजर)--उशिक, बृहदश्व, देवल, कवि।

(२४) शूलिन्--(नैमिषारण्य)--शालिहोत्र, अग्निवेश, युवनाश्व, शरद्वसु।

(२५) दंडीमुंडीश्वर--छगल, कुंडकर्ण, कुमांड, प्रवाहक।

(२६) सहिष्णु-- (रुद्रवट)--उलूक, विद्युत्, शंबुक, आश्वलायन।

(२७) सोम--(प्रभासतीर्थ)--अक्षपाद, कुमार, उलूक, वत्स।

(२८) लकुलिन्--कुशिक, गर्ग, मित्र, तौरुष्य (वायु. २३; शिव. शत. ४-५; शिव. वायु. ८-९; लिंग. ७)।

(४) शत-अवतार--भिन्न कल्पों में उत्पन्न हुयें शिव के शत अवतारों की नामावलि भी शिवपुराण में प्राप्त है, जहाँ इन अवतारों के वस्त्रों के विभिन्न रंग, एवं पुत्रों के विभिन्न नाम विस्तृत रूप से प्राप्त हैं (शिव. शत. ५)।

शिव-उपासना के सांप्रदाय--रुद्र शिव की उपासना भारतवर्ष के सारे विभागों में प्राचीन काल से ही अत्यंत श्रद्धा से की जाती थी। रुद्र के इन उपासकों के दो विभाग दिखाई देते हैं:--१. एक सामान्य उपासक, जो शिव-उपासना के कौनसे भी सांप्रदाय में शामिल न होते हुए भी शिव की उपासना करते हैं; २. शिव के अन्य उपासक, जो शिव-उपासना के किसी न किसी सांप्रदाय में शामिल हो कर इसकी उपासना करते है।

कालिदास, सुबंधु, बाण, श्रीहर्ष, भट्टनारायण, भवभूति आदि अनेक प्राचीन साहित्यिकों के ग्रंथ में श्रीविष्णु के साथ रुद्र-शिव का भी नमन किया गया है। प्राचीन चालुक्य एवं राष्ट्रकूट राजाओं के द्वारा शिव के अनेकानेक मंदिर बनायें गयें है, जिनमें वेरूल में स्थित कैलास मंदिर विशेष उल्लेखनीय है। ये सारी कृतियाँ सामान्य शिवभक्तों के द्वारा किये गये सांप्रदायनिरपेक्ष शिवोपासना के उदाहरण माने जा सकते हैं।

शिव-उपासना का आद्य सांप्रदाय--ई. स. १ ली शताब्दी में श्रीविष्णु-उपासना के 'पांचरात्र' नामक सांप्रदाय की उत्पत्ति हुई। उसका अनुसरण कर ई. स. २ री शताब्दी में लकुलिन् नामक आचार्य ने 'पाशुपत' नामक शिव-उपासना के आद्य सांप्रदाय की स्थापना की, एवं इस हेतु 'पंचार्थ' नामक एक ग्रंथ भी लिखा। आगे चल कर इसी पाशुपत सांप्रदाय से शिव-उपासना के निम्नलिखित तीन प्रमुख सांप्रदायों का निर्माण हुआ:--१. कापालिक; २. पाशुपत; ३. शैव।

(१) कापालिक सांप्रदाय--रामानुज के अनुसार, शरीर के छः मुद्रिका का ज्ञान पा कर, एवं स्त्री के जननेंद्रिय में स्थित आत्मा का मनन कर, जो लोग शिव की उपासना करते है, उन्हें कापाल सांप्रदायी कहते है (रामानुज. २.२. ३५)। अपने इस हेतु के सिध्यर्थ्य इस संप्रदाय के लोग निम्नलिखित आचारों को प्राधान्य देते हैं:-- १. खोपडी में भोजन लेना; २. चिताभस्म सारे शरीर को लगाना; ३. चिताभस्म भक्षण करना; ४. हाथ में डण्डा धारण करना; ५. मद्य का चषक साथ में रखना; ६. मद्य में स्थित रुद्रदेवता की उपासना करना।

ये लोग गले में रुद्राक्ष की माला पहनते है, एवं जटा धारण करते हैं। गलें में मुंडमाला धारण करनेवाले भैरव एवं चण्डिका की ये लोग उपासना करते है, जिन्हें ये लोग शिव एवं पार्वती का अवतार मानते है।

इसी सांप्रदाय की एक शाखा को 'कालामुख' अथवा 'महाव्रतधर' कहते है, जो अन्य सांप्रदायिकों से अधिक कर्मठ मानी जाती है।

(२) पाशुपत सांप्रदाय--इस सांप्रदाय के लोग सारे शरीर को चिताभस्म लगाते है, एवं चिताभस्म में ही सोते है। भीषण हास्य, नृत्य, गायन, हुडुक्कार एवं अस्पष्ट शब्दों में ॐकार का जाप, आदि छः मार्गों से ये शिव की उपासना करते हैं।

इस सांप्रदाय की सारी उपासनापद्धति, अनार्य लोगों के उपासनापद्धति से आयी हुई प्रतीत होती है।

(३) शैव सांप्रदाय--यह सांप्रदाय कापालिक एवं पाशुपत जैसे 'अतिमार्गिक' सांप्रदायोंसे तुलना में अधिक बुद्धिवादी है, जिस कारण इन्हें 'सिद्धान्तवादी' कहा जाता है। इस सांप्रदाय में मानवी आत्मा को पशु कहा गया है, जो इंद्रियपाशों से बँधा हुआ है। पशुपति अथवा शिव की मंत्रोपासना से आत्मा इन पाशों से मुक्त होता है, ऐसी इस सांप्रदाय के लोगों की कल्पना है।

काश्मीर शैव-सांप्रदाय--इस सांप्रदाय की निम्नलिखित दो प्रमुख शाखाएँ मानी जाती हैं:--१. स्पंदशास्त्र, जिसका जनक वसुगुप्त एवं उसका शिष्य कल्लाट माने जाते हैं। इस सांप्रदाय के दो प्रमुख ग्रंथ 'शिवसूत्रम्' एवं 'स्पंदकारिका' हैं, एवं इसका प्रारंभ काल ई. स. ९ वीं शताब्दी माना जाता है; २. प्रत्यभिज्ञानशास्त्र, जिसका जनक सोमानंद एवं उसका शिष्य उदयाकर माने जाते हैं।

इस सांप्रदाय का प्रमुख ग्रंथ 'शिवदृष्टि' है, जिसकी विस्तृत टीका अभिनवगुप्त के द्वारा लिखी गयी है। इस सांप्रदाय का उदयकाल ई. स. १० वीं शताब्दी का प्रारंभ माना जाता है।

इन दोनों सांप्रदायों में कापालिक एवं पाशुपत जैसे प्राणायाम एवं अघोरी आचरण पर जोर नहीं दिया गया है, बल्कि चित्तशुद्धि के द्वारा 'आनव,' 'मायिय' एवं 'काय' आदि मलों (मालिन्य) को दूर करने को कहा गया है। इस प्रकार ये दोनों सिद्धान्त अघोरी रुद्र उपासकों से कतिपय श्रेष्ठ प्रतीत होते हैं।

राजतरंगिणी के अनुसार, काश्मीर का शैव सांप्रदाय अत्यधिक प्राचीन है, एवं सम्राट अशोक के द्वारा काश्मीर में शिव के दो देवालय बनवायें गयें थे। काश्मीर का सुविख्यात राजा दामोदर (द्वितीय) शिव का अनन्य उपासक था। इस प्रकार प्राचीन काल से प्रचलित रहे शिव-उपासना के पुनरुत्थान का महत्वपूर्ण कार्य 'स्पंद शास्त्र' एवं 'प्रत्यभिज्ञान शास्त्र' वादी आचार्यों के द्वारा ई. स. १० वीं शताब्दी में किया गया।

वीरशैव (लिंगायत) सांप्रदाय—इस सांप्रदाय का आद्य प्रसारक आचार्य 'बसव' माना जाता है, जिसकी जीवनगाथा 'बसवपुराण' में दी गयी है। इस सांप्रदाय के मत शैवदर्शन अथवा सिद्धान्तदर्शन से काफ़ी मिलते जुलते है। इस पुराण से प्रतीत होता है की, प्राचीन काल में विश्वेश्वराध्य, पण्डिताराध्य, एकोराम आदि आचार्यों के द्वारा प्रसृत किये गये सांप्रदाय को बसव ने ई. स. १२ वीं शताब्दी में आगे चलाया।

इस सांप्रदाय के अनुसार, ब्रह्मन् का स्वरूप 'सत्,' 'चित्' एवं 'आनंद' मय है, एवं वही शिवतत्त्व है। इस आद्य शिवतत्त्व के लिंग (शिवलिंग), एवं अंग (मानवी आत्मा) ऐसे दो प्रकार माने गये हैं, एवं इन दोनों का संयोग शिव की भक्ति से ही होता है ऐसा कहा गया है।

इस तत्त्वज्ञान में लिंग के महालिंग, प्रसादलिंग, चरलिंग, शिवलिंग, गुरुलिंग एवं आचारलिंग ऐसे प्रकार कहे गये हैं, जो शिव के ही विभिन्न रूप हैं। इसी प्रकार अंग की भी 'योगांग,' 'भोगांग' एवं 'त्यागांग' ऐसी तीन अवस्थाएँ बतायी गयी है, जो शिव की भक्ति की तीन अवस्थाएँ मानी गयी हैं।

लिंगायतों के आचार्य स्वयं को लिंगी ब्राह्मण (पंचम) कहलाते है, एवं इस सांप्रदाय के उपासक गले में शिवलिंग की प्रतिमा धारण करते हैं।

द्रविड देश में शिवपूजा—ई. स. ७ वीं शताब्दी से द्रविड देश में शिवपूजा प्रचलित थी। इस प्रदेश के शैवसांप्रदाय का आद्य प्रचारक तिरुनानसंबंध था, जिसके द्वारा लिखित ३८४ पदिगम् (स्तोत्र) द्रविड देश में वेदों जैसे पवित्र माने जाते हैं। तंजोर के राजराजेश्वर मंदिर में प्राप्त राजराजदेव के ई. स. १० वीं शताब्दी के शिलालेख में तिरुनानसंबंध का अत्यंत आदर से उल्लेख किया गया है। कांची के शिव मंदिर में, एवं पल्लव राजा राजसिंह के द्वारा ई. स. ६ वीं शताब्दी बनवायें गयें राजसिंहेश्वर मंदिर में शिवपूजा का अत्यंत श्रद्धाभाव से निर्देश प्राप्त है। पेरियापुराण नामक तमिल ग्रंथ में इस प्रदेश में हुयें ६३ शिवभक्तों के जीवनचरित्र दिये गये हैं।

शक्तिपूजा—शिवपूजा का एक उपविभाग शक्ति अथवा देवी की उपासना है, जहाँ देवी की त्रिपुरसुंदरी नाम से पूजा की जाती है (देवी देखिये)।

शिवपूजा के अन्य कई प्रकार गणपति (विनायक) एवं स्कंद की उपासना हैं (विनायक एवं स्कंद देखिये)।

शिवरात्रि—हर एक माह के कृष्ण एवं शुक्ल चतुर्दशी को शिवरात्रि कहते है, एवं फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी को महाशिवरात्रि कहते है। ये दिन शिव-उपासना की दृष्टि से विशेष महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

शिव-उपासना के ग्रन्थ—इस संबंध में अनेक स्वतंत्र ग्रंथ, एवं आख्यान एवं उपाख्यान महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार हैः—

(१) शिवसहस्रनाम, जो महाभारत में प्राप्त है। यह तण्डि ने उपमन्यु को, एवं उपमन्यु नें कृष्ण को कथन किया था (म. अनु. १७.३१-१५३)। इसके अतिरिक्त दक्षवर्णित शिवसहस्रनाम महाभारत में प्राप्त है (म. शां. परि. १.२८)।

शिवसहस्रनाम की स्वतंत्र रचनाएँ भी लिंगपुराण (लिंग. ६५.९८), एवं शिवपुराण (शिव. कोटि. ३५) में प्राप्त है।

(२) शिवपुराण—शैवसांप्रदाय के निम्नलिखित पुराण ग्रंथ प्राप्त हैः—कूर्म, ब्रह्मांड, भविष्य, मत्स्य, मार्कंडेय, लिंग, वराह, वामन, शिव एवं स्कंद (स्कंद. शिवरहस्य खंड, संभवकांड २.३०-३३; व्यास देखिये)।

(३) शिवगीता, जो पद्म पुराण के गौडीय संस्करण में प्राप्त हैं, किन्तु आनंदाश्रम संस्करण में अप्राप्य है।

(४) शिवस्तुति, महाभारत में शिवस्तुति के निम्नलिखित आख्यान प्राप्त हैं:—१. अश्वत्थामन् कृत (म. सौ. ७) २. कृष्णकृत (म. अनु. १४; ह. वं. २.७४.२२-३४); ३. कृष्णार्जुनकृत (म. द्रो. ५७); ४. तण्डिन्कृत (म. अनु. ४७); ५. दक्षकृत (म. शां. परि. १.२८); मरुत्तकृत (म. आश्व. ८.१४.)।

(५) शिवमहिमा, जो महाभारत के एक स्वतंत्र आख्यान में वर्णित है।

(६) लिंगार्चन महिमा, जो महाभारत के एक स्वतंत्र आख्यान में प्राप्त है (म. अनु. २४७)।

(७) शिवनिंदा, दक्ष के द्वारा की गई शिवनिंदा भागवत में प्राप्त है (भा. ४.२.९-१६)।

रुद्र-शिव के तीर्थस्थान--रुद्र-शिव के नाम से, एवं इनके प्रासादिक विभूतिमत्त्व से प्रभावित हुए अनेक तीर्थ-स्थानों का निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है, जिन में निम्नलिखित तीर्थस्थान प्रमुख हैं:—

(१) ज्योर्तिलिंग--जिनकी संख्या कुल बारह बतायी गयी है (ज्योर्तिलिंग देखिये)।

(२) मुंजपृष्ठ--एक रुद्रसेवित स्थान, जो हिमालय के शिखर पर स्थित था (म. शां. १२२.२-४)।

(३) मुंजवट--गंगा के तट पर स्थित एक तीर्थस्थान, जहाँ शिव की परिक्रमा करने से गणपति पद की प्राप्ति होती है (म. व. ८३.४४६३)।

(४) मुंजवत्--हिमालय में स्थित एक पर्वत, जहाँ भगवान् शंकर तपस्या करते है।

(५) रुद्रकोटि--एक तीर्थस्थान, जहाँ शिवदर्शन की अभिलाषा से करोड़ो मुनि एकत्रित हुये थे, एवं उन पर प्रसन्न हो कर शिव ने करोड़ो शिवलिंगों के रूप में उन्हें दर्शन दिया था (म. व. ८०.१२४-१२९)।

(६) रुद्रपद--एक तीर्थ, जहाँ शिव की पूजा करने से अश्वमेध यज्ञ का फल प्राप्त होता है (म. व. ८०. १०८; पाठभेद-'वस्त्रापथ'।)

(७) हिमवत्--एक पवित्र पर्वत, जो त्रिपुरदाह के समय भगवान् रुद्र के रथ में आधारकाष्ठ बना था। इस पर्वत में स्थित आदित्यगिरि नामक स्थान में शिव का आश्रम स्थित था (म. शां. ३१९-३२०)।

रुद्रकेतु--एक असुर। इसकी पत्नी का नाम शारदा था, जिससे इसे देवान्तक एवं नरान्तक नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे। इसके पुत्रों के पराक्रम से संतुष्ट हो कर नारद ने इसे 'पंचाक्षरी महाविद्या' का उपदेश दिया था। आगे चल कर इसके पुत्र देवान्तक एवं नरान्तक का भगवान् विनायक ने वध किया (गणेश. क्री. २)।

रुद्रभूति द्राह्यायण--एक आचार्य, जो त्रात ऐकमत नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शर्वदत्त गार्ग्य था (वं. ब्रा. १.)।

रुद्रश्रेण्य--(सो. सह.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार महिष्मत राजा का पुत्र था।

रुद्र सावर्णि--बारहवें मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो भव राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सुव्रता था, जो प्राचेतस् दक्ष की कन्या थी (मार्क. ९१; विष्णु. ३.२.३२)।

देवी भागवत में इसे तेरहवें मन्वन्तर का अधिपति कहा गया है, एवं वैवस्वत मनु के पुत्र शर्याति को बारहवें मन्वन्तर का अधिपति कहा गया है (दे. भा. १०.१३) वायु के अनुसार, यह चाक्षुष मन्वन्तर में हुआ था (वायु. १००.५८)। कई ग्रंथों में इसे चतुर्थ मेरुसावर्णि भी कहा गया है।

रुद्रसेन--एक राजा, जो भारतीययुद्ध में पाण्डवों के पक्ष मे शामिल था (म. द्रो. १३३.३७)। पाठभेद--'भद्रसेन'।

रुधिक्रा--एक असुर, जिसका पिप्रु नामक असुर के साथ निर्देश प्राप्त है। इन्द्र ने इन दोनों का वध किया (ऋ. २.१४.५)।

रुधिराक्ष--एक असुर, जो लवणासुर का मामा था।

रुधिराशन--एक राक्षस, जो खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक था (वा. रा. अर २३.३२)।

रुन्द--एक राजा, जो पहले क्षत्रिय था, किन्तु पश्चात् ब्राह्मण हुआ (वायु. ९३.११४)।

रुम--एक वैदिक जातिसमूह। रुशम, श्यावक, कृप राजाओं के साथ रुम लोगों के राजा का निर्देश भी इंद्र के कृपापात्र लोगों के नाते प्राप्त हैं (ऋ. ८.४.२)।

रुमण--राम की सेना का एक सुविख्यात वानर।

रुमण्वत्--परशुराम का भ्राता, जो जमदग्नि एवं रेणुका के पाँच पुत्रों में से ज्येष्ठ था। इसके अन्य भाइयों के नाम सुषेण, वसु, विश्वावसु एवं परशुराम थें।

इसे इसकी माता रेणुका का वध करने की आज्ञा जमदग्नि ने दी। किन्तु इसने उसका पालन नहीं किया, जिससे कुपित हो कर जमदग्नि ने इसे मृगपक्षियों की भाँति जडबुद्धि होने का शाप दिया (म. व. ११६.१०)

पश्चात् परशुराम ने पिता को प्रसन्न कर के इसे शापमुक्त कराया।

रुमा--सुग्रीव की पत्नी, जो पनस वानर की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३७.२२१)।

सुग्रीव को विजनवासी बना कर उसके भाई वालि ने रुमा का हरण किया। वालिवध के पश्चात् रुमा पुनः एक बार सुग्रीव के पास आ गई, एवं वालि की पत्नी तारा भी सुग्रीव की पत्नी बन गई (वा. रा. कि. २०-२१; पद्म. ४.११२.१६१)।

इससे प्रतीत होता है कि, राज्य के साथ अपने बान्धवों की पत्नियाँ भी अपनाने की रुढि वानरों में थी। फिर भी वाल्मीकि रामायण में वालि को भार्यापहार का दोष लगाया गया है।

विभीषण से मिलने के लिए जाते समय राम किष्किंधा में ठहरा था। उस समय अन्य राजस्त्रियों के साथ राम के दर्शनार्थ यह उपस्थित हुई थी (पद्म. सृ. ३८)।

रुरु—एक ऋषिकुमार, जो च्यवन ऋषि का पौत्र एवं प्रमति ऋषि का पुत्र था। घृताची नामक अप्सरा इसकी माता थी (म. अनु. ३०.६४)। इसके पुत्र का नाम शुनक था।

इसकी पत्नी का नाम प्रमद्वरा था, जो सर्पदंश के कारण मृत होने पर इसने अत्यधिक विलाप किया था। पश्चात् अपनी आधी आयु दे कर, इसने उसे पुनः जीवित किया।

इस प्रसंग के कारण, इसके मन में सर्पजाति के प्रति विद्वेष उत्पन्न हुआ, एवं सर्प को देखते ही उसे मारने का इसने प्रारंभ किया। एक बार यह डुण्डुभ नामक साप को मारनेवाला ही था, कि उस सर्प ने इसे कहा, 'साँप को मारने के पहले वह विषैला है या नहीं, यह सोंच कर तुम उसे मारा करो'। पश्चात् डुण्डुभ ने इसे अहिंसा एवं वर्णधर्म का उपदेश प्रदान किया।

डुण्डुभ पूर्वजन्म में सहस्रपात नामक एक ऋषि था, जिसे शाप के कारण सर्पयोनि प्राप्त हुई थी। रुरु ऋषि के दर्शन से उसे भी मुक्ति प्राप्त हुई (म. आ. ८-१२; दे. भा. २.९)।

२. एक भैरव, जो अष्टभैरवों में से द्वितीय माना जाता है।

३. एक असुर, जो हिरण्याक्ष के वंश में पैदा हुआ था। इसके पुत्र का नाम दुर्गमासुर था।

४. एक दैत्य, जो ब्रह्मा के द्वारा प्राप्त वर से अत्यंत उन्मत्त हुआ था। इसी उन्मत्तता के कारण, इसने देवताओं पर हमला किया। इस पर सारा देवगण भाग गया, एवं वे आत्मरक्षा के लिए शंकर के जटा से निकली हुई एक शक्ति की शरण में आये, जो नीलपर्वत पर तपस्या कर रही थी।

इतने में देवताओं का पीछा करता हुआ रुरु दैत्य भी ससैन्य वहाँ आ पहुँचा। इस पर शक्ति देवी ने विकट हास्य किया, जिससे डाकिनी की एक सेना उत्पन्न हुई। उस सेना ने इसके सैन्य के सारे दैत्यों का नाश किया। देवी ने अपने पाँव के अंगूठे के नाखून से वध किया। पश्चात् भगवान् शिव ने स्वयं प्रकट हो कर, डाकिनियों को अनेक वर प्रदान करते हुए कहा, 'आज से लोग तुम्हे जगन्माता मानेंगे' (पद्म. सृ. ३१)।

स्कंद में इसे रथंतर कल्प में उत्पन्न हुआ दैत्य कहा गया है, एवं एक ऋषि के द्वारा उत्पन्न की गयीं कुमारिकाओं से इसका वध होने की कथा वहाँ प्राप्त है (स्कंद. ७.१. २४२-२४७)।

५. चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक।

६. कश्यपकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो सावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न हुआ था।

७. (सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार अहीनगु राजा का पुत्र था।

रुरुक—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार विजय राजा का पुत्र था। यह राजनीति एवं अर्थशास्त्र में अत्यंत प्रवीण था (ह. वं. १.१३.२९)।

रुशती--एक कन्या, जिसका विवाह अश्वियों के द्वारा श्याव राजा से संपन्न कराया था (ऋ. ११७.८)। रुशती का शब्दशः अर्थ 'श्वेतवर्णीय' होता है।

रुशदश्व—इक्ष्वाकुवंशीय वसुमनस् राजा का पिता।

रुशद्रथ—(सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार तितिक्षु राजा का पुत्र था। मत्स्य में इसे वृषद्रथ, एवं विष्णु एवं वायु में उषद्रथ कहा गया हैं।

रुशम--एक वैदिक ज्ञातिसमूह, जो इन्द्र का आश्रित था (ऋ. ८.३.१३; ४.२; ५१.९)। इनके राजा का नाम 'ऋणंचय' था (ऋ. ५.३०.१२-१५)। अथर्ववेद में इनके राजा का नाम 'कौरम' दिया गया है (अ. वे. २०.१२७.१)।

रुशमा—एक ब्रह्मवेत्ता आचार्य, जिसकी कथा पंचविंश ब्राह्मण में कुरुक्षेत्र का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गई है।

एकबार इंद्र एवं रुशमा में पृथ्वी प्रदक्षिणा के लिए शर्त लगी। तदोपरान्त इंद्र ने पृथ्वीप्रदक्षिणा की, एवं रुशमा ने कुरुक्षेत्र की प्रदक्षिणा की। बाद में विजय किसका हुआ इस संबंध में निर्णय देते हुए देवों ने कहा, 'कुरुक्षेत्र ब्रह्मा की वेदि है, जिस कारण समस्त पृथ्वी उसमें समाविष्ट होती है। अतः विजय दोनों की ही हुई है' (पं. ब्रा. २५.१३.३)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, इस कथा का संकेत रुशम ज्ञाति के लोगों की ओर है, एवं उनका कुरुओं के साथ संबंध होने का संकेत इस कथा में प्राप्त है।

रुशेकु—(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय रशादु राजा का नामान्तर।

रुशंगु—उशंगु ऋषि का नामान्तर (उशंगु देखिये)।

रुषद्गु—(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय रशादु राजा का नामान्तर।

रुशाद्रु—यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.१२)।

रुषर्द्धिक—सुराष्ट्रवंशीय एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्व्यवहार के कारण अपने स्वजन एवं ज्ञातिबांधवों का नाश किया (म. उ. ७२.११)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'कुशर्द्धिक'।

रुषाभानु—हिरण्याक्ष असुर की पत्नी (भा. ७. २.१९)।

रूपक—एक शिवभक्त राक्षस, जिसके पुत्र का नाम संपति था। ये दोनों अन्याय्य मार्ग से संपत्ति प्राप्त कर, वह शिव-उपासना के लिए व्यतीत करते थे। इस कारण मृत्यु की पश्चात्, शिव के मानसपुत्र वीरभद्र ने इन्हें कहा, 'अगले जन्म में तुम चोर बनोगे, किन्तु शिवभक्ति के कारण तुम्हारा उद्धार होगा' (पद्म. पा. ११५)।

रूपवती—त्रेतायुग की एक वेश्या, जो देवदास नामक एक स्वर्णकार से प्रेम करती थी। वैशाखस्नान के कारण, इन दोनों को मुक्ति मिल गयी (पद्म. पा. ९७)।

रूपि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रूपिन्—अजमीढ नामक सोमवंशीय राजा का पुत्र, जिसकी माता का नाम केशिनी था। इसके जह्नु एवं जन नामक दो भाई थे (म. आ. ८९.२८)।

रेणु—एक आचार्य, जो विश्वामित्र ऋषि का पुत्र था (ऐ. ब्रा. ७.१७.७; सां. श्रौ. १५.२६.१)। ऋग्वेद के एक सूक्त का प्रणयन इसने किया है (ऋ. ९. ७०)। इसे कुशिकगोत्र का मंत्रकार भी कहा गया है।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जिसे प्रसेनजित्, प्रसेन, एवं सुवेणु नामान्तर प्राप्त थे। इसकी कन्या का नाम रेणुका था, जो जमदग्नि ऋषि की पत्नी एवं परशुराम की माता थी (भा. ९.१५.१२; म. व. ११६.२)।

रेणुक—एक सत्वगुणसंपन्न नाग, जो रसातल में रहता था। इसने देवताओं के कहने पर दिग्गजों के पास जा कर धर्म के संबंधी प्रश्न पूछे थे (म. अनु. १३२.२६)।

रेणुका—इक्ष्वाकुवंशीय रेणु (प्रसेनजित्) राजा की कन्या, जो जमदग्नि महर्षि की पत्नी थी (भा. ९.१५.२; ह. वं. १.२७.३८; म. व. ११६.२)। कई अन्य ग्रंथों में इसे अनावसु की, एवं विकल्प में सुवेणु की कन्या कहा गया है (रेणु. ५)। कालिका पुराण में इसे विदर्भ राजा की कन्या कहा गया है (कालि. ८६)। इसे कामली नामान्तर भी प्राप्त था।

जन्म—महाभारत के अनुसार, इसकी उत्पत्ति कमल में हुई थी, एवं इसके पिता एवं भ्राता का नाम क्रमशः सोमप एवं रेणु था (म. अनु. ५३.२७)। सोमप राजा के द्वारा इसका पालन होने कारण, संभवतः उसे इसका पिता कहा होगा। रेणुकापुराण के अनुसार, रेणु राजा ने कन्याकामेष्टियज्ञ किया। उस यज्ञकुण्ड से इसकी उत्पत्ति हुई (रेणु. ३)।

अपने पूर्वजन्म में यह अदिति थी। इसका स्वयंवर भागीरथी क्षेत्र में हुआ, जिस समय इसने स्वयंवर में जमदग्नि का वरण किया (रेणु. ११)। इसके स्वयंवर के समय इंद्र ने इसे कामधेनु, कल्पतरु, चिंतामणि एवं पारस आदि विभिन्न मौल्यवान् चीज़े भेंट में दे दी (रेणु. १३)।

एक बार जमदग्नि ऋषि बाणक्षेपण का खेल खेल रहे थे, जिस समय बाण वापस लाने का काम इस पर सौंपा गया था। एकबार बाण लाने में इसे कुछ देरी हो गयी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर जमदग्नि ने अपने पुत्र परशुराम से इसका शिरच्छेद करने के लिए कहा (म. अनु. ९५. ७-१७)। अपने पिता की आज्ञानुसार, परशुराम ने इसका वध किया, एवं पश्चात् जमदग्नि से अनुरोध कर इसे पुनर्जीवित कराया (म. व. ११६.५-१८)।

परिवार—इसे निम्नलिखित पाँच पुत्र थेः-रुमण्वत्, सुषेण, वसु, विश्वावसु एवं परशुराम (म. व. ११६. १०-११)। रेणुकापुराण में 'रुमण्वत्' एवं 'सुषेण' के बदले पुत्रों के नाम 'बृहत्भानु' एवं 'बृहत्कर्मन्'

दिये गयें हैं (रेणू. १३)। कलिका पुराण में ‘ रुमण्वत् ’ के बदले ‘ मरुत्वत् ’ नाम प्राप्त है (कालि. ८६)।

रेणुमती--नकुलपत्नी करेणुमती का नामान्तर।

रेपलेंद्र—एक राक्षस, जिसका घटोत्कचपुत्र बर्बरिक के द्वारा वध हुआ था।

रेभ--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो अवत्सार काश्यप नामक आचार्य के पुत्रों में से एक था (ऋ. ८.९७)।

यह अश्वियों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था। एक बार असुरों के इसे बाँध कर कुएं में डाल दिया, जहाँ इसे नौ दिन एवं दस रात्रियों तक भूखा एवं प्यासा रहना पड़ा (ऋ. १.११२.५)। तदोपरान्त अश्वियों ने इसकी मुक्तता की (ऋ. १.११६.२४; ११७.४)।

एक गुफा की बंदिशाला में एकबार यह रखा गया था, जिस समय भी अश्वियों ने इसकी मुक्तता की (ऋ. १०. ३९.९)।

रेव--(सू. शर्याति.) एक शर्यातिवंशीय राजा, जो हरिवंश, भागवत विष्णु एवं वायु के अनुसार आनर्त राजा का पुत्र था। पद्म में इसे आनर्त का पौत्र, एवं रोचमान राजा का पुत्र कहा गया हैं। भागवत एवं विष्णु के अनुसार, इसे ‘ रेवत ’ नामान्तर प्राप्त था। ब्रह्म में इसे रैव कहा गया है।

इसने पश्चिम समुद्र में कुशस्थली नामक नगरी की स्थापना कर उसे अपनी राजधानी बनाई (भा. ९.३. २८)। आगे चल कर यही नगरी द्वारका नाम से प्रसिद्ध हुई (मत्स्य. ६९.९)।

द्वारका नगरी पर शर्याति राजवंशीय लोगों का राज्य अधिककाल न रहा सका, जिसे पुण्यजन राक्षसों ने नष्ट किया, एवं यह राजवंश हैहय वंश में विलीन हुआ।

इसे रैवत ककुद्मिन् आदि सौ पुत्र थे। शर्याति राजा से ले कर रैवत तक का वंशक्रम इसप्रकार हैः--शर्याति-- आनर्त--रोचमान--रेव--रैवत ककुद्मिन्।

रेवत--(सो. कुकुर.) एक राजा, जो वायु के अनुसार कपोतरोमन् राजा का पुत्र था।

२. शर्यातिवंशीय रेव राजा का नामांतर।

३. एकादश रुद्रों में से एक।

रेवती—शर्यातिवंशीय रैवत ककुद्मिन् राजा की कन्या, जो बलराम की पत्नी थी। यह उम्र में बलराम से बड़ी थी (पद्म. भू. १०३)। बलराम की मृत्यु होने पर, इसने उसके चिता में अग्निप्रवेश किया (ब्रह्म. २१२.३)।

२. भरद्वाज ऋषि की बहन, जो उसने अपने कठ नामक शिष्य को विवाह में दी थी (ब्रह्म. १२१)।

३. मित्र नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६.१८. ६)।

४. रैवत नामक पाँचवे मन्वन्तर के अधिपति रैवत राजा की माता। इसकी जन्मकथा मार्कंडेय पुराण में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार हैः—

ऋतवाच् नामक एक सच्छील मुनि था, जिसे रेवती नक्षत्र के अवसर पर एक दुःशील पुत्र उत्पन्न हुआ। यह दुर्घटना रेवती नक्षत्र के प्रभाव से हो हुई है, यह गर्ग ऋषि से ज्ञान होते ही, ऋतवाच् ऋषि ने रेवती नक्षत्र को शाप दिया, एवं उसे नीचे गिरा दिया।

रेवती नक्षत्र के पतन के स्थान पर एक सरोवर निर्माण हुआ, जिस में से कालोपरांत एक कन्या उत्पन्न हुई। वही रेवती है।

इस कन्या को प्रमुच मुनि ने पाल-पोस कर बड़ा किया; एवं विक्रमशील राजा के पुत्र दुर्गम से इसका विवाह कर दिया।

इसके द्वारा प्रार्थना की जाने पर, प्रमुच ऋषि ने इसका विवाह रेवती नक्षत्र के मुहूर्त पर ही किया, एवं इसे मन्वन्तराधिप पुत्र होने का आशीर्वाद भी दिया। इस आशीर्वाद के अनुसार, रैवत नामक पराक्रमी पुत्र उत्पन्न हुआ (मार्कं. ७२)।

५. सत्ताईस नक्षत्रों में से एक (म. भी. १२.१६)।

रेवन्त—एक सूर्यपुत्र, जो अश्व के रूप में उत्पन्न हुआ था। इसकी माता का नाम संज्ञा था। बड़ा होने पर इसे गुह्यकों का आधिपत्य दिया गया (मार्कं. १०३)। भविष्य के अनुसार, इसे अश्वों का अधिपत्य दिया गया था (भवि. ब्राह्म. ८९.१२४)।

रेवाग्नि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रेवोत्तरस्—पाटव चाक्र स्थपती नामक आचार्य का उपनाम (श. ब्रा. १२.९.३.१; चाक्र देखिये)।

रैक्व ‘सयुग्वा’--एक तत्त्वज्ञानी आचार्य, जिसका जीवनचरित्र एवं तत्त्वज्ञान छांदोग्योपनिषद में प्राप्त हैं। यह सदैव बैलों के गाडी के नीचे ही निवास करता था, जिस कारण इसे ‘ सयुग्वा ’ (गाड़ी के नीचे रहनेवाला) उपाधि प्राप्त हुई थी।

जानश्रुति राजा से भेंट—एक बार जानश्रुति नामक राजा जंगल में शिकार के लिये घूमता था, जिस समय उसने दो हंसी के बीच हुआ संवाद सहजवश सुन लिया।

इस संवाद में एक हंस दूसरे से कहता था, 'जिस प्रकार पाँसों का अंतिम डाव जीतनेवाले को उस खेल के सारे दान प्राप्त होते है, उसी प्रकार सृष्टि के हरएक पुण्यवान् व्यक्ति के द्वारा किया गया पुण्यसंचय, गाडी के नीचे निवास करनेवाले रैक्व ऋषि तक पहुँचता है'।

हंसों का यह संवाद सुन कर, जानश्रुति को अत्यंत आश्चर्य हुआ, एवं वह इसे ढूँढते ढूँढते वहाँ तक पहुँच गया, जहाँ खुजली को खुजलाते यह गाड़ी के नीचे बैठा था, राजा ने इसे अनेक गायें, सुवर्ण का रत्नहार, आदि अनेक उपहार देना चाहा, किंतु इसने उनका स्वीकार न कर, अपनी गाडी ही राजा को दान में दे दी।

पश्चात् जानश्रुति ने अपनी कन्या इसे विवाह में दे दी, एवं इसको प्रसन्न कर इससे तत्त्वज्ञान की शिक्षा पा ली। जानश्रुति ने इसे एक गाँव भी प्रदान किया था, जो महावृष देश में रैक्वपर्ण नाम से सुविख्यात हुआ (छां. उ. ४.३.१–२; स्कंद. ३.१.२६)।

तत्त्वज्ञान—रैक्व का कहना था कि, इंद्रद्युम्न के समान समस्त सृष्टि का आदिकारण एवं अदिदैवत वायु ही है, जिसमें सृष्टि की सारी वस्तुएँ विलीन होती है। इस प्रकार, अग्नि को बुझाने पर वह वायु में विलीन होता है; सूर्य एवं चंद्र अस्तंगत होने पर वे भी वायु में अंतर्धान होते हैं।

रैक्व का यह तत्त्वज्ञान ग्रीक तत्त्वज्ञ ॲनॉक्झेमिनीज् के तत्त्वज्ञान से काफ़ी मिलता जुलता है, जिसके अनुसार वायु को समस्त सृष्टि का आदि एवं अन्त माना गया है। वायु के कारण सृष्टि की सारी वस्तुएँ विनष्ट कैसी हो जाती है, इसका स्पष्टीकरण रैक्व के द्वारा नहीं दिया गया है। किन्तु जिस प्राचीन काल में, अप एवं अग्नि को सृष्टि का आदि कारण माना जाता था, उस समय सृष्टि के अन्य वस्तुओं के समान, अप एवं अग्नि स्वयं वायु में ही विलीन होते हैं, यह क्रान्तिदर्शी तत्त्वज्ञान रैक्व के द्वारा प्रस्थापित किया गया।

पद्म में भी रैक्व का निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसने जानश्रुति को गीता के छठवे अध्याय के पठन से मनःशान्ति प्राप्त करने का उपदेश प्रदान करने की कथा प्राप्त है (पद्म. उ. १७६)।

रैभ्य—एक आचार्य, जो पौतिमाष्यायण एवं कौण्डिन्यायन नामक आचार्यों का शिष्य था (बृ. उ. २.५.२०; ४.५.२६)। रेभ का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक ऋषि, जो विश्वामित्र ऋषि का पुत्र, एवं भरद्वाज मुनि का मित्र था (म. शां. ४९.४९)। महाभारत में अन्यत्र इसे अंगिरस् ऋषि का पुत्र कहा गया है।

इसे अर्वावसु एवं परावसु नामक दो पुत्र थे (म. व. १३५.१२–१३)। भरद्वाज ऋषि के पुत्र यवक्रीत के दुराचरण से क्रुद्ध हो कर इसने उसका वध किया, जिस पर भरद्वाज ऋषि ने इसे अपने ज्येष्ठ पुत्र के द्वारा वध होने का शाप दिया।

पश्चात् अपने पुत्र परावसु के द्वारा हिंस्र पशु के धोखे में इसका वध हुआ। किंतु इसके द्वितीय पुत्र अर्वावसु ने अध्ययन से प्राप्त वेदमंत्रो से इसे पुनः जीवित किया (म. व. १३९.५–२३; स्कंद ३.१.३३; यवक्रीत देखिये)।

३. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार, सुमति राजा का पुत्र था।

४. ब्रह्मा के पुत्रों में से एक। एक बार यह वसु एवं अंगिरस् ऋषियों के साथ बृहस्पति के पास गया, एवं इसने मोक्षप्राप्ति के बारे में अनेकानेक प्रश्न किये। मोक्ष कर्म से नहीं, बल्कि ज्ञान से प्राप्त होता है, यह ज्ञान प्राप्त होने पर यह गया में तपश्चर्या करने लगा, जहाँ सनत्कुमारों से इसकी भेंट हुई थी (वराह. ७)।

एक बार इसकी तपस्या में बाधा डालने के लिये उर्वशी उपस्थित हुई, जिसे इसने विरूप होने का शाप दिया। पश्चात् उर्वशी के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने उसे योगिनी–कुंड में स्नान कर पूर्ववत् बनने का उःशाप दिया, जब से योगिनी–कुंड को 'उर्वशीकुंड' नाम प्राप्त हुआ (स्कंद २.८.७)।

५. एक मुनि, जो वीरण ऋषि का शिष्य था। वीरण से इसे सात्वत धर्म का उपदेश प्राप्त हुआ था, जो इसने अपने दिक्पाल कुक्षि नामक पुत्र को प्रदान किया था (म. शां. ३३६.१७)। पाठभेद–'रौच्य'।

६. रैवत मन्वंन्तर के भूतरजस् देवगणों में से एक।

रैवत—एक राजा, जो पंचम मन्वंतराधिप मनु माना जाता है। भागवत के अनुसार, यह प्रियव्रत राजा का पुत्र, एवं तामस राजा का भाई था। विष्णु में इसे प्रियव्रत राजा का वंशज कह कर, इसके माता एवं पिता के नाम क्रमशः रेवती एवं प्रमुच दिये गयें हैं (विष्णु ३.१.२४; रेवती ४. देखिये)।

यह श्रेष्ठ धर्मवेत्ता था, एवं इसने बीजमंत्र का जप कर प्रजा की वर्णाश्रमधर्म के अनुसार पुनर्रचना की थी। मृत्यु के पश्चात् यह इंद्रलोक गया (दे. भा. १०-८)

२. एकादश रुद्रों में से एक (म. शां. २०३.१८-१९)

रैवत ककुद्मिन्—(सू. शर्याति.) एक राजा, जो शर्यातिवंशीय रेव राजा का पुत्र था (रेव देखिये)।

२. (सू. इ.) एक सुविख्यात धर्मप्रवृत्त इक्ष्वाकुवंशीय राजा। एक बार दक्षिण दिशा में स्थित मंदराचल में इसने गंधर्वों से सामगान सुना, जिस कारण इसके मन में विरक्ति उत्पन्न हो कर, यह राज्य छोड़ कर वन में चला गया (म. उ. १०७.९-१०)। अपने पूर्ववर्ती मरुत्त राजा से इसे दिव्य खड्ग की प्राप्ति हुई थी, जो इसने अपने वंशज युवनाश्व राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७६)।

रैवस—भृगुकुलोत्पन्न एक प्रवर।

रोचन—स्वारोचिष मन्वंतर का इंद्र, जो भागवत के अनुसार यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र था।

२. तुषित देवों में से एक।

रोचना--वसुदेव की एक पत्नी, जो देवक राजा की कन्या थी। इसके हेम एवं हेमांगद नामक दो पुत्र थे (भा. ९.२४.४५)।

२. विदर्भराज रुक्मिन् की पौत्री, जो कृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध की पत्नी थी। इसका विवाह भोजकटपुर में संपन्न हुआ था (भा. १०.६५)।

रोचनामुख—एक दैत्य, जो गरुड़ के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

रोचमान—एक राजा, जो अश्वग्रीव नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.१८)। महाभारत में प्राप्त निर्देशों से यह पांचालदेशीय, अथवा चेदिदेशीय प्रतीत होता है। इसके पुत्र का नाम हेमवर्ण था (म. द्रो. २२.५७)।

यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१०)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीम ने अपने पश्चिम दिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २६.८)।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६९)। इसके अश्व तारकाओं से अंकित अंतरिक्ष के समान चितकबरे वर्ण के थे (म. द्रो. २२.४०)। यह अत्यंत पराक्रमी महारथी था, जिसका कर्ण के द्वारा वध हुआ था (म. क. ४०.५१)।

२. उरगा देश का एक राजा, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय में जीता था (म. स. २४.१८)।

३. (सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार वसुदेव एवं उपदेवी का पुत्र था।

४. (सू. शर्याति.) एक शर्यातिवंशीय राजा, जो आनर्त राजा का पुत्र था।

५. एक राजद्वय, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४.७१)।

६. विश्वेदेवों में से एक।

रोचमाना--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

रोचिष्मत्--स्वारोचिष मनु के पुत्रों में से एक।

रोधक-पिशाचयोनि में प्रविष्ट हुयें पापी लोगों का एक समूह, जिसमें निम्नलिखित लोग शामिल थे :—पर्युषित, सूचक (सूचिमुख), शीघ्रग, (शीघ्रक), रोधक (रोहक), वाग्दुष्ट, विदैवत, एवं नित्यवाचक।

इनमें से प्रथम पाँच लोगों का पृथु नामक वेदवेत्ता ब्राह्मण के नीतिपर उपदेश से उद्धार हुआ (पद्म. सृ. ३२)। पद्म में अन्यत्र मुनिशर्मा नामक ब्राह्मण के द्वारा वैशाख स्नान का उपदेश दिये जाने से, इन लोगों का उद्धार होने की कथा प्राप्त है (पद्म. पा. ९४)।

रोमक--एक लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपहार ले कर उपस्थित हुआ था (म. स. ४७.१५ पाठ.)।

रोमपाद--(सो. अनु.) अंगदेश का एक सुविख्यात राजा, जो धर्मरथ (बृहद्रथ) राजा का पुत्र था। इसे लोमपाद, चित्ररथ, एवं दशरथ आदि नामांतर प्राप्त थे (ह. वं. १.३१.४६)।

यह अयोध्या के दशरथ राजा का परम स्नेही था (म. ११३.१७)। इसे चतुरंग नामक पुत्र था। इसकी शान्ता नामक कन्या का विवाह ऋष्यशृंग ऋषि से इसने कराया था (म. व. ११३, ११; शां. २२६.३५; अनु. १३८.२५)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो विदर्भराज के तीन पुत्रों में से कनिष्ठ था।

रोमशा--एक वैदिक सूक्तद्रष्टी, जो भावयव्य राजा की पत्नी थी (ऋ. १.१२६.७; बृहद्दे. ३.१५६)। ऋग्वेद के इसी सूक्त में 'रोमशा-भावयव्य संवाद' प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, रोमशा इसका वास्तव नाम न हो कर, केवल 'बालवाली' इस अर्थ से विशेषण के रूप में इसके लिये प्रयुक्त किया गया है।

रोमहर्षण 'सूत'—एक सूतकुलोत्पन्न मुनि, जो समस्त पुराणग्रंथों का आद्य कथनकर्ता माना जाता है।

पुराणों में प्राप्त परंपरा के अनुसार, यह कृष्ण द्वैपायन व्यास के पाँच शिष्यों में से एक था। समस्त वेदों की चार शाखाओं में पुनर्रचना करने के पश्चात्, व्यास ने तत्कालीन समाज में प्राप्त, कथा, आख्यायिका, एवं गीत (गाथा) एकत्रित कर, आद्य पुराणग्रंथों की रचना की, जो उसने सूतकुल में उत्पन्न हुए रोमहर्षण को सिखाई। रोमहर्षण ने इसी पुराणग्रन्थ के आधार पर आद्य पुराण-संहिता की रचना की, एवं यह पुराणों का आद्य कथन-कर्ता बन गया। भांडरकर संहिता में इसके नाम के लिए 'लोमहर्षण' पाठभेद प्राप्त है (म. आ. १.१)।

पुराण ग्रन्थों में इसका निर्देश कई बार केवल 'सूत' नाम से ही प्राप्त है, जो वास्तव में इसका व्यक्तिगत नाम न हो कर, जातिवाचक नाम था।

कुलवृत्तान्त—पुराणों में प्राप्त जानकारी के अनुसार, सूतकुल में उत्पन्न लोग प्राचीनकाल से ही देव, ऋषि, राजा आदि के चरित्र एवं वंशावलि का कथन एवं गायन का काम करते थे, जो कथा, आख्यायिका, गीत आदि में समाविष्ट थी। इसी प्राचीन लोकसाहित्य को एकत्रित कर, व्यास ने अपने आद्य पुराण ग्रंथ की रचना की।

रोमहर्षण स्वयं सूतकुल में ही उत्पन्न हुआ था, एवं इसका पिता क्षत्रिय तथा माता ब्राह्मणकन्या थी। इसे रोमहर्षण अथवा लोमहर्षण नाम प्राप्त होने का कारण भी इसकी अमोघ वक्तृत्वशक्ति ही थी—

लोमानि हर्षयांचक्रे, श्रोतृणां यत् सुभाषितैः।
कर्मणा प्रथितस्तेन लोकेऽस्मिन् लोमहर्षणः॥
(वायु. १.१६)।

(अपने अमोघ वक्तृत्वशैली के बल पर, यह लोगों को इतना मंत्रमुग्ध कर लेता था कि, लोग रोमांचित हो उठते थे, इसीलिए इसे लोमहर्षण वा रोमहर्षण नाम प्राप्त हुआ)

पुराणों की निर्मिती—व्यास के द्वारा संपूर्ण इतिहास, एवं पुराणों का ज्ञान इसे प्राप्त हुआ, एवं यह समाज में 'पुराणिक' (म. आ. १.१); 'पौराणिकोत्तम' (वायु. १.१५; लिंग. १.७१; ९९); 'पुराणज्ञ' आदि उपाधियों से विभूषित किया गया था। व्यास के द्वारा प्राप्त हुआ पुराणों का ज्ञान इसने अच्छी प्रकार संवर्धित किया, एवं इन्हीं ग्रन्थों का प्रसार समाज में करने का काम प्रारंभ किया (भा. १.४.२२; विष्णु. ३.४.१०; वायु. ६०.१६; पद्म. सृ. १; अग्नि. २७१; ब्रह्मांड २.३४; कूर्म. १.५२)।

शिष्यपरंपरा—व्यास के द्वारा प्राप्त आद्य पुराण ग्रंथों की इसने छः पुराणसंहिताएँ बनायीं, एवं उन्हें अपने निम्नलिखित शिष्यों में बाँट दीः—१. आत्रेय सुमति; २. काश्यप अकृतवर्ण; भारद्वाज अग्निवर्चस् ४. वासिष्ठ मित्रयु; ५. सावर्णि सोमदत्ति; ६. शांशापायन सुशर्मन् (ब्रह्मांड. २.३५.६३-७०; वायु. ६१.५५-६२)। इनमें से काश्यप, सावर्णि एवं शांशापायन ने आद्य पुराणसंहिता से तीन स्वतंत्र संहिताएँ बनायी जो, उन्हींके नाम से प्रसिद्ध हुयीं। इस प्रकार रोमहर्षण की स्वयं की एक संहिता, एवं इसके उपर्युक्त तीन शिष्यों की तीन संहिताएँ इन चार संहिताओं को 'मूलसंहिता' सामूहिक नाम प्राप्त हुआ। इन संहिताओं में से प्रत्येक संहिता निम्न-लिखित चार पादों (भागों) में विभाजित थीं:-प्रक्रिया, अनुषंग, उपोद्घात एवं उपसंहार। इन सारी संहिताओं का पाठ एक ही था, जिनमें विभेद केवल उच्चारों का ही था। शांशापायन की संहिता के अतिरिक्त बाकी सारे संहिताओं की श्लोकसंख्या प्रत्येकी चार हजार थी।

पुराणों का निर्माण—इन संहिताओं का मूल संस्करण आज उपलब्ध नही है। फिर भी आज उपलब्ध वायु, ब्रह्मांड जैसे प्राचीन पुराणों में रोमहर्षण, सावर्णि, काश्यपेय, शांशापायन आदि का निर्देश इन पुराणों के निवेदक के नाते प्राप्त है। इन आचार्यों का निर्देश पुराणों में जहाँ आता है, वह भाग आद्य पुराणसंहिताओं के उपलब्ध अवशेष कहे जा सकते हैं।

उपलब्ध पुराणों में से चार पादों में विभाजित ब्रह्मांड एवं वायु ये दो ही पुराण आज उपलब्ध हैं। उदाहरणार्थ वायु पुराण का विभाजन इस प्रकार है:-प्रथम पाद,-अ. १-६; द्वितीय पाद,-अ. ७-६४; तृतीय पाद,-अ. ६५-९९; चतुर्थ पाद,-अ. १००-११२। अन्य पुराणों में आद्य पुराण संहिता का यह विभाजन अप्राप्य है।

रोमहर्षण के छः शिष्यों में से पाँच आचार्य ब्राह्मण थे, जिस कारण पुराणकथन की सूतजाति में चलती आयी परंपरा नष्ट हो गई, एवं यह सारी विद्या ब्राह्मणों के हाथों में चली गई। इसी कारण उत्तरकालीन इतिहास में उत्पन्न हुए बहुत सारे पुराणज्ञ एवं पौराणिक ब्राह्मण जाति के प्रतीत होते हैं। इस प्रकार वैदिक साहित्यज्ञ

ब्राह्मण, एवं पुराणज्ञ ब्राह्मण ऐसी दो शाखाएँ ब्राह्मणों में निर्माण हुयीं गयीं।

इसके पुत्र का नाम उग्रश्रवस् था, जिसे इसने व्यास के द्वारा विरचित 'आदि पुराण' की शिक्षा प्रदान की थी (व्यास, एवं सौति देखिये)। कई अभ्यासकों के अनुसार, आदि पुराण का केवल आरंभ ही व्यास के द्वारा किया गया था, जो ग्रंथ बाद में रोमहर्षण तथा इसके शिष्यों के द्वारा पूरा किया गया।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, यह अपने पुत्र उग्रश्रवस् के साथ उपस्थित था, एवं इसने उसे पुराणों का कथन किया था (म. स. ४.१०)।

उत्तरकालीन पुराण ग्रंथों में इसका एवं इसके पुत्र उग्रश्रवस् का नामनिर्देश क्रमशः 'महामुनि' एवं 'जगद्गुरु' नाम से प्राप्त है (विष्णु. ३.४.१०; पद्म. उ. २१९.१४-२१)।

पुराण-कथन--एक बार नैमिषारण्य में दृषद्वती नदी के तट पर एक द्वादशवर्षीय सत्र का आयोजन किया गया। शौनक आदि ऋषि इस सत्र के नियंता थे, एवं नैमिषारण्य के साठ हज़ार ऋषि इस सत्र में उपस्थित थे। एवं शौनक आदि ऋषियों ने व्यास के प्रमुख शिष्य के नाते रोमहर्षण को इस सत्र के लिए अत्यंत आदर से निमंत्रण दिया, एवं इसका काफ़ी गौरव किया (वायु. ८.२. ब्रह्मांड १.३३. नारद. १.१)।

इस सत्र में शौनक आदि ऋषियों के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर रोमहर्षण ने साठ हज़ार ऋषियों के उपस्थिति में निम्नलिखित पुराणों का कथन कियाः--१. ब्रह्मपुराण (ब्रह्म. १); २. वायुपुराण (वायु. १. १५). ३. ब्रह्मांडपुराण (ब्रह्मांड. १.१.१७); ४. ब्रह्मवैवर्तपुराण (ब्रह्मवै. १.१.३८); ५. गरुडपुराण (गरुड. १.१); ६. नारदपुराण (नारद. १. १-२); ७. भागवतपुराण (भा. १.३-११) इत्यादि।

मृत्यु--इस प्रकार दस पुराणों का कथन समाप्त कर, यह ग्यारहवें पुराण का कथन कर ही रहा था कि, इतने में सत्रमंडप में बलराम का आगमन हुआ। उसे आता हुआ देख कर, सत्र में भाग लेने बाकी सारे ऋषियों ने उसे उत्थापन दिया। किन्तु व्रतस्थ होने के कारण, यह उत्थापन न दे सका। फिर क्रोध में आ कर बलराम ने इसका वध किया (बलराम देखिये)। इसकी मृत्यु के पश्चात्, पुराणकथन का इसका कार्य इसके पुत्र उग्रश्रवस् ने आगे चलाया। अपने मृत्यु के पूर्व, इसने साडेदस पुराणों का कथन किया था, बाकी बचे हुए साडेसात पुराणों के कथन का कार्य इसके पुत्र उग्रश्रवस् ने पूरा किया।

मृत्युतिथि— पद्म में इसका वध किये जाने की तिथि आषाढ शुक्ल १२ बताई गई है (पद्म. उ. १९८)। इस दिन के इसी दुःखद स्मृति के कारण, हरएक द्वादशी के दिन आज भी पुराणकथन का कार्यक्रम बंद रक्खा जाता है।

महाभारत में प्राप्त कालनिर्देश से बलराम भारतीय युद्ध के समय तीर्थयात्रा करने निकल पड़ा था, उसी समय सूत का द्वादशवर्षीय सत्र चल रहा था। इससे प्रतीत होता है कि, भारतीय युद्ध, नैमिषारण्य का द्वादशवर्षीय सत्र, एवं रोमहर्षण का पुराणकथन एक ही वर्ष में संपन्न हुये थे। यह जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त उनके रचनाकाल से काफ़ी विभिन्न प्रतीत होती है। पुराणों में प्राप्त जानकारी के अनुसार, प्रमुख पुराणों की रचना निम्नलिखित राजाओं के राज्यकाल में हुयीं थीः-१. वायुपुराण-पूरुराजा असीमकृष्ण; २. ब्रह्मांड पुराण-इक्ष्वाकुवंशीय राजा दिवाकर; ३. मत्स्यपुराण-मगधदेश का राजा सेनजित् (व्यास देखिये)।

ग्रंथ--इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैं:-

१. सूतसंहिता--रोमहर्षण के द्वारा लिखित सूत संहिता स्कंद पुराण का ही एक भाग मानी जाती हैं। स्कंद पुराण की कुल छः संहिताओं की रचना की गई थी, जिनके नाम निम्न थेः-१. सनत्कुमार; २. सूत; ३. शांकरी; ४. वैष्णवी; ५. ब्राह्मी; ६. सौरी। इन छः संहिताओं में मिल कर कुल पचास खण्ड थे।

इनमें से सूत के द्वारा लिखित 'सूतसंहिता', आनंदाश्रम पूना के द्वारा प्रकाशित हो चुकी है, जो निम्नलिखित खण्डों में विभाजित हैः--१. शिवमाहात्म्यखण्ड; २. ज्ञानयोगखण्ड; ३. मुक्तिखण्ड; ४. यज्ञवैभवखण्ड; (अधोभाग एवं उपरिभाग)।

इस ग्रंथ में शैवसांप्रदायान्तर्गत अद्वैत तत्वज्ञान का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रंथ पर माधवाचार्य के द्वारा लिखित एक टीका प्राप्त है। सूत के द्वारा लिखित 'ब्रह्मगीता' एवं 'सूतगीता' नामक दो ग्रंथ भी सूत संहिता में समाविष्ट हैं।

२. ब्रह्मगीता--उपनिषदों के अर्थ का विवरण करनेवाला यह ग्रंथ सूतसंहिता के यज्ञवैभवकाण्ड में समाविष्ट है। इस

ग्रंथ के कुल बारह अध्याय है, एवं उसमें शैवसांप्रदाय के तत्त्वों का प्रतिपादन किया गया है।

३. सूतगीता--सूत-व्याससंवादात्मक यह ग्रंथ सूत संहिता के यज्ञवैभवकाण्ड में अंतर्भूत है। इस ग्रंथ के कुल आठ अध्याय हैं, एवं उसमें शैवसांप्रदाय के मतों का प्रतिपादन किया गया है। इस ग्रंथ पर भी माधवाचार्य की टीका उपलब्ध है।

सूतजाति की उत्पत्ति—जैसे पहले ही कहा गया है, रोमहर्षण का निर्देश अनेकानेक प्राचीन ग्रंथों में 'सूत' नाम से प्राप्त है, जो वास्तव में इसके जाति का नाम था। इस जाति के उत्पत्ति के संबंध में एक कथा वायु में प्राप्त है। पृथु वैन्य राजा के द्वारा किये गये यज्ञ में, यज्ञीय ऋत्विजों के हाथों एक दोषार्ह कृति हो गई। सोम निकालने के लिए नियुक्त किये गये दिन (सुत्या), ऐन्द्र हविर्भाव में बृहस्पति का हविर्भाग गलती से एकत्र किया गया, एवं उसे इंद्र को अर्पण किया गया। इस प्रकार, शिष्य इंद्र के हविर्भाग में गुरु बृहस्पति का हविर्भाग संमिश्र करने के दोषार्ह कर्म के कारण, मिश्रजाति के सूत लोगों की उत्पत्ति हो गई।

क्षत्रिय पिता एवं ब्राह्मण माता से उत्पन्न संतान को प्रायः 'सूत' कहते थे। किन्तु कौटिलीय अर्थशास्त्र में मिश्रजाति के सूत लोग सूतवंशीय लोगों से अलग बताये गये हैं। पुराणों में इन लोगों के कर्तव्य निम्नप्रकार बतायें गयें है—

> स्वधर्म एवं सूतस्य सद्भिर्दृष्टः पुरातनैः।
> देवतानामृषीणां च राज्ञां चामिततेजसाम्॥
> वंशानां धारणं कार्यं श्रुतानां च महात्मनाम्।
> इतिहासपुराणेषु दिष्टा ये ब्रह्मवादिभिः॥
> (वायु. १.२६-२८; पद्म. सृ. २८)।

(देवता, ऋषि एवं राजाओं में से श्रेष्ठ व्यक्तियों के वंशावलि को इतिहास, एवं पुराण में ग्रथित एवं संरक्षित करना, यह सूत लोगों का प्रमुख कर्तव्य है)।

किन्तु सूतों का यह कर्तव्य उच्च श्रेणि के सूतों के लिए ही कहा गया है। इनमें से मध्यम श्रेणि के लोग क्षात्रकर्म करते थे, एवं नीच श्रेणि के लोग रथ, हाथी एवं अश्व का सारथ्यकर्म करते थे। इसी कारण इन लोगों को रथकार नामान्तर भी प्राप्त था।

इन तीनो श्रेणियों के सूतवंशीय लोग प्राचीन इतिहास में दिखाई देते है। उनमें से रोमहर्षण एवं इसका पुत्र उग्रश्रवस् उच्चश्रेणि के सूत प्रतीत होते हैं। कीचक, कर्ण आदि राजाओं को भी महाभारत में सूतपुत्र कहा गया है। किन्तु वहाँ उनके सूत जाति पर नहीं, बल्कि उनके हीन जन्म की ओर संकेत प्रतीत होता है।

वैदिक साहित्य में राजकर्मचारी के नाते सूतों (रथवालों) का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. १९.१.४; का. सं. १५.४)। भाष्यकार इसमें राजा के सारथि एवं अश्वपालक का आशय देखते हैं। एग्लिंग के अनुसार, ये लोग चारण एवं राजकवि थे। महाभारत में भी सूतों का निर्देश राजकीय अग्रदूत एवं चारण के रूप में आता है।

यजुर्वेद संहिता में इनके लिए 'अहन्ति' (वा. सं. १६.१८); अथवा 'अहन्त्य' (तै. सं. ४.५.२.१) शब्द प्रयुक्त किया गया है, जो एक साथ ही चारण एवं अग्रदूत के इनके कर्तव्य की ओर संकेत करता है। राजसेवकों में इनकी श्रेणि महिषी एवं ग्रामणी इन दोने के बीच मानी जाती थी (श. ब्रा. ५.३.१.५)।

जैमिनि अश्वमेध में सूत जाति का निर्देश सेवक जातियों में किया गया है, एवं सूत, मागध एवं बन्दिन् लोग क्रमशः प्राचीन, मृत, एवं वर्तमान राजाओं के इतिहास एवं वंशावलि सम्हालने का काम करते थे, ऐसा निर्देश प्राप्त है (जै. अ. ५५.४४.१)।

इससे प्रतीत होता है कि, मुगल बादशहाओं के बखरनवीस जिस प्रकार का काम करते थे, वही काम प्राचीन काल में सूत लोगों पर निर्भर था। इनके समवर्ती मागध एवं बन्दिन् लोग राजा के स्तुतिपाठक का काम ही केवल करते थे, जिस कारण वे सूत लोगों से काफ़ी कनिष्ठ माने जाते थे। सूत एवं मागध लोगों का देश पुराणों में क्रमशः अनूप एवं मगध बताया गया है। पद्म में पृथु वैन्य राजा के द्वारा सूत, मागध, वन्दिन् एवं चारण लोगों को कलिंग देश दान में देने का निर्देश प्राप्त है (पद्म. भू. २९.)।

पद्म के अनुसार, सूत लोगों को वेदों का अधिकार प्राप्त था, एवं इनके आचारविचार भी ब्राह्मण जाति जैसे थें। मागध लोगों को वेदों का अधिकार प्राप्त न था, जो उनकी कनिष्ठता दर्शाता है।

परिवार—इसके पुत्र का नाम उग्रश्रवस् था, जिसे रोमहर्षणपुत्र, रोमहर्षणि, एवं सौति आदि नामांतर भी प्राप्त थे (म. आ. १.१-५; सौति देखिये)।

रोहक—रोधक नामक पिशाचयोनि समूह में रहनेवाला एक पिशाच (रोधक देखिये)।

रोहिणी--चन्द्रमा की पत्नी, जो दक्ष प्रजापति की सत्ताईस कन्याओं में से एक थी। यह रूपयौवन में अपनी अन्य बहनों की अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ थी, जिस कारण यह अपने पति की हृदयवल्लभा थी। इस कारण, इसकी बहने इससे नाराज हुयीं, एवं इसके पिता दक्ष ने भी चन्द्रमा को क्षयरोगी बनने का शाप दिया (म. श. ३४.५५)। इसी प्रकार की कथा शिवपुराण में भी प्राप्त है (शिव. कोटि. १४)।

एक नक्षत्र के रूप में इसे आकाश में अक्षय्यस्थान प्राप्त हुआ था, जो इसके द्वारा किये गये गौरीव्रत का फल था (भवि. ब्राह्म. २१)।

परिवार--इसे बुध नामक एक पुत्र, एवं सुरूपा, हंसकाली, भद्रा एवं कामदुधा नामक चार कन्याएँ थीं।

२. वसुदेव की एक पत्नी, जो बलराम की माता थी (म. मौ. ८.१८; भा. २४.४५; पद्म. सृ. १३)। बलराम का गर्भ पहले देवकी के उदर में था, जो योगमाया के कारण इसके उदर में प्रविष्ट हुआ। उस समय यह गोकुल में रहती थी (भा. १०.५-७; वसुदेव देखिये)।

कृष्णनिर्याण के पश्चात् इसने अग्निप्रवेश कर देहत्याग किया (ब्रह्म. २१२.४)। बलराम के अतिरिक्त, इसे एकानंगा नामक एक कन्या एवं रोहिताश्व नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

३. कृष्ण की पत्नियों में से एक।

४. एल गाय जो कश्यप एवं सुरभि की कन्याओं में से एक थी। इसकी विमला एवं अनला नामक दो कन्याएँ थी, जिनसे आगे चल कर सृष्टि के गाय एवं वृषभों का वंश उत्पन्न हुआ (म. आ. ६०.६५)।

५. हिरण्यकशिपु की पत्नी, जो भानु नामक अग्नि की कन्या थी। इसकी माता का नाम निशा था, जो भानु अग्नि की तृतीय पत्नी थी। यह 'स्विष्टकृत' मानी गयी है, जिस अशुभ कर्म के कारण यह हिरण्यकशिपु की पत्नी हो गई।

रोहित--(सू.इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो हरिश्चन्द्र राजा का पुत्र था। विष्णु एवं मार्कंडेय में इसे रोहिताश्व, एवं रोहितास्य कहा गया है (मार्क. २.७-९)। इसकी माता का नाम तारामती था।

शुनःशेपाख्यान--ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त शुनःशेप संबंधी सुविख्यात कथा में इसका निर्देश प्राप्त है (ऐ. ब्रा.७.१४; सां. श्रौ. १५.१८.८)। हरिश्चन्द्र का यह पुत्र वरुण देवता की कृपा से उत्पन्न हुआ था। इस कृपा का बदला चुकाने के लिए, इसे बलि के रूप में प्रदान करने का आश्वासन हरिश्चन्द्र ने वरुण देवता को दिया था। अपत्यवात्सल्य के कारण, हरिश्चन्द्र अपना यह आश्वासन बाईस वर्षों तक पूरा न कर सका।

अपने पिता के आश्वासन का रहस्य ज्ञान होते ही, उससे छुटकारा पाने के लिये यह अरण्य में भाग गया। किन्तु वरुण को यह ज्ञात होते ही, उसने इसके पिता हरिश्चन्द्र के उदर में रोग उत्पन्न किया, जिसकी वार्ता सुनते ही यह अयोध्या लौट आया। किन्तु इसके पुरोहित देवराज वसिष्ठ ने इसे पुनः एकबार विजनवासी होने की सलाह दी।

इस प्रकार बाईस वर्ष बीत जाने के बाद, इसे भार्गव वंश के अजीगर्त ऋषि का मँझला पुत्र शुनःशेप आ मिला, जो सौ गायों के मोल में इसके बदले वरुण को बलि जाने लिये तैयार हुआ। तत्पश्चात् हुए यज्ञ में विश्वामित्र ने शुनःशेप की यज्ञस्तंभ से मुक्तता की, एवं उसे अपना पुत्र मान लिया (शुनःशेप देखिये; भा. ९.७.७-२५; ब्रह्म १०४)।

विश्वामित्र की दक्षिणा की पूर्ति करने के लिए, हरिश्चन्द्र ने इसे काशी नगरी के वृद्ध ब्राह्मण को बेचा था। विश्वामित्र के द्वारा ली गई सत्वपरीक्षा में, इसे सर्पदंश हो कर यह मृत भी हुआ था, किन्तु पश्चात् देवताओं की कृपा से यह पुनः जीवित हुआ।

हरिश्चन्द्र के पश्चात् यह अयोध्या का राजा हुआ, जहाँ इसने रोहितपुर नामक दुर्गयुक्त नगरी की स्थापना की। वहाँ इसने काफ़ी वर्षों तक राज्य किया। अंत में विरक्ति प्राप्त होने पर इसने रोहितपुर नगरी एक ब्राह्मण को दान में दी, एवं यह स्वर्लोक चला गया।

परिवार--इसकी पत्नी का नाम चंद्रवती था, जिससे इसे हरित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ह. वं. १.१३)।

२. लोहित ऋषि का नामांतर (विश्वामित्र देखिये)।

रोहितक--लोहितक देश का यवन राजा, जिसे कर्ण ने अपने दक्षिण दिग्विजय में जीता था (म. व. परि. १. क्र. २४. पंक्ति ६७)

रोहिताश्व--(सो. वसु.) वसुदेव का रोहिणी से उत्पन्न पुत्र।

२. हरिश्चन्द्रपुत्र रोहित राजा का नामान्तर।

रोहितास्य--हरिश्चन्द्र पुत्र रोहित राजा का नामान्तर।

रोहीतक--एक लोकसमूह, जिसे नकुल ने अपने राजसूययज्ञीय पश्चिम दिग्विजय के समय जीता था (म.

स. २९.४)। इसको आजकल 'रोहतक' (पंजाब) कहते है।

रौक्मायण (णि)--एक ब्रह्मर्षि, जो भृगुकुल का गोत्रकार था (भृगु. ३. देखिये)।

रौक्मिणेय--एक राजा, जो द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१६)।

रौक्षक--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक ऋषि।

रौच्य--एक राजा, जो रौच्य नामक मन्वंतर का अधिपति था। यह रुचि राजा का पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम मालिनी था (मार्क. ९५.७) इसे देवसावर्णि नामांतर भी प्राप्त था (ब्रह्मवै. २.५४. ६४; भा. ८.१३)।

रौद्र--शुक्राचार्य के चार पुत्रों में से एक

२. कैलास एवं मंदर पर रहनेवाला एक राक्षससमूह। उत्तरखंड की यात्रा के समय, इससे सावधान रहने के लिए लोमश ऋषि ने युधिष्ठिर को कहा था।

रौद्रकर्मन्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया था (म. द्रो. १०२.९६)।

रौद्रकेतु--अंगदेश का एक ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम शारदा, एवं पुत्रों का नाम नरांतक एवं देवांतक थे।

रौद्राश्व--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो पूरु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम पौष्टी था। इसके प्रवीर एवं ईश्वर नामक दो भाई थे।

इसे मिश्रकेशी नामक अप्सरा से ऋचेयु, अन्वग्भानु, आदि दस महाधनुर्धर पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८९.९-१०; ८७३)। वायु आदि पुराणों में घृताची नामक अप्सरा इसकी पत्नी बताई गयी है (वायु ९९.११९; ह. वं. १.३१; मत्स्य ४९.४; भा. ९.२०५)।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार संजाति राजा का, एवं भागवत एवं विष्णु के अनुसार अहंयाति राजा का पुत्र था।

३. एक ऋषि, जो कात्यायन ऋषि का शिष्य था। एक सुंदर स्त्री का रूप धारण कर, महिषासुर इसके तप में बाधा डालने के लिये उपस्थित हुआ, जब इसने उसे नारी के ही द्वारा ही वध होनेका शाप दिया (कालि. ६२)।

रौपसेवकि--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रौम्य--शिवगणों का एक दल, जिसे शिव के मानसपुत्र वीरभद्र ने अपने रोमकूपों से उत्पन्न किया था (म. शां. परि. १.२८.८१-८२)।

रौरालय--शैलालय नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

रौरुकि--एक आचार्य, जो 'रौरुकि ब्राह्मण' नामक ग्रंथ का रचयिता माना जाता है।

रौहिम--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक ऋषि।

२. एक दानव, जो इंद्र का शत्रु था (ऋ. १.१०३.२; २.१२.१२; अ. वे. २०.१२८.१३)।

रौहिण वासिष्ठ--एक ऋषि, जो वसिष्ठ का वंशज था (तै. आ. १.१२.५)। रोहिणी नक्षत्र में उत्पन्न होने के कारण, इसे 'रौहिण' उपाधि प्राप्त हुई होगी।

रौहिणायन--एक आचार्य, जो शौनक ऋषि का शिष्य था (श. ब्रा. १४.७.३.२६)।

२. प्रियव्रत नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.३.५.१४)। 'रौहिण' का वंशज होने से, उसे यह पैतृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

रौहिण्यायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रौहित्यायनि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

रौहिदश्व--वसुमनस् नामक आचार्य का पैतृक नाम।

ल

लकुलिन्--एक शिवावतार, जो वाराहकल्प के वैवस्वत मन्वंतर के अठ्ठाईस वें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। वायु के अनुसार शिव (महेश्वर) का यह अवतार, कृष्ण द्वैपायन व्यास, एवं वासुदेव कृष्ण का समकालीन था (वायु २३.)। यह अवतार हाथ में डंडा (लकुट, लगुड, अथवा लकुल) धारण कर अवतीर्ण हुआ, जिस कारण इसे लकुलिन् नाम प्राप्त हुआ।

स्मशान में डाले गए एक प्रेत के शरीर में योगमाया

से प्रविष्ट हो कर, यह कायावतार अथवा कायावरोहण नामक तीर्थ में अवतीर्ण हुआ। इसके कुशिक, गर्ग, मित्र, एवं कौरुष्य नामक चार शिष्य थे, जो जाति से ब्राह्मण, वेदवेत्ता, एवं ऊर्ध्वरेतस् थे (शिव. शत. ५)। इसके इन शिष्यों ने पाशुपत नामक शिवोपासना की प्रतिष्ठापना की।

उदयपुर के उत्तर में १४ मैल पर स्थित नाथ-द्वार मंदीर में ई. स. ९७१ एक शिलालेख प्राप्त है, जहाँ भृगु ऋषि के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर लकुलिन् नामक शिवावतार भृगुकच्छ गांव में अवतीर्ण होने का निर्देश प्राप्त है। ई. स. १२९६ के 'चिंत्रप्रशस्ति' नामक शिलालेख में 'भट्टारक श्रीलकुलीश' नामक शिवावतार लाट देश में कारोहण नामक ग्राम में निवास करने का निर्देश प्राप्त है। मैसूर राज्य में हेमावती ग्राम में प्राप्त ई. स. ९४३ के अन्य एक शिलालेख में लकुलिन् के द्वारा मुनिनाथ चिल्लुक नाम से पुनः अवतार लेने का निर्देश प्राप्त है (डॉ. भांडारकर, वैष्णविजम, पृ. १६६)।

डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, लकुलिन् एक जीवित व्यक्ति था, जिसने पाशुपत नामक आद्य शैव सांप्रदाय की स्थापना की। इसके वासुदेव कृष्ण का समकालीन होने के पुराणों में प्राप्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, पाशुपत सांप्रदाय स्थापन करने की प्रेरणा इसे पांचरात्र नामक वैष्णव संप्रदाय से प्राप्त हुई थी। इसी कारण, इसका काल ई. पू. २ री शताब्दी माना जाता है (रुद्र-शिव देखिये)।

लक्षणा--लक्ष्मणा नामक अप्सरा का नामान्तर।

२. दुष्यन्त राजा की पत्नी लक्ष्मणा का नामान्तर (म. आ. ८९.८७७*; लक्ष्मणा देखिये)।

३. कृष्ण की पत्नी लक्ष्मणा का नामान्तर (लक्ष्मणा माद्री देखिये)।

लक्ष्मण--(सो. कुरु.) दुर्योधन का एक पुत्र (म. उ. १६३.१४)। यह महारथि था, एवं कौरवसेना में इसकी श्रेणी 'रथसत्तम' थी।

भारतीय युद्ध में अभिमन्यु के साथ हुए युद्ध में यह परास्त हुआ था (म. भी. ५१.८-११; ६९.३०-३६)। अन्त में अभिमन्यु के द्वारा ही इसका वध हुआ था (म. द्रो. ४५. १७)। वध के पूर्व, निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध कर इसने काफ़ी पराक्रम दिखाया थाः--क्षत्रदेव (म. द्रो. १३.४४); अंबष्ठ (म. क. ४.२६*); शिखंडिपुत्र क्षत्रदेव (म. क. ४.७७)।

२. अंगिरस्कुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

लक्ष्मण दाशरथि--राम दाशरथि राजा का कनिष्ठ बन्धु, जो अयोध्या के दशरथ राजा को सुमित्रा से उत्पन्न दो पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र था। इसके कनिष्ठ बन्धु का नाम शत्रुघ्न था। किन्तु इसकी विशेष आत्मीयता अपने ज्येष्ठ सापत्न बन्धु राम दाशरथि की ओर ही थी, जैसे इसके छोटे बन्धु शत्रुघ्न की सारी आत्मीयता भरत की ओर थी। इसी कारण राम एवं लक्ष्मण, तथा भरत एवं शत्रुघ्न का स्नेहभाव प्राचीन भारतीय इतिहास में बन्धुप्रेम एवं बन्धुनिष्ठा का एक उच्चतम प्रतीक बन गया है।

अपने ज्येष्ठ भाई राम के सुख एवं रक्षा के लिए तत्पर रहनेवाले एक आदर्श कनिष्ठ बन्धु के रूप में, लक्ष्मण का चरित्रचित्रण वाल्मीकिरामायण में किया गया है। इस ग्रंथ में वर्णित लक्ष्मण वृद्धों की सेवा करनेवाला, समर्थ, एवं मितभाषी है। अपने सौम्य स्वभाव, पवित्र आचरण, एवं सत्कार्यदक्षता के कारण, यह राम को अत्यंत प्रिय था (वा. रा. सुं. ३८.५९-६१)।

नाम—इसके लक्ष्मण नाम की निरुक्ति वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। यह लक्ष्मी का वर्धन करनेवाला (लक्ष्मीवर्धन), अथवा लक्ष्मी से युक्त (लक्ष्मीसंपन्न) होने के कारण, वसिष्ठ के द्वारा इसका नाम लक्ष्मण रक्खा गया (वा.रा.बा. १८.२८; ३०)। यह शुभलक्षणी होने के कारण, इसे लक्ष्मण नाम प्राप्त होने की कथा भी कई पुराणों में प्राप्त है (पद्म. उ. २६९)। किन्तु इसके नाम की ये सारी निरुक्तियाँ कल्पनारम्य प्रतीत होती है।

बाल्यकाल—दशरथ राजा के पुत्रकामेष्टि यज्ञ से जो पायस कौसल्या को प्राप्त हुआ था, उसी पायस के अंश से लक्ष्मण का जन्म हुआ था (अ. रा. बा. ३.४२)। इस कारण, लक्ष्मण बाल्यकाल से ही राम पर अत्यधिक प्रेम करता था। बाल्यकाल में राम जब मृगया खेलने जाता था, तब लक्ष्मण धनुष ले कर इसके साथ जाता था, एवं उसकी रक्षा करता था। सुबाहु एवं मारीच राक्षसों को परास्त कर, विश्वामित्र के यज्ञ की रक्षा करने के लिए यह भी राम के साथ गया था। इस कार्य मे यशस्विता प्राप्त करने के पश्चात्, यह भी राम के साथ मिथिला नगरी में सीता स्वयंवर के लिये उपस्थित हुआ था।

वहाँ राम एवं सीता के विवाहमंडप में, इसका विवाह सीरध्वज जनक की कन्या उर्मिला से संपन्न हुआ (वा. रा. बा. ६७-७३; राम दाशरथि देखिये)।

वनगमन के पूर्व— अपने पिता की वचनपूर्ति के लिए राम ने चौदह वर्षों का वनवास स्वीकार लिया। अपने पिता के द्वारा ही राम को वनगमन का आदेश दिया गया है, यह सुन कर लक्ष्मण दशरथ से अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं इसने उसकी अत्यंत कटु आलोचना की। यहीं नहीं, राम को अयोध्या के सिंहासन पर बिठाने के लिए, यह अपने पिता, भाई आदि लोगों का वध करने के लिए भी सिद्ध हुआ।

किंतु राम वनवास जाने के अपने निश्चय पर अटल रहा। फिर राम के साथ वनवास जाने का अपना निश्चय प्रकट करते हुए, इसने अपनी माता सुमित्रा से कहा—

> **अनुरक्तोऽस्मि भावेन भ्रातरं देवि तत्त्वतः।**
> **सत्येन धनुषा चैव दत्तेनेष्टेन ते शपे॥**
> **दीप्तमग्निमरण्यं वा यदि राम प्रवेक्ष्यति।**
> **प्रविष्टं तत्र मां देवि त्वं पूर्वमवधारय॥**
> (वा. रा. अयो. २१.१६-१७)।

(राम में मेरी भक्तिपूर्ण सच्ची प्रीति है। सत्य से, धनुष से, दान से, तथा इष्ट से तेरी शपथ खाता हूँ कि, जलती हुई अग्नि में वा वन में यदि राम जायेंगे, तो तुम मुझे उनके पहले गया समझना)।

राम को पिता की आज्ञा में तत्पर देख, लक्ष्मण ने राम के साथ वनवास में जाना अपना कर्तव्य मान लिया, एवं यह वनगमन के लिए सिद्ध हुआ। राम के साथ वन जाने का हठ करते हुए इसने कहा—

> **धनुरादाय सशरं खनित्रपिटकाधरः।**
> **अग्रतस्ते गमिष्यामि पन्थानमनुदर्शयन्॥**
> (वा. रा. अयो. ३१.२५)।

(धनुष धारण कर, एवं हाथ में कुदाली तथा फावडा लिए, मैं आप लोगों का मार्ग प्रशस्त करने के लिए आगे रहूँगा)।

इसने राम से आगे कहा, 'वन में, तुम्हारे लिए कंद, मूल; फल, एवं तपस्वियों को देने के लिए होम के आवश्यक पदार्थ मैं तुम्हे ला कर दूँगा। जाग्रत तथा निद्रित अवस्था में मैं सदैव तुम्हारी ही सेवा करता रहूँगा' (वा. रा. अयो. ३१.२६-२७)।

वनवास—वनवास के पहले दिन के अन्त में, राम ने इसे पुनः एकबार वनवास न आने की प्रार्थना की। किन्तु इसने कहा, 'तुम्हारे वियोग में मुझे एक दिन भी रहना असंभव है; पानी के बिना मछलीं एक पल भर भी नहीं रह सकती है, वैसी ही मेरी अवस्था होगी (वा. रा. अयो. ५३.३१)।

वन में विचरते समय, सीता के आगे राम, एवं पीछे लक्ष्मण इस क्रम से ये चलते थे (वा. रा. अयो. ५२. ९४-९६)। यह हर प्रकार राम की सेवा करता था। यह नदियों पर लकडी के सेतु बाँध कर दूर स्थित नदी से पानी लाता था। राम की चित्रकूट एवं पंचवटी में स्थित पर्णशाला इसने ही बाँधी थी। (वा. रा. अयो. ९९. १०)। राम जब बाहर जाता था, तब यह सीता-संरक्षण के लिए उसके साथ रहता था।

सीताहरण—जनस्थान में स्थित पंचवटी प्रदेश में राक्षसों का प्राबल्य देख कर, इसने राक्षससंग्राम करने से राम को पुनः पुनः मना किया था। आगे चल कर, राम की आज्ञा से इसने शूर्पणखा राक्षसी के नाक काट कर उसे विरूप कर दिया (वा. रा. अर. १८)। इसी कारण, क्रुद्ध हो कर, रावण ने मायामृग की सहाय्यता से सीता हरण करने के लिए जनस्थान में प्रवेश किया। मायामृग के संबंध में लक्ष्मण ने राम को पुनः पुनः चेतावनी दी, किन्तु राम ने इसकी एक न सुनी।

मायामृग के पीछे राम के चले जाने पर, यह सीता के संरक्षण के लिए पर्णकुटी में ही बैठा रहा। किन्तु सीता ने इसे राम के पीछे न जाने के कारण, इसकी कटु आलोचना की, जिस कारण विवश हो कर सीता को छोड़ कर इसे राम के पीछे जाना पड़ा। यही अवसर पा कर रावण ने सीता का हरण किया (राम दाशरथि देखिये)।

राम से सांत्वना—सीताहरण का वृत्त सुन कर, राम क्रुद्ध हो कर त्रैलोक्य को दग्ध करने के लिए तैयार हुआ। उस समय इसने राम को सांत्वना दी एवं कहा—

> **सुमहान्त्यपि भूतानि देवाश्च पुरुषर्षभ।**
> **न दैवस्य प्रमुञ्चन्ति सर्वभूतानि देहिनः॥**
> (वा. रा. अर. ६६. ११)।

(इस सृष्टि के सारे श्रेष्ठ लोग एवं साक्षात् देव भी दैवजात दुःखों से छुटकारा नहीं पा सकते। इसी कारण इन दुःखों से कष्टी नहीं होना चाहिए)।

सीता की खोज—सीता की खोज में क्रमशः जटायु, अयोमुखी, कबंध एवं शबरी आदि से मिल कर यह, राम

के साथ पंपासरोवर के किनारे पहुँच गया। वहाँ पहुँचते ही सीता के विरह में शोक करनेवाले राम को इसने अति स्नेह के दुष्परिणाम समझाते हुए कहा, 'इस सृष्टि में प्रिय व्यक्तियों का विरह अटल है, यह जान कर तुम्हें अपने मन को काबू में रखना आवश्यक है (वा. रा. कि. १.१६)।

ऋष्यमूक पर्वत पर रहनेवाले सुग्रीव आदि वानरों ने, सीता के द्वारा अपने उत्तरीय में बाँध कर फेंके गयें अलंकार इन्हें दिखायें। इस समय इसने सीता के समस्त अलंकारों से केवल उसके नूपुर ही पहचान लिये, एवं कहा—

नाहं जानामि केयूरे, नाहं जानामि कुण्डले।
नूपुरे त्वभिजानामि, नित्यं पादाभिवन्दनात्॥
(वा. रा. कि. ६.२२)

(मैं सीता के बाहुभूषण या कुण्डल नहीं पहचान सकता। किन्तु उसके नित्यपादवंदन के कारण, उसके केवल नूपुर ही पहचान सकता हूँ।)

राम-रावण-युद्ध—राम-रावण युद्ध में राम का युद्ध-निपुण सलाहगार एवं मंत्री का कार्य यह निभाता रहा। युद्ध के शुरू में ही रावणपुत्र इंद्रजित् ने राम एवं लक्ष्मण को नागपाश में बाँध लिया, एवं इन्हें मूर्च्छित अवस्था में युद्धभूमि में छोड़ कर वह चला गया (वा.रा. यु. ४२-४६)। बाद में होश में आने पर, राम ने लक्ष्मण को मूर्च्छित देख कर, एवं इसे मृत समझ कर अत्यधिक विलाप करते हुए कहा,—

शक्या सीतासमा नारी मर्त्यलोके विचिन्वता।
न लक्ष्मणसमो भ्राता सचिवः सांपरायिकः॥
(वा. रा. यु. ४९.६)

(इस मृत्युलोक में सीता के समान स्त्री दैववशात् मिलना संभव है। किन्तु मंत्री के समान कार्य करनेवाला, एवं युद्ध में निपुण लक्ष्मण जैसा भाई मिलना असंभव है)।

पश्चात् गरुड के आने पर राम एवं लक्ष्मण नागपाश से विमुक्त हो कर, युद्ध के लिए पुनः सिद्ध हुयें।

इंद्रजित्वध—रावण के पुत्र इंद्रजित् के साथ राम एवं लक्ष्मण ने छः बार युद्ध किया। इनमें से पहलें तीन बार इंद्रजित् के द्वारा अदृश्य युद्ध किये गयें। चौथें युद्ध के पूर्व इंद्रजित् ने इस युद्ध में अजेय बनने के लिए यज्ञ प्रारंभ किया। किन्तु उस यज्ञ में बाधा डालने के लिए लक्ष्मण ने हनुमत्, अंगद आदि वानरों को साथ लें कर इंद्रजित् के सेना का संहार किया। उस समय अपना यज्ञ अधुरा छोड़ कर, वह लक्ष्मण के साथ द्वंद्वयुद्ध करने के लिए युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ। इंद्रजित् के इस पंचम युद्ध में, लक्ष्मण ने उसके सारथि का वध किया, एवं उसे पैदल ही लंका को भाग जाने पर विवश किया।

इन्द्रजित् के साथ हुए अंतिम छठे युद्ध में, लक्ष्मण ने एक वटवृक्ष के नीचे ऐंद्र अस्त्र से उस का वध किया, जिस समय वह निकुंभिला के मंदिर से होम समाप्त कर बाहर निकल रहा था (वा. रा. यु. ८५-८७; म. व. २७३.१६-२६)। इंद्रजित् का वध करना अत्यधिक कठिन था। किन्तु बिभीषण की सहायता से, इंद्रजित्का अनुष्ठान पूर्ण होने के पूर्व ही उसका वध करने में यह यशस्वी हुआ। इंद्रजित् की मृत्यु से राम-रावण युद्ध का सारा रंग ही बदल गया।

इंद्रजित् को ब्रह्मा से यह वरदान प्राप्त था कि, वह उसी व्यक्ति के द्वारा ही मर सकता है, जो बारह वर्ष तक आहार निद्रा लिये बगैर रहा हो। अयोध्यात्याग के उपरान्त वनवास के बारह वर्षों में, लक्ष्मण आहार-निद्रारहित अवस्था में रहा था, जिस कारण यह इंद्रजित् का वध कर सका (आ. रा. सार. ११)। इंद्रजित् के वध के पश्चात्, लक्ष्मण ने उसका दाहिना हाथ काट कर उसके घर की ओर फेंक दिया, एवं बाया हाथ रावण की ओर फेंक दिया। पश्चात् इसके द्वारा काटा गया इंद्रजित् का सर इसने राम को दिखाया (आ. रा. १.११.१९०-१९८)।

राक्षससंहार—इंद्रजित् के अतिरिक्त लक्ष्मण ने निम्नलिखित राक्षसों का भी वध किया था:—विरूपाक्ष (वा. रा. यु. ४३); अतिकाय (वा. रा. यु. ६९-७१)। महाभारत के अनुसार कुंभकर्ण का वध भी लक्ष्मण के द्वारा हुआ था (म. व. २७१.१७; स्कंद. सेतुमहात्म्य. ४४)। किन्तु वाल्मीकिरामायण के अनुसार, कुंभकर्ण का वध राम के द्वारा ही हुआ था।

रावण से युद्ध—इंद्रजित् के पश्चात्, रावण स्वयं युद्धभूमि में उतरा, जिस समय लक्ष्मण ने बिभीषण के साथ उसका सामना किया। इस युद्ध में रावण ने बिभीषण की ओर एक शक्ति फेंकी, जिसे लक्ष्मण ने छिन्नविच्छिन्न कर दिया। पश्चात् रावण के द्वारा फेंकी गयी अमोघा शक्ति इसके छाती में लगी, जिससे यह मूर्च्छित हुआ। राम ने लक्ष्मण के छाती में घुसी हुई उस शक्ति को निकाल दिया, एवं

सुषेण तथा हनुमत् के साहाय्य से यह पुनः स्वस्थ हुआ (वा. रा. यु. १०२)।

सीतात्याग—राम को अयोध्या का राज्य पुनः प्राप्त होने पर, उसने लोकनिंदा के कारण, सीता का त्याग करने का निश्चय किया। उस समय, राजा के नाते उसका कर्तव्य बताते समय लक्ष्मण ने कहा, 'सृष्टि का यही नियम है कि, यहाँ संयोग का अन्त वियोग में, एवं जीवन का अन्त मृत्यु में होता है। पत्नी, पुत्र, मित्र एवं संपत्ति में अधिक आसक्ति रखने से दुःख ही दुःख उत्पन्न होता है। इसी कारण वियोग से उत्पन्न होनेवाले दुःख से भी कर्तव्य अधिक श्रेष्ठ है।

मृत्यु—लक्ष्मण के देहत्याग के संबंध में अनेक कथा वाल्मीकि रामायण में प्राप्त हैं। एक बार कालपुरुष एक तपस्वी के रूप में राम के पास आया, एवं उसने राम से यह प्रतिज्ञा करा ली कि, वह उससे एकान्त में बात-चित करेगा, जहाँ अन्य कोई व्यक्ति न हो। तब राम ने लक्ष्मण को द्वार पर खड़ा किया, एवं आज्ञा दी कि जो व्यक्ति अंदर आयेगा उसका वध किया जायेगा (वा. रा. उ. १०३.१३)।

एकान्त में कालपुरुष ने राम को ब्रह्मा का संदेश विदित किया कि, रामावतार की समाप्ति समीप आ रही है। इतने में दुर्वासस् ऋषि लक्ष्मण के पास आयें। उन्होंने राम से उसी समय मिलने की इच्छा की, एवं कहा, 'अगर मेरी यह इच्छा पूर्ण न होगी, तो राम, उसके तीन बन्धु एवं उनकी संतति को मैं शाप से नष्ट कर दूँगा'। लक्ष्मण ने वंशनाश की अपेक्षा अपना ही नाश स्वीकरणीय समझा, एवं दुर्वासस् को राम के पास जाने के लिए अनुज्ञा दी। पश्चात् राम ने अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार, लक्ष्मण को देहत्याग करने की आज्ञा दी (वा. रा. उ. १०६.१३)।

इस पर लक्ष्मण ने सरयू नदी के तट पर जा कर, एवं योगमार्ग से श्वास का निरोध कर देहत्याग किया (वा. रा. उ. १०६)। इसकी मृत्यु के पश्चात् स्वयं इंद्र ने इसका शरीर स्वर्ग में ले लिया, एवं वहाँ उपस्थित देवताओं ने इसे विष्णु का चतुर्थांश मान कर इसकी पूजा की (वा. रा. उ. १०३-१०६)। इसने जहाँ देहत्याग किया, वहाँ 'सहस्रधारा' नामक तीर्थ का निर्माण हुआ (स्कंद. २.८.२)।

हिमालय की तराई में हृषिकेश नामक स्थान में एक मंदिर है, जहाँ लक्ष्मण-झूला नामक एक पूल है। इस स्थान के संबंध में एक कल्पनारम्य कथा प्राप्त है। लक्ष्मण स्वयं शेषनाग का अवतार था, एवं रावणपुत्र इंद्रजित् की पत्नी सुलोचना शेषनाग की ही कन्या थी। इस कारण, एक दृष्टि से इंद्रजित् इसका दामात होता था। राम-रावण युद्ध में अपने दामात इंद्रजित् का वध करने का जो पाप इसे लगा, उसके निष्कृति के लिए इसने हृषिकेश में एक हज़ार वर्षों तक वायुभक्षण कर के तप किया। लक्ष्मण के इस तपश्चर्या के स्थान में ही इसका यह मंदिर बनवाए जाने की लोकश्रुति प्राप्त है।

परिवार—अपनी उर्मिला नामक पत्नी से इसे अंगद एवं चंद्रकेतु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (वा. रा. उ. १०२; राम दाशरथि देखिये)।

चरित्र-चित्रण— लक्ष्मण परमक्रोधी, शूरवीर था, एवं राम के प्रति अटूट भक्तिभावना रखता था। इसका क्रोधी स्वभाव दर्शानेवाले अनेक प्रसंग वाल्मीकिरामायण में प्राप्त हैं, जिनमें निम्नलिखित तीन प्रमुख हैं:—

(१) **दशरथ की आलोचना**—राम के वनगमन के संबंध में अपने पिता दशरथ की आज्ञा सुन कर इसने दशरथ राजा की अत्यंत कटु आलोचना की।

(२) **भरत से भेंट**—राम के वनवासकाल में, भरत जब उससे मिलने आया, तब उसे शत्रु समझ कर, यह उससे युद्ध करने के लिए प्रवृत्त हुआ।

(३) **सुग्रीव की आलोचना**—वालिवध के पश्चात्, राम को दी गयी अपनी आन भूल कर सुग्रीव विलास आदि में निमग्न हुआ। उस समय लक्ष्मण ने राम का संदेश सुना कर उसकी अत्यन्त कटु आलोचना की, एवं यह सुग्रीव का वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। किन्तु सुग्रीवपत्नी तारा ने इसका राग शान्त किया। इन सारे प्रसंगों से लक्ष्मण के क्रोधीस्वभाव पर काफ़ी प्रकाश पड़ता है। किन्तु इसकी क्रोधभावना अन्याय के प्रतिकार के लिए अथवा राम की रक्षा के लिए ही प्रकट होती थी।

मानस में—तुलसी के 'रामचरित मानस' में लक्ष्मण राम का अभिन्न संगी है। इस कारण लक्ष्मण का चरित्र राम से किसी प्रकार भिन्न नही है। इसके हृदय में भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की त्रिवेणी प्रवाहित होती हुई प्रतीत होती है—

बंदउँ लछिमन पद जल जाता, सीतल सुभग सुखदाता।
रघुपति कीरति विमल पताका, दंड समान भयउ जस राका॥

(मानस. बा. १६.५-६)।

तुलसीद्वारा चित्रित लक्ष्मण एक तेजःपुंज वीर है। वह स्वभाव से उग्र एवं असहिष्णु ज़रूर है, किन्तु इसका क्रोध राम के प्रति इसके अनन्य सेवाव्रत एवं उत्कट अनुराग से प्रेरित है। इसी कारण इसका असहिष्णु स्वभाव मोहक लगता है।

लक्ष्मणा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५१)। पाठभेद–'लक्षणा'।

२. दुर्योधन की एक कन्या, जिसके स्वयंवर में श्रीकृष्णपुत्र सांब ने इसका हरण किया था (भा. १०.६८.१; बलराम एवं सांब देखिये)।

३. दुष्यन्त राजा की प्रथम पत्नी (म. आ. ८९. ८७७*)। इसे लाक्षी नामान्तर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम जनमेजय था।

लक्ष्मणा-माद्री—मद्र देश के बृहत्सेन राजा की कन्या, जो कृष्ण के पटरानियों में से एक थी (पद्म. सृ. १३)। इसे लक्षणा नामान्तर भी प्राप्त था (म. स परि. १. क्र. २१. पंक्ति. १२५५-१२५६)।

स्वयंवर—द्रौपदीस्वयंवर के भाँति इसके स्वयंवर की भी रचना की गई थी। इसके स्वयंवर की शर्त थी कि, उपर टँगी मछली की छाया नीचे रखे जलपात्र में देख कर जो शरसंधान करेगा, उसीके साथ इसका विवाह होगा।

लक्ष्मणा के स्वयंवर में श्रीकृष्ण के अतिरिक्त जरासंध, अंबष्ठ, शिशुपाल, भीम, दुर्योधन, कर्ण, अर्जुन आदि महाधनुर्धर उपस्थित थे। किन्तु उनमें से कोई भी वीर मत्स्यभेद में सफल न हुए। अर्जुन का बाण भी मत्स्यसंधान न कर सका, एवं मत्स्य को स्पर्श करता हुआ उपर से निकल गया। अन्त में मत्स्य का भेद कर, कृष्ण ने इसका हरण किया, एवं इसे अपनी आठ पटरानियों में एक स्थान दिया।

परिवार—इसे निम्नलिखित दस पुत्र थे :– प्रघोष, गात्रवत्, सिंह, बल, प्रबल, ऊर्ध्वग, महाशक्ति, सह, ओज एवं अपराजित (भा. १०.५८.५७; ६१.१५)।

लक्ष्मण्य—ध्वन्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ५.३३.१०)।

लक्ष्मी—समुद्र से प्रकट हुई एक देवी, जो भगवान् विष्णु की पत्नी मानी जाती है।

ऐश्वर्य का प्रतीकरूप देवता मान कर, ऋग्वेदिक श्रीसूक्त में इसका वर्णन किया गया है। समृद्धि, संपत्ति, आयुरारोग्य पुत्रपौत्रादि परिवार, धनधान्यविपुलता आदि की प्राप्ति के लिए लक्ष्मी एवं श्री की उपासना की जाती है। इसी कारण श्रीसूक्त में प्रार्थना की गयी है—

> यस्यां हिरण्यं विन्देयं गामश्वं पुरुषानहम् ॥ २ ॥

(सुवर्ण, गायें, अश्व एवं चाकरनौकर आदि परिवार से युक्त लक्ष्मी मुझे प्राप्त हो)।

धनधान्यादि भौतिक संपत्ति (धनलक्ष्मी) ही नही, बल्कि सैन्यसंपत्ति (सैन्यलक्ष्मी) का भी लक्ष्मी में ही समावेश किया जाता था—

> अश्वपूर्वां रथमध्यां हस्तिनादप्रबोधिनीम्।
> श्रियं देवीमुपह्वये श्रीर्मा देवी जुषताम् ॥ ३ ॥

(अश्व, रथ, हाथी आदि से सुसज्जित सैन्य का रूप धारण करनेवाली लक्ष्मी मुझे प्राप्त हो, एवं उसका निवास चिरंतन मेरे घर में ही हो)।

लक्ष्मीदेवता की उत्क्रांति—ऐश्वर्य प्रदान करनेवाले 'लक्ष्मी' देवता की कल्पना अथर्ववेदकालीन है। उस ग्रंथ में अनेक 'भावानात्मक' देवताओं का निर्देश प्राप्त है, जिनकी उपासना से प्रेम, विद्या, बुद्धि, वाक्चातुर्य आदि इच्छित सिद्धिओं का लाभ प्राप्त होता है। अथर्ववेद में निर्दिष्ट ऐसी देवताओं में काम (प्रेमदेवता), सरस्वती (विद्या), मेधा (बुद्धि), वाक् (वाणी) आदि देवता प्रमुख हैं, जिनमें ऐश्वर्य प्रदान करनेवाली लक्ष्मी देवता का प्रमुखता से निर्देश किया गया है।

स्वरूपवर्णन—श्रीसूक्त में लक्ष्मी का स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे हिरण्यवर्णा, पद्मस्थिता, पद्मवर्णा, पद्ममालिनी, पुष्करिणी, आदि स्वरूपवर्णनात्मक विशेषण प्रयुक्त किये गये हैं। वाल्मीकि रामायण में प्राप्त इसके स्वरूपवर्णन में, इसे शुभ्रवस्त्रधारिणी, तरुणी, मुकुटधारिणी, कुंचितकेशा, चतुर्हस्ता, सुवर्णकान्ति, मणिमुक्तादिभूषिता कहा गया है (वा. रा. बा. ४५)। पुराणों में वर्णित लक्ष्मी कमलासना, कमलहस्ता, एवं कमलमालाधरिणी है। ऐरावतों के द्वारा सुवर्णपात्र में लाये हुए तीर्थजल से यह स्नान (सुस्नात) करती है, एवं सदैव विष्णु के वक्षःस्थल में रहती है (विष्णु. १.९.९८-१०५)।

निवासस्थान—लक्ष्मी क्षीरसागर में अपने पति श्रीविष्णु के साथ रहती है, एवं अपने अन्य एक अवतार राधा के रूप में कृष्ण के साथ गोलोक में रहती है (राधा देखिये)।

महाभारत में लक्ष्मी के 'विष्णुपत्नी लक्ष्मी' एवं 'राज्य-लक्ष्मी' ऐसे दो प्रकार बताये गये हैं। इनमें से लक्ष्मी हमेशा विष्णु के पास रहती है, एवं राज्यलक्ष्मी राजा एवं पराक्रमी लोगों के साथ घूमती है, ऐसा निर्देश प्राप्त है।

लक्ष्मी का निवासस्थान कहाँ रहता है, इसका रूपकात्मक दिग्दर्शन करनेवाली अनेकानेक कथाएँ महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित कथाएँ प्रमुख हैं:—

(१) **लक्ष्मी-प्रल्हादसंवाद**—असुरराज प्रल्हाद ने एक ब्राह्मण को अपना शील प्रदान किया, जिस कारण क्रमानुसार उसका तेज, धर्म सत्य, वृत्त, बल एवं अंत में उसकी लक्ष्मी उसे छोड़ कर चले गयें। तत्पश्चात् लक्ष्मी ने प्रल्हाद को साक्षात् दर्शन दे कर उपदेश दिया, 'तेज़, धर्म, सत्य, वृत्त, बल एवं शील आदि मानवी गुणों में मेरा निवास रहता है, जिन में से शील अथवा चारित्र्य मुझे सबसे अधिक प्रिय है। इसी कारण सच्छील आदमी के यहाँ रहना मैं सबसे अधिक पसंद करती हूँ। 'शीलं परं भूषणम्, इस उक्ति का भी यही अर्थ है' (म. शां. १२४.४५-६०)।

(२) **लक्ष्मी-इंद्रसंवाद**—असुरराज प्रह्लाद के समान, उसका पौत्र बलि का भी लक्ष्मी ने त्याग किया। बलि का त्याग करने की कारणपरंपरा इंद्र से बताते समय लक्ष्मी ने कहा, 'पृथ्वी के सारे निवासस्थानों में से भूमि, (वित्त) जल (तीर्थादि), अग्नि (यज्ञादि) एवं विद्या (ज्ञान) ये चार स्थान मुझे अत्यधिक प्रिय हैं। सत्य, दान, व्रत, तपस्या, पराक्रम, एवं धर्म जहाँ वास करते हैं, वहाँ मेरा भी निवास रहता है। देवब्राह्मणों से नम्रता के साथ व्यवहार करनेवाला मनुष्य मुझे अत्यधिक प्रिय है'।

लक्ष्मी ने आगे कहा, 'चोरी, वासना, अपवित्रता, एवं अशांति से मैं अत्यधिक घृणा करती हूँ, जिनके आधिक्य के कारण क्रमशः भूमि, जल, अग्नि, एवं विद्या में स्थित मेरे प्रिय निवासस्थानों का मैं त्याग कर देती हूँ।

'बलि दैत्य ने उच्छिष्टभक्षण किया, एवं देवब्राह्मणों का विरोध किया, जिस कारण वह मेरा अत्यंत प्रिय व्यक्ति हो कर भी, आज मैं उसका त्याग कर रही हूँ' (म. शां. २२१)।

(३) **लक्ष्मी-रुक्मिणीसंवाद**—लक्ष्मी के निवासस्थान से संबंधित एक प्रश्न युधिष्ठिर ने भीष्म से पूछा था, जिसका जवाब देते समय भीष्म ने लक्ष्मी एवं रुक्मिणी के दरम्यान हुए एक संवाद की जानकारी युधिष्ठिर को दी (म. अनु. ११)।

इस जानकारी के अनुसार, लक्ष्मी ने रुक्मिणी से कहा था, 'सृष्टि के सारे लोगों में प्रगल्भ, भाषणकुशल, दक्ष, निरलस, आस्तिक, अक्रोधन, कृतज्ञ, जितेंद्रिय, वृद्धजनों की सेवा करनेवाले (वृद्धसेवक), सत्यनिष्ठ, शांत स्वभाववाले (शांत), एवं सदाचारी लोग मुझे सब से अधिक प्रिय हैं, जिनके यहाँ रहना मैं विशेष पसंद करती हूँ।

'निर्लज्ज, कलहप्रिय, निंद्राप्रिय, मलीन, अशांत, एवं असमाधानी लोगों का मैं अतीव तिरस्कार करती हूँ, जिस कारण ऐसे लोगों का मैं त्याग करती हूँ'।

महाभारत में अन्यत्र प्राप्त जानकारी के अनुसार, गायें एवं गोबर में भी लक्ष्मी का निवास रहता है (म. अनु. ८२)।

जन्म—देवासुरों के द्वारा किये गये समुद्रमंथन से, चंद्र के पश्चात् लक्ष्मी का अवतार हुआ (म.आ. १६.३४; विष्णु. १.८.५; भा. ८.८.८; पद्म. सृ. ४)। इस 'अयोनिज' देवता को ब्रह्मा ने श्रीविष्णु को प्रदान किया, एवं विष्णु ने इसे पत्नी के रूप में स्वीकार किया। पश्चात् यह उसके सन्निध क्षीरसागर में निवास करने लगी।

ब्रह्मन् के पुत्र भृगु ऋषि की कन्या के रूप में लक्ष्मी पृथ्वीलोक में पुनः अवतीर्ण हुई। इस समय, दक्षकन्या ख्याति इसकी माता थी (विष्णु. १.८)। कालोपरान्त इसका विवाह विष्णु के एक अवतार नारायण से हुआ, जिससे इसे बल एवं उन्माद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए।

ब्रह्मवैवर्त के अनुसार, विष्णु के दक्षिणांग से लक्ष्मी का, एवं वामांग से लक्ष्मी के ही अन्य एक अवतार राधा का जन्म हुआ (ब्रह्मवै. २.४७.४४)।

भृगु से वरदान—विष्णु के वक्षस्थल में लक्ष्मी का निवासस्थान कैसे हुआ, इस संबंध में एक रूपकात्मक कथा पुराणों में प्राप्त है।

स्वायंभुव मनु के यज्ञ के समय, ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीन देवों में से श्रेष्ठ कौन, इसका निर्णय करने का कार्य भृगु ऋषि पर सौंपा गया। इस संबंध में जाँच लेने के लिए तीनों देवों के पास भृगु स्वयं गया। उस समय, ब्रह्मा एवं शिव ने भृगु का बूरी प्रकार से अपमान किया। केवल विष्णु ने ही भृगु का उचित आदरसत्कार किया, एवं भृगु के द्वारा छाती पर किया गया लत्ताप्रहार

भी शांति से स्वीकार कर, उसे 'श्रीवत्सलांछन' के रूप में अपने वक्षःस्थल पर धारण किया (भा. १०.८९. १-१२)। इस कारण, भृगु अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं उसके द्वारा दिये गये 'श्रीवत्सलांछन' के रूप में लक्ष्मी हमेशा के लिए श्रीविष्णु के वक्षःस्थल पर निवास करने लगी।

ब्रह्मा, विष्णु, महेशादि देवों से भी भृगु जैसे ब्राह्मण अधिक श्रेष्ठ हैं, एवं पृथ्वी के लक्ष्मी के जनक भी वे ही है, ऐसा उपर्युक्त रूपकात्मक कथा का अर्थ प्रतीत होता है। साक्षात् श्रीविष्णु को लक्ष्मी प्रदान करनेवाले भृगु ऋषि की इस कथा से ही, ब्राह्मणों की सेवा पूजन आदि से लक्ष्मी प्राप्त होती है, यह जनश्रुति का जन्म हुआ होगा।

भृगु का शाप--एक बार लक्ष्मी ने लक्ष्मीनगर नामक नगर का निर्माण कर, जो इसने अपने पिता भृगु ऋषि को प्रदान किया। कालोपरांत इसने भृगु से वह नगर लौट लेना चाहा, किंतु उसने एक बार प्राप्त हुआ नगर लौट देने से इन्कार कर दिया। इसी संबंध में मध्यस्थता करने के लिए आये हुए श्रीविष्णु की भी भृगु ने एक न सुनी, एवं क्रुद्ध हो कर उसे शाप दिया, 'पृथ्वी पर दस मानवी अवतार लेने पर तुम विवश होंगे' (पद्म.सृ. ४)।

भृगु ऋषि के उपर्युक्त शाप के अनुसार, विष्णु ने पृथ्वी पर दस अवतार लियें, जिन समय लक्ष्मी ने पत्नी-धर्म के अनुसार दस अवतार ले कर श्रीविष्णु को साथ दिया।

लक्ष्मी के अवतार--लक्ष्मी के इन दस अवतारों में निम्नलिखित अवतार प्रमुख है:--१. कमलोद्भव लक्ष्मी (वामनावतार); २. भूमि (परशुरामवातार); सीता (रामावतार); ४. रुक्मिणी (कृष्णावतार) (विष्णु. १.९. १४०-१४१; भा. ५.१८.१५; ८.८.८)।

ब्रह्मवैवर्त में लक्ष्मी के अवतार विभिन्न प्रकार से दिये गयें हैं। वहाँ निर्दिष्ट लक्ष्मी के अवतार, एवं उनके प्रकट होने के स्थान निम्नप्रकार हैं:--१. महालक्ष्मी (वैकुंठ) २. स्वर्गलक्ष्मी (स्वर्ग); ३. राधा (गोलोक); ४. राजलक्ष्मी (पाताल, भूलोक); ५. गृहलक्ष्मी (गृह); ६. सुरभि (गोलोक); ७. दक्षिणा (यज्ञ); ८. शोभा (वस्तुमात्र) (ब्रह्मवै. २. ३५)। महालक्ष्मी के अवतार में, भृगुऋषि के शाप के कारण, इसे हाथी का शीर्ष प्राप्त हुआ था, जिसे काट कर ब्रह्मा ने इसे महालक्ष्मी नाम प्रदान किया था (स्कंद. ६.८५)।

पद्म में गोकुल की भानु ग्वाले की कन्या राधा को भी लक्ष्मी का ही अवतार कहा गया है। राधा जन्म से ही अंधी, गुंगी एवं लूली थी, किंतु उसे लक्ष्मी का अवतार जान कर, नारद ने उसका दर्शन लिया था (पद्म. पा. ७१)।

लक्ष्मी के दोष--ब्रह्म में लक्ष्मी एवं दारिद्रता (अलक्ष्मी) के दरम्यान हुआ एक कल्पनारम्य संवाद प्राप्त है, जो गोदावरी नदी के तट पर स्थित लक्ष्मीतीर्थ का माहात्म्य बताने के लिए दिया गया है (ब्रह्म. १३७)। इस संवाद में लक्ष्मी की अत्यंत कठोर शब्दों में निर्भर्त्सना की गई है।

एक बार लक्ष्मी एवं अलक्ष्मी के दरम्यान श्रेष्ठ कौन इस संबंध में संवाद हुआ था। इस समय लक्ष्मी ने अपना श्रेष्ठत्व बताते हुए कहा, 'मैं जिसके साथ रहूँ, उसका इस संसार में सर्वत्र सत्कार होता है, एवं मेरे अनुपस्थिति में निर्धन एवं याचक लोगों की सर्वत्र अवहेलना होती है। इस दुर्गति से शिव जैसा देवाधिदेव भी न बच सका, जिस कारण उसकी सर्वत्र उपेक्षा एवं अवहेलना हुई'।

इस पर लक्ष्मी के दोष बताते हुए अलक्ष्मी ने कहा, 'तुम सदैव पापी, विश्वासघाती, एवं दुराचारी लोगों में रहती हो, तथा मद्य से भी अधिक अनर्थ पैदा करती हो। राजाश्रित, पापी, खल, निष्ठुर, लोभी एवं कायर लोगों के घर तुम्हारा निवास रहता है, एवं अनार्य, कृतघ्न, धर्मघातकी, मित्रद्रोही एवं अविचारी लोगों से तुम्हारी उपासना की जाती है'।

अलक्ष्मी ने आगे कहा, 'मेरा निवास धर्मशील, पापभीरू, कृतज्ञ, विद्वान् एवं साधु लोगों में रहता है, एवं पवित्र ब्राह्मण, संन्यासी एवं ध्येयनिष्ठ लोगों से मेरी उपासना की जाती है। इसी कारण काम, क्रोध, औद्धत्य आदि तामसी विकारों को मैं दूर रखती हूँ, एवं अपने भक्तों को मुक्ति प्रदान करती हूँ' (ब्रह्म. १३७)।

भर्तृहरि के अनुसार, उपर्युक्त संवाद में लक्ष्मी एवं अलक्ष्मी का संकेत संपन्नता एवं दरिद्रता से नही, किन्तु लक्ष्मी की तामस उपासना करनेवाले बुभुक्षित लोग एवं दरिद्रता में ही तृप्त रहनेवाले सात्विक लोगों की ओर अभिप्रेत है।

परिवार—विष्णु से इसे बल एवं उन्माद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। श्रीसूक्त में इसके निम्नलिखित पुत्रों का निर्देश प्राप्त है:- आनंद, कर्दम, श्रीद और चिक्लित।

इसके धातृ एवं विधातृ नामक दो भाई भी थे, जो इसीके तरह भृगु ऋषि एवं ख्याति के पुत्र थे।

लक्ष्मीप्रद सूक्त—इन सूक्तों में निम्नलिखित दो ग्रंथ प्रमुख माने जाते हैः— १. श्रीसूक्त (ऋ. परि. ११)। २. इंद्रकृत लक्ष्मीस्तोत्र, जो विष्णु पुराण में प्राप्त है (विष्णु. १.९.११५–१३७)।

२. दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो धर्मप्रजापति की पत्नी थी (म. आ. ६०–१३)।

३. वीर नामक ब्राह्मण की पत्नी, जो अपने पूर्वजन्म में तोण्डमान नामक राजा की पद्मा नामक पत्नी थी (भीम. २४. देखिये)।

लक्ष्मीनिधि—सीता का बंधु (पद्म. पा. ११)।

लगध—एक ग्रंथकार, जो 'ऋग्वेदी वेदांग ज्योतिष' का कर्ता माना जाता है। इसके नाम के लिए कई ग्रंथों में 'लगड' पाठभेद भी प्राप्त हैं। किन्तु कै. शं. बा दिक्षित के अनुसार, 'लगध' पाठभेद ही स्वीकरणीय है (दिक्षित, भारतीय ज्योतिष पृ. ७२)।

वेदांग ज्योतिष—वेदांगज्योतिष का समावेश छः वेदांगों में सर्वतोपरि माना जाता है, जिस प्रकार मयुरों की शिखाएँ एवं नागों की मणियाँ सर्वोपरि रहती है—

यथा शिखा मयूराणां नागानां मणयो यथा।
तद्वद्वेदांगशास्त्राणां ज्योतिषं मूर्धनि स्थितम् ॥
(वे. ज्यो. श्लोक ४)

भारतीय ज्योतिषशास्त्र का मूल ग्रंथ 'वेदांगज्योतिष' माना जाता है, जिससे आगे चल कर, ज्योतिषशास्त्र ने संहिता, गणित एवं जातक इन तीन भागों में अपना विकास किया। आर्यभट्ट, वराहमिहिर, ब्रह्मगुप्त एवं भास्कराचार्य जैसे ज्योतिर्विदों ने इस शास्त्र को अभिनव रूप प्रदान किया।

ऐसे महान् शास्त्रों को जन्म देनेवाले 'ऋग्वेदी वेदांग-ज्योतिष' ग्रन्थ में केवल ३६ श्लोक हैं। इसी ग्रंथ का 'यजुर्वेद वेदांगज्योतिष' नामक एक अन्य संस्करण प्राप्त है, जिसमें ४३ श्लोक प्राप्त हैं। उनमें से ३६ श्लोक ऋग्वेद-वेदांगज्योतिष के, एवं ७ श्लोक नयें है। मॅक्स म्यूलर के अनुसार, इस छोटे ग्रन्थ का उद्देश्य ज्योतिष की शिक्षा देना नहीं है, बल्कि आकाशीय ग्रह आदि के बारे में वह ज्ञान प्रदान करना है, जो वैदिक यज्ञों के दिन एवं मुहूर्त के निश्चयार्थ आवश्यक है।

जन्मस्थान—वेदांगज्योतिषशास्त्र का प्रणयन करनेवाला लगध एक भारतीय व्यक्ति था, या विदेशी, इसके बारे में निश्चित जानकारी अप्राप्य है। इस ग्रन्थ में लगध का जन्मस्थान ३४।४६ अथवा ३४।५५ अक्षांश पर निर्देशित है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह उत्तर काश्मीर अथवा अफगाणिस्थान का निवासी था।

कालनिर्णय—इस ग्रन्थ में बतायी गई विषुवस्थिति के आधार पर कै. शं. बा. दिक्षित ने इस ग्रन्थ का काल पाणिनि एवं यास्क के पूर्व अर्थात् ई. पू. १४०० निश्चित किया है (दिक्षित, भारतीय ज्योतिष पृ. ८८; पाणिनि देखिये)। किन्तु कई अन्य अभ्यासकों के अनुसार, तारों के सापेक्ष सूर्य की स्थिति के आधार पर इस ग्रन्थ का रचनाकाल का अनुमान लगाना योग्य नहीं है। इसी कारण, कई अन्य अभ्यासकों ने इसका कालनिर्णय निम्न प्रकार दिया है :—१. मॅक्सम्यूलर—ई. पू. ३ रीं शताब्दी; २. वेबर—ई. पू. ५ वीं शताब्दी; ३. लोकमान्य तिलक—ई. पू. १२६९–११८१ (ओरायन. पृ. ३७–३८); ४. विल्यम जोन्स—ई. पू. ११८१; ५. कोलब्रुक— ई. पू. १३८१; ६. चिं. वि. वैद्य—ई. पू. १२००।

ऋग्वेद वेदांगज्योतिष का अंग्रेजी अनुवाद प्रो. थिबो के द्वारा ई. स. १८८९ में प्रकाशित किया गया है। ऋग्वेद एवं यजुर्वेद वेदांगज्योतिष का मराठी अनुवाद ई. स. १८८५ में प्रसिद्ध हो चुका है, जो कै. ज. बा. मोडक के द्वारा किया गया है।

लघु—(सो. यदु) एक राजा, जो वायु के अनुसार यदु राजा का पुत्र था।

लध्विन्—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लज्जा—दक्षप्रजापति की एक कन्या, जो धर्मप्रजापति की पत्नी थी। (म. आ. ६०.१४)।

लता—एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी। ब्रह्मा के शाप के कारण, इसे ग्राहयोनि में जन्म प्राप्त हुआ था। किन्तु अर्जुन ने इसे ग्राहयोनि से विमुक्त कराया (म. आ. २०८.१९)।

२. मेरु की एक कन्या, जो आग्नीध्रपुत्र इलावृत्त राजा की पत्नी थी (भा. ५.२.२३)।

लपिता—एक शार्ङ्गी, जो मंदपाल ऋषि की द्वितीय पत्नी थी। इसकी सौत का नाम जरितृ था (म. आ. २२०.१७; मंदपाल देखिये)।

लब ऐंद्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२१)।

लंपाक—एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था। इन्होंने यादव राजा सात्यकि पर आक्रमण किया, जिसने इन्हे परास्त किया (म. द्रो. ९७. ४८; पाठ–अम्बष्ठ)।

लंब--एक असुर, जो खर नामक दैत्य का भाई था (मत्स्य. १७३.२२)।

लंबन--एक राजा, जो ज्योतिष्मत् राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका राज्य 'लंबनवर्ष' पर था, जो कुशद्वीप का उपविभाग माना जाता था (मार्क. ५०)।

लंबपयोधरा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)। पाठभेद-'लंबा'।

लंबा—प्राचेतस दक्ष की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी। इसके विद्योत एवं घोष नामक दो पुत्र थे (भा. ६.३.४)।

२. लंबपयोधरा का नामांतर।

लंबनी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)।

लंबाक्ष--तप नामक शिवावतार का शिष्य।

लंबायन—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लंबोदर—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार पौर्णिमास राजा का, एवं विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार शातकर्णि राजा का पुत्र था।

२. तप नामक शिवावतार का शिष्य।

लय--यमसभा में उपस्थित एक प्राचीन नरेश (म. स. ८.१९ पाठ.)।

ललाटाक्ष--एक लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय भेंट ले कर उपस्थित हुआ था (म. स. ४७.२)।

ललाटाक्षी--एक राक्षसी, जो अशोकवन में सीता के संरक्षण के लिए नियुक्त की गयी थी।

ललाटि—लालाटि नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

ललित--एक गंधर्व, जो शाप के कारण राक्षस हुआ था। 'कामदा एकादशी' का व्रत करने के कारण यह शापमुक्त हो गया (पद्म. उ. ४७)।

ललिता—दक्षकन्या सती का एक नामांतर (पद्म. सृ. २९)।

२. कृष्ण की पत्नियों में से एक (पद्म. पा. ७४)।

ललित्थ--(सो. अज.) एक राजा, जो वायु के अनुसार इंद्रसख अथवा विद्योपरिचरवसु राजा का पुत्र था।

२. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. ३३.२५)। इसने अभिमन्यु पर बाणों की वर्षा की थी (म. द्रो. ३६.२५)।

३. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में त्रिगर्तराज सुशर्मन् के साथ उपस्थित था, एवं कौरवों के पक्ष में शामिल था। इन्होंने अर्जुन का वध करने की प्रतिज्ञा की थी (म. द्रो. १६.२०)। किंतु अंत में अर्जुन ने इनका संहार किया (म. क. ४.४६)।

अपने उत्तरदिग्विजय के समय, कर्ण ने इन्हें जीता था (म. द्रो. ६६.३८)।

लव—राम दाशरथि राजा के दो पुत्रों में से कनिष्ठ पुत्र (कुशलव, एवं राम दाशरथि देखिये)।

लवंगा--एक गोपी, जो पूर्वजन्म में पुण्यश्रवस् नामक कृष्णभक्त ऋषि थी।

लवण—मधुवननिवासी एक राक्षस, जो मधु नामक राक्षस का पुत्र था। इसकी माता का नाम कुंभीनसी था।

रुद्र की कृपा से इसे एक शूल प्राप्त हुआ था, जो हाथ में रहते यह अमर एवं युद्ध में अजेय रहता था। इसी शूल से इसने मांधातृ राजा का उसके सैन्य के सहित संहार किया था (वा. रा. उ. ६७.२१; म. अनु. १४.२६७-२६८)।

राम दाशरथि की आज्ञा से शत्रुघ्न ने इसपर आक्रमण किया, एवं इसे शूलरहित स्थिति में पकड़ कर इसका वध किया (शत्रुघ्न देखिये)।

२. रामणीयक द्वीप में रहनेवाला एक असुर, जिसे नागों ने इस द्वीप में प्रवेश करते समय देखा था (म. आ. २३.३०७*)।

३. (सू. इ.) हरिश्चंद्र के वंश का एक राजा। इसने कई राजसूय यज्ञ किये थे, जिनके करने के अभिमान के कारण इसका नाश हुआ (यो. वा. ३.१०४-११५)।

लवणाश्व—एक ऋषि, जो पाण्डवों के साथ वन में रहता था (म. व. २७.२३)।

लह्य—एक ऋषि, जो भुज्यु ऋषि का पिता था।

लाक्षी—कृष्णपत्नी लक्ष्मणा माद्री का नामान्तर।

लांगलायन मौद्गल्य—ब्रह्मन् मौद्गल्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ५.३)। लांगल का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

लांगलि—एक शतशाखाध्यायी आचार्य, जो विष्णु, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से पौष्यंजि नामक आचार्य का शिष्य था। भागवत में इसे 'मांगलि' कहा गया है। इसे 'शालिहोत्र' एवं 'सामवेदी श्रुतर्षि' आदि उपाधियाँ भी प्राप्त थी।

लांगलिन्—इक्ष्वाकुवंशीय पुष्कल राजा का नामान्तर। भागवत में इसे शुद्धोद राजा का पुत्र कहा गया है (पुष्कल २. देखिये)।

लांगलिन् भीम—एक शिवावतार, जो वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के बाईसवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। कई पुराणों में इसका नाम 'लांगुलिन्' प्राप्त है, किन्तु अट्ठाइसवें युगचक्र में उत्पन्न हुए लकुलिन् नामक शिवावतार से यह विभिन्न है।

यह शिवावतार हाथ में हल ले कर उत्पन्न हुआ था, एवं इसके भल्लविन्, मधु, पिंग एवं श्वेतकेतु नामक चार शिष्य थे (शिव. शत. ५)।

लाट--एक क्षत्रिय जाति, जो ब्राह्मणों के साथ ईर्ष्या रखने से नीच बन गई।

अशोक के शिलालेखो में इन लोगों का निर्देश 'लाटिक' नाम से प्राप्त है। ये लोग पश्चिम भारत में सुराष्ट्र के दक्षिण में रहते थे।

लाट्यायन--एक आचार्य, जो सामवेद के पंचविंश ब्राह्मण पर आधारित 'लाट्यायन श्रौतसूत्र' नामक ग्रंथ का कर्ता माना जाता है। यह ग्रंथ सामवेदान्तर्गत कौथुमीय शाखा का श्रौतसूत्र माना जाता है। वेबर के अनुसार, लाट्यायन, शाट्यायन एवं शालंकायन ये सारे आचार्य पश्चिम भारत के निवासी थे (वेबर, हिस्टरी ऑफ इंडियन लिटरेचर, पृ. ७७)।

लाट्यायन श्रौतसूत्र—इस ग्रंथ के कुल दस प्रपाठक (अध्याय) हैं। उनमें से पहले सात प्रपाठकों में सोमयज्ञों की; आठवे एवं नववे प्रपाठक के पूर्वार्ध में विभिन्न 'एकाह' यज्ञों की; नववे प्रपाठक के उत्तरार्ध में 'अहीन' यज्ञों की; एवं दसवे प्रपाठक में 'सत्र' यज्ञों की जानकारी प्राप्त हैं। वेबर के अनुसार, इस ग्रंथ का रचनाकाल अन्य वेदों के श्रौतसूत्रों से काफ़ी पूर्वकालीन था। इस ग्रंथ पर उपलब्ध भाष्यों मे अग्निस्वामिन् का भाष्य विशेष सुविख्यात है।

पूर्वाचार्य—'लाट्यायन श्रौतसूत्र' में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त हैं:— स्थविर गौतम, शौचिवृक्षि, क्षैरकलंभि, कौत्स, वार्षगण्य, भाण्डितायन, लामकायन, राणायनीपुत्र, तथा शाट्यायनि एवं शालंकायनि परंपरा के विविध आचार्य। इनमें से शौचिवृक्षि आचार्य का निर्देश पाणिनि के अष्टाध्यायी में भी प्राप्त है (पा. सू. ४.१.८१)।

लातव्य—कुशांब स्वायव नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ८.६.८)। लतु का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक गोत्रनाम। इंद्र के द्वारा ओंकार के संबंधी जानकारी पूछी जाने पर, प्रजापति ने ओंकार का गोत्र 'लातव्य' बताया था (गो. ब्रा. १.१.३५)।

लामकायन—एक आचार्य, जो यज्ञकर्म से संबंधित समस्याओं का ज्येष्ठ अधिकारी व्यक्ति माना जाता था (ला. श्रौ. ४.९.२२; द्रा. श्रौ. ४.३८.४; नि. सू. ३.१२.१३)। वंश ब्राह्मण में संवर्गजित् नामक आचार्य का पैतृक नाम 'लामकायन' बताया गया है (वं. ब्रा. २; संवर्गजित् देखिये)। लमक का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

लालपि—एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा का एक पुत्र था।

लालाटि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लालावि—एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा का पुत्र था।

लावकि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लावकृत—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लावण्यवती—रथन्तर कल्प के पुष्पवाहन राजा की कन्या (पद्म. सृ. २०)।

लाह्यायन अथवा **लाह्यायनि**--भुज्यु नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ३.३.१.२.)। लह्य का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

लिखित—एक मुनि, जो जैगीष्यव्य के दो पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम एकपर्णा, एवं भाई का नाम शंख था (ब्रह्मांड. ३.१०.२१)।

यह बाहुदा नदी के तट पर आश्रम बना कर रहता था, जहाँ निकट ही इसके भाई शंख का भी आश्रम था। एक बार शंख के अनुपस्थिति में यह उसके आश्रम में गया, एवं बिना पूछे ही आश्रम में से कुछ फल खाने लगा। इतने में शंख वहाँ उपस्थित हुआ, एवं इस पर चोरी का आरोप लगा कर, उसने इसे राजा के पास से इस अपराध की सज़ा लेने के लिए कहा।

तदोपरांत, यह सुद्युम्न राजा के पास गया, एवं अपना अपराध उसे बता कर उसकी सजा पूछने लगा। फिर राजा ने इससे कहा, 'तुमने स्वयं अपना अपराध कबूल किया है। इसलिए तुम्हे सज़ा देने की कोई ज़रूरत नहीं है'।

इस प्रकार राजा के द्वारा वेगुनाह साबित होने पर भी, इसने आत्मग्लानि को वशीभूत हो कर, खुद के दोनों हाथ कटवाये। पश्चात् यह नदी पर स्नान करने के लिए गया, जहाँ शंख ऋषि के तपोबल से इसके दोनों हाथ इसे पुनः प्राप्त हुए (म. शां. २४; अनु. १३७.१९)।

यह एवं इसके भाई शंख के द्वारा लिखित 'शंख स्मृति' नामक एक स्मृतिग्रंथ उपलब्ध है (शंख ६. देखिये)।

२. चंपकापुरी के हंसध्वज राजा का एक दुष्टकर्मा पुरोहित। इसे शंख नामक एक भाई था, जो इसीके ही समान हंसध्वज राजा का पुरोहित था, एवं इसीके ही समान दुष्टबुद्धि था।

पाण्डवों का अश्वमेधीय अश्व हंसध्वज राजा के द्वारा रोंक गया, जिस कारण उसका अर्जुन के साथ युद्ध हुआ। उस समय हंसध्वज राजा ने अपने सैन्य को ऐसी आज्ञा दी कि, हरएक सैनिक सूर्योदय पूर्व सैन्यसंचलन के लिए उपस्थित हो, एवं जो इस आज्ञा का भंग करेगा उसे उबलते तेल में ड़ाला दिया जाए।

दूसरे दिन हंसध्वज राजा के पुत्र सुधन्वन् को ही संचलन के लिए आने में देर हुई, एवं राजा के आज्ञानुसार सजा भुगतने की आपत्ति आई। अपने पुत्र को इतनी कड़ी सजा देने में राजा का मन हिचकिचाने लगा। किन्तु इस दुष्टबुद्धि पुरोहित ने राजा को इस कार्य करने पर विवश किया।

फिर राजा की आज्ञानुसार, सुधन्वन् को उबलते तेल में ड़ाला गया, किन्तु वह सुरक्षित ही रहा। फिर तेल बराबर उबला नहीं है, इस आशंका से इसने एक नारियल तेल में छोड़ दिया। तत्काल उस नारियल के दो टुकडे हो कर, उनके द्वारा यह एवं उसके भाई शंख का कपालमोक्ष हुआ (जै. अ. १७)।

लिंबुकि--नाकुलि नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

लील--सारस्वत नगरी के वीरवर्मन् राजा का पुत्र।

लीला--पद्मराज की पत्नी, जिसने अपने पति की मृत्यु के पश्चात् सरस्वती की कृपा से उसे पुनः प्राप्त किया (यो. वा. ३.१५-४९)।

लीलाढ्य--विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५३)।

लीलावती--कोसल देश के ध्रुवसंधि राजा के दो पत्नियों में से एक। इसके पुत्र का नाम शत्रुजित् था।

२. रत्न नगरी के मयूरध्वज राजा की पत्नी। इसे कुमुद्वती नामांतर भी प्राप्त था। इसके पुत्र का नाम ताम्रध्वज था।

३. साधु वैश्य की पत्नी, जिसका जीवनचरित्र 'सत्यनारायण माहात्म्य' की कथा में प्राप्त है (सत्यनारायण ३)। सत्यनारायण व्रत की पूर्ति न करने के कारण, इसे अनेकानेक कष्ट सहने पड़े।

४. वीर राजा की कन्या, जिसका अविक्षित् राजा ने हरण किया था (मार्क. ११९.१७)।

५. एक वेश्या, जिसका राधाष्टमी का व्रत करने के कारण उद्धार हुआ था (पद्म. ब्र. ७)।

६. एक वेश्या, जिसने पुष्करक्षेत्र में चतुर्दशी के दिन लवणाचल एवं सुवर्णवृक्ष की पूजा कर, उन्हें ब्राह्मणों को दान में दिया था। इस पुण्यकर्म के कारण, मृत्यु की पश्चात् इसे शिवलोक की प्राप्ति हुई (पद्म. सृ. २१)।

लुब्ध--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लुंपक--चंपावती नगरी के माहिष्मत राजा के पाँच पुत्रों में से एक। 'सफला एकादशी' का व्रत करने के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. उ. ४०)।

लुश धानाक--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.३५-३६; ३८)। इंद्र की कृपा प्राप्त करने में इसका एवं कुत्स ऋषि का हमेशा द्वंद्व चलता था, जिसके अनेकानेक निर्देश ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है।

एक बार इसने एवं कुत्स ने एक ही समय पर इंद्र को निमंत्रण दिया। पूर्वस्नेह के कारण, इंद्र कुत्स के पास गया। उस समय अपना आदरातिथ्य छोड़ कर, इंद्र लुश के पास जाएगा इस आशंका से कुत्स ने उसे चमडी के सौ रस्सियों से बाँध रखा। किन्तु उसी अवस्था में अपने पास आने के लिए लुश के द्वारा इंद्र की प्रार्थना की गई। (ऋ. १०.३८.५. मं. ब्रा. ९.२.२२; जै. ब्रा. १.१२८)।

लुशाकपि खार्गलि--एक आचार्य, जो केशिन् दाल्भ्य नामक आचार्य का समकालीन था (क. सं. ३०.२)। खृगल का वंशज होने के कारण, इसे 'खार्गलि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

कुषीतक सामश्रवस नामक आचार्य ने शमनीचमेढ़्र नामक व्रात्य लोगों का आचार्यत्व का स्वीकार किया, जिस कारण इसने उसे एवं उसके कौषीतकी नामक अनुगामियों को भ्रष्ट होने का शाप दिया (पं. ब्रा. १७.४.३; कुषीतक सामश्रवस देखिये)।

लेख--रैवत मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित आठ देव शामिल थे:—ध्रुव, ध्रुवक्षिति, प्रघास, प्रचेतस्, बृहस्पति, मनोजव, महायशस् एवं युवनस् (ब्रह्मांड. २.३६.७६)।

२. चाक्षुष मन्वन्तर का एक देवगण।

लेखक--सूर्य का एक प्रिय अनुचर (भवि. ब्राह्म. ५६)।

लेश--(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सुनहोत्र राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'शल' कहा गया है।

लैद्राणि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लैंद्राणि—अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लोकाक्षि—एक शिवावतार, जो वाराहकल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर में लोकाक्षि नामक वेदविभाग निर्माण करनेवाले मृत्यु नामक व्यास के साहय्यार्थ अवतीर्ण हुआ था। यह स्वयं निवृत्तिमार्गी था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:- सुधामन्, विरजस्, संजय, एवं अंडज (शिव. शत. ४-५)।

२. व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लौगाक्षि नामक आचार्य का नामान्तर।

३. जटामालिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

लोपामुद्रा--अगस्त्य ऋषि की पत्नी, जो विदर्भ राजा की कन्या थी।

एक वैदिक मंत्रद्रष्ट्री के नाते लोपामुद्रा का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.१७९.१-२)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र अगस्त्य ऋषि की पत्नी के नाते इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ यह उसके आलिंगन की इच्छा प्रकट करती है (ऋ. १.१७९.४; बृहद्दे. ४.५७)।

जन्म--महाभारत में इसे वैदर्भ राजा की कन्या कहा गया है, एवं दो स्थान पर इसके पिता का नाम विदर्भराज निमि दिया गया है। पार्गिटर के अनुसार, विदर्भराजवंश में निमि नामक कोई भी राजा न था, एवं लोपामुद्रा के पिता का नाम निमि न हो कर भीम था, जो विदर्भदेश के क्रथ राजा का पुत्र था (पार्गि. १६८)। विदर्भराज की कन्या होने के कारण, इसे वैदर्भी नामान्तर प्राप्त था।

इसके जन्म के संबंध में एक कल्पनारम्य कथा महाभारत में प्राप्त है। अपने पितरों को मुक्ति प्रदान करने के लिए, अगस्त्य ऋषि के मन में एक बार विवाह करने की इच्छा उत्पन्न हुई। किन्तु उसके योग्यता की कोई भी कन्या उसे इस संसार में नज़र न आई। फिर अपनी पत्नी बनाने के लिए, उसने अपने तपोबल से एक सुंदर कन्या का निर्माण किया, एवं पुत्र के लिए तपस्या करनेवाले विदर्भराज के हाथ में उसे दे दिया। यहीं कन्या लोपामुद्रा नाम से प्रसिद्ध हुई।

अगस्त्य से विवाह—धीरे धीरे यह युवावस्था में प्रविष्ट हुई। सौ दासियाँ एवं सौ कन्याएँ इसकी सेवा में रहने लगी। अपने शील एवं सदाचार से यह अपने पिता एवं स्वजनों को संतुष्ट रखती थी।

एक दिन महर्षि अगस्त्य विदर्भराज के पास आये, एवं उसने लोपामुद्रा से विवाह करने का अपना निश्चय प्रकट किया। राजा इसका विवाह अगस्त्य जैसे तपस्वी के साथ नहीं करना चाहता था, किंतु महर्षि के शाप के डर से वह उसे इन्कार भी नहीं कर सकता था। अपने माता पिता को संकट में पड़ा देख, लोपामुद्रा ने अपने पिता से कहा, 'आप मुझे महर्षि के सेवा में दे कर अपनी रक्षा करे'। तब इसके पिता ने इसका विवाह अगस्त्य ऋषि के साथ करा दिया।

विवाह के पश्चात् इसने अगस्त्य ऋषि की आज्ञा से अपने राजवस्त्र एवं आभूषण उतार दियें, एवं वल्कल एवं मृगचर्म धारण कियें। पश्चात् अगस्त्य इसे ले कर गंगाद्वार गया, एवं घोर तपस्या में संलग्न हुआ। यह पति के समान ही व्रत एवं आचार का पालन करने लगी, एवं तप करनेवाले अगस्त्य की सेवा कर इसने उसे प्रसन्न किया।

पुत्रप्राप्ति—पश्चात् इसका रूपयौवन, पवित्रता एवं इंद्रियनिग्रह से प्रसन्न हो कर, अगत्स्य ऋषि ने इससे संभोग करने की इच्छा प्रकट की। तब इसने अगत्स्य से कहा, 'इस तापसी वेष में एवं तपस्वी के पर्णशाला में नहीं, बल्कि मेरे पिता जैसे राजमहल में मैं आपसे समागम करना चाहती हूँ'। फिर अगत्स्य ने अपने तपःसामर्थ्य से इल्वल से विपुल संपत्ति ला कर इसे प्रदान की, एवं इसकी इच्छा के अनुसार, हजारों को जीतनेवाला एक महान् पराक्रमी पुत्र इसे प्रदान किया।

इस पुत्र का गर्भ सात वर्षों तक इसके पेट में पलता रहा, एवं सात वर्ष बिताने पर वह अपनी माता के उदर से बाहर निकला। अगत्स्य से उत्पन्न इसके पुत्र का नाम दृढस्यु अथवा इध्मवाह था (म. व. ९४-९७)।

काशी के सुविख्यात राजा प्रतर्दन का पौत्र अलर्क को लोपामुद्रा के द्वारा विपुल धनसंपत्ति एवं राज्यश्री प्राप्त होने की कथा पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९२.६७; ब्रह्म. ११.५३)। आनंद रामायण के अनुसार इसके पास एक 'अक्षय स्थाली' थी, जिससे अपरिमित अन्न की प्राप्ति होती थी (आ. रा. विवाह. ५)।

दक्षिण भारत में--अगस्त्य ऋषि का सर्वाधिक संबंध दक्षिण भारत से था, जिसको पुष्टि देनेवाली लोपामुद्रा की एक जन्मकथा भागवत में प्राप्त है। इस कथा में इसका निर्देश कृष्णेक्षणा नाम से किया गया है, एवं इसे मलयध्वज नामक पाण्डय राजा की कन्या कहा गया है। यहाँ इसकी माता का नाम वैदर्भी दिया गया है, एवं इसके सात भाईयों को द्रविड देश के राजा कहा गया है। अगस्त्य ऋषि से इसे दृढच्युत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके पुत्र का नाम इध्मवाहन था (भा. ४.२८)।

लोभ--ब्रह्मा का एक मानस पुत्र, जो उसके अधरोष्ठ से उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. ३.१०)। भागवत में इसे अधर्मपुत्र दंभ एवं माया का पुत्र कहा गया है।

लोभालोभ--एक ऋग्वेदी ब्रह्मचारी।

लोमगायनि अथवा **लोमगायिन**--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से लांगलि नामक आचार्य का शिष्य था।

लोमपाद--अंगदेश के रोमपाद राजा का नामान्तर (रोमपाद १. देखिये)।

लोमश--एक दीर्घजीवी महर्षि, जिसका हृदय धर्मपालन से विशुद्ध हो चुका था (म. व. ३२.११)। इसके शरीर पर अत्यधिक लोम (केश) थे, जिस कारण इसे लोमश नाम प्राप्त हुआ था। इसकी आयु इतनी अधिक थी कि, प्रत्येक कल्पान्त के समय इसका केवल एक ही बाल झडता था। एक बार इसने सौ वर्षों तक कमल के फूलों से शिव की उपासना की थी, जिस कारण इसे प्रत्येक कल्प के अन्त में एक एक बाल झडने का, एवं प्रलयकाल के समय मुक्ति प्राप्त होने का आशीर्वाद प्राप्त हुआ था (स्कंद १.२.१३)।

इंद्र से भेंट--एकबार घूमते घूमते यह इंद्र के पास पहूँचा। वहाँ इंद्र के पास अस्त्रविद्या के प्राप्ति के लिए इंद्रलोक में आया हुआ अर्जुन इसे दिखाई पड़ा, जो इंद्र के अर्धासन पर विराजमान हुआ था। इंद्र ने लोमश से कहा, 'अर्जुन साक्षात नरनारायण का ही अवतार है, जो कौरवों पर विजय पानेवाले अस्त्रों की प्राप्ति करने के लिए यहाँ आया है। काम्यकवन में रहनेवाला युधिष्ठिर अर्जुन के कारण चिंताग्रस्त हो चुका है; मैं यही चाहता हूँ कि, तुम युधिष्ठिर के पास जा कर अर्जुन का कुशल वृत्तांत उसे बता देना, एवं उसके मनआह्लाद के लिए भारत के अन्यान्य तीर्थों का दर्शन उसे कराना' (म. व. ४५.२९-३३)।

तीर्थयात्रा--इंद्र की आज्ञानुसार, यह काम्यकवन में आया। इसने अर्जुन का कुशलवृत्त युधिष्ठिर को सुनाया, एवं तीर्थयात्रा प्रस्ताव उसके सम्मुख रखा। पश्चात् यह युधिष्ठिर के साथ तीर्थयात्रा करने के लिए निकला। पहले ये महेंद्र पर्वत पर गयें, एवं चतुर्दशी के दिन परशुराम का दर्शन कर प्रभासक्षेत्र में गयें। वहाँसे यमुना नदी के किनारे ये कैलास पर्वत के पास आ पहूँचे (म. व. ८९-१४०)।

पश्चात् गंधमादन पर्वत की तराई में सुबाहु नामक किराताधिपति का सत्कार स्वीकार कर, इन्होंने गंधमादन पर्वत का आरोहण करना प्रारंभ किया। किन्तु ये दोनों थकने के कारण, भीम ने घटोत्कच की सहाय्यता से इन्हें गंधमादन पर्वत पर स्थित 'नरनारायण' आश्रम में पहुँचा दिया (म. व. १४१-१४६)।

बाद में सत्रह दिनों तक प्रवास कर ये वृषपर्वन् के आश्रम में पहूँच गयें, एवं चार दिनों के उपरान्त आर्ष्टिषेण ऋषि के आश्रम में आयें (म. व. १५५)। वहाँ धौम्य ऋषि ने युधिष्ठिर को सूर्य चंद्र की गति के संबंध में जानकारी बतायीं (म. व. १६०)।

इतने में इंद्र की सहाय्यता से अर्जुन गंधमादन पर्वत पर आ पहूँचा (म. व. १६१.१९)। पश्चात् यह युधिष्ठिर एवं अर्जुन के साथ चार वर्षों तक गंधमादन पर्वत पर ही रहा (म. व. १७३.८)। पाण्डवों के वनवास के दस साल पूर्ण होने के पश्चात्, लोमश उन्हें पुनः एक बार नरनारायण आश्रम में ले आया। किराताधिपति सुबाहु के घर एक महिने तक रहने के पश्चात्, ये यामुनगिरि पर स्थित विशाखयूप में गयें, एवं वहाँसे द्वैतवन में गयें। वहाँ सरस्वती नदी के किनारे बरसात के चार महिने व्यतीत करने के पश्चात्, पौर्णिमा होते ही, इसने पाण्डवों को काम्यकवन में पहूँचाया, एवं यह स्वयं तपस्या के लिए चला गया (म. व. १७८-१७९)।

आख्यानकथन--तीर्थयात्रा के समय, लोमश ऋषि ने युधिष्ठिर को अनेक देवता एवं धर्मात्मा राजाओं के आख्यान सुनायें, जिनमें निम्न आख्यान प्रमुख थेः--

अगस्त्यचरित्र (म. व. ९६-९९); भगीरथचरित्र (म. व. १०६-१०९); ऋश्यशृंगचरित्र (म. व. ११०-११३); च्यवनकन्या सुकन्या का चरित्र (म. व. १२१-१२५); मांधातृचरित्र (म. व. १२६-१२७)।

वरप्रदान—लोमश ने दुर्दम राजा को देवी भागवत का पाठ पाँच बार पढ़ कर सुनाया था, जिस कारण उसे पाँचवे मन्वन्तर के अधिपति रैवत नामक पुत्र की प्राप्ति हुई थी (दे. भा. महात्म्य. ५)। पिशाचयोनि में प्रविष्ट हुए सुशाला, सुस्वरा, सुतारा एवं चंद्रिका आदि गंधर्व-कन्याओं का, एवं वेदनिधि नामक ऋषिपुत्र का इसने नर्मदास्नान का उपदेश कर उद्धार किया था (पद्म. स्व. २३)।

ग्रंथ—इसके नाम पर 'लोमशसंहिता' एवं 'लोमशशिक्षा' नामक दो ग्रंथ उपलब्ध है (C. C.)। उनमें से लोमशशिक्षा सामवेद का शिक्षा ग्रंथ है, जो आठ खण्डों में विभाजित है। इस ग्रंथ के पहले ही श्लोक में इसका गर्गाचार्य के साथ निर्देश प्राप्त है, जिसका संदर्भ ठीक प्रकार से ध्यान में नहीं आता है।

कश्यपसंहिता में प्राप्त ज्योतिषशास्त्र के प्रवर्तक अठारह महर्षियों में, लोमश ऋषि का निर्देश प्राप्त है। उन आचार्यों के द्वारा सिद्धान्त, होरा एवं संहिता इन तीन स्कंदों में विभाजित ज्योतिषशास्त्र की रचना किये जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है।

लोमशकथित रामकथा—पद्म में प्राप्त रामकथा का वक्ता लोमश ऋषि बताया गया है (पद्म. पा. ३६)। महाभारत में प्राप्त परशुराम के तेजोभंग के आख्यान का वक्ता लोमश ही है (म. अनु. ३५१)।

लोमश के नाम पर 'लोमशरामायण' नामक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जिसमें बैतीस हज़ार श्लोक हैं। उस ग्रंथ में राजा कुमुद एवं वीरमती के द्वारा दशरथ एवं कौसल्या के रूप में जन्म लेने की कथा प्राप्त है, एवं जालंधर के शाप के कारण रामावतार होने का आख्यान भी वहाँ दिया गया है।

तुलसी के द्वारा विरचित 'रामचरितमानस' में भी भृशुण्डि ऋषि को लोमश के द्वारा रामकथा प्राप्त होने का निर्देश है (मानस. उ. ११३)। रसिक सांप्रदाय में भी एक 'लोमशसंहिता' प्रचलित है, जिसमें इसका एवं पिप्पलाद ऋषि का एक संवाद प्राप्त है।

आश्रम—लोमश ऋषि के आश्रम निम्नलिखित दो स्थानों में दिखायें जाते हैं:— १. राजस्थान में बुंदी शहर के उत्तर में सत्रह मील पर स्थित तिमाणाग्राम में उपर्या नामक शिवमंदिर एवं लोमश ऋषि का आश्रम प्राप्त है; २. पंजाब में स्थित ज्वालामुखी ग्राम से पचपन मील पर स्थित रिवाल्सर (रेवासर) ग्राम में लोमश आश्रम सुविख्यात है।

इसके अतिरिक्त गया जिले में स्थित बराबर पहाड़ी में दशरथ राजा के द्वारा खोदी गई एक गुफा 'लोमश गुफा' नाम से प्रसिद्ध है।

२. रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

लोमहर्षण--पुराणों का आद्य कथनकर्ता रोमहर्षण 'सूत' का नामांतर (रोमहर्षण देखिये)।

लोमायन--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। ब्रह्मांड में निर्दिष्ट व्यास के शिष्यपरंपरा में इसका निर्देश प्राप्त है।

लोल--सिद्धवीर्य ऋषि का पुत्र। अपने अगले जन्म में, इसने उत्पलावती नामक रानी के उदर में तामस मनु के रूप में जन्म लिया (मार्क. ७१; तामस देखिये)।

लोलजि--एक राक्षस, जो धर्मारण्य जलाने के लिए प्रवृत्त हुआ था। इस कारण विष्णु ने इसका वध किया (स्कंद ३.२.११)।

लोला--मधु नामक राक्षस की माता (वा. रा. उ. ६१.३)।

लोलाक्षि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लोह—एक असुर, जिसके नाम से लोहतीर्थ नामक एक तीर्थ प्रचलित हुआ (स्कंद. ३.२.२९)।

२. एक असुर। अज्ञातवास के समय पाण्डवों ने अपने शस्त्र नीचे रख दियें। यही सुअवसर पा कर इसने उन पर आक्रमण किया, किन्तु देवताओं ने इसे अंधा बन कर पाण्डवों की रक्षा की। उस स्थान को लोहणपुर कहते है। (स्कंद. १.२.६५)।

३. एक लोकसमूह, जिसे अर्जुन ने उत्तर दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.२४)।

लोहगंध—गार्ग्यकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसका जनमेजय पारिक्षित (प्रथम) राजा ने वध किया था। इस ब्रह्महत्या के कारण, लोगों ने जनमेजय पारिक्षित को राज्यभ्रष्ट कर, उसे हद्दपार किया (वायु. ९३.२०-२६)। इस पाप से छुटकारा पाने के लिए जनमेय राजा ने 'इंद्रोत शौनक' नामक आचार्य के द्वारा एक अश्वमेध यज्ञ किया (जनमेजय पारिक्षित १. देखिये)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, 'गार्ग्य' लोहगंध की उपाधि न हो कर जनमेजय (प्रथम) की उपाधि थी, जो उसके शरीर से आनेवाली दुर्गंधी के कारण उसे

प्राप्त हुई थी। जनमेजय को ब्रह्महत्या के पातक से मुक्त करानेवाले इंद्रोत शौनक ने उसके शरीर की यह दुर्गंधी भी दूर करायी (ब्रह्मांड. ३.६८.२३-२६; ह. वं. १.३० १०-१४; म. शां १४१.११)।

लोहलय--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लोहवैरि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लोहिशवक्त्र-स्कंद का एक सैनिक (म. श ४४.७०)।

लोहित--विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

२. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

३. एक स्मृतिकार (C. C.)।

४. एक राजा, जिसे अर्जुन ने उत्तरदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.१७)।

५. वरुणसभा का एक नाग (म. स. ९.८; ११)।

लोहिताक्ष--एक ऋषि, जो जनमेजय के सर्पसत्र में स्थपति (वास्तुविद्याविशारद) नामक ऋत्विज था। यज्ञ के लिए भूमि शुद्धि करते समय ही इसने भविष्यवाणी की थी, 'यह सत्र एक ब्राह्मण के द्वारा जल्द ही बन्द हो जायेगा (म. आ. ४७.१५; ५१.६; ५३.१२)।

२. ब्रह्मा कों द्वारा स्कंद को दिये गयें चार पार्षदों में से एक। अन्य तीन पार्षदों के नाम नन्दिषेण, घण्टाकर्ण, एवं कुमुदमलिन् थे (म. श. ४४.२१-२२)।

लोहितायनि--स्कंद की धाय, जो लालसागर की कन्या थी। इसकी कदंब के वृक्षों पर पूजा होती है (म. व. २१९.३९)।

लोहितारण--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो घृतपृष्ठ राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका वर्ष इसीके ही नाम से प्रसिद्ध था।

लोहिताश्व--वसुदेवपुत्र रोहिताश्व का नामान्तर।

लौक्य--बृहस्पति का नामान्तर। 'लोकपुत्र' होने के कारण बृहस्पति को यह नाम प्राप्त हुआ था (बृहस्पति १. देखिये)।

लौक्षि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लौक्षिण्य--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद--'लौगाक्षि'।

लौगाक्षि--एक शतशाखाध्यायी सामवेदी आचार्य, जो व्यास की सामशिष्य परंपरा में से पौष्यंजि नामक आचार्य का शिष्य था।

एक स्मृतिकार के नाते से इसका निर्देश मिताक्षरा में प्राप्त है, जहाँ इसके अशौच एवं प्रायश्चित के संबंधी श्लोक उद्धृत किये गयें हैं (याज्ञ. ३.१.२; २६०; २८९)। अपरार्क के द्वारा भी इसके निम्नलिखित विषयों के संबंधी गद्यापद्यात्मक उद्धरण दिये गयें हैं:—संस्कार, वैश्वदेव, चातुर्मास्य, द्रव्यशुद्धि, श्राद्ध, अशौच एवं प्रायश्चित।

योग एवं क्षेम शब्दों की व्याख्या करनेवाला, एवं उन दोनों का अभिन्नत्व प्रस्थापित करनेवाला लौगाक्षि का एक श्लोक प्रसिद्ध है, जो मिताक्षरा आदि धर्मशास्त्र ग्रंथों में प्राप्त है।

ग्रंथ--१, आर्षाध्याय; २. उपनयनतंत्र; ३. काठक गृह्यसूत्र; ४. प्रवराध्याय; ५. श्लोकदर्पण।

२. लौक्षिण्य नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

लौपायन—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए व्यवहृत है:—बन्धु (ऋ. ५.२४.१); विप्रबन्धु (ऋ. ५.२४.४); श्रुतबन्धु (ऋ. ५.२४.३); सुबन्धु (ऋ. ५.२४.२)। इस पैतृक नाम का 'गौपायन' पाठभेद भी प्राप्त है।

लौमहर्षणि--रोमहर्षण सूत के सौति नामक पुत्र का नामान्तर (सौति देखिये)।

लौहवैरिण--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

लौहि--अष्टक ऋषि का पुत्र, जो विश्वामित्र ऋषि का पौत्र था।

२. (शिशु. भविष्य.) एक राजा, जो अजातशत्रु राजा का पुत्र था।

लौहित्य--एक पैतृक नाम, जो जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में निम्नलिखित गुरु के लिए प्रयुक्त किया गया है:—कृष्णदत्त, कृष्णरात, जयक, त्रिवेद कृष्णरात, दक्ष जयन्त, पल्लिगुप्त, मित्रभूति, यशस्विन् जयन्त, विपश्चित् दृढजयन्त, वैपश्चित् दार्ढजयन्ति, वैपश्चित दार्ढजयन्ति, दृढजयन्त, श्यामजयन्त, श्यामसुजयन्त, सत्यश्रवस् (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

लोहित का वंशज होने से इन आचार्यों को यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक आचार्य (सां. आ. ७.२२)।

व

वंशक--इक्ष्वाकुवंशीय वत्सक राजा का नामान्तर।

वंशा--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्याओं में से एक।

वक दाल्भ्य--बक दाल्भ्य नामक आचार्य का नामान्तर (बक दाल्भ्य देखिये)। कई अभ्यासकों के अनुसार, जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में निर्दिष्ट 'बक दाल्भ्य' एवं छांदोग्य उपनिषद एवं काठकसंहिता में निर्दिष्ट 'वक दाल्भ्य' दो अलग व्यक्ति थे। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

वकनख-- विश्वामित्र के बकनख नामक पुत्र का नामान्तर (म. अनु. ४.५८)।

वक्र--करुष राजकुमार वक्रदंत (दंतवक्र) का नामांतर। यह द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १८.२४*)।

वक्रदन्त--करुष राजकुमार दंतवक्र का नामान्तर (दंतवक्र देखिये)।

वक्राक्ष--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

वक्षेयु--(सो. पूरु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार रौद्राश्व राजा का पुत्र था।

वक्षोग्रीव--विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५३)।

वंग--(सो. अनु.) वंश देश का एक राजा, जो बलि आनव राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसीके ही कारण इसके देश को 'वंग' नाम प्राप्त हुआ (बलि आनव देखिये)।

२. एक लोकसमूह, जिसका निर्देश मगध एवं मत्स्य लोगों के साथ अथर्ववेद परिशिष्ट में प्राप्त है (अ. वे. परि. १.७.७)। वंग एवं मगध लोगों का संयुक्त निर्देश ऐतरेय आरण्यक में भी प्राप्त है (ऐ. आ. २.१.१)। आधुनिक बंगाल देश में स्थित लोगों के लिए 'वंग' शब्द का निर्देश सर्वप्रथम बौधायन धर्मसूत्र में प्राप्त है (बौ. ध. १.१.१४)।

पूर्व भारत के एक लोकसमूह के नाते वंग का निर्देश महाभारत में प्राप्त हैं। महाभारतकाल में इस देश में म्लेंच्छ लोग रहते थे, जिन्हें राजसूययज्ञ के समय भीमसेन ने, एवं अश्वमेधयज्ञ के समय अर्जुन ने जीता था (म. स. २७.२१; आश्व. ८३.२९)। परशुराम ने इस देश के क्षत्रियों का संहार किया था।

वंगिरी--(किलकिला. भविष्य.) एक राजा, जिसका निर्देश भागवत में प्राप्त है।

वंगृद--एक दानव, जो अतिथिग्व (दिवोदास) राजा का शत्रु था। इंद्र ने अतिथिग्व के संरक्षण के लिए इसका शिरच्छेद किया था (ऋ. १.५३.८)।

वचक्नु--एक ऋषि, जो गार्गी वाचक्नवी नामक विदुषी का पिता था।

वज्र--विश्वामित्र के वज्रनाभ नामक पुत्र का नामान्तर।

२. श्रीकृष्ण के पौत्र अनिरुद्ध का पुत्र, जो वज्र यादव नाम से सुविख्यात था। इसकी माता का नाम रोचना था।

मौसल युद्ध में यादवों का संहार होने पर, अर्जुन इसे इंद्रप्रस्थ ले गया, एवं उसने इसे यादवी युद्ध से बचे हुए यादवों का राजा बनाया। इसके पुत्र का नाम प्रतिबाहु था (म. मौ. ८.७०; भा. १.१५.३९)। महाप्रस्थान के समय, युधिष्ठिर ने सुभद्रा से इसकी रक्षा के लिए कहा था (म. महा. १.८-९)।

वज्रकाय--लंका का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

वज्रज्वाला--कुंभकर्ण की पत्नी, जो विरोचन दैत्य की प्रपौत्री थी (वा. रा. उ. १२.२४)।

वज्रदंष्ट्र--त्रिपुरासुर का सेनापति। इसने पाताललोक जीत लिया, जिस कारण त्रिपुर ने गाँव, वस्त्र आदि दे कर इसका सन्मान किया (गणेश. १.४)।

२. रावणपक्ष का एक राक्षस, जो अंधक के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ९.३; ५३-५४)।

वज्रदत्त--प्राग्ज्योतिषपुर का एक राजा, जो भगदत्त राजा का पुत्र था। इसे यज्ञदत्त नामान्तर भी प्राप्त था।

पाण्डवों के द्वारा छोड़ा गया अश्वमेधीय अश्व इसने पकड़ लिया, एवं तीन दिनों तक अर्जुन के साथ अत्यंत शूरता से लड़ता रहा। अंत में अर्जुन ने इसका पराजय किया (म. आश्व. ७४.७५)।

वज्रनाभ--(सू. इ.) अयोध्या देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार स्थल का, विष्णु के अनुसार उक्थ का, एवं वायु के अनुसार औक राजा का पुत्र था।

२. एक राक्षस, जो निकुंभ राक्षस का भाई, एवं वज्रपुर नगरी का राजा था। कृष्णपुत्र प्रद्युम्न ने इसका वध किया, एवं नाटक का खेल ले कर वह इसके नगरी में पहुँच गया। वहाँ उसने इसकी प्रभावती नामक कन्या से बलात्कार किया। इस कारण, निकुंभ ने द्वारका नगरी पर हमला किया, जहाँ हुए युद्ध में कृष्ण ने निकुंभ का वध किया (ह. वं. २.९०)।

३. एक दुष्ट राक्षस, जो ब्रह्मदेव के हाथ में स्थित कमल के प्रहार के द्वारा मारा गया।

४. मथुरा नगरी का एक राजा, जो परीक्षित राजा का मित्र था। शांडिल्य ऋषि की आज्ञा के अनुसार, उद्धव ने इसे भागवत महात्म्य सुनाया था (स्कंद. २.६.१-६)। इसे वज्र नामान्तर भी प्राप्त था।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५८)।

वज्रबाहु—रामसेना का एक वानर, जिसका कुंभकर्ण ने भक्षण किया (म. व. २७१.४)।

वज्रमित्र—(शुंग. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं ब्रह्मांड के अनुसार घोष का, विष्णु के अनुसार घोषवसु का, एवं मत्स्य के अनुसार पुलिंद राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'विक्रमित्र' कहा गया है।

वज्रमुष्टि--एक राक्षस, जो मैंद वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. ४३.२८)।

वज्रविष्कंभ--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१०)।

वज्रवेग—एक राक्षस, जो दूषण का छोटा भाई, एवं कुंभकर्ण का अनुगामी था। इसके भाई का नाम प्रमाथी था। हनुमत् के द्वारा यह मारा गया (म. व. २७१.१९-२४)।

वज्रशीर्ष—भृगु प्रजापति के सात पुत्रों में से एक, जिसे निम्नलिखित छः भाई थे—च्यवन, शुचि, और्व, शुक्र, वरेण्य एवं सवन (म. अनु. ८५.१२७-१२९)।

वज्राक्ष--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

वज्रांग—एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था। एक बार इसकी माता दिति ने इसे इंद्र पर आक्रमण करने के लिए कहा। किंतु ब्रह्मा के विरोध के कारण, इस आक्रमण में यह यशस्विता प्राप्त न कर सका। फिर इसकी पत्नी वरांगी ने इससे इंद्र का पराजय करनेवाला महापराक्रमी पुत्र माँग लिया, जो तारकासुर नाम से प्रसिद्ध हुआ (मत्स्य. १४५-१४६; पद्म. सृ. ४२; शिव. रुद्र. पार्वती. १४)।

वज्रांगद—पांड्य देश का एक राजा, जिसे 'अरुणाचलेश्वर' की पूजा करने के कारण सद्गति प्राप्त हुई (स्कंद. १.३.२-२४)। पाठभेद—'रत्नांगद'।

वज्रिन्--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. १३)।

वंचुलि--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वंजुल--एक वैश्य, जिसका कालिंजर पर्वत पर स्थित 'वाराणसी तीर्थ' में सोमवती अमावस्या के दिन स्नान करने के कारण उद्धार हुआ (पद्म. भू. ९१-९२)।

वंजुलि—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वट—स्कंद का एक पार्षद, जो अंश के द्वारा दियें गये पाँच पार्षदों में से एक था। अन्य चार पार्षदों के नाम परिघ, भीम, दहति एवं दहन थे (म. श. ४४.३१)।

वटिका—व्यास की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम शुक था (व्यास देखिये)।

वडवा—सूर्य की पत्नी संज्ञा का नामांतर, जो उसे अश्विनी (वडवा) का रूप धारण करने के कारण प्राप्त हुआ था। सूर्य ने अश्व का रूप धारण कर इससे संभोग किया, जिससे इसे अश्विनीकुमार नामक जुड़वे पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ६.६.४०)।

२. एक अग्नि, जो समुद्र के भीतर वास्तव्य करती है। और्व नामक अग्नि जन्म लेते ही समस्त पृथ्वी को जलाने लगी। तब उसके पितरों ने आ कर उसे समझाया, एवं उसे अपनी क्रोधाग्नि को समुद्र मे डाल देने के लिए कहा। पितरों के आदेश से, और्व ने अपने क्रोधाग्नि को समुद्र में डाल दिया।

वहाँ आज भी अश्व की मुख जैसी आकृति बना कर, यह समुद्र का जल पीती रहती है (म. आ. १७१.२१-२२)। वायु के अनुसार, यह एवं और्व अग्नि दोनों एक ही है (वायु. १.४७; और्व २. देखिये)।

वडवा प्रातिथेयी—एक ब्रह्मवादिनी, जो ब्रह्मचर्यव्रत से रहती थी। कई अभ्यासकों के अनुसार, लोपामुद्रा की बहन गभस्तिनी एवं यह दोनों एक ही हैं (गभस्तिनी देखिये)। ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.३.)।

वत्स--(सो. पूरु.) एक राजा, जो सेनाजित राजा का पुत्र था।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चक्षु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम नड्वला था।

३. (सो. क्षत्र.) काशी देश का एक राजा, जो वायु के अनुसार प्रतर्दन राजा का पुत्र था। परशुराम के भय से, यह गोशाला में गायों के बछड़ो (वत्सों) के बीच पालपोस कर बड़ा हुआ, जिस कारण इसे 'वत्स' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ४९.७१)।

४. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार गुरुक्षेप राजा का पुत्र था। इसे 'वत्सद्रोह', 'वत्सवृद्ध', एवं 'वत्सव्यूह' आदि नामांतर प्राप्त थे।

५. कोसल देश का एक राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.२०)।

६. सोम नामक शिवावतार का एक शिष्य।

७. कंस के पक्ष का एक दैत्य, जो 'गोवत्स' का रूप धारण कर कृष्ण का नाश करने गोकुल में उपस्थित हुआ था। इसे 'वत्सक' नामांतर भी प्राप्त था (भा. १०. ४३.३०)। कपित्थ के वृक्ष पर पटक कर, कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.११.४२)।

८. एक वैश्य, जो मंत्रविद्या में प्रवीण था (ब्रह्मांड, २.३२.१२१)।

९. एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था (व्यास देखिये)।

१०. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से देवमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद- 'वास्य'।

११. पूर्व भारत में रहनेवाला एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ५२.२)। इस देश के योद्धा धृष्टद्युम्न के द्वारा निर्मित क्रौंचव्यूह के वाम पक्ष में खड़े थे (म. भी. ४६.५१)। काशिराज की कन्या अंबा इन्हीं लोगों के देश में तपश्चर्या करने आयी थी (म. उ. १८७.२३)।

वत्स आग्नेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १८७)। यह एवं अन्य एक सूक्तद्रष्टा कुमार आग्नेय, एक ही वंश में उत्पन्न हुए होंगे।

वत्स काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, एवं 'चरकाध्वर्यु सूत्र का रचयिता (ऋ. ८.६.११)। कण्व ऋषि का पुत्र होने से, इसे 'काण्व' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. ८.८.८)।

तिरिंदर पारशव्य राजा से इसे विपुल धन प्राप्त हुआ था (ऋ. ८.६.४६; सां. श्रौ. १६.११.२०)। मेधातिथि नामक इसके प्रतिद्वंद्वी ने इसे शूद्रपुत्र कहा, किंतु अग्निदिव्य कर इसने अपनी जातिविषयक शुद्धता प्रस्थापित की (पं. ब्रा. ८.६.१)। हेमाद्रि के 'परिशेष खंड' में इसका निर्देश प्राप्त है।

वत्सक--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार श्रावस्त राजा का पुत्र, एवं बृहदश्व राजा का भाई था। पुराणों में इसे 'वंशक' कहा गया है।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादववंशीय राजा, जो वसुदेव का भाई, एवं शूर राजा के दस पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम मारिषा था। मिश्रकेशी नामक अप्सरा से इसे वृक आदि पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ९.२४. २९-४३)।

३. वत्स नाम कंसपक्षीय राक्षस का नामांतर (वत्स. ७. देखिये)।

वत्सद्रोह--(सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय वत्स राजा का नामान्तर (वत्स. ४. देखिये)। मत्स्य में इसे उरुक्षय राजा का पुत्र कहा गया है।

वत्सनपात् बाभ्रव्य--एक आचार्य, जो पथिन् सौभर नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. १.५.२२; ४.५.२८. माध्यं.)। बभ्रुका वंशज होने से इसे 'बाभ्रव्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वत्सनाभ--एक महर्षि। एक बार यह वर्षा में फँस गया, जब इंद्र ने भैंस का रूप धारण कर इसकी रक्षा की। आगे चल कर, इसने कृतघ्नता से उसी भैंस को भक्षण करने चाहा, किंतु योग्य समय पर इसे अपने विचारों से लज्जा उत्पन्न हुई, एवं यह प्राणत्याग करने निकला (म. अनु. १२)। किंतु धर्म ऋषि ने इसे रोंक लिया, एवं मनःशांति के लिए 'शंखतीर्थ' में इसे स्नान करने के लिए कहा (स्कंद. ३.१.२५)।

वत्सपाल--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार उरुक्षेप राजा का पुत्र था।

वत्सप्रि भालंदन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो 'वात्सप्र सामन्' नामक साम का द्रष्टा था (ऋ. ९.६८; १० ४५-४६; तै. सं. ५.२.१.६; क. सं. १९.१२; मै. सं. ३. २.२; पं. ब्रा. १२.११.२५; श. ब्रा. ६.४.४.१)। प्रजा के दीर्घायुष्य के लिए, इस साम का पठन किया जाता है।

२. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार भलंदन राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'वत्सप्रीति' कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम प्रांशु बताया गया है। इसने कुजुंभ राक्षस का वध कर, विदूरथ राजा की कन्या

सौनंदा अथवा मुदावती से विवाह किया था (मार्क. ११३)।

वत्सप्रीति--दिष्टवंशीय वत्सप्रि राजा का नामांतर (वत्सप्रि भालंदन २. देखिये)।

वत्समित्र गोभिल--एक आचार्य, जो गौल्गुल्वी-पुत्र गोभिल नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम मूलमित्र गोभिल था (वं. ब्रा. ३)।

वत्सर--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो ध्रुव राजा के दो पुत्रों में से कनिष्ठ था। इसकी माता का नाम भ्रमी था। इसका ज्येष्ठ भाई उत्कल प्रारंभ से ही विरक्त था, जिस कारण कनिष्ठ होते हुए भी यह राजगद्दी पर बैठा।

इसकी पत्नी का नाम स्वर्वीथी था, जिससे इसे निम्नलिखित छः पुत्र उत्पन्न हुए थे:--पुष्पार्ण, तिग्मकेतु, ईश, ऊर्ज, वसु एवं जय (भा. ४.१०.१; १३.११)।

२. कश्यपकुलोत्पन्न एक प्रवर।

वत्सराज--कोसल नरेश वत्स राजा का नामान्तर (वत्स ५. देखिये)।

वत्सल--वसन नामक स्कंद के एक सैनिक का नामान्तर।

वत्सला--अभिमन्यु की पत्नी, जिसकी जीवनकथा मराठी 'वत्सलाहरण' नामक लोकप्रिय काव्य में प्राप्त है।

२. श्रीकृष्ण की एक गोपी (पद्म. भू. ७७)।

वत्सवालक--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

वत्सवृद्ध--(सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय वत्स राजा का नामान्तर (वत्स. ४. देखिये)। भागवत में इसे उरुक्रिय राजा का पुत्र कहा गया है।

वत्सव्यूह--(सू. इ. भविष्य.) इक्ष्वाकुवंशीय वत्स राजा का नामान्तर (वत्स ४. देखिये)। वायु में इसे क्षय राजा का पुत्र कहा गया है।

वत्सार--कश्यप ऋषि के अवत्सार काश्यप नामक पुत्र का नामान्तर (अवत्सार काश्यप देखिये)। काश्यप कुलोत्पन्न एक मंत्रकार के नाते इसका निर्देश प्राप्त है, किन्तु ऋग्वेद में इसके नाम पर एक भी मंत्र उपलब्ध नहीं है। इसे निध्रुव एवं रेभ्य नामक दो पुत्र थे।

वत्स्य--वात्स्य नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर (वात्स्य ७. देखिये)।

वदान्य--एक ऋषि, जिसकी कन्या का नाम सुप्रभा था। अष्टावक्र राजा ने सुप्रभा से विवाह करने की इच्छा प्रकट की, जिस पर इसने उसे उत्तरदिशा की यात्रा करने के लिए कहा। वह यात्रा पूरी होने पर इसने सुप्रभा का विवाह अष्टावक्र से कराया (म. अनु. ५०.११; अष्टावक्र देखिये)।

वध--एक राक्षस, जो यातुधान नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्रों के नाम विघ्न एवं शमन थे (ब्रह्मांड. ३.७.९४)।

वध्रिमती--पुरंधि नामक स्त्री का नामान्तर (ऋ. ११६.१२)। अश्वियों की कृपा से इसके पति को पुनः पुरुषत्व प्राप्त हुआ था। आगे चल कर इसे हिरण्यहस्त नामक पुत्र भी उत्पन्न हुआ था (ऋ.१. ११६.१३; ११७. २४; ६.६२.७; १०.३९.७; ६५.१२)।

लो. तिलक के द्वारा वध्रिमती के इस कथा का अन्वयार्थ अन्य प्रकार से लगाया गया है, जिसमें उन्होंने आर्यों का मूलस्थान उत्तरध्रुव में होने के अपने सिद्धान्त का संकेत पाया है (आर्यों का मूलस्थान, पृ. २२८)।

वध्र्यश्व--(सो. नील.) एक राजा, जो मुद्गल राजा का पुत्र था।

ऋग्वेद में अग्निपूजा के समर्थक राजा के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है, एवं सरस्वती के द्वारा इसे दिवोदास नामक पुत्र प्रदान किये जाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६. ३१.१; १०.६९.१; अ. वे. २.२९.४)। इसका पुत्र दिवोदास भी इसीके तरह श्रेष्ठ यज्ञकर्ता था। वध्र्यश्व का शब्दशः अर्थ 'बधिया अश्वोंवाला' होता है। कई अभ्यासकों के अनुसार, इसे सुमित्र नामान्तर भी प्राप्त था।

पुराणों में इसके 'बध्यश्व,' 'वध्रश्व,' 'वध्याश्व' एवं 'विंध्याश्व' नामान्तर प्राप्त हैं। मत्स्य में इसे इंद्रसेन राजा का, एवं वायु में 'ब्रह्मिष्ठ' राजा का पुत्र कहा गया है। मत्स्य में इसका वंशक्रम ब्रह्मिष्ठ-इंद्रसेन-विन्ध्याश्व-दिवोदास इस क्रम से दिया गया है। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह ब्रह्मिष्ठ एवं इंद्रसेना का पुत्र था। किन्तु मत्स्य में 'इंद्रसेना' के बदले 'इंद्रसेन' पाठ का स्वीकार कर, इसे इंद्रसेन राजा का पुत्र कहा गया है, जो गलत प्रतीत होता है।

इसकी पत्नी का नाम मेनका था, जिससे इसे दिवोदास एवं अहल्या नामक संतान उत्पन्न हुई (मत्स्य. ५०.७; वायु. ९९.१९५; ह. वं. १.३२.७०)।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वध्र्यश्व अनूप--एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १३.३.१७)। अनूप का वंशज होने के कारण, इसे 'अनूप' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

वन—(सो. क्ष्नु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार उशीनर राजा का पुत्र था। इसे 'नववत्' एवं 'नर' नामान्तर प्राप्त थे।

वनजात—(सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार हृदीक राजा का पुत्र था।

वनस्पति--घृतपृष्ठ राजा के सात पुत्रों में से एक (भा. ५.२०.२१)।

वनायु--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के दस प्रधान पुत्रों में से एक था।

२. पुरूरवस् राजा को उर्वशी से उत्पन्न छः पुत्रों में से एक पुत्र। अन्य पाँच पुत्रों के नाम निम्नप्रकार थेः– आयु, धीमत्, अमावसु, दृढायु एवं शतायु (म. आ. ७०.२२)।

वनार्ह--एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार हृदीक राजा का पुत्र था।

वनेन--प्रसूत देवों में से एक।

वनेयु--(सो. पुरूरवस्) एक राजा, जो भागवत, वायु एवं विष्णु के अनुसार रौद्राश्व राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम मिश्रकेशी था। मत्स्य में इसे विनेयु कहा गया है।

इसके निम्नलिखित नौ भाई थेः– ऋचेयु, कक्षेयु कृकणेयु, स्थण्डिलेयु, वनेयु, तेजेयु, स्थलेयु, धर्मेयु एवं संतनेयु (म. आ. ८९.९-१०)।

वंदन—एक ऋषि, जिस पर अश्वियों की कृपा थी। यह जब कुएँ में गिरा था, तब अश्वियों ने इसे बाहर निकाला (ऋ. १.११६.११; ११७.५; १०.३९.८)। पुराना रथ जिस प्रकार नया बनाया जाता है, उसी प्रकार अश्वियों ने इसे तरुण बनाया (ऋ.१. ११९.७); इसकी आयु बढाई; एवं इसका उद्धार किया (रु. १.११६)। सायण के अनुसार, कुएँ में गिरने के कारण इसे अपने पत्नी का विरह हुआ था, जिसे भी अश्वियों ने दूर किया।

वंदिन्--वंदिन् नामक पंडित का नामान्तर (वंदिन् देखिये)।

वपु—एक अप्सरा, जिसने दुर्वासस् के तपोभंग का असफल प्रयत्न किया था। दुर्वासस् ने इसे शाप दिया, जिस कारण अगले जन्म में यह कंधर एवं मेनका की तार्क्षी नामक कन्या बन गई (मार्क. १.४९-५६; २.४१)।

वपुष्टमा—काशिराज सुवर्णवर्मन् की कन्या, जो जनमेजय पारिक्षित राजा की पत्नी थी। इसके शतानीक एवं शंकुकर्ण नामक दो पुत्र थे (म. आ. ४०.८; ९०. ९४)।

वपुष्मत्--स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. एक राजा, जो विदर्भराज संक्रंदन राजा का पुत्र था। सुविख्यात दिष्टवंशीय राजा दम के साथ इसका शत्रुत्व था। दशार्ण देश के राजा चारुवर्मन् की कन्या सुमना का दम ने हरण किया, जिस कारण दम से इसका शत्रुत्व बढता ही गया।

कालोपरान्त दम से बदला लेने के लिए, इसने उसके पिता नरिष्यन्त का वध किया। पश्चात् दम की माता इंद्रसेना ने अपने पति नरिष्यन्त के मृत्यु की बात उसे कह दी, एवं स्वयं पति के साथ सती हो गई।

माँ एवं पिता की मृत्यु की बात सुन कर दम अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इस पर आक्रमण कर के इसका वध किया। पश्चात् उसने इसके रक्त से पितृतर्पण किया, एवं इसके ही मांस से पिंडदान कर, राक्षसकुलोत्पन्न ब्राह्मणों को खाने के लिए दिया (मार्क. १३३; सुमना देखिये)।

वपुष्मती--सिंधुराज की कन्या, जो मरुत्त राजा की पत्नी थी (मार्क. १२०.४७)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका।

वप्रिन्--द्वापरयुगों में उत्पन्न अठ्ठाईस व्यासों में से एक (व्यास देखिये)।

वमक--तामस मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

वम्र--सोमयज्ञ करनेवाला एक ऋषि, जिस पर अश्वियों की कृपा थी (ऋ. १.५१.९; ११२.१५; १०.९९.५)।

वम्र वैखानस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९९. १२)। ऋग्वेद के इसी सूक्त में अन्यत्र इसका निर्देश वम्र एवं वम्रक नाम से किया है, एवं इसे इंद्र की उपासना करनेवाला धनाढ्य ऋषि कहा गया है (ऋ. १०.९९. ५-१२)।

वम्रक—वम्र वैखानस नामक आचार्य का नामान्तर।

वम्री—एक व्यक्ति (ऋ. ४.११.९)। वम्र का शब्दशः अर्थ 'चींटी' होता है। पिशेल के अनुसार, यह एक ऐसा व्यक्ति था कि, जो अविवाहित माता से उत्पन्न होने के कारण वन में छोड़ा गया था। वहाँ यह चींटियों के द्वारा भक्षण किये जानेवाला था, जितने में इसकी मुक्तता की गई।

वय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वयस्य--पयस्य नामक अंगिरस्पुत्र का नामान्तर।

वयुन--एक ऋषि, जो कृशाश्व ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम धिषणा था (भा. ६.६.२०)।

वयुना--एक पितृकन्या, जो भागवत के अनुसार पितर एवं स्वधा की कन्या थी।

वय्य--एक राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद में प्रायः सर्वत्र तुर्वीति राजा के साथ प्राप्त है (ऋ. १.५४.६; २.१३.१२; ४.१९.६)। अश्वियों ने इसका रक्षण किया था (ऋ. १.११२.६)।

सायण के अनुसार, तुर्वीति राजा का पैतृक नाम वय्य था, किन्तु रौथ इसे तुर्वीति राजा का एक मित्र मानते है।

वर--पितरों में से एक।

वरंवरा--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी।

वरतंतु--एक व्याकरणाचार्य, जिसका निर्देश एक शाखाप्रवर्तक आचार्य के नाते पाणिनि के अष्टाध्यायी में प्राप्त है (पाणिनि देखिये)।

वरत्रिन--शुक्र के चार पुत्रों में से एक। इसके पृथुरश्मि, बृहदांगिरस एवं रजत नामक तीन पुत्र थे, जो यज्ञकर्मविरोधी होने के कारण इंद्र के द्वारा मारे गये। कालोपरान्त उनके कटे हुए सर से खजूर के पेड़ निर्माण हुए (ब्रह्मांड. ३१.८३-८४)।

पंचविंश ब्राह्मण में पृथुरश्मि के संबंध में विभिन्न कथा दीं गयीं हैं, जहाँ उसे यज्ञविरोधी कहते हुए भी, वह इंद्र के द्वारा बचाया जाने का निर्देश प्राप्त है (पृथुरश्मि देखिये)।

वरद--पितरों में से एक।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. स ४४. ५९)।

वरप्र--महौजस वंश का एक कुलांगार राजा, जिसने दुर्व्यवहार के कारण अपने ज्ञातिबांधवों का एवं स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२.१५)। पाठभेद-'वप्रु'।

वररुचि--एक सुविख्यात प्राकृत व्याकरणकार, जिसके द्वारा रचित 'प्राकृतप्रकाश' नामक ग्रंथ प्राकृत व्याकरण का आद्य ग्रंथ माना जाता है।

यह पाणिनीय व्याकरण के सुविख्यात वार्तिककार कात्यायन वररुचि से भिन्न, एवं उससे काफ़ी उत्तरकालीन था। विक्रम संवत् के प्रवर्तक सम्राट् विक्रमादित्य के विद्वत्सभा का यह एक सभासद, एवं उसका धर्माधिकारी था (वाररुच निरुक्त सम्मुचय पृ. ४२)।

वार्तिककार वररुचि के समान इसका गोत्र भी कात्यायन ही था, एवं इसे श्रुतिधर नामान्तर भी प्राप्त था (सदुक्तिकरणामृत पृ. २९७)। इसने पाणिनि के अष्टाध्यायी पर एक वृत्ति लिखी थी, जिसका निर्देश-हस्तलेखों के सुचि में प्राप्त है (C. C.)।

कातंत्र व्याकरण के वृत्तिकार दुर्गसिंह के अनुसार, उस व्याकरण का कृदंत नामक उत्तरार्ध इसके द्वारा विरचित था।

वररुचि के द्वारा यास्क के निरुक्त पर 'निरुक्त समुच्चय' नामक टीका का निर्माण किया गया था। स्कंद-स्वामिन् के द्वारा विरचित निरुक्त टीका में 'वाररुच निरुक्त समुच्चय' की पर्याप्त सहाय्यता ली गयी हैं, एवं इसके अनेकानेक उद्धरण भी लिये गयें हैं।

प्राकृतप्रकाश--वररुचि का 'प्राकृतप्रकाश' उपलब्ध प्राकृत व्याकरणों में सब से अधिक प्राचीन माना जाता है। इस ग्रंथ में बारह परिच्छेद हैं, जिनमें से पहले नौ परिच्छेदों में 'महाराष्ट्री' प्राकृत के लक्षणों का वर्णन है। दसवें परिच्छेद में 'पैशाची', एवं ग्यारहवें परिच्छेद में 'मागधी' के लक्षण बतायें गये हैं। बारहवें परिच्छेद में 'शौरसेनी' का विवेचन प्राप्त है।

इस ग्रंथ में से आखिरी तीन परिच्छेद उत्तरकालीन माने जातें हैं, जो स्वयं वररुचि के द्वारा नहीं, बल्कि भामह अथवा अन्य कोई टीकाकार के द्वारा लिखे गये होंगे।

इस ग्रंथ की प्राचीनतम टीका कात्यायन द्वारा विरचित 'प्राकृतमंजरी' है, जिसका रचनाकाल लगभग ई. स. ६ वी-७ वीं शताब्दी माना जाता है। इस ग्रंथ की अन्य सुविख्यात टीकाएँ निम्न है:--भामहकृत 'मनोरमा'; वसंतराजकृत 'प्राकृत संजीवनी' तथा सदानंद कृत 'सदानंदा'।

प्राकृत व्याकरण का सर्वमान्य संस्करण कॉवेल द्वारा संपादित, एवं ई. स. १८६८ में लंदन में प्रकाशित किया गया है, जिसमें भामह की टीका के साथ अंग्रेजी अनुवाद एवं टिप्पणियाँ भी प्राप्त है:--

ग्रंथ--वररुचि क नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है--१. तैत्तिरीयप्रातिशाख्यव्याख्या (त्रिभाष्यरत्न. १.१८.२.१४); २. निरुक्तसमुच्चय; ३. लिंगविशेषविधि (लिंगानुशासन); ४. प्रयोगविधि; ५. कातंत्रउत्तरार्ध; ६. प्राकृतप्रकाश; ७. उपसर्गसूत्र; ८. पत्रकौमुदी; ९. विद्यासुंदर काव्य; १०. यंत्रकौमुदी।

२. एक सुविख्यात व्याकरणकार, जो पाणिनीय व्याकरण के वार्तिकों का कर्ता माना जाता है। इसका संपूर्ण नाम कात्यायन वररुचि था (कात्यायन देखिये)।

३. एक सुविख्यात नाट्यशास्त्रप्रणेता (मत्स्य. १०. २५)।

वरशिख—एक ज्ञातिप्रमुख, जिसके ज्ञाति का अभ्यावर्तिन् चायमान एवं वृचिवत् राजाओं ने पराजय किया था। (ऋ. ६.२७.४–५)। झिमर के अनुसार, वरशिख तुर्वश एवं रुचीवन्त लोगों का नेता था (अल्टिन्डिशे लेवेन. १३३)। किन्तु यह विधान केवल अनुमानात्मक ही प्रतीत होता है। ऋग्वेद के इसी सूक्त में अभ्यावर्तिन् चायमान के भय से इसका पुत्र मृत होने का निर्देश प्राप्त है।

बृहद्देवता में वारशिख लोगों का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः इसके ही वंशज होंगे (बृहद्दे. ५.१२४)।

वरस्त्री—बृहस्पति की एक बहन, जो प्रभास नामक वसु की पत्नी थी (म. आ. ६०.२६; वायु. ८४.१५)। यह ब्रह्मवादिनी थी, एवं योगसामर्थ्य के कारण समस्त सृष्टि में संचार करती थी।

वरा—हेमधर्म राजा की कन्या, जिसने अविक्षित् राजा का स्वयंवर में वरण किया था (मार्कं. ११९. १६)।

वरांग—(पौर. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार धर्म राजा का पुत्र था।

वरांगना—मथुरा के उग्रसेन राजा की कन्या।

वरांगिन्—दिग्विजय राजा का एक पुत्र (ब्रह्मांड. २. ३६.१०१)।

वरांगी—वज्रांग नामक असुर की पत्नी (मत्स्य. १४५)। ब्रह्मा ने इसे वज्रांग दैत्य की पत्नी बनने के लिए ही उत्पन्न किया था (पद्म. सृ. ४२)। वज्रांग से इसे तारकासुर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (वज्रांग देखिये)। इसे वरांगा नामान्तर भी प्राप्त था।

२. सोमवंशीय संयाति राजा की पत्नी, जो दृषद्वत् राजा की कन्या थी। इसके पुत्र का नाम अहंयाति था (म. आ. ९०.१४)।

वराह—विष्णु का तृतीय अवतार, जो हिरण्याक्ष नामक असुर के वध के लिए उत्पन्न हुआ था। इसे 'यज्ञवराह' नामांतर भी प्राप्त था (म. स. परि. १ क्र. २१ पंक्ति. १४०)।

वैदिक साहित्य में—वराह अवतार का अस्पष्ट निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है। किन्तु वहाँ कौनसी भी जगह वराह-अवतार को विष्णु का अवतार नहीं बताया गया है।

ऋग्वेद में इंद्र के द्वारा वराह का वध होने की कथा दी गई है (ऋ. १०.९९.६)। प्रजापति के द्वारा वराह, का रूप लेने की कथा तैत्तिरीय-संहिता में प्राप्त है। पृथ्वी के उत्पत्ति के पूर्वकाल में प्रजापति वायु का रूप धारण कर अंतरिक्ष में घूम रहा था। उस समय समुद्र के पानी में डूबी हुई पृथ्वी उसने सहजवश देखी। फिर प्रजापति ने वराह का रूप धारण कर पानी में प्रवेश किया, एवं पानी में डूबी हुई पृथ्वी को उपर उठाया। तत्पश्चात् उसने पृथ्वी को पोंछ कर स्वच्छ किया, एवं वहाँ देव, मनुष्य आदि का निर्माण किया (तै. सं. ७.१.५.१)।

तैत्तिरीय ब्राह्मण में यही कथा कुछ अलग ढँग से दी गई है, जिसके अनुसार ब्रह्मा के नाभिकमल के निचले भाग में स्थित कीचड़ प्रजापति ने वराह का रूप धारण कर क्षीरसागर से उपर लाया, एवं उसे ब्रह्मा के नाभिकमल के पत्तों पर फैला दिया। आगे चल कर उसी कीचड़ ने पृथ्वी का रूप धारण किया (तै. ब्रा. १.१.३)।

पुराणों में—इन ग्रंथों में निर्दिष्ट विष्णु के अवतार प्रायः 'वराहअवतार' से ही प्रारंभ होता हैं। हिराण्याक्ष नामक असुर पृथ्वी का हरण कर उसे पाताल में ले गया। उस समय विष्णु ने वराह का रूप धारण कर, अपने एक ही दाँत से पृथ्वी को उपर उठा कर समुद्र के बाहर लाया, एवं उसकी स्थापना शेष नाग के मस्तक पर की। तत्पश्चात् उसने हिराण्याक्ष का भी वध किया (म. व. परि. १. क्र. १६. पंक्ति. ५६–५८; क्र. २७. पंक्ति. ४७–५०; शां. २६०; मत्स्य. ४७.४७.२४७–२४८; भा. १.३.७; २.७.१; ३.१३.३१; लिंग. १.९४; वायु. ९७.७; ह. वं. १.४१; पद्म. उ. १६९; २३७)।

विष्णु का यह अवतार वाराह-कल्प के प्रारंभ में हुआ (वायु. २३.१००–१०९)। कई पुराणों में इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे चतुर्बाहु, चतुष्पाद, चतुर्नेत्र एवं चतुर्मुख कहा गया है। हिरण्याक्ष के वध के पश्चात् इसने यथाविधि श्राद्ध किया था (म. शां. ३३३. १२–१७)।

वराहस्थान—जिस स्थानपर इसने पृथ्वी का उद्धार किया, उस स्थान को 'वराहतीर्थ' कहते हैं (म. व. ८१.१५; पद्म. उ. १६९)। वराह पुराण के अनुसार, यह 'वराहक्षेत्र' अथवा 'कोकामुखक्षेत्र' बंगाल में त्रिवेणी नदी के तट पर नाथपूर ग्राम के पास स्थित है (वराह. १४०.)। गंगानदी के तट पर सोरोन ग्राम में वराह-लक्ष्मी का मंदीर है (वराह. १३७)।

वराह-अवतार का अन्वयार्थ--विष्णु के दस अवतारों में से मत्स्य, कूर्म एवं वराह ये 'दिव्य,' अर्थात मनुष्यजाति के उत्पत्ति के पूर्व के अवतार माने जाते हैं। विष्णु के मानुषी अवतार अर्धमनुष्याकृति नृसिंह से, एवं वामन अवतार से प्रारंभ होते है। इससे प्रतीत होता है कि, मत्स्य, वराह एवं कूर्म अवतार पृथ्वी के उस अवस्था में उत्पन्न हुए थे, जिस समय पृथ्वी पर कोई भी मनुष्य प्राणि का अस्तित्व नहीं था। प्राणिजाति की उत्क्रान्ति के दृष्टि से भी मत्स्य, कूर्म, वराह यह क्रम सुयोग्य प्रतीत होता है। क्यों कि, प्राणिशास्त्र के अनुसार सृष्टि में सर्वप्रथम जलचर प्राणि (मत्स्य) उत्पन्न हुए, एवं तत्पश्चात् क्रमशः जमीन पर घसीट कर चलनेवाले (कूर्म), स्तनोंवाले (वराह), एवं अन्त में मनुष्यजाति का निर्माण हुआ। इस प्रकार पुराणों में निर्दिष्ट विष्णु के दैवी अवतार प्राणिजाति के उत्क्रान्ति के क्रमशः विकसित होनेवाले रूप प्रतीत होते हैं।

प्राणिशास्त्र की दृष्टि से, प्राणीजाति के उत्पत्ति के पूर्व समस्त सृष्टि जलमय थी, जहाँ के कीचड़ में सर्वप्रथम प्राणिजाति की उत्पत्ति हुई। इस दृष्टि से देखा जाये तो, प्रजापति ने वराह का रूप धारण कर समुद्र का सारा कीचड़ पानी के बाहर लाया, एवं उसी कीचड़ से सर्वप्रथम पृथ्वी का, एवं तत्पश्चात् पृथ्वी के प्राणिसृष्टि का निर्माण किया, यह तैत्तिरीय ब्राह्मण में निर्दिष्ट कल्पना उत्क्रान्तिवाद की दृष्टि से सुयोग्य प्रतीत होती है।

वैदिक वाङ्मय में सर्वत्र ब्रह्मा को सृष्टि का निर्माण करनेवाला देवता माना गया है, जिसका स्थान ब्राह्मण एवं पौराणिक ग्रंथों में क्रमशः प्रजापति एवं विष्णु के द्वारा लिया गया है (ब्रह्मन्, विष्णु एवं प्रजापति देखिये)। यही कारण है कि, ब्राह्मण एवं पौराणिक ग्रंथों में वराह को क्रमशः प्रजापति एवं विष्णु का अवतार कहा गया है।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.१५)।

वराहक--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२. १८)।

वराहक--कुबेरसभा में उपस्थित एक यक्ष (म. स. १०.१६)।

वराहाश्व—एक दानव (म. शां. २२०.५२)।

वरिष्ठ—चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक (म. अनु. १८.२०)। इसने गृत्समद ऋषि को साम के अशुद्ध पाठन के कारण शाप दिया था (म. अनु. १८.२३-२५; गृत्समद १. देखिये)।

वरिन्—एक सनातन विश्वदेव (म. अनु. ९१. ३३)।

वरीताक्ष--एक असुर, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५६)। पाठभेद-'वीरताम्र'।

वरीयस्--(स्वा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुलह राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम गति था।

२. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

वरु--एक व्यक्तिनाम (ऋ. ८.२३.२८; २४.२८; २६.२)। इसका निर्देश प्रायः सर्वत्र सुषामन् के साथ प्राप्त है (सुषामन् देखिये)।

वरु आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ९६)।

वरुण--एक सर्वश्रेष्ठ वैदिक देवता, जो वैदिक साहित्य में आकाश का, एवं वैदिकोत्तर साहित्य में समुद्र का प्रतीक माना गया है।

वैदिक साहित्य में-- इंद्र के साथ वरुण भी एक महत्तम देवता माना गया है। नियमित रूप से प्रकाशित होनेवाले मित्र (सूर्य) देवता से संबंधित होने के कारण, वैदिक साहित्य में वरुण सृष्टि के नैतिक एवं भौतिक नियमों का सर्वोच्च प्रतिपालक माना गया है। वैदिकोत्तर साहित्य में, सृष्टि के सर्वोच्च देवता के रूप में प्रजापति का विकास होने पर, वरुण का श्रेष्ठत्व धीरे धीरे कम होता गया, एवं इसके भूतपूर्व अधिराज्य में से केवल जल पर ही इसका प्रभुत्व रह गया। इसी कारण उत्तर-कालीन साहित्य में यह केवल समुद्र की देवता बन गया।

स्वरूपवर्णन--वरुण का मुख (अनीकम्) अग्नि के समान तेजस्वी है, एवं सूर्य के सहस्र नेत्रों से यह मानव-जाति का अवलोकन करता है (ऋ. ७.३४; ८८)। इसी कारण इसे 'सूर्यनेत्री' कहा गया है (ऋ. ७.६६)। मित्र एवं त्वष्ट के भाँति यह सुंदर हाथोंवाला (सुपाणि) है, एवं एक स्वर्णद्रापि एवं द्युतिमत् वस्त्र यह परिधान करता है (ऋ. १०.२५)। इसका रथ सूर्य के समान् द्युतिमान् है, जिसमें स्तंभों के स्थान पर नथ्रियाँ लगी है (ऋ. १. १२२)।

शतपथ ब्राह्मण में इसे श्वेतवर्ण, गंजा एवं पीले नेत्रोंवाला वृद्ध पुरुष कहा गया है (श. ब्रा. १३.३.६)।

निवासस्थान--मित्र एवं वरुण का गृह स्वर्णनिर्मित है, एवं वह द्युलोक में स्थित है (ऋ. ५.६७)। इसके गृह में सहस्त्रद्वार है, जहाँ यह सहस्त्र स्तंभोवाले आसन (सदस) पर बैठता है (ऋ. ५.६८)। अपने इस भवन में (पस्त्यासु) बैठ कर यह समस्त सृष्टि को अवलोकन करता है (ऋ. १.२५)।

सर्वदर्शी सूर्य अपने गृह से उदित हो कर, मनुष्यों के कृत्यों की सूचना मित्र एवं वरुणों को देता है (ऋ. ७. ६०)।

गुप्तचर--वरुण के गुप्तचर (स्पशः) द्युलोक से उतर कर संसार में भ्रमण करते हैं, एवं सहस्त्र नेत्रों से युक्त होने के कारण, संपूर्ण संसार का निरीक्षण करते है (अ. वे. ४.१६)। संभवतः आकाश में स्थित तारों को ही वरुण के दूत कहा गया है। ऋग्वेद में सूर्य को ही वरुण का स्वर्ण पंखोंवाला दूत कहा गया है (ऋ. १०.१२३)। ईरान के 'मिथ्र' देवता के गुप्तचर भी 'स्पश्' नाम से प्रसिद्ध हैं, जो वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट मित्र एवं वरुणों के गुप्तचरों से काफ़ी मिलते जुलते हैं।

सृष्टि का राजा--अकेले एवं मित्र के साथ वरुण को देवों का, मनुष्यों का तथा समस्त संसार का राजा (सम्राट्) कहा गया है (ऋ. १.१३२; ५.८५)। ऋग्वेद में यह उपाधि प्रायः इंद्र को प्रदान की जाती है, किन्तु वह वरुण को इंद्र से भी अधिक बार प्रदान की गयी है। ऋग्वेद में अन्यत्र इसके सार्वभौम सत्ता (क्षत्र) का, एवं एक शासक के नाते (क्षत्रिय) इसका अनेक बार निर्देश प्राप्त है।

वरुण को प्रकृति के नियमों का महान् अधिपति कहा गया है। इसने द्युलोक एवं पृथ्वी की स्थापना की, एवं इसके विधान के कारण ही द्युलोक एवं पृथ्वी अलग अलग हैं (ऋ. ६.७०; ८.४२)। इसने ही अग्नि की जल में, सूर्य की आकाश में, एवं सोम की पर्वतों पर स्थापना की (ऋ. ५.८५)। वायुमंडळ में भ्रमण करनेवाला वायु वरुण का ही श्वास है (ऋ. ७.८७)।

पृथ्वी पर रात्रि एवं दिनों की स्थापना वरुण के द्वारा ही की गई है, एवं उनका नियमन भी यही करता है। रात्रि में दिखाई देनेवाले चंद्र एवं तारका इसके कारण ही प्रकाशित होते है (ऋ. १.२४)। इस प्रकार जहाँ मित्र केवल दिन के दिव्य प्रकाश का अधिपति है, वहाँ वरुण को रात एवं दिन दोनों के ही प्रकाश का अधिपति माना गया है।

असुर वरुण--ऋग्वेद में मित्र एवं वरुण को अनेक बार असुर (रहस्यमय व्यक्ति) कहा गया है (ऋ. १. ३५.७; २.७.१०; ७.६५.२; ८.४२.१)। इसे एवं मित्र को रहस्यमय एवं उदात्त (असुरा आर्या) भी कहा गया है (ऋ. ७.६५)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसके माया (गुह्य-शक्ति) का निर्देश प्राप्त है, एवं अपनी इस माया के द्वारा सूर्यरूपी परिमापनयंत्र के द्वारा यह पृथ्वी को नापता है, ऐसा भी कहा गया है (ऋ. ५.८५)। यहाँ 'असुर' एवं 'गुह्यशक्ति' ये दोनों शब्द गौरव के आशय में प्रयुक्त किये गये हैं।

वरुण-देवता का अन्वयार्थ--डॉ. रा. ना. दांडेकरजी के अनुसार, समस्त सृष्टि का संचालन करने की 'यात्वात्मक' अथवा आसुरी शक्ति वरुण के पास थी, जिस कारण इसे वैदिक साहित्य में असुर (असु नामक शक्ति से युक्त) कहा गया है। इसी आसुरी माया के कारण, वरुण निसर्ग, देव एवं मनुष्यों का सम्राट् बन गया था, एवं इसी अपूर्व शक्ति के कारण, वैदिक साहित्य में वरुण को यक्षिन् (जादुगर) कहा गया है (ऋ. ७. ८८. ६)।

वरुण की इस आसुरी शक्ति का उद्‌गम निम्नप्रकार बताया जा सकता है। वैदिक आर्यों ने जब देखा कि, इस सृष्टि का जीवनक्रम प्रचंड हो कर भी अत्यंत नियमबद्ध एवं व्यवस्थापूर्ण है, तब इस नियमबद्ध सृष्टि का संचालन करनेवाले देवता की कल्पना उनके मन में उत्स्फूर्त हो गयी।

आकाश में प्रतिदिन प्रकाशित हो कर अस्तंगत होनेवाले सूर्य चंद्र एवं तारका; अपने नियत मार्ग से बहनेवाली नदियाँ; एवं अपने नियत क्रम से बदलनेवाली ऋतु को देख कर, इस सारे विश्वचक्र का संचालन करनेवाली कोई न कोई अदृश्य देवता होनी ही चाहिए, ऐसी धारणा उनके मन में उत्पन्न हुई। इसी अदृश्य शक्ति अथवा देवता को वैदिक आर्यों के द्वारा वरुण कहा गया, एवं यह अपने दैवी शक्ति (माया) के द्वारा सृष्टि का संचालन करता है, यह कल्पना प्रसृत हो गई।

वैदिक साहित्य के अनुसार, वरुण अपने सृष्टिसंचालन का यह कार्य सृष्टि के सारे चर एवं अचर वस्तुमात्रों को बंधन में रख कर करता है। अपनी 'माया' के कारण वरुण ने अनेक पाश निर्माण किये हैं, जिनकी सहाय्यता से पृथ्वी के समस्त नैसर्गिक शक्तियों को यह

बाँध देता है, एवं इसी प्रकार सारे सृष्टि का नियमन करता है।

इतना ही नहीं, यह धैर्यशाली (धृतवत्) देवता अपने नियमनों के द्वारा वैश्विक धर्म (ऋत) का संरक्षण करने के लिए पापी लोगों का शासन भी करता है। इस तरह वैदिक साहित्य में वरुण देवता के दो रूप दिखाई देते हैं:- १. बंधक वरुण, जो सृष्टि के सारे नैसर्गिक शक्तियों को बाँध कर योजनाबद्ध बनाता है, २. शासक वरुण, जो अपने पाशों के द्वारा आज्ञा पालन न करनेवाले लोगों को शासन करता है।

आगे चल कर वैदिक आर्यों को अनेकानेक मानवी शत्रुओं के साथ सामना करना पड़ा, जिस कारण युद्ध में शत्रु पर विजय प्राप्त करनेवाले विजिगिषु एवं जेतृ-स्वरूपी नये देवता की आवश्यकता उन्हें प्राप्त होने लगी। इसीसे ही इंद्र नामक नये देवता का निर्माण वैदिक साहित्य में निर्माण हुआ, एवं आर्यों के द्वारा अपने नये युयुत्सु ध्येय-धारणा के अनुसार, उसे राष्ट्रीय देवता के रूप में स्वीकार किया गया। इंद्र के प्रतिष्ठापना के पश्चात्, वरुणदेवता की 'विश्वव्यापी सम्राट्' उपाधि धीरे धीरे विलीन हो गई, एवं सृष्टि के अनेक विभागोंमें से, केवल समुद्र के ही स्वामी के रूप में उसका महत्व मर्यादित किया गया।

जल का स्वामी—अथर्ववेद में वरुण एक सार्वभौम शासक नही, बल्कि केवल जल का नियंत्रक बताया गया है (अ. वे. ३.३)। ब्राह्मण ग्रंथों में भी मित्र एवं वरुण को वर्षा के देवता माने गयें हैं। जलोदर से पीडित व्यक्ति का निर्देश वैदिक साहित्य में 'वरुणगृहीत' नाम से किया गया है (तै. सं. २.१.२.१; श. ब्रा. ४.४. ५.११, ऐ. ब्रा. ७. १५)।

अथर्ववेद में निर्दिष्ट यह कल्पना ऋग्वेद में निर्दिष्ट वरुणविषयक कल्पना से सर्वथा भिन्न है। ऋग्वेद में वरुण को नदियों का अधिपति एवं जल का नियामक जरूर बताया गया है। किन्तु वहाँ इसे सर्वत्र सामान्य जल से नहीं, बल्कि अंतरिक्षीय जल से संबधित किया गया है। यह मेघमंडळ के जल में विचरण करता है, एवं वर्षा कराता है। ऋग्वेद का एक संपूर्ण सूक्त इसकी वर्षा करने की शक्ति को अर्पित किया गया है (ऋ. ५.६३)। किन्तु वहाँ सर्वत्र वरुण का निर्देश नैसर्गिक शक्तियों का संचालन करनेवाले देवता के रूप में है, जहाँ जल का महत्व प्रासंगिक है। वैदिकोत्तर साहित्य में वरुण का सारा सामर्थ्य लुप्त हो कर, यह केवल समुद्र के जल का अधिपति बन गया।

व्युत्पत्ति—वरुण शब्द संभवतः वर (ढकना) धातु से उत्पन्न हुआ है, एवं इस प्रकार इसका अर्थ 'परिवृत करनेवाला' माना जा सकता है। सायण के अनुसार, 'वरुण' की व्युत्पत्ति 'पापियों को बंधनो से परिवेष्टित करनेवाला' (ऋ. १.८९) अथवा 'पापियों को अंधकार की भाँति अच्छादित करनेवाला' (तै. सं. २.१.७) बतायी गयी है। किंतु डॉ. दांडेकरजी के अनुसार, वैदिक साहित्य में वरुण शब्द का अर्थ 'बन्धन में रखना' अभिप्रेत है, एवं इस शब्द का मूल किसी युरोभारतीय भाषा में ढूँढना चाहिए।

सेमेटिक साहित्य में—ओल्डेनबर्ग के अनुसार, वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट मित्र एवं वरुण भारोपीय देवता नहीं है, बल्कि इनका उद्गम ज्योतिषशास्त्र में प्रवीण सेमेटिक लोगों में हुआ था, जहाँसे वैदिक आर्यों ने इनका स्वीकार किया। इस प्रकार वरुण एवं मित्र क्रमशः चंद्र एवं सूर्य थे, तथा लघु आदित्यगण पाँच ग्रहों का प्रतिनिधित्व करते थे (ओल्डेनबर्ग, वैदिक रिलिजन २८५.९८)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे चौथा लोकपाल, आदिति का पुत्र, जल का स्वामी एवं जल में ही निवास करनेवाला देवता बताया गया है। कश्यप के द्वारा अदिति से उत्पन्न द्वादश आदित्यों में से यह एक था (म. आ. ५९.१५)। १५)। इसे पश्चिम दिशा का, जल का एवं नागलोक का का अधिपति कहा गया है (म. स. ९.७; उ. ८६. २०)।

इसने अन्य देवताओं के साथ 'विशाखयूप' में तपस्या की थी, जिस कारण वह स्थान पवित्र माना गया है (म. व. ८८.१२)। इसे देवताओं के द्वारा 'जलेश्वर-पद' पर अभिषेक किया गया था (म. श. ४६.११)।

सोम की कन्या भद्रा से इसका विवाह होनेवाला था। किंतु उसका विवाह सोम ने उचथ्य ऋषि से करा दिया। तत्पश्चात् क्रुद्ध हो कर इसने भद्रा का हरण किया, किन्तु उचथ्य के द्वारा सारा जल पिये जाने पर इसने उसकी पत्नी लौटा दी (म. अनु. १५४.१३-२८)।

वरप्रदान—अग्नि ने इसकी उपासना करने पर, इसने उसे दिव्य धनुष, अक्षय तरकस एवं कपिध्वज-रथ प्रदान किये थे (म. आ. २१६.१-२७)। इसने अर्जुन को पाश नामक अस्त्र प्रदान किया था (म. व. ४२. २७)। ऋचीक मुनि को इसने एक हज़ार श्यामकर्ण अश्व

प्रदान किये थे (म. व. ११५.१५-१६)। इसने स्कंद को यम एवं अतियम नामक दो पार्षद प्रदान किये थे (म. श. ४४.४१ पाठ.)। इसने अपने पुत्र श्रुतायुध को एक गदा प्रदान की थी, एवं उसके प्रयोग के नियम उसे बताये थे (म. द्रो. ६७.४९)। रावण के बंदिशाला से सीता की मुक्ति होने के पश्चात्, वह निष्कलंक होने के संबंध में इसने राम को विश्वास दिलाया था (म. व. २७५.२८)।

परिवार—इसकी ज्येष्ठ पत्नी का नाम देवी (ज्येष्ठा) था, जो शुक्राचार्य की कन्या थी। उससे इसे बल, अधर्म एवं पुष्कर नामक एक पुत्र, एवं सुरा नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी (म. आ. ६०.५१-५२; उ. ९६.१२)।

इसकी अन्य पत्नी का नाम वारुणी अर्थात् गौरी था, जिससे इसे गो नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. स. ९. ६.९७*; ९.१०८*))

इसकी तृतीय पत्नी का नाम शीततोया था, जिससे इसे श्रुतायुध नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (श्रुतायुध देखिये)।

इनके अतिरिक्त, जनक की सभा का सुविख्यात ऋषि बन्दिन् इसीका ही पुत्र था (म. व. १३४.२४)। रुद्र के यज्ञ से उत्पन्न हुए भृगु, अंगिरस् एवं कवि नामक तीन पुत्रों में से, इसने भृगु का पुत्र के रूप में स्वीकार किया था। इसके कारण यही पुत्र 'भृगु वारुणि' नाम से सुविख्यात हुआ (म. अनु. १३२.३६; भृगु वारुणि देखिये)। अगस्त्य एवं वसिष्ठ ऋषियों को भी मित्रावरुणों के पुत्र कहा गया है (विवस्वत देखिये)।

२. एक आदित्य, जो बारह आदित्यों में से नौवाँ आदित्य माना जाता है। यह श्रावण माह में प्रकाशित होता है (भवि. ब्राह्म. ७८)। भागवत के अनुसार, यह शुचि (आषाढ) माह में प्रकाशित होता है, एवं इसकी चौदह सौ किरणें रहती हैं (भा. १२.११)। इसकी पत्नी का नाम चर्षणी था, जिससे इसे भृगु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ६.१८.४)।

३. एक मरुत्, जो मरुतों के तीसरे गण में शामिल था।

४. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४१)।

वरुणमित्र गोभिल—एक आचार्य, जो मूलमित्र नामक आचार्य का शिष्य था (पं. ब्रा. ३)।

वरुत्रिन्—शुक्राचार्य के पुत्र वरत्रिन् का नामान्तर। वायु में इसके ब्रह्मिष्ठ एवं सुरयाजक पुत्रों के नाम निम्न-प्रकार दिये गये हैं:—रंजन, पृथुरश्मि, विद्वस् एवं बृहद्गिरस् (वायु. ६५.७८; वरत्रिन् देखिये)।

वरुथ—एक गंधर्व, जो कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था।

२. एक ब्राह्मण, जिसने अपनी कदंवा नामक कन्या दुर्गम नामक असुर को विवाह में दी थी (मार्क. ७२. ४२)।

वरुथप—एक ग्वाला, जो कृष्ण का समवर्ती था (भा. १०.२२.३१)।

वरुथिनी—एक अप्सरा, जो अर्जुन के स्वागत-समारोह में उपस्थित थी (म. व. ४४.२९)।

वरेण्य—भृगु वारुणि के सात पुत्रों में से एक, जिसे विभु नामान्तर प्राप्त था। इसके अन्य छः भाइयों के नाम निम्न थे:—च्यवन, शुचि, और्व, शुक्र, वज्रशीर्ष एवं सवन (म. अनु. ८५.१२६-१२९)।

२. पितरों में से एक।

३. एक देवगँधर्व, जो कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था।

४. माहिष्मति देश का एक राजा (गणेश. २.१३१-१४८)।

वर्कु वार्ष्णि—एक राजा, जो वृष्णि राजा का पुत्र था। इसे 'वार्ष्णि' पैतृक नाम प्राप्त था।

वर्गा—एक अप्सरा, जो कुबेर की प्रेयसी थी। इसकी सौरभेयी, समीची, बुद्बुदा एवं लता नामक चार सखियाँ थी।

किसी ब्राह्मण के शाप के कारण, यह एवं इसकी चार ही सखियाँ ग्राह बन गयी थी (म. आ. २०८. १९)। अर्जुन ने इनका ग्राहयोनि से उद्धार किया, जहाँ 'पंचाप्सरतीर्थ' नामक तीर्थ का निर्माण हुआ।

वर्चस्—सोम नामक वसु का पुत्र, जो अगले जन्म में अभिमन्यु बन गया (म. आ. ६०.२१)।

२. एक राक्षस (भा. १२. ११.४०)।

३. सुचेतस् ऋषि का एक पुत्र, जिसके पुत्र का नाम विहव्य था (म. अनु. ३०.६१)।

वर्चिन्—एक असुर, जो शंबर नामक दस्यु (असुर) का सहकारी था। इंद्र के द्वारा इसका वध हुआ (ऋ. ७. ९९.५)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे दास भी कहा गया है, एवं इसे वृचीवन्त लोगों से संबंधित किया गया है (ऋ. ४.३०.१५; ६.२७.५-७)।

वर्चोधामन्—सत्यदेवों में से एक।

वर्णिका--अधर्मकन्या माया के सात रूपों में से एक (माया देखिये)।

वर्तिवर्धन--(प्रद्योत. भविष्य.) प्रद्योत वंश में उत्पन्न हुआ एक राजा (प्रद्योत २. देखिये)। वायु में इसे अजक राजा का पुत्र कहा गया है।

वर्धन--कृष्ण एवं मित्रविंदा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१६)।

२. एक स्कंदपार्षद, जो अश्वियों के द्वारा स्कंद को प्रदान किये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम नंदन था (म. स. ४४.३४)।

वर्धमान--(सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार वसुदेव एवं उपदेवी का पुत्र था।

वर्मक--पूर्व भारत में स्थित एक लोकसमूह, जिसका भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय के समय पराजय किया था। इस देश के राजा का नाम भी वर्मक ही था (म. स. २७.१२)।

वर्वरि--अट्टहास नामक शिवावतार का एक शिष्य।

वर्ष--वसुदेव एवं उपदेवी के पुत्रों में से एक।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सहस्त्रार्जुन राजा का पुत्र था।

३. एक व्याकरणाचार्य, जो पाणिनि का गुरु था।

वल--एक असुर, जिसका इंद्र ने अंगिरस् की आज्ञा के अनुसार वर्ष के अन्त में (परिववत्सरे) वध किया था (ऋ. १०.६२.२)। पुराणों में भी इसका निर्देश प्राप्त है (पद्म. भू. २२-२३)।

वलया--मगधनिवासी देवदास नामक ब्राह्मण की कन्या (पद्म.उ .२१२)।

वलल--भीमसेन का गुप्तनाम, जो उसने अज्ञातवास के समय धारण किया था (म. वि. २.२)। महाभारत के कई अन्य संस्करणों में, भीमसेन का अज्ञातवासकाल का नाम 'पौरोगव बल्लव' दिया गया है (भीमसेन पांडव देखिये)।

वलीमुख--रामसेना का एक प्रमुख वानर (वा. रा. यु. ४.३६)।

वल्गुजंघ--विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५२)।

वल्गूतक--अत्रिकुलोत्पन्न एक मंत्रकार। इसे 'ववल्गु,' 'बलास्क', एवं 'बल्गुतक' नामांतर भी प्राप्त थे।

वल्लभ--कांचनपुर का एक ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम हेमप्रभा था (हेमप्रभा देखिये)।

२. बलाकाश्व नामक राजा का पुत्र, जो साक्षात् धर्म के समान था। इसके पुत्र का नाम कुशिक था (म. अनु. ४.४-५)।

वल्लिक--एक राक्षस, जो देवासुरसंग्राम में अग्नि के द्वारा दग्ध किया गया था (पद्म. सृ. ७५)।

ववल्गु--वल्गूतक नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

वव्रि आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.१९)।

वश--मध्यदेश में रहनेवाला एक जातिसमूह, जिसका निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में कुरुपांचाल एवं उशीनर लोगों के साथ प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.१४.३)। कौषीतकि उपनिषद में इन लोगों का निर्देश मत्स्य लोगों के साथ प्राप्त है (कौ. उ. ४.१)। अन्य कई ग्रंथों में इनका निर्देश केवल उशीनर लोगों के साथ प्राप्त है (गो. ब्रा. १.२.९)।

ओल्डेनबर्ग के अनुसार, वश एवं उशीनर ये दोनों शब्द 'वश्' धातु से व्यवहृत हुए थे, जिस कारण इन दोनों का काफ़ी घनिष्ठ संबंध प्रतीत होता है (ओल्डेनबर्ग, बुद्ध. ३९३)।

वश अश्व्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो अश्वियों का आश्रित था (ऋ. ८.४६)। इसे हज़ारो प्रकारों से धनप्राप्ति कराने की व्यवस्था अश्वियों ने की थी (ऋ. १.११६.२१)। पृथुश्रवस् कानीत नामक राजा ने भी इसे काफ़ी धन दान में दिया था (ऋ. ८.४६)। सायण के अनुसार, यह एक ऋषि न हो कर वश नामक लोगों का राजा था (ऋ. १०.४०.७; सां. श्रौ. १६.११.१३)।

वशवर्तिन्--उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण, जिस में निम्नलिखित दस देव शामिल थेः--ज्योति, बृहद्वस्, मानस, विभास, विरजस्, विश्वकर्मन्, विश्वधा, विश्वायु, समितार, सहस्त्रधार (ब्रह्मांड. २.३६. २९-३०)।

वश्यायु--पुरूरवस् का उर्वशी से उत्पन्न एक पुत्र (पद्म. सृ. १२)

वश्याश्व--एक ऋषिक (ब्रह्मांड. २.३२.१०१-१०२)।

वसन--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६७)। पाठभेद-'वत्सल'।

वसाति--दुर्योधन के पक्ष का एक राजा। अभिमन्यु के द्वारा चक्रव्यूह में प्रवेश करने पर इसने प्रतिज्ञा की थी कि, यह अभिमन्यु का वध करेगा, अथवा प्राणत्याग करेगा। जब यह अभिमन्यु का वध करने के लिए आगे

बढ़ा, तब अभिमन्यु ने इसका वध किया (म. द्रो. ४३. ८-१०)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो जनमेजय पारीक्षित का आठवाँ पुत्र था (म. आ. ८९.५०)।

३. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में भीष्म की रक्षा करता था (म. भी. ४७.१४)। अर्जुन ने इन लोगों का संहार किया।

वसातीय—अभिमन्यु के द्वारा मारे गये 'वसाति' राजा का नामान्तर (म. द्रो. ४३.८)। इसे 'वसात्य' नामान्तर भी प्राप्त था (म. द्रो. ४३.११; वसाति १. देखिये)।

वसित—दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

वसिष्ठ—एक ऋषि, जो स्वायंभुव मन्वंतर में उत्पन्न हुए ब्रह्मा के दस मानसपुत्रों में से एक माना जाता है। वसिष्ठ नामक सुविख्यात ब्राह्मणवंश का मूलपुरुष भी यही कहलाता है। यह ब्राह्मणवंश सदियों तक अयोध्या के इक्ष्वाकु राजवंश का पौराहित्य करता रहा।

जन्म—यह ब्रह्मा के प्राणवायु (समान) से उत्पन्न हुआ था (मा. ३.१२.२३)। दक्ष प्रजापति की कन्या ऊर्जा इसकी पत्नी थी। इस प्रकार यह दक्ष प्रजापति का जमाई एवं शिव का साढू था। दक्षयज्ञ के समय दक्ष के द्वारा शिव का अपमान हुआ, जिस कारण क्रुद्ध हो कर शिव ने दक्ष के साथ इसका भी वध किया।

विश्वामित्र से शत्रुत्व—वसिष्ठवंश के सारे इतिहास में एक उल्लेखनीय घटना के नाते, इन लोगों का विश्वामित्र वंश के लोगों के साथ निर्माण हुए शत्रुत्व की अखंड परंपरा का निर्देश किया जा सकता है। देवराज वसिष्ठ से ले कर मैत्रावरुण वसिष्ठ के काल तक, प्राचीन भारत के इन दो श्रेष्ठ ब्राह्मण वंशों में वैर एवं प्रतिशोध का अग्नि सदियों तक सुलगता रहा। प्राचीन भारतीय राजवंशों में भार्गव वंश (परशुराम जामदग्न्य) एवं हैहयों का, तथा द्रुपद एवं द्रोण का शत्रुत्व इतिहासप्रसिद्ध माना जाता है। उन्हीके समान पिढीयों तक चलनेवाला ज्वलंत वैर, वसिष्ठ एवं विश्वामित्र इन दो ब्राह्मणवंशों में प्रतीत होता है।

परिवार—इसकी कुल दो पत्नियाँ थी:—१. ऊर्जा, जो दक्ष प्रजापति की कन्या थी; २. अरुन्धती, जो कर्दम प्रजापति के नौ कन्याओं में से आठवीं कन्या थी। इनके अतिरिक्त इसकी शतरूपा नामक अन्य एक पत्नी भी थी, जो स्वयं इसकी ही 'अयोनिसंभवा' कन्या थी।

(१) ऊर्जा की संतति—ऊर्जा से इसे पुंडरिका नामक एक कन्या, एवं 'सप्तर्षि' संज्ञक निम्नलिखित सात पुत्र उत्पन्न हुए थे:—दक्ष (रत्न), गर्त, ऊर्ध्वबाहु, सवन, पवन, सुतपस्, एवं शंकु। भागवत में ऊर्जा के पुत्रों के नाम चित्रकेतु आदि बताये गये हैं (भा. ४.१.४१)।

इसकी कन्या पुंडरिका का विवाह प्राण से हुआ था, जिसकी वह पटरानी थी। प्राण से उसे द्युतिमत् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

इसके पुत्र 'रत्न' का विवाह मार्कंडेयी से हुआ था, जिससे उसे पश्चिम दिशा का अधिपति केतुमत् 'प्रजापति' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. २.१२.३९-४३)।

इनके अतिरिक्त इसे हवींद्र आदि सात पुत्र उत्पन्न हुए थे। सुकात आदि पितर भी इसीके ही पुत्र कहलाते हैं।

(२) शतरूपा की संतति—इसकी 'अयोनिसंभवा' कन्या शतरूपा से इसे वीर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। वीर का विवाह कर्दम प्रजापति की कन्या काम्या से हुआ था, जिससे उसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। इनमें से प्रियव्रत को अपनी माता काम्या से ही सम्राट, कुक्षि, विराट एवं प्रभु नामक चार पुत्र उत्पन्न हुए। उत्तानपाद को अत्रि ऋषि ने गोद में लिया था। (ह. वं. १.२)।

वसिष्ठकुल में उत्पन्न प्रमुख व्यक्ति—पार्गिटर के अनुसार, कालानुक्रम से देखा जाये तो, वसिष्ठ के वंश में उत्पन्न निम्नलिखित व्यक्ति प्राचीन भारतीय इतिहास में विशेष महत्त्वपूर्ण प्रतीत होते हैं:—

(१) **वसिष्ठ देवराज**, जो अयोध्या के त्रय्यरुण, त्रिशंकु एवं हरिश्चंद्र राजाओं का समकालीन था (वसिष्ठ देवराज देखिये)।

(२) **वसिष्ठ आपव**, जो हैहय राजा कार्तवीर्य अर्जुन का समकालीन था (वसिष्ठ आपव देखिये)।

(३) **वसिष्ठ अथर्वनिधि** (प्रथम), जो अयोध्या के बाहु राजा का समकालीन था (वसिष्ठ अथर्वनिधि १. देखिये)।

(४) **वसिष्ठ श्रेष्ठभाज**, जो अयोध्या के मित्रसह कल्माषपाद सौदास राजा का समकालीन था (वसिष्ठ श्रेष्ठभाज देखिये)।

(५) **वसिष्ठ अथर्वनिधि** (द्वितीय), जो अयोध्या के दिलीप खट्वांग राजा का समकालीन था (वसिष्ठ अथर्वनिधि २. देखिये)।

(६) वसिष्ठ, जो अयोध्या के दशरथ एवं राम दाशरथि राजाओं का समकालीन था (वसिष्ठ २. देखिये)।

(७) वसिष्ठ मैत्रावरुण, जो उत्तर पांचाल देश के पैजवन सुदास राजा का समकालीन था, एवं जिसका निर्देश ऋग्वेद आदि वैदिक ग्रंथों में प्राप्त है (वसिष्ठ मैत्रावरुण देखिये)।

(८) वसिष्ठ शक्ति, जो वसिष्ठ मैत्रावरुण का पुत्र था (वसिष्ठ शक्ति देखिये)।

(९) वसिष्ठ सुवर्चस्, जो हस्तिनापुर के संवरण राजा का समकालीन था (वसिष्ठ सुवर्चस् देखिये)।

(१०) वसिष्ठ, जो अयोध्या के मुचकुंद राजा का समकालीन था (वसिष्ठ ३. देखिये)।

(११) वसिष्ठ, जो हस्तिनापुर के हस्तिन् राजा का समकालीन था (वसिष्ठ ४. देखिये)।

(१२) वसिष्ठ 'धर्मशास्त्रकार,' जो 'वसिष्ठस्मृति' नामक धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ का कर्ता माना जाता है (वसिष्ठ धर्मशास्त्रकार देखिये)।

वसिष्ठ की वंशावलि—महाभारत एवं पुराणों में वसिष्ठ ऋषि की तीन विभिन्न वंशावलियाँ प्राप्त हैः—१. अरुंधती-शाखा; २. घृताचीशाखा; ३. व्याघ्रीशाखा। इनमें से अरुंधती एवं घृताची क्रमशः ब्रह्ममानसपुत्र वसिष्ठ एवं वसिष्ठ मैत्रावरुण ऋषियों की पत्नियाँ थी! व्याघ्री कौनसे वसिष्ठ की पत्नी थी, यह निश्चित रूप से नही कहा जा सकता।

(१) **अरुंधतीशाखा**--वसिष्ठ (अरुंधती)— शक्ति (स्वागज अथवा सागर)—पराशर (काली)—कृष्ण-द्वैपायन (अरणी)—शुक (पीवरी)—भूरिश्रवस्, प्रभु, शंभु, कृष्ण, गौर, एवं कीर्तिमती (ब्रह्मदत्त की पत्नी)।

(२) **घृताची शाखा**—वसिष्ठ मैत्रावरुण (घृताची)-इंद्रप्रमति अथवा कुणीति अथवा कुशीति-वसु (पृथुसुता)-उपमन्यु (ब्रह्मांड. ३.८०.९०-१००; वायु. ७१.८३-९०; लिंग. १.६३.७८-९२; कूर्म. १.१९; मत्स्य. २००)।

(३) **व्याघ्री शाखा**—वसिष्ठ को व्याघ्री से व्याघ्रपाद मन्ध, बादलोम, जाबालि, मन्यु, उपमन्यु, सेतुकर्ण आदि कुल १९ गोत्रकार पुत्र उत्पन्न हुए (म. अनु. ५३. ३०-३२ कुं.)।

वसिष्ठकुल के गोत्रकार—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकारों में एक प्रवरात्मक (एक प्रवरवाले), एवं त्रिप्रवरात्मक (तीन प्रवरोंवाले) ऐसे दो प्रमुख प्रकार हैं।

(१) **एकप्रवरात्मक गोत्रकार**--वसिष्ठकुल के निम्नलिखित गोत्र एकप्रवरात्मक हैं, जिनका वसिष्ठ यह एक ही प्रवर होता हैः—अलब्ध, आपस्थूण (ग), उपावृद्धि, औपगव (अपगवन, ग), औपलोम (अपद्योम, ग), कठ (ग), कपिष्ठल (ग), गौपायन (गोपायन, ग) गौडिनि (जौडिलि), चौलि, दाकव्य (ग), पालिशय (ग), पौड्व (खांडव), पौलि, बालिशय (ग), ब्राहुरि (ग), बोधप (ग), ब्रह्मबल, ब्राह्मपुरेयक (ब्रह्मकृतेजन, ग), याज्ञवल्क्य (याज्ञदत्त), लोमायन (ग), वाग्ग्रंथि, वाडोहलि, वाह्यक (ग), वैक्लव (ग), वौलि, व्याघ्रपाद (ग), शठ (ग) (षटाकुर, शठकठ), शांडिलि, शाद्वलायन (ग), शीतवृत्त (ग), श्रवस् (श्रवण), सुमन् (ग), स्वस्तिकर (ग)।

(२) **त्रिप्रवरात्मक गोत्रकार**--वसिष्ठकुल के निम्नलिखित गोत्रकार त्रिप्रवरात्मक हैं, जिनके इंद्रप्रमदि (चंद्रसंमति), भगीवसु (भर्गिवसु) एवं वसिष्ठ ये तीन प्रवर होते हैं:-उद्वाह (उद्ग्राट, ग), उपलप (ग), उहाक (ग), औपमन्यव, कपिंजल (ग), काण्व (ग), कालशिख, कोरकृपा (कौरकृष्ण, ग), कौरव्य, कौलायन (कौमानरायण), क्रोडोदरायण, क्रोधिन, गोरथ (ग), तर्पय, डाकायन, पन्नागारि (पर्णागारि), पालंकायन, (पादपायन), प्रलंबायन (ग), बलेक्षु (दलेषु, ग), बाल्वय, ब्रह्ममालिन् (ग), भागवित्तायन (ग) (भागवित्रासन), महाकर्ण, मातेय (ग), माषशरावय (ग), लंबायन (ग), वाकय (ग), वालखिल्य (ग), वेदशेरक (ग), शाकधिय, शाकायन (ग), शाकाहार्य (ग), शैलालय (रौरालय, शैवलेय), श्यामवय, सांख्यायन, सुरायण।

वसिष्ठकुल के निम्नलिखित गोत्रकार भी त्रिप्रवरात्मक ही हैं, किंतु उनके कुंडिन, मित्रावरुण एवं वसिष्ठ ये तीन प्रवर होते हैं:-औपस्थल (जपस्वस्थ, ग), कुंडिन, त्रैशृंगायण (त्रैशृंग, ग), पैप्पलादि, बाल (घत्र), माक्षति (ग), माध्यंदिन, लोहलय (हाल-हल का पाठभेद), विचक्षुष (विवर्धक), सैत्रल्क (सर्वसैलाब), स्वस्थलि (ग)।

वसिष्ठकुल के निम्नलिखित गोत्रकार अत्रि, जातुकर्ण एवं वसिष्ठ इन तीन प्रवरों के होते हैं:--आलंब (ग), क्रोडोदय, दानकाय (ग), नागेय (ग), परम (ग), पादप, महावीर्य (ग), वय, वायन, शिवकर्ण (शवकर्ण)।

जातुकर्ण्य लोग--वसिष्ठगोत्रीय लोगों में 'जातुकर्ण्य' पैतृक नाम धारण करनेवाले लोग प्रमुख थे। इसी नाम के एक ऋषि ने व्यास को वेद एवं पुराणों की शिक्षा प्रदान

की थी। इसी कारण जातुकर्ण्य को अठ्ठाईस द्वापारों में से एक युग का व्यास कहा गया है (वायु. २३.११५-२१९)।

वसिष्ठकुल के मंत्रकार—वसिष्ठकुल के मंत्रकारों की नामावलि वायु, मत्स्य एवं ब्रह्मांड पुराणों में प्राप्त है (वायु. ५९.१०५-१०६; मत्स्य. १४५.१०९-११०; ब्रह्मांड. २.३२.११५-११६)।

इनमें से वायु में प्राप्त नामावलि, मत्स्य एवं ब्रह्मांड में प्राप्त पाठान्तरों के सहित नीचे दी गयी है :—इंद्रप्रमति (इंद्रप्रतिम,), कुंडिन, पराशर, बृहस्पति, भरद्वसु, भरद्वाज, मैत्रावरुण (मैत्रावरुणि), वसिष्ठ, शक्ति, सुद्युम्न।

२. एक आचार्य, जो अयोध्या के दशरथ एवं राम दाशरथि राजाओं का पुरोहित था। एक नीतिविशारद प्रमुख मंत्री, एवं पुरोधा के रूप में इसका चरित्रचित्रण वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है।

यह सर्वश्रेष्ठ ब्रह्मज्ञानी, एवं तपस्वियों में श्रेष्ठ था (वा. रा. बा. ५२.१; २०)। अपनी तपस्या के बल पर इसने ब्रह्मर्षिपद प्राप्त किया था। यह अत्यधिक शांतिसंपन्न, क्षमाशील एवं सहिष्णु था (वा. रा. बा. ५५-५६)।

दशरथ राजा के पुरोहित के नाते, उसके पुत्रकामेष्टि यज्ञ में यह प्रमुख ऋत्विज बना था। राम एवं लक्ष्मण का नामकरण भी इसने ही किया था। राम दाशरथि को यौवराज्याभिषेक की दीक्षा भी इसीके ही हाथों प्रदान की गयी थी (राम दाशरथि देखिये)।

३. एक ऋषि, जो अयोध्या के मांधातृ राजा के पुत्र मुचकुंद राजा का पुरोहित था (म. शां. ७५.७)।

४. एक ऋषि, जो भरतवंशीय सम्राट रंतिदेव सांकृत्य का पुरोहित था। रंतिदेव राजा हस्तिनापुर के हस्तिन् राजा का समकालीन था। उसने इसे ब्रह्मर्षि मान कर अर्घ्यप्रदान किया था (म. शां. २९.१७; अनु. २००.६)।

५. रैवत मन्वंतर का एक ऋषि।

६. सावर्णि मन्वंतर का एक ऋषि।

७. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का एक ऋषि।

८. धर्मनारायण नामक शिवावतार का एक शिष्य।

९. एक ऋषि, जो श्राद्धदेव का पुरोहित था। श्राद्धदेव को कोई भी पुत्र न था, जिस कारण इसने मित्रवरुणों को उद्देश्य कर एक यज्ञ का आयोजन किया।

श्राद्धदेव की पत्नी श्रद्धा की इच्छा थी कि, उसे कन्यारत्न की प्राप्ती हो। इस इच्छा के अनुसार, इसके यज्ञ से उसे इला नामक कन्या प्राप्त हुई। किन्तु श्राद्धदेव पुत्र का कांक्षी था, जिस कारण इसने उस कन्या का सुद्युम्न नामक पुत्र में रूपांतर किया (भा. ९.१.१३-२२)। अंबरीष राजा के अश्वमेध यज्ञ में भी यह उपस्थित था (मत्स्य. २४५. ८६)।

१०. आठवा वेदव्यास, जिसे इंद्र ने ब्रह्मांड पुराण सिखाया था। आगे चल कर, यही पुराण इसने सारस्वत ऋषि को सिखाया (ब्रह्मांड. २.३५.११८)। इसका आश्रम उज्जेन्त पर्वत पर था (ब्रह्मांड. ३.१३.५३)।

११. एक ऋषि, जो वारुणि यज्ञ के 'वसुमध्य' से उत्पन्न हुआ था। इसी कारण इसे 'वसुमत्' कहते थे। आगे चल कर, इसीसे ही सुकात नामक पितर उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. ३.१.२१; मत्स्य. १९५. ११)।

१२. बृहत्कल्प के धर्ममूर्ति राजा का पुरोहित (मत्स्य. ९२.२१)। इसने त्रिपुरदहन के हेतु शिव की स्तुति की थी (मत्स्य. १३३. ६७)।

१३. एक शिल्पशास्त्रज्ञ (मत्स्य. २५२.२)।

१४. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने के लिए उपस्थित हुआ था (भा. १.९.७)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय भी यह उपस्थित था (भा. १०.७४.७)।

१५. अगस्त्य ऋषि का छोटा भाई, जो विदेह देश के निमि राजा का पुरोहित था (वसिष्ठ मैत्रावरुणि देखिये; मत्स्य. ६१.१९)।

महाभारत के अनुसार, यह ब्रह्माजी के मानसपुत्रों में से एक था। भागवान् शंकर के शाप से ब्रह्माजी के सारे पुत्र दग्ध हो कर नष्ट हो गयें। वर्तमान मन्वन्तर के प्रारंभ में ब्रह्माजी ने उन्हें पुनः उत्पन्न किया। उनमें से वसिष्ठ एक था। यह अग्नि के मध्यम-भाग से उत्पन्न हुआ था। इसकी पत्नी का नाम अक्षमाला था (म. उ. ११५. ११)।

एक बार निमि राजा से इसका झगड़ा हो गया, जिसमें दोनों ने एक दूसरे को विदेह (देहरहित) बनने का शाप दिया। उन शापों के कारण इन दोनों की मृत्यु हुयी (निमि देखिये)।

वसिष्ठ अथर्वनिधि—एक ऋषि, जो अयोध्या के हरिश्चंद्र राजा के आठवें पिढी में उत्पन्न हुए बाहु राजा का राजपुरोहित था। हैहय तालजंघ राजाओं ने

कांबोज, यवन, पारद, पह्लव आदि उत्तरपश्चिम प्रदेश में रहनेवाले लोगों की सहाय्यता से बाहु राजा को राज्यभ्रष्ट किया। आगे चल कर बाहु राजा के पुत्र सगर ने इन सारे शत्रुओं का पराजय कर पुनः राज्य प्राप्त किया। सगर राजा इन सारे लोगों का संहार ही करनेवाला था किन्तु वसिष्ठ ने इसे इस पापकर्म से रोक दिया।

इसने सगर को परशुराम की कथा कथन की थी। इसने सगर के पुत्र अंशुमत् को यौवराज्याभिषेक किया (ब्रह्म. ३.३१.१; ४७.९९)।

ब्रह्मांड एवं बृहन्नारदीय पुराणों में इसे क्रमशः आपव एवं अथर्वनिधि कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.४९.४३; बृहन्नारदीय. ८.६३)। महाभारत में, इसके नंदिनी नामक गाय के द्वारा शक, कांबोज, पारद आदि म्लेंच्छ जाति के निर्माण होने का, एवं उनकी सहाय्यता से इसके के द्वारा विश्वामित्र का पराजय होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. १६५; वा. रा. बा. ५४.१८-५५)। किन्तु वहाँ वसिष्ट अथर्वनिधि को वसिष्ठ देवरात समझने की भूल की गई सी प्रतीत होती है, क्यों कि, विश्वामित्र ऋषि का समकालीन वसिष्ठ देवरात था, वसिष्ठ अथर्वनिधि उससे काफ़ी पूर्वकालीन था।

२. एक ऋषि, जो अयोध्या के दिलीप खट्वांग राजा का पुरोहित था। इसीके ही सलाह से दिलीप राजा ने नंदिनी नामक कामधेनु की उपासना की, जिसकी कृपा से उसे रघु नामक सुविख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ (रघु. १-३; पद्म उ. २०२-२०३; दिलीप खट्वांग देखिये)।

वसिष्ठ आपव—एक ऋषि, जिसका आश्रम हिमालय पर्वत में था। हैहय राजा कार्तवीर्य अर्जुन ने इसका आश्रम जला दिया, जिस कारण इसने उसे शाप दिया (वायु. ९४.३९-४७; ह. वं. ३३.१८८४)। ब्रह्मांड पुराण में इसके 'मध्यमा भक्ति' का निर्देश प्राप्त है ब्रह्मांड. ३.३०.७०; ३४. ४०-४१)। मत्स्य में इसे ब्रह्मवादिन् कहा गया है (मत्स्य. १४५. ९०)।

वायु में इसे वारुणि कहा गया है (वायु. ९४. ४२-४३)। इसका पैतृक नाम आपव था, जिससे यह अप् (जल) का पुत्र होने का संकेत मिलता है। इस प्रकार इसके वारुणि एवं आपव ये दोनों पैतृक नाम समानार्थी प्रतीत होते है।

वसिष्ठ चैकितानेय—एक आचार्य, जो स्थिरक गार्ग्य नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. २)। गौतमी आरुणि नामक आचार्य से वादसंवाद करनेवाला चैकितानेय वासिष्ठ एवं यह दोनों संभवतः एक ही होगे (जै. उ. ब्रा. १.४.२.१)।

वसिष्ठ देवराज—एक ऋषि, जो अयोध्या के त्रय्यारुण, सत्यव्रत त्रिशंकु एवं हरिश्चंद्र राजाओं का पुरोहित था। हरिश्चंद्र के यज्ञ में यह 'ब्रह्मा' था (ऐ. ब्रा. ७.१६; सां.श्रौ. १५.२२.४; श. ब्रा.१२.६.१. ४१; ४.६.६.५)। इसका त्रिशंकु राजा से हुआ विरोध एवं उसीके ही कारण इसका विश्वामित्र ऋषि से हुआ भयानक संघर्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास में सुविख्यात है (त्रिशंकु देखिये)।

सत्यव्रत त्रिशंकु के राज्यकाल में शुरू हुआ इसका एवं विश्वामित्र ऋषि का संघर्ष सत्यव्रत के पुत्र हरिश्चंद्र, एवं पौत्र रोहित के राज्यकाल में चालू ही रहा। सत्यव्रत के सदेह स्वर्गारोहण के पश्चात् उसके पुत्र हरिश्चंद्र ने विश्वामित्र को अपना पुरोहित नियुक्त किया। किंतु उसके राजसूय-यज्ञ में बाधा उत्पन्न कर, वसिष्ठ ने अपना पौरोहित्यपद पुनः प्राप्त किया (हरिश्चंद्र देखिये)

हरिश्चंद्र के ही राज्यकाल में, उसके पुत्र रोहित के बदले विश्वामित्र के रिश्तेदार शुनःशेप को यज्ञ में बलि देने का षड्यंत्र देवराज वसिष्ठ के द्वारा रचाया गया, किंतु विश्वामित्र ने शुनःशेप की रक्षा कर, उसे अपना पुत्र मान लिया (रोहित देखिये)।

वसिष्ठ 'धर्मशास्त्रकार'—एक स्मृतिकार, जिसका तीस अध्यायों का 'वसिष्ठस्मृति' नामक स्मृतिग्रंथ आनंद-श्रम के 'स्मृतिसमुच्चय' में प्राप्त है। उसमें आचार, प्रायश्चित्त, संस्कार, रजस्वला, संन्यासी, आततायि आदि के लिए नियम दिये हैं। उसी प्रकार दत्तकप्रकरण, साक्षिप्रकरण, प्रायश्चित्त आदि विषयों का भी विवेचन किया है। व्यंकटेश्वर प्रेस के सस्करण में भी उपर्युक्त विषयों का विवेचन करनेवाली इसकी स्मृति उपलब्ध है, परन्तु वह केवल २१ अध्यायों की है। वह तथा जीवानन्द संग्रह की प्रति एक ही है। दोनों प्रतियों में प्रायः एक सौ ही श्लोक हैं।

इसकी ९-१० अध्यायोंवाली भी एक स्मृति है, जिसमें वैष्णवों के दैनिक कर्तव्यों का विवेचन किया गया है (C. C.)। 'वसिष्ठधर्मसूत्र' गौतमधर्मसूत्र के सूत्रों से बहुत से विषयों में मिलते जुलते हैं। उसी तरह बौधायनधर्मसूत्रों के बहुत से सूत्रों से वसिष्ठधर्म-सूत्र के सूत्रों का साम्य है। वसिष्ठधर्मसूत्र ऋग्वेद का है। तन्त्रवार्तिक में भी पुरातन गृह्यसूत्रकार के रूप में वसिष्ठ का उल्लेख है (१.३.२४)।

मिताक्षरादि ग्रन्थों में वसिष्ठ के धर्मशास्त्र से उद्धरण लिये गये हैं। उसी तरह बृहदारण्यकोपनिषद के शंकराचार्यभाष्य में भी वसिष्ठ के धर्मसूत्र के बहुत से सूत्र लिये गये हैं। वसिष्ठ ने अपने ग्रन्थों में वेद तथा संहिता से उद्धरण लिए हैं। निदानसूत्रों की भाल्लविन द्वारा-विरचित एक गाथा भी वसिष्ठ ने अपने स्मृति में दी है। इसके अतिरिक्त मनु, हरीत, यम एवं गौतम आदि धर्मशास्त्रप्रकारों के मत भी कई बार दिये गये हैं। मनुस्मृति तथा याज्ञवल्क्यस्मृति में वसिष्ठस्मृति का उल्लेख प्राप्त है।

'वृद्धवसिष्ठ' नामक अन्य एक ग्रंथ की रचना इसने की थी, जिसका निर्देश विश्वरूप (१.१९,) एवं मिताक्षरा (२.९१) में प्राप्त हैं। इसके 'ज्योतिर्वसिष्ठ' नामक ग्रंथ के कुछ उद्धरण 'स्मृतिचंद्रिका' में लिये गये हैं।

ग्रन्थ--उपर्निर्दिष्ट ग्रंथों के अतिरिक्त, इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैः—१. वसिष्ठ-कल्प; २.वसिष्ठ-तंत्र, ३. वसिष्ठपुराण, ४. वसिष्ठ लिंगपुराण, ५. वसिष्ठ-शिक्षा, ६. वसिष्ठश्राद्धकल्प, ७. वसिष्ठसंहिता, ८. वसिष्ठ-होमप्रकार (C. C.)

वसिष्ठ मैत्रावरुणि--एक ऋषि, जो उत्तरपांचाल के सुविख्यात सम्राट् पैजवन सुदास राजा का पुरोहित था।

वैदिक परंपरा के सर्वाधिक प्रसिद्ध पुरोहित में से यह एक माना जाता है। ऋग्वेद के सातवे मंडल के प्रणयन का श्रेय इसे दिया गया है (ऋ. ७.१८.३३)।

ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में, ऋग्वेद के नवम मंडलांर्गत सत्तानवे सूक्त के प्रणयन का श्रेय भी वसिष्ठ एवं उसके वंशजों को दिया गया है। इस ग्रंथ के अनुसार, इस सूक्त की पहली तीन ऋचाओं का प्रणयन स्वयं वसिष्ठ ने किया, एवं इस सूक्त के चार से तीस तक की ऋचाओं का प्रणयन, वसिष्ठ ऋषि के कुल में उत्पन्न निम्नलिखित नौ वसिष्ठों के द्वारा किया गया थाः–इंद्रप्रमति—ऋचा ४-६; वृषगण-ऋचा ७–९; मन्यु—ऋचा १०-१२; उपमन्यु-ऋचा १३–१५; व्याघ्रपाद—ऋचा १६-१८; शक्ति— ऋचा १९-२१; कर्णश्रुत-ऋचा २२-२३; मृळीक-- ऋचा २५--२७; वसुक्र--ऋचा २८—३०।

इस सूक्त में से ३१-४४ ऋचाओं की रचना पराशर शाक्त्य (शक्ति पुत्र) के द्वारा की गई थी, जो स्वयं वसिष्ठपुत्र शक्ति का ही पुत्र था। किन्तु पार्गिटर के अनुसार, इन अंतिम ऋचाओं की रचना वसिष्ठकुलोत्पन्न पराशर के द्वारा नही, बल्कि शंतनु राजा के समकालीन किसी अन्य पराशर के द्वारा हुई होगी (पार्गि. पृ. २१३)।

जन्म--ऋग्वेद में वसिष्ठ ऋषि को वरुण एवं उर्वशी अप्सरा का पुत्र कहा गया है (ऋ. ७.३३.११)। ऋग्वेद के इसी सूक्त में इसे मित्र एवं वरुण के पुत्र अर्थ से 'मैत्रा-वरुण' अथवा 'मैत्रावरुणि' कहा गया है। एक बार मित्र एवं वरुण ने उर्वशी अप्सरा को देखा, जिसे देखते ही उनका रेत स्खलित हुआ। उन्होंने उसे एक कुंभ में रख दिया, जिससे आगे चल कर वसिष्ठ एवं अगस्त्य ऋषिओं का जन्म हुआ (ऋ. ७.३३.१३)। इसी कारण, इन दोनों को 'कुंभयोनि' उपाधि प्राप्त हुई, एवं उनके वंशजों को 'कुण्डिन्', 'कुण्डिनेय' एवं 'कौण्डिन्य' नाम प्राप्त हुए (ऋ. सर्वानुक्रमणी. १,१६६; नि. ५.१३)। ऋग्वेद में अन्यत्र वसिष्ठ का जन्म कुंभ में नहीं, बल्कि उर्वशी के गर्भ से होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.३३. १२)।

पार्गिटर के अनुसार, 'मैत्रावरुण' वसिष्ठ का पैतृक नाम न हो कर, उसका व्यक्तिनाम था, जो मित्रावरुण का ही अपभ्रष्ट रूप था (पार्गि. पृ. २१६; बृहद्दे. ४.८२)। इसी कारण, वसिष्ठ के 'मैत्रावरुण' पैतृक नाम का स्पष्टीकरण देने के लिए, इसकी जो जन्मकथा ऋग्वेद में प्राप्त है, वह कल्पना-रम्य प्रतीत होती है। वसिष्ठ मित्रावरुण का पुत्र कैसे हुआ इसके संबंध में, अपनी पूर्वजन्म में इसने विदेह के निमि राजा के साथ किये संघर्ष की जो कथा बृहद्देवता एवं पुराणों मे प्राप्त है,वह भी कल्पनारम्य है (बृहद्दे. ५.१५६; मत्स्य. २०१.१७–२२; निमि विदेह देखिये)।

विश्वामित्र से विरोध—वसिष्ठ ऋषि का विश्वामित्र के प्रति विरोध का स्पष्ट निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है। वसिष्ठ ऋषि के पूर्व सुदास का पुरोहित विश्वामित्र था (ऋ. ३. ३३.५३)। किन्तु उसके इस पद से भ्रष्ट होने के पश्चात्, वसिष्ठ भरत राजवंश का एवं सुदास राजा का पुरोहित बन गया। तदोपरान्त विश्वामित्र ऋषि सुदास के शत्रुपक्ष में शामिल हुआ, एवं उसने सुदास के विरुद्ध दाशराज्ञ युद्ध में भाग लिया था।

गेल्डनर के अनुसार, ऋग्वेद में वसिष्ठ एवं विश्वामित्र के शत्रुत्व का नहीं, बल्कि वसिष्ठपुत्र शक्ति के साथ हुए विश्वामित्र के संघर्ष का निर्देश प्राप्त है। ऋग्वेद के तृतीय मंडल में 'वसिष्ठ द्वेषिण्यः' नामक वसिष्ठविरोधी मंत्र प्राप्त है, जो वसिष्ठपुत्र शक्ति को ही संकेत कर रचायें गये थे (ऋ. ३.५३.२१–२४)। कालोपरांत शक्ति से प्रतिशोध-लेने के लिए, विश्वामित्र ने सुदास राजा के

सेवकों के द्वारा उसका वध किया (तै. सं. ७.४.७.१; पं. ब्रा. ४.७.३; ऋ. सर्वानुक्रमणी ७.३२)।

किंतु उपर्युक्त सारी कथाओं में, वसिष्ठ का सुदास राजा के साथ विरोध होने का निर्देश कहाँ भी प्राप्त नही है। ऐतरेय ब्राह्मण में, वसिष्ठ को सुदास राजा का पुरोहित एवं अभिषेककर्ता कहा गया है (ऐ. ब्रा. ७. ३४.९)।

फिर भी सुदास राजा की मृत्यु के पश्चात्, विश्वामित्र पुनः एक बार सुदास के वंशजों (सौदासों) का पुरोहित बन गया (नि. २.२४; सां. श्रौ. २६.१२.१३)। तत्पश्चात् अपने पुत्र के वध का प्रतिशोध लेने के लिए, वसिष्ठ ने सौदासों को परास्त कर पुनः एक बार अपना श्रेष्ठत्त्व स्थापित किया।

किंतु सौदासों के साथ वसिष्ठ का यह शत्रुत्त्व स्थायी स्वरूप में न रहा। भरत राजकुल एवं राज्य का कुलपरंपरागत पुरोहित पद वसिष्ठवंश में ही रहा, जिसके अनेकानेक निर्देश ब्राह्मणग्रंथों में प्राप्त हैं (पं. ब्रा. १५.४.२४; तै. सं. ३.५.२.१)।

यज्ञकर्ता आचार्य—शतपथ ब्राह्मण में एक यज्ञकर्ता आचार्य के नाते वसिष्ठ का निर्देश अनेकबार प्राप्त है। यज्ञ के समय, यज्ञकर्ता पुरोहित ने 'ब्रह्मन् के रूप में कार्य करना चाहिए,' यह सिद्धान्त वसिष्ठ के द्वारा ही सर्वप्रथम प्रस्थापित किया गया। शुनःशेप के यज्ञ में वसिष्ठ ब्रह्मन् बना था (ऐं. ब्रा. ७.१६; सां. श्रौ. १५.२१.४)। एक समय, केवल वसिष्ठगण ही 'ब्रह्मन्' के रूप में कार्य करनेवाले पुरोहित थे, किन्तु बाद में अन्य सारे पुरोहितगण भी इस रूप में कार्य करने लगे (श. ब्रा. १२.६.१.४१)।

कर्तृत्व—वसिष्ठ ने सुदास पैजवन राजा को सोम के विशेष सांप्रदाय की दीक्षा दी, जिस कारण सुदास को समस्त राजर्षियों में उँचा पद प्राप्त हुआ।

एक बार यह तीन दिनों तक भूखा रहा। चौथे दिन अपनी क्षुधा को शांत करने के लिए, इसने वरुण के भोजनगृह में घुसने का प्रयत्न किया। किन्तु रसोईघर के द्वार पर कुत्ते थे, जिन्होंने इसे अंदर जाने को मना किया। उन रक्षक कुत्तों को सुलाने के लिए इसने कुछ ऋचाएँ कही। ऋग्वेद की यही ऋचाएँ 'निद्रासूक्त' नाम से प्रसिद्ध है (ऋ. ७. ५५)। ऋग्वेद में प्राप्त सुविख्यात 'महामृत्युंजय' मंत्रों की रचना भी वसिष्ठ के द्वारा ही की गयी है (ऋ. ७.५९.१२)।

मित्रावरुणों से उत्पन्न होने के कारण, इसे स्वयं का गोत्र नहीं था। इस कारण इसने पैजवन सुदास राजा के 'तृत्सु' गोत्र को ही अपना लिया! इसी कारण, ऋग्वेद में इसे अनेकबार 'तृत्सु' कहा है (ऋ. ७.६३.८)। यह एवं इसके वंश के लोग दाहिनी ओर शिखा रखते थे।

ऋग्वेद में 'राक्षोघ्न' सूक्त नामक सूक्त के प्रणयन का श्रेय भी वसिष्ठ को दिया गया है (ऋ. ७.१०४)। इस सूक्त में वसिष्ठ अपने पर गंदे आक्षेप करनेवाले लोगों को गालीगलौज दे रहा है, ऐसी इस सूक्त की कल्पना है। बृहद्देवता के अनुसार, इस सूक्त का संदर्भ वसिष्ठ-विश्वामित्र के विरोध से जोड़ा गया है (बृहद्दे. ६.२८-३४)।

तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त 'एकोनपंचाशद्रात्रयाग' का जनक वसिष्ठ माना गया है (तै. सं. ७.४.७.)। उसी संहिता में प्राप्त 'स्तोमभाग' नामक मंत्रों का भी प्रवर्तक यही है (तै. सं. ३.५.२)।

आश्रम—विपाश नदी के किनारे वसिष्ठ का 'वसिष्ठशिला' नामक आश्रम था। इसका 'कृष्णशिला' नामक अन्य एक आश्रम भी था, जहाँ इसने तपस्या की थी (गो. ब्रा. १.२.८.)। इसी तपस्या के कारण, यह पृथ्वी के समस्त लोगों का पुरोहित बन गया (गो. ब्रा. १.२.१३)।

वैदिकोत्तर साहित्य में—वसिष्ठ एवं विश्वामित्र के विरोध की कथा वैदिकोत्तर साहित्य में भी प्राप्त है। बृहद्देवता के अनुसार, वसिष्ठ वारुणि के सौ पुत्रों का सौदासस् (सुदास) राजा ने वध किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर, इसने उसे राक्षस बनने का शाप दिया (बृहद्दे. ५.२८; ३३-३४)। लिंग के अनुसार, विश्वामित्र के द्वारा निर्माण किये गयें राक्षसों ने कल्माषपाद सौदास राजा को घिरा लिया, एवं उसके द्वारा शक्ति आदि वसिष्ठ के सौ पुत्रों का वध किया। शक्ति की मृत्यु के पश्चात् उसकी पत्नी अदृश्यन्ती को पराशर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (लिंग. १.६३.८३)। किंतु पार्गिटर के अनुसार, अयोध्या के कल्माषपाद सौदास के द्वारा मारे गये वसिष्ठपुत्रों का पिता वसिष्ठ मैत्रावरुणि न हो कर, इससे काफ़ी उत्तरकालीन वसिष्ठ श्रेष्ठभाज् नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न अन्य ऋषि था, एवं अयोध्या के सुदास राजा के द्वारा वसिष्ठ मैत्रावरुणि के शक्ति नामक केवल एक ही पुत्र का वध हुआ था (पार्गि. २०९)।

पुराणों में—इन ग्रंथों के अनुसार, निमि राजा के द्वारा शाप दिया जाने पर वायुरूप मे वसिष्ठ ब्रह्मा के पास गया,

तथा ब्रह्मा की इच्छा से, उर्वशी को देख कर स्खलित हुए मित्रावरुणों के वीर्य से यह कुंभ में उत्पन्न हुआ (वा. रा. उ. ५७; मत्स्य. ६०.२०-४०; २००)।

विश्वामित्र से शत्रुत्व—एक बार विश्वामित्र ऋषि इसके आश्रम में इसे मिलने आया। कामधेनु की सहायता से विश्वामित्र का उत्कृष्ट आतिथ्य वसिष्ठ ने किया। तब उसने कामधेनु माँगी। किन्तु इसने अनाकानी की, तब उसने कामधेनु को जबरदस्ती ले जाने का प्रयत्न किया। परंतु धेनु के शरीर से शक, पल्लव इत्यादि म्लेंच्छ उत्पन्न हुए, जिन्होंने विश्वामित्र को पराजित किया। पराजित हो जाने के उपरांत, विश्वामित्र ने यह अनुभव किया कि, क्षत्रियबल की अपेक्षा ब्राह्मणबल श्रेष्ट है, तथा तपश्चर्या करना आरंभ किया। विश्वामित्र ने वसिष्ठ से ब्रह्मर्षि कहलाने का काफ़ी प्रयत्न किया था। उक्त कथा संभवतः वसिष्ठ देवराज की होगी।

बाद में क्रोध से विश्वामित्र ने वसिष्ठ के सौ पुत्र राक्षसों के द्वारा भक्षण करवाये। इससे यह जीवन से विरक्त हो कर नदी में प्राण देने गया, किन्तु बच गया। इसीलिए उस नदी को विपाशा नाम दिया गया (म. व. १३०.८-९)। क्यों कि, उस नदी ने वसिष्ठ को पाशमुक्त कर के उसे बचाया था, उसे शतद्रु नाम प्राप्त हुआ। उसे यह नाम क्यों प्राप्त हुआ उसका कारण यही है कि, जब यह शतद्रु (आधुनिक सतलज नदी) में व्याकुल होकर कूद पड़ा, तब वह नदी इसे अग्नि के समान तेजस्वी समझ कर सैकडों धाराओं में फूट कर इधर उधर भाग चली। शतधा विद्रुत होने से उसका नाम 'शतद्रु' हुआ (म. आ. १६७.९)।

वसिष्ठ ने जब विश्वामित्र पर सौ पुत्रों के समाप्त करने का आरोप लगाया, तब पैजवन के समक्ष शपथपूर्वक उसने यह बात अमान्य की (मनु. ८.१०)। किन्तु कालदृष्टि सें यह कथा असंगत प्रतीत होती है (शक्ति देखिये)।

व्रतवैकल्य--कक्षसेन ने इसे अपनी संपत्ति दी थी (म. अनु. २००.१५. कुं.)। इसने पक्षवर्धिनी एकादशी का व्रत किया था (पद्म. उ. ३६)। इसने बकुला-संगम पर परमेश्वर की सेवा की थी (पद्म. उ. १३९)। इन्द्रप्रस्थ के सप्ततीर्थ के प्रभाव से इसे महापवित्र पुत्र हुए थे (पद्म. उ. २२२)। ब्रह्मदेव के पुष्करक्षेत्र के यज्ञ में यह होतृगणों का ऋत्विज था (पद्म. सृ. ३४)। इसने भीष्मपंचक व्रत किया था (पद्म. उ. १२४)। यह एक व्यास भी था (व्यास देखिये)।

परिवार--ऋग्वेद के अनुसार, इसे शक्ति नामक एक पुत्र था (ऋ. ३.५३.१५-१६)। उसी ग्रंथ में अन्यत्र शतयातु एवं पराशर को क्रमशः इसका पुत्र एवं पौत्र कहा गया है (ऋ. ७.१८.२१)।

पुराणों में प्राप्त जानकारी के अनुसार, वसिष्ठ के पुत्र का नाम शक्ति, एवं पौत्र का नाम पराशर शाक्त्य था, जो कृष्ण द्वैपायन व्यास का पिता था।

इन्हीं ग्रंथों में वसिष्ठ की पत्नी का नाम कपिंजली घृताची दिया गया है, जिससे इसे इंद्रप्रमति (कुणि अथवा कुणीति) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इंद्रप्रमति को पृथु राजा की कन्या से वसु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके पुत्र का नाम उपमन्यु था। इस प्रकार वसिष्ठ, शक्ति, वसु, उपमन्यु एवं अन्य छः वसिष्ठ के वंशजों से 'वसिष्ठवंश' का प्रारंभ हुआ।

वसिष्ठ वैडव—एक आचार्य, जिसने 'वासिष्ठ साम' नामक साम की रचना कर, सुखसमृद्धि एवं ऐश्वर्य प्राप्त किया (पं. ब्रा. ११.८.१४)। वीड का पुत्र होने के कारण, इसे 'वैडव' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

वसिष्ठ श्रेष्ठभाज्—एक ऋषि, जो अयोध्या के मित्रसह कल्माषपाद राजा का पुरोहित था (म. आ. १६७. १५; १६८.१०)। महाभारत में अन्यत्र इसे 'ब्रह्मकोश' उपाधि प्रदान की गई है।

कल्माषपाद राजा ने एक दुष्टबुद्धि राक्षस के वशीभूत हो कर इसे नरमांसयुक्त भोजन खिलाया, जिस कारण इसने उसे नरमांसभक्षक होने का शाप दिया। बारह वर्षों के पश्चात् कल्माषपाद राजा शापयुक्त हुआ। तत्पश्चात् इसने उसकी पत्नी मदयन्ती को अश्मक नामक पुत्र उत्पन्न होने का वर दिया (ब्रह्मांड. ३.६३.१५; वा. रा. सुं. २४.१२)।

वसिष्ठ सुवर्चस्--एक ऋषि, जो हस्तिनापुर के संवरण राजा का पुरोहित था (म. आ. ८९.३६-४०)। यह सुदास राजा के पुरोहित वसिष्ठ ऋषि का पुत्र था, एवं इसके भाई का नाम शक्ति था।

पांचाल देश के राजा सुदास ने संवरण राजा को राज्य-भ्रष्ट किया। तदुपरान्त वसिष्ठ की सहाय्यता से ऋक्षपुत्र संवरण ने पुनः राज्य प्राप्त किया, एवं इसीकी सहाय्यता से विवस्वत् की कन्या तपती से उसका विवाह हुआ (म. आ. १८०)। कालोपरान्त संवरण के राज्य में अकाल

छा गया, जिस समय उसके न होते हुए भी इसने बारह वर्षों तक हस्तिनापुर के राज्य का कारोबार योग्य प्रकार से चलाया (म. आ. १६०-१६४)। तारकामय युद्ध के बाद, सृष्टि में महान अकाल आ गया, जिस समय इसने फल-मूल-औषधि आदि का निर्माण कर देव, मनुष्य एवं पशुओं के प्राणों की रक्षा की (ब्रह्मांड. ३.८. ८९.९०; म. शां. २२६.२७; अनु. १३७.१३)।

वसिष्ठ हिरण्यनाभ कौशल्य--एक आचार्य, जो जैमिनि नामक आचार्य का शिष्य था। जैमिनि ने इसे वेदों की पाँच सौ संहिताएँ सिखायी थीं, जो आगे चल कर इसने अपने याज्ञवल्क्य नामक शिष्य को प्रदान की (वायु. ८८.२०७)।

वसिष्ठपुत्र--वसिष्ठ ऋषि के ऊर्ज नामक पुत्र का नामान्तर, जो सप्तर्षियों में से एक था (वायु. ६२.१६)।

वसु--प्राचेतस दक्ष की कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी। विभिन्न कल्पों में इसने अनेकानेक अवतार लिये, जिस कारण इसे विभिन्न नाम प्राप्त हुए। महाभारत में प्राप्त इसके विभिन्न नाम निम्नप्रकार हैं:-१. शांडिल्या; २. श्वासा; ३. रता; ४. धूम्रा; ५. प्रभाता; ६. मनस्विनी। इन वसुओं को अनेकानेक पुत्र उत्पन्न हुए, जो वसु नामक देवतासमूह कहलाते है (भा. ६.६.४; ब्रह्मांड. २.९.५०; वसु. २. देखिये)।

२. एक देवतासमूह, जिसकी संख्या आठ होने के कारण ये 'अष्टवसु' नाम से प्रसिद्ध हैं (ऐ. ब्रा. २.१८; श. ब्रा. ४.५.७)।

तैत्तिरीय संहिता में इनकी संख्या ३३३ दी गयी हैं (तै. सं. ५.५.२)। ऋग्वेद में देवताओं का त्रिपदीय विभाजन निर्देशित है, जहाँ वसु, रुद्र एवं आदित्यों को क्रमशः पृथ्वी, अंतरिक्ष एवं स्वर्ग में निवास करनेवाले देव कहा गया है (ऋ. ७.३६.१४)। ब्राह्मणग्रंथों में वसु, रुद्र एवं आदित्यों की संख्या क्रमशः आठ, ग्यारह एवं बारह बतायी गयी है। इन्हीं देवों में द्यौः एवं पृथ्वी मिला कर देवों की कुल संख्या तैंतीस बतायी गयी है।

पौराणिक साहित्य में--इन ग्रंथों में वसुओं को धर्म एवं वसु के पुत्र माने गये हैं। किन्तु वहाँ वसु एक स्त्री न हो कर, कल्पभेदानुसार अनेकानेक स्त्रियाँ मानी गयी हैं (भा. ६.६.१०; ब्रह्मांड. २.३८.२; वसु १. देखिये)।

ऐश्वर्यप्राप्ति के लिए वसुओं की उपासना की जाती है (भा. २.३.३)। ये वासुदेव के अंश माने जाते हैं, एवं वैवस्वत मन्वन्तर के सात देवतासमूह में इनका निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. ५. २०-२१; ९.२९)।

वैदिक ग्रंथों में तथा पुराणों में, अग्नि को वसुओं का नायक बताया गया है (ब्रह्मांड. २. २७. २४; मत्स्य. ८.४)। देवासुर संग्राम में इन्होंने कालेय नामक दैत्यों से युद्ध किया था (भा. ८.१०.३४)। इन्हें साध्य देवों के बन्धु कहा गया हैं, एवं वसिष्ठ ऋषि से इन्हें लैंगिक समागम से पुनः जन्म प्राप्त होने का शाप प्राप्त हुआ था।

अष्टवसु--पुराणों में अष्टवसु नाम निम्नप्रकार दिये गये हैं:--१. अनल; २. अनिल; ३. अप्; ४. धर; ५. ध्रुव; ६; प्रत्यूष; प्रभास; ८. सोम।

परिवार--अष्टवसुओं की माता, पत्नियाँ एवं पुत्र आदि के बारे में विस्तृत जानकारी महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है (पृ. ८१२ पर दी गयी 'अष्टवसुओं का परिवार' की तालिका देखिये)।

भागवत में--इस ग्रंथ में अष्टवसुओं के नाम एवं परिवार के संबंध में अन्य सारे पुराण एवं महाभारत से विभिन्न जानकारी प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है:—

वसु	पत्नी	पुत्र
(१) द्रोण	अभिमति	हर्ष, शोक, भय।
(२) प्राण	ऊर्जस्वती	सह, आयु, पुरोजव।
(३) ध्रुव	धरणि	पुरस्थ देवता।
(४) अर्क	वासना	तर्ष।
(५) अग्नि	धसोर्धारा कृत्तिका	द्रविणक, स्कंद, विशाख।
(६) दोष	शर्वरी	शिशुमार
(७) वसु	आंगिरसी	विश्वकर्मन्
(८) विभावसु	उषा	व्युष्ट, रोचिष, आतप, पंचयाम।

(भा. ६.६.११-१६)।

३. वैवस्वत मन्वन्तर का देवगण।

४. प्रतर्दन देवों में से एक।

५. आद्य देवों में से एक।

६. दस विश्वेदेवों में से तीसरा देव। यह भृगु ऋषि का पुत्र था (मत्स्य. १९५.१३)।

७. ब्रह्मज्योति अग्नि का नामान्तर। पाठभेद-'वसुधाम' (ब्रह्मांड. २.१२.४३)।

अष्टवसुओं का परिवार

वसु का नाम	माता	पत्नी	पुत्र
(१) अनल	शांडिल्या		स्कंद, शाख, विशाख, नैगमेय।
(२) अनिल	श्वासा	शिवा (कृत्तिका) कल्याणिनी	मनोजव, जीव, अविज्ञातगति। रमण, शिशिर।
(३) अप् (अह)	रता		वैतण्ड्य (दंड); श्रम (शांत्र, शम), श्रांत (शांत); मुनि (ध्वनि, मणिवक्र), ज्योति।
(४) धर	धूम्रा	मनोहरा	शिशिर, रमण (द्रविण), प्राण, हुव्यवाह।
(५) ध्रुव	धूम्रा		काल।
(६) प्रत्यूष	प्रभाता		देवल।
(७) प्रभास	प्रभाता	वरस्त्री आंगिरसी (बृहस्पतिभगिनी)	विश्वकर्मन्।
(८) सोम (चंद्र)	मनस्विनी		वर्चस्, बुध, धर (धार), ऊर्मि, कालिल।

(ब्रह्मांड. ३,३.२१-२९; वायु. ६६.२०-२८; विष्णु. १.१५.१११-१२०; मत्स्य. ५.१७-२७; ब्रह्म. ३.३६-४४; ह. वं. १.३; म. आ. ६०. १७-२६)।

८. सोम की अनुचरी देवताओं में से एक।

९. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

१०. सावर्णि मनु का एक पुत्र (मत्स्य. ९.३३; मनु आदिपुरुष देखिये)।

११. स्वायंभुव मनु का एक पुत्र (मत्स्य. ९.५; मनु आदिपुरुष देखिये)।

१२. एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरूरवस् एवं उर्वशी का पुत्र था (मत्स्य. २४.३३)। पाठभेद- 'अमावसु'।

१३. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वत्सर राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम स्वर्वीथि था।

१४. (सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कुश राजा के चार पुत्रों में से एक था। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'अमावसु' एवं 'यशोवसु' कहा गया है। इसने गिरिव्रज नामक नगरी की स्थापना की, जो रामायणकाल में 'वसुमती' नाम से सुविख्यात थी (वा. रा. बा. ३२.७)।

१५. (सो. ऋक्ष.) चेदि देश के उपरिचर वसु राजा का नामांतर (उपरिचर देखिये)। भागवत एवं विष्णुमें इसे क्रमशः 'कृति' एवं 'कृतक' राजा का पुत्र कहा गया है।

१६. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो उत्तानपाद राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सुनृता था। एक बार पशुयज्ञ के संबंध में वादविवाद का निर्णय देने के लिए कई ऋषि इसके पास आये। उस समय इसने पशुयज्ञ हिंसक, अतएव त्याज्य होने का अपना मत प्रकट किया, जिस कारण ऋषियों ने इसे रसातल में जाने का शाप दिया। आगे चल कर तपस्या के कारण, इसे स्वर्गलोक की प्राप्ति हो गयी (मत्स्य. १४३.१८-२५)।

इसकी कन्या का नाम अच्छोदा-मत्स्यगंधा-सत्यवती था, जिसे पराशर ऋषि से व्यास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (मत्स्य. १४.१४)। स्कंद के अनुसार, इसके वीर्य से एक मत्स्यी के गर्भ से सत्यवती अथवा मत्स्यगंधा नामक कन्या का जन्म हुआ था (स्कंद ५.३.९७)।

१७. (सू. इ.) एक राजा, जो नृग राजा का पुत्र था।

१८. (सू. नृग.) एक राजा, जो सुमति राजा का पुत्र था।

१९. (सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं देवराक्षिता के पुत्रों में से एक था। कंस ने इसका वध किया।

२०. (सो. वसु.) एक राजा, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था। भागवत में इसकी माता का नाम नाग्नजिति दिया गया है (भा. १०.६१.१३)।

२१. (सो.) एक राजा, जो ईलिन एवं रथंतरी के पाँच पुत्रों में से एक था। इसके अन्य चार भाईयों के नाम दुष्यंत, शूर, भीम एवं प्रवसु थे (म. आ. ८९.१५)।

२२. कृमिकुल का एक कुलांगार राजा, जिसने दुर्व्यवहार के कारण अपने ज्ञातिबांधव एवं स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२.१३)। पुराणों में इसे चेदि देश का राजा एवं पृथु राजा का प्रपौत्र कहा गया है। इसके पुत्र का नाम उपमन्यु था, जिससे औपमन्यव कुल का निर्माण हुआ (मत्स्य. ५०.२५-२६)।

२३. एक राजा, जो भूतज्योति नामक राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रतीक था (भा. ९.२.१७-१८)।

२४. एक ऋषि, जो इंद्रप्रमति वसिष्ठ नामक ऋषि का पौत्र, एवं भद्र नामक ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम उपमन्यु था।

२५. एक ऋषि, जो जमदग्नि एवं रेणुका के पाँच पुत्रों में से एक था। इसके अन्य भाईयों के नाम रुमण्वत्, सुषेण, विश्वावसु एवं परशुराम थे। पिता की मातृवध संबंधी आज्ञा न मानने के कारण, इसे पिता के द्वारा शाप प्राप्त हुआ था। परशुराम के द्वारा उस शाप से इसका उद्धार हुआ।

२६. एक आंगिरसवंशीय ऋषि, जो पैल ऋषि का पिता था (म. स. ३०.३५)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह 'होता' था।

२७. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस् राजा के सात पुत्रों में से एक था (भा. ५.२०.१४; हिरण्यरेतस् देखिये)। कुशद्वीप का इसका राज्यविभाग इसीके ही नाम से सुविख्यात हुआ।

२८. एक यक्ष, मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१२३)।

२९. एक दैत्य, जो मुर दैत्य के पुत्रों में से एक था। कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.५९.१२)।

३०. एक वसु, जिसकी पत्नी का नाम आंगिरसी, एवं पुत्र नाम विश्वकर्मन् था (भा. ६.६.११; वसु २. देखिये)।

३१. कर्दम ऋषि के दस पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. २.१४.९)।

३२. मारीच कश्यप नामक ऋषि की पत्नी, जिसने सोम के लिए अपने पति का त्याग किया (मत्स्य. २३.२५)।

३३. एक ऋषि, जो भृगु वारुणि एवं पौलोमी के सात ऋषिपुत्रों में से एक था।

३४. एक ऋषि, जो कुणीति एवं पृथुकन्या के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम उपमन्यु था।

३५. काश्मीर देश का एक राजा, जिसने पुष्करतीर्थ पर तपस्या की थी। इसने पुंडरिकाक्ष के स्तोत्र का पठन किया, जिस कारण इसे मोक्ष की प्राप्ति हुई (वराह. ५-६)।

अपने पूर्वजन्म में, चाक्षुष मनु के राज्यकाल में यह ब्रह्मा का पुत्र था। एक बार इसने रैभ्य ऋषि के द्वारा बृहस्पति को प्रश्न किया, 'कर्म से मोक्ष प्राप्त होता है, या ज्ञान से?' उस समय बृहस्पति ने इसे जवाब दिया, 'ज्ञानपूर्वक किये कर्म से मनुष्य को मोक्षप्राप्ति होती है'। उस जन्म में इसके पुत्र का नाम विवस्वत् था।

अपने इस पूर्वजन्म का स्मरण एक व्याध के द्वारा इसे हुआ, जिस कारण इसने उस व्याध को अगले जन्म में 'धर्मव्याध' होने का वर प्रदान किया।

३६. केरल देश में रहनेवाला एक ब्राह्मण (पद्म. उ. ११९)। पापकर्म के कारण इसे पिशाचयोनि प्राप्त हो गयी। पश्चात् गंगोदक से यह मुक्त हुआ।

३७. वेंकटाचल पर रहनेवाला एक निषाद। इसकी पत्नी का नाम चित्रवती था, जिससे इसे वीर नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। विष्णु की उपासना करने से यह मुक्त हुआ।

वसु काश्यप—रोहित मन्वन्तर का एक ऋषि (ब्रह्मांड ४.१.६२)।

वसु भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.८०-८२)।

वसुकर्ण वासुक्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.६५.६६)।

वसुकृत वासुक्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.२०-२६)।

वसुक्र ऐंद्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.२७-२९)। किन्तु ऐतरेय अरण्यक में इन सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इसे नहीं, बल्कि इसकी पत्नी को दिया गया है (ऐ. आ. १.२.२; सां. आ. १.३)।

एक बार इसके द्वारा किये गये यज्ञ में, इंद्र गुप्तरूप में उपस्थित हुआ। किन्तु इसकी पत्नी के द्वारा अनुरोध

किये जाने पर, अपने वास्तव रूप में इंद्र ने इसे दर्शन दिया। उस समय इंद्र ने इसके साथ किया हुआ संवाद ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.२८)।

वसुक्र वासिष्ठ--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७. २८-३०)।

वसुक्रपत्नी--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री (ऋ. १०.२८. १)।

वसुचंद्र--एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३७)।

वसुज्येष्ठ--(शुंग. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुष्यमित्र राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७२. २८)। भागवत, विष्णु एवं ब्रह्मांड में इसे 'सुज्येष्ठ' कहा गया है। इसने सात वर्षों तक राज्य किया।

वसुद--एक देव, जो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.१.२९)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरुकुत्स एवं नर्मदा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १२. ३६)। इसे 'त्रसदस्यु' नामांतर भी प्राप्त था।

वसुदत्त--एक राजा, जो अपने पूर्वजन्म में सुव्रत नामक राजा था। विष्णु के आशीर्वाद से इसे इंद्रपद की प्राप्ति हुई (पद्म. सृ. २२; भू. ५)।

वसुदा--मालि नामक राक्षस की पत्नी।

२. अंगिरस् ऋषि के सुभा नामक पत्नी का नामान्तर (म. व. २०८.१; शिवा देखिये)।

वसुदान--शिवदेवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६. ३२)।

२. एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस् राजा के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२०.१४)।

३. पांशुराष्ट्र का अतिरथि सम्राट्, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६८.२५)। इसे 'वसुमत्' नामान्तर भी प्राप्त था (म. स. ४.५१*)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, इसने २६ हाथी, २००० घोडे आदि भेंटवस्तुएँ उसे अर्पित की थीं (म. स. ४८.२६-२७)।

भारतीय युद्ध में, इसने युधिष्ठिर के साथ युद्धभूमि में प्रवेश किया था (म. उ. १४९.५८), जहाँ इसने काफ़ी पराक्रम दिखाया (म. क. ४.८६)। इस युद्ध में यह एवं इसका पुत्र क्रमशः द्रोण एवं कर्ण के द्वारा मरे गयें (म. द्रो. १६४.८४; क. ४.७४)।

४. पाण्डवों के पक्ष का अन्य एक राजा, जो द्रोण के ही द्वारा मारा गया (म. द्रो. २०.४३)।

५. (सो. कुरु. भविष्य,) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार बृहद्रथ राजा का पुत्र था। मत्स्य एवं भागवत में इसे क्रमशः 'वसुदामन्' एवं 'सुदास' कहा गया है (मत्स्य. ५०.८५)।

वसुदानपुत्र--कौरवपक्ष का एक राजा, जिसने भारतीय युद्ध में काशिराज का पुत्र अभिभू का वध किया था (म. क ४.७४)।

वसुदामन्--बृहद्रथपुत्र वसुदान राजा का नामान्तर।

वसुदामा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.५)।

वसुदेव--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो श्रीकृष्ण का पिता था। यह मथुरा के उग्रसेन राजा का मंत्री, एवं (पांडुपत्नी) कुंती का बन्धु था। इसके पिता का नाम शूर (देवमीढ) एवं माता का नाम मारिषा था। इसके जन्म के समय देवताओं ने आनक एवं दुंदुभियों का घोष किया, जिस कारण इसे 'आनकदुंदुभि' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ९.२४.२८; वायु. ९६.१४४; ब्रह्म. १४)।

कृष्णजन्म--उग्रसेन के भाई देवक के सात कन्याओं के साथ इसका विवाह हुआ था, जिसमें देवकी प्रमुख थी। इस विवाह के समय, देवकी का चचेरा भाई एवं उग्रसेन राजा का पुत्र कंस, स्वयं रथ का सारथ्य करने बैठा था। बारात के समय, देवकी के आठवें पुत्र के द्वारा कंस का वध होने की आकाशवाणी उसने सुनी, जिस कारण कंस ने इसे एवं देवकी को कारागृह में रख दिया। किन्तु इसके आठवें पुत्र श्रीकृष्ण का जन्म होते ही, यह रात्री में ही व्रज में नंद गोप के घर गया, एवं वहाँ श्रीकृष्ण को छोड़ कर उसके बदले नंद गोप एवं यशोदा की नवजात कन्या ले आया। यशोदा एवं देवकी सहेलियाँ थी, जिन्होंने यह संकेत पहले से ही निश्चित किया था (दे. भा. ४.२३)।

पश्चात् कंस ने इसे मुक्त किया, एवं इसने गर्ग ऋषि के द्वारा नंद गोप के घर में रहनेवाले अपने बलराम एवं कृष्ण इन दो पुत्रों के जातकर्मादि संस्कार किये (भा. १०.५.२०-२१)। भागवत के अनुसार, स्वयं श्रीकृष्ण ने इसकी कंस के कारागृह से मुक्तता की थी (भा. १०. ३६.१७-२४)।

पराक्रम--पौण्ड्रक वासुदेव राजा के साथ यादवों का युद्ध हुआ था, जिस समय यह भी उपस्थित था। नारद ने इसे भागवतधर्म का उपदेश किया था, जिसमें उसने

इसे निमि जनक एवं नौ योगेश्वरों के बीच हुआ तत्त्वज्ञान-पर उपदेश कथन किया था (भा. ११.२-५)।

अश्वमेधयज्ञ—इसने स्यमन्तपंचकक्षेत्र में अश्वमेध यज्ञ किया था, जिस समय इसके अश्वमेधीय अश्व का जरासंध ने हरण किया था (म. स. ४२.९)। किन्तु श्रीकृष्ण ने वह अश्व लौट लाया, एवं इसका यज्ञ भलीभाँति समाप्त हुआ। इस यज्ञ के समय इसने नंद गोप का विपुल भेटवस्तुएँ दे कर सत्कार किया था (भा. १०.६६)।

मृत्यु—कृष्ण की मृत्यु की वार्ता सुन कर, यह अत्यंत उद्विग्न हुआ (म. मौ. ५)। इसने अपने पुत्रों में से सौमी एवं कौशिक को अपने भाई वृक के गोद में दिया, एवं प्रभासक्षेत्र में देहत्याग किया। पश्चात् अर्जुन की नेतृत्व में, एक अत्यंत मौल्यवान् मनुष्यवाहक यान से इसका शव स्मशान में ले जाया गया। इसकी स्मशान-यात्रा के अग्रभाग में इसका आश्वमेधिक छत्र था, एवं पीछे इसके स्त्रियों का परिवार था। इसके अत्यंत प्रिय स्थान पर इसका दाहकर्म किया गया (म. मौ. ८.१९-२३)। इसकी पत्नियों में से देवकी, भद्रा, रोहिणी एवं मदिरा आदि स्त्रिया इसके शव के साथ सती हो गयीं।

परिवार—इसकी पत्नियाँ एवं परिवार की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त हैं, किंतु वह एक दूसरे से मेल नही खाती।

पत्नियाँ—इसकी पत्नियों की संख्या वायु एवं हरिवंश में क्रमशः १३ एवं १४ दी गयी हैं (वायु. ९६.१५०-१६१; ह. वं. १.३५.१)। मत्स्य एवं भागवत में पत्नियों की कुल संख्या अप्राप्य हैं, किंतु भागवत में इसके १३ पत्नियों का अपत्यपरिवार दिया गया हैं।

इसकी पत्नियों में निम्नलिखित स्त्रिया प्रमुख थीः-

(१) देवककन्याएँ—१. देवकी; २. सहदेवा; ३. शांतिदेवा, जिसे वायु एवं मत्स्य में क्रमशः 'शार्ङ्गदेवा' एवं 'श्राद्धदेवा' कहा गया है; ४. श्रीदेवा; ५. देवरक्षिता; ६. वृकदेवा (धृतदेवा); ७. उपदेवा।

(२) पूरुकुलोत्पन्न स्त्रियाँ—१. रोहिणी, जिसे हरिवंश एवं ब्रह्मांड में बाह्लीक राजा की, एवं वायु में वाल्मीक राजा की कन्या कहा गया है; २. मदिरा (इंदिरा-ह. वं.); ३. भद्रा; ४. वैशाखी (वैशाली-विष्णु.); ५. सुनाम्नी।

उपर्युक्त पत्नियों में से वैशाखी एवं सुनाम्नी का निर्देश भागवत में अप्राप्य हैं, जहाँ उनके स्थान पर 'रोचना' एवं 'इला' नाम प्राप्त हैं।

(३) भोगांगना—१. सुगंधा (सुतनु-ह. वं.); २. वनराजी (रथराजी-मत्स्य.; वडवा-ह. वं.)। भागवत एवं विष्णु में इनके निर्देश अप्राप्य हैं।

(४) अन्य पत्नियाँ—१. वैश्या; २. कौसल्या।

पुत्र-(१) रोहिणीपुत्र—१. राम; २. सारण; ३. दुर्दम (दुर्मद); ४. शठ (गद-भा., निशव-वायु.); ५. दमन (विपुल-भा., भद्राश्व-विष्णु); ६. शुभ्र (सुभ्रु-मत्स्य., श्वभ्र-ह. वं., कृत-भा., भद्रबाहु-विष्णु.); ७. पिंडारक (कृत-भा., दुर्गमभूत-विष्णु.); ८. कुशीतक (उशीगर-ह. वं., महाहनू-मत्स्य., सुभद्र-भा.)।

सारे पुराणों में रोहिणी की पुत्रसंख्या आठ बतायी गयी हैं। केवल भागवत में उसके बारह पुत्र दिये गयें है, जिनमें से उर्वरीत चार निम्नप्रकार हैं:— १. भद्रवाह; २. दुर्मद, ३. भद्र, ४. भूत।

इनके अतिरिक्त रोहिणी को दो निम्नलिखित कन्याएँ भी थी, जिनका उल्लेख हरिवंश में प्राप्त हैं:- १. चित्रा (चित्राक्षी-मत्स्य.), २. सुभद्रा (चित्राक्षी- मत्स्य.)।

(२) मदिरापुत्र—१. नंद, २. उपनंद; ३. कृतक (स्थित-वायु.); ४. कुक्षिमित्र; ५. मित्र; ६. पुष्टि; ७. चित्र; ८. उपचित्र; ९. वेल; १०. तुष्टि।

इनमें से पहले तीन पुत्रों का निर्देश हरिवंश एवं मत्स्य के अतिरिक्त बाकी सारे पुराणों में प्राप्त हैं। ४-८ पुत्रों के नाम केवल वायु एवं विष्णु में प्राप्त है। ९-१० पुत्रों के नाम केवल विष्णु में प्राप्त हैं। वायु में इन दो पुत्रों के स्थान पर 'चित्रा' एवं 'उपचित्रा' नामक दो कन्याओं का निर्देश प्राप्त हैं। भागवत में ४-१० पुत्रों के नाम अप्राप्य हैं, किंतु वहाँ 'शूर' आदि बिल्कुल नये नाम दिये गयें हैं।

(३) भद्रापुत्र—(अ) वायु एवं ब्रह्मांड में—१. चित्र; २. उपचित्र; ३. सत्वदंत; ४. महौजस्। (ब) विष्णु में—१. उपनिधि; २. गद।

(४) वैशाखी (वैश्या) पुत्र—कौशिक, जिसे भागवत में कौसल्यापुत्र कहा गया है।

(५) सुनाम्नीपुत्र—१. वृक; २. गद (ह. वं.)।

(६) सहदेवापुत्र—(अ) ब्रह्मांड में—१. पूर्व। (ब) भागवत में—१. पुरु; २. विश्रुत आदि (क) वायु में—१. भयासख।

(७) शांतिदेवापुत्र (अ) ब्रह्मांड में- १. जनस्तंभ। (ब) भागवत में —१. श्रम; २. प्रतिश्रुत आदि। (क) हरिवंश में—१. भोज; २. विजय।

(८) श्रीदेवापुत्र--(अ) भागवत में--१. वसु; २. हंस; ३. सुवंश। (ब) ब्रह्मांड में--१. मंदक।

(९) देवरक्षितापुत्र--(अ) भागवत में--१. उपासंग; २. वसु। इन दोनों पुत्रों का कंस ने वध किया (ब) हरिवंश में--१. उपासंगधर। (क) भागवत में--१. गद। (ड) मत्स्य में--एक कन्या, जिसका कंस ने वध किया।

(१०) वृकदेवापुत्र-(अ) हरिवंश एवं ब्रह्मांड में-१. अगावह। (ब) वायु में-१. स्वगाहष; २. अगाहिन्। (क) मत्स्य में--१. अवागह; २. नंदक। (ड) भागवत में--विपुष्ठ।

(११) उपदेवापुत्र--(अ) वायु एवं मत्स्य में--१. विजय; २. रोचन (रोचमत्); ३. वर्धमत्; ४. देवल। (ब) भागवत में--१. कल्प; २. वृक्ष।

(१२) देवकीपुत्र (अ) मत्स्य में--१. सुषेण; २. कीर्तिमत्; ३. भद्रसेन; ४. भद्रविदेह (भद्रदेव-ब्रह्मांड; भद्रविदेक-वायु; भद्र-भागवत.); ५. ऋषिदास (ऋजुकाय-ब्रह्मांड.; यजुदाय-वायु; ऋजु-भागवत); ६. दमन (उदर्षि-ब्रह्मांड.; तदय-वायु; संमर्दन-भागवत.); ७. गवेषण। ये सारे पुत्र कंस के द्वारा मारे गये।

इनके अतिरिक्त देवकी के कृष्ण एवं सुभद्रा नामक संतानों का निर्देश वायु एवं मत्स्य में, तथा संकर्षण नामक पुत्र का निर्देश भागवत एवं विष्णु में प्राप्त है।

(१३) ताम्रापुत्र--सहदेव।

(१४) सुगंधापुत्र--१. पुंड्र, जो राजा बन गया; २ कपिल, जो वन में गया।

(१५) वनराजीपुत्र--१. जरस्, जो धनुर्विद्याप्रवीण था, किन्तु कालोपरांत निषाद बन गया (ब्रह्मांड. ३.७१; वायु. ९६.१५९-२१४; मत्स्य. ४६; भा. ९.२४.२७-२८; विष्णु. ४.१५; ह. वं. १.३५.१-१०)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार चंचु राजा का पुत्र था। वायु एवं भागवत में इसे 'सुदेव' कहा गया है।

३. एक दुराचारी ब्राह्मण, जो अपने ईश्वरभक्ति के कारण, अगले जन्म में असुरराज प्रल्हाद बना (पद्म. उ. १७४)।

वसुदेव काण्व--(कण्व. भविष्य.) काण्वायन राजवंश का आद्य राजा, जो शुंग राजा देवभूति (देवभूमि) का अमात्य था। देवभूति का वध कर यह शुंगराज्य का अधिपति बना। इसने पाँच वर्षों तक राज्य किया। इसके पुत्र का नाम भूमित्र था (भा. १२.१.१९-२०; मत्स्य. २७२.३२; ब्रह्मांड. २.७४.१५६)।

वसुदेवा--गंदिनी की कन्या (वायु. ९६.१११)।

वसुंधर--शाल्मलिद्वीप में रहनेवाला एक लोकसमूह (भा. ५.२०.११)।

वसुप्रभ--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५८)।

वसुभृद्यान--(स्वा.) स्वायंभुव मन्वन्तर के वसिष्ठ ऋषि के सात पुत्रों में से एक। इसकी माता का नाम ऊर्जा था (भा. ४.१.४१)। कई अभ्यासकों के अनुसार 'वसुभृद्यान' एक व्यक्ति न हो कर, यहाँ 'वसुभृत्' एवं 'यान' ऐसे दो व्यक्तियों के नाम की ओर संकेत किया गया है।

वसुमत्--वैवस्वत मनु के पुत्रों में से एक।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार श्रुतायु राजा का पुत्र था।

३. जमदग्नि एवं रेणुका के वसु नामक पुत्र का नामान्तर (वसु २५. देखिये)

४. कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक।

५. युधिष्ठिर की सभा का एक राजा (म. स. ४.३८)। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४.१८)।

६. (सू. निमि.) एक जनकवंशीय राजकुमार, जिसे एक ऋषि के द्वारा धर्मज्ञान प्राप्त हुआ था (म. शां. २९७.२)।

७. (सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय वसुमनस् कौसल्य राजा का नामान्तर।

वसुमती--वालेय गंधर्वों की एक कन्या, जिससे आगे चल कर 'वसुमती सूतगण' की उत्पत्ति हुई (वायु. ६९.२१-२३)।

२. पृथ्वी का नामान्तर (वायु. ९७.१६)।

वसुमनस्--वैवस्वत मनु के वसुमत् नामक पुत्र का नामान्तर (भा. ८.१३.३)।

२. जमदग्नि के वसु नामक पुत्र का नामान्तर (भा. ९.१५.१३)।

३. श्रीकृष्णपुत्र वसुमत् का नामांतर (भा. १०.६१.१२)।

४. एक सप्तर्षि, जो वैवस्वत मन्वन्तर में उत्पन्न वसिष्ठ के सात पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.३८.२९)। भागवत में इसे वसुमत् कहा गया है।

५. (सो. पुरूरवस्.) श्रुतायु राजा के वसुमत् नामक पुत्र का नामान्तर।

६. युधिष्ठिर की सभा का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. स. ४.५१*, उ. ४.२१)।

वसुमनस् कौसल्य—(सू. इ.) कोसल देश का एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार हर्यश्व राजा का पुत्र था। ययाति राजा की कन्या माधवी इसकी माता थी। वायु में इसे वसुमत् कहा गया है (वायु. ८८. ७६)। इसके भाइयों के नाम अष्टक वैश्वामित्रि, प्रतर्दन, एवं शिबि औशीनर थे (म. व. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ६)।

ययाति को पुण्यदान--एक बार यह अपने भाइयों के साथ यज्ञ कर रहा था, जहाँ स्वर्ग से भ्रष्ट हुआ इसका मातामह ययाति आ गिरा। पश्चात् अपनी माता माधवी की आज्ञा से, इन्होंने अपना पुण्य ययाति को प्रदान किया, जिस कारण उसे पुनः एक बार स्वर्ग की प्राप्ति हुई (मत्स्य. ३५.५; माधवी देखिये)। ययाति राजा को पुण्यफल प्रदान करने के कारण, यह 'दानपति' नाम से सुविख्यात हुआ।

संवाद—इसने बृहस्पति ऋषि से राजधर्म का ज्ञान प्राप्त किया था (म. शां. ६८)। वामदेव ऋषि ने इसे राजनीति कथन की थी (म. शां. ९२-९४)। तीर्थयात्रा एवं विद्वत्सहवास के कारण, इसने काफ़ी पुण्यसंचय किया था, जिस कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (मत्स्य. ४२.१४)।

यह यमसभा का सभासद था (म. स. ८.१३)। घोषयात्रा युद्ध में अर्जुन एवं कृप का संग्राम देखने के लिए, यह इंद्र के रथ पर आरूढ हो कर उपस्थित हुआ था (म. वि. ५१.९-१०)।

वसुमनस् रौहिदश्व--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०. १७९.३)।

वसुमित्र—एक क्षत्रिय राजा, जो दनायुपुत्र विक्षर नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय-युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. ६८.४१)।

२. (शुंग. भविष्य.) एक शुंगवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार सुज्येष्ठ राजा का, वायु के अनुसार पुष्पमित्र का, एवं मत्स्य के अनुसार वसुज्येष्ठ राजा का पुत्र था। इसने दस वर्षों तक राज्य किया। इसके पुत्र का नाम भद्रक (उदंक) था (भा. १२.१.१७)।

वसुरुच्—एक आचार्य (ऋ. ९.११०.६)।

वसुरुचि—एक यक्ष, जो कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था। इसीके ही वेष में यक्ष ने ऋतुस्थला उपभोग लिया था (वायु. ६९.१४०)।

२. एक अप्सरा (ब्रह्मांड. ३.७.११)।

वसुरोचिस् आंगिरस—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ.८. ३४.१६)। लुडविग इन्हें हज़ार गायकों का एक परिवार मानते है, जिन्होंने इंद्र से विपुल संपत्ति प्राप्त की थी (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद. ३.१६२)। किन्तु ग्रिफिथ इस शब्द का एकवचनी रूप ग्राह्य मानते है, एवं इसे एक राजा समझते है (ग्रिफिथ, ऋग्वेद के सूक्त. २. १७५)।

वसुश्री—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१२)। पाठभेद-'केतकी'।

वसुश्रुत आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ३-६)।

वसुषेण--अंगराज कर्ण का मूल नाम, जो अधिरथ सूत एवं राधा के द्वारा उसकी बाल्यावस्था में रखा गया था।

वसुहोम—अंगदेश का एक प्राचीन राजा, जिसे 'वसुहुम' नामान्तर प्राप्त था। मुंजपृष्ठ पर्वत पर तप करते समय, मांधातृ राजा ने इसे दण्डनीति के संबंध में उपदेश प्रदान किया था (म. शां. १२२)।

वसूयव आत्रेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. २५-२६)।

वसोर्धारा-अग्नि नामक वसु की पत्नी (भा.६.६.१३)।

वस्तु—(सो. क्रोष्टु.) यादव राजा बभ्रु का नामांतर (बभ्रु २. देखिये)। वायु में इसे लोमपाद राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ९५.३७)।

वस्वनंत—(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार उपगुप्त राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम युयुध था (भा. ९.१३.२५)।

वहीनर--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार दुर्दमन राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार उदयन राजा का पुत्र था। विष्णु में इसे अहीन कहा गया है। इसके पुत्र का नाम दंडपाणि था (भा. ९.२२.४३)।

२. यमसभा का एक क्षत्रिय (म. स. ८. १५)। पाठभेद-'इषीरथ'। यह 'वह+नर'(= नरवाहन) शब्द का फारसी रूपान्तर होगा।

वह्नि—शिवदेवों में से एक।

२. (सो. तुर्वसु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार तुर्वसु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भर्ग (गोभानु) था (भा. ९.२३.२६; ब्रह्मांड. ३.७४.१)।

३. (सो. कुकुर.) एक राजा, जो कुकुर राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम विलोमन् था। विष्णु में इसे धृष्ट कहा गया है (धृष्ट ५. देखिये)।

४. कृष्ण एवं मित्रविंदा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१६)।

५. रामसेना एक वानर।

६. अग्नि का नामांतर (अग्नि ५. देखिये)।

वाकय--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाका--माल्यवत् राक्षस की कन्या, जो विश्रवस् ऋषि की चार पत्नियों में से एक थी। महाभारत में विश्रवस् ऋषि के पत्नियों के पुष्पोत्कटा, राका एवं मालिनी ये तीन ही नाम प्राप्त है। किन्तु ब्रह्मांड एवं वायु में विश्रवस् ऋषि की चतुर्थ पत्नी वाका बतायी गयी है (ब्रह्मांड. ३.८.३९-५६; वायु. ७०.३४-५०)। इसके त्रिशिरस्, दूषण एवं विद्युत्जिह्व नामक तीन पुत्र, एवं अनुपालिका नामक कन्या थी।

वाक्पति--सत्यदेवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.३४)।

वागायनि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वागिंद्र--एक ऋषि, जो गृत्समदवंशीय प्रकाश ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रमति था। यह वीतहव्य नामक ब्रह्मक्षत्रिय के वंश में उत्पन्न हुआ था (म. अनु. ३०.६३; वीतहव्य देखिये)।

वाग्ग्रंथि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद--'वाहुरि'।

वाग्दुष्ट--कौशिक ऋषि के सात पुत्रों में से एक (मत्स्य. २०.३)। इसके कनिष्ठ भाई का नाम पितृवर्तिन् था (पितृवर्तिन् देखिये)।

वाग्मिन्--(सो. पूरु.) एक राजा, जो पूरुराजा के पौत्र मनस्यु के तीन पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम सौवीरी था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम सुभ्रू एवं संहनन थे (म. आ. ८९.७)।

वाच--सावर्णि मनु के नौ पुत्रों में से एक (वायु. १००.२२)।

वाच आम्भृणी--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री (ऋ. १०. १२५)। इसके द्वारा रचित ऋग्वेद का सूक्त तेजस्वी विचारों से ओतप्रोत भरा हुआ है, जहाँ इसने वाणी का सामर्थ्य निम्नलिखित शब्दों मे बताया है, 'जो ज्ञान देव एवं मानवों के लिए अप्राप्य है, वह मैं बता सकती हूँ। इस ज्ञान के कारण, किसी भी व्यक्ति को मै श्रेष्ठ बना सकती हूँ, ब्राह्मण बना सकती हूँ, ऋषि बना सकती हूँ, बुद्धिमान् बना सकती हूँ। मेरे पास रुद्र का धनुष सदैव सज्ज है, जिसकी सहाय्यता से मैं समस्त ब्रह्मद्वेष्टा शत्रुओं का नाश कर सकती हूँ' (ऋ. १०. १२५.५-७)।

वाचःश्रवस्--शिखंडिन् नामक शिवावतार का शिष्य, जो अठारहवें द्वापारयुग में उत्पन्न हुआ था (वायु. २३. १८३)।

वाचक्नवी--गार्गी नामक ब्रह्मवादिनी स्त्री का पैतृक नाम (बृ. उ. ३.६.१; ८.१)। 'वचक्नु' का वंशज होने से इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वाचस्पत--अलीकयु नामक आचार्य का पैतृक नाम (सां. ब्रा. २६.५; २८.४)।

वाचावृद्ध--भौत्य मन्वन्तर का एक देवगण (ब्रह्मांड. ४.१.१०७)।

वाच्य--प्रजापति नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

वाच अथवा **वाजिन्**--सावर्णि मनु के नौ पुत्रों में से एक।

वाजंभर--सप्ति नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

वाजरत्नायन--सोमशुष्मन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२१.५)।

वाजश्रव-अंगिरस् कुल में उत्पन्न हुआ एक ऋषि। इसे वायुपुराण की संहिता निर्यन्तर नामक आचार्य से प्राप्त हुई, जो आगे चल कर इसने सोमशुष्म नामक शिष्य को प्रदान की (ब्रह्मांड. २.३५.१२२; वायु. १०३.६४)। इसके नाम के लिए 'वाजिश्रव' पाठभेद भी प्राप्त है।

वाजश्रवस्-- एक आचार्य, जो जिह्वावत् बाध्योग नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.४.३३ माध्यं.) इसके शिष्य का नाम कुश्रि था। नचिकेतस् इसका पुत्र था। पुराणों में इसे ऋषिक एवं चौवीसवाँ वेद व्यास कहा गया है।

२. एक व्यास, जो बाईसवें द्वापारयुग में उत्पन्न हुआ था।

वाजश्रवस--कुश्रि नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.५.५.१)। नचिकेतस् का पैतृक

नाम भी यही बताया गया है (तै. ब्रा. ३.११.८.१)। वाजश्रवस् के वंशज होने से उन्हें वाजश्रवस पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. एक ऋषिकुल, जो गोतम कुल में उत्पन्न हुआ था (तै. ब्रा. ३.११.८)। इस कुल के लोग अत्यंत पूज्य माने जाते थे (तै. ब्रा.१.३.१०३)।

वाजसनेयि अथवा **वाजसनेय**—याज्ञवल्क्य नामक सुविख्यात आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.३.७; ५. ३ काण्व; जै. ब्रा. २.७६)। इसकी शिष्यपरंपरा 'वाजसनेयिन' नाम से सुविख्यात है (अनुपद. सूत्र. ७.१२.८.१), जिसमें याज्ञवल्क्य के पंद्रह शिष्य प्रमुख थे। एक शाखाप्रवर्तक आचार्य के नाते, याज्ञवल्क्य का निर्देश पाणिनि के अष्टाध्यायी में प्राप्त है (पाणिनि देखिये)।

२. एक आचार्यसमूह, जो व्यास की यजुःशिष्य परंपरा·में से याज्ञवल्क्य नामक आचार्य के पंद्रह शिष्यों से बना हुआ था।

याज्ञवल्क्य ने सूर्य से यजुःसंहिता को प्राप्त किया था। आगे चल कर उसने उस संहिता के पंद्रह भाग किये, एवं वे अपने काण्व, माध्यंदिन आदि शिष्यों में बाँट दिये। इसी कारण याज्ञवल्क्य के ये पंद्रह शिष्य 'वाजसनेय' नाम से सुविख्यात हुए। याज्ञवल्क्य के ही कारण, शुक्लयजुर्वेदसंहिता 'वाजसनेयि संहिता' नाम से प्रसिद्ध हुई है।

वाजिजि—मरीचिगर्भ देवों में से एक (ब्रह्मांड. ४.१. ५८)।

वाजिन्-सावर्णि मनु के वाज नामक पुत्र का नामांतर।

२. याज्ञवल्क्य के पंद्रह शिष्यों का सामूहिक नाम (वायु. ६१.२४-२६; वाजसनेयि २. देखिये।

वाजिश्रवस्—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाज्य—केतु नामक आचार्य का पैतृक नाम (वं. ब्रा. १)।

वाटधान--एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५८)। इसका राज्य उत्तर भारत में बसा था, एवं भारतीययुद्ध के समय वह कौरवों की सेना से घिरा गया था (म. उ. १९.३०)। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था।

२. एक लोकसमूह, जिसे नकुल ने अपने पश्चिम-दिग्विजय के समय जीता था (ब्रह्मांड २.१६.४६; म. स. २९.७)। भारतीययुद्ध में, ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे, एवं भीष्म के द्वारा निर्मित गरुड़-व्यूह के शिरोभाग में खड़े हुए थे (म. भी. ५२.४)। अर्जुन ने इन लोगों का संहार किया था (म. क. ५१.१६)।

वाटिक--पराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाडव—एक व्याकरणकार, जो पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में निर्दिष्ट सात वार्तिककारों में से एक था (महा. ८.२.१०६)। उस ग्रंथ में अन्यत्र इसका निर्देश दो बार किया गया है, जहाँ इसे सौर्यनगर का रहिवासी कहा गया है (महा. ३.२.१४;७.३.१)। कैयट के अनुसार, सौर्य एक नगर का ही नाम था।

वाडोहवि—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वात--(सो. क्रोष्टु) एक राजा, जो वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

२. एक क्रूरकर्मा राक्षस,जो यातुधान राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम विरोध था (ब्रह्मांड ३.७.९६)।

३. स्वारोचिष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

वातघ्न-विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

वातजूति (वातरशन)--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.२)।

वातपति--द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित एक राजा (म. आ. २०१.२०)।

वातरशन—नग्न मुनियों का एक समुदाय (ऋ. १०.१३६.१०२; तै. आ. १.२३.२; २४.४; २. ७.१)। इससे प्रतीत होता है कि, भारत में आज दिखाई देनेवाले नग्न गोसाइयों की परंपरा काफ़ी पुरातन है।

ऋग्वेद में निम्नलिखित ऋषियों को 'वातरशन' उपाधि प्रदान की गई है:—ऋष्यशृंग, एतश, करिक्रत, जूति, वातजूति, विप्रजूति (ऋ. १०. १३६)।

वातवत्--एक ऋषि, जो दृति नामक आचार्य का मित्र था (पं. ब्रा. २५.३.६)। एक बार इसने एवं दृति ने एक यज्ञ का आयोजन किया। किन्तु इसने उस यज्ञ का कार्य बीच में ही छोड़ दिया। इस कारण, इसे अनेकानेक कष्टों का सामना करना पड़ा, एवं इसके वंशज 'वातवत्-गण' दृति के वंशजों (दार्तेयों) की अपेक्षा कम संपन्न हो सके।

वातवेग--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया।

२. गरुड़ की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९. १०)।

वातस्कंध—पुराणों में निर्दिष्ट एक देवतासमूह, जिस में सात मरुत् गणों के देवता समविष्ट हैं (ब्रह्मांड. २.५. ७८-८०, मरुत् देखिये)।

२. इन्द्रसभा का एक महर्षि (म. स. ७.१२)।

वातापि—एक असुर, जो ह्राद नामक असुर का पुत्र, एवं इल्वल नामक असुर का छोटा भाई था। अगस्त्य ऋषि के द्वारा, इसका एवं इल्वल का गर्वहरण होने की कथा महाभारत में प्राप्त है (म. व. ९७.४९३*)। पुराणों में इसे विप्रचित्ति राक्षस का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ६.२६; विष्णु. १.२१.११)।

ब्रह्मांड में इसे तेरह सैंहिकेय असुरों में से एक कहा गया है, एवं परशुराम के द्वारा इसका वध होने की कथा वहाँ प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६.१८-२२)।

२. एक राक्षस, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३. ६.१८-२२)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

वातायन—उल नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम।

वातावत—वृषशष्मन् नामक आचार्य का पैतृक नाम।

वात्सतरायण—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वात्सप्र—एक व्याकरणकार, जिसके 'य' कार एवं 'व' कार के सूक्ष्म उच्चारण के संबंधित मतों का निर्देश 'तैत्तिरीय-प्रातिशाख्य' में प्राप्त है (तै. प्रा. १०.२३)

वातिक—एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध के काल में वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण का काम करता था।

दुर्योधन एवं युधिष्ठिर ने क्रमशः 'वैष्णवयज्ञ' एवं राजसूय यज्ञ किये। इन दोनों यज्ञसमारोह में वातिक लोग उपस्थित थे, जिन्होंने सारे कुरुराज्य में वृत्त फैलाया कि, युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के हिसाब में दुर्योधन का वैष्णव यज्ञ बिलकुल फीका, अतएव अयशस्वी था (म. व. २४३.३-४)।

भारतीय युद्ध के निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण प्रसंगों में भी वातिकों के उपस्थित होने का निर्देश प्राप्त हैः-१. जयद्रथ-वध के समय हुआ संकुलयुद्ध (म. द्रो. १२०.७२); २. अश्वत्थामा-द्रुपदयुद्ध (म. द्रो. १३५. ३९); ३. दुर्योधन-भीम द्वंद्वयुद्ध (म. श. ५४); ४. दुर्योधन की मृत्यु (म. श. ५७. ५९)।

आगे चल कर वातिकों के द्वारा ही, दुर्योधनवध की वार्ता अश्वत्थामन्, कृप एवं कृतवर्मन् को प्राप्त हुई (म. श. ६४.१)। संभव है, संजय भी वातिकों में से एक था।

२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६२)।

वात्सि—सर्पि नामक आचार्य का पैतृक नाम। वत्स का वंशज होने से इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा (ऐ. ब्रा. ६.२४.१६)।

वात्सीपुत्र—एक आचार्य, जो पाराशरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। अन्यत्र इसे भारद्वाजीपुत्र का शिष्य कहा गया है (बृ. उ. ६.४. ३१ माध्यं.)। इसके शिष्य का नाम पाराशरीपुत्र ही था। वत्स के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने के कारण, इसे 'वात्सीपुत्र' नाम प्राप्त हुआ होगा।

वात्सीमांडवीपुत्र—एक आचार्य, जो पाराशरी-पुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम भारद्वाजीपुत्र था (बृ. उ. ६.४.३० माध्यं.)।

वात्स्य—एक आचार्य (सां. आ. ८.३; बाध्व देखिये)। ऐतरेय आरण्यक में इसे बाध्व कहा गया है।

२. एक आचार्य, जो कुश्रि नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शांडिल्य था (बृ. उ. ६.५. ४ काण्व.)।

३. एक आचार्य, जो शांडिल्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम गौतम था (बृ. उ. २. ६.३, ४.६ काण्व.)। शतपथब्राह्मण में भी इसका निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. ९.५.१.६२; १०.६.५.९)।

४. एक ऋषि, जो वत्स्य नामक ऋषि का शिष्य था। यह जनमेजयसर्पसत्र के समय उपस्थित था (म. आ. ४८.९)। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से भी यह मिलने आया था। इसके नाम पर कई ज्योतिषशास्त्रविषयक ग्रंथ उपलब्ध हैं (C.C.)।

५. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

६. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में शाकल्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

७. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'वत्स'।

वात्स्यायन—एक आचार्य, जो 'वात्स्यायन कामसूत्र' नामक सुविख्यात कामशास्त्रविषयक ग्रंथ का रचयिता था।

विष्णुशर्मनकृत पंचतंत्र में वात्स्यायन एवं अश्वशास्त्रज्ञकार शालिहोत्र को वैद्यकशास्त्रज्ञ कहा गया हैं। मधुसुदन सरस्वतीकृत 'प्रस्थानभेद' में भी वात्स्यायनप्रणीत कामसूत्र को आयुर्वेदशास्त्रान्तर्गत ग्रंथ कहा गया हैं।

व्यक्तिपरिचय--वात्स्यायन यह इसका व्यक्तिनाम न हो कर गोत्रनाम था। सुबन्धु के अनुसार, इसका सही नाम मल्लनाग था। यशोधर के द्वारा लिखित 'कामसूत्र' के टीका में भी इसे आचार्य मल्लनाग कहा गया है। वात्स्यायन स्वयं ब्रह्मचारी एवं योगी था, ऐसा कामसूत्र के अंतिम श्लोक से प्रतीत होता है। कामसूत्र में अवंति, मालव, अपरान्त, सौराष्ट्र, महाराष्ट्र एवं आंध्र आदि देशों के आचारविचारों के काफ़ी निर्देश प्राप्त हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि, यह पश्चिम या दक्षिण भारत में रहनेवाला था।

कामसूत्र के 'नागरक वृत्त' नामक अध्याय में नागर नामक एक नगर का निर्देश प्राप्त है। यशोधर के अनुसार, कामसूत्र में निर्दिष्ट 'नागर' पाटलिपुत्र है। अन्य कई अभ्यासक उसे जयपूर संस्थान में स्थित नागर ग्राम मानते हैं।

कालनिर्णय--वात्स्यायन का काल ३०० ई. स. माना जाता है। वेबर के अनुसार, इसका 'वात्स्यायन' नाम लाट्यायन, बौधायन जैसे सूत्रकालीन आचार्यों से मिलता जुलता प्रतीत होता है (वेबर पृ. १६४)। कौटिल्य अर्थशास्त्र एवं कामसूत्र की निवेदनपद्धति में काफ़ी साम्य है। कामसूत्र में प्राप्त 'ईश्वरकामितम्' (राजाओं की भोगतृष्णा) नामक अध्याय में प्रायः आंध्र राजाओं का ही वर्णन किया गया है। आयुर्वेदीय 'वाग्भट' ग्रंथ में कामसूत्र के 'वाजीकरण' संबंधी उपचार उद्धृत किये गये हैं। इन सारे निर्देशों से कामसूत्र का रचनाकाल ई. स. ३ री शताब्दी निश्चित होता है।

पूर्वाचार्य--कामसूत्र में प्राप्त निर्देश के अनुसार, इस शास्त्र की निर्मिति शिवानुचर नंदी के द्वारा हुई, जिसने सहस्त्र अध्यायों के 'कामशास्त्र' की रचना की। नंदी के इस विस्तृत ग्रंथ का संक्षेप औद्दालकि श्वेतकेतु नामक आचार्य ने किया, जिसका पुनःसंक्षेप आगे चल कर बाभ्रव्य पांचाल ने किया। बाभ्रव्य का कामशास्त्रविषयक ग्रंथ सात 'अधिकरणों' में विभाजित था। बाभ्रव्य के इसी ग्रंथ का संक्षेप कर वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र की रचना की।

उपर्युक्त ग्रंथकारों के अतिरिक्त, वात्स्यायन के कामसूत्र में निम्नलिखित पूर्वाचार्यों का, एवं उनके विभिन्न ग्रंथों का निर्देश प्राप्त हैः—दत्तकाचार्य—वैशिक; चारायणाचार्य—साधारण अधिकरण; सुवर्णनाभ-सांप्रयोगिक; घोटकमुख—कन्यासंप्रयुक्त; गोनर्दीय-भार्याधिकारिक; गोणिकापुत्र—पारदारिक; कुचुमार-औपनिषदिक।

इस ग्रंथ की निम्नलिखित टीकाएँ विशेष सुविख्यात हैः—१. वीरभद्रकृत 'कंदर्पचूडामणि,' २. भास्कर नृसिंहकृत 'कामसूत्रटीका,' ३. यशोधरकृत 'कंदर्पचूडामणि'। वेबर के अनुसार, सुबंधु एवं शंकराचार्य के द्वारा भी 'कामसूत्र' पर भाष्य लिखे गये थे।

कामसूत्र—वात्स्यायन का 'कामसूत्र' सात 'अधिकरणों' (विभागों) में विभाजित है, एवं उसमें कामशास्त्र से संबंधित तीन मुख्य उपांगों का विचार किया गया हैः—१. **कामपुरुषार्थ का आचारशास्त्र**, जिसमें धर्म, अर्थ एवं मोक्ष इन तीन पुरुषार्थों से अविरोध करते हुए भी कामपुरुषार्थ का आचार एवं उपभोग किस प्रकार किया जा सकता है, इसका दिग्दर्शन किया गया है; २. **शृंगाररसशास्त्र**, जिसमें स्त्रीपुरुषों को उत्तम रतिसुख किस प्रकार प्राप्त किया जा सकता है इसका वर्णन प्राप्त है; ३. **तत्कालीन भारत में प्राप्त कामशास्त्रविषयक आचारविचारों का वर्णन**, जिसमें विभिन्न देशाचार, 'वैशिक' (वेश्याव्यवसाय) एवं 'पारदारिक' (स्त्री पुरुषों के विवाहबाह्यसंबंध) आदि विषयों की चर्चा की गयी है।

कामसूत्र का तत्त्वज्ञान—प्राचीन भारतीय तत्वज्ञान के अनुसार, धर्म एवं अर्थ के समान 'काम' भी एक पुरुषार्थ माना गया है, जिसकी परिणति वैवाहिक सुखप्राप्ति में होती है। काम मनुष्य की सहजप्रवृत्ति है, जो मानवी शरीर की स्थिति एवं धारणा के लिए अत्यंत आवश्यक है। इसी कारण धर्म, अर्थ एवं काम पुरुषार्थों का रक्षण कर मनुष्य को जितेंद्रिय बनाना, यह वात्स्यायन कामसूत्र का प्रमुख उद्देश्य है--

रक्षन् धर्मार्थकामानां स्थितिं स्वां लोकवर्तिनीम्।
अस्य शास्त्रस्य तत्त्वज्ञः भवत्येव जितेंद्रियः॥
(का. सू. ७.२.५६)।

वात्स्यायन कामसूत्र में कामसेवन की तुलना मानवी आहार से की गयी है। उस ग्रंथ में कहा गया है कि, आहार एवं काम का योग्य सेवन करने से मनुष्य को आरोग्यप्राप्ति होती है। किन्तु उसीका ही आधिक्य होने

से हानी पहुँचती है। इसी कारण, मनुष्यजाति को काम का सुयोग्य एवं प्रमाणित सेवन करने को सिखाना, यह कामशास्त्र का प्रधान हेतु है। जनावरों के भय से कोई खेती करना नहीं छोड़ते है, उसी प्रकार कामविकार के ड़र से कामसेवन का त्याग करना उचित नहीं है (का. सू. १.२.३८)।

श्रेष्ठत्व—स्त्री-पुरुषों का रतिसुख मानवी-जीवन का साध्य नहीं, बल्कि यशस्वी विवाह का केवल साधनमात्र ही है, यह तत्त्वज्ञान आचार्य वात्स्यायन ने सर्वप्रथम प्रस्थापित किया। स्त्री-पुरुषों के रतिसुख पर ही केवल जोर देनेवाले पाश्चात्य कामशास्त्रज्ञों की तुलना में, वात्स्यायन का यह तत्त्वज्ञान कतिपय श्रेष्ठ प्रतीत होता है।

किन्तु अपना यह तत्त्वज्ञान प्रस्तुत करते समय, विवाह के यशस्वितता के लिए, स्त्री-पुरुषों का रतिसुख अत्यधिक आवश्यक है, यह तत्त्व वात्स्यायन के द्वारा दोहराया गया है, जो आधुनिक शारीरशास्त्र की दृष्टि से सुयोग्य प्रतीत होता है। इसी कारण, वात्स्यायन कामसूत्र के अंतर्गत रतिशास्त्रविषयक चर्चा भी क्रांतिदर्शी मानी जाती है।

२. एक न्यायदर्शनकार, जो अक्षपाद गौतम नामक आचार्य के द्वारा लिखित 'न्यायसूत्र' का प्राचीनतम भाष्यकार माना जाता है। इसके ग्रंथ पर उद्योतकर ने 'न्यायवार्तिक' नामक सुविख्यात भाष्यग्रंथ की रचना की है।

दक्षिण भारत के सुविख्यात विद्याकेंद्र कांची में यह निवास करता था। इसका काल ई. स. ४७० लगभग माना जाता है।

३. पंचपर्ण नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. आ. १.७.२)। 'वात्स्य' का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

४. एक ज्योतिषशास्त्रज्ञ (C. C.)।

वात्स्यायनि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाद—अमिताभदेवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.५४)।

वादुलि—विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

वाधूल—एक कृष्णयजुर्वेदी आचार्य, जो श्रौतसूत्र आदि अनेकानेक ग्रंथों का रचयिता था। कल्पसूत्रों के सुविख्यात भाष्यकार महादेव ने यजुर्वेदीय कल्पसूत्रों के आचार्यों में, इसका निर्देश बौधायन, हिरण्यकेशी, वैखानस आदि ग्रन्थकारों के साथ किया है। इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रन्थ प्राप्त हैं :—१. वाधूलश्रौतसूत्र; २. वाधूलवृत्तिरहस्य; ३. वाधूलगृह्यागमवृत्तिरहस्य; ४. वाधूलस्मृति।

वाध्र्यश्व—सुमित्र नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का नामान्तर (ऋ. १०.६९.१)। वध्र्यश्व का पुत्र होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. अग्नि की एक उपाधि (ऋ. १०. ६९.५)।

३. यमसभा का एक राजा (म. स. ८.१२)।

वानर—दक्षिण भारत में निवास करनेवाला एक प्राचीन मानवजातिसमूह, जिसका अत्यंत गौरवपूर्ण उल्लेख वाल्मीकि-रामायण में प्राप्त है।

इन लोगों का राज्य किष्किंधा में था एवं वालिन्, सुग्रीव एवं अंगद उनके राजा थे। वानरराज सुग्रीव का प्रमुख अमात्य हनुमत् था, जो आगे चल कर भारतीयों की प्रमुख देवता बन गया। सुग्रीव, हनुमत् आदि वानरों की सहाय्यता से ही राम दाशरथि ने लंका के बलाढ्य राक्षस राजा रावण को परास्त किया (राम दाशरथि देखिये)।

राज्य एवं समाजव्यवस्था—रामायण में निर्दिष्ट वानर, मनुष्यों की तरह बुद्धिसंपन्न हैं, मानवभाषा बोलते हैं, कपड़े पहनते हैं, घरों में निवास करते हैं, विवाह संस्कार को मान्यता देते हैं, एवं राजा के शासन के अधीन रहते है। इससे स्पष्ट है कि, रामायणकाल में ये लोग आज की तरह गिरे हुए जानवर नहीं, बल्कि वास्तव में एक मानवजाति के लोग थे।

पुराणों में—इन ग्रंथों में वानरों को हरि नामांतर दिया गया है. एवं उन्हे पुलह एवं हरिभद्रा की संतान बताया गया हैं।

ब्रह्मांड के अनुसार, पुलह ऋषि की कुल बारह पत्नियाँ थी, जो क्रोधा की कन्याएँ थी। उनके नाम निम्न थे:—१. हरिभद्रा; २. मृगी; ३. मृगमंदा; ४. इरावती; ५. भूता; ६. कपिशा; ७. दंष्ट्रा; ८. ऋषा, ९. तिर्या; १०. श्वेता; ११. सरमा; १२. सुरसा (ब्रह्मांड. ३.७.१७१-१७३)।

अपनी उपर्युक्त पत्नियों से पुलह को अनेकानेक प्राणि पुत्र के रूप में प्राप्त हुए, जिनमें से हरिभद्रा की संतति निम्नप्रकार थी:—वानर, गोलांगुल, नील, द्वीपिन्, नील, मार्जार, तरक्षु, किन्नर। हरिभद्रा नामक माता से उत्पन्न होने के कारण, वानरों को 'हरि' नामांतर प्राप्त हुआ।

वानरसमूह—ब्रह्मांड में वानरों के ग्यारह प्रमुख कुल दिये हैं, जिनके नाम निम्नप्रकार हैं:-द्वीपिन्, शरभ, सिंह, व्याघ्र, नील, शल्यक, ऋक्ष, मार्जार, लोहास, वानर, मायाव। ये सारे वानर किष्किंधा में रहते थे, एवं उनका राजा वालिन् था (ब्रह्मांड. ३.७.१७६; ३२०)।

वानरवंश—ब्रह्मांड में ऋक्ष, सुग्रीव, केसरी एवं अग्नि इन चार प्रमुख वानरों के वंश निम्नप्रकार दिये गये हैं:—

(१) ऋक्षशाखा:—ऋक्ष (पत्नी विरजाकन्या चारुहासिनी)–महेंद्र–सुग्रीव एवं वालिन् (पत्नी सुषेणकन्या तारा)–अंगद (मैंदकन्या)–ध्रुव (ब्रह्मांड. ३.७.२४६–२७५)।

(२) सुग्रीवशाखा:—ऋक्ष–सुग्रीव (पत्नी पनसकन्या रुमा)–तीन पुत्र।

(३) केसरीशाखा:— केसरिन् (पत्नी कुंजरकन्या अंजना)–हनुमत्, श्रुतिमत्, केतुमत्, मतिमत्, धृतिमत्।

(४) अग्निशाखा:—अग्नि–नल–तार, कुसुम, पनस, गंधमादन, रूपश्री, विभव, गवय,, विकट, सर, सुषेण, सधनु, सुबंधु, शतदुंदुमि आदि (ब्रह्मांड. ३.७.२४५।

जैन ग्रन्थों में—इन ग्रंथों में राक्षस एवं वानर इन दोनों को एक ही विद्याधरवंश की विभिन्न शाखाएँ मानी गयी हैं। ये दोनों जातियाँ मानववंशीय ही थी, किंतु उन्हे आकाशगमित्त्व, कामरूपित्त्व आदि ऐंद्रजालिक विद्याएँ अवगत थी। वानरवंशीय विद्याधरों की ध्वजाओं तथा महलों तथा के शिखरों पर वानर की प्रतिमा रहती थी।

वानर कौन थे—चिं. वि. वैद्य के अनुसार, ये सचमुच ही वानर के समान दिखते थे, अतः इन्हे वानर नाम प्राप्त हुआ था। कई अन्य अभ्यासकों के अनुसार, आजकल के आदिवासियों के समान ये लोग वानर, ऋक्ष, गीध आदि की पूजा करते थे। इसी कारण इन विभिन्न प्राणियों की पूजा करनेवाले आदिवासियों को क्रमशः वानर, ऋक्ष (जांबवत्), एवं गीध (जटायु, संपाति) नाम प्राप्त हुए।

रे. बुल्के के अनुसार, रामकथा में निर्दिष्ट वानर विंध्यप्रदेश एवं मध्यभारत में रहनेवाली अनार्य जातियाँ थी। छोटा नागपूर में रहनेवाली उराओं तथा मुण्डा जातियों में, आज भी तिग्गा, हलमान, बजरंग, गड़ी नामक गोत्र प्राप्त हैं, जिन सब का अर्थ 'बंदर' ही है। सिंघभूम की भुईयाँ जाति के लोक अपना वंश 'पवन' अथवा 'हनुमत्' बताते हैं (बुल्के, रामकथा पृ. १२१-१२२)।

वान्हृष्ट—पृथुक देवों में से एक।

वान्द्व दुवस्यु—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १००)।

वाम—श्रीकृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१७)।

२. एकादश रुद्रों में से एक, जो भूत एवं सरूपा का पुत्र था (भा. ६.६.१७)।

वामकक्षायण—एक आचार्य, जो वात्स्य एवं शांडिल्य का शिष्य था (श. ब्रा. १०.५.६.९; बृ. उ. ६.५.४. काण्व.)।

वामदेव—एक सुविख्यात वैदिक सूक्तद्रष्टा (वामदेव गोतम देखिये)।

२. एक ऋषि, जो अंगिरस् एवं सुरूपा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.१)। मत्स्य में इसकी माता का नाम स्वराज दिया गया है।

यह अंगिराकुल का गोत्रकार, मंत्रकार एवं ऋषि था। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था। स्यमंतपंचक क्षेत्र में यह श्रीकृष्ण से मिलने आया था (भा. १०.८४. ५)। इसके द्वारा दिये गये भस्म से एक ब्रह्मराक्षस का उद्धार हुआ था (स्कंद. ३.३.१५-१६)। रथन्तरकल्प में, मेरु पर्वत के कुमारशिखर पर इसका स्कंद से संवाद हुआ था (शिव. कै. २२)।

इसने बकुलासंगमतीर्थ पर तपस्या की थी (पद्म. उ. १३८)। मनुस्मृति में इसकी एक कथा प्राप्त है, जिसके अनुसार एक बार इसने क्षुधार्त होने के कारण, कुत्ते का माँस खाने की इच्छा प्रकट की थी। किन्तु यह पापकर्म आपद्धर्म में किये जाने के कारण, इसे कुछ दोष न लगा (मनु. १०.१०६)।

३. एक ऋषि, जो अथर्वन् अंगिरस् का पुत्र था। इसके पुत्रों के नाम अजिज एवं बृहदुक्थ थे (वायु. ६५. १००)। यह तपस्यामग्न परशुराम से मिलने गया था (ब्रह्मांड. ३.१.१०५)।

४. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस् राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.१४)।

५. मोदापूर देश का एक राजा, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.

१०)। इसका शल राजा से झगड़ा हुआ था (शल. ३. देखिये)।

६. एकादश रुद्रों में से एक।

७. गुवाहासिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

८. एक त्रिशूलधारी शिवावतार, जो मनु एवं शतरूपा के सात पुत्रों में से एक था। इसके मुख, हाथ, जंघा एवं पावों से क्रमशः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्रों की उत्पत्ति हुई (मत्स्य. ४.२७.३०)। आगे चल कर इसका सृष्टि के उत्पत्ति का कार्य ब्रह्मा के द्वारा स्थगित किया गया, जिस कारण इसे 'स्थाणु' नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ४.३१)।

शिव के इस अवतार को पाँच मुख थे। बृहस्पति-पत्नी तारा का हरण सोम के द्वारा किये जाने पर, इसने सोम से युद्ध किया था (मत्स्य २३.३६)। इसने पार्वती को 'शिवसहस्र' नाम का पाठ सिखाया था (पद्म. भू. २५४)।

९. राम दाशरथि के सभा का एक ऋषि।

वामदेव गोतम--एक आचार्य एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसे अपनी माता के गर्भ में ही आत्मानुभूति प्राप्त हुई थी। ऋग्वेद के प्रायः समग्र चौथे मंडल का यह प्रणयिता कहा जाता है। इस मंडल के केवल ४२-४४ सूक्तों का प्रणयन त्रसदस्यु, पुरुमीहळ एवं अजमीहळ के द्वारा किया गया है; बाकी सारे सूक्त वामदेव के द्वारा प्रणीत ही है। किंतु इस मण्डल में केवल एक ही स्थान पर इसका प्रत्यक्ष निर्देश प्राप्त है (ऋ. ४.१६.१८)। अन्य वैदिक ग्रंथों में भी इसे ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल का प्रणयिता कहा गया है (का. सं. १०.५; मै सं. २.१.१३; ऐ. आ. २.२.१)।

जन्म--वैदिक ग्रंथ में इसे सर्वत्र गोतम ऋषि का पुत्र कहा गया है (ऋ. ४.४.११)। इसी कारण यह स्वयं को 'गोतम' कहलाता था।

इसके जन्म के संबंधी अस्पष्ट विवरण वैदिक साहित्य में प्राप्त है (ऋ. ४.१८; २६.१; ऐ. आ. २.५)। अपने जन्म के संबंधी ज्ञान इसे माता के गर्भ में ही प्राप्त हुआ था। तब इसने सोचा कि, अन्य लोगों के समान मेरा जन्म न हो। इसी कारण इसने अपनी माता का उदर विदीर्ण कर बाहर आने का निश्चय किया। इसकी माता को यह बात ज्ञात होते ही, उसने अदिति का ध्यान किया। उस समय इंद्र के साथ अदिति वहाँ उपस्थित हुई, जहाँ गर्भ से ही इसने इंद्र के साथ तत्त्वज्ञान के संबंधी चर्चा की (ऋ. ४.१८; वेदार्थदीपिका)।

ऋग्वेद में अन्यत्र वर्णन है कि, योगसामर्थ्य से श्येन पक्षी का रूप धारण कर, यह अपनी माता के उदर से बाहर आया (ऋ. ४.२७.१)। ऐतरेय उपनिषद के अनुसार, इसके जन्म के पूर्व इसे अनेकानेक लोह के कारागार में बंद करने का प्रयत्न किया गया, जिन्हे तोड़ कर यह श्येन पक्षी की भाँति पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ (ऐ उ. ४.५)। वामदेव के जन्म के संबंधी सारी कथाएँ रुपकात्मक प्रतीत होती है, जहाँ गर्भवास को कारागृह कहा गया है।

संबंधित व्यक्ति--ऋग्वेद के चतुर्थ मंडल के अधिकांश सूक्तों में सुदास, दिवोदास, सृंजय, अतिथिग्व, कुत्स आदि राजाओं का निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका इन राजाओं से घनिष्ठ संबंध था।

बृहद्देवता में इंद्र एवं वामदेव के संबंध में कई असंगत कथाओं का निर्देश प्राप्त हैं, जिनका सही अर्थ समझ में नहीं आता है। एक बार जब यह कुत्ते की अँतडियाँ पका रहा था, तो इंद्र एक श्येनपक्षी के रूप में इसके सम्मुख प्रकट हुआ था (बृहद्दे. ४.१२६)। इसी ग्रंथ में प्राप्त अन्य कथा के अनुसार, इसने इंद्र को परास्त कर अन्य ऋषियों को उसका विक्रय किया था (बृहद्दे. ४.१३१)। सीग ने बृहद्देवता में प्राप्त इन कथाओं को ऋग्वेद में प्राप्त इसकी जन्मकथाओं से मिलाने का प्रयत्न किया है (सीग, सा. ऋ. ७६)।

तत्त्वज्ञान--पुनर्जन्म के संबंध में विचार करनेवाले तत्वज्ञों में वामदेव सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। मनु एवं सूर्य नामक अपने दो पूर्वजन्म इसे ज्ञात हुए थे, एवं माता के गर्भ में स्थित अवस्था में ही इसे सारे देवों के भी पूर्वजन्म ज्ञात हुए थे।

पुनर्जन्म के संबंधी वामदेव का तत्त्वज्ञान 'जन्मत्रयी' नाम से सुविख्यात है, जिसके अनुसार हर एक मनुष्य के तीन जन्म होते हैः--पहला जन्म, जब पिता के शुक्र-जंतु का माता के शोणित द्रव्य से संगम होता है; दूसरा जन्म, जब माता की योनि से बालक का जन्म होता है; तीसरा जन्म जब मृत्यु के बाद मनुष्य को नया जन्म प्राप्त होता है। अमरत्व प्राप्त करने की इच्छा करनेवाले साधक कों के लिए, वामदेव का यह तत्त्वज्ञान प्रमाणभूत माना जाता है।

आत्मानुभूति—आत्मानुभूति प्राप्त होने पर इसने कहा था, 'मैंने ही सूर्य को प्रकाश प्रदान किया था, मनु मेरा ही रूप था' (अहं मनुरभवं सूर्यश्चाहम्) (ऋ. ४. २६.१; बृ. उ. १.४.१०)। वामदेव का यह आत्मकथन मराठी संत तुकाराम के आत्मकथन से मिलता-जुलता प्रतीत होता है, जहाँ उन्होंने अपना पूर्वजन्म शुकमुनि के रूप में बताया था (डॉ. रानडे, उपनिषद्रहस्य पृ. ३१२)।

वामदेवी—ऋचि ऋषि की पत्नी (म. आ. ९०. २३)। पाठभेद-'सुदेवी'।

वामदेव्य—ऋग्वेद में प्राप्त एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित वैदिक सूक्तद्रष्टाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:—अंहोमुच (ऋ. १०.१२७); बृहदुक्थ (ऋ. सर्वानुक्रमणी; श. ब्रा. ८.२.२.१४); मूर्धन्वत् (ऋ. १०. ८८)।

वामन--श्री विष्णु का पाँचवाँ अवतार, जो इंद्र के संरक्षण के लिए, एवं बलि वैरोचन नामक दैत्य के 'बंधन' के लिए अवतीर्ण हुआ था। भागवत में इसे विष्णु का पंद्रहवाँ अवतार कहा गया है (भा. १.३.१९)।

वैदिक साहित्य में—वामन अवतार के कल्पना का अस्पष्ट उद्गम ऋग्वेद में पाया जाता है, जहाँ श्रीविष्णु के द्वारा तीन पगों में समस्त पृथ्वी, द्युलोक एवं अंतरिक्ष का व्यापन होने का निर्देश प्राप्त है—

> **इदं विष्णुर्विचक्रमे त्रेधा निदधे पदम्।**
> **समळहमस्य पांसुरे ॥** (ऋ. १.२२.१७-१८)।

(श्रीविष्णु ने तीन पगों में समस्त सृष्टि का व्यापन किया)।

ऋग्वेद में श्रीविष्णु का स्वतंत्रदेवता के रूप में निर्देश नहीं है, बल्कि उसे सूर्यदेवता का ही एक रूप माना गया है। इसी विष्णुरूपी सूर्यदेवता का वर्णन करते समय, उसके द्वारा तीन पगों में पृथ्वी का व्यापन करने का निर्देश ऋग्वेद में किया गया है।

निरुक्त में विष्णु के तीन पगों की निरुक्ति प्राप्त है, जहाँ शाकपूणि एवं और्णवाभ नामक दो आचार्यों के अभिमत उद्धृत किये गये हैं (नि. १२.१९)। शाकपूणि के अनुसार, पृथ्वी, अंतरिक्ष एवं आकाश को; तथा और्णवाभ के अनुसार, समारोहण (उदयगिरि), विष्णुपद (खस्वस्तिक) एवं गयाशिरस् (अस्तगिरि) को श्रीविष्णु ने अपने पगों के द्वारा व्याप लिया।

तैत्तिरीय संहिता में विष्णु एवं सूर्य की एकात्मता स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट है, एवं अपने मित्र इंद्र का विगत राज्य उसे पुनः प्राप्त कराने के लिए श्रीविष्णु ने पृथ्वी पर अवतार लेने की कथा वहाँ प्राप्त है (तै. सं. २.४. १२.२)।

वामन-अवतार की उत्क्रान्ति--वैदिक साहित्य में प्राप्त इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, वामन अवतार की कल्पना का उद्गम प्रथम सूर्यदेवता के आकाश संचरण के रूप में हुआ, एवं श्रीविष्णु सूर्य का ही एक प्रतिरूप होने के कारण, आकाश संचरण का यह पराक्रम श्रीविष्णु का ही मानने जाने लगा। आगे चल कर, श्रीविष्णु के दशावतार की कल्पना जब प्रसृत हुई, तब तीन पगों में समस्त पृथ्वी का व्यापन करनेवाले श्रीविष्णु का वैदिक रूप, उत्तरकालीन वैदिक ग्रन्थों में एवं पुराणों में वामनावतार के रूप में निर्धारित हुआ।

वामन-अवतार का सर्वप्रथम निर्देश तैत्तिरीय संहिता में अस्पष्ट रूप में प्राप्त है। एक बार तीनों लोगों के स्वामित्व के लिए देव एवं असुरों में संग्राम हुआ। उस समय श्रीविष्णु ने अपने 'वामन-स्वरूप' की आहुति दे कर तीनों लोगों को जीत लिया (तै. सं. २.१.३)।

शतपथ ब्राह्मण में-इस ग्रंथ में श्रीविष्णु के वामन अवतार की कथा प्राप्त है, जो पुराणों में निर्दिष्ट कथा से सर्वथैव विभिन्न है। एक बार देवासुरों के संग्राम में, देवों का पराजय हो कर वे भाग गये। तदुपरान्त असुर समस्त पृथ्वी का बटवारा करने के लिए बैठे। उस समय विष्णु के नेतृत्व में देवगण असुरों के पास गये, एवं पृथ्वी का कुछ हिस्सा प्राप्त होने के लिए असुरों की प्रार्थना करने लगे। उस समय असुर विष्णु के तीन पगों इतनी ही छोटी भूमि देवों को देने के लिए तैयार हुए। फिर वामनरूपधारी विष्णु ने विराट रूप धारण कर समस्त तीनों लोगों का व्यापन किया, एवं इस तरह देवताओं को त्रैलोक्य का राज्य प्राप्त हुआ (श. ब्रा. १. २.२.१-५)।

पुराणों में—इन ग्रंथों में इसे कश्यप एवं अदिति का पुत्र कहा गया है। इसकी पत्नी का नाम कीर्ति एवं पुत्र का नाम बृहत्श्लोक था।

इसका जन्म भाद्रपद शुक्ल द्वादशी के दिन श्रवण नक्षत्र में एवं अभिजित् मुहूर्त में हुआ था (भा. ८.१८. ५-६)। अपना विष्णुरूपी वास्तवदर्शन ब्रह्मा एवं अदिति को प्रकट करने के बाद, इसने ब्राह्मण ब्रह्मचारिन्

का रूप धारण किया। महाभारत में इसका विस्तृत स्वरूप-वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे मुण्डी, यज्ञोपवीती, कृष्णजिन-धारी, शिखी, पलाशदण्डधारी कहा गया है। इसी ब्राह्मण बटु के रूप में यह बलि वैरोचन के यज्ञमण्डप में प्रविष्ट हुआ।

वामन ने बलि वैरोचन से त्रिपाद भूमि की याचना की, जिसे बलि ने 'तथास्तु' कहा। तत्पश्चात् वामन ने विराट रूप धारण कर पहले दो पगों में पृथ्वी एवं स्वर्ग का व्यापन किया, एवं तीसरा पग बलि के मस्तक पर रखने के लिए उद्यत हुआ (भा. ८.१८.२१)। उस समय वीरभद्रादि असुर युद्ध करने के लिए उद्यत हुए, जिन्हें वामन ने परास्त किया। उस समय बलि, प्रह्लाद एवं बलिपत्नी विंध्यावालि ने वामन की स्तुति की। फिर वामन ने प्रसन्न हो कर बलि को नमुचि, शंबर, प्रह्लाद आदि असुरों के साथ 'सुतल' नामक पाताल लोक में स्थापित किया, एवं इंद्र को त्रिभुवन का राज्य समर्पित किया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ३११-३७४; वामन. ३१; स्कंद. १.१.१८-१९; मत्स्य. २४४-२४६)।

वामन-अवतार का अन्वयार्थ—प्राचीन भारत के बिहार प्रदेश में वामन का अवतार हुआ, ऐसा माना जाता है। बलि वैरोचन का बंधन कर वामन ने उसे उसके परिवार के साथ समुद्र में ढकेल दिया। बंगाल की खाड़ी में 'बलिद्वीप' नामक प्रदेश आज भी दिखाई देता है, जो आधुनिक काल में आग्नेय एशिया में स्थित 'बाली' देश नाम से प्रसिद्ध है। इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है कि, प्रागैतिहासिक काल में पूर्व-भारत में लंबे कद एवं मोटे शरीर के कई लोग रहते थे, जिन्हे उत्तरीपूर्वदिशा से भारत में प्रवेश करनेवाले छोटे कद के कई कृश लोगों ने परास्त किया। यही कारण है कि, पूर्व भारत में आज भी मंगोलवंशीय लोग अधिक रूप में पाये जाते हैं।

उपासना—कुरुक्षेत्र में वामन का एक मंदिर बनवाया गया था, जो आज भी विद्यमान है (मत्स्य. २४४. २-३)। भाद्रपद शुक्ल द्वादशी के जिस दिन वामन अवतीर्ण हुआ, वह दिन आज भी 'वामन द्वादशी' नाम से सुविख्यात है।

बिहार प्रदेश में शहाबाद ज़िले में बक्सार ग्राम में वामन का आश्रम दिखाया जाता है, जो सिद्धाश्रम नाम से प्रसिद्ध है। इस स्थान पर सर्वप्रथम वामन का आश्रम था, जहाँ आगे चल कर विश्वामित्र ने अपना आश्रम प्रस्थापित किया।

वामन पुराण में वामन के एक सौ इकतीस वामनस्थानों का निर्देश प्राप्त है, जहाँ विभिन्न नामों से वामन की पूजा की जाती थी (वामन. ९०)। इससे प्रतीत होता है कि, एक समय भारत के सारे प्रदेशों में वामन को देवता मान कर उसकी पूजा की जाती थी।

२. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

४. एक पक्षिराज, जो गरुड के पुत्रों में से एक था।

५. एक दिग्गज, जो इरावती के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाईयों के नाम ऐरावत, सुप्रतीक एवं अंजन थे (ब्रह्मांड. ३.७.२९२)। घटोत्कच के सैन्य में से एक राक्षस का यह वाहन था (म. भी. ६०.५१)।

वामानिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२३)।

वामरथ्य—अत्रिवंश का एक गोत्रकार एवं प्रवर।

वामा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म.श.४५. १२)। पाठभेद —'भ्रमा'।

वायत—पाशद्युम्न नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ.७. ३३. २)। वयत् का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वाम्नेय— बृहदुक्थ वामदेव नामक आचार्य का नामान्तर (बृहदुक्थ वामदेव देखिये)।

वायु—एक वैदिक अंतरिक्षदेवता, जिसका एक संपूर्ण सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ४.४६)। एक देवता के रूप में इसका निर्देश प्रायः सर्वत्र इंद्र के साथ प्राप्त है, तथा इंद्र एवं वायु में से कौनसा भी एक देव वैदिक अंत-रिक्ष-देवताओं का प्रतिनिधित्व कर सकता है, ऐसा निर्देश निरुक्त में प्राप्त है (नि. ७.५)।

जन्म एवं स्वरूपवर्णन—विश्वपुरुष की श्वास से इसकी उत्पत्ति हुई (ऋ. १०.९०)। त्वष्टृ इसका जामात था, एवं इसने आकाश के गर्भ में से मरुतों को उत्पन्न किया था (ऋ. ८.२६; १.१३४)।

यह सुंदर, मनोजव एवं सहस्रनेत्रोंवाला बताया गया है (ऋ. १.२३)। इसके पास एक प्रकाशमान रथ था, जिसे हज़ार अश्वों का एक दल खींचता था (ऋ. १.

२३)। इसी कारण, इसे 'नियुत्वत्' (एक दल के द्वारा खींचा जानेवाला) कहा गया है।

अन्य देवों की भाँति यह भी सोमप्रेमी था, एवं सभी देवों में 'क्षिप्र' होने के कारण, यह सर्वप्रथम अपना पेयभाग प्राप्त करता था (श. ब्रा. १३.१.२)।

एक बार सोम प्राप्त कराने के लिए देवताओं में होड़ लगी, जिस समय यह एवं इंद्र क्रमशः प्रथम एवं द्वितीय पहुँच गये (ऐ. ब्रा. २.२५)।

इसकी उपासना करने से यश, संतान एवं संपत्ति प्राप्त होती है (ऋ. ७.९०)। यह शत्रुओं को भगाता है एवं निर्बलों की रक्षा करता है (ऋ. १.१३४)।

पुराणों में--इन ग्रन्थों में इसे वायुतत्त्व की देवता कहा गया है, एवं इसका जन्म आकाश से होने का निर्देश प्राप्त है। यह भूवर्लोक का अधिपति था, इस कारण इसे 'भुवस्पति' एवं 'मातरिश्वन्' नामान्तर प्राप्त थे। शाकद्वीप में प्राणायाम के द्वारा इसकी उपासना की जाती थी (भा. ५.१५.१५)। मत्स्य में कृष्णमृग पर सवार हुए इसकी प्रतिमा के पूजन का निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २६१.१९)।

परिवार--पुराणों में इसके अंश से उत्पन्न हुए निम्नलिखित संतानों का निर्देश प्राप्त है:—१. इला (भा. ४.१०.२); २. मुदा नामक अप्सरासमूह; ३. भीमसेन पाण्डव; ४. 'मनोजव' हनुमत् (विष्णु. १.८.११)।

२. एक आचार्य, जो मृत्यु नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम इंद्र था (वं. ब्रा. २)।

३. एक राक्षस, जो वायु के अनुसार अनुह्राद नामक राक्षस का पुत्र था (वायु. ६३.१२)।

वायुचक्र—मंकणक ऋषि के सात पुत्रों में से एक (मंकणक देखिये)।

२. युधिष्ठिर की सभा का एक ऋषि (म. स. ४.११)।

वायुज्वाल एवं **वायुबल**—मंकणक ऋषि के पुत्र।

वायुभक्ष--एक ब्रह्मर्षि, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.११; शां. ४७.६६*)। हस्तिनापुर जानेवाले श्रीकृष्ण से इसकी भेंट हुई थी (म. उ. ३८८.८*)।

वायुमंडल एवं **वायुरेतस्**--मंकणक ऋषि के पुत्र।

वायुवेग--मंकणक ऋषि के सात पुत्रों में से एक। इसके नाम के लिए 'वातवेग' पाठभेद भी प्राप्त है।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.२)।

३. एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५८)। भारतीययुद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

वायुहन--मंकणक ऋषि का एक पुत्र।

वाय्य सत्यश्रवस्--एक वैदिक आचार्य (ऋ. ५.७९.१०२)। वय्य का वंशज होने से इसे 'वाय्य' पैतृक नाम प्राप्त था।

इस पर अनुग्रह करने के लिए, आत्रेय सत्यश्रवस नामक ऋषि के द्वारा उषस् की प्रार्थना की गयी थी।

वारकि—कंस नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१)।

वारक्य—जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त है:- कंस, कुबेर, जनश्रुत, जयंत एवं प्रोष्ठपद (जै. उ. ब्रा. ३. ४१.१)। 'वरक' का वंशज होने के कारण, इन आचार्यों को यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वारण--(सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार चंप राजा का, एवं वायु के अनुसार चित्ररथ राजा का पुत्र था।

वाराह--श्रीविष्णु के वराह नामक तृतीय अवतार का नामान्तर (भा. ११.४.१८; वराह देखिये)।

२. एक असुर (मत्स्य. १७२)।

वाराहि—अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकारद्वय।

वाराही—सात मातृकाओं में से एक, जिसका वाहन बैल था (ब्रह्मांड. ४.१९.७)।

वारिप्लव—रैवत मन्वन्तर के 'पारिप्लव' नामक देवगण का नामान्तर।

वारिषेण--यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.१८)। पाठभेद-'वारिसेन'।

वारिसार--(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चंद्रगुप्त मौर्य राजा का पुत्र, एवं अशोकवर्धन राजा का पिता था (भा. १२.१.१३)।

वारुणि--धर्मसावर्णि मन्वन्तर का एक ऋषि।

२. एक पक्षिराज, जो कश्यप एवं विनता के पुत्रों में से एक था।

३. एक पैतृक नाम, जो अगस्त्य, भृगु एवं वसिष्ठ आदि ऋषियों के लिए प्रयुक्त किया जाता है (ऐ. ब्रा. ३.३४.१; श. ब्रा. ११.६.१.१)। ब्रह्मा के यज्ञ में से ये सारे ऋषि उत्पन्न होने पर, वरुण ने इनका पुत्र के रूप में

स्वीकार किया, जिस कारण इन्हें 'वारुणि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ।

४. वानरों का एक राजा (ब्रह्मांड. ३.७.२३४)।

वारुणी--स्वायंभुव मन्वन्तर के वरुण की पत्नी।

२. अरण्य प्रजापति की कन्या, जो चक्षुष् राजा की पत्नी, एवं चक्षुष् मनु की माता थी (ब्रह्मांड. २ ३६. १०२-१०४)।

वार्कलि अथवा **वार्कलिन्**--एक आचार्य (श. ब्रा. १२.३.२.६)। वृकला का वंशज होने से इसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ था। ऐतरेय आरण्यक में इसे 'वार्कलिन्' कहा गया है, किन्तु वह अशुद्ध रूप प्रतीत होता है (ऐ. आ. ३. २.२)।

वार्कारुणीपुत्र--एक आचार्य, जो आर्तभागीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम वार्कारुणीपुत्र (द्वितीय) था (बृ. उ. ६.४.३१ माध्यं.)।

वार्कारुणीपुत्र (द्वितीय)--एक आचार्य, जो वार्कारुणीपुत्र (प्रथम) का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पाराशरीपुत्र था (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)।

वार्क्षी--प्रचेतस् पत्नी मारिषा का पैतृक नाम।

वार्जिनीवत--श्वाहि नामक यादव राजा का पैतृक नाम। वृजिनवत् नामक राजा का पुत्र होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

वार्धक्षत्रि--सौवीर देश के जयद्रथ राजा का नामांतर (म. व. २४८.६)।

वार्धक्षेमि--पांचाल देश के सुशर्मन् राजा का पैतृक नाम (सुशर्मन् ३. देखिये)। वृद्धक्षेम राजा का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

२. त्रिगर्त देश के सुशर्मन् राजा का पैतृक नाम (म. उ. १६८.१६; सुशर्मन् १. देखिये)।

वार्षगण--असित नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.४.३३ माध्यं.)। वृषगण का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्षगणीपुत्र--एक आचार्य, जो गौतमीपुत्र नानक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शालंकायनीपुत्र था। वृषगण के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्षगण्य--एक आचार्य, जिसका एक सांख्ययोगाचार्य के नाते निर्देश प्राप्त है (व्यासकृत योगशास्त्रभाष्य ४. ५३)। जैमिनिकृत उपकर्मांगतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (जै. गृ. १.१४)।

२. सुश्रवस् नामक राजा का पैतृक नाम (सुश्रवस् वार्षगण्य देखिये)।

वार्षागिर--एक पैतृक नाम, जो ऋग्वेद में निम्नलिखित राजाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है :--अंबरीष, ऋज्राश्व, भयमान, सहदेव एवं सुराधस् (ऋ. १.१००. १७)। वृषागिर के वंशज होने के कारण, उन्हें यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्षिहव्य--उपस्तुत नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.११५)।

वार्ष्ण--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है :--१. गोबल (तै. ब्रा. ३. ११.९.३; जै. उ. ब्रा. १.६.१); २. वर्कु (श. ब्रा. १. १.१. १०; बृ. उ. ४.१.८ माध्यं.); ३. ऐक्ष्वाक (जै. उ. ब्रा. १.५.४)। 'वृषन्', 'वृष्णि' अथवा 'वृष्ण' के वंशज होने से, उन्हे यह पैतृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्ष्णायन--धूम्रपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वार्ष्णिवृद्ध--उल नामक आचार्य का पैतृक नाम (कौ. ब्रा. ७.४)। वृष्णिवृद्ध का पुत्र होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वार्ष्णेय--शूष नानक आचार्य का पैतृक नाम (तै. ब्रा. ३.१०)। वृष्णि का वंशज होने से, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

२. निषधराज नल राजा का सारथी। नल के बनवास के समय, यह ऋतुपर्ण राजा का सारथी बना था।

वार्ष्ण्य--एक आचार्य, जिसका याज्ञवल्क्य के साथ 'देवयजन' के संबंध में संवाद हुआ था (श. ब्रा. ३.१. १.४)। इसे 'वार्ष्ण' नामान्तर भी प्राप्त था।

वार्ष्यायणि--एक वैय्याकरण, जिसका निर्देश एक पूर्वाचार्य के नात यास्क के 'निरुक्त' में प्राप्त है (नि. १.२)।

वालखिल्य--एक ऋषिसमुदाय, जो अंगुष्ठ के आकार के साठ हज़ार ऋषियों से बना हुआ था। प्रजा उत्पन्न करने के लिए तपस्या करनेवाले प्रजापति के केशों से ये उत्पन्न हुए थे (तै. आ. १.२३.३)।

वैदिक साहित्य में--ऋग्वेद में वालखिल्य नामक ग्यारह सूक्त हैं (ऋ. ८. ४९--५९), जिनका निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में ऋग्वेद के परिशिष्टात्मक सूक्तों के नाते से किया गया है (ऐ. ब्रा. ५.१५.१; ३; कौ. ब्रा. ३०.४.८; पं. ब्रा. १३.११.३; ऐ. आ. ५.२.४)। तैत्तिरीय आरण्यक में इन सूक्तों के प्रणयन का श्रेय इन्हीं ऋषियों

को दिया गया है (तै. आ. १.२३)। एक ब्रह्मचारी ऋषिगण के नाते इनका निर्देश मैत्र्युपनिषद में प्राप्त है (मैत्र्यु. २.३)।

पौराणिक साहित्य में--इन ग्रंथों में इन्हें ब्रह्मापुत्र क्रतु के पुत्र कहा गया है, एवं इनकी माता का नाम सन्नति अथवा क्रिया बताया गया है (विष्णु. १.१०; भा. ४.१.९)। वायु के अनुसार, इनका जन्म कुशदर्भों से हुआ था, एवं वारुणियज्ञ के कारण इन्हें अप्रतिहत तपःसामर्थ्य प्राप्त हुआ था (वायु. ६५.५५; १०१. २१३)। इसी कारण, इन्हें 'मनोजव,' 'सर्वगत' एवं 'सार्वभौम' कहा गया है।

स्वरूपवर्णन-- इस समुदाय में से हरएक ऋषि कद से बहुत ही छोटा, याने कि अंगुष्ठ के मध्यभाग के बराबर शरीरवाला था। सूर्य के अनन्य भक्त होने के कारण, ये सूर्यलोक में रहते थे, एवं वहाँ पक्षियों की भाँति एक एक दाना बीन कर उसीसे ही अपना जीवननिर्वाह करते थे। सूर्यकिरणों का पान करते हुए, ये तपस्या में व्यग्र रहते थे (म. स. ११. १२२)। ब्रह्मांड के अनुसार, ये ब्रह्मलोक में रहते थे, एवं केवल वायु भक्षण करते थे (ब्रह्मांड. २.२५.४)।

अपने पिता क्रतु के समान ये भी पवित्र, सत्यवादी एवं व्रतपरायण थे (म. आ. ६०.८)। प्रातःकाल से सायंकाल तक ये सूर्य के 'गौरवस्तोत्र' गाते गाते उसीके ही सम्मुख चलते थे। मृगछाला, चीर एवं वत्कल ये इनके वस्त्र रहते थे। ये वटवृक्ष की शाखा पर उल्टे लटक कर तपस्या करते थे।

इन्द्र का निर्माण--एक बार कश्यप ऋषि ने पुत्र-प्राप्ति के लिए एक यज्ञ का आयोजन किया। उस समय यज्ञ में सहाय्यता करने के लिए एक छोटी सी पलाश की टहनी पर लटक कर ये उपस्थित हुए। इनकी अंगुष्ठमात्र शरीरयष्टि देख कर बलाढ्य इंद्र ने इनका उपहास किया। तदुपरान्त अत्यधिक क्रुद्ध हो कर इन्होंने एक नया इंद्र निर्माण करने का निश्चय किया, एवं इस हेतु एक यज्ञ का आयोजन किया। उस समय कश्यप ऋषि ने इन्हें बार बार समझाया एवं कहा, 'देवराज इंद्र के स्थान पर अन्य इन्द्र को उत्पन्न करना उचित नहीं है। अतएव यही अच्छा है कि, आप देवों के नहीं, बल्कि पक्षियों के इन्द्र का निर्माण करे'। इसी समय, इंद्र भी इनकी शरण में आया।

फिर कश्यप ऋषि के अनुरोध पर, देवेंद्र का निर्माण करने का अपना निश्चय इन्होंने छोड़ दिया, एवं अपने यज्ञ का फल कश्यप को प्रदान किया। वही फल आगे चल कर कश्यप ने विनता को दिया, जिससे खगेन्द्र गरुड का निर्माण हुआ (म. आ. २६-२७; गरुड देखिये)।

तपःसामर्थ्य--अपनी तपस्या के बल पर ये सिद्धमुनि एवं ऋषि बन गये थे (मत्स्य. १२६.४५)। ये सर्व धर्मों के ज्ञाता थे, एवं अपनी तपस्या से सृष्टि के समस्त पापों को दग्ध कर, अपने तेज से समस्त दिशाओं को प्रकाशित करते थे। इनके तपोबल पर ही सारा जग निर्भर था, एवं इन्ही की तपस्या, सत्य, एवं क्षमा के प्रभाव से संपूर्ण भूतों की स्थिति बनी रहती थी (म. अनु. १४१-१४२)।

इन्होंने सरस्वती नदी के तट पर यज्ञ किया था (म. व. ८८.९)। ये पृथु राजा के मंत्री बने थे (म. शां. ५९.११७)। दिवाली के समय, प्रकाशित किये जाने वाले आकाशदीप का महत्त्व सर्वप्रथम इन्होंने ही कथन किया था (स्कंद. २.४.७)। इन्होंने चित्ररथ को कौशिक ऋषि की अस्थियाँ सरस्वती नदी में विसर्जित कर मुक्ति प्राप्त कराने की सलाह दी थी (भा. ६.८. ४०)।

परिवार--इनकी पुण्या एवं आत्म सुमति नामक दो कनिष्ठ बहनों का निर्देश वायु में प्राप्त है (वायु. २८.३३)।

वालायनि--बाष्कलि नामक अंगिराकुलोत्पन्न ऋषि के तीन शिष्यों में से एक। बाष्कलि ने 'वालखिल्य संहिता' का प्रणयन कर, उसे दो अन्य शिष्यों के साथ इसे सिखायी थी (बाष्कलि ३. देखिये)।

वालिन्--किष्किंधा देश का सुविख्यात वानरराजा, जो महेंद्र एवं ऋक्षकन्या विरजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३. ७.२१४-२४८; भा. ९.१०.१२)। वाल्मीकि रामायण के प्रक्षिप्त काण्ड में इसे ऋक्षरजस् नामक वानर का पुत्र कहा गया है (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त. ६)।

इसके छोटे भाई का नाम सुग्रीव था, जिसे इसने यौवराज्याभिषेक किया था (वा. रा. उ. ३४)। इसकी पत्नी का नाम तारा था, जो इसके तार नामक अमात्य की कन्या थी (वा. रा. उ. ३४; म. व. २६४.१६)। वाल्मीकि रामायण में अन्यत्र तारा को सुषेण वानर की कन्या कहा गया है (वा. रा. कि. २२; ब्रह्मांड. ३.७. २१८)। वालिन् स्वयं अत्यंत पराक्रमी वानरराज था, जो राम दाशरथि के द्वारा किये गये इसके वध के कारण रामकथा में अमर हुआ है।

जन्म--वाल्मीकि रामायण के दाक्षिणात्य पाठ में, वालिन् एवं सुग्रीव को ब्रह्मा के अश्रुबिंदुओं से उत्पन्न हुए ऋक्षरजस् वानर के पुत्र कहा गया है। एक बार ब्रह्मा के तपस्या में मग्न हुआ ऋक्षरजस् पानी में कूद पड़ा। पानी के बाहर निकलते ही उसे एक लावण्यवती नारी का रूप प्राप्त हुआ, जिसे देख कर इंद्र एवं सूर्य कामासक्त हुए। उनका वीर्य क्रमशः स्त्रीरूपधारिणी ऋक्षरजा के बाल एवं ग्रीवा पर पड़ गया। इस प्रकार इंद्र एवं सूर्य के अंश से क्रमशः वालिन् एवं सुग्रीव का जन्म हुआ (वा. रा. कि. १६.२७-३९)।

जन्म होने के पश्चात्, इंद्र ने अपने पुत्र वालिन् को एक अक्षय्य सुवर्णमाला दे दी, एवं सूर्य ने अपने पुत्र सुग्रीव को हनुमत् नामक वानर सेवा में दे दिया। पश्चात् ऋक्षरजस् को ब्रह्मा की कृपा से पुनः पुरुषदेह प्राप्त हुआ, एवं वह किष्किंधा का राजा बन गया (वा. रा. वा. दाक्षिणात्य. १७.१०; ऋक्षरजस् देखिये)।

पराक्रम--वालिन् के पराक्रम की अनेकानेक कथाएँ वाल्मीकि रामायण एवं पुराणों में प्राप्त हैं। एक बार लंकाधिपति रावण अपना बलपौरुष का प्रदर्शन करने इससे युद्ध करने आया, किंतु इसने उसे पुष्करक्षेत्र में परास्त किया था (वा. रा. उ. ३४; रावण देखिये)। गोलभ नामक गंधर्व के साथ भी इसने लगातार पंद्रह वर्षों तक युद्ध किया, एवं अंत में उसका वध किया था (वा. रा. कि. २२.२९)। इसके बाणों में इतना सामर्थ्य था कि, एक ही बाण से यह सात साल वृक्षों को पर्णरहीत करता था (वा. रा. कि. ११.६७)। पंचमेढ्र नामक राक्षस से भी इसने युद्ध किया था, जिस समय उस राक्षस ने इसे निगल लिया था। तदुपरांत शिवपार्षद वीरभद्र ने उस राक्षस को खड़ा चीर कर, इसकी मुक्तता की थी (पद्म. पा. १०७)।

दुंदुभिवध-- दुंदुभि नामक महाबलाढ्य राक्षस का भी वालि ने वध किया था। उस राक्षस के द्वारा समुद्र एवं हिमालय को युद्ध के लिए ललकारने पर, उन्होंने उसे वालि से युद्ध करने के लिए कहा। अतः दुंदुभि ने महिष का रूप धारण कर इसे युद्ध के लिए ललकारा। इसने अपने पिता इंद्र के द्वारा प्राप्त सुवर्णमाला पहन कर दुंदुभि को द्वंद्वयुद्ध में मार डाला, एवं उसकी लाश एक योजन दूरी पर फेंक दी। उस समय दुंदुभि के कुछ रक्तकण ऋष्यमूक पर्वत पर स्थित मातंग ऋषि के आश्रम में गिर पड़े। इससे क्रुद्ध हो कर मातंग ऋषि ने वालि को शाप दिया, 'मेरे आश्रम के निकट एक योजन की कक्षा में तुम आओंगे, तो तुम मृत्यु की शिकार बनोंगे' (वा. रा. कि. ११)। यही कारण है कि, ऋष्यमूक पर्वत वालि के लिए अगम्य था।

सुग्रीव से शत्रुत्व--दुंदुभि के वध के पश्चात्, उसका पुत्र मायाविन् ने वालि से युद्ध शुरु किया, जिसके ही कारण आगे चल कर, यह एवं इसका भाई सुग्रीव में प्राणांतिक शत्रुता उत्पन्न हुई। एक बार वालि एवं सुग्रीव मायाविन् का वध करने निकल पड़े। इन्हें आते देख कर मायाविन् ने एक बिल में प्रवेश किया। तदुपरांत इसने सुग्रीव को बिल के द्वार पर खड़ा किया, एवं यह स्वयं मायाविन् का पीछा करता बिल के अंदर चला गया।

इसी अवस्था में एक वर्ष बीत जाने पर, एक दिन सुग्रीव ने बिल में से फेन के साथ रक्त निकलते देखा, एवं उसी समय असुर का गर्जन भी सुना। इन दुश्चिन्हों से सुग्रीव ने समझ लिया कि, वालि मारा गया है। अतः उसने पत्थर से बिल का द्वार बंद किया, एवं वह अपने भाई की उदकक्रिया कर के किष्किंधा नगरी लौटा। वालिवध की वार्ता सुन कर, मंत्रियों ने सुग्रीव की इच्छा के विरुद्ध उसका राज्याभिषेक किया। अपनी पत्नी रुमा एवं वालि की पत्नी तारा को साथ ले कर, सुग्रीव राज्य करने लगा।

तदुपरांत मायाविन् का वध कर वालि किष्किंधा लौटा। वहाँ सुग्रीव को राजसिंहासन पर देख कर यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं इसने उसकी अत्यंत कटु आलोचना की। सुग्रीव ने इसे समझाने का काफ़ी प्रयत्न किया, किंतु यह यही समझ बैठा कि, सुग्रीव ने यह सारा षड्यंत्र राज्यलिप्सा के कारण ही किया है। अतएव इसने उसे भगा दिया, एवं उसकी रुमा नामक पत्नी का भी हरण किया। सुग्रीव सारी पृथ्वी पर भटक कर, अंत में वालि के लिए अगम्य ऋष्यमूक पर्वत पर रहने लगा (वा. रा. कि. ९-१०)।

राम-सुग्रीव की मित्रता--ऋष्यमूक पर्वत पर राम एवं सुग्रीव की मित्रता प्रस्थापित होने पर, राम ने अपना बलपौरुष दिखाने के लिए अपने एक ही बाण से वहाँ स्थित सात ताड़ तरुओं का भेदन किया। आनंद रामायण में, इन सात ताड़ वृक्षों के संदर्भ में एक कथा प्राप्त है। एक बार ताड़ के सात फल वालि ने ऋष्यमूक पर्वत की गुफा में रक्खे थे। पश्चात् एक सर्प उस गुफा में आया, एवं सहजवश उन ताड़फलों पर बैठ गया। वालि ने

क्रुद्ध हो कर सर्प से शाप दिया, 'इन फलों से तुम्हारे शरीर पर ताड़ के सात वृक्ष उगेंगे'। तब साँप ने भी वालि से शाप दिया, 'इन सातों ताड़ के वृक्ष जो अपने बाण से तोड़ेगा, उसीके द्वारा तुम्हारी मृत्यु होगी'। राम के द्वारा इन वृक्षों का भेदन होने के कारण, उसीके हाथों वालिवध हुआ (आ. रा. ८)।

वालिवध—राम के कहने पर सुग्रीव ने वालि को द्वंद्वयुद्ध के लिए ललकारा (वा. रा. कि. १४)। पहले दिन हुए वालि एवं सुग्रीव के द्वंद्वयुद्ध के समय, ये दोनों भाई एक सरीखे ही दिखने के कारण, राम अपने मित्र सुग्रीव को कोई सहायता न कर सका। इस कारण सुग्रीव को पराजित हो कर ऋष्यमूक पर्वत पर लौटना पड़ा।

दूसरे दिन राम ने 'अभिज्ञान' के लिए सुग्रीव के गले में एक गजपुष्प की माला पहनायी, एवं उसे पुनः एक बार वालि से द्वंद्वयुद्ध करने भेज दिया। सुग्रीव का आह्वान सुन कर, यह अपनी पत्नी तारा का अनुरोध ठुकरा कर पुनः अपने महल से निकला। इंद्र के द्वारा दी गयी सुवर्णमाला पहन कर, यह युद्ध के लिए चल पड़ा। आनंद रामायण के अनुसार, गले में सुवर्णमाला धारण करनेवाला वालि युद्ध में अजेय था, जिस कारण युद्ध के पूर्व, राम ने एक सर्प के द्वारा इसकी माला को चुरा लिया था (आ. रा. ८)। तत्पश्चात् हुए द्वंद्वयुद्ध के समय, राम ने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर इसका वध किया (वा. रा. कि. १६.३.१६)।

राम की आलोचना—मृत्यु के पूर्व, इसने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर अपना वध करनेवाले राम का अक्षत्रिय वर्तन बताते समय, राम की अत्यंत कटु आलोचना की—

अयुक्तं यदधर्मेण त्वयाऽहं निहतो रणे।
(वा. रा. कि. १७.५२)।

इसने राम से कहा, 'मैंने तुम्हारे साथ कोई अन्याय नहीं किया था। फिर भी जब मैं सुग्रीव के साथ युद्ध करने में व्यस्त था, उस समय तुमने वृक्ष के पीछे से बाण छोड़ कर मुझे आहत किया। तुम्हारा यह वर्तन संपूर्णतः अक्षत्रिय है। तुम क्षत्रिय नहीं, बल्कि खुनी हो। तुम्हें मुझसे युद्ध ही करना था, तो क्षत्रिय की भाँति चुनौति दे कर युद्धभूमि में चले आते। मैं तुम्हारा आवश्य ही पराजय कर लेता'।

वालि ने आगे कहा, 'ये सब पापकर्म तुमने सीता की मुक्ति के लिए ही किये। अगर यह बात तुम मुझसे कहते, तो एक ही दिन में मै सीता की मुक्ति कर देता। दशमुखी रावण का वध कर, उसकी लाश की गले में रस्सी बाँध कर एक ही दिन में मै तुम्हारे चरणों में रख देता। मैं मृत्यु से नहीं डरता हूँ। किन्तु तुम जैसे स्वयं को क्षत्रिय कहलानेवाले एक पापी पुरुष ने विश्वासघात से मेरा वध किया है, यह शल्य मैं कभी भी भूल नहीं सकता'।

अंत्यविधि—वालि के इस आक्षेप का राम ठीक प्रकार से जवाब न दे सका (राम दाशरथि देखिये)। मृत्यु के पूर्व वालि ने अपनी पत्नी तारा एवं पुत्र अंगद को सुग्रीव के हाथों सौंप दिया।

स्वभावचित्रण—राम का शत्रु होने के कारण, उत्तरकालीन बहुत सारे रामायण ग्रन्थों में एक क्रूरकर्मन् राजा के रुप में वालि का चरित्रचित्रण किया गया है। राम के द्वारा किये गये इसके वध का समर्थन देने का प्रयत्न भी अनेक प्रकार से किया गया है।

किन्तु ये सारे वर्णन अयोग्य प्रतीत होते हैं। वालि स्वयं एक अत्यंत पराक्रमी एवं धर्मनिष्ठ राजा था। इसने चार ही वेदों का अध्ययन किया था, एवं अनेकानेक यज्ञ किये थे। इसकी धर्मपरायणता के कारण स्वयं नारद ने भी इसकी स्तुति की थी (ब्रह्मांड. ३.७.२१४-२४८)। मृत्यु के पूर्व राम के साथ इसने किया हुआ संवाद भी इसकी शूरता, तार्किकता एवं धर्मनिष्ठता पर काफ़ी प्रकाश डालता है।

२. वरुणलोक का एक असुर (म. स. ९.१४)।

वालिशय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वालिशिख--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

वालिशिखायनि—एक आचार्य (सां. आ. ७.२१)।

वाल्मीकि--एक व्याकरणकार, जिसके विसर्गसंधी के संबंधित अभिमतों का निर्देश तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में प्राप्त है (तै. प्रा. ५.३६; ९.४; १८.६)।

२. एक पक्षिराज, जो गरुडवंशीय सुपर्णपक्षियों के वंश में उत्पन्न हुआ था। दास के अनुसार, ये पक्षी न हो कर, सप्तसिंधु की यायावर आर्य जाति थी (ऋग्वेदिक इंडिया, पृ. ६५, १४८)। ये कर्म से क्षत्रिय थे, एवं बड़े ही विष्णुभक्त थे (म. उ. ९९.६; ८)।

३. एक व्यास (व्यास देखिये)।

४. एक शिवभक्त, जिसने शिवभक्ति के संबंध में अपना अनुभव युधिष्ठिर को कथन किया था (म. अनु. १८.८-१०)।

वाल्मीकि 'आदिकवि'--एक सुविख्यात महर्षि, जो 'वाल्मीकि रामायण' नामक संस्कृत भाषा के आद्य आर्ष महाकाव्य का रचयिता माना जाता है।

नाम--वाल्मीकि रामायण के युद्धकाण्ड के फलश्रुति-अध्याय में आदिकवि वाल्मीकि का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. यु. १२८.१०५)। वहाँ वाल्मीकि के द्वारा प्राचीन काल में विरचित 'रामायण' नामक आदिकाव्य के पठन से पाठकों को धर्म, यश एवं आयुष्य प्राप्त होने की फलश्रुति दी गयी है। समस्त प्राचीन वाङ्मय में आदि-कवि वाल्मीकि के संबंध में यह एकमेव निर्देश माना जाता है।

रामायण के बाल एवं उत्तर काण्डों में--आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, वाल्मीकि-रामायण के दो से छः तक काण्डों की रचना करनेवाला आदिकवि वाल्मीकि, एवं वाल्मीकि-रामायण के बाल एवं उत्तर काण्डों में निर्दिष्ट राम दशरथि राजा के समकालीन वाल्मीकि दो विभिन्न व्यक्ति थे। किन्तु ई. पू. १ ली शताब्दी में, इस ग्रंथ के बाल एवं उत्तर काण्ड की रचना जब समाप्त हो चुकी थी, उस समय आदिकवि वाल्मीकि एवं महर्षि वाल्मीकि ये दोनों एक ही मानने जाने की परंपरा प्रस्थापित हुई थी।

वाल्मीकि-रामायण के उत्तर-काण्ड में निर्देशित महर्षि वाल्मीकि प्रचेतस् ऋषि का दसवाँ पुत्र था, एवं यह जाति से ब्राह्मण तथा अयोध्या के दशरथ राजा का मित्र था (वा. रा. उ. ९६.१८; ४७.१६)।

आश्रम--वाल्मीकि-रामायण के बालकाण्ड में इसे तपस्वी, महर्षि एवं मुनि कहा गया है (वा. रा. बा. १.१; २.४; ४.४)। इसका आश्रम तमसा एवं गंगा के समीप ही था (वा. रा. बा. २.३)। यह आश्रम गंगा नदी के दक्षिण में ही था, क्यों कि, सीता त्याग के समय, लक्ष्मण एवं सीता अयोध्या से निकलने के पश्चात् गंगा नदी पार कर इस आश्रम में पहुँचे (वा. रा. उ. ४७)। बाद में प्रस्थापित हुए एक अन्य परंपरा के अनुसार, वाल्मीकि का आश्रम गंगा के उत्तर में यमुनानदी के किनारे, चित्रकूट के पास मानने जाने लगा (वा. रा. अयो. ५६.१६ दाक्षिणात्य; अ. रा. २.६. रामचरित. २. १२४)। आजकल भी वह बाँदा जिले में स्थित है।

वाल्मीकि-रामायण में इसे अपने आश्रम का कुलपति कहा गया है। प्राचीन भारतीय परंपरा के अनुसार, 'कुलपति' उस ऋषि को कहते थे, जो दस हज़ार विद्यार्थियों का पालनपोषण करता हुआ उन्हें शिक्षा प्रदान करता था। इससे प्रतीत होता है कि, वाल्मीकि का आश्रम काफ़ी बड़ा था।

आख्यायिकाएँ--वाल्मीकि के पूर्वायुष्य से संबंधित अनेकानेक अख्यायिकाएँ महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं। किंतु वे काफ़ी उत्तरकालीन होने के कारण अविश्व-सनीय प्रतीत होती हैं।

महाभारत एवं पुराणों में वाल्मीकि को 'भार्गव' (भृगुवंश में उत्पन्न) कहा गया है। महाभारत के 'रामो-पाख्यान' का रचयिता भी भार्गव बताया गया है (म. शां. ५७.४०)। भार्गव च्यवन नामक ऋषि के संबंध में यह कथा प्रसिद्ध है कि, वह तपस्या करता हुआ इतने समय तक निश्चल रहा की, उसका शरीर 'वल्मीक' से आच्छादित हुआ (भा.९.३; च्यवन भार्गव देखिये)। यह कथा 'वाल्मीकि' (जिसका शरीर वल्मीक से आच्छादित हो): नाम से मिलती-जुलती होने के कारण, वाल्मीकि एवं च्यवन इन दोनों के कथाओं में संमिश्रण किया गया, एवं इस कारण वाल्मीकि को भार्गव उपाधि प्रदान की गयी।

अध्यात्म रामायण में--वाल्मीकि के द्वारा वल्मीक से आच्छादित होने का इसी कथा का विकास, उत्तरकालीन साहित्य में वाल्मीकि को दस्यु, ब्रह्मघ्न एवं डाकू मानने में हो गया, जिसका सविस्तृत वर्णन स्कंद पुराण (स्कंद. वै. २१), एवं अध्यात्म रामायण में प्राप्त है।

इस कथा के अनुसार, यह जन्म से तो ब्राह्मण था, किंतु निरंतर किरातों के साथ रहने से, एवं चोरी करने से इसका ब्राह्मणत्त्व नष्ट हुआ। एक शूद्रा के गर्भ से इसे अनेक शूद्रपुत्र भी उत्पन्न हुए।

एक बार इसने सात मुनियों को देखा, जिनका वस्त्रादि छीनने के उद्देश्य से इसने उन्हें रोक लिया। फिर उन ऋषियों ने इससे कहा, 'जिन कुटुंबियों के लिए तुम नित्य पापसंचय करते हो, उनसे जा कर पूछ लो की, वे तुम्हारे इस पाप के सहभागी बनने के लिए तैयार हैं, या नहीं'। इसके द्वारा कुटुंबियों को पूछने पर उन्होंने इसे कोरा जवाब दिया, 'तुम्हारा पाप तुम सम्हाल लो, हम तो केवल धन के ही भोगनेवाले हैं'।

यह सुन कर इसे वैराग्य उत्पन्न हुआ, एवं इसने उन ऋषियों की सलाह की अनुसार, निरंतर 'मरा' ('राम' शब्द का उल्टा रूप) शब्द का जप करना प्रारंभ किया। एक सहस्त्र वर्षों तक निश्चल रहने के फलस्वरूप, इसके शरीर पर 'वल्मीक' बन गया।

कालोपरांत ऋषियों ने इसे बाहर निकलने का आदेश दिया, एवं कहा, 'वल्मीक में तपस्या करने कारण तुम्हारा दूसरा जन्म हुआ है। अतएव आज से तुम वाल्मीकि नाम से ही सुविख्यात होंगे' (अ. रा. अयो. ६. ४२-८८)।

स्कंद पुराण में भी यही कथा प्राप्त है, किंतु वहाँ ऋषि बनने के पूर्व का इसका नाम अग्निशर्मन् दिया गया है।

आख्यायिकाओं का अन्वयार्थ—कई अभ्यासकों के अनुसार, पुराणों में प्राप्त इन सारे कथाओं में वाल्मीकि की नीच जाति प्रतिध्वनित होती है। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन हैं। जो कुछ भी हो, इन कथाओं के मूल रूप में 'रामनाम' का निर्देश अप्राप्य है। इससे प्रतीत होता है की, रामभक्तिसांप्रदाय का विकास होने के पश्चात्, यह सारा वृत्तांत रामनाम के गुणगान में परिणत कर दिया गया है (बुल्के, रामकथा पृ. ४७)। पुराणों में इसे छब्बीसवाँ वेदव्यास एवं श्रीविष्णु का अवतार कहा गया है (विष्णु. ३.३.१८)। यह निर्देश भी इसका महात्म्य बढाने के लिए ही किया गया होगा।

क्रौंचवध—इसकी शिष्य शाखा काफ़ी बडी थी, किन्तु उसमें भरद्वाज ऋषि प्रमुख था। एक बार यह भरद्वाज के साथ नदी से स्नान कर के वापस आ रहा था। मार्ग में इसने एक व्याध मैथुनासक्त क्रौंच पक्षियों में एक पर शरसंधान करते हुए देखा। उस समय उस पक्षी के प्रति इसके मन में दया उत्पन्न हुई, एवं इसके मुख से छंदोबद्ध आर्तवाणी निःसृत हुईः-'

मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौंचमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्॥

(वा. रा. बा. २.१५)।

अकस्मात् मुख से निकले हुए शब्दों को एक वृत्तबद्ध अनुष्टुभ् श्लोक का रूप प्राप्त होने का चमत्कार देख कर, इसे मन ही मन अत्यंत आश्चर्य हुआ। इसके साथ ही साथ, क्रोध में एक निषाद को इतना कड़ा शाप देने के कारण, इसे अत्यंत दुःख भी हुआ।

इसी दुःखित अवस्था में यह बैठा था कि, ब्रह्मा वहाँ प्रकट हुए एवं उन्होंने कहा, 'पछताने का कोई कारण नहीं है। यह श्लोक तुम्हारी कीर्ति का कारण बनेगा। इसी छंद में तुम राम के चरित्र की रचना करो'।

ब्रह्मा के इस आदेशानुसार, इसने चौबीससहस्र श्लोकों से युक्त रामायण ग्रन्थ की रचना की (वा. रा. बा. २)।

रामायण की जन्मकथा—रामकथा की रचना करने की प्रेरणा वाल्मीकि को कैसी प्राप्त हुई, इस संबंध में इसने नारद के साथ किये एक संवाद का निर्देश वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। एक बार तप एवं स्वाध्याय में मग्न, एवं भाषणकुशल नारद से इसने प्रश्न किया, 'इस संसार में ऐसा कौन महापुरुष है, जो आचार विचार, एवं पराक्रम में आदर्श माना जा सकता है'। उस समय नारद ने इसे रामकथा का सार सुनाया, जिसे ही श्लोकबद्ध कर, इसने अपने 'रामायण' महाकाव्य की रचना की (वा. रा. बा. १)।

इस आख्यायिका से प्रतीत होता है कि, तत्कालीन समाज में रामकथा से संबंधित जो कथाएँ लोककथा के रूप में वर्तमान थी, उन्हींको वाल्मीकि ने छंदोबद्ध रूप दे कर रामायण की रचना की।

सीता संरक्षण—राम के द्वारा सीता का त्याग होने पर इसीने उसे सँभाला, एवं उसकी रक्षा की। उस समय सीता गर्भवती थी। बाद में यथावकाश उसे दो जुड़वे पुत्र उत्पन्न हुए। उनका 'कुश' एवं 'लव' नामकरण इसीने ही किया, एवं उन्हें पालपोस कर विद्यादान भी किया। वे कुमार बड़े होने पर, इसने उन्हें स्वयं के द्वारा विरचित रामायण काव्य सिखाया। पश्चात् कुश लव ने वाल्मीकि के द्वारा विरचित रामायण का गायन सर्वत्र करना शुरू किया। इस प्रकार वे अयोध्या नगरी में भी पहुँच गये, जहाँ राम दाशरथि के अश्वमेध यज्ञ के स्थान पर उन्होंने रामायण का गान किया (वा. रा. उ. ९३-९४)।

रामसभा में—कुशलव के द्वारा किये गये रामायण के साभिनय गायन से राम मंत्रमुग्ध हुआ, एवं जब उसे पता चला कि, ये ऋषिकुमार सामान्य भाट नही, बल्कि उसीके ही पुत्र है, तब वह बहुत ही प्रसन्न हुआ। उसने सीता को अपने पास बुलवा लिया। उस समय वाल्मीकि स्वयं सीता के साथ रामसभा में उपस्थित हुआ, एवं इसने सीता के सतीत्व की साक्ष दी। उस समय इसने अपने सहस्र वर्षों के तप का, एवं सत्यप्रतिज्ञता का निर्देश कर सीता का स्वीकार करने की प्रार्थना राम से की (वा. रा. उ. ९६.२०)। पश्चात् इसीके कहने पर सीता ने पातिव्रत्य की कसम खा कर भूमि में प्रवेश किया।

पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानत्रयी—पौराणिक साहित्य में रामायण, महाभारत एवं भागवत ये तीन प्रमुख ग्रंथ माने जाते है, एवं इस साहित्य में प्राप्त तत्त्वज्ञान की 'प्रस्थानत्रयी' भी इन्हीं ग्रंथो से बनी हुई मानी जाती है। वेदात ग्रंथों की प्रस्थानत्रयी में अंतर्भूत किये जानेवाले भगवद्गीता, उपनिषद् एवं ब्रह्मसूत्र की तरह, पौराणिक साहित्य की प्रस्थानत्रयी बनानेवाले ये तीन ग्रंथ भी भारतीय तत्त्वज्ञान का विकास एवं प्रसार की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं।

उपर्युक्त ग्रंथों में से रामायण एवं भागवत क्रमशः कर्मयोग, और भक्तितत्त्वज्ञान के प्रतिपादक ग्रंथ हैं। इसी कारण दैनंदिन व्यवहार की दृष्टि से, रामायण ग्रंथ भागवत से अधिक हृदयस्पर्शी एवं आदर्शभूत प्रतीत होता है। इस ग्रंथ में आदर्श पुत्र, भ्राता, पिता, माता आदि के जो कर्तव्य बतायें गये हैं, वे एक आदर्श बन कर व्यक्तिमात्र को आदर्श जीवन की स्फूर्ति प्रदान करते हैं।

व्यक्तिगुणों का आदर्श—इस प्रकार रामायण में भारतीय दृष्टिकोन से आदर्श जीवन का चित्रण प्राप्त है, किन्तु उस जीवन के संबंधित तत्त्वज्ञान वहाँ ग्रथित नहीं है, जो महाभारत में प्राप्त है। महाभारत मुख्यतः एक तत्त्वज्ञानविषयक ग्रंथ है, जिसमें आदर्शात्मक व्यक्तिचित्रण के साथ साथ, आदर्श-जीवन के संबंधित भारतीय तत्वज्ञान भी ग्रथित किया गया है। व्यक्तिविषयक आदर्शों को शास्त्रप्रामाण्य एवं तत्त्वज्ञान की चौखट में बिठाने के कारण, महाभारत सारे पुराण ग्रंथों में एक श्रेष्ठ श्रेणि का तत्वज्ञान-ग्रंथ बन गया है।

किन्तु इसी तत्त्वप्रधानता के कारण, महाभारत में वर्णित व्यक्तिगुणों के आदर्श धुंधले से हो गये हैं, जिनका सर्वोच्च श्रेणि का सरल चित्रण रामायण में पाया जाता है। इस प्रकार जहाँ महाभारत की सारी कथावस्तु परस्पर-स्पर्धा, मत्सर, कुटिलता एवं विजिगिषु वृत्ति जैसे राजस एवं तामस वृत्तियों से ओतप्रोत भरी हुई है, वहाँ रामायण की कथावस्तु में स्वार्थत्याग, पितृपरायणता, बंधुप्रेम जैसे सात्विक गुण ही प्रकर्ष से चित्रित किये गये है।

यही कारण है कि, वाल्मीकि-रामायण महाभारत से कतिपय अधिक लोकप्रिय है, एवं उससे स्फूर्ति पा कर भारत एवं दक्षिणीपूर्व एशिया की सभी भाषाओं में की गयी रामकथाविषयक समस्त रचनाएँ, सदियों से जनता के नित्यपाठ के ग्रंथ बन चुकी हैं (राम दाशरथि देखिये)। इस प्रकार, जहाँ महाभारत में वर्णित व्याक्तितत्त्वज्ञान-विषयक चर्चाओं के विषय बन चुकी है, वहाँ वाल्मीकि-रामायण में वर्णित राम, लक्ष्मण एवं सीता देवतास्वरूप पा कर सारे भरतखंड में उनकी पूजा की जा रही है।

महाभारत से तुलना—संस्कृत साहित्य के इतिहास में रामायण एवं महाभारत इन दोनों ग्रंथों को महाकाव्य कहा जाता है। किंतु प्रतिपाद्य विषय एवं निवेदनशैली इन दोनों दृष्टि से वे एक दूसरे से बिल्कुल विभिन्न हैं। जहाँ महाभारत एक इतिहासप्रधान काव्य है, वहाँ रामायण एक काव्यप्रधान चरित्र है। महाभारत के अनुक्रमणीपर्व में उस ग्रंथ को सर्वत्र 'भारत का इतिहास' (भारतस्येतिहास), भारत की ऐतिहासिक कथाएँ (भारतसंज्ञिताः कथाः) कहा गया है (म. आ. १.१४. १७)। इसके विरुद्ध रामायण में, 'राम एवं सीता के चरित्र का, एवं रावणवध का काव्य मैं कथन करता हूँ' ऐसे वाल्मीकि के द्वारा कथन किया गया है—

> काव्यं रामायणं कृत्स्नं सीतायाश्चरितम् महत्
> पौलस्त्यवधमित्येव चकार चरितव्रतः॥
>
> (वा. रा. बा. ४.७.)।

इस प्रकार महाभारत की कथावस्तु अनेकानेक ऐतिहासिक कथाउपकथाओं को एकत्रित कर रचायी गयी है। किन्तु वाल्मीकि-रामायण की सारी कथावस्तु राम एवं उसके परिवार के चरित्र से मर्यादित है। राम, लक्ष्मण, सीता, दशरथ आदि का 'हसित,' 'भाषित' एवं 'चेष्टित' (पराक्रम) का वर्णन करना, यही उसका प्रधान हेतु है (वा. रा. बा. ३.४)।

इन दोनों ग्रंथों का प्रतिपाद्य विषय इस तरह सर्वतोपरि भिन्न होने के कारण, उनकी निवेदनशैली भी एक दूसरे से विभिन्न है। रामायंण की निवेदनशैली वर्णनात्मक, विशेषणात्मक एवं अधिक तर काव्यमय है। उसमें प्रसाद होते हुए भी गतिमानता कम है। इसके विरुद्ध महाभारत की निवेदनशैली साफ़सुथरी, नाट्यपूर्ण एवं गतिमान् है।

रामायण की श्रेष्ठता—इसी कारण हिन्दुधर्मग्रंथों में रामायण की श्रेष्ठता के संबंध में डॉ. विंटरनिट्झ से ले कर विनोबाजी भावे तक सभी विद्वानों की एकवाक्यता है। श्री. विनोबाजी ने लिखा है, 'चित्तशुद्धि प्रदान करनेवाले समस्त हिन्दुधर्म ग्रंथों में वाल्मीकिरामायण भगवद्गीता से भी अधिक श्रेष्ठ है। जहाँ भगवद्गीता नवनीत

है, वहाँ रामायण माता के दूध के समान है। नवनीत का उपयोग मर्यादित लोग ही कर सकते है, किन्तु माता का दूध तो सभीं के लिए लाभदायक रहता है'।

इसीलिए वाल्मीकि रामायण के प्रारंभ में ब्रह्मा ने रामायण के संबंधित जो आशीर्वचन वाल्मीकि को प्रदान किया है, वह सही प्रतीत होता हैः-

यावत्स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च महीतले
तावद्रामायणकथा लोकेषु प्रचरिष्यति ॥
(वा. रा. बा. २.३६)।

(इस सृष्टि में जब तक पर्वत खड़े है, एवं नदियाँ बहती है, तब तक रामकथा का गान लोग करते ही रहेंगे)।

रामायण की ऐतिहासिकता—डॉ. याकोबी के अनुसार, वर्ण्य विषय की दृष्टि से 'वाल्मीकि-रामायण' दो भागों में विभाजित किया जा सकता हैः-१. बाल एवं अयोध्या कांड में वर्णित अयोध्य की घटनाएँ, जिनका केंद्रबिंदु इक्ष्वाकुराजा दशरथ है; २. दंडकारण्य एवं रावणवध से संबंधित घटनाएँ, जिनका केंद्रबिंदु रावण दशग्रीव है। इनमें से अयोध्या की घटनाएँ ऐतिहासिक प्रतीत होती है, जिनका आधार किसी निर्वासित इक्ष्वाकुवंशीय राजकुमार से है। रावणवध से संबंधित घटनाओं का मूल-उद्गम वेदों में वर्णित देवताओं की कथाओं में देखा जा सकता है (याकोबी, रामायण पृ. ८६; १२७)।

रामकथा से संबंधित इन सारे आख्यान-काव्यों की रचना इक्ष्वाकुवंश के सूतों ने सर्वप्रथम की, जिनमें रावण एवं हनुमत् से संबंधित प्रचलित आख्यानों को मिला कर वाल्मीकि ने रामायण की रचना की।

जिस प्रकार वाल्मीकि के पूर्व रामकथा मौखिक रूप में वर्तमान थी, उसी प्रकार दीर्घकाल तक 'वाल्मीकि-रामायण' भी मौखिक रूप में ही जीवित रहा। इस काव्य की रचना के पश्चात्, कुशीलवों ने उसे कंठस्थ किया, एवं वर्षों तक वे उसे गाते रहे। किंतु अंत में इस काव्य को लिपिबद्ध करने का कार्य भी स्वयं वाल्मीकि ने ही किया, जो 'वाल्मीकि रामायण' के रूप आज भी वर्तमान है।

इसीसे ही स्फूर्ति पा कर भारत की सभी भाषाओं में रामकथा पर आधारित अनेकानेक ग्रन्थों की रचना हुई, जिनके कारण वाल्मीकि एक प्रातःस्मरणीय विभूति बन गयाः—

मधुममय-भणतीनां मार्गदर्शी महर्षिः।

आदिकवि वाल्मीकि—वाल्मीकिप्रणीत रामायण संस्कृत भाषा का आदिकाव्य माना जाता हैं, जिसकी रचना अनुष्टुभ् छंद में की गयी है।

वाल्मीकि रामायण के पूर्वकाल में रचित कई वैदिक ऋचाएँ अनुष्टुभ् छंद में भी थी। किंतु वे लघु गुरु-अक्षरों के नियंत्रणरहित होने के कारण, गाने के लिए योग्य (गेय) नहीं थी। इस कारण ब्राह्मण, आरण्यक जैसे वैदिकोत्तर साहित्य में अनुष्टुभ् छंद का लोप हो कर, इन सारे ग्रन्थों की रचना गद्य में ही की जाने लगी।

इस अवस्था में, वेदों में प्राप्त अनुष्टुभ् छंद को लघु-गुरु अक्षरों के नियंत्रण में बिठा कर वाल्मीकि ने सर्वप्रथम अपने 'मा निषाद' श्लोक की, एवं तत्पश्चात् समग्र रामायण की रचना की। छंदःशास्त्रीय दृष्टि से वाल्मीकि के द्वारा प्रस्थापित नये अनुष्टुभ् छंद की विशेषता निम्न-प्रकार थी :—

श्लोके षष्ठं गुरु ज्ञेयं सर्वत्र लघु पंचमम्।
द्विचतुःपादयोर्ह्रस्वं सप्तमं दीर्घमन्ययोः ॥

(वाल्मीकि के द्वारा प्रस्थापित अनुष्टुभ् छंद में, श्लोक क हर एक पाद का पाँचवाँ अक्षर लघु, एवं छठवाँ अक्षर गुरु था। इसी प्रकार समपादों में से सातवाँ अक्षर ह्रस्व, एवं विषमपाद में सातवाँ अक्षर दीर्घ था)।

इसी अनुष्टुभ् छंद के रचना के कारण वाल्मीकि संस्कृत भाषा का आदि-कवि कहलाया गया। इतना ही नहीं 'विश्व' जैसे संस्कृत भाषा के शब्दकोश में 'कवि' शब्द का अर्थ भी 'वाल्मीकि' ही दिया गया है।

गेय महाकाव्य—वाल्मीकि के द्वारा रामायण की रचना एक पाठ्य काव्य के नाते नहीं, बल्कि एक गेय काव्य के नाते की गयी थी। रामायण की रचना समाप्त होने के पश्चात्, इस काव्य को नाट्यरूप में गानेवाले गायकों कि खोज वाल्मीकि ने की थीः-

चिन्तयामास को न्वेतत् प्रयुञ्जादिति प्रभुः ॥
पाठ्ये गेये च मधुरं प्रमाणैस्त्रिभिरन्वितम्।
जातिभिः सप्तभिर्युक्तं तंत्रीलय-समन्वितम् ॥
(वा. रा. बा. ४.३; ८)।

(रामायण की रचना करने के पश्चात्, इस महाकाव्य के साभिनय गायन का प्रयोग त्रिताल एवं सप्तजाति में

तथा वीणा के स्वरों में कौन गायक कर सकेगा, इस संबंध में वाल्मीकि खोज करने लगा।)

वाल्मीकि के काल में रामायण का केवल गायन ही नही, बल्कि अभिनय भी किया जाता था, ऐसा स्पष्ट निर्देश वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है। वहाँ रामायण का गायन करनेवाले कुशलव को 'स्थानकोविद' (कोमल, मध्य एवं उच्च स्वरोच्चारों में प्रवीण), 'मार्गगानतज्ज्ञ' (मार्ग नामक गायनप्रकार में कुशल) ही नहीं, बल्कि 'गांधर्वतत्वज्ञ' (नाट्यशास्त्रज्ञ), एवं 'रूपलक्षणसंपन्न' (अभिनयसंपन्न) कहा गया है (वा. रा. बा. ४.१०. ११; कुशीलव देखिये)।

वाल्मीकिप्रणीत रामकथा को आधुनिक काव्य के गेय छंदों में बाँध कर गीतों के रूप में प्रस्तुत करने का सफल प्रयत्न, मराठी के सुविख्यात कवि ग. दि. माडगूलकर के द्वारा 'गीतरामायण' में किया गया है। गेय रूप में रामायणकाव्य अधिक मधुर प्रतीत होता है, इसका अनुभव 'गीतरामायण' के श्रवण से आता है।

आर्ष महाकाव्य—जिस प्रकार वाल्मीकि संस्कृत भाषा का आदिकवि है, उसी प्रकार इसके द्वारा विरचित रामायण संस्कृत भाषा का पहला 'आर्ष महाकाव्य' माना जाता है। 'आर्ष महाकाव्य' के गुणवैशिष्ट्य महाभारत में निम्नप्रकार दिये गये है—

> इतिहासप्रधानार्थं शीलचारित्र्यवर्धनम्।
> धीरोदात्तं च गहनं श्रव्यैर्वृत्तैरलंकृतम्॥
> लोकयात्राक्रमश्चापि पावनः प्रतिपाद्यते।
> विचित्रार्थपदाख्यानं सूक्ष्मार्थन्यायबृंहितम्॥

(इतिहास पर आधारित, एवं सदाचारसंपन्न आदर्शों का प्रतिपादन करनेवाले काव्य को आर्ष महाकाव्य कहते हैं। वह सद्‌गुण एवं सदाचार को पोषक, धीरोदात्त एवं गहन आशय से परिपूर्ण, श्रवणीय छंदों से युक्त रहता है)।

वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन—इस ग्रंथ में उत्तर भारत, पंजाब एवं दक्षिण भारत के अनेकानेक भौगोलिक स्थलों का निर्देश एवं जानकारी प्राप्त है। कोसल देश एवं गंगा नदी के पडोस के स्थलों का भौगोलिक स्थान, एवं स्थलवर्णन उस ग्रंथ मे जितने स्पष्ट रूप से प्राप्त है, उतनी स्पष्टता से दक्षिण भारत के स्थलों का वर्णन नही मिलता। इससे प्रतीत होता है कि, वाल्मीकि को उत्तर भारत एवं पंजाब प्रदेश की जितनी सूक्ष्म जानकारी थी, उतनी दक्षिण भारत एवं मध्यभारत की नहीं थी। कई अभ्यासकों के अनुसार, वाल्मीकि स्वयं उत्तर भारत का निवासी था, एवं गंगा नदी को मिलने वाली तमसा नदी के किनारे अयोध्या नगरी के समीप इसका आश्रम था। वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट प्रमुख भौगोलिक स्थल निम्न प्रकार हैः—

(१) **उत्तर भारत के स्थलः**—१. अयोध्या (वा. रा. बा. ६.१); २. सरयू नदी (वा. रा. बा. २४.१०); ३. तमसा नदी (वा. रा. बा. २.४); ४. कोसल देश (वा. रा. अयो. ५०.१०); ५. शृंगवेरपुर (वा. रा. अयो. ५०.२६); ६. नंदिग्राम (वा. रा. अयो. ११५.१२); ७. मिथिला, सिद्धाश्रम, गौतमाश्रम, एवं विशाला नगरी (वा. रा. बा. ३१.६८); ८. गिरिव्रज अथवा राजगृह (वा. रा. अयो. ६८.२१); ९. भरद्वाजाश्रम (वा. रा. अयो. ५४.९); १०. बाह्लीक (वा. रा. अयो. ६८.१८); ११. भरत का अयोध्या-केकय-गिरिव्रज प्रवास (वा. रा. अयो. ६८. १२–२१;७१.१–१८)।

(२) **दक्षिण भारत के स्थल**—१. पंचवटी (वा. रा. अर. १३.१२); २. पंपा नदी, (वा. रा. अर. ६.१७); ३. दण्डकारण्य (वा. रा. बा. १०.२५); ४. अगस्त्याश्रम (वा. रा. अर. ११. ८३); ५. जनस्थान (वा. रा. उ. ८१.२०); ६. किष्किंधा (वा. रा. कि. १२.१४) ७. लंका (वा. रा. कि. ५८.१९-२०); ८. विंध्याद्रि (वा. रा. कि. ६०.७)।

रामायण का रचनाकाल—रामायण के सात कांडों में से, दूसरे से ले कर छटवे तक के कांडों (अर्थात् अयोध्या, अरण्य, किष्किंधा, सुंदर एवं युद्ध) की रचना स्वयं वाल्मीकि के द्वारा की गयी थी। बाकी बचे हुए दो कांड (अर्थात् पहला बालकांड, एवं सातवा उत्तरकांड) वाल्मीकि के द्वारा विरचित 'आदि रामायण' में अंतर्भूत नही थे। उनकी रचना वाल्मीकि के उत्तरकालीन मानी जाती है। इन दोनों कांडों में वाल्मीकि का एक पौराणिक व्यक्ति के रूप में निर्देश प्राप्त है।

आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' का रचनाकाल महाभारत के पूर्व में, अर्थात् ३०० ई. पू. माना जाता है; एवं वाल्मीकि के प्रचलित रामायण का रचनाकाल दूसरि शताब्दी ई. पू. माना जाता है।

वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' के रचनाकाल के संबंध में विभिन्न संशोधकों के अनुमान निम्नप्रकार हैं:—१.

डॉ. याकोबी–६ वी शताब्दी ई. पू; २. डॉ. मॅक्डोनेल ६ वी शताब्दी ई. पू.; ३. डॉ. मोनियर विल्यम्स–५ वी शताब्दी ई. पू.; ४. श्री. चिं. वि. वैद्य–५ वी शताब्दी ई. पू.; ५. डॉ. कीथ–४ शताब्दी ई. पू.; ६. डॉ. विंटरनित्स–३ री शताब्दी ई. पू.।

उपर्युक्त विद्वानों में से, डॉ. याकोबी, डॉ. विल्यम्स, श्री. वैद्य, एवं डॉ. मॅक्डोनेल वाल्मीकि के 'आदिकाव्य' की रचना बौद्ध साहित्य के पूर्वकालीन मानते हैं। किंतु बौद्ध साहित्य में जहाँ रामकथा संबंधी स्फुट आख्यान आदि का निर्देश प्राप्त है, वहाँ वाल्मीकि रामायण का निर्देश अप्राप्य है। इससे उस ग्रन्थ की रचना बौद्ध साहित्य के उत्तरकालीन ही प्रतीत होती है।

पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में भी वाल्मीकि अथवा वाल्मीकि रामायण का निर्देश अप्राप्य है। किंतु उस ग्रंथ में कैकेयी, कौसल्या, शूर्पणखा आदि रामकथा से संबंधित व्यक्तियों का निर्देश मिलता है (पां. सू. ७.३.२; ४.१.१५५; ६. २.१२२)। इससे प्रतीत होता है कि, पाणिनि के काल में यद्यापि रामकथा प्रचलित थी, फिर भी वाल्मीकि रामायण की रचना उस समय नही हुई थी।

महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण—महाभारत एवं 'वाल्मीकि रामायण' में से रामायण ही महाभारत से पूर्वकालीन प्रतीत होता है। कारण कि, महाभारत में वाल्मीकि के कई उद्धरण प्राप्त हैं, पर रामायण में महाभारत का निर्देश तक नही आता।

सात्यकि ने भूरिश्रवस् राजा का प्रायोपविष्ट अवस्था में शिरच्छेद किया। अपने इस कृत्य का समर्थन देते हुए, सात्यकि वाल्मीकि का एक श्लोकार्ध (हनुमत्–इंद्रजित् संवाद, वा. रा. यु. ८१.२८) उद्धृत करते हुए कहता है:—

> अपि चायं पुरा गीतः श्लोको वाल्मीकिना भुवि।
> न हन्तव्या स्त्रियश्चेति यद्ब्रवीषि प्लवंगम॥
> सर्वकालं मनुष्येण व्यवसायवता सदा॥
> पीडाकरममित्राणां यत्स्यात्कर्तव्यमेव तत्॥
> (म. द्रो. ११८.४८.९७५--९७६*)।

महाभारत में अन्यत्र रामायण को प्राचीनकाल में रचा गया काव्य (पुरागीतः) कहा गया है (म. व.२७३.६)।

वाल्मीकि रामायण के संस्करण--इस ग्रंथ के संप्रति चार प्रामाणिक संस्करण उपलब्ध हैं, जिनमें १०–१५ सर्गों से बढ़ कर अधिक विभिन्नता नही हैं:—

(१) उदिच्य पाठ, जो निर्णयसागर प्रेस एवं गुजराती प्रिन्टिंग प्रेस, बंबई के द्वारा प्रकाशित है। इस पर नागोजीभट्ट के द्वारा 'तिलक टीका' प्राप्त है, जो रामायण की सब से विस्तृत एवं उत्कृष्ठ टीका मानी जाती है।

(२) दाक्षिणात्य पाठ, जो मध्वविलास बुक डेपो, कुंभकोणम् के द्वारा प्रकाशित है। इस संस्करण पर श्रीमध्वाचार्य के तत्त्वज्ञान का काफ़ी प्रभाव प्रतीत होता है। फिर भी, यह संस्करण 'उदिच्य पाठ' से मिलता-जुलता है।

(३) गौडीय पाठ, जो डॉ. जी. गोरेसियो के द्वारा संपादित, एवं कलकत्ता संस्कृत सिरीज में १८४३–१८६७ ई. के बीच प्रकाशित हो चुका है।

(४) पश्चिमोत्तरीय (काश्मीरी) पाठ, जो लाहोर के डी. ए. व्ही. कॉलेज के द्वारा १९२३ ई. में प्रकाशित किया गया है।

ग्रन्थ--'वाल्मीकि रामायण' के अतिरिक्त इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैः--१. वाल्मीकिसूत्र; २. वाल्मीकिशिक्षा; ३. वाल्मीकिहृदय; ४. गंगाष्टक (C. C.)।

वाल्मीकि भार्गव--एक ऋषि, जो वरुण एवं चर्षणी के दो पुत्रों में से एक था (भा. ६.१८.४)। इसके भाई का नाम भृगु था। केवल भार्गव नाम से ही इसका निर्देश अन्यत्र प्राप्त है (म. शां. ५७.४०.)।

महाभारत में इसे एवं च्यवन भार्गव ऋषि को एक ही माना गया है, एवं इसीके द्वारा 'रामायण' की रचना किये जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। किंतु वह सही नही प्रतीत होता है (वाल्मीकि आदिकवि देखिये)।

वासना—अर्क नामक वसु की पत्नी (भा. ६.६.१३)।

वासव--इंद्र का नामान्तर (ब्रह्मांड. २.१८.४४)।

वासवी--सत्यवती (मत्स्यगंधा) का पैतृक नाम (म. आ. ५७.५७)। यह उपरिचर वसु की कन्या थी, जिस कारण इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ। इसकी माता का नाम अद्रिका था, जो स्वयं एक मत्स्यी थी। इसका विवाह पराशर ऋषि से हुआ था, जिससे इसे व्यास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (वायु. १.४०)।

वासाश्व—एक मंत्रद्रष्टा ऋषि, जो वैश्य जाति में उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. १४५.११६)।

वासिष्ठ—एक पैतृक नाम, जो ऋग्वेद में एवं उत्तर-कालीन वैदिक संहिताओं में निम्नलिखित आचार्यों के

लिए प्रयुक्त किया गया हैः- इंद्रप्रमति, उपमन्यु, कर्णश्रुत, चित्रमहस्, चैकितानेय, द्युम्नीक, प्रथ, मन्यु, मृळीक, रौहिण, वसुक्र, वृषगण, व्याघ्रपाद, शक्ति, एवं सात्यहव्य (ऋ. ९. ९७; तै. सं. ६.६.२.१; का. सं. ३४.१७; तै. आ. १.१२.७)।

२. एक आचार्यसमूह (जै. उ. ब्रा. ३.१५.२)।

३. वसिष्ठपुत्र शक्ति का नामान्तर (शक्ति देखिये)।

वासिष्ठ मित्रयु—एक आचार्य, जो व्यास के छः पुराणप्रवक्ता शिष्यों में से एक था (वायु. ६१.५६; ब्रह्मांड. २.३५.६५)।

वासुकि--नागों का एक राजा, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम शतशीर्षा था (म. उ. ११५.४६०*)। जरत्कारु ऋषि की पत्नी जरत्कारु इसकी बहन थी (म. आ. ३५.३८९*)।

देवासुरों के समुद्रमंथन के समय, यह मंथनदण्ड की रस्सी बन गया था (म. आ. १६-१२)। इसका निवासस्थान 'नागधन्वातीर्थ' में था, जहाँ देवताओं ने नागराज के पद पर इसका अभिषेक किया था। धृतराष्ट्र नामक नाग ने इसे विष्णुपुराण कथन किया था, जो आगे चल कर इसने वत्स को कथन किया (विष्णु. ६. ८.४६)।

यह शिव का अनन्य भक्त था, एवं शिव के ही शरीर पर निवास करता था। त्रिपुरदाह के समय, यह शिव के धनुष की प्रत्यंचा, एवं उसके रथ का कूबर बन गया था (म. द्रो. परि. १.२५.१२; क. २४.२५८*)।

सर्पसत्र—जनमेजय के सर्पसत्र में इसके निम्नलिखित पंद्रह कुल जल कर भस्म हुएः-१. कोटिश; २. मानस; ३. पूर्ण; ४. शल; ५. पाल; ६. हलीमक; ७. पिच्छल; ८. कौणप; ९. चक्र; १०. कालवेग; ११. प्रकालन; १२. हिरण्यबाहु; १३. शरण; १४. कक्षक एवं १५. कालदन्तक (म. आ. ५२.५-६)।

आस्तीक नामक ऋषि इसका भतिजा था, जिसने इसके बाकी कुलों को संहार से बचा लिया।

वासुक्र—एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया हैः—वसुकरण (ऋ. १०.६५); वसुकृत् (ऋ. १०.२०)।

वासुदेव—श्रीविष्णु के श्रीकृष्ण नामक आठवें अवतार का नामान्तर (कृष्ण देखिये)।भगवान् विष्णु के उपासक वासुदेव कृष्ण के रूप में ही प्रायः उसकी उपासना करते है (विष्णु देखिये)।

२. एक वास्तुशास्त्रज्ञ, जिसका वास्तुशास्त्रविषयक ग्रन्थ उपलब्ध है (मत्स्य. २५२.३)।

३. पुंड्र देश के वासुदेव नामक राजा का नामान्तर (पौण्ड्रक वासुदेव देखिये)।

वास्तु—विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वास्तुपश्य—एक ब्राह्मण (जै. ब्रा. ३.१२०)। पाठभेद—'वास्तुपस्य'।

वास्य--एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से वेदमित्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसे वत्स, वात्स्य, एवं मत्स्य नामान्तर प्राप्त थे (व्यास देखिये)।

वाहन--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे कृत का शिष्य कहा गया है (ब्रह्मांड. २.३५.५१)।

वाहनप—गौरपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। इसे 'वाहयौज' नामान्तर भी प्राप्त था।

वाहिक--एक वेदवेत्ता ब्राह्मण, जो दुःस्थिति के कारण नमक वेच कर अपनी जीविका चलाता था। इसने जीवन में अनेकानेक पापकर्म किये। अंत में यह एक शेर के द्वारा मारा गया। किंतु इसका मांस गंगा नदी में गिरने के कारण, इसका उद्धार हुआ (स्कन्द. २.४.१-२८)।

वाहिनी--सोमवंशीय कुरु राजा की पत्नी, जिसे अभिष्वत् आदि पाँच पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ८९. ४५)।

वाहिनीपति--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाहीक—एक लोकसमूह, जो पंजाब प्रदेश में विपाशा नदी के तटपर स्थित था (म. क. ४४.२०-२६; मी. १०.४५)। महाभारत में इन्हे, 'माद्र,' 'जार्तिक' 'आरट्ट' एवं 'पंचनद' आदि नामान्तर दिये गये हैं।

वाहीक का शब्दशः अर्थ 'बाहर के' होता है। उत्तर पंजाब प्रदेश में हिमालय की तलटही में दरद लोगों के नजदीक रहनेवाले 'वाहलिक' लोग, सरस्वती नदी के कारण, मध्यदेश में रहनेवाले आर्य लोगों से अलग हो गये। इसी कारण, इन्हें वाहीक नाम प्राप्त हुआ। आगे चल कर पंजाब में रहनेवाले कंबोज, यवन, दरद आदि सारे लोगों को वाहीक सामूहिक नाम प्राप्त हुआ।

महाभारत में प्राप्त कर्ण-शल्यसंवाद में इन लोगों की कर्ण ने कटु आलोचना की है। शल्य स्वयं मद्र एवं

वाहीक लोगों का राजा था। इन लोगों की उत्पत्ति के बारे में एक कल्पनारम्य एवं व्यंजनायुक्त कथा वहाँ दी गयी है। विपाशा (व्यास) नदी के किनारे 'वही' एवं 'हीक' नामक निशाचर पिशाचों का एक जोड़ा रहता था, जिसकी संतान आगे चल कर 'वाहीक' नाम से प्रसिद्ध हुई (म. क. ३०.४४)।

वाहुरि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाह्निक--एक राजकुल, जिसमें तीन राजा समाविष्ट थे (वायु. ९९. ३७३)।

वाह्यक--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाह्यका--एक राजकन्याद्वय, जो मत्स्य के अनुसार सृंजय राजा की कन्याएँ, एवं यादव राजा सात्वत भजमान राजा की पत्नियाँ थी। इनके पुत्रों के नाम निमि, कृमिल एवं वृष्णि थे (मत्स्य. ४४.४९-५०)।

वाह्यमय--नीलपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वाह्ययन--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद- 'महाभाग।

विंश--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार क्षुप राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कल्याण था (वायु. ८६.६)।

२. (सू. इ.) इक्ष्वाकु राजा का पुत्र, जिसके पुत्र का नाम विविंश था (म. आश्व. ४.५)।

विकचा--विरूपक नामक नैर्ऋत राक्षस की पत्नी, जिसे भूमिराक्षस नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (ब्रह्मांड. ३. ७.२३२)।

विकट--धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.३)। भीमसेन को घायल करनेवाले धृतराष्ट्र के चौदह पुत्रों में से यह एक था। अन्त में भीमसेन ने इसका वध किया (म. क. ३५.१४)।

२. रावणपक्षीय एक राक्षस, जो अंगद के द्वारा मारा गया (वा. रा. यु. १२५)।

३. रुद्रगणों में से एक।

४. एक राक्षस, जिसे गंगाजल पिने के कारण मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. उ. २०४-२०५)।

विकटा--एक राक्षसी, जो अशोकवन में सीता पर पहरा देनेवाली राक्षसियों में से एक थी (वा. रा. सुं. २३.१४)।

विकटानन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र विकट का नामान्तर।

विकंपन--रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो राम-रावण युद्ध में मारा गया (भा. ९.१०.१८)।

२. रुद्रगणों में से एक।

विकर्ण--धृतराष्ट्र का एक महारथि पुत्र, जो कौरव पक्ष के ग्यारह महारथियों में से एक था। द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था।

यह बड़ा न्यायी था, एवं द्रौपदीवस्त्रहरण के समय, विदुर की तरह इसने भी इस पापकर्म की ओर घृणा प्रकट की थी (म. स. ६१.१२-२४)। भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था:- सुतसोम (म. भी. ४३.५६); सहदेव (म. भी. ६७. २०); घटोत्कच (म. भी. ८८.३२); नकुल (म. द्रो. ८२.३०)। अंत में भीमसेन ने इसका वध किया, जिस समय, इसके लिए उसने काफ़ी दुःख प्रकट किया था (म. द्रो. ११२.३०)।

विकर्तन--कोढ़ से पीड़ित एक सूर्यवंशीय राजा, जो साभ्रमती नामक नदी में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ। उस स्थान को 'राजखड्ग' कहते है (पद्म. उ. १३५)।

विकुक्षि--इक्ष्वाकु राजा के शशाद नामक पुत्र का नामांतर (शशाद देखिये)।

विकुंज--एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में कौरव-पक्ष में शामिल था (म. भी. ५२.९)।

विकुंजन अथवा **विकुंठन**--(सो. पूरु.) एक राजा, जो सोमवंशीय हस्तिन् राजा का पुत्र था। त्रिगर्तराज की कन्या यशोधरा इसकी माता थी। दशार्ण राजकन्या सुदेवा इसकी पत्नी थी, जिससे इसे अजमीढ़ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.३८)।

विकुंठ अथवा **वैकुंठ**--रैवत मन्वन्तर का एक देवतासमूह, जिसमें निम्नलिखित चौदह देव शामिल थे:-- अजेय, कृश, गौर, जय, भीम, दम, ध्रुव, नाथ, यश, विद्वस्, वृष, शुचि, भेतृ, एवं दांत (ब्रह्मांड. २.३६.५७)।

विकुंठा--एक देवी, जो रैवत मन्वन्तर में उत्पन्न विकुंठ नामक देवताओं की माता मानी जाती है। चाक्षुष मन्वन्तर में उत्पन्न वैकुंठ नामक देवतावतार भी इसीका ही पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.४.३१; विष्णु. ३.१.४१)। इसके पति का नाम शुभ्र था।

विकुंडल--निषध नगर का एक पापी पुरुष, जिसे यमुना नदी में स्नान करने के कारण मुक्ती प्राप्त हुई (पद्म. स्व. ३०)।

विकुंभ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विकृत—ब्राह्मण का वेश धारण किया हुआ कामदेव, जिसने इसी वेश में इक्ष्वाकु राजा के साथ संवाद किया था (म. शां. १९३.८३–११६)।

विकृति—(सो.क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार जीमूत राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भीमरथ था। मत्स्य में इसे 'विमल' कहा गया है।

२. रुद्रगणों में से एक।

विक्रम—धृतराष्ट्रपुत्र बलवर्धन का नामांतर।

विक्रमशील—एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम कालिंदी, एवं पुत्र का नाम दुर्गम था (मार्क. ७२)।

विक्रमित्र—शुंगवंशीय वज्रमित्र राजा का नामांतर (वायु. ९९.३४१)।

विक्रांत—(सू. दिष्ट.) एक प्रजाहितदक्ष राजा, जो दम राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुधृति था (वायु. ८६.१३)।

२. एक प्रजापति, जो वालेय गंधर्वों का जनक माना जाता है (वायु. ६५.५३; ६९.१८)।

विक्षम—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार।

विक्षर—एक असुर, जो कश्यप एवं दनायु के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम बल, वीर एवं वृत्र थे (म. आ. ५९.३२)। आगे चल कर, यही पृथ्वी पर वसुमित्र राजा के रूप में अवतीर्ण हुआ (म. आ. ६१.३९)।

विक्षोभण—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विखनस—एक कृष्णयजुर्वेदी आचार्य, जिसका निर्देश 'वैखानसधर्मप्रश्न' नामक ग्रंथ में एक पूर्वाचार्य के नाते किया गया है (वै. ध. २.५.९; ३.१५.१४)। वसिष्ठधर्मसूत्र में भी इसके सूत्र का निर्देश प्राप्त है (व. ध. ९.१०), जहाँ इसने वानप्रस्थाश्रम लेने के अनेकानेक विधि बताये हैं। अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह की संतति के लिए कौनसे व्यवसाय सुयोग्य है, इस संबंध में भी इसके उद्धरण प्राप्त हैं।

विख्यात—एक राक्षस, जो तेरह सैंहिकेयों में से एक माना जाता है।

विगाहन—मुकुटवंश में उत्पन्न एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्व्यवहार के कारण अपने जातिबांधवों का एवं स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२.१६)।

विग्रह—एक स्कंदपार्षद, जो समुद्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम संग्रह था (म. श. ४४.४६)।

विघन—रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

विघ्न—वध नामक राक्षस का पुत्र (वायु. ६९.१३०)।

२. नरमांसभक्षक एक राक्षस, जो कालि एवं अयोमुखी नामक राक्षस का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.५९.१०)।

विघ्नेश—श्रीगणेश नामक देवता का नामांतर। ब्रह्मांड में इसके इक्कावन नामान्तर दिये गये हैं (ब्रह्मांड. ४. ४४.६३–६६)।

विचकाक्ष—एक राजा, जिसने मांसभक्षण का त्याग किया था (म. अनु. १७७.७१)।

विचक्षण ताण्ड्य—एक आचार्य, जो गर्दभीमुख शांडिल्यायन नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम शाकदास भाडितायन था (वं. ब्रा. १.)।

विचक्षुष—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद–'विवर्धक'।

विचख्नु—एक राजा, जो 'यज्ञकर्म में अहिंसाव्रत का पालन करना चहिए' इस तत्व का प्रतिपादक था। अपने इस मत के प्रतिपादन के लिए इसने 'विचख्नु गीता' की रचना की थी, जो भीष्म ने युधिष्ठिर को निवेदित की थी। पाठभेद–'विचख्यु' (म. शां. २५७.१)।

विचारिन् काबन्धि—एक आचार्य, जो मांधातृ राजा के यज्ञ में उपस्थित था (गो. ब्रा. १.२.९; १८)। कबन्ध का वंशज होने से इसे 'काबन्धि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विचारु—कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.९)।

विचित्र—रौच्य मनु के पुत्रों में से एक (वायु. १००.१०८)।

२. देवसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (भा. ८. १३.३०)।

३. एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५१.५६)। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। पाठभेद–'विचित्य'।

४. यम का एक लेखक (स्कंद. ७.१.१४३)।

विचित्रवीर्य—(सो. पूरु.) एक राजा, जो शंतनु एवं सत्यवती से उत्पन्न दो पुत्रों में कनिष्ठ पुत्र था। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम चित्रांगद था।

गंधर्व युद्ध में इसके ज्येष्ठ बन्धु चित्रांगद की मृत्यु हो गयी, जिस कारण कनिष्ठ होते हुए भी भीष्म ने इसे राजगद्दी पर बैठाया (म. आ. ९५.१३)। यह भीष्म की आज्ञा से ही राज्यशासन करता था।

विवाह एवं मृत्यु—भीष्म ने काशिराज की कन्याएँ अंबा, अंबिका एवं अंबालिका को स्वयंवर में जीत लिया, एवं उनका विवाह इससे करना चाहा। किन्तु उनमें से अंबा ने इससे विवाह करने से इन्कार कर दिया। इसी कारण, भीष्म ने विका एवं अंबालिका से इसका विवाह करा दिया। असंयमपूर्ण जीवन के कारण, यह राजयक्ष्मा का शिकार बन गया, एवं अल्पवय में ही अनपत्य अवस्था में इसकी मृत्यु हुई (म. आ. ९६.५७–५८)।

इसकी मृत्यु के पश्चात्, भीष्म ने इसकी पत्नियाँ अंबिका एवं अंबालिका को नियोग-पद्धति से संतति उत्पन्न करने की आज्ञा दी। तदनुसार, कृष्णद्वैपायन व्यास से अंबिका एवं अंबालिका को क्रमशः धृतराष्ट्र एवं पाण्डु नामक पुत्र उत्पन्न हुए। अंबिका की दासी से विदुर उत्पन्न हुआ (म. आ. ९०.६०)।

२. एक शिवभक्त, जो शिव की उपासना के कारण जीवन्मुक्त हुआ था (स्कंद. १.३३)।

विचेतस्—भव्य देवों में से एक।

विजय—(सो. अनु.) एक राजा, जो बृहन्मनस् राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सत्या था।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार जय राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम ऋत (ऋतु) था (भा. ९.१३.२५)।

३. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार संजय राजा का पुत्र था। वायु में इसे संजय राजा का पौत्र, एवं जय राजा का पुत्र कहा गया है।

४. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुरूरवस् एवं उर्वशी का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम भीम था (भा. ९.१५.१–३)। अन्यत्र इसे 'अमावसु' कहा गया है।

५. (सो. वसु.) एक यादव राजा, जो वसुदेव एवं उपदेवी का पुत्र था (मत्स्य. ४६.१७)।

६. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, वायु एवं मत्स्य के अनुसार जयद्रथ राजा का पुत्र था। इसके का नाम धृति था।

७. (सू. इ.) एक क्षत्रियविजेता सम्राट्, जो भागवत के अनुसार चंप राजा का, एवं वायु, विष्णु एवं भविष्य के अनुसार चंचु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम रुरुक था।

८. विष्णु के जय–विजय नामक दो द्वारपालों में से एक (जय–विजय देखिये)।

९. कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक।

१०. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.२१.१६)।

११. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो यज्ञश्री (यज्ञ) राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम चंद्रविज्ञ था। इसने छः वर्षों तक राज्य किया था (भा. १२.१.२७)।

१२. राम दाशरथि राजा के अष्टप्रधानों में से एक।

१३. राम दाशरथि राजा की सभा का एक विदूषक।

१४. भव्य देवों में से एक।

१५. पृथुक देवों में से एक।

१६. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१३०)।

१७. अज्ञातवास के समय अर्जुन के द्वारा धारण किया गया एक गुप्त सांकेतिक नाम (म. वि. ५.३०)।

अर्जुन के सुविख्यात नामांतरों में से 'विजय' एक था, एवं इसी नाम से उसने कालकेयों को परास्त किया था (भा. १.९.३३)।

१८. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में, इसने जय एवं दुर्जय नामक अपने भाइयों को साथ ले कर, नील, काश्य एवं जयत्सेन राजाओं से युद्ध किया था (म. द्रो. २४.४३)। इसने सात्यकि एवं अर्जुन से भी युद्ध किया था (म. द्रो. ९२.८)।

१९. (सू. इ.) एक राजा, जो सुदेव राजा का पुत्र, एवं भरुक राजा का पिता था (भा. ९.८.१)।

२०. मगधदेश का एक ब्राह्मण, जिसने घटोत्कचपुत्र बर्बरिक को देवी की कृपा प्राप्त करानें में सहाय्यता दी थी (स्कंद. १.२.६०–६६)।

२१. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२२. भैरववंश में उत्पन्न वाराणसी नगरी का एक राजा, जिसने खाण्डवी नगरी नष्ट कर, वहाँ खाण्डववन का निर्माण किया था। पश्चात् वह वन इसने इंद्र को क्रीडा करने के लिए दिया। इसके कुल तेरह पुत्र थे, जिनमें उपरिचर सर्वाधिक बलवान् एवं धार्मिक था (कालि. ९२)।

विजया—शल्य राजा की कन्या, जो सहदेव पाण्डव की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुहोत्र था (म. आ. ९०.८७)। महाभारत के कई संस्करणों में इसे मद्र देश के द्युतिमत् राजा की कन्या कहा गया है। भागवत में इसे पर्वत राजा की कन्या कहा गया है (भा. ९.२२. ३१)।

२. श्रीकृष्ण की पत्नियों में से एक (मत्स्य. ४७.१४)।

३. एक योगमाया, जो पार्वती की सखी थी (मा. १०. २.११)। पार्वती का मानसपुत्र वीरक को लाने के लिए इसे भेजा गया था (मत्स्य. १५४.५४९)। इसने पार्वती के साथ तप किया था।

४. दशार्ह राजा की कन्या, जो सम्राट् सुमन्यु की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुहोत्र था (म. आ. ९०.३५)। पाठभेद—'जया'।

विजर अथवा **विज्वर**—एक राक्षस, जो अनायुषा नामक राक्षसी का पुत्र था। इसे खर एवं कालक नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे।

विजिताश्व 'अंतर्धान'—एक राजा, जो पृथु वैन्य राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम अर्चि था।

सौ अश्वमेध का निश्चय कर, इसने निन्यानवें अश्वमेध यज्ञ पूर्ण किये। इस पर इंद्र को डर उत्पन्न हुआ कि, यह शायद इंद्रपद ले लेगा। अतएव उसने इसका अश्वमेधीय अश्व चुरा लिया।

उस समय इंद्र से किये युद्ध में इसने काफ़ी पराक्रम दर्शा कर, अपना अश्व पुनः प्राप्त किया, जिस कारण इसे 'विजिताश्व' नाम प्राप्त हुआ। इसी समय इंद्र ने प्रसन्न हो कर इसे अंतर्धान होने की विद्या सिखायी, इस लिये इसे 'अंतर्धान' नाम प्राप्त हुआ। यज्ञकर्म में किये जानेवाले पशुहवन का यह पुरस्कर्ता था, जिस कारण इसने अपने आयुष्य में अनेकानेक यज्ञ किये।

परिवार—इसे शिखण्डिनी एवं नभस्वती नामक दो पत्नियाँ थी। उनमें से शिखण्डिनी से इसे पावक, पवमान एवं शुचि नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए। नभस्वती से इसे हविर्धान नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (भा. ४.१८-१९)।

विठ्ठल—विष्णु की एक सुविख्यात प्रतिकृति, जिसकी उपासना मुख्यतः आंध्र कर्नाटक एवं महाराष्ट्र में की जाती है (पद्म. उ. १७६.५७)। विठ्ठल की उपासना के संबंध में, वै. गोपाल अण्णा कऱ्हाडकर कृत 'विठ्ठलभूषण' ग्रंथ सुविख्यात है (विष्णु देखिये)।

विडूरथ—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय सम्राट्। परशुराम जब पृथ्वी निःक्षत्रिय कर रहा था, तब इसकी माता ने इसे ऋष्यवत् पर्वत पर एक ऋषि के आश्रम में छिपा कर रखा था। वहाँ एक रीछ ने इसकी रक्षा की।

अपना क्षत्रियसंहार समाप्त कर परशुराम जब शूर्पारक क्षेत्र में चला गया, तब यह ऋष्यवत् पर्वत से नीचे उतरा, एवं पुनः राज्य करने लगा (म. शां. ४९.६७)। पाठभेद—'विदूरथ'।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो कुरु राजा एवं दाशार्ही शुभांगी का पुत्र था। मधुकुल में उत्पन्न संप्रिया इसकी पत्नी थी, जिससे इसे अनश्वन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.४१-४२)। पाठभेद—'विदूर'।

वितत्य—एक ऋषि, जो गृत्समदवंशीय विहव्य ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सत्य था (म. अनु. ३०.६२)।

वितथ—(सो. पूरु.) एक राजा, जो दुष्यन्तपुत्र भरत राजा का पुत्र था। भरत राजा ने भरद्वाज ऋषि को गोद में लिया, एवं उसका नाम 'वितथ' रखा गया। इसी कारण, इसे 'वितथ भरद्वाज' भी कहते थे।

यह बृहस्पति के वीर्य से उत्पन्न हुआ था। इस कारण यह जन्म से ब्राह्मण था, किन्तु आगे चल कर क्षत्रिय बन गया। इसी लिये इसे 'ब्रह्मक्षत्रिय' भी कहते थे।

कई पुराणों के अनुसार, भरत राजा ने भरद्वाज ऋषि को नहीं, बल्कि उसके पुत्र को गोद में लिया था, जिसका नाम वितथ था। इसे भरत राजा के गोद में दे कर भरद्वाज स्वयं वन में चला गया (ब्रह्म. १३.५९-६१; ह. वं. १.३२.१६-१८)।

वितद्रु—एक यादव, जिसकी गणना यादवों के सात प्रधान मंत्रियों में की जाती थी (म. स. १३. १५९*)।

वितर्क—एक राजा, जो कुरु राजा के वंशज धृतराष्ट्र का पुत्र था (म. आ. ८९.५१*)।

वितर्दन—रावणपक्षीय एक राक्षस (वा. रा. यु. ६४.२२)।

विताना—भौत्य मन्वन्तर के बृहद्भानु नामक अवतार की माता (भा. ८.१३.३५)।

विति—तुषित अथवा साध्य देवों में से एक।

वित्त—एक आचार्य, जो कुशुमि नामक आचार्य का शिष्य था (ब्रह्मांड. २.३५.४३)।

२. प्रतर्दन देवों में से एक।

३. मुख देवों में से एक।

वित्तदा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२७)।

विदग्ध शाकल्य—एक आचार्य, जिसने विदेह जनक के राजसभा में याज्ञवल्क्य के साथ वाद-विवाद किया था। वाद-विवाद में पराजित होने के कारण, इसे पूर्व-नियोजित शर्त के अनुसार, मृत्यु की स्वीकार करनी पड़ी (बृ. उ. ३.९.१; ४.१.७ माध्यं; जै. उ. ब्रा. २.७६; श. ब्रा. ११.६.३.३)। पौराणिक साहित्य में इसका निर्देश 'देवमित्र शाकल्य' नाम से किया गया है (देवमित्र शाकल्य देखिये)।

२. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था (व्यास देखिये)।

विदण्ड—एक राजा, जो अपने पुत्र दण्ड के साथ द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'सुदण्ड'।

विदथिन् बार्हस्पत्य—भरद्वाज ऋषि के पुत्र वितथ का नामान्तर।

विदन्वत् भार्गव—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १३.११.१०; जै. उ. ब्रा. ३.१)। भृगु का वंशज होने से इसे 'भार्गव' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विददश्व—एक राजा, तो तरंत एवं पुरुमीढ नामक राजाओं का पिता था (बृहद्दे. ५.५०.८१; ऋ. ५.६१)।

विदर्भ—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो ऋषभदेव राजा के नवखंडाधिपति नौ पुत्रों में से एक था। ऋषभदेव के नौ खंडों में से एक खंड का राज्य इसे प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर 'विदर्भखंड' नाम से सुविख्यात हुआ। अगस्त्यपत्नी लोपामुद्रा संभवतः इसीकी ही कन्या होगी (भा. ५.४.१०)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो ज्यामघ राजा का पुत्र था।

नारदपुराण में इसका पैतृक नाम 'काश्यप' बताया गया है (नारद. १.८.६३)। इसकी माता का नाम 'शैव्या' अथवा 'चैत्रा' औशिनरी था। इसका विवाह भोज-राजकन्या उपदानवी से हुआ था, जो इसके जन्म के पूर्व ही, इसके पिता ज्यामघ के द्वारा युद्ध में जीत कर लायी गयी थी (ज्यामघ देखिये)। उससे इसे रोमपाद (लोमपाद), क्रथ एवं कौशिक नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए, जिनमें से रोमपाद अत्यंत सुविख्यात था (ह. वं. १.३६.१८-२०)। इसके केशिनी एवं सुमति नामक दो कन्याओं का निर्देश भी प्राप्त है, जो सगर राजा को दी गयी थीं।

३. एक क्षत्रिय राजा, जो कार्तवीर्य अर्जुन का मित्र था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३. ३९.२)।

४. एक लोकसमूह, जिसे सहदेव ने अपने दक्षिण-दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २८.४१)। इस लोकसमूह में उत्पन्न निम्नलिखित व्यक्तियों का निर्देश महाभारत में प्राप्त हैः— भीष्मक, दमयंती (म. व. ५०-२१); भीम, जो दमयन्ती का पिता था; रुक्मिणी, जो भीष्मक राजा की कन्या थी; रुक्मिन्, जो भीष्मक राजा का पुत्र था।

विदर्भिन् कौंडिन्य—एक आचार्य, जो वत्सनपात् बाभ्रव्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम गालव था (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ माध्यं.)।

विदल—एक राक्षस, जो पार्वती के द्वारा अपने साथी उत्पल के साथ काशी नगर में गेंद के प्रहार से मारा गया। इसी कारण, काशी में स्थित शिवलिंग को 'कंदुकेश्वर' कहते हैं (शिव. रुद्र. यु. ६९)।

२. सूर्यवंशीय ध्रुवसंधि राजा का प्रधान।

विदारण—सिंधुनरेश जयद्रथ राजा के भाइयों में से एक (म. व. २५०.१२)।

विदारुण—चंपकनगरी का एक दुष्ट राजा। ब्राह्मणों एवं वेदों की निंदा करने के कारण इसके शरीर में कोढ़ उत्पन्न हुआ, जो वेत्रवती नदी में स्नान करने के कारण नष्ट हुआ (पद्म. उ. १३५)।

विदुर—एक नीतिवेत्ता धर्मपुरुष, जो व्यास ऋषि का दासीपुत्र एवं कौरवों का मुख्यमंत्री था (म. स. ५१.२०)। व्यास ऋषि के द्वारा, विचित्रवीर्य राजा की पत्नी अंबिका की दासी के गर्भ से यह उत्पन्न हुआ था (ब्रह्म. १५४; भा. ९.२२)।

महाभारत में वर्णित जीवन-चरित्रों में से विदुर एवं कर्ण ये दोनों शापित प्रतीत होते है, जिनका सारा पराक्रम एवं बुद्धिमत्ता केवल हीन जन्म के दाग के कारण चूर मूर हो गया। इसी दाग के कारण, इन्हें सारा जीवन अवमानित अवस्था में जीना पड़ा, एवं अनेकानेक प्रकार के कष्ट उठाने

पड़े। इसी 'दैवायत्त' शाप की कृष्णछाया कर्ण के समान विदुर के ही सारे जीवन को ग्रस्त करती हुई प्रतीत होती हैं।

महाभारत में वर्णित व्यक्तियों में से कृष्ण, युधिष्ठिर, भीष्म एवं विदुर ये चार ही व्यक्ति, सत्य के मार्ग से चल कर अपने अपने पद्धति से जीवन का सही अर्थ खोजने का प्रयत्न करते हैं। इनमें से अध्यात्म का एवं ब्रह्मज्ञान का अधिक बडिवार न करते हुए भी, सदाचरण, नीति एवं मानवता के परंपरागत पद्धति से, सत्य की खोज करनेवाला विदुर सचमुच ही एक धर्मात्मा प्रतीत होता है।

विदुर केवल तत्त्वज्ञ ही नहीं, बल्कि श्रेष्ठ राजनीतिज्ञ राजपुरुष भी था। धृतराष्ट्र, दुर्योधन, युधिष्ठिर आदि भिन्न भिन्न लोगों को सलाह देने का कार्य इसने आजन्म किया, परन्तु कभी भी अपने श्रेष्ठ तत्त्वों से एवं सत्यमार्ग से यह च्युत नही हुआ। धृतराष्ट्र के प्रमुख सलाहगार के नाते, यह उसे सत्य एवं शांति का मार्ग दिखाता रहा, परन्तु यह कार्य इसने इतनी सौम्यता से किया कि, इसके द्वारा कहे गये अप्रिय भाषण सुन कर भी धृतराष्ट्र आजन्म इसका मित्र ही रहा।

विदुर का हीनकुलीनत्व-एक समस्या—महाभारत में समस्त पात्रों में से केवल विदुर एवं कर्ण ही हीनयोनि के क्यों माने जाते है, यह एक अनाकलनीय समस्या है। विदुर के पाण्डु एवं धृतराष्ट्र ये दोनों भाई 'नियोगज' संतान थे, एवं अपने पिता विचित्रवीर्य की मृत्यु के पश्चात्, अंबालिका एवं अंबिका को व्यास के द्वारा उत्पन्न हुए थे। पांडवों का जन्म भी अपने पिता पांडु के द्वारा नहीं, बल्कि विभिन्न देवताओं के द्वारा हुआ था। ऐसी स्थिति में इन सारे लोगों को हीन जन्म का दोष न लगा कर, केवल विदुर एवं कर्ण ही इस दोष के शिकार क्यों बने है, यह निश्चित रूप से कहना मुष्किल है।

इस विरोधाभास के केवल दो ही कारण प्रतीत होते है। एक तो क्षत्रिय स्त्रियों के द्वारा की गयी नियोग की विवाहबाह्य संतति महाभारत काल में धर्म्य मानी जाती थी, एवं दूसरा यह कि, व्यक्ति का कुल उसके पिता के कुल से नहीं, बल्कि माता के कुल से मूल्यांकित किया जाता था। संभवतः इसी मातृप्रधान समाजव्यवस्था के कारण, अंबिका, अंबालिका एवं कुंती आदि के पुत्र उच्चकुलीन क्षत्रिय राजपुत्र कहलाये, एवं विदुर एवं कर्ण जैसे दासीपुत्र एवं सूतपुत्र हीनकुलीन माने गये।

जन्म—कुरु राजा विचित्रवीर्य की निःसंतान अवस्था में मृत्यु होने के पश्चात्, उसकी माता सत्यवती ने अपनी स्नुषा अंबिका को व्यास से पुत्रप्राप्ति कराने की आज्ञा दी। अंबिका को व्यास से धृतराष्ट्र नामक अंधा पुत्र उत्पन्न हुआ। अतएव सत्यवती ने अंबिका को पुनः एक बार व्यास के पास जाने के लिए कहा। किन्तु उस समय अंबिका ने स्वयं न जा कर, अपनी दासी को व्यास के पास भेज दिया। तदुपरान्त उस दासी को व्यास से एक तेजस्वी एवं बुद्धिमान् पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसका नाम विदुर रखा गया (म. आ. १००.२६–२७)। दासी से उत्पन्न होने के कारण, इसे 'क्षत्ता' भी कहते थे। शूद्रा के गर्भ से ब्राह्मण के द्वारा उत्पन्न होने के कारण, इसको राज्य की प्राप्ति न हुई थी।

पूर्वजन्म—महाभारत में इसके पूर्वजन्म की कथा प्राप्त है। एक बार अणिमांडव्य ऋषि का यमधर्म से झगड़ा हुआ, जिसमे उसने यमधर्म को शूद्रयोनि में जन्म लेने का शाप दिया। उसी शाप के कारण, यमधर्म ने विदुर के रूप में जन्म लिया था (म. आ. १०१. २५–२७; माण्डव्य देखिये)।

पाण्डवों की सहाय्यता—विदुर की प्रवृत्ति बाल्यकाल से ही धर्म तथा सत्य की ओर थी। भीष्म ने धृतराष्ट्र एवं पाण्डु के साथ इसका भी पालन–पोषण किया था। इसका पाण्डवों पर असीम स्नेह था, तथा यह उन्हें प्राणों से भी अधिक मानता था। इसने समय समय पर पाण्डवों का साथ दिया, उन्हें सांत्वना दी, तथा मृत्यु से बचाया। भीमसेन जब नागलोग में चला गया था, तब इसने कुंती का धीर बधाया था।

दुर्योधन के द्वारा पाण्डवों को लाक्षागृह में जलवा देने की योजना, इसी के ही कारण असफल हुई। इसने कौरवों के षड्यंत्र से बचने के लिए, सांकेतिक भाषा में युधिष्ठिर को सारे वस्तुस्थिति का ज्ञान कराया। लाक्षागृह में सुरंग बनाने के लिए इसने खनक नामक अपने दूत को पाण्डवों के पास भेजा था। लाक्षागृह से मुक्तता होने के पश्चात्, एक माँझी की सहाय्यता से इसने उन्हे गंगा नदी के पार पहुचाने के लिए सहाय्यता की थी। लाक्षागृहदाह की वार्ता सुन कर दुःखित हुए भीष्म को, वस्तुस्थिति का ज्ञान इसने ही कराया था (म. आ. १३५–१३७)।

धृतराष्ट्र का सलाहगार— यह अत्यंत निःस्पृह राजनीतिशास्त्रज्ञ था, जिस कारण अंधे धृतराष्ट्र राजा ने

इसे अपना मुख्य मंत्री नियुक्त किया था, एवं यद्यपि यह उससें उम्र में छोटा था, फिर भी वह इसीके ही सलाह से राज्य का कारोबार चलाता था।

दुर्योधन एवं शकुनि के द्वारा द्यूतक्रीडा का षड्यंत्र जब रचाया गया, तब इसने संभाव्य दुष्परिणामों की चेतावनी धृतराष्ट्र को दी थी। इसने द्यूत-क्रीडा का तीव्र विरोध किया था, तथा जुएँ के अवसर पर दुर्योधन की कटु आलोचना की थी।

जिस समय दुर्योधन ने द्रौपदी को पकड़ कर सभा-भवन में लाने का आदेश दिया, उस समय इसने पुनः एक बार दुर्योधन को चेतावनी दी। सभागृह में द्रौपदी ने भीष्म से अपनी रक्षा करने के लिए कई तात्विक प्रश्न पूछे, तब इसने प्रह्लाद-सुधन्वन् के आख्यान का स्मरण भीष्म को दे कर, द्रौपदी के प्रश्नों का विचारपूर्वक जवाब देने के लिए उससे प्रार्थना की थी (म. स. ५२-८०)। किन्तु इसके सारे प्रयत्न दुर्योधन की जिद्द एवं धृतराष्ट्र की दुर्बलता के कारण सदैव असफल ही रहे।

पाण्डवों के वनवाससमाप्ति के पश्चात्, इसने उनका राज्य वापस देने के लिए धृतराष्ट्र को काफ़ी उपदेश दिया। इस समय इसने अतीव राज्यतृष्णा एवं कौटुंबिक कलह के कारण, राजकुल विनाश की गर्ता में किस तरह जाते हैं, इसका भी विदारक चित्र धृतराष्ट्र को कथन किया था। श्रीकृष्णदौत्य के समय, श्रीकृष्ण को धोखे से कैद कर लेने की योजना दुर्योधन आदि ने बनायी। उस समय भी इसने उसे चेतावनी दी थी, 'इस प्रकार का दुःसाहस तुमको मिटा देगा (म. उ. ९०)।

विदुरनीति--कृष्णदौत्य के पूर्वरात्रि में, आनेवाले युद्ध की आशंका से धृतराष्ट्र अत्यधिक व्याकुल हुआ, एवं उसने सारी रात विदुर के साथ सलाह लेने में व्यतीत की। उस समय विदुर से धृतराष्ट्र के द्वारा दिया गया उपदेश महाभारत के 'प्रजागर पर्व' में प्राप्त है, जो 'विदुर-नीति' नाम से सुविख्यात है। विदुर-नीति का प्रमुख उद्देश्य, संभ्रमित हुए धृतराष्ट्र को सुयोग्य मार्ग दिखलाना हैं, जो श्रीकृष्ण के द्वारा अर्जुन को कथन किये गये भगवद्गीता से साम्य रखता है। किन्तु जहाँ भगवद्गीता का सारा उद्देश्य अर्जुन को युद्धप्रवण करना है, वहाँ 'विदुर-नीति' में सार्वकालिन शांतिमय जीवन का एवं युद्धविरोध का उपदेश किया गया है।

अपने द्वारा की गयी गलतियों के परिणाम मनुष्य ने भुगतना चाहिये, एवं इस प्रकार किया गया पश्चात्ताप-विधि एक तरह की तपस्या ही मानी जा सकती है, यह 'विदुर-नीति' का प्रमुख सूत्रवाक्य है। अपना यह तत्त्व-ज्ञान विदुर के द्वारा अनेकानेक नीतितत्त्व एवं सुभाषितों की सहायता से कथन किया गया है। जिस प्रकार उपनिषदों के बहुसंख्य विचार श्रीकृष्ण ने भगवद्गीता में अंतर्भूत किये है, उसी प्रकार तत्कालीन राजनीतिशास्त्रज्ञों के बहुत सारे विचार विदुर के द्वारा 'विदुर-नीति' में ग्रथित किये हैं। इन विचारों के कारण, महाभारत भारतीययुद्ध का इतिहास कथन करनेवाला एक सामान्य, इतिहास ग्रंथ न हो कर, राजनीतिशास्त्र का एक श्रेष्ठ ग्रंथ बन गया है।

विदुर के द्वारा किये गये इस उपदेश से धृतराष्ट्र अत्यधिक संतुष्ट हुआ। किन्तु दुर्योधन के संबंध में अपनी असहाय्यता प्रकट करते हुए उसने कहा, 'तुम्हारे द्वारा कथन की गयी नीति मुझे योग्य प्रतीत होती है। फिर भी दुर्योधन के सामने इन सारे उच्च तत्त्वों को मैं भूल बैठता हूँ'।

तत्पश्चात् मनःशान्ती के लिए कुछ धर्मोपदेश प्रदान करने की प्रार्थना धृतराष्ट्र ने विदुर से की। इस पर विदुर ने कहा, 'मैं शूद्र हूँ, इसी कारण तुम्हे धर्मविषयक उपदेश प्रदान करना मेरे लिए अयोग्य है'। तत्पश्चात् विदुर के कहने पर, धृतराष्ट्र ने सनत्सुजात से अध्यात्मविद्याविषयक उपदेश सुना (म. उ. ३३-४१; सनत्सुजात देखिये)।

विदुर-तीर्थयात्रा—इस प्रकार भारतीय-युद्ध रोंकने में असफलता प्राप्त होने के कारण, यह अत्यधिक उद्विग्न हुआ, एवं युद्ध में भाग न ले कर तीर्थयात्रा के लिए चला गया। विदुर के द्वारा किये गये इस तीर्थ-यात्रा का निर्देश केवल भागवत में ही प्राप्त है।

भारतीय-युद्ध के समाप्ति की वार्ता इसे प्रभास क्षेत्र में ज्ञात हुयी। वहाँ से यमुना नदी के तट पर जाते ही, इसे उद्धव से श्रीकृष्ण के महानिर्याण की वार्ता विदित हुई। मृत्यु के पूर्व श्रीकृष्ण ने कथन की 'उद्धव-गीता' इसने गंगाद्वार में मैत्रेय से पुनः सुन ली। यह मैत्रेय-विदुर संवाद तत्त्वज्ञान की दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है, जिसमें देवहूति-कपिलसंवाद, मनुवंशवर्णन, दक्षयज्ञ, ध्रुवकथा, पृथुकथा, पुरंजनकथा आदि विषय शामिल हैं (भा. ३-४)।

युधिष्ठिर के राज्यकाल में—हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठने के उपरांत, युधिष्ठिर ने अपने मंत्रिमंडल की रचना की, जिस समय राज्यव्यवस्था की मंत्रणा एवं निर्णय के मंत्री नाते विदुर की नियुक्ति की गयी थी। युधिष्ठिर के

मंत्रिमंडल के अन्य मंत्री निम्न प्रकार थे :—भीम—युवराज; संजय—अर्थमंत्री; नकुल—सैन्यमंत्री; अर्जुन—परचक्रनिवारण मंत्री (म. शां. ४१.८–१४)।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के लिए धनप्राप्ति के हेतु अर्जुनादि पाण्डव हिमालय में धन लाने गये थे। वे हस्तिनापुर के समीप आने पर, विदुर ने पुष्पमाला, चित्रविचित्र पताका, ध्वज आदि से हस्तिनापुर सुशोभित किया, एवं देवमंदिरों में विविध प्रकारों से पूजा करने की आज्ञा दी (म. आश्व. ६९)। धृतराष्ट्र एवं गांधारी से मिलने के पश्चात्, पाण्डव विदुर से मिलने आये थे (म. आश्व. ७०.७)।

अंतिम समय—विदुर के कहने पर धृतराष्ट्र भागीरथी के पावन तट पर तपस्या करने लगा। इस प्रकार जिस नीति एवं मनःशान्ति का उपदेश इसने धृतराष्ट्र को आजन्म किया, वह उसे प्राप्त हुई। अपने जीवित की यह सफल फलश्रुति देख कर विदुर को अत्यधिक समाधान हुआ, एवं वल्कल परिधान कर यह शतयूपाश्रम एवं व्यासाश्रम में आ कर, धृतराष्ट्र एवं गांधारी की सेवा करने लगा।

कालोपरान्त मन वश में कर के इसने घोर तपस्या करना प्रारंभ किया (म. आश्र. २५)। विदुर के यकायक अंतर्धान होने के कारण, युधिष्ठिर अत्यधिक व्याकुल हुआ। उसने धृतराष्ट्र से विदुर का पता पूछते हुए कहा, 'मेरे गुरु, माता, पिता, पालक एवं सखा सभी एक विदुर ही है। उसे मैं मिलना चाहता हूँ'।

इस पर धृतराष्ट्र ने अरण्य में घोर तपस्या में संलग्न हुए विदुर का पता युधिष्ठिर को बताया। वहाँ जा कर युधिष्ठिर ने देखा, तो मुख में पत्थर का टुकडा लिये जटाधारी, कृशकाय विदुर उसे दिखाई पडा। यह दिगंबर अवस्था में था, एवं वन में उड़ती हुई धूल से इसका शरीर आवेष्टित था (म. आश्र. ३३. १५–२०)।

मृत्यु—शुरु से ही विदुर की यही इच्छा थी कि, मृत्यु के पश्चात् इसके अस्तित्व की कोई भी निशानी बाकी न रहे। इसने कहा था, 'जिस प्रकार प्रज्ञावान् मुनियों के कोई भी पदचिह्न भूमि पर नही उठते है, ठीक उसी प्रकार के मृत्यु की कामना मैं मन में रखता हूँ'।

मृत्यु के संबंध में विदुर की यह कामना पूरी हो गयी, एवं विदुर को महाभारत के सभी व्यक्तियों से अधिक सुंदर मृत्यु प्राप्त हुई।

जब युधिष्ठिर विदुर के पीछे वन में गया, तब किसी वृक्ष का सहारा ले कर यह खड़ा हो गया। पश्चात् युधिष्ठिर इसके आगे खड़े होने पर, यह उसकी ओर एकटक देखने लगा, एवं उसकी दृष्टि में अपनी दृष्टि डाल कर एकाग्र हो गया। अपने प्राणों को उसके प्राणों में, तथा अपनी इंद्रियों को उसकी इंद्रियों में स्थापित कर, यह उसके भीतर समा गया। इस प्रकार योगबल का आश्रय लेकर यह युधिष्ठिर के शरीर में विलीन हो गया (म. आश्र. ३३.२५)।

पद्म के अनुसार, माण्डव्य ऋषि के द्वारा दिये गये शाप की अवधि समाप्त होते ही, यह साभ्रमती एवं धर्ममती नदियों के संगम पर गया। वहाँ स्नान करते ही शूद्रयोनि से मुक्ति पा कर, यह स्वर्गलोक चला गया (पद्म. उ. १४१)। भागवत के अनुसार, इसने प्रभासक्षेत्र में देहत्याग किया था (भा. १.१५.४९)।

अन्त्यसंस्कार—मृत्यु की पश्चात् विदुर का शरीर वृक्ष के सहारे खड़ा था। आँखे अब भी उसी तरह निर्निमिष थी, किन्तु अब वे चेतनारहित बन गयी थी। युधिष्ठिर ने विदुर के शरीर का दाहसंस्कार करने का विचार किया, किन्तु उसी समय आकाशवाणी हुयी :—

ज्ञानदग्धस्य देहस्य पुनर्दाहो न विद्यते।
(म. आश्र. ३५.३७*)।

(ज्ञान से दग्ध हुए शरीर को अंतिम दाहकर्म की जरूरी नही होती है)।

इससे प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में संन्यासियों का दाहकर्म धर्मविरुद्ध माना जाता था। जहाँ भीष्म जैसे सेनानी की लाश रेशमी वस्त्र एवं मालाएँ पहना कर चंदनादि सुगंधी काष्ठों से जलायी गयी, वहाँ विदुर जैसे यति का मृतदेह बिना दाहसंस्कार के ही वन में छोड़ा गया (म. अनु. १६८.१२–१८)।

परिवार—देवक राजा की 'पारशवी' कन्या से विदुर का विवाह हुआ था। अपनी इस पत्नी से विदुर को कई पुत्र भी उत्पन्न हुए थे, किन्तु विदुर के पत्नी एवं पुत्रों के नाम महाभारत में अप्राप्य है (म. आ. १०६.१२–१४)।

२. एक वेश्यागामी ब्राह्मण, जिसकी पत्नी का नाम बहुला था। अपनी पत्नी के द्वारा किये गये पुण्यों के कारण, इसे मुक्ति प्राप्त हुई (बहुला देखिये)।

३. पांचाल देश का एक क्षत्रिय, जो सोमवती अमावस्या के दिन प्रयाग के गंगासंगम में स्नान करने के कारण, ब्रह्महत्या के पातक से मुक्त हुआ (पद्म. उ. ९१–९२)।

पद्म में निर्दिष्ट इस कथा का संकेत संभवतः महाभारत में निर्दिष्ट धर्मात्मा विदुर से ही होगा, जिसे पूर्वजन्म में अणीमाण्डव्य ऋषि से शाप प्राप्त हुआ था (विदुर १. देखिये)।

विदुला--एक प्राचीन क्षत्रिय स्त्री, जो महाभारत में निर्देशित 'विदुला-पुत्र संवाद' के कारण अमर हो गयी है।

यह सौवीर देश के राजा की पत्नी थी, जिसके पुत्र का नाम संजय था। इसका पुत्र जब छोटा था, उस समय इसका पति मृत हुआ। यही सुअवसर पा कर, सौवीर देश के पास ही बसे हुए सिन्धुनरेश ने संजय पर आक्रमण किया, एवं उसे रणभूमि से भगा कर उसका राज्य छीन लिया। रणभूमि से भाग कर आये हुए अपने पुत्र की इसने कटु आलोचना की, जिसका पुनर्निवेदन कुंती ने युधिष्ठिर को युद्धप्रवृत्त बनाने के लिए किया था। महाभारत में यही संवाद 'विदुला-पुत्र संवाद' नाम से प्रसिद्ध है (म. उ. १३१-१३४)। इसके नाम के लिए 'विदुरा' पाठभेद भी प्राप्त है।

विदुला-पुत्र संवाद--महाभारत में राजनैतिक दृष्टि से उपदेश देनेवाले जो भी कुछ संवाद प्राप्त है, उनमें यह संवाद श्रेष्ठ माना जाता है। इस संवाद में महाभारत के नाम से प्रसिद्ध हुए बहुत सारे सुभाषित ग्रथित किये गये है। इसने अपने पुत्र से कहा था, 'पराक्रमी पुरुष के लिए यही योग्य है कि, पौरुषहीन जीवन दीर्घकाल तक जीने की अपेक्षा, वह अल्पकाल तक ही जी कर सारे संसार को अपने पराक्रम से स्तिमित करे (मुहूर्तं ज्वलितं श्रेयः न तु धूमायितं चिरम्)। आत्मसंतुष्टता के कारण ऐश्वर्य विनष्ट होता है (संतोषो वै श्रियं हन्ति)। इसी कारण पराक्रमी पुरुष ने सदैव कार्यरत रहना चाहिए, एवं इसी धारणा से काम करना चाहिए कि, जान जायें, मगर मस्तक नीचा न हो जायें (उद्यच्छेदेव न नमेदुद्यमो ह्येव पौरुषम्) (म. उ. १३१.१३; ३१; १३२.३८)।

इसने आगे कहा था, 'उद्योगी पुरुष को यही चाहिये कि--

> उत्थातव्यं जागृतव्यं योक्तव्यं भूतिकर्मसु।
> भविष्यतीत्येव मनः कृत्वा सततमव्यथैः॥
> (म. उ. १३३.२७)।

(सदैव विजिगिषु एवं जागृत रह कर ऐश्वर्य संपादन करें। जो कार्य अंगीकृत कियाहै, वह यशस्वी होनेवाला ही है, ऐसी धारणा मन में रख कर सतत प्रयत्न करते रहें)।

विदुला के इसी संवाद का निर्देश युधिष्ठिर ने कुंती के पास पुनः एक बार किया था (म. आश्व. २२. २०)। 'जय' नामक महाभारत की रचना भी, इसी संवाद को आधारभूत मान कर की गयी है।

विदुष--(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार घृत राजा का पुत्र था।

विदूर--पूरु राजा विदूरथ का नामान्तर (विदूरथ देखिये)।

विदूरथ--(सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७१.१३६)।

२. (सो. यदु. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो चित्ररथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम शूर था (भा. ९.२४.१८)।

३. (सो. यदु. वृष्णि.) एक वृष्णिवंशीय क्षत्रिय, जो वृद्धशर्मन् एवं वसुदेवभगिनी श्रुतदेवा का पुत्र था। इसके भाई का नाम दन्तवक्र था। यह रुक्मिणी तथा द्रौपदी के स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १८६)।

यह शिशुपाल, शाल्व, जरासंध आदि का मित्र था, एवं जरासंध ने मथुरा नगरी के पूर्वद्वार का संरक्षण करने के लिए इसकी नियुक्ति की थी। इसका भाई दन्तवक्र तथा शाल्व, शिशुपाल आदि का श्रीकृष्ण के द्वारा वध होने के पश्चात्, उनकी मृत्यु का बदला लेने के लिए इसने कृष्ण पर आक्रमण किया। किन्तु उसने इसका मस्तक काट कर इसका वध किया (भा. १०.७८.११-१२)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो लोमपाद-वंशीय विधृति राजा का पुत्र था। इसे 'उदर्क' एवं 'दाशार्ह' नामान्तर प्राप्त थे (अग्नि. २७५.१९-२०)। पद्म, एवं मत्स्य में इसे निर्वृति राजा का पुत्र कहा गया है, एवं दशार्ह राजा का पिता कहा गया है (पद्म. सृ. १३; मत्स्य. ४४.४०)।

५. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ४.१.९४)।

६. (सो. पूरु.) एक राजा, जो सुरथ राजा का पुत्र एवं सार्वभौम राजा का पिता था (भा. ९.२२.१०)।

७. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का भाई।

८. दक्षिण भारत का एक राजा, जिसने अपनी कन्या दिष्टवंशीय राज्यवर्धन राजा को विवाह में प्रदान की थी।

९. एक राजा, जो भलंदन ऋषि का मित्र था। इसके सुनीति एवं सुमति नामक दो पुत्र, एवं मुदावती नामक एक कन्या थी।

कुजृंभ से युद्ध—एक बार यह जंगल में मृगया के हेतु गया था, जहाँ इसने बहुत बडी दरार देखी, जो कुजृंभ राक्षस की जमुहाई से भूमि पर पड़ी हुई दरारों में से एक थी। वहाँ पास ही बैठे हुए सुव्रत मुनि ने इसे बताया, 'कुजृंभ राक्षस के पास एक दैवी मूसल है, जिसके कारण वह अजेय बन कर पृथ्वी के सारे लोगों त्रस्त कर रहा है।

आगे चल कर कुजृंभ ने इसकी कन्या मुदावती का हरण किया, एवं उसका वध करने गये सुनीति एवं सुमति नामक इसके दोनो पुत्रों को कैद किया। फिर इसके मित्र भलंदन ऋषि के पुत्र वत्सप्रि ने कुजृंभ का वध किया, एवं मुदावती की मुक्तता कर उससे विवाह किया (मार्क. ११३)।

विदेघ माथव—एक राजा, जो विदेघ लोगों का प्रमुख था (श. ब्रा. १.४.१.१०)। ये 'विदेघ' लोग ही आगे चल कर 'विदेह' नाम से सुविख्यात हुए। मथु का वंशज होने से, इसे 'माथव' पैतृक नाम हुआ होगा।

शतपथ ब्राह्मण में—इस राजा के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है, जिसके अनुसार इसने अपने मुख में अग्नि को बँध कर रखा था। मुँह खोलने से अग्नि बाहर आयेगा, इस आशंका से यह किसी से भी बात न करता था। इसके पुरोहित का नाम रहूगण गौतम था, जिसने इसके मुख में बँध रखे हुए अग्नि को बाहर लाने के लिए अनेकानेक प्रयत्न किये। उसनें अग्नि की विविध प्रकार से स्तुति भी की, किन्तु उसका कुछ असर न हुआ।

एक बार गौतम ने सहजवश 'घृत' शब्द का उच्चारण किया, जिससे इसके मुख में बंद किया गया अग्नि अपनी सहस्त्र जिह्वाएँ फैला कर बाहर आया। वह अग्नि सारे संसार को जलाने लगा, एवं विदेघ एवं गौतम को दग्ध करने लगा। उसने सृष्टि की नदियाँ भी सुखाना प्रारंभ किया।

अग्नि के इस दाह को शांत कराने के लिए, विदेघ राजा ने अपने राज्य की सीमा पर बहनेवाली 'सदानीरा' नदी में स्वयं को झोंक दिया, जहाँ अग्नि आखिर शान्त हुआ। फिर भी सदानीरा नदी का पानी अविरत बहता ही रहा। इसी कारण, वह नदी सदानीरा नाम से सुविख्यात हुई (श. ब्रा. १.४.१.१०-१७)।

सायणाचार्य के अनुसार, आज भी उपर्युक्त नंदी कोसल एवं विदेह देश के सीमा पर ही बहती है।

विदेह—विदेह देश के सीरध्वज जनक राजा का नामान्तर (भा. ११.२.१४; जनक देखिये)।

२. विदेह देश के निमि राजा का नामान्तर (निमि देखिये)।

३. एक लोकसमूह, जिस पर विदेहवंशीय राजा राज्य करते थे (बौ. श्रौ. २.५; २१.१३)। इसकी राजधानी मिथिला नगरी में थी। पाण्डुराजा ने अपने दिग्विजय के समय मिथिला पर आक्रमण किया था, एवं विदेहवंशीय क्षत्रिय राजाओं को परास्त किया था (म. आ. १०५-११)। इसी वंश में हयग्रीव नामक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था।

वैदिक साहित्य में—इन लोगों का सर्वप्रथम निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त विदेघ माथव की कथा में आता है, जहाँ इस देश के पश्चिम में स्थित कोशल देश की संस्कृति विदेह से श्रेष्ठतर बतायी गयी है।

आगे चल कर इस देश के जनक राजा ने विदेह देश को नयी प्रतिष्ठा प्रदान की। बृहदारण्यक उपनिषद के काल में सांस्कृतिक दृष्टि से यह एक श्रेष्ठ देश मानने जाने लगा (बृ. उ. ३.८.२)।

कौषीतकि उपनिषद में विदेह लोगों का निर्देश काशि एवं कोसल लोगों के साथ किया गया है, एवं इन तीनों को 'प्राच्य' सामूहिक नाम प्रदान किया गया है (कौ. उ. ४.१)। इन तीनों देशों का 'जल जातूकर्ण्य' नामक एक ही पुरोहित होने का निर्देश प्राप्त है (सां. श्रौ. १६.२९.५)।

इस देश का पर आट्णार नामक राजा कोसल देश के हिरण्यनाभ राजा का रिश्तेदार ही था (सां. श्रौ. १६. २९.५)। शतपथ ब्राह्मण में पर आट्णार को हिरण्यनाभ का वंशज, एवं कोसल देश का राजा कहा गया है। पंचविंश ब्राह्मण में नमी साप्य नामक विदेह देश के अन्य एक राजा का निर्देश प्राप्त है (पं. ब्रा. २५.१०.१७)।

कोसल एवं विदेह देशों की सीमा सदानीरा (आधुनिक गण्डक) नदी से बँध गयी थी। यह नदी नेपाल से निकल कर पटना के पास गंगा नदी को मिलती है।

महाभारत में—पूर्वोत्तर भारत का एक जनपद के नाते विदेह देश का निर्देश महाभारत में प्राप्त है, जिसे परशुराम, कर्ण एवं भीम आदि वीरों ने जीता था (म. द्रो. परि. १.८.८४६; क. ५.१९; स. २६.४)। इस देश का सबसे से सुविख्यात राजा सीरध्वज जनक था, जिसकी कन्या सीता का विवाह राम दाशरथि से हुआ था।

ब्रह्मांड के अनुसार, जरासंध के भय से मथुरा से विजनवासी हुए यादव लोग विदेह देश में रहने के लिए आये थे (ब्रह्मांड. २.१६:५४)।

४. (सो. वसु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक था।

विदैवत--एक पिशाच, जो पूर्वजन्म में हरिवीर नामक क्षत्रिय था। नास्तिकता के कारण, इसे पिशाच-योनि प्रप्त हुई (पद्म. पा. ९५; ९८)।

विद्य—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं प्रवर। पाठ-'क्षितिमुखाविद्ध'।

विद्या--एक देवता, जो वैदिक साहित्य में मुख्यतः तीन वेदों के ज्ञान (त्रयी विद्या) की देवता मानी गयी है। सायणाचार्य के ऋग्वेद भाष्य की प्रस्तावना में इस देवता के संबंधी एक कथा दी गयी है। एक बार यह एक ब्राह्मण के पास गयी, एवं इसने उसे कहा, 'मैं तुम्हारी अमानत (शेवधि) हूँ। तुम्हारा यही कर्तव्य है कि, तुम्हारे शिष्यों में से जो पवित्र, ब्रह्मचारी, नियमनिष्ठ, निधिरक्षक एवं अनवधानशून्य होंगे, उन्हींको तुम मुझे प्रदान करना। असूया करनेवाले शिष्यों से मैं अत्यधिक घृणा करती हूँ, इसी कारण तुम मुझे उन्हें प्रदान नहीं करना (सायणाचार्य, ऋग्वेद प्रस्तावना)।

विद्याचंड—कांपिल्य नगरी के सुदरिद्र नामक ब्राह्मण के चार पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

विद्याधर--एक देवयोनिविशेष। पुराणों में इनके राजाओं का नाम चित्रकेतु, चित्ररथ अथवा सुदर्शन दिया गया है (भा. ६.१७.१; ११. १६. २९)। वायु में पुलोमन् को 'विद्याधरपति' कहा गया है (वायु. ३८. १६)। इन लोगों की स्त्रियाँ 'विद्याधरी' कहलाती थी (ब्रह्मांड. ३.५०.४०)।

इन देवताओं के शैवेय, विक्रान्त एवं सौमनस नामक तीन प्रमुख गण थे (वायु. ३०.८८)। इन देवताओं का विद्याधरपुर नामक नगर ताम्रवर्ण सरोवर एवं पतंग पहाडियों के बीच बसा हुआ था (मत्स्य. ६६.१८)।

विद्याधीश--सुराष्ट्र देश के सोमकांत राजा का प्रधान।

विद्यापति—उज्जैनि के इंद्रद्युम्न राजा का उपाध्याय (स्कंद. २.२.८)।

विद्युच्छत्रु--एक राक्षस, जो मार्गशीर्ष माह में सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३१)।

विद्युज्जिह्व--एक राक्षस, जो खशा राक्षसी का पुत्र, एवं शूर्पणखा का पति था। पूर्वजन्म में यह कालकेंद्र नामक दानव था (वा. रा. उ. १२.२)। राम ने इसका वध किया था।

२. रावण का एक प्रधान, जिसने माया-जाल से राम का टूटा हुआ मस्तक, एवं धनुष्य सीता को दिखाया था। इसने सीता को रावण के वश में जाने के लिए पुनः पुनः अनुरोध किया, किन्तु सीता अपने सतीत्व पर अटल रही।

३. एक राक्षस, जो विश्रवस् एवं वाका के पुत्रों में से एक था। यह महातल नामक पाताललोक में स्थित अर्वाक्तलम् नामक नगर में रहता था (वायु. ५०.३५)।

४. घटोत्कच का साथी एक राक्षस, जिसका दुर्योधन के द्वारा वध हुआ (म. भी. ८७.२०)।

५. अमृत की रक्षा करनेवाले दो सर्प (म. आ. २९. ५-६)। विद्युत् के समान जिह्वा होने के कारण, इन्हें यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

विद्युज्जिह्वा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.८)।

विद्युत्--एक राक्षस, जो यातुधान नामक राक्षस का पुत्र, एवं रसन नामक राक्षस का पिता था (ब्रह्मांड. ३.७. ९५)।

२. सहिष्णु नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विद्युता--कुबेरसभा की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र से स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. ५०.४८)।

विद्युत्केश—एक राक्षस, जो हेति राक्षस का पुत्र था। मयासुर की कन्या इसकी माता थी। संध्या की कन्या सालकटंकटा से इसका विवाह हुआ था। कालोपरांत उसने इससे उत्पन्न हुआ गर्भ मंदर-पर्वत पर छोड़ दिया, जिसका भरण-पोषण शिव ने किया।

विद्युत्पर्णा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४८)।

विद्युत्प्रभ--एक ऋषि, जिसकी इंद्र से 'पापमोचन' एवं 'सूक्ष्म-धर्म' के संबंध में चर्चा हुई थी (म. अनु. १२५.४५-५७)।

२. एक दानव, जिसे रुद्रदेव की कृपा से एक लाख वर्षों तक तीनों लोगों का आधिपत्य, शिव का नित्यपार्षदपद एवं कुशद्वीप का राज्य, वरों के रूप में प्राप्त हुए थे (म. अनु. १४.८२-८४)।

विद्युत्प्रभा—उत्तर दिशा में रहनेवाली दस अप्सराएँ (म. उ. १०९.१८)।

विद्युदक्ष--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५७)।

विद्युद्दंष्ट्र--रामसेना का एक वानर।

विद्युद्रूप--लंका का एक राक्षस।

२. एक यक्ष, जो कुबेर का सेवक था। इसकी पत्नी का नाम मदनिका था, जो मेनका की कन्या थी। एक बार यह कैलासपर्वत पर अपनी पत्नी के साथ मद्यपान करते हुए बैठा था, जहाँ कंक नामक गरुड-वंश का एक पक्षी आया। इसका कंक से झगडा हुआ, एवं इसने खड्ग-प्रहार कर उसका वध किया।

यह वार्ता सुन कर, कंक का भाई कंदर इससे युद्ध करने आया, एवं उसने इसका वध किया। तत्पश्चात् मदनिका ने कंदर से विवाह कर लिया (मार्क. २.४-२८)।

विद्युद्वर्चस्--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.१३)।

विद्युन्मालिन्--एक राक्षस, जो तारकासुर के तीन पुत्रों में से एक था। त्रिपुरों में से लोहमयपुर का यह अधिपति था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम ताराक्ष एवं कमलाक्ष थे। शिव के अस्त्र के द्वारा अपने लोहमयपुर के साथ यह भी दग्ध हुआ।

२. एक असुर, जो तारकामय युद्ध में मयासुर के पक्ष में शामिल था। शिव के पार्षद नन्दिन् के द्वारा इसका वध हुआ (मत्स्य. १२९.५;१३६.१६)।

३. एक महापराक्रमी राक्षस, जो रावण का मित्र था, एवं पाताल में रहता था। रावण के वध का बदला लेने के लिए, इसने राम का अश्वमेधीय अश्व चुरा लिया। आगे चल कर शत्रुघ्न ने इसका वध कर, अश्वमेधीय अश्व पुनः प्राप्त किया (पद्म. पा. ३४)

४. रावण के पक्ष का एक राक्षस, जो सुषेण वानर के द्वारा मारा गया (वा. रा. सुं. ६; यु. ४३)।

विद्योत--एक ऋषि, जो धर्मऋषि एवं दक्षकन्या लंबा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम स्तनयित्नु था (भा. ६.६५)।

विद्योता--कुबेरसभा की एक अप्सरा (म. अनु. १९.४५)।

विद्योपरिचर--कृत नामक वसु का पुत्र (वायु. ९९.२२०)।

विद्रावण--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१८)।

विधातृ--ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो भृगु ऋषि एवं ख्याति का पुत्र कहलाता है। इसके धातृ एवं श्री नामक दो भाई थे। अपने इन भाइयों के साथ, यह शिशुमार पर्वत पर रहता था। कमलों में निवास करनेवाली लक्ष्मी इसकी बहन थी।

मेरुकन्या नियति इसकी पत्नी थी, जिससे इसे प्राण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१.४३-४४)।

२. एक आदित्य, जो आषाढ अथवा 'सहस्' (मार्गशीर्ष) माह में प्रकाशित होता है (भवि. ब्राह्म. ७८)। इसकी पत्नी का नाम क्रिया था, जिससे इसे पंचचित नामक अग्नि पुत्ररूप में उत्पन्न हुआ था (विवस्वत् देखिये)।

३. ब्रह्मन् का नामान्तर।

विधान--सुख देवों में से एक।

विधिसार--(शिशु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार क्षेत्रज्ञ राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार क्षत्रौजस् राजा का पुत्र था। इसे 'बिंदुसार,' 'विंध्यसेन' एवं 'बिंबिसार' आदि नामांतर भी प्राप्त थे। इसके पुत्र का नाम अजातशत्रु था। इसने ३८ वर्षों तक राज्य किया था।

विधुम--अष्टवसुओं में से एक, जिसकी पत्नी का नाम अलंबुसा था (अलंबुसा देखिये)।

विधृत--एक दुष्ट राजा, जो जीवन भर 'प्रहर' (वध करो) शब्द का उच्चारण करता रहा। इस प्रकार 'हर' शब्द का सहजवश उच्चारण होने से, इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. पा. ११)।

विधृति--(सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार खगण राजा का पुत्र, एवं हिरण्यनाभ राजा का पिता था (भा. ९.१२.३)।

२. तामस मन्वंतर के 'वैधृति' नामक देवतासमूह की माता (भा. ८.१.२९)।

३. अभूतरजस् देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.५५)।

विनत--रामसेना का एक वानर-सेनापति, जो श्वेत नामक वानर का पुत्र था। इसकी सेना में साठ लक्ष वानर थे (वा. रा. यु. २६)।

२. वैवस्वत मनुपुत्र इल (सुद्युम्न) का पुत्र, जो उसके पश्चिम साम्राज्य का अधिपति बन गया (ब्रह्मांड. ३.६०.१८)।

३. एक दिग्गज, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था।

विनता--प्राचेतस दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो अरिष्टनेमि कश्यप की भार्या थी। तार्क्ष्य ऋषि के पत्नियों

में इसका निर्देश प्राप्त है (भा. ६.६.२१)। इसकी माता का नाम असिक्नी था।

एक बार इसके पति कश्यप ने इसे वर माँगने के लिए कहा। उस समय इसने अपनी सौत कद्रू के पुत्रों से भी अधिक बलशाली दो पुत्रों की याचना की। तदनुसार, कद्रू के नागपुत्रों से भी अधिक बलशाली गरुड एवं अरुण नामक दो पुत्र कश्यप ने इसे प्रदान किये। इसके ये दोनों पुत्र अण्डे से उत्पन्न हुए थे। उनमें से एक अण्डा इसके द्वारा फोड़जाने के कारण, उससे उत्पन्न हुआ अरुण अधूरे शरीर से उत्पन्न हुआ था।

अपनी इस दुर्गति के कारण, अरुण ने इसे पाँच सौ वर्षों तक अपनी सौत कद्रू की दासी होने का शाप दिया। इस शापित अवस्था में कद्रू ने इसका अनेकानेक प्रकार से छल किया। अन्त में इसके पुत्र गरुड ने स्वर्ग से अमृत ला कर, इसकी शाप से मुक्तता की (म. आ. ३०; गरुड देखिये)।

परिवार—गरुड एवं अरुण के अतिरिक्त इसके अरिष्टनेमि तार्क्ष्य एवं आकर्णि नामक दो पुत्र थे (भवि. ब्राह्म. १५९)। वायु के अनुसार इसके दो पुत्र, एवं ३६ कन्याएँ थी, जिनमें गायत्री आदि छंद, एवं सुपर्णा आदि पक्षिणियाँ प्रमुख थी (वायु. ६९. ६६-६७)। यह स्वयं हवा में तैरने की कला में प्रवीण थी, एवं इसकी बहुत सारी संतान भी पक्षी ही थे। इससे प्रतीत होता है होता है कि, यह स्वयं भी एक पाक्षिणी थी।

विनताश्व--एक राजा, जो वैवस्वत मनुपुत्र इल (सुद्युम्न) का पुत्र था। इल के पश्चात्, उसके पश्चिम साम्राज्य यह का अधिपति बन गया (वायु. ८५.१९)।

विनायक--विघ्नेश्वर (गणपति) नामक देवता का नामान्तर (गणपति देखिये)। रुद्रगणों के एक अधिपति के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (भूत देखिये)।

२. शिवगणों का एक समुदाय, जिसमें कुष्मांड, गजतुंड, जयंत आदि रुद्रगण समाविष्ट थे। इस समूह के शिवगणों के मुख सिंह, शेर आदि के समान थे (मत्स्य. १८३.६३-६४)।

विनाशन--एक दानव, जो कश्यप एवं काला के पुत्रों में से एक था। अपने अन्य भाईयों के समान यह अस्त्रविद्या में कुशल, एवं साक्षात् यम धर्म के समान भयंकर था।

विनीत--उत्तम मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.४०)।

२. पुलस्त्य एवं प्रीति के तीन पुत्रों में से एक (वायु. २८.२२)।

विंद--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.९८)।

२. एक केकय-राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में कौरव-पक्ष में शामिल था। सात्यकि ने इसका वध किया (म. क. ९.६)।

३. अवंती देश का राजकुमार, जो जयसेन एवं वसुदेव-भगिनी राजाधिदेवी के दो पुत्रों में से एक था। इसे अनुविंद नामक कनिष्ठ भाई, एवं मित्रविंदा नामक एक बहन थी।

आरंभ से ही यह दुर्योधन एवं जरासंध का पक्षपाती एवं मित्र था। अपनी बहन मित्रविंदा का विवाह भी यह दुर्योधन से ही करना चाहता था, किंतु उसने श्रीकृष्ण से प्रीतिविवाह कर लिया (भा. १०.५८.३०-३१)। अपने दक्षिणदिग्विजय के समय, सहदेव ने इसे जीता था (म. स. २८.१०)।

भारतीय युद्ध के समय, यह एक अक्षौहिणी सेना के साथ कौरवपक्ष में शामिल हुआ था (म. उ. १९. २४)। कौरवसेना में इसकी श्रेणी 'रथी' थी, एवं सेना के दस प्रधान अधिनायकों में से यह एक था (म. भी. १६.३३-३५)।

भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष के निम्नलिखित योद्धाओं के साथ इसका युद्ध हुआ थाः--१. कुंतिभोज (म. भी. ४३.६९); २. इरावत् (म. भी. ७९.१२-२०); ३. धृष्टद्युम्न (म. भी. ८२.३२-३६); ४. विराट (म. द्रो. २४.२०-२१)। अंत में यह अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ७४.२५)।

विंदु आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.९४; ९.३०)।

विंध्य--रैवत मनु के पुत्रों में से एक (भा. ८.५.२)।

विंध्यशक्ति--(पौर. भविष्य.) एक राजा, जो किलकिल नामक राजा का पुत्र, एवं पुरंजय राजा का पिता था (ब्रह्मांड. ३.७४.१७८)।

विंध्यसेन--(शिशु. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार क्षेमजित् राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७२. ८)।

विंध्यावलि—बलि दैत्य की पत्नी (बलि वैरोचन देखिये)। इसे बाण नामक पुत्र एवं कुंभीनसी नामक एक कन्या थी (मत्स्य. १८७.४०)। वामन के द्वारा

बलि का बंधन किये जाने पर इसने वामन की स्तुति की, एवं बलि के लिए अभयदान माँगा (भा. ८.२०.१७)।

विंध्याश्व--(सो. अज.) एक राजा, जो इंद्रसेन राजा का पुत्र था। मेनका नामक अप्सरा से इसे जुड़वी संतान उत्पन्न हुई थी।

विपक्व--मरीचिगर्भ देवों में से एक।

विपश्चित्--स्वारोचिष मन्वन्तर का इंद्र।

२. एक राजा, जो विदर्भराजकन्या पीवरी का पति था। अपनी पत्नी से किये पापकर्म के कारण, इसे नरक की प्राप्ति हुई (मार्क. १३.१३-१५)।

विपश्चित् दृढजयंत लौहित्य--एक आचार्य, जो दक्षजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। लोहित का वंशज होने से, इसे 'लौहित्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य--एक आचार्य, जो आषाढ उत्तर पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था। पराशर का वंशज होने से, इसे 'पाराशर्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विपाट--कर्ण का एक भाई, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ३१.५९)।

विपाठा--दुर्गम राजा की पत्नियों में से एक (मार्क ७२. ४६; रेवती १. देखिये)।

विपाद--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक पिशाचगण (ब्रह्मांड. ३. ७. ३७७)।

विपाप--दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विपाप्मन्--निश्चवन नामक अग्नि का पुत्र, जो वास्तुकार्य में अधिष्ठाता देवता माना जाता है।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार आयु राजा का पुत्र था।

विपुल--(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४६)।

२. एक भृगुवंशीय ऋषि, जो देवशर्मन् नामक ऋषि का शिष्य था। इसकी गुरुपत्नी 'रुचि' पर इंद्र आसक्त हुआ। उस समय इसने इंद्र से उसका संरक्षण किया। इसके इस गुरुनिष्ठा से प्रसन्न हो कर, देवशर्मन् ऋषि ने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये (म. अनु. ४०-४५)।

३. सौर देश का एक यवन राजा, जिसे 'वित्तल,' 'सुमित्र,' एक 'दत्तमित्र' आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। पाण्डु राजा ने इसे जीतने का प्रयत्न किया था, किन्तु वह यशस्वी न हो सका। अन्त में अर्जुन ने इसका वध किया (म. आ. परि १. ८०. ४०-४६)।

विपुलस्वान्--एक ऋषि, जिसके सुकृष एवं तुंबुरु नामक दो पुत्र थे (मार्क. ३. १५)।

विपूजन शौराकि (सौराकि)--कृष्ण यजुर्वेद संहिताओं में निर्दिष्ट एक आचार्य (मै. सं ३.१.३; क. सं. २.७.५)।

विपृथु--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार चित्रक राजा का पुत्र था (वायु. ९६. ११३)। जरासंध के संग्राम में, श्रीकृष्ण ने इसे मथुरानगरी के उत्तरद्वार का रक्षण करने के लिए नियुक्त किया था। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था। सुभद्राहरण के समय, बलराम की ओर से इसने अर्जुन से युद्ध किया था (म. आ. १७७.१७; २११.१०; स. ४.२६)। प्रभासक्षेत्र में हुए 'यादवी युद्ध' में यह मारा गया (विष्णु. ५.३७.४६)।

विपृष्ठ--(सो. वसु.) एक राजा, जो वसुदेव एवं वृकदेवा के पुत्रों में से एक था।

विप्र--(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सुतंजय राजा का, एवं विष्णु के अनुसार श्रुतंजय राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'महाबाहु' कहा गया है (महाबाहु ३. देखिये)। इसके पुत्र का नाम शुचि था।

विप्रचित्ति अथवा **विप्रजित्ति**--एक आचार्य, जो व्यष्टि नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. २.६.३ काण्व.; २.५.२२ माध्यं.)।

२. एक दानव राजा, जो कश्यप एवं दनु के सौ पुत्रों में से प्रमुख पुत्र था (भा. ६.६.३१)। महाभारत में दनु के पुत्रों की संख्या चौंतीस दी गयी है, जिनमें इसे प्रमुख कहा गया है (म. आ. ५९.२१)। इसके भाइयों में ध्वज नामक असुर प्रमुख था (वायु. ६७.६०)।

पराक्रम--वृत्रासुर एवं हिरण्यकशिपु के द्वारा इंद्र से किये गये युद्ध में, यह असुर पक्ष में शामिल था (म. स. ५१.७; भा. ६.७०)। बलि वैरोचन एवं इंद्र के युद्ध में भी यह सहभागी थी। वामन के द्वारा किये गये 'बलिबंधन' के समय, यह वामन से युद्ध करने के लिए उद्यत हुआ था (म. स. परि. २१.३३७)। देवासुरों के द्वारा किये गये 'अमृतमंथन' के समय भी, यह उपस्थित था (मत्स्य. २४५.३१)।

परिवार—अपनी सिंहिका नामक पत्नी से इसे एक सौ एक पुत्र उत्पन्न हुए थे, जो 'सैंहिकेय' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। एक राहु एवं सौ केतु मिल कर, ये १०१ सैंहिकेय राक्षस बने थे (भा. ६.६.३७)।

भागवत के अतिरिक्त, ब्रह्म, मत्स्य आदि बाकी सारे पुराणों में इसके पुत्रों की संख्या तेरह दी गयी हैं। हरिवंश, विष्णु एवं ब्रह्मांड में वह बारह बतायी गयी है।

विप्रचित्ति के पुत्रों की हरिवंश में प्राप्त नामावलि, अन्य पुराणों में प्राप्त पाठभेदों के साथ नीचे दी गयी है :—१. अंजिक (अजन, अंजक, सुपुंजिक); २. इल्वल; ३. कालनाभ; ४. खस्त्रुम (शलभ, श्वसप); ५. नभ (नल, भौम); ६. नमुचि; ७. नरक (कनक) ८. राहु (पोतरण, सरमाण, स्वर्भानु); ९. वज्रनाभ (कालवीर्य, चक्रयोधिन्, वल); १०. वातापि; ११. व्यंश (वंश्य, व्यंस, सव्यसिन्य); १२. शुक (विख्यात, केतु, शंभु) (ह. वं. १.३; मत्स्य. ६; विष्णु. १.२१; ब्रह्म. ३; ब्रह्मांड. ६.१८.२२)।

२. एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का सेवक था (विष्णु. १.१९.५२)।

विप्रजूति वातरशन--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.३)।

विप्रबंधु गौपायन (लौपायन)--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२४.४; १०.५७.६०)।

विबुध--(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार कृति राजा का, एवं वायु के अनुसार देवमीढ राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'विसृत', एवं अन्य पुराणों में 'विश्रुत' कहा गया है।

विभा--दुर्गम राजा की पत्नियों में से एक। इसकी माता का नाम कावेरी था।

विभांड--एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने आया था।

विभांडक--कश्यपकुल में उत्पन्न एक ऋषि, जो ऋश्यशृंग ऋषि का पिता था। इसके पुत्र ऋश्यशृंग ऋषि के जन्म की, एवं अंग देश के चित्ररथ राजा के शान्ता नामक कन्या से उसके विवाह की अनेकानेक चमत्कृतिपूर्ण कथाएँ महाभारत में प्राप्त है (म. व. ११०.११; ऋश्यशृंग देखिये)।

इसके नेत्र हरे-पिले रंग के थे, एवं सर से ले कर पैरों के नाखूनों तक इसके शरीर के सारे भागों पर केश ही केश थे (म. व. १११.१९)। इसका आश्रम कौशिकी नदी पर था। इसने हिमालय पर्वत पर रहनेवाले सनत्कुमार से ब्रह्मज्ञान प्राप्त किया था (म. शां. परि. १.२०)।

विभांडक काश्यप--एक आचार्य, जो ऋश्यशृंग ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। इसके शिष्य का नाम मित्रभू काश्यप था (वं. ब्रा. २)।

विभाव--जिताजित् देवों में से एक।

विभावरी—ब्रह्मा की एक मानसकन्या, जो रात्रि का प्रतीकरूप देवता मानी जाती है। ब्रह्मा की आज्ञा से इसने देवी उमा के शरीर में प्रवेश किया, जिस कारण वह कृष्णवर्णीय बन गयी (मत्स्य. १५४.५७-९६; ब्रह्मन् देखिये)।

विभावसु—प्रतर्दन देवों में से एक।

२. विवस्वत् के पुत्रों में से एक (म. आ. १.४०)।

३. एक दैत्य, जो मुर नामक दैत्य का पुत्र था। कृष्ण ने इसका वध किया (मुर २. देखिये)।

४. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर का विशेष आदर करता था। पाण्डवों के वनवासकाल में, यह द्वैतवन में उनके साथ रहता था (म. व. २७.२४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'ऋतावसु'।

५. एक क्रोधी महर्षि, जो सुप्रतीक नामक ऋषि का भाई था। अपने भाई के शाप के कारण, यह एक कछुआ बन गया। इसके इसी अवस्था में गरुड ने इसका भक्षण किया (म. आ. २५.१२)।

६. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। वृत्र-इंद्र युद्ध में यह वृत्र-पक्ष में शामिल था (भा. ६.६.३०)।

७. एक वसु, जिसकी पत्नी का नाम द्युति था। सोम के प्रीति के कारण, द्युति ने इसका त्याग किया (मत्स्य. २३.२४)।

८. एक वैश्य, जो अपने पूजापाठ के समय अभद्र घंटा का निनाद करता था। इस पापकर्म के कारण, मृत्यु के पश्चात् इसे घंटा के आकार का मुख प्राप्त हुआ। इसी कारण, इसे 'घंटामुख' नाम प्राप्त हुआ।

विकास—जित देवों में से एक।

२. अमिताभ देवों में से एक।

३. वशवर्तिन् देवों में से एक।

विबिंदु--एक राजा, जिसके दानशूरता की प्रशंसा मेधातिथि काण्व नामक आचार्य के द्वारा की गयी है। इसने मेधातिथि को ४८ हज़ार गायें दान में दी थी

(ऋ. ८.२.४१-४२)। पंचविंश ब्राह्मण में भी इस कथा का निर्देश प्राप्त है, किन्तु वहाँ इसे 'विभिंदुक' कहा गया है (पं. ब्रा. १५.१०.११)।

हॉपकिन्स के अनुसार, विभिंदुक एक स्वतंत्र व्यक्ति न हो कर, वह मेधातिथि का ही पैतृक नाम था, एवं इस शब्द का सही पाठ 'वैभिंदुक' था (हॉपकिन्स, ट्रा. सा. १५.६०)।

विभिंदुक—'विभिंदु' राजा का नामान्तर (विभिंदु देखिये)। इसीके वंश में उत्पन्न हुए 'विभिंदुकीय' पुरोहितों का निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. ३.२३३)।

विभीषण—रावण का कनिष्ठ भाई, जो विश्रवस् ऋषि एवं कैकसी के तीन पुत्रों में से एक था (वा. रा. उ. ९.७)। भागवत के अनुसार, इसकी माता का नाम केशिनी अथवा मालिनी था (भा. ४.१.३७)। वाल्मीकि-रामायण में वर्णित विभीषण धार्मिक, स्वाध्यायनिरत, नियताहार, एवं जितेंद्रिय है (वा. रा. उ. ९.३९)। इसी पापभीरुता के कारण, अपने भाई रावण का पक्ष छोड़ कर यह राम के पक्ष में शामिल हुआ, एवं जन्म से असुर होते हुए भी, एक धर्मात्मा के नाते प्राचीन साहित्य में अमर हुआ।

जन्म--कैकसी को विश्रवस् ऋषि से उत्पन्न हुए रावण एवं कुंभकर्ण ये दोनों पुत्र दुष्टकर्मा राक्षस थे। किंतु इसी ऋषि के आशीर्वाद के कारण, कैकसी का तृतीय पुत्र विभीषण, विश्रवस् के समान ब्राह्मणवंशीय एवं धर्मात्मा उत्पन्न हुआ (वा. रा. उ. ९.२७)। भागवत के अनुसार, यह स्वयं धर्म का ही अवतार था (भा. ३७.१४)।

तपस्या—इसने ब्रह्मा की घोर तपस्या की थी, एवं उससे वरस्वरूप धर्मबुद्धि की ही माँग की थी (वा. रा. उ. १०.३०)। इस वर के अतिरिक्त, ब्रह्मा ने इसे अमरत्व एवं ब्रह्मास्त्र भी प्रदान किया था (वा. रा. उ. १०.३१-३५)।

रावण से विरोध—यह लंका में अपने भाई रावण के साथ रहता था, किंतु स्वभावविरोध के कारण इसका उससे बिल्कुल न जमता था। रावण के द्वारा सीता का हरण किये जाने पर, सीता को राम के पास लौटाने के लिए इसने उसकी बार बार प्रार्थना की थी। किन्तु रावण ने इसके परामर्श की अवज्ञा कर के, सीता को लौटाना अस्वीकार कर दिया (वा. रा. सुं. ५.३७)।

सीता की खोज में आये हुए हनुमत् का वध करने को रावण उद्यत हुआ। उस समय भी, इसने रावण से प्रार्थना की, 'दूत का वध करना अन्याय्य है। अतः उसका वध न कर, दण्डस्वरूप उसकी पूँछ ही केवल जला दी जाये'। हनुमत् के द्वारा किये गये लंकादहन के समय, उसने इसका भवन सुरक्षित रख कर, संपूर्ण लंका जला दी थी (वा. रा. सुं. ५४.१६)।

रावण की सभा में—राम-रावण युद्ध के पूर्व, रावण ने अपने मंत्रिगणों की एक सभा आयोजित की थी, जिस समय विभीषण भी उपस्थित था। उस सभा में इसने सीताहरण के कारण सारी लंकानगरी का विनाश होने की सूचना स्पष्ट शब्दों में की थी, एवं सीता को लौटाने के लिए रावण से पुनः एक बार अनुरोध किया था (वा. रा. यु. ९)। उस समय, रावण ने विभीषण की अत्यंत कटु आलोचना की, एवं इसे राक्षसकुल का कलंक बताया (रावण दशग्रीव देखिये)। इस घोर भर्त्सना से घबरा-कर, अनल, पनस, संपाति एवं प्रमाति नामक अपने चार राक्षस-मित्रों के साथ यह लंकानगरी से भाग गया एवं राम के पक्ष में जा मिला।

शरणागत विभीषण—वानरसेना के शिबिर के पास पहुँच कर अपना परिचय राम से देते हुए इसने कहा, "मैं रावण का अनुज हूँ। उसने मेरे सलाह को ठुकरा कर मेरा अपमान किया है। अतः मैं अपना परिवार छोड़ कर, तुम्हारी शरण में आ गया हूँ (त्यक्त्वा पुत्रांश्च दारांश्च राघवं शरणं गतः) (वा. रा. यु. १७.१६)।

इस अवसर पर विभीषण का वध करने की सलाह सुग्रीव ने राम से दी, किन्तु राम ने शरणागत को अवध्य बता कर इसे अभयदान दिया (वा. रा. यु. १८.२७; राम दाशरथि देखिये)।

अनंतर विभीषण ने रावण की सेना एवं युद्धव्यवस्था की पूरी जानकारी राम को बता दी, एवं युद्ध में राम की सहायता करने की प्रतिज्ञा भी की। तब राम ने विभीषण को लंकानगरी का राजा उद्घोषित कर, इसे राज्याभिषेक किया (वा. रा. यु. १९.१९)।

राम की सहायता—रामरावण युद्ध में राम का प्रमुख परामर्शदाता विभीषण ही था। इसीके ही परामर्श पर, राम ने समुद्र की शरण ली, एवं वालिपुत्र अंगद को दूत के नाते रावण के पास भेज दिया। रामसेना का निरीक्षण करने आये हुए शुक, सारण, शार्दूल आदि रावण के गुप्तचरों को पहचान कर पकड़वाने का कार्य भी इसीने ही किया

। रावणसेना का समाचार लाने के लिए इसने अपने मंत्रिगण भेज दिये थे। कुंभकर्ण एवं प्रहस्त का परिचय इसीने ही राम को कराया था। मायासीता के वध के प्रसंग में भी, रावण की माया के रहस्य का उद्घाटन भी इसने ही राम के पास किया था। इंद्रजित् एवं रावण के द्वारा किये जानेवाले 'आसुरी यज्ञ' का विध्वंस करने की सलाह भी इसने ही राम को दी थी।

मायावी युद्ध--रामरावण युद्ध में विभीषण ने स्वयं भाग भी लिया था, एवं प्रहस्त, धूम्राक्ष आदि राक्षसों का वध किया था (वा. रा. यु. ४३; म. व. २७०.४)। मायावी युद्ध में प्रवीण होने के कारण, इसने इंद्रजित् से युद्ध करते समय काफ़ी पराक्रम दर्शाया था, एवं उसके सेना में से पर्वण, पूतन, जंभ, खर, क्रोधवश, हरि, प्रसज, आसज, प्रवस आदि क्षुद्र राक्षसों का वध किया था (वा. रा. यु. ८९.९०३; म. व. २६९.२-३)।

इंद्रजित् के बहुत सारे सैनिक स्वयं अदृश्य रह कर युद्ध करते थे। रामसेना में से केवल विभीषण ही उन अदृश्य सैनिकों को देखने में समर्थ था। अंत में, इसने कुबेर से ऐसा दैवी जल प्राप्त किया कि, जो आँखो में लगाने से अदृश्य प्राणी दृष्टिगोचर हो सके। इसने उस जल से प्रथम सुग्रीव एवं रामलक्ष्मण, तथा अनंतर रामसेना के प्रमुख वानरों के आँखें धोयीं, जिस कारण वे सारे इंद्रजित् की अदृश्य सेना से युद्ध करने में सफल हो गयें (म. व. २७३.९-११)।

युद्ध के अंतिम कालखंड में, इसने लक्ष्मण से युद्ध करनेवाले रावण के रथ के सारे अश्व मार डाले (वा. रा. यु. १००)। इस प्रकार राम को समय-समय पर उचित सलाह एवं सहायता दे कर, इसने उसे युद्ध में विजय पाने के लिए मदद की।

रावण का अंत्यसंस्कार--रावणवध के तश्चात्, इसने रावण के दुष्टकर्मों का स्मरण कर, उसका दाहकर्म करना अस्वीकार कर दिया। किन्तु राम ने इसे समझाया, 'मृत्यु के पश्चात् मनुष्यों के वैर समाप्त होते है। इसी कारण उनका स्मरण रखना उचित नही है (मरणान्तानि वैराणि)' (वा. रा. यु. १११.१००)। फिर राम की आज्ञा से, इसने रावण का उचित प्रकार से अन्त्यसंस्कार किया। रावण के वध पर विभीषण के द्वारा किये गये विलाप का एक सर्ग वाल्मीकिरामायण के कई संस्करणों में प्राप्त है (वा. रा. उ. दाक्षिणात्य. १०९)। किन्तु वह सर्ग प्रक्षिप्त प्रतीत होता है।

राज्याभिषेक--अयोध्या पहुँचने के बाद, श्रीराम ने विभीषण को राज्याभिषेक करने के लिए लक्ष्मण को लंका भेज दिया था (वा. रा. यु. ११२)। बाद में अपने परिवार के लोगों के साथ विभीषण अयोध्या गया, एवं वहाँ राम के राज्याभिषेकसमारोह में सम्मिलित हुआ (वा. रा. यु. १२१; १२८)। राज्याभिषेक के पश्चात राम ने विभीषण को राजकर्तव्य का सुयोग्य उपदेश प्रदान किया, एवं बड़े दुःख से इसे विदा किया।

अश्वमेधयज्ञ में--राम के द्वारा किये गये अश्वमेध-यज्ञ के समय विभीषण उपस्थित था। उस समय, ऋषियों की सेवा करने की जवाबदारी इस पर सौंपी गयी थी (पूजां चक्रे ऋषीणाम्) (वा. रा. उ. ९१.२९)।

राम का आशीर्वाद--अपने देहत्याग के समय, राम ने विभीषण को आशीर्वाद दिया था:--

> यावच्चन्द्रश्च सूर्यश्च यावत्तिष्ठति मेदिनी।
> यावच्च मत्कथा लोके तावद्राज्यं तवास्त्विह ॥
> (वा. रा. उ. १०८.२५)।

(जिस समय तक आकाश में चंद्र एवं सूर्य रहेंगे, एवं पृथ्वी का अस्तित्व होगा, एवं जिस समय तक मेरी कथा से लोग परिचित रहेंगे, उस समय तक लंका में तुम्हारा राज्य चिरस्थायी रहेगा)।

परिवार--शैलूष गंधर्व की कन्या सरमा विभीषण की पत्नी थी (वा. रा. उ. १२.२४-२५)। पुराणों में में इसकी पत्नी का नाम महामूर्ति दिया गया है (पद्म. पा. ६७)। अशोकवन में बंदिस्त किये गये सीता के देखभाल की जवाबदारी सरमा पर सौंपी गयी थी, जो सीता के 'प्रणयिनी सखी' के नाते उसने निभायी थी (वा. रा. यु. ३३.३)।

सरमा से इसे कला नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (वा. रा. सुं. ३७)। अन्यत्र इसकी कन्या का नाम नंदा दिया गया है (वा. रा. सुं. गौडीय. ३५.१२)।

२. लंकानगरी का एक विभीषणवंशीय राजा, जिसे सहदेव 'पाण्डव' ने अपने दक्षिण दिग्विजय के समय जीता था। यह रामकालीन विभीषण से काफ़ी उत्तरकालीन था, एवं इन दोनों में संभवतः ३०-३५ पीढियों का अन्तर था। इस कालविसंगति का स्पष्टीकरण पौराणिक साहित्य में राम-कालीन विभीषण को चिरंजीव मान कर किया गया है। किन्तु संभव यही है कि, यह विभीषण के वंश में ही उत्पन्न कोई अन्य राजा था।

इसके राजप्रासाद एवं नगरी का सविस्तृत वर्णन महाभारत में प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, लंका का वैभव इसके राज्यकाल में चरमसीमा पर पहूँच गया था (म. स. ३१)।

सुग्रीव के दूत के नाते घटोत्कच इसके दरबार में आया था। उस समय युधिष्ठिर का परिचय सुन कर, इसने घटोत्कच का उचित आदर-सत्कार किया, एवं उसे युधिष्ठिर के पास पहुँचाने के लिए निम्नलिखित 'उपायन' वस्तुएँ प्रदान कीः—हाथी के पीठ पर बिछाने योग्य स्वर्ण से बने हुए आसन, बहुमूल्य आभूषण, सुंदर मूँगे, स्वर्ण एवं रत्न से बने हुए अनेकानेक कलश, जलपात्र, चौदह सुवर्णमय ताड़ वृक्ष, मणिजडित शिबिकाएँ, बहुमूल्य मुकुट, चंद्रमा के समान उज्वल शतावर्त शंख, श्रेष्ठचंदन से बनी हुयी अनेकानेक वस्तुएँ आदि (म. स. २८. ५०-५३; परि. १.१५. पंक्ति २३५-२५३)।

३. एक यक्ष (म. स. १०.१३)।

विभीषणा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२२)।

विभु--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक देव, जो यज्ञदेव एवं दक्षिणा के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१.७)।

३. (स्वा.) एक राजा, जो प्रस्ताव एवं नियुत्सा के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम रति, एवं पुत्र का नाम पृथुषेण था (भा. ५.१५.६)।

४. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो सत्यकेतु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुविभु था (वायु. ९२.७१)।

५. सौवीर देश के शकुनि राजा का भाई, जो अपने चार भाइयों के साथ भीमसेन के रात्रियुद्ध में मारा गया (म. द्रो. १३२.२०-२१)।

६. एक ऋषि, जो भृगु वारुणि का पुत्र था। इसे वरेण्य नामान्तर प्राप्त था।

७. साध्य देवों में से एक (वायु. ६६.१६)।

८. तुषित देवों में से एक।

९. रैवत मन्वन्तर का इंद्र (विष्णु. ३.१.२०)।

१०. स्वायंभुव मन्वन्तर में उत्पन्न श्रीविष्णु का एक अवतार।

११. एक भव देव, जो भग एवं सिद्धि के पुत्रों में से एक था (भा. ६.१८.२)।

१२. जितांजित् देवों में से एक।

१३. अमिताभ देवों में से एक।

१४. (सो. मगध.) मगधवंशीय महाबाहु राजा का नामान्तर (मत्स्य. २७१.२४; महाबाहु ३. देखिये)

१५. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो पृथु वैन्य एवं अर्चिष्मती के पुत्रों में से एक था।

१६. स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. ७)।

इसे स्वयंभुव मनु का पौत्र भी कहा गया है (वायु. ३१.१७)।

विभूति--विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५७)।

विभूवस—एक ऋषि, जो त्रिन ऋषि का पिता था (ऋ. १०.४६.३)।

विभ्राज—(सो. पूरु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार सुकृति राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार सुकृत राजा का पुत्र था। कई अभ्यासकों के अनुसार भागवत में निर्दिष्ट पार राजा एवं यह दोनों एक ही थे, किन्तु वह अयोग्य प्रतीत होता है (पार. २. देखिये)।

२. पांचाल देश का एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पिता था। इसे 'अनघ' नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. २१.११-१६)।

विभ्राज सौर्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७०)।

विमद ऐंद्र प्राजापत्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. २०-२६)। ऋग्वेद के इन सूक्तों में इसका स्पष्ट नामोल्लेख, तथा इसके 'विमल' नामक परिवार का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.२०.१०; २३.७)।

यह इंद्र एवं अश्वियों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था (ऋ. १.११२.१९; ११६.१; ११७.२०; १०. ३९.७; ६५.१२)। यह इंद्र एवं 'प्रजापति' का मानसपुत्र था, जिस कारण इसे 'ऐंद्र' एवं 'प्राजापत्य' पैतृक नाम प्राप्त हुए थे।

पुरुमित्र की कन्या कमद्यु इसकी पत्नी थी, जिसने इसका स्वयंवर में वरण किया था। इस कारण स्वयंवर के लिए उपस्थित हुए अन्य राजाओं ने इससे युद्ध शुरु किया। उस समय अश्वियों ने इसे अपने शत्रुओं को परास्त करने में साहाय्य किया, एवं कमद्यु को रथ में बैठा कर इसके पास पहुँचा दिया (अ. वे. ४.२९.४; ऐ. ब्रा. ५. ५.१)।

कई अभ्यासकों के अनुसार, ऋग्वेद का सूक्तद्रष्टा विमद, एवं अश्वियों का कृपापात्र विमद दो अलग व्यक्ति

थे। लुडविग के अनुसार, वत्स काण्व एवं आश्वियों का कृपापात्र विमद दोनों एक ही थे (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद ३.१०५)। ऋग्वेद की एक ऋचा में विमद एवं वत्स का एकत्र निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.९.१५)।

विमनुष्या—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी (ब्रह्मांड. ३.७.५)।

विमर्द--एक किरात राजा, जिसका शिवपूजा के कारण उद्धार हुआ (स्कंद. ३.३.४)।

विमल—दक्षिणापथ का एक राजा, जो इल (सुद्युम्न) राजा का पुत्र था (भा. ९.१.४१)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो जीमूत राजा का पुत्र, एवं भीमरथ राजा पिता था (मत्स्य. ४४.४१)। पाठ, 'विकृति'।

३. हिमालय की तलहटी में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जिसे ब्रह्मा की तपस्या के कारण पुत्रप्राप्ति हुई थी (पद्म. उ. २०७)।

४. रत्नातट नगरी का एक राजा, जिसने राम के अश्वमेध यज्ञ के समय शत्रुघ्न को सहाय्यता की थी (पद्म. पा. १७)।

५. एक यक्ष, जो मणिवर एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

विमलपिंडक--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

विमला—एक गाय, जो सुरभिपुत्री रोहिणी के दो कन्याओं में से एक थी। दूसरी कन्या का नाम अनला था (म. आ. ६०.५५१*)।

अनला से पिण्डाकार फल देनेवाले सात वृक्ष निर्माण हुए (म. आ. ६०.६६)।

विमुख--दक्षिण भारत में रहनेवाला एक ऋषि (वा. रा. उ. १)।

विमौद्गल--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वियति—एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार नहुष राजा का पुत्र था (भा. ९.१८.१; विष्णु. ४.१०.१)।

विरज--(स्वा. नाभि.) एक राजा, जो त्वष्टृ एवं विरोचना के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम विशुचि था, जिससे इसे शतजित् आदि सौ पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुई।

२. चाक्षुष मन्वन्तर का एक ऋषि।

३. सावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

४. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

५. (स्वा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पूर्णिमत् राजा का पुत्र था।

६. एक आचार्य, जो व्यास की ऋक्शिष्य परंपरा में से जातूकर्ण्य नामक आचार्य का शिष्य था (भा. १२.६.५८)।

विरजस्—भगवान् नारायण का एक मानसपुत्र, जिसने अपना राज्य छोड़ कर संन्यासव्रत की दीक्षा ली। इसके पुत्र का नाम कीर्तिमत् था (म. शां. ५९.९४-९६)।

२. नारायण नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

४. चाक्षुष मन्वन्तर का एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं ऊर्जा के सात पुत्रों में से एक था (भा. ४.१.४१)।

५. वशवर्तिन् देवों में से एक।

६. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

७. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. द्रो. ११३.११३५*, पंक्ति. २-५)।

८. एक प्रजापति, जो वारुणि कवि नामक ऋषि के आठ पुत्रों में से एक था। इसके अन्य सात भाईयों के नाम निम्न प्रकार थे:--कवि, काव्य, धृष्णु, उशनस्, भृगु, विरजस् एवं काशि। इसकी विरजा एवं नड्वला नामक दो कन्याएँ, एवं सुधन्वन् नानक एक पुत्र था। इनमें से विरजा का विवाह ऋक्ष वानर से, एवं नड्वला का विवाह चाक्षुष मनु से हुआ था। वैराज नामक पितर भी इसीके ही पुत्र कहलाते हैं (ब्रह्मांड. ३.७.२१२)।

विरजस्क--सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

विरजा--विरजस् नामक प्रजापति की कन्या, जो शुकपुत्र ऋक्ष वानर की पत्नी थी। इसे इंद्र एवं सूर्य से क्रमशः वालिन् एवं सुग्रीव नामक पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. ३. ७. २१२-२१५)। वाल्मीकिरामायण के दाक्षिणात्य पाठ में, वालि एवं सुग्रीव को स्त्रीरूपधारी ऋक्षरजस् वानर के पुत्र कहा गया है (वालिन् देखिये)।

२. सुस्वधा नामक 'आज्यप' पितरों की कन्या, जो नहुष की पत्नी, एवं ययाति की माता थी (मत्स्य. १५.२३)।

३. एक राक्षसी, जिसने अदितिपुत्र महोत्कट का वेष धारण किये हुए श्रीगणेश को भक्षण किया। महोत्कटरूपी श्रीगणेश इसका उदर विदीर्ण कर बाहर आया। अन्त में उसीके ही स्पर्श से इसे मुक्ति प्राप्त हुई।

४. कृष्ण की एक प्रियपत्नी, जो राधा की सौत थी। सवती-मत्सर के कारण राधा ने इसे नदी बनने का शाप दिया, जिस कारण, यह विरजा नामक नदी बन गयी। क्षार-समुद्रादि अष्टसमुद्र इसीके ही पुत्र माने जाते हैं (ब्रह्मवै. ४.२)।

विरजामित्र—स्वायंभुव मन्वन्तर के 'विरजस्' नामक वसिष्ठपुत्र का नामान्तर। इस शब्द का शुद्ध पाठ विरजस्+मित्र होने की संभावना है।

विरथ--(सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंशीय बहुरथ राजा का नामान्तर। मत्स्य में इसे नृपंजय राजा का पुत्र कहा गया है।

विरस—एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)

विराज्—(स्वा. नाभि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार नर राजा का पुत्र था।

२. स्वायंभुव मनु का नामान्तर (मत्स्य. ३.४५; ब्रह्मांड. २.९.३९; मनु स्वायंभुव देखिये)।

विराज--(सो. कुरु) एक राजा, जो कुरु राजा का पौत्र, एवं अविक्षित् राजा का पुत्र था (म. आ. ८९. ४५)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भीम के द्वारा मारा गया (म. भी. ९९.२६)।

विराट--मत्स्य देश का सुविख्यात राजा, जो मरुद्गणों के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. वि. ३०.६; आ. ६१. ७६)। मत्स्य देश में स्थित विराट-नगरी में इसकी राजधानी थीं। इसी कारण संभवतः इसे विराट नाम प्राप्त हुआ था।

यह अपने समय का एक श्रेष्ठ एवं आदरणीय राजा था। अपने पुत्र उत्तर एवं शंख के साथ यह द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.८)। यह मगध-राज जरासंध का मांडलिक राजा था। जरासंध के द्वारा उत्तरदिग्विजय के लिए नियुक्त किये गये मांडलिक राजाओं में से यह एक था (ह. वं. २.३५; जरासंध देखिये)। युधिष्ठिर के राजसूययज्ञ के समय, सहदेव के द्वारा किये दक्षिणदिग्विजय में, उसने इसे जीता था (म. स. २८.२)। उस यज्ञ के समय, इसने युधिष्ठिर को सुवर्णमालाओं से विभूषित दो हज़ार हाथी उपहार के रूप में दिये थे (म. स. ४८.२५)।

पाण्डवों का अज्ञातवास—वनवास समाप्ति के पश्चात् अपने अज्ञातवास का एक वर्ष पाण्डवों के द्वारा विराट-नगरी में ही व्यतीत किया गया। उस समय अपने समस्त शस्त्रसंभार को शमीवृक्ष में छिपा कर, पाण्डव विराटनगरी में पहुँच गये। युधिष्ठिर के दुर्भाग्य की कहानी सुन कर, यह मत्स्यदेश का अपना सारा राज्य उसे देने के लिए उद्यत हुआ। किन्तु युधिष्ठिर ने उसका इन्कार कर, स्वयं को एवं अपने भाइयों को अज्ञात अवस्था में एक वर्ष तक रखने के लिए इसकी प्रार्थना की। (म. वि. ९)।

पाण्डवों के अज्ञातवास की जानकारी प्रथम से ही विराट को थी, यह महाभारत में प्राप्त निर्देश अयोग्य, एवं उसी ग्रंथ में अन्यत्र प्राप्त जानकारी से विसंगत प्रतीत होता है।

पश्चात् पाँच पाण्डव एवं द्रौपदी विराट-नगरी में निम्नलिखित नाम एवं व्यवसाय धारण कर रहने लगे :--१. युधिष्ठिर (कंक)--विराट का द्यूतविद्याप्रवीण राजसेवक (म. वि. ६.१६); २. अर्जुन (बृहन्नला)--विराट के अंतःपुर का सेवक, जो विराटकन्या उत्तरा को गीत, वादन, नृत्य आदि सिखाने के लिए नियुक्त किया गया था (म. वि. १०.११-१२); ३. भीमसेन (वल्लव)-पाकशालाध्यक्ष (म. व. ७.९-१०); ४. नकुल (ग्रंथिक अथवा दामग्रंथी)-अश्वशालाध्यक्ष (म. वि. ११.९-१०); ५. सहदेव (तंतिपाल अथवा अरिष्टनेमि)—गोशाला-ध्यक्ष (म. वि. ९.१४); ६. द्रौपदी (सैरंध्री)-- विराट-पत्नी सुदेष्णा की सैरंध्री (म. वि. ३.१७; ८)।

कीचकवध—इस प्रकार पाण्डव छद्म नामों से अपने अपने कार्य करते हुए रहने लगे। इतने में विराट के सेनापति कीचक ने द्रौपदी पर पापी नजर डाल दी, जिस कारण वह भीम के द्वारा मारा गया (म. वि. ६१.६८; परि. १. क्र. १९. पंक्ति ३१-३२)।

सुशर्मन् से युद्ध—सेनापति कीचक की मृत्यु से इसकी सेना काफ़ी कमजोर हो गयी। यही सुअवसर पा कर, त्रिगर्तराज सुशर्मन् ने मत्स्य-देश पर आक्रमण किया, एवं इसकी दक्षिण दिशा में स्थित गोशाला लूट ली। यह देख कर अपनी सारी सेना एकत्रित कर, विराट ने सुशर्मन् पर हमला बोल दिया। इस सेना में, इसके शतानीक एवं मदिराक्ष नामक दो महारथी भाई; उत्तर एवं शंख नामक दो पुत्र, एवं अर्जुन को छोड़ कर बाकी चार ही पाण्डव शामिल थे (म. वि. ३१.५८*)।

काफ़ी समय तक युद्ध चलने पर, सुशर्मन् ने इसे जीवित पकड़ कर वन्दी बना लिया। जैसे ही युधिष्ठिर को यह पता चला, उसने भीमसेन को एवं उसके चक्ररक्षक के रूप में नकुल-सहदेव को इसे छुड़ाने के लिए भेज दिया। शीघ्र ही भीम ने सुशर्मन् को चारों ओर से घिरा

कर परास्त किया, एवं इसकी तथा इसके गायों की मुक्तता की। पश्चात् सुशर्मन् को बाँध कर वह उसे युधिष्ठिर के सामने ले आया, किन्तु युधिष्ठिर ने सुशर्मन् की मुक्तता करने के लिए भीम को आज्ञा दी। पश्चात् सुशर्मन् ने विराट की क्षमायाचना की, एवं वह त्रिगर्त देश चला गया (म. वि. २९.३२)। इस प्रकार सुशर्मन् के साथ हुए युद्ध में पाण्डवों ने काफ़ी पराक्रम दर्शाने के कारण, विराट ने उनका बहुत ही सम्मान किया (म. वि. ६६)।

दुर्योधन से युद्ध--उपर्युक्त युद्ध के समय, सुशर्मन् के अनुरोध पर दुर्योधन ने मत्स्य देश की गोशालाओं पर आक्रमण किया, एवं इसकी गायों का हरण किया (म. वि. ३३)। उस समय स्वयं विराट सुशर्मन् से युद्ध करने में व्यस्त था, इस कारण इसके पुत्र उत्तर ने बृहन्नला को अपना सारथी बना कर, कौरवों पर आक्रमण किया (म. वि. ३५)।

सुशर्मन् को जीत कर विराट अपनी नगरी में लौट आते ही इसे सूचना प्राप्त हुई कि, उत्तर भी कौरवो को परास्त कर गायों के साथ आ रहा है। तत्काल इसने उत्तर के स्वागत के लिए अपनी सेना भेज़ दी, एवं यह स्वयं कंक (युधिष्ठिर) के साथ द्यूत खेलने बैठ गया।

युधिष्ठिर का अपमान--द्यूत खेलते समय विराट ने अपने पुत्र उत्तर की वीरता का गान युधिष्ठिर को सुनाना प्रारंभ किया। युधिष्ठिर इस बात को न सह सका, एवं सहजवश कह बैठा, 'बृहन्नला जिसका सारथी हो उसे विजय प्राप्त होनी ही चाहिए'। कंक की यह वाणी सुन कर विराट क्रुद्ध हुआ, एवं इसने जोश में आ कर कंक के मुख पर जोर से पाँसा फेंक मारा, जिस कारण उसकी नाक से खून बहने लगा। उसी समय उत्तर वहाँ आ पहुँचा, एवं उसने बृहन्नला के पराक्रम की वार्ता कह सुनायी। पश्चात् उसने इसे युधिष्ठिर की क्षमा माँगने के लिए भी कहा।

उत्तरा-अभिमन्यु-विवाह--पाण्डवों का अज्ञातवास समाप्त होने पर, उनकी सही जानकारी जब विराट को ज्ञात हुई, तब इसे बड़ा दुःख हुआ। पाण्डवों के उपकारों का बदला चुकाने, तथा उनका सत्कार करने की दृष्टि से, इसने अपनी कन्या उत्तरा का विवाह अर्जुन के साथ करना चाहा। किन्तु अर्जुन ने इस प्रस्ताव का इन्कार किया, एवं अपने पुत्र अभिमन्यु का उत्तरा के साथ विवाह कराने की इच्छा प्रकट की। अर्जुन का यह प्रस्ताव सुन कर विराट को अत्यंत आनंद हुआ, एवं इसने अपने उपप्लव्य नामक नगरी में उत्तरा एवं अभिमन्यु का विवाह संपन्न कराया (म. वि. ६६-६७)।

भारतीय युद्ध में--इस युद्ध के समय, यह यद्यपि अत्यंत वृद्ध हुआ था, फिर भी अपने बन्धु एवं पुत्रों के साथ यह पाण्डवों के पक्ष में युद्ध करने के लिए उपस्थित हुआ था। युधिष्ठिर के सात प्रमुख सेनापतियों में से यह एक था (म. उ. १५४.१०-११)। इस युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध हुआ था:--१. भगदत्त (म. भी. ४३.४८); २. अश्वत्थामन् (म. भी. १०६. ११;१०७.२१); ३. जयद्रथ (म. भी. ११२.४१-४२); ४. विंद एवं अनुविंद (म. द्रो. २४.२०); ५. शल्य (म. द्रो. १४२.३०)।

मृत्यु--जयद्रथ वध के उपरान्त हुए रात्रियुद्ध में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १६१. ३४)। इसकी मृत्यु पौष कृष्ण एकादशी के दिन प्रातःकाल में हुई थी (भारत-सावित्री)। इसकी मृत्यु के उपरान्त युधिष्ठिर ने इसका दाह-संस्कार किया (म. स्त्री. २६.३३), एवं इसका श्राद्ध भी किया (म. शां ४२.२)। मृत्यु के उपरान्त यह स्वर्ग में जा कर विश्वेदेवों में सम्मिलित हुआ (म. स्व. ५.१३)।

परिवार--इसकी कुल दो पत्नियाँ थीः--१. कोसलराज-कुमारी सुरथा, जिससे इसे श्वेत एवं शंख नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे; २. केकय देश के सूत राजा की कन्या सुदेष्णा, जो इसकी पटरानी थी (म. वि. ८.६); एवं जिससे इसे उत्तर (भूमिंजय), एवं बभ्रु नामक दो पुत्र, एवं उत्तरा नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी।

इसके कुल ग्यारह भाई थे, जिनके नाम निम्नप्रकार थे:--१. शतानीक; २. मदिराक्ष (मदिराश्व, विशालाक्ष); ३. श्रुतानीक; ४. श्रुतध्वज; ५. बलानीक; ६. जयानीक; ७. जयाश्व; ८. रथवाहन; ९. चंद्रोदय; १०. समरथ; ११. सूर्यदत्त (म. द्रो. १३३.३९-४०)। इन भाइयों में से शतानीक इसका सेनापति था, एवं मदिराक्ष 'महारथी' था।

इसके सारे पुत्र एवं सारे भाई भारतीय युद्ध में शामिल थे। उनमें से शंख, सूर्यदत्त एवं मदिराक्ष द्रोण के द्वारा, श्वेत एवं शतानीक भीष्म के द्वारा, एवं उत्तर शल्य के द्वारा मारे गये।

२. सुतप देवों में से एक (वायु. १००.१५)।

३. आनंद नामक गालव्यकुलोत्पन्न ब्राह्मण का मानस-पुत्र (आनंद १. देखिये)।

४. प्रतर्दन देवों में से एक (वायु. ६२.२६)।

५. स्वायंभुव मनु का नामांतर (मत्स्य. ३.४५)।

विराडप—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'बिडालज'।

विराध—वितल नामक पाताललोक में रहनेवाला एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ५०.२८)।

२. दंडकारण्य में रहनेवाला एक राक्षस, जो जव एवं शतह्रदा का पुत्र था। राम ने इसका वध किया, एवं लक्ष्मण ने एक गड्ढा खोद कर इसे गाड़ दिया।

पूर्वजन्म में यह तुंबुरु नामक गंधर्व था, जिसे रंभा पर अत्याचार करने के कारण, राक्षसयोनि प्राप्त हुई थी (वा. रा. अर. २.१२; ४.१३-१९; म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति ५१९)।

विराव—अमिताभ देवों में से एक।

विराविन्—धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

विरुद्ध—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण (भा. ८.१३.२२)।

विरूप—एक असुर, जो श्रीकृष्ण के द्वारा मारा गया था (म. स. ९.१४)।

२. क्रोध के द्वारा लिया गया मानवी रूप, जिस रूप में उसने इक्ष्वाकु राजा के साथ तत्त्वज्ञानपर संवाद किया था। महाभारत में 'विरूप-इक्ष्वाकु संवाद' विस्तृत रूप में दिया गया है।

महाभारत में अन्यत्र 'विकृत-विरूप संवाद' भी प्राप्त है, जो इसने मानवरूपधारी 'काम' से किया था (म. शां. १९२.८८-११६)।

३. श्रीकृष्ण के महारथी पुत्रों में से एक (भा. १०. ९०.३४)।

४. (सू. नाभाग.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंबरीष राजा का पुत्र, एवं पृषदश्व राजा का पिता था (भा. ९.६.१)।

विरूप आंगिरस—अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार एवं प्रवर, जिसका निर्देश ऋग्वेद में एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते किया गया है (ऋ. १.४५.३; ८.७५.६)। ऋग्वेद-अनुक्रमणी में भी एक सूक्तकार के नाते इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.४३; ४४.७५))। ऋग्वेद में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.४५.३; ८.७५.६)।

महाभारत में इसे अंगिरस् ऋषि के आठ पुत्रों में से एक कहा गया है, एवं इसे 'वारुण' एवं 'अग्नि' पैतृक-नाम प्रदान किये गये हैं। इसके अन्य सात भाइयों के नाम निम्नप्रकार थे :—बृहस्पति, उतथ्य, पयस्य, शान्ति, घोर, संवर्त, एवं सुधन्वन् (म. अनु. ८५.१३०-१३१)।

विरूपक—एक राक्षस, जो नैर्ऋत (आलंबेय) राक्षस गण का अधिपति था। ये सारे राक्षस शिव के उपासक थे, जिस कारण स्वयं को रुद्र-गण कहलाते थे।

इसकी पत्नी का नाम नीलकन्या विकचा था, जिससे इसे दंष्ट्राकराल आदि भूमि-राक्षस उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. ३.७.१४०-१४३; १५३; वायु. ६९.१७४)।

२. एक दानव, जो प्राचीनकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५१)।

विरूपाक्ष—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के चौंतीस पुत्रों में से एक था। इंद्र-वृत्र युद्ध में यह वृत्र के पक्ष में शामिल था (वायु. ६८.११)। आगे चल कर यह चित्रवर्मा राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ.६१.२३)।

२. रावणपक्षीय एक राक्षस, जो माल्यवत् राक्षस का पुत्र था (वा. रा.उ. ५.३५)। यह रावण के सेनापतियों में से एक था, एवं सुग्रीव से इसका युद्ध हुआ था (म. व. २६९.८; वा. रा. यु. ९.३; ९६.३४; ९९.१)। हनुमत् ने इसका वध किया।

३. एक राक्षस, जो घटोत्कच का सारथी था। कर्ण-घटोत्कच युद्ध में यह कर्ण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १५०.९२)।

४. एक राक्षस, जो नरकासुर का सेनापति था। 'औदका' के अंतर्गत लोहितगंगा नदी के पास श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. ३५. परि. १. क्र. २१ पंक्ति. १०१२)।

५. एक राक्षस, जो महिषासुर का अमात्य था (दे. भा. ५.११)।

६. एक राक्षस, जो सुमालि राक्षस का अमात्य था। सुग्रीव ने इसका वध किया (वा. रा. यु. ९६)।

७. रुद्र-शिव का नामान्तर (ब्रह्मांड. २.२५.६४)।

८. एकादश रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.२९)।

९. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (मत्स्य. १९५. १९)। इसे अंगिरस्-कुल का मंत्रकार भी कहा गया है।

१०. एक राक्षसराज, जो राजधर्मन् नामक बक का मित्र था (राजधर्मन् देखिये)।

विरोचन—एक राक्षससम्राट्, जो प्रह्लाद के तीन पुत्रों में से ज्येष्ठ था। सुविख्यात राक्षससम्राट् बलि-वैरोचन का यह पिता था। सप्तपातालों में से पाँचवें पाताल में इसका अधिराज्य था। दैत्यों के द्वारा किये गये पृथ्वी-

दोहन के समय, यह 'वत्स' (बछडा) बना था (म. द्रो. परि. १. क्र. ८. पंक्ति. ८०२)।

प्रल्हाद की न्यायप्रियता—इसके पिता प्रह्लाद के न्यायनिष्ठुरता के संबंध में एक कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार केशिनी नामक सुंदर राजकन्या से यह एवं अंगिरस् ऋषि का पुत्र सुधन्वन् एकसाथ ही प्रेम करने लगे। उस समय केशिनी ने इन दोनों से कहा, 'तुम दोनों में से जो अपने को श्रेष्ठ सावित करेगा, उससे मैं विवाह करूँगी'।

श्रेष्ठता के संबंध में इसका एवं सुधन्वन् का काफ़ी वादविवाद हुआ। अंत में इस वाद का निर्णय करने के लिए, ये दोनों विरोचन के पिता असुरराज प्रह्लाद के पास गये। इनका यह भी तय हुआ कि, इनमें से जो श्रेष्ठ सावित होगा, उसका दूसरे के प्राणों पर अधिकार होगा।

असुरराज प्रह्लाद इन दोनों की श्रेष्ठता के संबंध में कुछ भी निर्णय न दे सका, जिस कारण उसने कश्यप ऋषि की सलाह ली। उसीके कहने पर, प्रह्लाद ने अपने पुत्र की अपेक्षा सुधन्वन् को श्रेष्ठ ठहराया, एवं उसे कहा, 'तुम विरोचन के प्राणों के मालिक हो, उसका जीवन तुम्हारी मुठ्ठी में है'। प्रह्लाद की यह अपत्य-निरपेक्ष न्यायप्रियता देख कर, सुधन्वन् अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं उसने विरोचन का जीवन उसे वापर दे दिया, एवं इसे शतायु बनने का आशीर्वाद दिया (म. स. ६१. ५८-७९)।

इंद्र-विरोचनआख्यान—छांदोग्य उपनिषद में इंद्र एवं विरोचन की आत्मज्ञान के संबंध में एक कथा प्राप्त है। एकबार देव एवं असुरों को ब्रह्मज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई, एवं इस हेतु वे प्रजापति के पास गये। उनके प्रश्न का उत्तर देते हुए प्रजापति ने उन्हे कहा, 'पृथ्वी के निष्पाप, अजर, अमर, अकाम एवं संकल्परहित आद्य तत्त्व को आत्मा कहते है'। तदुपरांत इसी आत्मा के सत्य स्वरूप का ज्ञान प्राप्त कराने के हेतु देवों ने इंद्र को, एवं असुरों ने विरोचन को प्रजापति के पास शिष्य के नाते भेज दिया।

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए इंद्र एवं विरोचन बत्तीस साल तक प्रजापति के पास रहे। फिर भी प्रजापति ने इनको ब्रह्मज्ञान न दिया, एवं इनकी परीक्षा लेने के लिए इनसे अनृत (असत्य) वचन कहे, 'आँखों में, पानी में, आइने में अपनी जो परछाई नज़र आती है, वही आत्मा है'।

प्रजापति का यह अनृत-कथन सत्य मान कर, विरोचन ने उत्तम स्नान किया, एवं उत्कृष्ट वस्त्र एवं अलंकार परिधान कर, अपनी परछाई का पानी में निरीक्षण किया। पश्चात् उसी परछाई को आत्मा मान कर, उसी तत्त्व का प्रचार यह अपने अनुगामियों में करने लगा। इसीके कारण, देह को ही आत्मा समझने-वाले असुरों का 'आसुरी सांप्रदाय' निर्माण हुआ। यह सांप्रदाय देवों से संपूर्णतः विभिन्न था, जो शारीरिक एवं मानसिक बंधनों से अतीत, शुद्ध एवं स्वसंवेद्य आत्मतत्त्व को ही आत्मा मानते थे (छां. उ. ८.७.२; ९.२; रक्षस् एवं देव देखिये)।

मृत्यु—देवासुरों के बीच संपन्न हुए 'तारकामय युद्ध' में असुरों के एक सेनादल का यह सेनापति था (म. स. परि. १ क्र. २१ पंक्ति. ३६७)। इसी युद्ध में यह इंद्र के द्वारा मारा गया (म. शां. ९९.४८; ब्रह्मांड. २.२०.३५; मत्स्य. १०.२१; पद्म. सृ. १३)।

गणेश पुराण में इसकी मृत्यु की संबंध में एक कल्पनारम्य कथा दी गयी है। सूर्य के प्रसाद से इसे एक मुकुट प्राप्त हुआ था। उसके संबंध में शर्त थी कि, यह मुकुट किसी दूसरे के हाथों लग जायेगा, तो इसकी मृत्यु होगी। कालोपरांत इसके द्वारा देवों को अत्यधिक त्रस्त किये जाने पर, श्रीविष्णु ने स्त्रीरूप धारण कर इसे मोहित किया, एवं इसका मुकुट हस्तगत कर के इसका विनाश किया (गणेश. २.२९)।

नारदपुराण के अनुसार, श्रीविष्णु ने ब्राह्मणवेष धारण कर, इसकी धर्मनिष्ठ पत्नी विशालाक्षी का बुद्धिभ्रंश करवाया, एवं कपट से इसका वध किया (नारद. २. ३२)।

परिवार—इसकी विशालाक्षी एवं देवी नामक दो पत्नियाँ थी (नारद. २.३२; भा. ६.१८.१६)। इनमें से देवी से इसे बलि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. आ. ५९.१९-२०; पद्म. सृ. ६)। इसकी कन्या का नाम यशोधरा था (ब्रह्मांड. ३.१.८६; यशोधरा देखिये)।

इसके निम्नलिखित पाँच भाई थेः— कुंभ, निकुंभ, आयुष्मत्, शिबि एवं बाष्कलि। इसकी बहन का नाम विरोचना था (वायु. ८४.१९)।

२. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.२)। भारतीय-युद्ध में यह भीमसेन के द्वारा मारा गया। इसे 'दुर्विरोचन' एवं 'दुर्विमोचन' नामांतर भी प्राप्त थे।

विरोचना—असुरराज प्रह्लाद की कन्या, जो विरोचन दैत्य की बहन थी। इसका विवाह त्वष्ट्र से हुआ था, जिससे इसे विरज नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ५. १५.१५.)। वायु में विश्वरूप त्रिशिरस् नामक मुनि को भी इसीका ही पुत्र कहा गया है (वायु. ८४.१९)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५. २८)।

विरोध—एक राक्षस, जो वात नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम जनान्तक था (ब्रह्मांड. ३.७. ९६)।

विरोहण--तक्षक कुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्वसत्र दग्ध हुआ था।

विलास--पश्चिमी घाट में रहनेवाला एक तपस्वी। इसके मित्र का नाम भास था। 'विमलज्ञान' की प्राप्ति हो कर ये दोनों मुक्त हुए (यो. वा. ५.६५-६७)।

विलोमन्--(सो. कुकुर.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वह्नि राजा का, एवं विष्णु के अनुसार कपोतरोमन् राजा का पुत्र था। भागवत में इसे कपोतरोमन् का पिता कहा गया है (भा. ९.२४.१९-२०)।

विलोहित--एक रुद्र, जो कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक था।

२. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था। इसके तीन सिर, तीन पैर एवं तीन हाथ थे (वायु. ६९.७६)।

विवक्षु--(सो. कुरु. भविष्य.) कुरुवंशीय निमिचक्र राजा का नामान्तर। मत्स्य में इसे अधिसोमकृष्ण राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ५०.७८; निमिचक्र देखिये)।

विवर्धक—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार विचक्षुष् का नामान्तर।

विवर्धन--युधिष्ठिर की सभा का एक राजा (म. स. ४.१८)।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

विवस्वत्—एक देवता, जो संभवतः उदित होनेवाले सूर्य का प्रतिनिधित्व करता है।

ऋग्वेद में विवस्वत्, आदित्य, पूषन्, सूर्य, अर्यमन्, मित्र, भग आदि सूर्य से संबंधित (सौर्य) देवताओं को विभिन्न देवता माना गया हैं (ऋ. ५.८१.४; १०.१३९. १)। किंतु वे स्वतंत्र देवता न हो कर एक ही सूर्य देवता की विभिन्न रूप प्रतीत होते है (सूर्य देखिये)।

ऋग्वेद में--इस ग्रंथ में यद्यपि विवस्वत् का स्वतंत्र सूक्त अप्राप्य है, फिर भी एक स्वतंत्र देवता के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्रायः तीस बार आया है। इसे अश्वियों का एवं यम का पिता कहा गया है (ऋ. १०. १७; १०.१४.१; ५८.१)। ऋग्वेद में अन्यत्र सभी देवताओं को भी विवस्वत् की संतान (जनिमा) कहा गया है (ऋ. १०.६३.१)। त्वष्टृ की कन्या सरण्यू इसकी पत्नी थी (ऋ. १०.१७.१-२)।

दूत--ऋग्वेद में एक ही बार मातरिश्वन् को विवस्वत् का दूत कहा गया है (ऋ. ६.८.४)। अन्यथा सर्वत्र अग्नि को इसका दूत कहा गया है (ऋ. १.५८.१; ४.७.४; ८. ३९.३; १०.२१.५)।

निवासस्थान--विवस्वत् के सदन का निर्देश ऋग्वेद में अनेकबार प्राप्त है। देवगण एवं इंद्र इस सदन में आनंद मनाते है (ऋ. ३.५१), एवं इसी सदन में गायक-गण इंद्र एवं जल की महानता का गुणगान करते है (ऋ. १. ५३; १०.७५)

देवताओं का मित्र—विवस्वत् का सब से बड़ा मित्र इंद्र है, जिसकी यह पुनः पुनः स्तुति करता है। इंद्र इसकी स्तुति से प्रसन्न होता है (ऋ. ८. ६), एवं अपना समस्त धनकोश विवस्वत् के बगल में रख देता है (ऋ. २. १३)। विवस्वत् की दस उँगलियों के द्वारा इंद्र द्युलोक से जल नीचे गिराता है (ऋ. ८.६१)।

विवस्वत् का अन्य एक मित्र सोम है। वह विवस्वत् के साथ ही रहता है (ऋ. ९.२६.४), एवं विवस्वत् की कन्याएँ (उँगलियाँ) सोम को स्वच्छ करती है (ऋ. ९.१४)। विवस्वत् की स्तुतियाँ पिशंग नामक सोम को प्रवाहित करती है (ऋ. ९.९९)। इसका आशीर्वाद प्राप्त कर लेने पर, सोम की धाराएँ बहने लगती है (ऋ. ९.१०.)।

अश्विनीकुमार भी इसके साथ रहते है (१.४६. १३)। अश्वियों के रथ जोतने के समय, विवस्वत् के उज्वल दिनों कों का प्रारंभ होता है (ऋ. १०. ३९; श. ब्रा. १०.५.१)।

एक उपास्य-देवता के नाते, वरुण एवं अन्य देवताओं के साथ विवस्वत् का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.६५) अपने उपासकों के द्वारा उपासित् विवस्वत् एक आक्रमक देवता है, जो यम से एवं आदित्यों से उनकी रक्षा करती है (अ. वे. १८. ३; ऋ. ८.५६)।

व्युत्पत्ति--अग्नि एवं उपस् के संदर्भ में विवस्वत् शब्द कई बार 'दैदीप्यमान' अर्थ में प्रयुक्त किया गया है (ऋ. १.९६; ७.९)। विवस्वत् का शब्दशः अर्थ 'प्रकाशित होना' है, जो उपस् (उदय होना) से काफ़ी मिलता जुलता है। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, यह दिन एवं रात्रि को प्रकाशित (विवस्ते) करता है, इसी कारण इसे विवस्वत् नाम प्राप्त हुआ (श. ब्रा. १०.५.२)।

विवस्वत् देवता का अन्वयार्थ--व्युत्पत्तिजन्य अर्थ, अग्नि, अश्विनों एवं सोम के साथ इसका संबंध, एवं यज्ञस्थल में इसका निवास, इन सारी सामग्री की ओर संकेत कर, कई अभ्यासकों का कहना है कि, उदित होनेवाला सूर्य ही वैदिक विवस्वत् है। अन्य कई अभ्यासक इसे सूर्यदेवता ही मानते है (सूर्य देखिये)। ब्गेंन के अनुसार, विवस्वत् मुख्यतः एक अग्निदेवता है, जिसका ही एक रूप सूर्य है (ब्गेंन. १.८८)।

एक देवता के नाते विवस्वत् का महत्त्व वैदिकोत्तर साहित्य में कम होता गया, एवं अन्त में इसका स्वतंत्र अस्तित्व विनष्ट हो कर यह सूर्य एवं आदित्य देवताओं में विलीन हो गया (सूर्य देखिये)।

२. मानवजाति का प्रथम यज्ञकर्ता, जो मनु एवं यम का पिता माना जाता है (ऋ. ८.५२; १०.१४.१७)। मनु इसका पुत्र होने के कारण, उसे 'विवस्वत्' एवं 'वैवस्वत' पैतृक नाम से भूषित किया गया है (अ. वे. ८.१०; श. ब्रा. १३.४.३)। तैत्तिरीय संहिता में मनुष्यों को भी विवस्वत् की संतान कहा गया है (तै. सं. ६.५. ६)।

महाभारत में भी यम एवं मनु को विवस्वत् की संतान कहा गया है (म. आ. ७०.१०; ९०.७)।

ईरानी साहित्य में--इस साहित्य में निर्दिष्ट विवन्ह्वन्त् (यिम के पिता) से विवस्वत् काफ़ी साम्य रखता है। जिस प्रकार विवस्वत् पृथ्वी के अग्नि का आद्यजनक माना जाता है, उसी प्रकार 'विवन्ह्वन्त्' को 'हओम' बनानेवाला पहला व्यक्ति कहा गया है।

३. एक आदित्य, जो बारह आदित्यों में से एक माना जाता है (वायु. ३.३; ६६.६६; विष्णु. १.१५.१३१)। यद्यपि ऋग्वेद में विवस्वत् को अदिति का पुत्र नहीं कहा गया है, फिर भी यजुर्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में विवस्वत् को आदित्य कहा गया है (वा. सं. ८.५; मै. सं. १.६)।

महाभारत में इसे कश्यप एवं अदिति के बारह पुत्रों में से एक कहा गया है (म. आ. ७०.९)। इसका निर्देश एक स्वतंत्र आदित्य के नाते नहीं, बल्कि लोकेश्वर सूर्य के नाते ही किया गया-प्रतीत होता है।

पुराणों में इसे अदिति का नहीं, बल्कि दाक्षायणी का पुत्र कहा गया है। इसे श्रावण माह का आदित्य एवं प्रजापति भी कहा गया है (वायु. ६५.५३)। इन ग्रंथों में भी इसे सूर्य का ही प्रतिरूप माना गया है, एवं मनु, श्राद्धदेव, यम एवं यमी को इसकी संतान मानी गयी हैं (विष्णु. ४.१.६)।

महाभारत में इसकी पत्नी का नाम संज्ञा दिया गया है, एवं नासत्य एवं दस्र नामक दो अश्विनीकुमार इसके पुत्र बताये गये हैं, जो वस्तुतः इसकी नहीं, बल्कि सूर्य की ही संतान हैं। इसने वेदोक्त विधि के अनुसार यज्ञ कर के अपने पिता आचार्य कश्यप को दक्षिणा के रूप में एक दिशा का दान कर दिया था। इसी कारण, उस दिशा को दक्षिण दिशा कहते है।

४. एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१३)।

५. ज्येष्ठ माह में प्रकाशित होनेवाला सूर्य, जिसकी चौदह सौ किरणें रहती है (मत्स्य. १.७८)। भागवत एवं ब्रह्मांड के अनुसार, यह नमस्य (भाद्रपद) माह में प्रकाशित होता है।

६. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मत्स्य. ९. २३)।

७. एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

८. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

विविंश--(सू. इ.) एक सूर्यवंशीय राजा, जो महाभारत, विष्णु एवं वायु के अनुसार विंश राजा का पुत्र था (म. आश्व. ४.५; वायु. ८६.६)। इसके खनीनेत्र आदि पंद्रह पुत्र थे।

२. एक राजा, जो क्षुप राजा का पुत्र था। विदर्भ कन्या नंदिनी इसकी माता थी (मार्क. ११६)।

विविंशति--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक महारथी पुत्र। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१)। दुर्योधन के द्वारा विराट की गोशाला पर किये गये आक्रमण में भी यह उपस्थित था (म. वि. ३३.३)। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया।

२. एक राजा, जो चाक्षुष राजा का पुत्र, एवं रंभ राजा का पिता था (भा. ९.२.२४-२५)।

विविक्त--कुशद्वीप का एक राजा, जो हिरण्यरेतस राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.२४)।

विवित्सु--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. क. ३५.११)।

विविद--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

विविंध्य--एक दानव, जो शाल्व का अनुयायी था। कृष्ण पुत्र चारुदेष्ण ने इसका वध किया (म. व. १७. २६)।

विविसार--(शिशु. भविष्य.) शिशुपालवंशीय 'विधिसार' एवं 'बिन्दुसार' राजा का नामान्तर (विधिसार एवं बिन्दुसार देखिये)।

विवृ काश्यप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६३)।

विशठ--बलराम एवं रेवती के पुत्रों में से एक(वायु. ३१.६)।

विशत--त्रित देवों में से एक।

विशद--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार जयद्रथ राजा का पुत्र, एवं सेनजित् राजा का पिता था (भा. ९.२१.२३)।

विशाख--इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.१२)।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो आयु राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. १२)।

३. स्कंद के तीन छोटे भाइयों में से एक। इसके अन्य दो भाइयों के नाम शाख एवं नैगमेय थे।

इसके जन्म के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार स्कंद अपने पिता शिव से मिलने जा रहा था। उस समय शिव, पार्वती, अग्नि एवं गंगा चारों ही एकसाथ मन ही मन सोचने लगे कि, स्कंद उनके पास रहने आये तो अच्छा होगा। उनके मनोभाव को समझ कर, स्कंद ने योगबल से अपने स्कंद, विशाख, शाख एवं नैगमेय नामक चार रूप बना दिये, जो क्रमशः शिव, पार्वती, अग्नि एवं गंगा के पास रहने लगे। स्कंद से उत्पन्न होने के कारण, ये परस्पर अभिन्न माने जाते हैं (म. श. ४४.३४)।

४. स्कंद का एक रूप। एक समय इंद्र ने स्कंद पर वज्र का प्रहार किया, जिस कारण उसकी दायी पँसली पर गहरी चोट लगी। इस चोट में से स्कंद का एक नया रूप प्रकट हुआ, जिसकी युवावस्था थी। उसने सुवर्णमय कवच धारण किया था, एवं उसके हाथ में एक शक्ति थी। वज्र के घाव से उसकी उत्पत्ति होने के कारण, उसे 'विशाख' नाम प्राप्त हुआ।

विशाखयूप--(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो पालक राजा का पुत्र, एवं राजक राजा का पिता था। वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार इसने पचास वर्षों तक, तथा मत्स्य के अनुसार इसने तिरपन वर्षों तक राज्य किया।

विशाखा--सोम की पत्नियों में से एक।

विशाल--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत, ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार तृणबिंदु राजा का पुत्र था। इसने वैशाली नामक नगरी की स्थापना की (भा. ९.२.३३; ब्रह्मांड. ३.६१.१२; विष्णु. ४.१.१६; वायु. ८६.१५-२२)। किन्तु रामायण के अनुसार वैशाली नगरी की स्थापना इसके द्वारा नहीं, बल्कि इक्ष्वाकु के पुत्र के द्वारा हुई थी (वा. रा. बा ४७.११-१७)।

इसके पुत्र का नाम हेमचंद्र था। विशाल एवं हेमचंद्र को वैशालराजवंश के संस्थापक माने जाते हैं (भा. ९.२. ३३-३६)।

वैशाली नगरी--इस नगरी का सविस्तृत वर्णन वाल्मीकि रामायण, बौद्धधर्मीय जातक ग्रंथ, एवं ह्यु-एन्-त्संग आदि चिनी प्रवासियों के प्रवासवर्णनों में प्राप्त है, जहाँ इस नगरी के वैभव एवं विस्तार की जानकारी दी गयी है। इस नगरी के खण्डहर आधुनिक बिहार राज्य में मुज़फ़रपुर जिले में बसाड ग्राम में प्राप्त है, जो गण्डकी नदी के बायें तट पर बसा हुआ है। इस नगरी में इक्ष्वाकु राजाओं के समान, लिच्छवी गण की एवं वज्जीराज्यसंघ की राजधानी भी स्थित थी। जैनों का चौबीसवाँ तीर्थंकर महावीर, एवं बौद्ध धर्म का संस्थापक गौतम बुद्ध इस नगरी में धर्मप्रचारार्थ आये थे। इसी कारण, बौद्ध एवं जैन ग्रंथों में इस नगरी का निर्देश पुनः पुनः प्राप्त है।

वैशाल राजवंश-- वैशाल राजवंश की विभिन्न जानकारी भागवत एवं वाल्मीकि रामायण में प्राप्त है, जो निम्न प्रकार है:—

(१) भागवत में--इस ग्रंथ में सूर्यवंश के दिष्टशाखा के तृणबिंदुपुत्र विशाल राजा को 'वैशालराजवंश' का संस्थापक कहा गया है, एवं उसकी वंशावलि निम्नप्रकार दी गयी है:- विशाल-हेमचंद्र-धूम्राक्ष-संयम-सहदेवपुत्र कृशाश्व-सोमदत्त-सुमति-जनमेजय (भा. ९.२.३३-३६)।

(२) वाल्मीकि रामायण में--इस ग्रंथ में इक्ष्वाकुपुत्र विशाल को विशालापुरी (वैशाली), एवं वैशालराजवंश का संस्थापक कहा गया है, एवं उसका राजवंश निम्नप्रकार दिया गया है:—विशाल-हेमचंद्र-सुचंद्र-धूम्राक्ष संजय-

सहदेव-कुशाश्व-सोमदत्त-काकुत्स्थ-सुमति (वा. रा. बा. ४७.११-१७)।

वायु में सोमदत्त से सुमति राजाओं तक का वंशक्रम सोमदत्त-जनमेजय-सुमति इस क्रम से दिया गया है (वायु. ८६.१५-२२)। विष्णु में भी 'वैशालक नृपों' का निर्देश प्राप्त है, एवं इस वंश के हेमचंद्र, सुचंद्र एवं पुष्कराक्ष के साथ परशुराम का युद्ध होने का निर्देश वहाँ किया गया है (विष्णु. ४.१.१६)।

२. लंका नगरी का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६.२६)।

३. कृष्ण का एक बालमित्र (भा. १०.२२.३१)।

४. एक राजा, जो विश्रवस् राजा एवं अलंबुषा अप्सरा का पुत्र था।

५. एक राजा। इसकी कन्या का नाम वैशालिनी था, जो परिक्षित् राजा की पत्नी थी (वैशालिनी देखिये)।

विशालक--कुबेर सभा का एक यक्ष (म. स. १०. १५)।

२. एक राजा, जिसने अपनी भद्रा नामक कन्या वसुदेव को विवाह में दी थी। किन्तु शिशुपाल ने उसका हरण किया (म. स. ४२.११)।

विशाला--सोमवंशीय अजमीढ राजा की पत्नी (म. आ. ९०.३९)। पाठ-'विमला'।

२. महावीर्यपुत्र भीम राजा की पत्नी, जिससे इसे त्रय्यारुणि, पुष्करिन् एवं कपि नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ३७. १५८)। मत्स्य में इसे उरुक्षय राजा की पत्नी कहा गया है।

३. वरुण की कन्या, जो ययातिपत्नी अश्रुबिन्दुमती की सखी थी (पद्म. भू. ७७)।

४. कौशिक राजा की पत्नी (कौशिक ११. देखिये)।

विशालाक्ष--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.९)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया था (म. भी. ८४.२५)।

३. विराट राजा का छोटा भाई, जिसे 'मदिराक्ष' नामान्तर भी प्राप्त था। कीचकवध के पश्चात् यह विराट का सेनापति हुआ (म. वि. ३१.१५; मदिराश्व १. देखिये)।

४. मिथिला देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.८२.२६)।

५. एक वास्तुशास्त्रकार, जो वास्तुशास्त्रविषयक अठारह प्रमुख ग्रंथकारों में से एक माना जाता है।

विशालाक्षी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.३)।

विशिख--एक पक्षिराज, जो गरुड एवं शुकी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

विशिरा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

विशिशिप्र--एक आचार्य, जिसका निर्देश सदापृण नामक ऋषि के सूक्त में प्राप्त है। वहाँ मनु ने इसे वाद-विवाद में जीतने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४५.६)।

विशेष--दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य।

विशोक--एक केकय राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ७.३)।

२. भीमसेन का सारथि (म. स. ३०.३०; भी. ७३. २५)। भारतीय युद्ध के समय इसका एवं भीम का बाणों के विविध जातियों के संबंध में संवाद हुआ था (म. क. ५४.१४-१५)।

३. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं त्रिवक्रा के पुत्रों में से एक था। यह नारद का शिष्य था, एवं इसने 'सात्वत तंत्र' नामक ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें स्त्रियों, शूद्र एवं गुलाम लोगों के लिए विविध प्रकार का उपदेश दिया गया है (भा. १०.९०.३४)।

४. दमन नामक शिवावतार का एक शिष्य। पाठ-'विशेष'।

विशोका--कृष्ण की एक पत्नी (म. स. परि. १. २२.१४१२)।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.५)।

विश्पला--खेल नामक राजा की पत्नी। किसी युद्ध में इसका पाँव टूट गया। उस समय अश्विनों ने इसे एक लोहे का (आयसी) पैर प्रदान किया, एवं एक रात्रि में ही इसे पुनः एक बार युद्ध के लिए योग्य बनाया। पिशेल के अनुसार, विश्पला एक स्त्री का नाम न हो कर एक अश्व का नाम था (वेदिशे स्टूडियन. १.१७१-१७३)। किन्तु यह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

विश्रवस्--(स्वा.) एक ऋषि, जो वैश्रवण कुबेर का पिता था (वायु. ५९.९०-९१; ब्रह्मांड. २.३३.९८-१००)। इसके भाई का नाम अगस्त्य था।

जन्म--भागवत में इसे पुलस्त्य एवं हविर्भू का पुत्र कहा गया है (भा. ४.१.३६-३७)। ब्रह्मांड में इसकी माता का नाम इलविला दिया गया है, जो तृणबिंदु एवं

अलंबुषा की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.३९-४२)। वायु में इसकी माता का नाम द्रविडा दिया गया है (वायु. ८६.१६)। इलविला एवं द्रविडा इसकी माता का नाम था, या पत्नी का, इस संबंध में पुराण में एकवाक्यता नहीं है।

परिवार--इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थी :--१. इडविडा (इलविला, इडविला); २. केशिनी (कैकसी); ३. पुष्पोत्कटा; ४. राका (वाका); ५. बलाका; ६. चेडविडा; ७. देववर्णिनी; ८. मंदाकिनी (पद्म. पा. ६); ९. मालिनी (म. व. २५९.६०)।

अपनी उपर्युक्त पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए :--

(१) इडविडापुत्र--कुबेर वैश्रवण।

(२) केशिनीपुत्र--रावण, कुंभकर्ण, बिभीषण नामक पुत्र एवं शूर्पणखा नामक कन्या।

(३) पुष्पोत्कटापुत्र--महोदर, प्रहस्त, महापांशु एवं खर नामक पुत्र, एवं कुंभीनसी नामक कन्या।

(४) राकापुत्र--त्रिशिरस्, दूषण, विद्युज्जिह्व नामक पुत्र, एवं असलिका नामक कन्या (वायु. ७०.३२-३५; ४१; ४९-५०)।

महाभारत के अनुसार, इसकी पत्नियों में से पुष्पोत्कटा, राका एवं मालिनी ये तीनों राक्षसकन्याएँ थी, जो कुबेर ने अपने पिता की सेवा के लिए नियुक्त की थी।

महाभारत में बिभीषण को मालिनी का, कुंभकर्ण एवं रावण को पुष्पोत्कटा का, एवं खर एवं शूर्पणखा को राका की संतान बतायी गयी है (म. व. २५९.७-८)।

आश्रम--विश्रवस् ऋषि का आश्रम आनर्त देश की सीमा में स्थित था। इसी आश्रम में कुबेर का जन्म हुआ था।

२. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो तृणबिन्दु का पुत्र था।

३. एक राजा, जो द्रविड राजा का पौत्र, एवं विशाल राजा का पुत्र था (वायु. ८६.१६)।

विश्रुत--एक यादव राजकुमार, जो भागवत के अनुसार वसुदेव एवं सहदेवी के पुत्रों में से एक था।

२. अमिताभ देवों में से एक।

३. पारावत देवों में से एक।

विश्रुतवत्--एक राजा, जो वायु के अनुसार सरस्वत् राजा का पुत्र, एवं बृहद्बल राजा का पिता था (वायु. ८८.२१२)।

विश्व--एक राजा, जो मयूर नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय युद्ध में, यह कौरवों के पक्ष में शामिल था (म. आ. ६१.३३)।

२. एक गंधर्व, जो 'तपस्य' (फाल्गुन) माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.४०)।

३. सत्य देवों में से एक।

विश्वक कार्ष्णि (कृष्णिय)--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.२६)। यह अश्विनों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिन्होंने विष्णापु नामक इसका खोया हुआ पुत्र इसे पुनः प्रदान किया था (ऋ. १.११६.२३; ११७.७; ८.८६.१; १०.६५.१२)। कृष्ण आंगिरस नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पुत्र होने के कारण, इसे 'कार्ष्णि' अथवा 'कृष्णिय' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (कृष्ण ३. देखिये)।

विश्वकर्मन्--एक शिल्पशास्त्रज्ञ, जो स्वायंभुव मन्वन्तर का 'शिल्पप्रजापति' माना जाता है। महाभारत एवं पुराणों में निर्दिष्ट देवों का सुविख्यात शिल्पी त्वष्टृ इसी का ही प्रतिरूप माना जाता है (त्वष्टृ देखिये)।

वैदिक साहित्य में--एक देवता के रूप में विश्वकर्मन् का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. १०.८१-८२)। वैदिक साहित्य में इसे 'सर्वद्रष्टा' प्रजापति कहा गया है (वा. सं. १२.६१)।

स्वरूपवर्णन--यह सर्वद्रष्टा है, एवं इसके शरीर के चार ही ओर नेत्र, मुख, भुजा एवं पैर हैं। इसे पंख भी हैं। विश्वकर्मन् का यह स्वरूपवर्णन पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट चतुर्मुख ब्रह्मा से काफ़ी मिलता जुलता है।

गुणवर्णन--प्रारंभ में विश्वकर्मन् शब्द 'सौर देवता' की उपाधि के रूप में प्रयुक्त किया जाया जाता था। किन्तु बाद में यह समस्त प्राणिसृष्टि का जनक माना जाने लगा। ब्राह्मण ग्रंथों में विश्वकर्मन् को 'विधातृ' प्रजापति के साथ स्पष्टरूप से समीकृत किया गया है (श. ब्रा. ८.२.१.३), एवं वैदिकोत्तर साहित्य में इसे देवों का शिल्पी कहा गया है।

ऋग्वेद में इसे द्रष्टा, पुरोहित एवं समस्त प्राणिसृष्टि का पिता कहा है। यह 'धातृ' एवं 'विधातृ' है। इसने पृथ्वी को उत्पन्न किया, एवं आकाश को अनावरण किया। इसीने ही सब देवों का नामकरण किया (ऋ. १०.८२.३)। इसी कारण, एक देवता मान कर इसकी पूजा की जाने लगी (ऋ. १०.८२.४)।

महाभारत एवं पुराणों में—महाभारत में इसे 'शिल्पप्रजापति' एवं 'कृतीपति' कहा गया है (भा. ६.६.१५)। ब्रह्मांड में इसे त्वष्टृ का पुत्र एवं मय का पिता कहा गया है (ब्रह्मांड. १.२.१९)। किन्तु यह वंशक्रम कल्पनारम्य प्रतीत होता है (मय देखिये)। यह प्रभास वसु एवं बृहस्पति भगिनी योगसिद्धा का पुत्र था। भागवत में इसे वास्तु एवं आंगिरसी का पुत्र कहा गया है। ब्रह्मा के दक्षिण वक्षभाग से यह उत्पन्न होने की कथा भी महाभारत में प्राप्त है (म. आ. ६०.२६-३२)।

शिल्पशास्त्रज्ञ—यह देवों के शिल्पसहस्रों का निर्माता एवं 'वर्धकि' बढ़ई था। देवों के सारे अस्त्र-शस्त्र, आभूषण एवं विमान इसीके द्वारा ही निर्माण किये गये थे। इसी कारण, यह देवों के लिए अत्यंत पूज्य बना था।

इसके द्वारा निम्नलिखित नगरियों का निर्माण किया गया था :— १ इंद्रप्रस्थ (धृतराष्ट्र के लिए) (म. आ. १९९.१९२७*. पंक्ति. ३-४); २. द्वारका (श्रीकृष्ण के लिए) (भा. १०.५०; ह. वं. २.९८); ३. वृन्दावन (श्रीकृष्ण के लिए) (ब्रह्मवै. ४.१७); ४. लंका (सुकेशपुत्र राक्षसों के लिए) (वा. रा. उ. ६.२२-२७); ५. इन्द्रलोक (इंद्र के लिए) (भा. ६.९.५४); ६. सुतल नामक पाताललोक—(भा. ७.४.८); ७. हस्तिनापुर (पाण्डवों के लिए) (भा. १०.५८.२४); ८. गरुड का भवन (मत्स्य. १६३.६८)।

अस्त्रों का निर्माण—श्रीविष्णु का सुदर्शन, शिव का त्रिशूल एवं रथ, तथा इंद्र का वज्र एवं विजय नामक धनुष्य आदि अस्त्रों का निर्माण भी विश्वकर्मन् के ही द्वारा किया गया था। इनमें से शिव का रथ इसने त्रिपुरदाह के उपलक्ष्य में, एवं इंद्र का वज्र इसने दधीचि ऋषि की अस्थियाँ से बनाया था (म. क. २४.६६; भा. ६.१०)।

इन अस्त्रों के निर्माण के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा पद्म में प्राप्त है। इसकी संज्ञा नामक कन्या का विवाह विवस्वत् (सूर्य) से हुआ था। विवस्वत् का तेज वह न सह सकी, जिस कारण वह अपने पिता के पास वापस आयी। अपनी पत्नी को वापस लेने के लिए विवस्वत् भी वहाँ आ पहुँचा। पश्चात् विवस्वत् का थोड़ा ही तेज बाकी रख कर, उसका उर्वरित सारा तेज़ इसने निकाल लिया, एवं उसी तेज़ से देवताओं के अनेकानेक अस्त्रों का निर्माण किया।

परिवार—इसकी कृति (आकृति) नामक भार्या का निर्देश भागवत में प्राप्त है। उसके अतिरिक्त इसकी रति, प्राप्ति एवं नंदी नामक अन्य तीन पत्नियाँ भी थी (म. आ. ६०.२६-३२)।

(१) पुत्र—इसके निम्नलिखित पुत्र थेः— १. मनु चाक्षुष; २. शम, काम एवं हर्ष, जो क्रमशः रति, प्राप्ति एवं नंदी के पुत्र थे; ३. नल वानर (म. व. २६७.४१); ४. विश्वरूप, जो इसने इंद्र के प्रति द्रोहबुद्धि होने से उत्पन्न किया था; ५. वृत्रासुर, जो इसने विश्वरूप के मारे जाने पर इंद्र से बदला लेने के लिए उत्पन्न किया था (म. उ. ९.४२.४९)।

(२) कन्याएँ—इसकी निम्नलिखित कन्याएँ थीः— १. बर्हिष्मती, जो प्रियव्रत राजा की पत्नी थी; २. संज्ञा एवं छाया जो विवस्वत् की पत्नियाँ थीं; ३. तिलोत्तमा, जिसे इसने ब्रह्मा की आज्ञा से निर्माण किया था (म. आ. २०३.१४-१७)

ग्रंथ—इसके नाम पर शिल्पशास्त्रविषयक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है (मत्स्य. २५२. २१; ब्रह्मांड. ४.३१.६-७)।

२. विश्वकर्मन् का एक ब्राह्मण अवतार। अपने पूर्वजन्म में इसने क्रोध में आ कर घृताची नामक प्रिय अप्सरा को शूद्रकुल में जन्म लेने का शाप दिया, जिसके अनुसार वह एक ग्वाले की कन्या बन गयी। ब्रह्मा की कृपा से इसे भी ब्राह्मणवंश में जन्म प्राप्त हुआ। इस प्रकार ब्राह्मण पिता एवं ग्वाले की कन्या के संयोग से दर्जी, कुम्हार, स्वर्णकार, बढ़ई आदि तंत्रविद्याप्रवीण जातियों का निर्माण हुआ। इसी कारण, ये सारी जातियाँ स्वयं को विश्वकर्मन् के वंशज कहलाते है (ब्रह्मवै. १. १०)।

३. वशवर्तिन् देवों में से एक। यह प्रभात वसु एवं भुवना के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.३६.२९)।

विश्वकर्मन् भौवन—एक सुविख्यात वैदिक राजा। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, इसे कश्यप ने ऐंद्र अभिषेक किया था, जिस समय इसने कश्यप को दक्षिणा के रूप में पृथ्वी का दान दिया था (ऐ. ब्रा. ८. २१. ८)। शतपथ ब्राह्मणमें इसके द्वारा 'सर्वमेधयज्ञ' में कश्यप को समस्त पृथ्वी का दान देने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १३.७.१.१५)।

किन्तु इन दोनों ही अवसरों पर, पृथ्वी ने अपना इस प्रकार दान दिया जाना अस्वीकृत कर दिया। इस कारण, क्रुद्ध हो कर इसने समस्त प्राणिसृष्टि की, एवं अंत में स्वयं की यज्ञ में आहुति दे दी (ऋ. १०.८१.१; ऐ. ब्रा. ८. १०; नि. १०.२६)।

यज्ञसंस्था के प्रारंभिक काल में भूमिदान घृणास्पद माना जाता था, जिसका ही संकेत विश्वकर्मन् की उपर्युक्त कथा में किया हुआ प्रतीत होता है।

विश्वकाय—हिरण्यकशिपु की सभा का एक राक्षस (पद्म. सृ. ४५)।

विश्वकृत्--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३६)।

विश्वग--(स्वा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पूर्णिमत् राजा का पुत्र था।

विश्वगश्व--(सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार, पृथु वैन्य राजा के पाँच पुत्रों में से एक था। इसे 'विश्वरंधि,' 'वृषदश्व,' 'विष्टराग,' एवं 'विश्वग' नामान्तर भी प्राप्त थे।

विश्वचर्षणि—एक पैतृक नाम, जो द्युम्न विश्वचर्षणि आत्रेय नामक आचार्य के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. ५.२३)।

विश्वचित्ति—हिरण्यकशिपु के दरबार का एक राक्षस (पद्म. सृ. ४५)।

विश्वजित्—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो वायु के अनुसार बृहद्रथ राजा का, एवं विष्णु के अनुसार जयद्रथ राजा का पुत्र था (वायु. ९९.१७२)। मत्स्य में इसे 'अश्वजित्' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम सेनजित् था।

२. एक अग्नि, जो बृहस्पति के पुत्रों में से एक था (म. व. २०९.१६)। यह समस्त विश्व की बुद्धि को अपने वश में रखता है। इसलिए अध्यात्मशास्त्र के विद्वानों के द्वारा इसे 'विश्वजित्' नाम दिया गया है।

३. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार सत्यजित् राजा का पुत्र था। वायु में इसे वीरजित् कहा गया है।

४. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। एक समय यह समस्त पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२७.५३; वायु. ६८.६)।

विश्वदंष्ट्र—एक दैत्य, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२७.५३)।

विश्वदत्त--सोमवंश का एक राजा, जो बकुलासंगम पर श्रीगणेश की उपासना करने के कारण, उस देवता के गणों का आधिपति बन गया।

विश्वदेव--जिताजित् देवों में से एक।

२. पारावत देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.१३.९५)।

३. विश्वेदेव नामक देवता समूह का नामान्तर (वायु. ६२.२२; विश्वेदेव देखिये)।

विश्वधा—वशवर्तिन् देवों में से एक।

विश्वन्तर सौषद्मन--एक राजा, जिसके पुरोहित श्यापर्ण थे। अपने उन पुरोहितों का त्याग कर, इसने कई अन्य पुरोहितों के द्वारा यज्ञ का आयोजन किया। आगे चल कर, श्यापर्ण पुरोहितगणों में से राम मार्गवेय नामक आचार्य ने इसे समझा कर, पुनः एक बार श्यापर्णों की राजपुरोहित के नाते नियुक्ति करवायी, एवं एक सहस्र गायें उन्हें दिलवायीं (ऐ. ब्रा. ७.२७.३.४; ३४.७.८)।

सुषद्मन् का वंशज होने से इसे 'सौषद्मन' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

विश्वपति--मनु नामक अग्नि का द्वितीय पुत्र। यह वेदों के संपूर्ण विश्व का पति था, जिस कारण इसे विश्वपति नाम प्राप्त हुआ था (म. व. २११.१७)।

विश्वपात्--पितरों में से एक।

विश्वपाल—एक राजा, जो व्युत्थिताश्व (ध्युपिताश्व) राजा का पुत्र, एवं हिरण्यनाभ कौसल्य राजा का पिता था। विष्णु एवं वायु में इसे 'विश्वसह' कहा गया है।

विश्वभुज— पाकयज्ञ का एक अग्निदेवता, जो बृहस्पति के चार पुत्रों में से चतुर्थ पुत्र था। यह समस्त प्राणियों के उदर में रह कर उनके द्वारा खाये हुए पदार्थों को पचाता हैं। गोमती नदी इसकी पत्नी मानी जाती है (म. व. २०९.१७)।

२. पाण्डवों के रूप में प्रकट होनेवाले पाँच इंद्रों में से एक। अन्य चार इंद्रों के नाम भूतधामन्, शिबि, शांति, एवं तेजस्विन् थें (म. आ. १८९.१९१६*)।

३. पितरों में से एक।

विश्वमनस् वैयश्व--एक ऋषि, जो इंद्र का मित्र था (ऋ. ८.२३.२; २४.७; पं. ब्रा. १५.५.२०)। 'वरोसुषामन्' को धनप्राप्त कराने के लिए एक सूक्त के द्वारा इसने प्रार्थना की है (ऋ. ८.२३.२८)। सायणाचार्य के अनुसार, यहाँ 'वरोसुषामन्' किसी व्यक्ति का नाम नहीं था।

यह 'व्यश्व' का वंशज था, जिस कारण इसे 'वैयश्व' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (ऋ. ८. २३–२६)।

विश्वमहत्--(सू. इ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार कृतशर्मन् राजा का पुत्र था। विष्णु एवं भागवत में इसे 'विश्वसह' कहा गया है।

विश्वंभर--विराटनगर का एक व्यापारी, जिसे लोमश ऋषि ने तीर्थों का माहात्म्य कथन किया था (गरुड. २.६)।

विश्वमानुष--एक व्यक्ति (ऋ. ८. ४५.२२)। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह व्यक्तिनाम न हो कर इससे अखिल मानवजाति की ओर संकेत किया गया है।

विश्वरथ--विश्वामित्र ऋषि का नामान्तर (ब्रह्म. १०.५६)।

विश्वरंधि--(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय विश्वगश्व राजा का नामान्तर (विश्वगश्व देखिये)।

विश्वरूप--वरुणसभा का एक राक्षस (म. स. ९.१४)।

विश्वरूप त्रिशिरस् त्वाष्ट्र--एक आचार्य, जो देवों का पुरोहित था। किन्तु प्रारंभ से ही यह देवों से भी अधिक असुरों पर प्रेम करता था, जिससे प्रतीत होता है कि, यह स्वयं देव न हो कर असुर ही था।

वैदिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे त्रिशिरस् (तीन सिरोंवाला) दैत्य कहा गया है (ऋ. १०. ८)। यह त्वष्टृ का पुत्र था, जिस कारण इसे 'त्वाष्ट्र' कहा गया है (ऋ. १०.७६)। यद्यपि यह असुरों से संबंधित था, फिर भी इसे देवों का पुरोहित कहा गया, है (तै. सं. २.५.१)।

इंद्र के द्वारा किये गये इसके वध की कथा तैत्तिरीयसंहिता में प्राप्त है। यद्यपि यह देवों का पुरोहित था, फिर भी यज्ञ का अधिकतर हविर्भाग यह असुरों को देता था। इस कारण इंद्र ने अपने वज्र से इसके तीनों सिर काट कर इसका वध किया।

इसका वध करने के कारण, इंद्र को ब्रह्महत्या का पातक लग गया। अपने इस पातक के इंद्र ने तीन भाग किये, एवं वे पृथ्वी, वृक्ष एवं स्त्रियों में बाँट दिये। इस कारण, पृथ्वी में सड़ने का, वृक्षों में टूटने का, एवं स्त्रियों में रजस्राव होने का दोष निर्माण हुआ। इसी कारण रजस्वला स्त्री से संभोग करना त्याज्य माना गया एवं ऐसे संभोग से दोषयुक्त संतति उत्पन्न होने लगी (तै. सं. २.५.१)।

आगे चल कर, त्रित ने इसका वध किया, एवं इंद्र की ब्रह्महत्या के पातक से मुक्तता की (श. ब्रा. १.२.३.२)।

महाभारत एवं पुराणों में--इन ग्रंथों में इसे प्रजापति त्वष्टृ का द्वितीय पुत्र माना गया है, एवं इसे वृत्र से समीकृत किया गया है (भा. ६.५; म. उ. ९. ४; शां. २०१.१८)। इसकी माता का नाम विरोचना (वैरोचनी, रचना अथवा यशोधरा) था, जो असुरराज प्रह्लाद की कन्या, एवं विरोचन दैत्य की छोटी बहन थी (भा. ६.६.४४; वायु. ८४.१९; ब्रह्मांड. ३.१.८१; गणेश. १.६६.१२)।

स्वरूपवर्णन--इसे तीन सिर थे, जिनमें से एक मुख से यह अन्न भक्षण करता था (अन्नाद), दूसरे से यह सोमपान करता था (सोमपीथ), एवं तीसरे से यह सुरापान करता था (सुरापीथ)। महाभारत के अनुसार, अपने तीन मुखों में से, एक से यह वेद पढता था, दूसरे से सुरापान करता था, एवं तीसरे से दुनिया देखा करता था (म. शां. ३२९.२३)।

देवों का पुरोहित--एक बार इंद्र ने देवगुरु बृहस्पति का अपमान किया, जिस कारण वह देवपक्ष का त्याग कर चला गया। इस कारण इंद्र ने विश्वरूप को देवों का पुरोहित बनाया।

वध--शुरु से ही यह असुर पक्ष को देव पक्ष से अधिक चाहता था (म. शां. ३२९.१७)। यह ज्ञात होते ही, इंद्र ने इसके पास अनेकानेक अप्सराएँ भेज कर इसे देवगुरुपद से भ्रष्ट करना चाहा। किन्तु इसने इंद्र का षड्यंत्र पहचान लिया, एवं यह इंद्रवध के लिए तपस्या करने लगा (म. शां. ३२९.३४)।

इसका वध करने में इंद्र का वज्र भी विफल हुआ। फिर इंद्र ने तक्षन् के द्वारा कुठार से इसके तीनों मस्तक तोड़ डाले (म. उ. ९.३४)। महाभारत में अन्यत्र, दधीचि ऋषि के अस्थियों से बने हुए अस्त्रों से इंद्र के द्वारा इसका वध होने का निर्देश भी प्राप्त है (म. शां. ३२९.२७)।

इसकी मृत्यु के पश्चात् इसके 'सोमपीथ', 'सुरापीथ' 'अन्नाद' मस्तकों से क्रमशः कपिंजल, कलविंक एवं तित्तिर पक्षियों का निर्माण हुआ।

अपने पुत्र के वध से त्वष्टृ अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इंद्रवध करने के लिए अपने तपःप्रभाव से वृत्र नामक असुर निर्माण किया। पश्चात् देवों ने जृम्भिका के द्वारा वृत्र का वध किया (म. उ. ९.४-३४; भा. ६. ६-९)।

परिवार--सूर्यकन्या विष्टि इसकी पत्नी थी, जिससे इसे निम्नलिखित भयानक पुत्र उत्पन्न हुए थे:-- गण्ड, रक्ताक्ष, क्रोधन, व्यय, दुर्मुख एवं हर्षण।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो वृषभदेव पुत्र भरत राजा के पंचजनी नामक पत्नी का पिता था।

३. अजित देवों में से एक।

विश्वरूपा--धर्म ऋषि की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम धर्मव्रता था (वायु. १०७.२)।

विश्ववार--एक वैदिक यज्ञकर्ता। यज्ञ एवं मायिन् नामक 'होताओं' के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४४.१)।

विश्ववारा आत्रेयी--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री (ऋ. ५. २८)।

विश्ववेदिन्--एक राजनीतिज्ञ, जो शौरि राजा का मंत्री था। शौरि एवं उसके चार भाई खनित्र, उदावसु, सुनय एवं महारथ ये प्रजापति के पुत्र थे। इन भाइयों में से खनित्र मुख्य अधिपति था, एवं शौरि, उदावसु, सुनय एवं महारथ क्रमशः उसके राज्य के पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर भागों का कारोबार देखते थे। इन चार राजाओं के चार पुरोहित थे, जिनके नाम निम्न प्रकार थे:-- अत्रिकुलोत्पन्न सुहोत्र, गौतमकुलोत्पन्न कुशावर्त, कश्यपकुलोत्पन्न प्रमति, एवं वसिष्ठ।

इसने उपर्युक्त चार ही पुरोहितों को खनित्र के विरुद्ध जारणमारणादि उपाय करने की प्रार्थना की। तदनुसार, इन चार पुरोहितों ने चार कृत्याओं का निर्माण किया, जिन्होंने आगे चल कर खनित्र पर आक्रमण किया। किन्तु खनित्र के शुद्धाचरण के कारण, चार ही कृत्या परास्त हो कर लौट आयी; एवं उन्होंने अपने निर्माणकर्ता चार पुरोहितों के साथ इसका भी भक्षण किया (मार्क. ११४)।

विश्वसह--एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऐडविड राजा का, एवं विष्णु के अनुसार इलवील राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम खट्वांग था (भा. ९.९. ४१; विष्णु. ४.४.७५)।

२. (सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय विश्वपाल राजा का नामांतर। विष्णु में इसे व्युषिताश्व राजा का, एवं वायु में ध्युषिताश्व राजा का पुत्र कहा गया है।

३. (सो. क्रोष्टु.) लोमपादवंशीय एक राजा, जो श्वेत राजा का पुत्र था।

विश्वसामन् आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२२)। इसके सूक्त में अग्नि के उपासना की प्रेरणा दी गयी है।

विश्वसाह्व--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो महत्वत् राजा का पुत्र, एवं प्रसेनजित् राजा का पिता था (भा. ९.१२.७)।

विश्वसृज--एक आचार्यसमूह, जिन्होंने सहस्त्र संवत्सरों तक चलनेवाले एक यज्ञसत्र का आयोजन किया था। आगे चल कर उसी सत्र से सृष्टि का निर्माण हुआ (पं. ब्रा. २५. १८)। भाष्य के अनुसार, यहाँ संवत्सर शब्द का अर्थ 'दिन' ही लेना चाहिए।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के एक अवतार का पिता।

विश्वफाणि अथवा **विश्वस्फूर्ति**--(मगध. भविष्य.) मगध देश का एक सार्वभौम राजा, जिसे पुरंजय नामांतर भी प्राप्त था (पुरंजय ६. देखिये)। इसने अपने राज्य के ज्ञातियों की पुनर्रचना की थी। इसने क्षत्रियों का वर्चस्व विनष्ट कर, उनका स्थान कैवर्त, मद्रक, पुलिंद, ब्राह्मण, पंचक आदि नवनिर्मित जातियों को दे दिया। इसकी मृत्यु गंगातीर पर हुई (ब्रह्मांड. ३.७४.१९०-१९३; वायु. ९९.३७०-३८२)।

विश्वा--प्राचेतस् दक्ष एवं असिक्नी से उत्पन्न एक कन्याद्वय, जिनका विवाह क्रमशः धर्म एवं कश्यप से हुआ था। इनसे क्रमशः विश्वेदेव, तथा यक्ष एवं राक्षस उत्पन्न हुए।

विश्वाची--प्राधा अप्सरा की कन्या (म. स. १०. ११)। यह ययाति राजा के साथ रत हुई थी (म. आ. ८०.८३८. पंक्ति. १-२)।

विश्वाधार--मेधातिथि का पुत्र।

विश्वानर--एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम शुचिष्मती था। शिव की कृपा से इसे गृहपति नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसने तीन वर्षों के अल्पावधि में सांगवेदों का अध्ययन कर, शिव से दीर्घायुष्य प्राप्त किया (स्कंद. ४.१.११)।

विश्वामित्र--(सो. अमा.) एक सुविख्यात ऋषि, जो अपने युयुत्सु, विजिगिषु एवं युगप्रवर्तक व्यक्तित्व के कारण, वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में अमर हो चुका है। कान्यकुब्ज देश के कुशिक नामक सुविख्यात क्षत्रियकुल में उत्पन्न हुआ विश्वामित्र, ज्ञानोपासना एवं तपःसामर्थ्य के कारण, एक श्रेष्ठतम ऋषि एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा आचार्य बन गया। इस कार्य में देवराज वसिष्ठ जैसे परंपरागत

ब्राह्मण आचार्यों से इसे आमरण संघर्ष करना पड़ा। अंत में इस संघर्ष में पूरी तरह से यशस्वी हो कर, यह एवं इसके वंश के लोग सर्वश्रेष्ठ ब्राह्मण मानने जाने लगे, जो इसके जीवन की सब से बड़ी फलश्रुति कही जा सकती है।

व्युत्पत्ति--इसके 'विश्वामित्र' नाम की व्युत्पत्ति आरण्यक ग्रंथों में 'विश्व का मित्र' शब्दों में दी गयी है (ऐ. आ. १.२.२)। व्याकरणशास्त्रीय दृष्टि से 'विश्वमित्र' एक अनियमित रूप है। पाणिनि के अनुसार, 'मित्र' शब्द के पहले जब 'विश्व' शब्द का उपयोग होता है, एवं उस शब्द का अर्थ ऋषि होता है, तब उक्त शब्द 'विश्वमित्र' नही, बल्कि 'विश्वामित्र' बनता है (पा. सू. ६.३.१३०)।

जन्म--विश्वामित्र का जन्म कान्यकुब्ज देश के सुविख्यात अमावसु वंश में हुआ था, एवं यह कुशिक राजा का पौत्र, एवं गाथिन् (गाधि) राजा का पुत्र था। इसका जन्मनाम विश्वरथ था। विश्वामित्र यह नाम इसे ब्राह्मण होने के पश्चात् प्राप्त हुआ।

वेदार्थ दीपिका में विश्वामित्र के जन्म के संबंध में निम्न कथा प्राप्त है। इसका पितामह कुशिक स्वयं एक अत्यंत बलाढ्य राजा था, एवं अपने पिता इषीरथ के समान प्रजाहितदक्ष था। इंद्र के समान तेजस्वी पुत्र प्राप्त होने के लिए कुशिक ने तपस्या की। उस समय स्वयं इंद्र ने ही गाथिन् नाम धारण कर, कुशिक-पुत्र के रूप में जन्म लिया, एवं इसी गाथिन्‌रूपधारी इंद्र से विश्वामित्र का जन्म हुआ। इस प्रकार विश्वामित्र का वंशक्रम निम्न-प्रकार कहा जा सकता है:--इषीरथ--कुशिक--गाथिन् (इंद्र)--विश्वामित्र (वेदार्थ. ३.१)।

वाल्मीकि रामायण में विश्वामित्र का वंशक्रम निम्न-प्रकार दिया गया है:--प्रजापति--कुश--कुशनाभ--गाथिन्--विश्वामित्र (वा. रा. बा. ५१)।

समवर्ती लोग--विश्वामित्र के पितामह कुशिक की पत्नी का नाम पौरुकुत्सी था, जो अयोध्या के पुरुकुत्स राजा की कन्या थी। इसकी बहन का नाम सत्यवती था, जिसका विवाह ऋचीक भार्गव ऋषि से हुआ था। सत्यवती के पुत्र का नाम जमदग्नि था। इस प्रकार जमदग्नि ऋषि एवं उसका पुत्र परशुराम जामदग्न्य ये दोनों विश्वामित्र के समवर्ती एवं निकट के रिश्तेदार थे।

राज्यप्राप्ति--अपने पिता के पश्चात् विश्वामित्र कान्यकुब्ज देश का राजा बन गया। पुराणों में इसका निर्देश कुशिक एवं गाथिन् राजाओं का 'दायाद' (उत्तर कालीन राजा) नाम से किया गया है।

आगे चल कर, इसने क्षत्रियधर्म का त्याग कर ब्राह्मण बनने का निश्चय किया, एवं यह सरस्वती नदी के किनारे 'रुषंगु-तीर्थ' पर तपस्या करने चला गया (म. श. ३८.२२-३४; ४१.२३०७; वा. रा. बा. ५१-५६)। वायु के अनुसार, इसने 'सागरानूप प्रदेश' में तपस्या की थी (वायु. ९१.९२-९३)। इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, विश्वामित्र का तपस्यास्थान आधुनिक राजपुताना के रेगिस्तान में कहीं था, जो प्रदेश प्राचीन-काल में पश्चिम समुद्र का तटवर्ती प्रदेश माना जाता था।

घोर तपस्या के द्वारा विश्वामित्र को ब्राह्मणत्व प्राप्त होने का निर्देश अनेकानेक वैदिक संहिता एवं ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है (का. सं. १६.१९; मै. सं. २.७.१९; तै. सं. २.२.१.२; ऐ. ब्रा. ६.१८.१; कौ. ब्रा. १५.१; जै. उ. ब्रा. २.३.१३; ऐ. आ. २.२.३; बृ. उ. २.२.४)। इससे प्रतीत होता है कि, विश्वामित्र का यह वर्णांतर प्राचीन काल में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण घटना मानी गयी थी।

वसिष्ठ से विरोध--विश्वामित्र को क्षत्रियधर्म छोड़ कर ब्राह्मण बनने की इच्छा क्यों हुई, इस संबंध में एक कल्पनारम्य कथा महाभारत एवं वाल्मीकि रामायण में प्राप्त हैं। एक बार यह वसिष्ठ ऋषि के आश्रम में अतिथि के नाते गया, जहाँ वसिष्ठ ने अपनी नंदिनी नामक कामधेनु की सहाय्यता से इसका उत्तम आदरातिथ्य किया। अनेकानेक दैवी गुणों से युक्त नंदिनी कामधेनु को देख कर, यह अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं इसने उस धेनु की माँग वसिष्ठ से की। वसिष्ठ ने उसका इन्कार करने पर, यह उस धेनु की प्राप्ति के लिए अपना सारा राज्य देने के लिए सिद्ध हुआ। फिर भी वसिष्ठ ने इसे नंदिनी न दी।

पश्चात् इसने अपने सैन्यबल से नंदिनी का हरण करना चाहा। किंतु उस धेनु से उत्पन्न हुए शक, यवन, पह्लव, बर्बर, किरात आदि लोगों ने विश्वामित्र की सेना को परास्त किया, एवं इस प्रकार नंदिनी का हरण करने का इसका प्रयत्न असफल ही रहा।

तदुपरांत वसिष्ठ का पराजय करने के लिए, इसने अनेकानेक प्रकार के अस्त्र संपादन करने का निश्चय किया, एवं उस हेतु अत्यंत कठोर तपस्या भी की। किंतु अस्त्रप्राप्ति के पश्चात् भी वसिष्ठ अजेय ही रहा, एवं इसे जीवन में सर्वप्रथम ही साक्षात्कार हुआ कि, क्षत्रबल से ब्रह्मबल अधिक श्रेष्ठ है। पश्चात् वसिष्ठ के समान ब्रह्मबल प्राप्त करने के हेतु इसने स्वयंब्राह्मण बनने का

निश्चय किया, एवं तत्प्रीत्यर्थ कौशिकी नदी और 'रुषंगु तीर्थ' पर घोरतपस्या करके यह ब्राह्मण बन गया (म. व. ८५.९;१२; वा, रा. बा. ५१-५६)।

महाभारत में प्राप्त उपर्युक्त कथा कालदृष्टि से विसंगत प्रतीत होती है। नंदिनी गाय का पालनकर्ता वसिष्ठ ऋषि 'वसिष्ठ देवराज' न हो कर 'वसिष्ठ अथर्वनिधि' था, जो विश्वामित्र से काफ़ी पूर्वकालीन था (वसिष्ठ अथर्वनिधि दखिये)। फिर भी महाभारत में विश्वामित्र ऋषि के समकालीन देवराज वसिष्ठ को नंदिनी का पालनकर्ता चित्रित किया गया है। अतएव विश्वामित्र-वसिष्ठ संघर्ष की कारणपरंपरा बतानेवाली महाभारत में प्राप्त उपर्युक्त सारी कथा अनैतिहासिक प्रतीत होती है।

आपत्प्रसंग—ब्राह्मणपद प्राप्त होने के पश्चात्, विश्वामित्र ने अपनी पत्नी एवं पुत्र कोसल देश में स्थित एक आश्रम में रख दीं, एवं यह स्वयं पुनः एक बार सागरानूप तीर्थ पर तपश्चर्या करने चला गया। इसकी अनुपस्थिति में कोसल देश में बड़ा भारी अवर्षण आया, एवं विश्वामित्र की पत्नी एवं पुत्र भूख के कारण तड़पने लगे। अन्न प्राप्त कराने के लिए अपने एक पुत्र के गले में रस्सी बाँध कर, उसे खुले बाजार में बेचने का आपत्प्रसंग विश्वामित्र ऋषि की पत्नी पर आया, जिस कारण उस पुत्र को 'गालव' नाम प्राप्त हुआ।

त्रिशंकु की सहाय्यता—उस समय कोसल देश के त्रैय्यारुण राजा के पुत्र सत्यव्रत (त्रिशंकु) विश्वामित्रपत्नी की सहाय्यता की, तथा उसकी एवं विश्वामित्र पुत्रों की जान बचायी। त्रिशंकु स्वयं जंगल से शिकार कर के लाता था, एवं वह माँस विश्वामित्र के परिवार को खिलाया करता था। इन्हीं दिनों में एक बार त्रिशंकु राजा ने वसिष्ठ ऋषि के नंदिनी नामक गाय का वध कर, उसका मांस विश्वामित्र परिवार को खिलाने की कथा पुराणों में प्राप्त है। किन्तु जैसे पहले ही कहा गया है, नंदिनी का पालनकर्ता वसिष्ठ विश्वामित्र के समकालीन नहीं था। इसी कारण, यह कथा कल्पनारम्य एवं विश्वामित्र वसिष्ठ का शत्रुत्व बढ़ाने के लिए वर्णित की गयी प्रतीत होती है।

बारह वर्षों के पश्चात् अपनी तपस्या समाप्त कर विश्वामित्र कोसल देश को लौट आय। वहाँ अपने न होने के काल में त्रिशंकु ने अपने परिवार के लोगों की अच्छी तरह से देखभाल की, यह बात जान कर इसे त्रिशंकु के प्रति काफ़ी कृतज्ञता प्रतीत हुई। देवराज वसिष्ठ के द्वारा अयोध्या के राजगद्दी से पदभ्रष्ट किये गये उस राजकुमार को पुनः राजगद्दी पर बिठाने का आश्वासन इसने दे दिया।

त्रिशंकु का राजपुरोहित—आगे चल कर विश्वामित्र ने अयोध्या के राजपुरोहित देवराज वसिष्ठ को परास्त कर, त्रिशंकु को अयोध्या के राजगद्दी पर बिठाया। त्रिशंकु ने भी अपने राजपुरोहित देवराज वसिष्ठ को हटा कर उसके स्थान पर विश्वामित्र की नियुक्ति की, एवं इस प्रकार ब्राह्मण बन कर वसिष्ठतुल्य राजपुरोहित बनने की विश्वामित्र की आकांक्षा पूर्ण हो गयी।

त्रिशंकु का सदेह स्वर्गारोहण—आगे चल कर विश्वामित्र ने त्रिशंकु के अनेकानेक यज्ञों का आयोजन किया। यही नहीं, सदेह स्वर्गारोहण करने की उस राजा की इच्छा भी अपने तपःसामर्थ्य से पूरी की। इस संबंध में अपने पुराने शत्रु देवराज वसिष्ठ से इसे अत्यंत कठोर संघर्ष करना पड़ा। देवराज इंद्र के द्वारा त्रिशंकु के स्वर्गारोहण के लिए विरोध किये जाने पर, इसे उससे भी घोर संग्राम करना पड़ा। किन्तु अन्त में यह अपने कार्य में यशस्वी हो कर ही रहा (त्रिशंकु देखिये)।

पार्गिटर के अनुसार, त्रिशंकु के स्वर्गारोहण की पुराणों में प्राप्त सारी कथा कल्पनारम्य प्रतीत होती है। आकाश में स्थित ग्रहों में से एक ग्रहसमूह को विश्वामित्र ने त्रिशंकु का नाम दिलवाया, यही इस कथा का तादृश अर्थ है। वाल्मीकि रामायण में भी, त्रिशंकु का वर्णन चंद्रमार्ग पर स्थित एक ग्रह के नाते गुरु, बुध, मंगल आदि अन्य ग्रहों के साथ किया गया है (वा. रा. अयो. ४१.१०)।

उपर्युक्त कथा में वर्णित इंद्र-विश्वामित्र संघर्ष भी कल्पनारम्य प्रतीत होता है, एवं देवराज वसिष्ठ से विश्वामित्र के द्वारा किये गये संघर्ष का वर्णन वहाँ देवराज इंद्र के संघर्ष में परिवर्धित किया गया है।

विश्वामित्र के कार्य का महत्त्व—विश्वामित्र के द्वारा त्रिशंकु को पुनः राज्य प्राप्त होने की घटना, अयोध्या के इक्ष्वाकु राजवंश के इतिहास में महत्त्वपूर्ण घटना मानी जाती है। अयोध्या के पुरातन इक्ष्वाकु राजवंश को दूर हटा कर वहाँ अपना स्वयं का राज्य स्थापन करने का प्रयत्न देवराज वसिष्ठ कर रहा था। उसे असफल बना कर, इक्ष्वाकु राजवंश का अधिराज्य अबाधित रखने का कार्य विश्वामित्र ने किया। इस प्रकार, 'त्रिशंकु-वसिष्ठ-विश्वामित्र' आख्यान का वास्तव नायक इक्ष्वाकुराज त्रिशंकु ही है। उसे गौण स्थान प्रदान कर, विश्वामित्र एवं वसिष्ठ-

का जो संघर्ष रामायण महाभारतादि ग्रन्थों में सविस्तृत रूप में वर्णित किया गया है, वह अनैतिहासिक प्रतीत होता है।

हरिश्चंद्र के राज्यकाल में—सत्यव्रत त्रिशंकु के राज्यकाल में शुरू हुआ इसका एवं देवराज वसिष्ठ का संघर्ष सत्यव्रत के पुत्र हरिश्चंद्र, एवं पौत्र रोहित के राज्यकाल में चालु ही रहा। सत्यव्रत के सदेह स्वर्गारोहण के पश्चात्, उसके पुत्र हरिश्चंद्र ने विश्वामित्र को अपना पुरोहित नियुक्त किया। किन्तु उसके राजसूय यज्ञ में बाधा उत्पन्न कर, वसिष्ठ ने अपना पौरोहित्यपद पुनः प्राप्त किया।

सत्यव्रत के विजनवास में, उसका पुत्र हरिश्चंद्र वसिष्ठ के ही मार्गदर्शन में पालपोस कर बड़ा हुआ था। अयोध्या के ब्राह्मण लोग भी पहले से ही विश्वामित्र के विरुद्ध थे। इन दोनों घटनाओं की परिणति हरिश्चंद्र के राजसूय यज्ञ के समय हुई, जहाँ हरिश्चंद्र ने विश्वामित्र को दक्षिणा देने से इन्कार कर दिया। इस अपमान के कारण रुष्ट हो कर इसने अयोध्या का पुरोहितपद छोड़ दिया, एवं यह पुष्करतीर्थ में तपस्या करने के लिए चला गया।

मार्कंडेय पुराण में—इस संदर्भ में मार्कंडेय-पुराण में वसिष्ठ एवं विश्वामित्र के संघर्ष की, अनेकानेक कल्पनारम्य कथाएँ प्राप्त है, जहाँ विश्वामित्र के द्वारा हरिश्चंद्र राजा को दक्षिणा प्राप्ति के लिए त्रस्त करने की, इसने एक पक्षी बन कर वसिष्ठ पर आक्रमण करने का, एवं वसिष्ठ के सौ पुत्रों का वध करने का निर्देश प्राप्त है (मार्कं. ८-९)। इन तीनों कथाओं में से पहली दो कथाएँ संपूर्णतः कल्पनारम्य हैं, एवं तीसरी हरिश्चंद्रकालीन विश्वामित्र की न हो कर, सुदासकालीन विश्वामित्र की प्रतीत होती है (विश्वामित्र ४. देखिये)।

हरिश्चंद्र के ही राज्यकाल में उसके पुत्र रोहित को यज्ञ में बलि देने का, एवं इक्ष्वाकु राजवंश को निर्वंश करने का षड्यंत्र वसिष्ठ के द्वारा रचाया गया था। किन्तु विश्वामित्र ने रोहित की, एवं तत्पश्चात् उसके स्थान पर बलि जानेवाले अपने भतीजे शुनःशेप की रक्षा कर, इक्ष्वाकु राजवंश का पुनः एक बार रक्षण किया। तदुपरांत विश्वामित्र ने शुनःशेप को अपना पुत्र मान कर, उसका नाम देवरात रख दिया (ऐ. ब्रा. ७.१६; सां. श्रो. १५.१७; शुनःशेप देखिये)।

ब्रह्मर्षिपद की प्राप्ति—क्षत्रिय विश्वामित्र को ब्रह्मर्षिपद कैसे प्राप्त हुआ, इसकी कथाएँ वाल्मीकि रामायण एवं पुराणों में प्राप्त है। रुषंगु-तीर्थ पर तपस्या करने के कारण यह ब्राह्मण बना गया। शुनःशेप का संरक्षण करने के पश्चात्, कौशिकी नदी के तट पर तपस्या करने के कारण, इसे ब्रह्मर्षिपद प्राप्त हुआ। इतना होते हुए भी, यह क्रोध, मोह आदि विकार काबू में न रख सकता था। इसी कारण अपने तपस्या का भंग करने के लिए आयी हुई रंभा को इसने शिला बनाया था। पश्चात् काम क्रोध पर विजय पाने के लिए इसने पुनः एक बार तपस्या की, जिस कारण इसे जितेंद्रियत्व एवं ब्रह्मर्षिपद प्राप्त हुआ (वा. रा. बा. ६२-६६; स्कंद. ६.१.१६७-१६८)। ब्रह्मर्षिपद प्राप्त होने के पश्चात्, इसे इंद्र के साथ सोमपान करने का सन्मान प्राप्त हुआ (म. आ. ६९.५०)। इंद्र के कृपापात्र व्यक्ति के रूप में आरण्यक ग्रंथों में इसका निर्देश प्राप्त है (ऐ. आ. २.२.३; सां. आ. १.५)।

सत्त्वपरीक्षा—विश्वामित्र को ब्रह्मर्षिपद कैसे प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार धर्म ऋषि इसके पास आया एवं इसके पास भोजन माँगने लगा। धर्म के लिए यह चावल पकाने लगा, जितने में वह चला गया। पश्चात् यह सौ वर्षों तक धर्मऋषि की राह देखते बैठा ही खड़ा रहा। इतने दीर्घकाल तक खड़े रह कर भी इसने अपनी मनःशांति नही छोड़ी, जिस कारण धर्म ने इसकी अत्यधिक प्रशंसा की, एवं इसे ब्रह्मर्षि-पद प्रदान किया (म. उ. १०४.७-१८)। महाभारत में अन्यत्र त्रिशंकु-आख्यान, रंभा को शाप, विश्वामित्र के द्वारा कुत्ते का माँसभक्षण आदि इसके जीवन से संबंधित कथाएँ एकत्र रूप दी गयी हैं।

भविष्यपुराण के अनुसार, ब्रह्मा को अत्यंत प्रिय 'प्रतिपदा' का व्रत करने के कारण, इसे देहान्तर न करते हुए भी ब्राह्मणत्व की प्राप्ति हो गयी (भवि. ब्राह्म. १६)। मृत्यु के पश्चात् यह शिवलोक गया, जो फल इसे हिरण्या नदी के संगम पर स्नान करने के कारण प्राप्त हुआ था (पद्म. उ. १४०)।

आश्रम—विश्वामित्र का आश्रम कुरुक्षेत्र में सरस्वती तीर नदी के पश्चिम तट पर स्थाणु-तीर्थ के सम्मुख था (म. श. ४१.४-३७)। इस आश्रम के समीप, सरस्वती नदी पर स्थित रुषंगु-आश्रम में विश्वामित्र ने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था (म. श. ३८.२२-३२)।

विश्वामित्र का अन्य एक आश्रम आधुनिक बक्सार में 'ताटका-वन' के समीप था। महाभारत के अनुसार, इसका आश्रम कौशिकी नदी (उत्तर बिहार की आधुनिक कोशी नदी) के तट पर स्थित था

एवं उस नदी का 'कौशिकी' नाम भी इसीके 'कौशिक' पैतृक नाम से प्राप्त हुआ था (म. आ. ६५.३०)। यह वही पुण्य स्थान था, जहाँ पूर्वकाल में वामन ने बलि वैरोचन से त्रिपाद भूमि की माँग की थी। यही स्थानमाहात्म्य जान कर इसने 'सिद्धाश्रम' में अपना आश्रम बनाया था (वा. रा. बा. २७-२९)। संभवतः यह आश्रम आद्य विश्वामित्र ऋषि का न हो कर, रामायणकालीन विश्वामित्र महर्षि का होगा।

इनके अतिरिक्त इसके देवकुण्ड (वेदगर्भपुरी), एवं विश्वामित्री नदी के तट पर स्थित अन्य दो आश्रमों का निर्देश भी प्राप्त है।

परिवार—विश्वामित्र के कुल एक सौ एक पुत्र थे, जिनमें से मँझले (इक्कावनवे) पुत्र का नाम मधुच्छन्दस् था। अपने भतिजे शुनःशेप को पुत्र मान लेने पर, विश्वामित्र ने उसे 'देवरात' नाम प्रदान कर, अपना ज्येष्ठ पुत्र नियुक्त किया, एवं अपने बाकी सारे पुत्रों को उसका 'ज्येष्ठपद' मानने की आज्ञा दी। विश्वामित्रपुत्रों में से पहले पचास पुत्रों ने विश्वामित्र की यह आज्ञा अमान्य कर दी, जिस कारण इसने उन्हें म्लेंच्छ बनने का शाप दिया। ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार, अपने इन पुत्रों को इसने अन्ध्र, पुण्ड्र, शबर, पुलिंद, मूतिब आदि अन्त्य जाति के लोग बनने का शाप दिया (ऐ. ब्रा. ७.१८; रैभ्य एवं ऋषभ याज्ञतुर देखिये)। मधुच्छंदस् एवं अन्य पचास कनिष्ठ पुत्रों ने विश्वामित्र की आज्ञा मान ली, जिस कारण इसने उन्हें अनेकानेक आशीर्वाद प्रदान किये।

विश्वामित्र के उपर्युक्त शाप के कारण, इसके पुत्रों की एवं वंशजों की निम्नलिखित दो शाखाएँ बन गयीः—

१. कुशिक शाखा,—जो विश्वामित्र के कृपापात्र पुत्रों से उत्पन्न हुयी, जिनमें देवरात प्रवर आता है (भा. ९. १६.२८-३७);

२. विश्वामित्र शाखा,—जो विश्वामित्र के शाप के कारण हीनकुलीन बन गये।

पत्नियाँ—विश्वामित्र की पत्नियाँ, एवं उनसे उत्पन्न इसके पुत्रों की जानकारी ब्रह्म, हरिवंश, वायु, ब्रह्मांड आदि पुराणों में प्राप्त है, जो संक्षेपरूप में नीचे दी गयी हैः—

पत्नी का नाम	पुत्रों के नाम
१. रेणु	रेणु, सांकृति, गालव, मधुच्छंदस्, जय, देवल, कच्छप, हरित, अष्टक।
२. शालावती	हिरण्याक्ष, देवश्रवस्, कति।
३. सांकृति	मौद्गल्य, गालव।
४. माधवी	अष्टक।
५. दृषद्वती	कृत, ध्रुव, पूरण। वायु में दृषद्वती का पुत्र केवल अष्टक ही बताया गया है।

(ह. वं. १.३२; ब्रह्म. १०; वायु. ९१.९९-१०३)।

पुत्र—विश्वामित्र के पुत्रों की नामावली महाभारत, वाल्मीकि रामायण एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त है, जो निम्न दी गयी हैः—

महाभारत में—अक्षीण, अंभोरुद, अरालि, आंध्रिक, आश्वलायन, आसुरायण, उज्जयन, उदापेक्षिन्, उपगहन, उलूक, ऊर्जयोनि, कपिल, कारीष, कालपथ, कूर्चामुख, गार्ग्य, गार्दभि, गालव, चक्रक, चांपेय, चारुमत्स्य, जंगारि, जाबालि, तंतु, ताडकायन, देवरात (शुनःशेप), नवतंतु, नाचिक, नारद, नारदिन्, नैकदृश, पर, पर्णजंघ (वल्गुजंघ), पौरव, वक्रनख, बभ्रु, बाभ्रवायणि, भूति, मधुच्छंदस्, मारुतंतव्य, मार्दम, मुसल, यति, यमदूत, याज्ञवल्क्य, लीलाढ्य, वक्षोग्रीव, वज्र, वातघ्न, वादुलि, विभूति, शकुन्त, शिरीशिन्, शिलायूप, शुचि, श्यामायन, संश्रुत्य, सालंकायन, सित, सुरकृत, सुश्रुत, सूत, सेयन, सैंधवायन, स्थूण, हिरण्याक्ष (म. अनु. ४.४९-५९)। इन पुत्रों में से हिरण्याक्ष को छः पुत्र उत्पन्न हुए थे।

(२) रामायण में—दृढनेत्र, मधुष्पंद, महारथि एवं हविष्पंद (वा. रा. बा. ५७)। विश्वामित्र के ये सारे पुत्र ब्राह्मणवंशविवर्धक एवं गोत्रकार माने जाते हैं।

(३) हरिवंश एवं पद्म में—कवि, क्रोधन, स्वसृम (स्वरूप), पितृवति (पितृवर्तिन्), पिशुन, वाग्दुष्ट, हिंस्त्र (ह. वं. १.२१.५; पद्म. सृ. १०)।

(४) अन्य ग्रंथों में—हिरण्याक्ष, देवश्रवस् (देवरात, शुनःशेप), कति, रेणु (रेणुक, रेणुमत्), सांकृति, गालव, मधुच्छन्दस्, जय (नय), देवल (देव), कच्छप, हरित (हारित), अष्टक, कृत, ध्रुव, पूरण। इनमें से

काति एवं अष्टक को क्रमशः कात्यायन एवं लौहि नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

(५) वायु एवं ब्रह्मांड में—मधुच्छन्दस्, नय एवं देव (वायु. ९१.९६; ब्रह्मांड. ३.६६)।

(६) ब्रह्म में—मौद्गल्य, गालव, कात्यायन (ब्रह्म. (१०.१३)।

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रनाम—विश्वामित्रकुल में उत्पन्न निम्नलिखित गोत्रों की नामावलि महाभारत एवं पुराणों में दी गयी हैः—१. उदुंबर, २. कारूषक (करीषय, कारीषव, कारीषि); ३. कौशिक (कुशिक); ४. गालव; ५. चांद्रव (यमसुंचत); ६. जाबाल; ७. तालकायन (तारक, तारकायन); ८. देवरात; ९. देवल. १०. ध्यानजाप्य; ११. पणिन (पाणिन्, पाणिनि); १२. पार्थिव; १३. बभ्रु; १४. बादर; १५. बाष्कल (वास्कल); १६. मधुच्छंदस्; १७. यमदूत (यामदूत, यामभूत); १८. याज्ञवल्क्य; १९. रेणव; २०. लालाक्य (ददाति); २१. लौहित (लोहित, लोहिण्य); २२. बाताड्य (उदुम्लान); २३. शालंकायन; २४. श्यामायन (शालावत्य); २५. समर्पण; २६. सांकृत (स्यंकृत); २७. सैंधवायन; २८. सौश्रव (सोश्रुत, सोश्रुम); २९. हिरण्याक्ष (म. अनु. ४.५०-६०; वायु. ९१.९७-१०२; ब्रह्मांड. ३.६६.६९-७४; ह. वं. २७.१४६३-१४६९; ब्रह्म. १०.६१-६३; १३)।

उपर्युक्त नामावलि में से १०-२६ नाम ब्रह्म के तेरहवें अध्याय में, एवं १२-२६ नाम ब्रह्म के दसवें अध्याय में अप्राप्य हैं।

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रकार—इन गोत्रकारों के त्रिप्रवरान्वित (तीन प्रवरोंवाले) एवं द्विप्रवरान्वित (दो प्रवरोंवाले) ऐसे दो प्रमुख प्रकार है :—

(१) **त्रिप्रवरान्वित गोत्रकार**—विश्वामित्रकुल के बहुसंख्य गोत्रकार 'तीन प्रवरोंवाले' ही हैं, किंतु प्रवरभेद के अनुसार उनके अनेक उपविभाग हैं, जिनकी जानकारी नीचे दी गयी हैं :—

(अ) उद्दल, देवरात एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—अभय, आयतायन, उलूप (ग, उलप), औपहाव (ग), करीष (ग), खरवाच, जनपादप (ग), जाबाल (ग), देवरात, पयोद (ग), बाभ्रव्य (ग), याज्ञवल्क्य (ग), वतंड, वास्तुकौशिक (ग), विश्वामित्र, वैकृतिगालव (वैकलिनायन), शलंक, श्यामायन (ग), संश्रुत (ग), संश्रुत्य (ग), साधित (ग), सैंधवायन (ग), हल्यम (ग)।

(ब) वैश्वामित्र, दैवश्रवस, दैवरात प्रवरों के गोत्रकार—कारुकायण (कामुकायन, ग), कुशिक, देवश्रवस्, वैदेहरात, वैदेहजात, वैदेहनात, वैदेवराज (ग), सुजातेय, सौमुक (तौसुक)।

(क) वैश्वामित्र, माधुच्छंदस, आज (आद्य) प्रवरों के गोत्रकार—कपर्देय, धनंजय, परिकूट, पाणिनि।

(ड) अघमर्षण, मधुच्छंदस् एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—आद्य, माधुच्छंदस, विश्वामित्र।

(इ) आश्मरथ्य, वंजुलि एवं वैश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—अश्मरथ्य (ग), कामलायनिज, वंजुलि।

(ई) ऋणवत्, गतिन् एवं विश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—उदरेणु, विश्वामि, उदाहि, ऋथक।

(उ) खिलिखिलि, आज (विद्य) एवं वैश्वामित्र प्रवरों के गोत्रकार—उदुंबर, करीराशिन्, त्राक्षायणि, मौंजायनि (कौञ्जायनि), लावकि, शाठ्यायनि (कात्यायनि), शालंकायनि, सैबिरिटि। इन गोत्रकारों के लिए खिलि, क्षितिमुखाविद्ध, एवं विश्वामित्र ये प्रवर भी कई पुराणों में प्राप्त हैं।

(२) **द्विप्रवरान्वित गोत्रकार**—विश्वामित्र, एवं पूरण दो प्रवरों के गोत्रकार—अष्टक, पूरण, लोहित (मत्स्य. १९८)।

२. एक ऋषि, जिसे ऊर्वशी अप्सरा से शकुंतला नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (मा. ९.१६.२८-३७)। यह ऋषि पूरुवंशीय दुष्यंत एवं भरत राजाओं का समकालीन था। इस प्रकार, अयोध्या के त्रिशंकु, हरिश्चंद्र आदि राजाओं से यह काफ़ी उत्तरकालीन था।

३. एक ऋषि, जिसने अयोध्या के राम दाशरथि के द्वारा ताटका राक्षसी, एवं मारीच, सुबाहु आदि राक्षसों का वध करवाया था (वा. रा. बा. २४-२७; राम दाशरथि देखिये)। यह साक्षात् धर्म का अवतार था, एवं इसके समान पराक्रमी एवं विद्यावान् सारे संसार में दूसरा कोई न था (वा. रा. बा. २१)।

४. एक ऋषि, जो उत्तर पंचाल देश के पैजवन सुदास राजा का पुरोहित था (ऋ. ३.५३; ७.१२)। ऋग्वेद के तृतीय मंडल के प्रणयन का श्रेय इसे एवं इसके वंश में उत्पन्न ऋषियों को दिया गया है।

ऋग्वेद में इसने स्वयं को 'कुशिक' का वंशज कहलाया है (ऋ. ३.५३.५)। इसी कारण इसका निर्देश

'कुशिक' नाम से भी प्राप्त है (ऋ. ३.३३.५)। इसके परिवार के लोगों को भी 'कुशिकाः' कहा गया है। इसके परिवार के लोगों को 'विश्वामित्र' उपाधि भी प्राप्त है (ऋ. ३.५३.१३; १०.८९.१७)।

गाथिन् का वंशज—विश्वामित्र 'गाथिन्' राजा का वंशज था, जिस कारण इसे 'गाथिन' पैतृक नाम प्राप्त है। विश्वामित्र गाथिन के द्वारा विरचित अनेक सूक्त ऋग्वेद में प्राप्त हैं [ऋ. ३.१-१२; २४; २५; २६ (१-६; ८; ९); २७-३२; ३३ (१-३,५,७,९,११-१३); ३४; ३५; ३६ (१-९, ११); ३७-५३; ५७-६२; ९.६७.१३-१५; १०.१३७.५; १६७]। पुराणों में भी इसे कुशिककुलोत्पन्न कहा गया है (वायु. ९१.९३)।

नदीसूक्त—इसके द्वारा विरचित एक सूक्त में विपाश् एवं शुतुद्री (आधुनिक बियास् एवं सतलज नदियाँ) नदियों की संगम पर राह देने के लिए प्रार्थना की गयी है (ऋ. ३.३३)। अभ्यासकों का कहना है कि, इस सूक्त के प्रणयन के समय विश्वामित्र पैजवन सुदास राजा का पुरोहित था, एवं पंजाब के संवरण राजा पर आक्रमण करनेवाली सुदास की विजयी सेना को मार्ग प्राप्त कराने के लिए इसने इस 'नदीसूक्त' की रचना की थी (गेल्डनर, वेदिशे स्टूडियन. ३.१५२)।

सायण के अनुसार, सुदास राजा से विपुल धनसंपत्ति प्राप्त करने के पश्चात्, विश्वामित्र के कई विपक्षियों ने इसका पीछा करना शुरु किया। उस समय भागते हुए विश्वामित्र ने इस नदीसूक्त की रचना थी (ऋ. ३.३३, सायणभाष्य)। किन्तु सायण का यह मत अयोग्य प्रतीत होता है। स्वयं यास्क भी सायण के इस मत से असहमत है (नि. २.२४)।

वसिष्ठ से विरोध—ऋग्वेद में प्राप्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, यह शुरु में सुदास राजा का पुरोहित था (ऋ. ३.५३)। किन्तु इसके इस पदसे भ्रष्ट होने के पश्चात्, वसिष्ठ सुदास का पुरोहित बन गया। तदुपरांत यह सुदास के शत्रुपक्ष में शामिल हुआ, एवं इसने सुदास के विरुद्ध दाशराज्ञ-युद्ध में भाग लिया (वसिष्ठ देखिये)।

इसी संदर्भ में इसने 'वसिष्ठ-द्वेषिण्यः' नामक कई ऋचाओं की रचना की, जो शौनक के काल से सुविख्यात हैं। वसिष्ठगोत्र में उत्पन्न लोग आज भी इन ऋचाओं का पठन नहीं करते। ऋग्वेद का एक भाष्यकार दुर्गाचार्य ने स्वयं वसिष्ठगोत्रीय होने के कारण, इन ऋचाओं पर भाष्य नही लिखा है (ऋ. ३.५३.२०-२४; नि. १०. १४)।

शक्ति का वध—वसिष्ठ ऋषि के पुत्र शक्ति से विश्वामित्र के द्वारा किये गये संघर्ष का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है। सुदास राजा के यज्ञ के समय हुए वादविवाद में शक्ति ने इसे परास्त किया। फिर विश्वामित्र ने जमदग्नि ऋषि से 'ससर्परी' विद्या प्राप्त कर, शक्ति को परास्त किया (ऋ. ३.५३.१५-१६, वेदार्थदीपिका)। आगे चल कर इसने सुदास के सेवकों के द्वारा शक्ति का वध करवाया (तै. सं. ७.४.७.१; ऋ. सर्वानुक्रमणी ७.३२)।

शक्ति ऋषि से हुए वादविवाद में इसने कथन की हुई ऋचाएँ 'मौनी विश्वामित्र' की ऋचाएँ नाम से प्रसिद्ध हैं, जिनमें इसने कहा है, 'आप लोग इस 'अन्तक' (विश्वामित्र) के पराक्रम को नहीं जानते। इसी कारण मुझे वादविवाद में स्तब्ध देख कर आप हँस रहे हैं। किंतु आप नहीं जानते, कि विश्वामित्र अपने शत्रु से लड़ना ही जानता है। शत्रु से शरणागति उसे मंजुर नहीं है (ऋ. ३.५३. २३-२४)।

ब्राह्मण ग्रंथों में निम्नलिखित वैदिक मंत्रों के प्रणयन का श्रेय भी विश्वामित्र को दिया गया है:—१. संपात ऋचाएँ—जिनका प्रणयन एवं प्रचार क्रमशः विश्वामित्र एवं वामदेव ऋषियों ने किया (ऐ. ब्रा. ६.१८); २. रोहित-कूलीय सामसंत्र—जिनका प्रणयन सौदन्ति लोगों से मिलने के लिए जानेवाले विश्वामित्र ने नदी को लाँघते समय किया था (पं. ब्रा. १४.३.१३)।

५. एक धर्मशास्त्रकार, जिसका निर्देश 'वृद्धयाज्ञवल्क्य स्मृति' में प्राप्त है। 'अपरार्क', 'स्मृतिचंद्रिका', जीमूतवाहनकृत 'कालविवेक' आदि धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथो में विश्वामित्र के निम्नलिखित विषयों से संबंधित अभिमत उद्धृत किये है:—व्यवहार, पंचमहापातक श्राद्ध, प्रायश्चित्त आदि।

इसके द्वारा विरचित नौ अध्यायों की 'विश्वामित्र-स्मृति' मद्रास राज्य के द्वारा प्रकाशित की गयी है (मद्रास राज्य कृत पाण्डुलिपियों की सूचि पृ. १९८५, क्रमांक २७१७)।

६. एक ऋषि, जो रैभ्य नामक ऋषि का पिता, एवं अर्वावसु एवं परावसु ऋषियों का पितामह था। यह चेदि देश का राजा वसु एवं बृहद्युम्न राजाओं का समकालीन था (यवक्रीत एवं भरद्वाज देखिये)।

७. वैवस्वत मन्वन्तर का एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. ८.१३.५; १०.७४. ८)। यह स्यमंतपंचक क्षेत्र में श्रीकृष्ण से मिलने आया था, एवं कृष्ण के द्वारा किये गये यज्ञ का यह पुरोहित था (भा. १०.८४.३; ११.१.१२)।

८. एक ऋषि, जो फाल्गुन माह के सूर्य के साथ घूमता है (विष्णु. २.१०.१८)।

९. ब्रह्मराक्षसों का एक समूह, जो 'रात्रिराक्षसों' के चार समूहों में से एक माना जाता है (ब्रह्मांड. ३.८.५९-६१)। इन्हें 'कौशिक' नामान्तर भी प्राप्त था।

विश्वायु--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार पुरूरवस् राजा के छः पुत्रों में से एक था (वायु. ९१.५२)।

२. वशवर्तिन् देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.२९)।

३. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३४)।

विश्वावसु—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १३९)। तैत्तिरीय संहिता में इसे एक गंधर्व कहा गया है (तै. सं. १.१.११.१)। गायत्री के द्वारा लाये गये सोम की इसने चोरी की थी (श. ब्रा. ३.२.२.२)।

२. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था। इसने सोम से चाक्षुषी विद्या सीखी थी, जो आगे चल कर इसने चित्ररथ गंधर्व को प्रदान की थी (म. आ. १५८.४०-४२)।

गंधर्व एवं अप्सराओं के द्वारा, गंधर्वमधु प्राप्त करने के लिए किये गये पृथ्वीदोहन में इसे वत्स बनाया गया था (भा. ४.१८.१७)। इंद्र-नमुचि युद्ध में यह इंद्रपक्ष में शामिल था (भा. ८.११.४१)। याज्ञवल्क्य ऋषि के साथ इसने अध्यात्मविषयक चर्चा की थी, जिस समय इसने उसे चौबीस प्रश्न पूछे थे (म. शां. ३०६. २६-८०)।

मेनका अप्सरा से इसे प्रमद्वरा नामक कन्या उत्पन्न हुई थी (म. आ. ८.६)। इसका चित्रसेन नामक एक अन्य पुत्र भी था। कर्दम प्रजापति की पत्नी देवहूति से इसका प्रथमदर्शन में ही प्रेम हुआ था (भा. ३. २०.३९)।

ब्राह्मणों के शाप के कारण, इसे पृथ्वीलोक में कबंध राक्षस के रूप में जन्म प्राप्त हुआ था। आगे चल कर, राम दाशरथि के द्वारा यह मारा गया, एवं इसे मुक्ति प्राप्त हुई (म. व. २६३.३३-३८)।

३. एक गंधर्व, जो श्रावण माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३७)।

४. एक ऋषि, जो जमदग्नि ऋषि के पाँच पुत्रों में से एक था। जमदग्नि के शाप के कारण, अपने अन्य भाइयों के साथ यह पाषाण बना था। किंतु आगे चल कर, इसके भाई परशुराम ने इसे शापमुक्त कराया (म. व. ११६.१७; परशुराम देखिये)।

५. एक राक्षस, जो मधु राक्षस की पत्नी कुंभीनसी का पिता था। इसकी पत्नी का नाम अनला था, जो माल्यवत् राक्षस की कन्या थी (वा. रा. उ. ६१)।

६. एक गंधर्व, जो पुरूरवस् एवं उर्वशी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६६.२३)। इसने ही उर्वशी को पृथ्वीलोक से स्वर्गलोक वापस लाया था।

७. एक वसु, जो धर्म एवं सुदेवी के पुत्रो में से एक था (मत्स्य. १७१.४६)।

विश्वेदेव—एक यज्ञीय देवतासमूह, जिसे ऋग्वेद के चालीस से भी अधिक सूक्त समर्पित किये गये हैं।

वैदिक साहित्य में—विश्वेदेव का शब्दशः अर्थ अनेक देवता है। यह एक काल्पनिक यज्ञीय देवतासमूह है, जिसका मुख्य कार्य सभी देवताओं का प्रतिनिधित्व करना है, क्यों कि, यज्ञ में की गई स्तुति से कोई देवता छूट न जाय। वेदों के जिन मंत्रों में अनेक देवताओं का संबंध आता है, एवं किसी भी एक देवता का निश्चित रूप से उल्लेख नही होता है, वहाँ 'विश्वेदेव' का प्रयोग किया जाता है। भाषाशास्त्रीय दृष्टि से यह सामासिक शब्द नही है, बल्कि 'विश्वे + देवाः' ये दो शब्द मिल कर बना हुआ संयुक्त शब्द है। इसी कारण इसे 'सर्वदेव' नामांतर भी प्राप्त है।

विश्वेदेवों से संबंधित सूक्तों में सभी श्रेष्ठ देवता एवं कनिष्ठ देवताओं की क्रमानुसार प्रशस्ति प्राप्त है। यज्ञ करानेवाले पुरोहितों को जिस समय समस्त देवतासमाज को आवाहन करना हो, उस समय वह आवाहन विश्वेदेवों के उद्देश्य कर किया गया प्रतीत होती है।

नामावलि—कई अभ्यासकों के अनुसार, ऋग्वेद में प्राप्त 'आप्री सूक्त' विश्वेदेवों को उद्देश्य कर ही लिखा गया है, जहाँ बारह निम्नलिखित देवताओं को आवाहन किया गया है :— १. सुसमिद्ध, २. तनुनपात्, ३. नराशंस, ४. इला, ५. बर्हि, ६. द्वार, ७. उषस् एवं रात्रि, ८. होतृ नामक दो अग्नि, ९. सरस्वती, इला, एवं भारती (मही) आदि देवियाँ, १०. त्वष्टृ, ११. वनस्पति,

१२. स्वाहा (ऋ. १.१३)। इस सूक्त में निर्दिष्ट ये बारह देवता एक ही अग्नि के विभिन्न रूप हैं।

ऋग्वेद में प्राप्त विश्वेदेवों के अन्य सूक्तों में इस देवता-समूह में त्वष्टृ, ऋभु, अग्नि, पर्जन्य, पूषन्, एवं वायु आदि देवता; बृहद्दिवा आदि देवियाँ, एवं अहिर्बुध्न्य आदि सर्प समाविष्ट किये गये हैं।

ऋग्वेद में निर्दिष्ट 'मरुद्गण', ऋभुगण' आदि देवगणों जैसा 'विश्वेदेव' एक देवगण प्रतीत नहीं होता है। फिर भी कभी-कभी इन्हें एक संकीर्ण समूह भी माना गया प्रतीत होता है, क्यों कि, 'वसु' एवं 'आदित्यों' जैसे देवगणों के साथ इन्हें भी आवाहन किया गया है (ऋ. २.३.४)।

ऐतरेय ब्राह्मण में—इस ग्रंथ में विश्वेदेवों का एक देवतासमूह के नाते निर्देश प्राप्त है, जहाँ आविक्षित कामप्रि राजा के यज्ञ में इनके द्वारा यज्ञीय सभासद के नाते कार्य करने का निर्देश प्राप्त है:—

> मरुतः परिवेष्टारः मरुत्त स्यावसन्गृहे।
> आविक्षितस्य कामप्रेः विश्वेदेवाः सभासद इति ॥
> (ऐ. ब्रा. ३९.८.२१)।

पुराणों में—विश्वेदेवों का उत्क्रांत रूप पौराणिक साहित्य में पाया जाता है, जहाँ इन्हें स्पष्टरूप से देवता-समूह कहा गया है। वायु में इन्हें दक्षकन्या विश्वा एवं धर्म ऋषि के पुत्र कहा गया हैं, एवं इनकी संख्या दस बतायी गयी हैं। राज्यप्राप्ति के लिये इनकी उपासना की जाती है।

नामावलि—पुराणों में प्राप्त इनकी नामावलि निम्न-प्रकार है:—१. ऋतु, २. दक्ष, ३. श्रव, ४. सत्य, ५. काल, ६. काम, ७. मुनि, ८. पुरूरवस्, ९. आर्द्रवास (आर्द्रव), १०. रोचमान (ब्रह्मांड. ३.१२;४.२.२८)। कई अन्य पुराणों में, इनके वसु, कुरज, मनुज, वीज, धुरि, लोचन, आदि नामांतर भी प्राप्त है (भा. ६.६. ६०; मत्स्य. २०२; सांब. १८)। महाभारत में भी इनकी विस्तृत नामावलि दी गयी है, जहाँ इनका निवासस्थान 'भुवर्लोक' बताया गया है (म. अनु. ९१.२८)।

ये स्वयं अप्रज (संततिहीन) थे, एवं इन्द्र की उपासना करते इन्द्रसभा में उपस्थित थे (भा. ६.६.६०)। देवासुर संग्राम में देवपक्ष में शामिल होकर, इन्होंने पौलोमों के साथ युद्ध किया था (भा. ८.१०.३४)। सोम के द्वारा किये गये राजसूय यज्ञ में इन्होंने 'चमसाध्वर्यु' के नाते काम किया था (मत्स्य. १७.१४)। मरुत्त के यज्ञ में भी ये सभासद थे (भा. ९.२.२८)। इन्हींके ही कृपा से ज्यामघ को पुत्रप्राप्ति हुई थी (भा. ९.२.२८)।

ब्रह्मा की उपासना—इन्होंने हिमालय पर्वत पर पितरों की एवं ब्रह्मा की, उपासना की थी, जिस कारण उन्होंने प्रसन्न हो कर इन्हें आशीर्वाद दिया, 'आज से मनुष्यों के द्वारा, किये गये श्राद्धविधियों में तुम्हें अग्रमान प्राप्त होगा। देवों से भी पहले तुम्हारी पूजा की जायेगी। तुम्हारी पूजा करने से श्राद्ध का संरक्षण होगा, एवं पितर सर्वाधिक तृप्त होंगे' (वायु. ७६.१–१५; ब्रह्मांड. ३.३. १६)।

कौन-कौन से श्राद्धविधियों में कौनसे विश्वदेवों को प्राधान्य दिया जाता है, इसकी जानकारी 'निर्णयसिंधु' में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है:—१. पार्वणश्राद्ध–पुरूरव, आर्द्रव; २. महालय श्राद्ध–धूरि, लोचन; ३. नान्दी श्राद्ध –सत्य, वसु; ४. जिवत्पितृक श्राद्ध–ऋतु, दक्ष (निर्णय-सिंधु पृ. २७९)।

भागवत में इन्हें वर्तमानकालीन वैवस्वत मन्वन्तर के देवता कहा गया है (भा. ९.१०.३४) विश्वामित्र के शाप के कारण, इन्हें द्रौपदी के पाँच पुत्रों के रूप में जन्म प्राप्त हुआ था। आगे चल कर ये पाँच हि पुत्र अश्वत्थामन् के द्वारा मारे गये (मार्कं. ६२–६९)।

विश्वेश्वर–शिव का एक अवतार, जो काशी में अव-तीर्ण हुआ था (शिव. शत. ४२)। इसे अविमुक्तेश्वर नामान्तर भी प्राप्त है (शिव. कोटि. १)।

२. एकादश रुद्रों में से एक।

विष—शिव देवों में से एक।

२. एक असुर, जो नकुलि देवी के द्वारा मारा गया था (ब्रह्मांड ४. २८.३९)।

३. एक असुर, जो दनायुष नामक असुर का पुत्र था (वायु. ६८.३०)।

विषया—चन्दनावती नगरी के दुष्टबुद्धि प्रधान की कन्या (चन्द्रहास देखिये)।

विषाणिन्—एक ज्ञातिसमूह, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के पक्ष में शामिल था (ऋ. ७.१८.७)। रौथ इन्हें सुदास राजा के विपक्षी मानते है, किंतु वह अयोग्य प्रतीत होता है।

अलिन, भलानस, शिव, एवं पक्थ लोगों के साथ इनका निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि,

ये उन्हींके समान उत्तरीपश्चिम भारत में रहनेवाले लोग होंगे।

'विषाणिन्' का शब्दशः अर्थ 'सींगयुक्त' है। ये लोग संभवतः सींग के आकार का अथवा सींगों से अलंकृत शिरस्त्राण धारण करते होंगे, जिस कारण इन्हें 'विषाणिन्' नाम प्राप्त हुआ था।

विषूची—विरज् नामक राक्षसराज की पत्नी, जिससे इसे सौ पुत्र, एवं एक कन्या उत्पन्न हुई थी (भा. ५. १५.१५)। इसे विष्वक्सेन की माता भी कहा गया है (भा. ८.१३.२३)।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के श्रीविष्णु की माता।

विष्कर—एक राक्षस, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०.५२)।

विष्टराश्व—इक्ष्वाकुवंशीय विश्वगश्व राजा का नामान्तर (विश्वगश्व देखिये)। विष्णु के अनुसार इसके पुत्र का नाम चंद्राश्व था।

विष्टि—धर्मसावर्णि मन्वंतर का एक ऋषि।

२. विवस्वत् एवं छाया की एक कन्या, जो दिखने में अत्यंत भयंकर थी। इसी कारण त्वष्टृपुत्र विश्वरूप राक्षस से इसका विवाह हुआ।

विष्णापु—एक ऋषिकुमार, जो विश्वक 'कृष्णिय' नामक अश्वियों के कृपापात्र ऋषि का पुत्र था। एक बार यह खो गया था, जिस समय अश्वियों ने इसे इसके पिता के पास पहुँचा दिया था (ऋ. १.११६.२३; ११७.७; ८. ८६.३; १०.६५.१२)।

विष्णु—जगत्संचालक एक आद्य देवता, जिसकी पूजा जगत्संहार का आद्य देवता माने गये रुद्र-शिव के साथ सारे भरतखंड में भक्तिभाव से की जाती है। वैदिक देवताविज्ञान में निर्दिष्ट देवताओं में से विष्णु एवं रुद्रशिव ये दो देवता ही ऐसे हैं कि, जिनके प्रति भारतीयों की श्रद्धा एवं भक्ति स्थलकालादि सारे बंधन लाँघ कर सदियों से अबाधित रही है। यही कारण है कि, ये देवता भारतीय जनता के केवल दैवत ही नहीं, बल्कि भारतीय संस्कृति का एक अविभाज्य भाग बन गये हैं।

मानवाकृति दैवतोपासना का आद्य प्रतीक—भारतीय दैवतशास्त्र के इतिहास में, विष्णु एवं रुद्र-शिव मानवाकृति दैवतोपासना के आद्य प्रतीक माने जाते है। इन देवताओं का मानवीकरण उत्तर वैदिककाल में हुआ, जब वेदों के द्वारा प्रणीत यज्ञयागात्मक उपासना-पद्धति अधिकाधिक तंत्रबद्ध, एवं नित्याचरण के लिए कठिन होती जा रही थी। इस अवस्था में, जिस प्रकार वेदों में निर्दिष्ट रुद्र-शिव का परिवर्धित मानवी स्वरूप शैव-उपासना पद्धति के द्वारा साकार हुआ, उसी प्रकार वेदों में निर्दिष्ट विष्णु देवता का परिवर्धित मानवी रूप वैष्णव-उपासना संप्रदायों के द्वारा आविष्कृत हुआ।

विष्णु देवता के इस नये परिवर्धित स्वरूप में, वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट विष्णु को, सात्वत लोगों के द्वारा पूजित वासुदेव से, एवं ब्राह्मणादि ग्रंथों में निर्दिष्ट जगत्संचालन के नारायण देवता से सम्मिलित करने का यशस्वी प्रयत्न किया गया। आगे चल कर पौराणिक साहित्य में विष्णु के अनेकानेक अवतारों की कल्पना प्रसृत हुई, जिसके अनुसार कृष्ण, राम दाशरथि आदि देवतातुल्य पुरुषों को विष्णु के ही अवतार मान कर, वैष्णव उपासना की कक्षा और भी संवर्धित की गयी। इस प्रकार ऋग्वेद में चतुर्थ श्रेणि का देवता माना गया विष्णु पौराणिक काल में एक सर्वश्रेष्ठ-देवता बन गया।

वैदिक साहित्य में—इस सांहित्य में निर्दिष्ट इन्द्र, वरुण, अग्नि आदि देवताओं की तुलना में विष्णु का स्थान काफ़ी कनिष्ठ प्रतीत होता है। ऋग्वेद के केवल पाँच हि सूक्त विष्णु को उद्देश्य कर रचे गये है। इन सूक्तों में इसे स्वतंत्र अस्तित्व अथवा पराक्रम प्रदान नहीं किये गये है, बल्कि सूर्यदेवता का ही एक प्रतिरूप इसे माना गया है, एवं इन्द्र के सहायक के नाते इसका वर्णन किया गया है।

स्वरूपवर्णन—एक बृहदाकार शरीरवाले नवयुवक के रूप में ऋग्वेद में इसका स्वरूपवर्णन प्राप्त है। इसे 'उरुगाय' (विस्तृत पादप्रक्षेप करनेवाला) एवं 'उरुक्रम' (चौड़े पग रखनेवाला) कहा गया है, एवं अपने इन पगों से यह सारे विश्व को नापता है, ऐसा निर्देश भी वहाँ किया गया है।

निवासस्थान—अपने तीन पगों के द्वारा विष्णु ने पृथ्वी अथवा पार्थिव स्थानों को नाप लिया था, ऐसे निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त हैं। इनमें से दो पग अथवा स्थान मनुष्य को दिखाई देते है, किन्तु इसका तीसरा अथवा उच्चतम पग मनुष्योंके दृक्कक्षा के बाहर है। यही नहीं, पक्षियों के उड़ान के भी बाहर है (ऋ. १.१५५.५)। विष्णु के इस उच्चतम स्थान (परमं पदम्) अग्नि, के उच्चतम स्थान के समान माना गया है। वहाँ अग्नि, विष्णु के रहस्यात्मक गायों (मेघ) की रक्षा करता है (ऋ. ५.३३)।

इस स्थान पर विष्णु का निवास रहता है, एवं पुण्यात्मा लोग आनंद से रहते हैं। वहाँ मधु का एक कूप है, जहाँ

देवतागण सुखपूर्वक रहते हैं (ऋ. १.१५४.५; ८.२९)। इसी तेजस्वी निवासस्थान में इन्द्र एवं विष्णु का निवास रहता है, एवं वहाँ पहुँचने की कामना प्रत्येक साधक करता है। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे तीन निवासस्थानोंवाला (त्रिषधस्थ) कहा गया है (ऋ. १.१५६.५)।

ऋग्वेद में अन्यत्र विष्णु को पर्वत पर रहनेवाला (गिरिक्षित्), एवं पर्वतानुकूल (गिरिष्ठा) कहा गया है (ऋ. १.१५४)।

पराक्रम—विष्णु के पराक्रम की अनेकानेक कथाएँ ऋग्वेद में प्राप्त है। इसे साथ लेकर इंद्र ने वृत्र का वध किया था (ऋ. ६.२०)। इन दोनों ने मिल कर दासों को पराजित किया, शंबर के ९९ दुर्गों को ध्वस्त किया, एवं वर्चिन् के दल पर विजय प्राप्त किया (ऋ. ७.९८)।

विष्णु के तीन पग--विष्णु का सब से बड़ा पराक्रम (विक्रम) इसके 'त्रिपदों' का है, जहाँ इसने तीन पगों में समस्त पृथ्वी, द्युलोक एवं अंतरिक्ष का व्यापन किया था (ऋ. १.२२.१७-१८)। अधिकांश युरोपीय विद्वान् एवं यास्क के पूर्वाचार्य और्णवाभ, विष्णु के इन त्रिपदों का अर्थ सूर्य का उदय, मध्याह्न, एवं सूर्यास्त मानते हैं।

किन्तु बर्गेन, मॅक्डोनेल आदि युरोपीय विद्वान एवं शाकपूणि आदि भारतीय आचार्य, उपर्युक्त प्रकृत्यात्मक व्याख्या को इस कारण अयोग्य मानते है कि, उसमें विष्णु के अत्युच्च तृतीय पग (परमं पदं) का स्पष्टीकरण प्राप्त नहीं होता। विष्णु के इस तृतीय पग को सूर्यास्त मानना अवास्तव प्रतीत होता है। इसी कारण इन अभ्यासकों के अनुसार, यद्यपि विष्णु एक सौर देवता है, फिर भी उसके तीन पगों का अर्थ, सूर्योदय, मध्याह्न, सूर्यास्त आदि न हो कर, पृथ्वी, अंतरिक्ष, एवं आकाश इन तीन लोगों का विष्णु के द्वारा किया गया व्यापन मानना ही अधिक योग्य होगा। ऐसे माने से विष्णु का 'परम पद' स्वर्लोक से समीकृत किया जा सकता है, जो समीकरण 'परम पद' के अन्य वर्णनों से मिलता जुलता है।

नियमबद्ध गतिमानता—पराक्रमी होने के साथ साथ, विष्णु अत्यंत गतिमान्, द्रुतगामी एवं तेजस्वी भी है। यह अग्नि, सोम, सूर्य, उषस् की भाँति विश्व के विधि-नियमों का पालन करनेवाला, एवं उन नियमों का प्रेरक भी है। इसी कारण, इसे 'क्षिप्र' 'एष', 'एवया', 'स्वर्दश,' 'विभूतद्युम्न' 'एवयावन्' कहा गया है (ऋ. १.१५५.५; १५६.१)।

एक सौरदेवता—ऋग्वेद में प्राप्त उपर्युक्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, अपने विस्तृत पगों के द्वारा समस्त विश्व को नियमित रूप से पार करनेवाले सूर्य के रूप में ही विष्णुदेवता की धारणा वैदिक साहित्य में विकसित हुई थी। प्रत्येकी चार नाम (ऋतु) धारण करनेवाले अपने नब्बे अश्वों (दिनों) को विष्णु एक घूमते पहिये के भाँति गतिमान् बनाता है, ऐसा एक रूपकात्मक वर्णन ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.१५५.६)। यहाँ साल के ३६० दिनों को प्रवर्तित करनेवाले सूर्यदेवता का रूपक स्पष्टरूप से प्रतीत होता है।

ब्राह्मण ग्रंथों में विष्णु का कटा हुआ मस्तक ही सूर्य बनने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १४.१.१.१०)। इसके हाथ में प्रवर्तित होनेवाला चक्र है, जो सूर्य के सदृश ही प्रतीत होता है (ऋ. ५. ६३)। विष्णु का वाहन गरुड़ है जिसे 'गरुत्मत्' एवं 'सुपर्ण' ये 'सूर्यपक्षी' अर्थ की उपाधियाँ प्रदान की गयी है (ऋ. १०.१४४.४)। विष्णु के द्वारा अपने वक्षःस्थल पर धारण किया गया कौस्तुभ मणि, इसके हाथ में स्थित पद्म, इसका पीतांबर एवं इसके 'केशव' एवं 'हृषीकेश' नामान्तर ये सारे इसके सौरस्वरूप की ओर संकेत करते हैं।

कई अभ्यासकों के अनुसार, विष्णुदेवता की आविष्कृति सर्वप्रथम 'सूर्यपक्षी' के रूप में हुई थी, एवं ऋग्वेद में निर्दिष्ट 'सुपर्ण' (गरुड पक्षी) यही विष्णु का आद्य स्वरूप था (ऋ. १०.१४९.३)। विष्णु के 'श्रीवत्स' 'कौस्तुभ' 'चतुर्भुजत्व' 'नाभिकमल' आदि सारे गुण-विशेष एवं उपाधियाँ, इसके इस पक्षीस्वरूप के ही द्योतक प्रतीत होते हैं।

भक्तवत्सलता--विष्णु के भक्तवत्सलता का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है। अपने सारे पराक्रम इसने त्रस्त मनुष्यों को आवास प्रदान करने के लिए एवं लोकरक्षा के लिए किये थे (ऋ. ६.४९.१३; ७.१००; १.१५५)। विष्णु की इसी भक्तवत्सलता का विकास आगे चल कर विष्णु के अनेकानेक अवतारों की कल्पना में आविष्कृत हुआ, जहाँ नानाविध स्वरूप धारण करने की श्रीविष्णु की अद्भुत शक्ति का भी सुयोग्य उपयोग किया गया (ऋ. ७.१००.१)।

विष्णु के अवतारों का सुस्पष्ट निर्देश यद्यपि ऋग्वेद में अप्राप्य है, फिर भी वामन एवं वराह अवतारों का धुँधलासा संकेत वहाँ पाया जाता है (ऋ. १.६१.७);

८.७७.१०)। इन्हीं अवतार-कल्पनाओं का विकास आगे चल कर ब्राह्मण ग्रंथों में किया हुआ प्रतीत होता है।

अवंध्यता का देवता—डॉ. दांडेकरजी के अनुसार, ऋग्वेद में निर्दिष्ट विष्णु अवंध्यता (फर्टिलिटी) का एक देवता है, एवं 'इंद्र-वृषाकपि-सूक्त' में निर्दिष्ट 'वृषाकपि' स्वयं विष्णु ही है (ऋ. १०.८६)। ऋग्वेद में अन्यत्र विष्णु को 'शिपिविष्ट' (गूढरूप धारण करनेवाला) कहा गया है, एवं इसकी प्रार्थना की गयी है 'अपने इस रूप को हमसे गुप्त न रक्खो' (ऋ. ७. १००.६)। यह भ्रुणों का रक्षक है, एवं गर्भाधान के लिए अन्य देवताओं के साथ इसका भी आवाहन किया गया है (ऋ. ७.३६)। एक अत्यंत सुंदर बालक गर्भस्थ करने के लिए भी इसकी प्रार्थना की गयी है (ऋ. १०. १८४.१)।

व्युत्पत्ति—विष्णु शब्द का मूल रूप 'विष' (सतत क्रियाशील रहना) माना जाता है। मॅक्डोनेल, श्रेडर आदि अभ्यासकों ने इसी मत का स्वीकार किया है, एवं उनके अनुसार सतत क्रियाशील रहनेवाले सौर स्वरूपी विष्णु को यह उपाधि सुयोग्य है। अन्य कई अभ्यासक विष्णु शब्द का मूल रूप 'विश्' (व्यापन करना) मानते है, एवं विश्व की उत्पत्ति करने के बाद विष्णु ने उसका व्यापन किया, यह अर्थ वे 'विष्णु' शब्द से ग्रहण करते है। पौराणिक साहित्य में भी इसी व्युत्पत्ति का स्वीकार किया गया है, जैसा कि विष्णुसहस्रनाम की टीका में कहा गया हैः–

चराचरेषु भूतेषु वेशनात् विष्णु रुच्यते।

डॉ. दांडेकरजी के अनुसार, विष्णु का मूल रूप 'वि+स्नु'था, एवं उससे हवा में तैरनेवाले पक्षी की ओर संकेत पाया जाता है (डॉ. दांडेकर, पृ. १३५)।

ब्राह्मण ग्रन्थों में—ऋग्वेद में कनिष्ठ श्रेणी का देवता माना गया विष्णु ब्राह्मण ग्रन्थों में सर्वश्रेष्ठ देवता माना गया प्रतीत होता है (श. ब्रा. १४.१.१.५)।

यज्ञविधि में सर्वश्रेष्ठ देवता विष्णु है, एवं सर्वाधिक कनिष्ठ देवता अग्नि है, ऐसा स्पष्ट निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त हैः—

अग्निर्वै देवानामवमो, विष्णुः परमः।
तदन्तरेण सर्वाः अन्याः देवताः॥

(ऐ. ब्रा. १.१)।

अथर्ववेद में यज्ञ को उष्णता प्रदान करने के लिए विष्णु का स्तवन किया गया है। ब्राह्मणों में विष्णु के तीन पगों का प्रारंभ पृथ्वी से होकर वे द्युलोक में समाप्त होते है, ऐसा माना गया है। विष्णु के परमपद को वहाँ मनुष्यों का चरम अभीष्ट, सुरक्षित शरणस्थल माना गया है (श. ब्रा. १.९.३)।

विष्णु का श्रेष्ठत्व—ब्राह्मण ग्रन्थों में प्राप्त विष्णु देवता के वर्णन से प्रतीत होता है कि, उस समय विष्णु एक सर्वश्रेष्ठ देवता मानना जाने लगा थी। उसी श्रेष्ठता का साक्षात्कार कराने के लिए अनेकानेक कथाएँ उन ग्रन्थों में रचायी गयी है, जिनमें से निम्न दो कथाएँ प्रमुख हैं।

एक बार देवों ने ऐश्वर्यप्राप्ति के लिए एक यज्ञ किया, जिस समय यह तय हुआ कि, जो यज्ञ के अंत तक सर्वप्रथम पहुँचेगा वह देव सर्वश्रेष्ठ माना जायेगा। उस समय यज्ञस्वरूपी विष्णु अन्य सारे देवों से सर्वप्रथम यज्ञ के अंत तक पहुँच गया, जिस कारण यह सर्वश्रेष्ठ देव साबित हुआ। आगे चल कर इसका धनुष टूट जाने के कारण, इसका सिर भी टूट गया, जिसने सूर्यबिंब का आकार धारण किया (श. ब्रा. १४.१.१)। उसी सिर को अश्विनों के द्वारा पुनः जोड़ कर, यह द्युलोक का स्वामी बन गया (तै. आ. ५.१.१–७)।

एक बार देवासुर-संग्राम में देवों की पराजय हुई, एवं विजयी असुरों ने पृथ्वी का विभाजन करना प्रारंभ किया। वामनाकृति विष्णु के नेतृत्त्व में देवगण असुरों के पास गया, एवं पृथ्वी का कुछ हिस्सा माँगने लगा। फिर विष्णु की तीन पगों इतनी ही भूमि देवों को देने के लिए असुर तैयार हुएँ। तत्काल विष्णु ने विराट रूप धारण किया, एवं अपने तीन पगों में तीनों लोक, वेद; एवं वाच् को नाप लिया (श. ब्रा. १.२.५; ऐ. ब्रा. ६.१५)।

अवतारों का निर्देश—उपर्युक्त वामनावतार की कथा के अतिरिक्त, विष्णु के वाराह अवतार का भी निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है, जहाँ वाराहरूपधारी विष्णु पृथ्वी का उद्धार करने के लिए जल से बाहर आने की कथा दी गयी है (श. ब्रा. १४.१.२)। वहाँ इस वाराह का नाम 'एमूष' बताया गया है।

विष्णु के दो अन्य अवतारों के स्रोत भी ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त है, किन्तु उन्हें स्पष्ट रूप से विष्णु के अवतार नही कहा गया है। प्रलयजल से मनु को बचानेवाला मत्स्य, एवं आद्यजल में भ्रमण करनेवाला कश्यप ये शतपथब्राह्मण में निर्दिष्ट दो अवतार पौराणिक साहित्य

में विष्णु के अवतार के नाते सुविख्यात हुए (श. ब्रा. १.८.१; ७.५१)।

उपनिषदों में— मैत्री उपनिषद् में, समस्त सृष्टि धारण करनेवाले अन्नपरब्रह्म को भगवान् विष्णु कहा गया है। कठोपनिषद् में साधक के आध्यात्मिक साधना का अंतिम 'श्रेयस्' विष्णु का परम पद बताया गया है। इन निर्देशों से प्रतीत होता है कि, उपनिषद् काल में, विष्णु इस सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ देवता माना जाने लगा था। डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, उपनिषदों में वर्णित 'परब्रह्म' की कल्पना वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट विष्णु के 'परमपद' की कल्पना से काफ़ी मिलतीजुलती है। इसी कल्पनासाधर्म्य के कारण, वैदिकोत्तर काल में विष्णु तत्त्वज्ञों के द्वारा पूजित एक सर्वमान्य देवता बन गया।

गृह्यसूत्रों में--आगे चल कर; विष्णु भारतीयों के नित्यपूजन का देवता बन गया। आपस्तंब, हिरण्यकेशिन्, पारस्कर आदि आचार्यों के द्वारा प्रणीत विवाहविधि में, सप्तपदी-समारोह के समय निम्नलिखित मंत्र वैदिक मंत्रो के साथ अत्यंत श्रद्धाभाव से पठन किया जाता हैः—

विष्णुस्त्वां आनयतु।
(पा. गृ. १.७.१)।

(इस जीवन में विष्णु सदैव तुम्हारा मार्गदर्शन करता रहे)।

महाभारत में--इस प्रकार विष्णु देवता का माहात्म्य बढ़ते बढ़ते, महाभारतकाल में यह समस्त सृष्टि का नियन्ता एवं शास्ता देवता माना जाने लगा। महाभारत में प्राप्त ब्रह्मदेव-परमेश्वर संवाद में, ब्रह्मा के द्वारा 'परमेश्वर' को नारायण, विष्णु एवं वासुदेव आदि नामों से संबोधित किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि, महाभारतकाल में ये तीनों देवता एकरूप हो कर, सम्मिलित स्वरूप में इन तीनों की उपासना प्रारंभ हुई थी (म. भी. ६१.६२)।

महाभारत में प्राप्त 'अनुगीता' में वासुदेव कृष्ण एवं श्रीविष्णु का साधर्म्य स्पष्टरूप से प्रतीत होता है। भगवद्गीता तक के समस्त वैष्णव साहित्य में एक ही एक 'वासुदेव कृष्ण' की उपासना प्रतिपादन की गयी है, एवं वहाँ कहीं भी विष्णु का निर्देश प्राप्त नहीं है; जो सर्वप्रथम ही अनुगीता में पाया जाता है।

भारतीय-युद्ध के पश्चात्, द्वारका आते हुए भगवान् श्रीकृष्ण की भेंट भृगुवंशीय उत्तंक ऋषि से हुई। भारतीय युद्ध के संहारसत्र की वार्ता सुन कर उत्तंक ऋषि अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं श्रीकृष्ण को शाप देने के लिए प्रवृत्त हुआ। इस समय कृष्ण ने उसे 'अनुगीता' के रूप में अध्यात्म-तत्त्वज्ञान कथन किया, एवं उत्तंक को अपना वहीं विराट स्वरूप दिखाया, जो भगवद्गीता-कथन के समय उसने अर्जुन को दिखाया था। किन्तु उस विराट स्वरूप को अनुगीता में 'विष्णु का सही स्वरूप' (वैष्णव रूप) कहा गया है, जिसे भगवद्गीता में 'वासुदेव का सही स्वरूप' कहा गया था (म. आश्व. ५३-५५)।

महाभारत में अन्यत्र युधिष्ठिर के द्वारा किये गये कृष्ण-स्तवन में कृष्ण को विष्णु का अवतार कहा गया है (म. शां. ४३)। महाभारत में बहुधा सर्वत्र विष्णु को 'परमात्मा' माना गया है, फिर भी विष्णुस्वरूपों में से नारायण एवं वासुदेव-कृष्ण के निर्देश वहाँ अधिकरूप में पाये जाते हैं।

विष्णु-उपासना के तीन स्रोत—जैसे पहले ही कहा गया है, महाभारत में एवं उस ग्रंथ के उत्तरकाल में प्रचलित विष्णु-उपासना में, वैदिक विष्णु में वासुदेव कृष्ण एवं नारायण ये दो देवता सम्मीलित किये गये है। विष्णु-उपासना में प्राप्त, वैदिक विष्णु के अतिरिक्त अन्य दो स्रोतों की संक्षिप्त जानकारी निम्न दी गयी हैः-

(१) **वासुदेव-कृष्ण उपासना**-वासुदेव उपासना का सर्वाधिक प्राचीन निर्देश पतंजलि के व्याकरणमहाभाष्य में प्राप्त है, जहाँ वासुदेव को एक उपासनीय देवता कहा गया है (महा. ४.३.९८)। इससे प्रतीत होता है कि, पाणिनि के काल में वासुदेव की उपासना की जाती थी।

राजपुताना में स्थित घोसुंडि ग्राम में प्राप्त २०० ई. पू. के शिलालेख में वासुदेव एवं संकर्षण की उपासना का निर्देश प्राप्त है। बेसनगर ग्राम में प्राप्त हेलिओदोरस के २०० ई. पू. के शिलालेख में भी वासुदेव की उपासना प्रीत्यर्थ एक गरुडध्वज की स्थापना करने का निर्देश प्राप्त है, जहाँ उसने स्वयं को भागवत कहा है। इससे प्रतीत होता है कि, पूर्व मालव देश में २०० ई. पू. में वासुदेव की देवता मान कर पूजा की जाती थी, एवं उसके उपासकों को भागवत कहा जाता था। हेलिओदोरस स्वयं तक्षशिला का युनानी राजदूत था, जिससे प्रतीत होता है कि, भागवतधर्म का प्रचार उत्तरी-पश्चिम प्रदेश में रहनेवाले युनानी लोगों में भी प्रचलित था। इसी प्रकार नानाघाट में प्राप्त ई. स. १ ली शताब्दी

के शिलालेख में भी वासुदेव एवं संकर्षण देवताओं का निर्देश प्राप्त है।

पतंजलि के महाभाष्य में वासुदेव–देवता का स्पष्टीकरण देते समय, यह वृष्णि-वंश में उत्पन्न क्षत्रिय राजा न हो कर, एक स्वतंत्र दैवी देवता है, ऐसा स्पष्टीकरण प्राप्त है। किन्तु फिर भी भागवत–संप्रदाय में सर्वत्र वासुदेव–कृष्ण को वृष्णि राजकुमार ही माना जाता है, जिस परंपरा का निर्देश पतंजलि के उपर्युक्त स्पष्टीकरण में प्राप्त है।

डॉ. भांडारकरजी के अनुसार, वासुदेव, संकर्षण एवं अनिरुद्ध ये तीनों वृष्णि अथवा सात्वत राजकुमार थे, जिनमें से वासुदेव की पूजा एक परमात्मन् के नाते पतंजलि-काल से सात्वत लोगों में की जाती थी। वासुदेव-कृष्ण की इसी पूजा का निर्देश मेगॅस्थिनीस के प्रवास-वर्णनों में प्राप्त है, जहाँ यमुना नदी के तट पर स्थित शूरसेन देश में इस देवता की उपासना प्रचलित होने का उल्लेख है। किन्तु इस प्राचीनकाल में केवल वासुदेव की ही पूजा की जाती थी।

२. नारायण उपासना––महाभारत के शांतिपर्व में 'नारायणीय' नामक उपाख्यान में नारायण की उपासना की सविस्तार जानकारी प्राप्त है। इस जानकारी केअ नुसार इस सृष्टि का परमात्मन नारायण है, जिसने अपने एकांतिक धर्म का कथन सर्वप्रथम नारद को किया था, जो आगे चल कर उसने 'हरिगीता' के द्वारा जनमेजय को कथन किया था। यही उपदेश कृष्णरूपधारी नारायण ने भारतीय युद्ध के प्रारंभ में अर्जुन को किया था। इस सात्वत धर्म का कथन स्वयं नारायण हर एक मन्वन्तर के प्रारंभ में करते है, एवं मन्वन्तर के अन्त में वह नष्ट हो जाता है। इस मन्वन्तर के प्रारंभ में भी नारायण ने अपने इस धर्म का निवेदन दक्ष, विवस्वत्, मनु एवं इक्ष्वाकु राजाओं को किया था।

इस धर्म में, यज्ञ में की जानेवाली पशुहिंसा एवं ऋषियों के द्वारा अरण्य में की जानेवाली तपस्या त्याज्य मानी गयी है, एवं इन दोनों उपासनाओं के बदले में नारायण की निष्ठापूर्वक भक्ति प्रतिपादन की गयी है। इसी संदर्भ में बृहस्पति के द्वारा की गयी यज्ञसाधना, एवं एकत, द्वित, एवं त्रित आदि के द्वारा हज़ारों वर्षों तक की गयी तपःसाधना निष्फल बतायी गयी है, एवं इन दोनों उपासना-पद्धति को त्याग कर हरि की भक्ति करनेवाला उपरिचर वसु राजा श्रेष्ठ बताया गया है।

इससे प्रतीत होता है कि, यज्ञमार्ग एवं तपस्यामार्ग छोड़ कर आरण्यकों में निर्दिष्ट मार्गों से निर्लेप भक्ति सिखाने वाला 'नारायण संप्रदाय' एक श्रेष्ठ श्रेणि का भक्तिसंप्रदाय है। बौद्ध एवं जैन धर्मों को प्रतिक्रिया स्वरूप में इस संप्रदाय का प्रथम जन्म हुआ, एवं इसीसे आगे चल कर वैष्णव संप्रदाय का विकास हुआ।

इस संप्रदाय में कंसवध के लिए मथुरा में उत्पन्न हुए कृष्ण को 'नारायण' अथवा 'वासुदेव' का अवतार कहा गया है। नारायण के इसी अवतार के द्वारा प्रणयन किये गये 'भगवद्गीता' के द्वारा वैष्णवधर्म का पुनरुत्थान हुआ, एवं एक देशव्यापी धार्मिक आंदोलन के रूप में यह संप्रदाय पुनराविष्कृत हुआ।

विष्णु देवता की उत्क्रान्ति––वैदिक साहित्य में एक सौर देवता के नाते वर्णन किया गया विष्णु, ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञदेवता बन गया। आगे चल कर यज्ञयागादि कर्म-काण्डों की लोकप्रियता जब कम होने लगी, तब इन कर्मकाण्डों से प्राप्त होनेवाला पुण्य केवल विष्णु की उपासना से ही प्राप्त होता है, ऐसी धारणा समाज में दृढमूल हुई (मै. उ. ६.१६)। इसी काल में ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश इस त्रिमूर्ति की कल्पना प्रचलित हुई, एवं इन तीन देवता क्रमशः सृष्टि के उत्पत्ति, स्थिति एवं लय की अधिष्ठात्री देवता बन गये (मै. उ. ४.५; शिखा. २)। इसी समय, विष्णु को ॐ कार उपासना में स्थान प्राप्त हुआ, एवं ॐ कार में से 'उ' कार के साथ श्रीविष्णु को समीकृत किया जाने लगा (नृसिंहोत्तर तापिनी. ३)। उपनिषदों में अन्यत्र विष्णु के नाम से एक गायत्रीमंत्र दिया गया है, एवं गोपीचंदन को 'विष्णुचंदन' कहा गया है (वासु. उ. २.१)।

पौराणिक साहित्य में––इस साहित्य में इसे सत्त्वगुण प्रधान देवता माना गया है, एवं जगत्संचालन एवं पालन का कार्य इसीके ही अधीन माना गया है। इसी कारण विभिन्न युगों में, यह नानाविध अवतार धारण कर पृथ्वी पर अवतीर्ण होता है, तथा दुष्टों के संहार का एवं पृथ्वी के पालन का कार्य निभाता है।

स्वरूपवर्णन-विष्णु का विस्तृत स्वरूपवर्णन पुराणों में प्राप्त है, जहाँ इसे चतुर्हस्त, एवं शंख, चक्र पद्म, गदाधारी बताया गया है। इसके आयुधों में शार्ङ्ग धनुष एवं नंदन खड्ग प्रमुख थे। इसके आभूषणों में पितांबर, वनमाला, किरीटकुंडल एवं श्रीवत्स प्रमुख थे। इसकी पत्नी का नाम लक्ष्मी है, जिसके साथ यह वैकुंठलोक में निवास करता

है। कभी-कभी यह क्षीरसागर में शेषनाग पर शयन करता है। विष्णु के इन्हीं गुणवैशिष्ट्यों को अंतर्भूत कर इसके सहस्र नाम बताये गये हैं, जो 'विष्णुसहस्रनाम' में उपलब्ध हैं।

विष्णुदेवता का निम्नलिखित वर्णन भागवत में प्राप्त है :-

क्षीरोदं मे प्रियं धाम, श्वेतद्वीपं च भास्वरम्॥
श्रीवत्सं कौस्तुभं मालां, गदां कौमोदकीं मम।
सुदर्शनं पाञ्चजन्यं सुपर्णं पतगेश्वरम्॥
शेषं मत्कलां सूक्ष्मां श्रियं देवीं मदाश्रयाम्।
(भा. ८.४.१८-२०)।

विष्णु की उपासना—स्कंद में विष्णु की उपासना सविस्तृत रूप में बतायी गयी है, जहाँ हर एक माह में उपासनायोग्य विष्णु के नाम, एवं उसके प्रिय फूल, एवं फल बताये गये हैं:—

विष्णु का नाम	फूल	फल
विष्णु	अशोक	अनार
मधुसूदन	मोगरा	नारियल
त्रिविक्रम	पाटली	आम
श्रीधर	कलंब	कटहल
हृषीकेश	करवीर	खजूर
पद्मनाभ	जाई	ताड़फल
दामोदर	मालती	रायआंवला
केशव	सूर्यकमल	वेलफल
नारायण	चंद्रविकासी कमल	नारंगी
माधव	जुही	पुगीफल
गोविंद	उंडली	करौंदा
?	?	जायफल

(स्कंद २.४४)।

विष्णु के अवतार—वैदिक साहित्य में केवल प्रजापति के ही अवतार दिये गये है। किन्तु पुराणों में विष्णु, रुद्र, गणपति, आदि सारे देवताओं के अवतार दिये गये हैं।

पुराणों में निर्दिष्ट इन अवतारों के अतिरिक्त, द्वादश देवासुर संग्रामों में विष्णु एवं रुद्र ने स्वतंत्र अवतार लिये थे (देव देखिये)।

महाभारत में प्राप्त नारायणीय में विष्णु के अवतारों की जानकारी दी गयी है, जहाँ विष्णु के द्वारा दुष्टों के संहारार्थ, एवं सज्जनों के रक्षणार्थ लिये गये 'पार्थिव' रूपों को ही केवल अवतार कहा गया है। वहाँ विष्णु के निम्नलिखित दस अवतार बताये गये हैं:-- वाराह, नारसिंह, वामन, परशुराम, राम दाशरथि, वासुदेव कृष्ण (सात्वत), हंस, कूर्म, मत्स्य, एवं कल्कि (म. शां. ३२६.८३५)।

वायु में विष्णु के अवतार दस बताये गये हैं; किन्तु वहाँ हंस, कूर्म एवं मत्स्य के स्थान पर दत्तात्रेय, वेदव्यास एवं एक अनामिक अवतार बताया गया है (वायु. ९८. २११; वराह. ११३)। उसी पुराण में अन्यत्र इन अवतारों की संख्या ७७ बतायी गयी हैं (वायु. ९७. ६४)।

भागवत में विष्णु के बाईस अवतार बताये गए है, जहाँ कपिल, दत्तात्रेय, ऋषभ, एवं धन्वंतरि को विष्णु के अवतार कहा गया है। इनमें से ऋषभ जैनों का प्रथम तीर्थंकर माना जाता है। मत्स्य में प्राप्त दशावतारों में नारायण, मानुष-सप्त, वेदव्यास एवं गौतम बुद्ध ये नये अवतार बताये गये हैं (मत्स्य. ४७.२३७-२५२)। वराह एवं नृसिंह में भी दशावतारों की जानकारी प्राप्त है (वराह. ११३; नृसिंह ५४.६)।

हरिवंशादि पुराणों में विष्णु के अवतारों की संख्या अनन्त बातायी गयी है—

प्रादुर्भावसहस्राणि अतीतानि न संशयः।
भूयश्चैव भविष्यन्तीत्येवमाह प्रजापतिः॥
(ह. वं. १.४१.११; ब्रह्म. २१३.१७)।

(विष्णु के अनन्त अवतार पूर्वकाल में हुए हैं, एवं उतने ही अवतार भविष्यकाल में होनेवाले है)।

नामावलि—महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त विष्णु के अवतारों की नामावलि निम्नप्रकार हैं :—

(१) **अजित** (विभु)—चाक्षुष एवं स्वारोचिष मन्वंतरों में तुषित के पुत्र के रूप में उत्पन्न (भा. ८.५.९)।

(२) **अनिरुद्ध**—(चतुर्व्यूह देखिये)।

(३) **अपान्तरतम सारस्वत व्यास**—कृष्ण द्वैपायन व्यास का पूर्वजन्म (म. शां. ३३७.३८-४०)।

(४) **इंद्र**—इसने अंधक, प्रह्लाद, विरोचन, वृत्र आदि असुरों का पराजय किया (पद्म. सृ. १३)।

(५) **उरुक्रम**—यह नाभि एवं मेरुदेवी का पुत्र था (भा. १.३.१३)।

(६) ऋषभ--दक्षसावर्णि मन्वंतर में उत्पन्न एक अवतार, जो नाभि एवं सुदेवी का पुत्र था (भा. २.७.९; ५.३; स्कंद. वैष्णव. १८)।

(७) कच--बृहस्पतिपुत्र (ह. वं. २.२२.३९)।

(८) कपिल--सांख्यशास्त्रप्रवर्तक एक आचार्य, जो स्वायंभुव मन्वतर में उत्पन्न हुआ था। इसके शिष्य का नाम आसुरि था (भा. १.३.१०; २.७.३; ३.२४; ८.१.६; म. शां. ३२६.६४; स्कंद. वैष्णव. १८)।

(९) कल्कि विष्णुयशस्--यह अवतार गंगा-यमुना नदियों के बीच में स्थित संभलग्राम में संपन्न होगा (म. शां. ३२६. ७२; अग्नि. १६.८-१०; ब्रह्म. २१३.१६४; ब्रह्मवै. प्रकृति. ७.५८; पद्म उ. २५२; भा. १.३.२५; २.७. ३८; ११. ४.२२; मत्स्य. ४७; वायु. ९८.१०४-११५; ह. वं. १. ४१.१६२-१६६; ब्रह्मांड. ३. ७३.१०४)।

(१०) कूर्म— म. शां. ३२६. ७२; भा. १. ३. १६; २.७.१३; ११.४.१८; ह. वं. २.२२.४२; विष्णु. १.४.८; अग्नि. ३)।

(११) कृष्ण—(अग्नि. १२; पद्म. उ.२४५-२५२; ब्रह्म. २१३.१५९-१६२; भा. १.३.२८; २.७.२६-३५; १०; ११.४.२२; ह. वं. १.४१.१५६-१६०; २.२२. ४८; वायु. ९८.९४-१०३; ब्रह्मांड. ३.७३.९३-९४)।

इसका वर्ण कृत, त्रेता, द्वापर, एवं कलियुगों में क्रमशः श्वेत, रक्त, पीत, एवं कृष्ण रहता है (म. व. १४८.१६-३३; शां. ३२६.८२-९३)।

(१२) चतुर्व्यूह—चार अवतारों का एक देवतासमूह, जिसमें निम्नलिखित अवतार शामिल थेः—

नाम	गुणवैशिष्ट्य	कार्य
वासुदेव	ज्ञान, ऐश्वर्यादि से युक्त	मुक्तिप्राप्ति
संकर्षण	ज्ञान-बलयुक्त	शास्त्रप्रवर्तन, संहार
प्रद्युम्न	ऐश्वर्य-वीर्ययुक्त	धर्मनयन, सृष्टिनिर्माण
अनिरुद्ध	शक्ति तेजोयुक्त	तत्त्वगमन एवं सृष्टिरक्षण

(म. शां. ३२६.३५-४३; ६८-६९; ब्रह्म. १८०; कूर्म. पूर्व. ५१.३७-५०; स्कंद. वैष्णव. वासुदेव. १८; रामानुजदर्शन पृ. ११५)।

इनके नाम नर, नारायण, हरि तथा कृष्ण भी प्राप्त है (म. शां. ३२१.८-१८)।

(१३) जामदग्न्य राम- -(परशुराम देखिये)।

(१४) दत्तात्रेय--(ब्रह्म. २१३.१०६; भा. १.३.११; मत्स्य. ४७; वायु. ९८.८९; ब्रह्मांड. ३.७३.८८; ह. वं. १.४१.१०४-११०; २.४८.१९-२०)।

(१५) धन्वंतरि—(भा. १.३.१७; २.७.२१)।

(१६) धर्मसेतु—धर्मसावर्णि मन्वंतर में उत्पन्न एक अवतार।

(१७) नरनारायण—धर्म एवं मूर्ति के पुत्र। हरि एवं कृष्ण इन्हींकी ही मूर्तियाँ हैं (भा. १.३.९; २.७.६; ११.४.६-१६; म. शां. ३२६.११; ९९)।

(१८) नरसिंह—(नृसिंह देखिये)।

(१९) नारद—सात्वतधर्मोपदेशक (भा. १.३.८; २.७.१९)।

(२०) नारायण—हिरण्यकशिपु का वधकर्ता (मत्स्य. ४७; ह. वं. २.७१.२४; वायु. ९८.७१-७३; ब्रह्मांड. ३. ७३.७२)।

(२१) नृसिंह—(म. स. ३५. परि. १.२१.३१०; शां. ३२६.७३; ३३७.३६; अग्नि. ४.३-४; ब्रह्म. २१३.४३-१०४; विष्णु. १.२०; भा. १.३.१८; २.७. १४; ७.८; ११.४.१९; ह. वं. १.४१.३९-७९; २.२२. ३७; ४८.१७; ७१.३३; ब्रह्मांड. ३.७२.७३; ७३.७४; वायु. ९८.७३; मत्स्य. ४७; पद्म. उ. २३८)।

(२२) पद्मनाभ—(ह. वं. २.७१.२९)।

(२३) परशुराम जामदग्न्य-(म. शां. ३२६.७७; अग्नि ४.१२-१९; पद्म. उ. २४१; ब्रह्म. २१३.११३-१२३; ह. वं. १.१४१.१११-१२१; २.८.२०; भा. १.३.२०; २.७.२२; मत्स्य. ४७; ब्रह्मांड. ३.७३.९०-९१; वायु. ९८.९१)।

(२४) पौष्करक--(ब्रह्म. २१३.३१; भा. १.३.१-२; ह. वं. १.४१.२७; म. स. परि. १.२१.१४०; शां. ३२६.६९)।

(२५) बलराम--(भा. १.३)।

(२६) बालमुकुंद--(म. व. १८६.११४-१२२; १८७.१-४७)।

(२७) बुद्ध—(म. शां. ३२६.७२; नृसिंह. ३६.९; अग्नि. १६.१-८; पद्म. उ. २५२; मत्स्य. ४७)।

(२८) बृहद्भानु—भौत्य मन्वंतर का एक अवतार।

(२९) मत्स्य--(म. शां. ३२६.७२; अग्नि. २; भा. १.३; २.७.१२; ११.४.१८; विष्णु १.४.८)।

(३०) मांधातृ चक्रवर्तिन्--(मत्स्य. ४७.१५; वायु. ९८.९०; ब्रह्मांड. ३.७३.९०)।

(३१) मोहिनी--(म. आ. १६.२९; भा. १.३.१७; ८.८; ह. वं. २.२२.४१; विष्णु. १.९.१०६-१०९)।

(३२) यज्ञ--पद्मनाभ का नामांतर (ह. वं. २.७१. ३०; भा. १.३.१२; ८.१.६)।

(३३) राम दाशरथि--(अग्नि. ५-११; वायु. ९८. ९२; म. व. २५७-२७६; शां. ३२६.७८-८१; व. १४६. १५७; भा. २.७.२५; ११.४.२१; ह. वं. १.४१.१२१-१५५; २.२२.४४; ४८.२२; ७१.३८; मत्स्य. ४७.२४; ब्रह्मांड. ३.७३.९१-९२; विष्णु. ४.४.४०; ब्रह्म. २१३. १२४-१५८; पद्म. उ. २४२-२४४)।

(३४) रामकृष्ण--(भा. १.३.२३)।

(३५) रुद्र--त्रिपुरदहन (पद्म. सृ. १९१)।

(३६) वराह--(म. स. ३५; परि. १.२१.१४०-१६९; शां. २०२.१५-२८; ३२६.७२; ३३७.३६; भा. १.३.७; २.७.१; ३.१३-१९; ११.७.१८; ह. वं. १. ४०; ४१.२८.३९; २.२२.४०; ४८.१२-१३; ७१.३३; विष्णु. १.४.८; अग्नि. ४.१-२; ब्रह्म. २१३.३२-७३; ब्रह्मांड. ३.७२.७३; पद्म. सृ. १३.१९४; उ. २३७)।

(३७) वामन--(म. स. ३५; परि १.२१.३७०; शां. ३२६.७४-७५; ब्रह्मांड. ३.७३.७७; ३३७.३६; भा. १. ३.१९; २.७.१७; ११.४.२०; ह. वं. १.४१.७९-१०६; २.२२.४३; ४८.१८; ७१.३४; मत्स्य. ४७; ब्रह्म. २१३.१०५; वायु. ९८.७४-७७. ब्रह्मांड. ३.७२.७३; पद्म. सृ. २३९-२४०; अग्नि. ४.७-११)।

(३८) विष्वक्सेन--ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(३९) वैकुण्ठ--रैवत एवं चाक्षुष मन्वन्तर का एक अवतार।

(४०) व्यास--(भा. ३.१.२१; २.७.३६; मत्स्य ४७; ह. वं. १.४१.१६१-१६२; वायु. ९८.९३; ब्रह्मांड. ३.७३.९२-९३; कूर्म. पूर्व. ५१.१-११; म. शां. ३३४ ९; ३३७.३८-४०; ५३-५७)।

(४१) शिव (भव) (ह. वं. २.२२.३९)।

(४२) संकर्षण--(भा. ५.२५.१)।

(४३) सत्य (सत्यसेन)-उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार।

(४४) सनक; (४५) सनत्कुमार; (४६) सनंदन, (४७) सनातन--(भा. २.७.५; ३.१२.४; ४.८.१)।

(४८) सार्वभौम--सावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(४९) सुयज्ञ--रुचि एवं आकृति का पुत्र (भा. २. ७.२)।

(५०) स्वधामन्--रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार।

(५१) हंस--(म. शां. ३२६.९४; भा. ११.१३)।

(५२) हयग्रीव--(म. शां. ३२६.५६; ९४; ३३५; भा. २.७.११; ११.४.१७)।

(५३) हरि--१. गजेन्द्रमोक्ष (भा. ८.२-४; १०); २. चतुर्व्यूह अवतारों में से एक (म. शां. ६२१.८-१७; नरनारायण देखिये)।

विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ--इस सांप्रदाय के निम्नलिखित ग्रन्थ प्रमुख हैं जो, 'पंचरत्न' सामुहिक नाम से प्रसिद्ध हैं। 'पंचरत्न' में समाविष्ट पाँच आख्यान महाभारत एवं भागवत में समाविष्ट है, एवं विष्णु के उपासक उसका नित्य पठन करते हैं:--

(१) भगवद्गीता-भगवान् कृष्ण ने यह अर्जुन को कथन की थी। यह वैष्णव सांप्रदायांतर्गत 'एकान्तिक धर्म' का आद्य ग्रन्थ माना जाता है।

(२) विष्णुसहस्त्रनाम--महाभारत के अनुशासन पर्व में विष्णुसहस्त्रनाम प्राप्त है, जिसमें १०७ श्लोकों में विष्णु के सहस्त्रनाम दिये गये है। इस ग्रंथ पर आद्य शंकराचार्य के द्वारा लिखित भाष्य उपलब्ध है। इसके अंतर्गत विष्णु के बहुत सारे नाम वैदिक साहित्य में से (ऋषिभिः परिगीतानि) उद्धृत किये गये हैं। इन्हीं नामों का कथन भीष्म के द्वारा युधिष्ठिर को एक सर्वश्रेष्ठ जपसाधन के रूप में किया गया था (म. अनु. १४९.१४-१२०)।

(३) अनुगीता--यह कृष्ण के द्वारा उत्तंक को कथन की गयी थी (म. आश्व. ५३-५५)।

(४) भीष्मस्तवराज--इसमें भीष्म के द्वारा की गयी विष्णु की स्तुति संग्रहित की गयी है।

(५) गजेंद्रमोक्ष-यह आख्यान शुक के द्वारा परिक्षित् राजा को सुनाया गया था, जहाँ उत्तम मन्वन्तर में हुए 'गजेंद्रमोक्ष' की कथा सुनायी गयी है (भा. ८.२-४)

उपर्युक्त आख्यानों के अतिरिक्त निम्नलिखित पुराणग्रन्थ भी विष्णु से संबंधित, अतएव 'वैष्णव' कहलाते हैं:--१. गरुडपुराण; २. नारदपुराण; ३. भागवतपुराण; ४. विष्णुपुराण, जिसमें विष्णुधर्मोत्तर पुराण भी समाविष्ट है (स्कंद. शिवरहस्यखंड. संभवकाण्ड.२.३४)।

विष्णु के तीर्थस्थान--महाभारत एवं पुराणों में विष्णु के निम्नलिखित तीर्थस्थानों का निर्देश प्राप्त हैः-

(१) **विष्णुपदतीर्थ**--यह कुरुक्षेत्र में था। यही नाम के अन्य तीर्थ भी भारतवर्ष में अनेक थे इस तीर्थ में स्नान कर के वामन की पूजा करनेवाला मनुष्य विष्णुलोक में जाता है (म. व. ८१.८७)।

(२) **विष्णुपद**-- गया में स्थित एक पवित्र पर्वत, जहाँ धर्मरथ ने यज्ञ किया था (मत्स्य. ४८.९३)। ब्रह्मांड में निषद पर्वतों में स्थित एक सरोवर का नाम भी 'विष्णुपद' दिया गया है (ब्रह्मांड. २.१८.६७)। इसी ग्रन्थ में अन्यत्र गंगानदी के उगमस्थान को 'विष्णुपद' कहा गया है, एवं ध्रुव का तपस्यास्थान भी वही बताया गया है (ब्रह्मांड. २.२१.१७६)।

कई प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय--श्रीविष्णु एवं वासुदेव-कृष्ण की उपासना के अनेकानेक सांप्रदाय ऐतिहासिक काल में उत्पन्न हुए थे, जिन्होंने विष्णु-उपासना का स्त्रोत सदियों तक जागृत रखने का महनीय कार्य किया।

विष्णु उपासना के निम्नलिखित सांप्रदाय प्रमुख माने जाते है :--१. रामानुज-सांप्रदाय (११ वीं शताब्दी); २. माध्व अथवा आनंदतीर्थ सांप्रदाय (११ वीं शताब्दी); ३. निंबार्क-सांप्रदाय (१२ वीं शताब्दी); ४. नामदेव एवं तुकाराम-सांप्रदाय (१३ वीं शताब्दी); ५. कबीर-सांप्रदाय (१५ वीं शताब्दी); ६. वल्लभ-सांप्रदाय (१५ वी शताब्दी); ७. चैतन्य-सांप्रदाय (१५ वीं शताब्दी); ८. तुलसीदास-सांप्रदाय (१६ वीं शताब्दी)।

२. एक धर्मशास्त्रकार, जिसके द्वारा रचित स्मृतिग्रंथ में संस्कार एवं आश्रमधर्म का प्रतिपादन किया गया है। यह स्मृति त्रेतायुग में कलापनगरी में कथन की गयी थी। इस स्मृति के पाँच अध्याय हैं, एवं व्यंकटेश्वर प्रेस के द्वारा मुद्रित 'अष्टादशस्मृतिसमुच्चय' में यह उपलब्ध है।

इसके 'वृद्धविष्णुस्मृति' का निर्देश संस्कारकौस्तुभ ग्रंथ में, एवं विज्ञानेश्वर के द्वारा किया गया है।

३. एक अग्नि, जो भानु (मनु) नामक अग्नि का तृतीय पुत्र था। यह अंगिरस्‌गोत्रीय था, एवं इसे धृतिमत् नामान्तर भी प्राप्त था। दर्शपौर्णमास नामक यज्ञ में इसे हविष्य समर्पण किया जाता है (म. व. २११.१२)।

४. आमूतरजस् देवों में से एक।

५. एक सूर्य, जो कार्तिक माह में अश्वतर नाग, रंभा अप्सरा, गंधर्व एवं यक्षों के साथ घूमता है। इसे उरुक्रम नामान्तर भी प्राप्त था (भा. १२.११.४४; उरुक्रम देखिये)।

६. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (मत्स्य. १९५.२०)।

७. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा, जो कर्ण के द्वारा मारा गया था।

८. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

९. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

१०. भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

विष्णु प्रजापति--एक प्रजापति, जिसके मानसपुत्र का नाम विरजस् था। महाभारत में विरजस् राजा का वंश निम्नप्रकार दिया गया है :--विरजस्--कीर्तिमत्--कर्दम--अनंग--अतिबल (पत्नी-सुनीथा)--वेन--पृथु वैन्य (म. शां. ५९.९३-९९)।

विष्णु प्राजापत्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८४)।

विष्णुगुप्त चाणक्य--एक आचार्य, जो कौटिलीय 'अर्थशास्त्र'नामक सुविख्यात राजनैतिक ग्रंथ का कर्ता माना जाता है।

यह एक ऐसा अद्भुत राजनीतिज्ञ था कि, एक ओर इसने मगध देश के नंद राजाओं के द्वारा शासित राजसत्ता को विनष्ट कर, उसके स्थान पर मौर्य साम्राज्य की प्रतिष्ठापना की, एवं दूसरी ओर 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' जैसे राजनीतिशास्त्रविषयक अपूर्व ग्रंथ की रचना कर, संस्कृत साहित्य के इतिहास में अपना नाम अमर कर दिया। (विष्णु. ४.२४.६-७; भा. १२.१.१२-१३)।

इसी कारण कौटिलीय अर्थशास्त्र के अन्त में इसने स्वयं के संबंध में जो कथन किया है वह योग्य प्रतीत होता हैः-

येन शास्त्रं च शस्त्रं च नंदराजगता च भूः।
अमर्षेणोद्धृतान्याशु तेन शास्त्रमिदं कृतम्॥
(कौ. अ. १५.१.१८०)।

(नंदराजाओं जैसे दुष्ट राजवंश के हाथ में गये पृथ्वी, शस्त्र एवं शास्त्रों को जिसने विमुक्त किया, उसी आचार्य के द्वारा इस ग्रंथ की रचना की गयी है)।

राजनीतिशास्त्र जैसे अनूठे विषय की चर्चा करने के कारण ही केवल नही, बल्कि चंद्रगुप्त मौर्यकालीन भारतीय शासनव्यवस्था की प्रामाणिक सामग्री प्रदान करने के कारण, 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है। उसकी तुलना मेगॅस्थिनिस के द्वारा लिखित 'इंडिका' से ही केवल हो सकती है, जो ग्रंथ

अपने संपूर्ण स्वरूप में नहीं, बल्कि टूटेफूटे एवं पुनरुद्धृत रूप में आज उपलब्ध है।

नाम—यद्यपि इसे चाणक्य, कौटिल्य आदि नामान्तर प्राप्त थे, फिर भी इसका पितृप्रदत्त नाम विष्णुगुप्त था। ई. स. ४०० में रचित 'कामंदकीय नीति-सार' में इसका निर्देश विष्णुगुप्त नाम से ही किया गया है :—

नीतिशास्त्रामृतं धीमानर्थशास्त्रमहोदधेः।
समुद्दध्रे नमस्तस्मै विष्णुगुप्ताय वेधसे॥

(अर्थशास्त्ररूपी समुद्र से जिसने नीतिशास्त्ररूपी नवनीत का दोहन किया, उस विष्णुगुप्त आचार्य को मैं प्रणाम करता हूँ)।

चणक नामक किसी आचार्य का पुत्र होने के कारण, इसे संभवतः 'चाणक्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। कौटिलीय अर्थशास्त्र में इसने स्वयं का निर्देश अनेक बार 'कौटिल्य' नाम से किया है, जो संभवतः इसका गोत्रज नाम था। कई अभ्यासकों के अनुसार, यह राजनीतिशास्त्र में कुटिल नीति का पुरस्कर्ता था, जिस कारण इसे 'कौटिल्य' नाम प्राप्त हुआ था। म. म. गणपतिशास्त्री के अनुसार, इसके नाम का सही पाठ 'कौटल्य' था, जो इसके 'कुटल' नामक गोत्रनाम से व्युत्पन्न हुआ था।

नामांतर--हेमचंद्र के 'अभिधानचिंतामणि' में इसके निम्नलिखित नामांतर प्राप्त हैं:—वात्स्यायन, मल्लनाग, कुटिल, चणकात्मज, द्रामिल, पक्षिलस्वामिन्, विष्णुगुप्त, अंगुल (अभिधान. ८५३-८५४)।

जीवनवृत्तांत--इसके जीवन के संबंध में प्रामाणिक सामग्री अनुपलब्ध है, एवं जो भी सामग्री उपलब्ध है वह प्रायः सारी आख्यायिकात्मक है। उनमें से बहुतसारी सामग्री विशाखदत्त कृत 'मुद्राराक्षस' नाटक में प्राप्त है, जहाँ यह 'ब्राह्मण' चित्रित किया गया है, एवं महापद्म नंद राजा के द्वारा किये अपमान का बदला लेने के लिए, इसने चंद्रगुप्त मौर्य को मगध देश के राजगद्दी पर प्रतिष्ठापित करने की कथा वहाँ प्राप्त है।

कौटिलीय अर्थशास्त्र—यह एक राजनीतिशास्त्रविषयक ग्रंथ है, जिसमें राज्यसंपादन एवं संचालन के शास्त्र को 'अर्थशास्त्र' कहा गया है। इस ग्रंथ में पंद्रह अधिकरण, एक सौ पचास अध्याय, एक सौ अस्सी प्रकरण एवं छः हजार श्लोक है। यह ग्रंथ प्रायः गद्यमय है, जिस कारण इसकी श्लोकसंख्या अक्षरों की गणना से दी गयी है।

कौटिल्य के अर्थशास्त्र में राज्यशासन से संबंधित समस्त अंगोपांगों का सविस्तृत परामर्ष लिया गया है। इस ग्रंथ में चर्चित प्रमुख विषय निम्नप्रकार हैं, जो उसमें प्राप्त अधिकरणों के क्रमानुसार दिये गये हैं:— १. विनयाधिकारिक (राजा के लिए सुयोग्य आचरण); २. अध्यक्षप्रचार (सरकारी अधिकारियों के कर्तव्य); ३. धर्मस्थीय (न्यायविधि); ४. कंटकशोधन (राज्य की अंतर्गत शांति एवं सुव्यवस्था); ५. योगवृत्त (फितुर लोगों का बंदोबस्त); ६. मंडलयोनि (राजा, अमात्य आदि 'प्रकृतियों' के गुणवैशिष्ट्य); ७. षाड्गुण्य (पर-राष्ट्रीय राजकारण); ८. व्यसनाधिकारिक (प्रकृतियों के व्यसन एवं उनका प्रतिकार); ९. अभियास्यत्कर्म (युद्ध की तैयारी); १०. सांग्रमिक (युद्धशास्त्र); ११. संघवृत्त (राज्य के नानाविध संघटनाओं के साथ व्यवहार); १२. आबलीयस (बलाढ्य शत्रु से व्यवहार); १३. दुर्गलंभोपाय (दुर्गों पर विजय प्राप्त करना); १४. औपनिषदिक (गुप्तचरविद्या); १५. तंत्रयुक्ति (अर्थशास्त्र की युक्तियाँ)।

इस प्रकार इस ग्रंथ में, राज्यशासन के अंतर्गत पर-राष्ट्रीय, युद्धशास्त्रीय, आर्थिक, वैधानिक, वाणिज्य आदि समस्त अंगों का सविस्तृत परामर्ष लिया गया है, यहाँ तक की, राज्य में उपयोग करने योग्य वजन, नाप एवं काल-मापन के परिमाण भी वहाँ दिये गये हैं।

भाषाशैली--इस ग्रंथ की भाषाशैली आपस्तंब, बौधायन आदि सूत्रकारों से मिलती जुलती है। इस ग्रंथ में उपयोग किये गये अनेक शब्द पाणिनीय व्याकरण, एवं प्रचलित संस्कृत भाषा में अप्राप्य है। उदाहरणार्थ, इस ग्रंथ में प्रयुक्त 'प्रकृति' (सम्राट्); 'युक्त' (सरकारी अधिकारी); 'तत्पुरुष' (नोकर); 'अयुक्त' (बिनसरकारी नोकर) ये शब्द संस्कृत भाषा में अप्राप्य, एवं केवल अशोक शिलालेख में ही निर्दिष्ट हैं।

पूर्वाचार्य--अपने ग्रंथ में इसने अर्थशास्त्रसंबंधी ग्रंथ-रचना करनेवाले अनेकानेक पूर्वाचार्यों का निर्देश किया है, एवं लिखा है, 'पृथिवी की प्राप्ति एवं उसकी रक्षा के लिए पुरातन आचार्यों ने जितने भी अर्थशास्त्रविषयक ग्रंथों का निर्माण किया है, उन सब का सार-संकलन कर प्रस्तुत अर्थशास्त्र की रचना की गयी है' (कौ. अ. १.१.११)।

इसके द्वारा निर्देशित पूर्वाचार्यों में मनु, बृहस्पति, द्रोण-भरद्वाज, उशनस्, किंजल्क, कात्यायन, घोटकमुख,

बहुदंतीपुत्र, वातव्याधि, विशालाक्ष, पाराशर, पिशुन (नारद), शुक्राचार्य, कौणपदन्त प्रमुख हैं। महाभारत के अनुसार, प्रारंभ में धर्म, अर्थ एवं काम इन तीन शास्त्रों का एकत्र विचार 'त्रिवर्गशास्त्र' नाम से किया जाता था। इस त्रिवर्गशास्त्र का आद्य निर्माता ब्रह्मा था, जिसका संक्षेप सर्वप्रथम शिव ने 'वैशालाक्ष' नामक ग्रंथ में किया, एवं उसी ग्रंथ का पुनःसंक्षेप इंद्र ने 'बाहुदंतक' नामक ग्रंथ में किया। आगे चल कर बृहस्पति ने इसी ग्रंथ का पुनः एक बार संक्षेप किया, जिसमें अर्थवर्ग को प्रधानता दी गयी थी।

ये सारे ग्रंथ 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के रचनाकाल में यद्यपि अनुपलब्ध थे, फिर भी उशनस् का 'औशनस अर्थशास्त्र,' पिशुन का 'अर्थशास्त्र' एवं द्रोण भारद्वाज का 'अर्थशास्त्र' उस समय उपलब्ध था, जिनके अनेक उद्धरण 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में प्राप्त है (कौ. अ. १.७; १५-१६; ५.६; ८.३)।

कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव--प्राचीन भारतीय साहित्य में से वात्स्यायन, विशाखदत्त, दण्डिन्, बाण, विष्णुशर्मन् आदि अनेकानेक ग्रंथकार एवं मल्लिनाथ, मेधातिथिन् आदि टीकाकार 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' से प्रभावित प्रतीत होते है, जो उनके ग्रंथों में प्राप्त उद्धरणों से स्पष्ट है। दण्डिन् के 'दशकुमारचरित' में प्राप्त निर्देशों से प्रतीत होता है कि, राजकुल में उत्पन्न राजकुमारों के अध्ययनग्रंथों में भी इस ग्रंथ का समावेश होता था (दशकुमार. ८)।

आगे चल कर 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' में प्रतिपादित व्यापक राजनीतिशास्त्रविषयक सिद्धान्तों को लोग भूल बैठे, एवं इस ग्रंथ में प्राप्त विषप्रयोगादि कुटिल उपचारों के लिए ही इस ग्रंथ का पठनपाठन होने लगा। इस कारण, इस ग्रंथ को कुख्याति प्राप्त हुई, एवं समाज में इसकी प्रतिष्ठा कम होने लगी। इसी कारण, बाणभट्ट ने अपनी 'कादम्बरी' में इस ग्रंथ को अतिनृशंस कार्य को उचित माननेवाला एक हीन श्रेणी का ग्रंथ कहा है।

यही कारण है कि, मेधातिथिन् के उत्तरकालीन ग्रंथों में 'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के कोई भी उद्धरण प्राप्त नहीं होते है, जो इस ग्रंथ के लोप का प्रत्यंतर माना जा सकता है।

'कौटिलीय अर्थशास्त्र' के आधुनिक कालीन पुनरुद्धार का श्रेय सुविख्यात दाक्षिणात्य पण्डित डॉ. श्यामशास्त्री को दिया जाता है, जिन्होंने इस ग्रंथ की प्रामाणिक आवृत्ति सानुवाद रूप में ई. स. १९०९ में प्रथम प्रकाशित की थी।

मेगॅस्थिनिस के 'इंडिका' से तुलना--कौटिलीय अर्थशास्त्र एवं मेगॅस्थिनिस के 'इंडिका' में अनेक साम्यस्थल प्रतीत होते है, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं:--१. इन दोनों ग्रंथों में गुलाम लोगों का निर्देश प्राप्त हैं; २. राज्य की सारी जमीन का मालिक स्वयं राजा है, जो उसे अपने प्रजाजनों को उपयोग करने के लिए देता है; ३. इन दोनो ग्रंथों में निर्दिष्ट मजदूर एवं व्यापार विषयक विधि-नियम एक सरीखे ही है।

इन साम्यस्थलों से प्रतीत होता है कि, उपर्युक्त दोनों ग्रंथों का रचनाकाल एक ही था, जो मनु, नारद, याज्ञवल्क्य आदि स्मृतियों से काफ़ी पूर्वकालीन था। इस प्रकार इस ग्रंथ का रचनाकाल ३०० ई. पू. माना जाता है।

विष्णुदास--एक ब्राह्मण, जो विष्णु का परमभक्त था (चोल. २. देखिये)।

विष्णुधर्मन्--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक।

विष्णुयशस् कल्कि--विष्णु का दसवाँ अवतार, जो वर्तमान युग के अंत के समय सम्भल नामक ग्राम में अवतीर्ण होनेवाला है (भा. १.३.२५; १२.२.१८)। विष्णु का यह अवतार अश्वारूढ एवं खड्गधारी होगा।

विष्णु का यह अवतार याज्ञवल्क्य के पुरस्कार से उत्पन्न होनेवाला है। यह अत्यंत पराक्रमी, महात्मा, सदाचारी एवं प्रजाहितदक्ष होगा। इच्छा करते ही नाना प्रकार के अस्त्र, वाहन, कवच इसे प्राप्त होंगे।

अवतार-हेतु--कलियुग का अंत करने के लिए इसका प्रादुर्भाव होगा। यह म्लेच्छों का एवं बौद्धधर्मियों का संहार करेगा, एवं इस प्रकार नये सत्ययुग का प्रवर्तन करेगा (म. व. १८८.८९-९३)।

इसके अश्व का नाम देवदत्त होगा। इस अश्व की सहायता से यह अश्वमेध करेगा, एवं सारी पृथ्वी विधिपूर्वक, ब्राह्मणों को दे देगा। यह सदैव दस्युवध में तत्पर रह कर, समस्त पृथ्वी पर फिरता रहेगा। अपने द्वारा जीते हुए देशों में यह कृष्ण, मृगचर्म, शक्ति, त्रिशूल आदि अस्त्रशस्त्रों की स्थापना करेगा।

इसके द्वारा दस्युओं का नाश होने पर अधर्म का भी नाश हो जायेगा, एवं धर्म की वृद्धि होने लगेगी। इस प्रकार सत्ययुग का प्रारंभ होगा, एवं पृथ्वी के सभी मनुष्य सत्यधर्मपरायण होंगे। सत्ययुग के इस प्रारंभकाल में, चंद्र, सूर्य, गुरु एवं शुक्र ये चारों ग्रह एक राशि में आयें-

गे। इस प्रकार सत्ययुग की स्थापना करनेवाला विष्णुयशस् चक्रवर्ती एवं युगप्रवर्तक सम्राट माना जाएगा।

इस प्रकार अपना अवतारकार्य समाप्त करनेपर यह वन में तपस्या के लिए चला जायेगा। किन्तु इस जगत् के निवासी इसके शील स्वभाव का अनुकरण करते ही रहेंगे (कूर्म. १.३१.१२; वायु. ९८.१०४-११५ ब्रह्मांड. ३.७३.१०४-११०; ह. वं. १.४१.६४-६७)।

विष्णुरात--परिक्षित् राजा का नामान्तर (भा. १. १२.१६)।

विष्णुवृद्ध--(सू. इ.) एक राजा, जो त्रसदस्यु राजा का पुत्र था। यह पहले क्षत्रिय था, किन्तु आगे चल कर तपस्या के कारण ब्राह्मण हुआ (ब्रह्मांड. ३.६६.८८; वायु. ९१.११४)। इसके वंशज अंगिरस् कुलोत्पन्न क्षत्रिय ब्राह्मण बन गये (वायु. ६५.१०७)।

विष्णुशर्मन्--एक राजा, जो शिवशर्मन् राजा का पुत्र था। इसने इंद्र को अपनी शरण में लाया था (पद्म. भू. ३) 'निगमोद्बोधक तीर्थ' में स्नान करने के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. उ. २००-२०५)।

विष्णुसावर्णि--भौत्य मनु का नामान्तर।

विष्णुसिद्धि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद--'विष्णुवृद्ध'।

विष्णुहरि--एक विष्णुभक्त (स्कंद. २.८.१)।

विष्वक्सेन--एक आचार्य, जो नारद का शिष्य था।

२. इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.१३)।

३. विष्णु का एक पार्षद (भा. ८.२१.२६)।

४. (सो. पूरु.) एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम गो था। मत्स्य में इसे योगसूनु राजा का पुत्र कहा गया है। इसने जैगीषव्य ऋषि के मार्गदर्शन में 'योगतंत्र' नामक ग्रंथ की रचना की थी।

इसके पुत्र का नाम उदक्स्वन था (भा. ९.२१.२५)। ब्रह्मदत्त राजा ने इसे अपना राज्य प्रदान किया, एवं वह वन में चला गया।

५. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर में उत्पन्न होनेवाला एक अवतार।

६. एवं चौदहवाँ मनु, जो भविष्यकाल में होनेवाला है (मत्स्य. ९; पद्म. सृ. ५)।

विश्वगश्व--(सू. इ.) एक राजा, जो पृथु राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अद्रि था (म. आ १९३. २-३)।

विश्वगश्व गौरव--एक पूरुवंशीय सम्राट, जिसे अर्जुन ने उत्तरदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.१३)।

विश्रुत--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार देवमीढ राजा का पुत्र। विष्णु एवं वायु में इसे विबुध कहा गया है। इसके पुत्र का नाम महाधृति था (भा. ९.१३.१६)।

विसर्जन--एक यदु-जाति, जिसका यादवी युद्ध में संहार हुआ (भा. ११.३०.१८)।

विस्फूर्जन--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

विहंग--ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ ५२.१०)।

विहंगम--धर्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

२. खर राक्षस का एक अमात्य (वा. रा. अर. २३. ३१)।

विहव्य--एक ऋषि, जो गृत्समदवंशीय वर्चस् ऋषि का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वितथ्य था (म. अनु. ३०.६२)।

विहव्य आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १२८)।

विहुंड--एक राक्षस, जो हुंड राक्षस का पुत्र था। इसके पिता हुंड का नहुष के द्वारा वध हुआ था। इस कारण यह अत्यंत क्रोधित हुआ, एवं नहुषवध के हेतु शिव की तपस्या करने लगा। किन्तु विष्णु ने सुंदर स्त्री का रूप धारण कर, इसकी तपस्या में बाधा उत्पन्न की। अन्त में पार्वती के द्वारा इसका वध हुआ (पद्म. भू. ११८-१२१)।

वीतहव्य--(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार सुनय राजा का पुत्र था। भागवत में इसे शुनक राजा का पुत्र कहा गया है।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो हैहयवंशीय तालजंघ राजा का पुत्र था। यह सुविख्यात हैहय सम्राट कार्तवीर्य अर्जुन का प्रपौत्र, एवं जयध्वज राजा का पौत्र था। इसे कुल सौ भाई थे।

परशुराम के द्वारा किये गये क्षत्रियसंहार के समय यह अपना राज्य छोड़ कर भाग गया। रास्ते में इसने अपने पिता तालजंघ को देखा, जो परशुराम के बाणों से आहत हुआ था। उसे रथ पर बिठा कर यह हिमालय प्रदेश में में गया, एवं वहीं एक दर्रे में छिप गया।

आगे चल कर क्षत्रियसंहार से परशुराम के निवृत्त होने पर, यह हिमालय से लौट आया, एवं इसने माहिष्मती नामक नगरी की स्थापना की। पश्चात् इसने अयोध्या पर आक्रमण किया, एवं वहाँके इक्ष्वाकुवंशीय फल्गुतंत्र राजा को पराजित किया। आगे चल कर, इसने काशि देश पर आक्रमण किया, किन्तु यह उस देश पर विजय न पा सका, एवं इसका एवं काशिराजाओं का युद्ध पीढ़ियों तक चलता रहा।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे हैहय कहा गया है, एवं इसकी दस पत्नियों का निर्देश वहाँ प्राप्त है। अपनी इन पत्नियों से इसे प्रत्येक से दस पुत्र उत्पन्न हुए, जिन्होंने काशि देश के हर्यश्व, सुदेव एवं दिवोदास राजाओं को पराजित किया।

आगे चल कर, काशि के दिवोदास राजा को भरद्वाज मुनि के कृपाप्रसाद से प्रतर्दन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। प्रतर्दन ने इसके सारे पुत्रों का वध किया, एवं इस पर भी इतना जोरदार आक्रमण किया कि, यह भृगु ऋषि के आश्रम में जा कर छिप गया।

इसका पीछा करते हुए प्रतर्दन भृगुऋषि के आश्रम में पहुँच गया, एवं इसे ढूँढने लगा। इस पर भृगुऋषि ने प्रतर्दन से कहा कि, उसके आश्रम में रहनेवाले सारे लोग ब्राह्मण ही है, एवं वहाँ क्षत्रिय कोई भी नहीं है। पश्चात् भृगुऋषि के कहने पर इसने अपने क्षत्रियधर्म को छोड़ दिया, एवं यह ब्राह्मण बन गया।

तपस्वी—आगे चल कर भृगुऋषि के कृपाप्रसाद से यह ब्रह्मर्षि बन गया, एवं इसे गृत्समद नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. ३०.५७-५८)। इसका गोत्र भार्गव था एवं यह उस गोत्र का मंत्रकार भी था। वीतहव्य नामक एक जीवन्मुक्त ऋषि की कथा वसिष्ठ ने राम से कथन की थी, जो संभवतः इसीकी ही होगी। कई अभ्यासक, वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट वीतहव्य आंगिरस नामक ऋषि एवं यह दोनों एक ही मानते है।

वीतहव्य आंगिरस—एक राजा, जो ऋग्वेद के कई सूक्तों का प्रणयिता माना जाता है (ऋ. ६.१५)। ऋग्वेद में सुदास राजा के समकालीन के रूप में, एवं भरद्वाज ऋषि के साथ साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ६.१५.२-३; ७.१९.१३)।

अथर्ववेद में, एक गाय (अथवा ब्राह्मण स्त्री) का हरण करने के कारण, इसका एवं इसके 'वैतहव्य' नामक अनुगामियों का पराजय होने की एक संदिग्ध कथा प्राप्त है। वहाँ उस गाय का संबंध जमदग्नि एवं असित ऋषियों के साथ निर्दिष्ट है (अ. वे. ५.१७.६-७; १८.१०-१२)। किन्तु इस कथा का सही अर्थ अस्पष्ट है।

अथर्ववेद में अन्यत्र इसे सृंजयों का राजा बताया गया है, एवं इसीके द्वारा भृगुऋषि का वध होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (अ. वे. ५.१९.१)। संभवतः इस कथा का संकेत परशुराम के पिता जमदग्नि भार्गव की मृत्यु से होगा, एवं इस कथा में निर्दिष्ट वीतहव्य हैहयवंशीय होगा। यदि यह सच हो, तो हैहयवंशीय वीतहव्य एवं यह दोनों एक ही होंगे (वीतहव्य २. देखिये)।

वीतहव्य श्रायस—एक राजा (तै. सं. ५.६; ५.३; का. सं. २२.३; पं. ब्रा. २५.१६.३)। यह संभवतः वीतहव्य आंगिरस के वंश में ही उत्पन्न हुआ होगा। पंचविंश ब्राह्मण में इसे 'निर्वासित जीवन व्यतीत करनेवाला' (निरुद्ध) राजा बताया गया है (पं. ब्रा. ९.१.९)। किन्तु भाष्यकार इसे एक राजा नहीं, बल्कि एक ऋषि मानते है।

संतति प्रदान करनेवाले यज्ञ की प्रशंसा करते समय, इसका निर्देश उदाहरण के रूप में प्राप्त है, जहाँ ऐसा ही एक यज्ञ करने के कारण इसे १००० पुत्र उत्पन्न होने की जानकारी दी गयी है।

वीति—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक अग्निविशेष।

वीतिमत्—एक राजा, जो रैवत मनु का पुत्र था (पद्म. सृ. ७)।

वीतिहोत्र—हैहयवंशीय वीतहव्य राजा का नामान्तर (वीतहव्य २. देखिये)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रियव्रत एवं बर्हिष्मती के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्रों के नाम रमणक एवं धातकि थे (भा. ५.१.२५;२०.३१)।

३. (सु. नरि.) एक राजा, जो इंद्रसेन राजा का पुत्र, एवं सत्यश्रवस् राजा का पिता (भा. ९.२.२०)।

४. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो सुकुमार राजा का पुत्र, एवं भर्ग राजा का पिता था (भा. ९.१७.९)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'वैनहोत्र' एवं 'वेणुहोत्र' कहा गया है।

५. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था।

वीर—एक असुर, जो कश्यप एवं दनायु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.३२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक।

३. एक अग्नि, जो भरद्वाज एवं वीरा के पुत्रों में से एक था (म. व. २०९.९-१०)। इसे 'रथप्रभु' 'रथध्वत्' एवं 'कुंभरेतस्' नामान्तर भी प्राप्त थे। इसकी पत्नी का नाम सरयु था, जिससे इसे सिद्धि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. व. २०९.११)। सोमदेवता के साथ द्वितीय 'आज्यभाग' इसी को ही प्राप्त होता है।

४. एक अग्नि, जो पांचजन्य अग्नि का पुत्र था (म. व. २१०.९)।

५. एक राजा, जो कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४.७)।

६. (सो. अनु) अनुवंशीय पुरंजय राजा का नामान्तर।

७. तामस मन्वन्तर का एक देव।

८. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था।

९. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक था।

१०. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

११. एक राजा, जो अविक्षित्पत्नी लीलावती का पिता था (लीलावती ४. देखिये)।

१२. सोमवंश में उत्पन्न एक राजा, जिसके पुत्र का नाम तोण्डमान था।

वीरक--चाक्षुष मन्वन्तर का ऋषि (भा. ८.५.८)।

२. शिव के वीरभद्र नामक पार्षद का नामान्तर (वीरभद्र देखिये)।

वीरकेतु--पांचालराज द्रुपद के पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह द्रोण के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ९८.३५)।

२. हंसध्वज राजा के सुमति नामक प्रधान का पुत्र।

वीरजित्--(सो. मगध. भविष्य) मगधवंशीय विश्वजित् राजा का नामान्तर (विश्वजित् ३. देखिये)। वायु में इसे सत्यजित् राजा का पुत्र कहा गया है।

वीरण--चाक्षुष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जिसे सनत्कुमार के द्वारा सात्वत धर्म का ज्ञान प्राप्त हुआ था। यही ज्ञान इसने आगे चल कर रैभ्यऋषि को प्रदान किया था (म. शां. ३३६.३७)।

इसकी कन्या का नाम असिक्नी (वीरिणी) था, जो दक्ष की पत्नी थी।

वीरणक--धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१७पाठ.)।

वीरणि--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्य परंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

वीरद्युम्न--एक राजा, जिसका तनुविप्र नामक ऋषि के साथ आशा-निराशा के संबंध में तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (म. शां. १२६.१४)। इसका भूरिद्युम्न नामक पुत्र वन में खो गया था, जिसके संबंध में यह संवाद हुआ था (कृशतनु देखिये)।

वीरधन्वन्--त्रिगर्त देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था। धृष्टकेतु के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. ८२.१६-१७)।

वीरधर्मन्--एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

वीरबाहु--धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'भीमबाहु'।

२. चेदि देश का एक राजा, जिसका विवाह दशार्णराज सुदामन् की कन्या के साथ हुआ था। दमयंती को वन में अकेली छोड़ कर, नल जब चला गया, उस समय, इसने ही दमयन्ती को आश्रय दिया था (म. व. ६६.१३)।

इसके पुत्र का नाम सुबाहु एवं कन्या का नाम सुनंदा था। किन्तु महाभारत के कुंभकोणम् संस्करण में इसे ही सुबाहु कहा गया है।

३. सुग्रीवसेना का एक वानर (वा. रा. किं. ३३.१०)।

४. एक गंधर्व, जिसने तक्षक के साथ युद्ध किया था (विष्णुधर्म. १.२६१.७)।

५. कांपिल्य नगरी का एक राजा (स्कंद. २.५.४)।

वीरभद्र--एक शिवपार्षद, जो शिव के क्रोध से उत्पन्न हुआ था।

जन्म--स्वायंभुव मन्वंतर में दक्ष प्रजापति के द्वारा किये गये यज्ञ में शिव का अपमान हुआ। इस अपमान के कारण क्रुद्ध हुए शिव ने अपनी जटाओं को झटक कर, इसका निर्माण किया (भा. ४.५; स्कंद. १.१-३; शिव. रुद्र. ३२)।

इसके जन्म के संबंध में विभिन्न कथाएँ पद्म एवं महाभारत में प्राप्त हैं। क्रुद्ध हुए शिव के मस्तक से पसीने का जो बूँद भूमि पर गिरा, उसीसे ही यह निर्माण हुआ (पद्म. सृ. २४)। यह शिव के मुँह से उत्पन्न हुआ था (म. शां. २७४. परि. १. क्र. २८. पंक्ति

७०-८०; वायु. ३०. १२२)। भविष्य में स्वयं शिव ही वीरभद्र बनने की कथा प्राप्त है (भवि. प्रति. ४.१०)।

दक्षयज्ञविध्वंस—उत्पन्न होते ही इसने शिव से प्रार्थना की, 'मेरे लायक कोई सेवा आप बताइये'। इस पर शिव ने इसे दक्षयज्ञ का विध्वंस करने की आज्ञा दी। इस आज्ञा के अनुसार, यह कालिका एवं अन्य रुद्रगणों को साथ ले कर दक्षयज्ञ के स्थान पर पहुँच गया, एवं इसने दक्षपक्षीय देवतागणों से घमासान युद्ध प्रारंभ किया।

रुद्र के वरप्रसाद से इसने समस्त देवपक्ष के योद्धाओं को परास्त किया। तदुपरांत इसने यज्ञ में उपस्थित ऋषियों में से, भृगु ऋषि की दाढी एवं मूँछे उखाड़ दी, भग की आँखें निकाल ली, पूषन् के दाँत तोड़ दिये। पश्चात् इसने दक्ष प्रजापति का सिर खड्ग से तोड़ना चाहा। किंतु वह न टूटने पर, इसने घूँसे मार कर उसे कटवा दिया, एवं वह उसीके ही यज्ञकुंड में झोंक दिया। तत्पश्चात् यह कैलासपर्वत पर शिव से मिलने चला गया (भा. ४.५; म. शां. परि. १. क्र. २८; पद्म. सृ. २४; स्कंद. १.१.३-५; कालि. १७; शिव. रुद्र. स. ३२.३७)।

भविष्य के अनुसार, दक्षयज्ञविध्वंस के समय दक्ष एवं यज्ञ मृग का रूप धारण कर भाग रहे थे। उस समय वीरभद्र ने व्याध का रूप धारण कर उनका वध किया, एवं एक ठोकर मार कर दक्ष का सिर अग्निकुंड में झोंक दिया (भवि. प्रति. ४.१०; लिंग. १.९६; वायु. ३०)। इसने अपने रोमकुपों से 'रौम्य' नामक गणेश्वर निर्माण किये थे (म. शां. परि. १.२८)।

वरप्राप्ति—दक्षयज्ञविध्वंस के पश्चात्, यह समस्त सृष्टि का संहार करने के लिए प्रवृत्त हुआ, किन्तु शिव ने इसे शान्त किया। तदुपरान्त शिव ने आकाश में स्थित ग्रहमालिका में 'अंगारक' अथवा 'मंगल' नामक ग्रह बनने का इसे आशीर्वाद दिया, एवं वरप्रदान किया, 'तुम समस्त ग्रहमंडल में श्रेष्ठ ग्रह कहलाओगे। सकल मानवजाति द्वारा तुम्हारी पूजा की जायेगी, एवं जो भी मनुष्य तुम्हारी पूजा करेगा, उसे आयुष्य भर आरोग्य, एवं ऐश्वर्य प्राप्त होगा' (भा. ७.१७; वायु. १०१.२९९; पद्म. सृ. २४)।

दक्षयज्ञविध्वंस के पश्चात्, शिव की आज्ञा से इसनें अपने तेज का कुछ अंश अलग किया, जिससे आगे चल कर आद्य शंकराचार्य का निर्माण हुआ (भवि. प्रति. ४.१०)।

पराक्रम—यह शिव का प्रमुख पार्षद ही नहीं, बल्कि उसका प्रमुख सेनापति भी था। शिव एवं शत्रुघ्न के युद्ध में, इसने पुष्कल से पाँच दिनों तक युद्ध किया था, एवं अंत में इसने उसका मस्तक विदीर्ण किया था। त्रिपुरदाह के युद्ध में भी, इसने त्रिपुर का सारा सैन्य निमिषार्ध में विनष्ट किया था (पद्म. पा. ४३)। शिव एवं जालंधर के युद्ध में भी इसने रौद्र पराक्रम दर्शाया था (पद्म. उ. १७)।

देवों का संरक्षणकर्ता—यह असुरों का आतंक, एवं देवों का संरक्षणकर्ता था। एक बार शौकूट पर्वत पर कश्यपादि सारे ऋषि, एवं समस्त देवगण दावाग्नि में घिर कर भस्म हुए। तदुपरांत इसने समस्त दावाग्नि का प्राशन किया, एवं मंत्रों के साथ सिद्ध किये गये भस्म से सारे ऋषियों को, एवं देवताओं को पुनः जीवित किया।

इसी प्रकार एक सर्प के द्वारा निगले गये देवताओं की भी, उस सर्प के दो टुकड़े कर इसने मुक्तता की थी।

एक बार पंचमेढ्र नामक राक्षस ने समस्त देवता, ऋषि एवं वालिसुग्रीवों को निगल लिया था। उस समय भी इसने पंचमेढ्र से दो वर्षों तक खड्ग एवं गदायुद्ध कर, उसका वध किया।

इस प्रकार देवता एवं ऋषिओं के तीन बार पुनः जीवित करने के इसके पराक्रम के कारण, शिव इससे अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उसने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये। जिस भस्म की सहायता से इसने देवताओं को पुनः जीवित किया था, उसे 'त्रायुष' नाम प्राप्त हुआ (पद्म. पा. १०७)। आगे चल कर, देवताओं ने भी इसकी स्तुति की थी (लिंग. १.९६)।

वीरक-आख्यान—पद्म में प्राप्त 'पार्वती-आख्यान' में इसे 'वीरक' कहा गया है, एवं इसे पार्वती का प्रिय पार्षद कहा गया है। गौरवर्ण प्राप्त करने के हेतु, पार्वती जब तपस्या करने गयी थी, उस समय उसने इसे शिव की सेवा करने के लिए नियुक्त किया था (पद्म. सृ. ४३-४४)।

नृसिंहदमन—लिंग में वीरभद्र को शिव का 'भैरव-स्वरूप' कहा गया है, एवं इसके द्वारा किये गये नृसिंह-दमन की कथा भी वहाँ प्राप्त है। विष्णु का नृसिंहअव-तार हिरण्यकशिपु के वध के पश्चात्, जब विश्वसंहार के लिए उद्यत हुआ, तब शिव ने वीरभद्र को उसका दमन करने की आज्ञा दी।

सर्वप्रथम इसने नृसिंह की स्तुति कर उसे शांत करने का प्रयत्न किया। किंतु न मानने पर, इसने उसका दमन किया, एवं उसे अदृश्य होने पर विवश किया (लिंग. १.९६)।

उपासना--महाराष्ट्र में स्थित घारापुरी एवं वेरुल के गुफाशिल्पों में, शिव के पार्षद के नाते वीरभद्र की प्रतिमाएँ पायी जाती है, जहाँ यह अष्टभुजायुक्त एवं अत्यंत रौद्रस्वरूपी चित्रांकित किया गया है। महाराष्ट्र में होली के दिनों में, वीरों की पूजा की जाती है, एवं उनका जुलूस भी निकाला जाता है।

ग्रंथ--इसके नाम पर 'वीरभद्रकालिका-कवच' एवं 'वीरभद्रतंत्र' नामक दो ग्रंथ उपलब्ध हैं।

२. सोमवंशीय मनोभद्र राजा के दो पुत्रों में से एक। एक गृध्रराज के द्वारा इसे पूर्वजन्म का ज्ञान प्राप्त हुआ था (पद्म. क्रि. ३; गर देखिये)।

३. एक राजा, जो अविक्षित् राजा की निभा नामक पत्नी का पिता था (मार्क. ११९.१७)।

४. यशोभद्र राजा का भाई (यशोभद्र देखिये)।

वीरभद्रक--गौड देश का एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम चंपकमंजरी था। अपने बुद्धिसागर नामक प्रधान के कथनानुसार इसने एक बड़ा तालाव बँधवाया था (नारद. १.१२)।

वीरमणि--एक शिवभक्त राजा, जिसकी पत्नी का नाम श्रुतवती था (पद्म. पा. ६७)। इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, स्वयं शिव ने योगिनियों से युद्ध किया था। किंतु अंत में योगिनियों ने इसे परास्त किया (पद्म. पा. ३९-४६)।

२. एक राजा, जिसने अपने पुत्र रुक्मांगद की सहायता से राम का अश्वमेधीय अश्व रोकने की कोशिश की थी। किंतु इस प्रयत्न में यह असफल रहा (रुक्मांगद ३. देखिये)।

वीररथ--(सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंशीय बहुरथ राजा का नामांतर। वायु में इसे नृपंजय राजा का पुत्र कहा गया है (बहुरथ देखिये)।

वीरव्रत--सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

२. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

३. साध्य देवों में से एक।

वीरवर--तालध्वज नगरी के माधव राजा की पत्नी सुलोचना के द्वारा पुरुषवेष में धारण किया गया नाम (माधव ५. देखिये)।

वीरवर्मन्--सारस्वत नगरी का एक राजा, जो यम-कन्या मालिनी का पति था। पाण्डवों का अश्वमेधीय अश्व इसने रोक दिया था, एवं अपने श्वशुर यम की सहायता से कृष्णार्जुनों के साथ घोर संग्राम किया था। आगे चल कर कृष्ण ने इससे संधि किया, एवं अश्वमेधीय अश्व छुड़वा दिया।

इसके सुभाल, सुलभ, लोल, कुवल एवं सरस नामक पाँच पुत्र थे (जै. अ. ४७-४९)।

२. द्रविड देश का एक राजा, जिसकी पत्नी हेमांगी अपने पूर्वजन्म में मोहिनी नामक अप्सरा थी (पद्म. उ. २२०)।

वीरवाहन--एक राजा, जो ब्रह्महत्या के कारण अत्यंत दुःखी हुआ था (मुनिशर्मन् देखिये)।

२. विराधनगरी का एक राजा, जिसने वसिष्ठ ऋषि के साथ धर्मसंबंधी चर्चा की थी (गरुड. २.६)।

वीरविक्रम--एक शूद्र, जिसने वचनपूर्ति के लिए अपनी कन्या का विवाह एक चांडाल से कर दिया। आगे चल कर, कृष्ण ने उन दोनों का उद्धार कर दिया (पद्म. ब्र. २६)।

वीरव्रत--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार मधु राजा एवं सुमनस् का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम भोजा था, जिससे इसे मंथु एवं प्रमंथु नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ५.१५.१५)।

वीरसिंह--एक राजा, जो वीरमणि राजा का पुत्र एवं रुक्मांगद का बन्धु था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने शत्रुघ्न से युद्ध किया था (पद्म. पा. ४०)।

वीरसेन--निषध देश का एक राजा, जो नल राजा का पिता था। यह स्वयं धर्मज्ञ एवं तपस्वी था (नल १. देखिये)। इसने जीवन में मांसभक्षण नहीं किया था (म. अनु. ११५.७४)।

२. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.७४.९)।

३. एक राजा, जो ऋतुपर्ण राजा का पुत्र, एवं सुदास राजा का पिता था (ब्रह्मांड. ३.६३.१७४)।

४. अवंति नगरी का एक राजा, जिसने तीन राजसूय एवं सोलह अश्वमेध यज्ञ किये थे (पद्म. उ. १२८)।

५. दक्ष राजा का श्वसुर, जिसे स्वप्न में दक्ष को कन्या देने के लिए दृष्टान्त हुआ था (गणेश. १.२६-२७)।

वीरहोत्र--(सो. सह.) एक सुविख्यात हैहय सम्राट, जो हैहय-राजवंश का आद्यपुरुष माना जाता है। इसे

वीतहव्य नामान्तर भी प्राप्त था (वीतहव्य २. देखिये)। वायु में इसे तालजंघ का पुत्र कहा गया है (वायु. ९४. ५२)।

वीरा--एक राजस्त्री, जो वीर्यचंद्र राजा की कन्या, करंधम राजा की पत्नी, एवं अविक्षित् राजा की माता थी (मार्कं. ११९.२)। एक बार सर्पों ने समस्त सृष्टि को अत्यंत त्रस्त किया था, जिस कारण इसने अपने पौत्र मरुत्त के द्वारा सर्पसंहार प्रारंभ किया। पश्चात् सारे सर्प इसकी स्नुषा अविक्षित्पत्नी वैशालिनी की शरण में गये, जिसने अपने पति अविक्षित् के द्वारा सर्पसत्र बन्द करवाया (मार्कं. १२६)।

२. शंयुपुत्र भरद्वाज नामक अग्नि की पत्नी। इसके पुत्र का नाम वीर था (म. व. २०९.१०)।

वीरिणी—वीरण प्रजापति की कन्या, जो दक्ष प्राचेतस की पत्नी थी। यह ब्रह्मा के बाये पैर के अंगूठे से उत्पन्न हुई थी (म. आ. ७०.५)।

इसे कुल एक हज़ार पुत्र, एवं पचास कन्याएँ उत्पन्न हुई थी। इसके पुत्रों में सुव्रत प्रमुख था।

२. शुकपत्नी पीवरी का नामान्तर।

३. वीरसेन राजा की कन्या, जो ब्रह्मा की पौत्री, एवं चाक्षुष राजा की पत्नी थी (मत्स्य. ४.३९)।

वीरुधा—एक नागकन्या, जो नागमाता सुरसा के तीन कन्याओं में से एक थी। इसकी अन्य दो बहनों का नाम अनला एवं रुहा था। इसकी संतानों में लता, गुल्म, वल्ली आदि वनस्पतिविशेष प्रमुख थे (म. आ. ६०.५५२*)।

वीर्यचंद्र--करंधम-पत्नी वीरा का पिता (वीरा १. देखिये)।

वीर्यवत्--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

वृक—एक राजा, जो द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। भारतीय-युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। नकुल के पराजय के पश्चात्, ग्यारह पाण्डव वीरों के साथ हुए युद्ध में यह शामिल था (म. क. ६२.४८)। अन्त में किसी पर्वतीय नरेश के द्वारा यह मारा गया।

२. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा। भारतीय युद्ध में यह अपने अश्व एवं सारथि के साथ द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २०.१६)।

३. एक सदाचारी राजा, जिसने अपने जीवन में मांस-भक्षण वर्ज्य किया था (म. अनु. ११५.७२)।

४. एक राजा, जो पृथु वैन्य एवं अर्चिष्मती के पुत्रों में से एक था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात्, यह उसके पश्चिम साम्राज्य का अधिपति बन गया (भा. ४.२२.५४)।

५. एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का अनुयायी था (भा. ७.२.१८)। यह शकुनि नामक राक्षस का पुत्र था। इसकी जीवनकथा भस्मासुर के जीवन से काफ़ी साम्य रखती है।

इसे शिव से आशीर्वाद प्राप्त हुआ था कि, जिसके मस्तक पर यह हाथ रखेगा वह जल कर भस्म हो जायेगा। फिर यह उन्मत्त हो कर स्वयं शिव को ही दग्ध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। पश्चात् विष्णु ने ब्रह्मचारिन् का रूप धारण कर, इसे स्वयं के ही मस्तक पर हाथ रखने के लिए प्रवृत्त किया, जिस कारण यह भस्म हुआ (भा. १०.८८. १३-१६)।

६. (सू. इ.) एक राजा, जो मरुक राजा का पुत्र, एवं बाहुक राजा का पिता था (भा. ९.८.२)।

७. एक राजा, जो शूर एवं मारिषा के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम दुर्वाक्षी था, जिससे इसे तक्ष एवं पुष्कर नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४.२९; ४३)।

८. एक यादव-राजकुमार, जो कृष्ण एवं मित्रविंदा के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१६)।

९. एक यादव राजकुमार, जो वत्सक यादव एवं मिश्रकेशी नामक अप्सरा के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४. ४३)।

१०. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो शिष्ट एवं सुच्छाया के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४.३९)।

११. (सू. इ.) एक राजा, जो रोहित राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.३८)।

१२. पुष्टि (सृष्टि) एवं छाया के पुत्रों में से एक (वायु. ६२.८३)। पाठ-'वृकल'।

१३. एक यादव-राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या (माद्री) के पुत्रों में से एक था (भा. १०.९०.३३)।

१४. हरित राजा का नामान्तर।

वृकद्वरस्—शण्डिल लोगों का एक राजा, जिसके विरुद्ध किये गये एक युद्ध का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. २.३०.४)। रौथ एवं ओल्डेनबर्ग के अनुसार,

इसका सही पाठ 'वृकध्वरस्' था। हिलेब्रांट के अनुसार, यह इरान से संबंधित किसी राजा का नाम था।

वृकदेवा अथवा **वृकदेवी**--देवक राजा की सात कन्याओं में से एक, जो वसुदेव की पत्नी थी। इसे अवगाहक एवं नंदक नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (वायु. ९६.१३०)।

वृकल--वृक राजा का नामान्तर (वृक १२. देखिये)।

२. अक्रूर के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.२९)।

वृकोदर--भीमसेन पाण्डव का नामान्तर (भा. १. ७.१३)।

वृकोदरी--पूतना राक्षसी की बहन (आदि. १८. १०१)।

वृक्षावासिन्--कुवेरसभा का एक यक्ष।

वृचया--कक्षीवत् नामक ऋषि की पत्नी, जो उसे अश्विनों के द्वारा प्रदान की गयी थी (ऋ. १.५१.३; कक्षीवत् देखिये)।

वृचीवत्--एक ज्ञातिसमूह, जिसे सृंजयराज दैववात ने जीत लिया था (ऋ. ६.२७.५)। ऋग्वेद में इनका निर्देश तुर्वश लोगों के साथ प्राप्त है। ऋग्वेद के इसी सूक्त में अभ्यावर्तिन् चायमन के द्वारा इन लोगों का हरियूपीया नदी के तट पर पराजित होने का निर्देश प्राप्त है। ओल्डेनबर्ग के अनुसार, ये लोग एवं तुर्वशलोग सृंजयों के विपक्ष में थे (ओल्डेनबर्ग, बुद्ध. ४०४)। त्सीमर के अनुसार, ये एवं तुर्वश लोग दोनों एक ही थे (त्सीमर, अल्टिबिडशे लेबेन. १२४)। किन्तु यह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार, ये एवं जह्नु लोगों में राजसत्ता प्राप्त करने के लिए संघर्ष हुआ था, जिसमें जह्नु लोगों का राजा विश्वामित्र ने इन्हें परास्त किया था (तां. ब्रा. २१.१२.२)।

वृजिन्वत्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो क्रोष्टु राजा का पुत्र एवं स्वाही राजा का पिता था (भा. ९.२३. ३१)। महाभारत में इसके पुत्र का नाम उषङ्गु दिया गया है (म. अनु. १४७.२८-२९)।

वृत्त--एक सर्प, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो शिष्ट एवं सुच्छाया के पुत्रों में से एक था।

वृत्ति--मनु नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

२. अमिताभ देवों में से एक।

वृत्र--एक अंतरिक्षीय दैत्य, जो इंद्र के प्रमुख शत्रु था। यास्क ने इसे 'मेघ दैत्य' माना है, जो आकाशस्थ जल का अवरोध करता है। प्रभंजनों के स्वामी इंद्र ने अपने वज्र (विद्युत्) से इस असुर का विच्छेद किया, एवं पृथ्वी पर जल वर्षा की। इसीका वध करने के लिए इंद्र ने जन्म लिया था, जिस कारण उसे ऋग्वेद में 'वृत्रहन्' उपाधि दी गयी है (ऋ. ८.७८)। वृत्र के साथ इंद्र ने किये संघर्ष को ऋग्वेद में 'वृत्रहत्या' एवं 'वृत्रतूर्य' कहा गया है।

जन्म--वृत्र की माता का नाम दानु था, जो शब्द ऋग्वेद में जलधारा के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है (ऋ. १. ३२)। इसी शब्द का पुल्लिंगी रूप 'दानव' एक मातृक नाम के नाते वृत्र अथवा सर्प के लिए, और्णवाभ नामक दैत्य के लिए, एवं इंद्रद्वारा वधित सात दैत्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. २.११; १२; १०.१२०.६)।

स्वरूपवर्णन--वृत्र का रूप सर्पवत् माना गया है, अतः इसके हाथ एवं पैर नहीं है (ऋ. ३.३०.८)। किंतु इसके सर का एवं जबड़ों का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १.५२.१०; ८.६.६; ७३.२)। सर्प की भाँति यह फूँफकारता है (ऋ. ८.८५); एवं गर्जन, विद्युत् एवं झंझावात इसके आधीन है (ऋ. १.८०)।

निवासस्थान--वृत्र का एक गुप्त (निणय) निवासस्थान था, जो एक शिखर (सानु) पर स्थित था (ऋ. १.३२; ८०)। इसी निवासस्थान में इंद्र ने जलधाराएँ छोड़ कर वृत्र का वध किया था, एवं बहुत उँचाई से इसे नीचे गिराया था (ऋ. ८.३)। इसके निन्यानब्वे दुर्ग थे, जो इन्द्र ने इसकी मृत्यु के समय ध्वस्त किये थे (ऋ. ७.१९; १०.८९)।

पराक्रम--वृत्र के निम्नलिखित पराक्रमों का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है:--१. जलधाराओं को रोकना (ऋ. २. १५.६); २. गायों का हरण करना (ऋ. २.१९.३); ३. सूर्य को ढँकना (ऋ. २.१९.३); ४. सूर्योदय (उषस्) को रोकना (ऋ. ४.१९.८)। ऋग्वेद में अन्यत्र वृत्र के द्वारा मेघो को अपने उदर में छिपाने का निर्देश भी प्राप्त है (ऋ. १.५७)। शंबर, बल, अहि आदि दानवों के लिए भी ऋग्वेद में यही पराक्रम वर्णित है।

वध--इसका वध करने के लिए देवों ने इंद्र का वध किया (ऋ. ३.४९.१; ४.१९.१)। इंद्र एवं वृत्र का युद्ध

त्रिककुद् पर्वत पर हुआ। इंद्र ने इसका वध किया; एवं इसके द्वारा बद्ध किये गये मेघों को मुक्त कर (अपवृ) उसी जल से इसे डुबो दिया (वृत्रं अवृणोत; ऋ. ३.४३)। इसकी मृत्यु की वार्ता वायु के द्वारा सर्व विश्व को ज्ञात हुई।

वृत्र-इंद्रयुद्ध की तिथिनिर्णय लो. तिलकजी के द्वारा किया गया है, जो उनके द्वारा १० अक्तूबर के दिन निश्चित किया गया है (लो. तिलक, आर्यों का मूलस्थान पृ. २०८)।

व्युत्पत्ति—'वृत्र' शब्द 'वृ' (आवृत्त करना, ढँकना) धातु से व्युत्पन्न हुआ माना जाता है। इसने जलों को आवृत कर दिया था (अप वारिवांसम्)। इस कारण इसे 'वृत्र' नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. २.१४)। यास्क के अनुसार, इसे 'मेघ दैत्य' कहा गया है, एवं त्वष्टृ असुर के पुत्र (त्वाष्ट्र असुर) मानने के ऐतिहासिक परंपरा को अयोग्य बताया गया है (नि. २.१६)।

सामूहिक नाम--ऋग्वेद में 'वृत्र' शब्द का बहुवचनी रूप 'वृत्राणि' अनेक स्थान पर प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, एक सामूहिक नाम के नाते वृत्र के अतिरिक्त कई अन्य असुरों के लिए भी यह शब्द प्रयुक्त किया जाता था। ऐसे कई विभिन्न असुरो के नामों का ऋग्वेद में उल्लेख प्राप्त है (ऋ.७.१९)। दधीचि ऋषि के अस्थियों से बने हुए अस्त्रों की सहायता से, इंद्र ने निन्यानव्वे वृत्रों का वध किया था (ऋ. १.८४)। ऋग्वेद में जहाँ सामान्य विरोधक अथवा शत्रु को 'दास' अथवा 'दस्यु' कहा गया है, वहाँ दैत्य शत्रुओं को 'वृत्र' कहा गया है।

इस प्रकार सामूहिक रूप में 'वृत्र' शब्द 'दानवी अवरोधक' अर्थ में ही प्रयुक्त किया गया प्रतीत होता है। अवेस्ता में 'वेरथ्र' शब्द 'विजय' अर्थ में प्रयुक्त किया गया है, जो अवरोध का ही विकसित रूप प्रतीत होता है।

तैत्तिरीय संहिता में—इस ग्रंथ में वृत्र को त्वष्टृ का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी जन्मकथा निम्नप्रकार दी गयी है। एक बार त्वष्टृ ने यज्ञ किया, जहाँ यज्ञ में सिद्ध किया गया सोम उसने समस्त देवताओं को दिया, किन्तु अपने पुत्र विश्वरूप का वध करनेवाले इंद्र को नही दिया। इंद्र के हिस्से का सोम उसने अग्नि में डाल दिया, जिससे आगे चल कर वृत्र का जन्म हुआ।

बड़ा होने पर, इसने समस्त सृष्टि को त्रस्त करना प्रारंभ किया। इसके भय से विष्णु ने स्वयं के तीन भाग किये, एवं उन्हें तीनों लोकों में छिपा दिये। इंद्र ने विष्णु की सहायता से इसे ज्यादा बढ़ने न दिया, एवं अपने पेट में समा लिया। किन्तु वहाँ भी इसने भूख का रूप धारण कर सारी सृष्टि को त्रस्त करना पुनः प्रारंभ किया (तै. सं. २.४.१२)।

इंद्र के द्वारा इसके वध के संबंधी एक कथा तैत्तिरीय संहिता में प्राप्त है। वृत्र के द्वारा विदेह देश की गायों का निर्माण हुआ, जिनमें कृष्ण ग्रीवायुक्त एक बैल भी था। इंद्र ने उस बैल का अग्नि में हवन किया, जिससे प्रसन्न हो कर अग्नि ने इंद्र को वृत्र का वध करने के लिए समर्थ किया (तै. सं. २.१.४)।

ब्राह्मण ग्रन्थों में—इन ग्रंथों में वृत्र एवं इंद्र को क्रमशः चंद्र एवं सूर्य की उपमा दी गई है। जिस प्रकार अमावास्या के दिन सूर्य चंद्र को निगल लेता है, उसी प्रकार इंद्र ने वृत्र को डुबो देने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। एक बार असुरों ने वेद एवं वेदविद्या हस्तगत की, जिस कारण सारा देव पक्ष हतबल हुआ। आगे चल कर, इंद्र ने विश्वकर्मन्‌पुत्र वृत्र नामक ब्राह्मण से तीनों वेद (ऋक्, यजुः। साम) जीत लिये, एवं वृत्र का वध किया (श. ब्रा १.१.३.४; ३.१.३.१२; ४.१.३.१; ५.५.५.१)।

महाभारत एवं पुराणों में--महाभारत में इसे कृतयुग का एक असुर कहा गया है, एवं इसके पिता एवं माता के नाम क्रमशः कश्यप एवं दिति (दनायु) दिये गये हैं। दिति के बल नामक पुत्र का इंद्र ने वध किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर दिति ने इन्द्र का वध करनेवाला पुत्र निर्माण करने की प्रार्थना कश्यप से की। इस पर कश्यप ने अपनी जटा झटक कर अग्नि में हवन की। इसी अग्नि से अजस्त्रकाय वृत्र का निर्माण हुआ (पद्म. उ. ९)।

भागवत में इसे त्वष्टृ का पुत्र कहा गया है, जो उसने अपने पुत्र विश्वरूप का वध करनेवाले इंद्र का बदला लेने के लिए निर्माण किया था (भा. ६.९-१२)। ब्रह्मांड में इसकी माता का नाम अनायुषा दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६.३५)।

तपस्या--अपने पिता की आज्ञा से इसने ब्रह्मा की अत्यंत कठोर तपस्या की, जिस कारण ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर इसे वर प्रदान किया, 'आज से तुम अमर होगे, तथा लोह एवं काष्ठ, आर्द्र एवं शुष्क आदि कौनसे भी अस्त्र से दिन में या रात में तुम्हें मृत्यु न आयेगी (दे. भा. ६.१.७)। आगे चल कर इसी वर के प्रभाव से, इसने

इंद्र को परास्त कर इंद्रपद प्राप्त किया (वा. रा. उ. ८४-८६)।

भागवत में इसे ब्राह्मण एवं श्रीविष्णु का परमभक्त कहा गया है (भा. ६.९; पद्म. भू. २५)। इस कारण इंद्र-वृत्र युद्ध में श्रीविष्णु ने गुप्त रूप से ही इंद्र की सहायता की थी। यह ब्राह्मण होने के कारण, इसका वध करने से इंद्र को ब्रह्महत्त्या का दोष लग गया था।

इंद्र से युद्ध--इंद्र-वृत्र युद्ध की अनेकानेक कथाएँ पुराणों में प्राप्त है, जहाँ युद्धसामर्थ्य से नहीं बल्कि छल कपट से इंद्र के द्वारा इसका वध होने के निर्देश प्राप्त हैं। इंद्र ने रंभा अप्सरा के द्वारा इसे शराब पिलवायी, एवं शराब की उसी नशीली एवं व्रतहीन अवस्था में जब यह समुद्र किनारे सोया था, उसी समय इससे संधि कर, आधा इंद्रपद पुनः प्राप्त किया (पद्म. भू. २५; वा. रा. उ. ८४-८६; स्कंद. १.१.१६)।

वध--आगे चल कर जब यह असावधान अवस्था में था, तब इंद्र ने इस पर हमला किया, एवं दधीचि ऋषि की अस्थियों से बने हुए वज्र पर समुद्र का झाग लपेट कर उससे इसका वध किया (दे. भा. ६.१.६; पद्म. भू. २४; भा. ६.९; म.व. १००; उ. १०)। इंद्र ने इसका वध संध्यासमय किया, एवं इस प्रकार ब्रह्मा के द्वारा इसे प्राप्त हुए वर के शर्तों की पूर्ति करते हुए ही, इंद्र ने इसका वध किया।

भागवत के अनुसार, वृत्रवध के समय इंद्र ने सर्वप्रथम इसका एक हाथ काट दिया। इतने में इंद्र का वज्र नीचे गिर गया। इसने इंद्र को अपना वज्र उठाने के लिए कहा, जब उसने इसका दूसरा हाथ काट दिया। पश्चात् यह इंद्र के उदर में प्रविष्ट हुआ, जहाँ से बाहर आने पर इंद्र ने इसका शिरच्छेद किया (भा. ६.१२)।

इंद्र-वृत्रयुद्ध में निम्नलिखित असुर इसके पक्ष में शामिल थे :--अनर्वन्, अंबर, अयोमुख, उत्कल, ऋषभ, नमुचि, पुलोमत्, प्रहेति, विप्रचित्ति, वृषपर्वन्, शंकुशिरस्, शंबर, हयग्रीव, हेति एवं पाताल में रहनेवाले कालेय अथवा कालकेय राक्षस (भा. ६.१०; स्कंद. १.१.१६; पद्म. पा. १९)।

तत्त्वज्ञ--पूर्वजन्म में यह चित्रकेतु नामक विष्णुभक्त राजा था (भा. ६.१४)। मृत्यु के पूर्व इसने इंद्र को भागवधर्म का उपदेश प्रदान किया था। सनत्कुमारों से इसे योगज्ञान की प्राप्ति हुई थी, जिस कारण इसे मृत्यु के पश्चात् सद्गति प्राप्त हुई (म. शां. २८१)। महाभारत में उशनस् ऋषि के साथ इसका किया 'वृत्र-उशनस् संवाद' प्राप्त है, जहाँ ज्ञान से मोक्षप्राप्ति किस तरह हो सकती है, इसकी चर्चा प्राप्त है। उसी ग्रंथ में 'वृत्र-गीता' का निर्देश भी मिलता है।

परिवार--इसके पुत्र का नाम मधुर था (वा. रा. उ. ८४.१०)। ब्रह्मांड में इसे अनायुषा का पुत्र कहा गया है, एवं इसका वंश विस्तृत रूप में दिया गया है। अनायुषा के कुल पाँच पुत्र थे :-- १. अररु; २. बल; ३. वृत्र; ४. विज्वर; ५. वृष। ये पाँच ही भाइयों को महेंद्रानुचर एवं ब्रह्मवेत्ता पुत्र उत्पन्न हुए, जो निम्न प्रकार थे:-- १. वृत्रपुत्र-बक आदि सहस्र पुत्र; २. बलपुत्र-निकुंभ एवं चक्रवर्मन्; ३. विज्वरपुत्र-कालक एवं खर; ४. वृषपुत्र-श्राद्धाह, यज्ञह ब्रह्म एवं पशुह; ५. अररुपुत्र- धुंधु, जो कुवलाश्व ऐक्ष्वाक के द्वारा मारा गया (ब्रह्मांड. ३.६.३५-३७)।

२. एक असुर, जो हिरण्याक्ष का सेनापति था। इंद्र-हिरण्याक्ष युद्ध में, इंद्र ने इसकी शिखा पकड़ कर खड्ग से इसका वध किया था (पद्म. भू. ७३)।

वृत्रघ्न--एक राजा, जिसने यमुना एवं गंगा नदियों के तट पर अश्वों को बाँधा था (ऐ. ब्रा. ८.२३.५)। रौथ के अनुसार, यहाँ वृत्रघ्न इंद्र की ओर संकेत किया गया है।

वृत्रघातक--विष्णु के बारह अवतारों में से नौवाँ अवतार (मत्स्य. ४७.४४)।

वृद्धकन्या--एक बालब्रह्मचारिणी, जो कुणि गर्ग महर्षि की कन्या थी। इसके पिता ने इसका विवाह करना चाहा, किन्तु यह जन्म से ही अत्यंत विरक्त होने के कारण, इसने विवाह करने से इन्कार कर दिया।

तपस्या--आगे चल कर इसने घोर तपस्या प्रारंभ की। किन्तु नारद इसे आ मिला, एवं उसने इसे कहा कि, विवाह-संस्कार किये बगैर स्त्री के लिए स्वर्गलोक की प्राप्ति असंभव है।

नारद के कथनानुसार, इसने विवाह करने का निश्चय किया, एवं अपना आधा पुण्य प्रदान करने की शर्त पर गालव ऋषि के शिष्य शृंगवत् ऋषि से विवाह किया। विवाह करते समय शृंगवत् ने इसे कहा था कि, केवल एक रात के लिए ही वह इसके साथ रहेगा। अपने पति के इस शर्त के अनुसार, इसने एक रात के लिए वैवाहिक जीवन व्यतीत किया, एवं तत्पश्चात् अपनी तपस्या के बल से यह स्वर्गलोक गयी (म. श. ५१)।

वृद्धकन्यातीर्थ--अपने कुरुक्षेत्र में स्थित जिस आश्रम में इसने तपस्या की थी, वहाँ आगे चल कर ' वृद्धकन्या-तीर्थ ' नामक तीर्थस्थान का निर्माण हुआ। भारत के तीर्थस्थानों का यात्रा करता हुआ बलराम इस तीर्थस्थान में आया था, जहाँ उसे शल्यवध की वार्ता ज्ञात हुई थी।

वृद्धगौतम--एक वैश्य, जो मणिकुंडल नामक वैश्य का मित्र था (मणिकुंडल देखिये)।

वृद्धक्षत्र—एक राजा, जो सिंधुनरेश जयद्रथ का पिता था। इसने जयद्रथ को वर प्रदान किया था, 'जो भी तुम्हारे सिर को पृथ्वी पर गिरायेगा, उसके मस्तक के सैकड़ो टुकड़े हो जायेंगे '।

भारतीय युद्ध में अर्जुन ने अपने बाणों से जयद्रथ का शिरच्छेद किया, एवं उसका सिर वृद्धक्षत्र के ही गोद में गिरा दिया, जिस कारण इसकी मृत्यु हुई (म. द्रो. १२१)।

वृद्धक्षत्र पौरव—एक पूरुवंशीय राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों केपक्ष में शामिल था। यह अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १७१.५६-६४)।

वृद्धक्षेम—एक राजा, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का पिता था। इसी कारण सुशर्मन् को ' वार्धक्षेमि ' पैतृक नाम प्राप्त था (म. आ. १७७.८; वार्धक्षेमि १. देखिये)।

२. एक वृष्णिवंशीय राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. १६८.१६)। इसे ' वार्धक्षेमि ' नामान्तर प्राप्त था।

भारतीय युद्ध में इसका कृप के साथ युद्ध हुआ था (म. द्रो. २४.४९)। अन्त में बाल्हिक ने इसका वध किया (म. क. ४.७९)।

वृद्धगर्ग—एक आचार्य, जिसने राज्य में उत्पन्न होने-वाले दुश्चिन्ह के बारे में अत्रि ऋषि को ज्ञान प्रदान किया था (मत्स्य. २२९.३८)।

वृद्धगार्ग्य--एक आचार्य, जिसने पितरों की तृप्ति किस प्रकार होती है इस संबंध में अपने पितरों के साथ संवाद किया था। उस समय पितरों ने इसे वर्षा ऋतु में दीपदान करने का, एवं अमावास्या के दिन तर्पण करने का माहात्म्य कथन किया था (म. अनु. १२५.७७-८३)।

२. एक ऋषि, जो मुचुकुंद राजा का समकालीन था (विष्णु. ५.२३.२५८)।

वृद्धगौतम--एक ऋषि, जो पूर्वकाल में जड़बुद्धि था। किन्तु वृद्धा नामक स्त्री के तप के कारण यह बुद्धिमान् बन गया (ब्रह्म. १०७)।

वृद्धद्युम्न आभिप्रतारिण--एक कुरुवंशीय राजा (राजन्य), जिसके पुरोहित का नाम शुचिवृक्ष गौपालायन था (ऐ. ब्रा. ३.४८.९)। अपने इस पुरोहित की सहायता से इसे विपुल धनलक्ष्मी प्राप्त हुई।

एक बार इसने ' तृष्टोम-क्षत्रधृति ' नामक यज्ञ किया था। उस समय यज्ञकर्म में इसके द्वारा एक त्रुटि हो गयी, जिस कारण पुरोहित ने इसे शाप दिया, 'जल्द ही कुरु-राजवंश का कुरुक्षेत्र से लोप होगा'। आगे चल कर पुरोहित की यह शापवाणी सच साबित हुई (सां. श्रौ. १५.१६. १०-१३)।

अभिप्रतारिन् का वंशज होने से इसे 'आभिप्रतारिण' यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। संभवतः यह अभि-प्रतारिन् काक्षसेन राजा के वंश में उत्पन्न हुआ होगा।

वृद्धशर्मन्--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो आयु राजा एवं स्वर्भानु का पुत्र था। इसके अन्य चार भाइयों के नाम नहुष, रजि, रम्भ एवं अनेनस् थे (म. आ. ७०. २३)। इसे क्षत्रधर्मन् नामान्तर भी प्राप्त था।

२. करुष-देशीय एक राजा, जो वसुदेव-भगिनी श्रुतदेवा का पति था। इसके पुत्र का नाम दन्तवक्र था (भा. ९.२४.३७)।

वृद्धसेना--एक राजस्त्री, जो सुमति राजा की पत्नी, एवं देवताजित् राजा की माता थी (भा. ५.१५.१-२)।

वृद्धा--एक राजकन्या, जो आर्ष्टिषेणपुत्र ऋतध्वज राजा एवं सुद्यामा की कन्या थी। इसका विवाह वृद्ध-गौतम ऋषि से हुआ था (ब्रह्म. ११७)।

वृधु तक्षन्--एक हीनकुलीन अंत्यज, जिसने भरद्वाज ऋषि को गोदान किया था। यह हीन जाति का होने के कारण, इससे दान लेना अधर्म्य था। किन्तु भरद्वाज ऋषि क्षुधार्त एवं आपद्ग्रस्त थे, जिस कारण उन्हें कोई दोष न लगा (मनु. १०.१०७)।

ऋग्वेद में निर्दिष्ट ' बृबु तक्षन् ' नामक दास संभवतः यही होगा।

वृंदा--एक दैत्यकुलोत्पन्न स्त्री, जो कालनेमि एवं स्वर्णा की कन्या, एवं जालंधर दैत्य की पत्नी थी (पद्म. उ. ४; शिव. रुद्र. यु. १४)।

जालंधर दैत्य की मृत्यु के पश्चात इसने अग्निप्रवेश किया था। इसकी पतिभक्ति से विष्णु प्रसन्न हुए, एवं उन्होंने इसके अग्निप्रवेश के स्थान पर गौरी, लक्ष्मी एवं स्वरा के अंश से क्रमशः आमला, तुलसी एवं मालती पेड़ों का निर्माण किया (पद्म. उ.१०५; जालंधर देखिये)।

उसी दिन से ये तीनो पेड़ पवित्र नाने जाने लगे, एवं यह स्वयं 'तुलसीवृंदा' नाम से प्रसिद्ध हुई।

वृंदारक--कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ४६.१२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीम के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १०२.९५)।

वृश जान अथवा **वैजान**--एक आचार्य, जो त्र्यरुण राजा का पुरोहित था। 'जन' का वंशज होने से इसे 'जान अथवा 'वैजान' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

एक बार यह एवं त्र्यरुण राजा रथ में बैठ कर जा रहे थे, जब एक बालक की इनके रथ के नीचे मृत्यु हो गयी। उस समय, रथ का लगाम इसीके हाथ में होने के कारण इसे मृत्यु का पातक लगा। पश्चात् 'वार्शं' साम का पठन कर इसने मृत बालक को पुनः जीवित किया (पं. ब्रा.१३. ३.१२)। सांख्यायन, तांडय एवं माल्लवि ब्राह्मण, तथा बृहद्देवता में भी इस कथा का संक्षिप्त निर्देश प्राप्त है।

सीग के अनुसार ऋग्वेद में भी इस कथा का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.२)। किंतु वह तर्क अयोग्य प्रतीत होता है।

वृष--शिव का एक अवतार, जो वृषभ रूप में उत्पन्न हुआ था। समुद्र-मंथन के पश्चात्, उस मंथन से उत्पन्न हुए सुंदर स्त्रियों से विष्णु कामासक्त हुआ, एवं उसे उन स्त्रियों से सैंकड़ो पुत्र उत्पन्न हुए। पाताल में उत्पन्न हुए विष्णु के इन पुत्रों ने समस्त पृथ्वी कंपित करना प्रारंभ किया, जिनका परामर्ष लेने के लिए शिव ने वृष का अवतार धारण किया।

विष्णुपुत्रों से शाप--उत्पन्न होते ही इसने विष्णु की पराजय कर, उसका सुदर्शन-चक्र हरण किया, एवं उसे स्वर्लोक में भाग जाने पर भी विवश किया। जाते समय विष्णु ने अपने पुत्रों को पाताल में भाग जाने की सलाह दी, जिस पर इसने उन्हें शाप दिया, 'शांत-वृत्ति के ऋषि एवं मेरे अंश से उत्पन्न दानवों के अतिरिक्त, जो भी मनुष्य पाताल में जायेगा, उसे मृत्यु प्राप्त होगी'। उस समय से पाताल लोक मनुष्यप्राणियों के लिए निषिद्ध बन गया (शिव. शत. २२-२३)।

२. स्कंद का एक सैनिक।

३. एक दैत्य, जो पूर्वकाल में पृथ्वी का शासक था।

४. विकुंठ देवों में से एक।

५. एक दैत्य, जो अनायुषा के पुत्रों में से एक था। इसे श्रद्धाद, यज्ञहन्, ब्रह्महन्, एवं पशुहन् नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ३.६.३१)।

६. (सो. अनु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शिबि राजा का पुत्र था। इसे 'वृषादर्भि' नामान्तर भी प्राप्त था (वृषादर्भि देखिये)।

७. (सो. सह.) एक राजा, जो भरत राजा का पुत्र, एवं मधु राजा का पिता था (विष्णु. ४.११.२५-२६)।

८. एक राजा, जो सृंजय एवं राष्ट्रपाली का पुत्र था (भा. ९.२४.४२)।

९. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१३)।

१०. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक था (भा. १०.६१.१४)।

११. एक हैहयवंशीय राजकुमार, जो कार्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों में से एक था। यह परशुराम के क्षत्रियसंहार से बच गया था (ब्रह्मांड. ३.४१.१३)।

१२. अंगराज कर्ण का नामान्तर (म. व. २९३.१३)।

१३. धर्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

वृषक--एक राजकुमार, जो गांधारराज सुबल का पुत्र था। यह द्रौपदीस्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (म. आ. १७७.५; म. स. ३१.७)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, जहाँ इसकी श्रेणि 'रथी' थी (म. उ. १६५.१)। अर्जुनपुत्र इरावत् का इसने पराजय किया था (म. भी. ८६.२४-४३)। अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. २८.११-१२; क. ४.३९)।

भारतीय-युद्ध के पश्चात्, व्यास के द्वारा आवाहन करने पर, यह गंगाजल से प्रकट हुआ था (म. आश्र ४०.१२)।

वृषकंड--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वृषक्राथ--कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो द्रोण-निर्मित गरुडव्यूह के हृदयस्थान में खड़ा था (म. द्रो. १९.३१)।

वृषकेतु--अंगराज कर्ण के पुत्रों में से एक। युधिष्ठिर के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा के लिए यह गया था। यही काम करते समय, यह बभ्रुवाहन के द्वारा मारा गया (जै. अ. ३०)।

वृषगण वासिष्ठ--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.९७. ७-९)।

वृषजार—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२)।

वृषण—(सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सहस्रार्जुन राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु के अनुसार, इसे क्रमशः 'वृषभ' एवं 'वर्ष' नामांतर भी प्राप्त थे।

वृषणश्व—एक मनुष्य, जिसकी पत्नी का नाम मेना था। मेना का रूप धारण कर स्वयं इंद्र इसकी पत्नी बना था (ऋ. १.५१.१३)। ब्राह्मण ग्रंथों में भी इसका निर्देश प्राप्त है (जै. ब्रा. २.७९; श. ब्रा. ३.३.४.१८; ष. ब्रा. १.१.१६; तै. आ. १.१२.१३)।

वृषदर्भ—एक राजा, जिसने अपने राज्यकाल में एक गुप्त नियम बनाया था, 'ब्राह्मणों को सुवर्ण एवं चांदी ही दान दिया जाय'।

एक बार इसके मित्र सेन्दुक के पास एक ब्राह्मण आया, एवं उससे १००० अश्वों का दान माँगने लगा। यह दान देने में सेन्दुक ने असमर्थता प्रकट की, एवं उस ब्राह्मण को इसके पास भेज दिया।

इसने अपने गुप्त नियम के अनुसार, ब्राह्मण के द्वारा अश्वों का दान माँगते ही उसे कोड़ों से फटकारा। ब्राह्मण के द्वारा इस अन्याय का रहस्य पूछने पर, इसने उसे अपना गुप्तदान (उपांशु) का संकल्प निवेदित किया, एवं उसकी माफी माँगी। पश्चात् इसने उसे अपने राज्य की एक दिन की आय दान के रूप में प्रदान की (म. व. परि १. क्र. २१. पंक्ति ४.)। भांडारकर संहिता में यह कथा अप्राप्य है। इसे 'वृषादर्भि' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. उशीनर देश के शिवि राजा का पुत्र। इसी के नाम से इसके राज्य को 'वृषादर्भ' जनपद नाम प्राप्त हुआ (ब्रह्मांड ३.७४.२३)।

वृषदश्व—(सू. इ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार पृथरोमन् अथवा अनेनस् राजा का पुत्र था।

वृषध्वज—एक जनकवंशीय राजा, जिसके पुत्र का नाम रथध्वज था। यह सीरध्वज जनक राजा के पूर्वकाल में उत्पन्न हुआ था। किन्तु वंशावलि में इसका नाम अप्राप्य है।

२. एक असुर, जिसने वृत्र-इंद्र युद्ध में वृत्र के पक्ष में भाग लिया था (भा. ६.१०)।

३. कर्णपुत्र वृषकेतु का नामान्तर।

४. प्रवीर वंश में उत्पन्न एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्वर्तन के कारण अपने स्वजनों का नाश किया (म. उ. ७२. १६ पाठ.)। पाठभेद-'बृहद्बल'।

वृषन् पाथ्य—अग्नि का एक उपासक (ऋ. १.३६.१०)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसका पैतृक नाम 'पाथ्य' दिया गया है (ऋ. ६.१६.१५)।

वृषपर्वन्—एक दानवराज, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२४)। यह दीर्घप्रज्ञ राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.१६)। उशनस् शुक्राचार्य इसीका ही राजपुरोहित था, जिसने 'संजीवनी-विद्या' के कारण इसकी राज्य की एवं असुरों की ताकद काफ़ी बढायी थी।

इंद्रवृत्र युद्ध में इसने इंद्र से युद्ध किया था। देवासुर-युद्ध में इसने अश्विनों से युद्ध किया था (भा. ६.६.३१-३२; १०.२०)।

इसकी कन्या शर्मिष्ठा ने शुक्रकन्या देवयानी का अपमान किया, जिस कारण शुक्र इसका राज्य छोड़ जाने के लिए सिद्ध हुआ। इसपर अपने राज्य में रहने के लिए इसने शुक्र से प्रार्थना की, एवं तत्प्रीत्यर्थ अपनी कन्या शर्मिष्ठा को देवयानी की आजन्म दासी बनाने की उसकी शर्त भी मान्य की (भा. ९.१८.४)। शर्मिष्ठा ने भी असुरवंश के कल्याण के लिए, देवयानी की दासी बनने के प्रस्ताव को मान्यता दी (म. आ. ७५)।

परिवार—शर्मिष्ठा के अतिरिक्त, इसकी सुंदरी एवं चंद्रा नामक अन्य दो कन्याएँ भी थी।

२. एक ऋषि, जिसका आश्रम हिमालय प्रदेश में गंधमादन पर्वत के समीप स्थित था। वनवासकाल में तीर्थयात्रा करते समय युधिष्ठिरादि पांडव इसके आश्रम में आये थे। इसने पांडवों को उचित उपदेश कथन किया, एवं आगे बदरी-केदार जाने का मार्ग भी बताया (म. व. १५५.१६-२५)। बदरी-केदार से लौट आते समय भी, पुनः एक बार पांडव इसके आश्रम में आये थे (म. व. १७४.६-८)।

३. एक असुर, जो वृत्र का अनुयायी था (भा. ६.१०.१९)।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वृषभ—(सो. सह.) एक हैहयवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार कार्तवीर्य सहस्रार्जुन राजा का पुत्र था (भा. ९.२३.२७)।

२. (सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार कुशाग्र राजा का पुत्र, एवं पुण्यवत् राजा का पिता था (मत्स्य. ५०.२९)।

३. एक राजकुमार, जो कलिंग देश के राजा का भाई था। यह भीम के द्वारा मारा गया (म. क. ४.१६)।

४. गांधारराज सुबल का पुत्र, जो शकुनि का छोटा भाई था। इसने अपने अन्य पाँच भाइयों के साथ इरावत् पर हमला किया था, जिसमें इसके अतिरिक्त इसके पाचों भाई मारे गये (म. भी. ८६.२४ पाठ.)।

५. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अनमित्र राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम जयन्ती था, जो काशिराज की कन्या थी (मत्स्य. ४५.२५-२६)।

६. एक राजा, जो सृष्टि एवं छाया का पुत्र था (ब्रह्मांड. २.३६.९८)।

७. एक गोप, जो कृष्ण का मित्र था (भा. १०.१८. २३)।

८. रामसेना का एक वानर (वा. रा. कि. १४१)।

९. एक असुर, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया था (ब्रह्मांड. ३.३६.३७)।

१०. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

वृषभानु—एक राजा। एक बार यह यज्ञ के लिए भूमि शुद्ध कर रहा था, जिस समय इसे राधा नामक कन्या प्राप्त हुई। अपनी कन्या मान कर, इसने उसे पालपोस कर बड़ा किया (पद्म. ब्र. ७.) ब्रह्मवैवर्त में इसे राधा का पिता कहा गया है (ब्रह्मवै. २.४९.३२-४२)।

वृषभेक्षण--श्रीकृष्ण का एक नामांतर (म.उ.६८.७)।

वृषवाहन—एकादश रुद्रों में से एक।

वृषशुष्म वातावत जातुकर्ण्य--एक आचार्य, जो निकोथक भायजात्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम इन्द्रोत शौनक था (वं. ब्रा. २; कौ. ब्रा. २.९)। 'वातवत्' का वंशज होने के कारण, इसे 'वातावत' पैतृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

'उदित होम' पक्ष का यह पुरस्कर्ता था, जिस पक्ष का इसने अच्छा समर्थन किया था (सां. ब्रा. २.९; ऐ. ब्रा. ५.२९; तै. ब्रा. ५.२९.१)।

वृषसेन--अंगराज कर्ण का पुत्र, जिसकी पत्नी का नाम भद्रावती था।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसकी श्रेणि 'रथी' थी (म. उ. १६४.२३)। इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था:— १. शतानीक आदि द्रौपदीपुत्र (म. द्रो. १५.१.१०); २. सुषेण (म. द्रो. ५३.९-११); ३. पाण्ड्य (म. द्रो. २४.१८३*पाठ.); ४. अभिमन्यु (म. द्रो. ४३.५-७); ५. अर्जुन (म. द्रो. १२०.४०); ६. द्रुपद (म. द्रो. १४०. १३; १४३.१९) ७. नकुल (म. क. ६२.३२)।

अंत में अर्जुन के द्वारा इसका वध हुआ (म. क. ९२.६१)। इसकी मृत्यु पौष कृष्ण त्रयोदशी के दिन हुई (भारतसावित्री)। इसकी मृत्यु से अंग राजवंश समाप्त हुआ (भा. ९. २३.१४)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्, श्रीव्यास के द्वारा आवाहन किये जाने पर, इसने उसे दर्शन दिये थे (म. आश्र. ४०.१०)।

२. एक राजा, जो यमसभा में उपस्थित था (म. स. ८.१२)।

३. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

४. एक हैहय राजा, जो कार्तवीर्य अर्जुन के पुत्रों में से एक था (विष्णु. ४.११.२१)।

वृषाकपि—भगवान् विष्णु का एक नाम (म. शां. ३४२.८९)।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (म. अनु. १५०.१२-१३)। यह भूत एवं सरूपा का पुत्र था, एवं इसने देवासुर युद्ध में जम्भ से युद्ध किया था (भा. ६.६.१७)।

३. एक ऋषि, जो अन्य ऋषियों के साथ देवताओं के यज्ञ में उपस्थित हुआ था (म. अनु. ६६.२३)।

वृषाकपि ऐन्द्र—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. ७.१३. २३; १०.८६.३)। इंद्र एवं इंद्राणी के साथ इसके द्वारा किये गये संवाद का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.८६.५)।

लो. तिलक के अनुसार, दक्षिणायन बिंदु के समीप स्थित सूर्य को ही ऋग्वेद में 'वृषाकपि' कहा गया है। दक्षिणी ध्रुव प्रदेश में छः महीने की अंधेरी रात शुरू होने के पूर्व, अन्तरिक्ष में दिखाई देनेवाले सूर्य को ही वैदिक आर्यों के द्वारा 'वृषाकपि' कहा गया होगा (लो. तिलक, आर्यों का मूलस्थान पृ. २५१)।

वृषागक वातरशन--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१३६.४)।

वृषादर्भ--(सो. अनु.) अनुवंशीय वृषादर्भि राजा का नामान्तर। भागवत में इसे शिबि राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२३.३; वृषादर्भि देखिये)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वृषादर्भि शैब्य—(सो. अनु.) शिबि (वृषदर्भ) राजा का पुत्र, जिसे महाभारत में काशि देश का राजा कहा गया है (म. अनु. ९३.२७-२९; १३७. १०)।

भागवत, मत्स्य एवं वायु में इसे क्रमशः 'वृषादर्भ,' 'पृथुदर्भ' एवं 'वृषदर्भ' कहा गया है। विष्णु में इसके नाम की निरुक्ति वृष + दर्भ दी गयी है। महाभारत में इसके 'वृषदर्भ' (म. अनु. ३२.४), एवं वृषादर्वि (म. शां. २२६.२५) नामान्तर प्राप्त है। भांडारकरसंहिता में 'वृषादर्भ' पाठ स्वीकृत किया गया है।

सप्तर्षियों से संघर्ष—इसने सप्तर्षियों से किये संघर्ष की कथा महाभारत में प्राप्त है। एक बार सप्तर्षि पृथ्वी की प्रदक्षिणा कर रहे थे, जिस समय इसने एक यज्ञ कर अपना पुत्र उन्हें दक्षिणा के रूप में प्रदान किया। आगे चल कर, अल्पायुत्व के कारण इसका पुत्र मृत हुआ, जिसे अकाल के कारण भूखे हुए सप्तर्षियों ने भक्षण करना चाहा। इसने सप्तर्षियों को इस पाशवी कृत्य से रोकना चाहा, किन्तु सप्तर्षियों ने इसकी एक न सुनी। अपने पुत्र के मृत देह की पुनःप्राप्ति के लिए, इसने सप्तर्षियों को अनेकानेक प्रकार के दान देने का आश्वासन दिया, किन्तु कुछ फायदा न हुआ।

अन्त में अत्यधिक क्रुद्ध हो कर इसने सप्तर्षियों का वध करने के लिए एक कृत्या का निर्माण किया। उस कृत्या का सही नाम यद्यपि 'यातुधानी' था, फिर भी इसने उसे 'मनसा' नाम धारण कर सप्तर्षियों पर आक्रमण करने के लिए कहा। इसकी आज्ञा से उस कृत्या ने सप्तर्षियों पर आक्रमण किया, किन्तु सप्तर्षियों के साथ रहने वाले शुनःसख (इंद्र) ने उसका वध किया (म. अनु. २३)।

दानशूरता—इसकी दानशूरता की विभिन्न कथाएँ महाभारत में प्राप्त है। इसने ब्राह्मणों को अनेकानेक रत्न एवं गृह दान में प्रदान किये थे (म. शां. २२६.२५; अनु. १३७.१०)। अपने पिता शिबि राजा के समान, इसने भी एक कपोत पक्षी का रक्षण करने के लिए अपने शरीर के मांसखंड श्येनपक्षी को खिलाये थे (म. अनु. ३२.३९)।

वृषामित्र--एक ऋषि, जो पाण्डवों के वनवासकाल में उनके साथ रहता था (म. व. २७.२४)।

वृषु--(सो. पुरूरवस्) पुरूरवस्वंशीय पृथु राजा का नामान्तर (पृथु. ८. देखिये)।

वृष्टि--(सो. कुकुर.) कुकुरवंशीय धृष्ट राजा का नामांतर। वायु में इसे कुकुर राजा का पुत्र कहा गया है (धृष्ट ५. देखिये)।

२. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

वृष्टिनेमि—अक्रूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

वृष्टिमत्--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कविरथ राजा का पुत्र, एवं सुषेण राजा का पिता था।

वृष्टिहव्य—एक आचार्य, जो उपस्तुत वार्ष्टिहव्य नामक आचार्य का पिता था।

वृष्ट्याद्य--(सो. सह.) एक हैहयवंशीय राजा, जो कार्तवीर्य एवं महारथा के पुत्रों में से एक था (वायु. ९४. ४९)।

वृष्णि--(सो. क्रोष्टु.) कुंति राजा के पुत्र धृष्ट राजा का नामान्तर (धृष्ट ४. देखिये)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो सात्वत भजमान राजा का पुत्र था। इसे क्रोष्टु नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.३४; ब्रह्म. १४.१; १५.३१)।

कृष्ण के साथ इसका स्यमंतक मणि के संबंध में संघर्ष हुआ था, जिस समय उस मणि की चोरी कृष्ण के द्वारा किये जाने का शक इसके मन में पैदा हुआ था। किन्तु श्रीकृष्ण ने अपने को निर्दोष साबित किया (ब्रह्मांड. ३. ७१.१)।

यह क्रोष्टु वंश का सुविख्यात राजा था, एवं सुविख्यात वृष्णि वंश इसी से ही प्रारंभ होता है (वायु. ९५,१४; म. आ. २११.१-२; ५; ८)।

परिवार—इसकी गांधारी एवं माद्री नामक दो पत्नियाँ थी, जिनमें से माद्री से इसे युधाजित् आदि पाँच पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ४४.४८)।

वृष्णिवंश--वृष्णि राजा से उत्पन्न यादवों को 'वृष्णिवंशीय यादव' कहा जाता है, जो द्वारवती (द्वारका) में रहते थे। इसी वंश में कृष्ण एवं बलराम उत्पन्न हुए थे (भा. १.३.२३; ११.११)। इन लोगों का राजा कृष्ण होते हुए भी, उसका 'परमात्मन् स्वरूप' ये लोग न पहचान सके (भा. १.९.१८)। महाभारत में इन लोगों के राजा का नाम उग्रसेन दिया गया है (म. आ. २११.८)।

इस वंश में उत्पन्न लोग 'व्रात्य' (हीन जाति के) थे, ऐसा निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. द्रो. ११८. १५)। प्रभास क्षेत्र में हुए यादवी-युद्ध में इस वंश के लोगों का संपूर्ण संहार हुआ। महाभारत में इन लोगों का निर्देश 'अंधक' एवं 'भोज' राजाओं के साथ मिलता है। ये तीनों वंश एक ही यादव वंश की उपशाखाएँ थी (म. आ. २११.२; २१२.१४)। महाभारत में इस

वंश में उत्पन्न महारथि, महारथ, रथ एवं मंत्रिपुंगवों की सविस्तृत जानकारी प्राप्त हैः—

(१) महारथ—कृतवर्मन्, अनाधृष्टि, समीक, समितिंजय, कङ्क (कंस), शंकु, निदान्त (म. स. १३. ५७–५८)।

(२) महारथ—प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, भानु, अक्रूर, सारण, निशठ, गद (म. स. १३.१५९*)।

(३) रथ—आहुक, चारुदेष्ण, चक्रदेव, सात्यकि, कृष्ण, रौहिणेय (वलराम), सांब, शौरि (म. स. १३.५६)।

(४) मंत्रिपुंगव—वितद्रु, झल्लि, वभ्रु, उद्धव, विडूरथ, वसुदेव एवं उग्रसेन (म. स. १३.१५९*)।

३. (सो. वृष्णि.) वृष्णिवंशीय पृष्णि राजा का नामान्तर (पृष्णि ४. देखिये)।

४. (सो. कुकुर.) कुकुरवंशीय धृष्ट राजा का नामान्तर (धृष्ट. ५. देखिये)। इसके कपोतवर्मन्. एवं धृति नामक दो पुत्र थे (मत्स्य. ४४.६२)।

५. (सो. सह.) एक राजा, जो मधु राजा के सौ पुत्रों में से एक था। यह एक अत्यंत सुविख्यात राजा था, जिसके कारण इसका वंश सुविख्यात हुआ।

वृष्णिमत्—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शुचिरथ राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार शुचिद्रव राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु में इसे क्रमशः 'घृष्टिमत्' एवं 'रुतिमत्' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम सुषेण था (मत्स्य. ५०.८०; विष्णु. ४.२१.१२)।

वृहंगिरस्—एक राजा, जो मनु एवं वरस्त्री के पुत्रों में से एक था।

वेगदर्शिन्—रामसेना का एक वानर। राम के राज्याभिषेक के समय इसने जल लाया था (वा. रा. यु. १२८.५२)।

वेगवत्—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार धुंधुमत् राजा का, एवं भागवत तथा वायु के अनुसार बंधुमत् राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम बंधु था (भा. ९.२.३०)।

२. एक यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक था।

३. एक यादव, जो कृष्ण और नाग्नजिती राजा का पुत्र था (भा. १०.६१.१३)।

४. धृतराष्ट्रकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में मारा गया था (म. आ. ५२.१६)।

५. एक सुविख्यात दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२३)। पृथ्वी पर यह केकय राजकुमार के रूप में अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.१०)।

६. एक दैत्य, जो शाल्व का अनुयायी था। कृष्ण-शाल्व युद्ध में शामिल था, जहाँ कृष्णपुत्र सांब के द्वारा यह मारा गया (म. व. १७.२०)।

वेगवाहन—तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)।

वेंकटेश—एक भारतीय वैष्णव देवता, जो दक्षिण भारत में श्रीपर्वत अथवा शेषाचल (=तामील 'तिरुमलै') नामक पर्वतीय स्थान पर स्थित है। स्कंद में इस देवता का निर्देश 'श्रीनिवास' नाम से किया गया है, एवं इसकी पत्नी का नाम पद्मिनी दिया गया है (स्कंद. २.१. ४–८)। उत्तर भारत में यही देवता बालाजी नाम से सुविख्यात है जो मुख्यतः वैश्य एवं व्यापारी लोगों की देवता माना जाता है।

दक्षिण भारत में स्थित विठ्ठल एवं वेंकटेश ये विष्णु के ही साक्षात् स्वरूप माने जाते है, एवं विष्णु के अन्य अवतारों से इनका स्वरूप पूर्णतया विभिन्न हैं।

वेंकटेश का शब्दशः अर्थ 'पापनाशक' (वेंक-पाप; कट=नाशक) है। इसी कारण स्वयं वेंकटेश देवता एवं जिस पर्वत पर यह स्थित है, वह वेंकटाद्रि अत्यंत पवित्र माने जाते हैं।

जिस प्रकार वेंकटेश श्रीविष्णु का रूप माना जाता है; उसी प्रकार वेंकटाद्रि शेषनाग का स्वरूप कहलाता है। वेंकटाद्रि का तामिल नाम 'तिरुमलै' (तिरु=श्री; मलै =पर्वत) है, एवं वह 'श्री–पर्वत' एवं 'शेषाचल' इन संस्कृत शब्दों का तामिल रूप प्रतीत होता है। दक्षिण भारत में स्थित वेंकटेश मंदिर सात पर्वतों के एक समूहमें स्थित है, जहाँ पहुँचने के लिए सात मील चढ़ान चढ़नी पड़ती है।

उपासना—स्कंद में 'वेंकटेश महात्म्य' विस्तृत रूप में प्राप्त है। वलराम–तीर्थयात्रा वर्णन में भी वेंकटेश का निर्देश प्राप्त है (भा. ५.१९.१६; १०.७९.१३)। वैजयंती कोश में भी 'वेंकटाद्रि' का निर्देश प्राप्त है (वैज. ४१.१०)।

दक्षिण भारत में प्रचलित वेंकटेश-उपासना का आद्य प्रचारक रामानुजाचार्य माने जाते हैं, जिनके द्वारा प्रणीत रामानुज वैष्णव सांप्रदाय की अधिष्ठात्री देवताओं में वेंकटेश एक माना जाता है।

दक्षिण भारत में स्थित तिरुपति देवस्थान भारत का एक सर्वाधिक संपन्न देवस्थान माना जाता है, जहाँ विश्वविद्यालय, पाठशाला, धर्मशाला, बेंक, बस सर्विस आदि सारी सुविधाएँ देवस्थान के द्वारा संचालित है। सारे भारतवर्ष में रहनेवाले इस देवता के उपासक लक्षावधि रुपियों की भेंट इसे प्रतिवर्ष स्वयंस्फूर्ति से अर्पित करते है।

वेणी एवं वेणीस्कंद--कौरव्यकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था।

वेणु--(सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शतजित् राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम हय था, जिसके साथ इसका निर्देश 'वेणुहय' नाम से अनेक बार प्राप्त है (विष्णु ४.११.७)।

कई अन्य पुराणों में, इसका नाम वेणुहय दिया गया है, एवं इसके भाइयों के नाम 'हैहय' एवं 'हय' बतायें गये है (भा. ९.२३.२१; वायु. ९४.४)।

वेणुजंघ--युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१५)।

वेणुदारि--एक यादव, जो दक्षिणी भारत में स्थित अश्मक देश का अधिपति था (ह. वं. २.६१.१९)। इसने बभ्रु (अक्रूर) की पत्नी का हरण किया था (म. स. परि. १.२१.१५७२)। कर्ण ने अपने दक्षिणदिग्विजय में इसके पुत्र का पराजय किया था (म. व. परि. १. क्र. २४. पंक्ति. ५७-५८)।

वेणुहय--वेणु राजा का नामांतर (वेणु देखिये)।

वेणुहोत्र--(सो. क्षत्र.) क्षत्रवृद्धवंशीय वीतिहोत्र राजा का नामांतर (वीतिहोत्र ४. देखिये)। वायु में इसे धृष्टकेतु राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ९२.७२)।

वेतसु--एक दानव, जो द्योतन एवं कुत्स नामक आचार्यों का शत्रु था। इंद्र ने अपने इन दोनो मित्रों की सहायता के लिए इसका वध किया (ऋ. ६.२०.८; २६.४)।

२. एक जातिविशेष, जिसके अधिपति का नाम दशद्यु था। इस जाति के लोगों ने तुग्र लोगों को पराजित किया था (ऋ. १०.४९.४)।

वेताल--पिशाचों का एक समूह, जो रुद्रगणों में शामिल था। ये लोग युद्धभूमि में उपस्थित रह कर मानवी रक्त एवं मांस भक्षण करते थे (मा. २.१०.३९)। देवता मान कर इनकी पूजा की जाती थी, जहाँ सर्वत्र इन्हें शिव के उपासक ही माना जाता था (मत्स्य. २५९.२४)।

२. रुद्रशिव का एक पार्षद, जो उसके द्वारपाल का काम करता था। एक बार शिव एवं पार्वती क्रीडा कर रहे थे, उस समय क्रीडा के उन्मत्त वेश में पार्वती सहजवश द्वार पर आयी। उसे देख कर यह काममोहित हुआ, एवं उनका अनुनय करने लगा। इसका यह धार्ष्ट्य देख कर पार्वती अत्यंत क्रुद्ध हुई, एवं उसने इसे पृथ्वी पर मनुष्य बनने का शाप दिया।

पार्वती के शाप के कारण, इसने 'वेताल' के रूप में पृथ्वी पर जन्म लिया। तदुपरांत अपने पार्षद के प्रति भक्तवत्सलता से प्रेरित हो कर, शिव एवं पार्वती भी महेश एवं शारदा नाम से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए (शिव. शत. १४)।

कालिका पुराण में--इस ग्रंथ में इसके भाई का नाम भैरव बताया गया है, एवं इन दोनों को चंद्रशेखर राजा एवं तारावती के पुत्र कहा गया है। अपने पूर्वजन्म में ये भृंगी एवं महाकाल नामक शिवदूत थे, जिन्हे पार्वती के शाप के कारण पृथ्वीलोक में जन्म प्राप्त हुआ था।

इनके पिता चंद्रशेखर ने इन्हें राज्य न दे कर इनके अन्य तीन भाइयों को वह प्रदान किया। इस कारण ये अरण्य में तपस्या करने गये, एवं शिव की उपासना करने लगे। आगे चल कर वसिष्ठ की कृपा से, इन्हें संध्याचल पर्वत पर शिव का दर्शन हुआ, एवं कामाख्या देवी की उपासना से इन्हें शिवगणों का आधिपत्य भी प्राप्त हुआ।

इनके वंश में उत्पन्न लोगों का 'वेतालवंश' भी कालिका पुराण में दिया गया है।

वेतालजननी--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

वेद--भृगुकुलोत्पन्न एक मंत्रकार। पाठभेद (वायुपुराण)-'विद'।

२. एक ऋषि, जो धौम्य ऋषि का शिष्य, एवं जनमेजय का उपाध्याय था (म. आ. ३.७९-८५)। इसे 'बैद' नामान्तर भी प्राप्त था।

इसके शिष्य का नाम उत्तंक था। एक बार यह परदेश गया था, जिस समय अपने घर की एवं पत्नी की रक्षा करने के लिए इसने उत्तंक को कहा था। यह कार्य उत्तम

प्रकार से निभाने के कारण इसने उत्तंक को अनेकानेक आशीर्वाद प्रदान किये।'

अपनी शिक्षा समाप्त होने के पश्चात्, उत्तंक ने इसकी पत्नी को पौष्य राजा की पत्नी के कुण्डल गुरुदक्षिणा के रूप में प्रदान किये (उत्तंक देखिये)।

३. एक शिवभक्त राजा, जो सिंधुद्वीप राजा का भाई था।

वेददर्शन--देवदर्श नामक आचार्य का नामान्तर (देवदर्श देखिये)। इसने सुमन्तु से अथर्ववेद संहिता सीखी थी, जो आगे चल कर इसने अपने शौक्लायानि आदि शिष्यों को प्रदान की (भा. १२.७.१-२)।

वेदनाथ—एक राजा, जो ब्राह्मण के द्रव्य का अपहरण करने के कारण वानर बन गया था। अपने मित्र सिंधुद्वीप की सलाह के अनुसार, धनुष्कोटी तीर्थ में स्नान कर, यह वानरयोनि से मुक्त हुआ (स्कंद. १.३.१४)। इसे 'वेदभृतिपुत्र' एवं 'मालंकिपुत्र' नामान्तर भी प्राप्त थे।

वेदबाहु—कृष्ण के पुत्रों में से एक (भा. १०.९०.३४)।

२. रैवत मन्वन्तर का एक ऋषि।

वेदमित्र—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्य परंपरा में से मांडुकेय नामक आचार्य का शिष्य था। यह स्वयं शाकलगोत्रीय था, एवं व्याकरणशास्त्र के संबंधित इसके अनेकानेक मतों के उद्धरण ऋक्प्रातिशाख्य में प्राप्त है (ऋ. प्रा. ५२)। इसके कुल पाँच शिष्य थे। इसके नाम के लिए 'देवमित्र' पाठभेद प्राप्त है (व्यास देखिये)।

वेदवती--एक राजकन्या, जो कुशध्वज जनक की कन्या थी। इसकी माता का नाम मालावती था। इसे सीता का पूर्वजन्मकालीन अवतार माना जाता है। जन्म होते ही इसने मुख से वेदध्वनि निकाला, जिस कारण इसे 'वेदवती' नाम प्राप्त हुआ।

इसके पिता की इच्छा थी कि, इसका विवाह विष्णु से किया जाय। एक बार शंभु नामक राक्षस ने इससे विवाह करना चाहा, किन्तु अपने पूर्वयोजना के अनुसार कुशध्वज ने उसे ना कह दिया। इस कारण क्रुद्ध हो कर, शंभु राक्षस ने कुशध्वज जनक का वध किया।

तपस्या—अपने पिता के मृत्यु की पश्चात्, यह पुष्करतीर्थ पर जा कर तपस्या करने लगी, जिस कारण अगले जन्म में विष्णु की पत्नी बनने का आशीर्वाद इसे प्राप्त हुआ। इसी आशीर्वाद के अनुसार, अपने अगले जन्म में यह श्रीविष्णुस्वरूपी राम दाशरथि राजा की पत्नी बनी।

अग्निप्रवेश--एक बार रावण ने इस पर बलात्कार करना चाहा, किंतु उससे अपनी मुक्तता कर इसने अग्निप्रवेश कर अपनी इज्जत बचायी। मृत्यु के पूर्व इसने रावण को शाप दिया था। राम दाशरथि के द्वारा रावण का वध होने की विधिघटना का यही प्रारंभ हुआ, जिसका स्मरण रावण को अपनी मृत्यु के समय हुआ था (ब्रह्मवै. २.१४.५२; वा. रा. उ. १७)

वेदवृध्द--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से कौथुम पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

वेदव्यास—एक सुविख्यात ऋषिसमुदाय। वैवस्वत मन्वन्तर के अठ्ठाईस द्वापारों में उत्पन्न होने वाले अठ्ठाईस वेद व्यासों की नामावलि पुराणों में प्राप्त है। ये सभी ऋषि वेदव्यास नाम से ही अधिक सुविख्यात है (ब्रह्मांड. २.३३.३३; ३५.११७-१२५; व्यास देखिये)।

२. कृष्ण द्वैपायन व्यास का नामान्तर (व्यास पाराशर्य देखिये)।

वेदशर्मन्--(सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शोणाश्व राजा का पुत्र था।

२. विदुर का एक मित्र, जो उसके साथ कालिंजर पर्वत पर गया था। वहाँ सिद्धों के द्वारा प्राप्त उपदेश के अनुसार, इसने सोमवती अमावास्या के दिन 'अघतीर्थ' पर स्नान किया, जिस कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. भू. ९१--९२)।

३. पिशाचयोनि में प्रविष्ट हुआ एक ब्राह्मण, जो मुनिशर्मन् नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण के द्वारा मुक्त हुआ (पद्म. पा. ९४)।

४. शिवशर्मन् नामक विष्णुभक्त ब्राह्मण का पुत्र।

वेदशिरस्—एक शिवावतार, जो वाराहकल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर में से पंद्रहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। सरस्वती नदी के उत्तरीतट पर हिमालय पर्वत के अंतर्भाग में स्थित वेदशीर्ष नामक स्थान में यह अवतीर्ण हुआ। इसका प्रमुख अस्त्र महावीर्य था, एवं इसके शिष्यों में निम्नलिखित चार शिष्य प्रमुख थेः— १. कुणि; २. कुणिबाहु; ३. कुशरीर; ४. कुनेत्रक (शिव. शत. ५; वायु. २३.१६६-१६८)।

२. एक भृगुवंशीय ऋषि, जो मार्कंडेय ऋषि का पुत्र था। इसकी माता का नाम मूर्धन्या (धूम्रा) था। इसकी पत्नी का नाम पीवरी था, जिससे इसे 'मार्कंडेय'

सामूहिक नाम धारण करनेवाले अनेकानेक पुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मांड. २.११.७; वायु. २८.६)।

एक बार इसके तप में बाधा डालने के लिए शुचि नाम एक अप्सरा इसके पास आयी, जिससे इसे एक कन्या उत्पन्न हुई। इस कन्या का हरण यमधर्म ने करना चाहा, जिस कारण इसने उसे नदी बनने का शाप दिया। काशी में स्थित 'धर्म' नद वही है (स्कंद ४.२.५९)।

३. (स्वा.) एक राजा, जो प्राण राजा का पुत्र था (भा. ४.१.४५)।

४. स्वारोचिष मन्वन्तर के विभु नामक इंद्र का पिता।

५. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

६. एक ऋषि, जो कृशाश्व ऋषि एवं धिषणा का पुत्र था। इसे पाताल में स्थित नागों से 'विष्णु-पुराण' का ज्ञान प्राप्त हुआ था, जो इसने आगे चल कर प्रमति नामक अपने शिष्य को प्रदान किया (विष्णु. ६.८.४७)।

वेदशेरक--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषि-गण।

वेदश्री--रैवत मन्वन्तर का एक ऋषि (ब्रह्मांड. २. ३६.६२)।

वेदश्रुत--उत्तम मन्वन्तर का एक देव (भा. ८.१. २४)।

वेदस्पर्श--देवदर्श नामक आचार्य का नामान्तर। वायु में इसे कबंध ऋषि का शिष्य कहा गया है, एवं इसने अथर्ववेद के चार भाग कर उसे अपने चार शिष्यों में बाँट देने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (वायु. ६१.५०)।

वेधस्--ब्रह्मा का नामान्तर (भा. ८.५.२४)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार (मत्स्य. १४५-९९)।

वेन--(स्वा. उत्तान.) अंग देश का एक दुष्टकर्मा राजा, जो अंग एवं मृत्यु की मानसकन्या सुनीथा का पुत्र था। भागवत में इसे तेईसवाँ वेदव्यास कहा गया है। महाभारत में कर्दमपुत्र अनंग को इसका पिता कहा गया है (म. शा. ५९.९६-९९)।

अनाचार--यह शुरू से ही दुर्वत्त था। यह अपने मातामह मृत्यु (अधर्म) के घर में पालपोस कर बड़ा हुआ था। इसके दुष्ट कर्मों के कारण, त्रस्त हो कर इसका पिता अंगदेश छोड़ कर चला गया। राज्यपद प्राप्त होते ही इसने यज्ञयागादि सारे कर्म बंद करवाये। यह स्वयं को ईश्वर का अवतार कहलाता था। इसके दुश्चरित्र के कारण, ऋषियों ने इसका वध किया (म. शां. ५९.१००)।

मृत-देह का मंथन--इसकी मृत्यु के पश्चात्, अंगवंश निर्वंश न हो इस हेतु इसकी माता सुनीथा ने इसके मृत-शरीर का दोहन करवाया। इसके दाहिनी जाँघ की मंथन से निषाद नामक एक कृष्णवर्णीय नाटा पुरुष उत्पन्न हुआ, जिससे आगे चल कर निषाद जाति-समूह के लोग उत्पन्न हुए। आगे चल कर ऋषियोंने इसके दाहिने हाथ का मंथन किया, जिससे पृथु वैन्य नामक चक्रवर्ति राजा उत्पन्न हुआ, जो साक्षात् विष्णु का अवतार था (म. शां. ५९.१०६)।

ऋषियों के द्वारा वेन का वध होने की, एवं इसके दाहिने हाथ के मंथन से पृथु वैन्य का जन्म होने की कथा सभी पुराणों में प्राप्त है (ह. वं. १.५.३-१६; वायु. ६२.१०७-१२५; भा. ४.१४; विष्णुधर्म. १.१०८; १.१३; ७.२९; ब्रह्म. ४; मत्स्य. १०.१-१०)।

महाभारत के अनुसार, इसकी दाहिनी जाँघ की मंथन से निषाद, एवं विंध्यगिरिवासी म्लेच्छों का निर्माण हुआ था (म. शां. ५९.१०१-१०३)। पद्म के अनुसार, यह ऋषियों के द्वारा मृत नही हुआ, बल्कि एक वल्मीक में छिप गया था (पद्म. भू. ३६-३८)।

वायु में--इस ग्रंथ में वेन के शरीर के दोहन की कथा कुछ अलग प्रकार से प्राप्त है। दुष्टप्रकृति वेन ने मरीचि आदि ऋषियों का अपमान किया, जिस कारण ऋषियों ने इसके हाथ एवं पाव पकड़ कर इसे नीचे गिराया। पश्चात् उन्होंने इसके हाथ एवं पाव खूब घुमाये, जिस कारण इसके दाहिने एवं बाये हाथ से क्रमशः पृथु वैन्य एवं निषाद का निर्माण हुआ। इनमें से निषाद का जन्म होते ही ऋषियों ने 'निषीद' कह कर अपना निषेध व्यक्त किया, जिस कारण इस कृष्णवर्णीय पुत्र को निषाद नाम प्राप्त हुआ। इस मंथन के बाद वेन मृत हुआ (वायु. ६१.१०८-१९३)।

इसके दो पुत्रों में से, पृथु इसके पिता अनंग के अंश से उत्पन्न हुआ था, एवं निषाद की उत्पत्ति इसके स्वयं के पापों से हुई थी। निषाद के रूप में इसका पाप इसके शरीर से निकल जाते ही यह पापरहित हुआ। पश्चात् तृणबिंदु ऋषि के आश्रम में इसने विष्णु की उपासना की, जिस कारण इसे स्वर्लोक की प्राप्ति हुई (पद्म. भू. ३९-४०; १२३-१२५)। महाभारत के अनुसार, अपनी मृत्यु के पश्चात् यह यमसभा में सूर्यपुत्र यम की उपासना करने लगा (म. स. ८.१८)।

२. एक राजा, जो वैवस्वत मनु के दस पुत्रों में से एक था (म. आ. ७०.१३)।

वेन पार्थ—एक राजा, जिसके औदार्य की प्रशंसा तान्व पृथुपुत्र नामक आचार्य के द्वारा की गयी है (ऋ. १०.९३.१४)। 'पृथा' का वंशज होने से इसे 'पार्थ' मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा (ऋ. १०.९३.१५)।

लो. तिलकजी के अनुसार, वेन एक व्यक्ति का नाम न हो कर, आकाशस्थ ग्रह का नाम था (ऋ. १०.१२३)। किन्तु इस संबंध में निश्चित प्रमाण उपलब्ध नहीं है।

वेन भार्गव—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.८५; १०.१२३)।

वेन वाजश्रवस--एक ऋषि, जो बाईसवाँ व्यास था (व्यास देखिये)।

वेश--एक दानव, जिसे इंद्र ने आयु राजा की रक्षा के लिए पराजित किया था (ऋ. ७.१८.११)। संभवतः 'दास वेश' एवं यह दोनों एक ही व्यक्ति होंगे (ऋ. २.१३.८)।

वैकर्ण--एक राजद्वय, जिनके इक्कीस जातियों (जनान्) का सुदास ने दाशराज्ञ-युद्ध में उन्मूलन किया था (ऋ. ७.१८.२१)। त्सीमर के अनुसार, वैकर्ण दो राजाओं का नाम न हो कर, कुरु एवं क्रिवि जातियों का सामूहिक नाम था (त्सीमर, अल्टिण्डिशे लेबेन १०३)।

एक जाति के रूप में विकर्ण लोगों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. भी. ४७.१५), जो काश्मीर प्रदेश में बसे हुए थे। इससे प्रतीत होता है कि, ऋग्वेद में निर्दिष्ट वैकर्ण लोग इसी प्रदेश के रहनेवाले थे।

वैकर्णिक—वैकर्णेय नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकारगण का नामान्तर।

वैकर्णिनि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैकर्णेय—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण। पाठभेद-'वैकर्णिक'।

वैकालिनायन--वैकृति गालव नामक विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

वैकुंठ--चाक्षुष एवं रैवत मन्वन्तरों में उत्पन्न अवतार।

२. रैवत मन्वन्तर का एक देवगण।

३. इंद्र का अवतार (इंद्र देखिये)।

४. एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'दीप-महात्म्य' बताने के लिए पद्म में कथन की गयी है (पद्म. ब्र. ३)।

वैकृति गालव—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'वैकालिनायन'।

वैक्लव--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैखानस--एक ऋषिविशेष, जो 'व्यपोहिनी' नामक यज्ञसंस्कार की दीक्षा ले कर उत्पन्न हुए थे। पुराणों में निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश 'वैखानस संप्रदायी' ऋषि के नाते प्राप्त है :— १. नहुषपुत्र पृथु (मत्स्य. २४.५१), २. अगस्त्य, (मत्स्य. ६१.३७); ३. ययातिभ्राता यति (ब्रह्मांड. ३.६८.१४; ब्रह्म. १२.३; ह. वं. १.३०.३; मत्स्य. २४.५१)।

२. एक वैदिक ऋषिसमुदाय, जिसमें सौ ऋषि समाविष्ट थे (ऋ. ९.६६)। ये ब्रह्मा के नाखून से उत्पन्न हुए थे (तै. आं. १.२३)। पंचविंश ब्राह्मण के अनुसार रहस्य देवमलिम्लुच ने मुनिमरण नामक स्थान में इनका वध किया था (पं. ब्रा. १४.४.७; तै. आ १.२३.३)। इस ऋषिसमूह में पुरूहन्मन् नामक ऋषि समाविष्ट था (तै. आ. १४.९.२९)।

३. एक धर्मशास्त्रकार, जिसका धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ 'वैखानस धर्मप्रश्न' नाम से सुविख्यात है। यह ग्रंथ कृष्णयजुर्वेदान्तर्गत धर्मसूत्र ग्रंथ माना जाता है, एवं अनंतशयनग्रंथावलि में मुद्रित किया गया है (क्र. २८; इ. स. १९१३)।

वैखानस धर्मप्रश्न--इस ग्रंथ में वानप्रस्थाश्रम ग्रहण करने का धार्मिक विधि विस्तारपूर्वक दिया गया है, एवं वानप्रस्थियों के लिए सुयोग्य आचार भी बताये गये है।

इस ग्रंथ में अनुलोम एवं प्रतिलोम विवाह से उत्पन्न संतानों के लिए सुयोग्य व्यवसाय भी बताये गये हैं। इसके साथ ही साथ निम्नलिखित विषयों की चर्चा भी इस ग्रंथ में प्राप्त है:- चार वर्ण एवं चार आश्रम के लोगों के कर्तव्य; संध्या, वैश्वदेव, स्नान, आचमन आदि के धार्मिक विधि, चार वर्णों के लोगों के लिए सुयोग्य व्यवसाय, आदि।

'वैखानस धर्मप्रश्न' के अनेक उद्धरण मनुस्मृति में प्राप्त हैं (मनु. ६.२१)। इसके अतिरिक्त इसके नाम पर 'वैखानस श्रौतसूत्र' नामक ग्रंथ भी उपलब्ध है।

४. चंपक नगरी एक राजा, जिसने मार्गशीर्ष शुक्ल एकादशी के व्रत का पुण्य अपने पितरों को दे कर उनका उद्धार किया (पद्म. उ. ३९)।

वैगायन--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैजभृत--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैजवापायन-वैजवापायन नामक आचार्य का नामान्तर।

वैजान--त्रश नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १३.३.१२)। विजान का वंशज होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। वेबर के अनुसार, इस पैतृक नाम का सही पाठ 'वै+जानः' था (वेबर, इन्डिशे स्टूडियेन. १०.३२)।

वैदभतीपुत्र--एक आचार्य, जो कार्शकेयीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.२. काण्व)। पाठ-'वैधृतिपुत्र'।

वैडव--वसिष्ठ ऋषि का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ११.८.१४)। 'वीडु' का वंशज होने से इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। किन्तु सायण भाष्य में वसिष्ठ को वीड का पुत्र कहा गया है (तां. ब्रा. ११.८.१४)।

वैणव--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैतंड्य--(सो. आयु.) एक राजा, जो आयु (आप) राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.३.२४, वायु. ६६.२३)।

वैतरण--ऋग्वेद में निर्दिष्ट एक पैतृक नाम (ऋ. १०.६१.१७)। भरत एवं वध्यश्व के भाँति, वैतरण के अग्नि का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है।

वैतहव्य--एक परिवार का सामूहिक नाम। एक ब्राह्मण की गाय भक्षण करने के कारण, इस परिवार के लोगों के पतन होने का निर्देश अथर्ववेद में प्राप्त है (अ. वे. ५.१८.१०-११; १९.१)। इन्हें सृंजय कहा गया है, किन्तु त्सीमर के अनुसार, वैतहव्य कोई स्वतंत्र लोग न हो कर, वह सृंजय लोगों की केवल उपाधि मात्र ही थी। अन्य अभ्यासक लोग इन्हें स्वतंत्र परिवार मानते हैं, एवं 'वीतहव्य का वंशज' इस अर्थ से वैतहव्य की निरुक्ति बताते हैं।

वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों का पैतृक नाम 'वैतहव्य' दिया गया हैः-१. अरुण (ऋ. १०.९१); २. वीतहव्य आंगिरस (ऋ. ६.१५); सृंजय (अ. वे. ५.१९.१)।

वैतान--एक आचार्य, जो कृष्णयजुर्वेदान्तर्गत 'वैतान श्रौतसूत्र' नामक ग्रंथ का रचियता माना जाता है।

वैताल--एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से जातुकर्ण्य नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद-'वैतालिक'।

वैतालिक--एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से शाकपूणि नामक आचार्य का शिष्य था। भागवत में इसे 'वैताल' कहा गया है।

वैताली--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६२)।

वैद--हिरण्यदत नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ३.६.४; ऐ. आ. १०.९)। विद का वंशज होने से इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। पाठभेद-'वैद'।

वैदथिन--ऋजिश्वन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ४.१६.१३; ५.२९.११)। विदथिन् का वंशज होने से उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैददश्वि--एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:- १. तरंत (ऋ. ५.६१.१०); २. पुरुमीळ्ह (पं. ब्रा. १३.७.१२; जै. ब्रा. १.५१; ३.१३९)।

वैदभतीपुत्र--एक आचार्य, जो कार्शकेयीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं क्रौंचिकीपुत्र नामक आचार्यद्वय का गुरु था (बृ. उ. ६.४.३२ माध्यं.)। बृहदारण्यक उपनिषद के काण्व संस्करण में इसे वैदभतीपुत्र कहा गया है (बृ. उ. ६.५.२ काण्व.)। शतपथ ब्राह्मण में इसे भालुकीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १४.९.४.३२)।

वैदर्भ--भीम नामक राजर्षि का 'देशीय' नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४.९)। विदर्भ देश का राजा होने के कारण, उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैदर्भि--एक राजा, जिसने अपनी लोपामुद्रा नामक कन्या अगस्त्य को विवाह में दी थी (म. अनु. १३७.११)।

२. भार्गव नामक आचार्य का पैतृक नाम (प्र. उ. १.१)। विदर्भ का वंशज होने के कारण उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैदर्भी--एक देशीय नाम, जो निम्नलिखित विदर्भ राजकन्याओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:- १. दमयन्ती; २. रुक्मिणी; ३. लोपामुद्रा; ४. सगरपत्नी केशिनी; ५. मलयध्वजपत्नी।

वैदेह--(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार निमि राजा का पुत्र था। निमि राजा के वंशजों के लिए भी यह नाम प्रयुक्त है (भा. ९.१३.३)।

२. एक देशीय नाम, जो विदेह देश के निम्नलिखित राजाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:- १. जनक (तै. ब्रा. ३.१०.९.२१); २. नमी साप्य (पं. ब्रा. २५.१०.१७)।

वैदेहरात--विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक ऋषिगण। पाठभेद-'देवराज'।

वैदेही—जनमेजयपुत्र शतानीक की पत्नी।

वैद्य--वरुण एवं सुनादेवी के पुत्रों में से एक। इसके पुत्रों के नाम घृणि एवं मुनि थे, जो आपस में लड़ कर मर गये (वायु. ८४.६-८)।

२. सुखदेवों में से एक।

वैद्यग--अंगिरस्कुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

वैद्यनाथ--शिव का एक अवतार, जो रावण की प्रार्थना से चिताभूमि में प्रकट हुआ था (शिव. शत. ४२)। कई विद्वानों के अनुसार, महाराष्ट्र में स्थित 'परली वैजनाथ' का शिवस्थान यही है (ज्योतिर्लिंग देखिये)।

वैधस—हरिश्चंद्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१३.१; सां. श्रौ. १५.१७.१)। वेधस् का वंशज होने से उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैधृत--धर्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८. १३.२५)।

वैधृति--विधृति के पुत्रों का सामूहिक नाम, जिन्होंने सारे वेद अपने मन में एकत्रित कर रखे थे (भा. ८.१.२९)।

२. तामस मन्वन्तर का देवगण।

३. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के धर्मसेतु नामक अवतार की माता।

४. धर्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र।

५. तामस मन्वन्तर के देवों की माता।

वैधेय--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

वैन--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से शृंगीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था।

वैनतेय--गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ.९९.१०)।

२. गरुड का नामान्तर (मत्स्य. १५०.२१४)।

वैनहोत्र--(सो. क्षत्र.) क्षत्रवृद्धवंशीय वीतिहोत्र राजा का नामान्तर। विष्णु में इसे धृष्टकेतु राजा का पुत्र कहा गया है।

वैन्य—भृगुकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित राजर्षियों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. अत्रि; २. पृथि; ३. पृथु; ४. पृथी (ऋ. ८.९.१०; पं. ब्रा. १३.५.२०; श. ब्रा. ५.३.५.४)।

वैपश्चित—तार्क्ष्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा, १३.४.३.१३)।

वैपश्चित दार्ढजयन्ति गुप्त लौहित्य--एक आचार्य, जो वैपश्चित दार्ढजयन्ति दृढजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)। विपश्चित्, दृढजयन्त, एवं लोहित का वंशज होने के कारण इसे 'वैपश्चित', 'दार्ढजयन्ति' एवं 'लौहित्य' ये पैतृक नाम प्राप्त हुए होंगे।

वैपश्चित दार्ढजयन्ति दृढजयन्त लौहित्य—एक आचार्य, जो विपश्चित दृढजयन्त लौहित्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

वैभांडक अथवा **वैभांडकि**--पूर्णभद्र नामक आचार्य का पैतृक नाम (पूर्णभद्र देखिये)।

वैभूवस—त्रित नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. १०.४६.३)।

वैभीषणि--विभीषण का पुत्र, जिसने मणिकुंडल नामक वैश्य को शापमुक्त किया था (मणिकुंडल देखिये)।

वैमृग—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.११)।

वैयश्व--विश्वमनस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ८. २३.२५; २४.२३)। व्यश्व का वंशज होने से उसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैयाघ्रपदीपुत्र--एक आचार्य, जो काण्वीपुत्र एवं कापिपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.५.१ काण्व.)। इसके शिष्य का नाम कौशिकिपुत्र था। व्याघ्रपद्य के किसी स्त्री वंशज का पुत्र होने से, इसे यह मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैयाघ्रपद्य--एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. इंद्रद्युम्न भाल्लवेय (श. ब्रा. १०.६.१.८; छां. उ. ५. १४.१); २. बुडिल आश्वतराश्वि (छां. उ. ५.१६.१); ३. गोश्रुति (छां. उ. ५.२.३; सां. आ. ९.७); ४. राम क्रातुजातेय (जै. उ. ब्रा. ३.४०.१; ४.१६.१); ५. उपमन्यु वासिष्ठ (ऋ. ९.९७.१३-१५)।

२. एक आचार्य (ला. श्रौ. ४.९.१७)।

३. युधिष्ठिर के द्वारा अज्ञातवास में धारण किया गया नाम (म. वि. ३२.४४)।

वैयासकि—शुक का पैतृक नाम।

वैयास्क--छंदशास्त्र का एक आचार्य (ऋ. प्रा. १७. २५)। रौथ के अनुसार यहाँ निरुक्तकार यास्क की ओर संकेत किया गया है, एवं 'वैयास्क' का सही रूप वै + यास्क है।

वैरपरायण—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैराज—महाभारत में निर्दिष्ट सात प्रमुख पितरों में एक (पितर देखिये)। बाकी छः पितरों के नाम निम्न थे:— १. अग्निष्वात्त; २. सोमप; ३. गार्हपत्य; ४. एकशृंग; ५. चतुर्वेद एवं ६. कल (म. स. ११.१३३*)।

ब्रह्मांड में इन्हें विरजस् नामक प्रजापति के पुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७.२१२)। मत्स्य में इन्हें अमूर्त पितरों में से एक कहा गया है। प्रारंभ में ये योगी थे। वहाँ से योगभ्रष्ट होने पर, इन्हें सनातन ब्रह्मलोक में पुनः जन्म प्राप्त हुआ। वहाँ ब्रह्मा के एक दिन तक उसके साथ रहने पर, अगले कल्पारंभ में इन्हें ब्रह्मवादिन् के रूप में पुनः जन्म प्राप्त हुआ। इस जन्म में इन्हें अपने पूर्वजन्म का स्मरण हुआ, एवं ये पुनः एक बार योगाभ्यास में मग्न हुए।

आगे चल कर इसी योगसाधना से इन्हें मुक्ति प्राप्त हुई। इनकी मानसकन्या का नाम मेना था, जो हिमवत् की पत्नी थी। ये पितर अत्यंत परोपकारी रहते है, एवं योगाभ्यास करनेवाले हर एक व्यक्ति को सहायता पहुँचाते है (मत्स्य. १३.३-६)।

वैरूप--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:-- १. अष्टादंष्ट्र (पं. ब्रा. ८.९.२१); २. नभःप्रभेदन (ऋ. १०.११२); ३. शतप्रभेदन (ऋ. १०.११३); ४. सध्रि (ऋ. १०.११४)।

वैरोचन--असुरराज बलि का पैतृक नाम, जो उसे विरोचन का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था।

वैरोचनी—त्वष्टृपत्नी यशोधरा का पैतृक नाम, जो उसे विरोचन असुर की कन्या होने के कारण प्राप्त हुआ था।

वैवशप—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

वैवस--भृगुकुलोत्पन्न एक प्रवर।

वैवस्वत--एक पैतृक नाम, जो वेदों में निम्नलिखित व्यक्तियों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. यम (ऋ. ९.११३.८); २. मनु (ऋ. १०.४७.१७; अ. वे. ८.१०)।

वैवस्वत मनु—वैवस्वत नामक सातवे मन्वन्तर का अधिपति मनु, जिसे पुराणों में विवस्वत एवं संज्ञा का पुत्र कहा गया है (मनु वैवस्वत देखिये)।

वैशंपायन--एक महर्षि, जो महर्षि व्यास के चार वेदप्रवर्तक शिष्यों में से एक, एवं कृष्ण यजुर्वेदीय 'तैत्तिरीय संहिता' का आद्य जनक था। 'विशंप' का वंशज होने के कारण, इसे 'वैशंपायन' नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में से केवल तैत्तिरीय आरण्यक एवं गृह्यसूत्रों में वैशंपायन का निर्देश मिलता है। ऋग्वेद के कई मंत्रों का नया अर्थ लगाने का युगप्रवर्तक कार्य वैशंपायन ने किया। ऋग्वेद में 'सप्त दिशो नाना सूर्याः' नामक एक मंत्र है (ऋ. ९.११४.३), जिसका अर्थ 'पृथ्वी के सात दिशाओं में सात सूर्य हैं, एवं श्रौतकर्म में सात दिशाओं में अधिष्ठित हुए सात ऋत्विज (होता) ही सूर्यरूप है,' ऐसा अर्थ वैशंपायन के काल तक किया जाता था। किंतु वैशंपायन ने ऋग्वेद में अन्यत्र प्राप्त 'यद्याव इंद्र सहस्रं सूर्या अनु' (ऋ. ८. ७०.५), के आधार से सिद्ध किया कि, ऋग्वेद में निर्दिष्ट सूर्यों की संख्या सात नही, बल्कि एक सहस्र है (तै. आ. १७)।

पाणिनीय व्याकरण में—एक वैदिक गुरु के नाते, वैशंपायन का निर्देश पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में प्राप्त है (पा. सू. ४.३.१०४)। पतंजलि के 'व्याकरण महाभाष्य' में इसे कठ एवं कलापिन् नामक आचार्यों का गुरु कहा गया है।

कृष्णयजुर्वेद का प्रवर्तन--वैशंपायन ऋषि 'निगद' (कृष्णयजुर्वेद) का प्रवर्तक, एवं वेदव्यास के चार प्रमुख वेदप्रवर्तक शिष्यों में से एक था। वेद व्यास के पैल, वैशंपायन, जैमिनि एवं सुमंतु नामक चार प्रमुख शिष्य थे, जिन्हें उसने क्रमशः ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद का ज्ञान प्रदान किया था (बृ. उ. २.६.३; ब्रह्मांड. १.१.११)। वैशंपायन को संपूर्ण यजुर्वेद का ज्ञान प्राप्त होने का गौरवपूर्ण उल्लेख महाभारत एवं पुराणों में भी प्राप्त है (म. आ. १.६१-६३*; ५७.७४; शां. ३२७. १६-१८; ३२९; ३३७.१०-१२; वायु. ६०.१२-१५; ब्रह्मांड. २.३४.१२-१५; विष्णु. ३.४.७-९; लिंग. १. ३९. ५७-६०; कूर्म. १.५२.११-१३)।

शिष्यशाखा--वेदव्यास से प्राप्त 'कृष्णयजुर्वेद' की वैशंपायन ने ८६ संहिताएँ बनायी, एवं उसे याज्ञवल्क्य के सहित, ८६ शिष्यों में बाँट दी। विष्णु के अनुसार, इसने २७ संहिताएँ बनायी, जो अपने २७ शिष्यों बाँट दी (विष्णु. ३.५.५-१३)।

याज्ञवल्क्य का तिरस्कार--विष्णु में वैशंपायन एवं इसके शिष्य याज्ञवल्क्य के बीच हुए संघर्ष का निर्देश प्राप्त है (याज्ञवल्क्य देखिये)। अपने अन्य शिष्यों के समान, वैशंपायन ने याज्ञवल्क्य को भी कृष्णयजुर्वेद संहिता सिखायी थी। किन्तु संघर्ष के कारण यह याज्ञवल्क्य से अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं इसने उसे कहा, 'मैंने तुम्हें जो वेद सिखाये है, उन्हें तुम वापस कर दो'। अपने गुरु की आज्ञानुसार, याज्ञवल्क्य ने वैशंपायन से प्राप्त वेदविद्या का वमन किया, जिसे वैशंपायन के अन्य शिष्यों ने तित्तिर पक्षी बन कर पुनः उठा लिया। इसी कारण कृष्णयजुर्वेद को 'तैत्तिरीय' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ३०६)।

कृष्णयजुर्वेद का प्रसार--याज्ञवल्क्य के अतिरिक्त इसके बाकी ८५ शिष्यों ने आगे चल कर कृष्ण यजुर्वेद के प्रसारण का कार्य किया। भौगोलिक विभेदानुसार, इस शिष्यपरंपरा के उत्तर भारतीय, मध्य भारतीय एवं पूर्व भारतीय ऐसे तीन विभाग हुए, जिनका नेतृत्व क्रमशः श्यामायनि, आसुरि एवं आलंबि नामक शिष्य करने लगे (ब्रह्मांड. २.३१.८-३०; वायु. ६१. ५-३०)। आगे चल कर कृष्ण यजुर्वेद को 'चरक' नाम प्राप्त हुआ, जिस कारण वैशंपायन के यह शिष्य 'चरकाध्वर्यु' अथवा 'तैत्तिरीय' नाम से सुविख्यात हुए।

वैशंपायन के द्वारा प्रणीत कृष्णयजुर्वेद की ८५ शाखाओं में से तैत्तिरीय, मैत्रायणी, कठ एवं कपिष्ठल शाखाएँ केवल आज विद्यमान हैं, बाकी विनष्ट हो चुकी हैं।

महाभारत का कथन--वैशंपायन श्रीव्यास के केवल कृष्णयजुर्वेद-परंपरा का ही नहीं, बल्कि महाभारत-परंपरा का ही महत्त्वपूर्ण शिष्य था। इसी कारण महाभारत-परंपरा में भी वैशंपायन एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण आचार्य माना जाता है।

महाभारत से प्रतीत होता है कि, श्रीव्यास ने महाभारत का स्वयं के द्वारा विरचित 'जय' नामक आद्य ग्रंथ वैशंपायन को ही सर्वप्रथम सुनाया था। व्यास के द्वारा विरचित यह ग्रंथ केवल आठ हज़ार आठ सौ श्लोकों का छोटा ग्रंथ था, एवं उस के कथा का प्रतिपाद्य विषय पाण्डवों की विजय होने के कारण, उसे 'जय' नाम प्रदान किया गया था।

व्यास के द्वारा 'जय' ग्रंथ उत्तम-इतिहास, अर्थशास्त्र, एवं मोक्षशास्त्र का ग्रंथ था, एवं पौरुष निर्माण की सभी शिक्षाएँ उसमें अंतर्भूत थी। महाभारत में 'जय' ग्रंथ का निर्देश अनेक बार प्राप्त है, एवं महाभारत के प्रारंभ में उसका निर्देश निम्न शब्दों में किया गया है--

> नारायणं नमस्कृत्य नरं चैव नरोत्तमम्।
> देवीं सरस्वतीं चैव ततो जयमुदीरयेत्।

'भारत' ग्रन्थ का निर्माण--अपने गुरु व्यास के द्वारा कथन किये गये 'जय' ग्रन्थ के आधार पर वैशंपायन ने 'भारत' नामक अपने सुविख्यात ग्रंथ की रचना की, जिसमें कुल चौवीस हज़ार श्लोक थे। इस प्रकार यह ग्रंथ व्यास के आद्य ग्रन्थ की अपेक्षा काफ़ी विस्तृत था, किन्तु फिर भी महाभारत के प्रचलित संस्करण में उपलब्ध विविध आख्यान एवं उपाख्यान उसमें नहीं थे:--

> चतुर्विंशति-साहस्रीं चक्रे भारतसंहिताम्।
> उपाख्यानैर्विना तावत् भारतं प्रोच्यते बुधैः॥
> (म. आ. ६१)।

भारत ग्रन्थ का कथन--स्वयं के द्वारा विरचित भारत ग्रंथ का कथन, इसने सर्वप्रथम जनमेजय राजा के द्वारा सर्पों की राजधानी तक्षशिला नगरी में किये गये सर्पसत्र के समय किया।

यह स्वयं जनमेजय राजा का राजपुरोहित था, इसी कारण जनमेजय के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने 'भारत' ग्रंथ का कथन किया। अपने इस ग्रंथ का वर्णन करते समय इसने कहा, 'यह ग्रंथ हिमवत् पर्वत एवं सागर जैसा विशाल, एवं अनेक रत्नों से युक्त है। इसी कारण--

> धर्मे चार्थे च कामे च, मोक्षे च भरतर्षभ।
> यदिहास्ति तदन्यत्र, यन्नेहास्ति न तत् क्वचित्।
> (म. आ. ५६.३३. स्व. ५.३८)।

(इस संसार में धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष पुरुषार्थों के संबंध में जो भी ज्ञान उपलब्ध है, वह इस ग्रंथ में समाविष्ट किया गया है। इसी कारण यह कहना ठीक होगा कि, जो कुछ भी ज्ञानधन संसार में है, वह यहाँ उपस्थित है, किंतु इस ग्रंथ में जो नहीं है, वह संसार में अन्यत्र प्राप्त होना असंभव है)।

वैशंपायन कृत आस्तीक-पर्व--वैशंपायन के द्वारा विरचित 'भारत' ग्रंथ में 'आस्तीक-पर्व' महत्त्वपूर्ण माना जाता है, जहाँ अपनी ग्रंथरचना की पार्श्वभूमि वैशंपायन के द्वारा निवेदित की गयी है। यहाँ जनमेजय के सर्पसत्र

की सारी चर्चा विस्तृत रूप में दी गयी है, एवं इसी सत्र में भारत ग्रंथ सर्वप्रथम कथन किये जाने का निर्देश वहाँ स्पष्ट रूप से प्राप्त है (म. आ. ५३)।

'भारत' ग्रन्थ का प्रचार--वैशंपायन के 'भारत' ग्रंथ को को सौति ने काफ़ी परिवर्धित किया, एवं एक लक्ष श्लोकों का यह महाभारत ग्रंथ, शौनकादि ऋषियों के द्वारा नैमिषारण्य में आयोजित द्वादशवर्षीय सत्र में सर्वप्रथम कथन किया। अनेक आख्यान एवं उपाख्यान सम्मिलित किये जाने के कारण, सौति के इस महाभारत ग्रन्थ को विस्तार काफ़ी बढ़ गया था। उसी परिवर्धित रूप में महाभारत ग्रंथ आज उपलब्ध है।

व्यास, वैशंपायन एवं सौति के द्वारा विरचित 'जय' 'भारत', एवं 'महाभारत' ग्रंथों का रचनाकाल क्रमशः ३१०० ई. पू. २५०० ई. पू. एवं २००० ई. पू. लगभग माना जाता है।

भविष्य के अनुसार, व्यास के द्वारा प्राप्त 'जय' ग्रंथ इसने सुमन्तु को कथन किया, जो आगे चल कर सुमन्तु ने जनमेजय पुत्र शतानीक राजा को कथन किया (भवि. ब्राह्म. १.३०-३८)।

याज्ञवल्क्य से विरोध--वैशंपायन के उत्तरकालीन आयुष्य में, याज्ञवल्क्य से इसका 'यजुर्वेद संहिता' से संबंधित विवाद बढ़ता ही गया, यहाँ तक कि, स्वयं जननेजय राजा ने भी वैशंपायन के 'कृष्णयजुर्वेद' का त्याग कर याज्ञवल्क्य के द्वारा प्रणीत 'शुक्लयजुर्वेद' को स्वीकार किया। स्वयं के द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में उसने इसे टाल कर, याज्ञवल्क्य को अपने यज्ञ का ब्रह्मा बनाया।

आगे चल कर वैशंपायन एवं याज्ञवल्क्य का यह वादविवाद इतना बढ गया कि, उस कारण जनमेजय को राज्यत्याग करना पड़ा (मत्स्य. ५०.५७-६४; वायु. ९९.३५०-३५५; याज्ञवल्क्य वाजसनेय, एवं जनमेजय ८. देखिये)।

आश्वलायन श्रौतसूत्र एवं हिरण्यकेशिन् लोगों के पितृतर्पण में वैशंपायन का निर्देश प्राप्त है (आ. श्रौ. ३.३; स. गृ. २०.८-२०)। इसके नाम पर 'नीतिप्रकाशिका' नामक अन्य एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जिसका अंग्रेजी अनुवाद डॉ. ओपर्ट के द्वारा किया गया है। इस ग्रंथ में शस्त्रों के साथ बंदूक के बारुद का उल्लेख भी प्राप्त है।

ग्रंथ--इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध हैः-- १. वैशंपायन-संहिता; २. वैशंपायन-नीतिसंग्रह; ३. वैशंपायन-स्मृति; ४. वैशंपायन नीतिप्रकाशिका (C. C)।

२. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित एक ऋषि (भा. १०.७४.८)।

४. एक ऋषि, जिसका शौनक ऋषि के साथ तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (वायु. ९९.२५१)।

वैशाख्य--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से कौथुम पाराशर्य नामक ऋषि का शिष्य था।

वैशाल--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद (ब्रह्मांड पुराण)-- 'वैशालिन्'।

वैशालि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैशालिनी--अविक्षित् राजा की पत्नी, जो मरुत्त आविक्षित राजा की माता थी। इसके पिता का नाम विशाल था। इसके स्वयंवर के समय अविक्षित् राजा ने इससे विवाह करना चाहा। किन्तु अन्य राजाओं ने उसे पराजित कर, इसका पुनः स्वयंवर करने की आज्ञा विशाल राजा को दी। किन्तु इसी समय, अविक्षित् राजा के पिता करंधम ने उपस्थित राजाओं को परास्त कर इसका हरण किया, एवं अपने पुत्र अविक्षित् से इसका विवाह कराया।

अविक्षित् राजा से इसे मरुत्त आविक्षित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था, जो अपने समय का सर्वश्रेष्ठ सम्राट् था। इसके पति अविक्षित् के द्वारा सर्पयज्ञ किये जाने पर, इसने अपने पुत्र मरुत्त के द्वारा सर्पों को अभय दिया था (मार्क. ११९-१२६)।

इसके अतिरिक्त अविक्षित् राजा की निम्नलिखित पत्नियाँ थी, जो सभी उसे स्वयंवर में प्राप्त हुई थीः-- १. हेमधर्मकन्या वरा; २. सुदेवकन्या गौरी; ३. वलिकन्या सुभद्रा; ४. वीरकन्या लीलावती; ५. वीरभद्रकन्या विभा; ६. भीमकन्या मान्यवती, एवं ७. दंभकन्या कुमुद्वती (मार्क. ११९.१६-१७)।

वैशालेय--तक्षक नामक आचार्य का पैतृक नाम (अ. वे. ८.१०.१९)। विशाल का वंशज होने से, इसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैशीपुत्र--एक व्यक्ति (तै. ब्रा. ३.९.७.३; श. ब्रा. १३.२)। एक वैश्यपत्नी का पुत्र होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैद्येश्वर--एक शिव-अवतार, जो महानंदा के उद्धार के लिए अवतीर्ण हुआ था (महानंदा देखिये)।

वैश्रवण--कुवेर का पैतृक नाम, जो उसे विश्रवस् ऋषि का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था। प्राचीन साहित्य में सर्वत्र इसे 'यक्षराज' कहा गया है, केवल ब्रह्मांड में इसका स्वरूप राक्षसों जैसा बताया गया है। यह महाहनु, शंकुकर्ण एवं ह्रस्वबाहु था। इसका शरीर बड़ा था, एवं सिर मोटा था। इसके केस भूरे थे एवं इसके शरीर का वर्ण पिंगा था। इस प्रकार इसका शरीर जन्म से ही अत्यंत विरूप होने के कारण, इसे कुवेर नामान्तर प्राप्त हुआ था (ब्रह्मांड. ३.८.४०-४४; कुवेर देखिये)।

महाभारत में मुचकुंद राजा से हुआ इसका संवाद प्राप्त है, जो 'मुचकुंद-वैश्रवण संवाद' नाम से प्रसिद्ध है (म. उ. १३०. ८-१०; मुचकुंद देखिये)।

वैश्वानर--इंद्रसभा का एक ऋषि।

२. एक अग्नि, जो भानु (मनु) नामक अग्नि का प्रथम पुत्र था। इसकी उपासना के लिए पाँच वैश्वदेव-विधि बताये गये है (भा. २.२.२४)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। इसकी उपदानवी, हयशीरा, पुलोमा एवं कालका नाम चार कन्याएँ थीं, जिनमें से अंतिम दो कन्याओं का विवाह कश्यप प्रजापति से हुआ था (भा. ६.६.६)।

वैश्वानरि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वैश्वामित्र--एक पैतृक नाम, जो विश्वामित्र के पुत्र एवं वंशजों के लिए प्रयुक्त किया जाता है। ऋग्वेद में निम्नलिखित सूक्तद्रष्टाओं के लिए 'वैश्वामित्र' पैतृक नाम प्रयुक्त किया गया है:--१. अष्टक (ऋ. १०.१०४); २. कत (ऋ. ३.१७); ३. पूरण (ऋ. १०.१६०); प्रजापति (ऋ. ३.३८.४); ५. मधुच्छंदस् (ऋ. १.१-१०); ६. रेणु (ऋ. ९.७०)।

ऐतरेय ब्राह्मण में, देवरात के लिए भी इस पैतृक नाम का प्रयोग किया गया है (ऐ. ब्रा. ७.१७)।

वैष्टपुरेय--एक आचार्य, जो रौहिणायन एवं शांडिल्य नामक आचार्यों का शिष्य था (बृ. उ. २.५.२०; ४.५.२५ माध्यं.)। विष्टपुर का वंशज होने से, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

वैसृप--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

वैहीनरी--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वोढु--एक आचार्य, जिसका निर्देश शुक्लयजुर्वेदीय लोगों के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (पा. गृ. परिशिष्ट; मत्स्य. १०८;१०२.१८) अन्य पुराणों में भी इसे एक सिद्धिप्राप्त ब्रह्मर्षि कहा गया है (वायु. १०१.३३८; ब्रह्मांड. ४.२.२७३; कूर्म. १.५३.१५)।

वोहलि--एक आचार्य, जिसका निर्देश ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (दे.भा. ११.२०)।

वौलि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

वौशडि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

व्यंस--एक दानव, जो इंद्र का शत्रु था (ऋ. २.१४.५)। सायणाचार्य इसे व्यक्तिवाचक नाम नहीं मानते।

व्यश्व--एक ऋषि, जो अश्विनों की कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था (ऋ. १.११२.१५)। ऋग्वेद के आठवें मंडल के अनेक सूक्तों में इसका निर्देश प्राप्त है, जिनकी रचना संभवतः इसके विश्वमनस् वैयश्व नामक शिष्य के द्वारा की गयी थी (ऋ. ८.२३.१६; २३; २४.२२; २६.९)। ऋग्वेद में अन्यत्र एक प्राचीन ऋषि के नाते इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.९.१०; ९.६५.७)।

२. एक जातिविशेष, जिसमें वश अश्व्य नामक आचार्य उत्पन्न हुआ था (ऋ. ८.२४.२८)।

व्यश्व आंगिरस--एक साम एवं सूक्तद्रष्टा ऋषि (ऋ. ८. २६; पं. ब्रा. १४.१०.९)।

व्यष्टि--एक आचार्य, जो सनारु नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम विप्रचित्ति था (बृ. उ. ४.५.२२; ४.५.२८ माध्यं.)।

व्याघ्र--एक राक्षस, जो यातुधान नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम निरानंद था (ब्रह्मांड. ३.७.७९)।

२. एक यक्ष, जो भाद्रपद माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है।

व्याघ्रकेतु--पाण्डव पक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ४०.४६-४८)।

व्याघ्रदत्त--मगध देश का एक राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में कौरवों के पक्ष में शामिल था। सात्यकि ने इसका वध किया (म. द्रो. ८२.३२)।

२. पाण्डवों के पक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया। इसके अश्व

कृष्ण-रक्त ऐसे संमिश्र रंग के थे (म. द्रो. २२.१६६*, पंक्ति. १-२)।

३. एक पाण्डवपक्षीय राजा, जो अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. क. ४.३७*)।

व्याघ्रपद—वसिष्ठ ऋषि का एक पुत्र। यह व्याघ्रयोनि में उत्पन्न होने के कारण इसे 'व्याघ्रपद' नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. ५३.३०)। इसके उपमन्यु एवं धौम्य नामक दो पुत्र थे, जिसमें से उपमन्यु को 'वैयाघ्रपद' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (म. अनु. १४.४५)।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

व्याघ्रपाद् वासिष्ठ—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९. ९७.१६-१८)।

२. एक स्मृतिकार जिसके नाम पर एक स्मृतिग्रंथ उपलब्ध है (C. C.)।

व्याघ्रहन्—एक राक्षस, जो उर्ध्वग्रीवी नामक राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम शरभ था (ब्रह्मांड. ३.७. २०७)।

व्याघ्राक्ष—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५४)।

व्याज—एक देव, जो भृगु ऋषि का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.१.७९)।

२. तुषित देवों में से एक।

व्याघ्री—वसिष्ठ ऋषि की पत्नी। इसके कुल १९ गोत्रकार पुत्र थे, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थे :—१. व्याघ्रपाद २. मन्ध; ३. बादलोम; ४. जाबालि; ५. मन्यु; ६. उपमन्यु; ७. सेतुकर्ण आदि (म. अनु. ५३.३०-३२ कुं.)।

व्याडि दाक्षायण—एक सुविख्यात व्याकरणकार जो 'संग्रह' नामक वैदिक व्याकरणविषयक ग्रन्थ का कर्ता माना जाता है। इसका यही ग्रन्थ लुप्त होने पर, पतंजलि ने व्याकरण महाभाष्य नामक ग्रंथ की रचना की थी। अमरकोश के अनेकानेक भाष्यग्रन्थों में, व्याडि एवं वररुचि को व्याकरणशास्त्र के अंतर्गत लिंगभेदादि के शास्त्र का सर्वश्रेष्ठ आचार्य कहा गया है।

व्याकरण महाभाष्य में एवं काशिका में इसका निर्देश क्रमशः 'दाक्षायण' एवं 'दाक्षि' नाम से प्राप्त है (महा. २.३.६६; काशिका. ६.२.६९)। काशिका के अनुसार, दाक्षि एवं दाक्षायण समानार्थि शब्द माने जाते थे (काशिका. ४.१.१७, तत्रभवान् दाक्षायणः दाक्षिर्वा)।

वंश—आचार्य पाणिनि दाक्षीपुत्र नाम से सुविख्यात था। इसी कारण 'दाक्षायण' व्याडि एवं 'दाक्षीपुत्र' पाणिनि अपने मातृवंश की ओर से रिश्तेदार थे, ऐसा माना जाता है।

व्याडि की बहन का नाम व्याड्या था (पा. सू. ४. १.८०), एवं पाणिनि की माता का नाम दाक्षी था। कई अभ्यासकों के अनुसार, व्याड्या एवं दाक्षी दोनों एक ही थे, एवं इस प्रकार व्याडि आचार्य पाणिनि के मामा थे। किंतु वेबर के अनुसार, इन दो व्याकरणकारों में दो पीढ़ीयों का अंतर था, एवं 'ऋक्प्रातिशाख्य' में निर्दिष्ट व्याडि पाणिनि से उत्तरकालीन था।

संभवतः इसके पिता का नाम व्यड था, जिस कारण इसे 'व्याडि' पैतृक नाम हुआ होगा। इसके 'दाक्षायण' नाम से इसके वंश के मूळ पुरुष का नाम दक्ष विदित होता है। किंतु अन्य कई अभ्यासक, 'दाक्षायण' इसका पैतृक नहीं, बल्कि 'दैशिक' नाम मानते है, एवं इसे दाक्षायण देश का रहनेवाला बताते है। मत्स्य में दाक्षि को अंगिराकुलोत्पन्न ब्राह्मण कहा गया है (मत्स्य १९५.२५)।

ऋक्प्रातिशाख्य में—शौनक के 'ऋक्प्रातिशाख्य' में वैदिक व्याकरण के एक श्रेष्ठ आचार्य के नाते व्याडि का निर्देश अनेक बार मिलता है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह शौनक के शिष्यों में से एक था। अपने 'विकृतवल्ली' ग्रंथ के आरंभ में इसने आचार्य शौनक को नमन किया है।

पाणिनीय व्याकरण का व्याख्याता—व्याडि वैदिक व्याकरण का ही नहीं, बल्कि पाणिनीय व्याकरण का भी श्रेष्ठ भाष्यकार था—

> रसाचार्यः कविर्व्याडिः शब्दब्रह्मैकवाङ्मुनिः।
> दाक्षीपुत्रवचोव्याख्यापटुर्मीमांसाग्रणिः॥
> (समुद्रगुप्तकृत 'कृष्णचरित' १६)।

[संग्रहकार व्याडि पाणिनि के अष्टाध्यायी का ('दाक्षीपुत्रवचन') का श्रेष्ठ व्याख्याता, रसाचार्य, एवं मीमांसक था।]

इसके 'मीमांसाग्रणि' उपाधि से प्रतीत होता है कि, इसने मीमांसाशास्त्र पर भी कोई ग्रंथ लिखा होगा। पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य में इसे 'द्रव्यपदार्थवादी' कहा गया है (महा. १.२.६४)। अष्टाध्यायी में भी 'व्याडिशाला' शब्द का निर्देश प्राप्त है, जिसका संकेत संभवतः इसीके ही विस्तृत शिष्यशाखा की ओर किया गया होगा (पा. सू. ६.२.८६)।

संग्रह—व्याडि के द्वारा रचित ग्रन्थों में 'संग्रह' श्रेष्ठ ग्रन्थ माना जाता है, किन्तु वह वर्तमानकाल में अप्राप्य है। इस ग्रंथ के जो उद्धरण उत्तरकालीन ग्रंथों में लिये गये है, उन्हींसे ही उसकी जानकारी आज प्राप्त हो सकती है। पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य के अनुसार, यह व्याकरण का एक श्रेष्ठ दार्शनिक ग्रंथ था, जिसकी रचनापद्धति पाणिनीय अष्टाध्यायी के समान सूत्रात्मक थी (महा. ४.२.६०)। इस ग्रंथ में चौदह सहस्र शब्द-रूपों की जानकारी दी गयी थी (महा. १.१.१)। चांद्र व्याकरण में प्राप्त परंपरा के अनुसार, इस ग्रंथ के कुल पाँच अध्याय थे, एवं उनमें १ लक्ष श्लोक थे (चांद्र-व्याकरणवृत्ति. ४.१६१)।

कालनिर्णय—आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, यास्क, शौनक, पाणिनि, पिंगल, व्याडि, एवं कौत्स ये व्याकरणाचार्य प्रायः समकालीन ही थे। इनमें से शौनक के द्वारा विरचित 'ऋक्प्रातिशाख्य' का रचनाकाल २८०० ई. पू. माना जाता है। व्याडि का काल संभवतः यही होगा (युधिष्ठिर मीमांसक, पृ. १३९)।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:—१. संग्रह. २. विकृतवल्ली. ३. व्याडिव्याकरण. ४. बलरामचरित ५. व्याडि-परिभाषा. ६. व्याडिशिक्षा (C.C.)

गरुडपुराण के अनुसार, इसने रत्नविद्या के संबंध में भी एक ग्रंथ की रचना की थी (गरुड. १.६९.३७)।

व्याधाज्य—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

व्यास 'धर्मशास्त्रकार'—एक धर्मशास्त्रकार, जिसके द्वारा रचित एक स्मृति आनंदाश्रम, पूना, व्यंकटेश्वर प्रेस, बंबई एवं जीवानंद स्मृतिसंग्रह में प्रकाशित की गयी है। इस 'स्मृति' के चार अध्याय, एवं २५० श्लोक हैं।

व्यासस्मृति—'व्यासस्मृति' में वर्णाश्रमधर्म, नित्यकर्म, स्नानभोजन, दानधर्म आदि व्यवहारविषयक धर्मशास्त्रीय विषयों की चर्चा की गयी है। 'अपरार्क,' 'स्मृतिचंद्रिका' आदि ग्रंथों में इसके व्यवहारविषयक उद्धरण प्राप्त है।

अन्य ग्रंथ—'व्यासस्मृति' के अतिरिक्त इसके निम्नलिखित ग्रंथों का निर्देश भी निम्नलिखित स्मृतिग्रंथों में प्राप्त हैं:—१. गद्यव्यास-स्मृतिचंद्रिका; २. वृद्धव्यास-अपरार्क; ३. बृहद्व्यास-मिताक्षरा; ४. लघुव्यास, महाव्यास, दानव्यास-दानसागर।

पुराण में यह एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास एक ही व्यक्ति होने का निर्देश प्राप्त है (भवि. ब्राह्म. १)। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

व्यास पाराशर्य—एक सुविख्यात आचार्य, जो वैदिक संहिताओं का पृथक्करणकर्ता, वैदिक शाखाप्रवर्तकों का आद्य आचार्य, ब्रह्मसूत्रों का प्रणयिता, महाभारत पुराणादि ग्रंथों का रचयिता, एवं वैदिक संस्कृति का पुनरुज्जीवक तत्त्वज्ञ माना जाता है। यह सर्वज्ञ, सत्यवादी, सांख्य, योग, धर्म आदि शास्त्रों का ज्ञाता एवं दिव्यदृष्टि था (म. स्व. ५. ३१-३३)। वैदिक, पौराणिक एवं तत्त्वज्ञान संबंधी विभिन्न क्षेत्रों में व्यास के द्वारा किये गये अपूर्व कर्तृत्व के कारण, यह सर्व दृष्टि से श्रेष्ठ ऋषि प्रतीत होता है।

प्राचीन ऋषिविषयक व्याख्या में, असामान्य प्रतिभा, क्रांतिदर्शी द्रष्टापन, जीवनविषयक विरागी दृष्टिकोण, अगाध विद्वत्ता, एवं अप्रतीम संगठन-कौशल्य इन सारे गुणों का सम्मिलन आवश्यक माना जाता था। इन सारे गुणों की व्यास जैसी मूर्तिमंत साकार प्रतिमा प्राचीन भारतीय इतिहास में क्वचित् ही पायी जाती है। इसी कारण, पौराणिक साहित्य में इसे केवल ऋषि ही नहीं, किन्तु साक्षात् देवतास्वरूप माना गया है। इस साहित्य में इसे विष्णु का (वायु. १.४२-४३; कूर्म. १.३०.६६; गरुड. १.८७.५९); शिव का (कूर्म. २.११.१३६); ब्रह्मा का (वायु. ७७.७४-७५; ब्रह्मांड. ३.१३.७६); एवं ब्रह्मा के पुत्र का (लिंग. २.४९.१७) अवतार कहा गया है।

सनातन हिंदुधर्म का रचयिता—श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त सनातन हिंदु धर्म का व्यास एक प्रधान व्याख्याता कहा जाता है। व्यास महाभारत का केवल रचयिता ही नहीं, बल्कि भारतीय सांस्कृतिक पुनरुज्जीवन का एक ऐसा आचार्य था कि, जिसने वैदिक हिंदुधर्म में निर्दिष्ट समस्त धर्मतत्त्वों को बदलते हुए देश काल-परिस्थिति के अनुसार, एक बिल्कुल नया स्वरूप दिया। भगवद्गीता जैसा अनुपम रत्न भी इसकी कृपा से ही संसार को प्राप्त हो सका, जहाँ इसने श्रीकृष्ण के अमर संदेश को संसार के लिए सुलभ बनाया।

इसी कारण युधिष्ठिर के द्वारा महाभारत में इसे 'भगवान्' उपाधि प्रदान की गयी है—

भगवानेव नो मान्यो भगवानेव नो गुरुः।
भगवानस्य राज्यस्य कुलस्य च परायणम्॥
(म. आश्र. ८.७)।

(भगवान् व्यास हमारे लिये अत्यंत पूज्य, एवं हमारे गुरु है। हमारे राज्य एवं कुल के वे सर्वश्रेष्ठ आचार्य हैं)।

वैदिक साहित्य में—वैदिक-संहिता साहित्य में व्यास का निर्देश अप्राप्य है। 'सामविधान ब्राह्मण' में इसे 'पाराशर्य' पैतृक नाम प्रदान किया गया है, एवं इसे विष्वक्सेन नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (सा. ब्रा. १.४.३७७)। तैत्तिरीय आरण्यक में भी महाभारत के रचयिता के नाते व्यास एवं वैशंपायन ऋषियों का निर्देश प्राप्त है (तै. आ. १.९.२)। वेबर के अनुसार, शुक्ल-यजुर्वेद की आचार्यपरंपरा में पराशर एवं उसके वंशजों का काफ़ी प्रभुत्व शुरू से ही प्रतीत होता है।

बौद्धसाहित्य में बुद्ध के पूर्वजन्मों में से एक जन्म का नाम 'कण्ह दीपायन' (कृष्ण द्वैपायन) दिया गया है (वेबर. पृ. १८४)। इससे प्रतीत होता है कि, बौद्ध साहित्य की रचनाकाल में व्यास का कृष्ण द्वैपायन नाम काफ़ी प्रसिद्ध हो चुका था।

पाणिनीय व्याकरण में—पाणिनि के अष्टाध्यायी में व्यास का निर्देश अप्राप्य है, एवं महाभारत शब्द का निर्देश भी वहाँ एक ग्रंथ के नाते नहीं, बल्कि भरतवंश में उत्पन्न युधिष्ठिर, आदि श्रेष्ठ व्यक्तियों को उद्दिश्य कर प्रयुक्त किया गया है (पा. सू. ६.२.३८)।

पतंजलि के व्याकरण-महाभाष्य में महाभारत कथा का निर्देश अनेकबार प्राप्त है, इतना ही नहीं, शुक वैयासकि नामक एक आचार्य का निर्देश भी वहाँ प्राप्त है, जिसे व्यास का पुत्र होने के कारण 'वैयासकि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (महा. २.२५३)।

इससे प्रतीत होता है कि, महाभारत का निर्माण पाणिनि के उत्तर काल में, एवं पतंजलि के पूर्वकाल में उत्पन्न हुआ होगा।

महाभारत एवं पुराणों में—इन ग्रंथों में इसे महर्षि पराशर का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी माता का नाम सत्यवती (काली) बताया गया है, जो कैवर्तराज (धीवर) की कन्या थी। इसका जन्म यमुनाद्वीप में हुआ था, जिस कारण इसे 'द्वैपायन' नाम प्राप्त हुआ था (म. आ. ५४.२)। इसकी माता का नाम 'काली' होने के कारण, इसे 'कृष्ण' अर्थात कृष्ण द्वैपायन नाम प्राप्त हुआ था। भागवत के अनुसार, यह स्वयं कृष्ण-वर्णीय था, जिस कारण इसे 'कृष्ण' द्वैपायन नाम प्राप्त हुआ था।

जन्मतिथि--वैशाख पूर्णिमा यह दिन व्यास की जन्मतिथि मानी जाती है। उसी दिन इसका जन्मोत्सव भी मनाया जाता है। आषाढ पौर्णिमा को इसीके ही नाम से 'व्यास पौर्णिमा' कहा जाता है।

विभिन्न नामान्तर--इसने समस्त वेदों की पुनर्रचना की थी, जिस कारण इसे व्यास नाम प्राप्त हुआ थाः--

विव्यास वेदान् यस्मात्स तस्माद् व्यास इति स्मृतः।
(म. आ. ५७.७३)।

महाभारत में इसके पराशरात्मज, पाराशर्य, सत्यवती सुत नामान्तर बताये गये है। वायु में इसे 'पुराणप्रवक्ता' कहा गया है, जो नाम इसे आख्यान, उपाख्यान, गाथा कुल, कर्म आदि से संयुक्त पुराणों की रचना करने के कारण प्राप्त हुआ था (वायु. ६०.११-२१; विष्णुधर्म. १.७४)।

तपस्या--अत्यंत कठोर तपस्या कर के इसने अनेकानेक सिद्धियाँ प्राप्त की थी। यह दूरश्रवण, दूर-दर्शन आदि अनेक विद्याओं में प्रवीण था (म. आश्र. ३७.१६)।

अपनी तपस्या के बारे में यह कहता है—

पश्यन्तु तपसो वीर्यमद्य मे चिरसंभृतम्।
तदुच्यतां महाबाहो कं कामं प्रदिशामि ते॥
प्रवणोऽस्मि वरं दातुं पश्य मे तपसो बलम्।
(म. आश्र. ३६.२०-२१)।

कौरवपाण्डवों का पितामह—यह कौरवपाण्डवों का पितामह था, इसी कारण यह सदैव उनके हित के लिए तत्पर रहता था। इसके द्वारा विरचित महाभारत ग्रंथ में यह केवल निवेदक के नाते नहीं, बल्कि पांडवों के हितचिंतक के नाते कार्य करता हुआ प्रतीत होता है।

जनमेजय के यज्ञमण्डप में—महाभारत के अनुसार, यह जनमेजय के सर्पसत्र में उपस्थित था। इसे आता हुआ देख कर जनमेजय ने इसका यथोचित स्वागत किया, एवं सुवर्ण सिंहासन पर बैठ कर इसका पूजन किया था। पश्चात् जनमेजय ने 'महाभारत' का वृत्तांत पूछा, तब इसने अपने पास बैठे हुए वैशंपायन नामक शिष्य को स्वरचित 'महाभारत' कथा सुनाने की आज्ञा दी (म. आ. ५४)।

उस समय व्यास को नमस्कार कर वैशंपायन ने 'कार्ष्ण-वेद' नाम से सुविख्यात महाभारत की कथा कह सुनाई।

पाण्डवों का हितचिंतक--इसने पाण्डवों को द्रौपदी-स्वयंवर की वार्ता सुनाई थी। इसने युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय अर्जुन, भीम, सहदेव एवं नकुल को क्रमशः उत्तर, पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम दिशाओं की ओर जाने के लिए उपदेश दिया था।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, यह ब्रह्मा बना था। उसी यज्ञ में, आनेवाले क्षत्रियसंहार का भविष्य इसने युधिष्ठिर को सुनाया था।

प्रतिस्मृतिविद्या का उपदेश—पांडवों के वनवासकाल में भी, समय समय उनका धीरज बँधाने का कार्य यह करता रहा। वनवास के प्रारंभकाल में युधिष्ठिर जब अत्यंत निराश हुआ था, तब इसने उसे 'प्रतिस्मृतिविद्या' प्रदान की थी। इसी विद्या के कारण, अर्जुन रुद्र एवं इंद्र से अनेकानेक प्रकार के अस्त्र प्राप्त कर सका (म. व. ३७.२७-३०)।

पश्चात् यह कुरुक्षेत्र में गया, एवं वहाँ स्थित सभी तीर्थों का इसने एकत्रीकरण किया। वहाँ स्थित 'व्यासवन' एवं 'व्यासस्थली' में इसने तपस्या की।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध के समय, इसने धृतराष्ट्र को दृष्टि प्रदान कर, उसे युद्ध देखने के लिए समर्थ बनाना चाहा। किंतु धृतराष्ट्र के द्वारा युद्ध का रौद्र स्वरूप देखने के लिए इन्कार किये जाने पर, इसने संजय को दिव्यदृष्टि प्रदान की, एवं युद्धवार्ता धृतराष्ट्र तक पहुँचाने की व्यवस्था की थी (म. भी. २.९)।

भारतीय युद्ध में, सात्यकि ने संजय को पकड़ने का (म. श. २४.५१), एवं मार डालने का (म. श. २८. ३५-३८) प्रयत्न किया। किंतु इन दोनों प्रसंग में व्यास ने संजय की रक्षा की। युद्ध के पश्चात्, व्यासकृपा से संजय को प्राप्त हुई दिव्यदृष्टि नष्ट हो गयी (म. सौ. ९.५८)।

पुत्रवध के दुख से गांधारी पांडवों को शाप देने के लिए उद्यत हुई, किंतु अंतर्ज्ञान से यह जान कर, व्यास ने उसे परावृत्त किया (म. स्त्री. १३.३-५)। धृतराष्ट्र एवं गांधारी को दिव्यचक्षु प्रदान कर, इसने उन्हें गंगा नदी के प्रवाह में उनके मृत पुत्रों का दर्शन कराया था (म. आश्र. ४०)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्—युद्ध के पश्चात् इसने युधिष्ठिर को शंख, लिखित, सुद्युम्न, हयग्रीव, सेनाजित् आदि राजाओं के चरित्र सुना कर राजधर्म एवं राजदंड का उपदेश किया। इसने युधिष्ठिर को सेनाजित् राजा का उदाहरण दे कर निराशावादी न बनने का, एवं जनक की कथा सुना कर प्रारब्ध की प्रबलता का उपदेश निवेदित किया। पश्चात् इसने उसे मनःशांति के लिए प्रायश्चित्त-विधि भी कथन किया।

शुकदेव को उपदेश—इसने अपने पुत्र शुकदेव को निम्नलिखित विषयों पर आधारित तत्त्वज्ञानपर उपदेश कथन किया था:—सृष्टिक्रम एवं युगधर्म; ब्राह्मप्रलय एवं महाप्रलय, मोक्षधर्म एवं क्रियाफल आदि।

उपदेशक व्यास—नारद के मुख से इसे सात्वतधर्म का ज्ञान हुआ था, जो इसने आगे चल कर युधिष्ठिर को कथन किया था। इसके अतिरिक्त इसने भीष्म (म. अनु. २४.५-१२); मैत्रेय (म. अनु. १२०-१२२); शुक आदि को भी उपदेश प्रदान किया था।

अश्वमेध यज्ञ में—इसने युधिष्ठिर को मनःशांति के लिए अश्वमेध यज्ञ करने का आदेश दिया था। इस यज्ञ में अर्जुन, भीम, नकुल एवं सहदेव को क्रमशः अश्वरक्षा, राज्यरक्षा, कुटुंबव्यवस्था का कार्य इसी के द्वारा ही सौंपा गया था।

यज्ञ के पश्चात्, युधिष्ठिर ने अपना सारा राज्य इसे दान में दिया। इसने उसे स्वीकार कर के उसे पुनः एक बार युधिष्ठिर को लौटा दिया, एवं आज्ञा दी कि, वह समस्त धनलक्ष्मी ब्राह्मणों को दान में दे।

परिवार—घृताची अप्सरा (अरणी) से इसे शुक नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ५७.७४)। स्कंद में शुक को जाबालि ऋषि की कन्या वटिका से उत्पन्न पुत्र कहा गया है (स्कंद. ६८.१४७-१४८)।

शुक के अतिरिक्त, इसे विचित्रवीर्य राजाओं की अंबिका एवं अंबालिका नामक पत्नियों से क्रमशः धृतराष्ट्र एवं पाण्डु नामक नियोगज पुत्र उत्पन्न हुए थे। विदुर भी इसीका ही पुत्र था, जो अंबालिका के शूद्रजातीय दासी से इसे उत्पन्न हुआ था।

व्यास-वंश—इसके पुत्र शुक ने इसका वंश आगे चलाया। शुक का विवाह पीवरी से हुआ था, जिससे उसे भूरिश्रवस्, प्रभु, शंभु, कृष्ण एवं गौर नामक पाँच पुत्र, एवं कीर्तिमती नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका विवाह अणुह राजा से हुआ था। कीर्तिमती के पुत्र का नाम ब्रह्मदत्त था (वायु. ७०.८४-८६)।

चिरंजीवित्व—कुरुवंशीय राजाओं में से शंतनु, विचित्रवीर्य, धृतराष्ट्र, कौरवपांडव, अभिमन्यु, परिक्षित्, जनमेजय, शतानीक आठ पीढ़ीयों के राजाओं से व्यास का जीवनचरित्र संबंधित प्रतीत होता है। ये सारे निर्देश इसके दीर्घायुष्य की ओर संकेत करते है। प्राचीन साहित्य में इसे केवल दीर्घायुषी ही नहीं, बल्कि चिरंजीव कहा गया है।

व्यास-स्थल—व्यास के जीवन से संबंधित निम्नलिखित स्थलों का निर्देश महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है :—

(१) **व्यासवन**—यह कुरुक्षेत्र में है (म. व. ८१. ७८; नारद. ३.६५.५; ८२; वामन. ३५.५; ३६.५६)।

(२) **व्यासस्थली**—यह कुरुक्षेत्र में है। यहाँ पुत्रशोक के कारण, व्यास देहत्याग के लिए प्रवृत्त हुआ था (म. व. ८१.८१; नारद. उ. ६५.८५; वामन. ३६.६०)।

(३) **व्यासाश्रम**—यह हिमालय पर्वत में बदरिकाश्रम के पास अलकनंदा-सरस्वती नदियों के संगम पर शम्याप्रासतीर्थ के समीप बसा हुआ था।

इसी आश्रम में व्यास के द्वारा सुमंतु, वैशंपायन, जैमिनि एवं पैल आदि आचार्यों को वेदों की शिक्षा दी गयी थी। व्यास का वेदप्रसार का कार्य इसी आश्रम में प्रारंभ हुआ था, एवं चारों वर्णों में वेदप्रसार करने के नियम आदि इसी आश्रम में व्यास के द्वारा निश्चित किये गये थे (म. शां. ३१४)।

(४) **व्यासकाशी**—यह वाराणसी में रामनगर के समीप बसी हुई थी।

अट्ठाईस व्यास—यद्यपि महाभारत की रचना करनेवाले व्यास महर्षि एक ही थे, फिर भी पुराणों में अट्ठाईस व्यासों की एक नामावलि दी गयी है, जिसके अनुसार वैवस्वत मन्वन्तर के हर एक द्वापर में उत्पन्न हुआ व्यास अलग व्यक्ति बताया गया है। वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाईस द्वापर आज तक पूरे हो चुके है, इसी कारण पुराणों में व्यासों की संख्या अट्ठाईस बतायी गयी है, जहाँ कृष्ण द्वैपायन व्यास को अट्ठाइसवाँ व्यास कहा गया है।

पुराणों में दी गयी अट्ठाईस व्यासों की नामावलि कल्पनारम्य, अनैतिहासिक एवं आद्य व्यास महर्षि की महत्ता बढ़ाने के लिए तैयार की गयी प्रतीत होती है। विभिन्न पुराणों में प्राप्त अट्ठाईस व्यासों के नाम एक दूसरे से मेल नहीं खाते हैं। इन व्यासों का निर्देश एवं जानकारी प्राचीन साहित्य में अन्यत्र कहीं भी प्राप्त नहीं है।

विष्णु पुराण में प्राप्त अट्ठाईस व्यासों की नामावलि नीचे दी गयी है, एवं अन्य पुराणों में प्राप्त पाठभेद कोष्ठक में दिये गये हैं:— १. स्वयंभु (प्रभु, ऋभु, ऋतु); २. प्रजापति (सत्य); ३. उशनस् (भार्गव); ४, बृहस्पति (अंगिरस्); ५. सवितृ; ६. मृत्यु; ७. इंद्र; ८. वसिष्ठ; ९. सारस्वत; १०. त्रिधामन् ११. त्रिवृषन् (निवृत्त); १२. भरद्वाज (शततेजस्); १३. अन्तरिक्ष (धर्मनारायण); १४ वप्रिन् (धर्म, रक्ष, स्वरक्षस्, सुरक्षण); १५. त्रय्यारुण (आरुणि); १६. धनंजय (देव, कृतंजय, संजय, ऋतंजय); १७. कृतंजय (मेधातिथि); १८. ऋणज्य (व्रतिन्); १९. भरद्वाज; २०. गौतम; २१. उत्तम (हर्यात्मन्); २२. वेन (राजःश्रवस्, वाजश्रवस्, वाजश्रवस, वाचःश्रवस्); २३. शुष्मायण सोम (तृणबिंदु, सौम आमुष्यायण); २४. वाल्मीकि (ऋक्ष-भार्गव); २५. शक्ति (शक्ति वासिष्ठ, भार्गव, यक्ष, कृष्ण); २६. पराशर (शाक्तेय); २७. जातूकर्ण; २८. कृष्ण द्वैपायन (प्रस्तुत) (विष्णु. ३.३.११–२०; दे. भा. १.३; लिंग. १.२४. शिव. शत. ५; शिव. वायु. सं. ८; वायु. २३; स्कंद. १.२.४०; कूर्म. पूर्व. ५१.१–११)।

व्याससहायक शिवावतार—पुराणों में निर्दिष्ट उपर्युक्त अट्ठाईस व्यासों के अतिरिक्त कई पुराणों में व्यास, सहायक शिवावतार भी दिये गये हैं, जो कलियुग के प्रारंभ में उत्पन्न हो कर द्वापर युग के व्यासों का कार्य आगे चलाते है। व्याससहायक शिवावतार के, एवं उसके चार शिष्यों के नाम विभिन्न पुराणों में दिये गये है (शिव. शत. ४–५; शिव. वायु. ८.९; वायु. २३; लिंग. ७)।

कर्तृत्त्व—व्यास के कर्तृत्त्व के तीन प्रमुख पहलू माने जाते हैं:— १. वेदरक्षणार्थ वेदविभाजन; २. पौराणिक साहित्य का निर्माण; ३. महाभारत का निर्माण।

व्यास के इन तीनों कार्यों की संक्षिप्त जानकारी नीचे दी गयी है।

वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाग—द्वापर युग के अन्त में वेदों का संरक्षण करने वाले द्विज लोग दुर्बल होने लगे, एवं समस्त वैदिक वाङ्मय नष्ट होने की संभावना उत्पन्न हो गयी। वेदों का नाश होने से समस्त भारतीय संस्कृति का नाश होगा, यह जान कर व्यास ने समस्त वैदिक वाङ्मय की पुनर्रचना की। इस वाङ्मय का ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद एवं अथर्ववेद इन चार स्वतंत्र संहिताओं में विभाजन कर, इन चार वेदों की विभिन्न शाखाएँ निर्माण की। आगे चल कर, इन वैदिक संहिताओं के संरक्षण एवं प्रचार के लिए इसने विभिन्न शिष्यपरंपराओं का निर्माण किया (वायु. ६०.१–१६)। व्यास के द्वारा किये गये वैदिक संहिताओं की पुनर्रचना का यह क्रान्तिदर्शी कार्य इतना सफल साबित हुआ कि, आज हज़ारों वर्षों के बाद भी वैदिक संहिता ग्रंथ अपने मूल स्वरूप में ही आज उपलब्ध हैं।

वेदों का विभाजन—पुराणों के अनुसार, व्यास के द्वारा चतुष्पाद वैदिक संहिता ग्रंथ का विभाजन कर, इनकी चार स्वतंत्र संहिताएँ बतायी गयीः—

ततः स ऋच उद्धृत्य ऋग्वेदसमकल्पयत्।
(वायु. ६०.१९; ब्रह्मांड. ३.३४.१९)।

(व्यास ने ऋग्वेद की ऋचाएँ अलग कर, उन्हें 'ऋग्वेद संहिता' के रूप में एकत्र कर दिया)।

व्यास के पूर्वकाल में ऋक्, यजु, साम, एवं अथर्व मंत्र यद्यपि अस्तित्व में थे, फिर भी वें सारे एक ही वैदिक संहिता में मिलेजुले रूप में अस्तित्व में थे। इसी एकात्मक वैदिक संहिता को चार स्वतंत्र संहिताओं में विभाजित करने का अत्यंत महत्त्वपूर्ण कार्य व्यास ने किया। इस प्रकार विद्यमानकालीन वैदिक संहिताओं का चतुर्विध विभाजन, एवं उनका रचनात्मक आविष्कार ये दोनों वैदिक साहित्य को व्यास की देन है, जो इस साहित्य के इतिहास में एक सर्वश्रेष्ठ कार्य माना जा सकता है।

व्यास के द्वारा रचित वैदिक संहिताओं को तत्कालीन भारतीय ज्ञाताओं ने बिना हिचकिचाहट स्वीकार किया, यह एक ही घटना व्यास के कार्य का निर्दोषत्व एवं तत्कालीन समाज में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान प्रस्थापित कर देती है (पार्गि. ३१८)।

व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा—व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा की विस्तृत जानकारी पुराणों में दी गयी है। इनमें से सर्वाधिक प्रामाणिक एवं विस्तृत जानकारी वायु एवं ब्रह्मांड में प्राप्त है, जिसकी तुलना में विष्णु एवं भागवत में दी गयी जानकारी त्रुटिपूर्ण एवं संक्षेपित प्रतीत होती है।

इस जानकारी के अनुसार, व्यास की वैदिक शिष्य-परंपरा के ऋक्, यजु, साम एवं अथर्व ऐसे चार प्रमुख विभाग थे।

व्यास की उपर्युक्त शिष्यपरंपरा में से 'मौखिक' सांप्रदाय के प्रमुख आचार्यों की नामावलि 'वैदिक शिष्य-परंपरा' के तालिका में दी गयी है। ग्रंथिक' सांप्रदाय के आचार्यों की नामावलि 'वैदिक धर्मग्रन्थ' की तालिका में दी गयी है।

(१) व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा—व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य पैल था। व्यास से प्राप्त ऋक्‌संहिता की दो संहिताएँ बना कर पैल ने उन्हें अपने इंद्रप्रमति एवं वाष्कल (बाष्कलि) नामक दो शिष्यों को प्रदान किया।

(अ) वाष्कल-शाखा—यही संहिता आगे चल कर वाष्कल ने अपने निम्नलिखित शिष्यों को सिखायी :—१. बोध्य (बोध, बौध्य); २. अग्निमाठर (अग्निमित्र, अग्निमातर); ३. पराशर; ४. याज्ञवल्क्य; ५. कालायनि (वालायनि); ६. गार्ग्य (मज्य); ७. कथाजव (कासार)। इनमें से पहले चार शिष्यों के नाम सभी पुराणों में प्राप्त हैं, अंतिम नाम केवल भागवत एवं विष्णु में ही प्राप्त हैं।

(आ) इंद्रप्रमति-शाखा—इंद्रप्रमति का प्रमुख शिष्य माण्डुकेय (मार्कंडेय) था। आगे चल कर माण्डुकेय ने वह संहिता अपने पुत्र सत्यश्रवस् को सिखायी। सत्य-श्रवस् ने उसे अपने शिष्य सत्यहित को, एवं उसने अपने पुत्र सत्यश्री को सिखायी।

विष्णु में इंद्रप्रमति के द्वितीय शिष्य का नाम शाकपूणि (शाकवैण) रथीतर दिया गया है, किन्तु वायु एवं ब्रह्मांड में सत्यश्री शाकपूणि को सत्यश्री का पुत्र बताया गया है।

(इ) सत्यश्री-शाखा—सत्यश्री के निम्नलिखित तीन सुविख्यात शिष्य थे :—१. देवमित्र शाकल्य, जिसे भागवत में सत्यश्री का नहीं, बल्कि माण्डुकेय का शिष्य कहा गया है। २. शाकवैण रथीतर (रथेतर, रथान्तर); ३. बाष्कलि भारद्वाज, जिसे भागवत में जातूकर्ण्य कहा गया हैं।

(ई) देवमित्र शाकल्य-शाखा—देवमित्र के निम्न-लिखित शिष्य प्रमुख थे :—१. मुद्गल; २. गोखल (गोखल्य, गोलख); ३. शालीय (खालीय, खलियस्); ४. वत्स (मत्स्य, वात्स्य, वास्य); ५. शैशिरेय (शिशिर); ६. जातूकर्ण, जिसका निर्देश केवल भागवत में ही प्राप्त है।

(उ) शाकवैण रथीतर-शाखा—इसके निम्नलिखित चार शिष्य प्रमुख थे :—१. केतव (क्रौंच, पैज, पैल); २. दालकि (वैताळिक, वैताल, इक्षलक); ३. शतबलाक (बलाक, धर्मशर्मन्); ४. नैगम (निरुक्तकृत्, विरज गज, देवशर्मन्)।

(ऊ) बाष्कलि भारद्वाज-शाखा—इसके निम्नलिखित तीन शिष्य प्रमुख थे :—१. नंदायनीय (अपनाप); २. पन्नगारि; ३. अर्जव (अर्यव) (विष्णु. ३.४.१६-२६; भा. १२.६.५४-५९; वायु. ६०.२४-६६; ब्रह्मांड. २.३४-३५)।

व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा

ऋग्वेद	यजुर्वेद	सामवेद	अथर्ववेद
पैल	वैशंपायन	जैमिनि	सुमन्त
इंद्रप्रमति, वाष्कल	—	सुमन्तु-जैमिनि	कबंध
बोध्य, याज्ञवल्क्य, पराशर, माण्डुकेय	याज्ञवल्क्य-ब्रह्मराति	सुत्वन्-जैमिनि	पथ्य, देवादर्श
सत्यश्रवस्	तित्तिरी	सुकर्मन्-जैमिनि	पिप्पलाद
सत्यहित	—	पौष्पिण्ड्य	जाजलि-शौनक
सत्यश्री	माध्यंदिन, काण्व	लौगाक्षि, कुथुमि, कुशितिन्, लांगलि	सैन्धवायन, बभ्रु
शाकल्य, वाष्कलि, शाकपूर्ण	याज्ञवल्क्य	राणायनीय, तण्डि-पुत्र, पराशर, भागवित्ति	—
पन्नगारि, शैशिरेय, वत्स, शतबलाक	श्यामायनि, आसुरि अलम्बि	—	मुंजकेश
—	—	लोमगायनि, पाराशर्य, प्राचीनयोग	—
—	—	आसुरायण, पतंजलि	—

ऋग्वेद की प्रमुख-शाखाएँ--व्यास के प्रमुख शिष्य-प्रशिष्यों को 'शाखाप्रवर्तक आचार्य' कहा जाता है, एवं उन्हींके द्वारा प्रणीत संहितापरंपरा को 'शाखा' कहा जाता है। इन विभिन्न शाखाओं द्वारा पुरस्कृत वैदिक संहिता यद्यपि एक ही थी, फिर भी विभिन्न 'दृष्टि-विभ्रम' एवं 'स्वरवर्ण' (उच्चारपद्धति) के कारण हरएक शाखा की संहिता विभिन्न बन जाती थी।

पौराणिक साहित्य में ऋग्वेद के विभिन्न शाखाओं का यद्यपि निर्देश है, फिर भी इनमें से बहुत ही थोडी शाखाएँ व्यासशिष्य परंपरा में निर्दिष्ट आचार्यों के नामों से मिलती जुलती दिखाई देती हैं।

पतंजलि महाभाष्य एवं महाभारत में ऋग्वेद की इक्कीस शाखाओं का निर्देश प्राप्त है। किंतु उनकी नामावलि वहाँ अप्राप्य है (महा. १; म. शां. ३३०.३२; कर्म. पूर्व. ५२.५९)।

'चरणव्यूह' में ऋग्वेद की निम्नलिखित पाँच शाखाओं का निर्देश प्राप्त है:--१. शाकल (शैशिरीय); २. बाष्कल; ३. आश्वलायन; ४. शांखायन; ५. मण्डूका-

उपलब्ध वैदिक धर्मग्रंथ

वेद	शाखा	उपलब्ध संहिता	ब्राह्मण	आरण्यक	उपनिषद	श्रौतसूत्र	गृह्य, धर्म एवं शुल्ब सूत्र	व्याकरण
ऋग्वेद	२१	१ शाकल २ बाष्कल ३ शांख्यायन	१ ऐतरेय २ शांख्यायन	१ ऐतरेय २ शांख्यायन	१ ऐतरेय २ कौषितकी ३ बाष्कल	१ आश्वलायन २ शांख्यायन	१ आश्वलायन (गृह्य) २ शांख्यायन (गृह्य) ३ वसिष्ठ (धर्म)	१. ऋक्प्राति-शाख्य
कृष्णयजुर्वेद	८६	१ तैत्तिरीय २ मैत्रायणी ३ कठ ४ कापिष्ठल	१ तैत्तिरीय २ कठ	१ तैत्तिरीय २ मैत्रायणी	१ तैत्तिरीय २ महानारायण ३ मैत्रायणी ४ कठ ५ श्वेताश्वेतर ६ मैत्री	१ आपस्तंब २ बौधायन ३ भारद्वाज ४ मानव ५ वाधूल ६ वाराह ७ वैखानस ८ हिरण्यकेशी (सत्याषाढ)	१ आपस्तंब (गृह्य, शुल्ब, धर्म), २ कठ (गृह्य) वाराह (गृह्य), ३ बौधायन (गृह्य, शुल्ब, धर्म) ४ मानव (गृह्य), ५ वैखानस (धर्म), ६ हिरण्यकेशी (गृह्य, धर्म)	१. तैत्तिरीय प्रातिशाख्य
शुक्लयजुर्वेद	१५	१ काण्व २ माध्यंदिन	शतपथ १.काण्व (१७ काण्ड) २. माध्यंदिन(१४ काण्ड)	१ बृहदारण्यक	१ ईशावास्य (संहिता में से ४० वाँ अध्याय) २ वृहदारण्यक	१ कात्यायन	१ पारस्कर गृह्य (कात्यायन)	१. कात्यायन प्रातिशाख्य २. भाषिकसूत्र
सामवेद	१०००	१ कौथुम २ राणायनीय	१ पंचविंश (प्रौढ, तांड्य) २ षड्विंश, ३ सामविधान, ४ आर्षेय, ५ मंत्र, ६ दैवताध्याय, ७ वंश, ८ संहितोपनिषद्, ९जैमिनीय १० जैमिनीयोपनिषद्	१ जैमिनीय	१ छांदोग्य (तांड्य) २ केन (जैमिनीयोपनिषद् ब्रा. में से ४.१८.२१)	१ खादिर २ द्राह्यायन ३ लाट्यायन	१ खादिर (गृह्य) २ गोभिल (गृह्य) ३ गौतम (गृह्य और धर्म) ४ जैमिनि (गृह्य)	१. पुष्पसूत्र
अथर्ववेद	२	१ पिप्पलाद २ शौनक	१ गोपथ		१ प्रश्न, २ मांडुक्य ३ मुंडक इत्यादि	१ वैतान	१. कौशिक	१. पंचपटलिका २. अथर्व प्रातिशाख्य

यन। इनमें से शाकल, बाष्कल एवं माण्डूकायन इन शाखा प्रवर्तकों का निर्देश व्यास की वैदिक शिष्य-परंपरा में प्राप्त है। किन्तु आश्वलायन एवं शांखायन शाखाओं के प्रवर्तक आचार्य कौन थे, यह कहना मुश्किल है। इन दोनों शाखाओं का निर्देश अग्नि में प्राप्त है (अग्नि. २७१.२)।

उपर्युक्त शाखाओं में से शांखायन के अतिरिक्त बाकी सारी शाखाएँ शाकल्य के शिष्यों के द्वारा शुरू की गयी थीं, जिस कारण वे 'शाकल' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध हैं (वेदार्थदीपिका प्रस्तावना)।

वर्तमानकाल में उपलब्ध सायण भाष्य से सहित ऋक्संहिता आश्वलायन शाखान्तर्गत मानी जाती है। 'चरणव्यूह' ग्रंथ के महिधर-भाष्य से यही सिद्ध होता है। सत्यव्रत सामाश्रमी के ऐतरेयालोचन में भी यही सिद्धान्त प्रस्थापित किया गया है।

(२) व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा--व्यास की यजुः-शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य वैशंपायन था। वैशंपायन के कुल ८६ शिष्य थे, जिनमें याज्ञवल्क्य वाजसनेय प्रमुख था। आगे चल कर, याज्ञवल्क्य ने अपनी स्वतंत्र यजुर्वेद शाखा प्रस्थापित की, एवं वैशंपायन की ८५ शिष्य बाकी रहे। ये सारे शिष्य 'तैत्तिरीय' अथवा 'चरकाध्वर्यु' सामूहिक से सुविख्यात हैं।

(अ) वैशंपायन शाखा--इस शाखा में उदिच्य' मध्यदेश एवं प्राच्य ऐसी तीन उपशाखाएँ प्रमुख थीं, जिनके प्रमुख आचार्य क्रमशः श्यामायनि, आसुरी एवं आलम्बि थे।

(आ) याज्ञवल्क्य शाखा--इस शाखा में अंतर्गत याज्ञवल्क्य के शिष्य 'वाजिन' अथवा 'वाजसनेय' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। याज्ञवल्क्य के पंद्रह शाखाप्रवर्तक शिष्यों का निर्देश वायु एवं ब्रह्मांड में प्राप्त है, जिनमें से ब्रह्मांड में प्राप्त नामावली नीचे दी गयी हैः--१. कण्व; २. बौधेय; ३. मध्यंदिन; ४. सापत्य; ५. वैधेय; ६. आद्ध; ७. बौद्धक; ८. तापनीय; ९. वास; १०. जाबाल; ११. केवल; १२. आवटिन्; १३. पुण्ड्र; १४. वैण; १५. पराशर (ब्रह्मांड. २.३५.८-३० ;याज्ञवल्क्य वाजसनेय देखिये)।

(३) व्यास की सामशिष्यपरंपरा--व्यास की साम-शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य जैमिनि था, जिसके पुत्रपौत्रों ने सामशिष्यपरंपरा आगे चलायी। जैमिनि के सामशिष्य-परंपरा का विद्यावंश निम्नप्रकार थाः--जैमिनि-सुमंतु-सुत्वत् (सुन्वत्)—सुकर्मन्।

(अ) सुकर्मन्-शाखा—सुकर्मन् ने 'सामवेदसंहिता' के एक हजार संस्करण बनायें, एवं उनमें से पाँचसौ संहिता पौष्यंजि नामक आचार्य को, एवं उर्वरीत पाँचसौ हिरण्यनाभ कौशल्य (कौशिक्य) राजा को प्रदान की। उनमें से पौष्यंजि एवं हिरण्यनाभ के शिष्य क्रमशः 'उदीच्य सामग' एवं 'प्राच्य सामग' नाम से सुविख्यात हुए। विष्णु में इन दोनों सामशिष्यों की संख्या प्रत्येक की पंद्रह बतायी गयी है।

हिरण्यनाभ के शिष्यों में कृत (कृति) प्रमुख था, जो एक प्रमुख शाखाप्रवर्तक आचार्य माना जाता है।

(आ) कृत-शाखा--कृत के कुल चौवीस शिष्य थे, जिनकी नामावलि वायु एवं ब्रह्मांड में निम्नप्रकार दी गयी हैः- १. राडि (राड); २. राडवीय (महावीर्य); ३. पंचम; ४. वाहन; ५. तलक (तालक); ६. मांडुक (पांडक); ७. कालिक, ८. राजिक, ९. गौतम; १०. अजवस्ति, ११. सोमराजायन (सोमराज); १२. पुष्टि (पृथ्वन्); १३. परिकृष्ट; १४. उलूखलक; १५. यवियस; १६. शालि (वैशाल); १७. अंगुलीय; १८. कौशिक; १९. शालिमंजरिपाक (सालिजीमंजरिसत्य); २०. शधीय (कापीय); २१. कानिनि (कानिक), २२. पाराशर्य (पराशर); २३. धर्मात्मन्; २४. वाँ नाम प्राप्त नहीं है।

(इ) पौष्यंजि-शाखा-पौष्यंजि के निम्नलिखित शिष्य प्रमुख थेः— १. लौगाक्षि (लौकाक्षि, लौकाक्षिन्); २. कुशुमि; ३. कुशीदि (कुसीद, कुसीदि); ४. लांगलि (मांगलि), जिसे ब्रह्मांड एवं वायु में 'शालिहोत्र' उपाधि प्रदान की गयी है; ५. कुल्य; एवं ६. कुक्ष।

(ई) लांगलि-शाखा-लांगलि के निम्नलिखित छः शिष्य थे, जो 'लांगल' अथवा 'लांगलि' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थेः—१. हालिनी (भालुकि); २. ज्यामहानि (कामहानि); ३. जैमिनि; ४. लोमगायनि (लोमगायिन्); ५. कण्डु (कण्ड); ६. कोहल (कोलह)।

(उ) लौगाक्षि-शाखा-लौगाक्षि के निम्नलिखित छः शिष्य थेः—१. राणायनीय (नाडायनीय); २. सहतंडिपुत्र (सहितंडिपुत्र); ३. वैन (मूलचारिन्); ४. सकोतिपुत्र (सकतिपुत्र); ५. सुसहस् (सहसात्यपुत्र); ६. सुनामन्।

इनमें से राणायनीय के निम्नलिखित दो शिष्य थेः—१. शौरिद्यु (शोरिद्यु); २. शृंगीपुत्र। इनमें से शृंगीपुत्र के वैन (चैल); प्राचीनयोग एवं सुबाल नामक तीन शिष्य थे।

(ऊ) कुथुमि अथवा कुशुमिशाखा—कुथुमि के निम्नलिखित तीन शिष्य थेः—१. औरस (पाराशर्य कौथुम); २. नाभिवित्ति (भागवित्ति); ३. पाराशरगोत्री (रसपासर)।

इनमें से औरस (पाराशर्य कौथुम) के निम्नलिखित छः शिष्य थेः— १. आसुरायण; २. वैशाख्य; ३. वेदवृद्ध; ४. पारायण; ५. प्राचीनयोगपुत्र; ६. पतंजलि। इन शिष्यों में से पौष्यंजि एवं कृत ये दो शिष्य प्रमुख होने के कारण, उन्हें 'सामसंहिताविकल्पक' कहा गया है (ब्रह्मांड. २.३५.३१–५४; वायु ६१.२७–४८)।

(४) व्यास की अथर्वशिष्यपरंपरा—व्यास की अथर्व शिष्यपरंपरा का प्रमुख शिष्य सुमन्तु था। सुमन्तु के शिष्य का नाम कबंध था, जिसके निम्नलिखित दो शिष्य थेः— १. देवदर्शन (वेददर्श, वेदस्पर्श); २. पथ्य।

(अ) देवदर्श-शाखा-देवदर्श के निम्नलिखित पाँच शिष्य थेः— १. शौल्कायनि (शौकायनि); २. पिप्पलाद (पिप्पलायनि); ३. ब्रह्मबल (ब्रह्मबलि); ४. मोद (मोदोष, मौद्ग); ५. तपन (तपसिस्थित)।

(आ) पथ्य-शाखा-पथ्य के निम्नलिखित तीन शिष्य थे :—१. जाजलि; २. कुमुदादि (कुमुद); ३. शौनक (शुनक)।

(इ) शौनक-शाखा-शौनक के निम्नलिखित दो शिष्य थे :—१. बभ्रु, जिसे ब्रह्मांड एवं वायु में 'मुंजकेश्य,' एवं 'मुंजकेश' उपाधियाँ प्रदान की गयी हैं।

(ई) सैंधवायन-शाखा—सैंधवायन के दोनों शिष्यों ने प्रत्येकी दो दो संहिताओं की रचना की थी।

अथर्ववेदसंहिता के पाँच कल्प—इस संहिता के निम्नलिखित पाँच कल्प माने गये हैं:—१. नक्षत्रकल्प, २. वेदकल्प (वैतान) ३. संहिताकल्प; ४. आंगिरसकल्प, ५. शान्तिकल्प (विष्णु. ३.६.९–१४; भा. १२.७.१–४; वायु. ६१.४९–५४; ब्रह्मांड २.५.५५–६२)।

व्यासोत्तर वैदिक वाङ्मय का विकास—व्यास के द्वारा किये गये वैदिक संहिताओं के विभाजन को आदर्श मान कर, आगे चल कर संहिता, ब्राह्मण, आरण्यक, उपनिषद तथा श्रौत, गृह्य, धर्म, शुल्वसूत्र आदि वैदिक साहित्य का विस्तार हुआ।

व्यास के शिष्यपरंपरा में से अनेकानेक आचार्यों का निर्देश यद्यपि पुराणों में प्राप्त है, फिर भी, इन आचार्यों के द्वारा निर्माण की गयी बहुत सारी ग्रंथसंपत्ति आज अप्राप्य, अतएव अज्ञात है।

इसका कारण संभवतः यही है कि, व्यास की उपर्युक्त सारी शिष्यपरंपरा 'ग्रांथिक' न हो कर 'मौखिक' थी, जिनका प्रमुख कार्य ग्रंथनिष्पत्ति नहीं, बल्कि वैदिक संहिता-साहित्य की मौखिक परंपरा अटूट रखना था।

व्यास के कई अन्य शिष्यों के द्वारा रचित वैदिक ग्रंथसंपत्ति में से जो भी कुछ साहित्य उपलब्ध है, उसकी जानकारी पृष्ठ ९२२ पर दी गयी 'वैदिक साहित्य के धर्मग्रंथों की तालिका' में दी गयी है।

वैदिक संहिताओं का विशुद्ध रूप—व्यास के द्वारा विभाजन की गयी वैदिक संहिताएँ विशुद्ध रूप में कायम रखने के लिये व्याकरणशास्त्र, उच्चारणशास्त्र, वैदिक स्वरों का लेखनशास्त्र आदि अनेकानेक विभिन्न शास्त्रों का निर्माण हुआ, जिनकी संक्षिप्त जानकारी नीचे दी गयी है।

वैदिक व्याकरणविषयक ग्रंथों में शौनककृत 'ऋक्प्रातिशाख्य,' 'तैत्तिरीय प्रातिशाख्य,' कात्यायनकृत 'शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य,' अथर्ववेद का 'पंचपटलिका ग्रंथ', एवं सामवेद का 'पुष्पसूत्र,' आदि ग्रंथ विशेष उल्लेखनीय हैं।

वैदिक मंत्रों के उच्चारणशास्त्र के संबंध में अनेकानेक शिक्षाग्रंथ प्राप्त हैं, जिनमें वेदों के उच्चारण की संपूर्ण जानकारी दी गयी है। इन शिक्षा-ग्रंथों में अनुस्वार एवं विसर्गों के नानाविध प्रकार, एवं उनके कारण उत्पन्न होनेवाले उच्चारणभेदों की जानकारी भी दी गयी है।

वैदिक साहित्य की परंपरा शुरू में 'मौखिक' पद्धति से चल रही थी। आगे चल कर, इन मंत्रों का लेखन जब शुरु हुआ, तब उच्चारानुसारी लेखन का एक नया शास्त्र वैदिक आचार्यों के द्वारा निर्माण हुआ। इस शास्त्र के अनुसार, उदात्त, अनुदात्त, स्वरित आदि स्वरों के लेखन के लिए, अनेकानेक प्रकार के रेखाचिन्ह वैदिक मंत्रों के अक्षरों के ऊपर एवं नीचे देने का क्रम शुरू किया गया। यजुर्वेद संहिता में तो वैदिक मंत्रों के अक्षरों के मध्य में भी स्वरचिह्नों का उपयोग किया जाता है।

विनष्ट हुए 'ब्राह्मण ग्रन्थ'—ब्राह्मण ग्रंथों में से जिन ग्रन्थों के उद्धरण वैदिक साहित्य में मिलते है, किंतु जिसके मूल ग्रंथ आज अप्राप्य है, ऐसे ग्रन्थों की नामावलि निम्नप्रकार है :—

(१) ऋग्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. शैलालि।

(२) कृष्णयजुर्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. आह्वरक; २. कंकटिन्; ३. चरक; ४. छागलेय (तैत्तिरीय); ५. पैंग्यायनि; ६. मैत्रायणी; ७. श्वेताश्वतर (चरक, चारायणीय); ८. हारिद्राविक (चरक, चारायणीय)।

(३) शुक्लयजुर्वेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. जाबालि।

(४) सामवेदीय ब्राह्मण-ग्रन्थ—१. जैमिनीय २. तलवकार (राणायनीय); ३. कालबविन्; ४. भाल्लविन्; ५. रौरुकि; ६. शाट्यायन (रामायनीय); ७. माषशराविन् (बटकृष्ण घोष, कलेक्शन ऑफ दि फ्रॅग्मेन्ट्स् ऑफ लॉस्ट ब्राह्मणाज)।

पुराण ग्रंथों का प्रणयन—वैदिक ग्रंथों की पुनर्रचना के साथ साथ, व्यास ने तत्कालीन समाज में प्राप्त कथा आख्यायिका एवं गीत (गाथा) एकत्रित कर आद्य 'पुराणग्रंथों' की रचना की, एवं इस प्रकार यह प्राचीन पौराणिक साहित्य का भी आद्य जनक बन गया।

प्राचीन भारत में उत्पन्न हुए राजवंश एवं मन्वन्तरों की परंपरागत जानकारी एकत्रित करना यह पुराणों का आद्य हेतु है। किन्तु उनका मूल अधिष्ठान नीतिप्रवण धर्मग्रंथों का है, जहाँ धर्म एवं नीति की शिक्षा सामान्य मनुष्यमात्र की बौद्धिक धारणा ध्यान में रखकर दी गयी है। पंचमहाभूत, प्राणिसृष्टि एवं मनुष्यसृष्टि की ओर भूतदयावाद का आदर्श पुराणग्रंथों में रखा गया है, जहाँ व्रत, उपासना एवं तपस्या को अधिकाधिक प्राधान्य दिया गया है।

कुटुम्ब, राज्य, राष्ट्र, शासन आदि की ओर एक आदर्श नागरिक के नाते हर एक व्यक्ति के क्या कर्तव्य हैं, इनका उच्चतम आदर्श सामान्य जनों के सम्मुख पुराण ग्रंथ रखते हैं। इस प्रकार जहाँ राज्यशासन के विधिनियम अयशस्वी होते हैं, वहाँ पुराणग्रंथों का शासन सामान्य जनमानस पर दिखाई देता है।

पुराणों के प्रकार—पौराणिक साहित्य के 'महापुराण,' 'उपपुराण' एवं 'उपोपपुराण' नामक तीन प्रमुख प्रकार माने जाते हैं। जिन पुराणों में वंश, वंशानुचरित, मन्वन्तर, सर्ग एवं प्रतिसर्ग आदि सारे विषयों का समावेश किया जाता है, उन पुराणों को महापुराण कहते हैं—

आख्यानैश्चाप्युपाख्यानैर्गाथाभिः कल्पशुद्धिभिः।
पुराणसंहितां चक्रे पुराणार्थविशारदः॥
(विष्णु. ३.६.१६-१६)।

उपर्युक्त विषयों में से एक ही उपांग पर जो पुराणग्रंथ आधरित रहता है, उसे 'उपपुराण' कहते हैं। उपोपपुराण स्वतंत्र ग्रंथ न हो कर, महापुराण का ही एक भाग रहता है।

पुराणों में चर्चित विषय—पौराणिक साहित्य में चर्चित विषयों की जानकारी वायु में प्राप्त है, जिसके अनुसार ब्रह्मचारिन्, गृहस्थ, वानप्रस्थ, संन्यासी, रागी, विरागी, स्त्री, शूद्र एवं संकर जातियों के लिए सुयोग्य धर्माचरण क्या हो सकता है, इसकी जानकारी पुराणों में प्राप्त होती है। इन ग्रंथों में यज्ञ, व्रत, तप, दान, यम, नियम, योग, सांख्य, भागवत, भक्ति, ज्ञान, उपासनाविधि आदि विभिन्न धार्मिक विषयों की जानकारी प्राप्त है।

पुराणों में समस्त देवताओं का अविरोध से समावेश करने का प्रयत्न किया गया है, एवं ब्राह्म, शैव, वैष्णव, सौर, शाक्त, सिद्ध आदि संप्रदायों के द्वारा प्रणीत उपासना वहाँ आत्मौपम्य बुद्धि से दी गयी है। देवताओं का माहात्म्य बढ़ाना, एवं उनके उपासनादि का प्रचार करना, यह पुराणग्रंथों का प्रमुख उद्देश्य है।

पुराणों के विभिन्न प्रकार—मत्स्य में पुराणों के सात्विक, राजस एवं तामस तीन प्रकार बताये गये हैं। मत्स्य में प्रतिपादन किया गया पुराणों का यह विभाजन देवताप्रमुखत्व के तत्त्व पर आधारित है, एवं विष्णु, ब्रह्मा एवं अग्नि-शिव की उपासना प्रतिपादन करनेवाले पुराणों को वहाँ क्रमशः 'सात्विक,' 'राजस' एवं 'तामस' कहा गया है। सरस्वती एवं पितरों का माहात्म्य कथन करनेवाले पुराणों को वहाँ 'संकीर्ण' कहा गया है (मत्स्य. ५३.६८-६९)।

पद्म एवं भविष्य में भी पुराणों के सात्विक आदि-प्रकार दिये गये है, किन्तु वहाँ इन पुराणों का विभाजन विभिन्न प्रकार से किया गया है (पद्म. उ. २६३.८१-८५, आनंदाश्रम संस्करण; भविष्य. प्रति. ३.२८.१०-१५)।

श्लोकसंख्या—विभिन्न पुराणों की श्लोकसंख्या बहुत सारे पुराणों में दी गयी है, जिसमें प्रायः एकवाक्यता है। पुराणों के इसी श्लोकसंख्या से विशिष्ट पुराण पूर्ण है, या अपूर्णावस्था में उपलब्ध हैं, इसका पता चलता है।

पुराणों के वक्ता—पुराणों का कथन करनेवाले आचार्यों को 'वक्ता' कहा जाता है, जिनकी सविस्तृत नामावलि भविष्य पुराण में प्राप्त है (भवि. प्रति. ३.२८.१०-१५)।

महापुराण—महापुराणों की संख्या अठारह बतायी गयी है, जिनके नामों के संबंध में प्रायः सर्वत्र एकवाक्यता है।

इन पुराणों के नाम, उनके अधिष्ठात्री देवता, श्लोक-संख्या एवं निवेदनस्थल आदि की जानकारी 'महापुराणों की तालिका' में दी गयी हैं। इस तालिका में जिन पुराणों के नाम के आगे '*' चिन्ह लगाया गया है, उनके महापुराण होने के संबंध में एकवाक्यता नहीं है।

उपपुराणों की नामावलि—उपपुराणों की संख्या भी अठारह बतायी गयी है, किन्तु विभिन्न पौराणिक ग्रंथों में से कौन-कौन से ग्रंथों का 'अठारह उपपुराणों' की नामावलि में समाविष्ट करना चाहिये, इस संबंध में मतैक्य नहीं हैं। विभिन्न पुराणों में प्राप्त उपपुराणों के नाम नीचे दिये

महापुराणों की तालिका

महापुराण	वक्ता	देवता	गुण	श्लोक सख्या	अपूर्ण या पूर्ण	प्रसंग एवं स्थल
१. अग्नि (सर्व-विद्यायुक्त)	अंगिरस् (अग्नि-वसिष्ठ संवाद)	अग्नि	तामस	१५,४००	अपूर्ण	नैमिषारण्य
२. कूर्म	व्यास	शिव	सात्विक	१७,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य सत्र
३. गरुड	हरि	विष्णु	सात्विक	१९,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य
४. नारद	नारद	विष्णु	सात्विक	२५,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, सिद्धाश्रम
५. पद्म	ब्रह्मन् (रोमहर्षण पुत्र प्रोक्त)	ब्रह्मन्	सात्विक	५५,०००	अपूर्ण (प्रक्षेपयुक्त)	नैमिषारण्य,
६. ब्रह्म	ब्रह्मन्–मरीचि संवाद	ब्रह्मन्	राजस	१०,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य, द्वादशवार्षिकसत्र
७. ब्रह्मवैवर्त	सावर्णि–नारद संवाद	सूर्य	राजस	१८,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य
८. नृसिंह*	व्यास	विष्णु				सूत-भारद्वाज संवाद, प्रयाग
९. ब्रह्मांड	तंडिन्	शिव	राजस	१२,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य, सहस्रवार्षिकसत्र
१०. भविष्य	सुमन्तु शतानीक	शिव	राजस	१४,५००	अपूर्ण	शतानीकनृपसभा
११. भागवत	शुक					
(अ) विष्णु *		विष्णु	सात्विक	१८,०००	पूर्ण	सहस्रवार्षिकसत्र
(ब) देवी *		देवी				
१२ मत्स्य	व्यास	शिव	तामस	१४,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, दीर्घसत्र
१३. मार्कंडेय	मार्कंडेय	शिव	राजस	९,०००	अपूर्ण	
१४. लिंग	तंडिन्	शिव	राजस	११,०००	पूर्ण	नैमिषारण्य
१५. वराह	मार्कंडेय	शिव	सात्विक	२४,०००	अपूर्ण	पृथ्वी–वराह संवाद
१६. वामन	व्यास	शिव	राजस	१०,०००	अपूर्ण	
१७. वायु *	व्यास	शिव		२४,०००	पूर्ण	
१८. विष्णु	पराशर	विष्णु	सात्विक	७०००वि.	पूर्ण	दृषद्वतीतीर दीर्घसत्र
१८–अ विष्णु-धर्मोत्तर				१६००० विष्णुध. २३०००		हिमालय राक्षससत्र
१९. शिव *	व्यास	शिव	तामस	२४,०००	पूर्ण	प्रयाग महासत्र
२०. स्कंद	शिव	शिव	तामस	८१,०००	अपूर्ण	नैमिषारण्य, दीर्घसत्र
		कुल श्लोकसंख्या ४,२५,०००				

(अग्नि. २७२; ३८३; कूर्म. पूर्व. १.१३–१५; नारद अनुक्रमणिका; ब्रह्मवै. कृष्ण. २.१३३.११–२१; भा. १२.१३.४–८ संख्यायुक्त; मत्स्य. ५३.११–५६; वराह. ११२; वायु. १०४.२–१०; विष्णु. ३.६.१९–२३; स्कंद. प्रभास. २; रोमहर्षण देखिये)।

गये हैः--आखेटक, आंगिरस, आण्ड, आद्य, आदित्य, उशनस्, एकपाद, एकाम्र, कपिल, कालिका, काली, कौमार, कौर्म, क्रियायोगसार, गणेश, गरुड, दुर्वास, देवी, दैव, धर्म, नंदी, नारद, नृसिंह, पराशर, प्रभासक, बार्हस्पत्य, बृहद्धर्म, बृहन्नंदी, बृहन्नारद, बृहन्नारसिंह, बृहद्वैष्णव, ब्रह्मांड, भागवत (देवी अथवा विष्णु), भार्गव, भास्कर, मानव, मारीच, माहेश, वसिष्ठ, मृत्युंजय, लीलावती, वामन, वायु, वारुण, विष्णुधर्म, लघुभागवत, शिवधर्म, शौकेय, सनत्कुमार, सांब, सौर (ब्रह्म) (एकाम्र. १.२०-२३; कूर्म. पूर्व. १.१७-२०; गरुड. १.२२३; १७-२०; दे. भा. १.३.१३-१६; स्कंद. प्रभास. २.११-१५; सूत-संहिता १.१३-१८; पद्म. पा. ११५; उ. ९४-९८; ब्रह्मांड. १.२५.२३-२६; पराशर. १.२८-३१; वारुण. १; मत्स्य. ५३.६०-६१)।

पुराणों का दैवतानुसार पृथक्करण—पुराणों के शैव, वैष्णव, ब्राह्म, अग्नि आदि विभिन्न प्रकार है, जो उनके द्वारा प्रतिपादित उपासना-सांप्रदायों के अनुसार किये गये हैं। उपास्य दैवतों के अनुसार, पुराणों का विभाजन निम्न प्रकार किया जाता है:—

(१) **शिव-उपासना के पुराण**--१. कूर्म; २. ब्रह्मांड; ३. भविष्य; ४. मत्स्य; ५. मार्कंडेय; ६. लिंग; ७. वराह; ८. वामन; ९. शिव; १०. स्कंद।

(२) **विष्णु-उपासना के पुराण**—१. गरुड; २. नारद; ३. भागवत; ४. विष्णु।

(३) **ब्रह्मा-उपासना के पुराण**--१. पद्म; २. ब्रह्म।

(४) **अग्नि-उपासना के पुराण**—१. अग्नि।

(५) **सवितृ-उपासना के पुराण**--१. ब्रह्मवैवर्त (स्कंद. शिवरहस्य. संभव. २.३०-३८; पंडित ज्वाला-प्रसाद, अष्टादशपुराणदर्पण. पृ. ४६)।

गीताग्रंथ--कूर्मपुराण में निम्नलिखित 'गीताग्रंथ' प्राप्त है, जो महाभारत में प्राप्त 'भगवद्गीता' के ही समान श्रेष्ठ श्रेणि के तत्त्वज्ञानग्रंथ माने जाते है:—१. ईश्वरगीता (कूर्म. उत्तर. १-११); २. व्यासगीता (कूर्म. उत्तर. १२-२९) इत्यादि।

व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा—पुराणग्रंथों के निर्माण के पश्चात्, व्यास ने ये सारे ग्रंथ अपने पुराणशिष्यपरंपरान्तर्गत प्रमुख शिष्य रोमहर्षण 'सूत' को सिखाये, जो आगे चल कर व्यास के पुराणशिष्यपरंपरा का प्रमुख आचार्य बन गया।

रोमहर्षण शाखा--रोमहर्षण के शिष्यों में निम्नलिखित आचार्य प्रमुख थेः— १. सुमति आत्रेय (त्रैयारुणि); २. अकृतव्रण काश्यप (कश्यप); ३. अग्निवर्चस् भारद्वाज; ४. मित्रयु वासिष्ठ; ५. सोमदत्ति सावर्णि (ब्रह्मांड. २.३५. ६३-६६; मा. १२.६); ६. सुशर्मन् शांशपायन (शांत-पायन) (वायु. ६१.५५-५७; विष्णु. ३.६.१५-१८); ७. वैशंपायन; ८. हस्ति; ९. सूत।

महाभारत का निर्माण--पौराणिक साहित्य के साथ-साथ संस्कृत साहित्य का आद्य एवं सर्वश्रेष्ठ 'इतिहास पुराण ग्रंथ' माने गये 'महाभारत' का निर्माण भी व्यास के द्वारा हुआ।

शतपथ ब्राह्मण, तैत्तिरीय आरण्यक, एवं छांदोग्य उपनिषद में 'इतिहास पुराण' नामक साहित्य प्रकार का निर्देश प्राप्त है। किन्तु इन ग्रंथों में निर्दिष्ट 'इतिहास पुराण' स्वतंत्र ग्रंथ न हो कर, आख्यान एवं उपाख्यान के रूप में ब्राह्मणादि ग्रंथों में ग्रथित किये गये थे। ये आख्यान अत्यंत छोटे होने के कारण, उनका विभाजन 'पर्व' 'उपपर्व' आदि उपविभागों में नहीं किया जाता था, जैसा कि उन्हीं ग्रंथों में निर्दिष्ट 'सर्पविद्या,' 'देवजन-विद्या' आदि पौराणिक कथानकों में किया गया है।

इतिहास-पुराण ग्रंथ--व्यास की श्रेष्ठता यह है कि, इसने ब्राह्मणादि ग्रंथों में निर्दिष्ट 'इतिहास-पुराण' साहित्य जैसा तत्कालीन राजकीय इतिहास, 'सर्पविद्या' जैसे पौराणिक कथानकों के लिए ही उपयोग किये गये पर्व, उपपर्वादि से युक्त साहित्यप्रकार में बाँध लिया। इस प्रकार यह एक बिल्कुल नये साहित्यप्रकार का आद्य जनक बन गया, एवं इसके द्वारा विरचित 'महाभारत' बृहदाकार 'इतिहास पुराण' साहित्य का आद्य ग्रंथ साबित हुआ।

भारतीययुद्ध में विजय प्राप्त करनेवाले पाण्डुपुत्रों की विजयगाथा चित्रित करना, यह इसके द्वारा रचित 'जय' नामक ग्रंथ का मुख्य हेतु था। पाण्डुपुत्रों के पराक्रम का इतिहास वर्णन करते समय, इसने तत्कालीन धार्मिक, राज-नैतिक तत्त्वज्ञानों के समस्त स्त्रोतों को अपने ग्रंथ में ग्रथित किया। इतना ही नहीं, इसी राजनीति को धार्मिक, राज-नैतिक एवं आध्यात्मिक आधिष्ठान दिलाने का सफल प्रयत्न व्यास के इस ग्रंथ में किया गया है।

अपने इस ग्रंथ में, आदर्श राजनैतिक जीवन के उपलक्ष्य में प्राप्त भारतीय तत्त्वज्ञान व्यास के द्वारा ग्रथित किया गया है। इस प्रकार व्यक्तिविषयक आदर्शों को शास्त्रप्रमाण्य

एवं तत्त्वज्ञान की चौखट में बिठाने के कारण, महाभारत सारे पुराणग्रंथों में एक श्रेष्ठ श्रेणि का तत्त्वज्ञानग्रंथ बन गया है।

धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष इन चतुर्विध पुरुषार्थों के आचरण में ही मानवीय जीवन की इतिकर्तव्यता है, एवं कर्म, ज्ञान, उपासना आदि से प्राप्त होनेवाला मोक्ष अन्य तीन पुरुषार्थों के आचरण के बिना व्यर्थ है, यही संदेश व्यास के द्वारा महाभारत में दिया गया है। व्यास के द्वारा विरचित महाभारत के इस राजनैतिक एवं तात्त्विक अधिष्ठान के कारण, यह एक सर्वश्रेष्ठ एवं अमर इतिहास-ग्रंथ बना है। इस ग्रंथ की सर्वंकषता के कारण, मानवी जीवन के एवं समस्याओं के सारे पहलू किसी न किसी रूप में इस ग्रंथ में समाविष्ट हो चुके हैं, जिस कारण '**व्यासोच्छिष्टं जगत्सर्वम्**' यह आर्षवाणी सत्य प्रतीत होती है (वैशंपायन एवं वाल्मीकि देखिये)।

महाभारत की व्याप्ति--इस ग्रंथ की विषयव्याप्ति बताते समय स्वयं व्यास ने कहा है, 'हस्तिनापुर के कुरु वंश का इतिहास कथन कर पाण्डुपुत्रों की कीर्ति संवर्धित करने के लिए इस ग्रंथ की रचना की गयी है। इस वंश में उत्पन्न गांधारी की धर्मशीलता, विदुर की बुद्धिमत्ता, कुंती का धैर्य, श्रीकृष्ण का माहात्म्य, पाण्डवों की सत्यपरायणता एवं धृतराष्ट्रपुत्रों का दुर्व्यवहार चित्रित करना, इस ग्रंथ का प्रमुख उद्देश्य है (म. आ. १. ५९-६०)।

महाभारत की शिष्यपरंपरा---व्यास के द्वारा विरचित महाभारत ग्रंथ का नाम 'जय' था, जिसकी श्लोकसंख्या लगभग २५००० थी। अपना यह ग्रंथ इसने वैशंपायन नामक अपने शिष्य को सिखाया, जिसने आगे चल कर उसी ग्रंथ का नया परिवर्धित रूप 'भारत' नाम से तैयार किया, जिसका नया परिवर्धित संस्करण रोमहर्षण सौति के द्वारा 'महाभारत' नाम से प्रसिद्ध हुआ। इस प्रकार महाभारत का प्रचलित संस्करण सौति के द्वारा तैयार किया गया है (वैशंपायन एवं रोमहर्षण सूत देखिये)।

महाभारत के पर्व---महाभारत का विद्यमान संस्करण एक लाख श्लोकों का है, जो निम्नलिखित अठारह पर्वों में विभाजित है:--१. आदि; २. सभा; ३. वन-(आरण्यक); ४. विराट; ५. उद्योग; ६. भीष्म; ७. द्रोण; ८. कर्ण; ९. शल्य; १०. सौप्तिक; ११. स्त्री; १२. शांति; १३. अनुशासन; १४. आश्वमेधिक; १५. आश्रमवासिक; १६. मौसल; १७. महाप्रस्थानिक; १८. स्वर्गारोहण।

महाभारत के उपपर्व— उपर्युक्त पर्वों में से बहुशः सभी पर्वों के अंतर्गत कई छोटे-छोटे आख्यान भी हैं, जिन्हें 'उपपर्व' कहते हैं। महाभारत के पर्वों में प्राप्त उपपर्वों की संख्या नीचे दी गयी है:—१. वनपर्व–२१; २. आदिपर्व—१९; ३. उद्योगपर्व—१०; ४. सभापर्व–८; ५. द्रोणपर्व—८; ६. भीष्मपर्व—४; ७. शल्यपर्व–३; ८. स्त्रीपर्व—२; ८. शांतिपर्व--३, ९. आश्वमेधिकपर्व–३; १०. आश्रमवासिकपर्व ३; ११. सौप्तिकपर्व–२; १२. अनुशासनपर्व–२। कर्ण, मौसल, महाप्रस्थानिक एवं स्वर्गारोहण पर्वों में उपपर्व नहीं हैं।

हरिवंश--महाभारतांतर्गत 'हरिवंश' महाभारत का ही एक भाग माना जाता है। इसी कारण उसे महाभारत का 'खिल' एवं 'परिशिष्ट' पर्व कहा जाता है। महाभारत की एक लक्ष श्लोकसंख्या भी 'हरिवंश' को समाविष्ट करने के पश्चात् ही पूर्ण होती है।

'हरिवंश' के निम्नलिखित तीन पर्व हैं:--१. हरिवंश पर्व (५५ अध्याय) २. विष्णुपर्व (१२८ अध्याय); ३. भविष्यपर्व (१३५ अध्याय)।

हरिवंश में यादववंश की सविस्तृत जानकारी प्राप्त है; जो पूरुवंश एवं भारतीय युद्ध का ही केवल वर्णन करनेवाले 'महाभारत' में अप्राप्य है। हरिवंश में प्राप्त यादवों के इस इतिहास से, महाभारत में दिये गये पूरुवंश के इतिहास की पूर्ति हो जाती है।

भागवतादि पुराणों में यादववंश की जो जानकारी प्राप्त है, उससे कतिपय अधिक जानकारी हरिवंश में प्राप्त है। 'हरिवंश माहात्म्य' के छः अध्याय पद्म में उद्धृत किये गये हैं। किन्तु आनंदाश्रम पूना के द्वारा प्रकाशित पद्म के संस्करण में वे अध्याय अप्राप्य है।

'भारतसावित्री' नामक सौ श्लोकों का एक प्रकरण उपलब्ध है, जिसमें भारतीय युद्ध की तिथिवार जानकारी एवं प्रमुख वीरों की मृत्युतिथियाँ दी गयी हैं।

व्यास की संशयनिवृत्ति—व्यास के जीवन से संबंधित एक उद्बोधक आख्यायिका वायु में प्राप्त है। पुराणों की रचना करने के पश्चात् एक बार इसे संदेह उत्पन्न हुआ कि, 'यज्ञकर्म,' 'चिंतन' (ज्ञान) एवं 'उपासना' ये परमेश्वरप्राप्ति के जो तीन मार्ग इसने पुराणों में प्रतिपादन किये है, वे सच हैं या नहीं? इसके इस संशय की निवृत्ति करने के लिए, चार ही वेद मानुषीरूप धारण कर इसके पास आये। इन वेदपुरुषों के शरीर पर यज्ञकर्म, ज्ञान एवं उपासना ये तीनों ही उपासनापद्धति विराजित थीं, जिन्हें देख कर व्यास

को अत्यंत आनंद हुआ, एवं अपने द्वारा प्रणीत परमेश्वर-प्राप्ति के मार्ग सत्य होने का साक्षात्कार इसे प्राप्त हुआ (वायु, १०४.५८-९४)।

व्यास का जीवन-संदेश—चतुर्विधपुरुषार्थों में से केवल धर्माचरण से ही अर्थकामादि पुरुषार्थ साध्य हो सकते हैं, क्यो कि, मानवीय जीवन में एक धर्म ही केवल शाश्वत, चिरंतन एवं नित्य है, बाकी सारे सुखोपभोग एवं पुरुषार्थ अनित्य हैं, ऐसा व्यास का मानवजाति के लिए प्रमुख संदेश था। महाभारत पुराणादि अपने सारे साहित्य में इसने यही संदेश पुनः पुनः कथन किया। इतना ही नहीं, महाभारत के अंतिम भाग में भी इसने यही संदेश दुहराया है, जिसमें एक द्रष्टा के नाते इसकी जीवनव्यथा बहुत ही उत्स्फूर्त रूप से प्रकट हुई है—

ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष नच कश्चिच्छृणोति माम्।
धर्मादर्थश्च कामश्च स किमर्थं न सेव्यते
(म. स्व. ५,४९)।

(हाथ ऊंचा कर सारे संसार से मैं कहता आ रहा हूँ कि, अर्थ एवं काम से भी अधिक धर्म महत्त्वपूर्ण है। किंतु कोई भी मनुष्य मेरे इस कथन की ओर ध्यान नहीं देता है।)

व्यास बादरायण—ब्रह्मसूत्रों का कर्ता माने गये बादरायण नामक आचार्य का नामांतर (बादरायण देखिये)। भागवत के अनुसार, यह एवं कृष्ण द्वैपायन व्यास दोनों एक ही व्यक्ति थे (भा. ३.५.१९)। किंतु इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

व्याहृति—एक कन्यात्रय, जो सवितृ तथा पृश्नी की संतान थी (भा. ६.१८.१)।

व्युत्थिताश्व—इक्ष्वाकुवंशीय व्युषिताश्व राजा का नामांतर।

व्युषिताश्व--(सो. पूरु.) एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम काक्षीवती भद्रा था। इसकी पत्नी अत्यधिक सुंदर थी, जिसके प्रति अत्यधिक कामासक्त होने के कारण, इसकी राजयक्ष्मा से असामयिक मृत्यु हो गयी।

इसकी मृत्यु के पश्चात्, इसके शव से भद्रा को सात पुत्र उत्पन्न हुए (म. आ. ११२. ७-३३)। इसके इन सात पुत्रों में से, तीन पुत्र शाल्व नाम से, एवं बाकी चार मद्र नाम से सुविख्यात हुए।

व्युष्ट--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पुष्पार्ण एवं दोषा के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम पुष्करिणी था, जिससे इसे सर्वतेजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१३.१४)।

२. एक वसु, जो विभावसु एवं उषा के पुत्रों में से एक था (भा. ६.६.१६)।

व्यूढोरस्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया।

व्यूढोरु--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया।

व्योमन्--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार दशार्ह राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम जीमूत था (दाशार्ह देखिये)।

व्योमासुर--एक असुर, जो मयासुर का पुत्र एवं कंस का अनुगामी था। कृष्णवध करने के लिए यह गोपवेश धारण कर गोकुल में आया, जहाँ कृष्ण ने इसका वध किया (भा. १०.३७.२८-३२)।

व्रज—ऊरु एवं षडाग्नेयी के पुत्रों में से एक।

व्रत--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम नड्वला था (भा. ४.१३.१६)।

२. अभूतरजस् देवों में से एक।

व्रतिन्--वर्तमान वैवस्वत मन्वन्तर का अठारहवाँ व्यास।

व्रतेयु--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो रौद्राश्व राजा का पुत्र था।

व्रात--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार कृतंजय राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८७)।

श

शंयु—एक आचार्य, जो एक विशिष्ट प्रकार के यज्ञ-पद्धति का ज्ञाता माना जाता था। इसकी मृत्यु के पश्चात् वह यज्ञपद्धति नष्ट होने का धोखा निर्माण हुआ। इसी कारण इसके अनुगामियों ने वह ज्ञान पुनः प्राप्त करने का प्रयत्न किया था (श. ब्रा. १.९.१.२४)।

यजुर्वेद संहिताओं में इसे अग्नि का ही प्रतिरूप माना गया है (तै. सं. २.६.१०.१; ५.२.६.४; तै. ब्रा. ३.३.८.११; तै. आ. १.५.२)।

शंयु बार्हस्पत्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो बृहस्पति के पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र था (ऋ. ६.४४-४६; ४८)। शतपथ ब्राह्मण में निर्दिष्ट शम्यु बार्हस्पत्य एवं यह दोनों एक ही होंगे (श. ब्रा. १.९.१.२५)।

पौराणिक साहित्य में इसे एक अग्नि कहा गया है, एवं इसकी माता एवं पत्नी का नाम क्रमशः तारा, एवं धर्मकन्या सत्या दिया गया है। अपनी इस पत्नी से इसे भरत एवं भारद्वाज नामक दो पुत्र, एवं अन्य तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई (म. व. २०९.२-५)।

चातुर्मास्यसंबंधित यज्ञों में एवं अश्वमेध यज्ञ में इसका पूजन किया जाता है।

शंसपि—शंखमत् नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर (शंखमत् देखिये)।

शक—एक विदेशीय जातिसमूह, जो पूर्वकाल में मध्य एशिया के निवासी थे। आगे चल कर ये लोग उत्तर पश्चिम भारत में आ कर रहने लगे।

ये लोग ई. पू. २ री शताब्दी में इरान के पूर्व भाग में स्थित प्रदेश में रहते थे, जिस कारण उस प्रदेश को 'शकस्तान' अथवा 'सीस्तान' कहते थे। ई. स. पू. १७४ में हूण लोगों के आक्रमण के कारण, शक लोग शकस्तान छोड़ने पर विवश हुए, एवं उत्तर पश्चिम भारत में आ कर निवास करने लगे। आगे चल कर ये सुराष्ट्र (काठियवाड) में रहने लगे।

उत्तरपश्चिम भारत में निवास—राजशेखर की काव्य-मीमांसा में उत्तरपश्चिम भारत में निवास करनेवाले लोगों में शक लोगों का निर्देश हूण, कांबोज एवं वाह्लिक लोगों के साथ प्राप्त है। पतंजली के व्याकरण महाभाष्य में इनका निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ३.७५ भाष्य.)।

महाभारत में इनका निर्देश वाह्लिक लोगों के साथ प्राप्त है, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, भीम के द्वारा किये गये पूर्व दिग्विजय में इन्हें जीते जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (म. स. २७.२८९)। नकुल ने भी अपने पश्चिम दिग्विजय में इन्हें जीता था (म. स. २९. १५. पाठ.)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में ये लोग भेंट ले कर उपस्थित हुए थे (म. स. ५१.२६)

मत्स्यपुराण में इन्हें चक्षु नदी के तट पर निवास करनेवाले लोग कहा गया हैं, एवं तुषार, पल्हव, पारद, ऊर्ज, औरस लोगों के साथ इनका निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. १२१.४५-५१)। मार्कंडेय में इन्हे सिंधुदेशनिवासी कहा गया है (मार्कं. ५७.३९)।

'अलाहाबाद प्रशस्तिलेख' से प्रतीत होता है कि, समुद्रगुप्त के द्वारा परास्त हुए विजातीय लोगों में शक मुरुंड लोग प्रमुख थे। कई अभ्यासकों के अनुसार, यहाँ मुरुंड शब्द का अर्थ 'राजा' अभिप्रेत है, एवं सुराष्ट्र प्रदेश में रहनेवाले शक लोगों के राजाओं की ओर इस शिलालेख में संकेत किया गया है।

महाभारत में इन्हें नंदिनी गाय के गोत्र से होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. १६५.३५)। इस निर्देश से प्रतीत होता है कि, ये लोग महाभारतकाल में निंद्य माने जाते थे। ये लोग पहले क्षत्रिय थे, किन्तु बाद में ये शूद्र बने (म. अनु. ३३.३१)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में, ये लोग कांबोजराज सुदक्षिण के साथ दुर्योधन के पक्ष में शामिल थे (म. उ. १९.२१)। सात्यकि ने इन लोगों का संहार किया था (म. द्रो. ९५.३८)। कर्ण ने भी इन्हें परास्त किया था (म. क. ५.१८)।

भागवत के अनुसार, शक एवं यवन लोग हैहय राजाओं के सहायक थे। इसी कारण परशुराम, सगर एवं भरत राजाओं ने इन्हें परास्त किया था, एवं इनकी अर्धश्मश्रु कर, एवं विरूप कर इन्हें छोड़ दिया था (भा. ९.८.५)। इन लोगों को वेदाधिकार प्राप्त नहीं था, जिस कारण ये आगे चल कर म्लेच्छ बन गये थे (भा. ४.३.४८)।

२. (मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो बृहद्रथ मौर्य राज का पुत्र था (मत्स्य. २७२.२४)।

३. अठारह राजाओं का एक समूह, जो शिशुनाग राजाओं का समकालीन था (मत्स्य. ५०.७६)।

शकट--एक कंसपक्षीय असुर, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १. क्र. २१. पंक्ति. ६५२-६५५; भा. १०.७.८; ह. वं. २.६; ५.२०; विष्णु. ५. ६.२; पद्म. ब्र. १३; उ. २४५)।

२. अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

शकपूत नार्मेध—एक राजा, जिसे ऋग्वेद के एक सूक्त के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. १०.१३२)। अनुक्रमणी में इसे नृमेध राजा का पुत्र कहा गया है। इसके द्वारा रचित सूक्त में, इसने वरुण से अपनी रक्षा करने के लिए प्रार्थना की है।

शकुन-पृथुक देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.७३)।

शकुनि--एक असुर, जो वृकासुर का पिता था। इंद्र एवं बलि के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने बलि राजा के पक्ष में भाग लिया था (भा. ८.१०.२०)।

२. इक्ष्वाकु राजा के सौ पुत्रों में से एक। दक्षिणापथ पर राज्य करनेवाले अपने पचास भाइयों का यह अधिपति पक्ष था (वायु. ८८.९)।

३. (सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुतद्वाज राजा का पुत्र, एवं स्वागत राजा का पिता था (वायु. ८९.२०)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार दशरथ राजा का, वायु के अनुसार एकादशरथ राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार दृढरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम करंभक था (भा. ९.२४. ४-५)।

शकुनि सौबल--गांधार देश के सुबल राजा का पुत्र, जो दुर्योधन का मामा था (म. आ. ५५.३९)। सुबल राजा का पुत्र होने के कारण इसे 'सौबल' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (म. क. ५५)।

यह शुरू से ही अत्यंत दुष्टप्रकृति था। देवताओं का कोप होने के कारण यह धर्मविरोधी बन गया, एवं अनाचारी कार्य करने लगा (म. आ. ५७.९३-९४)। यह द्वापर दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.७२; आश्व. ३९.१०)।

पाण्डवों का द्वेष—गांधारी के साथ धृतराष्ट्र का विवाह इसी की ही मध्यस्थता से हुआ था (म. आ. १०३.१४-१५)। यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.५)। यह शुरू से ही पाण्डवों का द्वेष करता था, एवं इसने द्रुपदनगर में ही पाण्डवों को जड़मूल से समाप्त करने की दुर्योधन को सलाह दी थी (म. आ. परि. १. १०३)। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी यह दुर्योधन के साथ उपस्थित हुआ था, एवं पाण्डवों के प्रति दुर्योधन की द्वेषाग्नि सुलगाने का प्रयत्न इसने किया था (म. स. ३१.६; ४२.६०)।

द्यूतक्रीड़ा--पाण्डवों पर विजय प्राप्त करने के लिए, एवं युधिष्ठिर का ऐश्वर्य हड़पने के लिए इसने दुर्योधन को द्यूतक्रीडा का आयोजन करने की सलाह दी। पश्चात् द्यूत के लिए युधिष्ठिर को निमंत्रित करवा कर, इसने उसे छल-कपट से द्यूत में परास्त किया (म. स. ५३-५४)।

इसके साथ द्यूत खेल कर कर युधिष्ठिर अपना सब कुछ खो बैठा। पश्चात् इसका युधिष्ठिर के साथ द्यूत का और एक दाँव हुआ, जिसमें शर्त के अनुसार इसने युधिष्ठिर को वन जाने के लिए विवश किया।

घोषयात्रा--द्वैतवन में पाण्डव जब वनवास भुगत रहे थे, तब दुर्योधन एवं इसने ऐसी योजना बनायी कि, उनके सम्मुख अपने सामर्थ्य का प्रदर्शन किया जाये। तदनुसार यह दुर्योधन के साथ घोषयात्रा के लिए गया। किन्तु वहाँ दुर्योधन चित्रसेन गंधर्व से परास्त हुआ, एवं वह उन्हीं पाण्डवों के द्वारा बचाया गया, जिनके सामने अपने सामर्थ्य का प्रदर्शन करने वह गया था (म. व. २२७-२३०)।

भारतीय युद्ध में--भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित पाण्डव पक्षियों से युद्ध हुआ था, जिनमें बहुत सारे युद्धों में यह परास्त हुआ था:—१. प्रतिविंध्य (म. भी. ४५), २. युधिष्ठिर, नकुल एवं सहदेव (म. भी. १०१. ८-२४); ३. अर्जुन (म. द्रो. १४६.२५-४१); ४, भीमसेन (म. क. ५५)।

भारतीय युद्ध के अंतिम दिन, पाण्डवों के घुड़सवारों ने इस पर आक्रमण किया था। उस समय यह युद्धभूमि से भाग गया (म. श. २२.३९-८७)। अन्त में सहदेव के द्वारा इसका वध हुआ (म. श. २७.६२)। पौष अमावास्या के दिन इसकी मृत्यु हुई।

परिवार—इसके निम्नलिखित ग्यारह भाई थे:—१. वृषक; २. बृहद्बल; ३. अचल; ४. सुभग; ५. विभु; ६. भानुदत्त; ७. गज; ८. गवाक्ष; ९. चर्मवत्; १०. आर्जव; ११. शुक। इन भाइयों में से छः भाई इरावत के द्वारा (म. भी. ८६.२४-३७), एवं पाँच भीमसेन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. १३२.२०-२१)।

इसके पुत्र का नाम उलूक था।

शकुनिका—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.)।

शकुनिमित्र--विपश्चित पाराशर्य नामक ऋषि का नामान्तर (विपश्चित् शकुनिमित्र पाराशर्य देखिये)।

शकुन्त--विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५०)।

शकुन्तला—महर्षि कण्व की पोषित कन्या,जो दुष्यन्त राजा की धर्मपत्नी एवं भरत राजा की माता थी। यह एवं दुष्यन्त राजा कालिदास के 'अभिज्ञानशाकुन्तलम्' के कारण अमर हो चुके हैं।

वैदिक साहित्य में—शतपथ ब्राह्मण में इसे एक अप्सरा कहा गया है, एवं इसके द्वारा 'नाडपित्' के तट पर भरत को जन्म दिये जाने को निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १३.५.४.१३)। इसी कारण इसे 'नाडपिती' अथवा 'नाडपित' दी जाती थी।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे विश्वामित्र एवं मेनका अप्सरा की कन्या कहा गया है। विश्वामित्र के तपःकाल में, उसका तपोभंग करने के लिए इंद्र के द्वारा मेनका भेजी गयी थी। उसी समय हिमालय पर्वत में मालिनी नदी के किनारे इसका जन्म हुआ था। इसका जन्म होते ही मेनका इसे पृथ्वी पर छोड़ कर चली गयी। तत्पश्चात् इसका लालनपालन शकुन्त पक्षियों ने किया, जिस कारण, इसे 'शकुन्तला' नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ६६. ११-१४)।

दुष्यन्त से विवाह–तत्पश्चात् कण्व ऋषि ने इसे अपनी कन्या मान कर, अपने आश्रम में इसे पालपोस कर बड़ा किया। एक बार मृगया खेलता हुआ हस्तिनापुर का राजा दुष्यन्त कण्व ऋषि के दर्शनार्थ आश्रम में आया। उस समय कण्व ऋषि आश्रम में नही थे, जिस कारण इसकी एवं दुष्यन्त की भेंट हुई, एवं कण्व ऋषि के द्वारा ज्ञात हुई अपनी जन्मकथा इसने उसे कह सुनायी।

दुष्यन्त के द्वारा प्रेमदान माँगने पर इसने बताया कि, अपने पिता की संमति के बिना यह विवाह करना नहीं चाहती। उस समय दुष्यन्त ने इसे विवाह के आठ भेद बताये, एवं कहा कि, इन विवाहों में से गांधर्व-विवाह पिता के संमति के विना ही हो सकता है। उस समय यह इस शर्त पर विवाह के लिए तैयार हुई कि, इसका पुत्र हास्तिनापुर का सम्राट् बने।

शकुन्तला की यह शर्त दुष्यन्त के द्वारा मान्य किये जाने पर, कण्व ऋषि के अनुपस्थिति में इसका दुष्यन्त से विवाह हुआ। विवाह के पश्चात्, हस्तिनापुर पहुँचते ही इसे दूत के द्वारा बुलाने का आश्वासन दे कर दुष्यन्त चला गया (म. आ. ६७.२०)।

भरतजन्म—आश्रम आने पर कण्व ऋषि को सारी घटना ज्ञात हुई, एवं उसने प्रसन्न हो कर इसे शुभाशीर्वाद दिये। कालांतर में इसे एक परमतेजस्वी बालक उत्पन्न हुआ, जिसका नाम 'भरत' अथवा 'सर्वदमन' रखा गया।

काफ़ी दिन वीत जाने पर भी, दुष्यंत की ओर से कोई बुलावा नहीं आया। इस कारण भरत के जातकर्मादि संस्कार हो जाने पर, कण्व ने इसे पातिव्रत्यधर्म का उपदेश दिया, एवं पतिगृह के लिए विदा किया।

दुष्यंत की राजसभा में--दुष्यंत के राजसभा में पहुँचते ही, इसने उसे अपनी सारी शर्तें उसे याद दिलायीं, एवं भरत को यौवराज्याभिषेक करने के लिए कहा। किन्तु दुष्यंत ने इसका यह प्रस्ताव अमान्य किया, एवं अत्यंत रोषपूर्ण शब्दों में इसकी आलोचना की।

दुष्यंत की यह कठोर वाणी सुन कर इसे बड़ी लज्जा प्रतीत हुई, एवं इसने धर्म की श्रेष्ठता, एवं सूर्यादि देवताओं को साक्षी बनाकर, अपने प्रति न्याय करने के लिए बार बार अनुरोध किया। इसी समय इसने पत्नी एवं पुत्र के बारे में पति के कर्तव्य दुहाराये, एवं इन कर्तव्यों का पालन करने के लिये उसकी बार बार प्रार्थना की। फिर भी दुष्यंत ने इसकी एक न सुनी। तब इसने उसे शाप दिया, 'अगर तुम भरत को युवराज नहीं बनाओगे, तो भरत तुम्हारे राज्य पर आक्रमण कर के स्वयं राज्याधिकारी बनेगा'।

इतने में आकाशवाणी के द्वारा दुष्यंत को ज्ञात हुआ कि, शकुंतला उसकी धर्मपत्नी है, एवं भरत उसका पुत्र है। इस पर दुष्यंत ने इन दोनों को स्वीकार किया, एवं इसे अपनी पटरानी एवं भरत को अपना युवराज बनाया (वायु. ९९.१३५; म. आ. ६९.४४)। पश्चात् दुष्यंत ने इसे समझाया कि, लोकापवाद के भय से शुरु में उसने इसको अस्वीकार किया था (म. आ. ६२, भा .९.२०)।

अभिज्ञानशाकुंतलम्—कालिदास के द्वारा विरचित संस्कृत नाटक 'अभिज्ञानशाकुंतलम्' में, दुर्वास ऋषि के द्वारा इसे दिया शाप, शक्रावतारतीर्थ में 'अभिज्ञान' की

अँगूठी इसके द्वारा खो जाना, दुष्यंत राजा विस्मृति का शिकार बनना, मत्स्यगर्भ से प्राप्त अभिज्ञान की अँगूठी से उसे पुनः स्मृति प्राप्त होना, आदि अनेकानेक उपकथा-विभाग दिये गये हैं। किंतु वे सारे कल्पनारम्य प्रतीत होते है,क्यों कि, उन्हें प्राचीन साहित्य में कोई भी आधार प्राप्त नहीं होता। किंतु पद्मपुराण के बंगला संस्करण में 'अभिज्ञान शाकुंतलम्' से मिलती जुलती कथा प्राप्त है।

शक्त—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो पूरु राजा का प्रपौत्र, एवं मनुस्यु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सौवीरी, एवं भाइयों के नाम संहनन एवं वाग्मी थे (म. आ. ८९.७ पाठ.)।

शक्ति—देवी पार्वती का एक अवतार। पौराणिक साहित्य में शक्तियों की संख्या इक्कावन बतायी गयी है, जिनके विभिन्न स्थानों को वहाँ 'शक्तिपीठ' कहा गया है।

शक्तिदेवता का विकास— रुद्र के द्वारा किये गये दक्षयज्ञ के विध्वंस की कथा ब्राह्मणग्रंथों में एवं महाभारत में प्राप्त है। किन्तु जिस कल्पना के आधार से शक्तिपूजा के पीठों की निर्मिति भारतवर्ष में हुई, उस रुद्र-शिव एवं पार्वती के कथा का निर्देश, इन ग्रंथों में कहीं भी प्राप्त नहीं है, जो सर्वप्रथम उत्तरकालीन 'देवीभागवत' एवं 'कालिकापुराण' में पाया जाता है (दे. भा. ७.३०; कालिका. १८)।

इस कथा के अनुसार, दक्षयज्ञ में अपमानित हो कर सती ने यज्ञकुंड में अपना शरीर झोंक दिया। तत्पश्चात् क्रोध से पागल हुआ रुद्र-शिव सती का प्राणहीन देह कन्धे पर ले कर समस्त त्रैलोक्य में नृत्य करता हुआ उन्मत्त अवस्था में घूमने लगा।

यह देख कर विष्णु ने अपने चक्र से सती के शरीर के टुकड़े टुकड़े कर उन्हें विभिन्न स्थानों पर गिरा दिया। सती के शरीर के खंड तथा आभूषण, इक्कावन स्थानों पर गिरे, जहाँ एक-एक शक्ति, एवं एक-एक भैरव विभिन्न रूप धारण कर अवतीर्ण हुए। आगे चल कर, इन्हीं स्थानों पर 'शक्तिपीठों' का निर्माण हुआ।

शक्तिपीठ—उत्तरकालीन पौराणिक साहित्य में, एवं शाक्त उपासना के 'शिवविजय', 'दाक्षायणीतंत्र', 'योगिनीतंत्र'. 'तंत्रचूड़ामणि' आदि तांत्रिक ग्रंथों में 'शक्तिपीठों' की विस्तृत जानकारी प्राप्त है, जहाँ सर्वत्र इन पीठों की संख्या प्रायः सर्वत्र इक्कावन बतायी गयी है। इनमें से 'तंत्रचूड़ामणि' में प्राप्त ५२ 'शक्तिपीठों' की, वहाँ स्थित 'शक्ति' की, एवं वहाँ गिरे हुए सती के अंग या आभूषणों की नामावलि नीचे इसी क्रम से दी गयी है:—

१. अट्टहास (फुल्लरा, अधरोष्ठ); २.उज्जयिनी (मांगल्यचंडिका, कूर्पर); ३. करतोयातट (अपर्णा, वामतल्प); ४. कन्यकाश्रम (शर्वाणी, पृष्ठ); ५. करवीर (महिषमर्दिनी, तीनों नेत्र); ६. कर्णाट (जयदुर्गा, दोनों कर्ण); ७. कश्मीर (महामाया, कंठ); ८. कांची (देवगर्भा, अस्थि); ९. कालमाधव (काली, वामनितंब); १०. कामगिरि (कामाख्या, योनि); ११. कालीपीठ (कालिका, पादांगुलि); १२. कुरुक्षेत्र (सावित्री, दक्षिणगुल्फ); १३. गण्डकी (गण्डकी, दक्षिण गण्ड); १४. किरीट (विमला, किरीट); १५. गोदावरीतट (विश्वेशी, वामगण्ड); १६. चहल (भवानी, दक्षिणबाहु); १७. जनस्थान (भ्रामरी, चिबुक); १८. जयन्ती (जयन्ती, वामजंघ); १९. जालंधर (त्रिपुरमालिनी, वामस्तन); २०. ज्वालामुखी (सिद्धिदा, जिव्हा); २१. त्रिपुरी (त्रिपुरसुंदरी, दक्षिणपाद); २२. त्रिस्रोता (भ्रामरी, वामपाद); २३. नलहारी (कालिका, उदरनलिका); २४. नन्दिपुर (नंदिनी, कंठहार); २५. नैपाल (महामाया, जानु); २६. पंचसागर (वाराही, अधोदंतपंक्ति); २७. प्रभास (चन्द्रभागा, उदर); २८. प्रयाग (ललिता, हस्तांगुलि); २९. भैरवपर्वत (अवन्ती, ऊर्ध्वओष्ठ); ३०. मगध (सर्वानंदकरी, दक्षिणजंघ); ३१. मणिवेदिका (गायत्री, मणिबंध); ३२. मानस (दाक्षायणी, दक्षिणपाणि); ३३. मिथिला (उमा, वामस्कंध); ३४. युगाद्या (भूतधात्री, दक्षिणपदांगुष्ठ); ३५. यशोर (यशोरेश्वरी, वामपाणि); ३६. रामगिरि (शिवानी, दक्षिणस्तन); ३७. रत्नावली (कुमारी, दक्षिणस्कंध); ३८. बहुला (बहुला, वामबाहु); ३९. लंका (इंद्राक्षी, नूपुर); ४०. वक्रेश्वर (महिषमर्दिनी, मन); ४१. वाराणसी (विशालाक्षी, कर्णकुंडल); ४२. वैद्यनाथ (जयदुर्गा, हृदय); ४३. विभाष (कपालिनी, वामगुल्फ); ४४. विराट (अंबिका, वामपदांगुष्ठ); ४५. विरजाक्षेत्र (विमला, नाभि); ४६. वृंदावन (उमा, केशकलाप); ४७. श्रीपर्वत (श्रीसुंदरी, दक्षिणतल्प), ४८. श्रीशैल (महालक्ष्मी, ग्रीवा); ४९. शुचि (नारायणी, ऊर्ध्वदंतपंक्ति); ५०. शोण (शोणाक्षी, दक्षिण नितंब); ५१. सुगंधा (सुनंदा, नासिका); ५२. हिंगुला (कोटरी, ब्रह्मरंध्र)।

२. एक आचार्य, जिसने अपने शिष्य दम को 'सामवेद' सिखाया था (मार्कं. १३०)।

३. ढुंढि नामक शिवावतार का पिता (दुरासद देखिये)।

शक्ति वासिष्ठ—एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं अरुंधती के सौ पुत्रों में ज्येष्ठ पुत्र था (भा. ४.१.४१; म. आ. १६६.४)। मत्स्य में इसे 'शक्तिवर्धन' कहा गया है (मत्स्य. १४५.९२-९३)। इसे वर्तमान वैवस्वत मन्वंतर का छब्बीसवाँ वेद-व्यास कहा गया है।

वैदिक साहित्य में--ऋग्वेद एवं ब्राह्मण ग्रंथों में विश्वामित्र ऋषि से हुए इसके संघर्ष की, एवं इस संघर्ष में इसे जला कर भस्म किये जाने की, अनेकानेक कथाएँ प्राप्त हैं।

ऋग्वेद के कई मंत्रों का यह द्रष्टा है (ऋ. ७.३२.२६-२७; ९.९७. १९-२१; १०८.३. १४-१६)। इन मंत्रों में से छब्बीसवें ऋचा का केवल पहला ही चरण इसके द्वारा रचाया गया था।

ऋग्वेद में प्राप्त एक ऋचा से प्रतीत होता है, कि एक बार जब यह विश्वामित्र के उद्यान में गया था, तब वहाँ के सेवकों ने इसे जला कर भस्म किया था (ऋ. वेदार्थ-दीपिका ७.३२.२६)।

गेल्डनर के अनुसार, ऋग्वेद की अन्य एक ऋचा में शक्ति के मृत्यु-संघर्ष का वर्णन प्राप्त है (ऋ. ३.५३. २२)। किंतु यह व्याख्या अत्यधिक संदिग्ध प्रतीत होती है।

ऋग्वेद के सायणभाष्य में, इसके संबंध में शाट्यायन ब्राह्मण के अंतर्गत एक आख्यायिका उद्धृत की गयी है। एक बार सौदास राजा के घर में एक यज्ञ, हुआ जहाँ इसने विश्वामित्र ऋषि को पराजित किया। तदुपरांत, विश्वामित्र ने जमदग्नि के घर आश्रय लिया, जिसने उसे 'ससर्परी विद्या' सिखायी। इसी विद्या के आधार से विश्वामित्र ने इसे वन में भस्म किया, एवं इस प्रकार अपने पराजय का प्रतिशोध लिया (ऋग्वेद. सायणभाष्य ३.५३.१५-१६; ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी ७.३२)।

जैमिनि ब्राह्मण में, विश्वामित्र ऋषि के अनुयायियों के द्वारा इसे आग में फेंक दिये जाने की कथा अधिक स्पष्ट रूप से प्राप्त है (जै. ब्रा. २.३९०)।

महाभारत एवं पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में यह विश्वामित्र के अनुयायियों के द्वारा नहीं, बल्कि राक्षस-रूप प्राप्त हुए कल्माषपाद सौदास राजा के द्वारा भक्षण किये जाने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. १६६.३६)। महाभारत में प्राप्त यह निर्देश अयोग्य प्रतीत होता है, क्यों कि, यह कल्माषपाद सौदास के द्वारा नहीं, बल्कि सुदास राजा के द्वारा मारा गया था।

राक्षस के द्वारा इसे भक्षण किये जाने की कथा लिंग में भी प्राप्त है (लिंग. ६४-६५)। इसकी मृत्यु होने पर, इसके पुत्र पराशर ने इसका वध का प्रतिशोध लेने के लिए राक्षससत्र प्रारंभ किया। आगे चल कर, उसके पितामह वसिष्ठ ने उसे इस पापकर्म से परावृत्त किया (पराशर देखिये)। अपनी मृत्यु की पश्चात्, यह शिवभक्ति के कारण स्वर्गलोक पहुँच गया (पद्म. पा. ११०)।

वायुपुराण का कथन—इसे दक्ष से 'वायुपुराण' का ज्ञान प्राप्त हुआ था, जिसे इसने गर्भावस्था में स्थित अपने पराशर नामक पुत्र को निवेदित किया था (ब्रह्मांड. २. ३२.९९)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम अदृश्यन्ती था, जिससे इसे पराशर नामक सुविख्यात पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१.४१)। इसका यह पुत्र इसकी मृत्यु के पश्चात् बारह वर्षों के उपरांत उत्पन्न हुआ था (पराशर देखिये)।

शक्तिवर्धन—वसिष्ठपुत्र शक्ति का नामांतर (मत्स्य. १४५.९३; शक्ति वासिष्ठ देखिये)।

शक्तिसेन—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार निघ्न राजा का पुत्र था। विष्णु एवं भागवत में इसे 'सत्राजित्', एवं वायु में इसे 'शक्रजित्' कहा गया है (मत्स्य. ४५.३; वायु. ९६.२०-२९)।

यह परम सूर्यभक्त था, जिसने इसे 'स्यमंतक' नामक दिव्य मणि दिया था। इसी 'स्यमंतक' मणि के कारण, इसका कृष्ण से संघर्ष हुआ। किंतु अंत में इसे यह मणि पुनः प्राप्त हुआ।

इसकी कुल दस पत्नियाँ थी, जिनसे इसे सौ पुत्र उत्पन्न हुए थे। इसके पुत्रों में भंगकार, व्रतपति, एवं अपस्वान्त प्रमुख थे (वायु. ९६.५०-५३)।

२. (सो. विदू.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शोणाश्व राजा का पुत्र था।

शक्तिहस्त—एक राक्षस, जो जयंत के द्वारा मारा गया (पद्म. सृ. ७५)।

शक्र—बारह आदित्यों में से एक (म. आ. ५९-१५)। यह इंद्र था, एवं इसे शतक्रतु नामांतर प्राप्त था (इंद्र १. देखिये)। इसके भाई का नाम उपेंद्र था (भा. ६.६.३९)।

शक्रज्योति—मरुतों के प्रथम गणों में से एक।

शक्रदेव—कलिंग देश का एक राजकुमार, जो भानुमत् राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में, यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। भीमसेन के द्वारा इसका वध हुआ (म. भी. ५०.२२)।

शक्रमित्र—(सू. इ.) एक राजा, जो मांधातृ राजा का कनिष्ठ पुत्र था।

शक्रय—कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

शक्रहोम—एक राजा, जो भविष्य के अनुसार यज्ञहोत्र राजा का पुत्र था। यह इंद्र के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिस कारण इसे अयोध्या का राज्यपद प्राप्त हुआ था। आगे चल कर, इंद्र की कृपा से इसे स्वर्गप्राप्ति भी हो गयी।

शंकमान—महिष लोगों का एक नागवंशीय राजा, जो प्रवीर राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७४.१८७)।

शंकर—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (विष्णु. १.२१.४)।

२. रुद्र-शिव एक नामांतर। इसे 'शंभु', 'उमापति', 'शूलपाणि', 'वृषभध्वज', 'हर' आदि नामांतर भी प्राप्त थे (विष्णु. ५.३२.८)।

इसने 'वैशालाक्ष' नामक दस हजार अध्यायों से युक्त एक राजनीतिविषयक ग्रंथ की रचना की थी, जो ब्रह्मा के द्वारा विरचित एक बृहद्ग्रंथ का संक्षेप कर लिखा गया था (म. शां. ५९.८६-८८; रुद्र-शिव देखिये)।

३. एक चांडाल, जो अपने पत्नी के पुण्यकर्मों के कारण मुक्त हुआ (पद्म. ब्र. २०)।

४. उन्मत्त प्रकृति का एक शिवभक्त ऋषि, जो गौतम ऋषि का शिष्य था। वृषपर्वन् ने इसका वध किया, किंतु आगे चल कर शिव ने इसे पुनः जीवित किया (पद्म. पा. ११४)।

५. एक पापी पुरुष, जिसकी कथा स्कंद में 'रामनाथ-तीर्थ' का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गयी है (स्कंद. ३.१.४८)।

६. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३५)।

शंकु—(सो. कुकुर.) एक यादव राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार उग्रसेन राजा के नौ पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.२४)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'संकु' एवं 'कद्रशंकु' कहा गया है। मत्स्य के अनुसार, यह बलि का अनुगामी था (मत्स्य. २४५.३१)।

२. कृष्ण एवं सत्या के पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१.१३)।

३. एक ऋषि, जो वसिष्ठ एवं ऊर्जा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.११.४२)।

४. एक महारथी यादव राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. स. १४.५९; आ. १७७.१८१८*)। अर्जुन एवं सुभद्रा के विवाहसमारोह में, यह दहेज ले कर उपस्थित हुआ था।

शंकुकर्ण—'अतल' नामक पाताललोक में रहनेवाला एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.२०.१६)।

२. दक्ष के अनुचरों का सामूहिक नाम (मत्स्य. ४.५२)।

३. एक राक्षस, जो अशोकवन में सीता के संरक्षणार्थ नियुक्त किया गया था (वा. रा. सुं. १८.२८)।

४. (सो. कुरु.) एक राजा, जो जनमेजय एवं वपुष्टमा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०.९४)। पाठभेद (भा. सं.)—'शंकु'।

५. धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)।

६. एक स्कंदपार्षद, जो उसे पार्वती के द्वारा दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम पुष्पदंत था (म. श. ४४.४७)।

७. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५२)।

८. कुबेरसभा में रहनेवाला एक शिवपार्षद (म. स. परि. १.३.२०)।

९. एक पापी ब्राह्मण, जो गीता के सातवें अध्याय के पठन से मुक्त हुआ था (पद्म. उ. १८१)।

१०. एक ब्राह्मणवेषधारी शिवावतार, जिसने एक पिशाच को मुक्ति प्रदान की थी (पद्म. स्व. ३५)।

शंकुरथ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.४)।

शंकुरोमन्—एक सहस्रशीर्ष नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.४१)।

शंकुशिरस्—एक पराक्रमी दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। इंद्र-वृत्र युद्ध में यह वृत्र के पक्ष में, एवं देवासुर युद्ध में यह बलि की सेना में शामिल था (भा. ६.६.३०; १०.१९; विष्णु. १.२१.४)।

शंकुशिरोधर—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१७)।

शंख—एक पराक्रमी असुर, जो समुद्र का पुत्र होने के कारण, समुद्र में ही निवास करता था (म. स. ९.

१३)। अपने बल एवं पराक्रम से, इसने समस्त देव एवं लोकपालों को सुवर्ण-पर्वत की गुफा में भगा दिया था।

वेदों पर आक्रमण--आगे चल कर, देवपक्ष के देव वेदों के बल से पुनः सामर्थ्यशाली न हो जायें, इस हेतु से इसने चारों वेदों को नष्ट करना चाहा। एक बार विष्णु जब गहरी निद्रा में सो रहे थे, तब इसने वेदों पर आक्रमण किया। इसके भय से चारों वेद भाग कर समुद्र में छिप गये।

वेदों के लुप्त हो जाने से, पृथ्वी की सारी जनता संत्रस्त हुई। पश्चात् ब्रह्मा ने विष्णु के पास जा कर उन्हें जगाया, एवं शंख का वध करने की प्रार्थना की।

वध--तदुपरांत विष्णु ने मत्स्य का रूप धारण कर समुद्र में प्रवेश किया, एवं कार्तिक शुक्ल एकादशी के दिन इसका वध किया। इसके वध के पश्चात्, विष्णु ने चारों वेदों को विमुक्त किया। इसी कारण कार्तिक माह, एवं विशेषतः कार्तिक शुक्ल एकादशी विष्णुभक्तों में अत्यंत पवित्र मानी जाती है (पद्म. सृ. १; उ. ९०-९१)।

स्कंद के अनुसार, इसका वध कार्तिक एकादशी के दिन नहीं, बल्कि आषाढ शुक्ल एकादशी के दिन हुआ था (स्कंद. ४.२.३३)।

२. पाताल में रहनेवाला एक सहस्रशीर्ष नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.८; भा. ५.२४.३१)। नारद ने इंद्रसारथि मातलि से इसका परिचय कराया था (म. उ. १०१.१२)। बलराम के निर्वाण के समय, यह उनके स्वागतार्थ उपस्थित हुआ था (म. मौ. ५.१४)।

३. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. एक मत्स्यदेशीय महारथ राजकुमार (म. उ. ५६९*), जो विराट एवं सुरथा का पुत्र, तथा उत्तर एवं उत्तरा का भाई था। भारतीय युद्ध में, यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. भी. ७८. २१)।

५. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१२३)।

६. एक ऋषि, जो जैगीषव्य एवं एकपर्णा (एकपाटला) का पुत्र, एवं लिखित ऋषि का भाई था (ब्रह्मांड. २.३०. ४०; वायु ७२.१९)।

महाभारत में--इसकी एवं इसके भाई लिखित की कथा महाभारत में विस्तृत रूप में प्राप्त है, जो व्यास के द्वारा युधिष्ठिर को कथन की गयी थी। भारतीय युद्ध के पश्चात, युधिष्ठिर विरागी बन कर राज्यत्याग करने के लिए प्रवृत्त हुआ। उस समय, व्यास ने उसे राजधर्म का उपदेश करते समय कहा--

दण्ड एवं ही राजेंद्र क्षत्रधर्मो न मुण्डनम्।

(क्षत्रिय का प्रथम कर्तव्य राज्य करना है, संन्यास लेना नहीं है)।

अपने उपर्युक्त कथन के पुष्ट्यर्थ, व्यास ने शंख एवं लिखित नामक ऋषियों में संघर्ष होने पर, सुद्युम्न राजा ने किस प्रकार व्यक्तिनिरपेक्ष न्याय दिया, इस संबंध में एक प्राचीन कथा का निवेदन किया (म. शां. २४; लिखित देखिये)।

धर्मशास्त्रकार-- इसके नाम पर निम्नलिखित तीन स्मृतिग्रंथ उपलब्ध है:-- १. लघुशंखस्मृति, जिसमें ७१ श्लोक हैं, एवं जो आनंदाश्रम, पूना के 'स्मृतिसमुच्चय' में प्रकाशित की गयी है; २. बृहत्शंखस्मृति, जिसमें अठारह अध्याय हैं, एवं जो वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई के द्वारा प्रकाशित हो चुकी है; ३. शंख-लिखितस्मृति, जो इसने अपने भाई लिखित के सहयोग से लिखी थी। इस स्मृति में कुल ३४ श्लोक हैं, एवं उसमें परान्न-भोजन, अतिथिपूजन आदि विषयों की चर्चा की गयी है। आनंदाश्रम, पूना के द्वारा वह प्रकाशित की गयी है।

७. (सो. पूरु.) एक राजा, जो जनमेजय पारिक्षित राजा एवं वपुष्टमा का पुत्र, एवं शतानीक राजा का भाई था (म. आ. ९०.९४)।

८. एक ऋषि, जिसे ब्रह्मदत्त राजा ने अपना सारा धन दान के रूप में प्रदान किया था (म. शां. २२६. २९; अनु. १३७.१७)।

९. एक केकयराजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था, एवं जिसकी श्रेणी 'रथी' थी (म. उ. १६८.१४)।

१०. कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. ९.१३)।

११. एक जगन्नाथभक्त राजा, जो हैहयवंशीय भूत राजा का पुत्र था। जगन्नाथ ने दर्शन दे कर, इसे मुक्ति प्रदान की (स्कंद. २.१.३८)। हैहय राजाओं के वंशावलि में इसका नाम अप्राप्य है।

१२. एक राजा, जिसे सत्पुरुषों के पदधूलि से मुक्ति प्राप्त हुई (पद्म. क्रि. २१)।

१३. एक ब्राह्मण, जिसने स्वयं की चोरी करने आये व्याध को 'वैशाख-माहात्म्य' सुना कर उसका उद्धार किया (स्कंद. २.७.१७-३१)।

शंख कौष्य--एक आचार्य, जो यज्ञकर्म से संबंधित अनेकानेक नये मतों का प्रवर्तक था। यह जात शाकायन्य नामक आचार्य का समकालीन था (का. सं. २२.७)।

शंख बाभ्रव्य--एक आचार्य, जो राम क्रातुजातेय वैय्याघ्रपद्य नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४१.१; ४.१७.१)।

शंख यामायन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१५)।

शंखचूड--रामसेना का एक वानर। राम के द्वारा प्रशस्ति की जाने के कारण, यह सुग्रीव के कृपापात्र वानरों में से एक बना था (वा. रा. उ. ४०.७)।

२. एक विष्णुभक्त राक्षस, जो विप्रचित्ति राक्षस का पौत्र, एवं दंभ राक्षस का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम तुलसी था, जिससे इसने गांधर्वविवाह किया था। देवी भागवत में इसकी पत्नी का नाम पद्मिनी अथवा विरजा दिया गया है। अपने पूर्वजन्म में, यह सुदामन् नामक विष्णु-पार्षद था (दे. भा. ९.१८)।

अनाचार—इसकी पत्नी तुलसी के पातिव्रत्य के कारण, एवं विष्णु से प्राप्त किये विष्णुकवच के कारण, यह समस्त पृथ्वी में अजेय बन गया था। इसी कवच के बल से इसने देवों को त्रस्त करना प्रारंभ किया, एवं उनके राज्य यह हस्तगत करने लगा।

वध—इसके दुष्कार्यों को देख कर, श्रीविष्णु ने इसका वध करने का निश्चय किया। तत्प्रीत्यर्थ उसने इसकी पत्नी तुलसी का पातिव्रत्यप्रभाव नष्ट किया, एवं तत्पश्चात् एक ब्राह्मण का रूप धारण कर, इससे विष्णुकवच भी दान के रूप में प्राप्त किया।

तदुपरांत शिव ने काली के समवेत इस पर आक्रमण किया, एवं विष्णु के द्वारा दिये गये शूल की सहायता से इसका वध किया। इस युद्ध में शिव की ओर से काली, एवं इसकी ओर से तमाम राक्षसियों ने भाग लिया था।

माहात्म्य--इसकी मृत्यु के पश्चात्, इसके हड्डियों से शंख बने, जिन्हें विष्णुपूजा में अग्रमान प्राप्त हुआ। शंकर को छोड़ कर अन्य देवताओं पर डाला गया जल तीर्थजल के समान पवित्र माना जाता है। इसका शब्द भी शुभ माना जाता है, किंतु इसके ऊपर तुलसीदल चढ़ाना निषिद्ध एवं अशुभ माना गया है (दे. भा. ९.१७.२५; ब्रह्मवै. २.१६-२०; शिव. रुद्र. यु. २७-४०),

३. पाताल में रहनेवाला एक प्रमुख नाग (भा. ५. २४.३१)।

४. एक यक्ष, जो कुबेर का अनुचर था। एक बार इसने गोकुल में रहनेवाली कई गोपियों का हरण किया, जिस कारण कृष्ण ने इसका वध किया, एवं इसके सिर का मणि बलराम को अर्पण किया (भा. १०.३४.२५-३२)।

शंखण एवं **शंखनाभ**—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय खगण राजा का नामांतर। ब्रह्मांड में इसके पुत्र का नाम व्युषिताश्व दिया गया है (ब्रह्मांड. ३.६३.२०५-२०६)।

शंखनख—वरुणसभा का एक नाग (म. स. ९.९*)।

शंखपद—एक राजा, जो स्वारोचिष मनु का पुत्र एवं शिष्य था। मनु ने इसे सात्वत धर्म का ज्ञान प्रदान किया था, जो आगे चल कर इसने सुधर्मन् दिशापाल नामक अपने शिष्य को सिखाया था (म. शां. ३३६.३४-३५)।

२. दक्षिण देश का एक राजा, जो कर्दम प्रजापति, एवं श्रुति के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.८.१९)। अपने उत्तर आयुष्य में, यह तपस्वी एवं ऋषिक बन गया (मत्स्य. १४५.९६)।

शंखपाद्--एक राजर्षि, जो लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य था (वायु. २३.१३५)

शंखपाद् अथवा **शंखपाल**—एक सहस्रशीर्ष नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था। यह भाद्रपद माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३८)।

शंखपिंड—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

शंखमत्--एक ऋषिक (वायु. ५९.९४)। पाठभेद-'शंखपाद', एवं 'शंखरा'।

शंखमुख--शंखद्वीप में रहनेवाला नागों का एक राजा, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६५. ११; वायु. ४८.३३)।

शंखमेखल-एक ब्रह्मर्षि, जो सर्पदंश से मृत हुई प्रमद्वरा को देखने के लिए उपस्थित हुआ था (म. आ. ८.२०)। यह यमसभा का एक सदस्य भी था (म. स. ९.३४)।

शंखरोमन्--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

शंख-लिखित—एक ऋषिद्वय (शंख एवं लिखित देखिये)।

शंखशिरस्--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१२)। पाठ—'शंखशीर्ष'

शंग--तामस मन्वंतर एक का योगवर्धन।

५. उत्तम मन्वंतर का एक ऋषि (मत्स्य. ९.१४)।

शंग शाखायनि आत्रेय—एक आचार्य, जो नगरिन् जानश्रुतेय नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३. ४०.१)। 'शाखायन' का वंशज होने के कारण, इसे 'शाखायनि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शची पौलोमी--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री, जो पुलोमन् राजा की कन्या थी। इसके द्वारा रचित सूक्त में सौत का नाश करने के लिए प्रार्थना की गयी है (ऋ. १०. १५९)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे इन्द्र की पत्नी एवं जयन्त की माता कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६. २३) इन्द्र-नहुष संघर्ष में इसने महत्त्वपूर्ण भाग लिया था (नहुष २. देखिये)। इसका सूर्य के साथ संवाद हुआ था (म. अनु. १४.५-६ कुं.)।

शठ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२८)।

२. (सो. वसु.) एक यादव, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था। कृष्ण के साथ, यह उपप्लव्य नगरी में पांडवों से मिलने गया था।

३. एक राक्षस, जिसके घर पर हनुमत् ने लंकादहन के समय छलांग मारी थी (वा. रा. सुं. ६.२४)।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

शंड--शंडामर्क नामक ऋषिद्वय में से एक (शंडामर्क देखिये)।

२. एक कुष्मांड पिशाच, जो कपि नामक पिशाच के दो पुत्रों में से एक था। इसके भाई का नाम अज था। इसकी जंतुधना, एवं ब्रह्मधामा नामक दो कन्याएँ थीं, जिनका विवाह क्रमशः यक्ष एवं रक्षस् से हुआ था। शंड की इन दोनों कन्याओं का वंशविस्तार पुराणों में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७.७४-९७)।

शंडामर्क--एक ऋषिद्वय, जो असुरों का पुरोहित था (तै. सं. ६.४.१०.१; मै. सं. ४.६.३; तै. ब्रा. १.१.१. ५; श. ब्रा. ४.२.१.४-६)। वैदिक साहित्य में इन दोनों का अलग-अलग निर्देश भी प्राप्त है (वा. सं. ७.२.१२- १३; १६.१७)। 'शुक्रामंथिग्रह' ग्रहण करने की पद्धति इन दो पुरोहितों के कारण प्रस्थापित हुई थी (तै. सं. ६. ४.१०)।

असुरों के पुरोहित—बृहस्पति जिस प्रकार देवों का पुरोहित था, उसी प्रकार शंड एवं मर्क असुरों के पुरोहित थे। इन्हींके कारण असुर-पक्ष सदैव अजेय रहता था। अंत में इन्हें सोम की लालच दिखा कर, देवों ने इन्हें अपनी ओर आकृष्ट किया, एवं इस प्रकार असुरों को पराजित किया।

आगे चल कर, देवों के द्वारा यज्ञ प्रारंभ करते ही, सोमप्राप्ति की आशा से ये उपस्थित हुए। किंतु देवों ने इन्हें सोम देने से साफ इन्कार किया, एवं फजिहत कर इन्हें यज्ञस्थान से दूर भगा दिया (तै. सं. ६.४.१०; तै. ब्रा. १.१.१)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इन्हें शुक्र एवं गो के चार पुत्रों में से दो कहा गया है, एवं इनके अन्य दो भाइयों के नाम त्वष्टृ एवं वरत्रिन् बताये गये हैं।

ये शुक्र के प्रमुख शिष्यों में से दो थे, एवं असुरपक्ष को विजय प्राप्त कराने के हेतु शुक्र ने इन्हें असुरों का प्रमुख गुरु बनाया था। किंतु अंत में देवों ने इन्हें सोम की लालच दिखा कर अपने पक्ष में दाखल कराया, एवं इस प्रकार असुरों को पराजित करने के कार्य में देवपक्ष सफल बन गया (वायु. ९८.६२-६७; मत्स्य. ४७.५४; २२९.३३; ब्रह्मांड. ३.७२-७३)।

प्रल्हाद के गुरु--असुरराज हिरण्यकशिपु ने इन्हें अपने पुत्र प्रह्लाद का गुरु नियुक्त किया था, किंतु यह कार्य भी ये सुयोग्य प्रकार से पूरा न कर सके (भा. ७.५.१)।

शंडिल—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. अठ्ठाइस व्यासों में से एक (व्यास पाराशर देखिये)।

शत--जंभासुर के शतंदुदुभि नामक पुत्र का नामांतर (वायु. ६७.७८)।

शतकिलाक--जैगीषव्य ऋषि का पिता।

शतगामि--जटायु के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ६. ३६; पद्म. सृ. ६)।

शतगुण--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं क्रोधा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.३९)।

शतग्रीव—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.११)।

शतघंटा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.११)।

शतचंद्र--कौरव पक्ष का एक योद्धा, जो गांधार-राज सुबल का पुत्र, एवं शकुनि का भाई था। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.२०)।

शतजित्--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो विरज एवं विषूची के सौ पुत्रों में से एक था (भा. ५.५.१५)।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो सहस्रजित् राजा का पुत्र था। इसके महाहय, वेणुहय एवं हैहय नामक तीन सुविख्यात पुत्र थे (भा. ९.२३.२१)।

३. कृष्ण एवं जांबवती का एक पुत्र, जो प्रभासक्षेत्र में यादवीयुद्ध में मारा गया था (भा. ९.६१.११)।

४. एक यक्ष, जो आश्विन माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है।

५. (स्वा. नाभि.) एक राजा, जो रजस् राजा का पुत्र, एवं विश्वग्ज्योति आदि सौ पुत्रों का पिता था (ब्रह्मांड. २.१४.७०-७२)। इसे 'शतति' नामांतर भी प्राप्त था।

शतज्योति--वैवस्वत मनुपुत्र सुभ्राज् के तीन पुत्रों में से एक। इसे एक लक्ष पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. १.४२)।

शततारका--सोम की सत्ताइस पत्नियों में से एक।

शतति--(स्वा. नाभि.) रजस्पुत्र शत राजा का नामांतर (शत ५. देखिये)।

शततेजस्--बारहवाँ व्यास (व्यास पाराशर देखिये)।

शतदंष्ट्र--एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१३५)।

शतदुंदुभि--जंभासुर के पुत्रों में से एक (जंभ. ९. देखिये)।

शतद्युम्न-- एक राजा, जिस पर मत्स्य देवता ने कृपा की थी (तै. ब्रा. १.५.२.१)।

२. (सू. निमि.) एक दानशूर राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार भानुमत् राजा का पुत्र था (भा. ९. १३.२१-२२)। वायु में इसे 'प्रद्युम्न' कहा गया है।

इसने मौद्गल्य ऋषि को एक सोने का गृह प्रदान किया था, जिस कारण इसे स्वर्गप्राप्ति हुई (म. शां. २२६.३२; अनु. १२६.३२)।

२. चाक्षुष मनु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. २.३६.७९)।

शतद्युति—छाया अथवा सवर्णा का नामान्तर।

शतधनु—(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय शतधन्वन् राजा का नामान्तर।

२. (मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार देववर्मन् मौर्य राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७४. १४८)। विष्णु, भागवत, एवं मत्स्य में इसे 'सोमशर्मन्पुत्र शतधन्वन्' एवं वायु में इसे 'शतधर' कहा गया है।

शतधन्वन्—(सो. क्रोष्टु.) मिथिला देश का एक दुष्टप्रकृति भोजवंशीय यादव राजा, जो हृदीक राजा का पुत्र, एवं कृतवर्मन् राजा का भाई था। भागवत एवं विष्णु में उसे शतधनु कहा गया है।

कलिंग देश के राजा चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. शां. ४.७)। अक्रूर एवं कृतवर्मन के कथनानुसार, इसने यादवराजा सत्राजित् का वध किया, एवं उसका स्यमंतक मणि ले कर यह भाग गया (भा. १०.५७.५-२०)।

पश्चात् कृष्ण ने इस पर आक्रमण किया, एवं यह विज्ञातहृदया नामक घोड़ी पर सवार होकर भागने लगा। मिथिला नगरी के समीप श्रीकृष्ण ने इसे पकड़ कर इसका शिरच्छेद किया (ह. वं. १. ३९. १९)। किंतु स्यमंतक मणि अक्रूर के पास रखने के कारण, श्रीकृष्ण को वह प्राप्त न हो सका (भा. १०.५८.९; अक्रूर एवं सत्राजित् देखिये)।

२. मौर्यवंशीय शतधनु राजा का नामान्तर।

३. एक विष्णुभक्त राजा, जिसके पत्नी का नाम शैब्या था। एक पाखंडी व्यक्ति से मिलने के कारण, इसे एवं इसकी पत्नी को अनेकानेक कष्ट सहने पड़े (विष्णु. ३. १८.५३-९५)।

४. हंसध्वज राजा का प्रधान, जिसकी माता का नाम सुमति था।

शतपर्वा--शुक्राचार्य की भार्या (म. उ. ११५.१३)।

शतप्रभेदन वैरूप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११३)।

शतबल--रामसेना का एक वानर सेनापति (वा. रा. कि. ४३.१)

शतबलाक--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से शाकवैण रथीतर नामक आचार्य का शिष्य था।

शतबलाक्ष मौद्गल्य—एक वैयाकरण, जिसके द्वारा की गयी 'मृत्यु' शब्द की निरुक्ति का निर्देश यास्क के निरुक्त में प्राप्त है (नि. ११.६)।

शतबाहु--एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का अनुगामी था।

शतभेदन वैरूप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११३)।

शतमायु--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ६८.११)।

शतमुख--एक शिवभक्त असुर, जिसने सौ साल तक अपने मांसखंडों की आहुति दे कर शिव की तपस्या की थी, जिस कारण संतुष्ट हो कर शिव ने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये थे (म. अनु. ४५.६८)।

शतमुखी रावण--मायापुरी का एक राक्षसराज, जिसने निकुंभपुत्र पौंड्रक राक्षस के साथ लंकाधिपति विभीषण को पदच्युत करने का षड्यंत्र रचा था, किन्तु अंत में राम ने इसका वध किया (आ. रा. राज्य. ५; पौंड्रक देखिये)।

शतयातु--एक ऋषि, जिसका निर्देश ऋग्वेद में पराशर के पश्चात् एवं वसिष्ठ के पहले किया गया है (ऋ. ७. १८.२१)। गेल्डनर के अनुसार यह वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक था (गेल्डनर, वेदिशे स्टूडियन ७.१८.२१)।

शतयूप-केकय देश का एक तपस्वी राजा, जिसने अपना राज्य अपने पुत्रों को सौंप कर कुरुक्षेत्र के वन में तपस्या प्रारंभ की थी। इसके पितामह का नाम सहस्रचित्य था। अपने आयुष्य के उत्तरकाल में धृतराष्ट्र इसके आश्रम में आया था जिसे इसने वनवास की विधि बतायी थी (म. आश्र. २५.९)।

शतरथ--(सू. इ.) एक राजा, जो मूलक राजा का पौत्र, एवं दशरथ राजा का पुत्र था। वायु में इसे मूलक राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ८८.१८०)।

इसे 'इलविल' एवं 'इडविड' नामांतर भी प्राप्त था, जिस कारण इसके पुत्र 'ऐलविल' अथवा 'ऐडविड' नाम से सुविख्यात हुए।

शतरूप—सुतार नामक शिवावतार का एक शिष्य।

शतरूपा--ब्रह्मा की एक मानसकन्या, जो उसके वामांग से उत्पन्न हुई थी। इसे सरस्वती नामांतर भी प्राप्त था (भा. ३.१२.५२)।

इसने दीर्घकाल तक तपस्या कर स्वायंभुव मनु राजा को पतिरूप में प्राप्त किया था। स्वायंभुव मनु से इसे प्रियव्रत, उत्तानपाद आदि सात पुत्र, एवं देवहूति नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई थी (ब्रह्मांड. २.१.५७)।

मत्स्य में इसे अपने पिता ब्रह्मा से ही स्वायंभुव मनु, मारीच आदि सात पुत्र उत्पन्न होने का निर्देश प्राप्त है। आगे चल कर मारीच को वामदेव, सनत्कुमार आदि पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ४.२४–३०)।

शतर्चिन्--एक ऋषिसमुदाय, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऐ. आ. २.२. १; आश्व. गृ. ३३)। इस ऋषिसमुदाय में कुल सोलह ऋषि समाविष्ट थे (आर्षानुक्रमणी १.५)।

२. एक ऋषि, जो वंग राजकुमार हेमकांत के द्वारा मारा गया था (हेमकांत देखिये)।

शतलोचन—स्कंद का एक सैनिक (म. श.४४.५६)।

शतशलाक—जैगीषव्य ऋषि का पिता, जिसकी पत्नी का नाम एकपाटला था। पाठभेद (वायु पुराण)-'शतशिलाक' (ब्रह्मांड. ३.१०.२०; वायु. ७२.१८)।

शतशाद--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

शतशीर्षा--वासुकि नाग की पत्नी (म. उ. ११५. ४६०*)।

शतहय--तामस मनु के पुत्रों में से एक।

शतह्रद---एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१८)।

शतह्रदा--एक राक्षसी, जो जवासुर की पत्नी एवं विराध की माता थी।

शताजित्—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान एवं बाह्यका के पुत्रों में से एक था।

शतानंद—एक ऋषि, जो गौतम शरद्वत् तथा ब्रह्म-मानसकन्या एवं दिवोदासभगिनी अहल्या का पुत्र था। यह विदेह देश के जनक राजा का पुरोहित था, एवं राम दाशरथि के विवाह में यह मुख्य पुरोहित था (वा. रा. बा. ५०–५१; भा. ९.२१.३४–३५)। इसके पुत्र का नाम सत्यधृति था। पाठभेद (मत्स्यपुराण)–'शारद्वत'।

२. सावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

शतानीक--(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो नकुल एवं द्रौपदी का पुत्र था (म. आ. ५७.१०२; ९०.८२; भा ९.२२. २९; मत्स्य. ५०.५३)।

भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था :—१. भूतकर्मन् (म. द्रो. २४.२२); २. चित्रसेन (म. द्रो. १४३.९); ३. श्रुतकर्मन् (म. क. १८. १२–१६); ३. अश्वत्थामन् (म. क. ३९.१५); ५. कुणिंदपुत्र (म. क. ६२.५२)। इसके रथ के अश्व शालपुष्प के समान रक्तिम पीले वर्ण के थे (म. द्रो. २२.२३)।

भारतीय युद्ध के अठाराहवें दिन हुए रात्रियुद्ध में, अश्वत्थामन् ने इसका वध किया (म. सौ. ८.५४)।

२. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो परिक्षित् पुत्र जनमेजय का पुत्र था। इसकी माता का नाम वपुष्टमा था, जो काशिराज की कन्या थी (म. आ. ९०.९४)।

इसने याज्ञवल्क्य, कृप, एवं शौनक से क्रमशः वेदविद्या, अस्त्रविद्या, एवं आत्मविद्या प्राप्त की थी। समंतु नामक आचार्य ने इसे भारत एवं भविष्यपुराण कथन किया था (भवि. ब्राह्म. १.३०-३६)।

इसकी पत्नी का नाम वैदेही था, जिससे इसे अश्वमेधदत्त (सहस्रानीक) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ९.२२.३८-३९)। शतानीक राजा के जीवनवृत्त से महाभारत में प्राप्त कुरुवंश का वृत्तान्त समाप्त होता है, (म. आ. ९०.९४-९६)। किंतु विष्णु में परिक्षित् राजा से ही कुरुवंश का वर्णन समाप्त होता है, एवं उसके आगे 'भविष्य वंश' प्रारंभ होता है (विष्णु. ४.२१.१-२; भा. ९.२२.३९)।

यह अत्यंत विरक्त प्रकृति का राजा था, जिस कारण अपनी उत्तर आयुष्य में आत्मज्ञान प्राप्त कर, यह स्वर्गलोक प्रविष्ट हुआ।

३. (सो. कुरु. भविष्य) एक कुरुवंशीय राजा, जो महाभारत के अनुसार वसुदान राजा का, मत्स्य के अनुसार वसुदामन् राजा का, एवं भागवत के अनुसार सुदास राजा का पुत्र था (मत्स्य ५०.८६)। इसके पुत्र का नाम दुर्दमन (उदयन) था (भा. ९.२२.४३)। इसका सविस्तृत वंशक्रम विष्णु में निम्नप्रकार दिया गया है:—वसुदामन्-शतानीक-उदयन-वहीनर-खंडपाणि- निरमित्र- क्षेमक। क्षेमक राजा के साथ सोमवंश समाप्त होता है (विष्णु. ४.२१.३)।

४. मत्स्यनरेश विराट के सोमदत्त नामक छोटे भाई का नामान्तर (म. वि. ३०.१३)। भारतीय युद्ध में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. वि. ३.१९; म. द्रो. २०.२२; क. ४.८३)।

५. मत्स्यनरेश विराट का भाई एवं सेनापति। विराट के द्वारा किये गये घोषयात्रा युद्ध में, इसने त्रैगर्तों के साथ युद्ध किया था (म. वि. ३१.१६)।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों का प्रमुख योद्धा था (म. द्रो. १४३.२७)। इसी युद्ध में, शल्य के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. १४३.२७)।

६. ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ४. १.७२)।

७. एक राजा, जो बृहद्रथ राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.२१.१४)।

शतानीक सात्राजित—एक भरतवंशीय सम्राट्, जिसने काशिनरेश धृतराष्ट्र को पराजित कर, उसके यज्ञाश्व का हरण किया था (श. ब्रा. १३.५.४.९-१३)।

यह सत्राजित राजा का पुत्र था, एवं वाजरत्नपुत्र सोमशुष्म नामक आचार्य ने इसे 'ऐन्द्र महाभिषेक' किया था (ऐ. ब्रा. ८.२१)। अथर्ववेद के अस्पष्ट अर्थ के एक सूक्त में, दाक्षायणों के द्वारा इसे बाँधा जाने का निर्देश प्राप्त है (अ. वे. १.३५.१; वा. सं. ३४.५२)।

शतायु—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार, पुरूरवस् एवं उर्वशी के छः पुत्रों में से एक था (मत्स्य. २४.३४)। भागवत में इसे 'सत्यायु' कहा गया है।

शत्रि आग्निवेशि—एक उदार राजा, जो अग्निवेश का पुत्र था। सांवरण प्राजापत्य नामक आचार्य के द्वारा इसके दातृत्त्व की प्रशंसा की गयी है (ऋ. ५.३४.९)।

शत्रुघातिन्—(सू. इ.) शत्रुघ्न का ज्येष्ठ पुत्र, जिसकी माता का नाम श्रुतकीर्ति था (वा. रा. उ. १०८. ११)। इसे निम्नलिखित नामांतर भी प्राप्त थे:— यूपकेतु; शूरसेन (वायु. ८८. १८६); श्रुतसेन (भा. ९.११.१३)। लक्ष्मण के पश्चात्, यह वैदिश राज्य के राजसिंहासन पर अधिष्ठित हुआ था (वा. रा. उ. १०८.११)।

परिवार—इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थीः— १. मदनसुंदरी एवं २. शिवकांति, जो कंबुकंठ राजा की कन्याएँ थी, एवं जो इसे स्वयंवर में प्राप्त हुई थी (आ. रा. विवाह. ८); ३. मालती (आ. रा. विवाह. ७)।

शत्रुघ्न—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दशरथ राजा का पुत्र, एवं राम दाशरथि का कनिष्ठ सापत्न बंधु था। इसकी माता का नाम सुमित्रा था, एवं लक्ष्मण इसका ज्येष्ठ सगा भाई था। फिर भी अपने सापत्न बंधु भरत से ही यह अधिक सहानुभाव रखता था, जिस-कारण 'राम-लक्ष्मण' के समान 'भरत-शत्रुघ्न' का जोड़ा भ्रातृभाव की ज्वलंत प्रतिमा बन कर प्राचीन इतिहास में अमर हो चुका है।

राम का यौवराज्याभिषेक—दशरथ के द्वारा राम का यौवराज्याभिषेक जब निश्चित हुआ, उस समय यह भरत के साथ उसके ननिहाल में था। अयोध्या आने पर इसे राम को वनवास प्राप्त होने के संबंध में वार्ता ज्ञात हुई। पश्चात् इस सारे अनर्थ का कारण मंथरा है, यह ज्ञात होते ही इसने उसे पकड़ कर घसीटा, एवं खूब पीटा। यह उसका वध भी करना चाहता था, किन्तु भरत ने इसे इस अविचार से परावृत्त किया।

अपनी सापत्न माता कैकेयी के मोह में फँस कर राम जैसे पुण्यपुरुष को वनवास देनेवाले अपने पिता दशरथ को भी इसने बुरा-भला कहा, एवं इस दुःखी घटना का अवरोध न करनेवाले अपने ज्येष्ठ भाई लक्ष्मण को भी काफ़ी दोष दिया (वा. रा. अयो. ७८.२-४)।

पादुका संरक्षण—राम की पादुका ले कर नन्दिग्राम लौट आनेवाले भरत के शरीररक्षक के नाते यह भी उपस्थित था। राम के वनवासकाल में शत्रुघ्न कहाँ रहता था, इस संबंध में कोई भी जानकारी 'वाल्मीकि रामायण' में उपलब्ध नहीं है। राम के वनवाससमाप्ति के पश्चात्, यह उसका धनुष एवं बाण ले कर उसका स्वागत करने गया था।

लवणवध—वनवासकाल के पश्चात् राम अयोध्या का राजा बन गया, तब उन्हींके आदेश से इसने लवणासुर पर आक्रमण किया।

लवणासुर यमुनातट के निवासी च्यवन भार्गवादि ऋषियों को त्रस्त करता था। उसके पिता मधु को शिव से एक अजेय शूल प्राप्त हुआ था, एवं शिव ने उसे आशीर्वाद दिया था कि, जब तक वह शूल लवण के हाथ में रहेगा, तब तक वह अवध्य होगा (वा. रा. उ. ६१. २४)। इसी शूल के बल से लवण अब समस्त पृथ्वी पर अत्याचार करने के लिए प्रवृत्त हुआ था।

च्यवन भार्गवादि ऋषियों ने लवण की शिकायत राम से की, जिस पर राम ने शत्रुघ्न को इस प्रदेश का राज्याभिषेक किया, एवं इसे लवण का वध करने की आज्ञा दी। इसने एक विशाल सेना को मधुवन की ओर भेज दिया, एवं स्वयं एक रात्रि वाल्मीकि के आश्रम में व्यतीत कर, यह मधुवन के लिए रवाना हुआ। अयोध्या से निकल ने के पश्चात् चौथे दिन यह मधुपुर पहुँच गया।

मधुपुर पहुँचते ही इसने देखा कि, शिव के द्वारा दिया गया शूल अपने राजभवन में रख कर, लवण कहीं बाहर गया था। इसने वह शूल हस्तगत किया, एवं यह उस राक्षस की राह देखते मधुपुर के द्वार में ही खड़ा हुआ। पश्चात् इन दोनों में घमासान युद्ध हुआ, जिसमें इसने लवण का वध किया।

मथुरा की स्थापना—लवणवध के पश्चात्, इसने मधुवन में स्थित मधुपुरी अथवा मधुरा नगरी में अपनी राजधानी स्थापित कर, उसका नाम 'मथुरा' रक्खा (ब्रह्मांड. ३.६३.१८६; वायु. ८८.१८५-१८६; भा. ९. ११.१४)। पश्चात् इसने 'मधुवन' राज्य का नाम बदल कर उसे 'शूरसेन' नाम प्रदान किया। आगे चल कर इसी नाम से यह प्रदेश सुविख्यात हुआ।

राम से भेंट—इस प्रकार, बारह वर्षों तक मधुपुरी में राज्य करने के पश्चात्, राम के दर्शन की इच्छा इसके मन में उत्पन्न हुई। तदनुसार यह अयोध्या पहुँचा, एवं इसने मधुपुरी छोड़ कर राम के पास ही अयोध्या में रहने की इच्छा प्रदर्शित की। किंतु राम ने इसे इस निश्चय से परावृत्त कर, क्षात्रधर्म के अनुसार मधुपुरी में प्रजापालन का कार्य करने की आज्ञा दी (प्रजा हि परिपाल्या क्षत्रधर्मेण; वा. रा. उ. ७२.१४)। पश्चात् सात दिनों तक अयोध्या में रह कर, यह मधुपुरी लौट गया। मधुपुरी वापस जाते समय, इसे वाल्मीकि के आश्रम में कुशलवों के द्वारा रामायण सुनने का अवसर प्राप्त हुआ।

राम का अश्वमेधयज्ञ—राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वमेधीय अश्व के संरक्षण का भार इसे सौंपा गया था (वा. रा. उ. ९१)। अश्वसंरक्षण के हेतु शत्रुघ्न के द्वारा किये गये पराक्रम का कल्पनारम्य वर्णन पद्म में प्राप्त है, जहाँ इस कार्य के लिए इसने पाताल में दिग्विजय करने का (पद्म. पा. ३८), एवं शिव से युद्ध करने का निर्देश प्राप्त है (पद्म. पा. ४३)।

शत्रुघ्न के अश्वमेधीय दिग्विजय में निम्नलिखित वीर शामिल थेः—प्रतापाग्र्य, नीलरत्न, लक्ष्मीनिधि, रिपुताप, उग्रहय, शस्त्रवित्, महावीर, रथाग्रणी, एवं दंडभृत् (पद्म. पा. ११)।

दिग्विजय-अश्वमेधीय अश्व के साथ इसने निम्नलिखित देशों में दिग्विजय कर अपना प्रभुत्व प्रस्थापित किया था:—पांचाल, कुरु, उत्तरकुरु, दशार्ण, श्रीविशाल, अहिच्छत्र, पयोष्णी, रत्नातटनगर, नीलपर्वत, चक्रांकनगर, तेजःपूर, नर्मदातीर, पाताललोक, विंध्यपर्वत में स्थित देवपूरनगर, भारतवर्ष की सीमा के बाहर स्थित हेमकूटपर्वत, अंग, वंग, कलिंग, कुंडलनगर, गंगातीर में स्थित वाल्मीकि-आश्रम (पद्म. पा. १-६८)।

मृत्यु—अपना आयुःकाल समाप्त हो गया है, यह जान कर राम ने भरत एवं शत्रुघ्न को अयोध्या में बुला लिया, एवं ये तीनों भाई सरयू नदी के तट पर 'गो-प्रतारतीर्थ' में वैष्णव तेज में विलीन हुए (वा. रा. उ. ११०)। लक्ष्मण की मृत्यु इसके पहले ही हो चुकी थी (राम दाशरथि देखिये)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम श्रुतकीर्ति था, जो कुशध्वज जनकराजा की कन्या थी (वा. रा. बा. ७३.

३३)। अपनी इस पत्नी से इसे शत्रुघातिन् एवं सुबाहु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे। भागवत एवं विष्णु में इसके पुत्र शत्रुघातिन् का नाम क्रमशः 'श्रुतसेन' एवं 'शूरसेन' दिया गया है (भा. ९.११.१३–१४; विष्णु. १.१२.४)। वायु में भी इसके प्रथम पुत्र का नाम शूरसेन बताया गया है (वायु. ८८.१८६)।

अपनी मृत्यु के पूर्व इसने सुबाहु एवं शत्रुघातिन् को क्रमशः मथुरा एवं शूरसेन देश का राज्य दिया था (वा. रा. उ. १०७.१०८)। वायु के अनुसार दोनों ही पुत्रों को इसने मथुरा का ही राज्य प्रदान किया था।

२. लंका का एक रावणपक्षीय राक्षस (वा. रा. यु. ४३)।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजकुमार, जो श्वफल्क यादव के तेरह पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.१७)।

४. अक्रूर यादव के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.२९)।

५. एक यादव राजकुमार, जो भङ्गकार एवं नरा के पुत्रों में से एक था। अक्रूर ने इसका वध किया (वायु. ९६.८५)।

शत्रुजित्--(सो. विदू.), एक राजा, जो शोणाश्व राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.७९)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार मांधातृ राजा का पुत्र था (मत्स्य १२.३५)। भागवत, विष्णु, एवं वायु में इसे 'अंबरीष' कहा गया है।

३. (सू. इ.) एक राजा, जो ध्रुवसंधि राजा एवं लीलावती का पुत्र था।

४. प्रतर्दन राजा का नामांतर (विष्णु. ४.८.१२)।

५. कुवलयाश्व राजा का नामांतर (भा. ९.१७.६)।

शत्रुंजय--धृतराष्ट्र का एक पुत्र। भारतीय युद्ध में इस पर भीष्म के रक्षण का भार सौंपा गया था (म. भी. ४७.८)। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. ११२.३०)।

२. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो कर्ण का छोटा भाई था। अर्जुन ने इसका वध किया था (म. द्रो. ३१.५९)।

३. द्रुपद राजा का एक पुत्र, जो अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया था।

४. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. ४७.१५)।

५. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ के भाइयों में से एक था। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-हरण के समय, अर्जुन के द्वारा यह मारा गया (म. व. २४९.१०)।

६. एक त्रैगर्त योद्धा, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.१०)।

७. सौवीर देश के कणिक राजा का नामांतर, जिसे भरद्वाज ऋषि ने राजधर्म एवं कूटनीति का उपदेश किया था (म. शां. १३८.४)।

शत्रुंजया--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.६)।

शत्रुतपन--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२८)।

शत्रुंतप--दुर्योधन की सेना का एक राजा, जो कर्ण का भाई था। अर्जुन ने 'उत्तर-गोग्रहण' के समय, इसका वध किया (म. वि. ४९.१३)।

शत्रुमर्दन--एक राजा, जो ऋतुध्वज एवं मदालसा का तृतीय पुत्र था (मार्क. २३.२६)।

शत्रुसह--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में कर्ण का शरीरसंरक्षक था। भीमसेन के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. ११२.४०)।

शत्रुसूदन--दशरथ राजा के सुज्ञ नामक मंत्री का पुत्र।

शध्रीय--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास के सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

शनि--एक पापग्रह, जो नौ ग्रहों में से एक प्रमुख ग्रह माना जाता है (मत्स्य. ९३.४४)। इसे 'शनैश्चर' नामांतर भी प्राप्त था। लोहे से बने हुए रथ से यह समस्त ग्रहमंडल का परिभ्रमण तीस माह में पूरा करता है (भा. ५.२२.१६)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे महा-तेजस्वी एवं तीक्ष्ण स्वभाववाला ग्रह कहा गया है। इसे छाया एवं विवस्वत् (मार्तंड) का पुत्र कहा गया है (भा. ६.६.४१; विष्णु. १.८.११)। इसके भाई का नाग सावर्णि था (विष्णुधर्म. १.१०६)। आगे चल कर अपने पिता सूर्य की आज्ञा से यह ग्रह बन गया।

कालिकापुराण में भी इसे सूर्यपुत्र कहा गया है, एवं सती की मृत्यु के पश्चात् शिव के आँखों से जो आंसू टपके, उसीके कारण इसके कृष्णवर्णीय बनने की कथा वहाँ प्राप्त है (कालि. १८)। आगे चल कर यह मनुष्यों को अत्यंत त्रस्त करने लगा, जिस कारण शिव ने मेषादि राशि इसके अधिकार में दी, एवं पूजा करनेवाले लोगों

को सुख एवं समृद्धि प्रदान करने की आज्ञा इसे दी (स्कंद. ५.१.५०)।

पराक्रम--शिव एवं त्रिपुर के युद्ध में, इसने शिव के रथ पर आरूढ हो कर नरकासुर से युद्ध किया था (भा. ८.१०.३३)। एक बार अश्वत्थ एवं पिप्पल अगस्त्य ऋषि को अत्यधिक त्रस्त करने लगे, जिस कारण इसने उनका वध किया था (ब्रह्म. ११८)।

दशरथ राजा से युद्ध—ज्योतिषशास्त्र की दृष्टि से शनि जब रोहिणी नक्षत्र को पीड़ित करता है (रोहिणी-शकट का भेदन), तब पृथ्वी के मनुष्यों के लिए वह एक अशुभ योग माना जाता है। रोहिणी नक्षत्र का देवता प्रजापति होता है, जिस कारण शनि के द्वारा रोहिणी-शकट का भेद होने पर उसका दुष्परिणाम प्रजापति पर हो कर, सारे पृथ्वी पर लोकक्षय होता है।

दशरथ राजा के राज्यकाल में ऐसा ही कुयोग उत्पन्न हुआ था। उस समय दशरथ राजा ने शनि से युद्ध कर, इसे रोहिणीशकट के भेदन से परावृत्त किया। उस समय दशरथ के द्वारा शनि का गुणगान किये जाने पर, इसने उसे आशीर्वाद दिया, 'जो लोग अपनी प्रिय वस्तुओं का दान कर मेरी उपासना करेंगे, उनकी मैं रक्षा करूँगा'।

शंतनु--कुरुवंशीय 'शांतनु' राजा का नामांतर (शांतनु तथा शांतनव देखिये)।

शबर--एक म्लेंच्छ जातिविशेष, जो दक्षिणापथ प्रदेश के निवासी थे। वायु में इन्हें 'दक्षिणापथवासिनः' कहा गया है, एवं इनका निर्देश आभीर, आटव्य, पुलिंद, वैदर्भ, दण्डक आदि लोगों के साथ प्राप्त है (वायु. ४५. १२६)।

ब्राह्मण ग्रंथों में—ऐतरेय ब्राह्मण में, विश्वामित्र ऋषि के ज्येष्ठ पचास पुत्र उसीके ही शाप से आंध्र, पुण्ड्र, शबर, पुलिंद एवं मूतिब आदि म्लेंच्छ बनने का निर्देश प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.१८.२; सां. श्रौ. १५.२६.६)। ये लोग दक्षिण भारत में पेन्नार नदी के प्रदेश में रहते थे। रामायण में प्राप्त शबरी की कथा भी यही संकेत को पुष्टि प्रदान करती है। किन्तु इन लोगों की अन्य कई बस्तियाँ राजपुताना, हिमालय प्रदेश आदि में थी।

महाभारत के अनुसार, ये लोग पहले क्षत्रिय थे, किंतु बाद में हीन आचारों के कारण म्लेंच्छ बन गये। भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे, जहाँ सात्यकि ने इनका संहार किया था (म. द्रो. ९५.३८)।

२. कीकट देश में रहनेवाला एक शिवभक्त अंत्यज, जो चिताभस्म की प्राप्ति के लिए स्वयं को दग्ध करने के लिए प्रवृत्त हुआ था (स्कंद. ३.३.१७)।

३. एक विष्णुभक्त अंत्यज, जो तुलसीपत्र के प्रसाद से यमदूतों के पंजे से मुक्त हुआ (पद्म. पा. २०)।

४. अमिताभ देवों में से एक।

शबर काक्षीवत--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १६९)।

शबरी—शबर जाति की एक स्त्री, जो पंपासरोवर के पश्चिमी तट पर रहनेवाले मातंग ऋषि की परिचारिका थी। राम के प्रति अनन्य भक्ति के कारण, इसे 'सिद्धा,' 'श्रमणा' आदि श्रेष्ठ उपाधियाँ प्राप्त हुई, एवं श्रेष्ठ भक्ति की साकार प्रतिमा यह माने जाने लगी।

राम से भेंट--कबंध राक्षस के कथनानुसार, राम-लक्ष्मण सीता का शोध करते मतंगवन आ पहुँचे। वहाँ इसने उनका उचित आदरसत्कार किया, एवं कहा, 'आपके आने से पूर्व ही मातंग ऋषि का स्वर्गवास हुआ। अब उन्हींके आदेश से मैं आपकी प्रतीक्षा कर रही हूँ'।

राम का स्वागत --इतना कह कर, शबरी ने राम के भोजन के लिए वन के विविध कन्दमूल उन्हें अर्पण किये (वा. रा. अर. ७४.१७)। तत्पश्चात् मतंगवन में स्थित मतंग ऋषि का तपस्या एवं यज्ञ का स्थान, 'प्रत्यक्स्थली' नामक यज्ञवेदी, 'सप्तसागर' नामक तीर्थ आदि का दर्शन इसने राम को कराया।

स्वर्गप्राप्ति--पश्चात् राम की अनुज्ञा से इसने अग्नि प्रदीप्त किया, एवं उसमें स्वयं की आहुति दे कर यह स्वर्गलोक वासी प्रष्ट हुई।

अध्यात्म रामायण में—इस ग्रंथ में शबरी के हीन जाति पर विशेष जोर दिया है। रामभक्तिसांप्रदाय का प्रचार करने के दृष्टि से इसकी जीवनगाथा वहाँ दी गयी है, जिससे यह स्पष्ट हो जाये कि, रामभक्ति भेदभाव से ऊपर उठ कर सब को मुक्ति प्रदान करती है (भक्ति-मुक्तिविधायनी भगवतः रामचन्द्रस्य)। इसी कारण शबरी की गुरुभक्ति, सेवाभाव, तपस्या एवं अपार रामभक्ति का इस कथा में सविस्तृत वर्णन किया गया है।

इस कथा के अनुसार, शबरी ने राम का उचित आदरसत्कार कर, उसे प्रश्न किया, 'मैं मूढ़ एवं हीन जाति में उत्पन्न होने के कारण, आपके दर्शन एवं उपासना की योग्यता नही रखती हूँ'। इस पर राम ने इसे उत्तर दिया, 'परमेश्वरप्राप्ति के लिए जाति की उच्चनीचता,

अथवा स्त्रीपुरुष भेदाभेद आदि का कुछ भी महत्त्व नहीं है। महत्त्व है केवल भक्ति का, जिससे कोई भी व्यक्ति परमपद प्राप्त कर सकता है' (अ. रा. अर. १०.१-४४)।

पौराणिक साहित्य में--पद्म आदि उत्तरकालीन पौराणिक साहित्य में 'अध्यात्मरामायण' की ही कथा उद्धृत की गयी है (पद्म. उ. २६९.२६५-२६८), जिस कारण यह कथा भारत के सभी प्रांतिक भाषाओं में रामभक्ति के प्रचार का एक सर्वश्रेष्ठ माध्यम बन गयी।

शबल--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.७)।

२. एक श्वान, जो सरमा का पुत्र, एवं यम वैवस्वत का अनुचर था (ब्रह्मांड. ३.७.११२)।

३. दक्ष एवं असिक्री के एक हज़ार पुत्रों में से एक। पाठभेद-'शबलाश्व' (भा. ६.५.२४)।

शबलाश्व--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो कुरु राजा का पौत्र, एवं अविक्षित् राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसके अन्य भाइयों के नाम परिक्षित्, आदिराज, विराज, शाल्मलि, उच्चैःश्रवस्, भङ्गकार एवं जितारि थे (म. आ. ८९.४५)।

शम--एक राजा, जो धर्म प्रजापति के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम काम एवं हर्ष, तथा पत्नी का नाम प्राप्ति था (म. आ. ६०.३१)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो धर्मसूत्र नामक राजा का पुत्र, एवं द्युमत्सेन राजा का पिता था (भा. ९.२२.४८)। विष्णु एवं ब्रह्मांड में इसे 'सुश्रम' एवं वायु में इसे 'सुव्रत' कहा गया है।

३. एक वसु, जो अहः नामक वसु के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य भाइयों के नाम ज्योति, शांत एवं मुनि थे (म. आ. ६०.२२)। पाठभेद-भांडारकर संहिता-'श्रम'।

४. आयु राजा का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.३.२४)।

५. सुखदेवों में से एक।

६. नंदिवेगकुलोत्पन्न एक कुलांगार राजा, जिसने अपने दुर्व्यवहार के कारण, अपने वंश एवं राज्य के लोगों का नाश किया (म. उ. ८२.१७)।

शमठ--एक ऋषि, जो गयाशीर पर्वत पर 'ब्रह्मसर' सरोवर के पास निवास करता था। इसने वनवासी पांडवों को अमूर्तरयस्-पुत्र गय राजा की कथा कथन की थी (म. व. ९३.१६)।

शमन--सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

शमि--(सो. उशी.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार उशीनर राजा का पुत्र था (९.२३.३)।

शमिन्--(सो. विदु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार शोणाश्व राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार शूर राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम प्रतिक्षत्र था (मत्स्य. ४४.७९-८०; ब्रह्मांड. ३.७१.१३८)।

शमीक--अंगिरस् कुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसकी पत्नी का नाम गौ, एवं पुत्र का नाम शृंगी था। यह आजन्म मौनव्रत का पालन करता था। यह गौओं के रहने के स्थान में रहता था, एवं गौओं का दूध पीते समय बछड़ों के मुख से जो फेन निकलता था, उसीको खा-पी कर तपस्या करता था।

परिक्षित् से भेट--एक बार परिक्षित् राजा मृगया करता हुआ इसके आश्रम में आ पहुँचा। किन्तु इसका मौनव्रत होने के कारण, इसने उससे कोई भी भाषण नहीं किया। यह इसका औद्धत्य समझ कर, परिक्षित् इससे अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने इसकी अवहेलना करने के हेतु, इसके गले में एक मृतसर्प डाल दिया।

कृश नामक इसके शिष्य ने यह घटना इसके पुत्र शृंगी को बतायी। अपने पिता के अपमान की यह कहानी सुन कर, शृंगी अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं उसने शापवाणी कह दी, 'सात दिन के अंदर नागराज तक्षक के दंश से परिक्षित् राजा की मृत्यु हो जायेगी'।

परिक्षित् की मृत्यु--अपने पुत्र के द्वारा, परिक्षित् राजा को दिये गये शाप का वृत्तांत ज्ञात होते ही, इसने अपने पुत्र की अत्यंत कटु आलोचना की। पश्चात् अपने गौरमुख नामक शिष्य के द्वारा परिक्षित् राजा को शृंगी के इस शाप का समाचार, भेजा, एवं उसे सावधान रहने के लिए कहा। किन्तु अंत में यह चेतावती विफल हो कर, तक्षकदंश से परिक्षित् राजा की मृत्यु हो ही गयी (म. आ. ३६.३८; भा. १.१८)।

गरुडवंशीय पक्षियों की रक्षा--भारतीय युद्ध के समय गरुड़वंश में उत्पन्न पिंगाक्ष, विबोध, सुपुत्र, एवं सुमुख नामक पक्षी सुप्रतीक नामक हाथी के घंटा के नीचे छिप कर बच गये। आगे चल कर इसने उन्हें अपने आश्रम में ला कर, एवं उनका धीरज बँधा कर, उन्हें सुरक्षित स्थल पर पहुँचाया (मार्क. २.४४; ३.८६)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो वायु एवं विष्णु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था। विष्णु, भागवत एवं मत्स्य में, इसे 'सत्यप्रिय' कहा गया है। इसकी माता का

नाम मारिषा, एवं पत्नी का नाम सुदामिनी था, जिससे इसे प्रतिक्षत्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (वायु. ९६.१३७; विष्णु. ४.१४.२३)। ब्रह्मा के द्वारा पुष्कर क्षेत्र में किये गये यज्ञ में यह उपस्थित था (पद्म. सृ. ३३)।

शंपाक—हस्तिनापुर में रहनेवाला एक जीवन्मुक्त एवं त्यागी ब्राह्मण; जो भीष्म का गुरुतुल्य स्नेही था। इसे 'शम्याक' नामांतर भी प्राप्त था।

त्याग की महिमा के विषय में इसने भीष्म को उपदेश प्रदान किया था (म. शां. १७०)। यह 'शंपाक गीता' का प्रणयिता माना जाता है।

शंबर कौलितर--एक असुर, जो इंद्र का शत्रु था (ऋ. १.५१.६; ५४.४)। 'कुलितर' का पुत्र होने के कारण, इसे 'कौलितर' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. ४.३०.१४)। सायण के अनुसार, आकाश में स्थित मेघ को ही वैदिक साहित्य में 'शंबर' कहा गया है। इस संबंध में यह 'वृत्र' से साम्य रखता है (वृत्र देखिये)।

ऋग्वेद में--इस ग्रंथ में शुष्ण, पिप्रु, वर्चिन् आदि असुरों के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.१०१; १०३; २.१९.६)। यह एक दास था, एवं यह पर्वत पर रहता था (ऋ. २.१२)।

वृत्र के समान इसके भी आकाश में अनेकानेक दुर्ग (शंबराणि) थे, जिनकी संख्या ऋग्वेद में नब्वे (ऋ. १.१३०); निन्यान्वे (ऋ. २.१९); अथवा एक सौ (ऋ. २.१४) बतायी गयी है।

इंद्र से युद्ध--यह स्वयं को देवता समझने लगा, जिस कारण इंद्र ने इसे काट कर पर्वत से नीचे गिरा दिया, एवं इसके सारे दुर्ग ध्वस्त किये (ऋ. ७.१८; १.५४; १३०)। इसका प्रमुख शत्रु दिवोदास अतिथिग्व था, जिसके कहने पर इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. १.५१)। इसका वध करने के लिए, मरुतों ने एवं अश्विनों ने इंद्र की सहायता की थी (ऋ. ३.४७; १.११२.१४)।

ऋग्वेद में अन्यत्र, बृहस्पति के द्वारा इसके दुर्ग ध्वस्त किये जाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. २.२४)।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रन्थों में इसे कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (भा. ६.१०.१९)। यह वृत्रासुर का अनुयायी था, जिस कारण इंद्र-वृत्र युद्ध में इंद्र ने इसका वध किया (म. सौ. ११.२२)। अपनी मृत्यु के पूर्व इंद्र को इसने ब्राह्मण-माहात्म्य समझाया था (म. अनु. ३६.४-११)।

धर्म ने अपने समर्थन के लिये, इसके अनेकानेक उद्धरणों का उपयोग किया था (म. उ. ७२.२२)। इससे प्रतीत होता है कि, यह स्वयं एक राजनीतिज्ञ, एवं ग्रन्थकार भी था। योगवासिष्ठ में इसकी कथा 'ब्राह्मत्वभाव' के तत्त्व का प्रतिपादन करने के लिए दी गयी है (यो. वा. ४.२५)।

२. कंस का अनुयायी एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम मायावती था। कृष्ण-पुत्र प्रद्युम्न के द्वारा अपना वध होने की वार्ता एक बार इसे आकाशवाणी से ज्ञात हुई जिस कारण, इसने उसका अर्भकावस्था में वध करना चाहा। किंतु इसकी पत्नी मायावती ने प्रद्युम्न की जान बचायी। आगे चल कर प्रद्युम्न ने 'महामाया विद्या' की सहायता से इसका, पुत्र आमात्य, एवं सेनापतियों के साथ वध किया (म. अनु. १४.२८; विष्णु. २७; भा. १०.३६.३६; प्रद्युम्न एवं मायावती देखिये)।

पुराणों में इसके सौ पुत्रों का निर्देश प्राप्त है, किंतु इसकी पत्नी मायावती संतानरहित होने का भी निर्देश प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, इसकी मायावती के अतिरिक्त कई अन्य पत्नियाँ भी थीं।

३. एक दानव राजा, जो हिरण्याक्ष का पुत्र था (भा. ७.२.४)। बलि वैरोचन के साथ, वामन ने इसे भी पाताललोक में ढकेल दिया (ब्रह्मांड. ३.४.६)।

४. त्रिपुर नगरी का एक असुर, जिसने इंद्रबलि-युद्ध में बलि के पक्ष में भाग लिया था (भा. ८.६.३१)।

५. कीकट देश का एक अंत्यज, जो शालिग्राम तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (पद्म. पा. २०)।

शंबसादन--एक राक्षस, जो केसरी वानर के द्वारा मारा गया।

शंबुक अथवा शंबूक--एक शूद्र, जो अपना शूद्र-धर्म छोड़ कर तपस्वी बना था। महाभारत एवं रामायण में इसकी कथा प्राप्त है, जहाँ इसे क्रमशः 'शंबुक,' एवं 'शंबूक' कहा गया है (म. शां. १४९.६२; वा. रा. उ. ७६.४)।

त्रैवर्णिकों की सेवा करने का अपना शूद्रधर्म त्याग कर, यह जनस्थान में तपस्या करने लगा। इसके इस पापकर्म के कारण, एक सोलह वर्ष के ब्राह्मण पुत्र की असामयिक मृत्यु हो गयी। अपने इस पुत्र की मृत्यु की तकरार ब्राह्मण

ने राम के सम्मुख पेश की, एवं एक राजा के नाते उसे इस घटना के लिए दोषी ठहराया।

इसी समय राम को ज्ञात हुआ कि, शंबूक के वर्णांतर के पाप के कारण, ब्राह्मणपुत्र के अपमृत्यु की घटना घटित हुई है। यह ज्ञात होते ही, राम विमान में बैठ कर दक्षिणापथ में शैवलक के उत्तर में स्थित जनस्थान में गया, एवं वहाँ तपस्या करनेवाले इस शूद्रजातीय मुनि का उसने वध किया। इसका वध होते ही मृत हुआ ब्राह्मणपुत्र पुनः जीवित हुआ।

इसी प्रकार की एक कथा मांधातृ राजा के संबंध में भी प्राप्त है, किंतु वहाँ मांधातृ राजा ने शूद्र मुनि का वध न कर, अपनी तपस्या के प्रभाव से ब्राह्मणपुत्र को पुनः जीवित करने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (पद्म. उ. ५७)।

शंबूककथा का अन्वयार्थ--चातुर्वर्ण्य में हर एक वर्ण को अपना नियत कर्तव्य निभाना चाहिये, एवं वर्णान्तर नहीं करना चाहिये, क्योंकि, ऐसे वर्णान्तर से समाज की रचना बिगड़ जाने की संभावना है, इस तत्त्व के प्रतिपादन के लिए शंबूक की कथा महाभारत एवं रामायण में दी गयी है।

बौद्ध धर्म जैसे संन्यासधर्म को प्रधानता देनेवाले धर्म के प्रचार के पश्चात्, समाज के हरएक व्यक्ति का झुकाव अपना नियत कर्तव्य छोड़ कर, संन्यासधर्म को स्वीकार करने की ओर होने लगा। उस समय समाज की संन्यासप्रवणता कम करने के हेतु उपर्युक्त कथा की रचना की गयी होगी, जिसमें तपश्चर्या के समान अनुत्पादक व्यवहार की कटु आलोचना की गयी है।

आगे चल कर पौराणिक साहित्य के रचनाकाल में भक्तिमार्ग की प्रबलता समाज में पुनः एक बार बढ़ गयी, जिस समय इस कथा को बदल कर उसका परिवर्तन तपस्याप्रधान कथा में किया जाने लगा, जिसका यथार्थ रूप मांधातृ की कथा में पाया जाता है।

२. सहिष्णु नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. एक आदित्य, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)।

शंभु--कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

२. (सो. नाभाग.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंबरीष राजा का कनिष्ठ पुत्र था (भा. ९.६.१)।

३. एक अग्नि, जो तप नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २११.५)।

४. एक यादव राजकुमार, जो श्रीकृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक था (म. अनु. १४.३३)।

५. एक धर्मप्रवण प्राचीन राजा, जिसने जीवन में कभी मांस नहीं खाया था (म. अनु. ११५.६६)।

६. ग्यारह रुद्रों में से एक (मत्स्य. १५३.१९)।

७. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का इंद्र, जो विष्वक्सेन का मित्र था (भा. ८.१३.२२)।

८. शुक एवं पीवरी का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.८.९३)।

९. सत्य देवो में से एक।

१०. सुख देवों में से एक।

११. विरोचन दैत्य के छः पुत्रों में से एक (वायु. ६७.७६-८१)।

१२. एक राक्षस, जो संह्लाद राक्षस का पुत्र था। इसके पुत्रों के नाम राजाज एवं गोम थे (ब्रह्मांड. ३. ५.४०)।

१३. एक ऋषि, जिसने राम को श्राद्धविधि, भस्ममाहात्म्य एवं शिवपूजाविधि आदि बतायी थी (पद्म. पा. १०६)।

१४. एक ब्राह्मण, जो पुराणों से 'शलाका प्रश्न' कथन करने के कार्य में प्रवीण था (पद्म. पा. १०४)।

शंभुवा--धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुबल राजा की कन्या, एवं गांधारी की बहन थी (म. आ. १०४. १११३* पंक्ति. ५)।

शंमद् आंगिरस--एक सामद्रष्टा ऋषि (पं. ब्रा. १५.५.१०-११)। अपने साम के कारण इसे स्वर्ग की प्राप्ति हुई।

शम्याक--शंपाक नामक ब्राह्मण का नामांतर।

शम्यु बार्हस्पत्य--एक आचार्य (श. ब्रा. १.९.१. २५)।

शयु--एक ऋषि, जो अश्विनों का अश्रित था। अश्विनों ने इसके वंध्या गाय को दुग्धा बनाया था (ऋ. १.११२. १६; ११६.२२; ११७.२०)।

शर्याति--शर्यात राजा का नामांतर।

शर आर्चत्क--एक ऋषि, जिसे अश्विनों ने गहरे कुएँ से पानी निकाल कर दिया था (ऋ. १.११६.२२)। संभवतः 'आर्चत्क' उसका पैतृक नाम (=ऋचत्क का पुत्र) न हो कर, केवल इसकी उपाधि मात्र ही थी।

शर शौरदेव्य--एक राजा, जिसने तीन ऋषियों को एक ही बछड़ा दान में दिया था (ऋ. ८.७०.१३-१५)। ऋग्वेद में इसकी यह 'दानस्तुति' व्यंगात्मक प्रतीत

होती है (पिशेल, वेदिशे स्टूडियन. १.५-७)। शूरदेव का पुत्र होने के कारण, इसे 'शौरदेव्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शरगुल्म--रामसेना का एक वानर (वा. रा. कि. ४१.३)।

शरण—वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.६)।

शरद्वत्--(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सेतु राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४८.६)। इसे 'अंगार' नामांतर भी प्राप्त था (अंगार देखिये)।

२. एक ऋषि, जो प्रायोपवेशन करनेवाले परिक्षित् राजा से मिलने आया था।

३. एक ऋषि, जिसे त्रिधामा ऋषि ने 'वायुपुराण' कथन किया था, जो इसने आगे चल कर त्रिविष्ट को कथन किया था (वायु. १०३.६१)।

४. सावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

५. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं मंत्रकार, जो अंगिरस् ऋषि का पुत्र था।

६. गौतमगोत्रीय एक ऋषि, जो उतथ्य ऋषि का शिष्य था (वायु. ६४.२६)।

७. गौतम ऋषि का नामान्तर (गौतम देखिये)।

शरद्वत् गौतम--एक महर्षि, जो गौतम ऋषि एवं अहल्या का पुत्र था। वायु में इसे 'शारद्वत' कहा गया है (वायु. ९९.२०१)।

तपोभंग--यह शुरू से ही अत्यंत बुद्धिमान् था, तथा वेदाध्ययन के साथ-साथ धनुर्वेद में भी प्रवीण था। इसकी तपस्या से डर कर, इंद्र ने तपोभंग करने के लिए जालपदी नामक अप्सरा इसके पास भेज दी। उसे देख कर इसके धनुष एवं बाण पृथ्वी पर गिर पड़े, एवं इसका वीर्य दर्भासन पर गिर पड़ा।

कृप एवं कृपी का जन्म--पश्चात् यह धनुर्बाण, मृग-चर्म, आश्रम आदि छोड़ कर वहाँ से चला गया। दर्भासन पर पड़े हुए इसके वीर्य के दो भाग हुए, जिनसे आगे चल कर एक पुत्र एवं एक कन्या उत्पन्न हुई। उन दोनों का सुविख्यात कुरुवंशीय राजा शांतनु ने कृपापूर्वक पालन किया, जिस कारण उन्हें 'कृप' एवं 'कृपी' नाम प्राप्त हुए। इसकी इन संतानों में से कृप कौरव पांण्डवों का आचार्य बन गया, एवं कृपी का विवाह द्रोणाचार्य के साथ हुआ (म. आ. १२०)। पश्चात् इसने गुप्तरूप से कृपाचार्य को उसके गोत्र आदि का परिचय दिया, एवं उसे चार प्रकार के धनुर्वेद एवं शस्त्र-शास्त्रों की शिक्षा प्रदान की।

शरद्वसु--शूलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

शरभ--एक ऋषि, जिसे इंद्र ने विपुल धन प्रदान किया था (ऋ. ८.१००.६)।

२. चेदिराज धृष्टकेतु का भाई, जो शिशुपाल के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ४९.४३)।

युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय, शुक्तिसा नगरी में राज्य करनेवाले शरभ ने सर्वप्रथम अर्जुन से युद्ध करना चाहा। किंतु पश्चात् इसने अर्जुन को करभार अर्पण कर, अश्वमेधीय अश्व की विधिपूर्वक पूजा की (म. आश्व. ८४.३)।

३. गांधारराज सुबल का पुत्र, जो शकुनि के ग्यारह भाइयों में से एक था। भीमसेन के द्वारा किये गये रात्रियुद्ध में उसने इसका वध किया (म. द्रो. १३२.२१)।

४. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के प्रमुख चौंतीस पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.२६)।

५. तक्षककुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९ पाठ.)।

६. ऐरावतकुल में उत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

७. यमसभा का एक ऋषि (म. स. ८.१४)।

८. यम के पाँच पुत्रों में से एक।

९. एक रामपक्षीय वानर, जो साल्वेय पर्वत का निवासी था (वा. रा. यु. २६.३०)।

१०. एक विंध्यपर्वतवासी वानरजाति, जो हरि एवं पुलह की संतान थी (ब्रह्मांड. ३.७.१७४)।

११. एक वानर, जो जांबवत् वानर का पुत्र था। आगे चल कर इसीसे ही 'शरभ' नामक वानरजाति का निर्माण हुआ (ब्रह्मांड. ३.७.३०४)।

१२. कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (वायु. ९६.२३७)।

१३. शिव की क्रोधमूर्ति वीरभद्र का एक अवतार, जो उसने नृसिंह को पराजित करने के लिए धारण किया था। इसने नृसिंह को परास्त कर, उसका चमड़ा एक वसन के नाते अपने शरीर पर ओढ लिया, जिस कारण शिव को 'नृसिंहकृत्तिवसन' उपाधि प्राप्त हुई (शिव. शत. १२)।

१४. एक ऋषि, जिसे 'निगमोद्बोधक तीर्थ' में स्नान करने के कारण, शिवकर्मन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (पद्म. उ. २०१; २०४-२०५)। इसीके कारण विकट नामक राक्षस का उद्धार हुआ था (विकट ४. देखिये)।

शरभंग—गौतम कुलोत्पन्न एक ब्रह्मर्षि, जो दंडकारण्य में तप करता था। दंडकारण्य में गोदावरी नदी के तट पर इसका आश्रम था (म. व. ८३.३९; २६१.४०)। वाल्मीकि रामायण में इसका आश्रम मंदाकिनी नदी के तट पर स्थित होने का निर्देश प्राप्त है (वा. रा. अर. ५.३६)। किंतु वहाँ 'मंदाकिनी' का संकेत 'गोदावरी' नदी की ओर ही होना संभव अधिक प्रतीत होता है। महाभारत में अन्यत्र इसका आश्रमस्थान उत्तराखंड में बताया गया है (म. व. ८८.८ पाठ.)।

तपःसामर्थ्य—विराध राक्षस के कथनानुसार, राम दाशरथि अपने वनवासकाल में इससे मिलने के लिए इसके आश्रम में आया था। उस समय इसके तपः-सामर्थ्य से प्रसन्न हो कर, इंद्र स्वयं अपना रथ ले कर इसे ब्रह्मलोक में ले जाने के लिए उपस्थित हुआ था। किंतु राम के दर्शन की अभिलाषा मन में रखनेवाले इस ऋषि ने इंद्र का यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया, एवं यह राम की प्रतीक्षा करते आश्रम में ही बैठा रहा।

राम से भेंट--राम के इसके आश्रम में आते ही, इसने उसका उचित आदर-सत्कार किया, एवं अपने तपः-सामर्थ्य की सहायता से प्राप्त होनेवाले स्वर्गलोक एवं ब्रह्मलोक को स्वीकार करने की प्रार्थना राम से इसने की। किंतु राम ने इसका यह प्रस्ताव अस्वीकार कर दिया, एवं स्वयं के ही तपःसाधन से स्वर्गलोक प्राप्त करने का अपना निर्धार प्रकट किया।

तदुपरांत राम ने इससे तपस्या के लिए सुयोग्य स्थान दर्शाने की प्रार्थना की। मंदाकिनी नदी के तट पर सुतीक्ष्ण ऋषि के आश्रम के पास तपस्या करने की सूचना राम को इसने प्रदान की। पश्चात् इसने अग्नि में अपना शरीर झोंक दिया, एवं इस प्रकार यह स्वर्गलोक चला गया (वा. रा. अर. ५)।

शरयु--वीर नामक अग्नि की पत्नी।

शरारि--एक वानर, जो हनुमत् के साथ सीताशोध के लिए दक्षिण दिशा की ओर गया था (वा. रा. कि. ४१)।

शरासन--धृतराष्ट्रपुत्र 'चित्रशरासन' का नामांतर (म. द्रो. १११.१९)।

शरीर--एक आचार्य, जो वेदमित्र शाकल्य का शिष्य था (विष्णु. ३.४.२२)।

शरू--एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था (म. आ. ११४.४७ पाठ.)।

शरूथ—(सो. तुर्वसु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार दुष्कृत (दुष्यंत) राजा का पुत्र था (वायु. ९९.५)। पाठभेद-(ब्रह्मांड पुराण)-'सरुप्य'।

शर्कर—शिशुमार ऋषि का नामांतर (शिशुमार १. देखिये)।

शर्मिन्--अगस्त्यकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जो गंगा-यमुना नदियों के बीच यामुन पर्वत के तलहटी में स्थित पर्णशाला नामक ग्राम में रहता था। 'तिलांजलि दान' का माहात्म्य बताने के लिए, इसकी कथा भीष्म ने युधिष्ठिर को कथन की थी (म. अनु. ६८)।

पर्णशाला ग्राम में शर्मिन् नाम के ही दो ब्राह्मण रहते थे। एक बार यम ने अपने एक दूत को इसे पकड़ कर लाने के लिए कहा, किंतु उसने गलती से इसीके नाम के अन्य ब्राह्मण को पकड़ कर यम के सम्मुख पेश किया। अपने दूत की भूल यम को ज्ञात होते ही, उसने उस ब्राह्मण को अन्न, जल, तिल के दान का महत्त्व कथन किया, एवं उसे सम्मानपूर्वक विदा किया।

पश्चात् यमदूत इसे पकड़ कर ले आये। किंतु इसके मृत्युयोग की घटिका बीत जाने के कारण, यम ने इसे भी पूर्वोक्त दान का महत्त्व कथन किया, एवं इसे बिदा कर दिया।

शर्मिष्ठा--वृषपर्वन् नामक दैत्य की कन्या, जो ययाति राजा की अत्यंत प्रिय द्वितीय पत्नी थी (देवयानी एवं ययाति देखिये)।

इसने अपने असुर जाति के कल्याण के लिए देवयानी का दास्यत्व स्वीकार लिया था (म. आ. ७३-७५; भा. ९.१८; मत्स्य २७-२९)। किंतु आगे चल कर, ययाति राजा ने देवयानी के साथ इसे भी अपनी रानी बनाया। ययाति से इसे अनु, द्रुह्यु, एवं पूरु नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए।

वाल्मीकि रामायण एवं वायु में इसका पूरु नामक केवल एक ही पुत्र दिया गया है (वा. रा. उ. ५८.६९; वायु. २.७)।

शर्यात मानव—एक सुविख्यात यज्ञकर्ता राजा, जो अश्विनों का कृपापात्र था (ऋ. १.११२.१७)। एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.९२), किंतु वहाँ इसे 'शार्यात' कहा गया है। शतपथ ब्राह्मण एवं पुराणों में इसे क्रमशः 'शर्यात', एवं 'शर्याति' कहा गया है (श. ब्रा. ४.१.५.२)। मनु का वंशज होने के कारण, इसे 'मानव' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (जै. उ. ब्रा. ४.७.१; ८.३.५)।

अश्वमेधयज्ञ—यह इंद्र का मित्र था, एवं इन्द्र इसके घर सोम पीने के लिए आया करता था (ऋ. १.५१. १२; ३.५१.७)। भृगुपुत्र च्यवन ऋषि ने इसे राज्याभिषेक किया था। आगे चल कर इसने बड़ा साम्राज्य संपादन किया, एवं च्यवन ऋषि को ऋत्विज बना कर एक अश्वमेध यज्ञ का भी, आयोजन किया। इसे देवों के यज्ञ में 'गृहपतित्व' का महत्त्वपूर्ण स्थान भी प्राप्त हो चुका था।

इसकी कन्या का नाम 'शार्याती सुकन्या' था, जिसका विवाह इसने च्यवन ऋषि से कराया था। इस विवाह के कारण च्यवन इस पर अत्यत प्रसन्न हुआ था। विवाह के समय, च्यवन अत्यत बूढा था, किंतु पश्चात् अश्विनों ने उसे यौवन प्रदान किया था।

पौराणिक साहित्य में—इन ग्रंथों में इसे वैवस्वत मनु का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी पत्नी का नाम स्थविष्ठा कहा गया है। अपनी इस पत्नी से इसे आनर्त एवं सुकन्या नामक जुड़वीं संतान उत्पन्न हुई थी। पौराणिक साहित्य में इसे 'शार्यात' 'शर्याति' 'शय्याति' आदि अनेक नामांतर दिये गये हैं।

यह अत्यंत शूर, एवं वेदविद्यापारंगत राजा था। आंगिरस ऋषि के द्वारा किये सत्र में, द्वितीय दिन के सारे कर्म एक ऋत्विज के नाते इसने निभायें थे। देवी को प्रसन्न करने के लिए भी इसने तपस्या की थी।

स्त्रियों की परीक्षा—इसका प्रमुख पुरोहित मधुच्छंदस् वैश्वामित्र था। एक बार यह अपने पुरोहित के साथ, मृगया करने जा रहा था। मधुच्छंदस् के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने मृगयागमन स्थगित किया। किन्तु अपनी राजस्त्रियों की परीक्षा लेने के लिए, अपने एवं मधुच्छंदस् के वध की झूटी वार्ता अपने नगर में पहुँचा दी। इसके वध की वार्ता सुन कर इसकी दोनों ही पत्नियाँ तत्काल मृत हुई। आगे चल कर, गोमती नदी के तीर पर तपस्या कर इसने अपनी दोनों पत्नियों को पुनः जीवित किया (ब्रह्म. १३८)।

च्यवन ऋषि से भेंट—एक बार यह अपने सुकन्या नामक कन्या के साथ च्यवन ऋषि के आश्रम में गया। वहाँ इसकी कन्या ने असावधानी से च्यवन ऋषि की दोनों आँखें फोड़ डालीं। आगे चल कर, अनुतापदग्ध हो कर इसने ऋषि से क्षमा माँगी, एवं अपनी कन्या सुकन्या उसे विवाह में दे दी। अश्विनों की कृपा से च्यवन ऋषि की आँखें एवं गततारुण्य उसे पुनः प्राप्त हुआ (भा. ९.३.१८; १२.३.१०; च्यवन देखिये)।

परिवार—इसके उत्तानबर्हि, आनर्त एवं भूरिषेण नामक तीन पुत्र थे (भा. ९.३)। आगे चल कर, इसी के ही वंश में हैहय एवं तालजंघ नामक दो सुविख्यात राजा उत्पन्न हुए थे (म. अनु. ३०.६-७)।

शर्याति—(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो प्राचीन्वत् राजा का पुत्र, एवं अहंयाति राजा का पिता था (म. आ. ९०.१४)। इसके नाम के लिए 'अहंपति', 'शय्याति' पाठभेद प्राप्त हैं। इसकी माता का नाम अश्मकी था, एवं त्रिशंकु राजा की कन्या इसकी पत्नी थी।

२. (सो. आयु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार नहुष राजा का पुत्र था (मत्स्य. २४.१५)।

३. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजकुमार, जो अक्रूर एवं अश्विनी का पुत्र था (मत्स्य. ४५.३३)।

४. एक सुविख्यात यज्ञकर्ता राजा, जो वैवस्वत मनु राजा का पुत्र था (शर्यात मानव देखिये)।

शर्व—शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (भा. ६.१५.२८)।

शर्वदत्त गार्ग्य—एक आचार्य। शर्वदेव के द्वारा प्रदान किये जाने के कारण, इसे 'शर्वदत्त' नाम प्राप्त हुआ था (वं. ब्रा. १)।

शर्वरी—दोष नामक वसु की पत्नी।

शल—(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा, जो परिक्षित् एवं सुशोभना के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम दल एवं बल थे।

वामदेव का शाप—एक बार यह शिकार करने वन में गया। वहाँ इसके रथ के अश्व थक गये, जिस कारण वहाँ समीप ही स्थित वामदेव ऋषि के आश्रम में यह गया, एवं उसके अश्व इसने थोडे समय के लिए माँग लिये। वामदेव ने इसे यह शर्त बतायी थी कि, अश्वों का काम होते ही वे उसे वापस मिलने चाहिये।

आगे चल कर वचनभंग कर, इसने वामदेव के अश्व वापस करने से इन्कार किया। इतना ही नहीं,

वे अश्व वामदेव के न हो कर, स्वयं के है, ऐसा मिथ्या वचन यह कहने लगा। इस कारण क्रुद्ध हो कर वामदेव ने चार राक्षस निर्माण किये, एवं उन्हींके द्वारा इसका वध करवाया। इसके वध के पश्चात् इसका भाई दल अयोध्या का राजा बन गया (म. व. १९०.६-९)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो कुरुवंशीय सोमदत्त राजा का पुत्र, एवं भूरिश्रवस् राजा का भाई था। इसे 'सांयमनि' पैतृक नाम प्राप्त था। द्रौपदी के स्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये गरुडव्यूह के वामभाग में खड़ा था। इसने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध किया था:—१. अभिमन्यु (म. द्रो. ३६.७); २. द्रौपदी के पुत्र (म. द्रो. ८१.१५)। अंत में श्रुतकर्मन् के द्वारा इसका वध हुआ (म. द्रो. ८३.१०)।

३. धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीम के द्वारा मारा गया था (म. क. ६२.५)।

४. वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५ पाठ.)।

५. एक असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.६.१९)। परशुराम ने इसका वध किया।

६. कंसपक्षीय एक पहलवान, जो कृष्ण के द्वारा मारा गया (भा. १.१५.१६)।

७. एक असुर, जो वृक एवं दुर्वाक्षी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४३)।

८. सुतहोत्र राजा का पुत्र (वायु. ९२.३)।

शलकर—तक्षककुलोत्पन्न एक सर्प (म. आ. ५२.८)।

शलंक--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार (पाणिनि देखिये)।

शलभ—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

२. एक राक्षससमूह, जो यामिनी एवं तार्क्ष्य कश्यप की संतान मानी जाती हैं।

३. चेदि देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ४०.५१)।

४. एक सैंहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक। परशुराम ने इसका वध किया।

शलभा—अत्रि ऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८. ७४-८७)।

शल्य—बाह्लीक एवं मद्र देश का सुविख्यात राजा, जो नकुल-सहदेव की माता माद्री का भाई, एवं पाण्डवों का मामा था। इसके पिता का नाम ऋतायन था (म. मी. ५८.१४)।

पाण्डवों का अत्यंत निकट का रिश्तेदार होते हुए भी, भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। संभवतः इसी कारण, महाभारत में इसे हिरण्यकशिपु के द्वितीय पुत्र 'संह्राद' के आसुरी अंश से उत्पन्न एक दुष्ट पुरुष कहा गया है (म. आ. ६१.६)।

महाभारतकाल में मद्र एवं बाह्लीक देश हीन जाति के लोग माने जाते थे, इसका प्रत्यंतर शल्य के चरित्र में अनेक बार प्राप्त है। यद्यपि शल्य अत्यंत पराक्रमी, 'बाह्लीकपुंगव,' एवं पांडवों का रिश्तेदार था, फिर भी मद्रदेशीय होने के कारण इसे जीवन भर उपहासात्मक वचन एवं अपमान सहने पड़े, जिसकी चरम सीमा भारतीय युद्ध के समय हुए 'कर्ण-शल्य संवाद' में पायी जाती है।

माद्री का विवाह--इसकी बहन माद्री अत्यंत स्वरूपसुंदर थी। इसी कारण हस्तिनापुर के राजा पांडु का विवाह उससे करने का प्रस्ताव भीष्म ने इसके सामने रखा। उस समय मद्र देश में प्रचलित रिवाज के अनुसार कन्यादान के शुल्क की माँग इसने भीष्म से की। भीष्म के इस शर्त को मान्यता देने पर इसने माद्री का विवाह पांडु से कराया।

द्रौपदीस्वयंवर में--अपने रुक्मांगद एवं रुक्मरथ नामक दो पुत्रों के साथ यह द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था। उस समय यह मत्स्यभेद के लिए धनुष तक न चढ़ा सका था, जिस कारण स्वयंवरमंडप में इसे लज्जित होना पड़ा (म. आ. १७७.१३)। इसी मंडप में, इसका भीमसेन से युद्ध भी हुआ था, जिसमें यह उससे पराजित हुआ (म. आ. १८१.२४)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में--नकुल के द्वारा किये गये पश्चिम दिग्विजय के समय, इसने शाकलनगरी में उसका अत्यंत उत्कृष्ट स्वागत किया, एवं उसे अनेकानेक भेंट वस्तुएँ प्रदान की। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भी यह उपस्थित था, जहाँ शिशुपाल ने इसे श्रीकृष्ण से भी अधिक श्रेष्ठ ठहराने की कोशिश की थी किंतु अपने इस प्रयत्न

में वह असफल रहा। इस समारोह में इसने युधिष्ठिर को एक रत्नजडित तलवार, एवं एक सुवर्णकलश प्रदान किया था। युधिष्ठिर एवं शकुनि के दरम्यान हुई द्युतक्रीड़ा में भी यह उपस्थित था।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध के समय, पांडवों ने अपनी ओर से इसे रणनिमंत्रण भेजा था। नकुल सहदेवों का मामा होने के कारण, इसका पांडवों के पक्ष में शामिल होना स्वाभाविक भी था। किंतु पांडव पक्ष में दाखल होने के लिए एक अक्षौहिणी सेना के साथ निकले हुए शल्य को दुर्योधन ने राह में ही बड़ी चतुरता से रोका, एवं इसका इतना भव्य आदरसत्कार किया कि, यह पांडवों का पक्ष छोड़ कर कौरवपक्ष में शामिल हुआ। पश्चात् यह युधिष्ठिर के पास गया, एवं इसने कौरव पक्ष में रह कर ही युद्ध करने का अपना निश्चय उसे विदित किया (म. उ. ८. २५-२७)। उस समय युधिष्ठिर ने इसे कौरवपक्षीय योद्धाओं का, एवं विशेषतः कर्ण का तेजोभंग करने की प्रार्थना की। इसने युधिष्ठिर की यह प्रार्थना मान्य कर उससे 'इंद्रविजय' नामक उपाख्यान भी सुनाया। इसी कारण महाभारत में शल्य को 'उपहित' (शत्रु की वंचना करने के लिए नियुक्त) कहा गया है।

भारतीय युद्ध में इसकी श्रेणी 'अतिरथी' थी, एवं हर एक युद्ध में यह कृष्ण के साथ स्पर्धा करने में प्रयत्नशील रहता था।

युद्धप्रसंग--भारतीय युद्ध में इसने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध किया था :--१. विराटपुत्र उत्तर (म. भी. ४५.४१) २. विराटभ्राता शतानीक (म. द्रो. १४२.२७); ३. युधिष्ठिर (म. भी. ४३.२६)।

इसी युद्ध में यह निम्नलिखित योद्धाओं के हाथों पराजित हुआ था :—(१) भीमसेन (म. भी. ६०. २३); (२) सहदेव (म. भी. ७९.५०); (३) अभिमन्यु (म. द्रो. ४७.१३)।

कर्ण का सारथ्य—द्रोण वध के पश्चात्, कर्ण कौरवसेना का सेनापति बन गया। उस समय इससे अपना सारथी बनने की प्रार्थना कर्ण ने की। इसमें अपना अपमान समझ कर इसने इस प्रस्ताव को अमान्य कर दिया। किंतु अंत में स्वयं दुर्योधन के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, इसने कर्ण का सारथ्य स्वीकार लिया। किंतु यह शर्त रक्खी कि, सारथ्यकर्म करते समय जो भी कुछ भलाबुरा यह कर्ण से कहेगा, वह उसे सुनना पड़ेगा (म. क. २२.२५)।

कर्ण-शल्यसंवाद-दूसरे दिन कर्ण एवं अर्जुन के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने कर्ण से नाना प्रकार के उपहासपूर्ण वचन कह कर, उसका तेजोभंग किया। चित्रसेन गंधर्व के युद्ध में कर्ण के द्वारा किया गया पलायन, विराटपुत्र उत्तर के द्वारा किया गया उसका पराजय आदि कर्ण के जीवन के अनेकानेक लांछनास्पद प्रसंगों का स्मरण इसने उसे दिलाया। अर्जुन के तुलना में कर्ण एक 'काक' के समान क्षुद्र एवं नीच है ऐसा कह कर, 'हंसकाकीय' नामक एक व्यंजनात्मक उपाख्यान भी उसे सुनाया (म. क. २६.२७-२९)।

इस समय, कर्ण ने भी व्यक्तिशः इसकी एवं बाह्लिक देश में रहनेवाले लोगों की यथेच्छ निंदा की, एवं इन्हें चोर, हीन जाति के, व्यभिचारी आदि अनेकानेक भलेबुरे शब्द कहे। पश्चात् दुर्योधन ने मध्यस्थता कर, इन दोनों में शांतता प्रस्थापित की (म. क. ३०)। आगे चल कर, कर्ण एवं भीम के दरम्यान हुए युद्ध में, इसने कर्ण की जान भी बचायी थी (म. क. ६२.८.१४)।

सेनापति शल्य--कर्णवध के पश्चात्, यह कौरवसेना का सेनापति बन गया (म. श. १.८)। यह केवल आधा दिन के लिए ही कौरवों का सेनापति रहा। अन्त में माध्याह्न के समय, यह युधिष्ठिर के द्वारा मारा गया (म. श. १.१०; १६.५९-६५)। इसकी मृत्यु पौष कृष्ण अमावस्या के दिन हुई।

शवकर्ण—शिवकर्ण नामक वसिष्ठगोत्रोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

शवस्—एक आचार्य, जो अग्निभू काश्यप नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम देवतर शावसायन था (वं. ब्रा. २)।

शश भारद्वाज--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५२)।

शशक--एक जातिसमूह, जो कर्ण के दिग्विजय में परास्त हुआ था (म. व. परि. २४.७०)।

शशकर्ण काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.९)।

शशबिंदु--(सो. सह.) एक सुविख्यात यादववंशीय चक्रवर्ती राजा, जो महातपस्वी था (वायु. ९५.१९)। यह चित्ररथ राजा का पुत्र था।

नारद के द्वारा संजय राजा को सोलह प्रातःस्मरणीय राजाओं के जो आख्यान सुनाये गये थे, उनमें यह भी एक था (म. द्रो. परि १. क्र. ८ पंक्ति. ६२३-६४५; शां. २९.९८-१०३; २०१.११)। संसार के श्रेष्ठतम

एवं पुण्यशील राजा भी मृत्यु से नहीं बच सकते हैं, इस तत्त्व के प्रतिपादन के लिए नारद ने इसका जीवन-चरित्र संजय को सुनाया था। रुद्रेश्वर-लिंग की आराधना करने के कारण इसे राजकुल में जन्म प्राप्त हुआ था (स्कंद. ९.१.३९)।

परिवार—इसकी कुल दस हज़ार स्त्रियाँ थीं, जिनमें से हर एक स्त्री से इसे दस हज़ार पुत्र उत्पन्न हुएं थे (म. शां. २९.९८-९९)। इसके पुत्रों में पृथुश्रवस्, पृथुकीर्ति, एवं पृथुयशस् प्रमुख थे। इसकी कन्या का नाम बिंदुमती था, जिसका विवाह मांधातृ राजा से हुआ था (भा. ९.६)।

इसकी संतानों की संख्या के संबंध में अतिशयोक्त वर्णन भागवतादि पुराणों में प्राप्त है, जहाँ इसकी संतानों की कुल संख्या एक अब्ज बतायी गयी है (भा. ९.२३. ३१-३३)। इस प्रकार, इस सृष्टि की सारी प्रजा शशबिंदु की ही संतान कही गयी है।

शशलोमन्--एक राजा, जिसने कुरुक्षेत्र के तपोवन में तप कर के स्वर्ग प्राप्त कर लिया था (म. आश्व. २६.१४)।

शशाद--(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जिसे 'विकुक्षि' नामांतर भी प्राप्त था (म. व. १९३.१)। यह इक्ष्वाकु राजा के सौ पुत्रों में से ज्येष्ठ पुत्र था, एवं उसीके पश्चात् राजगद्दी पर बैठा था (भा. ९.६.६-११)।

इक्ष्वाकु का शाप—एक बार इसके पिता ने इसे वन में जा कर कुछ मांस लाने के लिए कहा, जो उसे 'अष्टका श्राद्ध' करने के लिए आवश्यक था। अपने पिता की आज्ञा के अनुसार यह वन में गया, एवं इसने दस हज़ार प्राणियों का वध किया। पश्चात् अत्यधिक क्षुधा के कारण, यज्ञार्थ इकट्ठा किये गये मांस में से खरगोश का थोड़ासा मांस इसने भक्षण किया। यह ज्ञात होते ही इसके पिता ने इसे राज्य से बाहर निकाल दिया, एवं इसे 'शशाद' व्यंजनात्मक नाम रख दिया।

अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् यह अयोध्या के राजसिंहासन पर आरुढ़ हुआ, एवं शशाद नाम से ही राज्य करने लगा।

परिवार—इसके कुल पाँच सौ पुत्र थे, जिन में पुरंजय प्रमुख था (भा. ९.६.६-१२)। मत्स्य के अनुसार, इसे कुल १६३ पुत्र थे, जिन में से पंद्रह पुत्र मेरु पर्वत के उत्तर भाग में, एवं उर्वरित १४८ मेरु के दक्षिण में स्थित प्रदेश में राज्य करने लगे। मेरु के दक्षिण में राज्य करनेवाले इसके पुत्रों में 'ककुत्स्थ' प्रमुख था (मत्स्य. ११.२६.२८)।

शशि--(सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय शुचि राजा का नामांतर (शुचि १. देखिये)। मत्स्य में इसे अंधक राजा का पुत्र कहा गया है।

शशिकला—काशिराज सुबाहु राजा की कन्या, जो सूर्यवंशीय सुदर्शन राजा की पत्नी थी।

शशीयसी—तरंत राजा की पत्नी (ऋ. अनुक्रमणी ५.६१.६)।

शश्वती आंगिरसी—एक वैदिक मंत्रद्रष्ट्री, जो आसंग नामक ऋषि की पत्नी थी (ऋ. ८.१.३४)।

शांवत्य-- एक आचार्य, जिसके यज्ञविषयक अनेकानेक मतों का निर्देश आश्वलायन गृह्यसूत्र में प्राप्त है। 'शूलगव याग' में मारे गये पशु का चमड़ा पादत्राण तैयार करने के लिए उपयोजित किया जा सकता है, ऐसा इसका अभिमत था (आश्व. गृ. ९.२४)।

शांशपायन--एक पुराणप्रवक्ता आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा का एक शिष्य था। व्यास से इसे वायुपुराण की संहिता प्राप्त हुई, जो इसने आगे चल कर अपने पुत्र एवं शिष्य रोमहर्षण सूत को प्रदान की थी (वायु. १०३.६६-६७)।

शांशपायन सुशर्मन्--एक आचार्य, जो रोमहर्षण सूत नामक आचार्य के पुराणशिष्यपरंपरा का एक प्रमुख शिष्य था (ब्रह्मांड. २.३५.६३-७०; वायु. ६१.५५-६२ अग्नि. २७२.११-१२)।

संभवतः 'शांशपायन' इसका पैतृक नाम था, जो इसे शंशप का वंश होने के कारण प्राप्त हुआ होगा।

शाकराक्ष--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकटायन--एक वैयाकरण, जो पाणिनि एवं यास्क आदि आचार्यों का पूर्वाचार्य, एवं 'उणादिसूत्रपाठ' नामक सुविख्यात व्याकरण ग्रंथ का कर्ता माना जाता है। पाणिनि के अष्टाध्यायी में इसे सारे व्याकरणकारों में श्रेष्ठ कहा गया है (अनुशाकटायनं वैयाकरणाः; पा. सू. १.४.८६-८७)। इससे प्रतीत होता है कि, पाणिनि के काल में भी यह आदरणीय वैय्याकरण माना जाता था। केशवकृत 'नानार्थार्णव' में शाकटायन को 'आदिशाब्दिक (शब्दशास्त्र का जनक) कहा गया है।

नाम--पतंजलि के व्याकरण में इसके पिता का नाम शकट दिया गया है (महा. ३.३.१)। किंतु पाणिनि के

अनुसार शकट इसके पिता का नाम न हो कर, इसके पितामह का नाम था (पा. सू. ४.१.९६)। पाणिनि के 'अष्टाध्यायी' में एवं शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य में इसे काण्ववंशीय कहा गया है।

गुरुपरंपरा—व्याकरण साहित्य में इसे काण्व ऋषि का शिष्य कहा गया है (शु. प्रातिशाख्य. ४.१२९)। किन्तु शैशिरि शिक्षा के प्रारंभ में इसे शैशिरि परंपरा का आचार्य कहा गया है, एवं इसे स्वयं शैशिरि ऋषि का शिष्य कहा गया है (शैशिरस्य तु शिष्यस्य शाकटायन एव च)

उणादि सूत्र—इस सुविख्यात व्याकरणशास्त्रीय ग्रंथ का शाकटायन प्रणयिता माना जाता है। संस्कृत भाषा में पाये जानेवाले सर्व शब्द 'धातुसाधित' (धातुओं से उत्पन्न) हैं, ऐसा इसका अभिमत था। इसी दृष्टि से लौकिक एवं वैदिक शब्दों का एवं पदों का अन्वाख्यान लगाने का सफल प्रयत्न इसने अपने 'उणादिसूत्र' में किया है। वैदिक साहित्यान्तर्गत 'प्रातिशाख्य' ग्रंथों में इसके व्याकरणविषयक मतों का निर्देश अनेक बार प्राप्त हैं (ऋ. प्रा. १७.७४७; अ. प्रा. २.२४; शु. प्रा. ३.८; ९; १२; ४.५; १२७; १८९)।

पाणिनि के सूत्रपाठ में 'उणादिसूत्रों' का निर्देश कई बार आता है, जिससे प्रतीत होता है कि, इसका यह ग्रंथ पाणिनि से भी पूर्वकालीन था। पाणिनि के पूर्वकालीन चाक्रायण चाक्रवर्मण नामक आचार्य का निर्देश भी उणादिसूत्रों में प्राप्त है।

'प्रकृति प्रत्यय' कथन करने की पद्धति सर्वप्रथम इसने ही शुरु की, जिसका अनुकरण आगे चल कर पाणिनि ने किया। फिर भी शब्दों की सिद्धि के संबंध में, पाणिनि अनेक बार अपने स्वयं का स्वतंत्र मत प्रतिपादन करता हुआ प्रतीत होता है।

गार्ग्य को छोड़ कर समस्त 'नैरुक्त' आचार्य शाकटायन को अपना आद्य आचार्य मानते हैं, एवं संस्कृत भाषा में प्राप्त समस्त नाम 'आख्यातज' समझते हैं। इसका उपसर्गविषयक एक मत 'बृहद्देवता' में पुनरुध्दृत किया गया है (बृहद्दे. २.९ .)।

उणादि सूत्र के उपलब्ध संस्करण में 'मिहिर' 'दीनार' 'स्तूप', आदि अनेकानेक बुद्धोत्तरकालीन असंस्कृत शब्दों का निर्देश प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ का उपलब्ध संस्करण प्रक्षेपयुक्त है। इस ग्रंथ की उज्ज्वलदत्त के द्वारा लिखित टीका ऑफ्रेक्ट के द्वारा प्रकाशित की गयी है, उसमें भी यही अभिमत व्यक्त किया गया है।

इसी ग्रंथ की श्वेतवनवासिन् एवं नारायण के द्वारा लिखित टीकाएँ मद्रास विश्वविद्यालय के द्वारा प्रकाशित की गयी हैं।

उणादि सूत्रों का रचयिता शाकटायन न हो कर स्वयं पाणिनि ही था, ऐसा सिद्धान्त स्व. प्रा. का. वा. पाठक के द्वारा प्रतिपादित किया गया है।

दैवतशास्त्रज्ञ—बृहद्देवता में शाकटायन के अनेकानेक दैवतशास्त्रविषयक उद्धरण प्राप्त हैं (बृहद्दे. २.१.६५; ३.१५६; ४.१३८; ६.४३; ७.६९; ८.११.९०)। इससे प्रतीत होता है कि, शाकटायन के द्वारा 'दैवतशास्त्र' विषयक कोई ग्रंथ की रचना की गयी होगी। किंतु इसके इस ग्रंथ का नाम भी आज उपलब्ध नहीं है।

इसके अतिरिक्त शौनक के 'चतुराध्यायी' में (२. २४); 'ऋक्तंत्र' में (१.१), एवं हेमाद्रि कृत 'चतुर्वर्गचिंतामणि' में शाकटायन के अभिमतों का निर्देश प्राप्त है।

अन्य ग्रंथ—उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त, इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ भी प्राप्त हैं:— १. शाकटायन स्मृति; २. शाकटायन-व्याकरण (C. C.)।

२. एक व्याकरणाचार्य, जिसका निर्देश अनंतभट्ट कृत 'शुक्लयजुर्वेद-प्रातिशाख्य भाष्य' में प्राप्त है। इस भाष्य में इसे काण्व ऋषि का शिष्य कहा गया है। 'उणादिसूत्रों' का रचयिता शाकटायन एवं यह संभवतः एक ही होंगे (शाकटायन १. देखिये)।

३. भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकदास भाडितायन—एक आचार्य, जो विचक्षण तांड्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम संवर्गजित् लामकायन था (वं. ब्रा. २)।

शाकधि—वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

शाकपूणि—एक व्याकरणाचार्य, जिसके व्याकरण-विषयक अनेकानेक मतों का निर्देश यास्क के 'निरुक्त' में प्राप्त है (नि. ३.११; ६.१४; ८.५; १२.१९; १३. १०-११)।

ऋग्वेदार्थ का ज्ञान—ऋग्वेद के मंत्रों के अर्थों का ज्ञान शाकपूणि को किस प्रकार प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक कथा यास्क के निरुक्त में प्राप्त है। एक बार शाकपूणि को वैदिक देवता के संबंध में ज्ञान प्राप्त करने की इच्छा हुई।

इसका यह मनोगत जान कर वैदिक देवता इसके सम्मुख उपस्थित हुए, एवं उन्होंने इसे ऋग्वेद की ऋचा (ऋ. १. १६४.२९), एवं उसका अर्थ कथन किया। इसीसे आगे चल कर शाकपूणि ऋग्वेद का मंत्रार्थद्रष्टा आचार्य बन गया (नि. २.८)।

शाकपूणि रथंतर--एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार, व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से इंद्रप्रमति नामक आचार्य का शिष्य था। वायु में इसे 'रथीतर' अथवा 'रथांतर', तथा ब्रह्मांड में इसे 'रथीतर' कहा गया है।

शाकपूर्ण रथीतर (रथांतर)--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से सत्यश्री नामक आचार्य का शिष्य (व्यास पाराशर्य देखिये)।

शाकंभरी--देवी का एक अवतार (देवी देखिये)।

शाकल--देवमित्र (वेदमित्र) शाकल्य नामक आचार्य के शिष्यों का सामूहिक नाम। इसी सामूहिक नाम के कारण इस शिष्यपरंपरा के आचार्य एवं उनके द्वारा संस्कारित ऋग्वेद संहिता 'शाकल शाखान्तर्गत' मानी जाती है। पाणिनि के अष्टाध्यायी में भी 'शाकल' शब्द का अर्थ भी 'शाकल्य का शिष्य' किया गया है।

ब्राह्मण ग्रंथों में--ऐतरेय ब्राह्मण में 'शाकल' शब्द का अर्थ एक प्रकार का साँप ऐसा दिया गया है, जो शाकल्य के शिष्यों की ही व्यंजना प्रतीत होती है। वहाँ अग्निष्टोम यज्ञ, रथचक्र के सदृश आदि एवं अंतविरहित होता है, इस कथन के लिए चक्राकार बैठे हुए 'शाकल' की उपमा दी गयी है (ऐ. ब्रा. ३५)।

व्याकरण ग्रंथों में--पाणिनि, कात्यायन, एवं पतंजलि के ग्रंथों में 'शाकल' का निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ४.१.१८; ३.१२८; ६.१.१२७), जहाँ सर्वत्र 'शाकल' का निर्देश एक सामूहिक नाम के नाते से प्राप्त है। ऋग्वेद प्रातिशाख्य में 'शाकल' का निर्देश अनेक बार प्राप्त है (ऋ. प्रा. ६५; ७६; ३९०; ४०३; ६३१; ६३३)।

मॅक्स मूलर आदि पाश्चात्य वैदिक अभ्यासक, शाकल को एक आचार्य मानते है, जिसने शाकलशाखान्तर्गत प्रचलित ऋकसंहिता का निर्माण किया था। किंतु यह अभिमत भारतीय वैदिक परंपरा के दृष्टि से भ्रममूलक प्रतीत होता है; क्यों कि, जैसे पहले ही कहा जा चुका है, कि शाकल नामक कोई भी आचार्य प्राचीन वैदिक परंपरा में नहीं था।

शाकल शाखा--वर्तमानकाल में प्राप्त ऋग्वेद की संहिता शाकल शाखा की मानी जाती है। वायु के अनुसार, देवमित्र (वेदमित्र, विदग्ध) शाकल्य के निम्नलिखित पाँच शाखाप्रवर्तक शिष्य थे :--१. मुद्‌गल; २. गालव; ३. शालीय, ४. वात्स्य, ५. शैशिरेय (शैशर, अथवा शैशिरी)। शाकल्य के यही पाँच शिष्य ऋग्वेद के शाखाप्रवर्तक आचार्य नाम से सुविख्यात हुए। इन आचार्यों के द्वारा प्रणीत ऋग्वेद की विभिन्न शाखाओं की जानकारी निम्नप्रकार है :--

(१) **मुद्गल शाखा**--इस शाखा की ऋग्वेद संहिता ब्राह्मण आदि ग्रंथ अप्राप्य हैं। किंतु उस शाखा का निर्देश 'प्रपंचहृदय' आदि ग्रंथों में प्राप्त हैं। इस शाखा के प्रवर्तक भर्म्याश्व मुद्गल नामक आचार्य का निर्देश ऋग्वेद एवं बृहद्देवता में प्राप्त है (ऋ. १०.१०२; बृहद्दे. ६.४६)।

इसका वंशक्रम निम्नप्रकार माना जाता है :--भृम्यश्व--मुद्‌गल--वध्र्यश्व--दिवोदास।

(२) **गालव शाखा**--इस शाखा के प्रवर्तक गालव अथवा बाभ्रव्य पांचाल का निर्देश 'अष्टाध्यायी' 'ऋक्प्रातिशाख्य', 'निरुक्त', बृहद्देवता' आदि ग्रंथों में प्राप्त है। इस शाखा की संहिता, ब्राह्मण आदि ग्रंथ अप्राप्य हैं।

(३) **शालीय शाखा**--'काशिका वृत्ति' में शालीय का निर्देश एक शाखाप्रवर्तक आचार्य के नाते प्राप्त है। किंतु इस शाखा की संहिता आदि अप्राप्य है।

(४) **वात्स्य शाखा**--पतंजलि के 'व्याकरणमहाभाष्य' में वात्सी नामक आचार्य का निर्देश प्राप्त है (महा. ४.२.१०४)। किंतु इस शाखा की संहिता आदि अप्राप्य हैं (भा २ पृ. २९७)।

(५) **शैशिरेय शाखा**--इस शाखा के संहिता का निर्देश ऋग्वेद अनुवाकानुक्रमणी में प्राप्त है। शौनक के 'अनुवाकानुक्रमणे' के अनुसार इस शाखा के संहिता में ८५ अनुवाक, १०१७ सूक्त, २००६ वर्ग एवं १०४१७ मंत्र थे।

इस शाखा का एक 'प्रातिशाख्य' भी उपलब्ध है, जो शौनक के द्वारा विरचित है। इस प्रातिशाख्य में वेदमित्र शाकल्य का निर्देश 'शाकल्यपिता' एवं 'शाकल्यस्थविर' नाम से किया गया है (ऋ. प्रा. १.२२३; १८५)।

शौनक स्वयं शैशिरेय शाखा का ही आचार्य था, जिस कारण उसके द्वारा विरचित प्रातिशाख्य ग्रंथ 'शाकल प्रातिशाख्य' अथवा 'शैशिरेय प्रातिशाख्य' नाम से सुविख्यात था।

शौनक के द्वारा विरचित एक 'अथर्वप्रातिशाख्य' भी प्राप्त है, जो 'चतुराध्यायिका' नाम से सुविख्यात है।

शाकल्यसंहिता—शाकल शाखा की आद्यसंहिता 'शाकल्य संहिता' थी, जिसका निर्देश 'व्याकरण-महाभाष्य' में प्राप्त है (महा. १.४.८४)। कात्यायन की 'ऋक्सर्वानुक्रमणी' एवं शाकल्य का पदपाठ इसी संहिता को आधार मान कर लिखा गया है। इस पद-पाठ के अनुसार, शाकल्य के मूल संहिता में १५३८२६ पद थे।

शाकलायनि--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकलि--ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

शाकल्य—ऋग्वेद का सुविख्यात शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो व्यास के वैदिक शिष्यों में प्रमुख था। इसे शतपथ ब्राह्मण में 'विदग्ध' शाकल्य, ऐतरेय आरण्यक में 'स्थविर' शाकल्य एवं पौराणिक साहित्य में वेदमित्र (देवमित्र) शाकल्य कहा गया है (श. ब्रा. ११.६.३.३; बृ. उ. ३.९.१.४; ७; ऐ. आ. ३.२.१.६; सां. आ. ७. १६; ८.१.११; वायु. ६०; ब्रह्मांड. २.३४)।

शाखाप्रवर्तक आचार्य--व्यास से इसे जो 'ऋग्वेद संहिता' प्राप्त हुई, वह 'शाकल संहिता' नाम से प्रसिद्ध है, जो आगे चल कर इसने अपने पाँच शाखा-प्रवर्तक शिष्यों में बाँट दी। इसी के नाम से वे शाखाएँ 'शाकल' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध हैं (शाकल देखिये)।

ऋग्वेद की वर्तमानकाल में उपलब्ध संहिता 'शाकल्य के शाखा की' अर्थात् 'शाकल संहिता' मानी जाती है। इसी कारण षड्गुरु ने अपने सर्वानुक्रमणी में 'शाकलक' की व्याख्या करते समय 'शाकल्योच्चारणम् शाकलकम्' कहा है (ऋ. सर्वानुक्रमणी १.१)।

इससे प्रतीत होता है कि, इसने 'ऋग्वेद संहिता' का 'पदपाठ' तैयार किया, अनेकानेक प्रवचनों द्वारा उसका प्रचार किया एवं सैंकड़ों शिष्यों के द्वारा उसे स्थायी स्वरूप प्राप्त कराया।

पतंजलि के 'महाभाष्य' से, एवं 'महाभारत' से प्रतीत होता है कि, ऋग्वेद की इक्कीस शाखाएँ थी। किंतु उनमें से केवळ पाँच शाखाओं के नाम आज प्राप्त हैं (चरणव्यूह; शाकल देखिये)। ऋग्वेदी ब्रह्मयज्ञांग तर्पण में केवल तीन शाखाप्रवर्तकों का निर्देश पाया जाता है। देवी भागवत जैसे पौराणिक ग्रंथ में भी शाकल्य की तीन ही शाखाएँ बतायी गयी हैं (दे. भा. ७)।

पदपाठ का रचयिता—ऋग्वेद के वर्तमान 'पदपाठ' की रचना शाकल्य के द्वारा की गयी है। इस पदपाठ में ऋग्वेद में प्राप्त समानार्थी पदों का संग्रह परिगणना-पद्धति से किया गया है। किंतु कौन से नियम का अनु-सरण कर इस 'पदपाठ' की रचना की गयी है, इसका पता पदपाठ में प्राप्त नहीं होता।

व्याकरणाचार्य—शौनक के 'ऋक्प्रातिशाख्य' में भी इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसे एक 'व्याकरणकार' कहा गया है। 'ऋग्वेद संहिता' में संधि किस प्रकार साधित किये जाते हैं, इस संबंध में इसके अनेकानेक उद्धरण 'शौनकीय ऋक्प्रातिशाख्य' में प्राप्त हैं (ऋ. प्रा. १९९; २०८; २३२; शु. प्रा. ३.१०)।

पाणिनि के अष्टाध्यायी में--इस ग्रंथ में संधिनियमों के संदर्भ में इसका निर्देश अनेक बार प्राप्त है (पा. सू. ६.१.१२७; ८.३.१९; ४.५०)। इसी ग्रंथ में 'पदकार' नाम से इसका निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ३.२.२३)। इसके द्वारा लिखित पदपाठ में जिस 'पद' का निर्देश 'इति' से किया गया है, जो पाणिनि के अनुसार 'अनार्ष' है (पा. सू. १.१.१६)।

पाणिनि ने 'उपस्थित' शब्द की व्याख्या करते समय पुनः एक बार इसका निर्देश किया है, एवं कहा है, "शाकल्य के अनुसार, 'इतिकरण' से सहित 'पद' को 'उपस्थित' कहते थे" (पा. सू. ६.१.१२९)।

याज्ञवल्क्य से संघर्ष--याज्ञवल्क्य वाजसनेय से इसने किये प्राणांतिक वादविवाद का निर्देश 'बृहदारण्यक उपनिषद' में प्राप्त है (याज्ञवल्क्य वाजसनेय, एवं देवमित्र शाकल्य देखिये)।

पौराणिक सहित्य में—महाभारत में इसे एक ब्रह्मर्षि कहा गया है, एवं इसके नौ सौ वर्षों तक शिवोपासना करने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर शिव ने इसे वर प्रदान किया, 'तुम बड़े ग्रंथकार बनोंगे, एवं तुम्हारा पुत्र ख्यातनाम सूत्रकार बनेगा' (म. अनु. १४; शिव. रुद्र. ४३-४७)। महाभारत में प्राप्त इस कथा में, इसके पुत्र का नाम अप्राप्य है।

ग्रंथ--ऋक्संहितासाहित्य के अतिरिक्त इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त हैं:— १. शाकल्यसंहिता २. शाकल्यमत (C. C.)।

२. एक विष्णुभक्त ऋषि, जो शुभ्रगिरि पर निवास करता था। एक बार परशु नामक राक्षस इसे खाने के लिए दौड़ा। उस समय विष्णु की कृपा से यह लोहमूर्ति

में रूपांतरित हुआ, एवं इस प्रकार इसकी जान बच गयी। आगे चल कर इसने परशु राक्षस का उद्धार किया (ब्रह्म. १६३)।

शाकल्यपितृ--एक वैय्याकरण; जिसका संधिनियम के संबंध में अभिमत 'ऋक्प्रातिशाख्य' में प्राप्त है (ऋ. प्रा. २२३)।

शाकवक्त्र--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७१)।

शाकवर्ण रथीतर--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से सत्यश्री नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद-'शाकपूणि'

शाकायन--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एकायन नामक भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

शाकायनि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकायन्य--एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जिसने वृहद्रथ ऐक्ष्वाक राजा को आत्मज्ञान कराया था (मै. उ. १.२)।

२. जात नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे 'शाक' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (क. सं. २२.७)।

शाकहार्य--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकिनी--गौड देश में रहनेवाले दुर्व नामक ब्राह्मण की पत्नी। इसके पुत्र का नाम बुध था (बुध ७. देखिये)।

शाकुनि--मधुवन में रहनेवाला एक ऋषि, जिसके कुल नौ पुत्र थे। इनके पुत्रों में से ध्रुव, शील, बुध, तार एवं ज्योतिष्मत् ये पुत्र गृहस्थाश्रमी एवं अग्निहोत्री थे। इसके चार पुत्र निर्मोह, जितकाम, ध्यानकेश एवं गुणाधीक विरक्त एवं संन्यस्त वृत्ति के थे (पद्म. स्व. ३१)।

शाक्त्य--गौरवीति पराशर ऋषि का पैतृक नाम, जो उसे 'शक्ति' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (ऐ. ब्रा. ३.१९.४; श. ब्रा. १२.८.३.७; पं. ब्रा. ११.५. १४; १२.१३.१०; आप. श्रौ. २३.११.१४)।

शाक्य--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, मत्स्य, विष्णु, भविष्य एवं वायु के अनुसार संजय राजा का पुत्र था। भविष्य में इसे 'शाक्यवर्धन' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम शुद्धोद था।

शाक्रुतव--शौक्रतव नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

शाक्रायण--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शाकर--ऋषभ नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.१६६)।

शाख--अनल नामक वसु का पुत्र, जो कार्तिकेय का छोटा भाई था। यह एवं इसके छोटे भाई विशाख एवं नैगम स्वयं कार्तिकेय के ही रूप माने जाते है (म. श. ४३.३७)।

शाखेय--पाणिनीय व्याकरण का एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

शांखायन--ऋग्वेद का एक अद्वितीय शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो स्वयं के शाखान्तर्गत 'संहिता' 'ब्राह्मण' 'आरण्यक', 'उपनिषद' श्रौतसूत्र, गृह्यसूत्र आदि ग्रंथों का रचयिता माना जाता है। कुषीतक ऋषि का पुत्र होने के कारण, इसके द्वारा विरचित समस्त वैदिक साहित्य 'कौषीतकि' अथवा 'शांखायन' नाम से सुविख्यात है। टीकाकार आनर्तीय के अनुसार, इसे 'सुयज्ञ' नामांतर भी प्राप्त था (सां. गृ. ४.१०; ६.१०)। 'शांखायन आरण्यक' में भी इसका निर्देश प्राप्त है (शां. आ. १५.१)।

शांखायन संहिता--व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरान्तर्गत पाँच प्रमुख शाखाएँ मानी जाती थीं, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार है:--१. शाकल २. बाष्कल ३. आश्वलायन ५. शांखायन ५. माण्डुकेय। इन पाँच शाखाओं में से शांखायन शाखा का प्रणयिता यह माना जाजा है, जिसकी शांखायन, कौषीतकि आदि विभिन्न उपशाखाएँ थीं।

इस शाखा में प्रचलित 'ऋग्वेद संहिता' प्रायः सर्वत्र शाकल शाखांतर्गत ऋक्संहिता से मिलती जुलती थीं। वर्तमानकाल में प्राप्त ऋग्वेदसंहिता शाकल शाखा की मानी जाती है।

शांखायन ब्राह्मण--ऋग्वेदसंहिता के दो ब्राह्मण ग्रंथ माने जाते है:-१. ऐतरेय; २. शांखायन अथवा कौषीतकि। 'कौषीतकि ब्राह्मण' में कुल ३० अध्याय हैं, एवं यज्ञ की श्रेष्ठता प्रतिपादन करना, एवं उसकी शास्त्रीय व्याख्या करना इस ग्रंथ का प्रमुख उद्देश्य है। यद्यपि ऐतरेय एवं कौषीतकि ब्राह्मण एक ही ऋग्वेद के हैं, फिर भी, विषय प्रति-पादन के दृष्टि से ये दोनों ग्रन्थ काफ़ी विभिन्न हैं। विषय-प्रतिपादन के स्पष्टता के दृष्टि से 'कौषीतकि ब्राह्मण' ऐतरेय ब्राह्मण से कतिपय श्रेष्ठ प्रतीत होता है। इस ब्राह्मण में इसका निर्देश 'कौषीतकि' एवं 'कौषीतक' इन दोनों नाम से प्राप्त हैं।

शांखायन आरण्यक--यद्यपि आरण्यक ग्रंथों की संख्या अनेक बतायी गयी है, फिर भी इनमें से केवल आठ ही आरण्यक ग्रन्थ आज उपलब्ध हैं, जिनकी

नामावलि निम्न प्रकार है:--१. ऐतरेय; २. शांखायन; ३ तैत्तिरीय. ४. माध्यंदिन; ५. बृहदारण्यक; ६. जैमिनीयोपनिषदारण्यक ७. छांदोग्यारण्यक। इनमें से 'कौषीतकि आरण्यक' में 'कौषीतक ब्राह्मण' का ही कई भाग पुनरध्दृत किया गया है, जिनके पंद्रह अध्याय हैं।

सायण के अनुसार अरण्यों में पढ़ायें जाने के कारण इन ग्रन्थों को 'आरण्यक' नाम प्राप्त हुआ। वनवासी वानप्रस्थियों को यज्ञयागादि कर्मों की दीक्षा देना इन ग्रन्थों का प्रमुख उद्देश्य है। जिस प्रकार गृहस्थाश्रम के यज्ञादि कर्मों का वर्णन 'ब्राह्मण' ग्रन्थों में प्राप्त है, इसी प्रकार वानप्रस्थाश्रम के यज्ञादि विधियों का वर्णन आरण्यक ग्रंथों में प्रतिपादित किया है। उनमें कर्मकांड के साथ, धर्म की आध्यात्मिक व्याख्या भी दी गयी है, एवं इस प्रकार, ज्ञानमार्ग एवं कर्ममार्ग का समन्वय किया गया है।

'ऐतरेय' एवं 'कौषीतकि' दोनों ग्रंथों के आद्य भाष्यकार सायण एवं शंकराचार्य माने जाते हैं। शांकरभाष्य के सुप्रसिद्ध टीकाकारों में आनंदगिरि, आनंदतीर्थ (आनंदज्ञान), नारायणेंन्द्र सरस्वती एवं कृष्णदास प्रमुख माने जाते है।

शांखायन (कौषीतकि) उपनिषद--यह ग्रंथ उपनिषद ग्रंथों में काफ़ी प्राचीन माना जाता है। इस ग्रंथ में 'कौषीतकि आरण्यक' का ही तीसरा एवं छठा अध्याय एकत्रित किया गया है।

शांखायन श्रौतसूत्र--वैदिक संहिताओं में वर्णित यज्ञयागादि विधियों का सार संकलित करनेवाले ग्रंथों को 'श्रौतसूत्र' कहा जाता है, जिनमें वेदों में प्रतिपादित चौदह यज्ञों की जानकारी प्राप्त है।

प्राचीन श्रौतसूत्रों में से बारह प्रमुख श्रौतसूत्र आज प्राप्त हैं, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार है:--१. शांखायन श्रौतसूत्र; २. आश्वलायन श्रौतसूत्र; ३. मानव श्रौतसूत्र; ४. बौधायन श्रौतसूत्र; ५. आपस्तंब श्रौतसूत्र; ६. हिरण्यकेशी श्रौतसूत्र; ७. कात्यायन श्रौतसूत्र, ८. लाट्यायन श्रौतसूत्र; ९. द्राह्यायण श्रौतसूत्र; १० जैमिनीय श्रौतसूत्र; ११ वैतान श्रौतसूत्र; १२ वाराह श्रौतसूत्र।

शांखायन श्रौतसूत्र के कुल अठारह अध्याय है, एवं उसके अनेक उद्धरण शांखायन ब्राह्मण से मिलते जुलते हैं। इस ग्रंथ के सत्रहवाँ एवं अठारहवाँ अध्याय 'कौषीतकि आरण्यक' के पहले एवं दूसरे अध्याय से उध्दृत किये गये है। उस श्रौतसूत्र में शौनक, जातूकर्ण्य, पैंग्य, आरुणि आदि आचार्यों का निर्देश प्राप्त है। एक सर्पसत्र का निर्देश भी वहाँ किया गया है, जो संभवतः जनमेजय के द्वारा किये गये सर्पसत्र का होगा (सां श्रौ. १३.२३.८)।

शांखायन गृह्यसूत्र--शांखायन का एक गृह्यसूत्र भी प्राप्त है, जिसमें पितृयज्ञ, आग्रहायणी यज्ञ आदि सात गृह्य यज्ञों की, एवं देवयज्ञ, भूतयज्ञ, आदि पाँच महायज्ञों की जानकारी दी गयी है।

उपलब्ध गृह्यसूत्रों में 'शांखायन गृह्यसूत्र' प्रमुख माना जाता है। उपलब्ध गृह्यसूत्रों की नामावलि निम्न प्रकार है:--१. शांखायन गृह्यसूत्र; २. आश्वलायन गृह्यसूत्र; ३. मानव गृह्यसूत्र; ४. बौधायन गृह्यसूत्र; ५. आपस्तंब गृह्यसूत्र; ६. हिरण्यकेशी गृह्यसूत्र; ७. भारद्वाज गृह्यसूत्र; ८. पारस्कर गृह्यसूत्र, ९. द्राह्यायण गृह्यसूत्र; १०. गोभिल गृह्यसूत्र; ११. खादिर गृह्यसूत्र; १२. कौशिक गृह्यसूत्र।

आचार्य-परंपरा--ऐतरेय ब्राह्मण का रचयिता महिदास ऐतरेय, शांखायन का पूर्ववर्ती आचार्य माना जाता है। कई अभ्यासकों के अनुसार, ऐतरेय ब्राह्मण ग्रन्थ का कर्तृत्व भी महीदास ऐतरेय (ऐ ब्रा. १-६ पंचिका), एवं शांखायन तथा आश्वलायन (ऐ. ब्रा. ७-८ पंचिक) में विभाजित किया जाता है। इस दृष्टि से ऋग्वेदीय शाखाप्रवर्तक आचार्यों की परंपरा निम्नप्रकार बतायी जाती है:-- महीदास ऐतरेय-शांखायन-आश्वलायन।

शांखायन के ग्रंथों में सुमन्तु, जैमिनि, वैशंपायन, पैल आदि पूर्वाचार्यों का निर्देश प्राप्त है।

शाट्यायनि--एक आचार्य, जो 'शाट्यायन ब्राह्मण' एवं 'शाट्यायन गृहसूत्र' आदि ग्रंथों का रचियता माना जाता है। इनमें से 'शाट्यायन ब्राह्मण' आज उपलब्ध नहीं है।

आचार्य परंपरा--एक गुरु के नाते इसका निर्देश ब्राह्मण ग्रंथों में अनेक बार प्राप्त है (श. ब्रा. ८.१.८.९; १०.४.५.२; जै. उ. ब्रा. १.६.२; ३०.१; २.२.८; ४.३)। 'जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण' में इसका सही नाम शंग दिया है, एवं शाट्यायन इसका पैतृक नाम बताया गया है, जो इसे 'शाट्य' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था। इस ग्रंथ में इसे ज्वालायन का शिष्य कहा गया है (जै. उ. ब्रा. ४.१६.१)। 'सामविधान ब्राह्मण' में इसे बादरायण का शिष्य कहा गया है।

शाट्यायन ब्राह्मण--शाट्यायन ब्राह्मण में प्राप्त अनेक कथा सायणभाष्य में पुनरुध्दृत की गयी है। इस ग्रंथ के अनेक उद्धरण जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में भी प्राप्त हैं

(जै. उ. ब्रा. ९.१०; ३.१३.६; २८.५)। 'आश्वलायन श्रौतसूत्र' में इसके अभिमतों का निर्देश 'शाट्यायनक' नाम से प्राप्त है (आश्व. श्रौ. १.४.१३)। आर्टेल के अनुसार, यह ब्राह्मण ग्रन्थ 'जैमिनीय ब्राह्मण' से काफ़ी मिलता जुलता था।

जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण (गाय्युपनिषद्)--इस ग्रंथ का प्रमुख प्रणयिता भी शाट्यायनि माना जाता है। इस ग्रन्थ में प्राप्त गुरुपरंपरा के अनुसार, यह ग्रन्थ सर्वप्रथम इंद्र ने ज्वालायन नामक आचार्य को प्रदान किया, जिसने वह अपने शिष्य शाट्यायन को सिखाया। आगे चल कर यही ग्रंथ शाट्यायन ने अपने शिष्य राम क्रातुजातेय वैयाघ्रपद्य को प्रदान किया। इन सारे आचार्यों में से, शाट्यायनि ने इस ग्रन्थ को विशेष प्रतिष्ठा प्राप्त करायी (जै. उ. ब्रा. ४.१६-१७)।

शिष्यपरंपरा--इसके अनुगामी 'शाट्यायनिक,' 'शाट्यायनक' अथवा 'शाट्यायनिन' नाम से प्रसिद्ध थे, जिनका निर्देश सूत्रग्रंथों में, एवं 'शाट्यायन ब्राह्मण' में प्राप्त है (ला. श्रौ. ४.५.१८; १.२.२४; आ. श्रौ. ५.२३.३; आश्व. श्रौ. १.४.१३)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांडिल--शांडिल्य ऋषि के वंशजों के लिए प्रयुक्त सामुहिक नाम (तै. आ. १.२२.१०)।

शांड--एक उदार दाता, जिसने भरद्वाज ऋषि को विपुल दान प्रदान किया था (ऋ. ६.६३.९)।

शांडिलायन--एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है: १. सुतेमनस् (वं. ब्रा. १); २. गर्दभीमुख (वं. ब्रा. २)।

शांडिलि--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांडिली--दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नियों में से एक थी (म. आ. ६६.१७-२०)।

२. कौशिक ऋषि की पत्नी दीर्घिका का नामांतर (दीर्घिका एवं कौशिक १४. देखिये)।

३. शांडिल्य ऋषि की तपस्विनी कन्या, जो स्वयंप्रभा नाम से भी सुविख्यात थी। यह ऋषभ पर्वत पर तपस्या करती थी।

गरुड का गर्वहरण--एक बार गालव ऋषि एवं पक्षिराज गरुड इसके आश्रम में अतिथि के नाते आये। इसने उनका उत्तम आदरसत्कार किया, एवं रात्रि के लिए उन्हें अपने आश्रम में ठहराया।

रात्रि में सोते सोते गरुड के मन में विचार आया, 'इस तपस्विनी को अगर मैं अपने पंखों पर बिठा कर विष्णुलोक ले जाऊं, तो बहुत ही अच्छा होगा'। गरुड के इस औद्धत्यपूर्ण विचारों के कारण, एक ही रात्रि में उसके पंख गिर गये, एवं वह पंखविहीन बन गया।

पश्चात् गरुड एवं गालव दोनों इसकी शरण में आये, जिस कारण इसने उन्हें अनेकानेक वर प्रदान किये (म. उ. १११.१-१७; स्कंद. ६.८१-८२)।

केकयदेशीय सुमना नामक राजकन्या से इसने पातिव्रत्य के संबंध में उपदेश प्रदान किया था (म. अनु. १२३.८-२३)।

शांडिल्य--एक श्रेष्ठ आचार्य, जो अग्निकार्य से संबंधित समस्त यज्ञप्रक्रियाँ में अधिकारी व्यक्ति माना जाता था। बृहदारण्यक उपनिषद में इसे वात्स्य नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (बृ. उ. ६.५.४ काण्व.) 'शंडिल' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

यज्ञप्रक्रियों का आचार्य--शतपथ ब्राह्मण के पाँचवे एवं उसके बाद के कांडों में, अग्नि से संबंधित जिन संस्कारों का निर्देश प्राप्त है, वहाँ सर्वत्र इसका निर्देश इन प्रक्रियों का श्रेष्ठ आचार्य के नाते किया गया है (श. ब्रा. ९.२.१५; १०.१.४.१०; ४.१.११; ६.३.५; ५.९; ९.४.४.१७)। शतपथ ब्राह्मण के इन सारे अध्यायों में यज्ञाग्नि को 'शाण्डिल' कहा गया है, (श. ब्रा. १०.६.५.९)।

शतपथ ब्राह्मण के अग्निकांड--शतपथ ब्राह्मण के छः से नौ कांड 'अग्निचयन' से संबंधित हैं, जिनमें कुल ६० अध्याय हैं। ये चार कांड 'अग्नि' अथवा 'षष्टिपथ' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे, एवं उनका अध्ययन अलग किया जाता था। इन कांडो का अध्ययन करनेवाले आचार्यों को 'षष्टिपथक' कहा जाता था। इन सारे कांडों का प्रमुख आचार्य शांडिल्य माना गया है।

शतपथ ब्राह्मण का दसवाँ कांड 'अग्निरहस्य कांड' कहलाता है, जिसमें अग्निचयन के रहस्यतत्त्वों का निरुपण किया गया है। यहाँ भी शांडिल्य को इस विद्या का प्रमुख आचार्य माना गया है। यज्ञ की वेदि की रचना करना, आदि विषयों में इसके मत पुनः पुनः उद्धृत किये गये हैं।

'बृहदारण्यक उपनिषद' में-- इस ग्रंथ में इसे निम्नलिखित आचार्यों का शिष्य कहा गया है:-- १. कैशोर्य

काप्य (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ माध्यं.); २. वैष्टपुरेय (बृ. उ. २.५.१०; ४.५.२६ माध्यं.) ३. कौशिक (बृ. उ. २.६.१; ४.६.१ काण्व.); ४. गौतम (बृ. उ. २. ५.२०; ४.५.२६ माध्यं); ५. बैजवाप (बृ. उ. २.५. २०; ४.५.२६ माध्यं.); ६. आनभिम्लात (बृ. उ. २. ६.२ काण्व.)।

इसी ग्रंथ में निम्नलिखित आचार्यों को इसकी शिष्य कहा गया है:— कौंडिन्य, आग्निवेश्य, वात्स्य, वामकक्षायण, वैष्टपूरेय, भारद्वाज (बृ. उ. २.६.१.३; ६.५. ४; श. ब्रा. १४.७.३.२६)।

किंतु यहाँ संभवतः एक ही 'शांडिल्य' का संकेत न हो कर, 'शांडिल्य' पैतृक नाम धारण करनेवाले अनेकानेक आचार्यों का निर्देश प्रतीत होता है। इनमें से 'शतपथ ब्राह्मण' में निर्दिष्ट 'शांडिल्य' कौनसे आचार्य का शिष्य था, यह कहना कठिन है।

तत्त्वज्ञान—'छांदोग्य उपनिषद' में शांडिल्य का तत्त्वज्ञान दिया गया है (छां. उ. ३.१५)। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार, ब्रह्म को 'तज्जलान्' कहा गया है; एवं सारी सृष्टि इसी तत्त्व से प्रारंभ होती है, जीवित रहती है, एवं अंत में इसी तत्त्व में विलीन होती है, ऐसा कहा गया है। शांडिल्य के इस तत्त्वज्ञान का तात्पर्य यही था कि, सृष्टि के समस्त भूतमात्रों के उत्पत्ति, स्थिति एवं लय का अधिष्ठाता केवल एक ईश्वर ही है।

आत्मा का स्वरूप—शांडिल्य के तत्त्वज्ञान में 'आत्मा' का वर्णन अर्थपूर्ण एवं निश्चयात्मक शब्दों में किया गया है, एवं उसके 'महत्तम' एवं 'लघुतम' ऐसे दो स्वरूप वहाँ वर्णन किये गये हैं। इनमें से 'महत्तम' आत्मा अनंत एवं सारे विश्व का व्यापन करनेवाला कहा गया है, एवं 'लघुतम' आत्मा अणुस्वरूपी वर्णन किया गया है। आत्मा का नकारात्मक वर्णन करनेवाले याज्ञवल्क्य के तत्त्वज्ञान से शांडिल्य के इस तत्त्वज्ञान की तुलना अक्सर की जाती है (याज्ञवल्क्य वाजसनेय देखिये)। इन दोनों तत्त्वज्ञानों की कथनपद्धति विभिन्न होते हुए भी, उन दोनों में प्रणीत आत्मा के संबंधित तत्त्वज्ञान एक ही प्रतीत होता है।

शांडिल्य के अनुसार, मानवीय जीवन का अंतिम ध्येय मृत्यु के पश्चात् आत्मन् में विलीन होना बताया गया है।

शंकराचार्य विरचित 'ब्रह्मसूत्रभाष्य' में शांडिल्य के उपर्युक्त तत्त्वज्ञान का निर्देश 'शांडिल्यविद्या' नाम से किया गया है।

गोत्रकार आचार्य—आश्वलायन गृह्यसूत्र में प्राप्त गोत्रकारों के नामावलि में शांडिल्य का निर्देश प्राप्त है, जहाँ इसके गोत्र के प्रवर शांडिल्य, असित, एवं देवल दिये गये हैं। इसके द्वारा लिखित 'गृह्यसूत्र' का निर्देश 'आपस्तंब धर्मसूत्र' में प्राप्त है (आप. ध. ९.११. २१)। भक्ति के संबंध इसके उद्धरण भी उत्तरकालीन सूत्रग्रंथों में प्राप्त हैं।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है:— १. शांडिल्यस्मृति; २. शांडिल्यधर्मसूत्र; ३. शांडिल्यतत्त्वदीपिका (C. C.)।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. उदर (छां. उ. १. ९.३); २. सुयज्ञ (जै. उ. ब्रा. ४.१७.१)।

३. एक ऋषि, जो मरीचिपुत्र कश्यप ऋषि के वंश में उत्पन्न हुआ था। आगे चल कर, इसीके कुल में अग्नि ने जन्म लिया था, जिस कारण उसे 'शांडिल्यगोत्रीय' कहा जाता है (वैश्वदेवप्रयोग देखिये)।

सुमन्यु राजा ने इसे 'भक्ष्य-भोज्यादि' पदार्थों की पर्वतप्राय राशि दान में प्रदान की थी (म. अनु. १३७. २२)। इसने अन्यत्र बैलगाडी के दान को सुवर्ण-द्रव्य आदि द्रव्यों के दान से श्रेष्ठ बताया है (म. अनु. ६४. १९; ६५.१९)।

४. एक ऋषि, जिसने वैदिक मार्ग से विष्णु की पूजा न कर, अवैदिक मार्गों से उसकी उपासना करना चाहा। एक ग्रंथ की रचना कर इसने अपने इस अवैदिक तत्त्वप्रणाली का समर्थन भी किया।

इस पापकर्म के कारण, इसे 'नर्कवास' की शिक्षा भुगतनी पड़ी, एवं आगे चल कर भृगुवंश में जमदग्नि के रूप में इसे जन्म प्राप्त हुआ (वृद्धहारितस्मृति. १८०-१९३)।

५. ब्रह्मदेव का सारथि (स्कंद. ७.१.१२६)।

६. एक शिवभक्त राजा। युवावस्था में प्रविष्ट होते ही, कामासक्त बन कर यह अनेकानेक स्त्रियों पर अत्याचार करने लगा। शिव की कृपा के कारण, साक्षात् यमधर्म भी इसे कुछ सज़ा नहीं कर सकता था।

अंत में शिव को इसके अत्याचार ज्ञान होते ही, उसने इसे एक हज़ार वर्षों तक कछुआ (कूर्म) बनने का शाप दिया (स्कंद. १.२.१२)।

७. अग्नि का ज्येष्ठ पुत्र, जो कश्यप का ज्येष्ठ भाई था (म. अनु. ५३.२६ कुं.)।

शांडिल्यायन—गर्दभीमुख नामक आचार्य का पैतृक नाम।

शांडिल्यायन 'चेलक'—एक आचार्य, जिसका निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. ९.५.१.६४)। इसका सही नाम चेलक था, एवं शांडिल्यायन इसका पैतृक नाम था, जो इसे शांडिल्य का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (श. ब्रा. १०.४.५.३)। इसके पुत्र का नाम चैलकि जीवल था (श. ब्रा. १०.४.५.३)। कई अभ्यासकों के अनुसार, प्रवाहण जैवल इसका ही पौत्र था। किंतु प्रवाहण स्वयं एक ब्राह्मण न हो कर राजा था। इसी कारण इस संबंध में निश्चित रूप से कहना कठिन है।

दैय्यांपति नामक आचार्य ने अग्निचयन के संबध में इससे चर्चा की थीं (श. ब्रा. ९.५.१.१४)।

शातकर्णि—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार कृष्ण राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'शांतकर्ण', वायु में इसे 'सातकर्णि' एवं ब्रह्मांड में 'श्रीमल्लकर्णि' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम पूर्णोत्संग था (विष्णु. ४.२४.४५)।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य एवं विष्णु के अनुसार पूर्णोत्संग राजा का पुत्र था। इसने ५६ वर्षों तक राज्य किया था (मत्स्य. २७३.४)।

३. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार पुरीषभीरु राजा का पुत्र था। वायु में इसे 'सातकर्णि' कहा गया है।

४. (आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार अहिमान् राजा का पुत्र, एवं शिवश्री राजा का पिता था।

शातपर्णेय—धीर नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.३.३.१)।

शातवनेय—एक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का आश्रयदाता था (ऋ. १.५९.७)।

शातातप—एक स्मृतिकार (याज्ञ. १.५)। इसकी छः अध्यायोंवाली एक गद्यपद्यात्मक स्मृति है, जो वेंकटेश्वर प्रेस, एवं आनंदाश्रम, पूना के द्वारा प्रकाशित 'स्मृतिसंग्रह' में प्राप्त है।

शातातप स्मृति—श्री. मित्रा के द्वारा ८७ अध्याय एवं २३७६ श्लोकोंवाली इसकी एक स्मृति प्रकाशित की गयी है। इसके अतिरिक्त 'लघु-शातातप स्मृति' एवं 'वृद्ध-शातातप स्मृति' आनंदाश्रम, पूना के द्वारा प्रकाशित की गयी है।

'मिताक्षरा' (३.२९०), एवं विश्वरूप (३.२३६) ने इसके स्मृति के उद्धरण उध्दृत किये है। 'बृहत्शातातप स्मृति' का निर्देश 'मिताक्षरा' में प्राप्त है (याज्ञ. ३.२९०)। 'वृद्धशातातप स्मृति' का, एवं उसके भाष्य का निर्देश क्रमशः 'व्यवहारमातृका' (३०५) में, एवं हेमाद्रि (३.१.८०१) में प्राप्त है।

शुक्ल यजुर्वेदशाखीय ब्राह्मणों में प्रचलित मातृगोत्र-पालन करने के परंपरा का निर्देश, इसकी स्मृति में पाया जाता है।

शाद्वलायन—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शांत—अहन् अथवा आप नामक वसु के चार पुत्रों में से एक। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम शम, ज्योति एवं मुनि थे (म. आ. ६०.२२; मत्स्य. ५.२२)।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो प्रियव्रतपुत्र इध्मजिह्व राजा का पुत्र था। प्लक्षद्वीपान्तर्गत एक 'वर्ष' पर इसका राज्य था (भा. ५.२०.३)।

३. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो आयु राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.३.२४)।

४. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

५. एक राजा, जो दुर्दम राजा की पत्नी सुभद्रा का पिता था (मार्कं. ७२.४५; दुर्दम १. देखिये)।

शांतकर्ण—शातकर्णि राजा का नामांतर।

शांतनव—एक व्याकरणकार, जो वेदों के स्वर के संबंध में विचार करनेवाले 'फिट् सूत्रों' का रचयिता-माना जाता है। इसके द्वारा रचित सूत्रों के अंत में 'शांतनवाचार्य प्रणीत' ऐसा स्पष्ट निर्देश प्राप्त है। इसका सही नाम शंतनु था, किंतु 'तद्धित' प्रत्यय का उपयोग कर इसका 'शांतनव' नाम प्रचलित हुआ होगा। इसके नाम से यह दक्षिण भारतीय प्रतीत होता है।

फिट्सूत्र—'फिट्' का शब्दशः अर्थ 'प्रातिपदिक' होता है। प्रातिपदिकों के लिए नैसर्गिक क्रम से उपयोजित 'उदात्त', 'अनुदात्त', एवं 'स्वरित' स्वरों की जानकारी प्रदान करने के लिए इन सूत्रों की रचना की गयी है। इन सूत्रों की कुल संख्या ८७ हैं, जो निम्नलिखित चार पादों (अध्यायों) में विभाजित की गयी हैः—१. अन्तोदात्त; २. आद्युदात्त; ३. द्वितीयोदात्त; ४. पर्यायोदात्त।

रचनाकाल—पतंजलि के व्याकरणमहाभाष्य में इन सूत्रों के उद्धरण प्राप्त हैं (महा. ३.१.३; ६.१.९१; १२३)। इसके अतिरिक्त काशिका, कैय्यट, भट्टोजी दीक्षित, नागेशभट्ट आदि के मान्यवर व्याकरणविषयक ग्रंथों में भी इन सूत्रों का निर्देश प्राप्त है।

व्याकरणशास्त्रीय दृष्टि से पाणिनि एवं शांतनव 'अव्युत्पत्ति पक्षवादी' माने जाते हैं, जो शाकटायन के सर्व शब्द 'धातुज' हैं (सर्वं धातुजं), इस सिद्धांत को मान्यता नहीं देते हैं (शाकटायन देखिये)। इसी कारण हर एक शब्दप्रकृति के स्वर नमूद करना वे आवश्यक समझते हैं। हर एक शब्द के 'प्रकृतिस्वर' गृहीत समझ कर शांतनव ने अपने 'फिट्सूत्रों' की रचना की है, एवं शांतनव के द्वारा यह कार्य पूर्व में ही किये जाने के कारण, पाणिनि ने अपने ग्रंथ में वह पुनः नहीं किया है।

इसी कारण शांतनव आचार्य पाणिनि के पूर्वकालीन माना जाता है। इसकी परंपरा भी पाणिनि से स्वतंत्र थी, जिसका अनुवाद पाणिनि के 'अंगभूत परिशिष्ट' में पाया जाता है।

परिभाषा—इसके 'फिट्सूत्रों' में अनेकानेक पारिभाषिक शब्द पाये जाते हैं, जो पाणिनीय व्याकरण में अप्राप्य हैं। इनमें से प्रमुख शब्दों की नामावलि एवं उनका शब्दार्थ नीचे दिया गया है :—अनुच्च (अनुदात्त); अष् (अच्); नप् (नपुंसक); फिष् (प्रातिपदिक); यमन्वन् (वृद्ध); शिट् (सर्वनाम); स्फिग् (लुप्); हय् (हल्)।

'फिट्सूत्रों' का महत्त्व—उदात्त, अनुदात्तादि स्वर केवल वैदिक संहिताओं के उच्चारणशास्त्र के लिए आवश्यक हैं, सामान्य संस्कृत भाषा के उच्चारण के लिए इन स्वरों की कोई आवश्यकता नहीं है, ऐसा माना जाता है। किंतु इन स्वरों की संस्कृत भाषा के उच्चारण के लिए भी नितांत आवश्यकता है, यह सिद्धांत शांतनव के 'फिट्सूत्रों' के द्वारा सर्वप्रथम प्रस्थापित किया गया, एवं आगे चल कर 'पाणिनीय व्याकरण' ने भी इसे मान्यता दी।

'फिट्सूत्रों' में प्राप्त ८७ सूत्रों में से केवल पाँच ही सूत्रों में वैदिक शब्दों के (छन्दसि) स्वरों की चर्चा की गयी है, बाकी सभी सूत्रों में प्रचलित संस्कृत भाषा एवं वेद इन दोनों में प्राप्त संस्कृत शब्दों के स्वरों की एवं उच्चारण की चर्चा प्राप्त है।

इसी कारण 'फिट्सूत्र' केवल वैदिक व्याकरण का ही नहीं, बल्कि 'पाणिनीय व्याकरण' का भी एक महत्त्वपूर्ण विभाग माना जाता है। पाणिनीय व्याकरण के 'शब्दप्रक्रिया' 'धातुज शब्दों का अध्ययन,' 'लिंगज्ञान' 'गणों का अध्ययन,' 'शब्दों का उच्चारशास्त्र' आदि प्रमुख विभाग हैं, जिनके अध्ययन के लिए क्रमशः 'अष्टाध्यायी,' 'उणादिसूत्र' 'लिंगानुशासन' 'गणपाठ' 'शिक्षा' आदि ग्रंथों की रचना की गयी है। स्वरों के उच्चारणशास्त्र की चर्चा करनेवाला शांतनवकृत 'फिट्सूत्र' पाणिनीय व्याकरणशास्त्र के इसी परंपरा का एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ प्रतीत होता है।

शांतनु—(सो. कुरु.) एक सुविख्यात कुरुवंशीय सम्राट्, जो प्रतीप राजा के तीन पुत्रों में से द्वितीय पुत्र था। इसकी माता का नाम सुनंदा था, एवं अन्य दो भाइयों के नाम देवापि एवं बाह्लीक थे। इसका मूल नाम 'महाभिषज्' था। किन्तु शान्त स्वभाववाले प्रतीप राजा का पुत्र होने के कारण इसे 'शांतनु' नाम प्राप्त हुआ (म. आ. ९२.१७-१८)। भागवत के अनुसार, इसके केवल हस्तस्पर्श से ही अशांत व्यक्ति को शान्ति, एवं वृद्ध व्यक्ति को यौवन प्राप्त होता था, इस कारण इसे शांतनु नाम प्राप्त हुआ था (भा. ९.२२.१२; म. आ. ९०.४८)।

महाभारत की भांडारकर संहिता में इसके नाम का 'शंतनु' पाठ स्वीकृत किया गया है; किंतु अन्य सभी ग्रंथों में इसे शांतनु ही कहा गया है।

इसका ज्येष्ठ भाई देवापि बाल्यावस्था में ही राज्य छोड़ कर वन में चला गया। इस कारण, कनिष्ठ हो कर भी इसे राज्य प्राप्त हुआ (देवापि देखिये)। यह अत्यंत धर्मशील था, एवं इसने यमुना नदी के तट पर सात बड़े यज्ञ एवं अनुष्ठान किये (म. व. १५९. २२-२५)।

गंगा से विवाह—एक बार यह मृगया के हेतु वन में गया, जहाँ इसकी गंगा (नदी) से भेंट हुयी। गंगा के अनुपम रूप से आकृष्ट होकर, इसने उससे अपनी पत्नी बनने की प्रार्थना की। गंगा ने वसुओं के द्वारा उससे की गयी प्रार्थना की कहानी सुना कर, इसे विवाह से परावृत्त करने का प्रयत्न किया, किन्तु इसके पुनः पुनः प्रार्थना करने पर उसने इससे कई शर्तें निवेदित की, एवं उसी शर्तों का पालन करने पर इससे विवाह करने की मान्यता दी (गंगा देखिये)।

अपनी इस शर्त के अनुसार, गंगा ने इससे उत्पन्न सात पुत्र नदी में डुबो दिये। इससे उत्पन्न आठवाँ पुत्र भीष्म वह नदी में डुबोने चली। उस समय अपनी शर्त भंग कर, इसने उसे इस कार्य से परावृत्त करना चाहा। इसके द्वारा शर्त का भंग होते ही, गंगा नदी अपने पुत्र को लेकर चली गयी।

पश्चात् छत्तीस वर्षों के बाद, इसके द्वारा पुनः पुनः प्रार्थना किये जाने पर गंगा नदी ने इसके पुत्र भीष्म को इसे वापस दे दिया।

सत्यवती से विवाह—एक बार सत्यवती नामक धीवर-कन्या से इसकी भेंट हुई, एवं उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की। उस समय, इसके पुत्र भीष्म को यौवराज्यपद से हटा कर, अपने होनेवाले पुत्र को राज्य प्राप्त होने की शर्त पर सत्यवती ने इससे विवाह करने की संमति दी। अपने प्रिय पुत्र को यह यौवराज्यपद से दूर करना नहीं चाहता था, किंतु भीष्म ने अपूर्व स्वार्थत्याग कर, स्वयं ही राज्याधिकार छोड़ दिया।

परिवार—पश्चात् इसका सत्यवती से विवाह हुआ, जिससे इसे विचित्रवीर्य एवं चित्रांगद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें से चित्रांगद की रणभूमि में अकाल मृत्यु हुई, जिस कारण उसके पश्चात् विचित्रवीर्य राजगद्दी पर बैठ गया। इससे विवाह होने के पूर्व, सत्यवती को व्यास नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था, किंतु यह घटना इसे ज्ञात न थी (दे. भा. २.३)।

अपने इन पुत्रों के व्यतिरिक्त इसने शरद्वत् गौतम ऋषि के कृप एवं कृपी नामक संतानों का अपत्यवत् संगोपन किया था (शरद्वत् देखिये)।

मृत्यु के पश्चात्, भीष्म के द्वारा दिये गये पिंडादन को स्वीकार करने के लिए यह पृथ्वी पर स्वयं अवतीर्ण हुआ था। उस समय इसने उसे इच्छामरणी होने का वर प्रदान दिया था (म. अनु. ८४.१५)।

शांतपायन—एक आचार्य, जो विष्णु के अनुसार व्यास की पुराण शिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था। पाठभेद-(वायुपुराण)-'शांशपायन'।

शांतमय—एक प्राचीन राजा (म. आ. १.१७६) पाठभेद-'शांतभय'।

शांतरय (सो. आयु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार त्रिककुद् (धर्मसारथि) राजा का पुत्र था (भा. ९.१७.१२)।

शांता—ऋष्यशृंग ऋषि की पत्नी, जो वाल्मीकि रामायण एवं वायु के अनुसार रोमपाद राजा की गोद में ली हुई कन्या थी। रोमपाद राजा को 'चित्ररथ' 'अंगराज' 'लोमपाद' आदि नामांतर भी प्राप्त थे।

मत्स्य एवं महाभारत में भी, इसे दशरथ राजा की कन्या कहा गया है (मत्स्य. ४८.९५)। रोमपाद राजा दशरथ राजा का परम स्नेही था, एवं निपुत्रिक था, जिस कारण दशरथ ने अपनी इस कन्या को रोमपाद राजा को गोद में दे दी (भा. ९.२३.७-१०)। हरिवंश में लोमपाद को दशरथ का ही नामांतर बताया गया है, किंतु वह सही प्रतीत नही होता है (ह. वं. १.३१.४६)। आगे चल कर रोमपाद राजा ने इसका विवाह ऋष्यशृंग ऋषि से कराया (ऋष्यशृंग एवं रोमपाद १. देखिये)।

२. भारद्वाज ऋषि की माता (वायु. १११.६०)।

शान्ति—दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुख (क्षेम) था (भा. ४.१.४९; वायु. १०.२५)।

२. कर्दम प्रजापति की कन्या, जो अथर्वन् ऋषि की पत्नी थी। इसकी माता का नाम देवहूति था। इसने पृथ्वी लोक में यज्ञसंस्था का माहात्म्य संवर्धित किया था। इसके पुत्र का नाम दध्यच् आथर्वण था (भा. ३.२४.२४)।

३. (सो. नील.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार नील राजा का पुत्र, एवं सुशांति राजा का पिता था (भा. ९.२१.३०-३१)।

४. एक तुषित देव, जो यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१.७-८)।

५. एक ऋषि, जो वारुणि आंगिरस ऋषि के आठ पुत्रों में से चतुर्थ पुत्र था। अग्निवंश में उत्पन्न होने के कारण, इसे 'आग्नेय' उपाधि प्राप्त थी (म. अनु. ८५.३०)। उपरिचर वसु राजा के यज्ञ में यह सदस्य बना था (म. शां. ३२३.८ पाठ.)।

६. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का इंद्र (विष्णु. ३.२.२६)। यह सुधामन् एवं विरुद्ध देवों का इंद्र था (ब्रह्मांड. ४. १.६९)।

७. तामस मनु के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६. ४९)।

८. स्वारोचिष मन्वंतर का एक देव।

९. कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१.१४)।

१०. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो शीघ्र राजा का पुत्र था।

११. एक ऋषि, जो भूति नामक ऋषि का शिष्य था। एक बार अपने कनिष्ठ भाई सुवर्चस् के द्वारा बुलाये जाने पर भूति ऋषि ने अपने आश्रम की व्यवस्था इस पर सौंप दी, एवं वह सुवर्चस् के यज्ञ के लिये चला गया।

अग्नि से वरप्राप्ति—इसके गुरु की अनुपस्थिति में आश्रम में स्थित अग्नि लुप्त हुयी, जिस कारण अत्यंत घबरा कर इसने अग्नि की स्तुति की। पश्चात् इसने अग्नि से अपने आश्रम में पुनः अधिष्ठित होने की, एवं अपने निपुत्रिक गुरु को पुत्र प्रदान करने की प्रार्थना की। पश्चात् अग्नि के आशीर्वाद से भूति ऋषि को 'भौत्य मनु' नामक सुविख्यात पुत्र हुआ।

पश्चात् इसकी गुरुनिष्ठा से संतुष्ट हो कर, भूति ऋषि ने इसे सांग वेदो का ज्ञान कराया (मार्क. ९७.५-२७)।

शांतिदेवा अथवा **शांतिदेवी**—देवक राजा की कन्या, जो वसुदेव की पत्नियों में से एक थी (वायु. ९६.१३०)।

शापहस्त—दक्ष सावर्णि मनु के खड्गहस्त नामक पुत्र का नामांतर।

शापेय—एक आचार्य, जो पाणिनीय व्याकरण में शाखाप्रवर्तक आचार्यों में एक था (पाणिनि देखिये)

शापेयिन्—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का 'वाजसनेय' शिष्य था।

शाम—यम का अनुचर एक कुत्ता, जो सरमा के दो पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड.३.७.३१२)। स्कंद के अनुसार, यम के शाम एवं शबल नामक दो कुत्ते इसीके ही पुत्र थे (स्कंद २.४.९)।

शांब—आप नामक वसु के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ५.२२)।

शांब शार्कराक्ष्य—एक आचार्य, जो मद्रगार शौगायनि नामक आचार्य का शिष्य, एवं 'आनंद चांधनायन' नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)। इसका पैतृक नाम 'शार्कराक्ष्य', शर्कराख्य (का. सं. २२.८८), एवं 'शार्कराक्षि' (आश्व. श्रौ. १२.१०.१०) आदि विभिन्न रूपों में भी प्राप्त है, जो इसे 'शार्कराक्ष' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुए होंगे।

शांबव्य—एक आचार्य, जो 'शांबव्य गृह्यसूत्र' का रचयिता माना जाता है (ओल्डेनबर्ग, इंडिशे स्टूडियेन १५.४.१५४)।

शांबु—एक ऋषिसमुदाय, जो आंगिरस कुल में उत्पन्न हुआ था (अ. वे. १९.३९.५)।

शांबेय—प्रोति कौशांबेय कासुरुविन्दि नामक आचार्य का पैतृक नाम।

शारदंडायनि—एक केकय राजा। इसकी पत्नी का नाम श्रुतसेना था, जो कुंती की बहन थी। इसे पुत्र न था, जिस कारण श्रुतसेना ने इसकी संमति से एक ब्राह्मण के द्वारा 'पुंसवन' नामक यज्ञसंस्कार कर दुर्जय आदि तीन पुत्र प्राप्त किये (म. आ. १११.३३-३५)।

शारदा—अंग देश के रौद्रकेतु नामक ब्राह्मण की पत्नी (रौद्रकेतु देखिये)।

२. एक ब्राह्मण स्त्री, जिसकी कथा स्कंद में 'महेश्वर व्रत माहात्म्य' कथन करने के लिए दी गयी है (स्कंद. ३.३.१८-१९)।

शारद्वत—गौतम-आंगिरसान्तर्गत एक गोत्रनाम (अंगिरस् देखिये)।

शारद्वतिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शारद्वती—द्रोणाचार्य की पत्नी कृपी का नामांतर, जो उसे शरद्वत् गौतम ऋषि की कन्या होने के कारण प्राप्त हुआ था (शरद्वत् देखिये)।

२. एक अप्सरा, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित थी (म. आ. ११४.५३)।

शारायण—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिकार।

शारिमेजय—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार श्वफल्क राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'सारमेय' कहा गया है।

शार्कराक्षि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शार्कराक्ष्य—एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. शांब (वं. ब्रा. १); २. जन (श. ब्रा. १०.६.१. १; छां. उ. ५.११.१; १५.१)।

शार्कराक्ष्य कुस्तुक—एक आचार्य, जो शार्कराक्षि नामक महर्षि का पुत्र था। इसने उदर में ब्रह्मदृष्टि की प्रतिष्ठापना कर, उपासना की थी (ऐ. ब्रा. २.१.४) संसार का आद्य कारण आकाश ही है ऐसा इसका मत था (छां. उ. ५.१५.१)।

शार्ङ्ग—एक पैतृक नाम, जो ऋग्वेद में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. जरितृ (ऋ. १०.१४२.१); १. द्रोण (ऋ. १०.१४२.३-४); ३. सारिसृक्व (ऋ. १०.१४२.५-६); ४. स्तंबमित्र

(ऋ. १०.१४२.७.८)। महाभारत में मंदपाल ऋषि की, एवं शार्ङ्ग पक्षी का रूप धारण करनेवाले उसके चार पुत्रों की कथा प्राप्त है, जो संभवतः इसी सूक्त पर आधारित होगी (मंदपाल देखिये)।

शार्ङ्गरव—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. पाणिनीय व्याकरण का एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

शायस्थि—एक पैतृक नाम, जो वंश ब्राह्मण में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. बृहस्पतिगुप्त; २. भवत्रात (वं. ब्रा. १.)।

शार्दूल—रावण पक्ष का एक राक्षस, जो उसके गुप्तचरदल का प्रमुख था (वा. रा. यु. २९.२२)।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो द्राह्यायण नामक सामवेदपरंपरा के आचार्य का शिष्य था। सुविख्यात खादिर 'गृह्य' एवं 'श्रौत' सूत्र शार्दूलशाखा के ही माने जाते है (द्राह्यायण देखिये)।

शार्दूली--कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जिसने आगे चल कर सिंह, वाघ, एवं चीतों को जन्म दिया (म. आ. ६०.६३)।

शार्यात--शर्यात राजा का नामांतर (शर्यात मानव देखिये)।

२. एक ग्रंथकार एवं वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसका पैतृक नाम मानव था (ऋ. १०.९२; मानव देखिये)।

शाल--एक राजा, जो वृक एवं दुर्वाक्षी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४३)।

शालकटंकट--अलंबुस राक्षस का नामांतर (म. द्रो. ८४.५७४; अलंबुस देखिये)।

शालंकायन—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं मंत्रकार।

२. सुशारद नामक आचार्य का पैतृक नाम (आश्व. श्रौ. १२.१०.१०; आप. श्रौ. २४.९.१)।

शालंकायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शालंकायनिपुत्र—एक आचार्य, जो वार्षगणीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.४-३१ माध्यं.)। 'शलंक' के किसी स्त्रीवंशज का पुत्र होने के कारण, इसे 'शालंकायनि नाम प्राप्त हुआ होगा।

शालहलेय—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं ऋषिगण।

शालायनि—भृगुकुलोत्पन्न एक ऋषि।

शालावती--विश्वामित्र ऋषि की पत्नियों में से एक।

शालावत्य--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. शिलक (छां. उ. १.८.१); २. गल्नस आर्क्षाकायण (जै. उ. ब्रा. १.३८.४)।

शालि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शालिक—एक ऋषि, जो हस्तिनापुर जाते समय श्रीकृष्ण से मिलने आये थे (म. उ. ३८८*)।

शालिन्--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

शालिपिंड--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१४)।

शालिमंजरीपाक—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से हिरण्यनाभ आचार्य का शिष्य था (व्यास देखिये)।

शालिय--एक आचार्य, जो शाकल्य का शिष्य था (भा. १२.६.५७)।

शालिशिरस्—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४३)। यह अर्जुन के जन्मोत्सव के समय उपस्थित था (म.आ.११४.२५)।

शालिशूक--(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार संगत राजा का पुत्र, एवं सोमशर्मन् राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)।

शालिहोत्र--एक आचार्य, जो प्राचीन भारतीय वैद्यकीय परंपरा में आद्य पशुवैद्यक-शास्त्रज्ञ माना जाता है। पंचतंत्र में, अश्वशास्त्रज्ञ शालिहोत्र का, एवं कामसूत्रकार वात्स्यायन का निर्देश दो प्रमुख आयुर्वेदाचार्य के नाते किया गया है।

शालिहोत्र-तंत्र--महाभारत के अनुसार, यह अश्वविद्या का आचार्य था, एवं घोडों की जाति एवं अश्वशास्त्रसंबंधित अन्य तात्विक बातों के संबंध में यह अत्यंत प्रवीण था (म. व. ६९.२७)। इसने सुश्रुत नामक आचार्य को अश्वों का आयुर्वेद सिखाया था (अग्नि. २९२. ४४)। 'अश्वायुर्वेद' के संबंध में इसने 'शालिहोत्रतंत्र' अथवा 'शाल्यहोत्र' नामक एक ग्रंथ की भी रचना की थी, जिस ग्रंथ की दो हस्तलिखित पांडु-लिपियाँ लंदन के इंडिया ऑफिस लायब्ररी में विद्यमान हैं। इसी ग्रंथ का एक अनुवाद अरेबिक भाषा में १३६१ ई. स. में किया गया था।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इसे एक श्रेष्ठ ऋषि कहा गया है, जिसके आश्रम में, व्यास एवं पांडव इसकी भेंट लेने के लिए उपस्थित हुए थे (म. आ. १४३, परि. १.८७-८८)।

इसके आश्रम के समीप एक सरोवर एवं पवित्र वृक्ष था, जिनका निर्माण इसने अपनी तपस्या के द्वारा किया था (म. आ. १४४.१५७९ *)। इस सरोवर का केवल जल पी लेने से भूखप्यास दूर हो जाती थी।

तीर्थ—इसके नाम से 'शालिशूर्प' (शालिशीर्ष अथवा शालिसूर्य) नाम से एक तीर्थस्थान प्रसिद्ध हुआ था, जहाँ स्नान करने से सहस्र-गोदान का फल प्राप्त होता था (म. व. ८१.९०)।

२. शूलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

३. पौष्यंजिपुत्र लांगलिन् नामक सामवेत्ता आचार्य का नामांतर (लांगलिन् देखिये)।

शालीय—एक आचार्य, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से क्रमशः 'शाकल्य' एवं 'वेदमित्र' का शिष्य था (विष्णु. ३.४.२२)। शाकल्य एवं वेदमित्र ये दोनों एक ही वेदमित्र (देवमित्र) शाकल्य के नाम थे (शाकल्य देखिये)।

वायु एवं ब्रह्मांड में इसे क्रमशः 'खालीय' एवं 'खलीयस्' कहा गया है।

शाल्व—(सो. क्रोष्टु.) एक दानव अथवा दैत्य, जो सौभ देश का अधिपति था (ह. वं. २.५२; अग्नि. २७६.२२, म. व. २१.५)। किंतु भागवत के अनुसार 'सौभ' इसके विमान का नाम था, जिस कारण इसे 'सौभपति' नाम प्राप्त हुआ था (भा. १०.७६)।

महाभारत में इसे मार्तिकावत का राजा कहा गया है, जो नगर अबू पहाडी के समीप स्थित था (म. व. १५.१६; २१. १४)। इसे यौगंधरि नामांतर भी प्राप्त था।

यह चेदिराज शिशुपाल राजा का भाई था (म. व. १५.१३)। किन्तु भागवत में इसे शिशुपाल राजा का मित्र कहा गया है (भा. १०.७६)। यह प्रारंभ से ही मगधराज जरासंध का पक्षपाती, एवं कृष्ण का विरोधक था। इसी कारण, महाभारत एवं पुराणों में इसे दानव एवं दैत्य कहा गया होगा (साल्व देखिये)।

जरासंध-दौत्य—प्रथम से ही जरासंध कृष्ण से अत्यधिक डरता था। किस प्रकार कृष्ण का वध किया जा सकता है, इसके षड्यंत्र वह रातदिन रचाया करता था। एक बार इसने गार्ग्य ऋषि को रुद्रप्रसाद से प्राप्त हुए कालयवन के द्वारा कृष्ण का वध कराने की सलाह जरासंध को दी।

पश्चात् जरासंध की ओर से यह स्वयं कालयवन के पास गया, एवं इसने उससे कृष्ण का वध करने की प्रार्थना की। इस प्रार्थना के अनुसार, कालयवन ने कृष्ण को काफ़ी त्रस्त कर, उसे अपनी मथुरा राजधानी के त्याग करने पर विवश किया। किन्तु अंत में कृष्ण ने मुचुकुंद राजा के द्वारा कालयवन का वध कराया (ह. वं. २.५२-५४; कालयवन देखिये)।

सौभ विमान की प्राप्ति—रुक्मिणीस्वयंवर के समय, यादवों के द्वारा जरासंध एवं शाल्व पुनः एक बार परास्त हुए। तत्पश्चात् एक वर्ष के कालावधि में समस्त पृथ्वी को 'निर्यादव' करने की घोर प्रतिज्ञा इसने की, एवं तत्प्रीत्यर्थ रुद्र की तपस्या प्रारंभ की।

इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, रुद्र ने इसे मयासुर के द्वारा निर्मित 'सौभ' विमान प्रदान किया, जो देवासुरों के लिए अजेय एवं अदृश्य होने की दैवी शक्ति से युक्त था।

प्रद्युम्न से युद्ध—पश्चात् कृष्ण जब पांडवों के राजसूय यज्ञ के लिए हस्तिनापुर गया था, यही सुअवसर समझ कर इसने द्वारका नगरी पर आक्रमण किया। उस समय इसने सत्ताइस दिनों तक कृष्णपुत्र प्रद्युम्न से युद्ध किया, एवं इस युद्ध में विजयी हो कर यह अपने नगर को लौट आया।

कृष्ण से युद्ध—कृष्ण को यह घटना ज्ञात होते ही, उसने इसके वध का निश्चय कर इस पर आक्रमण किया। इसने सौभ विमान की सहायता से कृष्ण के साथ अनेक प्रकार के मायावी युद्ध के प्रयोग किये, यहाँ तक की कृष्णपिता वसुदेव के मृत्यु का मायावी दृश्य भी कृष्ण के सम्मुख प्रस्तुत किया (भा. १०.७७)। किंतु अंत में कृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से इसके 'सौभ' विमान का विच्छेद किया, एवं इसका वध किया (म. व. १५-२३; भा. १०.७६-७७)।

भीष्म से युद्ध—वाराणसी के काशिराज की तीन कन्याओं में से अंबा ने इसका वरण किया था। किंतु अंबा के स्वयंवर के समय, भीष्म ने अंबा का एवं अंबिका एवं अंबालिका नामक उसके दो बहनों का भी हरण किया। उस समय इसने भीष्म का पीछा कर उससे युद्ध करना चाहा। किंतु इस युद्ध में भीष्म ने इसे परास्त किया।

पश्चात् भीष्म की अनुज्ञा प्राप्त कर अंबा इसके पास आयी, एवं इससे विवाह करने के लिए उसने इसका बार बार अनुनय–विनय किया। किंतु भीष्म ने इसका हरण करने के कारण, उससे विवाह करने से इसने साफ इन्कार कर दिया।

भारतीय युद्ध में--इस युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था। इसका हाथी, पर्वत के समान विशाल काय, ऐरावत के समान शक्तिशाली, एवं महाभद्र नामक सुविख्यात गजकुल में उत्पन्न हुआ था (म.श.१९.२–३)।

इसी हाथी पर आरुढ हो कर, इसने पांडवसेना पर आक्रमण किया, एवं उसमें हाहाःकार मचा दिया। पश्चात इसने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया, एवं उसके रथ को कुचल डाला। पश्चात् धृष्टद्युम्न के द्वारा इसके हाथी का, एवं सात्यकि के द्वारा इसका वध हुआ (म. श. १९.२५)।

२. एक म्लेंच्छ राजा, जो वृषपर्वन् के छोटे भाई अजक के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.१७ पाठ.; म. व. १९.१)।

३. पांडवपक्ष का एक योद्धा, जो कौरवपक्षीय भीमरथ राजा के द्वारा मारा गया था। यह भीमरथ धृतराष्ट्र-पुत्र भीमरथ से भिन्न था (म. द्रो. २४.२६)।

४. तीन राजाओं का एक समूह, जो व्युषिताश्व राजा की पत्नी भद्रा ने अपने पति की मृत्यु के पश्चात्, उसके मृतदेह से उत्पन्न किये थे (म. आ. ११२.३३)।

५. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १२९.७)। ये लोग जरासंध के भय से दक्षिण दिशा में भाग गये थे (म. स. १३. २४–२६)। इन योद्धाओं ने द्रोण पर आक्रमण किया था।

६. एक असुर, जो सिंहिका का पुत्र होने के कारण 'सिंहिकापुत्र' अथवा 'सैंहिकेय' नाम से सुविख्यात था। शिव की आज्ञा से परशुराम ने इसका वध किया (विष्णुधर्म. १.३७.३८–३९)।

७. एक दैत्य, जिसने अपने अनाचार के कारण वैदिक धर्म का उच्छेद किया था। इसी कारण श्रीविष्णु ने संभलग्राम में विष्णुयशस् नामक ब्राह्मण के घर अवतार ले कर इसका वध किया (स्कंद. १.२.४०)। इस कथा का संकेत संभवतः विष्णु के कल्कि अवतार की ओर प्रतीत होता है (विष्णुयशस् कल्कि देखिये)।

८. शाल्वदेश के द्युतिमत् राजा का नामांतर (द्युतिमत् देखिये)।

शाल्वल—दधिवाहन नामक शिवावतार का एक शिष्य।

शावस्त--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व (द्वितीय) राजा का पुत्र था। मत्स्य, विष्णु एवं वायु में इसे 'श्रावस्त' कहा गया है।

शाश्वत--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार श्रुत राजा का पुत्र था।

शाष्पेय--पाणिनीय व्याकरण के शाखाप्रवर्तक आचार्यों में से एक (पाणिनि देखिये)।

शास भारद्वाज--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५२)।

शास्तृ—कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

शिक्ष--एक देवगंधर्व, जो ऋषभ पर्वत पर रहता था।

शिख--एक आचार्य, जिसने अपने अनुशिख नाम के मित्र के साथ सर्पयज्ञ में क्रमशः 'नेष्टृ' एवं 'पोतृ' का काम निभाया था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

शिखंडिन्--(सो. अज.) पांचाल देश के द्रुपद राजा का एक पुत्र, जो पहले 'शिखंडिनी' नामक कन्या के रूप में उत्पन्न हुआ था। पश्चात् स्थूणाकर्ण नामक यक्ष की कृपा से यह पुरुष बन गया (म. उ. १९२-१९३)। महाभारत में अन्यत्र यह शिव की कृपा से पुरुष बनने का निर्देश प्राप्त है। इसे 'याज्ञसेनि' नामान्तर भी प्राप्त था।

बाल्यकाल एवं विवाह-- इसके मातापिता इसका स्त्रीत्व छिपाना चाहते थे, जिस कारण उन्होंने एक पुत्र जैसा ही इसका पालनपोषण किया। इतना ही नही, जवान होने पर दशार्ण राजा हिरण्यवर्मन् की कन्या से उन्होंने इसका विवाह संपन्न कराया।

इसके पत्नी को इसके स्त्रीत्व का पता चलते ही, उसने अपने पिता के पास यह समाचार पँहुचा दिया। अपना जमाई स्त्री है, यह ज्ञात होते ही हिरण्यवर्मन् अत्यंत क्रुद्ध हुआ, एवं इस प्रकार धोखा देनेवाले द्रुपद राजा को जड़मूल से उखाड़ फेंकने के लिए उद्यत हुआ।

इसी दुरवस्था में यह घर से भाग कर वन में चला गया, जहाँ स्थूणाकर्ण यक्ष की कृपा से, पुनः लौटा-ने की शर्त पर इसे पुरुषत्त्व की प्राप्ति हुई। इसी पुरुषत्व के आधार से इसने अपने श्वसुर हिरण्यवर्मन् राजा की चिंता दूर की। पश्चात् स्थूणाकर्ण यक्ष को कुबेर का शाप प्राप्त होने के कारण, शिखंडिन् का पुरुषत्व आमरण इसके पास ही रहा (म. उ. १९०–१९३): किंतु फिर भी स्त्रीजन्म का इसका कलंक सारे आयुष्य भर इसका पीछा करता रहा।

भारतीय युद्ध में—भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष का 'महारथ', एवं एक अक्षौहिणी सेना का सेनामुख था। यह युद्धनिपुण एवं उच्च श्रेणी का व्यूहरचनातज्ञ था, जो विद्या इसने द्रोणाचार्य से प्राप्त की थी। पांचाल देश के बारह हज़ार वीरों में से, छः हज़ार वीर इसीके ही सैन्य में समाविष्ट थे (म. द्रो. २२.१६०.*; पंक्ति. ७-८)। इसके रथ के अश्व भूरे वर्ण के थे, जो इसे तुंबुरु ने प्रदान किये थे। इसका ध्वज 'अमंगल' वर्ण का था (म. भी. १०८.१९-२०)।

भीष्मवध--भारतीय युद्ध के पहले दस दिनों में, भीष्म ने अपने पराक्रम के कारण पांडवसेना में हाहाः-कार मचा दिया। उस समय भीष्म ने स्वयं ही शिखंडिन् को आगे कर युद्ध करने की सलाह पांडवों को दी (भीष्म देखिये)। यह जन्म से स्त्री था, जिस कारण धर्मयुद्ध के नियमानुसार इससे युद्ध करना भीष्म निषिद्ध मानता था।

भारतीय युद्ध के दसवें दिन, यह भीष्म के सम्मुख खड़ा होते ही, भीष्म ने अपने शस्त्र नीचे रख दिये, जिसे सुअवसर समझ कर अर्जुन ने भीष्म का वध किया (म. भी. ११४.५३-६०)।

वध--भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन हुए रात्रियुद्ध में अश्वत्थामन् ने इसका वध किया (म. सौ. ८.६०)। इसकी मृत्यु का दिन पौष्य अमावस्या माना जाता है (भारतसावित्री)।

भीष्मवध का पूर्ववृत्त--महाभारत के कुंभकोणम् संस्करण में, शिखंडिन् भीष्मवध के लिए कारण किस प्रकार बन गया, इसकी चमत्कारपूर्ण कथा दी गयी है। काशिराज की कन्या अंबा ने भीष्मवध की प्रतिज्ञा की थी, जिस हेतु उसने कार्तिकेय के द्वारा एक दिव्य माला प्राप्त की थी। वह माला प्रदान करते समय, कार्तिकेय ने उसे वर दिया था कि, जो मनुष्य वह माला परिधान करेगा, वह भीष्मवध के कार्य में सफलता प्राप्त करेगा।

पश्चात् अंबा ने वह माला द्रुपद के राजभवन में फेंक दी, जो आगे चल कर शिखंडिन् ने परिधान की। इसी दैवी माला के कारण, शिखंडिन् भीष्मवध के कार्य में सफल हुआ (म. द्रो. २२.१६०; पंक्ति ७-८)।

२. एक शिवावतार, जो सातवें वाराह कल्पांतर्गत वैवस्वत मन्वंतर के अठारहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। हिमालय पर्वत में स्थित 'शिखंडिन्' नामक शिखर पर यह शिवावतार अवतीर्ण हुआ। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे :--१. वाचःश्रवस्; २. रुचीक; ३. शावाश्व; ४. यतीश्वर (शिव. शत. ५)।

शिखंडिन् याज्ञसेन--एक आचार्य, जो केशिन् दाल्भ्य राजा का पुरोहित था (कौ. ब्रा. ७.४)। केशिन् दाल्भ्य के द्वारा किये गये यज्ञ में, इसने कई आचार्यों के साथ वादविवाद किया था।

यज्ञसेन का वंशज होने के कारण, इसे 'याज्ञसेन' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शिखंडिनी--विजिताश्व राजा की पत्नी, जिससे इसे तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ४.२४.३)।

२. अंतर्धान राजा की पत्नी, जो हविर्धान राजा की माता थी।

३. द्रुपद राजा की कन्या, जो आगे चल कर शिखंडिन् नामक पुत्र में रूपांतरित हुई (शिखंडिन् देखिये)।

शिखंडिनी अप्सरा काश्यपी--एक वैदिक सूक्त-द्रष्ट्रीद्वय (ऋ. ९.१०४)।

शिखाग्रीविन्--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिखावत्--युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)।

शिखावर्ण--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिखावर्त--कुबेरसभा में उपस्थित एक यक्ष (म. स. १०.१६)।

शिखि--तामस मन्वंतर का इंद्र।

शिखिध्वज--एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम चुडाला था।

२. मयूरध्वज राजा का नामांतर।

शिखिन्--कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. उ. १०३. १२)।

शिग्रु--एक जातिविशेष, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के शत्रुपक्ष में शामिल थी। अज एवं यक्षु लोगों के साथ, ये लोग भी सुदास राजा से परास्त हुए थे (ऋ. ७.१८.१९)। लुडविग के अनुसार ये लोग भेद राजा के नेतृत्व में थे (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद ३.१७३)।

संभवतः ये लोग उत्तरकाल में प्रसिद्ध हुए 'सहिजन-वृक्ष' से सबंधित थे। इसी कारण ये लोग अनार्य प्रतीत होते हैं।

शिजय--एक राजा, जो पहले क्षत्रिय था, किंतु आगे चल कर तपोबल से ब्राह्मण एवं ऋषि बन गया गया (वायु. ९१.११४)।

शिंजार—एक ऋषि, जो अश्विनों के कृपापात्र लोगों में समाविष्ट था। ऋग्वेद में इसका निर्देश काण्व, प्रियमेध, उपस्तुत एवं अत्रि ऋषियों के साथ प्राप्त है (ऋ. ८.५.२५; १०.४०.७)। गेल्डनर के अनुसार, यह अत्रि ऋषि का नामांतर, अथवा उपाधि थी (गेल्डनर, ऋग्वेद ग्लॉसरी १७९)।

शित—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक।

शितिपृष्ठ—एक आचार्य, जिसने सर्पसत्र में 'मैत्रावरुण' नामक ऋत्विज का काम निभाया था (पं. ब्रा. २५.१५.३)।

शितिबाहु ऐषकृत नैमिशि—एक यज्ञकर्ता, जिसके यज्ञ के 'अपूप' (हविर्भाग) को एक बंदर लेकर भाग गया था (जै. ब्रा. १.३६३)।

शिनि—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार गर्ग राजा का पुत्र, एवं गार्ग्य राजा का पिता था। मत्स्य में इसे 'शिवि' कहा गया है।

यह पहले क्षत्रिय था, किन्तु आगे चल कर 'गार्ग्य' नाम से ब्राह्मण, एवं अंगिरस् कुल का मंत्रकार बन गया। इसी कारण 'गार्ग्य' एवं 'शैन्य' लोग आगे चल कर 'क्षत्रोपेतद्विज' नाम से सुविख्यात हुए (भा. ९.२१.१९; विष्णु. ४.१९.२३)।

२. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान राजा का पुत्र, एवं स्वयंभोज राजा का पिता था (भा. ९.२४.२६)।

३. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार शूर राजा का पुत्र, एवं देवमीढ़ राजा का वंशज था (मत्स्य. ४६.३)।

देवकी स्वयंवर के समय, इसने विरुद्धपक्षीय सारे राजाओं को परास्त कर, देवकी को वसुदेव के लिए जीत लिया था। उस समय सोमदत्त नामक राजा को पटक कर उसे लत्तप्रहार किया था, किन्तु आगे चल कर उस पर दया कर उसे छोड़ दिया था (म. द्रो. ११९.९-१४)।

४. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत, मत्स्य एवं वायु के अनुसार अनमित्र राजा का पुत्र, एवं सत्यक राजा का पिता था (भा. ९.२४.१३; मत्स्य. ४५.२२)। विष्णु में इसे सुमित्र राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ४.१४.१-२)।

५. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चक्षु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था।

शिनिक—एक ऋषि, जिसे मैत्रेय ऋषि से विष्णु पुराण प्राप्त हुआ था (विष्णु. ६.८.५१)। पाठभेद-'समिक'।

शिनेयु—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु के अनुसार उशनस् राजा का पुत्र था।

शिप्रक—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार आंध्रवंश का सर्वप्रथम राजा था। इसे 'बलि,' 'सिंधुक,' 'शिशुक' आदि नामांतर प्राप्त थे।

शिवि—एक लोकसमूह, जो आधुनिक पंजाब प्रदेश में इरावती, एवं चंद्रभागा (असिक्नी) नदियों के बीच प्रदेश में स्थित था।

वैदिक साहित्य में—ऋग्वेद में इन लोगों का निर्देश 'शिव' नाम से प्राप्त है, जहाँ अलिन, पक्थ, भलानस्, एवं विषाणिन् लोगों के साथ, इनके सुदास राजा के द्वारा पराजित होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.१८.७)। बौधायन के श्रौतसूत्र में, इन लोगों के शिवि औशीनर राजा का निर्देश प्राप्त है (बौ. श्रौ. ३.५३.२२)। इन लोगों के अमित्रतपन नामक राजा का निर्देश भी ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.२३.१०)।

पाणिनीय व्याकरण में—पाणिनि के अष्टाध्यायी में, इन लोगों के शिविपुर, (शिवपूर) नामक नगर का निर्देश प्राप्त है, जो उत्तर प्रदेश में स्थित था (महा. २.२८२; २९३-२९४)। आधुनिक पंजाब के झंग प्रदेश में स्थित शोरकोट प्रदेश में शिवि लोग रहते थे, ऐसा माना जाता है। सिकंदर के आक्रमण के समय भी ये लोग पंजाब प्रदेश में रहते थे, एवं 'सिबै' अथवा 'सीबोइ' नाम से सुविख्यात थे (अरियन, इंडिका ५.१२; शिव २. देखिये)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इन लोगों का निर्देश शक, किरात, यवन, एवं वसाति आदि विदेशीय जातियों के साथ प्राप्त है। उशीनर लोगों से ये लोग शुरू से ही संबंधित थे, एवं शिवि औशीनर राजा के वृषदर्भ, सुवीर, केकय, एवं मद्रक इन चारों पुत्रों के कारण, समस्त पंजाब देश में इन्होंने अपना राज्य स्थापित किया था (शिवि औशीनर देखिये)।

शांतनु राजा की माता सुनंदा, एवं युधिष्ठिर का श्वशुर गोवासन इसी प्रदेश के रहनेवाले थे (म. आ. ९०.४६; ९०.९३)। भारतीय युद्ध में, ये लोग सौवीर देश के राजा जयद्रथ के साथ कौरवपक्ष में शामिल थे (म. उ. १९६.७-८)।

२. एक दैत्य, जो हिरण्यकशिपु का पुत्र था (म. आ. ५९.११)। किंतु पौराणिक साहित्य में इसे प्रह्लाद का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ६.९; विष्णु. १.२१.१)। यह द्रुम राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.८)।

३. तामस मन्वंतर का इन्द्र (वायु. ६२.४०)।

४. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो चाक्षुष मनु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१३.१६)।

५. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो वृष्णि एवं माद्री के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४५.२)।

६. पुरूरवस्वंशीय शिनि राजा का नामांतर (शिनि १. देखिये)

७. एक आचार्य, जो शुनस्कर्ण बाष्कीहं नामक आचार्य का पिता था (शुनष्कर्ण बाष्कीह देखिये)।

८. भूतपूर्व पाँच इंद्रों में से एक, जो शिव की आज्ञा से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. १९९६*)।

शिबि औशीनर (औशीनरि)—एक सुविख्यात दानशूर राजा, जो शिवि लोगों का सब से अधिक ख्यातनाम राजा था (शिवि १. देखिये)। उशीनर राजा का पुत्र होने के कारण, इसे 'औशीनर' अथवा 'औशीनरि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। इसकी राजधानी शिवपुर में थी (ब्रह्मांड. ३.७४.२०-२३)।

वैदिक साहित्य में—एक वैदिक मंत्रद्रष्टा के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.१७९.१) यह इंद्र के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिसने इसके लिए 'वर्शिष्ठिय' के मैदान में यज्ञ किया था, एवं इसे विदेशियों के आक्रमण से बचाया था (बौ. श्रौ. २१. १८)।

महाभारत एवं पुराण में—इस ग्रंथ में इसे उशीनर राजा एवं माधवी का पुत्र कहा गया है, एवं इसके औदार्य की अनेकानेक कथाएँ वहाँ प्राप्त हैं (म. उ. ११७.२०)। पौराणिक साहित्य में इसकी माता का नाम दृषद्वती दिया गया है (वायु. ९९.२१-२३; ब्रह्मांड. ३.७४.२०-२३; मत्स्य ४८.१८)।

औदार्य—इसके औदार्य की निम्नलिखित कथा सब से अधिक सुविख्यात है। एक बार इसकी सत्त्वपरीक्षा लेने के लिए अग्नि ने कपोत का, एवं इन्द्र ने बाज (श्येन) पक्षी का रूप धारण किया, एवं श्येन पक्षी कपोत का पीछा करता हुआ इसके संमुख उपस्थित हुआ। उस समय कपोत पक्षी इसकी शरण में आया, एवं उसने इसे श्येन को समझाने के लिए कहा।

इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर श्येन ने इससे कहा, 'अगर तुम इस कपोत के वजन के बराबर अपना मांस काट कर मुझे दोगे, तो मैं अपने भक्ष्य, इस कपोत को छोड़ दूंगा'। इसने श्येन पक्षी की यह शर्त मान्य कर दी, एवं अपने शरीर का मांस काट कर तराजु में रखना प्रारंभ किया। पश्चात् शरीर के मांसखंड पूरे न पड़ने पर, यह स्वयं ही तराजु के पलड़े में जा कर बैठ गया।

इसका यह आत्मनिरपेक्ष दातृत्त्व देख कर, इंद्र एवं अग्नि इससे अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उन्होंने इसे अनेकानेक वर प्रदान किये (म. व. १३०.१९-२०; १३१. परि. १ क्र. २१ पंक्ति ५)।

महाभारत में अन्यत्र उपर्युक्त कथा इसकी न हो कर, इसके पुत्र वृषदर्भ की बतलायी गयी है (म. अनु. ६७)।

औदार्य की अन्य एक कथा—महाभारत में अन्यत्र इसके औदार्य की एक अन्य कथा दी गयी है, जो उपर्युक्त कथा का ही अन्य रूप प्रतीत होता है। एक बार इसके पास एक ब्राह्मण अतिथि आया, जिसने इसके बृहद्गर्भ नामक पुत्र का मांस भोजनार्थ माँगा। यह उसे पका कर सिद्ध कर ही रहा था, कि इतने में उस ब्राह्मण ने इसके अन्तःपुर, शस्त्रागार, एवं हाथी, एवं अश्वशाला आदि को जलाना प्रारंभ किया। यह ज्ञात होते ही, अपने पुत्र का पका हुआ मांस अपने सर पर रख कर यह ब्राह्मण के पीछे दौडा। उस समय उस ब्राह्मण ने वह मांस इसे ही भक्षण करने की आज्ञा दी। तदनुसार यह उसे भक्षण करनेवाला ही था, कि इतने में ब्राह्मण ने संतुष्ट हो कर इसका पुत्र पुनः जीवित किया, एवं इसे अनेकानेक वर प्रदान कर वह चला गया (म. शां. २२६. १९; अनु १३७.४)।

पुण्यशील राजा—महाभारत में इसे ययाति राजा का पौत्र, एवं ययाति कन्या माधवी का पुत्र कहा गया है। अपनी माता की आज्ञा से इसने अपने वसुमनस्, अष्टक, एवं प्रतर्दन नामक तीन भाइयों के साथ एक यज्ञ किया, जिसका सारा पुण्य इन्होंने स्वर्ग से अधःपतित हुए अपने पितामह ययाति को प्रदान किया। इस प्रकार इन्होंने ययाति को पुनः एकबार स्वर्गप्राप्ति करायी (माधवी देखिये)।

ययाति के स्वर्गप्राप्ति के लिए इसने अन्तरिक्ष में स्थित अपना सारा राज्य उसे प्रदान किया, ऐसा एक रूपकात्मक

निर्देश महाभारत में प्राप्त है, जिसका संकेत भी इसी पुण्यदान के आख्यान की ओर प्रतीत होता है (म. आ. ८८. ८) महाभारत में अन्यत्र नारद का, एवं इसका एक संवाद प्राप्त है, जहाँ उसने इसे अपने से भी अधिक पुण्यवान् वर्णन किया है (म. व. परि. १.२१.५.)।

यह अत्यंत संपत्तिमान्, उदार, पराक्रमी, राजनीतिप्रवण एवं यज्ञकर्ता राजा था (म. द्रो. परि. १.८.४०९–४३६)। यह कुछ काल तक इंद्र बना था, एवं ब्रह्मा के यज्ञ का 'प्रतिष्ठाता' भी यही था।

दान का महत्त्व—इसने सुहोत्र राजा को दान का महत्त्व कथन किया था। उस समय उसने इसे कहा, 'दान यह एक ही संपत्ति ऐसी है कि, जो देने से अधिक बढ़ती है' (म. व. परि. १.२१.२)। इसका यह उपदेश सुन कर, सुहोत्र ने इसे सम्मानपूर्वक विदा किया।

मृत्यु—मृत्यु के पश्चात् यह यमसभा का सदस्य हुआ (म. स. ८.९)। मृत्यु के पश्चात्, उत्तर-गोग्रहणयुद्ध के समय पांडवों के पराक्रम को देखने के लिए अन्य देवों के साथ यह उपस्थित हुआ था (म. वि. ५१.९१७* पंक्ति. ३०)। इसके माहात्म्य की अनेकानेक कथाएँ पद्म में प्राप्त हैं (पद्म. उ. ८२; १९९)।

परिवार—इसके निम्नलिखित चार पुत्र थेः— १. वृषादर्भ, २. सुवीर; ३. मद्र; ४. केकय (भा. ९.२३. ३)। इसके इन पुत्रों ने पंजाब प्रदेश में क्रमशः वृषादर्भ, सौवीर, केकय, एवं मद्र राज्यों की स्थापना की, एवं इस प्रकार वे समस्त पंजाब प्रदेश के स्वामी बन गये।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त, इसके गोपति, एवं बृहद्गर्भ नामक पुत्रों का निर्देश भी महाभारत में प्राप्त है (म. शां. ४९.७०)।

२. उशीनर देश का एक राजा, जो द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. ६०.२१)। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था। अन्त में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३०.१७)।

शिमिदा—एक दानव (अ. वे. ४.२५.४; श. ब्रा. ७.४.१.७)। यह शब्द 'शिमिद्' से व्युत्पन्न है, जिसका शब्दशः अर्थ 'व्याधि' है (ऋ. ७.५०.४)।

शिम्यु—एक राजा, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के द्वारा नहुष, भरत, वार्षगिर, ऋज्राश्व, अंबरीष, सहदेव, भजमान आदि राजाओं के साथ परास्त हुआ था (ऋ. ७.१८.५)।

२. एक जातिविशेष, जिसका निर्देश दस्यु लोगों के साथ प्राप्त है (ऋ. १.१००.१८)। त्सीमर के अनुसार, ये लोग अनार्य थे (अल्टिन्डिशे लेबेन, ११८–११९)।

शिरिंबिठ भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१५५.१)। 'ऋग्वेद अनुक्रमणी' में इसे भरद्वाज का पुत्र कहा गया है। किंतु यास्क इसे व्यक्ति न मान कर 'मेघ' मानते हैं (नि. ६.३०)।

शिरीष—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिरीषक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग, जो नारद ने इंद्रसारथि मातलि को वर के रूप में प्रदान किया था (म. उ. २०१.१४)।

शिरीषिन्—विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५९)।

शिलक शालावत्य—एक आचार्य, जो चैकितायन दाल्भ्य, एवं प्रवाहण जैवलि नामक आचार्यों का समकालीन था (छां. उ. १.८.१)। 'शलावति' का वंशज होने के कारण, इसे शालावत्य पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

शिलर्दनि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिलवृत्ति—एक ऋषि, जिसने गंगा नदी के माहात्म्य के संबंध में एक सिद्ध से संवाद किया था (म. अनु. २६.१९–१०३)। इसे 'शिलोञ्छवृत्ति' नामांतर भी प्राप्त था (म. अनु. २६.१९)।

शिलस्थलि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिला—धर्म ऋषि की कन्या, जो मरीचि ऋषि की पत्नी थी। अपने पति के शाप के कारण, यह गयाक्षेत्र में शिला बन कर रहने पर विवश हुई (वायु. १०७)।

शिलाद—शिवपार्षद नंदिन् का पिता (लिंग. १-४२; नंदिन् १. देखिये)।

शिलायूप—विश्वामित्र ऋषि एक पुत्र (म.अनु.४.५४)।

शिलास्थलि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शिलीन—जित्वन् शैलिनि ऋषि का पिता (बृ. उ. ४.१.५ माध्यं.)।

शिल्व काश्यप—एक आचार्य, जो काश्यप निध्रुवि नामक आचार्य का शिष्य, एवं हरित काश्यप नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ६.४.३३ माध्यं.)।

शिव—एक देवता, जो सृष्टिसंहार का आद्य देवता माना जाता है (रुद्र-शिव देखिये)।

२. एक जातिविशेष, जो दाशराज्ञ युद्ध में सुदास राजा के द्वारा अलिन्, पक्थ, भलानस्, विषाणिन् आदि जातियों के साथ हुआ था (ऋ. ७.१८.७)।

सिकंदर के समय सिंधु एवं असिक्नी नदियों के तट पर बसे हुए 'सिबै' अथवा 'सिब्रोइ' लोग संभवतः यही होंगे (अरियन, इंडिका ५.१२)। पाणिनीय व्याकरण में निर्दिष्ट 'शिवपुर' ग्राम संभवतः इन्हीं लोगों का ही था (पा. सू. ४.२.१०९; शिबि. १. देखिये)।

३. उत्तम मन्वंतर का एक देवगण, जिस में निम्नलिखित बारह देवता समाविष्ट थे :--१. प्रतर्दन; २. यति; ३. यम; ४. यशस्कर; ५. वनि; ६. वसुदान; ७. विष; ८. सुदान; ९. सुचित्र; १०. सुमंजस्; ११. स्वार १२. हंस (ब्रह्मांड. २.३६.३२-३३)।

४. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

५. उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (मत्स्य. ९.१४)।

६. तामस मन्वंतर का एक योगवर्धन।

७. एक ब्राह्मण, जो वितस्त का पुत्र, एवं श्रवस् का पिता था (म. अनु. ८. ६२)।

८. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो इध्मजिह्व राजा के सात पुत्रों में से एक था। इसका द्वीप इसीके ही नाम से प्रसिद्ध हुआ।

९. एक ब्राह्मणसमूह, जो दक्षिण दिशा में निवास करता था। गरुड़ ने गालव ऋषि को पृथ्वी का दर्शन कराया, जिस समय इन वेदपारग लोगों का देश भी उसने उसे दिखाया था (म. उ. १०७.१८)।

शिवकर्ण—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'शवकर्ण'।

शिवशर्मन्--एक विष्णुभक्त ब्राह्मण, जिसके यज्ञशर्मन् एवं सोमशर्मन् नामक पुत्रों के पितृभक्ति के कारण, इसके संपूर्ण कुटुंब का उद्धार हुआ (यज्ञशर्मन् एवं सोमशर्मन् देखिये)।

२. एक ब्राह्मण, जिसे तीर्थयात्रा के पुण्य के कारण नंदिवर्धन राजा के कुल में जन्म प्राप्त हुआ (स्कंद. ४.१. ८-२४)।

शिवशातकर्णी अथवा **शिवश्री**—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार पुलोमत् राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.१३)। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'मेदःशिरस्' एवं 'शिवश्री' कहा गया है।

शिवस्कंध—(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार, क्रमशः 'मेदशिरस्, 'शातकर्णि' एवं 'शिवश्री' राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.१४)।

शिवस्वाति अथवा **शिवस्वामिन्**--(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो भागवत के अनुसार चकोर राजा का, विष्णु के अनुसार चकोर शातकर्णि राजा का, एवं वायु के अनुसार शातकर्णि राजा का पुत्र था।

शिवा—अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जो आपव वसिष्ठ ऋषि की कन्या थी। पाठभेदः--'वसुदा' 'शुभा' एवं 'सुमा' (म. व. २०८.१)।

२. अनिल नामक वसु की पत्नी, जिससे इसे मनोजव एवं अविज्ञातगति नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ६०२४)।

३. एक 'शैवेय' राक्षसी, जो कश्यप एवं खशा की कन्याओं में से एक थी (ब्रह्मांड. ३.७.१३८)।

शिशिर—एक वसु, जो धर एवं मनोहरा के चार पुत्रों में से एक था। इसके अन्य तीन भाइयों के नाम वर्चस्, प्राण एवं रमण थे (म. आ. ६०.२)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

३. एक आचार्य, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से क्रमशः वेदमित्र एवं देवमित्र शाकल्य का शिष्य था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'शैशिरेय' कहा गया है।

शिशु--(सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१५.२१)।

२. सप्तमातृकाओं के पुत्रों का सामूहिक नाम, जो 'वीराष्टक' नाम से भी सुविख्यात थे।

शिशु आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा एवं सामद्रष्टा (ऋ. ९.११२; पं. ब्रा. १३.३.२४)।

शिशुक--(आंध्र. भविष्य.) आंध्रवंशीय शिप्रक राजा का नामांतर। मत्स्य में इसे आंध्र वंश का सर्वप्रथम राजा कहा गया है (मत्स्य. २७३.२)। इसने काण्व राजा सुशर्मन् को परास्त किया था।

२. (किलकिला. भविष्य.) दौहित्रपुरिका नगरी का एक राजा, जो ब्रह्मांड एवं विष्णु के अनुसार, नन्दियशस् राजा का पुत्र था।

शिशुनन्दिन्--(किलकिला. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं भविष्य के अनुसार भूतनंद राजा का पुत्र था। इसने बीस वर्षों तक राज्य किया।

शिशुनाग—(शिशु. भविष्य.) शिशुनाग वंश का सर्वप्रथम राजा, जिसने मगध देश के प्रद्योतवंशीय नन्दिवर्धन

राजा को परास्त कर, शिशुनाग राजवंश की स्थापना की। यह काशिदेश का रहनेवाला था, किंतु आगे चल कर, यह मगध देशनिवासी बन गया। इसके पुत्र का नाम काकवर्ण था।

इसके राजवंश में निम्नलिखित दस राजा उत्पन्न हुए, जिन्होंने ३६० वर्षों तक मगध देश पर राज्य किया :— १. काकवर्ण; २. क्षेमधर्म; ३. क्षेमजित्; ४. विंध्यसेन; ५. भूमिमित्र; ६. अजातशत्रु; ७. वंशक; ८. उदासि; ९. नन्दिवर्धन; १०. महानन्दिन् (मत्स्य. २७२.६-१७; वायु. ९९.३१४-३१५)।

शिशुपाल—चेदि देश का सुविख्यात राजा, जो चेदि राजा दमघोष एवं वसुदेवभगिनी श्रुतश्रवा का पुत्र था। इस प्रकार यह कृष्ण का फुफेरा भाई, एवं पांडवों का मौसेरा भाई था (म. स. ४०.२१; भा. ७.१.१७; ९.२४.४०)। इसे 'चैद्य' एवं 'सुनीथ' नामांतर भी प्राप्त थे (म. स. ३३.३५२* पंक्ति. ४; परि. १.२१.२; ३६.१३)।

यह शुरू से ही अत्यंत दुष्टप्रकृति, एवं कृष्ण का प्रखर विद्वेषक था, जिसका संकेत पुराणों में इसे हिरण्यकशिपु एवं रावण का अंशावतार मान कर किया गया है (मत्स्य. ४६.६; विष्णु. ४. १४.११; ब्रह्म. १४.२०; वायु. ९६. १५८; ब्रह्मांड. ३.३१.१५९)।

जन्म—इसके स्वरूप के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है, जिसके द्वारा कृष्ण से इसका जन्मजात शत्रुत्व प्रस्थापित करने का प्रयत्न किया गया है। जन्म से यह अत्यंत विरूप था, एवं इसके तीन नेत्र, एवं चार भुजाएँ थीं। इसकी आवाज भी गर्दभ के समान थी। इसके जन्म के समय आकाशवाणी हुई थी, 'जिस पुरुष के गोद में यह बालक देते ही, इसकी दो भुजाएँ एवं एक नेत्र लुप्त हो कर इसका विरूपत्व नष्ट हो जायेगा, उसीके हाथों शस्त्र के द्वारा इसकी मृत्यु होगी।

इस विचित्र बालक को देखने के लिए, अन्य राजाओं एवं रिश्तेदारों की भाँति कृष्ण एवं बलराम भी उपस्थित हुए थे। उस समय, कृष्ण के इस बालक को गोद में लेते ही, इसका विरूपत्व नष्ट हुआ, एवं आकाशवाणी के कथनानुसार कृष्ण इसका शत्रु साबित हुआ (म. स. ४०. १-१७)। कृष्ण की फूफी श्रुतश्रवा ने अपने बालक को बचाने के लिए उससे बार-बार प्रार्थना की। उस समय कृष्ण ने उसे अभिवचन दिया, 'शिशुपाल के सौ अपराधों को मैं क्षमा करूंगा, एवं उसके सौ अपराध पूर्ण होने पर ही मैं उसका वध करूंगा'।

कृष्ण का विद्वेष—यह शुरू से ही मगधराज जरासंध का पक्षपाती था, एवं कृष्ण से द्वेष करता था (ह. वं. २३४.१३)। इसके कृष्ण की तुलना में अधिक सामर्थ्यशाली राजा होते हुए भी, सभी लोग कृष्ण को ही अधिक मान देते थे, यह इसे बिलकुल अच्छा नहीं लगता था।

शिशुपाल के अनाचार—इसी विद्वेष के कारण यह अनेकानेक पापकर्म एवं अनाचार करता रहा। कृष्ण जब प्राग्ज्योतिष पुर गया था, उस समय उसकी अनुपस्थिति में इसने द्वारका नगरी जलायी थी। रैवतक पर्वत पर हुए यादवों के उत्सव के समय, इसने हमला कर अनेकानेक यादवों को मारपीट कर उन्हें कैद किया था। कृष्णपिता वसुदेव के अश्वमेध यज्ञ के समय, इसने उसका अश्वमेधीय अश्व चुरा कर, यज्ञ में विघ्न उपस्थित किया था। बभ्रु राजा की पत्नी का इसने हरण किया था, एवं अपने मामा विशालक की कन्या भद्रा पर बलात्कार किया था। रुक्मिणीस्वयंवर के समय इसने कृष्ण पर आरोप लगाया था की, कृष्ण ने रुक्मिणी को बहका कर उससे जबर्दस्ती शादी की है।

कृष्ण की निंदा—कृष्ण के प्रति इसके विद्वेष का रौद्र उद्रेक युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में हुआ, जहाँ इसने कृष्ण को अग्रपूजा का मान देने के प्रस्ताव को अत्यंत कठोर शब्दों में विरोध किया। इसने कहा, 'कृष्ण एक कायर एवं अप्रशंसनीय व्यक्ति है, एवं उसकी शूरता एवं पराक्रम की जो गाथाएँ आज समाज में प्रचलित हैं, वे सारी सरासर झूट एवंअतिशयोक्त हैं। बचपन में कृष्ण ने पूतना का वध किया, जो एक चिड़िया मात्र थी। वल्मीक जैसा छोटा गोवर्धन पर्वत उसने उठाया, इसमें बहादुरी क्या? बछड़े, साँप, गधे को मारनेवाले को क्या तुम शूरवीर कहोंगे? दुई जैसे झाड़ उखाड़ डाले, अथवा एक आधा नाग नष्ट ही किया, तो क्या यह वीरता कही जायेगी?। रही बात कंसवध की, उसमें भी कोई शौर्य नहीं था? गौओं को चरानेवाले एक क्षुद्र व्यक्ति की तुम लोग प्रशंसा क्यों करते हो, यह मेरे समझ में नहीं आता' (म.स.३८)।

इसी सभा में कृष्ण की स्तुति करनेवाले भीष्म से इसने कहा, 'तुम सरासर नपुंसक हो, जो अन्य सम्राटों को छोड़ कर आज भरी सभा में कृष्ण की स्तुति कर रहे हो'।

शिशुपालवध—शिशुपाल के इन आक्षेपों को सुन कर, भीम क्रुद्ध हो कर इसे मारने के लिए दौड़ा, किन्तु भीष्म ने उसे रोंक दिया (म. स. ३९.९-१४)।

कृष्ण भी इन मिथ्या आरोपों के कारण, इसका वध करना चाहता था, किन्तु अपनी फूफी को दिये वचन का स्मरण कर, वह शांत रहा। किन्तु राजसूय यज्ञमंडप से बाहर आते ही शिशुपाल पुनः एक बार कृष्ण के संबंध में भलाबुरा कहने लगा। इसने कहा, 'रुक्मिणी मेरी पत्नी है, एवं उसने मेरा ही वरण किया है। किन्तु श्रीकृष्ण ने उसका हरण किया है'।

शिशुपाल का यह वचन सुन कर, एवं इसके सौ अपराध पूर्ण हुए हैं, यह जान कर श्रीकृष्ण ने अपने सुदर्शन चक्र से इसका वध किया (म. स. ४२.२१; भा. १०.७४)। मृत्यु क पश्चात् इसके शरीर का तेज कृष्ण की देह में विलीन हो गया।

परिवार--इसके धृष्टकेतु, सुकेतु, एवं शरभ नामक तीन पुत्र, एवं करेणुमती (रेणुमती) नामक एक कन्या थी।

महाभारत में इसका करकर्ष नामक अन्य एक पुत्र भी दिया गया है। इसकी बहन का नाम काली था, जो भीम की पत्नी थी (म. आश्व. ३२.११)।

शिशुमार—एक ऋषि, जो पानी में ग्राह का रूप धारण कर रहता था (पं. ब्रा. १४.५.१५)। 'शिशुमार' का शब्दशः अर्थ 'ग्राह' ही है। इसे 'सिशुमार' नामांतर भी प्राप्त था।

इसका सही नाम शर्कर था। एक बार सृष्टि के समस्त ऋषियों ने इंद्र की स्तुति की, किंतु यह मौन ही रहा। इंद्र के द्वारा स्तुति करने की आज्ञा होने पर, इसने औद्धत्य से कहा, 'तुम्हारी स्तुति करने के लिए मेरे पास समय नहीं है। फिर भी एक बार पानी उछालने के कार्य में जितना समय व्यतीत होगा, उतने ही समय तुम्हारी स्तुति करूँगा'।

किंतु इंद्र की स्तुति प्रारंभ करने पर इसे पता चला कि, इंद्र की जितनी स्तुति की जाये, उतनी ही कम है। फिर इसने तपश्चर्या कर सामविद्या प्राप्त की, एवं इंद्र के स्तुति-वाचक साम की रचना की, जो आगे चल कर इसीके नाम के कारण 'शार्कर-साम' नाम से सुविख्यात हुआ (पं. ब्रा. १४.५.१५)।

२. स्वायंभुव मन्वंतर का एक प्रजापति, जिसकी भ्रमी नामक कन्या का विवाह ध्रुव से हुआ था (भा. ४.१०. ११)।

३. भगवान् विष्णु का एक अवतार, जो दोष वसु एवं शर्वरी का पुत्र था (भा. ६.६.१४)।

शिशुरोमन्—तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)।

शिष्ट—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो ध्रुव एवं धन्या का का पुत्र था। अग्नि की कन्या सुच्छाया इसकी पत्नी थी, जिससे इसे कृप, रिपुंजय, वृत्त, एवं वृक नामक चार पुत्र उत्पन्न हुये (मत्स्य. ४.३८)। इसे 'सृष्टि' नामांतर भी प्राप्त था।

शीघ्र--(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, अग्निवर्ण राजा का पुत्र, एवं मरु राजा का पिता था (भा. ९.२.५)। भविष्य पुराण में इसे 'शीघ्रगन्तृ' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम अपवर्मन् दिया गया है।

शीघ्रग—एक पक्षिराज, जो संपाति के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.३५)।

शीघ्रगन्तृ—इक्ष्वाकुवंशीय शीघ्र राजा का नामांतर।

शीततोया--वरुण की पत्नियां में से एक।

शीतवृत्त--वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण।

शुक--एक महर्षि, जो व्यास पाराशर्य ऋषि का पुत्र था (शुक वैयासकि देखिये)।

२. एक वानर, जो शरभ वानर का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम व्याघ्री था, जिससे इसे ऋक्ष नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड ३.७.२०८)। पुराणों में इसका विस्तृत वंशक्रम प्राप्त है (वानर देखिये)।

३. रावण का एक अमात्य, जो अपने सारण नामक मित्र के साथ उसके गुप्तचर का काम भी निभाता था।

राम-रावण-युद्ध के समय, राम का सैन्यबल, शस्त्रबल आदि की जानकारी प्राप्त करने के लिए, रावण ने इसे एवं सारण को गुप्तचर के नाते राम के सेनाशिबिर में भेजा था। पश्चात् ये दोनों वानर का रूप धारण कर, राम के शिबिर में आ पहुँचे।

बिभीषण ने इनका सही रूप पहचाना, एवं उन्हें गिरफ्तार कर, इन्हें राम के सम्मुख पेश किया। राम ने इनकी निःशस्त्र अवस्था की ओर ध्यान दे कर इन पर दया की, एवं इन्हें देहदण्ड के बिना ही मुक्त किया।

पश्चात् इसने रावण के पास जा कर राम की सैन्य-सामर्थ्य एवं उदारता की काफ़ी प्रशंसा की, एवं उससे संधि करने की प्रार्थना रावण से की। किंतु रावण ने इसकी एक न सुनी, एवं अन्य गुप्तचर राम की सेना के ओर भेज दिये (वा. रा. यु. २५-२९; म. व. २६७. ५२-५३)।

पूर्वजन्मवृत्त--अपने पूर्वजन्म में यह ब्राह्मण था। किन्तु अगस्त्य ऋषि को नरमांसयुक्त भोजन खिलाने की गलती इससे हुई, जिस कारण इसे राक्षसयोनि प्राप्त हुई। आगे चल कर, राम के पुण्यदर्शन के कारण यह मुक्त हुआ।

४. (सू. नरिष्यंत.) एक राजा, जो नरिष्यंत राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. ८.१२५)।

५. गांधारराज सुबल का पुत्र, जो शकुनि का भाई था। भारतीय युद्ध में अर्जुनपुत्र इरावत् ने इसका वध किया (म. भी. ८.२४-३१)।

६. एक ऋषि, जो दीर्घतमस् व्यास ऋषि का पुत्र था। कृष्ण के पुण्यस्पर्श के कारण, अपने अगले जन्म में यह उपनन्द नामक गोप की कन्या बन गया (पद्म. पा. ७२)। पुराणों में प्राप्त अट्ठाईस व्यासों की नामावलि में इसका नाम अप्राप्य है।

७. एक राजा, जो शर्यातिवंशीय पृषत् राजा का पुत्र था। इसने समस्त पृथ्वी को जीत कर, सौ अश्वमेध यज्ञ किये।

अपने उत्तर आयुष्य में इसने वानप्रस्थाश्रम को स्वीकार किया, एवं शतशृंग पर्वत पर पर्णकुटी में रहने लगा। अस्त्रविद्याशास्त्र में यह पांडवों का गुरु था, एवं इसीने ही भीम को गदायुद्ध, युधिष्ठिर को तोमर युद्ध, नकुल-सहदेवों को खड्गयुद्ध, एवं अर्जुन को धनुर्वेद की शिक्षा प्रदान की थी (म. आ. परि. ६७. २८-३७)।

८. एक ऋषि, जो दक्षिण पांचाल के अणुह एवं ब्रह्मदत्त राजा का समकालीन था। यह व्यास पाराशर्य ऋषि के पुत्र शुक वैयासकि से काफ़ी पूर्वकालीन था।

पौराणिक साहित्य में शुक ऋषि की अनेकानेक पत्नियाँ एवं विस्तृत वंशक्रम प्राप्त है। पार्गिटर के अनुसार, यह सारा परिवार व्यास ऋषि के पुत्र शुक वैयासकि का न हो कर अणुह एवं ब्रह्मदत्त राजा के समकालीन शुक ऋषि का था। शुक वैयासकि जन्म से ही अत्यंत विरागी एवं ब्रह्मचारी था।

परिवार—इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थी:— १. पीवरी, जो विभ्राज अथवा बर्हिषद पितरों की मानसकन्या थी। हरिवंश में इसे सुकाल पितरों की कन्या कहा गया है (ह. वं. १.१८.५८), २. गो (एकशृंगा)। हरिवंश में एकशृंगा गो की नहीं, बल्कि पीवरी का नामांतर बताया गया है।

इसके निम्नलिखित पुत्र थे:— १. भूरिश्रवस् (भूरिश्रुत, भूरि); २. शंभु; ३. प्रभु; ४. कृष्ण; ५. गौर (गौरप्रभ); ६. देवश्रुत (ब्रह्मांड. ३.८.९३; वायु. ७०.८४-दे. भा. १.१४; नारद. १.५८)।

इसकी कन्या का नाम कृत्वी (कीर्तिमती, योगमाता, योगिनी) था, जो अणुह राजा की पत्नी थी (ह. वं. १. २३.६; वायु. ७३.२८-३०)। अणुह राजा से उसे ब्रह्मदत्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (मत्स्य. १५)।

शुक वैयासकि—एक महर्षि, जो व्यास पाराशर्य नामक सुविख्यात ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। व्यास ने इसे संपूर्ण वेद तथा महाभारत की शिक्षा प्रदान की थी (म. आ. ५७.७४-७५)। अपने ज्ञान एवं नैष्ठिक ब्रह्मचर्य के कारण, यह प्राचीन काल से प्रातःस्मरणीय विभूति माना जाता है। इसी कारण, पुराणों में इसे 'महातप,' 'महायोगी,' एवं 'योगशास्त्र का प्रणयिता' कहा गया है (वायु ७३.२८)।

जन्म—घृताची अप्सरा (अरणी) को देख कर व्यास महर्षि का वीर्य स्खलित हुआ, जिससे आगे चल कर शुक का जन्म हुआ (म. आ. ५७.७४)। महाभारत में अन्यत्र, व्यास के वीर्य के द्वारा अरणीकाष्ठ से इसका जन्म होने का निर्देश प्राप्त है (म. शां. ३११.९-१०)।

विद्याध्ययन--इसका लौकिक गुरु बृहस्पति था (म. शां. ३११.२३)। अपने पिता के आदेशानुसार, इसने अपने गुरु से मोक्षतत्त्व का उपदेश प्राप्त किया था (म. शां. ३१२)। शिव के द्वारा इसका उपनयनसंस्कार संपन्न हुआ था (म. शां. ३११.१९)। व्यास ने इसे भागवत सिखाया था।

इसके उपनयन के समय इंद्र ने इसे कमंडलु एवं कषायवस्त्र प्रदान किये। बृहस्पति ने इसे वेदादि का ज्ञान दिया था, एवं उपनिषद, वेदसंग्रह, इतिहास, राजनीति एवं मोक्षादि धर्म आदि का ज्ञान स्वयं व्यास ने इसे दिया था। आगे चल कर ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति के लिए, यह बहुलाश्व जनक राजा के पास गया। वहाँ जनक राजा ने इसे स्त्रीजाल में फँसाने की कोशिश की, किन्तु उसका यह प्रयत्न असफल ही रहा। इसने नारद से भी आत्मकल्याण का उपाय पूछा था (म. शां. ३१८)।

विरक्ति—यह शुरू से ही अत्यंत विरक्त था, एवं उपनयन के पूर्व ही इसने जीवन के समस्त भोगवस्तुओं का त्याग किया था। अपने पिता की आज्ञा से यह नग्नावस्था में कुरुजांगल एवं मिथिला नगरी गया था। मिथिला नगरी

में जनक राजा ने इसका यथोचित स्वागत किया, एवं इससे ज्ञान-विज्ञानविषयक अनेकानेक प्रश्न पूछे (म. शां. ३१३.३-२१)। मिथिला नगरी से लौट कर यह पुनः एक बार अपने पिता व्यास के पास आया (म. शां. ३१४.२९)।

भागवत का कथन—शुक के जीवन से संबंधित घटनाओं में एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण घटना, व्यास पाराशर्य से इसे हुई भागवतपुराण की प्राप्ति मानी जाती है। भागवत ग्रंथ की प्राप्ति होने के पूर्व ही शुक परमज्ञानी था, किंतु फिर भी यह पुराण इसने अत्यंत भक्तिभावना से सुना, एवं उसे सुनते ही इसका हृदय भक्तिभावना से भर आया (भा. १.७.८)। पश्चात् यह पुराण इसने परिक्षित् राजा को सुनाया था। पुराण सुनाते समय, यह तेजस्वी, तरुण एवं आजानबाहु प्रतीत होता था (भा. १. १९.१६-२८)।

भागवत पुराण की रचना अन्य पुराणों से भिन्न है। अन्य पुराणो में जहाँ परमेश्वरप्राप्ति के लिए उपासना, चिंतन एवं तपस्या पर जोर दिया गया है, वहाँ भागवत में भक्ति को प्राधान्य दिया गया है। यही भक्तिप्राधान्यता भागवत का प्रमुख वैशिष्ट्य है। इसी कारण, भागवत को 'अखिलश्रुतिसार' एवं 'सर्ववेदान्तसार' कहा गया है (भा. ३.२.३; १२.१३.१२)। इस ग्रंथ के संबंध में प्रत्यक्ष भागवत में कहा गया है—

> राजन्ते तावदन्यानि पुराणानि सतां गणे।
> यावन्न दृश्यते साक्षाच्छ्रीमद्भागवतं परम्॥
> (भा. १२.१३.१४)।

भागवत के अनुसार, इस ग्रंथ के कथन से स्वयं व्यास को भी अत्यधिक समाधान प्राप्त हुआ। परमेश्वरप्राप्ति का 'साधनचतुष्टय' इस ग्रंथ से पूर्ण होने के कारण, अपने जीवन का सारा कार्य परिपूर्ण होने की धारणा उसके मन में उत्पन्न हुई।

व्यास-शुकसंवाद—महाभारत में 'शुकानुप्रश्न' नामक एक उपाख्यान प्राप्त है, जहाँ शुक के द्वारा अपने पिता व्यास से पूछे गये अनेकानेक प्रश्नों का, एवं व्यास के द्वारा दिये गये शंकासमाधानों का वृत्तांत प्राप्त है। उस उपाख्यान में चर्चित प्रमुख विषय निम्नप्रकार है:--१. ज्ञान के साधन एवं उनकी महिमा; २. योग से परम पद की प्राप्ति; ४. कर्म एवं ज्ञान में अंतर; ५. ब्रह्मप्राप्ति के उपाय; ६. ज्ञानोपदेश में ज्ञान का निर्णय; ७. प्रकृति-पुरुष विवेक; ८. ब्रह्मवेत्ता के लक्षण; ९. मन एवं बुद्धि के गुणों का वर्णन (म. शां. २२४-२४७)।

शुक-निर्वाण--इसके महानिर्वाण का विस्तृत वर्णन महाभारत में प्राप्त है, जो सत्पुरुष को प्राप्त होनेवाले 'योगगति' का अपूर्व शब्दकाव्य माना जाता है। अपने पिता वेदव्यास को अभिवादन कर यह कैलास पर्वत पर ध्यानस्थ बैठ गया। पश्चात् यह वायुरूप बना, एवं उपस्थित लोगों के आँखो के सामने आकाशमार्ग से सूर्य (आदित्य)-लोक में प्रविष्ट हुआ। इसके पिता व्यास 'हे शुक' कह कर शोक करने लगे, एवं बाकी सभी लोग अनिमिष नेत्रों से यह अपूर्व दृश्य देखते ही रहे (म. शां. ३१९-३२०)।

व्यास से तुलना--शुक सदैव नग्नस्थिति में रहता था। इसके सोलह वर्षों तक नग्नावस्था में रहने का निर्देश प्राप्त है (भा. १.१९.२६)। इसी नग्न अवस्था में यह परिक्षित् राजा से मिलने गया था। इसे नग्न अवस्था में सरोवर पर स्नान के लिए जाते समय वहाँ के उपस्थित लोग लज्जित नहीं होते थे, बल्कि व्यास को वैसी अवस्था में देखने पर उन्हें लज्जा का अनुभव होता था। इसका कारण यही था कि, शुक स्त्री-पुरुषों के भेदों के अतीत अवस्था में पहुँच गया था, जिस अतीत अवस्था में व्यास नहीं पहुँचा था (म. शां. ३२०. २८-३०; भा. १.४.४)।

शुकनाभ--रावण के पक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

शुकी--कश्यप एवं ताम्रा की कन्या। इसका विवाह गरुत्मत् से हुआ था। सृष्टि के सारे शुक (तोते) इसकी संतान माने जाते हैं। इसके पुत्रों में सुख, सुनेत्र, विशिख, सुरूप, सुरस, एवं बल प्रमुख माने जाते थे (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

शुक्ति आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १२. ५.१६)।

शुक्र उशनस्--भार्गवकुलोत्पन्न एक ऋषि, जो दैत्यों का एक सुविख्यात आचार्य था। यह भृगु ऋषि एवं हिरण्यकशिपु की कन्या दिव्या का पुत्र था। पौराणिक साहित्य में इसे कवि का पुत्र भी कहा गया है, जिस कारण इसे 'काव्य' पैतृक नाम प्राप्त था। यह एवं च्यवन भृगुकुल में उत्पन्न ऋषियों में सर्वाधिक प्राचीन ऋषि माने जाते हैं।

दैत्यों का आचार्य—महाभारत एवं पुराणों में इसे दैत्यों का गुरु, आचार्य, उपाध्याय, पुरोहित एवं याजक कहा गया है।

यह शुरू से ही असुरों का पक्षपाती था। वामन अवतार के समय, बलि वामन को त्रिपादभूमि देने के लिए सिद्ध हुआ। उस समय, इस क्रिया में रुकावट पैदा करने के हेतु यह झारी के मुख में जा बैठा। उस समय बलि ने दर्भाग्र से झारी का मुख साफ़ करना चाहा, जिस कारण इसकी एक आँख फूट गई। इसी कारण इसे 'एकाक्ष' कहते थे (नारद. १.११)।

संजीवनी विद्या--यह एवं अंगिरस्पुत्र जीव, अंगिरस् ऋषि के शिष्य थे। किन्तु विद्यादान के समय अंगिरस् ऋषि काफ़ी पक्षपात करने लगा, जिस कारण इसने उसका शिष्यत्व छोड़ दिया, एवं यह शिवाराधना करने लगा। पश्चात् शिव से इसे मृत-संजीवनी विद्या प्राप्त हुई, जिसके आधार पर देवासुर संग्राम में इसने असुरों को अनेक बार विजय प्राप्त करायी। पश्चात् इसकी यह संजीवनी विद्या बृहस्पतिपुत्र कच ने इससे प्राप्त की (कच एवं देवयानी देखिये)। कच से वह विद्या उसके पिता देवगुरु बृहस्पति ने, एवं बृहस्पति से समस्त देव-पक्षों ने प्राप्त की। इस प्रकार असुरों का अजेयत्व विनष्ट हुआ।

लिंग पुराण में इसे अघोर ऋषि का पुत्र कहा गया है, एवं इसके द्वारा हिरण्याक्ष को 'निग्रहविधि' बताये जाने का निर्देश भी वहाँ प्राप्त है (लिंग. २.५०)।

बार्हस्पत्य-शास्त्र--इसने १००० अध्यायोंवाले 'बार्हस्पत्य-शास्त्र' का निर्माण किया था, जो आगे चल कर अन्य आचार्यों के द्वारा संक्षिप्त किया गया (म. शां. ९१-९२)।

परिवार--इसकी पितृकन्या गो, एवं इंद्रकन्या जयंती नामक दो पत्नियाँ थी।

(१) जयंती की संतान--जयंती से इसे देवयानी नामक कन्या उत्पन्न हुई थी, जिसका विवाह ययाति राजा से हुआ था (ययाति देखिये)।

(२) गो की संतान--गो से इसे निम्नलिखित चार पुत्र उत्पन्न हुए थेः-१. त्वष्टृ; २. वरुत्रिन्; ३. शण्ड; ४. मर्क। ये चार ही पुत्र एवं उनके संतान असुरों के पक्षपाती होने के कारण विनष्ट हुए, एवं इस प्रकार भार्गव वंशांतर्गत शुक्र-शाखा विनष्ट हुई।

शुक्र जाबाल--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. ३.७.७)। यह 'जबाला' का वंशज होने के कारण, इसे 'जाबाल' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

शुक्र पांचाल--पांचाल देश का क्षत्रिय, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया था (म. क. ४०.४६-४८)। इसके अश्व, धनुष्, कवच एवं ध्वज सफेद थे (म. द्रो. २२.४९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'शंकु'।

शुक्र--(स्वा. उत्तान) एक राजा, जो हविर्धान एवं हविर्धानी का पुत्र था (भा. ४.२४.८)।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक :

४. पांचालदेशीय शुक्र नामक योद्धा का नामांतर (शुक्र पांचाल देखिये)।

शुंग--एक राजवंश, जिसका आद्य संस्थापक पुष्यमित्र था। मौर्यवंश का अंतीम राजा बृहद्रथ का पुष्यमित्र सेनापति था, जिसने बृहद्रथ का वध कर अपने स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित दस राजाओं ने ११२ वर्षों तक राज्य कियाः- पुष्यमित्र, वसुज्येष्ठ, वसुमित्र, अंतक, पुलिंदक, वज्रमित्र, समाभाग, देवभूमि (मत्स्य. २७२.२६-३२)।

शुचन्ति--अश्विनों का एक आश्रित (ऋ. १. ११२.७)।

शुचि--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अंधक राजा का पुत्र था। पाठभेद (मत्यपुराण)--'शशि'।

२. (स्वा. उत्तान.) एक ऋषि, जो भरद्वाज एवं अंगिरस् कुल में उत्पन्न हुआ था। वसिष्ठ ऋषि के शाप के कारण, इसे मनुष्य योनि में जन्म प्राप्त हुआ, एवं यह विजिताश्व राजा का पुत्र बन गया (भा. ४.२४.४)।

३. (सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार शतद्युम्न जनक राजा का पुत्र था। पाठभेद (वायुपुराण)-'मुनि' (भा. ९.१३.२२)।

४. विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५४)।

५. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

५. भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

७. भौत्य मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८.१३.१४)।

८. विकुंठ देवों में से एक (ब्रह्मांड. २.३६.५७)।

९. सुधामन् देवों में से एक।

१०. (सो. पूरूरवस्.) एक राजा, जो अनेनस् राजा का पौत्र, एवं शुद्ध राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम त्रिककुद् था।

११. (सो. मगध. भविष्य) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार विप्र राजा का, वायु के अनुसार महाबाहु राजा का, ब्रह्मांड के अनुसार रिपुंजय राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार विभु राजा का पुत्र था। इसके एक पुत्र का नाम क्षेम (क्षेम्य) था (भा. ९.२२.४७-४८; विष्णु. ४.२३.५-७)

१२. एक वणिक्कुल का मुख्य, जो वन में दमयन्ती से सहजवश मिला था।

१३. एक भार्गव देव, जो भृगु ऋषि के पुत्रों में से एक था।

१४. भौत्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

१५. कश्यप एवं ताम्रा की एक कन्या।

१६. एक अग्नि (म. व.२११.२४)।

१७. एक अप्सरा, जो वेदशिरस् ऋषि की पत्नी थी (वेदशिरस् २. देखिये)।

शुचिका--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में यह उपस्थित थी (म. आ. ११४.५१)।

शुचिद्रथ--पूरुवंशीय कविरथ राजा का नामांतर।

शुचिविद्य--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरूरवस् राजा का पुत्र था (मत्स्य. २४.३४)।

शुचिवृक्ष गौपालायन--एक आचार्य, जो वृद्धद्युम्न आभिप्रतारिण नामक राजा का पुरोहित था (ऐ. ब्रा. ३.४८.९; मै. सं. ३.१०.४)।

शुचिश्रवस्--एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५.५३)।

२. स्वायंभुव मन्वंतर के अजित देवों में से एक।

शुचिष्मत्--कर्दम प्रजापति का पुत्र, जो उसे समुद्र से प्राप्त हुआ था। शिव ने इसे समुद्र का आधिपत्य एवं पश्चिम दिशा का अधिराज्य प्रदान किया था (स्कंद. २.४.१-१२)।

शुचिस्मिता--कुबेरसभा की एक अप्सरा (म. स. १०.१०)।

शुद्ध--(सो. आयु.) एक राजा, जो अनेनस् राजा का पुत्र, एवं शुचि राजा का पिता था (भा. ९.१७.११)।

२. भौत्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

शुद्धोद--(सू. इ.. भविष्य.) एक राजा, जो वायु, विष्णु, एवं भागवत के अनुसार शाक्य राजा का पुत्र था। भविष्य एवं मत्स्य में इसे शुद्धोदन कहा गया है। इसके पुत्र का नाम लांगल (राहुल, अथवा पुष्कल) था (भा. ९.१२.१४; वायु. ९९. २८८)।

शुद्धोदन--गौतम बुद्ध का पिता (अग्नि. १६) इसे 'शुद्धोद' नामांतर भी प्राप्त था।

शुनःपुच्छ--शुनःशेप ऋषि का भाई (ऐ. ब्रा. ७.१५.७; सां. श्रौ. ५.२०.१)।

शुनःशेप आजीगर्ति--एक सुविख्यात ऋषि, जो विश्वामित्र ऋषि का भतीजा एवं आगे चल कर उसका प्रमुख शिष्य था। विश्वामित्र का शिष्य होने के पश्चात्, यह देवरात नाम से प्रसिद्ध हुआ। शुनःशेप शब्द का शब्दशः अर्थ 'कुत्ते की पूँछ' होता है।

भृगुकुल में उत्पन्न ऋचीक अजीगर्त नामक ऋषि का यह मँझला पुत्र था, एवं इसके अन्य दो भाइयों के नाम शुनःपुच्छ, एवं शुनोलांगूल थे। इसे 'आजीगर्ति,' एवं 'सौयवसि' पैतृक नाम प्राप्त थे। ऋग्वेद के कई सूक्तों का प्रणयन इसके द्वारा हुआ है (ऋ. १.२४.३०; ९.३)

हरिश्चन्द्राख्यान--इसके जीवन से संबंधित विस्तृत कथा ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त हैं (ऐ. ब्रा. ७.१३-१८; सां. श्रौ. १५.२०-२१; १६.११.२)। हरिश्चन्द्र राजा को पुत्र न होने के कारण, उसने वरुण के पास मनौती मानी थी कि, अगर उसे पुत्र होगा, तो वह उसे वरुण को बलिस्वरूप में प्रदान करेगा। आगे चल कर, हरिश्चन्द्र को रोहित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, किन्तु वह मनौती पूरी करने में देर लगाने लगा। अपने पिता के द्वारा कबूल की गयी यह मनौती की कथा ज्ञात होते ही, रोहित वन में भाग गया।

पश्चात् हरिश्चन्द्र को उदररोग ने ग्रस्त किया। तब रोहित ने वरुण को बलि देने के लिए अपने स्थान पर अजीगर्तपुत्र शुनःशेप को नियुक्त किया, एवं इसके पिता को विपुल द्रव्य दे कर, बलिप्राणी के नाते इसे खरीद लिया।

पश्चात् इसे बलिस्तंभ में बाँध भी दिया गया। इतने में विश्वामित्र ऋषि ने इसे देवताओं की प्रार्थना करने के लिए कहा। शुनःशेप के द्वारा की गयी ये प्रार्थनाएँ ऋग्वेद के इसीके द्वारा रचित सूक्त में प्राप्त हैं।

पश्चात् विश्वामित्र ने इसे बलिस्तंभ से मुक्त किया, एवं 'देवरात' नाम से इसे अपना पुत्र एवं प्रमुख शिष्य मान कर, इसे 'जह्नु' एवं 'गाधिकुल का उत्तराधिकारी

बनाया। विश्वामित्र का पुत्र बनने के कारण, इसका भृगुगोत्र बदल कर, यह विश्वामित्रगोत्रीय बन गया।

ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त इस कथा का संबंध, ऋग्वेद में प्राप्त इसके सूक्तों से दिखाने का सफल प्रयत्न वेदार्थदीपिका में किया गया है। ऋग्वेद के अन्य एक सूक्त में भी इसके पाशमुक्त बन जाने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.२.७ सायणभाष्य)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट इसकी उपर्युक्त कथा अनेक बार सविस्तृत रूप में दी गयी है (म. अनु. ३; शां. २९४; दे. भा. ७.१४-१७; भा. ९.७;१६; वा. रा. बा. ६१-६२; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७; ब्रह्म. १०)।

शुनःशेप कथा का अन्वयार्थ--कई अभ्यासकों के अनुसार, वैदिक साहित्य में वर्णित शुनःशेप की कथा रूपकात्मक है, जहाँ दीर्घरात्रि के पश्चात् अस्तमान होनेवाले सूर्य की ओर संकेत किया हुआ प्रतीत होता है। इसके द्वारा विरचित ऋग्वेद के सूक्त में, इसे उषस् के द्वारा वरुण के पाशों से मुक्त किये जाने का निर्देश प्राप्त है, जो इस तर्क को पुष्टि देता है (ऋ. १.२४)।

शुनःसख--इंद्र का एक तापसवेशधारी रूपांतर। वृषादर्भि राजा ने एक कृत्या का निर्माण कर, सप्तर्षियों का वध करना चाहा। उस समय शुनःसख रूपधारी इंद्र ने उस कृत्या का वध किया, एवं इस प्रकार सप्तर्षियों का संरक्षण किया (म. अनु. १४२.४५)।

शुनक--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऋतु राजा का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार सुनय राजा का पुत्र था (भा. ९.१३.२६)। इसके पुत्र का नाम वीतहव्य था।

२. (सो. काश्य.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार गृत्समद राजा का पुत्र, एवं शौनक राजा का पिता था (भा. ९.१७.३)।

महाभारत में इसे एक महर्षि कहा गया है, एवं इसके पिता एवं माता का नाम क्रमशः रुरु, एवं प्रमद्वरा कहा गया है (म. आ. ८)। पुराणो में रुरु राजा का नाम गलती से छोड़ दिया गया है, जिस कारण इसे गृत्समद राजा का पुत्र कहा कया है।

आगे चल कर यह महर्षि बन गया, एवं इसके वंश के लोग अपने को क्षत्रियब्राह्मण कहने लगे। सुविख्यात शौनक ऋषि इसका ही पुत्र था (म. अनु. ३०.६५)। शुनक स्वयं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में एक ऋषि के नाते उपस्थित था (म. स. ४.१५)।

३. एक राजा, जो चंद्रहन्तृ असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.३५)। इसे अपने पूर्वज हरिणाश्व राजा से एक खड्ग की प्राप्ति हुई थी, जो इसने आगे चल कर उशीनर राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७७)। चंद्रतीर्थ नामक तीर्थस्थान में इसे मुक्ति प्राप्त हुई थी।

४. (प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो प्रद्योत राजवंश का संस्थापक माना जाता है। यह प्रारंभ में रिपुंजय राजा का अमात्य था, जिसका इसने वध कर अपने प्रद्योत नामक पुत्र को राजगद्दी पर बिठाया (रिपुंजय ४. देखिये)।

५. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से पथ्य नामक आचार्य का शिष्य था।

शुनस्कर्ण बाष्किह--एक राजा, जो शिवि अथवा बष्किह राजा का पुत्र था। इसके नाम से 'शुनस्कर्णस्तोम' नामक एक याग प्रसिद्ध है (पं. ब्रा. १७.१२.६)। इसने सर्वस्वार नामक एक यज्ञ किया था, जिस कारण निरोगी अवस्था में इसे मृत्यु प्राप्त हुई (बौ. श्रौ. २१.१७)।

शुनहोत्र भारद्वाज--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६.३३-३४)।

शुनोलांगूल--एक ऋषि, जो अजीगर्त ऋषि का कनिष्ठपुत्र, एवं शुनःशेष ऋषि का छोटा भाई था (ऐ. ब्रा. ७.१५; सां. श्रौ. १५.२०.१)।

शुभ--धर्म एवं श्रद्धा के पुत्रों में से एक।

२. रैवत मन्वन्तर का एक देवगण।

३. जालंधर दैत्य का सेनापति (पद्म. उ.४)।

शुभा--बृहस्पति की दो पत्नियों में से एक।

२. अंगिरस् ऋषि की शिवा नामक पत्नी का नामांतर (म. व. २०८.१)।

शुभांगद--द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित एक क्षत्रिय (म. आ. १७७.२०)।

शुभांगी--कुरु राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम विदूरथ था।

शुभानन--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

२. पितरों में से एक।

शुभ्र--वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में एक।

२. रैवत मन्वन्तर के अवतार का पिता।

शुंभ—एक असुर, जो तारकासुर का सेनापति था। इसका वाहन मेंढ़क था। यह दुर्गा के द्वारा मारा गया (मत्स्य. १५१.५)।

२. रामसेना का एक वानर।

३. जालंधर दैत्य का प्रिय दैत्य। स्वर्ग जीतने के पश्चात् जालंधर ने इसे अमरावती का राज्य प्रदान किया था (पद्म. ३.८)।

शुंभ-निशुंभ--पाताललोक में रहनेवाले राक्षसद्वय। इनके आश्रितों में चंड-मुंड, रक्तबीज एवं धूम्रलोचन आदि प्रमुख थे। ब्रह्मा ने इन्हें वरप्रदान किया था कि, सृष्टि के किसी भी पुरुष के लिए ये अवध्य रहेंगे। इस वर-प्रसाद के कारण ये अत्यंत उन्मत्त बने, एवं अपने गुरु भृगु की सलाह के अनुसार पाताललोक में राज्य करने लगे। इनके राज्य में शुंभ राजा का, एवं निशुंभ अमात्य का काम करने लगे। अन्त में कालिका देवी ने इनका इनके परिवार के सभी राक्षसों के साथ वध किया (दे. भा. ५.२१-३१; स्कंद. १.३.२-१७; मार्क. ८९)।

शुल्ब--उदंक ऋषि का पिता।

शुष्क—गोकर्ण क्षेत्र में रहनेवाला एक मुनि। भगीरथ के द्वारा गंगा भूतल में लायी जाने पर, समुद्र का पानी बढ़ने लगा, एवं पृथ्वी पर स्थित सारे समुद्रवर्ती तीर्थक्षेत्र डूबने लगे। उस समय अन्य सभी ऋषियों के साथ यह महेंद्र पर्वत पर रहनेवाले परशुराम से मिलने गया। इसने परशुराम से प्रार्थना कि, वह हाथ में शस्त्र धारण कर समुद्र को हटाये, एवं इस प्रकार तीर्थक्षेत्रों का रक्षण करे। इसकी प्रार्थना के अनुसार परशुराम ने गोकर्ण क्षेत्र का पुनरुद्धार किया (ब्रह्मांड. ३.५७-५८)।

शुष्कभृंगार--एक आचार्य (कौ. उ. २.६; सां. श्रौ. १७.७.१३)।

शुष्करेवती--एक देवी, जिसने अंधकासुर का वध किया था (अंधक देखिये)।

शुष्ण--एक असुर, जिसका इंद्र ने कुत्स के संरक्षण के लिए वध किया था (ऋ. २. १९.६)।

शुष्मायण सोम—अट्ठाईस व्यासों में से एक।

शुष्मिण--शिबियों के राजा अमित्रतपन का पैतृक नाम।

शूद्र—एक जातिसमूह, जो सिंकदर के आक्रमण के समय उत्तर भारत में निवास करती थी। युनानी साहित्य में इनका निर्देश 'सोद्राय' नाम से किया गया है, एवं मूषक लोगों के साथ आधुनिक सिंध प्रदेश में इनका निवासस्थान बताया गया है। पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में इन लोगों का निर्देश आभीर लोगों के साथ प्राप्त है (महा. १.२५२)।

पौराणिक साहित्य में--महाभारत में इनका निर्देश आभीर लोगों के साथ प्राप्त है, एवं इनका निवासस्थान पश्चिम राजपुताना प्रदेश में 'विनशन-तीर्थ' के समीप बताया गया है (म. श. ३७.१)। मार्कंडेय पुराण में इन्हें अपरान्त प्रदेश का निवासी बताया गया है, एवं इनका निर्देश बाल्हीक, वातधान, आभीर, पल्लव लोगों के साथ प्राप्त है।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, नकुल ने अपने पश्चिम दिग्विजय के समय इन्हें जीता था (म. स. ३२. १०)। भारतीय युद्ध में ये लोग कौरवों के पक्ष में शामिल थे एवं कर्ण के सेवादल में समाविष्ट थे (म. द्रो. ६:६-१६)।

शूद्रा—अत्रि ऋषि की दस पत्नियों में से एक, जो भद्राश्व एवं घृताची की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.८.७५)

शून्यपाल--एक ऋषि, जो हस्तिनापुर जानेवाले श्रीकृष्ण से मिला था।

शून्यबन्धु- (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार तृणबिन्दु राजा का पुत्र था।

शूर—(सो. यदु. सह.) एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार हैहय राजा कार्तवीर्यार्जुन के पाँच पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.४१.१३; मत्स्य. ४३. ४६)। परशुराम ने इसका वध किया।

२. (सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार द्रुह्यु राजा का पुत्र था।

३. (सो. यदु. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वसुदेव का पिता एवं कृष्ण का पितामह था। भागवत के अनुसार यह देवमीढ राजा का, एवं विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार देवमीढुष राजा का पुत्र था। कई ग्रंथों में इसे चित्ररथ राजा का पुत्र कहा गया है। संभवतः 'चित्ररथ' देवमीढ राजा का ही नामान्तर था (म. अनु. १४७.२९-३२)। इसे राजाधिदेव नामान्तर भी प्राप्त था।

परिवार--आर्यक नाग की कन्या भोजा या मारिषा इसकी पत्नी थी, जिससे इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:—१. वसुदेव; २. देवभाग; ३. देवश्रवस्; ४. आनक; ५. संजय; ६. श्यामक; ७. कंक; ८. शमीक; ९. वत्सक; १०. वृक।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित कन्याएँ भी थीं:-१. पृथा, जो इसने अपने मित्र कुंतिभोज राजा की गोद में दी थी, एवं इसी कारण जो कुंती नाम से प्रसिद्ध हुई (म. आ. १०४.१-३; म. द्रो. ११९.६-७) २. श्रुतदेवा (श्रुतवेदा); ३. श्रुतश्रवा; ४. राजाधिदेवा (ह. वं. १.३४.१७-२३; म. आ. परि. १.४३.३; १०४.१; भा. ९.२४.२८-३१)।

अन्य पत्नियाँ—वायु में इसकी आश्मकी, भाषी एवं माषी नामक अन्य तीन पत्नियों का निर्देश प्राप्त है। इनमें से भाषी, भोजा का ही नामांतर प्रतीत होता है। अपनी इन पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:-१. आश्मकीपुत्रः-देवमानुष; २. भाषीपुत्रः-वसुदेव, देवभाग, देवश्रवस्, अनाधृष्टि, कड, नंदन भृंजिन, श्याम, शमीक, गंडुष; ३. माषीपुत्रः—देवमीढुष (वायु. ९६. १४३-१४८)।

४. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो इलिन् एवं रथंतरी के पाँच पुत्रों में से एक था। इसके अन्य चार भाइयों के नाम दुष्यन्त, भीम, प्रवसु एवं वसु थे (म. आ. ८९.१४-१५)।

५. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ राजा का साथी था। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-हरण के समय अर्जुन ने इसका वध किया (म. व. २५५.२७)।

६. एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७२)।

७. (सो. यदु. वसु.) वसुदेव एवं मदिरा के पुत्रों में से एक।

८. (सो. यदु. वसु.) कृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक।

९. मगधदेश का एक राजा, जो दशरथ की पत्नी सुमित्रा का पिता था। दशरथ के द्वारा किये गये पुत्र-कामेष्टि यज्ञ का निमंत्रण इसे भेजा गया गया था (वा. रा. बा. १३-२६)।

शूरतर—एक राजा, जिसने पटच्चर राक्षस का वध किया था। भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसके रथ के अश्व हरे रंग के थे (म. द्रो. २२. ५३)।

शूरभू अथवा **शूरभूमि**-कंस की कन्याओं में से एक।

२. उग्रसेन राजा की कन्या, जो वसुदेवभ्राता श्यामक की पत्नी थी।

शूरवीर माण्डूक्य—एक आचार्य (ऐ. आ. ३.१. ३-४; सां आ. ७.२.८.९-१०)। पाठभेद-'शौरवीर'।

शूरसेन—(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार शत्रुघ्न राजा का पुत्र था। यह मथुरा में राज्य करता था, एवं इसीके ही कारण मधुवन में इसके राज्य को 'शूरसेन देश' नाम प्राप्त हुआ था।

२. कर्णपुत्र वृषसेन का नामान्तर।

३. हैहय राजा शूर का नामान्तर।

४. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये क्रौंचव्यूह के ग्रीवाभाग में यह दुर्योधन के साथ खड़ा था (म. भी. ७१.१७)।

५. प्रतिष्ठानपुर का एक सोमवंशीय राजा। इसे कोई पुत्र न था, जिसकी प्राप्ति के लिए इसने अनेकानेक उपाय किये। अंत में इसे पुत्र के रूप में एक सर्प प्राप्त हुआ। अपने पुत्र का सर्परूप गुप्त रखने के लिए, इसने उसके उपनयन विवाहादि संस्कार किये। अंत में गौतमी-देवी की कृपा से इसके पुत्र को मनुष्यरूप प्राप्त हुआ (ब्रह्म. १११)।

६. मध्यदेश के सहस्र ग्राम का राजा, जिसकी कथा 'चतुर्थी माहात्म्य' कथन करने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. १.५६)।

७. पाण्डवों के पक्ष का एक पांचालदेशीय योद्धा। कर्ण ने इसका वध किया (म. क. ३२.३७)।

शूरसेनी—पूरुवंशीय प्रवीर मनस्यु राजा की पत्नी। इसे श्येनी नामान्तर भी प्राप्त था। पाठभेद-'सौवीरी' (म. आ. ८९.६)।

शूर्पणखा अथवा **शूर्पनखी**—एक राक्षसी, जो विश्रवस् एवं कैकसी की कन्या, तथा रावण, विभीषण एवं कुंभकर्ण की बहन थी। खर एवं दूषण राक्षस इसके मौसेरे भाई थे। महाभारत में इसकी माता का नाम राका बताया गया है, एवं खर एवं दूषण इसके सगे भाई बताये गये हैं (म. व. २५९.१४)।

कालकेय राक्षसों का अधिपति विद्युज्जिह्व राक्षस से इसका विवाह हुआ था। आगे चल कर इसका पति रावण के हाथों अश्मनगरी में गलती से मारा गया। इस कारण यह लंका नगरी में रहने लगी। कालोपरांत यह अपने मौसेरे भाई खर के साथ दण्डकारण्य में रहने लगी (वा. रा. उ. २३-२४)।

दण्डकारण्य में—वनवास के समय राम के दण्डकारण्य में आने पर यह उस पर मोहित हुई। किन्तु एकपत्नीव्रती राम ने इसकी प्रणयाराधना की मज़ाक उड़ायी, एवं इसकी

फजिहत करने के हेतु इसे लक्ष्मण से विवाह करने के लिए कहा।

लक्ष्मण ने इसकी और भी मजाक उड़ायी, जिस कारण क्रुद्ध हो कर यह सीता को मारने के लिए दौड़ी। उसी क्षण लक्ष्मण ने इसके नाक एवं कान काट कर इसे विरूप बनाया।

राम एवं लक्ष्मण की शिकायत ले कर यह अपने भाई खर के पास दौड़ी। अपने बहन के अपमान का बदला लेने के लिए, खर ने राम पर आक्रमण किया, जिसमें खर स्वयं मारा गया (वा. रा. अर. १७-१९; खर १. देखिये)।

रावण की राजसभा में—पश्चात्, यह पुनः एक बार लंका में गयी, एवं इसने रामलक्ष्मण के द्वारा दण्डकारण्य में किये गये सारे अत्याचारों की कहानी रावण से बतायी (वा. रा. अर. ३३-३४; म. व. २६१.४५-५१)। उसी समय इसने सीता के सौंदर्य की प्रशंसा रावण को सुनायी, एवं राम से बदला लेने के लिए सीताहरण की मंत्रणा उसे दी।

रावण के द्वारा सीताहरण किये जाने पर, इसने उसे रावण की श्रेष्ठता बता कर उसका वरण करने के लिए बार-बार आग्रह किया था (वा. रा. सुं. २४; ४३)।

शूलिन्--एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वन्तर के चौवीसवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह अवतार कलियुग में नैमिषारण्य में अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थेः—१. शालिहोत्र; २. अग्निवेश; ३. युवनाश्व; ४. शरद्वसु।

शूष वार्ष्णेय--एक आचार्य, जिसे आदित्य ने 'सवित्राग्नि' का उपदेश दिया था (तै. ब्रा. ३.१०; ९.१५)।

शूष वाह्नेय भारद्वाज--एक आचार्य, जो अराल दार्तेय शौनक नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. २)।

शृगाल—स्त्रीराज्य का अधिपति, जो कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में उपस्थित था (म. शां. ४.७; पाठ-सृगाल)।

शृगाल वासुदेव—करवीरपुर का एक राजा, जो कृष्ण से अत्यधिक द्वेष करता था। इसकी पत्नी का नाम पद्मावती, एवं पुत्र का नाम शक्रदेव था। परशुराम की आज्ञा से कृष्ण ने इसका वध किया, एवं करवीरपुर की राजगद्दी पर इसके पुत्र शक्रदेव को बिठाया (ह. वं. २.४४)।

शृंग—एक शिवपार्षद, जो वेताल एवं कामधेनु का पुत्र था। इसकी शिवभक्ति से प्रसन्न हो कर शिव ने इसे अपना पार्षद बनाया।

यह सृष्टि के समस्त गो-संतति का पिता माना जाता है, जो इसे वरुण के घर में रहनेवाली सुरभि-कन्याओं से उत्पन्न हुई थी।

२. ऋष्यशृंग ऋषि का नामान्तर।

शृंगवत्--गालव ऋषि की पुत्र, जिसने एक रात्रि के लिए वृद्धकन्या नामक तपस्विनी को अपनी पत्नी बनाया था (म. श. ५१.१४; वृद्धकन्या देखिये)। वृद्धकन्या के चले जाने पर उसकी स्मृति से यह अत्यंत दुःखी हुआ, एवं देहत्याग कर स्वर्गलोक चला गया।

शृंगवृष—कुंडपायिन् ऋषि के कुल में उत्पन्न एक ऋषिक। इसके उदर से इंद्र ने जन्म लिया था (ऋ. ८. १७.१३)। लुडविग के अनुसार, यह पृदाकुसानु नामक ऋषि का पिता था (लुडविग, ऋग्वेद अनुवाद ३. १६१)।

शृंगवेग—कौरवकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५७.१३)।

शृंगिन्--एक ऋषि, जो अंगिरस्कुलोत्पन्न शमीक ऋषि का पुत्र था। इसे गविजात नामान्तर भी प्राप्त था (दे. भा. २.८; मत्स्य. १४५.९५-९९)। यह महान् तपस्वी, एवं अत्यंत क्रोधी था।

एक बार यह अपने गुरु की सेवा करके घर वापस आ रहा था, जब कृश नामक इसके मित्र ने परिक्षित् राजा के द्वारा की गयी इसके पिता की विटंबना की दुर्वार्ता इससे कह सुनायी। इससे क्रोधित होकर इसने परिक्षित् राजा को तक्षकदंश से मृत होने का शाप दिया।

बाद में इसके पिता ने इसे काफ़ी समझाया, किन्तु इसने अपना शाप वापस नहीं लिया (म. आ. ३६.२१-२५; ४६.२ परिक्षित् १. देखिये)।

शृंगीपुत्र—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में कुथुमि नामक आचार्य का शिष्य था।

शेणिन्—अंगिरस् कुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

शेरभ एवं शेरभक--अथर्ववेद में निर्दिष्ट एक सर्पद्वय अथवा राक्षसद्वय (अ. वे. २.२४.१)।

शेष--एक आचार्य, जो यजुर्वेदीय वेदांगज्योतिष का कर्ता माना जाता है। इसके द्वारा विरचित 'यजुर्वेदीय-वेदांगज्योतिष' में कुल ४३ श्लोक हैं, जिनमें से ३०

श्लोक लगध के द्वारा विरचित 'ऋग्वेदीय वेदांगज्योतिष' से लिये गये हैं, एवं १३ इसके अपने थे। इसके ग्रंथ पर सोमक की टीका उपलब्ध है (लगध देखिये)।

२. एक प्रमुख नाग, जो नागराज अनंत का अवतार माना जाता है। यह भगवान् नारायण का अंशावतार माना जाता है, एवं उसके लिए शय्यारूप हो कर उसे धारण करता है।

भागवत में इसे कश्यप एवं कद्रू का पुत्र कहा गया है, एवं इसका निवासस्थान पाताल-लोक बताया गया है। इसके सहस्र शीर्ष थे, एवं यह गले में शुभ्रवर्णीय रत्नमाला परिधान करता था (भा. १०.३.४९)। यह हाथ में हल एवं कोयती धारण करता था। गंगा ने इसकी उपासना की थी, जिसे इसने ज्योतिषशास्त्र एवं खगोल शास्त्र का ज्ञान प्रदान किया था (विष्णु. २.५.१३-२७)।

अन्य नागों की तरह इसे भी कामरूपधरत्व की विद्या अवगत थी। इसी कारण इसके अनेकविध अवतार (कला) उत्पन्न हुए थे। इसकी एक कला क्षीरसागर में थी, जिस पर विष्णु शयन करते हैं। बालकृष्ण को वसुदेव जब गोकुल ले जा रहे थे, उस समय अपनी फणा फैला कर इसने उसकी रक्षा की थी।

अपने सर पर यह समस्त पृथ्वी को धारण करता है, जो सिद्धि इसे ब्रह्मा के आशीर्वाद के कारण प्राप्त हुई थी (म. आ. ३२.५-१९)।

शेषसेवकि--रौपसेवकि नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैखावत्य--एक ऋषि, जो शास्त्र एवं आरण्यक आदि ग्रंथों का महान् आचार्य था। भीष्म एवं शाल्व के द्वारा अपमानित हुई अंबा इसके आश्रम में आ कर रही थी, एवं वहीं उसने भीष्मवध के लिए कठोर तपस्या की थी (म. उ. १७३.११-१८)।

२. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था। इसे शैब्य चित्ररथ नामान्तर भी प्राप्त था। इसके रथ के अश्व नीलोत्पल वर्ण के थे, एवं वे सुवर्णालंकार तथा अनेक प्रकार की मालाओं से विभूषित किये गये थे।

शैत्यायन--एक वैयाकरण, जिसके द्वारा विरचित संधिनियमों का निर्देश तैत्तिरीय प्रातिशाख्य में प्राप्त है (तै. प्रा. ५.४०)।

शैनेय--सुविख्यात यादवराजा सात्यकि युयुधान का पैतृक नाम। शिनि राजा का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृकनाम प्राप्त हुआ था (म. मौ. ४.३२ सात्यकि देखिये)।

शैव्य--अमित्रतपन शुष्मिण नामक राजा की उपाधि (ऐ. ब्रा. ८.२३.१०)। शिवि जाति में उत्पन्न, इस अर्थ से संभवतः यह उपाधि उसे प्राप्त हुई होगी।

२. सत्यकाम नामक आचार्य का पैतृक नाम (प्र. उ. १.१; ५.१)।

३. एक राजा, जो सृंजय राजा का पिता था (म. द्रो. परि. १.८.२७४ पाठ)।

४. शिवि देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर का श्वशुर था। इसका सही नाम गोवासन था। महाभारत में इसे उशीनर राजा का पौत्र कहा गया है। यह एवं काशिराज युधिष्ठिर के सब से बड़े हितचिंतक थे। उपप्लव्य नगरी में संपन्न हुए अभिमन्यु के विवाह के समय, यह अपनी एक अक्षौहिणी सेना के साथ उपस्थित हुआ था।

भारतीय युद्ध में यह पाण्डव-पक्ष के प्रमुख धनुर्धरों में से एक था। इसके रथ के अश्व नीलकमल के समान रंगवाले एवं सुवर्णमय आभूषणों से युक्त थे। धृष्टद्युम्न के द्वारा निर्माण किये गये क्रौंचव्यूह की रक्षा का भार इस पर सौंपा गया था, जो इसने तीस हजार रथियों को साथ ले कर उत्कृष्ट प्रकार से सम्हाला था (म. भी. ४६.३९;५४)।

५. एक यादव राजा, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.५३)। यह अर्जुन का शिष्य था, जिससे इसने धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त की थी।

६. एक क्षत्रिय राजा, जिसे कृष्ण ने पराजित किया था (म. व. १३.२७)।

७. एक कौरवपक्षीय राजा, जो भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये 'सर्वतोभद्र' नामक व्यूह के प्रवेशद्वार पर खड़ा हुआ था (म. भी. ९५.२७)।

८. शिवि देश के वृषादर्भि राजा का पैतृक नाम, जो उसे शिवि राजा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. अनु. ९३.२०-२९; वृषादर्भि देखिये)।

९. शिवि नरेश सुरथ राजा का नामान्तर (म. व. २५०. ४; सुरथ शैव्य देखिये)।

१०. (सो. पूरू.) एक पूरुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार शिवि राजा का पुत्र था।

११. सुवीर देश का एक राजा, जो भारतीय-युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था (भा. १०.७८)। जरासंध के द्वारा गोमंत पर आक्रमण किये जाने पर, उस नगरी के पश्चिम द्वार की रक्षा का कार्य इस पर सौंपा गया था (भा. १०.५२.११)। इसकी कन्या का नाम रत्ना था, जिसका विवाह अक्रूर से हुआ था (मत्स्य. ४५.२८)।

शैब्या—शाल्वदेश के द्युमत्सेन राजा की पत्नी, जो सावित्रीपति सत्यवत् (सत्यवान्) राजा की माता थी (म. व. २८२.२)।

२. पूरुवंशीय प्रतीपराजा की पत्नी सुनंदा का नामान्तर (म. आ. ९०.४६)।

३. इक्ष्वाकुवंशीय सगर राजा की पत्नी सुमति का नामान्तर, जो असमंजस् राजा की माता थी।

४. कृष्णपत्नी मित्रविंदा का नामान्तर (म. मौ. ८.७१)।

५. हरिश्चंद्रपत्नी तारामती का नामान्तर।

६. ज्यामघ राजा की पत्नी चैत्रा का नामान्तर, जो विदर्भ राजा की माता थी।

७. शतधन्वन् नामक विष्णुभक्त राजा की पत्नी (शतधन्वन् ३. देखिये)।

शैरालय—शैलालय नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैरीषि--सुवेदस् नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृकनाम।

शैलन--एक आचार्यसमूह (जै. उ. ब्रा. १.२.३; २.४.६)। इस समुदाय में निम्नलिखित आचार्य प्रमुख थे:—१. पार्ष्ण (जै. उ. ब्रा. २.४.८); २. सुचित्त (जै. उ. ब्रा. १.१४.४)।

शैलालय—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठ-- 'शैरालय;' 'शैवलेय'।

२. एक राजा, जो भगदत्त राजा का पितामह था। कुरुक्षेत्र के तपोवन में तपस्या कर के, यह इंद्रलोक चला गया (म. आश्व. २६.१०)।

शैलालि—एक सांस्कारिक आचार्य, जो 'शैलालि ब्राह्मण' नामक ब्राह्मण ग्रंथ का रचयिता माना जाता है। यद्यपि यह ब्राह्मण ग्रंथ आज अप्राप्य है, फिर भी उस ग्रंथ के उद्धरण सूत्रग्रंथों में पाये जाते हैं (आ. श्रौ. ६.४.७; अनुपद. ४.५)। शिलालिन् का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

शतपथ ब्राह्मण में इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ आहुति देने का क्रम किस प्रकार होना चाहिये इस संबंध में इसके मत उद्धृत किये गये है (श. ब्रा. १३.५.३.३)। पाणिनि के अष्टाध्यायी में इसे 'नटसूत्रकार' कहा गया है एवं इसके सांप्रदाय का निर्देश 'नटवर्ग' नाम से किया गया है (पा. सू. ४.३.११०)।

शैलिन् अथवा शैलिनि--जित्वन् नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे शिलिन का वंशज होने से प्राप्त हुआ था (बृ. उ. ४.१.५ माध्यं; ४.१.२ काण्व.)। कई अभ्यासकों के अनुसार 'शैलन' इसीका ही पाठभेद है (शैलन देखिये)।

शैलूष--एक व्यक्तिनाम, जिसका निर्देश यजुर्वेद में दिये गये बलिप्राणियों की तालिका में प्राप्त है (वा. सं. ३०.६; तै. ब्रा. ३.४.२.१)। शैलूष का शब्दशः अर्थ 'अभिनेता' अथवा 'नर्तक' है। सायण के अनुसार, इस शब्द का अर्थ 'अपनी पत्नी की वेश्यावृत्ति पर उपजीविका चलानेवाला' किया गया है।

२. बिभीषणपत्नी सरमा का पिता, जो ऋषभ पर्वत पर निवास करता था।

शैलूषि--कुल्मलबर्हिष नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.१२६)।

शैवलय--शैलालेय नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

शैशिर--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शैशिरिन्--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

शैशिरायण गार्ग्य--एक ऋषि, जिसे गोपाली नामक स्त्री से कालयवन नामक असुर पुत्र उत्पन्न हुआ था (कालयवन देखिये)। यह त्रिगर्तराजा का पुरोहित था, जिसने इसके पुरुषत्व की परीक्षा लेने के लिए अपनी पत्नी वृकदेवी के साथ संभोग करने की आज्ञा दी थी (ह. वं. १.३५.१२)।

शैशिरेय--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से देवमित्र शाकल्य का शिष्य था। यह शाकल्यशाखा का प्रमुख आचार्य था, एवं इसीके द्वारा प्रणीत शैशिरीय-संहिता शाकल शाखा की प्रमाणभूत संहिता मानी जाती है (शाकल एवं शाकल्य देखिये)। शाकल्य का शिष्य होने के कारण इसके द्वारा प्रणीत संहिता 'शाकल संहिता' नाम से प्रसिद्ध है।

शौनक के द्वारा विरचित 'अनुवाकानुक्रमणी' भी इसीके संहिता को आधार मान कर लिखी जा चुकी है (अनुवाकानुक्रमणी ७; ३०)। व्याडिकृत 'विकृतिवल्ली' में भी अष्टविकृतियों के कथन के लिए शैशिरीय-संहिता को आधार माना गया है।

शैशिरोद्धहि--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शोकपाणि--ऋग्वेदी श्रुतर्षि।

शोण—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक व्यक्ति, जिसकी कथा पद्म में 'सोमवारव्रत' का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गई है।

शोण सात्रासह—एक पांचाल राजा, जो कोक राजा का पिता था। इसके के द्वारा किये अश्वमेध यज्ञ में तुर्वश लोग भी उपस्थित थे (श. ब्रा. १३.५.४.१६-१८)।

शोणाश्व--(सो. विदु.) एक राजा, जो राजाधिदेव राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.७८)।

शोणित--(सो. क्रोष्टु.) एक यादवराजा, जो वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७१.१३८)।

शोणिताक्ष--रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६.२६)।

शोणितोद--कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०. १७)।

शोभन--मुचुकुंद राजा का दामात, जिसकी कथा 'रमा-एकादशी' का माहात्म्य कथन करने के लिए बतायी गयी है (पद्म. उ. ६०)।

शोभना--स्कंद की अनुचरी मातृका (म. श. ४५)।

शौक्तव, शौक्रतु, शौक्रवत-अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार।

शौंग--एक ऋषि, जो अंगिरस्कुलोत्पन्न शुंग ऋषि का पुत्र था। आगे चल कर विश्वामित्रकुलोत्पन्न शैशिर ऋषि ने इसे अपना पुत्र मान लिया। इसी कारण यह द्विगोत्रीय (द्व्यामुष्यायण) बन गया।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शौंगायनि--मद्रगार नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे शौंग का वंशज होने से प्राप्त हुआ होगा (वं. ब्रा. १.)।

शौंगीपुत्र--एक आचार्य, जो सांकृतिपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं आर्तभागीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (श. ब्रा. १४.९.४.३०)।

शौच--आह्नेय नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. आ. २.१२)।

शौचद्रथ--सुनीथ नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ५.७९.२)। शुचद्रथ का पुत्र होने के कारण, उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

शौचय सार्वसेनि--एक आचार्य, जिसने पंचरात्र यज्ञ कर के अनेकानेक पशु प्राप्त किये थे (तै. सं. ७.१. १०२)।

शौचिवृक्ष--एक आचार्य (ला. श्रौ. ६.९.१४)।

शौचेय प्राचीनयोग्य--एक आचार्य, जो शुचि एवं प्राचीनयोग का वंशज था (श. ब्रा. ११.५.३.१; ८)।

शौण--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शौनक--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो विष्णु, वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की अथर्वन्‌शिष्य-परंपरा में से पथ्य नामक आचार्य का शिष्य था (व्यास एवं पाणिनि देखिये)। इसे भृगुकुल का मंत्रकार भी कहा गया है।

२. एक पैतृकनाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:—१. अतिधन्वन् (छां. उ. १. ९.३); २. इंद्रोत देवापि (श. ब्रा. १३. ५; ३.५.१); ३. स्वैदायन (श. ब्रा. ११.४.१.२); ४. दृति ऐंद्रोत (वं. ब्रा. २);।

३. एक आचार्य, जो रौहिणायन नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. २.५.२०; ४.५.२६ माध्यं.)।

शौनक कापेय--एक राजा, जो अभिप्रतारिन् काक्षसेनि राजा का समकालीन था। इसके पुरोहित का नाम शौनक ही था (छां. उ. १.९.३; जै. उ. ब्रा. ३. १.२१)।

शौनक गृत्समद--(सो. काश्य.) एक सविख्यात आचार्य, जो 'ऋग्वेद-अनुक्रमणी,' 'आरण्यक,' 'ऋक्प्रातिशाख्य' आदि ग्रंथों का कर्ता माना जाता है। महाभारत में इसे 'योगशास्त्रज्ञ' एवं 'सांख्यशास्त्र-निपुण' कहा गया है।

आश्वलायन नामक सुविख्यात आचार्य का गुरु भी यही था, एवं कात्यायन, पतंजलि, व्यास, आदि आचार्य इसके ही परंपरा में उत्पन्न हुए थे। इसका अपना नाम गृत्समद था, एवं शौनक इसका पैतृक नाम था, जो इसे शुनक राजा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था।

जन्मवृत्त--षड्गुरुशिष्य के द्वारा विरचित 'कात्यायन सर्वानुक्रमणी' के भाष्य में इसका जन्मवृत्त सविस्तृत रूप में दिया गया है। शुनहोत्र भारद्वाज ऋषि के पुत्र शौनहोत्र गृत्समद के द्वारा एक यज्ञ किया गया, उस समय स्वयं इन्द्र उपस्थित था। इस यज्ञ के समय असुरों के आक्रमण से शौनहोत्र ने इन्द्र का रक्षण किया। इस कारण इन्द्र ने प्रसन्न हो कर, शौनहोत्र को आशीर्वाद दिया 'अगले जन्म में, तुम भृगुकुल में 'शौनक भार्गव' नाम से पुनः जन्म लोगे'।

पौराणिक साहित्य में--इन ग्रंथों में, इसे गृत्समदपुत्र शुनक का पुत्र कहा गया है, एवं इसे 'क्षत्रोपेत द्विज,' 'मंत्रकृत्,' 'मध्यमाध्वर्यु,' एवं 'कुलपति' कहा गया है (वायु ९३.२४)।

वायु में इसका भृगुवंशीय वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है :—रुरु (प्रमद्वरा)-शुनक-शौनक-उग्रश्रवस्। इसी ग्रंथ में अन्यत्र इसे नहुषवंशीय कहा गया है; एवं इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है:—धर्मवृद्ध-सुतहोत्र-गृत्समद-शुनक-शौनक (वायु. ९२.२६)।

'ऋष्यानुक्रमणी' के अनुसार, यह शुनहोत्र ऋषि का पुत्र था, एवं शुनक के इसे अपना पुत्र मानने के कारण, इसे 'शौनक' पैतृक नाम प्राप्त हुआ। यह पहले अंगिरस्-गोत्रीय था, किन्तु बाद में भृगु-गोत्रीय बन गया।

महाभारत के अनुसार, दशसहस्र विद्यार्थियों के भोजन एवं निवास की व्यवस्था कर, उन्हें विद्यादान करनेवाले गुरुकुलप्रमुख को 'कुलपति' उपाधि दी जाती थी (म. आ. १.१; ह. वं. १.१.४ नीलकंठ)।

भागवत में इसे चातुर्वर्ण्य का प्रवर्तक, एवं 'बहवृच-प्रवर' कहा गया है (भा. १.४.१; ९.१७३; विष्णु. ४. ८.१)। वायु में इससे ही चारों वर्णों की उत्पत्ति होने का निर्देश प्राप्त है (वायु. ९२.३-४; ब्रह्म. ११.३४; ह. वं. १.२९.६-७)।

कर्तृत्व—इसने ऋग्वेद के द्वितीय मंडल की पुनर्रचना की, एवं इस मंडल में से 'स जनास इंद्रः' नामक बारहवें सूक्त का प्रणयन किया।

इसने ऋक्संहिता के बाष्कल एवं शाकल शाखाओं का एकत्रीकरण कर, उन दोनों के सहयोग से शाकल अथवा शैशिरेय शाखांतर्गत ऋक्संहिता का निर्माण किया। शौनक के द्वारा निर्मित नये ऋक्संहिता की सूक्तों की संख्या १०१७ बतायी गयी है।

ऋग्वेद की अनुक्रमणी—ऋग्वेद की उपलब्ध अनुक्रमणियों में से शौनक की अनुक्रमणी प्राचीनतम मानी जाती है, जो कात्यायन के द्वारा विरचित ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी से काफ़ी पूर्वकालीन प्रतीत होती है। शौनक के अनुक्रमणी में ऋग्वेद का विभाजन, मंडल, अनुवाक एवं सूक्तों में किया गया है, जो अष्टक, अध्याय, वर्ग आदि में विभाजन करनेवाले कात्यायन से निश्चित ही प्राचीन प्रतीत होता है।

गृहपति शौनक—पौराणिक साहित्य में शौनक ऋषि के द्वारा आयोजित किये गये यज्ञों (सत्रों) का निर्देश प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थे:—१. नैमिषारण्य द्वादशवर्षीय सत्र (म. आ. १.१.१; ब्रह्म. १.११); २. नैमिषारण्य दीर्घसत्र (मत्स्य १.४; अग्नि. १.२); ३. नैमिषारण्य सहस्रवार्षिक सत्र (भा. १.१.४; पद्म. आदि. १.६)।

इसके द्वारा आयोजित द्वादशवर्णीय सत्र में रोमहर्षण सूत ने महाभारत का कथन किया था (म. आ. १.१)। इसके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, नैमिषारण्य के सहस्र-वर्षीय सत्र में रौमहर्षणि सूत ने प्रायोपवेशन करनेवाले परिक्षित् राजा को शुक के भागवत पुराण का कथन किया (भा. १.४.१)। यह पुराण परिक्षित्-शुकसंवादात्मक है, एवं उसमें कृष्ण का जीवनचरित्र अत्यंत प्रासादिक शैली से वर्णन किया गया है।

प्रमुख ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध है :—१. ऋक्प्रातिशाख्य; २. ऋग्वेद छंदानुक्रमणी; ३. ऋग्वेद ऋष्यानुक्रमणी; ४. ऋग्वेद अनुवाकानुक्रमणी; ५. ऋग्वेद सूक्तानुक्रमणी; ६. ऋग्वेद कथानुक्रमणी; ७. ऋग्वेद पादविधान; ८. बृहद्देवता; ९. शौनक-स्मृति १०. चरणव्यूह; ११. ऋग्विधान।

शौनक के उपर्युक्त ग्रंथों में इसके द्वारा बतायी गयी ऋग्वेद की विभिन्न अनुक्रमणियाँ प्रमुख हैं। षड्गुरुशिष्य ने कात्यायन सर्वानुक्रमणी के भाष्य में, शौनक के द्वारा विरचित अनुक्रमणियों की संख्या कुल दस बतायी है, किंतु उनमें से केवल चार ही अनुक्रमणियाँ आज उपलब्ध हैं।

अन्य ग्रंथ—उपर्युक्त ग्रंथों के अतिरिक्त, इसके नाम पर शौनक-गृह्यसूत्र, शौनक-गृह्यपरिशिष्ट आदि अन्य छोटे छोटे ग्रंथ हैं (C. C.)। मत्स्य के अनुसार इसने एक वास्तुशास्त्रसंबंधी ग्रंथ की भी रचना की थी (मत्स्य. २५२.३)।

सायणभाष्य से प्रतीत होता है कि, 'ऐतरेय आरण्यक' का पाँचवाँ आरण्यक इसके ही द्वारा निर्माण किया गया था (ऐ. आ. १.४.१)।

व्याकरणशास्त्रकार—शौनक के द्वारा विरचित 'ऋक्प्रातिशाख्य' उपलब्ध प्रातिशाख्य ग्रंथों में प्राचीनतम माना जाता है। शौनक के इस ग्रंथ में शाकल शाखान्तर्गत विभिन्न पूर्वाचार्यों के अभिमत उद्धृत किये गये हैं। वैदिक ऋचाओं का उच्चारण, एवं विभिन्न शाखाओं में प्रचलित उच्चारणपद्धति की जानकारी भी शौनक के इस ग्रंथ में दी गयी है।

शौनक के प्रातिशाख्य में व्याकरणकार व्याडि का निर्देश पुनः पुनः आता है, जिससे प्रतीत होता है कि, व्याडि इसीका ही शिष्य था (ऋ. प्रा. २०९; २१४)

व्याडि ने अपने 'विकृतवल्ली' नामक ग्रंथ के प्रारंभ में शौनक को गुरु कह कर इसका वंदन किया है (व्याडि देखिये)। 'शुक्लयजुर्वेद प्रातिशाख्य' में संधिनियमों के संबंध में मतभेद व्यक्त करते समय, इसके मतों का उद्धरण प्राप्त है (शु. प्रा. ४. १२०)। शब्दों के अंत में कौन से वर्ण आते है, इस संबंध में इसके उद्धरण 'अथर्ववेद प्रातिशाख्य' में प्राप्त हैं (अ. प्रा. १.८)।

शिक्षाकार शौनक--'शौनकीय शिक्षा' में दिये गये एक सूत्र का उद्धरण पाणिनि के अष्टाध्यायी में प्राप्त है (पा. सू. ४.३.१०६)। इसी शौनकीय शिक्षा में ऋग्वेद के शाखाप्रवर्तक शौनक को 'कल्पकार' कहा गया है, जिससे प्रतीत होता है कि, 'शाखा' का नामांतर 'कल्प' था। गंगाधर भट्टाचार्य विरचित 'विकृति कौमुदी' नामक ग्रंथ में इन दोनों की समानता स्पष्ट रूप से वर्णित है (शाकलाः शौनकाः सर्वे कल्पं शाखां प्रचक्षते)।

तत्त्वज्ञानी शौनक--जनमेजय पारिक्षित राजा के पुत्र शतानीक को इसने तत्त्वज्ञान की शिक्षा प्रदान की थी (विष्णु. ४.२१.२)। महाभारत में इसका निर्देश असित, देवल, मार्कंडेय, गालव, भरद्वाज, वसिष्ठ, उद्दालक, व्यास आदि ऋषियों के साथ अत्यंत गौरवपूर्ण शब्दों में किया गया है (म. व. ८३. १०२-१०४)। द्वैतवन में जिन ऋषियों ने धर्म का स्वागत किया था, उनमें यह प्रमुख था (म. व. २८. २३)।

शिष्यपरंपरा--शौनक का प्रमुख शिष्य आश्वलायन था। अपने गुरु को प्रसन्न करने के लिए आश्वलायन ने गृह्य एवं श्रौतसूत्रों की रचना की। आश्वलायन का यह ग्रंथ देख कर शौनक इतना अधिक प्रसन्न हुआ कि, इसने अपने श्रौतशास्त्रविषयक ग्रंथ विनष्ट किया (विपाटितम्)। ऋग्वेद से संबंधित शौनक के दस ग्रंथों का अध्ययन करने के बाद, आश्वलायन ने अपने गृह्य एवं श्रौतसूत्रों की, एवं ऐतरेय आरण्यक के चतुर्थ आरण्यक की रचना की।

शौनक के दस एवं आश्वलायन के तीन ग्रंथ आश्वलायन के शिष्य कात्यायन को प्राप्त हुए। कात्यायन ने स्वयं यजुर्वेदकल्पसूत्र, सामवेद उपग्रंथ आदि की रचना की, जिन्हे उसने अपने शिष्य पतंजलि (योगशास्त्रकार) को प्रदान किये।

इस प्रकार शौनक की शिष्यपरंपरा निम्नप्रकार प्रतीत होती है:- शौनक- आश्वलायन- कात्यायन- पतंजलि- व्यास।

शौनक स्वैदायन--एक यज्ञशास्त्रनिपुण आचार्य (श. ब्रा. ११.४.१.२-३; गो. ब्रा. १.३.६)।

शौनकायन जीवन्ति--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

शौनाकिन्--एक आचार्य, जिसके यज्ञकुण्ड के परिमाण के संबंधित मतों का उल्लेख कौषीतकि ब्राह्मण में प्राप्त है (कौ. ब्रा. ८५.८)।

शौनकीपुत्र--एक आचार्य, जो काश्यपी बालाक्या माठरीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पैंगीपुत्र था (श. ब्रा. १४.९.४.३१-३२)।

शौनहोत्र--गृत्समद आंगिरस ऋषि का पैतृक नाम (गृत्समद १. देखिये)।

शौरिद्यु--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में कुथुमि नामक आचार्य का शिष्य था।

शौरि--कृष्णपिता वसुदेव का नामांतर (म. द्रो. ११९.७)।

शौल्कायनि अथवा **शौक्वायनि**--एक आचार्य, जो व्यास की अथर्वन्शिष्यपरंपरा में देवदर्श नामक आचार्य का शिष्य था।

शौल्बायन अथवा **शौल्व्यायन**--उदंक नामक आचार्य का पैतृक नाम (बृ. उ. ६.१.३)।

श्याकार--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यापर्ण--एक पुरोहितसमुदाय, जो विश्वंतर राजा का पुरोहित था। एक बार विश्वंतर ने सोमयज्ञ किया, जहाँ उसने इन्हें टाल कर अन्य पुरोहितों को बुलाना चाहा। उस समय इनमें से राम मार्गवेय नामक एक पुरोहित ने सोम के संबंध में एक नयी उपपत्ति कथन कर, अपना पुरोहितपद पुनः प्राप्त किया (ऐ. ब्रा. ७.२७, राम मार्गवेय देखिये)।

श्यापर्ण सायकायन--एक यज्ञवेत्ता आचार्य, जिसके द्वारा यज्ञवेदी पर पाँच पशुओं का वध करने का निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १०.४.१.१०; ६.२.१.३९)।

श्याम--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार शूर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४६.३)।

भागवत में इसे 'श्यामक' कहा गया है। इसकी पत्नी का नाम शूरभू अथवा शूरभूमि था, जिससे इसे हिरण्याक्ष एवं हरिकेश नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ९.२४. २९)।

२. एक श्वान, जो सरमा के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.११२)। यज्ञ में इसे बलि अर्पण किया जाता है।

श्यामपराशर--पराशर कुलोत्पन्न एक ऋषि समुदाय। इस समुदाय में निम्नलिखित ऋषि समाविष्ट थेः--पाटिक, बांदरिस्तंब, क्रोधनायन, क्षेमि।

श्यामबाला--सौराष्ट्र में रहनेवाले भद्रश्रवस् नामक वैश्य की कन्या। लक्ष्मीव्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. ११)।

श्यामवय--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यामसुजयन्त लौहित्य-- एक आचार्य, जो कृष्णधृति सात्यकि नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम कृष्णदत्त लौहित्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२. १)।

२. एक आचार्य, जो जयंत पारशर्य नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पल्लिगुप्त लौहित्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४२.१)।

श्यामा--मेरु की कन्या, जो हिरण्मय ऋषि की पत्नी थी (भा. ५.२.२३)।

श्यामायन--विश्वामित्र ऋषि के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक (म. अनु. ४.५५)।

२. अंगिरस्‌कुल का एक गोत्रकार।

श्यामायनि--एक आचार्य, जो व्यास की कृष्णयजुःशिष्यपरंपरा में से वैशंपायन ऋषि का 'उदिच्य' शिष्य था (वैशंपायन १. एवं व्यास देखिये)।

२. अंगिरस्‌कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यामावत्--अत्रिकुलोत्पन्न एक मंत्रकार, जो दत्त आत्रेय के वंश में उत्पन्न हुआ था (वायु. ५९.१०४)। इसे निम्नलिखित नामान्तर भी प्राप्त थेः-- शावास्य अथवा शावाश्व (मत्स्य. १४५.१०७-१०८); शावाश्व (ब्रह्मांड. २.३२.११३-११४)।

श्यामोदर--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्याव--एक राजा, जो वध्रिमती का पुत्र था (ऋ. १०.६५.१२)। किन्तु सायण इसे स्वतंत्र व्यक्ति न मान कर, हिरण्यहस्त राजा की उपाधि मानते है।

यह अश्विनों की कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, जिन्होंने इसे रुशती नामक स्त्री प्रदान की थी (ऋ. १. ११७.८)।

२. सुवास्तु नदी के तट पर रहनेवाला एक उदार दाता (ऋ. ८.१९.३७)। ऋग्वेद में अन्यत्र श्यावक नामक एक राजा का निर्देश आता है, जो संभवतः यही होगा (ऋ. ५.६१.९।।

श्यालायनि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्यावक--एक यज्ञकर्ता आचार्य, जो इंद्र का मित्र था (ऋ. ८.३.१२; ४.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र सुवास्तु नदी के तट पर रहनेवाले श्याव नामक एक राजा का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होगा (श्याव २. देखिये)।

श्यावयान--देवतरस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

श्यावाश्व आत्रेय--अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. ५.५२-६१; ८१-८२; ८.३५-३८; ९.३२)। इसे श्यामावत् नामांतर भी प्राप्त था (मत्स्य. १४५. १०७-१०८; श्यामावत् देखिये)। इसके पिता का नाम अर्चनानस् आत्रेय था (पं. ब्रा. ८.५.९)। ऋग्वेद में अनेक स्थानों पर इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.५२. ६१; ८.३५-३८; ८१-८२; ९.३२)। रथवीति दार्भ्य ऋषि की कन्या इसकी पत्नी थी (रथवीति दार्भ्य देखिये)।

श्यावाश्वि--तरन्त एवं पुरुमीह्ळ राजाओं के अंधीगु नामक पुरोहित का पैतृक नाम (तरन्त देखिये)।

श्यावास्य--श्यामावत् नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

श्येन--इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि।

२. पक्षियों की एक जाति, जो ताम्रा की कन्या श्येनी की संतान मानी जाती है (म. आ. ६०.५४-५५)।

श्येन आग्नेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १८८)।

श्येनगामिन्--खर राक्षस के बारह अमात्यों में से एक (वा. रा. अर. २३.३१)।

श्येनचित्र--एक राजा, जिसने जीवन में कभी माँस भक्षण नहीं किया था। शारद एवं कौमुद माह में जिन राजाओं ने मांस भक्षण वर्ज्य किया था, ऐसे पुण्यश्लोक राजाओं की एक नामावलि महाभारत में प्राप्त है, जहाँ इसका निर्देश किया गया है (म. अनु. ११५.७२)।

श्येनजित्--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो दल राजा का पुत्र था। इसके चाचा शल ने वामदेव ऋषि के अश्व थोडे समय के लिए मांग लिए, एवं पश्चात् उन्हें वापस देने से इन्कार कर दिया। इतना ही नहीं, बल्कि वामदेव का वध करने के लिए एक विषयुक्त बाण का उपयोग करना चाहा।

तदुपरांत वामदेव ने इसी बाण से दश वर्ष के श्येनजित राजकुमार का वध किया। पश्चात् इसके पिता दल का शरीर भी वामदेव ने अचेतन बनाया। इस दुरवस्था में इसकी माता ने वामदेव ऋषि से क्षमा माँगी, एवं अपने पति एवं पुत्र की जान बचायी (म. व. १९०.७३; दल देखिये)।

२. सेनजित् राजा का नामान्तर।

३. एक महारथी राजा, जो भीमसेन का मामा था। भारतीय युद्ध में यह पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. उ. १.१३९.२७)।

श्येनभद्र--प्रसूत देवों में से एक।

श्येनी--कश्यप एवं ताम्रा की कन्या। सृष्टि के समस्त बाज पक्षी इसीकी ही संतान माने जाते हैं। ब्रह्मांड के अनुसार यह पक्षिराज गरुड की पत्नी थी (ब्रह्मांड. ३.३ ४४९)। किन्तु महाभारत में इसे गरुड के भाई अरुण की पत्नी बताया गया है, जिससे इसे जटायु एवं संपाति नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. आ. ६६.६७; वा. रा. अर. १४.३३)।

२. पूरुवंशीय प्रवीर राजा की पत्नी (म. आ. ८९.६)।

श्रद्धा (स्वा.)—स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्म ऋषि की दस पत्नियों में से एक थी। इसकी माता का नाम प्रसूति था (म. आ. ७.१३)। इसके पुत्रों के नाम शुभ एवं काम थे (भा. ४.१.४९-५०)।

२. स्वायंभुव मन्वन्तर के कर्दम प्रजापति एवं देवहूति की कन्या, जो अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी। इसके उतथ्य एवं बृहस्पति नामक दो पुत्र, एवं सिनीवाली, कुहू, राका एवं अनुमति नामक चार कन्याएँ थी (भा. ३. २४. २२)।

३. सूर्य की एक कन्या, जिसे 'सावित्री,' 'प्रसावित्री,' 'वैवस्वती' आदि नामान्तर प्राप्त थे (म. शां. २५६.२१)।

४. वैवस्वत मनु की एक पत्नी।

श्रद्धा कामायनी—एक वैदिक सूक्तद्रष्टी (ऋ. १०. १५१)।

श्रद्धादेवी—वसुदेव की पत्नियों में से एक, जिसके पुत्र का नाम गवेषण था (मत्स्य. ४६.१९)।

श्रद्धालु--हंसध्वज राजा का प्रधान।

श्रम--वसुदेव एवं शांतिदेवा के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.५०)।

श्रमदागोपि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्रमिष्ठ--अक्रूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

श्रवण--श्रवस् नामक वसिष्ठकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

२. गौतम नामक शिवावतार का एक शिष्य।

३. अक्रूर एवं अरुणा के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३३)।

४. मुर दैत्य के सात पुत्रों में से एक (भा. १०.५९. १२)। कृष्ण ने इसका वध किया।

५. सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

६. श्रावण नामक तपस्वी का पिता (श्रावण देखिये)।

श्रवणदत्त कौहल--एक आचार्य, जो सुशारद शालंकायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं कुस्तुक शार्कराक्ष्य नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

श्रवस्--एक ऋषि, जो गृत्समदवंशीय संत ऋषि का पुत्र, एवं तम ऋषि का पिता था (म. अनु. ३०.६२)।

२. दक्षसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

३. अमिताभ देवों में से एक।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद--'श्रवण'।

५. भृगु ऋषि के पुत्रों में से एक (वायु. ६५.८७)।

श्रविष्कट—गौतम नामक शिवावतार का एक शिष्य (वायु. २३.१६४)।

श्राद्धदेव--सूर्यपुत्र वैवस्वत मनु राजा का नामान्तर। इसकी पत्नी का नाम श्रद्धा था, एवं पुरोहित का नाम वसिष्ठ था, जिसने इसकी इला नामक कन्या का रूपान्तर सुद्युम्न नामक पुत्र में करने के कार्य में सहायता की थी (दे. भा. महात्म्य ३; वसिष्ठ ९. देखिये)।

श्राद्धाद—वृष नामक दैत्य का पुत्र (वृष ५. देखिये)।

श्रायस—एक पैतृक नाम, जो वैदिक साहित्य में निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १. कण्व (तै. सं. ५.४.७.५; का. सं. २१.८); २. वीतहव्य (तै. सं. ५.६.५.३; पं. ब्रा. ९.१.९)।

श्राव--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो महाभारत के अनुसार युवनाश्व श्रावस्त राजा का पुत्र था (म. व. १९३.४)।

श्रावण--एक तपस्वी, जो वैश्य पिता एवं शूद्र माता का पुत्र था (वा. रा. अयो. ६३)। ब्रह्म में इसे ब्राह्मण कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम श्रवण दिया गया है (ब्रह्म. १२३.३७)। इससे प्रतीत होता है कि, श्रवण इसका पैतृक नाम था।

अपने अंधे माता पिता को अपने कंधे पर बिठा कर यह काशीयात्रा को जा रहा था। एक बार रात के समय, यह कुएँ में पानी लेने गया था, जिस समय इसके पानी भरने की आवाज से इसे कोई वन्य जानवर समझ कर, मृगयातुर दशरथ ने इस पर शरसंधान किया। दशरथ के बाण से इसकी मृत्यु हो गयी।

अपनी असावधानी से हुए ब्रह्महत्या के कारण दशरथ विह्वल हो उठा, किन्तु श्रावण ने उसका समाधान किया। पश्चात् इसके माता-पिता ने दशरथ राजा को 'पुत्र पुत्र' करते हुए मृत्यु पाने का शाप दिया, एवं वे स्वयं इसकी अकाल मृत्यु से दुःखी हो कर मृत हुए।

श्रावस्त अथवा **शावस्त**--(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु, वायु एवं मत्स्य के अनुसार इंदु राजा का पौत्र, एवं युवनाश्व (द्वितीय) राजा का पुत्र था। महाभारत में इसे युवनाश्व (द्वितीय) राजा का पौत्र, एवं श्राव राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इस प्रकार श्रावस्त इसका पैतृक नाम बताया गया है।

इसने श्रावस्ति (श्रावस्त) नगरी की स्थापना की, एवं अपने उत्तर कोशल देश की राजधानी वहाँ बसायी (ह. वं. १११.२२ ब्रह्मांड. ३.६३.२८; वायु. ८८. २००)।

इसके पुत्र का नाम बृहदश्व (ब्रह्मदश्व) था (म. व. १९३.४)। इसके अन्य पुत्र का नाम वंशक अथवा वत्सक था।

इसका राज्यकाल राम दाशरथि के पूर्वकाल में पचास पीढियाँ माना जाता है। राम दाशरथि के कनिष्ठ पुत्र लव ने उत्तर कोसल देश की राजधानी अयोध्या नगरी से हटा कर, वह पुनः एक बार श्रावस्ति नगरी में बसायी। इस कारण अयोध्या नगरी उजड़ गयी, जो आगे चल कर लव के ज्येष्ठ बन्धु कुश ने पुनः एक बार बसायी (रघु. १६.९७)।

श्राविष्ठायन--पराशर कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

श्री--(स्वा.) ऐश्वर्य की अधिष्ठात्री देवता लक्ष्मी का नामान्तर, जिसे पुराणों में भृगु एवं ख्याति की कन्या कहा गया है (लक्ष्मी देखिये)।

२. धर्म ऋषि की पत्नियों में से एक।

श्रीकर--एक शिवगण, जो गोप का पुत्र था। इसने काशी में मध्यमेश्वर की आराधना कर 'शिवगणपतित्व' प्राप्त किया (शिव. उ. ४४,८५)।

श्रीदामन्--कृष्णसखा सुदामन् अथवा कुचैल का नामान्तर (भा. १०.१५-२०; कुचैल देखिये)।

श्रीदेव--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो कूर्म के अनुसार लोमपाद शाखा के बृहन्मेधस् राजा का पुत्र था।

श्रीदेवा--देवक राजा की कन्या, जो वसुदेव की पत्नियों में से एक थी। इसके कुल छः पुत्र थे, जिनमें नंदक प्रमुख था (भा. ९.२४.२३; विष्णु. ४.१८)।

श्रीधर--एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'वालव्रत' का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी हैं (पद्म. ब्र. ५)।

श्रीनिवास--तिरुपति में स्थित वेंकटेश का नामांतर (वेंकटेश देखिये)। स्कंद में इसकी पत्नी का नाम पद्मिनी बताया गया हैं।

श्रीभानु--कृष्ण एवं सत्यभामा का एक पुत्र (भा. १०.६१.११)।

श्रीमत्--एक राजकुमार, जो दत्तात्रेय राजा का पौत्र, एवं निमि राजा का पुत्र था। इसकी असामयिक मृत्यु होने पर एक वर्ष के पश्चात् अमावस्या के दिन, इसके पिता निमि ने इसका पहला वर्षश्राद्ध किया।

श्राद्धविधि--इस प्रकार निमि इस संसार में प्रचलित श्राद्धविधि का आद्यजनक बन गया। आगे चल कर अत्रि ऋषि ने निमि के द्वारा प्रणीत श्राद्धविधि को स्वयंभु के द्वारा प्रणीत बता कर उसका पुरस्कार किया, एवं मृत रिश्तेदारों के लिए श्राद्धविधि करने की प्रथा भारतवर्ष में सर्वत्र प्रचलित हुई (म. अनु. ९१.१-२१)।

महाभारत में इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया हैः--स्वयंभु-अत्रि-दत्तात्रेय-निमि-श्रीमत्।

श्रीमती--सृंजय राजा की कन्या दमयन्ती का नामान्तर (दमयन्ती २. देखिये)। पौराणिक साहित्य में इसके संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा दी गयी है। एक वार इसके प्रति नारद एवं उसके मित्र पर्वत को धोखा दे कर विष्णु ने इसका हरण किया, जिस कारण वे दोनों विष्णु की उपासना छोड़ कर शिवोपासक बन गये (लिंग. २.५.; अ. रा. ४; शिव रुद्र २.४)।

श्रीमलकर्णि--आंध्रवंशीय शातकर्णि राजा का नामान्तर (शातकर्णि १. देखिये)।

श्रीमाता--देवी का एक अवतार, जिसने मातंगी का रूप धारण कर, कर्नाटक नामक राक्षस का वध किया। यह राक्षस ब्राह्मण का वेश धारण कर ऋषियों के स्त्रियों का हरण करता था (स्कंद. ३.२.१७-१८)।

श्रीमानिन्—भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

श्रीवह—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.१३)।

श्रुत—(सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उपगु राजा का, भागवत के अनुसार सुभाषण राजा का, एवं वायु के अनुसार, सुवर्चस् राजा का पुत्र था।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार भगीरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम नाभाग था।

३. (सो. अज.) एक राजकुमार, जो पांचालराज द्रुपद के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध के रात्रि युद्ध में अश्वत्थामन् ने इसका वध किया।

४. कृष्ण एवं कालिंदी के पुत्रों में से एक (भा. १०. ६१.१४)।

५. वसुदेव एवं शांतिदेवा के पुत्रों में से एक (भा.९. २४.५०)।

श्रुतकक्ष्य आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जिसके द्वारा विरचित सूक्त में विपुल पशुधन देने के लिए इंद्र की प्रार्थना की गयी है (ऋ. ८. ९२.२५)। एक साम के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (पं. ब्रा. ९. २.७)।

श्रुतकर्मन्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक। इसने शतानीक के साथ युद्ध किया था (म. क. १८.१२-१३)।

२. अर्जुनपुत्र श्रुतकीर्ति का नामांतर।

३. (सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो सहदेव एवं द्रौपदी के पुत्रों में से एक था। भारतीय युद्ध में यह अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. आ. ९०.८४; ५७.१०३)।

श्रुतिकीर्ति--(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो अर्जुन एवं द्रौपदी के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०. ८२; ५७.१०२; द्रो. २२.२५; भा. ९.२२.२९)। यह विश्वेदेव के अंश से उत्पन्न हुआ था।

इसे श्रुतकर्मन् नामांतर भी प्राप्त था (म. आ. २१३. ७६)। इसके रथ के अश्व चास पक्षी के पंखों के वर्ण के थे (म. द्रो. २२.२५)।

भारतीय युद्ध में शल्य के साथ इसका युद्ध हुआ, जिसमें यह पराजित हुआ था। अश्वत्थामन् के द्वारा किये गये रात्रियुद्ध में यह मारा गया (म. सौ. ८.५८)।

२. (स्त्री) कुशध्वज जनक राजा की कन्या, जो राम दाशरथि के कनिष्ठ भाई शत्रुघ्न की पत्नी थी (वा. रा बा. ७३.३३)।

३. (स्त्री) केकय देश के धृष्टकेतु शारदण्डायनि की पत्नी, जो शूर राजा की कन्या, एवं वसुदेव की बहन थी। इसकी कन्या का नाम भद्रा था, जो कृष्ण की पत्नी थी। इसके कुल चार पुत्र थे, जिनमें अनुव्रत प्रमुख था (भा. ९.२४.३०)।

श्रुतंजय--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सत्यायु राजा का पुत्र था (भा. ९.१५.२)।

२. एक राजा, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का भाई था। यह भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था, अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. २७.१० पाठ.)।

३. (मगध. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य, वायु, एवं ब्रह्मांड के अनुसार सेनाजित् राजा का, एवं विष्णु के अनुसार सेनजित राजा का पुत्र था। भागवत में इसे 'सुतंजय' कहा गया है। वायु, मत्स्य, एवं ब्रह्माड के अनुसार इसने चालीस वर्षों तक राज्य किया था।

श्रुतदेव—एक विरागी कृष्णभक्त ब्राह्मण, जो बहुलाश्व जनक के काल में मिथिला नगरी में रहता था। एक बार कृष्ण जब मिथिला नगरी में आया था, उस समय बहुलाश्व राजा ने, एवं इस ब्राह्मण ने एक साथ ही उसे अपने घर बुला लिया। उस समय इन दोनों की भक्तिभावना एक समान ही उत्कट देख कर, कृष्ण ने दो रूप धारण किये, एवं एक समय ही वह इन दोनों के घर जा पहुँचे। पश्चात् उसने इन दोनों को उपदेश प्रदान किया (भा. १०.८६)।

२. कृष्ण के महारथी पुत्रों में से एक (भा. १०. ९०.३३)।

३. एक यादव, जो कृष्ण का अनुयायी था (भा. १. १४.३२)।

४. विष्णु का एक पार्षद, जिसने बलि वैरोचन के असुर अनुगामियों पर हमला किया था (भा. ८. २१.१७)।

श्रुतदेवा अथवा श्रुतदेवी—करूषदेशीय वृद्धशर्मन् (वृद्धधर्मन्) राजा की पत्नी, जो शूर राजा की कन्या एवं वसुदेव की बहन थी (म. भा. ४.२४.३०)। इसे पृथुकीर्ति नामांतर भी प्राप्त था। सुविख्यात असुर दंतवक्र इसका ही पुत्र था (ब्रह्म. १४)।

श्रुतध्वज-- मत्स्यराज विराट का भाई, जो भारतीय युद्ध में पांडवों का रक्षक था (म. द्रो. १३३.३९)।

श्रुतबंधु गौपायन (लौपायन)--एक वैदिकसूक्त-द्रष्टा (ऋ. ५.२४; १०.५७-६०)।

श्रुतय--श्रोतन नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

श्रुतरथ--एक तरुण राजा, जो कक्षीवत् नामक आचार्य का, एवं उसके पज्र परिवार का आश्रयदाता था (ऋ. १.१२२.७)। प्रभुवसु अंगिरस ऋषि ने भी इसके दातृत्व की प्रशंसा की है (ऋ. ५.३६.६)।

श्रुतर्य--अश्विनों की कृपापात्र एक व्यक्ति, जिसका उन्होंने संरक्षण किया था (ऋ. १.११२.९)।

श्रुतर्वन्--धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भारतीय युद्ध में यह भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. श. २५.२७)।

श्रुतर्वन् आर्क्ष--एक उदार राजा, जिसके दातृत्व की प्रशंसा ऋग्वेद में गोपवन नामक ऋषि के द्वारा की गयी है (७.७४.४-१३)। इसने मृगय पर विजय प्राप्त की थी (ऋ. १०.४९.५)। ऋक्ष का वंशज होने के कारण, इसे 'आर्क्ष' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

महाभारत में--इसके दातृत्व का वर्णन महाभारत में भी प्राप्त है। एक बार अगस्त्य ऋषि इसके पास धन माँगने के लिए आये। इसके दातृत्व के कारण इसके खजाने में कुछ भी द्रव्य बाकी नहीं था। इसने धन देने के संबंध में अपनी असमर्थता अगस्त्य ऋषि से निवेदित की, एवं अपने आयव्यय के सारे हिसाब भी उसे दिखाये।

पश्चात् यह अगस्त्य को साथ ले कर ब्रध्नश्व आदि राजाओं के पास गया, एवं उनसे इसने अगस्त्य ऋषि को विपुल धन दिलवाया (म. व. ९६.१-५)।

श्रुतवत्--(सो. मगध.) मगध देश का एक राजा, जो भविष्य एवं विष्णु के अनुसार सोमापि राजा का पुत्र था। अन्य पुराणों में इसे श्रुतश्रवस् कहा गया है। (भा. ९.२२.९)। इसके पुत्र का नाम अयुतायु था।

श्रुतवर्मन्--दुर्योधन के पक्ष का एक राजा (म. क. ४.१०१)। यह संभवतः धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'श्रुतकर्मन्'।

श्रुतविद् आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ६२)। ऋग्वेद में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त हैं (ऋ. ५.४४.१२)।

श्रुतश्रवस्--(मगध. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार सोमाधि राजा का, भागवत के अनुसार मार्जारि राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार सोमापि राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम अयुतायु था।

२. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.८)।

३. एक ऋषि, जिसने तप से सिद्धी प्राप्त की थी (म. शां. २८१.१६-१७)। इसके पुत्र का नाम सोमश्रवस् था, जो इसे एक सर्पिणी से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ३.१२)।

जनमेयय के सर्पसत्र में--जनमेजय के द्वारा किये गये दीर्घसत्र में उसके पुरोहित देवशुनी ने उसे शाप दिया, एवं उसके पौरोहित्य का त्याग किया। पश्चात् जनमेजय इससे मिलने आया, एवं उसने इसके पुत्र सोमश्रवस् को अपना पुरोहित बनने की प्रार्थना की। इसने उसे मान्यता दी, एवं इस प्रकार सोमश्रवस् जनमेजय के सर्पसत्र का पुरोहित बन गया (सोमश्रवस् देखिये)।

यह स्वयं भी जनमेजय के सर्पसत्र का सदस्य था (म. आ. ४८.९)।

४. एक असुर, जो गरुड के द्वारा मारा गया था।

५. सूर्यपुत्र शनैश्चर का नामांतर (वायु. ८४.५१)।

६. सावर्णि मनु का नामांतर (वायु. ८४.५१)।

श्रुतश्रवा--चेदिराज दमघोष की पत्नी, जो शूर राजा की कन्या, वसुदेव की भगिनी, एवं कृष्ण की पितृष्वसा (फूफी) थी। इसके पुत्र का नाम शिशुपाल था (शिशुपाल देखिये)।

श्रुतश्री--एक असुर, जो गरुड़ के द्वारा मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

श्रुतसेन--सहदेवपुत्र श्रुतकर्मन् का नामांतर। कृत्तिका नक्षत्र के अवसर पर इसका जन्म हुआ था, जिस कारण इसे श्रुतसेन नाम प्राप्त हुआ था (श्रुतकर्मन् देखिये)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो परिक्षित् राजा का पुत्र था (म. आ. ३.१)। वैदिक साहित्य में इसे जनमेजय राजा का भाई कहा गया है (श. ब्रा. १३.५.४.३; सां. श्रौ. १६.९.४)।

३. शत्रुघातिन् राजा का नामांतर।

४. एक राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. १९.१५)।

५. एक असुर, जो गरुड के मारा गया था (म. उ. १०३.१२)।

श्रुतसेना--कुन्ती की बहन, जो केकय राजा धृष्टकेतु शारदाण्डायनि की पत्नी थी (म. आ. १११.११८३*)। विष्णु, वायु, एवं भागवत में इसे श्रुतकीर्ति कहा गया है (श्रुतकीर्ति ३. देखिये)।

परिवार—महाभारत के अनुसार, नियोगविधि से इसे दुर्जयादि तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे। पौराणिक साहित्य में इसके पुत्रों की नामावलि निम्नप्रकार दी गयी है:—१. मत्स्य में—अनुव्रत, २. वायु में--संतर्दन, चेकितान, वृहत्क्षत्र, विंद, एवं अनुविंद।

श्रुतानीक--विराट का भाई, जो भारतीय युद्ध में पांडवों का सहायक था (म. द्रो. १३३.३९)।

श्रुतांत--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. श. २५.८)।

श्रुतायु--(सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार भानुश्चंद्र राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में यह मारा गया (मत्स्य. १२.५५)।

२. (सो. पुरूरवस्) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार पुरूरवस् एवं उर्वशी के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम वसुमत् था।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया था (म. क. ३५.३७.११)।

४. अंबष्ठ देश का एक राजा, जो क्रोधवश नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५९)। द्रौपदी के स्वयंवर में, एवं युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१९; स. ४.२४)।

भारतीय युद्ध में यह कौरव पक्ष में शामिल था एवं इसका निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध हुआ था:-१. अर्जुन-पुत्र इरावत् (म. भी. ४३.६८); २. युधिष्ठिर (म. भी ४३.६६)। भीष्म के द्वारा निर्माण किये गये क्रौंचव्यूह के जघनभाग में खड़ा था (म. भी. ७१.२२)। अन्त में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. ६८.६४)।

५. कलिंग देश का एक क्षत्रिय राजा, जिसके भाई का नाम अयुतायु था (म. क. ५०-५२)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, एवं भीम के साथ इसका युद्ध हुआ था (म. भी. ५०.६)। अपने भाई अयुतायु के साथ, यह कौरवसेना के दक्षिण भाग का संरक्षण करता था (म. भी. ४७.१८)। अन्त में ये दोनों भाई अर्जुन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. ६८.७-२५)।

इसके दीर्घायु एवं नियतायु नामक दो पुत्र थे। अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने के लिए, उन्होंने अर्जुन पर आक्रमण किया था, किन्तु अर्जुन ने उन दोनों का भी वध किया (म. द्रो. ६८. २७-२९)।

६. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अरिष्टनेमि राजा का पुत्र, एवं सुपार्श्वक राजा का पिता था (भा. ९.१३.२३; विष्णु. ४.५.३१)।

श्रुतायुध--कलिंग देश का एक राजा, जो वरुण एवं शीततोया (पर्णाशा) का पुत्र था (म. स. ४.२३; भी. १६.३४)। इसके पिता वरुण ने इसे एक गदा अभिमंत्रित कर दी थी, एवं कहा था, 'इस गदा के कारण तुम युद्ध-भूमि में सदैव अजेय रहोंगे। किन्तु युद्ध न करनेवाले किसी भी व्यक्ति पर इस गदा का प्रहार तुम नहीं करना, अन्यथा तुम मारे जाओंगे।

भारतीय युद्ध में यह कौरव पक्ष में शामिल था, एवं एक अक्षौहिणी सेना ले कर यह युद्धभूमि में उपस्थित हुआ था (म. भी. १६.३४-३५)। युद्ध के प्रारंभ में ही, इसका भीम के साथ युद्ध हुआ, जिसमें इसके सत्य एवं सत्यदेव नामक दो चक्ररक्षक मारे गये (म. भी. ५०.६९)। अन्त में वरुण के द्वारा प्रदान की गयी गदा इसने युद्ध न करनेवाले श्रीकृष्ण पर फेंकी, जिस कारण अपनी ही गदा से इसकी मृत्यु हो गयी (म. द्रो. ६७.४३-५८)।

श्रुतावती--एक तपस्विनी जो भरद्वाज ऋषि एवं घृताची अप्सरा की कन्या थी। इसने घोर तपस्या कर के, इन्द्र को पतिरूप में प्राप्त किया था (म. श. ४७.२)।

श्रुति--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. एक प्राचीन राजा (म. आ. १.२३८)।

श्रुति आत्रेयी--स्वायंभुव मन्वंतर के अत्रि ऋषि की कन्या। पुलहपुत्र कर्दम प्रजापति से इसका विवाह हुआ था (पुलह १. देखिये)।

श्रुतिविद्ध--(सो. कुरु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार धर्म राजा का पुत्र था।

श्रुतुशृण—स्वायंभुव मन्वंतर के जिताजित् देवों में से एक।

श्रुष वाह्नेय काश्यप--एक आचार्य, जो देवतरस् श्यावसायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं इंद्रोत दैवाप शौनक नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)। 'वह्नि' एवं 'कश्यप' का वंशज होने के कारण, इसे

'वाह्निय' एवं 'काश्यप' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा। इसके 'श्रुष' नाम का सही पाठ संभवतः 'शूष' ही होगा।

श्रुष्टि आंगिरस--एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. १३.११.२१-२३)।

श्रुष्टिगु काण्व--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५१)। इसके सूक्त में निम्नलिखित आचार्यों के साथ इसका निर्देश प्राप्त है:--१. सांवरणि मनु; २. नीपातिथि; ३. मेध्यातिथि (ऋ. ८.५१.१)। पार्षद्वाण राजा के द्वारा प्रस्कण्व नामक आचार्य को विपुल धन दिये जाने का निर्देश इसके सूक्त में प्राप्त है (ऋ. ८.५१.२)।

श्रेणिमत्--गोशृंग पर्वत पर निवास करनेवाला एक राजा। भीमसेन ने अपने पूर्व दिग्विजय में, तथा सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय में इसे परास्त किया था (म. स. २७.१; २८.५)।

भारतीययुद्ध में यह पांडव पक्ष में शामिल था (म. द्रो. २२.३०)। इसके रथ के अश्व पीले रेशमी वस्त्र के वर्ण के थे, एवं उनका जीन स्वर्ण का था। उनके गलों में स्वर्ण मालाएँ थी (म. द्रो. २२.३०)। पांडव सैन्य में इसकी श्रेणी 'अतिरथि' थी। अंत में यह कौरवपक्षीय वीरों के द्वारा मारा गया (म. द्रो. २२.३०)।

२. कुमार देश का एक राजा, जिसे भीम ने अपने पूर्व दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २७.१)।

श्रेष्ठ--सुधामन् देवों में से एक (ब्रह्मांड. २. ३६.२८)।

श्रेष्ठभाज् वासिष्ठ--कल्माषपाद सौदास राजा के पुरोहित वसिष्ठ ऋषि का नामांतर (म. आ. १६७.१५; १६८. २२; वसिष्ठ श्रेष्ठभाज् देखिये)।

श्रोतन--कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार ऋषिगण। पाठभेद --'श्रुतय'।

श्रोतृ--श्रावण माह का यक्ष (भा. १२.११.३७)। २. आद्य देवों में से एक।

श्रोत्र--तुषित देवों में से एक (वायु. ६६.१८)।

श्रौतर्षि--देवभाग नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१.६; श. ब्रा. २.४.४; तै. ब्रा. ३.१०.९. ११)।

श्रौतश्रवस--शिशुपाल राजा का मातृक नाम, जो उसे उसके 'श्रुतश्रवा' नामक माता के कारण प्राप्त हुआ था (श्रुतश्रवा देखिये)।

श्रौमत्य--एक आचार्य (श. ब्रा. १०.४.५.१)। 'श्रुमत्' का वंशज होने के कारण, इसे यह नाम प्राप्त हुआ होगा।

श्वफल्क--(सो. यदु. वृष्णि.) एक पुण्यश्लोक यादव राजा, जो वृष्णि राजा का पुत्र, एवं चित्रक राजा का ज्येष्ठ भाई था। मत्स्य एवं पद्म में इसे 'जयंत' कहा गया है।

एक बार काशी देश में बारह वर्षों तक वर्षा न होने से अकाल पड़ गया। उस समय यह सहज ही काशी देश जा पहुँचा। इसके वहाँ जाते ही, वृष्टि हो कर अकाल नष्ट हुआ। इस कारण इसे पुण्यशील मान कर काशिराज ने इसका सत्कार किया, एवं अपनी गांदिनी नामक कन्या इसे विवाह में दे दी।

परिवार-गांदिनी से इसे निम्नलिखित तेरह पुत्र उत्पन्न हुए:--१. अक्रूर; २. आसंग; ३. सारमेय; ४. मृदुर; ५. मृदुविद्; ६. गिरि; ७. धर्मवृद्ध; ८.सुवर्मन्; ९. क्षेत्रोपेक्ष; १०. अरिमर्दन; ११. शत्रुघ्न; १२. गंधमाह; १३. प्रतिवाहु।

उपर्युक्त पुत्रों के अतिरिक्त, इसकी सुचीरा नामक एक कन्या भी (भा. ९.२४.१६-१७)।

श्वसन--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१७)। पाठभेद--'सुवेण'।

श्वसृप--एक सैंहिकेय असुर, जो हिरण्यकशिपु का भतीजा था (मत्स्य. ६.२७)।

श्वाजनि--एक वैश्य (जै. उ. ब्रा. ३.५.२)।

श्वात--एक राक्षस, जो कश्यप एवं ब्रह्मधना के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.९८)।

श्वाहि--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वृजिनवत् राजा का पुत्र, एवं रुशेकु राजा का पिता था (भा. ९.२३.३१)। मत्स्य एवं वायु में इसे क्रमशः 'स्वाह' एवं 'स्वाहि' कहा गया है।

श्विक्न--एक जातिविशेष, जिनके राजा का नाम ऋषभ याज्ञतुर था (श. ब्रा. १२.८.३.७; १३.५.४.१५)। गौरवीति नामक आचार्य इनका पुरोहित था।

श्वेत--पाताल में रहनेवाला एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२४.२१)।

२. एक शिवावतार, जो सातवें वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के प्रथम युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह अवतार प्रभु व्यास के समकालीन माना जाता है।

हिमालय के छागल नामक शिखर में यह अवतीर्ण हुआ था। इसके शिखा धारण करनेवाले निम्नलिखित चार शिष्य थे :—१. श्वेत; २. श्वेतशिख; ३. श्वेताश्व; ४. श्वेतलोहित (शिव. शत. ४)।

३. एक शिवावतार, जो सातवें वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वन्तर के तेइसवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। यह कालंजर पर्वत पर अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे :—१. उशिक; २. बृहदश्व; ३. देवल; ४. कवि (शिव. शत. ५.)।

४. श्वेत नामक शिवावतार का शिष्य था (श्वेत. २. देखिये)।

५. एक दिग्गज, जो क्रोधवशाकन्या श्वेता का पुत्र था।

६. एक असुर, जो विप्रचित्ति असुर का पुत्र था। इसने तारकासुर-युद्ध में भाग लिया था (मत्स्य. १७७. ७)।

७. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९.१६९)।

८. एक राजा, जो वपुष्मत् राजा के पुत्रों में से एक था। इसके ही नाम से इसके देश को 'श्वेतदेश' नाम प्राप्त हुआ था (वायु. ३३.२८)।

९. मत्स्यनरेश विराट राजा के पुत्रों में से एक। कोसलराजकन्या सुरथा इसकी माता थी। यह अत्यंत पराक्रमी था, एवं इसने भारतीय युद्ध में शल्य एवं भीष्म से युद्ध किया था। अन्त में यह भीष्म के द्वारा मारा गया (म. भी. परि. १. क्र. ११८)।

१०. एक धर्मनिष्ठ राजर्षि, जिसने अपने मृत हुए पुत्र को पुनः जीवित किया था (म. शां १४९.६३)।

११. एक राजा, जिसकी गणना भारतवर्ष के प्रमुख वीरों में की जाती थी।

१२. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६३)।

१३. राम के पक्ष का एक वानर (वा. रा. यु. ३०)।

१४. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो कूर्म के अनुसार आर्हति राजा का पुत्र था।

१५. एक पापी राजा, जो अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्त हुआ था। यह सुदेव राजा का ज्येष्ठ पुत्र था।

इसने अपनी उत्तर आयु में कठोर तपस्या की, किन्तु अन्नदान का पुण्य कहीं भी संपादन नहीं किया। इस कारण यद्यपि इसे स्वर्गप्राप्ति हुई, फिर भी यह सदैव क्षुधा एवं तृषा से तड़पता रहा। यहाँ तक कि, अपनी ही माँस खाने लगा।

अन्त में ब्रह्मा ने इसे मुक्ति का मार्ग बताते हुए पुनः एक बार पृथ्वीलोक पर जाने के लिए कहा, एवं अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्ति प्राप्त करने की आज्ञा दी।

तदनुसार यह पृथ्वीलोक में आया, एवं इसने अगस्त्य ऋषि के दर्शन से मुक्ति प्राप्त की (वा. रा. उ. ७८; पद्म. सृ. ३४)।

१६. एक राजा, जो अर्जुन एवं कौरवों के बीच हुआ 'उत्तर गोग्रहण' युद्ध देखने के लिए स्वर्ग से पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. भी. ९१.७*, पंक्ति. २८)।

१७. एक शिवभक्त, जिसने शिवभक्ति कर मृत्यु पर विजय प्राप्त की थी (स्कंद. १.१.३२; ब्रह्म. ५९. ७४; लिंग. ३१)।

श्वेताकि--एक राजा, जो सदैव यज्ञकार्य में रत रहता था। इसने यज्ञकार्य में सिद्धि प्राप्त करने के लिए शिव की कठोर तपस्या की थी। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, शिव ने दुर्वासस् ऋषि को इसका पुरोहित बनने की आज्ञा दी। आगे चल कर दुर्वासस् की सहायता से इसने शत-संवत्सरात्मक सत्र का आयोजन किया, एवं इस प्रकार बारह वर्षों तक निरंतर यज्ञकार्य कर अगणित पुण्य संपादन किया।

श्वेतकेतु औद्दालकि आरुणेय—एक सुविख्यात तत्त्वज्ञानी आचार्य, जिसका अत्यंत गौरवपूर्ण उल्लेख शतपथ ब्राह्मण, छांदोग्य उपनिषद, बृहदारण्यक उपनिषद आदि ग्रंथों में पाया जाता है। यह अरुण एवं उद्दालक नामक आचार्यों का वंशज था, जिस कारण इसे 'आरुणेय' एवं 'औद्दालकि' पैतृक नाम प्राप्त हुए थे (श. ब्रा. ११. २.७.१२; छां. उ. ५,३.१; बृ. उ. ३.७.१; ६.१.१)।

कौषीतकि उपनिषद में इसे आरुणि का पुत्र, एवं गोतम ऋषि का वंशज कहा गया है (कौ. उ. १.१)। छांदोग्य उपनिषद में इसे अरुण ऋषि का पौत्र, एवं उद्दालक आरुणि का पुत्र कहा गया है (छां उ. ५.११.२)। कौसुरुबिंदु औद्दालकि नामक आचार्य इसका ही भाई था। यह गौतमगोत्रीय था।

निवासस्थान—अपने पिता आरुणि की भाँति यह कुरु पंचाल देश का निवासी था। अन्य ब्राह्मणों के साथ यात्रा करते हुए यह विदेह देश के जनक राजा के दरबार में गया था। किन्तु उस देश में इसने कभी भी निवास नहीं किया था (श. ब्रा. ११.६.२.१)।

कालनिर्णय--यह पंचाल राजा प्रवाहण जैवल राजा का समकालीन था, एवं उसका शिष्य भी था (बृ. उ. ६. १.१. माध्यं; छां. उ. ५.३.१)। यह विदेह देश के जनक

राजा का भी समकालीन था एवं इस राजा के दरबार में इसने वाजसनेय से वादविवाद किया था (बृ. उ. ३.७.१)। इस वादविवाद में यह याज्ञवल्क्य से पराजित हुआ था।

बाल्यकाल—इसके बाल्यकाल के संबंध में संक्षिप्त जानकारी छांदोग्य उपनिषद में प्राप्त है। बचपन में यह अत्यंत उद्दण्ड था, जिस कारण बारह वर्ष की आयु तक इसका उपनयन नहीं हुआ था। बाद में इसका उपनयन हुआ, एवं चौबीस वर्ष की आयु तक इसने अध्ययन किया।

इसके पिता ने इसे उपदेश दिया था, 'अपने कुल में कोई विद्याहीन पैदा नहीं हुआ है। इसी कारण तुम्हारा यही कर्तव्य है कि, तुम ब्रह्मचर्य का सेवन कर विद्यासंपन्न बनो'। अपने पिता की आज्ञा के अनुसार, अपनी आयु के बारहवें वर्ष से चौबीस वर्ष तक इसने गुरुगृह में रह कर विद्याग्रहण किया।

विद्यार्जन—कौषीतकि उपनिषद् के अनुसार, इसने चित्र गार्ग्यायणि के पास जा कर ज्ञान संपादन किया (कौ. उ. १.१)। अपने समकालीन प्रवाहण जैवल नामक राजा से भी इसके विद्या प्राप्त करने का निर्देश भी बृहदारण्यक उपनिषद में प्राप्त है। एक बार जब यह पांचालों की विद्वत्सभा में गया था, तब उस समय पांचाल राजा प्रवाहण जैवल से इसका तत्त्वज्ञानविषयक वादविवाद हुआ। इस वादविवाद में प्रवाहण के द्वारा कई प्रश्न पूछे जाने पर, यह उनका योग्य जवाब न दे सका। इतना ही नही, इसका पिता उद्दालक आरुणि भी प्रवाहण के इन प्रश्नों का जवाब नहीं दे सका। इस कारण यह एवं इसके पिता परास्त हो कर प्रवाहण की शरण में गये, एवं उसे अपना गुरु बना कर इन्होंने उससे ज्ञान प्राप्त किया (बृ. उ. ६.२)।

घमंडीपन—इस प्रकार विद्याग्रहण कर विद्वान होने के कारण, यह अपने को बड़ा विद्वान समझने लगा, एवं दिन-ब-दिन इसका अहंकार बढ़ता ही गया। उस समय इसके पिता ने किताबी ज्ञान से अनुभवगम्य ज्ञान किस प्रकार अधिक श्रेष्ठ है, इसका ज्ञान इसे दिया, एवं इसे आत्मज्ञान का उपदेश किया, जो 'तत्त्वमसि' नाम से सुविख्यात है।

'तत्त्वमसि' उपदेश—इसके पिता उद्दालक अरुण ऋषि के द्वारा इसे दिया हुआ 'तत्त्वमसि' का उपदेश छांदोग्य उपनिनिषद में प्राप्त है (छां. उ. ६. ८-१६)।

इसने अपने पिता से प्रश्न किया, 'मिट्टी के एक परमाणु का ज्ञान होने से उसके सभी भेदों, नामों एवं रूपों का ज्ञान हमें प्राप्त होता है। उसी प्रकार आप ऐसी सूक्ष्मातिसूक्ष्म वस्तु का ज्ञान मुझे बतायें कि, जिस कारण सृष्टि के समस्त चराचर वस्तुओं का ज्ञान मुझे प्राप्त हो सके।' इस पर इसके पिता ने इसे जवाब दिया, 'तुम (याने तुम्हारी आत्मा), एवं इस सृष्टि की सारी चराचर वस्तुएँ दोनों एक है, एवं ये सारी वस्तुओं का रूप तू ही है (तत्त्वमसि)। अगर तू अपने आपको (याने अपनी आत्मा को) जान सकेगा, तो तुझे इस सृष्टि का ज्ञान पूर्णरूप से हो जायेगा'।

इसे उपर्युक्त तत्त्व समझाते हुए इसके पिता ने नदी समुद्र, पानी, नमक आदि नौ प्रकार के दृष्टान्त इसे दिये, एवं हर समय 'तत्त्वमसि' शब्द का पुनरुच्चारण किया। यही 'तत्त्वमसि' शब्दप्रयोग, आगे चल कर, अद्वैत वेदान्त के महावाक्यों में से एक बन गया।

यज्ञसंस्था का आचार्य—कौषीतकि ब्राह्मण में इसे कौषीतकि लोगों के यज्ञसंस्था का प्रमुख आचार्य कहा गया है। यज्ञसंस्था में विविध पुरोहितों के कर्तव्य क्या होना चाहिए, यज्ञपरंपरा में कौनसी त्रुटियाँ है, इस संबध में अनेकानेक मौलिक विचार इसने प्रकट किये हैं। ब्रह्मचारी एवं तापसी लोगों के लिए विभिन्न आचरण भी इसने प्रतिपादित किये है, एवं उस संबंध में अपने मौलिक विचार प्रकट किये हैं। इसके पूर्व कालीन धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथों में, ब्रह्मचारियों के द्वारा मधु भक्षण करने का निषेध माना गया है। किन्तु इसने मधुभक्षण करने के संबंध में यह आक्षेप को व्यर्थ बतलाया(श.ब्रा. ११.५.४.१८)। अन्य ब्राह्मण ग्रंथों में प्राप्त यज्ञविषयक कथाओं में भी इसके अभिमतों का निर्देश प्राप्त है (शां. ब्रा. २६.४; गो. ब्रा. १.३३)।

आचार्यों के द्वारा किये गये यज्ञकार्यों में ज्ञान की उपासना प्रमुख, एवं अर्थोपार्जन गौण मानना चाहिए इस संबंध में इसका एवं इसके पिता उद्दालक आरुणि का एक संवाद शांखायन श्रौतसूत्र में प्राप्त है (शां. श्रौ. १६.२७.६)। एक बार जल जातुकर्ण्य नामक आचार्य काशी, कोसल एवं विदेह इन तीनों देशों के राजाओं का पुरोहित बन गया। उस समय यह अत्यधिक रुष्ट हो कर पिता से कटु वचन करने लगा। इस पर पिता ने इसे, कहा:—

कृत्स्नके ब्रह्मबन्धौ व्यजिज्ञासिषि।

(पुरोहित के लिए यही चाहिए कि वह ज्ञान से प्रेम करें, एवं भौतिक सुखों की ज्यादा लालच न करें)।

धर्मसूत्रों में--आपस्तंब धर्मसूत्र में इसे 'अवर' (श्रेष्ठ आचार्य) कहा गया है (आप. ध. १.२.५.४-६)। अन्य उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में इसके अनेकानेक निर्देश मिलते हैं। फिर भी इसका सर्वप्रथम निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त होने के कारण, यह पाणिनि पूर्वकालीन आचार्य माना जाता है।

कामशास्त्र का प्रणयिता—वात्स्यायन कामसूत्र में प्राप्त निर्देशों के द्वारा प्रतीत होता है कि, नंदिन् के द्वारा विरचित आद्य कामशास्त्र ग्रंथ का इसने संक्षेप कर, उसे ५०० अध्यायों में ग्रथित किया। आगे चल कर श्वेतकेतु के इसी ग्रंथ का बाभ्रव्य पांचाल ने पुनःसंक्षेप किया; एवं उसे सात अधिकरणों में ग्रंथित किया। बाभ्रव्य के इसी ग्रंथ को पुनः एक बार संक्षेप कर, एवं उसमें दत्तकाचार्य कृत 'वैशिक,' चारणाचार्य कृत 'साधारण अधिकरण', सुवर्णनाभ कृत 'सांप्रयोगिक,' घोटकमुख कृत 'कन्या-संप्रयुक्त,' गोनर्दिय कृत 'भार्याधिकारिक,' गोणिकापुत्र कृत 'पारदारिक' एवं कुचुमारकृत 'औपनिषदिक' आदि विभिन्न ग्रंथों की सामग्री मिला कर वात्स्यायन ने अपने कामसूत्र की रचना की। फिर भी उसके मुख्य आधार-भूत ग्रंथ श्वेतकेतु एवं बाभ्रव्य पांचाल के द्वारा लिखित कामशास्त्रविषयक ग्रंथ ही थे।

ब्राह्मण जाति के लिए मद्यपान एवं परस्त्रीगमन वर्ज्य ठहराने की महत्त्वपूर्ण सामाजिक सुधार श्वेतकेतु के द्वारा ही प्रस्थापित हुई (का. सू. १.१.९)। ब्राह्मणों के लिए परस्त्रीगमन वर्ज्य ठहराने में इसका प्रमुख उद्देश्य था कि, ब्राह्मण लोग अपने स्वभार्या का संरक्षण अधिक सुयोग्य प्रकार से कर सकें (का. सू. ५.६.४८)।

इस प्रकार श्वेतकेतु भारतवर्ष का पहला समाजसुधारक प्रतीत होता है, जिसने समाजकल्याण की दृष्टि रख कर, अनेकानेक नये यम-नियम प्रस्थापित किये। इसीने ही सर्व प्रथम लैंगिक व्यवहारों में नीतिबंधनों का निर्माण किया, एवं सुप्रजा, लैंगिक नीतिमत्ता, परदारागमननिषेध आदि के संबंध में नये नये नियम किये, एवं इस प्रकार विवाहसंस्था की नींव मजबूत की।

महाभारत में--वैवाहिक नीतिनियमों का निर्माण करने की प्रेरणा इसे किस कारण प्रतीत हुई, इस संबध में अनेकानेक चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है। यह उद्दालक ऋषि का औरस पुत्र न हो कर, उसके पत्नी से उसके एक शिष्य के द्वारा उत्पन्न हुआ था (म. शां. ३५.२२)। आगे चल कर इसकी माता का एक ब्राह्मण ने हरण किया। उसी कारण, इसने स्त्रियों के लिए पातिव्रत्य का, एवं पुरुषों के लिए एकपत्नीव्रत के नियमों का निर्माण किया।

महाभारत में इसे उद्दालक ऋषि का पुत्र कहा गया है, एवं इसके मामा का नाम अष्टावक्र बताया गया है (म. आ. ११३.२२)। जन्म से ही इस पर सरस्वती का वरद-हस्त था (म. व. १३२.१)।

जनमेजय के सर्पसत्र का यह सदस्य था, एवं बंदिन् नामक आचार्य को इसने वाद-विवाद में परास्त किया था (म. आ. ४८.७; व. १३३)। किंतु जनमेजय के सर्पसत्र में भाग लेनेवाला श्वेतकेतु कोई उत्तरकालीन आचार्य होगा।

परिवार--देवल ऋषि कन्या सुवर्चला इसकी पत्नी थी। इससे उसने 'पुरुषार्थ-सिद्धि' पर वादविवाद किया था (म. शां. परि. १.१९.९९-११८)।

महाभारत में इसका वंशक्रम निम्नप्रकार दिया गया है:--उपवेश--अरुण उद्दालक-श्वेतकेतु। उसी ग्रंथ में इसे शाकल्य, आसुरि, मधुक, प्राचीनयोग्य एवं सत्यकाम ऋषियों का समकालीन कहा गया है।

२. लांगलिन् नामक शिवावतार का शिष्य।

श्वेतचक्षु--प्रसूत देवों में से एक।

श्वेतपराशर--पराशरकुलोत्पन्न एक उपशाखा।

श्वेतपर्ण यौवनाश्व—एक राजा, जो हस्तिनापुर के पूर्व में स्थित भद्रावती नगरी का राजा था। इसके पास एक सुंदर अश्व था, जो युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के लिए, भीम जीत कर लाया था (जै. अ. १७)।

श्वेमभद्र--एक गुह्यक यक्ष, जो कुबेर का सेवक था (म. स. १०.१४)।

श्वेतलोहित-श्वेत नामक शिवावतार का एक शिष्य।

श्वेतवक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श ४४.६८)।

श्वेतवराह--विष्णु के वराह अवतार का नामांतर। इसे 'आदिवराह' नामांतर भी प्राप्त था।

श्वेतवाहन—(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था (वायु. ९६. १३६)। मत्स्य में इसे शूर राजा के राजाधिदेव नामक भाई का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ४४.७८)।

श्वेतशिख—श्वेत नामक शिवावतार का शिष्य।

श्वेता—कश्यप एवं क्रोधा की कन्या, जिसे श्वेत नामक दिग्गज पुत्र के रूप में उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६०.३४)। यह वानरजाति की भी माता मानी जाती है, जिनकी वंशावलि विस्तृत रूप में दी गयी है (ब्रह्मांड. ३.७.१८०–१८१ वानर देखिये)।

श्वेताश्व—श्वेत नामक शिवावतार का एक शिष्य।

श्वेताश्वतर—एक आचार्य, जो श्वेताश्वेतर नामक सुविख्यात उपनिषद का रचयिता माना जाता है (श्वेताश्वतर ६.२१)। इसने स्वायंभुव ऋषि से ब्रह्मविद्या प्राप्त की थी। इसके नाम की एक कृष्णयजुर्वेदी शाखा भी उपलब्ध है। इसके नाम पर श्वेताश्वतर नामक एक ब्राह्मण ग्रंथ भी निर्दिष्ट है, जो वर्तमानकाल में केवल नाममात्र ही उपलब्ध है।

श्वेताश्वतर उपनिषद्—समस्त उपनिषद् वाङ्मय में श्वेताश्वतर उपनिषद एक महत्त्वपूर्ण ग्रंथ माना जाता है (रुद्र-शिव देखिये)। ईश्वर समस्त सृष्टि का शास्ता एवं नियंता है, यही इस उपनिषद का प्रमुख प्रतिपाद्य विषय है। दर्शनशास्त्रों में से सांख्य एवं वेदान्त दर्शन जब एक ही शास्त्र माने जाते थे, उस समय इस ग्रंथ की रचना की गयी थी।

इस उपनिषद के पहले अध्याय में त्रैमूर्त्यात्मक अद्वैत शैवमत की श्रेष्ठता प्रतिपादन की गयी है। दूसरे अध्याय में योग एवं योगपरिणाम का प्रतिपादन किया गया है। तीसरे एवं चौथे अध्याय में सांख्य एवं शैव मत का कथन प्राप्त है। पाँचवें अध्याय के दूसरे मंत्र में कपिल शब्द की आध्यात्मिक निरुक्ति दी गयी है। छठे अध्याय में सगुण ईश्वर का वर्णन प्राप्त है, जो सांप्रदाय–निरपेक्ष होने के कारण अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता है।

श्वैक्न—प्रतीदर्श नामक ऋषि की उपाधि, जिसका शब्दशः अर्थ 'श्विक्नों का राजा' माना जाता है। यह दाक्षायण यज्ञ की प्रक्रिया में निपुण था, जिस यज्ञ की शिक्षा इसने सुप्लन् सार्ञ्जय नामक आचार्य को दी थी। (श. ब्रा. २.४.४.३)। वेबर के अनुसार, श्विक्न एवं संजय लोगों का यह एकत्र निर्देश इन दोनों जातियों के घनिष्ठ संबंध की ओर संकेत करता है (इन्डिशे स्टूडियन १.२०९-२१०)।

श्वैत्य—शैब्यपुत्र संजय राजा का पैतृक नाम। पाठ–भेद–'शैब्य' (म. द्रो. परि. १.८.२७४)।

श्वैत्रेय—एक व्यक्ति, जिसे इंद्र ने जीवित किया था (ऋ. ६.२६.४)। सायण के अनुसार, 'श्वैत्रेय' शब्द की निरुक्ति 'श्वित्रा के वंशज' की गयी है। लुडविग के अनुसार, दशद्यु एवं श्वैत्रेय एक ही था, एवं यह कुत्स का पुत्र था। गेल्डनर के अनुसार यह श्वित्रा नामक गाय का पुत्र था, जिसका युद्ध के लिए उपयोग किया जाता था। ऋग्वेद में अन्यत्र 'श्वैत्रेय' शब्द का एक बैल के नाते उल्लेख किया गया है।

ष

षट्पुर—निकुंभ राक्षस का नामांतर, जिसका वध कृष्ण के द्वारा हुआ था।

हरिवंश में प्राप्त 'षट्पुर' का आख्यान शिवचरित्र में त्रिपुरदाह से मिलता जुलता प्रतीत होता है। जिस प्रकार त्रिपुर किसी व्यक्ति का नाम न हो कर, असुरों के निवासस्थान का नाम था, उसी प्रकार षट्पुर भी निकुंभ राक्षस के निवासस्थान का नाम था।

निकुंभ राक्षस अनेकानेक रूप धारण कर विभिन्न स्थानों में घूमता था। उनमें से दो स्थानों का एवं वहाँ स्थित निकुंभ के देहों का कृष्ण ने विनाश किया। कृष्ण के इसी पराक्रम को 'षट्पुर-विनाश' कहा गया है (ह. वं. २.८५-९०)।

षटांकुर–शठ एवं कठ नामक राक्षसों का सामूहिक नाम।

षंड—एक पुरोहित, जो सर्पसत्र में उपस्थित था (पं. ब्रा. २५.२.५३)। शंडामर्क नामक आचार्यों में से शंड का ही यह संभवतः नामांतर होगा।

षंडिक—केशिन् नामक आचार्य के खंडिक नामक प्रतिस्पर्धी का नामांतर (मै. सं. १.४.१२)।

षष्ठी--स्कंदपत्नी देवसेना का नामांतर। इसीके ही कारण स्कंद को 'षष्ठीप्रिय' कहते है (म. व. परि. १. २२.११)। यह ब्रह्मा की सभा में उपस्थित रह कर उसकी उपासना करती थी (म. स. ११.१३२*, पंक्ति ३)। इसके ही कृपा के कारण, प्रियव्रत राजा का 'सुव्रत' नामक पुत्र पुनः जीवित हुआ था।

षोडश-राजकीय--सोलह प्राचीन भारतीय राजाओं का एक समूह, जिनके जीवनचरित्र महाभारत के 'षोडश राजकीय' नामक उपाख्यान में प्राप्त है, जो नारद के द्वारा संजय राजा को सुनायें गये थे (म. द्रो. परि. १.८. ३२५-८७२; नारद देखिये)। येही जीवनचरित्र आगे चल कर कृष्ण ने युधिष्ठिर को सुनाये थे (म. शां. २९)

स

संयम--दिष्टवंशीय सृंजय राजा का नामांतर। वायु में इसे धूम्राक्ष राजा का पुत्र कहा गया है (सृंजय ६. देखिये)।

२. एक राक्षस, जो शतशृंग राक्षस का पुत्र था। अंबरीष के सेनापति सुदेव के द्वारा यह मारा गया (म. शां. परि. १.११.५-२०)।

संयमन--दुर्योधन के पक्ष के शल राजा का नामांतर। इसके पुत्र को 'सांयमनि' कहते थे।

२. काशिदेश का एक राजा, जो शुरु से ही अत्यंत विरक्त एवं धर्मप्रवण था। 'पंचशिख' नामक आचार्य से सांख्ययोग का ज्ञान प्राप्त करने के लिए, यह राज्य छोड़ कर वन में चला गया। वहाँ इसकी इच्छा के अनुसार पंचशिख ने इसे सांख्ययोग का ज्ञान प्रदान किया (म. शां. परि. १.२९)।

संयमन प्रातर्दन--एक आचार्य (कौ. उ. २.५)।

संयाति--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो नहुष राजा का पुत्र था (भा.९.१८.१)। मुनिधर्म को स्वीकार कर यह वन में चला गया।

संयुप--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो मत्स्य के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

संयोधकंटक--एक यक्ष, जो कुवेर का अनुचर था (वा. रा. उ. १४.२१)।

संवनन आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १९१)।

संवरण--(सो. अज.) अयोध्या का सुविख्यात राजा, जो अजमीढ राजा का पौत्र, एवं ऋक्ष राजा का पुत्र था। महाभारत में इसे 'वंशकर', 'पुण्यश्लोक' एवं 'सायंप्रातःस्मरणीय' राजा कहा गया है (म. अनु. १६५. ५४)।

राज्य से पदच्युति--एक बार इसके राज्य में महान् अकाल पड़ा, जिस कारण सारे लोग अत्यंत दुर्बल हो गये। इसी दुर्बलता का फायदा उठा कर, पांचाल देश के नृप ने दस अक्षौहिणी सेना के साथ इस पर आक्रमण किया, एवं इसे राज्यभ्रष्ट कर, अयोध्या से भाग जाने पर विवश किया।

भागते भागते यह सिंधुनद के किनारे एक दुर्ग तक पहुँच गया, जहाँ यह छिप कर रहने लगा। वहाँ वसिष्ठ सुवर्चस् से इसकी भेंट हुई, जिसने इसका राज्य पुनः प्राप्त कराया। पश्चात् वसिष्ठ की ही सहायता से इसने सारी पृथ्वी जीत कर, यह चक्रवर्ति राजा बन गया (म. आ. ८९.२७-४३)।

तपती से विवाह--वसिष्ठ की ही कृपा से, सूर्यकन्या तपती से इसका विवाह हुआ। तपती के सहवास-सुख में मग्न रहने के कारण, इसके राज्य में पुनः एक बार भयंकर अकाल पड़ा, जो लगातार बारह वर्षों तक चलता रहा। इस अकाल के कारण, इसके पुनः एक बार राज्यभ्रष्ट होने का धोखा निर्माण हुआ था, किंतु उस समय भी वसिष्ठ ने ही राष्ट्र की रक्षा की (म. आ. १६०-१६५)।

परिवार--अपनी पत्नी तपती से इसे कुरु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो आगे चल कर चक्रवर्ति सम्राट् बना।

२. एक ऋषि, जो ध्वन्य लक्ष्मण्य नामक राजा का पुरोहित था (ऋ. ५.३३.१०)।

संवरण प्राजापत्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५. ३३-३४)।

संवर्गजित् लामकायन--एक आचार्य, जो शाकदास भाडितायन नामक आचार्य का शिष्य, एवं गातु गौतम नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. २)।

संवर्त--एक सुविख्यात स्मृतिकार, जिसका निर्देश याज्ञवल्क्य के द्वारा निर्दिष्ट स्मृतिकारों की नामावलि में प्राप्त है।

संवर्त स्मृति--इसके द्वारा विरचित स्मृति का निर्देश आनंदाश्रम के 'स्मृतिसमुच्चय' में, जीवानंद के 'स्मृतिसंग्रह' में, एवं वेंकटेश्वर प्रेस के 'स्मृतिसंग्रह' में प्राप्त है, जहाँ इसकी स्मृति में २३०,२२७, एवं २३२ श्लोक दिये गये हैं। इसकी उपलब्ध स्मृति में आचार एवं प्रायश्चित्त के संबंध में वचन प्राप्त हैं। इसके व्यवहार संबंधी मतों के अनेकानेक उद्धरण विश्वरूपादि टीकाग्रंथों में प्राप्त है। इसकी छपी हुई स्मृति के कई श्लोक अपरार्क में पुनरुद्धृत किये गये हैं।

इसके द्वारा 'बृहत्संवर्त' एवं 'स्वल्पसंवर्त' नामक अन्य दो स्मृतिग्रंथों का निर्देश क्रमशः 'मिताक्षरा' में, एवं हरिनाथ के 'स्मृतिसार' में प्राप्त है (याज्ञ. ३. २६५; २८८)।

संवर्त आंगिरस--एक ऋषि, जो ब्रह्मपुत्र अंगिरस् ऋषि के तीन पुत्रों में से एक था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम बृहस्पति एवं उतथ्य थे (म. आ. ६०.४-५)। महाभारत में अन्यत्र इसके भाइयों के नाम बृहस्पति, उतथ्य, पयस्य, शान्ति, घोर, विरूप एवं सुधन्वन् दिये गये है (म. अनु. ८५.३०-३१)। इसे 'वीतहव्य' नामांतर भी प्राप्त था (यो. वा. ५.८२-९०)।

वैदिक साहित्य में--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा एवं प्राचीन यज्ञकर्ता के नाते ऋग्वेद में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ.१०. १७२; ८.५४.२)। ऐतरेय ब्राह्मण इसे मरुत्त आविक्षित राजा का पुरोहित कहा गया है (ऐ. ब्रा. ८.२१; मरुत्त आविक्षित ३. देखिये)।

बृहस्पति से ईर्ष्या--अपने भाई बृहस्पति से यह शुरु से ही अत्यंत ईर्ष्या रखता था, जिस कारण 'मरुत्त-बृहस्पति संघर्ष' में इसने सदा ही मरुत्त की ही सहायता की। यहाँ तक कि, बृहस्पति के द्वारा अधुरा छोड़ा गया मरुत्त राजा का यज्ञ भी इसने यमुना नदी के किनारे 'प्लक्षावतरणतीर्थ' में यशस्वी प्रकार से पूरा किया (म. शां. २९:१७)। मरुत्त के साथ इसका स्नेहसंबंध होने के अन्य निर्देश भी प्राप्त हैं (म. आश्व. ६-७)।

देवताओं पर प्रभाव--यह महान् तपस्वी था, एवं जिस स्थान पर इसने तपस्या की थी, वह आगे चल कर 'संवर्तवापी' नाम से सुविख्यात हुआ (म. व. ८३. २८)। इसकी अत्यधिक तपस्या के कारण समस्त देवता भी इसके आधीन रहते थे।

मरुत्त के यज्ञ के लिए सुवर्ण की आवश्यकता होने पर, इसने हिमालय के सुवर्णमय मुंजवत् पर्वत से विपुल सुवर्ण शिवप्रसाद से प्राप्त किया (म. आश्व. ८; मार्क. १२६. ११-१३)। इसने मरुत्त के यज्ञ के समय, साक्षात् अग्नि देव को जलाने की धमकी दे दी थी (म. आश्व. ९.१९)। इंद्र का वज्र इसने स्तंभित किया था, एवं इस प्रकार उसे मरुत्त के यज्ञ में आने पर विवश किया था(म. आश्व.१०)।

कुणप आख्यान--मरुत्त आविक्षित राजा से इसकी सर्व प्रथम भेंट कैसे हुई, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथन महाभारत में प्राप्त है। अपने यज्ञकार्य की पूर्ति के लिए मरुत्त आविक्षित इससे मिलना चाहता था, लेकिन इसके उन्मत्त अवस्था में इधर उधर भटकते रहने के कारण, इसकी भेंट अत्यंत दुष्प्राप्य थी।

अंत में इसे ढूँढते मरुत्त काशीनगरी में आ पहुँचा। वहाँ यह नग्नावस्था में इधर उधर घूमता था, एवं एक कुणप (शव) को काशीविश्वेश्वर मान कर उसकी पूजा करता था। रास्ते में 'कुणप' को देख कर, जो उसे वंदन करता हुआ उसके पीछे जायेगा, वही संवर्त ऋषि होगा, ऐसी धारणा इसके संबंध में काशिवासियों में प्रचलित थी।

इसी धारणा के अनुसार, मरुत्त राजा ने एक कुणप ला कर उसे काशी के नगरद्वार में रख दिया, जिसका वंदन करने के लिए संवर्त वहाँ पहुँच गया (म. आश्व. ५)।

शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुए ऋषियों में यह एक था (म. शां. ४७.६६*; अनु. २६.५)।

संवर्तक--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में एक था।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के पुत्रों में से एक।

संशती--पवमान अग्नि की पत्नी, जिससे इसे सभ्य एवं आवसथ्य नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (मत्स्य. ५१.१२)।

संश्रवस् सौवर्चनस्—एक आचार्य, जिसने तुमिंज नामक आचार्य के साथ यज्ञप्रक्रिया के संबंध में वादविवाद किया था। सत्र में होता के द्वारा किये जानेवाले इडोपाह्वान के संबंध में यह चर्चा हुई थी (तै. सं. १.७.२.१)।

संश्रुत्य--विश्वामित्र के ब्रह्मवादी पुत्रों में से एक। एक गोत्रकार के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (म. अनु. ४.५५)।

संस्कृति--(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार जयसेन राजा का, तथा विष्णु एवं वायु के अनुसार जयत्सेन राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसे संकृति कहा गया है।

संहत (सो. सह.)--एक राजा, जो सांची (सांहजनि) नगरी का संस्थापक माना जाता है। भागवत, विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'सोहंजि,' 'साहंजि' एवं 'संजेय' कहा गया है। हरिवंश में इसे 'साहंजि' कहा गया है (ह. वं. १.३३.४; साहंजि देखिये)। मत्स्य में इसे कुंति राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. ४३.९)।

संहतापद--ऐरावतकुल का एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

संहताश्व-- इक्ष्वाकुवंशीय वर्हणाश्व राजा का नामान्तर।

संहिता—धृतराष्ट्र की द्वितीय पत्नी, जो गांधारराज सुबल की कन्या एवं गांधारी की कनिष्ठ भगिनी थी।

संहनन--(सो. पूरु.) एक महारथी राजा, जो पूरु राजा का प्रपौत्र, एवं मनस्यु राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.७)। इसकी माता का नाम सौवीरी था।

संहति--अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

संह्राद--एक असुर, जो हिरण्यकशिपु का द्वितीय पुत्र एवं प्रह्लाद का छोटा भाई था। इसके अन्य भाइयों के नाम प्रह्लाद, अनुह्राद, शिवि एवं बाष्कल थे (म. आ. ८९.१७-१८)। इसकी माता का नाम कयाधु एवं पत्नी का नाम कृति था। मृत्यु के पश्चात् यह वरुण-सभा में रह कर वरुण की उपासना करने लगा (म. स. ९.१२)। पाठभेद —प्रह्राद।

पुत्र—महाभारत एवं पुराणों में इसके पुत्रों के नाम विभिन्न प्रकार से दिये गये है :—१. महाभारत में—इस ग्रंथ में मद्रदेश का सुविख्यात राजा शल्य इसी के अंश से उत्पन्न कहा गया है (म. आ. ६१.६); २. ब्रह्मांड में—जंभ, बाष्कल, कालनेमि, शंभु। इस पुराण में इसकी वंशावलि भी दी गयी है (ब्रह्मांड. ३.५.३८-३९)। ३. विष्णु में—आयुष्मत्, शिवि एवं बाष्कल (विष्णु. १.२१.१;); ४. भागवत में—पंचजन (भा. ६.१८.१३); ५. मत्स्य में—इस ग्रंथ में इसके पुत्रों का सामूहिक नाम 'निवातकवच' दिया गया है, एवं उन्हें देव, गंधर्व एवं उरग आदि के लिए अवध्य बताया गया है (मत्स्य. ६.९.२८-२९)।

२. जालंधरसेना का एक सैनिक।

सकतिपुत्र--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लौगाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे 'सकोतिपुत्र' कहा गया है।

सकौगाक्षि एवं सकौवाक्षि—भृगुकुलोत्पन्न गोत्रकारद्वय।

सक्तुप्रस्थ—उंच्छवृत्ति नामक ब्राह्मण का नामान्तर (उंच्छवृत्ति देखिये)।

२. एक आचार्य, जो पूषमित्र गोभिल नामक आचार्य का शिष्य था (वं. ब्रा. ३)।

सगर—(सू. इ.) एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो बाहु अथवा बाहुक राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम कालिंदी अथवा केशिनी था। भागवत एवं पद्म में इसे क्रमशः 'फल्गुतंत्र,' एवं 'गर' राजा का पुत्र कहा गया है, जो संभवतः बाहुराजा के ही नामान्तर थे।

यह पराक्रमी सत्यधर्मी, सत्यवक्ता, दानशूर एवं विचारज्ञ था। इसके कई सिक्के मोहेंजोदड़ो के उत्खनन में प्राप्त हुए हैं।

जन्म—इसका जन्म अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् हुआ था। बाहुराजा की मृत्यु के समय उसकी पत्नी केशिनी, और्व ऋषि के आश्रम में गर्भवती थी। उस समय बाहु राजा की अन्य पत्नियों ने केशिनी को सवतीमत्सर से प्रेरित हो कर विष दिया। इस विष के कारण, यह सात वर्षों तक अपनी माता के गर्भ में रहा, एवं जन्म के पश्चात् यह दुर्बल ही रहा। अपनी माता की गर्भ में जो विष इसके शरीर में उतर गया, इसके कारण इसे सगर विषयुक्त नाम प्राप्त हुआ। और्व ऋषि की कृपा के ही कारण, अपनी सापत्न माता के विषप्रयोग से यह बच सका।

शिक्षा—इसके क्षत्रियोचित सारे संस्कार और्व ऋषि ने किये, एवं इसे भार्गव नामक अग्न्यस्त्र उसीने ही प्रदान किया (विष्णु. ४.४)। च्यवन ऋषि ने भी इसे अनेकानेक अस्त्रशस्त्रों की जानकारी दी थी।

पराक्रम—उपरोक्त अस्त्रों की सहायता से इसने हैहय तालजंघ राजा का नाश कर अपना राज्य पुनः प्राप्त किया। पश्चात् इसने यवन, शक, हैहय, बर्बर आदि लोगों को परास्त किया। किन्तु अपने गुरु वसिष्ठ की सलाह से उनका वध न कर, एवं उन्हें केवल विरूप बना कर छोड़ दिया। ये लोग आगे चल कर म्लेंच्छ एवं व्रात्य लोग बन गये (भा. ९.८)।

अश्वमेध यज्ञ—एक बार इसने अश्वमेध यज्ञ किया, जिस समय इसका अश्वमेधीय अश्व इंद्र ने चुरा लिया। आगे चल कर यह अश्व कपिलऋषि के आश्रम के पास इंद्र ने छोड़ दिया। इसके साठ हजार पुत्रों ने अश्वमेधीय अश्व के लिए पृथ्वी, स्वर्गलोक, एवं पाताल ढूँढ डाले। ढूँढते-ढूँढते अपना अश्व कपिलऋषि के आश्रम के पास मिलते ही, उन्होंने इस अश्व के चोरी का इल्जाम कपिल ऋषि पर लगाया। इस झूठे इल्जाम के कारण, कपिल ऋषि ने क्रुद्ध हो कर उन साठ हज़ार सगरपुत्रों को जला कर भस्म कर दिया। इस प्रकार इसके पुत्रों में से हृषिकेतु, सुकेतु, धर्मरथ, पंचजन एवं अंशुमत नामक केवल पाँच ही पुत्र बच सके। उन्होंने इसका अश्वमेधीय अश्व अयोध्या में लाया, एवं तदुपरांत इसने अपना अश्वमेध यज्ञ पूर्ण किया।

परिवार—इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीः—
१. केशिनी (शैब्या, भानुमती), जो विदर्भकन्या थी, एवं जो इसकी ज्येष्ठ पत्नी थी (वायु. ८८.१५५); २. प्रभा (सुमति), जो यादवराजा अरिष्टनेमि की कन्या थी (मत्स्य. १२.४२०)।

पुत्र—(१) केशिनीपुत्र— उपर्युक्त पत्नियों में से केशिनी से इसे असमंजस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो इसका वंशकर्ता एवं इसके पश्चात् अयोध्या नगरी का राजा बन गया (वायु. ८८.१५७); (२) प्रभापुत्र—प्रभा को साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए, जो कपिल ऋषि के शाप के कारण दग्ध हो गये।

इसके साठ हजार पुत्रों के जन्म से संबन्धित एक चमत्कृतिपूर्ण कथा महाभारत में प्राप्त है। और्व ऋषि के आश्रम में पुत्रप्राप्ति के लिए तपस्या करने पर, इसकी पत्नी प्रभा को एक तुंबी उत्पन्न हुई। यह उसे फेंक देना चाहता था, किन्तु आकाशवाणी के द्वारा मना किये जाने पर इसने उस तुंबी के एक एक बीज निकाल कर साठ हजार घृतपूर्ण कलशों में रख दिये, एवं उनकी रक्षा के लिए धायें नियुक्त की। तदुपरान्त उन कुंभों से इसके साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए (म. व. १०४.१७; १०५.२)।

ब्रह्मांड के अनुसार, इसकी पत्नी प्रभा को पुत्र के रूप में एक मांसखंड उत्पन्न हुआ था, जिससे आगे चल कर, और्व ऋषि की कृपा प्रसाद से साठ हजार पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ३.४८)।

आधुनिक अभ्यासकों के अनुसार, सगर राजा के साठ हज़ार पुत्रों के उपर्युक्त कथाभाग में इसके पुत्रों का नहीं, बल्कि अयोध्या राज्य की इसकी प्रजाजनों की ओर संकेत किया गया है, जो इसके राज्य में उत्पन्न हुए अकाल के कारण मृत हुए। आगे चल कर इसके पुत्र असमंजस् के प्रपौत्र भगीरथ ने इसके राज्य में गंगा नदी को ला कर, इसका राज्य आबाद बना दिया। इस प्रकार भगीरथ के कारण, इसकी प्रजा को नवजीवन प्राप्त हुआ (भगीरथ देखिये)।

सागरोपद्वीप—इसके पुत्र जब इसका अश्वमेधीय अश्व ढूँढ रहे थे, उस समय उन्होंने जंबुद्वीप के समीप के प्रदेश से आठ उपद्वीप उत्खनन कर के बाहर निकाले। ये ही द्वीप आगे चल कर 'सागरोपद्वीप' नाम से प्रसिद्ध हुए (भा. ५.१९.२९-३०)।

सगालव—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

संकट—धर्म एवं ककुभ् के पुत्रों में एक (भा. ६.६.६)।

संकर गौतम—एक आचार्य, जो अर्यमराध गौतम, एवं पूषमित्र गोभिल नामक आचार्य का शिष्य था। इसके शिष्य का नाम पुष्पयशस् औदव्रजि था (वं. ब्रा. ३.)।

संकल्प—धर्म एवं संकल्पा के पुत्रों में से एक। यह उदात्त जीवनहेतु का मानवीकरण प्रतीत होता है। इसके पुत्र का नाम काम था (भा. ६.६.१०.)।

संकल्पा—दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की दस पत्नियों मे से एक थी। इसके पुत्र का नाम संकल्प था (भा. ६.६.४)।

संकील—एक मंत्रकार, जो वैश्य जाति में उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. २.३२.१२१; मत्स्य. १४५.१३६)।

संकु—कुकुर वंशीय शंकु राजा का नामान्तर (शंकु. १. देखिये)।

संकुसुक यामायन—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८)।

संकृति—एक क्षत्रोपेत ब्राह्मण, जो अपने तपस्या के कारण अंगिरस् कुल का गोत्रकार, एवं मंत्रकार बन गया (ब्रह्मांड. २.३२.१०७; गुरु २. देखिये)।

२. (सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार नर राजा का पुत्र था। वायु में इसका 'सांकृति' नामान्तर दिया गया है। इसकी पत्नी का नाम सत्कृति था, जिससे इसे रंतिदेव एवं गुरु नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. २७८.१७; द्रो. ६७.१*; भा. ९.२१.१-२)।

३. क्षत्रवंशीय संस्कृति राजा का नामान्तर।

संकोच--एक राक्षस, जो प्राचीनकाल में पृथ्वी का शासक था।

संक्रंदन--भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

२. विदर्भ देश का एक राजा, जो वपुष्मत् राजा का पिता था। इसके पुत्र वपुष्मत् ने दशार्णाधिप चारुवर्मन् राजा की कन्या सुमना का हरण करना चाहा। किन्तु नरिष्यंत राजा के पुत्र दम ने उसे परास्त किया (नरिष्यंत एवं सुमना देखिये)।

संक्रम--स्कंद का एक पार्षद, जो विष्णु के द्वारा उसे दिये गये तीन पार्षदों में से एक था। अन्य दो पार्षदों के नाम चक्र एवं विक्रम थे (म. श. ४४.१३)।

संग प्रायोगि--असंग प्रायोगि नामक आचार्य का नामान्तर (मै. सं. ३.१.९)

संगत—(मौर्य. भविष्य.) एक मौर्यवंशीय राजा, जो सुयशयस् राजा का पुत्र, एवं शालिशूक राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)। विष्णु में इसे दशरथ राजा का पुत्र कहा गया है।

संगर—एक ब्राह्मण, जो गंगास्नान के पुण्य के कारण यशोभद्र नामक राजा बन गया (पद्म. क्रि.३)।

संगव—दुर्योधन का गोशालाधिपति, जिसने घोषयात्रा युद्ध के समय दुर्योधन की सहाय्यता की थी (म. व. २२८.२)। पाठ--'समंग'।

संग्रह—समुद्र के द्वारा दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम विग्रह था (म. श. ४४.३३)।

संग्रामजित्—कृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक। प्रभासक्षेत्र में हुए यादवीयुद्ध में सुभद्र ने इसका वध किया (भा. ३.७१.२५१)।

२. कृष्ण एवं शैब्यकन्या सुदेवी का पुत्र (ब्रह्मांड. ३.७१.२५१)।

३. युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ४.१९)।

३. कर्ण का एक भाई, जो विराट के उत्तर-गोग्रहण युद्ध के समय अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. वि. ५९.१८)।

सचैलेय—सचैलेय नामक अत्रिकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सच्य—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार हविर्धान राजा का पुत्र था।

सजातंबी—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सजीवि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सज्जनाद्रोहक--धर्माकर नामक धार्मिक व्यक्ति का नामान्तर।

संचारक—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६९)।

संजय—लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वायु के अनुसार प्रतिपद राजा का, एवं भागवत के अनुसार प्रति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम जय था। विष्णु में प्रतिक्षत्र राजा के पुत्र का नाम 'संजय' नहीं, बल्कि सृंजय दिया गया है (विष्णु. ४.९.२६)।

३. (सो. अनु.) अनुवंशीय सृंजय राजा का नामान्तर।

४. (सो. नील) नीलवंशीय पांचाल सृंजय राजा का पुत्र (सृंजय ७. देखिये)।

५. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सुपार्श्व राजा का पुत्र था। भागवत में इसे चित्ररथ कहा गया है।

६. सौवीर देश का एक राजकुमार, जो विदुला नामक रानी का पुत्र था। इसके पिता की मृत्यु के पश्चात्, इस अल्पवयी राजा पर सिंधुराजा ने आक्रमण कर, इसे रणभूमि से भागने पर विवश किया। उस समय इसकी माता विदुला ने बहुमूल्य उपदेश प्रदान कर, इसे पुनः एक बार युयुत्सु बनाया। विदुला के द्वारा इसे किया गया राजनीति पर उपदेश महाभारत में 'विदुला-पुत्र संवाद' नामक उपाख्यान में प्राप्त है (म. उ. १३१-१३४; विदुला देखिये)।

७. एक राजकुमार, जो सिंधु नरेश वृद्धक्षत्र का पुत्र, एवं जयद्रथ के ग्यारह भाइयों में से एक था (म. व. २४९.१०)। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदी-हरण के युद्ध में यह अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. व. २५५.२७)।

८. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

९. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु, विष्णु एवं भागवत के अनुसार रणंजय राजा का, एवं मत्स्य के

अनुसार रणेजय राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम शुद्धोद था (वायु. ९९.२८८; मत्स्य. २७१.११)।

१०. एक व्यास, जो वाराह कल्पान्तर्गत वैवस्वत मन्वंतर के सोलहवें युगचक्र में उत्पन्न हुआ था (वायु. २३.१७१)।

संजय गावल्गणि—धृतराष्ट्र राजा का सारथि, एवं सलाहगार मंत्री, जो सूत जाति में उत्पन्न हुआ था, एवं गवल्गण नामक सूत का पुत्र था (म. आ. ५७.८२)। गवल्गण का पुत्र होने के कारण, इसे 'गावल्गणि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। यह उन 'वातिक' व्यवसायी लोगों में से था, जो महाभारतकाल में वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण का काम करते थे (वातिक देखिये)।

यह वेद व्यास का कृपापात्र व्यक्ति था, एवं अर्जुन एवं कृष्ण का बड़ा भक्त था। दुर्योधन के अत्याचारों का यह आजन्म जोर से प्रतिवाद करता रहा। यह स्वामिभक्त, बुद्धिमान्, राजनीतिज्ञ एवं धर्मज्ञ था। यह धार्मिक विचार-वाला स्वामिभक्त मंत्री था, जिसने सत्य का अनुसरण कर सदैव सत्य एवं सच्ची बातें धृतराष्ट्र से कथन की।

धृतराष्ट्र का प्रतिनिधित्व—धृतराष्ट्र के प्रतिनिधि के नाते, यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था, जहाँ युधिष्ठिर ने इसे राजाओं की सेवा तथा सत्कार में नियुक्त किया था (म. स. ३२.५)। धृतराष्ट्र के आदेश से, काम्यकवन में गये विदुर को बुलाने के लिए यह गया था (म. व. ७)।

भारतीय युद्ध के पूर्व, धृतराष्ट्र के राजदूत के नाते यह उपप्लव्य नगरी में पांडवों से मिलने गया था। उपप्लव्य नगरी में संजय के द्वारा किये गये दौत्यकर्म का सविस्तृत वृत्तांत महाभारत के 'संजययानपर्व' में प्राप्त है (म. उ. २२–३२)।

अपने इस दौत्य के समय केवल राजदूत के नाते ही नहीं, बल्कि पांडवों के सच्चे मित्र के नाते, इसने उन्हें शान्ति का उपदेश दिया। इसने उन्हें कहा, 'संधि ही शांति का सर्वोत्तम उपाय है। धृतराष्ट्र राजा भी शांति चाहते हैं, युद्ध नहीं'। युधिष्ठिर ने संजय के उपदेश को स्वीकार तो किया, किन्तु यह शर्त रक्खी कि, यदि धृतराष्ट्र शान्ति चाहते हैं, तो इंद्रप्रस्थ का राज्य पांडवों को लौटा दिया जाय।

धृतराष्ट्र को उपदेश—हस्तिनापुर लौटते ही इसने सर्वप्रथम धृतराष्ट्र की एकांत में भेट ली, एवं उसे युद्ध टालने के लिए पुनः एक बार उपदेश दिया। इसने धृतराष्ट्र से कहा, 'आनेवाले युद्ध में केवल कुरुकुल का ही नहीं, बल्कि अपनी समस्त प्रजा का भी नाश होगा, यह निश्चित है। विनाशकाल समीप आने पर बुद्धि मलिन हो जाती है, एवं अन्याय भी न्याय के समान दिखने लगता है। अपने पुत्रों की अन्धी ममता के कारण आज तुम युद्ध के समीप आ गये हों। युद्ध टालने का मौका अब हाथ से निकलता जा रहा है, तुम हर प्रयत्न कर पांडवों से संधि करो'।

दूसरे दिन, धृतराष्ट्र के खुली राजसभा में इसने युधिष्ठिर का शान्तिसंदेश कथन किया, एवं पांडव पक्ष के सैन्य आदि का आखों देखा हाल भी कथन किया। इस कथन में इसने अर्जुन एवं कृष्ण के स्नेहसंबंध पर विशेष जोर दिया, एवं कहा कि, कृष्ण की मैत्री पांडवों की सबसे बड़ी सामर्थ्य है (म. उ. ६६)।

श्रीकृष्ण का महिमा—पश्चात् यह पुनः एक बार धृतराष्ट्र के अंतःपुर गया, एवं वेदव्यास, गांधारी एवं विदुर की उपस्थिति में, इसने धृतराष्ट्र को श्रीकृष्ण का माहात्म्य विस्तृत रूप में कथन किया। इसने कहा, 'श्रीकृष्ण साक्षात् ईश्वर का अवतार है, एवं मेरे ज्ञानदृष्टि के कारण मैंने उसके इस रूप को पहचान लिया है। मैंने सारे आयुष्य में कभी भी कपट का आश्रय नहीं लिया, एवं किसी मिथ्या धर्म का आचरण भी नहीं किया। इस प्रकार ध्यानयोग के द्वारा मेरा अंतःकरण शुद्ध हो गया है, एवं उसी साधना के कारण, श्रीकृष्ण के सही स्वरूप का ज्ञान मुझे हो पाया है'।

इसने आगे कहा, 'प्रमाद, हिंसा एवं भोग, इन तीनों के त्याग से परम पद की प्राप्ति, एवं श्रीकृष्ण का दर्शन शक्य है। इसी कारण तुम्हारा यही कर्तव्य है कि, इसी ज्ञानमार्ग का आचरण कर तुम मुक्ति प्राप्त कर लो (म. उ. ६७.६९)।

दिव्यदृष्टि की प्राप्ति—भारतीय युद्ध के समय, युद्ध देखने के लिए व्यास ने धृतराष्ट्र को दिव्यदृष्टि देना चाहा, किन्तु धृतराष्ट्र ने उसे इन्कार किया; क्यों कि आपस में ही होनेवाले इस भयंकर संहार को नहीं देखना चाहता था। तदुपरांत व्यास ने संजय को दिव्यदृष्टि का वरदान दिया, जिस कारण, युद्ध में घटित होनेवाली सारी घटनाओं का हाल, यह धृतराष्ट्र से कथन करने में समर्थ हुआ।

इस दिव्यदृष्टि के बल से, सामने की अथवा परोक्ष की, दिन रात में होनेवाली, तथा दोनों पक्षों

के मन में सोची हुई बातें इसे ज्ञात होने लगीं। इसी वरदान के साथ साथ, युद्ध में अवध्य एवं अजेय रहने का, एवं अत्यधिक परिश्रम करने पर भी थकान प्रतीत न होने का आशीर्वाद भी व्यास के द्वारा इसे प्राप्त हुआ था (म. भी. १६.८-९)।

युद्ध-कथन--इसने धृतराष्ट्र से भारतीय युद्ध का जो वर्णन सुनाया, वह युद्धक्षेत्रीय वृत्तनिवेदन का एक आदर्श रुप माना जा सकता हैं। कौन वीर किससे लड़ रहा है, कौन से वाहन पर वह सवार है, एवं कौन से अस्त्रों का प्रयोग वह कर रहा है, इन सारी घटनाओं की समग्र जानकारी संजय के वृत्तनिवेदन में पायी जाती है।

संजय के वृत्तानिवेदनकौशल्य की चरम सीमा इसके 'भगवद्गीता निवेदन' में दिखाई देती है, जहाँ श्रीकृष्ण का सारा तत्त्वज्ञान ही नहीं, बल्कि उसके हावभाव, मुखमुद्रा भी प्रत्यक्ष की भाँति पाठकों के सामने खड़ी हो जाती है।

युद्ध में उपस्थिति—भारतीय युद्ध में, केवल वृत्त-निवेदक के नाते ही नहीं, बल्कि एक योद्धा के नाते भी इसने भाग लिया था। इसने धृष्टद्युम्न पर आक्रमण किया था, जिसमें यह उससे परास्त हुआ था। सात्यकि ने भी इसे एक बार मूर्च्छित किया था, एवं जीते जी इसे बन्दी बनाया था। आगे चल कर व्यास की कृपा से यह सात्यकि के कैदखाने से विमुक्त हुआ था (म. श. २४. ५०-५१)। युद्धभूमि से धृतराष्ट्र को उद्देश्य कर अपने सारे संदेश दुर्योधन इसीके ही द्वारा भेजा करता था (म. श. २८.४८-४९)।

इससे प्रतीत होता है कि, यह युद्धभूमि में स्वयं उपस्थित था। संभव है, यह युद्धभूमि की सारी घटनाएँ दिन में देख कर, रात्रि के समय धृतराष्ट्र को बताता रहा हो।

युद्धोपरान्त--युद्ध समाप्त हो जाने बाद, इसकी दिव्य-दृष्टि विनष्ट हुई (म. सौ. ९.५८)। युधिष्ठिर के राज्यारोहण के पश्चात्, उसने इस पर राज्य के आयव्यय निरीक्षण का कार्य सौंप दिया था (म. शां. ४१.१०)।

वनगमन--अंत में विदुर की सलाह से यह धृतराष्ट्र एवं गांधारी के साथ वन में चला गया (भा. १.१३. २८-५७)। यह वन में धृतराष्ट्र की हर प्रकार की सेवा करता था, एवं उसके साथ विभिन्न विषयों पर वादसंवाद भी करता था।

एक बार वन में लग गये दावानल में धृतराष्ट्र फँस गया। उस समय उसे बचाने की कोशिश इसने की, किंतु इसके सारे प्रयत्न असफल होने पर, इसने धृतराष्ट्र से अपना कर्तव्य पूछा। उस समय धृतराष्ट्र ने इससे कहा, 'मेरे जैसे वानप्रस्थियों के लिए यह मृत्यु अनिष्ट-कारी नहीं है, बल्कि उत्तम ही है। तुम जैसे गृहस्थ धर्मियों के लिए इस प्रकार आत्मघात करना उचित नहीं है, अतः मेरी यही इच्छा है, कि तुम यहा से भाग जाओं'।

धृतराष्ट्र के कथनानुसार यह दावानल से निकल पड़ा। पश्चात् धृतराष्ट्र, गांधारी एवं कुन्ती के साथ भस्म हुआ। पश्चात् इसने गंगातट पर रहनेवाले तपस्वियों को धृतराष्ट्र के दग्ध होने का समाचार सुनाया, एवं यह हिमालय की ओर चला गया (म. आश्व. ४५.३३)।

संजाति--पूरुवंशीय संयाति राजा का नामांतर (संयाति ३. देखिये)।

संज्ञा—त्वष्टृ की कन्या, जो विवस्वत् की पत्नी थी। पौराणिक साहित्य के अनुसार, इसे मनु, यम एवं यमी नामक संतान उत्पन्न हुई। तत्पश्चात् सूर्य का तेज अधिक काल तक न सह सकने के कारण, इसने छाया नामक अपनी नौकरानी को सूर्य के पास पत्नी के नाते भेज दिया, एवं यह स्वयं तपस्या करने चली गयी (मा. ८.१३.८-९)।

छाया को यम से शनैश्चर, मनु सावर्णि एवं तपती नामक तीन संतान उत्पन्न हुए। तीन संतान उत्पन्न होने के पश्चात्, यम को छाया का सही रूप ज्ञात हुआ, एवं वह संज्ञा को ढूँढने के लिए बाहर निकला। तदुपरान्त उत्तर कुरु देश के तपोवन में एक अश्वि के रूप में तपस्या करनेवाली संज्ञा से उसकी भेंट हुई। उसने अश्व का रूप धारण कर संज्ञा से संभोग किया, जिससे इसे अश्विनी कुमार एवं रेवन्त नामक और दो पुत्र उत्पन्न हुए (म. आ. ७.३४; अनु. १५०.१७-१८)।

विवस्वत् के तेज का आधिक्य सहन न सकने की तकरार इसने अपने पिता विश्वकर्मन् से की। इस कारण विश्वकर्मन् ने विवस्वत् का बहुत सारा तेज शोषण किया, एवं उसीसे विष्णु का सुदर्शन चक्र, शिव का त्रिशूल, कुबेर का पुष्पक विमान, एवं कार्तिकेय की शक्ति का निर्माण किया (ब्रह्मांड. २.२४.९०; सवर्णा एवं छाया देखिये)।

संज्ञेय--(सो. सह.) सोमवंशीय संहत राजा का नामान्तर।

सती--अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जिसने अथर्वन्

अंगिरस् को पुत्र के रूप में स्वीकार किया (भा. ६.६. १९)।

२. दक्ष एवं प्रसूति की कन्या, जो देवी का एक प्रमुख अवतार मानी जाती है (देवी तथा शक्ति देखिये)। विष्णु के अंश से यह उत्पन्न हुई (पद्म. सृ. १९)। नारी सृष्टि का निर्माण करना देवी के इस अवतार का प्रमुख उद्देश्य था (शिव. शत. ३; दे. भा. ७)।

इसके पति शिव का अपमान किये जाने के कारण, इसके दक्षयज्ञ के अग्निकुण्ड में आत्माहुति देने की कथा सभी पुराणों में प्राप्त है (भा. ४; वायु. १०.२७; मत्स्य १३.१४-१६; पद्म. सृ. ५; कालि. १८)। किन्तु शिव के द्वारा इसका त्याग किये जाने के कारण, इसके देहत्याग करने की चमत्कृतिपूर्ण कथा भी कई पुराणों में प्राप्त है (शिव. रुद्र. स. २५)।

३. विश्वामित्रऋषि की पत्नियों में से एक।

सत्कर्मन्--(सो. अनु.) एक राजा, जो धृतव्रत राजा का पुत्र, एवं अधिरथ राजा का पिता था (भा. ९. २३.१२)।

विष्णु एवं वायु में इसे सत्यवर्मन् कहा गया है। यह स्वयं 'सूतवृत्ति' से रहता था। किन्तु एक ब्राह्मणकन्या से इसने विवाह किया था।

सत्कृत--पृथक् देवों में से एक।

सत्कृति--संकृति राजा की पत्नी, जो रंतिदेव राजा की माता थी। मत्स्य में इसे संकृति राजा के पुत्र महायशस् की कन्या कहा गया है (मत्स्य. ४९.३७)।

सत्य--कलिंग देश का एक योद्धा, जो कलिंगराजा श्रुतायु का चक्ररक्षक था। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ५०. ६९)।

२. (स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो हविर्धान एवं हविर्धानी के पुत्रों में से एक था।

३. उत्तम मन्वन्तर का एक देवविशेष (भा. ८.१०. २४)।

४. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक (भा. ८.१३.२२)।

५. दस विश्वेदेवों में से एक (वायु. ६६.५१)।

६. एक राजा, जो वीतहव्यवंशीय वितत्य राजा के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम संत था (म. अनु. ३०.६२)।

७. एक देव, जो अंगिरस् एवं सुरूपा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १९६.२)।

८. तामस मन्वन्तर का एक देवविशेष।

९. दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

१०. उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार, जो सत्या का पुत्र माना जाता है।

११. अट्ठाईस व्यासों में से एक, जो दूसरे द्वापर में उत्पन्न हुआ था।

१२. उंच्छवृत्ति नामक ब्राह्मण का अवतार (उंच्छवृत्ति देखिये)। यह विदर्भदेश में रहता था, एवं इसने एक अहिंसापूर्ण यज्ञ आयोजित किया था (म. शां. २६४)।

१३. सुधामन् देवों में से एक।

१४. अमिताभ देवों में से एक।

१५. आभूतरजस् देवों में से एक।

१६. एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

१७. तामस मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित देव शामिल थे:--१. अश्व; २. आनंद; ३. क्षेम; ४. दिक्पति; ५. दिवि; ६. बृहद्वपु; ७. वर्चोधामन्; ८. वाक्पति; ९. विश्व; १०. शंभु; ११. सदश्व; १२. स्वमृडिक (ब्रह्मांड. २.३४-३५)।

१८. युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.८)।

१९. निष्कृति नामक अग्नि का नामान्तर (निष्कृति देखिये)।

सत्यक--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो शिनि राजा का पुत्र, एवं युयुधान (सात्यकि) राजा का पिता था (म. आ. ५७.८८; भा. ९.२४.१३-१४)। श्रीकृष्ण के द्वारा रैवतक पर्वत पर आयोजित किये गये उत्सव में यह उपस्थित था (म. आ. २११.११)। अभिमन्यु की मृत्यु पश्चात्, उसका श्राद्धकर्म इसीके द्वारा किया गया था (म. आश्व. ६१.६)। मत्स्य में इसे 'सत्यवत्' कहा गया है (मत्स्य. ४५.२२)।

इसका विवाह काशिराज की कन्या से हुआ था, जिससे इसे ककुद, भजमान, शमी एवं कंबलबर्हिष नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (वायु. ९६.११५)।

२. रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

३. कृष्ण एवं भद्रा के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१७)।

४. तामस मन्वंतर का एक देवगण।

सत्यकर्मन्--(सो. अनु.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार धृतव्रत राजा का पुत्र, एवं अतिरथ राजा का पिता था (वायु. ९९.११७)।

सत्यकर्मन् त्रैगर्त—त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो एक 'संशप्तक' योद्धा था (म. द्रो. १६.१७-२०)। अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.३७)।

सत्यकाम जाबाल—एक सुविख्यात तत्त्वज्ञ, जो जबाला नामक स्त्री का पुत्र था। मन को ही परब्रह्म मानने वाला यह आचार्य याज्ञवल्क्य वाजसनेय ऋषि का समकालीन था (बृ. उ. ४.१.६ काण्व.)।

जन्म—जबाला नामक दासी से किसी अज्ञात पुरुष से यह उत्पन्न हुआ था। इसके जन्म से संबंधित एक सविस्तृत कथा छांदोग्य उपनिषद में प्राप्त है, जहाँ उच्च कुल में जन्म होने की अपेक्षा श्रद्धा एवं तप अधिक श्रेष्ठ है, यह तत्त्व प्रतिपादित किया गया है।

यह अपनी माता से उस पुरुष के द्वारा उत्पन्न हुआ, जिसका नाम उसे ज्ञात न था। लज्जा के कारण, उसने कभी भी उसका नाम न पूछा था। इसके जन्म के पश्चात् थोडे ही दिनों में इसका पिता मृत हो गया, जिस कारण इसे अपने पिता का नाम सदैव अज्ञात ही रहा।

आगे चल कर यह गौतम हारिद्रुमत नामक आचार्य के पास शिक्षा पाने के लिए गया। वहाँ गौतम ऋषि के द्वारा इसका गोत्र आदि पूछे जाने पर इसने उसे अपनी सारी हकीकत कह सुनायी, एवं कहा, 'मेरा जन्म ऐसे पिता से हुआ है, जिसका नाम मुझसे अज्ञात है। मेरी माता का जबाला नाम ही केवल मुझे ज्ञात है'।

इसके सत्यभाषण के कारण गौतम ऋषि अत्यधिक प्रसन्न हुए, एवं उसने इसका उपनयन कर इसे ब्रह्मचर्यव्रत की दीक्षा दी।

शिक्षा--तदुपरान्त यह गौतम ऋषि के आश्रम में ही रह कर अध्ययन करने लगा। इसी कार्य में यह अनेक वर्षों तक अरण्य में रहा। छांदोग्य-उपनिषद में प्राप्त रूपकात्मक निर्देश से प्रतीत होता है कि, यह चारसौ गायें ले कर अरण्य में गया, एवं उनकी संख्या एक सहस्र होने के काल तक यह अरण्य में रहा।

ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति--इसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति किस प्रकार हुई, इसकी सविस्तृत जानकारी छांदोग्य-उपनिषद में प्राप्त है। वायु देवता के अंश से उत्पन्न हुए एक वृषभ ने इसे ब्रह्मज्ञान का चौथा हिस्सा सिखाया। आगे चल कर गौतम ऋषि के आश्रम में स्थित अग्नि ने इसे ब्रह्मज्ञान का अन्य चौथा हिस्सा सिखाया। ब्रह्मज्ञान के बाकी दो हिस्से इसे हंस का रूप धारण करनेवाले आदित्य ने, एवं मद्गु नामक जलचर प्राणि का रूप धारण करनेवाले प्राण ने प्रदान किये।

इस प्रकार संपूर्ण ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर यह गौतम ऋषि के आश्रम में लौट आया। तत्पश्चात् इसका मुखावलोकन कर, गौतम ऋषि ने इससे कहा, 'संपूर्ण ब्रह्मज्ञान तुझे हो चुका है। जो ज्ञान तुझे हुआ है, उससे बढ़ कर अधिक ज्ञान इस संसार में कहीं भी प्राप्त होना असंभव है' (छां. उ. ४.४-९)।

तत्त्वज्ञान—आत्मज्ञान की प्राप्ति के लिए सुयोग्य गुरु के उपदेश की अत्यधिक आवश्यकता है, ऐसा इसका मत था। परमार्थ की साधना के लिए नैतिक सद्‌गुणों की अत्यधिक आवश्यकता रहती है। किन्तु इस सदाचरण के कारण परमार्थ ज्ञान की केवल पूर्वतैयारी मात्र होती है, इस ज्ञान का उपदेश केवल सुयोग्य गुरु ही कर सकता है, ऐसा इसका अभिमत था (छां. उ. ४.१.९)। इसका यह अभिमत समस्त औपनिषदिक वाङ्मय में पुनः पुनः पाया जाता है।

अंतिम सत्य की व्याख्या औपनिषदिक साहित्य में अनेक प्रकार से की गयी है। इस अंतिम तत्त्व का साक्षात्कार मानवी इंद्रियों के द्वारा नहीं, बल्कि मानवी मन से होता है, ऐसे कथन करनेवाले आचार्यों में सत्यकाम जाबाल प्रमुख माना जाता है। इसके इसी अभिमत का विकास आगे चल कर याज्ञवल्क्य वाजसनेय ने किया, जिसने संसार के अंतिम तत्त्व का साक्षात्कार केवल आत्मा के द्वारा हो सकता है, यह तत्त्व प्रस्थापित किया (याज्ञवल्क्य वाजसनेय देखिये)।

सृष्टि का आद्य अधिष्ठान—सृष्टि का मूल कारण सूर्य, चंद्र, विद्युत् आदि पंचमहाभूत न हो कर, आँखों से प्रतीत होनेवाले आद्य पुरुष के दर्शन से ही सृष्टि के मूल कारण का ज्ञान हो सकता है, ऐसा इसका अभिमत था। औपनिषदिक तत्त्वज्ञान की उत्क्रान्ति के इतिहास में पंचमहाभूतों को सृष्टि का आधार मानने की शुरु में प्रवृत्ति थी। इस प्रवृत्ति को हटा कर पंचेंद्रियों को सृष्टि का आद्य अधिष्ठान माननेवाले कई आचार्यों की परंपरा आगे चल कर उत्पन्न हुई, जिसमें सत्यकाम जाबाल प्रमुख था। इसी कल्पना का विकास आगे चल कर याज्ञवल्क्य वाजसनेय ने किया, जिसने सृष्टि के आद्य अधिष्ठान के रूप में मानवी आत्मा को दृढ रूप से प्रतिष्ठापित किया।

सत्यकाम-उपकोसल संवाद--सत्यकाम के इसी तत्त्वज्ञान का रूपकात्मक चित्रण करनेवाली एक कथा छांदोग्य

उपनिषद् में प्राप्त है। इसके उपकोसल नामक शिष्य ने बारह वर्षों तक इसके आश्रम में रह कर अध्ययन किया। आगे चल कर सृष्टि के अंतिम सत्य का ज्ञान प्राप्त करने के लिए उपकोसल अरण्य में गया। वहाँ उसके द्वारा उपासित 'गार्हपत्य', 'अन्वाहार्य' एवं 'आहवनीय' नामक तीन अग्नि मनुष्य रूप धारण कर उसके सम्मुख उपस्थित हुए, एवं उन्होंने सृष्टि का अंतिम तत्त्व क्रमशः सूर्य, चंद्र, एवं विद्युत् में रहने का ज्ञान इसे प्रदान किया।

आगे चल कर उपकोसल ने अग्नि देवताओं के द्वारा प्राप्त हुए आत्मज्ञान की कहानी इसे कथन की। उस समय उसे प्राप्त हुए ज्ञान की विफलता बताते हुए इसने उसे कहा, 'अग्नि देवताओं ने जो ज्ञान तुझे बताया है, वह अपूर्ण है। सृष्टि के अंतिम तत्त्व का दर्शन सूर्य, चंद्र एवं विद्युत् में नहीं, बल्कि मनुष्य के आँखों में दिखाई देनेवाले इस संसार की प्रतिबिंब में ही पाया जाता है। तत्त्वज्ञ जिसे अमृत, अभय, एवं तेजःपुंज आत्मा बताते हैं, वह इस प्रतिबिंब में ही स्थित है'।

सत्यकाम के इस तत्त्वज्ञान में आधिभौतिक सृष्टि कनिष्ठ मान कर मानवी देहात्मा उससे अधिक श्रेष्ठ बताया गया है। इस प्रकार बाह्य सृष्टि को छोड़ कर मानवी शरीर की ओर तत्त्वज्ञों की विचारधारा इसने केंद्रित की, यही इसके तत्त्वज्ञान की श्रेष्ठता कहीं जा सकती है।

अन्य निर्देश--शतपथ ब्राह्मण, बृहदारण्यक उपनिषद आदि ग्रंथों में इसके अभिमतों के उद्धरण अनेक बार पाये जाते हैं। इनमें से शतपथ ब्राह्मण में यज्ञहोम के संबंध में इसका अभिमत पैंग्य ऋषि के साथ उद्धृत किया गया है (श. ब्रा. १३.५.३.१)। राज्याभिषेक के समय पठन किये जानेवाले मंत्र का इसके द्वारा सूचित किया गया एक विभिन्न पाठ ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ८.७)।

मैत्रि उपनिषद् में भी इसके नाम का निर्देश प्राप्त है (मै. उ. ६.५)। किन्तु अन्य उपनिषद ग्रंथों में निर्दिष्ट सत्यकाम से यह आचार्य अलग प्रतीत होता है।

२. एक आचार्य, जो जानकि आयस्थूण नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.३.१२ काण्व.)।

सत्यकाम शैब्य--एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो आत्मज्ञान प्राप्त करने के हेतु पिप्पलाद के पास गये हुए पाँच आचार्यों में से एक था। प्रणव का ध्यान करने से आत्मज्ञान प्राप्त होता है, या नहीं, इस संबंध में इसने पिप्पलाद से प्रश्न पूछे थे (प्र. उ. १.१; ५.१)।

सत्यकामा--भङ्गकार राजा की कन्या, जो श्रीकृष्ण की पत्नी थी।

सत्यकेतु--(सो. क्षत्र.) एक महापराक्रमी राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार धर्मकेतु राजा का पुत्र, एवं धृष्टकेतु राजा का पिता था (भा. ९.१७.८-९)।

२. एक यक्ष, जिसने उग्रसेन राजा की पत्नी पद्मावती का हरण किया था (गोभिल २. देखिये)।

सत्यघोष--एक शूद्र, जिसके पुत्रों के नाम गर एवं सगर थे (पद्म. क्रि. ३)।

सत्यजित्--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

२. उत्तम मन्वन्तर का इंद्र (भा. ८.१.२४)।

३. एक यक्ष, जो कार्तिक माह के विष्णु के साथ भ्रमण करता है।

४. एक यादव राजा, जो आनक एवं कंका का पुत्र था (भा. ९.२४.४१)।

५. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो सुनीथ राजा का पुत्र, एवं विश्वजित् राजा का पिता था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे सुनेत्र राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.२२.४९)।

६. पांचाल देश के द्रुपद राजा का भाई, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. आ. परि. १.७८-७९; द्रो. २०.१६)।

७. मरुतों के द्वितीय गण में से एक (वायु. ६७.१२४)।

सत्यज्योति--मरुतों के प्रथम गण में से एक (वायु. ६७.१२३)।

सत्यतपस्--उतथ्य नामक ऋषि का नामान्तर। इसे 'सत्यव्रत' नामान्तर भी प्राप्त था। यह सदैव सत्यभाषण ही करता था, जिस कारण इसे 'सत्यतपस्' एवं 'सत्यव्रत' नाम प्राप्त हुए थे। सत्य हमेशा सापेक्ष रहता है, इस तत्त्व का प्रतिपादन करने के लिए इसकी कथा देवी भागवत में दी गयी है (दे. भा. ३.११)।

यह शुरु में अत्यंत आचारहीन एवं विद्याहीन पुरुष था। किन्तु एक बार सहज ही इसके मुख से 'ऐ' नामक 'सारस्वत बीजमंत्र' का उच्चारण होने के कारण, यह ऋषि बन गया, एवं सत्यकथन की विभिन्न मर्यादा इसे ज्ञात हुई।

एक बार एक व्याध एक वराह का पीछा करता हुआ इसके पास आया, एवं इससे वराह का पता पूछने लगा। इस समय अपने सत्यकथन से वराह की मृत्यु हो

जायेगी, यह जान कर इस सत्यप्रतिज्ञ मुनि ने मौन धारण किया।

२. एक ऋषि, जिसने अपने तप को भंग करने के लिए आयी हुई अप्सरा को वेर का वृक्ष बनने का शाप दिया था। आगे चल कर उन अप्सराओं का भरत ऋषि ने उद्धार किया (पद्म. उ. १७८; भरत १०. देखिये)।

३. एक कृष्णभक्त ऋषि, जो अपने अगले जन्म में भद्रा नामक गोपी बन गया।

सत्यतर--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्‌शिष्यपरंपरा में से सत्यहित नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था (वायु. ६०.२९)।

सत्यदृष्टि--पृथुक देवों में से एक।

सत्यदेव--कलिंग देश का एक योद्धा, जो कलिंगराज श्रुतायु का चक्ररक्षक था। भारतीय युद्ध में भीमसेन ने इसका वध किया (म. भी. ५०.६९)।

सत्यदेवी--देवक राजा की कन्या, जो वसुदेव की सात पत्नियों में से एक थी (मत्स्य. ४४.७३)।

सत्यधर्म--धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सत्यधर्मन्--एक राजा, जिसकी कथा गंगास्नान एवं नामस्मरण का माहात्म्य बताने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. ९)।

सत्यधर्मन् त्रैगर्त--त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो एक 'संशप्तक' योद्धा था (म. द्रो. १६.१७-२०)। अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.३६)।

सत्यधर्मन् सोमक--सोमकवंशीय राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवों के पक्ष में शामिल था (म. उ. ३९.२५)।

सत्यधृत--(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार पुष्पवत् राजा का पुत्र, एवं सुधन्वन् राजा का पिता था। भागवत एवं वायु में इसे 'सत्यहित', एवं मत्स्य में 'सत्यधृति' कहा गया है।

सत्यधृति--(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कृतिमत् राजा का, तथा मत्स्य एवं वायु के अनुसार धृतिमत् राजा का पुत्र था (भा. ९.२१.२७; मत्स्य. ४९.७०)।

२. एक ऋषि, जो शतानंद ऋषि का पुत्र, एवं शरद्वत् गौतम ऋषि का पिता था (भा. ९.२१.३५)। भागवत में प्राप्त इस निर्देश से यह शरद्वत गौतम ऋषि का नामान्तर प्रतीत होता है।

३. पांचालराज द्रुपद का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. क. ४.८१)।

४. (सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सारण राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१५.२१)।

५. (सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय सत्यधृत राजा का नामांतर (सत्यधृत देखिये)।

६. (सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार महावीर्य राजा का पुत्र था। वायु एवं भागवत में इसे सुधृति कहा गया है।

७. बलराम के पुत्रों में से एक (ब्रह्मांड. ३.७१. १६६)।

सत्यधृति क्षैमि--पाण्डवपक्ष का एक योद्धा, जो क्षेम राजा का पुत्र था (म. द्रो. २२.४८)।

सत्यधृति वारुणि--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१८५)।

सत्यधृति सौचित्य--पाण्डव पक्ष का एक महारथी योद्धा, जो सुचित्त राजा का पुत्र था (म. उ. परि. १.१४. १२)। पाण्डवपक्ष में इसकी श्रेणि 'रथोदार' थी, एवं स्वयं भीष्म ने भी इसके युद्धकौशल्य की स्तुति की थी। यह अस्त्रविद्या, धनुर्वेद एवं ब्राह्मवेद में पारंगत था (म. द्रो. २२.४८)।

द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था। इसके रथ के अश्व लाल रंग के थे, एवं सुवर्णमय विचित्र कवचों से वे सुशोभित थे। भारतीय युद्ध के आरंभ में इसने घटोत्कच की सहायता की थी (म. भी. ८९.१२)। अंत में द्रोण ने इसका वध किया (म. क. ४.८३)।

सत्यध्वज-(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो ऊर्जवह राजा का पुत्र था। भागवत एवं वायु में इसे क्रमशः 'सनद्वाज' एवं 'सुतद्वाज' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम शकुनि था।

सत्यनेत्र--वैवस्वत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

सत्यपाल--युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)।

सत्यभामा--श्रीकृष्ण की रानी, जो यादवराजा सत्राजित् (भङ्गकार) की कन्या थी। सत्राजित् राजा ने स्यमंतक मणि के चोरी का झूटा दोष कृष्ण पर लगाया। इस संबंध में कृष्ण संपूर्णतया निर्दोष है, इसका सबूत प्राप्त होने पर सत्राजित् ने कृष्ण से क्षमा माँगी, एवं अपनी ज्येष्ठ कन्या सत्यभामा उसे विवाह में अर्पित की। इसके

विवाह के समय, सत्राजित् ने स्यमंतक मणि भी वरदक्षिणा के रूप में देना चाहा, किंतु कृष्ण ने उसे लौटा दिया।

इसे सत्या नामान्तर भी प्राप्त था। यह अत्यंत स्वरूपसुंदर थी, एवं अक्रूर आदि अनेक यादव राजा इससे विवाह करना चाहते थे। किन्तु उन्हें टाल कर सत्राजित् ने इसका विवाह कृष्ण से कर दिया।

प्रासाद—श्रीकृष्ण के द्वारा द्वारका नगरी में इसके लिए एक भव्य प्रासाद बनवाया गया था, जिसका नाम शीतवत् था (म. स. परि. १.२१.१२४१)।

सत्राजित् का वध—आगे चल कर कृष्ण जब बलराम के साथ पाण्डवों से मिलने हस्तिनापुर गया था, वहीं सुअवसर समझ कर यादवराजा शतधन्वन् ने इसके पिता सत्राजित् का वध किया। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् इसने उसका शरीर तैल आदि द्रव्यों में सुरक्षित रखा, एवं यह श्रीकृष्ण को बुलाने के लिए हस्तिनापुर गयी। पश्चात् इसीके द्वारा प्रार्थना किये जाने पर श्रीकृष्ण ने शतधन्वन् का वध किया (सत्राजित् देखिये)।

पारिजात वृक्ष की प्राप्ति—नरकासुर के युद्ध के समय, एवं कृष्ण के इंद्रलोक गमन के समय, यह उसके साथ उपस्थित थी। स्वर्ग की इसी यात्रा में इसने पारिजात वृक्ष को देखा। आगे चल कर नारद के द्वारा लाये गये पारिजात पुष्प, कृष्ण ने इसे न दे कर, अपनी रुक्मिणी आदि अन्य रानियों को दे दिया। इस कारण क्रुद्ध हो कर इसने कृष्ण से प्रार्थना की कि, वह इंद्र से युद्ध कर उससे परिजात-वृक्ष प्राप्त करे। तदनुसार कृष्ण ने पारिजात वृक्ष की प्राप्ति कर ली (भा. १०.५९; ह. वं २.६४-७३; विष्णु. ५.३०)।

द्रौपदी से उपदेश—पाण्डवों के वनवास काल में यह श्रीकृष्ण के साथ उनसे मिलने गयी थी। उस समय इसने द्रौपदी से पूछा था कि, अपने पति को वश करने के लिए स्त्री को क्या करना चाहिए। उस समय द्रौपदी ने इसे सलाह दी, 'अहंकार छोड़ कर निर्दोष वृत्ति से पति की सेवा करना ही पति की प्रीति प्राप्त करने का उत्कृष्ट साधन है। मैं ने स्वयं ही यही मार्ग अनुसरण किया है'।

भोलापन—इसका भोलापन एवं कृष्ण की प्रीति प्राप्त करने के लिए इसके विभिन्न प्रयत्न आदि की अनेक रोचक कथाएँ पौराणिक साहित्य में प्राप्त हैं। एक बार इसने नारद से प्रार्थना की कि, पति के रूप में श्रीकृष्ण इसे अगले जन्म में प्राप्त होने के लिए कोई न कोई व्रत वह इसे बताये। उस समय इसका मज़ाक उड़ाने के हेतु नारद ने इसे कहा कि, पारिजात वृक्ष का एवं स्वयं श्रीकृष्ण का दान उसे कर देने से उसकी यह इच्छा पूरी हो सकती है। नारद की यह सलाह सच मान कर इसने इन दोनों का दान नारद को कर दिया। पश्चात् अपनी भूल ज्ञात होने पर इसने नारद से क्षमा माँगी, एवं उसे विपुल दक्षिणा प्रदान कर कृष्ण एवं पारिजात उससे पुनः प्राप्त किये।

कृष्णनिर्वाण के पश्चात्—कृष्ण का निर्वाण होने के पश्चात्, यह स्वर्गलोक की प्राप्ति करने के हेतु तपस्या करने के लिए वन में चली गयी (म. मौ. ८.७२)।

परिवार—इसकी संतान की नामावलि विभिन्न पुराणों में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है :—१. विष्णु में—भानु एवं भैमरिक (विष्णु. ५.३२.१); २. भागवत में—भानु, सुभानु, स्वर्भानु, प्रभानु; बृहद्भानु, भानुमत्, चंद्रभानु, अतिभानु श्रीभानु एवं प्रतिभानु (भा. १०.६१.१०); ३. ब्रह्मांड एवं वायु में—सानु, भानु, अक्ष, रोहित, मंत्रय, जरांधक, ताम्रवक्ष, भौमरि, जरंधम नामक पुत्र; एवं भानु, भौमरिका, ताम्रपर्णी, जरंधमा नामक कन्याएँ (ब्रह्मांड. ३.७१. २४७; वायु. ९६.२४०)।

सत्ययज्ञ पौलुषि प्राचनियोग्य—एक आचार्य, जो पुलुष एवं प्राचीनयोग नामक आचार्यों का वंशज था (श. ब्रा. १०.६.१.१; छां. उ. ५.११.१)। कई अन्य ग्रंथों में, इसे 'पुलुष प्राचीनयोग्य' भी कहा गया है (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सत्ययज्ञ पौलुषित—एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १. ३९.१)।

सत्यरता—एक केकय राजकन्या, जिसका विवाह अयोध्या के सत्यव्रत त्रिशंकु से हुआ था (वायु. ८८. ११७)।

सत्यरथ—(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो भागवत के अनुसार समरथ राजा का, एवं विष्णु के अनुसार मीनरथ राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम उपगुरु था (भा. ९.१३.२४)।

२. (सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार चित्ररथ राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४८.९४)।

३. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सत्यव्रत राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.३७)।

४. विदर्भ देश का एक राजा, जिसे सत्यसंध नामांतर भी प्राप्त था (स्कंद. ३.३.६)। शिवपूजा का माहात्म्य

कथन करने के लिए इसकी कथा 'शिवपुराण' में दी गयी है (शिव. शत. ३१; पांड्य २. देखिये)।

सत्यरथ त्रैगर्त—एक राजकुमार, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का भाई था। अपने पाँच 'रथी' (रथोदार) बन्धुओं का यह नेता था (म. उ. १६३.११)।

भारतीय युद्ध में एक संशप्तक योद्धा के नाते यह कौरवों के पक्ष में शामिल था, एवं इसने अर्जुन को मारने की प्रतिज्ञा की थी (म. द्रो. १६.१७-२०)। किन्तु अंत में अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.४६)।

सत्यवचस् राथीतर--एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो सत्यकथन का विशेष पुरस्कर्ता था (तै. उ. १.९.१)। रथीतर का वंशज होने से, इसे 'राथीतर' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

सत्यवत्—एक राजा, जो शाल्वनरेश द्युमत्सेन का पुत्र, एवं मद्रराज अश्वपति की कन्या सावित्री का पति था। इसे बचपन से अश्वों के चित्र चित्रित करने का शौक था, जिस कारण इसे 'चित्राश्व' नामांतर भी प्राप्त था।

इस अल्पायु राजकुमार के प्राण यमधर्म के पंजे से छुड़ाने का कार्य इसकी पत्नी सावित्री ने अपने पातिव्रत्य-सामर्थ्य से किया, जिस कारण ये दोनों अमर हो गये (सावित्री देखिये)।

३. (सो. वृष्णि.) यादववंशीय सत्यक राजा का नामांतर। मत्स्य में इसे शिनि राजा का पुत्र कहा गया है (सत्यक ४. देखिये)।

४. तेजपूर नगरी का एक राजा, जो ऋतंभर राजा का पुत्र था। इसका पिता ऋतंभर परम रामभक्त, गो-सेवक एवं दानी राजा था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, उसका अश्वमेधीय अश्व शत्रुघ्न के द्वारा इसकी नगरी में लाया गया। उस समय इसने शत्रुघ्न का सहर्ष स्वागत किया, एवं अश्वरक्षक बन कर उसके साथ यह आगे बढ़ा (पद्म. पा. ३०-३२)।

सत्यवती—शांतनु राजा की पत्नी, जो चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य राजाओं की माता थी। इसे 'काली', 'मत्स्यगंधा,' 'गंधवती,' 'योजनगंधा,' 'गंधकाली' आदि नामान्तर भी प्राप्त थे।

जन्म--यह उपरिचर वसु राजा की कन्या थी। इसकी माता का नाम अद्रिका था, जो ब्रह्मा के शाप के कारण मछली का स्वरूप प्राप्त हुई अप्सरा थी। आगे चल कर, कई मल्लाहों ने अद्रिका मछली को पकड़ लिया, एवं उस मछली का पेट चीर दिया, जिससे मत्स्य नामक एक पुरुष, एवं यह बाहर निकल पड़े। मछली से उत्पन्न होने के कारण, इसकी शरीर से मछली की गंध आती थी। इसी कारण यह 'मत्स्यगंधा' नाम से प्रसिद्ध हुई। क्षत्रियकुलोत्पन्न वसु राजा की कन्या होने के कारण, यह स्वयं क्षत्रियकन्या थी (स्कंद. ५.३.९७)।

वेदव्यास का जन्म—आगे चल कर यमुना नदी के मल्लाहों ने इसे पाल पोस कर बड़ा किया, एवं यह अपने पिता की सेवा के लिए यमुना नदी में नाव चलाने का काम करने लगी (म. आ. ५७.५०-६९)। एक दिन पराशर ऋषि ने इसे देखा, एवं इसके साथ समागम की इच्छा प्रकट की। पराशर ऋषि से इसे वेदव्यास पाराशर्य नामक सुविख्यात पुत्र की उत्पत्ति हुई (म. आ. ५७. ८४-८५; पराशर देखिये)।

शांतनु से विवाह--इस प्रकार इसके कौमार्यावस्था में ही व्यास का जन्म होने के पश्चात्, शांतनु राजा से इसका विवाह हुआ, जिससे इसे चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए।

चित्रांगद एवं विचित्रवीर्य ये इसके दोनों ही पुत्र निपुत्रिक अवस्था में मृत हुए। अतः कुरुवंश का निर्वंश न हो इस हेतु से, इसने अपनी स्नुषा अंबिका एवं अंबालिका को अपने पुत्र व्यास से पुत्र उत्पन्न करने की आज्ञा दी। ये पुत्र आगे चल कर धृतराष्ट्र एवं पाण्डु नाम से प्रसिद्ध हुए।

२. जमदग्नि ऋषि की माता, जो गाधि राजा की कन्या, ऋचीक ऋषि की पत्नी, एवं विश्वामित्र ऋषि की बहन थी। एक हजार श्यामकर्ण अश्व ले कर गाधि राजा ने इसका विवाह ऋचीक ऋषि से किया था (ऋचीक देखिये)। जमदग्नि के अतिरिक्त इसके शुनःपुच्छ, शुनःशेप एवं शुनोलांगूल नामक अन्य तीन पुत्र थे (वायु. ९१.९२; ब्रह्मांड. ३.६६.६४)। अपने पातिव्रत्य धर्म के कारण, यह मृत्यु के पश्चात् स्वर्गलोक चली गयी, एवं अपने अगले जन्म में कौशिकी नदी के रूप में पुनः पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई।

३. अगस्त्य पत्नी लोपामुद्रा का नामांतर।

४. अयोध्या के हरिश्चंद्र त्रैशंकव नामक राजा की माता, जो त्रिशंकु राजा की पत्नी थी।

५. सुबाहु राजा की पत्नी। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय जो 'दंपती' अश्व को नहलाने के लिए सरस्वती नदी के तट पर गये थे, उनमें यह एवं इसका पति सुबाहु एक थे (पद्म. पा. ६७)।

सत्यवर्मन् त्रैगर्त--त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो 'संशप्तक' योद्धाओं में से एक था (म. द्रो.

१६.१७–२०)। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. श. २६.४६)।

सत्यवाच्—एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था।

२. एक राजा, जो चाक्षुष मनु एवं नड्वला के पुत्रों में से एक था। इसे सत्यवत् नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ४.१३.१६)।

३. रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

४. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सत्यव्रत—अयोध्या के त्रिशंकु राजा का नामान्तर (त्रिशंकु देखिये)। भागवत में इसे त्रिबंधन राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.७.५)।

२. द्रविड देश का एक राजा, जो भगवान् विष्णु के मत्स्यावतार की कृपा से श्राद्धदेव (वैवस्वत मनु) बन गया (भा. ८.२४.१०; मत्स्य. १.२; २९०)। पुराणों में प्राप्त इसकी जीवनकथा वैवस्वत मनु के जीवन चरित्र में वर्णित मत्स्यावतार से संबंधित कथा से काफ़ी मिलती जुलती है। फर्क सिर्फ इतना ही है कि, इन दाक्षिणात्य पुराणों में वैवस्वत मनु का मूल नाम मनु नहीं, बल्कि सत्यव्रत बताया गया है।

तपस्या—अपने राज्य का भार अपने पुत्रों पर सौंप कर, वह मलय पर्वत से उद्भव पानेवाली कृतमाला नदी के तट पर तपस्या करने के लिए गया। आधुनिक मदुरा नगरी, जिस वैणा नदी के तट पर बसी हुई है, वही नदी प्राचीन काल में कृतमाला नाम से सुविख्यात थी (मार्कं. ५७; विष्णु. २.३)। पश्चात् विष्णु ने इसे पृथ्वी पर स्थित समस्त स्थिरचर प्रदेशों का राजा बनने का आशीर्वाद दिया (मत्स्य. १)।

मत्स्यावतार—मत्स्य के अनुसार, एक बार नैमित्तिक ब्राह्मप्रलय के समय हयग्रीव नामक राक्षस ने ब्रह्मा से वेद चुरा लिये। उन्हें पुनः प्राप्त करने के लिए विष्णु ने पुनः एक बार मत्स्यावतार धारण किया। विष्णु का यह मत्स्यावतार सत्यव्रत राजा के करांजलि में एक छोटी सी मछली के रूप में अवतीर्ण हुआ। अवतीर्ण होते ही, थोड़े ही दिन में आनेवाले ब्राह्मप्रलय की सूचना उसने इस राजा को दी (मत्स्य. २.३)।

उस समय मत्स्यस्वरूपी श्रीविष्णु ने इससे कहा, 'प्रलय के समय, एक नौका तुझे लेने आयेगी, जिसमें अपने परिवार के सभी लोगों को तुम बिठाना। उस समय समस्त पृथ्वी पर अंधःकार होगा, फिर भी यह नौका प्रकाश से जगमगाती रहेगी। उसी समय एक प्रचंड मछली के रूप में मैं आऊंगा। उस समय वासुकि सर्प की रस्सी बना कर तुम अपनी नौका मेरे सिंग से बाँधना। ब्रह्मा की रात्रि अर्थात् 'ब्राह्मप्रलय' समाप्त होने तक मैं तुम्हें, एवं तुम्हारी नौका को सुरक्षित स्थान पर बाँध कर रखूँगा। प्रलय समाप्त होने पर मैं तुम्हें आत्मज्ञान का उपदेश दूंगा'।

आत्मज्ञान की प्राप्ति—ब्राह्मप्रलय समाप्त होने पर मत्स्य ने इसे ज्ञान, योग एवं क्रिया का उपदेश दिया, एवं आत्मज्ञानस्वरूपी मत्स्यपुराण का इसे कथन किया। अन्त में मत्स्य की ही कृपा से यह श्राद्धदेव नामक वैवस्वत मनु बन गया।

सत्यव्रत-कथा का अन्वयार्थ—मत्स्य पुराण के टीकाकार श्रीधर के अनुसार, सत्यव्रत के आयुःकाल में हुआ जलप्रलय पृथ्वी का आद्य प्रलय न हो कर, भगवान विष्णु की माया से उत्पन्न हुआ एक 'प्रलयाभास' था, जो सत्यव्रत के मन में वैराग्यभावना उत्पन्न करने के लिए, एवं अपने स्वयं के सामर्थ्य के साक्षात्कार की प्रचीति इसे देने के लिए निर्माण किया गया था। इसी प्रकार का अन्य एक प्रलयाभास विष्णु के द्वारा मार्कंडेय ऋषि को दिखाया गया था।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्रपुत्र 'सत्यसंध' का नामांतर।

४. सत्यतपस् नामक ऋषि का नामान्तर (सत्यतपस् १. देखिये)।

५. एक ऋषिसमुदाय, जो धर्मऋषि की संतान मानी जाती है।

सत्यव्रत त्रैगर्त—त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो संशप्तक योद्धाओं में से एक था (म. द्रो. १६.१७–२०)। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया।

सत्यव्रता—धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुबल की कन्या, एवं गांधारी की कनिष्ठ भगिनी थी।

सत्यश्रवस्—(सू. नरि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार वीतिहोत्र राजा का पुत्र, एवं उरुश्रवस् राजा का पिता था (भा. ९.२.२०)।

२. कौरव पक्ष का योद्धा, जो अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४४.३)।

३. एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से मार्कंडेय ऋषि का पुत्र एवं शिष्य था। ब्रह्मांड में इसे मांडुकेय ऋषि का पुत्र एवं शिष्य कहा गया है (वायु. ६०. २८)।

सत्यश्रवस् आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ ५.७९-८०)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे वाय्य सत्यश्रवस् कहा गया है (ऋ. ५.७९.२)

सत्यश्रवस् वाय्य--एक ऋषि, जिसका निर्देश उषस् के कृपापात्र व्यक्ति के नाते ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. ५.७९.२)। ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट सत्यश्रवस् आत्रेय, एवं सुनीथ शौचद्रथ संभवतः यही होगा। लुडविग के अनुसार, यह सुनीथ शौचद्रथ का पुत्र था (लुडविग ऋग्वेद अनुवाद ३.१५६)। वय्य का वंशज होने से इसे 'वाय्य' पैतृकनाम प्राप्त हुआ होगा।

सत्यश्रीय--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से सत्यहित (सत्यतर) नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था। इसके शिष्यों के नाम शाकल्य, रथीतर, एवं बाष्कलि थे।

सत्यसंध--एक प्रजाहितदक्ष राजा, जिसने अपने प्राणों का त्याग कर एक ब्राह्मण की रक्षा की थी (म. शां. २२६.१६)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। इसे सत्यव्रत एवं संध नामान्तर भी प्राप्त थे। कौरव पक्ष के ग्यारह महारथियों में से यह एक था। अभिमन्यु, सात्यकि, सुषेण आदि राजाओं से इसका युद्ध हुआ था। अन्त में भीमसेन के द्वारा यह मारा गया (म. क. ६२. २-५ पाठ.)।

३. सत्यरथ नामक विदर्भ देश के राजा का नामान्तर (सत्यरथ ५. देखिये)।

४. मित्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। अन्य पार्षद का नाम सुव्रत था।

सत्यसहस्--एक राजा, जो रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के स्वधामन् नामक अवतार का पिता था। इसकी पत्नी का नाम सुनृता था (भा. ८.१.२५)।

सत्यसेन--उत्तम मन्वन्तर का एक अवतार, जो धर्म एवं सुनृता का पुत्र था (भा. ८.१.२५)।

२. अंगराज कर्ण का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में नकुल के द्वारा मारा गया (म. श. ९.२१; ३९)।

३. धृतराष्ट्र के सत्यसंध नामक पुत्र का नामांतर।

सत्यसेन त्रैगर्त--त्रिगर्त राजा सुशर्मन् का एक भाई, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. क. १९.३-१७)।

सत्यसेना--धृतराष्ट्र की एक पत्नी, जो गांधारराज सुबल की कन्या एवं गांधारी की कनिष्ठ बहन थी।

सत्यहविस्--एक अध्वर्यु एवं आचार्य (मै. सं. १. ९.१.१५)।

सत्यहित--(सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय सत्यधृत राजा का नामान्तर।

२. एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से सत्यश्रवस् नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो पुष्पवत् राजा का पुत्र एवं सुधन्वन् राजा का पिता था।

सत्या--मन्यु राजा की पत्नी, जो भौवन राजा की की माता थी (भा. ५.१५.१५)।

२. धर्म की कन्या, जो शंयु नामक अग्नि की पत्नी थी। इसे भरद्वाज नामक एक पुत्र एवं तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई थी (म. व. २०९.४)।

३. मगध देश के बृहद्रथ राजा की पत्नी, जो जरासंध राजा की माता थी।

४. कोसल देश के नग्नजित् राजा की कन्या, जो श्रीकृष्ण की पटरानी थी। इसके स्वयंवर के समय इसके पिता ने शर्त रखी थी कि, सात मस्त बैलों के साथ जो लड़ेगा उसके साथ इसका विवाह किया जायेगा। यह शर्त जीत कर कृष्ण ने इसका वरण किया (भा. १०.५८.३२-४७)। अपने विवाह का वृत्तांत इसने द्रौपदी से कथन किया था (भा. १०.८३.१३)। अपने पूर्वजन्म में किये विष्णुभक्ति के कारण, कृष्णपत्नी बनने का भाग्य इसे प्राप्त हुआ।

परिवार--कृष्ण से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे:--वीर, चंद्र, अश्वसेन, चित्रगु, वेगवत्, वृष, आम, शंकु, वसु एवं कुन्ति (भा. १०.६१.१३)।

५. उत्तम मन्वन्तर के सत्य नामक अवतार की माता (विष्णु. ३.१.३८)।

६. बृहन्मनस् राजा की पत्नी, जो शैब्य नामक राजा की कन्या, एवं विजय नामक राजा की माता थी (मत्स्य. ४८.१०५)।

सत्याधिकवाच चैत्ररथि--एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.३९.१)।

सत्यायु--(सो. पुरूरवस्.) शतायु नामक पुरूरवस् पुत्र का नामान्तर (भा. ९.१५.१)।

सत्याषाढ--एक आचार्य, जो कृष्णयजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखान्तर्गत हिरण्यकेशिन् नामक शाखा का प्रवर्तक आचार्य माना जाता है। यद्यपि इसका सही नाम सत्या-

पाढ था, फिर भी यह हिरण्यकेशिन् नाम से ही सुविख्यात था (हिरण्यकेशिन् देखिये)।

सत्येयु--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो रुद्राश्व एवं मिश्रकेशी अप्सरा का पुत्र था (म. आ. ८९. १०)।

सत्येषु त्रैगर्त—त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई, जो भारतीय युद्ध में अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. श. २६.२९)।

सत्राजित् अथवा **सत्राजित**—(सो. वृष्णि.) एक सुविख्यात यादव राजा, जो निम्न राजा का पुत्र था (भा. ९.२४)। ब्रह्मांड एवं विष्णु में इसे विघ्न राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ५.१३.१०; ब्रह्मांड. ३.७१.२१)। इसे शक्तिसेन नामांतर भी प्राप्त था (मत्स्य. ४५.३; पद्म. सृ. १३)। इसके जुड़वे भाई का नाम प्रसेन था (भा. ९.२४.१३)। सत्यभामा के पिता, एवं स्यमंतक मणि के स्वामी के नाते यादव वंश के इतिहास में इसका नाम अत्यधिक प्रसिद्ध था।

पूर्वजन्म—पूर्वजन्म में यह मायापुरी में रहनेवाला देवशर्मन् नामक ब्राह्मण था, एवं इसकी कन्या का नाम गुणवती था, जो इस जन्म में इसकी सत्यभामा नामक कन्या बनी थी।

स्यमंतक मणि की प्राप्ति--सूर्य के प्रसाद से इसे स्यमंतक नामक एक अत्यंत तेजस्वी मणि प्राप्त हुई थी (भा. १०.५५.३)। इस मणि में रोगनाशक एवं समृद्धिवर्धक अनेकानेक दैवी गुण थे। यही नहीं, यह मणि प्रतिदिन आठ भार स्वर्ण देती थी। यह मणि सूर्य के समान तेजस्वी थी, एवं इसे धारण करनेवाला व्यक्ति साक्षात् सूर्य ही प्रतीत होता था।

एक बार कृष्ण ने इसके पास स्यमंतक मणि देखा, जिसे देख कर उसने चाहा कि, मथुरा के राजा उग्रसेन के पास यह मणि रहे तो अच्छा होगा। इस हेतु कृष्ण स्वयं इसके प्रासाद में आया, एवं किसी भी शर्त पर यह मणि उग्रसेन राजा को देने के लिए इससे प्रार्थना की। किन्तु इसने कृष्ण इस माँग को साफ इन्कार कर दिया।

तदुपरांत एक दिन इसका भाई प्रसेन स्यमंतक मणि गले में पहन कर शिकार करने गया। वहाँ एक सिंह ने उसका वध किया, एवं वह दैवी मणि ले कर अपनी गुहा की ओर जाने लगा। इतने में जांबवत् नामक राक्षस ने मणि की प्राप्ति की इच्छा से उस सिंह का वध किया, एवं वह मणि छीन लिया।

श्रीकृष्ण पर चोरी का दोषारोप--बहुत समय तक प्रसेन के वापस न आने पर, इसके मन में संशय उत्पन्न हुआ कि, श्रीकृष्ण के द्वारा ही प्रसेन का वध हुआ है, एवं यह क्रूरकर्म करने में उसका हेतु स्यमंतक मणि की प्राप्ति के सिवा और कुछ नहीं है। इस कारण प्रसेन का खूनी एवं स्यमंतक मणि के अपहर्ता के नाते, यह श्रीकृष्ण पर प्रकट रूप में दोषारोप करने लगा। इस कारण यादव राजसमूह में श्रीकृष्ण की काफ़ी बेइज्जती होने लगी।

स्यमंतक मणि की खोज--इस कारण श्रीकृष्ण ने उपर्युक्त दोषारोप से छुटकारा पाने के लिए, स्यमंतक मणि की खोज़ शुरु की। खोज़ते खोज़ते कृष्ण जांबवत् की गुंफा में पहुँच गया, जहाँ जांबवत् से अट्ठाइस दिनों तक युद्ध कर उसे परास्त किया, एवं उससे स्यमंतक मणि पुनः प्राप्त किया। पश्चात् कृष्ण ने वह मणि इसे वापस दिया, एवं उसकी चोरी के संबंध में सारी घटनाएँ इससे कह सुनायीं।

कृष्ण सत्यभामा विवाह--स्यमंतक मणि के संबंध में सत्य हकीकत ज्ञात होते ही, इसने कृष्ण से क्षमा माँगी, एवं अपनी कन्या सत्यभामा का उससे विवाह कर दिया। विवाह के समय, इसने कृष्ण को वरदक्षिणा के रूप में स्यमंतक मणि देना चाहा, किंतु श्रीकृष्ण ने उसे लेने से इन्कार किया, एवं उसे इसके पास ही रख दिया।

वध—आगे चल कर, कृष्ण जब हस्तिनापुर में पांडवों से मिलने गया था, यही सुअवसर समझ कर, अक्रूर एवं कृतवर्मन् आदि यादव राजाओं ने इसका वध करने का षड्यंत्र रचा। ये दोनों यादव राजा सत्यभामा से विवाह करना चाहते थे, एवं उन्हें टाल कर कृष्ण को जमाई बनानेवाले सत्राजित् से अत्यधिक रुष्ट थे।

इसी कारण उन्होंने शतधन्वन् नामक अपने कनिष्ठ भाई को इसका वध कर, स्यमंतक मणि की चोरी करने की आज्ञा दी। तदनुसार शतधन्वन् ने इसका निद्रित अवस्था में ही वध किया, एवं स्यमंतक मणि चुरा लिया (भा. १०.५७.५)। अपने मृत्यु के पश्चात्, सूर्योपासना के पुण्य के कारण इसे मुक्ति प्राप्त हुई (भवि. ब्राह्म. ११६-११७)। अपने पिता के निर्घृण वध की वार्ता सत्यभामा ने श्रीकृष्ण से कथन की, एवं किसी भी प्रकार शतधन्वन् का वध करने की इसे प्रार्थना की।

शतधन्वन् का वध—पश्चात् शतधन्वन् का पीछा करता श्रीकृष्ण आनर्त देश पहुँच गया। यह ज्ञात होते ही शतधन्वन् ने स्यमंतक मणि अक्रूर के पास दिया,

एवं वह स्वयं विदेह देश भाग गया। वहाँ मिथिला-नगरी के समीप स्थित जंगल में श्रीकृष्ण ने उसका वध किया, किंतु फिर भी स्यमंतक मणि की प्राप्ति न होने के कारण, निराश हो कर वह द्वारका-नगरी पहुँच गया। पश्चात् मणि अक्रूर के पास ही है, एवं उससे वह प्राप्त करना मुश्किल है, यह जान कर कृष्ण ने उससे संधि की, एवं सारे निकटवर्ती लोगों को इकट्ठा कर वह मणि अक्रूर को दे दिया।

निरुक्त में--स्यमंतक मणि से संबधित उपर्युक्त कथा का निर्देश यास्क के निरुक्त में प्राप्त है, जहाँ अक्रूर मणि धारण करता है (अक्रूरो ददते मणिम्), इस वाक्य-प्रयोग का निर्देश एक कहावत के नाते दिया गया है (नि. २.२.११)। इस निर्देश से स्यमंतक मणि के संबंधित उपर्युक्त कथा की प्राचीनता एवं ऐतिहासिकता स्पष्टरूप से प्रतीत होती है। कई अभ्यासकों के अनुसार, मुगल राज्य में सुविख्यात कोहिनूर ही प्राचीन स्यमंतक मणि है।

परिवार--इसकी कुल दस पत्नियाँ थी, जो कैकयराज की कन्याएँ थी। इनमें से वीरवती (द्वारवती) इसकी पटरानी थी (ब्रह्मांड. ३.७१.५६; मत्स्य. ४५.१७-१९)।

इसके कुल एक सौ एक पुत्र थे, जिनमें से प्रमुख पुत्रों की नामावलि विभिन्न पुराणों में विभिन्न दी गयी है:— १. ब्रह्मांड में—भङ्गकार, वातपति, एवं तपस्वी नामक तीन पुत्र, एवं सत्यभामा, व्रतिनी एवं दृढव्रता नामक तीन कन्याएँ (ब्रह्मांड. ३.७१.५४-५७); २. वायु में-भङ्गकार, व्रतपति, एवं तपस्वांत (वायु. ३४.५३); ३. ब्रह्म में—वसुमेध, भङ्गकार एवं वातपति (ब्रह्म. १६.४६)।

सत्राजिती--कृष्णपत्नी सत्यभामा का नामांतर (विष्णु. ५.२८.५)।

सत्रायण--बृहद्भानु नामक इंद्रसावर्णि मन्वंतर के अवतार का पिता। इसकी पत्नी का नाम विताना था।

सत्व--रैवत मनु का एक पुत्र (मत्स्य. ९.२१)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

३. (सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो पुरुद्वह राजा का पुत्र, एवं सात्वत राजा का पिता था (वायु. ९५.४७)।

सत्वत्—एक जातिविशेष, जो भारतवर्ष के दक्षिण विभाग में बसी हुई थी। भरत ने इन राजाओं को परास्त किया, एवं इनका अश्वमेधीय अश्व भी छीन लिया था (श. ब्रा. १३.५.४.२१)। ऐतरेय ब्राह्मण में इन लोगों का निर्देश 'सत्वत्' और 'सत्वन्' (ऐ. ब्रा. ८.१४; २.२५) नाम से किया गया है।

कौषीतकि उपनिषद में भी इन लोगों का निर्देश मत्स्य लोगों के साथ प्राप्त है (कौ. उ. ४.१)। किन्तु वहाँ इनके नाम का मूल पाठ 'वसत्' है।

सत्वत—यादववंशीय सात्वत राजा का नामांतर (सात्वत देखिये)।

सत्वदंत--एक यादव राजकुमार, जो वसुदेव एवं भद्रा के पुत्रों में से एक था (वायु. ९६.१७१)।

सद—एक देव, जो अंगिरा एवं सुरूपा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १९६.२)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शत पुत्रों में से एक।

सदश्व--सत्यदेवों में से एक।

२. (सो. पूरु.) एक राजा, जो विष्णु, वायु, एवं मत्स्य के अनुसार समर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५४)।

३. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.१२)।

सदसस्पति--कश्यप एवं सुरभि का एक पुत्र।

२. ग्यारह रुद्रों में से एक (वायु. ६६.६९)।

सदस्यवत् अथवा **सदस्यमत्**--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार, एवं मंत्रकार।

सदस्यु--आंगिरस कुलांतर्गत कुत्स गोत्री लोगों का एक प्रवर।

सदस्योर्मि—यमसभा में उपस्थित एक राजा। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-सदश्वोर्मि।

सदाचंद्र--एक राजा, जो वायु के अनुसार, मथुरा-नगरी में राज्य करता था। ब्रह्मांड में इसे विदिशा-नगरी का नागवंशीय राजा कहा गया है।

सदापृण आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.४५)। ऋग्वेद के कई मंत्रों में भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.४४.५२)।

सद्योजात--शिव के अवतारों में से एक।

सध्रि काण्व--एक ऋषि (ऋ. ५.४४.१०)।

सध्रि वैरूप--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११४)।

सध्वंस काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.८)।

सनक--ब्रह्मा के चार मानसपुत्रों में से एक, जो साक्षात् विष्णु का अवतार माना जाता है। इसके साथ उत्पन्न हुए ब्रह्मा के अन्य तीन मानसपुत्रों के नाम सनत्कुमार, सनंद, एवं सनातन थे (भा. २.७.५; सनत्कुमार देखिये)।

ब्रह्मा के ये चारों ही पुत्र, कुमार के रूप में उत्पन्न हुए थे, एवं बालक के समान दिखते थे, जिस कारण इन्हें कुमार कहा जाता था।

पौराणिक साहित्य में—विष्णु के एक अवतार के नाते इनका निर्देश विभिन्न पुराणों में प्राप्त है। यह एवं इसके भाई जन्म से अत्यधिक विरक्त थे, एवं ब्रह्मा के मानसपुत्र होते हुए भी इन्होंने कभी भी प्रजोत्पादन नहीं किया (पद्म. सृ. ३.)। एक बार यह अपने बंधुओं के साथ वैकुंठ गया, जहाँ जय एवं विजय नामक द्वारपालों ने इसे अंदर जाने से मना किया। इस कारण इसने इस दोनों द्वारपालों को शाप दिया (भा. ७.१. ३५)। गंगा नदी के सीता नामक नदी के तट पर इसका नारद के साथ तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (नारद. १.१–२)।

पारस्कर गृह्यसूत्रों के तर्पण में इसका एवं सनत्कुमार को छोड़ कर इसके अन्य दो भाइयों का निर्देश प्राप्त हैं, एवं ये कंक नामक शिवावतार के शिष्य बताये गये हैं। निंबार्क के द्वारा प्रणीत कृष्ण एवं राधा के उपासना सांप्रदाय, 'सनक सांप्रदाय' नाम से सुविख्यात है, जहाँ सनक के रूप में ही कृष्ण की पूजा की जाती है (राधा देखिये)। इसके नाम पर 'सनकसंहिता' नामक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जिसमें इसे भृगुकुलोत्पन्न कहा गया है (C. C.)। इससे प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ की रचना करनेवाला आचार्य स्वयं यह न हो कर, इसकी उपासना करनेवाला अन्य कोई ऋषि था।

२. एक असुर गण, जो वृत्र का अनुयायी था (ऋ. १. ३३.४)।

सनक काप्य—एक आचार्य, जो काप्य नामक आचार्य द्वयों में से एक था। इसके साथी दूसरे आचार्य का नाम नवक था। इन दोनों ने विभिन्दुकियों के यज्ञ में भाग लिया था (जै. ब्रा. ३.२३३)। लुडविग के अनुसार, ऋग्वेद में भी एक यज्ञकर्ता आचार्यद्वय के रूप में इनका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.३३.४)। किन्तु इस संबंध में निश्चित-रूप से कहना कठिन है।

सनग—एक आचार्य, जो परमेष्ठिन् नामक आचार्य का शिष्य, एवं सनातन नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. २.६.३; ४.६.३ काण्व; श. ब्रा. ४१.७.३.२८)।

सनति—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सन्ततिमत् राजा का पुत्र था (वायु. ९९.१८९)।

सनत्कुमार—एक सुविख्यात तत्त्ववेत्ता आचार्य, जो साक्षात् विष्णु का अवतार माना जाता है। इसे 'सनत्कुमार', 'कुमार' आदि नामांतर भी प्राप्त है। सनत्कुमार का शब्दशः अर्थ 'जीवन्मुक्त' होता है (म. शां. ३२६. ३५)। यह एवं इसके भाई कुमारावस्था में ही उत्पन्न हुए थे, जिस कारण, ये 'कुमार' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे।

ब्रह्ममानसपुत्र—विष्णु के अवतार माने गये ब्रह्ममानस-पुत्रों की नामावलि महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है :—

(१) **महाभारत में**—इस ग्रंथ में इनकी संख्या सात बतायी गयी है, एवं इनके नाम निम्न दिये गये है :— १. सन; २. सनत्सुजात; ३. सनक; ४. सनंदन; ५. सनत्कुमार; ६. कपिल; ७. सनातन (म. शां. ३२७.६४–६६)। महाभारत में अन्यत्र 'ऋभु' को भी इनके साथ निर्दिष्ट किया गया है (म. उ. ४१.२–५)।

(२) **हरिवंश में**—इस ग्रंथ में इनकी संख्या सात बतायी गयी है :—१. सनक; २. सनंदन; ३. सनातन; ४. सनत्कुमार; ५. स्कंद; ६. नारद; एवं ७. रुद्र (ह. वं. १.१.३४–३७)।

(३) **भागवत में**—इस ग्रंथ में इनकी संख्या चार बतायी गयी है:—१. सनक; २. सनंदन; ३. सनत्कुमार; एवं ४. सनातन (भा. २.७.५; ३.१२.४; ४.८.१)।

गुणवर्णन—ये ब्रह्मज्ञानी, निवृत्तिमार्गी, योगवेत्ता, सांख्याज्ञानविशारद, धर्मशास्त्रज्ञ, एवं मोक्षधर्म–प्रवर्तक थे (म. शां. ३२७.६६)। ये विरक्त, ज्ञानी, एवं क्रियारहित (निष्क्रिय) थे (भा. २.७.५)। ये निरपेक्ष, वीतराग, एवं निरिच्छ थे (वायु. ६.७१)। ये सर्व-गामी, चिरंजीव, एवं इच्छानुगामी थे (ह. वं. १.१.३४–३७)। अत्यधिक विरक्त होने के कारण, इन्होंने प्रजा निर्माण से इन्कार किया था (विष्णु. १.७.६)।

निवासस्थान—इनका निवास हिमगिरि पर था, जहाँ विभांडक ऋषि इनसे मिलने गये थे। अपने इसी निवास-स्थान से इन्होंने विभांडक को ज्ञानोपदेश किया था (म. शां. परि. १.२०)।

उपदेशप्रदान—इसने निम्नलिखित साधकों को ज्ञान, वैराग्य, एवं आत्मज्ञान का उपदेश किया था:—१. नारद—आत्मज्ञान (छां. उ. ७.१.१.२६); एवं भागवत का महत्त्व (पद्म. उ. १९३–१९८); २. सांख्यायन—भागवत (भा. ३.८.७); ३. वृत्रासुर—विष्णुमाहात्म्य (म. शां. २७१); ४. रुद्र—तत्त्वसृष्टि (म. अनु. १६५.

१६), ५. विभिन्न ऋषिसमुदाय--भगवत्स्वरूप (म. शां. परि. १.२०); विश्वावसु गंधर्व--आत्मज्ञान (म. शां. ३०६.५९-६१); ७. धृतराष्ट्र—धर्मज्ञान (म. उ. ४२-४५); ८. ऐल--श्राद्ध (विष्णु. ३.१४.११)।

सात्वत धर्म का उपदेश--सात्वत धर्म की आचार्य-परंपरा में सनत्कुमार एक सर्वश्रेष्ठ आचार्य माना जाता है। इस धर्म का ज्ञान सर्वप्रथम ब्रह्मा ने इसे प्रदान किया, जो आगे चल कर इसने वीरण प्रजापति को दे दिया (म. शां. ३३६.३७)।

आगे चल कर सनत्कुमार का यही उपदेश नारद ने शुक को प्रदान किया, जिसका सार निम्नप्रकार बताया गया है :--

नास्ति विद्यासमं चक्षु र्नास्ति सत्यसमं तपः।
नास्ति रागसमं दुःखं नास्ति त्यागसमं सुखम् ॥
(म. शां. ३१६.६)।

(विद्या के समान श्रेष्ठ नेत्र इस संसार में नहीं है। साथ ही साथ, सत्य के समान श्रेष्ठ तप, राग के समान बड़ा दुःख, एवं त्याग के समान श्रेष्ठ सुख भी इस संसार में अन्य कोई नहीं है)।

नारद के द्वारा प्राप्त इस उपदेश के कारण, शुक ने परंधाम जाने का निश्चय किया, एवं वह आदित्यलोक में प्रविष्ट हुआ (शुक वैयासकि देखिये)।

धृतराष्ट्र से उपदेश--महाभारत के 'प्रजागर' नामक उपपर्व में धृतराष्ट्र को सनत्कुमार के द्वारा दिया तत्त्वोपदेश प्राप्त है, जो 'सनत्सुजातीय' नाम से सुविख्यात है। यह उपदेश कृष्ण दौत्य के पूर्वरात्रि में सनत्सुजात के द्वारा दिया गया था (विदुर देखिये)।

उस उपदेश में मानवीय आयुष्य की मृत्यु को इसने भ्रममूलक बता कर, मनुष्य की सही मृत्यु उसके द्वारा किये गये प्रमादों में है, ऐसा कथन किया है। इन प्रमादों से बचने के लिए, मौनादि साधनों का उपयोग करने का, एवं क्रोधादि दोषों को दूर रखने का उपदेश इसने धृतराष्ट्र को दिया। क्रोधादि दोषों का त्याग करने से, एवं मौनादि गुणों का संग्रह करने से, मनुष्य न केवल प्रमादों से दूर रहता है, किन्तु उसे ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति भी होती है, ऐसा अपना अभिमत इसने स्पष्टरूप से कथन किया है (म. उ. ४२-४५)।

महाभारत में प्राप्त यह 'सनत्सुजातीय' उपदेश भगवद्-गीता के समान ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। आद्य शंकराचार्य आदि आचार्यों ने इस पर स्वतंत्र भाष्य की भी रचना की है।

पृथ्वी पर अवतार--कृष्णपुत्र प्रद्युम्न इसका ही अवतार माना जाता है (म. आ. ६१.९१)। प्रद्युम्न की मृत्यु होने पर, वह इस के ही स्वरूप में विलीन हुआ (म. स्व. ५.११)।

तत्त्वज्ञान—नारद को उपदेशप्रदान करनेवाला सनत्कुमार एक श्रेष्ठ उपनिषद्कालीन तत्त्वज्ञ माना जाता है। इसका समग्र तत्त्वज्ञान इस के द्वारा नारद को दिये गये उपदेश में प्राप्त है, जो छांदोग्योपनिषद् में ग्रथित किया गया है। अपने उस उपदेश में इसने 'आध्यात्मिक सुखवाद' का प्रतिपादन किया है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार, आध्यात्मिक सुख प्राप्ति के लिए मनुष्य कर्म करता है, जिससे आगे चल कर श्रद्धा निर्माण होती है। इसी श्रद्धा से ज्ञान की प्राप्ति होती है, जो आगे चल कर आत्मज्ञान कराती है। अपने इस तत्त्वज्ञान में, आत्मानुभूति की नैतिक सोपानपंक्ति सनत्कुमार के द्वारा सुख, कर्म, श्रद्धा, ज्ञान, एवं साक्षात्कार, इस प्रकार बतायी गयी है (छां. उ. ७.१७-२२)।

'भूमन्' तत्त्वज्ञान—सनत्कुमार के द्वारा की गयी 'भूमन्' शब्द की मीमांसा इसके तत्त्वज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण भाग मानी जाती है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार सृष्टि के हरएक वस्तुमात्र में एक ही परमात्मा का साक्षात्कार होने की अवस्था को 'भूमन्' कहा गया है। इस साक्षात्कार से मनुष्य को अत्युच्च आनंद की प्राप्ति होती है, जिसकी तुलना में स्त्री, भूमि, ऐश्वर्य आदि ऐहिक वस्तुओं से प्राप्त होनेवाला आनंद यःकश्चित् प्रतीत होता है (छां. उ. ७.२३-२४)।

सनत्कुमार के अनुसार, साधक को जब आत्मज्ञान की प्राप्ति होती है (सोऽहं आत्मा), उस समय उसे 'भूमन्' तत्त्व का संपूर्ण ज्ञान प्राप्त होता है (छां. उ. ७.२५)। इस प्रकार, आत्मा ही इस सृष्टी के उत्पत्ति का कारण है, एवं इसी आत्मा से मानवीय आशा एवं स्मृति निर्माण होती है। इसी आत्मा से सृष्टि के हरएक वस्तु का विकास होता है, एवं विनाश के पश्चात् सृष्टि की हरएक वस्तु इसी आत्मा में ही विलीन होती है, ऐसा सनत्कुमार का अभिमत था।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ एवं आख्यान प्राप्त हैं:-- १. सनत्कुमार उपपुराण (कूर्म. पूर्व. १. १७); २. सनत्सुजातीय आख्यान (म. उ. ४२-४५;

शांकरभाष्य के सहित); ३. सनत्कुमार संहिता (शिव. स्कंद. सूतसंहिता. १.२२.२४), ४. सनत्कुमार वास्तुशास्त्र; ५. सनत्कुमार तंत्र; ६. सनत्कुमार कल्प (C. C.)।

२. आर्य नामक वसु का पुत्र (ब्रह्मांड ३.३.२४)।

३. स्कंद का नामांतर।

सनत्सुजात—सनत्कुमार नामक आचार्य का नामांतर (सनत्कुमार १. देखिये)।

सनद्वाज--(सो. निमि.) एक राजा, जो शुचि राजा का पुत्र, एवं ऊर्ध्वकेतु राजा का पिता था। इसे सत्यध्वज नामांतर भी प्राप्त था।

२. अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

सनंदन--सनक नामक आचार्य का नामांतर (सनक १. देखिये)।

सनश्रुत--एक आचार्य। इसे सोम की विशेष परंपरा अग्नि के द्वारा प्राप्त हुई थी, जो इसने आगे चल कर अपने अरिंदम नामक शिष्य को प्रदान की थी (ऐ. ब्रा. ७. ३४)।

कई अभ्यासक इसे एक राजा मानते हैं, एवं 'अरिंदम' इसका पैतृक नाम बताते हैं (वैदिक इंडेक्स २.४६६)।

सनातन—ब्रह्मन् के बालब्रह्मचारिन् मानसपुत्रों में से एक, जो 'कुमार' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे (सनत्कुमार देखिये)। तैत्तिरीय संहिता में इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ यज्ञ के इष्टकों के उपाधान के समय, पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर दिशाओं में सानग, सनातन, अहभून एवं प्रत्न नामक ब्रह्ममानसपुत्रों का निवास बताया गया है (तै. सं. ४.३.३.१)। युधिष्ठिर की मयसभा में भी यह अपने अन्य बन्धुओं के साथ उपस्थित था।

बृहदारण्यक उपनिषद में इसे सनग नामक आचार्य का शिष्य, एवं सनारु नामक आचार्य का गुरु कहा गया हैं (बृ. उ. २.६.३ काण्व.)।

२. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

सनाच्छव--एक आचार्य (क. सं. २०.१)। कपिष्ठल संहिता में इसे 'शहनाच्छिव' कहा गया है (कपि. सं. ३१.३)।

सनारु--एक आचार्य, जो सनातन नामक आचार्य का शिष्य, एवं व्यष्टि नामक आचार्य का गुरु था (श. ब्रा. १४.७.३.२८; बृ. उ. २.६.३; ४.६.३ काण्व.)।

२. एक ऋषि, जिसके पुत्र का नाम उपजंघ था। शिवपूजा का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा स्कंद में दी गयी है (स्कंद. ४.२.९४)।

सनेयक--(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार भद्राश्व राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५)।

संत—एक राजा, जो वीतहव्यवंशीय सत्य राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम श्रवस् था (म. अनु. ३०. ६२)। कुंभकोणम् संस्करण में इसे 'शिव' कहा गया है (म. अनु. ८.६२. कुं.)।

संतति--(सो. क्षत्र.) क्षत्रवंशीय सन्नति राजा का नामांतर (सन्नति २. देखिये)।

२. दक्ष की एक कन्या, जो क्रतु की पत्नी थी। वालखिल्य इसीके ही संतान माने जाते हैं।

संततेयु--(सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार रौद्राश्व राजा का पुत्र था (भा. ९.२०. ४)।

संतर्जन--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५३)।

संतर्दन--एक राजकुमार, जो केकयराज धृष्टकेतु का पुत्र था। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में यह उपस्थित था (भा. ९.२४.३८)।

संतानिका--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.९)।

संतोष--एक तुषित देव, जो यज्ञ एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१.७)।

२. धर्म एवं तुष्टि का एक पुत्र, जिसे हर्ष नामान्तर भी प्राप्त था (वायु. १०.३४)।

संधग--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शूर राजा का पुत्र था।

संधि--(सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रसुश्रुत राजा का पुत्र, एवं अमर्षण राजा का पिता था। (भा. ९.१२.७)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'सुगवि' एवं 'सुसंधि' कहा गया है।

संध्य--ब्रह्मा के द्वारा उत्पन्न ग्यारह रुद्रों में से एक (पद्म. सृ. ४०)।

संध्या--ब्रह्मा की एक मानसकन्या। इसके प्रति ब्रह्मा के मन में कामवासना उत्पन्न हुई, जिस कारण इसने देह-त्याग किया। अपने अगले जन्म में यह वसिष्ठपत्नी अरुंधती बनी (शिव. रुद्र. स. ५; कालि. २२-२३)।

२. पुलस्त्य ऋषि की पत्नी (म. उ. ११५.११)।

३. एक राक्षसी, जो विद्युत्केशिन् राक्षस की पत्नी सालकटंकटा की माता थी।

सन्नति—ब्रह्मदत्त (प्रथम) राजा की तपस्विनी पत्नी, जिसने अपने पति के साथ मानससरोवर में तपस्या की थी (पद्म. सृ. १०)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार अलर्क राजा का पुत्र था। भागवत में इसे संतति कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम सुनीथ दिया गया है (भा. ९.१७.८)।

सन्नतिमत्—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य एवं वायु के अनुसार सुमति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम कृति था (भा. ९.२१.२८)।

सन्नतेयु—(सो. पूरु.) एक राजा, जो पूरु राजा का पौत्र, एवं रौद्राश्व राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम मिश्रकेशी अप्सरा था (म. आ. ८९.१०)। इसने इंद्रको परास्त किया था। इसके निम्नलिखित भाई थेः- १. रुचेयु; २. पक्षेयु; ३. कृकणेयु; ४. स्थंडिलेयु; ५. वनेयु; ६. जलेयु; ७. तेजेयु; ८. सत्येयु; ९. धर्मेयु (म. आ. ८९.१०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'संनतेपु'।

सन्नादन—रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. २७.१८)।

सन्निवेश—त्वष्टृ प्रजापति एवं रचना के पुत्रों में से एक (भा. ६.६.४४)।

सन्निहित—एक अग्नि, जो मनु का तृतीय पुत्र था (म. व. २११.१९)।

सपत्य—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

सपरायण—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा में से याज्ञवल्क्य का वाजसनेय शिष्य था।

सपौल—एक राजा, जो उन्तीसवें युगचक्र में उत्पन्न होनेवाले देवापि राजा का पुत्र माना गया है (सुवर्चस् ९. देखिये)।

सप्तकर्ण प्लाक्षि—एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो प्लक्ष नामक आचार्य का पुत्र था (तै. आ. १.७.३)।

सप्तकेतु—ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

सप्तकृत्—एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१. ३६)।

सप्तगु आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.४७)। इसके द्वारा विरचित सूक्त के अंतिम ऋचा में इसने स्वयं को अंगिरस्कुलोत्पन्न (आंगिरस) बताया है।

सप्तजित्—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ६.१९)।

सप्तति—(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार दशरथ राजा का पुत्र था।

सप्तपाल—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'सत्यपाल'।

सप्तराव—वरुण के पुत्रों में से एक।

सप्तवार—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ.)।

सप्तर्षि—सात ऋषियों का एक समुदाय, जिनका निर्देश ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी, महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट मन्वन्तरों की तालिका में हर एक मन्वन्तर के लिए विभिन्न सप्तर्षि बताये गये हैं। इस प्रकार चौदह मन्वन्तरों के लिए ९८ सप्तर्षियों की नामावलि पुराणों में दी गयी है (मनु आदिपुरुष देखिये)। विभिन्न मन्वन्तरों के सप्तर्षियों के संबंध में विभिन्न पुराणों में भी एकवाक्यता नहीं है। इस प्रकार पौराणिक साहित्य में अनेकानेक सप्तर्षियों के नाम प्राप्त होते हैं।

सप्तर्षि-कल्पना का विकास—पौराणिक साहित्य में मन्वंतर कल्पना के विकास के साथ साथ सप्तर्षि कल्पना का विकास हुआ, जो विभिन्न मन्वन्तरों के मनु, देव, इंद्र, अवतार आदि के साथ मन्वन्तरों के प्रमुख अधियंता-गण माने गये हैं। इन सप्तर्षियों की संख्या प्रारंभ में केवल सात ही थी, बल्कि आगे चल कर उनमें अनेकानेक नये नाम समाविष्ट किये गये। इससे प्रतीत होता है कि, उत्तर-कालीन सप्तर्षि आद्य सप्तर्षियों के वंशज थे। विभिन्न मन्वन्तरों में प्रजोत्पादन का कार्य इन ऋषियों पर निर्भर रहता था (ब्रह्मांड. ३६; ह. वं. १.७; मार्क. ५०; विष्णु. ३.१; ब्रह्म. ५; मनु आदिपुरुष देखिये)।

पौराणिक साहित्य में इन्हें द्वापरयुग के ऋषि कहा गया है, एवं इनका निवासस्थान शनैश्चर ग्रह से एक लाख योजन दूरी पर बताया गया है (वायु. ५३.९७; विष्णु. २.७.९)। इनकी कालगणना मनुष्यप्राणियों से विभिन्न थी, एवं इनके एक वर्ष में मानवीय ३०३० वर्ष समाविष्ट होते थे।

ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में--इस ग्रंथ में, ऋग्वेद के निम्न-लिखित सूक्तद्रष्टा ऋषियों को सप्तर्षि कहा गया है :-- १. भारद्वाज बार्हस्पत्य; २. कश्यप मारीच; ३. गोतम राहूगण; ४. अत्रि भौम; ५. विश्वामित्र गाथिन; ६. जमदग्नि भार्गव; ७. वसिष्ठ मैत्रावरुणि (ऋ. सर्वानुक्रमणी. ९.१०७.१-२६; १०.१३७.१-७)।

ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में दो स्थानों पर सप्तर्षियों की नामावलि प्राप्त है, एवं उनमें संपूर्णतया एकवाक्यता है।

महाभारत में--इस ग्रंथ में सप्तर्षियों की दो नामवलियाँ प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है :-

(१) नामावलि क्रमांक--१. कश्यप; २. अत्रि; ३. भरद्वाज; ४. विश्वामित्र; ५. गौतम; ६. जमदग्नि; ७. वसिष्ठ (म. श. ४७.२८७*; अनु. १४.४)।

(२) नामावलि क्रमांक २--१. मरीचि; २. अत्रि; ३. अंगिरस्; ४. पुलस्त्य; ५. पुलह; ६. ऋतु; ७. वसिष्ठ (म. शां. ३२२.२७)।

दिशाओं के स्वामी--महाभारत में अन्यत्र सप्तर्षियों को दिशाओं के स्वामी कहा गया है, एवं पूर्व, दक्षिण, पश्चिम एवं उत्तर दिशाओं के सप्तर्षियों की नामावलि वहाँ निम्न प्रकार दी गयी है :—

(१) पूर्वदिशा के सप्तर्षि :--१. यवक्रीत; २. अर्वावसु; ३. परावसु; ४. कक्षीवत्; ५. नल; ६. कण्व; ७. बर्हिषद्।

(२) दक्षिण दिशा के सप्तर्षि--१. उन्मुच; २. विमुच्; ३. वीर्यवत्; ४. प्रमुच्; ५. भगवत्; ६. अगस्त्य; ७. दृढवत्।

(३.) पश्चिम दिशा के सप्तर्षि--१. रुषद्गु; २. कवष; ३. धौम्य; ४. परिव्याध; ५. एकत-द्वित-त्रित; ६. दुर्वासस्; ७. सारस्वत।

(४) उत्तर दिशा के सप्तर्षि--१. आत्रेय; २. वसिष्ठ; ३. कश्यप; ४. गौतम; ५. भरद्वाज; ६. विश्वामित्र; ७. जमदग्नि (म. शां. २०१.२६)।

सप्तवध्रि आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा, जो अश्विनों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था (ऋ. ५.७८; ८.७३)। इसके भाइयों ने इसे एक संदूक में बंद कर रक्खा था, जहाँ से अश्विनों ने इसकी मुक्तता की थी। अथर्ववेद में भी इसका निर्देश प्राप्त है (अ. वे. ४.२९.४; बृहद्दे. ५.८२-८९)।

सप्तसिंधु--एक लोकसमूह, जो प्रामुख्यतः आधुनिक पंजाब के पाँच नदियों के प्रदेश में निवास करता था (ऋ. ८.२४.२७)।

सप्तसूर्य--एक ग्रहसमुदाय, जिसमें निम्नलिखित सात ग्रह शामिल थे :--१. आरोग; २. भ्राज; ३. पटर; ४. पतंग, ५. स्वर्णर; ६. ज्योतिष्मन्त; ७. विभास (अ. वे. १३.३.१०; का. सं. ३७.९; तै. आ. १.७; सवितृ देखिये)।

सप्ताश्व--रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक (मत्स्य. ९.२०)।

सप्ति वाजंभर--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७९-८०)।

सप्रथ भारद्वाज--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१८.२)।

सबल--भौत्य मनु के पुत्रों में से एक।

२. दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक

सबालेय--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सभाक्ष--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो भङ्गकार राजा का पुत्र था।

सभानर--(सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य, एवं वायु के अनुसार अनु राजा का पुत्र, एवं कालानल राजा का पिता था (भा. ९.२३.१)।

सभापति--कौरवपक्षीय एक योद्धा, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया था (म. क. ६५.२८)।

२. भूतकर्मन् नामक कौरवपक्षीय योद्धा का नामांतर (भूतकर्मन् देखिये)।

सभ्य--एक अग्नि, जो पवमान अग्नि एवं संशति का पुत्र था।

सम--धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. क. ३५.७-१४)।

२. अमिताभ देवों में से एक।

३. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का पुत्र।

समंग--एक ऋषि, जो अपने आयुष्य के पूर्वकाल में कहोलपुत्र अष्टावक्र था (अष्टावक्र देखिये)। ज्ञानप्राप्ति से मानवी दुःख किस प्रकार कम हो सकता है, इस संबंध में इसका एवं नारद का तत्त्वज्ञान पर संवाद हुआ था (म. शां. २७५)।

२. दुर्योधन के संगव नामक गोशालाधिपति का नामांतर (संगव देखिये)।

समचेतन-एक मरुत्, जो मरुतों के गण में समाविष्ट था।

समंज--पारावत देवों में से एक।

समतापन--मौमतापन नामक गौरपराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

समबुद्धि--शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

समय--अजित देवों में से एक।

२. रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

३. जैह्मप नामक गौरपराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

समर--(सो. कुरु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार काव्य राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५४)। विष्णु एवं वायु में इसे नीप राजा का पुत्र, एवं संपार राजा का पिता कहा गया है। इसकी राजधानी कांपिल्य नगरी में थी (वायु. ९९.१७६)।

समरथ--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार क्षेमधि राजा पुत्र, एवं सत्यरथ राजा का पिता था (भा. ९.१३.२४)। पाठभेद-'कामरथ'।

२. मत्स्यराज विराट के भाइयों में से एक (म. द्रो. १३३.४०) पाठभेद--(भांडारकर संहिता)—'कामरथ'।

समवृत्ति--एक मरुत्, जो मरुतों के छँठवां गणों में समाविष्ट था (ब्रह्मांड. ३.५.९७)।

समसौरभ--एक वेदविद्यापारंगत ब्राह्मण, जो जनमेजय के सर्पसत्र का एक सदस्य था (म. आ. ४८.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'समसौरभ'।

समाधि—एक वैश्य, जो सुमेधस् ऋषि के आश्रम में मनःशांति के लिए कुछ काल तक रहा था (सुरथ १३. देखिये)।

समान--तुषित देवों में से एक (वायु. ६६.१८)।

समिथ--एक मरुत्, जो मरुत्गणों के पाँचवें गण में समाविष्ट था।

समितार--वशवर्तिन् देवों में से एक (वायु. १००. १६)।

समितिंजय--एक यादव योद्धा, जो द्वारका में रहनेवाले सात महारथियों में से एक था (म. स. १३.५७)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था।

सभीक—एक यादव महारथी, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१८; स. ७.१४)। भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था।

२. शक्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१४)।

समीची--यमसभा की एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी। ब्राह्मण के शाप के कारण, इसे ग्राहयोनि में जन्म प्राप्त हुआ था। अर्जुन ने 'नारीतीर्थ पर ग्राहयोनि से इसका उद्धार किया (म. आ. २०८. १९; स. १०.११)।

समुद्रसेन—पांडवपक्ष का एक राजा, जिसके पुत्र का नाम चंद्रसेन था (म. द्रो. २२. ५०)। भीम ने अपने पूर्वदिग्विजय के समय, इसे एवं इसके पुत्र चन्द्रसेन को जीता था (म. स. २७.२२)।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था, जहाँ इसका पुत्र चंद्रसेन अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३१.१२८)।

२. कालेयवंश का एक क्षत्रिय राजा, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। यह कालेय नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१. ५२)। इसने पांडवपक्षीय चित्रसेन राजा का वध किया था (म. क. ४.२७.*, पंक्ति १-२)।

समृद्ध--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

समेढी—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१३)।

संपाति--एक दीर्घजीवी पक्षी, जो अरुण एवं श्येनी के पुत्रों में से एक था (वा. रा. कि. ५६; ब्रह्मांड. ३.७. ४४६)। अन्य पौराणिक साहित्य में इसकी माता का नाम श्येनी दिया गया है (वायु. ७०.३१७; म. आ. ६०.६७)। इसके भाई का नाम जटायु था।

वाल्मीकि रामायण में, इसका एवं इसके भाई जटायु का एक गीध पक्षी के नाते निर्देश पुनः पुनः प्राप्त है। फिर भी वाल्मीकि रामायण में ही प्राप्त एक निर्देश से प्रतीत होता है, यह अपने को एक पक्षी नहीं, बल्कि मनुष्यप्राणी ही मानता था (वा. रा. कि. ५६.४)। अतः संभव यही है कि, वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट वानरों के समान, संपाति एवं जटायु ये भी गीधयोनिज पक्षी न हो कर, गीधों की पूजा करनेवाले आदिवासी लोगों का प्रतिनिधित्व करते थे (वानर देखिये)।

इंद्र से युद्ध—यह एवं इसका भाई जटायु विंध्यपर्वत के तलहटी में रहनेवाले निशाकर (चंद्र अथवा चंद्रमस्) ऋषि की सेवा करते थे। एक बार वृत्रासुर का छलकपट से वध कर लौट आनेवाले इंद्र से इसकी तथा जटायु की भेंट हुई। इन्द्र ने इसको काफ़ी दुरुत्तर दिये जिस कारण इन दोनों में युद्ध प्रारंभ हुआ। इन्द्र ने अपने वज्र से इसे घायल किया, एवं वह जटायु का पीछा करने लगा। अन्त में जटायु थक कर नीचे गिरने

लगा। अपने भाई को नीचे गिरते हुए देख कर, इसने उसकी रक्षा के लिए अपने पंख फैला कर उस पर छाया की।

इस कार्य में सूर्यताप के कारण इसके पंख दग्ध हो गये, एवं यह एवं जटायु घायल हो कर पृथ्वी पर गिर पड़े। इन में से जटायु जनस्थान में, एवं यह विंध्य पर्वत के दक्षिण में निशाकर ऋषि के आश्रम के समीप गिर पड़े। अपने पंख दग्ध होने के कारण, यह अत्यंत निराश हुआ, एवं आत्मघात के विचार सोचने लगा। किंतु निशाकर मुनि ने इसे इन विचारों से परावृत्त किया, एवं भविष्य काल में रामसेवा का पुण्य संपादन कर, जीवन्मुक्ति प्राप्त कराने की सलाह इसे दी।

सीताहरण—यह एवं इसका पुत्र सुपार्श्व कितने विशालकाय एवं बलशाली थे, इसका दिग्दर्शन करनेवाली एक कथा 'वाल्मीकि रामायण' में प्राप्त है। सीता का हरण कर रावण जब लंका लौट रहा था, उस समय उसे पकड़ कर उसका भक्ष्य बनाने का प्रस्ताव इसके पुत्र सुपार्श्व ने इसके सामने रखा। इसके द्वारा संमति दिये जाने पर, सुपार्श्व ने रावण पर हमला कर उसे पकड़ लिया। किन्तु रावण के द्वारा अत्यधिक अनुनय-विनय किये जाने पर उसे छोड़ दिया।

जटायुवध—एक बार यह अपनी गुफा में बैठा था, उस समय सीता की खोज के लिए दक्षिण दिशा की ओर जाने वाले अंगदादि वानर इसकी गुफा में आये। उन्हीं के द्वारा रावण के द्वारा किये गये अपने भाई जटायु के वध की वार्ता इसे ज्ञात हुई। इस पर इसने सीता का हरण रावण के द्वारा ही किये जाने की वार्ता उन्हें कह सुनायी, एवं पश्चात् अंगद के कंधे पर बैठ कर यह दक्षिण समुद्र के किनारे गया। वहाँ इसने अपने भाई जटायु को तर्पण प्रदान किया। पश्चात् निशाकर ऋषि के वर के कारण इसे अपने पंख पुनः प्राप्त हुए (वा. रा. कि. ५६-६३; म. व. २६६.४८-५६; अ. रा. कि. ८)।

परिवार—इसके सुपार्श्व, बभ्रु, एवं शीघ्रग नामक तीन पुत्र थे (पद्म. सृ. ६; मत्स्य. ६.३५)। इसके एक पुत्र एवं एक कन्या होने का निर्देश वायु में प्राप्त है, किन्तु वहाँ उनके नाम अप्राप्य हैं (वायु. ६९.३२७; ७०.८-३६)। इसके अनेक पुत्र होने का निर्देश ब्रह्मांड में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७.४४६)।

२. किष्किंधा नगरी का एक वानर (वा. रा. कि. ३३.१०)।

३. बिभीषण का एक अमात्य (वा. रा. सुं. ३७)।

४. रावणपक्ष का एक असुर। लंकादहन के समय हनुमत् ने इसका घर जलाया था (वा. रा. सुं. ६)।

५. एक कौरवपक्षीय योद्धा, जो द्रोण के द्वारा निर्मित गरुड़व्यूह के हृदयस्थान मे खड़ा था (म. द्रो १९.१३; पाठ-'संपाति')।

संपार—(सो. कुरु.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार समर राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५४)।

संप्रिया—विदूरथ राजा की पत्नी, जो मगधराज की कन्या थी (म. आ. ९०.४२)।

संबंधि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

संभव—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सर्व राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.३१.)। वायु में इसे नमस् कहा गया है।

संभूत—दक्षसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार त्रसदस्यु राजा का पुत्र, एवं अनरण्य राजा का पिता था (वायु ८८. ७४-७५)। मत्स्य में इसे संभूति कहा गया है।

संभूति—चाक्षुष मन्वंतर के अजित् नामक अवतार की माता, जिसके पति का नाम वैराज था।

२. दक्ष की कन्या, जो मरीचि ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम पूर्णमास था (वायु. १०.२७)।

३. जयद्रथ राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम विजय था (भा. ९.२३.१२)।

४. रैवत मन्वंतर के मानस नामक अवतार की माता (विष्णु ३.१.४०)।

५ (सू. इ.) एक राजा, जो वसुदा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १२.३६)। पद्म में इसे दुःसह एवं नर्मदा का पुत्र कहा गया है। इसके पुत्र का नाम त्रिधन्वन् था (पद्म. सृ. ८)।

संमर्दन—वसुदेव एवं देवकी के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.५४)।

संमित—एक मरुत, जो मरुतों के छठवें गण में समाविष्ट था (ब्रह्मांड. ३.५.९७)।

संमिति—उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

संमोद—एक असुर, जो हिरण्याक्ष के युद्ध में वायु के द्वारा मारा गया (पद्म. सृ. ७५)।

सम्राज्—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो चित्ररथ एवं ऊर्णा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम उत्कला

था, जिससे इसे मरीचि नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ५.१५.१४)।

२. चक्रवर्ति राजा की एक सामान्य उपाधि, जो समस्त भारतवर्ष को जीतनेवाले राजा को प्राप्त होती थी (वायु. ४५.८६)। पौराणिक साहित्य में हरिश्चंद्र एवं कार्तवीर्य राजाओं के लिए यह उपाधि प्रयुक्त की गयी है (वायु. ८८.११८; ब्रह्मांड. ३.१६.२३; चक्रवर्तिन् देखिये)

वैदिक साहित्य में--ऋग्वेद काल में राजा (राजन्) की अपेक्षा शक्ति में श्रेष्ठ शासक को 'सम्राज्' कहा जाता था (ऋ. ३.५५.६०; वा. सं. ५.३२)। शतपथ ब्राह्मण में वाजपेय यज्ञ करनेवाले राजा को 'सम्राज्'कहा गया है (श. बा. ५.१.१.१३)। बृहदारण्यकोपनिषद् में राजा के उपाधि के नाते 'सम्राज्' का निर्देश प्राप्त है (बृ. उ. ४.१.१)।

सयद्रव्य—रैवत मनु के पुत्रों में से एक।

सरघा--त्रिंदुमत् राजा की पत्नी, जो मधु राजा की माता थी (भा. ५.१५.१५)।

सरधा—(स्वा. प्रिय.) प्रियव्रतवंशीय त्रिंदुमत् राजा का नामांतर (त्रिंदुमत् देखिये)।

सरण्यू—सूर्य की पत्नी (ऋ. १०.१७.२)।

सरभभेरुंड—एक पापी पुरुष, जिसकी कथा गीतापटन का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में प्राप्त है (पद्म. सृ. ३८)।

सरमा--विभीषण की पत्नी, जो ऋषभ पर्वत पर निवास करनेवाले शैलूप नामक गंधर्व की कन्या थी (वा. रा. उ. १२.२४-२७)।

जन्म--मानससरोवर के तट पर इसका जन्म हुआ। इसके जन्म के समय सरोवर में बाढ आने के कारण, उसका पानी लगातार बढ़ रहा था। उस समय इसकी माता ने घबरा कर बढते हुए पानी से प्रार्थना की, 'सर मा' (आगे मत बढना)।

इसकी माता की उपर्युक्त प्रार्थना के कारण, सरोवर का पानी बढ़ना बंद हुआ। इस कारण, अपनी नवजात कन्या का नाम उसने 'सरमा' ही रख दिया।

सीता को सान्त्वना--रावण के द्वारा सीता का हरण किये जाने पर, उसके देखभाल का कार्य अशोकवन में इस पर ही सौंपा गया था। यह शुरू से ही सीता से सहानुभूति रखती थी। इस कारण यह सीता को रावण के सारे षड्यंत्र समझाकर उसे सांत्वना देती थी। इसी सांत्वना से सीता का भय कम होता था, एवं इसका धीरज बँधा जाता था (विभीषण देखिये)।

पद्म के अनुसार, विभीषण के राज्यकाल में राम एवं सीता पुनः एकबार लंका गये थे, जिस समय उन्होंने लंका में स्थित वामनमंदिर का उद्घाटन किया था। अपनी लंका भेंट में सीता ने बड़े ही सौहार्द से इसकी पूछताछ की थी (पद्म. सृ. ३८)।

२. कश्यप ऋषि की पत्नी, जो दक्ष प्रजापति एवं असिक्नी की कन्या थी। संसार के समस्त हिंस्र पशु इसीके ही संतान माने जाते हैं (भा. ६.६.२६)।

सरमा देवशुनी—देवलोक की एक कुतिया, जो इंद्र की दूती मानी जाती थी। यम के श्याम एवं शबल नामक दो कुत्ते इसीके ही पुत्र थे, जिस कारण वे 'सारमेय' (सरमा के पुत्र) नाम से सुविख्यात थे। संसार के समस्त 'सारमेय' (कुत्ते) भी इसीके ही संतान माने जाते हैं।

वैदिक साहित्य में--ऋग्वेद में इंद्र के दूत के रूप में इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.१०८)। यद्यपि ऋग्वेद में कहीं भी इसे स्पष्ट रूप से कुतिया नहीं कहा गया है, फिर भी उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में, एवं यास्क के 'निरुक्त' में इसे 'देवों की कुतिया' (देवशुनी) ही माना गया है।

इंद्रदौत्य—पणि नामक कृपण लोगों का धन ढूँढ निकालने के लिए इंद्र ने अपने दूत एवं गुप्तचर सरमा को पणियों के निवासस्थान में भेजा था (ऋ. १०.१०८. १-२)। पणियों ने वैदिक ऋत्विजों की गायों को पकड़ कर, उन्हें रसा नामक नदी के तट पर स्थित कंदरों में छिपा रखा था। सरमा ने उन गायों का पता लगाया, एवं इंद्र के दूत के नाते उनकी माँग की। किन्तु उन्हें देने से इन्कार कर, पणियों ने सरमा को कैद कर दिया। अन्त में इन्द्र ने सरमा की एवं पणियों के द्वारा बन्दी की गयी गायों की मुक्तता की।

इंद्र के दूत के नाते इसका पणियों से किया संवाद ऋग्वेद में 'सरमा-पणि संवाद' नाम से प्राप्त है (ऋ. १०८.२; ४; ६; ८; १०; ११)। बृहद्देवता में भी इस संवाद का निर्देश प्राप्त है (बृहद्दे. ८.२४.३६)। उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में भी सरमा-पणि कथा अधिक विस्तृत स्वरूप में दी गयी है।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे कश्यप एवं क्रोधा की कन्या कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७.३१२)। यह इंद्र की दूती थी, एवं सारे दानव इससे डरते थे (भा. ५.२४.३०)।

एक बार इसका पुत्र जनमेजय के सर्पसत्र में गया, जहाँ जनमेजय के बांधवों ने उसे खूब पीटा, एवं यज्ञभूमि से भगा दिया। अपने पीटे गये पुत्र के दुःख से अत्यधिक दुःखी हो कर, इसने जनमेजय को शाप दिया, 'तुम एवं तुम्हारे सर्पसत्र पर अनेकांनेक आपत्तियाँ आ गिरेंगी (म. आ. ३.१-८)। आगे चल कर इसकी यह शापवाणी सही सिद्ध हुई, एवं जनमेजय का सर्पसत्र आस्तीक ऋषि के द्वारा बंद किया गया।

सरमाण—एक सैंहिकेय असुर, जो हिरण्यकशिपु का भतीजा था (मत्स्य. ६.२७)।

सरयू—वीर नामक अग्नि की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सिद्धि था (म. व. २०९.११)।

सरस—सारस्वत नगरी के वीरवर्मन् राजा के पुत्रों में से एक (वीरवर्मन् देखिये)।

सरस्वत्—एक राजकुमार, जो पुरूरवस् एवं सरस्वती के पुत्रों में से एक था। इसके पुत्र का नाम बृहद्रथ था (ब्रह्म. १०१.९)।

सरस्वती—ब्रह्मा की कन्या शतरूपा का नामान्सर। यह स्वायंभूव मनु की पत्नी थी (म. उ. ११५.१४; शतरूपा देखिये)। पद्म में इसे ब्रह्मा की पत्नी कहा गया है, एवं इसके 'ज्ञानशक्ति', 'सावित्री' 'गायत्री' एवं 'वाच्' नामान्तर दिये गये है (पद्म. पा. १०७)।

महाभारत में भी इसे 'शतरूपा' का नामान्तर बताया गया है, एवं इसे दण्ड, नीति आदि शास्त्रों की कर्त्री कहा क्या है (म. शां. १२२.२५)।

२. सार्वभौम नामक विष्णु के अवतार की माता (भा. ८.१३.१७)।

३. पूरुवंशीय अंतीनार राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम त्रस्नु था (म. आ. ९०.२६)।

४. पुरुरवस् राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सारस्वत था (ब्रह्म. १०१.९)।

५. दधीचि ऋषि की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम सारस्वत था (वायु. ६५.९१; सारस्वत देखिये)।

६. आदित्य की पत्नी, जो दनु एवं दिति की माता थी (मत्स्य. १७१.७०)।।

७. रन्ति राजा की पत्नी (वायु. ९९.१२५)।

सरिद्भूवि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सरिद्युम वृकक—एक मरुत्, जो मरुतों के पाँचवे गण में समविष्ट था।

सरूपा—भूत ऋषि की पत्नी, जो रुद्रगणों की माता मानी जाती है (भा. ६.६.१७)।

सरूप्य—तुर्वसुवंशीय शरूथ राजा का नामान्तर।

सरोगय—एक असुरविशेष, जिन्होंने भीमसेन पाण्डव को परास्त किया था (स्कंद. १.२.६६)।

सरोजवदना—एक स्त्री, जिसकी कथा भगद्गीता के दसवें अध्याय का महात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है।

सर्प—ग्यारह रुद्रों में से एक, जो ब्रह्मा का पौत्र, एवं स्थाणु का पुत्र था (म. आ.)।

२. एक नागजातिविशेष, जिनके राजा का नाम तक्षक था (मत्स्य. ८.७; नाग देखिये)। जमीन पर घसीट कर चलने के कारण (सरीसृप) इन्हें सर्प नाम प्राप्त हुआ (मत्स्य. ३८.१०)।

प्राचीन पौराणिक साहित्य में तीन सुविख्यात सर्पसत्रों के निर्देश प्राप्त हैं:— १. जनमेजय सर्पसत्र, जो जनमेजय ने अपने पिता परिक्षित् का वध करनेवाले तक्षक नाग का बदला लेने के लिए आयोजित किया था (जनमेजय पारिक्षित देखिये); २. मरुत्त का सर्पसत्र, जो उसने अपनी मातामही के कहने पर आयोजित किया था। पश्चात् मरुत्त की माता भामिनी ने मध्यस्थता कर मरुत्त का यह सर्पसत्र स्थगित करवा दिया था। मरुत्त का यह सर्पसत्र संवर्त ऋषि के द्वारा आयोजित किये गये यज्ञ के पश्चात् आयोजित किया गया था (मार्क. १२६-१२७; मरुत्त आविक्षित एवं भामिनी देखिये); ३. तीसरा सर्पसत्र, जो सर्पों के समृद्धि के लिए किया गया था (जनमेजय देखिये)।

इनसे उत्पन्न राक्षससमूह भी 'सर्प' नाम से ही सुविख्यात था (ब्रह्मांड. २.३२.१)।

३. कश्यप एवं सुरभि के पुत्रों में से एक।

४. एक राक्षस, जो ब्रह्मधान के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९.१३३)।

५. अर्बुद काद्रवेय नामक ऋषि का नामान्तर।

सर्पराज्ञी—एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री, जिसे ऋग्वेद के एक सूक्त (ऋ. १०.१८९) के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (तै. सं. १.५.४.१; ७.३.१.३; तै. ब्रा. १.४.६.६; २.२.६.१; ऐ. ब्रा. ५.२३.१.२)। इसके नाम के लिए 'सार्पराज्ञी' पाठभेद प्राप्त है।

सर्पान्त—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (म. उ. ९९.१२)।

सर्पास्य—एक राक्षस, जो खर राक्षस का अनुयायी था (वा. रा. अर. २३.३२)।

सर्पिमालिन्—युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.८)।

सर्पिर्वात्सि—एक आचार्य, जिसने कई स्तोत्रों का पठन कर सौत्रल नामक राजा को विपुल पशुसंपत्ति प्राप्त करायी थी (ऐ. ब्रा. ६.२४)।

सर्याति—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरूरवस् राजा का पुत्र था।

सर्व—(सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार धनुष राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.३०)।

सर्वकर्मन्—(सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सौदास कल्माषपाद राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.४६)। अन्य पुराणों में इसे ऋतुपर्ण राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इसे नल राजा का मित्र बताया गया है।

परशुराम के द्वारा किये गये क्षत्रियसंहार के समय पराशर ऋषि के द्वारा इसका रक्षण हुआ था। अपने इस वनवासकाल में अपना क्षत्रियधर्म छोड़ कर इसने शूद्र के समान आचरण किया, जिस कारण इसे 'सर्वकर्मन्' नाम प्राप्त हुआ (म. शां. ४९.६९)। इसे 'सर्वकामन्' नामान्तर भी प्राप्त था।

परशुराम का क्षत्रियसंहार समाप्त होने पर, पृथ्वी की पुनर्व्यवस्था करनेवाले कश्यप ऋषि को इसके जीवित होने की वार्ता स्वयं पृथ्वी ने बतायी थी (म. शां. ४९. ६९.७८)।

सर्वकाम—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय सर्वकर्मन राजा का नामान्तर।

सर्वकामदुघा—एक धेनु, जो कामधेनु की कन्या थी (म. उ. १००.१०)।

सर्वग—एक राजकुमार, जो भीमसेन एवं बलंधरा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०.८४)।

२. धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वजनि—एक ब्राह्मण, जिसकी कथा विष्णुमहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. १९)।

सर्वजित—कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक।

सर्वज्ञ—शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

सर्वतेजस्—(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो व्युष्ट एवं पुष्करिणी के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम आकुति था, जिससे इसे चाक्षुष मनु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ४.१३.१४)।

सर्वत्रग—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वदमन—दुष्यन्तपुत्र भरत राजा का नामान्तर (म. आ. ६८.५)।

सर्वधर्मन्—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वमेधस्—सुमेधस् देवों में से एक।

सर्ववेग—धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सर्वसौख्य—एकादश रुद्रों में से एक।

सर्वसारंग—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१६)।

सर्वसेन—(सो. पूरु.) काशी का एक राजा, जो ब्रह्मदत्त राजा का पुत्र था। इसने अपने भवन में स्थित पूजनी नामक चिड़िया के बच्चों का वध किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर पूजनी ने इसकी आँखें फोड़ डाली (ह. वं. १.२०.८९; पूजनी देखिये)।

इसकी कन्या का नाम सुनंदा था, जिसका विवाह सम्राट् भरत के साथ हुआ था। सुनंदा से उत्पन्न इसके दौहित्र का नाम भूमन्यु था (म. आ. ९०.३४)।

सर्वहरि ऐन्द्र—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.९६)।

सलोमधि—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चंद्रविज्ञ राजा का पुत्र था (भा. १२.१.२७)। इसे 'पुलोमार्चि' एवं 'पुलोमत्' नामांतर भी प्राप्त थे।

सलौगाक्षि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सवन—(स्वा. प्रिय.) एक ऋषि, जो स्वायंभुव मनु का पौत्र, एवं प्रियव्रत राजा के तीन विरक्त पुत्रों में से एक था। प्रियव्रत राजा के अन्य दो विरक्त पुत्रों के नाम महावीर एवं कवि थे (प्रियव्रत देखिये)।

ब्रह्मांड में इसे स्वायंभुव मनु का पुत्र, एवं पुष्करद्वीप का राजा कहा गया है, एवं इसके पुत्रों के नाम महावीर एवं धातकी दिये गये है (ब्रह्मांड. २.१३.१०४)।

२. वारुणि भृगु ऋषि के सात पुत्रों में से एक। इसे एवं इसके भाइयों को 'वारुण' पैतृक नाम प्राप्त था (म. अनु. ८५.१२९)।

३. दक्षसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

४. वसिष्ठ एवं ऊर्जा के सात पुत्रों में से एक (वायु. २८.३६)।

५. सूर्य का नामांतर (ब्रह्मांड. २.२४.७६)।

सवर्णा—सागर एवं वेला की कन्या, जो प्राचीनबर्हिस् प्रजापति की कन्या थी। इसके कुल दस पुत्र थे, जो 'प्रचेतस्' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे।

हरिवंश के अनुसार, इसे शतद्युति नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.२)। कई अभ्यासक, इसे छाया का ही प्रतिरूप मानते हैं (संज्ञा देखिये)।

सवितृ--एक सुविख्यात देवता, जो अदिति का पुत्र माना जाता है। इसी कारण इसे 'आदित्य' अथवा 'आदितेय' नामान्तर भी प्राप्त थे (ऋ. १.५०.१३; ८.१०१.११; १०.८८.११)। ऋग्वेद में आदित्य, सूर्य, विवस्वत्, पूषन्, आर्यमन्, वरुण, मित्र, भग आदि देवताओं को यद्यपि विभिन्न देवता माना गया है, फिर भी वे सारे एक ही सूर्य अथवा सवितृ देवता के विभिन्न रूप प्रतीत होते हैं (ऋ. ५.८१.४; १०.१३३.१; विवस्वत् देखिये)। सायण के अनुसार, उदित होनेवाले सूर्य को ऋग्वेद में 'सवितृ' कहा गया है, एवं उदय से अस्तकाल तक आकाश में भ्रमण करनेवाले सूर्य को वहाँ 'सूर्य' कहा गया है (ऋ. ८.५११. सायणभाष्य)।

उत्पत्ति--सवितृ की उत्पत्ति किस प्रकार हुई इस संबंध में अनेक निर्देश प्राप्त हैं। ऋग्वेद में निम्नलिखित देवताओं के द्वारा सवितृ की उत्पत्ति होने का निर्देश प्राप्त हैं:--१. इंद्र (ऋ. २.१२.७); २. मित्रावरुण (ऋ. ४. १३.२); ३. सोम (ऋ. ६.४४.२३); ४. इंद्र-सोम (ऋ. ६.७२.२); ५. इंद्र एवं विष्णु ((ऋ. ७.९९.४); ६. इंद्र-वरुण (ऋ. ७.८२.३); ७. अग्नि एवं धातृ (ऋ. १०.१९०.३); ८. अंगिरस् (ऋ. १०.६२.३)।

गुणवर्णन--सूर्य के गुणवैशिष्ट्य के संबंध में अनेकानेक काव्यमय वर्णन ऋग्वेद में प्राप्त हैं। मनुष्यजाति की सारी शारीरिक व्याधियाँ दूर कर (अनमीवां), यह उनका आयुष्य बढ़ाता है (ऋ. ८.४८.७; १०.३७.७)। इस सृष्टि के सारे प्राणि इस पर निर्भर रहते हैं (ऋ. १.१६४.१०)। यह सारे विश्व को उत्पन्न करता है, जिस कारण इसे 'विश्वकर्मन्' कहा जाता है (ऋ. १०.१७०.४)। यह देवों का पुरोहित है (ऋ. ८.१०१.१२)। यह मित्र, वरुण आदि अन्य देवताओं का मित्र है। इसी कारण इन देवताओं की की गयी प्रार्थना इसके द्वारा ही उन्हें पहुँचती है (ऋ. ६०.१)।

ऋग्वेद में सूर्यबिंब का उल्लेख कर अन्य भी बहुत सारा वर्णन प्राप्त है। किन्तु इसे मानव मान कर जितना भी वर्णन ऋग्वेद में दिया है, इतना ही ऊपर दिया गया है।

ऋग्वेद में प्राप्त सवितृ के वर्णन में सारी मानवीय सृष्टि इसी पर निर्भर रहती है, यह मध्यवर्ति कल्पना प्रमुख है (ऋ. १.११५.१)। इसी कारण संध्यावंदन जैसे धार्मिक नित्यकर्म में इसे प्रतिदिन अर्घ्य दे कर, इस संसार को त्रस्त करनेवाले असुरों से संरक्षण करने के लिए इसकी प्रार्थना की जाती है (तै. आ. २; ऐ. ब्रा. ४.४)।

स्वरूपवर्णन--यह स्वर्णनेत्र, स्वर्णहस्त एवं स्वर्ण जिह्वावाला बताया गया है (ऋ. १.३५; ६.७१)। इसकी भुजाएँ भी स्वर्णमय है, एवं इसके केश पीले है (ऋ. ६.७१. १०.१३९)। यह पिशंग वेषधारी है, एवं इसके पास स्वर्णस्तंभवाला स्वर्णरथ है (ऋ. ४.५३.१.३५)। इसका यह रथ दो प्रकाशमान अश्वों के द्वारा खींचा जाता है।

यह महान् वैभव (अमति) से युक्त है, एवं इस वैभव को यह वायु, आकाश, पृथ्वी आदि को प्रकाशमय कर तीनों लोगों में प्रसृत कर देता है (ऋ. ७.३८.१)। अपने सुवर्ण ध्वजाओं को उँचा उठा कर यह सभी प्राणियों को जाग्रत कर देता है, एवं उन्हें आशीर्वाद देता है (ऋ. २.३८)।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे कश्यप, प्रजापति एवं अदिति का कनिष्ठ पुत्र कहा गया है (विष्णुधर्म. १.१०६)। जन्म से ही इसके अवयवरहित होने के कारण, इसे 'मार्तंड' नामान्तर प्राप्त था। अन्य देवताओं से पहले निर्माण होने के कारण इसे 'आदित्य' भी कहते थे (भवि. ब्राह्म. ७५)। इसी पुराण में अन्यत्र इसे ब्रह्मा के वंशान्तर्गत मरीचि ऋषि का पुत्र कहा गया है (भवि. ब्राह्म. १५५)। इसके ज्येष्ठ भाई का नाम अरुण था।

अनुचर--इसके अनुचरों की विस्तृत नामावलि पुराणों में प्राप्त है, जिनमें निम्नलिखित अनुचर प्रमुख बताये गये हैं:--१. दण्डधारी--राजा एवं श्रोष; २; लेखनिक--पिंगल; ३. द्वारपाल--कल्माष एवं सृष्टि के विभिन्न पक्षिगण (भवि. ब्राह्म. ७९)।

पत्नियाँ--इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थीं:--१. त्वष्टृकन्या संज्ञा; २. रैवतकन्या राज्ञी ३. प्रभा (मत्स्य. ११)। इनके अतिरिक्त इसे द्यौ, राज्ञी, पृथ्वी, एवं निक्षुभा नामक अन्य पत्नियाँ भी थीं (स्कंद. ७.१.१८)। किन्तु बहुत सारे पुराणों में इसकी संज्ञा नामक एक ही पत्नी का निर्देश प्राप्त है (वायु. २२.३९; वि. ३.२; ब्रह्म. ६; ह. वं. १.९; म. आ. ६०.३४)।

परिवार--अपनी पत्नी संज्ञा से इसे मनु, यम एवं यमी नामक तीन संतान उत्पन्न हुए। आगे चल कर इसका तेज उसे असह्य हुआ, जिस कारण उसने अपने शरीर से

छाया (सवर्णा) नामक अन्य एक स्त्री उत्पन्न की, एवं उसे इसकी सेवा में भेज कर वह तपस्या करने चली गयी। इसे छाया से श्रुतश्रवस् (सावर्णि मनु), श्रुतकर्मन् (शनि), एवं तपती नामक तीन संतान उत्पन्न हुए (संज्ञा देखिये)।

आगे चल कर छाया का त्याग कर यह पुनः एक बार अपनी संज्ञा नामक पत्नी के पास गया, जिससे इसे अश्विनीकुमार (नासत्य एवं दस्र), एवं रेवन्त नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (विष्णु. ३.२; भवि. ब्राह्म. ७९; मार्क. ७५)। अन्य पुराणों में इसके पुत्रों की नामावलि निम्न-प्रकार दी गयी है:--१. संज्ञापुत्र--वैवस्वत मनु (श्राद्धदेव), यम एवं यमुना; २. छायापुत्र--सावर्णि मनु, शनि, तपती एवं विष्टि ३. अश्विनीपुत्र--अश्विनीकुमार, रेवन्त; ४. प्रभापुत्र--प्रभात; ५. राज्ञीपुत्र--रेवत; ५. पृश्निपुत्र--सावित्री, व्याहृति, त्रयी, अग्निहोत्र, पशु, सोम, चातुर्मास्य, पंचमहायज्ञ (भा. ६.१८.१)। इसकी संतानों में से यम एवं यमुना, तथा अश्विनीकुमार जुड़वी संतान थीं (मत्स्य. ११; पद्म. सृ. ८; विष्णु. ३.५; ब्रह्म. ६; भवि. ब्राह्म. ७९, म. आ. ६७; भा. ८.१३)।

कई अन्य पुराणों में इसके इलापति एवं पिंगलापति नामक अन्य दो पुत्र दिये गये हैं; एवं उन्हें 'संज्ञापुत्र' कहा गया है (भवि. प्रति. ४.१८; पद्म. सृ. ८)।

रूपकात्मक वर्णन--भविष्य पुराण के अनुसार इसकी पत्नियों एवं परिवार का अन्य पुराणों में प्राप्त वर्णन रूपकात्मक है। इस रूपक में संज्ञा एवं छाया नामक इसकी दो पत्नियाँ क्रमशः अंतरिक्ष (द्यौः) एवं पृथ्वी हैं। इन दोनों पत्नियों के पुत्र क्रमशः 'जल' एवं 'सस्य' हैं। ग्रीष्म ऋतु में यह जल का शोषण करता है, एवं वही जल वर्षाऋतु में पृथ्वी पर गिरा कर उससे सस्य (अनाज) की निर्मिती करता है। इसी कारण इसे समस्त सृष्टि का पिता माना गया है (भवि. ब्राह्म. ७९)। इसी पुराण में अन्यत्र इसे चंद्र एवं नक्षत्रों का पिता, एवं स्वामी कहा गया है।

३. अट्ठाईस व्यासों में से एक।

सवेदस्--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सवैलेय--अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद--'सचैलेय'।

सव्य आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १. ५१-५७)।

सव्यसिव्य--एक सैंहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.६.१८-२२)।

२. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सस आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.२१)।

सस्मित--उत्तम मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. तामस मन्वन्तर का एक योगवर्धन।

सह--स्वायंभुव मनु के पुत्रों में से एक।

२. प्राण नामक वसु के पुत्रों में से एक।

३. उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

४. आभूतरजस् देवों में से एक।

५. (सो. पूरु.) धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में मारा गया (म. क. ३५.१४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'सम'।

६. कृष्ण एवं लक्ष्मणा के पुत्रों में से एक।

७. एक अग्नि, जो समुद्र में छिप गया था। इसके शरीर के अवयवों से धातुओं की उत्पत्ति हुई। आगे चल कर देवताओं के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, यह अग्नि पुनः एक बार पृथ्वी पर प्रकट हुआ।

सहज--चेदि एवं मत्स्य देश का एक कुलांगार नरेश, जिसने अपने दुर्व्यवहार के कारण, अपने स्वजनों का एवं परिवार के लोगों का नाश किया (म. उ. ७२.११-१७)।

सहजन्य--एक यक्ष, जो आषाढ माह में सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३६)।

सहजिन्यु--एक अप्सरा, जो हिरण्यकशिपु के प्रिय अप्सराओं में से एक थी (पद्म. सृ. ४५.)।

सहदेव--(सो. कुरु.) हस्तिनापुर के पाण्डु राजा के पाँच पुत्रों में से एक (सहदेव पाण्डव देखिये)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो दिवाक (दिवाकर) राजा का पुत्र, एवं बृहदश्व राजा का पिता था (भा. ९. १२.११)।

३. (सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार संजय राजा का पुत्र, एवं कृशाश्व राजा का पिता था (वायु. ८६.२०)। भागवत में इसे संजय राजा का पुत्र कहा गया है (सहदेव सार्ञ्जय देखिये)।

४. एक राजा, जो भागवत विष्णु एवं वायु के अनुसार सुदास राजा का पुत्र, एवं सोमक राजा का पिता था (भा. ९.२२.१)।

५. (सो. मगध.) मगध देश का एक राजा, जो जरासंध राजा का पुत्र था। इसकी अस्ति एवं प्राप्ति नामक दो बहनें थीं, जो मथुरा के कंस राजा को विवाह में दी गयी थीं।

जरासंध के वध के पश्चात् कृष्ण ने इसे मगध देश के राजगद्दी पर बिठाया, एवं इससे मित्रता स्थापित की।

भारतीय युद्ध में यह एक अक्षौहिणी सेना के साथ पाण्डव पक्ष में शामिल हुआ था। युधिष्ठिरसेना के सात प्रमुख सेनापतियों में यह एक प्रमुख था। इसके पराक्रम का गौरवपूर्ण वर्णन संजय के द्वारा किया गया है। अंत में यह द्रोण के द्वारा मारा गया (भा. ९.२२.९;१०.७२.४८; म. द्रो. १०१.४.३)।

परिवार—इसके सोमापि, मार्जारिप एवं मेघसंधि नामक तीन पुत्र थे। इसकी मृत्यु के पश्चात् सोमापि (सोमाधि) मगध देश का राजा बन गया।

६. (सो. वसु.) वसुदेव एवं ताम्रा के पुत्रों में से एक।

७. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुप्रतीत राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८४)। इसे 'मरुदेव' नामान्तर भी प्राप्त था।

८. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वायु के अनुसार हर्यश्व राजा का, विष्णु के अनुसार हर्षवर्धन राजा का, भागवत के अनुसार हव्यवन राजा का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार हव्यश्व राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम हीन अहीन, अर्दीन) था (वायु. ९३.९; भा. ९.१७.१७; (ब्रह्मांड. ३.६८.९)।

९. भास्करसंहितांतर्गत 'व्याधिसिंधुविमर्दनतंत्र' नामक ग्रंथ का कर्ता।

१०. कुण्डल नगरी के सुरथ राजा का पुत्र।

सहदेव पाण्डव—हस्तिनापुर के पाण्डु राजा का क्षेत्रज पुत्र, जो अश्विनों के द्वारा पाण्डुपत्नी माद्री के उत्पन्न हुए दो जुड़वे पुत्रों में से एक था (म. आ. ९०.७२)। यह पाण्डुपुत्रों में से पाँचवाँ पुत्र था, एवं नकुल का छोटा भाई था। स्वरूप, पराक्रम एवं स्वभाव इन सारे गुणवैशिष्ट्यों में यह अपने ज्येष्ठ भाई नकुल से साम्य रखता था, जिस कारण नकुल-सहदेव की जोड़ी प्राचीन भारतीय इतिहास में एक अभेद्य जोड़ी बन कर रह गयी (नकुल देखिये)। इसके जन्म के समय इसकी महत्ता वर्णन करनेवाली आकाशवाणी हुई थी (म. आ. ११५.१७; भा. ९.२२.२८; ३०.३१)।

बाल्यकाल—इसका जन्म एवं उपनयनादि संस्कार अन्य पाण्डवों के साथ शतशृंग पर्वत पर हुए थे। द्रोण ने इसे शस्त्रास्त्रविद्या, एवं शर्यातिपुत्र शुक्र ने इसे धनुर्वेद की शिक्षा प्रदान की थी। खड्गयुद्ध में यह विशेष निपुण था। द्रौपदीस्वयंवर के समय इसने दुःशासन के साथ युद्ध कर उसे परास्त किया था (म. आ. १८६६*; पंक्ति २.)।

दक्षिण दिग्विजय—युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, यह दक्षिण दिशा की ओर दिग्विजय के लिए गया था (भा. १०.७२.१३)। सर्वप्रथम इसने शूरसेन देश जीत कर मत्स्य राजा पर आक्रमण किया। उसे जीतने के बाद इसने करुष देश के दन्तवक्र राजा को पराजित किया। पश्चात् इसने निम्नलिखित देशों पर विजय प्राप्त किया:—पश्चिम मत्स्य, निषादभूमि, श्रेष्ठगिरि, गोशृंग एवं नरराष्ट्र। इसी दिग्विजय में इसने सुमित्र एवं श्रेणिवत् राजा पर विजय प्राप्त किया। पश्चात् यह कुन्तिभोज राजा के राज्य में कुछ काल तक ठहरा, जो पाण्डवों का मित्र था।

पश्चात् इसने चर्मण्वती नदी के तट पर कृष्ण के शत्रु जंबूकासुर के पुत्र से युद्ध किया। अन्त में घोर संग्राम कर इसने उसका वध किया। पश्चात् यह दक्षिण दिशा की ओर मुड़ा। वहाँ सेक एवं अपरसेक राजाओं को परास्त कर, एवं उनसे करभार प्राप्त कर यह नर्मदा नदी के तट पर आ गया। वहाँ अवंती देश के विंद एवं अनुविंद राजाओं को पराजित कर, यह भोजकट नगरी में आ पहुँचा। वहाँ के भीष्मक राजा के साथ इसने दो दिनों तक संग्राम किया, एवं उसे जीत लिया।

आगे चल कर कोसल एवं वेण्यातीर देश के राजाओं को पराजित कर, यह कान्तारक देश में प्रविष्ट हुआ। वहाँ कान्तारक, प्राक्कोसल, नाटकेय, हैरंवक, मारुध, रम्यग्राम, नाचीन, अनर्बुक देश के राजाओं को इसने पराजित किया। पश्चात् इसी प्रदेश में स्थित वनाधिपतियों को जीत कर, इसने वाताधिप राजा पर आक्रमण किया, एवं उसे जीत लिया।

आगे चल कर पुलिंद राजा को परास्त कर यह दक्षिण दिशा की ओर जाने लगा। रास्ते में पाण्डय राजा के साथ इसका एक दिन तक घोर संग्राम हुआ, एवं इसने उसे परास्त किया। पश्चात् यह किष्किंधा देश जा पहुँचा, जहाँ मैंद एवं द्विविद नामक वानर राजाओं के साथ सात दिनों तक युद्ध कर, इसने उन्हें परास्त किया।

पश्चात् इसने माहिष्मती नगरी के नील राजा के साथ सात दिनों तक युद्ध किया। इस युद्ध के समय, अग्नि ने नील राजा की सहायता कर, इसकी सेना को जलाना प्रारंभ किया। इस प्रकार सहदेव की पराजय होने का धोखा उत्पन्न हुआ। इस समय सहदेव ने शुचिर्भूत हो कर अग्नि

की स्तुति की, एवं उसे संतुष्ट किया। पश्चात् अग्नि की ही सूचना से नील राजा ने इससे संधि की।

आगे चल कर सहदेव ने त्रैपुर एवं पौरवेश्वर राजाओं को परास्त किया। पश्चात् सुराष्ट्र देश के राजा कौशिकाचार्य आकृति राजा को इसने परास्त किया, एवं यह कुछ काल तक उस देश में ही रहा।

पश्चात् इसने पश्चिम समुद्र के तटवर्ति निम्नलिखित देशों पर आक्रमण कियाः— शूर्पारक, तालाकट, दण्डक, समुद्रद्वीपवासी, म्लेच्छ, निषाद, पुरुषाद, कर्णप्रावरण, नरराक्षसयोनि, कालमुख, कोलगिरि, सुरभिपट्टण, ताम्रद्वीप, रामकपर्वत, तिमिंगल।

सहदेव के द्वारा किये गये पराक्रम के कारण, निम्नलिखित दक्षिण भारतीय देशों ने विना युद्ध किये ही, केवल दूतप्रेषण से ही पाण्डवों का सार्वभौमत्व मान्य कियाः— एकपाद, पुरुष, वनवासी, केरल, संजयंती, पाषंड, करहाटक, पाण्ड्य, द्रविड, उड्र, अंध्र, तालवन, कलिंग, उष्ट्रकर्णिक, आटवीपुरी, यवनपुर।

इस प्रकार दक्षिण भारत के बहुत सारे देशों पर अपना आधिपत्य प्रस्थापित करने के बाद, इसने लंकाधिपति बिभीषण की ओर अपना घटोत्कच नामक दूत भेजा, एवं उससे भी करभार प्राप्त किया। पश्चात् दक्षिणदिग्विजय में प्राप्त किया गया सारा करभार ले कर, यह इंद्रप्रस्थ नगरी में लौट आया, एवं सारी संपत्ति इसने युधिष्ठिर को अर्पित की (म. स. २८)। राजसूय यज्ञ समाप्त होने पर, अन्य पाण्डवों के समान इसने भी कृष्ण की अग्रपूजा भी की (म. स. ३३.३०; भा. १०.७५.४)।

द्यूतक्रीडा एवं वनवास—युधिष्ठिर के द्वारा पाण्डवों का सारा राज्य द्यूतक्रीड़ा में हार दिये जाने पर, इस आपत्प्रसंगके जिम्मेदार शकुनि को मान कर इसने उसके वध करने की प्रतिज्ञा की (म. स. ६८.४१)।

पाण्डवों के अज्ञातवास में, तंतिपाल नाम धारण कर यह विराट नगरी में रहता था। यह उत्कृष्ट अश्वचिकित्सक था (म. वि. ३.७)। इस कारण विराट की अश्वशाला में अश्वसेवा का काम इसने स्वीकार किया। अज्ञातवास में इसका सांकेतिक नाम 'जयद्बल' था (म. वि. ५.३०)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में इसके रथ के अश्व तित्तिर पक्षी के रंग के थे, एवं इसके ध्वज पर हंस का चिह्न रहता था। इसके धनुष्य का नाम 'अश्विन,' एवं शंख का नाम 'मणिपुष्पक' था (म. द्रो. परि. १.५. ११-१२; भी. २३.१६)। रथयुद्ध में यह अत्यंत निष्णात था (म. उ. १६६.१८)। द्रोण के सेनापत्य—काल में इसने उस पर आक्रमण करना चाहा; किन्तु उस समय कर्ण ने इसे परास्त किया (म. द्रो. १४२.१३)। अंत में अपनी प्रतिज्ञा के अनुसार इसने शकुनि का वध किया (म. श. २७.५८)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्—युधिष्ठिर के हस्तिनापुर का राज्याभिषेक किये जाने पर, उसने इस पर धृतराष्ट्र की देखभाल का कार्य सौंप दिया (म. शां. ४१.१४)।

पाण्डवों के महाप्रस्थान के समय, द्रौपदी के पश्चात् सर्वप्रथम इसका ही पतन हुआ। इसे अपनी बुद्धि का अत्यधिक गर्व था, जिस कारण इसका शीघ्र ही पतन हुआ (म. महा. २.८; भा. १.१५.४५)। मृत्यु के समय इसकी आयु १०५ वर्षों की थी (युधिष्ठिर देखिये)।

परिवार—इसकी चार कुल पत्नियाँ थीः—१. द्रौपदी (म. आ. ९०.८१); २. विजया, जो इसके मामा मत्स्यनरेश शल्य की कन्या थी (म. आ. ९०.८७); ३. भानुमती, जो भानु राजा की कन्या थी (ह. वं. २.९०. ७६); ४. मगधराज जरासंध की कन्या (म. आश्र. ३२. १२)।

इसके कुल दो पुत्र थेः—१. श्रुतकर्मन्, जो द्रौपदी से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.८२); २. सुहोत्र, जो इसे विजया से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.८७)।

ग्रन्थ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ प्राप्त है।— १. व्याधिसंधविमर्दन; २. अग्निस्तोत्र; ३. शकुनपरीक्षा।

सहदेव वार्षागिर—एक राजा, जिसे ऋग्वेद के एक सूक्त के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. १.१००)। इसने ऋज्राश्व, भयमान, सुराधस् एवं अंबरीष नामक अपने भाइयों के साथ इंद्र की स्तुति की थी, जिस कारण यह शिम्यु एवं दस्यु नामक अपने शत्रु पर विजय प्राप्त कर सका (ऋ. १.१००.१७-१८)।

सहदेव सार्ंजय—एक राजा, जो सोम की एक विशिष्ट परंपरा में से सोमक साहदेव्य नामक आचार्य का शिष्य था (ऐ. ब्रा. ७.३-४)। एक धर्मप्रवण राजा के नाते वामदेव के द्वारा इसकी स्तुति की गयी थी। इसका सही नाम 'सुप्लन् सार्ंजय' था, किन्तु 'दाक्षायण' नामक यज्ञ करने पर इसने 'सहदेव सार्ंजय' नाम धारण किया (श. ब्रा. २. ४.४.४)। ऋग्वेद एवं ऐतरेय ब्राह्मण में सोमक साहदेव्य नामक आचार्य के साथ इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ४.

१५.७; ऐ. ब्रा. ७.३४.९)। ब्राह्मण ग्रंथों में अन्यत्र भी इसका निर्देश प्राप्त है (श. ब्रा. १२.८.२.३)।

कई अभ्यासकों के अनुसार सहदेव साञ्जय एवं सहदेव वार्षागिर दोनों एक ही व्यक्ति थे।

सहदेवा--देवक राजा की एक कन्या, जो वसुदेव की पत्नियों में से एक थी। इसके कुल आठ पुत्र थे, जिनमें भयासख प्रमुख था (भा. ९.२४.२३)।

सहसात्यपुत्र—एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सहसाह—परशुराम का सारथि (म. वि.११.२४२*; ब्रह्मांड. ३.४६.१४)।

सहस्रचित्य--केकय देश का एक राजा, शतायूर राजा का पितामह था। इसने अपने प्राणों को त्याग कर एक ब्राह्मण की जान बचायी (म. अनु. १३७.२०; शां. २६६.३०)। पाठभेद-'सहस्रजित्'।

सहस्रजित्—(सो. पुरूरवस्.) एक राजा, जो भागवत, मत्स्य, वायु एवं पद्म के अनुसार वायु राजा का ज्येष्ठ पुत्र, एवं शतजित् राजा का पिता था। इसे 'सहस्राद' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक।

३. केकय राजा सहस्रचित्य का नामान्तर (म. शां. २२६.३१)।

सहस्रज्योति—विवस्वत् के पुत्रों में से एक। इसके कुल दस लाख पुत्र थे (म. आ. १.४४)।

सहस्रधार--वशवर्तिन् देवों में से एक।

सहस्रपाद्—एक ऋषि, जो शाप के कारण डुण्डुभ नामक सर्प हो गया था। इसी सर्पयोनि में रुरु नामक ऋषि इसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ था, किन्तु इसने उसे इस पापकर्म से प्रवृत्त किया था (रुरु देखिये)। पाण्डवों के वनवास काल में यह द्वैतवन में उनके साथ उपस्थित था (म. व. २७.२२)।

सहस्रमुख--पुष्करद्वीप के रावण नामक राक्षस की उपाधि (रावण सहस्रमुख देखिये)।

सहस्रवाच्—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। पाठभेद-'सदसुवाक्'।

सहस्राजित्--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भजमान एवं उपबाह्यका के पुत्रों में से एक था (विष्णु. ४.१३.२)।

सहस्राद—पुरूरवस्वंशीय सहस्रजित् राजा का नामान्तर (सहस्रजित् १. देखिये)।

सहस्रानीक--(सो. पूरु.) एक पूरुवंशीय राजा, जो शतानीक राजा का पुत्र, एवं अश्वमेधज (अश्वमेधदत्त) नामक राजा का पिता था (भा. ९.२२.३९; म. आ. ९०.९५)। इसके द्वारा अश्वमेध यज्ञ किये जाने पर इसे पुत्रप्राप्ति हुई, जिस कारण इसके पुत्र का नाम 'अश्वमेधदत्त' रखा गया।

भागवत एवं महाभारत के अतिरिक्त अन्य पुराणों में इसका निर्देश अप्राप्य है, जहाँ शतानीक राजा के पुत्र का नाम असीमकृष्ण दिया गया है।

सहस्राश्व--(सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार अहिनग राजा का पुत्र, एवं चंद्रावलोक राजा का पिता था (मत्स्य. १२.५४)।

सहस्वत्--(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय महस्वत् राजा का नामांतर।

सहानंदिन्—(शिशु. भविष्य.) मगध देश के महानन्दिन् राजा का नामांतर। ब्रह्मांड में इसे नंदिवर्धन राजा का पुत्र, एवं महापद्म राजा का पिता कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.७४. १३४)।

सहाभोज—(सो. क्रोष्टु.) क्रोष्टुवंशीय महाभोज राजा का नामांतर। वायु में इसे सात्वत राजा का पुत्र कहा गया है।

साहितंडिपुत्र--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सहिष्णु--एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वंतर के छब्बीसवें युगचक्र में भद्रवटपुर नामक नगरी में अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:- १. उलूक; २. विद्युत्; ३. शंबूक; ४. आश्वलायन (शिव. शत. ५)।

२. चाक्षुष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक, जो पुलह ऋषि एवं गती का पुत्र था।

३. स्वायंभुव मन्वंतर का एक ऋषि, जो पुलह ऋषि एवं गती का पुत्र था (मार्क. ५२.२३-२४)।

४. एक गंधर्व, जो अपने अगले जन्म में बक नामक कंसपक्षीय असुर बन गया था (बक. १. देखिये)।

सांयमनि—(सो. कुरु.) सोमदत्तपुत्र शल राजा का नामांतर (म. भी. ६१.११)।

२. दुर्योधन के पक्ष के शल्य (शल) नामक राजा का एक पुत्र। धृष्टद्युम्न ने इसका वध किया।

सांवरणि-- मनु सांवरणि राजा का पैतृक नाम, जो उसे संवरण का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (ऋ. ९.१०१.१०-१२ मनु सावर्णि देखिये)।

साकमश्व देवरात--एक आचार्य, जो विश्वामित्र ऋषि का शिष्य था (सां. आ. १५.१)।

सागर--शलि नामक ऋषि का पैतृक नाम।

सागरक--सागरदेश का एक राजा, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट ले कर उपस्थित हुआ था।

सागरध्वज--पांड्य देश का एक राजा, जो अस्त्र-विद्या में परशुराम, भीष्म, द्रोण, एवं कृप आदि आचार्यों का शिष्य था।

इसके पिता एवं भाई का कृष्ण ने युद्ध में वध किया। इस कारण यह कृष्ण से बदला लेने के लिए, द्वारका नगरी पर आक्रमण करने के लिए प्रवृत्त हुआ। किन्तु उस अविचार से इसके मित्रों ने इसे परावृत्त किया।

भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था। इसके रथ के अश्व चन्द्रकिरणों के समान शुभ्रवर्णीय, एवं वैदूर्यरत्नों की जाली से सुशोभित थे। इसकी सेना में एक लाख चालीस हजार रथ थे, जिन्हें श्वेतवर्णीय अश्व जोते गये थे।

साग्नि--एक पितर।

सांकाश्य--यमसभा में उपस्थित एक राजर्षि (म.स. ८.१०)।

सांकृति--एक क्षत्रोपेत ब्राह्मणसमूह, जो सांकृति राजा का वंशज था। आगे चल कर, ये आंगिरसगोत्रीय ब्राह्मण बन गये (वायु. ९९.१६४)।

२. अत्रिवंश में उत्पन्न एक ऋषि, जिसने अपने शिष्यों को निर्गुण ब्रह्म का उपदेश प्रदान किया था (म. शां. २२६.२२)।

३. विश्वामित्र ऋषि की पत्नियों में से एक।

सांकृत्य--एक वैयाकरण(तै. प्रा. ८.२१)।

२. एक आचार्य, जो पाराशर्य नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. २.५.२०, ४.५.२६ माध्यं.)।

सांख्य--अत्रि नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (अत्रि देखिये)।

सांकृतीपुत्र--एक आचार्य, जो अलम्बीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य, एवं शौंगीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (श. ब्रा. १४.९.४.३१)।

सांख्यायन--एक आचार्य, जो भागवतशिष्यपरंपरा में से सनत्कुमार का शिष्य था। इसके शिष्यों में पराशर एवं बृहस्पति प्रमुख थे (भा. ३.८.७)।

२. शांखायन नामक सुविख्यात वैदिक आचार्य का नामान्तर।

३. एक ऋषि, जो गायत्री नामक सुविख्यात वैदिक सूक्तद्रष्ट्री का पूर्वज था।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सांग--(स्वा. उत्तान.) हविर्धानपुत्र गय राजा का नामांतर।

सांगर--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

सांजीवीपुत्र--एक आचार्य, जो प्राश्णीपुत्र आसुरिवासिन् एवं मांडुकायनि नामक आचार्यों का शिष्य, एवं प्राचीनयोगीपुत्र नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ६. ५.४ काण्व; ६.४.३ माध्यं.)। शतपथ ब्राह्मण में अन्यत्र इसे माण्डव्य ऋषि का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १०.६.५.९)। इससे प्रतीत होता है कि, यह दो आचार्यों की परंपराओं का प्रतिनिधित्व करता था:-- १. शांडिल्य की अग्निपूजकपरंपरा, जिसका प्रमुख आचार्य माण्डुकायनि था; २. याज्ञवल्क्य वाजसनेय की तत्त्वज्ञान विषयक परंपरा; जिसका प्रमुख आचार्य प्राश्णी-पुत्र आसुरवासिन् था।

सातकर्णि--(आंध्र. भविष्य.) आंध्रवंशीय शातकर्णि राजा का नामान्तर। वायु में इसे कृष्ण राजा का पुत्र कहा गया है।

२. एक आंध्रवंशीय राजा, जो वायु के अनुसार पुत्रिकषेण राजा का पुत्र था।

साति औष्ट्राक्षि--एक आचार्य, जो सुश्रवस् वार्षगण नामक आचार्य का शिष्य, एवं मद्रगार शौंगायनि नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)। उष्ट्राक्ष नामक आचार्य का वंशज होने के कारण, इसे 'औष्ट्राक्षि' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था।

सात्यकामि--केशिन् नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. २.६.२.३)।

सात्यकि (युयुधान)--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो कृष्णार्जुनों का अत्यंत प्रिय मित्र था। यह शिनि नामक यादव राजा का पौत्र, एवं सत्यक राजा का पुत्र था (म. आ. २११.११; भा. ९.२४.१४)। महाभारत में अन्यत्र इसे शिनि राजा का पुत्र कहा गया है (म. द्रो. ९७.२७; ५३; ११९.१७)।

इसे निम्नलिखित नामान्तर भी प्राप्त थेः-१. सात्वत (म. द्रो. ७३.१३; ८८.१५); २. दाशार्ह (म. द्रो. ११७.४); ३. शैनेय; ४. माधव, जो नाम इसे मधु यादव का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. द्रो. ७३.११; ८८.२६)।

यह वृष्णिकुलभूषण, सत्यप्रतिज्ञ, शत्रुमर्दन वीर था एवं इसका स्वभाव अत्यंत क्रोधी एवं निर्भय था। यह कृष्ण को अपना ज्येष्ठ मित्र, तथा अर्जुन को अपना अस्त्रविद्या का गुरु मानता था, जिस कारण आजन्म यह अपने इन दोनों ज्येष्ठ मित्रों की सहायता करता रहा। इसकी गणना महाभारतकालीन श्रेष्ठ वीरों में की जाती थी। इसका प्रमाण निम्नलिखित विदुरवचन में पाया जाता है, जो उसने धृतराष्ट्र से कहा था :--

येषां पक्षधरो रामो येषां मंत्री जनार्दनः।
किं नु तैरजितं संख्ये येषां पक्षे च सात्यकिः॥

(म. आ. १९७.२०)।

(जिस पक्ष में बलराम एवं सात्यकि जैसे वीरप्रवर हैं, एवं जिनके मंत्री स्वयं श्रीकृष्ण है, उन पाण्डवों के लिए युद्ध में अजेय क्या हो सकता है?)

स्वरूपवर्णन-- इसका सविस्तृत स्वरूपवर्णन महाभारत में अर्जुन के द्वारा निम्नप्रकार किया गया है:- 'महान् स्कंध एवं विशाल वक्षःस्थलवाला, अजानुबाहु, महाबली, महावीर्यवान्, एवं महारथी सात्यकि मेरा शिष्य एवं मेरा सखा है' (म. द्रो. ८५.६०)।

विद्याव्यासंग—इसने श्रीकृष्ण से अस्त्रविद्या प्राप्त की थी (भा. ३.१.३१)। अर्जुन से भी इसने युद्धविद्या एवं धनुर्विद्या सीखी थी (भा. ३.१.; म. द्रो. १५६.१४)। वृष्णिवंशीय यादवों के सात अतिरथी वीरों में इसकी गणना की जाती थी। इसके रथ के अश्व शुभ्र एवं रुपहले थे (म. द्रो. २३.३; ७३.११; ११५.१)।

कृष्ण का सहायक--कृष्ण के द्वारा किये गये हर एक युद्ध में यह उसका प्रमुख सहायक रहा करता था। बाणासुर के युद्ध में यह कृष्ण के साथ उपस्थित था, एवं इसने बाणासुर के मंत्री कुमाण्ड से युद्ध किया था (भा. १.३.१६)। जरासंध के आक्रमण के समय, मथुरानगरी के पश्चिम द्वार के संरक्षण का भार इसके ऊपर था। उस समय इसने जरासंध की सेना को परास्त कर उसका पाँच योजनों तक पीछा किया था (भा. १०.५०.२०)। शाल्वयुद्ध के समय इसने द्वारका नगरी का रक्षण किया था (भा. १०.५२)। पौण्ड्रक वासुदेव के युद्ध में, इसने कृष्ण की काफ़ी सहायता की थी (भा. १०.७८)। कृष्ण के अश्वमेधीय अश्व के साथ यह उपस्थित था।

पाण्डवों का मित्र--कृष्ण के समान यह भी पाण्डवों का हितैषी एवं मित्र था। द्रौपदी के स्वयंवर के समय यह उपस्थित था (म. आ. १७७.१७)। अर्जुन एवं सुभद्रा के विवाह के समय, यह दहेज ले कर इंद्रप्रस्थ गया था। इंद्रप्रस्थ में किये गये युधिष्ठिर के राज्याभिषेक के समय यह उपस्थित था।

पांडवों के वनवासकाल में--पांडवों के वनगमन के पश्चात्, इसने कृष्ण एवं बलराम को सलाह दी थी 'यादवों के द्वारा धृतराष्ट्रपुत्रों का वध कर, अभिमन्यु को हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बैठा देने से सारी समस्या छूट जायेगी'। इस समय कृष्ण ने इसे पांडवों की प्रतिज्ञा याद दिलायी, जिसके अनुसार किसी अन्य के द्वारा जीता हुआ राज्य उन्हें अस्वीकरणीय था।

युद्ध का समर्थन--कृष्णदौत्य के पूर्व संपन्न हुई यादवसभा में, पांडवों की माँग की न्यायसंगतता एवं उचितता इसने स्पष्ट शब्दों में कथन की थी (म. उ. ३)। पांडवों के शांतिदूत के नाते कौरवों के यहाँ जानेवाले कृष्ण से इसने पुनः पुनः यही कही कहा था कि, केवल युद्ध के द्वारा ही पांडवों के न्याय्य माँगों की रक्षा की जा सकती है। इस समय शान्ति का पुरस्कार करनेवाले कायर लोगों की कटु आलोचना करते हुए इसने कहा :-

नाधर्मो विद्यते कश्चिच्छत्रून् हत्वाऽऽततायिनः।
अधर्म्यमयशस्यं च शात्रवाणां प्रयाचनम्॥

(म. उ. ४.२०)।

(आततायी शत्रु का वध करना अधर्म नहीं है, बल्कि ऐसे शत्रु से कुछ याचना करना अपमान एवं अधर्म जरूर है)।

पश्चात् यह अपने सवारे हुए रथ में बैठ कर, कृष्ण के साथ हस्तिनापुर गया था (म. उ. ७९-८१)।

कौरवों की राजसभा में--कौरवसभा में कर्ण, शकुनि, एवं दुर्योधन ने श्रीकृष्ण को पकड़ने की मंत्रणा की। उस समय इसने कृतवर्मन् से अपनी सेना व्यूहाकार में संनद्ध करने की आज्ञा दी। पश्चात् अत्यंत निर्भयतापूर्वक कौरवसभा में प्रवेश कर इसने दुर्योधन एवं उसके मित्रों की अत्यंत कटु आलोचना की। कृष्ण जैसे पाण्डवों के राजदूत को कैदी बनाने का दुर्योधन का षड्यंत्र इस प्रकार विफल हुआ।

भारतीय युद्ध में--इस युद्ध के पहले दस दिनों में इसने निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध कर अत्यधिक पराक्रम दिखाया था :--१. शकुनि (म. भी. ५४.८-९); २. भूरिश्रवस् एवं अलंबुस (म. भी. ५९-६०); ३. कृतवर्मन्, भीष्म, दुर्योधन, भगदत्त एवं अश्वत्थामन्।

द्रोण के सैनापत्यकाल में--भारतीय युद्ध के बारहवें दिन इसने द्रोण के साथ घनघोर युद्ध किया था, एवं उसके एक सौ एक धनुष्यों को खण्डित कर ध्वस्त कर दिया। इसके युद्धकौशल्य से प्रसन्न हो कर, द्रोण ने इसे स्वयंस्फूर्ति से परशुराम, कार्तवीर्य, अर्जुन एवं भीष्म के समान श्रेष्ठ धनुर्धर के नाते संबोधित किया--

एतदस्त्रबलं रामे कार्तवीर्ये धनंजये।
भीष्मे च पुरुषव्याघ्रे यदिदं सात्वतां वरे॥
(म. द्रो. ७३.३७)।

पश्चात् युधिष्ठिर के आदेश से, यह द्रोण से युद्ध छोड़ कर अर्जुन की सहायता के लिए चला गया (म. द्रो. ८५.३९-६८)। जयद्रथवध के दिन युधिष्ठिर की रक्षा का भार इस पर सौंपा गया था। किन्तु अर्जुन को संकट में देख कर इसने भीम को युधिष्ठिर की रक्षा करने के लिए कहा, एवं यह अर्जुन की सहायता के लिए दौड़ा। उस दिन इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ :--१. कृतवर्मन् (म. द्रो. ८६.८८); २. दुःशासन; ३. भूरिश्रवस् (म. द्रो. ११७; १६९.२४) ४. दुर्योधन (म. द्रो. १६४.२८); ५. कर्ण (म. द्रो. ३१.६७)।

उपर्युक्त युद्धों में से बहुत सारे युद्धों में यह अजेय रहा। केवल भूरिश्रवस् ने इसे पराजित किया, एवं इसके बालों को पकड़ कर वह इसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। उस समय अर्जुन ने पीछे से आ कर उसके दोनों हाथ तोड़ दिये। बाद में भूरिश्रवस् आमरण अनशन करने लगा, तब इसने उसका वध किया। इस प्रकार अपने दस पुत्रों का वध करनेवाले भूरिश्रवस् से इसने बदला ले लिया।

कर्ण के सैनापत्यकाल में--इस काल में इसने निम्नलिखित योद्धाओं से युद्ध कर काफ़ी पराक्रम दिखाया:--१. केकय राजकुमार विंद एवं अनुविंद (म. क. ९ २०); २. कर्ण (म. क. २१.२४); ३. वृषसेन (म. क. ३२.४१); ४. शकुनि (म. क. ४१.३१-४५); ५. कर्णपुत्र प्रसेन (म. क. ६०.४)।

भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन--युद्ध के अंतिम दिन इसने क्षेमधूर्ति एवं म्लेच्छराज शाल्व का वध किया (म. श. २०.८-२५)। संजय को जीवित पकड़ कर यह उसे मारने के लिए उद्यत हुआ, किंतु श्रीव्यास की आज्ञा से इसने उसे छोड़ दिया (म. श. २८.३८)।

पराक्रम--भारतीय युद्ध में कृष्ण एवं अर्जुन के बाद सब से अधिक पराक्रम सात्यकि ने ही दिखाया। इसी कारण संजय ने धृतराष्ट्र से कहा था, 'कृष्ण एवं अर्जुन के अतिरिक्त, सात्यकि के समान अन्य कोई भी धनुर्धर पाण्डवसेना में नहीं है' (म. द्रो. १२२.७३)।

जयद्रथवध के पश्चात् कृष्ण ने भी इसकी अत्यधिक प्रशंसा की थी, जहाँ उसने कहा था, 'सात्यकि के समान कोई भी योद्धा पाण्डव एवं कौरवसेना में नहीं है (यस्य नास्ति समो योधः कौरवेषु कथंचन) (म. द्रो. ११६.११.२५)।

भारतीय युद्ध के पश्चात्--युद्ध के उपरान्त यह कृष्ण के साथ द्वारका गया, एवं रैवतक पर्वत पर होनेवाले महोत्सव में सम्मिलित हुआ (म. आश्व. ५८.४)। युधिष्ठिर के द्वारा किये गये अश्वमेधीय यज्ञ में भी यह उपस्थित था।

मृत्यु--भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष के जो थोडे वीर बचे थे, उन में यह एक था। इस युद्ध के पश्चात् यह कई साल तक जीवित रहा।

प्रभास क्षेत्र में हुए यादवी युद्ध के समय, अन्य यादवों के समान इसने भी 'मैरेयक' नामक मद्य का सेवन किया, एवं आपस में लड़ना झगड़ना इसने शुरू किया। उस समय इसका पुरातन शत्रु कृतवर्मन् इससे वाद-विवाद करने लगा। उस समय कृतवर्मन् ने कृष्ण के द्वारा किये गये स्यमंतक मणि के अपहरण की चर्चा प्रारंभ की। कृतवर्मन की ये बाते सुन कर सत्यभामा रोने लगी। उसे रोती देख कर यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं इसने कृतवर्मन् का शिरच्छेद किया (म. मौ. ४.२७)।

कृतवर्मन् के वध के उपरांत इसने अन्य यादवों का वध करना प्रारंभ किया। कृष्ण ने इसे बहुत रोका, किन्तु इसने उसकी एक न सुनी। इसे सभी यादवों को मारते देख कर उन्होंने इस पर सामूहिक हमला किया, एवं अन्य कोई शस्त्र प्राप्त न होने पर जूठे बर्तनों से ही इसे मारना शुरु किया। इसे इस प्रकार फँसा हुआ देख कर कृष्णपौत्र प्रद्युम्न इसे बचाने के लिए बीच में कूद पड़ा, एवं ये दोनों यादवों के द्वारा मारे गये (म. मौ. ४.३४)।

परिवार--महाभारत में इसके पुत्र का नाम यौयुधानि दिया गया है। इसकी मृत्यु के पश्चात् अर्जुन ने उसे

सरस्वती नदी के तट पर स्थित प्रदेश का राजा बनाया (म. मौ. ८.६९; सरस्वती देखिये)।

अन्य पुराणों में इसके पुत्र का नाम निम्नप्रकार बताया गया है :--जय (भा. ९.२४.१४); असंग (मत्स्य. ४६.२३); भूति (वायु. ९६.१००)।

सात्यमुग्र—सामवेद का एक शाखा प्रवर्तक आचार्य, जिसका निर्देश सामवेद के उपकर्मांग तर्पण में प्राप्त है। पाठभेद-'शात्यमुग्र', 'साह्यमुग्र'।

सात्यमुग्री--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सात्ययज्ञ—एक आचार्य, जिसका निर्देश याज्ञवल्क्य एवं वार्ष्ण नामक आचार्यों के बीच हुए संवाद में प्राप्त है (श. ब्रा. ३.१.१.४)।

सात्ययज्ञि—सोमशुष्म नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११.६.२.१-३)।

२. एक आचार्यसमूह, जिसका निर्देश शैलन एवं कारीरादि नामक आचार्य परंपराओं के साथ प्राप्त है (जै. उ. ब्रा. २.४.५)।

सात्यरथि—(सू. निमि) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सत्यरथ राजा का पुत्र था।

सात्यहव्य वासिष्ठ--एक आचार्य, जो अत्यराति जानन्तपि एवं देवभाग श्रौतर्षि नामक आचार्यों का समकालीन था (ऐ. ब्रा. ८.२३.९; तै. सं. ६.६.२.२)। उपर्युक्त आचार्यों में से देवभाग से इसका मंत्रपठन के संबंध में संवाद हुआ था। सत्यहव्य का वंशज होने से इसे 'सात्यहव्य' पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा।

सात्राजित—शतानीक नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ८.२१.५; श. ब्रा. १३.५.४.१९)।

सात्वत--विष्णु का एक पार्षद।

२. (सो. क्रोष्टु.) यादवकुलोत्पन्न एक राजा, जो भागवत के अनुसार आयु राजा का, वायु के अनुसार सत्व राजा का, मत्स्य के अनुसार जन्तु राजा का, एवं विष्णु के अनुसार अंश राजा का पुत्र था। यह स्वयं एक 'वंशकर' राजा था, जो सात्वत राजवंश का मूल पुरुष माना जाता है। सुविख्यात यादव योद्धा 'सात्यकि' इसके ही वंश में उत्पन्न हुआ था। पुराणों में इसके नाम के लिए 'सात्वत' (भा. ९.२४.६) एवं 'सत्वत' (विष्णु. ४.१३.१; ह. वं. १.३७.१) ये दोनों पाठ प्राप्त है।

इसके निम्नलिखित सात पुत्र थेः-- १. भजमान; २. भाजि; ३. दिव्य; ४. वृष्णि; ५. देवावृध; ६. अंधक; ७. महाभोज। इन पुत्रों में से भजमान इसके पश्चात् राजगद्दी पर बैठा।

सात्वत धर्म--इस धर्मपरंपरा का यह प्रमुख संवर्धक माना जाता है। महाभारत में सात्वत-धर्म एवं उसकी परंपरा सविस्तृत रूप में प्राप्त है, जहाँ ब्रह्मा से ले कर इक्ष्वाकु तक के इस पंथ के प्रमुख संवर्धकों की जानकारी दी गयी है। हरिगीता नामक ग्रंथ में सात्वत धर्मतत्त्वों की जानकारी दी गयी है (म. शां. ३३६.३१-४९)।

३. भगवान् कृष्ण का एक नामांतर (म. शां. ३४२.७७)। इसके ही नाम से कृष्ण का एक उपासना संप्रदाय सात्वत-धर्म नाम से सुविख्यात हुआ था (सात्वत २. देखिये)।

साद्मसुग्रीवि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साधक--एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष से हुए देवासुर संग्राम में वायु के द्वारा मारा गया (पद्म. सृ. ७५)।

साधन भौवन--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १५७)।

साधित--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार एवं ऋषिगण।

साधु—एक वैश्य, जिसकी कथा 'सत्यनारायण-व्रत' एवं उसके प्रसाद का माहात्म्य कथन करने के लिए भविष्य एवं स्कंद पुराण में दी गयी है (भवि. प्रति. २. २९; स्कंद. रे. ३)। वर्तमान स्कंदपुराण के रेवाखंड में इसकी कथा अप्राप्य है।

साधु द्विज—शिव का एक अवतार, जो हिमालय एवं मैनाक पर्वतों की तपस्या में बाधा डालने के लिए उत्पन्न हुआ था।

इस अवतार के संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा शिवपुराण में प्राप्त है। एक बार हिमालय एवं मैनाक पर्वतों ने अत्यंत कठोर शिवोपासना प्रारंभ की। उस तपस्या को देख कर देव एवं ऋषियों के मन में डर उत्पन्न हुआ कि, अगर हिमालय को मोक्षप्राप्ति होगी, तो इस संसार की अत्यंत हानि होगी। इस कारण, उनकी तपस्या में बाधा डालने की प्रार्थना उन्होंने शिव से की।

इस प्रार्थना के अनुसार, साधु नामक ब्राह्मण का वेष धारण कर शिव हिमालय के पास गया, एवं वहाँ शिव की यथेष्ट निंदा कर, इसने हिमालय को शिवभक्ति से निवृत्त किया (शिव. शत. ३५)।

साध्य—एक देवतासमूह, जो धर्म एवं साध्या के पुत्र माने जाते हैं। छांदोग्योपनिषद् में जिन पाँच प्रमुख

देवता-समूहों का निर्देश प्राप्त है, वहाँ इनका निर्देश वसु, रुद्र, आदित्य, एवं मरुतों के साथ किया गया है (छां. उ. ३.६-१०)। वहाँ इनकी अधिष्ठात्री देवता ब्रह्मा बताया गया है। ऋग्वेद में भी इन देवताओं का अस्पष्ट निर्देश प्राप्त है (ऋ. १०.९०.१६)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इनकी उत्पत्ति ब्रह्मा के मुख से बतायी गयी है। विभिन्न मन्वंतरों में इनके विभिन्न अवतार दिये गये हैं। जो निम्नप्रकार हैं:- १. स्वायंभुव मन्वंतर-जित देव; २. तामस मन्वंतर-हरि देव; ३. रैवत मन्वंतर- वैकुंठ देव; ४. स्वारोचिष मन्वंतर- तुषित देव; ५. उत्तम मन्वंतर- सत्य देव; ६. चाक्षुष मन्वंतर-छांदज देव; ७. वैवस्वत मन्वंतर-साध्य देव। वैवस्वत मन्वंतर में उत्पन्न हुए आदित्य भी इन्हींके ही अवतार माने गये हैं (ब्रह्मांड. ३.३.८-१२)।

वसु नामक सुविख्यात देवगण इनके भाई हैं, एवं ये स्वयं भुवर्लोक में रह कर गौ देवता की उपासना करते हैं (मत्स्य. १५.१५)। इनका प्रमुख अधिष्ठात्री देवता नारायण है।

नामावलि--चाक्षुष एवं वैवस्वत मन्वंतरों में उत्पन्न हुए साध्य-देवों की नामावलि पौराणिक साहित्य में निम्न-प्रकार दी गयी है:- १. मनस् २. अनुमन्तृ, ३. प्राण; ४. नर; ५. नारायण; ६. वृत्ति (वीति); ७. तपस (अपान); ८. हय; ९. हंस; १०. विभु; ११. प्रभु; १२. धर्म (नय) (मत्स्य. २०३.११; सांब. १८)।

महाभारत में—इस ग्रंथ में इन्हें यज्ञ एवं शुभ कार्यों से संबंधित देवतागण माना गया है, एवं निम्नलिखित प्रसंगों पर इनके उपस्थिति का निर्देश वहाँ प्राप्त है :— १. नैमिषारण्य द्वादशवर्षीय सत्र; २. मरुत्त आविक्षित राजा का यज्ञ; ३. अर्जुन एवं स्कंद के जन्मोत्सव; ४. अमृत के लिए गरुड एवं देवताओं का युद्ध; ५. अर्जुन के द्वारा किया गया खांडववनदाह-युद्ध; ६. स्कंद-तारकासुरयुद्ध ७. कर्णार्जुन युद्ध।

२. चाक्षुष मनु के पुत्रों में से एक (भा. ६.६.१५)।

३. एक रुद्रगण, जिसमें ८४ करोड़ रुद्रोपासक समाविष्ट थे। रुद्र के ये सारे उपासक तीन नेत्रोंवाले (त्रिनेत्र) थे (मत्स्य. ५.३१)।

४. शततेजस् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

साध्या--दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्मऋषि की दस पत्नियों में से एक थी। साध्यगणों के देव इसीके ही पुत्र माने जाते हैं (भा. ६.६.४-७)।

सानुप्रस्थ--रामसेना का एक वानर।

सांदीपनि (सांदीपन)—अवंती में रहनेवाला एक कश्यपकुलोत्पन्न ब्राह्मण, जो कृष्ण एवं बलराम का गुरु था। यह अवंती नगरी में रहता था, एवं इसके आश्रम का नाम 'अंकपाद' था (भा. ३.३.२; १०.४५.३१; पद्म. उ. २४६)।

कृष्ण एवं बलराम का उपनयन होने के पश्चात् वे दोनों इसके आश्रम में विद्यार्जन के लिए रहने लगे। इसने उन्हें वेद, उपनिषद, धनुर्वेद, राजनीति, चित्रकला, गणित, गांधर्व-वेद, गजशिक्षा, अश्वशिक्षा आदि ६४ कलाएँ सिखायी।

यह धनुर्वेद का श्रेष्ठ आचार्य था। इसने श्रीकृष्ण एवं बलराम को दस अंगों से युक्त धनुर्वेद का ज्ञान प्राप्त कराया। कृष्ण एवं बलराम का विद्यार्जन समाप्त होने पर इसने उन्हें गुरुदक्षिणा के रूप में समुद्र में डूबे हुए अपने मृत पुत्र को पुनः जीवित कर देने की माँग की। तदनुसार कृष्ण ने इसका मृतपुत्र पुनः जीवित कराया (म. स. परि. १.२१.८५७-८७९; विष्णु. ५.१)।

साप्य--नमी नामक आचार्य का पैतृक नाम (ऋ. ६. २०.६)।

सामलोमकि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सामश्रवस्--याज्ञवल्क्य वाजसनेय का एक शिष्य (बृ. उ. ३.१.२)।

याज्ञवल्क्य ने इसे अपनी 'स्मृति' की शिक्षा प्रदान की थी। मॅक्स म्यूलर इसे स्वयं याज्ञवल्क्य की उपाधि मानते है, किन्तु इसके याज्ञवल्क्य का शिष्य ही होने की संभावना अधिक है।

सामश्रवस—कुशीतक नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १७.४.३)।

सामुकि--यामुनि नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सांब--एक सुविख्यात यादव राजकुमार, जो कृष्ण एवं जांबवती के पुत्रों में से एक था (म. आ. १७७. १६; स. ४.२९; भा. १०.६१.११)। विष्णु में इसे कृष्ण एवं रुक्मिणी का पुत्र कहा गया है, किन्तु यह असं-भव प्रतीत होता है। यह अत्यंत स्वरूपसुंदर, एवं स्वैराचरणी था।

जन्म--उपमन्यु ऋषि के आदेशानुसार कृष्ण ने पुत्र-प्राप्ति के लिए शिव की उपासना की थी, जिससे आगे चल कर इसका जन्म हुआ। इस कारण इसे 'सांब' नाम

प्राप्त हुआ। भागवत में इसे शिवपुत्र गुह का अवतार कहा गया है (भा. १.१०.२९)।

पराक्रम--यह अत्यंत पराक्रमी था, एवं कृष्ण के द्वारा किये गये बहुत सारे युद्धों में इसने भाग लिया था। यादव सेना के साथ इसने बाणासुर की नगरी पर आक्रमण किया था, एवं बाणासुर के पुत्र के साथ युद्ध किया था (भा. १०.६१.२६)। शाल्व के आक्रमण के समय इसने द्वारका नगरी का रक्षण किया था (भा. १०.६८.१-१२)। इस समय शाल्व के सेनापति क्षेमधूर्ति के साथ इसका घमासान युद्ध हुआ था। कृष्ण के अश्वमेधीय अश्व के साथ भी यह उपस्थित था।

द्रौपदीस्वयंवर के लिए उपस्थित राजाओं में यह भी शामिल था (म. आ. ९७७.१६)। रैवतक पर्वक पर अर्जुन के द्वारा किये गये सुभद्राहरण के समय यह उपस्थित था (म. आ. २११.९)।

लक्ष्मणा का हरण--दुर्योधनकन्या लक्ष्मणा के स्वयंवर के समय इसने उसका हरण किया। उस समय कौरवों ने इसे कैद किया। यह वार्ता सुनते ही बलराम समस्त यादवसेना के साथ इसकी सहायतार्थ दौड़ा। पश्चात् बलराम के युद्धसामर्थ्य से घबरा कर दुर्योधन ने इसकी लक्ष्मणा से विवाह को संमति दे दी (भा. १०.६८)।

प्रभावती का हरण--सुपुर नगरी के व्रजनाभ नामक राजा के प्रभावती नामक कन्या का इसने हरण किया। तद्‌हेतु यह अपने भाई प्रद्युम्न के साथ-नाटक मंडली का खेल ले कर सुपुर नगरी में गया। वहाँ इन्होंने 'रम्भाभिसार' 'कौबेर' आदि नाट्यकृतियों का प्रयोग किया, जिनमें प्रद्युम्न ने नायक का, एवं इसने विदूषक का काम किया था (ह. वं. २.९३)। पश्चात् इसने प्रभावती का हरण किया।

दुर्वासस् का शाप--यह शुरू से ही अत्यन्त शरारती था, एवं इसकी कोई न कोई हरकत हमेशा चलती ही रहती थी। एक बार इसके सारणादि मित्रों ने इसे स्त्री वेश में विभूषित किया, एवं इसे दुर्वासस् ऋषि के पास ले जा कर झूठी नम्रता से कहा 'यह बभ्रु यादव की पत्नी गर्भवती है। आप ही बतायें कि, इसके गर्भ से क्या उत्पन्न होगा?'। यदुपुत्रों की इन जलील हरकतों से क्रुद्ध हो कर दुर्वासस् ने कहा, 'श्रीकृष्ण का यह पुत्र सांब लोहे का एक भयंकर मूसल उत्पन्न करेगा, जो समस्त वृष्णि एवं अंधक वंश का संपूर्ण विनाश कर देगा।

मौसल युद्ध--दूसरे दिन, सुबह होते ही इसके पेट से लोहे का मूसल उत्पन्न हुआ। यादव लोगों ने इस मूसल का नाश करने का काफ़ी प्रयत्न किया, किन्तु उससे कुछ फ़ायदा न हो कर, इसी मूसल से इसका एवं समस्त यादवों का नाश हुआ। प्रभास क्षेत्र में मैरेयक नामक मद्य पीने के कारण इसकी स्मृति नष्ट हुई, एवं उसी क्षेत्र में हुए मौसल युद्ध में अपने भाई प्रद्युम्न से लड़ते लड़ते इसकी मृत्यु हुई (भा. ११.३०.१६)।

सूर्योपासना--अत्यंत स्वरूपसंपन्न होने के कारण यह अत्यंत स्वैराचारी था, यहाँ तक कि, कृष्ण की कई पत्नियाँ एवं इसकी सापत्न माताएँ इस पर अनुरक्त थीं। अपने पुत्र एवं पत्नियों के दुराचरण की यह बात कृष्ण को नारद के द्वारा ज्ञात हुई। इस कारण क्रुद्ध हो कर, उसने इसे कुष्ठरोगी होने का, एवं अपनी पत्नियों को चोर लुटेरों के द्वारा भगाये जाने का शाप प्रदान किया। तदनुसार, यह कुष्ठरोगी बन गया, एवं द्वारका नगरी डूब जाने के पश्चात् कृष्णस्त्रियों का आभीरों के द्वारा अपहरण किया गया।

तत्पश्चात् कुष्ठरोग से मुक्ति प्राप्त करने के लिए, नारद के सलाह के अनुसार इसने सूर्योपासना प्रारंभ की, एवं इस प्रकार यह कुष्ठरोग से मुक्त हुआ। इसके सूर्यतपस्या का स्थान चंद्रभागा नदी के तट पर स्थित सांबपुर (मूलस्थान) था, जिस नगरी की स्थापना इसने ही की थी। सूर्य की उपासना करने के लिए इसने मग नामक ब्राह्मण शाकद्वीप से बुलवाया (सांब. ३; भवि. ब्राह्म. ६६.७२-७३; ७५; १२७; स्कंद. ४.१.४८; ६.२१३; मग देखिये)। इसकी मृत्यु के पश्चात् मग ब्राह्मण मूलस्थान में ही निवास करने लगे। मूलस्थान का यह प्राचीन सूर्य मंदिर, एवं वहाँ स्थित मग ब्राह्मण भारत में आज भी ख्यातनाम हैं।

२. एक अंत्यज, जिसकी कथा, गणेश-उपासना का माहात्म्य बताने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. १.५९)।

३. चक्रपाणि राजा का प्रधान, जिसकी कथा गणेश उपासना का माहात्म्य बताने के लिए गणेश पुराण में दी गयी है (गणेश. २.७३.१३)।

४. एक सदाचारी ब्राह्मण, जिसने धृतराष्ट्र के वनगमन के समय प्रजा की ओर से उसे सांत्वना प्रदान की थी (म. आश्र. १५.११)।

सांमद मत्स्य-एक वैदिक सूक्तद्रष्टागण (ऋ. ८.६७)।

सायक जानश्रुतेय-एक आचार्य, जो जनश्रुत काण्ड्विय नामक आचार्य का शिष्य था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सायकायन—श्यापर्ण नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १०.३.६.१०; ५.२.१)।

२. एक आचार्य, जो कौशिकायनि नामक आचार्य का शिष्य, एवं काशायण नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ४.६.३ काण्व.)।

सायकायनि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सायम्-एक राजा, जो पुष्पार्ण एवं प्रभा का पुत्र था।

२. एक आदित्य, जो धातृ आदित्य एवं कुहू का पुत्र था (भा. ६.१८.३)।

सारंग-एक गोप, जिसकी कन्या का नाम रंगवेणी था।

सारण--(सो. वसु.) एक सुविख्यात योद्धा, जो वसुदेव एवं रोहिणी के पुत्रों में से एक था। इसके निम्नलिखित पुत्र थेः-- १. मार्ष्टि; २. मार्ष्टिमत्; ३. शिशु; ४. सत्यधृति (विष्णु. ४.१५.१४)।

२. रावण का एक अमात्य एवं गुप्तचर (वा. रा. यु. ५; म. व. २६७.५२; शुक देखिये)।

३. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

सारमेय—(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो श्वफल्क एवं गांदिनी के पुत्रों में से एक था (भा. ९. २४. १६)।

२. सरमा नामक कुतिया के वंशजों का सामूहिक नाम (ब्रह्मांड. ३.७.३१३; सरमा देखिये)।

सारवाह—अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सारस—गरुड की प्रमुख संतानों में से एक (ब्रह्मांड. ३.७.४५६)।

२. (सो. यदु.) यदु राजा का एक पुत्र, जिसने दक्षिण भारत में वेणा नदी के तट पर स्थित क्रौंचपूर नामक नगरी की स्थापना की। आगे चल कर यही क्रौंचपूर 'वनवासी' नाम से प्रसिद्ध हुआ (ह. वं. २.३८.२७)।

सारस्वत—एक ऋषि, जो दधीचि ऋषि का पुत्र था। दधीचि ऋषि की तपस्या को भंग करने के लिए इंद्र ने अलंबुषा नामक अप्सरा को भेज दिया। उसे देख कर दधीचि ऋषि का वीर्य सरस्वती नदी के किनारे स्खलित हुआ। आगे चल कर उसी वीर्य से सरस्वती नदी को एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे सरस्वती नदी का पुत्र होने के कारण 'सारस्वत' नाम प्राप्त हुआ।

दधीचि ऋषि के आत्मसमर्पण के पश्चात् लगातार बारह वर्षों तक भारतवर्ष में अकाल पड़ा। इस समय सरस्वती नदी के तट पर रहनेवाले बहुत सारे ऋषि अन्न के शोधार्थ इधर उधर घूमने लगे। केवल एक सारस्वत मात्र सरस्वती नदी के किनारे वेदाभ्यास करता हुआ रह गया। इस प्रकार देश के बाकी सारे ऋषियों ने वेदाभ्यास छोड़ कर मुसाफिर जीवन अपनाया था, उस समय इसने वेदाभ्यास की परंपरा जीवित रखी। अकाल के बारह वर्षों में यह नदी में प्राप्त मछलियों पर निर्वाह करता था।

अकाल समाप्त होने पर सारे ऋषियों के मन में वेदाध्ययन करने की इच्छा उत्पन्न हुई। उस समय केवल सारस्वत के ही वेदविद्या पारंगत होने के कारण, समस्त ऋषिसमुदाय शिष्य के नाते इसके आश्रम में उपस्थित हुआ। इस प्रकार साठ हज़ार ऋषियों को इसने वेदविद्या सिखायी (म. श. ५०)।

सारस्वत तीर्थ--आगे चल कर इसके आश्रम का स्थान 'सारस्वत तीर्थ' नाम से प्रसिद्ध हुआ। उस स्थान को तुंगकारण्य नामान्तर भी प्राप्त था (म. व.८३.४३-५०)।

सारस्वतपाठ—तैत्तिरीय संहिता की दो अध्ययन पद्धति प्राचीनकाल में प्रचलित थी, जो 'काण्डानुक्रमपाठ' एवं 'सारस्वतपाठ' नाम से सुविख्यात थी। उनमें से 'काण्डानुक्रमपद्धति' का आज लोप हो चुका है एवं सारस्वत ऋषि के द्वारा प्राप्त 'सारस्वतपाठ' ही आज सर्वत्र प्रचलित है।

सारस्वतपाठ की स्फूर्ति इसे किस प्रकार हुई इस संबंध में एक आख्यायिका 'संस्काररत्नमाला' में प्राप्त है। एक बार दुर्वास ऋषि के द्वारा दिये गये शाप के कारण सरस्वती नदी लुप्त हुई, एवं तत्पश्चात् मानवीय रूप धारण कर, आत्रेयवंशीय एक ब्राह्मण के घर अवतीर्ण हुई। पश्चात् उसी ब्राह्मण से सरस्वती नदी को सारस्वत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

पश्चात् सरस्वती नदी ने इसे संपूर्ण वेदविद्या सिखायी, एवं इसे कुरुक्षेत्र में तप करने के लिए कहा। इसी तपस्या में तैत्तिरीय संहिता का एक स्वतंत्र क्रमपाठ इसे प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर इसने अपने सारे शिष्यों को सिखाया। पश्चात् इसके इस पाठ को शास्त्रमान्यता एवं लोकमान्यता भी प्राप्त हुई (संस्काररत्नमाला पृ. ३०२)।

२. जैगीषव्य नामक शिवावतार का एक शिष्य (वायु. २३.१३९)।

३. भार्गवकुलोत्पन्न एक मंत्रकार एवं गोत्रकार।

४. स्वायंभुव मन्वन्तर का एक व्यास। यह ब्रह्मा का पौत्र एवं सरस्वती नदी का पुत्र था। इसे 'अपांतरतम',

'वेदाचार्य एवं 'प्राचीनगर्भ' नामान्तर भी प्राप्त थे। इसने स्वायंभुव मन्वन्तर में वेदविभाजन का कार्य अत्यंत यशस्वी प्रकार से किया (म. शां. ३३७.३७-३९; ६६; व्यास पाराशर्य देखिये)।

अन्य पुराणों में इसे वैवस्वत मन्वन्तर का व्यास कहा गया है। इसे वसिष्ठ ऋषि ने वायुपुराण सिखाया था, जो इसने आगे चल कर अपने त्रिधामन् नामक शिष्य को प्रदान किया था (वायु. १०३.६०)।

५. एक आचार्य, जो कौशिक ऋषि के सात शिष्यों में से एक था (अ. रा. ७)।

६. पश्चिम दिशा में निवास करनेवाला एक ऋषि, जो अत्रि ऋषि का पुत्र का था (म. शां. २०१.३०)।

७. तुंगकारण्य में निवास करनेवाला एक ऋषि, जिसने अपने अनेकानेक शिष्यों को वेदविद्या सिखायी (पद्म. स्व. ३९)।

८. एक लोकसमूह, जो पश्चिम भारत में निवास करता था (भा. १.१०.३४)।

सारिक—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.११)।

सारिमेजय—वृष्णिकुल में उत्पन्न एक यादव (म. आ. १७७.१८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'सारमेजय'।

सारिसृक्क शार्ङ्ग—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४२.५-६)। महाभारत में इसे 'सारिसृक्क' कहा गया है, एवं इसे मंदपाल ऋषि एवं जरितृ शार्ङ्गी का पुत्र बताया गया है।

खांडववनदाह के समय इसने अग्नि की स्तुति की, जिस कारण प्रसन्न हो कर अग्नि ने इसे दाह से मुक्त किया (म. आ. २२३.३)।

सार्ञ्जय—एक संजय राजा, जिसका निर्देश ऋग्वेद की एक दानस्तुति में प्राप्त है (ऋ. ६.४७.२५)। यह भरद्वाजों का आश्रयदाता था (श. ब्रा. २.४.४.४; १२. ८.२.३)।

२. एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित आचार्यों के लिए प्रयुक्त किया गया है:— १.प्रस्तोक (सां. श्रौ. १६.११.११); २. सहदेव (ऐ. ब्रा. ७.३.४); ३ सुप्लन् (श. ब्रा. २.४.४.४.४)। किंतु सायणाचार्य सहदेव एवं सार्ञ्जय को विभिन्न व्यक्ति मानते है।

सार्धनेमि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्धसुग्रीवि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्पराज्ञी—सर्पराज्ञी नामक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री का नामांतर (पं. ब्रा. ४.९.४; कौ. ब्रा. २७.४)।

सार्पि—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सार्वभौम—(सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सुधर्मन् राजा का, एवं वायु के अनुसार सुवर्मन् राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७१; वायु. ९९. १८६)।

२. (सो. कुरु.) एक राजा, जो विदूरथ राजा का पुत्र, एवं जयसेन (जयत्सेन) राजा का पिता था (भा. ९. २२.१०)।

३. (सो. पूरु.) एक राजा, जो अहंयाति राजा एवं भानुमती का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम सुंदरा था, जिससे इसे जयत्सेन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६३.१५)।

४. सावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार, जो देवगुह्य एवं सरस्वती का पुत्र था (भा. ८.१३.१७)।

सार्वसेनि—शौचेय नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. ७.१.१०.३)।

सालकटंकट—अलंबुस नामक राक्षस का नामांतर।

सालकटंकटा—विद्युत्केश राक्षस की पत्नी, जिसकी माता का नाम संध्या था (वा. रा. उ. ४.२३)।

सालकटंकटी—हिडिंबा राक्षसी का नामांतर (म. आ. १४३.१५५६*; पंक्ति ६)।

सालंकायन—विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

सालिमंजरिसत्य-एक आचार्य, जो वायु के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था।

साल्व—एक प्राचीन लोकसमूह, जिसका निर्देश प्राचीन साहित्य में प्रायः सर्वत्र मत्स्य लोगों के साथ प्राप्त है। आधुनिक दक्षिण पंजाब एवं दक्षिण राजस्थान में अल्वार प्रदेश में ये लोग बसे हुए थे।

इन लोगों का प्राचीनतम निर्देश गोपथ ब्राह्मण में प्राप्त है, जहाँ इन्हें मत्स्य लोगों के साथ संबंधित किया गया है (गो. ब्रा. १.२.९)। पाणिनि के व्याकरण में भी इन लोगों का निर्देश प्राप्त है (पा. सू. ४.१.१७३; २.१३५)।

महाभारत के अनुसार, ये लोग कुरुक्षेत्र के समीप बसे हुए थे, एवं इनकी राजधानी शाल्वपुर (सौभगणनगर) नगर में थी। भारतीय युद्ध में ये लोग मत्स्य, केकय, अंबष्ठ, त्रिगर्त आदि लोगों के साथ कौरवपक्ष में शामिल थे, एवं इनकी गणना भीष्म के सैन्य में की जाती थी।

इन लोगों के समूह में निम्नलिखित लोग शामिल थे:- १. उदुंबर; २. तिलखल; ३. मद्रक; ४. युगंधर; ५. भूलिंग; ६. शरदण्ड (काशिका)

सालडि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सावर्ण—युधिष्ठिरसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१३)।

सावयस—अषाढ (आषाढ) नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १.१.१.७)।

सावर्णि—सावर्णि नामक आठवें मन्वन्तर के अधिपति मनु का पैतृक नाम (ऋ. १०.६२.११)। सवर्णा नामक स्त्री के वंशज होने के कारण उसे यह पैतृक नाम प्राप्त हुआ होगा (मनु सावर्णि देखिये)। रौथ के अनुसार 'सवर्णा' सूर्यपत्नी सरण्यू का ही नामान्तर होगा। इस पैतृक नाम का 'सावर्ण्य' एवं 'सांवरणि' पाठ भी ऋग्वेद में प्राप्त हैं (ऋ. १०.६२.९)। महाभारत में इस पैतृक नाम का 'सौवर्ण' नामान्तर प्राप्त है (म. अनु. १८.४३)।

पौराणिक साहित्य में भी 'सावर्णि' मनु राजा का मातृक नाम बताया गया है, एवं यह मातृक नाम सवर्णा का पुत्र होने के कारण इसे प्राप्त हुआ था ऐसा भी निर्देश वहाँ प्राप्त है (विष्णु. ३.२.१३; ब्रह्म. ६.१९)। किन्तु अन्य पुराणों में इसकी माता का नाम सवर्णा नहीं, बल्कि 'छाया' अथवा 'मृण्मयी' दिया गया है (भा. ६.६.४१; मार्क. ७५.३१; म. अनु. ५३.२५ कुं.)।

इसके बडे भाई का नाम श्राद्धदेव था, जो सातवें मन्वन्तर का अधिपति मनु था। अपने ज्येष्ठ बन्धु के वर्ण के समान होने के कारण इसे सावर्णि उपाधि प्राप्त हुई, ऐसी भी चमत्कृतिपूर्ण कथा कई पुराणों में प्राप्त है, किन्तु वह कल्पनारम्य प्रतीत होती है। वायु में इसका सही नाम 'श्रुतश्रवस्' दिया गया है (वायु. ८४.५१)। मनु सावर्णि राजा पूर्वजन्म में चैत्रवंशीय सुरथ नामक राजा था (दे. भा. १०.१०; मार्क. ७८.३; सुरथ १३. देखिये)।

२. सत्ययुग में उत्पन्न एक ऋषि, जिसने छः हजार वर्षों तक शिव की उपासना की थी। इस तपस्या के कारण शिव ने प्रसन्न हो कर इसे विख्यात ग्रंथकार होने का, एवं अजरामर होने का आशीर्वाद प्रदान किया था (म. अनु. ४५. ८७ कुं.)। पश्चात् यह इंद्रसभा का सदस्य भी बन गया था (म. स. ७.९)।

३. एक ग्रंथकर्ता ऋषि, जो कृतयुग में उत्पन्न हुआ था।

४. एक आचार्य, जिसका निर्देश उपकर्मांगतर्पण में प्राप्त है।

सावर्णि सौमदत्ति—एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१.५६)।

सावर्णिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सावर्ण्य—मनु सावर्णि राजा के 'सावर्णि' पैतृक नाम का नामान्तर (सावर्णि १. देखिये)।

सावित्र—ग्यारह रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.३०)।

२.—कर्ण का नामान्तर (सावित्री ५. देखिये)।

सावित्र वसु—अष्टवसुओं में से एक, जिसने रावण के पितामह सुमालिन् का वध किया था (वा. रा. उ. २७.४३-५०)।

सावित्री—मद्र देशाधिपति अश्वपति राजा की कन्या, जो शाल्व देश के सत्यवत् राजा की पत्नी थी। अपने पातिव्रत्य प्रभाव के कारण इसने अपने अल्पायु पति के प्राण साक्षात् यमधर्म से पुनः प्राप्त किये, जिस कारण यह प्राचीन भारतीय साहित्य में पातिव्रत्यधर्म की अमर प्रतिमा बन चुकी है। तैत्तिरीय ब्राह्मण में भी सावित्री नाम का निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, सावित्री की कथा ब्राह्मण ग्रंथों के रचनाकाल में किसी रूप में अस्तित्व में थी (सीता सावित्री देखिये)।

जन्म—इसकी माता का नाम मालती (मालवी) था। वसिष्ठ ऋषि की आज्ञा से इसके पिता ने गायत्री मंत्र का दस लाख बार जाप किया, जिस कारण इसका जन्म हुआ।

विवाह—यह अत्यंत स्वरूपसुंदर थी, एवं इसका पिता अत्यंत धनसंपन्न था। इस कारण इसके साथ विवाह करने में सभी राजपुत्र डरते थे। अतः पति-संशोधनार्थ यह स्वयं निकल पड़ी, एवं इसने शाल्वदेश के द्युमत्सेन राजा के पुत्र सत्यवत् से विवाह करना निश्चित किया। सत्यवत् अत्यंत गुणसंपन्न था, किन्तु अत्यंत अल्पायु होने के कारण एक वर्ष के पश्चात् ही उसकी मृत्यु होनेवाली थी। नारद ऋषि ने सत्यवत् का यह भीषण भविष्य इसे कथन किया, एवं उससे विवाह करने के इसके निश्चय से विचलित करने का काफ़ी प्रयत्न किया। किन्तु यह अपने निश्चय पर अटल रही।

त्रिरात्रव्रत—सत्यवत् की मृत्यु का दिन जब चार दिन शेष रहा तब इसने तीन अहोरात्र खड़े रह कर तपस्या करने का 'त्रिरात्रव्रत' किया। इस व्रत के चौथे दिन यह अपने व्रत की समाप्ति करना चाहती थी, इतने में सत्यवत् के मृत्यु की घटिका आ पहुँची।

यम से आशीर्वाद प्राप्ति—पश्चात् यम ने अपने पाशों के द्वारा सत्यवत् के शरीर में से अंगुष्ठमात्र आकार का प्राणपुरुष खींच लिया, एवं वह यमलोक लौट जाने लगा। उस समय इसने यम का अत्यधिक अनुनय विनय किया, एवं अनेकानेक अध्यात्मविषयक प्रश्न पूछ कर उसे निरुत्तर किया। इस कारण यम ने सत्यवत् के प्राण इसे वापस दे दिये (म, व. २८१.२५-५३)।

इसके श्वशुर द्युमत्सेन का राज्य पुनः प्राप्त होने का, एवं उसकी खोयी हुई दृष्टि उसे पुनः प्राप्त होने का वर भी यम ने इसे प्रदान किया।

पश्चात् यम के आशीर्वाद के अनुसार इसे सत्यवत् से सौ पुत्र उत्पन्न हुए, एवं द्युमत्सेन का राज्य भी उसे पुनः प्राप्त हुआ। द्युमत्सेन के पश्चात् सत्यवत् शाल्वदेश का राजा बन गया, जहाँ उसने चार सौ वर्षों तक राज्य किया (म. व. २७७-२८३; मत्स्य. २०७-२१३; दे. भा. ९. २६-३८; ब्रह्मवै. २.२३-२४)।

२. ब्रह्मा की पत्नी शतरूपा का नामान्तर (ब्रह्मन् देखिये)।

३. एक देवी, जो सूर्य एवं पृष्णि की कन्या मानी जाती है (भा. ६.१८.१)। यह गायत्री मंत्र की अधिष्ठात्री देवी मानी गयी है। इसके उपासकों में अश्वपति राजा प्रमुख था, जिसे इसने अग्निहोत्र से प्रकट हो कर प्रत्यक्ष दर्शन दिया था (म. व. २७७.१०; मत्स्य. २०८-६)। त्रिपुरदाह के समय, शिव ने इसे अपने रथ के घोड़ों की बागडोर, एवं संवत्सरमय धनुष्य की प्रत्यंचा बनाया था (म. द्रो. १४.५७)। विदर्भ देश में रहनेवाले सत्य नामक ब्राह्मण के गायत्री जप से संतुष्ट हो कर, इसने उसे दर्शन दिया था (म. शां. २६४.१०)।

४. शिवपत्नी उमा की एक सहचरी (म. व. २२१.२०)।

५. एक धर्मपरायण राजपत्नी, जिसने दिव्य कुंडलों का दान कर उत्तम लोक की प्राप्ति की थी (म. शां. २२६. २४)। संभवतः इस कथा में सत्यवत् की पत्नी सावित्री की ओर संकेत किया होगा।

महाभारत के अनुशासनपर्व में यही कथा पुनरुद्धृत की गयी है (म. अनु. २०९)। किन्तु वहाँ 'सावित्री' के स्थान पर 'सावित्र' (सूर्य का पुत्र) ऐसा निर्देश है। इससे प्रतीत होता है कि, अपने दोनों कुंडल दान में प्रदान करनेवाले अंगराज कर्ण की ओर इस कथा में संकेत किया है।

सासिसाहरितायन—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साश्व—यमसभा में उपस्थित एक प्राचीन राजा (म. स. ९३*)।

साहंजि—(सो. सह.) सहदेववंशीय संवर्त राजा का नामांतर। विष्णु में इसे कुंती राजा का पुत्र कहा गया है। भागवत एवं हरिवंश में इसे क्रमशः 'सोहंजि' एवं 'साहंज' कहा गया है (ह. वं. १.३३.४)। इसने 'साहंजनि' नगरी (सांची) की स्थापना की थी (ब्रह्म. १३.१५६)।

साहदेव्य—सोमक नामक आचार्य की पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.३४.९)।

साहरि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साहुर—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

साह्वय—एक मरुत्, जो मरुत्‌गणों में से चौथे मरुत् गण में शामिल था।

सिंह—कृष्ण एवं लक्ष्मणा के पुत्रों में से एक।

२. राम दाशरथि के सुज्ञ नामक मंत्रि का पुत्र (कुशलव देखिये)।

सिंहकेतु—चेदिदेश का एक राजकुमार, जो भारतीय युद्ध में पांडवों के पक्ष में शामिल था। कर्ण ने इसका वध किया (म. द्रो. ४०.५१)।

सिंहचंद्र—पांचाल देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर का मित्र था। भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३३.३७)।

सिंहल—एक म्लेच्छजातीय लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल थे। ये लोग द्रोण के द्वारा निर्मित गरुडव्यूह के ग्रीवाभाग में स्थित थे (म. द्रो. १९. ७)।

सिंहसेन—पांचाल देश का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में पांडवपक्ष में शामिल था। द्रोण ने इसका वध किया (म. द्रो. १५.३५)।

२. पांचाल देश का एक योद्धा, जो गोपति पांचाल का पुत्र था। यह भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ४०.४८)। इसके रथ के अश्व श्वेतरक्त वर्ण के थे (म. द्रो. २२.४३)।

सिंहिका--प्राचेतस दक्ष प्रजापति की एक कन्या, जो कश्यप की पत्नी थी। 'सैंहिकेय' नामक चार सुविख्यात असुर इसके ही पुत्र माने जाते हैं।

२. एक राक्षसी। हनुमत् के समुद्रोल्लंघन के समय इसने उसका मार्ग रोक कर उसे त्रस्त करना चाहा। उस समय हनुमत् ने इसका वध किया, एवं इसकी लाश समुद्र में फेंक दी।

३. एक राक्षसी, जो कश्यप एवं दिति की कन्या, एवं हिरण्यकशिपु की बहन थी। इसका विवाह विप्रचित्ति दानव से हुआ था, जिससे इसे एक सौ एक पुत्र उत्पन्न हुए। इसके पुत्रों में राहु नामक असुर प्रमुख था (भा. ५.२४.१; वायु. ६७.७; विप्रचित्ति २. देखिये)।

सिकता निवावरी--एक वैदिक मंत्रद्रष्टी (ऋ. ९. ८६.११-२०; ३१-४०)।

सित--विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

२. तामस मन्वंतर का एक योगवर्धन।

सिद्ध--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था।

२. एक देवगण, जो हिमालय पर्वत में कण्वाश्रम के समीप निवास करता था (म. आ. ५७९*)।

३. एक मुनि, जिसने काश्यप ऋषि से निम्नलिखित विषयों पर तात्त्विक चर्चा की थीः-- १. अनुगीता; २. जननमरण; ३. जीवात्मा का गर्भप्रवेश; ४. मोक्षसाधन (म. आश्व. १६-२२)। शिलोञ्छवृत्ति ब्राह्मण नामक से भी इसने गंगामाहात्म्य के संबंध में चर्चा की थी (म. अनु. ६५.१९)।

सिद्धपात्र--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.६१ पाठ.)।

सिद्धसमाधि--कोल्हापूर का एक ब्राह्मण, जिसकी कथा पद्म में गीता के बारहवें अध्याय का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गयी है (पद्म. उ. १८६)।

सिद्धार्थ--दशरथ राजा का एक आमात्य (वा. रा. अयो. ३६)।

२. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

३. एक राजा, जो शुद्धोदन राजा का पुत्र था (मत्स्य. १७२.१२)। इसे पुष्कल नामांतर भी प्राप्त था।

४. एक राजा, जो 'क्रोधवश' संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

५. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.५९)।

सिद्धि--दक्ष प्रजापति की कन्या, जो धर्मऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम सुख था (वायु. १०. २५)।

२. भग नामक आदित्य की पत्नी (भा. ६.१८.२)।

३. एक अग्नि, जो वीर नामक अग्नि का पुत्र था। इसकी माता का नाम सरयू था। इसने अपनी प्रभा से सूर्य को आच्छादित कर दिया था (म. व. २०९.११)।

४. एक देवी, जो कुंती के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुई थी (म. आ. ६१.९८)।

सिनीवाक--युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ४.१२)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)। --'शिनीवाक'।

सिनीवाली--एक देवी, जिसका निर्देश ऋग्वेद के दो सूक्तों में प्राप्त है (ऋ. २.३२; १०.१८४)। यह देवों की बहन मानी गयी है। यह विस्तृतनितंबा, सुंदरभुजाओं एवं सुंदर उँगलियोंवाली, बहुप्रसवा एवं विशाल परिवार की स्वामिनी है। संतानप्रदान करने के लिए इसका स्तवन किया गया है। सरस्वती, राका, गुंगु आदि देवियों के साथ इसका आवाहन किया गया है। अथर्ववेद में इसे विष्णु की पत्नी कहा गया है (अ. वे. ८.४६)।

बाद के वैदिक ग्रंथों में, राका एवं सिनीवाली का चंद्रमा की कलाओं के साथ संबंध दिया गया है, जहाँ सिनीवाली को नवचंद्रमा (प्रतिपदा) के दिन की, एवं राका को पूर्णिमा के दिन की अधिष्ठात्री देवी माना गया है। किन्तु इस कल्पना का ऋग्वेद में कहीं भी निर्देश प्राप्त नहीं है।

पौराणिक साहित्य में--इस साहित्य में इसे अंगिरस् ऋषि एवं श्रद्धा की तृतीय कन्या कहा गया है। इसका विवाह धातृ नामक आदित्य से हुआ था, जिससे इसे दर्श (सायंकाल) नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

यह अत्यंत कृश थी, जिस कारण यह कभी दृश्यमान, एवं कभी अदृश्य रहती थी। इसी कारण इसे 'दृश्यादृश्य' नामान्तर प्राप्त हुआ था (भा. ६.१८.३)।

२. कर्दमपत्नी देवहूति का नामान्तर।

३. बृहस्पति एव शुभा की कन्या, जिसका विवाह कर्दम प्रजापति से हुआ था। अपने पति का त्याग कर, यह सोम से प्रेम करती थी (वायु. ९०.२५)।

सिंदूर--एक असुर। श्रीगणेश ने इसका वध कर, इसके रक्त का लेप स्वयं के शरीर पर लगा दिया था (गणेश. २.१३७)।

सिंधु--इक्ष्वाकुवंशीय सिंधुद्वीप राजा का नामान्तर (ब्रह्म. १६९.१९)।

२. एक असुर, जो श्रीगणेश के द्वारा मारा गया (गणेश. २.७३-१२६)।

३. एक लोकसमूह, जिसका निर्देश प्राचीन साहित्य में सौवीर लोगों के साथ प्राप्त है। ये दोनों लोकसमूह सिंधुनद के तट पर निवास करते थे।

बौधायन धर्मसूत्र में इन्हें म्लेच्छ जाति का, एवं अपवित्र माना गया है। भारतीय युद्ध के समय, अपने राजा जयद्रथ के साथ ये लोग कौरवपक्ष में शामिल थे (म. भी. १८.१३-१४)।

सिंधुक—(आंध्र. भविष्य.) आंध्रवंशीय शिप्रक राजा का नामान्तर। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे आंध्रवंश का सर्वप्रथम राजा कहा गया है।

सिंधुक्षित्—एक राजा, जो दुर्भाग्य के कारण राज्य-भ्रष्ट हुआ था। आगे चल कर एक साम के पठन से इसे अपना विगत राज्य पुनः प्राप्त हुआ (पं. ब्रा. १२. १२.६)।

सिंधुक्षित प्रैयमेद--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७५)।

सिंधुद्वीप—(सो. अमा.) एक राजा, जो जह्नु राजा का पुत्र, एवं बलाकाश्व राजा का पिता था। जन्म से यह क्षत्रिय था, किन्तु आगे चल कर 'पृथूदक तीर्थ' में स्नान करने के कारण यह ब्राह्मण बन गया (म. श. ३९.१०; अनु. ७.४)।

२. एक ऋषि, जो वेद नामक ऋषि का भाई था (ब्रह्म. १६९.४)।

३. एक ऋषि, जिसने वेदनाथ नामक ब्राह्मण का उद्धार किया था (स्कंद. १.३.१४)।

सिंधुद्वीप आंबरीष—(सू. इ.) एक राजा, जो विष्णु, वायु, एवं मत्स्य के अनुसार अंबरीष राजा का पुत्र, एवं अयुतायु राजा का पिता था। भागवत एवं हरिवंश में इसे नाभ राजा का पुत्र कहा गया है।

सिंधुद्वीप आंबरीष नामक एक वैदिक सूक्तद्रष्टा का निर्देश ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋग्वेद. १०.९), जो संभवतः यही होगा।

सिंधुवीर्य—मद्रदेश का एक राजा, जिसकी कन्या का नाम केकयी था। अपनी इस कन्या का विवाह इसने मरुत्त आविक्षित राजा से किया था।

सिंधुसेन—एक राक्षस, जिसने संसार के समस्त यज्ञमंत्रों का हरण कर उन्हें रसातल में छिपा दिया। इस कारण संसार के सारे यज्ञ बन्द पड़ गये। आगे चल कर विष्णु ने वराह का रूप धारण कर इसका नाश किया, एवं यज्ञमंत्रों को रसातल से वापस लाया।

सीता वैदेही--विदेह देश के सीरध्वज जनक राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकुवंशीय राम दाशरथि राजा की पत्नी थी।

सतीत्व की साकार प्रतिमा--जिस काल में बहुपत्नीकत्व रूढ़ि क्षत्रिय समाज में प्रतिष्ठित थी, उस समय एकपत्नीकत्व का नया आदर्श राम दाशरथि राजा के रूप में वाल्मीकि ने अपने 'वाल्मीकि रामायण' के द्वारा प्रस्थापित किया (राम दाशरथि देखिये)। उसके साथ ही साथ एकपत्नीकत्व के व्रत का आचरण करनेवाले क्षत्रिय के पत्नी को किस प्रकार वर्तन करना चाहिए, इसका आदर्श वाल्मीकि ने सीता के रूप में चित्रित किया। इसी कारण राम दाशरथि के साथ सीता भारतीय स्त्री जाति के सतीत्व, एकनिष्ठा एवं पवित्रता की ज्वलंत एवं साकार प्रतिमा बन कर अमर हो गयी है।

स्वरूप वर्णन—वाल्मीकि रामायण में सीता के स्वरूप का अत्यंत काव्यमय वर्णन प्राप्त है, जहाँ इसे पूर्णचंद्रवदना, अपनी प्रभा से सभी दिशाओं को प्रकाशित करनेवाली (वा. रा. सुं. १५.२७-३९); कोमलांगिनी, शुद्धस्वर्णवर्णा (वा. रा अर. ४३.१-२); लक्ष्मी एवं रति की प्रतिरूपा, नखशिख सौंदर्यमयी (वा. रा. अर. ४६.१६; २२) कहा गया है। इसके अप्रतीम सौंदर्य के संबंध में स्वयं रावण कहता है—

> नैव देवी न गंधर्वा न यक्षी नच किन्नरी।
> नैवंरूपा मया नारी दृष्टपूर्वा महीतले॥
>
> (वा. रा. अर. ४६.२३)।

(सीता के समान सौंदर्यवती स्त्री मैं ने इस धरती पर देव, गंधर्व, यक्ष, किन्नर आदि में कहीं भी नहीं देखी है।)

भूमिजा सीता--यद्यपि यह सीरध्वज जनक की कन्या मानी जाती है, फिर भी यह उसकी अपनी कन्या न थी। वाल्मीकि रामायण में इसका जन्म भूमि से बताया गया है, एवं इसके जन्म के संबंधी निम्नलिखित कथा वहाँ दी गयी है। एक दिन जनक राजा यज्ञभूमि तैयार करने के लिए हल चला रहा था, उस समय एक छोटीसी कन्या मिट्टी से निकली। उसने इसे पुत्री के रूप में ग्रहण किया, एवं उसका नाम सीता रखा (वा. रा. बा. ६६.१३-

१५)। सीता का यह अवतार उत्तरा फाल्गुनी नक्षत्र में हुआ।

रे. बुल्के के अनुसार भूमिजा सीता की अलौकिक जन्म कथा सीता नामक कृषि की अधिष्ठात्री देवी के प्रभाव से उत्पन्न हुई थी। सीता का शब्दशः अर्थ 'हल से खींची हुई रेखा' होता है। अतएव भूमि में हल चलाते समय इसके निकलने के कारण इसे सीता नाम प्राप्त हुआ होगा। संभव है, किसी निश्चित कुलपरंपरा के अभाव में ऐतिहासिक राजकुमारी सीता की जन्मकथा पर कृषि के अधिष्ठात्री देवी के व्यक्तित्व का प्रभाव पड़ा हो।

जन्मसंबंधी अन्य आख्यायिकाएँ--इसके जन्म के संबंध में अन्य आख्यायिकाएँ विभिन्न रामायण ग्रंथों में एवं पुराणों में प्राप्त है, जो निम्नप्रकार है :--

(१) अग्निजा सीता—'आनंद रामायण' (१५ वी शताब्दी) के अनुसार इसके पिता का नाम पद्माक्ष दिया गया है। पद्माक्ष राजा ने लक्ष्मी को पुत्रीरूप में पाने के लिए विष्णु की उपासना की। विष्णु ने उसे महालिंग दिया, जिससे एक सुंदर कन्या निकली, जिसका नाम पद्मा रखा गया।

पद्मा के स्वयंवर के समय, दैत्यों ने स्वयंवर मंडप ध्वस्त किया, एवं पद्माक्ष राजा का संपूर्ण विनाश हो कर वह स्वयं भी मारा गया। यह देख कर पद्मा ने अग्नि में प्रवेश किया। इसकी खोज के लिए दैत्यों ने बड़ी खोज वीन की, किन्तु इसका कहीं पता न चला।

एक बार यह अग्निकुंड से बाहर आ कर बैठी थी, तब विमान से जानेवाले रावण ने इसे देखा, एवं वह कामातुर हो कर इसकी ओर दौड़ा। उसे आता हुआ देख कर यह फिर अग्नि में प्रविष्ट हुई। इसे ढूँढने के लिए रावण ने समस्त यज्ञकुंड खोद डाला, जिससे इसे जीवित सीता तो न मिली, किन्तु इसीका ही एक जड़ रूप पाँच रत्नों के रूप में प्राप्त हुआ।

इन रत्नों को एक पेटिका में बन्द रख कर रावण लंका में गया, एवं उसे अपनी पत्नी मंदोदरी के हाथ सौंप दिया। वहाँ पेटिका खोलते ही पद्मा अपने मूल कन्यारूप में प्रकट हुई। इस पर पद्माक्ष के सारे कुल का एवं राज्य का विनाश करनेवाली इस कन्या को लंका से बाहर छोड़ देनेकी प्रार्थना रावण ने मंदोदरी से की। मंदोदरी की इस प्रार्थना के अनुसार रावण ने इस कन्या को पुनः एक बार पेटिका में बंद किया, एवं वह पेटिका मिथिला में गड़वा दी। पेटिका में बन्द करने के पूर्व इसने रावण को शाप दिया, 'मैं तुम्हारा एवं तुम्हारे सारे परिवार का नाश करने के लिए लंका में फिर आउँगी'।

पश्चात् मिथिला के एक ब्राह्मण को जमीन पर हल चलाते समय वही पेटिका प्राप्त हुई, जो उसने राजधन मान कर जनक राजा को सुपूर्द किया। उस पेटिका से निकली हुई कन्या को जनक ने बेटी के रूप में पाला, एवं उसका नाम सीता रख दिया।

मातुलिंग से निकलने के कारण इसे 'मातुलिंगी'; रत्न में होने के कारण 'रत्नावलि;' धरणी से निकलने के कारण 'धरणीजा;' जनक के द्वारा पाले जाने के कारण 'जानकी;' जमीन से निकलने के कारण 'सीता;' अग्नि से निकलने के कारण 'अग्निजा;' एवं पूर्वजन्म के नाम के कारण 'पद्मा' आदि नामान्तर प्राप्त हुए (आ. रा. ७.३; भावार्थ रा. १.१५)।

(२) रक्तजा सीता—रक्तजा के रूप में सीता का जन्म होने की कथा 'अद्भुत रामायण' में पायी जाती है। रावण जनस्थान के मुनियों पर अत्याचार करता था, एवं अपने बाण की नोंक से ऋषियों के शरीर से रक्त निकाल कर एक मटके में जमा करता था। इसी वन में गृत्समद नामक एक ऋषि रहता था, जो लक्ष्मी के समान कन्या की इच्छा से तपस्या करता था। दर्भ के अग्रभाग से दूध को ले कर, मंत्रोच्चारण के साथ वह उसे प्रतिदिन इकठ्ठा करता था।

एक दिन रावण ने गृत्समद ऋषि का मटका चुरा लिया, एवं उसमें इकठ्ठा किया दूध ऋषियों के रक्त से भरे हुए मटके में डाल दिया, एवं उसे मंदोदरी के पास रखने के लिए दे दिया।

आगे चल कर रावण के कुकृत्यों से तंग आ कर मंदोदरी ने आत्महत्त्या के हेतु से मटके में स्थित दूधयुक्त रक्त प्राशन किया, जिससे वह गर्भवती रही। अपना यह गर्भ उसने कुरुक्षेत्र की भूमि में गाड़ दिया। उसी गर्भ से आगे चल कर सीता का जन्म हुआ, जिसे विदर्भ देश के जनक राजा ने पालपोस कर बड़ा किया (अ. रा. ८)।

(३) रावणात्मजा सीता—सीताजन्म के संबंधित सर्वाधिक प्राचीन कथा में, सीता को रावण की कन्या माना गया है। इस कथा के अनुसार रावण ने मय राक्षस की कन्या मन्दोदरी से विवाह करना चाहा। उस समय मय ने रावण से कहा कि, मन्दोदरी के जन्मजातक से मंदोदरी की पहली संतान कुलघातक उत्पन्न होनेवाली है; अतएव उस संतान का वध करना उचित होगा। मय की इस

सलाह को न मान कर, रावण ने अपनी प्रथमजात कन्या को पेटिका में बन्द कर जनकपुरी में गड़वा दिया। इसी कन्या ने आगे चल कर रावण के समस्त कुल का नाश कर दिया (दे. भा. ४२)।

(४) **जनकात्मजा सीता**--महाभारत में सर्वत्र सीता को जनक राजा की अपनी कन्या माना गया है (म. व. २५८.९)।

सीता के जन्मसंबंधित उपर्युक्त सारी कथाएँ कल्पनारम्य प्रतीत होती है, जिनकी रचना राम के द्वारा किया गया रावणवध गृहीत मान कर की गयी हैं।

सीतास्वयंवर--एक बार परशुराम अपना प्रचंड शिव धनुष ले कर जनक राजा से मिलने आया। परशुराम का यह धनुष इतना बड़ा था, कि उसे ले जाने के लिए दो सौ पचास बैल-जोड़ियों की शक्ति आवश्यक थी। परशुराम का यह अजस्त्रं धनुष इसने सहजही उठा लिया, एवं उसे घोड़ा बना कर यह खेलने लगी। यह देख कर इसके दैवी अंश के संबंध में परशुराम को आभास मिल गयी, एवं उसने जनक राजा को अपना धनुष दे कर आज्ञा दी, 'जो वीर इस धनुष के तोड़ने का सामर्थ्य रखता हो, उसीके साथ ही सीता का विवाह कर देना (वा. रा. बा. ६६.२६; आ. रा. सार. ३)।

परशुराम की आज्ञा के अनुसार, जनक राजा ने इसका स्वयंवर उद्घोषित किया। इस स्वयंवर में उपस्थित सारे राजा धनुष तोड़ने में असमर्थ रहे। अन्त में अयोध्या के राम दाशरथि राजा ने शिवधनुष को भङ्ग कर सीता का वरण किया (वा. रा. बा. २३.)।

वनवासगमन— राम के वनवासगमन के समय वन की भयानकता बता कर राम ने इसे अत्यधिक भयभीत किया, किन्तु 'जहाँ राम वहाँ सीता' ऐसे कह कर यह अपने निश्चय पर अटल रही (वा. रा. अयो. २६-३०)। उस समय इसने यह भी कहा कि, ज्योतिर्विदों के द्वारा बारह वर्ष के वनवास का जातक पहले ही कहा जा चुका है (वा. रा. अयो. २९.८; अ. रा. २. ४.७६)। अपनी सारी आयु राजप्रसादों में व्यतीत करने-वाली सीता को वनवास का सारा ही जीवन अननुभूत था, यहाँ तक कि, वल्कल पहनना भी इसे न आता था। किन्तु राम के साथ ही यह वानवासिक जीवन से जल्द ही परिचित हो गयी।

सीताहरण—जनस्थान में रावण ने इसका धोखे से हरण किया, एवं अत्यधिक विलाप करते हुए सीता को वह लंका ले जाने लगा। रास्ते में ऋष्यमूक पर्वत पर इसने अपने उत्तरीय वस्त्र, एवं अलंकार फेंक दिये, जिससे राम को पता चल जाए कि यह हरण की गयी है।

पश्चात् रावण ने इसे लंका नगरी में स्थित अशोकवन में राक्षसियों की रखवाली में रख दिया, एवं वह प्रतिदिन कामातुर हो कर अपने वश में लाने के लिए इसकी प्रार्थना करने लगा। उस समय उसने इसे डराया, धमकाया एवं काफ़ी प्रलोभन भी दिखाये। किन्तु यह अपने सतीत्व पर अचल रही। रावण के आते ही लोकलज्जा में लिपटी हुई सीता अपने जंघाओं से अपने पेट को, एवं अपने दोनो बाहुओं से वक्षःस्थलों को ढँक देती थी (वा. रा. सुं. १९.३)। परस्त्री पर पापदृष्टि रखने वाले रावण की इसने काफ़ी निर्भत्सना की। किन्तु रावण पर इसका कुछ भी असर न हुआ, एवं अपने राक्षसियों के द्वारा वह इसे वश में करने का प्रयत्न करता ही रहा।

हनुमत् से भेंट--एक दिन सीता के शोध के लिए राम के द्वारा भेजा गया हनुमत् अशोकवन में आ पहुँचा, एवं उसने राम के द्वारा दी गयी अभिज्ञान की अँगुठी इसे दिखा कर अपना परिचय दिया। उसी समय अपने पीठ पर इसे बिठा कर, रावण के कारावास से इसे मुक्त करने की तैयारी भी हनुमत् ने दिखायी। उस समय एक क्षत्रियकुलोत्पन्न वीरस्त्री के नाते हनुमत् के इस प्रस्ताव को अस्वीकार करते हुए इसने कहा—

> बलैः समग्रैर्यदि मां हत्वा रावणमाहवे।
> विजयी स्वपुरीं रामो नयेत्तत् स्याद्यशस्करम्॥
> यथाहं तस्य वीरस्य वनादुपधिना हृता।
> रक्षसा तद्भयादेव तथा नार्हति राघवः।
>
> (वा. रा. सुं. ६८.१२-१३)।

(मेरे पति राम ही रावण को परास्त कर मुझे ले जाएँगे। रावण के समान छुपकर मुझे ले जाना राम को, तथा उसकी कीर्ति को शोभा न देगा)।

अग्निपरीक्षा—युद्ध के पश्चात् राम ने बिभीषण को इसे अपने पास लाने की आज्ञा दी। तदनुसार सुस्नात हुई यह मूल्यवान् वस्त्र एवं आभूषण पहन कर, एवं शिबिका में बैठ कर यह राम से मिलने गयी। वहाँ ध्यानस्थ बैठ हुए राम को इसके आगमन की वार्ता बिभीषण ने सुनायी।

बिभीषण के पीछे-पीछे चल कर, यह लाज में लिपटी हुई अपने पति के सम्मुख गयी। किन्तु राम के चेहरे पर

इसे सहानुभूति के स्थान पर कठोरता ही दिखायी दी। पश्चात् पराये घर में एक साल तक निवास करने के कारण राम ने इसको अस्वीकार करना चाहा (राम दाशरथि देखिये)।

राम का यह निश्चय सुन कर इसने अपने सतीत्व की सौंगध खायी। पश्चात् अग्निपरीक्षा के लिए इसने लक्ष्मण को चिता तैयार करने की आज्ञा दी, एवं उसमें अपना शरीर झोंक दिया। तदुपरान्त इसे हाथ में धारण कर अग्नि देवता स्वयं प्रकट हुई, एवं इसके सतीत्त्व की साक्ष दे कर कर इसको स्वीकार करने की आज्ञा उसने राम को दी (वा. रा. यु. ११६.११)।

राज्ञीपद—पश्चात् राम के साथ यह अयोध्या नगरी में गयी, जहाँ इसे राम के साथ राज्याभिषेक किया गया। कुछ समयोपरांत यह गर्भवती हुई, एवं इसने बनविहार की इच्छा राम से प्रकट की। उसी दिन रात को लोकापवाद के कारण राम ने इसका त्याग करने का निश्चय किया।

दूसरे दिन सुबह राम ने लक्ष्मण को बुलाया, एवं इसे गंगा के उस पार छोड़ आने का आदेश दिया। तपोवन दिखलाने के बहाने लक्ष्मण इसे रथ पर ले गया, एवं उसने इसे वाल्मीकि के आश्रम के समीप छोड़ दिया। उस समय यह आत्महत्त्या कर के प्राणत्याग करना चाहती थी, किन्तु गर्भवती होने के कारण यह वह पापकर्म न कर सकी।

पुत्रजन्म—राम के द्वारा परित्याग किये जाने पर, वाल्मीकि के आश्रम का सहारा ले कर यह वहीं रहने लगी। पश्चात् इसी आश्रम में इसने दो यमल पुत्रों को जन्म दिया, जिनके नाम वाल्मीकि के द्वारा कुश एवं लव रखे (वा. रा. उ. ६६)।

देहत्याग—कालोपरान्त राम के द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में, इसके पुत्र कुशलव की राम से भेंट हुई। उस समय कुशलवों से इसका सारा वृत्तांत जान कर राम ने इसे पुनः एक बार अयोध्या बुला लिया। वाल्मीकि ऋषि इसे स्वयं रामसभा में ले गये, एवं भरी सभा में उन्होंने इसके सतीत्व की साक्ष दी। उस समय जनता को विश्वास दिलाने के उद्देश्य से राम ने इससे अनुरोध किया कि, यह अपने सतीत्व का प्रमाण दे। इस समय इसने सौंगंध खाते हुए कहा—

मनसा कर्मणा वाचा यथा रामं समर्चये।
तथा मे माधवी देवी विवरं दातुमर्हति॥

(वा. रा. उ. ९७.१५)।

(मन से, कर्म से अथवा वाचा से अगर मैंने राम के सिवा किसी अन्य पुरुष का चिंतन न किया हो, तो पृथ्वीमाता दुभंग हो कर मुझे स्वीकार करें)।

सीता के द्वारा उपर्युक्त आर्त प्रार्थना किये जाने पर, पृथ्वी देवी एक दिव्य सिंहासन पर बैठी हुई प्रकट हुई, एवं इसे अपने शरण ले कर पुनः एक बार गुप्त हुई। यह दिव्य दृश्य देख कर राम स्तिमित हो उठा, एवं अत्यधिक विलाप करने लगा। पश्चात् उसने इसे लौटा देने का पृथ्वी को अनुरोध किया, एवं इसे न लौटा देने पर समस्त पृथ्वी को दग्ध करने की धमकी दी। अन्त में ब्रह्मा ने स्वयं प्रकट हो कर राम को सांत्वना दी।

चरित्रचित्रण—एक आदर्श भारतीय पतिव्रता मान कर वाल्मीकि रामायण में सीता का चरित्र चित्रण किया गया है। राम इसके लिए देवता है, एकमात्र गति है, इस लोक एवं परलोक का स्वामी है (इह प्रेत्य च नारिणां पतिरेको गतिः सदा) (वा. रा. अयो. २७.६)। पातिव्रत्य धर्म के संबंध में यह सावित्री को आदर्श मानती है (वा. रा. अयो. २९.१९)। सावित्री के ही समान यह कुलरीति (वा. रा. अयो. २६.१०), राजनीति (वा. रा. अयो. २६.४), लौकिक नीति (वा. रा. कि. ९.२) इन सारे तत्त्वों का ज्ञान रखती है, जिसकी सराहना स्वयं राम के द्वारा की गयी है।

मानस में—तुलसी के 'मानस' में चित्रित की गयी सीता, शिव, पार्वती, गणेश आदि की उपासिका है (मानस. २.२.२६.७-८)। यह राम की केवल पत्नी ही नहीं, बल्कि अनन्य भक्त भी है। इसका ध्यान सदैव रामचरण में ही रहता है:—

सियमन राम चरण मन लागा।

(मानस. २.२.२६.८)।

सीतासावित्री—प्रजापति की एक कन्या, जो सोम की पत्नी थी (तै. ब्रा. ३.३.१०; प्रजापति देखिये)।

सीमन्तिनी—चित्रवर्मन् राजा की कन्या, जो चित्रांगद राजा की पत्नी थी। 'सोमप्रदोषव्रत' का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा स्कंद में दी गयी है। चौदह वर्ष की आयु में इसे वैधव्य प्राप्ति का कुयोग था। उस कुयोग के नाशनार्थ याज्ञवल्क्यपत्नी मैत्रेयी ने इसे 'सोमप्रदोषव्रत' करने के लिए कहा, जिस कारण इसका पति समुद्र में डूबने से बच गया (स्कंद. ३.३.८-९)।

सीरध्वज (जनक)—(सू. निमि.) विदेह देश का सुविख्यात राजा, जो सीता का पिता था। इसके पिता का नाम ह्रस्वरोमन् था (७१.१२)। 'सीर' का शब्दशः

अर्थ' 'हल' होता है। यही हल इसके कीर्ति का कारण बन जाने के कारण, इसे 'सीरध्वज' नाम प्राप्त हुआ (भा. ९.१३.१८)।

सीता की प्राप्ति—एक बार यह अग्निचयन के लिए भूमि पर हल चला रहा था, उस समय इसे सीता की प्राप्ति हुई (सीता देखिये)। सीता बड़ी होने पर सांकाश्या नगरी के सुधन्वन् राजा ने सीता की माँग की। इसके द्वारा इस माँग का इन्कार किये जाने पर सुधन्वन् ने इस पर हमला किया। उस युद्ध में इसने सुधन्वन् का वध किया, एवं अपने पुत्र कुशध्वज को सांकाश्या नगरी का अधिपति नियुक्त किया (वा. रा. बा. ७१.१६-१९)।

मिथिला पर हमला—सीता अत्यंत स्वरूपसुंदर होने के कारण, भारतवर्ष के अनेकानेक राजा उससे विवाह करना चाहते थे। सीताविवाह के लिए इसने शिवधनुर्भंग का प्रण निश्चित किया। वह प्रण किसी भी राजा ने पूर्ण नहीं किया। अन्त में सीताविवाह के संबंध में निराश हुए राजाओं ने एकत्रित हो कर मिथिला नगरी को घेर लिया। यह घेरा लगातार एक वर्ष तक चालू रहा, जिससे यह अत्यधिक त्रस्त हुआ। अन्त में दैवी सहायता के कारण, इस संकट से यह मुक्त हुआ (वा.रा. बा. ६६)।

वाजपेय यज्ञ—आगे चल कर, इसने वाजपेय यज्ञ किया, जिसके उपलक्ष्य में विश्वामित्र ऋषि अयोध्या के राजकुमार राम एवं लक्ष्मण को मिथिला नगरी में ले आये। शिवधनुर्भंग का इसका प्रण राम ने पूरा किया, एवं सीता का वरण किया।

पश्चात् इसकी दो कन्याएँ सीता एवं ऊर्मिला, एवं इसके भाई कुशध्वज की दो कन्याएँ मांडवी एवं श्रुतकीर्ति के विवाह क्रमशः अयोध्या के राजकुमार राम, लक्ष्मण, भरत एवं शत्रुघ्न से सुमुहूर्त पर संपन्न हुए (वा. रा. बा. ७०-७४)। पद्म में ऊर्मिला इसकी नहीं बल्कि इसके बंधु कुशध्वज की कन्या दी गयी है।

सुकक्ष आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ९२-९३)।

सुकन्या—शर्याति राजा की कन्या, जो च्यवन ऋषि की भार्या थी (श. ब्रा. ४.१.५.६; जै. ब्रा. ३.१२१)। इसके पुत्र का नाम प्रमति, एवं पौत्र का नाम रुरु था (म. आ. ८.१; पद्म. पा. १५; च्यवन १. देखिये)। इसकी कन्या का नाम सुमेधस् था, जिसका विवाह निध्रुव काण्व ऋषि से हुआ था।

२. मातरिश्वन् ऋषि की पत्नी, जो मंकणक ऋषि की माता थी (म. श. ३७.५० पाठ.)।

सुकमल—एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी का एक पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.१२९)।

सुकर्मन्—एक पापी पुरुष, जिसकी कथा गीता के दूसरे अध्याय के पठन का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १७२)।

२. (सो. वृष्णि) यादव राजा श्वफल्क के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४; १६)।

३. रुद्रसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

४. रौच्य मन्वंतर का एक देवगण।

५. एक आचार्य, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से जैमिनि नामक आचार्य का, वायु के अनुसार सुत्वन् का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार सुन्वत् नामक आचार्य का शिष्य था। इसने सामवेद की कुल एक सहस्र शाखाएँ तैयार की, एवं वे उदीच्य दिशा से आये हुए पाँच सौ, एवं पूर्व दिशा के से आये हुए पाँच सौ शिष्यों में बाँट दी।

यह अनध्याय के दिन में भी अपने शिष्यों को संहिताओं के पाठ सिखाता था, जिस कारण क्रुद्ध हो कर इंद्र ने इसके सारे शिष्यों का वध किया। पश्चात् इसने प्रायोपवेशन कर इंद्र को प्रसन्न किया। फिर इंद्र ने इसके सारे शिष्य पुनः जीवित किये, इतना ही नही, उसने इसे हिरण्यनाभ एवं पौष्यंजि नामक दो नये शिष्य भी प्रदान किये (ब्रह्मांड. २.३५.३२)।

६. युधिष्ठिर की राजसभा में उपस्थित एक क्षत्रिय (म. स. ४२३)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)- 'सुशर्मन्'।

७. कुरुक्षेत्र का एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'मातृपितृ-माहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है। इसने अपने मातापिताओं की सेवा कर, 'सर्ववश्यता' नामक सिद्धि प्राप्त की थी। इसी सिद्धि के बल से इसने दशारण्य में उग्र तपस्या करनेवाले पिप्पलाद काश्यप नामक ऋषि का गर्वहरण किया (पद्म. भू. ६१-६३; ८४)।

८. एक स्कंद-पार्षद, जो विधातृ के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक था। दूसरे पार्षद का नाम सुव्रत था।

सुकला—वाराणसी के कृकल नामक वैश्य की पत्नी, जिसकी कथा पतिपत्नियों के द्वारा एक साथ तीर्थयात्रा

करने का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. सृ. ४१-६१)।

सुकाल—सुमूर्तिमत् नामक पितरों का नामांतर।

सुकीर्ति—उत्तम मन्वंतर का इन्द्र।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

सुकीर्ति काक्षीवत--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१३१)। ऋग्वेद के ब्राह्मण ग्रंथों में इसे इस सूक्त के प्रणयन का श्रेय इसे दिया गया है (ऐ. ब्रा. ५.१५.४; ६.२९.१; सां. ब्रा. ३०.५)।

सुकुट्ट--एक लोकसमूह (म. स. १३.२५)।

सुकुंडल—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

सुकुमार--(सो. काश्य.) एक राजा, जो धृष्टकेतु राजा का पुत्र, एवं वीतहोत्र राजा का पिता था (भा. ९.१७.९)। विष्णु एवं वायु में इसे सुविभु राजा का पुत्र कहा गया है।

२. पुलिंद देश का एक राजकुमार, जो सुमित्र राजा का पुत्र था। सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्विजय में, एवं भीम ने अपने पूर्वदिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २६.१०)। भारतीय युद्ध में यह पांडव पक्ष में शामिल था।

३. एक राजा, जो मत्स्य देश के समीप स्थित प्रदेश का अधिपति था। द्रौपदी स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २८.४)।

४. तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.८)।

५. एक राजकुमार, जो शाकद्वीपाधिपति भव्य राजा का पुत्र था। इसीके ही नाम से इसका जलधारागिरि के समीप स्थित देश को 'सुकुमारवर्ष' नाम प्राप्त हुआ था (मार्क. ५०.२२; म. भी. १२.२३)। वायु एवं ब्रह्मांड में इसके पिता का नाम 'हव्य' दिया गया है।

सुकुमारी--परिक्षितपुत्र भीमसेन राजा की पत्नी (म. आ. ९०.४५)।

२. संजय राजा की कन्या, जो नारद की पत्नी थी (म. शां. ३०.१२; नारद २. देखिये)।

सुकुसुमा--स्कन्द की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५)।

सुकृत—स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि का पुत्र था (पद्म. सृ. ७)।

२. (सो. पूरु.) एक राजा, जो विष्णु एक मत्स्य के अनुसार पृथु राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.५५)। वायु में इसे सुकृति कहा गया है।

सुकृति—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

३. पूरुवंशीय सुकृत राजा का नामांतर।

सुकृत्त--(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार निरामित्र राजा का पुत्र था। ब्रह्मांड, विष्णु, भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'सुक्षत्र', 'सुनक्षत्र' एवं 'सुरक्ष' कहा गया है।

सुकृष—एक ऋषि, जो विपुलस्वत् ऋषि का पुत्र था। इसकी जीवनकथा शिबि औशीनर राजा से काफ़ी मिलती जुलती है। इसके कुल चार पुत्र थे।

एक बार इसकी सत्त्वपरीक्षा लेने के लिए इंद्र पक्षीरूप से इसके पास आया, एवं नरमांस का भोजन माँगने लगा। इसने उसकी इच्छा पूर्ण करने का आश्वासन दिया, एवं अपने पुत्रों को माँस निकाल देने की आज्ञा दी। इसकी यह प्रार्थना इसके पुत्रों ने अस्वीकार कर दी। इस पर क्रुद्ध हो कर इसने उन्हें 'तिर्यग्' (पक्षी) योनि में जन्म प्राप्त होने का शाप दिया। तदनुसार इसके पुत्र गरुडवंश में द्रोणपुत्र, पिंगाक्ष, विबोध, सुपुत्र एवं सुमुख नामक पक्षी बन गये (मार्क. ३.) इसके पुत्रों के द्वारा निदान माँगे जाने पर, इसने उन्हें पक्षीयोनि में रह कर भी ज्ञानी बनने का उःशाप दिया।

इंद्र को दिये गये अभिवचन की पूर्ति के लिए यह अपना स्वयं का माँस निकालने लगा। इस पर इंद्र अपने सही रूप में प्रकट हुआ, एवं उसने इसे महाज्ञानी बनने का, एवं तपस्या में कहीं भी विघ्न न उत्पन्न होने का आशीर्वाद प्रदान किया।

सुकेतन--(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सुनीथ राजा का पुत्र, एवं धर्मकेतु राजा का पिता था (भा. ९.१७.८)। विष्णु एवं वायु में इसे सुकेतु कहा गया है।

सुकेतु--(सू. निमि.) एक धर्मप्रवृत्त राजा, जो वायु एवं भागवत के अनुसार नंदिवर्धन राजा का पुत्र, एवं देवरात राजा का पिता था (भा. ९.१३.१४)।

२. क्षत्रवंशीय सुकेतन राजा का नामान्तर।

३. एक दानव, जो ताटका राक्षसी का पिता था (वायु. ६८.६)।

४. राम दाशरथि राजा के सुज्ञ नामक प्रधान का पुत्र (कुशलव देखिये)।

५. पाण्डवपक्ष का एक पराक्रमी राजा, जो चित्रकेतु राजा का पुत्र था (म. आ. १७७.९)। यह द्रौपदीस्वयंवर में भी उपस्थित था। भारतीय युद्ध में कृपाचार्य ने इसका वध किया (म. क. ३८.२१-२९)। पाठभेद-'अभिगु'।

६. एक राजा, जो अपने सुनामन् एवं सुवर्चस् नामक पुत्रों के साथ द्रौपदी स्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)।

७. शिशुपाल का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था। द्रोणाचार्य ने इसका वध किया (म. क. ३.८२)।

८. एक राक्षस, जो ताटका राक्षसी का पुत्र, एवं सुबाहु राक्षस का भाई था। राम के अश्वमेधयज्ञ के समय, अपने भाई सुबाहु के साथ इसने शत्रुघ्न से युद्ध किया था। यह गदायुद्ध में अत्यंत प्रवीण था। शत्रुघ्न-युद्ध में इसने सीता के भाई लक्ष्मीनिधि से घमासान युद्ध किया था (पद्म. पा. २५-२६)।

९. सगर राजा का एक पुत्र, जो कपिल ऋषि के शाप से बचे हुए सगरपुत्रों में से एक था।

१०. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का एक पुत्र था।

सुकेतुमत्--भद्रावती नगरी का एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम चंपका था। 'पुत्रदा एकादशी' के व्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए इसकी कथा पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. ४१)।

सुकेश--एक राक्षस, जो विद्युत्केश राक्षस का पिता था। इसकी माता का नाम सालकटंकटा था। इसने शिव-पार्वती की कठोर तपस्या की, जिस कारण इसे रुद्रगणों में स्थान प्राप्त हुआ (वा. रा. उ. ४.२७-३२)। ग्रामणी नामक गंधर्व की कन्या इसकी पत्नी थी, जिससे इसे मालिन्, सुमालिन् एवं माल्यवत् नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे।

सुकेशिन् भारद्वाज--एक आचार्य, जो आत्मज्ञान प्राप्ति के लिए पिप्पलाद नाम आचार्य के पास गये हुए पाँच आचार्यों में से एक था (प्र. उ. १.१)। 'षोडष-कल पुरुष' के संबंध में इसने पिप्पलाद से पृच्छा की थी।

सुकेशी--अलकापुरी की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागत समारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

२. गांधारराज की एक कन्या, जो कृष्ण की पत्नी थी। द्वारका में स्थित इसके प्रासाद का नाम पद्मकूट था (म. स. परि. १.२१.१२५१-१२५२)।

३. मगधराज केतुवीर्य की एक कन्या, जो मरुत्त (तृतीय) राजा की, पत्नी थी (मार्क. १२८)।

४. हेति राक्षस की एक कन्या, जो दुर्जय राक्षस की पत्नी थी (हेति देखिये)।

५. तुंबुरु की एक कन्या (वायु. ६९.४९)।

सुक्रतु--एक राजा, जिसका निर्देश संजय के द्वारा प्राचीन राजाओं की गणना में किया गया है (म. आ. १.१७५)।

सुक्षत्र--कोसल देश का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवपक्ष में शामिल था। इसके रथ के अश्व अत्यंत सुंदर थे, जिनके उदरभाग का रंग चक्रवाक् पक्षी के सदृश श्वेतवर्णीय था (मा. द्रो. २२.४७)।

२. (सो. मगध. भविष्य.) मगधवंशीय सुक्षत्त राजा का नामान्तर।

सुक्षेत्र--ब्रह्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

सुख--सावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्न-लिखित वीस देव शामिल थे:--ऋत, तप, दानिन्, दाता, दाम, देय, ध्रुव, निधि, नियम, यम, वित्त, विधान, वैद्य, शम, सोम, स्थान, हव्य, हुत, होम (ब्रह्मांड. ४.१२०)।

२. धर्म एवं शान्ति के पुत्रों में से एक।

३. एक पक्षी, जो गरुड एवं शुकी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड ३.७.४५०)।

सुखद--पितरों में से एक।

सुखदा--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५)।

सुखसंगीत--एक गंधर्व, जिसकी कन्या का नाम प्रमोदिनी था (पद्म. उ. १२८)।

सुखामन एवं **सुखासीन**--ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का देवगणद्वय।

सुखीनल--(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार नृचक्षु राजा का पुत्र, एवं परिप्लव राजा का पिता था (भा. ९.२२.४१)। विष्णु एवं मत्स्य में इसे "सुखीवल' कहा गया है।

सुगति--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो गया एवं गयंति के पुत्रों में से एक था (भा.५.१५.१४)।

२. हंसध्वज राजा का प्रधान।

सुगंध—एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं देवों के संग्राम में अग्नि के द्वारा दग्ध किये गये सात राक्षसों में से एक था (पद्म. सृ. ७५)।

२. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

सुगंधा—एक अप्सरा, जिसने अर्जुन के जन्मोत्सव के समय नृत्य किया था (म. आ. ११४.५२)।

२. कृतवीर्य राजा की पत्नी।

सुगणा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२६)।

सुगंधी—वसुदेव की तेरह पत्नियों में से एक जिसके पुत्र का नाम पुण्ड्र था (वायु. ९६.१६१)।

सुगावि—(सू. इ.) इक्ष्वाकुवंशीय संधि राजा का नामान्तर।

सुगोप्ता—एक प्राचीन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३७)।

सुगृधि—कश्यप एवं ताम्रा की कन्याओं में से एक।

सुग्रीव—किष्किंधा नगरी का एक सुविख्यात वानर राजा, जो महेंद्र एवं ऋक्षकन्या विरजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.२१४-२४८; भा. ९.१०.१२)। यह वालिन् का छोटा भाई था। वाल्मीकिरामायण के प्रक्षिप्त काण्ड में इसे ऋक्षरजस् नामक वानर का पुत्र कहा गया है, जिसकी ग्रीवा (गर्दन) से उत्पन्न होने के कारण इसे 'सुग्रीव' नाम प्राप्त हुआ था (वा. रा. उ. प्रक्षिप्त. ६)। इस ग्रंथ में अन्यत्र इसे सूर्य का पुत्र अंशावतार कहा गया है। इसके अमात्य का नाम द्विविद था (भा. १०. ६७.२)।

इसके एवं इसकी वानरसेना की सहायता के कारण ही, राम दाशरथि लंकाधिपति रावण जैसे बलाढ्य राक्षस पर विजय पा सका। इस कारण समस्त रामकथाओं में यह अमर हो चुका है।

वालिन् से शत्रुत्व—यह वालिन् का छोटा भाई था, जिस कारण वालिन् के सभी पराक्रमों में एवं साहसों में यह उसकी सहायता करता था। आगे चल कर मायाविन् राक्षस के युद्ध में वालिन् एक वर्ष तक किष्किंधा नगरी में वापस न आया। इस कारण उसे मृत समझ कर, यह किष्किंधा नगरी का राजा बन गया, एवं वालिन्‌पत्नी तारा को इसने पत्नी के रूप में स्वीकार किया।

एक वर्ष के पश्चात् वालिन् किष्किंधा नगरी लौट आया, एवं इसे भ्रातृद्रोही शत्रु मान कर उसने इसे किष्किंधा राज्य से बाहर निकाल दिया। पश्चात् यह विजनवासी बन कर इधर उधर घूमने लगा। इस समय इसने समस्त भूमंडल का भ्रमण किया, एवं अंत में यह ऋष्यमूक पर्वत पर आ कर रहने लगा, जो स्थान वालि के लिए अगम्य था (वा. रा. कि. ४६; वालिन् देखिये)।

राम से मैत्री—आगे चल कर ऋष्यमूक पर्वत पर, सीता की खोज के लिए आये हुए रामलक्ष्मण से इसकी भेंट हुई। वहाँ अग्नि को साक्ष रख कर इन्होंने आपस में मित्रता प्रस्थापित की, जिसके अनुसार इसने सीताशोध के कार्य में राम की सहायता करने का, एवं राम ने वालिन् का वध कर इसे किष्किंधा का राजा बनाने का आश्वासन दिया।

वालिन् वध—पश्चात् अपने आश्वासन के अनुसार, राम ने वालिन् का वध किया एवं इसे किष्किंधा के राजगद्दी पर बिठाया। पश्चात् इसे अपनी पत्नी रुमा एवं वालिन् की पत्नी तारा ये दोनों पत्नियों के रूप में पुनः प्राप्त हुई (वा. रा. कि. २६; वालिन् एवं राम दाशरथि देखिये)। इसी समय वालिन् के पुत्र अंगद को किष्किंधा का यौवराज्याभिषेक किया गया।

लक्ष्मण का क्रोध—इसके राज्याभिषेक के पश्चात् राम एवं लक्ष्मण चार महीनों तक प्रस्रवण पर्वत पर रहे। इस समय, यह विषयसुखों में इतना निमग्न रहा कि, एक बार भी रामलक्ष्मण को मिलने न गया (वा. रा. कि. ३१.२३; ३९; ३३.४३; ४८; ५४; ५५)। इस कारण लक्ष्मण ने स्वयं किष्किंधा नगरी में जा कर इसकी अत्यंत कटु आलोचना की, एवं वह उसका वध करने के लिए प्रवृत्त हुआ। इस समय तारा ने लक्ष्मण की प्रार्थना कि, वह इसे क्षमा करे। स्वयं सुग्रीव भी हाथ जोड़ कर खड़ा हुआ, एवं इसने अपने अकृतज्ञता के लिए लक्ष्मण से बार बार क्षमा माँगी।

पश्चात्ताप—पश्चात् यह स्वयं सीता की खोज करने जाने के लिए प्रवृत्त हुआ, किंतु हनुमत् ने इसे परावृत्त किया, एवं चारों दिशाओं में सीता को ढूँढने के लिए वानरदूत भेज दिये, जिनमें दक्षिण दिशा के वानरों का नेतृत्व उसने स्वयं स्वीकृत किया।

इसी समय हनुमत् ने इसे उपदेश दिया कि, यह अपने वचनों का ख्याल कर राम के उपकारों का बदला योग्य प्रकार से चुकाये। हनुमत् का यह उपदेश सुन कर, इसे अपने कृतकर्म का पश्चात्ताप हुआ, एवं सीता की मुक्तता करने के लिए अपनी सारी सेना सुसज्ज रखने की आज्ञा इसने अपने सेनापति नील को दी।

युद्ध की तैयारी--हनुमत् के द्वारा सीता का शोध लगाये जाने पर इसने समस्त वानरसेना एकत्रित कर रावण पर आक्रमण करने की तैयारी की। लंका पर आक्रमण करने के लिए समुद्र में सेतु बँधवाने की कल्पना भी इसीने ही राम को दी, एवं उसको धीरज बँधाया। पश्चात् अपनी संपूर्ण सेना के साथ यह समुद्रतट पर आ पहुँचा (वा. रा. यु. २)।

समुद्रतट पर पहुँचते ही रावण ने इसे संदेश भेजा की यह राम की सहायता न करे, किन्तु यह अपने निश्चय पर अटल रहा, एवं इसने रावण को प्रतिसंदेश भेजा।

> न मेऽसि मित्रं न तथानुकम्प्यो,
> न चोपकर्तासि न मे प्रियोऽसि ।
> अरिश्च रामस्य महानुबन्धः,
> स मेऽसि वालीव वधार्ह वध्यः ॥
> (वा. रा. यु. २०.२३)

(तुम मेरे मित्र, उपकारकर्ता, प्रिय एवं मेरे प्रति दया भावना रखनेवाले नहीं हो। मेरे मित्र राम के तुम शत्रु होने के कारण, वालिन् की भाँति तुम भी वध करने योग्य ही हो)।

बाद में यह स्वयं छलांग मार कर रावण के राजप्रासाद में पहुँच गया, जहाँ इसने उसका मुकुट गिरा दिया। इस प्रकार राम रावण युद्ध प्रारंभ हुआ (वा. रा. यु. ४०)।

राम-रावण युद्ध में--इस युद्ध में इसने एवं इसकी वानरसेना ने अत्यधिक पराक्रम दिखाया। इसने निम्नलिखित राक्षसों के साथ युद्ध कर उनका वध किया:-- १. कुंभकर्णपुत्र कुंभ (वा. रा. यु. ७५-७६); २. रावणसेनापति विरुपाक्ष; ३. रावणसेनापति महोदर (वा. रा. यु. ९७)। कुंभकर्ण एवं रावण से भी इसने युद्ध किया था, जिन दोनों युद्धों में यह उनके हाथों परास्त हुआ (वा. रा. यु. ५९; ६७)।

रामरावणयुद्ध में लक्ष्मण जब मूर्च्छित हुआ, तब इसने वानरसेना का धीरज बँधा कर मूर्च्छित लक्ष्मण को युद्धभूमि से उठाया, एवं शिबिर पहुँचा दिया (वा. रा. यु. ५०)।

कुंभकर्णवध के पश्चात् इसने हनुमत को आज्ञा दी कि, लंका को आग लगा दी जाये। हनुमत् के द्वारा वैसा ही किये जाने पर लंका के सभी राक्षस इधर उधर भागने लगे। उस समय इसने लंका के सभी दरवाजे रोक कर राक्षसों का संहार किया।

राम का राज्याभिषेक--राम-रावण युद्ध समाप्त होने पर, राम दाशरथि का राज्यारोहणसमारंभ अयोध्या में संपन्न हुआ, जहाँ यह अपने समस्त परिवार के साथ उपस्थित हुआ था। उस समारोह में राम ने इसका अत्यधिक सत्कार किया, एवं युद्ध में यशस्विता प्राप्त होने का बहुत सारा श्रेय इसे प्रदान किया (वा. रा. १२३-१२८)। बाद में राम ने जब देहत्याग किया, तब किष्किंधा के राजगद्दी पर अंगद को बिठा कर इसने भी मृत्यु स्वीकार ली।

चरित्रचित्रण--वाल्मीकि रामायण में सुग्रीव का महत्त्व राजनैतिक है, जहाँ इसे 'शरण्य' (शरण जाने के लिए योग्य) कहा गया है। इसकी मैत्री के कारण राम दाशरथि सीता को पुनः प्राप्त कर सका, जिस संबंध में इसकी प्रशंसा राम के द्वारा भी की गयी है (वा. रा. कि. ७.१७-१८)।

सुग्रीव कुशल सैन्यसंचालक था, एवं इसका भौगोलिक ज्ञान भी परमकोटि का था (वा. रा. कि. ४.१७-२९; ४१.७-४५; ४२.६-४९)।

सुग्रीवचरित्र के दोष--वाल्मीकि रामायण में इसके चरित्र के निम्नलिखित दोषों का निर्देश अंगद के द्वारा किया गया है:--१. मायाविन् राक्षस के युद्ध के समय वालिन् को गुफा में बन्द करना; २. वालिवध के पश्चात् वालिपत्नी तारा का अपहरण करना; ३. राम दाशरथि को दिये गये वचन का भंग करना (वा. रा. कि. ५५.२-५)।

परिवार--इसकी तारा एवं रुमा नामक दो पत्नियाँ थीं। इसके विजनवास में इसके दोनों पत्नियों को इसके भाई वालिन् ने भ्रष्ट किया (वा. रा. कि. १८-२२)। वालिन्वध के पश्चात् इसे पुनः राज्यप्राप्ति होने पर, इसकी ये दोनों पत्नियाँ पुनः एक बार इसके पास रहने लगी। इसकी मोहना नामक अन्य एक पत्नी का निर्देश भी प्राप्त है (पद्म. पा. ६०)।

इसका कोई पुत्र न था, जिस कारण इसकी मृत्यु के पश्चात् अंगद किष्किंधा नगरी का राजा बन गया।

मानस में--तुलसी द्वारा विरचित मानस में सुग्रीव का चरित्रचित्रण एक राजनीतिज्ञ के नाते नहीं, बल्कि राम के एक शरणापन्न सेवक एवं सखा के नाते किया गया है। इसी कारण राम से इसकी मित्रता राजनैतिक गठ

बंधन नहीं, वल्कि आध्यात्मिक एकात्मता है, जो इसके निष्कपट हृदय का द्योतक है। इसी कारण 'मानस' का सुग्रीव राम के परिवार के अन्य लोगों की भाँति केवल निमित्तमात्र ही है, इसकी असली प्रेरक शक्ति तो स्वयं राम ही है।

सुग्रीवी—कश्यप एवं ताम्रा की एक कन्या, जो इस संसार के समस्त अश्व, उष्ट्र एवं गर्दभों की आद्य जननी मानी जाती है (मत्स्य. ६.३०)।

सुघोर—एक राक्षस, जो हिरण्याक्ष एवं देवों के बीच हुए युद्ध में कार्तिकेय के द्वारा मारा गया (पद्म सृ.७५)।

सुचंद्र—एक देवगंधर्व जो, कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ६९.४६)।

२. एक सैंहिकेय असुर, जो कश्यप एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.३०)।

३. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार हेमचंद्र राजा का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.६१.१३)। इसे काली देवी की कृपा से एक कवच प्राप्त हुआ था, जिस कारण यह युद्ध में अजेय हुआ था।

कार्तवीर्य एवं परशुराम के बीच हुए युद्ध में यह कार्तवीर्य के पक्ष में शामिल था (ब्रह्मांड. ३.३९.१८–५३)। उस समय इसके रथ में स्वयं कालीदेवी अवतीर्ण हुई, जिसने परशुराम के द्वारा फेंके गये हर एक शस्त्र-अस्त्र को भक्ष्य करना प्रारंभ किया। इस कारण भयभीत हो कर परशुराम ने इसे अपना 'कालीकवच' उतार कर देने की प्रार्थना की। इस पर इस उदारचरित राजा ने अपना कवच-उतार कर परशुराम को दे दिया। कवच प्राप्त होते ही परशुराम ने इसका वध किया।

४. एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१२९)।

५. अंधकवंशीय राजा, जो सूर्यग्रहण के समय 'स्यमंत-पंचक' क्षेत्र में तीर्थयात्रा के लिए गया था।

सुचल—(सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सुमति राजा का पुत्र था। भागवत एवं विष्णु में इसे 'सुकल' एवं मत्स्य में इसे 'अचल' कहा गया है।

सुचारु—धृतराष्ट्रपुत्र 'चारु' का नामान्तर। इसे 'चारुचित्र' नामान्तर भी प्राप्त था। अपने अन्य सात भाइयों के साथ इसने अभिमन्यु पर आक्रमण किया था।

२. कृष्ण एवं रुक्मिणी का एक पुत्र।

३. (सो. वसु.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार प्रतिबाहु राजा का पुत्र था (वायु. ९६.२५१)। यह वज्र का पौत्र था, एवं इस प्रकार कृष्ण के छठवें पीढ़ी में उत्पन्न हुआ था।

सुचित्त—एक राजा, जो सत्यधृति नामक राजा का पिता था (सत्यधृति सौचित्य देखिये)।

सुचित्त सैलन-एक आचार्य (जै. उ. ब्रा. १.४.४)।

सुचित्ति—सुवित्ति नामक अंगिराकुलोत्पन्न मंत्रकार का नामान्तर।

सुचित्र—(सो. कुरु.) चित्र नामक धृतराष्ट्रपुत्र का नामान्तर। इसे 'सुचारु' नामान्तर भी प्राप्त था।

२. पांचाल देश का एक महारथी राजा, जिसके पुत्र का नाम चित्रवर्मन् था। भारतीय युद्ध में द्रोण ने इन दोनों का वध किया (म. द्रो. २०.१५५*, पंक्ति. ८-२२)।

३. शिवदेवों में से एक।

सुचिरा—एक राजकन्या, जो श्वफल्क एवं गांदिनी की कन्या थी (भा. ९.२४.१७)।

सुचेतस्—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वीतहव्य-वंशीय गृत्समद राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम वर्चस् था (म. अनु. ३०.६१)।

२. द्रुह्युवंशीय प्रचेतस् राजा का नामान्तर (प्रचेतस् ७. देखिये)।

सुच्छाया—अग्नि की एक कन्या, जो ध्रुवपुत्र शिष्ट राजा की पत्नी थी। इसके कृप, रिपुंजय, वृक आदि पुत्र थे।

सुजन—एक देव, हो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था।

सुजन्तु—(सो. अमा.) अमावसुवंशीय पूरु राजा का नामान्तर (पूरु. ३. देखिये)। इसे सुहोत्र नामान्तर भी प्राप्त था।

सुजन्य-एक देव, जो बारह भार्गव देवों में से एक था।

सुजय—भव्य देवों में से एक।

२. एक राजा, जिसने अश्वमेध यज्ञ के समय पांडवों की मदद की थी (जै. अ. १३)।

सुजात—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. श. २५.१५)।

२. (सो. सह.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार भरत राजा का पुत्र था।

३. एक वानर राजा, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१८०–१८१)।

सुजातवक्र--एक आचार्य, जिसका निर्देश ऋग्वेदीय ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.३)।

सुजाता--महर्षि उद्दालक की कन्या, जो कहोल ऋषि की पत्नी, एवं अष्टावक्र की माता थी (म. व. १३२.७)।

३. सुराष्ट्र राजा की कन्या, जो दुर्गम राजा की पत्नी थी।

सुजातेय--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

सुजानु--एक ऋषि, जो शांतिदौत्य के लिए जानेवाले श्रीकृष्ण से मार्ग में मिले थे (म. उ. ३८८* पाठ)।

सुज्ञ--दशरथ राजा का मंत्री, जिसके निम्नलिखित दस पुत्र थे :--१. जितश्रम; २. धार्मिक; सुकेतु; ४. शत्रुसूदन; ५. चंद्र; ६. मद; ७. शल; ८. काल; ९. मल्ल; १०. सिंह (जै. अ. ३४.४३)।

सुज्येष्ठ--(शुंग. भविष्य.) एक राजा, जो अग्निमित्र राजा का पुत्र, एवं वसुमित्र राजा का पिता था (भा. १२.१६.१७)।

सुतंजय--त्रिगर्त देश के 'श्रुतंजय' राजा का नामांतर (श्रुतंजय ३. देखिये)।

सुतद्वाज--(सू. निमि.) विदेह देश के सत्यध्वज राजा का नामांतर।

सुतनु--आहुक (उग्रसेन) राजा की कन्या, जो अक्रूर की पत्नी थी (म. स. १३.१२)। मत्स्यादि में इसे वसुदेव की पत्नी कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम पौण्ड्रक दिया गया है (मत्स्य. ४४.७६; ४६.२१; विष्णु. ४.१४.५)।

२. उग्रसेन राजा का पुत्र (वायु. ९६.१३२)।

३. (सो. कुरु.) युधिष्ठिर राजा की कन्या, जिसका विवाह वज्र राजा के पुत्र अश्वसुत से हुआ था (वायु. ९६.२५०)।

४. कलापग्राम में रहनेवाले एक ब्राह्मण का पुत्र (स्कंद. १.२.६)।

सुतपस्--सावर्णि मन्वंतर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित बीस देव शामिल थे :--आर्चिष्मत्, कीर्ति, क्रतु, कृतिनेमि, तपस्, तेजस्, द्योतन, धर्म, धृति, प्रभाकर, प्रभास, बुध, भानु, मासकृत्, यशस्, रश्मि, विराज्, एवं शुक्र (ब्रह्मांड. ४.१.१२)।

२. एक ऋषि, जो निवृत्तिचक्षु ऋषि का पुत्र था। एक बार इसने उत्पलावती से संभोग की प्रार्थना की। उसके द्वारा इसकी प्रार्थना अस्वीकार किये जाने पर, इसने उसे मृगी बनने का शाप दिया। उत्पलावती के द्वारा उःशाप की माँग किये जाने पर, उसके गर्भ से 'लोल' नामक तामस मनु निर्माण होने का उःशाप इसने उसे प्रदान किया (मार्क. ७१)।

३. भरद्वाजकुलोत्पन्न एक ऋषि। इसकी कुल दो पत्नियाँ थीं। उनमें से एक पितृकन्या थी, जिससे इसे कल्याणमित्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ।

इसकी दूसरी पत्नी पर सूर्य ने बलात्कार किया, जिससे इसे अश्विनीसुत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। अपनी इस व्यभिचारिणी पत्नी का, एवं उसके पुत्र का इसने त्याग किया। किंतु आगे चल कर स्वयं कृष्ण के द्वारा आज्ञा दिये जाने पर, इसने अपने इन स्त्रीपुत्रों को पुनः स्वीकार किया (ब्रह्म. वै. १.११)।

४. सावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

५. एक मरुत्, जो मरुतों के पहले गण में समाविष्ट था।

६. एक प्रजापति, जिसने इस पृथ्वी पर वसुदेव के रूप में जन्म लिया था (भा. १०.३.३२)।

७. उत्तम मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

८. तामस मनु के पुत्रों में से एक।

९. दक्षसावर्णि मन्वंतर का एक ऋषि।

१०. रुद्रसावर्णि मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

११. रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

१२. रौच्य मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

१३. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, एवं वायु के अनुसार हेम राजा का पुत्र, एवं बलि राजा का पिता था (भा. ९.२३.४)। मत्स्य में इसे सेन राजा का पुत्र कहा गया है।

१४. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार अंतरिक्ष राजा का पुत्र, एवं अमित्रजित् राजा का पिता था (भा. ९.१२.१२)। वायु, विष्णु, मत्स्य, एवं भविष्य में इसे क्रमशः 'सुपर्ण,' 'सुवर्ण,' 'सुषेण,' एवं 'सुवर्णांग' कहा गया है।

१५. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार परिष्णव (परिप्लव) राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.८३)। पाठभेद-सुनय।

सुतमित्र--एक मरुत्, जो मरुतो के द्वितीय गण में से एक था।

सुतंभर--एक व्यक्तिनाम (ऋ. ९.६.५)।

सुतंभर आत्रेय--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ५.११-१४)। इसके सूक्त में 'नहुषपुत्र' राजा का निर्देश तप्त्र

है (ऋ. ५.१३.६)। ऋग्वेद में अन्यत्र यही नाम एक विशेषण के रूप में प्रयुक्त किया गया है (ऋ. ५.४४.१३)।

सुतरा—श्वफल्क राजा की कन्याओं में से एक।

सुतसोम--(सो. कुरु.) एक राजकुमार, जो भीमसेन एवं द्रौपदी का पुत्र था। इसकी उत्पत्ति विश्वेदेवों के अंश से हुई थी। भारतीय युद्ध में इसका निम्नलिखित योद्धाओं के साथ युद्ध हुआ था:--१. विकर्ण (म. भी. ४३. ५५); २. दुर्मुख (म. भी. ७५,३६-३७); ३. विविंशति (म. द्रो. २४.२४); ४. अश्वत्थामन् (म. क. ३९.१५-१६)। अन्त में अश्वत्थामन् के द्वारा किये हुए रात्रिसंहार के समय इसका वध हुआ (म. सौ. ८.५२)।

सुतहोत्र--(सो. क्षत्र.) क्षत्रवंशीय सुहोत्र राजा का नामान्तर (सुहोत्र २. देखिये)। इसके पुत्र का नाम शल था (शल ८. देखिये)।

सुतार--एक शिवावतार, जो वैवस्वत मन्वंतर के दूसरे युगचक्र में उत्पन्न हुआ था। ध्यानयोग की सहायता से इसने मोक्ष प्राप्त किया था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थे:--दुंदुभि, शतरूप, हृषीक एवं केतुमत् (शिव. शत. ४)।

२. अनुशाल्व राजा का सेनापति।

सुतारा--सुप्रभ गंधर्व की कन्या (पद्म. स्व. २२)। पद्म में अन्यत्र इसे चन्द्रकान्त गंधर्व की कन्या कहा गया है (पद्म. उ. १२८)।

सुतीक्ष्ण--एक ऋषि, जो अगस्त्य ऋषि का शिष्य था। ज्ञान एवं कर्म के समुच्चय की शिक्षा अगस्त्य ने इसे दी (यो. वा. १)। रामकुण्ड पर दीर्घकाल तक तपस्या कर त्रैलोक्य में इच्छानुरूप विचरण करने का सामर्थ्य इसने प्राप्त किया था (स्कंद. ३.१.१८)। राम के वनवासकाल में, वह इसके आश्रम में दो बार आ कर ठहरा था।

सुतेजन—एक राजा, जो भारतीय युद्ध में युधिष्ठिर का सहायक था (म. द्रो. १३२.४०)।

सुतीर्थ--कुरुवंशीय सुनीथ राजा का नामान्तर (सुनीथ ५. देखिये)।

सुतेमनस् शांडिल्यायन—एक आचार्य, जो अंशु धानंजय्य नामक आचार्य का शिष्य, एवं सुनीथ कापटव नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुत्रामन्--रौच्य मन्वन्तर का एक गोत्रकार।

सुत्वन्—एक आचार्य, जो ब्रह्मांड एवं वायु के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से सुमन्तु नामक आचार्य का शिष्य था।

सुत्वन् कैरिशिय भार्गायण--एक राजा, जिसे मैत्रेय कौषारव नामक आचार्य ने 'ब्राह्मण परिमर' नामक अभिचार विद्या सिखायी थी। इस विद्या के कारण अपने पाँच शत्रु राजाओं का वध कर, यह महान् राजा बन गया (ऐ. ब्रा. ८.२८.१८)।

सुदक्षिण—पांडवपक्ष का एक राजा, जिसे द्रोणाचार्य वध कर रथ से नीचे गिरा दिया था (म. द्रो. २०.४४)।

२. कामरूप देश का एक शिवभक्त राजा, जिसका रक्षण करने के लिए भीमाशंकर ने भीमासुर का वध किया था (शिव. शत. ४२.१९)।

सुदक्षिण कांबोज--एक राजा, जो कांबोज (काबुल) देश का अधिपति था। महाभारत में इसका निर्देश 'कांबोजाधिपति' (म. आ. १७७.१५), एवं 'कांबोज' (म. स. २४.२२) नाम से किया गया है। महाभारत में अन्यत्र इसे शक एवं यवन लोगों का राजा कहा गया है (म. उ. १९.२१)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय, अर्जुन ने अपने पश्चिम दिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २४.२२)।

भारतीय युद्ध में यह कौरवों के पक्ष में शामिल था; एवं उस पक्ष के उत्कृष्ट रथियों में इसकी गणना की जाती थी (म. उ. १६३.१)। इस युद्ध में सहदेवपुत्र श्रुतवर्मन् के साथ इसका घमासान युद्ध हुआ था (म. भी. ४३. ६४)। अन्त में अर्जुन ने इसका एवं इसके छोटे भाई का वध किया (म. द्रो. ६७-६८; क. ४०.१०५)। इसके मृत शरीर को देख कर इसकी पत्नी ने अत्यधिक विलाप किया (म. स्त्री. २५.१.५)।

सुदक्षिण काशिराज—एक राजा, जो पौंड्रक वासुदेव के साथ कृष्ण का शत्रुत्त्व करनेवाले काशिराज का पुत्र था।

इसके पिता का कृष्ण के द्वारा वध किये जाने पर, इसने अपने पिता का बदला लेने के लिए कृष्ण का वध करने की घोर प्रतिज्ञा की, एवं तत्प्रीत्यर्थ वाराणसी क्षेत्र में शिव की तपस्या प्रारंभ की। इसकी तपस्या से प्रसन्न हो कर, शिव ने इसे जारणमारण की अधिष्ठात्री देवी दक्षिणाग्नि की आराधना करने का आदेश दिया।

शिव के उपर्युक्त आदेशानुसार, इसने अपने ऋत्विजों के साथ दाक्षिणाग्नि की आराधना प्रारंभ की। इस आराधना के कारण इसके यज्ञकुण्ड से एक महाभयंकर 'अभिचार' अग्नि बाहर निकली, एवं दशदिशाओं को जलाती हुयी द्वारका नगरी में पहुँच गयी। अक्षक्रीड़ा में

निमग्न हुए कृष्ण को वह जलानेवाली ही थी कि, कृष्ण ने अपना सुदर्शन-चक्र छोड़ कर उस अग्नि को लौटा दिया। पश्चात् उस अग्नि ने वाराणसी की ओर पुनः एक बार मुड़ कर, इसे एवं इसके ऋत्विजों को जला कर भस्म कर दिया (भा. १०.६६.२७-४२)।

सुदक्षिण क्षैमि--एक आचार्य, जिसे तिरस्कृत मान कर एक यज्ञसमारोह से निकाल दिया था। पश्चात् इसके स्थान पर, शुक्र एवं गोश्रु जाबालि नामक आचार्यों की उस यज्ञ में नियुक्ति की गयी थी (जै. उ. ब्रा. ३.६. ३; ७.१.३-६)।

सुदक्षिणा--अंशुमत् राजा के पुत्र दिलीप (प्रथम) राजा की पत्नी।

सुदत्ता—श्रीकृष्ण की एक पत्नी। द्वारका में स्थित इसके प्रासाद का नाम 'केतुमत्' था (म. स. परि. १. २१.१२६४)।

सुदती—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्या थी (ब्रह्मांड. ३.७.८)।

सुदत्त पाराशर्य—एक आचार्य, जो जनश्रुत वारक्य नामक आचार्य का शिष्य, एवं आषाढ उत्तर नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.४१; ४.१७)।

सुदमोदम—दम नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

सुदरिद्र--कांपिल्य नगरी का एक ब्राह्मण, जिसके वेदविद्यानिपुण पुत्रों के नाम धृतिमत्, तत्त्वदर्शिन्, विद्याचंड, एवं सत्यदर्शिन् थे (पितृवर्तिन् देखिये)।

सुदर्शन--एक विद्याधर, जो आंगिरस ऋषि के शाप के कारण सर्प बन गया था। आगे चल कर, इसने कृष्णपिता नंद को निगल लिया, जिस कारण कृष्ण ने इसका वध कर, इसे मुक्ति प्रदान की (भा. १०.३४. १-१८)।

२. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का एक पुत्र।

३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीमसेन ने इसका वध किया (म. द्रो. १०२.९९; श. २६.४८)।

४. कौरवपक्ष का एक राजा, जो सात्यकि के द्वारा मारा गया (मं. द्रो. ९४.१४)।

५. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (भा. १.९.७)।

६. अग्निदेव का एक पुत्र, जो इक्ष्वाकुवंशीय दुर्योधन की कन्या सुदर्शना का पुत्र था। ओघवत् राजा के ओघवती नामक कन्या से इसका विवाह हुआ था (भा. ९.२.१८)।

गृहस्थाश्रमधर्मांतर्गत अतिथिसत्कार आदि का आचरण करने के कारण, प्रत्यक्ष मृत्यु पर विजय प्राप्त कर यह ब्रह्मलोक में प्रविष्ट हुआ था। इसकी पत्नी ओघवती भी तपस्विनी थी, जिसने अपने तपोबल से अपना आधा शरीर एक नदी में रूपांतरित किया था। अपने बचे हुए आधे शरीर से वह अपने पति के साथ स्वर्लोक गयी (म. अनु. ३. ८४)।

७. एक राजा, जो गांधार देश के नग्नजित् राजा के द्वारा बंदी बनाया गया था। कृष्ण ने नग्नजित् के पुत्रों का वध कर, इसे बंधमुक्त किया, (म. उ. ४७.६९)।

८. एक नरेश, जो भारतीय युद्ध में पांडव पक्ष में शामील था। इस युद्ध में अश्वत्थामन् के द्वारा यह मारा गया (म. द्रो. १७.६३)।

९. (सू. इ.) एक राजा, जो मनुवंशीय दीर्घबाहु राजा का पुत्र था। काशिराज की कन्या इसकी पत्नी थी, एवं वसिष्ठ ऋषि इनके पुरोहित थे। संपूर्ण पृथ्वी जीत कर, यह चक्रवर्ती सम्राट् बन गया था।

एक बार महाकाली देवी ने इसे सपने में आकर दृष्टांत दिया कि, पृथ्वी में जल्द ही जलप्रलय होनेवाला है। पश्चात् महालक्ष्मी के आदेशानुसार, यह अपनी पत्नी एवं पुरोहित वसिष्ठ के साथ हिमालय पर्वत के गुफा में जा छिपा। तदुपरांत उत्तर दिशा का हिम समुद्र, पश्चिम दिशा का रत्नाकर, एवं दक्षिण दिशा का वाडव समुद्र, इन तीनों में स्थित समस्त देश जलप्लावन से विनष्ट हुए।

आगे चल कर दस सालों के बाद, पृथ्वी का जलप्रलय समाप्त हो कर सारी पृथ्वी पुनः एक बार आबाद हो गयी। इस पर वैशाख शुक्ल तृतीया के दिन यह अयोध्या लौट आया, एवं पुनः एक बार राज्य करने लगा (भवि. प्रति. १.१)।

कालिका पुराण के अनुसार, जलप्लावन के पश्चात् हिमालय पर्वत का ही एक अरण्य तोड़ कर, इसने वहाँ खांडवी नामक नगरी की स्थापना की थी। कालोपरांत भैरववंश में उत्पन्न विजय नामक राजा ने इसका वध कर, इसका राज्य जीत लिया (कालि. ९२)।

१०. (सू. इ.) एक राजा, जो ध्रुवसंधि राजा का पुत्र, एवं कुरुवंशीय अग्निवर्ण राजा का पिता था (भा. ९.१२. ५)। इसकी माता का नाम मनोरमा था। देवी उपासना

का माहात्म्य करने के लिए इसकी कथा देवी भागवत में दी गयी है।

इसकी सौतेली माता लीलावती के षड्यंत्रों के कारण इसे राज्यभ्रष्ट होना पड़ा, एवं यह अपनी माता के साथ भारद्वाज ऋषि के आश्रम में रहने लगा, जहाँ इसने देवी की उपासना प्रारंभ की।

आगे चल कर, देवी की कृपा से शशिकला नामक राजकन्या ने इसका स्वयंवर में वरण किया। पश्चात् इसे अपना विगत राज्य भी देवी की कृपा से पुनः प्राप्त हुआ (दे. भा. ३.१३-२५)।

११. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था (वायु. ६९.१५६)।

१२. एक गंधर्व, जो गालव ऋषि के शाप के कारण वैताल बन गया था। 'वेतालवरदतीर्थ' में स्नान करने के कारण यह मुक्त हुआ (स्कंद. ३.१.९)।

सुदर्शना--माहिष्मती के नील (दुर्योधन) राजा की अनुपम सुंदरी कन्या, जिसकी माता का नाम नर्मदा (नदी) था। यह प्रतिदिन अपने पिता के अग्निहोत्रगृह में अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए उपस्थित होती थी। इसके दर्शन से अग्निदेव इससे प्रेम करने लगा, एवं अन्त में इसका विवाह उसीके साथ संपन्न हुआ (म. स. २९९*)। अग्नि से इसे सुदर्शन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. अनु. २.३६)।

२. सुद्युम्न राजा की पत्नी (सुद्युम्न ५. देखिये)।

सुदान--शिवदेवों में से एक।

सुदान्त--(सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो वायु के अनुसार हृदीक राजा का पुत्र था (वायु. ९६.१४०)।

सुदामन्--सीरध्वज जनक राजा का एक मंत्री।

२. कृष्ण के बालमित्र कुचैल का नामान्तर। भागवत में प्राप्त इसकी कथा में, इसका निर्देश सर्वत्र 'कुचैल' नाम से ही किया गया है। किन्तु लोकश्रुति में यह सुदामन् नाम से ही अधिक सुविख्यात है (कुचैल देखिये)।

श्रीकृष्ण ने इसे एक सुवर्ण नगरी प्रदान की थी, जो कई अभ्यासकों के अनुसार आधुनिक सुराष्ट्र में स्थित पोरबंदर मानी जाती है। कृष्ण की कृपा से इसे स्वर्गलोक से भी श्रेष्ठ तर 'गोलोक' की प्राप्ति हुई।

३. दशार्ण देश का एक राजा, जो चेदिराज सुबाहु एवं विदर्भराजकन्या दमयंती का पितामह था (म. व. ६६. १२)।

इसकी कुल दो कन्याएँ थीं, जिनमें से एक का विवाह विदर्भ राजा भीम से, एवं दूसरे का विवाह चेदिराज वीरबाहु से हुआ था।

४. मोदपुर देश का एक राजा (म. स. २४.१०)।

५. पाण्डवों के पक्ष का एक राजा, जिसके रथ के अश्व मृणालिनी के समान नीले, एवं श्येनपक्षी के समान वेगवान् थे (म. द्रो. २२.४२)।

६. काशिदेश का एक राजा, जो अभिभू (सुकेतु) नामक राजा का पुत्र था। अपने पिता के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित हुआ था।

७. उत्तरभारत का एक लोकसमूह, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय जीता था (म. स. २४.१०)।

८. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१०)।

९. एक गोप, जो कृष्ण के आठ प्रमुख गोप सखाओं में से एक था (दे. भा. ९.१८.२)। अपने अगले जन्म में यह शंखचूड नामक राक्षस बना था (शंखचूड २. देखिये)।

१०. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

११. कंस का एक माली, जिसने मथुरा में आये हुए कृष्ण एवं बलराम को पुष्पमालाएँ अर्पित की थी (भा. १०.४१.४३-५२)।

१२. एक यादव राजा। जरासंध के द्वारा किये मथुरा नगरी के आक्रमण के समय, इस पर उस नगरी के उत्तर द्वार के संरक्षण का भार सौंपा गया था।

सुदामिनी--वसुदेवबन्धु शमीक की पत्नी। इसे सुमित्र एवं अर्जुनपाल नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

सुदास--(सो. नील.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार च्यवन राजा का पुत्र, एवं सहदेव राजा का पिता था (वायु. ९९.२०८; विष्णु. ४.१९.७१)। मत्स्य में इसे चैत्र राजा का पुत्र कहा गया (मत्स्य. ५०.१५)। इसे बृहद्रथ नामान्तर भी प्राप्त था। पौराणिक साहित्य में प्राप्त इसकी वंशावलि उत्तर पांचाल देश के सुदास पैजवन राजा से काफ़ी मिलती जुलती है, जिससे प्रतीत होता है कि ये दोनों एक ही थे (सुदास पैजवन देखिये)।

२. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, भागवत के अनुसार बृहद्रथ राजा का पुत्र, एवं शतानीक राजा का पिता था (भा. ९.२२.४३)। अन्य पुराणों में इसे तिमि राजा का पुत्र कहा गया है।

३. एक यवन राजा (मनु. ७)।

४. एक शूद्र, जो अपने अगले जन्म में कृतघ्न नामक पिशाच बन गया। वैशाख व्रत का माहात्म्य बताने के लिए इसकी कथा पद्म में दी गयी है (पद्म. पा.९८)।

सुदास पैजवन--उत्तर पांचाल देश का एक सुविख्यात राजा, जिसने 'दाशराज्ञ युद्ध' नामक सुविख्यात युद्ध में दस सामर्थ्यशाली राजाओं पर विजय प्राप्त किया था (ऋ. ७.१८)। दाशराज्ञ में इसके द्वारा प्राप्त किये गये विजय का निर्देश ऋग्वेद में अन्यत्र भी प्राप्त है (ऋ ७.२०.२; २५.३; ३२.१०)। 'दाशराज्ञ युद्ध' से संबंधित निर्देशों में, इसे सर्वत्र 'तृत्सुभरतों' का राजा कहा गया है।

नाम--ऋग्वेद में सर्वत्र सुदास राजा को 'पैजवन' उपाधि दी गयी है (ऋ. ७.१८.२३)। सुदास 'पैजवन' का एक सूक्त भी प्राप्त है (ऋ. १०.१३३)। किन्तु 'पैजवन' इसका पैतृक नाम है, या कुल नाम है यह कहना कठिन है। निरुक्त में इसे 'पिजवन' राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इस प्रकार 'पैजवन' इसका पैतृक नाम बताया गया है (नि. २.२४)। किन्तु प्रत्यक्ष ऋग्वेद में एक स्थान पर इसे दिवोदास राजा का पुत्र (ऋ. ७.२८.२५), एवं देववत् राजा का पौत्र (ऋ. ७.१८.२२) कहा गया है।

ऐतरेय ब्राह्मण में, दिवोदास को वध्र्यश्व राजा का पुत्र कहा गया है। संभवतः 'देववत्' वध्र्यश्व राजा की ही एक उपाधि होगी, अथवा वह वध्र्यश्व का मातामह होगा (ऐ. ब्रा. ८.२१)। आधुनिक अभ्यासक इसे 'पिजवन' का पुत्र, एवं दिवोदास का पौत्र मानते है। इसके नाम का 'सुदास्' पाठ भी ऋग्वेद में कई स्थानों पर प्राप्त है।

पुरोहित--वसिष्ठ ऋषि के द्वारा इसके राज्याभिषेक किये जाने का निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है (ऐ. ब्रा ८.२१)। किन्तु ऋग्वेद में एक स्थान पर विश्वामित्र को इसका पुरोहित कहा गया है, एवं विपाश (बियास) एवं शुतुद्री (सतलज) नदियों पर इसके विजयी अभियानों के साथ उसके उपस्थित होने का, एवं इसके द्वारा एक अश्वमेध यज्ञ कराने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (ऋ. ३.५३.९-११)।

इन सारे निर्देशों से प्रतीत होता है कि, सर्वप्रथम इसका पुरोहित विश्वामित्र था (ऋ. ३.३३.५३)। किंतु उसके इस पद से भ्रष्ट होने के पश्चात्, वसिष्ठ ऋषि भरत राजवंश का एवं सुदास राजा का पुरोहित बन गया। तदुपरांत विश्वामित्र ऋषि इसके शत्रुपक्ष में शामिल हुआ, एवं उसने इसके विरुद्ध दाशराज्ञ युद्ध में भाग लिया (वसिष्ठ मैत्रावरुणि एवं विश्वामित्र देखिये)। उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में भी सुदास् एवं विश्वामित्र ऋषि के घनिष्ठ संबंधों के निर्देश पुनः पुनः प्राप्त हैं।

दाशराज्ञ युद्ध--ऋग्वेद के सभी मंडलों में दाशराज्ञ युद्ध का निर्देश पुनः पुनः आता है, जिससे प्रतीत होता है कि उक्त ग्रंथरचना काल में, यह युद्ध काफ़ी महत्त्वपूर्ण माना जाता था। ऋग्वेद के सातवें मण्डल में इस युद्ध का सविस्तृत वर्णन करनेवाले अनेक सूक्त प्राप्त हैं (ऋ. ७.१८)।

इस युद्ध में इसने तुर्वश, द्रुह्यु आदि दस राजाओं से युद्ध किया, एवं इन सारे राजाओं को परास्त कर यह विजयी साबित हुआ। दाशराज्ञ युद्ध में इसके विपक्ष में भाग लेनेवाले राजाओं के नाम वैदिक साहित्य में विभिन्न प्रकार से पाये जाते हैं, जिनकी संख्या १० से कतिपय अधिक प्राप्त होती है। इससे प्रतीत होता है कि, इस युद्ध में 'दाशराज्ञ' (दस राजा) शब्द का प्रयोग 'अनेक' अर्थ से किया गया होगा।

विपक्षीय राजा--दाशराज युद्ध में सुदास के विपक्ष में भाग लेनेवाले राजाओं की नामावलि निम्न प्रकार पायी जाती हैः--१. शिम्यु; २. तुर्वश; २. द्रुह्यु; ४. कवष; ५. पुरु (पूरु.); ६. अनु; ७. भेद ८. शंबर; ९. वैकर्ण; १० दूसरा वैकर्ण; ११. यदु; १२. मत्स्य; १३. पक्थ; १४. भलानस्; १५. अलिन्; १६. विषाणिन्; १७. अज; १८. शिव; १९. शिग्रु; २०. यक्षु; २१. युध्यामधि; २२. याद्व; २३. देवक मान्यमान; २४. चायमान कपि; २५. सुतक; २६. उचथ; २७. श्रुत; २८. बृद्ध; २९. मन्यु. ३०. पृथु.

उपर्युक्त राजाओं की नामावलि के संबंध में ऋग्वेद के भाष्यकारों में भी एकवाक्यता नहीं है। उक्त नामावलि में से १३ से १६ तक के नाम, राजाओं के न हो कर पुरोहितों के थे, ऐसा सायणाचार्य का कहना है। १७ से २९ तक के राजाओं की ऐतिहासिकता विवाद्य है।

अन्य पराक्रम--ऋग्वेद के एक सूक्त में त्रसदस्यु राजा के साथ इसके द्वारा युद्ध करने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ७.१९.३)। ऋग्वेद में अन्यत्र त्रसदस्यु राजा के पिता पुरुकुत्स राजा के द्वारा यह पराजित होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.६३.७)।

परिवार--इसकी पत्नी का नाम सुदेवी था, जो इसे अश्विनों की कृपा से प्राप्त हुई थी (ऋ. ३.५३.९-११)। इसके पुत्र एवं वंशज 'सौदास' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। वसिष्ठ ऋषि के पुत्र शक्ति वासिष्ठ के सौदासों के साथ किये संघर्ष का निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है।

उत्तरकालीन वैदिक साहित्य में, अयोध्या के मित्रसह कल्माषपाद राजा के पिता सुदास, एवं सुदास पैजवन इन दोनों को एक ही राजा मानने की भूल अनेक बार की गयी है। विशेष कर शक्ति वासिष्ठ के संबंधित कथाओं में, यह भूल विशेष कर प्रतीत होती है। किन्तु ये दोनो सर्वतः विभिन्न राजा थे (सुदास सार्वकाम देखिये)।

सुदास सार्वकाम--(सू. इ.) अयोध्या का एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार सर्वकाम राजा का पुत्र, एवं मित्रसह कल्माषपाद राजा का पिता था (भा. ९.९.१८; विष्णु. ४.४.३१; कल्माषपाद देखिये)।

सुदिवा तण्डि--एक वानप्रस्थाश्रमी ऋषि, जो वानप्रस्थ धर्म का पालन करता हुआ स्वर्गलोक को प्राप्त हुआ (म. शां. २३६.१७)।

सुदीति आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८. ७१)।

सुदेव--एक वैदिक यज्ञकर्ता (ऋ. ८.५.६)।

२. एक ब्राह्मण, जो विदर्भनरेश भीम के द्वारा दमयंती की खोज में नियुक्त किये गये ब्राह्मणों में से एक था (म. द्रो. ६५.६)। यह दमयंती के दम नामक भाई का मित्र था। इसने चेदिराज के महल में सैरन्ध्री नामक दासी के नाते रहनेवाले दमयंती को पहचान लिया (म. व. ६८.२)। पश्चात् इसके द्वारा ही दमयंती ने अयोध्या-नरेश ऋतुपर्ण राजा को स्वयंवर का संदेश भेज दिया था।

३. स्वारोचिष मन्वन्तर का एक देवगण।

४. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चंप राजा का पुत्र था। विष्णु एवं वायु में इसे चंचु राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ८८. १२०)।

५. विदर्भ देश का एक राजा, जो राम दाशरथि का समकालीन था। इसके पुत्रों के नाम श्वेत एवं सुरथ थे (वा. रा. उ. ७८.४)।

६. तुषित देवों में से एक।

७. (सो. काश्य.) एक राजा, जो काशिराज हर्यश्व का पुत्र था। यह देवता के समान तेजस्वी एवं न्यायप्रिय था। हैहय राजा वीतहव्य ने इसे परास्त कर इसे राज्य-भ्रष्ट किया। पश्चात् इसके पुत्र दिवोदास ने अपने पुरोहित वसिष्ठ की मदद अपना राज्य पुनः प्राप्त कर दिया।

८. अंबरीष का एक सेनापति, जो धर्मयुद्ध में मृत हुआ था। एक बार अंबरीष राजा की आज्ञा से यह राक्षसों के साथ लड़ने गया था, जहाँ वियम नामक राक्षस के द्वारा यह मारा गया।

धर्मयुद्ध में मृत होने के कारण, अंबरीष राजा के पूर्व ही इसे स्वर्गलोक प्राप्त हुआ। बिना यज्ञ-याग किये बगैर इसे स्वर्गप्राप्ति हुई, यह देख कर अंबरीष राजा को अत्यंत आश्चर्य हुआ, एवं इस संबंध में इसने इंद्र से पूछा। फिर इंद्र ने जवाब दिया 'धर्मयुद्ध में मृत्यु प्राप्त होने का पुण्य यज्ञयागों के पुण्य से कहीं अधिक है (म. शां. ९९.१०-१३)।

९. (सो. कुकुर.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु, मत्स्य, वायु एवं पद्म के अनुसार देवक राजा का पुत्र था (भा. ९.२४.२२)।

१०. एक वैश्य, जो सर्वस्वी अनाथ था। इसके मरने पर, इसका अंत्य संस्कार करने के लिए इसका कोई सम्बन्धी न था। इस कारण इसकी मृतात्मा बभ्रुवाहन राजा के पास सपने में गयी, एवं इसने उससे कार्तिक पौर्णिमा के दिन 'वृषोत्सर्ग' करने की प्रार्थना की (गरुड. २.९)।

११. एक राजा, जिसकी कन्या का नाम गौरी था। उसका विवाह करंधमपुत्र अविक्षित राजा से हुआ था (मार्क. ११९.१६)।

१२. एक सुविख्यात राजा, जिसकी कन्या का नाम सुप्रभा था। सुविख्यात राजा नाभाग का यह श्वशुर था।

यह राजा प्रारंभ में क्षत्रिय था, किन्तु कालोपरांत च्यवनपुत्र प्रमति ऋषि के शाप के कारण यह वैश्य बन गया। इस संबंध में सविस्तृत कथा मार्कंडेय में प्राप्त है। एक बार धूम्राक्षबंधु नल नामक इसके मित्र ने शराब के नशे में प्रमति ऋषि की पत्नी पर बलात्कार करना चाहा। इस समय यह बाजूमें ही खड़ा रह कर, यह सारा पाशवी दृश्य देखता रहा।

उस समय प्रमति ऋषि ने अपनी पत्नी का रक्षण करने के लिए इसकी बार बार प्रार्थना की। तब इसने बड़ी व्यंग्योक्ति से जवाब दिया, 'क्षतों की रक्षा करनेवाला एक क्षत्रिय ही केवल तुम्हारी पत्नी की रक्षा कर सकता हैं। मैं क्षत्रिय कहाँ ? मैं तो वैश्य हूँ'।

इसके इस औद्धत्य से क्रुद्ध हो कर प्रमति ऋषि ने इसे तत्काल वैश्य होने का शाप दिया। पश्चात् इसके द्वारा उःशाप की प्रार्थना किये जाने पर प्रमति ऋषि ने इसे उःशाप दिया, 'एक क्षत्रिय के द्वारा तुम्हारी कन्या का हरण किया जायेगा, जिस कारण अप्रत्यक्षतः तुम क्षत्रिय बनोगे'।

प्रमति ऋषि के उःशाप के अनुसार इसकी कन्या सुप्रभा का नाभाग राजा ने हरण किया, एवं इस प्रकार यह पुनः क्षत्रिय बन गया (मार्क. १११-११२)।

१३. एक ऋषि; जिसे मिलने के लिए राम अपने परिवार के साथ उपस्थित हुआ था (पद्म. पा. ११७)।

१४. एक वैदिक यज्ञकर्ता (ऋ. ८.५.६)।

सुदेव काश्यप—एक आचार्य। ब्रह्मचर्यव्रत का भंग होने पर किये जाने वाले प्रायश्चित्त का विधान इसके द्वारा बताया गया है (तै. आ. २.१८)।

सुदेवला—ऋतुपर्ण ऋषि की पत्नी (बौ. श्रौ. २०.१२)।

सुदेवा—काशी के देवराज राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकु राजा की पत्नी थी (पद्म. भू. ४२.१-५)।

२. एक स्त्री, जिसकी कथा स्त्री के द्वारा पति के साथ किये गये दुर्व्यवहार के दुष्परिणाम कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. भू. ४७.५२)।

सुदेवी—मेरुकन्या मेरुदेवी का नामान्तर (भा. २.७.१०)।

२. सुदास पैजवन राजा की पत्नी (ऋ. १.११२.१९; सुदास पैजवन देखिये)।

सुदेष्ण—कृष्ण एवं रुक्मिणी के पुत्रों में से एक (भा. १०.६१.१)।

२. एक प्रमुख यादव राजा, जिसे मिलने के लिए स्वयं देवराज इंद्र उपस्थित हुआ था।

सुदेष्णा—बलि आनव राजा की पत्नी, जिसे दीर्घतमस् ऋषि से निम्नलिखित पुत्र इत्पन्न हुए थेः- १. अंग; २. वंग; ३. कलिंग; ४. पुण्ड्र; ५. सुह्म (म. आ. ९८.३०; भा. ९.२३; ह. वं. १. ३१; बलि आनव देखिये)।

२. मत्स्यनरेश विराट की पत्नी, जो रथकार केकय की द्वितीय पत्नी मालवी की कन्या थी। इसे चित्रा नामान्तर भी प्राप्त था। इसके छोटे भाई का नाम कीचक था। इसके उत्तर एवं उत्तरा नामक दो संतानें थी (म. वि. परि. १.१९-३२-३७; विराट देखिये)।

३. गांधारराज सुबल की एक कन्या, जो गांधारी की छोटी बहन, एवं धृतराष्ट्र की पत्नियों में से एक थी।

सुद्यु—(सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार चारुपद राजा का पुत्र, एवं बहुगव राजा पिता का पुत्र था (भा. ९.२०.३)। इसे धुंधु एवं सुद्युम्न नामान्तर भी प्राप्त थे। विष्णु में इसे अभयद राजा का पुत्र, एवं बहुगव राजा का पिता कहा गया है (विष्णु ४.१९.१)।

सुद्युम्न—वैवस्वत मनु के इल (इला) नामक पुत्र का नामान्तर (इल देखिये)।

२. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

३. एक न्यायी राजा, जिसने शंख एवं लिखित नामक दो ऋषि बंधुओं के बीच हुए वाद का अत्यंत निःपक्षपाती वृत्ति से न्याय दिया (म. शां. २४; शंखलिखित १. देखिये)। आगे चल कर इसने लिखित ऋषि को विपुल दान प्रदान किया (म. अनु. १३७.१९)।

महाभारत में अन्यत्र इसे युवनाश्व राजा का पिता कहा गया है (म. व. १२६.९)। इस ग्रंथ में निर्दिष्ट यमसभा के वर्णन में इसका निर्देश प्राप्त है (म. स. ८.१५)।

४. एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम सुदर्शना था। राजस्थल नामक तीर्थ में स्नान करने के कारण इसे पुत्रप्राप्ति हुई (स्कंद. ५.१.१४)।

सुधनु—(सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो कुरु राजा का पुत्र एवं सुहोत्र राजा का पिता था (भा. ९.२२.४)। मत्स्य एवं वायु में इसे सुधन्वन् कहा गया है।

चेदि एवं मगध देश के ऋक्षवंशीय राजघरानों का यह मूल पुरुष माना जाता है। इसके वंश की सविस्तृत जानकारी अनेक पुराणों में दी गयी है, जहाँ उपरिचर वसु इसके वंश का प्रमुख राजा बताया गया है (उपरिचर वसु देखिये)।

२. एक संशप्तक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था (म. द्रो. १७.२०)। अंत में यह अर्जुन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १७.२०-२१)।

३. पाण्डवपक्ष का एक पांचाल योद्धा, जो द्रुपद राजा का पुत्र एवं वीरकेतु का भाई था (म. द्रो. २२.१६६.*)। इसके रथ के अश्व कृष्णवर्णीय, एवं विभिन्न वर्ण के पुष्पों से सुशोभित थे (म. द्रो. १२२.१६६* पंक्ति. ३)। इसके भाई वीरकेतु के मारे जाने पर इसने अपने भाईयों सहित द्रोण पर आक्रमण किया। इस युद्ध में द्रोण ने इसे रथहीन कर के इसका वध किया (म. द्रो. ९८.३७-४०)।

४. एक राजा, जिसे मांधातृ ने जीत लिया था (म. द्रो. परि १.८.१५)।

सुधन्वन्--एक ब्राह्मण, जो धनुर्वेद एवं अर्थशास्त्र में निष्णात था (वा. रा. अयो. १००.१४)।

२. सांकाश्य नगरी का एक राजा, जो सीरध्वज जनक राजा का समकालीन था। इसने सीरध्वज की कन्या सीता से विवाह करना चाहा। इसका यह प्रस्ताव सीरध्वज द्वारा अस्वीकार किये जाने पर, इसने मिथिला नगरी पर आक्रमण किया। पश्चात् हुए युद्ध में यह स्वयं ही मारा गया (वा. रा. बा. ७१.१६-२१)। इसकी मृत्यु के पश्चात् सांकाश्य नगरी पर सीरध्वज का बंधु कुशध्वज राज्य करने लगा।

३. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार शाश्वत राजा का पुत्र था।

४. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार सत्यधृत राजा का, वायु एवं भागवत के अनुसार सत्यहित का, एवं मत्स्य के अनुसार सत्यधृति राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.१९.८२; वायु. ९९.२२५)। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः जह्नु एवं धनुष कहा गया है।

५. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का कनिष्ठपुत्र, जो अपने पिता के लिखित एवं शंखध्वज नामक दुष्टबुद्धि प्रधानों के षड्यंत्र के कारण मृत्यु का शिकार बननेवाला था, किन्तु कृष्णभक्ति के कारण जीवित रहा (लिखित २. देखिये)।

सुधन्वन् आंगिरस--एक तत्त्वज्ञ आचार्य, जो अंगिरस् ऋषि के पुत्रों में से एक था। इसने पतंचल काप्य की कन्या के शरीर में प्रविष्ट हो कर भुज्यु लाह्यायनि नामक आचार्य को आत्मज्ञानविषयक ज्ञान प्रदान किया था। इसी ज्ञान के बल से आगे चल कर भुज्यु लाह्यायनि ने याज्ञवल्क्य वाजसनेय को परास्त करना चाहा (बृ. उ. ३.३.१; भुज्यु लाह्यायनि देखिये)।

२. अंगिरस् ऋषि के पुत्रों में से एक (म. अनु. १३२.४३.)। केशिनी राजकन्या की प्राप्ति के लिए इसने विरोचन दैत्य के साथ श्रेष्ठता के संबंध में शर्त लगायी थी, जिसमें इसने उसे परास्त किया (म. स. ६१-७६; उ. ३५; विरोचन १. देखिये)।

सुधर्मन्--पूर्वदशार्ण देश का एक राजा। भीमसेन ने अपने पूर्व दिग्विजय में इससे युद्ध किया था। पश्चात् इसके पराक्रम से संतुष्ट हो कर इसे अपना सेनापति बनाया (म. स. २६.५-६)।

२. एक संशप्तक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में कौरव पक्ष में शामिल था। अर्जुन ने इसका वध किया।

३. पाण्डव पक्ष का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में से बचे हुए वीरों में से एक था। इस युद्ध में मृत हुए वीरों की और्ध्वदेहिक क्रियाएँ धौम्य, विदुर, युयुत्सु, संजय आदि लोगों ने की, उस समय यह उपस्थित था (म. स्त्री. २६.२४.)।

४. दुर्योधन राजा का एक पुरोहित (म. शां. ४०.५; ४४.१४)।

५. धर्मसावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

६. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अक्रूर एवं अश्विनी के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. ४५.३३)।

७. (सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार दृढ़नेमि राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७१)। वायु में इसे सुवर्मन् कहा गया है।

८. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का देवगण।

९. एक दिक्पाल, जो पृथु राजा का समकालीन था (मत्स्य. ८.९)।

१०. दक्षसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

११. रौच्य मन्वन्तर का एक देवगण।

१२. प्रतर्दन देवों में से एक।

१३. काश्मीर देश के भद्रसेन राजा का शिवभक्त पुत्र (भद्रसेन ३. देखिये)।

१४. उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित बारह देव समाविष्ट थे:--१. इष; २. ऊर्ज; ३. क्षम; ४. क्षाम; ५. सत्य; ६. दम; ७. दान्त; ८. धृति; ९. ध्वनि; १०. शुचि; ११. श्रेष्ठ; १२. एवं सुपर्ण (ब्रह्मांड. २.३६.२८)।

सुधर्मन् दिशापाल--सात्वत धर्म का एक आचार्य, जो शंखपद नामक आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था (म. शां. ३३६.३५)।

सुधर्मा--इंद्रसारथि मातलि की पत्नी, जिसकी कन्या का नाम गुणकेशी था (म. उ. ९५.१९-२०)।

२. सुराष्ट्र देश के सोमकान्त राजा की पत्नी।

सुधा--काल नामक रुद्र की पत्नी (भा. ३. १२.१३)।

सुधामन्--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो घृतपृष्ठ राजा के पुत्रों में से एक था। इसका राज्य क्रौंचद्वीप में था (भा. ५.२०.२१)।

२. चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. लोकाक्षि नामक शिवावतार का एक शिष्य।

५. नारायण नामक शिवावतार का एक शिष्य।

६. ब्रह्मसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

सुधार्मिक—केरल देश का एक राजा, जिसके पुत्र का नाम चंद्रहास था।

सुधावत्—पितरों में से एक।

सुधिय—तामस मन्वन्तर का एक देवगण (वायु. ६२.३७)।

सुधृति—(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार राज्यवर्धन राजा का पुत्र, एवं नर राजा का पिता था (भा. ९.२.२९)।

२. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार दम राजा का पुत्र था।

३. विदेह देश के सत्यधृति राजा का नामान्तर (सत्यधृति ८. देखिये)। भागवत में इसे महावीर्य राजा का पुत्र, एवं धृष्टकेतु राजा का पिता कहा गया है (भा. ९.१३.१५)।

सुनक्षत्र—मगध देश के सुक्रुत्त राजा का नामान्तर। भागवत में इसे निरमित्र राजा का पुत्र, एवं बृहत्सेन राजा का पिता कहा गया है (भा. ९.२२.४७)।

२. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२८४)। मत्स्य, भागवत एवं विष्णु में इसे मरुदेव राजा का पुत्र कहा गया है (भा. ९.१२.१२)।

सुनक्षत्रा—स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.८)।

सुनंद—(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो भविष्य के अनुसार प्रद्योत राजा का पुत्र था। सुनंद राजा के पश्चात्, भविष्य पुराण में प्राप्त इतिहासकथन समाप्त हो कर, भविष्यकथन प्रारंभ होता है।

इसी राजा के पश्चात् समस्त संसार म्लेच्छमय होने की आशंका से नैमिषारण्य में रहनेवाले अट्ठासी हज़ार ऋषि उस अरण्य को छोड़ कर हिमालय की ओर चले गये, जहाँ विशाल नगरी में विष्णुपुराण का कथन किया है (भवि. प्रति. १.४)।

२. विष्णु का एक पार्षद (भा. २.९.१४)।

३. एक गोप, जो नंदगोप का मित्र था। इसके घर उग्रतपस् नामक ऋषि ने सुनंदा नामक कन्या के रूप में जन्म लिया (पद्म. पा. ७२)।

४. एक ब्राह्मण, जिसकी कथा गीता के ग्यारहवें अध्याय का महत्त्व कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १८५)।

सुनंदन—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार पुरुषभीरु राजा का पुत्र, एवं चकोर राजा का पिता था (भा. १२.१.२५)।

सुनंदा—काशिराज सर्वसेन राजा की कन्या, जो दुष्यंतपुत्र सम्राट् भरत की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम भुमन्यु था। इसे 'काशेयी सार्वसेनी' नामान्तर भी प्राप्त था (म. आ. ९०.३४)।

२. चेदि नरेश वीरबाहु की कन्या, जिसके भाई का नाम सुबाहु था। यह दमयंती की मौसेरी बहन थी (म. व. ६२.४२; दमयंती देखिये)।

३. केकय देश की एक राजकुमारी, जो कुरुवंशीय सार्वभौम राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम जयत्सेन था (म. आ. ९०.१६)।

४. वत्सप्रि राजा की पत्नी मुदावती का नामांतर। इसके पुत्र का नाम सुनय था (सुनय ३. देखिये)।

५. माहिष्मती नगरी के नीलध्वज राजा का नामांतर (जै. अ. ६१)।

६. एक गोपी, जो सुनंदगोप की कन्या थी (सुनंद ३. देखिये)।

सुनंदा मागधी—जनमेजय (प्रथम) राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम प्राचीन्वत् था। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'अनंता'।

सुनंदा शैब्या—शिबि देश की राजकन्या, जो प्रतीप राजा की पत्नी थी। इसके देवापि, शांतनु एवं बाह्लीक नामक तीन पुत्र थे (म. आ. ९०.४६)।

सुनय—(सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो परिप्लव राजा का पुत्र, एवं मेधाविन् राजा का पिता था (भा. ९.२२.४३)। इसके पुरोहित का नाम काश्यप प्रमति था (मार्क. ११४)।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार ऋतु राजा का पुत्र, एवं वीतहव्य राजा का पिता था (वायु. ७.२२)। भागवत में इसे शुनक कहा गया है।

३. एक राजा, जो वत्सप्रि भालंदन एवं सुनंदा (मुदावती) का पुत्र था (मार्क. ११४.२)।

सुनर्तकनट—शिव का एक अवतार, जो तप करनेवाले पार्वती के सम्मुख प्रकट हुआ था। शिव के

द्वारा पार्वती को दृष्टांत मिला कि, वह उसका वरण करनेवाला है।

पश्चात् बाये हाथ में सिंगी, दाहिने हाथ में डमरू एवं पीट पर रक्तवर्णीय वस्त्र धारण करनेवाले एक विचित्र व्यक्ति के रूप में यह पार्वती के आँगन में प्रकट हुआ, एवं बाकी कुछ न कहते हुए इसने पार्वती से भिक्षा माँगी। शिव के इस रूप में भी पार्वती ने उसे पहचान लिया, एवं अपने साथ विवाह करने की प्रार्थना की (शिव. शत. ३४)।

सुनहोत्र--क्षत्रवंशीय सुहोत्र राजा का नामान्तर (सुहोत्र २. देखिये)।

सुनाभ--(सो. विदूरथ) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार अजात राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.८४)।

२. कठ देश का एक राजा, जिसे अर्जुन ने अपने उत्तर दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २३.२७०*; पंक्ति. ५-७)।

३. धृतराष्ट्र के सौ पुत्रों में से एक, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ८४.१२)।

४. वरुण का एक मंत्री, जो अपने पुत्र एवं पौत्रों के साथ गौ एवं पुष्करतीर्थ में वरुण की उपासना करता था।

५. एक दानव, जो वज्रनाभ दानव का भाई था। इसकी चन्द्रवती एवं गुणवती नामक दो कन्याएँ थीं। गद एवं सांब नामक असुरों ने इसके उन कन्याओं का हरण किया (ह. वं. २.९७.१९-२०)।

सुनामन्—मथुरा के उग्रसेन राजा का पुत्र, जो कंस का भाई था। यह कंस का सेनापति, एवं उसके घुड़सवारों की सेना का सरदार था। बलराम ने इसका वध किया (भा. ९.२४.२४; म. स. १३.३३; परि. १.२१.८४७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'सुदामन्'।

२. गरुड के पुत्रों में से एक (म. उ. ९९.२)।

३. सुकेतु राजा का एक पुत्र, जो द्रौपदीस्वयंवर में अपने पिता के साथ उपस्थित था (म. आ. १७७.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'सुदामन्'।

४. एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

५. स्कंद का एक सैनिक।

सुनीक--(प्रद्योत. भविष्य.) प्रद्योतवंशीय शुनक राजा का नामान्तर।

सुनीत—मगध देश के सुनीथ राजा का नामान्तर।

सुनीति--उत्तानपाद राजा की पत्नी, जो ध्रुव एवं कीर्तिमत् की माता थी। इसे सूनृता नामान्तर भी प्राप्त था।

सुनीथ—(सो. काश्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार संतति का, एवं विष्णु एवं वायु के अनुसार सन्नति राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम सुकेतन था (भा. ९.१७.८)।

२. (सो. द्विमीढ.) एक राजा जो मत्स्य के अनुसार क्षेम राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७९)। भागवत विष्णु, एवं वायु में इसे सुवीर कहा गया है।

३. शिशुपाल राजा का नामान्तर (म. स. ३५, परि. १.२१.२; ३६.१३)।

४. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो सुषेण राजा का पुत्र, एवं नृचक्षु राजा का पिता था (भा. ९.२२. ४१)। वायु में इसे सुतीर्थ कहा गया है।

५. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो सुबल राजा का पुत्र एवं सत्यजित् राजा का पिता था (भा. ९.१२. ४९) विष्णु में इसे सुनीथ, तथा वायु एवं ब्रह्मांड में इसे 'सुनेत्र' कहा गया है।

६. इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१४)।

७. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.११. १५)।

८. एक वृष्णिवंशीय राजकुमार, जिसे कृष्णपुत्र प्रद्युम्न के द्वारा धनुर्वेद की शिक्षा प्राप्त हुई थी (म. व. १८०. २७)।

सुनीथ कापटव—एक आचार्य (वं. ब्रा. १; कापटव सुनीथ देखिये)।

सुनीथ सौचद्रथ—एक ऋषि, जिसके द्वारा रचित सूक्त में वाय्य सत्यश्रवस् नामक ऋषि को उषस् देवता से प्रकाश प्राप्त होने का निर्देश किया गया है (ऋ. ५.७९. २)। लुडविग के अनुसार, यह वाय्य सत्यश्रवस् का पिता था।

सुनीथा—अंगराजा की पत्नी, जो यम की कन्या, एवं वेन राजा की माता थी (भा. १४.१३.१८)। अपने पुत्र वेन की मृत्यु के पश्चात्, अंगराजवंश का निर्वंश न हो, इस हेतु से इसने उसके शरीर का मंथन किया, जिससे पृथु वैन्य एवं निषाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (वेन देखिये)।

इसे वेन नामक दुष्ट पुत्र क्यों उत्पन्न हुआ, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा पद्म में प्राप्त है। अपने बाल्यकाल

में इसने तपस्या में निमग्न हुए सुशंख नामक गंधर्व को त्रस्त किया, जिससे क्रुद्ध हो कर उसने इसे एक 'कुलपांसन' पुत्र को जन्म देने का शाप दिया (पद्म. सृ. ८; भू. ३०-३६)।

सुनेत्र--(सो. कुरु.) एक राजा, जो जनमेजयपुत्र धृतराष्ट्र के बारह पुत्रों में से एक था (म. आ. ८९२*)।

२. गरुड का एक पुत्र।

३. रौच्य मनु के पुत्रों में से एक।

४. किष्किंधा का एक बानर (वा. रा. कि. ३३)।

सुनेत्रा—कश्यप ऋषि की पत्नियों में से एक।

सुंद--एक असुर, जो सुंद एवं उपसुंद नामक सुविख्यात असुरद्वय में से एक था (सुंदोपसुंद देखिये)।

२. एक असुर, जिसकी पत्नी का नाम ताटका था। इसके सुबाहु एवं मारीच नामक दो पुत्र थे। इसके पिता का नाम जंभासुर था।

सुंदर—एक गंधर्व, जो वीरबाहु गंधर्व का पिता था। वसिष्ठ के शाप के कारण, इसे राक्षसयोनि प्राप्त हुई, किन्तु आगे चल कर श्रीविष्णु ने इसे राक्षसयोनि से मुक्त किया (स्कंद. २.१.२४)।

सुंदर शातकर्णि--(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो विष्णु के अनुसार पुलिंदसेन राजा का पुत्र, एवं शातकर्णि राजा का पिता था (विष्णु. ४.२४. ४७)।

सुंरर शांतिकर्ण--(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सोम राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.)।

सुंदरा--केकय देश की सुनंदा नामक राजकुमारी का नामान्तर (सुनंदा. ३. देखिये),

सुंदरी--नर्मदा नामक गंधर्वी की कन्या, जो माल्यवत् राक्षस की पत्नी थी।

२. एक अत्यंज स्त्री, जो शिवमंदिर की सफाई करने के कारण स्वर्गलोक को प्राप्त हुई (स्कंद. १.१.७)।

सुंदोपसुंद--एक अतिभयंकर राक्षसद्वय, जो निकुंभ दैत्य के पुत्र थे। ये दोनों भाई आपस में मिल जुल कर अत्यंत स्नेहभाव से रहते थे। दो भाईयों के आपसी भ्रातृभाव का सब से बड़ा शत्रु स्त्री ही होती है, इस तथ्य का कथन करने के लिए नारद के द्वारा इनकी कथा युधिष्ठिर को सुनाई गयी (म. आ. २००-२०४)।

ब्रह्मा से वरप्राप्ति—त्रिभुवन पर विजय पाने के लिए इन दोनों ने अत्यंत उग्र तपस्या की। इस तपस्या के कारण ब्रह्मा ने इन्हें अनेकानेक वर प्रदान किये, जिनमें मायावी विद्या, अतुल बल, इच्छारूपधारित्व, आदि वरों के साथ, अपने भाई के अतिरिक्त किसी अन्य मानव से अवध्यत्व, यह वर प्रमुख था।

उपर्युक्त वरप्राप्ति के कारण, ये दोनों अत्यंत उन्मत्त हो गये, एवं पृथ्वी पर अनन्वित अत्याचार करने लगे। ये ऋषियों के यज्ञयागों में बाधा डालने लगे, जिस कारण इस संसार के सारे यज्ञयाग बंद हो गये।

मृत्यु--अंत में ब्रह्मा ने इन दोनों में कलह निर्माण कर के इन दोनों का विनाश करने का निश्चय किया। इस हेतु उसने विश्वकर्मन् के द्वारा एक अप्रतिम लावण्यवती अप्सरा का निर्माण करवाया, जिसका नाम तिलोत्तमा था। पश्चात् ब्रह्मा की आज्ञानुसार तिलोत्तमा इन दोनों राक्षसों के सामने नृत्य करने लगी। उसे देख कर ये दोनों आपसी भ्रातृभाव की भावना को बिलकुल भूल बैठे, एवं तिलोत्तमा की प्राप्ति के आपस में झगड़ने लगे। एक दूसरे के हाथ से गदायुद्ध में इनकी मृत्यु हो गयी।

सुन्वत्--एक आचार्य, जो सुमन्तु नामक आचार्य का शिष्य था। व्यासशिष्य जैमिनि ने इसे सामवेद की एक संहिता सिखायी थी (भा. १२.६.७५)।

सुपक्ष--अजित देवों में से एक।

सुपथ--एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था (वायु. ९८.११)।

सुपर्ण--एक ऋषि (तै. सं. ४.३.३.२; का. सं. ३९.७)।

२. एक ऋषि, जिसने इंद्रियसंयम, एवं मनोनिग्रह के साथ तपश्चर्या की थी। उस तपस्या के कारण इसे स्वयं भगवान् पुरुषोत्तम ने सात्वत धर्म का ज्ञान सिखाया, जो इसने आगे चल कर वायुदेव को प्रदान किया (म. शां. ३३६.१८-२१)।

त्रिसौपर्ण धर्म—महाभारत के अनुसार, भगवान् पुरुषोत्तम से उपर्युक्त धर्मज्ञान की प्राप्ति इसे ब्रह्मा के तीसरे 'वाचिक-युगांतर' में हुई थी। स्वयं को प्राप्त हुए धर्म का यह तीन बार पठन करता था, जिस कारण उस धर्म को 'त्रिसौपर्ण' नाम प्राप्त हुआ। दिन में तीन बार धर्मज्ञान का पठन करने के इसी व्रत का निर्देश ऋग्वेद में 'चतुष्कपर्दा युवतिः' आदि ऋचाओं में किया गया है (ऋ. १०.११४.२-३)।

३. पक्षिराज गरुड़ का नामांतर। वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में सर्वत्र सुपर्ण एवं गरुड के द्वारा क्रमशः सोम

एवं अमृत प्राप्त कराने का निर्देश मिलता है। इन सारी कथाओं का मूल स्रोत एक ही है, जहाँ सूर्य के द्वारा प्राप्त नवचैतन्य को अमृत अथवा सोम माना गया है (श. ब्रा. १०.२.२.४)।

४. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ५९.४५)।

५. एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक (म. आ. ५९.४१)।

६. मयूर नामक असुर का छोटा भाई, जो कालकीर्ति राजा के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था।

७. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो अंतरिक्ष राजा का पुत्र, एवं अमित्रजित् राजा का पिता था (वायु. ९९. २८६)।

८. सुधामन् देवों में से एक।

सुपर्ण काण्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.५९)।

सुपर्ण तार्क्ष्य—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.११४)।

सुपर्णा—गरुड की माता विनता का नामान्तर (भा. ६. ६.२२)। ब्रह्म में इसकी कथा 'शिवमाहात्म्य' कथन करने लिए पुनरुद्धृत की गयी है (ब्रह्म. १००)।

सुपर्णी— गरुड की माता विनता का नामांतर। शतपथ ब्राह्मण के अनुसार, विनता एवं गरुड की सापत्न माता कद्रू इन दोनों का जन्म स्वर्ग से पृथ्वी पर सोम लाने के हेतु हुआ था। इन दोनों की आपसी ईर्ष्या आदि की बहुत सारी कथाएँ भी उस ग्रंथ में दी गयी है (श. ब्रा. ३.५.१.१-७; कद्रू देखिये)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र 'सुपर्णी' शब्द की व्युत्पत्ति 'वाचा' इस अर्थ से की गयी है (श. ब्रा. उ. ३.२.२)।

सुपर्वन्—पांडव पक्ष का राजा, जिसके कृतिपुत्र रुचिपर्व का वध किया था (म. द्रो. २५.४५)।

२. ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर के मनु का एक पुत्र।

३. प्राग्ज्योतिषपुर के भगदत्त राजा का नामान्तर— (म. द्रो. २५.४५)।

सुपाटल—राम का एक वानर (वा. रा. कि. ३३)।

सुपार—रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सुपार्श्व—(सो. द्विमीढ) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार रुक्मरथ का, तथा भागवत एवं विष्णु अनुसार दृढनेमि राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४९.७३; भा. ९. २१. २७)। भागवत एवं विष्णु में दृढनेमि से लेकर सुपार्श्व तक की पीढ़ियों का निर्देश अप्राप्य है।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार श्रुतायु राजा का पुत्र था (विष्णु. ४.५.३१)। भागवत में इसे सुपार्श्वक कहा गया है।

३. दुर्योधनपक्ष का एक राजा, जो क्रुपट नामक असुर अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५५*; पंक्ति २१)।

४. एक लोकसमूह, जिनके ऋथ नामक राजा को भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जीता था।

५. रावण का एक अमात्य, जिसने रावण को सीतावध जैसे पापकर्म करने से परावृत्त किया था (वा. रा. यु. ९२. ६०)।

६. पक्षिराज संपाति का पुत्र, जिसने सीतावध की वार्ता अपने पिता को सुनायी थी (वा. रा. कि. ५९.८)। इसके सीता की मुक्तता के कार्य में कोई भी प्रयत्न न करने के कारण, इसका पिता इस पर अत्यंत क्रुद्ध हुआ। इसी कारण यह डर से दूरवर्ती प्रदेश में भाग गया (आ. रा. ७.८)।

सुपार्श्वक—निमिवंशीय सुपार्श्व राजा का नामान्तर (सुपार्श्व २. देखिये)।

२. (सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो अक्रूर एवं अश्विनी का पुत्र था (मत्स्य. ४५.१२)।

३. (सो. वसु.) वसुदेव एवं रोहिणी का एक पुत्र (वायु. ९६.१६८)।

सुपुंजिक—एक सैंहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका का पुत्र था। परशुराम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.६.१८-२२)।

सुप्रचेतस्—प्रसूत देवों में से एक।

सुप्रज्ञा—कोचरश राजा की पत्नी।

सुप्रतीक—(सो. सह.) एक राजा, जो दुर्जयामित्रकर्षण नामक राजा का उर्वशी से उत्पन्न पुत्र था। इसने एवं इसके भाइयों ने गंधर्व कन्याओं से विवाह किया था (कूर्म १.२६)।

२. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रतीकाश्व राजा का, विष्णु के अनुसार प्रतीताश्व राजा का, एवं भविष्य के अनुसार भानुरत्न राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम मरुदेव था (भा. ९.१२.१२)। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'सुप्रतीत' एवं 'सुप्रतीप' कहा गया है।

३. एक ऋषि, जो विभावसु नामक अपने भाई के शाप के कारण हाथी बन गया। पश्चात् इसने उसे कछुआ बनने का शाप दिया (विभावसु ५. देखिये)।

४. एक दिग्गज, जो ऐरावत के पुत्रों में से एक था (म. भी. १३.३३)। यह हारितवर्णीय था, एवं वरुण का अत्यंत प्रिय वाहन था। इसके वंश में नागराज ऐरावत वामन, कुमुद, अंजन आदि हाथियों की उत्पत्ति हुई थी (म. उ. ९९.१५)। इसकी पत्नी का नाम चित्ति था, जिससे इसे प्रहारिन्, संपति एवं पृथु नामक पुत्र उत्पन्न हुए (वायु. ६९.२२५)।

५. (नाग. भविष्य) एक राजा, जो वायु के अनुसार मथुरा नगरी में राज्य करनेवाले भूमिनंद राजा का पुत्र था।

६. कृतयुग का एक राजा, जिसकी विद्युत्प्रभा एवं कांतिमती नामक दो पत्नियाँ थी। आत्रेय ऋषि की कृपा से इसकी पत्नी विद्युत्प्रभा के गर्भ में स्वयं इंद्र ने जन्म लिया, जो दुर्जय नाम से प्रसिद्ध हुआ।

सुप्रतीक औलुण्डय--एक आचार्य, जो बृहस्पतिगुप्त शायस्थि नामक आचार्य का शिष्य, एवं मित्रवर्चस् स्थैर्यकायण नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १.)।

सुप्रतीत एवं **सुप्रतीप**--इक्ष्वाकुवंशीय सुप्रतीक राजा का नामान्तर।

सुप्रभ--एक राजा, जिसे महातेजस् ऋषि ने विष्णूपासना का आदेश दिया था।

सुप्रभा--स्वर्भानु (राहु) की एक कन्या, जो नमुचि की पत्नी थी (भा. ६.६.३२)।

२. वदान्य ऋषि की एक कन्या, जो अष्टावक्र ऋषि की पत्नी थी।

३. सुरथ राजा की कन्या, जो नाभाग राजा की पत्नी थी। इसे कृशावती नामान्तर भी प्राप्त था। एक बार इसने अगस्त्य ऋषि को त्रस्त किया, जिस कारण उसने इसे वैश्ययोनि में अधःपतित होने का शाप दिया। तदनुसार यह एवं इसका पुत्र भलंदन वैश्य बन गये।

पश्चात् इसका पुत्र बड़ा होने पर इसने उसे क्षत्रियोचित राजधर्म पर उपदेश किया, जिस कारण सद्गति पा कर वह पुनः एक बार क्षत्रिय बन गया (मार्कं. ११२)। इसकी कथा मार्कंडेय में निर्दिष्ट सुदेव राजा की कथा से काफ़ी मिलतीजुलती प्रतीत होती है (सुदेव १०. देखिये)।

४. कृशाश्व प्रजापति से उत्पन्न दो कन्याओं में से एक, जिसकी बहन का नाम जया था। इन दो बहनों से आगे चल कर सौ संहारअस्त्रों का निर्माण हुआ, जिन्हें विश्वामित्र ऋषि ने प्राप्त किया (वा. रा. बा. २१.१५)।

५. आर्ष्टिषेण राजा की स्नुषा, जो उसके भर नामक पुत्र की स्त्री थी।

६. श्रीकृष्ण की एक पत्नी, जिसके द्वारका में स्थित प्रासाद का नाम सूर्यप्रभ था (म. स. परि. १.२१.१२५४)।

सुप्रवृद्ध--सौवीर देश का एक राजकुमार, जो जयद्रथ राजा का छोटा भाई था। 'द्रौपदीहरणयुद्ध' में अर्जुन के द्वारा यह मारा गया (म. व. १२१४* पाठ.)।

सुप्लन् सार्ञ्जय--सहदेव साञ्जय नामक राजा का नामान्तर।

सुबंधु गौपायन (लौपायन)--एक आचार्य, जो असमाति राथप्रोष्ठि नामक राजा का पुरोहित था (ऋ. १०.५९.८)। आगे चल कर असमाति राजा ने इसे पौरोहित्य-पद से दूर कर, किरात एवं आकुलि नामक आचार्यों को अपने पुरोहित नियुक्त किये (बृहद्दे. ७.८३)।

पश्चात् इन नये पुरोहितों ने राजा की प्रेरणा से इसका वध करवाया। किंतु इसके अन्य तीन भाइयों ने कुछ सूक्तों का उच्चारण कर इसे पुनः जीवित किया (ऋ. १०.५७-६०; असमाति राथप्रोष्ठि देखिये)। एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते भी इसका निर्देश प्राप्त है (ऋ. ५.२४)।

सुबल--गांधार देश का एक सुविख्यात राजा, जो धृतराष्ट्रपत्नी गांधारी एवं शकुनि का पिता था। यह प्रह्लाद-शिष्य नग्नजित् के अंश से उत्पन्न आ था। इस कारण, इसकी सारी संतति धर्मविरोधी एवं धर्मनाशी उत्पन्न हुई।

गांधारी का विवाह--इसकी संतानों में से शकुनि एवं गांधारी राज्यशास्त्र में प्रवीण थे (म. आ. ५७.९३-९४)। भीष्म ने हस्तिनापुर के राजा धृतराष्ट्र के लिए इसकी कन्या गांधारी की माँग की। धृतराष्ट्र राजा अंधा होने के कारण इसके मन में संदेह उत्पन्न हुआ। किन्तु पश्चात् उसका उच्चकुल एवं राज्याधिकार का विचार कर इसने विवाह के इस प्रस्ताव को मान्यता दी (म. आ. १०३.१०-११)। गांधारी के विवाह के साथ, अपनी निम्नलिखित कन्याओं का विवाह भी इसने धृतराष्ट्र से कराया था:--१. सत्यव्रता; २. सत्यसेना; ३. सुदेष्णा; ४. सुसंहिता; ५. तेजश्रवा; ६. सुश्रवा; ७. निकृति; ८. शुभा; ९. शंभुवा; १०. दशार्णा (म. आ. १०३.१.११३*)।

युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में—इस यज्ञ में यह अपने पुत्र शकुनि; अचल एवं वृषक के साथ उपस्थित हुआ था (म. स. ३१.६-७)। यज्ञ के पश्चात् नकुल ने अपने राज्य की सीमा तक इसे सन्मानपूर्वक बिदा किया था। इसका सुभग सौबल नामक और एक पुत्र भी था (सुभग सौबल देखिये)।

२. इक्ष्वाकुवंश का एक राजा, जिसका पुत्र जयद्रथ का साथी था (म. व. २४९.८)।

३. गरुड के पुत्रों में से एक (म. उ. ९९.३)।

४. एक प्राचीन नरेश (म. आ. १.१७६)।

५. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा के पुत्रों में से एक।

६. भौत्य मनु का एक पुत्र।

७. सौराष्ट्र देश के सोमकान्त राजा का एक प्रधान (गणेश. १.२९)।

८. कृष्ण एवं बलराम का एक सखा (भा. १०.१५. २०; २२.३१)।

९. (सो. मगध. भविष्य) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार सुमति राजा का पुत्र, एवं सुनीथ राजा का पिता था (भा. ९.२२.४५-४८)।

सुबालक—पूरुवंशीय ब्रह्मदत्त राजा के अमात्य का पुत्र।

सुबाहु—रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी (म. आ. ५९.४९)।

३. एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

४. चेदि देश का एक राजा, जो वीरबाहु राजा का पुत्र था। यह दमयंती का मौसेरा भाई था, जिस कारण वह अपने वनवास काल में सैरन्ध्री के रूप में इसके यहाँ रही थी (म. व. ६२.१८; ६६.१३)।

५. एक राक्षस, जो ताटका राक्षस का पुत्र, एवं मारीच का भाई था। इसके पिता का नाम सुंद था। विश्वामित्र ऋषि के यज्ञ का विध्वंस करने के लिए यह उपस्थित हुआ था। उस समय राम दाशरथि ने इसका वध किया (म. स. परि. १.२१.५०१)।

६. रामसेना का एक वानर।

७. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो शत्रुघ्न दाशरथि राजा का पुत्र था। इसके भाई का नाम शूरसेन था (वायु. ८८.१८६)। इसकी पत्नी का नाम सत्यवती था। शत्रुघ्न ने इसे मथुरा (मधुरा) प्रदेश का राज्य प्रदान किया था (वा. रा. उ. १०८)।

८. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो ऋतध्वज राजा एवं मदालसा का पुत्र था। इसकी कन्या का नाम शशिकला था, जिसका विवाह सुदर्शन राजा से हुआ था (दे. भा. ३.२१.२२)। इसने अपने ज्येष्ठ भाई अलर्क पर आक्रमण किया था। किन्तु उसने स्वयं ही अपना राज्य इसे दे दिया (मार्क. ४१)।

९. एक वन्यदेशाधिपति, जो किरात, तंगण, कुलिंद आदि लोगों का अधिपति था। इसका राज्य हिमालय की तलहटी में था। पांडवों के वनवासकाल में अर्जुन को छोड़ कर बाकी सारे पाण्डव कुछ काल तक यहाँ रहे थे (म. व. १४१.२४-३०; १७४.१५)। भारतीय युद्ध में यह पाण्डवों के पक्ष में शामिल था।

१०. (सो. वृष्णि.) अक्रूर के पुत्रों में से एक (मत्स्य. ४५.३२)।

११. कृष्ण एवं कालिंदी का एक पुत्र।

१२. एक संशप्तक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था। इसी युद्ध में यादव राजा युयुत्सु ने इसके हाथ तोड़ डाले (म. द्रो. २३. १३-१४)।

१३. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक। भीम ने इसका वध किया (म. भी. ९२.२६; क. ३५. ७-८)।

१४. चोल देश का एक राजा, जिसकी कथा 'दान-माहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. भू. ९४-९९)।

१५. एक क्षत्रिय, जिसकी पत्नी का नाम चंद्रकला था (पद्म. क्रि. ५)।

१६. काशीदेश का एक राजा, भीमसेन ने अपने पूर्व-दिग्विजय में इसे जीता था।

१७. स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४५)।

१८. एक प्राचीन नरेश, जिसने अपने जीवन में कभी भी मांस भक्षण नहीं किया था (म. अनु. ११५.६६)।

१९. अंगराज कर्ण के सुदामन नामक पुत्र का नामान्तर।

२०. चक्रांग नगरी का एक राजा, जिसने राम दाशरथि के अश्वमेध यज्ञ के पूर्व शत्रुघ्न से युद्ध किया था। अपने पूर्वजन्म में यह ऋषि था, जो राम की निंदा करने के कारण अपनी नयी आयु में एक संसारबद्ध पुरुष बना।

शत्रुघ्न के साथ हुए युद्ध में हनुमत् ने इसे मूर्च्छित किया। हनुमत् के स्पर्श के कारण इसका उद्धार हुआ। पश्चात् अपने पुत्र दमन को राज्य प्रदान कर, यह स्वयं अश्वरक्षा के लिए सेना में शामिल हुआ।

सुबुद्धि--बभ्रुवाहन राजा का अमात्य।

सुभग सौबल—गांधारराज सुबल का एक पुत्र, जो शकुनि का छोटा भाई था। भीमसेन ने रात्रियुद्ध में इसका वध किया (म. द्रो. १३२.११३६*)।

सुभगा--कश्यप एवं प्राधा (अरिष्टा) की एक कन्या।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)।

सुभद्र—(स्वा. प्रिय.) प्लक्षद्वीप का एक राजा, जो इध्मजिह्व राजा के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२०.३)।

२. (सो. वसु.) वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में एक।

३. कृष्ण एवं भद्रा का एक पुत्र।

४. एक गोप। इसकी कन्या का नाम भद्रा था, जो पूर्वजन्म में सत्यतपस् नामक ऋषि थी (पद्म. पा. ७२)।

५. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

सुभद्रक—रुद्रगणों में से एक।

सुभद्रा--वसुदेव एवं देवकी की एक कन्या, जो कृष्ण एवं बलराम की छोटी बहन थी (म. आ. २११.१४)। स्कंद में इसकी माता का नाम सुप्रभा दिया गया है।

नाम--इसे सुभद्रा नाम क्यों प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा स्कंद में प्राप्त है। पूर्व जन्म में यह गालव ऋषि की कन्या माधवी थी। एक बार गालव ऋषि इसे विष्णु के पास ले गये, जहाँ यह बालसुलभता से गद्दी पर बैठ गयी। इस कारण क्रुद्ध हो कर लक्ष्मी ने इसे अगले जन्म में 'अश्वमुखी' कन्या बनने का शाप दिया। इसका जन्म होते ही कृष्ण एवं बलराम ने ब्रह्म की प्रार्थना कर इसे भद्रमुखी बनाया, जिस कारण इसे 'सुभद्रा' नाम प्राप्त हुआ (स्कंद ६.८१.८४)।

सुभद्राहरण—बलराम इसका विवाह दुर्योधन से करना चाहता था। किन्तु एक बार अर्जुन ने इसे देखा, एवं श्रीकृष्ण के समक्ष इसे अपनी रानी बनाने का अपना मनोदय प्रकट किया (म. आ. २११.२०)। पश्चात् श्रीकृष्ण की सलाह से रैवतक पर्वत में हुए महोत्सव के समय अर्जुन ने यतिवेष में इसका हरण किया (म. आ. २१२)। रैवतक पर्वत से भागते समय इसने अर्जुन का सारथ्य किया था (म. आ. परि. १.२०)। आगे चल कर अर्जुन की सलाह से एक गोपी का वेश धारण कर यह द्रौपदी से मिलने गयी, एवं अपने विवाह के लिए इसने उसकी संमति प्राप्त की (म. आ. परि. १.१४. २१२-२१४)।

द्वारका में कृष्ण ने भी क्रोधित हुए बलराम का मन इस विवाह के लिए अनुकूल बनाया। पश्चात् कुंती विदुर, युधिष्ठिर आदि ज्येष्ठ लोगों की संमति कृष्ण ने ही प्राप्त कर ली। इस प्रकार सभी लोगों के आशीर्वाद के साथ इसका एवं अर्जुन का विवाह द्वारका नगरी में संपन्न हुआ (म. आ. २१३.१२)।

अर्जुन से विवाह—इसके विवाह के समय कृष्ण ने अर्जुन को निम्नलिखित वस्तु दहेज के रूप में प्रदान की थीः—एक हजार सुवर्णरथ, दस हजार दुधारू गायें, एक हजार सुवर्णालंकृत अश्व, पाँच सौ तट्टू, एक हज़ार दासी, एक लाख बाह्लीकदेशीय अश्व, दस मन सोना, एक हज़ार उन्मत्त हाथी (म. आ. २०७८-२०८५*)।

परिवार—इसके पुत्र का नाम अभिमन्यु था, जिसका विवाह उपप्लव्य नगरी में संपन्न हुआ था (म. आ. ९०.८५; वि. ६७.२१)। पाण्डवों के वनवास के समय यह अभिमन्यु के साथ द्वारका नगरी में रही थी (म. व. २३.४४)। अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् उसके मृतपुत्र परिक्षित् को जिलाने के लिए श्रीकृष्ण से प्रार्थना की थी (म. आश्व. ६७.१३-२४)।

अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् यह सदैव अप्रसन्न एवं हर्षशून्य रहती थी, केवल परिक्षित् को देख कर ही जीवन धारणा करती थी (म. आश्र. २८.१५-१६)। अपने महाप्रस्थान के पूर्व, परिक्षित एवं वज्र को युधिष्ठिर ने इसीके ही हाथों सौंपा दिया था।

२. सुरभि की एक धेनरूपा कन्या, जो पश्चिम दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.९)।

३. दध्यच आथर्वण ऋषि की दासी।

सुभव—सुपुष्पित नामक राजा का पिता।

सुभा—अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जिसे बृहत्कीर्ति आदि सात पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. २०८.१)।

सुभानु—कृष्ण एवं सत्यभामा का एक पुत्र।

सुभाल—वीरवर्मन् राजा का एक पुत्र।

सुभाषण—(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार युयुध राजा का पुत्र, एवं श्रुत राजा का पिता था

(भा. ९.१३.२५)। विष्णु में इसे 'सुभास' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम सुधन्वन् दिया गया है।

सुभीम--पांचजन्य नामक अग्नि का एक पुत्र, जो यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पंद्रह 'विनायकों' में से एक माना जाता है (म. व. २१०.११ पाठ.)।

सुभीमा--कृष्ण की एक पत्नी।

सुभुजा--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी।

सुभ्राज्--वैवस्वत मनु का पुत्र (म. आ. १.४१)।

सुभ्राज--सूर्य के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम भास्वर था (म. श. ४४. २८)।

सुभ्रु--(सो. वसु.) वसुदेव एवं रोहिणी का एक पुत्र।

सुमंगल--अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

सुमंजस--शिव देवों में से एक।

सुमति--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भरत एवं पंचजनी के पुत्रों में से एक था। यह स्वयं जैनधर्मीय था, एवं ऋषभदेव का अनन्य उपासक था। इसी कारण जैन लोग इसे देवता मानते है।

इसकी वृद्धसेना एवं आसुरी नामक दो पत्नियाँ थी, जिनसे इसे क्रमशः देवताजित् एवं देवद्युम्न नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ५.१५.१-३)। इसके तेजस् नामक अन्य एक पुत्र का निर्देश भी प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.१४. ६२)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार नृग राजा का पुत्र, एवं भूतज्योतिस् नामक राजा का पिता था (भा. ९.२.१७)।

३. (सू. दिष्ट.) विशाल नगरी का एक राजा, जो दशरथ राजा का समकालीन था। यह सोमदत्त राजा का पुत्र, एवं जनमेजय राजा का पिता था। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'स्वमति' एवं 'प्रमाति' कहा गया है, एवं इसे जनमेजय राजा कर पुत्र कहा गया है।

राम एवं लक्ष्मण जब विश्वामित्र के साथ मिथिला नगरी में जा रहे थे, उस समय वे कुछ काल तक इसके राज्य में ठहरे थे (वा. रा. बा. ४८)।

४. (सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रंतिभार राजा का पुत्र, एवं रैभ्य राजा का पिता था (भा. ९.२०.६)।

५. (सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो सुपार्श्व राजा का पुत्र, एवं सन्नतिमत् राजा का पिता था (भा. ९. २१.२८)।

६. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार द्युमत्सेन राजा का पुत्र, एवं सुबल राजा का पिता था (भा. ९.२२.४८)। मत्स्य में इसे 'महिनेत्र' कहा गया है।

७. एक ऋषि, जो सोमदत्त ऋषि का पुत्र, एवं जनमेजय ऋषि का पिता था। यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.७४.८)।

८. राम दाशरथि के पुत्र लव की पत्नी।

९. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का मुख्य प्रधान।

१०. बभ्रुवाहन राजा का सेनापति।

११. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

१२. वरुणसभा का एक असुर (म. स. ९.१३)।

१३. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार गय राजा का पुत्र था।

१४. नल राजा का पुरोहित (परा. मा. प्रस्तावना)।

१५. भृगुकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जिसे अपने दस हजार जन्मों का स्मरण था। इसने अपने पिता को आत्मज्ञान सिखाया था (मार्क. १०.१०-१८)।

१६. अमिताभ देवों में से एक।

१७. आभूतरजस् देवों में से एक।

१८. सुबाहु राजा का एक प्रधान (पद्म. पा. २६)।

१९. एक दुष्ट महाराष्ट्रीय ब्राह्मण, जो वेंकटाचल में स्थित पुष्करिणी तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (स्कंद. २.१.१४)।

२०. एक दुष्ट ब्राह्मण, जो पापविनाशन तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (स्कंद. २.१.१४)।

२१. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (म. अनु. २६.४)

२२. वरुणसभा में उपस्थित एक राक्षस (म. स. ९.१३)।

२३. वालिन् वानर की भगिनी।

सुमति आत्रेय--एक आचार्य, जो विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१.५६)।

सुमति शैब्या--सगर राजा की पत्नी, जो अरिष्टनेमि राजा की कन्या थी। सगर राजा से इसे साठ हज़ार पुत्र

शत्रुघ्न के साथ हुए युद्ध में हनुमत् ने इसे मूर्च्छित किया। हनुमत् के स्पर्श के कारण इसका उद्धार हुआ। पश्चात् अपने पुत्र दमन को राज्य प्रदान कर, यह स्वयं अश्वरक्षा के लिए सेना में शामिल हुआ।

सुबुद्धि--बभ्रुवाहन राजा का अमात्य।

सुभग सौबल—गांधारराज सुबल का एक पुत्र, जो शकुनि का छोटा भाई था। भीमसेन ने रात्रियुद्ध में इसका वध किया (म. द्रो. १३२.११३६*)।

सुभगा--कश्यप एवं प्राधा (अरिष्टा) की एक कन्या।

२. स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.१७)।

सुभद्र—(स्वा. प्रिय.) प्लक्षद्वीप का एक राजा, जो इध्मजिह्व राजा के पुत्रों में से एक था (भा. ५.२०.३)।

२. (सो. वसु.) वसुदेव एवं पौरवी के पुत्रों में एक।

३. कृष्ण एवं भद्रा का एक पुत्र।

४. एक गोप। इसकी कन्या का नाम भद्रा था, जो पूर्वजन्म में सत्यतपस् नामक ऋषि थी (पद्म. पा. ७२)।

५. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

सुभद्रक—रुद्रगणों में से एक।

सुभद्रा--वसुदेव एवं देवकी की एक कन्या, जो कृष्ण एवं बलराम की छोटी बहन थी (म. आ. २११. १४)। स्कंद में इसकी माता का नाम सुप्रभा दिया गया है।

नाम--इसे सुभद्रा नाम क्यों प्राप्त हुआ, इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा स्कंद में प्राप्त है। पूर्वजन्म में यह गालव ऋषि की कन्या माधवी थी। एक बार गालव ऋषि इसे विष्णु के पास ले गये, जहाँ यह बालसुलभता से गद्दी पर बैठ गयी। इस कारण क्रुद्ध हो कर लक्ष्मी ने इसे अगले जन्म में 'अश्वमुखी' कन्या बनने का शाप दिया। इसका जन्म होते ही कृष्ण एवं बलराम ने ब्रह्म की प्रार्थना कर इसे भद्रमुखी बनाया, जिस कारण इसे 'सुभद्रा' नाम प्राप्त हुआ (स्कंद ६.८१.८४)।

सुभद्राहरण—बलराम इसका विवाह दुर्योधन से करना चाहता था। किन्तु एक बार अर्जुन ने इसे देखा, एवं श्रीकृष्ण के समक्ष इसे अपनी रानी बनाने का अपना मनोदय प्रकट किया (म. आ. २११.२०)। पश्चात् श्रीकृष्ण की सलाह से रैवतक पर्वत में हुए महोत्सव के समय अर्जुन ने यतिवेष में इसका हरण किया (म. आ. २१२)। रैवतक पर्वत से भागते समय इसने अर्जुन का सारथ्य किया था (म. आ. परि. १.२०)। आगे चल कर अर्जुन की सलाह से एक गोपी का वेश धारण कर यह द्रौपदी से मिलने गयी, एवं अपने विवाह के लिए इसने उसकी संमति प्राप्त की (म. आ. परि. १.१४. २१२–२१४)।

द्वारका में कृष्ण ने भी क्रोधित हुए बलराम का मन इस विवाह के लिए अनुकूल बनाया। पश्चात् कुंती विदुर, युधिष्ठिर आदि ज्येष्ठ लोगों की संमति कृष्ण ने ही प्राप्त कर ली। इस प्रकार सभी लोगों के आशीर्वाद के साथ इसका एवं अर्जुन का विवाह द्वारका नगरी में संपन्न हुआ (म. आ. २१३.१२)।

अर्जुन से विवाह—इसके विवाह के समय कृष्ण ने अर्जुन को निम्नलिखित वस्तु दहेज के रूप में प्रदान की थीः—एक हजार सुवर्णरथ, दस हजार दुधारु गायें, एक हजार सुवर्णालंकृत अश्व, पाँच सौ तट्टू, एक हज़ार दासी, एक लाख बाह्लीकदेशीय अश्व, दस मन सोना, एक हज़ार उन्मत्त हाथी (म. आ. २०७८–२०८५*)।

परिवार—इसके पुत्र का नाम अभिमन्यु था, जिसका विवाह उपप्लव्य नगरी में संपन्न हुआ था (म. आ. ९०. ८५; वि. ६७.२१)। पाण्डवों के वनवास के समय यह अभिमन्यु के साथ द्वारका नगरी में रही थी (म. व. २३. ४४)। अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् उसके मृतपुत्र परिक्षित् को जिलाने के लिए श्रीकृष्ण से प्रार्थना की थी (म. आश्व. ६७.१३–२४)।

अभिमन्यु की मृत्यु के पश्चात् यह सदैव अप्रसन्न एवं हर्षशून्य रहती थी, केवल परिक्षित् को देख कर ही जीवन धारणा करती थी (म. आश्र. २८.१५–१६)। अपने महाप्रस्थान के पूर्व, परिक्षित एवं वज्र को युधिष्ठिर ने इसीके ही हाथों सौंपा दिया था।

२. सुरभि की एक धेनरूपा कन्या, जो पश्चिम दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.९)।

३. दध्यच आथर्वण ऋषि की दासी।

सुभव—सुपुष्पित नामक राजा का पिता।

सुभा--अंगिरस् ऋषि की पत्नी, जिसे बृहत्कीर्ति आदि सात पुत्र उत्पन्न हुए थे (म. व. २०८.१)।

सुभानु—कृष्ण एवं सत्यभामा का एक पुत्र।

सुभाल—वीरवर्मन् राजा का एक पुत्र।

सुभाषण--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार युयुध राजा का पुत्र, एवं श्रुत राजा का पिता था

(भा. ९.१३.२५)। विष्णु में इसे 'सुमास' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम सुधन्वन् दिया गया है।

सुभीम--पांचजन्य नामक अग्नि का एक पुत्र, जो यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पंद्रह 'विनायकों' में से एक माना जाता है (म. व. २१०.११ पाठ.)।

सुभीमा--कृष्ण की एक पत्नी।

सुभुजा--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं मुनि की कन्याओं में से एक थी।

सुभ्राज्--वैवस्वत मनु का पुत्र (म. आ. १.४१)।

सुभ्राज--सूर्य के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम भास्वर था (म. श. ४४. २८)।

सुभ्रु--(सो. वसु.) वसुदेव एवं रोहिणी का एक पुत्र।

सुमंगल--अत्रिकुलोत्पन्न एक ऋषि।

सुमंजस--शिव देवों में से एक।

सुमति--(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भरत एवं पंचजनी के पुत्रों में से एक था। यह स्वयं जैनधर्मीय था, एवं ऋषभदेव का अनन्य उपासक था। इसी कारण जैन लोग इसे देवता मानते है।

इसकी वृद्धसेना एवं आसुरी नामक दो पत्नियाँ थीं, जिनसे इसे क्रमशः देवताजित् एवं देवद्युम्न नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए (भा. ५.१५.१-३)। इसके तेजस् नामक अन्य एक पुत्र का निर्देश भी प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.१४. ६२)।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार नृग राजा का पुत्र, एवं भूतज्योतिस् नामक राजा का पिता था (भा. ९.२.१७)।

३. (सू. दिष्ट.) विशाल नगरी का एक राजा, जो दशरथ राजा का समकालीन था। यह सोमदत्त राजा का पुत्र, एवं जनमेजय राजा का पिता था। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः 'स्वमति' एवं 'प्रमाति' कहा गया है, एवं इसे जनमेजय राजा कर पुत्र कहा गया है।

राम एवं लक्ष्मण जब विश्वामित्र के साथ मिथिला नगरी में जा रहे थे, उस समय वे कुछ काल तक इसके राज्य में ठहरे थे (वा. रा. बा. ४८)।

४. (सो. पूरु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रंतिभार राजा का पुत्र, एवं रैभ्य राजा का पिता था (भा. ९.२०.६)।

५. (सो. द्विमीढ.) एक राजा, जो सुपार्श्व राजा का पुत्र, एवं सन्नतिमत् राजा का पिता था (भा. ९. २१.२८)।

६. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार द्युमत्सेन राजा का पुत्र, एवं सुबल राजा का पिता था (भा. ९.२२.४८)। मत्स्य में इसे 'महिनेत्र' कहा गया है।

७. एक ऋषि, जो सोमदत्त ऋषि का पुत्र, एवं जनमेजय ऋषि का पिता था। यह युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में उपस्थित था (भा. १०.७४.८)।

८. राम दाशरथि के पुत्र लव की पत्नी।

९. चंपक नगरी के हंसध्वज राजा का मुख्य प्रधान।

१०. बभ्रुवाहन राजा का सेनापति।

११. सावर्णि मनु के पुत्रों में से एक।

१२. वरुणसभा का एक असुर (म. स. ९.१३)।

१३. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार गय राजा का पुत्र था।

१४. नल राजा का पुरोहित (परा. मा. प्रस्तावना)।

१५. भृगुकुलोत्पन्न एक ब्राह्मण, जिसे अपने दस हजार जन्मों का स्मरण था। इसने अपने पिता को आत्मज्ञान सिखाया था (मार्क. १०.१०-१८)।

१६. अमिताभ देवों में से एक।

१७. आभूतरजस् देवों में से एक।

१८. सुबाहु राजा का एक प्रधान (पद्म. पा. २६)।

१९. एक दुष्ट महाराष्ट्रीय ब्राह्मण, जो वेंकटाचल में स्थित पुष्करिणी तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (स्कंद. २.१.१४)।

२०. एक दुष्ट ब्राह्मण, जो पापविनाशन तीर्थ में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (स्कंद. २.१.१४)।

२१. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (म. अनु. २६.४)

२२. वरुणसभा में उपस्थित एक राक्षस (म. स. ९.१३)।

२३. वालिन् वानर की भगिनी।

सुमति आत्रेय--एक आचार्य, जो विष्णु एवं ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१.५६)।

सुमति शैब्या--सगर राजा की पत्नी, जो अरिष्टनेमि राजा की कन्या थी। सगर राजा से इसे साठ हज़ार पुत्र

उत्पन्न हुए थे, जो 'सागर' नाम से प्रसिद्ध थे (ब्रह्मांड. ३. ६३.१५९)।

भागवत में इसे विदर्भराजा की कन्या कहा गया है (भा. ९.८.९)। इसे महती (ब्रह्मांड. ८.६४), एवं प्रभा यादवी (मत्स्य. १२.४२) आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। और्व ऋषि की कृपा से इसे साठ हज़ार पुत्र उत्पन्न हुए थे (पद्म. उ. २०-२१; म. व. १०४-१०७; पद्म. उ. २०-२१; ब्रह्मवै. २.६१.१०; सगर देखिये)।

सुमद--एक राजा, जिसने कामाक्षी देवी के कहने पर अपना राज्य शत्रुघ्न को प्रदान किया (पद्म. पा. १२-१३)।

सुमध्यमा--मदिराश्व राजा की कन्या, जो हिरण्यहस्त ऋषि की पत्नी थी (म. अनु. १३७. २४)।

सुमन--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रु के पुत्रों में से एक था।

सुमनस्--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो उल्मुक एवं पुष्करिणी के पुत्रों में से एक था (भा. ४.१३.१७)।

२. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

३. प्रसूत देवों में से एक।

४. वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

५. वरुणसभा में उपस्थित एक असुर (म. स. ९.१३)।

६. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.११)।

७. एक किरात राजा, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था (म. स. ४.२२)।

८. पितृवर्तिन् के हंसयोनि में उत्पन्न भाइयों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

सुमना--दशार्णाधिप चारुवर्ण राजा की कन्या, जिस से भद्रराजपुत्र महानंद, एवं विदर्भराज संक्रदनपुत्र वपुष्मत् ये दोनोही प्रेम करते थे। इसने अपने स्वयंवर में नरिष्यंत पुत्र दम को पति के रूप में स्वीकार किया। इस कारण इस से प्रेम करनेवाले दोनों राजपुत्रों ने इसका हरण किया। कालोपरांत दम ने महानंद का वध कर, एवं वपुष्मत् को पराजित कर इससे विवाह किया (मार्क. १३०)।

२. च्यवन ऋषि की कन्या, जिसके पति का नाम सोमशर्मन् था।

३. मधु नामक राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम वीरजन था।

४. एक केकय राजकन्या, जिसका देवलोक में रहनेवाली शांडिल्या देवी से पातिव्रत्य के संबंध में संवाद हुआ था (म. अनु. १८५)।

सुमन्त--(सो. अनु.) एक राजा, जो कूर्म के अनुसार कौशिक राजा का पुत्र था।

सुमन्तु--एक आचार्य, जो व्यास की अथर्ववेद शिष्यपरंपरा में से एक शिष्य था। व्यास ने इसे महाभारत का भी कथन किया था (भवि. ब्राह्म. १.३०-३८)। यह जैमिनि नामक आचार्य का पुत्र, एवं सुत्वन्-(सुन्वन्) नामक आचार्य का पिता था। इसके शिष्यों में कबंध नामक आचार्य प्रमुख था।

युधिष्ठिर की मयसभा में यह उपस्थित था। इसने शतानीक नामक अपने शिष्य को 'भागवत' एवं 'भविष्य पुराण' कथन किया था। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने यह उपस्थित हुआ।

२. एक आचार्य, जो व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से जैमिनि नामक आचार्य का शिष्य था।

३. अट्टहास नामक शिवावतार का एक शिष्य।

४. एक स्मृतिकार, जिसके द्वारा रचित स्मृति के गद्य एवं पद्य उद्धरण 'मिताक्षरा', 'विश्वरूप,' 'सरस्वतीविलास' आदि में प्राप्त हैं। मिताक्षरा में इसके निम्न-विषयों से संबंधित उद्धरण प्राप्त है:--१. ब्रह्महत्त्या (३.२३७); २. मद्यपान (३.२५०); ३. सुवर्ण का अपहरण (३.२५२); ४. परदारागमन (३.२५३-२५४); ५. गोहत्त्या (३.२६१)।

५. विदर्भ देशाधिपति भीम राजा का नामान्तर (भीम वैदर्भ देखिये)।

सुमन्तु बाभ्रव गौतम--एक आचार्य, जो वासिष्ठ अरैहण्य राजन्य नामक आचार्य का शिष्य, एवं शूष वाह्नेय भारद्वाज नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. २)।

सुमंत्र--दशरथ के अष्टप्रधानों में से एक। राम दाशरथि के वनवास के समय, यह उसे भागीरथी नदी तक पहुँचाने आया था।

राम दाशरथि के राज्यकाल में यह उसका भी अमात्य था। राम के अश्वमेध यज्ञ के समय, अश्वरक्षणार्थ नौ पराक्रमी वीरों का एक दल तैयार करने की आज्ञा राम ने इसे दी थी (पद्म. पा. ११)।

२. दशरथ का एक सारथि (म. वि. ११.२४२*)।

सुमन्यु—एक राजा, जिसने शांडिल्य ऋषि को खाद्य-सामग्री का पर्वतप्राय ढेर दान के रूप में प्रदान किया (म. अनु. १३७.२२)। पाठभेद—'भूमन्यु'।

सुमहायशस्—(सो. नील.) एक राजा, जो मुद्गल राजा का पुत्र था। इसे 'ब्रह्मिष्ठ' भी कहा गया है, जो संभवतः इसकी उपाधि होगी।

सुमागध—रामसभा में उपस्थित एक विदूषक।

सुमालिन्—एक असुर, जो वृत्र का अनुयायी था। यह प्रहेति राक्षस का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.९०)। वृत्र-इंद्र युद्ध में इसने वृत्र के पक्ष में भाग लिया था। असुरों के द्वारा किये गये पृथ्वीदोहन में यह बछड़ा बना था (भा. ६.१०.२१)।

२. रावण का मातामह एवं मंत्री, जो खश राक्षस का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम केतुमती था, जिससे इसे निम्नलिखित कन्याएँ उत्पन्न हुई थी:—१. राका; २. पुष्पोत्कटा; ३. बलाका; ४. कुंभीनसी; ५. कैकसी (केशिनी)। इसकी इन कन्याओं में से केशिनी, राका, पुष्पोत्कटा एवं बलाका का विवाह विश्रवस् ऋषि से, एवं कुंभीनसी का विवाह मधु दैत्य से हुआ था (विश्रवस् एवं रावण देखिये)।

३. एक राक्षस, जो कश्यप एवं खशा के पुत्रों में से एक था।

सुमाल्य—नंदवंश में उत्पन्न एक राजा (नंद ५. देखिये)।

सुमित्र—(सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु, वायु एवं भागवत के अनुसार सुरथ राजा का पुत्र था। यह इक्ष्वाकुवंश का अंतिम राजा माना जाता है, जो पूरुवंशीय क्षेमक राजा का, एवं मगधवंशीय महानंदी नंद राजा का समकालीन था। इसके ही राज्यकाल में सिकंदर ने भारतवर्ष पर आक्रमण किया था। इसे 'सुमाल्य' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ९.१२.१५-१६)।

२. (सो. वृष्णि.) एक राजा, जो विष्णु, पद्म, वायु एवं भागवत के अनुसार विष्णु राजा का ज्येष्ठ पुत्र, एवं अनमित्र राजा का पिता था (भा. ९.२४.१२)।

३. एक राजा, जो शमीक एवं सुदामिनी के पुत्रों में से एक था (भा. ९.२४.४४)।

४. कृष्ण एवं जांबवती का एक पुत्र, जो यादवीयुद्ध में मारा गया (भा. १०.६१.११)।

५. एक हैहय राजा, जिसने ऋषभ ऋषि के साथ 'आशा' के संबंध में तत्त्वज्ञान पर चर्चा की थी। ऋषभ ऋषि ने इसे वीरद्युम्न एवं तनु नामक मुनियों का वृत्तांत सुनाया (म. शां. १२५.८)।

६. कुलिंद नगरी के राजा का एक नाम, जिसके पुत्र का नाम सुकुमार था। भीम ने अपने पूर्वदिग्विजय में, तथा सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्विजय में इसे जीता था (म. स. २६.१०)।

७. सौवीर देश के विपुल नामक यवन राजा का नामान्तर (विपुल ३. देखिये)। यह 'दत्तमित्र' नाम से भी सुविख्यात था।

८. अर्जुनपुत्र अभिमन्यु का सारथि (म. द्रो. ३४.२९)।

९. फेनप नामक भृगुकुलोत्पन्न ऋषि का नामान्तर (फेनप २. देखिये)।

१०. पांचालराज द्रुपद का एक पुत्र, जिसे 'सौमित्र' नामान्तर भी प्राप्त था। भारतीय युद्ध में जयद्रथ ने इसका वध किया (म. आ. परि. १.१०३.१०८-१३१)।

११. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सुषेण राजा का पुत्र था।

१२. देवद्युति नामक एक ऋषि का पुत्र (पद्म. उ. १२८)।

१३. एक राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)।

सुमित्र कौत्स—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १०५)।

सुमित्र वाध्र्यश्व—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ६९-७०)। वध्र्यश्व का वंशज होने के कारण इसे 'वाध्र्यश्व' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था। इसके वंश के 'सुमित्र' लोगों का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है (ऋ. १०.६९.१; ७-८)।

सुमित्रा—मगध देशाधिपति शूर राजा की कन्या, जो इक्ष्वाकुवंशीय दशरथ राजा की तीन पत्नियों में से एक थी। इसके पुत्रों के नाम लक्ष्मण एवं शत्रुघ्न थे (दशरथ देखिये)।

एक अत्यंत विवेकशील एवं धर्मनिष्ठ राजपत्नी के नाते वाल्मीकि रामायण में सुमित्रा का चरित्रचित्रण किया गया है (वा. रा. अयो. ४४.१)। राम के वनगमन के समय इसने अपने सकुशल संभाषणों के द्वारा राम की माता कौसल्या को सांत्वना दी थी (वा. रा. अयो. ४४.३०)।

मानस में—तुलसी के द्वारा विरचित 'मानस' में वर्णित सुमित्रा केवल विवेकशील ही नहीं, बल्कि अत्यंत मित-

भाषणी एवं राजनैतिक जीवन से संपूर्णतया दूर है। अयोध्या में क्या हो रहा है, इसका कुछ भी पता इस सेवापरायण एवं सरलहृदया स्त्री को नहीं है (मानस. २.७३-७४)।

२. कृष्ण की एक पत्नी।

३. एक दुराचारी स्त्री, जो शिव को 'बिल्वपत्र' चढाने के कारण जीवन्मुक्त हुई (स्कंद. ३.३.२)।

सुमीढ--(सो. पूरु.) एक राजा, जो सुहोत्र राजा का पुत्र था। इसके अन्य दो भाइयों के नाम अजमीढ एवं पुरुमीढ थे (म. आ. ८९.२६)।

सुमीह्ळ--एक राजा, जो भरद्वाज ऋषि का आश्रय-दाता था। इसने भरद्वाज ऋषि को सौ गायें दान में दी थी (ऋ. ६.६३.९)।

सुमुख--गरुड का एक पुत्र (म. उ. ९९.२-१२)।

२. ऐरावतकुलोत्पन्न एक नाग, जो आर्यक नामक नाग का पौत्र, वामन नामक नाग का दौहित्य, एवं चिकुर नामक नाग का पुत्र था (म. आ. ३१.१४)। इसकी पत्नी का नाम गुणकेशी था, जो इंद्रसारथि मातलि की कन्या थी।

मातलि एवं नारद के द्वारा इसका एवं गुणकेशी का विवाह जब निश्चित हो चुका, उसी समय नागों का पुरातन शत्रु गरुड इसे अपना भक्ष्य बनाना चाहता था। मातलि ने इंद्र से प्रार्थना कर इसे अमर बना दिया, एवं इस प्रकार गरुड के सारे मनोरथ विफल हो गये।

पश्चात् गरुड क्रुद्ध हो कर इंद्र एवं विष्णु से बदला लेने के विचार सोंचने लगा। विष्णु को यह ज्ञात होते ही उन्होंने गरुड की कटु आलोचना की, एवं अपने पैर के अंगुठे से सुमुख नाग को उठा कर उसे गरुड के छाती पर रख दिया। तब से यह हमेशा गरुड के छाती पर ही निवास करने लगा (म. उ. १०२-१०३)।

३. एक ऋषि, जो नारद के साथ युधिष्ठिर की मयसभा में उपस्थित हुआ था (म. स. ५.३)।

४. रामसभा का एक वानर।

५. एक राजा। उद्दण्डता के कारण नष्ट हुए राजाओं की 'मनुस्मृति' में प्राप्त नामावलि में इसका निर्देश किया गया है (मनु. ७.४१)।

६. सुहोत्र नामक शिवावतार का एक शिष्य।

७. भरत दाशरथि राजा का प्रधान।

८. धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक (म. द्रो. १०२. ६९)।

सुमुखी--अश्वसेन नाग की माता। खाण्डववनदाह के समय अर्जुन के द्वारा इसके पुत्र अश्वसेन का वध हुआ था। इसी कारण यह उससे बदला लेना चाहती थी।

भारतीय युद्ध में कर्णार्जुन युद्ध के समय यह कर्ण के सर्पमुख बाण पर बैठी, एवं इस बाण के आधार से इसने अर्जुन पर हमला करना चाहा। किन्तु कृष्ण ने इसका दुष्ट हेतु जान कर अपने रथ के अश्व यकायक बिठा दिये, जिस कारण सर्पबाण के साथ यह अर्जुन के शिरस्त्राण पर जा टकरायी, एवं वहाँ से भूमि पर गिर पड़ी। पश्चात् अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. ६६.५-२४)।

२. कुबेरभवन की एक अप्सरा, जिसने अष्टावक्र के स्वागतसमारोह में नृत्य किया था (म. अनु. १९.४५)।

सुमुष्टि--(सो. कुकुर.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार उग्रसेन राजा का पुत्र था (मत्स्य. ४४.७८)।

सुमूर्तिमत्--पितरों का एक समूह, जिसे 'सुकाल' नामान्तर भी प्राप्त था (ह. वं. १.१८)।

ये वसिष्ठ के मानसपुत्र हैं, एवं स्वर्ग के उस पार स्थित 'ज्योतिर्भासिन' नामक लोक में निवास करते हैं। श्राद्ध करनेवाले ब्राह्मणों के पास इनका आना जाना रहता है। इनकी मानसकन्या का नाम गो था, जो शुक्र की पत्नी थी (मत्स्य. १५)।

सुमेध--एक ऋषि, जो संभवतः नृमेध नामक ऋषि का भाई था। शकपूत नार्मेध के द्वारा विरचित एक सूक्त में मित्रावरुण के द्वारा इसकी रक्षा करने का निर्देश प्राप्त है।

२. एक ब्राह्मण, जिसने हरिमेध को 'तुलसी माहात्म्य' कथन किया था (स्कंद. २.४.८)।

सुमेधस्--भार्गवकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

२. एक देवगण, जिसमें निम्नलिखित देव शामिल थे:--१. अल्पमेधस्; २. दीप्तिमेधस्; ३. पृष्णिमेधस्; ४. प्रतिमेधस्; ५. प्रभु; ६. भूयोमेधस्; ७. मेधहन्तृ; ८. मेधजस्; ९. मेधस्; १०. मेधातिथि; ११. यशोमेधस्; १२. सत्यमेधस्; १३. सर्वमेधस्; १४. सुमेधस् (ब्रह्मांड. २.३६.५८-६०)।

३. अगस्त्यकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

४. चाक्षुष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

६. एक ऋषि, जिसने राज्य से भ्रष्ट हुए सुरथ राजा को अपने आश्रम में आश्रय दिया था (सुरथ १३. देखिये)।

सुमेधा—निध्रुव काण्व ऋषि की पत्नी, जो च्यवन एवं सुकन्या की कन्या थी।

२. सीरध्वज जनक राजा की पत्नी।

३. और्व नामक ब्राह्मण की पत्नी (और्व ३. देखिये)

सुम्नयु—एक आचार्य, जो उद्दालक नामक आचार्य का शिष्य था (सां. आ. १५.१)। इसके शिष्य का नाम बृहद्दिव आथर्वण था।

सुयजुस्—एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं भुमन्यु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था (म. आ. ८९.२१)।

सुयज्ञ--एक आचार्य, जो शांख्यायनशाखीय गृह्य-सूत्र का रचयिता माना जाता है। इसी कारण ब्रह्मयज्ञांग-तर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है (आश्व. गृ. ३.३.)।

२. (सो. क्रोष्टु.) यादववंशीय तम राजा का नामांतर (तम २. देखिये)। मत्स्य में इसे पृथुश्रवस् राजा का पुत्र कहा गया है।

३. उशीनर देश का एक राजा (भा. ७.२.२८)।

४. दशरथ का एक पुरोहित, जो वसिष्ठ का पुत्र था।

५. राम दशरथि के सभा का एक सदस्य।

६. (सू. इ.) एक राजा, जो वाडव ऋषि के शाप के कारण कुष्ठरोगी एवं राज्यभ्रष्ठ हो गया (ब्रह्म.वै. २.५५)।

७. विष्णु के यज्ञ नामक अवतार का नामांतर (यज्ञ १. देखिये)।

सुयज्ञ शांडिल्य—एक आचार्य, जो कंस वारक्य नामक आचार्य का शिष्य था, एवं जयंत वारक्य नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ४. १७.१)।

सुयम—एक राक्षस, जो शतशृंग राक्षस का तृतीय पुत्र था। अंबरीष राजा के सेनापति सुदेव के द्वारा यह मारा गया (म. शां. परि. १.११ पाठ)।

सुयज्ञा—महाभौज नामक पूरुवंशीय राजा की पत्नी, जो प्रसेनजित राजा की कन्या एवं 'अयुतनायिन्' राजा की माता थी (म. आ. ९०.१९)।

सुयशस्—(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत एवं विष्णु के अनुसार अशोक राजा का पुत्र, एवं दशरथ राजा का पिता था (विष्णु. ४.२४.३०)।

सुयशा—काशि देश के भीमरथपुत्र दिवोदास राजा की पत्नी जिसने पुत्रप्राप्ति के लिए निकुंभ की आराधना की थी। फिर भी इसे पुत्र प्राप्ति न होने पर, दिवोदास राजा ने काशि में स्थित निकुंभ मंदिर का नाश करवाया (वायु. ९२. ४४-५१; निकुंभ ४. देखिये)।

२. वाहुद राजा की कन्या, जो अनश्वन् राजा के पुत्र परिक्षित् (द्वितीय) राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम भीमसेन था। इसे 'वहुदा सुयशा' नामांतर भी प्राप्त था। पाठभेद-'सुवेपा'।

सुयोधन--धृतराष्ट्रपुत्र दुर्योधन का नामांतर।

२. (सू. इ.) एक राजा, जो मत्स्य एवं पद्म के अनुसार ककुत्स्थ राजा का पुत्र था (मत्स्य. १२.२८)।

सुर--एक असुर, जो संह्रादपुत्र बाष्कलि का पुत्र था।

सुरकृत्--विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र (म. अनु. ४. ५७)।

सुरक्ष--मगध देश के सुकृत्त राजा का नामांतर।

सुरघु--एक राजा, जो तपस्या के कारण ज्ञानी बन गया (यो. वा. ५.६१-६४)।

सुरजा—एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में इसने नृत्य किया था (म. आ. ५९. ४९ पाठ)।

सुरतचंद्रिका—सौराष्ट्र देश के भद्रश्रवस् नामक राजा की पत्नी (पद्म. ब्र. ११)।

सुरता--एक अप्सरा, जो कश्यप एवं प्राधा की कन्या थी। अर्जुन के जन्मोत्सव में इसने नृत्य किया था (म. आ. ११४.५२ पाठ.)।

सुरथ--एक त्रिगर्तदेशीय राजा, जो जयद्रथ एवं दुःशला के पुत्रों में से एक था। युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञ के समय, अर्जुन इसके देश में अश्वमेधीय अश्व के साथ उपस्थित हुआ। यह समाचार सुन कर, अर्जुन के द्वारा किये गये अपने पिता के वध का स्मरण कर यह भयभीत हुआ, एवं इसने तत्काल प्राणत्याग किया (म. आश्व. ७७)। किन्तु कृष्ण की कृपा से यह पुनः जीवित हुआ, एवं युधिष्ठिर के अश्वमेधयज्ञसमारोह में उपस्थित रह सका (जै. अ. १.६१)।

२. एक त्रैगर्त राजकुमार, जो जयद्रथ का छोटा भाई एवं दुर्योधनपक्षीय दस संशप्तक योद्धाओं में से एक था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. द्रो. १७.३६)।

३. शिबि देश का एक राजा, जो त्रिगर्तराज जयद्रथ का परम मित्र था। यह सुरत शैब्य नाम से सुविख्यात था, इसके पुत्र का नाम कोटिकाश्य था (म. व. २५०.)।

४)। जयद्रथ के द्वारा किये गये द्रौपदीहरण के युद्ध में नकुल ने इसे परास्त किया (म. व. २५५.१८-२२)।

४. एक पांचाल राजकुमार, जो द्रुपद राजा का पुत्र था। भारतीय युद्ध में यह अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३१.१२६; श. १३.३९)।

५. कृपाचार्य का एक चक्ररक्षक (म. वि. ५२.९२८* पंक्ति. ८)।

६. यमसभा में उपस्थित एक राजा (म. स. ८.११)।

७. चंपकनगरी के हंसध्वज राजा के पाँच पुत्रों में से एक। अर्जुन के अश्वमेध-दिग्विजय के समय उसने इसका शिरच्छेद किया था (जै. अ. २०-२१)।

८. कुंडल नगरी का एक राजा, जिसने राम दाशरथि का अश्वमेधीय अश्व पकड़ रक्खा था। इसने हनुमत्, सुग्रीव आदि को कैद कर रक्खा था, एवं शत्रुघ्न को मूर्च्छित किया था। पश्चात् स्वयं राम ने युद्ध-भूमि में प्रविष्ट हो कर, इसे परास्त किया। इसके पुत्र का नाम बलमोदक था (पद्म. पा. ४९.५२; बलमोदक देखिये)।

९. (सो. ऋक्ष.) एक राजा, जो जह्नु राजा का पुत्र, एवं विदूरथ राजा का पिता था (मत्स्य. ५०.३४)।

१०. सुरथद्वीप नामक देश का एक राजा, जो कुशद्वीपाधिप ज्योतिष्मत् राजा का पुत्र था (मार्क. ५०.२६)।

११. एक राजा, जो विदर्भ देश के सुदेव राजा का पुत्र था (वा. रा. उ. ७८)।

१२. एक राजा, जो नाभाग राजा की पत्नी सुप्रभा का पिता था। गंधमादन पर्वत पर तपस्या करते समय, यह कन्या इसे प्राप्त हुई थी।

१३. स्वारोचिष मन्वंतर का एक राजा, जो देवी की उपासना करने के कारण अपने अगले जन्म में सावर्णि मनु नामक राजा बन गया था।

एक बार म्लेंच्छों नें इसके राज्य पर आक्रमण किया, जिस कारण राज्यभ्रष्ट हो कर यह सुमेधस् ऋषि के आश्रम में रहने पर विवश हो गया। आगे चल कर इसे एवं समाधि नामक वैश्य को सुमेधस् ऋषि ने देवी की उपासना करने का आदेश दिया। तदनुसार आराधना करने पर देवी ने समाधि वैश्य को स्वर्ग, एवं इसे राज्य पुनः प्राप्त होने का आशीर्वाद दिया।

देवी के आशीर्वाद के कारण, अपने अगले जन्म में यह विवस्वत् आदित्य का सावर्णि नामक पुत्र बन गया, एवं वैवस्वत मन्वंतर के पश्चात् उत्पन्न हुए सावर्णि मन्वंतर का अधिपति बन गया (दे. भा. ५.३२-३५; ब्रह्मवै. २.६२; मार्क. ७८-९०; शिव. उ. ४५)।

१४. (सू. इ. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार रणक राजा का, विष्णु के अनुसार कुंडक राजा का, वायु के अनुसार क्षुलिक राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार कुलक राजा का पुत्र था। भागवत एवं विष्णु में इसके पुत्र का नाम 'सुमित्र' दिया गया है (भा. ९.१२.१५; विष्णु ४.२२.९-१०)।

सुरथा—उशीनर राजा की पत्नी, जो शिवि राजा की माता थी।

२. मत्स्यनरेश विराट की प्रथम पत्नी।

सुरपुरंजय—(किलकिला. भविष्य.) एक नागवंशीय राजा, जो ब्रह्माण्ड के अनुसार वैदेश देश का राजा था।

सुरप्रवीर—तप नामधारी पांचजन्य अग्नि का एक पुत्र, जो यज्ञ में विघ्न डालनेवाले पंद्रह विनायकों में से एक माना जाता है (म. व. २१०.१३)।

सुरभ—सारस्वत नगरी के वीरवर्मन् राजा का पुत्र।

सुरभि—कामधेनु नामक गौ का नामान्तर, जो प्राचेतस् दक्षप्रजापति एवं असिक्नी की कन्या मानी जाती है। महाभारत में इसके समुद्र से प्रकट होने का निर्देश प्राप्त है (म. आ. २६९*)। इसी ग्रंथ में अन्यत्र प्रजापति के सुरभिगंधयुक्त श्वास से इसकी उत्पत्ति का वर्णन प्राप्त है (म. अनु. ७७.१७)।

इसका निवासस्थान गोलोक में था, जो स्वर्ग से भी बढ़ कर अधिक श्रेष्ठ था। इसने ब्रह्मा की उपासना कर अमरत्व की प्राप्ति की थी (म. अनु. २९.३९)। कश्यप ऋषि से इसे नंदिनी नामक गाय कन्या के रूप में प्राप्त हुई थी, जो आगे चल कर वसिष्ठ ऋषि की होमधेनु बन गयी (म. आ. ९३.८)। इस संसार के सारे गाय एवं बैलों की यह जननी मानी जाती है। इसने कार्तिकेय को एक लाख गायें भेंट के रूप में प्रदान की थी।

सुरभि-इंद्रसंवाद—महाभारत में इसने इंद्र के साथ किये एक संवाद का निर्देश प्राप्त है, जहाँ अपने पुत्र वृषभ बैल के साथ एक किसान के द्वारा अत्यंत क्रूरता से व्यवहार करने की वात्सल्यपूर्ण शिकायत की गयी है। पुत्रस्नेह से भरपूर इस संवाद का कथन व्यास ने धृतराष्ट्र से किया था (म. व. १०)।

२. कश्यप एवं क्रोधा की कन्या, जो रोहिणी एवं गंधर्वी नामक दो कन्याओं की माता मानी जाती है (म आ. ६०.५९)।

३. एक गाय, जो ब्रह्मा के हुंकार के उत्पन्न हुई थी। इसके बड़ी होने पर इसके वक्ष से पृथ्वी पर दूध टपकने लगा, जिससे ही आगे चल कर क्षीरसागर की उत्पत्ति हुई। इसका निवासस्थान रसातल नामक सातवें भूतल में था।

परिवार--इसकी कुल चार कन्याएँ थी, जो चार दिशाओं की प्रतिपालक मानी जाति हैं :--१. सुरूपा, (पूर्व दिशा); २. हंसिका (दक्षिण दिशा); ३. सुभद्रा (पश्चिम दिशा); ४. सर्वकामदुधा (उत्तर दिशा) (म. उ. १००)।

सुरभिमत्--एक अग्नि, जिसे अष्टकपाल नामक हविर्भाग प्रदान किया जाता है।

सुरस--गरुड एवं शुकी के पुत्रों में से एक।

२. एक कश्यपवंशीय नाग (म. उ. १०१.१६)।

सुरसा--एक नाग माता, जो कश्यप एवं क्रोधवशा की कन्याओं में से एक थी। इसके पुत्र का नाम कंक था। इसने हनुमत् की सत्वपरीक्षा ली थी, जिसमें वह सफल होने पर इसने उसे अंगिकृत कार्य यशस्वी होने का आशीर्वाद प्रदान किया था (वा. रा. सुं. १; स्कंद. ३.१.४६)।

सुरा--एक देवी, जो मद्य की अधिष्ठात्रि देवी मानी जाती है। यह वरुण एवं देवी की कन्या थी, एवं समुद्र-मंथन के समय वरुणालय (समुद्र) से उत्पन्न हुई थी (म. आ. १६.३४; विष्णु देखिये)।

सुराजि--रामसभा में उपस्थित एक विदूषक।

सुराधस् वार्षागिर--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १.१००)। ऋग्वेद में अन्यत्र वृषागिरपुत्र के नाम से इसका निर्देश अंबरीष, रुद्राश्व आदि ऋषियों के साथ (ऋ. १.१००.१७)।

सुराप--विधृत नामक राजा का प्रधान (पद्म. पा. १११)।

सुरामित्र--एक मरुत्, जो मरुतों के दूसरे गण में से एक था।

सुरायण--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सुरारि--एक राजा, जो भारतीय युद्ध में पांडवपक्ष में शामिल था (म. उ. ४.२०)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'अदारि'।

सुराल--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से शृंगीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था।

सुराव--एक अश्व, जो इल्वलराजा के द्वारा अगस्त्य ऋषि को प्रदान किया गया था (म. व. ९७.१५ पाठ.)।

सुराष्ट्र--एक क्षत्रियवंश, जिसमें रुषर्धिक नामक कुलपांसन राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.११)।

२. दक्षिण पश्चिम भारत का एक लोकसमूह, जहाँ के कौशिकाचार्य आकृति नामक राजा को सहदेव ने अपने दक्षिणदिग्विजय में जिता था (म. स. २८.३९)। इस देश में स्थित चमसोद्भेद, प्रभासक्षेत्र, पिंडारक, उज्जयन्त (रैवतक) आदि विभिन्न तीर्थक्षेत्रों का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. व. ८८)।

३. दशरथ राजा के अष्टप्रधानों में से एक (वा. रा. बा. ७)।

सुरुच्--पक्षिराज गरुड का एक पुत्र।

सुरुचि--उत्तानपाद राजा की पत्नियों में से एक।

२. एक अप्सरा, जो माघ माह में पूषन् नामक सूर्य के साथ भ्रमण करती है।

३. बलि वैरोचन नामक असुर की माता (स्कंद. १.१. १८)।

४. कश्यप एवं अरिष्टा का एक पुत्र।

सुरूप--(सो. क्रोष्टु.) एक पक्षी, जो शुक एवं गरुड का पुत्र था (ब्रह्मांड. ३.७.४५०)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो असमंजस राजा का पुत्र था (वायु. ९६.१४१)।

३. रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

४. तामस मन्वन्तर का एक देवगण।

सुरूपा--वैवस्वत मन्वन्तर के मरीचि ऋषि की कन्या, जो वारुणि आंगिरस ऋषि की पत्नी थी।

२. दशरथपत्नी कैकेयी का नामान्तर (पद्म. पा. २१६)।

३. मंकिकौशीतकि ऋषि की पत्नियों में से एक।

४. सुरभि की एक धेनुस्वरूपी कन्या, जो पूर्व दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.८)।

सुरेणु--संज्ञा का नामान्तर (ह. वं. १.९)। स्कंद में इसे संज्ञा की माता कहा गया है।

सुरेश्वर--शिव का एक अवतार, जो उपमन्यु वासिष्ठ ऋषि के लिए अवतीर्ण हुआ था (शिव. शत. ३२; उपमन्यु वासिष्ठ १. देखिये)।

सुरैषिण--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सुरोचन--(स्वा. प्रिय.) शाल्मलीद्वीप का एक राजा, जो भागवत के अनुसार इध्मबाहु राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.९)।

सुरोचना--स्कंद की अनुचरी एक मातृका (म. श. ४५.२८)।

सुरोचि--वसिष्ठ एवं अरुन्धति का एक पुत्र (भा. ४.१.४१)।

सुरोमन्--तक्षककुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.९)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'सुमना'।

सुलक्षण--एक राजा, जिसने माण्डव्य ऋषि को अश्व चुराने के इल्जाम में शूली पर चढ़ाया था (पद्म. उ. १२१)।

सुलभा--एक संन्यासिनी कुमारी, जो प्रधान नामक राजा की कन्या थी। यह स्वयं संन्यासमार्ग एवं योगमार्ग की पुरस्कर्ती थी, जिसने कर्मयोग एवं गृहस्थाश्रम की प्रशंसा करनेवाले मिथिला नरेश जनक राजा से तत्त्वज्ञान पर वादविवाद की थी। यही संवाद महाभारत में 'सुलभा-जनक संवाद' नाम से प्रसिद्ध है (म. शां. ३०८)।

सुलभा-जनक संवाद--कर्मयोग एवं गृहस्थाश्रम की प्रशंसा करते हुए जनक ने इसे कहा, 'मैं स्वयं गृहस्थाश्रमी हूँ, फिर भी मेरा मन विषयोपभोग की इच्छा से संपूर्णतया अलिप्त है। जिस प्रकार भूमि से बाहर रहा बीज अंकुरित नहीं होता है, उसी प्रकार मेरे मुक्त मन में विषयों की उत्पत्ति नहीं होती है'।

इतना कह कर जनक ने कहा कि, उपर्युक्त तत्वज्ञान इसे पंचशिख नामक आचार्य के द्वारा प्राप्त हुआ है। आगे चल कर जनक राजा ने अनेकानेग व्यंग्य वचन कह कर इसका तिरस्कार किया, एवं इसके नाम आदि के संबंध में पृच्छा कर इसे कोई अगण्य एवं अनधिकारी स्त्री साबित करने का प्रयत्न किया।

जनक राजा के उपर्युक्त अपमानजनक संभाषण से यह जरा भी विचलित न हुई। इसने अत्यंत शान्ति से अपनी गुरुपरंपरा का परिचय दिला कर, अपने संन्यास एवं योगशास्त्र विषयक तत्त्वज्ञान का अत्यंत सुस्पष्ट निवेदन किया, 'जिस प्रकार जतुकाष्ठ एवं जलबिंदुओं का संबंध तत्कालिक रहता है, एवं इन दोनों की मिलावट असंभव है, उसी तरह आत्मा एवं इंद्रियोपभोग का एक साथ रहना असंभव है। इसी कारण मेरा यह कहना है कि, राजा का कर्तव्य निभानेवाले व्यक्ति को मोक्षज्ञान असंभव है। यद्यपि वह उसे प्राप्त भी हो जाये, तो टिकना असंभव है।

सुलभा ने आगे कहा, 'तुम स्वयं को मोक्षधर्म के ज्ञानी कहते हो, फिर भी मैं कौन हूँ, मैं कहाँ से आयी हूँ, ऐसे मामूली प्रश्नों के उत्तर भी नहीं जानते। यदि सचमुच ही मुक्त रहते, तो ऐसी अनभिज्ञता दर्शानेवाले प्रश्न तुम नहीं पूछते। जो व्यक्ति मुक्त है, उसे मनुष्यप्राणि कहाँ से आया, एवं कहाँ जानेवाला है इसका ज्ञान अवश्य ही होना चाहिए'।

इस प्रकार अपने तत्त्वपूर्ण संभाषण के द्वारा इसने जनक राजा का आत्मज्ञान के संबंध का सारा गर्व चूर कर दिया।

सुलभा मैत्रेयी--एक तपस्विनी, जो कुणि गर्ग ऋषि की कन्या थी। आश्वलायन गृह्यसूत्र के ब्रह्मयज्ञांगतर्पण में इसका निर्देश प्राप्त है, जिससे प्रतीत होती हैं, कि यह कोई सुविख्यात ऋग्वेदी तत्त्ववादिनी स्त्री होगी।

याज्ञवल्क्य ऋषि की पत्नी मैत्रेयी, एवं जनक राजा के साथ चर्चा करनेवाली सुलभा, इन दोनों ब्रह्मवादिनी स्त्रियों से यह सर्वथा भिन्न स्त्री होगी।

सुलोचन--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ६०.३२)।

सुलोचना--रावणपुत्र इंद्रजित् की पत्नी, जो अपनी पति के मृत्यु के पश्चात् सती हो गयी।

२. प्लक्षद्वीप के गुणाकर राजा की कन्या। इसका विवाह तालध्वज नगरी के विक्रम राजा के माधव नामक पुत्र से हुआ था (पद्म. क्रि. ५-६; गुणाकर १. एवं माधव ५. देखिये)।

३. हरिस्वामिन् नामक एक ब्राह्मण की कन्या, जिसकी कथा काशीक्षेत्र में स्थित ज्ञानवापी का माहात्म्य कथन करने के लिए स्कंद में प्राप्त है (स्कंद. ४.१.३३)।

सुलोमन्--एक व्याध, जो अमावस्या के दिन नदी में स्नान करने के कारण मुक्त हुआ (पद्म. भू. ३०)।

सुवंश--(सो. वसु.) वसुदेव एवं श्रीदेवा का एक पुत्र (भा. ९.२४.५१)।

२. (सो. भज.) एक राजा, जो पद्म के अनुसार समौजस् राजा का पुत्र था।

सुवक्त्र--स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४)।

सुवचोतथ्य--अंगिरसकुलोत्पन्न एक प्रवर।

सुवर्चला--देवल ऋषि की ब्रह्मचारी कन्या। अपने, पिता के द्वारा आयोजित किये गये स्वयंवर में, इसने श्वेतकेतु औद्दालकि का वरण किया। इस स्वयंवर के समय इसका श्वेतकेतु के साथ किया तत्त्वज्ञान पर संवाद, महा-

भारत में 'श्वेतकेतु सुवर्चला संवाद' नाम से प्राप्त है (म. शां. ३०४; २२८.२२९)।

यह संवाद महाभारत के केवल कुंभकोणम् संस्करण में भी प्राप्त है; भांडारकर संहिता में वह परिशिष्ट में दिया गया है।

२. परमेष्ठिन् राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम प्रतीह था (भा. ५.१५.३)।

३. परमेष्ठिन्पुत्र प्रतीह राजा की पत्नी। इसके प्रतिहर्तृ आदि तीन पुत्र थे (भा. ५.१५.५)।

४. सूर्य की पत्नी (म. अनु. १४६.५; विष्णु. ३.८)।

सुवर्चस्—दधीचि ऋषि की पत्नी। इसके पति दधीचि ऋषि की अस्थियों को इंद्र ने इसे धोखा दे कर प्राप्त की (दधीचि देखिये)। देवताओं का, विशेषतः इंद्र का यह स्वार्थी कृत्य देख कर इसने उन्हें पशु बनने का एवं उनका निर्वंश होने का शाप दिया।

पश्चात् यह अपने पति के साथ सती होने के लिए प्रवृत्त हुई। उसी समय आकाशवाणी से इसे ज्ञात हुआ कि, यह गर्भवती है। यह सुन कर इसने पत्थर से अपना उदर विदीर्ण कर गर्भ बाहर निकाला, एवं उसे एक पीपलवृक्ष के पास रख कर, यह पति के मृत देह के साथ सती हो गयी (पद्म. उ. १५५; शिव. शत. २४–२५)।

इसके गर्भ से उत्पन्न हुआ दधीचि ऋषि का पुत्र, आगे चल कर पिप्पलाद नाम से सुविख्यात हुआ (पिप्पलाद १. देखिये)।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार स्वागत राजा का पुत्र था।

३. (सू. दिष्ट.) दिष्टवंशीय करंधम राजा का नामान्तर (करंधम २. देखिये)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. क. ६२.५)।

५. कौरवपक्ष का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४७. १५)।

६. ब्रह्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

७. रुद्रसावर्णि मनु का एक पुत्र।

८. एक राजा, जो ऐक्ष्वाकव मरु नामक राजा का पुत्र माना गया है। पौराणिक साहित्य के अनुसार, कलियुग में पृथ्वी के समस्त क्षत्रिय लोग विनष्ट होनेवाले है, एवं विद्यमान क्षत्रियकुलों में से पौरव, देवापि एवं ऐक्ष्वाकव मरु नामक केवल तीन ही वंश इस संहार से बचने वाले हैं। ये तीनों क्षत्रिय लोग अपने योगसामर्थ्य के कारण कलियुग के अंत तक क्षत्रिय राजा रहेंगे।

इनमें से ऐक्ष्वाकव मरु को उन्नीसवें युगचक्र के प्रारंभ में वर्चस् नामक पुत्र उत्पन्न होनेवाला है, जो आगे चल कर समस्त क्षत्रियकुलों का उद्धार करेगा (ब्रह्मांड. ३.७४, २५१)। अन्य पुराणों में देवापि के पुत्र का नाम सपौल अथवा सत्य दिया गया है (वायु. ९९.४३८; मत्स्य. २७३.५६–५८)।

९. एक ऋषि; जो भूति ऋषि का भाई था। एकबार इसने एक यज्ञ का आयोजन किया, जिसके लिए इसने बड़े सम्मान से भूति ऋषि को निमंत्रण दिया था (मार्क. ९६)।

१०. एक राजा, जो सुकेति राजा का पुत्र, एवं सुनामन् राजा का भाई था। अपने भाई एवं पिता के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९)।

११. एक अग्नि, जो पांचजन्य नामक अग्नि का पुत्र था (म. व. २१०.१३)।

१२. एक ऋषि, जिसने सत्यवान् एवं सावित्री के विरह-दुःख से व्याकुल हुए द्युमत्सेन राजा को सांत्वना प्रदान की थी (म. व. २८२.१०)।

१३. गरुड का एक पुत्र।

१४. हिमवत् के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम अतिवर्चस् था (म. श. ४५.४२)।

सुवर्चस् वासिष्ठ—एक ऋषि, जो कुरुवंशीय सम्राट् संवरण का पुरोहित था (म. आ. ७९.३६)।

सुवर्ण—एक तपस्वी ब्राह्मण, जिसकी कांति सुवर्ण के समान थी। इसने मनु से पुष्प, धूप दीप आदि के दानविषय में चर्चा की थी (म. अनु. १५५)।

२. सावर्णि मनु का एक पुत्र।

३. रुद्रसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

४. इक्ष्वाकुवंशीय सुतपस् राजा का नामांतर (सुतपस् १५. देखिये)।

५. एक ऋषि, जो कुशध्वज ऋषि के दो पुत्रों में से एक था। इसने पैर के अंगुठे पर खड़े रह कर तीन अक्षरों के एक मंत्र का जाप किया, जिस पुण्य के बल से अगले जन्म में इसे सुवीर नामक गोप के घर एक गोपी का जन्म प्राप्त हुआ (पद्म. पा. ७२)।

६. एक राजा, जिसकी कथा 'ॐ नमो नारायण' मंत्र का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. १०)।

७. एक देवगंधर्व, जो अर्जुन के जन्मोत्सव में उपस्थित था।

सुवर्णचूड--गरुड का एक पुत्र।

सुवर्णरेतस्--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक ऋषि।

सुवर्णवर्मन् काशिराज—काशी देश का राजा, जो जनमेजय पारिक्षित (अंतिम) की पत्नी वपुष्टमा का पिता था। तक्षक नाग के द्वारा परिक्षित् का वध होने के बाद, मंत्रियों ने बालराजा जनमेजय को हस्तिनापुर के राजगद्दी पर बिठाया, एवं उसका विवाह इसकी कन्या वपुष्टमा से किया। इसके शतानीक एवं शंख नामक अन्य दो पुत्र भी थे (म. आ. ४०.८-९; ९०.९५)।

सुवर्णशिरस्—एक महर्षि, जो पश्चिम दिशा में रह कर अज्ञात-अवस्था में सामगान करता है (म. उ. १०८.१२)।

सुवर्णष्ठीविन्--एक राजा, जो संजय शैब्य (श्वैत्य) राजा का पुत्र था। इसका घर्म, मल, मूत्र, आदि सारा मलोत्सर्ग सुवर्णमय रहता था। इसी कारण, चोरों ने इसका अपहरण किया, एवं इसका वध किया (म. द्रो. परि. १.८.३१०-३२५)। आगे चल कर नारद ने इसे पुनः जीवित किया (म. द्रो. ७१.८-९)।

महाभारत में अन्यत्र प्राप्त कथा के अनुसार, इसे हिरण्यनाभ नामान्तर प्राप्त था, एवं यह गुणों में साक्षात् इंद्रतुल्य था। अपने गुणों के कारण, भविष्य में यह कहीं इंद्रपद प्राप्त न कर ले, इस आशंका से इंद्र ने व्याघ्र के द्वारा इसका वध किया। मृत्यु के समय इसकी आयु पंद्रह वर्षों की थी। आगेचल कर इसके पिता संजय के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर नारद ने इसे पुनः जीवित किया।

इसकी सुकुमारी नामक एक बहन थी, जो नारद की पत्नी थी। इसकी अकाल मृत्यु के पश्चात् पुत्रशोक से व्याकुल हुए संजय राजा को, नारद ने सोलह श्रेष्ठ प्राचीन राजाओं के जीवनचरित्र (षोडश राजकीय), एवं उनकी मृत्यु की कथाएँ सुनाई, एवं हर एक श्रेष्ठ व्यक्ति के जीवन में मृत्यु अटल बता कर उसे सांत्वना दी। नारद के द्वारा वर्णित यही 'षोडश राजकीय' आख्यान अभिमन्यु वध के पश्चात् व्यास के द्वारा युधिष्ठिर को कथन किया गया था (म. शां. परि. १)।

सुवर्णा--एक इक्ष्वाकुवंशीय राजकन्या, जो पूरुवंशीय सुहोत्र राजा की पत्नी, एवं हस्तिन् राजा की माता थी म. आ. १०.३६)।

सुवर्णाभ—एक दिक्पाल, जी स्वारोचिष मनु का पौत्र एवं शंखपद का पुत्र था। इसे पिता ने सात्वत धर्म का उपदेश दिया था (म. शां. ३३६.२५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'सुधर्मन्'।

सुवर्मन्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का पुत्र, जो भीम के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १०२.९८)।

२. द्विमीढवंशीय सुवर्मन् राजा का नामान्तर (सुधर्मन् ८. देखिये)।

सुवर्मन् त्रैगर्त—त्रिगर्तराज सुशर्मन् का एक भाई (म. वि. ३२.४)।

सुवाच्—एक ऋषि, जो पाण्डवों के वनवास काल में द्वैतवन में उनके साथ निवास करता था (म. व. २७.२४)।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र।

सुवासन—ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर का एक देवगण।

सुवास्तुक--पाण्डवपक्ष का एक राजा (म. उ. ४.१३)।

सुवाह—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४५)।

सुवित्त--एक ऋषिक।

सुवित्ति--अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार। पाटभेद--'सुचित्ति'।

सुविभु—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो विष्णु एवं वायु के अनुसार विभु राजा का पुत्र, एवं सुकुमार राजा का पिता था (वायु. ९२.७१)।

सुवीर—सोमवंशीय तोंड्मान् राजा का नामांतर।

२. एक राजा, जो सौवीरी नामक राजकन्या का पिता, एवं मरुत्त राजा का श्वशुर था (मार्क. १२८)।

३. (सो. द्विमीढ.) द्विमीढवंशीय सुनीथ राजा का नामान्तर (सुनीथ ३. देखिये)।

४. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो देवश्रवस् एवं कंसावती का ज्येष्ठ पुत्र था (भा. ९.२४.४१)।

५. (सू. इ.) एक राजा, जो द्युतिमत् राजा का पुत्र, एवं दुर्जय राजा का पिता था (म. अनु. २.१०)। पौराणिक वंशावलियों में इसका नाम अप्राप्य है।

६. एक क्षत्रियवंश, जिसमें अजबिंदु नामक एक कुलांगार राजा उत्पन्न हुआ था (म. उ. ७२.१३)।

७. एक राजा, जो क्रोधवश संज्ञक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५५)।

८. वाराणसी में रहनेवाला एक वणिक्, जिसकी पत्नी का नाम चित्रा था (चित्रा ४. देखिये)।

९. एक गोप, जिसकी कन्या के रूप में सुवर्ण ऋषि ने जन्म लिया था (सुवर्ण ५. देखिये)।

सुवीर शैब्य—(सो. अनु.) सौवीर देश का एक राजा, जो विष्णु, मत्स्य एवं भागवत के अनुसार शिबि राजा का पुत्र था। इसीके ही कारण इसके राज्य को 'सौवीर' नाम प्राप्त हुआ था।

सुवेधन—पांडव पक्ष का एक राजा (म. द्रो. १३३. ३७)।

सुवेधस् शैरिषि—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १४७)।

सुवेषा—कुरुवंशीय परिक्षित राजा की बाहुदा सुयशा नामक पत्नी का नामान्तर (परिक्षित ३. देखिये)।

२. दशरथ राजा की पत्नी, जो पद्म के अनुसार शत्रुघ्न की माता थी।

सुव्रत—पुलह एवं श्वेता का एक पुत्र।

२. (सो. उशी.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार उशीनर राजा का पुत्र था (वायु. ९९.२०)।

३. एक आचार्य, जिसे पराशर ऋषि ने 'पराशर स्मृति' कथन की थी।

४. (सो. मगध. भविष्य) एक राजा, जो भागवत एवं ब्रह्मांड के अनुसार क्षेम राजा का, एवं विष्णु के अनुसार क्षेम्य राजा का पुत्र था। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'भुव्रत' एवं 'अनुव्रत' कहा गया है। इसके पुत्र का नाम धर्मसूत्र था। इसने ६४ वर्षों तक राज्य किया (भा. ९.२२.४८)।

५. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो वायु के अनुसार नृपति राजा का पुत्र था।

६. रौच्य मनु का एक पुत्र, जो मृत्यु के पश्चात् षष्ठी नामक देवी की कृपा से पुनः जीवित हुआ (ब्रह्मवै. २. ४३)।

७. एक ऋषि, जिसने विदूरथ राजा को कुजृंभ राक्षस की जानकारी बतायी थी (मार्के. ११३)।

८. मित्र के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम सत्यसंध था (म. श. ४४. ७)।

९. विधातृ के द्वारा स्कंद को दिये गये दो पार्षदों में से एक। दूसरे पार्षद का नाम सुकर्मन् था।

१०. एक राजा, जो पूर्वजन्म में विदिशा के रुक्मभूषण राजा का पुत्र था (पद्म. भू. २०-२२)।

सुव्रता—दक्ष एवं वीरिणी की एक कन्या, जिसे दक्ष, धर्म, ब्रह्मा एवं रुद्र से क्रमशः दक्षसावर्णि, धर्मसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि एवं रुद्रसावर्णि नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (ब्रह्मांड. ४.१.३९-५१)।

सुशंख—एक गंधर्व, जिसके शाप के कारण सुनीथा रानी को वेन नामक दुष्ट पुत्र उत्पन्न हुआ था।

सुशर्मन्—कर्ण का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में नकुल के द्वारा मारा गया। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'सुषेण'।

२. (कण्व. भविष्य.) कण्ववंश का अंतिम राजा, जो अपने बलि नामक अमात्य के द्वारा मारा गया (भा. १२. १.२२)।

३. धर्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

४. एक दुराचारी ब्राह्मण, जिसकी कथा भगवद्गीता के प्रथम अध्याय का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. १७५)।

५. एक ब्राह्मण, जो विशाल नामक ब्राह्मण का पुत्र था। बलाक नामक राक्षस ने इसकी पत्नी का हरण किया, जिसे आगे चल कर उत्तम नामक राजा ने छुड़ा कर इसे वापस दे दिया (मार्के. ६६.६७)।

सुशर्मन् त्रैगर्त प्रस्थलाधिपति—त्रिगर्त देश का सुविख्यात राजा, जो वृद्धक्षेम राजा का पुत्र था। इसी कारण, इसे 'वार्धक्षेमि' पैतृक नाम प्राप्त था। यह एवं इसके सत्यरथ, सत्यधर्मन्, सत्यवर्मन्, सत्येषु एवं सत्यकर्मन् नामक पाँच भाई अत्यंत पराक्रमी थे, एवं स्वयं को 'संशप्तक' योद्धा कहलाते थे। महाभारत में अन्यत्र इसे 'त्रिगर्त' एवं 'प्रस्थलाधिपति' भी कहा गया है (म. द्रो. १६.१९)।

विराट से युद्ध—यह शुरु से ही दुर्योधन का पक्षपाती था, एवं पाण्डवों से द्वेष करता था। पाण्डवों के अज्ञातवास में, इसने दुर्योधन के लिए विराट की गायों का हरण किया था, एवं विराट को कैद कर दुर्योधन के सम्मुख पकड़ कर लाया। किन्तु पश्चात् भीम ने इस पर हमला कर इसे कैदी बनाया, एवं इसे युधिष्ठिर के सामने लाया। उस समय युधिष्ठिर ने इसे विना किसी शर्त के मुक्त किया (म. वि. २९-३२)।

भारतीय युद्ध में—इस युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था, एवं इसने एवं इसके भाइयों ने अर्जुन का वध करने की प्रतिज्ञा की थी। किन्तु यह एवं इसके सारे

भाई अर्जुन के द्वारा मारे गये (म. द्रो. २७; श. २६.४४)।

संशप्तक योद्धा--महाभारत के द्रोणपर्व में 'संशप्तक पर्व' नामक एक उपपर्व है, जहाँ इसे एवं इसके पाँचों भाइयों को 'संशप्तक योद्धा' कहा गया है (म. द्रो. १६-३१)। रण में अपने विशिष्ट प्रतिपक्षी का वध करने की, एवं उनमें यशस्वितता प्राप्त न होने पर आत्महत्या करने की प्रतिज्ञा करनेवाले वीरों को 'संशप्तक योद्धा' कहा जाता था (म. द्रो. १६.३९)। इन योद्धाओं की यह प्रतिज्ञा होमहवन के साथ, एवं अग्निदेवता की साक्षी में ली जाती थी। प्रतिज्ञाग्रहण के पश्चात् ये वीर दर्भ से बने हुए वस्त्र धारण करते थे, एवं अपने वस्त्रों पर अग्निचर्चित घृत का प्रयोग करते थे (म. द्रो. १६.२१-३७))

जयद्रथवध के समय अर्जुन ने भी इसी प्रकार की प्रतिज्ञा की थी, किन्तु वहाँ उसे संशप्तक नहीं कहा गया है (म. द्रो. ५१.३४-३७)।

सुशर्मन् वार्धक्षेमि--पांचाल देश का एक योद्धा, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. उ. १६८.१६)। वृद्धक्षेम का पुत्र होने के कारण, यह 'वार्धक्षेमि' नाम से ही अधिक सुविख्यात था (वार्धक्षेमि १. देखिये)।

सुशर्मन् शांशपायन--एक आचार्य, जो वायु के अनुसार, व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था (वायु. ६१.५६)।

सुशांति--(सो. अज.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार शांति राजा का पुत्र, एवं पुरुज राजा का पिता था (भा. ९.२१.२१)।

२. (सो. नील.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार नील राजा का पुत्र था (मत्स्य. १५०.१)।

३. उत्तम मन्वन्तर का इंद्र।

सुशारद शालंकायन--एक आचार्य, जो ऊर्जवत् औपमन्यव नामक आचार्य का शिष्य, एवं श्रवणदत्त कौहल नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुशील--एक गंधर्व (पद्म. स्व. २२; उ. १२८)।

सुशीला--स्वर्वेदी नामक गंधर्व की कन्या (पद्म. स्व. २२)। पद्म में अन्यत्र इसे सुशील गंधर्व की कन्या कहा गया है (पद्म. उ. १२८)।

२. दशपुर में रहनेवाले कृष्णदेव नामक ब्राह्मण की पत्नी (पद्म. ब्र. १२)।

सुशोभना--मण्डूक राज की कन्या, जो इक्ष्वाकुवंशीय परिक्षित् राजा की एक पत्नी थी। इसके शल, दल एवं वल नामक तीन पुत्र थे।

२. चेदिराज की कन्या, जो मरुत आविक्षित की पत्नी थी (मार्क. १२८)।

सुश्यामा--एक अप्सरा, जो आर्ष्टिषेणपुत्र ऋतध्वज की पत्नी थी। इसकी कन्या का नाम वृद्धा था (ब्रह्म. १०७; वृद्धा देखिये)।

सुश्रम--(सो. मगध. भविष्य.) मगध देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार धर्म का, एवं ब्रह्मांड के अनुसार नृपति राजा का पुत्र था।

सुश्रवस्--एक राजा, जिसने एक साथ साठ राजाओं के साथ युद्ध किया था। इसी युद्ध में इंद्र ने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.५३.९)।

२. एक आचार्य, जो उपगु सौश्रवस नामक आचार्य का पिता था (पं. ब्रा. १४.६.८)।

३. देवताओं का एक गुप्तचर, जिसने कात्यायन ऋषि के तप की वार्ता सरस्वती को बतायी थी। इसपर सरस्वती ने कात्यायन को दृष्टान्त दे कर कहा, 'जिस ज्ञान की तुम्हें अपेक्षा है, वह सारस्वत मुनि तुम्हें बतायेंगे' (स्कंद. १.२.२.)।

४. अभूतरजस् देवों में से एक।

५. एक प्रजापति, जो ब्रह्मा के मानसपुत्रों में से एक था (वायु. ६५.५३)।

सुश्रवस् कौश्य--एक आचार्य, जो कुश्रि वाजश्रवस नामक आचार्य का समकालीन था (श. ब्रा. १०.५.५.१)।

सुश्रवस् वार्षगण्य--एक आचार्य, जो प्रातरह्न नामक आचार्य का शिष्य, एवं साति औष्ट्राक्षि नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. १)।

सुश्रवा--एक विदर्भ राजकन्या, जो कुरुवंशीय जयत्सेन राजा की पत्नी थी। इसके पुत्र का नाम अवाचीन था (म. आ. ९०.१७ पाठ.)।

सुश्रवा सौबला--गांधारराज सुबल राजा की कन्या, जो धृतराष्ट्र की पत्नियों में से एक थी।

सुश्रुत--एक सुविख्यात शल्यचिकित्साशास्त्रज्ञ, जो 'सुश्रुत संहिता' नामक विख्यात ग्रंथ का रचयिता माना जाता है। यह गाधि राजा का पौत्र, एवं विश्वामित्र का पुत्र था (म. अनु. ४.५५)। यह शल्यचिकित्सा के आद्य

आचार्य धन्वन्तरि दिवोदास के सात शिष्यों में से एक प्रमुख शिष्य था (गरुड. १.१७५)। अन्य पुराणों में इसे शालिहोत्र का शिष्य कहा गया है (अग्नि. २९२. ४४)।

सुश्रुत संहिता—आयुर्वेदीय शल्यचिकित्साशास्त्र का आद्य आचार्य धन्वन्तरि दिवोदास माना जाता है, जिसके सात शिष्यों ने मिल कर आयुर्वेदीय 'शल्यचिकित्सापद्धति' का सर्वप्रथम प्रसार किया। इन शिष्यों में से सुश्रुत ही एक आचार्य ऐसा है कि, जिसका 'सुश्रुत-संहिता' नामक ग्रंथ आज उपलब्ध है। इस ग्रंथ में, आचार्य धन्वन्तरि से प्राप्त शल्यमूल आयुर्वेदीय ज्ञान इसने तंत्र-रूप में संग्रहित किया है। यह ग्रंथ पूर्वतंत्र एवं उत्तर-तंत्र नामक दो भागों में विभाजित किया गया है।

उपलब्ध 'सुश्रुत संहिता' से प्रतीत होता है कि, सुश्रुत के द्वारा विरचित आद्य 'सुश्रुत-संहिता' के प्रतिसंस्करण का कार्य नागार्जुन के द्वारा हुआ था (सु. सं. वि. ३.१३)। 'वृद्ध सुश्रुत' नामक और एक संहिता उपलब्ध है, जो संभवतः इसके उत्तरकालीन किसी आचार्य की रचना होगी।

समवर्ती आचार्य—सुश्रुता संहिता में, औपधेनेव नामक धन्वंतरि के और एक शिष्य का निर्देश समवर्ती आचार्य के नाते प्राप्त है (सु. सं. सू. ४.९)। इसके साथ ही उरभ्र पौष्कलावत, करवीर्य, वैतरण आदि धन्वंतरि-शिष्यों का भी निर्देश भी इसके ग्रंथ में प्राप्त है।

परिवार—इसके पुत्रपौत्रादि संतानों का निर्देश वाग्भट (अष्टांगसंग्रहसूत्र पृ. १५२); कात्यायन (महाभाष्य १. पृ. ४०६); एवं पाणिनि (पा. सू. ६.२.३६ कार्तकौजपादिगण); आदि में प्राप्त है।

२. (सू. निमि.) एक राजा, जो ब्रह्मांड के अनुसार सुवर्चस् राजा का पुत्र, एवं जय राजा का पिता था (ब्रह्मांड. ३.६४.२१)। विष्णु में इसे सुभाष राजा का पुत्र कहा गया है (विष्णु. ४.५.३१)।

सुषामन्—एक व्यक्तिनाम (ऋ. ८.२५.२२), जो संभवतः ऋग्वेद में अन्यत्र निर्दिष्ट वरोसुषामन् नामक व्यक्ति का अपभ्रष्ट रूप होगा (ऋ. ८.२३.२८)। सायणाचार्य के अनुसार, ये दोनों भी नाम व्यक्तिनाम न हो कर, किसी अन्य वस्तु के थे।

सुषिनंदिन्—(किलकिला. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार कृतनंद राजा का पुत्र था। वायु एवं ब्रह्मांड में इसे भूतिनंद कहा गया है।

सुषेण—धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५७.१६)।

२ (सो. पूरु.) एक राजा, जो अविक्षित्पुत्र परिक्षित् राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.४८)।

३. जमदग्नि एवं रेणुका के पुत्रों में से एक। रेणुका का वध करने की जमदग्नि ऋषि की आज्ञा इसने अमान्य की थी। इस कारण उसने इसे शाप दिया। आगे चल कर, परशुराम ने जमदग्नि के शाप से इसे मुक्त कराया (म. व. १३६.१०-१७)।

४. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ७.२८; द्रो. १०२.९४)। इसके वध का निर्देश महाभारत में दो स्थानों पर प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, यह एक व्यक्ति न हो कर एक ही नाम के दो व्यक्ति थे।

५. एक यादव राजा, जो बभ्रु राजा का पुत्र, एवं सभाक्ष राजा का पिता था (ह. वं. २.३८)।

६. (सो. कुरु. भविष्य.) एक राजा, जो विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार वृष्णिमत् राजा का, भागवत के अनुसार वृष्टिमत् राजा का, एवं वायु के अनुसार कतिमत् राजा का पुत्र था।

७. कंस के द्वारा मारा गया देवकी का एक पुत्र।

८. स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

९. एक मरुत्, जो मरुतों के द्वितीय गण में समाविष्ट था।

१०. सुतपस् देवों में से एक (सुतपस् १६. देखिये)।

११. एक गंधर्व, जो माघ माह के पूषन् के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३९)।

१२. कर्ण का एक पुत्र एवं चक्ररक्षक, जो दुर्योधन पक्ष का प्रमुख योद्धा था (म. क. ३९.४०)। यह द्रौपदी-स्वयंवर में उपस्थित था। भारतीय युद्ध में यह उत्तमौजस् के द्वारा मारा गया (म. क. ५३.१०-११)।

१३. कर्ण का एक पुत्र (म. श. ५.३)। भारतीय युद्ध में यह नकुल के द्वारा मारा गया (म. श. ९.४७-४९)।

१४. कर्ण का एक पुत्र, जिसने भारतीय युद्ध में केकयाधिपति उग्रधन्वन् के साथ युद्ध किया था। अंत में यह यादव राजा सात्यकि के द्वारा मारा गया (म. क. ६०.४-६)।

सुषेण वानर—एक सुविख्यात वानरप्रमुख, जो धर्म नामक वानर का पुत्र, एवं वानरराज वालि का श्वशुर

था। यह एक सुविख्यात युद्धविशारद ही नहीं, बल्कि वैद्यक शास्त्रज्ञ भी था। सीता शोध के लिए, पश्चिम दिशा में गये हुए वानरदल का यह प्रमुख था।

राम-रावण युद्ध में—इस युद्ध में लक्षावधि वानर सैनिकों को ले कर, यह राम के पक्ष में शामिल हुआ था। (म. व. २६७.२)। विद्युन्मालिन् राक्षस से युद्ध कर, इसने उसका वध किया था (वा. रा. यु. ४३. १४)।

रावणपुत्र इंद्रजित् का वध होने के पश्चात्, रावण ने लक्ष्मण पर अमोघ शक्ति फेंकी, जिस कारण लक्ष्मण मूर्च्छित हो गया, एवं हजारों वानर आहत हो गये। उस समय, इसने विशल्यकरिणी, सावर्ण्यकरिणी, संजीवनी संधानी आदि औषधियों का उपयोग कर, लक्ष्मण की मूर्च्छा भंग की। उसी समय, मूर्च्छना लानेवाली औषधियों का उपयोग कर आहत वानर सैनिकों के शरीर में घुसे हुए शस्त्र बाहर निकाले (वा. रा. यु. ९१.२४-२७) लक्ष्मण के लिए आवश्यक औषधियाँ महादेव पर्वत से लाने की आज्ञा इसने हनुमत् को दी थी, किंतु उन औषधियों का ज्ञान न होने के कारण, हनुमत् उस पर्वत को ही अपने हाथ पर उठा कर ले आया (वा. रा. यु. १०१)।

राम के राज्याभिषेक के समय यह उपस्थित था, उस समय दक्षिण समुद्र का पानी इसने राज्याभिषेक के लिए इसने उन्हें अर्पित किया था (वा. रा. यु. १२८. ५४)।

परिवार—इसकी कन्या का नाम तारा था, जिसका विवाह वानरराज वालिन् से हुआ था। इसके मैंद एवं द्विविद अन्य नामक दो पुत्र भी थे (वा. रा. कि. ४२.१)।

सुसत्य--एक आचार्य, जो ब्रह्मांड के अनुसार, व्यास की सामशिष्य परंपरा में से लोकाक्षि नामक आचार्य का शिष्य था।

सुसंधि--(सू. इ.) एक राजा, जो प्रसुश्रुत राजा का पुत्र, एव अमर्ष राजा का पुत्र था (वायु. ८८.२११)।

सुसंभाव्य—रैवत मनु का एक पुत्र।

सुसामन्--एक धनंजयगोत्रीय ब्राह्मण, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में सामगान करने के लिए उपस्थित था (म. स. ३०.३४)।

सुस्वधा--आज्यप पितरों का सामूहिक नाम। ये निपुत्रिक थे, एवं कामदुघलोक में निवास करते थे (पद्म. सृ. १९)।

सुस्वर—गरुड़ का एक पुत्र।

सुस्वरा--स्वरवेदी गंधर्व की कन्या (पद्म. उ.१२८)।

सुहनु--वरुण की सभा में उपस्थित एक असुर (म. स. ९.१३)।

सुहवि--(सो. पूरु.) एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं भुमन्यु का पुत्र था। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था (म. आ.; सुहोत्र ६. देखिये)।

सुहविस् आंगिरस—एक वैदिक सामद्रष्टा (पं. ब्रा. १४.३.२५)।

सुहस्त--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. द्रो. १३२.११३५*)।

सुहस्त्य घौषेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ४१)। 'घोषा' का पुत्र होने के कारण, इसे घौषेय मातृक नाम प्राप्त हुआ होगा। सायण के अनुसार, घौषेय इसका मातृक नाम न हो कर, वह 'सुहस्त्य' का ही समानार्थी शब्द हैं।

सुहू--(सो. वृष्णि.) एक यादव राजा, जो उग्रसेन का पुत्र था (भा.९.२४.२४)।

सुहोत्र--एक शिवावतार, जो व्यास की सहायता के लिए अवतीर्ण हुआ था। इसके निम्नलिखित चार शिष्य थेः—१. सुहोत्र; २. दुर्मुख; ३. दुर्दम; ४. दुरतिक्रम (शिव. शत. ४)।

२. (सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार क्षत्रवृद्ध का, एवं वायु के अनुसार धर्मवृद्ध राजा का पुत्र था (भा. ९.१७.२-३)। यह काश्यवंश का सर्वप्रथम राजा माना जाता है। इसके काश्य (कश्यप), कुश (काश), एवं गृत्समद-नामक तीन पुत्र थे। पौराणिक साहित्य में अन्यत्र इसके 'सुनहोत्र', एवं 'सुतहोत्र' नामांतर प्राप्त हैं (अग्नि. २७७; ब्रह्म. १३)।

३. (सो. अज.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार सुधनुष् राजा का पुत्र, एवं च्यवन राजा का पिता था (भा. ९.२२)। वायु में इसे सुधन्वन् राजा का पुत्र कहा गया है।

४. (सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो सहदेव पांडव का पुत्र था। इसकी माता का नाम माद्री विजया था, जिसे सहदेव ने स्वयंवर का प्रण जीत कर प्राप्त किया था (म. आ. ९०.८७)।

विष्णु, मत्स्य एवं वायु में, इसे नकुल पांडव का पुत्र कहा गया है, किंतु यह असंभव प्रतीत होता है।

५. एक ऋषि, जो वनवासकाल में पांडवों के साथ निवास करता था (म. व. २७.२४)।

६. एक राजा, जो भरत राजा का पौत्र, एवं भुमन्यु का पुत्र था। इसे 'सुहोतृ', 'सुहवि', 'सुयजु' आदि नामांतर भी प्राप्त थे। इसकी माता का नाम पुष्करिणी था।

यह अत्यंत दानशूर एवं अतिथिप्रिय राजा था। इसकी दानशूरता से प्रसन्न हो कर, इन्द्र ने इसके राज्य में एक वर्ष तक सुवर्ण की वर्षा की थी। इस सुवर्णवर्षा से प्राप्त सारी संपत्ति इसने ब्राह्मणों में बाँट दी थी (म. द्रो. परि. १.८.३६०-३८३; शां. २९.२२१)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम इक्ष्वाकुकन्या सुवर्णा था, जिससे इसे अजमीढ, सुमीढ एवं पुरुमीढ नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे।

इसकी निम्नलिखित अन्य पत्नियाँ एवं पुत्र भी थेः— १. धूमिनी—ऋक्ष; २. नीली—दुःषन्त, परमेष्ठिन्; ३. केशिनी—जह्नु, जन एवं रुपिन् (म. आ. ८९.२०-२८)।

महाभारत में अन्यत्र इसके हस्तिन् नामक पुत्र का निर्देश प्राप्त है, जिसके वंश में आगे चल कर विकुंठन, अजमीढ एवं संवरण आदि राजा उत्पन्न हुए। इनमें से संवरण राजा 'वंशकर' हुआ, जिसने हस्तिनापुर का पूरु वंश आगे चलाया (म. आ. ९०.३५-३९)।

७. रामसेना का एक वानर।

८. (सो. अमा.) एक राजा, जो वायु के अनुसार जह्नु राजा का पुत्र, था। इसकी माता का नाम कावेरी था (वायु. ९१.७)।

९. (सो. अमा.) एक राजा, जो कांचनप्रम (कांचन) राजा का पुत्र, एवं जह्नु राजा का पिता था (विष्णु. ४.७.३)। इसकी पत्नी का नाम केशिनी था। भागवत में इसे 'होत्रक' कहा गया है।

१०. (सो. पूरु.) एक राजा, जो बृहत्क्षत्र नामक राजा का पुत्र, एवं हस्तिन् राजा का पिता था (वायु. ९९. १६५)।

सुहोत्र धौषेय—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ४१)।

सुहोत्र भारद्वाज—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ६. ३१-३२)।

सुह्म--(सो. अनु.) एक राजा, जो बलि आनव राजा के पुत्रों में से एक था (बलि आनव देखिये)।

२. पूर्व भारत का एक जनपद, जिसे भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जीता था (म. स. २७.१४)।

सुहृदय--घटोत्कचपुत्र बर्बरिक का नामांतर (बर्बरिक देखिये)।

सूक्त--एक मंत्रद्रष्टा आचार्य, जो प्राणदेवता का माहात्म्य कथन करनेवाले मंत्र का रचियता माना जाता है (ऐ. आ. २.२.२)। ऐतरेय आरण्यक में इस शब्द का 'वैदिक मंत्रसमुदाय' अर्थ अभिप्रेत है, जो ऋग्वेद मंडल, सूक्त एवं मंत्र में विभाजित हैं।

सूक्ष्म—एक दानव, जो कश्यप एवं दनु का पुत्र था।

सूक्ष्मायणि--अठाईस व्यासों में से एक (व्यास पाराशर्य देखिये)।

सूत--एक जातिविशेष, जो पुराणों के पठन आदि का कार्य करती थी (रोमहर्षण 'सूत' देखिये)।

२. विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र (म. अनु. ४.५७)।

३. एक ऋषि, जो शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म से मिलने उपस्थित हुआ था (म. आ. ६६.११*)।

सूनामुख--एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था।

सूनु आर्भव---एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. १७६)। यह संभवतः ऋभु ऋषि का पुत्र होगा।

सूनृता--रुद्रसावर्णि मन्वन्तर के स्वधाम नामक अवतार की माता, जो सत्यसह नामक ऋषि की पत्नी थी (भा. ८.१३.२९)।

२. उत्तानपादपत्नी सुनीति का नामान्तर।

सूरि—शिवदत्त ब्राह्मण का एक पुत्र, जिसे ऋषि शाप के कारण मृगयोनि प्राप्त हुई थी। आगे चल कर अगस्त्याश्रम में राम ने इसका वध किया (ब्रह्मांड. ३.३५)।

सूर्मी अथवा **सूर्म्या**—अनुह्राद नामक राक्षस की पत्नी।

सूर्य—एक देवता, जिसके लिए वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में 'सवितृ', 'विवस्वत्' 'पूषन्' आदि विभिन्न नामान्तर दिये गये है। संभवतः सूर्य की विभिन्न अवस्थाओं को प्रतीकरूप मान कर सूर्यदेवता को ये नामांतर प्राप्त हुए होगे (सवितृ, पूषन् एवं विवस्वत् देखिये)।

अथर्ववेद में सूर्य के सात नाम (सप्तसूर्याः) दिये गये हैं, जो संभवतः सूर्य के सात रश्मियों का प्रतिनिधित्व करते हैं (अ. वे. १३.३.१०; सवितृ देखिये)।

महाभारत में इसके निम्नलिखित बारह नाम दिये गये है :—१. दिवस्पुत्र, २. बृहद्भानु, ३. चक्षु, ४. आत्मा, ५. विभावसु, ६. सवितृ, ७. ऋचीक, ८. अर्क, ९. भानु,

१०. आशावह, ११. रवि, १२. विवस्वत (म. आ. १.४०)।

सूर्यदेवता के कल्पना का उद्गम--आधुनिक भौतिक शास्त्र के अनुसार पृथ्वी की उत्पत्ति सूर्य से होने की कल्पना स्वीकृत की गयी है। वैदिक साहित्य में इसी कल्पना को स्वीकार किया गया है, जहाँ सूर्य को इस विश्व का आत्मा एवं पिता माना गया हैः--

आप्रा द्यावापृथिवी अन्तरिक्षं।
सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च ॥

(ऋ. १.११५.१)।

(इस विश्व के चर एवं अचर वस्तुओं की आत्मा सूर्य ही है)।

इसी कल्पना के अनुसार सूर्यपत्नी अदिति अथवा दिति को विश्व की माता कहा गया है, एवं दितिपुत्र दैत्य को एवं अदितिपुत्रों को 'आदित्य' कहा गया है।

पौराणिक साहित्य में कश्यप ऋषि को सूर्य का ही प्रतिरूप माना गया है, एवं उसकी अदिति एवं दिति नामक दो पत्नियाँ दी गयी है, जो क्रमशः दिन एवं रात का प्रतिनिधित्व करती है। इन दोनों का पुत्र अग्नि है, जो पृथ्वी में सूर्य का प्रतिनिधित्व करता है। इस प्रकार सूर्य एवं उससे संबंधित देवतापरिवार का संबंध सृष्टिउत्पत्ति एवं सृष्टि संचालन कार्य से स्पष्ट रूप से होता है।

सूर्य उपासना--सूर्य की गति, उपासना एवं इसके एकसौ आठ नामों का जाप प्राचीन काल से भारतवर्ष में प्रचलित है। इसी उपासना का उपदेश धौम्य ऋषि ने युधिष्ठिर को किया था (म. व. ३.१६-३३; १६०. २४-३७)।

सूर्य उपासना के ग्रंथ--विश्वामित्र ऋषि के द्वारा विरचित 'गायत्रीमंत्र' एवं विभिन्न 'सौर सूक्त' ऋग्वेद में प्राप्त है, जो सूर्य देवताविषयक सर्वाधिक प्राचीन साहित्य कहा जा सकता है। उपनिषद ग्रंथों में से 'सूर्योपनिषद,' सूर्योपासना से ही संबंधित है। 'सूर्य गीता' नामक एक ग्रंथ भी उपलब्ध है, जो 'गुरुज्ञानवासिष्ठ तत्वसारायण' नामक ग्रंथ में अंतर्भूत है (कर्मकाण्ड. ३.१-५)। पौराणिक साहित्य में से 'भविष्य' एवं 'ब्रह्मवैवर्त' पुराण 'सौर' पुराण माने जाते हैं।

शाकद्वीप से सूर्यप्रतिमा तथा सूर्योपासना भारत में सर्वप्रथम आयी, जिसका का स्वरूप वैदिक सूर्य उपासना से कई अंश में भिन्न था (सांब देखिये)।

सूर्य सौवश्व--एतश नामक ऋषि का शत्रु, जिसे इसने आहत किया था (ऋ. १.६१.१५; ४.१७.१४; एतश देखिये)।

सूर्यक--(प्रद्योत. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार विशाखयूप राजा का पुत्र था।

सूर्यतेजस्--एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

सूर्यदत्त--विराट का एक भाई, जो भारतीय युद्ध में द्रोण के द्वारा मारा गया (म. उ. १६८.१४; वि. ३०. १३; द्रो. १३३.३९; क. ५.८३)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'सुदर्शन'।

सूर्यध्वज--एक राजा, जो द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.१०)।

सूर्यनेत्र--गरुड़ का एक पुत्र।

सूर्यभास--कौरवपक्ष का एक राजा, जो भारतीय युद्ध में अभिमन्यु के द्वारा मारा गया (म. द्रो. ४७.१५)।

सूर्यवर्चस्--एक देवगंधर्व, जो कश्यप एवं मुनि के पुत्रों में से एक था। यह कार्तिक माह के विष्णु नामक आदित्य के साथ भ्रमण करता है। अपने अगले जन्म में यह घटोत्कच पुत्र बर्बरिक बन गया।

सूर्यवर्मन्--त्रिगर्त देश का एक राजा, जो युधिष्ठिर के अश्वमेधीय अश्व की रक्षा करनेवाले अर्जुन से परास्त हुआ था (म. आश्व. ७३.११)। इसी युद्ध में इसका केतुवर्मन् नामक भाई मारा गया।

सूर्यशत्रु--लंका का एक राक्षस (वा. रा. यु. ९)।

सूर्यश्री एवं **सूर्यसवित्री**--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३३-३४)।

सूर्यासावित्री--एक वैदिक सूक्तद्रष्ट्री (ऋ. १०. ८५)। इसके द्वारा रचित सूक्त में इसके विवाह का वर्णन प्राप्त है। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे सवितृकन्या कहा गया है, एवं अश्विनों के विवाहरथ में इसके आरूढ होने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. १.११६.१७;११९.५)। ऐतरेय ब्राह्मण में, अश्विनों के द्वारा होड़ में विजय प्राप्त करने पर उनका विवाह इसके साथ संपन्न होने का निर्देश स्पष्ट रूप से प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ४.७; प्रजापति देखिये)।

अश्विनों के साथ इसका विवाह होने का उपर्युक्त वर्णन वस्तुस्थितिनिदर्शक है, या रुपकात्मक है यह कहना मुश्किल है।

सूर्याक्ष--रामसेना का वानर।

२. एक राजा, भारतीय युद्ध में कौरवपक्ष में शामिल था। यह ऋथ नामक असुर के अंश से उत्पन्न हुआ था।

सृगाल--एक राजा, जो स्त्रीराज्य का अधिपति था। कलिंगराज चित्रांगद की कन्या के स्वयंवर में यह उपस्थित था (म. शां. ४.७)। पाठभेद--'शृगाल'।

सृंजय--उत्तम मनु के पुत्रों में से एक।

२. (सू. नाभाग.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार नाभाग राजा का पुत्र था।

३. (सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कालनर राजा का पुत्र, एवं जनमेजय राजा का पिता था। वायु एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'कालनल' एवं 'कोलाहल' राजा का पुत्र कहा गहा है। मत्स्य में इसका संजय नामान्तर प्राप्त है। यह प्रारंभ से ही कृष्ण का विरोधक था, जिसने इसको परास्त किया था।

४. (सो. नील) एक राजा, जो पंचजन नामक राजा का पिता था (ह. वं. १.३२)। संभवतः सृंजय पांचाल एवं यह दोनों एक ही होंगे (सृंजय पांचाल देखिये)।

५. (सो. क्रोष्टु.) एक राजा, जो भागवत, मत्स्य एवं वायु के अनुसार शूर राजा का पुत्र, एवं धनु एवं वज्र नामक राजाओं का पिता था (मत्स्य. ४६.३)। इसकी पत्नी का नाम राष्ट्रपाली था, जो कंस राजा की भगिनी थी। कई पुराणों में इसके पुत्रों के नाम कृश एवं दुर्मर्षण दिये गये हैं।

६. क्षत्रवंशीय संजय राजा का नामांतर (संजय २. देखिये)।

७. एक लोकसमूह, जो भारतीय युद्ध में पाण्डव पक्ष में शामिल था (म. द्रो. ३४.५; ३९.१७)।

वैदिक साहित्य में-इस साहित्य में इन लोगों का उल्लेख तृत्सु लोगों के साथ प्राप्त है, जहाँ तृत्सु राजा दिवोदास एवं सृंजय राजा की एकसाथ ही प्रशस्ति की गयी है, एवं उन दोनों को तुर्वशों के शत्रु बताये गये हैं (ऋ. ६.२७.७)। शतपथ ब्राह्मण में भी देवभाग श्रौतर्षि को कुरु एवं सृंजय लोगों का पुरोहित बताया गया है (श. ब्रा. २.४-५)।

अथर्ववेद के अनुसार ये लोग कोई नैसर्गिक आपत्ति की शिकार बने थे, एवं इसी आपत्ति में इनके विनष्ट होने का अस्पष्ट निर्देश वहाँ प्राप्त है (अ. वे. ५.१९.१)। काठक संहिता एवं तैत्तिरिय संहिता में भी इसी तर्क की पुष्टि मिलती है, जहाँ किसी सांस्कारिक त्रुटि के कारण इनके विनष्ट होने का निर्देश प्राप्त है (का. सं. १२.३; तै. सं. ६.६.२.२)।

निवासस्थान--हिलेब्रांट के अनुसार सृंजय लोग दिवोदास के साथ सिंधु नदी के पश्चिम में कहीं निवास करते थे। कई अभ्यासक इन्हें युनानी 'सेरांगै' लोगों के साथ समीकृत करते है, एवं इनका आद्य निवासस्थान ड्रेन्जियाना में बताते है। त्सीमर के अनुसार ये लोग सिंधुघाटी के उपरि भाग में बसे हुए थे। इनके मित्र तृत्सुगण मध्य देश में स्थित थे, इस कारण इनके सिंधु नदी के पूर्व भाग में निवास करने की संभावना प्रतीत होती है।

ऐतिहासिक निर्देश-इन लोगों के द्वारा दुष्टरितु पौंसायन नामक राजा को, एवं रेवोत्तरस् पाटव चाक्रस्थपति नामक अमात्य को अधिकारभ्रष्ट करने का निर्देश शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (श. ब्रा. १२.९.३.१)। आगे चल कर रेवोत्तरस् पाटव ने कुरु राजा बाह्लिक प्रातीप्य के विरोध के विपरित भी अपने राजा को पुनः एक बार राजगद्दी पर प्रतिष्ठापित किया।

इन लोगों के राजाओं में, सृंजय दैववात, प्रस्तोक सृंजय (ऋ. ६.४७.२२); वीतहव्य सृंजय; साहदेव्य सोमक (ऋ. ४.१५.७; ऐ. ब्रा. ७.३४.९); एवं साहदेव्य सोमक के पिता सहदेव (सुप्लन्) सार्ञ्जय (ऐ. ब्रा. ७.३४.९) का निर्देश विशेष प्रमुखता से पाया जाता है। इनमें से अंतिम दो राजाओं को पर्वत एवं नारद ने राज्याभिषेक किया था।

सृंजय दैववात--सृंजय लोगों का एक राजा, जिसने तुर्वश एवं वृचीवन्त जाति के अपने शत्रुओं पर विजय किया था (ऋ. ६.२७.७)। स्वयं इंद्र ने इसकी मदद कर तुर्वशों को इसके हाथ सौंपा दिया। देवत् का वंशज होने के कारण इसे 'दैववात' पैतृक नाम प्राप्त हुआ था (ऋ. ४.१५.१)। इसके यज्ञाग्नि का निर्देश भी ऋग्वेद में प्राप्त है।

सृंजय पांचाल--(सो. नील.) पांचाल देश का एक राजा, जो विष्णु के अनुसार हर्यश्व राजा का, एवं वायु के अनुसार रिक्ष राजा का पुत्र था। भागवत एवं मत्स्य में इसे क्रमशः 'संजय' एवं 'जय' कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम क्रमशः भर्म्याश्व एवं भद्राश्व दिया गया है।

सृंजय वैतहव्य--एक लोकसमूह, जो संभवतः सृंजय लोगों का ही नामान्तर था। भृगु ऋषि की हत्या करने के कारण, इन लोगों का नाश हुआ (अ. वे. ५.१९.१)।

सृंजय वैशालि--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो वायु एवं विष्णु के अनुसार धूम्राश्व राजा का पुत्र, एवं सहदेव राजा का पिता था (वायु. ८६.१९; विष्णु. ४.१. ५३)। ब्रह्मांड में इसे धूम्राश्व राजा का पुत्र कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६१.१४)। भागवत में इसे 'संयम' कहा गया हैं।

सृंजय शैब्य--एक राजा, जो शिबि राजा का पुत्र था। इसकी पत्नी का नाम कैकेयी था, जिससे इसे सुवर्णष्ठीविन् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इसकी कन्या का नाम दमयंती (मदयंती) अथवा श्रीमती था, जिसका विवाह नारद से हुआ था (नारद. ३. देखिये)।

इसके पुत्र सुवर्णष्ठीविन् की चोरों के द्वारा हत्या होने पर यह अत्यधिक शोक करने लगा। इस पर इसके दामाद नारद ने इसे सांत्वना देने के लिए सोलह श्रेष्ठ राजाओं (षोडश राजकीय) का एक आख्यान सुनाया, जिसमें मानवीय जीवन में मृत्यु की नित्यता, एवं तद्हेतु शोक करने का वैफल्य बहुत ही सुंदर प्रकार से विशद किया था (म. द्रो. परि. १.८.३२५-८७२; सुवर्णष्ठीविन् एवं नारद २. देखिये)। पश्चात् नारद ने इसके पुत्र सुवर्णष्ठीविन् को पुनः जीवित किया।

सृंजय होत्रवाहन--एक राजर्षि, जो काशिराज की कन्या अंबा का मातामह, एवं परशुराम का मित्र था। अंबा के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर यह अपने मित्र परशुराम के पास गया, एवं इसने उसे भीष्म से मिल कर उसका मन अंबा से विवाह करने के लिए अनुकुल बनाने के लिए प्रार्थना की (म. उ. १७५.१५-२७; ३०)। पाण्डवों के वनवासकाल में इसने उनके साथ निवास किया था (म. व. २७.२४)।

सृतंजय--मगधवंशीय श्रुतंजय राजा का नामान्तर (श्रुतंजय ३. देखिये)।

सृविंद--इंद्र का एक शत्रु, जिसका उसने वध किया।

सृष्टि--(सो. वृष्णि.) उग्रसेन राजा का आठवाँ पुत्र (भा. ९.२४.२४)।

२. ध्रुव एवं भूमि का एक पुत्र।

३ ब्रह्मा की सभा में उपस्थित एक देवी (म. स. १३२*)।

सेक--एक लोकसमूह, जिसे सहदेव ने अपने दक्षिण दिग्विजय के समय जीता था (म. स. २८.२९७*)।

सेचक--धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'मैचक'।

सेतु--(सो. द्रुह्यु.) एक राजा, जो मत्स्य एवं वायु के अनुसार द्रुह्यु राजा का पुत्र, एवं अरुद्ध राजा का पिता था (मत्स्य. ४८.६; वायु. ९९.७)। भागवत में इसे बभ्रु राजा का पुत्र कहा गया है, एवं इसके पुत्र का नाम 'आरब्ध' बताया गया है (भा. ९.२३.१४)। विष्णु में इसे 'सेतुपुत्र' अथवा 'आरद्वत' कहा गया है। महाभारत में निर्दिष्ट अंगारसेतु अथवा अंगार राजा संभवतः यही होगा (अंगार देखिये)।

सेदुक--एक राजा, जो वृषदर्भ राजा का मित्र था (वृषदर्भ देखिये)।

सेन--(सो. अनु.) अनुवंशीय हेम राजा का नामान्तर।

सेनक--एक वैयाकरण (पा. सू. ५.४.११२)।

सेनजित्--(सो. अज.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार विषद राजा का पुत्र, एवं रुचिराश्व राजा का पिता था (भा. ९.२१.२३)। रुचिराश्व के अतिरिक्त इसके दृढहनु, काश्य एवं वत्स नामक अन्य तीन पुत्र थे।

विष्णु एवं वायु के अनुसार यह विश्वजित् राजा का, एवं मत्स्य के अनुसार अश्वजित् राजा का पुत्र था। इसके द्वारा प्रणीत नीतिशास्त्र (राजधर्म) का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. शां. २६.१३-२९)।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो कृशाश्व राजा का पुत्र, एवं युवनाश्व राजा का पिता था (भा. ९. ६.२५)। अन्य पुराणों में इसे प्रसेनजित् कहा गया।

३. (सो. मगध. भविष्य.) एक राजा, जो बृहत्कर्म राजा का पुत्र था। यह अधिसोमकृष्ण पौरव, एवं दिवाकर ऐक्ष्वाक आदि राजाओं का समकालीन था। इसके ही शासनकाल में पुराणों का लेखन हुआ।

४. एक अप्सरा, जो फाल्गुन माह के सूर्य के साथ भ्रमण करती है (भा. १२.११.४०)।

५. एक मरुत्, जो मरुतों के दूसरे गण में समाविष्ट था।

सेनानी--एकादश रुद्रों में से एक (म. भी. ६०.२७)।

सेनापति--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. भी. ६०.२७)।

सेनाबिंदु--एक क्षत्रिय राजा, जो तुहुण्डु नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.२०)। इसे

क्रोधहन्तृ नामान्तर भी प्राप्त था। इसकी राजधानी देवप्रस्थ नगरी में थी।

द्रौपदीस्वयंवर में यह उपस्थित था (म. आ. १७७. ८)। अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय, उलूकराज के साथ इस पर आक्रमण कर इसे राज्यभ्रष्ट किया था (म. स. २४.९)।

भारतीय युद्ध में यह पाण्डवपक्ष में शामिल था, एवं इसकी श्रेणि 'रथसत्तम' थी (म. उ. १६०.१९)। यह श्रीकृष्ण एवं भीमसेन के समान पराक्रमी माना जाता था। इसके रथ के अश्व पीले रेशम के वर्ण के थे, एवं उन पर स्वर्ण का जीन लगा हुआ था (म. द्रो. २२. १६३*)। इसी युद्ध में यह कर्ण के द्वारा मारा गया (म. क. ३२.३७)।

सेयन--विश्वामित्र का एक पुत्र।

सैंहिकेय--एक सुविख्यात राक्षससमूह, जो विप्रचित्ति दानव एवं सिंहिका के पुत्र थे। इस समूह में कुल एक सौ राक्षस थे (विप्रचित्ति देखिये)।

सैंहिकेय साल्व--एक असुर, जिसका परशुराम ने देवताओं की आज्ञा से वध किया (विष्णुधर्म १.५२.)।

सैतव--एक आचार्य, जो पाराशर्य नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. २.५.२१; ४.५.२७)। इसके शिष्यों में गौतम (बृ. उ. २.६.२; ४.६); एवं आग्निवेश्य (श. ब्रा. १४.७.३.२७) प्रमुख थे।

सैत्य--अंगिराकुलोत्पन्न एक प्रवर।

सैन्धव--सिंधु देश के निवासियों का सामूहिक नाम (म. व. ५१.२१)।

सैन्धवायन--विश्वामित्र का एक पुत्र, एवं विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

२. एक आचार्य, जो व्यास की अथर्वन् शिष्यपरंपरा में से शौनक नामक आचार्य का शिष्य था।

सैबल्क--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-'सर्वशैलाब'।

सैरांध्रि--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सैरंध्री--विराट नगर में अज्ञातवास के समय द्रौपदी के द्वारा धारण किया गया नाम।

२. केकयराज की एक कन्या, जो मरुत्त आविक्षित राजा की पत्नी थी (मार्कं. १२८)।

सैशिरिरि--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सोक्ति--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सोदन्ति--एक आचार्य, जिस पर विश्वामित्र ऋषि ने विजय प्राप्त की थी (पं. ब्रा. १४.५.१३)।

सोभरि काण्व--एक आचार्य, जिसे ऋग्वेद के कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय दिया गया है (ऋ. ८.१९.२२; १०३)। इसके द्वारा विरचित सूक्त में इसके सोभरि नामक पिता का, एवं इसके परिवार के लोगों का कई बार उल्लेख प्राप्त है (ऋ. ८.५.२६; १९.३२; २२.१५)। त्रसदास्यु के द्वारा इसे पचास वधुओं की प्राप्ति होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में इसी कथा का संकेत प्राप्त है। किन्तु वहाँ इसे सौभरि कहा गया है (सौभरि देखिये)।

सोम--एक वैदिक मंत्रद्रष्टा (ऋ. १०.१२४.१;५-९)।

२. चंद्रमा का नामांतर। यह एक प्रजापति एवं स्वायंभुव मन्वन्तर के अत्रि ऋषि का पुत्र था। इसकी सत्ताईस पत्नियाँ थी, जो दक्ष प्रजापति की कन्या थी (चन्द्र एवं दक्ष देखिये)। सप्तर्षियों के द्वारा किये गये पृथ्वीदोहन के समय यह बछडा बना था। इसके नगरी का नाम विभावरी था, जो मेरु पर्वत की उत्तर में स्थित थी (मत्स्य. २६६.२६)।

३. एक अग्नि, जो भानु एवं निशा के दो पुत्रों में मे एक था। इसकी बहन का नाम रोहिणी था (म. व. २११. १५)।

४. सवितृ एवं पृश्णि के पुत्रों में से एक।

५. अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

६. सुख देवों में से एक।

७. एक शिवावतार।

८. एक वसु, जो धर्म एवं वसु के पुत्रों में से एक था (विष्णु. १.१५.१११)।

९. सोमतन्वी नामक अंगिराकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

सोम प्रातिवेश्य--एक आचार्य, जो प्रतिवेश्य नामक आचार्य का शिष्य था (सां आ. १५.१)।

सोम शुष्मायण--अट्ठाईस व्यासों में से एक।

सोमक--कृष्ण एवं कालिंदी का एक पुत्र।

२. सोमकवंशीय क्षत्रियों का सामूहिक नाम।

सोमक साहदेव्य (सार्जय)--(सो. नील.) सृंजय लोगों का एक राजा (ऋ. ४.१५.७-१०; सृंजय १. देखिये)। सहदेव का वंशज होने से इसे 'साहदेव्य' पैतृक नाम, एवं सृंजयों का वंशज होंने से इसे 'सांर्जय' वांशिक नाम प्राप्त हुआ होगा (ऐ. ब्रा. ७.३४; श. ब्रा. २.४.४.४)। पर्वत

एवं नारद ऋषि इसके पुरोहित थे (ऐ. ब्रा. ७.३४.९)। यह वामदेव ऋषि का आश्रयदाता था, एवं इसने उसे अनेकानेक अश्व प्रदान किये थे (ऋ. ४.१५८.८)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे पांचाल देश का राजा कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम सहदेव बताया गया है (भा. ९.२२; ह. वं.१.३२; ब्रह्म. १३. वायु. ३७)। इसके द्वारा अपने पुत्र का नरमेध किये जाने की कथा महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (म. व. १२७–१२८)।

पुत्र का नरमेध—इसकी कुल सौ पत्नियाँ थी। किन्तु जंतु (जह्नु) नामक केवल एक ही पुत्र था। एक बार चिंटी ने जंतु को काट लिया, जिस कारण इसके अंतःपुर की सभी पत्नियाँ रोंने लगी। इस प्रसंग को देख कर इसे मन ही मन अत्यंत दुःख हुआ, एवं इसने सोचा कि, राजा के लिए केवल एक ही पुत्र रहना दुःख का मूल हो सकता है। पश्चात् अधिक पुत्र प्राप्त होने के उद्देश्य से एक नरमेध करने की, एवं उसमें इसके जन्तु नामक इकलौते पुत्र का हवन करने की कल्पना इसके पुरोहित ने इसे दी। तदनुसार इसने अपने पुत्र जन्तु को बलि दे कर एक नरमेध किया, जिससे उत्पन्न हुए धुएँ से इसे पृषत् आदि सौ पुत्र उत्पन्न हुए।

मृत्यु के पश्चात्—अपनी मृत्यु के पश्चात् यह स्वर्गलोक को प्राप्त हुआ, किन्तु इसको नरमेध की सलाह देनेवाले इसके पुरोहित को नर्क प्राप्त हुआ। अपने पुरोहित को छोड़ कर स्वयं स्वर्गोपभोग लेने को इसने इन्कार किया, एवं यह स्वयं नर्क में रहने के लिए गया। इसकी यह पुरोहितनिष्ठा देख कर यमधर्म अत्यंत प्रसन्न हुआ, एवं उसने इन दोनों को स्वर्ग में स्थान दिया।

सोमकान्त—सुराष्ट्र देश का एक गणेशभक्त राजा, जो कुष्ट रोग से पीडित था। भृगु ऋषि के द्वारा 'गणेशपुराण' का श्रवण किये जाने पर इसका कुष्ट नष्ट हुआ, एवं यह पूर्ववत् आरोग्यसंपन्न रहा (गणेश. १.१९)।

सोमकीर्ति—(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र का एक पुत्र (म. आ. १०८.८)।

सोमतन्वी—अंगिरस् कुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद-सोम' एवं 'तन्वी'।

सोमदक्ष कौश्रेय—एक आचार्य (क. सं. २०.८; २१.९; मै. सं. ३.२.७)।

सोमदत्त—(सो. कुरु.) एक कुरुवंशीय राजा, जो प्रतीप राजा का पौत्र, एवं बाह्लीक राजा का पुत्र था। इसके भूरिश्रवस् एवं शल नामक तीन पुत्र थे, जिनमें से भूरिश्रवस् इसे रुद्र की कृपा से प्राप्त हुआ था। अपने इन पुत्रों के साथ यह द्रौपदीस्वयंवर में उपस्थित था (म. आ. १७७.९; १४)।

शिनि यादव से शत्रुत्व—देवकी के स्वयंवर के समय शिनि नामक यादव ने अपने मित्र वसुदेव के लिए देवकी का हरण किया। उस समय इसके शिनि से विरोध करते ही उसने इसे भूमि पर पटक कर एक लात मार दी, एवं इसकी चुटियाँ पकड़ कर इसे खूब पीटा। शिनि के द्वारा छोड़ दिये जाने पर, अपने इस अपमान का बदला लेने के लिए इसने रुद्र कि घोर तपस्या की, एवं शिनि का वध करनेवाला एक पुत्र उससे माँग लिया। रुद्र के प्रसाद से प्राप्त हुआ इसका पुत्र आगे चल कर भूरिश्रवस् नाम से सुविख्यात हुआ।

भारतीय युद्ध में— भारतीय युद्ध में यह कौरवपक्ष में शामिल था। इस युद्ध में इसके पुत्र भूरिश्रवस् ने शिनि-यादव के पुत्र युयुधान सात्यकि की ठीक वही अवस्था की, जो शिनि राजा ने देवकी स्वयंवर के समय इसकी की थी। इस प्रकार भूरिश्रवस् ने अपने पिता के अपमान का बदला ले ही लिया।

इसी समय सात्यकि का रक्षण करने के लिए उपस्थित हुए अर्जुन ने भूरिश्रवस् का अत्यंत निर्घृण वध किया (भूरिश्रवस् देखिये)। आगे चल कर सात्यकि ने ही इसका वध किया (भा. ९.२२.१८; म. द्रो. ११९१.३१; १३७)।

२. एक ब्रह्मराक्षस, जिसने कल्माषपाद राजा से तत्त्वज्ञान पर संवाद किया था (कल्माषपाद देखिये)।

३. (सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विष्णु एवं भागवत के अनुसार कृशाश्व राजा का पुत्र, एवं सुमति नामक राजा का पिता था (म. ९.२.१.३५)। इसने सौ अश्वमेध यज्ञ कर उत्तम गति प्राप्त की थी।

४. (सो. नील.) नीलवंशीय सुदास राजा का नामांतर (सुदास देखिये)।

सोमदत्ति सावर्णि—एक आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था।

सोमदा—ऊर्मिला नामक गंधर्व की कन्या, जिसे चूली नामक ऋषि से ब्रह्मदत्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। यही ब्रह्मदत्त आगे चल कर राजा बन गया।

सोमधेय—पूर्व भारतीय लोकसमूह, जिसे भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में परास्त किया था (म. स. २७.९)। पाठभेद-'सोपदेश'।

सोमनाथ--शिव का एक अवतार, जो काठियावाड प्रदेश में अवतीर्ण हुआ था। इसने चंद्र के सारे कष्ट दूर किये, जिस कारण 'चंद्रकुण्ड' नामक नामक स्थान में चंद्र ने इसकी पूजा की।

इसकी पूजा आदि करने से राजयक्ष्मा कुष्ट आदि व्याधियाँ दूर होती है ऐसी उपासकों की श्रद्धा है (शिव. शत. ४२)। इसके उपलिंग का नाम उपकेश है (शिव. कोटी. १)।

सोमप--पितरों का एक समूह, जो मानस (सूमनस) नामक स्वर्ग में निवास करते है। इन्हें ब्रह्मत्व प्राप्त हुआ था, एवं ये मूर्तिमान् धर्म ही माने जाते है। मनु केसहित सारी चर सृष्टि इन्हींकी ही संतान मानी जाती है। इनकी मानसकन्या का नाम नर्मदा था (मत्स्य. १५; पद्म. सृ. ९; ह. वं. १.१८)।

२. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. जमदग्निपत्नी रेणुका का प्रतिपालक पिता।

४. स्कंद का एक सैनिक (म. अनु. ९१.३४)।

५. एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३४)।

सोमभोजन--गरुड का एक पुत्र।

सोमराजन्--एक आचार्य, जो वायु एवं ब्रह्मांड के अनुसार व्यास की सामशिष्यपरंपरा में से हिरण्यनाभ नामक आचार्य का शिष्य था। ब्रह्मांड में इसका 'सोमराजायन' नामान्तर प्राप्त है।

सोमवाह--अगस्त्यकुलोत्पन्न गोत्रकार।

सोमवित्--(सो. अज.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र था (मत्स्य. ५०.३३)।

सोमशर्मन्--(मौर्य. भविष्य.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार शालिशुक राजा का पुत्र, एवं शतधन्व राजा का पिता था (भा. १२.१.१४)।

२. शिकशर्मन् नामक ब्राह्मण का पितृभक्त पुत्र, जो अपने अगले जन्म में प्रह्लाद बन गगा (पद्म. भू. ४-५)।

३. वामनक्षेत्र का एक ब्राह्मण, जिसे विष्णु की कृपा से सुव्रत नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था।

सोमशुष्म सात्ययज्ञि--एक भ्रमणशील ब्राह्मण, जो विदेह देश के जनक राजा से आ मिला था (श. ब्रा. ११. ६. २. १)। जैमिनीय उपनिषद ब्राह्मण में निर्दिष्ट सत्ययज्ञ प्राचीनयोग्य नामक आचार्य संभवतः यही होगा (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

सोमशुष्मन् वाजरत्नायन--एक आचार्य, जिसने शतानीक राजा का राज्याभिषेक किया था (ऐ. ब्रा. ८. २१.५)।

सोमश्रवस्--एक तपस्यापरायण ऋषि, जो जनमेजय (द्वितीय) राजा का पुरोहित था (म. आ. ३.१२)। यह श्रुतश्रवस् ऋषि को एक सर्पिणी से उत्पन्न हुआ पुत्र था।

यह सदैव मूकव्रत से रहता था, एवं ब्राह्मण के द्वारा माँग किये जाने पर उसे पूरी करने का इसका गुप्त व्रत था। जनमेजय के द्वारा इस व्रत को स्वीकार किये जाने पर ही, इसने उसका पौरोहित्य का कार्य स्वीकृत किया था।

आगे चल कर इसी व्रत के कारण ही, आस्तीक ऋषि की माँग पूरी करने के लिए जनमेजय को अपना सर्पसत्र बंद करना पड़ा (म. आ. ३.१८)।

सोमाहुति भार्गव--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. २. ४-७)।

सौम्य--(आंध्र. भविष्य) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार पुरींद्रसेन राजा का पुत्र था।

सोहंजि--(सो. सह.) सहदेववंशीय संवर्त राजा का नामांतर (संवर्त एवं साहंजि देखिये)।

सौकारायण--एक आचार्य, जो काशायण नामक आचार्य का शिष्य, एवं माध्यंदिनायन नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ४.६.२. काण्व)। शतपथ ब्राह्मण में इसे त्रैवणि नामक आचार्य का शिष्य कहा गया है (श. ब्रा. १४.७.३.२७)।

सौचकि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौचित्ति--सत्यधृति नामक पांडवपक्षीय योद्धा का पैतृक नाम (म. उ. परि. १.१४.१२; सत्यधृति देखिये)।

सौचीक--अग्नि नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.५१.२)।

सौजन्य--एक देव, जो भृगु एवं पौलोमी के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १९५)।

सौजात आराह्लि--एक आचार्य, जिसके यज्ञाहुति के संबंध के मतों का निर्देश ऐतरेय ब्राह्मण में प्राप्त है।

सौटि--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौति रोमहर्षणसुत--एक सुविख्यात पुराण प्रवक्ता आचार्य, जो रोमहर्षण सूत नामक पुराणप्रवक्ता आचार्य का पुत्र एवं शिष्य था। यह व्यास की पुराण-शिष्यपरंपरा एवं महाभारत परंपरा का प्रमुख आचार्य

था। इसी कारण पौराणिक साहित्य में इसका निर्देश 'महामुनि' एवं 'जगद्गुरु' आदि गौरवात्मक उपाधियों के साथ किया गया है (विष्णु. ३.४.१०)। इसका सही नाम उग्रश्रवस् था।

कुरुक्षेत्र में समन्त पंचक क्षेत्र में, शौनकादि नैमिषारण्यवासी ऋषियों को महाभारत की कथा कथन करने का ऐतिहासिक कार्य इसने किया। इसी कारण महाभारत-परंपरा में इसका नाम व्यास एवं वैशंपायन इतना ही आदरणीय माना जाता है।

महाभारत की परंपरा--महाभारत की कथा तीन विभिन्न आचार्यों के द्वारा तीन विभिन्न प्रसंगों में कथन की गयी थी। इस कथा का आद्य प्रवक्ता व्यास था, जिसने अपना 'जय' नामक ग्रंथ अपने शिष्य वैशंपायन को कथन किया। उसी ग्रंथ को काफ़ी परिवर्धित कर 'भारत' नाम से वैशंपायन ने उसे जनमेजय राजा को कथन किया था।

आगे चल कर सौति ने इसी ग्रंथ को अनेकानेक आख्यान एवं उपाख्यान जोड़ कर, एवं उसमें 'हरिवंश' नामक एक स्वतंत्र परिशिष्टात्मक ग्रंथ की रचना कर, उसे शौनकादि आचार्यों को कथन किया। सौति का यही ग्रंथ 'महाभारत' नाम से प्रसिद्ध हुआ, एवं 'महाभारत' का आज उपलब्ध संस्करण सौति के द्वारा विरचित ही है।

इसी कारण, उपलब्ध महाभारत संस्करण के प्रवर्तक आचार्य यद्यपि व्यास एवं वैशंपायन है, उसका रचयिता सौति है। सौति के द्वारा विरचित महाभारत के उपलब्ध संस्करण काल २०० इ. पू. माना जाता है।

महाभारत का विस्तार--भारत एवं महाभारत के कथन के समय, वैशंपायन एवं जनमेजय; तथा सौति एवं शौनक के दरम्यान जो प्रश्नोत्तर हुए, एवं तत्त्वज्ञान पर जो संवाद हुए, इसके कारण ही यह महाभारत ग्रंथ प्रतिदिन बढता ही रहा, यहाँ तक कि, महाभारत के उपलब्ध संस्करण में लगभग एक लाख श्लोक संख्या है।

महाभारत का कथन--जनमेजय के सर्पसत्र में वैशंपायनप्रोक्त 'भारत' ग्रंथ इसने सुना था। पश्चात् शौनक ऋषि के द्वारा नैमिषारण्य में द्वादशवर्षीय सत्र नामक एक यज्ञ का आयोजन किया गया। वहाँ शौनक ऋषि के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर इसने 'महाभारत' का कथन किया (म. आ. १.५; ४)।

महाभारत का प्रारंभ--इस ग्रंथ का प्रारंभ कौन से श्लोक से होता है इस संबंध में विद्वानों में एकवाक्यता नहीं है। कई अभ्यासकों के अनुसार, महाभारत का आरंभ 'नारायणं नमस्कृत्य' श्लोक से होता है (म. आ. १.१)। किन्तु अन्य कई अभ्यासक इस ग्रंथ का प्रारंभ 'आस्तिक पर्व' से (म. आ. १३), एवं अन्य कई अभ्यासक उसे 'उपरिचर वसु की कथा से (म. आ. ५७) मानते हैं।

महाभारत के उपलब्ध संस्करण--इस ग्रंथ के मुंबई, कलकत्ता एवं मद्रास (कुंभकोणम्) ये तीन पाठ प्रकाशित हो चुके हैं। इस ग्रंथ का एक काश्मीरी पाठ भी उपलब्ध है।

उपर्युक्त सारे पाठों को एकत्रित कर, एवं अनेकानेक प्राचीन पाण्डुलिपियों का संशोधन कर, इस ग्रंथ का प्रमाणभूत एवं चिकित्सक संस्करण पूना के भांडारकर प्राच्यविद्या संशोधन मंदिर के द्वारा प्रकाशित किया गया है। इस संस्करण के सारे खंड प्रकाशित हुए हैं, केवल हरिवंश ही बाकी है।

हरिवंश--इस ग्रंथ को महाभारत का खिल (परिशिष्ट) पर्व कहा जाता है, एवं इसकी रचना एकमात्र सौति के द्वारा ही हुई है। व्यास एवं वैशंपायन के द्वारा विरचित 'महाभारत' में भारतीय युद्ध का सारा इतिहास संग्रहित हुआ, किन्तु यादववंश में पैदा हुए कृष्ण की एवं उसके वंशजों की जानकारी वहाँ कहीं भी नहीं है। इस त्रुटि की पूर्ति करने के लिए सौति ने 'हरिवंश' की रचना की, जिसका कथन 'महाभारत' के 'स्वर्गारोहणपर्व' के पश्चात् सौति के द्वारा किया गया।

सौत्रामणि--पांचालराजा द्रुपद की पत्नी, जिसे कौकिली नामान्तर भी प्राप्त था (म. आ. परि. १.७९.९६)।

सौदन्ति--एक पुरोहितसमुदाय, जो सुदन्त के वंशज थे (पं. ब्रा. १४.३.१३)। विश्वामित्र ऋषि के स्पर्धक के रूप में इनका निर्देश प्राप्त है।

सौदामिनी--एक पक्षिणी, जो कश्यप एवं विनता की कन्या थी।

सौदास--सुदास राजा के पुत्रों के लिए प्रयुक्त सामूहिक नाम। इन्होंने वसिष्ठ के पुत्र शक्ति को अग्नि में फेंक दिया था (जै. उ. ब्रा. २.३९०)। अपने पुत्र का वध होने पर वसिष्ठ ने इनसे प्रतिशोध लेना चाहा, एवं अन्त में उसे इस कार्य में सफलता प्राप्त हुई (तै. सं. ७.४.७.१; कौ. ब्रा. ४.८; पं. ब्रा. ४.७.३)।

२. कोसल देश के मित्रसह कल्माषपाद राजा का नामान्तर, जो सुदास राजा का पुत्र होने के कारण उसे प्राप्त हुआ था (कल्माषपाद देखिये)।

३. (सो. नील.) नीलवंशीय सहदेव राजा का नामान्तर (सहदेव ३. देखिये)।

सौदेव—सुदेवपुत्र दिवोदास राजा का नामान्तर (दिवोदास २. देखिये)।

सौद्युम्नि—इक्ष्वाकुवंशीय युवनाश्व राजा का पैतृक नाम (म. च. १२६.९; युवनाश्व ३. देखिये)।

२. पूरुवंशीय भरत दौष्यन्ति राजा का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.४.१२)।

सौधिक—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौनकर्णि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौनंदा—विदूरथराजा की कन्या मुदावती का नामान्तर।

सौपुरि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौपुष्पि—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौबल—गांधार देश के शकुनि राजा का पैतृक नाम।

२. सर्पि वात्सि नामक आचार्य का एक शिष्य (ऐ. ब्रा. ६.२४.१६)।

सौबुधि—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौभग—बृहच्छ्लोक नामक आदित्य का एक पुत्र (भा. ६.१८.८)।

सौभद्र—(सो. वसु.) वसुदेव एवं रथराजी के पुत्रों में से एक।

२. सुभद्रापुत्र अभिमन्यु का मातृक नाम।

सौभपति—सौभ देश के शाल्व राजा का नामान्तर।

सौभर—पथिन् नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे 'सोभरि' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (बृ. उ. २.५.२२; ४.५.२८ माध्यं.)।

सौभरि—एक ऋषि, जिसने मांधातृ राजा की पचास कन्याओं के साथ विवाह किया था। ऋग्वेद में एक वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते निर्दिष्ट सोभरि काण्व नामक ऋषि संभवतः यही होगा। ऋग्वेद में इसके द्वारा त्रसदस्यु राजा की पचास कन्याओं के साथ विवाह करने का निर्देश प्राप्त है (ऋ. ८.१९.३६)। विष्णु में इसे बह्वृच् कहा गया है (विष्णु. ४.२)।

पौराणिक साहित्य में—मांधातृ राजा की सौ कन्याओं के साथ इसका विवाह किस प्रकार हुआ, इसकी कथा पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। एक बार यमुना नदी के किनारे तपस्या करते समय, इसने रतिसुख में निमग्न एक मछली का जोड़ा देखा, जिसे देख कर इसके मन में विवाह की इच्छा उत्पन्न हुई। तदनुसार यह मांधातृ राजा के पास गया, एवं इसने उसकी एक कन्या विवाह के लिए माँगी।

इसे बहुत बुढ़ा देख कर राजा के मन में इस प्रस्ताव के प्रति घृणा उत्पन्न हुई। इसी कारण इसे परेशान करने के हेतु उसने झूटी नम्रता से कहा 'मेरी पचास कन्याओं में से जो भी कन्या आपका वरण करे उससे आप विवाह कर सकते हैं'।

मांधातृ का कपट पहचान कर इसने अपने बुढ़े रूप का त्याग कर, एक नवयुवक का रूप धारण किया, एवं इसी वेष में यह उसके अंतःपुर में गया। इसके नये रूप को देख कर मांधातृ की सभी कन्याओं ने इसका वरण किया। आगे चल कर अपनी हर एक पत्नी से इसे सौ सौ पुत्र उत्पन्न हुए।

इसप्रकार संसारसुख का यथेष्ट अनुभव लेने के पश्चात् इसके मन में पुनः एक बार वैराग्यभावना उत्पन्न हुई, एवं यह वन में चला गया। इसकी पत्नियाँ भी विरागी बन कर इसके साथ वन में चली गयी (भा. ९.६.३८-५५; विष्णु. ४.२.३; पद्म. उ. २६२; गरुड १.१३८)।

२. एक ऋषि, जिसने गरुड को शाप दे कर, उसे यमुना नदी में आने में प्रतिबंध डाल दिया था (भा. १०.१७.१०)।

३. एक आचार्य, जो भागवत के अनुसार, व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा में से देवमित्र नामक आचार्य का शिष्य था।

४. एक ऋषि, जिसका आश्रम विंध्य पर्वत पर स्थित था। युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय अर्जुन इसके आश्रम में आया था, जहाँ इसने उसे उद्दालक ऋषि के द्वारा चंडी को दिये गये शाप की पुरातन कथा सुनायी थी। आगे चल कर इसने अर्जुन के द्वारा चंडी का उद्धार कराया (जै. अ. ९६)।

सौमदत्ति—यादव राजा भूरिश्रवस् का पैतृक नाम।

२. सावर्णि मनु का पैतृक नाम।

सौमनस्य—(स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार यज्ञबाहु राजा का पुत्र था (भा. ५.२०.९)।

सौमाप—मानुतंतव्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.३.२)।

सौमापि—प्रियव्रत नामक ऋषि का पैतृक नाम, जो उसे सोमाप ऋषि का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (सां. आ. १५.१)।

सौमायन--बुध नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे सोम का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (पं. ब्रा. २४.१८.६)।

सौमुक--विश्वामित्र कुलोत्पन्न एक गोत्र कार।

सौम्य--एक पितरविशेष (भा. ४.१.६३)।

२. (सो. क्रोष्टु.) एक यादवराजा, जो मत्स्य के अनुसार रुषद् राजा का पुत्र था।

३. बुध ग्रह का पैतृक नाम।

सौयवसि--अजीगर्त ऋषि का पैतृक नाम (ऐ. ब्रा. ७.१५.६; सां. श्रौ. १५.१९.२९)।

सौर--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौरभेय--एक ऋषि, जो दीर्घतमस् ऋषि का गुरु था (म. आ. ९८.१०३८*; पंक्ति १-२)।

सौरभेयी--एक अप्सरा, जो वर्गा नामक अप्सरा की सखी थी, एवं एक ब्राह्मण के शाप के कारण ग्राह बनी थी। आगे चल कर अर्जुन ने इसका ग्राहयोनि से उद्धार किया (म. आ. २०८.१९; स. १०.११)।

सौरि--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौर्य--एक पैतृक नाम, जो निम्नलिखित वैदिक सूक्तद्रष्टाओं के लिए प्रयुक्त किया गया है:--१. अभितपस् (ऋ. १०.३७); २.धर्म. (ऋ. १०.१८१.३); ३. चक्षुस् (ऋ. १०.१५८); ४. विभ्राज् (ऋ. १०.१७०)।

सौर्यायणिन् गार्ग्य--एक आचार्य, जो पिप्पलाद के पास 'स्वप्नविद्या' के संबंध में प्रश्न पूछने गया था (प्र. उ. १.१.४.१)।

सौवर्चनस्--संश्रवस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (तै. सं. १.७.२.१)।

सौवीर--सुवीर शैब्य नामक राजा का नामान्तर।

२. एक लोकसमूह, जिसका निर्देश सिंधु लोगों के साथ प्राप्त है। इन लोगों का विपुल नामक राजा अर्जुन के द्वारा मारा गया था (म. आ. परि. १.८०.४५)।

सौवीरी--सुवीर राजा की कन्या, जो मरुत्त आविक्षित राजा की पत्नी थी (मार्क. १२८)।

२. पूरुवंशीय मनस्यु राजा की पत्नी (म. आ. ८९. ७)। पाठभेद-'शूरसेनी'।

सौवेष्ट--अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौश्रवस--उपगुं नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. १४.६.८)। इसीके वंशज आगे चल कर 'सौश्रवस' नाम से सुविख्यात हुए (का. सं. १३.१२)।

सौश्रवस काण्व--एक आचार्य (का.सं. १३.१२)।

सौश्रुति--दुर्योधनपक्षीय एक राजा, जो त्रिगर्तराज सुशर्मन् का भाई था। भारतीय युद्ध में अर्जुन ने इसका वध किया (म. क. १९.१०)।

सौश्रोमतेय--आषाढि नामक आचार्य का मातृक नाम, जो उसे 'सुश्रोमता' का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ होगा (श. ब्रा. ६.२.२.१.३७)।

सौषद्मन--विश्वन्तर नामक आचार्य का पैतृक नाम, जो उसे सुषद्मन् का वंशज होने के कारण प्राप्त हुआ था (ऐ. ब्रा. ७.२७.१; ३४.७)।

सौसुक--विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौह--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौह सोक्ति--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

सौहोत्र--एक पैतृक नाम, जो अजमिह्ळ एवं पुरुमिह्ळ नामक आचार्य बंधुओं के लिए प्रयुक्त किया गया है (ऋ. ४.४३-४४)।

स्कंद--देवों का सेनापति, जो तारकासुर का वध करने के लिए इस पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था। सात दिनों की आयु में ही इसने तारकासुर का वध किया। पुराणों में सर्वत्र इसे शिव एवं पार्वती का, अथवा अग्नि का पुत्र माना गया है, एवं इसे 'छः मुखोंवाला' (षण्मुख) कहा गया है।

जन्मकथा--इसके जन्म के संबंध में विभिन्न कथाएँ महाभारत एवं पुराणों में प्राप्त हैं। ब्रह्मांड के अनुसार, एकबार शिव एवं पार्वती जब एकान्त में बैठे थे, उस समय इंद्र ने अष्टवसुओं में से अनल नामक अग्नि के द्वारा उनके एकान्त का भंग किया। इस कारण शिव के वीर्य का आधा भाग भूमि पर गिर पड़ा। अग्नि के इस औद्धत्य के कारण पार्वती अत्यंत क्रुद्ध हुई, एवं उसने अग्नि को शाप दे कर शिव का वीर्य धारण करने पर उसे विवश किया।

शिव के वीर्य को अग्नि ज्यादा समय तक धारण न कर सका, इसलिए उसने उसे गंगा को दे दिया। गंगा ने भी उसे कुछ काल तक धारण कर भूमि पर छोड़ दिया। आगे चल कर उसी वीर्य से स्कंद का जन्म हुआ (ब्रह्मांड. ३.१०.२२-६०; वायु. ११.२०-४९)।

महाभारत में--इस ग्रंथ में इसकी जन्मकथा कुछ भिन्न प्रकार से दी गई है। एक बार सप्तर्षियों के यज्ञ में, अग्नि सप्तर्षियों के पत्नियों पर कामासक्त हुआ, एवं अपनी अप्रिय पत्नी स्वाहा को छोड़ कर उनसे रमण करने के लिए प्रवृत्त हुआ। अग्निपत्नी स्वाहा को यह ज्ञात होते ही वह अरुंधती के अतिरिक्त अन्य छः सप्तर्षि पत्नियों में

समाविष्ट हुई। पश्चात् उसे ही सप्तर्षिपत्नियाँ समझ कर अग्नि ने उससे संभोग किया। स्वाहा ने अग्नि से प्राप्त उसका सारा वीर्य एक कुण्ड में रख दिया, जिससे आगे चल कर स्कंद का जन्म हुआ (म. व. २१३-२१४)। छः ऋषिपत्नियों के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण, इसे छः मुख प्राप्त हुए थे। अमावस्या के दिन इसका जन्म हुआ था।

यही कथा महाभारत एवं विभिन्न पुराणों में कुछ फर्क से दी गयी है (म. व. २२०.९-१२; पद्म. सृ. ४४; स्कंद. १.१.२७; मत्स्य. १५८.२७-२८; वा. रा. बा. ३६)।

नामान्तर--महाभारत में इसके विभिन्न नामान्तर निम्न प्रकार दिये गये हैं :--१. स्कंद; जो नाम इसे 'स्कन्न' वीर्य से उत्पन्न होने के कारण, अथवा दानवों का स्कंदन करने के कारण प्राप्त हुआ था; २. षाण्मातुर, जो नाम इसे छः ऋषिपत्नियों के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण प्राप्त हुआ था; ३. कार्तिकेय, जो नाम इसे छः कृत्तिकाओं के गर्भ से उत्पन्न होने के कारण प्राप्त हुआ था; ४. विशाख, जो नाम इसे अनेक शाखा (हाथ) होने के कारण प्राप्त हुआ था; ५. षण्मुख, जो नाम इसे इसके छः मुख होने के कारण प्राप्त हुआ था; ६. सेनानी अथवा देव सेनापति, जो नाम इसे देवों का सेनापति होने के कारण प्राप्त हुआ था; ७. स्वाहेय, जो नाम इसे अग्निपत्नी स्वाहा का पुत्र होने के कारण प्राप्त हुआ था (म. व. परि. १.२२); ८. सनत्कुमार--(ह. वं. १. ३; म. व. २१९)।

अस्त्रप्राप्ति--इसका जन्म होते ही विभिन्न देवताओं ने इसे निम्नलिखित अस्त्र प्रदान किये :--१. विष्णु--गरुड, मयूर एवं कुक्कुट आदि वाहन; २. वायु-पताका; ३. सरस्वती--वीणा; ४. ब्रह्मा--अज; ५. शंभु--मेंढक; ६. जूंभदैत्य--अपराजिता नामक शक्ति, जो इस दैत्य के मुख से उत्पन्न हुई थी (ब्रह्मांड. ३.१०.४५-४८)। इसका उपनयन संस्कार विश्वामित्र ऋषि ने किया (म. व. २१५.९)।

तारकासुर वध--तारकासुर का वध करने के लिए स्कंद ने अवतार लिया था। ब्रह्मा ने तारकासुर को अवध्यत्व का वर देते हु कहा था कि, इस सृष्टि में केवल सात दिन का अर्भक ही केवल उसका वध कर सकता है। इसी कारण जन्म के पश्चात् सात दिनों की अवधि में ही इसने तारकासुर से युद्ध कर, उसका वध किया (पद्म. सृ. ४४; मत्स्य. १६०)। महाभारत में इसके द्वारा तारकासुर के साथ, महिषासुर का भी वध करने का निर्देश प्राप्त है (म. श. ४५.६४; अनु. १३३.१९; व. २२१.६६)।

इसका जन्म अमावास्या के दिन हुआ, एवं शुक्ल षष्ठी के दिन इसने तारकासुर का वध किया। तारकासुर का वध करने के पूर्व शुक्ल पंचमी के दिन देवों ने इसे क्रौंच पर्वत पर (ब्रह्मांड. उ. ३.१०); स्थाणुतीर्थ में (म. श. ४१.७); अथवा वारुणितीर्थ में (पद्म. स्व. २७) सेनापत्य का अभिषेक किया। उसी दिन से यह देवों का सेनापति माना गया। शुक्ल पंचमी का इसका अभिषेक दिन, एवं शुक्ल षष्ठी का तारकासुर के वध का दिन कार्तिकेय की उपासना करनेवाले लोग विशेष पवित्र मानते हैं।

अन्य पराक्रम--तारक एवं महिषासुर के अतिरिक्त इसने त्रिपाद, ह्रदोदर, बाणासुर आदि राक्षसों का वध किया था (म. श. ४५.६५-८१)। इसने क्रौंचपर्वत का अपने बाण से विदरण किया था, एवं अपने 'शक्ति' से हिमालय पर्वत उखाड देने की प्रतिज्ञा की थी (म. शां. ३१४.८-१०)।

ब्रह्मचर्यव्रत--तारकासुर के वध के पश्चात् पार्वती के अत्यधिक लाड प्यार से यह समस्त देवस्त्रियों पर अपनी पापवासना का जाल बिछाने लगा, एवं बलात्कार करने लगा। इसके स्वैराचार की शिकायत देवस्त्रियों ने पार्वती के पास की। इस पर पार्वती ने इसे सन्मार्ग पर लाने के हेतु, सृष्टि की हर एक स्त्री में अपना ही रूप दिखाना प्रारंभ किया। उन्हें देखते ही इसे कृतकर्मों का अत्यधिक पश्चात्ताप हुआ, एवं इसने पार्वती के पास जा कर प्रतिज्ञा की, 'आज से संसार की सारी स्त्रियाँ मुझे माता के समान ही हैं' (ब्रह्म. ८१)।

स्त्रियों के प्रति इसकी अत्यधिक विरक्त वृत्ति के कारण आगे चल कर इसका दर्शन भी उनके लिए अयोग्य माना जाने लगा। आज भी स्कंद का दर्शन स्त्रियाँ नहीं लेती है, एवं इसकी प्रतिमा के दर्शन से स्त्री को सात जन्म तक वैधव्य प्राप्त होता है, ऐसी जनश्रुति है। इस जनश्रुति के लिए पौराणिक साहित्य में कहीं भी आधार प्राप्त नहीं है; केवल मराठी 'शिवलीलामृत' ग्रंथ में यह कथा प्राप्त है (शिवलीला. १३)।

परिवार--इसकी पत्नी का नाम देवसेना था, जिससे इसे शाख, विशाख, एवं नैगमेय नामक पुत्र प्राप्त हुए थे। पौराणिक साहित्य में शाख, विशाख, एवं नैगमेय को स्कंद के पुत्र नहीं, बल्कि भाई बताये गये हैं, एवं वे अनल नामक वसु एवं शांडिल्या के पुत्र बताये गये हैं

(वसु १. देखिये)। महाभारत के अनुसार, एक बार इन्द्र के द्वारा इसके पीठ पर वज्र प्रहार करने से, उसी प्रहार से इसका विशाख नामक पुत्र, एवं कन्यापुत्र आदि पार्षद उत्पन्न हुए (म. व. २१७.१; २१९)।

कई अभ्यासकों के अनुसार इसकी पत्नी देवसेना एक स्त्री न हो कर, देवों के उस सेना का प्रतिरूप है, जिसका आधिपत्य इस पर सौंपा गया था।

स्कंद के पार्षद—इसके सैनापत्य के अभिषेक के समय विभिन्न देवताओं के द्वारा इसे अनेकानेक पार्षद, एवं महापार्षद दिये गये, जिनकी नामावलि महाभारत में दी गयी है (म. व. २१३-२२१; श. ४४-४५)।

मातृका—स्कंद के सप्तमाताओं को मातृका कहा जाता है, जिनकी नामावलि निम्नप्रकार प्राप्त हैः-१. काकी; २; हलिमा; ३. माता; ४. हली; ५. आर्या; ६. बाला; ७. धात्री। इन सप्तमाताओं के ब्राह्मी, माहेश्वरी आदि विभिन्नगण भी प्राप्त हैं। इन मातृकाओं की, एवं इसकी, शिशुओं के आरोग्यप्राप्ति के लिए पूजा की जाती है।

स्कंद की अनुचरी मातृकाओं की नामावलि भी महाभारत में सविस्तृत रूप में प्राप्त है (म. व. २१३-२२१)। इन मातृका, एवं उनके साथ उपस्थित पुरुषग्रह 'स्कंद के ग्रह माने जाते हैं (म. व. २१९)। कई अभ्यासकों के अनुसार, 'स्कंदापस्मार' आदि 'स्कंदग्रह' अपस्मार आदि व्याधियों का प्रतिनिधित्व करते हैं।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

३. धर्मपुत्र आयु नामक वसु का एक पुत्र (आयु ८. देखिये)।

स्कंदस--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्कंदस्वाती--(आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा, जो स्वाती राजा का पुत्र था (मत्स्य. २७३.६)।

स्कंध--एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

२. धृतराष्ट्रकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था।

स्कंभ-एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

स्तनयित्नु—धर्मपुत्र विद्योत के पुत्रों का सामूहिक नाम (भा. ६.६.५)।

स्तनित--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्तंब—शाभपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. स्वारोचिष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

स्तंबमित्र शार्ङ्ग--एक शार्ङ्गक पक्षी, जो मंदपाल ऋषि एवं जरितृ शार्ङ्गी का पुत्र था। खांडववनदाह से इसे अग्नि ने मुक्त कराया (म. आ. २२३.१२)।

२. एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१४२.७-८)।

स्तंभ—स्वारोचिष मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. एक शाखाप्रवर्तक आचार्य (पाणिनि देखिये)।

स्तुति--(स्वा. प्रिय.) प्रतिहर्तृ राजा की पत्नी, जिससे इसे अज, एवं भूमन् नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ५.१५.५)।

स्तुत्यव्रत--(स्वा. प्रिय) एक राजा, जो कुशद्वीप के हिरण्यरेतस् राजा का पुत्र था। इसके राज्य का नाम इसीके ही कारण 'स्तुत्यव्रत' नाम से प्रसिद्ध हुआ (भा. ५.२०.१४)।

स्तुभ--भानु नामक अग्नि के छः पुत्रों में से एक।

स्तोक—एक गोप, जो कृष्ण का मित्र था (भा. १०. १५.२०)।

स्थंडिलेयु--(सो. पूरु.) एक राजा, जो रौद्राश्व राजा के दस पुत्रों में से एक था। इसकी माता का नाम 'घृताची' था (भा. १०.२०.४)।

स्थपति--जनमेजय राजा का एक सूत, जिसका मूल नाम लौहिताक्ष था। इसे स्थलमापनादि अनेक शास्त्र अवगत थे (म. आ. ४७.१४; ५३.१२)।

स्थल--(सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार बल राजा का पुत्र था।

स्थलपिंड--भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्थलेयु--एक राजा, जो रौद्राश्व राजा के दस पुत्रों में एक था।

स्थविर कौंडिन्य--एक वैयाकरण, जिसके द्वारा 'नकार' का उच्चार सानुनासिक एवं तीव्रतर बताया गया है (तै. प्रा. १७.४)।

स्थविर जातुकर्ण्य--जातुकर्ण्य नामक आचार्य की एक उपाधि, जिसका शब्दशः अर्थ 'श्रेष्ठ' होता है (कौ. ब्रा. ६५.१)।

स्थविर शाकल्य--एक उच्चारशास्त्रज्ञ आचार्य (ऋ. प्रा. १८५)। शतपथ ब्राह्मण में एक तत्त्वज्ञ आचार्य के नाते इसका निर्देश प्राप्त है, जहाँ मानवीय प्राण में चक्षु, कर्ण आदि पंच इंद्रियाँ सूक्ष्मरूप से विद्यमान होने के इसके मत का निर्देश प्राप्त है (ऐ. आ. ३. २.१.६; सां. आ. ७.१६)। पाठभेद-'स्थवीर'।

स्थाणु--ग्यारह रुद्रों में से एक। यह ब्रह्मा का पौत्र, एवं 'स्थाणु' का पुत्र था (म. आ. ६०.३)। इसका प्रजापति से संवाद हुआ था (म. शां. २४९.१-१२)।

२. ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो ग्यारह रुद्रों का पिता माना जाता है (म. आ. ६०.३)।

३. इन्द्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१५)।

स्थान--सुख देवों में से एक।

स्थिरक गार्ग्य--एक आचार्य, जो वसिष्ठ चैकितानेय नामक आचार्य का शिष्य, एवं मशक गार्ग्य नामक आचार्य का गुरु था (वं. ब्रा. २.)।

स्थूण--विश्वामित्र का एक पुत्र।

२. स्थूणाकर्ण नामक यक्ष का नामांतर।

स्थूणकर्ण--एक ऋषि, जो पांडवों के वनवासकाल में उनके साथ द्वैतवन में निवास करता था (म. स. २७.२३)।

स्थूणाकर्ण--एक यक्ष, जिसने शिखण्डिन् को अपना पुरुषत्व प्रदान किया था (शिखण्डिन् देखिये)। यह कुबेर का अनुचर था (म. उ. १९२.२०-२२)। पाठभेद-'स्थूण'।

स्थूलकर्ण--एक यक्ष, जो मणिवर एवं देवजनी के पुत्रों में से एक था।

स्थूलकेश--एक ऋषि, जिसने जंगल में अनाथ पड़ी हुई प्रमद्वारा को पालपोस कर बड़ा किया था। आगे चल कर यही कन्या इसने रुरु ऋषि को विवाह में प्रदान की था (म. आ. ८)।

स्थूलशिरस्--एक ऋषि, जो 'अश्वशिरस्' ऋषि का पुत्र था। इसने विश्वावसु नामक गंधर्व को कबंध राक्षस बनने का शाप दिया था (यवक्रीत देखिये)।

स्थूलाक्ष--एक राक्षस, जो दूषण राक्षस का अमात्य था (वा. रा. अर. २३-३०)।

स्थैरकायन--मित्रवर्चस् नामक आचार्य का पैतृक नाम (वं. ब्रा. १)।

स्थौर--अग्नियूप (अग्नियूथ) नामक वैदिक सूक्तद्रष्टा का पैतृक नाम (ऋ. १०.११६)।

स्थौलाष्ठीवि--एक वैयाकरण (नि. १०.३.१)।

स्नातप--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्पर्श--तुषित देवों में से एक।

स्फूर्ज--एक राक्षस, जो पौष माह में भग नामक सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.४२)।

२. एक राक्षस, जो यातुधान राक्षस का पुत्र, एवं निकुंभ राक्षस का पिता था (ब्रह्मांड. ३.७.९५)।

स्फोटन--एक व्याकरणकार (अ. प्रा. १.१०३; २.३८)।

स्फोटायन--एक व्याकरणकार (पा. सू. ६.१.१२३)।

स्मदिभ--इन्द्र का एक शत्रु, जिसे उसने तुग्र के साथ कुत्स के अधिकार में सौंपा था (ऋ. १०.४९.४)।

स्मय--स्वारोचिष मन्वंतर का एक प्रजापति।

२. धर्म एवं पुष्टि का एक पुत्र।

स्मर--मरीचि एवं ऊर्णा के पुत्रों में से एक।

स्मरदूती--जालंधर दैत्य की वृंदा नामक पत्नी की एक सखी (पद्म. ३.९)।

स्मृत--स्वारोचिष मनु का एक पुत्र।

स्मृति--धर्म एवं मेधा के पुत्रों में से एक।

२. अंगिरस कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

३. दक्ष की कन्या, जो अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी।

स्यातपायन--जपातय नामक पराशरकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामांतर।

स्यावास्य--शिखण्डिन् नामक शिवावतार का एक शिष्य।

स्यूमरश्मि--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.७७-७८)। यह अश्विनों के कृपापात्र व्यक्तियों में से एक था, एवं अपने बाणों से उन्होंने इसकी रक्षा की थी (ऋ. १.११२.१६)। इसके घर में इंद्र सोमपान के लिए उपस्थित हुआ था।

२. एक ऋषि, जो कपिल ऋषि का शिष्य था। गोरूप धारण करनेवाले कपिल ऋषि से इसका प्रवृत्ति एवं निवृत्ति मार्ग के विषय में संवाद हुआ था (म. शां. २६०-२६२)।

स्योद--भव्य देवों में से एक।

स्रवस्--स्वायंभुव मन्वन्तर के जित देवों में से एक।

स्वकेतु--निमिवंशीय सुकेतु राजा का नामान्तर।

स्वधर्मन्--वैवस्वत मनुपुत्र धृष्ट के पुत्रों में से एक (पद्म. सृ. ८)।

स्वधा--दक्ष की एक कन्या, जो पितरों को हविर्भाग पहुँचानेवाले अंगिरस् ऋषि की पत्नी थी। इसकी वयुना एवं धारिणी नामक दो कन्याएँ; एवं पितर तथा अथर्व आंगिरस नामक दो पुत्र थे (भा. ४.१.६३; ६.६.९)।

स्वधामन्--उत्तम मन्वन्तर का एक देवगण।

२. रैवत मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. रुद्रसावर्णि मन्वन्तर का एक अवतार, जो सत्यसह एवं सुनृता के पुत्रों में से एक था।

स्वनद्रथ--एक राजा, जो मेधातिथि का आश्रय दाता था (ऋ. ८.१.३२)। लुडविग के अनुसार यह आसङ्ग का ही नामान्तर था (लुडविग, ऋग्वेद का अनुवाद-३. १५९)।

स्वनय भावयव्य--सिंधु देश का एक राजा, जिसने कक्षीवत् को उपहार प्रदान किया था (ऋ. १.१२६. १)। बृहस्पति की कन्या रोमशा इसकी पत्नी थी। (ऋ. १.१२६.६-७; बृहद्दे. ३.१४५-१५५; सा.श्रौ. १६. ११.५)। इसे 'स्वनय भाव्य' नामान्तर भी प्राप्त था।

स्वभूमि--(सो. कुकुर.) एक राजा, जो विष्णु के अनुसार उग्रसेन राजा का पुत्र था।

स्वमति--(सू. दिष्ट.) दिष्टवंशीय प्रमति राजा का नामान्तर (प्रमति ५. देखिये)।

स्वमूर्धन्--एक देव, जो भृगुऋषि का पुत्र था।

स्वमृडीक--सत्य देवों में से एक।

स्वयंप्रभा--एक अप्सरा, जो मेरुसावर्णि की कन्या, एवं हेमा नामक अप्सरा की सखी थी। इसे प्रभावती नामान्तर भी प्राप्त था।

इसकी सखी हेमा ने अपने स्वर्गवास के समय, मय के द्वारा तैयार किया गया दैवी स्थान इसे प्रदान किया था। उसी स्थान के कारण इसे अनेकानेक दैवीं शक्तियाँ प्राप्त हुई थी। सीताशोध के लिए निकले हुए अंगदादि वानरों को इसने ही समुद्र के तट पर पहुँचाया था। आगे चल कर, राम के दर्शन से मुक्ति प्राप्त कर यह स्वर्गलोक चली गयी (वा. रा. कि. ५०-५२)।

स्वयंप्रभु--अठ्ठाईस व्यासों में से एक।

स्वयंभु ब्रह्मन्--अठ्ठाईस व्यासों में से एक।

स्वयंभू--एक आचार्य, जो श्राद्धविधि का प्रथम पुरस्कर्ता माना जाता है (म. अनु. १९१)।

स्वयंभोज--(सो. क्रोष्टु.) एक यादव राजा, जो भागवत के अनुसार शिनिराजा का पुत्र, एवं हृदिक राजा का पिता था (भा. ९.२४.४६)। विष्णु एवं वायु में इसे क्रमशः प्रतिक्षत्र एवं प्रतिक्षिप्त राजा का पुत्र कहा गया है।

स्वरक्षस--अठ्ठाईस व्यासों में से एक।

स्वरपुरंजय--एक राजा, जो वायु के अनुसार मथुरा नगरी में राज्य करता था।

स्वरवेदिन्--एक गंधर्व, जिसकी कन्या का नाम सुस्वरा था।

स्वरा--मद्रदेशीय राजकन्या (पद्म. उ. १०५)।

२. उत्तानपाद एवं सूनृता की कन्याओं में से एक।

स्वराज्--कर्दम प्रजापति की एक कन्या, जो अथर्व आंगिरस की कन्या थी। इसके अयास्य, उतथ्य, उशिति, गौतम एवं वामदेव नामक पाँच पुत्र थे (ब्रह्मांड. ३.१. १०२)।

स्वराष्ट्र--एक राजा, जिसकी पत्नी का नाम उत्पलावती, एवं पुत्र का नाम तामस मनु था (तामस ३. देखिये)।

स्वरूप--वरुणलोक का एक असुर (म. स. ९.१४)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)--'सुरूप'।

स्वरोचिष्--एक राजा, जो कलि राजा का पौत्र, एवं स्वरोचिष् (द्युतिमत्) मनु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम वरुथिनी था।

इसे समस्त प्राणियों की भाषाएँ जानने की विद्या, एवं 'पद्मिनीविद्या' ज्ञात थी, जो इसे क्रमशः मंदारविद्याधर की कन्या विभावरी, एवं पार यक्ष की कन्या कलावती से प्राप्त हुई थी (मार्क. ६१)।

'पद्मिनी' विद्या के बल से इसने पूर्वदिशा में पूर्व-कामरूप में विजय, उत्तर दिशा में नंदवती नगर, एवं दक्षिण में ताल नगर नामक नगरों का निर्माण किया। एक बार एक हंसयुगल ने इसे कामासक्त कह कर इसकी आलोचना की, जिस कारण विरक्त हो कर यह वन में चला गया (मार्क. ६३)।

परिवार--इसकी मनोरमा, विभावरी एवं कलावती नामक तीन पत्नियाँ थी, जिससे इसे क्रमशः विजय, मेरुमन्द, एवं प्रभाव नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए थे। आगे चल कर एक वनदेवता से इसे स्वारोचिष अर्थात् द्युतिमत् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जो आगे चल कर चक्रवर्ती सम्राट् बन गया।

स्वर्ग--धर्म एवं यामी का एक पुत्र, जिसके पुत्र का नाम नंदिन् था (भा. ६.६.६)।

स्वर्जित् नाग्नजित--एक राजा (श. ब्रा. ८.१. ४.१०)।

स्वर्णर--एक यज्ञकर्ता (ऋ. ८.३.१२; १२.२)।

स्वर्णरोमन्--(सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो महारोमन् जनक का पुत्र था।

स्वर्णा--एक अप्सरा, जो वृन्दा की माता थी (पद्म. उ. ४)।

स्वर्भानवी--आयु राजा की पत्नी, जिसके पुत्र का नाम नहुष था (म. आ. ७०.२३)।

स्वर्भानु-एक असुर, जिसके द्वारा सूर्य को ग्रस्त करने का निर्देश ऋग्वेद में अनेक बार प्राप्त है (ऋ. ५. २०.५-९)। पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राहु ग्रह संभवतः यही हैं (राहु देखिये)।

इसने सूर्य को अंधःकार से आवृत किया, एवं सारी सृष्टि हीनदीन बन गयी। आगे चल कर देवताओं ने साम का पठन कर इस ग्रहण को दूर किया (पं. ब्रा. ४.५.२; ६.१३)। यह ग्रहण अत्रि के द्वारा (पं. ब्रा. ६.६.८); सोम एवं रुद्र के द्वारा (श. ब्रा. ५.३.२.२) दूर होने का निर्देश भी प्राप्त है।

देवताओं के द्वारा ग्रहण नष्ट करने पर, उस विनष्ट अंधःकार से अनेक वर्ण के मेंढक उत्पन्न हुए, जिनके वर्ण क्रमशः काले, लाल, एवं सफ़ेद थे। इन सारे मेंढकों को आदित्य को दे कर देवताओं ने विभिन्न ओषधियों का निर्माण किया (तै. सं. २.१.२२; सां. ब्रा. २४.३)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे कश्यप एवं दनु का पुत्र कहा गया है (भा. ६.६.३; म. आ. ५९.२४; विष्णु. १.२१.५)। इसकी कन्या का नाम प्रभा (सुप्रभा) था (विष्णु. १.२१.५), जिसका विवाह नमुचि (भा. ६.६.३२), अथवा नहुष से हुआ था (ब्रह्मांड. ३.६.२३-२५)।

२. एक सैंहिकेय असुर, जो जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था।

स्वर्वीथि--(स्वा. उत्तान.) वत्सर राजा की पत्नी, जो पुष्णार्ण आदि पाँच पुत्रों की माता थी (भा. ४.१३. १२)।

स्वश्न—एक असुर, जो इंद्र का शत्रु था। इंद्र ने इसका वध किया (ऋ. २.१४.५)।

स्वश्रव--अंगिराकुलोत्पन्न एक मंत्रकार।

स्वश्व--एक राजा, जिसके पुत्र के रूप में स्वयं सूर्य ने जन्म लिया था। एक बार इसका एवं एतश राजा का युद्ध चालु था, उस समय इंद्र ने एतश के पक्ष को सहायता की। इस कारण यह एवं इसका पुत्र पराजित हुए (ऋ. ४.१७.१४)।

स्वसृप—कौशिक ऋषि के पुत्रों में से एक (पितृवर्तिन् देखिये)।

स्वस्तिकर—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वस्तितर--अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वस्त्यात्रेय--एक ऋषिसमुदाय, जिसका निर्देश ऋग्वेद में वैदिक सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है (ऋ. ५.५०-५१)। महाभारत में इन्हें अत्रिकुलोत्पन्न ऋषि कहा गया है (म.आ. ८.२०)। हरिवंश में इनकी संख्या दस बतायी गयी है (ह. वं. १.३१.१७; प्रभाकर एवं अत्रि देखिये)।

स्वस्थली--वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

स्वह्न--स्वारोचिष मन्वन्तर के देवगणों में से एक।

२. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार यक्ष एवं दक्षिणा का पुत्र था (भा. ४.१.७)।

स्वागज--शक्तिपुत्र पराशर ऋषि का नामान्तर।

स्वागत—(सू. निमि.) एक राजा, जो वायु के अनुसार शकुनि राजा का पुत्र था।

स्वाति--सोम की सत्ताईस स्त्रियों में से एक।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक आंध्रवंशीय राजा जो मेघस्वाति राजा का पुत्र था।

स्वातिवर्ण—(आंध्र. भविष्य.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार कुन्तलस्वाति राजा का पुत्र था।

स्वायंभुव मनु—एक सुविख्यात राजा, जो स्वायंभुव नामक पहले मन्वंतर का अधिपति मनु माना जाता है। 'मनुस्मृति' नामक सुविख्यात धर्मशास्त्रविषयक ग्रंथ का कर्ता यही माना जाता है (मनु स्वायंभुव देखिये)।

राज्यविस्तार--भागवत में नवखण्डात्मक पृथ्वी का वर्णन प्राप्त है, जिनमें से भरतखंड नामक नौवाँ खण्ड आधुनिक भारतवर्ष माना जाता है। इस खण्ड में से ब्रह्मावर्त नामक प्रदेश में स्थित बर्हिष्मती नगरी का सर्वाधिक प्राचीन राजा स्वायंभुव मनु माना जाता है।

पृथ्वी का सम्राट्--भागवत में स्वायंभुव मनु को समस्त पृथ्वी का सम्राट् कहा गया है (भा. ३.२१.२५; २२. २९)। उस समय सारी पृथ्वी समतल एवं अखण्ड थी, वह आज की तरह समुद्रों में विभाजित न थी।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम शतरूपा (बार्हिष्मती) था, जिससे इसे प्रियव्रत एवं उत्तानपाद नामक दो पुत्र उत्पन्न हुए। इनमें से अपने ज्येष्ठ पुत्र प्रियव्रत को स्वायंभुव ने अपना पृथ्वी का सारा राज्य प्रदान किया।

प्रियव्रत के राज्यकाल में पृथ्वी में स्थित समुद्रों का विस्तार हुआ, एवं सारी पृथ्वी सात द्वीप एवं सात समुद्रों में विभाजित हुई। प्रियव्रत के कुल दस पुत्र थें, जिनमें से तीन बाल्यकाल से ही वन में चले गये। इसी कारण अपना सात द्वीपों का पृथ्वीव्यात राज्य प्रियव्रत ने अपने उर्वरित सात पुत्रों में बाँट दिये।

प्रियव्रत के द्वारा अपने सात पुत्रों में विभाजित किये गये सात द्वीपों के नाम, एवं उनका आधुनिककालीन संभाव्य भौगोलिक स्थानआदि निम्नलिखित तालिका में दिया गया है। प्राचीन-कालीन सप्तद्वीपात्मक पृथ्वी की भौगोलिक जानकारी की दृष्टि से यह तालिका अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती हैः—

पुत्र का नाम	द्वीप	संभाव्य आधुनिक स्थान
अग्निध्र	जंबूद्वीप	एशिया खण्ड (इसी खण्ड में अग्निध्र की बार्हिष्मती नामक नगरी थी)।
इध्मजिह्व	प्लक्षद्वीप	यूरप खण्ड।
यज्ञबाहु	शाल्मलिद्वीप	अटलँटिस् खण्ड, जहाँ वर्तमानकाल में अटलँटिक महासागर है।
हिरण्यरेतस्	कुशद्वीप	आफ्रिका खण्ड।
घृतपृष्ठ	क्रौंचद्वीप	उत्तर अमरिका खण्ड।
मेधातिथि	शाकद्वीप	दक्षिण अमरिका खण्ड।
वीतिहोत्र	पुष्करद्वीप	दक्षिण ध्रुव खण्ड (अँटार्टिका खण्ड)।

जंबूद्वीप की जानकारी--अग्निध्र को जंबूद्वीप का राज्य प्राप्त हुआ, जो आगे चल उसने अपने अपने नौ पुत्रों में विभाजित किया। प्राचीन जंबूद्वीप (एशियाखण्ड) के भौगोलिक विभाजन की जानकारी प्राप्त करने की दृष्टि से, अग्निध्र का यह राज्यविभाजन अत्यंत महत्त्वपूर्ण माना जाता हैः—

पुत्र का नाम	द्वीपविभाग
इलावृत	इलावृतवर्ष।
रम्यक	रम्यकवर्ष।
हिरण्य	हिरण्यवर्ष।
कुरु	उत्तरकुरुवर्ष।
भद्राश्व	भद्राश्ववर्ष।
किंपुरुष	किंपुरुषवर्ष।
नाभि	नाभिवर्ष, जो आगे चल कर अजनाभवर्ष अथवा भारतवर्ष नाम से सुविख्यात हुआ।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे ब्रह्मा का का पुत्र कहा गया है, एवं सृष्टि एवं प्रजा की वृद्धि के लिए इसका निर्माण ब्रह्मा के द्वारा किये जाने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (मत्स्य. ३.३१)। इसे विराज नामान्तर भी प्राप्त था (मत्स्य. ३.४५)।

जन्म के समय यह अर्धनारी देहधारी था। आगे चल कर ब्रह्मा ने इसे आज्ञा दे कर, इसके शरीर के स्त्री एवं पुरुषात्मक दो भाग किये गये जिसमें से पुरुष देह भाग से यह, एवं स्त्री देहभाग से इसकी पत्नी शतरूपा बन गयी (मार्क. ५०; विष्णु. १.७२; भा. ३.१२.५३; वायु. १. १.१०)।

स्वायव—कृशांब लातव्य नामक आचार्य का पैतृक नाम (पं. ब्रा. ८.६.८)।

स्वायष्ट—श्वेतपराशर कुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

स्वार—शिव देवों में से एक।

स्वारोचिष मनु—द्वितीय मन्वन्तर का अधिपति मनु, जो अग्नि का पुत्र माना जाता है (भा. ८.१.१९)। मार्कंडेय में इसे स्वरोचिष् राजा का वनदेवी से उत्पन्न पुत्र माना गया है। स्वरोचिष् का पुत्र होने के कारण, इसे स्वारोचिष पैतृक नाम प्राप्त हुआ (मार्क. ६३; स्वरोचिष् देखिये)।

देवी भागवत में इसे प्रियव्रत का पुत्र कहा गया है। इसने अपने बाल्यकाल में ही देवी की मृण्मय मूर्ति बना कर, एवं केवल सूखे पत्ते खा कर देवी की अत्यंत कठोर उपासना की, जिस कारण इसे मन्वन्तराधिपत्य प्राप्त हुआ (दे. भा. १०.८)।

स्वाह--(सो. क्रोष्टु.) क्रोष्टुवंशीय श्वाहि राजा का नामान्तर।

स्वाहा--स्वायंभुव मन्वन्तर के दक्ष एवं प्रसूति की एक कन्या, जो अग्नि की पत्नी थी। इसने अपने पूर्वायुष्य में अत्यधिक तप किया, जिस कारण देवों को हविर्भाग पहुँचाने का शुभकार्य इस पर सौंपा गया।

अग्नि से इसे पावक, पवमान एवं शुचि नामक तीन अग्निस्वरूपी पुत्र, एवं स्वारोचिष मनु नामक मन्वन्तराधिप राजपुत्र उत्पन्न हुए (ब्रह्मवै. २.४०; भा. ४.१.६०)।

एक बार इसने सप्तर्षियों की पत्नियों का रूप धारण कर अग्नि से संभोग किया, जिस कारण इसे 'स्कंद' नामक पुत्र उत्पन्न हुआ (म. व. २१४-२२०; स्कंद १. देखिये)। आगे चल कर स्कंद ने अपनी माता को आशीर्वाद दिया, 'तुम समस्त प्राणिमात्र के लिए पूज्य

रहोगी, एवं अग्नि में आहुति देते समय लोग 'स्वाहा' कह कर तुम्हारा नाम लेते रहेंगे' (म. व. २२०.५)।

२. वैवस्वत मन्वन्तर के बृहस्पति एवं तारा की एक कन्या, जो वैश्वानर अग्नि की पत्नी थी। इसके काम, अमोघ एवं उक्थ नामक तीन पुत्र थे (म. व. २०९.२३-२५)।

३. माहिष्मती के नीलध्वज राजा की कन्या, जो अग्नि की पत्नी थी (जै. अ. १५)।

स्वाहि--(सो. क्रोष्टु.) क्रोष्टुवंशीय श्वाहि राजा का नामान्तर।

स्वाहेय--स्कंद का मातृक नाम।

स्विष्टकृत्--एक अग्नि, जो बृहस्पति एवं तारा का एक पुत्र था (म. व. २०९.२१)।

स्विष्टयन--शौनक नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. ११.४.१.२-३)।

ह

हंस--ब्रह्मा का एक मानसपुत्र, जो आजन्म ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करता रहा (भा. ४.८.१)।

२. कृतयुग में उत्पन्न श्री विष्णु का एक अवतार, जिसने सनकादि आचार्यों को ब्रह्मा की उपस्थिति में योग की शिक्षा प्रदान की थी। इसे 'यज्ञ' नामान्तर भी प्राप्त था (भा. ११.१३.१९-४१)।

यह प्रजापति था, एवं इसने साध्यदेवों को मोक्षसाधन का कथन किया था। इसके द्वारा साध्यदेवों को दिया गया यही उपदेश महाभारत में 'हंसगीता' नाम से उपलब्ध है (म. शां. २८८)। भागवत में और एक 'हंस-गीता, दी गयी है, जिसमें 'भिक्षुगीता' भी समाविष्ट है (भा. ११.११-१३)।

३. साध्य देवों में से एक।

४. एक गंधर्व, जो कश्यप एवं अरिष्टा के पुत्रों में से एक था। इसीके ही अंश से धृतराष्ट्र का जन्म हुआ था (म. आ. ६१.७७)।

५. शिवदेवों में से एक।

६. (सो. वसु.) वसुदेव एवं श्रीदेवा के पुत्रों में से एक।

७. जरासंध का एक मंत्री, जो शाल्वाधिपति ब्रह्मदत्त का पुत्र था। इसके भाई का नाम डिम्भक था, एवं ये दोनों अस्त्रविद्या में परशुराम के शिष्य थे (ह. वं. ३.१०३)। महाभारत में इसके भाई का नाम 'डिभक' दिया गया है। ये दोनों भाई जरासंध के मंत्री, एवं सलाहगार के नाते काम करते थे।

शिक्षा--इसके मित्रों में विचक्र एवं जनार्दन प्रमुख थे। इनमें से जनार्दन, इसके पिता के मित्रसह नामक मित्र का पुत्र था।

हंस, डिम्भक एवं जनार्दन इन तीनों मित्र की शिक्षा एवं विवाह एक साथ ही हुआ था! आगे चल कर इसने एवं डिम्भक ने शिव की कड़ी तपस्या की, जिससे प्रसन्न हो कर शिव ने इन्हें युद्ध में अजेयत्व, एवं स्वसंरक्षणार्थ दो भूतपार्षद इन्हें प्रदान किये थे। उसीके साथ ही साथ इन्हें रुद्रास्त्र, माहेश्वरास्त्र, ब्रह्मशिरास्त्र आदि अनेकानेक अस्त्र भी शिवप्रसाद से प्राप्त हुए थे (ह. वं. ३.१०५)।

दुर्वासस् का शाप--शिव से प्राप्त अस्त्रशस्त्रों के कारण, ये दोनों भाई अत्यंत उन्मत्त हुए, एवं सारे संसार को त्रस्त करने लगे। एक बार इन्होंने दुर्वासस् ऋषि को त्रस्त करना प्रारंभ किया, जिस कारण क्रुद्ध हो कर उस क्रोधी मुनि ने इन्हें विष्णु के द्वारा विनष्ट होने का शाप दिया (ह. वं. ३.१०७-१०८)। आगे चल कर अपने शाप का वृत्त दुर्वासस् ने द्वारका में जा कर कृष्ण से कथन किया, एवं इन उन्मत्त भाईयों की वध करने की प्रार्थना उससे की।

राजसूय यज्ञ--अगले साल इन्होंने राजसूय यज्ञ किया, एवं तद्हेतु करभार प्राप्त करने के लिए अपने मित्र जनार्दन को इन्होंने कृष्ण के पास भेजा (ह. वं. ३.११३-११५)। कृष्ण ने इन्हें करभार देने से इन्कार किया, एवं युद्ध का आह्वान दिया। पश्चात् संपन्न हुए युद्ध में कृष्ण ने इसके मित्र विचक्र का वध किया,

एवं इसे लत्ताप्रहार कर पाताल में ढकेल दिया। वहाँ पाताल के सर्पों के दंश से इसकी मृत्यु हो गयी (ह. वं. ३.१२८)।

महाभारत के अनुसार, अपने भाई डिम्भक के वध की वार्ता सुन कर, इसने स्वयं ही यमुना नदी में कूद कर आत्महत्या कर ली (म. स. १३.४०-४२)।

जरासंध का विलाप—इनके वध की वार्ता ज्ञात होते ही जरासंध राजा ने अत्यधिक शोक किया, एवं दीर्घकाल तक विलाप करता रहा। आगे चल कर भीमसेन ने अपने पूर्वदिग्विजय में जरासंध पर आक्रमण किया, उस समय भी उसने अपने इन दोनों स्वर्गीय मंत्रियों का स्मरण किया था (म. स. १३.३६)।

८. जरासंध की सेना का एक राजा, जो कृष्ण एवं जरासंध के दरम्यान हुए सत्रहवें युद्ध में बलराम के द्वारा मारा गया (म. स. १३.४२-४३)।

९. एक श्रेष्ठ पक्षी, जो कश्यपपत्नी ताम्रा का पौत्र, एवं ताम्राकन्या धृतराष्ट्री की संतान मानी जाती है (म. आ. ६०.५६)।

महाभारत में हंस पक्षियों का निर्देश अनेकबार आता है। सुवर्ण से विभूषित एक हंस ने नल एवं दमयंती के संदेश एक दूसरे को पहुँचा कर, उनमें अनुराग उत्पन्न किया था (म. व. ५०.१९-३२)।

भीष्म की मृत्यु के समय, सप्तर्षियों ने हंस का रूप धारण कर उसे दक्षिणायन में प्राणत्याग करने से रोका था (म. भी. ११४.९०)। एक हंस एवं काक का रूपकात्मक आख्यान भी कर्णार्जुन युद्ध के समय निर्दिष्ट है (म. क. २८.१०-५४)।

हंसकायन—एक क्षत्रिय लोकसमूह, जो युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में भेंट ले कर उपस्थित हुआ था।

हंसचूड—कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०.१६)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'अंगचूड'।

हंसजिह्व—भृगुकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हंस-डिम्भक—शाल्वदेव का एक राजाद्वय, जो जरासंध के प्रमुख मंत्री एवं सलाहगार थे (हंस ७. देखिये)।

हंसध्वज—चंपक नगरी का एक विष्णुभक्त राजा, जिसके विदूरथ, चंद्रकेतु, चंद्रसेन आदि बन्धु थे। इसके मंत्रियों के नाम सुमति, सुगति, तुष्ट एवं श्रद्धालु थे, एवं शंख एवं लिखित नामक बंधुद्वय इसके पुरोहित थे। अपने राज्य में इसने एकपत्नीव्रत का पुरस्कार किया था।

अर्जुन से युद्ध—युधिष्ठिर के अश्वमेध यज्ञ के समय, अर्जुन के द्वारा रक्षण किया गया अश्व इसने पकड़ लिया, जिस कारण इसके सुधन्वन् एवं सुरथ नामक दो पुत्रों का अर्जुन ने वध किया।

पश्चात् अत्यधिक क्रुद्ध हो कर यह स्वयं युद्धभूमि में प्रविष्ट हुआ, एवं अर्जुन से युद्ध करने लगा। इससे युद्ध करने पर अर्जुन की निश्चित ही मृत्यु होगी, यह जान कर कृष्ण ने इन दोनों में मध्यस्थता की, एवं अश्वरक्षण के कार्य में अर्जुन की सहायता करने की इससे प्रार्थना की।

परिवार—इसके सुरथ, सुधन्वन्, सुदर्शन, सुबल एवं सम नामक पाँच पुत्र थे (जै. अ. १७.२१)।

हंसवक्त्र—स्कंद का एक सैनिक (म. श. ४४.७०)।

हंसिका—सुरभि नामक कामधेनु की एक गोस्वरूपी कन्या, जो दक्षिण दिशा को धारण करती है (म. उ. १००.८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)—'हंसका'।

हंसी—भगीरथ राजा की कन्या, जो कौत्स ऋषि की पत्नी थी (म. अनु. २००.२६)।

हंडिदास—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हनुमत् अथवा **हनूमत्**—एक सुविख्यात वानर, जो सुमेरु के केसरिन् नामक वानर राजा का पुत्र, एवं किष्किंधा के वानरराजा सुग्रीव का अमात्य था। एक कुशल एवं संभाषणचतुर राजनीतिज्ञ, वीर सेनानी एवं निपुण दूत के नाते इसका चरित्र-चित्रण वाल्मीकि रामायण में किया गया है।

वाल्मीकि रामायण में इसे शौर्य, चातुर्य, बल, धैर्य, पाण्डित्य, नीतिमानता एवं पराक्रम इन दैवी गुणों का आलय कहा गया है—

शौर्यं, दाक्ष्यं, बलं, धैर्यं, प्राज्ञता नयसाधनम्।
विक्रमश्च प्रभावश्च हनूमति कृतालयाः॥
(वा. रा. उ. ३५.३)।

इस प्रकार निपुण राजनीतिज्ञ, समयोचित मंत्रणा देनेवाला सचिवोत्तम, एवं महापराक्रमी वीर पुरुष हो कर भी यह विनम्रता, निरभिमानता, दीनता, वाणी की मनोहारिता आदि सत्त्वगुणों से भी भरपूर था। इसी कारण एक पराक्रमी वीरपुरुष के नाते नहीं, बल्कि राम के परम-भक्त एवं दासानुदास के नाते ही लोग इसे पहचानते हैं, एवं यही सेवापरायणता इसका सर्वश्रेष्ठ बिरुद माना गया है।

'हनुमत्' एक द्राविड शब्द--'रावण' शब्द की भाँति 'हनुमत्' भी एक द्राविड शब्द है, जो 'आणमंदी' अथवा 'आणमंती' का संस्कृत रूप है; 'अण्' का अर्थ है 'नर', एवं 'मंदी' का अर्थ है 'कपि'। इस प्रकार एक नरवानर के प्रतीकरूप में हनुमत् की कल्पना सर्वप्रथम प्रसृत हुई। इसी नरवानर को आगे चल कर देवतास्वरूप प्राप्त हुआ, एवं उत्तरकालीन साहित्य में राम एवं लक्ष्मण के समान हनुमत् भी एक देवता माना जाने लगा।

गुणवैशिष्ट्य--हनुमत् की इस देवताविषयक धारणा में इसका अर्थ वानराकृति रूप यही सब से बड़ी भूल कही जा सकती है। सुग्रीव, वालिन् आदि के समान यह वानरजातीय अवश्य था, किन्तु बंदर न था, जैसा कि, आधुनिक जनश्रुति मानती है। वाल्मीकिरामायण में निर्दिष्ट अन्य वानरजातीय वीरों के समान यह संभवतः उन आदिवासियों में से एक था, जिनमें वानरों को देवता मान कर पूजा की जाती थी (वानर देखिये)।

हनुमत् के व्यक्तित्व की यह पार्श्वभूमि भूल कर, उसे एक सामान्य वानर मानने के कारण इसका स्वरूप, पराक्रम एवं गुणवैशिष्ट्यों को काफ़ी विकृत स्वरूप प्राप्त हुआ है, जो उसके सही स्वरूप एवं गुणवैशिष्ट्यों को धूँधला सा बना देता है।

हनुमत् देवता का मूल स्त्रोत--कई अभ्यासकों के अनुसार, प्राचीन काल में हनुमत् कृषिसंबंधी एक देवता था, जो संभवतः वर्षाकाल का, एवं वर्षाकाल में उत्पन्न हुए वायु का अधिष्ठाता था। इसी कारण हनुमत् का बहुत सारा वर्णन वैदिक मरुत् देवता का स्मरण दिलाता है। यह वायुपुत्र बादलों के समान कामरूपधर, एवं आकाशगामी है। यह दक्षिण की ओर से, जहाँ से वर्षा आती है, सीता अर्थात् कृषि के संबंध में समाचार राम को पहुँचाता है। इस प्रकार इंद्र के समान हनुमत् का भी संबंध वैदिककालीन वर्षादेवता से प्रतीत होता है।

आँठवी शताब्दी तक यह रुद्रावतार माने जाने लगा, एवं इसके ब्रह्मचर्य पर जोर दिया जाने लगा। बाद में महावीर हनुमत् का संबंध, प्राचीन यक्षपूजा (वीरपूजा) के साथ जुड़ गया, एवं बल एवं वीर्य की देवता के नाते इसकी लोकप्रियता एवं उपासना और भी व्यापक हो गयी है। आनंद रामायण के अनुसार, पृथ्वी के सभी वीर हनुमत् के ही अवतार है:--

ये ये वीरास्त्वत्र भूम्यां वायुपुत्रांशरूपिणः।
(आ. रा. ८.७.१२३)।

हनुमत् देवता का सद्यःस्वरूप--भारतवर्ष के सभी प्रदेशों में हनुमत् की उपासना अत्यंत श्रद्धा से आज की जाती है, जहाँ इसे साक्षात् रुद्रावतार एवं सदाचरण का प्रतीक रूप देवता माना जाता है। आध्यात्मिक ज्ञान प्रदान करनेवाले शिव की, एवं व्यावहारिक कामनापूर्ति करनेवाले हनुमत्, भारत के सभी ग्रामों में आज सब से अधिक लोकप्रिय देवता हैं। इनमें से हनुमत् की उपासना आरोग्य, संतान आदि की प्राप्ति के लिए, एवं भूतपिशाच आदि की पीड़ा दूर करने के लिए की जाती है। हनुमत् का यह 'ग्रामदेवता स्वरूप' वाल्मीकि रामायण में निर्दिष्ट हनुमत् से सर्वथा विभिन्न है, एवं वह ई. स. ८ वी शताब्दी के उत्तरकाल में उत्पन्न हुआ प्रतीत होता है।

जन्म--जैसे पहले ही कहा जा चुका है, यह सुमेरु के राजा केसरिन् एवं गौतमकन्या अञ्जना का पुत्र था। यह अञ्जना को वायुदेवता के अंश से उत्पन्न हुआ था, एवं इसका जन्मदिन चैत्र शुक्ल पुर्णिमा था।

इसके जन्म के संबध में अनेकानेक कथाएँ पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, जो काफ़ी चमत्कृतिपूर्ण प्रतीत होती हैं। शिवपुराण के अनुसार, एक बार विष्णु ने मोहिनी का रूप धारण कर शिव को कामोत्सुक किया। पश्चात् मोहिनी को देख कर स्खलित हुआ शिव का वीर्य सप्तर्षियों ने अपने कानों के द्वारा अंजनी के गर्भ में स्थापित किया, जिससे यह उत्पन्न हुआ (शिव. शत. २०)।

आनंदरामायण के अनुसार, दशरथ के द्वारा किये गये पुत्रकामेष्टियज्ञ में उसे अग्नि से पायस प्राप्त हुआ, जो आगे चल कर उसने अपने पत्नियों में बाँट दिया। इसी पायस में से कुछभाग एक चील उड़ा कर ले गयी। आगे चल कर, वहीं पायस चील के चोंच से छूट कर तप करती हुयी अञ्जनी के अंजुलि में जा गिरा। उसी पायस के प्रसाद से इसका जन्म हुआ।

भविष्यपुराण में इसके कुरूपता की मीमांसा इसे शिव एवं वायु का अंशावतार बता कर की गयी है। एक बार शिव ने अपने रौद्रतेज के रूप में, अंजनी के पति केसरिन् वानर के मुह में प्रवेश किया, एवं उसीके द्वारा अंजनी के साथ संभोग किया। पश्चात् वायु ने भी केसरिन् वानर के शरीर में प्रविष्ट हो कर अंजनी के साथ रमण किया।

इन दो देवताओं के संभोग के पश्चात् अंजनी गर्भवती हुई, एवं उसने एक वानरमुख वाले पुत्र को जन्म दिया, जो हनुमत् नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसका विरूप मुख देख

कर अंजनी ने उसे पर्वत के नीचे फेंकना चाहा, किंतु वायु की कृपा से यह जीवित रहा (भवि. प्रति. ४.१३. ३१.३६)।

नामांतर— वाल्मीकि रामायण एवं महाभारत में इसे सर्वत्र 'वायुपुत्र', 'पवनात्मज', 'अनिलात्मज', 'वायुतनय' आदि उपाधियों से भूषित किया गया है।

इसके अतिरिक्त इसे निम्नलिखित नामांतर भी प्राप्त थे:—१. मारुति, जो नाम इसे मरुतपुत्र होने के कारण, प्राप्त हुआ था; २. हनुमत्, जो नाम इसे इन्द्र के वज्र के द्वारा इसकी हनु टूट जाने के कारण प्राप्त हुआ था; ३. वज्रांग (बजरंग)), जो नाम इसे वज्रदेही होने के कारण प्राप्त हुआ था; ४. बलभीम, जो नाम इसे अत्यंत बलशाली होने के कारण प्राप्त हुआ था।

अस्त्रप्राप्ति—यह बाल्यकाल से ही बलपौरुष से युक्त है, जिसके संबंध में चमत्कृतिपूर्ण कथाएँ विभिन्न पुराणों में प्राप्त हैं। एक बार अमावास्या के दिन अंजनी फल लाने गयी, उस समय भूखा हुआ हनुमत् खाने के लिए फल ढूँढने लगा। पश्चात् उदित होनेवाले रक्तवर्णीय सूर्यबिंब को देख कर यह उसे ही एक फल समझ बैठा, एवं उसे प्राप्त करने के लिए सूर्य की ओर उड़ा। उड़ान करते समय इसने राह में स्थित राहु को धक्का लगाया, जिससे क्रोधित हो कर इंद्र से इसकी शिकायत की।

इंद्र ने अपना वज्र इस पर प्रहार किया, एवं यह एक पर्वत पर मूर्च्छित हो कर गिर पड़ा। अपने पुत्र को मूर्च्छित हुआ देख कर वायुदेव इंद्र से युद्ध करने के लिए उद्यत हुआ। यह देख कर समस्त देवतागण घबरा गया, एवं अंत में स्वयं ब्रह्मा ने मध्यस्थता कर हनुमत् एवं इंद्र में मित्रता प्रस्थापित की।

उस समय इंद्र के सहित विभिन्न देवताओं ने इसे निम्नलिखित अनेकानेक अस्त्र एवं वर प्रदान कियेः—१. इंद्र—वज्र से अवध्यत्व एवं हनुमत् नाम; २. सूर्य— सूर्यतेज का सौवाँ अंश, एवं अनेकानेक शास्त्र एवं अस्त्रों का ज्ञान; ३. वरुण– वरुणपाशों से अबद्धत्व; ४. यम– आरोग्य, युद्ध में अजेयत्व एवं चिरउत्साह; ५. ब्रह्मा– युद्ध में भयोत्पादकत्व, मित्रभयनाशकत्व, कामरूपधारित्व एवं यथेष्टगामित्व; ६. शिव– दीर्घायुष, शास्त्रज्ञत्व एवं समुद्रोल्लंघनसामर्थ्य (पद्म. पा. ११४; उ. ६६; नारद १. ७९)।

ऋषियों से शाप—देवताओं से प्राप्त अस्त्रशस्त्रों के कारण यह अत्यधिक उन्मत्त हुआ, एवं समस्त सृष्टि को त्रस्त करने लगा। एक बार इसने भृगु एवं अंगिरस् ऋषियों को त्रस्त किया, जिस कारण उन्होंने इसे शाप दिया, 'अपने अगाध दैवी सामर्थ्य का तुम्हें स्मरण न रहेगा, एवं कोई देवतातुल्य व्यक्ति ही केवल उसे पहचान कर उसका सुयोग्य उपयोग कर सकेगा'।

सुग्रीव का मंत्री—सूर्य ने इसे व्याकरण, सूत्रवृत्ति, वार्तिक, भाष्य, संग्रह आदि का ज्ञान कराया, एवं यह सर्वशास्त्रविद् बन गया। पश्चात् सूर्य की ही आज्ञा से यह सुग्रीव का स्नेही एवं बाद में मंत्री बन गया (शिव. शत. २०)।

सीताशोध के लिए किष्किंधा राज्य में आये हुए राम एवं लक्ष्मण से परिचय करने के हेतु सुग्रीव ने इसे ही भेजा था। उस समय भिक्षुक का रूप धारण कर यह पंपासरोवर गया, एवं अत्यंत मार्मिक भाषा में अपना परिचय राम को दे कर, किष्किंधा राज्य में आने का उसका हेतु पूछ लिया।

संभाषणचातुर्य—उस समय इसकी वाक्चातुर्य एवं संभाषण पद्धति से राम अत्यधिक प्रसन्न हुआ :–

> अविस्तरमसंदिग्धमविलम्बितमव्यथम्।
> उरस्थं कण्ठगं वाक्यं वर्तते मध्यमस्वरम्॥
> संस्कारक्रमसंपन्नाम्, अद्भुतामविलम्बिताम्।
> उच्चारयति कल्याणीं वाचं हृदयहर्षिणीम्॥
> (वा. रा. कि. ४.३१–३२)।

(हनुमत् का संभाषण अविस्तृत, स्पष्ट, सुसंस्कारित एवं सुसंगत है। वह कंठ, हृदय एवं बुद्धि से एकसाथ उत्पन्न हुआ सा प्रतीत होता है। इसी कारण इसका संभाषण एवं व्यक्तित्व श्रोता के हृदय के लिए प्रसन्न, एवं हर्षजनक प्रतीत होता है)।

पश्चात् इसकी ही सहायता से राम एवं सुग्रीव में मित्रता प्रस्थापित हुई। तदुपरांत राम एवं सुग्रीव में जहाँ कलह के, या मतभेद के प्रसंग आये, उस समय यह उन दोनों में मध्यस्थता करता रहा। वालिवध के पश्चात् विषयोपभोग में लिप्त सुग्रीव को इसने ही जगाया, एवं राम के प्रति उसके कर्तव्य का स्मरण दिलाया (वा. रा. कि. २९)।

सीताशोध— सीताशोध के लिए दक्षिण दिशा की ओर निकले हुए वानरदल का यह प्रमुख बना, एवं सीताशोध के लिए निकल पड़ा। इस कार्य के लिए जाते समय रास्ते में यह कण्डुक ऋषि का आश्रम, लोध्र-

वन् एवं सुपर्णवन आदि होता हुआ तपस्विनी स्वयंप्रभा के आश्रम में पहुँच गया। स्वयंप्रभा ने इसे एवं अन्य वानरों को समुद्रकिनारे पहुँचा दिया। वहाँ जटायु का भाई संपाति इससे मिला, एवं सीता का हरण रावण के द्वारा ही किये जाने का वृत्त उसने इसे सुनाया। उसी समय लंका में स्थित अशोकवन में सीता को बंदिनी किये जाने का वृत्त भी इसे ज्ञात हुआ (वा. रा. कि. ४८-५९)।

समुद्रोल्लंघन—लंका में पहुँचने में सब से बड़ी समस्या समुद्रोल्लंघन की थी। इसके साथ आये हुए बाकी सारे वानर इस कार्य में असमर्थ थे। अतएव इसने अकेले ही समुद्र लांघने के लिए छलांग लगायी। राह में इसे आराम देने के लिए मेरुपर्वत समुद्र से उभर आया। देवताओं के द्वारा भेजी गयी नागमाता सुरसा ने इसके सामर्थ्य की परीक्षा लेनी चाही, एवं पश्चात् इसे अंगीकृत कार्य में यशस्वी होने का आशीर्वाद दिया।

आगे चल कर लंका का रक्षण करनेवाली सिंहिका राक्षसी इससे युद्ध करना चाही, किन्तु इसने उसे परास्त किया। पश्चात् एक सूक्ष्माकृति मक्खी का रूप धारण कर यह लंब पर्वत पर उतरा, एवं वहाँ से लंका में प्रवेश किया (वा. रा. सुं. १; म. व. २६६)। वहाँ लंका-देवी को युद्ध में परास्त कर यह सीता शोध के लिए निकल पड़ा।

अशोकवन में—सीता की खोज करने के लिए इसने लंका के सारे मकान ढूँढे। पश्चात् रावण के सारे महल, शयनागार, भंडारघर, पुष्पक विमान आदि की भी इसने छानबीन की। किन्तु इसे कहीं भी सीता न मिली। अतः सीता की सुरक्षा के संबंध में यह अत्यंत चिंतित हुआ, एवं अत्यंत निराश हो कर वानप्रस्थ धारण करने का विचार करने लगा—

हस्तादानो मुखादानो नियतो वृक्षमूलिकः।
वानप्रस्थो भविष्यामि अदृष्ट्वा जनकात्मजाम्॥
(वा. रा. सुं. १३.३८)।

(सीताशोध के कार्य में अयशस्विता प्राप्त होने के कारण यही अच्छा है कि, मैं वानप्रस्थ का स्वीकार कर, एवं विरागी बन कर यहीं कहीं फलमूल भक्षण करता रहूँ)।

सीता से भेंट—अंत में यह नलिनी नदी के तट पर स्थित अशोकवन में पहुँच गया, जहाँ राक्षसियों के द्वारा यातना पाती हुई सीता इसे दिखाई दी। वहाँ एक पेड़ पर बैठ कर इसने रामचरित्र एवं स्वचरित्र का गान किया, एवं अपना परिचय सीता से दिया। राम के द्वारा दी गयी अभिज्ञान की अंगूठी भी इसने उसे दी (वा. रा. सुं. ३२-३५)।

पश्चात् अपने पीठ पर बिठा कर सीता को बंधनमुक्त कराने का प्रस्ताव इसने उसके सम्मुख रखा, किन्तु सीता के द्वारा उसे अस्वीकार किये जाने पर (सीता देखिये), इसने उसे आश्वासन दिया कि, एक महीने के अंदर राम स्वयं लंका में आ कर उन्हें मुक्त करेंगे (वा. रा. सुं. ३८)।

लंकादहन—सीताशोध का काम पूरा करने के पश्चात् इसने चाहा कि यह रावण से मिले। अपनी ओर रावण का ध्यान खींच लेने के हेतु इसने अशोक-वन का विध्वंस प्रारंभ किया। यह समाचार मिलते ही उसने पहले जंबुमालिन्, एवं पश्चात् विरूपाक्षादि पाँच सेना-पतियों के साथ अपने पुत्र अक्ष को इसके विनाशार्थ भेजा। किन्तु इन दोनों का इसने वध किया। पश्चात् इंद्रजित् ने इसे ब्रह्मास्त्र से बाँध कर रावण के सामने उपस्थित किया (वा. रा. सुं. ४१-४७)।

रावण ने इसके वध की आज्ञा दी, किन्तु बिभीषण के के द्वारा समझाये जाने पर इसके वध की आज्ञा स्थगित कर दण्डस्वरूप इसकी पूँछ में आग लगाने की आज्ञा दी (वा. रा. सुं. ५२)। इस समय अपनी माया से पूँछ बढ़ाने की, एवं रावणसभा में कोलाहल मचाने की चमत्कृतिपूर्ण कथा आनंदरामायण में प्राप्त है (आ. रा. सार. ९)। यहाँ तक की इसने रावण के मूँछदाढ़ी में आग लगायी।

पश्चात् इसने अपनी जलती पूँछ से सारी लंका में आग लगायी। पश्चात् इसे यकायक होश आया कि, लंका-दहन से सीता न जल जाये। यह ध्यान आते ही, यह पुनः एक बार सीता के पास आया, एवं उसे सुरक्षित देख कर अत्यंत प्रसन्न हुआ। बाद में सीता को वंदन कर एक छलांग में यह पुनः एक बार महेंद्र पर्वत पर आया (वा. रा. सुं. ५७-६१)।

सुग्रीव से भेंट—सीता का शोध लगाने का दुर्घट कार्य यशस्वी प्रकार से करने के कारण सुग्रीव ने इसका अभि-नंदन किया। पश्चात् राम ने भी एक आदर्श सेवक के नाते इसकी पुनः पुनः सराहना की (वा. रा. यु. १. ६-७)। उस समय राम ने कहा, 'हनुमत् एक ऐसा आदर्श सेवक है, जिसने सुग्रीव के प्रेम के कारण एक अत्यंत दुर्घट कार्य यशस्वी प्रकार से पूरा किया है

(भृत्यकार्यं हनुमता सुग्रीवस्य कृतं महत्) (वा. रा. यु. १.६)।

राम-रावण युद्ध में—इस युद्ध में समस्त वानरसेना का एकमात्र आधार, सेनाप्रमुख एवं नेता एक हनुमत् ही था। इस युद्ध में इसने अत्यधिक पराक्रम दिखा कर निम्नलिखित राक्षसों का वध कियाः—१. जंबुमालिन् (वा. रा. यु. ४३); २ धूम्राक्ष (वा. रा. यु. ५१-५२; म. व. २७०.१४); ३. अकंपन (वा. रा यु. ५५-५६), ४. देवान्तक एवं त्रिशिरस् (वा. रा. यु. ६९-७१); ५. वज्रवेग (म. व. २७१.२४)।

रामरावण युद्ध के छठवे दिन रावण के ब्रह्मास्त्र के द्वारा मूर्च्छित हुए लक्ष्मण को हनुमत् ने ही राम के पास लाया। पश्चात् इसके स्कंध पर आरूढ हो कर राम ने रावण को आहत किया (वा. रा. यु. ५९; राम दाशरथि देखिये)।

इंद्रजित के द्वारा किये गये अदृश्ययुद्ध में जब वानरसेना का निर्घृण संहार हुआ, तब इसने ही हिमाचल के वृष शिखर पर जा कर वहाँ से संजीवनी, विशल्यकरिणी, सुवर्णकरिणी, एवं संधानी नामक औषधी वनस्पतियाँ ला कर वानरसेना को जीवित किया (वा. रा. यु. ७४)। पश्चात् युद्ध के अंतिम दिन रावण के द्वारा लक्ष्मण मूर्छित होने पर यह पुनः एक बार हिमालय के ओषधि पर्वत गया था। काफ़ी ढूँढने पर वहाँ इसे वनस्पतियाँ न प्राप्त हुई। इस कारण सारा शिखर यह अपने बायें हस्त पर उठा कर ले आया (वा. रा. यु. १०१)। वाल्मीकि रामायण के अनुसार, इसने दो बार द्रोणागिरि उठा कर लाया था (वा. रा. यु. ७४; १०१)।

युद्ध में इसके दिखाये पराक्रम के कारण राम ने अत्यधिक प्रसन्न हो कर कहा थाः—

> **न कालस्य, न शक्रस्य, न विष्णोर्वित्तपस्य च।**
> **कर्माणि तानि श्रूयन्ते यानि युद्धे हनूमतः॥**
> (वा. रा. उ. ३५.८)।

(इस युद्ध में हनुमत् ने जो अत्यधिक पराक्रम दिखाया है, वह इंद्र, विष्णु एवं कुबेर के द्वारा भी कभी किसी युद्ध में नहीं दिखाया गया है)।

अयोध्या में—युद्ध समाप्त होने पर अयोध्या के सभी लोगों का कुशल देख आने के लिए, एवं भरत को अपने आगमन की सूचना देने के लिए राम ने इसे भेजा था (वा. रा. यु. १२५-१२७; म. व. २६६)। राम के राज्याभिषेक के समय इसने समुद्र का जल लाया था, जिसके फलस्वरूप सीता ने इसे अपना हार इसे भेंट में दिया था।

ब्रह्मचर्य—प्राचीन वाङ्मय में इसे सर्वत्र 'ब्रह्मचरिन्' 'जितेंद्रिय' 'ऊर्ध्वरेतस्' आदि 'उपाधियों' से भूषित किया गया है। राम के अश्वमेधीय यज्ञ के समय हुए युद्ध में शत्रुघ्न आहत हुआ, उस समय इसने अपने ब्रह्मचर्य के बल से उसे पुनः जीवित किया था (पद्म. पा. ४५.३१)।

चिरंजीवित्व—प्राचीन साहित्य में इसे सर्वत्र चिरंजीव माना गया है। इसके चिरंजीवत्व के संबंध में एक कथा पद्म में दी है। युद्ध के पश्चात् राम की सेवा करने के हेतु, यह उसके साथ ही अयोध्या में रहने लगा। इसकी सेवावृत्ति से प्रसन्न हो कर राम ने इसे ब्रह्मविद्या प्रदान की, एवं वर प्रदान दिया, 'जब तक रामकथा जीवित रहेगी तब तक तुम अमर रहोंगे' (पद्म. उ. ४०)।

किंतु पद्म में अन्यत्र राम-रावणयुद्ध के पश्चात्, इसका सुग्रीव के साथ किष्किंधा में निवास करने का निर्देश प्राप्त है (पद्म. सृ. ३८)।

महाभारत में इसे चिरंजीव कहा गया है, एवं इसका स्थान अर्जुन के रथध्वज पर वर्णन किया गया है। (म. व. १४७.३७)। इसके द्वारा भीम का गर्वहरण करने का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म .व. १४६. ५९-७९)।

पांडित्य—इसे ग्यारहवाँ व्याकरणकार कहा गया है, एवं इसके द्वारा विरचित 'महानाटक' अथवा 'हनुमन्नाटक' का निर्देश प्राप्त है

परिवार—इसके ब्रह्मचारी होने के कारण इसका अपना परिवार कोई न था। फिर भी इसके पसीने के एक बूँद के द्वारा एक मछली से इसे मकरध्वज अथवा मत्स्यराज नामक एक पुत्र उत्पन्न होने का निर्देश आनंद-रामायण में प्राप्त है (आ. रा. ७.११; मकरध्वज देखिये)।

मानस में—तुलसी के मानस में चित्रित किया गया हनुमत् एक सेनानी नहीं, बल्कि अधिकतर रूप में राम का परमभक्त हैं। यद्यपि मानस में इसके समुद्रोल्लंघन, अशोक वाटिकाविध्वंस, लंकादहन, मेघनादयुद्ध, कुंभकर्णयुद्ध आदि पराक्रमों का निर्देश प्राप्त है, फिर भी इन सारे पराक्रमों की सही पार्श्वभूमि इसकी राम के प्रति अनन्य भक्ति की है। इसी कारण तुलसी कहते हैंः—

'महावीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आपु बखाना।
(मानस. १.१६.१०)।

हन्तृ—अमिताभ देवों में से एक।

हय—तुषित एवं साध्य देवों में से एक।

हयग्रीव—विष्णु का एक अवतार। यह अश्वमुखी होने के कारण इसे 'हयग्रीव' नाम प्राप्त हुआ था। इसे 'हयशिरस्' 'अश्वशिरस्' नामांतर भी प्राप्त थे (विष्णु देखिये)।

स्वरूपवर्णन--अगस्त्य ऋषि को कांची नगरी में इसके दिये दर्शन का वर्णन ब्रह्मांड में प्राप्त है, जहाँ इसे शंख, चक्र, अक्षवलय एवं 'पुस्तक' (ग्रंथ) धारण करनेवाला कहा गया है (ब्रह्मांड. ४.५,९.३५-४०)।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में सर्वत्र इसे विष्णु का नहीं, बल्कि यज्ञ का अवतार कहा गया है। किन्तु तैत्तिरीय आरण्यक में यज्ञ को विष्णु का ही एक प्रतिरूप कथन किया गया है। इससे प्रतीत होता है कि, वैदिक एवं पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट हयग्रीवकथा का स्रोत एक ही है, जिसका प्रारंभिक रूप वैदिक साहित्य में पाया जाता है।

पंचविंश ब्राह्मण में हयग्रीव अवतार की कथा निम्नप्रकार बतायी गयी है। एक बार अग्नि, इंद्र, वायु एवं यज्ञ (विष्णु) ने एक यज्ञ किया। इस यज्ञ के प्रारंभ में यह तय हुआ था कि, यज्ञ को जो हविर्भाग प्राप्त होगा, वह सभी देवताओं में बाँट दिया जायेगा। उस समय यज्ञ को सर्वप्रथम हविर्भाव प्राप्त हुआ, जिसे ले कर वह भाग गया। इस कारण बाकी सारे देव इसका पीछा करने लगे।

अपने दैवी धनुष की सहायता से यज्ञ ने सभी देवताओं को हरा दिया। अन्त में एक दीमक के द्वारा देवों ने यज्ञ के धनुष की प्रत्यंचा कटवा दी, एवं इस प्रकार असहाय हुए यज्ञ का मस्तक कटवा दिया। तत्पश्चात् अपने कृतकर्म के लिए यज्ञ देवों से माफ़ी माँगने लगा। इस पर देवों ने अश्विनों के द्वारा एक अश्वमुख यज्ञ के कबंध पर लगा दिया (पं. ब्रा. ७.५.६; तै. आ. ५.१; तै. सं. ४.९.१)।

पौराणिक साहित्य में--यही कथा स्कंद पुराण आदि पौराणिक साहित्य में कुछ मामूली फर्क के साथ दी गयी है। एक बार देवाताओं की प्रतियोगिता में विष्णु सर्वश्रेष्ठ देव सिद्ध हुआ। इस कारण क्रुद्ध हो कर, ब्रह्मा ने उसे उसका मस्तक टूट जाने का शाप दिया। आगे चल कर एक अश्वमुख लगा कर यह देवताओं के यज्ञ में शामिल हुआ। यज्ञसमाप्ति के पश्चात् इसने धर्मारण्य में तप किया, जहाँ शिव की कृपा से इसका अश्वमुख नष्ट हो कर इसे अपना पूर्वरूप प्राप्त हुआ।

हयग्रीव असुर का वध--पौराणिक साहित्य में हयग्रीव एवं मधुकैटभ असुरों का वध करने के लिए श्रीविष्णु का हयग्रीव नामक अवतार होने का निर्देश प्राप्त है। एक बार हयग्रीव नामक असुर ने पृथ्वी में स्थित वेदों का हरण किया। उस पर ब्रह्मादि सारे देव हयग्रीव की शिकायत ले कर विष्णु के पास गये। पश्चात् विष्णु आदि देव हयग्रीव के पास पहुँच गये, जहाँ इन्होंने देखा कि, वह असुर भूमि पर अपने धनुष रख कर पास ही सो गया है। तदुपरांत विष्णु ने पास ही स्थित दीमक की सहायता से हयग्रीव असुर के धनुष की प्रत्यंचा को तोड़ डाला, एवं उसका नाश किया।

हयग्रीव के धनुष की प्रत्यंचा टूटते ही विष्णु का स्वयं का मुख भी टूट गया, जो आगे चल कर विश्वकर्मन् की सहायता से पुनः जोड़ा गया। उस समय विश्वकर्मन् ने विष्णु को जो मुख प्रदान किया था, वह अश्व का था। इस कारण हयग्रीव असुर का वध करनेवाले इस अवतार को 'हयग्रीव' नाम प्राप्त हुआ (दे. भा. १.५)।

देवी भागवत के अनुसार, हयग्रीव असुर को देवी का आशीर्वाद था कि, केवल 'हयग्रीव' नाम धारण करनेवाला व्यक्ति ही उसका वध कर सकती है। इस कारण हयग्रीव का अवतार ले कर विष्णु को इसका वध करना पड़ा। विष्णु के इस अवतार का निर्देश महाभारत में भी प्राप्त है (म. उ. १२८.४९; शां. १२२.४६; ३२६.५६)।

रसातल में रहनेवाले मधु एवं कैकटक नामक राक्षसों का वध भी इसी अवतार के द्वारा होने का निर्देश महाभारत में प्राप्त है (म. शां. ३३५.५२-५५; भा. ५. १८.१-६)।

क्रम-पाठ—इसीके आराधना से पंचाल ऋषि ने वेदों का क्रमपाठ प्राप्त किया था (म. शां. ३३५.६९-७१)।

२. एक असुर, जो कश्यप एवं दिति के पुत्रों में से एक था (पद्म. उ. २३०)। इसका जन्म पूर्वकल्प की रात्रि में हुआ था। पृथ्वीप्रलय के समय इसने वेदों का हरण किया जिन्हें हयग्रीव का अवतार ले कर श्रीविष्णु ने पुनः प्राप्त किया (हयग्रीव देखिये)। भागवत के अनुसार, इसका

वध हयग्रीव अवतार के द्वारा नहीं, बल्कि विष्णु के मत्स्यावतार के द्वारा हुआ था (भा. ८.२४.९-५७)।

३. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। यह वृत्र का (भा. ६.१०.१९); हिरण्यकशिपु का (भा. ७.२.४); एवं तारकासुर का अनुगामी था।

४. एक असुर, जो नरकासुर का प्रमुख अनुयायी, एवं उसके राज्य की रक्षा करनेवाले पाँच प्रमुख असुरों में से एक था। श्रीकृष्ण ने इसका वध किया (म. स. परि. १. १९.१३७७; उ. १२८.४९)।

५. एक राजा, जिसने क्षात्रधर्मानुसार उत्तम रीति से राज्य कर मुक्ति प्राप्त की थी (म. शां. २५.२२-३३)।

६. विदेहवंश का एक कुलांगार राजा (म. उ. ७२. १५)।

हयशिरस्--विष्णु के हयग्रीव नामक अवतार का नामांतर (हयग्रीव देखिये)।

हर—एकादश रुद्रों में से एक (मत्स्य. ५.२९)।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था। यह सुबाहु राक्षस के रूप में पृथ्वी पर अवतीर्ण हुआ था (म. आ. ६१.२४)।

३. एक असुर, जो विभीषण का अमात्य था। यह मालिन् राक्षस का पुत्र था।

४. रामसेना का एक प्रमुख वानर (वा. रा. यु. २७.३)।

हरकल्प—एक सैंहिकेय असुर, जो विप्रचित्ति एवं सिंहिका के पुत्रों में से एक था। परशुराम ने इसका वध किया (वायु. ६८.१९)।

हरप्रीति—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार गण। पाठभेद-'रसद्वीचि'।

हरयाण--एक दाता, जिसने विश्वमनस् को दान प्रदान किया था (ऋ. ८.२५.२२)। ऋग्वेद में इसका निर्देश उक्षण्यायन एवं वरोसुवाषन् के साथ प्राप्त है। सायणाचार्य के अनुसार, ये तीनों स्वतंत्र व्यक्ति न हो कर, हरयाण एवं उक्षण्यायन ये दोनो नाम एक ही वरोसुषामन् की उपाधियाँ होगी (नि. ५.१५.)।

हरि—श्रीकृष्ण का एक नाम, जो चतुर्व्यूह में से एक माना जाता है (म. शां. २२१.८-१७)।

२. एक असुर, जो तारकाक्ष नामक असुर का पुत्र था। इसने तपस्या के द्वारा ब्रह्मा को प्रसन्न कर, असुरों के तीनों पुरों में मृतसंजीवनी वापियों का निर्माण किया था।

३. अकंपन राजा का पुत्र, जो अस्त्रविद्या में पारंगत एवं युद्ध में इंद्र के समान पराक्रमी था। भारतीय युद्ध में यह पांडवों के पक्ष में शामिल था, जहाँ कौरव योद्धाओं के द्वारा इसकी मृत्यु हो गयी (म. द्रो. परि. १.२८. ४७; शां. २४८.७)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'अविकंपक'।

४. पांडव पक्ष का एक चैद्य राजा, जो भारतीय युद्ध में कर्ण के द्वारा मारा गया था (म. क. ४०.५०)।

५. यज्ञ एवं दक्षिणा के पुत्र सुयम का नामांतर। देवताओं का दुःख हरण करने के कारण ब्रह्माने इसे यह नाम प्रदान किया था (भा. २.७.२)।

६. तामस मन्वंतर का एक देवगण।

७. तामस मन्वंतर का एक अवतार, जो हरिमेधस् एवं हरिणी के पुत्रों में से एक था। विष्णु के इसी अवतार ने गजेन्द्र का उद्धार किया था (भा. ८. ३१)।

८. गरुड के पुत्रों में से एक।

९. अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

१०. (स्वा. प्रिय.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार ऋषभ एवं जयन्ती के पुत्रों में से एक था। इसीने ही निमि को 'भागवतोत्तमधर्म' का उपदेश किया था (भा. ११.२.४५)।

११. रावण पक्ष का एक असुर।

१२. हरिहरपुर का एक कर्मठ ब्राह्मण, जिसके दुराचारी पत्नी को एक व्याघ्र ने खा डाला (पद्म. उ. १८७)।

हरिकर्णी--अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हरिकेश--गंधमादन पर्वत में रहनेवाले रत्नभद्र नामक यक्ष का एक पुत्र, जो शिव के कृपाप्रसाद से गणेश बन गया (मत्स्य. १८०; पूर्णभद्र २. देखिये)।

२. वसुदेव के श्यामक नामक भाई का एक पुत्र। इसकी माता का नाम शरभूमि था (भा. ९.२४.४२)।

हरिजटा--एक राक्षसी, जो रावण के द्वारा अशोकवन में सीता के संरक्षणार्थ रक्खी गयी थी (वा. रा. सुं. २३.५)।

हरिण—ऐरावतकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.१०)।

२. एक नेवला, जिसका निर्देश महाभारत के विडालोपाख्यान में प्राप्त है (म. शां. १३६.३० पाठ)।

हरिणाश्व—एक राजा, जिसे रघुराजा के द्वारा दिव्य खड्ग की प्राप्ति हुई थी। वही खड्ग आगे चलकर इसने शुनक राजा को प्रदान किया था (म. शां. १६०.७७)।

हरिणी—तामस मन्वंतर के हरि नामक अवतार की माता, जिसके पति का नाम हरिमेधस् था।

२. हिरण्यकशिपु असुर की एक कन्या, जो विश्वपति नामक असुर की पत्नी थी। इसे रोहिणी नामांतर भी प्राप्त था (म. व. २११.१८)।

हरित—(सू. इ.) एक राजा, जो हरिश्चंद्र राजा का पौत्र, एवं रोहित राजा का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम चंप था। मत्स्य में इसे वृक कहा गया है (भा.१०.८.१)।

२. शाल्मलिद्वीप में स्थित हरितवर्ष का एक राजा, जो स्वायंभुव मनु के वपुष्मत् नामक पुत्र का पुत्र था (मार्कं. ५०.२८; ब्रह्मांड. २.३२.३२)।

३. रुद्रसावर्णि मन्वंतर का एक देवगण।

४. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो युवनाश्व राजा का पुत्र था।

५. (सो. यदु.) यदु राजा का एक पुत्र, जो उसे धूम्रवर्णा नामक नागकन्या से उत्पन्न हुआ था। इसने समुद्रद्वीप में स्वतंत्र राज्य की स्थापना की। आगे चल कर उसी द्वीप में स्थित मद्गुर नामक गणों का यह प्रमुख बन गया (ह. वं. २.३८.२; २९.३४)।

हरित काश्यप—एक आचार्य, जो शिल्प काश्यप नामक आचार्य का शिष्य, एवं असित वार्षगण नामक आचार्य का गुरु था (बृ. उ. ६.५.३ काण्व.)।

हरितक—अंगिराकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हरिताश्व—दक्षिण देश का एक राजा, जो इल राजा का पुत्र था (पद्म. सृ. ८)।

हरिदत्त—एक ब्राह्मण, जो हिमालय में रहनेवाले विमल नामक ब्राह्मण का पुत्र था (पद्म. उ. २०७; विमल ३. देखिये)।

हरिदास—एक वानर राजा, जो पुलह एवं श्वेता के पुत्रों में से एक था (ब्रह्मांड. ३.७.१८१)।

हरिद्रक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग।

हरिधामन्—एक ऋषि, जो बीस अक्षरों से युक्त कृष्णमंत्र का पाठ करने से, अगले जन्म में रंगवेणी नामक गोपी बन गया (पद्म. पा. ७२)।

हरिप्रिया—कृष्ण की एक पत्नी (पद्म. पा. ७०)।

हरिप्रीति—अत्रिकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हरिबभ्रु—युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित ऋषि (म. स. ४.१४)।

हरिभद्रा—कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जो पुलह ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्रों में वानर, किन्नर, एवं किंपुरुषयोनि के लोग प्रमुख थे (ब्रह्मांड. ३.७.१७२)।

हरिमंत आंगिरस—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ९.७२)।

हरिमित्र—एक ब्राह्मण, जिसकी कथा 'कमला एकादशी' के व्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है।

हरिमेध—एक व्यक्ति, जिसे सुमेध ऋषि ने तुलसी-माहात्म्य कथन किया था (स्कंद. २.४.८)।

हरिमेधस्—तामस मन्वन्तर के अवतार का पिता।

२. एक राजा, जिसके द्वारा किये गये सर्पसत्र को आधारभूत मान कर, जनमेजय ने अपना सर्पसत्र आयोजित किया था। इसकी कन्या का नाम ध्वजवती था, जो पश्चिम दिशा में निवास करती थी (म. उ. १०८.१३)।

हरिलोमन्—रामसेना का एक वानर (वा. रा. यु. ७३)।

हरिवर्मन्—(सो. तुर्वसु.) एक राजा, जिसके पुत्र का नाम एकवीर था। वंशावलि में इसका नाम अप्राप्य है (एकवीर देखिये)।

हरिवर्ष—(स्वा. प्रिय.) निषध देश का एक राजा, जो आग्नीध्र एवं पूर्वचित्ति का पुत्र था (भा. ५.२.१९-२३)। आगे चल कर इसका देश इसके ही 'हरिवर्ष' नाम से सुविख्यात हुआ (मार्कं. ५०.३५)। यह देश हेमकूट पर्वत के उत्तर में स्थित था, जहाँ से अर्जुन ने अपने उत्तरदिग्विजय के समय करभार प्राप्त किया था।

हरिवर्ष आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य (पं. ब्रा. ८.९.४.५)।

हरिवाहन—(सो. ऋक्ष.) ऋक्षवंशीय मणिवाहन राजा का नामान्तर।

हरिवीर—एक राजा, जो अपने नास्तिक मतों के कारण विदैवत नामक पिशाच बन गया (पद्म. पा. ९५; विदैवत देखिये)।

हरिशर्मन्—एक विष्णुभक्त ब्राह्मण, जिसकी कथा अन्नदान का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. क्रि. २०-२१)।

हरिश्चंद्र वैधस त्रैशंकव—एक सुविख्यात इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो त्रिशंकु राजा का पुत्र था। इसकी माता का नाम सत्यवती था (म. स. ११.१३९*)। देवराज वसिष्ठ इसका गुरु था। शैब्या तारामती इसकी पत्नी थी (दे. भा. ७.१८; रोहित १. देखिये)।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे 'वैधस' (विधस् राजा का वंशज), एवं 'ऐक्ष्वाक' (इक्ष्वाकु राजा का वंशज) कहा गया है। ऐतरेय ब्राह्मण में इसकी कुल सौ पत्नियाँ होने का निर्देश प्राप्त है, एवं वरुण देवता को अपना रोहित नामक पुत्र बलि के रूप में प्रदान करने के इसके आश्वासन का अस्पष्ट निर्देश वहाँ प्राप्त है (ऐ. ब्रा. ७.१४.२; सां. श्रौ. १५.१७)।

महाभारत में--इस ग्रंथ में इसे समस्त भूपालों का सम्राट् कहा गया है, एवं अपने जैत्र नामक रथ में बैठ अपने शस्त्रों के प्रताप से सातों द्वीपों पर विजय प्राप्त करने का निर्देश वहाँ प्राप्त है। इसके द्वारा किये गये राजसूय यज्ञ के कारण इसे इंद्रसभा में स्थान प्राप्त हुआ था, एवं इसके ही उदाहरण से प्रभावित हो कर पाण्डु राजा ने अपने पुत्र युधिष्ठिर से राजसूय यज्ञ करने का संदेश स्वर्ग से भेजा था (म. स. ११.५२-७०)।

विश्वामित्र से विरोध—अपने पिता त्रिशंकु के समान इसका पुरोहित सर्वप्रथम विश्वामित्र ही था। किन्तु आगे चलकर इक्ष्वाकुवंश के भूतपूर्व पुरोहित वसिष्ठ देवराज की प्रेरणा से अपने राजसूय यज्ञ के समय इसने विश्वामित्र ऋषि का अपमान किया। पश्चात् इस अपमान के कारण विश्वामित्र ने इसका पौरोहित्य छोड़ दिया, एवं देवराज वसिष्ठ पुनः एक बार इसका पुरोहित बन गया (विश्वामित्र देखिये)।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में विश्वामित्र ऋषि के द्वारा इसे अनेकानेक प्रकार से त्रस्त करने की कल्पनारम्य कथाएँ प्राप्त हैं (मार्क. ८-९)। ब्रह्म के अनुसार, विश्वामित्र के दक्षिणा की पूर्ति के लिए इसे स्वयं को, अपनी पत्नी तारामती को, एवं पुत्र रोहित को बेचना पड़ा। इनमें से तारामती एवं रोहित को इसने एक वृद्ध ब्राह्मण को, एवं स्वयं को एक स्मशानाधिकारी चांडाल को बेच दिया।

आगे चल कर, विश्वामित्र ने अपनी माया से रोहित का सर्पदंश के द्वारा वध कराया। अपने पुत्र की मृत्यु से शोकविह्वल हो कर यह एवं तारामती अग्निप्रवेश के लिए उद्यत हुए। किन्तु वसिष्ठ एव देवों ने इस आपत्प्रसंग से इसे बचाया, एवं इसका विगत वैभव एवं राज्य पुनः प्राप्त कराया (ब्रह्म. १०४; मार्क. ७-८)। पुराणों में निर्दिष्ट ये सभी कथाएँ, वसिष्ठ एवं विश्वामित्र का पुरातन विरोध कल्पनारम्य पद्धति से चित्रित करने के लिए दी गयी प्रतीत होती है।

पुत्रबलि--यह दीर्घकाल तक निःसंतान था। आगे चल कर वरुण की कृपाप्रसाद से इसे रोहित नामक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसके बड़ा होते ही पुत्रबलि के रूप में प्रदान करने का आश्वासन इसने दिया था। किन्तु आगे चल कर रोहित ने अपनी बलि देने से इन्कार कर दिया, एवं वह अरण्य में भाग गया। वरुण को दिया गया आश्वासन पूर्ण न होने के कारण यह 'वरुण रोग' (जलोदर) से पीड़ित हुआ। यह ज्ञात होते ही रोहित अरण्य से लौट आया, एवं अपने स्थान पर शुनःशेप नामक ब्राह्मणकुमार उसने यज्ञबलि के लिए तैयार किया। किन्तु विश्वामित्र ने शुनःशेप की रक्षा की (रोहित एवं शुनःशेप देखिये)।

हरिश्रवस्--(सो. कुरु.) धृतराष्ट्र के शतपुत्रों में से एक।

हरिस्वामिन्--एक ब्राह्मण, जिसकी कन्या का नाम सुलोचना था (सुलोचना देखिये)।

हारिषेण--ब्रह्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

हरी--कश्यप एवं क्रोधा की एक कन्या, जो इस संसार के सिंह, वानर, अश्व एवं लकडबग्घों की माता मानी जाती है (म. आ. ६०.६२)।

हर्यक्ष--(स्वा. उत्तान.) एक राजा, जो पृथु राजा एवं अर्चिस् का पुत्र था। अपने पिता की मृत्यु के पश्चात् यह उसके पूर्व साम्राज्य का अधिपति बन गया।

२. कुण्डल नगरी के सुरथ राजा का पुत्र। इसके पिता के द्वारा राम के अश्वमेधीय अश्व पकड़ लिये जाने के समय, इसने राम की सेना के साथ युद्ध किया था (पद्म. पा. ४९)।

हर्यंग--(सो. अनु.) एक राजा, जो मत्स्य के अनुसार चंप राजा का पुत्र, एवं भद्ररथ राजा का पिता था (मत्स्य. ४८.९८-९९)।

अपने पिता चंपक को यह पूर्णभद्र वैभाण्डकि ऋषि की कृपा से उत्पन्न हुआ था। वायु में इसे चित्ररथ राजा का पुत्र कहा गया है (वायु. ९९.१०७)। इसके द्वारा किये गये अश्वमेध यज्ञ में, इसके गुरु पूर्णभद्र ने अपने मंत्रप्रभाव से इंद्र का ऐरावत लाया था (ब्रह्म. १३.४३; ह. वं. १.३१; मत्स्य. ४८.९८)।

हर्यद्वन्त--(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो वायु के अनुसार जय राजा का पुत्र था (वायु. ९३.९)। विष्णु एवं भागवत में इसे क्रमशः हर्षवर्धन एवं हर्यवन कहा गया है।

हर्यन्त प्रागाथ--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. ८.७२)।

हर्यश्व—प्राचेतस दक्ष के दस हजार पुत्रों का सामुहिक नाम।

२. (सू. इ.) एक इक्ष्वाकुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु, एवं वायु के अनुसार दृढाश्व राजा का पुत्र, एवं निकुंभ राजा का पिता था (भा. ९.६.२४)। मत्स्य में इसे प्रमोद राजा का पुत्र कहा गया है (मत्स्य. १२.३३)।

३. (सू. इ.) अयोध्या नगरी का एक राजा, जो भागवत के अनुसार अनरण्य राजा का, विष्णु के अनुसार पृषदश्व राजा का, एवं वायु के अनुसार त्रसदस्यु राजा का पुत्र था।

एक बार ययातिकन्या माधवी के साथ गालव ऋषि इसकी राजसभा में आये, एवं उन्होंने दो सौ श्यामकर्ण अश्वों की माँग इससे की। पश्चात् इसने गालव को दो सौ अश्व दे कर, एक संतान पैदा कराने के लिए माधवी को अपनी पत्नी बना ली। माधवी के गर्भ से इसे वसुमनस् नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। पुत्रोत्पत्ति के बाद इसने माधवी को गालव ऋषि के पास वापस दे दिया (म. उ. ११४.२०)।

परिवार—माधवी के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित दो पत्नियाँ थीः—१. मधुमती, जो मधु दैत्य की कन्या थी, एवं जिससे इसे मधु नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ह. वं. २.३७); २. दृषद्वती, जिससे इसे अरुण नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (ब्रह्मांड. ३.६३.७५)।

४. काशीदेश का एक राजा, जो काशीराज सुदेव राजा का पिता, एवं दिवोदास का पितामह था। हैहय राजा वीतहव्य के पुत्रों ने इसका वध किया (म. अनु. ३०.१०-११)।

५. (सू. निमि.) विदेह देश का एक राजा, जो धृष्टकेतु जनक राजा का पुत्र, एवं मनु राजा का पिता था।

हर्यश्वि—नीलपराशरकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हर्यात्मन्—अट्ठाईस व्यासों में से एक।

हर्ष—धर्म के तीन पुत्रों में से एक। इसकी माता का नाम तुष्टि, एवं अन्य दो भाइयों के नाम शम एवं काम थे। इसकी पत्नी का नाम नन्दा था (म. आ. ६०. ३१-३२)।

हर्षण—विश्वरूप नामक असुरपुरोहित का पुत्र, जिसकी माता का नाम विष्टि था। यमधर्म की उपासना कर इसने अपने मातापितरों का दुष्टरूप नष्ट किया (ब्रह्म. १६५)।

हर्षवर्धन—क्षत्रवंशीय हर्यद्वन्त राजा का नामांतर।

हल—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हलधर—बलराम का नामान्तर (बलराम देखिये)।

हलमय—विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार। पाठभेद—'हलयम'।

हला—अत्रिऋषि की पत्नी (ब्रह्मांड. ३.८.७५)।

हलिक—कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१. १५)।

हलीसक—वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.५)। पाठभेद—'हलीमक'।

हवन—ग्यारह रुद्रों में से एक (म. अनु. १५०.१३)।

हवि—स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि के पुत्रों में से एक था।

हविःश्रवस्—(सो. कुरु.) एक राजा, जो धृतराष्ट्र (प्रथम) राजा का पुत्र था (म. आ. ८९.५१)।

हविहन—स्वारोचिष् मनु का एक पुत्र।

२. एक धर्मप्रवण नरेश (म. अनु. १६५.५८)।

हविर्धान—एक तपःसिद्ध राजा, जो विजिताश्व एवं नभस्वती के पुत्रों में से एक था। इसकी पत्नी का नाम हविर्धानी था, जिससे इसे बर्हिषद, गय, शुक्ल, सत्य, जितव्रत एवं कृष्ण नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (भा. ४. २४.८)।

हविर्धान आंगि—एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०. ११.१२)।

हविर्धानी—हविर्धान राजा की पत्नी।

हविर्भू—कर्दम एवं देवहुति की एक कन्या, जो पुलस्त्य ऋषि की पत्नी थी। इसके पुत्रों के नाम अगस्त्य एवं विश्रवस् थे (भा. ३.२४.२२)।

हविष्कृत् आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य, जिसका निर्देश हविष्मत् आंगिरस नामक आचार्य के साथ प्राप्त है (पं. ब्रा. ११.१०.९-१०; २०.११.३; तै. सं. ७.१.४.१)।

हविष्पंद—विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

हविष्मत्—चाक्षुष मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

२. धर्मसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

३. इंद्रसभा का एक ऋषि (म. स. ७.११)।

४. मरीचिगर्भलोक में निवास करनेवाला एक पितृसमुदाय, जिसकी पूजा क्षत्रियों के द्वारा की जाती है। इनकी पत्नी का नाम कुहू था। इनकी मानसकन्या का

नाम यशोदा था, जो अंशुमत् राजा की पत्नी, एवं दिलीप राजा की माँ थी।

५. एक देव, जो अंगिरस् एवं सुरूपा के पुत्रों में से एक था (मत्स्य. १८६)।

हविष्मत् आंगिरस—एक सामद्रष्टा आचार्य, जिसका निर्देश हविष्कृत् आंगिरस नामक आचार्य के साथ प्राप्त है (हविष्कृत् आंगिरस देखिये)।

हविष्मती—अंगिरस् ऋषि की पाँच कन्याओं में से एक (म. व. २०८.६)।

हवीन्द्र—स्वारोचिष मन्वन्तर का प्रजापति, जो वसिष्ठ ऋषि का एक पुत्र था।

हव्य—स्वायंभुव मनु का एक पुत्र।

२. हव्यवाहन नामक दक्षसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षि का नामान्तर।

३. सुख देवों में से एक।

४. आद्य देवों में से एक।

हव्यघ्न—एक राक्षस, जो भरद्वाज ऋषि के यज्ञाग्नि के धुएँ से उत्पन्न हुआ था। एक बार भरद्वाज ऋषि ने गौतमी नदी के किनारे अपनी पैठीनसी नामक पत्नी के साथ एक यज्ञ प्रारंभ किया। उस यज्ञ के धुएँ में से यह उत्पन्न हुआ, एवं हविर्द्रव्य भक्षण करने लगा।

भरद्वाज ऋषि के द्वारा पूछे जाने पर इसने कहा, 'मै ब्रह्मा के द्वारा शापित एक अभागी व्यक्ति हूँ, एवं मेरा नाम कृष्ण है। मेरी प्रार्थना है कि, आप मुझे गंगोदक, सुवर्ण एवं गोघृत एवं सोम से 'प्रोक्षण' करे, जिससे मैं मुक्त हो जाऊँगा'।

इसकी प्रार्थना के अनुसार, भरद्वाज ऋषि ने प्रोक्षण किया, जिस कारण यह मुक्त हुआ (ब्रह्म. १३३)।

हव्यप—रैवत मनु का एक पुत्र।

२. रौच्य मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

हव्यवत्—रैवत मनु का एक पुत्र।

हव्यवाह—धर नामक वसु का एक पुत्र।

२. पवमान नामक अग्नि का एक पुत्र।

हव्यवाहन—दक्षसावर्णि मन्वन्तर के सप्तर्षियों में से एक।

हस्त—दक्ष की कन्या, जो सोम की पत्नी थी।

२. वसुदेव एवं रोचना के पुत्रों में से एक (भा. ९.२४.४९)।

हस्तिकर्ण—एक नाग, जो कश्यप एवं कद्रू के पुत्रों में से एक था (म. आ. ३१.१४)।

हस्तिदान—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार ऋषिगण।

हस्तिन्—(सो. पूरु.) एक सुविख्यात पूरुवंशीय राजा, जो भागवत, विष्णु एवं मत्स्य के अनुसार बृहत्क्षत्र राजा का, एवं वायु के अनुसार सुहोत्र राजा का पुत्र था (भा. ९.२१.२०-२१; वायु. ९९.१६५)। महाभारत में इसे सुहोत्र एवं जयंती का पुत्र कहा गया है, एवं इसकी पत्नी का नाम त्रैगर्ती यशोदा (यशोधरा) दिया गया है, जिससे इसे विकुंठन नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (म. आ. ९०.३६)। इसीने ही हस्तिनापुर नगर को नया वैभव प्राप्त करा दिया, जिस कारण उस नगर को 'हस्तिनापुर' नाम प्राप्त हुआ।

२. (सो. कुरु.) धृतराष्ट्र (प्रथम) राजा का एक पुत्र।

हस्तिपद, हस्तिपिण्ड एवं हस्तिभद्र—कश्यपकुलोत्पन्न तीन नाग (म. आ. ३१.९; १४; उ. १०१.१३)।

हस्तिमुख—रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६)।

हस्तीन्द्र—स्वारोचिष मन्वन्तर का एक प्रजापति, जो कश्यप ऋषि का एक पुत्र था।

हारव—एक राक्षस, जो ब्रह्मा के अश्रुबिन्दुओं से उत्पन्न हुआ था। शिवलिंग से निकली हुई एक ज्योति के कारण, यह भस्म हुआ (स्कंद. ५.२.४८)।

हार-हूण—पश्चिमभारत का एक लोकसमूह, जिसे नकुल ने अपने पश्चिमदिग्विजय में जीता था (म. स. २९.११)।

हारिकर्णि—अंगिरस् कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हारिकर्णिपुत्र—एक आचार्य, जो भरद्वाजीपुत्र नामक आचार्य का शिष्य था (बृ. उ. ६.४.३०)।

हारितक—कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार

हारितायन—सासिसाहारितायन नामक कश्यपकुलोत्पन्न गोत्रकार का नामान्तर।

हारिद्रव—एक शाखाप्रवर्तक आचार्य, जो मैत्रायणीय शाखान्तर्गत माना जाता है। निरुक्त में इसके प्रणीत मतों का निर्देश 'हारिद्राविक' नाम से किया गया है (नि. १०.५)।

इसके द्वारा लिखित 'हारिद्राविक ब्राह्मण' नामक ग्रंथ का उद्धरण प्राप्त है, किन्तु वह ग्रंथ मूल स्वरूप में आज अप्राप्य है।

हारिद्रुमत गौतम—एक आचार्य, जो सत्यकाम जाबाल नामक आचार्य का शिष्य था (छां. उ. ४.४.३)।

हारीत—एक अंगिरसकुलोत्पन्न तत्त्वज्ञ, जिसके द्वारा प्रणीत संन्यास मार्ग का तत्त्वज्ञान 'हारीतगीता' नाम से सुविख्यात है। यही 'हारीतगीता' भीष्म ने युधिष्ठिर को कथन की (म. शां. २६९)।

२. एक ऋषि, जो युधिष्ठिर की सभा में उपस्थित था। शरशय्या पर पडे हुए भीष्म से भी यह मिलने आया था (म. व. २७.२३.)।

३. एक स्मृतिकार, जिसके पुत्र का नाम कमठ था (स्कंद. १.२.५१)। इसके द्वारा विरचित 'लघुहारीत स्मृति' एवं 'वृद्ध हारीत स्मृति' नामक दो स्मृति ग्रंथ आनंदाश्रम स्मृतिसमुच्चय में प्राप्त है।

इसमें से 'लघुहारीत स्मृति' में ११७ श्लोक है, एवं उसमें प्रायश्चित्त का विचार किया गया है।

अन्य स्मृतिग्रंथ—इसके द्वारा विरचित 'वृद्धहारीत स्मृति' के ११ अध्याय, एवं ३५४ श्लोक है, एवं उसमें श्रीविष्णु की उपासना आदि की जानकारी प्राप्त है। इसकी अन्य एक स्मृति व्यंकटेश्वर प्रेस के स्मृतिसंग्रह में प्राप्त है, जिसमें सात अध्याय हो कर चातुर्वर्ण्य के आचारादि का विवेचन वहाँ प्राप्त है।

अभिमत—ब्रह्मचर्य एवं अभक्ष्य के संबंध में इसके मतों के उद्धरण आपस्तंब एवं बौधायन धर्मसूत्र में प्राप्त है (आप. ध. १.१३.१०; १८.२; १९.१२; बौ. ध. २. १.२.२१)। ब्रह्मवादिनी स्त्रियों को उपनयन, एवं वेदाध्ययन का अधिकार मिलना चाहिये, ऐसा इसका अभिमत था (स्मृतिचं. १.२४)। इसके स्मृति में राजधर्म-विषयक भी अनेक अभिमत प्राप्त हैं, जो बहुशः अन्य स्मृतियों से लिए गये हैं।

अन्य ग्रंथ—इसके नाम पर एक शिक्षा ग्रंथ भी प्राप्त है।

४. (सू. इ.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार युवनाश्व राजा का, एवं विष्णु के अनुसार मांधातृ राजा का पुत्र था (भा. ९.७.१)। 'आंगिरस हारीत' नामक सुविख्यात ब्राह्मण इसीके ही वंशज माने जाते है।

५. विश्वामित्र ऋषि का एक पुत्र।

६. एक आचार्य, जो व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा में से रोमहर्षण नामक आचार्य का शिष्य था।

७. एक वैखानसवृत्ति ब्राह्मण, जिसने दिलीप राजा को माघस्नान का माहात्म्य कथन किया था। इस संबंध में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए, इसने दिलीप राजा को वसिष्ठ ऋषि से मिलने के लिए कहा था।

८. मौलिस्थान (मुलतान) में रहनेवाला एक ब्राह्मण, जिसके पुत्र के रूप में स्वयं नृसिंह देवता ने जन्म लिया था (पद्म. उ. १७७)।

९. एक वैयाकरण (तै. प्रा. १४.१८)।

हार्दिक्य—(सो. अंधक.) कृतवर्मन् नामक सुविख्यात यादव राजा का नामांतर (म. द्रो. ९०.८; भा. १०.७५. ६; कृतवर्मन् देखिये)। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसका पुत्र मार्तिकावत नगर की राजगद्दी पर अधिष्ठित हुआ (म. मौ. ८.६७)। यह अश्वपति नामक दैत्य के अंश से उत्पन्न हुआ था। भारतीय युद्ध में यह पांडवपक्ष में शामिल था (म. उ. १९.१७)।

हाल—वसिष्ठकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. (आंध्र. भविष्य.) एक सुविख्यात आंध्रवंशीय राजा, जो मत्स्य के अनुसार अरिक्तवर्ण राजा का, ब्रह्मांड एवं भागवत के अनुसार अनिष्टकर्मन् राजा का, एवं वायु के अनुसार नेमिकृष्ण राजा का पुत्र था। भागवत में इसे हालेय कहा गया है।

हालाहल—एक असुर, जो शिव एवं विष्णु के द्वारा मारा गया (दे. भा. ७.२९-३०)।

हालिङ्ग—एक आचार्य (श. ब्रा. १०.४.५.९)।

हालेय—आंध्रवंशीय हाल राजा का नामांतर (हाल २. देखिये)।

हासिनी—कुवेरभवन की एक अप्सरा (म. अनु. १९.१५)।

हाहा—एक गंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था (म. आ. ११४.४८)। यह कुवेरसभा का एक सदस्य था। यह ज्येष्ठ माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३५)। पाठभेद-'हा हा'।

हिंसा—लोभ एवं विकृती की एक कन्या, जो धर्म ऋषि की पत्नी थी।

हिंस्र—कौशिक ऋषि का एक पुत्र (पितृवर्तिन् देखिये)।

हिडिंब—एक नरमांसभक्षक राक्षसराज, जो किर्मीर राक्षस एवं हिडिंबा राक्षसी का भाई था (म. व. १२. ३२)। यह शाल के वृक्ष पर रहता था, एवं जंगल से जानेवाले पांथस्थों को भक्ष्य बनाता था। एक बार इसके जंगल में पांडव आ कर सो गये। उन्हें देख कर इसने अपनी बहन हिडिंबा को उनके पास भेजा, एवं उनका वध करने के लिए कहा। दैववशात् हिडिंबा राक्षसी भीमसेन पर मोहित हो गयी, एवं इसके द्वारा कहे गये कार्य को भूल बैठी। यह ज्ञान होते ही इसने भीमसेन पर आक्रमण

किया, एवं उससे युद्ध करना चाहा। पश्चात् हुए युद्ध में यह भीमसेन के द्वारा मारा गया (म. आ. १३९-१४२)।

हिडिंबा अथवा हिडिंबी—एक राक्षसी, जो राक्षसराज हिडिंब की बहन, भीमसेन पांडव की पत्नी, एवं घटोत्कच की माता थी। इसे कमलपालिका नामांतर भी प्राप्त था (म. आ १४३.१५६५*; पंक्ति. ४)। आसुरीसिद्धि के कारण, भूत एवं भविष्यकालीन घटनाओं का ज्ञान इसे रहता था (म. आ. परि. १.८७.४)।

युधिष्ठिर की शर्त के अनुसार, केवल एक ही पुत्र उत्पन्न होने के काल तक, यह भीमसेन की पत्नी बनी थीं। भीमसेन से घटोत्कच नामक पुत्र उत्पन्न होने पर, यह उससे विदा हो गयी (म. आ. १३९-१४३; भीमसेन पांडव देखिये)।

हिमवत्—एक पर्वत, जिसे पौराणिक साहित्य में एक देवता माना गया है। इसकी पत्नी का नाम 'पितृकन्या' मैना था, जिससे इसे क्रौञ्च एवं मैनाक नामक दो पुत्र, एवं अपर्णा, एकपर्णा, एवं एकपाटला नामक तीन कन्याएँ उत्पन्न हुई थी। इसकी तीन कन्याओं का विवाह क्रमशः महादेव, असित एवं जैगीषव्य से हुआ था (ह. वं. १;१८.१५-२४; मत्स्य. १३.८-९)।

हिरण्मय—(स्वा. प्रिय.) हिरण्मयवर्ष का एक राजा, जो आग्नीध्र राजा का पुत्र था (भा. ५.२.१९)। इसकी पत्नी का नाम श्यामा था। मार्कंडेय मे इसे 'हिरण्य' कहा गया है (मार्क ५०. ३७)।

२. एक दानव, जो कश्यप एवं दनु के पुत्रों में से एक था।

हिरण्य—अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. आग्नीध्रपुत्र हिरण्मय राजा का नामांतर।

हिरण्यक—एक दैत्य, जिसने वसिष्ठ के एक यज्ञ पर आक्रमण किया था। इसके आते ही सारे देव भयभीत हो कर छिप गये। किन्तु आगे चल कर वसिष्ठ ने इसका निवारण किया (ब्रह्म. १०३)

हिरण्यकशिपु—एक सुविख्यात असुर, जो दैत्य कुल का आदिपुरुष माना जाता हैं। दैत्यवंश में उत्पन्न हुए तीन इंद्रो में यह एक था; बाकी दो इन्द्रों के नाम प्रह्लाद, एवं बलि थे (वायु. ९७.८७-९१)। इन तीन दैत्य इन्द्रों के पश्चात्, इंद्रपद देवताओं के पक्ष में हमेशा के लिए चला गया (नारद. पूर्व. २१)। इस प्रकार हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद, एवं बलि ये तीन सर्वश्रेष्ठ सम्राट् कहे जा सकते हैं।

वंशकर दैत्य—कश्यप एवं दिति की 'दैत्य' संतानों में हिरण्यकशिपु, हिरण्याक्ष, एवं वज्रांग ये तीन पुत्र, एक सिंहिका नामक कन्या प्रमुख माने जाते हैं। हिरण्याक्ष एवं हिरण्यकशिपु दैत्यों के वंशकर प्रतीत होते हैं, क्यों कि, बहुत सारे दैत्यकुल इन्हींके पुत्रपौत्रों के द्वारा निर्माण हुए (वायु. ६७.५०; ब्रह्मांड. ३.५.३)। मगध देश का सुविख्यात राजा जरासंध भी इसी के ही अंश से उत्पन्न हुआ था (म. आ. ६१.५)।

जन्म—इसे हिरण्यकशिपु नाम क्यों प्राप्त हुआ इस संबंध में एक चमत्कृतिपूर्ण कथा पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। एक बार कश्यप ऋषि ने अश्वमेध यज्ञ किया। उस यज्ञ में प्रमुख ऋत्विजों के लिए सुवर्णासन रक्खे हुए थे। उस समय कश्यपपत्नी दिति गर्भवती थी, एवं दस हजार वर्षों से अपना गर्भ पेट में पाल रही थी। यज्ञ के समय वह यज्ञमंडप में प्रविष्ट हुई, एवं होतृ के लिए रक्खे हुए मुख्य सुवर्णासन पर जा बैठी। पश्चात् उसी सुवर्णासन में वह प्रसूत हुई, एवं उसका नवजात बालक वहीं सुवर्णासन पर अधिष्ठित हुआ। इस प्रकार जन्म से ही सुवर्णासन पर अधिष्ठित होने के कारण, इसे 'हिरण्यकशिपु' नाम प्राप्त हुआ (ब्रह्मांड ३.५.७-१२; वायु. ६७.५९)।

तपश्चर्या—इसके भाई हिरण्याक्ष का विष्णु के द्वारा वध होने के पश्चात् यह अत्यधिक क्रुद्ध हुआ, एवं इसने अपने भाई के वध का बदला लेने के लिए ब्रह्मा की कठोर आराधना प्रारंभ की। ब्रह्मा को प्रसन्न करने के लिए, इसने 'अधःशिर' रह कर सौ वर्षों तक कड़ी तपश्चर्या की। इस तपस्या के कारण ब्रह्मा अत्यधिक प्रसन्न हुआ, एवं उसने इसे पृथ्वी के किसी भी शत्रु से अवध्यत्व प्रदान किया। अवध्यत्व प्रदान करते समय ब्रह्मा ने इसे वर दिया कि, घर में या बाहर, दिन में या रात में, मनुष्य से अथवा पशु से, शस्त्र से अथवा अस्त्र से, सजीव से या निर्जीव से, शुष्क से या आर्द्र से, यह अवध्य रहेगा।

अत्याचार—ब्रह्मा के इस वर के कारण, इसे अपने बल का बड़ा ही घमंड उत्पन्न हुआ, एवं समस्त देवताओं का शत्रु बन कर यह पृथ्वी में अनेकानेक अत्याचार करने लगा।

प्रह्लादजन्म—यह जब तपस्यार्थ गया था, उस समय इसकी पत्नी कयाधु गर्भवती थी। इसकी अनुपस्थिति में नारद ने उसे विष्णुभक्ति का उपदेश दिया, जो

उसके गर्भ में स्थित बालक ने भी सुन लिया, जिस कारण वह जन्म से पूर्व ही विष्णुभक्त बन गया।

इस प्रकार हिरण्यकशिपु जैसे देवताविरोधी असुर के घर में ही, प्रह्लाद के रूप में एक सर्वश्रेष्ठ विष्णुभक्त का जन्म हुआ। आगे चल कर प्रह्लाद को शिक्षा देने के लिए नियुक्त किये गये गुरु ने भी उसे विष्णुभक्ति के पाठ सिखाये।

हिरण्यकशिपु को यह ज्ञात होते ही, इसने प्रह्लाद की विष्णुभक्ति नष्ट करने के लिए हर तरह के प्रयत्न किये, यही नहीं, प्रह्लाद का काफ़ी छल भी किया। किंतु प्रह्लाद अपने विष्णुभक्ति पर अटल रहा (प्रह्लाद देखिये)।

वध—एक बार यह अपने पुत्र प्रह्लाद की विष्णुभक्ति के संबंध में कटु आलोचना कर रहा था। उस समय पास ही स्थित एक खंबे के ओर दृष्टिक्षेप कर, इसने बडी ही व्यंजना से प्रह्लाद से कहा, 'सारे चराचर में भरा हुआ तुम्हारा विष्णु इस खंबे में भी होना चाहिये। तुम इसे बाहर आने के लिए क्यों नहीं कहते?'

इतना कहते ही उक्त खंबे से श्रीविष्णु का रौद्र नृसिंहावतार प्रकट हुआ; एवं उन्होंने अपने नाखुनों से सायंकाल के समय इसका वध किया। नृसिंह स्वयं अर्धमनुष्य एव अर्धपशु था। इस कारण, ब्रह्मा से प्राप्त अवध्यत्व के वरदान का भंग न करते हुए भी वह इसका वध कर सका।

पश्चात् प्रह्लाद के द्वारा प्रार्थना किये जाने पर, नृसिंह ने इसके सारे पूर्वपापों से इसे मुक्तता प्रदान की (नृसिंह देखिये)।

परिवार—इसकी निम्नलिखित तीन पत्नियाँ थी :— १. जंभकन्या कयाधु (भा. ६.१८.१२); २, उत्तानपादकन्या कल्याणी (पद्म. उ. २३८); ३. कीर्ति (वा.रा.सुं. २० २८)।

अपनी उपर्युक्त पत्नियों से इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थे :—१. प्रह्लाद; २. संह्लाद; ३. ह्लाद; ४. अनुह्लाद ५. शिबि; ६. बाष्कल (भा. ६.१८.१३; विष्णु. १.१७. १४०; ह. वं. १.३; वायु. ६७.७०; म. आ. ५९.१८)।

अपने इन पुत्रों के अतिरिक्त इसकी निम्नलिखित कन्याएँ भी थीं :—१. सिंहिका (भा. ६.१८.१३); २. हरिणी अथवा रोहिणी (म. व. २११.१८); ३. भृगुपत्नी दिव्या (वायु. ६५.७३; ६७.६७; ब्रह्मांड. ३.१.७४; भृगु देखिये)।

वंश—इसके पुत्रों से आगेचल कर, विभिन्न दैत्यवंशों का निर्माण हुआ, जिनकी संक्षिप्त जानकारी निम्न प्रकार है:—

(१) प्रह्लाद शाखाः—प्रह्लाद—विरोचन—गवेष्ठिन्, कालनेमि, जंभ, बाष्कल, शंभु।

(अ) विरोचन शाखाः—विरोचन—बलि, बाण (सहस्रबाहु,) कुंभनाभ, गर्दभाक्ष, कुशि आदि।

(ब) गवेष्ठिन् शाखाः—गवेष्ठिन्—शुंभ, निशुंभ, विश्वक्सेन।

(क) कालनेमि शाखाः—कालनेमि—ब्रह्मजित्, क्षत्रजित्, देवान्तक, नरान्तक।

(ड) जंभ शाखाः—जंभ—शतदुंदुभि, दक्ष, खण्ड।

(इ) बाष्कल शाखाः—बाष्कल—विराध, मनु, वृक्षायु, कुशलीमुख।

(फ) शंभु शाखाः—शंभु—धनक, असिलोमन्, नाबल, गोमुख, गवाक्ष, गोमत्।

२. ह्लद शाखाः—ह्लद—निसुंद, सुंद।

(अ) निसुंद शाखाः—निसुंद—मूक, जो अर्जुन के द्वारा मारा गया।

(ब) सुंद शाखाः—सुंद—मारीच, जो राम के द्वारा मारा गया।

(३) संह्लाद शाखाः—संह्लाद—निवातकवच।

(४) अनुह्लाद शाखाः—अनुह्लाद—वायु (सिनीवाली) —हलाहलगण।

(५) सिंहिका शाखाः—सिंहिका—सैंहिकेय गण (ब्रह्मांड. ३.५.३३-४५; वायु. ६७.७०-८१; म. आ. ५९.१७-२०)।

२. एक दानव, जिसने एक अर्बुद वर्षों के लिए सारे देवताओं का ऐश्वर्य शिव की कृपा से प्राप्त किया था। आगे चल कर इसने मेरुपर्वत को भी हिलाया था (म. अनु. १४.७३-७४)।

हिरण्यकेशिन्—एक सुविख्यात आचार्य, जो कृष्ण यजुर्वेद के तैत्तिरीय शाखान्तर्गत हिरण्यकेशिन् नामक शाखा का सूत्रकर्ता माना जाता है। इसके द्वारा प्रणीत शाखा खाण्डवीय शाखा का पोटविभाग माना जाता है।

इसका सही नाम सत्याषाढ था, जिस कारण इसके द्वारा प्रणीत श्रौतसूत्र 'सत्याषाढ श्रौतसूत्र' नाम से प्रसिद्ध है। आद्य कल्प में यह ब्रह्मदत्त नाम से सुविख्यात था (महादेव कृत वैजयंती प्रस्तावना, १२-१४)। स्कंदोपपुराण के अनुसार, इसने सह्याद्रि के पूर्व में स्थित परशुराम क्षेत्र में हरणकारि नदी के तट पर कड़ी तपस्या की, जिस कारण यह अनेकानेक सूत्रग्रंथों की रचना कर सका।

ग्रंथ--इसके द्वारा विरचित 'सत्याषाढ श्रौतसूत्र' सुविख्यात है, जिसके निम्नलिखित उपभाग समाविष्ट हैं:- १. सत्याषाढ धर्मसूत्र (अ. २६-२७); २. सत्याषाढ गृह्यसूत्र (अ. १९-२०); ३. शुल्बसूत्र (अ. २५)। इस सूत्र पर महादेव दिक्षित के द्वारा 'वैजयंती' नामक भाष्य प्राप्त है। इस सूत्रग्रंथ का अंतिम भाग भरद्वाज सूत्रों से लिया गया है। इस सूत्र का आपस्तंब सूत्रों से भी काफ़ी साम्य प्रतीत होता है।

हिरण्यकेशिन् लोग--इस शाखा के लोग सह्याद्रि के पश्चिम में स्थित चिपलून आदि गाँवों में रहते है। इन लोगों का निर्देश पाँचवी शताब्दी इ. स. के कोंगणी राजाओं के ताम्रपट में प्राप्त है। इससे प्रतीत होता है कि, हिरण्यकेशिन् आचार्य, एवं इसके द्वारा विरचित सूत्रों का रचनाकाल पाँचवी शताब्दी इ. स. पूर्व में कहीं होगा (इन्डि. ॲन्टि. ४.१३६)।

हिरण्यगर्भ--उत्तम मन्वन्तर में उत्पन्न ऊर्ज नामक ऋषि का पिता।

हिरण्यगर्भ प्राजापत्य--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऋ. १०.१२१)।

हिरण्यद--इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७.१६)।

हिरण्यदत् बैद--एक तत्त्वज्ञानी आचार्य (ऐ. ब्रा. ३. ६.३; ऐ. आ. २.१.५)। इसके द्वारा बषट्कार का वर्णन किया है, एवं मानवीय प्राण अग्निरूप होने का अभिमत इसके द्वारा प्रकट किया गया है (ऐ. ब्रा. ३.७)।

हिरण्यधनुस्--एक निषाद राजा, जो एकलव्य का पिता था (म. आ. १२३.२४)। इसे हिरण्यधेनु नामान्तर भी प्राप्त था।

हिरण्यनाभ--हिरण्यनाभ कौथुमि नामक आचार्य का नाम (कौथुमि देखिये)।

हिरण्यनाभ कौसल्य--कोसल देश का एक राजा, जिसके पुरोहित का नाम पर आटनार था (सां. श्रौ. १६.९.१३)। प्रश्नोपनिषद में भी इसका निर्देश प्राप्त है। यह स्वयं सामवेदी श्रुतर्षि, एवं योगाचार्य था। इसके पुत्र का नाम पुष्प था।

पौराणिक साहित्य में--भागवत के अनुसार यह विधृति राजा का, एवं विष्णु तथा वायु के अनुसार यह व्यास की परंपरा में से सुकर्मन् नामक आचार्य का शिष्य था, एवं इसके शिष्य का नाम कृत था। इसने सामवेद की १०५ संहिताएँ बना कर उन्हें अपने विभिन्न शिष्यों में बाँट दी थी (वायु. ८८.२०७)।

यह स्वयं योगाचार्य भी था, एवं योगविषय में पौष्यंजि नामक आचार्य का शिष्य, एवं याज्ञवल्क्य नामक आचार्य का गुरु था।

हिरण्यरेतस्--(स्वा. प्रिय.) कुशद्वीप का एक राजा, जो भागवत के अनुसार प्रियव्रत राजा के पुत्रों में से एक था। इसके निम्नलिखित सात पुत्र थे:--१. वसु; २. वसुदान; ३. दृढरुचि; ४. नाभिगुप्त; ५. सत्यव्रत; ६. विविक्त एवं ७. वामदेव।

अपने इन पुत्रों को इसने अपना कुशद्वीप का राज्य प्रदान किया था, जो आगे चल कर उन्हीं पुत्रों के नाम से सुविख्यात हुआ (भा. ५.१.२५; २०.१४)।

२. विश्वामित्रकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

हिरण्यरोमन् अथवा **हिरण्यलोमन्**--रैवत मन्वंतर के सप्तर्षियों में से एक।

२. रुक्मिणी के पिता भीष्मक का नामांतर (म. उ. १५५.१)।

हिरण्यवर्मन् दाशार्ण--एक राजा, जिसने अपनी कन्या का विवाह शिखण्डिन् के साथ किया था। आगे चल कर शिखण्डिन् के स्त्रीत्व की जानकारी होते ही, कुंपित हो कर इसने द्रुपद राजा पर आक्रमण किया (म. उ. १९०-१९३; शिखण्डिन् देखिये)।

हिरण्यवाह--कश्यपकुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. वासुकिकुलोत्पन्न एक नाग, जो जनमेजय के सर्पसत्र में दग्ध हुआ था (म. आ. ५२.६)। पाठभेद--'हिरण्यबाहु'।

हिरण्यशृंग--कुबेर का एक दूत।

हिरण्यस्तूप आंगिरस--एक वैदिक सूक्तद्रष्टा (ऐ. ब्रा. १.३२)। ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में ऋग्वेद के अन्य कई सूक्तों के प्रणयन का श्रेय भी इसे दिया गया है (ऋ. १.३१-३५; ९.४; ६९)। ऐतरेय ब्राह्मण में आंगिरस नाम से इसका स्पष्ट उल्लेख किया गया है (ऐ. ब्रा. ३.२४.११)।

एक व्यक्ति के नाते इसका निर्देश ऋग्वेद एवं शतपथ ब्राह्मण में प्राप्त है (ऋ. १०.१४९.५; श. ब्रा. १.६. ४.२)।

हिरण्यहस्त--वध्रिमती नामक स्त्री का एक पुत्र, जो उसे अश्विनों के द्वारा प्रदान किया गया था (ऋ. १. ११६.१३; ११७.२४; ६.६२.७; १०.३९.७)। ऋग्वेद में अन्यत्र इसे श्याव कहा गया है (ऋ. १०.६५.१२)।

२. एक प्राचीन ऋषि, जिसे मदिराश्व राजा ने अपनी सुमध्यमा नामक कन्या विवाह में दी थी (म. अनु. ५३. २३;१३७.२४; शां. २२६.३५)।

हिरण्याक्ष—एक दैत्य, जो कश्यप एवं दिति का एक पुत्र, तथा हिरण्यकशिपु का भाई था। यह स्वायंभुव मन्वंतर में उत्पन्न हुआ था (लिंग. १.९४)।

विष्णु से युद्ध—यह अत्यधिक पराक्रमी था, एवं देवों को काफ़ी त्रस्त करता था। अन्त में इसके भय से सारे देवगण भाग गये। पश्चात् विष्णु ने इसके साथ युद्ध प्रारंभ किया। इस युद्ध में प्रारंभ से ही विष्णु की विजय होने लगी। यह देख कर यह पृथ्वी ले कर भागने लगा। किन्तु विष्णु ने इसका पीछा किया एवं वराह रूप धारण कर इसका वध किया (पद्म. सृ. ७५)।

भागवत के अनुसार यह पृथ्वी ले कर समुद्र में भाग गया। वराहरूपी विष्णु ने पानी से पृथ्वी बाहर निकाली। इस समय वराह के पाँव के नीचे दब कर यह मारा गया (भा. ३.२८)।

इसके वध के पश्चात् इसके भाई हिरण्यकशिपु ने इसके वध का बदला देवों से लेना चाहा। किन्तु अन्त में वह भी नृसिंह अवतार के द्वारा मारा गया (हिरण्यकशिपु देखिये)।

परिवार—इसकी पत्नी का नाम रुषाभानु था, जिससें इसे निम्नलिखित पुत्र उत्पन्न हुए थेः—१. उत्कुर (शंबर) २. शकुनि; ३. कालनाभ; ४. महानाभ; ५. विक्रान्त (सुविक्रान्त); ६. भूतसंतापन (मृतसंतापन) (वायु. ६७.६७-६८; ब्रह्मांड. ३.५.३०-३२)। विष्णु एवं भागवत में इसके पुत्रों की नामावलि में झर्झर, धृत, वृक एवं हरिश्मश्रु ये पुत्र अधिक दिये गये हैं (विष्णु. १. २०.३; भा. ७.२.१५)। इसके ये सारे पुत्र-पौत्रादि परिवार के साथ तारकासुरयुद्ध में विनष्ट हुए।

२. एक यक्ष, जो मणिभद्र एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

३. एक असुर, जो वैश्वानरकन्या का पति था (भा. ६.६.३४)। मत्स्य में इसे मयासुरकन्या उपदानवी का पति कहा गया है।

४. विश्वामित्र का एक पुत्र।

५. वसुदेव के श्याम नामक एक भाई का पुत्र। इसकी माता का नाम शरभू अथवा शूरभूमि था (भा. ९. २४.४२)।

हीक—एक पिशाच, जो विपाशा नदी के तट पर निवास करता था। इसके साथी का नाम वही था (म. क. ३०.४४; वाहीक एवं वाह्लीक देखिये)। पाठभेद (भांडारकर संहिता)-'वाह्लीक'।

हीन—(सो. क्षत्र.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार सहदेव राजा का पुत्र, एवं जयसेन राजा का पिता था (भा. ९.१७.१७)।

हुंड—एक राक्षस, जो विप्रचित्ति दानव का पुत्र था। इसके पुत्र का नाम विहुंड था। पार्वती की कन्या अशोकसुंदरी पर इसका प्रेम था। किन्तु विवाह के प्रस्ताव को उसने नकार दिया। पश्चात् इसने स्त्री रूप धारण कर उसका हरण किया, उस समय उसने इसे शाप दिया, 'मेरा भावी पति नहुष तुम्हारा वध करेगा'।

नहुष से होनेवाले संभाव्य वध की आशंका से इसने उसका वध करना चाहा, किन्तु इसके सारे प्रयत्न असफल हुए। अन्त में उसने इसका वध किया (पद्म. भू. ११३-११८)।

हुत—अंगिरस्कुलोत्पन्न एक गोत्रकार।

२. सुख देवों में से एक।

हुतहव्यवह—धर नामक वसु के दो पुत्रों में से एक। दूसरे वसु का नाम द्रविण था (म. आ. ६०.२०)।

हूण—एक लोकसमूह, जो मध्य एशिया से आये हुए विदेशीय जातिसमूह में से एक था। नकुल ने अपने पश्चिम दिग्विजय में इन लोगों को जीता था (म. स. २९. ११)।

हूहू—एक गंधर्व, जो कश्यप एवं प्राधा के पुत्रों में से एक था। यह कुबेर की सभा का, एवं इंद्र की सभा का सदस्य था (म. स. परि. १.३.२; व. ४४.१४)। अर्जुन के जन्मोत्सव में भी यह उपस्थित था (म. आ. ११४. ४८)।

देवल ऋषि के शाप से इसे नक्रयोनि प्राप्त हुई थी। किन्तु आगे चल कर गजेंद्र के साथ इसे भी मुक्ति प्राप्त हुई (भा. ८.४.३; आ. रा. सार. ९)। यह आषाढ माह के सूर्य के साथ भ्रमण करता है (भा. १२.११.३६)।

हृत्स्वाशय आल्लकेय माहावृष राजन्-एक आचार्य, जो सोमशुष्म सात्ययज्ञि प्राचीनयोगी का शिष्य, एवं जनश्रुत काण्ड्विय नामक आचार्य का गुरु था (जै. उ. ब्रा. ३.४०.२)।

हृदिक अथवा **हृदीक**--(सो. क्रोष्टु.) एक भोजवंशीय यादव, जो कृतवर्मन् का पिता था (म. आ. ५७.५२५*)। भागवत, विष्णु एवं वायु में इसे स्वयंभोज राजा का पुत्र कहा गया है। कृतवर्मन् के अतिरिक्त इसके देवबाहु, शतधनु एवं देवमीढ नामक अन्य पुत्र भी थे (भा. ९. २४.२६)।

मत्स्य एवं पद्म में इसे विदूरथपुत्र राज्याधिदेव राजा का पुत्र कहा गया (पद्म. सृ. १३)।

हृद्य--इंद्रसभा में उपस्थित एक ऋषि (म. स. ७. ११)।

हृषीक--सुतार नामक शिवावतार का एक शिष्य।

हृषीकेतु--कपिल ऋषि के कोप से बचे हुए चार सगरपुत्रों में से एक (पद्म. उ. २०)।

हेति अथवा **हेतृ**--एक असुर, जो प्रहेति नामक असुर का भाई था। इसकी पत्नी का नाम कालकन्या भया था, जिससे इसे विद्युत्केश नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था (भा. ६.१०.२०; वा. रा. उ. ४.१४)। यह वृत्रानुयायी असुरों में से एक था।

इसकी कन्या का नाम सुकेशी, एवं इसके भाई प्रहेति की कन्या का नाम मित्रकेशी था। इन दोनों कन्याओं का विवाह दुर्जय नामक असुर से हुआ था, जिनसे उसे क्रमशः प्रभव एवं सुदर्शन नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे (वराह. १०)।

चैत्र माह के साथ भ्रमण करनेवाले असुरों की नामावलि में इसका निर्देश प्राप्त है।

हेम--(सो. अनु.) एक राजा, जो भागवत, विष्णु एवं वायु के अनुसार, उषद्रथ राजा का पुत्र, एवं सुतपस् राजा का पिता था (भा. ९.२३.४)। मत्स्य में इसे 'सेन' कहा गया है।

हेमकंपन-एक राजा, जो भारतीय युद्ध में दुर्योधन के पक्ष में शामिल था (म. द्रो. १३१.८५)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) --'सेमपंकज'।

हेमकान्त--वंगाधिपति कुशकेतु राजा का पुत्र। इसने शतर्ची नामक ऋषि का वध करने के कारण इसे ब्रह्महत्त्या का पातक लग गया था। आगे चल कर त्रित नामक ब्राह्मण को पानी पिलाने के कारण, यह ब्रह्महत्त्या के पातक से मुक्त हुआ (स्कंद २.७.१२)।

हेमकुण्डल--निषधपुर का एक व्यापारी, जिसकी कथा 'दानमाहात्म्य' कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. स्व. ३०)।

हेमकूट--वरुणपुत्र एक वानर, जिसकी जानकारी रावण के शार्दूल नामक गुप्तचर ने उसे कथन की थी (वा. रा. यु. ३०)।

हेमगुह-कश्यपकुलोत्पन्न एक नाग (म. आ. ३१.९)।

हेमचंद्र--(सू. दिष्ट.) एक राजा, जो विशाल राजा का पुत्र एवं सुचंद्र राजा का पिता था (भा. ९.२.३४)।

हेमधन्वन्--धर्मसावर्णि मनु का एक पुत्र।

हेमधर्म--अविक्षित् राजा की पत्नी वरा का पिता (मार्क. ११९.१६)।

हेमनेत्र--कुबेरसभा का एक यक्ष (म. स. १०. १६)।

हेमप्रभा--कांचनपुर के वल्लभ नामक ब्राह्मण की स्त्री, जिसकी कथा 'परिवर्तिनी एकादशी' का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. ब्र. १६)।

हेमप्रभावती-त्रेतायुग के श्रीधर नामक ब्राह्मण की स्त्री, जिसकी कथा 'वालव्रत' का माहात्म्य वर्णन करने के लिए पद्म में दी गयी हैं (पद्म. ब्र. २.५)।

हेमालिन्--कुबेर का एक यक्ष, जिसकी कथा 'योगिनी एकादशी' के व्रत का माहात्म्य कथन करने के लिए पद्म में दी गयी है (पद्म. उ. ५२)।

२. खर राक्षस का एक अमात्य (वा. रा. अर. २३.३२)।

३. द्रुपद का एक पुत्र, जो भारतीय युद्ध में अश्वत्थामन् के द्वारा मारा गया था (म. द्रो. १३१.२८)। पाठभेद (भांडारकर संहिता) -'रुक्ममालिन्'।

हेमवर्ण--गरुड का एक पुत्र

२. रोचमान राजा का पुत्र, जो भारतीय युद्ध में पाण्डवपक्ष में शामिल था। इसके अश्व कमल के रंग के थे।

हेमवर्मन्--दशार्णाधिपति हिरण्यवर्मन् का नामान्तर।

हेमसदन--एकादश रुद्रों में से एक।

२. मगध देश का राजा, जिसके पुत्र का नाम बुध था (स्कंद. १.२.४०)।

हेमा--एक अप्सरा, जो मयासुर की पत्नी थी। मय के निवासस्थान में से इंद्र के द्वारा भगाया दिये जाने पर, इसने वहं स्थान अपनी सखी स्वयंप्रभा को दे दिया (वा. रा. कि ५०-५२, उ. १२. मय १ देखिये)।

हेमांग--(सू. इ.) एक राजा, जिसकी कथा विद्वत् परामर्ष माहात्म्य कथन करने के लिए स्कंद में दी गयी है (स्कंद. १.१६)।

हेमांगद--(सो. वसु.) वसुदेव एवं रोचना का एक पुत्र

२. (सू. इ.) एक राजा (स्कंद. २.६)।

हेमांगी--द्रविड देश के वीरवर्मन् राजा की पत्नी, जिसकी कथा पद्म में प्रयागक्षेत्र का माहात्म्य कथन करने के लिए दी गयी है (पद्म. उ. २२१-१२२)।

हेरंब--शिवकांची का एक शिवभक्त, जिसकी कथा शिव एवं विष्णु का विरोध चित्रित करने के लिए पद्म में दी है गयी है (पद्म. उ. २२२)।

हैतनामन आह्नत--एक आचार्य (मै. सं. ३.४.६)।

हैमवत--एक यक्ष, जो मणिवर एवं पुण्यजनी के पुत्रों में से एक था।

हैमवती--पार्वती का पैतृक नाम।

२. विश्वामित्र ऋषि की पत्नी (म. उ. ११५.१३)।

३. कृष्ण की एक पत्नी, जो उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके साथ सती हो गयी (म. मौ. ८.७१)।

हैमिनी--विक्रान्त राजा की पत्नी, जिससे इसे चैत्र नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। जातहरिणी ने इसके पुत्र का हरण किया था, किन्तु आगे चल कर, इसके पति विक्रान्त ने अपने पुत्र को पुनः प्राप्त कराया (मार्कं. ७३)।

हैरण्यनाभ--पर आटनार नामक आचार्य का पैतृक नाम (श. ब्रा. १३.५.४.४)।

हैहय--क्षत्रियों का एक कुल, जिसका संहार परशुराम ने किया था। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित राजाओं का निर्देश महाभारत में प्राप्त है:--१. कार्तवीर्य अर्जुन, जो परशुराम के द्वारा मारा गया (म. स. परि. १.२१. ४३०-४९०); २. परपुरंजय, जिसने हैहय वंश की प्रतिष्ठा कतिपय बढ़ायी थी (म. व. १८२.३-५); ३. उदावर्त, जो एक कुलांगार नरेश था (म. उ. ७२.१३); ४. अर्जुन कार्तवीर्य, जो कृतवीर्य राजा का पुत्र था (म. शां. ४९.३०.४३); ५. सुमित्र (म. शां. १२५.९)।

चांद्रसेनीय कायस्थ प्रभु ज्ञाति का आद्य पुरुष चंद्रसेन हैहयवंशीय ही था (कायस्थ धर्मप्रदीप)। किन्तु हैहय वंशावलि में उसका नाम अप्राप्य है।

२. (सू. शर्याति.) शर्याति वंश में उत्पन्न एक राजा, जो हैहय वंश का आद्य संस्थापक माना जाता है। यह वत्स राजा का पुत्र था, एवं इसे वीतहव्य नामान्तर प्राप्त था (म. अनु. ३०.७-८; वीतहव्य देखिये)। आगे चल कर, यह भृगु ऋषि का शिष्य बन कर ब्राह्मण हुआ (म. अनु. ३०.५४-५७)।

होड--एक ऋषि, जिसने वकुलासंगम पर तप किया था (पद्म. उ. १३८)।

होतृ--पारावत देवों में से एक।

होत्रक--(सो. अमा.) एक राजा, जो भागवत के अनुसार कांचन राजा का पुत्र, एवं जह्नु राजा का पिता था (भा. ९.१५.३)। वायु में इसे सुहोत्र कहा गया है, एवं इसके पिता का नाम कांचनप्रभ दिया गया है।

होत्रवाहन--सृंजय नामक राजर्षि का पैतृक नाम।

होम--सुख देवों में से एक।

ह्रदोदर--एक राक्षस, जो स्कंद के द्वारा मारा गया (म. श. ४५.६६)।

ह्रस्वकर्ण--रावणपक्ष का एक राक्षस (वा. रा. सुं. ६.)।

ह्रस्वरोमन्--(सू. निमि.) एक राजा, जो भागवत एवं वायु के अनुसार स्वर्णरोमन् राजा का पुत्र, एवं सीरध्वज एवं कुशध्वज जनक राजाओं का पिता था (भा. ९.१८.१३)। विष्णु में इसे सुवर्णरोमन् राजा का पुत्र कहा गया है।

ह्राद--एक नाग, जो बलराम के परंधाम गमन के समय स्वागत के लिए उपस्थित था (म. मौ. ५.१५)।

२. हिरण्यकशिपु एवं कयाधु का एक पुत्र।

ह्री--ब्रह्मा की सभा में उपस्थित एक देवी, जो स्कंद के अभिषेक के समय उपस्थित थी (म. स. १३२*; श. ४४.१२)। अर्जुन के इंद्रलोक जाते समय, उसकी मंगलकामना के लिए द्रौपदी ने इस देवी का स्मरण किया था (म. व. ३८.१४९*)।

ह्रीनिषेध--एक दैत्यराज, जो एक समय इस पृथ्वी का शासक था (म. शां. २२०. ५०)।

ह्रीमत्--एक सनातन विश्वेदेव (म. अनु. ९१.३१)।

परिशिष्ट १

जैन ग्रंथों में निर्दिष्ट

श्री वर्धमान महावीर के समकालीन प्रमुख व्यक्ति

अजित केशि कंबलिन्--एक आचार्य, जो वर्धमान महावीर के सात विरोधकों में से एक था। इसका तत्त्वज्ञान 'उच्छेदवाद' नाम से सुविख्यात था। इसका तत्त्वज्ञान 'सर्व नास्ति' इस आद्य तत्त्व पर आधारित था, एवं दान, यज्ञ, पापपुण्य, स्वर्ग, दैवी माहात्म्य ये सारे मिथ्या है, ऐसा इसका अभिमत था। इसके अनुसार मानवीय शरीर, चार मूलद्रव्यों से बना हुआ था, जिसमें मृत्यु के पश्चात् वह विलीन होता है। इसी कारण, मृत्यु के पश्चात् आत्मा को सद्गति या दुर्गति प्राप्त होने का वर्णन यह सरासर कल्पनारम्य एवं झूट मानता था (सूत्र. १.१.१. ११-१२)।

इंद्रभूति गौतम--महावीर का सर्वप्रथम शिष्य।

किस संकिच्च--आजीवक सांप्रदाय के पूर्वाचार्यो में से एक (गोशाल मंखलीपुत्त देखिये)।

गोशाल मंखलीपुत्त--एक आचार्य, जो आजीवक (नग्न) सांप्रदाय के प्रवर्तकों में से एक था। पाली सूत्रों में इसे 'मंखली गोशालो' कहा गया है। इसके द्वारा प्रणीत तत्त्वज्ञान 'संसार विशुद्धि' नाम से सुविख्यात है। इसके पूर्वाचार्यों में नंद वच्च, किश संकिच्छ ये दो आचार्य प्रमुख थे (मज्झिम. ३६; ७६)।

'संसार विशुद्धि' तत्त्वज्ञान—इसके द्वारा प्रणीत इस तत्त्वज्ञान के अनुसार, हर एक प्राणिमात्र के लिए संसार नित्य एवं अपरिहार्य है, एवं इस संसारचक्र से कोई भी प्राणि मुक्ति नहीं पा सकता।

महाभारतादि ग्रंथों में निर्दिष्ट मंकि नामक आचार्य यही माना जाता है (मंकि देखिये)।

गोष्ठा माहिल--वर्धमान महावीर के प्रतिस्पर्धियों में से एक। वर्धमान के सात पाखंडी प्रतिस्पर्धियों में इसका समावेश किया जाता था।

चन्द्र प्रद्योत—अवंती का एक राजा, जो वैशालि के चेटक राजा की कन्या शिवा का पति था। इसे 'चन्द्रप्रद्योत महासेन' नामांतर भी प्राप्त था। इसकी कन्या का नाम वासवदत्ता था, जो वत्सदेश के उदयन राजा को विवाह में दी गयी थी। कौशांबी के शतानीक राजा के मृगावती नामक पत्नी का यह हरण करना चाहता था। किन्तु वर्धमान महावीर ने इसे इस पापी हेतु से परावृत्त किया। यह स्वयं जैनधर्मीय था, एवं इसने अपनी आठो ही पत्नियों को जैन धर्म की दीक्षा दी थी।

त्रिशला—वर्धमान महावीर की माता, जो लिच्छवी देश के चेटक राजा की बहन थी।

नंद वच्छ—आजीवक सांप्रदायों के पूर्वाचार्यों में से एक (गोशाल मंखलिपुत्त देखिये)।

निगंठ नातपुत्त-जैन धर्मसांप्रदाय के संस्थापक वर्धमान महावीर का नामांतर (महावीर वर्धमान देखिये)।

नेमिनाथ--जैनों का बाइसवाँ तीर्थंकर, जो कृष्ण का चचेरा भाई था। वर्तमानकालीन जैन धर्म के पुनरुत्थान का यह आद्य जनक माना जाता है, जिसकी परंपरा आगे चल कर पार्श्वनाथ एवं वर्धमान महावीर ने चलायी।

शूरसेन देश के शौरिपुर नामक नगरी में इसका जन्म हुआ। बाल्यावस्था में ही यह शौरिपुर का त्याग कर के द्वारका नगरी आ पहुँचा। द्वारका में कृष्ण ने प्रवृत्ति का मार्ग अपनाया, एवं इसने निवृत्ति का। पश्चिम एवं दक्षिण भारत में इसने जैन धर्म की प्रतिष्ठापना की, जहाँ प्राप्त तीर्थंकरों की प्रतिमा में इसकी प्रतिमाएँ सर्वाधिक संख्या में पायी जाती हैं।

काठियावाड में स्थित गिरनार (ऊर्जयन्त) पर्वत में इसका निर्वाण हुआ, जहाँ इसके नाम का तीर्थस्थान आज

भी उपलब्ध है। कई अभ्यासकों के अनुसार, पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट अरिष्टनेमि राजा संभवतः यही होगा।

पकुध काच्चायन--एक आचार्य, जो 'अशाश्वत वाद' नामक सिद्धांत का आद्य जनक माना जाता है। वर्धमान महावीर के सात प्रमुख विरोधकों में से यह एक था। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट ककुद कात्यायन संभवतः यही होगा। श्वेत दिगंबर सांप्रदाय के 'सूयगड' नामक सूत्रग्रंथ में इसका निर्देश प्राप्त है (सूय, ३.१.१.-१६)।

पार्श्वनाथ--जैनों का तेइसवाँ तीर्थंकर, जिसका काल ७५० इ. पू. माना जाता है। जैन धर्म की तात्त्विक विचारप्रणाली निर्माण करने का श्रेय इसे दिया जाता है, जिसका परिवर्धन एवं प्रचार करने का काम आगे चल कर जैनों का चोवीसवाँ तीर्थ कर वर्धमान महावीर एवं उसके शिष्यों ने किया (महावीर वर्धमान देखिये)।

बनारस का राजा अश्वसेन का यह पुत्र था, एवं इसकी माता का नाम वामा था। यद्यपि यह राजा का पुत्र था, फिर भी इसने अपनी सौ वर्ष की आयु में से सत्तर वर्ष धार्मिक तत्त्वचिंतन में, एवं निर्वाण प्राप्ति के हेतु तपस्या में व्यतीत किये। इसने साधकों के लिए एक चतुःसूत्रीयुक्त आचरण संहिता का प्रणयन किया था। इस आचरण संहिता का अनुगमन करनेवाले इसके अनेक अनुयायी उत्पन्न हुए, जिनमें महावीर के मातापिता सिद्धार्थ एवं त्रिशला प्रमुख थे। इनके अनुयायियों में मगध देश के लोग प्रमुख थे।

कुशस्थली नगरी के प्रसेनजित् राजा की प्रभावती नामक कन्या से इसका विवाह हुआ था, जिसे इसने कलिंग देश के यवन राजा से छुड़ाया था।

इसकी राजप्रतिमा परस्पर सटे हुए दो नागशिरों से बनी थी, जो इसकी हरएक प्रतिमा एवं इसके द्वारा खोदी गयी हरएक गुफा पर पायी जाती है।

केशी-गोतमसंवाद--इसके द्वारा साधकों के लिए निर्माण किये गयें आचारसंहिता में इसके पश्चात् २५० वर्षों के बाद उत्पन्न हुए महावीर ने पर्याप्त परिवर्तन किये, एवं इसके द्वारा विरचित आचरण के बहुतसारे नियम अधिकतर कठोर बनाये। कौन सी सामाजिक परिस्थिति के कारण महावीर को ये परिवर्तन अवश्यक प्रतीत हुए, इसका विवरण करनेवाला एक संवाद 'उत्तराध्ययन सूत्र' में प्राप्त है, जो पार्श्वनाथशिष्य केशिन्, एवं महावीरशिष्य गौतम के बीच हुए संवाद के रूप में वर्णित है।

यह संवाद श्रावस्ती में तिंदुक उद्यान में हुआ था, जिसमें भिक्षुओं के लिए ब्रह्मचर्यपालन की, एवं श्वेतवस्त्रों की आवश्यकता पुनरुच्चारित की गयी थी। इस संवाद में महावीर शिष्य गौतम ने कहा था, 'प्रारंभ में भिक्षु सीधेसाधे एवं विरक्त प्रकृति के थे। आगे चलकर वे अधिक चंचल प्रकृति के हो गये, एवं धर्माचरण की ओर उनकी प्रवृत्ति कम होने लगी। इसी कारण नये नियमों का निर्माण महावीर को करना पड़ा'।

पूरण कस्सप--एक आचार्य, जो महावीर के सात विरोधकों में से एक था। इसका तत्त्वज्ञान 'अक्रियावाद' नाम से सुविख्यात है, जिसके अनुसार पाप एवं पुण्य की सारी कल्पनाएँ अनृत एवं कल्पनारम्य मानी गयी थीं। इसके तत्त्वज्ञान के अनुसार, खून चोरी व्यभिचार आदि से मनुष्यप्राणी को पाप नहीं लगता था, एवं गंगास्नान दानधर्म आदि से पुण्यप्राप्ति नहीं होती थी। इस प्रकार, इसका तत्त्वज्ञान चार्वाक के तत्त्वज्ञान से काफ़ी मिलता जुलता प्रतीत होता है (संयुक्त. २.३.१०)।

भद्रबाहु--एक सुविख्यात जैन आचार्य, जो दक्षिण भारत में श्रवण वेलगोल ग्राम में प्रसृत हुए 'श्वेतांबर जैन सांप्रदाय' का आद्य जनक माना जाता है। इसकी जीवन विषयक सारी सामग्री 'भद्रबाहुचरित्र' नामक ग्रंथ में प्राप्त हैं।

बारह वर्षों का अकाल--अवन्ति देश के संप्रति चंद्रगुप्त राजा का यह राजपुरोहित था, एवं इसने उसे जैनधर्म की दीक्षा दी थी। एकबार एक वणिक् के घर यह धर्मोपदेशार्थ गया था, जहाँ उस वणिक् के साठ दिन के एक छोटे शिशु ने इसे 'चले जाओ' कहा। यह दुःश्चिन्ह समझ कर, यह अपने पाँचसौ शिष्यों को साथ लेकर, अवन्ति देश छोड़ कर दक्षिण देश चला गया। पश्चात् अवन्ति देश में लगातार बारह वर्षों तक अकाल उत्पन्न हुआ, जिससे देशांतर के कारण यह एवं इसके शिष्य बच गये।

श्रवण बेलगोल में--श्रवण वेलगोल में पहुँचते ही इसने 'श्वेतांबर जैन' सांप्रदाय की स्थापना की। इसके साथ ही 'संप्रति मौर्य' दक्षिण में आया था, एवं इसकी सेवा करता रहा।

वृद्धकाल आते ही इसने अपना सारा शिष्यपरिवार अपने प्रमुख शिष्य विशाखाचार्य को सौंप दिया, एवं यह अपनी मृत्यु की राह देखने लगा। इसकी मृत्यु के पश्चात् इसके प्रिय शिष्य संप्रति मौर्य राजा ने

'संलेखना' (प्रायोपवेशन) की। इसका निर्वाणकाल २९७ ई. पू. माना जाता है।

जैन साहित्य में प्राप्त परंपरा के अनुसार, सम्प्रति मौर्य को ही चंद्रगुप्त मौर्य माना गया है। किंतु वह असंभव प्रतीत होता है।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित ग्रंथ उपलब्ध है.– १. श्रीमंडलप्रकरणवृत्ति (ज्योतिष); २. चतुर्विंशातिप्रबन्ध; ३. दशवैकालिकानिर्युक्ति; ४. आवश्यकसूत्रनियुक्ति; ५. उत्तराध्यायनसूत्रनिर्युक्ति; ६. आचारांगसूत्रनिर्युक्ति; ७. सूत्रकृतांगसूत्रनिर्युक्ति; ८. दशश्रुतस्कंधसूत्र; ९. कल्पसूत्र; १०. व्यवहारसूत्र; ११. सूर्यप्रज्ञप्तिसूत्र; १२. श्रीभाषितसूत्र।

महावीर वर्धमान--जैन धर्म का अंतिम एवं चोवीसवाँ तीर्थंकर, जो उस धर्म का सर्वश्रेष्ठ संवर्धक माना जाता है। अपने से २५० साल पहले उत्पन्न हुए पार्श्वनाथ नामक तत्त्वज्ञ के धर्मविषयक तत्वज्ञान का परिवर्धन कर, महावीर ने अपने धर्मविषयक तत्वज्ञान का निर्माण किया। इसीसे आगेचल कर जैनधर्मियों के प्रातःस्मरणीय माने गये तेइस तीर्थंकरों की कल्पना का विकास हुआ, जिसमें पार्श्वनाथ एवं वर्धमान क्रमशः तेईसवाँ एवं चोवीसवाँ तीर्थंकर माने गये हैं।

जैन साहित्य में हर एक तीर्थंकर का विशिष्ट शरीरिक चिन्ह (लांछन) वर्णन किया गया है, जहाँ वर्धमान का लांछन 'सिंह' बताया गया है। इसका एक और भी मंगलचिन्ह प्रचलित है, जो 'वर्धमानक्य' नाम से सुविख्यात है।

विश्व के धार्मिक इतिहास में महावीर एक ऐसी असामान्य विभूति है, जिसने राजाश्रय अथवा किसी भी प्रमुख आधिभौतिक शक्ति का आश्रय न ले कर, केवल अपनी श्रद्धा के बल से जैनधर्म की पुनः-स्थापना की। अपनी सारा आयुष्य एक सामान्य मनुष्य के समान व्यतीत कर, इसने तीर्थंकरों के द्वारा प्रतिपादित आत्मकल्याण का मार्ग शुद्धतम एवं श्रेष्ठतम रूप में अंगीकृत किया, एवं अपने सारे आयुष्य में उसी मार्ग का प्रतिपादन किया।

अपने इसी द्रष्टेपन के कारण यह जैन धर्म के पच्चीस-सौ वर्षों के इतिहास में उस धर्म की प्रेरक शक्ति बन कर रह गया। इस धर्म के विद्यमान व्यापक स्वरूप एवं तत्त्वज्ञान का सारा श्रेय इसीको दिया जाता है। इसी कारण इसे 'अर्हत्' (पूज्य,) 'जिन' (जेता,) 'निर्ग्रंथ' (बंधनरहित) एवं 'महावीर' (परम पराक्रमी पुरुष) कहा गया है। जैन वाङ्मय में इसे 'वीर,' 'अतिवीर,' 'सन्मतिवीर' आदि उपाधियाँ भी प्रदान की गयी हैं। इसी 'जिन' के अनुयायी होने के कारण, इस धर्म के अनुयायी आगे चल कर 'जैन' नाम से सुविख्यात हुए।

बुद्ध का समकालीन—गौतम बुद्ध के ज्येष्ठ समवर्ती तत्त्वज्ञ के नाते महावीर का निर्देश 'दीघनिकाय' आदि बौद्ध ग्रंथों में प्राप्त है। मगध देश के अजातशत्रु राजा से मिलने आये छः श्रेष्ठ धार्मिक तत्त्वज्ञों में महावीर एक था, जिसका निर्देश बौद्ध ग्रंथों में 'निगंठ नातपुत्त' नाम से किया गया है। अजातशत्रु राजा से मिलने आये अन्य पाँच धार्मिक तत्वज्ञों के नाम निम्नप्रकार थेः– १. मक्खली गोसार, जो सर्वप्रथम महावीर का ही शिष्य था, किन्तु उसने आगे चलकर आजीवक नामक स्वतंत्र सांप्रदाय की स्थापना की; २. पूरण कस्सप, जो 'आक्रियावाद' नामक तत्वज्ञान का जनक था; ३. अजित केशि कंबलिन्, जो 'उच्छेदवाद' नामक तत्त्वज्ञान का जनक माना जाता है, ४. पकुध काच्यायन, जो 'अशाश्वत ज्ञान' नामक तत्त्वज्ञान का जनक माना जाता है, ५. संजय बेलट्ठीपुत्त, जिसका तत्त्वज्ञान 'विक्षेपवाद' नाम से प्रसिद्ध है।

जन्म--वृजि नामक संत्रराज्य में वैशालि नगरी के समीप स्थित कुण्डग्राम में इसका जन्म हुआ। ५९९ ई. पू. इसका जन्मवर्ष माना जाता है। यह ज्ञातृक वंश में उत्पन्न हुआ था, एवं इसके पिता का नाम सिद्धार्थ था, जों 'वृजिगण' में से एक छोटा राजा था। इसकी माता का नाम त्रिशला, एवं जन्मनाम वर्धमान था। आधुनिककालीन विहार राज्य में मुज़फ्फरपुर जिले में स्थित बसाढ़ ग्राम ही प्राचीन कुण्डग्राम माना जाता है।

इसकी माता त्रिशला वैशालि के लिच्छवी राजा चेटक की बहन थी। इसी कारण पिता की ओर से इसे 'ज्ञातृकपुत्र', 'नातपुत्त', 'काश्यप' आदि पैतृक नाम, एवं माता की ओर से इसे 'लिच्छविक' एवं 'वेसालिय' नाम प्राप्त हुए थे।

समकालीन नृप--वैशालि के चेटक नामक राजा के परिवार की सविस्तृत जानकारी जैन साहित्य में प्राप्त है, जिससे महावीर के समकालीन राजाओं की पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। चेटक राजा के कुल दस पुत्र, एवं सात कन्याएँ थी, जिनमें से ज्येष्ठ पुत्र सिंह अथवा सिंहभद्र वृजिराज्य का ही सेनापति था। चेटक की सात कन्याओं में से चंदना एवं ज्येष्ठा 'ब्रह्मचारिणी' महावीर की

अनुगामिनी थीं। बाकी पाँच कन्याओं का विवाह निम्नलिखित राजाओं से हुआ था :--१. मगधराजा बिंबिसार; २. कौशांबीनरेश शतानीक; ३. दशार्णराज दशरथ; ४. सिंधुसौवीरनरेश उदयन; ५. अवंतीनरेश चण्डप्रद्योत। चेटक राजा के परिवार के ये सारे राजा आगे चल कर महावीर के अनुयायी बन गये।

उपर्युक्त राजाओं के अतिरिक्त निम्नलिखित राजा भी महावीर के समकालीन एवं अनुयायी थे:— १. दधिवाहन (चंपादेश); २. जितशत्रु (कलिंग); ३. प्रसेनजित् (श्रावस्ति); ४. उदितोदय (मथुरा); ५. जीवंधर (हेमांगद); ६. विद्रदाज (पौदन्यपूर); ७. विजयसेन (पलाशपुर); ८. जय (पांचाल); ९. हस्तिनापुरनरेश।

तपस्या—कलिंगनरेश जितशत्रु की कन्या यशोदा के साथ महावीर का विवाह हुआ था। किन्तु आगे चल कर इसके मन में विरक्ति उत्पन्न हुई। तीस वर्ष की आयु में अपने ज्येष्ठ बन्धु की आज्ञा ले कर इसने घर छोड़ दिया (६७०. ई. पू.)। कई अभ्यासकों के अनुसार, यशोदा के साथ इसके विवाह का प्रस्ताव जब हो रहा था, उसी समय अर्थात् विवाह के पूर्व ही इसने अपना घर छोड़ दिया।

पश्चात् बारह वर्षों तक यह अनेकानेक वनों में घूमता एवं तपस्या करता रहा। अन्त में ५४७ इ. पू. में विहार प्रान्त में जृंभकग्राम में ऋजुकुल्या नदी के किनारे एक शालवृक्ष के नीचे ध्यानावस्था में ही इसे केवलज्ञान की प्राप्ति हुई। इस प्रकार यह सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, अर्हत् एवं परमात्मन् बन गया। केवलज्ञान प्राप्ति के समय इसकी आयु ४२ वर्ष की थी।

प्रथम समवशरणसभा--केवलज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् यह पंचशैलपुर नामक नगरी के समीप में स्थित विपुलाचल नामक पर्वत पर आ पहुँचा। वहाँ श्रावण कृष्ण प्रतिपदा के दिन इसने 'प्रथम समवशरण सभा' का आयोजन किया, जहाँ इसने जैनधर्म का तत्त्वज्ञान उपस्थित साधकों को अर्धमागधी लोकभाषा में कथन किया। वर्धमान का यह सर्वप्रथम धर्मप्रवचन गौतम बुद्ध के द्वारा सारनाथ में किये गये 'धर्मचक्रप्रवर्तन' के प्रथम प्रवचन इतना ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है। इस प्रवचन के लिए उपस्थित श्रोताओं में मगध देश का सुविख्यात सम्राट् श्रेणिक बिंबिसार प्रमुख था।

शिष्यशाखा--वर्धमान का तत्वज्ञान इतना प्रभावी शाबित हुआ कि, इसके जीवनकाल में ही लगभग पाँच लाख लोगों ने जैन धर्म को स्वीकार किया। वर्धमान का यह शिष्यसमुदाय मुनि, श्रावक, आर्यिका एवं श्राविका इन चार संघों में विभाजित था। इनमें से तापसजीवन का आचरण कर धर्मप्रचार का कार्य करनेवाले धर्मप्रचारक एवं प्रचारिका को 'मुनि' एवं 'आर्यिका' कहा जाता था। गृहस्थधर्म का आचरण कर जैन धर्मतत्त्वों का पालन करनेवाले जैनधर्मानुयायी 'श्रावक' एवं 'श्राविका' कहलाते थे।

जाति, वर्ण, वर्ग, लिंग आदि भेदों के निरपेक्ष रह कर, हरएक व्यक्ति को यह अपने तत्त्वज्ञान का उपदेश प्रदान करता था, एवं कौनसा भी भेदाभेद न मान कर हर व्यक्ति को इसके धर्म में प्रवेश प्राप्त होता था। इस प्रकार इसके श्रावक एवं श्राविका शिष्यपरिवार में भारत के सभी भागों के, सभी वर्णों के, एवं सभी जातियों के स्त्री पुरुष समाविष्ट थे। भारत के बाहर भी गांधार, कपिशा, पारसिक आदि देशों में इसका शिष्यपरिवार उत्पन्न हुआ था। इसके श्राविकासंघ के प्रमुखत्त्व का कार्य मगधसाम्राज्ञी चेलना पर सौंपा गया था।

धर्मसंगठन--जैन धर्म के प्रचारकार्य का व्रत आजन्म पालन करनेवाले मुनि, एवं आर्यिका कुल नौ गणों (वृंदों) में विभाजित थें, एवं उनके संचालन का कार्य ग्यारह गणधरों पर निर्भर था। वर्धमान का प्रमुख शिष्य गौतम गणेश महावीर उनका सर्वोच्च प्रमुख माना जाता था। वर्धमान के ग्यारह गणधरों के नाम निम्नप्रकार थें:—१. इंद्रभूति गौतम; २. अग्निभूति; ३. वायुभूति; ४. आर्यव्यक्त; ५. सुधर्म; ६. मण्डिकपुत्र; ७. मोयपुत्र; ८. अकंपित; ९. अचल; १०. मैत्रेय; ११. कौण्डिन्यगोत्रीय प्रभास।

धर्मप्रचार का कार्य करनेवाले आर्यिका 'संघ' की अध्यक्षा महासती चंदना थी, जो वैशालि के चेटक राजा की ज्येष्ठ कन्या थी।

पर्यटन—अपने तत्वज्ञान के प्रचारार्थ वर्धमान भारतवर्ष के तत्कालीन सारे जनपदों में, एवं ग्रामों में लग तार तीस वर्षों तक घूमता रहा। इन जनपदों में से मिथिला, मगध, कलिंग, एवं कोशल जनपदों में इसका संचार अधिकतर रहता था। इसी कार्य में यह गांधार, कपिशा जैसे बृहत्भारतीय देशों में भी गया। जैसे पहले ही कहा जा चुका है कि, भारत के बहुतसारे जनपदों के प्रमुख इसके शिष्यों में शामिल थे। यहीं नहीं, इनमें से अनेक

राजा आगे चल कर जैन मुनि बन कर स्वयं ही धर्मप्रसार का कार्य करने लगे।

निर्वाण—इस प्रकार धर्मसाधना एवं धर्मप्रसार का कार्य अत्यंत यशस्वी प्रकार से निभाने के पश्चात्, मल्ल देश के पावा नगरी में स्थित कमलसरोवरान्तर्गत द्वीप प्रदेश में वर्धमान का निर्वाण हुआ। इसके निर्वाण का दिन कार्तिक कृष्ण अमावास्या; समय प्रातःकाल में सूर्योदय के पूर्व; एवं साल ५२७ इ. पू. (विक्रम. पूर्व. ४७०; शक. पूर्व. ६०५) माना जाता है।

इसके निर्वाण के समय, लिच्छवी राजा चेटक एवं मल्लराजा व्रात्यक्षत्री हस्तिपाल उपस्थित थे। पश्चात् मल्ल एवं लिच्छवी के जनपदों के नौ नौ राजप्रमुखों ने एकत्रित आ कर इसका निर्वाणविधि सुयोग्य रीति से निभाया, एवं उसी रात्रि को जैन धर्म की परंपरा के अनुसार दीपोत्सव भी मनाया। कई अभ्यासकों के अनुसार, भारतवर्ष में दीपावलि का त्यौहार वर्धमान के निर्वाण के समय किये गये दीपोत्सव से ही प्रारंभ हुआ। इसके निर्वाण के साथ साथ 'महावीर निर्वाणसंवत्' का प्रारंभ हुआ, जो 'वीरसंवत्' नाम से जैनधर्मीय लोगों में आज भी प्रचलित है।

आचारसंहिता—महावीर के द्वारा प्रणीत धर्मविषयक तत्त्वज्ञान इसके पंचसूत्रात्मक आचारसंहिता में संग्रहित है, जो इसके २५० साल पहले उत्पन्न हुए पार्श्वनाथ के द्वारा प्रणीत चतुःसूत्रात्मक आचारसंहिता से काफ़ी मिलती जुलती है।

महावीर के द्वारा प्रणीत पंचसूत्रात्मक आचारसंहिता के सूत्र निम्नप्रकार हैः– १. किसी भी जीवित प्राणी अथवा कीटक की हिंसा न करना (अहिंसा); २. किसी भी वस्तु का किसीके दिये बगैर स्वीकार न करना (अयाचित्व); ३. अनृत भाषण न करना (सत्य); ४. आजन्म ब्रह्मचर्यत–व्रत का पालन करना (ब्रह्मचर्य); ५. वस्त्रों के अतिरिक्त अन्य किसी वस्तु का संचय न करना (अपरिग्रह)।

वर्धमान के इस तत्त्वज्ञान में से पहले तीन तत्त्व पार्श्व के तत्त्वों से बिलकुल मिलते जुलते हैं। अंतिम दो तत्त्व पार्श्व के 'अपरिग्रह' नामक एक ही तत्त्व से लिये गये हैं, फर्क केवल इतना है कि, जहाँ पार्श्व ब्रह्मचर्य को अपरिग्रह में ही समाविष्ट करता है, वहाँ वर्धमान ब्रह्मचर्य को स्वतंत्र तत्त्व बता कर उसे ज्यादा महत्त्व प्रदान करते हैं। पार्श्व एवं वर्धमान के अपरिग्रह की व्याख्या में अन्य एक फर्क है कि, जहाँ पार्श्व वस्त्र का भी संग्रह न कर अच्चेलक (नग्न) रहना पसंद करते है, वहाँ वर्धमान के द्वारा अपने अनुयायियों को श्वेतवस्त्र परिधारण करने की एवं उनका संग्रह करने की संमति दी गयी है।

पार्श्व एवं वर्धमान के इस तत्त्वसाधर्म्य के कारण, इन दोनों आचार्यों के अनुयायियों ने श्रावस्ती में एक महासभा बुला कर इन दोनों सम्प्रदायों को सम्मिलित करने का निर्णय लिया। आगे चल कर, इन दोनों सांप्रदायों के सम्मीलन के द्वारा जैन धर्म का निर्माण हुआ (उत्तराध्ययन सूत्र. २३)।

अहिंसा तत्त्व की महत्ता—दैनंदिन मानवीय जीवन में अहिंसा तत्त्व को सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक दृष्टि से जितना सुस्पष्ट, ऊँचा एवं व्यापक रूप वर्धमान के द्वारा दिया गया है, उतना अन्य किसी भी धर्मद्रष्टा नें नहीं दिया होगा। इस प्रकार अहिंसाचरण को दिया यह सर्वोच्च विकसित रूप वर्धमान के आचारसंहिता का एक प्रमुख वैशिष्ट्य कहा जा सकता है।

वर्धमान का अनेकान्तवाद—आचार संहिता के साथ ही साथ, आत्मज्ञान एवं मुक्ति प्रात करने के लिए वर्धमान का एक स्वतंत्र तत्त्वज्ञान भी था, जो 'अनेकान्तवाद' नाम से सुविख्यात है। इस तत्त्वज्ञान के अनुसार आत्मा को सद्गति केवल सदाचरण से ही प्रात होती है, जिसका मूल दैनंदिन मानवीय जीवन में अहिंसाचरण ही कहा जा सकता है।

वर्धमान का कहना था कि, इंद्रियोपभोग के आधिक्य से आत्मा मलिन हो जाती है। इसी कारण आत्मा की पवित्रता अबाधित रखने के लिए सर्वोत्कृष्ट मार्ग इंद्रियदमन है, जो केवल सद्विचार एवं सद्धर्म से साध्य हो सकता है।

वर्धमान का क्रियावाद—जैन सूत्रों में कुल ३६३ सांप्रदायों का निर्देश प्रात है, जिनमें निम्नलिखित चार प्रमुख थे– १. क्रियावाद; २. अक्रियावाद; ३. अज्ञानवाद; ४. विनयवाद। इनमें से महावीर स्वयं 'क्रियावाद' सांप्रदाय का पुरस्कर्ता था। इस सांप्रदाय के अनुसार, मानवीय आयुष्य का बहुत सारा दुःख मनुष्य के अपने कर्मों के परिणामरूप ही होते है, एवं इस दुःख के बाकी सारे कारण प्रासंगिक होते हैं। मानवीय जीवन के ये दुःख जन्म, मृत्यु एवं पुनर्जन्म के दुश्चक्र से उत्पन्न होते हैं। इस दुःख से छुटकारा पाने के लिए आत्मज्ञान एवं सदाचरण ये ही दो मार्ग उपलब्ध है।

बौद्धधर्म से तुलना—यद्यापि वर्धमान एवं गौतम बुद्ध दोनों भी अनीश्वरवादी एवं वैदिक धर्म के विरोधी थें, फिर इन दोनों के धार्मिक तत्त्वज्ञान में पर्याप्त फर्क है। जहाँ बुद्ध इंद्रियोपभोग के साथ साथ तपःसाधना को भी त्याज्य मान कर इन दोनों के बीच का 'मध्यम मार्ग' प्रतिपादन करते है, वहाँ वर्धमान तप एवं कृच्छ्र को जीवन-सुधार का मुख्य उपाय बताता है। तपःसाधना को पाप-नाशन का सर्वश्रेष्ठ उपाय माननेवाले जैन तत्त्वज्ञान की 'अंगुत्तर' एवं 'टीका निपात' आदि ग्रंथों में व्यंजना की गयी है।

ग्रंथ—इसके नाम पर निम्नलिखित बारह ग्रंथ उपलब्ध हैं, जो इसके तत्त्वज्ञान का संग्रह कर इसके निर्वाण के पश्चात् ग्रंथनिबद्ध किये गये है। इन सारे ग्रंथों की रचना अर्धमागधी भाषा में की गयी हैः— १. आचारांग, २, सूत्रकृतांग; ३. स्थानांग; ४. समवायांग; ५. भगवती; ६. अंतकृद्दशांग; ७. अनुत्तरोपपातिकदशांग; ८. विपाक; ९. उपासकदशांग; १०. प्रश्नव्याकरण; ११. ज्ञाताधर्म-कथा; १२. दृष्टिवाद।

परंपरा—वर्धमान की मृत्यु के पश्चात्, जैन धर्म की परंपरा अबाधित रखने का कार्य इसके शिष्य प्रशिष्यों ने किया। इसके इन शिष्य प्रशिष्यों में निम्नलिखित प्रमुख थेः—

(१) इंद्रभूति गौतम—वर्धमान के निर्वाण के पश्चात् यह प्रमुख गणधर बन गया। वर्धमान के धर्मविषयक तत्त्वज्ञान को, एवं उपदेशों को सुव्यस्थित रूप में गठित एवं वर्गीकृत करने का कार्य इसने किया। ५१५ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

बौद्ध धर्म के संस्थापक गौतम बुद्ध एवं न्यायसूत्र के अक्षपाद गौतम का यह समकालीन था। किंतु फिर भी इन दोनों व्यक्तियों से यह सर्वथा भिन्न व्यक्ति था।

(२) अर्हत् केवली सुधर्माचार्य—यह इंद्रभूति गौतम के पश्चात् जैन धर्म संघ का प्रधान गणधर बन गया। ५०३ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

(३) जंबुस्वामिन्—यह अर्हत् केवली के पश्चात जैनधर्म संघ का प्रमुख बन गया। अपने पूर्वायुष्य में यह चम्पा के कोट्याधीश वणिक का पुत्र था। किन्तु आगे चल कर जैन मुनि बन गया। मथुरा नगरी के समीप स्थित चौरासी नामक स्थान पर इसने घोर तपस्या की थी। अन्त में इसी स्थान पर ४६५ इ. पू. में इसका निर्वाण हुआ।

(४) विष्णुकुमार; (५) नंदिमित्र; (६) अपराजित; (७) गोवर्धन; (८) श्रुतकेवलि भद्रबाहु—ये पाँच आचार्य जंबुस्वामिन् के पश्चात् क्रमशः जैन संघ के आचार्य बन गये। इनमें से अंतिम आचार्य भद्रबाहु का निर्वाण ३६५ इ. पू. में हो गया।

सांप्रदायभेद—भद्रबाहु की मृत्यु के पश्चात् जैनधर्म 'उदीच्य' (श्वेतांबर) एवं 'दाक्षिणात्य' (दिगंबर) इन दो सांप्रदायों में विभाजित हुआ। इ. पू. ३ री शताब्दी में मध्यदेश के द्वादशवर्षीय अकाल के कारण, भद्रबाहु नामक जैन आचार्य अपने सहस्त्रावधि शिष्यों के साथ मध्यप्रदेश छोड़ कर दक्षिण भारत की ओर निकल पड़े। पश्चात् ये लोग कर्नाटक देश में 'श्रवण वेलगोल' नामक स्थान में आ कर स्थायिक हुए, एवं आगे चल कर 'दाक्षिणात्य' अथवा 'दिगंबर' सांप्रदाय नाम से प्रसिद्ध हुए।

आचार्य स्थूलभद्र के नेतृत्व में बहुत सारे जैन मुनि मध्यदेश में ही रह गये, जो आगे चल कर, 'श्वेतांबर जैन' नाम से प्रसिद्ध हुए।

उपर्युक्त सांप्रदायों की संक्षिप्त जानकारी निम्नप्रकार हैः—

१. दिगंबर जैन—आचार्य भद्रबाहु के नेतृत्व में श्रवण-वेलगोल में स्थायिक हुए जैन लोग आगे चल कर दक्षिण भारत के विभिन्न प्रदेशों में जैन धर्म का प्रसार करने लगे। दक्षिण भारत में आने के पश्चात् अपने कठोर नियम, आचारविचार, एवं तात्त्विकता से ये पूर्व जैसे ही अटल रहे। इसी कारण भारत के अन्य सभी सांप्रदायों से ये अधिक सनातनी, एवं तत्त्वनिष्ठुर सावित हुए।

२. श्वेतांबर जैन—आचार्य स्थूलभद्र के नेतृत्व के मध्य देश में रहनेवाले जैन श्रवणों को अत्यंत दुर्धर अकाल से सामना देना पड़ा। इसी दुरवस्था के कारण, इनके आचारविचार, शिथिल पड़ गये, एवं इन लोगों की ज्ञान साधना भी क्षीण होती गयी। इन लोगों का केंद्र-स्थान सर्वप्रथम मगध देश के पाटलिपुत्र नगर में था, जिस कारण इन्हें 'मागधी' नामान्तर प्राप्त था। आगे चल कर ये लोग पाटलिपुत्र छोड़ कर उज्जैनी में आ कर रहने लगे। अन्त में ये लोग सौराष्ट्र में बलभीपुर नगर में निवास करने लगे। ये ही लोग पहली शताब्दी के अन्त में श्वेतांबर जैन नाम से सुविख्यात हुए।

(३) मथुरा निवासी जैन—उत्तरापथ प्रदेश में जैनों के अनेक उपनिवेश थे, जो आगे चल कर मथुरानगरी

में निवास करने लगे। दिगंबर एवं श्वेतांबर जैनों से ये सर्वथा विभिन्न थे, एवं इन लोगों की आचारपद्धति दिगंबर एवं श्वेतांबर पंथियों की आचारपद्धति के समन्वय से उत्पन्न हुई थी।

संप्रति मौर्य—मगध देश का एक राजा, जो अशोक राजा का पौत्र, एवं कुनाल का पुत्र था। इसे चंद्रगुप्त (द्वितीय) नामांतर भी प्राप्त था। इसका राज्य काल २१६ ई. पू.–२०७ ई. पू. माना जाता है।

यह जैन धर्म का एक श्रेष्ठ पुरस्कर्ता था, एवं बौद्ध धर्म के इतिहास में अशोक का जो महत्त्व है, वहीं महत्त्व इसे जैन धर्म के इतिहास में दिया जाता है। जैन धर्म के प्रचार के लिए इसने अनेकानेक धर्मोपदेशक गांधार कपिशा आदि देशों में भेज दिये थे। यही नहीं इसने अपने सैन्यदल के अनेक योद्धाओं को भिक्षुवेष में धर्म-प्रचारार्थ भेजा था।

दक्षिण भारत में आगमन––एक बार इसके राज्य में लगातार बारह वर्षों तक अकाल उत्पन्न हुआ। इस कारण, अपने गुरु भद्रबाहु के साथ यह दक्षिण भारत में स्थित श्रवणबेलगोल नामक नगर में आया। भद्रबाहु के निर्वाण के पश्चात् इसने चंद्रगिरि पर्वत पर प्राणत्याग किया।

इसकी मृत्यु के पश्चात् शालिशुक मगध देश के राज गद्दी पर बैठा। तिब्बती साहित्य में इसके उत्तराधिकारी का नाम वृषसेन दिया गया है, जो संभवतः इसके उस प्रदेश में स्थित राज्य का राजा बन गया होगा।

सिद्धार्थ––वर्धमान महावीर का पिता, जो लिच्छवी-गण में से एक गण का राजा था।

परिशिष्ट २

बौद्ध ग्रंथों में निर्दिष्ट
गौतम बुद्ध के समकालीन प्रमुख व्यक्ति

आडार कालाम––गौतम बुद्ध का एक गुरु, जिसने उसे 'अकिंचन्नायतन' नामक ज्ञान का उपदेश प्रदान किया था। किन्तु उस विद्या से समाधान न होने पर बुद्ध अन्यत्र चला गया।

आनंद—गौतम बुद्ध का प्रमुख शिष्य, जो उसका चचेरा भाई था। इसके पिता का नाम अमितोदन था, जो गौतम बुद्ध के पिता शुद्धोदन का छोटा भाई था।

गौतम बुद्ध को आत्मज्ञान होने के पश्चात् बीस वर्षों की कालावधि में नाग श्यामल, नागित, चण्ड, राध, मेघीय आदि अनेक लोग उसके सेवक के नाते काम करते थें। बुद्ध की उत्तर आयु में उसे एक विश्वासु मित्र एवं सेवक की आवश्यकता उत्पन्न हुई, उस समय उसने बाकी सारे लोगों को दूर कर आनंद की इस कार्य के लिए नियुक्ति की। तत्पश्चात् पचीस वर्षों तक यह हर एक प्रकार से बुद्ध की सेवा करता रहा (थेरगाथा.५.१०३९)।

बुद्ध से संवाद—गौतम बुद्ध ने अनेकानेक धार्मिक विषयों पर संवाद किये थें, जिनमें निम्न लिखित प्रमुख थे:—

१. निरोध (संयुत्त. ३. २४); २. लोक (संयुत्त. ४. ५३) ३. वेदना (संयुत्त. ४. २१९–२२१) ४. भव (अंगुत्तर. १.२२३); ५. समाधि (अंगुत्तर. ५. ७); संघभेद (अंगुत्तर. ५. ७५)।

इसके मित्रों में सारिपुत्त, मौद्गल्यायन, महाकश्यप, अनुरुद्ध रैवत आदि प्रमुख थे (मज्झिम १.२१२)।

बुद्ध की मृत्यु के पश्चात् यह दीर्घकाल तक जीवित रहा। धम्मपद के अनुसार मृत्यु के समय इसकी आयु १२२ वर्षों की थी (धम्म. २. ९९)।

आम्रपालि (अम्बपालि)—वैशाली की एक गणिका, जो गौतमबुद्ध की अनन्य उपासिका थी। अपने निर्वाण के पूर्व गौतम बुद्ध कोटिग्राम गया था, जिस समय इसने उसे वैशाली में अपने घर भोजन के लिए आमंत्रित किया था। उसी समय 'आम्रपालिवन' नामक सुविख्यात उपवन एवं बौद्धसंघ के लिए भेंट में दिया था (विनय. १. २३१.२३३; दीघ्घ. २.९५–९८)। इसके द्वारा लिखित कई धार्मिक गीत 'थेरी गाथा' में समाविष्ट हैं (थेरीगाथा २०६–२०७)।

उपालि—बुद्ध का एक प्रमुख शिष्य, जिसे स्वयं बुद्ध के द्वारा 'विनय पिटक' की शिक्षा प्राप्त हुई थी (दीपवंश ४.३.५)।

इसका जन्म कपिलवस्तु के एक नाई-कुटुम्ब में हुआ था। शाक्य देश के अनिरुद्ध आदि राजपुत्रों के साथ यह बुद्ध से मिलने गया, जहाँ बुद्ध ने अन्य सभी व्यक्तियों से पहले इसे 'प्रव्रज्या' प्रदान की, एवं इसे अपना शिष्य बनाया। 'प्रव्रज्या' प्रदान करने के पश्चात् उपस्थित सभी राजकुमारों को बुद्ध ने आज्ञा दी कि, वे इसे वंदन करे। बौद्धधर्मसंघ में सामाजिक प्रतिष्ठा से भी बढ़ कर अधिक महत्व व्यक्ति की धर्मविषयक निष्ठा को है, इस तत्त्व का साक्षात्कार कराने के हेतु बुद्ध ने इसके साथ इतने बहुमान से बर्ताव किया।

विनयापिटक का अधिकारी व्यक्ति—स्वयं बुद्ध के द्वारा इसे विनयपिटक का सर्वश्रेष्ठ आचार्य कहा गया था (अंगुत्तर, १.२४)। इस ग्रंथ के अर्थ के संबंध में जहाँ कहीं शंका उपस्थित होती थी, तब इसीका ही मत अंतिम माना जाता था। इस संबंध में भारुकच्छक एवं कुमार कस्यप की कथाओं का निर्देश बौद्ध साहित्य में पुनः पुनः पाया जाता है (विनय. ३.२९)। राजगृह में हुई बौद्ध सभा में विनयपिटक के अधिकारी व्यक्ति के नाते इसने भाग लिया था (धम्मपद. ३.१४५)। गौतमबुद्ध एवं उपालि के दरम्यान हुए 'विनय' संबंधित से संवाद पर आधारित 'उपालि पंचक' नामक एक अध्याय बौद्ध ग्रंथों में प्राप्त है (विनय. ५.१८०-२०६)।

'गौतम बुद्ध'—बुद्धधर्म का सुविख्यात संस्थापक, जो बौद्ध वाङ्मय में निर्दिष्ट पच्चीस बुद्धों में से अंतिम बुद्ध माना जाता हैं। बोध प्राप्त हुए साधक को बौद्ध वाङ्मय में 'बुद्ध' कहा गया है, एवं ऐसी व्यक्ति धर्म के ज्ञान के कारण अन्य मानवीय एवं दैवी व्यक्तियों से श्रेष्ठ माना गया है।

बुद्धों की नामावलि—'दीपवंश' जैसे प्राचीनतर बौद्ध ग्रंथ में बुद्धों की संख्या सात बतायी गयी हैं, एवं उनके नाम निम्न प्रकार दिये गये है:—१. विपस्य; २. शिखिन् ३. वेस्यभू; ४. ककुसंध; ५. कोणागमन; ६. कस्यप; ७. गौतम (दीप. २.५, संयुक्त. २.५)।

'बुद्धवंश' जैसे उत्तरकालीन बौद्ध ग्रंथ में बुद्धों की संख्या पच्चीस बतायी गयी है, जिनमें उपनिर्दिष्ट बुद्धों के अतिरिक्त निम्नलिखित वृद्ध विपस्य से पूर्वकालीन बताये गये हैं:—

१. दीपंकर; २. कौंडन्य; ३. मंगल; ४. सुमन, ५. रेवत; ६. शोभित, ७. अनोमदर्षिन्; ८. पद्म; ९. नारद १०. पद्मुत्तर; ११. सुमेध; १२. सुजात; १३. प्रियदर्शन; १४. अर्थदर्शिन्; १५. धर्मदर्शिन्; १६. सिद्धांत; १७. तिष्य; १८. पुष्य।

जन्म—गौतम के पिता का नाम शुद्धोदन था, जो श्रावस्ती से साठ मील उत्तर में एवं रोहिणी नदी के पश्चिम तट पर स्थित शाक्यों के संघराज्य का प्रमुख था। शाक्यों की राजधानी कपिलवस्तु में थी, जहाँ गौतम का जन्म हुआ था। प्राचीन शाक्य जनपद कोसल देश का ही भाग था, इसी कारण गौतम 'शाक्रीय' एवं 'कोसल' कहलाता था (मज्झिम. २.१२४)।

गौतम की माता का नाम महामाया था, जो रोहिणी नदी के पूरव में स्थित कोलिय देश की राजकन्या थी। आषाढ माह की पौर्णिमा के दिन महामाया गर्भवती हुई, जिस दिन बोधिसत्त्व ने एक हाथी के रूप में उसके गर्भ में प्रवेश किया। दस महीनों के बाद कपिलवस्तु से देवदह नगर नामक अपने मायके जाते समय लुंबिनीवन में वह प्रसूत हुई। वैशाख माह की पौर्णिमा बौद्ध का जन्मदिन मानी गयी है। इसी दिन, इसकी पत्नी राहुलमाता, बोधिवृक्ष, इसका कंथक नामक अश्व, एवं छन्न एवं कालुदाई नामक इसके नौकर पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए। गौतम का जन्मस्थान लुम्बिनी आधुनिक काल में 'रुम्मिनदेई' नाम से सुविख्यात है, जो नेपाल की तराई में बस्ती नामक जिले की सीमा-पर स्थित है। इसके जन्म के पश्चात् सात दिनों के बाद इसकी माता की मृत्यु हुई। जन्म के पाँचवे दिन इसकी नामकरणविधि सम्पन्न हुई, जिसमें इसका नाम 'सिद्धार्थ' रक्खा गया।

स्वरूपवर्णन—इसका स्वरूपवर्णन बौद्ध साहित्य में प्राप्त है। यह लंबे कद का था। इसकी आँखे नीली, रंग गोरा, कान लटकते हुए, एवं हाथ लंबे थे, जिनकी अंगुलियाँ घुटने तक पहुँचती थी। इसके केश घुंघराले थे, एवं छाती चौड़ी थी।

इसकी आवाज अतिसुंदर एवं मधुर थी, जिसमें उत्कृष्ट वक्ता के लिए आवश्यक प्रवाह, माधुर्य, सुस्पष्टता, तर्कशुद्धता एवं नादमधुरता ये सारे गुण समाविष्ट थे (मज्झिम. १.२६९; १७५)। बौद्ध साहित्य में निर्दिष्ट महापुरुष के बत्तीस लक्षणों से यह युक्त था।

बाल्यकाल एवं तारुण्य—उसकी आयु के पहले उन्तीस वर्ष शाही आराम में व्यतीत हुए। इसके रम्य, सुरम्य,

एवं शुभ नामक तीन राजप्रसाद थे, जहाँ यह बर्ष के तीन ऋतु व्यतीत करता था (अंगुत्तर. १.१४५)। सोलह वर्ष की आयु में सुप्रबुद्ध की कन्या यशोधरा (भद्रकच्छा अथवा बिंत्रा) से इसका विवाह संपन्न हुआ, जो आगे चलकर राहुलमाता नाम से सुविख्यात हुई। कालोपरांत अपनी इस पत्नी से इसे एक पुत्र उत्पन्न हुआ, जिसे अपने आध्यात्मिक जीवन का बंधन मान कर उसका नाम 'राहुल' (बंधन) रख दिया।

विरक्ति--इसकी मनोवृत्ति शुरु से ही चिंतनशील, एवं वैराग्य की ओर झुकी हुयी थी। आगे चल कर एक बूढ़ा, एक रोगी, एवं एक लाश के रूप में इसे आधिभौतिक जीवन की त्रुटियाँ प्रकर्ष से ज्ञात हुई, एवं लगा कि, क्षुद्र मानवीय जंतु जिसे सुख मान कर उसमें ही लिप्त रहता है, वह केवल क्षणिक ही नहीं, बल्कि समस्त मानवीय दुःखों का मूल है। उसी समय इसने एक शांत एवं प्रसन्नमुख संन्यासिन् को देखा, जिसे देख कर इसका संन्यास जीवन के प्रति झुकाव और भी बढ़ गया।

महाभिनिष्क्रमण--पश्चात् आषाढ माह की पौर्णिमा की रात्रि में इसने समस्त राजवैभव एवं पत्नीपुत्रों को त्याग कर, यह अपने कंथक नामक अश्वपर आरुढ हो कर कपिलवस्तु छोड़ कर चला गया। पश्चात् शाक्य, कोल्य, एवं मल्ल राज्यों को एवं अनुमा नदी को पार कर, यह राजगृह नगर पहुँच गया। इसे गौतम का महाभिनिष्क्रमण कहते हैं।

तपःसाधना--राजगृह में बिंबिसागर राजा से भेंट करने के उपरान्त यह तपस्या में लग गया। आधिभौतिक गृहस्थधर्म से यह पहले से ही ऊब चुका था। अब यह संन्यास देहदण्ड का आचारण कर तपस्या करने लगा। सर्वप्रथम यह आडार, कालम एवं उद्रक रामपुत्र आदि आचार्यों का शिष्य बना, किन्तु उनकी सूखी तत्त्वचर्चा से ऊब कर यह उरुवेला में स्थित सेनानीग्राम में गया, एवं वहाँ पंचवर्गीय ऋषियों के साथ इसने छः वर्षोंतक कठोर तपस्या की। इस तपस्या के पश्चात् भी इसका मन अशान्त रहा, इस कारण यह हठयोगी तापसी का जीवन छोड़ कर सामान्य जीवन बिताने लगा। इस समय इसे प्रतीत हुआ कि, मानवी शरीर को अत्यधिक त्रस्त करना उतना ही हानिकारक है, जितना उसे अत्यधिक सुख देना है।

पश्चात् यह अकेला ही देहाती स्त्रियों से भिक्षा माँग कर धीरे धीरे स्वाथ्य प्राप्त करने लगा। इसी काल में, सुजाता नामक स्त्री पीने पीपल के वृक्ष के नीचे बैठ हुए इसे वृक्षदेवता समझ कर लगातार पाँच दिनों तक सुवर्ण पात्र में पायस खिलायी।

परमज्ञानप्राप्ति--वैशाख-पौर्णिमा के दिन नैरंजरा नदी में स्थित सुप्रतीर्थ में इसने स्नान किया, एवं वहीं स्थित शालवन में सारा दिन व्यतीत किया। पश्चात् श्रोत्रिय के द्वारा दिये गये घांस का आसन बना कर, यह बोधि वृक्ष के पूर्व भाग में बैठ गया। उसी समय, गिरिमेखल नामक हाथी पर आरूढ़ हो कर, मार (मनुष्य की पापी वासनाएँ) ने इस पर आक्रमण किया, एवं अपना चक्रायुध नामक अस्त्र इसपर फेंका। इसने मार को जीत लिया, एवं इसके चित्तशान्ति के सारे विक्षेप नष्ट हुए।

पश्चात् उसी रात्रि में इसे अपने पूर्वजन्मों का, एवं विश्व के उत्पत्ति कारणपरंपरा (प्रतीत्य समुत्पाद) का ज्ञान हुआ, एवं दिव्यचक्षु की प्राप्ति हुई। बाद में उसे वह बोध (ज्ञान) हुआ, जिसकी खोज में यह आज तक भटकता फिरता था। उसी दिन इसे ज्ञात हुआ, कि संयमसहित सदाचरण एवं जीवन ही धर्म का सार है, जो इस संसार के सभी यज्ञ, शास्त्रार्थ एवं तपस्या से बढ़ कर हैं।

पश्चात् यह तीन सप्ताहों तक बोधिवृक्ष के पास ही चिंतन करता रहा। इसी समय इसके मन में शंका उत्पन्न हुई कि, अपने को ज्ञात हुआ बोध यह अपने पास ही रक्खें, अथवा उसे सारे संसार को प्रदान करें। उसी समय ब्रह्मा ने प्रत्यक्ष दर्शन दे कर इसे आदेश दिया कि, 'उत्थान' (सतत उद्योगत रहना) एवं 'अप्रमाद' (कभी ढील न खाना) यही इसका जीवन कर्तव्य है। ब्रह्मा के इस आदेश के अनुसार, इसने स्वयं को प्राप्त हुए बोध का संसार में प्रसार करना प्रारंभ किया।

धर्मचक्रप्रवर्तन--अपने धर्मरूपी चक्र का प्रवर्तन (सतत प्रचार करना) का कार्य इसने सर्व प्रथम सारनाथ (वाराणसी) में प्रारंभ किया, जहा इसने पाँच तापसों के समुदाय के सामने अपना पहला धर्मप्रवचन दिया। इसने कहा, 'संन्यासियों को चाहिये कि, वे दो अन्तों (सीमाओं) का सेवन न करे। इनमें से एक 'अन्त' काम एवं विषय सुख में फँसना है, जो अत्यंत हीन ग्राम्य एवं अनार्य है। दूसरा 'अन्त' शरीर को व्यर्थ कष्ट देना है, जो अनार्य एवं निरर्थक है। इन दोनों अन्तों का त्याग कर 'तथागत' ठीक समझनेवाले (बुद्ध) ने

'मध्यम प्रतिपदा' (मध्यम मार्ग) को स्वीकरणीय माना है, जो विचारप्रणाली आँखे खोल देनेवाली एवं ज्ञान प्राप्त करनेवाली है'।

मध्यम मार्ग का प्रतिपादन करनेवाला बुद्ध का यह पहला प्रवचन 'धर्मचक्रप्रवर्तन सूत्र' नाम से सुविख्यात है। जिस प्रकार राजा लोग चक्रवर्ती बनने के लिए अपने रथ का चक्र चलाते है, वैसे ही इसने धर्म का चक्र प्रवर्तित किया। वे चातुर्मास्य के दिन थे, जिसमें संन्यासियों के लिए यात्रा निषिद्ध मानी गयी है। इसी कारण चार महिनों तक यह सारनाथ में ही रहा। इसी काल में इसने 'अन्तलक्खण सूत्र' नामक अन्य एक प्रवचन किया; एवं इसके शिष्यों में साठ भिक्षु एवं बहुत से उपासक (गृहस्थ अनुयायी) शामिल हो गयें।

बुद्धसंघ की स्थापना--अपने उपर्युक्त भिक्षुओं को इसने 'संघ' (प्रजातंत्र) के रूप में संघटित किया, जहाँ किसी एक व्यक्ति की हुकूमत न हो कर, संघ की ही सत्ता चलती थी। चातुर्मास्य समाप्त होते ही इसने अपने संघ के भिक्षुओं आज्ञा दी, 'अब तुम जनता के हित के लिए घूमना प्रारंभ करो। मेरी यही इच्छा है कि, कोई भी दो भिक्षु एक साथ न जाये, किन्तु अलग स्थान पर जा कर धर्मोपदेश करता रहे'।

'गयाशीर्ष' में--चातुर्मास्य के पश्चात् यह सेनानी-ग्राम एवं उरुवेला से होता हुआ गया पहुँच गया। वहाँ 'आदिन्त परियाय' नामक सुविख्यात प्रवचन दिया, जिस कारण इसे अनेकानेक नये शिष्य प्राप्त हुए। उनमें तीन काश्यप बन्धु भी थें, जो बड़े विद्वान् कर्मकाण्डी थे, एवं जिनके एक सहस्त्र शिष्य थें। इसका प्रवचन सुन कर उन्होंनें यज्ञों की सभी सामग्री निरंजना नदी में बहा दी, एवं वे इसके शिष्य बन कर इसके साथ निकल पड़े। कश्यप बन्धुओं के इस वर्तन का काफ़ी प्रभाव मगध की जनता पर पड़ा।

राजगृह में--पश्चात् यह अपने शिष्यों के साथ राजगृह के श्रेणिक बिंबिसार राजा के निमंत्रण पर उस नगरी में गया। वहाँ राजा ने इसका उचित आदरसत्कार किया, एवं राजगृह में स्थित वेलुवन बुद्धसंघ को भेंट में दे दिया। इसी नगर में रहनेवाले सारिपुत्त एवं मौद्गलायन नामक दो सुविख्यात ब्राह्मण बुद्ध के अनुयायी बन गये, जो आगे चलकर 'अग्रश्रावक' (प्रमुख शिष्य) कहलाये जाने लगे (विनय. १-२३)।

इसी काल में बुद्ध के विरोधकों की संख्या भी बढ़ती गयी, जो इसे पाखंडी मान कर अपने वंध्यत्व, आदि आपत्तियों के लिए इसे जिम्मेदार मानने लगे। किन्तु इसने इन आक्षेपों को तर्कशुद्ध एवं सप्रमाण उत्तर दे कर स्वयं को निरपराध साबित किया (विनय १.)

कपिलवस्तु में--इसका यश अब कपिलवस्तु तक पहुँच गया, एवं इसके पिता शुद्धोदन ने इसे खास निमंत्रण दिया। पश्चात् फाल्गुन पौर्णिमा के दिन, यह अपने बीस हज़ार भिक्षुओं के साथ कपिलवस्तु की ओर निकल पड़ा (थेरगाथा ५२७.३६)। कपिलवस्तु में यह न्यग्रोधाराम मे रहने लगा, एवं वहीं इसने 'वेशान्तर जातक' का प्रणयन किया। दूसरे दिन इसने अन्य भिक्षुओं के साथ कपिलवस्तु में भिक्षा माँगते हुए भ्रमण किया। पश्चात् इसका पिता शुद्धोदन अन्य अन्य भिक्षुओं के साथ इसे अपने महल में ले गया, जहाँ इसकी पत्नी यशोधरा के अतिरिक्त सभी स्त्री पुरुषों नें इसका उपदेश श्रवण किया।

पश्चात् यह सारीपुत्त एवं मौद्गलायन इन दो शिष्यों के साथ यशोधरा के महल में गया, एवं उसे 'चण्डकिन्नर जातक' सुनाया। इसे देखते ही यशोधरा गिर पड़ी एवं रोने लगी। किन्तु पश्चात् उसने अपने आप को सम्हाला, एवं इसका उपदेश स्वीकार लिया। पश्चात् इसके पुत्र राहुल के द्वारा 'पितृदाय' की माँग किये जाने पर इसने उसे भी प्रव्रज्या (संन्यास) का दान किया।

यह सुन कर शुद्धोदन को अत्यधिक दुःख हुआ, जिससे द्रवित हो कर इसने यह नियम बनाया कि, अपनी मातापिताओं की संमति के बिना किसी भी बालक को भिक्षु न बना दिया जाय।

इसकी इस कपिलवस्तु की भेंट में ८० हजार शाक्य लोग भिक्षु बन गये, जिनमें आनंद एवं उपालि प्रमुख थे। आगे चल कर आनंद इस का 'उपस्थावक' (स्वीय सहायक) बन गया, एवं उपालि इस के पश्चात् बौद्ध संघ का प्रमुख बन गया।

पुनश्च राजगृह में--एक वर्ष के भ्रमण के पश्चात् यह पुनः एक बार राजगृह में लौट आया, जहाँ श्रावस्ती का करोड़पति सुदत्त अनाथपिंडक इसे निमंत्रण देने आया। इस निमंत्रण का स्वीकार कर यह वैशाली नगरी होता हुआ श्रावस्ती पहुँच गया। वहाँ सुदत्त ने राजकुमार जेत से 'जेतवन' नामक एक बगीचा खरीद कर, उसे बुद्ध एवं उसके अनुयायियों के निवास के लिए दान में दे

दिया। यह बगीचा खरीदने के लिए सुदत्त ने जेत को उतने ही सिक्के अदा किये, जितने उस बगीचे में बिछाये जा सकते थें।

इसी काल में श्रावस्ती के विशाखा ने इसे 'पूर्वाराम' नामक वन इसे भेंट में दिया। श्रावस्ती के उग्रसेन ने भी इसी समय बौद्धधर्म का स्वीकार किया (धम्मपद, ४.५९)।

शुद्धोदन का निधन—इसे परमज्ञान होने के पश्चात् इसके पिता शुद्धोदन का देहान्त हुआ। इसके पिता की मृत्यु के पश्चात्, इसकी माता महाप्रजापति गौतमी एवं अन्य शाक्य स्त्रियों ने बौद्ध भिक्षुणी बनने की इच्छा प्रकट की। इसने तीन बार उस प्रस्ताव का अस्वीकार किया, किन्तु आगे चल कर आनंद की मध्यस्थता के कारण इसने स्त्रियों को बौद्धधर्म में प्रवेश करने की अनुज्ञा दी।

तत्पश्चात् भिक्षुणी के संघ की अलग स्थापना की गयी, एवं जिस प्रकार वृद्ध भिक्षु 'थेर' (स्थविर) नाम से प्रसिद्ध थे, उसी प्रकार वृद्ध भिक्षुणियाँ 'थेरी' (स्थविरी) कहलायी जाने लगी। इन दो बुद्धसंघों का साहित्य क्रमशः 'थेरगाथा' एवं 'थेरीगाथा' में संग्रहित है।

भ्रमण गाथा—तदुपरांत अपनी आयु का ४५ वर्षों तक का काल इसने भारत के विभिन्न सोलह जनपदों में भ्रमण करने में व्यतीत किया, जिसकी संक्षिप्त जानकारी निम्न प्रकार हैः-- १. छठवें साल में—श्रावस्ती, जहाँ इसने 'यमकपाठिहारिय' नामक अभियानकर्म का दर्शन अपने भिक्षुओं को दिया (धम्मपद. ३.१९९); २. सातवें साल में—मंकुलपर्वत; ३. आठवें साल में--भर्ग (मनोरथ-पूरणी. १.२१७); ४. नौवें साल में—कौशांबी; ५. दसवें साल में—पारिलेयक्कवन; ६. ग्यारहवें साल में-एकनाला ग्राम; ७. बारहवें साल में--वेरांजाग्राम; ८. तेरहवें साल में—चालिकपर्वत; ९. चौदहवें साल में--श्रावस्ती; १०. पद्रहवें साल में—कपिलवस्तु; ११. सोलहवें एवं सत्रहवें साल में—अलावी; १२ अठारहवें एवं उन्नीसवें साल में-चालिकपर्वत; १३. बीसवें साल में—राजगृह।

घटन क्रम—प्रचलित बौद्ध साहित्य से प्रतीत होता है कि, पच्चीस वर्ष की आयु में इसे परमज्ञान की प्राप्ति हुई। उसके बाद के पच्चीस साल इसने भारत के विभिन्न जनपदों के भ्रमण में व्यतीत किये। इस भ्रमणपर्व के पश्चात् पच्चीस साल तक यह जीवित रहा, किन्तु बौद्धजीवन से संबंधित इस पर्व की अधिक जानकारी उपलब्ध नहीं है।

उपलब्ध सामुग्री से प्रतीत होता है कि, वर्षाकाल के चार महिने यह श्रावस्ती के जेतवन, एवं पूर्वाराम में व्यतीत करता था, एवं बाकी आठ महिने विभिन्न स्थानों में घूमने में व्यतीत करता था।

भ्रमणस्थल--बुद्ध के द्वारा भेंट दिये गये स्थानों में निम्नलिखित प्रमुख थेः-- अग्गालवचेतीय; अनवतप्त सरोवर, अंधकविंद, आम्रपालीवन, अंबयष्टिकावन, अश्वपुर, आपण, उग्रनगर, उत्तरग्राम, उत्तरका, उत्तरकुरु, उरुवेलाकप्प, एकनाल, ओपसाद, कजंगल, किंबिला, कीटगिरि, कुण्डधानवन, केशपुत्र, कोटिग्राम, कौशांबी, खानुमत, गोशिंगशालवन, चंडालकप्प, चंपा, चेतीयगिरि, जीवकंबवन, तपोदाराम, दक्षिण गिरि, दण्डकप्प, देवदह, नगरक, नगारविंद, नालंदा, पंकधा, पंचशाला, पाठिकाराम, वेलुव, भद्रावती, भद्रिय, भगनगर, मनसाकेत, मातुला, मिथिला, मोरणिवाप, रम्यकाश्रम, यष्टिवन, विदेह, वेनागपुर, वेलुद्वार, वैशालि, साकेत, श्यामग्राम, शालवाटिका, शाला, शीलावती, सीतावन, सेतव्य, हस्तिग्राम, हिमालय पर्वत।

देवदत्त से विरोध—बुद्ध के महानिर्वाण के पूर्व की एक महत्त्वपूर्ण घटना, इसका देवदत्त से विरोध कही जा सकती है। परिनिर्वाण के आठ साल पहले मगध देश का सुविख्यात सम्राट् एवं बुद्ध का एक एकनिष्ठ उपासक राजा बिंबिसार मृत हुआ। इस सुसंधी का लाभ उठा कर देवदत्त नामक बुद्ध के शिष्य ने बौद्धधर्म का संचालकत्व इससे छीनना चाहा। इसी कार्य में मगध देश के नये सम्राट अजातशत्रु ने देवदत्त की सहायता की। गृध्रकूट पर्वत से एक प्रचंड शीला गिरा कर देवदत्त ने इसका वध करने का प्रयत्न किया। यह प्रयत्न तो असफल हुआ, किन्तु आहत हो कर इसे जीवक नामक वैद्यकशास्त्रज्ञ का औषधोपचार लेना पड़ा।

इसके वध का यह प्रयत्न असफल होने पर, देवदत्त ने अपने पाँच सौ अनुयायियों के साथ एक स्वतंत्र सांप्रदाय स्थापन करना चाहा, जिसका मुख्य केंद्र गयाशीर्ष में था। किन्तु सारीपुत्त एवं मौद्गलायन के प्रयत्नों से देवदत्त का यह प्रयत्न भी असफल हुआ, एवं वह अल्पावधी में ही मृत हुआ।

अंतीमयात्रा—बुद्ध के अंतीमयात्रा का सविस्तृत वर्णन 'महापरिनिर्वाण' एवं 'महासुदर्शन' नामक सूत्र ग्रंथों में प्राप्त है। गृध्रकूट से निकलने के पश्चात यह अंबयष्टिका, नालंदा, पाटलिग्राम, गोतमद्वार, गोतमतीर्थ,

कोटीग्राम आदि ग्रामों से होता हुआ वैशाली नगरी में पहुँच गया। वहाँ लिच्छवी के नगरप्रमुख के निमंत्रण का अस्वीकार कर, बुद्ध ने आम्रपाली गणिका के आमंत्रण का स्वीकार किया। उसी समय आम्रपाली ने वैशालि में स्थित अपना 'आम्रपालीवन' इसे अर्पित किया। पश्चात् यह वैशालि से वेलुवग्राम गया, जहाँ यह बीमार हुआ।

महापरिनिर्वाण--बीमार होते ही इसने आनंद से कहा " मेरा अवतारकार्य समाप्त हो चुका है। जो कुछ भी मुझे कहना था वह मैंने कहा है। अब तुम अपनी ही ज्योति में चलो, धर्म की शरण में चलो'। पश्चात् इसने जन्मचक्र से छुटकारा पाने के लिए एक चतुःसूत्री कथन की, जिसमें पवित्र आचरण, तपःसाधन, ज्ञानसाधना एवं विचारस्वातंत्र्य का समावेश था।

पश्चात् मल्लों के अनेक गाँवों से होता हुआ यह पावा पहुँच गया, वहाँ चुन्द नामक लुहार ने 'सूकरमद्दव' नामक सूकरमाँस से युक्त पदार्थ का भोजन इसे कराया, जिस कारण रक्तातिसार हो कर कुशीनगर के शालवन में इसका महापरिनिर्वाण (बूझना) हुआ। महापरिनिर्वाण के पूर्व अपना अंतीम संदेश कथन करते हुए इसने कहा था, 'संसार की सभी सत्ताओं की अपनी अपनी आयु होती है। अप्रमाद से काम करते रहो, यही 'तथागत' की अंतिम वाणी है'।

महापरिनिर्वाण के समय इसकी आयु अस्सी वर्ष की थी, एवं इसका काल इ. पूर्व ५४४ माना जाता है।

दाहकर्म--कुशीनगर के मल्लों ने इसका दाहकर्म कर, एवं इसकी धातुओं (अस्थियाँ) को मालाधनुषों से घिरकर आठदिनों तक नृत्यगायन किया। पश्चात् इसकी धातु निम्नलिखित राजाओं ने आपस में बाँट लियेः—१. अजातशत्रु (मगध) २. लिच्छवी (वैशालि); ३. शाक्य (कपिलवस्तु); ४. बुलि (अल्लकप्प); ५. कोलिय (रामग्राम); ६. मल्ल (पावा); ७. एक ब्राह्मण (वेठद्वीप)। बुद्ध की रक्षा पिप्तलीवन के मोरिय राजाओं ने ले ली।

पश्चात् बुद्ध की अस्थियों पर विभिन्न स्तूप बनवाये गये। किसी पवित्र अवशेष के उपर यादगार के रूप में वास्तु बनवाने की पद्धति वैदिक लोगों में प्रचालित थी। बौद्ध सांप्रदायी लोगों ने उसका ही अनुकरण कर बुद्ध के अवशेषों पर स्तूपों की रचना की।

तत्त्वज्ञान--बुद्ध का समस्त तत्वज्ञान तात्त्विक एवं नैतिक मांगों में विभाजित किया जा सकता है। किन्तु सही रूप में, वे दो विभिन्न तत्त्वज्ञान एक ही तत्वज्ञान के दो पहलु कहे जा सकते है। इस तत्वज्ञान में मानवीय जीवन दुःखपूर्ण बताया गया है, एवं उस दुःख को उत्पन्न करनेवाले कारणों को दूर कर उससे छुटकारा पाने का संदेश बुद्ध के द्वारा दिया गया है। मानवीय जीवन की इस दुःखरहित अवस्था को बुद्ध के द्वारा 'निर्वाण' कहा गया है।

बुद्ध के द्वारा प्रणीत 'निर्वाण' की कल्पना परलोक में 'मुक्ति' प्राप्त कराने का आश्वासन देनेवाले वैदिक हिंदुधर्म से सर्वस्वी भिन्न है। मुमुक्षु साधक को इसी आयु में मुक्ति मिल सकती है, एवं उसे प्राप्त करने के लिए चित्तशुद्धि एवं सदाचरण की आवश्यकता है, यह तत्त्व बुद्ध ने ही प्रथम प्रतिपादन किया, एवं इस प्रकार धर्म को 'परलोक' का नही, बल्कि 'इहलोक' का साधन बनाया।

इस निर्वाणप्राप्ति के लिए 'मध्यममार्ग' से चलने का आदेश बुद्ध के द्वारा दिया गया है, एवं देहदण्ड एवं शारीरिक सुखोपभोग इन दोनों आत्यंतिक विचारों का त्याग करने की सलाह बुद्ध के द्वारा ही गयी है। बुद्ध के द्वारा प्रणीत 'मध्यममार्ग' के तत्त्वज्ञान में, निर्वाणप्राप्ति के निम्नलिखित आठ मार्ग बताये गये हैः—१. सुयोग्य धार्मिक दृष्टिकोन, जो हिंसक यज्ञयाग, एवं परमेश्वरप्रधान धार्मिक तत्वज्ञान से अलिप्त है; २. सुयोग्य मानसिक निश्चय, जो जातीय, वर्णीय एवं सामाजिक भेदाभेद से अलिप्त है; ३. सुयोग्य संभाषण, जो अनृत, काम, क्रोध, भय आदि से अलिप्त है; ४. सुयोग्य वर्तन, जो हिंसा, चौर्यकर्म एवं कामक्रोधादि विकारों से अलिप्त हैं; ५. सुयोग्य जीवन, जो हिंसा आदि निषिद्ध व्यवसायों से अलिप्त है; ६. सुयोग्य प्रयत्नशीलता, जो व्यक्ति के मानसिक एवं नैतिक उन्नति की दृष्टिकोन से प्रेरित है; ७. सुयोग्य तपस्या, जिसमें निर्वाण के अतिरिक्त अन्य कौनसे भी विचार निषिद्ध माने गये हैं; ८. सुयोग्य जागृति, जिसमें मानवीय शरीर की दुर्बलता की ओ सदैव ध्यान दिया जाता है।

बुद्ध की चतुःसूत्री—बुद्ध के अनुसार, निर्वाणेच्छु साधक के लिए एक चतुःसूत्रीय आचरण संहिता बतायी गयी है, जिसमें मेत्त (सारे विश्व से प्रेम), करुणा, मुदित (सहानुभूतिमय आनंद), उपेख्य (मानसिक शांति) ये चार आचरण प्रमुख कहे गये हैं।

प्रमुक बौद्ध सांप्रदाय—बुद्ध की मृत्यु के पश्चात्, बौद्ध संघ अनेकानेक बौद्ध सांप्रदायों में विभाजित हुआ,

जिनमें निम्नलिखित प्रमुख थेः— १. स्थविरवादिन्, जो बौद्ध संघ में सनातनतम सांप्रदाय माना जाता है; २. महासांघिक, जो उत्तरकालीन महायान-सांप्रदाय का आद्य प्रवर्तक सांप्रदाय माना जाता है। बौद्ध संघ में सुधार करने के उद्देश्य से यह सांप्रदाय सर्वप्रथम मगध देश में स्थापन हुआ, एवं उसने आगे चल कर काफी उन्नति की।

(१) स्थविरवादिन्—इस सांप्रदाय के निम्नलिखित उपविभाग थेः— १. सर्वास्तिवादिन् (उत्तरी पश्चिम भारत; प्रमुख पुरस्कर्ता—कनिष्क); २. हैमवत, (हिमालय पर्वत); ३. वात्सिपुत्रीय, (आवंतिक, अवंतीदेश; प्रमुख-पुरस्कर्त्री—हर्षवर्धनभगिनी राज्यश्री); ४. धर्मगुप्तिक, (मध्यएशिया एवं चीन); ५. महिशासक (सिलोन);

(२) महासांधिक सांप्रदाय—इस सांप्रदाय के निम्नलिखित उपविभाग थे;— १. गोकुलिक (कुककुलिक); २. एकव्यावहारिक; ३. चैत्यक; ४. बहुश्रुतीय; ५. प्रज्ञप्तिवादिन्; ६. पूर्वशैलिक; ७. अपरशैलिक; ८. राजगिरिक ९. सिद्धार्थिक।

बौद्धधर्म के प्रसारक—इस धर्म के प्रसारकों में अनेक विभिन्न राजा, भिक्षु एवं पाली तथा संस्कृत ग्रंथकार प्रमुख थे जिनकी संक्षिप्त नामावलि नीचे दी गयी हैः—

(१) राजा—बिंबिसार, अजातशत्रु, अशोक, मिनँडर (मिलिंद), कनिष्क, हर्षवर्धन।

(२) भिक्षु—सारीपुत्त, आनंद, मौद्गलायन, आनंद, उपालि।

(३) पाली ग्रंथकार—नागसेन, बुद्धद, बुद्धघोष, धम्मपाद।

(४) संस्कृत ग्रंथकार—अश्वघोष, नागार्जुन, बुद्धपालित, भावविवेक, असंग, वसुबंधु, दिङ्नाग, धर्मकीर्ति।

बौद्धधर्म के प्रमुख तीर्थस्थान—बौद्धसाहित्य में बुद्ध के जीवन से संबंधित निम्नलिखित आठ प्रमुख तीर्थस्थानों (अष्टमहास्थानानि) का निर्देश प्राप्त हैः— १. लुम्बिनीवन, जहाँ बुद्ध का जन्म हुआ था; २. बोधिगया, जहाँ बुद्ध को परमज्ञान की प्राप्ति हुई थी; ३. सारनाथ (इषिपट्टण), जहाँ बुद्ध के द्वारा धर्मचक्रप्रवर्तन का पहला प्रवचन हुआ था; ४. कुशिनगर, जहाँ बुद्ध का महापरिनिर्वाण हुआ था; ५. श्रावस्ती (कोसलदेश की राजधानी), जहाँ तीर्थिक सांप्रदाय के लोगों को पराजित करने के लिए बुद्ध ने अनेकानेक चमत्कार दिखाये थे; ६. संकाश्य, जहाँ अपनी माता मायादेवी को मिलने के लिए बुद्ध कुछ काल तक तुषित स्वर्ग में प्रविष्ट हुआ था; ७. राजगृह, (मगधदेश की राजधानी), जहाँ देवदत्त के द्वारा छोडे गये नालगिरि नामक वन्य हाथी को इसने अपने चमत्कार-सामर्थ्य से शांत किया; ८. वैशालि, जहाँ कई वानरों ने बुद्ध को कुछ शहद ला कर अर्पण किया था।

पौराणिक साहित्य में—इस साहित्य में इसे विष्णु का नौवाँ अवतार कहाँ गया है, एवं असुरों का विनाश तथा धर्म की रक्षा करने के लिए इसके अवतीर्ण होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है (मत्स्य. ४७.२४७)।

पुराणों में अन्यत्र इसे दैत्य लोगों में अधर्म की प्रवृत्ति निर्माण करनेवाला मायामोह नामक अधम पुरुष कहा गया है (शिव. रुद्र. युद्ध. ४; पद्म. सृ. १३.३६६-३७६)। किंतु पौराणिक साहित्य में प्राप्त बुद्ध का यह सारा वर्णन सांप्रदायिक विद्वेष से प्रेरित हुआ प्रतीत होता है।

जीवक—एक सुविख्यात वैद्यकशास्त्रज्ञ, जो राजगृह के शालावती नामक गणिका का पुत्र था। यह मगध देश के बिंबिसार एवं अजातशत्रु राजाओं का वैद्य था।

पैदा होते ही माता ने इसका परित्याग किया था। तत्पश्चात् बिंबिसार राजा के पुत्र अभय ने इसे पालपोस कर बड़ा किया। इसने तक्षशीला में सात वर्षों तक वैद्यक-शास्त्र का अध्ययन किया, एवं आयुर्वेद शास्त्रांतर्गत 'कौमारभृत्य' शाखा में विशेष निपुणता प्राप्त की। मगध देश लौटने पर यह सुविख्यात वैद्य बना। यह बुद्ध का अनन्य उपासक था, एवं इसने राजगृह के आम्रवन में एक विहार बाँध कर वह बुद्ध को प्रदान किया था (सुमंगल. १.१३३)। बुद्ध ने इसके लिए 'जीवक सुत्त' का उपदेश दिया था। इसीके कहने पर बुद्ध ने अपने भिक्षुओं को टहलने का व्यायाम करने के लिए कहा।

देवदत्त—गौतम बुद्ध का एक शिष्य, जो उसके मामा सुप्रबुद्ध का पुत्र था। इसकी माता का नाम अमिता था।

बुद्ध की परमज्ञान प्राप्ति के पश्चात् उसके जन्मग्राम कपिलवस्तु में से जो कई शाक्य लोग बौद्ध बने, उनमें यह प्रमुख था। बौद्ध होने के पश्चात् कुछ काल तक बौद्धसंघ में इसका बड़ा सम्मान था। अपने बारह श्रेष्ठ शिष्यों में गौतमबुद्ध ने इसका निर्देश किया था (संयुत्तनिकाय. १८३)।

बुद्ध के परिनिर्वाण के आठ वर्ष पहले, इसके मन में इच्छा उत्पन्न हुई कि, गौतमबुद्ध को हटा कर यह बौद्ध संघ का प्रमुख बने। इस हेतु मगध देश के सम्राट अजातशत्रु की सहायता इसने प्राप्त किया, एवं उसकी

सहायता से बुद्ध का वध करने के दो तीन प्रयत्न भी किये। वे प्रयत्न असफल होने पर इसने बौद्ध संघ में विभेद निर्माण करने का भी प्रयत्न किया। इस प्रयत्न में असफलता प्राप्त होने के कारण, अत्यंत निराश अवस्था में जेतवन में इसकी मृत्यु हुई (विनय. ४.६६; गौतम बुद्ध देखिये)।

प्रसेनजित्—कोशल देश का एक सुविख्यात राजा, जो गौतम बुद्ध का परम मित्र एवं शिष्य था। यह महाकोशल राजा का पुत्र था, एवं इसकी शिक्षा तक्षशिला में हुई थी, जिस समय मल्लराजकुमार बंधुल एवं लिच्छवी राजकुमार महालि इसके सहाध्यायी थे। शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् अपने पिता के द्वारा यह कोशल देश का राजा बनाया गया। राजा होने के पश्चात् अल्पावधि में ही इसका बुद्ध से परिचय हुआ, एवं यह बौद्धधर्म का निःसीम उपासक बना था।

इसकी बहन कोसलादेवी का विवाह मगध सम्राट् बिंबिसार से हुआ था। आगे चल कर, बिंबिसार के पुत्र अजातशत्रु ने अपने पिता का वध किया, एवं वह स्वयं मगध देश का राजा बन गया। प्रसेनजित् की बहन कोसलादेवी पतिनिधन के दुख से मृत हुई। तत्पश्चात् इसने अजातशत्रु पर आक्रमण कर उसे कैदी बनाया। पश्चात् इसने उससे संधि की, एवं अपने वजिरा नामक बहन उसे विवाह में दे दी (जातक. २. २३७)।

बिंबिसार श्रेणिय शिशुनाग—मगध देश का एक सुविख्यात सम्राट्, जो गौतम बुद्ध एवं वर्धमान महावीर के अनन्य उपासकों में से एक था। इसे 'श्रेण्य' एमं 'हर्यणक' नामांतर भी प्राप्त थे। इसका राज्यकाल ५२८ इ. पू. —५०० इ. पू. माना जाता है।

इसके पिता का नाम भट्टिय था, जो कुमारसेन राजा का सेनापति था। भट्टिय ने तालजंघ राजा के द्वारा कुमारसेन का वध करवा कर, इसे मगध देश के राजगद्दी पर बैठाया। राज्य पर आते ही इसने अंगराज ब्रह्मदत्त पर आक्रमण कर, अंगदेश का राज्य मगध राज्य में शामिल किया। पश्चात् लिच्छवी राजकुमारी चेल्लना एवं कोशलराजकुमारी से विवाह कर इसने कोशल एवं वृजि देशों से मैत्री संपादन की। महावग्ग के अनुसार, इसके राज्य का विस्तार तीन सौ योजन था, एवं उसमें अस्सी हज़ार ग्राम थे।

इसके पूर्वकाल में मगध देश की राजधानी गिरिव्रज नगरी में थी। इसने उसे बदल कर 'राजगृह' नामक नयी राजधानी बसायी। इस नगर की रचना महागोविंद नामक स्थापत्यविशारद के द्वारा की गयी थी।

बौद्ध साहित्य में—बौद्ध साहित्य के अनुसार, बिंबिसार एवं गौतम बुद्ध शुरू से ही अत्यंत परम मित्र थे, एवं सारनाथ में किये गये 'धर्मचक्रप्रवर्तन' के प्रवचन के पश्चात् गौतम बुद्ध सर्वप्रथम इससे ही मिलने आया था। तत्पश्चात् अपने परिवार के ग्यारह लोगों के साथ यह बौद्ध बन गया। अपने सारे जीवनकाल में यह बौद्धधर्म की सहायता करता रहा (विनय. १.३५)।

धार्मिक दृष्टिकोण—बौद्ध एवं जैन साहित्य में, बिंबिसार के द्वारा बौद्ध एवं जैन धर्मों को स्वीकार किये जाने के निर्देश प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में भी इसके द्वारा अनेक ब्राह्मणों की परामर्ष लेने का उल्लेख किया गया है। इससे प्रतीत होता हैं कि, यह किसी भी एक धर्म को स्वीकार न कर, तत्कालीन भारतीय परंपरा के अनुसार सभी धर्मों का एवं धर्मप्रचारकों की समान रूप से परामर्श लेता था। इसके काल में बौद्धधर्म संघ विशेष क्रियाशील एवं संगठित था, जिस कारण जैन एवं पौराणिक साहित्य की अपेक्षा बौद्ध साहित्य में इसका निर्देश एवं कथाएँ विशेषरूप से पायी जाती हैं।

अजातशत्रु, उदयन, महापद्म नंद, चंद्रगुप्त मौर्य आदि बौद्धकालीन सम्राट् जैन, हिन्दु एवं बौद्ध धर्म का समानरूप से आदर करते थे, जिससे प्रतीत होता है कि तत्कालीन राजा किसी एक धर्म को स्वीकार न कर सभी धर्मों को आश्रय प्रदान करते थे।

मृत्यु—बिंबिसार का अन्त अत्यंत दुःखपूर्ण हुआ। इसके पुत्र अजातशत्रु को बुद्ध के एक शिष्य देवदत्त ने अपनी सिद्धि के प्रभाव से मोहित किया। पश्चात् देवदत्त ने अजातशत्रु को अपने पिता बिंबिसार का वध करने की मंत्रणा दी। किन्तु यह प्रयत्न असफल हुआ, एवं उस प्रयत्न में अजातशत्रु देवदत्त के साथ पकड़ा गया। पश्चात् इसने अजातशत्रु को क्षमा कर उसे मगधदेश का राज्य प्रदान किया, एवं यह स्वयं राज्यनिवृत्त हुआ।

राज्यसत्ता प्राप्त होते ही अजातशत्रु ने इसे कैद कर लिया, एवं इसे भूखा प्यासा रख कर इस पर अनन्वित—अत्याचार करना प्रारंभ किया। इसका कोठरी में घूमना फिरना बंद करने के लिए नाई के द्वारा उसके पैरों में व्रण उत्पन्न कराये, एवं उसमें नमक एवं मद्यार्क भरवाया। पश्चात् अजातशत्रु ने कोयले के द्वारा इसके पाँव जला दिये। उसी क्लेश में इसकी मृत्यु हो गयी।

समकालीन राजा—इसके समकालीन राजाओं में निम्नलिखित प्रमुख थेः—१. कोसलराज प्रसेनजित्, जो इसका सब से बड़ा मित्र था, एवं जिसके कोसलादेवी नामक बहन से इसने विवाह किया था; २. तक्षशिला का राजा पुष्कलाति ३. उज्जैनी का राजा चंद्र प्रद्योत, जिसकी ऋग्णपरिचर्या के लिए इसने अपना राजवैद्य जीवक उज्जैनी नगरी में भेजा था; ४. रोरुक देश का राजा रुद्रायण।

पत्नियाँ—इसकी निम्नलिखित पत्नियाँ थीः—१. कोसलादेवी, जो कोसल देश के महाकोशल राजा की कन्या, एवं प्रसेनजित् राजा की बहन थी। इसके विवाह के समय महाकोशल राजा ने बिंबिसार राजा को काशीनगरी दहेज के रूप प्रदान की थी; २. क्षेमा; ३. पद्मावती, जो उज्जैनी नगरी की गणिका थी।

परिवार—इसके निम्नलिखित पाँच पुत्र थेः–१. अजातशत्रु; २. विमल; ३. दर्शक; ४, अभय; ५. शीलवन्त। इसकी मृत्यु के बाद, अजातशत्रु मगध देश का राजा बन गया।

वैशालि के आम्रपालि नामक गणिका से इसे द्वीमल कोंडञ्ञ नामक पुत्र उत्पन्न हुआ था। इनके अतिरिक्त इसके सीसव, जयसेन नामक दो पुत्र, एवं चंडी नामक एक कन्या उत्पन्न हुई थी।

महामौद्गलायन (महामोग्गलान)—गौतम बुद्ध के दो प्रमुख शिष्यां में से एक। इसका जन्म राजगृह के समीप कोलितग्राम में हुआ था, जिस कारण इसे 'कोलित' नाम प्राप्त हुआ था। यह जन्म से ब्राह्मण था, एवं इसकी माता का नाम मौद्गलायनी (मोग्गलानी) था। गौतमबुद्ध का अन्य एक शिष्य सारीपुत्त इसके ही ग्राम का रहनेवाला था, एवं इसका परम मित्र था।

इसका पिता कोलितग्राम का ग्रामप्रमुख था, एवं इसी कारण अत्यंत श्रीमान् था। किन्तु बाल्यकाल से ही अत्यंत विरक्त होने के कारण, इसने एवं सारीपुत्त ने संन्यास लेने का निश्चय किया, एवं ये दोनों संजय नामक ऋषि के शिष्य बन गये। किन्तु मनःशांति प्राप्त न होने पर ये दोनों जंबुद्वीप में आदर्श गुरु की खोज़ में घूमते रहे। अंत में राजगृह में स्थित वेलुवन में इनकी गौतम बुद्ध से भेंट हुई। पश्चात् ये उसके शिष्य बन गये, एवं बुद्ध ने इन दोनों को अपने प्रमुख शिष्य के नाते नियुक्त किया।

बुद्ध के शिष्यों में यह अपने सिद्धि (इद्धि) के कारण, एवं सारीपुत्त अपने संभाषणकौशल्य के कारण विशेष सुविख्यात थे। कालशिला नामक ग्राम में निग्रंथ नामक लोगों के द्वारा यह मारा गया। इसकी मृत्यु सारीपुत्त के मृत्यु से दो हप्ते बाद हुई (सारथ्थ. ३.१८१)।

माया अथवा महामाया—गौतम बुद्ध की माता, जो देवदहग्राम के अंजन नामक शाक्य राजा की कन्या थी। इसकी माता का नाम यशोधरा था। इसके दण्डपाणि एवं सुप्रबुद्ध नामक दो भाई, एवं महाप्रजापति नामक बहन थी। महाप्रजापति का विवाह भी शुध्दोदन राजा से हुआ था।

यह अत्यंत सात्त्विक प्रवृत्ति की थी, एवं मद्यमांसादि का कभी भी सेवन न करती थी। इस-प्रकार बुद्ध जैसे महान् धर्मप्रवर्तक की माता होने के लिए सारे आवश्यक गुण इसके पास थे।

बुद्ध के जन्म के समय इसकी आयु ४०-५० वर्षों की थी (संमोह. २७८)। कपिलवस्तु के समीप ही स्थित लुबिनीवन में इसके पुत्र गौतम बुद्ध का जन्म हुआ। गौतम बुद्ध के जन्म के पश्चात् सात दिनों के बाद इसकी मृत्यु हुई।

यशोधरा-गौतमबुद्ध की पत्नी, जो राहुल की माता थी। इसे भद्रकच्छा, बिंबादेवी, बिंबासुंदरी, सुभद्रका एवं राहुलमाता आदि नामान्तर भी प्राप्त थे। कई अभ्यासकों के अनुसार, इसका सही नाम बिंबा था, एवं इसके बाकी सारे नाम उपाधिस्वरूप थे।

इसका एवं गौतम बुद्ध का जन्म दिन एक ही था। सोलह साल की आयु में इसका गौतम बुद्ध से विवाह हुआ था। गौतम बुद्ध के द्वारा बौद्ध धर्म की स्थापना किये जाने के पश्चात्, इसने भी बौद्धधर्म की दीक्षा ली (गौतम बुद्ध देखिये)।

राहुल—गौतम बुद्ध का इकलौता पुत्र। इसका जन्म उसी दिन हुआ था, जिस दिन गौतम बुद्ध को सर्वप्रथम बाह्य विश्व का निरीक्षण करने का अवसर प्राप्त हुआ। आगे चल कर इसने अपने पिता से दाय के रूप में बौद्धधर्म की दीक्षा देने की प्रार्थना की थी। इस प्रार्थना के अनुसार, बुद्ध ने इसे दीक्षा दी, एवं इसे कई महत्त्वपूर्ण सूत्रों का उपदेश प्रदान किया। इसकी सात वर्ष की आयु में बुद्ध ने इसे 'अंबयष्टिका राहुलोवादसूत्र' का उपदेश दिया, एवं कभी भी अनृत भाषण न करने के लिए कहा। बुद्ध ने इसे 'महाराहुलोवादसूत्र' का उपदेश दिया था।

इसकी मृत्यु तावतिंश नामक स्थान में हुई, जिस समय गौतम बुद्ध एवं सारीपुत्त उपस्थित थे (दीघ. २. ५४९)।

सारिपुत्र उपतिश्य (सारिपुत्त)-गौतम बुद्ध का एक प्रमुख शिष्य। यह उपतिश्य ग्राम का रहनेवाला था, जिस कारण इसे यह उपाधि प्राप्त हुई थी। यह ब्राह्मणकुल में उत्पन्न हुआ था, एवं इसके मातापितरों के नाम क्रमशः रूपसारि एवं वगन्त थे। इसकी माता के नाम के कारण ही इसे सारीपुत्त नाम प्राप्त हुआ था। संस्कृत साहित्य में इसका निर्देश 'शालिपुत्र,' 'शारिसुत' एवं 'शारद्वतीपुत्र' नाम से भी प्राप्त हैं। इसके चण्ड, उपसेन एवं रेवत नामक तीन भाई थे, जो सारे बौद्ध धर्म के उपासक थे।

बुद्ध का शिष्य होने के पहले इसने संजय नामक गुरु के पास विद्या प्राप्त की थी। गौतम बुद्ध ने इसे राजगृह में 'वेदान्तपरिग्रहसूत्र' का उपदेश दिया था, एवं यह अर्हत बन गया। पश्चात् यह बुद्ध का सर्वश्रेष्ठ शिष्य बन गया, एवं स्वयं बुद्ध ने इसके ज्ञान एवं साधना के संबंध में प्रशंसा की थी (अंगुत्तर. १.२३)। इसी कारण इसे 'धम्मसेनापति' उपाधि प्राप्त हुई।

बौद्धधर्म संघ का व्यवस्थापन का कार्य इस पर ही निर्भर था। इस प्रकार देवदत्त जब स्वतंत्र धर्मसांप्रदाय की स्थापना करनेवाला था, उस समय मध्यस्थता के लिए बुद्ध ने इसे भेजा था।

इसकी मृत्यु बुद्ध के निर्वाण के पूर्व ही नालग्रामक नामक गाँव में हुई थी। इसकी मृत्यु से बुद्ध को अत्यधिक दुःख हुआ, किंतु मृत्यु की नित्यता ध्यान में ला कर बुद्ध ने अपना मन काबू में लाया।

सुदत्त—श्रावस्ति का सुविख्यात वणिक्, जो गौतम बुद्ध के निष्ठावन्त शिष्यों में से एक था। बौद्धधर्म की दीक्षा लेने के पश्चात् इसे अनाथपिंडक नाम प्राप्त हुआ था। इसने गौतम बुद्ध को अत्यंत सम्मान के साथ श्रावस्ति नगरी में बुलाया, एवं श्रावस्ति के राजकुमार जेत से जेतवन नामक उपवन खरीद कर उसे बौद्ध को धर्मसंघकार्य के लिए प्रदान किया (जातक. १.९२; गौतम बुद्ध देखिये)।

परिशिष्ट ३

सिकंदर के आक्रमणकालीन उत्तर पश्चिम भारतीय लोकसमूह एवं गणराज्य

अभिसार—एक गणराज्य, जो वितस्ता एवं असिक्नी नदियों के बीच में हिमालय की उपत्यका में बसा हुआ था। आधुनिक कश्मीर के दक्षिण हिमालय के निचले पहाड़ों के राजौरी, भिम्भर एवं पुंच प्रदेश में यह देश प्राचीन काल में बसा हुआ था। यह देश प्राचीन केकय देश के उत्तर में स्थित था, एवं यहाँ का राजा केकयराज पोरस का मित्र था। सिकंदर के साथ पोरस के द्वारा किये गये युद्ध में, यह पोरस की सहायता करना चाहता था। किन्तु इसकी सहायता के पूर्व ही सिकंदर ने पोरस राजा को परास्त किया (सिकंदर देखिये)।

अंबष्ठ (**संबष्टाई**)--एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में सिंधु तथा चिनाब नदियों के संगम के समीप स्थित तीन छोटे गणराज्यों में से एक था। अन्य दो जनपदों के नाम क्षत्तृ एवं वसाति थे। अपने देश लौट जाते समय, सिकंदर ने इन लोगों को परास्त किया था।

आग्रेय (अगलस्सी, अगिरि, अगेसिनेई)--दक्षिण पंजाब का एक जनपद, जो शिबि जनपद के पूर्व भाग में स्थित था। यह देश आधुनिक झंग-मघियाना प्रदेश में बसा हुआ था। अपने देश वापस जाते समय शिबि जनपद के पश्चात् सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था।

इस आग्रेय गण का प्रवर्तक अग्रसेन था, एवं इनकी प्रधान नगरी का नाम ही अग्रोदक था, जो सतलज नदी के पूर्वदक्षिण में बसी हुई थी। सिकंदर के समय यह गण अत्यंत शक्तिशाली था, एवं ग्रीक लेखकों के अनुसार इनकी जिस सेना ने सिकंदर के साथ युद्ध किया था,

उसमें चालिस हज़ार पदाति, एवं तीन हज़ार अश्वारोही सैनिक थे।

इन लोगों को जीत कर सिकंदर ने मालव गण के लोगों को जीता था, जिससे प्रतीत होता है कि, ये दोनों गण एक दूसरे के पड़ोस में थे। महाभारत के कर्णदिग्विजय में भी इन दोनों गणों का एकत्र निर्देश प्राप्त है (म. व. परि. १.२४.६७)।

आश्वकायन (अस्सकेन, अस्सकेनाई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में गौरी एवं सुवास्तु नदियों की घाटी में स्थित था। ये लोग एवं इनके समीप ही स्थित 'अस्पस' ये दोनों मिल कर आधुनिक अफगाण लोग बने थे। इन लोगों की राजधानी मस्सग नगरी में थी, जो दुर्ग के समान बनी हुई थी। उस नगरी की रक्षा का काम वाहीक देश से लाये गये सात हजार 'भृत' सैनिकों पर सौंपा गया था। सिकंदर ने भृत सैनिकों का विश्वासघात से वध किया, एवं इस देश को अपने आधीन कर लिया (पा. सू. नडादि. ७५)।

आश्वायन (अस्पस आस्पिसिओई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में अलिशांग एवं कुनार नदियों की घाटी में निवास करते थे। भारतवर्ष पर आक्रमण करने के पूर्व सिकंदर ने इन लोगों को जीता था (पा. सू. ४.१.११०)।

यह गणराज्य हस्तिनायन (अस्तकेनोई) लोकसमूह के समीप बसा हुआ था (पा. सू. ६.४.१७४)।

कठ (कठिओई)—एक गणराज्य, जो पंजाब में इरावती नदी के पूर्वभाग में बसा हुआ था। आधुनिक अमृतसर (तरनतारन) प्रदेश में संभवतः इस गणराज्य के लोगों का निवास था। इन लोगों की राजधानी सांगल नगरी में थी। पाणिनि के अष्टाध्यायी में वाहीक देश की राजधानी के नाते से सांकल नामक ग्राम का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होगा (पा. सू. ४.२.७५)।

कठोपनिषद् का निर्माण संभवतः इसी जाति के तत्त्वचिंतकों के द्वारा हुआ था। ग्रीक लेखकों के अनुसार इन लोगों में यह रिवाज था कि, नवजात बच्चों में जो भी बच्चे कुरुप एवं निर्बल हो, वे राजदूतों के द्वारा पकड़वा कर मरवा दिये जाते थे। कठोपनिषद् में नचिकेतस् नामक बालक को उसके पिता द्वारा यम को प्रदान करने की जो कथा आती है, वह संभवतः इसी रिवाज की परिचायक होगी। इसी ढंग का रिवाज ग्रीस के स्पार्टा नामक जनपद में भी प्रचलित था।

सिकंदर के आक्रमण के समय, इन लोगों ने अत्यंत वीरता के साथ उसका सामना किया। सांगल की रक्षा करने के लिए इन लोगों ने उस नगरी के चौगिर्द शकट-व्यूह की रचना की, एवं सिकंदर के साथ बड़ा भारी मुकाबला किया। इस युद्ध में प्रारंभ में इन लोगों की जीत हो रही थी, किंतु केकयराज पौरस पीछे से पाँच हजार भारतीय सैनिकों के साथ सिकंदर की सहायता करने आ पहुँचा, जिस कारण इन्हें युद्ध में हार मानना पड़ी।

इस युद्ध में १७,००० वीरों ने अपने जीवन की बलि दी। इस युद्ध के कारण सिकंदर इतना संत्रस्त हो गया कि, सांगल के परास्त हो जाने पर उसने उसे भूमिसात् करने का आदेश दिया। सिकंदर इस नीति का अनुसरण तभी करता था, जब वह अपने शत्रु से हतप्रभ हो जाता था।

इन लोगों में सौंदर्य को बहुत महत्त्व दिया जाता था। एवं राजपुरुषों का चुनाव करते समय भी, सौंदर्य को ही सर्वाधिक महत्त्व दिया जाता था। इस जाति के स्त्रीपुरुष अपना विवाह स्वेच्छा से करते थे, एवं उनमें सती की प्रथा भी विद्यमान थी।

केकय—उत्तरीपश्चिम भारत का एक जनपद, जो वितस्ता (जेहलम) नदी के पूर्वभाग में बसा हुआ था। सिकंदर के आक्रमणकाल में इस देश के राजा का नाम पोरस था, जिसने सिकंदर का अत्यंत कड़ा प्रतिकार किया। किन्तु अंत में सिकंदर के हाथों परास्त हो कर, उसे सिकंदर की अधीनता स्वीकार करनी पड़ी (सिकंदर देखिये)।

क्षत्तृ (क्सॅथ्रोई)—एक जनपद, जो सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम के समीप स्थित तीन छोटे जनपदों में से एक था (अम्बष्ठ देखिये)।

क्षुद्रक (ऑक्सिड्राकोई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में व्यास (बिआस) नदी के किनारे मालवगण के पूर्वभाग में बसा हुआ था। अपने पड़ोस में रहनेवाले मालव लोगों से इनका प्राचीनकाल से वैर था। अपने देश वापस जानेवाले सिंकदर के द्वारा इन दो गणों पर हमला किये जाने पर, ये दोनों एक हो गये, एवं इन्होंने उससे इतना गहरा मुकाबला किया कि, यद्यपि ये युद्ध में विजय प्राप्त न कर सके, फिर भी सिकंदर ने इनके साथ अत्यंत सम्मानपूर्वक संधि की (मालव देखिये)।

पतंजलि के व्याकरण महाभाष्य में, इन लोगों के द्वारा अकेले ही अपने शत्रु पर विजय प्राप्त करने का निर्देश प्राप्त है (एकाकिभिः क्षुद्रकैः जितम्) (महा. १.८३;३२१;४१२)। यह निर्देश संभवतः सिकंदर के साथ इन लोगों के किये युद्ध के उपलक्ष्य में ही किया गया होगा।

गांधार (पश्चिम)—एक गणराज्य, जो सिंधुनदी के पश्चिमतट पर बसा हुआ था। सिकंदर के राज्यकाल में इन लोगों के राजा का नाम हस्ति था। सिकंदर के हे-फिस्तियन एवं पर्डिक्कस नामक दो सेनापतियों ने इस देश को जीत लिया था। इस देश की राजधानी पुष्करावती थी, जिसे जीतने में सिकंदर के सेनापतियों को एक माह लग गया। इससे प्रतीत होता है कि, सिकंदर के काल में यह जनपद काफ़ी बलशाली था।

गांधार (पूर्व)--एक जनपद, जो सिंधुनदी के पूर्व तट पर बसा हुआ था। इसकी राजधानी तक्षशिला थी। सिकंदर के आक्रमण के समय, इस देश का राजा आम्भि (ऑफिस) था। आम्भि राजा ने सिकंदर की अधीनता स्वयं ही स्वीकार कर ली।

ग्लुचुकायन (ग्लौगनिकाई)--एक गणराज्य, जो उत्तरी पश्चिम भारत में केकय जनपद के समीप ही स्थित था। पतंजलि के महाभाष्य में वाहीक देश में स्थित 'ग्लुचुकायन' गण का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः ये ही होगा (महा. २.२९६-२९७)।

इस गणराज्य में कुल ३७ ग्राम थे, जिन पर सिकंदर ने विजय प्राप्त की थी, एवं इस देश का शासन अपने मित्र केकयराज पोरस के हाथों सौंप दिया।

तुसा—एक गणराज्य, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में गौरी नदी के पूर्व तट पर बसा हुआ था। गौरी नदी के पश्चिम तट पर बसे हुए अस्सकेन (अश्वक, अफगाण) लोगों पर विजय प्राप्त करने के पश्चात् सिकंदर ने इन लोगों को जीत लिया था।

पातानप्रस्थ (पातालेन)—दक्षिण सिंध में स्थित एक गणराज्य, जो सिंधु नदी के मुहाने के प्रदेश में स्थित था। इसका स्थान हैद्राबाद (सिंध) के इर्द गिर्द कहीं होगा। अपने देश लौट जाते समय सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था। इस युद्ध में ये परास्त हुए, एवं अपनी स्वतंत्रता की रक्षा करने के लिए अपना प्रदेश छोड़ कर अन्यत्र चले गये।

पाणिनीय व्याकरण में पातानप्रस्थ नामक ग्राम और लोगों का निर्देश प्राप्त है, जो संभवतः यही होंगे (महा. २.२९८)। किन्तु कई अभ्यासक इनका सही नाम 'पात्ताल' मानते है। सिकंदर के आक्रमणकाल में इस राज्य में दो कुलपरंपरागत राजाओं का शासन था, जो कुलवृद्धों की सभा की सहायता से राज्य का संचालन करते थे। ग्रीक लेखकों ने इन लोगों की शासन-विधि की तुलना ग्रीक जनपद स्पार्ता के साथ की है।

ब्राह्मणक—उत्तर सिंध का एक गणराज्य, जो मूचिकर्ण जनपद के दक्षिण में स्थित था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इन लोगों के साथ युद्ध किया था, एवं बहुत से ब्राह्मणक लोगों की लाशे खुले रास्ते पर टँगवा दी।

मद्र—एक गणराज्य,जो पंजाब में असिक्नी एवं इरावती (रावी) नदियों के बीच के प्रदेश में स्थित था। सिकंदर के आक्रमण के समय इस देश का राजा पोरस (कनिष्ठ) था, जो केकयराज पोरस का भतिजा था। सिकंदर के इस देश के आक्रमण के समय, केकयराज पोरस उसका मित्र एवं सहायक बना था। इसी कारण मद्रराज पोरस ने भी सिकंदर का कोई प्रतिकार न किया, एवं उसकी अधीनता स्वीकृत की।

मालव (मल्लोई)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में इरावती (रावी) नदी के तट पर बसा हुआ था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इन्हें एवं व्यास नदी के तट पर स्थित क्षुद्रक लोगों को परास्त किया था।

मालव एवं क्षुद्रक पंजाब के सब से अधिक पराक्रमी एवं स्वाधीनताप्रिय लोग माने जाते थे। सिकंदर के आक्रमण के समय इनके पास कोई खड़ी सेना न थी। इसी कारण इनके बहुत सारे जवान अपने खेतों में ही काटे गये। उसी अवस्था में इन्होंने सिकंदर के साथ गहरा मुकाबला किया।

पश्चात् इन्हें एवं क्षुद्रकों को सिकंदर ने परास्त किया, एवं इन्हें संधि करने पर विवश किया। संधि करते समय इन्होंने सिकंदर से कहा, 'आज तक हम सदा स्वतंत्र रहे हैं, किन्तु सिकंदर के लोकोत्तर पुरुष होने के कारण, हम स्वेच्छापूर्वक उसकी अधीनता स्वीकृत करते है'।

मूचिकर्ण (मुसिकनोई)—उत्तर सिंध का एक जनपद, जो ब्राह्मणक जनपद के उत्तर भाग में स्थित था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इस देश पर आक्रमण किया।

एक गणराज्य के नाते पाणिनीय व्याकरण में इसका निर्देश प्राप्त है। कई अभ्यासकों के अनुसार, इसका सही नाम मूषिक था। इनकी राजधानी का नाम रोरुक था, जो आधुनिक काल में रोरी नाम से सुविख्यात है। रोरी नामक ग्राम के समीप अरोर नामक एक पुरानी वस्ती भी है, जो अब उजड़ी हुई दशा में है।

ग्रीक ग्रंथकारों के अनुसार, ये लोग सात्विक भोजन करते थे, एवं नियमित जीवन विताते थे। इस कारण इनकी आयु एक सौ तीस वर्षों की होती थी। एक ग्राम के सब लोग इकट्ठे बैठ कर भोजन करते थे। इन लोगों में दास प्रथा का अभाव था, एवं सब लोगों को एक दृष्टि से देखा जाता था।

वसाति (ओस्सदिओई)-एक जनपद, जो दक्षिण पंजाब में सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम पर स्थित तीन छोटे जनपदों में से एक था (अम्बष्ठ देखिये)।

शकस्थान—एक जनपद, जो प्राचीन भारत की पश्चिम सीमा पर स्थित था। यह देश सेतुमन्त (हेतुमन्त = आधु. हेलमन्द) नदी के तट पर बसा हुआ था। भारतवर्ष पर आक्रमण करने के पूर्व, सिकंदर ने इस देश को ३३० इ. पू. में जीता था।

शिवि (सिबोही)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में वितस्ता एवं चिनाब के संगम के दाये ओर स्थित था। सिकंदर के अपने देश लौटते समय इन लोगों ने विना लड़े ही उसकी अधीनता स्वीकृत की थी।

सिकंदर (अलेक्झांडर)--एक सुविख्यात मकदूनियन (मॅसिडोनियन) जगज्जेता सम्राट्, जो ३२७ इ. पू.-३२३ इ. पू. के दरम्यान उत्तरी-पश्चिम भारत पर किये गये आक्रमण के कारण, प्राचीन भारतीय इतिहास में अमर हो चुका है।

इसके भारतीय आक्रमण के इतिहास की जो प्रमाणित सामाग्री उपलब्ध है, उसमें इ. पू ४ थी शताब्दी में उत्तरी पश्चिम भारत में स्थित संघराज्यों की अत्यंत महत्त्वपूर्ण जानकारी प्राप्त होती है। सिकंदर के भारतीय आक्रमण के उपलक्ष्य में, उत्तरी पश्चिम भारत के संघराज्यों की जो जानकारी टॉलेमी आदि ग्रीक इतिहासकारों के द्वारा पायी जाती है, वह पाणिनीय व्याकरण में निर्दिष्ट जनपदों की जानकारी से काफ़ी मिलती जुलती है।

इस काल का इतिहास कथन करने वाले महाभारत, पुराणों जैसे जो भी ग्रंथ उपलब्ध हैं, उनमें उत्तर पश्चिम भारत के प्राचीन जनपदों की उपर्युक्त जानकारी अप्राप्य है। इसी कारण सिकंदर के उत्तरी पश्चिम भारतीय आक्रमण का इतिहास प्राचीन भारतीय इतिहास में एक अपूर्व महत्त्व रखता है।

अपनी चतुरंगिणी सेना के साथ सारा भारतवर्ष पादाक्रांत करने के लिए आये हुए जगज्जेता सिकंदर को उत्तर पश्चिम भारतीय जनपदों पर विजय प्राप्त करने के लिए साढेतीन वर्षों तक रातदिन झगड़ना पड़ा। इससे उन जनपदों की शूरता एवं पराक्रम पर काफ़ी प्रकाश पड़ता है। विशाल इरानी साम्राज्य को चार साल में जीतनेवाले सिकंदर को भारत की उत्तरी पश्चिम विभाग में साढ़े तीन वर्ष लगे, एवं वहाँ पग-पग पर सख्त सामना करना पड़ा। इस प्रकार एक आँधी की भाँति इस प्रदेश पर आक्रमण करनेवाले सिकंदर को अन्त में एक बगूले की तरह लौट जाना पड़ा।

उत्तरी पश्चिम भारत में स्थित जनसत्ताक पद्धति के छोटे छोटे राज्यों का स्वतंत्र अस्तित्व सिकंदर के आक्रमण के कारण विनष्ट हुआ, यही नहीं, प्रबल परकीय आक्रमण के सामने इस पद्धति के छोटे राज्य असहाय साबित होते हैं, यह नया राजनैतिक साक्षात्कार भारतीय राजनीतिज्ञों को प्रतीत हुआ। इसी अनुभूति से शिक्षा पा कर आर्य चाणक्य ने आगे चल कर बलाढ्य साम्राज्यरचना का अभिनव प्रयोग चंद्रगुप्त मौर्य के द्वारा कराया, एवं उसे प्राचीन भारत के सर्वप्रथम एकतंत्री एवं सामर्थ्यसंपन्न साम्राज्य का अधिपति बनाया।

भारतवर्ष पर आक्रमण--३३० इ. पू. के अन्त में सिकंदर ने सर्वप्रथम भारत की पश्चिम सीमा पर स्थित शकस्थान पर हमला किया। उस प्रदेश को जीत कर इसने दक्षिण अफगाणिस्तान पर हमला किया, एवं वहाँ स्थित हरउवती (आधु. अरगन्दाब) प्रदेश को जीत लिया। पश्चात् इसने वहाँ सिकन्दरिया (अलेक्झांड्रिया) नामक नये नगरी की स्थापना की।

पश्चात् इसने बल्ख देश पर आक्रमण किया, तथा वक्षु नदी (आमुदरिया) एवं सीर नदी के बीच में स्थित सुग्ध (सोग्डिआना, समरकंद) देश अपने कब्जे में ले लिया। सुग्ध के इसी युद्ध में सिकंदर को शशिगुप्त नामक किसी भारतीय राजा से युद्ध करना पड़ा, जो संभवतः कंबोज महाजनपद का राजा था।

इस प्रकार बल्ख एवं सुग्ध पर अपना अधिकार जमा कर यह काबूल की घाटी में आ उतरा। काबूल घाटी से सीधे भारतवर्ष पर हमला करने के पूर्व, इसने

इस घाटी के उत्तरभाग में स्थित 'आश्वायन', 'आश्वकायन' (एवं उसकी राजधानी 'मस्सग') आदि गणराज्यों पर आक्रमण किया। मस्सग की इसी लड़ाई में इसने वाहीक देश के सात हजार भृत सैनिकों को विश्वासघात से वध किया। पश्चात् इसने गौरी नदी के पश्चिम तट पर स्थित नुसा जनपद को जीत लिया। इस प्रकार छः मास तक निरंतर युद्ध कर के, सिकंदर उत्तरी अफगाणिस्थान में स्थित जातियों एवं जनपदों को जीतने में यशस्वी हुआ।

भारतवर्ष में प्रवेश--काबूल से तक्षाशिला तक का रास्ता उस समय खैबर घाटी से नहीं, बल्कि पश्चिम गांधार देशान्तर्गत पुष्करावती नगरी हो कर जाता था। इसी कारण सिकंदर ने पश्चिम गांधार देश के हस्ति राजा से एक महिने तक युद्ध कर उसे परास्त किया, एवं यह आगे बढ़ा। सिन्धु नदी के पश्चिम तट पर स्थित विविध जनपदों पर विजय पा कर सिकंदर भारतवर्ष की सीमा में प्रविष्ट हुआ।

उस समय सिन्धु नदी के पूर्व तटवर्ती प्रदेश पर पूर्व गांधार देश का अधिराज्य था, जिनके राजा का नाम आम्भि था। इस प्रदेश की राजधानी तक्षशिला नगरी में थी। आम्भि ने स्वेच्छापूर्वक सिकंदर की अधीनता स्वीकार कर ली। पश्चात् ओहिंद (अटक) नामक नगरी के पास सिकंदर ने नौकाओं से द्वारा पूल का निर्माण किया, एवं यह तक्षशिला आ पहुँचा।

केकयराज पोरस से युद्ध-- सिन्धु एवं वितस्ता (जेहल्म) नदियों के बीच पूर्व गांधार देश बसा हुआ था, उसी प्रकार वितस्ता नदी के पूर्व भाग में केकय जनपद था, जो उस युग में वाहीक देश (पंजाब) का सब से शक्तिशाली राज्य था। वितस्ता एवं असिक्नी (चिनाब) नदी के बीच एवं केकयदेश की उत्तर में अभिसार देश (आधुनिक पुंच एवं राजौरी) था, जिसका राजा केकयराज पोरस का मित्र था, एवं उसकी सहायता करना चाहता था।

इन दोनों देशों के सैन्य मिलने के पहले ही, सख्त गरमी की चिन्ता न कर सिकंदर वितस्ता नदी के किनारे आ पहुँचा। उस समय पोरस वितस्ता नदी के पूर्व तट पर, अपनी छावनी ड़ाले हुए शत्रु के आक्रमण की प्रतीक्षा कर रहा था, एवं दिन के उजाले में वितस्ता नदीको पार करना असंभव था। इसी कारण एक बरसाती रात में सिकंदर ने पोरस की छावनी से वीस मिल पहिले भाग से अपनी बहुसंख्य सेना पार करा दी। इस समय पोरस ने अपनी सेना पुनः एक बार इकट्ठा कर सिकंदर से जोर से युद्ध किया।

पोरस का सैन्यबल--सैन्यबल की दृष्टि से पोरस सिकंदर से काफ़ी भारी था। ग्रीक लेखक प्लुटार्क के अनुसार, पोरस के सैन्य में बीस हज़ार पदाती, दो हजार अश्वारोही, एक हज़ार रथ, एवं एक सौ तीस हाथी थे। किन्तु सिकंदर के फूर्तिले सवारों के आगे उसका कोई बस न चला। अन्त में युद्ध में परास्त हो कर, वह आहत अवस्था में सिकंदर के सामने लाया गया। उस समय सिकंदर ने आगे बढ़ कर उसका स्वागत किया एवं पूछा 'आपके साथ कैसा वर्ताव किया जाये?' उस समय पोरस ने अभिमान से कहा, 'जैसा राजा राजाओं के साथ करता है'।

पोरस से मित्रता--सिकंदर ने पोरस के साथ वैसा ही वर्ताव किया, एवं उसे उसका राज्य वापस दे दिया। आगे चल कर पोरस ने सिकंदर के भारत आक्रमण में बहुमूल्य सहायता दी। केकय देश में प्राप्त किये विजय के उपलक्ष्य में सिकंदर ने केकय देश में दो नये नगरों की स्थापना कीः--१. बुकेकला--यह नगर उसी स्थान पर बसा हुआ था, जिस स्थान पर सिकंदर ने वितस्ता नदी पार की थी; २. निकीया--यह नगर सिकंदर एवं पोरस के रणभूमि पर स्थापन किया गया था।

केकय के परास्त हो जाने पर अभिसार ने भी सिकंदर की अधीनता स्वीकार ली।

ग्लुचुकायन पर विजय--केकयराज्य के पूर्व भाग में असिक्नी नदी के किनारे ग्लुचुकायन नामक एक छोटासा गणराज्य था। सिकंदर ने उसे जीत कर, उसे पोरस के हाथ सौंप दिया।

कठ देश पर आक्रमण--पश्चात् सिकंदर ने असिक्नी एवं इरावती (रावी) नदियों के बीच में स्थित मद्रदेश पर आक्रमण करना चाहा। किन्तु इस देश के पोरस (कनिष्ठ) राजा ने बिना युद्ध किये ही सिकंदर का अधिकार स्वीकार लिया। पश्चात् सिकंदर ने इरावती (रावी) नदी के पूरब में स्थित कठ (आधुनिक अमृतसर प्रदेश) जनपद पर आक्रमण किया। उस देश के सांकल नामक राजधानी में कठों के द्वारा रचे गये शकटव्यूहों का भेद कर, इसने उन पर विजय प्राप्त की। इस युद्ध में सत्रह हजार से भी अधिक कठवीरों ने अपने प्राण समर्पण किये।

इस युद्ध से सिकंदर इतना परेशान हुआ कि, सांकल पर विजय प्राप्त कराने के पश्चात्, उसने उसे भूमिसात् करने का आदेश अपने सैनिकों को दे दिया। इसके पहले इरानी साम्राज्य की राजधानी 'पार्सिपोलिस' को भी इसी ढँग से इसने भूमिसात् कराया था। इससे प्रतीत होता है कि, जो शत्रु इसे विशेष कर त्रस्त करता था, उसके राज्य को यह भूमिसात् करवाता था।

यवनसेना का विद्रोह--कठों को परास्त कर सिकंदर की सेनाएँ विपाशा (व्यास) नदी के पश्चिमी तट पर आ पहुँची। उस समय सिकंदर चाहता था कि, विपाशा नदी को पार कर भारतवर्ष में आगे बढ़े, एवं अपने साम्राज्य का और भी अधिक विस्तार करे।

किन्तु इसकी सेना की हिम्मत हार चुकी थी। उन्हें ज्ञात हुआ कि, व्यास नदी के पूर्व में जो जनपद हैं, वह कठों से भी अधिक पराक्रमी हैं, एवं उनके आगे नंद का विशाल साम्राज्य है, जिनकी सेना अनंत है। इसी कारण इसकी सेना ने विपाशा नदी को पार करने से इन्कार कर दिया।

अपनी सेना को उत्साहित करने का इसने अनेक प्रकार से प्रयत्न किया, एवं उनके सम्मुख अनेक व्याख्यान दियें। किन्तु अपने प्रयत्न में इसे सफलता न प्राप्त हुई। अन्त में अत्यंत निराश हो कर यह अपने शिविर में जा बैठा, एवं कई दिन बाहर न आया। फिर भी इसके सैनिकों के न मानने पर, इसने व्यास नदी के पश्चिमी तट पर देवताओं को बलि दिया, एवं सैन्य को वापस लौट जाने की आज्ञा दी।

सिकंदर की वापसी—वापस जाने के लिए, सिकंदर ने दक्षिण पंजाब एवं सिंध के रास्ते से लौट जाने का निश्चय किया, एवं उस कार्य में दो हजार नावों का बेड़ा बनवाया। पश्चात् बिना किसी विघ्नबाधा के यह वितस्ता (जेहलम) नदी के किनारे आ पहुँचा (३२६ ई. पू.)।

वितस्ता नदी के किनारे इसने एक बड़े दरबार का आयोजन किया, एवं उत्तरी पश्चिम भारत में जीते हुए प्रदेश में निम्नलिखित शासनव्यवस्था जाहीर कीः-१. केकराज पोरस-विपाश एवं वितस्ता नदी के बीच में स्थित प्रदेश; २ गांधारराज आंभि-वितस्ता एवं सिंधु नदी के बीच में स्थित प्रदेश; ३ सेनापति फिलिप्स—सिंधु नदी के पश्चिम में स्थित भारतीय प्रदेश।

शिबि एवं आग्रेय-पश्चात् वितस्ता नदी के समीप स्थित सौभूति लोगों को परास्त कर, इसने जलमार्ग से अपनी वापसी यात्रा प्रारंभ की। इस यात्रा में इसका विशाल जहाजी वेड़ा वितस्ता नदी में चल रहा था, एवं इसकी स्थलसेना नदी के दोनों तट पर उसका अनुगमन करती थी। पश्चात् बिना किसी लड़ाई के, यह वितस्ता एवं असिक्री नदी के संगम पर आ पहुँचा। वहाँ स्थित शिवि लोगों ने इसका अधिकार मान लिया। किन्तु आग्रेय (आगलस्सी) नामक लोगों ने इसका विरोध किया। उन लोगों का निवासस्थान शतद्रु (सतलज) नदी के पूर्व दक्षिण में स्थित प्रदेश में था। अपनी ४० हजार पदाती एवं ३ हजार अश्वरोही सैनिको के साथ, इन लोगों के अग्रसेन नामक राजा ने सिकंदर से जोरदार सामना किया। सिकंदर ने इन लोगों को युद्ध में परास्त किया। किन्तु नगरी इसके हाथ आने के पूर्व हीं, उन लोगों ने उसे भस्मसात् किया था।

मालव एवं क्षुद्रक-- असिक्री नदी के दक्षिण की ओर, इरावती (रावी) नदी के बाये तट पर मल्ल (मल्लोई) एवं क्षुद्रक (ओक्सिड्राकोई) लोग निवास करते थे। शिवि आग्रेय आदि लोगों के समान वे लोग भी 'शस्त्रोपजीवी' थे। पहले तो सिकंदर के सैनिक इन लोगों से लड़ाई करने में काफी ड़रते थे। किन्तु सिकंदर ने उन्हें समझाया कि, क्षुद्रक एवं मालवियों से सामना किये बिना स्वदेश लौटना संभव नहीं है। पश्चात् सिकंदर ने क्षुद्रक-मालवों में से मालवों पर अचानक हमला कर दिया, एवं बहुत से मालव कृषक अपने खेतों में ही लड़ते हुए मारे गये। मालवों के साथ युद्ध करने में सिकंदर की छाती पर सख्त चोट लगी, जो भविष्य में उसकी अकाल मृत्यु का कारण बनी। इस घाव के कारण सिकंदर इतना क्रुद्ध हुआ कि, इसने कत्लेआम का आदेश दिया। स्त्री-पुरुष-वृद्ध एवं बालक किसी की भी यवन सैनिकों ने परवाह न की, एवं हजारों नर-नारी सिकंदर के क्रोध के शिकार बन गये।

इस बीच में क्षुद्रकसेना मालवों की सहायता के लिए आ गयी। मालवों के साथ युद्ध करने से सिकंदर इतना त्रस्त हुआ कि, इसने उनके साथ संधि करना उचित समझा। क्षुद्रक लोगों ने भी सिकंदर जैसे जगज्जेता वीर के साथ युद्ध करना निरर्थक समझा। इसी कारण दोनों पक्षों में संधि हुई, उस समय क्षुद्रकों एवं मालवों ने कहा, 'आज तक हम स्वतंत्र रहे हैं। सिकंदर के लोकोत्तर पुरुष होने के कारण हम स्वेच्छापूर्वक उसकी अधीनता स्वीकृत करते हैं'।

कई अभ्यासकों के अनुसार, सिकंदर क्षुद्रक लोगों का पराभव करने में असमर्थ रहा, जिसका अस्पष्ट निर्देश पतंजलि के व्याकरणमहाभाष्य में पाया जाता है (एकाकिभिः क्षुद्रकैः जितम्) (महा. १.८३; ३२१; ४१२)। इसी कारण क्षुद्रकों से संधि कर लेने में सिकंदर ने अपना कल्याण समझा होगा।

अंबष्ठ, क्षतृ एवं वसाति—मालव एवं क्षुद्रकगणों के साथ समझौता कर सिकंदर दक्षिण की ओर चलने लगा। सिंधु एवं चिनाब नदियों के संगम के समीप अंबष्ठ, क्षतृ आदि छोटे-छोटे गणराज्य बसे हुए थे। उनमें से अंबष्ठ गण को सिकंदर ने युद्ध में परास्त किया, एवं अन्य दो गणराज्यों ने युद्ध के बिना ही सिकंदर की अधीनता स्वीकृत कर ली। सिंधु एवं चिनाब के संगम पर सिकंदर ने अलेक्झांड्रिया (सिकंदरिया) नामक नगरी की स्थापना की।

मूचिकर्ण एवं ब्राह्मणक--उत्तरी सिंध में पहुँचने के पश्चात् मूचिकर्ण नामक लोगों से सिकंदर को सामना करना पड़ा, जो लड़ाई उन लोगों के रोरुक नामक नगरी में संपन्न हुई। उन लोगों को परास्त कर सिकंदर दक्षिण की ओर आगे बढ़ा। वहाँ ब्राह्मणक नामक गणराज्य के लोगों से इसे युद्ध करना पड़ा। सिकंदर ने क्रूरता के साथ उन लोगों का वध किया, एवं बहुत से ब्राह्मणक लोगों की लाशों को खुले मार्ग पर लटकवा दिया, ताकि अन्य लोग उन्हें देखें, एवं यवनों के विरुद्ध युद्ध करने का साहस न करे।

पातानप्रस्थ--पश्चात् सिकंदर सिंध प्रान्त के उस भाग में पहुँचा, जहाँ सिंधुनदी दो धाराओं में विभक्त हो कर समुद्र की ओर आगे बढ़ती है। इस प्रदेश में स्थित पातानप्रस्थ गणराज्य के लोग सिकंदर का मुकाबला करने में असमर्थ रहे, एवं अपनी स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अपना प्रदेश छोड़ कर अन्यत्र चले गये।

वापसी एवं मृत्यु--इस प्रकार सिंधु नदी के मुहाने पर पहुँचने के पश्चात् सिकंदर ने अपनी सेना को जलसेना एवं भूमिसेना में विभक्त किया। इनमें से जलसेना को जल सेनापति नियार्कस के आधिपत्य में समुद्रमार्ग से जाने की आज्ञा इसने दी, एवं भूमिसेना के साथ यह स्वयं मकरान के किनारे किनारे भूमिमार्ग से अपने देश की ओर चल पड़ा। पश्चात् अपने देश पहुँचने के पूर्व ही ३२३ ई. पू. में बॅबिलोन में इसकी मृत्यु हो गयी।

सुग्ध (सोग्डिआना)--एक बृहद्भारतीय जनपद, जो दक्षिण अफगाणिस्तान में सीर नदी के प्रदेश में बसा हुआ था। सिकंदर के आक्रमण के समय, इस देश में ईरानी एवं भारतीय दोनों प्रकार के आर्यों की बस्तियाँ एवं नगरराज्य थे।

सौभूति (सौफाइतिज्)—एक गणराज्य, जो दक्षिण पंजाब में वितस्ता नदी के समीपवर्ती प्रदेश में बसा हुआ था। अपने देश वापस जाते समय सिकंदर ने इन लोगों को परास्त किया था। इन्हें 'सुभूत' एवं 'सौभूत' नामांतर भी प्राप्त था (पा. सू. ४.२.७५; संकलादि गण)।

ग्रीक विवरण से ज्ञात होता है कि, इन लोगों के सारे गुणवैशिष्ट्य एवं रीतिरिवाज कठ लोगों के समान ही थे, एवं ये लोग शारीरिक सौन्दर्य को अधिकतर महत्त्व प्रदान करते थे। कठ लोगों के समान इनमें यह रिवाज था कि कुरूप एवं निर्बल बच्चों को बचपन में ही मरवा दिया जाता था (कठ देखिये)।

हरउवती--दक्षिण अफगाणिस्तान में स्थित एक देश, जो आधुनिक काल में कंधार नाम से प्रसिद्ध है। शकस्थान देश को जीतने के बाद, सिकंदर ने इस देश को जीत लिया, एवं वहाँ सिकंदरिया नामक नगरी की स्थापना की। वही नगर आधुनिककाल में कंदाहार नाम से सुविख्यात है।

परिशिष्ट ४

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजवंश

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजवंशों में निम्नलिखित राजवंश प्रमुख थे:—

(१) सूर्यवंश—(सू.), जो मनु वैवस्वत के द्वारा स्थापित किया गया था।

(२) सोमवंश—(सो.), जो सोमपुत्र पुरूरवस् ऐल के द्वारा स्थापित किया गया था।

(३) स्वायंभुव वंश—(स्वा.), जो स्वायंभुव मनु के द्वारा स्थापित किया गया था।

(४) भविष्य वंश—जिसमें भारतीय युद्धोत्तर अनेकानेक राजवंश सम्मिलित थे।

(५) मानवेतर वंश,—जिसमें वानर, रक्षस् आदि मानवेतर वंश समाविष्ट किये जाते हैं।

(१) सूर्यवंश (सू.)

इस वंश का आद्य संस्थापक वैवस्वत मनु माना जाता है। वैवस्वत मनु ने भारतवर्ष का अपना राज्य अपने नौ पुत्रों में बाँट दिया। इन नौ पुत्रों में से पाँच पुत्र एवं एक पौत्र 'वंशकर' साबित हुए, जिन्होंने अपने स्वतंत्र राजवंश स्थापित किये:—

पुत्र का नाम	राजवंश	देश
इक्ष्वाकु	इक्ष्वाकुवंश (सू. इ.)	अयोध्या
निमि 'इक्ष्वाकुपुत्र'	निमिवंश (सू. निमि.)	विदेह
नाभानेदिष्ट	दिष्टवंश (सू. दिष्ट.)	वैशाली
शर्याति	शर्याति वंश (सू. शर्याति.)	आनर्त
नृग	नृग वंश (सू. नृग.)	—
नरिष्यन्त	नरिष्यंतवंश (सू. नरिष्यंत)	—

मनु राजा के उपर्युक्त पाँच पुत्र एवं एक पौत्र यद्यपि वंशकर साबित हुए, फिर भी उनमें से केवल चार पुत्र ही दीर्घजीवी राज्य स्थापित कर सके। बाकी दो पुत्रों का वंश भी अल्पावधि में ही विनष्ट हुआ।

मनु के बाकी तीन पुत्र करूष, धृष्ट एवं पृषध्र क्रमशः करूष एवं धृष्ट नामक क्षत्रिय, एवं पृषध्र नामक शूद्र वर्णों के जनक बन गये, एवं अल्पावधि में ही विनष्ट हुए।

मनु के वंशकर पुत्रों के द्वारा स्थापित किये गये वंशों की जानकारी निम्नप्रकार है:—

इक्ष्वाकु वंश—(सू. इ.)—मनु के ज्येष्ठ पुत्र इक्ष्वाकु को मध्यदेश का राज्य प्राप्त हुआ, जहाँ अयोध्या नगरी में उसने सुविख्यात इक्ष्वाकु वंश की प्रतिष्ठापन की। इक्ष्वाकु के वंशविस्तार के संबंध में पुराणों में दो विभिन्न प्रकार की जानकारी प्राप्त है। इनमें से छः पुराणों की जानकारी के अनुसार, इक्ष्वाकु को कुल सौ पुत्र थे, जिनमें विकुक्षि, निमि, दण्ड, शकुनि एवं वसाति प्रमुख थे। इसके पश्चात् विकुक्षि अयोध्या का राजा बन गया। निमि ने विदेह देश में स्वतंत्र निमिवंश की स्थापना की। बाकी पुत्रों में से शकुनि उत्तरापथ का, एवं वसाति दक्षिणापथ का राजा बन गया (वायु. ८८. ८-११; ब्रह्मांड. ३.६३. ८-११; ब्रह्म. ७.४५-४८; शिव. ७.६०.३३-३५)।

अन्य पुराणों के अनुसार, इक्ष्वाकु के सौ पुत्रों में विकुक्षि, दण्ड एवं निमि प्रमुख थे। इनमें से विकुक्षि अयोध्या का राजा बन गया, जिसके कुल १२९ पुत्र थे। उन पुत्रों में से पंद्रह पुत्र मेरु के उत्तर भाग में स्थित प्रदेश के, एवं बाकी ११४ पुत्र मेरु के दक्षिण भाग में स्थित प्रदेश के राजा बन गये (मत्स्य. १२. २६-२८; पद्म. पा. ८. १३०-१३३; लिंग. १.६५.३१-३२)।

इक्ष्वाकुवंश में कुल कितने राजा उत्पन्न हुए इस संबंध में एकवाक्यता नहीं है। यह संख्या विभिन्न पुराणों में निम्नप्रकार दी गयी है:—१. भागवत-८८; २. वायु-९१; ३. विष्णु-९३; ४. मत्स्य-६७। इनमें से मत्स्य में प्राप्त नामावलि संपूर्ण न हो कर केवल कई प्रमुख राजाओं की है, जिसका स्पष्ट निर्देश इस नामावलि के अंत में प्राप्त है (मत्स्य. १२.५७)। पुराणों में प्राप्त इक्ष्वाकुवंश की वंशावलियों में भागवत में प्राप्त वंशावलि सर्वाधिक परिपूर्ण

प्रतीत होती है, जो आगे दी गयी 'पौराणिक राजाओं की तालिका' में उद्धृत की गयी है।

ब्रह्म, हरिवंश, एवं मत्स्य में प्राप्त इक्ष्वाकुवंश की नामावलि अपूर्ण सी प्रतीत होती है, जो क्रमशः नल, मरु एवं खगण राजाओं तक ही दी गयी है।

प्रमुख राजा—इस वंश में निम्नलिखित राजा विशेष महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं:—१. पुरंजय (ककुत्स्थ); २. श्रावस्त; ३. कुवलाश्व 'धुंधुमार' ४. युवनाश्व (द्वितीय) 'सौद्युम्नि'; ५. मांधातृ 'यौवनाश्व' ६. पुरुकुत्स; ७. त्रसदस्यु; ८. त्रैय्यारुण; ९. सत्यव्रत 'त्रिशंकु' १०. हरिश्चंद्र; ११. सगर (बाहु); १२. भगीरथ; १३. सुदास; १४. मित्रसह कल्माषपाद सौदास; १५. दिलीप (द्वितीय) खट्वांग; १६. रघु; १७. राम दाशरथि; १८. हिरण्यनाभ कौसल्य; १९. बृहद्वल।

पाठभेद एवं मतभेद—भागवत में प्राप्त दृढाश्व एवं हर्यश्व राजाओं के बीच प्रमोद नामक एक राजा का निर्देश मत्स्य में प्राप्त है। कल्माषपाद सौदास से लेकर, दिलीप खट्वांग तक के राजाओं के नाम ब्रह्म, हरिवंश, एवं मत्स्य में भागवत में प्राप्त नामावलि से अलग प्रकार से दिये गये है, जिसमें सर्वकर्मन्, अनरण्य, निघ्न, अनमित्र, दुलीदुह आदि राजाओं के नाम प्राप्त हैं।

पौराणिक साहित्य में कई राजा ऐसे भी पाये जाते हैं, जो इक्ष्वाकुवंशीय नाम से सुविख्यात हैं, किन्तु जिनके नाम इक्ष्वाकुवंश के वंशावलि में अप्राप्य हैं:—१. असमाति ऐक्ष्वाक; २. क्षेमदर्शिन्; ३. सुवीर द्यौतिमत।

कई अभ्यासकों के अनुसार, क्षेमधन्वन् से लेकर बृहद्रथ राजाओं तक की प्राप्त नामावलि एक ही वंश के लोगों की वंशावलि न होकर, उसमें दो विभिन्न वंश मिलाये गये हैं। इनमें से क्षेमधन्वन् से लेकर हिरण्यनाभ कौसल्य तक की वंशशाखा पुष्य से लेकर बृहद्रथ तक के शाखा से संपूर्णतः विभिन्न प्रतीत होती है। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसल्य व्यास की सामशिष्यपरंपरा में याज्ञवल्क्य नामक आचार्य का गुरु था। प्रश्नोपनिषद् में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसल्य, एवं पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट हिरण्यनाभ कौसल्य ये दोनों एक ही व्यक्ति थे। इस अवस्था में इक्ष्वाकुवंशीय वंशावलि में हिरण्यनाभ कौसल्य को दिया गया विशिष्टस्थान कालदृष्टि से असंगत प्रतीत होता है।

स्कंद में इक्ष्वाकुवंशीय राजा विधृति एवं पूरुवंशीय राजा परिक्षित् को समकालीन माना गया है। भागवत के वंशावलि के अनुसार, इन दो राजाओं में अठारह पीढ़ियों का अन्तर था। यह असंगति भी उपर्युक्त तर्क को पुष्टि प्रदान करती है।

इसके विरुद्ध इस वंशावलि को पुष्टि देनेवाली एक जानकारी भी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। कलियुग के अन्त में जिन दो राजाओं के द्वारा क्षत्रियकुल का पुनरुद्धार होनेवाला है, उनके नाम पौराणिक साहित्य में मेरु ऐक्ष्वाक, एवं देवापि पौरव दिये गये हैं। भागवत के वंशावलि में इन दोनों राजाओं को समकालीन दर्शाया गया है, जो संभवतः उसकी ऐतिहासिकता का प्रमाण हो सकता है।

राम दाशरथि के पश्चात् उसके पुत्र लव ने श्रावस्ती में स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। लव के काल से अयोध्या के इक्ष्वाकुवंश का महत्त्व कम हो कर, उसका स्थान 'श्रावस्ती उपशाखा' ने ले लिया। इसी शाखा में आगे चल कर प्रसेनजित् नामक राजा उत्पन्न हुआ, जो गौतम बुद्ध का समकालीन था। गौतम बुद्ध के चरित्र में श्रावस्ती के राजा प्रसेनजित् का निर्देश बार-बार आता है, किन्तु उस समय अयोध्या के राजगद्दी पर कौन राजा था, इसका निर्देश कहीं भी प्राप्त नहीं है।

अंतिम राजा—अयोध्या के इक्ष्वाकु वंश का अंतिम राजा क्षेमक माना जाता है, जो मगध देश के महापद्म नंद राजा का समकालीन माना जाता है।

दिष्ट वंश—(सू. दिष्ट.) इस वंश के संस्थापक का नाम नाभानेदिष्ट अथवा नेदिष्ट था, जो मनु के नौ पुत्रों में से एक था। कई पुराणों में उसका नाम दिष्ट दिया है, एवं उसे मनु राजा का पौत्र एवं मनुपुत्र धृष्ट राजा का पुत्र कहा गया है। पौराणिक साहित्य में से सात पुराणों में, एवं महाभारत रामायण में, इस राजवंश का निर्देश प्राप्त है, जहाँ कई बार इसे 'वैशाल राजवंश' कहा गया है (ब्रह्मांड. ३.६१.३१८; वायु. ८६.३-२२; लिंग. १.६६.५३; मार्क. ११०-१३३; विष्णु. ४.१.१६; गरुड. १३८.५-१३; भा. ९.२.२३; वा. रा. बा. ४७.११; म. आश्व. ४.४)।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त दिष्ट वंश की जानकारी प्रमति (सुमति) राजा से समाप्त होती है, जो अयोध्या के दशरथ राजा का समकालीन था। प्रमति तक का संपूर्ण वंश भी केवल वायु, विष्णु, गरुड एवं भागवतपुराण में ही पाया जाता है। बाकी सारे पुराणों में प्राप्त नामावलियाँ किसी न किसी रूप में अपूर्ण हैं।

इस वंश में उत्पन्न प्रथम दो राजाओं के नाम भलंदन एवं वत्सप्री थे। इनमें से भलंदन आगे चल कर वैश्य बन गया। इसी वंश में उत्पन्न हुए संकील, वत्सप्री एवं वत्स नामक आचार्यों के साथ, भलंदन का निर्देश एक वैश्य सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.३२.१२१-१२२; मत्स्य. १४५.११६-११७)। किंतु ऋग्वेद में, इनमें से केवल वत्सप्रि भालंदन के ही सूत्र प्राप्त हैं (ऋ. ९.६८; १०. ४५-४६)। इन्हीं सूक्तों की रचना करने के कारण भलंदन पुनः एक बार ब्राह्मण बन गया (ब्रह्म. ७.४२)।

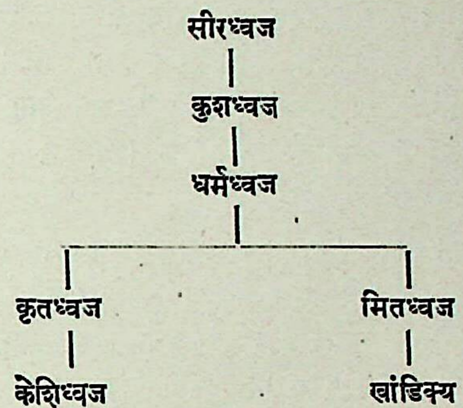
इसी वंश में उत्पन्न हुए विशाल राजा ने वैशालि नामक नगरी की स्थापना की। उसी काल से इस वंश को 'वैशाल' नाम प्राप्त हुआ।

निमि वंश—(सू. निमि.) इस वंश की स्थापना मनु राजा के पौत्र एवं इक्ष्वाकु राजा के पुत्र निमि 'विदेह' राजा ने की। निमि के पुत्र का नाम मिथि जनक था, जिस कारण इस राजवंश को जनक नामान्तर भी प्राप्त था। इस राजवंश के राजधानी का नाम भी 'मिथिला' ही था, जो विदेह राजा ने अपने पुत्र मिथि के नाम से स्थापित की थी।

इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६४.१-२४; वायु. ८९.१-२३; विष्णु. ४.५.११-१४; गरुड. १.१३८.४४-५८; मा. ९. १३)। वाल्मीकि रामायण में भी इस वंश की जानकारी प्राप्त है, किन्तु वहाँ इस वंश की जानकारी सीरध्वज तक ही दी गयी है।

इस वंश के राजाओं के संबंध में पौराणिक साहित्य में काफ़ी एकवाक्यता है। किन्तु विष्णु, गरुड एवं भागवत में शकुनि राजा के पश्चात् अंजन, उपगुप्त आदि बारह राजा दिये गये हैं, जो वायु एवं ब्रह्मांड में अप्राप्य हैं। इन दो नामावलियों में से विष्णु, भागवत आदि पुराणों की नामावलि ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक सुयोग्य होती है। किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, शकुनि एवं स्वागत के बीच में प्राप्त बारह राजा निमिवंश से कुछ अलग शाखा के थे, एवं इसी कारण इस शाखा को आद्य निमिवंश से अलग माना जाता हैं (ब्रह्मांड. ३.६४; वायु. ८९; भा. ९.१३)।

इस वंश का सब से अधिक सुविख्यात राजा सीरध्वज जनक था, जिसके भाई का नाम कुशध्वज था (ब्रह्मांड. ३.६४.१८-१९; वायु. ८९.१८; वा. रा. बा. ७०.२-३)। कुशध्वज सांकाश्या पुरी का राजा था। किन्तु भागवत में सीरध्वज राजा का पुत्र माना गया है, एवं उसका वंशक्रम निम्न प्रकार दिया गया है—



उपर्युक्त जनक राजाओं में से केशिध्वज एक बड़ा तत्त्वज्ञानी राजा था, एवं उसका चचेरा भाई खांडिक्य एक सुविख्यात यज्ञकर्ता था। केशिध्वज जनक एवं खांडिक्य की एक कथा विष्णु में दी गयी है, जिससे इस वंशावलि की ऐतिहासिकता पर प्रकाश पड़ता है (विष्णु. ६.६.७-१०४)।

महाभारत में देवरात जनक राजा को याज्ञवल्क्य का समकालीन कहा गया है, किन्तु वंशावलियों का संदर्भ अच्छी प्रकार से देखने से प्रतीत होता है कि, याज्ञवल्क्य के समकालीन जनक का नाम देवराति न हो कर जनदेव अथवा उग्रसेन था।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को जनक कहा गया है:—१. सीरध्वज २. धर्मध्वज (विष्णु. ४.२४.५४); ३. जनदेव, जो याज्ञवल्क्य का समकालीन था; ४. दैवराति; ५. खांडिक्य; ६. बहुलाश्व, जो श्रीकृष्ण से आ मिला था; ७. कृति, जो भारतीय युद्ध में उपस्थित था। ये सारे राजा 'विदेह', 'जनक', 'निमि' आदि बहुविध नामों से सुविख्यात थे, किन्तु उनका 'सू. निमि.' वर्णन ही ऐतिहासिक दृष्टि से अधिक उचित प्रतीत होता है। ये सारे राजा आत्मज्ञान में प्रवीण थे (विष्णु. ६.६.७-९)।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को निमिवंशीय कहा गया है, किन्तु उनके नाम निमि वंश की वंशावलि में अप्राप्य हैं:—१. कराल; २. एंद्रद्युम्नि; ३. उग्र; ४. जनदेव; ५. पुष्करमालिन्; ६. माधव ७. शिखिध्वज।

वैदिक साहित्य में—इस साहित्य में निम्नलिखित निमिवंशीय राजाओं का निर्देश प्राप्त है:—१. कुणि (शकुनि) २. रंजन (अंजन); ३. उग्रदेव; ४. क्रतुजित्। ये सारे राजा वैदिक यज्ञकर्म में अत्यंत प्रवीण थे।

वैदिक साहित्य में निर्दिष्ट उपर्युक्त बहुत सारे राजाओं के नाम पौराणिक साहित्य में प्राप्त वंशावलियों में अप्राप्य हैं। संभव है कि, इन सारे राजाओं ने क्षत्रिय धर्म का त्याग कर ब्राह्मण धर्म स्वीकार लिया होगा। इस वर्णान्तर के कारण उनका राजकीय महत्त्व कम होता गया, जिसके ही परिणाम स्वरूप पौराणिक राजवंशों में से उनके नाम हटा दिये गये होंगे।

नभग वंश--(सू. नभग.) मनु के पुत्र नभग के द्वारा प्रस्थापित किये गये वंश का निर्देश पुराणों में अनेक स्थान पर प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६३.५-६; भा. ९.४-६; ब्रह्म. ७.२४; वायु. ८८.५-७)। इनका राज्य गंगानदी के दोआब में कहीं बसा हुआ था। इस वंश में नाभाग, अंबरीष, विरूप, पृषदश्व, रथीतर आदि राजा उत्पन्न हुए। किंतु आगे चल कर सोमवंशीय ऐल राजाओं के आक्रमण के कारण इनका राज्य आदि सारा वैभव चला गया, एवं ये लोग वर्णान्तर कर के अंगिरस्‌गोत्रीय रथीतर ब्राह्मण बन गये।

नरिष्यन्त वंश--(सू. नरि.) मनु के पुत्र नरिष्यन्त के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश का निर्देश पुराणों में अनेक स्थान पर प्राप्त है (भा. ९.२.१९-२२; वायु. ८६.१२-२१)। इस वंश में उत्पन्न राजाओं में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:--१. चित्रसेन; २. दक्ष; ३. मीढ्वस; ४. कूर्च; ५. इंद्रसेन; ६. वीतिहोत्र ७. सत्यश्रवस; ८. उरुश्रवस्; ९. देवदत्त; १०. कालीन जातुकर्ण्य; ११. अग्निवेश्य।

आगे चल कर, ये लोग क्षत्रियधर्म छोड़ कर ब्राह्मण बन गये, एवं आग्निवेश्यायान नाम से सुविख्यात हुए। दिष्ट राजवंश में भी नरिष्यंत नामक एक उपशाखा का निर्देश पाया जाता है, किन्तु वे लोग आद्य नरिष्यंत शाखा से बिल्कुल विभिन्न थे।

नृग वंश (सू. नृग.)--मनु के इस पुत्र के वंश का निर्देश भागवत में पाया जाता है, जिसमें सुमति, वसु, ओघवत् नामक राजा प्रमुख थे (भा. ९.२.१७-१८)।

शर्याति वंश (सू. शर्याति)-मनु के शर्याति नामक पुत्र ने गुजरात देश में आकार इस स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की। शर्याति राजा के पुत्र का नाम आनर्त था, जिसके ही कारण, प्राचीन गुजरात देश को आनर्त नाम प्राप्त हुआ था। गुजरात में स्थित हैहय राजवंशीय राजाओं से इन लोगों का अत्यंत घनिष्ठ संबंध था।

शर्याति राजवंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (भा. ९.३; ह. वं. १.१०. ३१-३३; वायु. ८६.२३-३०; ब्रह्मांड. ३.६१.१८-२०; ६३.१; ४; ब्रह्म. ७.२७-२९)। इस वंश में निम्नलिखित राजा उत्पन्न हुए थे.-१. आनर्त; २. रोचमान रेवत; ३. ककुद्मत्। इन में से ककुद्मत् राजा की कन्या रेवती बलराम को विवाह में दी गयी थी। इनकी राजधानी कुशस्थली (द्वारका) नगरी में थी।

इस वंश के आद्य संस्थापक शर्याति राजा की कन्या का नाम सुकन्या था, जिसका विवाह च्यवन ऋषि से हुआ था। शर्यातिकन्या सुकन्या एवं च्यवन ऋषि की कथा वैदिक साहित्य में प्राप्त है।

(२) सोमवंश (सो.)

सोमवंश का महत्त्व--पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट बहुत सारा राजकीय इतिहास सोमवंश में उत्पन्न हुए राजाओं का, एवं उनके वंशजों का इतिहास कहा जा सकता है। यद्यपि प्राचीन इतिहास के प्रारंभ में सूर्यवंश में उत्पन्न हुए राजाओं का भारतवर्ष में काफी प्राबल्य था, फिर भी उत्तरकालीन इतिहास में उनकी राजसत्ता अयोध्या, विदेह एवं वैशालि राज्यों से ही मर्यादित रही। उक्त उत्तरकालीन इतिहास में मांधातृ एवं सगर ये केवल दो ही सूर्यवंशीय राजा ऐसे थें, जिन्होंने समस्त उत्तरभारतवर्ष पर अपना स्वामित्व प्रस्थापित किया था।

उत्तरकालीन भारतीय इतिहास में अयोध्या, विदेह एवं वैशालि इन तीन देशों को छोड़ कर बाकी सारे उत्तरभारत, एवं उत्तरीपश्चिम दक्षिणी भारत पर सोमवंशीय राजाओं का ही राज्य था, जिनकी संक्षिप्त जानकारी निम्नलिखित है:-

(१) **पौरव शाखा**--इनका राज्य काशी एवं शूरसेन देश छोड़कर गंगा एवं यमुनानदियों के समस्त सम्तल प्रदेश में स्थित था। इस वंश के राज्यों में हस्तिनापुर, पांचाल, चेदि, वत्स, करूष, मगध एवं मत्स्य आदि राज्य प्रमुख थे।

(२) **यादव शाखा**--इन लोगों का राज्य पश्चिम में राजपुताना मरुभूमि से लेकर उत्तर में यमुना नदी तक फैला हुआ था।

(३) अनु शाखा--इन लोगों के एक शाखा का राज्य पंजाब देश में था, जिनमें सिंधु, सौवीर, कैकेय, मद्र, वाहीक, शिबि एवं अंबष्ठ प्रमुख थे। इन लोगों के दूसरी एक शाखा का राज्य पूर्व बिहार, बंगाल एवं ओरिसा में था, जहाँ इन लोगों के अंग, वंग, पुण्ड्र, सुह्म एवं कलिंग राज्य प्रमुख थे।

(४) द्रुह्यु शाखा--इन लोगों का राज्य गांधारदेश में था, एवं कई अभ्यासकों के अनुसार इनका विस्तार उत्तरी पश्चिमभारत की सीमाभाग पर स्थित म्लेच्छ लोगों तक फैला हुआ था।

(५) तुर्वसु शाखा--इन लोगों का उत्तरभारत में स्थित राज्य तो नष्ट हुआ था। किन्तु कई अभ्यासकों के अनुसार, दक्षिण भारतवर्ष के पाण्ड्य, चोल एवं केरल राजवंश इन्हींसे उत्पन्न हुए थे।

(६) काश्य शाखा--इन लोगों का राज्य काशिदेश में था। इसी कारण ययाति से उत्पन्न पाँच वंशों का राज्य सारी पृथ्वी पर था, ऐसा स्पष्ट निर्देश पौराणिक साहित्य में था (वायु. ९३.१०३.९९-४७२; ब्रह्मांड. ३.६८.१०५-१०६)। पौराणिक साहित्य में प्राप्त इस निर्देश से यादव, तुर्वसु, आनव, द्रुह्यु एवं पौरव इन पाँच उपशाखाओं का निर्देश अभिप्रेत है।

स्थापना--बुध का इला से उत्पन्न पुत्र पुरूरवस् ऐल सोमवंश का संस्थापक माना जाता है। यद्यपि इन लोगों का राज्य प्रतिष्ठान (आधुनिक प्रयाग) प्रदेश में था। फिर भी इन लोगों का मूलस्थान हिमालय प्रदेश में कहीं था, पुरूरवस् के द्वारा स्थापित किया गया राज्य ऐल राज्य नाम से सुविख्यात था, जो सात द्वीपों में विभाजित था। यही राज्य आगे चल कर, पुरूरवस् के आयु, एवं अमावसु नामक दो पुत्रों के पुत्रपौत्रों में विभाजित हुआ। इन्हीं से आगेचल कर सोमवंश के निम्नलिखित शाखाओं का निर्माण हुआः--

(१) अमावसु शाखा (सो. अमा.)--पुरूरवस् राजा के अमावसु नामक पुत्र के द्वारा यह स्थापित की गयी थी, एवं कान्यकुब्ज देश पर राज्य करती थी।

(२) आयु शाखा (सो. पुरूरवस्.)--पुरूरवस् के ज्येष्ठ पुत्र आयु के अनेनस्, नहुष, क्षत्रवृद्ध, रम्भ एवं रजि नामक पाँच पुत्र थे। इनमें से अनेनस् के द्वारा आयु नामक स्वतंत्र राजवंश (सो. आयु.) की स्थापना की गयी। आयु के बाकी पुत्रों के द्वारा स्थापित किये गये राजवंश पूरुवंश (सो. पूरु.) सामुहिक नाम से सुविख्यात हुए, जिनमें निम्नलिखित राजवंश प्रमुख थेः- १. क्षत्रवृद्धवंश--(सो. क्षत्र), जो आयु राजा के पुत्र क्षत्रवृद्ध के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं काशी देश में राज्य करता था; २. यदुवंश, (सो. यदु.) जो आयु राजा के पौत्र यदु के द्वारा स्थापित किया गया था; ३. तुर्वसुवंश (सो. तुर्वसु.), जो आयुराजा के पौत्र तुर्वसु के द्वारा स्थापित किया गया था; ४. द्रुह्युवंश (सो. द्रुह्यु.), जो आयुराजा के पौत्र द्रुह्यु राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं गंधार देश में राज्य करता था; ५. अनुवंश (सो. अनु.) जो आयु राजा के पौत्र अनुराजा के द्वारा स्थापित किया गया था; ६. पूरुवंश--(सो. पूरु.), जो आयुराजा के पौत्र पूरुराजा के द्वारा स्थापित किया गया था।

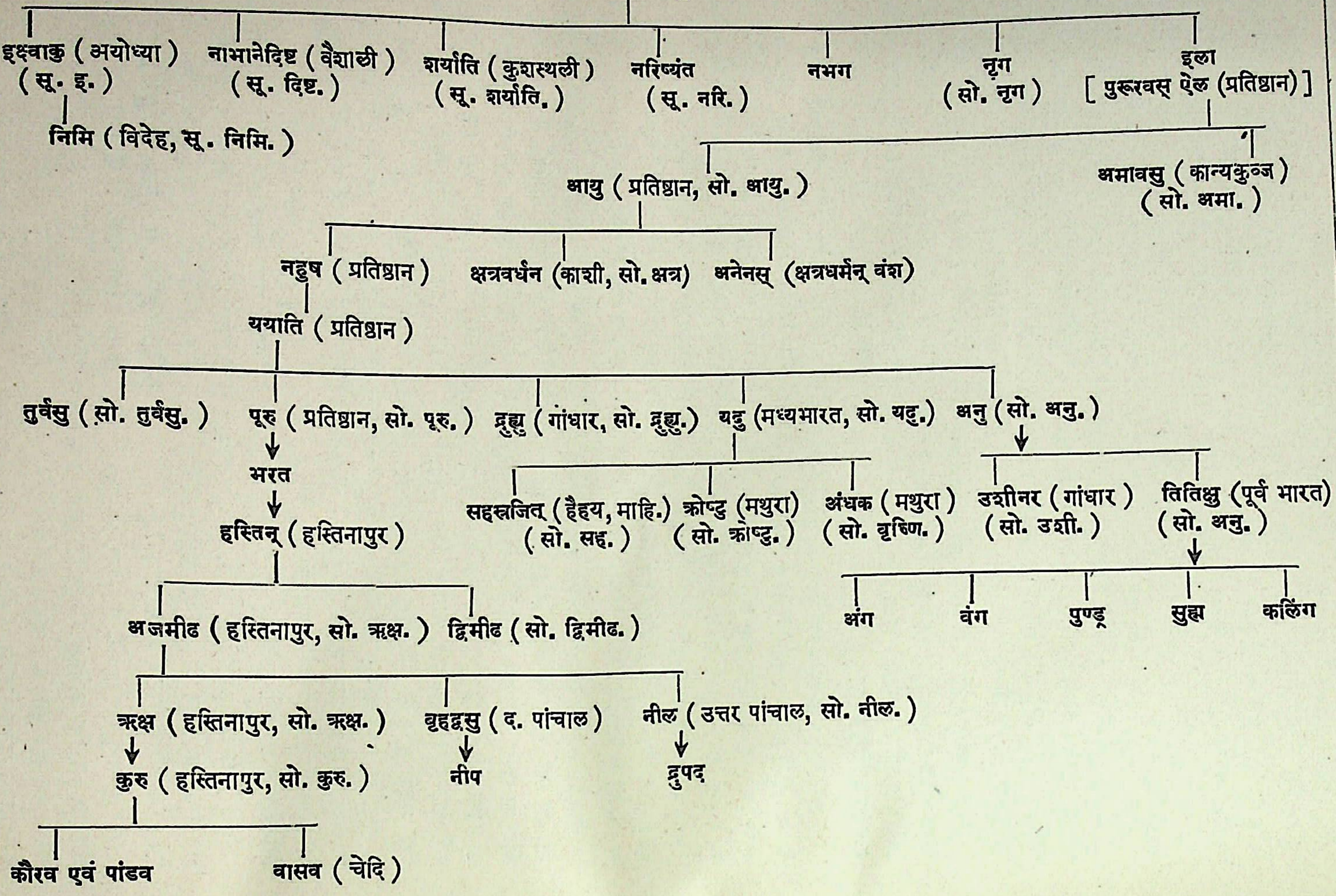
(अ) यदुवंश की उपशाखाएँ--इस राजवंश की निम्नलिखित उपशाखाएँ प्रमुख थीं:--१. सहस्रजित् शाखा (सो. सह.), जो वंश यदुपुत्र सहस्रजित् के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जो 'हैहय' सामूहिक नाम से सुविख्यात था; २. क्रोष्टु शाखा (सो. क्रोष्टु.), जो वंश क्रोष्टु के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं 'यादव' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध था।

(आ) अनुवंश की उपशाखाएँ--इस वंश की निम्नलिखित उपशाखाएँ प्रमुख थीं:--१. उशीनर शाखा (सो. उशी.), जो वंश अनुवंश में उत्पन्न उशीनर राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जिसमें सौवीर, केकय, मद्रक आदि उपशाखाएँ प्रमुख थी; २. तितिक्षु शाखा (सो. तितिक्षु.), जो वंश अनुवंश में उत्पन्न तितिक्षु राजा के द्वारा स्थापित किया गया था, एवं जिसमें अंग, वंग आदि अनेक उपशाखाएँ समाविष्ट थी।

(इ) पूरुवंश की उपशाखाएँ--इस वंश के लोग 'भरत' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे, एवं उनकी निम्नलिखित शाखाएँ प्रमुख थीं:--१. अजमीढ शाखा (सो. अज.), जो अजमीढ के द्वारा स्थापित की गयी थी, एवं जिसकी हस्तिनापुर के कुरु (सो. कुरु.), एवं उत्तर पांचाल के नील (सो. नील.) ये दो शाखाएँ प्रमुख थीं; २. द्विमीढ शाखा--(सो. द्विमीढ.), जो भरतवंश में उत्पन्न द्विमीढ राजा के द्वारा स्थापित की गयी थी।

सोमवंश के उपर्युक्त राजवंशों की एवं उनकी विभिन्न शाखाओं की जानकारी अंकारादि क्रम से नीचे दी गयी हैः--

सूर्य एवं सोमवंशों का विस्तार



अजमीढ वंश (सो. अज.)-अजमीढपुत्र बृहदिशु के द्वारा इस वंश की स्थापना हुई, जिसकी संपूर्ण जानकारी छः पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९९.१६६; ह. वं. १.२०. १८-७६; भा. ९.२१-२२; मत्स्य. ४९.७-५९)। इस राजवंश का राज्य दक्षिण पांचाल देश में था, एवं इनकी राजधानी कांपिल्य नगरी में थी। इस राजवंश के संस्थापक अजमीढ़ राजा को प्रियमेध, ऋक्ष, बृहदिशु एवं नील नामक चार पुत्र थे। इनमें से बृहदिषु ने हस्तिनापुर के मुख्य राज्य की परंपरा आगे चलायी, एवं इस प्रकार वह हस्तिनापुर ऋक्षवंशीय (सो. ऋक्ष.) राजवंश का वंशकर राजा साबित हुआ। इसी वंश से आगे चल कर हस्तिनापुर के कुरुवंश (सो. कुरु.) की उत्पत्ति हुई।

अजमीढ राजा के पुत्रों में से नील ने आगे चल कर क्रिवि देश में उत्तर पांचाल (सो. नील.) राजवंश की स्थापना की।

इस राजवंश की वंशावलि के संबंध में पौराणिक साहित्य में एकवाक्यता नहीं है। इनमें से लगभग पूरि वंशावलि मत्स्य में दी गयी है, जो 'पौराणिक राजवंशों की तालिका' में उद्धृत की गयी है। भागवत में प्राप्त नामावलि में बहुत सारे राजाओं के नाम अनुल्लिखित हैं। गरुड में अंतिम तीन राजाओं के नाम नहीं दिये गये हैं। विष्णु के नामावलि में अंतिम राजा जनमेजय का नाम अप्राप्य है। मत्स्य में काव्य राजा के पुत्र का नाम समर दिया गया है।

अनु वंश—(सो. अनु.) ययाति राजा के पुत्र अनु के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ९९.१२; ब्रह्म. १३. १५-२१; भा. ९.२३.१-३; मत्स्य. ४८.१०)। अनु राजा से आठवीं पीढी में उत्पन्न हुए महामनस् राजा को उशीनर एवं तितिक्षु नामक दो पुत्र थे, जिन्होंने क्रमशः उशीनर एवं तितिक्षु राजवंशों की स्थापना की। उनमें से उशीनर शाखा में से केकय, मद्रक, आदि वंश उत्पन्न हुए, एवं तितिक्षु राजवंश में से अंग, वंग, कलिंग, सुह्म, पुंड्र आदि उपशाखाओं का निर्माण हुआ। अनिल, कोटिक सुरथ, आदि वंश के लोग भी अनुवंशीय ही माने जाते हैं।

इस वंश की जानकारी के संबंध में पौराणिक साहित्य में प्रायः सर्वत्र एकवाक्यता है। केवल ब्रह्म एवं हरिवंश में इस वंश के आद्य संस्थापक का नाम ययातिपुत्र अनु के जगह पूरुवंशीय रौद्राश्व राजा का पुत्र कक्षेयु दिया गया है। ययाति राजा के अन्य एक पुत्र द्रुह्यु के गांधार शाखा का कई हिस्सा कई स्थानों पर अनु का ही मानकर कई पुराणों में दिया गया है। किन्तु वह गलत प्रतीत होता है।

अनेनस् वंश—आयु राजा के अनेनस् नामक पुत्र से 'क्षत्रधर्मन्' सामूहिक नाम धारण करनेवाले एक राजवंश की स्थापना हुई, जिसमें निम्नलिखित राजा समाविष्ट थेः- अनेनस्- क्षत्रधर्मन्-प्रतिक्षत्र- संजय-जय- विजय कृति- हर्यत्त्वत-सहदेव- अदीन- जयत्सेन- संकृति-कृतधर्मन् (ब्रह्मांड. ३.६८.७-११; वायु. ९३.७-११)।

अंधक वंश-यदुपुत्र अंधक राजा के द्वारा प्रस्थापित इस वंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, जहाँ इस वंश की कुकुर, एवं भजमान नामक दो शाखाएँ दी गयीं हैं। उनमें से कुकुर वंश में देवक, उग्रसेन, आदि राजा उत्पन्न हुए थे, एवं भजमान (अंधक) वंश में प्रतिक्षत्र, कृतवर्मन्, कंवलवर्हिष, असमौजस् आदि राजा उत्पन्न हुए थे (ह. वं. १.३४)।

अमावसु वंश—(सो. अमा.) पुरूरवस् के पुत्र अमावसु का वंश सात पुराणों एवं रामायण में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६६.२२-६८; वायु. ९१.५१-११८; ब्रह्म. १०.१३; ह. वं. १.२७; विष्णु. ४.७.२; वा. रा. बा. ३२-३४)। अमावसु स्वयं कान्यकुब्ज देश का राजा था, एवं उसके वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थेः— अमावसु-भीम-कांचनप्रभ-सुहोत्र-जह्नु।

अग्नि एवं महाभारत में इस वंश की मूल पुरुष अमावसु ही बताया गया है, किंतु इसमें उत्पन्न जह्नु राजा को 'भरतवंशीय' एवं अजमीढ राजा का पुत्र कहा गया है (अग्नि. २७७.१६-१८)। किन्तु यह जानकारी अनैतिहासिक प्रतीत होती है। जह्नु के आठवें पीढ़ी में उत्पन्न विश्वामित्र ऋषि को ऋग्वेद एवं अन्य वैदिक साहित्य में 'भरत' एवं 'भरतर्षभ' जरूर कहा गया है (ऋ. ३. ५३.१२; ऐ. ब्रा. ७.३.५; सां. श्रौ. १५.२५); किंतु वहाँ आद्य विश्वामित्र नहीं, बल्कि भरत राजा सुदास राजा के राजपुरोहित का कार्य करनेवाले आद्य विश्वामित्र के किसी वंशज का निर्देश अभिप्रेत है। इस प्रकार भरत राजा का पुरोहित होने के कारण विश्वामित्र ऋषि स्वयं अमावसुकुलोत्पन्न हो कर भी 'भरतर्षभ' कहलाया।

आनव वंश—अनु राजा के वंश में उत्पन्न हुए बलि आनव के अंग, वंग आदि पाँच पुत्रों ने पूर्व भारत में पाँच स्वतंत्र वंशों की स्थापना की। इन पाँच पुत्रों के

द्वारा स्थापन किये गये राजवंश 'आनव' सामूहिक नाम से प्रसिद्ध थे। इन आनव वंशों में अंग, वंग, पुण्ड्र सुह्म एवं कलिंग राजवंश समाविष्ट थे, जिनका राज्य गंजम से ले कर गंगा नदी के त्रिभुज प्रदेश तक फैला हुआ था। कई अभ्यासकों के अनुसार, इन लोगों के द्वारा समुद्र के मार्ग से इन देशों पर आक्रमण किया गया था, एवं इन प्रदेशों में स्थित सौद्युम्न लोगों को उत्कल पहाडियों के प्रदेश में ढकेल दिया था।

आयु वंश—आयु राजा के अनेनस् नामक पुत्र का वंश आयु वंश (सो. आयु.) अथवा अनेनस् वंश नाम से सुविख्यात है (पुरूरवस् देखिये; ह. वं. १.२९)।

उशीनर वंश--(सो. उशी.) ययातिपुत्र अनु के राजवंश की पश्चिमोत्तर भारत में स्थित शाखा उशीनर वंश नाम से सुविख्यात थी (अनु देखिये)।

ऋक्ष वंश—(सो. ऋक्ष.) हस्तिनापुर के हस्तिन् राजा के अजमीढ एवं द्विमीढ नामक दो पुत्र थे। इनमें से अजमीढ एवं उसके पुत्र ऋक्ष का हस्तिनापुर में राज्य करनेवाला वंश ऋक्षवंश नाम से प्रसिद्ध है। इस वंश के चौथे पुरुष कुरुपुत्र जह्नु से हस्तिनापुर में कुरुवंश का राज्य प्रारंभ हुआ। इसी वंश में उत्पन्न वसुपुत्र बृहद्रथ ने आगे चल कर मगधदेश में राज्य करनेवाले मगधवंश की स्थापना की। इन दो उपशाखाओं के अतिरिक्त ऋक्ष शाखा में उत्पन्न हुए राजा ऋक्षवंशीय (सो. ऋक्ष.) माने जाते हैं।

ऐल वंश--पुरूरवस् एवं मनुकन्या इला से उत्पन्न सोमवंश का नामांतर (सोम वंश देखिये)।

करूष वंश (सो. कुरु.) इस वंश की स्थापना कुरुवंश में उत्पन्न वसु राजा के करूष (मत्स्य) नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। इसी वंश के लोगों ने करूष देश की स्थापना की (पूरु देखिये)।

काश्य वंश (सो. क्षत्र.)—काशीदेश में राज्य करनेवाले इस राजवंश की स्थापना पुरुरवस् के पौत्र, एवं आयुराजा के पुत्र क्षत्रवृद्ध ने की। इन वंश के पहले चार राजाओं के नाम क्षत्रवृद्ध, सुनहोत्र (सुहोत्र,) काश (काश्य) एवं दीर्घतपस् थे (क्षत्रवृद्ध देखिये)।

कुकुर वंश-यादव वंश की एक उपशाखा, जो यादव-वंशीय अंधक राजा एवं उसके पुत्र कुकुर के द्वारा स्थापित की गयी थी (ब्रह्म. १५; अंधक वंश देखिये)।

कुरुवंश-(सो. पूरु.) हस्तिनापुर के ऋक्ष राजा के वंश में उत्पन्न हुए एक उपशाखा को कुरुवंश कहते थे, जिसमें कुरुराजा से ले कर पाण्डवों तक के राजा समाविष्ट थे। इस वंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९९.२१७-२१८; ब्रह्मांड १३. १०८-१२३; ह. वं. ३२. १८०१-१८०२)।

कुशांब वंश (सो. कुरु.)--इस वंश की स्थापना कुरुवंशीय वसु राजा के कुशांब नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। इसी वंश के लोगों ने कौशांबि देश की स्थापना की।

कृष्ण वंश—यादववंश की वृष्णि शाखा में उत्पन्न हुए कृष्ण का सविस्तृत वंश, एवं उसके परिवार की जानकारी हरिवंश में दी गयी है (ह. वं. १.३५)।

क्रोष्टु वंश (सो. क्रोष्टु.)--यदुराजा के पुत्र क्रोष्टु ने मथुरा नगरी के यादव वंश की स्थापना की। इसीकि नाम से मथुरा देश का यादव वंश क्रोष्टु नाम से सुविख्यात हुआ। आगे चल कर इसी वंश के ज्यामघ, भजमान, वृष्णि एवं अंधक शाखाओं का निर्माण हुआ (ब्रह्म. १४. १५; यदु देखिये)।

क्षत्रवृद्ध वंश (सो. क्षत्र.)--काशीदेश के इस सुविख्यात राजवंश की स्थापना आयुराजा के पौत्र एवं क्षत्रवृद्ध राजा के पुत्र सुनहोत्र (सुहोत्र) ने की। इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड ३.६६.२; वायु. ९२.६६-७४; ९३. ७-११; ब्रह्म. ११.३२; ह. वं. १.२९; विष्णु. ४.८; भा. ९.१७. २-५)। काशीदेश में राज्य करने के कारण, इस वंश को काश्य नामान्तर भी प्राप्त था। पौराणिक साहित्य में वृद्धक्षत्र राजा का वंश भी प्राप्त है, जो प्रायः क्षत्रवृद्ध वंश से ही मिलता जुलता है।

इस वंश के पहले चार राजाओं के नाम क्षत्रवृद्ध, सुनहोत्र, काश (काश्य) एवं दीर्घतपस् थे। भारतीय युद्ध के काल में इस वंश के सुबाहु एवं अभिभू (सुविभु) काशी देश में राज्य करते थे। भागवत में प्राप्त इस वंश की वंशावलि में काश्य एवं दीर्घतपस् के दरम्यान काशी एवं राष्ट्र इन दो राजाओं के नाम अन्य पुराणों से अधिक पाये जाते हैं।

दिवोदास एवं प्रतर्दन ये सुविख्यात राजा इसी वंश में उत्पन्न हुए थे। किन्तु दिवोदास (प्रथम) से ले कर दिवोदास (द्वितीय) तक के राजाओं का निश्चित काल एवं वंशक्रम समझ में नहीं आता है। हरिवंश, ब्रह्म एवं अग्नि पुराणों में इस वंश के आद्य पुरुष के नाते आयुपुत्र सुहोत्र का नहीं, बल्कि पौरववंशीय सुहोत्र राजा का नाम दिया गया

है। किन्तु इस वंश में उत्पन्न हुए दिवोदास एवं प्रतर्दन राजा पौरववंशीय सुहोत्र राजा से काफ़ी पूर्वकालीन थे, यह बात ध्यान में रखते हुए यह जानकारी अनैतिहासिक प्रतीत होती है।

इस वंश के राजपुरोहित भरद्वाज थे। हैहय राजाओं से इस वंश के लोगों का अनेकानेक पीढ़ियों तक युद्ध चलता रहा।

काशीदेश के राजाओं के निम्नलिखित राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में पाया जाता है। किन्तु क्षत्रवृद्धवंश की नामावलि में उनका नाम अप्राप्य है:--१. अजातरिपु; २. धृतराष्ट्र वैचित्र्यवीर्य; ३. सुबाहु; ४. सुवर्णवर्मन्; ५. होमवाहन; ६. ययाति; ७. अंबा का पिता।

क्षत्रवृद्ध के अन्य एक पुत्र का नाम प्रतिक्षत्र था, जिसने भी अपने स्वतंत्रवंश की स्थापना की। प्रतिक्षत्र के इस वंश में उत्पन्न हुए १०-१३ राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में प्राप्त है। किंतु उनका काल एवं राज्य आदि के संबंध में निश्चित जानकारी अप्राप्य है।

चेदि अथवा चैद्य वंश—(सो. कुरु.) इस वंश की स्थापना कुरुवंशीय चैद्योपरिचर वसु राजा के प्रत्यग्रह नामक पुत्र के द्वारा की गयी थी। कई अभ्यासकों के अनुसार, इस वंश का संस्थापक विदर्भपुत्र चिदि था। किंतु इन दोनों राजाओं के जीवनचरित्र में 'चैद्य' वंश की जानकारी अप्राप्य है।

इस वंश का सब से सुविख्यात राजा शिशुपाल था, जो कृष्ण एवं पाण्डवों का समकालीन था, निम्नलिखित राजाओं का निर्देश पौराणिक साहित्य में 'चैद्य' नाम से किया गया है, किन्तु चैद्य वंश की वंशावलि में उनका निर्देश अप्राप्य है:--१. दमघोष, जिसके पुत्र का नाम धृष्टकेतु, एवं पौत्र का नाम शिशुपाल सूनीथ था; २. कशु चैद्य ३. कौशिक ४. चित्र; ५. चिदि कौशिकपुत्र; ६. दण्डधार; ७. देवापि ८. शलभ; ९. सिंहकेतु; १०. हरि; ११. जह्नु।

जह्नु वंश--सुविख्यात कुरु वंश का नामान्तर।

ज्यामघ वंश--यादववंश की एक उपशाखा, जो परावृत राजा के पुत्र ज्यामघ के द्वारा स्थापित की गयी थी (भा. ९.२४; वायु. ९५; ब्रह्म. १५.१२-२९; विष्णु. ४.१६; भा. ९.२४)।

तितिक्षु वंश—(सो. अनु.) पूर्व हिंदुस्थान का एक राजवंश, जिसका विस्तार आगे चल कर पूर्व हिंदुस्थान में स्थापित हुए अंग, वंग आदि आनव वंशों में हुआ। अनुवंशीय सम्राट् महामनस् को उशीनर एवं तितिक्षु नामक दो पुत्र थे, जिनमें से तितिक्षु ने पूर्व भारत में स्वतंत्र राजवंश की स्थापना की।

तुर्वसु वंश--ययाति राजा के तुर्वसु नामक पुत्र के द्वारा इस वंश की स्थापना हुई, जिसमें निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:--तुर्वसु-वह्नि-गर्भ-गोभानु-त्रिसानु-करंधम मरुत्त। मरुत्त राजा को कोई पुत्र न होने के कारण, उसने पूरुवंशीय राजा दुष्यन्त को गोद में लिया, एवं इस प्रकार तुर्वसु वंश पूरुवंश में सम्मिलित हुआ।

किंतु कई पुराणों में इनकी एक दाक्षिणात्य शाखा का निर्देश प्राप्त है, जिसे पांडव चोल, केरल, आदि राजवंशों की स्थापना का श्रेय दिया गया है (पद्म. उ. २९०.१-२)। पार्गिटर के अनुसार, किसी तुर्वसु राजकन्या के द्वारा इन दाक्षिणात्य वंशों की स्थापना की गई होगी।

इस वंश की जानकारी विभिन्न पुराणों में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.७४.१-४; वायु. ९९.१-३, भा. ९.२३. १६-१८; मत्स्य. ४८.१-५)। अग्नि में गांधार लोगों को इसी वंश में शामिल किया गया है, किंतु गांधार लोग तुर्वसुवंशीय न होकर द्रुह्युवंशीय थे।

वैदिक साहित्य में कुरुंग को तुर्वसुवंशीय कहा गया है। इसी साहित्य में इसे म्लेंच्छों का राजा कहा गया है। हरिवर्मन् नामक एक तुर्वसुवंशीय राजा का निर्देश कई ग्रंथों में प्राप्त है, किन्तु इसके वंश के वंशावलि में उसका नाम अप्राप्य है।

द्रुह्यु वंश (सो. द्रुह्यु.) ययाति राजा के द्रुह्यु नामक पुत्र के द्वारा स्थापना किये गये इस वंश का विस्तार प्रायः पश्चिमोत्तर भारत में था (ब्रह्म. १३.१४८; ह. वं. १.३२; मत्स्य. ४८.६-१०; विष्णु. ४.१६; भा. ९.२३.१४-१५; ब्रह्मांड. ३.७४.७; वायु. ९९.७-१२)।

द्रुह्यु राजा के बभ्रु एवं सेतु नामक दो पुत्र थे, जिनके अंगारसेतु, गांधार, धृत, प्रचेतस् आदि वंशजों के द्वारा इस वंश का विस्तार हुआ। पौराणिक साहित्य के अनुसार, प्रचेतस् के वंशजों ने भारतवर्ष के उत्तर में स्थित म्लेच्छ देशों में नये राज्यों का निर्माण किया।

इसी वंश का जो वर्णन ब्रह्म एवं हरिवंश में प्राप्त है, वहाँ गांधार के बाद उत्पन्न हुए राजा गलती से अनुवंशीय राजा बतलाये गये है। इन लोगों का निर्देश वैदिक साहित्य में भी प्राप्त हैं।

द्विमीढ़ वंश—(सो. द्विमीढ़.) पूरुवंशीय हस्तिन् राजा के अजमीढ एवं द्विमीढ़ नामक दो पुत्र थे, जिनमें से अजमीढ हस्तिनापुर का राजा हो गया, एवं द्विमीढ ने स्वतंत्र

राजवंश की स्थापना की, जो द्विमीढ राजवंश नाम से प्रसिद्ध हुआ (ह. वं. १.२०; विष्णु. ४.१९.१३; भा. ९.२१; २७–३०; वायु. ९९.१८४; १९३; मत्स्य. ४९. ७०–७९)। जनमजेय राजा के पश्चात् यह वंश कुरुवंश में शामिल हुआ।

वायु में प्राप्त द्विमीढवंशीय राजाओं के नाम एवं वंशक्रम की तालिका 'पौराणिक राजवंशों की नामावलि' में दी गयी है। मत्स्य एवं हरिवंश में इस राजवंश की स्थापना अजमीढ राजा के द्वारा की जाने का निर्देश गलती से किया गया है। विष्णु में द्विमीढ राजा को भल्लाट राजा का पुत्र कहा गया है, जो निर्देश भी अनैतिहासिक प्रतीत होता है।

वायु एवं विष्णु में प्राप्त इस वंश की नामावलि में उन्नीस राजाओं के नाम प्राप्त हैं। विष्णु, भागवत एवं गरुड में इनमें से सुवर्मन्, सार्वभौम, महत्पौरव एवं रुक्मरथ राजाओं के नाम अप्राप्य हैं। भागवत में उग्रायुध राजा को नीप कहा गया है। इस राजा ने भल्लाटपुत्र जनमेजय राजा का वध कर दक्षिण पांचाल देश की राजगद्दी प्राप्त की। पश्चात् भीष्म ने उग्रायुध राजा का वध किया।

नीप वंश—(सो. पूरु.) इस वंश की स्थापना पार राजा के पुत्र नीप राजा ने की। इस वंश में उत्पन्न हुए जनमेजय दुर्बुद्धि नामक कुलांगार राजा का उग्रायुध ने वध किया, एवं इस प्रकार नीपवंश नष्ट हो कर द्विमीढवंश में सम्मीलित हुआ (मत्स्य. ४९; ह. वं. १.२०)।

नील वंश—उत्तर पांचाल देश का एक सुविख्यात राजवंश, जो अजमीढपुत्र नील के द्वारा स्थापित किया गया था। इस वंश में उत्पन्न हुए नील से लेकर पृषत् तक के सोलह राजाओं का निर्देश पुराणो में अनेक स्थानों पर प्राप्त है (वायु. ९३.५५–१०४; ब्रह्म. १३.२–८; ५०–६३; ८०–८१; ह. वं. १.२०.३१–३२; विष्णु. ४. १९; भा. ९.२०–२१; म. आ. ८९–९०; मत्स्य. ४९. १–४२)। इस वंश के भर्म्याश्व राजा को 'पांचाल' सामूहिक नाम धारण करनेवाले पाँच पुत्र थे, इसी कारण इनके राज्य को 'पांचाल' नाम प्राप्त हुआ।

यह राजवंश बहुत ही महत्त्वपूर्ण माना जाता है, क्यों कि, इस वंश में उत्पन्न हुए मुद्गल, वध्र्यश्व, दिवोदास, सुदास, च्यवन, सहदेव, सोमक, पिजवन आदि राजाओं का निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है।

इस वंश का अंतिम राजा द्रुपद था, जिसे जीत कर द्रोण ने उत्तर पांचाल देश का राज्य अपने आधीन किया, एवं दक्षिण पांचाल देश का राज्य उसे दे दिया। इसी वंश की एक शाखा (अहल्या–शतानंद) आगे चल कर 'आंगिरस ब्राह्मण' बन गयी।

पुरूरवस् वंश—पुरूरवस् राजा एवं मनुकन्या इला से उत्पन्न 'सोमवंश' का नामांतर। पुरूरवस् से ले कर आयु, नहुष, ययाति, एवं यदु तक का राजवंश पुरूरवस् वंश (सो. पुरूरवस्.) नाम से सुविख्यात है। पुरूरवस् से ले कर आयुपुत्र अनेनस् तक का वंश 'आयु वंश' (सो. आयु.) नाम से सुविख्यात है।

पूरु वंश—(सो. पूरु.) ययातिपुत्र पूरु से उत्पन्न हुआ वंश पूरु वंश नाम से सुविख्यात है। इस वंश के तीन प्रमुख भाग माने जाते हैं:—१. सो. पूरु, जिसमें पूरु से ले कर अजमीढ तक के राजा समाविष्ट थे; २. सो. ऋक्ष, जिसमें अजमीढ से ले कर कुरु तक के राजा समाविष्ट थे; ३. सो. कुरु, अथवा सो जह्नु, जिसमें कुरुपुत्र जह्नु से ले कर पाण्डवों तक के राजा समाविष्ट थे। इन तीनों वंशों की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ९३.५५–१०४; ब्रह्म. १३.२–८; ५०–६३; ८०–८१; ह. वं. १. २०.३१–३२; विष्णु. ४.१९; भा. ९.२०–२१; म. आ. ८९–९०; मत्स्य. ४९.१–४३)।

(१) सो. पूरु. वंश—इस वंश के मतिनार राजा तक सभी पुराणों में एकवाक्यता है। किन्तु महाभारत में प्राप्त वंशावलि कुछ अलग ढँग से दी गयी है। वहाँ रौद्राश्व एवं रुचेयु राजाओं के नाम अप्राप्य है, एवं अहंयाति तथा मतिनार राजाओं के बीच निम्नलिखित दस राजाओं का समावेश किया गया है:—१. सार्वभौम; २. जयत्सेन; ३. अवाचीन; ४. अरिह; ५. महाभौम; ६. अयुतानयिन्; ७. अक्रोधन; ८. देवातिथि; ९. ऋच्; १०. ऋक्ष। किन्तु महाभारत के द्वारा दी गयी यह नामावलि अनैतिहासिक प्रतीत होती है, क्यों कि, वहाँ इन राजाओं के द्वारा अंग, कलिंग एवं विदर्भ राजकन्याओं के साथ विवाह करने का निर्देश प्राप्त है, जो राज्य इस काल में अस्तित्व में नहीं थे। इससे प्रतीत होता है कि, इन राजाओं को पूरुवंश के तृतीय कालविभाग (सो. कुरु) में सुरथ एवं भीमसेन के दरम्यान अंतर्भूत करनेवाली पौराणिक परंपरा सही प्रतीत होती है।

तंसु एवं दुष्यंत के दरम्यान उत्पन्न हुए राजाओं की नामावलि महाभारत एवं पौराणिक साहित्य में अपूर्ण एवं अस्पष्ट रूप से प्राप्त है। पौराणिक साहित्य में दुष्यंत राजा की मातामही का नाम इलिना दिया गया है।

महाभारत में उसी इलिना का निर्देश 'इलिन (अनिल)' राजा के नाम से किया गया है।

(२) सो. ऋक्ष. वंश--हस्तिन् राजा को अजमीढ एवं द्विमीढ नामक दो पुत्र थें। इसमें से अजमीढ एवं ऋक्ष से ले कर कुरु तक का वंश ऋक्ष वंश (सो. ऋक्ष) नाम से सुविख्यात था। इस शाखा के राजाओं की नामावलि के संबंध में महाभारत एवं पुराणों में एकवाक्यता है, किन्तु फिर भी इन दोनों में प्राप्त नामावलि अपूर्ण सी प्रतीत होती है। विशेष कर ऋक्ष राजा के पूर्वकालीन एवं उत्तरकालीन राजाओं के संबंध में वहाँ प्राप्त जानकारी अत्यंत संदिग्ध प्रतीत होती है। आगे चल कर ऋक्ष के वंश से ही कुरुवंश का निर्माण हुआ।

(३) सो. कुरु. वंश--कुरुवंश की स्थापना करनेवाले कुरु राजा को परिक्षित्, जह्नु एवं एवं सुधन्वन् नामक तीन पुत्र थे। इनमें से परिक्षित् राजा को जनमेजय (प्रथम) नामक पुत्र, एवं श्रुतसेन एवं भीमसेन नामक पौत्र थे। परिक्षित् राजा के इन पौत्रों का निर्देश राजा के नाते कहीं भी प्राप्त नहीं है। इससे प्रतीत होता है कि, राजा के ज्येष्ठ पुत्र हो कर भी उनका राज्याधिकार नष्ट हो चुका था। इस प्रकार परिक्षित् (प्रथम) के पश्चात् जह्नु राजा के पुत्र सुरथ हस्तिनापुर का राजा बन गया, एवं उसी राजा से कुरुवंश को कुरु नाम प्राप्त हुआ। सुरथ से ले कर अभिमन्यु तक के राजाओं के संबंध में पौराणिक साहित्य में काफ़ी एकवाक्यता है।

कुरु राजा का तृतीय पुत्र सुधन्वन् के वंशज वसु ने मगध एवं चैद्य राजवंशों की स्थापना की (मगध वंश देखिये)।

पौराणिक साहित्य में निम्नलिखित राजाओं को कौरव कहा गया है, किन्तु कौरव वंशावलि में उनका नाम अप्राप्य है:— १. अभिप्रतारिन् काक्षसेनि; २. उच्चैःश्रवस्; ३. कौपेय; ४. पौरव; ५. बाह्लिक प्रातिपीय; ६. ब्रह्मदत्त चैकितानेय।

प्रतिक्षत्र वंश--इस वंश की स्थापना क्षत्रवृद्धपुत्र प्रतिक्षत्र राजा के द्वारा हुई थी (क्षत्रवृद्ध देखिये)। पौराणिक साहित्य में इस वंश का निर्देश अनेक स्थानों पर प्राप्त है (भा. ९.१७.१६-१८; वायु. ९३.७-११; ब्रह्म. ११.२७-३१; ह. वं. १.२९.१-५)।

बालेय क्षत्रिय वंश--बलि आनव राजा के द्वारा पूर्व भारत में स्थापना किये गये अंग, वंग आदि वंशों से उत्पन्न लोगों का सामुहिक नाम (अनु वंश देखिये)।

बभ्रु वंश--बभ्रु दैवावृध नामक यादवराजा के द्वारा स्थापन किये गये इस वंश के नृप भोज मार्तिकावतिक नाम से सुविख्यात थे (ब्रह्म. १५.३५-४५)। यह वंश यादववंशांतर्गत क्रोष्टु वंश की ही उपशाखा माना जाता था (ह. वं. १.३७)।

भजमान वंश--(सो. क्रोष्टु.) यादव राजा अंधकपुत्र भजमान के द्वारा स्थापित इस वंश को अंधक वंश नामान्तर भी प्राप्त था (यदु देखिये; ब्रह्म. १५.३२-४५; विष्णु. ४.१४; भा. ९.२४)।

भरत वंश--(सो. पूरु.) पूरुवंशीय सम्राट् भरत राजा के वंश में उत्पन्न हुई पूरुवंश की सारी शाखाएँ भरतवंशीय कहलाती थी। इन उपशाखाओं में अजमीढ शाखा, द्विमीढ शाखा एवं उत्तर एवं दक्षिण पांचाल के पूरुवंशीय राजवंश समाविष्ट थे (वायु. ९९.१३४; मत्स्य. २४.७१; ब्रह्म. १३.५७)।

भोज वंश--(सो. सह.) हैहय वंश की पाँच उपशाखाओं में से एक। अन्य चार उपशाखाओं के नाम वीतिहोत्र, शर्याति, अवंती एवं तुण्डिकेर थे (हैहय एवं बभ्रु वंश देखिये)।

मगध वंश-इस राजवंश की स्थापना कुरुपुत्र सुधन्वन् राजा के वंश में उत्पन्न हुए वसु राजा के द्वारा की गयी थी। वसुराजा की मृत्यु के पश्चात् उसका पूर्वभारत में स्थित साम्राज्य उसके निम्नलिखित पुत्रों में निम्नप्रकार बाँट दिया गया :— १. बृहद्रथ (मगध); २. प्रत्यग्रह (चेदि); ३. कुशांब (कौशांबी); ४. यदु (करूष); ५. मावेल्ल (मत्स्य)।

मगध राजवंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (विष्णु. ४.१९.१९; वायु. ९९.२१७-२१९; भा. ९.२२.४९; ह वं. १.३२; ८८.९८)। इनमें से ब्रह्म की वंशावलि बृहद्रथ राजा के पौत्र ऋषभ राजा तक दी गयी है। विष्णु एवं भागवत में जरासंध को बृहद्रथ राजा का पुत्र कहा गया है। किन्तु वस्तुतः वह बृहद्रथ राजा की तेरहवी पीढ़ी में उत्पन्न हुआ था।

यदु वंश अथवा **यादव वंश**--इस सुविख्यात राजवंश का प्रारंभ यदुपुत्र क्रोष्टु के द्वारा हुआ। कालक्रम की दृष्टि से इस वंश के कालखण्ड माने जाते हैं:— १. क्रोष्टु से सात्वत तक; २. सात्वत से प्रारंभ होनेवाला बाकी उर्वरित भाग।

(१) क्रोष्टु से सात्वत तक--इस वंश की जानकारी बारह पुराणों में प्राप्त है (वायु. ९६.२५५; ब्रह्मांड. ३.

७०.१४; वायु. ९४-९६; ब्रह्म. १३.१५३-२०७; ह. वं. १.३६; २. ३७-३८; पद्म. सृ. १२-१३; विष्णु. ४. १२; भा. ९.२३.३०-३४)। महाभारत में भी इस वंश की जानकारी प्राप्त है (म. अनु. २५१.२६)।

क्रोष्टु से ले कर परावृत्त तक के राजाओं के संबंध में सभी पुराणों में प्रायः एकवाक्यता है। फिर भी कई पुराणों में पृथुश्रवस्, उशनस्, रुक्मकवच, एवं निर्वृत्ति राजाओं के पश्चात् एक पीढ़ी ज्यादा दी गयी है। परावृत्त राजा को दो पुत्र थे, जिनमें से ज्यामघ नामक उनका कनिष्ठ पुत्र यदुवंश का वंशकर राजा साबित हुआ। उसने एवं उसके पुत्र विदर्भ ने सुविख्यात विदर्भराज्य की स्थापना की। विदर्भराजा के ज्येष्ठपुत्र रोमपाद ने विदर्भ का राज्य आगे चलाया। उसी के वंश में ऋथ (भीम), देवक्षत्र, मधु आदि राजा उत्पन्न हुए, एवं उसी वंश में उत्पन्न हुए सात्वत राजा ने इस वंश का वैभव चरम सीमा पर पहुँचाया। मधु से ले कर सात्वत तक के राजाओं के नामावलि के संबंध में पुराणों में एकवाक्यता नहीं है।

विदर्भ राजा के द्वितीय पुत्र का नाम कौशिक था, जिसने चेदि देश में नये राजवंश की स्थापना की।

विदर्भ राजा के तृतीय पुत्र का नाम लोमपाद था, जिसके वंश में उत्पन्न हुए तेरह राजाओं की नामावलि भागवत एवं कूर्म में निम्न प्रकार दी गयी है:-१ लोमपाद; २. बभ्रु; ३. आहृति; ४. श्वेत; ५. विश्वसह; ६. कौशिक; ७. सुयंत; ८. अनल; ९. श्वेनि; १०. द्युतिमंत; ११. वपुष्मन्त; १२. बृहन्मेधस्; १३. श्रीदेव; १४. वीतरथ (भा. ९.२४.१-२)। किन्तु इस वंश का राज्य कहाँ था, इस संबंध में कोई भी जानकारी वहाँ नहीं दी गयी है।

(२) सात्वत के पश्चात्—(सो. वृष्णि.) सात्वत राजा ने इक्ष्वाकुवंशीय शत्रुघातिन् राजा से मथुरा नगरी को जीत कर वहाँ अपना राज्य प्रस्थापित किया। सात्वत राजा को भजमान, देवावृध, वृष्णि, अंधक नामक चार पुत्र थे, जिनके द्वारा प्रस्थापित किये गये वंश वृष्णि (सो. वृष्णि.) सामूहिक नाम से सुविख्यात थे। इस वंश की निम्नलिखित शाखाएँ थीः-

(अ) भजमान शाखा—भजमान एवं उसके वंश में उत्पन्न हुए अन्य राजा मथुरा में ही राज्य करते थें।

(आ) देवावृध शाखा—देवावृध एवं उसका पुत्र बभ्रु ने मार्तिकावत नगरी में राज्य करनेवाले भोज राजवंश की स्थापना की।

(इ) अंधक शाखा—अंधक राजा को कुल चार पुत्र थें, जिनमें कुकुर एवं भजमान प्रमुख थें। इन दो पुत्रों ने क्रमशः कुकुर एवं अंधक नामक राजवंशों की स्थापना की। ये दोनों वंश मथुरा प्रदेश में राज्य करते थे, एवं उनमें क्रमशः कंस एवं कृष्ण उत्पन्न हुए थें।

(ई) वृष्णि शाखा (क्रोष्टु शाखा)--वृष्णि राजा को सुमित्र (अनमित्र), युधाजित्, देवमीढुष एवं अनमित्र (माद्रीपुत्र) नामक चार पुत्र थें, जिन्होंने चार स्वतंत्र वंशों की स्थापना की। इन वंशों में उत्पन्न हुए प्रमुख यादव निम्न प्रकार थें:—१. सुमित्र शाखा-सत्राजित्, भंगकार, २. युधाजित् शाखा—श्वफल्क, अक्रूर; ३. देवमीढुष शाखा--वसुदेव, बलराम एवं कृष्ण; ४. अनमित्र (माद्रीपुत्र) शाखा--शिनि, युयुधान सात्यकि, असंग आदि।

अन्य शाखाएँ—उपर्युक्त यादव राजाओं में से शूरपुत्र वसुदेव का वंश वसुदेव वंश (सो. वसु.) नाम से सुविख्यात है। अंधकवंश ही एक उपशाखा विदूरथवंश (सो. विदू.)नाम से सुविख्यात हैं, जिसमें विदूरथपुत्र राजाधिदेव से ले कर तमौजस तक के राजा समविष्ट थे।

वायु एवं मत्स्य में यादववंश की क्रमशः ग्यारह, एवं एक सौ शाखाएँ दी गयी है (वायु. ९६.२५५; मत्स्य. ४७.२५-२८)।

इन शाखाओं का विस्तार केवल मथुरा में ही नहीं, बल्कि दक्षिण हिंदुस्थान में भी हुआ था (ह. वं. २. ३८.३६-५१)।

यदु राजा का अन्य एक पुत्र सहस्रजित् ने सुविख्यात हैहयवंश की स्थापना की, जो यादववंश की ही एक शाखा मानी जाती है (हैहय वंश देखिये)।

"पौराणिक वंशों की तालिका" में दी गयी यादववंश की जानकारी विष्णुपुराण का अनुसरण कर दी गयी है। अन्य पुराणों में प्राप्त जानकारी वहाँ कोष्टक में दी गयी है।

ययाति वंश--ययाति राजा के यदु, पूरु, तुर्वसु, द्रुह्यु, अनु आदि पाँच पुत्रों के द्वारा उत्पन्न हुए राजवंश 'ययाति वंश' सामूहिक नाम से सुविख्यात थे (वायु. ९३.१५-२८)।

रजि वंश—आयु राजा के रजि नामक पुत्र के द्वारा उत्पन्न हुआ वंश 'रजि वंश' नाम से सुविख्यात है। आगे चल कर इसी वंश से 'राजेय क्षत्रिय' नामक लोकसमूह का निर्माण हुआ (वायु. ९२.७४-९९)।

रम्भ वंश—आयुपुत्र रम्भ के द्वारा स्थापन किया गया वंश 'रम्भवंश' नाम से सुविख्यात है (भा. १०.१७.१०)। इस वंश के संबंध में अन्य कोई भी जानकारी उपलब्ध नहीं है।

वसुदेव वंश (सो. वसु.)—यादववंशांतर्गत देवमीढुष शाखा में से शूरपुत्र वसुदेव राजा का वंश 'वसुदेव वंश' नाम से सुविख्यात है (ब्रह्म. १५.३०)।

वासव वंश—कुरुवंशीय सुधन्वन् राजा के वसु नामक पुत्र ने पूर्व हिंदुस्थान में स्थित यादवों का चेदि साम्राज्य जीत लिया, एवं उसे अपने पाँच पुत्रों में बाँट दिया। वे पाँच वंश वासव वंश नाम से सुविख्यात थे।

विदूरथ वंश (सो. विदू.)—सात्वतवंशांतर्गत भजमान शाखा में से विदूरथपुत्र राजाधिदेव से ले कर तमोजस् तक के राजा विदूरथवंशीय (सो. विदू.) कहलाते हैं (यदु देखिये)।

विष्णु वंश—यादववंशीय कृष्णवंश को वायु में विष्णु-वंश कहा गया है (वायु. ९६-९८)।

वृष्णि वंश—यादववंशांतर्गत सात्वत राजा के वृष्णि नामक पुत्र का वंश वृष्णि नाम से सुविख्यात है (ब्रह्म. १४.२-१५;३१; ह. वं. १.३४; भा. ९.२४.१२-१८; यदु देखिये)।

सहस्रजित् वंश (सो. सह.)—यदु राजा के पुत्र सहस्रजित् के द्वारा प्रस्थापित किये गये 'हैहय वंश' का नामान्तर (हैहय वंश देखिये)।

सात्वत वंश—यदुवंशांतर्गत इस वंश शाखा का संस्थापक सात्वत माना जाता है। इस वंश की भजमान, देववृध, अंधक एवं वृष्णि नामक चार शाखाएँ मानी जाती हैं (म. शां. ३३६.३१-४९)। सात्वत धर्म की जानकारी भी महाभारत में प्राप्त है।

हैहय वंश (सो. सह.)—यदुराजा के सहस्रजित् नामक पुत्र के द्वारा स्थापित किये गये इस राजवंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में सर्वत्र प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.६९.३; वायु. ९४.१-१०; विष्णु. ४.११.३; भा. ९. २३.२०-२८; ब्रह्म. १३.१५४; ह. वं. १. ३३)। इस वंश का मुख्य राज्य मालवा में नर्मदा नदी के किनारे माहिष्मती नगरी में था, एवं उनकी वीतिहोत्र, शर्याति, भोज, आनर्त (अवंती) एवं तुण्डिकेर (कुण्डिकेर) ये पाँच शाखाएँ प्रमुख थी। हरिवंश एवं ब्रह्म के अनुसार, भरत लोगों का अंतर्भाव भी 'हैहय समूह' में किया जाता था।

इनमें से प्रमुख राजा का नाम तालजंघ था। किन्तु आगे चल कर वह सारे हैहय वंश की उपाधि बन गयी। भार्गव ऋषि इन लोगों के पुरोहित थे, एवं इनका उपास्य दैवत दत्त आत्रेय था। इसके अतिरिक्त वसिष्ठ, पुलस्त्य आदि ऋषियों से भी इनका घनिष्ठ संबंध था।

परशुराम जामदग्न्य से इसका प्राणांतिक शत्रुत्व हुआ था, जिसने इन्हें जड़मूल से उखाड़ देने की कोशिश की थी। किन्तु अन्त में अपने इन प्रयत्नों में परशुराम असफल हुआ, एवं इनका अस्तित्व अबाधित रहा।

इस वंश के निम्नलिखित राजा विशेष प्रख्यात थेः—कार्तवीर्य अर्जुन, एकवीर, कुमार, शशिबिंदु, भृत, शंख। इसी वंश में उत्पन्न हुआ वीतहव्य राजा राज्यभ्रष्ट हो कर भृगुवंश का एक श्रेष्ठ ऋषि बन गया। इसी कारण पौराणिक साहित्य में उसे राजा न समझ कर उसके वंश-शाखा की कोई भी जानकारी वहाँ नहीं दी गयी है। महाभारत में वीतहव्य से ले कर शौनक तक के वंश की जानकारी प्राप्त है। कई अभ्यासकों के अनुसार, वीतहव्य ही हैहयवंश का अंतिम राजा माना गया है।

(३) स्वायंभुव मनु वंश (स्वा.)

प्राचीन भारतखण्ड के ब्रह्मावर्त नामक प्रदेश में स्थित बर्हिष्मती नगरी का सर्वाधिक प्राचीन राजा स्वायंभुव मनु था, जिसका वंश 'स्वायंभुव मनु वंश' नाम से सुविख्यात है। इस वंश की उत्तानपाद एवं प्रियव्रत नामक दो शाखाएँ प्रमुख मानी जाती हैं।

उत्तानपाद वंश-(स्वा. उत्तान.)—स्वायंभुव मनु के उत्तानपाद नामक ज्येष्ठ पुत्र के द्वारा प्रस्थापित किये गये उत्तानपाद वंश की सविस्तृत जानकारी भागवत में प्राप्त है (भा. ४.८)। वहाँ हविर्धान राजा के पुत्रों तक इस वंश की जानकारी दी गयी है। इस वंश में ध्रुव, पृथु वैन्य आदि सुविख्यात राजा उत्पन्न हुए थे।

नाभि वंश—(नाभि.) स्वायंभुव मनुपुत्र प्रियव्रत राजा के कनिष्ठ पुत्र नाभि का स्वतंत्र वंश विष्णुपुराण में दिया गया है (विष्णु. २.१)।

प्रियव्रत वंश-(स्वा. प्रिय.)—स्वायंभुव मनु के कनिष्ठ पुत्र प्रियव्रत के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस

वंश की सविस्तृत जानकारी भागवत में दी गयी है (भा. ५.१; विष्णु. २.११)। प्रियव्रत राजा के कुल सात पुत्र थें, जिनमें उसने अपने सप्तद्वीपात्मक पृथ्वी का राज्य विभाजित किया:— १. आग्नीध्र (जंबुद्वीप); २. इध्मजिह्व (प्लक्षद्वीप); ३. यज्ञबाहु (शाल्मलिद्वीप); हिरण्यरेतस् (कुशद्वीप); ५. घृतपृष्ठ (क्रौंचद्वीप); ६. मेधातिथि (शाकद्वीप); ७. वीतिहोत्र (पुष्करद्वीप)।

प्रियव्रत राजा के ज्येष्ठपुत्र आग्नीध्र का वंश भी भागवत में दिया गया है, जहाँ उसके पुत्रों के नाम निम्न प्रकार बताये गये हैः—१. इलावृत; २. रम्यक; ३. हिरण्य; ४. कुरु; ५ भद्राश्व; ६. किंपुरुष; ७. नाभि।

(४) भविष्य वंश (भविष्य.)

कलियुग का प्रारंभ—पौराणिक साहित्य के अनुसार, भारतीय युद्ध के अंतिम दिन त्रेतायुग की समाप्ति हो कर कलियुग का प्रारंभ हुआ। डॉ. फ्लीट के अनुसार, इस युग का प्रारंभ भारतीय युद्ध के अंतिम दिन नहीं, बल्कि कृष्ण के निर्याण के दिन हुआ था, जिसका काल भारतीय युद्ध के बीस साल बाद माना जाता है। इसी वर्ष में युधिष्ठिर ने राज्यत्याग कर हस्तिनापुर का राज्य अपने पौत्र परिक्षित को दे दिया। इस प्रकार परिक्षित के राज्यारोहण से ही कलियुग का प्रारंभ होता है, ऐसा डॉ. फ्लीट का अभिमत है। किन्तु पौराणिक साहित्य में सर्वत्र भारतीय युद्ध का अंतिम दिन ही कलियुग का प्रारंभ माना गया है।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त प्राचीन भारतीय राजाओं की वंशावलियाँ भारतीय युद्ध से ही समाप्त होती हैं। इस युद्ध के उत्तरकाल में भारतवर्ष में उत्पन्न हुए राजाओं की जानकारी केवल मत्स्य, वायु, ब्रह्मांड, विष्णु, भागवत एवं गरुड पुराणों में ही केवल दी गयी है।

यह जानकारी पौराणिक साहित्य में भूतकाल में उत्पन्न हुए राजाओं के नाते नहीं, बल्कि भविष्य में उत्पन्न होनेवाले राजाओं के भविष्यवाणी के रूप में दी गयी है, जिसका प्रणयन श्री व्यास के द्वारा किया गया है। इसी कारण, पौराणिक साहित्य में प्राप्त कलियुग के राजाओं की जानकारी को 'भविष्य वंश' सामूहिक नाम दिया गया है।

भविष्य राजवंशों का मूल स्रोत—पार्गिटर के अनुसार कलियुगीन राजाओं की पुराणों में प्राप्त बहुतसारी जानकारी सर्वप्रथम 'भविष्य पुराण' में ग्रथित की गयी थी, जिसकी रचना दूसरी शताब्दी के पश्चात् मगध देश में पाली अथवा अर्धमागधी भाषा में, एवं खरोष्ट्री लिपि में दी गयी थी। भविष्य पुराण के इस सर्वप्रथम संस्करण की रचना आंध्र राजा शातकर्णि के राज्यकाल में (द्वितीय शताब्दी का अंत) की गयी थी। भविष्यपुराण के इस आद्य संस्करण में तत्कालीन सूत एवं मगध लोगों में प्रचलित राजवंशों के सारे इतिहास की जानकारी ग्रथित की गयी थी। कालोपरांत भविष्य पुराण के इसी संस्करण में उत्तरकालीन राजवंशों की जानकारी ग्रथित की जाने लगी, एवं इस प्रकार इस एक ही ग्रंथ के अनेकानेक संस्करण उत्तरकाल में उपलब्ध हुए।

भविष्य पुराण के इन अनेकानेक संस्करणों को आधारभूत मान कर विभिन्न पुराणों में प्राप्त भविष्यवंशों की जानकारी ग्रथित की गयी है। इस प्रकार मत्स्य पुराण में ई. स. ३ री शताब्दी के मध्य में उपलब्ध भविष्यपुराण के संस्करण का आधार लिया गया है, एवं उसमें आंध्र राजवंशों के अधःपतन के समय तक के राजाओं की जानकारी दी गयी है।

इसी प्रकार वायु एवं ब्रह्मांड में ३ री शताब्दी के मध्य में उपलब्ध भविष्य पुराण के संस्करण का आधारग्रंथ के नाते उपयोग किया हुआ प्रतीत होता है। इसी कारण इन दोनों ग्रंथों में चंद्रगुप्त (प्रथम) के अंत तक (इ. स. ३३०) के राजवंशों का निर्देश पाया जाता है। इस प्रकार इन ग्रंथों में प्रयाग, साकेत, मगध इन देशों पर गुप्त राजाओं का आधिपत्य होने का निर्देश प्राप्त है, एवं इन देशों के परवर्ती प्रदेश पर नाग, मणिधान्य लोगों का राज्य होने का निर्देश स्पष्टरूप से प्राप्त है। समुद्रगुप्त के भारतव्यापी साम्राज्य का निर्देश वहाँ कहीं भी प्राप्त नहीं है, जिससे इन पुराणों की रचना का काल निश्चित हो जाता है।

विष्णु एवं भागवत पुराण में चतुर्थ शताब्दी के अंत में उपलब्ध भविष्य पुराण का उपयोग किया गया है, एवं उसका रचनाकाल नौवीं शताब्दी माना जाता है। गरुड़पुराण में भी इसी भविष्य पुराण का उपयोग किया गया है। किन्तु इस पुराण का रचनाकाल अनिश्चित है।

महत्त्व—भविष्य वंश में निर्दिष्ट राजवंशों में से आंध्र, मगध, प्रद्योत, शिशुनाग आदि वंशों की ऐतिहासिकता प्रमाणित हो चुकी है। इस कारण इन वंशों की पौराणिक

साहित्य में प्राप्त जानकारी इतिहासाध्यायन की दृष्टि से काफ़ी महत्त्वपूर्ण मानी जाती है। किन्तु अन्य कई वंश ऐसे भी हैं, जिनकी ऐतिहासिकता अनिश्चित एवं विवादग्रस्त है।

भविष्य पुराण का उपलब्ध संस्करण--भविष्यपुराण के उपरिनिर्दिष्ट संस्करणों में से कोई भी संस्करण आज उपलब्ध नहीं है। इस ग्रन्थ के आज उपलब्ध संस्करण में बहुत सारी प्राचीन ऐतिहासिक सामग्री लुप्त हो चुकी है, एवं जो भी सामग्री आज उपलब्ध है, उसमें मध्ययुगीन एवं अर्वाचीन कालीन अनेकानेक राजाओं की जानकारी भविष्यकथन के रूप में इतनी भद्दी एवं अनैतिहासिक पद्धति से दी गयी है कि, इतिहास के नाते उसका महत्त्व नहीं के बराबर है। उपलब्ध भविष्य पुराण के प्रतिसर्ग पर्व में निर्दिष्ट किये गये मध्ययुगीन एवं अर्वाचीन प्रमुख राजाओं कि एवं अन्य व्यक्तियों की नामावलि निम्नप्रकार है --अकबर (४.२२); आदम (१.४); इत्र (२.५); खुर्दक (४.२२); गंगासिंह (३. ४-५; ४.१); गजमुक्ता (३.६); गववर्मन् (४.४); गोविंदशर्मन् (४.७); गोरख (३.२४; ४.१२); घोरवर्मन् (४.४); चंडिका (३.१५); चतुर्वेदिन् (२.६; ४.२१); चन्द्रकान्ति (३.३२); चंद्रगुप्त चपहानि (४. २); चंद्रदेय (४.३); चंद्रभट्ट (३.३२); चंद्रराय (४. २); चरउ (२.४) चामुंड (३.९); चित्रगुप्त (४. १८); चित्रिणी (४.७); चूडामणि (२.१२); जयचंद्र (३.६; ४.३); जयदेव (४.९.३४-६६;); जयंत (३.२३); जयपाल (४.३); जयवान् (३.४१); जयशर्मन् (३.५); जयसिंह (४.२); जूज (१.२५); तालन (३.७); दुर्मुख (८-९); नादर (४.२२); न्यूह (१.५); पद्मिनी (३.३०); पृथ्वीराज (३.५-६); प्रमर (१.६; ४.१); बाबर (४.२२); बुद्धसिंह (२. ७); मध्वाचार्य (४.८; १९); महामत्स्य (४.२२); महामद (३.३); लार्डल (४.२०); विक्टावती (४. २२); शंकराचार्य (४.२२)।

उपर्युक्त व्यक्तियो में से जूज, महामद एवं विक्टावती क्रमशः जीझस खाइस्ट, महंमद पैगंबर, महारानी व्हिक्टोरिया के संस्कृत रूप हैं।

भविष्यवंश—पौराणिक साहित्य में प्राप्त भविष्यवंशों की जानकारी अकारादि क्रम से नीचे दी गयी हैः—

आंध्र (भृत्य) वंश—इस वंश के राजाओं की-संख्या मत्स्य, वायु, एवं विष्णु में क्रमशः ३०, २२ (१८), एवं २४ दी गयी है। ब्रह्मांड, भागवत एवं विष्णु के अनुसार, इन राजाओं ने ४५६ वर्षों तक, एवं मत्स्य के अनुसार ४६० (३६०) वर्षों तक राज्य किया। इन राजाओं का काल ई. स. पू. २२०-ई. स. २२५ माना गया है।

इस वंश में उत्पन्न राजाओं की नामावलि, एवं उनका संभाव्य राज्यकाल निम्नप्रकार हैः--१. सिमुक (सिंधुक, शिप्रक)-२३ वर्ष; २. कृष्ण (भात)- १० वर्ष; ३. श्रीशातकर्णि (श्रीमल्लकर्णि)-१०; ४. पूर्णोत्संग (पौर्णमास)-१८ वर्ष; ५. स्कंधस्तंभ-१८ वर्ष; ६. शातकर्णि (शांतकर्णि, सातकर्णि)-५६ वर्ष; ७. लंबोदर-१८ वर्ष; ८. आपीतक (आपीलक, दिविलक)-१२ वर्ष; ९. मेघस्वाति-१८ वर्ष; १०. स्वाति (पटुमत्, अटमान्)-१८ वर्ष; ११. स्कंदस्वाति-७ वर्ष; १२. मृगेंद्रस्वातिकर्ण-३ वर्ष; १३. कुंतलस्वातिकर्ण-८ वर्ष, १४. स्वातिवर्ण-१ वर्ष; १५. पुलोमावी- ३६ वर्ष; १६. अरिष्टकर्ण (अनिष्टकर्ण)- २५ वर्ष; १७. हाल- ५ वर्ष; १८. मंतलक (पत्तलक, मंदुलक)- ७ वर्ष; १९. पुरिकषेण (प्रविल्लसेन, पुरीषभीरु)-२१ वर्ष; २०. सुंदरशातकर्णि (सुनंदन)-१ वर्ष; २१. चकोरशातकर्णि-६ माह २२ शिवस्वाति-२८ वर्ष; २३. गौतमीपुत्र शातकर्णि (गोतमीपुत्र); २४. पुलोमत्-२८ वर्ष; २५. शातकर्णी (शिवशातकर्णि)-२९ वर्ष; २६. शिवश्री- ७ वर्ष; २७. शिवस्कंध- ३ वर्ष; २८. यज्ञश्री शातकर्णि- २९ वर्ष; ३०. विजय- ६ वर्ष; ३१. चंडश्री- १० वर्ष; ३२. पुलोमत् (द्वितीय)-७ वर्ष।

उपर्युक्त राजाओं में से पुरुषभीरु राजा से उत्तरकालीन राजाओं की ऐतिहासिकता अन्य ऐतिहासिक साधनों के द्वारा सिद्ध हो चुकी है। मेघस्वाति राजा के द्वारा २७ ई. पू. में काण्वायन राजाओं का विच्छेद किये जाने का निर्देश प्राप्त है।

काण्वायन (शुंगभृत्य) वंश—इस वंश का संस्थापक वसुदेव था, जो शुंगवंश का अंतिम राजा देवभूति (देवभूमि, क्षेमभूमि) का अमात्य था। उसने देवभूति को पदच्युत किया, एवं वह स्वयं काण्वायन वंश का पहला राजा बन गया।

इस वंश के कुल चार राजा थे, जिन्होंने ४५ वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का पहला राजा वसुदेव एवं अंतिम राजा सुशर्मन् था। दक्षिण प्रदेश में उदित आंध्र लोगों ने सुशर्मन् को राज्यभ्रष्ट किया, एवं इस प्रकार

काण्वायन वंश का राज्य समाप्त हुआ। इस वंश के 'द्विज' उपाधि से प्रतीत होता है कि, काण्वायन राजा ब्राह्मण थे। इनका राज्यकाल ई. स. ७२-२७ माना जाता है।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख थेः-- १. वसुदेव- ९ वर्ष; भूमिमित्र- १४ वर्ष; ३. नारायण- १२ वर्ष; ४ सुशर्मन्- १० वर्ष।

नंद वंश--मगधदेश में राज्य करनेवाले इस वंश में कुल नौ राजा हुए, जिन्होंने सौ वर्षों तक राज्य किया। इनका राज्यकाल ४२२ ई. पू. से ३२२ ई. पू. तक माना जाता है।

इनका सर्वप्रथम राजा महापद्म नंद था, जो महानंदिन् राजा को एक शूद्र स्त्री से उत्पन्न हूआ था। उसने ८८ वर्षों तक राज्य किया, एवं पृथ्वी के समस्त क्षत्रियों का उच्छेद किया। उसके पश्चात् उसके आठ पुत्रों में से सुकल्प राजा राजगद्दी पर आरूढ हुआ, एवं उसके पश्चात् अन्य सात नंदवंशीय राजा हुए। अंत में कौटिल्य नामक ब्राह्मण ने इस वंश को जड़मूल से उखाड़ दिया, एवं मगध का राज्य मौर्यवंशीय राजाओं के हाथ चला गया।

भविष्यपुराण में नंदवंशीय राजाओं की नामावलि निम्नप्रकार दी गयी हैं:--१. नंदसुत; २. प्रनंद; ३. परानंद; ४. समानंद; ५. प्रियानंद; ६. देवानंद; ७. यज्ञदत्त; ८. मौर्यानंद; ९. महानंद।

प्रद्योत वंश--मगधदेश के इस राजवंश की स्थापना शुनक (पुलिक) के द्वारा की गयी थी, जिसने अवंति के राजाओं में से एक राजा का वध कर, अपने पुत्र प्रद्योत को राजगद्दी पर बिठाया। इस वंश में कुल पाँच राजा उत्पन्न हुए थे, जिन्होंने १३८ वर्षों तक राज्य किया था। इनका राज्यकाल ई. पू. ६८९-५५२ माना जाता था। ये राजा मगध के बार्हद्रथ वंश के राजाओं से काफ़ी उत्तरकालीन माने जाते हैं।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख माने जाते हैं:- १. प्रद्योत-२३ वर्ष; २. पालक-२४ वर्ष; ३. विशाखयूप-५० वर्ष; ४. अजक-२१ वर्ष; ५. नंदिवर्धन-२० वर्ष।

मगध वंश (बार्हद्रथ वंश)--भारतीय युद्ध के समय इस वंश का जरासंधपुत्र सहदेव राज्य करता था। इस युद्ध में सहदेव के मारे जाने के बाद, उसका पुत्र सोमाधि गिरिव्रज का राजा बन गया।

इस प्रकार मगधदेश का भविष्यवंश सोमाधि राजा से प्रारंभ होता है, एवं रिपुंजय राजा से समाप्त होता है। इस वंश में से सेनाजित् राजा के राज्यकाल में मत्स्य, वायु एवं ब्रह्मांड पुराणों की रचना की गयी थी। बृहद्रथ से ले कर रिपुंजय तक इस वंश में कुल बत्तीस राजा हुए, एवं उन्होंने एक हजार वर्षों तक राज्य किया। इनमें से मत्स्य पुराण की रचना के पश्चात् उत्पन्न हुए श्रुतंजय राजा के पश्चात् सोलह राजा हुए, एवं उन्होंने ७२३ वर्षों तक राज्य किया।

इन राजाओं की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है, यहाँ इस वंश के केवल प्रमुख राजाओं की जानकारी दी गयी है (ब्रह्मांड. ३.७४; वायु. ९९.२९६-३०९; मत्स्य. २७३; विष्णु. ४.२३; भा. ९.२२)।

इस वंश में उत्पन्न हुए प्रमुख राजाओं के नाम एवं उनमें से हर एक का राज्यकाल निम्नप्रकार था :--१. सोमाधि (सोमापि, मार्जारि)--५८ वर्ष; २. श्रुतश्रवस् (श्रुतवत्)--६४ वर्ष; ३. अयुतायु (अप्रतिवर्मन्; अयुतायुत)--२६ वर्ष; ४. निरमित्र--४० वर्ष; ५. सुक्षत्र--५६ वर्ष; ६. बृहत्कर्मन्--२३ वर्ष; ७. सेनाजित (सेनजित्, कर्मजित्)--२३ वर्ष; ८. श्रुतंजय--४० वर्ष; ९. विभु (महाबाहु)--२८ वर्ष; १०. शुचि--५८ वर्ष; ११. क्षेम--२८ वर्ष; १२. सुव्रत (अनुव्रत)--६४ वर्ष; १३. सुनेत्र (धर्मनेत्र)--३५ वर्ष; १४. निवृति (नृपति)--५८ वर्ष; १५. त्रिनेत्र (सुश्रम)--२८ वर्ष (३८ वर्ष); १६. दृढसेन (द्युमत्सेन)--४८ वर्ष; १७. महीनेत्र (सुमति)--३३ वर्ष; १८. सुचल--३२ वर्ष; १९. सुनेत्र (सुनीत)--४० वर्ष; २० सत्यजित्--८३ वर्ष; २१. विश्वजित (वीरजित्)--२५ वर्ष; २२ रिपुंजय --५० वर्ष।

मौर्य वंश--मगध देश के इस वंश की स्थापना चंद्रगुप्त मौर्य के द्वारा हुई। इस वंश में कुल दस राजा थे, जिन्होंने कुल १३७ वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का शासनकाल ई. स. पू. ३२१-१८४ माना जाता है।

इस वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थेः- १. चंद्रगुप्त-२४ वर्ष; २. बिंदुसार (भद्रसार)-२५ वर्ष; ३. अशोकवर्धन (अशोक)-२६ वर्ष; ४. कुनाल (सुयशस्)-८ वर्ष; ५. बंधुपालित (दशरथ)-८ वर्ष; ६. संप्रति-९ वर्ष; ७. शालिशुक-१३ वर्ष; ८. देवधर्मन्-७ वर्ष; ९. शतवर्मन्-८ वर्ष; १०. बृहद्रथ-७ वर्ष।

शिशुनाग वंश--इस वंश का संस्थापक काशी देश का राजा शिशुनाग था। उसने मगध देश के प्रद्योत वंशीय अन्तिम राजा नन्दिवर्धन को पदच्युत कर,

अपना स्वतंत्र राजवंश मगध देश में प्रस्थापित किया। इस वंश के कुल दस राजा थे, जिन्होंने ३६० वर्षों तक राज्य किया। इस वंश का सर्वाधिक सुविख्यात राजा अजातशत्रु था, जिसके राज्यकाल में बौद्ध धर्म का उदय हुआ।

इस वंश के निम्नलिखित राजा प्रमुख माने जाते हैं:-- १. शिशुनाग--४० वर्ष; २. काकवर्ण--३६ वर्ष ३. क्षेमधर्मन्--२० वर्ष; ४. क्षत्रौजस् (अजातशत्रु प्रथम)--४० वर्ष; ५. बिंबिसार श्रेणिक--२८ वर्ष; ६. अजातशत्रु द्वितीय--२५ वर्ष; ७. दर्शक--२५ वर्ष; ८. उदधिन्--३३ वर्ष; ९. नन्दिवर्धन--४० वर्ष; १०. महानन्दिन्--४३ वर्ष।

शुंग वंश--इस वंश की स्थापना पुष्यमित्र शुंग ने की थी, जो मगध देश के अंतिम मौर्यवंशीय राजा बृहद्रथ का सेनापति था। उसने बृहद्रथ राजा का वध कर शुंगवंश की स्थापना की। इस वंश में कुल दस राजा थे, जिन्होंने कुल एक सौ बारह वर्ष तक राज्य किया। पुष्यमित्र स्वयं शूद्रवर्णीय था। शुंगवंश का राज्यकाल ई. स. पू. १८४--ई. स. पू. ७२ तक माना जाता है।

इस वंश में निम्नलिखित राजा प्रमुख थे:- १. पुष्यमित्र--३६ वर्ष; २. अग्निमित्र--८ वर्ष; ३. वसुज्येष्ठ--७ वर्ष; ४. वसुमित्र--१० वर्ष; ५. अंध्रक--२ वर्ष; ६. पुलिंदक--३ वर्ष; ७. घोष--३ वर्ष; ८. वज्रमित्र--९ वर्ष; ९. भागवत--३२ वर्ष; १०. देवभूमि--१० वर्ष।

अन्य भविष्य वंश--उपर्युक्त प्रमुख वंशों के अतिरिक्त निम्नलिखित 'भविष्य वंशों' का निर्देश भी पौराणिक साहित्य में पाया जाता है:-- १. अवन्ती; २. आभीर; ३. ऐक्ष्वाक, जिसका अंतिम राजा सुमित्र माना जाता है; ४. कलिंग; ५; काशी; ६. कुरु; ७. कैलकिल; ८. गर्दभिल; ९. तुषार; १०. नंद; ११. पंचाल; १२. पौरव, जिनका अंतिम राजा क्षेमक माना जाता है; १३. मुरुंड; १४. मैथिल; १५. मौन; १६. यवन; १७. शक; १८. शूरसेन; १९. हूण (ब्रह्मांड. ३.७४; वायु. ९९.२०७-४६४; विष्णु. ४.२४; भा. १२.१; मत्स्य. २७३)। इन में से बहुत सारे वंश ऐतिहासिक साबित हो चुके हैं। गर्दभिल, मौन, मुरुंड ऐसे थोड़े ही वंश हैं कि, जिनकी ऐतिहासिकता अब तक सिद्ध नहीं हो पायी है।

(५) मानवेतर वंश

पौराणिक साहित्य में देव, गंधर्व, दानव, अप्सरा, राक्षस, यक्ष, नाग, गरुड आदि अनेकानेक मानवेतर वंशों का निर्देश प्राप्त है। इनमें से बहुत सारे मानवेतर वंशों को पौराणिक साहित्य में कश्यप ऋषि की संतान मानी गयी है, जिसकी तेरह पत्नियों के द्वारा पृथ्वी के सारे मानवेतर वंशों का निर्माण होने का निर्देश वहाँ प्राप्त है:--

सप्तर्षियों की संतान--पौराणिक साहित्य एवं महाभारत में अन्यत्र राक्षस, यक्ष, एवं गंधर्व आदि को पुलह, पुलस्त्य, अगस्त्य जैसे सप्तर्षियों की संतान कहा गया है। (म. आ. ६०.५४१)। जिस प्रकार समस्त मानवजाति का पिता मनु वैवस्वत माना जाता है, उसी प्रकार समस्त मानवेतर सृष्टि के प्रणयन का श्रेय सप्तर्षियों को दिया गया प्रतीत होता है। पुलस्त्य एवं पुलह ऋषियों का सविस्तृत वंशवर्णन वायु में प्राप्त है (वायु. ७०.३१-६३; ६४-६५)।

वानरवंश--ब्रह्मांड पुराण में वानरों को पुलह एवं हरिभद्रा की संतान कहा गया है, एवं उनके ग्यारह प्रमुख कुल दिये गये हैं:-- १. द्वीपिन्; २. शरभ; ३. सिंह; ४. व्याघ्र; ५. नील; ६. शल्यक; ७. ऋक्ष; ८. मार्जार. ९. लोभास; १०. लोहास; ११. वानर; १२. मायाव (ब्रह्मांड. ३.७.१७६; ३२०)।

राक्षसवंश--वायु में राक्षसों को पुलह, पुलस्त्य एवं अगस्त्य ऋषियों की संतान कहा गया है (वायु. ७०.५१-६५)। दैत्यो में से हिरण्यकशिपु एवं हिरण्याक्ष का स्वतंत्र वंशवर्णन भी प्राप्त है (वायु. ६७; ब्रह्मांड ३.५)।

पौराणिक साहित्य में असुर, दानव, दैत्य एवं राक्षसजातियों का स्वतंत्र निर्देश प्राप्त है (मत्स्य. २५.८; १७; ३०; ३७; २६.१७)। किन्तु आगे चल कर इन जातियों का स्वतंत्र अस्तित्व नष्ट हो कर, अनार्य एवं दुष्ट जाति के लोगों के लिए ये नाम प्रयुक्त किये जाने लगे।

कश्यप ऋषि की मानवेतर संतति

वंशविशेष	कश्यपपत्नी	संतान
देवगंधर्व	(१) अरिष्टा	तुंबरु, हंस, वरेण्य आदि देवगंधर्व।
	(२) मुनि	अर्कपर्ण, उग्रसेन आदि सोलह देवगंधर्व।
अप्सरा	(१) अरिष्टा	अनवद्या, अरुणा आदि अप्सरा।
	(२) खशा	आलंबा, उत्कचोत्कृष्टा आदि अप्सरा।
	(३) मुनि	अजगंधा, अनपाया आदि अप्सरा।
नाग	(१) कद्रू	अक्रूर, धृतराष्ट्रादि नाग-कुल।
	(२) सुरभि	अंगारक, अहिर्बुध्न्य आदि सर्प।

वंशविशेष	कश्यपपत्नी	संतान
राक्षस, दैत्य एवं दानव	(१) खशा	अकंपन, अश्व आदि राक्षस।
	(२) दनु	पुलोमत्, विप्रचित्ति, हिरण्यकशिपु आदि दानव।
	(३) दनायु	वृत्र आदि दानव।
	(४) दिति	हिरण्याक्ष, वज्रांग आदि दैत्य।
	(५) पुलोमा	पौलोम एवं कालकेय राक्षससमूह।
	(६) सिंहिका	सैंहिकेय असुर।
	(७) सुरसा	यातुधानादि राक्षससमूह।
	(८) कालका	कालकंज राक्षससमूह।
पक्षी	(१) विनता	गरुड, आरुणि आदि पक्षिराज।
	(२) ताम्रा	क्रौंची, गृध्रिका आदि पक्षी।
आदित्य	अदिति	बारह आदित्य।

परिशिष्ट ५

पुराणों में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट विभिन्न वंशावलियों का निर्देश इससे पहले ही किया जा चुका है। इन राजाओं की जो जानकारी उपलब्ध है, उससे उनका निश्चित कालनिर्णय एवं उनके समकालीन अन्य राजाओं की पर्याप्त जानकारी प्राप्त होती है। इसी जानकारी को मूलाधार मान कर पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका अगले पृष्ठ पर दी गयी है, जहाँ इन राजाओं की नामावलि सूर्य एवं सोम वंशों के विभिन्न उपशाखाओं के अनुक्रम से दी गयी है।

यह तालिका विभिन्न राजाओं के समकालीनत्व का ख्याल रख कर दी गयी है, एवं हर एक राजा की पीढ़ी का स्पष्ट रूप से निर्देश किया गया है, जहाँ वैवस्वत मनु की पीढ़ी पहली मानी गयी है। इस तालिका के निरीक्षण के लिए निम्नलिखित सूचनाएँ महत्त्वपूर्ण प्रतीत होती हैः–

(१) पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट राजाओं की तालिका संपूर्ण नहीं है, एवं उनमें बहुत सारे नाम अप्राप्य हैं। पौराणिक साहित्य में से सबसे प्रदीर्घ इक्ष्वाकु-वंश भी इस न्यूनता से अलिप्त नहीं है। पौराणिक साहित्य में अप्राप्य राजाओं के नाम तालिका में (...) इस प्रकार बताये गये हैं।

(२) जिन राजाओं की समकालीनता स्पष्टरूप से सिद्ध हो चुकी है, उनके नाम तालिका में स्पष्ट अक्षरों में दिये गये हैं, एवं जिनकी समकालीनता केवल तर्काधिष्ठित ही है, उनके नाम सादे अक्षरों में दिये गये है।

(३) इन राजाओं में से जिन राजाओं का निर्देश वैदिक साहित्य में प्राप्त है, उनके आगे (*) चिन्ह लगाया गया है।

(४) तालिकाओं में निर्दिष्ट प्रमुख राजाओं के समकालीनता के प्रमाण जब 'प्राचीन चरित्रकोश' में दिये गये उन व्यक्तियों के चरित्र में प्राप्त हैं, उनके नाम अधोरेखांकित किये गये हैं। इसी कारण समकालीनता का स्पष्टीकरण तालिकाओं में नहीं दिया गया है।

(५) तालिका के दाहिनी एवं बायी ओर दिये गये क्रमांक पीढ़ीयों के निर्देशक नहीं, बल्कि अनुक्रम के निर्देशक हैं।

(६) पौराणिक साहित्य, रामायण एवं महाभारत में प्राप्त वंशावलियों में उन्हीं राजपुरुषों के एवं राजाओं के नाम दिये गये हैं, जो राजगद्दी पर अधिष्ठित थे। राजपरिवार के अन्य सदस्यों के, अथवा वर्णांतर से ब्राह्मण वैश्यादि हुए राजाओं के नाम वहाँ अप्राप्य है। इसी कारण इक्ष्वाकु, निमि एवं हैहय वंश में से अनेक राजपुरुषों के नाम इस वंशावलि में नहीं दिये गये हैं।

(७) तालिका के चौदहवे स्तंभ में दिये गये संभाव्य-काल परंपरागत पौराणिक साहित्य में प्राप्त परंपरा के अनुसार दिये गये हैं।

	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	सू. दिष्ट. (वैशाली)	सो. अमा. (कान्यकुब्ज)	सो. पुरूरवस् (प्रतिष्ठान)	सो. तुर्वसु.
१	२	३	४	५	६	७
१	मनु	मनु	मनु	मनु	मनु	...
२	* इक्ष्वाकु	* इक्ष्वाकु	* नाभानेदिष्ट	इला	इला	...
३	विकुक्षि (शशाद)	निमि	...	पुरूरवस्	* पुरूरवस्	...
४	ककुत्स्थ	...	...	अमावसु	आयु	...
५	अनेनस्	मिथि जनक	* भलंदन	...	* नहुष, रजि	...
६	पृथुरोमन्	...	* वत्सप्री	भीम	ययाति	...
७	विश्वरंधि	...	...	...	* पूरु	* तुर्वसु
८	चंद्र (आर्द्र)	उदावसु	प्रांशु	...	जनमेजय १.	...
९	युवनाश्व १.	...	...	कांचनप्रभ	प्राचीन्वत् (अविद्ध)	...
१०	शा (श्रा) वस्त	...	प्रजानि	...	प्रवीर	...
११	...	नंदिवर्धन	...	...	अविद्ध	...
१२	...	...	खनित्र	सुहोत्र १.	मनस्यु	वह्नि
१३	...	...	क्षुप	...	अभय	...
१४	बृहदश्व	सुकेतु	विंश	...	सुद्युम्न, धुंधु	...
१५	कुवलयाश्व	...	विविंश	जह्नु	बहुगवि	...
१६	दृढाश्व	...	...	...	...	...
१७	प्रमोद	देवरात	...	सुहोत्र २.	संयाति	...
१८	हर्यश्व १.	...	खनिनेत्र	...	...	भर्ग
१९	निकुंभ	...	...	अजक	भद्राश्व (रौद्राश्व)	...
२०	बर्हणाश्व	...	...	...	...	...
२१	(संहताश्व)	...	...	बलाकाश्व	ऋतेयु (ऋचेयु)	...
२२	कृशाश्व	...	अतिभूति	...	...	...
२३	(प्र) सेनजित्	...	करंधम	कुश	अन्तिनार	भोनाग
	(रेणु)	...	...	(मूर्तरय अमूर्तरजस्)	...	...
२४	युवनाश्व २.	...	अविक्षित्	...	तंसु	...
२५	* मांधातृ	बृहद्रथ	मरुत्त	कुशाश्व–कुशिक	...	...
२६	* पुरुकुत्स	...	नरिष्यन्त	* गाधि किंवा	...	...
२७	* त्रसदस्यु	...	दम	* गाथिन्	...	...
२८	(संभूत)	महावीर्य	राज्यवर्धन	...	...	...
२९	अनरण्य	...	सुधृति	...	...	...
३०	त्रसदश्व	...	नर	...	...	...
३१	हर्यश्व २.	...	केवल	...	...	...
३२	(वसुमत् और वसु-मनस्)	सुधृति	बंधुमत्	...	...	त्रिसानु
३३	त्रिधन्वन्	...	वेगवत्	...	...	करंधम
३४	* त्रैय्यारुण	...	बुध	...	...	...
३५	त्रिबंधन	...	तृणबिंदु	...	...	...
३६	...	...	विशाल (विश्रवस)	...	...	...
३७	सत्यव्रत त्रिशंकु	धृष्टकेतु	हेमचंद्र	विश्वामित्र	...	* मरुत्त

सो. द्रुह्यु.	सो. सह. (हैहय) (माहिष्मती)	सो. यदु.	सो. अनु.	सो. अनु. तितिक्षु	सो. क्षत्र. (काशी)	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	
८	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
						ई. पू.		
...	...	...	...	...	मनु	३१००	हिरण्याक्ष, हिरण्यकशिपु	१
...	...	...	...	...	इल	...	प्रल्हाद	२
...	...	...	...	...	पुरूरवस्	...	बलि	३
...	...	...	...	...	आयु	...	विप्रचित्ति, तारक	४
...	...	...	...	...	क्षत्रवृद्ध	...	वृषपर्वन्	५
...	...	...	⋮	...	...	३०००	षण्डामर्क, देवासुर-संग्राम	६
द्रुह्यु	*यदु	*यदु	*अनु	...	सुनहोत्र, प्रति-	...	...	७
...	सहस्रजित्	क्रोष्टु	...	...	क्षेत्र	...	...	८
...	...	...	...	...	काश्य	...	...	९
...	शतजित्	वृजिनीवत्	...	...	काशिराज	...	...	१०
...	...	...	...	...	राष्ट्र	...	...	११
बभ्रु	हैहय	स्वाहि	सभानर	...	दीर्घतपस्	...	...	१२
...	...	...	...	...	धर्म	...	...	१३
...	धर्मनेत्र	रशादु	...	...	धन्वतरि	...	...	१४
...	कुंति	...	...	...	...	...	...	१५
...	साहंजि	...	...	...	केतुमत्	...	...	१६
सेतु	महिष्मत्	चित्ररथ	कालानल	...	...	...	...	१७
...	...	...	...	...	भीमरथ	...	...	१८
...	भद्रश्रेण्य	...	...	...	दिवोदास १.	...	...	१९
...	...	...	...	...	अष्टारथ	...	...	२०
...	...	...	...	...	...	...	...	२१
...	...	...	सृंजय	...	..	...	...	२२
...	...	...	...	...	...	...	...	२३
...	...	...	...	...	...	...	...	
रिपु (मांधातृ)	...	...	...	...	...	...	...	२४
...	...	शशविन्दु	...	...	...	२७५०	...	२५
अंगार	दुर्दम	...	...	...	...	...	...	२६
गांधार	...	...	पुरंजय	...	...	...	...	२७
...	...	...	...	...	...	...	...	२८
धर्म	...	पृथुश्रवस्	...	...	...	...	रावण	२९
...	...	(तम)	जनमेजय	...	...	...	...	३०
धृत	धनक (कनक)	...	...	...	...	...	...	३१
...	...	उशनस्	महाशाल	...	...	...	...	३२
...	...	[शिनेयु]	...	...	...	...	...	
...	...	...	...	...	...	...	...	३३
दुर्गमा	कृतवीर्य	मरुत्त	महामनस्	...	हर्यश्व	...	वृष जान	३४
...	...	कंबलबर्हिष	उशीनर	तितिक्षु	...	...	...	३५
...	...	रुक्मकवच	शिबि	...	सुदेव	...	...	३६
प्रचेतस्	...	...	...	...	*दिवोदास २.	२५५०	...	३७
...	कार्तवीर्य	(परावृत्त)	...	...				

	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	सू. दिष्ट. (वैशाली)	सो. अमा. (कान्यकुब्ज)	सो. पूरु. (प्रतिष्ठान)	सो. तुर्वसु
३८	* हरिश्चंद्र	...	सुचंद्र	...	...	...
	...	...	पुष्कराक्ष	...	...	...
३९	रोहित	...	...	मधुच्छंदस	...	...
४०	हरित, चंप	...	...	(अष्टक लौहि)	...	* दुष्यन्त
४१	विजय	हर्यश्व	...	...	...	शरूथ
४२	भरुक	मरु	...	नय	...	जनापीड
४३	वृक	...	...	...	...	(आंडीर)
४४	बाहु (फल्गुतंत्र)	प्रतीपक	धूम्राश्व	...	...	पांड्यादि
४५	सगर	...	...	...	...	...
४६	असमंजस्	...	...	...	* दुष्यन्त	...
४७	...	कृतिरथ	...	...	* भरत	...
४८	अंशुमत्	...	...	...	भरद्वाज	...
४९	...	...	...	...	वितथ	...
५०	दिलीप १.	देवमीढ	...	...	भुवन्मन्यु	...
५१	...	...	...	...	बृहत्क्षत्र	...
५२	...	...	संजय	...	सुहोत्र	...
	...	...	...	...	...	...
५३	...	विसृत	...	...	हस्तिन्	सो. अज. ...
५४	* भगीरथ अथवा	...	...	...	* अजमीढ	दक्षिण पांचाल ...
५५	भगेरथ	...	...	...	ऋक्ष, * जह्नु	बृहदिपु
५६	श्रुत	महाधृति	...	...	...	बृहद्वसु
५७	नाभाग	...	...	...	...	बृहत्कर्मन्
५८	अम्बरीष	...	...	...	...	जयद्रथ
५९	सिंधुद्वीप	कृतिरात	सहदेव	...	...	विश्वजित्
६०	अयुतायु	...	...	...	...	...
६१	ऋतुपर्ण	...	...	...	...	...
६२	सर्वकाम	...	...	...	...	...
६३	सुदास	महारोमन्	...	...	...	...
६४	मित्रसह कल्माषपाद	...	...	...	...	...
६५	...	...	...	...	...	...
६६	अश्मक	...	...	...	...	सेनाजित्
६७	मूलक	...	...	...	...	...
६८	दशरथ १.	स्वर्णरोमन्	कृशाश्व	...	...	...
६९	ऐडविड	...	...	...	...	...
७०	विश्वसह १.	...	...	...	...	...
७१	दिलीप खट्वांग २.	...	...	...	...	रुचिराश्व
७२	दीर्घबाहु	ह्रस्वरोमन्	...	...	...	...
७३	रघु	...	...	...	...	...
७४	अज	...	...	...	संवरण	...
७५	दशरथ २.	सीरध्वज	प्रमति	...	कुरु	...

सो. नील.	सो. सह. (हैहय) (माहिष्मती)	सो. यदु.	सो. अनु.	सो. अनु. (तितिक्षु)	सो. क्षत्र. (काशी)	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	
... ...	(वृषण) ...	ज्यामघ	केकय (गोपति)	... ...	... ...		... ...	३८
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	३९
... ...	जयध्वज ...	विदर्भ ...	मद्रक	... ...	... ...		... ...	४०
... ...	... ...	क्रथ ...	... ...	वृषद्रथ ...	... ...		... ...	४१
... ...	... ...	कुंति ...	... ...	... ...	... ...		... ...	४२
... ...	... ...	धृष्ट ...	... ...	सेन ...	... ...		... ...	४३
... ...	तालजंघ वीतिहोत्र	निर्वृति ...	... ...	... ...	... ...		... ...	४४
... ...	(* वीतहव्य)	(विदूरथ)			* प्रतर्दन		... ...	४५
... ...	अनंत ...	दशार्ह ...			वत्स		... ...	४६
... ...	दुर्जय ...	व्योमन् ...	... ...	सुतपस् ...	अलर्क		रावण ...	४७
... ...	सुप्रतीक ...	जीमूत ...	... ...	बलि ...	... ...		... ...	४८
... ...	... ...	विकृति ...	... ...	अंग ...	सन्नति		... ...	४९
... ...	... ...	भीमरथ ...	... ...	... ...	सुनीथ		... ...	५०
... ...	... ...	रथवर ...	... ...	... ...	... ...		... ...	५१
... ...	... ...	दशरथ ...	... ...	दधिवाहन (अनपान)	सुकेतु		... ...	५२
					... ...		... ...	५३
सो. नील	सो. द्विमीढ ...	एकादशरथ ...	... ...	... ...	धर्मकेतु		... ...	५४
उत्तर पांचाल	द्विमीढ ...	शकुनि ...	... ...	... ...	... ...		... ...	५५
नील ...	यवीनर ...	करंभक ...	... ...	... ...	सत्यकेतु		... ...	५६
सुशांति ...	... ...	देवरात ...	... ...	... ...	... ...		... ...	५७
पुरुजानु ...	... ...	देवक्षत्र ...	... ...	... ...	विभु		... ...	५८
रिक्ष ...	धृतिमत् ...	देवन ...	... ...	दिविरथ	...		... ...	५९
भर्म्याश्व ...	... ...	मधु ...	... ...	... ...	सुविभु		... ...	६०
... ...	सत्यधृति	पुरुवस ...	... ...	... ...	... ...		... ...	६१
... ...	... ...	पुरुद्वत् ...	... ...	... ...	सुकुमार		... ...	६२
मुद्गल ...	दृढनेमि	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	६३
(ब्रह्मिष्ठ)	...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	६४
... ...	...	... ...	... ...	धर्मरथ	धृष्टकेतु		... ...	६५
... ...	...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	६६
वध्र्यश्व ...	...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	६७
... ...	...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	६८
... ...	सुवर्मन्	... ...	... ...	... ...	वेणुहोत्र		... ...	६९
... ...	...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	७०
... ...	सार्वभौम	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	७१
... ...	...	... ...	... ...	... ...	भर्ग ...		... ...	७२
... ...	...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	७३
... ...	महत्पौरव	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	७४
... ...	...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	७५
* दिवोदास	...	... जन्तु	... ...	चित्ररथ (लोमपाद)	... ...			

	सू. इ. (अयोध्या)	सू. निमि. (मिथिला)	सू. दिष्ट. (वैशाली)	सो. मगध.	सो. कुरु.	सो. अज. (दक्षिण पांचाल)
७६	राम	कुशध्वज	※ परिक्षित्	सुधन्वन्	जह्नु	पृथुसेन
७७	कुशलव	भानुमत	※ जनमेजय	सुहोत्र	सुरथ	...
७८	अतिथि	प्रद्युम्न शतद्युम्न		च्यवन	(ऋक्ष)	...
७९	निषध	मुनि		कृत	सार्वभौम	...
८०	नल	ऊर्जवह	सो. चैद्य.	वसु चैद्य	जयत्सेन	...
८१	नभ	सुतद्वाज	प्रत्यग्रह	बृहद्रथ	अराधिन्	...
८२	पुंडरीक	※कुणि (शकुनि)	...	(कुशाग्र)	महासत्त्व (महाभौम)	पार १.
८३	क्षेमधन्वन् (पौंडरीक)	※रंजन (अंजन)	...	ऋषभ	अयुतायु	...
८४	देवानीक	(※उग्रदेव)	...	पुष्पवत्	अक्रोधन	...
८५	अहीन	※क्रतुजित्	...	सत्यहित	देवातिथि	...
८६	पारियात्र	अरिष्टनेमि	...	सुधन्वन्	ऋक्ष २.	नीप
८७	बल (दल)	श्रुतायु	...	ऊर्ज	भीमसेन	...
८८	स्थल	सुपार्श्व	...	नभस्	दिलीप	...
८९	उक्थ	संजय	...	(संभव)	...	समर
९०	वज्रनाभ	क्षेमारि	...	...	...	...
९१	खगण	अनेनस्	...	...	...	पार २.
९२	विधृति	मीनरथ	...	...	...	...
९३	(व्युषिताश्व	सत्यरथ	...	...	...	पृथु
९४	विश्वसह २.)	उपगु	...	...	...	...
९५	हिरण्यनाभ	स्वागत	...	...	...	...
९६	पुष्य	सुवर्चस्	...	...	...	सुकृति
९७	ध्रुवसंधि	श्रुत	...	...	...	...
९८	सुदर्शन	सुश्रुत	...	...	...	...
९९	अग्निवर्ण	जय	...	...	...	...
१००	शीघ्र	विजय	...	...	प्रतीप	ब्रह्मदत्त
१०१	मरु	ऋत	...	...	...	विश्वक्सेन
१०२	प्रसुश्रुत	सुनय	...	...	(ऋष्टिषेण)	उदक्सेन
१०३	(सु) संधि	...	...	...	शंतनु	भल्लाट
१०४	अमर्षण	वीतहव्य	दमघोष	...	भीष्म	जनमेजय
१०५	सहस्वत्	...	...	जरासंध	विचित्रवीर्य	द्रुपद
१०६	विश्वसाह्व	धृति	शिशुपाल	...	(धृतराष्ट्र, पांडु)	...
१०७	प्रसेनजित्	...	...	...	...	...
१०८	तक्षक	बहुलाश्व	...	सहदेव	युधिष्ठिर	...
१०९	बृहद्बल	कृत किंवा कृती	...	...	अभिमन्यु	धृष्टद्युम्न
११०	बृहद्रण	महावशिन्	...	सोमापि	परिक्षित्	...
१११	...	...	...	श्रुतश्रवस	जनमेजय	...
११२	उरुक्रिय	...	...	अयुतायु	शतानीक	...

सो. नील. (उत्तर पांचाल)	सो. द्विमीढ.	सो. यदु.	सो. यदु.	सो. अनु.	सो. क्षत्र.	संभाव्य काल	अन्य राजा एवं महत्त्वपूर्ण घटना	
मित्रयु ...	रुक्मरथ ...	भीम सात्वत	... ...	चतुरंग...	... ...	१९५०	रावण	७६
मैत्रेय (सोम)	... ...	अंधक ...	भजमान, वृष्णि	... ...	... ...		... ...	७७
(*सृंजय) ...	सुपार्श्व ...	कुकुर ...	... ...	... ...	... ...		... ...	७८
च्यवन ...	... ...	धृष्ट ...	विदूरथ ...	... ...	... ...		... ...	७९
* * पंचजन,					... ...		... ...	
(पिजवन)					... ...		... ...	
❀ सुदास ...	... ...	(वृष्णि	शूर ...	... ...	... ...		दाशराज्ञ युद्ध ...	८०
* सहदेव ...	सुमति ...	धृति) ...	शमिन् ...	पृथुलाक्ष	... ...		... ...	८१
❀ सोमक ...	... ...	कपोतरोमन	प्रतिक्षत्र ...	चंप ...	... ...		... ...	८२
					... ...		... ...	
जन्तु–पृषत्	... ...	... ...	... ...	हर्यंग ...	... ...		... ...	८३
					... ...		... ...	
... ...	सन्नतिमत् ...	... ...	स्वयंभोज ...	भद्ररथ...	... ...		... ...	८४
... ...	... ...	(तैत्तिरि)	... ...	बृहत्कर्मन्	... ...		... ...	८५
... ...	... ...	... ...	हृदीक ...	बृहद्रथ...	... ...		... ...	८६
... ...	... ...	... ...	... ...	बृहद्भानु	... ...		... ...	८७
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	८८
... ...	सनति ...	विलोमन्	... ...	... ...	... ...		... ...	८९
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	९०
... ...	... ...	भव ...	... ...	बृहन्मनस	... ...		... ...	९१
... ...	... ...	(नल)	... ...	... ...	... ...		... ...	९२
... ...	कृत किंवा कृति	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	९३
... ...	कृति	अभिजित्	... ...	... ...	... ...		... ...	९४
... ...	... ...	... ...	... ...	जयद्रथ...	... ...		... ...	९५
... ...	... ...	पुनर्वसु	... ...	... ...	... ...		... ...	९६
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	९७
... ...	... ...	आहुक	देवमीढूष ...	बृहद्रथ	... ...		... ...	९८
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	९९
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	१००
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	१०१
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	१०२
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	१०३
पृषत् ...	उग्रायुध कार्ति	उग्रसेन	... ...	... ...	... ...		... ...	१०४
द्रोण ...	क्षेम ...	... ...	शूर ...	दृढरथ...	... ...		... ...	१०५
... ...	सुवीर ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	१०६
... ...	नृपंजय ...	... ...	... ...	जनमेजय	... ...		... ...	१०७
... ...	बृहद्रथ ...	... ...	वसुदेव ...	अधिरथ	... ...		... ...	१०८
... ...	... ...	कंस ...		कर्ण ...	... ...	१४००	... ...	
			कृष्ण ...	वृषसेन	... ...		भारतीय युद्ध ...	१०९
अश्वत्थामन्	... ...			... ...	... ...		... ...	
		... ...		... ...	... ...		... ...	११०
... ...	... ...	... ...	... ...	... ...	... ...		... ...	१११
... ...	... ...	... ...	वज्र ...	... ...	... ...		... ...	११२
... ...	... ...	... ...	अचल ...		... ...		... ...	
... ...	... ...	... ...						

क्र.	सू. इ.	सो. पूरु.	सो. मगध.	अन्य व्यक्ति
११३	वत्सवृद्ध	...	निरमित्र	
११४	...	...	सुनक्षत्र	
११५	प्रतिव्योमन्	...	बृहत्सेन	
११६	...	...	...	
११७	भानु	...	बृहत्कर्मन्	
११८	दिवाकर	असीमकृष्ण	सेनाजित्	
वायु, ब्रह्मांड एवं मत्स्य पुराणों के रचनाकाल ये राजा राज्य करते थे।				
११९	सहदेव	निमिचक्र	सृतंजय	
१२०	बृहदश्व	उक्थ	विप्र	
१२१	भानुमत्	चित्ररथ	शुचि	
१२२	प्रतीकाश्व	कविरथ	क्षेम	
१२३	सुप्रतीक	वृष्टिमत्	निर्वृत्ति	
१२४	मरुदेव	सुषेण	सुव्रत	
१२५	सुनक्षत्र	सुनीथ	धर्मसूत्र	
१२६	पुष्कर	नृचक्षु	शम	
१२७	अंतरिक्ष	सखीनल	सुमति	
१२८	सुतपस्	परिप्लव	सुबल	
१२९	...	सुनय	सुनीथ	
१३०	...	मेधाविन	सत्यजित्	
१३१	...	नृपंजय	विश्वजित्	
१३२	...	...	पुरंजय	
१३३	...		अवंती राजा	
१३४	अमित्रजित्	दुर्व	वीतिहोत्र	
१३५	बृहद्राज		प्रद्योत	
१३६	...	तिमि	पालक	
१३७	बर्हि	...	विशाखयूप	
१३८	कृतंजय	...	अजक	
१३९	...	बृहद्रथ	नंदिवर्धन	
१४०	रणंजय	...	शिशुनाग (ई. पू. ६४२)	
१४१	...	सुदास	काकवर्ण	
१४२	संजय	...	क्षेमधर्मन्	
१४३	...	...	क्षेत्रज्ञ	
१४४	शाक्य	शतानीक	विधिसार	
१४५	शुद्धोद	...	(काण्वायन	महावीर
१४६	लांगल	...	भूमिमित्र)	
	प्रसेनजित्	उदयन	अजातशत्रु	गौतम बुद्ध
१४७	...	...	(ई. स. पू. ४९१-४५९)	
१४८	क्षुद्रक	वहीनर	दर्भक	

क्र.	सू. इ.	सो. पूरु.	मगध देश	अन्य व्यक्ति
१४९	रणक	दंडपाणी	अजय (उदय)	
१५०	सुरथ	निरमित्र	नंदिवर्धन	
१५१	सुमित्र	क्षेमक	महानंदि नंद	सिकंदर
१५९	...	...	सुमाल्यादि ८	(ई. पू.
१६०	...	...	चंद्रगुप्त मौर्य	३३०–
	...		(ई. स. पू.	३२६)
	...		३२२-१८५).	
१६१	...	आंध्र	बिन्दुसार	
१६२	...	...	अशोक (ई. स.	
	...		पू. २३७)	
१६३	...	शिप्रक	सुयशस्	
	...	ई. स. पू. २४०	(संपदि)	
१६४	...	कृष्ण	दशरथ	अँटिओकस
१६५	...	...	संगत	(सीरिया
१६६	...	...	शालिशूक	और
१६७	...	...	सोमशर्मन्	बॅक्ट्रिया
१६८	...	श्रीमल्लकर्णि	शतधन्वन्	ई. पू.
१६९	...	पूर्णोत्संग	बृहद्रथ	२०६)
१७०	खारवेल जैन	ई.स.पू.१८४-७२	पुष्यमित्र शुंग	मिलिंद
			शातकर्णि	(मिनॅन्डर;
१७१	...	...	अग्निमित्र	ई. पू.
१७२	...	....	सुज्येष्ठ	१५०)
१७३	...	...	वसुमित्र	
१७४	...	...	आर्द्रक	
१७५	...	...	पुलिंदक	
१७६	...	...	घोषवसु	
१७७	...	लंबोदर	वज्रमित्र	कनिष्क
१७८	...	अपीतक	भागवत	कुशान
१७९	...	...	देवभूति	शक
१८०	...	मेघस्वाति	वसुदेव काण्व	कुशान
	...	...	(ई. स. पू.	साम्राज्य
	...		७३–२७)	ई. स.
१८१	...	स्वाति	भूमित्र	९०–२२०
१८२	...	स्कंधस्वाति	नारायण	ई. तक
१८३	...	मृगेन्द्र स्वातिकर्ण		
१८४	...	कुन्तल स्वातिकर्ण	सुशर्मन्	
१८५	...	... स्वातिकर्ण...		
१८६	...	अरिक्तकर्ण ...		
	...	(नेमिकृष्ण)		
१८७	...	हाल		
	...			
	('गाथा सप्तशती' का कर्ता)			
१८८	...	मंदुलक		

क्र.	आंध्र		शक सत्रप (उज्जैन)	अन्य व्यक्ति	क्र.	आंध्र		शक सत्रप (उज्जैन)	अन्य व्यक्ति
१८९	पुरींद्रसेन	...	...	...	१९८	शिवस्कंध	...	...	...
१९०	सौम्य	...	...	...	१९९	*यज्ञश्री	...	जमदामन्	...
१९१	*सुंदरशांति-कर्ण	...	चष्टण ई. स. ८०	...	२००	विजय	...	रुद्रसिंह	...
१९२	चकोर स्वातिकर्ण	...	...	...	२०१	चंडश्री	...	रुद्रसेन	...
१९३	*शिवस्वाति	...	...	...		...		संघदामन्	
१९४	*गौतमीपुत्र	...	...	...	२०२	...	...	दामसेन	...
					२०३	*पुलोमा इ. स. २११-२२५)	...	(ई. स.२२३)	...
१९५	*पुलोमत्	...	जयदामन्	...					
१९६	*शातकर्णि	...	रुद्रदामन	...					
१९७	*शिवश्री	...	दामजदश्री	...					

* चिन्हांकित राजाओं के प्रस्तरलेख अथवा सिक्के उपलब्ध हैं, जिनके कारण उनकी ऐतिहासिकता सुनिश्चित है।

परिशिष्ट ६

पुराणों में निर्दिष्ट ऋषियों के वंश

प्राचीन राजाओं की तरह, प्राचीन ऋषियों के वंश भी पौराणिक साहित्य में उपलब्ध हैं। किन्तु जहाँ राजवंश राजाओं के कुलों का अनुसरण कर तैयार किये गये हैं, वहाँ ऋषियों के वंश प्रायः सर्वत्र शिष्यपरंपरा के रूप में हैं, जो सही रूप में 'विद्यावंश' कहे जा सकते हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त ऋषियों के वंश राजाओं के वंशों जैसे परिपूर्ण नहीं हैं, एवं उनमें काफ़ी त्रुटियाँ भी हैं। इसी कारण ऐतिहासिक दृष्टि से ऋषियों के वंश इतने महत्त्वपूर्ण प्रतीत नहीं होते हैं, जितने राजाओं के वंश माने जाते हैं।

ऋषिवंश की कल्पना का विकास--जिस प्रकार प्राचीन सभी राजवंश वैवस्वत मनु से उत्पन्न माने जाते हैं, उसी प्रकार सभी प्राचीन ऋषि वंश आठ ब्रह्ममानस-पुत्र ऋषियों से उत्पन्न माने जाते हैं। इन ब्रह्ममानस-पुत्रों के नाम पौराणिक साहित्य में निम्नप्रकार दिये गये हैं:— १. भृगु; २. अंगिरस्; ३. मरीचि; ४. अत्रि; ५. वसिष्ठ; ६. पुलस्त्य; ७. पुलह; ८. क्रतु।

इन आठ ब्रह्ममानसपुत्रों में से पुलस्त्य, पुलह एवं क्रतु की संतान मानवेतर जाति हुई, एवं उनसे कोई भी ब्राह्मण वंश उत्पन्न नहीं हुआ। बाकी बचे हुए पाँच ब्रह्ममानस पुत्रों में से अंगिरस्, वसिष्ठ एवं भृगु इन तीन ऋषियों के द्वारा ही प्राचीन ऋषिवंशों (मूलगोत्र) का निर्माण हुआ। पुराणों में प्राप्त चार मूल गोत्रकार ऋषियों में अत्रि एवं कश्यप ऋषियों का नाम अप्राप्य है, जिससे प्रतीत होता है कि, अत्रि एवं कश्यप कुलोत्पन्न ब्राह्मण अन्य मूलगोत्रकार ऋषियों से काफी उत्तरकालीन थे।

उपर्युक्त पाँच प्रमुख ब्राह्मण वंशों की जानकारी नीचे दी गयी है:—

आंगिरस वंश--अंगिरस ऋषि के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की जानकारी ब्रह्मांड, वायु एवं मत्स्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.१.१०१-११३; वायु. ६५.

९७-१०८; मत्स्य. १९६)। इनमें से पहले दो ग्रंथों में इस वंशों की जानकारी दी गयी है, एवं अंतिम ग्रंथ में इस वंश के ऋषियों की एवं गोत्रकारों की नामावलि दी गयी है। इस जानकारी के अनुसार, इस वंश की स्थापना अथर्वन अंगिरस् के द्वारा की गयी थी। इस वंश के निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश प्राप्त हैं:— १. अयास्य आंगिरस, जो हरिश्चंद्र के द्वारा किये गये शुनःशेप के बलिदान के यज्ञ में उपस्थित था; २. उशिज आंगिरस एवं उसक तीन पुत्र उचथ्य, बृहस्पति एवं संवर्त, जो वैशाली के करंधम, अविक्षित् एवं मरुत्त आविक्षित राजाओं के पुरोहित थे; ३. दीर्घतमस् एवं भारद्वाज, जो क्रमशः उचथ्य एवं बृहस्पति के पुत्र थे। इनमें से भरद्वाज ऋषि काशि के दिवोदास (द्वितीय) राजा का राजपुरोहित था। दीर्घतमस् ऋषि ने अंग देश में गौतम शाखा की स्थापना की थी; ४. वामदेव गौतम; ५. शरद्वत् गौतम, जो उत्तरपंचाल के दिवोदास राजा के अहल्या नामक बहन का पति था; ६. कक्षीवत् दैर्घतमस औशिज; ७. भरद्वाज, जो उत्तरपंचाल के पृषत् राजा का समकालीन था।

आत्रेय वंश—अत्रिऋषि के द्वारा स्थापित किये गये इस वंश की जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (ब्रह्मांड. ३.८.७३-८६; वायु. ७०.६७-७८; लिंग. १.६३.६८-७८)। पौरव राजवंश से संबंधित इस वंश की जानकारी ब्रह्म एवं हरिवंश में प्राप्त है (ब्रह्म. १३.५-१४; ह. वं. ३१.१६५८; १६६१-१६६८)। इस वंश के ऋषि एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य. १९७)। पौराणिक साहित्य में आत्रेय वंश के आद्य संस्थापक अत्रि ऋषि एवं प्रभाकर को एक माना गया है, एवं उसे सोम का पिता कहा गया है।

इस वंश के निम्नलिखित ऋषि विशेष सुविख्यात माने जाते हैं:— १. प्रभाकर आत्रेय (अत्रि ऋषि,) जिसका विवाह पौरव राजा भद्राश्व (रौद्राश्व) एवं धृताची के दस कन्याओं के साथ हुआ था; २. स्वस्त्यात्रेय, जो प्रभाकर के दस पुत्रों का सामूहिक नाम था, एवं उनसे ही आगे चलकर, आत्रेयवंश के ऋषियों का जन्म हुआ था; ३. दत्त आत्रेय; ४. दुर्वासस्।

निम्नलिखित आत्रेय ऋषियों का निर्देश सूक्तद्रष्टा के नाते प्राप्त है:—१. अत्रि; २. अर्चनानस् ३, श्यावाश्व; ४. गविष्ठिर; ५. बल्गूतक (अविहोत्र, कर्णक); ६. पूर्वातिथि। पार्गिटर के अनुसार, श्यावाश्व एवं बल्गूतक ये दोनों एक ही व्यक्ति के नाम थे।

अत्रिऋषि के गोत्रकार—निम्नलिखित ऋषियों का निर्देश आत्रेय वंश के गोत्रकार के नाते प्राप्त है:— १. श्यावाश्व; २. मुद्गल (प्रत्वस्); ३. बलारक (वाग्भूतक ववल्गु); ४. गविष्ठिर (मत्स्य. १४५.१०७-१०८)।

काश्यप वंश—कश्यपऋषि के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश की जानकारी चार पुराणों में प्राप्त है (वायु. ७०.२४-२९; ब्रह्मांड. ३.८.२८-३३; लिंग. १.६३.४९-५५; कूर्म. १.१९.१-७)। इस वंश के ऋषियों एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य. १९७)।

पौराणिक साहित्य में काश्यपवंश की वंशावलि निम्न प्रकार दी गयी है:— कश्यप-वत्सार एवं असित-निध्रुव रैभ्य, एवं देवल। ये ही छः ऋषि आगे चल कर 'काश्यप ब्रह्मवादिन्' नाम से सुविख्यात हुए।

इस वंश के निम्नलिखित ऋषि विशेष सुविख्यात माने जाते हैं:— १. कण्व काश्यप, जो दुष्यंत एवं शकुंतला का समकालीन था; २. विभांडक काश्यप, जो ऋश्यशृंग ऋषि का पिता था; ३. असित काश्यप, जो देवल ऋषि का पिता था; ४. धौम्य; ५. याज, जो द्रुपद राजा का पुरोहित था।

भार्गव वंश—भृगुऋषि के द्वारा प्रस्थापित किये गये इस वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ६५.७२-९६; ब्रह्मांड. ३.१.७३-१००; मत्स्य १९५.११-४६)। इनमें से पहले दो ग्रंथों में भार्गववंश की सविस्तृत वंशावलि दी गयी है, एवं अंतिम ग्रंथ में इस वंश के ऋषि एवं गोत्रकारों की नामावलि दी गयी है।

महाभारत के अनुसार भृगु ऋषि के उशनस् शुक्र एवं च्यवन नामक दो पुत्र थे। उनमें से शुक्र एवं उसका परिवार दैत्यों के पक्ष में शामिल होने के कारण नष्ट हुआ। इस प्रकार च्यवन ऋषि ने भार्गव वंश की अभिवृद्धि की। महाभारत में दिया गया च्यवन ऋषि का वंशक्रम निम्नप्रकार है:—च्यवन (पत्नी-मनुकन्या आरुषी)-और्व—ऋचीक—जमदग्नि—परशुराम।

भृगुऋषि के पुत्रों में से च्यवन एवं उसका परिवार पश्चिम हिंदुस्तान में आनर्त देश से संबंधित था। उशनस् शुक्र उत्तर भारत के मध्यविभाग से संबंधित था।

इस वंश के निम्नलिखित व्यक्ति प्रमुख माने जाते हैं: — १. ऋचीक और्व; २. जमदग्नि; ३. परशुराम; ४. इंद्रोत शौनक; ५. प्राचेतस वाल्मीकि।

क्षत्रिय ब्राह्मण––भार्गववंश में अनेक ब्राह्मण ऐसे भीं थे कि, जो स्वयं भार्गव न हो कर भी इस वंश में शामिल हो गये थे। ये ब्राह्मण 'क्षत्रिय ब्राह्मण' कहलाते थे, एवं उनमें निम्नलिखित लोग शामिल थेः— १. मत्स्य; २. मौद्गलायन; ३. सांकृत्य; ४. गार्ग्यायन; ५. गार्गीय; ६. कपि; ७. मैत्रेय; ८. वध्र्यश्व; ९. दिवोदास (मत्स्य. १४९.९८-१००)।

भार्गव समूह––मत्स्य में निम्नलिखित भार्गववंशीय 'समूहों' (पक्ष) का निर्देश प्राप्त हैः—१. वत्स; २. विद; ३. आर्ष्टिषेण; ४. यास्क; ५. वैन्य; ६. शौनक; ७. मित्रयु (मत्स्य. १९५)। एकवीस भार्गव सूक्तद्रष्टाओं का निर्देश ब्रह्मांड में प्राप्त है (ब्रह्मांड. २.३२.१०४-१०६)।

वसिष्ठ वंश––अयोध्या के राजपुरोहित के नाते काम करनेवाले वसिष्ठ वंश की सविस्तृत जानकारी पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ७०.७९-९०; ब्रह्मांड. ३.८.८६-१००; लिंग. १.६३.७८-९२)। इस वंश के ऋषियों एवं गोत्रकारों की नामावलि मत्स्य में दी गयी है (मत्स्य. २००-२०१)। इस वंश में उत्पन्न निम्नलिखित ऋषि विशेष महत्त्वपूर्ण माने जाते हैंः— १. देवराज; २. आपव; ३. अथर्वनिधि; ४. वारुणि; ५. श्रेष्ठभाज्; ६. सुवर्चस्; ७. शक्ति; ८. मैत्रावरुणि। वसिष्ठ वंश की अन्य एक शाखा जातूकर्ण लोग माने जाते हैं।

पौराणिक ऋषिवंशों की तालिका

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट विभिन्न ऋषिवंशों की एवं ऋषियों की तालिका नीचे दी गयी है। इस तालिका में भार्गव, आंगिरस, वासिष्ठ, एवं अन्य ऋषिवंशों में उत्पन्न ऋषियों की नामावलि उनके समकालीनत्व के अनुसार दी गयी है। तत्कालीन राजकीय इतिहास में इन ऋषियों का संभाव्य स्थान कहाँ था, इसकी सूचना प्राप्त करने के लिए इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं की संपूर्ण तालिका इस तालिका के साथ ही दी गयी है। इस तालिका में निर्दिष्ट इक्ष्वाकुवंशीय राजाओं की नामावलि पौराणिक राजवंशों की तालिका में से पुनरुद्धृत की गयी है।

क्र.	समकालीन राजा (इक्ष्वाकु वंश)	भार्गव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
१.	मनु	...	वसिष्ठ	...	...
२.	इक्ष्वाकु	च्यवन	वसिष्ठ	...	...
३.	विकुक्षि शशाद	...	वसिष्ठ	...	...
५.	अनेनस्	उशनस् शुक्र	...	बृहस्पति	प्रभाकर आत्रेय
१८.	संहताश्व	...	...	...	...
३०.	त्र्यैय्यारुण	ऊर्व	वरुण	...	दत्त एवं दुर्वासस् आत्रेय
३१.	...	ऋचीक और्व	आपवारुणि	...	विश्वामित्र
३२.	सत्यव्रत त्रिशंकु	जमदग्नि, अजीगर्त	देवराज	...	मधुच्छंदस, ऋषभ
३३.	हरिश्चंद्र	...	...	...	रेणु, अष्टक, कति (कत), गालव विश्वामित्र, शुनःशेप देवराज, विश्वामित्र
३४.	रोहित	...	...	...	...
३५.	हरित, चंप	परशुराम, शुनःशेप	...	अथर्वन्	...
३६.	वृक	...	...	उशिज	कश्यप
३९.	बाहु (असित)	...	...		
४०.		अग्नि और्व, वीतहव्य	अथर्वनिधि (प्रथम), आपव	उचथ्य बृहस्पति, संवर्त	

क्र.	समकालीन राजा (इक्ष्वाकु वंश)	भार्गव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
४१.	सगर			दीर्घतमस्, भरद्वाज, शरद्वंत (१ ला)	... ...
४२.	असमंजस	...	...		विश्वामित्र (शकुंतलापिता) कण्व काश्यप अगस्त्य (एवं लोपामुद्रा)
४३.	अंशुमत्		...	कक्षीवत् (१ ला)	।
	दिलीप (प्रथम)	...	...	शंयु	...
४४.	श्रुत		...	विदथिन्–भरद्वाज	...
४६.			...	(भरत ने गोद में	...
		...	...	लिया)	...
४७.		...	...		
४९.	सिंधुद्वीप	...	...	गर्ग, नर	
५०.	अयुतायु		...	उरुक्षय संकृति	...
५१.	ऋतुपर्ण		...	ऋजिश्वन्	...
५२.	सर्वकाम		...	कपि	...
५४.	मित्रसह कल्माषपाद	... ...	श्रेष्ठभाज	भरद्वाज (अजमीढ़ के समवेत)	... ...
५८.	अश्मक	...	...	कण्व	...
५९.	मूलक	...	...	मेधातिथि काण्व	...
६०.	दिलीप (खट्वांग)	...	अथर्वनिधि (२)	...	शांडिल्य–काश्यप
६१.	दीर्घबाहु	...		मौद्गल्य	...
६२.	रघु	वध्र्यश्व		...	...
६३.	अज	दिवोदास		पायु, शरद्वंत(द्वितीय) सौभरि–काण्व	अर्चनानस्–आत्रेय विभांडक–काश्यप
६४.	दशरथ	मित्रायु, परुःशेप दैवोदासि	वसिष्ठ (दशरथ के समवेत)	... ...	ऋश्यशृंग एवं रेभ काश्यप, श्यावाश्व आत्रेय
६५.	राम	मैत्रेय, प्रतर्दन दैवोदासि प्रचेतस्	...	पञ्रिय कक्षीवत् (द्वितीय)	अंधिगु–आत्रेय आत्रेयः
६७.	कुश	सुमित्र वाध्र्यश्व	वसिष्ठ (सुदास के समवेत)		
६८.	अतिथि	... ...	शक्ति, शतयातु		विश्वामित्र (सुदास के समवेत), निध्रुव काश्यप
६९.	निषध	...	पराशर, शाक्त्य, सुवर्चस्	वामदेव	...
७०.	नल	...	...	बृहदुक्थ	...
७१.	नभस्	देवापि शौनक	...	...	...
७३.	क्षेमधन्वन्	इंद्रोत–शौनक	...	...	वैभांडकि–कश्यप

क्र.	समकालीन राजा (इक्ष्वाकुवंश)	भार्गव	वासिष्ठ	आंगिरस	अन्य ऋषि
८६.	सुदर्शन	...	...	...	जैगीषव्य
८७.	अग्निवर्ण	...	...	...	शंख एवं लिखित,
		...	...	...	कण्डरीक,
		...	...	...	बाभ्रव्य पांचाल
८९.	मरु		सगर	...	...
९०.	प्रसुश्रुत	...	पराशर-सागर		...
९१.	सुसंधि	...	जातुकर्ण्य	भरद्वाज	असित-काश्यप, विष्व-क्सेन (जातुकर्ण्य) -
		...			
९२.	अमर्ष एवं सहस्वन्त	...	कृष्ण द्वैपायन-व्यास		अग्निवेश
		...			
९३.	विश्रुतवंत	...	शुक	कृप, द्रोण,	असित-देवल, धौम्य एवं याज, काश्यपवंशीय ऋषि
		...			
		...			
९४.	बृहद्बल	वैशंपायन	भूरिश्रवस् आदि अन्य ऋषि	अश्वत्थामन्, पैल	लोमश, जैमिनि, सुमन्तु

परिशिष्ट ७

कालनिर्णयकोश

१ प्राचीन कालगणनापद्धति

पौराणिक साहित्य में तीन प्रमुख कालगणनापद्धतियाँ उपलब्ध हैं:— १. युगगणनापद्धति, जो सत्य, त्रेता, द्वापर, कलि आदि युगों की कल्पना पर अधिष्ठित है; २. मन्वन्तर कालगणनापद्धति—जो स्वायंभुव, स्वारोचिष आदि चौदह मन्वन्तरों की कल्पना पर अधिष्ठित है; ३. सप्तर्षियुग की कल्पना—जो आकाश में स्थित सप्तर्षि ग्रहों के स्थिति के मापन पर आधारित है, एवं इस प्रकार खगोलशास्त्र से संबधित है।

युगगणनापद्धति—पौराणिक साहित्य में प्राप्त युग-गणना पद्धति के अनुसार, ब्रह्मा का एक दिन एक हजार पर्यायों में विभाजित किया गया है, जिनमें से हर एक पर्याय निम्नलिखित चार युगों से बनता है:—

कृतयुग—	१७,२८,००० वर्ष
त्रेतायुग—	१२,९६,००० वर्ष
द्वापरयुग—	८,६४,००१ वर्ष
कलियुग—	४,३२,००० वर्ष
	४३,२०,००१ वर्ष

∴ ब्रह्मा का एक दिन—४३,२०,००१ × १,००० =४,३२,००,००,००१ वर्ष (विष्णु. ३.२.४८)

एक उपपत्ति — सुप्रसिद्ध इतिहासकार जयचंद्र विद्यालंकार के अनुसार, यद्यपि पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट युगों की कल्पना शास्त्रीय एवं ऐतिहासिक है, फिर भी वहाँ दी गयी हर युग की कालमर्यादा अतिशयोक्तिपूर्ण है।

इसी कारण जयचंद्रजी ने कृतयुग, त्रेतायुग, एवं द्वापरयुग के पौराणिक कालविभाजन की समीक्षा राजनैतिक दृष्टि से करने का सफल प्रयत्न किया है। इस समीक्षा में उन्होंने वैवस्वत मनु से लेकर भारतीय युद्ध तक ९४ पीढ़ीयों का परिगणन करनेवाले पार्गिटर के सिद्धान्त को ग्राह्य माना है, एवं उसी सिद्धान्त को भारतीय युद्ध तक कृत, त्रेता एवं द्वापरयुग समाप्त होने के जनश्रुति से मिलाने का प्रयत्न उन्होंने किया है। इन दोनों सिद्धान्तों को एकत्रित कर वे सगर राजा (४० वीं पीढ़ी) के साथ कृतयुग की समाप्ति, राम दाशरथि (६५ वीं पीढ़ी) के साथ त्रेतायुग का अंत, एवं कृष्ण (९५ वीं पीढ़ी) के देहावसान के साथ द्वापरयुग की समाप्ति ग्राह्य मानते हैं। (वायु. ९९-४२९)। उनका यहीं सिद्धांत निम्नलिखित तालिका में ग्रथित किया गया है:—

युग	पीढ़ीयाँ	ऐतिहासिक कालमर्यादा	कालमर्यादा
कृतयुग	१-४० पीढ़ीयाँ	प्रारंभ से सगर राजा तक	४० × १६ = ६४० वर्ष
त्रेतायुग	४१-६५ पीढ़ीयाँ	सगर राजा से राम दाशरथि तक	२५ × १६ = ४०० वर्ष
द्वापरयुग	६६-९५ पीढ़ीयाँ	रामदाशरथि से कृष्ण तक	३० × १६ = ४८० वर्ष
कलियुग	—	भारतीय युद्ध के पश्चात्	(१०५० वर्ष)
कुल पीढ़ीयाँ -९५		पहले तीन युगों की कालमर्यादा-१,५२० वर्ष	

जयचन्द्रजी के अनुसार, कृत, त्रेता एवं द्वापर युगों की कुल कालावधि क्रमशः ६५०,४००, एवं ४७५ साल मानी गयी है। भारतीय युद्ध का काल १४२० ई. पू. निर्धारित करते हुए वे कृतयुग, त्रेतायुग, एवं द्वापरयुग का कालनिर्णय निम्नप्रकार करते हैं:—

कृतयुग—२९५० ई. पू.-२३०० ई. पू.

त्रेतायुग—२३०० ई. पू.-१९०० ई. पू.

द्वापारयुग—१९०० ई. पू.-१४२५ ई. पू.

पौराणिक साहित्य में निर्दिष्ट वंशावलियाँ संपूर्ण न हो कर उनमें केवल प्रमुख राजा ही समविष्ट किये गये हैं। इस बात पर ध्यान देते हुए, केवल उपलब्ध राजाओं के पीढ़ीयों के परिगणन के आधार पर कालनिर्णय का कौनसा भी सिद्धांत व्यक्त करना अशास्त्रीय प्रतीत होता है। फिर भी पौराणिक जानकारी को तर्कशुद्ध एवं ऐतिहासिक चौखट में बिठाने का एक प्रयत्न इस नाते जयचंद्रजी का उपर्युक्त सिद्धान्त महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है।

मन्वन्तर कालगणना पद्धति—पौराणिक साहित्य में उपलब्ध अन्य एक कालपरिगणनापद्धति 'मन्वन्तर पद्धति' नाम से सुविख्यात है। इस परिमाणपद्धति के अनुसार, कुल चौदह मन्वन्तर दिये गये हैं, जिनके अधिपति राजाओं को मनु कहा गया है। चौदह मन्वन्तर मिल कर एक कल्प बन जाता है। मन्वन्तर कालगणना पद्धति के परिमाण पौराणिक साहित्य में निम्नप्रकार दिये गये है:-

२ त्रुटि = $\frac{1}{2}$ निमेष.
२ आधा निमेष = १ निमेष.
२५ निमेष = १. काष्ठा.
३० काष्ठा = १ कला.
३० कला = १ मूहूर्त.
३० मुहूर्त = १ अहोरात्र.
२५ अहोरात्र दिन = १ पक्ष.
२ पक्ष = १ महीना.
६ महीने = १ अयन.
२ अयन = १ वर्ष
४३ लक्ष २० हजार वर्ष = १ पर्याय (महायुग), जिसमें कृत, त्रेता, द्वापर एवं कलि के प्रत्येकी एक युग समाविष्ट है।
७१ पर्याय = १ मन्वन्तर.
१४ मन्वन्तर = १ कल्प.

(भवि. ब्राह्म. २; मार्क. ४३; विष्णु. १.३; मत्स्य. १४२; स्कंद. ६.१५४; ७.१.१०५; पद्म. सृ. ३)।

पौराणिक साहित्य के अनुसार, वराहकल्प में से स्वायंभुव, स्वारोचिष, उत्तम, तामस, रैवत एवं चाक्षुष नामक छः मन्वन्तर अब तक हो चुकें है, एवं वर्तमान काल में वैवस्वत मन्वन्तर शुरू है। इस मन्वन्तर के पश्चात् सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मसावर्णि, धर्मसावर्णि, रुद्रसावर्णि,

रौच्य एवं भौत्य नामक सात मन्वन्तर क्रमशः आनेवाले हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त कल्पना के अनुसार, मनु वैवस्वत को इस सृष्टि का पहला राजा माना गया है, एवं उस साहित्य में निर्दिष्ट सूर्य, सोम आदि सारे वंश उसीसे उत्पन्न माने गये हैं। यदि भारतीय युद्ध का काल १४०० ई. पू. माना जाये, तो मनु वैवस्वत का काल इस युद्ध के पहले ९५ पीढ़ीयाँ अर्थात् (९५ × १८ वर्ष + १४०० =) ३११० ई. पू. साबित होता है।

कल्पों की नामावलि—मन्वंतरों के साथ-साथ कल्पांतरों की नामावलि भी पौराणिक साहित्य में प्राप्त हैं, किन्तु अतिशयोक्त कालमर्यादाओं के निर्देश के कारण, ये सारी नामावलियाँ अनैतिहासिक एवं कल्पनारम्य प्रतीत होती हैं। इनमें से मत्स्य में प्राप्त नामावलि विभिन्न पाठभेदों के साथ नीचे दी गयी हैः— १. श्वेत (भव, भुव, भवोद्भुव); २. नीललोहित (तप); ३. वामदेव (भव); ४. रथंतर (रंभ); ५. रौरव (रौक्म, ऋतु); ६. देव (प्राण, ऋतु); ७. बृहत् (वह्नि); ८. कंदर्प (हव्यवाहन); ९. सद्य (सावित्र); १०. ईशान (भुव, शुद्ध); ११. तम (ध्यान, उशिक); १२. सारस्वत (कुशिक); १३. उदान (गंधर्व); १४. गरुड (ऋषभ); १५. कौर्म (षडज्); १६. नारसिंह (मार्जालिय, मज्जालिय) १७. समान (समाधि, मध्यम); १८. आग्नेय (वैराजक); १९. सोम (निषाद); २०. मानव (भावन, पंचम); २१. तत्पुरुष (सुप्तमाली, मेघवाहन) २२. वैकुंठ (चिंतक, चैत्रक); २३. लक्ष्मी (अर्चि, आकूति) २४. सावित्री (विज्ञाति, ज्ञान); २५. घोरकल्प (लक्ष्मी, मनस्, सुदर्श); २६. वाराह (भावदर्श, दर्श); २७. वैराज (गौरी, बृहत्); २८. गौरी (अंध, श्वेतलोहित); २९. माहेश्वर (रक्त); ३०. पितृ (पीतवासस्); ३१. सित (असित); ३२. विश्वरूप (वायु. २१; लिंग. १.४; मत्स्य. २८९; स्कंद ७.१०५)।

वसंतारंभकाल— ज्योतिर्विज्ञानीय तत्त्व का आधार ले कर प्राचीन वैदिक साहित्य का कालनिर्णय करने का अद्वितीय प्रयत्न लोकमान्य तिलकजी ने किया। उन्होंने प्रमाणित आधारों पर सिद्ध किया कि, जिस समय कृत्तिका नक्षत्र में वसंतारंभ था, एवं उसी नक्षत्र के आधार पर दिन-रात की गणना की जाती थी, उस समय ब्राह्मण ग्रंथों का निर्माण हुआ था। उसी प्रकार, वैदिक मंत्रसंहिताओं की रचना भी मृगशिरा नक्षत्र के काल में की गयी थी। खगोल एवं ज्योतिःशास्त्र के हिसाब से, कृत्तिका एवं मृगशिरा नक्षत्रों में वसंतसंपात क्रमशः आज से ४५०० एवं ६५०० सालों के पूर्व थी। इसी हिसाब से ब्राह्मण ग्रंथ एवं वैदिक संहिता का काल क्रमशः २५०० ई. पू. एवं ४५०० ई. पू. लगभग निश्चित किया जाता है।

सप्तर्षि शक—ज्योतिर्विज्ञान की कल्पना के अनुसार, आकाश में स्थित सप्तर्षि तारकापुंज की अपनी गति रहती है, एवं वे वह सौ साल में एक नक्षत्र भ्रमण करते हैं। इस प्रकार समस्त नक्षत्र मंडळ का भ्रमण पूर्ण करने के लिए उन्हें २७०० साल लगते हैं, जिस कालावधि को 'सप्तर्षि चक्र' कहते है।

सप्तर्षिकाल एवं शक का निर्देश पौराणिक साहित्य में प्राप्त है (वायु. ९९.४१८-४२२; भा. १२.२. २६-३१; ब्रह्मांड. ३.७४.२३१-२४०; विष्णु. ४.२४. ३३; मत्स्य. २७३.३९-४४)। इस शक को 'शककाल' एवं 'लौकिक काल' नामांतर भी प्राप्त थे। काश्मीर के ज्योतिर्विदों के अनुसार, कलिवर्ष २७ चैत्रशुक्ल प्रतिपदा के दिन इस शक का प्रारंभ हुआ था। इसी कारण इस शक में क्रमशः ४६ एवं ६५ मिलाने से परंपरागत शकवर्ष एवं ई. स. वर्ष पाया जाता है। अल्बेरुनी के ग्रंथ में (शक ९५२) 'सप्तर्षि शक' का निर्देश प्राप्त है, जहाँ उस समय यह शक मुल्तान, पेशावर आदि उत्तर पश्चिमी भारत में प्रचलित होने का निर्देश प्राप्त है। आधुनिक काल में यह शक काश्मीर, एवं उसके परवर्ति प्रदेश में प्रचलित है। सुविख्यात 'राजतरंगिणी' ग्रंथ में भी इसी शक का उपयोग किया गया है।

भारतीय युद्ध का कालनिर्णय—प्राचीन भारतीय इतिहास में भारतीय युद्ध एक ऐसी महत्त्वपूर्ण घटना है कि, जिसका कालनिर्णय करने से बहुत सारी घटनाएँ सुलभ हो सकती हैं।

पुलकेशिन् (द्वितीय) के सातवीं शताब्दी के ऐहोल शिलालेख में भारतीय युद्ध का काल ३१०२ ई. पू. दिया गया है। सुविख्यात ज्योतिर्विद आर्यभट्ट के अनुसार कलियुग का प्रारंभ भी उसी समय तय किया गया है।

किंतु फ्लीट के अनुसार, भारतीय युद्ध के कालनिर्णय की आर्यभट्ट की परंपरा काफ़ी उत्तरकालीन एवं अनैतिहासिक है। वृद्धगर्ग, वराहमिहिर आदि अन्य ज्योतिर्विद

एवं कल्हण जैसे इतिहासकार भारतीय युद्ध का काल कलियुग के पश्चात् ६५३ वर्ष, अर्थात् २४४९ ई. पू. मानते हैं। भारतीय ज्योतिषशास्त्र की इन दो परस्पर विरोधी परंपराओं से ये दोनों कालनिर्णय अविश्वसनीय प्रतीत होते हैं।

पौराणिक साहित्य में प्राप्त राजवंश एवं पीढ़ीयों के आधार से भारतीय युद्ध का कालनिर्णय करने का सफल प्रयत्न पार्गिटर ने किया है। मगध देश के राजा महापद्मनंद से पीछे जाते हुए जनमेजयपौत्र अधिसीमकृष्ण तक छब्बीस पीढ़ीयों की गणना कर, पार्गिटर ने भारतीय युद्ध का काल ९५० ई. पू. सुनिश्चित किया है (पार्गि. १७९-१८३)।

किन्तु पौराणिक साहित्य एवं महाभारत में प्राप्त निर्देशों के अनुसार परिक्षित् राजा का जन्म, एवं महापद्म नंद राजा के राज्यारोहण के बीच १०१५ वर्ष बीत चुके थे। महापद्म नंद का राज्यारोहण का वर्ष ३८२ ई. पू. माना जाता है। इसी हिसाब से भारतीय युद्ध का काल १०१५ + ३८२ = १३९७ इ. पू. सिद्ध होता है। इसी काल में पौराणिक राजवंशों के ९५ पीढ़ीयों के काल में १७१० वर्षों का काल मिलाये जाने पर वैवस्वत मनु का काल निश्चित होता है। यह काल निश्चित करने से ययाति, मांधातृ, कार्तवीर्य अर्जुन, सगर, राम दाशरथि आदि का काल सुनिश्चित किया जा सकता है।

कई प्रमुख शक--सप्तर्षि शक के अतिरिक्त पौराणिक साहित्य में कई अन्य शकों का निर्देश पाया जाता है, जिनमें निम्नलिखित शक प्रमुख माने जाते हैं:--

१. परशुराम शक--इस शक का प्रारंभ शालिवाहन शक वर्ष ७४७ में हुआ। इसकी परिगणना, एक हज़ार साल का एक चक्र, इस हिसाब से होती है। इस प्रकार इस शक का चतुर्थ चक्र सांप्रत चालू है। सौर पद्धति के अनुसार इस शक का परिगणन किया जाता है।

दक्षिण भारत के केरल प्रांत में मंगलोर से लेकर कन्याकुमारी तक एवं तिनीवेल्ली जिले में यह पाया जाता है। इस शक का प्रारंभ केरल प्रांत में कन्या माह से, एवं तिनीवेल्ली जिले में सिंह माह से प्रारंभ होता है। ईसवी सन में से ८२५ साल कम करने से परशुराम शक का हिसाब हो सकता है।

२. विक्रम संवत्–इस संवत् का प्रारंभ ई. स. पू. ५७ माना जाता है। इस संवत् का प्रचार, गुजरात एवं बंगाल के अतिरिक्त बाकी सारे उत्तर भारत में पाया जाता है। नर्मदा नदी के उत्तर प्रदेश में इस संवत् का प्रारंभ चैत्र माह में होता है, एवं माह का परिगणन पौर्णिमा तक रहता है। गुजरात प्रदेश में इस संवत् का वर्ष कार्तिक माह में शुरु होता है।

३. कलियुग संवत्--(भारतीय युद्ध संवत् अथवा युधिष्ठिर संवत्)–इस संवत् का प्रारंभ ई. पू. ३१०२ में माना जाता है। स्कंद पुराण में यह प्रयुक्त है।

२. ग्रंथों का कालनिर्णय

वेद, उपवेद, उपनिषद्, स्मृति, महाभारत, पुराण आदि प्रमुख प्राचीन ग्रंथों का कालनिर्णय नीचे अकारादि क्रम से दिया गया है। इस कालनिर्णय के लिए उपयोग किये गये आधार ग्रंथों की नामावलि, एवं उनके लिए प्रयुक्त संक्षेप निम्नप्रकार हैं:—

गी. र.—गीतारहस्य (लो. बा. गं. टिळक)

धा. र.--धर्मरहस्य (के. ल. दप्तरी)

पु. नि.--पुराण निरीक्षण (त्र्यं. गु. काळे)

भा. का. नि.–भारतीय युद्धकालनिर्णय (के. ल. दप्तरी)

भा. ज्यो.--भारतीय ज्योतिःशास्त्र का इतिहास (शं. बा. दिक्षित)

भा. सा.--भारत सावित्री

म. उ.—महाभारत का उपसंहार (चिं. वि. वैद्य)

रा. का. नि.–रामचंद्रजन्मकालनिर्णय (के. ल. दप्तरी)

ह. प्र.—हरप्रसादशास्त्री की प्रस्तावना (Descriptive Catalogue of Sanskrit Manuscripts in the Collections.

ध. शा.–History of Dharmashastra (डॉ. पां. वा. काणे)

भारतीय विद्याभवन--History and Culture of Indian People (भारतीय विद्याभवन)

स्मिथ--The Early History of Indian People (व्हिन्सेन्ट स्मिथ)

रॅप्सन--Cambridge History of India, Vol. I (ई. जी. रॅप्सन)

डॉ. बेलवलकर–Systems of Sanskrit Grammar (डॉ. बेलवलकर)

ई. पू.--ईसा पूर्व

शा. पू.—शालिवाहन शक के पूर्व

卐 卐 卐

अग्नि पुराण--ई. स. ६००-९०० (हजरा); ई. स. ५००-५५० (पु. नि. १०२); ई. स. ८००-९०० (ह. प्र. १४७)।

अपरार्ककृत याज्ञवल्क्यस्मृतिभाष्य--ई. स. ११००-११३० (डॉ. काणे)।

अष्टांगहृदय—६ वी शताब्दी।

अथर्ववेद संहिता—ई. पू. ४०००-ई. पू. १०००; कई सूक्त ई. पू. ४००० के पूर्व।

आदि पुराण--ई. स. १२०३-१२२५ (हजरा)।

आपस्तंब गृह्य, धर्म एवं श्रौतसूत्र—ई. पू. ८००-४०० (डॉ. काणे); ई. पू. ३ री शताब्दी के पूर्व (गी. र. ५६१-५६२); ई. पू. १४२० (चिं. वि. वैद्य, संस्कृत वाङ्मय का इतिहास (अंग्रेजी), ३.७३)।

आर्यभटकृत 'आर्यभटीयम्'-- ई. स. ४७६-५००।

आश्वलायन गृह्य एवं श्रौतसूत्र—ई.स. पू.८००-४००; ई. स. पू. १०० (म. उ. ५३)।

ईश्वरकृष्णकृत सांख्यकारिका— ई. स. २५०-३२५।

उत्पलकृत वराहमिहिर ग्रंथो के भाष्यग्रंथ—ई. स. ७८०-८७०।

उपनिषद्—उपलब्ध उपनिषद ग्रंथों के कालदृष्टि से तीन विभाग माने जाते है:-

(१) ब्राह्मण ग्रंथों के समकालीन उपनिषद ग्रंथ— ई. पू. १००० के पूर्व; १. ऐतरेय उपनिषद; २. कौषीतकी उपनिषद; ३. तैत्तिरीय उपनिषद; ४. बृहदारण्यक उपनिषद; ५. छांदोग्य उपनिषद; ६. केन उपनिषद। इन उपनिषदों का काल पाणिनि के पूर्वकालीन माना जाता है।

(२) बुद्ध के पूर्वकालीन उपनिषद—१. कठ; २. श्वेताश्वतर; ३. ईश; ४. मुण्डक; ५. प्रश्न ६.महानारायण उपनिषद।

(३) बुद्धोत्तरकालीन उपनिषद (सांप्रदायिक उपनिषद ग्रंथ)--१. जाबाल उपनिषद, २. परमहंस उपनिषद; ३. सुबाल उपनिषद आदि।

उपवर्षकृत पूर्वमीमांसा एवं वेदांतसूत्र—ई. पू. १००-ई. स. १००।

उशनसूस्मृति—(स्मृति देखिये)।

ऋग्वेद—प्राचीनतम सूक्त ई. पू. ४००० (डॉ. काणे); ई. पू. २००० (ब्लुमफिल्ड); ई. पू. २५००-ई. पू. २००० (विन्टरनिट्ज)। ऋग्वेदसंहिता का सर्व सामामान्य रचनाकाल ई. पू. ४०००—ई. पू. १५००; ऋक्संहिता का संहिताकरण (कृष्णद्वैपायन व्यास के द्वारा)- ई. पू. २०००—ई. पू. १५००)।

एकाम्र पुराण (ओरिसा) --१० वीं-११ वीं शताब्दी (हजरा)।

ऐतरेय ब्राह्मण--ई. पू. ४०००-ई. पू. १०००।

कपिलकृत सांख्यसूत्र--ई. पू. ६ वी शताब्दी।

कल्कि पुराण--१८ वी शताब्दी (हजरा)।

कपिल संहिता—ई. स. ११००-१२०० (ह. प्र. २१८)।

कल्हणकृत राजतरंगिणी—ई. स. ११५०-ई. स. ११६०।

कात्यायन वररुचिकृत वार्तिक--ई. पू. ३००-ई. पू. २०० (पाणिनिकालीन भारतवर्ष, डॉ. अगरवाल); ई. पू. ५००-इ. पू. ४०० (पु. नि. २९१); ई. पू. ६००-ई. पू. ४०० (डॉ. वेलवलकर)।

कात्यायन श्रौतसूत्र (पारस्कर सूत्र)—ई. पू. ८००-ई. पू. ४०० (डॉ. काणे); ई. पू. १००० (चिं. वि. वैद्य, संस्कृतवाङ्मय का इतिहास)।

कात्यायन स्मृति--ई. स. ४००-७०० (डॉ. काणे, २१८)।

कालिका पुराण--ई. स. १००० (हजरा)।

काशिका (वामन एवं जयादित्य कृत)--ई. स. ६५०-६६०।

कुमारिलभट्टकृत तंत्रवार्तिक एवं श्लोकवार्तिक—ई. स. ६५०-७००।

कुल्लुककृत मनुस्मृतिभाष्य—ई. स. ११५०-१३००।

कूर्म पुराण—ई. स. २ री शताब्दी (ह. प्र. १८७); ई. स. ५०० के पूर्व (पु. नि. १४७)।

कौटिलीय अर्थशास्त्र--ई. पू. ३००-ई. पू. १००।

गरुड पुराण—ई. स. ६५०- ई. स. ९५० (हजरा); ई. स. ३ री शताब्दी (ह. प्र. १९३)।

गर्ग संहिता-ई. पू. १४५ (म. उ. ४७); ई. स. १० वी शताब्दी (ह. प्र. २१७)।

गौडपादकृत सांख्यकारिकाटीका एवं युक्तिदीपिका--ई. स. ७००-७५०।

गौतम धर्मसूत्र –ई. पू. ६००–ई. पू. ४०० (डॉ. काणे); ई. पू. ६०० (ध. र. २३०); ई. पू. ३५० (डॉ. जायसवाल); पुनर्संस्करण ई. पू. २०० ।

चरक संहिता—ई. पू. २ री शताब्दी, जो काल आचार्य चरक कनिष्क राजा के समकालीन होने के कारण निश्चित किया गया है । इस ग्रंथ का उपलब्ध संस्करण दृढवल वाग्भट के द्वारा किया गया है, जिसका काल ई. पू. १ ली शताब्दी माना जाता है ।

चार्वाक दर्शन—युधिष्ठिरशक ६६१ ।

जातूकर्ण्य स्मृति–ई. स. २००-४०० (डॉ. काणे)।

जैन सूत्र—ई. पू. ३०० । इन सूत्रों में निम्नलिखित ग्रंथ समाविष्ट हैं:—१. आचारांग सूत्र; २. सूत्रकृतांग; ३. स्थानांग; ४. समवायांग; ५. भगवती सूत्र; ६. ज्ञाताधर्मकथा; ७. उपासकदशांग; ८. अंतकृद्दशां; ९. अनुत्तरौपपातिकदशांग; १०. प्रश्नव्याकरण; ११. विपाक; १२. दृष्टिवाद ।

जैमिनि अश्वमेध--ई. पू. १०० (पु. नि. ८२)।

जैमिनिकृत पूर्वमीमांसा—ई. पू. ४००–ई. पू. २०० ।

तैत्तिरीय संहिता—ई. पू. ४०००–ई. पू. १०००; कई सूक्त ई. पू. ४००० के पूर्व (डॉ. काणे); ई. पू. २३५० (लो. तिलक, ओरायन); ई. पू. १४२६ (वेदकालनिर्णय पृष्ठ २६) ।

त्रिपिटक—ई. पू. १ ली शताब्दी । बौद्ध धर्म के ये अनुश्रुतिग्रंथ विनयपिटक (७ ग्रंथ), सुत्तपिटक (५ संकलन), अभिधम्मपिटक (७ ग्रंथ) इन तीन विभागों में विभाजित है ।

देवल स्मृति—ई. स. ४००–६०० (डॉ. काणे. पृ. २२१) ।

देवी पुराण--७ वीं शताब्दी का उत्तरार्ध (हजरा)।

धर्मसिंधु (काशीनाथ उपाध्याय कृत)—ई. स. १७९० ।

नंदी पुराण--८ वीं–९ वीं शताब्दी (हजरा) ।

नारद पुराण--ई. स. ७००–१००० (हजरा)। इस पुराण में अन्य पुराणों की एक सूची प्राप्त है, जिसका काल ई. स. ५०० के पूर्व का माना जाता है (पु. नि. ९४)।

नारद स्मृति--ई. स. १००–४०० (डॉ. काणे.)।

नृसिंह पुराण—९ वी शताब्दी (हजरा); ई. स. १४०० के पूर्व (ह. प्र.)।

निरुक्त (यास्ककृत)--ई. पू. ८००–५००

पतंजलिकृत योगसूत्र--ई. पू. १००–ई. स. ३००; १५० ई. पू. (डॉ. भांडारकर) (म. उ. ५८)।

पतंजलिकृत व्याकरण महाभाष्य—ई. पू. १५०–ई. स. १०० (म. उ. ५८); ई. पू. १४० (पु. नि. २८९)।

पद्म पुराण--ई. स. १४ वीं शताब्दी; उत्तरकाण्ड–ई. स. ९००–१५०० (हजरा)।

पराशर स्मृति--ई. स. १००–५०० (डॉ. काणे, पृ. १५५)।

पाणिनिकृत अष्टाध्यायी--ई. पू. ५००–ई. पू. ३००; ई. पू. १२००–ई. पू. ६०० (पु. नि. २९१–९२); ई. पू. ४८०–४१० (डॉ. आगरवाल)।

पारस्कर गृह्यसूत्र–ई. पू. ५००; वर्तमान संस्करण–२०० ई. पू. (डॉ. जायसवाल)।

पुलस्त्य स्मृति--ई. स. ४००–७०० (डॉ. काणे, २२८)।

बृहस्पति स्मृति--ई. स. २००–४०० (डॉ. काणे, २१०); ई. स. ७ वीं शताब्दी (सेक्रेड बुक्स ऑफ दी ईस्ट, ३३.२७६)।

बौधायन धर्मसूत्र--ई. पू. ५००–२०० (डॉ. काणे, ३०)।

बौधायन श्रौतसूत्र--ई. पू. ८००–४०० (डॉ. काणे, गीतारहस्य ५६२)।

बौधायन स्मृति--ई. पू. ४०२ (स्मृति देखिये)।

ब्रह्म पुराण--मूल रचना–ई. स. ५ वीं शताब्दी के पूर्व; ई. स. १० वीं–१२ वीं शताब्दी; वासुदेवमहात्म्य अ. १७६–२१३–१३ वी शताब्दी (हजरा)।

ब्रह्मवैवर्त पुराण--ई. स. ८००–९०० (ह. प्र. १५९)।

ब्रह्मांड पुराण--ई. स. ३००–६०० (हजरा); ई. स. ४०० के पूर्व (पु. नि. १४३); ई. स. ४ थी–५ वी शताब्दी (ह. प्र.)।

बृहद्धर्म पुराण--१३ वीं–१४ वीं शताब्दी।

बृहस्पति स्मृति--ई. स. ३००–५००।

भगवद्गीता—ई. पू. २०० (विंटरनिट्ज); ई. पू. ५०० (गी. र. ५६४); ई. पू. ५००–२०० (डॉ. काणे.); ई. पू. २०००–१००० चिं. वि. वैद्यकृत संस्कृत-वाङ्मय का इतिहास); ई. पू. ११९७ (ध. र. १६६–१७२)।

भगवद्गीताकथन की तिथि— मार्गशीर्ष शुक्ल १३ (भारतसावित्री, नीलकंठी टीका); मार्गशीर्ष शुक्ल ११ (ज. स. करंदीकर); मार्गशीर्ष अमावास्या (ध. र.)।

भविष्य पुराण—६ वी–७ वी शताब्दी (हजरा)।

भविष्योत्तर पुराण—ई. स. १०० (हजरा)।

भागवत—५ वीं–१० वीं शताब्दी (हजरा); ५ वीं शताब्दी के मध्य में (कृष्णमूर्ति शर्मा); ९ वीं शताब्दी (डॉ. काणे); ई. स. ८०० के पूर्व में (पु. नि. ९०); ई. स. ३९८ (ध. र.)।

भासकृत नाट्यकृतियाँ—ई. स. २००-३०० (गी. र. ५५५); ई. पू. २००–३०० (पं. गणपतिशास्त्री)।

मत्स्य पुराण—ई. स. २००–४०० (हजरा); ई. स. २ री शताब्दी के पूर्व में (ह. प्र. १९१; पु. नि. १५२)।

मनु स्मृति—ई. पू. २००–ई. स. १०० (डॉ. काणे); ई. पू. १५३ (स्मृति देखिये)।

महाभारत—ई. पू. १४०० (हिस्ट्री ऑफ इंडियन कल्चर अँड पीपल), जो कालनिर्णय पुराणों में प्राप्त कलियुगीन राजाओं की वंशावलि, एवं आचार्यों की नामावलि के आधार पर तय किया गया है। इसी ग्रंथों के आधार से पार्गिटर ने भारतीय युद्ध का काल ९५० ई. पू. तय किया है। किन्तु इस कालनिर्णय की अपेक्षा ई. पू. १४०० ही अधिक सुयोग्य प्रतीत होता है।

ज्योतिषशास्त्रीय अनुमान—आर्यभट के अनुसार भारतीय युद्ध का काल ई. पू. ३१०२ तय किया गया है। वृद्धगर्ग, वराहमिहिर एवं कल्हण के अनुसार २४४९ ई. पू. माना गया है।

डॉ. जायसवाल के अनुसार महाभारत की आधारभूत सामग्री यद्यपि प्राचीन है, फिर भी उसका उपलब्ध संस्करण ई. पू. १५० में तैयार किया गया है, एवं ई. स. ५०० तक उस संस्करण में अनेकानेक नई सामग्री का जोड़ देने का कार्य शुरू था।

डॉ. सुखटणकर के अनुसार, महाभारत की रचना सर्वप्रथम बद्रिकाश्रम में हुई, एवं ई. पू. ३ री —२ री शताब्दी तक भृगुवंशीय ब्राह्मणों के द्वारा उसके संपादन, परिवर्तन एवं संशोधन का कार्य होता ही रहा। चिं. वि. वैद्य एवं जयचन्द्र विद्यालंकार के अनुसार, महाभारत का मूल रचनाकाल ३५० ई. पू. एवं ५०० ई. पू. माना जाता है।

माठरकृत माठरवृत्ति—(सांख्यकारिकाभाष्य) ई. स. ४००–५००।

मार्कंडेय पुराण—ई. स. ३००-६०० (हजरा); 'सप्तशती' आख्यान–ई. स. ९९८। शंकराचार्य, बाणभट्ट एवं मयुरभट्ट ने अपने ग्रन्थों में इस पुराण का निर्देश किया है।

मेधातिथिकृत मनुस्मृतिभाष्य—ई. स. ८२५-९००।

मैत्र्युपनिषद्—ई. पू. १९०० (चिं. वि. वैद्यकृत संस्कृत वाङ्मय का इतिहास)।

यमस्मृति—(स्मृति देखिये)।

यास्ककृत निरुक्त—ई. पू. ७००।

याज्ञवल्क्यस्मृति—ई. पू. ३००–ई. स. १०० (डॉ. काणे, १८४); ई. पू. १०२ (ध. र. २२७)।

युक्तिदीपिका (सांख्यकारिकाभाष्य)—ई. स. ६००-६५०।

लगधकृत ऋग्वेदी वेदांगज्योतिष—ई. पू. १२६९-११८१ (लो. टिळक-ओरायन ३७-३८); ई. पू. १४०० (भा. ज्यो. ८८)।

लिखित स्मृति—ई. पू. ४०२–२०२ (डॉ. काणे, २३७)।

वररुचिकृत प्राकृतप्रकाश–ई. स. ६ वीं शताब्दी।

वराह पुराण–ई.स. १० वीं शताब्दी के पूर्व (हजरा)।

वराहमिहिरकृत 'बृहज्जातक,' 'बृहत्संहिता,' एवं 'पंचसिद्धांतिका'–ई. स. ५००-५७५।

वसिष्ठ धर्मसूत्र—ई. पू. ५००–३०० (डॉ. काणे)

वसिष्ठ स्मृति—ई. पू. ६०० (डॉ. काणे)।

वाग्भट—ई. स. ४ थी शताब्दी।

वाचस्पतिकृत योगसूत्रभाष्य—ई. स. ८२०-९००।

वात्स्यायन कामसूत्र—ई. स. ३०० (चकलदार)।

वात्स्यायन न्यायसूत्रभाष्य—ई. स. ४०० (डॉ. विद्याभूषण)।

वामन पुराण—ई. स. ६००–९०० (हजरा); ई. स. २ री शताब्दी (ह. प्र. १८३)।

वायु पुराण—ई. स. ३५०–५५० (हजरा); मूलग्रंथ की रचना ई. पू. २०३८ (ध. र. १६४); उपलब्ध संस्करण ई. स. ६२० (पार्गि. ५०); ई. स. ४०० (पु. नि. ७०)।

वाल्मीकि रामायण--वाल्मीकि कृत आदिकाव्य-ई. पू. ३००; वाल्मीकि का प्रचलित रामायणग्रंथ-ई. पू. २ री शताब्दी।

अन्य मत--डॉ. याकोबी -ई. पू. ६ वीं शताब्दी; डॉ. मॅक्डोनेल-ई. पू. ६ वीं शताब्दी; डॉ. मोनियर विल्यम्स-ई. पू. ५ वीं शताब्दी; श्री. चिं. वि. वैद्य-ई. पू. ५ वी शताब्दी; डॉ. कीथ-ई. पू. ४ थी शताब्दी; डॉ. विंटरनित्स-ई. पू. ३ री शताब्दी।

विलुप्त धर्मसूत्रग्रंथ (काठक, कालापक, मौदक, पैप्पलाद, आर्थवण आंगिरस)-ई. पू. ७००।

विश्वरूपकृत बृहदारण्यकोपनिषद्भाष्य--ई. स. ७९०-८५०; याज्ञवल्क्य स्मृतिभाष्य-ई. स. ७९०-८५०।

विष्णु पुराण--ई. स. ३००-५०० (हजरा); ई. स. ५ वी शताब्दी (पार्गि. ८०); ई. स. ३ री शताब्दी (ह. प्र.)।

विष्णुधर्मसूत्र--ई. स. १००-५५० (डॉ. काणे)।

विष्णुधर्मोत्तर पुराण-- ई. स. ६००-९०० (हजरा)।

वेदांगज्योतिष (लगधकृत)--ई. पू. ८००-४००।

वेदांतसूत्र--ई. पू. १५०-१०० (म. ऊ. ५१)। उपलब्ध वेदांतसूत्रों में जैन, बौद्ध एवं पांचरात्र धर्मसिद्धांतों का खंडन प्राप्त है, जिससे प्रतीत होता है कि, इस ग्रंथ का उपलब्ध संस्करण बुद्धोत्तरकालीन है।

व्याडिकृत 'संग्रह' (व्याकरणग्रंथ) --ई. पू. ३००।

व्यासकृत योगसूत्रभाष्य--ई. स. ४००-५००।

व्यासस्मृति--ई. स. २००-५०० (डॉ. काणे, २३८)।

शंकराचार्यकृत गीता, उपनिषद, एवं ब्रह्मसूत्र-भाष्य--ई. स. ७८८-८२० (डॉ. काणे. २६१)।

शंखस्मृति--ई. पू. ४०२-२०२ (डॉ. काणे. २.३७)।

शतपथ ब्राह्मण--ई. पू. ४०००-१००० (डॉ. काणे); ई. पू. ३१०० (भा. ज्यो. १२८); ई. पू. २५०० (रामायण समालोचना ८.४१); ई. पू. १४२२ (विविधज्ञानविस्तार १९२८, पृ. २७)। इस ग्रन्थ का उत्तरार्ध काफ़ी उत्तरकालीन माना जाता है, जिसका काल ई. स. पू. ११२२ माना जाता है।

शबरकृत पूर्वमीमांसाभाष्य--ई. स. २००-४००।

शाकटायनकृत उणादि सूत्रपाठ--ई. पू. १००० (डॉ. वेलवलकर)।

शिव पुराण--ई. स. ९ वीं शताब्दी (हजरा)।

शौनक गृत्समदकृत ऋग्वेदानुक्रमणी--ई. पू. २०५० (पु. नि. २८५-२८६)।

संवर्त स्मृति--(स्मृति देखिये)।

सत्याषाढ श्रौतसूत्र--ई. पू. ८००-४००।

सांब पुराण--ई. स. ९ वीं शताब्दी।

सायण कृत ऋक्संहिता भाष्य--ई. स. १३००-१३८६।

सुश्रुत संहिता--काल अनिश्चित, किंतु ८ वीं शताब्दी में इस ग्रन्थ की ख्याति विदेश में पहुँची थी।

स्कंद पुराण--ई. स. ७ वीं शताब्दी-९ वीं शताब्दी।

स्मृति--विभिन्न स्मृतिग्रंथों की जानकारी कालानुक्रम से नीचे दी गयी है:--

(१) गौतम स्मृति--ई. पू. ६०२।
(२) वसिष्ठ स्मृति--ई. पू. ६०२ (गौतमस्मृति के उत्तरकालीन)।
(३) शंखलिखित स्मृति--ई. पू. ४०२-२०२।
(४) बौधायन स्मृति--ई. पू. ४०२।
(५) विष्णु स्मृति--ई. पू. १७५।
(६) मनु स्मृति--(भृगुप्रोक्त)--ई. पू. १५२
(७) बृहस्पति स्मृति--ई. पू. १२७।
(८) व्यास स्मृति--महाभारतकालीन।
(९) अत्रिस्मृति
(१०) अंगिरसस्मृति
(११) आपस्तंबस्मृति
(१२) उशनसस्मृति
(१३) कात्यायनस्मृति
(१४) दक्षस्मृति
(१५) पराशरस्मृति
(१६) यमस्मृति
(१७) याज्ञवल्क्यस्मृति
(१८) शांतातपस्मृति
(१९) हारितस्मृति
(९ से १९ तक) } ई. पू. १०२

स्मृतिचंद्रिका (देवन्नभट्टकृत)--ई. स. १२००-१२२५।

हरदत्तकृत गौतमसूत्रभाष्य--ई. स. ११५०-१३००।

हाल सातवाहनकृत गाथासप्तशती-- ई. स. ९९-१०२ (पु. नि. २१९)।

३. व्यक्तियों का कालनिर्णय

अजातशत्रु (शिशु. भविष्य.)--ई. पू. ४८८ (डॉ. दप्तरी); मृत्यु. ई. पू. ५२७ (रॅप्सन)।

अधिसीम कृष्ण--(सो. पूरु. भविष्य) जनमेजय राजा के इस प्रपौत्र से कलियुग का प्रारंभ होता है। पार्गिटर के अनुसार, इस राजा से लेकर महापद्म नंद तक छब्बीस पीढीयाँ (२६×१८=४६८ वर्ष) वीत गयी थीं।

कृत, त्रेता, द्वापर, एवं कलि इन चार युगों के १००० साल बीत जाने के बाद द्वादशवर्णीय सत्र किया जाता था। उनमें से द्वितीय द्वादशवर्णीय सत्र के समय यह राज्य करता था (डॉ. दप्तरी)।

अभिमन्यु--विवाह-आषाढ शुक्ल एकादशी, मृत्यु-मार्गशीर्ष शुक्ल द्वादशी (भा. का. नि.); पौष कृष्ण अष्टमी (भा. सा.)।

अशोक--(मौर्य. भविष्य.) राज्याभिषेक-ई. पू. २७३ (गौरीशंकर ओझा)।

आंध्र--(भविष्य.) इस राजवंश का प्रारंभ ई. पू. २४०, एवं समाप्ति ई. स. २२५ मानी जाती है (स्मिथ)। इस वंश के राजाओं ने ई. पू. ५५ में मगध देश जीत लिया था (डॉ. दप्तरी)।

अपिशालि (व्याकरणकार)--ई. पू. ७५०-ई. पू. ७००।

आयु--(सो. पुरुरवस्.) ई. पू. २१८७-ई. पू. २१०० (पु. नि. ३२७); ई. पू. २१०२ (डॉ. दप्तरी ६.३)।

इक्ष्वाकु--ई. पू. २६०० (पु. नि. ३१५); ई. पू. २१२७ (डॉ. दप्तरी)।

इडविडा--ई. पू. १६६४ (रा. का. नि. ४६)।

उदयन--(सो. कुरु. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. २७९)।

उपवर्ष (पाणिनीय परंपरा का व्याकरणकार)--ई. पू. १२००-ई. पू. ९००।

उलूक--वध-पौष अमावास्या (भा. सा.)।

कंस--वध-ई. पू. १२३७ (डॉ. दप्तरी)।

कर्ण--वध-पौष कृष्ण १४ (भा. सा.)।

कलि (युग)--इस युग का प्रारंभ ई. पू. ३१०२ माना जाता है।

कल्कि--इस अवतार का प्रारंभ ई. पू. ४०२ में माना जाता है (डॉ. दप्तरी)।

कश्यप--इस ऋषि का काल ई. पू. ५६९४ माना जाता है (पु. नि. ३०९)।

काकवर्ण--(शिशु. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ७०० के पूर्व (पु. नि. ३२४); ई. पू. ५७२-ई. पू. ५५४ (डॉ. दप्तरी)।

काण्व वंश--(काण्व. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ७०० के पूर्व (पु. नि. ३२४); ई. पू. १००-ई. पू. ५५ (डॉ. दप्तरी)।

किलकिल वंश (कैनकिल)--समाप्ति-ई. स. ५५० (पु. नि. २३७)।

कृष्ण--(सो. वृष्णि.) ई. पू. १२५१-११७५ (डॉ. दप्तरी); निर्वाण ई. पू. १२८९। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से कृष्ण एवं उसके परिवार का काल ई. पू. १९५०-१४०० माना जाता है।

२. (आंध्र. भविष्य.) ई. पू. १६८-ई. पू. १५० (पु. नि. २१)।

क्षेमक वंश--(सो. पूरु. भविष्य.) ई. पू. ३८४ (पु. नि. २७९; ३२७); समाप्ति-ई. पू. ८०१।

गर्ग (यादवपुरोहित)--ई. पू. ११८१ (पु. नि. २५०)।

गुप्त वंश--राज्यकाल-ई. स. ३१९-४९९ (पु. नि. ४२७)।

गोनर्द राजा (गोनंद राजा)--राज्यकाल-ई. पू. १०६३ (पु. नि. २४५)। कृष्ण के द्वारा वध-ई. पू. १३१५ (राजतरंगिणी १.५०-७०)।

२. ई. पू. ११९२-११८२ (पु. नि. २४६)।

गौतमीपुत्र--(आंध्र. भविष्य.) राज्यकाल-ई. स. १४२-१४३ (पु. नि. २१९)।

घटोत्कच--वध-पौष कृष्ण ११।

चंद्रगुप्त--(मौर्य. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ३२१-२९७ (रॅप्सन); राज्याभिषेक-ई. पू. ३१२ (पु. नि. १९३; २०४; ३१५; डॉ. दप्तरी)।

चाक्षुष मनु--ई. पू. २४२२ (रा. का. नि.)।

जनमेजय पारिक्षित (द्वितीय)--ई. पू. ११८७ (पु. नि. २७७)।

जयद्रथ--वध-पौष कृष्ण ९ (भा. सा.)।

जरासंध--वध-ई. पू. १२१० (डॉ. दप्तरी)।

तृणबिंदु (राजा)--ई. पू. १६९४ (रा. का. नि. ४६)।

दक्ष प्रजापति--ई. पू. ५७७४ (पु. नि. ३१४)।
२. (स्वायंभुव)-ई. पू. २६५४ (डॉ. दत्तरी)।
३. (चाक्षुष)-राज्यकाल—ई. पू. २२०६—ई. पू. २१५०।

दिवाकर--(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ११०६ (ध. र. १७१)।

दीर्घतमस् (ऋषि)--ई. पू. २००० (पु. नि. २८१)।

दुर्योधन--वध-पौष अमावस्या (भा. सा.)।

द्रुपद--वध-पौष कृष्ण १३ (भा. सा.)।

द्रोण--वध-पौष कृष्ण १२ (भा. सा.)।

धृष्टद्युम्न—वध- पौष अमावस्या (भा. सा.)।

नंद वंश—(नंद. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. ३८४-३१२ (पु. नि. २०२); ई. पू. ४२२-ई. पू. ३२२ (ध. र. २१७)।

नारायण--(कण्व. भविष्य.) मृत्यु- ई. पू. ६५ (डॉ. दत्तरी)।

निमि—(सू. निमि.) ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७८)।

पंचशिख (आचार्य)--ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७८)।

२. बुद्ध के समकालीन एक आचार्य (म. उ. ५९)।

परशुराम (जामदग्न्य)-- जन्म-ई. पू. १५८८ (पु. नि. २६७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से परशुराम एवं उसके 'भार्गव' वंशजों का काल ई. पू. २५५०-२३५० माना जाता है (वेदिक एज, २८९)।

परिक्षित्--(सो. कुरु.) ई. पू. १२६३ (पु. नि. १९१)।

पालक--(प्रद्योत. भविष्य.) ई. स. ४७० (पु. नि. १९२)।

पुरूरवस् — ई. पू. २१७७ (पु. नि. २७७; २७९)।

इसीके राज्यकाल में पहला द्वादशवर्षीय सत्र संपन्न हुआ था (ध. र. १५०)।

पुलोमत्--(आंध्र. भविष्य.) ई. स. २४९-२५० (पु. नि. २२०); ई. स. २११-२२५ (स्मिथ)।

पुष्यमित्र--(शुंग. भविष्य.) राज्यकाल-ई. पू. १७५-१३९ (पु. नि. २८९); ई. पू. १८४-१४८; जन्मकाल—ई. पू. २१३; अश्वमेधारंभ ई. पू. १७५ (युग पुराण)।

पृषदश्व--ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७९)।

प्रद्योत--(प्रद्योत. भविष्य.) ई. पू. ४७० (पु. नि. १९२)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से इसका राज्यकाल- ई. पू. ९२०-ई. पू. ७८२ माना जाता है।

प्रसेनजित्--(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. २७९)। यह बुद्ध का समकालीन राजा था।

बलि वैरोचन--इंद्रपदप्राप्ति- ई. पू. १६७८ (डॉ. दत्तरी)।

बुद्ध--ई. पू. ७९४-ई. पू. ५१० (पु. नि. ४६७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से गौतम बुद्ध का निर्वाण काल ई. पू. ५४४ माना जाता है।

बृहद्रथ--(सो. मगध.) ई. पू. १४०१ (डॉ. दत्तरी)

भगदत्त--वध--पौष कृष्ण १० (भा. ६)।

भर्तृहरि--ई. स. ६१० (पु. नि. २९१)।

भास (कवि)--ई. स. २००-३०० (गी. र. ५५५)।

भीष्म-पतन-पौष कृष्ण ८; निर्याण-फाल्गुन कृष्ण ८।

मगध वंश—(सो. मगध. भविष्य.) राज्यकाल— ई. पू. १९२०-ई. पू. ९२०।

मनु (स्वायंभुव)--ई. पू. २६७० (रा. का. नि. ५५)।

मन्द (असुरदेश का शूद्र राजवंश) --राज्यकाल-- ई. पू. ७००--ई. पू. ५५० (पु. नि. २९४)।

मन्वन्तर--विभिन्न मन्वन्तरों का कालनिर्णय निम्न-प्रकार है :-

मन्वन्तर	कालमर्यादा
स्वायंभुव मन्वन्तर	ई. पू. २७७०-२६६६
स्वारोचिष मन्वन्तर उत्तम मन्वन्तर तामस मन्वन्तर	ई. पू. २६६६-२६२२
रैवत मन्वन्तर	ई. पू. २६२२-२४२२
चाक्षुष मन्वन्तर	ई. पू. २४२२-२१५०
वैवस्वत मन्वन्तर	ई. पू. २१५० से आगे। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से वैवस्वत मनु का काल ई. पू. ३१०० माना जाता है।

(रा. का. नि. ४६-५६)

मरु--(सू. इ.) ई. पू. १३३० (ध. र. १६५)।

महानंदिन्--(शिशु. भविष्य.) ई. पू. ३८४ (पु. नि. २७९); अंत-ई. पू. ४१२ (डॉ. दप्तरी)।

महापद्म--(नंद. भविष्य.) राज्याभिषेककाल-ई. पू. ३९८ (डॉ. दप्तरी)।

महावीर--जन्म ई. पू. ५९९; निर्वाण-ई. पू. ५२७ (पु. नि. १९२-१९३)।

मांधातृ--जन्म-ई. पू. २१८० (पु. नि. २६७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से मांधातृ का काल ई. पू. २७५० लगभग माना जाता है।

मौर्य वंश--राज्यकाल-ई. पू. ३१२-ई. पू. १७५ (पु. नि. २१५); ई. पू. ३२२-ई. पू. १८५ (स्मिथ)।

ययाति--(सो. आयु.) ई. पू. २१०२ (पु. नि. २७९); ई. पू. २०४२ (ध. र. २०९)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से ययाति का राज्यकाल ई. पू. ३००० लगभग माना जाता है।

युधिष्ठिर--ई. पू. १२६३ (पु. नि. २६३)।

युधिष्ठिर शक--पौराणिक परंपरा के अनुसार, ई. पू. ३१०२ यह युधिष्ठिर शक का प्रारंभ माना जाता है। इस शक के प्रारंभ के संबंध में अन्य कई अभ्यासकों के अभिमत निम्नप्रकार हैः--ई. पू. २२००-ज. स. करंदीकर; ई. पू. २५२६-राजतरंगिणी; ई. पू. १९२०-आर्यभट।

यौवनाश्व--ई. पू. २१७० (पु. नि. २७९)।

रजि--(सो. पुरुरवस्.) इंद्रपदप्राप्ति-ई. पू. १६५० (डॉ. दप्तरी)। इसने प्रह्लाद से इंद्रपद की प्राप्ति की थी।

राम दाशरथि--आधुनिक इतिहास की दृष्टि से राम दाशरथि एवं उसके वंशजों का काल ई. पु. २३५०-१९५० माना जाता है।

रैवत (मनु)--ई. पू. २६२२ (रा. का. नि. ५५)।

लगध (वेदांगज्योतिष का कर्ता)-- ई. पू. १२६९--११८१ (लो. तिलक, ओरायन))

वराहमिहिर--जन्म-ई. पू. ५११८ डॉ. (दप्तरी)।

विक्रमादित्य (विल्व)--(आंध्र. भविष्य.) मगध-विजय-ई. पू. १३३ (डॉ. दप्तरी)

वृषसेन-- वध- पौष कृष्ण १२ प्रातःकाल में (भा. सा.)।

वैवस्वत मनु--ई. पु. २५५० (पु. नि. २७९); ई. पु. २१५० (रा. का. नि. ४७)। आधुनिक इतिहास की दृष्टि से वैवस्वत मनु का काल ई. पू. ३१०० माना जाता है (मन्वंतर देखिये)

व्यास-जन्म- ई. पू. १२९३-२१८९ (डॉ. दप्तरी)।

२. भागवत का रचयिता, जो बुद्धोत्तर काल (ई. पू.-४००) में उत्पन्न हुआ था। महाभारत के शांति एवं अनुशासन पर्वों की रचना इसके द्वारा ही हुई थी।

शकुनि-- मृत्यु- पौष अमावस्या के दिन (भा. सा.)।

शंकराचार्य--ई. स. ७८८-८२० (डॉ. काणे, २६१)। जन्म-ई. स. ६१० (गी. र. ५५९)।

शतानीक--(सो. कुरु. भविष्य.) ई. पू. ६०० (पु. नि. ३२६)।

शल्य--वध- पौष अमावस्या (भा. सा.)।

शाकटायन--(व्याकरणकार)-- ई. पू. १००० (डॉ. वेलवलकर)।

शालिशूक--(मौर्य. भविष्य.) ई. पू. २१९ (पु. नि. ३१७)।

शिखंडिन्--वध- पौष अमावस्या (भा. सा.)।

शिशुक--(आंध्र. भविष्य.) ई. पू. १९१-१६८ (पु. नि. २१८)।

शिशुनाग वंश--(शिशु. भविष्य.) ई. पू. ७८२-४२२; ई. पू. ६४२-३२० (स्मिथ)।

शुंग--(शुंग. भविष्य.) ई. पू. १८५-१७३।

शुचि--(सो. मगध. भविष्य.) ई. पू. ९६७-९३८ (ध. र. १७२)।

शौनक--(सो. क्षत्र.) ई. पू. २०५० (पु. नि. २८५-२८६)।

२. ई. पू. ११०२-१०९० (पु. नि. २८६)। यह शतानीकपुत्र जनमेजय राजा का समकालीन था।

श्रीशातकर्णि-- (आंध्र. भविष्य.) ई. पू. १५०-१४० (पु. नि. २१८)।

श्वेतकेतु--ई. पू. २१०२ (ध. र. १७९)।

सहस्रार्जुन--(सो. सह.) ई. पू. १५८७-१५६७ (पु. नि. २८४)।

सावर्णि मनु-ई. पू. १६७८-१६७४(ध. र. २०६)।

सुपर्ण—(सू. इ. भविष्य.) ई. पू. ९५० (ध. र. १७१)।

सुमित्र—(सू. इ. भविष्य.) मृत्यु-ई. पू. ३८४ (पु. नि. २१४; २७९); ई. पू. ६०१ (डॉ. दप्तरी)।

सृष्टि-उत्पत्तिशक-- पौराणिक कालगणना के अनुसार लगभग दो अब्ज (वर्षों १, ९६,०८, ५३०३४ वर्ष) के पहले इस सृष्टि की उत्पत्ति हुई थी। भूगर्भशास्त्रज्ञों के अनुसार यही काल १॥ अब्ज-३ अब्ज वर्ष मानी गयी है।

धार्मिक संकल्प में 'अद्य ब्रह्मणो द्वितीये परार्धे, श्रीश्वेतवाराहकल्पे, वैवस्वत मन्वन्तरे, कलियुगे इत्यादि शब्दों में इस शक का निर्देश प्राप्त है।

स्वायंभुव मनु-- ई. स. पू. ३१०२ (पु. नि. ३१५)। इसका एवं इसके वंशजों का राज्यकाल ई. पू. २६७०-२१५० माना जाता है (डॉ. दप्तरी)।

हाल--(आंध्र. भविष्य.) ई. स. ९९-१०२ (पु. नि. २१९)।

हिरण्यकशिपु (असुर)-- ई. पू. १६९०-१६७८ (डॉ. दप्तरी)।

प्रमुख चरित्रों की

व्यक्तिसूचि

(इस सूचि में दी गयी जानकारी व्यक्ति, पृष्ठांक एवं उपशीर्षक इस क्रम से दी गयी है)।

अर्जुन ...३५–४०

विद्यार्जन; परीक्षा; पराक्रम; तीर्थयात्रा; वस्तुप्राप्ति; दिग्विजय; वनवास; अज्ञातवास; कृष्णसहाय्य; भारतीय युद्ध; भीष्मवध; जयद्रथवध; युद्धसमाप्ति; अश्वमेध यज्ञ; पुत्रभेंट; हतबलता; मृत्यु; कौटुंबिक।

अहल्या ...५२–५३

जन्म; विवाह; भ्रष्टता; शाप एवं उःशाप; समर्थन; नया दृष्टिकोण; डॉ. रवींद्रनाथ टागोर का अभिमत।

इंद्र ...६८–७३

शत्रु; शस्त्रसंभार; पदमाहात्म्य; पौराणिक कल्पनाएँ; गरुड से संबंध; महाशनिवध; त्रिपुर उत्पत्ति; सुकर्माख्यान; यज्ञहविर्भाग; मरुताख्यान; सागरमंथन; वृत्रउत्पत्ति; वृत्रवध; ब्रह्महत्यामुक्ति; पुरंजयवाहन; जयापजय; पुराणों में स्थान; अधिकार; परस्परसंवाद; कृष्णसंबंध; ग्रंथनिर्मिति।

इंद्रजित् ...७३–७४

यज्ञ; इंद्र पर जय; हनुमत् से युद्ध; बिभीषण की भर्त्सना; युद्ध; मायावी युद्ध; दिव्य रथ; वध।

कच ...१०९–१११

देवकार्यार्थ गमन; गुरुसेवा; संकटपरंपरा; देवयानी-प्रणय; शाप–प्रतिशाप; गौरव।

कर्ण ...११७–१२१

शिक्षा; गोवत्सहत्या; अवहेलना; कृतज्ञता; विवाह; बुद्धिभेदयत्न; भेंट; गंधर्वयुद्ध; विराटनगरी में; दिग्विजय; राज्यविस्तार; औदार्य; शक्तिप्राप्ति; घटोत्कचवध; सैनापत्य; मृत्यु; परिवार।

कल्माषपाद ...१२४–१२५

नामप्राप्ति; वसिष्ठकोप; संयम; अन्य मत; असुर जीवन; मुक्ति; राज्याभिषेक।

कश्यप ...१२७–१३१

गोत्रकार; कुल; क्षत्रियरक्षा; पुत्रप्राप्ति; सर्पों को शाप; दैत्यसंहार; तीर्थोत्पत्ति; विष्णुवाहन गरुड; पृथ्वीरक्षा; क्षत्रियाधिपति; पृथ्वीपर्यटन; परिसंवाद; ग्रंथ; परिवार;

कश्यप की स्त्रियाँ; अदितिपुत्र; अरिष्टापुत्र; अरिष्टा-कन्या; कद्रूपुत्र; कपिलापुत्र; कालकापुत्र; कालापुत्र; काष्ठापुत्र; क्रोधवशाकन्या; खशापुत्र; ग्रावापुत्र; ताम्रा-कन्या; तिमिपुत्र; दनुपुत्र; दनायुपुत्र; दयापुत्र; दितिपुत्र; धनुपुत्र; पतंगीपुत्र; पुलोमापुत्र; प्राधापुत्र; प्रोवापुत्र; मुनिपुत्र; यामिनीपुत्र; विनतापुत्र; विश्वापुत्र; सरमापुत्र; सिंहिकापुत्र; सुरभिपुत्र; सुरसापुत्र; सूर्यापुत्र;

मानसपुत्र; गोत्रकार; मंत्रकार।

कार्तवीर्य अर्जुन ...१३५–१३७

दत्त उपासना एवं वरप्राप्ति; पराक्रम; चक्रवर्तीपद; संतति।

कृष्ण ...१५८–१६४

बाललीला; कंसवध; शिक्षा; विवाह; जरासंधवध; शिशुपालवध; यादवी; निर्याण; तत्त्वज्ञ कृष्ण; विश्वरूपदर्शन; ऐतिहासिक चर्चा।

गणपति ...१८०–१८१

अवतार; अष्टविनायक के स्थान।

गौतम ...१९५–१९६

शाखाप्रवर्तक; धर्मशास्त्रकार; धर्मसूत्रकार।

गौतम बुद्ध ...११२४–११२९

बुद्धों की नामावलि; जन्म; स्वरूपवर्णन; बाल्यकाल एवं तारुण्य; विरक्ति; महाभिनिष्क्रमण; तपःसाधना; परमज्ञानप्राप्ति; धर्मचक्रप्रवर्तन; बुद्ध संघ की स्थापना; गयाशीर्ष में; राजगृह में; कपिलवस्तु में; पुनश्च राजगृह में; शुद्धोदन का निधन; भ्रमणगाथा; घटनाक्रम; भ्रमणस्थल; देवदत्त से विरोध; अंतिम यात्रा; महापरिनिर्वाण; दाहकर्म;

तत्त्वज्ञान; बुद्ध की चतुःसूत्री; प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय; बौद्धधर्म के प्रमुख तीर्थस्थान; पौराणिक साहित्य में।

चरक ...२०६–२०७

चरक संहिता

दत्त आत्रेय ...२६१–२६२

अवतारकार्य; आत्मज्ञान एवं शिष्यपरंपरा; आश्रम;

आयु राजा को पुत्रदान; सहस्रार्जुन को वरप्रदान; जन्मकाल; ग्रंथ; दत्त सांप्रदाय।

दध्यंच आथर्वण ...२६३-२६४

प्रवर्ग्य विद्या; मधुविद्या; अस्थिप्रदान।

दुर्योधन ...२८०-२८५

जन्म; अस्त्रविद्या; पाण्डवों को विषप्रयोग; लाक्षागृहदाह; विवाह; अर्धराज्यप्रदान; द्यूतक्रीडा; घोषयात्रा; वैष्णवयज्ञ; द्रौपदीसत्त्वपरीक्षा; विराट नगरी में; संजयदौत्य; कृष्णदौत्य; भारतीय युद्ध; मृत्यु; दुर्योधन का मनोगत।

दुर्वासस् आत्रेय ...२८५-२८७

जन्मकथा; स्वरूपवर्णन; अनुग्रहकथा; क्रोधकथा;

देवी ...३००-३०३

तात्त्विक चर्चा;

विभिन्न अवतार—दुर्गा; महिषासुरमर्दिनी एवं महालक्ष्मी; चामुंडा; शाकंभरी; सती; पार्वती, काली एवं गौरी कालिका; मातृका;

अन्य अवतार—सिद्धांबिका; तारा; भास्करा; योगेश्वरी; त्रिपुरा; कोलंबा; कपालेशी; सुवर्णाक्षी; चर्चिता; त्रैलोक्यविजया; वीरा; हरसिद्धि; चंडिका; भूतमाला अथवा भूमाता;

देवीपीठ।

द्रोण ...३०७-३०९

जन्म; शिक्षा; हस्तिनापुर में; द्रुपदपराभव; भारतीय युद्ध; वध।

द्रौपदी ...३१०-३१३

जन्म; स्वयंवर; पंचपतित्व; द्यूत; द्रौपदी का प्रश्न; वनवास; अज्ञातवास; राज्यप्राप्ति; स्वभाव।

धन्वन्तरि ...३१५-३१७

स्वरूपवर्णन; मनसा से युद्ध; ग्रंथ।

नारद ...३६०-३६६

स्वरूपवर्णन; जन्म; पुनर्जन्म; देवों का वार्ताहर; तत्वज्ञ नारद; संगीतकलातज्ञ; नारदनारदी; विवाह; सुवर्णष्ठीविन्कथा; शत्रुघ्न को चेतावनी; कलियुग में; कृष्णकथाओं में नारद; इंद्रसभा में; धर्मशास्त्रकार; शिक्षाकार, अन्य ग्रंथ।

नृसिंह ...३७५-३७६

नृसिंह उपासना; नृसिंहस्थान।

पतंजलि ...३८२-३८६

नामान्तर; काल; जीवनचरित्र; व्याकरणमहाभाष्य; शुद्ध उच्चारण का महत्त्व; पूर्वाचार्य; टीकाकार; महाभाष्य का पुनरुद्धरण; अन्य ग्रंथ; योगसूत्रपरिचय; योगदर्शन।

परशुराम जामदग्न्य ...३८८-३९४

शिक्षा; शिष्य; आश्रम; रेणुकावध; अस्त्रविद्या; हैहयों से शत्रुत्व; कामधेनुहरण; युद्ध; कार्तवीर्यवध; जमदग्निवध; मातृतीर्थ की स्थापना, हैहयविनाश; निःक्षत्रिय पृथ्वी; अश्वमेध यज्ञ; नया हत्याकाण्ड; हत्याकाण्ड से बचे क्षत्रिय; शूर्पारक की स्थापना; परशुरामकथा का अन्वयार्थ; महाभारत में; रामायण में; कालविपर्यास; परशुराम सांप्रदाय के ग्रन्थ; परशुराम शक।

पराशर ...३९५-३९८

राक्षससत्र; व्यासजन्म; आदरणीय ऋषि; वेदव्यास; धर्मशास्त्रकार; ज्योतिषशास्त्रज्ञ; आयुर्वेदशास्त्रकार; पुराण-इतिहासज्ञ; पराशर वंश।

परिक्षित् ...३९९-४०१

जन्म; राज्य में कलिप्रवेश; शाप; तक्षकदंश; परिक्षित् कथा का अन्वयार्थ; पौराणिककाल।

पाणिनि ...४०५-४१०

नामान्तर; मातापिता; अध्ययन; निवासस्थान; काल; पूर्वाचार्य; अष्टाध्यायी; पाणिनीय व्याकरणशास्त्र; पाणिनिकालीन भूगोल; सिक्के; परिमाणदर्शक शब्द; अष्टाध्यायी के वार्तिककार; अष्टाध्यायी के पूर्वाचार्य, पाणिनि के व्याकरण-ग्रंथ।

पाण्डु ...४१०-४१२

जन्म; शिक्षा; विवाह; राज्यप्राप्ति; शाप; पुत्रेच्छा; पुत्रप्राप्ति; मृत्यु।

पितर ...४१९-४२२

उत्पत्ति; प्रिय खाद्यपदार्थ; मनोविकार; पितृगण; दैवी पितर; मूर्त अथवा मानुष पितर; पितृकन्या; पितृकन्या का अन्वयार्थ; पितृवंश।

पिप्पलाद ...४२५-४२६

पैप्पलाद संहिता; अन्यग्रंथ; तत्वज्ञान।

पृथु वैन्य ४४२-४५२

पृथ्वीदोहन अथवा नवसमाजरचना; दोहक-गण; राज्याभिषेक; पृथु की राजप्रतिज्ञा; पुत्र; पृथुवंश।

प्रजापति ...४६१-४६६

सर्वप्रमुख देवता; सृष्टि आरंभ; सूर्यपूजा-अर्घ्य; इंद्र की उत्पत्ति; यज्ञारंभ; सृष्टिनिर्माण व व्यवस्था; कन्याविवाह; दुहितृगमन; प्रजापतियों की संख्या; प्रजापतियों की नामावलि।

प्रह्लाद ...४७९–४८१

जन्म; विष्णुभक्ति; इंद्रपदप्राप्ति; परिवार; संवाद; पूर्वजन्मवृत्त।

बक दाल्भ्य ...४८७–४८८

धृतराष्ट्र से विरोध; तत्त्वज्ञान; छांदोग्य उपनिषद् में।

बलराम ...४९३–४९५

बाल्यकाल; जल्दबाज स्वभाव; बलराम की तीर्थयात्रा; तीर्थयात्रा का द्वितीय पर्व।

बलि वैरोचन ...४९७–५०१

बलिकथा का अन्वयार्थ; स्वर्गप्राप्ति; समुद्रमंथन; समुद्रमंथन से प्राप्त हुए रत्न; इंद्रबलिसंग्राम; इंद्रपदप्राप्ति; प्रह्लाद के द्वारा शाप; वामन को दान; बलिबंधन; रावण का गर्वहरण; संवाद; परिवार; बलि की उपासना।

बाण ...५०२–५०५

शिवभक्ति; उषा अनिरुद्ध प्रणय; कृष्ण से युद्ध; वरप्राप्ति; उषा–अनिरुद्धविवाह; बाणकथा का अन्वयार्थ।

बादरायण ...५०५–५०६

बादरि—बादरायण भिन्नता; ब्रह्मसूत्र।

बृहस्पति ...५१८–५२३

जन्म; रूपवर्णन; गुणवर्णन; दैत्यों की पराजय; संवाद; परिवार, ग्रंथ।

बौधायन ...५२३–५२५

बौधायन शाखा; बौधायन सूत्र; बौधायनसूत्रों के विभाग; बौधायन धर्मसूत्र; टीकाकार; बौधायन स्मृति।

ब्रह्मन् ...५२६–५३१

जन्म; चतुर्मुख; शंकर से विरोध; सृष्टि का निर्माण; वेदों का निर्माण; प्रभास क्षेत्र में यज्ञ; सावित्री से शाप; गायत्री से वरदान; अन्य रचनाएँ; ब्रह्मा की कालगणना; ग्रंथ; स्थान।

भगीरथ ...५३४–५३५

गंगावतरण; भगीरथकथा का अन्वयार्थ।

भरत ...५४०–५४३

नाट्यशास्त्र की उत्पत्ति; नाट्यकला का पृथ्वी पर आगमन; भारतीय नाट्यशास्त्र; कालनिर्णय।

भरत 'जड' ...५४३–५४४

प्रथम जन्म; द्वितीय जन्म; तृतीय जन्म; रहूगण राजा से संवाद; परिवार।

भरत दाशरथि ...५४४–५४७

कैकेयी का षड्यंत्र; राम की खोज; राम से भेंट; नंदिग्राम में; युद्धप्रसंग; तुलसी रामायण में।

भरत दौःषन्ति ...५४७–५४८

जन्म; परिवार; भरतवंश।

भरद्वाज ...५४८–५५२

वेदों का अर्थांगत्व; अर्थशास्त्रकार; अन्य ग्रंथ।

भागुरि ...५५४–५५५

व्याकरणशास्त्रकार; कोशकार; ज्योतिषशास्त्रकार; स्मृतिकार; साम एवं यजुःशाखाओं का आचार्य; अलंकारशास्त्रज्ञ; सांख्यदर्शनकार; दैवतशास्त्रज्ञ।

भीमसेन 'पाण्डव' ...५६१–५७१

स्वरूपवर्णन; बाल्यकाल; दुर्योधन के षड्यंत्र; नागलोक में; शिक्षा; लाक्षागृहदाह; हिडिंबाविवाह; बकासुरवध; द्रौपदी स्वयंवर; जरासंधवध; पूर्व दिग्विजय; राजसूय यज्ञ; द्रौपदीवस्त्रहरण; वनवास; गर्वहरण; कुबेर से विरोध; नहुषमुक्ति; दुर्योधन–चित्रसेन युद्ध; जयद्रथ से युद्ध; यक्षप्रश्न; अज्ञातवास; कीचकवध; भीम–कृष्णसंवाद;

भारतीय युद्ध; प्रथम दिन; चौथा दिन; छठवाँ दिन; आठवाँ दिन; नौवा दिन; दसवाँ दिन; ग्यारहवाँ दिन; चौदहवाँ दिन; पंद्रहवाँ दिन; द्रोणवध; सोलहवाँ दिन; कर्ण से युद्ध; दुःशासन वध; अठारहवाँ दिन; दुर्योधनवध; अश्वत्थामान्मणिग्रहण;

धृतराष्ट्रविद्वेष; युवराजपद; भीमजलाकी एकादशी; गर्वपरिहार; मृत्यु; परिवार।

भीष्म ...५७२–५७९

ध्येयवादी व्यक्तिमत्त्व; योग्यता; जन्म; हस्तिनापुर में; भीष्मप्रतिज्ञा; शंतनु की मृत्यु; उग्रायुधवध; विचित्रवीर्य का राज्यारोहण; अंबाविरोध; परशुराम से युद्ध; शिखण्डिजन्म; विचित्रवीर्य की मृत्यु; धृतराष्ट्र एवं पाण्डु का जन्म;

भारतीय युद्ध; कौरव पाण्डव का बलाबल; कर्ण–भीष्मविरोध; सैनापत्य; दुर्योधनआक्षेप; कृष्णभेंट; शरशय्या; प्राणत्याग; भीष्मचरित्र का एक कलंकित क्षण; कुछ धूमिल स्थल; अन्य धूमिल स्थल।

भूत ...५८१–५८१

जन्म; स्वरूपवर्णन; भूतनायक; असुरों से युद्ध।

भृगु प्रजापति ...५८५–५८६

देवदैत्यसंग्राम; देवों की परीक्षा; परिवार।

भृगु वारुणि ...५८६–५९०

जन्म; वेदोत्पत्ति; नहुष को शाप; संवाद; आश्रम; तत्त्वज्ञान; परिवार; भार्गवगण; क्षत्रिय ब्राह्मण; भृगु–आंगिरस परिवार; विवाहसंबंध; ग्रंथ; भृगुकुल के मंत्रकार।

भैरव ...५९१
ब्रह्महत्या; वंश।

मतंग ...५९८–५९९
गर्दभी से संवाद; तपस्या।

मत्स्य ...५९९–६०१
मत्स्यावतार; पुराणों में; मत्स्यकथा का अन्वयार्थ; भौगोलिक मर्यादा।

मनु आदिपुरुष ...६०५–६१०
मानवजाति का पिता; यज्ञसंस्था का आरंभकर्ता; यज्ञ से ऐश्वर्यप्राप्ति; समकालीन ऋषि; मन्वन्तरों का निर्माण; चौदह मन्वन्तर; उत्तम मन्वन्तर; तामस मन्वन्तर; रैवत मन्वन्तर; चाक्षुष मन्वन्तर; वैवस्वत मन्वन्तर; सावर्णि-मन्वन्तर; दक्षसावर्णि मन्वन्तर; ब्रह्मसावर्णि मन्वन्तर; धर्मसावर्णि मन्वन्तर; रुद्रसावर्णि मन्वन्तर; रौच्य मन्वन्तर; भौत्य मन्वन्तर।

मनु वैवस्वत ...६११–६१३
सृष्टिप्रलय; विभिन्न साहित्यों में प्राप्त जलप्लावन कथा; प्रलयोत्तर मानवी समाज का आदिपुरुष; काल-निर्णय; परिवार; इलापुत्र; हिंदी साहित्य में।

मनु स्वायंभुव ...६१३–६१५
स्मृतिकार; धर्मशास्त्र की निर्मिति; मनुस्मृति का प्रणयन; मानव–धर्मशास्त्र का पुनःसंस्करण; विषयानु-क्रमणिका; मनुस्मृति में निर्दिष्ट ग्रंथ; मनुस्मृति के भाष्य; मनुस्मृति का रचनाकाल; अन्य ग्रंथ।

मय ...६१८–६२०
शिल्पशास्त्रज्ञ; खांडववन में; मयसभा; परिवार; ज्ञाति नाम।

मरुत् ...६२२–६२५
जन्म; पत्नी; वस्त्र एवं अलंकार; रथ; कार्य; गायन; झंझावात का देवता; व्युत्पत्ति; दिति के पुत्र; इंद्र–दिति संवाद; सात मरुद्गण; मरुद्गणों के स्थान।

मरुत्त आविक्षित कामप्रि ...६२५–६२६
इंद्र–मरुत्त विरोध; मरुत्त का यज्ञ; रावण से विरोध; राज्यवैभव; महाभारत में; परिवार।

महावीर वर्धमान ...१११९–११२३
बुद्ध का समकालीन; जन्म; समकालीन नृप; तपस्या; प्रथम समवशरणसभा; शिष्यशाखा; धर्मसंगठन; पर्यटन; निर्वाण; आचारसंहिता; अहिंसातत्त्व की महत्ता; वर्धमान का अनेकान्तवाद; वर्धमान का क्रियावाद; बौद्धधर्म से तुलना; ग्रन्थ; परंपरा; सांप्रदायभेद।

मांडव्य ...६३५–६३६
चोरी का इल्जाम; प्रमोदिनी से विवाह; यम से संवाद; ब्राह्मण का शाप; संवाद।

मातरिश्वन् ...६३७
अग्नि का दिव्यरूप; व्युत्पत्ति।

मातृका ...६३२–६३९
जन्मकथा; मातृकाओं की संख्या; मातृकाओं की प्राचीनता; मातृकाओं की प्रतिमा।

माधवी ...६४१–६४२
गालव ऋषि को दान; हर्यश्व से विवाह; दिवोदास से विवाह; उशीनर से विवाह; विश्वामित्र से विवाह; स्वयंवर; पुत्र; ययाति का उद्धार; ययाति को पुण्यदान; काल-विपर्यास।

मान्धातृ यौवनाश्व ...६४३–६४५
जन्म; संगोपन एवं नामकरण; पराक्रम; व्रतवैकल्य; संवाद; मृत्यु; परिवार।

मार्कण्डेय ...६४७–६४९
जन्म; अमरत्व; तपस्या; श्रेष्ठता; उपदेश; मार्कण्डेय–युधिष्ठिर संवाद; ग्रन्थ; परिवार; आश्रम।

माल्यवत् ...६५०–६५१
तपस्या; विष्णु से युद्ध; लंकाप्रवेश; परिवार।

मुचुकुंद ...६५४–६५५
मुचुकुंद–वैश्रवणसंवाद; कालयवन का वध; कृष्णदर्शन; संवाद; परिवार।

मृत्यु ...६६०
ब्रह्म से संवाद; सनत्सुजात–आख्यान।

मेधातिथि काण्व ...६६०
वैदिक ऋषि; काण्व शाखा।

मैत्रेय कौशारव ...६६५
नाम; दुर्योधन का शाप; व्यास–मैत्रेय–संवाद; विदुर–मैत्रेय संवाद।

मैत्रेयी ...६६६
मैत्रेयी–याज्ञवल्क्य संवाद।

म्लेच्छ ...६६८–६६९
भाषा; महाभारत में।

यक्ष ...६६९–६००
कुवेर के सेनापति; कुवेर की सभा में; स्वरूपवर्णन; परिवार।

यदु ...६७२-६७४

शाप; परिवार; यादव वंश; सात्वत शाखा; अन्य-शाखाएँ; अठारह महारथ; आर्य संस्कृति का प्रचार; यादवनिन्दा।

यम वैवस्वत ...६७४-६७७

पहला राजा; निवासस्थान; दूत; मित्रपरिवार; यम-यमी-संवाद; आत्मसमर्पण; मृत्यु का देवता; व्युत्पत्ति; वेदोकालोपरान्त यम; यम को शाप; पितरों का प्रमुख; यम-नचिकेत संवाद; यम-गीता; महाभारत-वर्णित यम; यम की उपासना; ग्रंथ; धर्मशास्त्रकार।

ययाति ...६७७-६८२

जन्म; देवयानी से भेंट; ययाति-देवयानी संवाद; विवाह; पुत्रप्राप्ति; शुक्र से शाप; पुत्रों को शाप; यौवन प्राप्ति; विरक्तावस्था; वानप्रस्थाश्रम; उत्तर-यायात आख्यान; वाल्मीकि रामायण में; पद्म में; अश्रुविन्दुमती से विवाह; श्रेष्ठ सम्राट; धार्मिकता; परिवार; ययातिपुत्रों के राज्य।

यवक्रीत ...६८२-६८३

तपस्या; इन्द्र से भेंट; रैभ्य से विरोध; मुक्ति।

यवन ...६८३-६८४

उपनिवेश; महाभारत में।

याज्ञवल्क्य वाजसनेय ...६८५-६९३

नाम; योग्यता; यजुःशिष्यपरंपरा; कृष्णयजुर्वेद शुद्धीकरण; जनमेजय की राजसभा में; शुक्लयजुर्वेद का प्रणयन; ईश उपनिषद; शतपथ ब्राह्मण;

वैशंपायन से विरोध; सूर्य से वेदप्राप्ति; कालनिर्णय; दार्शनिक समस्याओं का आचार्य; जनक के दरबार में; वादविवाद के विषय; निष्प्रपंच सिद्धान्त; पुराणों में;

याज्ञवल्क्य-मैत्रेयी संवाद; ध्येयात्मक अद्वैतवाद; अमरत्व की प्राप्ति; जनक- याज्ञवल्क्यसंवाद; मृत्युवर्णनः तत्त्वज्ञान; चरित्रचित्रण; आत्मगत भाषण; परिवार;

शिष्यपरंपरा; शाखाप्रवर्तक शिष्य; ग्रन्थ; शुक्ल यजुर्वेद; याज्ञवल्क्य स्मृति।

यास्क ...६९४-६९५

निरुक्त; पूर्वाचार्य; भाषाशास्त्रज्ञ।

युधिष्ठिर ...६९६-७०९

तत्त्वदर्शी राजा; चिन्तनशील व्यक्तित्व; जन्म; स्वरूपवर्णन; ध्वज एवं आयुध; शिक्षा; यौवराज्याभिषेक; लाक्षागृहदाह; अर्धराज्यप्राप्ति; राजसूय यज्ञ; दुर्योधन-विद्वेष; द्यूतपराजय; वनवास; द्रौपदी-युधिष्ठिर संवाद; तीर्थयात्रा; नहुष-मुक्ति; घोषयात्रा; जयद्रथ की मुक्तता; यक्ष-प्रश्न; अज्ञातवास; संधि का प्रयत्न; युधिष्ठिर-कृष्ण संवाद; कृष्ण-दौत्य;

भारतीय युद्ध-पाण्डव पक्ष के योद्धा; कौरव पक्ष के देश; युद्ध-शिबिर; सांख्यिक-बलाबल; सेनाप्रमुख एवं सेनापति; युद्धप्रारंभ; प्रारंभ में; भीष्म के बाद द्रोण; कर्णवध; युधिष्ठिर- अर्जुन संवाद; दुर्योधन-वध; बचे हुए वीर;

विरक्ति; युधिष्ठिर-अर्जुन संवाद; राज्याभिषेक; गर्वहरण; धृतराष्ट्र वनगमन; महाप्रस्थान; स्वर्गारोहण; मृत्यु; स्वर्गप्रवेश; यमधर्म से भेंट; परिवार; आयु; कालनिर्णय; तिथिनिर्णय।

रक्षस् ...७११-७१४

स्वरूपवर्णन; नानाविधरूप; आहार; मनुष्यों को पीड़ा; विचरण; अग्नि से विरोध; व्युत्पत्ति; असुरों का वैयक्तीकरण; ऋग्वेद में; ईरान में असुरपूजा; उपनिषदों में; अष्टाध्यायी में; पुराणों में; सामान्य उपाधि।

रंतिदेव सांकृत्य ...७१८-७१९

यज्ञपरायणता; दानशूरता; सांकृत्य ब्राह्मण।

राधा ...७२२-७२४

जन्म; पृथ्वी पर अवतार; कृष्ण से विवाह; राधा की उपासना।

राम दाशरथि ...७२५-७४२

आदर्श पुरुषश्रेष्ठ; वैयक्तिक सद्गुणों का आदर्श; नाम; जन्म; अवतार; रूपवर्णन; नामकरण एवं शिक्षा; वसिष्ठ से उपदेशप्राप्ति; विश्वामित्रसहवास; ताटकावध; मारीच एवं सुबाहु से युद्ध; अहिल्योद्धार; सीतास्वयंवर; परशुराम से संघर्ष; यौवराज्याभिषेक; कैकेयी से संभाषण;

वनवास; दण्डकारण्यप्रवेश; राक्षसविरोध; पंचवटी में; शुर्पणखा-विरूपत्व; सीताहरण; कबंधवध; वालिआक्षेप; सीता की खोज; लंका पर आक्रमण; बिभीषण से मित्रता;

सेतुबन्ध; लंका का अवरोध; दूतप्रेषण; प्रथम दिन; नागपाश; राक्षससंहार; इंद्रजित्वध; रावण-वध; अग्निपरीक्षा; दक्षिण की विजययात्रा; राक्षस संग्राम का तिथिनिर्णय; लंका का स्थलनिर्णय; वानर कौन थे? उत्तर काण्ड का विश्लेषण; अयोध्यागमन;

राज्याभिषेक; सीतात्याग; कुशलवजन्म; अश्वमेधयज्ञ; सीता का भूमिप्रवेश; देहत्याग; रामकथा का तिथि निर्णय; सर्वमान्य तिथियाँ; ताम्रपटों का निर्देश; 'कालनिर्णय रामायण' ग्रन्थ; चरित्र-चित्रण; राम चरित्र के दोष; परिवार;

वाल्मीकि रामायण; पुराणों में रामकथा; रामभक्तिसंप्रदाय; रामभक्ति से प्रभावित उपनिषद् ग्रन्थ; रामभक्ति का विकास; सांप्रदायिक रामायण ग्रन्थ; बौद्ध एवं जैन वाङ्मय में रामकथा; आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा।

रावण दशग्रीव ...७४३–७४८

नाम; स्वरूपवर्णन; जन्म; तपश्चर्या; अत्याचार; गर्वहरण; विवाह; वेदवती से शाप; विजययात्रा; पराजय; पराजय की अन्य कथाएँ; सीताहरण; रावण–सीता संवाद; रावण-विभीषण-संवाद; सेनावर्णन; राम-रावण युद्ध; वध; परिवार; चरित्रचित्रण; महापंडित रावण; तुलसी रामायण में।

रुक्मिणी ...७५१–७५२

श्रीकृष्ण से प्रेम; श्रीकृष्ण का आगमन; रुक्मिणी-हरण; रुक्मिन् की पराजय; प्रासादवर्णन; पुत्र-प्राप्ति; अग्निप्रवेश; परिवार।

रुक्मिन् ...७५२–७५३

श्रीकृष्ण से पराजय; भारतीय युद्ध में; परिवार।

रुद्र-शिव ...७५४–७६६

स्वरूपवर्णन; निवास-स्थान; तपस्यास्थान; वाहन एवं ध्वज; आयुध; पराक्रम; तैत्तिरीय संहिता में; अथर्ववेद में; ब्राह्मण ग्रन्थों में; उपनिषदों में; केन उपनिषद में; गृह्यसूत्रों में; महाभारत में;

उपासक गण; अष्ट रुद्र; एकादश रुद्र; विभिन्न पुराणों में; जन्मकथाएँ; पराक्रम; तामस रूप; शिवदेवता की उत्क्रांति; परिवार;

रुद्रोपासना; मुँहेंजोदड़ो में; पश्चिम अशिया में; सुमेर में; शिव के अवतार; शिव उपासना के संप्रदाय; शिव उपासना का आद्य सांप्रदाय; द्रविड देश में शिवपूजा; शक्तिपूजा; शिवरात्रि; शिव उपासना के ग्रन्थ।

रैक्व सयुक्वा ...७६९–७७०

जनश्रुति से भेंट; तत्त्वज्ञान।

रोमहर्षण सूत ...७७२–७७४

कुलवृत्तांत; पुराणों की निर्मिती; शिष्यपरंपरा; पुराणों का निर्माण; पुराणकथन; मृत्यु; मृत्युतिथि; ग्रंथ; सूतजाति की उत्पत्ति; परिवार।

रोहित ...७७५

शुनःशेपाख्यान; परिवार।

लक्ष्मण दाशरथि ७७६–७८१

नाम; बाल्यकाल; वनगमन से पूर्व; वनवास; सीताहरण; राम से सांत्वना; सीता की खोज; राम–रावण युद्ध; इंद्रजित् युद्ध; राक्षससंहार; रावण से युद्ध; सीतात्याग; मृत्यु; परिवार; चरित्रचित्रण; मानस में।

लक्ष्मी ...७८१–७८४

लक्ष्मीदेवता की उत्क्रांति; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; जन्म; भृगु से वरदान; भृगु का शाप; लक्ष्मी के अवतार; लक्ष्मी के दोष; परिवार; लक्ष्मीप्रद सूक्त।

लगध ...७८४

वेदांगज्योतिष; जन्मस्थान; कालनिर्णय।

लाट्यायन ...७८६

लाट्यायन श्रौतसूत्र; पूर्वाचार्य।

लोपामुद्रा ...७८६

जन्म; अगस्त्य से विवाह; पुत्रप्राप्ति; दक्षिण भारत में।

लोमश ...७८९–७९०

इंद्र से भेंट; तीर्थयात्रा; आख्यानकथन; वरप्रदान; ग्रन्थ; लोमशकथित रामकथा; आश्रम।

वररुचि ...७९७

प्राकृतप्रकाश; अन्य ग्रन्थ।

वराह ...७९८–७९९

वैदिक साहित्य में; पुराणों में; वराहस्थान; वराह अवतार का अन्वयार्थ।

वरुण ...७९९–८०२

वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; गुप्तचर; सृष्टि का राजा; असुर वरुण; वरुण देवता का अन्वयार्थ; जल का स्वामी; सेमेटिक साहित्य में; महाभारत में; वरप्रदान; परिवार।

वसिष्ठ ...८०४–८०६

जन्म; विश्वामित्र से शत्रुत्व; परिवार; वसिष्ठ की वंशावलि; वसिष्ठकुल के गोत्रकार; वसिष्ठ कुल में उत्पन्न प्रमुख व्यक्ति ८०४; जातुकर्ण्य लोग; वसिष्ठकुल के मंत्रकार।

वसिष्ठ 'धर्मशास्त्रकार' ...८०७–८०८

ग्रन्थ।

वसिष्ठ मैत्रावरुणि ...८०८–८१०

जन्म; विश्वामित्र से विरोध; यज्ञकर्ता आचार्य; कर्तृत्व; आश्रम; वैदिकोत्तर साहित्य में; पुराणों में; विश्वामित्र से शत्रुत्व; व्रतवैकल्य; परिवार।

वसु ...८११-८१३
पौराणिक साहित्य में; अष्टवसु; परिवार; भागवत में; अष्टावसुओं का परिवार।

वसुदेव ...८१४-८१६
कृष्णजन्म; पराक्रम; अश्वमेधयज्ञ; मृत्यु; परिवार; पत्नियाँ; पुत्र।

वसुमनस् कौशल्य ...८१७
ययाति को पुण्यदान; संवाद।

वात्स्यायन ...८२०-८२२
व्यक्तिपरिचय; कालनिर्णय; पूर्वाचार्य; कामसूत्र; कामसूत्र का तत्त्वज्ञान; श्रेष्ठत्व।

वानर ...८२२-८२३
राज्य एवं समाजव्यवस्था; पुराणों में; वानरसमूह; वानरवंश; जैन ग्रंथों में; वानर कौन थे।

वामदेव गौतम ...८२४-८२५
जन्म; संबंधित व्यक्ति; तत्त्वज्ञान; आत्मानुभूति।

वामन ...८२५-८२६
वैदिक साहित्य में; वामन अवतार की उत्क्रांति; शतपथ ब्राह्मण में; पुराणों में; वामन अवतार का अन्वयार्थ; उपासना।

वायु ...८२६-८२७
जन्म एवं स्वरूपवर्णन; पुराणों में; परिवार।

वालखिल्य ...८२८-८२९
वैदिक साहित्य में; पौराणिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; इंद्रनिर्माण; तपःसामर्थ्य; परिवार।

वालिन् ...८२९-८३१
जन्म; पराक्रम; दुंदुभिवध; सुग्रीव से शत्रुत्व; राम-सुग्रीव की मित्रता; वालिवध; राम की आलोचना; अंत्यविधि; स्वभावचित्रण।

वाल्मीकि आदिकवि ...८३२-८३७
नाम; रामायण के बाल एवं उत्तरकांड में; आश्रम; आख्यायिकाएँ; अध्यात्म रामायण में; आख्यायिकाओं का अन्वयार्थ; क्रौंचवध; रामायण की जन्मकथा; सीता-संरक्षण; रामसभा में;
पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानत्रयी; व्यक्तिगुणों का आदर्श; महाभारत से तुलना; रामायण की श्रेष्ठता; रामायण की ऐतिहासिकता; आदिकवि वाल्मीकि; गेय महाकाव्य; आर्ष महाकाव्य, वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन; रामायण का रचनाकाल; महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण; वाल्मीकि रामायण के संस्करण।

विदुर ...८४३-८४७
विदुर का हीनकुलीनत्व-एक समस्या; जन्म; पूर्वजन्म; पांडवों की सहायता; धृतराष्ट्र का सलाहगार; विदुरनीति; विदुरतीर्थयात्रा; युधिष्ठिर के राज्यकाल में; अंतिम समय; मृत्यु; अंत्यसंस्कार; परिवार।

विदुला ...८४७
विदुला-पुत्र संवाद।

विदेह ...८४८
वैदिक साहित्य में; महाभारत में।

विप्रचित्ति ...८५२-८५३
पराक्रम; परिवार।

बिभीषण ...८५४-८५६
जन्म; तपस्या; रावण से विरोध; रावण की सभा में; शरणागत बिभीषण; राम की सहायता, मायावी युद्ध; रावण का अंत्यसंस्कार; राज्याभिषेक; अश्वमेधयज्ञ; राम का आशीर्वाद; परिवार।

विराट ...८५८-८६०
पांडवों का अज्ञातवास; कीचकवध; सुशर्मन् से युद्ध; दुर्योधन से युद्ध; युधिष्ठिर का अपमान; उत्तरा-अभिमन्यु विवाह; भारतीय युद्ध में; मृत्यु; परिवार।

विरोचन ...८६०-८६१
प्रह्लाद की न्यायप्रियता; इंद्र-विरोचन संवाद; मृत्यु; परिवार।

विवस्वत् ...८६२-८६३
ऋग्वेद में; निवासस्थान; देवताओं का मित्र; व्युत्पत्ति; विवस्वत् देवता का अन्वयार्थ।

विशाल ...८६४-८६५
वैशालि नगरी; वैशाल राजवंश।

विश्वकर्मन् ...८६६-८६७
वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; गुणवर्णन; महाभारत एवं पुराणों में; शिल्पशास्त्रज्ञ; अस्त्रों का निर्माण; परिवार; ग्रंथ।

विश्वरूप त्रिशिरस् त्वाष्ट्र ...८६९-८७०
वैदिक साहित्य में; महाभारत एवं पुराणों में; स्वरूपवर्णन; देवों का पुरोहित।

विश्वामित्र ...८७०-८७७
व्युत्पत्ति; जन्म; समवर्ती लोग; राज्यप्राप्ति; वसिष्ठ से विरोध; आपत्प्रसंग; त्रिशंकु की सहायता; त्रिशंकु का राजपुरोहित; त्रिशंकु को सदेह स्वर्गारोहण; विश्वामित्र के कार्य का महत्त्व; हरिश्चंद्र के राज्य काल में; मार्कंडेय

पुराण में; ब्रह्मर्षि पदवी की प्राप्ति; सत्त्वपरीक्षा; आश्रम; परिवार; पत्नियाँ; पुत्र;

विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रनाम; विश्वामित्रकुलोत्पन्न गोत्रकार; गाथिन् का वंशज; नदीसूक्त; वसिष्ठ से विरोध; शक्ति का वध।

विश्वेदेव ...८७७–८७८

वैदिक साहित्य में; नामावलि; ऐतरेय ब्राह्मण में; पुराणों में; नामावलि; ब्रह्मा की उपासना।

विष्णु ...८७९–८८७

वैदिक साहित्य में; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान पराक्रम; विष्णु के तीन पग; नियमबद्ध गतिमानता; एक सौर देवता; भक्तवत्सलता; अवंध्यता का देवता; व्युत्पत्ति; ब्राह्मण ग्रंथों में विष्णु का श्रेष्ठत्व; अवतारों का निर्देश; उपनिषदों में गृह्यसूत्रों में; महाभारत में;

विष्णु–उपासना के तीन स्रोत; विष्णु देवता की उत्क्रान्ति; पौराणिक साहित्य मे स्वरूपवर्णन; विष्णु की उपासना; विष्णु के अवतार; नामावलि; विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ; विष्णु के तीर्थस्थान; कई प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय।

विष्णुगुप्त चाणक्य ...८८७–८८९

नाम; नामांतर; जीवनवृत्तांत; कौटिलीय अर्थशास्त्र; भाषाशैली; पूर्वाचार्य; कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव; मेगॅस्थिनिस् के 'इंडिका' से तुलना।

विष्णुयशस् कल्कि ८८९–८९०

अवतारहेतु।

वीरभद्र ...८९२–८९४

जन्म; दक्षयज्ञविध्वंस; वरप्राप्ति; पराक्रम; देवों का संरक्षणकर्ता; वीरक आख्यान; नृसिंहदमन; उपासना ग्रंथ।

वृत्र ...८९६–८९८

जन्म; स्वरूपवर्णन; निवासस्थान; पराक्रम; वध; व्युत्पत्ति; सामूहिक नाम; तैत्तिरीय संहिता में; ब्राह्मण ग्रंथों में; महाभारत एवं पुराणों में; तपस्या; इन्द्र से युद्ध; वध; तत्त्वज्ञ; परिवार।

वैशंपायन ...९११–९१३

वैदिक साहित्य में; पाणिनीय व्याकरण में; कृष्ण-यजुर्वेद का प्रवर्तन; शिष्यशाखा; याज्ञवल्क्य का तिरस्कार; कृष्ण यजुर्वेद का प्रचार; महाभारत का कथन; 'भारत' ग्रंथ का निर्माण; 'भारत' ग्रंथ का कथन; वैशंपायन कृत आस्तीक पर्व; 'भारत' ग्रंथ का प्रचार; याज्ञवल्क्य से विरोध; ग्रंथ।

व्याडि दाक्षायण ...९१५–९१६

वंश; ऋक्प्रतिशाख्य में; पाणिनीय व्याकरण का व्याख्याता; संग्रह; कालनिर्णय; ग्रंथ।

व्यास पाराशर्य ...९१६–९२९

सनातन हिंदुधर्म का रचयिता; वैदिक साहित्य में; पाणिनीय व्याकरण में; महाभारत एवं पुराणों में; जन्मतिथि; विभिन्न नामांतर;

तपस्या; कौरव-पांडवों का पितामह; जनमेजय के यज्ञ मंडप में; पांडवों का हितचिंतक; श्रुतिस्मृति-विद्या का उपदेश; भारतीय युद्ध में; भारतीय युद्ध के पश्चात्; शुकदेव को उपदेश; उपदेशक व्यास; अश्वमेध यज्ञ में; परिवार; व्यासवंश; चिरंजीवीत्व; व्यासस्थल; अट्ठाईस व्यास; व्याससहायक शिवावतार;

कर्तृत्व; वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाग; व्यास की वैदिक शिष्यपरंपरा; ऋग्वेद की प्रमुख शाखाएँ; उपलब्ध वैदिक ग्रंथ; वैदिक संहिताओं का विशुद्ध रूप; विनष्ट हुए ब्राह्मण ग्रंथ;

पुराणग्रंथों का प्रणयन; पुराणों के प्रकार; पुराणों में चर्चित विषय; पुराणों के विभिन्न प्रकार; श्लोकसंख्या; पुराणों के वक्ता; महापुराण; महापुराणों की नामावलि; महापुराणों की तालिका; पुराणों का देवतानुसार पृथक्करण; गीताग्रंथ; व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा; रोमहर्षण शाखा;

महाभारत का निर्माण; इतिहास-पुराण; महाभारत की व्याप्ति; महाभारत की शिष्यपरंपरा; महाभारत के पर्व; महाभारत के उपपर्व; हरिवंश; व्यास की संशयनिवृत्ति; व्यास का जीवनसंदेश।

शत्रुघ्न ...९४१–९४३

राम का यौवराज्याभिषेक; पादुकासंरक्षण; लवणवध; मधुरा की स्थापना; राम से भेंट; राम का अश्वमेध यज्ञ; दिग्विजय; मृत्यु; परिवार।

शल्य ...९५१–९५२

माद्री का विवाह; द्रौपदी स्वयंवर में; युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में, भारतीय युद्ध में; युद्धप्रसंग; कर्ण का सारथ्य; कर्ण–शल्य संवाद; सेनापति शल्य।

शाकटायन ...९५३–९५४

नाम; गुरुपरंपरा; उणादि सूत्र; दैवतशास्त्रज्ञ; अन्य ग्रंथ।

शाकपूणि ...९५४

ऋग्वेदार्थ का ज्ञान।

शाकल ...९५५–९५६
ब्राह्मण ग्रंथों में; व्याकरण ग्रंथों में; शाकल शाखा; शाकल्य संहिता।
शाकल्य ...९५६
शाखाप्रवर्तक आचार्य; पदपाठ का रचयिता; व्याकरणाचार्य; पाणिनि के अष्टध्यायी में, याज्ञवल्क्य से संघर्ष; पौराणिक साहित्य में; ग्रंथ।
शांखायन ...९५७–९५८
शांखायन संहिता; शांखायन ब्राह्मण; शाखायन आरण्यक;शांखायन (कौषीतकि) उपनिषद; शांखायन श्रौतसूत्र; शांखायन गृह्यसूत्र; आचार्यपरंपरा।
शाट्यायनि ...९५८–९५९
आचार्यपरंपरा; शाट्यायन ब्राह्मण; जैमिनीय उपनिषद् ब्राह्मण (गात्र्युपनिषद); शिष्यपरंपरा।
शांडिल्य ...९५९–९६०
यज्ञप्रक्रियों का आचार्य; शतपथ ब्राह्मण के अग्निकांड; 'बृहदारण्यक उपनिषद' में; तत्त्वज्ञान; आत्मा का स्वरूप; गोत्रकार आचार्य; ग्रंथ।
शाल्व ...९६६–९६७
जरासंधदैत्य; सौभ बिमान की प्राप्ति; प्रद्युम्न से युद्ध; कृष्ण से युद्ध; भीष्म से युद्ध; भारतीय युद्ध में।
शिखण्डिन् ...९६७–९६८
बाल्यकाल एवं विवाह; भारतीय युद्ध में; भीष्मवध; वध; भीष्मवध का पूर्ववृत्त।
शिबि औशीनर (औशीनरि) ...९७०–९७१
वैदिक साहित्य में; महाभारत एवं पुराणों में; औदार्य; औदार्य की अन्य कथाएँ; पुण्यशील राजा; दान का महत्त्व; मृत्यु; परिवार।
शिशुपाल ...९७३–९७४
जन्म; कृष्ण का विद्वेष; शिशुपाल के अनाचार; कृष्ण की निंदा; शिशुपालवध; परिवार।
शुक वैयासकि ...९७५–९७६
जन्म; विद्याध्ययन; विरक्ति; भागवत का कथन; व्यास-शुक संवाद; शुक-निर्वाण; व्यास से तुलना।
शुक उशनस् ...९७६-९७७
दैत्यों का आचार्य; संजीवनीविद्या; बार्हस्पत्यशास्त्र; परिवार।
शुनःशेप आजीगर्ति ...९७८–९७९
हरिश्चंद्राख्यान; पौराणिक साहित्य में; शुनःशेपकथा का अन्वयार्थ।
शूर ...९८०–९८१
परिवार, अन्य पत्नियाँ।
शौनक गृत्समद .. ९८५–९८७
जन्मवृत्त; पौराणिक साहित्य में; कर्तृत्व; ऋग्वेद की अनुक्रमणी; गृहपति शौनक; प्रमुख ग्रंथ; अन्य ग्रंथ; व्याकरणशास्त्रकार; शिक्षाकार शौनक; तत्त्वज्ञानी शौनक; शिष्यपरंपरा।
श्वेतकेतु औद्दालकि आरुणेय ...९९५–९९७
निवासस्थान; कालनिर्णय; बाल्यकाल; विद्यार्जन; घमण्डिपन; 'तत्त्वमसि' उपदेश; यज्ञसंस्था का आचार्य; धर्मसूत्रों में; कामशास्त्र का प्रणयिता; महाभारत में; परिवार।
संवरण ...९९९–१०००
राज्य से पदच्युति; तपती से विवाह; परिवार।
संवर्त ...१०००
संवर्त स्मृति।
संवर्त आंगिरस ...१०००
वैदिक साहित्य में; बृहस्पति से ईर्ष्या; देवताओं पर प्रभाव; कुणप-आख्यान।
सगर ...१००१–१००२
जन्म; शिक्षा; पराक्रम; अश्वमेध यज्ञ; परिवार; पुत्र।
संजय गावल्गणि ...१००४–१००५
धृतराष्ट्र का प्रतिनिधित्व; धृतराष्ट्र को उपदेश; श्रीकृष्ण की महिमा; दिव्यदृष्टि की प्राप्ति; युद्ध वार्ता कथन; युद्ध में उपस्थिति; युद्धोपरांत; वनगमन।
सत्यकाम जाबाल १००७–१००८
जन्म; शिक्षा; ब्रह्मज्ञान की प्राप्ति; तत्त्वज्ञान; सृष्टि का आद्य आधिष्ठान; सत्यकाम-उपकोसल संवाद; अन्य निर्देश।
सत्यभामा १००९–१०१०
प्रासाद; सत्राजित् का वध; पारिजात वृक्ष की प्राप्ति; द्रौपदी से उपदेश; भोलापन; कृष्णनिर्वाण के पश्चात्; परिवार।
सत्यव्रत ...१०१३
तपस्या; मत्स्यावतार; आत्मज्ञान की प्राप्ति, सत्यव्रत-कथा का अन्वयार्थ।
सत्राजित् अथवा सत्राजित ...१०१४–१०१५
पूर्वजन्म; स्यमंतक मणि की प्राप्ति; श्रीकृष्ण पर चोरी का दोषारोपण; स्यमंतक मणि की खोज; कृष्ण-सत्यभामा विवाह; वध; शतधन्वन् का वध; निरुक्त में; परिवार।

सनत्कुमार ...१०१६-१०१८

ब्रह्ममानसपुत्र; गुणवर्णन; निवासस्थान; उपदेश-प्रदान; सात्वतधर्म का उपदेश; धृतराष्ट्र से उपदेश; पृथ्वी पर अवतार; तत्त्वज्ञान; 'भूमन्' तत्त्वज्ञान; ग्रन्थ।

सप्तर्षि ...१०१९-१०२०

सप्तर्षि कल्पना का विकास; ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी में; महाभारत में; दिशाओं के स्वामी।

संपाति ...१०२१-१०२२

इंद्र से युद्ध; सीताहरण; जटायुवध, परिवार।

सम्राज् ...१०२२-१०२३

वैदिक साहित्य में।

सरमा देवशुनी ...१०२३-१०२४

वैदिक साहित्य में; इंद्रदौत्य; पौराणिक साहित्य में; परिवार।

सवितृ ...१०२६-१०२७

उत्पत्ति; गुणवर्णन; स्वरूपवर्णन; पौराणिक साहित्य में; अनुचर; पत्नियाँ; परिवार; रूपकात्मक वर्णन।

सहदेव पांडव ...१०२८-१०२९

बाल्यकाल; दक्षिण दिग्विजय; द्यूतक्रीडा एवं वनवास; भारतीय युद्ध में; भारतीय युद्ध के पश्चात्; परिवार; ग्रंथ।

सात्यकि (युयुधान) ...१०३१-१०३४

स्वरूपवर्णन; विद्याव्यासंग; कृष्ण का सहायक; पाण्डवों का मित्र; पांडवों के वनवासकाल में; युद्ध का समर्थन; कौरवों की राजसभा में; भारतीय युद्ध में; द्रोण के सेनापत्यकाल में; कर्ण के सेनापत्यकाल में; भारतीय युद्ध के अठारहवें दिन; पराक्रम; भारतीय युद्ध के पश्चात्; मृत्यु, परिवार।

सात्वत ...१०३४

सात्वत धर्म।

साध्य ...१०३४-१०३५

पौराणिक साहित्य में; नामावलि; महाभारत में।

सांब ...१०३५-१०३६

जन्म; पराक्रम; लक्ष्मणाहरण; प्रभावती का हरण; दुर्वासस् का शाप; मौसलयुद्ध; सूर्योपासना।

सावित्री ...१०३९-१०४०

जन्म; विवाह; त्रिरात्रव्रत; यम से आशीर्वादप्राप्ति।

सीता वैदेही १०४२-१०४५

सतीत्व की साक्षात् प्रतिमा; स्वरूपवर्णन; भूमिजा सीता; जन्मसंबंधी अन्य आख्यायिकाएँ; सीतास्वयंवर; वनवासगमन; सीताहरण; हनुमत् से भेंट; अग्निपरीक्षा; राज्ञीपद; पुत्रजन्म; देहत्याग; चरित्रचित्रण; मानस में।

सुग्रीव १०४९-१०५१

वालिन् से शत्रुत्व; राम से मैत्री; वालिन्वध; लक्ष्मण का क्रोध; पश्चाताप; युद्ध की तैयारी; राम-रावण युद्ध में; राम का राज्याभिषेक; चरित्रचित्रण; सुग्रीवचरित्र के दोष; मानस में।

सुदास पैजवन ...१०५६-१०५७

नाम; पुरोहित; दाशराज्ञ युद्ध; विपक्षीय राजा; अन्य पराक्रम; परिवार।

सुशर्मन् त्रैगर्त प्रस्थलाधिपति ...१०७७-१०७८

विराट से युद्ध; भारतीय युद्ध में; संशप्तक योद्धा।

सूर्य ...१०८१-१०८२

सूर्यदेवता की कल्पना का उद्गम; सूर्य उपासना; सूर्य उपासना के ग्रंथ।

सृंजय ...१०८३

वैदिक साहित्य में; निवासस्थान; ऐतिहासिक निर्देश।

सोमक साहदेव्य (सार्ञ्जय) १०८५-१०८६

पौराणिक साहित्य में; पुत्र का नरमेध; मृत्यु के पश्चात्।

सोमदत्त ...१०८६

शिनि यादव से शत्रुत्व; भारतीय युद्ध।

सौति रोमहर्षणसुत ...१०८७-१०८८

महाभारत की परंपरा; महाभारत का विस्तार; महाभारत का कथन; महाभारत का प्रारंभ; महाभारत के उपलब्ध संस्करण; हरिवंश।

स्कंद ...१०९०-१०९२

जन्मकथा; महाभारत में; नामान्तर; अस्त्रप्राप्ति; तारकासुरवध; अन्य पराक्रम; ब्रह्मचर्यव्रत; परिवार; स्कंद के पार्षद; मातृका।

स्वायंभुव मनु ...१०९५-१०९६

राज्यविस्तार; पृथ्वी का सम्राट्; परिवार; जंबूद्वीप की जानकारी; पौराणिक साहित्य में।

हनुमत् अथवा हनूमत् ...१०९८-११०२

'हनुमत्' एक द्रविड शब्द; गुणवैशिष्ट्य; हनुमत्-देवता का मूल स्रोत; हनुमत्देवता का सद्यःस्वरूप; जन्म; नामान्तर; अस्त्रप्राप्ति; ऋषियों से शाप; सुग्रीव का मंत्री; संभाषणचातुर्य; सीताशोध; समुद्रोल्लंघन; अशोकवन में; सीता से भेंट; लंकादहन; सुग्रीव से भेंट; राम-रावण युद्ध में; अयोध्या में; ब्रह्मचर्य; चिरंजीवित्व; पांडित्य; परिवार; मानस में।

हयग्रीव ...११०३-११०४

स्वरूपवर्णन; वैदिक साहित्य में; पौराणिक साहित्य में; हयग्रीव असुर का वध; क्रमपाठ।

विषयसूचि

(इस सूचि में विशेष महत्त्वपूर्ण विषयों का ही केवळ अंतर्भाव किया गया है)।

अग्नि के तीन प्रकार—अन्वाहार्य; आहवनीय एवं गार्हपत्य (सत्यकाम जाबाल) १००८।

अयोनिसंभव (संतान)— स्त्रीगर्भ के विना जन्म हुई व्यक्ती (धृष्टद्युम्न, द्रोण; द्रौपदी) ३०७।

--अग्नि से (सीता) १०४३; यज्ञ से (द्रौपदी, धृष्टद्युम्न ३१०); कुंभ से (अगस्त्य, एवं वसिष्ठ) ८०८; जंघा से (और्व) १०५; द्रोण में से (द्रोण) ३०७; रक्तबिंदु से (अंधक, सीता) २३; १०४३; कान की मैल से (मधु-कैटभ) ६३०; अश्रुबिंदुओं से (बिंदुमती, मंगल) ५१० ५९६; घर्मबिंदु से (अंधक, मकरध्वज, मंगल, मधुकैटभ) २३; ५९६; ६०३।

--ब्रह्मा के शरीर के विभिन्न अवयवों से (विभिन्न पशु) ५२८–५२९; ब्रह्मा के वामांग से (शतरुपा) ९४०; मृत्तव्यक्ति के बाहिने हाथ एवं दाहिनी जंघा के मंथन से (पृथु वैन्य, निषाद) ९०७; मछली से (सत्यवती) १०११; सरस्वती नदी से (सारस्वत) १०३७।

अर्थस्य पुरुषो दासः—तात्त्विक अर्थ (भीष्म) ५७८

असुर संघ—कालकेय १३८; त्रिपुर २५२; वृत्र ८९७; सैंहिकेय १०८५।

अस्त्र—अग्नि अस्त्र (सगर) १००१; आग्नेय (और्व; द्रोण) १०५; ३०७; ऐषिक (अश्वत्थामन्) ८२;

--नारायण (अश्वत्थामन्, भीम) ४६; ५६२; ब्रह्म (रुक्मिन्, हनुमत्) ७५३; ११००;

--महावीर्य (वेदशिरस्) ९०६; मायावी (बभ्रुवाहन) ४३०; वारुण (भीम) ५६२; वैष्णव (भगदत्त) ५३४; सुदर्शन (इंद्रद्युम्न २.) ७५।

आख्यान--आख्यानकथन (लोमश) ७९०; कुणप-आख्यान (संवर्त आंगिरस) १००; यायात आख्यान (पूर्व एवं उत्तर) ६८०; वीरक आख्यान (वीरभद्र); शुनःशेप आख्यान (रोहित) ७७५; हरिश्चंद्र आख्यान (विश्वामित्र) ९७८।

आत्मसमर्पण--दधीचि २६४; यम वैवस्वत ६७५।

आत्मज्ञान (परमज्ञान) की प्राप्ति--गौतम बुद्ध ११२७; दत्त आत्रेय २६१; महावीर वर्धमान ११२०; याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६८९–६९०; वामदेव गौतम ८२५; शुक वैयासकि ९७५; सत्यकाम जाबाल १००७; सत्यव्रत १०१२।

आश्रमस्थान—जामदग्न्य ३९४; परशुराम ३९४; दत्त आत्रेय २६१; भृगु (भृगुतुंग) ५८७; लोमश ७९०; वसिष्ठ (वसिष्ठशिला; कृष्णशिला) ८०७; वामन ८२६; वाल्मीकि ८३३; विश्वामित्र ८७३; विश्रवस् ८६६; शतयूप ७०७।

आसुरी सांप्रदाय ८६१।

ऋग्वेद के सूक्त—आप्री सूक्त (विश्वेदेव) ८७७; नदी सूक्त (विश्वामित्र) ८७६; खिल सूक्त (वालखिल्य) ८२८; निद्रा सूक्त ८०९; महामृत्युंजय सूक्त ८०९।

ऋषिसमूह-- यायावर ६९४; वातरशन ८१९; वालखिल्य ८२८; विभिंदुकीय ८५४; विश्वसृज ८७०; वेदव्यास ९०६; वैखानस ९०८; स्वस्त्यात्रेय १०९५।

कामशास्त्रकार—बाभ्रव्य पांचाल ५०७; वात्स्यायन ८२०–८२२; वात्स्यायन के पूर्वाचार्य–कुचुमार; गोणिका-पुत्र; गोनर्दीय; घोटकमुख; चारायणाचार्य; दत्तका-चार्य; नंदिन् ८२१; श्वेतकेतु औद्दालकि ९९७।

कालगणना— पुराणों की १०६९–१०७०; ब्रह्मा की ५३।

कालनिर्णय—कालनिर्णयकोश ११६९-११८०; ग्रंथों का कालनिर्णय ११७२; व्यक्तियों का कालनिर्णय ११७८।

--कौटिलीय अर्थशास्त्र ८८९; पतंजलि ३८२; पाणिनि ४०६; भरत ५४३; मनुस्मृति ६१५; महाभारत १०८८; याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६८८;लगध ७८४; वात्स्यायन ८२१; वाल्मीकि रामायण ८३६; व्याडि दाक्षायण ९१६; श्वेत-केतु औद्दलकि आरुणेय ९९५।

कुलपांसन नरेश—अजबिंदु १३; अर्कज ५०१; जनमे-जय नीप (६.) २२; दुःशासन २७०; धारण ३२३; धौत-मूलक ३३२; पुरूरवस् (२.) ४३६; बाहु (३.) ५०९; वरप्र ७९७; विगाहन ८४०; शम (६.) ९४५; सहज १०२७; हयग्रीव ११०४।

कौटिलीय अर्थशास्त्र—चर्चित विषय ८८८; भाषाशैली ८८८; पूर्वाचार्य ८८८; कौटिलीय अर्थशास्त्र का प्रभाव ८८९; मेगॅस्थिनिस के इंडिका से तुलना ८८९।

क्षत्रिय ब्राह्मण—भार्गव वंशांतर्गत (भृगु वारुणि) ५८८।

गीता—अनुगीता (कृष्ण) १६३; ईश्वरगीता (व्यास) ९२७; उद्धवगीता (कृष्ण) १६३; गणेशगीता (गणपति) १८०; बोध्यगीता (बोध्य) ५२३; ब्रह्मगीता (रोमहर्षण) ७७३; भिक्षुगीता (हंस) १०९७; मंकिगीता (मंकि) ७९५; यमगीता (यम वैवस्वत) ६७६; विचख्नु गीता (विचख्नु) ४८०; व्यासगीता (व्यास) ९२७; शंकरगीता (परशुराम) ३९३; शंपाकगीता (शंपाक) ९४६; सूतगीता (रोमहर्षण) ७७३; सूर्यगीता (सूर्य) १०८२; हरीतगीता (हरित) ११०९; हंसगीता (हंस) १०९७।

गोत्रकार—अंगिरस् कुलोत्पन्न ११; अत्रि १७; कश्यप १२७; भृगु ५८९; वसिष्ठ ८०५; विश्वामित्र ८७५।

ग्रह—चंद्र २०२; बुध ५११-५१२; बृहस्पति ५१८ ५२०; मंगल ५९६; राहु (स्वर्भानु) ७४९; १०९५; शनि ९४३-९४४।

ग्रंथ—अथर्ववेद शिक्षा (मण्डूक) ५९८; अष्टाध्यायी (पाणिनि) ४०७-४०९; आपस्तंब कल्पसूत्र (आपस्तंब) ६०; आश्वलायन गृह्यसूत्र (आश्वलायन) ६७;

—ऐतरेय ब्राह्मण एवं ऐतरेय आरण्यक (महिदास ऐतरेय) ६३१; ऋग्वेद सर्वानुक्रमणी (शौनक) ९८५;

—काशिका (वामन एवं जयादित्य कृत) ४०९; कौटिलीय अर्थशास्त्र (विष्णुगुप्त चाणक्य) ८८९;

—चरक संहिता (चरक) २०७; छंदःशास्त्र (पिंगल) ४१७; जैमिनि अश्वमेध (जैमिनि) २३६; जैमिनि सूत्र (जैमिनि) २३६;

—पराशर स्मृति (पराशर) ३९७; पातंजल योगसूत्र (पतंजलि) ३८५; पारस्कर गृह्यसूत्र (पारस्कर) ४१४; प्राकृत प्रकाश (वररुचि) ७९७; पितामह स्मृति (पितामह) ४२२; पैप्पलाद (पिप्पलाद) ४२९; पौराणिक साहित्य (व्यास पाराशर्य) ९२५-९२७; फिट्सूत्र (शान्तनव) ९६२; ब्रह्मसूत्र (बादरायण) ५०५; बौधायन सूत्र (बौधायन) ५२४; भगवद्गीता (कृष्ण) १६३; भारतीय नाट्यशास्त्र (भरत मुनि) ५४१; मनुस्मृति (स्वायंभुव मनु) ६१३-६१५; महाभारत (व्यास पाराशर्य; वैशंपायन; सौति) ९१६; ९१२; १०८७; मैत्रि उपनिषद (मैत्रि) ६६४;

—वाक्यपदीय (भर्तृहरि) ५५२; वात्स्यायन कामसूत्र (वात्स्यायन) ८२१; वार्तिक (कात्यायन) १३२; वाल्मीकि रामायण (वाल्मीकि) ८३५-८३७; वास्तुशास्त्र (ब्रह्मन्) ५११;

—शालिहोत्र तंत्र (शालिहोत्र) ९६५; शुक्लयजुर्वेद; शतपथ ब्राह्मण एवं याज्ञवल्क्य स्मृति (याज्ञवल्क्य वाजसनेय) ६९२-६९३; शांखायन आरण्यक, उपनिषद, ब्राह्मण, संहिता ९५७; शाट्यायनि ब्राह्मण; श्वेताश्वतर उपनिषद (श्वेताश्वतर) ९४८; संग्रह (व्याडि) ९१६; सत्याषाढ श्रौतसूत्र १११२; सुश्रुत संहिता (सुश्रुत) १०७८; हरिवंश (सौति) १०८८।

ग्रन्थों के प्रामाणिक संस्करण—कौटिलीय अर्थशास्त्र ८८९; पतंजलि महाभाष्य ३८५; महाभारत १०८८।

चक्रवर्तिन् सम्राट्—२०१; पृथु वैन्य ४४२-४५२; मांधातृ यौवनाश्व ६४३; ययाति ६८१; युधिष्ठिर ६९६; सगर १००१।

चरित्रदोष—भीष्म ५७७-५७९; राम दाशरथि ७२९; सुग्रीव १०५०।

जैन धर्म—महावीर वर्धमान जीवनचरित्र १११९; प्रथम समवशरणसभा ११२०; शिष्यशाखा ११२०; आचार संहिता ११२१; बौद्धधर्म से तुलना ११२३; परंपरा ११२२; सांप्रदाय ११२२।

जैनधर्म ग्रंथ—महावीरकृत जैनसूत्र-११२२; ११७४।

छन्दःशास्त्रज्ञ—पिंगल ४१७; वैयास्क ९११।

ज्योतिषशास्त्रकार—गर्ग १८५; पराशर ३९८; भागुरि ५५५; अन्य ज्योतिषशास्त्रकार ३९८; ज्योतिषशास्त्र के पूर्वाचार्य ३९८।

तत्त्वज्ञान—अजित केशिकंबलिन् (उच्छेदवाद) १११७;

—कृष्ण १६२; गोशाल मंखलिपुत्त (संसारविशुद्धि-तत्त्वज्ञान) १११७; गौतमबुद्ध ११२८;

—चार्वाक २०९;

—पकुध काच्चायन (अशाश्वतवाद) ११२८; पूरण कस्सप (अक्रियावाद) १११८; पतंजलि (योगदर्शन) ३८६; पंचशिख (सांख्य तत्त्वज्ञान) ३८०; पिप्पलाद ४२६; पैंग्य (पैंग्य मत) ४५५; प्रतर्दन ४६७; बक दाल्भ्य ४८७; भृगु ७८७; महावीर वर्धमान (अनेकान्तवाद, क्रियावाद) ११२१; मंकि ५९५;

—याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६९०-६९१; रैक्व सयुग्वा ७७०; विदुर (विदुरनीति) ८४५; वृत्र ८९८; व्यास पाराशर्य ९२९;

--शांडिल्य ९६०; शौनक (तत्त्वमासि तत्त्वज्ञान)९८७; सनत्कुमार (भूमन् तत्त्वज्ञान) १०१८; सात्वत (सात्वत धर्म) १०३४; सुपर्ण (त्रिसौपर्ण धर्म) १०६३; सुलभा १०७४।

तिथिनिर्णय—भारतीय युद्ध ७०८; राम-रावण युद्ध ७३७-७३८।

तीर्थयात्रा--अर्जुन ३६; धौम्य ३३३; बलराम ४९४; युधिष्ठिर ६९९; लोमश ७८९; विदुर ८४५।

तीर्थस्थान--गयाशिरस् १८२; ज्योतिलिंग २३७; देवीपीट ३०२; पृथूदक तीर्थ (सिंधुद्वीप) १०४२; प्रभासक्षेत्र (ब्रह्मन का यज्ञस्थान) ५२९; बौद्धधर्म के तीर्थस्थान ११२९; मातृतीर्थ (रेणुकातीर्थ) ३९१; वराहस्थान ७९९; वामनस्थान ८२६; विष्णु के तीर्थस्थान ८७९-८८७; व्यासस्थल ९१६; ९२९; शक्तिपीठ ३०१; समन्तपंचक क्षेत्र १०८८;

त्रिपुर--उत्पत्ति (इंद्र) ६९; विनाश (त्रिपुर) २५२।

दानशूरता—विभिंदु ८५३; वृषदर्भ ९०१; वृषादर्भि शैब्य ९०३; शिवि औशीनर ९७१; श्रुतवर्मन् तार्क्ष ९९२।

दाशराज्ञयुद्ध--१०५६; विपक्षीय राजाओं की नामावलि १०५६।

द्वयामुष्यायण--दो वंशों के पिताओं का पुत्र (भरद्वाज) ५५०।

दिग्विजय—अर्जुन (उत्तर) ३७; कर्ण (उत्तर) ११९; नकुल ३३८; भीमसेन (पूर्व) ५६३; रावण ७४५; सहदेव (दक्षिण) १०२८; सिकंदर ११३५-११३८।

देवता--जो वैदिक, पौराणिक एवं स्त्री देवता इन तीन उपविभागों में विभाजित हैः—

--(१) वैदिकदेवता—अग्नि ५-६; अश्विनि ४८; आदित्य ५८; इंद्र ६८-७३; त्रित २५१; पूषन् ४४६-४४७; प्रजापति ४६१-४६५; प्रजापतियों की संख्या एवं नामावली ४६५; बृहस्पति ५१८-५२०; भग ५३२; मन्यु ६१८; मरुत् ६२२-६२५; मातरिश्वन् ६३८; मित्र ६५२; वरुण ७९९-८०२; वायु ८२६; विवस्वत् ८२६; सवितृ १०२६; सूर्य १०८१।

—(२) अन्यदेवता-दत्त आत्रेय २६१-२६२; कृष्ण १५८-१६४; परशुराम जामदग्न्य ३८८-३९४; पितर ४१९-४२२; ब्रह्मन् ५२६-५३१; भैरव ५९१; राम दाशरथि ७२५-७४२; रुद्र-शिव ७५४-७६६; वामन ८२५-८२६; विष्णु ८७९-८८७; शनि ९४३-९४४; हनुमत् १०९८-११०२।

(३) स्त्रीदेवता—देवी ३००-३०३; मातृका ६३८-६३९; रात्रि ७२२; राधा ७२२-७२४; विद्या ८४९; लक्ष्मी ७२१-७२४।

देवता उपासना--देवता कल्पना की उत्क्रांति (रुद्र-शिव, विष्णु) ७६१; ८८३;

--(१) ज्योतिर्लिंग उपासना २३७-२३९; ज्योतिर्लिंग स्थान २३८-२३९ (रुद्र-शिव देखिये); महाकाल ६२७; भीमशंकर ५६०।

--(२) दत्त आत्रेय--आत्मज्ञान एवं शिष्यपरंपरा २६१; दत्त आश्रम २६१; दत्त जन्मकाल २६२; दत्त-मत प्रतिपादक ग्रंथ २६२; दत्त सांप्रदाय २६२।

—(३) देवी उपासना--तात्त्विक पार्श्वभूमि ३००; देवीपीठ ३०२-३०३; शक्तिपीठ ९३३;

—(४) नृसिंह उपासना—३७५-३७६; नृसिंह स्थान ३७६।

—(५) परशुराम-परशुराम के स्थान ३९४; परशुराम-जयन्ति ३९४; परशुराम सांप्रदाय के ग्रंथ ३९४; परशुराम शक ३९४।

--(६) राम दाशरथि--रामभक्ति सांप्रदाय ७४०; राम भक्ति से प्रभावित उपनिषद ग्रंथ ७४०; रामभक्ति का विकास ७४०; सांप्रदायिक रामायण ग्रंथ ७४०; बौद्ध एवं जैन वाङ्मय में रामकथा ७४१; आधुनिक भारतीय भाषाओं में रामकथा ७४१।

—(७) रुद्र-शिव—शिवदेवता की उत्क्रान्ति ७६१; शिव के अवतार ७६३; शिव उपासना के सांप्रदाय ७६४-७६५; शिवरात्री ७६५; शिव उपासना के ग्रंथ ७६५ (ज्योतिर्लिंग देखिये)।

--(८) वामन ९८४;

--(९) विष्णु—विष्णु उपासना के तीन स्रोत ८८२; विष्णु देवता की उत्क्रान्ति ८८३; विष्णु की उपासना ८८४; विष्णु के अवतारों की नामावलि ८८४ (विष्णु के अवतार देखिये); विष्णु सांप्रदाय के ग्रंथ ८८६; विष्णु के तीर्थस्थान ८८७; कई प्रमुख वैष्णव सांप्रदाय ८८७।

--(१०) वीरभद्र—८२६;

—(११) वेंकटेश उपासना—९०४-९०५।

—(१२) सूर्य--सप्तसूर्य १०८१; सूर्य देवता की कल्पना का उद्गम १०८२; सूर्योपासना १०८२; सूर्य उपासना के ग्रंथ १०८२।

-(१३) हनुमत्-गुणवैशिष्ट्य १०९८; हनुमत् देवता का मूल स्रोत१०९८; हनुमत् देवता का सद्यःस्वरूप १०९८।

देवतासमूह—आदित्य (ग्यारह) ९८; तुषित २४८; पितर ४४९; प्रजापति (इक्कीस) ६२१; याम ६९३; यूथग ७१०; योगेश्वर ७१०; वशवर्तिन् ८०३; वसु (अष्ट) ८११-८१३; वातस्कंध ८२०; विश्वेदेव ८७७; साध्य १०३४-१०३५; सप्तर्षि १०१९; सूर्य (सप्त) १०८१।

देवासुर-संग्राम—द्वादश देवासुर संग्राम २९१; इंद्र-वृत्रयुद्ध ८९६-८९७; इंद्र-बलियुद्ध (समुद्रमंथन के पश्चात्) ४९८; स्कंदतारकासुर-युद्ध १०९१।

देश,लोकसमूह अथवा जातिसमूह-जो वैदिक,पाणिनिकालीन, सर्वसामान्य एवं सिकंदरकालीन, इन चार उपविभागों में विभाजित हैं:—

--(१) पाणिनिकालीन लोकसमूह—४०८;

--(२) वैदिक लोकसमूह—अनु २१; तृत्सु २४९; द्रुह्यु ३०६; पक्थ ३७०; पंचजन ३७८; पंचाल ३८०; पणि ३८१; पारावत ४१४; पूरु ४४४; बाह्लिक ५०२; भरत ५४०; मूजवन्त् ६५८; यक्षु ६७०; यति ६७१; यमक ६७७;

--यौगंधर ७१०; रथकार ७१७; वारशिख ७९८; विषाणिन् ८७८; वृचिवत् ८९६; वैकरण ९०८; वैतहव्य ९०९; शांडिल ८९५; शिवि ९६९;

--(३) सिकंदरकालीन लोकसमूह--अभिसार ११३२; अंबष्ठ ११३२; आग्रेय ११३२; आश्वकायन ११३३; आश्वायन ११३३;कठ ११३३; केकय ११३३; क्षतृ (क्षुद्रक) ११३३; गांधार (पश्चिम) ११३४; गांधार (पूर्व) ११३४; ग्लुचुकायन ११३४; नुसा ११३४; पातानप्रस्थ ११३४; ब्राह्मणक ११३४; मद्र ११३४; मालव ११३४; मूचिकर्ण ११३४; वसाति ११३५; शकस्थान ११३; शिबि ११३५; सुग्ध ११३८; सौभूति ११३८; हरउवती ११३८।

--(४) सर्वसामान्य लोकसमूह--अश्व (विश्वामित्र) ९७०; आंध्र (मनु) ६९५; आभीर (अष्टावक्र)४°; उत्सवसंकेत ३३२; कांबोज (मनु) ६०५; किरात (विश्वामित्र) ९७०; कुरु (कुरु ३.) १५१; कोल्लगिरेय (अर्जुन) ३५; कोलि (गरुड) १८३; गज (इरावती २.) ७६; ग्रामणीय (नकुल) ३३२; चीन (मनु) ६११; जालंधरायण २३४;

--दस्यु (कायव्य) १३४; द्रविड (मनु) ६११; द्वारपाल (नकुल) ३३८; नाग (कायव्य) १३४; नैमिषीय ३७७; पक्थ (शिष्ट) ९७४; पटच्चर ३८१; पन्नग १४०; परशु ४०३; पह्लव (नकुल, विश्वामित्र) ३३८; ९७०; पांचाल ४०४; पारद ४१३; पुण्ड्र ९७०; पुलिंद ९७०; पौरवक ४५८; प्रियमेध (कर्ण, नकुल, भीम) ११७; ३३८; ५६१;

--भग (निशुंभ) ३६८; मगध ५९४; मत्तमयूर ५९९; मत्स्य ६००-६०१; मत्स्याहारिन् ३३८; मद्र ६०२; मलद ७२६; महीषक ६३४; मावेल्लक ६३४; मालव ६४९; मार्तिकावत ६४९; मावेल्लक ६५१; मेकल ६६१; मूतिब (विश्वामित्र) ९७०;

--यमक ६७७; यवन (नकुल; मनु, विश्वामित्र) ६८३; ३३८; ६०५; ९७०; याद्व ६९३; रामठ ७४२; रोमक ७७१; रोहीतक ७७५; लंपाक ७८४; ललाटाक्ष ७८५;

--वर्मक ८०३; वश ८०३; वाहीक ८३८; विदर्भ (४.) ८४३; विषाणिन् (शिष्ट) ९७४; वैकर्ण ९०८; व्याध (एकलव्य) १००; शबर ९४४; शिवि ९६९;

--शक (नकुल, भीम, मनु) ३३८; ५६१; ६०५; शबर (विश्वामित्र) ९७०; शिवि ९६९; शिव (शिष्ट ९७४) शूद्र (नकुल) ३३२; श्रोणिमत् (भीम) ५६९; सप्तसिंधु १०२०; सारस्वत १०३८; साल्व १०३८; सिंहल १०४०; सिंधु १०४२; सुमित्र १०६९; सोमवेय (भीम) ५६१; सौदन्ति (विश्वामित्र) ९७५;

—हारहूण (नकुल) ३३८; हैहय (और्व) १०४

धनुष—गांडीव (अर्जुन) ५७; माहेंद्र (युधिष्ठिर) ५७; विजय (रुक्मिन्) ७५३; वायव्य (भीमसेन) ५६१।

धर्मशास्त्र—मनु स्वायंभुव के द्वारा धर्मशास्त्र का निर्माण ६१४; मानवधर्मशास्त्र का पुनर्संस्करण ६४०; मनुस्मृति की विषयानुक्रमणिका ६१४।

धर्मशास्त्रकार—अंगिरस् ११, उशनस् ९१; नारद ३६५; पराशर ३९७; पितामह ४२२; पुलस्त्य ४३८; पैठीनसि ४५५; प्रचेतस् ४६०; प्रजापति ४६५; बुध ५१२; भरद्वाज ५५१; भागुरि ५९५; मनु स्वायंभुव (मनुस्मृति) ६१३; यम वैवस्वत ६७७; याज्ञवल्क्य ६९३; शंख ९३६; व्यास ९१६; विश्वामित्र ८७६।

निःक्षत्रिय पृथ्वी (परशुराम-हैहय संग्राम) ३८९-३९२; हैहयों से शत्रुत्व ३८९; युद्ध ३९०; कार्तवीर्यवध ३९०; जमदग्निवध ३९०; हैहयविनाश ३९१; निःक्षत्रिय पृथ्वी ३९१; अश्वमेध यज्ञ ३९२; नया हत्याकांड ३९२; हत्याकांड से बचे हुए क्षत्रिय ३९२; परशुरामकथा का अन्वयार्थ ३९२;

--हत्याकांड की समाप्ति, एवं परशुराम के द्वारा शूर्पारक देश की स्थापना (३९२)।

नियोगज संतति--८४१; धृतराष्ट्र ३२५; पाण्डु ४१०; हीनकुलीनत्व (विदुर) ८४४।

निर्वाण--अश्वत्थ वृक्ष के नीचे निर्वाण (कृष्ण) १६२; कुशीनगर के शालवन में महापरिनिर्वाण (गौतम बुद्ध) ११२८; पृथ्वी के विवर में प्रवेश (सीता) १०४५; महाप्रस्थान के समय देहपतन (अर्जुन, द्रौपदी, भीमसेन, नकुल एवं सहदेव) ७०७; युधिष्ठिर के दृष्टि में दृष्टि मिला कर निर्वाण (विदुर) ८४६; युद्धभूमि पर मृत्यु (कर्ण, दुर्योधन, रावण) १२१; २८४; ७४७–७४८; योगिक मार्ग से देहत्याग (बलराम) ४९५; वायुलोक से सूर्यलोक में प्रवेश (शुक) ९७६; शरशय्या पर देहत्याग (भीष्म) ५७७; सदेह स्वर्गारोहण (सत्यव्रत त्रिशंकु, युधिष्ठिर) २५४–२५५; ७०७।

निवासस्थान--यम वैवस्वत ६७४; रावण दशग्रीव (लंका) ७३५; रुद्र-शिव ७५५; लक्ष्मी ७८२; लगध ७८४; वरुण ८००; विवस्वत् ८६२; विष्णु ८७९; वृत्र; ९६; श्वेतकेतु औद्दालकि ९९५; संजय १०८३।

पक्षी--अरुण ३३; गरुड १८२–१८५; जटायु २१८; तार्क्ष्य २४४; भारुंड (पक्षीसमूह) ५५७; संपाति १०२१।

पतंजलि का व्याकरणशास्त्र--३८३–३८५; शुद्ध उच्चारण का महत्त्व ३८४; पूर्वाचार्य ३८४; टीकाकार ३८४; महाभाष्य का पुनरुद्धार ३८५; अन्य ग्रन्थ ३८५।

पाणिनि का व्याकरणशास्त्र--४०६–४०९; पूर्वाचार्य ४०६; पाणिनि का समन्वयवाद; ४०८; लोकजीवन ४०८; पाणिनिकालीन भूगोल ४०८; सिक्के ४०९; परिमाणदर्शक शब्द ४०९;

—पाणिनि की अष्टाध्यायी ४०७; अष्टाध्यायी के वार्तिककार ४०९; अष्टाध्यायी के वृत्तिकार ४०९; पाणिनि के अन्य व्याकरणग्रन्थ ४०९।

पूर्वाचार्य--चाणक्य (कौटिलीय अर्थशास्त्र) ८८८; पतंजलि (व्याकरण महाभाष्य) ३८३; पाणिनि (अष्टाध्यायी) ४०६; ४०९; यास्क (निरुक्त) ६९४; लाट्यायन (श्रौतसूत्र) ७८६; वात्स्यायन (कामसूत्र) ८२१।

पृथ्वी का पहला राजा—पृथु वैन्य ४४९–४५१; पृथ्वीदोहन ४४९; पृथु की राजप्रतिज्ञा ४५१।

—२. यम वैवस्वत ६७४।

पृथ्वीदोहन--पृथु वैन्यकृत ४४९; पृथ्वीदोहन की अन्य कथाएँ ४५०।

पौराणिक काल—व्याख्या ४०१; कलियुग का प्रारंभ ११५२।

पौराणिक साहित्य—परिचय ७२५–९२७; पुराणों का आद्यप्रवर्तक (व्यास) ९२५; आद्यनिवेदक—रोमहर्षण सूत ७७२; विभिन्न प्रकार ९२५; चर्चित विषय ९२५; श्लोक-संख्या ९२५; वक्ता ९२५; महापुराणों की तालिका ९२६; उपपुराणों की नामावलि ९२६; देवतानुसार पृथक्करण ९२७; व्यास की पुराणशिष्यपरंपरा ९२७; निर्दिष्ट राजवंश ११३९–११५६; निर्दिष्ट राजा ११६६; निर्दिष्ट ऋषिवंश ११६७।

पौराणिक नामों की व्युत्पत्ति-अगस्त्य४; अपोद (धौम्य) ३३३; आंस्तीक ६५; गालव; (विश्वामित्र) ८७०; ८७१; वेंकटेश (वेंकटेश) ९७४।

पूषन् ४४८; प्रातिसुत्वन् ४७०; बृहस्पति ५१८; भृगु ५८५; मरुत् मार्तांड ६४९; मिथि जनक ६५३; मुद्गवाच् ६६०; मेदिनी ६५२; यायावर ६९४, रावण ७४३; वरुण ८०१; विवस्वत् ८६३; विष्णु ८८१; वृत्र ८९७; हनुमत् १०९९।

पौराणिक कथाओं का अन्वायार्थ-अहिल्या ५३; परशुराम जामदग्न्य ३९२; परिक्षित् ४०१; पितृकन्या ४२२; पृथु वैन्य ४४९; बलि वैरोचन ४९७; बाण ५०५;भगीरथ ५३५; मत्स्य ६००; वराह ७९९; वरुण ८००; वामन १२६; विवस्वत् ८६३; सत्यव्रत १०१२; सीता (भूमिजा) १०४३।

'प्रतिग्रह' का दोषारोप—(बुडिल आश्वतराश्वि) ५११।

प्रमुख यज्ञ--द्वादशवर्षीय सत्र (नैमिषारण्य) ७३३; ब्रह्मन् का यज्ञ (प्रभास क्षेत्र) ५२९; बलि वैरोचन का यज्ञ (भृगुकच्छ) ४९९; जनमेजय का सर्पसत्र (हस्तिनापुर) २१९–२२२।

प्राणिसृष्टि--कश्यप की संतान १२९; पक्षी—स्तंबमित्र शार्ङ्ग १०९२; हाथी-ऐरावत १०२;सुप्रतीक १०६४; –गाय—कामधेनु; (सुरभि) १०७२; नाग–धृतराष्ट्र ३२८; वासुकि ८३८।

प्राचीन कालगणनापद्धति—११६९–११७२; युगगणना पद्धति ११६९; ब्रह्मा का एक दिन ११६९; आधुनिक उपपत्ति ११६९; मन्वन्तर कालगणनापद्धति ११७०; कल्पों की नामावलि ११७१; सप्तर्षियुग की कल्पना ११७१।

ब्राह्मण जातिसमूह--जातूकर्ण्य ८०५; भृगु (भार्गवगण) ५८८; रथीतर ७१८; रहूगण ७२०; विभिंदुकीय ८५४; व्यश्व ९१४; हिरण्यकेशिन् १११२।

ब्राह्मण शाखा--काण्वायन ६६२; चरक ६४७; मैत्रेय ६६६।

बौद्धधर्म-गौतमबुद्ध का जीवनचरित्र ११२४; बुद्धों की नामावलि ११२४; प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय ११२८; तत्त्वज्ञान ११२८; बौद्ध धर्म के प्रसारक ११२९; बौद्ध धर्म के प्रमुख तीर्थस्थान ११२९; बौद्धधर्म ग्रन्थ-त्रिपिटक ११२४।

भारतीय युद्ध--५६६-६७०; ७०१ ७०६; कृष्णदौत्य ७०१; पांडव पक्ष के देश ७०१; कौरवपक्ष के देश ७०२; कौरव एवं पांडवसेना का बलाबल ५७५-५७६; सांख्यिक बल ७०३; युद्धशिबिर ७०३; सेनाप्रमुख एवं सेनापति ७०३; युद्ध का प्रारंभ ७०४; प्रथम दिन से अठारहवें दिन तक का युद्धवृत्तांत ५६६-५७०; युद्ध से बचे हुए वीर ७०५।

भौगोलिक स्थान--जिनमें निम्नलिखित विभाग प्रमुख है :--

--(१) द्वीप--पृथ्वी के सात द्वीप, एवं उनका संभाव्य आधुनिकस्थान १०९६; सागरोपद्वीप (सगर) १००२;

--(२) वर्ष--जंबूद्वीप के सात वर्ष (इलावृत; रम्यक हिरण्य; कुरु, भद्राश्व, किंपुरुष, नाभि) १०९६;

--(३) देश-(देश, लोकसमूह, एवं गणराज्य देखिये)।

--(४) नगर--मथुरा-९४२; लंका- ७३५; वैजयंत-३६१; वैशाली ८६४; श्रावस्ति ९९०; सांची १००१।

--(५) पर्वत--गृध्रकूट ५१७; हिमवत् १११०।

मन्वंतर-मानव जाति का पिता-मनु आदिपुरुष ६०५; मन्वंतरों का निर्माण ६८६१; चौदह मन्वंतर ६०६; पाठभेद-६०७; विभिन्न मन्वंतरों के मनु, ऋषि, इंद्र आदि की जानकारी (६०७-६१०)।

मंत्र--अश्लील (अभ्यग्नि ऐतशायन) २७; अष्टाक्षर (जय-विजय) २२७; उत्कर्ष (वसिष्ठ वैडव) ८१०; कन्या प्राप्ति (श्राद्धदेव) ९८९; गर्भाधान (आत्रेय) ५७;

--तीन अक्षरी (सुवर्ण २.) १०७५; दीर्घायुष्य (वत्सप्रि मार्कंदन) ७९४; पठण (औपमन्यव) १०४; पारीक्षित (परीक्षित) ३९९;

--भूतप्रेत (कश्यप) १३१; भैरव (भैरव १.) ५९१; मोक्ष (प्रगाथ) ४५९; (काण्व) १३१; मतभेद (भस्मासुर) ५५४; महामृत्युंजय (१ वसिष्ठ) ८०६; राम (वाल्मीकि) ८३३; वाग्भव (औत्तम; चाक्षुष) १०३; २०८;

--शांति (उपरि बभ्रव; कांकायन; कौरुपथि; जाटिकायन) ८८; १३१; १६९; २३२; शिव (दाशार्ह) २७०; शिवपंचाक्षर (धुंधुमूक) ३२४; शिवषडक्षर (धुंधुमूक) ३२४; षडक्षर (जमदग्नि) ३२३; संजीवनी (उलूपी; कच भृगु २.) ५८५; सामर्थ्य (परुच्छेद दैवोदासि) ४०२।

महाभारत--प्रणयन (व्यास, वैशंपायन; सौति) ९२७; ९१२; १०८८; महाभारत के पर्व एवं उपपर्व ९२८; व्यास की महाभारतशिष्यपरंपरा ९२९; महाभारत का खिलपर्व (हरिवंश) ९२८;

--प्रमुख उपपर्व--आस्तीकपर्व (वैशंपायन) ९१२; प्रजागरपर्व (विदुर) ८४५; मार्कंडेयसमस्यापर्व (मार्कंडेय) ६४८; शुकानुप्रश्न (शुक) ५७६।

मानव (मनुष्येतर) जातिसमूह--गंधर्व १८२; देव २९०-२९२; दैत्य ३०३; नाग ३५७-३५८; पिशाच ४२६-४२८; भूत ५८०; मरुत् ६२४; यक्ष ६६९; रक्षस् ७११-७१४; वानर ८२२-८२४; विद्याधर ८४९; वैताल ९०५; सर्प १२२४;

--मानवेतर वंश ११५५।

मानस में प्राप्त चरित्रचित्रण--भरत दाशरथि ५४७; राम दाशरथि ७४०; रावण दाशग्रीव ७४८; लक्ष्मण ७४०; सीता १०४५; सुमित्रा १०६९; हनुमत् ११०२;

माहात्म्य--अन्नदान (रतिविदग्धा) ७१६; अरुणाचल (नंदिन्; पार्वती; वज्रांगद) ३४४; ४१५; ७९३; आकाशदीप (वालखिल्य) ८२९;

--एकादशी--अधिक माह की एकादशी (जयशर्मन्) २३८; कार्तिकी एकादशी (अंबरीष) २८; जया एकादशी (माल्यवत्; पुष्पदंती) ६५१; ४४२; पापमोचनी एकादशी (मेधाविन्) ६६३; रमा एकादशी (शोभन) ९८५; विजया एकादशी (बक दाल्भ्य) ४८८; सफला एकादशी (लुंपक) ७८७;

--कमल (लोमश, पुष्पवाहन) ४४२; ७८९; कार्तिक (देवशर्मन्) २९८; काशी (दमन) २६५; क्षीरकुण्ड (मुद्गल) ६५७;

--गंगामहात्म्य (पद्मावती) ३८७; मही ६३३; रत्नाकर ७१६; वसु (३६.) ८१६; सागर १००२; सत्यधर्मन् १००९;

--गया नदी (युगादिदेव) ६९५;

--गीतामाहात्म्य--कुशीबल १५४; खड्गधर १७७; चंद्रशर्मन् (२.) २०४; ज्ञानश्रुति २३७; दुःशासना (२.) २७७; देवशर्मन् (६.) २९८; धीरधी ३२३; पिंगल (६.) ४८८; बटु ४८८; माधव (६.) ६४१; मित्रवत् ६५३; शंकुकर्ण (९.) ९३५; सरभभेरुंड १०२३; सरो-

जवदना १०२४; सिद्धसमाधि १०४१; सुकर्मन् (१.) १०४६; सुनंद (२.) १०६०; सुशर्मन् (४.) १०७७;
—गोमाहात्म्य—(कल्माषपाद; च्यवन) १२५; २१५; गोदान (नचिकेतस्) ३४१;
--गौतमीमाहात्म्य(शूरसेन) ९८१; गौरीव्रत (इंद्राणी) ७६; चिताभस्ममाहात्म्य (शबर २.) ९४४;
—तुलसीमाहात्म्य (धर्मदत्त १; पवित्र १; मक्षक; शबर ३.); ३१९; ४०४; ५३२; ९४४; त्रितकूप (त्रित) २५२; दीप (निष्ठुर १.) ३७२; दीपदान (बुध १०; वृद्ध गार्ग्य) ५१३; ८९९; देवी भागवत (लोमश १.) ७९०; नदी (गौतम) १८५; पितापितृमाहात्म्य (नरोत्तम) ३४९; पातिव्रत्य (इंद्र; कौशिक) ७३; १७०; पादत्राण (शंख २.) ९३७; प्रयाग (मार्कंडेय) ६४८; ब्राह्मण (इंद्र) ६८; ७३; भागवत (वज्रनाभ ४.) ७९३; भूमिदान (भद्रमति) ५३८; माहेश्वरव्रत (शारदा २.) ९६४; मातृस्नान (कार्तवीर्य); भद्रक (हारीत ७.) १३५; ५३७; ११०९;
--रामनाममाहात्म्य-- (अरिष्टनेमि; जीवंती) ३२; २३५; रुद्र (आलंबायन) ६३; वाराणसी तीर्थ (वंजुल) ७९३; वेतसी-वेत्रवती संगम (धरापाल) ३१७; वैशाख (कीर्तिमत्; रुपवती; शंख २.) १४३; ७६८; ९३७; व्याघ्रेश्वर (दुंदुभि निह्राद) २७८;
--शमीमाहात्म्य (पिंगल ९.) ४१८; शिवभक्ति (भद्रसार ३.) ५३८; शिवसहस्रनाम (तंडि) २४०; संगमस्नान (विदुर) ८४६; सत्यनारायण (लीलावती) ७८७; सरस्वती बीजमंत्र (सत्यतपस्) १००८; साभ्रमती (गंगा; विकर्तन) १७९; ८३९; सूर्योपासना (कौथुमि; भद्रेश्वर) १६९; ५३० ।
मुख—अश्वमुख (हयग्रीव) ११०३; चतुर्मुख (ब्रह्मन्) ५२७; वानरमुख (हनुमत्) १०१९; षण्मुख (स्कंद) १०९०;
मेगॅस्थिनिस कृत इंडिका—कौटिलीय अर्थशास्त्र से तुलना ८८८ ।
यज्ञविशेष— अग्निचयन (कालकंज, शांडिल्यायन, सीरध्वज) १३७,९६१,१०४६; अग्निष्टोम (इंद्रजित् भंगास्वन) ७३; ५३६; अंसुग्रह (राम औपतस्विनि) ७२४; अतिरात्र(मौवायन) ५९३; अभिचार (भद्रसेन आजातशत्रव) ५३९;
—अश्वमेध (अंबष्ठ्य, इंद्रद्युम्न, इंद्रजित्, जनमेजय पारिक्षित, त्रसदस्यु पौरुकुत्स, जनक दैवराति, नल, बलि वैरोचन, बाहु, भरत दौःषन्ति, मरुत्त आविक्षित, मित्रसह कल्माषपाद, युधिष्ठिर, राम दाशरथि, वसुदेव, विजिताश्व, शर्यात मानव, श्विक्न, सगर, सुदास पैजवन) ६१;७५; ७३; २२१; २५०; २९४; ३०४; ३५०; ४९९; ५०९; ५४७; ६२५; १२४; ७०७; ७३६; ८४२; ९५०;९९९; १००१; १०५६; अश्वमेध यज्ञ का शास्त्रार्थ (मुंडिभ–औदन्य) ६५६; एकोनपंचाशद्रात्र याग (वसिष्ठ मैत्रावरुणि) ८०९; गोमेध (इंद्रजित्) ७३; गोवर्धन याग (इंद्र) १६;
--चतुरात्रयाग-(अत्रि जमदग्नि) १६; २२२; ज्योतिष्टोम याग-(अरुंधती, मेधातिथि) २०; ३४; ६६२; तृष्टोम क्षत्रधृति यज्ञ (वृद्धद्युम्न आभिप्रतारिण) ८९९; दाशरात्र याग– (उदंक शौल्बायन) ८३;
--सप्तरात्र याग-(कुसुरुबिंदु औद्दालकि) २५५; दाक्षायण याग-(देवभाग श्रौतर्ष, सहदेव सार्ञ्जय) २९३, १०२९; द्विरात्रयाग-(कपिवन मौवायन, चित्ररथ) ११५, २११; धनुर्याग-(कंस, कूट, चाणूर) १०७; २५५,२०९; नरमेध (शुनःशेप, सोमक साहदेव्य) ९७८; १०८६; नवमास यज्ञ (नवग्व) ३५५; नेत्रपात्ति यज्ञ (रजन कोणेय) ७१५; पंचरात्र याग (शौचेय सार्वसेनि) ९८५;
—पुत्रकामेष्टि यज्ञ (इल; जनक; दशरथ; दिवोदास) ७७; २२०; ७२६; २७२; बहुसुवर्णक यज्ञ (इंद्रजित्) ७३; माहेश्वर याग (इंद्रजित्) ७३ ।
--राजसूय यज्ञ (इंद्रजित्, कृष्ण, जैत्रायण सहोजित; मांधातृ, युधिष्ठिर, हरिश्चंद्र) ७३; १६१; २३५; ६४३; ६९७; २२२; वक्तृत्त्व याग (बव्र प्रावाहणि) ४२९; वाजपेय यज्ञ (औपावि जानश्रुतेय; सीरध्वज) १०४; १०४६; विश्वजित् यज्ञ (बक दाल्भ्य; बलि वैरोचन; रघु) ४८७; ४९८; ७१४; वैष्णव यज्ञ(इंद्रजित् , मुद्गल) ७३; ६५७ ।
—शमनीचमेढ्र (कुषीतक सामश्रवस्) १५५; स्तोम (शुनस्कर्ण बाष्किह) ९७९; शांत्युदक (युवन् कौशिक) ७०९; सर्वमेध यज्ञ (विश्वकर्मन) ८६७; सप्तरात्रयाग (कुसुरुबिंद औद्दालकि, ऋतुजित जानकि) १५५; १७३; सोमयाग (वम्र, श्यापर्णा) ७९६; ९८७, सौत्रामणि (दुष्टरितु पौंस्यायन) २८७; संततिदायी यज्ञ (वीतहव्य श्रायस) ८९१) ।
युद्ध—इंद्र-बलिसंग्राम (बलि वैरोचन) ४९८; तारकासुरसंग्राम (स्कंद) १०९१; त्रिपुर संग्राम (त्रिपुर) २५२; दाशराज्ञयुद्ध (सुदास) १०५६;

—परशुराम-हैहय संग्राम ३९१-३९२ (निःक्षत्रिय पृथ्वी देखिये); बाणासुर संग्राम (बाण) ५०३; भारतीय युद्ध (भीमसेन; युधिष्ठिर) ५६६-५७०; ७०१-७०६; (भारतीय युद्ध देखिये); भूरिश्रवस्-सात्यकि युद्ध (भूरिश्रवस्) ५८३; मौसल युद्ध (कृष्ण; सांब) १६२; १०३६;

--राम-रावणयुद्ध (राम दाशरथि) ७३१-७३५; ७४७-७४८ (राम-रावण युद्ध देखिये)।

युद्धवार्ताहर--संजय गावल्गणि १००४-१००५; युद्धवार्ता का कथन १००५; युद्धवार्ताहर संघ-वातिक ८२०।

योद्धा—विभिन्न श्रेणि (अतिरथ; अर्धरथ; एकरथ; चक्ररक्षक; महारथ; रथ; रथमुख्य; रथयूथपयूथप; रथवर; रथसत्तम; रथिन्; रथोत्तम; रथोदार) ५७५; संशप्तक योद्धा (सुशर्मन्) १०७८।

राजसूय यज्ञकर्ता राजा -- दो प्रमुख प्रकारः—(१) देवराजन्--जो उपाधि यह यज्ञ करनेवाले देवों के राजाओं को प्राप्त होती थी [कक्षीवत (काक्षीवत) दीर्घश्रवस्; पृथु; सिंधुक्षित] २९६; (२) मनुष्यराजन्--जो उपाधि यह यज्ञ करनेवाले मनुष्यों के राजाओं को प्राप्त होती थी (दैवोदास; वाध्यश्व; वैतहव्य)।

राजनीतिशास्त्रज्ञ—मातंग ६३७; मनु प्राचेतस ६१०; विष्णुगुप्त चाणक्य ८८८-८८९; विष्णुगुप्त चाणक्य के पूर्वाचार्य ८८८-८८९; विश्ववेदिन् ८७०;

राक्षससत्र—पराशरकृत ३९६;

रामरावणयुद्ध—७३१-७३५; ७४७-७४८; लंका पर आक्रमण ७३१; सेतुबंध ७३९; लंका का अवरोध ७३२; दूतप्रेषण ७३२; रावणसेना का वर्णन ७४७; प्रथम दिन से अंतिम दिन तक के युद्ध का वर्णन ७३२-७३४; रावणवध ७३४; राक्षस संग्राम का तिथिनिर्णय ७३५; ७३७-७३८।

रोगविशेष —अपस्मार (स्कंद) १०९२; कुष्ठरोग (घोषा, नंद, रजन कोणेय,विदारुण, सांब, सुयज्ञ, सोमकान्त, सोमनाथ) २००,३४२, ७१५, ८४३, १०३६, १०७१, १०८६, १०८७; त्वक्‌रोग (देवापि आर्ष्टिषेण) ३००; राजयक्ष्मा (चंद्र, विचित्रवीर्य) २०२, ८४१; शीतज्वर (ज्वर) २३८।

वध—अपने ही शाप से मृत्यु (वृद्धक्षत्र) ८९९; अपने ही सर पर हाथ रख कर मृत्यु (भस्मासुर) ५५४; क्लेशदायक मृत्यु (बिंबिसार श्रेणिय) ११३०; वक्षःस्थल फोड कर मृत्यु (दुःशासन) २७७; शरीर के दो टुकडे हो कर मृत्यु (जरासंध) २३०; सामान्य श्वापद जैसा मृत्यु (कार्तवीर्य अर्जुन) ३९०।

व्रत--अनशन (चित्रसेन) २१३; अशून्यशयन (दिव्यादेवी) २७३; उपवास (च्यवन) २१६;

--एकादशी-इंदिरा (इंद्रसेन) ७६; कमला (हरिमित्र) ११०५; त्रिस्पृशा (इंद्र; गंगा) ७१; १८०; पक्षवर्धिनी (ध्रुव १; वसिष्ठ); ३३६; ८१०; पापनाशिनी (ककुत्स्थ) १०८; योगिनी (हेममालिन्) १११४;

--गौरी (इंद्राणी; पार्वती) ६०६; ४१५; त्रिरात्र (सावित्री) १०४०; दमनक (कुशध्वज) १५२;

--द्वादशी (पुष्पवाहन; मुद्गल; मालिनी) ४४२; ६५७; ६५०; भीम (इंद्र) ६९;

--बाल (श्रीधर) ९९०; भीष्मपंचक (भृगु २०. वसिष्ठ) ५८७; ८१०; मूक (सोमश्रवस्) १०८७; राधाष्टमी (लीलावती ५.) ७८७; लक्ष्मीव्रत (श्यामबाला) ९८८; लिंगपूजा (धुंधुमूक) ३२४; सोमप्रदोष (सीमन्तिनी) १०४५;

वंश, जो राजवंश एवं ऋषियों के वंश, एवं मानवेतर वंश में विभाजित है :-

—(१) राजवंश—अजमीढ वंश ११४५; अनु वंश ११४५; अनेनस वंश ११४५; अंधक वंश ११४५; अमावसु वंश ११४५; आनव वंश ११४५; आंध्र वंश ११३; आयु वंश ६१; ११४५, इक्ष्वाकु वंश ११३९; उशीनर ११४६; उत्तानपाद ११५१; ऐल ११४६;

--करुष ११४६; काण्वायन ११५३; काश्य ११४६; कुकुर ११४६; कुरु ११४६; कुशांब ११४६; कृष्ण ११४६; क्रोष्टु ११४६; क्षत्रवृद्ध ११४६; चेदि (चैद्य) ११४७; जह्नु ११४७; ज्यामघ ११४७; तितिक्षु ११४७; तुर्वसु २४८; ११४७; द्रुह्यु ११४७; दिष्ट ११४०; द्विमीढ ११४७; नभग ११४२; नरिष्यंत ११४२; नृग ११४२; नंद ११५४; नाभि ११५१; निमि ११४१; नीप ११४८; नील ११४८;

--पुरूरवस् ११४८; पुरु ४४५; ११४८; प्रतिक्षत्र ११४९; प्रद्योत ११५४; प्रियव्रत ११५१; बालेय क्षत्रिय ११४९; बभ्रु ११४९; भजमान ११४९; भरत ५४८; ११४९; भोजवंश ५९१; ११४९; मगध ११४९; मनुवंश ६१२; मौर्य ११५४; यदु ६७३; ११४९; ययाति ११५०; रजि ११५०; रम्भ ११५१; वसुदेव ११५१; वासव ११५१; विदूरथ ११५१; विष्णु ११५१; वैशाल वंश ८६४; वृष्णि ९०३; ११५१; सहस्रजित् ११५१;

सात्वत ११५१; शर्याति ११४२; शिशुनाग ११५४; शुंग २१५५; हैहय ११५१।

--(२) ऋषिवंश—अत्रिवंश १७;११६६; अंगिरस् वंश ११;११६५; काश्यपवंश १२९;११६६; पराशरवंश ३९८; भार्गववंश ५८८; वसिष्ठवंश ८०४;११६७; विश्वामित्रवंश ८७४।

--(३) मानवेतर वंश—प्रमुख मानवेतर वंश ११५५; --कश्यप वंश १२९-१३०; नागवंश ३५७; पितृवंश ४२२; पुलस्त्यवंश ४३६; पुलहवंश ४३८; भैरववंश ५९१; यक्षवंश ६६९; (मणिभद्र शाखा ५९७; मणिवर 'गुह्यक' शाखा ५९७); वानरवंश ८२३; हिरण्यकशिपुवंश ११११;

वानर— आदिमानव ७३५; राज्य एवं समाजव्यवस्था ८२२; वानरवंश ८२२; जैन ग्रंथों में ८२३।

वार्तिक—वृत्तनिवेदन एवं वृत्तप्रसारण करनेवाला एक लोकसमूह ८२०; संजय गावल्गणि १००४।

वाल्मीकि रामायण--रामायण की जन्मकथा ८३३; पौराणिक वाङ्मय की प्रस्थानत्रयी ८३४; व्यक्तिगुणों का आदर्श ८३४; महाभारत से तुलना ८३४; रामायण की श्रेष्ठता ८२४; रामायण की ऐतिहासिकता ८३५; आदिकाव्य ८३६; गेय महाकाव्य ८३६; आर्ष महाकाव्य ८३६; वाल्मीकि रामायण में प्राप्त भूगोलवर्णन ८३६; रामायण का रचनाकाल ८३६; महाभारत में प्राप्त रामायण के उद्धरण ८३७; वाल्मीकि रामायण के उपलब्ध संस्करण ८३७।

वास्तुशास्त्रज्ञ एवं शिल्पशास्त्रज्ञ--विश्वकर्मन् ८६६-८६७; के द्वारा निर्मित नगर ८६७; के द्वारानिर्मित अस्त्र ८६७; त्वष्टृ २५६; मय ६१८-६२०।

विद्याविशेष— अक्षहृदयविद्या (ऋतुपर्ण, नल, बृहदश्व, युधिष्ठिर) ९७; ३५२; ५१५; अग्निशिरास्त्र (अंगारपर्ण) ९; अध्यात्मविद्या (उद्दालक, उदंक शौल्वायन, धर्मारण्य) ८३; ८४; ३२२; अंतर्धानविद्या (बिभीषण) १७४; अन्नविद्या (नल);

--अश्वविद्या (ऋतुपर्ण; नकुल; नल) ९७; ३३९; अस्त्रविद्या (कृप, घटोत्कच, द्रोण, नकुल, शतानीक) १५७;१९९;३३८; ३३८;९४१; आत्मविद्या (कुशध्वज जनक, खांडिक्य कौनक) २१९;१७८;९४१; आयुर्वेद (इंदीवराक्ष) ६८; उत्खननविद्या (खनक) १७७;

--कर्ममार्ग (खांडिक्य) १७८; कामरुपीधरत्व (घटोत्कच, हनुमान) १९९,११००; गानविद्या (उत्तरा) ८२; गारुड (आकृति) ५५; गोरति (दीर्घतमस्) २७४; चाक्षुषी (अंगारपर्ण ९.); जलस्तंभनविद्या (दुर्योधन) २८४; देवहूति (दुर्वासस्) २८६; धनुर्वेद (युधिष्ठिर) ६९७; धनुष्य (धर्मव्याध, नहुष, युधिष्ठिर, सत्यश्रुति सौचित्य) ३२१,३५५,५७, १००९;

--पंचाक्षरी (दुरासद) २९८; पद्मिनी (स्वरोचिषू) १०९४; पर्वतस्तंभन (अगस्त्य) ४; पुष्पविद्या (उपरिचर वसु; नल) ८६, ३५२; प्रतिस्मृतिविद्या (व्यास) ९१८; प्रवर्ग्यविद्या (दधीचि) २६३; प्राणविद्या (आरुणेय, उपकौसल कामलायन, ब्रह्मदत्त चैकितानेय) ६२; ८५; ५२६; ब्रह्मविद्या (उद्दालक आरुणि; कबंधी कात्यायन; त्वष्टाधर; नारद; प्रतर्दन; बलराम; ब्रह्मन्; यदु; यम) ८४; ११५;२५७;३६०;४६६;४९३;५२६;१०३२;८९२; ब्राह्मणपरिमर १०५३; मंत्रतंत्र (अश्विनीसुत, धन्वन्तरि) मधुविद्या (दध्यञ्च) २६३; महामाया (शंबर) ९४६;

--यथेष्टगामित्व (हनुमत्) ११००; वारिविद्या (गर्ग) १८५; विषहारीविद्या (काश्यप) १०१; वैद्यकविद्या (पुनर्वसु आत्रेय; धन्वन्तरि) ३१५; ४३०; वैश्यविद्या (यति) ६७१;

--शांडिल्यविद्या (शांडिल्य) ९५९; शिल्पविद्या (त्वष्टृ) २५६; संजीवनी (कच; भृगु; शुक्र) ९७७; -सर्ववश्यता १०४६ ससर्परीविद्या (जमदग्नि; विश्वामित्र; शक्ति) २२२; ९३४; सामविद्या (चैकितानेय) २१५; सोमविद्या (नारद १; भीमवैदर्भ) ३६१; ५६०; स्थलमापनविद्या (स्थपति) १०९२; स्थापत्यविद्या (जनमेजय) २२१।

विवाह—आर्य एवं अनार्य (उपदानवी २) ८५; क्षत्रिय एवं अप्सरा (आग्नीध्र) ५५; क्षत्रिय एवं ऋक्ष (जांबवत् ३.) २३३; क्षत्रिय एवं गंधर्व (पुरूरवस्) ४३४; क्षत्रिय एवं देवता (तपती) २४१; क्षत्रिय एवं नाग (आर्यक; उलूपी) ६३; ९१; क्षत्रिय एवं पितर (दिलीप खट्वांग) १२७१; क्षत्रिय एवं ब्राह्मण (कच; गो २; देवयानी;) ११०; १९३; २९४; क्षत्रिय एवं पर्वत (गिरिका) १९०; क्षत्रिय एवं राक्षस (भीमसेन पाण्डव) ५६३; क्षत्रिय एवं शूद्र (चंद्रगुप्त) २०३; गंधर्व एवं राक्षस (सुकेश) १०४८;

--दानव एवं अप्सरा (मय) ६२०; देव एवं ग्वाला (सावित्री) १८८; देव एवं नाग (गुणकेशी) १९१; देव एवं पर्वत (गिरिका) १९०; देव एवं ब्राह्मण (उशनस्) ९१; देव एवं राक्षस (त्वष्टृ) २५६; नदी एवं अग्नि (गोपति ४.) १९४;

--पक्षी एवं ऋषि (तार्क्ष्य) २४४; ब्राह्मण एवं देव (ज्येष्ठा ३.) २६७; ब्राह्मण एवं देवता (दत्त) २६१; ब्राह्मण एवं नाग (आस्तीक) ६४; ब्राह्मण एवं पर्वत (जैगीषव्य) २३५; ब्राह्मण एवं मछुआ (गरुड) १८३-१८४; ब्राह्मण एवं शूद्र (गौतम) १९५; ब्राह्मण एवं सूत (सत्कर्मन्) १००६;

—मनुष्य एवं गंधर्व (रुचि २; शुक वैयासकि) ७५३; ८७५; मनुष्य एवं नदी (दधीच) २६३; मनुष्य एवं पितर (विरजा २; शुक वैयासकि; सुतपस्) ८७५; ९७५; १०५२; मनुष्य एवं पिशाच (षंड २.) ९३८; मनुष्य एवं राक्षस (शूर्पणखा) ९८१; मनुष्य एवं वानर (विरजा १.) ८५७; मनुष्य एवं सर्प (जनमेजय पारिक्षित; नर्मदा ३; श्रुतश्रवस् २२१; २४९; ९९२;

—राक्षस एवं ब्राह्मण (कैकसी) १६७; वानर एवं गंधर्व (नल ९.) २६१; वैश्य एवं शूद्र (श्रावण) ९८९।

विश्वरूपदर्शन—(भगवान् कृष्ण के द्वारा) १६३८; १. अक्रूर से; २. अर्जुन से; ३. उत्तंक ऋषि से; ४. दुर्योधन से; ५. भीष्म से; ६. यशोदा से)।

व्याकरणकार--अन्यतरेय २४; अग्निवेश्यायन ५५; आत्रेय ५७; आपिशालि ६०; उख्य ७९; उत्तमोत्तरीय ८२; औदुंबरायण १०४; औपमन्यव १०४; और्णवाभ १०४; कामायन, कांडायन, काण्व १३१; कात्यायन १३२; काशकृत्स्न १४१; काश्यप १४२; कुणरवाडव १४५; कूर्यांत्र-(स्वायव लातव्य) १५६; कौण्डरव्य १६८; कौंडिन्य १६८; क्रौष्टुकि १७४; गार्ग्य १८८; चर्मशिरस् २०८; जातूकर्ण्य २३२; दाल्भ्य २७०;

--पतंजलि ३८२-३८५; पतंजलि के पूर्वाचार्य ३८४; पाणिनि ४०५-४१०; पाणिनि के पूर्वाचार्य ४०६; पौष्करसादि; ४५९; प्लाक्षायण ४८५; प्लाक्षि ४८५; वाडभीकार (वाड्वीकार) ५०२; भर्तृहरि ५५२; भागुरि ५५४; माचाकीय; रज्जुभार ७५६; रामकृष्ण ७४२; वरतंतु ७९७; वररुचि ७९७; वाडव ८१९; वात्सप्र २०; वाल्मीकि ८३१ वेदमित्र ९०६; व्याडि दाक्षायण ९१४;

--शाकटायन (उणादीसूत्रकर्ता) ९५३-९५४; शाकपूणि ९५३; शाकल्य ९५६; शांतनव ('फिट' सूत्रकार) ९६१; शैत्यायन ९८३; शौनक गृत्समद ९८५-९८७; स्फोटायन १०९३; स्थविर कौंडिन्य १०९२; स्थविर शाकल्य १०९२ हनुमत् (ग्यारहँवा व्याकरणकार) ११०२; हारीत ११०९।

वैदिक संहिता-वेदों का निर्माण ५८७; वैदिक साहित्य का अर्थागत्व (भरद्वाज); वेदसंरक्षणार्थ वेदविभाग (व्यास पाराशर्य) ९१९; वेदों का विभाजन ९२०; वैदिक संहिताओं का विशुद्ध स्वरूप ९२४; उपलब्ध वैदिक ग्रंथ ९२२; विनष्ट हुए ब्राह्मण ग्रंथ ९२४।

वैद्यकशास्त्रज्ञ--अश्विनीकुमार ४८; चरक २०६; जीवक ११२९; धन्वन्तरि ३१५-३१७; पतंजलि ३८५; पराशर ३९८; पालकाप्य (हस्त्यायुर्वेदतज्ञ) ४१६; पुनर्वसु आत्रेय ४३०; शालिहोत्र (पशुवैद्यकशास्त्रज्ञ) ९६५; सुश्रुत (शल्यचिकित्साशास्त्रज्ञ) १०७८।

वैदिक आचार्यपरंपरा—व्यास की ऋक्शिष्यपरंपरा (व्यास पाराशर्य) ९२०; व्यास की यजुःशिष्यपरंपरा ९२३; व्यास की अथर्वशिष्यपरंपरा ९२४; व्यास की सामशिष्यपरंपरा ९२३; व्यासोत्तर वैदिक वाङ्मय का विकास ९२४।

वैद्यकशास्त्र से संबंधित देवता—अवध्यंता का देवता (विष्णु) ८८१; गर्भवृद्धि का देवता (त्वष्टृ) २५६; देवों के धन्वंतरि (अश्विनीकुमार) ४८; मृत्यु का देवता (मृत्यु) ६६०; विषबाधा का निराकरण करनेवाली देवी (मनसा देवी) ६०४; अपत्यप्राप्ति (सिनीवाली) १०४१;

शक—(कालगणना)-परशुराम शक ३९४; ११७२; विक्रमसंवत् ११७२; कलिसंवत् (युधिष्ठिर शक, भारतीय युद्ध संवत्) ७०८; ११७२।

शत्रुत्व—इंद्र-मरुत्त ६२५; कौरव-पांडव ७०१-७०५; द्रोण-द्रुपद ३०८-३०९; परशुराम-कार्तवीर्य अर्जुन ३९०-३९१; वसिष्ठ-विश्वामित्र ८०८; वालिन्-सुग्रीव ८३०।

शस्त्र--झाग एवं हिम (इंद्र) ६९; धनुष्य-बाण (मरुत्) ६२३; पाश (नरक) ३४७; फौलादी शक्ति (धृष्टकेतु) ३३१; मूसल (बलराम; जरासंध) ४९४; ५२९; वज्र (प्रजापति; इंद्र) ४६२; ६९-७०; वासवी-शक्ति (घटोत्कच; कर्ण) १९९; १२०; सुदर्शनचक्र (कृष्ण; शाल्व; जलंधर) १६१; ९६६; २३१; हल (बलराम; त्रिजट) १४९४; २५१।

शाखाप्रवर्तक आचार्य—उख ७९; औद्भारि १०४; कठ १११; कात्यायन १३२; कापेय १३३; कौंडिन्य १६८; कौथुम पाराशर्य १६९; कौशिक १७०; कौषीतकी १८१; खंडिक औद्धारि १७७; गोखल्य १९३; गोभिल १९४; गौतम१९५; चरक २०६; छगलिन् २१६; जैमिनी २३५; तलवकार २४२; तित्तिरि २४५; देवदर्श २९३; देवदत्त शठ २९३; द्राह्यायणि ३०५; पुरुषासक ४३३;

माल्लवि ५५२; शार्दूल ९६५; (हिरण्यकेशिन्) खांडवीय १११११।

शिक्षाग्रंथ--अमरेश २७; आत्रेय; ५७; कात्यायन ३३; जयंत पाराशर्य २२७; नारद ३६६; पाणिनि ४१०; पाराशर ४१४; बाभ्रव्य पांचाल ५०६; मण्डूक(१.) ५९८; मल्ल गार्ग्य ६२७; माध्यंदिन (२.) ६४२; याज्ञवल्क्य वाजसनेय ६९२; रामकृष्ण (१.) ७४२; शौनक १.९८७।

शिवावतार--चार ७६३; पाँच ७६३; दस ८६३; अट्ठाईस ७६३-७६४; बारह ज्योतिर्लिंग २३७।

श्राद्धविधि--का प्रवर्तक (निमि; श्रीमत्) ९९०।

षोडश राजकीय--अंबरीष नाभाग २८; गय आमूर्तरयस १८२; दिलीप ऐलविल २७१; परशुराम जामदग्न्य ३८८; पृथु वैन्य ४४९; पौरव ४५८; भगीरथ ऐश्वाक ५३४; भरत दौःषन्ति ५४५; मरुत्त आविक्षित ६२५; मांधातृ यौवनाश्व ६४३; ययाति नाहुष ३७७; रंतिदेव सांकृत्य ८१८; राम दाशरथि ७२५; शशबिंदु यादव ९५२; शिवि औशीनर ९६०; सुहोत्र वैतिथिन १०८१।

संवाद--इंद्र के संवाद (अंबरीष; अग्नि; गौतम; दिति; प्रतर्दन; प्रह्लाद; बृहस्पति; मातलि; मांधाता; विप्रुत्प्रथ; शंबर; शुक; सुरार्थ;) १७२-७३; ६२४; ८४९; १०७२; कर्ण-शल्य संवाद ९५२;
--केशी-गौतम संवाद ११११८; कौशिक-इक्ष्वाकु संवाद ६७; जनमेजय-अग्नि संवाद २२; दुर्योधन के संवाद (कृष्ण; भीष्म) २८४; धौम्य-युधिष्ठिर संवाद ३३४;
--बक दाल्भ्य के संवाद (अर्जुन; इंद्र) ४८७-४८८; बलि के संवाद (इंद्र; प्रह्लाद; शुक) ५००; बाध्व-बाष्कलि संवाद (बाध्व २.) ५०६; बृहस्पति के संवाद (इंद्र; उपरिचर वसु; मांधातृ; युधिष्ठिर; वसुमनस्); ५२०-५२१; ६४४; भरत-रहूगण संवाद ५४४; भीम-कृष्ण संवाद ५६६; भीष्म-कर्ण संवाद ५७६; मांडव्य के संवाद (यम; विदेहराज जनक) ३३६;
--मार्कंडेय-युधिष्ठिर संवाद (मार्कंडेयसमस्या पर्व) ६४; मुचुकुंद के संवाद (परशुराम; वैश्रवण) ६५५; ६५४; मैत्रेयी-याज्ञवल्क्य संवाद ६६६; यम के संवाद (नचिकेत; यमी) ६७६; ६७७;
--याज्ञवल्क्य के संवाद (अश्वल; उदंक शौल्बायन; उद्दालक आरुणि; उषस्त चाक्रायण; कहोल कौषीतकेय; गर्दभीविपीत भारद्वाज; गार्गी वाचक्नवी; जारत्कारव आर्तभाग; बर्कु वार्ष्ण; भुज्यु लाह्यायनि; विदग्ध शाकल्य; सत्यकाम जाबाल) ६८८-६८९;
--रावण-विभीषण संवाद ७४७; रावण-सीता संवाद ७४६;
--लक्ष्मी के संवाद (इंद्र; प्रह्लाद; रुक्मिणी) ७८२;
--वसिष्ठ-कराल जनक संवाद ११७; वसुमनस् कौसल्य के संवाद (बृहस्पति; वामदेव) ८१७; विदुला-पुत्रसंवाद ८४७; विदुर के संवाद (धृतराष्ट्र; मैत्रेय) ८४५; ६६५; विरुप के संवाद (इक्ष्वाकु; विकृत) ८६०; विश्वावसु-याज्ञवल्क्य संवाद ८७७; वीरद्युम्न-तनुविप्र संवाद ८९२; वृत्र-उशनस् संवाद ८९८; व्यास के संवाद (मैत्रेय; शुक) ६६५;
--शिशुपाल-कृष्ण संवाद ९७३; सत्यकाम-उपकोसल संवाद १००७; सनत्कुमार-नारद संवाद १०१६; सुलभा-जनक संवाद।

सती--माद्री ६४०; रुक्मिणी ७५२; वृंदा ८९९; वसुदेव (पत्नियाँ) ८१५; वेदवती ९०६।

सत्यनिष्ठा--कौशिक ३.१७०; नाभाग ३६०; प्रह्लाद ४७९; सत्यकाम जाबाल१००८।

सत्र--(अच्युत; अंगिरस; कुण्डपायिन्; गौश्रायणि दार्तेय; नवक; नाभाग; सरमा देवशुनी) १३;५६;१४५; १९७;२७०;३५५;३६०;१०२५;
--(१) दीर्घसत्र (जनमेजय पारिक्षित; श्रुतश्रवस्) २२१; ९९२;
--(२) प्रथम द्वादशवर्षीय सत्र (अंतिनार, पुरूरवस्; रोमहर्षण; बक दाल्भ्य; सौति) २३; ४३५; ७७३; ४८७; १०८८;
--(३) ब्रह्मसत्र (नारद)३६५;
--(४) राक्षससत्र (पराशर) ३९६;
--(५) शतसंवत्सरात्मक (श्वेतकि) ९९५;
--(६) सर्पसत्र (प्रथम) (ऐरावत; चक्र) १०२; २००; नाग ३५८;
--(७) सर्पसत्र (द्वितीय) (जनमेजय कौतस्त; चंद्रभार्गव च्यावन; मुंडवेदांग; मुद्गर; शांखायन; शिख; श्रुतश्रवस्) २२०; २०१; ६५६; ६५७; ९५८; ९६७; ९९२; सर्पसत्र के ऋत्विज २२०-२२२;
--(८) सहस्रवार्षिक सत्र (गृत्समद; निमि) १९२; ३६९।

सप्त चिरंजीव--अश्वत्थामन् ४५; कृपाचार्य १५८; ३९० परशुराम जामदग्न्य ५; बलि वैरोचन ५७०; व्यास पाराशर्य ९१८; विभीषण ८५४; हनुमत् ११०२।

सप्तद्वीपा पृथ्वी--पृथ्वी के सात द्वीप जम्बुद्वीप, पुष्कद्वीप, शाल्मलिद्वीप, कुशद्वीप, क्रौंचद्वीप, शाकद्वीप,

पुष्करद्वीप (स्वायंभुव) १०९६; इन द्वीपों का संभाव्य आधुनिक स्थान (स्वायंभुव) १०९६।

समुद्र--लौहित्य (सलिलार्णव) ७०७।

समुद्रमंथन से निकले हुए रत्न--४९८।

सर्पसत्र--जनमेजय सर्पसत्र (प्रथम) २२१; जनमेजय सर्पसत्र (द्वितीय) २२१; मरुत्त सर्पसत्र (मरुत्त) ६२६; भामिनी ५५६।

सात्वत धर्म--१०३४; सात्वत धर्म का उपदेश १०१७;

साम--वत्सप्रि भालंदन ७९४;

--सामगायन से ईप्सित वस्तुओं का लाभ-गाय (मेधातिथि काण्व; स्वर्ग (शंमद) ९४७; वैभव की प्राप्ति (गोतम) १९३; दिवोदास अतिथिग्व २०३; सिंधुक्षित् १०४२।

स्वयंवर--कमद्यु (विमद) ८५६; कुन्ती १४६; केशिनी १६६; दमयन्ती २१५; द्रौपदी ३१०; मान्यवती ६४५; वैशालिनी ९१५; शशिकला (सुदर्शन १०.) १०५५; सीता १०४४।

सायणकृत वैदिक अर्थ--नगरिन् जानश्रुतेय ३४०; नग्नजित् गांधार ३४०; नमी साप्य ३४५; पणि ३८१।

सावित्राग्नि--देवभाष्य श्रौतर्ष २९३; प्लक्ष दय्यांपति ४८५।

सिकंदरकालीन भारतवर्ष के नगर-- अग्रोदक ११३२; मस्सग ११३३; सांगल (सांकल) ११३३; सिकंदरिया ११३५; पुष्करावती ११३४; पातानप्रस्थ (११३४); रोरुक (११३५)।

--नदियाँ-वितस्ता (जेहलम) ११३३; व्यास (विआस) ११३३; गौरी ११३४; असिक्नी ११३४; इरावती ११३४; सेतुमंत (आधु. सेलमंद) ११३५।

सुराज्य--अश्वपति केकय ४७; कार्तवीर्य १३७; जनमेजय १. २२१; जालंदर २३४।

सूत--पुराणकथन एवं निवेदन का कार्य करनेवाला एक लोकसमूह ७७४; रोमहर्षण सूत ७७२; सौति रोमहर्षण-सुत १०८७;

सेनागणनापद्धति--भारतीय युद्धकालीन (अक्षौहिणी, गण, गुल्म, पत्ती, सेनामुख, वाहिनी, पृतना, चमू, आनीकिनी) ७०३।

सौर देवता--आदित्य ५८; पूषन् ४४६; भग ५३२; विवस्वत् ८६२; विष्णु ८७९; सवितृ १०२६; सूर्य १०८१।

स्वरूपवर्णन--दुर्वासस् २२६; धन्वंतरि ३१५; नारद ३६१; भूत ५२०; यक्ष ६६९; युधिष्ठिर ६९६; रक्षस् ७१२; राम दाशरथि ७२६; रावण दशग्रीव ७४३; रुद्र-शिव ७५५; लक्ष्मी ७८१; वरुण ७९९; वायु ८२६; वालखिल्य ८२९; विश्वकर्मन् ८६६; विश्वरूप त्रिशिरस् त्वाष्ट्र ८६९; विष्णु ८७९; वृत्र ८९६; सवितृ १०२६; सात्यकि (युयुधान) १०३२; सीता वैदेही १०४२; हयग्रीव ११०३।

सृष्टि का निर्माण--मैथुनज सृष्टि का प्रारंभ (दक्ष प्राचेतस प्रजापति) २५९; प्रजापति ४६२-४६३; ब्रह्मन्-५२८-५२९।

सृष्टिप्रलय--मनु वैवस्वतकालीन सृष्टिप्रलय ६११; विभिन्न साहित्यों में जलप्लावनकथा ६११; प्रलयोत्तर मानव समाज का आदि पुरुष ६११; कालनिर्णय ६१२ हिंदी साहित्य में जलप्लावनकथा ६१२।

हीनकुलीनत्व--कर्ण ११८; विदुर ८४४।

शुद्धिपत्र

पृष्ठ एवं चरित्र		अशुद्ध	शुद्ध
३	अगस्त्य	रेत कमल पर स्खलित हुआ	रेत कुंभ में स्खलित हुआ
२४	अंधीगु श्यावाश्वि	अंधिगु श्यावाश्व	अंधिगु श्यावाश्वि
२६	अग्निमति	(भा. ६.११)	(भा. ६.६.११)
५७	आत्मदेव	नाम धुंधुकारी रखा	नाम धुंधुकारि रखा
८०	उच्चैःश्रवस कौपयेय	(चै. उ. ब्रा. ३.२९.१–३)	(जै. उ. ब्रा. ३.२९.१–३)
९४	ऊर्जा	(भा. ४.१.३८)	(भा. ४.१.४०–४१)
९६	ऋचीक	(ह. वं. ११.७)	(ह. वं. १.२७)
१०१	ऐतश	संभवतः एतश की होगी	संभवतः ऐतश की होगी
१११	कठ	२. रेवती देखिये।	२. रेवती २. देखिये।
१३४	कामकटंकटा	कामकंटका	कामकटंकटा
१४१	काशिराज २.	(म. आ. ६१–६७)	(म. आ. ६१.६७)
१४५	कुणिगर्ग	गांधर्वपुत्र शुंगवत् के साथ	गालवपुत्र शुंगवत् के साथ
१५१	कुंभकर्ण	(म. व. २७१–१७)	(म. व. २७१. १७)
१५६	कृतवर्मन्	(म. मौ. ३)	(म. मौ. ४.२७)
१६३	कृष्ण	युद्धिष्ठिर	युधिष्ठिर
१६८	कौंडरव्य	कौंटरव्य	कौडरव्य
१९४	गोलभ	(वा. रा. कि. २२.२७–३७)	(वा. रा. कि. २२.२७)
२०१	चक्रवर्तिन्	(म. शां. २८)	(म. शां. २९)
२०३	चंद्रगिरि	(सू. उ.)	(सू. इ.)
२०७	चरक ३.	पृषदाच्य में प्रथम अभिधार	पृषदाज्य में प्रथम अभिघार
२४९	तैटीकि	तैटिकि	तैटीकि
२४९	तोंडमान	(भीम २३ देखिये)	(भीम २४ देखिये)
२७८	दुंदुभि	(म. व. २५.९.१०)	(म. व. २६०.१०)
२९९	देवसावर्णि	(भा. ८.१३;)	(भा. ८.१३; ३०)
३०५	द्रविडा	(वायु. १.२४.१६)	(वायु. ८६.१६)
३२२	धर्मसूत्र	(धर्म १३. देखिये)	(धर्म १६. देखिये)
३२४	धूमोर्णा	(म. अनु. २७१.११. कुं.)	(म. अनु. १६५.११)
३२८	धृतराष्ट्र	(म. आ. १०७.२–१४)	(म. आ. १०८.२–१५)
३६७	निकुंभ	(वायु. ९०.२७.५२)	(वायु. ९२.२७–५२)
३७१	निर्वृति	निर्वृत्ति	निर्वृति
३७६	नैध्रुव	नैधृव	नैध्रुव
३७८	पंचचूडा	मीष्म ने युधिष्ठिर	भीष्म ने युधिष्ठिर
३९२	परशुराम जामदग्न्य	यज्ञ के लिए एकत्रिय	यज्ञ के लिए एकत्रित
३९३	परशुराम जामदग्न्य	अंत में परशुरान ने	अंत में परशुराम ने
३९६	पराशर	पराशर के नये सत्र से	पराशर के नये सत्र को

शुद्धिपत्र

पृष्ठ एवं चरित्र		अशुद्ध	शुद्ध
४००	परिक्षित्	महाभातर	महाभारत
४१०	पाण्डु	जन्मतः पाण्डुरोग से पीड़ित	जन्मतः पण्डुरोग से पीड़ित
४२८	पीवरी	अग्निष्वान्त पितरों की कन्या	अग्निष्वात्त पितरों की कन्या
४२९	पुत्र	स्वारोचिष मनु के	स्वायंभुव मनु के
४३३	पुरुमीह्ळ सौहोत्र	पुरुमिह्ळ	पुरुमीह्ळ
४३७	पुलस्त्य	सामूहिकक नाम से	सामूहिक नाम से
४४१	पुष्कल	अश्वमेधांयज्ञ का	अश्वमेधयज्ञ का
४५८	पौरव ३.	(म. द्रो. १७१-६४)	(म. द्रो. १७१.६४)
५२७	ब्रह्मन्	ब्रह्मा से भी आयू में	ब्रह्मा से भी आयु में
५३३	भगदत्त	उसका एवं उसके सात पुत्रों को	उसको एवं उसके सात पुत्रों को
५३९	भद्रा काक्षीवती	(म. आ. १२०.३३-३६)	(म. आ. ११२.३३)
५५०	भरद्वाज	राज्याधिकारी ना कर	राज्याधिकारी बना कर
५५८	भार्गायण	(सुत्वन् कैरिशीय मार्गायण)	(सुत्वन कैरिशिय भार्गायण)
५७०	भीमसेन	अश्वत्थामा वध	अश्वत्थामा मणिहरण
६००	मत्स्य	मकर दैत्य ने	शंख दैत्य ने
६०४	मधुच्छंदस् वैश्वामित्र	(प्रातःकालिन स्तुतिस्तोत्र)	(प्रातःकालीन स्तुतिस्तोत्र)
६१७	मन्दपाल	लपिता नामावाली दक्षिणी	लपिता नामवाली पक्षिणी
६३२	महिषासुर	शाश्वतस्थान किया। प्राप्त	शाश्वतस्थान प्राप्त किया।
७१३	रक्षस्	विरोचन दैत्य आँखों में	विरोचन दैत्य आँखों में
७२६	राम दाशरथि	पुत्रकामेष्ठी यज्ञ कराया	पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया
७३०	राम दाशरथि	शूर्पणखावध	शूर्पणखाविरूपत्व
७३१	राम दाशरथि	मसीता को ढूँढने के लिए	सीता को ढूँढने के लिए
८१९	वातरशन	(ऋ. १०.१३३.१०२;	(ऋ. १०.१३६.२;
८४१	विचित्रवीर्य	भीष्म ने विका एवं अंबालिका	भीष्म ने अंबिका एवं अंबालिका
८५४-८५५	बिभीषण	इसीने ही किया।	इसने ही किया था।
८६५	विशाल ५.	जो परिक्षित् राजा की	जो अविक्षित् राजा की
८८१	विष्णु	विष्णु रुच्यते	विष्णुरुच्यते
८९७	वृत्र	(ऋक् यजुः। साम	(ऋक्, यजुः, साम)
९२९	व्यास पाराशर्य	उर्ध्वबाहुर्विरौस्येष	ऊर्ध्वबाहुर्विरौम्येष
१००१	सगर	इसे सगर विषयुक्त नाम	इसे सगर (विषयुक्त) नाम
१००५	संज्ञा	छाया को यम से	छाया को सूर्य से
१००५	संज्ञा	यम को छाया का	सूर्य को छाया का
१०६२	सुंदर शांतिकर्ण	सुंदर शांतिकर्ण	सुंदर शांतिकर्ण
१०८६	सोमदत्त	भूरिश्रवस् का अत्यंत निर्घृण वध किया	भूरिश्रवस् के हाथ काट डाले
११२४	गौतम बुद्ध	निम्नलिखित वृद्ध विपश्य से	निम्नलिखित बुद्ध विपश्य से
११२८	गौतम बुद्ध	प्रमुक बौद्ध सांप्रदाय	प्रमुख बौद्ध सांप्रदाय

